Dobrotolubie

अनुवादक: थियोफान द रिक्लूस

विषय-सूची:

खंड I *3*

संत एंथनी महान **5**

संत एंथनी महान की शिक्षाएँ। 10

1. मसीह में जीवन पर निर्देश, जो संत अथेनासियस की जीवनी, उनकी 20 पत्रिकाओं और 20 कथनों से लिए गए उनके शब्दों से लिए गए हैं। 10
2. अच्छे आचरण और पवित्र जीवन पर, 170 अध्यायों में 32
३. तपस्वी के जीवन का नियम 48
४. संत एंथनी महान के कथन और उनके जीवन के वृत्तांत 59
5. संत एंथनी महान के कुछ कथनों की व्याख्या, जो उनकी मृत्यु के बाद एक वृद्ध द्वारा दी गई थी 70

संत मकरियुस महान **77**

संत मकरियुस महान की ईसाई जीवन पर शिक्षाएँ, उनके प्रवचनों से चयनित 78

आदरणीय बाबा यशायाह **136**

1. उनके शिष्यों के लिए पूजनीय बाबा इसाया के वचन 137
२. नवोदित भिक्षुओं के लिए नियम और सलाह 219
3. बाबा इसाइया की कहावतें 224
४. मन के संरक्षण पर: २७ अध्याय 226
५. तपस्या और मौन पर अध्याय 229

आदरणीय मार्क, तपस्वी **230**

आध्यात्मिक जीवन पर मार्क तपस्वी की शिक्षाएँ 231

2. संत मार्क की शिक्षाएँ, उनके अन्य लेखों से ली गई 239
3. आध्यात्मिक कानून पर 200 अध्याय 257
4. जो लोग सोचते हैं कि वे अपने कर्मों से धर्मी ठहराए जा सकते हैं, उनके लिए 226 अध्याय 267

पोंटस के अबा इवाग्रियस **280**

संन्यासी इवाग्रियस की तपस्या पर निर्देश 284

खंड II *318*

संत जॉन कैसियन द रोमन **319**

आध्यात्मिक संघर्ष का एक अवलोकन 320

1. तपस्या का उद्देश्य और अंत 320
2. इस उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए, हमें यह भी निर्धारित करना चाहिए कि हमारे त्याग का स्वरूप कैसा होना चाहिए 321
३. शरीर और आत्मा के बीच संघर्ष 322
४. वासनाओं और उनसे संघर्ष की एक सामान्य रूपरेखा 325
५. आठ प्रमुख भावों के विरुद्ध संघर्ष 327
६. विचारों के विरुद्ध, और उनके माध्यम से दुष्ट आत्माओं के विरुद्ध संघर्ष 360
7. दुर्भाग्य और विपत्तियों से उत्पन्न होने वाली हर प्रकार की पीड़ाओं के विरुद्ध संघर्ष 367
८. दैवी कृपा और स्वतंत्र इच्छा पर 375
९. प्रार्थना पर 378
10. आध्यात्मिक जीवन में मार्गदर्शन पर – सबसे अनुभवी लोगों से परामर्श सहित एक प्रवचन 383
11. आध्यात्मिक जीवन में पूर्णता की विभिन्न श्रेणियों पर, इसके लिए प्रेरणाओं के अनुसार 385
12. पश्चाताप के कार्यों के समापन पर 387

आदरणीय इसचियिस, यरूशलेम के पुरोहित **389**

थियोडुलस को: संयम और प्रार्थना पर एक आत्मा-रक्षक और उद्धारकारी प्रवचन 389

सनिाई के पूजनीय नीलस 412
संयम संबंधी नर्िदेश सनिाई के पूजनीय नीलस द्वारा....................413
1. प्रार्थना पर एक वचन....................413
2. आठ दुष्ट आत्माओं पर....................425
3. प्रेरक अध्याय 447
4. वे वचिार जो व्यक्त िको क्षणभंगुर से हटाकर अक्षय से जोड़ते हैं 452
5. संत नीलस की अन्य रचनाओं से लिए गए, पछिले लोगों के समान वचिार और उपदेश....................456
६. संन्यासयिों के लिए एक आह्वान....................464

संत एफ्रेम सीरयिाई....................466
संन्यासयिों के लिए संत एफ्रेम की शक्िषाएँ 468
1. पश्चाताप और मोक्ष की प्राप्त िके लिए एक अनुनय 468
2. पश्चाताप पर उपदेश 482
3. प्रभु को प्रसन्न करने के लिए स्वयं को समर्पति करने वालों के जीवन की एक सामान्य रूपरेखा....................491
४. सद्गुणों और भावों पर....................496
5. आठ प्रमुख जुनूनों के खलिाफ संघर्ष पर, सामान्य रूप से....................500
६. तपस्या जीवन पर सामान्य पाठ....................527
७. तपस्वयिों के लिए उपदेश....................550

संत जॉन क्लाइमस 555
संत जॉन क्लाइमक्स की तपस्या संबंधी शक्िषाएँ 556
1. तपस्या के सामान्य सद्िधांत....................556
२. पश्चाताप पर 558
३. सद्गुणों और वासनाओं पर – और सामान्यतःउत्तरार्द्ध के वरिुद्ध संघर्ष पर....................560
४. आठ प्रमुख जुनूनों के वरिुद्ध संघर्ष पर....................568
५. नर्िलप्तिता पर....................587

पवत्िर पूजनीय पतिामह बर्सानुफयिुस और योहन....................588
तपस्या पर नर्िदेश....................590

आदरणीय बाबा डोरोथयिस 610
तपस्वयिों के लिए नर्िदेश....................610

संत इसाक द सीरयिन....................630
संयम संबंधी नर्िदेश....................631

खंड III 683

धन्य डायडोचस, फोतीकी के बशिप इलूयरयिन एपरिस में 683
मुख्य सद्गुणों में पूर्णता की परम सीमाओं या शखिर पर धन्य दयिादोकोस का प्रवचन....................684
एक आध्यात्मकि ग्रंथ, जो सक्रयि अभ्यास के सौ अध्यायों में वभिाजति है, और आध्यात्मकि ज्ञान व ववि‌ेक से परपिूर्ण है। 685

हमारे पूजनीय पति‍ा जॉन ऑफ कार्थॉस....................714
भारत में रहने वाले भक्िषुओं को, जन्िहोंने उन्हें लखिा था, एक सौ प्रेरक अध्याय....................714

धन्य अबा ज़ोसमिा (फ़लिस्ितीनी) 728
धन्य बाबा ज़ोसमिा के प्रवचन 729

संत मैक्समिस द कन्फेसर 741
1. तपस्या के वचन, एक शष्यि के प्रश्नों और वृद्ध के उत्तरों के रूप में....................743
२. प्रेम पर चार सौ अध्याय 757
3. ग्रीक *डोब्रोतोलुबयि* के सात सौ अध्यायों में से चुने गए सैद्धांतकि और व्यावहारकि अध्याय....................790

धन्य अबा फलासयिस 820
प्रेम, संयम और आध्यात्मकि जीवन पर अब्बा फलासयिस, पुरोहति पॉल को 820

संत थयिोडोर, एडसा के बशिप....................836
हमारे पूजनीय पति‍ा एडसा के थयिोडोर द्वारा एक सौ सबसे लाभकारी अध्याय 837

एडेसा के पूजनीय थयिोडोर 849

हमारे पूजनीय पिता थियोडोर का अनुमानित प्रवचन....850
आदरणीय अबा फलिमोन....855
अब्बा फलिमोन का एक अत्यंत शक्षिाप्रद वृत्तांत 856
आदरणीय पिता थयिोग्नोस्टस....863
सक्रयि और चंतिनशील जीवन, और पुरोहति्य पर, अध्याय....864
सनिाई के पूजनीय फलिोथेओस 875
हमारे पवति्र पिता सनिाई के फलिोथयिोस द्वारा संयम पर 40 अध्याय....875
एलयि्याह, पुरोहति और एक्ज़ार्क 884
फूलों का एक संग्रह, सबसे कम उम्र के प्रेस्बटिर और एक्डकिस, एलयिाह द्वारा बड़ी बुद्धमिानी से संकलति....885
खंड IV....895
आदरणीय थयिोडोर द स्टुडाइट 895
की संन्यासयिों के लएि तपश्चर्या संबंधी शक्षिाएँ....895

खंड I

परचिय

आध्यात्मकि पठन के प्रेमयिों को रूसी अनुवाद में, उसमें अतरिक्ति सामग्री के साथ, सुप्रसद्धि ***फलिोकालयिा*** प्रदान करते हुए, हम यह कहना अपना कर्तव्य समझते हैं क*फलिोकालयिा* वास्तव में क्या है।

यह शब्द इसके ग्रीक शीर्षक – **फलिोकैलयिा** – का अनुवाद है, जसिका अर्थ है: 'सुंदर, उत्कृष्ट, शुभ के प्रतपि्रेम'। सार में, यह 'प्रभु यीशु मसीह में छपिे जीवन की व्याख्या' को मूर्त रूप देता है।

हमारे प्रभु यीशु मसीह में छपिा हुआ, सच्चा मसीही जीवन, परमेश्वर पिता की इच्छा से, मसीहयिों में नहिति पवति्र आत्मा की कृपा के कार्य द्वारा, और स्वयं प्रभु मसीह की अगुवाई में—जन्हिोंने हमेशा हमारे साथ रहने का वादा कयिा है—प्रत्येक व्यक्तअिपने-अपने माप के अनुसार शुरू होता है, वकिसति होता है और पूर्णता तक पहुँचता है। ईश्वर की कृपा सभी को ऐसे जीवन के लएि बुलाती है; और सभी के लएि यह न केवल संभव है बल्कअिनविार्य भी है, क्योंकइिसमें ही ईसाई धर्म का सार नहिति है। फरि भी, जो बुलाए गए हैं, वे सभी इसमें भाग नहीं लेते, और जो इसमें भाग लेते हैं, वे सभी एक ही स्तर तक ऐसा नहीं करते। चुने हुए लोग इसमें गहराई तक प्रवेश करते हैं और इसके वभिन्नि चरणों से होकर ऊँचाई पर पहुँचते हैं। इसके प्रकटीकरण, ठीक उसी प्रकार जैसे वह क्षेत्र जसिमें यह प्रकट होता है, की संपदाएँ, सामान्य जीवन की घटनाओं से कम प्रचुर और ववििध नहीं हैं।

और यदविहाँ जो कुछ भी घटति होता है, उसे स्पष्ट रूप से समझा और बखूबी बताया जा सकता: शत्रु के आक्रमण और प्रलोभन, संघर्ष और वजिय, पतन और उत्थान, आध्यात्मकि जीवन के वभिन्नि रूपों का उदय और सुदृढ़ीकरण, सामान्य प्रगतकिी वभिन्नि अवस्थाएँ और प्रत्येक की वशिष्टि मानसकिता और हृदय की स्थतिसिभी चीजों में स्वतंत्रता और अनुग्रह का परस्पर क्रयिा, ईश्वर की नकिटता और दूरी की अनुभूतयिाँ, दैवी सर्वशक्तमिानता का अनुभव और स्वयं को—अपने सभी कर्म मार्गों को त्यागकर, नरिंतर और तीव्र गतविधिमिें संलग्न रहते हुए—परमेश्वर के दाहनिे हाथ में नशि्चति और अपरवि्रतनीय रूप से स्थापति करना, यदयिह सब, और प्रभु में एक सच्चे जीवन से जो कुछ भी अवभिाज्य है, उसे स्पष्ट और सुबोध रूप से चति्रति कयिा जा सकता था, तो यह एक ऐसी तस्वीर प्रस्तुत करता जो जतिनी शक्षिाप्रद है उतनी ही मनमोहक भी है – एक ऐसी तस्वीर जो दुनयिा भर की यात्रा के समान है।

यात्री अपने रास्ते में मलिने वाली हर उस चीज़ के बारे में यात्रा वृत्तांत लखिते हैं जो ध्यान देने योग्य हो। परमेश्वर के चुने हुए लोग भी, जन्हिोंने आध्यात्मकि जीवन के सभी मार्गों को वभिन्नि दशिाओं में खोजा है, ने अपनी इस कठनि यात्रा में जो कुछ भी उन्होंने देखा और अनुभव कयिा, उसके बारे में अपने नोट्स लखिे हैं। लेकनि इन दो प्रकार के नोट्स का भाग्य और उद्देश्य एक समान नहीं है। जनिके पास यात्रा करने के साधन नहीं हैं, वे बनिा अपनी

जगह से हिले, अन्य यात्रियों के यात्रा वृत्तांत पढ़कर विदेशी देशों के बारे में अपने लिए काफी हद तक अनुमानित धारणाएं और विचार बना सकते हैं, क्योंकि सभी जीवों के जीवन के तरीके, वे किसी भी देश में पाए जाएं, किसी न किसी हद तक एक-दूसरे से मिलते-जुलते हैं।

आध्यात्मिक जीवन के अनुभवों के संबंध में ऐसा नहीं है। केवल वे ही इस जीवन के मार्ग पर यात्रा कर रहे लोग हैं जो उन्हें समझ सकते हैं। जिन लोगों ने इस मार्ग पर यात्रा शुरू नहीं की है, उनके लिए यह एक पूरी तरह से अज्ञात विज्ञान है; फिर भी, उन लोगों में से भी जो इस मार्ग पर चल पड़े हैं, सभी इसे एक साथ नहीं समझ सकते। जैसे-जैसे वे यात्रा करते हैं और आत्मा के क्षेत्र में गहराई तक जाते हैं, उनकी अवधारणाएँ और विचार स्पष्ट होते जाते हैं। जैसे-जैसे किसी के अपने आध्यात्मिक जीवन के अनुभव बढ़ते हैं, वैसे-वैसे पवित्र पिताओं द्वारा अपनी रचनाओं में दर्ज अनुभवों से प्राप्त अंतर्दृष्टि स्पष्ट और बोधगम्य हो जाती है।

फिर भी, पवित्र पिताओं की रचनाओं में निहित आध्यात्मिक जीवन के विभिन्न प्रकट रूपों का वर्णन सामान्य रूप से ईसाइयों के लिए व्यर्थ का उपहार नहीं है। यह सभी को यह समझने में सक्षम बनाता है कि यदि उन्होंने अभी तक उस अनुभव को नहीं किया है जिसका यहां वर्णन किया गया है, तो इसका मतलब है कि उन्होंने अपने लिए जो जीवन-पथ स्थापित किया है—इस तथ्य के बावजूद कि उनका ईसाई विवेक इससे सहमत है—वह पूर्णता की वह अवस्था नहीं है, जिसके परे इच्छा करने के लिए कुछ बेहतर और जाने के लिए कहीं ऊँचा स्थान न हो। इसे स्पष्ट करके, यह प्रगति के लिए उत्साह जगाने में विफल नहीं हो सकता; यह किसी को आगे बढ़ने के लिए आमंत्रित करने में विफल नहीं हो सकता, और वह भी उस चीज़ की ओर इशारा करते हुए जो उसके पास पहले से है, उससे बेहतर है।

जो लोग बेहतर और अधिक पूर्णता की राह पर चल पड़े हैं, उनके लिए यह संदेह और भ्रम की स्थिति में आवश्यक मार्गदर्शन प्रदान करता है, जब हाथ में कोई तैयार, परखा हुआ मार्गदर्शन उपलब्ध नहीं होता है, और जब वह भी अतिक्रमणीय कठिनाइयों का सामना करता है जो यात्री के मार्ग से सभी हिचकिचाहट को दूर करने वाले निर्णायक निर्णय लेने से रोकती हैं। किसी विशेष स्थिति में यह जानना अक्सर बहुत महत्वपूर्ण होता है कि पैर कहाँ और कैसे रखना है, ताकि कोई गलती न हो जाए। और यहाँ एक विशेष पितृवत् कथन अँधेरे को दूर करता है, जो रात में बिजली की चमक की तरह चमकता है।

आम तौर पर, यह एक आध्यात्मिक ग्रीनहाउस है जिसमें श्रद्धालु, आध्यात्मिक जीवन की घटनाओं पर निर्देश पढ़ते हुए, मन और हृदय से प्रवेश करता है; और वहाँ, प्रेरित मनन के मूर्त प्रभावों के अधीन, महसूस करता है कि इन क्षणों में वह एक अलग वातावरण में उड़ान भर रहा है, जो प्रकाशमान और जीवन-दायक है। ये आनंद के क्षण होते हैं – और इन्हीं के दौरान आध्यात्मिक जीवन के वृक्ष की विभिन्न कलियाँ आमतौर पर जड़ें जमाती और परिपक्व होती हैं। और इसलिए इसमें कोई आश्चर्य नहीं कि जिसने भी इसका अनुभव किया है, वह जैसे ही उसे एक खाली क्षण मिलता है, आध्यात्मिक जीवन के वर्णनों की तलाश में जल्दी करता है, ठीक वैसे ही जैसे कोई जो लाभ से प्यार करता है, वह लाभ का वादा करने वाली जगहों पर जल्दी करता है, और जो आनंद से प्यार करता है, वह आनंद की जगहों पर जल्दी करता है। ऐसा करते हुए, वे अक्सर आत्मा की ताज़गी और उत्थान देने वाली हवा को अंदर तक खींचने की लालसा करते हैं।

और फिर भी यह कोई तुच्छ जिज्ञासा नहीं है। नहीं, यह हमारी आत्मा की प्रगति और कल्याण के लिए अत्यंत आवश्यक है। इसीलिए सच्चे ईसाइयों के बीच हमेशा से, और आज भी, यह आवश्यकता रही है कि आध्यात्मिक जीवन पर चर्च पिताओं की रचनाएँ उनकी पहुँच में हों। लेकिन जहाँ एक ओर इस आवश्यकता की भावना सराहनीय है, वहीं यह भी उतना ही आवश्यक है कि इसे वे लोग पूरा करें जिन पर ऐसा करने का कर्तव्य और क्षमता दोनों हो। इस आवश्यकता को हमेशा से पूरा किया गया है, एक तो इन लेखनों को संपूर्ण रूप से प्रकाशित करके – उदाहरण के लिए, संत मकारियस, इसाक और एफ्रेम सीरियाई, *द लैडर* के लेखक, और कई अन्य के लेखन – और दूसरी, उनसे चयनित संकलनों के माध्यम से।

ऐसी संकलनों में प्रसिद्ध ***डोब्रोतोल्यूबिये*** भी है, जिसे उन सभी में सर्वश्रेष्ठ माना जाता है। अब यह स्पष्ट है कि *डोब्रोतोलीउबिए* क्या है। यह हमें पवित्र संयम के शब्द और सिद्धांत प्रदान करता है, यानी, आंतरिक आध्यात्मिक जीवन पर पूर्ण ग्रंथ और संक्षिप्त कथन, इसके सभी विशिष्ट प्रकट रूपों और प्रथाओं के साथ। यह एक ऐसी पुस्तक है जिसे आध्यात्मिक प्रगति के उत्सुक लोगों की आध्यात्मिक जरूरतों को पूरा करने के लिए संकलित किया गया है। जो इसे पढ़ते हैं वे जानते हैं कि *डोब्रोतोल्यूबिये* के भीतर आध्यात्मिक ज्ञान का कितना खजाना छिपा है: वे इसे पढ़ते हैं और इसमें आनंद लेते हैं।

फिर भी, इसे पढ़कर आनंद और शिक्षा प्राप्त करते हुए, वे इस बात पर अपना दुखपूर्ण खेद नहीं छिपाते कि पुस्तक का बहुत सा हिस्सा अब भी समझ से परे है—इसलिए नहीं कि इसकी विषय-वस्तु की ऊँचाई या गहराई के

कारण, बल्कि इसलिए कि अनुवाद पुराना हो गया है। इसलिए इस पुस्तक के नए अनुवाद की आवश्यकता स्पष्ट है। इस आवश्यकता को लंबे समय से पहचाना गया है, और इसे कुछ हद तक *क्रिश्चियन रीडिंग* में इसके प्रकाशन के पहले वर्षों से प्रकाशित अनुवादों, और *डोब्रोतोल्यूबिए* का हिस्सा बनाने वाले व्यक्तिगत लेखों के प्रकाशन द्वारा पूरा किया गया है, जैसे: सेंट मैक्सिमस (प्रेम पर; यह ग्रीक *डोब्रोतोल्यूबिए* में पाया जाता है), हेसकियिस, और दमिश्क के पीटर।

इस संग्रह के संकलक का प्रारंभिक इरादा केवल यह जाँचना था कि पहले से क्या अनुवादित हो चुका है, जो अनुवादित नहीं हुआ है उसका अनुवाद पूरा करना, और पाठकों को रूसी अनुवाद में *डोब्रोतोल्यूबिए* प्रदान करना था – संपूर्ण, और उसी रचना में जैसा कि यह ग्रीक में दिखाई देता है। लेकिन बाद में वे इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि हमारे लिए *डोब्रोतोलुबिए* का दायरा ग्रीक संस्करण से भी आगे तक बढ़ाना आवश्यक था। क्योंकि, यद्यपि यूनानी *डोब्रोतोल्युबिये* स्लाव संस्करण से अधिक संपूर्ण है, फिर भी इसमें वह सब कुछ शामिल नहीं है जो पवित्र पिताओं ने हमें आध्यात्मिक जीवन के मार्गदर्शन के रूप में दिया है, और जिसे हम इस प्रकार की पढ़ाई से प्रेम करने वालों के लाभ और आराम के लिए प्रदान करना चाहेंगे। अत; यह वर्तमान संग्रह वही *डोब्रोतोल्युबिये* है, केवल विस्तारित रूप में।

हमारा नया संग्रह पूर्व के *डोब्रोतोलुबिये* के पदचिन्हों पर चलता है। हालाँकि, जब यह देखा जाता है कि किसी विशेष पिता, जिनका लेख इसमें शामिल है, ने अन्य लेख भी लिखे हैं, तो यह उन पर भी जाता है; और यदि वे इसके अपने चरित्र के अनुरूप होते हैं, तो यह उन्हें भी शामिल कर लेता है। इसी प्रकार, यह देखते हुए कि जिन पादरियों से लेख लिए गए हैं, उनमें अन्य पादरी भी थे जिन्होंने हमें आध्यात्मिक जीवन पर लेखन दिया है, यह स्वयं को इनसे भी समृद्ध करता है। इस प्रकार, पिछले *डोब्रोतोल्युबिये* में, केवल 170 अध्यायों में संत एंथनी के निर्देश शामिल थे; नए संग्रह में संत एंथनी के अन्य लेख भी शामिल हैं। वहाँ सेंट मकारियस को शामिल नहीं किया गया है (उनसे, मेटाफ्रास्टस द्वारा 150 अध्यायों में दी गई शिक्षाओं की व्याख्याएँ शामिल की गई थीं: हमारी '7 कथन')। यहाँ, उनकी शिक्षाओं को उनके ही शब्दों में, कुछ हद तक व्यवस्थित क्रम में प्रस्तुत किया गया है। इसाइयाह द हर्मिट के केवल 27 अध्याय—संक्षिप्त कथन—वहाँ शामिल हैं। यहाँ, उनकी सभी 29 ज्ञात उक्तियाँ ग्रीक से एक नए अनुवाद में शामिल की गई हैं। इवाग्रियस और सेंट मार्क द एसेटिक के संबंध में भी ऐसा ही किया गया है। आगामी लेखों के संग्रह में भी ऐसा ही होगा।

नई *डोब्रोतोलीउबिए* को संकलित करने की यही पद्धति है। यह पिछले संस्करण के उदाहरण का अनुसरण करेगी, साथ ही उसे पूरक भी करेगी, ताकि इस पाठ के प्रेमियों को ऐसा कुछ भी न छूट जाए जो उन्हें ईश्वर के अनुसार जीवन जीने में मार्गदर्शन करने के लिए उपयोगी साबित हो सके। लेखों को शामिल करने के तरीके के संबंध में, हम यह बताना अपना कर्तव्य समझते हैं कि सभी लेख पूरे नहीं शामिल किए जाएँगे। अधिकांश को उद्धरणों के रूप में कहीं अधिक सुविधाजनक रूप से प्रस्तुत किया गया है। यह कभी-कभी एक व्यवस्थित क्रम में, और अन्य समयों में ऐसे क्रम के बिना, व्यक्तिगत कथनों के रूप में किया जाएगा। हालाँकि, स्वयं धर्मपिता की शिक्षाओं को हमेशा उनके अपने शब्दों में प्रस्तुत किया जाएगा। अब हम पाठकों के समक्ष *डोब्रोतोलीउबिए* का पहला खंड, उसके नए संस्करण में प्रस्तुत करते हैं। इसमें शामिल हैं:

1) संत एंथनी के लेख; 2) संत मकरियस के प्रवचनों से अंश; 3) इशैया तपस्वी के वचन; 4) संत मार्क तपस्वी के निर्देश; 5) एवाग्रियस भिक्षु के लेख। *डोब्रोतोलीउबिए* के ग्रीक संस्करण में भी लेख इसी क्रम में आते हैं। हमारे संस्करण में, सेंट कैसियन, जो वहाँ इवाग्रियस और सेंट मार्क के बीच आते हैं, को अगले खंड के लिए स्थगित कर दिया गया है। हम इस संग्रह को इस सच्ची आशा के साथ प्रस्तुत करते हैं कि आध्यात्मिक पठन के प्रेमी इसमें वही पाएंगे जो संकलक ने उन्हें बताना चाहा था।

संत एंथनी महान

संत एंथनी महान के जीवन और लेखन पर कुछ शब्द

संत एंथनी महान, जिन्होंने मरुभूमि में एकांत के तपस्वी जीवन की शुरुआत की, अपने जीवन के माध्यम से ईश्वर की इस प्रकार की सेवा के आदर्श को साकार करते हैं, और साथ ही उस मार्ग को भी दर्शाते हैं, जिसे हर आत्मा, यदि वह चाहे, तो ईसाई धर्म द्वारा निर्धारित पृथ्वी पर हमारे लिए संभव पूर्णता की ओर अवश्य अपनाना चाहिए। संत एंथोनी के जीवन का वर्णन संत अथेनासियस महान ने किया है (देखें उनके कार्य, खंड 3), और यह हमारे

चेती मिनैई में 17 जनवरी के अंतर्गत लगभग पूर्ण रूप से शामिल है। विवरण जानने की इच्छा रखने वाले किसी भी व्यक्ति को उस स्रोत का संदर्भ लेना चाहिए। यहाँ, केवल उनके जीवन की सामान्य विशेषताओं की रूपरेखा दी गई है। सेंट एंथनी को उस कार्य के लिए ईश्वर का बुलावा, जो उन्होंने पूरा किया, बचपन में ही उनमें स्पष्ट था। उनका शांत, हंसमुख स्वभाव, जो एकांत की ओर झुका हुआ था, उन्हें अपने साथियों के शोर-शराबे वाले खेल और शरारतों से दूर रखता था और अपने माता-पिता की सतर्क निगरानी में घर पर ही रखता था, जो उन्हें अपनी आँख के तारे की तरह संभालते थे। इस प्रकार वे दूसरों से अलग-थलग रहते हुए बड़े हुए, और घर से केवल चर्च जाने के लिए ही बाहर निकलते थे। इस तरह के स्वभाव और जीवन शैली के साथ, बपतिस्मा में प्राप्त ईश्वर की कृपा बिना किसी विशेष प्रयास के, उसकी आत्मा को विकसित करने के लिए निर्बाध रूप से काम करती रही। जैसा कि सेंट अथानासियस कहते हैं, यह स्वाभाविक ही था कि वह कम उम्र में ही ईश्वर के अनुसार जीवन जीने की मिठास का अनुभव करे और एक दिव्य लालसा से भर जाए। घर पर ऐसे जीवन में कोई बाधा न पाकर – क्योंकि उसके माता-पिता भी उसी भावना के थे – संत एंथनी ने तब तक घर छोड़ने की कोई इच्छा नहीं दिखाई जब तक उसके माता-पिता जीवित थे, आ ने उसे दैनिक जीवन की अनिवार्य चिंताओं से मुक्त कर दिया। लेकिन जब वे परमेश्वर के पास चले गए, तो सबसे बड़े होने के नाते, उसे घर का प्रबंधन करने और अपनी बहन का भरण-पोषण करने की जिम्मेदारी लेनी पड़ी। इससे उसे तुरंत ही परमेश्वर में जीवन और सांसारिक चिंताओं से भरे जीवन के बीच का बड़ा अंतर महसूस हुआ, और इसने सब कुछ पीछे छोड़कर केवल परमेश्वर के लिए जीने की उसकी इच्छा के लिए एक ठोस नींव रखी। इस मानसिक अवस्था में चर्च में प्रभु के ये वचन सुनने को मिले: *'यदि तुम सिद्ध होना चाहते हो, तो जाओ, अपनी संपत्ति बेचकर गरीबों को दे दो, और तुम्हारे लिए स्वर्ग में खजाना होगा'* (मत्ती 19:21) – और फिर एक और: *'कल की चिंता मत करो'* (मत्ती 6:34), इस इच्छा को ईश्वर की मुहर से सील कर दिया; क्योंकि उन शब्दों में उन्होंने अपने अंतरात्मा के प्रश्नों का ईश्वर का उत्तर सुना, और साथ ही अपने हृदय की गूढ़ इच्छाओं और आकांक्षाओं की पूर्ति के लिए ईश्वर की आज्ञा और आशीर्वाद भी प्राप्त किया। – उन्होंने अटूट संकल्प के साथ मन बना लिया, और, अपनी सारी संपत्ति दान कर देने के बाद, केवल परमेश्वर के लिए जीने लगे। संत एंथनी ने अपने तपस्या जीवन के पहले वर्ष उस समय के अन्य ज्ञात तपस्वियों की तरह ही बिताए, उनसे सब कुछ सीखा। यह सर्वविदित है कि त्याग का तपस्वी जीवन, जिसमें सभी सांसारिक चिंताओं को त्यागकर, कोई व्यक्ति केवल इस बात में लगा रहता है *कि 'प्रभु को कैसे प्रसन्न किया जाए'* (1 कुरिन्थियों 7:32), को परमेश्वर की कलीसिया की नींव से ही इसकी संरचना में एक आवश्यक आवश्यकता के रूप में स्थापित किया गया है, और इसने अपने पहले मौलिक नियम पवित्र प्रेरितों से प्राप्त किए। लेकिन शुरुआत में, तपस्वी – जैसा कि उन लोगों को कहा जाता था जो इस जीवन शैली को अपनाते थे, जिन्होंने संसार और सांसारिक चिंताओं को त्याग दिया था – अपने ही घरों में रहते थे, बस किसी एकांत कोने में चले जाते थे, जहाँ वे प्रार्थना, ईश्वर के चिंतन, उपवास, जागरण और सभी प्रकार के तपस्वी प्रयासों में खुद को समर्पित करते थे। हालाँकि, जैसे-जैसे समय बीतता गया, और ईसाई धर्म का दायरा और विश्वासियों की संख्या दोनों बढ़ी, कई तपस्वियों ने अपने परिवारों को छोड़ना शुरू कर दिया और, शहर या गाँव से दूर हटकर, निर्जन स्थानों में एक एकांत जीवन व्यतीत किया—कभी किसी प्राकृतिक गुफा में, किसी सुनसान कब्र में, या उस उद्देश्य के लिए विशेष रूप से निर्मित एक छोटी कोठरी में। संत एंथोनी के समय तक, सबसे उत्साही तपस्वी मुख्य रूप से इसी तरह रहते थे। महान संत एंथोनी भी, उनका अनुकरण करने के लिए उत्सुक थे। तपस्वी जीवन की शुरुआत नवोदित काल होता है। संत एंथोनी ने उन तपस्वियों के अनुकरण और आज्ञाकारिता में यह अवधि बिताई। – नवोदित जीवन का सार सबसे अनुभवी लोगों के मार्गदर्शन में, हृदय में ईसाई सद्गुणों को स्थापित करने और तपस्या के जीवन के आचरण को आत्मसात करने में निहित है। सेंट एंथनी ने अपने पालन-पोषण के माध्यम से ईसाई सद्गुण प्राप्त कर लिए थे; अब उन्हें केवल यह सीखना था कि ईश्वर में जीने की आकांक्षा रखने वालों के लिए कौन से कर्म आवश्यक थे, और उन्हें कैसे किया जाना चाहिए। इस उद्देश्य के लिए, वह उस समय के प्रसिद्ध तपस्वियों से मिलता, उनसे काम करने के तरीके पूछता, उन्हें सीखता और इस ज्ञान को, मानो कोई पुरस्कार हो, अपने एकांतवास में वापस ले आता। इस प्रकार, जैसा कि संत अथेनासियस ने कहा है, उन्होंने एक बुद्धिमान मधुमक्खी की तरह हर जगह से आध्यात्मिक मधु इकट्ठा किया, और उसे अपने हृदय में एक छत्ते की तरह संजोया। एक से उन्होंने भोजन में संयम, खुले में सोने, और लंबी जागरण की कठोरता सीखी; एक दूसरे से उन्होंने प्रार्थना के प्रति अथक भक्ति, अपने विचारों पर ध्यान और ईश्वर के चिंतन को सीखा; तीसरे से उन्होंने परिश्रम, नियमों के प्रति निष्ठा और धैर्य का उदाहरण लिया; और उन सभी से उन्होंने प्रभु मसीह में दृढ़ विश्वास और सभी के लिए भाईचारे के प्रेम की वही भावना ग्रहण की, और उन सभी संतों से मिली विशेषताओं को अपने भीतर संयोजित करने का प्रयास किया, जिनसे वे मिले थे। अपने जीवन की तुलना दूसरों से किए बिना और बिना किसी बाहरी मार्गदर्शन के, किसी ने भी तपस्या के उच्चतम स्तर को प्राप्त नहीं किया। संत एंथनी ने अपना जीवन इन बुजुर्गों को सौंप दिया, और उनके मार्गदर्शन में उन्हें पूर्णता के

अटूट पथ पर ले जाया गया। उन्होंने नवोदित प्रशिक्षण की इस अवधि में पंद्रह साल बिताए, गाँव के बाहरी इलाके में एक कब्र में रहते हुए—पहले बहुत दूर नहीं, और बाद में और दूर—जहाँ कोई गाँववाला जो उनके प्रति सच्चा होता था, उनके पास रोटी लेकर आता था—जो संत एंथनी का एकमात्र आहार था— – और हस्तशिल्प इकट्ठा करना: क्योंकि संत एंथनी अपने हाथों की मेहनत से जीवन यापन करते थे। उन्होंने अपना सारा समय इस हस्तशिल्प, प्रार्थना और धर्मग्रंथों के दैवीय सत्यों पर चिंतन में बाँट रखा था: जिस परमेश्वर के स्वर्गदूत उन्हें दिखाई दिए, उन्होंने इन प्रयासों में उनका उत्साह बढ़ाया, जब एक अवसर पर उनका मन निराशा से भारी हो गया था। उस समय उसका जीवन कैसे बीता, इस बारे में हम सोजोमेन (चर्च संबंधी इतिहास, पुस्तक 1, अध्याय 13) की गवाही का हवाला देते हैं, जो सेंट एंथोनी के बारे में लिखते हैं: 'यह महसूस करते हुए कि एक सदाचारी जीवन आदत के द्वारा सुखद हो जाता है, भले ही वह शुरू में कठिन हो, उसने और भी कठोर तपस्या के अभ्यास बनाए, और प्रत्येक बीतते दिन के साथ अधिक संयमी होता गया; और जैसे कि वह हमेशा फिर से शुरू कर रहा हो, उसने अपने उत्साह में नई ऊर्जा भरी; उसने परिश्रम के द्वारा शारीरिक सुखों पर अंकुश लगाया, और आत्मा के भावों के विरुद्ध ईश्वर-भय से घृणा के साथ स्वयं को सशस्त्र किया। उसका भोजन रोटी और नमक था, उसका पेय पानी था, और उसका भोजन का समय सूर्यास्त था; हालांकि, अक्सर वह दो या दो से अधिक दिनों तक भूखे रहते थे; वे, कहा जा सकता है, पूरी रात जागते रहते और प्रार्थना के साथ दिन का स्वागत करते, और यदि वे सोते भी थे, तो केवल एक मिनट के लिए; वे ज़्यादातर नंगे ज़मीन पर लेटते थे, और धरती ही उनका बिस्तर थी। वह खुद को तेल लगाना, स्नान करना या अन्य सुख-सुविधाओं का आनंद लेने की अनुमति नहीं देते थे, क्योंकि ये शरीर को नरम और कमजोर बना देते थे। वह आलस्य सहन नहीं कर सकते थे, और उनके हाथ लगभग हमेशा काम में लगे रहते थे दिन"। संत एंथनी द्वारा अपनाया गया मार्ग इतना कठिन था। लेकिन, जैसा कि अच्छी तरह से जाना जाता है, ऐसा जीवन संघर्ष के बिना नहीं गुजरता, ठीक वैसे ही जैसे छाया के बिना प्रकाश नहीं होता। यदि हमारे भीतर कोई पाप न होता, और हमारा कोई शत्रु न होता, तो केवल अच्छाई हमारे भीतर प्रकट होती और बिना किसी बाधा के बढ़ती। लेकिन चूँकि दोनों मौजूद हैं और दोनों हम पर अपना दावा जताते हैं, कोई भी उनके खिलाफ संघर्ष किए बिना आगे नहीं बढ़ पाया है। – स्वतंत्र रूप से आगे बढ़ने के लिए हमें उन्हें कमजोर करना होगा और उन पर विजय प्राप्त करनी होगी। इसके बिना, वे सभी किसी भी इच्छुक व्यक्ति की प्रगति में बाधा डालेंगे, चाहे वह कोई भी हो। यही कारण है कि ईश्वर की कृपा, जिसने संत एंथनी की आत्मा में कार्य किया, उसे युद्ध में ले गई, ताकि उसे—भट्टी में सोने की तरह—परीक्षित करके उसकी नैतिक दृढ़ता को मजबूत किया जा सके और अपने कार्यों को स्वतंत्र रूप से करने का अवसर मिल सके। शत्रु को प्रवेश की अनुमति मिल गई, जबकि तपस्वी को गुप्त सहायता से संभाला गया। संत अथानासियस इस संघर्ष का विस्तार से वर्णन करते हैं। उन्होंने कहा कि शत्रु के बाण बहुत शक्तिशाली थे; लेकिन उस वीर योद्धा ने उन्हें बिना किसी हिचकिचाहट के खारिज कर दिया। शुरुआत में, दुश्मन ने उसे दुनिया छोड़ने का पछतावा दिलाकर अस्थिर करने की कोशिश की, उसे एक ओर उसकी कुलीन वंशावली—हालांकि अनावश्यक होने पर भी तिरस्कृत—उसकी काफी संपत्ति—जो व्यर्थ में ही बर्बाद हो गई—और जीवन की सभी सुख-सुविधाओं—जो बेकार ही अस्वीकार कर दी गईं, की याद दिलाई, – और विशेष रूप से उसकी बहन, जो अजनबियों के हवाले हो कर, उसके अपने सहारे, देखभाल और आराम के बिना कुछ भी न बची थी – और दूसरी ओर, उस कठोर जीवन की कठिनाइयाँ और क्रूरता जिसे उसने अपनाया था, उसके शरीर का अपरिचित स्वभाव और नाजुकपन, जो ऐसी तकलीफों को सहने में असमर्थ प्रतीत होता था, और इस जीवन की लंबाई, – ऐसा कि इसका कोई अंत दिखाई नहीं दे रहा था – लोगों से दूर, बिना किसी सांत्वना के, अनवरत आत्म-क्लेश में। इन सुझावों के साथ, शत्रु ने विचारों का एक प्रचंड तूफान खड़ा कर दिया; लेकिन वह न केवल संत एंथनी की दृढ़ता से परास्त हुआ, जो अपने उद्देश्य और संकल्प में अडिग खड़े थे, बल्कि उनके इस महान विश्वास से भी पराजित हुआ कि जो कुछ भी उन्होंने त्यागा और सहा था उस सब के मुकाबले कुछ भी नहीं था जो ईश्वर ने संसार को त्यागने वालों के लिए तैयार की हैं, क्योंकि जब कोई सभी सांसारिक और भौतिक बंधनों से मुक्त होता है तो उसे प्रसन्न करना आसान होता है – और वह अपनी अथक प्रार्थनाओं से इतना आगे निकल गया कि वे उसके हृदय में सबसे मधुर आध्यात्मिक सांत्वनाएँ ले आईं। इस मोर्चे पर पराजित होकर, दुश्मन उस युवा योद्धा पर दूसरे मोर्चे से हमला करता है; उस दिशा से जिससे वह पहले ही युवाओं को पतन के लिए तैयार करने का आदी था – वह कामुक वासना के साथ संघर्ष करने लगता है, जो उसे रात में परेशान करती है और दिन में विचलित करती है। यह संघर्ष इतना तीव्र और लंबा था कि यह बाहरी लोगों की नज़रों से भी नहीं छूटा। दुश्मन ने अशुद्ध विचार डाले, जबकि संत एंथनी ने प्रार्थना से उन्हें दूर भगाया; पहला शरीर को आग में झोंकता था, जबकि दूसरा उपवास, जागरण और हर तरह की आत्म-क्लेश से उसे ठंडा करता था; पहला रात्रि में महिलाओं का रूप धारण करता था, और मोहक इच्छाओं को जगाने के लिए हर संभव उपाय करता था, जबकि दूसरा दुख में आनंदित होता था और परलोक की सुंदरताओं पर मनन करके, साथ ही प्रभु यीशु मसीह में हमारे स्वभाव को प्राप्त होने वाली गरिमा

के तीव्र बोध द्वारा, उस छलकपट भरे आकर्षण को दूर कर देता था; शापति ने आनंद से मठिास की अनुभूतजिगाई, जबकधिन्य ने इसके वरिुद्ध शाश्वत अग्नमिें और अटूट कीड़ों से होने वाले यातना के भयंकर कड़वाहट की अनुभूतको खड़ा कयिा - और अछूता रहा। हमलों की कष्टप्रद और भयानक प्रकृतनि अंततःसंघर्ष कर रहे व्यक्तमिें सभी अशुद्ध प्रवृत्तयिों के प्रतघिृणा और उनके प्रततीव्र क्रोध भर दयिा, जसिके साथ तीव्र चड़िचड़िाहट भी थी; इसने दुश्मन को उसके पास आने की कसिी भी संभावना से वंचति कर दयिा, या यहां तक कदिूर से भी इस तरह उसे लुभाने या परेशान करने की संभावना से भी वंचति कर दयिा। क्योंककािमुक प्रवृत्तयिों के प्रतघिृणा और नफरत की भावनाएँ आग के तीर हैं जो दुश्मन को झुलसा देते हैं। इस प्रकार सर्व-चतुर एक इस मामले में भी उस युवक से पराजति हुआ, जो एक भावुक शरीर लएि हुए था, और वह अपमानति होकर पीछे हट गया, क्योंकप्रिभु स्वयं परमेश्वर के सेवक की सहायता करने आए, जन्हिोंने हमारे लएि शरीर धारण कयिा और उसमें शत्रु की सारी शक्तको कुचल दयिा, जैसा कहिर सच्चा तपस्वी प्रेरति के साथ बोलते हुए स्वीकार करता है: 'यह मैं नहीं, बल्कमिेरे साथ जो अनुग्रह है' (1 कुरन्थियिों 15:10)। फरि भी शत्रु के तीर अभी समाप्त नहीं हुए थे। युवा योद्धा पर ईश्वर की सुरक्षा को देखकर, और यह जानते हुए कयिह केवल वनिम्र लोगों को ही ढकती है, शत्रु उसके भीतर अहंकार और घमंड को जगाकर उससे इस सुरक्षा को छीनने की एक योजना बनाता है। इस उद्देश्य के लएि, वह एक छोटे—एक काले—लड़के के रूप में प्रकट होता है, और, दखिावटी वनिम्रता से, संत एंथनी से कहता है: 'तुमने मुझे हरा दयिा है,'—यह मानते हुए क, अपने लएि वजिय का दावा करने के बाद, वह घमंड से भर जाएगा और इस प्रकार उस परमेश्वर के क्रोध को भड़काएगा जो उसकी मदद कर रहा था। लेकनि संत एंथनी ने उससे पूछा: 'तुम कौन हो?' उसने जवाब दयिा: 'मैं व्यभचिार की आत्मा हूँ, जसिका काम कामवासना को भड़काना और लोगों को कामुक पाप में ले जाना है।' मैंने उन कई लोगों को बहकाया है जन्हिोंने ब्रह्मचर्य का व्रत लयिा था; मैंने कई लोगों को, जन्हिोंने लंबे समय तक अपने शरीर को वश में रखा था, पतन की ओर धकेला है; लेकनि तुम्हारे द्वारा मेरे सभी जाल फाड़े गए हैं, मेरे तीर टूट गए हैं—और मैं पराजति हो गया हूँ।' फरि संत एंथनी ने अपने उद्धारकर्ता, परमेश्वर का धन्यवाद करते हुए पुकारा: 'प्रभु मेरा सहायक है; मैं अपने शत्रुओं को देखूँगा' (भजन संहति 117:7), और फरि, अपने शत्रु को नडिर होकर घूरते हुए, उसने कहा: 'मेरे ईश्वर ने तुम्हें मुझे काले रूप में प्रकट होने दयिा है ताकतिुम अपने दुष्ट इरादों के अंधकार को प्रकट करो—और एक युवक के रूप में अपनी शक्तहीनता को उजागर करो। इसलएि, तुम हर तरिस्कार के योग्य हो। ये शब्द सुनते ही, वह आत्मा, मानो आग से झुलस गया हो, भाग गया, और फरि कभी धन्य एंथनी के पास नहीं आया। वासनाओं पर वजिय व्यक्तको नर्लिप्तिता के करीब लाती है; और जसि हद तक नर्लिप्तिता स्थापति होती है, वह अपने साथ मन की शांतलिाती है: और प्रार्थना और ईश्वर के चतिंन से प्राप्त मीठी अनुभूतयिों के साथ आंतरकि शांतहिृदय में आध्यात्मकि ऊष्मा जगाती है, जो आत्मा, मन और शरीर की सभी शक्तयिों को स्वयं में समाहति कर, व्यक्तको अंतर्मुखी बनाती है, जहाँ, नविास करने के बाद, वह एकमात्र ईश्वर के साथ अकेले रहने की एक अदम्य आवश्यकता महसूस करता है। ईश्वर की ओर यह अप्रतरिोध्य आंतरकि आकर्षण आध्यात्मकि प्रगतकिा दूसरा चरण है; और संत एंथोनी अब इसी चरण तक पहुँच चुके हैं। अब तक, उन्होंने अपना अधकिांश समय अकेले बतिाया था; फरि भी गाँव का उनका सच्चा दोस्त अक्सर उनसे मलिने आता था, जबकवि स्वयं कभी बुजुर्गों के पास, तो कभी दवि्य सेवाओं, वशिेष रूप से 'लटिरजी' (Liturgy) के लएि गाँव के चर्च जाते थे। इन सब के साथ एक प्रकार का वचिलन भी था, चाहे कोई भी इसे दूर करने की कतिनी भी कोशशि कर ले। संत एंथोनी की आत्मा, भीतर से थक जाने के बाद, पूर्ण एकांत की मांग करने लगी, ताकवि कुछ भी न देखे और न सुने। जैसा कपिहले बताया गया है, आत्मा अपने आप, तपस्या के सीधे मार्ग से इस अवस्था तक पहुँचती है; लेकनि इस नर्णायक मोड़ को आत्म-त्याग की कुछ प्रबल प्रवृत्तयिों द्वारा तेज और नर्णायक गतदिी जाती है। संत एंथोनी को ऐसे ही एक आवेग का अवसर राक्षसों द्वारा उन पर एक स्पष्ट हमले के रूप में मलिा। एक शुद्ध आत्मा पर वचिारों के माध्यम से कार्य करने की क्षमता खोने के बाद, राक्षस बाहर से कार्य करना शुरू कर देते हैं; वे दृश्यमान रूप से प्रकट होते हैं और तपस्वी को वह सब कुछ प्रस्तुत करते हैं जसिसे उन्हें उम्मीद होती है कवि उसे नुकसान पहुँचाएगा या उसके अच्छे इरादों को हलि देगा। – फरि भी, ईश्वर की कृपा तपस्वी की आध्यात्मकि वृद्धकि लएि ऐसा होने देती है, जसिसे उसके लएि एक उच्चतर स्तर का मार्ग खुल जाता है और, साथ ही, उसे बाद में स्वयं प्रलोभन देने वाली आत्माओं पर अधकिार करने का एक नश्चिति अधकिार भी प्रदान करती है। सेंट एंथनी के साथ ठीक यही हुआ था। इस वृत्तांत का सबसे महत्वपूर्ण क्षण तब है जब सेंट एंथनी, गाँव के चर्च के बरामदे में होश में आकर, और मुश्कलि से साँस लेते हुए, अपने दोस्त से कहते हैं: 'मुझे मेरे आश्रम वापस ले जाओ।' क्योंकइिसके द्वारा उन्होंने जीवन के लएि मृत्यु के प्रतअिपनी समर्पण भावना व्यक्त की, जसिे उन्होंने अपने भीतर ईश्वर को प्रसन्न करने वाला एकमात्र जीवन के रूप में पहचाना। यह वास्तव में प्रभु के लएि मरने के समान था: क्योंकइिसके लएि उसकी तत्परता पूर्ण थी। प्रभु के लएि मरने और उसे प्रसन्न करने की तत्परता एक

सर्व-विजयी हथियार है: क्योंकि इसके अलावा और किस चीज़ से इसे धारण करने वाले को प्रलोभित या डराया जा सकता है? इसे तपस्या की शुरुआत और उसके पूरे मार्ग में शक्ति का स्रोत माना जाता है। प्रभु और उद्धारकर्ता—हमारे तपस्या के आदर्श—ने अपने पृथ्वी पर जीवन के सभी दिनों में मृत्यु को अपने सामने देखा, लेकिन गेथ्सेमनी के बगीचे में, अपने प्रार्थनापूर्ण संघर्ष के दौरान, उन्होंने अंततःअपनी मानवता के माध्यम से उस पर विजय प्राप्त की; क्रूस पर उनके दुख और मृत्यु ने उस बात को पूरा किया जो वहाँ कही गई थी। इसके बाद महिमामय पुनरुत्थान से पहले तीन दिनों का विश्राम हुआ। जो भी आत्माएँ प्रभु के पदचिन्हों पर चलती हैं, वे इस पथ पर चलती हैं। इसमें पहला कदम आत्म-त्याग है; लेकिन इसकी शुरुआत चाहे कितनी भी छोटी क्यों न हो, इसमें हमेशा मृत्यु के लिए तत्परता की एक मात्रा होती है। फिर आत्म-त्याग बढ़ता है—और इस तत्परता में भी वृद्धि होती है; या यूँ कहें कि यह तत्परता ही आत्म-त्याग का सार है। जो कोई भी उस तत्परता की उस डिग्री तक पहुँचता है जो उद्धारकर्ता के पास बगीचे में थी, वह तुरंत आत्मा में क्रूस पर चढ़ेगा, और फिर प्रभु यीशु की महिमा में एक आध्यात्मिक सब्बाथ का अनुभव करेगा, जिसके बाद एक आध्यात्मिक पुनरुत्थान होगा। – सेंट एंथोनी की आत्मा में ठीक यही अब पूरा हुआ है। अपने दोस्त से यह कहकर कि उसे उसी जगह वापस न ले जाए जहाँ उसे इतना सताया गया था, उन्होंने यह दिखाया कि उनकी आत्मा उसी उद्धारकर्ता की आत्मा के समान थी जब, बगीचे में प्रार्थना करने के बाद, उन्होंने अपने शिष्यों से कहा: *'चलो चलते हैं: देखो, जो मेरा विश्वासघात करता है, वह पास ही है!'* – इसके तुरंत बाद उन्होंने दूरस्थ रेगिस्तान में तपस्या की और वहाँ मौन में बीस वर्ष तक रहे – यह उनकी सूली पर चढ़ाए जाने और सबाथ का पालन करने के समान था – आत्मा में। शैतानों द्वारा दी गई यातनाओं से सेंट एंथोनी के उबरते ही, वह आबाद जगहों से दो-तीन दिन की यात्रा पर रेगिस्तान के लिए निकल पड़े, और वहाँ एक पुराने, सुनसान मंदिर में खुद को बंद कर लिया, जहाँ पानी का एक कुआँ था, जबकि उनका एक दोस्त हर छह महीने में उन्हें रोटी पहुँचाता था। किसी ने नहीं देखा कि उन्होंने यहाँ कितनी कठिनाइयों और कारनामों को सहा, और न ही उनके साथ क्या हुआ। लेकिन जिस अवस्था में वे अपने एकांतवास से बाहर निकले, उसे देखकर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि यह वह समय था जब उनकी आत्मा को पवित्र आत्मा द्वारा आकार दिया जा रहा था। यहाँ, वही हुआ जो एक कीटपतंगा के साथ होता है जब वह खुद को एक प्यूपा में लपेटता है। कोई नहीं देख पाता कि इस समय उसके साथ क्या हो रहा है; ऐसा लगता है मानो वह ठहर गया हो। फिर भी, इस बीच, प्रकृति की जीवन-दायक शक्ति उसके भीतर काम कर रही होती है - और उचित समय पर, प्यूपा से एक सुंदर, बहुरंगी तितली निकलती है। संत एंथनी के साथ भी ऐसा ही था। किसी ने नहीं देखा कि उसके साथ क्या हो रहा था; लेकिन ईश्वर की आत्मा, जो सभी के लिए अदृश्य थी, और जो स्वयं एंथनी के लिए भी अधिकांशतःअज्ञात थी, उसके भीतर एक नए मनुष्य का निर्माण कर रही थी, उसी की प्रतिमा में जिसने उसे बनाया था। जब इस सृष्टि का समय समाप्त हो गया, तो उसे विश्वासियों की सेवा करने के लिए आगे बढ़ने की आज्ञा दी गई। और वह पवित्र आत्मा के अनेक अनुग्रहकारी उपहारों से सुसज्जित होकर आगे बढ़ा। जिस प्रकार मसीह पिता की महिमा में मरे हुओं में से जी उठे, उसी प्रकार संत एंथनी अब आत्मा द्वारा नवीनीकृत जीवन में प्रकट हुए। इस प्रकार संत एंथनी की आत्मा का निर्माण समाप्त हुआ। उनका संपूर्ण बाद का जीवन उनके जीवन के पहले दो कालखंडों के दौरान बोए गए बीज से फल देने के अलावा और कुछ नहीं था। यह तीसरा काल था, चर्च की भलाई के लिए उनकी सेवा का समय – कह सकते हैं, उनका प्रेरित कार्य। यह सेवा कितनी फलदायी और दूरगामी थी, यह कोई भी संत अथानासियस के उनके जीवन के वृत्तांत से देख सकता है। उन्होंने अनुग्रह के सभी वरदानों के साथ सेवा की। और ऐसा कौन सा वरदान था जो उनके पास नहीं था? – उसमें चमत्कार करने का वरदान था, दुष्टात्माओं, प्रकृति की शक्तियों और जानवरों पर अधिकार का वरदान था, विचारों को परखने का वरदान था, दूर की घटनाओं को देखने का वरदान था, प्रकटवाक्य और दर्शन का वरदान था। लेकिन इन सभी वरदानों में, सबसे अधिक फलदायी और अपने अनुप्रयोग में दूरगामी वरदान वचन का वरदान था। – और इसी वरदान से उन्होंने अपने अन्य सभी वरदानों की तुलना में अपने छोटे भाइयों की अधिक सेवा की। संत अथेनासियस लिखते हैं कि ईश्वर ने संत एंथनी को एक शक्तिशाली वचन दिया जो हृदय की गहराइयों तक पहुँचता था। और वह सभी के लाभ के लिए इतनी शक्ति के साथ बोलना जानते थे कि कई कुलीन वर्ग के लोग – सैन्य और नागरिक दोनों, महान संपत्ति वाले पुरुष – सांसारिक जीवन के बोझ को त्यागकर भिक्षु बन गए। और वास्तव में, कौन, दुख में आकर, सांत्वना पाए बिना लौटा? कौन, मृतकों के लिए आँसुओं में आकर, तुरंत रोना बंद नहीं कर दिया? कौन, क्रोध में आकर, उस क्रोध को नम्रता में नहीं बदल गया? कौन सा भिक्षु, जो आलस्य में पड़ गया था, उसके पास आने के बाद पुनःअपने तपस्वी प्रयासों में उत्साही और दृढ़ नहीं हो गया? कौन सा युवक, संत एंथनी को देखकर और उनके वचनों पर ध्यान देकर, सांसारिक सुखों का त्याग नहीं कर गया और पवित्रता से प्रेम करना शुरू नहीं कर दिया? कितनी ही युवतियाँ, जिनके पहले से मंगेतर थे, केवल दूर से संत एंथोनी की एक झलक पाकर ही, मसीह की वधूओं की कतार में शामिल हो गईं? इस गवाही से यह स्पष्ट है कि संत एंथोनी ने अपनी ईश्वर-प्रदत्त बुद्धि का स्रोत नहीं

छिपाया। वास्तव में, लोग मुख्य रूप से सुनने, सत्य का वचन प्राप्त करने और अपनी आवश्यक मार्गदर्शन पाने के लिए उनके पास आते थे। और उन्होंने प्रेरित के उदाहरण का अनुसरण करते हुए, सभी को सिखाया, फटकार लगाई और प्रोत्साहित किया। कभी-कभी उनके शब्द बाढ़ की तरह बहते थे, जैसे कि वे शब्द जो संत अथानासियस ने अपनी जीवनी में संरक्षित किए हैं; कभी-कभी उन्होंने कम लंबे प्रवचन दिए, जैसे कि उनके बीस संक्षिप्त कथन; लेकिन अक्सर वे अर्थ और शक्ति से परिपूर्ण, संक्षिप्त सूत्रों तक ही सीमित रहते थे। ये अनगिनत संक्षिप्त कथन बाद में मौखिक रूप से प्रसारित हुए, जो एक तरह से तपस्या का एक जीवंत संहिता बन गए, और अंततः धर्मपितामहों के स्मरणीय कथनों के संग्रह में शामिल हो गए। कभी-कभी, संत एंथनी अपने आध्यात्मिक बच्चों, विभिन्न मठों के भिक्षुओं को पत्र भी लिखते थे, जिनमें वे या तो मसीह यीशु में जीवन की सामान्य विशेषताओं का वर्णन करते थे या भाइयों की विशिष्ट कमजोरियों पर मार्गदर्शन देते थे। संत एंथनी के वचनों से जो कुछ भी लिखा गया और संकलित किया गया, और जो कुछ भी उन्होंने लिखा, वह आध्यात्मिक पोषण की तलाश में रहने वाली आत्मा के लिए समृद्ध पोषण प्रदान करता है। उनकी जीवनी में शामिल विस्तृत प्रवचन के अलावा, संतों को लिखे बीस पत्र भी हमें प्राप्त हुए हैं, सद्गुणों और दुर्गुणों पर 20 संक्षिप्त प्रवचन, नैतिक आचरण पर 170 अध्याय, भिक्षुओं के लिए उनका नियम और उसके दो परिशिष्ट, और उनके कथन तथा उनके बारे में विवरणों की एक बड़ी संख्या—जो हमेशा आध्यात्मिक पोषण देने वाले और शिक्षाप्रद हैं—विभिन्न पैट्रिस्टिक (चर्च-पिता संबंधी) कृतियों में बिखरे हुए हैं। उनके पत्र और कथन, रूसी में अनुवादित, *क्रिश्चियन रीडिंग* के शुरुआती वर्षों में प्रकाशित हुए थे – इसके अध्याय *डोब्रोतोल्बिए* का हिस्सा हैं, जबकि सूत्र और वृत्तांत *मेमोरेबल टेल्स* के पहले खंड का गठन करते हैं। मूल में, यह सब *Patrologiae graecae*, खंड 40 – मिग्ने में पाया और पढ़ा जा सकता है, जिससे इस संग्रह में शामिल सभी सामग्री का अनुवाद किया गया है। जो लोग इस प्रकार के पठन का आनंद लेते हैं, उनके ध्यान के लिए निम्नलिखित प्रस्तुत किया गया है:

1. पत्रों और प्रवचनों से अंश। बिंदु 1–15 संत अथेनासियस की *संत एंथनी का जीवन* से लिए गए हैं। निर्देश 16–68 पवित्र पिता के पत्रों से लिए गए हैं। निर्देश 69–82 भिक्षुओं को दिए गए उनके 20 प्रवचनों से लिए गए हैं।

2. सदाचार पर 170 अध्याय।

3. संन्यासी जीवन का नियम। मिग्ने की *Patrologiae graecae* के खंड 40 में, पृष्ठ 1065 पर, *Praecepta Antonii* को 80 बिंदुओं में प्रस्तुत किया गया है। इसके बाद उनके अपने *Spiritualia documenta regulis adjuncta* और *Admonitiones et documenta varia* आते हैं, जो दोनों स्पष्ट रूप से पिछले नियम के पूरक हैं। चूंकि इन शीर्षकों के अंतर्गत निहित सभी कथन, विषय-वस्तु और शैली दोनों में एक समान प्रकृति के हैं, इसलिए उन्हें यहाँ एक साथ लाया गया है और 'संन्यासी के जीवन का नियम' शीर्षक के अंतर्गत, संन्यासी के जीवन के प्राकृतिक क्रम का पालन करते हुए, विशिष्ट शीर्षकों के तहत व्यवस्थित किया गया है।

४. संत एंथनी महान के कथन और उनके बारे में विवरण। इस प्रकार के कई कथन और विवरण *दोस्तो-पामी* में शामिल हैं। कहानियाँ; लेकिन इनके अलावा, अन्य भी हैं जिन्हें *Patr. graec.* के उसी 40वें खंड और हमारे *Alphabetical Paterikon* में उद्धृत किया गया है; कुछ अन्य को कैसियन ने उद्धृत किया है; और पैट्रिस्टिक संग्रहों के विभिन्न लेखों में भी कई हैं। इन्हें जहाँ-तहाँ मिलने पर बेतरतीब ढंग से प्रस्तुत करने के बजाय, इन्हें पिछले नियमों के समान, एक निश्चित क्रम में यहाँ व्यवस्थित किया गया है। यह खंड संसार का त्याग करने से संबंधित कथनों के साथ शुरू होता है, जो तपस्वी जीवन की शुरुआत को चिह्नित करता है, जिसके बाद अन्य सभी कथन और कहानियाँ तपस्वी के जीवन के क्रम में दी गई हैं।

५. संत एंथनी महान के कुछ कथनों के संबंध में शिष्यों के प्रश्न और वृद्ध के उत्तर।

संत एंथनी महान की शिक्षाएँ।

1. मसीह में जीवन पर निर्देश, जो संत अथेनासियस की जीवनी, उनकी 20 पत्रिकाओं और 20 कथनों से लिए गए उनके शब्दों से लिए गए हैं।

1. सबसे बढ़कर, यह सभी की सामान्य चिंता हो कि, एक बार शुरू करने के बाद, हम अपने कार्यों में सुस्ती न करें या हतोत्साहित न हों, और न ही कहें: 'हम अब बहुत समय से इस प्रयास में लगे हुए हैं'; बल्कि, हर दिन जैसे नए सिरे से शुरू करते हुए, हमें अपने उत्साह को बढ़ाना चाहिए। आने वाले युगों की तुलना में एक पूरा मानव जीवन बहुत छोटा है, और जो कुछ भी हमारे पास है वह शाश्वत जीवन के सामने कुछ भी नहीं है; इसलिए, जबकि इस संसार में हर

चीज़ उसकी कीमत पर बेची जाती है, और हर कोई समान के बदले समान का आदान-प्रदान करता है, शाश्वत जीवन का वादा तो एक तुच्छ मूल्य पर खरीदा जाता है। क्योंकि लिखा है: *'हमारे वर्षों की संख्या सत्तर वर्ष है; या, शक्ति के कारण, अस्सी वर्ष; फिर भी उनका समय परिश्रम और दुख ही है'* (भजन संहिता 89:10)। इस प्रकार, भले ही हम अस्सी, या सौ वर्षों तक अपने संघर्ष में डटे रहें, हम सौ वर्षों के बराबर समय तक राज्य नहीं करेंगे, बल्कि सौ वर्षों के बजाय, हम हमेशा-हमेशा राज्य करेंगे; इसके अलावा, पृथ्वी पर परिश्रम करने के बाद, हमें यह वादा है कि हमारा उत्तराधिकार पृथ्वी पर नहीं बल्कि स्वर्ग में है; और इसके अलावा - इस नश्वर शरीर को त्यागकर - हम एक अमर शरीर प्राप्त करेंगे। अत; हम हतोत्साहित न हों, न ही यह सोचें कि हमने (अपने संघर्ष में) बहुत समय तक सहन किया है, या हमने कुछ महान किया है; *'क्योंकि इस समय की कठिनाइयाँ उस महिमा के बराबर भी नहीं हैं जो हम पर प्रकट होने वाली है'* (रोमियों 8:18)।

२. इसी प्रकार, जब हम संसार को देखते हैं, तो हमें यह न सोचना चाहिए कि हमने किसी महान वस्तु का त्याग किया है, क्योंकि यह सारा संसार सम्पूर्ण स्वर्ग की तुलना में बहुत छोटा है। इसलिए, भले ही हम पूरे संसार के स्वामी हों और पूरे संसार का त्याग कर दें, तब भी इसमें स्वर्ग के राज्य के तुल्य कुछ भी नहीं होगा। क्योंकि जैसे कोई एक तांबे का द्रैक्मा त्यागकर सोने के सौ द्रैक्मा प्राप्त करता है, वैसे ही जो सारी पृथ्वी का स्वामी होकर उसे त्याग देता है, वह बहुत कम छोड़ता है, परन्तु सौ गुना अधिक प्राप्त करता है। हालाँकि, यदि पूरी पृथ्वी का मूल्य स्वर्ग के बराबर नहीं है, तो जो कोई कुछ दशांश छोड़कर जाता है, वह, मानो, कुछ भी नहीं छोड़कर जाता है। भले ही वह एक ही समय में एक घर और बहुत सारा सोना छोड़कर जाए, उसे न तो घमंड करना चाहिए और न ही हतोत्साहित होना चाहिए। दूसरी ओर, हमें यह विचार करना चाहिए कि यदि हम सद्गुण के लिए (जो हमारे पास है) उसे पीछे न छोड़ते, तो हम अपनी मृत्यु पर हर तरह से उसे वैसे ही पीछे छोड़ जाते जैसे हम अक्सर करते हैं—यहाँ तक कि उन लोगों को भी जिन्हें हम इसे छोड़ना नहीं चाहेंगे, जैसा कि उपदेशक ने भी उल्लेख किया है (उपदेशक 4:8)। तो फिर, हमें इन चीज़ों को सद्गुण के लिए क्यों नहीं त्याग देना चाहिए, ताकि बदले में हमें (स्वर्ग का) राज्य विरासत में मिल सके?

3. इसी कारण से, हम में से किसी को भी संपत्ति प्राप्त करने की इच्छा नहीं रखनी चाहिए। क्योंकि हमें उन चीज़ों को प्राप्त करने से क्या लाभ है जिन्हें हम अपने साथ नहीं ले जा सकते? हमारे लिए ऐसा गुण अर्जित करना बेहतर क्यों है जिसे हम अपने साथ ले जा सकते हैं, जैसे: विवेक, न्याय, पवित्रता, साहस, समझदारी, प्रेम, परोपकार, मसीह में विश्वास, धैर्य, और आतिथ्य? इन (सद्गुणों) को प्राप्त करके, हम उन्हें वहाँ हमारा इंतज़ार करते हुए पाएँगे, जो नम्र लोगों के लिए पृथ्वी पर हमारे लिए एक निवास स्थान तैयार कर रहे हैं।

४. हर कोई ऐसे विचारों से स्वयं को यह विश्वास दिलाए कि वह हतोत्साहित न हो, विशेषकर यदि उसे यह एहसास हो कि वह प्रभु का सेवक है और अपने स्वामी के लिए काम करना उसका कर्तव्य है। जैसे कोई दास यह कहने की हिम्मत नहीं करेगा: 'चूँकि मैंने कल काम किया है, मैं आज काम नहीं करूँगा'—और, बीते समय (काम में) को ध्यान में रखते हुए, वह आने वाले दिनों में (काम करना) बंद नहीं करता, बल्कि हर दिन, जैसा कि सुसमाचार में लिखा है, अपने मालिक को खुश करने और मुसीबत से बचने के लिए उतनी ही लगन दिखाता है: इसी प्रकार हमें भी हर दिन धैर्य के साथ अपने श्रम में लगे रहना चाहिए, यह जानते हुए कि यदि हम एक भी दिन आलस्य में बिताते हैं, तो (प्रभु) अतीत के हमारे श्रम के कारण हमें क्षमा नहीं करेंगे, बल्कि इस आलस्य के लिए हमसे क्रोधित होंगे। इसी प्रकार हमने यहेजकेल में भी सुना है (यहे. 18:26): *'जब कोई धर्मी व्यक्ति अपनी धार्मिकता से मुँह मोड़ता है और पाप करता है और मर जाता है, तो वह जिस पाप को उसने किया है, उसी के कारण मर जाएगा।'* इसी प्रकार यहूदा ने भी, एक ही रात में, बीते हुए समस्त समय की मेहनत को नष्ट कर दिया।

5. अतः हम अपने कार्यों में लग जाएँ और हतोत्साहित न हों। क्योंकि इस में प्रभु हमारी सहायता के लिए हैं, जैसा लिखा है: *'जो लोग परमेश्वर से प्रेम करते हैं, उनके लिए सब कुछ मिलकर भलाई के लिए काम करता है'* (रोमियों 8:28)। इस उद्देश्य के लिए, यानी ताकि हम हतोत्साहित न हों, प्रेरित की इस बात को ध्यान में रखना अच्छा है: *'मैं प्रतिदिन मरता हूँ'* (1 कुरिन्थियों 15:31)। क्योंकि यदि हम इस प्रकार जिएँ जैसे हम प्रतिदिन मर रहे हों, तो हम पाप नहीं करेंगे। इस कथन का अर्थ यह है कि, हर दिन जब हम जागें, तो हमें यह सोचना चाहिए कि हम शाम तक जीवित नहीं रहेंगे, और फिर, जब हम सोने की तैयारी करें, तो हमें यह सोचना चाहिए कि हम जागेंगे नहीं; क्योंकि, स्वभावत; हमारे जीवन की सीमा अज्ञात है, और यह भी ज्ञात नहीं है कि दैवीय व्यवस्था (Providence) इसे प्रत्येक दिन कितना समय देती है। यदि हम इस मानसिकता को अपनाएं और हर दिन इसी तरह जिएं, तो हम न तो पाप करेंगे, न किसी चीज़ की लालसा करेंगे, न किसी के प्रति क्रोध से भरेंगे, न ही पृथ्वी पर अपने लिए खजाना संचित करेंगे; बल्कि, हर दिन मृत्यु की आशा रखने वालों के रूप में, हम सांसारिक मोह से ऊपर रहेंगे और सभी को सब कुछ क्षमा कर देंगे; जहाँ तक पत्नी की वासना, या किसी अन्य अशुद्ध आनंद की लालसा का प्रश्न है, हम उसे क्षण भर के लिए भी

अपने भीतर नहीं पालेंगे—बल्कि उससे तुरंत ही मुंह मोड़ लेंगे, जैसे किसी क्षणभंगुर चीज़ से मुंह मोड़ा जाता है, और हमेशा '' (मृत्यु-संघर्ष में) की अवस्था में रहकर न्याय के दिन की प्रतीक्षा करेंगे। क्योंकि यातनाओं का गहरा भय और डर सुख की मिठास को नष्ट कर देता है और गिरने की प्रवृत्ति वाली आत्मा को पुनर्स्थापित करता है।

६. इसलिये, (मोक्ष का कार्य) आरम्भ करके और पहले ही सदाचार के मार्ग पर चल पड़कर, हम लक्ष्य की ओर बढ़ते चलें, ताकि हम उसे प्राप्त कर सकें (फिलि. ३:१४), और कोई भी लोत की पत्नी की तरह पीछे मुड़कर न देखे, विशेष रूप से जब प्रभु ने कहा: *'जो कोई हल पर हाथ रखकर पीछे मुड़ता है, वह परमेश्वर के राज्य के योग्य नहीं है'* (लूका 9:62)। हालाँकि, पीछे मुड़ने का मतलब (दुनिया को छोड़ देने पर) पछतावा करने और एक बार फिर सांसारिक बुद्धि का अभ्यास शुरू करने के अलावा और कुछ नहीं है।

7. जब आप सद्गुण के बारे में सुनें तो हतोत्साहित न हों, और न ही इस नाम से भ्रमित हों। क्योंकि यह विषय हमसे दूर नहीं है, न ही हमसे बाहर है, बल्कि हमारे भीतर है; और यह हमारी पहुँच में है, यदि हम चाहें। ग्रीक लोग विज्ञान का अध्ययन करने के लिए परदेशों के लिए निकलते हैं और समुद्र पार करते हैं; लेकिन हमें स्वर्ग के राज्य के लिए परदेशों में जाने या सद्गुण के लिए समुद्र पार करने की कोई आवश्यकता नहीं है: क्योंकि प्रभु ने यह स्पष्ट कर दिया है, कहते हुए, *'स्वर्ग का राज्य तुम्हारे भीतर है'* (लूका 17:21)। इसलिए, सद्गुण के लिए केवल इतना आवश्यक है कि हम इसकी इच्छा करें, क्योंकि यह हमारे भीतर है और हमसे ही उत्पन्न होता है। क्योंकि जैसे ही तर्कशील आत्मा अपनी स्वाभाविक अवस्था में होती है, उसी समय सद्गुण हमारे भीतर उपस्थित होता है। (आत्मा) अपनी स्वाभाविक अवस्था में तब होती है जब वह वैसी ही रहती है जैसी वह बनाई गई थी: और उसे बहुत अच्छा और धर्मी होने के लिए बनाया गया था। इसीलिए यहोशू ने, आज्ञाएँ देते समय, लोगों से कहा: *'इस्राएल के परमेश्वर यहोवा के साम्हने अपना हृदय सीधा करो'* (यहोशू 24:23); और यूहन्ना ने कहा: *'उसके लिए सीधा मार्ग तैयार करो'* (मत्ती 3:3)। आत्मा तब धार्मिक होती है जब उसका विवेक अपने प्राकृतिक क्रम में होता है। लेकिन जब वह इससे भटक जाती है और प्रकृति द्वारा आवश्यक क्रम को विकृत कर देती है, तो इसे आत्मा में बुराई कहा जाता है। इस प्रकार, यह कोई कठिन विषय (सद्गुण) नहीं है; क्योंकि यदि हम वैसे ही बने रहें जैसे हमें बनाया गया है, तो हम सद्गुण की अवस्था में हैं; लेकिन यदि हम दुष्ट इरादे पालते हैं, तो हमें सही मायने में दुष्ट कहा जाता है। यदि हमें यह सद्गुण बाहरी रूप से प्राप्त करना होता, तो यह निश्चित रूप से कठिन होता; लेकिन यदि यह हमारे भीतर है, तो हमें केवल बुरे विचारों से अपना बचाव करना है और अपनी आत्मा को प्रभु के प्रति रखना है, उसे एक ऐसे वचन के रूप में मानते हुए जो हमें उनसे मिला है, ताकि वह इसे अपनी रचना के रूप में पहचान सकें, यह देखते हुए कि यह वैसी ही है जैसी उन्होंने इसे बनाया है।

8. हमें (अपने ही विरुद्ध) प्रयास करना चाहिए कि क्रोध हम पर शासन न करे और वासना हम पर हावी न हो; क्योंकि लिखा है: *'परमेश्वर के धर्मी जन का क्रोध परमेश्वर का काम नहीं करता।'* और: *'वासना जब गर्भ धारण करती है, तो पाप को जन्म देती है; और पाप जब पूरा हो जाता है, तो मृत्यु को जन्म देता है'* (याकूब 1:20, 15)। परंतु ऐसा जीवन जीते हुए, हमें दृढ़ता से सतर्क रहना चाहिए, और, जैसा लिखा है: *'अपनी आत्मा की रक्षा बड़ी सावधानी से कर'* (नीतिवचन 4:23)। – क्योंकि हमारे भयानक और सर्व-चतुर दुश्मन हैं, दुष्ट दानव।

९. और उन्हीं के विरुद्ध हमें अपना संघर्ष करना है, जैसा कि पवित्र प्रेरित ने कहा है: *'क्योंकि हमारा संग्राम लोहू और □□□ से नहीं, बल्कि प्रधानताओं से, और अधिकारों से, और इस अंधकार की दुनिया के हाकिमों से, और स्वर्गीय प्रदेशों में दुष्टात्माओं की सेनाओं से है'* (इफसियों ६:१२)। हमारे चारों ओर हवा में उनकी एक बड़ी संख्या है, और वे हमसे बहुत दूर नहीं हैं। उनके बीच बहुत विविधता भी है। लेकिन उनकी प्रकृति और इन मतभेदों के बारे में बताने में बहुत लंबा समय लगेगा; इसके अलावा, यह हमसे अधिक उपयुक्त है कि हमारे से ऊपर वाले इसके बारे में बात करें। जहाँ तक हमारी बात है, हालाँकि, एक तत्काल आवश्यकता है, जिसमें कोई देरी नहीं हो सकती, और वह है केवल हमारे विरुद्ध उनकी योजनाओं को जानना।

10. तो, सबसे पहले, हम जानते हैं कि राक्षसों को उस अवस्था में नहीं बनाया गया था जो उन्हें उनका नाम देती है। क्योंकि परमेश्वर ने कुछ भी बुरा नहीं बनाया। वे भी अच्छे बनाए गए थे; लेकिन स्वर्गीय ज्ञान से गिरकर, और अब पृथ्वी के चारों ओर घूमते हुए, उन्होंने साक्षात्कारों द्वारा यूनानियों को धोखा दिया है; और, हम ईसाइयों से ईर्ष्या करके, उन्होंने स्वर्ग की हमारी उन्नति में बाधा डालने की अपनी इच्छा में सब कुछ गति में डाल दिया है, कहीं ऐसा न हो कि हम उस स्थान पर चढ़ें जहाँ से वे गिरे थे। इसलिए, बहुत प्रार्थना करना और प्रयास करना आवश्यक है, ताकि आत्मा से *'आत्माओं की परख'* (1 कुरिन्थियों 12:10) का वरदान प्राप्त करके, कोई यह परख सके कि उनमें से कौन कम बुरा है और कौन अधिक, उनमें से प्रत्येक का कार्य क्या है, और उनमें से प्रत्येक को कैसे उलट दिया और बाहर निकाल दिया जाए। क्योंकि उनके पास बदनामी के लिए कई योजनाएँ और कई धूर्त तरीके हैं। – धन्य प्रेरित

और उनके अनुयाचियों को यह पता था, उन्होंने कहा: – *'क्योंकि हम उसकी योजनाओं को नहीं समझते'* (2 कुरन्थियों 2:11)। – हमें भी एक-दूसरे को उन्हीं बातों के बारे में चेतावनी देनी चाहिए जिनमें हमें उन (शैतानों) द्वारा परीक्षा में डाला गया है। – और इसलिए मैं, स्वयं कुछ हद तक (उनकी युक्तियों का) अनुभव कर चुका हूँ, आपसे बच्चों की तरह इस बारे में बात करता हूँ।

11. जैसे ही वे किसी ईसाई—और एक भिक्षु को तो और भी अधिक—को परिश्रम करते और प्रगति करते हुए देखते हैं, वे सबसे पहले उनके मार्ग में प्रलोभन डालने का प्रयास करते हैं: और उनके प्रलोभन दुष्ट विचार हैं। – लेकिन हमें उनके इन सुझावों से डरना नहीं चाहिए; क्योंकि प्रार्थना, उपवास और प्रभु में विश्वास के द्वारा, शत्रु तुरंत परास्त हो जाते हैं। हालाँकि, परास्त होने पर भी, वे विश्राम नहीं करते, बल्कि तुरंत ही चालाकी और धूर्तता से फिर से हमला करते हैं। जब वे खुले तौर पर अशुद्ध इच्छाओं से हृदय को धोखा देने में असमर्थ होते हैं, तो वे दूसरे तरीके से हमला करते हैं, अर्थात्: वे भय पैदा करने के लिए विभिन्न भूत-प्रेत उत्पन्न करते हैं; इस उद्देश्य के लिए, वे विभिन्न रूप धारण करते हैं और महिलाओं, , जानवरों, सरीसृपों, दैत्यों और योद्धाओं की भीड़ के समान रूप धारण करते हैं। लेकिन ऐसे भूत-प्रेतों से भी डरना नहीं चाहिए; क्योंकि वे कुछ भी नहीं हैं - और जैसे ही कोई विश्वास और क्रॉस के चिह्न से अपनी रक्षा करता है, वे तुरंत गायब हो जाते हैं। - फिर भी, वे दुस्साहसी और पूरी तरह से निर्लज्ज हैं। – क्यों, भले ही उन्हें इस तरह से हरा दिया जाए, वे एक और तरीके से हमला करते हैं: – वे भविष्यवक्ताओं का भेष धारण करते हैं और कुछ ही दिनों में क्या होने वाला है, इसकी भविष्यवाणी करते हैं; वे खुद को ऊँचा दर्जा भी देते हैं, ताकि वे अपने विचारों से किसी को भी बहका न सकें, या ऐसे भूत-प्रेतों के माध्यम से भी उन्हें फँसा न सकें। लेकिन हम राक्षसों की न सुनें, मानो वे हमसे पराये हों; हम उनकी परवाह न करें, भले ही वे हमें प्रार्थना के लिए उकसाएँ, भले ही वे उपवास की बात करें; बल्कि हम अपने तपस्या के उद्देश्य को और करीब से देखें – और हम उन लोगों से धोखा न खाएँ, जो सब कुछ चालाकी से करते हैं। – हमें उनसे डरना नहीं चाहिए, भले ही वे हम पर बढ़ते हुए प्रतीत हों, भले ही वे हमें मृत्यु की धमकी दें; क्योंकि वे शक्तिहीन हैं, और धमकी देने के अलावा और कुछ नहीं कर सकते।

12. हमें अपनी सारी चिंता शरीर के बजाय आत्मा पर केंद्रित करनी चाहिए, और शरीर को केवल आवश्यक समय देना चाहिए; बाकी समय हमें सबसे बढ़कर आत्मा को समर्पित करना चाहिए और उसका भला करना चाहिए, ताकि वह शारीरिक सुखों से बह न जाए, बल्कि शरीर को अपने अधीन कर ले। यही बात उद्धारकर्ता का आशय था जब उन्होंने कहा: *'अपने जीवन के लिए चिन्ता मत करो कि हम क्या खाएँगे, या अपने शरीर के लिए कि हम क्या पहनेंगे'* (मत्ती 6:25)। – *'और यह भी मत सोचो कि हम क्या खाएँगे, या क्या पिएँगे; और न ही घमण्ड करो। क्योंकि ये सब बातें तो इस संसार के अन्यजाति भी खोजते हैं; और तुम्हारा पिता जानता है कि तुम्हें इनकी आवश्यकता है। परन्तु* पहले *उसकी राज्य की खोज करो, और ये सब बातें भी तुम्हें मिलेंगी'* (लूका 12:29–31)।

१३. प्रभु पर विश्वास करो और उससे प्रेम करो; अशुद्ध विचारों और सांसारिक सुखों से अपना बचाव करो, और जैसा कि नीतिवचन में लिखा है – *'पेट की तृप्ति के प्रलोभन में न पड़ो'* (नीतिवचन २४:१५); अहंकार से दूर रहो, अविराम प्रार्थना करो; सोने से पहले और जागने पर भजन गाओ; धर्मग्रंथ में दिए गए आज्ञाओं का अध्ययन करो; संतों के कर्मों को मन में रखो, ताकि तुम्हारी आत्मा, आज्ञाओं का स्मरण करते हुए, संतों के उत्साह को अपना आदर्श बना सके। प्रेरितों की इस आज्ञा का पालन करने का विशेष ध्यान रखें: *'सूर्य आपके क्रोधित होने की अवस्था में अस्त न होने पाए'* (इफसियों 4:26)—और यह विचार करो कि यह हर आज्ञा के संबंध में सामान्य रूप से कहा गया है, ताकि न केवल तब सूर्य अस्त न हो जब आप क्रोधित हों, बल्कि तब भी जब आप हमारे किसी अन्य पाप में हों; क्योंकि यह अच्छा और आवश्यक है कि हम पर दोष न लगाया जाए, न तो दिन के अपराध के लिए सूर्य द्वारा, न ही रात के पाप के लिए चंद्रमा द्वारा, और न ही एक बुरे विचार के लिए भी।

14. इससे बचने के लिए, प्रेरितों के वचन पर ध्यान देना और उसे रखना अच्छा है: *'अपने आप को परखो'* (2 कुरन्थियों 13:5)। इसलिए, हर किसी को दिन-प्रतिदिन अपने कर्मों का हिसाब लगाना चाहिए, दिन में और रात में भी। और यदि किसी ने पाप किया है, तो वह पाप करना बंद करे; यदि किसी ने पाप नहीं किया है, तो वह घमंड न करे, बल्कि भलाई में बना रहे और लापरवाही न करे – न तो अपने पड़ोसी को दोषी ठहराए और न ही स्वयं को धर्मी समझे, *'जब तक प्रभु न आए'* (1 कुरन्थियों 4:5), जो छिपी हुई बातों की परीक्षा करता है। – यह कोई असामान्य बात नहीं है कि हम स्वयं भी इस बात से अनजान हों कि हम क्या करते हैं। फिर भी, भले ही हम यह न जानें, प्रभु सब कुछ देखता है। – इसलिए, न्याय को प्रभु पर छोड़कर, हम एक दूसरे के प्रति दयालु हों, हम *'एक दूसरे के बोझ उठाएँ'* (गलातियों 6:2), और अपने आप पर बहुत कठोर न हों; और जहाँ हम कम पड़ते हैं, वहाँ हम उसकी भरपाई करने का प्रयास करें।

१५. पाप से बचने के लिए, हमें निम्नलिखित बातों का भी पालन करना चाहिए। तुम में से प्रत्येक अपने कर्मों और अंतरंग विचारों का अवलोकन और अभिलेख इस इरादे से रखो मानो उन्हें एक-दूसरे के साथ साझा करना हो; और

इस बात का भरोसा रखो कि, पहचाने जाने की शर्म के कारण, हम निश्चित रूप से पाप करना और यहाँ तक कि किसी भी बुरे विचार को मन में रखना भी बंद कर देंगे। क्योंकि पाप करते समय कौन चाहता है कि दूसरे उसे देखें? या पाप करने के बाद कौन, पाप को छिपाने के लिए झूठ बोलना पसंद नहीं करेगा? जैसे एक दूसरे पर नज़र रखकर हम व्यभिचार करने से बचते हैं, वैसे ही, यदि हम अपने विचारों को एक दूसरे के साथ साझा करने के इरादे से दर्ज करते हैं, तो हम जाने जाने की शर्म के कारण अशुद्ध विचारों से अधिक आसानी से खुद की रक्षा कर सकेंगे। – तो फिर, लेखन हमारे साथी विश्वासियों की आँखों के रूप में काम करे, ताकि लिखते समय हमें वैसी ही शर्म महसूस हो जैसी दूसरों के देखने पर होती है, और इस प्रकार हम किसी भी बुरे विचार को मन में न रखें। यदि हम इस तरह खुद को अनुशासित करते हैं, तो हम अपने शरीर को वश में कर पाएँगे, प्रभु को प्रसन्न कर पाएँगे, और शत्रु की युक्तियों पर पाँव रख पाएँगे।

16. मेरा मानना है कि पवित्र आत्मा की कृपा उन लोगों पर अधिक सहजता से प्रदान की जाती है जो इस प्रयास को पूरे दिल से शुरू करते हैं, और जो शुरू से ही दृढ़ रहने का संकल्प लेते हैं और किसी भी लड़ाई में दुश्मन को किसी भी परिस्थिति में तब तक पीछे नहीं हटने देते जब तक कि वे उसे परास्त नहीं कर देते। हालाँकि, पवित्र आत्मा, जिसने उन्हें बुलाया है, पहले उनके लिए सब कुछ आसान कर देता है, ताकि पश्चाताप के संघर्ष में उनका प्रवेश एक सुखद अनुभव हो, और फिर उन्हें (अपनी सभी कठिनाइयों के साथ) सत्य के पूरे मार्ग पर चलना सिखाता है। – सभी बातों में उनकी मदद करते हुए, वह उन पर पश्चाताप के श्रम की प्रकृति को अंकित करते हैं, और उनके लिए शरीर तथा आत्मा दोनों के संबंध में सीमाएं और एक आदर्श निर्धारित करते हैं, जब तक कि वह उन्हें उनके सृष्टिकर्ता, परमेश्वर की ओर पूर्णतम रूपान्तरण तक नहीं ले जाते। – इस उद्देश्य के लिए, वह उन्हें लगातार अपने शरीर और अपनी आत्मा दोनों को अनुशासित करने के लिए प्रेरित करते हैं, ताकि, समान रूप से पवित्र होकर, दोनों ही शाश्वत जीवन की विरासत के समान रूप से योग्य बन सकें: (शरीर को अनुशासित करना) – निरंतर उपवास, परिश्रम और बार-बार की जाने वाली जागरणों के माध्यम से; और आत्मा को – आध्यात्मिक अभ्यासों और शरीर के माध्यम से किए गए सभी सेवा (और आज्ञाकारिता) के कार्यों में लगन के माध्यम से। हमें ऐसा करने का प्रयास करना चाहिए—अर्थात्, किसी भी काम को लापरवाही से नहीं, बल्कि हर चीज़ को लगन और परमेश्वर के भय के साथ करना चाहिए—हमारे द्वारा किए जाने वाले हर शारीरिक कार्य में, यदि हम चाहते हैं कि उसका फल मिले।

१७. जब पश्चातापी यह प्रयास करता है, तो परमेश्वर का आत्मा, जिसने उसे पश्चाताप के लिए बुलाया है, उस पर अपनी सांत्वनाएँ प्रदान करता है और उसे सिखाता है कि वह न तो पीछे मुड़े और न ही इस संसार की किसी भी चीज़ से चिपके। – इस उद्देश्य के लिए, वह आत्मा की आँखें खोलता है और उसे पश्चाताप के श्रम के माध्यम से प्राप्त पवित्रता की सुंदरता को देखने में सक्षम बनाता है; और इस प्रकार उसमें स्वयं के साथ शरीर की पूर्ण शुद्धता के लिए एक उत्साह जगाता है, ताकि दोनों शुद्धता में एक हो जाएँ। – क्योंकि पवित्र आत्मा के निर्देशात्मक मार्गदर्शन का यही उद्देश्य है: उन्हें पूरी तरह से शुद्ध करना और उन्हें उस मूल अवस्था में बहाल करना जिसमें वे पतन से पहले थे, उनमें से शैतान की ईर्ष्या से दूषित सभी को जड़ से उखाड़ फेंकना, ताकि उनमें कोई भी शत्रुतापूर्ण चीज़ न बचे। – तब शरीर हर मामले में मन के आदेशों के अधीन हो जाएगा, जो खाने-पीने, सोने और हर दूसरे कार्य में अधिकारपूर्वक उसका निर्देशन करेगा, और वह लगातार पवित्र आत्मा से सीखता रहेगा, तथा प्रेरित सेंट पॉल के उदाहरण का अनुसरण करेगा, *'शरीर को मार डालो और उसे वश में करो'* (1 कुरिन्थियों 9:27)।

18. यह कोई रहस्य नहीं है कि शरीर में तीन प्रकार की कामुक प्रवृत्तियाँ होती हैं। – पहली एक प्राकृतिक प्रवृत्ति है, जो शरीर में अंतर्निहित है, जो, हालांकि, आत्मा की सहमति के बिना, कुछ भी (पापी, जो अंतरात्मा पर बोझ डालती है) उत्पन्न नहीं करती है – बल्कि केवल यह महसूस कराती है कि यह शरीर में मौजूद है, – शरीर में एक और गति भोजन और पेय की अधिकता से उत्पन्न होती है, जब इस प्रकार उत्पन्न रक्त की उष्णता शरीर के भीतर आत्मा के विरुद्ध संघर्ष को भड़काती है और इसे अशुद्ध इच्छाओं की ओर झुकाती है। – इसीलिए प्रेरित कहते हैं: *'शराब से मतवाले न हो, क्योंकि उसमें व्यभिचार है।'* इसी प्रकार, प्रभु सुसमाचार में अपने शिष्यों को आज्ञा देते हैं: *'सावधान रहो, और मत भूलना, कि तुम्हारे मन खाने-पीने और मद्यपान से भारी न हो जाएँ'* (लूका 21:34)। विशेष रूप से, जिन्होंने भिक्षु जीवन में पूर्ण पवित्रता और शुद्धता प्राप्त करने का संकल्प लिया है, उन्हें हमेशा इस तरह से आचरण करना चाहिए कि वे प्रेरित के साथ कह सकें: *'मैं अपने शरीर को दंडित करता हूँ और उसे वश में रखता हूँ'* (1 कुरिन्थियों 9:27)। तीसरी परीक्षा दुष्ट आत्माओं से आती है, जो ईर्ष्या के कारण, लोगों को इस तरह से परीक्षा में डालती हैं और उन लोगों को कमजोर करने की कोशिश करती हैं जिन्होंने पवित्रता की खोज की है (अर्थात् भिक्षु), या उन लोगों को भटकाने की जो पवित्रता के द्वार में प्रवेश करना चाहते हैं (अर्थात् जो अभी-अभी भिक्षु जीवन में प्रवेश कर रहे हैं)।

19. हालाँकि, यदि कोई व्यक्ति खुद को धैर्य और परमेश्वर से आए आज्ञाओं के प्रति अटूट निष्ठा से लैस करता है, तो पवित्र आत्मा उसके मन को सिखाएगा कि ऐसे प्रवृत्तियों से अपनी आत्मा और शरीर को कैसे शुद्ध किया जाए। लेकिन यदि वह अपने संकल्प में ढीला पड़ जाता है और जो आज्ञाएँ और उपदेश उसने सुने हैं, उनके प्रति लापरवाह हो जाता है, तो दुष्ट आत्माएँ उस पर हावी होने लगेंगी, उसके पूरे शरीर पर काबू पा लेंगी, और उसे ऐसे प्रवृत्तियों से इस हद तक कलंकित कर देंगी कि उसकी पीड़ित आत्मा को यह भी नहीं पता चलेगा कि वह किस ओर मुड़े, अपनी निराशा में यह देखने में असमर्थ कि कोई मदद कहाँ से आ सकती है; और केवल तब, जब वह होश में आ जाती है, आज्ञाओं के पक्ष में लौट आती है, और उनका जुआ स्वीकार कर लेती है (या दायित्व की गंभीरता को समझ लेती है), और स्वयं को परमेश्वर की आत्मा के हवाले कर देती है, तब वह एक बार फिर से उद्धारकारी स्वभाव से भर जाती है। तब उसे यह एहसास होता है कि उसे केवल परमेश्वर में ही शांति की खोज करनी चाहिए, और केवल इसी तरह उसके लिए शांति संभव है।

२०. पश्चाताप के श्रमों को आत्मा और शरीर दोनों में समान रूप से और सामंजस्य के साथ सहना आवश्यक है, पूर्ण पवित्रता के लिए प्रयासरत रहना। और जब मन को ऐसी कृपा प्राप्त होती है कि वह आत्म-दया या अनुराग के बिना, वासनाओं के विरुद्ध संघर्ष में प्रवेश कर सके, तो वह आत्मा की प्रेरणा, मार्गदर्शन और बल से युक्त हो जाता है, जिसके द्वारा वह सफलतापूर्वक हृदय की कामनाओं से उत्पन्न सभी अशुद्ध प्रवृत्तियों को आत्मा से दूर करना शुरू कर देता है। यह आत्मा, पहचाने गए आज्ञाओं का कड़ाई से पालन करने के संकल्प के लिए, मन (या मानव आत्मा) के साथ मिलकर, उसे आत्मा से सभी वासनाओं को दूर करने का निर्देश देती है, उन दोनों को जो शरीर से उसमें मिलती हैं और वे जो उसकी अपनी हैं, जो शरीर से स्वतंत्र रूप से उसमें मौजूद हैं। यह उसे अपने शरीर को अनुशासित रखने की शिक्षा देता है—माथा से पैर तक सब कुछ: उसकी आँखें, ताकि वे पवित्रता से देख सकें; उसके कान, ताकि वे शांतिपूर्ण बातें सुनें और बदनामी, अफवाह और अपमान में आनंद न लें; – जीभ, कि वह केवल अच्छा बोले, हर शब्द को तौलकर, और अपनी वाणी में कुछ भी अशुद्ध या भावुक प्रवेश न करने दे; हाथ, कि वे सबसे पहले और सबसे महत्वपूर्ण रूप से केवल प्रार्थना के उद्देश्य और दया तथा उदारता के कार्यों के लिए ही प्रवृत्त हों; एक पेट जो भोजन और पेय की खपत में उचित सीमाओं के भीतर रखा जाता है, शरीर को बनाए रखने के लिए केवल आवश्यक चीज़ ही लेता है, और वासना या लालच को इस माप से आगे नहीं बढ़ने देता; पैर जो सही रास्ते पर चलते हैं और ईश्वर की इच्छानुसार चलते हैं, जो अच्छे कर्मों की सेवा की ओर निर्देशित होते हैं। इस प्रकार, शरीर हर तरह की अच्छाई का आदी हो जाता है और पवित्र आत्मा की शक्ति के अधीन होकर रूपांतरित हो जाता है, ताकि वह अंततः कुछ हद तक, उन गुणों में सहभागी हो सके जो उसे धर्मी लोगों के पुनरुत्थान पर प्राप्त होने हैं।

21. आत्मा, जैसा कि पहले बताया गया है, की अपनी ही प्रवृत्तियाँ होती हैं, जो हैं: अहंकार, घृणा, ईर्ष्या, क्रोध, निराशा और इसी तरह की अन्य चीजें। जब आत्मा अपनी पूरी शक्ति के साथ स्वयं को ईश्वर के हवाले कर देती है, तो सर्व-दयालु ईश्वर उस पर सच्चे पश्चाताप की आत्मा प्रदान करता है, और उसे इन सभी भावों से शुद्ध करता है, उसे इनका अनुसरण न करने की शिक्षा देता है, और उसे इन पर काबू पाने और उन शत्रुओं पर विजय प्राप्त करने की शक्ति देता है जो उसकी राह में लगातार बाधाएँ डालते हैं, और प्रलोभनों के माध्यम से उसे एक बार फिर से अपने पास खींचने का प्रयास करते हैं। और यदि वह अपने परिवर्तन और पवित्र आत्मा के प्रति अपनी इच्छुक आज्ञाकारिता में दृढ़ रहती है, जो उसे पश्चाताप सिखाता है, तो दयालु सृष्टिकर्ता उसकी परिश्रमों के लिए, जो हर कठिनाई और आवश्यकता के साथ उठाए जाते हैं - लंबे उपवासों, बार-बार की जागरणों, परमेश्वर के वचन में शिक्षा, अनवरत प्रार्थना में, सभी सांसारिक सुखों का त्याग करके, शुद्ध हृदय से सभी की सेवा करके, नम्रता और आत्मिक दीनता में—यदि वह इन सब में दृढ़ रहती है, तो सर्व-उदार ईश्वर, उस पर एक दयालु दृष्टि डालकर, उसे सभी प्रलोभनों से बचाएगा और अपनी दया से उसे उसके शत्रुओं के हाथों से छीन लेगा।

22. परमेश्वर पिता ने, अपनी भलाई में, अपने एकलौते पुत्र को *'नहीं बख्शा'* (रोमियों 8:32), बल्कि हमें हमारे पापों और अधर्म से बचाने के लिए उसे सौंप दिया। और परमेश्वर के पुत्र ने, हमारे लिए स्वयं को नम्र बनाकर, हमारी आत्मिक दुर्बलताओं को चंगा किया और हमारे पापों से हमारे उद्धार का प्रबंध किया, इसलिए मैं आपसे हमारे प्रभु यीशु मसीह के नाम पर विनती करता हूँ, कि आप परमेश्वर के इस महान कार्य को जानें और हमेशा अपने मन में रखें, अर्थात् कि परमेश्वर—वचन—हमारे लिए हर तरह से हमारे समान हो गए, सिवाय पाप के। तब यह उचित है कि बुद्धि से युक्त लोग इसे बुद्धिमानी से समझें, और प्रभु के हमारे पास आने की शक्ति के द्वारा (पाप से) सच्ची स्वतंत्रता प्राप्त करने के लिए गंभीरता से प्रयत्न करें। जिन लोगों ने इस व्यवस्था का सही उपयोग किया है, वे उसके सेवक हैं। लेकिन यह दर्जा अभी पूर्णता नहीं है। पूर्णता पुत्रत्व की ओर ले जाती है – और यह वह पवित्रता है जो समय आने पर प्राप्त होती है। इस प्रकार, जब हमारे प्रभु यीशु मसीह ने यह देखकर कि उनके चेलों ने पहले ही पुत्रत्व प्राप्त

कर लिया था और पवित्र आत्मा द्वारा सिखाए जाने के बाद, स्वयं उन्हें जान भी लिया था, उनसे कहा: *'मैं अब तुम्हें दास नहीं कहता, बल्कि मित्र और भाई कहता हूँ, क्योंकि मैंने तुम्हें वह सब कुछ बता दिया है जो मैंने पिता से सुना है'* (यूहन्ना 15:15)। और जिन्होंने यह महसूस किया कि वे मसीह यीशु में क्या बन गए हैं, उन्होंने अपनी आवाज़ उठाई, यह कहते हुए: *'हमने दासत्व का आत्मा नहीं पाया, जो हमें फिर से भय में डाल दे, बल्कि हमने दत्तक ग्रहण का आत्मा पाया है, जिसके द्वारा हम पुकारते हैं: "अब्बा, हे पिता!"'* (रोमियों 8:15)। तब जो कोई भी उठने (पाप से) के लिए पूर्ण और गंभीर तत्परता नहीं दिखाता, वह जान ले कि प्रभु उद्धारकर्ता का आगमन उसकी निंदा के लिए होगा। क्योंकि आरंभ में ही समिओन ने गाया था: *'देखो, यह बालक इस्राएल में बहुतों के गिरने और उठाने के लिए, और एक ऐसे चिन्ह के लिए रखा गया है, जिसके विरोध में बातें की जाएँगी'* (लूका 2:34)। और बाद में प्रेरितों ने प्रचार किया: *'क्योंकि हम एक के लिए मृत्यु की गंध हैं जो मृत्यु की ओर ले जाती है, और दूसरे के लिए जीवन की गंध हैं जो जीवन की ओर ले जाती है'* (2 कुरिन्थियों 2:16)।

23. यह आपके लिए कोई रहस्य नहीं है कि सत्य के शत्रु लगातार सत्य को नष्ट करने का प्रयास करते रहते हैं। परन्तु परमेश्वर ने, संसार की आरम्भ से ही, हर समय अपनी सृष्टि का दर्शन किया है, और जिन्होंने अपने सम्पूर्ण हृदय से अपने सृष्टिकर्ता के निकट आए, उन्हें यह सिखाया है कि उन्हें परमेश्वर का सम्मान कैसे करना चाहिए। परन्तु जब, शरीर के कामों और हमारे विरुद्ध लड़ने वाले शत्रुओं की दुष्टता के कारण, आत्मा की अच्छी आकांक्षाओं ने अपनी शक्ति खो दी, और लोग यह भी नहीं समझ सके कि उनकी प्रकृति और उद्देश्य के अनुसार उनके लिए क्या उचित है, तो दूर की बात है कि वे पापों से मुक्त होकर अपनी मूल अवस्था में लौट सकें: तब परमेश्वर ने उन पर दया दिखाई और लिखित व्यवस्था के द्वारा उन्हें परमेश्वर की सच्ची आराधना सिखाई। जब इससे भी कोई लाभ नहीं हुआ, तो परमेश्वर ने, यह देखकर कि घाव फैल रहा था और निर्णायक उपचार की आवश्यकता थी, अपने एकलौते पुत्र को भेजने का निश्चय किया, जो हमारे एकमात्र चंगा करने वाले हैं।

२४. यीशु मसीह के प्रेम से अभिभूत होकर, जब मैं अपने समय को निहारता हूँ, तो मुझे बारी-बारी से आनंद, शोक और विलाप का अनुभव होता है। हमारे लोगों में से बहुतों ने धार्मिकता का वेश (संन्यासी वस्त्र) धारण किया है। फिर भी, इनमें से केवल कुछ ने ही ऐसा पूरे हृदय से किया है और उन्हें प्रभु यीशु के आगमन से लाई गई मुक्ति प्राप्त करने के योग्य माना गया है। और इन्हीं के लिए मैं आनंदित होता हूँ। परन्तु अन्य, (अपने व्रत की) शक्ति को तुच्छ समझकर, शरीर की इच्छा और अपने ही हृदय की प्रवृत्तियों के अनुसार चलते हैं – जिससे प्रभु का आगमन उनके लिए एक दोषारोपण बन गया है। और इन्हीं के लिए मैं शोक करता हूँ। अंत में, अन्य ऐसे हैं जिन्होंने अपने परिश्रम के लिए आवश्यक समय को देखकर हिम्मत हार ली है; इस कारण से उन्होंने धार्मिकता का वस्त्र उतार दिया है और, मानो, मौन हो गए हैं। ये वे हैं जिनके लिए मैं रोता हूँ, क्योंकि हमारे प्रभु यीशु मसीह का आगमन उनके लिए एक दोषारोपण बन गया है।

25. मैं तुम्हारे लिए अपनी पूरी शक्ति से परमेश्वर से प्रार्थना करता हूँ, कि वह तुम्हारे हृदयों में वह आग प्रज्वलित करे जिसे हमारे प्रभु यीशु मसीह पृथ्वी पर लाने आए थे (लूका 12:49), ताकि तुम अपने इरादों और भावनाओं को सही ढंग से नियंत्रित कर सको और भलाई को बुराई से अलग कर सको।

26. जब हवा लगातार एक ही दिशा में चलती है, तो कोई भी नाविक अपने आप को महान समझ सकता है और अपनी कला का घमंड कर सकता है; परन्तु केवल तभी अनुभवी नाविक की कुशलता प्रकट होती है जब हवाएँ अचानक बदल जाती हैं।

27. जो कोई भी प्रभु का भय मानता है और उसकी आज्ञाओं का पालन करता है, वह परमेश्वर का सेवक है। लेकिन यह दासता, जिसमें हम भी स्वयं को पाते हैं, गुलामी नहीं है, बल्कि धार्मिकता है जो पुत्रत्व की ओर ले जाती है। हमारे प्रभु ने रियों को चुना और उन्हें सुसमाचार की शुभ-सूचना सौंपी। उन्होंने हमें जो आज्ञाएँ दीं, उन्होंने हमारे लिए एक गौरवपूर्ण सेवा स्थापित की है, ताकि हम अपनी सभी कामनाओं पर शासन कर सकें और सद्गुण की गौरवपूर्ण सेवा कर सकें। लेकिन जब हम अनुग्रह के और निकट आते हैं, तो हमारे प्रभु यीशु मसीह हमसे भी वही कहेंगे जो उन्होंने अपने प्रेरितों से कहा था: *'मैं तुम्हें अब दास नहीं कहता, परन्तु मित्र और भाई कहता हूँ, क्योंकि जो कुछ मैं ने अपने पिता से सुना है, वह सब मैं ने तुम से कहा है'* (यूहन्ना 15:15)। जो लोग अनुग्रह के निकट आए हैं, वे अनुभव के माध्यम से पवित्र आत्मा की गतिविधियों को जानने लगते हैं और अपनी आध्यात्मिक संरचना को समझने लगते हैं; और इसे समझने तथा जानने के बाद, वे पुकार उठते हैं, कहते हुए: *'हमने दासत्व का आत्मा नहीं पाया, कि हम फिर भय में पड़ें, परन्तु पुत्रत्व का आत्मा पाया है, जिस से हम "अब्बा, हे पिता!" कहकर पुकारते हैं।'* (रोमियों 8:15)।

28. परमेश्वर अपनी कृपा के कार्यों के द्वारा सभी का मार्गदर्शन करते हैं। इसलिए, सुस्त न हों या हतोत्साहित न हों, बल्कि दिन-रात परमेश्वर से पुकार लगाएँ, और परमपिता परमेश्वर की भलाई से विनती करें कि वे

आपको स्वर्ग से सहायता भेजें, ताकि आप जान सकें कि क्या करना है। *'सोने को अपनी आँखों पर, और झपकी को अपनी पलकों पर* न आने *दो'* (भजन संहिता 131:4), बल्कि स्वयं को परमेश्वर के लिए एक पवित्र बलिदान के रूप में अर्पित करने के लिए उत्सुक रहो, ताकि तुम उसे देख सको: क्योंकि प्रेरित के वचन के अनुसार, पवित्रता के बिना कोई भी परमेश्वर को नहीं देख सकता (इब्रानियों 12:14)।

29. सभी संत, जब वे देखते हैं कि हम सुस्त और लापरवाह हैं, तो वे दुखी होते हैं, रोते हैं और विलाप करते हैं; लेकिन जब वे देखते हैं कि हम सीधे हो रहे हैं और पूर्णता में बढ़ रहे हैं, तो वे आनंदित होते हैं, और आनंद और हर्ष में उनमें से कई हमारे लिए सृष्टिकर्ता के पास अथक रूप से प्रार्थनाएँ अर्पित करते हैं। और तब प्रभु हमारे अच्छे कर्मों के साथ-साथ संतों की गवाहियों और प्रार्थनाओं से भी प्रसन्न होते हैं, और हम पर हर प्रकार के वरदानों की वर्षा करते हैं।

३०. जो कोई भी पूरे हृदय से भौतिक और सांसारिक शरीर की विशेषता वाली वस्तुओं और उसकी सभी गतिविधियों और कार्यों से घृणा नहीं करता—और जिसका मन सभी के पिता के प्रति शोक से विचलित नहीं होता—वह मोक्ष प्राप्त नहीं कर सकता। लेकिन जो कोई ऐसा करता है, हमारे प्रभु उनकी मेहनत पर दया करेंगे और उन्हें एक अदृश्य और अदेह अग्नि प्रदान करेंगे, जो उनके भीतर के सभी भावों को भस्म कर देगी और उनके मन को पूरी तरह से शुद्ध कर देगी। तब हमारे प्रभु यीशु मसीह की आत्मा उनके भीतर वास करेगी और उनके साथ रहेगी, उन्हें यह सिखाते हुए कि परमपिता की उचित रीति से आराधना कैसे करें। लेकिन जब तक हम अपने भौतिक शरीर में लिप्त रहते हैं, तब तक हम परमेश्वर और उनके स्वर्गदूतों और सभी संतों के शत्रु बने रहते हैं। इसलिए मैं हमारे प्रभु यीशु मसीह के नाम पर आपसे विनती करता हूँ: अपने जीवन और अपनी मुक्ति के प्रति लापरवाह न रहें, और इस क्षणिक समय को आपको उस अनंतकाल से वंचित न करने दें, जिसका कोई अंत नहीं है, न ही इस देहधारी शरीर को आपको उस ज्योतियों के राज्य से वंचित करे, जो असीम और अकथनीय है। सचमुच, यह विचार करके मेरी आत्मा व्याकुल और मेरा मन सुन्न हो जाता है कि, जबकि हमें संतों के कार्यों को चुनने और करने की स्वतंत्रता दी गई है, हम, वासनाओं से मदहोश होकर जैसे शराब के नशे में हों, उच्च महिमा की खोज में अपने मन को ऊँचा उठाने से इनकार करते हैं; हम संतों के कर्मों की नकल करने या उनके पदचिन्हों पर चलने से इनकार करते हैं, ताकि, उनके कर्मों के वारिस बनकर, हम उनके साथ शाश्वत विरासत प्राप्त कर सकें।

31. आपको महान आशीषें दी गई हैं, क्योंकि आपको वह अनुग्रह प्राप्त हुआ है जो आपके भीतर वास करता है। तथापि, आपको उस के निमित्त परिश्रम से लगे रहना चाहिए जो *'ऊँचे से प्रभात'* है, *जिसने* आप *पर 'दर्शन दिया' है* (लूका 1:78), ताकि आप उसके लिए एक पवित्र और निर्दोष बलिदान बन सकें। हम जानते हैं कि हमारी प्रकृति अपनी ऊँचाइयों से अपमान और गरीबी की गहराइयों में कैसे गिर गई, और कैसे दयालु परमेश्वर ने मूसा और अन्य भविष्यवक्ताओं के हाथों द्वारा अपने नियमों के साथ इसकी सहायता की; परन्तु हाल के समय में उन्होंने यह अपने एकलौते पुत्र के द्वारा किया है, जो हमारे महापुरोहितों के सर्वोच्च प्रमुख हैं, और हमारे सच्चे चिकित्सक हैं, जो अकेले ही हमारी दुर्बलताओं को चंगा करने में सक्षम हैं, और जिन्होंने हमारा शरीर धारण किया और स्वयं को हमारे और हमारे पापों के लिए अर्पित कर दिया; उनकी मृत्यु से हम उद्धार पाते हैं। तब, सावधान रहो, और हमारे सृष्टिकर्ता के विधानों और हमारे प्रति उनकी दयालुताओं पर ध्यान से विचार करो, हमारे बाहरी और भीतरी दोनों स्व में, जब हम, यद्यपि एक समय तर्कशील थे, शत्रु, दुष्ट, झूठ के पिता की इच्छा की ओर अपनी प्रवृत्ति के कारण अतर्कशील हो गए।

32. कितने अनगिनत दुष्ट राक्षस हैं, और उनकी चालाकियों के प्रकार कितने अनगिनत हैं! यहाँ तक कि जब उन्होंने यह देखा कि हम, अपनी वासनाओं और अपनी लज्जा को पहचानकर, अब उन बुरे कर्मों से बचने का प्रयास कर रहे हैं जिनकी ओर वे हमें ले जाते हैं, और उनके द्वारा हममें डाली गई बुरी सलाहों पर कान नहीं देते—फिर भी वे नहीं रुके, बल्कि उन्होंने अपने काम को निराशाजनक उत्साह के साथ आरंभ कर दिया है, यह जानते हुए कि उनकी नियति पहले ही अपरिवर्तनीय रूप से सील हो चुकी है और यह कि उनकी विरासत नरक है, अपनी चरम दुष्टता और (ईश्वर से) घृणा के कारण। प्रभु आपके हृदयों की आँखें खोलें, ताकि आप देख सकें कि दुष्टात्माओं की कितनी योजनाएँ हैं और वे हमें हर दिन कितना बुरा करते हैं – और वह आपको एक चौकस हृदय और विवेक की आत्मा प्रदान करें, ताकि आप स्वयं को परमेश्वर के लिए एक जीवित और निर्दोष बलिदान के रूप में अर्पित कर सकें, हर समय दुष्टात्माओं की ईर्ष्या और उनकी बुरी सलाह से सावधान रहते हुए, उनकी गुप्त साजिशें और छिपी हुई द्वेषभावना, उनके धोखे भरे झूठ और ईश्वर-निन्दा करने वाले विचार, उनके सूक्ष्म सुझाव जिन्हें वे हर दिन हमारे हृदयों में डालते हैं, वह क्रोध और बदनामी जिसके लिए वे हमें उकसाते हैं, ताकि हम केवल अपना ही पक्ष सही ठहराते हुए एक-दूसरे की निंदा करें, जबकि वे दूसरों की निंदा करते हैं ताकि वे एक-दूसरे की बदनामी कर सकें, या, मीठी जुबान से बोलकर,

हमारे दिलों में कड़वाहट पालते हैं , ताकि वे अपने पड़ोसी के बाहरी रूप की निंदा कर सकें जबकि अपने भीतर एक शिकारी को पालते हैं, ताकि वे अपने ही बीच झगड़ सकें और एक-दूसरे के खिलाफ हो सकें, अपनी मनमानी करने और सबसे धर्मी दिखने की इच्छा में। कोई भी व्यक्ति जो पापी विचारों में आनंद लेता है, वह अपने आप ही गिर जाता है जब वह अपने शत्रुओं द्वारा उसमें डाली गई बातों में सुख पाता है (यानी उनसे सहानुभूति रखता है), और जब वह केवल बाहरी कर्मों के द्वारा स्वयं को सही ठहराने का प्रयास करता है, जबकि भीतर से वह एक दुष्ट आत्मा का निवास-स्थान होता है जो उसे हर प्रकार की बुराई सिखाती है। ऐसे व्यक्ति का शरीर लज्जास्पद अपमान से भर जाएगा – क्योंकि जो कोई भी ऐसा है, उस पर दैवीय वासनाएँ हावी हो जाती हैं, जिन्हें वह अपने से दूर नहीं करता। दैत्य मूर्त रूप में दिखाई नहीं देते; लेकिन जब हमारी आत्मा उनसे अंधकारमय विचार ग्रहण करती है, तो हम उनके लिए शरीर बन जाते हैं; क्योंकि, इन विचारों को ग्रहण करने पर, हम स्वयं दैत्यों को ग्रहण करते हैं, और उन्हें शरीर में प्रकट करते हैं।

३३. तर्कशील और अमर स्वभाव हमारे नश्वर शरीर के भीतर छिपा हुआ है ताकि, उसमें और उसके माध्यम से, वह अपने कार्य प्रकट कर सके। अत; इस शरीर को धूप का वेदी बनाकर, उस पर अपने सभी विचार और अपने दुष्ट परामर्श अर्पित करो, और, उन्हें प्रभु के साक्षात सामने रखकर, हृदय और मन से स्वयं को उसके प्रति ऊँचा उठाओ, उससे विनती करते हुए कि वह ऊपर से अपनी अदेह अग्नि तुम्हारे ऊपर अवतरित करे, जो इस वेदी पर रखी सभी चीज़ों को भस्म कर देगी और इसे शुद्ध कर देगी। और तुम्हारे शत्रु, बाल के याजक, तुम्हारे हाथों से काँप उठेंगे और नष्ट हो जाएँगे, जैसे वे भविष्यवक्ता एलियाह के हाथों से हुए थे (1 राजा 18:25 आदि)। तब तुम एक पुरुष को दिव्य जल से निकलते हुए देखोगे, जो तुम पर आध्यात्मिक वर्षा कराएगा—अर्थात्, परमप्रतापी आत्मा के छिड़काव द्वारा।

34. शैतान, जो घमंड के कारण अपने स्वर्गीय पद से गिर गया था, निरंतर उन सभी को विनाश की ओर ले जाने का प्रयास करता है जो पूरे हृदय से प्रभु के निकट आना चाहते हैं—उसी साधन से जिससे वह स्वयं गिरा था, अर्थात् घमंड और व्यर्थ महिमा के प्रेम से। दैत्य इन्हीं साधनों से हम पर आक्रमण करते हैं; इन्हीं और इसी तरह के अन्य साधनों से वे हमें ईश्वर से दूर करने का प्रयास करते हैं। इसके अलावा, यह जानते हुए कि जो अपने भाई से प्रेम करता है, वह ईश्वर से भी प्रेम करता है, वे हमारे हृदयों में एक-दूसरे के प्रति घृणा भर देते हैं – इस हद तक कि कुछ लोग अपने भाई को देखना भी बर्दाश्त नहीं कर सकते, या उससे एक शब्द भी बात नहीं कर सकते। कई वास्तव में महान पुरुषों ने सद्गुणों में परिश्रम किया है, लेकिन अपनी ही समझ की कमी के कारण उन्होंने अपना नाश कर लिया है। इसमें कोई आश्चर्य नहीं होगा यदि यह आपके बीच भी हो, यदि, उदाहरण के लिए, आप अच्छे कार्यों के प्रति उदासीन हो गए, और यह सोचने लगे कि आप में स्वयं ही सद्गुण मौजूद है। क्योंकि आप पहले ही इस शैतानी क्लेश (अहंकार) में पड़ चुके हैं, यह सोचकर कि आप परमेश्वर के निकट हैं और प्रकाश में वास करते हैं, जबकि वास्तव में आप अंधकार में हैं। हमारे प्रभु यीशु मसीह को अपने वस्त्र उतारने, कमर पर तौलिया बाँधने, और एक पात्र में पानी डालकर (यूहन्ना 13:4 आदि) अपने अधीनस्थों के पाँव धोने के लिए किस बात ने प्रेरित किया, यदि यह हमें नम्रता सिखाने के लिए नहीं था? हाँ—उन्होंने तब जो किया, उसके माध्यम से उन्होंने हमारे लिए एक उदाहरण प्रस्तुत किया। और वास्तव में, जो कोई भी उच्चतम पद पर स्वीकार किए जाने की इच्छा रखता है, वह केवल विनम्रता के माध्यम से ही इसे प्राप्त कर सकता है; क्योंकि आरंभ में, यह अहंकार की भावना ही थी जिसने उसे स्वर्ग से नीचे गिरा दिया था। इसलिए, जब तक कोई व्यक्ति परम विनम्रता—अपने पूरे हृदय, पूरे मन, पूरे आत्मा, अपनी पूरी आत्मा और शरीर से विनम्रता—न रखे, तब तक वह परमेश्वर के राज्य का वारिस नहीं बनेगा।

35. यदि हम सच्चे मन से अपने सृष्टिकर्ता के निकट आना चाहते हैं, तो हमें आध्यात्मिक नियम के अनुसार अपनी आत्मा को वासनाओं से मुक्त करने का प्रयास करना चाहिए। क्योंकि हमारे बुरे कर्मों, वासनाओं में हमारी लिप्तता, और शैतानी प्रलोभनों की भीड़ के कारण, हमारी बौद्धिक क्षमताएँ कमजोर हो गई हैं, और हमारी आत्मा के अच्छे आवेग समाप्त हो गए हैं; हम जिन वासनाओं में पड़ जाते हैं, उनके कारण हम अब अपनी आध्यात्मिक प्रकृति की सुंदरता (और मांगों) को महसूस नहीं कर सकते; और हमारे प्रभु यीशु मसीह के सिवा हमारे लिए किसी से भी उद्धार नहीं है, जैसा कि प्रेरित पौलुस लिखते हैं: '*जिस प्रकार आदम में सब मरते हैं, उसी प्रकार मसीह में सब जीवित किए जाएँगे*' (1 कुरिन्थियों 15:22)। हमारे प्रभु यीशु मसीह, जो उनकी प्रतिमा में सृजित सभी बुद्धिमान प्राणियों का जीवन हैं।

36. हमारा नाम संतों के नाम पर रखा गया है और हम उनके वस्त्र पहनते हैं, जिनका हम अविश्वासियों के सामने घमंड करते हैं; फिर भी हम उनके कार्यों का अनुकरण करने के उत्साह से वंचित हैं। मुझे डर है कि प्रेरित के शब्द हम पर ही लागू हों: '*धर्म के नाम का ढोंग तो करते हैं, पर उसकी सामर्थ्य से इनकार करते हैं*' (2 तीमु. 3:5)। प्रभु आपको यह समझने की कृपा दें कि जिस जीवन को आपने अपनाया है, वह वास्तव में क्या है, ताकि आप उसकी

आत्मा के अनुसार आचरण करके, अदृश्य विरासत प्राप्त करने के योग्य बन सकें; प्रभु की इच्छा के अनुसार अपनी शक्ति के अनुसार अपने कर्म करना—यही हमें करना चाहिए! क्योंकि यह हमारी प्रकृति में निहित है, और हमारे सद्गुण से इससे अधिक की मांग नहीं की जानी चाहिए। – जो कोई परमेश्वर की सेवा करता है और पूरे मन से उसकी खोज करता है, वह अपनी प्रकृति के अनुरूप कार्य करता है; परन्तु जो कोई भी कोई पाप करता है, वह निन्दा और दण्ड का पात्र है, क्योंकि यह उसकी प्रकृति के विपरीत है।

३७. जब से मेरे प्रभु ने, अपनी कृपा से, मेरे मन को उसकी मृत्यु-निद्रा से जगाया है, मेरा रोना अत्यधिक और मेरा विलाप अवर्णनीय रहा है। मैं अपने आप से पूछता हूँ: हमने उसके लिए इतना कुछ किया है, उसके बदले में हम प्रभु को क्या दे सकते हैं? उसने अपने स्वर्गदूतों को हमारी सेवा करने, भविष्यवक्ताओं को भविष्यवाणी करने, और प्रेरितों को सुसमाचार का प्रचार करने की आज्ञा दी है। लेकिन इन सब से बढ़कर, उसने हमारे उद्धार के लिए अपने एकमात्र पुत्र को भेजा। आओ, हम अपने हृदयों को परमेश्वर के भय के प्रति उत्साहित करें। जान लो कि यूहन्ना बपतिस्मादाता और अग्रदूत ने पश्चाताप के लिए पानी से बपतिस्मा दिया, हमारे प्रभु यीशु मसीह के बपतिस्मा की तैयारी में, जो पवित्र आत्मा और आग से बपतिस्मा देते हैं—जो कि अच्छे कर्मों के प्रति उत्साह की आग है। इसलिए, आइए हम शरीर और आत्मा से शुद्ध होने के लिए उत्सुक तत्परता दिखाएँ, और हमारे प्रभु यीशु मसीह के बपतिस्मा को प्राप्त करने के बाद, आइए हम अच्छे कार्यों के लिए उत्सुक रहें, ताकि हम स्वयं को एक सुखद बलिदान के रूप में उन्हें अर्पित कर सकें। बपतिस्मा में प्राप्त होने वाला परमेश्वर का आत्मा हमें पवित्रता से जीने की शक्ति देता है, ताकि वह हमें हमारी पूर्व गौरवमय अवस्था में पुनर्स्थापित कर सके और हमें अनंतकालिक विरासत प्राप्त करने के योग्य बना सके। जान लो कि जो मसीह में बपतिस्मा लेते हैं, वे मसीह के वस्त्र पहिन लेते हैं, जैसा कि प्रेरित कहते हैं (गलातियों 3, 27, 28) – पवित्र आत्मा की कृपा प्राप्त करके। इसके अलावा, चाहे दास हो या स्वतंत्र, पुरुष हो या महिला, जैसे ही वे यह कृपा प्राप्त करते हैं, ये शारीरिक भेदभाव तुरंत ही उन पर अपना कोई प्रभाव खो देते हैं। और पवित्र आत्मा, स्वर्ग के अनन्त राज्य में उनकी विरासत की गारंटी बनते हुए, उन्हें सिखाता है कि उन्हें आत्मा और सत्य में परमपिता की आराधना कैसे करनी चाहिए (यूहन्ना 4:23)।

38. मैंने तुम्हारे लिए प्रार्थना की है, कि तुम्हें भी उस महान अग्नि-आत्मा की प्राप्ति हो, जो मुझे प्राप्त हुई है। यदि आप उसे प्राप्त करना चाहते हैं, ताकि वह आपके भीतर वास करे, तो पहले शारीरिक परिश्रम और हृदय की विनम्रता अर्पित करें, और दिन-रात स्वर्ग की ओर अपने विचारों को उठाकर इस अग्निमय आत्मा को धर्मी हृदय से खोजें – और वह आपको प्रदान की जाएगी; इस प्रकार तिशिबी इलियास और एलीशा ने अन्य भविष्यद्वक्ताओं के साथ मिलकर उसे प्राप्त किया। जो कोई भी इस साधना (वर्णित कर्मों) के द्वारा स्वयं को संस्कारित करता है, उन्हें यह आत्मा युगों-युगों तक दी जाएगी। अपने हृदय की गहराई से उत्कट निवेदन के साथ प्रार्थना में बने रहो – और यह तुम्हें दिया जाएगा। क्योंकि वह आत्मा धर्मी हृदयों में वास करता है। और जब उसे ग्रहण किया जाता है, तो वह आपको उच्चतम रहस्य प्रकट करेगा; वह आपसे मनुष्यों और जानवरों के भय को दूर भगा देगा – और आपके पास दिन-रात स्वर्गीय आनंद होगा; और आप इस शरीर में उन लोगों की तरह होंगे जो पहले से ही (स्वर्गीय) राज्य में हैं।

39. यदि कोई व्यक्ति ईश्वर के प्रेम को प्राप्त करना चाहता है, तो उसे ईश्वर का भय होना चाहिए; और यह भय विलाप को जन्म देता है, और विलाप साहस को जन्म देता है। जब यह सब आत्मा में परिपक्व हो जाता है, तो यह सभी चीजों में फल देना शुरू कर देता है। और ईश्वर, आत्मा में इन सुंदर फलों को देखकर, उसे अपनी ओर खींचता है, जैसे चुने हुए धूप की सुगंध को; वह हर समय स्वर्गदूतों के साथ उस पर आनंदित होता है, उसे आनंद से भर देता है, और उसके सभी मार्गों पर उसकी रक्षा करता है, ताकि वह सुरक्षित रूप से अपने विश्राम स्थान तक पहुँच सके। तब शैतान उस पर हमला नहीं करता, क्योंकि वह सर्वोच्च रक्षक को उसके चारों ओर खड़ा देखता है; वास्तव में, वह इस महान शक्ति के कारण उसके पास आने से भी डरता है। यह शक्ति स्वयं प्राप्त करो, ताकि राक्षस तुमसे डरें, जो प्रयास तुम करते हो वे तुम्हारे लिए आसान हो जाएँ, और दिव्यता तुम्हें मीठी लगे। ईश्वरीय प्रेम की यह मिठास शहद के छत्ते से भी कहीं अधिक मीठी है। समुदाय में रहने वाले कई संन्यासी और कुंवारी कन्याएं, जिन्होंने ईश्वरीय प्रेम की इस मिठास का थोड़ा भी स्वाद नहीं चखा था, और जिन्हें ईश्वरीय शक्ति प्राप्त नहीं हुई थी, उन्होंने सोचा कि यह उनमें पहले से ही मौजूद है; लेकिन चूँकि उन्होंने इसे प्राप्त करने का कोई प्रयास नहीं किया, इसलिए ईश्वर ने उन्हें यह नहीं दिया। जो कोई भी इसे प्राप्त करने का प्रयास करता है, वह निश्चित रूप से ईश्वर की कृपा से इसे प्राप्त कर लेगा; क्योंकि ईश्वर के पास कोई पक्षपात नहीं है। जब कोई व्यक्ति, अपने भीतर ईश्वर के प्रकाश और उसकी शक्ति को धारण करने की इच्छा रखते हुए, इस संसार की निंदा और सम्मान दोनों को तुच्छ समझता है, सांसारिक सभी चीजों और शरीर के आराम से घृणा करता है, और अपने हृदय को सभी बुरे विचारों से शुद्ध करता है, दिन-रात परहेज़, आँसू और शुद्ध प्रार्थनाएँ ईश्वर को अविराम अर्पित करता है, तो ईश्वर उस व्यक्ति को वह शक्ति प्रदान

करता है। ऐसी शक्ति प्राप्त करने का प्रयास करें – और आप अपने सभी कार्यों को शांति और आसानी से करेंगे, परमेश्वर के सामने महान धैर्य प्राप्त करेंगे, और वह आपकी सभी प्रार्थनाएँ स्वीकार करेंगे।

४०. ईश्वर उन लोगों की सुनता है जो उससे प्रेम करते हैं और पूरे दिल से उसकी खोज करते हैं, और वह उनकी सभी प्रार्थनाएँ स्वीकार करता है। लेकिन वह उन लोगों की प्रार्थनाओं को नहीं सुनता जो उससे पूरे मन से नहीं मिलते, बल्कि दो मन वाले होते हैं, और जो कुछ भी करते हैं, वह केवल मानवीय महिमा और प्रशंसा पाने के लिए करते हैं; बल्कि, वह उनसे क्रोधित होता है, क्योंकि उनके कर्म दिखावे के लिए होते हैं। और भजन के वचन उन पर पूरे हुए, जो कहते हैं: *'परमेश्वर ने उन लोगों की हड्डियाँ बिखेर दी हैं जो मनुष्यों को प्रसन्न करना चाहते हैं'* (भजन संहिता 52:6)। इसी कारण से, परमेश्वर की शक्ति उन में काम नहीं करती—क्योंकि वे जो कुछ भी करते हैं, उन सभी कर्मों में उनका हृदय दृढ़ नहीं रहता। और न ही वे दिव्य मिठास, उसकी शांति और आनंद को जानते हैं। हम में से कई ऐसे हैं जिन्हें वह शक्ति प्राप्त नहीं हुई है जो आत्मा को मिठास प्रदान करती है, और उसे दिन-प्रतिदिन बढ़ती हुई आनंद और प्रसन्नता से भर देती है, और उसमें दैवीय गर्माहट जगाती है। वे दुष्ट आत्मा से धोखा खाते हैं, क्योंकि वे अपने कर्म दूसरों के सामने दिखावे के लिए करते हैं। जहाँ तक आपका सवाल है, प्रभु के सामने अपने श्रम के फल लाने के बाद, व्यर्थता की आत्मा से दूर रहने का प्रयास करें, और उसके विरुद्ध अनवरत युद्ध छेड़ें, ताकि प्रभु आपके द्वारा उनके सामने लाए गए फलों को स्वीकार करें और आपको अपनी चुनी हुई संतानों को प्रदान की गई शक्ति प्रदान करें। इस दुष्ट आत्मा का विरोध करना बंद न करें; क्योंकि जब कोई व्यक्ति अच्छे कर्म करने और एक नेक प्रयास करने निकलता है, तो यह आत्मा भी उसमें भाग लेने के लिए या उसे ऐसे कार्यों से पूरी तरह से भटकाने के लिए धावा बोल देती है। यह किसी को भी धर्मपरायणता से कार्य करते हुए बर्दाश्त नहीं कर सकती, और उन सभी का विरोध करती है जो प्रभु के प्रति विफादार रहना चाहते हैं। वह कई लोगों को संपूर्ण रूप से सद्गुण प्राप्त करने से रोकता है, जबकि अन्य लोगों के कर्मों में हस्तक्षेप करता है और उनके फलों को नष्ट कर देता है, उन्हें सद्गुणों का अभ्यास करने और परोपकारी कार्य करने की शिक्षा देते हुए, साथ ही उनमें अहंकार मिला देता है। लोग सोचते हैं कि ऐसे व्यक्ति इन फलों से समृद्ध होते हैं, जबकि वास्तव में उनके पास कुछ भी नहीं होता - वे एक अंजीर के पेड़ की तरह हैं, जिसे दूर से देखने पर ऐसा लगता था कि उसमें बहुत सारे मीठे फल हैं; लेकिन पास आने पर, उस पर कुछ भी नहीं मिला। ईश्वर उन्हें मुरझा देते हैं क्योंकि उन्हें उन पर कोई अच्छा फल नहीं मिलता, और वह केवल उन्हें अपनी दिव्यता की अतुलनीय मिठास से ही वंचित नहीं करते। लेकिन आप, इस प्रयास में उतरकर, घमंड की भावना का विरोध करने का प्रयास करें—उसका विरोध करें और उस पर विजय प्राप्त करें। ईश्वर की शक्ति आएगी, जो तुम्हें सहायता प्रदान करेगी और तुम्हारे साथ रहेगी, और हर समय वह तुम पर उत्साह और ऊष्मा प्रदान करेगी, जो किसी भी अन्य चीज़ से अधिक कीमती हैं। यदि तुम में से किसी को लगता है कि वह इस ऊष्मा से वंचित है, तो उसे इसे खोजने का प्रयास करना चाहिए – और यह उस तक आएगी जो इसे खोजता है। यह एक आग की तरह है जिसे लोग, जब उस पर थोड़ा तेल उबालना चाहते हैं, तो उसे भड़काने के लिए हवा देते हैं, जब तक कि वह प्रज्वलित न हो जाए; और एक बार प्रज्वलित हो जाने पर, यह अपनी प्राकृतिक शक्ति से जलती है, उबलती है, ऊपर उठती है और जलती रहती है। इसी तरह, जब आप देखें कि आपकी आत्माएँ उपेक्षा और आलस्य के कारण ठंडी होती जा रही हैं, तो उन पर आँसू बहाकर उन्हें फिर से प्रज्वलित करने के लिए जल्दी करें। निस्संदेह, वह आग आएगी और आपकी आत्माओं के साथ मिल जाएगी - और जो लोग इसे प्राप्त कर लेंगे वे अच्छे कर्मों से उबल उठेंगे। उदाहरण के लिए दाऊद को ही लें – जब उसने देखा कि उसकी आत्मा भारी और ठंडी हो गई है, तो उसने कहा: *'मैं पुराने दिनों को याद करता हूँ; मैं ने तेरे सब कामों पर मनन किया है; मैं ने तेरे हाथ के कामों पर विचार किया है। मैं तेरी ओर अपने हाथ उठाता हूँ, और मेरी आत्मा सूखी भूमि की नाईं तुझी से तरसती है'* (भजन संहिता 142:5,6)। आप देखें, जब दाऊद का मन भारी हो गया, तो वह इस बात से बहुत परेशान था, जब तक कि उसके हृदय में आग फिर से प्रज्वलित नहीं हो गई, यहाँ तक कि वह पुकार उठा: *'हे परमेश्वर, मेरा मन तैयार है; मेरा मन तैयार है'* (भजन संहिता 107:2)। और इस निरंतर देखभाल और चिंता के द्वारा वह अपनी पूर्व अवस्था में लौट आया। आप भी ऐसा ही करें, और दिव्य प्रकाश और अग्नि की सहायता से अपने हृदयों को तैयार करने में एकमत हों।

४१. प्रार्थना करें कि ईश्वर आपको सभी चीज़ों को स्पष्ट रूप से देखने और समझने की कृपा दें, ताकि आप सही ढंग से पहचान सकें कि क्या अच्छा है और क्या बुरा। प्रेरित पौलुस के पत्र में लिखा है कि *'ठोस भोजन परिपक्व लोगों के लिए है'* (इब्रानियों ५:१४)। ये वही हैं जिन्होंने लंबे और परिश्रमी प्रयासों से अपने इंद्रियों और इरादों को अच्छाई और बुराई के प्रति प्रशिक्षित किया है, जो राज्य के पुत्र बने हैं और जिन्हें परमेश्वर के बच्चे के रूप में गोद लिए गए लोगों में गिना गया है। और परमेश्वर ने उन्हें उनके सभी मामलों में बुद्धि और विवेक प्रदान किया है, ताकि न तो कोई मनुष्य और न ही शैतान उन्हें धोखा दे सके। आपको यह जानना चाहिए कि शत्रु विश्वासियों को भलाई के

आभास से लुभाता है, और कई लोगों को धोखा देने में सफल हो जाता है क्योंकि उनमें विवेक और बुद्धि की कमी होती है। इसलिए, जब धन्य पौलुस ने समझ की इन संपदाओं को जान लिया, जो विश्वासियों के लिए नियत हैं और जिनकी महानता का कोई अंत नहीं है, तो उन्होंने एफसियों को लिखा: *'परमेश्वर तुम्हें बुद्धि और प्रकाशन का आत्मा दे, जो तुम्हारे हृदय की आँखें खोल दे, ताकि तुम जानो कि उस आशा का क्या है, जिस में तुम बुलाए गए हो, और उस महिमा की विरासत की संपत्ति का क्या है, और पवित्र लोगों में उसकी महिमा की अमापनीय महानता का क्या है'* (इफसियों 1:17-18)। उन्होंने यह उनके प्रति अपने असीम प्रेम के कारण किया, यह जानते हुए कि यदि वे इसे प्राप्त कर लेते, तो उन्हें किसी भी प्रकार की कठिनाई का सामना नहीं करना पड़ता, और न ही वे किसी से डरते; बल्कि, प्रभु का आनंद उन्हें दिन-रात सांत्वना देता, और उनका श्रम हर समय उनके लिए सुखद होता। धर्मनिरपेक्ष समुदायों में रहने वाले कई भिक्षु और कुंवारी इस स्तर को प्राप्त नहीं करते हैं। और आप, यदि आप इस स्तर को प्राप्त करना चाहते हैं, जो पूर्णता का शिखर है, तो उन सभी से दूर हो जाइए जो ऐसे खिताब—अर्थात् भिक्षुत्व और कुंवारीपन—धारण करते हैं, फिर भी इस मामले में स्पष्ट अंतर्दृष्टि और सही निर्णय का अभाव रखते हैं; क्योंकि यदि आप उनसे मेलजोल रखते हैं, तो वे आपको फलने-फूलने नहीं देंगे, बल्कि आपके उत्साह को भी बुझा देंगे, क्योंकि उनमें उत्साह नहीं है, केवल ठंडक है, इस तथ्य के कारण कि वे अपनी इच्छाओं का पालन करते हैं। इसलिए, यदि वे आपके पास आते हैं और अपनी इच्छाओं के अनुसार आपको सांसारिक बातचीत में लगाते हैं, तो इसकी सहमति न दें। क्योंकि प्रेरित पौलुस ने लिखा है: *'आत्मा को न बुझाओ; भविष्यवाणियों को तुच्छ न समझो'* (1 थिस्स. 5:19, 20)। जान लो कि व्यर्थ की बातों की तरह आत्मा को बुझाने वाली कोई और चीज़ नहीं है।

४२. हर तर्कशील प्राणी में—चाहे वह पुरुष हो या महिला—प्रेम का एक अंग होता है, जिसके द्वारा वे दैवी और मानवीय दोनों को अपनाने में सक्षम होते हैं। जो परमेश्वर के हैं (आध्यात्मिक) वे दैवीय को प्रेम करते हैं; जो देहधर्मी हैं वे देहधर्मी को प्रेम करते हैं। जो दैवीय को प्रेम करते हैं वे अपने हृदयों को सभी अशुद्धियों और इस नाशवान संसार के कर्मों से शुद्ध करते हैं; वे संसार और अपनी ही आत्मा से घृणा करते हैं, और अपना क्रूस उठाए हुए प्रभु का अनुसरण करते हैं, और सभी बातों में उनकी इच्छानुसार कार्य करते हैं। इसीलिए ईश्वर उनमें वास करते हैं और उन पर मिठास और आनंद प्रदान करते हैं, जो आत्मा को पोषण देते हैं, उसे तृप्त करते हैं और उसे फलने-फूलने के लिए प्रेरित करते हैं। जैसे पेड़ प्राकृतिक जल से सिंचित हुए बिना नहीं बढ़ सकते, वैसे ही आत्मा भी स्वर्गीय मिठास प्राप्त किए बिना नहीं बढ़ सकती। केवल वे आत्माएँ ही बढ़ती हैं जिन्हें आत्मा प्राप्त हुई है और जो स्वर्गीय मिठास से परिपूर्ण हैं।

४३. यह स्वीकार करो कि तुम पापी हो, और अपनी लापरवाही की अवस्था में तुमने जो कुछ भी किया है, उस पर शोक करो। इसके लिए, प्रभु की कृपा तुम पर बनी रहेगी, और वह तुम में काम करेगा: क्योंकि वह भला है, और जो कोई भी उसके पास लौटता है, उसके पापों को क्षमा करता है, ताकि वह उन्हें फिर कभी याद न रखे। हालाँकि, वह चाहता है कि जो (क्षमा पाए हैं) वे स्वयं अपने अब तक किए गए पापों की क्षमा को याद रखें, ताकि, इसे न भूलकर, वे अपने आचरण में ऐसा कुछ करने से बचें जो उन्हें उन पापों का भी हिसाब देने के लिए मजबूर कर दे जिनके लिए उन्हें पहले ही क्षमा मिल चुकी है, – जैसा उस दास के साथ हुआ, जिसके स्वामी ने उस पर बकाया पूरा कर्ज़ माफ कर दिया था। क्योंकि – जब उसने इस दया को भूलकर अपने साथी दास के साथ अन्याय किया, तो उसके स्वामी ने उससे उस माफ किए गए कर्ज़ की पूरी राशि की मांग की, – क्योंकि उसने अपने साथी दास पर कोई दया नहीं दिखाई थी और उसे सौ डेनारी – जो उससे माफ़ किए गए ऋण की तुलना में एक तुच्छ राशि थी – नहीं माफ़ किया था (मत्ती 18:23 आदि)। आइए हम नबी दाऊद पर विचार करें। जब उसने उरियाह की पत्नी के साथ पाप करने के बाद, नबी नातान ने उसे इस और जो कुछ उसने उसके पति के साथ किया था, उसके लिए फटकारा, तो उसने फटकार सुनकर तुरंत पश्चाताप किया और स्वयं को नम्र किया। नबी नातान ने उससे ऐसा क्यों कहा: 'परमेश्वर ने तेरे पापों को पहले ही क्षमा कर दिया है' (2 शमूएल 12:13)? फिर भी दाऊद, अपने पापों के लिए क्षमा प्राप्त करने के बाद, उन्हें नहीं भूला, और उनकी स्मृति को आने वाली पीढ़ियों तक पहुँचाया। यह सभी पीढ़ियों के लिए, पीढ़ी दर पीढ़ी एक स्मरण के रूप में किया गया था। वह कहता है, *'मैं दुष्टों को तेरे मार्ग सिखाऊँगा'* (भजन संहिता 50:15), ताकि सभी पापी उसके उदाहरण से सीख सकें, और उसके जैसे अपने पापों से पश्चाताप करें, और जब उन्हें क्षमा मिल जाए, तो उन्हें भूल न जाएँ, बल्कि हमेशा उन्हें याद रखें। ईश्वर ने स्वयं यशायाह नबी के माध्यम से कुछ इसी प्रकार कहा: *'मैं वही हूँ जो तुम्हारे पापों को मिटा देता है, और मैं उन्हें याद नहीं रखूँगा। 'लेकिन तुम्हें उन्हें याद रखना* चाहिए' (यशायाह 43:25-26)। उन्होंने यिर्मयाह भविष्यद्वक्ता के माध्यम से भी कहा: *'हे इस्राएल के घराने, मेरी ओर फिरो, ... और मैं तुम पर अपना मुख नहीं लगाऊँगा, क्योंकि मैं दयालु हूँ, और मैं तुम पर सदा के लिए क्रोधित नहीं रहूँगा। परन्तु अपनी अधर्म की बात पर ध्यान दो, क्योंकि तुम ने अपने परमेश्वर यहोवा के विरुद्ध अपराध किया है और अपनी चालों को टेढ़ा कर लिया है'* (यर. 3:12–

13)। इस प्रकार, जब प्रभु हमारे पापों को क्षमा करते हैं, तो हमें स्वयं उन्हें क्षमा नहीं करना चाहिए, बल्कि उनके लिए अपने पश्चाताप को नवीनीकृत करके उन्हें हमेशा याद रखना चाहिए।

४४. आध्यात्मिक तपस्या गौरवशाली है, लेकिन इसके कई विरोधी हैं। जो कोई इसमें सिद्ध होना चाहता है, उसे किसी भी बुराई का दास नहीं होना चाहिए। जो कोई किसी बुराई का दास है, वह पूर्णता के लक्ष्य से बहुत दूर है।

४५. हमारे प्रभु यीशु मसीह ने अपनी अथाह विनम्रता में अपनी दिव्यता को अपनी मानवता से ढक लिया, ताकि सभी उन्हें एक मनुष्य समझें, जबकि वे केवल एक मनुष्य नहीं थे, बल्कि मनुष्य बने ईश्वर थे, जैसा लिखा है: *'और वचन देहधारी हुआ और हमारे बीच में वास किया'* (यूहन्ना 1:14)। तथापि, प्रभु ने अपने अवतार के द्वारा ईश्वर होना बंद नहीं किया, जो हमारे उद्धार के लिए आवश्यक था।

४६. कई लोग, अपनी मूर्खता में, कहते हैं: 'हमने भी प्रभु यीशु मसीह को देखा है, ठीक वैसे ही जैसे प्रेरितों ने देखा था'; फिर भी वे भ्रम और धोखे में हैं, और उनमें प्रभु को वैसे देखने की आँखें नहीं हैं जैसे प्रेरितों ने उन्हें देखा था, प्रेरित पौलुस ने प्रभु को ठीक वैसे ही देखा जैसे अन्य प्रेरितों ने देखा—वे जो उनके साथ थे और उन पर विश्वास करते थे जब वे पृथ्वी पर चलते थे, और भीड़ से घिरे हुए थे जो उन्हें केवल एक मनुष्य मानती थी। जब रक्तस्राव वाली स्त्री ने, अपने हृदय की आँखों से देखकर, विश्वास किया कि वह परमेश्वर है, और विश्वास से उसके वस्त्र के छोर को छुआ, तो वह तुरंत अपनी पीड़ा से चंगी हो गई; उसने पूछा, 'मुझे किसने छुआ?'—इसलिए नहीं कि वह नहीं जानता था, बल्कि इसलिए कि वह उसके विश्वास को प्रकट करना चाहता था। यद्यपि प्रेरित पतरस ने कहा, 'भीड़ तुझ पर धक्का दे रही है, और फिर भी तू पूछता है, "मुझे किसने छुआ?"' वह स्वयं आगे आई और उसने कबूल किया कि वह कैसे चंगी हो गई थी। तब प्रभु ने उससे कहा, *'जा; तेरे विश्वास ने तुझे चंगा किया है'* (लूका 8:45-48)। पिलातुस, अन्नास और कैफा ने भी प्रभु को देखा, लेकिन भीड़ के बाकी लोगों की तरह, उन्होंने विश्वास के बिना ही उन्हें देखा, न कि वैसे जैसे प्रेरितों ने उन्हें देखा था: इसीलिए उन्हें उन्हें देखने से कोई भी लाभ नहीं हुआ। लेकिन प्रेरित पौलुस ने उन्हें अपने हृदय की आँखों से और अपने अटूट विश्वास के द्वारा देखा, ठीक वैसे ही जैसे रक्तस्राव वाली स्त्री ने उन्हें देखा, जिसने विश्वास से उन्हें छूकर चंगा पाया।

47. जब किसी व्यक्ति के भीतर पाप का राज्य समाप्त हो जाता है, तो परमेश्वर आत्मा को प्रकट होते हैं और उसे शरीर के साथ शुद्ध करते हैं। लेकिन यदि पाप का राज्य शरीर में वास करता है, तो कोई व्यक्ति परमेश्वर को नहीं देख सकता, क्योंकि उसकी आत्मा शरीर के भीतर है और उसमें उस प्रकाश के लिए कोई स्थान नहीं है जो परमेश्वर का दर्शन है। दाऊद कहते हैं: *'तेरे प्रकाश में हम प्रकाश देखेंगे'* (भजन संहिता 35:10)। तो फिर, वह कौन सी रोशनी है जिसमें कोई व्यक्ति रोशनी देखता है? यह वह रोशनी है जिसके बारे में हमारे प्रभु यीशु मसीह सुसमाचार में बात करते हैं—अर्थात्, कि पूरा मनुष्य प्रकाश से भरपूर होना चाहिए, और उसमें कोई भी ऐसा अंग नहीं होना चाहिए जो अंधकारमय हो (लूका 11:36)। प्रभु ने यह भी कहा: *'पिता को पुत्र के सिवा कोई नहीं जानता, और पुत्र जिसे वह जानना चाहे, वही जानता है'* (मत्ती 11:27)। परन्तु पुत्र अपने पिता को अंधकार के पुत्रों पर नहीं, बल्कि उन लोगों पर प्रगट करते हैं जो प्रकाश में बने रहते हैं और जो प्रकाश के पुत्र हैं, जिनकी हृदय की आँखों को उन्होंने अपनी आज्ञाओं के ज्ञान से प्रकाशित किया है।

48. भजन में लिखा है: *'मैं अद्भुत वास के स्थान को, वरन् परमेश्वर के भवन तक जाऊँगा'* (भजन 41:5)। यह 'मैं जाऊँगा' एक और यात्रा का संकेत देता है और आत्मा की परिपक्वता की प्राप्ति की ओर इशारा करता है; क्योंकि यहाँ यह पहले ही परमेश्वर के निकट आ चुकी है, जबकि पहले इसका मार्ग परमेश्वर से बहुत दूर था। हमें इस बात पर आश्चर्य नहीं होना चाहिए कि हमारा मार्ग बहुत दूर है, क्योंकि हम अभी भी आध्यात्मिक शिशु अवस्था में हैं। हम देखते हैं कि महान भविष्यवक्ता एलिया से भी कहा गया था: 'उठो, खाओ, पियो और बल प्राप्त करो; क्योंकि तुम्हारा मार्ग अभी भी लंबा है' (1 राजा 19:7), (और वह परमेश्वर के दर्शन की ओर यात्रा कर रहे थे)। दाऊद ने भी इसी यात्रा की लंबाई के बारे में कहा: *'काश मुझे पंख मिल जाते, तो मैं उड़कर दूर चले जाता और वहीं विश्राम करता?'* (भजन संहिता 54:7)। इसीलिए इस मार्ग को लापरवाही, सुस्ती या आलस्य से नहीं, बल्कि चौकसी और उत्साह के साथ तय करना चाहिए। ब्रह्मांड के शिक्षक, पौलुस, हमें सलाह देते हैं, *'इस प्रकार दौड़ो कि तुम इनाम जीत सको' – और जोड़ते हैं: 'मैं अपने शरीर को अनुशासित करता हूँ और उसे वश में रखता हूँ'* (1 कुरिन्थियों 9:27)। इसलिए जब तक इस शरीर में समय है, हमें दौड़ना चाहिए, ताकि हम पूर्णता प्राप्त कर सकें, जैसे कि स्वयं संत पौलुस ने प्राप्त की, जो कहते हैं: *'मैंने अच्छा संघर्ष किया है, मैंने दौड़ पूरी कर ली है, मैंने विश्वास बनाए रखा है; अब मेरे लिए धार्मिकता का मुकुट रखा गया है'* (2 तीमु. 4:7-8)।

४९. जैसे शरीर, जब तक आत्मा उसमें वास करती है, तीन अवस्थाओं से गुज़रता है, अर्थात्: यौवन, परिपक्वता और वृद्धावस्था; वैसे ही आत्मा भी, जो शरीर के भीतर छिपी रहती है, इन्हीं तीन अवस्थाओं से गुज़रती है, अर्थात्:

विश्वास की शुरुआत, उसमें प्रगति और पूर्णता। पहले चरण में, जब आत्मा विश्वास करना शुरू करती है, तो वह मसीह में फिर से जन्म लेती है, जैसा कि सुसमाचार में कहा गया है; संत यूहन्ना प्रेरित ने हमें इस नए जन्म के संकेत दिए, साथ ही मध्य चरण और पूर्णता के भी, जब उन्होंने कहा: 'मैंने तुम जवानों को लिखा है; मैंने तुम बच्चों को लिखा है; मैंने तुम्हें लिखा है, हे पितरों' (1 यूहन्ना 2:12–14)। इस प्रकार उन्होंने अपने सांसारिक मित्रों को नहीं लिखा, बल्कि विश्वासियों को लिखा, और उन तीन चरणों का वर्णन किया जिनसे होकर आध्यात्मिक क्षेत्र के लिए प्रयासरत लोग गुजरते हैं, ताकि वे पूर्णता प्राप्त कर सकें और पूर्ण अनुग्रह के योग्य ठहर सकें।

५०. जो आध्यात्मिक जीवन से प्रेम करता है, उसे यूसुफ की पवित्रता और आत्म-संयम का अनुकरण करना चाहिए; उसे चिंतन के माध्यम से स्वयं को अनुशासित करना शुरू करना चाहिए और सभी बुरी इच्छाओं के विरुद्ध स्वयं को सशस्त्र करना चाहिए, जो धूर्त शत्रु के समर्थन से मजबूत होती हैं, जो यॉब के शब्दों में उसके बारे में कहता है: *'क्योंकि उसकी शक्ति उसकी कमर में है, और उसकी सामर्थ्य उसके गर्भ के भीतर है'* (अध्याय 40, श्लोक 11)। अत: जो कोई भी इन शारीरिक इच्छाओं के विरुद्ध संघर्ष करता है और स्वयं को सशस्त्र करता है—जो आमतौर पर अत्यधिक भोजन और पेय से उत्पन्न होती हैं—उसे कठोर संयम से अपने कमर कसनी चाहिए, ताकि वह पवित्रता में दृढ़ खड़ा रह सके। लिखा है कि जिस स्वर्गदूत ने याकूब से कुश्ती की, उसने उसकी जाँघ की नस को दृढ़ता से पकड़ लिया, जिससे उसका मांस सूख गया और वह कमजोर हो गया, और उसे इस्राएल कहा गया, अर्थात्, 'जो परमेश्वर को देखता है' (उत्पत्ति 32:25, 32)। इसी प्रकार, हमें भी कामवासना को मारने और बुझाने के लिए अपने शरीर को क्षीण करना चाहिए। क्योंकि शरीर का क्षीण होना हमें पवित्रता के गुण में पूर्णता प्राप्त करने में सक्षम बनाता है। जब शरीर थका होता है तो आत्मा मजबूत होती है। इसलिए, हमें अपने शरीरों को परिष्कृत करना चाहिए ताकि हमारे पास स्वयं को अनुशासित रखने की शक्ति हो; क्योंकि यदि हम शरीर को वश में करते हैं और इसे आत्मा का सेवक बनाते हैं, तो देह संबंधी विचार—जिसका प्रेम परमेश्वर के प्रति शत्रुता है—मांस के संयम द्वारा मार डाले जाएँगे। तब आत्मा प्रबुद्ध होगी और परमेश्वर के लिए एक मन्दिर बन जाएगी। जो कोई भी अपने सभी अंगों में शुद्ध रहने का प्रयास करता है, वह वास्तव में एक आध्यात्मिक तपस्वी है। और वही है जिसने अपने सभी इंद्रियों को प्रशिक्षित किया है, उन्हें अपने ऊपर शासन करने नहीं देता, बल्कि उन्हें नियंत्रित करता है और महान पवित्रता के द्वारा उन्हें प्रभु के जुए के अधीन कर देता है। वह अपनी आँखों को कुछ भी बुरा देखने, या महिलाओं पर वासना से घूरने नहीं देता; वह अपने कानों को बदनामी सुनने, या शैतान की सलाह और शैतान द्वारा डाले गए विचारों को सुनने नहीं देता; वह अपने होठों पर मुहर लगा देता है और अपनी जीभ को व्यर्थ बातें बोलने के लिए आजाद नहीं छोड़ता; वह दया और परोपकार के नेक कार्य करने के लिए अपने हाथ फैलाता है; उसके पैर प्रभु के वचनों को पूरा करने में चपल होते हैं: *'यदि कोई तुम्हें एक मील चलने के लिए मजबूर करता है, तो उसके साथ दो मील चलो'* (मत्ती 5:41); वह अपने पेट और छाती को काबू में रखता है, ताकि वह उनके कारण न गिरे या पेट और छाती के बल रेंगने वाले साँप की तरह जमीन पर रेंगने न लगे। भाइयों, तपस्वी का जीवन-मार्ग ऐसा ही है।

५१. जो कोई भी वास्तव में एक आध्यात्मिक तपस्वी बनना चाहता है, उसे शोरगुल वाली भीड़ से दूर रहने और उनके पास न जाने का प्रयास करना चाहिए, ताकि वह शरीर, हृदय और मन से, मानव जीवन के कोलाहल और उथल-पुथल से मुक्त रह सके; क्योंकि जहाँ लोग हैं, वहाँ कोलाहल है। हमारे प्रभु ने लोगों से अलग रहने और एकांत का उदाहरण हमें तब दिखाया जब वे प्रार्थना करने के लिए अकेले पहाड़ पर गए। जंगल में भी, उन्होंने शैतान को हराया, जिसने उनसे लड़ने की हिम्मत की। बेशक, वे भीड़ के बीच भी उसे हराने में असमर्थ नहीं थे; लेकिन उन्होंने ऐसा हमें यह सिखाने के लिए किया कि एकांत और मौन में हम दुश्मन को हराने और पूर्णता प्राप्त करने में बेहतर सक्षम होते हैं। इसी तरह, प्रभु ने लोगों के बीच अपने शिष्यों को अपनी महिमा नहीं दिखाई, बल्कि उन्हें पहाड़ पर ले गए, और वहाँ उन्होंने उन्हें अपनी महिमा दिखाई। यूहन्ना बपतिस्मा देने वाले भी, इस्राएल के सामने प्रकट होने के दिन तक जंगल में रहे। दुनिया में, दुश्मन के लिए हमें अपने बाहरी और आंतरिक दोनों हथियारों से दबाना आसान है; वहाँ, वह कुछ निर्लज्ज महिलाओं को अपने साथी और गुर्गों के रूप में अपने पास खींचकर, जो उसकी आज्ञाकार होती हैं, उनके माध्यम से विश्वासियों पर युद्ध छेड़ता है: कुछ निर्लज्ज महिला उसके लिए एक बहुत शक्तिशाली हथियार साबित होती है, जो अपनी प्रलोभनकारी जाल को दूर-दूर तक फैलाती है। जब यहेज़केल ने चार जीवित प्राणियों को देखा, जिनमें से प्रत्येक के चार चेहरे थे, जो सभी परमेश्वर की महिमा को प्रकट कर रहे थे, तो वह किसी शहर या गाँव में नहीं, बल्कि बाहर—खुले मैदान में था: क्योंकि परमेश्वर ने उससे कहा था, *'खुले मैदान में निकल जा और तू मेरी महिमा देखेगा'* (यहेज़केल 3:22)। वास्तव में, इस प्रकार के दर्शन और प्रकाशन संतों को हमेशा पहाड़ों और रेगिस्तानों में दिखाए जाते थे। भविष्यवक्ता यिर्मयाह ने भी, यह जानते हुए कि परमेश्वर एकांत को कितना महत्व देते हैं, कहा: *'यह मनुष्य के लिए अच्छा है, कि वह अपनी जवानी में अपने ऊपर जुआ लाद ले, अकेला बैठे और मौन रहे'*

(विलापगीत 3:27–28)। वह भी, यह अच्छी तरह जानते हुए कि ईश्वर को प्रसन्न करने की इच्छा रखने वालों को मानवीय गपशप कितना नुकसान पहुँचाती है, यह कहने से खुद को रोक नहीं सके: *'मुझे कौन देगा निर्जन प्रदेश में एक अंतिम शरण, कि मैं अपने लोगों को छोड़कर उनसे दूर चला जाऊँ?'* (यिर्मयाह 9:2)। इसी प्रकार, नबी एलिया को स्वर्गदूतों द्वारा भोजन मिला; और यह भीड़ के बीच, न तो किसी शहर या गाँव में, बल्कि जंगल में हुआ। संतों पर आए ये और इसी तरह के सभी घटनाक्रम हमें उन लोगों का अनुकरण करने के लिए प्रेरित करने हेतु दर्ज किए गए हैं जो एकांत को पसंद करते थे, क्योंकि यह हमें भी प्रभु तक ले जा सकता है। इसलिए, जैसा कि आपको करना चाहिए, उसमें स्वयं को स्थापित करने का प्रयास करें, ताकि यह आपको ईश्वर के दर्शन तक ले जाए, जो सबसे आध्यात्मिक मनन है।

५२. मैं आपको यह भी बताना चाहता हूँ कि जब परमेश्वर की आग आत्मा में वास करती है तो वह कैसी होती है। यह स्वर्गीय वायु में ऊँचा उड़ने वाले दो पंखों वाले पक्षी के समान है। सभी प्राणियों में से, केवल पक्षियों के पास ही पंख होते हैं जो उनकी विशिष्ट विशेषता है; जबकि ईश्वर की आज्ञा मानने वाली आत्मा के पंख ईश्वर की अग्नि की प्रेरणा हैं, जिसके द्वारा वह स्वर्ग की ओर ऊँचा उड़ान भर सकती है। यदि, हालाँकि, वह इन पंखों से वंचित हो जाती है, तो वह ऊँचा उठने में असमर्थ होगी, क्योंकि वह उस अग्नि में भागीदार नहीं है जो उसे ऊपर उठाती है, और वह अपने पंखों से वंचित पक्षी की तरह हो जाएगी, जो अब उड़ नहीं सकता। इसके अलावा, मानव आत्मा एक और मायने में पक्षी के समान है: गर्मी ही पक्षी के अस्तित्व में आने का कारण है; क्योंकि यदि कोई पक्षी अपने अंडों को गर्मी नहीं देता (से नहीं करता), तो उनमें से कोई जीवित चूज़ा नहीं फूटेगा, क्योंकि उन्हें गर्मी के अलावा किसी अन्य तरीके से जीवित नहीं किया जा सकता। इसी प्रकार ईश्वर भी, अपने प्रति समर्पित और आज्ञाकारी आत्माओं को अपनाकर और उन्हें गर्माहट देकर, उन्हें आध्यात्मिक जीवन के प्रति जाग्रत करते हैं। यह समझकर कि आत्मा, ईश्वर से जुड़ी और उनके प्रति समर्पित, उस पक्षी के समान है जिसका अस्तित्व का स्रोत गर्माहट है, किसी भी परिस्थिति में स्वयं को इस अग्नि की शक्ति से वंचित न होने दें। जान लो कि ईश्वर द्वारा तुम पर प्रदान की गई इस अग्नि के कारण, शैतान ने तुम्हारे लिए कई परीक्षाएँ तैयार की हैं, ताकि वह तुमसे इसे छीन सके: क्योंकि वह अच्छी तरह जानता है कि जब तक यह अग्नि तुममें बनी रहती है, वह किसी भी तरह से तुम पर विजय प्राप्त नहीं कर सकता।

53. शैतान का विरोध करो और उसकी चालाकियों को पहचानने का प्रयास करो। वह आमतौर पर अपनी कटुता को मिठास के भेष में छिपा लेता है, ताकि वह बेनकाब न हो जाए, और विभिन्न ऐसे भ्रम रचता है जो दिखाने में आकर्षक होते हैं – जो वास्तव में बिल्कुल इसके विपरीत होते हैं – ताकि वह सत्य की एक चालाक नकल से तुम्हारे हृदयों को बहका सके, जो वास्तव में आकर्षक है: उसकी सारी चालाकी इसी पर केंद्रित होती है, ताकि वह अपनी पूरी ताकत से हर उस आत्मा का विरोध कर सके जो ईश्वर की निष्ठापूर्वक सेवा करती है। वह आत्मा में कई तरह की और विविध वासनाएँ भर देता है, ताकि उसमें उस दैवीय अग्नि को बुझा सके, जिसमें सारी शक्ति निहित है; विशेष रूप से, वह शारीरिक आराम और उससे जुड़ी सभी चीजों पर कब्जा कर लेता है। लेकिन जब वह अंततः देखता है कि वे ऐसी सभी चीजों से सावधान रहते हैं और उससे कुछ भी स्वीकार नहीं करते हैं, और उसे यह आशा भी नहीं देते कि वे कभी उसकी बात मानेंगे, तो वह लज्जित होकर उनसे दूर हो जाता है। तब परमेश्वर का आत्मा उनमें वास करता है। और जब परमेश्वर का आत्मा उनमें वास करता है, तो वह उन्हें शांति प्रदान करता है, या उन्हें अपने सभी कर्मों में शांति पाने में सक्षम बनाता है, और परमेश्वर का जुआ उनके लिए मीठा कर देता है, जैसा कि सुसमाचार में लिखा है: *'तुम्हें अपने आत्माओं के लिए विश्राम मिलेगा'* (मत्ती 11:29), भले ही उन्होंने स्वयं पर उसका जूआ उठा लिया हो और वह उठाए हुए हों। तब वे सदाचार के अभ्यास, आज्ञाकारिता की पूर्ति और अपनी रात्रि की जागरणों में अथक हो जाते हैं; वे मानवीय बदनामी पर क्रोधित नहीं होते, न ही वे किसी से डरते हैं—न मनुष्य से, न जानवर से, न ही आत्मा से—क्योंकि प्रभु का आनंद दिन-रात उनके साथ रहता है, जो उनके मन को जीवंत करता है और उन्हें पोषण देता है। इस आनंद के द्वारा आत्मा बढ़ती है और सभी चीजों के लिए उपयुक्त, या परिपूर्ण बन जाती है, और इसके द्वारा स्वर्ग में आरोहण करती है।

५४. हम देखते हैं कि एक बच्चा पहले अपनी माँ का दूध पीकर, फिर अन्य प्रकार के भोजन खाकर, और अंत में वह सारा भोजन खाकर बढ़ता है जो लोग आमतौर पर खाते हैं। इस प्रकार वह मजबूत होता है, परिपक्व होता है, और यदि दुश्मन उस पर हमला करना चाहते हैं तो उसका हृदय साहसपूर्वक उनका सामना करता है। लेकिन यदि बचपन में कोई बीमारी उसे जकड़ लेती है, तो उसका पोषण और बलवर्धन सफल नहीं होता; वह कमजोर होकर बड़ा होता है, और हर शत्रु उस पर विजय प्राप्त कर लेता है। स्वस्थ होने और अपने शत्रुओं पर विजय पाने की शक्ति प्राप्त करने के लिए, उसे एक अनुभवी चिकित्सक की सहायता और देखभाल का सहारा लेना चाहिए। इसी प्रकार मानव आत्मा भी, यदि उसमें ईश्वर का आनंद नहीं है, तो वह कमजोर हो जाती है और उसे कई घाव लग जाते हैं। यदि वह एक

मनुष्य—ईश्वर का एक सेवक, जो आध्यात्मकि उपचार में नपिुण हो—को खोजने का प्रयास करती है और उससे चपिकी रहती है, तो वह पहले उसे उसके जुनून से ठीक करेगा, फरि उसे पुनर्जीवति करेगा और सखिाएगा कि ईश्वर की मदद से वह उस आनंद को कैसे प्राप्त करे जो उसका पोषण है। तभी वह अपने दुश्मनों, जो दुष्ट आत्माएँ हैं, का सामना कर पाएगी और उन पर वजिय प्राप्त करेगी, और उनकी युक्तियों को पैरों तले रौंद डालेगी, और पहले से भी अधकि आनंद से आनंदति होगी।

५५. उस दुष्ट शैतान की युक्तियों से सावधान रहो, जब वह सत्य बोलने वाले के भेष में आता है, तुम्हें बहकाने और भटकाने के लिए। भले ही वह तुम्हारे पास एक तेजस्वी दूत के रूप में आए, उस पर वश्विास न करो और न उसकी सुनो: क्योंकि वह आमतौर पर वश्विासयिों को सत्य के मोहक रूप से मंत्रमुग्ध कर देता है। अपूर्ण लोग शैतान की इन युक्तियों और उन बातों से अनभज्ञि रहते हैं जन्हिें वह लगातार उनमें भरता रहता है; परन्तु सद्धि जानते हैं, जैसा कि प्रेरति कहते हैं: *'परन्तु ठोस भोजन सद्धि लोगों के लयिे है, जनिके इन्द्रयिाँ भली और बुरी के भेद को जानने के लयिे दीर्घकाल के अभ्यास से परषि्कृत हो गई हैं'* (इब्रानयिों 5:14)। शत्रु इन लोगों को धोखा नहीं दे सकता; परन्तु वश्विासी, जो अपने वषिय में कम परवाह करते हैं, उन्हें वह अपनी दखिावटी मीठी चारे से आसानी से बहका देता है, और उन्हें पकड़ लेता है, जैसे कोई मछुआरा चारे से काँटा छपिाकर मछली पकड़ता है। मछली को यह नहीं पता होता कि इस चारे में कांटा छपिा है; इसलएि वह ऊपर की ओर तैरती है, चारा नगिल लेती है और तुरंत फँस जाती है। यदि मछली को पता होता कि वह इस चारे से फँस जाएगी, तो वह नस्सिंदेह इसके पास नहीं आती, बल्कि इससे दूर भाग जाती। इसी तरह, जैसा कि हमने कहा है, अपूर्ण वश्विासी शत्रु द्वारा पकड़े जाते हैं, और बल्कुिल समान कारणों से, जैसा कि सोलोमन कहते हैं: *'एक मार्ग है जो मनुष्य की दृष्टि में सीधा है, परन्तु उसका अंत नरक के द्वारों में जाता है'* (नीतविचन 16:25); यशायाह की पुस्तक में भी लखिा है: *'हे आमोस, तू क्या देखता है?'* उसने उत्तर दयिा: *'एक पक्षी-पकड़नेवाले का फंदा'* (8:2)। यह डरकर कि कहीं वह ज़मीन पर पकड़ में न आ जाए, पक्षी हवा में उड़ता है और सबसे ऊँची जगहों पर आराम और नींद के लिए अपना घोंसला बनाता है: वहाँ वह नश्चिंति होकर सोता है, यह जानते हुए कि कोई भी उसे पहुँचकर नहीं पकड़ सकता। लेकनि हम जानते हैं कि पक्षी-पकड़ने वाला उसे कैसे धोखा देता है: वह उस जगह आता है, अपने जाल बछिाता है, और सबके सामने ही बीज बखिेरता है; इस भोजन से वह पक्षी को उस ऊँचाई से नीचे लुभाता है, और वह नीचे आकर जाल में फँस जाता है। शैतान भी इसी तरह काम करता है, वह अपनी चालाकयिों से अपूर्ण ईसाइयों को फँसाता है और उन्हें उनकी ऊँचाइयों से नीचे गरिा देता है। उसने ऐसा ही तब कयिा जब उसने खुद को एक साँप का रूप दयिा और हव्वा से कहा: *'तुम नश्चिय ही नहीं मरोगी... जसि दनि तुम इसे खाओगी, उसी दनि तुम्हारी आँखें खुल जाएँगी और तुम परमेश्वर के समान हो जाओगी'* (उत्पत्ति 3:4, 5). ये शब्द सुनकर, हव्वा अपने हृदय में उसकी ओर आकर्षति हो गईं और सोचा कि उनमें सच्चाई है, क्योंकि उन्होंने इस मामले पर ठीक से वचिार नहीं कयिा था। लेकनि जब उसने स्वयं उसका स्वाद चखा, और आदम को चखने के लिए कुछ दयिा, तो उन पर वह बड़ी वपित्ति आई: वे दोनों अपनी उत्कृष्ट अवस्था से गरि गए। इसी तरह, शैतान अपूर्ण ईसाइयों के साथ व्यवहार करता है जब वे, भले-बुरे में अंतर करना नहीं जानते, अपनी प्रवृत्तयिों का अनुसरण करते हैं, अपने ही नर्णिय और राय से संतुष्ट रहते हैं; जब वे अपने सद्धि पताओं से परामर्श नहीं करते, जो नश्चिति रूप से भलाई और बुराई में अंतर करना जानते हैं, बल्कि अपने हृदय की इच्छाओं का अनुसरण करते हैं, यह सोचकर कि वे स्वयं पहले ही पूर्णता प्राप्त कर चुके हैं और अपने पताओं का आशीर्वाद प्राप्त कर चुके हैं। ऐसे लोग उन पक्षयिों की तरह हैं जन्होंने ऊँची जगह पर अपने घोंसले बनाए, लेकनि जमीन पर आ गरि, पक्षी-पकड़ने वाले के जाल में फँस गए और पकड़े गए। उनके साथ भी कुछ ऐसा ही होता है क्योंकि, अपनी आत्म-वश्विास में, वे हमेशा अपने दलि की बात मानते हैं और अपनी इच्छाओं को पूरा करते हैं, अपने गुरुओं की बात सुने बनिा या उनसे सलाह लिए बनिा। इसलएि, शैतान उनके लिए दर्शन और प्रकटयिाँ आयोजति करता है और उनके हृदयों को घमंड से भर देता है; कभी-कभी वह उन्हें रात में सपने देता है, जन्हिें वह दनि के समय पूरा करता है, ताकि उन्हें भ्रम में और गहराई तक डुबो सके। जैसे कि यह पर्याप्त न हो, वह कभी-कभी उन्हें रात में रोशनी दखिाता है, ताकि जसि जगह पर वे हैं वह उज्ज्वल हो जाए; और वह इस तरह की कई चीजें करता है, मानो वे संकेत हों। वह यह सब इसलएि करता है ताकि वे उसके बारे में बेपरवाह रहें, यह सोचकर कि वह एक स्वर्गदूत है, और उसे स्वीकार कर लें। जैसे ही वे इस अर्थ में उसे स्वीकार करते हैं, वह उन्हें उनके ऊँचे पदों से गरिा देता है, क्योंकि उन पर घमंड की आत्मा काबू पा लेती है। वह उन्हें इस वश्विास में बनाए रखने का प्रयास करता है कि वे आत्मा में महान और गौरवशाली बन गए हैं, कई अन्य लोगों से श्रेष्ठ हैं, और उन्हें अपने पतिरों की ओर मुड़ने या उनकी बात सुनने की कोई आवश्यकता नहीं है। फरि भी, धर्मग्रंथ के अनुसार, वे वास्तव में चमकदार गुच्छे हैं, लेकनि अधपके और खट्टे हैं। उनके पतिरों की शक्षिाएँ उनके लिए एक बोझ हैं; क्योंकि वे इस बात से आश्वस्त हैं कि वे स्वयं ही सब कुछ जानते हैं।

56. यह निश्चित रूप से जान लो कि तुम तब तक फल-फूल नहीं सकते, न ही बढ़कर सिद्ध हो सकते हो, और न ही तुम भले और बुरे में सही अंतर कर पाएंगे, जब तक कि तुम अपने पितरों की आज्ञा न मानो। हमारे पितर स्वयं इसी प्रकार चलते थे: उन्होंने अपने पितरों की आज्ञा मानी और उनकी शिक्षा पर ध्यान दिया; और इस प्रकार वे समृद्ध हुए, परिपक्व हुए और स्वयं शिक्षक बन गए, जैसा कि सिराख की बुद्धि में लिखा है: *'बड़ों की शिक्षा से मुंह न मोड़ो, क्योंकि उन्होंने इसे अपने पिताओं से सीखा है: क्योंकि उनसे तुम बुद्धि सीखोगे, और समय पर तुम उत्तर दे पाओगे'* (सिराख 8:11–12)। इसलिए, आपको उन लोगों के उदाहरण का पालन करना चाहिए जो अपने पिताओं के आज्ञाकारी थे और हर बात में उनकी बात मानते थे, और जिन्हें उनके पिताओं ने, ईश्वर की सहायता से, वह सब कुछ सिखाया जो उन्होंने स्वयं अपने पिताओं से सीखा था, और जिसे उन्होंने अपने आज्ञाकारी बेटों को सौंपा। इस प्रकार इसहाक ने अब्राहम की आज्ञा मानी; याकूब ने इसहाक की आज्ञा मानी; यूसुफ ने याकूब की आज्ञा मानी; एलीशा ने एलियाह की आज्ञा मानी; पौलुस ने अननियास की आज्ञा मानी; तिमोथी ने पौलुस की आज्ञा मानी। इन सभी ने, और इन जैसे अन्य लोगों ने, अपने पितरों की आज्ञा मानी, उनकी इच्छा पूरी की, और उनकी सलाह पर चले; और इस प्रकार उन्होंने सत्य को जाना, धार्मिकता सीखी, और अंततःपवित्र आत्मा के योग्य ठहरे - और इस प्रकार सभी बातों में सत्य के प्रचारक बने, जैसा कि यिशायाह भविष्यवक्ता में लिखा है: *'मैंने तुम्हें इस्राएल के घराने का एक रखवाला ठहराया है, कि जो वचन मैं तुझे सुनाऊँ, वह तू उन्हें मेरी ओर से सुना दे'* (3:17)। इसलिए, यदि आप समृद्धि प्राप्त करना चाहते हैं और पूर्ण परिपक्वता तक पहुँचना चाहते हैं, अपने हृदय में अटूट बनना चाहते हैं और किसी भी तरह से शैतान द्वारा उपहास नहीं किए जाना चाहते हैं, तो अपने पितरों की आज्ञा मानो और हर बात में उनकी सुनो – और तुम कभी नहीं गिरोगे।

५७. मैं तुम्हें वह एक बात बताऊँगा जो मनुष्य को आरंभ से अंत तक भलाई में स्थिर बनाए रखती है, अर्थात्: परमेश्वर से अपनी पूरी आत्मा, पूरे हृदय और पूरे मन से प्रेम करो, और केवल उसी की सेवा करो। तब परमेश्वर तुम्हें महान शक्ति और आनंद प्रदान करेंगे, और परमेश्वर के सभी कार्य तुम्हें शहद की तरह मीठे लगेंगे; सभी शारीरिक श्रम, बौद्धिक प्रयास और प्रहर, और वास्तव में परमेश्वर का सारा बोझ, तुम्हारे लिए हल्का और मीठा होगा। हालाँकि, लोगों के प्रति अपने प्रेम के कारण, प्रभु कभी-कभी उनके लिए परीक्षाएँ भेजते हैं, ताकि वे घमंडी न हो जाएँ, बल्कि अपने प्रयासों में दृढ़ रहें; और साहस के बजाय, वे थकान और सुस्ती का अनुभव करते हैं; आनंद के बजाय, दुख; शांति और सुकून के बजाय, बेचैनी; मिठास के बजाय, कड़वाहट; और प्रभु से प्रेम करने वालों पर इस प्रकार की और भी कई अन्य बातें घटित होती हैं। परन्तु इसके विरुद्ध संघर्ष करके और इस पर विजय प्राप्त करके, वे दिन-प्रतिदिन और अधिक बलवान होते जाते हैं। और जब अंततःवे इन सब पर पूरी तरह से विजय प्राप्त कर लेते हैं, तो पवित्र आत्मा हर बात में उनके साथ रहेगा, और वे फिर किसी भी बुरी वस्तु से नहीं डरेंगे।

५८. पवित्र आत्मा अथक रूप से एक अत्यंत सुखद, अत्यंत मीठी और मानव जीभ के लिए अकथनीय सुगंध बिखेरता है। लेकिन आत्मा की इस सुखदता और उसकी मिठास को कौन जानता है, सिवाय उन लोगों के जिन्हें उसमें वास करने के योग्य माना गया है? पवित्र आत्मा पश्चातापी आत्माओं में केवल बहुत परिश्रम के बाद ही वास करता है। हम इस दुनिया में भी ऐसा ही बहुत कुछ देखते हैं: उदाहरण के लिए, कीमती पत्थर केवल बहुत प्रयास से ही प्राप्त होते हैं। इस आत्मा को खोजने के बाद, संतों ने उसे पाया; और वही पवित्र सुसमाचार में (मत्ती 13, 45–46), उत्तम मोती खोजने वाले व्यापारी की दृष्टान्त में, जिसने एक बहुमूल्य मोती पाकर, अपनी सारी संपत्ति बेचकर उसे खरीद लिया। वह, बेशक, खेत में छिपे खजाने के बारे में एक और दृष्टांत में भी मौजूद हैं, जिसे एक आदमी ने पाया और छिपा दिया; और अपनी खुशी में उसने जो कुछ भी उसके पास था, सब बेच दिया, और वह खेत खरीद लिया (मत्ती 13:44)। परीक्षाएं उन लोगों पर उतनी नहीं आतीं जितनी उन लोगों पर आती हैं जिन्होंने पवित्र आत्मा को प्राप्त किया है। और हमारे प्रभु, जब उनके बपतिस्मा के समय पवित्र आत्मा कबूतर के रूप में उन पर उतरा, तो आत्मा उन्हें शैतान द्वारा परीक्षा देने के लिए जंगल में ले गया, जिसने उन्हें अपनी सभी परीक्षाओं से परखा, लेकिन उन पर कुछ भी करने में सफल नहीं हुआ, जैसा कि लूका की सुसमाचार में लिखा है: *'और जब शैतान ने सब परीक्षाएँ पूरी कर लीं, तो वह कुछ समय के लिए उससे दूर चला गया'* (लूका 4:13)। तब प्रभु यीशु आत्मा की सामर्थ्य में गलील लौट आए। इसी प्रकार, पवित्र आत्मा उन सभी को बल देता है जो आत्मा को ग्रहण करते हैं, जो संघर्ष करते हैं और विजय प्राप्त करते हैं, और उन्हें हर परीक्षा पर विजय प्राप्त करने की शक्ति प्रदान करता है।

५९. भविष्यवक्ता यहेज़केल द्वारा देखे गए सेराफ़ीम (यहेज़केल १:४, ९) उन विश्वासयोग्य आत्माओं का प्रतीक हैं जो पूर्णता प्राप्त करने का प्रयास करती हैं। उसके छह पंख थे, जो आँखों से भरे थे; और उसके चार मुख थे जो चारों दिशाओं की ओर देखते थे: एक मुख मनुष्य के समान, दूसरा बछड़े के समान, तीसरा सिंह के समान, और चौथा गरुड़ के समान। सेराफिम का पहला मुख, जो मानवीय मुख है, उन विश्वासियों का प्रतीक है जो संसार में रहते

हुए, अपने ऊपर पड़े आज्ञाओं का पालन करते हैं। यदि उनमें से कोई मठवासी जीवन में प्रवेश करता है, तो वे बछड़े के मुख के समान हो जाते हैं, क्योंकि वे मठवासी नियमों का पालन करने के भारी श्रम को वहन करते हैं और अधिक शारीरिक प्रकृति के कार्य करते हैं। जो कोई भी, सामुदायिक जीवन के नियमों में स्वयं को परिपूर्ण करके, एकांत में चला जाता है और अदृश्य राक्षसों से लड़ता है, वह जंगली जानवरों के राजा, सिंह के मुख जैसा हो जाता है। जब वह इन अदृश्य शत्रुओं पर विजय प्राप्त कर लेता है, अपनी कामनाओं पर काबू पा लेता है और उन्हें वश में कर लेता है, तो वह पवित्र आत्मा से भर जाएगा और दिव्य दर्शन देखेगा; तब वह एक गरुड़ के मुख जैसा हो जाएगा: उसका मन तब उन छह दिशाओं से उसके साथ जो कुछ भी हो सकता है, उसे महसूस करेगा, जो आँखों से भरे उन छह पंखों के समान है। इस प्रकार वह एक सच्चा आध्यात्मिक सेराफिम बन जाएगा और शाश्वत आनंद का वारिस बनेगा।

60. पवित्रता, अविनाशी और अचल शान्ति, पूर्ण दया, और अन्य उत्कृष्ट सद्गुण, जो आशीर्वाद से सुशोभित हैं, ईश्वर की आज्ञाओं का सार हैं। आत्मा की इन आज्ञाओं को पूरा करने का प्रयत्न करो, जिनके द्वारा तुम्हारी आत्मा जीवित होगी और जिनके द्वारा तुम प्रभु को अपने भीतर ग्रहण करोगे: यही सुरक्षित मार्ग है। शरीर और हृदय की पवित्रता के बिना, कोई भी परमेश्वर के सामने सिद्ध नहीं हो सकता; इसीलिए पवित्र सुसमाचार में कहा गया है: *'हृदय में शुद्ध लोग धन्य हैं, क्योंकि वे परमेश्वर को देखेंगे'* (मत्ती 5:8)। सिद्धता हृदय की पवित्रता से उत्पन्न होती है। हृदय के भीतर स्वाभाविक अच्छाई और अस्वाभाविक बुराई निहित है। बुराई से आत्मा के भाव उत्पन्न होते हैं, जैसे निंदा, घृणा, अहंकार और इसी तरह के अन्य भाव। अच्छाई, हालांकि (हृदय की स्वाभाविक अच्छाई), ईश्वर के ज्ञान (ईश्वर का भय) और पवित्रता को जन्म देती है, या आत्मा की सभी भावों से शुद्धता (अंतरात्मा)। यदि कोई व्यक्ति सुधार करने का संकल्प लेता है और सभी बुराइयों से बचने लगता है, और आँसू, पश्चाताप, आहें, उपवास, जागरण, गरीबी और ईश्वर से प्रार्थनाओं के माध्यम से आध्यात्मिक संघर्षों द्वारा स्वयं को इसके विरुद्ध सशस्त्र करता है—तो प्रभु, अपनी कृपा से, उनकी सहायता करेंगे और, पवित्र आत्मा के द्वारा, उन्हें आत्मा की सभी वासनाओं से मुक्त कर देंगे। कई लोगों ने, मठवास और ब्रह्मचर्य में लंबा समय बिताने के बाद भी, शुद्धता का यह विज्ञान नहीं सीखा है, क्योंकि उन्होंने अपने आचार्यों की आज्ञाओं को दरकिनार कर, अपने हृदय की इच्छाओं का अनुसरण किया; इसी कारण से, दुष्ट आत्माएँ—आत्माओं के विनाशक—उन पर हावी हो गई हैं, जो दिन-रात उन्हें छिपे हुए तीरों से घायल करती हैं और उन्हें कहीं भी चैन नहीं देतीं, जिससे उनके हृदय अब कभी घमंड, कभी व्यर्थता, कभी अधर्मी ईर्ष्या, कभी निंदा, कभी क्रोध और रोष, कभी झगड़ों और कई अन्य वासनाओं से भरे रहते हैं। – ऐसे लोग पाँच मूर्ख कुँवारियों का ही हश्र झेलेंगे क्योंकि वे अपना सारा समय मूर्खता से बिताते हैं – वे अपनी जीभ पर काबू नहीं रखते, न ही वे अपनी आँखों और शरीर को वासना से, न ही अपने दिलों को अशुद्धता से, और न ही विलाप योग्य अन्य चीजों से शुद्ध रखते हैं, क्योंकि वे स्वयं अशुद्ध हैं, – वे केवल एक सूती वस्त्र से ही संतुष्ट रहती हैं, जो केवल कुँवारी होने का प्रतीक है: इस कारण वे अपने दीपक जलाने के लिए स्वर्गीय तेल से भी वंचित रहती हैं; और दूल्हा कभी भी अपने महल के द्वार उनके लिए नहीं खोलेगा, और उनसे वही कहेगा जो उसने दृष्टांत में मूर्ख कुंवारियों से कहा था: *'मैं तुम से कहता हूं, मैं तुम्हें नहीं जानता'* (मत्ती 25). मैं यह आपकी मुक्ति की इच्छा से लिखता हूँ, ताकि आप स्वतंत्र और विश्वासयोग्य बन सकें – और मसीह के लिए एक पवित्र वधू, जो सभी आत्माओं के वर हैं, जैसा कि प्रेरित पौलुस कहते हैं: *'मैंने तुम्हें एक ही वर, एक पवित्र कुँवारी के लिए मंगनी में डाल दिया है, ताकि तुम्हें मसीह के सामने पेश करूँ'* (2 कुरिन्थियों 11:2)।

61. सोने को आग में कई बार शुद्ध किया जाता है, ताकि सबसे तीव्र शोधन के माध्यम से वह और भी बेहतर हो सके। इसी तरह, हमारे प्रभु, अपनी कृपा में, मनुष्य को कई परीक्षाओं के द्वारा शुद्ध करते हैं, उसका परीक्षण करते हैं और उसे हृदय की लड़ाइयाँ लड़ने में अनुभवी बनाते हैं, ताकि वह विचारों या स्मृति में उन अन्यायों और अपमानों पर वापस न लौटे जिनके लिए लोगों ने उसे subjected किया था; परन्तु वह परमेश्वर के सामने स्वयं को नम्र करता है और अपनी सारी आशा उसी में रखता है, परमेश्वर के सामने हर अच्छे काम के लिए सदा तैयार रहता है, जैसा कि भविष्यवक्ता दाऊद ने कहा: *'हे परमेश्वर, मेरा मन तैयार है, मेरा मन तैयार है: मैं गाऊँगा और अपने गौरव के लिए संगीत करूँगा'* (भजन संहिता 107:2)। ध्यान में रखें कि आपको कुछ भाइयों द्वारा बदनामी और अन्याय के माध्यम से परखा जा सकता है, या अपने सहकर्मियों के हाथों अपमान सहना पड़ सकता है। जब ऐसी बातें आप पर आती हैं, तो दृढ़ रहें, न डरें, न हतोत्साहित हों; बल्कि इन सब के लिए प्रभु का धन्यवाद करें, क्योंकि उनके बिना ऐसा कुछ भी नहीं होता, बल्कि वह इसे इस कारण से होने देते हैं कि परमेश्वर के सेवकों का परीक्षाओं से परखा जाना आवश्यक है: क्योंकि जो कोई परमेश्वर की भलाई से परीक्षाओं, परिश्रमों, दुखों और विपत्तियों द्वारा तब तक परखा नहीं जाता, जब तक कि वे सभी परिस्थितियों में धैर्य के साथ भलाई में दृढ़ खड़े होना नहीं सीख लेते, उसे उनसे सम्मान नहीं मिलेगा।

६२. जो वपित्तयाँ और दुख तुम पर आते हैं, उन्हें धैर्यपूर्वक सहो; और उनके लिए प्रभु का बड़ी नम्रता से धन्यवाद करो, ताकि तुम अपने परिश्रम का फल भोग सको, —ठीक वैसे ही जैसे धन्य सुसन्ना, जो युद्ध में पराक्रमी थी, जिसने उन दो अधर्मी बूढ़े पुरुषों की कामुक प्रवृत्तियों पर विजय प्राप्त की और उनकी झूठी बदनामी से बहुत कष्ट और दुख सहन किया, लेकिन जिसे परमेश्वर ने, उसकी धैर्यशीलता और दृढ़ता के लिए, उसके संघर्ष के अंत में गौरवान्वित किया, और साथ ही उसके शत्रुओं को नीचा दिखाया, ठीक वैसे ही जैसे उन्होंने थेकला के लिए किया था, और भी अधिक साहसी आत्मा वाली, जो न तो अपने माता-पिता द्वारा दिए गए घावों से, न आग से, न अपने शरीर के चीर दिए जाने से, और न ही जंगली जानवरों से डरती थी, और जिसे परमेश्वर ने अंततःहृदय का आनंद और उसके कामों का प्रतिफल दिया, जब उसके साहसी विश्वास ने भड़कती आग को बुझा दिया, रक्तपिपासु शेरों के मुँह बंद कर दिए, और उसके सभी शत्रुओं को लज्जित कर दिया; और यूसुफ की तरह—जो परमेश्वर और मनुष्यों के सामने नम्र था—जिसके भाइयों ने, उसके पिता द्वारा उसे दी गई विशेष कृपा के कारण ईर्ष्या और घृणा से प्रेरित होकर, उसका खून बहाने की कोशिश की, तो दिव्य सहायता ने उसे मृत्यु से बचाया। ईर्ष्या से ग्रस्त होकर, उन्होंने उसे दासता में बेच दिया, जहाँ जिस स्वामी की वह सेवा करता था, उसकी पत्नी ने उसे बहुत परेशानी दी और मामला इस हद तक पहुँचा दिया कि उसे जेल में डाल दिया गया; फिर भी परमेश्वर ने उसे नहीं छोड़ा। क्योंकि वह आत्मा और शरीर में पवित्र, नम्र, शुद्ध और निर्दोष था, और ईश्वर की उस पर कृपा के कारण, वह उन सभी वपित्तयों के बोझ तले नहीं दबा, बल्कि उन्हें धैर्यपूर्वक सहन किया, और अपना भरोसा प्रभु पर रखा। और परमेश्वर ने अंततःउसे महिमान्वित किया, उसे मिस्र और उसकी सभी प्रांतों का शासक बनाया; और उसने अपने सभी भाइयों को, जिन्होंने उससे घृणा की थी, उसके चरणों तले ला दिया। इन उल्लेखित व्यक्तियों और उनके जैसे अन्य लोगों को अपने प्रयासों और संघर्षों की शुरुआत में ही ईश्वर से सम्मान नहीं मिला, बल्कि तब मिला जब ईश्वर ने उन्हें परखा, वपित्तयों और दुखों के माध्यम से शुद्ध किया, और उन्हें सिखाया कि युद्ध के बीच कैसे दृढ़ खड़े रहा जाए। और केवल तभी, जब उन्होंने देखा कि वे अपने परीक्षणों और दुखों को साहस के साथ सहते हैं और अपनी सारी आशा प्रभु में रखते हैं, तब उन्होंने अपनी दिव्य सहायता से उन पर सम्मान प्रदान किया, और उनके शत्रुओं को लज्जित किया तथा उन्हें उनके अधीन कर दिया।

63. दृढ़ रहो और अपने परीक्षणों के दौरान अपने हृदय को शिथिल न होने दो, बल्कि उनके लिए धन्यवाद दो, ताकि तुम प्रभु से अपना प्रतिफल प्राप्त कर सको। आप सभी के बीच शांति, सत्य, ईश्वर के प्रति प्रेम और पारस्परिक सद्भावना बनी रहे; और आपके बीच न कोई कलह हो, न बदनामी, न असहमति, न दुर्भावनापूर्ण ईर्ष्या, न अवज्ञा, न अहंकार, न किसी के प्रति द्वेष, न उपहास, न व्यर्थता, न घृणा, न पारस्परिक शत्रुता। जहाँ भी किसी मठ में ऐसा व्यवहार होता है, वहाँ परमेश्वर का प्रकोप उस पर उतरता है। इसके अलावा, जान लो कि इस संसार में हमारा जीवन बहुत छोटा है; इसलिए, इसे संजोकर रखो और इसे आलस्य में बर्बाद मत करो, कहीं ऐसा न हो कि इस जीवन से जाने का समय तुम्हें एक-दूसरे से नाराज़ पाए, और परिणामस्वरूप, शास्त्र के अनुसार, तुम्हें हत्यारों में गिना जाए: *'जो अपने भाई से घृणा करता है, वह एक हत्यारा है'* (1 यूहन्ना 3:15)। एक दूसरे पर दया करो, ताकि प्रभु तुम पर दया करें। क्योंकि वही स्वयं इस बात की प्रेरणा देते हैं जब वे कहते हैं: *'क्षमा करो, और तुम्हें क्षमा किया जाएगा'* (लूका 6:37)। यदि तुम में से कोई बदनामी सहता है, तो उसे आनंद के साथ स्वीकार करे, और सब कुछ प्रभु के हाथ सौंप दे, जो न्यायी और प्रतिफलदाता है… और जो कोई अपने पड़ोसी की बदनामी करता है, वह प्रभु के सामने स्वयं को नम्र करे और अपने पड़ोसी से क्षमा मांगे, ताकि प्रभु उस पर दया करें। जब आप अभी भी क्रोधित हों तो सूर्य को न ढलने दें, जैसा कि धर्मग्रंथ हमें सिखाता है (इफिसियों 4:26); बल्कि अपने हृदयों से उन बुरे विचारों को जड़ से उखाड़ फेंकें जो आपको सताते हैं, जो आप एक-दूसरे के प्रति पालते हैं, ताकि इस प्रकार आप शत्रुता के हर बीज को उसके अंकुरण पर ही दबा सकें, जिसकी जड़ घृणा और ईर्ष्या है। ये दो जुनून परमेश्वर और लोगों दोनों के लिए सबसे बुरे और घृणित हैं; और किसी भी विश्वासी या परमेश्वर के सेवक में इनका पाया जाना बिल्कुल अनुचित है। इसलिए, हम में से कोई भी, अपनी पूरी मूर्खता में, घमंड न करे या यह न कहे: 'मैंने अपने भाई पर विजय प्राप्त की है, और उसके लिए कोई दया नहीं होगी।' जो कोई भी ऐसी बातें बोलता या सोचता है, उसे जान लेना चाहिए कि उसने अपनी आत्मा को मृत्यु के हाथों सौंप दिया है, और उसकी विरासत रोने और दांत पीसने, कभी न मरने वाले कीड़े और न बुझने वाली आग की होगी।

64. जब तक हम इस शरीर में रहते हैं, तब तक चलो हम अपनी नींद से जाग उठें; चलो हम अपने लिए शोक मनाएँ और दिन-रात, पूरे मन से विलाप करें, ताकि हम उस भयानक यातना, कराह, रोने और कष्ट से छुड़ाए जाएँ, जिसका कोई अंत नहीं होगा; आओ सावधान रहें कि हम चौड़े द्वार से प्रवेश न करें और चौड़े मार्ग पर न चलें जो विनाश की ओर ले जाता है, भले ही बहुत से लोग उसी पर चलते हैं; बल्कि हम संकरे द्वार से प्रवेश करें और संकरे मार्ग पर चलें जो जीवन की ओर ले जाता है, भले ही बहुत कम लोग उसी पर चलते हैं। जो इस दूसरे मार्ग पर चलते हैं, वे सच्चे

कर्म करने वाले हैं, जो अपने परिश्रम का फल आनन्द के साथ प्राप्त करेंगे और राज्य के वारिस होंगे। जहाँ तक उन लोगों का सवाल है जो वहाँ प्रवेश करने के लिए अभी पूरी तरह से तैयार नहीं हैं, मैं उनसे विनती करता हूँ कि जब तक समय है, वे आलसी न हों, कहीं ऐसा न हो कि वे नियत समय पर तेल के बिना रह जाएँ, और वास्तव में, कोई भी उन्हें बेचने के लिए तैयार न हो। क्योंकि यही उन पाँच मूर्ख कुँवारियों के साथ हुआ, जिन्हें इसे खरीदने के लिए कोई नहीं मिला। तब वे रोते हुए पुकारने लगीं, *'हे प्रभु, हे प्रभु, हमारे लिए दरवाज़ा खोल!' परन्तु उसने उत्तर देकर उनसे कहा, 'मैं तुम से सच कहता हूँ, मैं तुम्हें नहीं जानता'* (मत्ती 25:11–12)। और यह उनके साथ उनके आलस्य के अलावा किसी और कारण से नहीं हुआ। बाद में, यद्यपि वे जाग गए और हंगामा करने लगे, लेकिन यह पहले से ही व्यर्थ था, क्योंकि घर का स्वामी उठकर दरवाज़ा बंद कर चुका था, जैसा कि लिखा है। मैं आपको इसका एक और समान उदाहरण दूँगा। जब नूह जहाज़ में चढ़ा, अपने बेटों और उनकी पत्नियों के साथ अकेले, और उसके साथ रहे बाकी सभी लोगों के साथ, और जिन्होंने बुराई की थी उन पर भेजे गए बाढ़ के पानी के कारण जहाज़ का दरवाज़ा बंद कर दिया, उसने फिर कभी जहाज़ का दरवाज़ा नहीं खोला, और न ही अपने बेटों को उस भयानक दृश्य को देखने दिया जो उन दुष्ट लोगों की सज़ा था; इसके अलावा, एक बार दरवाज़ा बंद हो जाने के बाद, ये दुष्ट लोग धर्मी लोगों के साथ रहने के लिए अंदर नहीं आ सके, बल्कि वे सभी अपनी आलस्य और अवज्ञा के कारण बाढ़ के पानी में डूब गए। क्योंकि नूह, उन एक सौ वर्षों के दौरान जब उन्होंने जहाज़ बनाया, उन्हें निरंतर एक बेहतर जीवन की ओर बुलाते रहे, लेकिन उन्होंने उनकी कोई परवाह नहीं की और उनका आज्ञापालन नहीं किया; इसीलिए वे नाश हो गए।

65. भाईचारे को एक ही स्थान पर एकजुट रखें और इसे शांति, एकमत, नम्रता, ईश्वर के भय और प्रार्थना में संगठित करें। तब ईश्वर के घर के आशीर्वाद आप पर पूरी तरह से प्रकट होंगे, और आप उन्हें आनंद और प्रसन्नता के साथ प्राप्त करेंगे। साथ ही, आप विश्वास, आशा, प्रेम, विनम्रता, श्रद्धा, समझदारी, धार्मिकता, शांति और अपने भाइयों के प्रति प्रेम से सुसज्जित हों। क्योंकि जो इन सभी बातों का अधिकारी है, वह विवाह के वस्त्र पहनकर आत्मा की आज्ञाओं में चलता है। पूरी नम्रता और धैर्य से बने रहो, ताकि तुम्हारे वासनाएँ तुमसे दूर हो जाएँ।

66. जो कोई परमेश्वर की इच्छा के अनुसार चलता है—जो मधु से भी मीठी और हर आनंद से परिपूर्ण है—उसे इससे सहायता और बल मिलेगा, और यह उसकी आत्मा को अद्भुत कार्य करने में सक्षम बनाएगा और उसके सामने प्रभु को भाने वाले सभी मार्ग तैयार करेगा; और तब कोई भी शत्रु उसके विरुद्ध नहीं टिक सकेगा, क्योंकि वह परमेश्वर की इच्छा के अनुसार चलता है। लेकिन जो कोई अपनी इच्छा के अनुसार चलता है, उसे परमेश्वर किसी भी प्रकार की सहायता नहीं देंगे, बल्कि उसे राक्षसों के हवाले कर देंगे, जो दिन-रात उसके हृदय में मंडराएंगे, और उसे किसी भी चीज़ में शांति नहीं मिलने देंगे, और उसे उसके सभी मामलों में, बाहरी और आंतरिक दोनों में, शक्तिहीन और दुर्बल बना देंगे, और वे उस पर कई अन्य विनाशकारी और हानिकारक चीजें लाएंगे। शैतान कभी-कभी उनमें आनंद और प्रसन्नता भर देता है; लेकिन इसमें कोई आनंद नहीं हो सकता, केवल दुख और शोक ही हो सकता है। भले ही आनंद जैसी कोई चीज हो भी जाए, उसमें कोई सच्चाई नहीं है, बल्कि केवल एक भ्रम है, क्योंकि यह परमेश्वर की ओर से नहीं है। सच्ची खुशी ईश्वर से आती है और केवल उन लोगों को दी जाती है जो लगातार अपनी इच्छा को अस्वीकार करने और हर चीज़ में ईश्वर की इच्छा को पूरा करने का प्रयास करते हैं। मानव हृदय के भीतर कार्य करने वाली इच्छा तीन प्रकार की होती है: पहली शैतान से है; दूसरी मनुष्य से है; तीसरी परमेश्वर से है; परमेश्वर पहले दो की नहीं, बल्कि केवल उसी की कृपा करता है जो उससे आती है। अतः स्वयं की परीक्षा करो, और जो कुछ भी विदेशी है उसे अस्वीकार कर, केवल परमेश्वर की इच्छा से प्रेम करो। क्योंकि किसी व्यक्ति के लिए सभी बातों में निरंतर परमेश्वर की इच्छा को समझना बहुत महत्व रखता है। मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि जब तक कोई व्यक्ति अपने हृदय की संपूर्ण इच्छा का त्याग नहीं करता, और हर बात में स्वयं को नकारता नहीं है, और अपने सभी धन-संपत्ति को त्याग नहीं देता, और अपने आध्यात्मिक पितरों की आज्ञाकारिता के द्वारा प्रभु के अधीन नहीं हो जाता, तब तक वह न तो ईश्वर की इच्छा को जान पाएगा और न ही उसे पूरा कर पाएगा, और वह अंतिम आशीर्वाद से वंचित रह जाएगा।

६७. प्रभु ने हमें यह नहीं बताया कि यहाँ कोई पुरस्कार होगा; बल्कि यह कि यहाँ परीक्षाएँ, कठिनाइयाँ, आवश्यकताएँ और दुख होंगे, और पुरस्कार वहाँ होगा। यह जीवन संघर्षों और परीक्षाओं का मार्ग है।

68. यदि तुम अपने पिता के प्रति धैर्यवान, आज्ञाकारी और आज्ञापालक रहोगे, तो प्रभु तुम्हें भरपूर पुरस्कार देगा; और यह वही कार्य है जो प्रभु के सामने स्मरण किया जाएगा। जो कोई अपने पिता की आज्ञा मानता है, वह प्रभु की आज्ञा मानता है, और जो कोई प्रभु की आज्ञा मानता है, वह अपने पिता की भी आज्ञा मानता है।

69. सबसे बढ़कर, आइए हम अपने प्रभु यीशु मसीह में विश्वास करें, आइए हम उनकी आराधना करें और उनके प्रति समर्पित रहें, और आइए हम हर समय और हर क्षण उनकी इच्छा पूरी करें।

70. हमें प्रभु के भय में चलना चाहिए, जैसा कि हमें आज्ञा दी गई है – भय और कांपते हुए अपने उद्धार का कार्य स्वयं करो (फिलि. 2:12)। प्रभु का भय आत्मा से सभी छल और पाप को जड़ से उखाड़ देता है। जो परमेश्वर से नहीं डरता वह अनेक बुराइयों में पड़ जाता है। परमेश्वर का भय एक व्यक्ति की रक्षा करता है जब तक वह इस शरीर को त्याग नहीं देता, जैसा कि लिखा है: *'तेरे भय के कारण हम ने गर्भ में संकल्प किया, और हम ने पीड़ा सहीं और उद्धार की आत्मा को जन्म दिया'* (यशायाह 26:18)।

७१. जो द्वेष से मुक्त है वह परिपूर्ण और दैवीय है। वह आनंद से भरपूर है और परमेश्वर की आत्मा का विश्राम-स्थान है। जैसे आग, यदि उसे अनदेखा किया जाए तो विशाल जंगलों को भस्म कर देती है, वैसे ही द्वेष, यदि आप इसे अपने हृदय में प्रवेश करने दें, तो वह आपकी आत्मा को नष्ट कर देगा, आपके शरीर को अशुद्ध कर देगा, और आपके मन में कई अधर्मी विचार लाएगा; यह झगड़े, कलह, बदनामी, ईर्ष्या, घृणा और इसी तरह की बुरी भावनाओं को भड़काएगा, जो स्वयं शरीर पर बोझ डालती हैं और उसे बीमार कर देती हैं। संतों की नम्रता और हृदय की सरलता प्राप्त करने के लिए तत्पर रहो, ताकि हमारे प्रभु यीशु मसीह तुम्हें अपनी उपस्थिति में स्वीकार करें, और तुम में से प्रत्येक आनंदपूर्वक कह सके: *'तुम ने मेरी नम्रता के कारण मुझे ग्रहण किया है, और तुम ने मुझे सदा के लिए अपने साम्हने स्थापित किया है'* (भजन संहिता 40:13)।

७२. परमेश्वर भविष्यवक्ता के द्वारा कहते हैं: *'मैं किस पर दृष्टि करूँगा, परन्तु नम्र और शांत, और जो मेरे वचन से काँपते हैं, उन पर?'* (यशायाह ६६:२)। हमारे प्रभु भी सुसमाचार में कहते हैं: *'मेरे से सीखो, क्योंकि मैं मन से कोमल और दीन हूँ और तुम अपने प्राणों को विश्राम पाओगे'* (मत्ती 11:29)। इसलिए, अपने लिए नम्रता प्राप्त करो और हृदय के गर्व के साथ न चलो, जो दुष्टात्माओं का लक्षण है। जो कोई हृदय के गर्व के साथ चलता है, वह दुष्टात्माओं का साथी है। एक घमंडी व्यक्ति से सभी नफरत करते हैं, क्योंकि उसके कर्म घमंडपूर्ण होते हैं: और इससे वह कई पापों में पड़ जाता है। सभी पाप परमेश्वर के सामने घृणित हैं, लेकिन हृदय का गर्व सबसे अधिक घृणित है। जो कोई भी घमंडी को समझाता या सलाह देता है, वह ऐसे है जैसे कोई टपकती हुई घड़ी में पानी डाल रहा हो, या जैसे कोई उड़ती हुई चिड़िया से बात कर रहा हो। जिन लोगों का हृदय घमंडी है, वे परमेश्वर के सामने तुच्छ समझे जाते हैं; लेकिन परमेश्वर उन हृदयों को अपमानित नहीं करेगा जो नम्र और पछताए हुए हैं। ईश्वर का अपना प्रेम, जो स्वर्ग से हमारे पास आया, परम सीमा तक नम्र हो गया। अतः हम नम्रता से प्रेम करें, ताकि हम पुकार सकें: *'हे प्रभु, मेरी नम्रता और मेरी कष्ट-सेवा को देखो, और मेरे सभी पापों को क्षमा करो'* (भजन संहिता 24:18)।

73. अपनी आँखों की वासनाओं का अनुसरण न करो, और न ही अपने हृदय को ढीला पड़ने दो। क्योंकि बुरी वासना हृदय को भ्रष्ट करती है और मन को धुंधला कर देती है। इससे और भी अधिक दूर हो जाओ, कहीं ऐसा न हो कि तुम में वास करने वाला परमेश्वर का आत्मा तुम पर क्रोधित हो जाए। आइए हम मृत्यु तक शुद्धता के लिए प्रयत्न करें और हर तरह से घृणित वासनाओं से अपना बचाव करें: इस उद्देश्य के लिए, आइए हम महिलाओं की सुंदरता को घूरने से बचें। आइए हम अशुद्ध जुनून और शर्मनाक वासनाओं के दास न बनें, जिनसे परमेश्वर घृणा करते हैं। अपने हृदय की आँखों के सामने परमेश्वर का नाम अंकित करें, ताकि आपके भीतर एक अनवरत पुकार हो: *'तुम परमेश्वर का जीवित मन्दिर हो'* (2 कुरिन्थियों 6:16) और *'पवित्र आत्मा का वासस्थान'*। जो कोई भी अशुद्ध कामवासनाओं में बहक जाता है, वह परमेश्वर के सामने, भजनकार, भविष्यवक्ता संत डेविड (भजन संहिता 48:13) के वचनों के अनुसार, सभी विवेक से रहित पशुओं के समान है। इसलिए हम उस अशुद्ध आँख से पूरे मन से घृणा करें और पवित्रता की खोज करें, क्योंकि यह परमेश्वर के स्वर्गदूतों का गौरव है। लेकिन यदि, शैतान के बहकावे में आकर, हम गिर भी जाएँ, तो पश्चाताप द्वारा फिर उठें और उसी की ओर लौटें जो पाप में भटक गए भेड़-बकरियों को खोजने आए थे (लूका 15:4)।

74. जो अपने होठों और जीभ पर काबू नहीं रख सकता, उसे कम से कम इस बात का ध्यान रखना चाहिए *कि वह 'बहुत ज़्यादा बातूनी न बने'* (अय्यूब 11:3)। हे मनुष्य, सावधान रहो; अपनी जीभ पर काबू रखो, और अपने शब्दों को मत बढ़ाओ, कहीं ऐसा न हो कि तुम अपने पाप बढ़ा लो। अपनी उंगली अपने होठों पर और अपनी जीभ पर लगाम लगाओ, क्योंकि एक बकबक करने वाला मनुष्य अपने भीतर पवित्र आत्मा के लिए कोई स्थान नहीं छोड़ता। यदि कोई, जो अभी नया-नवीना है, आपसे बात करते समय अपनी आत्मा को बचाने वाली किसी भी बात के बारे में पूछे, तो उसे उत्तर दें; परन्तु यदि वह ऐसी किसी बात के बारे में पूछे जिससे उसे कोई लाभ न हो, तो बहरे की तरह रहें जो न सुने, और गूंगे की तरह जो न बोले।

७५. हम अपने आप को मजबूर करें कि हम अपने होठों पर कड़ी निगरानी रखें, ताकि हम किसी के बारे में कुछ भी बुरा न कहें, क्योंकि बुरा बोलना किसी भी ज़हर से बदतर है। सभी घाव भर जाते हैं, लेकिन जीभ से लगी चोट का कोई इलाज नहीं है। शैतान के उकसाए एक विचारहीन बदनाम करने वाले की जीभ साँप की जीभ से भी ज़्यादा ज़हरीली होती है, क्योंकि यह भाइयों के बीच झगड़ा और कड़वी दुश्मनी भड़काती है, शांतप्रिय लोगों के बीच कलह और बुराई बोती

है, और बड़ी सभाओं को बखिेर देती है। इसलिए, दूसरों की निंदा करने से बचें, और मौन में लगे रहें। जो मौन से प्रेम करता है वह परमेश्वर और उनके स्वर्गदूतों के समीप रहता है, और उसका स्थान ऊँचाइयों में है। प्रभु कहते हैं कि वह तब आपके मार्गों की रक्षा करेंगे – जब आप स्वयं अपने होठों की रक्षा करते हैं (नीतिवचन 13:3)।

76. पवित्र शास्त्र गवाही देता है कि लज्जा दो प्रकार की होती है: एक जिससे पाप का जन्म होता है; और दूसरी जिससे महिमा और अनुग्रह उत्पन्न होते हैं (सीराख 4:23-25)। पाप करने का लज्जा सच्ची और उद्धार करने वाली लज्जा है; परन्तु वह लज्जा जिससे पाप उत्पन्न होता है, वह लज्जा है जो परमेश्वर की आज्ञाओं की पूर्ति में बाधा डालती है। परमेश्वर की इच्छा के अनुसार किसी भी काम को करने में लज्जित न हो, और सत्य को न छिपाओ; प्रभु की शिक्षा या ज्ञान के वचनों को प्रचार करने से न डर, और अपने आध्यात्मिक पिता के सामने अपने पापों का अंगीकार करने में लज्जित न हो।

77. हमारे प्रभु, हमारी आत्माओं के प्रति करुणा से प्रेरित होकर, पवित्र सुसमाचार में कहते हैं: 'हाय तुम्हारा, जब मनुष्य तुम्हारी प्रशंसा करते हैं और तुम्हारी स्तुति करते हैं, और तुम परमेश्वर की महिमा नहीं खोजते' (लूका 6:26; यूहन्ना 5:44)। इसलिए हम व्यर्थता का विरोध करते हुए और इसके सबसे बुरे उपसर्गों को काटते हुए मृत्यु तक प्रयास करें, कहीं ऐसा न हो कि हम विनाश की ओर ले जाएँ। अहंकार से भागो; क्योंकि इसके कारण कई लोग नाश हो गए हैं। यह एक व्यक्ति को कई कष्टों—उपवास, प्रार्थना, बार-बार रात जागना, सार्वजनिक रूप से दान देना, और ऐसी ही कई चीजों—के लिए प्रेरित करता है; लेकिन इन सब से, वह शर्म और अपमान के सिवा कुछ नहीं पाएगा। हम अपने आप में कुछ भी दिखाने का प्रयास न करें, विशेषकर कोई महान बात, कहीं ऐसा न हो कि हम इसके कारण नाश हो जाएँ, और घमंड की अनेक शाखाओं में फँस जाएँ, क्योंकि घिमंड के राक्षस अत्यंत बड़ी संख्या में हैं। बल्कि हमें संतों की महिमा और उनकी गरीबी को प्राप्त करने के लिए और भी अधिक लगन से प्रयास करना चाहिए, ताकि हमें परमेश्वर से वह मीठी प्रशंसा प्राप्त हो सके: *'आत्मा में दीन लोग धन्य हैं, क्योंकि स्वर्ग का राज्य उन्हीं का है'* (मत्ती 5:3)।

७८. हमारे प्रभु यीशु मसीह ने अपनी सुसमाचार में कहा: *'अपने धीरज से तुम अपनी आत्माओं को बचाओगे'* (लूका २१:१९)। उन्होंने यह भी कहा: *'जो अंत तक सहन करेगा, वह उद्धार पाएगा'* (मत्ती 10:22; 24:13)। तो फिर हमें कितनी लगन से सचमुच परिश्रम और सहन करना चाहिए, ताकि हम उसको प्राप्त कर सकें जो हमारे लिए स्वर्ग में तैयार किया गया है? हालाँकि, रक्त बहाने की नौबत आने से पहले, हम घमंड न करें; क्योंकि कोई भी कलाकार अपने अधूरे काम पर घमंड नहीं करता। जिसे धैर्य के द्वारा विजय प्राप्त हुई है, उसे धन्य कहा जाना चाहिए। उचित समय पर वह लाजरूस की तरह स्वर्ग में महिमा प्राप्त करेगा।

79. भजनकार दाऊद ने कहा: *'तेरे वचन मेरे गले के लिए मधु से भी अधिक मीठे हैं'* (भजन संहिता 118:103)। साथ ही: *'प्रभु के* मार्ग *अनेक बहुमूल्य रत्नों से भी अधिक वांछनीय हैं'* (भजन संहिता 18:10-11)। वह धन्य है जो सतर्क रहता है और हमारे प्रभु यीशु मसीह की आज्ञाओं का पालन करता है, जब तक कि वह उनके विषय में सच्चा ज्ञान प्राप्त नहीं कर लेता, ताकि वह कह सके: *'तुम्हारी समझ मेरे से परे है'* (भजन संहिता 138:6)। अविश्वासी न बनो, कहीं ऐसा न हो कि जिसने हमें बनाया है, वह तुम पर क्रोधित हो जाए। जो कोई अविश्वासी को सत्य का उपदेश देता है, उसे डाँटता है या उसे शिक्षा देता है, वह उस मनुष्य के समान है जो अत्यंत कीमती मोती समुद्र की गहराई में फेंकता है। इसके विपरीत, जैसे पानी ढलान वाली भूमि से नीचे बहता है और वहाँ शीघ्रता से दौड़ता है, वैसे ही प्रभु का वचन विश्वासी की आत्मा में प्रवाहित होता है।

८०. आइए हम सतर्क रहें और अपने मन के मंदिर में लगातार पवित्र उत्साह को प्रज्वलित करते रहें, कहीं ऐसा न हो कि हमें लापरवाह और आलसी कहा जाए। जो उत्साही और सतर्क है, उस पर वासनाएँ कभी हावी नहीं होंगी। और यदि वह कभी प्रलोभक की चालाकी से गिर भी जाए, तो वही उत्साह और सतर्कता उसे तुरंत वापस खड़ा कर देगी। परन्तु लापरवाह और असावधान व्यक्ति, जिसमें परमेश्वर को प्रसन्न करने का कोई उत्साह नहीं है, यदि वह शैतान के प्रलोभनों में गिर जाता है, तो उसने जो पाप किया है, उसे वह महसूस भी नहीं करता, क्योंकि उसका हृदय पत्थर के समान कठोर है, और वह एक वश में किए हुए और लगाम लगाए हुए खच्चर के समान है, जिस पर कोई भी उसके किसी प्रतिरोध के बिना सवार हो सकता है। ऐसे लोगों में, शैतान अपनी सभी कामनाओं और अपनी पूर्ण भ्रष्टता को पूरा करता है, और उनमें से प्रत्येक को जहाँ चाहता है वहाँ खींच ले जाता है, जब तक कि उसके अधर्म पूरे नहीं हो जाते, और वह कराहों और विलाप के साथ मर जाता है। लापरवाह व्यक्ति उस घर के समान है जो खंडहर में बदल गया हो और जिसके निवासियों ने उसे छोड़ दिया हो - एक ऐसा घर जिसका किसी के लिए कोई मूल्य नहीं है, बल्कि सभी उससे घृणा करते हैं, मानो वह साँपों, बिच्छुओं और जंगली जानवरों के बिल की तरह शापित हो; कोई उसकी परवाह नहीं करता, क्योंकि वह खंडहर और वीरानी में पड़ा है। लापरवाह व्यक्ति की यही दशा होती है! उत्साह बनाए रखने का

ध्यान रखें और इसे कभी भी टालें नहीं, नहीं तो आप शत्रु की शक्ति के अधीन हो जाएँगे। जब किसी व्यक्ति में यह उत्तम उत्साह और सावधानी होती है, तो यह उसे सभी गिरावटों और नुकसान से बचाती है और उसे चेतावनी देता है, ताकि ऐसा व्यक्ति पवित्र आत्मा के लिए विश्राम का स्थान बन जाए और, अपना सफर खुशी-खुशी पूरा करने के बाद, इस दुनिया में संतों के विश्राम में प्रवेश करने के लिए योग्य समझा जाए।

81. हमने सुना है कि धन्य पौलुस, जब उन्होंने कुँवारीपन पर चर्चा की, तो इसके बारे में कहा: *'मुझे प्रभु से* कोई आज्ञा *नहीं मिली है'* (1 कुरिन्थियों 7:25)। उन्हें ऐसी कोई आज्ञा नहीं मिली थी क्योंकि हर कोई इस भारी जुए को नहीं उठा सकता; इसीलिए इसे उन लोगों की स्वतंत्र पसंद पर छोड़ दिया गया है जो इसे उठाने में सक्षम हैं। जो ब्रह्मचारी है वह अपनी ब्रह्मचर्य का घमंड न करे, क्योंकि यह स्वयं ईश्वर की कृपा है। ब्रह्मचर्य स्त्री-भावों, कामुक विचारों, हृदय के घमंड और शैतान से संबंधित सभी चीजों के प्रति प्रेम को दूर करता है; यह अधीर बड़बड़ाहट, लोगों से घृणा और सांसारिक महिमा से भी दूर रखती है; यह दिव्य उपासना के लिए समर्पित है, जीभ को नियंत्रित करती है और उपवास के माध्यम से पेट को अनुशासित करती है। जब यह इन सभी चीजों से सुसज्जित होती है, तो यह बिना दाग-धब्बे या अशुद्धि के एक बलिदान बन जाती है। हे कुंवारी आत्मा, यदि तुम भव्य भोजों में व्यस्त रहती हो और आत्म-प्रशंसा (आत्म-मग्न) में चली हो, तो तुम अपने सभी कर्मों में लज्जित होओगी। यदि तुम अपनी जीभ की रक्षा नहीं करती हो, तो तुम अपने पूरे जीवन में व्यर्थ रहोगी, और तुमने व्यर्थ में महान श्रम किए होंगे।

८२. हम संतों द्वारा पैदल चले गए मार्ग पर धार्मिकता से चलें, जिनके बारे में लिखा है: *'धन्य हैं वे जिनका मार्ग निर्दोष है, जो प्रभु के विधान पर चलते हैं'* (भजन संहिता ११८:१)। अर्थात्, शरीर की पवित्रता, वाणी की पवित्रता, आँखों की पवित्रता, हाथों की पवित्रता, कानों की पवित्रता, पैरों की पवित्रता, परमेश्वर के सामने सही विचारों में, और एक-दूसरे के प्रति एक शुद्ध हृदय में, जैसा कि हम अपनी प्रार्थनाओं में कहते हैं: *'हे परमेश्वर, मुझ में एक शुद्ध हृदय उत्पन्न कर, और मुझ में एक नया और सीधा आत्मा नया कर'* (भजन संहिता 50:12)।

2. अच्छे आचरण और पवित्र जीवन पर, 170 अध्यायों में

1. लोगों को आमतौर पर इस शब्द के गलत प्रयोग से बुद्धिमान कहा जाता है। जो प्राचीन ऋषियों के वचनों और लेखों का अध्ययन कर चुके हैं, वे बुद्धिमान नहीं हैं, बल्कि वे बुद्धिमान हैं जिनकी आत्मा बुद्धिमान है, जो यह विवेक कर सकते हैं कि क्या अच्छा है और क्या बुरा है; और जो आत्मा के लिए बुरा और हानिकारक है उससे दूर रहते हैं, जबकि समझदारी से आत्मा के लिए अच्छा और लाभकारी खोजते हैं, और ऐसा ईश्वर की महान धन्यवाद के साथ करते हैं। केवल इन्हीं को, सच्चाई में, बुद्धिमान व्यक्ति कहा जाना चाहिए।

२. एक सच्चे बुद्धिमान व्यक्ति की केवल एक ही चिंता होती है: हर तरह से पूरे दिल से ईश्वर की आज्ञा मानना और उन्हें प्रसन्न करना। इसलिए, और केवल इसी कारण से, वह अपने जीवन में चाहे किसी भी परिस्थिति का सामना करे, अपने आत्मा को ईश्वर को प्रसन्न करने का तरीका सिखाता है, और उनकी दिव्य देखभाल के लिए उनका धन्यवाद करता है। क्योंकि शरीर के उपचार के लिए डॉक्टरों का धन्यवाद न करना अनुचित है—भले ही वे कड़वी और अप्रिय दवाइयाँ लिखें; और न ही हमें दुख के कारण प्रतीत होने वाली किसी बात के लिए ईश्वर के प्रति कृतघ्न बने रहना सही है, यह महसूस किए बिना कि सब कुछ उनकी दिव्य योजना के अनुसार और हमारे अपने भले के लिए होता है। ऐसी समझ और ईश्वर में ऐसे विश्वास में ही आत्मा का मोक्ष और शांति निहित है।

३. संयम, दया, पवित्रता, दृढ़ता, धैर्य और इसी तरह के महान सद्गुण, मानो ईश्वर से प्राप्त (युद्ध) सामर्थ्य हैं, ताकि वे हमारे सामने आने वाले कष्टों का विरोध और सामना कर सकें और उन कष्टों के दौरान हमारी सहायता कर सकें: ताकि यदि हम इन शक्तियों का प्रयोग करें और उन्हें सदैव तैयार रखें, तो हम पर जो कुछ भी आएगा वह बोझिल, दर्दनाक, विनाशकारी या असहनीय नहीं होगा, क्योंकि इन सभी चीजों पर हमारे भीतर निहित सद्गुणों द्वारा विजय प्राप्त की जाएगी। जिनकी आत्मा में ज्ञान की कमी होती है, वे इस बात को ध्यान में नहीं रखते, क्योंकि वे यह नहीं मानते कि सब कुछ हमारे लाभ के लिए होता है, ताकि हमारे सद्गुण प्रकट हो सकें और हमें ईश्वर से उनका प्रतिफल मिल सके।

४. यदि, धन और उससे पूर्ण आनंद को क्षणिक, मायावी व्यर्थता से अधिक कुछ न मानते हुए, और यह जानते हुए कि एक सदाचारी और ईश्वर-प्रसन्न जीवन धन से बेहतर है, और आप इस विश्वास पर दृढ़ रहते हैं और इसे मन में रखते हैं, तो आप न तो आह भरेंगे, न शोक करेंगे और न ही किसी के खिलाफ शिकायत करेंगे, बल्कि जब आप देखेंगे कि आपसे बुरे लोग अपनी वाक्पटुता, ज्ञान या धन के लिए प्रशंसित होते हैं, तो आप सभी चीजों के लिए ईश्वर का धन्यवाद करेंगे। धन और सुख की अतृप्त लालसा, प्रसिद्धि और अहंकार की प्यास, सत्य के अज्ञान के साथ मिलकर, आत्मा के सबसे दुष्ट भाव हैं।

5. एक बुद्धिमान व्यक्ति स्वयं की परीक्षा करके, यह समझ पाता है कि उसके लिए क्या करना सही और लाभकारी है, क्या उसकी आत्मा के अनुकूल और मोक्षदायक है, और क्या उससे पराये और विनाशकारी है। और इस प्रकार, वह उस चीज़ से बचता है जो आत्मा को नुकसान पहुँचाती है, क्योंकि वह उससे परायी है।

6. कोई जितना संयम से रहता है, उतना ही अधिक वह शांति में रहता है, क्योंकि वह कई चीजों - नौकरों, खेत मजदूरों (ठेके पर काम करने वालों) और पशुओं के अधिग्रहण - के बारे में चिंता नहीं करता है। हालाँकि, जब हम इन चीजों से जुड़ जाते हैं, तो हम उनसे उत्पन्न होने वाली दुर्भाग्यपूर्ण परिस्थितियों के संपर्क में आते हैं, और हम उस बिंदु पर पहुँच जाते हैं जहाँ हम ईश्वर के विरुद्ध बड़बड़ाते हैं। इस प्रकार, हमारी अपनी अनियंत्रित इच्छा (कई चीजों के लिए) हमें भ्रम से भर देती है, और हम अपने ही बारे में अनभिज्ञ होकर, एक पापी जीवन के अंधकार में भटकते हैं।

7. किसी को यह नहीं कहना चाहिए कि एक व्यक्ति के लिए सदाचारी जीवन जीना असंभव है, बल्कि यह कहना चाहिए कि यह आसान नहीं है। और निश्चित रूप से, यह सभी के लिए बिना किसी भेदभाव के आसानी से प्राप्त नहीं है; बल्कि केवल वे लोग जो धार्मिक हैं और ईश्वर-प्रेमी मन रखते हैं, वे ही सदाचारी जीवन की ओर आकर्षित होते हैं। साधारण (सामान्य) मन एक सांसारिक और चंचल मन है; यह अच्छे और बुरे दोनों तरह के विचारों को जन्म देता है, परिवर्तनशील होता है और भौतिक चीजों की ओर झुकाव रखता है; जबकि ईश्वर-प्रेमी मन उन बुराइयों का जल्लाद है जो लोगों में उनकी जानबूझकर की गई लापरवाही से उत्पन्न होती हैं।

८. अनपढ़ और सरल स्वभाव के लोग सीखने को एक हास्यास्पद प्रयास मानते हैं और उस पर ध्यान देने से इनकार करते हैं, क्योंकि यह उनके अज्ञान को उजागर करता है - और वे चाहते हैं कि हर कोई उनकी तरह हो: इसी तरह, जो अपने जीवन और आचरण में अनुशासनहीन हैं, वे ईमानदारी से चाहते हैं कि हर कोई उनसे भी बदतर हो, यह सोचकर कि वे इस आधार पर खुद को बरी कर सकते हैं कि बहुत से लोग दुष्ट हैं। आत्मा पाप के दुष्टता से नष्ट और भ्रष्ट हो जाती है, जो बहुआयामी है और इसमें व्यभिचार, अहंकार, लालच, क्रोध, अभद्रता, उन्माद, हत्या, बड़बड़ाहट, ईर्ष्या, जबरन वसूली, शोषण, अधीरता, झूठ, कामुकता, आलस्य, दुख, कायरता, घृणा, निंदा, सुस्ती, मोह, अज्ञानता, प्रलोभन और अधर्मीपन। ईश्वर से विमुख हुई दुखी आत्मा इन और इन जैसी अन्य बातों से पीड़ित होती है।

९. कि कोई वास्तव में एक तपस्वी के रूप में एक सदाचारी और प्रशंसनीय जीवन जीता है या नहीं, इसका निर्णय न तो दिखावे के लिए बनाए गए आचरण से, और न ही उनके जीवन-यापन के झूठे दिखावे से किया जाना चाहिए; बल्कि यह देखकर कि क्या वे, कुशल चित्रकारों और मूर्तिकारों की तरह, अपने कर्मों के द्वारा ही अपना सदाचारी और ईश्वर-प्रसन्न जीवन प्रदर्शित करते हैं, तथा सभी सांसारिक सुखों से ऐसे मुंह मोड़ते हैं जैसे वे जाल हों।

10. धन-संपन्न और कुलीन कुल का व्यक्ति जिसमें आध्यात्मिक संस्कार और सदाचारी जीवन का अभाव हो, समझदार लोगों की दृष्टि में दुखी होता है; इसके विपरीत, एक गरीब या दास व्यक्ति भी यदि ज्ञान और सदाचार से सुसज्जित हो तो वह प्रसन्न रहता है। जैसे यात्री रास्तों पर भटक जाते हैं (और मर जाते हैं), वैसे ही जो लोग सदाचारी जीवन की उपेक्षा करते हैं, वे अपनी इच्छाओं के वश में होकर नष्ट हो जाते हैं।

11. उस व्यक्ति को 'मानव निर्माता' कहना चाहिए जो अनपढ़ों के चरित्र को नरम करने में सफल होता है और उन्हें सीखने और शिक्षा से प्रेम करने के लिए प्रेरित करता है। इसी प्रकार, जो लोग विलासी जीवन जीने वाले लोगों को एक सदाचारी और ईश्वर-प्रसन्न जीवन की ओर ले जाते हैं, उन्हें भी 'मानव निर्माता' माना जाना चाहिए, क्योंकि वे, एक तरह से, मानव को पुनःबना रहे होते हैं। नम्रता और संयम मानव आत्मा के लिए सुख और एक धन्य आशा हैं।

12. वास्तव में, लोगों को अपने जीवन और आचरण को उचित तरीके से व्यवस्थित करना चाहिए। जब यह सही हो जाता है, तो ईश्वर को ठीक से जाना जा सकता है। जो लोग पूरे हृदय और पूरे विश्वास से ईश्वर का सम्मान करते हैं, उन्हें दिव्य कृपा से उनसे क्रोध और कामवासना पर काबू पाने में मदद मिलती है। क्योंकि कामवासना और क्रोध सभी बुराइयों का कारण हैं।

13. एक व्यक्ति को या तो बुद्धिमान माना जाना चाहिए (पहले बिंदु के अनुसार), या वह जो स्वयं में सुधार करने का प्रयास कर रहा है। जिसे सुधारा नहीं जा सकता, उसे व्यक्ति नहीं कहा जाना चाहिए; क्योंकि यह (यानी असाध्यता) एक मानवीय गुण नहीं है। ऐसे लोगों से बचना चाहिए। जो दुष्टों की संगति करते हैं, वे कभी भी अमरों (अर्थात उन लोगों को जिन्हें अमरत्व प्राप्त है) में गिने नहीं जाएँगे।

14. केवल हमारे भीतर की बुद्धि (पहले बिंदु के अनुसार) के गुण के कारण ही हम मानव कहलाने के योग्य हैं; ऐसी बुद्धि के बिना, हम मूक प्राणियों से केवल अपने अंगों की व्यवस्था और वाणी के वरदान में ही भिन्न हैं। अतः विवेकी व्यक्ति यह जाने कि वह अमर है; और उसे हर लज्जास्पद वासना से घृणा करनी चाहिए, जो मानव जाति के लिए मृत्यु का कारण है।

१५. जैसे हर कारीगर अपनी चुनी हुई उपयुक्त सामग्री को सुंदर रूपों में ढालकर अपनी कला का प्रदर्शन करता है – जैसे कोई लकड़ी से, कोई कांस्य से, और कोई सोने और चांदी से – वैसे ही हमें भी यह प्रदर्शति करना चाहिए कि हम मानव हैं, अपने शरीर की बनावट से नहीं, बल्कि इस तथ्य से कि हम अपनी आत्मा में वास्तव में बुद्धिमान हैं, – सदाचार के नियिम को स्वीकार करके, अर्थात् सदाचार और ईश्वर के प्रति भिक्ति का जीवन जीकर। एक सच्चा बुद्धिमान और ईश्वर-प्रेमी आत्मा जानता है कि जीवन में क्या होना चाहिए, और प्रेमपूर्वक ईश्वर को प्रसन्न करता है, और ईश्वर का हार्दकि धन्यवाद करता है, अपनी सभी इच्छाओं और सभी विचारों के साथ ईश्वर की ओर मुड़ता है।

१६. जिस प्रकार नाविक सावधानी से जहाज को आगे चलाते हैं ताकि वह किसी डूबे हुए पत्थर या किसी अन्य चट्टान से न टकराए, उसी प्रकार सदाचार के जीवन के उत्साही लोगों को भी सावधानी से विचार करना चाहिए कि उन्हें क्या करना चाहिए और क्या बचना चाहिए, और केवल उसी को अपने लिए लाभदायक मानना चाहिए जो सच्चे और दैवीय कानूनों से प्रेरित हो, तथा अपने आत्मा से दुष्ट विचारों को काट देना चाहिए।

17. जिस प्रकार नाविक और सारथी, विवेक और परिश्रम के द्वारा, अपने कर्तव्यों का अच्छी तरह से पालन करने में सफल होते हैं, उसी प्रकार धर्मपरायण और सदाचारी जीवन के उत्साही लोगों को सावधानीपूर्वक विचार करना चाहिए कि उन्हें क्या करना चाहिए और क्या करना चाहिए, और केवल वही लाभकारी समझना चाहिए जो सच्चे और दैवीय कानूनों द्वारा निर्धारित है, और अपने आत्मा से सभी दुष्ट विचारों को दूर करना चाहिए।17. (एक शुद्ध जीवन)।

18. उन लोगों को स्वतंत्र न समझो जो केवल पदवी से स्वतंत्र हैं, बल्कि उन लोगों को समझो जो अपने जीवन-यापन और चरित्र से स्वतंत्र हैं। उदाहरण के लिए, कुलीन और धनी लोगों को सच्चा स्वतंत्र नहीं कहना चाहिए जब वे दुष्ट और असंयमी हों, क्योंकि ऐसे लोग अपने कामुक जुनून के दास होते हैं। सच्ची पवित्रता और क्षणभंगुर चीजों के प्रति तिरस्कार ही आत्मा की स्वतंत्रता और आनंद है।

19. खुद को याद दिलाएँ कि आपको लगातार खुद को बुद्धिमान साबित करना चाहिए, लेकिन ऐसा एक सदाचारी जीवन और अपने कर्मों के माध्यम से करें। इसी तरह, बीमार लोग डॉक्टरों को उनके शब्दों से नहीं, बल्कि उनके कर्मों से उद्धारकर्ता और उपकारी मानते हैं।

20. एक आत्मा जो वास्तव में बुद्धिमान और सदाचारी है, वह अपनी दृष्टि, आचरण, स्वर, मुस्कान, बातचीत और व्यवहार में स्वयं को प्रकट करती है। इसके भीतर सब कुछ रूपांतरित हो गया है और उसने सबसे उत्तम रूप धारण कर लिया है; इसका ईश्वर-प्रेमी मन, एक चौकस द्वारपाल की तरह, बुराई और शर्मनाक विचारों के प्रवेश को रोकता है।

21. अपने आस-पास के परिवेश पर ध्यान दो और यह समझो कि शासकों और सत्ताधारियों के पास केवल शरीर पर ही शक्ति होती है, आत्मा पर नहीं – और यह बात हमेशा अपने मन में रखो। क्योंकि जब वे, उदाहरण के लिए, किसी को मारने का, या आत्मा के लिए अनुचित, अन्यायपूर्ण और हानिकारक कोई भी अन्य काम करने का आदेश देते हैं, तो उन्हें आज्ञा नहीं माननी चाहिए, भले ही वे शरीर को यातना क्यों न दें। ईश्वर ने आत्मा को स्वतंत्र और आत्म-शासित बनाया है, और वह अपनी इच्छा से कार्य करने के लिए स्वतंत्र है – चाहे वह अच्छा हो या बुरा।

२२. एक बुद्धिमान आत्मा अपने आपको व्यभिचार, अहंकार, घमंड, मोह, ईर्ष्या, चोरी और इसी तरह की अन्य बुराइयों से मुक्त करने का प्रयास करती है, क्योंकि ऐसे कर्म राक्षसों और दुष्ट इच्छा के कार्य हैं। फिर भी, परिश्रम और सावधानीपूर्वक चिंतन के माध्यम से, एक व्यक्ति जिसकी इच्छाएँ नीच सुखों की ओर निर्देशित नहीं हैं, वह इसे प्राप्त करने में सक्षम होता है।

23. जो लोग अपने जीवन को छोटे और साधारण कार्यों में व्यतीत करते हैं, वे खतरे से बचते हैं और उन्हें विशेष सावधानियों की कोई आवश्यकता नहीं होती है। अपनी सभी इच्छाओं पर काबू पाकर, वे आसानी से उस मार्ग को पा लेते हैं जो ईश्वर की ओर ले जाता है।

24. बुद्धिमान लोगों को हर तरह की बातचीत सुनने की आवश्यकता नहीं है, बल्कि केवल उन्हीं बातों को सुनना चाहिए जो लाभदायक हों, जो ईश्वर की इच्छा के ज्ञान की ओर ले जाएँ; क्योंकि यही वह मार्ग है जिससे लोग जीवन और शाश्वत प्रकाश की ओर लौटते हैं।

२५. जो लोग सदाचार से और ईश्वर के प्रति प्रेम से जीवन जीने का प्रयास करते हैं, उन्हें अहंकार और सभी व्यर्थ तथा झूठी महिमा से दूर हो जाना चाहिए, और अपने जीवन तथा हृदय को बेहतर बनाने का प्रयत्न करना चाहिए। ईश्वर-प्रेमी और दृढ़ मन ही मार्गदर्शक और ईश्वर का मार्ग है।

26. यदि आत्मा एक अच्छा और ईश्वर-प्रसन्न जीवन नहीं जीती है तो विज्ञानों का अध्ययन करने में कोई लाभ नहीं है। हालाँकि, सभी बुराइयों का कारण भ्रम, धोखा और ईश्वर के प्रति अज्ञानता है।

27. सदाचार पर गहरा चिंतन और आत्मा की देखभाल से सदाचारी और ईश्वर-प्रेमी पुरुष उत्पन्न होते हैं। जो ईश्वर की खोज करता है, वह उसे पाता है, और निरंतर प्रार्थना के द्वारा हर इच्छा पर विजय प्राप्त करता है। ऐसा व्यक्ति राक्षसों से नहीं डरता।

28. जो लोग सांसारिक वस्तुओं से मोहित हैं और यह जानते हैं कि एक अच्छा जीवन जीने के लिए हर बारीकी से क्या करना चाहिए, वे उन लोगों की तरह हैं जिन्होंने दवाएं और चिकित्सा उपकरण तो प्राप्त कर लिए हैं, लेकिन उनका उपयोग करना नहीं जानते और न ही ऐसा करने की परवाह करते हैं। इसलिए, हमने जो पाप किए हैं, उनके लिए हम न तो अपनी जन्म कुंडली को और न ही किसी और को दोष दें, बल्कि केवल स्वयं को दोष दें; क्योंकि यदि आत्मा स्वेच्छा से आलस्य के आगे झुक जाती है, तो वह पराजित हुए बिना नहीं रह सकती।

29. जो व्यक्ति भले और बुरे में अंतर नहीं कर सकता, उसके लिए यह तय करना उचित नहीं है कि कौन अच्छे हैं और कौन बुरे। जो व्यक्ति जानता है कि ईश्वर भला है; और यदि वह भला नहीं है, तो इसका मतलब है कि वह (ईश्वर को) नहीं जानता और (उसके द्वारा) कभी जाना नहीं जाएगा: क्योंकि ईश्वर को जानने का एकमात्र तरीका भलाई है।

30. अच्छे और ईश्वर-प्रेमी पुरुष, जब उपस्थित होते हैं, तो किसी भी गलत काम के लिए लोगों को फटकारते हैं; जहाँ तक अनुपस्थित लोगों का सवाल है, वे न केवल स्वयं उन्हें फटकारते नहीं हैं, बल्कि उन लोगों को भी ऐसा करने की अनुमति नहीं देते जो उनके बारे में बुरा बोलने की कोशिश करते हैं।

31. बातचीत में कोई असभ्यता नहीं होनी चाहिए; क्योंकि बुद्धिमान लोग आमतौर पर कुंवारी लड़कियों की तुलना में अधिक विनम्रता और पवित्रता से सुशोभित होते हैं। ईश्वर-प्रेमी मन एक प्रकाश है जो आत्मा को प्रबुद्ध करता है, ठीक वैसे ही जैसे सूर्य शरीर को प्रकाशित करता है।

32. जब भी आत्मा के कोई भी भाव आपके विरुद्ध उठें, तो याद रखें कि जो लोग वास्तव में बुद्धिमान हैं और अपनी स्थिति को एक उचित और स्थायी नींव पर स्थापित करना चाहते हैं, वे नश्वर धन की प्राप्ति को आनंद का स्रोत नहीं मानते, बल्कि (स्वर्ग में) सच्ची महिमा को मानते हैं। यही उन्हें धन्य बनाता है। धन तो चोरी भी हो जाता है और सबसे ताकतवर भी छीन लेते हैं, जबकि ईश्वर-प्रेम ( ) से युक्त आध्यात्मिक सद्गुण ही एक सुरक्षित और न चुराए जाने वाला धन है, और मृत्यु के बाद यह अपने धारक को बचाता है। जो लोग इस प्रकार तर्क करते हैं, वे धन और अन्य सुखों के मायावी वैभव से प्रलोभित नहीं होते।

33. चंचल और अज्ञानी लोगों को बुद्धिमानों की परीक्षा नहीं लेनी चाहिए। बुद्धिमान वह है जो ईश्वर को प्रसन्न करता है और अधिकतर मौन रहता है; या, यदि वह बोलता है, तो संक्षेप में बोलता है—और केवल वही जो आवश्यक और ईश्वर को प्रसन्न करने वाला हो।

३४. जो लोग एक सदाचारी और ईश्वर-प्रेमी जीवन के लिए प्रयास करते हैं, वे आत्मा के सद्गुणों के प्रति उत्साही होते हैं, और उन्हें एक ऐसी संपत्ति मानते हैं जो उनकी अहरणीय संपत्ति और शाश्वत सांत्वना है। जहाँ तक सांसारिक वस्तुओं का सवाल है, वे उनका केवल उतना ही आनंद लेते हैं जितना आवश्यक है और जितना ईश्वर प्रदान करते और इच्छा रखते हैं, उनका उपयोग आनंद और सभी कृतज्ञता के साथ करते हैं, भले ही वे बहुत साधारण हों। क्योंकि एक समृद्ध मेज़ शरीर को पोषण देती है, जैसा कि भौतिक चीजें करती हैं, जबकि ईश्वर का ज्ञान, संयम, दया, दान, धर्मपरायणता और विनम्रता—ये आत्मा को उदात्त बनाती हैं।

35. जो शासक लोगों को अनुचित और आत्मा को हानि पहुँचाने वाले कर्म करने के लिए मजबूर करते हैं, वे आत्मा पर शासन नहीं करते, जिसे स्व-शासित होने के लिए बनाया गया है। वे शरीर को बाँधते हैं, लेकिन स्वतंत्र इच्छा को नहीं, जिस पर एक बुद्धिमान व्यक्ति अपने स्रष्टा की कृपा से शासन करता है, जो किसी भी प्राधिकरण, जबरदस्ती या शक्ति से अधिक शक्तिशाली है।

36. जो लोग धन, संतान, दास या अन्य संपत्ति के नुकसान को दुर्भाग्य मानते हैं, वे जान लें कि, सबसे पहले, मनुष्य को उसी में संतुष्ट रहना चाहिए जो ईश्वर प्रदान करता है; और फिर, जब इसे त्यागना आवश्यक हो, तो मनुष्य को इसे स्वेच्छा और प्रसन्नता से करना चाहिए, बिना इसके नुकसान पर, या बल्कि इसके वापस मिलने पर, शोक से खुद को पीड़ा पहुँचाए: ठीक वैसे ही जैसे वे लोग जो दूसरे की चीज़ का उपयोग करके उसे वापस कर देते हैं।

37. अच्छे चरित्र वाले व्यक्ति का यह कर्तव्य है कि वह धन प्राप्त करने के लिए अपनी स्वतंत्रता न बेचे, भले ही प्राप्त होने वाला धन बहुत अधिक ही क्यों न हो। क्योंकि सांसारिक वस्तुएँ एक सपने के समान हैं, और धन में केवल एक मायावी वैभव होता है, जो क्षणिक और अल्पकालिक होता है।

38. सच्चे मानवीय सद्गुणों वाले लोगों को (जैसा कि ऊपर बताया गया है) ईश्वर-प्रेमी और सदाचारी जीवन के लिए इतनी लगन से प्रयास करना चाहिए कि उनका सदाचारी जीवन अन्य लोगों के बीच प्रकाशमान हो, ठीक वैसे ही जैसे सफेद वस्त्रों को सजाने के लिए डाली गई बैंगनी रंग की एक छोटी सी पट्टी भी सबसे अलग और सबके ध्यान में आती है। क्योंकि इस प्रकार उनके आध्यात्मिक सद्गुणों के प्रति उत्साह अधिक सुनिश्चित होगा।

39. विवेकी लोगों को अपनी शक्ति (सेना) का आकलन करना चाहिए और अपने आत्मा के भीतर सद्गुणों को सुव्यवस्थित रखना चाहिए, ताकि इस प्रकार वे अपनी आत्मा में स्वाभाविक रूप से ईश्वर द्वारा प्रदत्त, अपनी आत्मा में निहित शक्ति (सद्गुणों की सेना) से आवेगों का विरोध करने के लिए हमेशा तैयार रहें। ये इस प्रकार हैं: सुंदरता और हर आत्मा को भ्रष्ट करने वाली वासना के विरुद्ध – संयम; अभाव और गरीबी के विरुद्ध – धैर्य; क्लेश और क्रोध के विरुद्ध – सौम्यता और इसी तरह के गुण।

४०. कोई व्यक्ति अचानक एक अच्छा और बुद्धिमान व्यक्ति नहीं बन सकता; बल्कि यह सावधानीपूर्वक चिंतन, अभ्यास, अनुभव, निरंतर प्रयास और (सबसे बढ़कर) अच्छाई करने की प्रबल इच्छा से प्राप्त किया जाता है। एक अच्छा और ईश्वर-प्रेमी व्यक्ति, जिसने वास्तव में ईश्वर को जान लिया है, वह स्वयं को विश्राम नहीं देता, और वह ईश्वर को प्रसन्न करने वाली हर संभव चीज़ करता है। लेकिन ऐसे पुरुष बहुत कम मिलते हैं।

४१. जिन लोगों में स्वाभाविक रूप से अच्छाई की प्रवृत्ति नहीं है, उन्हें अपनी स्थिति से निराश होकर और हार मानकर, ईश्वर-प्रेमी और सदाचारी जीवन की उपेक्षा नहीं करनी चाहिए, चाहे वह उन्हें कितना भी दुर्गम और अवांछनीय क्यों न लगे; बल्कि उन्हें भी चिंतन करना चाहिए और अपनी देखभाल के लिए भरसक प्रयास करना चाहिए। क्योंकि भले ही वे सद्गुण और पूर्णता की ऊँचाइयों को प्राप्त न कर सकें, स्वयं पर चिंतन करके और हर तरह से अपना ध्यान रखकर, वे या तो बेहतर हो जाएँगे, या कम से कम और बुरे नहीं होंगे - और यह आत्मा के लिए कोई छोटा लाभ नहीं है।

४२. मनुष्य, अपने मन में, अकथनीय दैवीय शक्ति के संपर्क में होता है, जबकि अपने शरीर में वह पशुओं के समान है। लेकिन ऐसे बहुत कम लोग हैं जो, सच्चे और बुद्धिमान मनुष्यों के रूप में, अपने विचारों को ईश्वर और उद्धारकर्ता की ओर मोड़ने और उनके साथ संवाद में रहने का प्रयास करते हैं, और जो अपने कर्मों और सदाचारी जीवन के माध्यम से इसे प्रदर्शित करते हैं। हालाँकि, अधिकांश लोग, आत्मा से मूर्ख होकर, उस दिव्य और अमर गोद लेने को त्यागकर, शरीरों के साथ एक मृत, तुच्छ और क्षणिक संबंध की ओर झुकते हैं; और, गूंगे जानवरों की तरह, केवल सांसारिक मामलों में व्यस्त और वासना से प्रज्वलित, वे स्वयं को ईश्वर से अलग कर लेते हैं और अपनी आत्माओं को स्वर्ग से निकालकर कामुक यातनाओं की खाई में डाल देते हैं।

43. एक बुद्धिमान व्यक्ति, जो दिव्यता के साथ एकता और संगम पर मनन करता है, वह कभी भी किसी सांसारिक या नीच चीज़ से नहीं चिपकेगा, बल्कि अपना मन स्वर्गीय और शाश्वत चीज़ों की ओर निर्देशित करता है, यह जानते हुए कि ईश्वर की इच्छा—जो सभी अच्छाइयों का स्रोत और मानवता के लिए शाश्वत आशीर्वादों का मूल है—यह है कि मनुष्य का उद्धार हो।

४४. जब आप किसी ऐसे व्यक्ति से मिलें जो बहस का शौकीन हो और आपको सत्य तथा स्वयंसिद्ध तथ्यों के विरुद्ध संघर्ष में लगा दे, तो विवाद को समाप्त करने के बाद उससे मुंह मोड़ लें, क्योंकि उसका मन पूरी तरह से कठोर हो चुका है। जैसे गंदा पानी उत्तम से उत्तम शराब को भी किसी काम के लायक नहीं छोड़ता, वैसे ही दुष्ट संवाद जीवन और चरित्र में सदाचारी लोगों को भी भ्रष्ट कर देते हैं।

४५. यदि हम शारीरिक मृत्यु से बचने के लिए हर संभव प्रयास और हर साधन का उपयोग करते हैं, तो हमें आध्यात्मिक मृत्यु से बचने के लिए और भी अधिक प्रयास करना चाहिए: क्योंकि जो कोई भी बचना चाहता है, उसके सामने आत्मा की सुस्ती और आलस्य के सिवा कोई बाधा नहीं है।

४६. जो लोग यह जानने के इच्छुक नहीं हैं कि उनके लिए क्या अच्छा है और क्या अच्छा माना जाना चाहिए, उनके बारे में कहा जा सकता है कि वे अच्छे स्वास्थ्य में नहीं हैं; जहाँ तक उन लोगों का सवाल है, जिन्होंने सत्य को जानने के बाद भी निर्लज्जता से उसके खिलाफ बहस की, उनका विवेक कुंद हो गया है: उनका स्वभाव पशुवत हो गया है; वे ईश्वर को नहीं जानते, और उनकी आत्मा प्रकाश से प्रबुद्ध नहीं है।

४७. ईश्वर ने हमारे लाभ के लिए अपने वचन द्वारा विभिन्न प्रकार के पशु बनाए: कुछ भोजन के लिए, अन्य सेवा के लिए। लेकिन परमेश्वर ने मनुष्य को अपनी कृतियों का साक्षी और एक कृतज्ञ व्याख्याकार बनाने के लिए बनाया। लोगों को इसी के लिए प्रयास करना चाहिए, कहीं ऐसा न हो कि वे परमेश्वर और उसकी कृतियों को देखे या समझे बिना, बिन बोले जानवरों की तरह मर जाएँ। मनुष्य को यह एहसास होना चाहिए कि ईश्वर सर्वशक्तिमान है। कोई भी उसको चुनौती नहीं दे सकता जो सर्वशक्तिमान है। जिसने अपने वचन से सभी चीजों को बनाया, और जो कुछ

उसने चाहा उसे अस्तित्व में लाया, उसी प्रकार (अभी भी) वह मानव जाति के उद्धार के लिए सभी चीजों को बनाता है।

४८. स्वर्गवासी प्राणी अपने भीतर निहित सद्गुण के कारण अमर हैं; जबकि पृथ्वीवासी प्राणी अपने भीतर के स्वाभाविक दुष्टता के कारण नश्वर हो गए हैं, जो मूर्खों के मामले में उनकी आलस्य और ईश्वर के अज्ञान के कारण कई गुना बढ़ जाती है।

४९. मृत्यु, जो इसे समझते हैं उनके लिए अमरत्व है; परन्तु साधारण-चित्त वालों के लिए, जो इसे नहीं समझते, यह मृत्यु है। और इस मृत्यु से डरना नहीं चाहिए, परन्तु (आत्मा के विनाश से डरना चाहिए), जो परमेश्वर का अज्ञान है। आत्मा के लिए वही भयानक है!

५०. पाप ने भौतिक जगत में पैर जमा लिया है, और शरीर उसका आसन बन गया है। लेकिन बुद्धिमान आत्मा, इसे समझकर, भौतिक जगत का बोझ त्याग देती है; और, इस बोझ से ऊपर उठकर, सर्व के ईश्वर को जानती है, और शरीर पर एक शत्रु और विरोधी की तरह सावधानी से नजर रखती है, उस पर भरोसा नहीं करती। और इस प्रकार, दुष्ट वासनाओं और भौतिक जगत पर विजय प्राप्त करके, आत्मा को ईश्वर द्वारा मुकुट पहनाया जाता है।

५१. जब आत्मा पाप को समझती है, तो वह उससे सबसे बदबूदार जानवर की तरह घृणा करती है; लेकिन जब वह उसे नहीं समझती, तो जो लोग उसे नहीं समझते वे उससे प्रेम करते हैं, और अपने प्रेमी को दास बनाकर, उसे बंदी बना लेती है। और यह दुखी और दरिद्र आत्मा यह नहीं देखती कि उसके लिए क्या उद्धारक है, और न ही वह इसके बारे में सोचती है; बल्कि यह विश्वास करते हुए कि पाप उसे सजाता है, वह इसमें आनंद लेती है।

५२. एक शुद्ध आत्मा, सज्जन स्वभाव की होने के कारण, ईश्वर द्वारा पवित्र और प्रकाशित की जाती है, और तब मन उस पर चिंतन करता है जो अच्छा है और ईश्वर-प्रेमपूर्ण इरादों और कर्मों को जन्म देता है। लेकिन जब आत्मा पाप से कलंकित हो जाती है, तो ईश्वर उससे मुंह मोड़ लेता है—या यूँ कहें कि आत्मा स्वयं को ईश्वर से अलग कर लेती है—और दुष्ट राक्षस, मन में प्रवेश करके, आत्मा में अश्लील कर्म भर देते हैं: व्यभिचार, हत्या, चोरी और इसी तरह के राक्षसी दुष्ट कार्य।

५३. जो ईश्वर को जानते हैं, वे हर तरह के अच्छे विचारों से परिपूर्ण होते हैं और, दिव्य चीज़ों की लालसा में, सांसारिक चीज़ों को तुच्छ समझते हैं। लेकिन ऐसे लोग सभी को पसंद नहीं आते; इसलिए इस वजह से न केवल उनसे घृणा की जाती है, बल्कि कई मूर्खों द्वारा उनका उपहास भी किया जाता है। वे अत्यधिक गरीबी सहने के लिए तैयार रहते हैं, यह जानते हुए कि जो बात कई लोगों को बुरी लगती है, वह वास्तव में उनके लिए अच्छी है। जो कोई भी दिव्य क्षेत्र पर मनन करता है, वह ईश्वर में विश्वास करता है और जानता है कि सारी सृष्टि उसकी इच्छा का कार्य है; लेकिन जो कोई भी इस पर मनन नहीं करता, वह कभी भी यह विश्वास नहीं करेगा कि यह संसार ईश्वर का कार्य है और इसे मानव जाति के उद्धार के लिए बनाया गया है।

54. जो पाप में डूबे हुए और अज्ञानता में मग्न हैं, वे परमेश्वर को नहीं जानते, क्योंकि उनकी आत्माएँ सचेत नहीं हैं; परन्तु परमेश्वर आध्यात्मिक हैं (अर्थात्, उन्हें केवल एक स्पष्ट मन के माध्यम से ही जाना जा सकता है)। यद्यपि वह अदृश्य हैं, वह दृश्यमान जगत में बहुत स्पष्ट रूप से मौजूद हैं, ठीक वैसे ही जैसे आत्मा शरीर में होती है। जैसे शरीर आत्मा के बिना जीवित नहीं रह सकता, वैसे ही सब कुछ जो दृश्यमान है और अस्तित्व में है, वह परमेश्वर के बिना नहीं टिक सकता।

55. मनुष्य की रचना किस उद्देश्य से की गई थी? ताकि ईश्वर की रचनाओं को जानकर, वह स्वयं ईश्वर को देख सके और उस एक की महिमा कर सके जिसने उन्हें मनुष्य के लिए बनाया; मन, जो प्रेम से ईश्वर की ओर आकर्षित होता है (ईश्वर का प्रेमी और ईश्वर को प्रिय), एक अदृश्य आशीर्वाद है, जो ईश्वर द्वारा एक अच्छे जीवन के लिए योग्य लोगों पर प्रदान किया जाता है।

५६. वह स्वतंत्र है जो कामुक सुखों का दास नहीं है, बल्कि तर्क और आत्म-संयम के द्वारा शरीर पर शासन करता है, और ईश्वर द्वारा प्रदान की गई चीज़ों से, भले ही वह बहुत मामूली क्यों न हो, पूर्ण कृतज्ञता के साथ संतुष्ट रहता है। जब ईश्वर-प्रेमी मन और आत्मा एक-दूसरे के साथ सामंजस्य में होते हैं, तो शरीर वश में और संतुष्ट रहता है, क्योंकि तब आत्मा, मन की क्रिया के माध्यम से, हर शारीरिक प्रवृत्ति को शांत कर देती है।

५७. जो लोग अपना जीवन यापन करने के लिए अपने पास मौजूद चीज़ों से संतुष्ट नहीं हैं, बल्कि और अधिक की लालसा करते हैं, वे स्वयं को उन वासनाओं का दास बना लेते हैं जो आत्मा को बेचैन करती हैं और उसमें दिन-प्रतिदिन और भी बुरे विचार और सपने भर देती हैं—कि सब कुछ असंतोषजनक है और, परिणामस्वरूप, मनुष्य को कुछ नया और बेहतर प्राप्त करना चाहिए। जिस प्रकार अत्यधिक लंबे कपड़े यात्रियों को चलने से रोकते हैं, उसी प्रकार संपत्ति की अत्यधिक इच्छा आत्मा को प्रयास करने और मोक्ष प्राप्त करने से रोकती है।

५८. कोई भी व्यक्ति जिस स्थिति में अपनी इच्छा के विरुद्ध और अनिच्छा से होता है, वह उसके लिए एक जेल और एक यातना है। इसलिए, जो आपके पास है उससे संतुष्ट रहें; अन्यथा, कृतज्ञता के बिना—असंतोष और अनिच्छा के साथ—अपने हालात को सहते हुए, आप अनजाने में ही अपने लिए एक अत्याचारी बन जाएँगे। लेकिन इसका एक ही मार्ग है: सांसारिक वस्तुओं के प्रति तिरस्कार।

५९. जैसे ईश्वर ने हमें दृष्टि दी है ताकि हम दिखाई देने वाली चीज़ों—सफेद और काले—को पहचान सकें, वैसे ही ईश्वर ने हमें विवेक भी दिया है ताकि हम आत्मा के लिए लाभदायक (और हानिकारक) को पहचान सकें। – इच्छा, जब वह विवेक से विमुख हो जाती है, तो इंद्रिय सुखों की लालसा उत्पन्न करती है, और यह आत्मा को मोक्ष पाने या ईश्वर के साथ एकत्व में विलीन होने से रोकती है।

60. प्रकृति के नियम के अनुसार कार्य करना पाप नहीं है, लेकिन अपनी स्वतंत्र इच्छा से बुराई करना पाप है। खाना खाना कोई पाप नहीं है, लेकिन बिना धन्यवाद दिए, अनादरपूर्वक और आत्म-नियंत्रण के बिना इसे खाना एक पाप है; केवल देखना कोई पाप नहीं है, लेकिन ईर्ष्या, अहंकार या अतृप्ति के साथ देखना एक पाप है; शांति से सुनना कोई पाप नहीं है, लेकिन क्रोध के साथ सुनना एक पाप है; जीभ को धन्यवाद और प्रार्थना करने के लिए मजबूर करना कोई पाप नहीं है, लेकिन उसे बदनामी और निंदा करने देना पाप है; दान देकर—पुण्य कार्यों में—अपने हाथों से परिश्रम करना कोई पाप नहीं है, लेकिन चोरी और हत्या को होने देना पाप है। इस प्रकार, जब कोई भी अंग अपनी मुक्त इच्छा से ईश्वर की इच्छा के विरुद्ध, भलाई के बजाय बुराई करता है, तो वह पाप करता है।

61. यदि आपको संदेह है कि आपका हर कर्म ईश्वर के दर्शन में है, तो इस पर विचार करें कि आप भी—एक इंसान और मिट्टी—एक ही क्षण में, मानसिक रूप से उन सभी स्थानों का सर्वेक्षण कर सकते हैं जो आपको ज्ञात हैं और उन पर चिंतन कर सकते हैं: क्या ईश्वर, जो सभी को जीवन देता है और अपनी इच्छानुसार सभी का पालन-पोषण करता है, सब कुछ और भी स्पष्ट रूप से, एक सरसों के दाने जितना स्पष्ट रूप से नहीं देखता?

62. जब आप अपने निवास का दरवाज़ा बंद करते हैं और अकेले रह जाते हैं, तो जान लें कि आप हर व्यक्ति के लिए ईश्वर द्वारा नियुक्त स्वर्गदूत के साथ हैं, जिसे यूनानी 'घरेलू आत्मा' कहते हैं। वह कभी सुस्त नहीं पड़ता; हमेशा आपके साथ रहते हुए, वह सभी चीज़ें देखता है; वह धोखा नहीं खा सकता, और अंधेरा उससे कुछ भी नहीं छिपा सकता। उसके साथ-साथ, यह ध्यान रखें कि ईश्वर हर जगह मौजूद हैं। क्योंकि कोई भी स्थान, या कोई भी पदार्थ ऐसा नहीं है, जहाँ ईश्वर मौजूद न हों—वह जो सभी से महान हैं और सभी को अपने हाथ में धारण करते हैं।

63. यदि सैनिक अपने राजा के प्रति वफादार रहते हैं क्योंकि वह उन्हें भोजन प्रदान करता है, तो हमें कितनी अधिक कोशिश करनी चाहिए, अविराम होठों से परमेश्वर की धन्यवाद करते हुए, उसे लगातार प्रसन्न करने के लिए—वह जिसने मानवता के लिए सभी चीजों की रचना की?

64. ईश्वर के प्रति कृतज्ञता और एक पुण्य जीवन एक मनुष्य के वे फल हैं जो ईश्वर को प्रिय हैं। लेकिन जैसे पृथ्वी के फल एक ही घड़ी में नहीं पकते, बल्कि उन्हें समय, वर्षा और देखभाल की आवश्यकता होती है, वैसे ही मानव आत्मा के फलों को भी अपनी पूरी शोभा में प्रकट होने से पहले प्रयास, चिंतन, प्रतीक्षा का समय, आत्म-संयम और धैर्य की आवश्यकता होती है। हालाँकि, यदि उनके लिए, आप कभी-कभी किसी को धर्मपरायण व्यक्ति प्रतीत होते हैं, तो जब तक आप इस शरीर में हैं, तब तक स्वयं पर भरोसा न करें, और अपनी किसी भी चीज़ को पूरी तरह से ईश्वर को प्रिय न समझें। क्योंकि जान लें कि किसी व्यक्ति के लिए अंत तक पाप रहित रहना कठिन है।

६५. लोगों में वचन से अधिक सम्माननीय कुछ भी नहीं है। शब्द इतना महत्वपूर्ण है कि शब्दों और धन्यवाद के माध्यम से ही हम ईश्वर का सम्मान करते हैं। अश्लील या अपमानजनक शब्दों का उपयोग करके, हम अपनी ही आत्मा की पतित अवस्था को उजागर करते हैं। यह एक मूर्ख व्यक्ति का लक्षण है कि जब वह स्वतः ही कोई बुरा शब्द बोलता है या कोई दुष्ट कर्म करता है, तो वह अपने पापों के लिए अपने जन्म या किसी अन्य परिस्थिति को दोष देता है।

66. यदि हम विभिन्न शारीरिक बीमारियों का इलाज करने का प्रयास करते हैं ताकि हमारे साथ रहने वाले हम पर हँसें नहीं, तो हमारे लिए आत्मा की बीमारियों को ठीक करने के लिए हर संभव सावधानी बरतना कहीं अधिक आवश्यक है, कहीं ऐसा न हो कि हम उस परमेश्वर के सामने अपमानजनक और उपहास के योग्य सिद्ध हों, जिनकी उपस्थिति में हमें न्याय के लिए खड़ा होना है। क्योंकि, आत्म-नियंत्रण होने पर, हम, यदि हम चाहें, तो बुराई करने से बच सकते हैं, भले ही हम उसकी इच्छा रखते हों; ईश्वर को प्रसन्न करने वाले तरीके से जीना भी हमारी शक्ति में है, और यदि हम न चाहें तो कोई भी हमें कोई बुरा काम करने के लिए कभी मजबूर नहीं कर सकता। इस तरह प्रयास करके, हम ईश्वर के योग्य लोग बनेंगे, स्वर्ग में स्वर्गदूतों की तरह जीते हुए।

67. यदि आप चाहें, तो आप अपनी वासनाओं के दास बन सकते हैं; और यदि आप चाहें, तो आप स्वतंत्र रह सकते हैं, अपनी वासनाओं के जुए के अधीन नहीं होते हुए: क्योंकि परमेश्वर ने आपको आत्म-शासित बनाया है। जो सांसारिक वासनाओं पर विजय प्राप्त करता है, उसे अक्षय जीवन का मुकुट मिलता है। यदि वासनाएँ न होतीं, तो न कोई सद्गुण होते, और न ही परमेश्वर द्वारा योग्य लोगों को प्रदान किए जाने वाले मुकुट होते।

68. जो लोग यह नहीं देखते कि उनके लिए क्या अच्छा है और यह नहीं जानते कि क्या सही है, वे आध्यात्मिक रूप से अंधे हैं, और उनका विवेक धुंधला हो गया है। हमें उन पर नज़र नहीं डालनी चाहिए, कहीं हम भी, अंधों की तरह, अनजाने में उसी जाल में न फँस जाएँ।

६९. पाप करने वालों से क्रोध नहीं करना चाहिए, भले ही उनके द्वारा किए गए अपराध दंड के योग्य हों। स्वयं सत्य की खातिर, दोषियों का (सही रास्ते पर वापस) मार्गदर्शन किया जाना चाहिए और यदि आवश्यक हो तो दंडित भी किया जाना चाहिए, या तो स्वयं या दूसरों के माध्यम से; लेकिन उनसे क्रोध नहीं करना चाहिए या द्वेष नहीं रखना चाहिए, क्योंकि क्रोध केवल जुनून से उत्पन्न होता है, न कि निर्णय या सत्य से। अत्यधिक दयालु लोगों को अनुमोदित नहीं करना चाहिए, लेकिन बुराइयों को भलाई और न्याय के लिए दंडित भी करना चाहिए, न कि अपने क्रोध के जुनून के लिए।

७०. आध्यात्मिक प्राप्ति का केवल एक ही रूप है जो सुरक्षित और चोरी से मुक्त है: अर्थात्, एक सदाचारी और ईश्वर-प्रसन्न जीवन, और अच्छे कर्मों का अनुसरण और उनका पालन। धन एक अंधा मार्गदर्शक और एक मूर्ख सलाहकार है। जो केवल अपनी ही खुशी के लिए धन का दुरुपयोग करता है, वह अपनी ही भ्रांति में जी रही आत्मा को नष्ट कर देता है।

७१. लोगों को या तो कोई भी अनावश्यक वस्तु बिल्कुल भी प्राप्त नहीं करनी चाहिए, या, ऐसी वस्तुएँ होने पर, इस बात का दृढ़ विश्वास रखना चाहिए कि सभी सांसारिक संपत्तियाँ स्वभाव से ही क्षणभंगुर हैं, जिन्हें छीन लिया जा सकता है, खोया या नष्ट किया जा सकता है, और इसलिए, जब कोई विपत्ति आती है, तो उन्हें हतोत्साहित नहीं होना चाहिए।

72. जान लो कि शारीरिक रोग स्वाभाविक रूप से शरीर में निहित हैं, क्योंकि वह नश्वर और भौतिक है। अत; ऐसे रोगों की स्थिति में, सद्गुणों में प्रशिक्षित आत्मा को कृतज्ञता के साथ साहस और धैर्य दिखाना चाहिए, और शरीर को बनाने के लिए ईश्वर को दोष नहीं देना चाहिए।

७३. ओलंपिक खेलों में प्रतिस्पर्धा करने वालों को तब मुकुट नहीं पहनाया जाता जब वे किसी एक, दूसरे या तीसरे को हराते हैं, बल्कि तब जब वे अपने सभी प्रतिद्वंद्वियों को हराते हैं। इसी तरह, जो कोई भी ईश्वर द्वारा मुकुट पहनाए जाने की इच्छा रखता है, उसे अपने आत्मा को संयम का अभ्यास करने के लिए प्रशिक्षित करना चाहिए, न केवल शारीरिक वासनाओं के संबंध में, बल्कि लालच, दूसरों की चीज़ें चुराने की इच्छा, ईर्ष्या, कामुकता, अहंकार, निंदा, मृत्यु के खतरों और इसी तरह के प्रलोभनों के समय भी।

७४. हमें एक अच्छा और ईश्वर-भयभीत जीवन जीने का प्रयास करना चाहिए, मानव प्रशंसा के लिए नहीं, बल्कि अपने आत्मा के मोक्ष के लिए एक सदाचारी जीवन चुनना चाहिए; क्योंकि मृत्यु हर दिन हमारी आँखों के सामने है, और जो कुछ भी मानवीय है वह अविश्वसनीय है।

७५. संयम से जीना हमारी शक्ति में है, लेकिन अमीर बनना हमारी शक्ति में नहीं है। तो फिर क्या? क्या हमें अपनी आत्मा को धन के क्षणिक और मायावी वैभव की इच्छा रखने के लिए फटकार नहीं लगानी चाहिए, जिसे प्राप्त करने की हमारी शक्ति नहीं है? ओह, हम कितने मूर्ख हैं कि हर तरह की दौलत की इच्छा करते हैं! क्या हम यह नहीं जानते कि सभी सद्गुणों से ऊपर विनम्रता है, जैसे सभी वासनाओं से ऊपर लालच और सांसारिक वस्तुओं की अतृप्त इच्छा है?

७६. विवेकी लोगों को यह बात निरंतर ध्यान में रखनी चाहिए कि इस जीवन में छोटे और क्षणिक कार्यों को करने से, मृत्यु के बाद हमें परम सांत्वना और शाश्वत आनंद प्राप्त होगा। – जो अपने भावों से लड़ता है और ईश्वर से मुकुट पाना चाहता है, यदि वह गिर जाए, तो उसे हतोत्साहित न हो, न ही उसी गिरावट में निराश होकर पड़ा रहे, बल्कि उठ खड़ा हो, एक बार फिर संघर्ष करे और मुकुट प्राप्त करने का प्रयास करे, अपनी कभी-कभार की गिरावटों से उठता हुआ, अपनी अंतिम साँस तक। शारीरिक श्रम सदाचार का एक साधन है और आत्मा के लिए उद्धारकारी है।

७७. सांसारिक सुख-सुविधाओं से वंचित होना ही पुरुषों में साहस पैदा करता है और संघर्ष करने वालों को ईश्वर से मुकुट प्राप्त करने का पात्र बनाता है। अत; इस जीवन में मनुष्य को सांसारिक सभी वस्तुओं के संबंध में अपने अंगों को मार डालना चाहिए: क्योंकि जो मर चुके हैं, वे अब किसी भी सांसारिक चीज़ की परवाह नहीं करते।

७८. एक बुद्धिमान और प्रयासरत आत्मा को जब कोई दुखद घटना घटित हो तो तुरंत हतोत्साहित या भयभीत नहीं होना चाहिए, कहीं ऐसा न हो कि उसकी कायरता का मज़ाक उड़ाया जाए। सांसारिक वैभव से बहकी हुई आत्मा अपने सही मार्ग से भटक जाती है। आत्मा के सद्गुण हमें शाश्वत आशीर्वादों के योग्य बनाते हैं, जबकि स्वतःस्फूर्त मानवीय पाप शाश्वत यातनाओं का कारण हैं।

७९. एक बुद्धिमान व्यक्ति अक्सर आत्मा के भावों से (शारीरिक) इंद्रियों के माध्यम से अभिभूत हो जाता है, जो तर्कशील प्राणियों में सामान्य हैं। पाँच शारीरिक इंद्रियाँ हैं: दृष्टि, श्रवण, घ्राण, स्वाद और स्पर्श। इन पाँच इंद्रियों के माध्यम से, अपने चार अंतर्निहित भावों के आगे समर्पण करके, यह बेचारी आत्मा कैद हो जाती है। आत्मा के ये चार भाव हैं: अहंकार, सुख की लालसा, क्रोध और भय। लेकिन जब कोई व्यक्ति, ज्ञान और विवेक से, अच्छा संघर्ष करने के बाद, इन भावों पर विजय प्राप्त कर लेता है, तो वे अब इनके वश में नहीं रहते, बल्कि अपनी आत्मा में शांति पाते हैं और ईश्वर द्वारा विजेता के रूप में ताज पहनाया जाता है।

८०. सरायों में रहने वालों में से कुछ को बिस्तर दिए जाते हैं, जबकि अन्य, जिनके पास बिस्तर नहीं होता, वे फर्श पर लेटते हैं और उतनी ही गहरी नींद सोते हैं जितनी गहरी नींद बिस्तर पर सोने वाले सोते हैं। जब रात खत्म हो जाती है, तो सुबह दोनों समूह अपने बिस्तरों से उठते हैं और सभी समान रूप से सराय से निकल जाते हैं, और अपने साथ केवल अपना सामान ही ले जाते हैं। इसी तरह, इस जीवन के मार्ग पर चलने वाले सभी—चाहे वे सादगी से जिए हों या वैभव और धन-संपत्ति में—इस जीवन से एक सराय की तरह विदा होते हैं, अपने साथ जीवन के न तो सुख लेते हैं और न ही धन-संपत्ति, बल्कि केवल अपने कर्म, जो उन्होंने इस जीवन में किए हैं, – चाहे वे अच्छे हों या बुरे।

८१. भले ही आपके पास बहुत शक्ति हो, किसी को भी तुरंत मृत्यु की धमकी न दें, यह जानते हुए कि आप भी स्वभाव से मृत्यु के अधीन हैं, और हर आत्मा अपने शरीर को वैसे ही त्याग देती है जैसे कोई अपना अंतिम वस्त्र उतारता है। इसे स्पष्ट रूप से समझकर, नम्र होने का प्रयास करें, अच्छा करें, और हमेशा ईश्वर का धन्यवाद करें। जो निर्दयी है, उसमें कोई सद्गुण नहीं होता।

८२. मृत्यु से बचना असंभव है, और ऐसा करने का कोई तरीका नहीं है। यह जानते हुए, सच्चे बुद्धिमान लोग, जो अनुभव से सद्गुण और दैवीय विचार में पारंगत हैं, शोक, भय या विलाप के बिना मृत्यु का सामना करते हैं, यह ध्यान में रखते हुए कि, एक ओर, यह अपरिहार्य है, और दूसरी ओर, यह हमें उन बुराइयों से मुक्ति दिलाती है जिनके हम इस जीवन में अधीन हैं।

८३. जो लोग एक अच्छे और ईश्वर-प्रसन्न जीवन को भूल गए हैं और जो धर्मपरायण और ईश्वर-प्रेमपूर्ण सिद्धांतों के अनुसार कार्य नहीं करते हैं, उनसे घृणा नहीं करनी चाहिए, बल्कि दया करनी चाहिए, क्योंकि वे निर्णय में कमी और हृदय व मन से अंधे हैं: क्योंकि, बुराई को अच्छा समझकर, वे अज्ञानता के कारण नष्ट हो जाते हैं। और जो आत्मा से अधर्मी और मूर्ख हैं, वे परमेश्वर को नहीं जानते।

८४. धर्मपरायणता और अच्छे जीवन के बारे में हर किसी से बात न करें। मैं यह ईर्ष्या से नहीं कह रहा हूँ, बल्कि इसलिए कह रहा हूँ कि मुझे लगता है कि आप सबसे मूर्खों को हास्यास्पद लगेंगे। समान विचारधारा वाले एक-दूसरे से सहानुभूति रखते हैं, और ऐसी बातचीत के लिए सुनने वाले बहुत कम हैं—या यूँ कहें कि वे बहुत ही दुर्लभ हैं। इसलिए ऐसी बातों को न कहना ही बेहतर है, क्योंकि मनुष्य के उद्धार के लिए ईश्वर यही नहीं चाहता।

८५. आत्मा शरीर के प्रति सहानुभूति रखती है, लेकिन शरीर आत्मा के प्रति सहानुभूति नहीं रखता। इस प्रकार, जब शरीर को टुकड़े-टुकड़े कर दिया जाता है, तो आत्मा उसके साथ पीड़ित होती है; और जब शरीर मजबूत और स्वस्थ होता है, तो आत्मा की शक्तियाँ उस कल्याण में भागीदार होती हैं। – लेकिन जब आत्मा चिंतन (पश्चाताप) करती है, तो शरीर उसके साथ चिंतन (पश्चाताप) नहीं करता, बल्कि अपने आप, पीछे (अचल) रह जाता है: क्योंकि चिंतन (पश्चाताप) आत्मा का एक दर्दनाक अनुभव है; ठीक उसी प्रकार – अज्ञानता, अहंकार, अविश्वास, लालच, घृणा, ईर्ष्या, क्रोध, कायरता, दंभ, महत्त्वाकांक्षा, कलह, सद्गुणों के प्रति उदासीनता, और इसी तरह की अन्य बुराइयाँ – आत्मा से उत्पन्न होती हैं।

८६. ईश्वर के बारे में सोचते समय, धार्मिक, ईर्ष्या-रहित, दयालु, पवित्र, विनम्र, अपने साधनों के अनुसार उदार, मिलनसार, विवाद-रहित, और इसी तरह के बनें: क्योंकि इन सभी बातों में ईश्वर को प्रसन्न करना ही आत्मा का अक्षय धन है; इसी प्रकार, किसी को दोष न लगाओ, न ही किसी के बारे में कहो कि वह बुरा है या उसने पाप किया है, बल्कि अपने बुरे कर्मों को खोजो और अपने भीतर अपने जीवन की जाँच करो—कि क्या यह ईश्वर को प्रसन्न करता है। यह हमारी क्या चिंता है कि कोई दूसरा व्यक्ति बुरा है?

८७. एक सच्चा व्यक्ति ईश्वर-भक्त बनने का प्रयास करता है। ईश्वर-भक्त वह है जो अपने लिए किसी परायी वस्तु की इच्छा नहीं करता; फिर भी सारी सृष्टि मनुष्य के लिए पराया है। अतः सभी चीजों को तुच्छ समझो,

क्योंकि तुम ईश्वर की प्रतिमा हो। एक व्यक्ति तब ईश्वर की प्रतिमा बनता है जब वह धर्मपूर्वक और ईश्वर को प्रसन्न करने वाले तरीके से जीवन यापन करता है, और यह तब तक असंभव है जब तक कोई व्यक्ति सभी वासनाओं से मुंह नहीं मोड़ लेता। जिसका मन ईश्वर-प्रेमी है, वह आत्मा के उद्धार के लिए आवश्यक सभी बातों में, और उससे अपेक्षित हर प्रकार की धार्मिकता में निपुण होता है। एक ईश्वर-प्रेमी व्यक्ति किसी और को फटकारता नहीं है, क्योंकि वह जानता है कि वह स्वयं पाप करता है, और यह आत्मा के उद्धार का एक संकेत है।

८८. जो लोग सांसारिक धन-संपत्ति प्राप्त करने के लिए अपनी पूरी ताकत लगा देते हैं, और मृत्यु तथा अपनी आत्मा के विनाश को भूलकर, बुरे कर्मों में आनंद लेते हैं, जबकि उनके लिए क्या उद्धारकारी है इस पर कोई ध्यान नहीं देते—ये बेचारे प्राणी यह नहीं समझते कि मृत्यु के बाद लोग बुराई से कितनी पीड़ा सहते हैं।

89. ईश्वर बुराई का कारण नहीं है। उन्होंने मनुष्य को बुद्धि, अच्छाई और बुराई में अंतर करने की क्षमता, और आत्म-नियंत्रण प्रदान किया है; लेकिन बुरी प्रवृत्तियाँ लोगों की लापरवाही और असावधानी से उत्पन्न होती हैं। इनके लिए ईश्वर को किसी भी तरह से दोषी नहीं ठहराया जा सकता। अपनी स्वतंत्र पसंद से, राक्षस बुरे बन गए, ठीक उसी तरह जैसे अधिकांश लोग बन गए हैं।

९०. जो व्यक्ति ईश्वरवादी जीवन जीता है, वह अपने आत्मा में बुराई को प्रवेश नहीं करने देता। और जब आत्मा में कोई बुराई नहीं होती, तो वह सुरक्षित और अक्षुण्ण रहती है। ऐसे लोगों पर न तो कोई दुर्भावनापूर्ण राक्षस और न ही संयोग का अधिकार होता है; ईश्वर उन्हें बुराई से बचाता है, और वे सुरक्षित रूप से संरक्षित रहते हैं, मानो वे ईश्वर के समान हों। यदि कोई ऐसे व्यक्ति की प्रशंसा करता है, तो वह अपने मन में उसकी प्रशंसा करने वालों का मज़ाक उड़ाता है; यदि कोई उसकी बदनामी करता है, तो वह अपमान करने वालों से अपनी रक्षा नहीं करता, और न ही उनके द्वारा कही गई बातों से आहत होता है।

91. बुराई प्रकृति से वैसे ही चिपकती है जैसे तांबे पर जंग और शरीर पर मैल। लेकिन जैसे जंग तांबेवाला नहीं लगाता, और माता-पिता मैल नहीं पैदा करते, वैसे ही ईश्वर ने बुराई नहीं पैदा की। उसने मनुष्य को एक अंतरात्मा और तर्कशक्ति प्रदान की है, ताकि वह बुराई से बच सके, यह जानते हुए कि यह उसके लिए हानिकारक है और उसे पीड़ा देती है। तो फिर ध्यान से देखो: जब तुम सत्ता और धन-संपत्ति में किसी भाग्यशाली आत्मा को देखो, तो किसी भी बहाने से उसकी चापलूसी मत करो, कहीं ऐसा न हो कि तुम शैतान के धोखे में पड़ जाओ। बल्कि मृत्यु को हमेशा अपनी आँखों के सामने रखो; और तुम कभी भी किसी बुरे या सांसारिक चीज़ की लालसा नहीं करोगे।

९२. हमारे ईश्वर ने स्वर्ग वालों को अमरत्व प्रदान किया है, जबकि उन्होंने पृथ्वी वालों को परिवर्तन के अधीन बनाया है; बाकी सभी को उन्होंने जीवन और गति प्रदान की है - और यह सब मनुष्य की खातिर है। इसलिए, जब शैतान आपके आत्मा में बुरे विचार डालता है, तो इस दुनिया के प्रलोभन आपको मोहित न करें; बल्कि तुरंत स्वर्गीय आशीर्वादों को याद करें और अपने आप से कहें: यदि मैं चाहूँ, तो यह मेरे वश में है कि मैं इच्छाओं के इस विद्रोह पर भी काबू पा सकूँ; लेकिन यदि मैं अपनी इच्छा को पूरा करने का चुनाव करता हूँ, तो मैं उस पर काबू नहीं पा सकूँगा। इस प्रकार अपनी आत्मा को बचाने वाले संघर्ष के साथ प्रयास करें।

९३. जीवन मन (आत्मा), प्राण और शरीर का संघ और संयोजन है; और मृत्यु इन संयुक्त भागों का विनाश नहीं है, बल्कि उनके संघ का विघटन है; ईश्वर विघटन के बाद भी यह सब संरक्षित रखता है।

९४. मन आत्मा नहीं है, बल्कि ईश्वर की ओर से एक ऐसा उपहार है जो आत्मा को बचाता है। ईश्वर-प्रसन्न मन आत्मा के मार्गदर्शन का काम करता है और उसे क्षणिक, भौतिक और नश्वर चीज़ों से घृणा करने तथा शाश्वत, अमर और अद्रव्य गुणों से प्रेम करने की सलाह देता है, ताकि एक व्यक्ति, शरीर में रहते हुए, मन के माध्यम से दिव्य और अलौकिक चीज़ों की कल्पना और चिंतन कर सके। इस प्रकार, ईश्वर-प्रेमी मन मानव आत्मा का कल्याणकारी और रक्षक है।

९५. आत्मा, शरीर के सुखों में लिप्त होकर, आनंद से मग्न हो जाती है और नष्ट हो जाती है। ईश्वर-प्रेमी मन इसके विपरीत कार्य करता है: यह शरीर पर दुख पहुँचाता है और आत्मा को बचाता है, ठीक वैसे जैसे एक चिकित्सक शरीर को काटता और दाह करता है।

९६. वे आत्माएँ जो विवेक से नियंत्रित नहीं होतीं और न ही मन द्वारा शासित होतीं—जो अपने भावों, अर्थात् शोक और सुख को संयमित, नियंत्रित और निर्देशित (जहाँ उन्हें जाना चाहिए) करें—ऐसी आत्माएँ अतर्क्य पशुओं की तरह नष्ट हो जाती हैं, क्योंकि उनका विवेक उनके भावों द्वारा बहका दिया जाता है, ठीक वैसे ही जैसे एक सारथी उन घोड़ों द्वारा बहका दिया जाता है जो उसके नियंत्रण से मुक्त हो गए हों।

97. आत्मा का सबसे बड़ा क्लेश, उसकी परम दुर्भाग्य और विनाश, ईश्वर को न जानना है, जिसने मनुष्य के लिए सभी चीजें बनाईं और उस पर ज्ञान और वाणी की कृपा की, जिनके द्वारा, ऊँचाई पर चढ़कर, वह ईश्वर के साथ एकता में प्रवेश कर सकता है, उसका चिंतन और उसकी महिमा कर सकता है।

९८. आत्मा शरीर में है; आत्मा के भीतर मन है; मन के भीतर वाणी है; इनके माध्यम से, ईश्वर—जिनका चिंतन और महिमा की जाती है—आत्मा को अमर बनाते हैं, उस पर अक्षयत्व और शाश्वत आनंद प्रदान करते हैं। क्योंकि ईश्वर ने अपनी एकमात्र दयालुता के द्वारा सभी अस्तित्विमान चीजों को अस्तित्व प्रदान किया है।

९९. ईश्वर ने मनुष्य को स्वतंत्र इच्छा वाला, ईर्ष्या से मुक्त (सर्व-दयालु) और सदाचारी प्राणी बनाकर, उसे यह अवसर प्रदान किया है कि यदि वह चाहे तो ईश्वर को प्रसन्न कर सकता है। हालाँकि, ईश्वर को यह प्रसन्नता होती है कि मनुष्य में कोई बुराई न हो। क्योंकि यदि लोग एक पवित्र और ईश्वर-प्रेमी आत्मा के अच्छे कर्मों और गुणों की प्रशंसा करते हैं, और साथ ही शर्मनाक और बुरे कर्मों की निंदा करते हैं, तो क्या ईश्वर, जो मनुष्य की मुक्ति चाहता है, ऐसा और भी अधिक नहीं करता?

100. एक व्यक्ति को ईश्वर से अच्छा प्राप्त होता है, जो अच्छाई का स्रोत है; लेकिन एक व्यक्ति अपने ही हाथों, अपने भीतर के बुरेपन, कामवासना और असंवेदनशीलता के कारण बुराई का शिकार होता है।

101. लापरवाह आत्मा, जो स्वभाव से अमर और शरीर की स्वामिनी है, कामुक सुखों के कारण शरीर की दास बन जाती है, यह न समझते हुए कि शरीर की तुष्टि आत्मा का विनाश है। फिर भी, असंवेदनशीलता में गिरकर और पतित होकर, यह शरीर की इस तुष्टि को पाने के लिए बड़ी सावधानी बरतती है।

102. ईश्वर अच्छा है, पर मनुष्य बुरा है। स्वर्ग में कोई बुराई नहीं है, और पृथ्वी पर कोई सच्ची अच्छाई नहीं है। लेकिन एक बुद्धिमान व्यक्ति बेहतर मार्ग चुनता है: वह सभी का ईश्वर जान लेता है, उसकी धन्यवाद करता है और उसकी स्तुति करता है; जबकि, मृत्यु से पहले, वह शरीर से घृणा करता है और उसकी बुरी प्रवृत्तियों (मांगों, इच्छाओं) को पूरा होने नहीं देता, क्योंकि वह उनकी विनाशकारी प्रकृति और हानिकारक प्रभावों को जानता है।

103. पाप-प्रेमी व्यक्ति धन-संचय का शौकीन होता है, फिर भी धार्मिकता की बहुत कम परवाह करता है, जीवन की अविश्वसनीयता, क्षणभंगुरता और क्षणिक स्वभाव के बारे में कोई विचार नहीं करता, और मृत्यु की अनिवार्यता और उससे न बच पाने की बात को भूल जाता है। यदि, वृद्धावस्था में भी, कोई इतना लज्जास्पद और मूर्ख है, तो वह, एक सड़े हुए पेड़ की तरह, किसी भी उद्देश्य के लिए अनुपयुक्त है।

104. हमें दुख का अनुभव करने के बाद ही सुख और आनंद की अनुभूति होती है: क्योंकि जिसे प्यास ने नहीं सताया, उसे पानी मीठा नहीं लगता; जिसे भूख नहीं लगी, उसे भोजन मीठा नहीं लगता; जिसे नींद ने नहीं घेरा, उसे नींद मीठी नहीं लगती; और जो पहले दुख में नहीं रहा, वह गहरे आनंद को महसूस नहीं कर सकता: – इसी तरह, जब तक हम इस संसार की चीज़ों को तुच्छ नहीं समझते, तब तक हम शाश्वत आशीर्वादों का आनंद नहीं ले सकते।

105. शब्द मन का सेवक है। मन जो कुछ भी चाहता है, शब्द उसे व्यक्त करता है।

106. मन सभी चीजों को देखता है, यहाँ तक कि स्वर्ग में रहने वालों को भी, और पाप के सिवा कोई भी चीज़ उसे धूमिल नहीं करती। परन्तु शुद्ध लोगों के लिए कुछ भी अकल्पनीय नहीं है, जैसे कि उसके वचन—अनिर्वर्णनीय—के लिए कुछ भी नहीं है।

107. शरीर से मनुष्य नश्वर है; मन और वचन से वह अमर है। आप मौन में तर्क करते हैं, और तर्क करते समय आप अपने मन में बोलते हैं: क्योंकि मौन में मन वचन को जन्म देता है। और परमेश्वर को अर्पित कृतज्ञता का वचन, मनुष्य के लिए उद्धार है।

108. जो बिना सोचे-समझे बोलता है, उसका कोई मन नहीं है, क्योंकि वह बिना सोचे-समझे बोलता है। लेकिन इस पर विचार करो कि अपनी आत्मा के उद्धार के लिए तुम्हारे लिए क्या उपयोगी है।

109. एक शब्द जो आत्मा के लिए बुद्धिमानी भरा और लाभकारी हो, वह ईश्वर का उपहार है; दूसरी ओर, एक व्यर्थ और खोखला शब्द, जो स्वर्ग और पृथ्वी के बीच के माप और दूरी, और सूर्य और तारों के आकार को निर्धारित करने का प्रयास करता है, एक व्यर्थ में परिश्रम करने वाले मनुष्य की रचना है, जो, खोखले अहंकार के कारण, उस चीज़ की तलाश करता है जो उसे कोई लाभ नहीं देती, जैसे कोई छलनी से पानी उठाना चाहे, क्योंकि लोगों के लिए ऐसी चीजें पाना असंभव है।

110. स्वर्ग को कोई नहीं देखता, और न ही कोई यह जान सकता है कि उनमें क्या है, सिवाय एक ऐसे पुरुष के जो सदाचारी जीवन के लिए उत्सुक है, जो उस एक को जानता और महिमामय करता है जिसने उन्हें (स्वर्गों को) मनुष्य के उद्धार और जीवन के लिए बनाया है। ऐसा ईश्वर-प्रेमी मनुष्य निस्संदेह जानता है कि ईश्वर के बिना कुछ भी नहीं है, और वह हर जगह और हर चीज़ में है, एक ईश्वर के रूप में, जो किसी भी चीज़ से असीमित नहीं है।

111. जैसे एक व्यक्ति अपनी माँ के गर्भ से निकलता है, वैसे ही आत्मा शरीर से नग्न निकलती है; कुछ शुद्ध और दैदीप्यमान होती हैं, अन्य अपनी कमियों से दागी होती हैं, और कुछ अन्य कई अपराधों से काली पड़ जाती हैं। इसीलिए एक बुद्धिमान और ईश्वर-प्रेमी आत्मा, परलोक की विपत्तियों और चरम स्थितियों को याद करते और उन पर चिंतन करते हुए, एक ईश्वरीय जीवन जीती है, ताकि उसे दंडित न किया जाए और न ही उन सबका सामना करना पड़े। लेकिन अविश्वासी लापरवाह होते हैं और पाप करते हैं, वहाँ आने वाली चीज़ों को तुच्छ समझते हुए, क्योंकि वे आत्मा से मूर्ख होते हैं।

112. जैसे गर्भ से निकलने के बाद आपको गर्भ में क्या था याद नहीं रहता, वैसे ही शरीर से निकलने के बाद आपको शरीर में क्या था याद नहीं रहेगा।

113. जैसे गर्भ से निकलने के बाद, आप शरीर से बेहतर और बड़ा हो गए, वैसे ही, शरीर से शुद्ध और निर्दोष होकर निकलने के बाद, आप स्वर्ग में वास करते हुए, बेहतर और अमर होंगे।

114. जैसे गर्भ में पूर्ण रूप से विकसित होने पर शरीर का जन्म निश्चित है, वैसे ही जब आत्मा ईश्वर द्वारा निर्धारित शरीर में अपने जीवन की अंतिम सीमा पर पहुँच जाती है, तो उसे शरीर त्यागना ही पड़ता है।

115. जैसे आप आत्मा के साथ तब व्यवहार करते हैं जब वह शरीर में होती है, वैसे ही वह आपके साथ तब व्यवहार करेगी जब वह शरीर छोड़ देगी। जिसने यहाँ अपने शरीर की अच्छी तरह सेवा की, उसे हर तरह का सुख प्रदान किया, उसने मृत्यु के बाद स्वयं के साथ अन्याय किया है (जैसा कि धनी व्यक्ति और लाजरूस की दृष्टांत कथा से ज्ञात होता है), क्योंकि उसने एक मूर्ख की तरह अपनी आत्मा पर निंदा ला दी है।

116. जैसे एक शरीर जो माँ के गर्भ से अपूर्ण अवस्था में निकलता है, जीवित नहीं रह सकता, वैसे ही आत्मा भी, एक पुण्य जीवन के माध्यम से ईश्वर के दर्शन प्राप्त किए बिना शरीर से विदा होकर, न तो उद्धार पा सकती है और न ही ईश्वर के साथ एकता में रह सकती है।

117. शरीर, आत्मा के साथ मिलकर, गर्भ की अंधकारमयता से प्रकाश में आता है; परन्तु आत्मा, शरीर के साथ मिलकर, शरीर के अन्धकार में बँध जाती है। इसलिए, शरीर को, जो आत्मा का शत्रु और विरोधी है, वश में रखना चाहिए, न कि उसमें आसक्ति रखनी चाहिए; क्योंकि भोजन और स्वादिष्ट व्यंजनों की अधिकता लोगों में दुष्ट वासनाओं को जगाती है, जबकि संयमित पेट वासनाओं को वश में करता है और आत्मा को बचाता है।

118. भौतिक दृष्टि का अंग आँख है, जबकि आध्यात्मिक दृष्टि का अंग मन है। जैसे आँखों के बिना शरीर अंधा है, वह उस सूर्य को नहीं देख सकता जो पूरी पृथ्वी और समुद्र को प्रकाशित करता है, और उसकी रोशनी का आनंद नहीं ले सकता, वैसे ही एक शुद्ध मन और सदाचारी जीवन के बिना आत्मा अंधी है: यह न तो सभी (जीवों) के स्रष्टा और कल्याणकर्ता ईश्वर को जानती है और न ही उसकी महिमा करती है, और उसकी अक्षुण्णता और शाश्वत आशीर्वादों के आनंद में प्रवेश नहीं कर सकती।

119. ईश्वर का अज्ञान आत्मा की संवेदनहीनता और मूर्खता से उत्पन्न होता है: इस अज्ञान से बुराई का जन्म होता है, जबकि ईश्वर के ज्ञान से लोगों को अच्छाई प्राप्त होती है और आत्मा का उद्धार होता है। इस प्रकार, यदि आप संयम और ईश्वर के प्रति जागरूक रहते हुए अपनी इच्छाओं को पूरा करने का प्रयास नहीं करते हैं, तो आपका मन सदाचार की ओर मुड़ जाता है; लेकिन यदि आप ईश्वर के प्रति अज्ञानता के नशे में, अपनी तुच्छ इच्छाओं को अपनी तुष्टि के लिए पूरा करने का प्रयास करते हैं, तो आप मूर्खों की तरह विनिष्ट हो जाएँगे, और उन विपत्तियों से अनजान रहेंगे जो मृत्यु के बाद आपका इंतजार कर रही हैं।

120. यह भी दैवीय व्यवस्था का हिस्सा है कि चीजें एक अपरिवर्तनीय क्रम के अनुसार घटित होती हैं, जिसे ईश्वर ने संसार के लिए स्थापित किया है, जैसे हर दिन सूर्य का उगना और अस्त होना और पृथ्वी का फल देना। फिर भी यह सब मानवता के लिए बनाया गया था।

121. ईश्वर, जो कुछ भी सृजित करते हैं, एक सत्पुरुष के रूप में, वह मानवता के लिए सृजित करते हैं; परन्तु जो कुछ भी एक व्यक्ति करता है, वह अपने लिए करता है, चाहे वह अच्छा हो या बुरा। दुष्ट लोगों की समृद्धि से आप भ्रमित न हों, जान लें कि जैसे शहर अपने सबसे दुष्ट तानाशाहों की प्रशंसा करने के लिए नहीं, बल्कि उनके माध्यम से उन लोगों को दंडित करने के लिए जल्लादों को नियुक्त करते हैं, जो इसके पात्र हैं, वैसे ही ईश्वर दुष्टों को सांसारिक मामलों में हावी होने की अनुमति देते हैं ताकि उनके माध्यम से अधर्मी लोगों को दंडित किया जा सके। हालाँकि, बाद में वह स्वयं उन्हें न्याय के लिए लाएगा, क्योंकि, ईश्वर की सेवा किए बिना, बल्कि अपनी ही दुर्भावना में गुलामी करते हुए, उन्होंने दूसरों को नुकसान पहुँचाया।

122. यदि मूर्तियों की पूजा करने वाले यह जानते और अपने हृदय से देखते कि वे जिसकी पूजा करते हैं, तो वे, दुखी होते हुए भी, भक्ति के मार्ग से भटकते नहीं; बल्कि ईश्वर से उत्पन्न और रचित सभी चीजों में सुंदरता, व्यवस्था और दिव्य व्यवस्था को देखकर, वे मानवता के हित के लिए इन सभी चीजों के स्रष्टा को पहचान लेते।

123. मनुष्य, बुरा और अधर्मी होने के कारण, हत्या करने में सक्षम है; परन्तु ईश्वर, अयोग्यों पर भी अनवरत जीवन प्रदान करते हैं। ईर्ष्यारहित (सभी के प्रति उदार) और स्वभाव से दयालु होने के कारण, उन्होंने चाहा कि शांति हो, और वह हुई और मनुष्य तथा उसके मोक्ष के लिए बनी हुई है।

124. एक (सच्चा) मानव वह है जिसने समझा है कि शरीर क्या है—अर्थात्, कि वह नश्वर और क्षणिक है। ऐसा व्यक्ति आत्मा को भी (जैसा कि उसे समझना चाहिए) समझता है—अर्थात्, कि वह दिव्य और अमर है, और, ईश्वर की एक श्वास होकर, परीक्षा और ईश्वर के सदृश होने की उन्नति के लिए शरीर के साथ संयुक्त है। लेकिन जिसने आत्मा को वैसे ही समझा है जैसे उसे समझना चाहिए, वह धार्मिक रूप से और ईश्वर को प्रसन्न करने वाले तरीके से जीवन यापन करता है, न तो शरीर पर भरोसा करता है और न ही उसके सुखों में लिप्त रहता है। अपने मन से ईश्वर का चिंतन करते हुए, वह विवेक से आत्मा पर ईश्वर द्वारा प्रदान की गई शाश्वत आशीर्वादों को महसूस करता है।

125. ईश्वर, अच्छा और उदार होने के कारण, ने मनुष्य को अच्छाई और बुराई के संबंध में स्वतंत्रता प्रदान की है, उसे तर्क-शक्ति से युक्त किया है ताकि वह संसार और उसमें मौजूद सभी चीजों पर मनन करके, मनुष्य के लिए सभी चीजों के स्रष्टा को जान सके। लेकिन एक अधर्मी व्यक्ति इसकी इच्छा तो कर सकता है फिर भी इसे समझने में विफल रहता है; वह, अपनी ही दुर्भाग्यवश, अविश्वास कर सकता है और सत्य के विपरीत सोच सकता है। अच्छाई और बुराई के संबंध में मनुष्य के पास ऐसी ही स्वतंत्रता है!

126. ईश्वर की यही योजना है कि जैसे-जैसे शरीर परिपक्व होता है, आत्मा को विवेक से युक्त किया जाए—ताकि कोई व्यक्ति भले और बुरे में से उस चीज़ को चुन सके जो विवेक को प्रसन्न करे (अर्थात भला); जबकि जो आत्मा भला नहीं चुनती, उसमें विवेक की कमी होती है। यही कारण है कि, यद्यपि सभी देहों में आत्मा होती है, यह नहीं कहा जा सकता कि हर आत्मा में विवेक होता है। ईश्वर-प्रेमी मन ब्रह्मचारी, धार्मिक, धर्मनिष्ठ, शुद्ध, सदाचारी, दयालु और भक्तिमय व्यक्ति में पाया जाता है। विवेक की उपस्थिति किसी व्यक्ति को ईश्वर के साथ उसके संबंध में सहायता करती है।

127. एक व्यक्ति के लिए केवल एक ही चीज़ असंभव है—अमर होना (मृत्यु से बचना)। यदि वह समझ जाए कि यह कैसे संभव है, तो वह ईश्वर के साथ एकता में प्रवेश कर सकता है। क्योंकि इच्छा और समझ (इस मामले की), विश्वास और प्रेम के लिए, जैसा कि एक अच्छे जीवन से प्रमाणित होता है, एक व्यक्ति ईश्वर का साथी बन जाता है।

128. आँख जो दिखाई देता है उसे देखती है, जबकि मन जो अदृश्य है उसे समझता है। ईश्वर-प्रेमी मन आत्मा का प्रकाश है। जिसके पास ईश्वर-प्रेमी मन होता है, वह हृदय से प्रबुद्ध होता है और अपने मन से ईश्वर को देखता है।

129. कोई भी अच्छा व्यक्ति लज्जाजनक नहीं होता। जो अच्छा नहीं है, वह निश्चित रूप से दुष्ट और स्वच्छंद होता है। किसी व्यक्ति का प्राथमिक सद्गुण शरीर के प्रति तिरस्कार है। गरीबी के कारण नहीं, बल्कि अपनी स्वेच्छा से क्षणिक, नश्वर और भौतिक वस्तुओं का त्याग करना, हमें शाश्वत और अक्षय आशीर्वादों का उत्तराधिकारी बनाता है।

130. जिसने समझ प्राप्त की है, वह स्वयं को जानता है कि वह वास्तव में क्या है—अर्थात्, वह एक नश्वर मनुष्य है। जो स्वयं को जान चुका है, वह यह भी जानता है कि सभी चीजें ईश्वर की रचना हैं, और मानव जाति के मोक्ष के लिए बनाई गई थीं। मानव जाति की यह शक्ति है कि वह यह सब समझ सकती है और सही आस्था रख सकती है। ऐसा व्यक्ति दृढ़ता से जानता है कि जो सांसारिक वस्तुओं से घृणा करते हैं, उन्हें बहुत कम कष्ट उठाना पड़ता है, और मृत्यु के बाद ईश्वर से अनंतकालीन आराम और शांति प्राप्त करते हैं।

131. जैसे आत्मा के बिना शरीर मृत है, वैसे ही तर्क के बिना आत्मा निष्क्रिय (बांझ) है और ईश्वर को अपना नहीं सकती।

132. ईश्वर एक व्यक्ति की सुनता है; ईश्वर एक व्यक्ति के सामने प्रकट होता है; क्योंकि ईश्वर मानवता का प्रेमी है, और जहाँ भी कोई व्यक्ति है, वहाँ ईश्वर है; एक व्यक्ति ईश्वर की पूजा करने के योग्य है; ईश्वर मनुष्य के लिए स्वयं को रूपांतरित करता है।

133. मनुष्य के लिए, ईश्वर ने तारों से सुसज्जित स्वर्ग बनाया; मनुष्य के लिए, उन्होंने पृथ्वी बनाई, और लोग इसे अपने लिए उपजाते हैं। जो लोग ऐसी दैवीय व्यवस्था को नहीं समझते, वे आत्मा से मूर्ख हैं।

134. अच्छाई अदृश्य है, ठीक वैसे ही जैसे स्वर्ग में जो कुछ भी है वह अदृश्य है; लेकिन बुराई दृश्यमान है, ठीक वैसे ही जैसे पृथ्वी पर जो कुछ भी है वह दृश्यमान है। अच्छाई की कोई तुलना नहीं की जा सकती, जबकि एक समझदार व्यक्ति सर्वोत्तम का चयन करता है। केवल एक व्यक्ति ही ईश्वर और उसकी रचनाओं को जानने में सक्षम है।

135. मन आत्मा के भीतर कार्य करता है, जबकि प्रकृति शरीर के भीतर कार्य करती है। मन आत्मा को गौरवान्वित करता है, जबकि प्रकृति शरीर को क्षयित करती है। प्रकृति हर शरीर के भीतर कार्य करती है, लेकिन हर आत्मा में मन नहीं होता; इसीलिए हर आत्मा का उद्धार नहीं होता।

136. आत्मा संसार में है, जैसे कि जन्म ली हुई हो, जबकि मन संसार से ऊपर है, जैसे कि अजन्मा हो। वह आत्मा जो समझती है कि संसार क्या है और मोक्ष की इच्छा रखती है, उस पर यह तत्काल कर्तव्य है कि वह हर क्षण अपने भीतर चिंतन करे कि यहाँ और अभी (नश्वर) संघर्ष और (कर्मों का) कष्ट है, जिसे कोई सहन नहीं कर सकता न्यायाधीश की दृष्टि और ऐसा है मानो आत्मा पहले से ही नष्ट हो रही हो। इस प्रकार सोचते हुए, यह स्वयं को तुच्छ और लज्जास्पद सुखों से बचाती है।

137. पृथ्वी पर, जन्म और मृत्यु ईश्वर द्वारा निर्धारित हैं, जबकि स्वर्ग में सभी चीजों की पूर्णता और अपरिवर्तनीयता है। फिर भी, सभी चीजें मनुष्य और उसके मोक्ष के लिए बनाई गई हैं। यद्यपि ईश्वर को किसी भी अच्छी चीज़ की आवश्यकता नहीं है, फिर भी उन्होंने मनुष्य के लिए स्वर्ग, पृथ्वी और तत्वों की व्यवस्था की है, और उनके माध्यम से उसे अच्छी चीजों में हर आनंद प्रदान किया है।

138. नश्वर अमर के अधीन है और उसकी सेवा करता है—अर्थात्, तत्त्व मनुष्य की सेवा करते हैं—सृष्टिकर्ता ईश्वर के मानवता के प्रति प्रेम और उनकी अनिवार्य अच्छाई के कारण।

139. गरीब, जिनमें नुकसान पहुँचाने की शक्ति नहीं है, उन्हें सक्रिय रूप से धार्मिक लोगों में नहीं गिना जाता है। लेकिन जो कोई भी नुकसान पहुँचाने में सक्षम है और फिर भी अपनी शक्ति का उपयोग बुराई के लिए नहीं करता, बल्कि दीनों पर दया दिखाता है, वह ईश्वर के सामने अपनी धार्मिकता के कारण, मृत्यु के बाद भी अच्छे पुरस्कारों का भागीदार होता है।

140. हमें बनाने वाले ईश्वर के मानवता के प्रति प्रेम के माध्यम से, मोक्ष के कई मार्ग हैं, जो आत्माओं को उसकी ओर मोड़ते हैं और उन्हें स्वर्ग तक ले जाते हैं। मानव आत्माओं को पुण्य के लिए पुरस्कार और पापों के लिए दंड प्राप्त होता है।

141. पुत्र पिता में है, आत्मा पुत्र में है, और पिता दोनों में है। विश्वास के द्वारा, एक व्यक्ति उस सब को जान पाता है जो अदृश्य है और मन की पहुँच से परे है। हालाँकि, विश्वास, परमेश्वर द्वारा घोषित बातों में आत्मा का निस्वार्थ विश्वास है।

142. जिस प्रकार जो लोग किसी आवश्यकता या परिस्थिति से विवश होकर बड़ी नदियों को पार करने के लिए मजबूर होते हैं, यदि वे होश में हों, तो वे अपना जीवन बचा लेते हैं; क्योंकि भले ही धारा तेज हो, भले ही नाव में पानी भर जाए, वे किनारे के पास मिलने वाली किसी भी चीज़ से चिपककर बच जाते हैं; लेकिन अगर वे नशे में हैं, तो चाहे वे बार-बार दूसरी तरफ पहुँचने का प्रयास करें, शराब के नशे में चूर होकर, वे लहरों में समा जाते हैं और जीवितों में नहीं रहते: इसी तरह, यदि आत्मा, जीवन की धारा की लहरों और भँवर में गिरकर, कामनाओं से ऊपर नहीं उठती और स्वयं को नहीं जानती—अर्थात् यह कि, दिव्य और अमर होते हुए भी, यह एक भौतिक शरीर, जो विश्वासघाती, भावुक और नश्वर है, से केवल एक परीक्षा के रूप में ही एकजुट है—और कामनाओं द्वारा अपने विनाश की ओर बह जाने देती है; तो, स्वयं का तिरस्कार करने वाली, अज्ञानता से मत्त और अपनी भलाई की परवाह न करने वाली के समान, वह नष्ट हो जाती है और उद्धार प्राप्त करने वालों के वृत्त के बाहर ही रह जाती है। क्योंकि शरीर, एक नदी के समान, हमें अक्सर अश्लील सुखों की ओर खींचता है।

143. बुद्धिमान आत्मा, अपने अच्छे इरादे में अडिग खड़ी होकर, क्रोध और वासना—जो इसके सबसे मूर्खतापूर्ण भाव हैं—पर लगाम लगाती है, ठीक वैसे ही जैसे कोई घोड़े पर लगाम लगाता है; और क्योंकि यह उनके विरुद्ध संघर्ष करती है, उन्हें वश में करके और उन पर विजय प्राप्त करके, उसे मुकुट पहनाया जाता है और स्वर्ग में स्थान का पात्र माना जाता है, और यह उसे बनाने वाले ईश्वर से अपने कर्मों और परिश्रम के पुरस्कार के रूप में प्राप्त होता है।

144. एक सच्ची बुद्धिमान आत्मा, दुष्टों के सुख और अयोग्यों की समृद्धि को देखकर, इस जीवन में उनके सुखों के विचारों से विचलित नहीं होती, जैसा कि मूर्ख लोगों के साथ होता है; क्योंकि ऐसी आत्मा स्पष्ट रूप से सुख की क्षणभंगुरता और यहाँ अपने प्रवास की अनिश्चितता, दोनों को समझती है, और इस जीवन की क्षणभंगुरता, और न्याय की निष्पक्षता को समझती है; और विश्वास करती है कि ईश्वर उसकी पोषण के लिए आवश्यक चीज़ों की उपेक्षा नहीं करता।

145. देहवादी जीवन और इस जीवन में महान धन और शक्ति का आनंद आत्मा के लिए मृत्यु है; इसके विपरीत, श्रम, धैर्य, कृतज्ञता के साथ गरीबी, और देह का संयम आत्मा का जीवन और शाश्वत सांत्वना का मार्ग है।

146. एक बुद्धिमान आत्मा, सांसारिक लाभ और इस क्षणभंगुर जीवन को तुच्छ समझते हुए, दिव्य सांत्वना और शाश्वत जीवन का चयन करती है, जो उसे एक अच्छे जीवन के लिए ईश्वर से प्राप्त होगा।

147. जो मैले कपड़े पहनते हैं, वे जिनसे भी मिलते हैं, उनके कपड़ों को भी मैला कर देते हैं। इसी तरह, दुष्ट स्वभाव और भ्रष्ट व्यवहार वाले लोग, जब सबसे साधारण लोगों के साथ व्यवहार करते हैं और उनसे अश्लील तरीके से बात करते हैं, तो वे उनके कानों के माध्यम से उनकी आत्मा को मैला कर देते हैं, जैसे कि गंदगी से।

148. पाप की शुरुआत कामवासना है, जिससे विवेकशील आत्मा नष्ट हो जाती है। हालाँकि, प्रेम आत्मा के लिए मोक्ष और स्वर्ग के राज्य की शुरुआत है।

149. जैसे तांबा, जिसे उपेक्षा में छोड़ दिया जाता है और जिसकी उचित देखभाल नहीं की जाती, वह लंबे समय तक बंडलों में पड़े रहने और उपयोग में न आने के कारण उस पर जंग लगने से खराब हो जाता है, और इस प्रकार दोषपूर्ण और उपयोग के लिए अनुपयुक्त हो जाता है, उसी प्रकार आत्मा भी, निष्क्रिय रहते हुए और एक अच्छे जीवन तथा ईश्वर की ओर मुड़ने की उपेक्षा करते हुए, अपने बुरे कर्मों के द्वारा ईश्वर की सुरक्षा से स्वयं को वंचित कर लेती है, शरीर के भीतर ऐसी उपेक्षा से उत्पन्न होने वाले दुष्टता से भस्म हो जाती है, और इस प्रकार दोषपूर्ण और मोक्ष के लिए अनुपयुक्त हो जाती है।

१५०. ईश्वर शुभ, भावहीन और अपरिवर्तनीय है। यदि कोई, यह मानते हुए कि ईश्वर नहीं बदलता, जो धन्य और सत्य है, फिर भी इस बात से भ्रमित है कि वह (ऐसा होते हुए भी) शुभ में कैसे आनंदित होता है, दुष्टों से मुंह मोड़ता है, पापियों से क्रोधित होता है, फिर भी जब वे पश्चाताप करते हैं तो उन पर दया दिखाता है, तो यह कहना होगा कि ईश्वर न तो प्रसन्न होता है और न ही क्रोधित होता है, क्योंकि आनंद और क्रोध भाव हैं। यह सोचना अतार्किक है कि दिव्य स्वभाव मानव के कर्मों से भले या बुरे के लिए प्रभावित हो सकता है। ईश्वर भला है और केवल भलाई करता है; वह किसी को हानि नहीं पहुँचाता, हमेशा एक जैसा रहता है; जबकि हम, जब हम अच्छे होते हैं, तो उससे अपनी समानता के कारण ईश्वर के साथ एकता में प्रवेश करते हैं, और जब हम बुरे हो जाते हैं, तो हम उससे अपनी असमानता के कारण खुद को अलग कर लेते हैं। सदाचार से जीने पर हम ईश्वर के हैं; परन्तु दुष्ट बनकर हम उससे बहिष्कृत हो जाते हैं। इसका यह अर्थ नहीं कि वह हमसे क्रोधित है, बल्कि हमारे पाप ईश्वर को हमारे भीतर प्रकाशित होने से रोकते हैं, और इसके बजाय हमें यातना देने वाले राक्षसों से बाँध देते हैं। यदि, अतः प्रार्थना और दान-पुण्य के कार्यों द्वारा हम अपने पापों की क्षमा प्राप्त करते हैं, तो इसका यह अर्थ नहीं है कि हमने ईश्वर को प्रसन्न किया है या उसे बदल दिया है, बल्कि यह कि ऐसे कार्यों और ईश्वर की ओर मुड़ने के द्वारा, अपने भीतर की बुराई को दूर करके, हम एक बार फिर ईश्वर की भलाई में सहभागी होने में सक्षम हो जाते हैं; इसलिए, यह कहना कि, 'ईश्वर दुष्टों से मुंह मोड़ लेता है,' ठीक वैसा ही है जैसे यह कहना कि, 'सूरज अंधों से खुद को छिपा लेता है।'

१५१. एक ईश्वर-भक्त आत्मा हर चीज़ में ईश्वर को जानती है: क्योंकि ईश्वर-भक्त होना ईश्वर की इच्छा को पूरा करने के सिवा और कुछ नहीं है, और इसका अर्थ है ईश्वर को जानना; यानी, जब कोई ईर्ष्या से मुक्त होने, ब्रह्मचारी, विनम्र, अपनी क्षमता के अनुसार उदार, मिलनसार, निष्पक्ष होने और जो कुछ भी ईश्वर की इच्छा को प्रसन्न करता है, करने का प्रयास करता है।

१५२. ईश्वर का ज्ञान और ईश्वर का भय शरीर की वासनाओं के विरुद्ध उपचार हैं। क्योंकि जब आत्मा में ईश्वर का अज्ञान होता है, तो वासनाएँ, बिना उपचार के रहकर, आत्मा को भ्रष्ट कर देती हैं। तब वह अपने भीतर निवास करने वाले दुष्टता से, जैसे किसी पुरानी पीड़ा से, भ्रष्ट हो जाती है। लेकिन इसके लिए ईश्वर को दोष नहीं दिया जा सकता, क्योंकि उन्होंने मानव जाति को ज्ञान और विवेक प्रदान किया है।

१५३. ईश्वर ने मानव जाति को ज्ञान और विवेक प्रदान किया है, उनके भावों और स्वतःस्फूर्त बुराई से उन्हें शुद्ध करने का प्रयास करते हुए, और अपनी कृपा में, नश्वरता को अमरत्व में बदलने की इच्छा रखते हुए।

154. एक शुद्ध और ईश्वर-प्रेमी आत्मा में निवास करने वाला मन वास्तव में ईश्वर को देखता है – अजन्मा, अदृश्य, अनुप्राप्य – जो शुद्ध हृदयों के लिए शुद्ध है।

१५५. अक्षय, सदाचार और मानव की मुक्ति का मुकुट कृतज्ञतापूर्वक विपत्ति को सहने में निहित है। क्रोध, जीभ, पेट और कामुक इच्छा पर संयम आत्मा के लिए एक महानतम सहायक सिद्ध होता है।

१५६. जिस से संसार का पालन-पोषण होता है, वह ईश्वर की दिव्य व्यवस्था है, और ऐसा कोई स्थान नहीं है जहाँ यह दिव्य व्यवस्था न पहुँचती हो। प्रभु-इच्छा, इसके अलावा, ईश्वर का आत्म-पूर्ति करने वाला वचन है, इस संसार को बनाने वाले पदार्थ की स्रष्टा है, और जो कुछ भी अस्तित्व में आता है, उसका आयोजक और कलाकार है। वचन की विवेक शक्ति के बिना पदार्थ के लिए पूर्ण व्यवस्था प्राप्त करना पूरी तरह से असंभव है, जो ईश्वर की प्रतिमा, मन, बुद्धि और प्रभु-इच्छा है।

157. स्मृति से उत्पन्न कामुकता अंधकार के समान भावों की जड़ है। इस कामुक स्मृति में, आत्मा इस बात से अनजान रहती है कि वह ईश्वर की एक श्वास है और अपनी मूर्खता में, मृत्यु के बाद जिस परम दुख में वह स्वयं को पाएगी, उस पर एक क्षण के लिए भी विचार किए बिना, स्वयं को पाप में झोंक देती है।

१५८. आत्मा की सबसे बड़ी और सबसे لاعلاج बीमारी, और उसका विनाश, ईश्वर को भूल जाना और अहंकार है। बुराई की इच्छा अच्छाई की कमी है; हमारी अच्छाई, हालांकि, सभी के ईश्वर को प्रसन्न करने वाले प्रत्येक अच्छे कार्य को स्वेच्छा से करने में निहित है।

१५९. केवल मनुष्य ही ईश्वर को ग्रहण करने में सक्षम है। क्योंकि ईश्वर इसी एक जीवित प्राणी से संवाद करता है—रात में सपनों के माध्यम से, और दिन में मन के माध्यम से—और हर तरह से वह उन लोगों को भविष्य के आशीर्वादों की भविष्यवाणी और संकेत करता है जो उसके योग्य हैं।

160. ईश्वर को जानना विश्वासी और इच्छुक व्यक्ति के लिए किसी भी तरह से कठिन नहीं है। यदि, तथापि, आप उसे देखना चाहते हैं, तो सभी चीजों की व्यवस्था और उसकी सृष्टि पर ईश्वर की व्यवस्था को देखें, जो उसके वचन द्वारा हुई है और हो रही है। और यह सब मानव जाति के लिए है।

161. एक संत वह है जो बुराई और पाप से मुक्त है। क्योंकि आत्मा की परम पूर्णता और ईश्वर को सबसे प्रसन्न करने वाला कर्म तब होता है जब किसी व्यक्ति में कोई बुराई न हो।

162. एक नाम कई लोगों में से किसी एक के लिए दिया गया नाम है (एक संज्ञा)। लेकिन यह सोचना अनुचित है कि ईश्वर, जो एक और अद्वितीय है, का कोई नामसाझ हो: क्योंकि 'ईश्वर' शब्द उस एक को दर्शाता है जिसकी कोई शुरुआत नहीं है, जिसने मानवता के लिए सभी चीजों की रचना की।

163. यदि आप अपने भीतर बुरे कर्मों से अवगत हैं, तो भलाई की आशा में उन्हें अपनी आत्मा से काट दें: क्योंकि ईश्वर न्यायप्रिय है और मानवता के प्रति प्रेमपूर्ण है।

164. जो व्यक्ति हमेशा ईश्वर से अविभाज्य बने रहने का प्रयास करता है, वह ईश्वर को जानता है, और ऐसा ज्ञान ईश्वर से ही आता है; और जो व्यक्ति ईश्वर से अविभाज्य है, वह वह है जो सभी बातों में अच्छा है और हर इंद्रिय सुख से परहेज़ करता है, उनमें लिप्त होने के साधनों की कमी के कारण नहीं, बल्कि अपनी स्वैच्छिक इच्छा और स्वेच्छा से आत्म-संयम के द्वारा।

१६५. जो तुम्हारा अनिष्ट करे, उसी का धन्यवाद करो, और परमेश्वर तुम्हारा मित्र बन जाएगा। अपने शत्रु की बुराई किसी से न कहो। प्रेम, पवित्रता, धैर्य, संयम आदि में प्रयत्न करो, क्योंकि ईश्वर का ज्ञान यही है: विनम्रता और ऐसे गुणों के द्वारा ईश्वर का अनुसरण करना। परन्तु ऐसे कर्म सभी का लक्षण नहीं, बल्कि केवल विवेकी आत्मा का लक्षण है।

166. मैंने यह अध्याय सबसे साधारण लोगों के लाभ के लिए लिखा है, उन लोगों के विरुद्ध जो यह कहने की हिम्मत करते हैं कि पौधों और जड़ी-बूटियों में आत्मा होती है। पौधों में भौतिक जीवन होता है, लेकिन उनमें आत्मा नहीं होती। मनुष्य को एक तर्कशील प्राणी कहा जाता है क्योंकि उसमें तर्क की शक्ति है और वह ज्ञान प्राप्त करने में सक्षम है। जहाँ तक अन्य जानवरों का सवाल है—जमीनी और उड़ने वाले दोनों—जिनके पास आवाज़ होती है, उनमें प्राण और आत्मा होती है। जो कुछ भी बढ़ता और सड़ता है, उसे जीवित कहा जा सकता है क्योंकि वह जीता और बढ़ता है, लेकिन यह नहीं कहा जा सकता कि ऐसी सभी चीज़ों में आत्मा होती है। जीवित प्राणियों के चार अलग-अलग प्रकार हैं: कुछ अमर और सजीव होते हैं, जैसे कि देवदूत; दूसरों के पास मन, आत्मा और श्वास होती है, जैसे कि मनुष्य; दूसरों के पास श्वास और आत्मा होती है, जैसे कि जानवर; और दूसरों के पास केवल जीवन होता है, जैसे कि पौधे। पौधों में जीवन आत्मा, प्राण, बुद्धि और अमरत्व के बिना ही बना रहता है; फिर भी बाकी सब कुछ जीवन के बिना नहीं रह सकता। प्रत्येक मानव आत्मा सदैव गतिमान रहती है।

167. जब आपको किसी इंद्रिय सुख की इच्छा हो, तो सावधान रहें कि आप उससे तुरंत बहक न जाएँ, बल्कि उसे एक पल के लिए अलग रखकर, मृत्यु को याद करें और विचार करें कि यह जानना कि आपने इस प्रकार इंद्रिय-सुख के मोह को जीत लिया है, कितना बेहतर है।

१६८. ईश्वर ने, सबसे उपयुक्त तरीके से, मनुष्यों में बुद्धि, ज्ञान, तर्क और अच्छाई और बुराई के बीच अंतर करने की क्षमता प्रदान करके बुराई के खिलाफ एक बाधा स्थापित की है, ताकि यह पहचानकर कि बुराई हमें नुकसान पहुँचाती है, हम उससे दूर भाग सकें। लेकिन एक मूर्ख व्यक्ति बुराई का अनुसरण करता है, और यहाँ तक कि उस पर गर्व भी करता है; और, मानो किसी जाल में फँस गया हो, वह भीतर से ही उसमें उलझा रहता है, और उसमें से ऊपर उठने की शक्ति से वंचित रहता है, ताकि वह उस ईश्वर को देख और जान सके, जिसने मानव जाति के मोक्ष और दिव्यता के लिए सभी चीजों की रचना की है।

१६९. मनुष्यों को अपनी देखभाल करनी चाहिए, यह जानते हुए कि मृत्यु उनका इंतजार कर रही है। क्योंकि एक पुण्य आत्मा के लिए धन्य अमरत्व उसका भाग्य है जब वह अच्छी होती है, और जब वह बुरी होती है तो उसे शाश्वत मृत्यु मिलती है।

१७०. जब आप अपने बिस्तर पर लेटें, तो कृतज्ञतापूर्वक अपने मन में ईश्वर की कृपा और दिव्य व्यवस्था को याद करें। तब, इस शुभ विचार से परिपूर्ण होकर, तुम आत्मा में पूर्ण आनन्दित होगे, और तुम्हारे शरीर की नींद आत्मा के लिए एक चेतना जागृत करने वाली होगी; तुम्हारी आँखें बंद करना – ईश्वर का सच्चा दर्शन होगा; और तुम्हारी मौनता, शुभता की भावना से परिपूर्ण होकर, अपने पूरे हृदय और सामर्थ्य से, सर्व के स्वामी ईश्वर की हार्दिक स्तुति – एक हार्दिक महिमा अर्पित करेगी। क्योंकि जब किसी व्यक्ति में कोई बुराई नहीं होती, तो केवल कृतज्ञता—किसी भी कीमती बलिदान से भी अधिक—ईश्वर को प्रसन्न करती है। उसकी महिमा युगों-युगों तक हो। आमीन।

३. तपस्वी के जीवन का नियम

1. मैं ये नियम उन लोगों के लिए प्रस्तुत करता हूँ, जिन्हें संन्यास जीवन के कठिन जुए को स्वीकार करना है, और ये प्रभु मेरे मुख से कहेंगे। इन आज्ञाओं का पालन करना अनिवार्य है, और जो कोई भी इनमें से एक का भी उल्लंघन करता है, उसे *'स्वर्ग के राज्य में छोटा कहा जाएगा'* (मत्ती 5:19)।

क) ऐसे जीवन का बाहरी मार्ग और बाहरी व्यवस्था

क) *संसार से और लोगों के बीच रहने से अलग-थलग होना।*

1. जो कोई (त्याग का जीवन जीकर) उद्धार पाना चाहता है, उसे न तो अपने घर में रहना चाहिए, न ही उस नगर में रहना चाहिए जहाँ उसने कभी पाप किया हो; और न ही उसे अपने माता-पिता या अपने रक्त-संबंधी रिश्तेदारों से मिलना चाहिए: क्योंकि यह आत्मा को हानि पहुँचाता है और जीवन के फलों को नष्ट कर देता है।

2. उस नगर में वापस न लौटो जहाँ तुमने कभी परमेश्वर के सामने पाप किया था।

3. यह देखने के लिए मत जाओ कि तुम्हारे रिश्तेदार कैसे रहते हैं, और उन्हें यह देखने के लिए आने की अनुमति मत दो कि तुम कैसे रहते हो; वास्तव में, उनसे बिल्कुल भी मत मिलो।

ख) मरुभूमि जीवन का चुनाव।

४. हमारे आध्यात्मिक पिता मानते हैं कि मरुभूमि मृत्यु पर चिंतन करने के लिए सबसे उपयुक्त स्थान है और यह सांसारिक चीजों के मोह से एक निश्चित आश्रय है जो शरीर को सुख देती हैं।

५. जो कोई भी रेगिस्तान में रहता है और मौन रहता है, वह तीन प्रकार के विवादों से बच जाता है: सुना-सुनाया विवाद, जीभ से उत्पन्न विवाद, और उस दृश्य से उत्पन्न विवाद जो उसके हृदय को आहत कर सकता है।

6. सावधान रहो कि कोई विचार तुम्हें यह सुझाव देकर धोखा न दे कि मरुभूमि दंडक का स्थान है।

ग) कोठरी में एकांत

7. सांसारिक जीवन के कोलाहल से अलग हो जाओ, एकांत की तलाश करो, और तुम एक यात्री बन जाओगे। अपनी कोठरी में बैठना तुम्हारे लिए किसी परदेस जाने के समान होगा।

८. जब भी आप बाहर जाएँ, तो अपने एकांत स्थान पर यथासंभव शीघ्र लौटने का पूरा प्रयास करें, ताकि आप अपनी प्रार्थनाओं में स्वयं को समर्पित कर सकें।

९. जब आप फसल काटने के लिए बाहर जाएँ, तो वहाँ देर न करें, बल्कि जल्दी से अपने एकांत स्थान पर लौट आएं।

10. जब आप किसी भाई से मिलें, तो उसकी कोठरी में बहुत देर तक न ठहरें।

(d) सेल की गतिविधियाँ और दिनचर्या।

11. अपनी कोठरी में रहते समय, निम्नलिखित तीन गतिविधियों में स्वयं को समर्पित करें: हस्तशिल्प, भजन संहिता का पाठ और प्रार्थना।

12. अपनी कोठरी में रहते हुए, निम्नलिखित कार्यों में व्यस्त रहें: धर्मग्रंथों का अध्ययन, ईश्वर से प्रार्थना और शारीरिक श्रम।

[1]**13.** शनिवार और प्रभु के दिन को छोड़कर, हर दिन नौवें घंटे तक उपवास करें। जब नौवां घंटा आ जाए, तो अपने (सबसे भीतरी) सेल में जाएँ और भोजन करने से पहले अपनी प्रार्थना करें। खाने के बाद, बारी-बारी से पढ़ने और प्रार्थना करने में समय बिताएँ।

ग) प्रार्थना और घुटने टेकना।

14. निर्धारित समय पर अपनी प्रार्थनाएँ करें, एक भी प्रार्थना न चूकें, अन्यथा आपको इसके लिए जवाब देना होगा।

१५. चर्च जाने से पहले रात में अपने प्रार्थनाएँ कहें[2] ।

16. (और हमेशा) चर्च जाने से पहले, अपनी कोठरी में प्रार्थना करें।

17. (आम तौर पर) भाइयों के साथ सामूहिक प्रार्थना से पहले और बाद में, हमेशा अपनी कोठरी में प्रार्थना करें; और ऐसा करने में कभी आलसी न हों।

18. बार-बार घुटने टेकें, और इसमें आलसी न बनें, नहीं तो आप एक दुष्ट मृत्यु से मरेंगे।

19. जब आप प्रार्थना करें, तो आलसी न बनें: क्योंकि आलसी की प्रार्थना केवल व्यर्थ की बात है।

20. जब तुम प्रार्थना करो और ईश्वर को याद करो, तो एक पक्षी की तरह हो जाओ, जो अपने मठ के व्रत और अपने वस्त्रों के महत्व के अनुरूप, हल्का और ऊँचा उड़ता हो।

ई) ईश्वर का अध्ययन और मनन

21. स्वयं को धर्मग्रंथों के अध्ययन के लिए समर्पित करें, और वे आपको अशुद्धता से बचाएंगे (या: वे अशुद्ध विचारों को दूर भगा देंगे)।

22. यदि आप निरंतर और गंभीरता से धर्मग्रंथों के अध्ययन और आज्ञाओं का पालन करने में स्वयं को समर्पित करते हैं, तो ईश्वर की कृपा आप पर बनी रहेगी।

२३. ईश्वर के कार्यों पर ध्यान लगाओ और प्रार्थना में आलसी न बनो।

24. एक भिक्षु जो अपनी कोठरी में अपने होंठ सीले रखकर बैठता है और ईश्वर को याद नहीं करता, वह शहर के बाहर एक खंडहर घर के समान है, जो हर तरह की गंदगी से हमेशा भरा रहता है; क्योंकि जो कोई भी अपने घर से गंदगी हटाने का विचार करता है, वह केवल उसे वहीं ले जाता है। (अर्थात्: वह होंठों से चुप रहता है, लेकिन उसका मन भटकता रहता है, वह अपने विचारों में खो जाता है और अपने हृदय के बहकावे में आ जाता है – यह सब राक्षसों द्वारा आत्मा में डाला गया पापी कूड़ा है)।

ग) हस्तशिल्प और सामान्यतःश्रम।

25. शरीर को दीर्घकालीन परिश्रम द्वारा वश में और थका हुआ रखा जाना चाहिए।

26. अपने लिए सेल गतिविधि के रूप में कुछ मध्यम श्रम निर्धारित करें, और आपका हृदय विनम्र हो जाएगा।

27. स्वयं को शारीरिक श्रम में संलग्न होने के लिए बाध्य करो, और ईश्वर का भय तुम्हारे भीतर जड़ जमा लेगा।

28. शारीरिक श्रम में लगन से जुटो, और परमेश्वर का भय तुम पर छा जाएगा।

29. अपनी कोठरी में बैठे-बैठे, शारीरिक श्रम में स्वयं को लगा दो, फिर भी प्रभु का नाम अपने से दूर न होने दो; परन्तु निरन्तर अपने विचार उसी की ओर लगाओ, अपने हृदय में उसी के विषय में सीखो, और अपनी जीभ से उसी की स्तुति करो, यह कहते हुए: 'हे मेरे प्रभु, यीशु मसीह, मुझ पर दया करो'; या: 'हे प्रभु यीशु मसीह, मुझे अपनी सहायता भेजो'; या: 'मैं तेरी स्तुति करता हूँ, हे मेरे प्रभु, यीशु मसीह'।

ग) भोजन।

---

[1] तब तक काम एक छतरी के नीचे या बरामदे में किया जाता था, जिसे कभी-कभी 'बाहरी कोठरी' कहा जाता था।

[2] संत सावा मठ में, मैटन्सि से एक घंटा पहले घंटी बजाई जाती है, और हर कोई अपनी-अपनी कोठरी में निर्धारित 1,500 कमर झुकाव और 150 प्रणाम करता है, जो यीशु प्रार्थना के साथ होता है।

30. अपने भोजन के लिए एक निश्चित समय (हमेशा एक ही) निर्धारित करें, और शरीर को बनाए रखने के लिए खाएं, आनंद के लिए नहीं।

31. सबसे साधारण और सस्ता भोजन खाएँ।

32. अपनी रोटी मौन और संयम के साथ खाएं, और सुनिश्चित करें कि आपकी (मेज पर) बैठने की व्यवस्था साधारण हो।

33. तृप्त होने तक न खाएं।

34. लालची या भूखे न रहें, अन्यथा आपके पुराने पाप आपके भीतर फिर से जागृत हो सकते हैं।

35. बुधवार और शुक्रवार को अपना उपवास न खोलें।

36. किसी भी प्रकार का मांस बिल्कुल न खाएं।

37. किसी भी ऐसी जगह के पास न जाएँ जहाँ शराब परोसी जा रही हो।

38. सभाओं या सामूहिक भोजन के लिए जल्दी न करें।

39. यदि आप किसी ऐसी जगह पर आते हैं जहाँ सामूहिक भोजन हो रहा है[3] , तो भोजन का स्वाद चखें और ईश्वर का धन्यवाद करें।

40. तीन कपों में चौथा कप शराब न डालें, जब तक कि कोई गंभीर बीमारी न हो[4] ।

41. जो आपको परोसा जाता है, उस पर तुरंत हाथ न डालें।

४२. यदि आप जवान हैं, तो दूसरों से पहले अपना हाथ आगे न बढ़ाएं, क्योंकि यह विनम्रतापूर्ण नहीं है।

(i) निद्रा।

४३. कम और संयम से सोओ, और फरिश्ते तुम्हारे पास आएँगे।

44. जब आप स्वस्थ हों, तो अपनी कमरबंद न उतारें।

४५. जब आप सोने जाएँ, तो अपने हाथ अंदर (शायद छाती के अंदर) न छिपाएँ, कहीं आप अनजाने में पाप न कर बैठें।

i) वस्त्र।

46. दिन-रात अपनी कमीज़, अपना लबादा और अपने सभी कपड़े पहनकर रहो, जैसे कोई कैदी और बंदी।

47. ऐसा वस्त्र न पहनना जिससे तुम घमंड या दंभ कर सको।

48. अपने कपड़ों का ध्यान रखो, कहीं ऐसा न हो कि तुम क़यामत के दिन दूसरों की भीड़ में नग्न पाए जाओ[5] ।

(k) वह सारी सामग्री जिसकी मुख्य विशेषता गरीबी है।

49. इसके अलावा, अपनी ज़रूरत से ज़्यादा कुछ भी जमा न करें।

50. गरीबी किसी भी चीज़ में संयम के सिवा कुछ नहीं है, या वह अवस्था जिसमें कोई थोड़े से में संतुष्ट रहता है।

51. सम्मान से अधिक निंदा को, विश्राम से अधिक शारीरिक परिश्रम को, और प्रचुरता से अधिक आवश्यक वस्तुओं की कमी को पसंद करो।

एल) चर्च पूजा[6] .

52. चर्च के मामलों (चर्च की देखभाल और दैवीय सेवा) को एक विश्वसनीय और ईश्वर-भयभीत व्यक्ति को सौंपा जाना चाहिए।

53. जैसे ही घंटी बजे, चर्च जाने में देरी न करें।

54. सेवा की उपेक्षा न करें, अन्यथा यह आपके लिए एक ठोकर या फंदा बन सकती है।

55. चर्च में बिल्कुल भी बात न करें।

56. चर्च में वैसे व्यवहार न करें जैसे आप भीड़-भाड़ वाली जगह पर करते हैं (यानी सुनिश्चित करें कि आपका मन कई विचारों के शोर और भ्रम से मुक्त हो)।

---

[3] अर्थात्, जब कोई सभी तपस्वियों को इकट्ठा करके चर्च में भोजन कराता था।

[4] यह सेलों में नहीं, बल्कि सामूहिक भोजन के दौरान होता था। शराब आमतौर पर अंगूर से बनी, घर पर तैयार और कम अल्कोहल वाली होती थी।

[5] यह उनमें अपने व्रत के अनुरूप जीवन जीने की आवश्यकता को स्थापित करता है।

[6] संन्यासी रेगिस्तान में बिखरे हुए रहते थे; उनकी कोठरियों द्वारा घिरे हुए विशाल क्षेत्र के बीच में एक चर्च था, जहाँ वे सामूहिक प्रार्थना के लिए इकट्ठा होते थे। चर्च का प्रभार एक या एक से अधिक चुने हुए व्यक्तियों को सौंपा गया था। मैकारियस महान, एक बार सेंट एंथनी से मिलने के बाद स्केटे लौटे, तो जब भाइयों ने उनसे पूछा कि महान बाबा ने उन्हें क्या आज्ञा दी है, तो उन्होंने उत्तर दिया: 'यह अच्छा नहीं है,' उन्होंने कहा, 'कि हमारे पास कोई बलिदान नहीं है,' यानी, लिटर्जी। तब उन्होंने तुरंत एक चर्च स्थापित किया। यह इस बात का एक उदाहरण है कि कैसे सेंट एंथनी ने संन्यासियों के जीवन को व्यवस्थित किया।

57. अपने मृतकों को चर्च में दफनाएं नहीं (यानी, अपने सांसारिक मामलों को संभालने की चिंता न करें)।

m) संबंध:

क) सबसे पहले और सबसे महत्वपूर्ण, मठाधीश, अपने आध्यात्मिक पिता, बुजुर्गों, और, सामान्य रूप से, उन लोगों की ओर मुड़ें जिन्होंने आध्यात्मिक परिपक्वता प्राप्त की है।

[7]**५८.** मठ के प्रधान से पहले परामर्श किए बिना कोई भी कार्य, चाहे वह कोई भी हो, शुरू न करें।

59. अपने मठाधीश या आपसे उच्च पद पर स्थित लोगों की उपस्थिति में अधिक समय तक बात न करें।

60. हमेशा अपने हृदय में अपने पिता की आज्ञा मानने का संकल्प दृढ़ता से धारण करो, और ईश्वर का भय तुम्हारे भीतर जड़ जमा लेगा।

61. आपके आध्यात्मिक प्रयास की पूर्णता आज्ञाकारिता में निहित है; और किसी व्यक्ति के लिए युवावस्था से ही प्रभु का जुआ उठाना—सेवा करना और आज्ञा मानना—अच्छा है।

62. अवज्ञा न करो, कहीं ऐसा न हो कि तुम सभी बुराइयों और अन्यायों के उपकरण और पात्र बन जाओ।

63. विनम्रता और आँसुओं के साथ, अपने पिता से उन बातों में शिक्षा देने के लिए कहो जिन्हें तुम अभी नहीं जानते, ताकि तुम्हें लज्जित न होना पड़े।

64. जो तुम्हें सुसमाचार की शिक्षा देता है, उसे सदा याद रखो, और उससे जीवन-दायक आज्ञाएँ सीखने का यत्न करो – और तुम प्रभु की इच्छा के अनुसार एक सफल जीवन जियोगे, जैसा कि धन्य प्रेरित पौलुस ने लिखा है: *'इन बातों में स्वयं को लगा दो; इन में डूबे रहो, ताकि तेरी तरक्की सब पर ज़ाहिर हो जाए'* (1 तीमुथियुस 4:15)।

65. यदि तुमने सच्चे मन से अपना जुआ आज्ञाकारिता के जुए के अधीन कर लिया है, तो जो कुछ तुमसे कहा जाता है, उसे ध्यान से सुनो, और फिर उसे आज्ञा की पूरी सीमा तक निष्ठापूर्वक पूरा करो।

66. आपने जो भी पाप किया है, उसे अपने पिता से न छिपाएँ।

67. अपने बड़ों से प्रतिदिन अच्छे आचरण सीखें।

68. अपने सांसारिक माता-पिता से अधिक अपने आध्यात्मिक पिताओं से प्रेम करो, क्योंकि वे परमेश्वर के लिए तुम्हारी परवाह करते हैं।

69. इस प्रकार जियो कि मठ के पिता, जिन्होंने तुम्हें आध्यात्मिक जन्म दिया है, संत जनों के समूह में तुम्हारी महिमा से आनंदित हों।

70. यह सुनिश्चित करने के लिए अपनी पूरी शक्ति लगाएँ कि मठ के वरिष्ठों का आशीर्वाद आप पर बना रहे।

71. अपने विचार सभी को न बताएं, बल्कि केवल उन्हीं को बताएं जो आपकी आत्मा का उपचार कर सकते हैं।

72. अपने विचार सभी को न बताएं, कहीं आप अपने भाई के लिए ठोकर का कारण न बन जाएँ।

७३. सभी के प्रति मैत्रीपूर्ण रहो, लेकिन सभी को अपना परामर्शदाता न मानो।

bb) पारस्परिक – सभी का सभी के प्रति।

74. प्रयास करें कि सभी लोग आपको आशीर्वाद दें।

75. अपने भाई के प्रति चिंता दिखाएँ और उस पर दया करें।

76. यदि कोई भाई आपसे विनम्रता से मदद मांगे, तो आप पूरे दिन उसके साथ काम करें।

77. पहले अपने दोस्तों की परीक्षा लो, और सभी को अपना घनिष्ठ मित्र न बनाओ; सभी पर भरोसा न करो, क्योंकि यह संसार छल से भरा है। परन्तु अपने लिए एक ऐसा भाई चुन लो जो यहोवा का भय मानता हो, और उसके साथ वैसा ही भाईचारा रखो जैसा एक भाई दूसरे भाई के साथ रखता है। सबसे बढ़िया तो यह है कि परमेश्वर से ऐसे चिपके रहो जैसे एक बेटा अपने पिता से चिपका रहता है, क्योंकि कुछ लोगों को छोड़कर सभी लोग छल के आगे झुक गए हैं। पृथ्वी व्यर्थता, दुर्भाग्य और दुख से भरी है।

(bb) अन्य लोगों के प्रति बुजुर्ग।

७८. यदि तुमने पाप करना छोड़ दिया है, तो प्रभु के नाम से बोलो और उन लोगों को उपदेश दो जिनके कारण प्रभु का नाम अपमानित होता है: और चूँकि वे मरे हुए हैं और जीवते प्रभु से अलग हो गए हैं, यह यत्न करो कि वे अपने मृत कर्मों से मुँह मोड़ें, जीवित हों, और महिमा प्राप्त करने के योग्य बनें।

७९. अपने (आध्यात्मिक) बच्चों को बिना दया के फटकारो (और सुधारो), क्योंकि उनके दण्ड के लिए तुम्हें उत्तरदायी ठहराया जाएगा (अर्थात्, यदि वे अंतिम न्याय में दण्ड के योग्य सिद्ध होते हैं)।

---

[7] एकांतवासी एक-दूसरे से अलग रहते थे, फिर भी उनका बिखरा हुआ समुदाय एक इकाई बनाता था और उसका एक ही प्रमुख था, जैसा कि उदाहरण के लिए, मकरियस, अम्मोन, स्केटे में, कोठरियों में और नाइट्रिया में दोनों के मामले में था।

८०. बिना दया के, परन्तु परमेश्वर के भय से डाँट लगाओ। किसी के प्रति पक्षपात न दिखाओ, चाहे वह कोई भी हो, और उन्हें सत्य के वचन से डाँट लगाओ।

81. यदि कोई भाई आपके पास आता है और अपने विचार आपको विश्वास के साथ बताता है, तो सावधान रहें कि आप उन्हें किसी को न दोहराएँ, बल्कि अपने और उसके लिए प्रार्थना करें, कि प्रभु आप दोनों को बचाए।

82. मसीह में विश्वास की खोज करने वाले किसी को भी अस्वीकार न करें।

83. जो कोई भी आपकी सलाह स्वीकार नहीं करता, उसे वह न दें।

84. जब तक आप स्वयं उसे व्यवहार में नहीं ला लेते, तब तक किसी को भी कोई बात नियम के रूप में प्रस्तावित न करें।

८५. सभी दुष्कर्मों में सबसे बड़ा दुष्कर्म है किसी दूसरे को वह करने का आदेश देना जिसे आप स्वयं नहीं करते, क्योंकि हमें दूसरों के कर्मों से कोई भी लाभ नहीं होता।

gg) बीमारों के लिए।

86. जब आप हर सुबह उठें, तो अपने बीच के बीमारों की देखभाल करें।

87. बीमारों के पास जाओ और उनके पात्र पानी से भर दो।

88. मठ में बीमारों को जो कुछ भी आप फालतू दे सकते हैं, दे दें।

८९. यदि आपका आचार्य आपको रोगियों की सेवा के लिए नियुक्त करे, तो उन्हें पूरे हृदय से सेवा करें, ताकि आप ईश्वर से दोगुना पुरस्कार प्राप्त कर सकें, अर्थात् प्रेमपूर्वक की गई आज्ञाकारिता के लिए।

dd) राहगीरों को।

९०. यदि कोई भाई आपके पास आता है, भले ही अनुचित समय पर, तो उसे आनंद से स्वीकार करें, ताकि वह परमेश्वर का धन्यवाद कर सके और आपके कारण दुखी न हो।

९१. यदि कोई भाई आपके पास आता है, तो उसके सामने हर तरह से स्वयं को नम्र बनाएं, प्रभु के लिए उस पर दया दिखाएं, और सावधान रहें कि अहंकार से फूल न उठें।

९२. आपका मुख हमेशा गंभीर होना चाहिए, सिवाय जब यात्री भाई आपके पास आएं: तब प्रसन्न भाव धारण करें।

न) पारस्परिक आचरण।

93. अपने सभी कार्यों में विनम्र रहो।

94. अपने सभी आचरण और दूसरों के साथ व्यवहार में, एक गरीब भिखारी का तरीका अपनाओ: न तो बातचीत करते समय अहंकार करो, और न ही जब तुम ईश्वर की स्तुति में भजन या गीत गा रहे हो। और जब तुम भाइयों से मिलो, तो तुम्हारे शब्द साधारण हों।

95. किसी लड़के या युवक से बातचीत में मत पड़ो, और उनसे दोस्ती तो बिल्कुल भी मत करो, और ऐसे लोगों को अपने घर में मत लाओ, कहीं ऐसा न हो कि तुम शैतान को पैर जमाने का मौका दे दो।

96. किसी लड़के से बिल्कुल बात न करो, क्योंकि अन्यथा वह तुम्हारे लिए एक ठोकर का कारण बनेगा।

97. अपने बगल में खड़े भाई का हाथ न पकड़ो, और न ही उसके गाल को छूओ, चाहे वह तुमसे बड़ा हो या छोटा।

98. ऐसे लोगों से दूर रहने की पूरी कोशिश करो जिनमें विवेक और समझ की कमी हो।

९९. यदि आप शांतिपूर्ण जीवन चाहते हैं, तो उन लोगों के दायरे में न जाएँ जिनकी एकमात्र चिंता दिखावा है; और यदि संयोग से आप उनके साथ हों, तो ऐसा व्यवहार करें जैसे आप वहाँ नहीं हैं।

o) बातचीत और सामान्य रूप से वाणी का प्रयोग।

100. अपनी आवाज़ ऊँची न उठाएँ (अपनी कोठरी में चुप रहें), सिवाय नियम द्वारा निर्धारित प्रार्थनाओं के।

101. अपमानजनक भाषा से बचें (अपनी जीभ पर काबू रखें)।

102. बहुत बातूनी न बनें, कहीं ऐसा न हो कि परमेश्वर की आत्मा आपसे दूर हो जाए।

103. मौन रखना एक गौरवपूर्ण बात है, प्रभु का अनुकरण करना, जिन्होंने हेरोद के अधिकार के सामने मौन रखा था।

104. जब आप अपने जैसे अन्य विश्वासियों के साथ इकट्ठा हों, तो दूसरों की बात सुनना और उस पर ध्यान देना बेहतर है, और जो उद्धारदायक है उसे करने के लिए तैयार रहें। यह स्वयं बोलने से कहीं बेहतर होगा।

105. जब आप किसी से मिलने जाएँ, तो आपके हृदय में परमेश्वर का भय हो, और अपने होठों की रक्षा करें, ताकि आप शांति से अपनी कोठरी में लौट सकें।

106. एक बुद्धिमान व्यक्ति अच्छी तरह जानता है कि अपने आप को कैसे संचालित किया जाए; इसलिए, वह बोलने में जल्दबाजी नहीं करता, बल्कि यह तौलता है कि कब बोलना है और कब सुनना है; दूसरी ओर, एक अनुशासित न हुआ मनुष्य जीभ पर संयम और आत्म-नियंत्रण के इस रहस्य को नहीं रखता।

107. जब आप अपने भाइयों के बीच बैठें, तो बहुत अधिक न बोलें, और यदि आप उनसे कुछ पूछें, तो संक्षेप में और विनम्रता से कहें।

108. आपके शब्द सौम्य और शिक्षाप्रद हों। याद रखें कि सम्मान और अपमान दोनों शब्दों से ही आते हैं।

109. क्रोध में बात न करें, बल्कि आपके शब्द ज्ञान और विवेक से परिपूर्ण हों, जैसे आपकी मौनता होती है। हमारे सबसे बुद्धिमान पूर्वजों के उदाहरण का पालन करें, जिनके शब्द हमेशा ज्ञान और विवेक से परिपूर्ण थे, जैसे उनकी मौनता थी।

110. आपकी जीभ हमेशा तर्क का अनुसरण करे, क्योंकि तर्कहीन शब्द तीखे कांटों और सुइयों की तरह होते हैं।

111. झूठ से दूर रहो, कहीं वह तुमसे ईश्वर का भय न छीन ले।

112. आपके होंठों से हमेशा सत्य बोले।

113. सर्वोच्च ईश्वर की कृपाओं को अपने संवादों का विषय बनाओ; इस प्रकार तुम स्वयं को उनसे और भी बड़ी कृपाएँ प्राप्त करने के योग्य बनाओगे।

114. बुरे कर्मों के बारे में पूछताछ न करें, बल्कि उनसे अपना ध्यान हटा लें।

115. व्यर्थ की बातों में मत पड़ो, और न ही उन्हें सुनो जो व्यर्थ की बातें करते हैं, कहीं ऐसा न हो कि तुम्हारी आत्मा उससे बुराई ग्रहण कर ले।

116. इस संसार से संबंधित सभी बातों के बारे में व्यर्थ की बातों से घृणा करो।

117. जहाँ तक संभव हो, मज़ाक और मनोरंजक टिप्पणियों से बचें।

118. चिल्लाओ नहीं, न ही ऊँचे स्वर में या जल्दबाजी में बोलो, क्योंकि लिखा है: 'जो अपनी बातें बढ़ाता है, वह पाप से सुरक्षित नहीं है' (सभोपदेशक 10:14 की तुलना करें)।

119. जिद्दी न बनें, और अपनी ही बात पर अड़े न रहें, कहीं ऐसा न हो कि बुराई (क्रोध, प्रचंड क्रोध) आप में प्रवेश कर जाए।

120. बिल्कुल भी डरपोक न बनें – न तो निस्संदेह मामलों में, और न ही, उससे भी अधिक, संदेह के मामलों में।

p) अनुपस्थिति की स्थिति में

121. यदि आवश्यकता आपको शहर जाने के लिए मजबूर करती है, तो अकेले न जाएँ।

122. जब आप पानी लेने जाएँ, या यात्रा कर रहे हों, तो (भजन संहिता को स्मृति से) पढ़ें और चिंतन करें।

123. अपने भाइयों के साथ यात्रा करते समय, मौन बनाए रखने के लिए उनसे थोड़ी दूरी बनाए रखें।

124. जब आप सड़क पर चलें, तो दाईं या बाईं ओर न देखें, बल्कि अपने भजन ध्यानपूर्वक पढ़ें और मन में ईश्वर से प्रार्थना करें। फिर, आप जहाँ भी हों, स्थानीय लोगों से मेलजोल न करें।

125. सांसारिक लोगों की भीड़ में न मिलो, और न ही उस फरीसी की नकल करो जो सब कुछ दिखावे के लिए करता था।

126. किसी स्त्री को अपने पास न आने दो, और उसे अपने निवास (कमरे) में प्रवेश करने की अनुमति मत दो, क्योंकि उसके पीछे विचारों का तूफान आता है।

127. किसी स्त्री के साथ भोजन न करो, और कभी भी किसी युवक के साथ संबंध न बनाओ।

128. जब आपको कहीं रात बितानी पड़े, तो सुनिश्चित करें कि आप किसी और के साथ एक ही कंबल साझा न करें।

129. अपने से छोटे किसी व्यक्ति के साथ एक ही चटाई पर न लेटें।

130. एक ही चटाई पर साथ में न सोएं, जब तक कि अत्यंत आवश्यकता न हो। भले ही वह आपके पिता या भाई ही क्यों न हों, तब भी अत्यंत सावधानी बरतें।

131. मठों के अतिथिगृहों में अधिक समय न ठहरें।

ख) आंतरिक जीवन की संरचना

a) जीवन का मूल सिद्धांत उत्साह है।

1. सद्गुणों की प्राप्ति में उत्साही रहो, अन्यथा तुम स्वयं पर लापरवाही को आमंत्रित करोगे।

२. दिव्य प्रेम के ठंडा पड़ने से डरें।

3. आपने जो पुण्य कार्य शुरू किए हैं, उनसे पीछे न हटें।

4. अपने एकांत के मार्ग से पीछे न हटो।

5. सद्गुण के लिए किए गए अपने श्रम को न छोड़ें—अन्यथा आप आलसी और लापरवाह हो जाएँगे, और अंतिम घड़ी में पाप कर बैठेंगे; परन्तु प्रभु से अंत तक प्रेम करें, और आपको दया मिलेगी।

6. जैसे शहर के बाहर के खंडहर गंदे कचरे का भंडार होते हैं, वैसे ही आलस्य और सुस्ती के साथ एकांत जीवन जीने वाले की आत्मा सभी वासनाओं और पाप की गंदगी का भंडार बन जाती है।

ख) जीवन का नियम आज्ञाओं में बताई गई ईश्वर की इच्छा है।

7. यदि तुमने स्वयं को ईश्वर को समर्पित कर दिया है, तो उसकी सभी आज्ञाओं का पालन करो, और जो कुछ भी तुमसे कहा गया है, उसे लगन से करो, कुछ भी न छोड़ो; क्योंकि यदि तुम किसी भी चीज़ को छोड़ने का सोचते हो, तो तुम्हारे पिछले पाप क्षमा नहीं किए जाएँगे; लेकिन यदि तुम दृढ़ संकल्प करते हो कि सब कुछ पूरा करोगे (यहाँ तक कि आत्म-त्याग के बिंदु तक भी), तो निश्चिंत हो जाओ कि तुम्हारे पिछले पाप पहले ही क्षमा कर दिए गए हैं।

8. आपके विचार निरंतर दैवी आज्ञाओं में लगे रहने चाहिए, जिन्हें आपको अपनी पूरी शक्ति से पूरा करने का प्रयास करना चाहिए, और किसी को भी छोड़ना नहीं चाहिए, अन्यथा आपकी आत्मा हर प्रकार की अशुद्धता का पात्र बन जाएगी।

९. यदि आप कुछ करने का निश्चय करते हैं और उसमें ईश्वर की इच्छा को नहीं समझते हैं, तो किसी भी परिस्थिति में उसे न करें।

ग) उद्देश्य ईश्वर की महिमा है।

10. यह सुनिश्चित करने के लिए अपनी पूरी कोशिश करें कि स्वर्ग में आपके पिता (आपके द्वारा) महिमामय हों (मत्ती 5:16)।

d) स्मरण – वे उत्साह को जगाते और बनाए रखते हैं।

क) आपके व्रत और आपकी प्रारंभिक उत्साह के संबंध में।

11. नश्वर चीजों के लिए परमेश्वर से मुंह न मोड़ें, बल्कि याद रखें कि जब परमेश्वर को प्रसन्न करने की आपकी इच्छा की तीव्र आकांक्षा आपके भीतर जल रही थी, तब आपने क्या वादा किया था।

12. उस वस्त्र के महत्व को भूलने का प्रयास न करें, जिसमें आपको आरंभ में वस्त्र पहनाया गया था; उस समय आपके पश्चाताप के आँसुओं को भी याद करें जो आपने बहाए थे – और उन (बुराई भरे) विचारों से मुँह मोड़ने में शीघ्रता करें जो चुपके से आपके मन में आते हैं, कहीं कि वे आपको खुले कर्मों तक न ले जाएँ।

13. निरंतर और सच्चा पश्चाताप करें – और एक पल के लिए भी लापरवाही या आलस्य को न अपनाएँ।

bb) अनुकरणीय उत्साही लोगों पर।

14. अपने उदाहरण के लिए उन लोगों को न लें जो आपसे कमजोर हैं, बल्कि उन लोगों को लें जो आपसे अधिक पूर्ण हैं।

15. जो प्रभु से अपने पूरे हृदय से प्रेम करते हैं और जो लगातार अच्छे कर्मों में लगे रहते हैं, उन्हें अपना आदर्श और नमूना बनाओ; जीवन के पाठ सीखने के लिए उनसे पूछने में संकोच न करो, क्योंकि वे सद्गुणों में परिपूर्ण हैं।

16. उन लोगों का अनुकरण न करो जो सांसारिक सुखों की खोज में लगे रहते हैं; अन्यथा, तुम किसी भी काम में सफल नहीं हो पाओगे। इसके बजाय, उन लोगों से प्रतिस्पर्धा करो जो प्रभु के लिए पहाड़ों और रेगिस्तानों में भटकते थे (और अभी भी भटकते हैं) (इब्रानियों 11:38), ताकि तुम्हारे ऊपर स्वर्गीय सामर्थ्य आवे।

bb) प्रतिज्ञा की गई आशीषों पर।

17. यदि तुम जो कुछ आज्ञा दी गई है, उसे पूरा करते हो, तो तुम एक ऐसा उत्तराधिकार प्राप्त करोगे जिसे न तो किसी ने देखा है, न किसी ने सुना है, और न ही किसी मानव हृदय ने कल्पना की है (1 कुरिन्थियों 2:9)।

18. जब तक समय है, ज्ञान के प्रकाश का उपयोग करके स्वयं को धर्मी लोगों में गिने जाने के योग्य बनाएँ।

gg) मृत्यु और न्याय पर।

19. याद रखो कि तुम्हारी जवानी बीत गई है (तुम्हारी शक्ति क्षीण हो गई है), और तुम्हारी दुर्बलताएँ बढ़ गई हैं; तुम्हारे प्रस्थान का समय पहले ही निकट आ गया है, जब तुम्हें अपने सभी कर्मों का हिसाब देना होगा; और जान लो कि न तो कोई भाई भाई को छुड़ाएगा, और न कोई पिता अपने पुत्र को।

20. इस शरीर से अपने प्रस्थान को हमेशा ध्यान में रखें और शाश्वत दंड के विचार को कभी भी अपने मन से न जाने दें; यदि आप ऐसा करते हैं, तो आप कभी पाप नहीं करेंगे।

21. अपने मन में विचार करो और कहो: 'मैं इस दिन के बाद इस संसार में नहीं रहूँगा' – और तुम परमेश्वर के सामने कभी पाप नहीं करोगे।

२२. हर दिन, अपने आप से कहो कि इस दुनिया में तुम्हारे लिए यही आखिरी दिन है – और तुम खुद को पाप से बचाओगे।

23. अपनी कोठरी को एक कालकोठरी बना लो, यह ध्यान में रखते हुए कि तुम्हारे लिए सब कुछ पहले ही समाप्त हो चुका है और इस संसार से तुम्हारे अलगाव का समय आ ही रहा है।

24. अपना बचाव करो, कहीं तुम आने वाले युग में बहिष्कृत न हो जाओ। धिक्कार है लापरवाहों पर, क्योंकि उनका अंत निकट है, और उनके पास न कोई सहायक है और न ही उद्धार की कोई आशा।

(d) सफलता के स्रोत ईश्वर की कृपापूर्ण सहायता और अपने स्वयं के प्रयास और कर्म हैं।

क) प्रार्थना के माध्यम से प्राप्त, ऊपर से आने वाली सहायता।

25. हमारे प्रभु यीशु मसीह हमें अपनी इच्छा के अनुसार सब कुछ करने की शक्ति प्रदान करें।

26. सबसे बढ़कर, अविराम प्रार्थना करो, और जो कुछ भी तुम पर पड़े, उसके लिए हमेशा परमेश्वर का धन्यवाद करो।

27. बिना रुके आँसुओं के साथ प्रार्थनाएँ करना जारी रखें, ताकि परमेश्वर आप पर दया करें और आपसे पुरानी स्वभाव को छीन लें।

28. (प्रार्थनापूर्ण) आँसू बहाना बंद न करो – और परमेश्वर तुम पर दया करेंगे और तुम्हारी सभी पीड़ाओं (जो तुम्हारी आत्मा को पीड़ा पहुँचाती हैं) को दूर करेंगे।

29. यदि आप परमेश्वर को प्रसन्न करना चाहते हैं, तो प्रभु यीशु मसीह के प्रति स्वयं को समर्पित कर दें, और वह आपको बचाएगा और आपकी रक्षा करेगा।

bb) आपके कर्म और प्रयास सामान्यतः।

30. मैं आपको जो निम्नलिखित गुण बताता हूँ, उन्हें अपनाने का प्रयास करें: श्रम, गरीबी, भ्रमण, वंचितता (कुछ भी न होना) और मौन। ये आपको विनम्र बनाएँगे, और विनम्रता आपके पापों की क्षमा लाएगी। नम्रता में एक व्यक्ति का स्वयं को पापी मानना और यह विश्वास करना शामिल है कि वह ईश्वर की दृष्टि में कुछ भी अच्छा नहीं करता; मौन के प्रति समर्पित रहना और स्वयं को कुछ भी नहीं समझना; किसी के प्रति जिद्दी न होना, न ही अपनी बात पर जोर देना; अपनी इच्छा को त्यागना, अपना सिर झुकाए रखना, मृत्यु को अपनी आँखों के सामने रखना, झूठ से बचना, व्यर्थ के शब्द न बोलना, मठाधीश का विरोध न करना, अपमान को धैर्यपूर्वक सहना, और हर तरह की कठिनाइयों और दुखों को अच्छी भावना से सहने के लिए खुद को मजबूर करना। भाई, इन नियमों का पालन करने का प्रयास करो, कहीं तुम्हारा जीवन निष्फल न हो जाए।

३१. आओ, हम उन सभी चीज़ों को त्याग दें जो हमारे शरीर को आराम देती हैं; आओ, हम इस जीवन को तुच्छ समझें, ताकि हम परमेश्वर में जी सकें, जो न्याय के दिन हमसे पूछेंगे कि क्या हम उनके लिए भूखे थे, क्या हम प्यासे थे, क्या हमने नग्नता सहन की, क्या हम पश्चातापी थे, क्या हमने अपने हृदय की गहराई से कराह निकाली, और क्या हमने यह देखने के लिए स्वयं की परीक्षा की कि क्या हम परमेश्वर के योग्य हैं। इसलिए, आइए हम अपने पापों पर पश्चाताप और शोक में स्वयं को समर्पित करें, ताकि हम परमेश्वर को पा सकें; आइए हम देह को तुच्छ समझें, ताकि हम अपनी आत्माओं को बचा सकें।

32. अपने लिए परिश्रम चुनें, और वह, उपवास, प्रार्थना और जागरण के साथ मिलकर, आपको सभी अशुद्धियों से मुक्त कर देगा; क्योंकि शारीरिक परिश्रम हृदय की पवित्रता लाता है, और हृदय की पवित्रता यह सुनिश्चित करती है कि आत्मा फल दे।

33. दया से प्रेम करो, विश्वास का वस्त्र धारण करो; अपने हृदय को बुराई की योजना बनाने न दो, बल्कि उसे बुराई का प्रतिफल भलाई से चुकाने के लिए बाध्य करो, दया और शांति की खोज करो, और सभी अच्छे कर्मों के लिए उत्साही बनो।

e) आत्मा के वे स्वभाव जो सफलता निर्धारित करते हैं।

क) ईश्वर में श्रद्धा, सतर्क ध्यान और पाप तथा संसार से विरक्ति के साथ स्थित रहना।

34. तुम्हारी आत्मा हर समय प्रभु के साथ रहे, जबकि तुम्हारा शरीर पृथ्वी पर एक मूर्ति या प्रतिमा की तरह बना रहे।

35. हमेशा प्रभु के साम्हने धार्मकिता से खड़े रहो।

36. परमेश्वर का भय सदा हमारी आँखों के सामने रहना चाहिए, साथ ही मृत्यु का स्मरण और संसार तथा संसारकि सभी चीज़ों से वैरभाव भी।

37. जीने के लिए हर दिन मरो, क्योंकि जो परमेश्वर का भय मानता है वह अनंतकाल तक जीवित रहेगा।

38. सदा सतर्क रहो, कहीं तुम सुस्ती और आलस्य में न पड़ जाओ।

39. सभी सांसारिक चीजों से घृणा करो और उन्हें अपने से दूर फेंक दो; अन्यथा, वे स्वयं तुम्हें ईश्वर से दूर कर देंगी।

40. अपनी आत्मा के लिए हानिकारक हर चीज़ से घृणा करो।

ख) धैर्य।

41. जो कुछ भी तुम करो, उसे धैर्य के साथ करो, और ईश्वर तुम्हारे सभी कर्मों में और जो कुछ भी तुम पर आए, उसमें तुम्हारी सहायता करेगा।

42. हिम्मत न हारें।

43. ईश्वर की इच्छा के अनुसार आप जो कुछ भी करें, उसमें संतुष्ट रहें।

44. अपने कोठरी में आपके मन में आने वाले विचारों से निराश न हों, यह जानते हुए कि प्रभु आपके (उनके लिए) किसी भी परिश्रम को भुलाए नहीं देंगे: यह आपकी सफलता की ओर ले जाएगा, और ईश्वर की कृपा आपकी मदद करेगी।

४५. साहस सत्य में दृढ़ता और अपने शत्रुओं का विरोध करने के सिवा और कुछ नहीं है: जब आप उनके आगे नहीं झुकते, तो वे पीछे हट जाएँगे और फिर कभी दिखाई नहीं देंगे।

(bb) पश्चाताप और रोना।

४६. दिन-रात अपने पापों पर शोक करो।

47. अपने आँसुओं के तेल से अपना दीपक जलाओ।

४८. अपने पापों पर बिना रुके रोओ, जैसे कि तुम्हारी कोठरी में कोई मृत व्यक्ति पड़ा हो[8] ।

49. तुम्हारा चेहरा हमेशा उदास रहे, ताकि परमेश्वर का भय तुम्हारे भीतर वास करे।

50. अपने आप को कुछ भी न समझो, बल्कि अपने पापों के लिए विलाप करने को स्वयं को समर्पित कर दो।

gg) विनम्रता।

51. विनम्रता से प्रेम करो, और यह तुम्हारे सभी पापों को ढाँक लेगी।

52. अपने जीवन के सभी दिनों में विनम्र रहो और स्वयं को सभी अच्छे कार्यों के लिए समर्पित करो।

53. जिनकी सद्गुणों में आपसे कमज़ोरी है, उन्हें अपना बराबर समझो; परन्तु जो सद्गुणों में आपके बराबर हैं, उन्हें पूर्णता में आपसे कहीं अधिक समझो।

54. जो आपसे ऊपर उठते हैं उनसे ईर्ष्या न करें, बल्कि स्वयं को सभी लोगों से श्रेष्ठ समझें, ताकि परमेश्वर स्वयं आपके साथ हों।

55. घमण्डी लोगों के साथ मत चलो, बल्कि नम्र लोगों के साथ चलो (यह अनुकरण और संगति से संबंधित है)।

56. सभी बातों में विनम्र रहो – अपने आचरण में, अपने कपड़ों में, बैठते समय, खड़े होते समय, अपने चलने-फिरने में, बिस्तर पर, अपनी कोठरी में और उसकी सभी साज-सज्जा में।

57. यदि लोग आपके कर्मों की प्रशंसा करने लगें, तो इसमें न तो आनंदित हों और न ही प्रसन्न: उन्हें यथासंभव छिपाएँ, किसी से भी उनके बारे में बात न करें, और यह सुनिश्चित करने के लिए अपनी पूरी कोशिश करें कि लोग आपकी प्रशंसा न करें।

58. अपने किसी भी कर्म से प्रसिद्ध होने से सावधान रहें।

५९. यदि कोई आपको किसी पाप का अन्यायपूर्वक दोषी ठहराए, तो विनम्र हो जाइए, और आपको एक मुकुट प्राप्त होगा।

60. अपनी जीभ को 'मुझे क्षमा करें' कहने का अभ्यास कराओ, और नम्रता तुम्हारे पास आएगी।

61. स्वयं को इस प्रकार प्रशिक्षित करें कि आपकी जीभ, हर परिस्थिति में, हर समय और हर भाई से कहे: 'मुझे क्षमा करें'। क्योंकि यदि आप हमेशा कहते हैं: 'मुझे क्षमा करें', तो आप जल्द ही विनम्रता प्राप्त कर लेंगे।

---

[8] एक अन्य उदाहरण में: जब किसी के घर में कोई मर जाता है तो वह कैसे रोता है।

62. जब भी आप कोई अपमानजनक शब्द सुनें, तो 'मुझे क्षमा करें' कहने के लिए तैयार रहें, क्योंकि ऐसी विनम्रता शत्रु की सभी योजनाओं को विफल कर देती है।

63. जान लो कि विनम्रता किसी और को अपने से श्रेष्ठ समझने का ही नाम है। अपने मन में यह दृढ़ता से धारण करो कि तुम अनेक पापों के दोषी हो – अपना सिर हमेशा झुका रखो, और अपनी जीभ को यह कहने के लिए तैयार रखो कि जो कोई भी तुम्हें ठेस पहुँचाए, उससे कहो: 'मुझे क्षमा करें, मेरे प्रभु!' मृत्यु को अपने विचारों का निरंतर विषय बनाओ।

64. परिश्रम से प्रेम करो, सभी के अधीन रहो, अपने होठों को सीला रखो – और तुम विनम्रता प्राप्त करोगे; और विनम्रता तुम्हारे सभी पापों की क्षमा लाएगी।

६५. सबसे बढ़कर, अपने आप को कुछ भी न समझो; इससे आपके भीतर विनम्रता उत्पन्न होगी, और विनम्रता से ज्ञान (अनुभव और सही निर्णय) उत्पन्न होगा; ज्ञान से विश्वास उत्पन्न होगा, विश्वास से आशा, आशा से प्रेम, प्रेम से आज्ञाकारिता, और आज्ञाकारिता से अटूट दृढ़ता (सद्गुणों में अडिगता) उत्पन्न होगी।

(g) पाप के विरुद्ध संघर्ष।

क) सबसे पहले, विचारों के विरुद्ध।

66. दुष्ट विचारों को अपने से दूर भगाओ, स्वयं को ईश्वर के सुपुर्द कर दो, और वह अपनी दहिनी भुजा से तुम्हारी रक्षा करेगा।

67. अपने मन में आने वाले हर विचार का अनुसरण न करें।

68. अपने विचारों और इच्छाओं के अनुसार कार्य न करें।

69. सावधान रहो कि अपने मन को अतीत के पापों की यादों में खोने न दो, कहीं वे तुममें फिर से जीवित न हो जाएँ।

70. अपने मन में उन पापों पर न टिकें जो आपने कभी किए हैं, कहीं वे फिर से जीवित न हो जाएँ। निश्चिंत रहें कि जब आपने स्वयं को ईश्वर और पश्चाताप के हवाले किया था, तब वे क्षमा कर दिए गए थे, और इस पर जरा भी संदेह न करें।

71. उन सुख-सुविधाओं को याद न करो जिनमें तुमने अपनी आलस्य की दिनचर्या में खुद को डुबोया था, और न ही उनके बारे में यह कहते हुए बात करो, 'मैंने यह किया' या 'मैंने वह नियम तोड़ा', क्योंकि यह तुम्हारे लिए एक ठोकर का कारण बन सकता है।

७२. दुनिया में जिन जुनूनों के आप गुलाम थे, उनका जिक्र बिल्कुल भी न करें, कहीं आप उन इच्छाओं को फिर से न जगा दें, और यह आपके लिए एक प्रलोभन न बन जाए।

bb) विभिन्न दुष्ट इच्छाओं के साथ।

73. प्रेरित यूहन्ना सभी मानवीय वासनाओं का सारांश तीन बातों में देते हुए कहते हैं: *'क्योंकि जो कुछ संसार में है—मांस की वासना, आँखों की वासना और जीवन का घमंड—वह पिता से नहीं है'* (1 यूहन्ना 2:16)। मांस की वासना पेट को विभिन्न प्रकार के स्वादिष्ट व्यंजनों से तृप्त करना है, जिसके बाद व्यभिचार की अशुद्धता आती है। आँखों की वासना का विषय भौतिक वस्तुएँ हैं, जिनके स्वामित्व से या तो आँखें ऊपर उठती हैं या हृदय में अशुद्ध दृष्टियाँ घर कर जाती हैं। अहंकार व्यर्थ की महिमा के सांसारिक प्रेम (अपने बारे में ऊँचा विचार, आत्म-प्रशंसा, और दूसरों से प्रशंसा की प्यास) है, जो कुछ व्यर्थ और क्षणिक बाहरी गुणों के कारण हमारे मन में जड़ पकड़ लेता है।

७४. आत्म-तुष्टि और अवज्ञा से भागो, और सबसे बढ़कर पेटूपन से, कहीं तुम अपनी ही वासनाओं के जाल में न फँस जाओ; क्योंकि वे हृदय से परमेश्वर का भय और मुख से लज्जा को दूर कर देती हैं, अपने प्रेमी को नीच और लज्जास्पद कर्मों में डाल देती हैं, और उसे परमेश्वर से अलग कर देती हैं।

७५. क्रोध को त्याग दो और नम्रता का वेश धारण करो; दुष्ट दृष्टि को त्याग दो और एक सरल (बाल-सुलभ, शुद्ध) दृष्टि अपनाओ।

76. क्रोध से दूर रहो और अपनी कामुकता तथा सभी पापपूर्ण इच्छाओं से स्वयं की रक्षा करो।

(bb) विशेष रूप से, कामुकता से।

77. सुख-भोगी (जो केवल सुखद चीज़ों की तलाश करता है) किसी भी कार्य के लिए अयोग्य है।

78. सुख का प्रेमी न बनो, क्योंकि परमेश्वर सुख के प्रेमियों की नहीं सुनता।

७९. शरीर और उसके सुखों से घृणा करो, क्योंकि वे दुष्टता से भरे हैं।

८०. अपने शरीर को इतना थका दो कि वह बिस्तर पर पड़े रोगी के शरीर जैसा हो जाए।

gg) क्रोध और उसकी संतान के साथ।

81. यदि क्रोध तुम पर हावी हो, तो उसे यथाशीघ्र अपने से दूर भगा दो, और तुम अपने जीवन के सभी दिनों में आनंदित रहोगे।

82. किसी से भी क्रोध न करो, और सभी को क्षमा करो।

83. यदि कोई अन्यायपूर्वक आपको दोषी ठहराता है, तो अपना आपा न खोएं।

84. बुद्धिमान बनो, और उन लोगों के मुँह बंद कर दो जो तुम्हारी बुराई करते हैं।

85. यदि कोई आपके बारे में बुरा बोलता है तो आश्चर्यचकित न हों, क्योंकि यह हमारे सबसे बुरे दुश्मनों की एक चाल है, जिसके द्वारा वे किसी व्यक्ति को सत्य जानने से रोकना चाहते हैं।

86. जल्दी क्रोधित न हों, और जिसने आपको क्रोधित किया हो, उसके प्रति द्वेष न रखें।

87. यदि आपको अपमानित किया जाए, तो जिसने आपको अपमानित किया है उसके प्रति द्वेष न पालें, बल्कि कहें: 'मैं अपने सभी भाइयों द्वारा तिरस्कृत किए जाने का पात्र हूँ।'

88. बड़बड़ाओ नहीं, और किसी को ठेस पहुँचाओ नहीं।

८९. बुराई का बदला बुराई से न चुकाओ, और न ही अपमान का अपमान से; क्योंकि इस प्रकार प्रभु स्वयं तुम्हें नम्र बनाएँगे, यह देखकर कि तुम स्वयं को नम्र नहीं बना रहे।

90. युवा और वृद्ध दोनों प्रार्थना करें, ताकि वे क्रोध के अत्याचार के शिकार न हों।

९१. जो कोई उसे एक गाल पर थप्पड़ मारता है, उसके दूसरे गाल को भी फेर दे, वह अपनी अपमान में प्रसन्न होता है। हमारे प्रभु यीशु मसीह उसे कभी नहीं छोड़ेंगे, क्योंकि वे भले हैं और उनकी आत्माओं की मदद करते हैं जो उनके लिए पीड़ित हैं और उन्हें खोजते हैं, उन्हें तब तक शक्ति और धैर्य प्रदान करते हैं जब तक कि वे (वासनाओं से) शांति में स्थापित नहीं हो जाते। इसलिए जब दुख और परेशानियाँ आपके पास आएं तो प्रसन्न हों, क्योंकि उनके बाद मीठे फल आते हैं।

९२. लोगों की निंदा से मत डरो।

dd) हृदय की अन्य भ्रष्ट प्रवृत्तियों में जो सफलता को कमजोर करती हैं, निंदा शामिल है।

93. यदि आप देखें कि किसी भाई ने पाप किया है, तो उसकी निंदा न करें, उससे मुंह न मोड़ें, और उसे दोषी न ठहराएं: क्योंकि अन्यथा आप स्वयं अपने शत्रुओं के हाथों में पड़ जाएंगे।

94. किसी को नुकसान न पहुँचाओ, और किसी को दोषी न ठहराओ।

९५. (दूसरों के बारे में) बुराई सुनने के लिए कान न लगाओ, बल्कि लोगों के प्रति क्षमाशील और दयालु बनो, और तुम जीवित रहोगे।

96. किसी को दोष न लगाओ, क्योंकि इसी में तुम्हारा पतन है।

97. अपने भाई को फटकार न लगाओ, भले ही तुम उसे सभी आज्ञाओं को तोड़ते हुए देखो; अन्यथा, तुम स्वयं अपने शत्रुओं के हाथ में पड़ जाओगे।

98. किसी भी मनुष्य की निंदा न करो, कहीं ऐसा न हो कि परमेश्वर तुम्हारी प्रार्थनाओं से घृणा करने लगे।

99. किसी की भी कमियाँ उन्हें किसी भी कारण से न बताओ।

100. किसी की कमजोरियों के लिए उसकी निंदा न करें।

(ई) व्यर्थता और घमंड।

101. जब आप दान दें, तो उसका ढोंग न करें।

102. यदि आप आध्यात्मिक प्रयासों में संलग्न हैं, तो उन पर घमंड न करें।

103. आप जो पुण्य कार्य करने वाले हैं, उसके बारे में किसी को पहले से न बताएं, बल्कि बस उसे कर डालें।

104. जब आप कोई पुण्य कार्य कर लें, तो ऐसा व्यवहार न करें जैसे आप दूसरों से अधिक बुद्धिमान हैं, और न ही अपने आप से कहें: 'मैंने यह या वह किया,' क्योंकि यदि आप ऐसा करते हैं, तो आप बुद्धिमान नहीं होंगे।

105. महिमा के भूखे न बनो, और अपने हृदय में आत्म-प्रशंसा को स्थान न दो, यह कहते हुए: 'मैंने यह-वह किया है, मैं इसमें-उसमें सफल हुआ हूँ।' ऐसे विचार घमंड से भरे होते हैं, और जो कोई इनसे भरा होता है, वह अशुद्ध आत्माओं का निवास बन जाता है।

zz) मनुष्यों को प्रसन्न करने का प्रयास करके और पाखंड द्वारा।

106. मनुष्यों की इच्छा पूरी करने के लिए ईश्वर की इच्छा को अलग न करें।

107. मानवीय मित्रता के सम्मान के लिए ईश्वर की आज्ञाओं का उल्लंघन न करें।

108. पाखंडी या ढोंगी मत बनो, झूठे तो और भी दूर की बात है।

109. केवल दूसरों के सामने धर्मी प्रतीत न हो, बल्कि अपने भीतर बुद्धिमान, सौम्य, सज्जन, धैर्यवान, उत्साही और दयालु बनो।

(zz) अहंकार।

110. अपने कर्मों का घमंड न करें, वे चाहे जो भी हों।

111. घमंड से फूलकर न बैठो, और न ही डींगें हाँको।

112. अहंकार को अपने से दूर फेंक दो, लेकिन अपने पड़ोसी और सभी लोगों को अपने से श्रेष्ठ समझो।

113. किसी को दुख पहुँचाने और स्वयं को दूसरों से श्रेष्ठ मानने से बड़ी दुष्टता कोई नहीं है।

114. स्वयं को बुद्धिमान न समझो, कहीं ऐसा न हो कि तुम्हारा प्राण गर्व से ऊपर उठ जाए, और तुम अपने शत्रुओं के हाथ पड़ जाओ।

115. स्वयं को सर्वज्ञ और बुद्धिमान न समझें (अर्थात् यह न कहें: 'मैं यह स्वयं जानता हूँ; मैं यह स्वयं कर सकता हूँ'), अन्यथा आपकी मेहनत व्यर्थ जाएगी, और आपका जहाज अब तक व्यर्थ ही चलता रहा है।

निष्कर्ष

1. जो कोई भी निर्धारित सभी बातों को पूरा करने में विफल रहता है, वह परमेश्वर के क्रोध को भड़काएगा। मैं, एंथनी, तुमसे सत्य कहता हूँ। इसलिए, मेरे शब्दों की ओर अपना कान लगाओ और उन्हें अपने हृदय में संजो लो, और जान लो कि इन आज्ञाओं द्वारा मैं तुम्हें सृष्टिकर्ता के हवाले करता हूँ। यदि आप उनका पालन करते हैं, तो आप सभी स्वर्गदूतों के साथ आनंदित होंगे, और आप सभी दुष्ट आत्माओं को दुखित करेंगे। अत; इन आज्ञाओं में चलो, और परमेश्वर आपके साथ रहेगा, और उसके स्वर्गदूत आप पर अवतरित होंगे, और तुम्हारी आत्मा संतों की सुगंध से भर जाएगी, और तुम्हारा चेहरा धन्य लोगों के प्रकाश से चमकेगा; और तुम सभी संतों की तरह परमेश्वर के लिए एक पवित्र स्थान बन जाओगे, और तुम अंततःप्रभु से आनंद और प्रसन्नता के साथ मिलोगे, और तुम उनकी यह आवाज़ सुनोगे: *'अच्छा, हे नेक और विश्वासयोग्य दास! तू थोड़ी-सी बातों में विश्वासयोग्य रहा, मैं तुझे बहुत-सी बातों पर रखूँगा; अपने प्रभु के आनन्द में प्रवेश कर'* (मत्ती 25:21)।

२. इन आज्ञाओं में से किसी से भी विचलित न हो, और हमारे प्रभु यीशु मसीह तुझे शान्ति देंगे, और जिस काम का तूने आरम्भ किया है, उसे शान्ति में पूरा करेंगे। हमारे सिद्ध पिता, और जिन्होंने उनकी नकल की, इनके पालन से सिद्ध हुए।

3. यदि आप कही गई बातों में कोई भी शुभ कार्य जोड़ना चाहते हैं, तो ऐसा करें, और हमारे प्रभु यीशु मसीह को अविराम धन्यवाद दें।

4. हर रात, तुम्हारे आँसू तुम्हारे बिछौने को धोएँ और तुम्हारे तकिये को भीग जाएँ, और प्रभु मसीह के सामने अपना आप दीन समझो, ताकि वह तुम्हारे पापों को मिटा दे और तुम्हें नये सिरे से नया कर दे, ताकि वह तुम्हें भले काम करने में सहायता दे, और तुम्हें अपना अनंत राज्य विरासत में प्रदान करे। उसी की स्तुति, सम्मान, महिमा और आराधना सर्व-सद् पिता और पवित्र आत्मा के साथ, अब और सदा, और युगानुयुग हो। आमीन।

४. संत एंथनी महान के कथन और उनके जीवन के वृत्तांत

संसार का त्याग करने पर

1. जो कोई भी सफलतापूर्वक संन्यास जीवन अपनाना चाहता है, उसे पूरी तरह से संसार से संबंध तोड़ लेना चाहिए, उसकी सभी भलाईयों को त्याग देना चाहिए, कर्म में उससे अलग हो जाना चाहिए, और उसकी संपत्तियों के प्रति सभी लगाव को काट देना चाहिए। संत एंथोनी ने इस सत्य को प्रभावशाली ढंग से एक भाई पर अंकित किया, जिसने संसार का त्याग कर दिया था और अपने पास मौजूद सब कुछ गरीबों को दे दिया था, लेकिन ज़रूरत के लिए अपने लिए थोड़ी सी राशि रख ली थी, और वह संत एंथोनी के पास आया। वरिष्ठ ने उसे देखकर उसके मन की बात जान ली और उससे कहा: 'यदि तुम एक भिक्षु बनना चाहते हो, तो किसी विशेष गाँव में जाओ, कुछ मांस खरीदो, उसे पतले-पतले टुकड़ों में काट लो, और अपनी चोगा उतारकर उसे अपने कंधों और बाहों पर लपेट लो – और ऐसे ही यहाँ वापस आओ।' उस भाई ने जैसा साधु ने बताया था वैसा ही किया, और तुरंत ही कुत्ते, पक्षी और डंक मारने वाले कीड़े-मकोड़े उसके चारों ओर आ गए और उसके पूरे शरीर को घावों से भर दिया। जब वह साधु के पास लौटा, तो उन्होंने उससे पूछा कि क्या उसने वैसा ही किया है जैसा उसे बताया गया था; उस भाई ने विलाप करते हुए उन्हें अपने घाव दिखाए। तब संत एंथनी ने उससे कहा: 'जो कोई भी संसार को पीछे छोड़ते हुए भी अपनी संपत्ति का थोड़ा सा भी हिस्सा अपने पास रखता

है, उसके साथ ऐसा ही होता है: राक्षस उसे घावों से ढक देंगे, और वह टुकड़े-टुकड़े होकर संघर्ष के बीच गरि जाएगा' (दोस्त. स्काज़. 20; पैट्र. ग्रीक. खंड 40, पृ. 1099)।

२. निम्नलिखित वृत्तांत, जसि कैसयिन (कॉल. २४, अध्याय ११. १०) ने संरक्षति किया है, भी इसी विषय से संबंधति है। एक भाई संत एंथोनी के पास आया, यह मानकर कि दुनिया से अलग होने की कोई आवश्यकता नहीं है, और कहने लगा: 'एक ऐसे व्यक्ति को अधिक महत्व दिया जाता है जो किसी शहर या गाँव में परिश्रम करता है, और आध्यात्मिक पूर्णता प्राप्त करने के लिए आवश्यक सभी कार्य करता है।' संत एंथोनी ने उससे पूछा: 'लेकिन तुम कहाँ और कैसे रहते हो?' उस व्यक्ति ने जवाब दिया: 'मैं अपने माता-पिता के घर में रहता हूँ, और वे मुझे मेरी ज़रूरत की हर चीज़ देते हैं। इससे मुझे सभी चिंताओं और फिक्रों से मुक्ति मिलिती है, और मैं लगातार केवल पढ़ाई और प्रार्थना में ही व्यस्त रहता हूँ, बिना किसी और चीज़ से मेरे मन का ध्यान भटकने के। संत एंथनी ने उससे फिर पूछा: 'मुझसे कहो, मेरे बेटे, क्या तुम उनके दुख में उनके साथ दुखी होते हो, और उनके सुख में आनंदित होते हो?' उसने स्वीकार किया कि वह दोनों का अनुभव करता था। तब बड़े संत ने उससे कहा: 'तब जान लो, कि आने वाले युग में तुम उन लोगों के भाग्य में भागीदार बनोगे जिनके साथ, इस जीवन में, तुम सुख और दुख साझा करते हो।' और आपने जिस जीवन-पथ को चुना है, वह न केवल आपके लिए हानिकारक है क्योंकि जीवन की उतार-चढ़ाव वाली लगभग दैनिक परविर्तनों के कारण, यह आपके मन को सांसारिक मामलों के अनंत विचारों में डुबो देता है, बल्कि इसलिए भी कि यह आपको उस फल से वंचित कर देता है जिसे आप प्राप्त करते यदि आपने, प्रेरित के उदाहरण का अनुसरण करते हुए, अपनी जीविका अर्जित करने के लिए अपने हाथों की मेहनत की होती पौलुस, जिन्होंने सुसमाचार का प्रचार करने के लिए परिश्रम करते हुए भी, अपने और अपने साथियों के लिए अपने हाथों के काम से ही निर्वाह किया – जैसा कि उन्होंने एफिसियों से कहा था: *'तुम स्वयं जानते हो कि इन हाथों से मैंने अपनी और अपने साथियों की आवश्यकताएँ पूरी की हैं'* (प्रेरितों के काम 20:34)। उन्होंने यह हमारे निर्माण के लिए, हमारे लिए एक उदाहरण स्थापित करने के लिए किया, जैसा कि उन्होंने थिस्सलुनीकियों को लिखा: *'हमने आपके बीच कोई अव्यवस्थित आचरण नहीं किया, न ही हमने किसी का भोजन व्यर्थ में खाया, बल्कि परिश्रम और कष्ट से, दिन-रात काम करते हुए, ताकि हम आप में से किसी पर भी बोझ न बनें—यह नहीं कि हमें ऐसा करने का अधिकार नहीं है, बल्कि यह कि हम आपके लिए एक आदर्श स्थापित करें, ताकि आप हमारे अनुकरण करें'* (2 थिस्स. 3:8–9)। इसीलिए हम भी, जबकि हमारे पास अपने रिश्तेदारों के सहारे पर निर्भर रहने का अवसर है, अपने रिश्तेदारों द्वारा प्रदान की गई जीविका के बजाय, अपनी रोजी-रोटी अपनी कड़ी मेहनत से कमाना पसंद करते हैं। यदि हम इसे अधिक लाभदायक मान सकते, तो हम खुशी-खुशी बाद वाले विकल्प को चुनते। इसके अलावा, यह जान लें कि यदि आप अच्छे स्वास्थ्य में रहते हुए दूसरों के खर्च पर जीते हैं, तो आप गरीबों और बीमारों की आजीविका का उपभोग कर रहे हैं।

प्रश्न का सामान्य उत्तर: तो फिर, क्या करना चाहिए?

दुनिया को पीछे छोड़कर, कोई जीवन के एक बिल्कुल नए क्षेत्र में प्रवेश करता है, जो, यद्यपि निश्चित रूप से उनके लिए पूरी तरह से अपरचिति नहीं है, फिर भी कई ऐसे पहलू प्रस्तुत करता है जो अनिवार्य रूप से प्रश्न उठाते हैं: क्या करना चाहिए और कैसे जीना चाहिए? सेंट एंथनी से यह प्रश्न एक से अधिक बार पूछा गया था, और यहाँ उनके उत्तर हैं:

1. अबा पाम्वो ने उनसे इस बारे में पूछा, और उन्होंने उत्तर दिया: 'अपने ही धार्मिकता पर भरोसा मत करो; अपने अतीत के पापों पर सच्चा पश्चाताप करो; और अपनी जीभ, अपने दिल और अपने पेट पर नियंत्रण रखो' (पैट्र. ग्रीक. खंड 40, पृ. 1093. डostoयव्स्की, टिप्पणी 6)।

2. इसी विषय पर उन्होंने अबा पमिन से कहा: 'किसी मनुष्य द्वारा किए जा सकने वाले सभी कार्यों में सबसे गौरवशाली कार्य है, ईश्वर और अपने बड़ों के सामने अपने पापों का स्वीकार करना, स्वयं को दोषी ठहराना, और अपनी अंतिम साँस तक हर प्रलोभन का सामना करने के लिए तैयार रहना' (Patr. ib. 1084: Dostoevsky, vol. 4).

3. एक अन्य व्यक्ति ने उनसे पूछा: 'ईश्वर को प्रसन्न करने के लिए मुझे क्या करना चाहिए?' संत एंथनी ने उत्तर दिया: 'जहाँ भी आप जाएँ, हमेशा ईश्वर को अपनी आँखों के सामने रखें; जो कुछ भी आप करें, उसका आधार धर्मग्रंथ में होना चाहिए; और जहाँ भी आप रहें, उस स्थान को बहुत जल्द न छोड़ें। इन तीन आज्ञाओं का पालन करो, और तुम बच जाओगे (Dost. sk., 3; Patr. ib. 1083).

4. उन्होंने एक अन्य शिष्य को सलाह दी: 'अपने पेट, इस युग की मांगों, दुष्ट वासनाओं और मानवीय सम्मान से अरुचि करो: इस प्रकार जियो मानो तुम इस दुनिया में मौजूद ही नहीं हो, और तुम शांति पाओगे' (Patr. Lat. vol. 73, p. 1049).

5. जैसा कि संत अथेनासियस लिखते हैं, यह वही है जो बाबा एंथनी ने उनके पास आए भाइयों से कहा: 'हमेशा अपने आँखों के सामने भय को रखें; उसको याद रखें जो मारता है और जीवन देता है' (1 शमूएल 2:6)। दुनिया और उसमें जो कुछ भी है उससे घृणा करो; हर सांसारिक आराम से घृणा करो; इस जीवन का परित्याग करो, ताकि तुम परमेश्वर के लिए जी सको; याद करो कि तुमने परमेश्वर से क्या वादा किया है: क्योंकि वह न्याय के दिन तुमसे इसकी मांग करेगा। भूखे रहो, प्यासे रहो, नग्न रहो, जागते रहो, रोओ, विलाप करो, अपने हृदयों में आहें भरो, यह देखने के लिए स्वयं की परीक्षा करो कि क्या तुम परमेश्वर के योग्य हो, शरीर का तिरस्कार करो, ताकि तुम अपनी आत्माओं को बचा सको (Dost. sk. 33 और जीवन में)।

6. संत कैसियन एक भिक्षु को क्या करना चाहिए, इसका इसी तरह का विस्तृत विवरण देते हैं। वे कहते हैं, 'अनादि काल से, धन्य से एक अद्भुत शिक्षा रही है एंथनी लंबे समय से प्रचलित हैं, जो कहते हैं कि एक भिक्षु, जो परम पूर्णता के लिए प्रयास कर रहा है, उसे स्वयं को किसी एक सफल पिता की नकल तक सीमित नहीं रखना चाहिए, क्योंकि किसी में भी सभी प्रकार के सद्गुण पूर्णता में नहीं पाए जा सकते। लेकिन एक ज्ञान से, दूसरा सही निर्णय से, तीसरा अटूट धैर्य से विशिष्ट है; एक विनम्रता से, दूसरा संयम से, तीसरा अनुग्रह-पूर्ण हृदय की सरलता से विशिष्ट है; एक उदारता में, दूसरा दया में, एक सतर्कता में, और दूसरा मौन या लगन में दूसरों से श्रेष्ठ है। अत; जो भिक्षु आध्यात्मिक मधुकोश बनाना चाहता है, उसे एक बुद्धिमान मधुमक्खी की तरह, हर सद्गुण को उसमें सबसे निपुण व्यक्ति से ग्रहण करे, और उसे अपने हृदय के पात्र में संजोए रखे, इस बात की परवाह किए बिना कि दूसरों में क्या कमी है, बल्कि उस सद्गुण का अवलोकन करे और उसे अपना बनाने का प्रयास करे, जो भी गुण प्रत्येक व्यक्ति को विशिष्ट बनाता है (Inst. c. V. 1. 4)।

वह शक्ति जो किसी को पुण्य के महान कार्यों के लिए प्रेरित करती है और उनमें उसे बनाए रखती है

यदि जिनका उल्लेख किया गया है, उन सभी की सूची बनाई जाए, तो यह वीरता के कारनामों के लिए एक काफी विस्तृत क्षेत्र साबित होगा। प्रश्न उठता है: कौन सी शक्ति श्रमिक को इन कारनामों के लिए प्रेरित करती है और उसे उसके श्रम में बनाए रखती है? यह शक्ति मोक्ष के लिए उत्साह है, ईश्वर के नाम की महिमा के लिए, जो किसी भी चीज़ के लिए तैयार है। जहाँ यह उत्साह मौजूद है, वहाँ संन्यासी के सभी वीरता के कारनामे पूरे ज़ोरों पर होते हैं। इसके बिना, सब कुछ ठप हो जाता है।

1. जब एक बार इस उत्साह से वंचित एक भाई संत एंथोनी के पास आया और उनसे अपने लिए प्रार्थना करने को कहा, तो महान साधु ने उत्तर दिया: 'यदि आप अपना ध्यान नहीं रखते और ईश्वर से प्रार्थना नहीं करते तो न तो मैं और न ही ईश्वर आप पर दया करेंगे' (संत एंथोनी का जीवन, अध्याय 16)?

2. इसी कारण से, उन्होंने ईश्वर पर निरंतर ध्यान और सतर्कता बनाए रखने की सलाह दी, और उस व्यक्ति की एक महान सद्गुण के रूप में प्रशंसा की जो अपने पूरे जीवन भर प्रभु के लिए अथक परिश्रम करता है और अपनी अंतिम सांस तक प्रलोभक की युक्तियों से सावधान रहता है (Patr. Graec. vol. 40, p. 1083)।

3. अतः उन्होंने लोगों से आग्रह किया कि वे किसी भी बात में सुस्ती न करें, बल्कि धैर्य के साथ हर समय उत्साह की उसी भावना को बनाए रखें, कहते हुए: एक भिक्षु जो कुछ दिनों तक परिश्रम करता है, फिर सुस्त पड़ जाता है, फिर से परिश्रम करता है और फिर एक बार फिर सुस्त पड़ जाता है—ऐसा भिक्षु कुछ भी न करने के बराबर है, और वह उत्साह और धैर्य में स्थिरता की कमी के कारण भिक्षु जीवन की पूर्णता को कभी प्राप्त नहीं कर पाएगा (Patr. Lat. vol. 73, p. 1049).

४. उन्होंने आराम की तलाश करने वालों को अपनी पुकार और अपने उद्देश्यों को समझने में विफल बताया, और सभी संतों की विफलताओं का कारण तपस्या के श्रम के प्रति उत्साह की कमी को ठहराया। क्योंकि, उन्होंने कहा, हम सफल नहीं होते हैं क्योंकि हम अपनी पुकार को नहीं जानते, न ही हम यह समझते हैं कि हमारे द्वारा हाथ में लिए गए कार्य में क्या आवश्यक है, लेकिन हम बिना प्रयास के सद्गुण प्राप्त करना चाहते हैं। इसीलिए, जैसे ही हम अपने स्थान पर प्रलोभन का सामना करते हैं, हम एक स्थान से दूसरे स्थान पर चले जाते हैं, यह सोचकर कि कोई ऐसा स्थान होगा जहाँ शैतान मौजूद नहीं है। लेकिन जिसने भी यह महसूस किया है कि एक लड़ाई है, वह खुद को सुस्त नहीं होने देता, बल्कि ईश्वर की मदद से लगातार युद्ध करता रहता है (Patr. Gr. vol. 40, p. 1093)।

5. जो लोग न तो कुछ चाहते हैं और न ही कुछ करने में सक्षम हैं, उनके लिए इस विषय पर संत एंथनी के शब्द उल्लेखनीय हैं। एक बार, कुछ भाई संत एंथनी के पास आए और उनसे कहा: 'हमें बचाए जाने के लिए निर्देश दें।' बड़े भाई ने उनसे उत्तर दिया: 'क्या आपने धर्मग्रंथों को सुना है?' और तुम्हारे लिए इतना ही काफी है।' लेकिन उन्होंने कहा, 'हम भी आपसे कुछ सुनना चाहते हैं, पिताजी।' तब वृद्ध ने उनसे कहा, 'सुसमाचार में लिखा है: *"यदि कोई तुम्हें*

दाहिने गाल पर थप्पड़ मारे, तो दूसरा भी उसके लिए मोड़ दो' (मत्ती 5:39)।' उन्होंने उससे कहा, 'हम ऐसा नहीं कर सकते।' वरिष्ठ ने कहा: 'यदि तुम दूसरी गाल नहीं फेर सकते, तो कम से कम एक गाल पर प्रहार सहन करो।' उन्होंने उत्तर दिया, 'हम यह भी नहीं कर सकते।' वरिष्ठ ने कहा, 'यदि तुम इतना भी नहीं कर सकते, तो कम से कम एक प्रहार का बदला दूसरे प्रहार से न लो।' भाइयों ने कहा: 'हम यह भी नहीं कर सकते।' तब संत एंथनी ने अपने शिष्य से कहा: 'उनके लिए थोड़ा भोजन तैयार करो: वे बीमार हैं।' यदि आप एक काम नहीं कर सकते और दूसरे को करने के लिए तैयार नहीं हैं, तो मैं आपके लिए क्या कर सकता हूँ? आपको प्रार्थना करनी चाहिए (या तो स्वयं, या दूसरों से अपनी ओर से प्रार्थना करवाकर) ताकि उत्साह की भावना—वह नैतिक ऊर्जा—आपके भीतर जागृत हो सके (Dost. sk. 19).

उत्साह के मार्गदर्शक

लेकिन उत्साह अपने आप में कभी-कभी अंधा होता है, और यह उस जीवन के उद्देश्यों के विपरीत दिशा ले सकता है जिसे किसी ने अपनाया है। इसीलिए इसका मार्गदर्शन नेताओं द्वारा किया जाना चाहिए। तो, ये नेता कौन हैं? सेंट एंथोनी दो की ओर इशारा करते हैं: अपना स्वयं का निर्णय और अनुभवी लोगों की सलाह।

a) मेरा अपना तर्क।

1. एक बार संत एंथनी में संतों ने इकट्ठा होकर चर्चा की कि सभी गुणों में कौन सा सबसे परिपूर्ण है और कौन सा एक भिक्षु को शत्रु के सभी जालों से बचा सकता है। प्रत्येक ने अपनी-अपनी राय व्यक्त की। कुछ ने उपवास और जागरण की प्रशंसा की, क्योंकि ये मनुष्य के विचारों में व्यवस्था लाते हैं, मन को परिष्कृत करते हैं और व्यक्ति के लिए ईश्वर के निकट आने को आसान बनाते हैं; अन्य ने गरीबी और सांसारिक चीजों के प्रति तिरस्कार को प्राथमिकता दी, क्योंकि इसके माध्यम से मन शांत, शुद्ध और सांसारिक चिंताओं से मुक्त हो जाता है, और इस प्रकार ईश्वर के प्रति एक का दृष्टिकोण आसान हो जाता है; कुछ लोग सभी अन्य गुणों पर दान को प्राथमिकता देना चाहते थे, क्योंकि प्रभु दयालुओं से कहेंगे: *'आओ, हे मेरे पिता द्वारा धन्य किए हुए; संसार की नींव के समय से तुम्हारे लिए तैयार किए गए अपने उत्तराधिकार को ग्रहण करो'* (मत्ती 25:34), जबकि अन्य का दृष्टिकोण अलग था। और संत एंथनी ने कहा: आपने जो सभी सद्गुण बताए हैं, वे परमेश्वर की खोज करने वालों और जो उससे निकट होने की प्रबल इच्छा से जलते हैं, उनके लिए अत्यंत उद्धारक और नितांत आवश्यक हैं। फिर भी हमने देखा है कि कई लोगों ने अत्यधिक आत्म-तपस्या, जागरण और मरुभूमि में एकांतवास के द्वारा अपने शरीरों को थका दिया; उन्होंने श्रम के लिए भी उत्साहपूर्वक खुद को समर्पित किया, गरीबी से प्रेम किया, और सांसारिक सुखों को तुच्छ समझा, इस हद तक कि उन्होंने अपने लिए एक दिन के लिए भी आवश्यक चीज़ें नहीं रखीं, लेकिन उन्होंने जो कुछ भी उनके पास था, वह सब गरीबों को दे दिया; और फिर भी अक्सर ऐसा हुआ कि, इन सबके बाद, वे भटक गए और गिर पड़े, और, उन सभी सद्गुणों का फल खोकर, निंदा के पात्र बन गए। इसका कारण और कुछ नहीं बल्कि यह था कि उनमें विवेक और समझदारी का सद्गुण नहीं था, और वे इसके मार्गदर्शन का उपयोग करने में असमर्थ थे। क्योंकि यही सद्गुण एक व्यक्ति को चौराहे पर भटकने के बिना, सीधे रास्ते पर चलना सिखाता और उसका मार्गदर्शन करता है। यदि हम राजसी मार्ग पर चलते हैं, तो हम अपने निंदकों द्वारा कभी भी भटकते नहीं होंगे - न तो दाईं ओर, अत्यधिक संयम की ओर, और न ही बाईं ओर, आलस्य, लापरवाही और सुस्ती की ओर। विवेक आत्मा की आँख और उसका दीपक है, ठीक वैसे ही जैसे आँख शरीर का दीपक है: ताकि यदि यह आँख स्पष्ट हो, तो पूरा शरीर (हमारे कर्मों का) स्पष्ट होगा; लेकिन यदि यह आँख अँधेरी हो, तो पूरा शरीर अँधेरा हो जाएगा, जैसा कि प्रभु ने पवित्र सुसमाचार में (मत्ती 6:22-23) कहा है। विवेक द्वारा, एक व्यक्ति अपनी इच्छाओं, शब्दों और कर्मों की परीक्षा करता है, और उन सभी से मुंह मोड़ लेता है जो उसे ईश्वर से दूर ले जाती हैं। विवेक द्वारा, वे अपने विरुद्ध निर्देशित शत्रु की सभी योजनाओं को विफल और नष्ट करते हैं, और जो अच्छा है और जो बुरा है, उसके बीच निष्ठापूर्वक अंतर करते हैं। (पैट्र. ग्र. खंड 40, पृ. 1096; दोस्तोव्स्की, खंड 8)।

२. निम्नलिखित कहावत भी इसी विषय की ओर इशारा करती है: एक लोहार, लोहे का एक टुकड़ा लेकर, पहले से ही विचार करता है कि वह उससे क्या बनाएगा: एक हँसिया, एक तलवार या एक कुल्हाड़ी। इसी प्रकार हमें भी पहले से ही विचार करना चाहिए कि हमें कौन से सद्गुण का अनुसरण करना है, ताकि हम व्यर्थ में परिश्रम न करें (दॉस्ट. स्क. 35)। बेशक, अपने स्वयं के निर्णय द्वारा निर्देशित होना सबसे अच्छा होगा, यदि केवल किसी का निर्णय हर चीज़ और हर किसी के लिए हमेशा पर्याप्त होता। लेकिन चूँकि ऐसा नहीं कहा जा सकता, इसलिए एक अधिक विश्वसनीय और सुरक्षित मार्गदर्शक है:

ख) अनुभवी लोगों की सलाह।

3. इस अर्थ में, संत एंथनी कहते हैं: 'मैं ऐसे भिक्षुओं को जानता हूँ जो, बहुत परिश्रम के बाद, गिर गए और पागलपन में चले गए, क्योंकि उन्होंने अपनी ही कोशिशों पर भरोसा किया और उस की आज्ञा की अवहेलना की जिसने कहा: *"अपने पिता से पूछो, और वह तुम्हें बताएगा"* (Deut. 32:7)। (The Virtues, अध्याय 37)।

4. और इसके अलावा: पवित्र शास्त्र कहता है: *'जिनके पास मार्गदर्शन नहीं, वे पत्तों की तरह झड़ जाते हैं'* (नीतिवचन 11:14), और आज्ञा देता है कि परामर्श के बिना कुछ भी न किया जाए, यहाँ तक कि यह परामर्श के बिना उस आध्यात्मिक पेय के सेवन की भी अनुमति नहीं देता जो मनुष्य के हृदय को प्रसन्न करता है, जब यह कहता है: *'परामर्श के बिना कुछ भी न करो'* (सिरैकस 32:21), और: 'सलाह से दाखमधु पीओ'। – जो मनुष्य बिना सलाह के अपने काम करता है, वह एक बिना किलेबंदी वाले नगर के समान है, जिसमें कोई भी इच्छुक व्यक्ति प्रवेश कर सकता है और उसके खजाने को लूट सकता है (पैट्र. ग्र. खंड 40, पृ. 1098)।

५. संत एंथनी दूसरों से सलाह मांगना एक ऐसा उद्धारकारी कार्य मानते थे कि स्वयं सभी के गुरु भी अपने शिष्य—जो पहले ही सफल हो चुका था—से एक प्रश्न के साथ मुड़े, और ठीक वैसा ही किया जैसा शिष्य ने सलाह दी थी। क्योंकि कहा जाता है कि जब आबा एंथनी को सम्राट कॉन्स्टैंटियस से कॉन्स्टेंटिनोपल आने का लिखित निमंत्रण मिला, तो उन्होंने पॉल द सिंपल से यह प्रश्न किया: 'क्या मुझे जाना चाहिए?' और जब बाद वाले ने उत्तर दिया: 'यदि आप जाएँगे, तो आप एंथनी होंगे; यदि आप नहीं जाएँगे, तो आप अबा एंथनी होंगे' – इस प्रकार उस यात्रा की अप्रतिष्ठा करते हुए – तो वह शांतिपूर्वक वहीं रुके रहे (द लाइफ़ ऑफ़ द सेंट्स, 32)।

6. उन्होंने सभी को ऐसा ही करने की सलाह दी, कहते हुए: 'एक भिक्षु को, यदि संभव हो, तो अपनी कोठरी में उठाए गए हर कदम और पिए गए पानी की हर बूंद के बारे में बुजुर्गों से सलाह लेनी चाहिए।' मैं कुछ ऐसे संतों को जानता हूँ जो इसलिए गिर गए क्योंकि उन्होंने स्वयं सोचा कि वे ईश्वर को प्रसन्न कर सकते हैं (Patr. Gr., vol. 40, p. 1082; The True Tales, 38)।

7. इस प्रकार, संत एंथनी अपने स्वयं के निर्णय पर भरोसा करने के पक्ष में नहीं थे। क्या यही कारण नहीं है कि उन्होंने अबा जोसेफ की इतनी प्रशंसा की, जिन्होंने जब धर्मग्रंथ से कोई प्रश्न पूछा गया, तो उत्तर दिया, 'मुझे नहीं पता'—क्योंकि इसमें, विनम्रता के अलावा, अपनी ही बुद्धि पर अविश्वास भी व्यक्त हुआ था? यह इस प्रकार हुआ: कुछ वृद्ध संत एंथोनी के पास आए, और अब्बा जोसेफ भी उनके साथ थे। वृद्ध ने, उन्हें परखने की इच्छा से, उन्हें धर्मग्रंथ का एक अंश प्रस्तुत किया और सबसे छोटे से शुरू करके, प्रत्येक से पूछना शुरू किया कि इस अंश का क्या अर्थ है। प्रत्येक ने अपनी क्षमता के अनुसार उत्तर दिया, लेकिन बड़े संत ने प्रत्येक से कहा: 'नहीं, तुमने नहीं समझा।' जब वे सभी बोल चुके, तो उन्होंने बाबा जोसेफ से कहा: 'इस अंश के बारे में आप क्या कहते हैं?' जोसेफ ने उत्तर दिया, 'मुझे नहीं पता।' बाबा एंथनी ने कहा: 'बाबा जोसेफ सही रास्ते पर थे जब उन्होंने कहा: "मुझे नहीं पता"' (Orth. Sayings 17).

8. हालाँकि, उन्होंने सलाह दी कि दूसरों पर बिना शर्त भरोसा नहीं किया जाना चाहिए। पहले किसी वृद्ध के मानसिक संतुलन और अनुभव का पता लगाना चाहिए - और केवल तभी उसके वचन पर भरोसा करना चाहिए और उसकी सलाह को बिना सवाल के स्वीकार करना चाहिए। जिस संकेत से यह पहचाना जा सकता है, वह है उसके शब्दों का ईश्वर के वचन के साथ सामंजस्य। उन्होंने कहा, यह देखना चाहिए कि क्या आज्ञा दी गई है। यदि कोई आपको हमारे प्रभु की आज्ञाओं के अनुसार किसी भी बात में निर्देश देता है, तो उसे विनम्रता से स्वीकार करें और उसका पालन करने का प्रयास करें, ताकि प्रेरित के वचन हम में पूरे हों: *'परमेश्वर के भय से एक दूसरे की आज्ञा मानो'* (गलातियों 5:13; एफि. 5:21)। दूसरी ओर, यदि कोई आपको दिव्य आज्ञाओं के विपरीत किसी बात की शिक्षा देता है, तो शिक्षा देने वाले से कहें: *'ईश्वर की आज्ञा की अपेक्षा तुम्हारी आज्ञा मानना उचित है?'* (प्रेरितों के काम 4:19)। *'हमें मनुष्यों के बजाय परमेश्वर की आज्ञा माननी चाहिए'* (प्रेरितों 5:29)। आइए हम प्रभु के वचन को भी याद करें: *'मेरी भेड़ें मेरी आवाज़ सुनती हैं, और वे किसी अजनबी के पीछे नहीं चलतीं, क्योंकि वे अजनबी की आवाज़ नहीं पहचानतीं'* (यूहन्ना 10:5)। इसी तरह, धन्य पौलुस हमें यह कहते हुए उपदेश देते हैं: 'परन्तु यदि हम या स्वर्ग का कोई दूत तुमको उस सुसमाचार के सिवाय कोई और सुसमाचार सिखाए, तो वह श्रापित हो' (गलातियों 1:8)। (पैट्र. ग्र. वॉल्यूम 40, पृष्ठ 1083)। इस तरह की पाबंदी का कारण शायद एरियिनों ने दिया था, जो धार्मिकता का दिखावा करके दूसरों को अपनी ओर आकर्षित करते थे और फिर अपनी झूठी शिक्षाओं से उन्हें विषाक्त कर देते थे। या शायद ऐसा भी था कि कुछ लोग स्वयं अधिक अनुभव प्राप्त किए बिना ही दूसरों का मार्गदर्शन करने लग जाते थे। ऐसे अवसरों पर, वह यह कहना पसंद करते थे: प्राचीन धर्मपिता रेगिस्तान में चले गए, और वहाँ, अपने कई परिश्रमों के द्वारा अपनी आत्मा को चंगा करने के बाद, वे यह समझ गए कि दूसरों को भी कैसे चंगा किया जाए। इसीलिए, वहाँ से लौटने पर, वे दूसरों के लिए चंगा करने वाले चिकित्सक बन गए। लेकिन जहाँ तक हमारी बात है, यदि हम में से कोई भी खुद को ठीक किए

बिना ही रेगिस्तान में चला जाता है, तो हम दूसरों की देखभाल करने का जिम्मा अपने ऊपर ले लेते हैं; परिणामस्वरूप, हमारी पुरानी दुर्बलता हम पर लौट आती है, और हमारी अंतिम पीड़ा पहली पीड़ा से भी अधिक कड़वी साबित होती है। इसीलिए यह कहावत हम पर लागू होती है: 'हे वैद्य, पहले अपना इलाज कर' (लूका 4:23)। (पैट्र. लैट. वॉल्यूम 73, पृ. 1053)।

किसी की जलन की आग को कैसे भड़काया जाता है?

किसी व्यक्ति में कुछ भी स्थिर नहीं रहता; कुछ चीजें मजबूत होती जाती हैं, कुछ कमजोर। उत्साह भी ऐसा ही है: कभी यह प्रज्वलित होता है, कभी बुझ जाता है। दूसरे मामले में, इसे फिर से भड़काया जाना चाहिए ताकि यह पूरी तरह से खत्म न हो जाए। तो, कैसे और किन साधनों से? सबसे पहले, मृत्यु की याद से। संत एंथनी ने बार-बार सभी से आग्रह किया कि वे अपने मन और हृदय पर यह बात गहराई से अंकित कर लें कि जिस दिन से हम गुजर रहे हैं, वह हमारा आखिरी दिन है।

1. दूसरा, मृत्यु के बाद क्या होगा, इस बात को मन में लाकर। अपने शिष्यों की आत्माओं पर इस विचार को अंकित करने के लिए, उन्होंने उन्हें वह बताया जो व्यक्तिगत रूप से उनके सामने प्रकट हुआ था, जैसा कि अथेनासियस द ग्रेट अपनी जीवनी में वर्णन करते हैं। एक बार, भोजन से पहले, लगभग नौ बजे, प्रार्थना के लिए उठे हुए , संत एंथनी ने अपने भीतर महसूस किया कि उनका मन तल्लीन हो गया था, और, सबसे आश्चर्यजनक बात यह थी कि, उन्होंने खुद को जैसे बाहर से देखा, और जैसे कोई उसे हवा में उठा रहा हो, जबकि हवा में कुछ उदास और भयानक आकृतियाँ खड़ी थीं जिन्होंने उसकी आरोहण की राह रोकने की कोशिश की। संत एंथनी के साथियों ने उनका विरोध किया, लेकिन उन आकृतियों ने इस तरह अपना पक्ष रखा जैसे उन्हें ऐसा करने का अधिकार हो, और यह पूछते हुए हिसाब माँगा कि क्या संत एंथनी किसी भी तरह से उनके अधिकार के अधीन थे। उन्हें झुकना पड़ा, और उन्होंने स्थिति का जायज़ा लेने की तैयारी की। लेकिन जब उन्होंने संत एंथनी के जन्म से ही स्थिति का जायज़ा लेने की कोशिश की, तो उनके मार्गदर्शकों ने आपत्ति जिताई, और कहा: 'जो जन्म से था, उसे प्रभु ने तब मिटा दिया जब उन्होंने अपना संन्यासी जीवन अपनाया; स्थिति का जायज़ा उस समय से लो जब वह संन्यासी बने और उन्होंने ईश्वर के प्रति अपने व्रत लिए;' लेकिन इस मामले में उसके आरोप लगाने वालों को उसमें कोई दोष नहीं मिल सका; इसलिए वे पीछे हट गए – और एंथनी के तपस्वी जीवन का मार्ग मुक्त और निर्बाध हो गया। इसके बाद, संत एंथनी को महसूस होने लगा कि वह अपने आप को फिर से संभाल रहे हैं, और जल्द ही वह फिर से वही एंथनी बन गए जो वे कभी थे। लेकिन वे भोजन के बारे में पहले ही भूल चुके थे, और उन्होंने उस दिन का बाकी समय और पूरी रात आहें भरते और प्रार्थना करते हुए बिताई, इस बात पर आश्चर्य करते हुए कि हमें कितने दुश्मनों से जूझना पड़ता है और हवा पर चलते हुए एक व्यक्ति को कितनी कठिनाइयों को सहना पड़ता है। तब प्रेरित पौलुस के शब्द *'वायुमंडल के अधिकार के अधिपति'* (इफिसियों 2:2) उनके मन में आए। क्योंकि शत्रु के पास वायुमंडल में शक्ति है कि वह उसमें से गुजरने वालों से युद्ध करे, और उनका मार्ग अवरुद्ध करने का प्रयास करे। इसीलिए प्रेरित ने विशेष रूप से सलाह दी: *'दुष्ट दिन में दृढ़ता से खड़े रहने के लिए परमेश्वर का संपूर्ण हथियार पहन लो'* (इफिसियों 6:13) और ताकि शत्रु को लज्जित होना पड़े, *'हमारे विरुद्ध दोष लगाने के लिए कुछ भी न पाए'* (तीतुस 2:8)।

2. सेंट अथेनासियस इसे इस प्रकार वर्णन करते हैं, और यद्यपि इसके बाद सेंट एंथनी द्वारा दूसरों को इसके बारे में बताने का कोई रिकॉर्ड नहीं है, फिर भी इस पर संदेह करने का कोई कारण नहीं है, क्योंकि जो उन्होंने देखा था, उसका ज्ञान उनके लिए स्वयं से कम, बल्कि दूसरों के लिए अधिक आवश्यक था। इसी विषय पर एक अन्य दृष्टि के संबंध में, यह उल्लेख है कि उन्होंने इसे दूसरों को बताया था। संत अथानासियस लिखते हैं: संत एंथनी एक बार कुछ भाइयों से बात कर रहे थे जो मृत्यु के बाद आत्मा की अवस्था और वह कहाँ निवास करेगी, इस बारे में उनसे मिलने आए थे। अगली रात, ऊपर से किसी ने उसे पुकारा, और कहा: 'उठो, बाहर जाओ और देखो'; एंथनी बाहर गया (क्योंकि वह जानता था कि किसने उसे आदेश दिया था) और, अपनी दृष्टि उठाकर, उसने एक विशालकाय, भद्दा और भयानक प्राणी देखा, जिसका सिर बादलों को छू रहा था, तब ज़मीन से कुछ पक्षी उड़ रहे थे; उस राक्षस ने कुछ के रास्ते को रोक दिया, जबकि अन्य उसके ऊपर से उड़ गए, और उससे आगे निकलकर सुरक्षित रूप से ऊपर उठ गए। उसने बाद वालों पर दाँत पीसे, लेकिन पहले वालों को देखकर प्रसन्न हुआ। फिर एक अदृश्य आवाज़ ने कहा: 'एंथनी, जो तूने देखा है उसे समझ!' तब उनका मन प्रबुद्ध हो गया, और उन्होंने समझ लिया कि यह पृथ्वी से आत्माओं के पार जाने का मार्ग था, और वह विशालकाय हमारे पुराने शत्रु थे, जो लापरवाहों और उनके प्रलोभनों के आगे झुक जाने वालों को रोकते हैं, और उन्हें आगे बढ़ने से मना करते हैं; लेकिन वे उत्साही लोगों और जिन्होंने उनकी बात पर ध्यान नहीं दिया, उन्हें रोक नहीं सकते, और वे उनसे ऊपर निकल जाते हैं। संत एंथनी ने इस दृष्टि को स्वयं के लिए एक प्रकार

की याद दलिाने वाले संकेत के रूप में लयिा, और सभी शत्रुतापूर्ण चीजों के खलिाफ संघर्ष में सफल होने के लए और भी अधकि लगन से प्रयास करने लगे। इसी उद्देश्य से—अर्थात् एक पवत्रि जीवन के लए और अधकि उत्साह जगाने के लए—उन्होंने यह दृष्टि दूसरों को सुनाई। अब्बा क्रोनयिस कहते हैं कि एक अवसर पर संत एंथनी ने एक बड़ी सभा के सामने इस दृष्टि के बारे में बताया। उन्होंने यह भी जोड़ा कि, इस दृष्टि से पहले, संत एंथनी ने पूरे एक साल तक प्रार्थना की थी कि उन्हें यह प्रकट किया जाए कि मृत्यु के बाद धर्मी और पापी आत्माओं का क्या होता है; कि उस विशालकाय के हाथ आकाश में फैले हुए थे, और उसके नीचे समुद्र जितनी विशाल एक झील थी, जिसमें उसके हाथ से मारे गए पक्षी गिर जाते थे (लवसाइक, अध्याय 24)। लैटिन पैट्रिस्टिक संग्रह में, इसका विवरण यह सुझाव देता है कि पक्षी उस विशालकाय द्वारा मारे गए और झील में तब गिरे जब वे उसके हाथों के नीचे हवा में रुक गए, उन पर ऊपर उठने की ताकत न होने के कारण; जबकि जो उसके हाथों और सिर के ऊपर उठने के लिए पर्याप्त मजबूत थे, उन पर वह केवल दाँत पीसता रहा, और उन्हें स्वर्ग की ओर उड़ते हुए और स्वर्गदूतों द्वारा स्वागत किए जाते हुए देखता रहा (Patr. Lat. vol. 73, p. 1044)।

3. यह सुनकर उन लोगों की आत्मा में कितना भयानक भय समा गया होगा! लेकिन यहाँ एक सांत्वना देने वाला दर्शन है, जो एक गौरवशाली अवस्था में *'आशा' के माध्यम से* उत्साह को दृढ़ता से पुनर्जीवित करता है। यह दर्शन संत एम्मोन से संबंधित है, जो संत एंथनी के शिष्य से कहीं अधिक एक मित्र और साथी थे। संत अथेनासियस लिखते हैं कि एक दिन संत एंथनी, एक पहाड़ पर बैठे हुए, आकाश की ओर देखे और देखा कि कोई आग की एक लकीर में हवा से होते हुए स्वर्ग की ओर जा रहा था, जबकि ऊपर से आनंदित स्वर्गदूतों का एक समूह उनका स्वागत करने के लिए उतर आया। इस पर आश्चर्यचकित होकर, उन्होंने प्रार्थना करना शुरू कर दिया कि प्रभु कृपा करके उन्हें यह बताएं कि इसका क्या अर्थ है। और एक आवाज़ उनके पास आई, जिसमें कहा गया कि यह नित्रिया के एक भिक्षु, अम्मोन की आत्मा थी। इस अम्मोन ने वृद्धावस्था तक कठोर तपस्या का जीवन जिया था। वह संत एंथनी से मिलने जाया करते थे, और संत एंथनी उनसे मिलने आया करते थे। नित्रियन पहाड़ों से संत एंथनी के पहाड़ तक की दूरी 13 दिनों की यात्रा (650 वर्स्ट) है। जब उसके साथ रहे भाइयों ने उससे पूछा कि वह इतना चकित क्यों है, तो उसने कहा कि उसने अम्मोन को देखा और उसके बारे में सुना था। जब, तीस दिन बाद, नित्रिया के भाई आए, तो उन्होंने अम्मोन के बारे में पूछा, और यह जाना कि वह वास्तव में उसी दिन और उसी घड़ी में निधन कर गया था जब वृद्ध ने उसकी आत्मा को स्वर्ग की ओर जाते हुए देखा था।

4. निम्नलिखित दृष्टि, जो स्वयं संत एंथनी द्वारा सुनाई गई है, आलस्य को दूर करने और उत्साह जगाने में कम प्रभावशाली नहीं है। वे कहते हैं, 'मैंने ईश्वर से प्रार्थना की कि वह मुझे दिखाए कि एक भिक्षु को किस प्रकार की सुरक्षा घेरे रहती है और उसकी रक्षा करती है!' और मैंने एक भिक्षु को ज्वलंत दीपों से घिरा हुआ देखा, और स्वर्गदूतों की एक भीड़ उसे अपनी आँख के तारे की तरह बचा रही थी, और अपनी तलवारों से उसकी रक्षा कर रही थी। तब मैंने आह भरकर कहा: 'एक भिक्षु को यही प्रदान किया जाता है!' और फिर भी, इसके बावजूद, शैतान उस पर विजय प्राप्त कर लेता है, और वह गिर जाता है। और दयालु प्रभु की ओर से मुझे एक आवाज़ सुनाई दी, जो कह रही थी: 'शैतान किसी को भी नीचे नहीं गिरा सकता; अब उसकी कोई शक्ति नहीं है क्योंकि मैंने, मानव स्वभाव धारण करके, उसके अधिकार को कुचल दिया है। लेकिन मनुष्य अपनी ही इच्छा से गिरता है जब वह लापरवाही करने लगता है और अपनी वासनाओं और कामनाओं में लिप्त हो जाता है।' मैंने पूछा: 'क्या हर भिक्षु को ऐसी ढाल प्रदान की जाती है?' और मुझे ऐसी ढाल से सुरक्षित भिक्षुओं की एक भीड़ दिखाई गई। तब मैं चिल्लाया: 'धन्य है मानव जाति, और विशेष रूप से भिक्षुओं का समूह, जिनका एक ऐसा प्रभु है जो इतना दयालु और मानवता के प्रति इतना प्रेम करने वाला है!' इसलिए हमें अपने स्वयं के उद्धार के लिए उत्सुक रहना चाहिए और, सभी लापरवाही को त्यागकर, अपने कार्यों को लगन से करना चाहिए, ताकि हम हमारे प्रभु यीशु मसीह की कृपा से स्वर्ग के राज्य के योग्य समझे जाएँ (पैट्र. ग्रेक. खंड 40, पृ. 1083)।

५. एक अन्य अवसर पर, संत एंथनी ने अपने शिष्यों को बताया कि कैसे, जब उत्साह कम हो जाता है, तो मठवासी जीवन शिथिल हो जाता है और उसकी महिमा फीकी पड़ जाती है। उनके कुछ शिष्यों ने, रेगिस्तान में संन्यासियों की अनगिनत भीड़ को देखकर, जो ऐसे गुणों से सुशोभित और एक तपस्वी के पवित्र जीवन में सफलता के लिए इतनी लगन से उत्साही थे, बाबा एंथनी से पूछा: 'पिताजी, यह उत्साह और एकांत, गरीबी, विनम्रता, संयम और अन्य सभी सद्गुणों के प्रति यह प्रेम, जिसके लिए भिक्षुओं की यह भीड़ अब इतनी लगन से स्वयं को समर्पित कर रही है, कितनी देर तक बना रहेगा?' ईश्वर के पुरुष ने उन्हें एक आह और आँसुओं के साथ उत्तर दिया: 'समय आएगा, मेरे प्रिय बच्चों, जब भिक्षु रेगिस्तानों को छोड़ देंगे और इसके बजाय धनी शहरों में उमड़ पड़ेंगे, जहाँ, इन रेगिस्तानी गुफाओं और तंग कोठरियों के स्थान पर, वे शाही महलों को टक्कर देने वाली भव्य इमारतें खड़ी करेंगे; गरीबी के बजाय,

धन संचय करने का प्रेम बढ़ेगा; वनिम्रता की जगह अहंकार ले लेगा; कई लोग ज्ञान पर गर्व करेंगे, लेकनि वह ज्ञान जो ऐसे ज्ञान के अनुरूप अच्छे कर्मों से रहति और खोखला होगा; प्रेम ठंडा पड़ जाएगा; संयम के बजाय, लालच बढ़ेगा, और उनमें से बहुत से भव्य दावतों में लगे रहेंगे, स्वयं सांसारकि लोगों से कम नहीं, जनिसे भक्षिु केवल अपने वस्त्रों और शरिभिरण में ही भन्नि होंगे; और यद्यपवि वे संसार के बीच रहेंगे, वे स्वयं को संन्यासी कहेंगे (एक भक्षिु, वास्तव में, एक संन्यासी ही होता है)। इसके अलावा, वे घमंड करेंगे, यह कहते हुए: *'मैं पौलुस का हूँ, मैं अपollos का हूँ'* (1 कुरन्थियिों 1:12), मानो उनके संन्यासवाद की सारी शक्त उिनके पूर्वजों की गरमिा में नहिति हो: वे अपने पतिाओं का घमंड करेंगे, ठीक वैसे ही जैसे यहूदी अपने पति इब्राहीम का घमंड करते हैं। परन्तु उस समय ऐसे भी होंगे जो हमसे कहीं बेहतर और अधकि सद्धि साबति होंगे, क्योंक'िधन्य है वह जो अपराध कर सकता था परन्तु उसने नहीं कयिा, और बुराई कर सकता था परन्तु उसने नहीं की' (सरिैक 31:11), बजाय उस व्यक्त िके जो भलाई के लिए प्रयासरत उत्साही लोगों की भीड़ से भलाई की ओर आकर्षति हुआ। तो फरि, नूह, अब्राहम और लूत, जन्होंने दुष्ट लोगों के बीच उत्साह से भरा जीवन जयिा, शास्त्र में इतनी सही तरीके से प्रशंसति क्यों हैं (पैट्र. ग्रीक. खंड 40, पृ. 1095)?

6. ये दोनों अनुस्मारक—अर्थात् मृत्यु और उससे परे की *स्थति—ि'ईश्वर का भय'* जगाते हैं, जो उत्साह के लिए तीसरा उत्प्रेरक है। संत एंथनी ने, जैसा क िहमने पहले ही देखा है, एक गहरी कहावत में ईश्वर के भय का आह्वान कयिा: 'हमेशा ईश्वर का भय धारण करो; उसको भय करो जो मृत्यु और जीवन देता है' (उपरोक्त बदिंु 7 देखें)। एक अन्य संक्षपि्त कहावत में, वह सभी सद्गुणों के लिए तत्परता और योग्यता के स्रोत के रूप में ईश्वर के भय की ओर इशारा करते हैं। वे कहते हैं क िईश्वर का भय सभी सद्गुणों की शुरुआत और बुद्धि की शुरुआत है। जसि प्रकार प्रकाश, एक अंधेरे घर में प्रवेश करके, उसके अंधकार को दूर कर देता है और उसे प्रकाशति कर देता है, उसी प्रकार ईश्वर का भय, जब मानव हृदय में प्रवेश करता है, तो अंधकार को भगा देता है और उसमें सभी सद्गुणों के प्रत िउत्साह जगाता है (Patr. gr. vol. 40, p. 1084)।

7. अत; उन्होंने हर संभव तरीके से इस भय को खोने के प्रत िचेतावनी दी। वे कहते थे, 'अपनी कोठरी न छोड़ो, अन्यथा तुम ईश्वर का भय खो दोगे।' क्योंक िजैसे पानी से बाहर नकिाली गई मछली मर जाती है, वैसे ही यद िकोई भक्षिु अपनी कोठरी छोड़कर बाहर घूमने नकिलता है तो उसके हृदय में ईश्वर का भय मर जाता है (उपरोक्त)।

8. लेकनि उत्साह के ये सभी सहारे बाहरी रूप से खींचते हुए, जबरदस्ती करते हैं, भले ही वे भीतर स्थापति हों। मनुष्य को उत्साह के आंतरकि उत्तेजक प्राप्त करने चाहिए, ताक ियह पानी के झरने की तरह हृदय से अपने आप फूटता हो। हृदय को इस स्थत िमें नम्निलखिति द्वारा लाया जाता है: 1) ईश्वर में जीवन की *'मीठास का अनुभव'*। जब तक यह अनुभूत िनहीं होती, हमारा उत्साह अवश्विसनीय बना रहता है। क्यों, जब एक भाई ने संत एंथनी से पूछा: 'ऐसा क्यों है क ियद्यप िईश्वर, पवत्रि शास्त्रों में, आत्मा को सर्वोच्च आशीर्वादों का वादा करते हैं, आत्मा उन्हें खोजने में लगातार दृढ़ नहीं रहती, बल्क िक्षणभंगुर, नश्वर और अशुद्ध की ओर मुड़ जाती है?' – उन्होंने उत्तर दयिा: 'जसिने अभी तक स्वर्गीय आशीर्वादों के मधुरस्वाद ( ) का स्वाद नहीं चखा है, उसने अभी तक पूरे हृदय से ईश्वर से लगाव नहीं बनाया है; इसीलिए वह नश्वर चीज़ों की ओर लौट जाता है।' लेकनि जब तक कोई उस पूर्णता को प्राप्त नहीं कर लेता, तब तक उसे ईश्वर की पवत्रि इच्छा के प्रत िसमर्पण से ईश्वर की सेवा करनी चाहिए, ताक िवह पैगंबर के साथ कह सके: 'मैं आपके लिए एक बैल की तरह था' (भजन संहति 72:23), यानी, 'मैंने आपकी सेवा एक जुते हुए जानवर की तरह की' (पैट्र. लैट. टी. 73, पृ. 1056)।

९. अत; २) ईश्वर के प्रत ि*'प्रेम'* उत्साह के लिए एक और भी शक्तशिाली उत्प्रेरक है। संत एंथोनी स्वयं जानते थे क िप्रेम भय से अधकि शक्तशिाली है, और उन्होंने कहा: 'मैं अब परमेश्वर से नहीं डरता, बल्क िउनसे प्रेम करता हूँ (अर्थात् मैं यह सोचकर भय से प्रेरति नहीं हूँ क िमुझे अपना आचरण कैसे करना चाहिए, बल्क िप्रेम से प्रेरति हूँ); क्योंक ि*'प्रेम भय को बाहर नकिाल देता है'* (1 यूहन्ना 4:18)। (दोस्त. स्क. 32)।

10. उन्होंने दूसरों को भी, सबसे बढ़कर, अपने भीतर ईश्वर के प्रत िएक अटूट और स्थायी शक्त िके रूप में प्रेम को वकिसति करने के लिए प्रेरति कयिा। इस प्रकार, जब एक बार उनके भाइयों ने उनसे पूछा: 'ईश्वर को सबसे अधकि प्रसन्न कैसे कयिा जा सकता है?', तो उन्होंने उत्तर दयिा: 'ईश्वर को सबसे प्रसन्न करने वाला कर्म प्रेम का कर्म है।' यह उस व्यक्त िद्वारा कयिा जाता है जो अपने वचिारों की पवत्रिता में नरिंतर ईश्वर की स्तुत िकरता है, जो ईश्वर की स्मृत, िप्रतज्ञिा की गई आशीर्वादों की स्मृत, िऔर उन सभी बातों की स्मृत िसे प्रेरति होता है जो उन्होंने हमारे लिए करने में प्रसन्नता व्यक्त की है। इन सभी की स्मृत िसे, पूर्ण प्रेम का जन्म होता है, जैसा क िनर्धारति है: *'तुम अपने प्रभु परमेश्वर से अपने पूरे हृदय, और अपनी पूरी आत्मा, और अपनी सारी शक्त िसे प्रेम करोगे'* (व्यवस्थावविरण 6:5), – और जैसा लखिा है: *'जैसे हरिण नदयिों के जल के लिए तरसता है, वैसे ही हे परमेश्वर, मेरी आत्मा तेरे लिए तरसती है'* (भजन संहति 41:2)। यह वह कार्य है जसिसे हमें परमेश्वर को प्रसन्न करना चाहिए,

ताकि प्रेरित के वचन हम में पूरे हों: *'हमें परमेश्वर के प्रेम से कौन अलग कर सकता है? क्या संकट, या क्लेश, या सतावट, या अकाल, या नग्नता, या संकट, या तलवार?'* वास्तव में कुछ भी नहीं (रोमियों 8:35, 38)। (पैट्र. ग्र. खंड 40, पृ. 1094)।

11. इससे, या इसके साथ ही, 3) अच्छाई करने और ईश्वर के मार्गों पर चलने का *'आनंद'* आता है, जो बदले में उत्साह के लिए एक प्रोत्साहन बन जाता है। संत एंथनी का निम्नलिखित कथन इसी से संबंधित है। उनसे पूछा गया: 'प्रभु में आनंद क्या है?' उन्होंने उत्तर दिया: 'ईश्वर की महिमा के लिए किसी भी आज्ञा को आनंद के साथ पूरा करना—यही प्रभु में आनंद है। क्योंकि जब हम उसकी आज्ञाओं को पूरा करते हैं, तो हमें आनंदित होना चाहिए; इसके विपरीत, जब हम उन्हें पूरा नहीं करते हैं, तो हमें दुखी होना चाहिए। इसलिए, आइए हम अपने हृदय में आनंद के साथ आज्ञाओं को पूरा करने का प्रयास करें, ताकि हम प्रभु में एक दूसरे को सांत्वना दे सकें; फिर भी ऐसा करते समय हमें यह ध्यान रखना चाहिए कि आनंद मनाते समय हम घमंड से न बह जाएँ, बल्कि अपनी सारी आशा प्रभु में रखें (पैट्र ग्र. टी. 40, पृ. 1095। इसी प्रकार का एक विचार बेसिल द ग्रेट के संक्षिप्त नियम, प्रश्न 193 में भी मिलता है)।

विशेष रूप से, सदाचारी कर्म और अच्छे कार्य

इस प्रकार, इस तरह से निर्देशित और प्रज्वलित उत्साह तपस्या के प्रयासों—शारीरिक और आध्यात्मिक दोनों—और हर अच्छे कार्य की ओर निर्देशित होता है।

1. सेंट एंथनी ने, *तपस्या* के प्रयासों पर अपने सामान्य निर्देश में (देखें अनुच्छेद 7) और कामुक प्रवृत्तियों के कारणों की अपनी सूची में (देखें अंश, अनुच्छेद 18), संकेत दिया, जिसमें देह की अति-आसक्ति शामिल है – और इस प्रकार (ऐसी प्रवृत्तियों के उपचार के रूप में) वह उपवास के माध्यम से शरीर को थकाने की ओर इशारा करते हैं (दोस्त. स्क. 22)। संत एंथनी ने हमें शरीर के प्रति बहुत कठोर होने का आदेश दिया (ऊपर बिंदु 7 देखें), और किसी भी प्रकार की आसक्ति की निंदा की। इसीलिए वह उन लोगों को अनुकूल दृष्टि से नहीं देखता था जो स्नानागारों में अक्सर जाते थे। उसने कहा, 'हमारे पूर्वजों ने तो अपना चेहरा भी कभी नहीं धोया – फिर भी हम सांसारिक स्नानागारों में जाते हैं' (अल्फाब. पैटर., अनुच्छेद 4)।

2. देह को वश में करने के बाद, उन्होंने *'जीभ को काबू में रखने' को* बहुत महत्व दिया। उन्होंने इस करतब को भटकने के बराबर बताया, कहते हुए: 'हमारी भटकन अपने मुंह को बंद रखने में ही है' (उपरोक्त, पृ. 4ff.)।

3. जो लोग मन में जो कुछ भी आता है, बोल देते हैं, वे एक बिना दरवाज़े के आँगन के समान हैं, जिसमें कोई भी इच्छुक व्यक्ति प्रवेश कर सकता है, खलिहान तक जा सकता है और गधे को खोल सकता है। यद्यपि यह विचार स्वयं संत एंथोनी द्वारा व्यक्त नहीं किया गया था, यह उनकी उपस्थिति में कहा गया था और बेशक, उन्होंने इसकी मंजूरी दे दी थी (दोस्त. स्क. 18)।

४. उन्होंने *'कोठरी में बैठने' को* भी बहुत महत्व दिया। वे कहते हैं, जैसे मछलियाँ यदि बहुत देर तक सूखी जमीन पर रह जाएँ तो मर जाती हैं, वैसे ही भिक्षु भी, जब वे अपनी कोठरी के बाहर या गृहस्थों की संगत में बहुत अधिक समय बिताते हैं, तो वे मौन के प्रति अपना प्रेम खो देते हैं। इसलिए, जैसे एक मछली समुद्र के लिए तरसती है, वैसे ही हमें अपनी कोठरी की ओर जल्दी लौटना चाहिए, कहीं ऐसा न हो कि बाहर रहते हुए हम अपनी आंतरिक जागरण को भूल जाएँ (Dost. sk. 10)।

५. सामान्य रूप से, उन्होंने सलाह दी कि व्यक्ति को अपनी कोठरी के भीतर इतनी सख्ती से आचरण करना चाहिए कि कोठरी संन्यासी के लिए बेबीलोन की भट्टी की तरह हो, जो उसके भीतर की सभी अशुद्धियों को जलाकर राख कर दे (Patr. gr. t.40, 1086)।

6. हालाँकि, उन्होंने अपने तपस्या के कठोर नियमों में कुछ ढील दी, जैसा कि शिकारी को दिए गए उनके उत्तर से स्पष्ट है। कहा जाता है कि एक व्यक्ति, रेगिस्तान में जंगली जानवरों का शिकार करते समय, अब्बा एंथनी को भाइयों के साथ मज़ाक करते हुए देखता है और भटक जाता है। वरिष्ठ, यह सुनिश्चित करना चाहते हुए कि कभी-कभी भाइयों को कुछ राहत देना आवश्यक होता है, ने उससे कहा: 'अपने धनुष पर एक तीर चढ़ाओ और उसे पीछे खींचो।' उसने वैसा ही किया। वरिष्ठ ने उससे कहा: 'इसे और पीछे खींचो।' उस व्यक्ति ने इसे और पीछे खींचा। फिर उन्होंने कहा: 'इसे और भी पीछे खींचो।' शिकारी ने जवाब दिया: 'अगर मैं धनुष को उसकी सीमा से आगे खींचू, तो वह टूट जाएगा।' तब साधु ने उससे कहा: 'परमेश्वर के कार्य में भी ऐसा ही है: यदि हम भाइयों की शक्ति को अतार्किक रूप से आजमाएँ, तो वे जल्द ही निराश हो जाएँगे। इसलिए, भाइयों को समय-समय पर कुछ विश्राम देना आवश्यक है।' – यह सुनकर शिकारी गहराई से प्रभावित हुआ और आध्यात्मिक रूप से संतुष्ट होकर साधु के पास से चला गया। और भाई, इससे

बल पाकर, अपने स्थान पर लौट गए (दोस्त. स्क्. 13)। इसके अलावा, ऐसी कहावते और कथाएँ संरक्षति हैं जो आध्यात्मकि कारनामों, या हृदय की प्रवृत्तियों की ओर इशारा करती हैं, जो सफलता को नर्धिारति करती हैं। ये हैं:

७. *धैर्य।* यह तपस्वी के लिए इतना आवश्यक है कि यदि उसमें यह गुण नहीं है, तो वह स्वयं कसिी भी मूल्य का नहीं है। इस प्रकार, भाइयों ने संत एंथनी से एक नश्चिति भक्षिु की प्रशंसा की। जब यह भक्षिु आया, तो संत एंथनी ने उसे यह परखने के लिए आज़माया कि क्या वह अपमान सहन कर सकता है; और यह देखकर कि वह नहीं कर सकता, उन्होंने उससे कहा: 'तुम एक ऐसे गाँव की तरह हो जो सामने से सुंदर है, लेकनि पीछे से लुटेरों द्वारा लूट लयिा गया है' (दोस्त., अध्याय 15)।

8. धैर्य आवश्यक है क्योंकि हमें प्रलोभनों की आवश्यकता होती है। और संत एंथनी ने कहा: 'प्रलोभनों के बनिा कोई भी स्वर्ग के राज्य में प्रवेश नहीं कर सकता; यदि प्रलोभन न होते, तो कोई भी नहीं बचता' (संत एंथनी के कृत्य, अध्याय 5)।

९. *प्रार्थना।* उन्होंने इसे उदाहरण द्वारा सखिाया, क्योंकि हर कोई जानता था कि वह कतिनी देर तक प्रार्थना करते थे। 'हम जानते हैं,' उनके शष्यिों ने कहा, 'कि धन्य वृद्ध कभी-कभी प्रार्थना में इतने तल्लीन हो जाते थे कि वे पूरी रात उसी में डूबे रहते थे; और जब उगता हुआ सूरज उनके इस प्रार्थना में, जो उनके मन के आनंद में इतनी प्रगाढ़ थी, बाधा डालता था, तो हम उन्हें यह कहते हुए सुनते थे: "हे सूरज, तुम मुझे क्यों परेशान करते हो? ऐसा है मानो तुम केवल मेरे मन की दवि्य ज्योति से मेरा ध्यान भटकाने के लिए उगते हो' (Patr. lat. vol. 73, p. 848)।

10. *आँसू।* इस प्रकार, जब एक भाई ने संत एंथनी से पूछा, 'मुझे अपने पापों के बारे में क्या करना चाहिए?', तो उन्होंने उत्तर दयिा: 'जो कोई भी पापों से मुक्त होना चाहता है, वह वलिाप और कराह के माध्यम से उनसे मुक्त हो जाएगा; और जो कोई भी सद्गुण के अनुरूप बनना चाहता है, वह आँसुओं भरे वलिाप के माध्यम से उसके अनुरूप बन जाएगा। भजन गाने का कार्य ही एक प्रकार का वलिाप है। यहूदा के राजा हजिकयि्याह के उदाहरण को याद करें, जसिके बारे में यशायाह भवष्यिवक्ता की पुस्तक (अध्याय 38) में लखिा है, न केवल अपने रोने से अपनी बीमारी से चंगा हुआ, बल्कि उसे पंद्रह साल और जीवन भी मलिा; और जसि पर, उसके बहाए गए आँसुओं के कारण, 1,85,000 सैनकिों वाली शत्रु सेना को परमेश्वर की शक्ति से मार गरिाया गया। प्रेरति संत पतरस को मसीह का इनकार करके उनसे पाप करने के लिए अपने रोने के द्वारा क्षमा मलिी। मरयिम को, उद्धारकर्ता के पैरों को अपने आँसुओं से धोने के कारण, यह सुनने का सौभाग्य मलिा कि सुसमाचार के प्रचार के साथ यह हर जगह घोषति कयिा जाएगा (Patr. lat. vol. 73, p. 1055)।

11. संत एंथनी को एक भक्षिु के जीवन में हँसी के लिए कोई स्थान नहीं मलिा, और जब उनके शष्यिों ने उनसे पूछा: 'क्या हम कभी हँस सकते हैं?', तो उन्होंने उत्तर दयिा: 'हमारे प्रभु हँसने वालों की नदिा करते हैं जब वे कहते हैं: *"हाय तुम जो अब हँसते हो, क्योंकि तुम रोओगे और शोक करोगे"* (लूका 6:25)। इसलिए, एक वश्विासी भक्षिु को हँसना नहीं चाहिए; बल्कि हमें उन लोगों के लिए रोना चाहिए जो परमेश्वर के नाम का अपमान करते हैं, क्योंकि वे उसकी व्यवस्था का उल्लंघन करते हैं और अपना पूरा जीवन पाप में डूबे हुए बतिाते हैं। आओ हम रोएँ और शोक मनाएँ, और परमेश्वर से नरिंतर वनिती करें कि वह उन्हें पाप में अपने हृदय को कठोर करने न दें, और यह कि वे पश्चाताप करने से पहले मृत्यु के शकिारी न बन जाएँ (पैट्र. ग्र. खंड 40, पृ. 1096। इसी प्रकार का एक अंश संत बेसलि द ग्रेट के शॉर्ट रूल्स, 31 में भी मलिता है)।

12. *वनिम्रता,* जो ऊपर से एक ढाल उतारती है और सभी गरिावटों से बचाती है। संत एंथनी ने कहा, 'मैंने देखा, शत्रु के सभी जाल पृथ्वी पर बछिे हुए थे, और एक आह भरकर मैंने कहा: "तो फरि उनसे कौन बचेगा?" लेकनि मैंने एक आवाज सुनी जो मुझसे कह रही थी: "वनिम्रता"' (Dost. sk. 7).

13. तो उन्होंने यह क्यों सखिाया: यदि हम कोई अच्छा प्रयास करते हैं, तो हमें प्रभु के सामने बहुत नम्र होना चाहिए, ताकि वह, जो हमारी कमजोरी को जानता है, हमें अपने दाहनि हाथ से ढक ले और हमारी रक्षा करे; क्योंकि यदि हम घमंडी हो जाते हैं, तो वह हमसे अपनी सुरक्षा हटा लेगा, और हम नष्ट हो जाएँगे (Patr. gr. t. 40, पृ. 1090).

14. एक अन्य अवसर पर उन्होंने कहा: जैसे गर्व और मन का उत्कर्ष शैतान को स्वर्ग की ऊँचाइयों से गहराई में गरिा देते हैं, वैसे ही वनिम्रता और नम्रता मनुष्य को पृथ्वी से उठाकर स्वर्ग में ले जाती हैं (उपरोक्त, पृ. 1081)।

15. यह सुनश्चिति करने के लिए कि मौन जैसी आध्यात्मकि अनुशासन घमंड का कारण न बने, उन्होंने इसे आत्म-नदिक अर्थ देने की सलाह दी। उन्होंने कहा, यदि कोई मौन का तपस्यात्मक अभ्यास करता है, तो उसे यह न सोचे कि वह कोई पुण्य कर रहा है, बल्कि उसे अपने हृदय में यह धारण रखना चाहिए कि वह इसलिए मौन है क्योंकि वह बोलने के अयोग्य है (Patr. lat. vol. 73, p. 1051)।

16. संत एंथनी ने यह भी सिखाया कि प्रभु स्वयं हमें इस तरह से आंतरिक रूप से मार्गदर्शन करते हैं कि वे हमारे अच्छे कर्मों को हमसे छिपाए रखते हैं, ताकि हम अपने आत्म-परception में विनम्र बने रहें। वे कहा करते थे: यदि एक चक्की चलाने वाला जानवर की आँखों पर पट्टी नहीं बांधता, तो उसका काम सफलतापूर्वक नहीं चलेगा। उस जानवर का सिर चकरा जाता, और वह काम करने में असमर्थ होकर गिर जाता। – इसी प्रकार, ईश्वर की पवित्र प्रेरक व्यवस्था (providence) द्वारा, हमें एक आवरण प्रदान किया जाता है ताकि हम अपने अच्छे कर्मों को न देख सकें; कहीं ऐसा न हो कि उन्हें अपना मानकर हम घमंडी हो जाएँ और अपने सभी प्रयासों का फल खो दें! यह तब होता है जब हमें अशुद्ध विचारों से अभिभूत होने के लिए छोड़ दिया जाता है, जिनमें हम खुद को और अपने ही विचारों को दोष दिए बिना नहीं रह पाते। और ऐसी अवस्था में, हमारे अपने पुण्य पर चिंतन नहीं हो सकता; परिणामस्वरूप, हमारे छोटे-छोटे पुण्य कर्म इन अशुद्ध विचारों के कारण छिपे और अनदेखे रह जाते हैं (पेरफिरेसीस, वही, पृ. 1037)।

१७. अहंकार कितना हानिकारक है! इसका एक ज्वलंत उदाहरण उस युवा तपस्वी के पतन से मिलता है, जो उसने किया था उसके चमत्कार के बाद हुआ। जहाँ यह युवक तपस्या कर रहा था, उस स्थान से गुजरते हुए कुछ वृद्ध संत एंथनी के पास जा रहे थे और वे अत्यंत थक चुके थे। उसने कुछ जंगली गधों को बुलाया और उन्हें आज्ञा दी कि वे इन वृद्धों को अपनी पीठ पर बिठाकर संत एंथनी के पास ले जाएँ। जब बुजुर्गों ने सेंट एंथोनी को यह बताया, तो उन्होंने जवाब दिया: 'यह भिक्षु, मुझे लगता है, माल से लदा एक जहाज है, लेकिन मुझे नहीं पता कि वह बंदरगाह तक पहुँचेगा या नहीं।' – और वास्तव में, घमंडी हो जाने के कारण, वह कुछ ही समय बाद कृपा से गिर गया। यह महसूस करते हुए, सेंट एंथोनी ने अपने शिष्यों से कहा: 'इसी घड़ी, वह युवा तपस्वी गिर गया है।' 'जाकर देखो।' वे गए और उसे एक चटाई पर बैठे हुए पाया, जो उसने किया था उस पाप पर रो रहा था (संतों के कृत्य, 94)।

18. लेकिन जैसे आत्म-गौरव विनाशकारी है, वैसे ही आत्म-अपमान, इसके विपरीत, उद्धारकारी है। इसका उदाहरण जूते बनाने वाले के उदाहरण से समझाया गया है, जिसके बारे में संत एंथनी को स्वर्ग से एक प्रकटवाणी मिली थी। संत एंथोनी अपनी कोठरी में प्रार्थना कर रहे थे जब उन्होंने एक आवाज़ सुनी जो उनसे कह रही थी: 'एंथोनी, तुम अभी तक अलेक्जेंड्रिया के एक ऐसे चप्पल बनाने वाले के स्तर तक नहीं पहुँचे हो!' संत एंथोनी अलेक्जेंड्रिया गए, इस चप्पल बनाने वाले को ढूंढ निकाला, और उसे अपने जीवन के बारे में कुछ खास बताने के लिए मना लिया। उसने कहा: 'मुझे याद नहीं कि मैंने कभी कोई अच्छा काम किया हो, फिर भी, जब मैं सुबह बिस्तर से उठता हूँ, काम पर बैठने से पहले, मैं क्यों कहता हूँ: "इस शहर में हर कोई, चाहे छोटा हो या बड़ा, अपने अच्छे कामों के कारण परमेश्वर के राज्य में प्रवेश करेगा, जबकि मैं अकेला, अपने पापों के कारण, अनंतकालिक यातनाओं को भुगतने के लिए दंडित किया जाऊँगा।"' मैं सोने से पहले, शाम को भी, अपने पूरे दिल की ईमानदारी के साथ यही बात दोहराता हूँ।' यह सुनकर, संत एंथनी को एहसास हुआ कि वह निश्चित रूप से अभी तक उस स्तर तक नहीं पहुँचे थे (Patr. lat. vol. 73, p. 785)।

19. क्या यही कारण नहीं था कि उन्होंने बाद में अक्सर यह उपदेश दोहराया: हमें हर बात में हमेशा खुद को दोष देना और खुद को कोसना चाहिए, और ऐसा ईमानदारी से करना चाहिए, क्योंकि जो कोई खुद को कोसता है, वह परमेश्वर द्वारा धर्मी ठहराया और महिमामंद किया जाता है (उसी में)।

20. *पारस्परिक सेवा और सहायता।* भाइयों ने संत एंथनी से पूछा: 'यदि कोई कहे, "मैं अपने भाइयों से कुछ भी नहीं लूंगा, और न ही मैं उन्हें स्वयं कुछ दूँगा; जो मेरे पास है वह मेरे लिए काफी है"—क्या यह सही है?' संत एंथोनी ने उत्तर दिया: 'मेरे बच्चों! ऐसा व्यक्ति कठोर-हृदय है, और उसकी आत्मा एक शेर की आत्मा है। उसे सभी अच्छे लोगों के समुदाय से अलग माना जाना चाहिए' (Patr. Graec. vol. 40, p. 1095)।

21. एक अन्य अवसर पर उनसे पूछा गया: 'भाइयों की सेवा कैसे करनी चाहिए?' उन्होंने उत्तर दिया: 'जो भाई भाइयों की सेवा करना चाहते हैं, उन्हें वैसे ही सेवा करनी चाहिए जैसे दास अपने स्वामियों की सेवा करते हैं, और जैसे प्रभु ने पतरस की सेवा की, जिन्हें उन्होंने अंतिम सेवा प्रदान की, यद्यपि वे उनके सृष्टिकर्ता थे।' इसके द्वारा प्रभु ने यह दिखाया कि यदि वे लोग जो उन पर की गई सेवा को अस्वीकार करते हैं निर्दोष नहीं हैं, तो उन लोगों की निंदा तो और भी अधिक योग्य है जो अपने भाइयों की सेवा करना अपने लिए नीच समझते हैं। यदि पहले वालों का प्रभु के साथ कोई भाग नहीं होगा, जैसा कि प्रभु ने पतरस से कहा, तो बाद वालों के बारे में क्या कहा जा सकता है? (वही।)

२२. और सामान्य रूप से वह कहा करते थे: जीवन और मृत्यु दोनों ही अपने पड़ोसी से आते हैं। क्योंकि यदि हम एक भाई को जीतने में सफल हो जाते हैं, तो हम ईश्वर को जीतने में सफल हो जाते हैं; लेकिन यदि हम एक भाई को भटका देते हैं, तो हम मसीह के विरुद्ध पाप करते हैं (Dost. sk. 9)।

23. *गिरने वालों के प्रति करुणा और सहनशीलता।* अबा एलियास के मठ में, एक भाई परीक्षा में पड़ गया। उसे वहाँ से निकाल दिया गया, और वह पहाड़ पर अबा एंथोनी के पास गया। अबा एंथोनी ने उसे कुछ समय तक अपने पास रखकर, उसे उसी मठ में वापस भेज दिया जहाँ से वह आया था। लेकिन भाइयों ने उसे फिर से भगा दिया। वह अब्बा

एंथनी के पास लौट आया और उनसे कहा: 'भाई मुझे स्वीकार नहीं कर रहे हैं, पिताजी!' तब वरिष्ठ ने उसे इन शब्दों के साथ विदा किया: 'समुद्र में एक जहाज पर तूफान आ गया; उसका माल डूब गया और वह बड़ी मुश्किल से खुद को बचा सका, फिर भी तुम तट के पास बचे हुए को भी डुबाना चाहते हो।' भाइयों ने, यह सुनकर कि अब्बा एंथनी ने उस भाई को उनके पास भेजा है, तुरंत उसे स्वीकार कर लिया (दोस्त. स्क. 21)।

24. एक मठ में, एक भाई पर व्यभिचार का झूठा आरोप लगाया गया, और वह अबा एंथोनी के पास आया। मठ के अन्य भाई भी उसे समझाने और अपने बीच वापस ले जाने के लिए आए। उन्होंने उससे डांटते हुए पूछना शुरू किया कि उसने ऐसा क्यों किया, लेकिन उस भाई ने अपना बचाव करते हुए कहा कि उसने ऐसा कुछ भी नहीं किया है। उस समय आबा पाफनुटियस केफालोस वहाँ मौजूद थे। उन्होंने उन्हें यह दृष्टान्त सुनाया: 'मैंने नदी के किनारे एक आदमी को कीचड़ में घुटनों तक फँसा हुआ देखा। कुछ लोग उसकी मदद करने आए, और अंत में वे उसे गर्दन तक खींच ले गए।' बाद में आबा एंथनी ने कहा: 'सचमुच, ऐसा ही व्यक्ति है जो आत्माओं को चंगा कर सकता है और बचा सकता है!' – बड़ों के शब्दों से प्रेरित होकर, भाइयों ने अपने भाई के सामने सिर झुकाया, और, संतों की सलाह पर, उसे अपने बीच वापस ले लिया (Deeds of the Saints, ch. 29)।

२५. सेंट एंथनी का यह विचार कि सच्चा भाईचारा कौन धारण कर सकता है, उल्लेखनीय है। उन्होंने कहा: 'एक व्यक्ति तब तक सच्चे अर्थ में अच्छा नहीं हो सकता, चाहे वह इसकी कितनी भी इच्छा क्यों न करे, जब तक ईश्वर उसमें वास नहीं करते; क्योंकि ईश्वर के सिवा कोई अच्छा नहीं है' (Patr. lat. vol. 73, p. 785)।

सभी चीजों का परम लक्ष्य और पूर्णता का शिखर

1. ईश्वर का यह वास, या ईश्वर में जीवन, सभी तपस्या कार्यों का परम लक्ष्य और पूर्णता का शिखर है। ईश्वर ने स्वयं यह बात सेंट एंथनी को तब प्रकट की जब उन्हें रेगिस्तान में ऐसा प्रकाशन मिला: 'शहर में आप जैसे एक व्यक्ति हैं, एक कुशल चिकित्सक, जो अपनी अतिरिक्त आय जरूरतमंदों को दे देता है और हर दिन स्वर्गदूतों के साथ त्रिसगियन का गायन करता है' (अर्थात् अपने पड़ोसी के प्रति प्रेम की पूर्णता के माध्यम से, वह ईश्वर में रहता है और ईश्वर के सामने चलता है)। (संत एंथनी का जीवन, अध्याय 24)।

संत एंथनी की पूर्णता और स्वर्ग में उनकी महिमा

1. अब्बा एंथोनी के बारे में कहा जाता था कि वह एक द्रष्टा थे, लेकिन सांसारिक गपशप से बचते हुए, वह इसे प्रकट नहीं करना चाहते थे; उन्हें दुनिया की वर्तमान और भविष्य की घटनाओं का प्रकटीकरण होता था (Acts of the Saints, 30)।

2. एक वृद्ध ने ईश्वर से प्रार्थना की कि वह उन्हें (महिमा में) संतों को दिखाएँ, और उन्होंने अबा एंथोनी को छोड़कर सभी को देखा। उन्होंने उन्हें दिखाने वाले से पूछा: 'तो अबा एंथोनी कहाँ हैं?' दूसरे ने उत्तर दिया: 'एंथोनी वहाँ हैं जहाँ ईश्वर हैं!' (संत एंथोनी का जीवन, अध्याय 28)।

5. संत एंथनी महान के कुछ कथनों की व्याख्या, जो उनकी मृत्यु के बाद एक वृद्ध द्वारा दी गई थी

1. *संन्यासियों का प्रश्न*। हम संत बाबा एंथोनी के उन शब्दों को कैसे समझें, जो उन्होंने अपने शिष्य पॉल से तब कहे जब पॉल ने संसार त्यागकर उनके साथ रहने के लिए कहा था: 'यदि तुम संन्यासी बनना चाहते हो, तो एक ऐसे मठ में जाओ जहाँ कई भाई हों जो तुम्हारी कमजोरी का सहारा बन सकें'?

वृद्ध का उत्तर। इससे हमें यह सीख मिलती है कि हमें मठ में दुर्बल, बीमार, अंधे और लकवाग्रस्त लोगों को स्वीकार करना चाहिए – और जब वे आनंद और उत्साह के साथ सद्गुणों के अनुसरण में स्वयं को समर्पित करते हैं तो उनसे प्रेम करना चाहिए, भले ही अपनी दुर्बलताओं के कारण वे सभी श्रम नहीं कर पाते। इसलिए, वे मठाधीश जो दुर्बल वृद्ध पुरुषों को स्वीकार नहीं करते—भले ही यह ज्ञात हो कि वे बहुत अच्छे चरित्र के हैं—लेकिन स्वेच्छा से मजबूत युवा पुरुषों को मठ के भीतर विभिन्न कर्तव्य निभाने और काम करने के लिए स्वीकार करते हैं, भले ही वे अभद्र और निर्लज्ज हों, वे निंदा के पात्र हैं। धन्य व्याख्याकार[9] *ने 'शासन की पूर्णता'* (मठों के) पर अपनी पुस्तक में ऐसे मठाधीशों को कड़ी फटकार लगाई है, कहते हुए: वे अपने शिष्यों को सदाचार के मामलों में लापरवाह बने रहने देते हैं, जबकि उन्हें शारीरिक और सांसारिक मामलों की ओर दृढ़ता से प्रेरित करते हैं। जो लोग सदाचार के लिए स्वयं को समर्पित करने हेतु संन्यास के व्रत ले चुके हैं, उन्हें वे सांसारिक कार्यों से कोई विश्राम या राहत नहीं देते, उन्हें निरंतर उन्हें करने के लिए विवश करते हैं, और उन पर फटकार लगाते हैं, उन्हें डाँटते, उनका उपहास उड़ाते और

[9] सच है, सामान्यतः कहावतें या नियम… जिस पुस्तक की बात हो रही है, वह हमें प्राप्त नहीं हुई है।

उनकी निंदा करते हैं यदि वे सौंपे गए कार्य को विशेष शीघ्रता से नहीं करते हैं, चाहे वह अक्षमता के कारण हो या, कभी-कभी, उत्साह में कमी के कारण, भले ही वे आध्यात्मिक मामलों में बहुत परिश्रमी और उत्साही हों; इसके विपरीत, वे उन लोगों की बहुत प्रशंसा करते हैं जो अपने सभी श्रम और देखभाल सांसारिक मामलों में लगाते हैं, भले ही वे सद्गुणों की खोज में सुस्त हों। और उनकी यह लगन आज्ञाकारिता के सद्गुण से नहीं, बल्कि इस तथ्य से उत्पन्न होती है कि वे सांसारिक मामलों में खुद को व्यस्त रखना पसंद करते हैं। लेकिन सबसे बुरी बात यह है कि चाहे वे आलसी हों या परिश्रमी, उनके साथ दासों जैसा व्यवहार किया जाता है। हालाँकि, बाबा पिमेन ने कहा: यदि तीन सामुदायिक संन्यासियों में से, एक पूर्ण रूप से मौन का पालन करता है, दूसरा बीमार है लेकिन ईश्वर का धन्यवाद करता है, और तीसरा स्वेच्छा से अपने कर्तव्यों का पालन करता है, तो तीनों एक ही आध्यात्मिक प्रयास में एकजुट होते हैं। इन शब्दों के साथ, इस संत ने यह दिखाया कि एक मठ में जहाँ कई सामुदायिक संन्यासी एकत्रित होते हैं, वहाँ न केवल शारीरिक रूप से मजबूत लोग होने चाहिए—जो विभिन्न कर्तव्यों को पूरा करने के लिए आवश्यक हैं—बल्कि अटूट मौन में स्वयं को समर्पित करने वाले दुर्बल भाई भी होने चाहिए: अन्यथा, उनकी सारी मेहनत व्यर्थ है।

२. प्रश्न। अबा एंथनी ने अपने शिष्य पॉल से क्यों कहा: 'जाओ और एकांत में बैठो, ताकि तुम राक्षसों से उत्पन्न होने वाले संघर्षों को सीख सको'?

उत्तर. (उसे पूर्णता की कामना करते हुए।) क्योंकि एक भिक्षु की पूर्णता उसकी आत्मा से अपने पूरे अस्तित्व को नियंत्रित करने की क्षमता में निहित है। लेकिन ऐसी आध्यात्मिक आत्म-शासन हृदय की पवित्रता के साथ-साथ चलती है; और हृदय की पवित्रता तब प्राप्त होती है जब मन हृदय को नियंत्रित करता है, और मन का नियंत्रण अनवरत प्रार्थना द्वारा होता है। हालांकि, दुष्ट आत्माओं के खिलाफ लड़ाई विचारों और दर्शनों के रूप में होती है, जो एकांत और मौन में अधिक तीव्रता से उकसाए जाते हैं।

नोट. प्रतिक्रिया की शक्ति। एकांत, राक्षसों द्वारा बोए गए सबसे सूक्ष्म विचारों के खिलाफ लड़ाई के लिए निरंतर अवसर प्रदान करता है। यह लड़ाई प्रार्थना में, उस ईश्वर द्वारा लड़ी जाती है जो हृदय में उपस्थित है और उस पर ध्यान देता है, और जो उस पर शासन करता है। इस संघर्ष के विविध अनुभवों के बीच, इस आध्यात्मिक प्रयास का अनवरत स्वभाव, आध्यात्मिक आत्म-नियंत्रण सिखाता है और इसकी आदत डालता है; और इसी में एक संन्यासी और हर ईसाई की सारी आध्यात्मिक पूर्णता निहित है।

3. *प्रश्न।* अबा एंथनी का क्या मतलब है जब वे कहते हैं: 'जिस प्रकार पानी से बाहर निकाली गई मछली मर जाती है, उसी प्रकार उस भिक्षु के साथ होता है जो अपनी कोठरी के बाहर बहुत देर तक ठहरता है'? एक भिक्षु किस प्रकार मछली की तरह मरता है?

उत्तर। आत्मा का जीवन ईश्वर के अनवरत, प्रेमपूर्ण चिंतन में निहित है, जिसे यथार्थ रूप से आत्मा का जीवन कहा जाता है, जो स्वयं में मन और हृदय दोनों को समाहित और एकीकृत करता है। इस प्रकार, यदि कोई भिक्षु नगरों में घूमता है, दृश्यों और बातचीतों से विचलित होकर, तो वह आध्यात्मिक जीवन से वंचित हो जाता है और मर जाता है, क्योंकि वह ईश्वर से मुंह मोड़ लेता है और उसे भूल जाता है, और अपने हृदय से मसीह के प्रति उस प्रेम को भगा देता है जिसे उसने अपनी कोठरी में मौन रहते हुए बहुत परिश्रम से अपने भीतर विकसित किया था। इसके अलावा, कठिनाइयों और कष्टों के प्रति उसका प्रेम कम हो जाता है, और वह स्वयं को देह की विश्राम और सुखों के हवाले कर देता है – और उसके हृदय की पवित्रता इंद्रियों – दृष्टि, श्रवण, स्पर्श, स्वाद और गंध – और वाणी के माध्यम से प्रवेश करने और बाहर निकलने वाली छवियों की बेचैन गति से विक्षिप्त हो जाती है; ये सभी उसे व्यभिचार और अन्य वासनाओं में ले जाते हैं, जो एक भिक्षु की सच्ची मृत्यु और विनाश हैं। इस प्रकार, धन्य एंथनी ने ठीक कहा: जैसे मछली सूखी भूमि पर फेंके जाने पर मर जाती है, वैसे ही वह भिक्षु मर जाता है जो अपनी कोठरी छोड़कर शहरों और गांवों में अपना समय बिताता है।

४. *प्रश्न।* अबा एंथनी कहते हैं: 'जो एकांत में रहता है वह तीन युद्धों से मुक्त है, अर्थात् जीभ, दृष्टि और श्रवण के युद्ध; तो क्या उसके लिए केवल हृदय का युद्ध ही शेष रह जाता है?' कृपया हमें परमधर्मपरायण व्यक्ति के इन शब्दों की व्याख्या करें।

उत्तर। उन्होंने यह यह सुझाने के लिए नहीं कहा कि एकांत और तन्हाई में अनुभव की जाने वाली कलह समुदायों में उत्पन्न होने वाली कलह से कम है, जहाँ मन देखने, सुनने और बोलने से विचलित होता है; बल्कि वे इन शब्दों के द्वारा यह दिखा रहे हैं कि जो लोग एकांत में रहते हैं वे इंद्रियों से होने वाली कलह से मुक्त होते हैं—जिससे दूसरे राक्षसों द्वारा उनके भीतर उत्तेजित की गई हृदय की कलह से भी अधिक पीड़ित होते हैं। हमारे पूर्वज इसी कारण मौन में चले गए: ताकि दृष्टि, वाणी और श्रवण से उत्पन्न होने वाले संघर्षों से हृदय के संघर्ष और तीव्र न हो जाएँ। क्योंकि समुदाय में रहने वाले भाई कितनी आसानी से गिर जाते हैं—जो लगातार बाहर जाते और अंदर आते रहते हैं, मठ

को छोड़ते और उसमें लौटते हैं—क्योंकि इंद्रियों का क्लेश हृदय के क्लेश में जुड़ जाता है, इसी प्रकार मौन में रहने वाले भिक्षु भी आसानी से गिर जाते हैं, और केवल हृदय के संघर्ष से ही परेशान होते हैं, भले ही उनके ऊपर शरीर की इंद्रियों से संघर्ष आ पड़े। यह उन भाइयों (तपस्वियों) द्वारा पूरी तरह से सही ठहराया जाता है, जिनके पास वेदांत में रहते हुए भी कभी-कभी महिलाएँ आईं, और जिनमें परिणामस्वरूप, शरीर के दर्शन और मुख की सुंदरता से हृदय का संघर्ष और भी तीव्र हो गया: वे तुरंत ही हृदय के तीव्र होते संघर्ष से वशीभूत हो गए, और गिर पड़े। वास्तव में, जो लोग एकांत में रहते हैं, उनके लिए आत्मा की भावनाओं से उत्पन्न संघर्ष, शारीरिक इंद्रियों से उत्पन्न संघर्ष से अधिक शक्तिशाली और तीव्र होता है – यह बात धन्य इवाग्रियस के शब्दों से भी देखी जा सकती है, जो कहते हैं कि जो संन्यासी एकांत में रहते हैं, उनके खिलाफ राक्षस स्वयं ही सीधे युद्ध छेड़ते हैं, बिना किसी मध्यस्थ के; जबकि मठों में रहने वालों और सद्गुणों में प्रगति के लिए उत्सुक साधुओं के विरुद्ध, वे दुष्ट साधुओं को उकसाते और भड़काते हैं, जिनसे अधिक क्रूर, परेशान करने वाले या विश्वासघाती कोई नहीं है।

५. प्रश्न। संत अबा एंथनी से संबंधित निम्नलिखित कथन का क्या अर्थ है: 'संन्यासी की कोठरी बेबीलोन की भट्टी है, तीन युवकों का स्थान, जिनमें परमेश्वर का पुत्र था, और यह आग का स्तंभ है जिससे परमेश्वर ने मूसा से बात की'?

उत्तर. जैसे आग के दो गुण होते हैं, एक वह ताप जो दर्दनाक रूप से जलाता है और दूसरा वह प्रकाश जो आनंद लाता है, वैसे ही कोठरी में धैर्यपूर्वक रहने के भी दो प्रभाव होते हैं: एक जो नवागंतुकों को चुपचाप बोझिल और परेशान करता है, कभी-कभी अत्यधिक थकान के माध्यम से, कभी-कभी फटकार के माध्यम से, जबकि दूसरा सफलता के माध्यम से आनंद लाता है, उन लोगों को शांति प्रदान करता है जो अपनी कामनाओं पर विजय प्राप्त कर, पवित्रता में परिपूर्ण हो गए हैं और जिन्हें दिव्य दर्शन प्रदान किए गए हैं। तीन युवकों के संबंध में उनसे जो कहा गया था—कि उन्होंने परमेश्वर के पुत्र को देखा—उसका अर्थ इस प्रकार है: जैसे अननियस, अज़ार्याह और मिसैल, जब बेबीलोन में आग के भट्ठी में फेंके गए, तो न तो वे जले और न ही झुलसे, क्योंकि परमेश्वर का स्वर्गदूत उन्हें उनके बंधन खोलने और आग की विनाशकारी शक्ति से बचाने के लिए भेजा गया था; इसी प्रकार भाइयों के लिए भी एकांत में रहते हुए, राक्षसों द्वारा उन पर भड़काए गए वासनाओं के विरुद्ध संघर्ष, पहली बार में बहुत कठिन होता है; फिर भी, हमारे प्रभु, परमेश्वर के पुत्र, की अनुग्रहपूर्ण सहायता उन्हें कभी नहीं छोड़ती, जो दृश्य रूप में उनसे मिलने आते हैं और उनके साथ वास करते हैं, ताकि, जब वे इस सहायता से अपनी वासनाओं और शत्रुओं पर विजय प्राप्त कर लेते हैं, तो वह उन्हें पूर्ण प्रेम का अनुग्रह और अपनी महिमामय भव्यता प्रदान करें।

6. प्रश्न। अबा एंथनी के निम्नलिखित कथन का क्या अर्थ है: 'बुराई का बदला बुराई से नहीं चुकाना चाहिए, और यदि कोई भिक्षु अभी इस स्तर पर नहीं पहुँचा है, तो उसे चुप रहना चाहिए और शांत रहना चाहिए'? कोई व्यक्ति मौन के माध्यम से इस (क्रोध की कमी) को कैसे प्राप्त कर सकता है?

उत्तर। यदि कोई कमजोर भाई, जो अपनी जीभ से अपने भाई का अपमान करता है और अपने हृदय में उसके प्रति घृणा रखता है, स्वयं को अपनी कोठरी तक सीमित कर लेता है और लोगों से बात करने से परहेज़ करता है, साथ ही बुरे विचारों को दबाता है, और लगातार प्रार्थना और धर्मग्रंथ के पाठ में स्वयं को समर्पित करता है, तो शांति की कृपा उस पर आएगी, – उसका हृदय प्रबुद्ध हो जाएगा और उसकी आत्मा जुनून से मुक्त होकर परमेश्वर में आनंदित होगी। क्योंकि यह मनुष्य, प्रभु के क्रूस को निहारते हुए, उनके प्रति प्रेम से प्रज्वलित हो जाएगा, और, उसे चूमने के बाद, इस बात पर मनन करेगा कि कैसे परमेश्वर ने, पवित्रशास्त्र के अनुसार, जगत से इतना प्रेम किया कि उन्होंने उसके लिए अपने एकमात्र पुत्र को मृत्यु के हवाले कर दिया (यूहन्ना 3:16), इस प्रकार, निस्संदेह, परमेश्वर ने हमसे अपना प्रेम इस बात से प्रकट किया कि *जब हम* अभी भी *'पापियों थे, तो मसीह ने हमारे लिए प्राण दिए'* (रोमियों 5:8)। – यदि परमेश्वर ने अपने ही पुत्र को नहीं बख्शा, बल्कि हमारे लिए उसे मृत्यु के हवाले कर दिया, और वह भी क्रूस पर इतनी लज्जास्पद मृत्यु, *तो 'वह उसके साथ हमें भी सब कुछ उदारता से नहीं देगा'* (रोमियों 8:32), या वह किसी और मामले में हमसे कुछ भी *कैसे* रोक सकता है? हमारे प्रति मसीह की महान दया और प्रेम हमें न केवल यह एहसास दिलाते हैं कि हमें किसी भी तरह से अपनी इच्छाओं के लिए नहीं जीना चाहिए, बल्कि उस के लिए जीना चाहिए जिसने हमारे लिए प्राण दिया (2 कुरिन्थियों 5: 14, 15), बल्कि यीशु की ओर देखने के लिए भी प्रेरित करती है—जिन्होंने हमारे लिए क्रूस पर मृत्यु भोगी और, ऐसी अपमान सहने के बाद, एक बार फिर स्वर्ग में परमेश्वर के दाहिने हाथ पर अपना स्थान ग्रहण किया है—उन्हें धीरज के स्रोत और आदर्श के रूप में देखने के लिए। इसलिए, यदि हम उसके साथ दुख सहते हैं, तो हम उसके साथ महिमामय होंगे (रोमियों 8:17), और यदि हम उसके साथ धीरज रखते हैं, तो हम उसके साथ राज्य भी करेंगे (2 तीमुथियुस 2:12)। प्रेरित पौलुस हमें ऐसा आग्रह क्यों करते हैं, कहते हुए: 'हे भातियो, हम अपनी आँखें हमारे प्रभु के क्रूस पर टिकाए रखें' (इब्रानियों 12:2)? देखो कि उन्होंने पापियों के लिए कितना कुछ

सहन किया, जो अपनी ही आत्मा के शत्रु थे! इसलिए, केवल इसलिए हतोत्साहित न हों या आपका हौसला न टूटे क्योंकि आपको कठिनाइयों, अपमान, दुर्व्यवहार और मृत्यु को सहना पड़ता है, जो आपके लिए उनके प्रति आपके प्रेम के कारण आपकी नियति है। अपनी प्रार्थनाओं में, उन लोगों के लिए क्षमा माँगें जो आपको कष्ट पहुँचाते हैं, ठीक वैसे ही जैसे प्रभु ने अपने सूली पर चढ़ाने वालों के लिए प्रार्थना की थी, यह कहते हुए: *'पिता, इन्हें क्षमा कर'* (लूका 23:34), और जैसे धन्य स्तेफन ने उन्हें पत्थर मारने वालों के लिए हमारे प्रभु से क्षमा मांगी, कहते हुए: *'प्रभु, इस पाप को इनके खाते में न लिख'* (प्रेरितों के काम 7:60)। यदि कोई भिक्षु, अपनी कोठरी में एकांत में बैठकर, इस प्रकार चिंतन करता है, तो वह आत्मा में दृढ़ हो जाएगा, वह प्रभु में अपने सभी भावों पर अधिकार प्राप्त कर लेगा, और न केवल वह किसी को ठेस पहुँचाने, या किसी पर क्रोध करने, या बुराई का बदला बुराई से चुकाने से परहेज़ करेगा, बल्कि यदि उसे अपमान और अन्याय सहना पड़े तो वह बहुत प्रसन्न होगा और इसे एक सम्मान मानेगा। ऐसी नैतिक दृढ़ता एक भिक्षु अपनी कोठरी में मौन, आत्म-परीक्षण और मसीह की आज्ञाओं के धैर्यपूर्वक पालन के माध्यम से प्राप्त करता है, अर्थात्: उपवास, प्रार्थना, ईश्वर पर मनन और मौन में अभ्यास की जाने वाली अन्य सद्गुणों का पालन। इस प्रकार, धन्य बाबा एंथोनी ने बहुत बुद्धिमानी से कहा: यदि कोई भिक्षु अपमानजनक बातें, बड़बड़ाहट और व्यर्थ की बातें बोलने से अपनी जीभ को रोक नहीं सकता, और अपने हृदय को ऐसे पतन से बचाने के लिए पर्याप्त मजबूत नहीं है, तो उसे कम से कम, जहाँ तक वह सक्षम है, मौन और स्थिरता के लिए खुद को समर्पित कर देना चाहिए।

७. *प्रश्न।* एक बार, कुछ भाइयों ने आबा एंथोनी के पास आकर उनसे कहा: 'हमें एक आज्ञा दें जिसे हम पालन कर सकें।' उन्होंने उनसे कहा: 'सुसमाचार में लिखा है: "यदि कोई तुम्हें एक गाल पर थप्पड़ मारता है, तो दूसरा भी उसके पास करो" (मत्ती 5:39)।' उन्होंने उनसे उत्तर दिया: 'हम इसे किसी भी तरह से पूरा नहीं कर सकते।' वृद्ध ने उनसे कहा: 'यदि आप दूसरी गाल नहीं फेर सकते, तो एक गाल पर पड़े प्रहार को धैर्यपूर्वक सहन करें।' उन्होंने कहा: 'हम वह भी नहीं कर सकते।' उन्होंने उनसे फिर कहा: 'यदि आप इतना भी नहीं कर सकते, तो कम से कम आपको मारने वाले पर वापस न मारें।' उन्होंने कहा: 'हम वह भी नहीं कर सकते।' तब महान वृद्ध ने अपने शिष्य से कहा: 'इन भाइयों के लिए थोड़ा भोजन तैयार करो, क्योंकि वे बीमार हैं।' पवित्र पिता के इन शब्दों का क्या अर्थ है?

उत्तर। उनका आशय यह था कि ऐसे लोगों के साथ कुछ और नहीं किया जा सकता, सिवाय उन्हें भोजन खिलाकर रास्ते पर भेजने के। लेकिन जैसा कि बूढ़े ने यह कहकर निष्कर्ष निकाला, 'तुम्हें प्रार्थना की आवश्यकता है,' कोई यह सोच सकता है कि 'भोजन' से उनका मतलब बड़ों की प्रार्थनाओं से था, जैसे कि यह कहने के लिए: 'यदि तुम यह भी और वह भी नहीं कर सकते, तो तुम्हारे लिए प्रार्थना की आवश्यकता है।' जैसे बीमारों को उनके पेट की कमजोरी के कारण विशेष भोजन की आवश्यकता होती है, जो हर तरह का भोजन सहन नहीं कर सकता, वैसे ही आपको भी, जिनके मन इतने कमजोर हैं कि वे हमारे प्रभु की आज्ञाओं का एक छोटा सा अंश भी पूरा नहीं कर सकते, अपनी आत्मा के उपचार और पुनर्स्थापना की आवश्यकता है—अर्थात्, संतों की प्रार्थनाओं की, जो आपके लिए मध्यस्थता कर सकें।

८. प्रश्न। संत अबा एंथनी ने कहा: 'मैंने शैतान के जाल पूरी पृथ्वी पर फैले हुए देखे; मैं इस पर कराह उठा और कहा: "मनुष्य जाति के लिए विनाश है; उनसे कौन बच सकता है?" और उन्होंने मुझसे कहा: "नम्रता , मनुष्य को उनसे बचाती है, क्योंकि वे उसे फँसा नहीं सकते।"' क्या संत ने ये जाल अपनी शारीरिक आँखों से देखे, या अपने मन में? और वे कौन थे जिन्होंने उनसे कहा: 'नम्रता उनसे बचाती है, क्योंकि वे नम्र व्यक्ति को फँसा नहीं सकते'?

उत्तर। मिस्र के महान बाबा मकरियस, जो बाबा एंथनी के शिष्य थे, ने भी स्केटे रेगिस्तान के सबसे भीतरी भाग में शत्रु की सभी चालाकियाँ देखीं, ठीक उसी समय जब बाबा एंथनी ने उन्हें देखा था, यद्यपि वे एक अलग रूप में थीं। संत मकरियस ने दो पुरुषों के रूप में राक्षसों को देखा, जिनमें से एक विभिन्न रंगों के पैच वाले फटे-पुराने कपड़े पहने हुए था; जबकि दूसरे का शरीर पूरी तरह से फटे-पुराने कपड़ों से ढका हुआ था, जिसके ऊपर छोटी-छोटी बुलबुलियों से लदी एक तरह की जाल-सी लटकी हुई थी; और उनकी ओर एक और आकृति आ रही थी, जो एक लबादे की तरह पंखों से ढकी हुई थी। इन्हीं को अब्बा मकरियस ने शारीरिक रूप से—अपनी शारीरिक आँखों से—देखा, जबकि संत अब्बा एंथोनी ने मन की आँख से, जैसे कोई दर्शन देखता है, शैतान के उन सभी जालों को देखा, जिन्हें वह लगातार संन्यासियों के लिए बिछाता है, और जिनसे वह उन्हें उलझाने, फँसाने और उन्हें सद्गुण के मार्ग पर अपनी यात्रा को सुरक्षित रूप से पूरा करने से रोकने का प्रयास करता है, जैसा कि लिखा है: *'घमंडी का फंदा मेरे विरुद्ध बिछा है, और दुष्टों का जाल मेरे पैरों के लिए घात में है'* (भजन संहिता 139:5)। इस प्रकार, उन्होंने देखा कि शैतान के फंदे पृथ्वी पर उसी तरह बिछाए गए हैं जैसे शिकारी अपने फंदे बिछाते हैं। यह देखकर, वह जालों और फंदों की बहुतायत से चकित और भयभीत हो गया, जिनमें से यदि कोई भी जीव पकड़ लिया जाता, तो वह विभिन्न प्रकार के फंदों और बंधनों के

कारण खुद को मुक्त नहीं कर पाता। इस प्रकार, सभी शारीरिक और आध्यात्मिक वासनाओं के दर्शन, जिनसे राक्षस भिक्षुओं पर आक्रमण करते हैं, बाबा एंथोनी को प्रकट हुए। और उन्होंने पवित्र स्वर्गदूतों को देखा, जिन्होंने उन्हें नाम से प्रत्येक वासना के जाल के बारे में बताया—अर्थात्: खाने-पीने की लालच या अत्यधिक भोग का जाल, लालच का जाल, व्यभिचार का जाल, अहंकार, घमंड और अन्य वासनाओं का जाल। इसके अलावा, उन्होंने उसे वे सभी तरकीबें और चालाकियाँ दिखाई जिनसे दुश्मन भाइयों को रोकने, उन्हें फँसाने और परमेश्वर के प्रेम के महान मार्ग पर उनकी प्रगति को अवरुद्ध करने के लिए अपने जाल और घात लगाता है। जब, जालों को देखकर भयभीत होकर, वह कराह उठा और कहा: 'हाय हम संन्यासियों का!' 'हम इन जालों से खुद को कैसे मुक्त कर सकते हैं और इनसे बच सकते हैं, ताकि इनमें फँस न जाएँ?' – स्वर्गदूतों ने उससे कहा: 'नम्रता इन सभी से बचाती है, और जो भी इसके अधिकारी है वह कभी इनमें फँसेगा नहीं और न ही गिरेगा।' – लेकिन उन्होंने यह नहीं कहा कि केवल नम्रता से ही वासनाओं और राक्षसों पर विजय प्राप्त की जाती है: नम्रता के साथ-साथ अन्य कर्म और परिश्रम भी आवश्यक हैं। केवल विनम्रता का कोई लाभ नहीं होगा, ठीक उसी तरह जैसे विनम्रता के बिना कर्मों का कोई अर्थ नहीं होता: क्योंकि इसके बिना, वे नमक के बजाय मिट्टी से मसालेदार मांस की तरह होते हैं, जो आसानी से खराब हो जाता है और नष्ट हो जाता है। इस प्रकार, पूर्ण विनम्रता के साथ संयुक्त, शारीरिक श्रम, मन का आंतरिक संघर्ष, मौन और अखंड प्रार्थना, सभी भावों और राक्षसों पर विजय प्राप्त करते हैं, ताकि बाद वाले उन गुणों वाले भिक्षु को नुकसान पहुँचाने में असमर्थ हों, जैसा कि स्वर्गदूतों ने बाबा एंथोनी से कहा।

९. *प्रश्न*। अबा एंथनी ने कहा: यदि हम अच्छे कर्म करते हैं, तो हमें परमेश्वर से गहराई से डरना चाहिए और उनके सामने स्वयं को पूरी तरह से नम्र करना चाहिए, ताकि वह, जो हमारी कमजोरी को जानता है, हमें अपने दाहिने हाथ से ढककर हमारी रक्षा कर सके; क्योंकि यदि हम घमंड से फूल उठते हैं, तो वह हमसे अपनी सुरक्षा हटा लेगा, और हम नष्ट हो जाएँगे। धन्यजन की इस वाणी का क्या अर्थ है?

उत्तर। हमें हमेशा विनम्र रहना चाहिए, चाहे वह कठिनाई, दुख और संघर्ष का समय हो, या संघर्ष से रहित शांति और सुकून का समय हो। हमें हर समय विनम्रता की आवश्यकता होती है, क्योंकि संघर्ष के समय यह हमें सहायता प्रदान करती है और हमें पीड़ा के बोझ को सहने की शक्ति देती है, जबकि शांति और संघर्ष से विश्राम के समय यह हमें अहंकार से बचाती है और हमें गिरने से रोकती है। इसी प्रकार, हमारी सुस्ती और हमें फँसाने वाली अधर्मीता के कारण, हमें स्वयं को नम्र बनाना चाहिए; क्योंकि इस संबंध में हमारी स्पष्ट कमजोरी अपने आप ही नम्रता की ओर ले जाएगी और हमें सारा अहंकार त्यागने के लिए मजबूर कर देगी। ईश्वर नहीं चाहता कि हम लगातार खतरे और संकट में रहें, बल्कि अपनी कृपा और मानवता के प्रति प्रेम में, वह हमारी रक्षा करता है और हमारे भावों के संघर्ष तथा राक्षसों की उग्रता को समाप्त कर देता है। इस प्रकार, यदि हम संघर्ष और प्रयास के समय खतरे और कठिनाई के कारण विनम्रता का सहारा लेते हैं, फिर भी कलह से मुक्त शांति और सुरक्षा के समय हम ईश्वर को भूलकर अहंकार से भर जाते हैं, तो वह निस्संदेह हमसे अपना संरक्षण हटा लेंगे, और हम विनाश और निराशा में नष्ट हो जाएँगे। क्योंकि ऐसा कोई समय नहीं है जब हमें विनम्रता की आवश्यकता न हो, क्योंकि हर जगह और हमारे सभी कार्यों में निश्चित रूप से इसकी आवश्यकता होती है।

10. *प्रश्न*। वृद्धों में से एक ने ईश्वर से सभी संतों को दिखाने के लिए प्रार्थना की, और उसे उन सभी का दर्शन मिला, सिवाय संत अबा एंथनी के। जो उसे उन्हें दिखा रहा था उसने कहा: 'जहाँ ईश्वर हैं, वहाँ अबा एंथनी हैं।' उसने सभी संतों को कैसे देखा, और उसने अबा एंथनी को क्यों नहीं देखा?

उत्तर। या तो उस वृद्ध का मन स्वर्ग में विभोर हो गया, जहाँ उसने धर्मपिताओं को देखा, या धर्मपिता स्वयं उसके पास आए, या एक स्वर्गदूत ने उसे एक दर्शन के माध्यम से उन्हें दिखाया। हालांकि, अबा एंथनी दो कारणों से उन्हें दिखाई नहीं दिए: संत अबा एंथनी की महिमा की महानता को प्रदर्शित करने के लिए, और वृद्ध को विनम्र बनाने के लिए, कहीं ऐसा न हो कि सभी संतों को देखने के कारण वह घमंड से भर जाए। क्योंकि, उसकी प्रार्थना स्वीकार करते हुए, परमेश्वर ने, संतों के इस दर्शन के माध्यम से, उसे उनका अनुकरण करने के लिए बाध्य किया; और यह कि उसे संत एंथनी को देखने का योग्य नहीं समझा गया, इसका आशय यह था कि, वृद्ध के पास उनका अनुकरण करने के लिए पर्याप्त शक्ति नहीं थी, जिससे वह अपने अहंकार को दबाने और स्वयं को नम्र करने के लिए प्रेरित हुआ।

11. *प्रश्न*। एक बार, अब्बा अम्मोन द वर्जिन अब्बा एंथनी के पास आए और उनसे कहा: 'मैं देखता हूँ कि मुझे आपसे अधिक काम करना है; तो फिर, ऐसा कैसे है कि लोगों के बीच आपका नाम मुझसे अधिक प्रसिद्ध है?' संत एंथनी ने उनसे उत्तर दिया: 'यह इसलिए है क्योंकि मैं ईश्वर से आपसे अधिक प्रेम करता हूँ।' यह किस इरादे से कहा गया था?

उत्तर। न तो बाबा अम्मोन अपने कर्मों का घमंड कर रहे थे, और न ही बाबा एंथनी अपने प्रेम का; बल्कि उनके शब्दों के पीछे का इरादा यह था। चूँकि ये संत मठवासी व्यवस्था के प्रथम संस्थापक और मरुभूमि जीवन के अग्रदूत थे, इसलिए उन्होंने आपसी सहमति से, सभी संतों को यह पुष्टि करने और यह प्रदर्शित करने का इरादा किया कि मन का आंतरिक क्रम शारीरिक करतबों से श्रेष्ठ है। क्योंकि मन का यह आंतरिक अनुशासन भिक्षु की आत्मा को ईश्वर के परम प्रेम की ओर निर्देशित और प्रेरित करता है, जिससे वह ईश्वर की महिमा के दर्शन और प्रकट होने का पात्र बन जाता है। शारीरिक तपस्या भिक्षु को शारीरिक वासनाओं से मुक्त करती है, उसे सद्गुणों में मजबूत बनाती है, उसे कामवासनाओं को दूर करने की शक्ति देती है, और शरीर को शुद्ध करती है। और मन का तप आत्मा को राक्षसों और उनके द्वारा उत्पन्न विचारों के विरुद्ध हथियारबंद करता है, और हृदय में पवित्रता लाता है, जो प्रेम से दृढ़ होकर पवित्र आत्मा द्वारा शासित होने के योग्य बन जाता है। हर वह व्यक्ति जो सद्गुणों में उत्कृष्ट है और प्रभु से प्रेम करता है, उसे लोगों के बीच प्रसिद्धि होने की आवश्यकता नहीं है: क्योंकि देखो, अबा पॉल, जो मरुस्थलवासियों के पूर्वज और संतों में प्रथमज थे (जिन्हें अबा एंथनी कभी-कभी भविष्यवक्ता एलिया, कभी-कभी यूहन्ना बपतिस्मादाता, और कभी-कभी प्रेरित पॉल कहते थे), अपने जीवित रहने के दौरान लोगों में बिल्कुल भी जाने नहीं जाते थे। लेकिन, जैसा कि मैं पहले ही कह चुका हूँ, उन दोनों संत-पितरों ने एक-दूसरे की पुष्टि करने और हमें यह सिखाने की इच्छा की कि संयम का कौन सा रूप दूसरे से श्रेष्ठ है—शारीरिक या आध्यात्मिक, जो मन के आंतरिक, गुप्त संघर्ष में निहित है, परमेश्वर के अविराम प्रार्थना और चिंतन में, जो पूर्णता प्राप्त कर लेने पर, भिक्षु के मन को एक आध्यात्मिक अवस्था तक ऊँचा उठाती है, जिसमें आध्यात्मिक प्रार्थना, परमेश्वर के प्रति विस्मय, उनकी चिंतनशीलता, और हमारे प्रभु और परमेश्वर की महिमा का प्रकट होना शामिल है, जिनकी सदा-सदा स्तुति हो। आमीन।

12. *प्रश्न*। संत अबा एंथोनी ने कहा कि ईश्वर शैतान को इस जाति के विरुद्ध भयंकर युद्ध करने की अनुमति नहीं देते, क्योंकि यह कमजोर है। – यह कैसे है?

उत्तर। ईश्वर मानवता पर दया करते हैं और उन्हें शैतान द्वारा बहुत बुरी तरह से उत्पीड़ित होने नहीं देते, क्योंकि हममें ईश्वर के प्रति प्रेम और अच्छे कर्मों के प्रति उत्साह की कमी है। इसलिए, हमारी कमजोरी और सुस्ती के कारण, शैतान हम पर कमजोर तरीके से हमला करता है।

13. *प्रश्न*। अबा एंथनी के निम्नलिखित शब्दों का क्या अर्थ है: 'यदि चक्की वाला खच्चर की आँखों पर पर्दा न डालता, तो उसे कुछ भी न मिलता; क्योंकि खच्चर अपने सिर को घुमा-घुमा कर गिर जाता, और काम रुक जाता।' इसी तरह, हम पर भी दैवीय व्यवस्था की आड़ रहती है। क्योंकि हम भी, शुरू में, बिना देखे ही अच्छा काम करते हैं, कहीं ऐसा न हो कि हम खुद को धन्य समझने लगें और हमारे प्रयास व्यर्थ हो जाएँ; इसीलिए कभी-कभी हम शर्मनाक विचारों में पड़ जाते हैं, ताकि उन्हें देखकर हम खुद को कोस सकें। यही शर्मनाक विचार हमारे द्वारा किए गए छोटे से भले कार्यों के लिए एक आवरण का काम करते हैं, क्योंकि जो व्यक्ति स्वयं को कोसता है, वह अपना पुरस्कार नहीं खोता। – हमें समझाइए कि इस कथन में क्या उपयोगी है?

उत्तर। सभी संतों को दर्शन नहीं मिलते; वे अपने द्वारा किए गए अच्छे कार्यों को भी नहीं देखते, न ही उनके लिए तैयार किए गए वादों को देखते हैं, यद्यपि वे अच्छे कर्मों और सद्गुणों से परिपूर्ण होते हैं। ऐसा इसलिए नहीं है कि ईश्वर उनके सद्गुणों में प्रसन्न नहीं होता या उनके अच्छे कर्मों से सांत्वना नहीं लेता। सर्व-सत्पुरुष (ईश्वर) के लिए धर्मनिष्ठों के लिए तैयार किए गए पुरस्कार को किसी भी तरह से कम करना—यह उनसे दूर है! लेकिन वह ऐसा इसलिए करते हैं ताकि धर्मात्मा अहंकार से फूल न उठें, और ताकि उनके सद्गुण का मूल्य पूरी तरह से नष्ट न हो जाए, अन्यथा वे उनके लिए तैयार की गई आशीर्वादों से वंचित हो जाएँ और ईश्वर की कृपा से दूर हो जाएँ। जबकि ईश्वर उनका रक्षक है क्योंकि वे पुण्यकर्मी और सदाचार के प्रति समर्पित हैं, फिर भी वह कभी-कभी राक्षसों को उन्हें उपहास करने, उनमें लज्जाजनक विचार डालने, या भय उत्पन्न करने, या घाव पहुँचाने की अनुमति क्यों देता है, ताकि वे अपनी कमजोरी को पहचान सकें और हमेशा सतर्क और चौकस रहें: क्योंकि जब तक वे इस दुनिया में रहते हैं, उनका जीवन परिवर्तनशील और अस्थिर होता है। लेकिन जैसे उनके अच्छे कर्मों के लिए तैयार किए गए पुरस्कार का विचार, उसे प्राप्त करने के लिए उनमें निरंतर अच्छे कार्यों का उत्साह बनाए रखता है, वैसे ही उनकी कमियों और कमजोरियों का एहसास उन्हें अहंकार से दूर करता है, और यह सुनिश्चित करता है कि वे हर तरह के विनम्रता के लिए तैयार रहें, और वे हर संभव सावधानी बरतते हैं कि वे अपना सद्गुण ठीक उसी समय न खो दें जब उन्हें हमारे प्रभु यीशु मसीह के स्वर्गीय राज्य में प्रचुर आनंद प्राप्त होना है।

14. *प्रश्न*। जब सीरिया के अबा हेलेनयिस अबा एंथनी के पास आए, तो अबा एंथनी ने उन्हें देखकर कहा: 'स्वागत है, भोर के समय उगते हुए प्रभात।' और अबा हेलेनयिस ने उनसे उत्तर दिया: 'आपको भी नमस्कार, हे उस तेजस्वी स्तंभ जिन्होंने ब्रह्मांड को सुशोभित किया है।' – यह हेलेन कौन है? और धन्य ने उसे ऐसा नाम क्यों दिया?

उत्तर। यह हेलेनयिस अबा एंथनी के समय में रहते थे और आध्यात्मिक पूर्णता तथा कर्मों के मामले में उनके समकक्ष थे। उनकी प्रशंसा सम्राट कॉन्स्टेंटाइन द विक्टर ने की, जिन्होंने कहा: 'मैं प्रभु यीशु मसीह का धन्यवाद करता हूँ कि मेरे दिनों में तीन दिव्य प्रकाशस्तंभ हैं—धन्य अबा एंथनी, अबा हेलेनयिस और अबा यूकनिस।' उन्होंने यह इसलिए कहा क्योंकि वे उस समय के सभी ज्ञात संतों से कहीं अधिक श्रेष्ठ थे। बाबा एंथनी ने उन्हें 'प्रभात तारा' कहा क्योंकि जिस प्रकार प्रभात तारा आकार और चमक में अन्य सभी तारों से श्रेष्ठ होता है, उसी प्रकार बाबा हेलेनयिस भी अनुग्रह के प्रकाश से अपने समय के सभी अन्य संतों से श्रेष्ठ थे। अपनी ओर से, यह दिखाने के लिए कि वह अपने पूर्णत्व की ऊँचाई और उस पर प्रदान की गई अनुग्रह की ज्योति की महानता से अच्छी तरह वाकिफ थे, उन्होंने उन्हें एक 'प्रकाशमान स्तंभ' कहा जो ब्रह्मांड को सुशोभित करता था।

१५. *प्रश्न*। बाबा एंथोनी ने कहा: 'हम इसलिए सफल नहीं होते क्योंकि हम अपने पद और स्थान को नहीं जानते, न ही हम यह समझते हैं कि हमारे द्वारा हाथ में लिए गए कार्य से क्या अपेक्षा की जाती है, और हम बिना प्रयास के सद्गुण प्राप्त करना चाहते हैं।' जब हम उस स्थान पर प्रलोभन का सामना करते हैं जहाँ हम रहते हैं, तो हम यह सोचकर किसी दूसरे स्थान पर क्यों चले जाते हैं कि कहीं ऐसा स्थान है जहाँ शैतान मौजूद नहीं है? लेकिन जिसने यह महसूस किया है कि ईश्वर की मदद से एक लड़ाई लगातार (हर जगह) चलती रहती है, क्योंकि हमारे प्रभु ने कहा है: *'ईश्वर का राज्य तुम्हारे भीतर है'* (लूका 17:21)। – ये शब्द किस ओर संकेत करते हैं?

उत्तर। उनके वचनों का अर्थ यह है। लोग एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाते हैं, इस आशा में कि उन्हें कोई ऐसी जगह मिल जाएगी जहाँ शैतान मौजूद नहीं है, लेकिन जब उन्हें उस स्थान पर भी परीक्षाओं का सामना करना पड़ता है जहाँ वे गए हैं, तो वे एक और स्थान के लिए निकल पड़ते हैं। लेकिन जो कोई जानता है कि एक संघर्ष है, वह ईश्वर की मदद से ठीक वहीं लड़ता है जहाँ वह रहता है, और किसी दूसरे स्थान की तलाश नहीं करता। हमारे प्रभु के *वचन—'परमेश्वर का* राज्य *तुम्हारे भीतर है'*—का अर्थ यह है कि हम, संसार से अलग हुए भिक्षुओं के रूप में, जिन्होंने हमारे प्रभु की आज्ञा के अनुसार अपना क्रूस उठाया है और उनका अनुसरण किया है, हमें एक ही स्थान पर रहना चाहिए और केवल अपनी आत्माओं के उद्धार के लिए चिंतित होकर, वहाँ हमें जो भी संघर्ष मिले, उसे सहना चाहिए। ईश्वर के प्रति प्रेम के कारण और उनकी इच्छा को पूरा करने के लिए—जो कि उनके आज्ञाओं का पालन करना है—हमें, चाहे हम कहीं भी हों, धैर्यपूर्वक सभी परीक्षणों और प्रलोभनों को सहन करना चाहिए, चाहे वे हमारे स्वभाविक भावों से आएं, राक्षसों से, या लोगों से। लेकिन ये लोग, जो संघर्ष में अकुशल और किसी भी कठिनाई को सहने के आदी नहीं हैं, संघर्ष से विश्राम और अपने विचारों से शरण पाने की आशा में अन्य स्थानों पर जाने के लिए जल्दी करते हैं, एक स्थान से दूसरे स्थान और एक देश से दूसरे देश में घूमते रहते हैं। तो फिर, हमें वहीं क्यों बने रहना चाहिए? और यदि संघर्ष या प्रलोभन हम पर आक्रमण करता है, तो आइए हम उपवास करें, प्रार्थना करें, अपने घुटनों पर आ जाएँ, और हमारे प्रभु के क्रूस के सामने आँसुओं और एक दुखी हृदय के साथ अपनी छाती पीटते हुए, उससे सहायता और उद्धार के लिए विनती करें: क्योंकि वह हमेशा हमारे साथ रहता है और हम में वास करता है, जैसा कि लिखा है: *'प्रभु टूटे हुए हृदय वालों के समीप है, और वह दीन-आत्मा वालों को बचाएगा'* (भजन संहिता 33:19), और जैसा कि प्रभु स्वयं ने कहा: *'परमेश्वर का राज्य तुम्हारे भीतर है'* (लूका 17:21), अर्थात्, मैं तुम्हारे भीतर वास करता हूँ। क्योंकि परमेश्वर का राज्य मसीह है, जो हमेशा हमारे भीतर वास करते हैं। धन्य पौलुस भी कहते हैं: *'क्या तुम नहीं जानते कि मसीह तुम में वास करते हैं?'* (1 कुरिन्थियों 3:16)। और न केवल वह हम में वास करता है, बल्कि हम भी उसमें वास करते हैं, जैसा कि वह स्वयं कहता है: *'मेरे में बने रहो, और मैं तुम में'* (यूहन्ना 15:4)। इसलिए, यदि हम परमेश्वर में वास करते हैं और स्वयं ही उनकी वास-स्थली हैं, तो हमें परीक्षा, संकट और कलह के समय में अपने प्रभु को न छोड़ना चाहिए; और जब हमें कहीं और जाने के लिए मजबूर किया जाए, तो हमें विदेशी देशों या स्थानों से सहायता या शरण न मांगनी चाहिए, बल्कि हमें अपनी ही जगह पर रहना चाहिए, और हमारे भीतर वास करने वाले प्रभु से विनती करनी चाहिए कि वे हमें सहायता दें और हमें बचाएं। साथ ही, हमें अपने विचारों को अपने आध्यात्मिक पिताओं के सामने उजागर करना चाहिए और हमारी सहायता के लिए उनकी प्रार्थनाएँ माँगनी चाहिए। अपने स्थान पर दृढ़ रहते हुए, हमें हमेशा अपने उद्धारकर्ता की सुरक्षा में शरण लेनी चाहिए, और वह निस्संदेह हमें हमारी सभी लड़ाइयों में विजयी बनाएगा।

संत मकरयुिस महान

संत मकरयुिस के जीवन और लेखन के बारे में जानकारी

संत एंथनी के शिक्षण कौशल के सबसे करीबी उत्तराधिकारी मिस्र के संत मकरयिस थे। विवरणों में संत मकरयिस द्वारा संत एंथनी से मिलने के केवल दो उदाहरण ही संरक्षित हैं, लेकिन यह मानना चाहिए कि ये एकमात्र अवसर नहीं थे। संभावना है कि सेंट मैकारयिस को एक से अधिक अवसरों पर सेंट एंथनी के लंबे प्रवचनों को सुनना पड़ा होगा, जो अपने एकांत से बाहर आकर, कभी-कभी रात भर उन भाइयों से बात करते थे जो उनसे प्रेरणा लेने के लिए इकट्ठा हुए थे और मठ में उनका इंतजार कर रहे थे, जैसा कि क्रोनियिस हमें आश्वस्त करते हैं (लाइव्स, अध्याय 23)। परिणामस्वरूप, सेंट मकरयिस के प्रवचनों में, सेंट एंथनी की कुछ शिक्षाओं को लगभग शब्दशःसुना जा सकता है। जो कोई भी दोनों को क्रम से पढ़ेगा, वह इसे तुरंत नोटिस करेगा। और यह पहचानने में कोई चूक नहीं कर सकता कि यह दीपक – सेंट मकरयिस – उस महान प्रकाशमान – सेंट एंथनी – द्वारा प्रज्वलित किया गया था। संत मकरयिस के जीवन के वृत्तांत हमें संपूर्ण रूप से प्राप्त नहीं हुए हैं। उनके बारे में जो कुछ भी जाना जा सकता है, वह उनकी जीवनी में संकलित है, जो उनके संवादों के संस्करण में शामिल है। इसमें सबसे उल्लेखनीय घटना वह बदनामी है जिसका उन्होंने तब सामना किया जब वे गाँव से बहुत दूर नहीं रहते थे। कितनी विनम्रता, कितनी आत्म-बलिदान, ईश्वर की इच्छा के प्रति कितनी निष्ठा! ये गुण बाद में संत मकरयिस के पूरे जीवन की विशेषता बने। यहाँ तक कि शैतान ने भी खुले तौर पर स्वीकार किया कि वह संत मकरयिस की विनम्रता से पूरी तरह पराजित हो गया था। यह उन आध्यात्मिक पूर्णता और अनुग्रह के वरदानों की ऊँची ऊँचाइयों तक पहुँचने के लिए सीढ़ी भी थी, जिन्हें हम अंततःसंत मकरयिस में देखते हैं। संत मकरयिस की रचनाओं में, हमारे पास 50 प्रवचन और एक पत्र है। ये लंबे समय से रूसी अनुवाद में प्रकाशित हैं, और इन्हें हमारी संकलन में यथावत् शामिल करने की कोई आवश्यकता नहीं है। हम उनमें से एक चयन करेंगे जो एक निश्चित क्रम में संत मकरयिस की शिक्षाओं को प्रस्तुत करेगा। क्योंकि वे एक सुसंगत संपूर्ण बनाते हैं और इस बात में उल्लेखनीय हैं कि वे ईसाई धर्म के केंद्रीय कार्य - पवित्र आत्मा की कृपा के कार्य द्वारा पतित आत्मा के पवित्रीकरण - की विस्तार से व्याख्या करते हैं। यह मुख्य बिंदु है जिसके प्रति लगभग सभी पाठ निर्देशित हैं। *ग्रीक फिलोथ्रोपी* ने भी यही दृष्टिकोण अपनाया है। सेंट मकारयिस से, इसमें उनके प्रवचन शामिल नहीं हैं, बल्कि सिमियन मेटाफ्रastes द्वारा उनके प्रवचनों से निकाले गए 150 अध्याय शामिल हैं, जो हमारे संस्करण में सात उपदेश बनाते हैं। लेकिन मेटाफ्रastes जो करते हैं, वह कोई भी कर सकता है। हम भी वही कर रहे हैं। संत मकरयुिस तपस्या के विवरण में नहीं जाते। जिन लोगों को उन्होंने अपने प्रवचन दिए, वे पहले से ही उत्साही श्रमिक थे। इसलिए, वे मुख्य रूप से केवल इन श्रमिकों को उचित दिशा देने, उन्हें उस अंतिम लक्ष्य की ओर इंगित करने में व्यस्त थे जिसके लिए उन्हें प्रयास करना चाहिए, और इस प्रकार ऐसे श्रम और प्रयासों को ऊँचा उठाना था। यह, जैसा कि पहले ही उल्लेख किया गया है, पवित्र आत्मा की कृपा से आत्मा का पवित्रिकिरण है। आध्यात्मिकीकरण ही आत्मा का सार है। इसके बिना, कोई जीवन नहीं है। यह प्रकाश की भविष्य की अवस्था का वादा है। संत मकारयिस पतित आत्मा से निपटते हैं और उसे सिखाते हैं कि इस अंधकार, क्षय और निर्जीवन की अवस्था से कैसे प्रकाश में निकलना है, कैसे चंगा होना है और कैसे जीवंत होना है। इसलिए, उनकी शिक्षाएँ केवल तपस्वियों के लिए ही नहीं, बल्कि सामान्य रूप से सभी ईसाइयों के लिए महत्वपूर्ण हैं: क्योंकि ईसाई धर्म का सार ही पतन से उठना है। यही कारण है कि प्रभु आए, और कलीसिया के भीतर उनकी सभी उद्धारकारी संस्थाएँ इसी उद्देश्य की ओर निर्देशित हैं। हालांकि वह इस प्रयास में सफलता के लिए त्याग के जीवन को एक पूर्वापेक्षा बनाता है, फिर भी सामान्य लोगों के लिए भी एक प्रकार का त्याग अनिवार्य है। क्योंकि संसार की इच्छाएँ परमेश्वर के प्रति शत्रुता हैं। और उस स्थिति में, फिर उद्धार क्या है? इन शिक्षाओं का चयन करते समय, हम उस क्रम का पालन करेंगे जो संत मकरयिस के प्रवचनों को पढ़ते समय स्वाभाविक रूप से मन में बनता है। संत मकरयुिस अक्सर अपने विचारों को हमारी शुरुआत की ओर मोड़ते हैं और उस प्रकाशमान अवस्था का वर्णन करते हैं जिसमें पहला मनुष्य खुद को पाया था; वह ऐसा इसलिए करते हैं ताकि पतित मनुष्य की पहले से ही निराशाजनक तस्वीर—जिसे वह सबसे अनाकर्षक शब्दों में चित्रित करते हैं—और भी अधिक गंभीर प्रतीत हो। वह ये दोनों काम इसलिए करते हैं ताकि ईश्वर की असीम दया—जो हमें ईश्वर के एकलौते पुत्र के अवतार के माध्यम से हमारे उद्धार में प्रकट हुई है—और परम पवित्र आत्मा की कृपा और भी अधिक स्पष्ट प्रतीत हों। फिर भी, वह इन तीन विषयों को इस उद्देश्य से प्रस्तुत करते हैं कि हर किसी में अपनी मुक्ति को साकार करने की इच्छा जगे और उन्हें इस पूरे मार्ग को धैर्यपूर्वक चलने और पूरा करने का साहस मिले। यह मार्ग प्रभु का अनुसरण करने के लिए, अपने अस्तित्व की गहराइयों में जड़ें जमाए, एक दृढ़ संकल्प के निर्माण से शुरू होता है; यह

आत्म-अनुशासन और आत्म-संयम के प्रयासों में परिश्रम के माध्यम से आगे बढ़ता है; लेकिन इसके द्वारा अनुग्रह के मूर्त कार्य—या, जैसा कि वह कहते हैं, उस बिंदु तक जहाँ, अंततः पवित्र आत्मा की कृपा हृदय में शक्ति और प्रभावशीलता के साथ प्रकट होती है, यह हमारे प्रभु मसीह यीशु में पृथ्वी पर संभव पूर्णता की ओर ले जाती है और आने वाले जीवन में आत्मा की एक दोहरी अवस्था में परिणित होती है। इस प्रकार, हम संत मकारियस महान के सभी विचारों को निम्नलिखित शीर्षकों के अंतर्गत संकलित करेंगे:

1. प्रथम मानव की दिव्य अवस्था।

2. पतित मनुष्य की अंधकारमय अवस्था।

3. हमारा एकमात्र उद्धार – प्रभु यीशु मसीह।

४. प्रभु का अनुसरण करने के लिए दृढ़ संकल्प का निर्माण।

5. परिश्रम की अवस्था।

6. उन लोगों की अवस्था जिन्होंने अनुग्रह का अनुभव प्राप्त किया है।

7. पृथ्वी पर ईसाई पूर्णता की संभावना।

8. मृत्यु और पुनरुत्थान के बाद की भविष्य की अवस्था। पूरे ग्रंथ में, संत मकारियस के शब्दों को शब्दशः उद्धृत किया गया है। संकलक ने केवल शीर्षक जोड़े हैं। उद्धरणों में, पहला नंबर प्रवचन को दर्शाता है, और दूसरा प्रवचन के अध्याय या अनुच्छेद को। यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि कुछ अनुच्छेदों में एक से अधिक विचार हैं, इसीलिए उनका कभी-कभी एक से अधिक बार उद्धरण दिया गया है।

संत मकरियुस महान की ईसाई जीवन पर शिक्षाएँ, उनके प्रवचनों से चयनित

1. प्रकाशमान आदिम अवस्था

क) मनुष्य का परम लक्ष्य और सर्वोच्च भला ईश्वर के साथ एकता में निहित है। ईश्वर उसमें वास करने में प्रसन्न होता है, और मनुष्य को ईश्वर के सिवा कहीं और विश्राम नहीं मिलता। मनुष्य और ईश्वर के बीच ऐसी ही सामंजस्यता है, जैसा कि सृष्टि की शुरुआत से ही अभिप्रेत था।

1. आत्मा और ईश्वर के बीच, और ईश्वर और आत्मा के बीच जो निकटता और पारस्परिकता है, वैसी और कोई नहीं है। ईश्वर ने विभिन्न प्राणियों की रचना की; उसने स्वर्ग और पृथ्वी, सूर्य, चंद्रमा, पानी, फलदार पेड़ और सभी प्रकार के जानवरों की रचना की। फिर भी प्रभु इनमें से किसी भी प्राणी में नहीं बसता। प्रत्येक प्राणी उसकी शक्ति के अधीन है; फिर भी उसने उनमें कोई सिंहासन स्थापित नहीं किया है, और न ही उनके साथ कोई मेलजोल स्थापित किया है; परन्तु उसने एक मनुष्य में विशेष प्रसन्नता ली, उसके साथ मेलजोल स्थापित किया, और उसमें निवास करता है। क्या आप इसमें परमेश्वर और मनुष्य के बीच, और मनुष्य और परमेश्वर के बीच संबंध देखते हैं? (45, 5)।

2. जैसे परमेश्वर ने मनुष्य के रहने के लिए स्वर्ग और पृथ्वी की सृष्टि की, वैसे ही उसने मनुष्य के शरीर और आत्मा को अपने लिए एक रहने का स्थान बनाया, ताकि वह उसके शरीर में अपने ही घर में रहने और विश्राम पाने के लिए आ सके, और उसकी सुन्दर वधू के रूप में उसकी प्रिय आत्मा हो, जो उसकी प्रतिमा में बनाई गई है। प्रेरित क्यों कहते हैं: *'हम उसका घर हैं'* (इब्रानियों 3:6)? (49, 5)।

3. मनुष्य की उच्च गरिमा। आकाशों, पृथ्वी, सूर्य और चंद्रमा पर विचार करो: प्रभु ने उनमें विश्राम करना पसंद नहीं किया, बल्कि केवल मनुष्य में। इसलिए, मनुष्य सभी प्राणियों से अधिक कीमती है—वास्तव में, मैं कहने की हिम्मत करता हूँ, न केवल दृश्यमान प्राणियों से, बल्कि अदृश्य प्राणियों से भी, अर्थात् सेवा करने वाली आत्माओं से। क्योंकि परमेश्वर ने महादूत माइकल और गब्रियल के विषय में यह नहीं कहा, *'आओ हम उन्हें अपनी प्रतिमा और समानता में बनाएँ'* (उत्पत्ति 1:26), बल्कि उन्होंने यह बात तर्कशील मानवीय सार—अर्थात् अमर आत्मा—के विषय में कही। लिखा है: 'देवदूतों का दल *"उनके चारों ओर रहता है जो उनसे डरते हैं"* (भजन संहिता 33:8)। (15, 20, 41).

४. इसलिए, बुद्धिमान और समझदार आत्मा, सारी सृष्टि का सर्वेक्षण करने के बाद, एकमात्र प्रभु के सिवा और कहीं भी विश्राम नहीं पाती। और प्रभु एक ही मनुष्य के सिवा किसी पर अनुग्रह नहीं करते (४५:५)।

5. जैसे एक धनी कुंवारी, चाहे विवाह से पहले उसे कितने ही उपहार मिलें, जब तक विवाह की रस्म पूरी नहीं हो जाती, तब तक उसे उनमें कोई शांति नहीं मिलती, उसी प्रकार आत्मा को भी किसी भी चीज़ में शांति नहीं मिलती जब तक वह प्रभु के साथ पूर्ण एकता प्राप्त नहीं कर लेती। या जैसे एक बच्चा, जब भूखा होता है, तो मोतियों या कीमती

वस्त्रों पर ध्यान नहीं देता, बल्कि दूध का स्वाद चखने के लिए अपना सारा ध्यान पोषक स्तनों पर केंद्रित करता है, वैसे ही आत्मा के बारे में भी सोचना चाहिए (अर्थात्, कि वह बाकी सब कुछ त्यागकर, ईश्वर का स्वाद चखने का प्रयास करती है - और तभी उसे शांति मिलिती है)। (45:7)।

ख) ऐसा उद्देश्य होने के कारण, मनुष्य को उसके सृजन के क्षण से ही इसके लिए अनुकूलित किया गया था। सृजन में, उसे उस उद्देश्य की पूर्ति के लिए स्थापित किया गया था।

6. आत्मा एक महान और अद्भुत वस्तु है। जब ईश्वर ने इसे बनाया, तो उन्होंने इसे इस तरह से बनाया कि इसके स्वभाव में कोई बुराई नहीं डाली गई; इसके विपरीत, उन्होंने इसे आत्मा के सद्गुण की प्रतिमा में बनाया, इसे सद्गुण, विवेक, ज्ञान, समझदारी, विश्वास, प्रेम और अन्य सद्गुणों के नियमों से युक्त किया, आत्मा की प्रतिमा में (46, 5)।

7. उसने इसे समझ, इच्छा और एक सर्वोच्च मन से युक्त किया; उसने इसमें एक विशेष महान परिष्कार भर दिया; उसने इसे चुस्त, फुर्तीला और अथक बनाया; उसने इसे एक क्षण में आ-जाने और जब भी आत्मा चाहे, विचारों में उसकी सेवा करने की शक्ति प्रदान की। संक्षेप में, उसने उसे इस प्रकार बनाया कि वह उसकी दुल्हन और साथी बन सके, ताकि वह उससे एक आत्मा में एक हो सके, और वह उससे एक आत्मा में एक हो सके, जैसा कि कहा गया है: *'जो प्रभु से जुड़ता है वह प्रभु के साथ एक आत्मा है'* (1 कुरिन्थियों 6:17) (46:6)।

8. जैसे एक पति सावधानी से अपने घर में हर तरह की अच्छी चीजें इकट्ठा करता है, वैसे ही प्रभु भी, अपने घर—आत्मा और शरीर—में आत्मा की स्वर्गीय धन-संपत्ति को इकट्ठा और संचित करते हैं (49:4)।

(ग) परिणामस्वरूप, प्रथम सृजित परमेश्वर में थे और उनके पास महान लाभ और आशीर्वाद थे।

9. पतन से पहले, वे परमेश्वर की महिमा से परिधानित थे… आदम, जब तक उसने आज्ञा का पालन किया, परमेश्वर का मित्र था – और स्वर्ग में परमेश्वर के साथ वास करता था (12:8)।

10. वचन आदम में वास करता था, और उसमें परमेश्वर का आत्मा था (12:6)।

11. मन, जो मूल रूप से शुद्ध था और अपने उचित क्रम में स्थित था, ने अपने प्रभु का चिंतन किया; और आदम, शुद्धता में स्थित होकर, अपने विचारों पर शासन करता था और धन्य था, दिव्य महिमा से आच्छादित था (45:1, 15, 23, 1.2, 6)।

12. वचन, जो उसमें निवास करता था, उसके लिए सर्वस्व था: ज्ञान, आनंद का अनुभव, विरासत और शिक्षा। और बाहर से, महिमा प्रथम सृजित पर विराजी, ताकि वे अपनी नग्नता न देख सकें (12:7, 10)।

13. मनुष्य सम्माननीय और शुद्ध था; वह स्वर्ग से शुरू होकर सभी का स्वामी था; वह भावों को पहचानने में सक्षम था; वह राक्षसों से अलग था; वह पाप या दुर्गुण से मुक्त था – वह ईश्वर की प्रतिमा में था (26:1)।

(घ) फिर भी, अनुग्रह की यह प्रचुरता किसी भी तरह से जबरदस्ती करने वाली नहीं थी। मनुष्य स्वतंत्र था कि वह ईश्वर और अनुग्रह के साथ रहे, या स्वयं को उनसे अलग कर ले। उसने स्वयं को अलग किया और गिर पड़ा, ठीक वैसे ही जैसे आत्माएँ गिर पड़ी थीं।

14. सभी तर्कशील प्राणी—अर्थात् स्वर्गदूत, आत्माएँ और राक्षस—सृष्टिकर्ता द्वारा शुद्ध और अत्यंत सरल बनाए गए थे। जहाँ तक इस बात का संबंध है कि उनमें से कुछ बुरे मार्ग पर क्यों भटक गए, यह उनकी अपनी मुक्त इच्छा से हुआ: क्योंकि वे अपनी मर्जी से सही सोच से भटक गए (16:1)।

१५. दृश्य प्राणी एक प्रकार की अपरिवर्तनीय प्रकृति से बँधे हुए हैं; वे उस अवस्था से नहीं निकल सकते जिसमें उन्हें बनाया गया था, और उनकी कोई इच्छा नहीं होती। लेकिन तुम्हें ईश्वर की प्रतिमा और समानता में बनाया गया है। जैसे ईश्वर स्वतंत्र हैं और जो कुछ भी वे चाहें, उसे बनाते हैं, वैसे ही तुम भी स्वतंत्र हो। स्वभाव से, तुम आसानी से परिवर्तनीय हो (१५, २०. २१)।

16. हमारी प्रकृति अच्छी और बुरी दोनों के लिए, और ईश्वर की कृपा तथा विरोधी शक्ति दोनों के लिए ग्रहणशील है। इसे मजबूर नहीं किया जा सकता (15, 23)।

17. इसी प्रकार आदम ने भी अपनी स्वतन्त्र इच्छा से आज्ञा का उल्लंघन किया और दुष्ट की बात सुनी (12:8)।

18. उसके लिए महान धन-संपत्ति और एक महान विरासत तैयार की गई थी। लेकिन जैसे ही उसने दुष्ट इरादों और विचारों को अपनाया, वह परमेश्वर से भटक गया (12, 1)।

2. पतित की दयनीय दशा

क) दुष्ट की बात मानकर, आदम ने खुद को उसी को बेच दिया; और उसने, उस पर अधिकार कर के, उसे हर तरह की बुराई से भर दिया।

1. आदम ने ईश्वर की आज्ञा का उल्लंघन करके और दुष्ट साँप की बात मानकर, स्वयं को शैतान के हवाले कर दिया, और दुष्ट ने उसकी आत्मा—उस सुंदर प्राणी—पर अधिकार कर लिया। आत्मा को दुष्ट अंधकार का शरीर कहा जाता है जब तक आध्यात्मिक अंधकार उसमें वास करता है, क्योंकि वहाँ वह दुष्ट अंधकार के युग भर वास करता है और कैद रहता है, ठीक वैसे ही जैसे प्रेरित, पाप के शरीर और मृत्यु के शरीर के बारे में कहते हैं: *'पाप का शरीर मर जाए'* (रोमियों 6:6), और फिर: *'मुझे इस मृत्यु के शरीर से कौन छुड़ाएगा?'* (रोमियों 7:24)। आत्मा न तो दैवीय स्वभाव की है और न ही दुष्ट अंधकार के स्वभाव की, बल्कि यह एक तर्कशील प्राणी है, जो सुंदरता, महानता और अद्भुतता से परिपूर्ण है, और ईश्वर की एक पूर्ण समानता और प्रतिमा है; और पतन (1:7) के परिणामस्वरूप अंधकारमय वासनाओं की दुष्टता इसमें प्रवेश कर गई।

२. दुष्ट राजकुमार—अंधकार का राज्य—ने पहले मनुष्य को बंदी बनाया, और इस प्रकार आत्मा को अंधकार की शक्ति से घेरा और पराधीनित किया, ठीक वैसे ही जैसे कोई व्यक्ति एक आदमी को राजा बनाने के लिए उसे सभी शाही वस्त्र पहनाता है, ताकि वह सिर से पैर तक सब कुछ राजसी पहन सके। इस प्रकार दुष्ट राजकुमार ने आत्मा को पाप के वस्त्र पहनाए, उसकी संपूर्ण प्रकृति और उसके पूरे अस्तित्व को कलंकित किया, उसे पूरी तरह से अपने राज्य का दास बना दिया, और उसके एक भी अंग को अपनी शक्ति से मुक्त नहीं छोड़ा—न उसके विचार, न उसका मन, न ही उसका शरीर—बल्कि उसे अंधकार के बैंगनी रंग में लपेट दिया। जैसे शरीर में (जब वह बीमार होता है) केवल एक अंग ही पीड़ित नहीं होता, बल्कि पूरा शरीर ही पूरी तरह से पीड़ा के अधीन हो जाता है, वैसे ही पूरी आत्मा भी दुराचार और पाप की दुर्बलताओं से पीड़ित हुई है। दुष्ट ने पूरी आत्मा को—मानव के इस आवश्यक भाग, उसके अस्तित्व के इस अनिवार्य अंग—को अपनी ही दुष्टता में, अर्थात् पाप में, पराधीनित कर दिया है; और इस प्रकार शरीर दुखित और नश्वर हो गया है (2:1)।

3. जब प्रेरित कहते हैं, *'पुराने मनुष्य को उतार दो'* (कुलु. 3:9), तो वे उस पूर्ण मनुष्य का उल्लेख करते हैं, जिसमें आँखें आँखों के अनुरूप, सिर सिर के, कान कानों के, हाथ हाथों के और पैर पैरों के अनुरूप हैं। क्योंकि दुष्ट ने पूरे पुराने मनुष्य को अशुद्ध कर दिया है और अपनी ओर खींच लिया है—अशुद्ध, अस्वच्छ, अधर्मी, परमेश्वर के वचन के प्रति अवज्ञाकारी, खुद पाप में, ताकि वह अब मनुष्य के लिए उचित रूप से न देखे, बल्कि चालाकी से देखे, और चालाकी से सुने, और उसके पाँव बुराई करने के लिए दौड़ें, और उसके हाथ अधर्म करें, और उसका हृदय चालाकी रचे (2:2)।

4. पुराने मनुष्य ने सिद्ध मनुष्य को त्याग दिया है और उसने अंधकार के राज्य के वस्त्र धारण कर लिए हैं: निन्दा, अविश्वास, निर्भयता, व्यर्थता, घमंड, धन के प्रेम, कामवासना और अंधकार के राज्य के अन्य वस्त्र—अशुद्ध और घृणित फटे-पुराने वस्त्र (2:4)।

5. यह ठीक वही था जिसकी शत्रु ने चाह की थी: आदम के उल्लंघन के द्वारा आंतरिक मनुष्य—उस शासक मन को जो परमेश्वर को देखता है—को घायल करना और अंधकारमय बनाना। और उसकी आँखें, स्वर्गीय आशीषों तक पहुँच खोकर, दुष्टताओं और वासनाओं के लिए खुल गईं (20:4)।

6. दुर्भावना की आत्माएँ (पतित) आत्मा को अंधकार की जंजीरों से बाँध देती हैं; इसलिए, वह जितना चाहती है उतना प्रभु से प्रेम नहीं कर सकती, न ही जितना चाहती है उतना विश्वास कर सकती है, न ही जितना चाहती है उतना प्रार्थना कर सकती है, क्योंकि आदम के प्रथम अपराध के समय से ही, विरोध—खुला और गुप्त दोनों—ने हर बात में हम पर अपना अधिकार कर लिया है (21:2)।

ख) इस विनाशकारी स्थिति को देखकर, ईश्वर और स्वर्गदूतों ने पतित आत्मा पर दया की।

7. जिस दिन आदम गिरा, परमेश्वर आए और स्वर्ग में टहलते हुए आदम को देखकर, मानो उस पर तरस खाया, और कहा: 'इतनी सारी आशीषों के बाद, तुमने क्या बुराई चुन ली है! ऐसी महिमा के बाद, अब तुम क्या लज्जा सहते हो! अब तुम इतने मुरझाए, इतने विकृत, इतने दुर्बल क्यों हो गए हो? इतनी रोशनी के बाद, किस अंधकार ने तुम्हें घेर लिया है!' जब आदम गिरा और परमेश्वर के लिए मर गया, तो सृष्टिकर्ता को उस पर दया आई; स्वर्गदूतों, सभी शक्तियों, स्वर्ग, पृथ्वी और सभी प्राणियों ने उसकी मृत्यु और पतन पर शोक मनाया। क्योंकि प्राणियों ने देखा कि जिसने उन्हें एक राजा के रूप में नियुक्त किया था, वह शत्रुतापूर्ण और कपटी अंधकार का दास बन गया था। इस प्रकार, उसने अपनी आत्मा को अंधकार—कड़वे और छलपूर्ण अंधकार—से आच्छादित कर लिया, क्योंकि अंधकार

का राजकुमार उस पर हावी हो गया था। वही (आदम) था जिसे डाकुओं ने घायल किया था और यरूशलेम से यरीहो जाते समय आधा मरा हुआ छोड़ दिया था (30:7)।

(ग) फिर भी सत्य ने उसे न्यायसंगत दंड दिया, और वह एक सुनसान घर की तरह रह गया।

8. आदम, आज्ञा का उल्लंघन करने के बाद, स्वर्ग से निकाल दिया गया और अपने ऊपर परमेश्वर का क्रोध लाया। जिस प्रकार परमेश्वर, यहूदियों पर एक बार क्रोधित होकर, यरूशलेम को उसके शत्रुओं के उपहास के लिए सौंप दिया, और जो उनसे घृणा करते थे वे उन पर शासन करने लगे, ताकि वहाँ फिर कोई पर्व या भेंट न रही; उसी प्रकार, आज्ञा का उल्लंघन करने के लिए आत्मा पर क्रोधित होकर, उसने उसे उसके शत्रुओं, यानी दुष्टात्माओं और वासनाओं के हवाले कर दिया, और उन्होंने, उसे बहकाकर, पूरी तरह से नम्र कर दिया, और अब आत्मा द्वारा परमेश्वर को कोई पर्व, न कोई धूप, न कोई बलिदान अर्पित नहीं किया जाता था, क्योंकि उसके भीतर जो कुछ भी उत्तम है, उस तक जाने वाले मार्ग जंगली जानवरों से भर गए थे, और रेंगने वाले जीव—धोखेबाज़ आत्माएँ—ने वहाँ अपने घोंसले बना लिए थे। और जैसे एक घर, यदि उसका स्वामी उसमें नहीं रहता, तो वह अँधेरे, अपमान और अपवित्रता में लिपट जाता है, और कीचड़ और पीप से भर जाता है, वैसे ही आत्मा भी, यदि उसका स्वामी स्वर्गदूतों के साथ उसमें आनंदित नहीं होता, तो वह पाप के अँधेरे से भर जाती है, लज्जास्पद वासनाओं और हर प्रकार की अपमान (12:10, 28:1) से भर जाता है।

९. चूँकि मनुष्य ने अपनी अवज्ञा में, एक शाप को दूसरे पर स्वीकार किया: *'पृथ्वी तेरे लिए काँटे और कांटेदार झाड़ियाँ उत्पन्न करेगी'* (उत्पत्ति ३:१८), और इसके अलावा: 'तू भूमि जोतता रहेगा, और वह तुझ पर अपना फल नहीं देगी', उसके हृदय की मिट्टी में काँटे और कांटेदार झाड़ियाँ उग आई हैं और बढ़ गई हैं। उसके शत्रुओं ने छल से उसकी महिमा चुरा ली है और उसे लज्जा पहना दी है। उसकी रोशनी छीन ली गई है, और वह अंधकार में लिपट गया है। उन्होंने उसकी आत्मा को मार डाला है, उसके विचारों को बिखेर और विभाजित कर दिया है, और उसके मन को उच्च स्थान से नीचे ला दिया है; और इस्राएल का मनुष्य सच्चे फिरौन का दास बन गया है, जिसने उस पर निरीक्षकों और पर्यवेक्षकों को नियुक्त किया है—जो आत्मा में चालाक हैं—जो उसे, चाहे वह इच्छा से हो या अनिच्छा से, अपने दुष्ट कर्म करने, मलबा और मलबे का ढेर बनाने के लिए मजबूर करते हैं। मनुष्य को स्वर्गीय सोच के मार्ग से हटाकर, उन्होंने उसे दुष्ट कर्मों—भौतिक, सांसारिक और क्षणिक—और शब्दों की ओर ला दिया है, विचारों और व्यर्थ तर्क; क्योंकि आत्मा, अपनी ऊँचाई से गिरकर, एक मानवद्वेषी राज्य और क्रूर राजकुमारों से मिली, जो उसे उनके लिए पाप के दुष्ट नगरों (47, 6) का निर्माण करने के लिए मजबूर करते हैं।

(घ) पतन के परिणामस्वरूप, सारी सृष्टि और संपूर्ण मानव जाति शत्रु और वासनाओं के अत्याचार के अधीन हो गई है।

10. एक ऐसे राजा की कल्पना करें जिसके पास धन-संपत्ति है, और जिसके सेवक उसकी सेवा करने के लिए तैयार हैं, और ऐसा हुआ कि उसके शत्रुओं ने उसे पकड़ लिया और बंदी बना लिया। जैसे ही उसे पकड़कर ले जाया जाता है, उसके सेवकों और परिचारकों को अनिवार्य रूप से उसका अनुसरण करना पड़ता है। इसी प्रकार आदम को भी परमेश्वर की सेवा करने के लिए शुद्ध रूप से बनाया गया था, और ये प्राणी उसकी सेवा के लिए आदम को दिए गए थे, क्योंकि उसे सभी प्राणियों का स्वामी और राजा नियुक्त किया गया था। लेकिन जैसे ही छलपूर्ण वचन उसके पास पहुँचा और उससे बात की, आदम ने पहले इसे अपनी बाहरी सुनने की शक्ति से ग्रहण किया; फिर यह उसके हृदय में प्रवेश कर गया और उसके पूरे अस्तित्व पर अधिकार कर लिया। और इस प्रकार, उसकी बन्धुआवस्था के माध्यम से, जो प्राणी उसकी सेवा करते थे और उसका आज्ञापालन करते थे, वे भी उसके साथ बन्धक बना लिए गए, क्योंकि उसके द्वारा मृत्यु हर आत्मा पर राज करती थी; और उसकी अवज्ञा के परिणामस्वरूप, आदम की संपूर्ण प्रतिमा इतनी मिटा दी गई कि लोग परिवर्तित हो गए और राक्षसों की पूजा करने लगे। क्योंकि पृथ्वी के फल भी, जिन्हें परमेश्वर ने सुन्दरता से बनाया है, राक्षसों को अर्पित किए जाते हैं। रोटी, दाखरस, तेल और जानवर उनके वेदियों पर चढ़ाए जाते हैं। उन्होंने तो अपने ही बेटों और बेटियों को भी राक्षसों के लिए बलिदान कर दिया (11:5)।

11. आदम के पाप करने के समय से ही, आत्मा के विचार, परमेश्वर के प्रेम से मुंह मोड़कर, इस युग में बिखर गए हैं और सांसारिक तथा भौतिक विचारों में मिल गए हैं। लेकिन जैसे आदम ने आज्ञा का उल्लंघन करके अपने भीतर दुष्ट वासनाओं का खमीर ग्रहण किया, वैसे ही उससे उत्पन्न हुए और आदम की संपूर्ण वंश-परंपरा भी, विरासत में, इस खमीर के सहभागी बन गए, और जैसे-जैसे ये धीरे-धीरे फलते-फूलते और बढ़ते गए, लोगों के भीतर पापी वासनाएँ इतनी अधिक बढ़ गईं कि वे व्यभिचार, , कामुकता, मूर्तिपूजा, हत्या और अन्य अतार्किक कृत्यों तक फैल गईं, जब तक कि सारी मानवता दुराचार से भ्रष्ट नहीं हो गई। लोगों में बुराई इतनी बढ़ गई थी कि वे सोचने लगे कि कोई ईश्वर

नहीं है; उन्होंने निर्जीव पत्थरों की पूजा करना शुरू कर दिया और अपने मन में ईश्वर की अवधारणा बनाने में भी पूरी तरह से असमर्थ हो गए थे। विनाशकारी वासनाओं का खमीर पुराने आदम की संतान में इस हद तक घुल गया था (24:2)।

12. जब मनुष्य आज्ञा से भटक गया और क्रोध के न्याय के अधीन हो गया, तो पाप ने उस पर अपना प्रभुत्व जमा लिया और, एक निश्चित कड़वाहट की खाई की तरह—जो सूक्ष्म और गहरी दोनों थी—अंदर प्रवेश करके, आत्मा के चरागाहों पर, उसकी सबसे गहरी कोठरियों तक, अधिकार कर लिया। इस प्रकार, आत्मा और उससे मिले हुए पाप दोनों की उपमा एक महान वृक्ष से दी जा सकती है, जिसकी पृथ्वी की गहराइयों में कई शाखाएँ और जड़ें हैं। इसी प्रकार, आत्मा में प्रवेश करने वाले पाप ने उसके सबसे भीतरी कोनों पर कब्ज़ा कर लिया, और वह आदत और पूर्वाग्रह में बदल गया; यह जन्म से ही प्रत्येक व्यक्ति के भीतर बढ़ता है, उसका पोषण करता है और उसे बुराई सिखाता है (41:1)।

13. लाजरूस, जिसे प्रभु ने मरे हुओं में से जिलाया—यह लाजरूस, जो इतनी भयानक बदबू से भर गया था कि कोई भी उसके ताबूत के पास नहीं जा सकता था—आदम का एक प्रतिरूप था, जिसने अपनी आत्मा में एक बड़ी बदबू ग्रहण कर ली थी और वह अंधकार और घोर अँधेरे से भर गया था। लेकिन जब आप आदम, उस डाकू-पीड़ित, और लाजरूस के बारे में सुनें, तो अपने मन को, मानो, पहाड़ों पर भटकने न दें, बल्कि अपनी आत्मा की गहराइयों में उतरें, क्योंकि आप भी उन्हीं घावों, उसी बदबू, उसी अंधकार को वहन करते हैं। हम सभी इस कलंकित वंश के पुत्र हैं; हम सभी उस एक ही बदबू में हिस्सेदार हैं। आदम पर जो भी दुर्बलता आई, वह हम सभी पर भी आई है जो आदम की संतान हैं। क्योंकि, जैसा कि यिशायाह कहते हैं, हम पर भी वही दुर्बलता आई है: *'न तो कोई फोड़ा, न कोई घाव, न कोई जलता हुआ घाव; न तो कोई पट्टी बांधने को, न कोई तेल, न कोई पट्टा बांधने को'* (यशायाह 1:6)। हम भी ऐसे ही एक असाध्य फोड़े से पीड़ित हैं (30:8)।

14. जैसे मिस्र में, अंधकार के तीन दिनों के दौरान, एक पुत्र अपने पिता को, एक भाई अपने भाई को, न ही एक मित्र अपने सच्चे मित्र को देख सका, क्योंकि अंधकार ने उन्हें ढक लिया था, वैसे ही, आदम के आज्ञा का उल्लंघन करने के बाद, वह अपनी पूर्व महिमा से गिर गया और संसार की आत्मा के अधीन हो गया, और अंधकार का पर्दा उसकी आत्मा पर उतर आया, उससे लेकर अंतिम आदम, प्रभु तक, मनुष्य ने सच्चे स्वर्गीय पिता, दयालु और कृपालु माता – आत्मा की कृपा, सबसे प्रिय और सबसे प्रत्याशित भाई – प्रभु, न ही उनके मित्रों और उनके विश्वासयोग्य पवित्र स्वर्गदूतों को देखा, जिनके साथ वह कभी आनंदित और उत्सव मनाया करता था। और केवल अंतिम आदम तक ही नहीं, बल्कि आज भी, उन लोगों के लिए जिन पर धर्म का सूर्य—मसीह—नहीं चमका है, और जिनकी आध्यात्मिक आँखें सच्ची रोशनी से नहीं खुली हैं, – ऐसे सभी पाप के उसी अंधकार में लिपटे हुए हैं, कामुकता के उसी प्रभाव के अधीन हैं, उसी दंड के भागी हैं, और उनकी आँखें नहीं हैं जिनसे वे पिता को देख सकें (28, 4)।

d) पतन का सबसे स्पष्ट परिणाम संसार में व्याप्त भ्रम है।

15. इस युग के बच्चों की उपमा इस पृथ्वी की चालनी में डाले गए गेहूँ से दी गई है, और वे इस संसार के चंचल विचारों के बीच, सांसारिक मामलों, इच्छाओं और भौतिक अवधारणाओं के जटिल जाल के बीच छनाए जाते हैं। शैतान आत्माओं को हिलाता है, और छलनी—अर्थात् सांसारिक मामलों—से वह संपूर्ण पापी मानव जाति को छांटता है। पतन के समय से ही, जब आदम ने आज्ञा का उल्लंघन किया और उस धूर्त राजकुमार के अधीन हो गया जिसने उस पर अधिकार कर लिया, तब से वह इस युग के सभी बच्चों को अनवरत रूप से धोखेबाज़ और उथल-पुथल भरे विचारों के माध्यम से छान रहा है, और उन्हें पृथ्वी की चालनी के भीतर संघर्ष में ला रहा है (5:1)।

16. जैसे कि खलिहान में गेहूँ को खलिहार द्वारा उछाला जाता है और, लगातार ऊपर फेंके जाने के कारण, जैसे छलनी में गेहूँ, जिसे छलनी करने वाला इधर-उधर फेंकता और लगातार ऊपर उछालता रहता है, उसी प्रकार छल का राजकुमार सभी लोगों को सांसारिक मामलों में व्यस्त रखता है, उन्हें अस्थिर कर देता है, उन्हें भ्रम और चिंता में डुबो देता है, और उन्हें व्यर्थ विचारों, नीच इच्छाओं, और सांसारिक बंधनों में लिप्त होने के लिए मजबूर करता है, और आदम की संपूर्ण पापी संतान को अनवरत रूप से फँसाता, भ्रमित करता और जाल में फँसाता रहता है। और प्रभु ने प्रेरितों से दुष्ट की उनके विरुद्ध भविष्य की बगावत की भविष्यवाणी की: *'शैतान ने तुम्हें गेहूँ की तरह छाँटने के लिए माँगा है; परन्तु मैंने* अपने पिता से *प्रार्थना की है* कि तुम्हारा विश्वास न टूटे' (लूका 22:31–32)। क्योंकि यह वचन और घोषणा, जो सृष्टिकर्ता द्वारा काइन से स्पष्ट रूप से कही गई थी: *'तू* पृथ्वी पर एक बेचैन और *भगोड़ा होगा'* (उत्पत्ति 4:12), सभी पापियों के लिए गुप्त रूप से एक आदर्श और समानता के रूप में काम करता है, क्योंकि आदम की संतान ने आज्ञा का उल्लंघन करके और पापी बनकर, गुप्त रूप से यह समानता अपने ऊपर ले ली। लोग भय, आतंक, हर तरह की पीड़ा, इच्छाओं, और हर प्रकार के सुखों की भरमार के चंचल विचारों से भ्रम में पड़ जाते हैं। इस संसार का राजकुमार परमेश्वर से न जन्मी हर आत्मा को उत्तेजित करता है और, जैसे खलई की टोकरी में लगातार

घूमती गेहूँ, मानव विचारों को विभिन्न तरीकों से उत्तेजित करता है, जिससे हर कोई डगमगाता है और उन्हें सांसारिक छल, शारीरिक सुख, भय और भ्रम में फँसा देता है (5:2)।

17. और प्रभु ने, यह दिखाते हुए कि जो दुष्ट के छल और इच्छाओं का अनुसरण करते हैं, वे काईन के दुष्टता के सदृश हैं, और उन्हें उजागर करते हुए कहा: *'तुम अपने पिता की इच्छाओं को पूरा करना चाहते हो; वह आरंभ से ही हत्यारा था, और सत्य में स्थिर नहीं रहता'* (यूहन्ना 8:44)। इसलिए, आदम की संपूर्ण पापी वंशजति गुप्त रूप से इस निंदा को वहन करती है: कराहते और कांपते हुए, तुम पृथ्वी की छलनी में उस शैतान द्वारा पीड़ित होगे, जो तुम्हें बोता है। जिस प्रकार एक आदम से सारी मानव जाति पृथ्वी पर फैली, उसी प्रकार एक ही कामुक भ्रष्टता ने संपूर्ण पापी मानव जाति में व्याप्त कर दिया है, और केवल अधर्म का राजकुमार ही उन सभी में चंचल, भौतिकवादी, व्यर्थ और विद्रोही विचार बोने में सक्षम है। और जैसे एक ही हवा सभी पौधों और बीजों को हिला और गति में ला सकती है, और जैसे रात का अंधकार पूरे ब्रह्मांड में फैलता है, वैसे ही छल का राजकुमार—जो पाप और मृत्यु का एक प्रकार का मानसिक अंधकार है—एक गुप्त और क्रूर हवा से पूरी मानव जाति को पृथ्वी पर उकसाता और घुमाता है, अस्थिर विचारों और सांसारिक इच्छाओं से मानव हृदयों को कैद करते हुए, और हर उस आत्मा को—जो ऊपर से नहीं जन्मी है और जिसका मन और बुद्धि किसी अन्य युग में नहीं ले जाई गई हैं—अज्ञानता, अंधापन और विस्मृति के अंधकार से भर देते हैं, जैसा कि कहा गया है: *'हमारी नागरिकता स्वर्ग में है'* (फिलि. 3:20). (5:3).

ई) सभी ने इसका अनुभव किया है, लेकिन किसी को नहीं पता था कि यह बुराई क्या थी या यह कहाँ से आई थी, और वे ऐसी स्थिति को स्वाभाविक मानते थे।

18. दृश्यमान संसार, राजाओं से लेकर भिखारियों तक, पूरी तरह से उथल-पुथल, अव्यवस्था और संघर्ष में है, और उनमें से कोई भी इसका कारण नहीं जानता—अर्थात्, यह स्पष्ट बुराई जो आदम के उल्लंघन के परिणामस्वरूप उत्पन्न हुई, मृत्यु का यह डंक—क्योंकि पाप, एक निश्चित तर्कसंगत शक्ति और स्वयं शैतान के सार के रूप में आकर, हर तरह की बुराई बो चुका है: यह गुप्त रूप से आंतरिक मनुष्य और मन पर कार्य करता है, और विचारों के माध्यम से उस पर युद्ध छेड़ता है; फिर भी लोग यह नहीं समझते कि उन्हें किसी विदेशी शक्ति द्वारा संचालित किया जा रहा है; इसके विपरीत, वे सोचते हैं कि यह स्वाभाविक है और वे अपनी ही बुद्धि के अनुसार कार्य कर रहे हैं। परन्तु जो मसीह की शान्ति और मसीह की प्रकाशा को अपने मन में धारण करते हैं, वे जानते हैं कि यह सब कहाँ से उत्पन्न होता है (15:47)।

19. आदम की वंशावली में कितने ऐसे राजा हुए हैं जिन्होंने पूरी पृथ्वी पर शासन किया और अपने शाही अधिकार के बारे में बहुत सोचा! और उनमें से एक भी, इतनी समृद्धि के बीच, उस भ्रष्टता को पहचान नहीं सका जो पहले मनुष्य के पाप ने आत्मा में पैदा की थी और उस पर छाया डाल दी थी; इसीलिए आत्मा अपने भीतर हुए परिवर्तन को पहचानने में असफल रहती है—अर्थात्, कि मन अब अपने पतन के कारण लज्जा से आच्छादित है, और हृदय की आँखों की अंधापन के कारण, उस महिमा को नहीं देखता जिसे हमारे पिता आदम ने पाप से पहले देखा था। (45, 1)।

२०. संसार में आलसी ऋषि भी थे: उनमें से कुछ ने दर्शन में अपनी श्रेष्ठता दिखाई, अन्य ने तर्क-वितर्क में अपनी महारत से चकित किया, कुछ ने वाक्पटुता में अपनी कुशलता दिखाई, जबकि अन्य व्याकरणविद् और कवि थे और स्थापित नियमों के अनुसार इतिहास लिखते थे। ऐसे विभिन्न कलाकार भी थे जो सांसारिक कलाओं का अभ्यास करते थे... और ये सभी, उनमें वास कर चुके सांप के वश में थे और अपने भीतर बस रहे पाप से अनजान थे, वे कपटी शक्ति के कैदी और दास बन गए और अपने ज्ञान और कला से उन्हें कोई लाभ नहीं मिला (45:2)।

(ग) पतन से उत्पन्न बुराई चाहे कितनी भी बड़ी क्यों न हो, इसने मनुष्य को पूरी तरह से नहीं मारा। आध्यात्मिक जीवन की अभिव्यक्तियाँ उसके भीतर बनी रहीं।

21. हम यह नहीं कहते कि मनुष्य पूरी तरह से खो गया, नष्ट हो गया, या मर गया है: वह परमेश्वर के लिए मरा हुआ है, फिर भी अपनी स्वभाविक प्रकृति से जीवित है (12:2)।

22. मनुष्य अपने अपराध के कारण नष्ट हो गया; वह भ्रष्ट हो गया; शैतान ने उसके मन को ढक दिया। और एक दृष्टि से मनुष्य वास्तव में मृत है, जबकि दूसरी दृष्टि से वह जीवित है, तर्क करता है, और उसकी एक इच्छा है (26.1)।

23. और अपराध के बाद भी, ज्ञान बना रहता है। (यह अंतरात्मा की कार्यप्रणाली में स्पष्ट रूप से स्पष्ट है।) जब एक डाकू को अदालत में लाया जाता है और मुकदमा शुरू होता है, तो राजकुमार उससे पूछता है: 'जब तुमने बुराई की, तो क्या तुम नहीं जानते थे कि तुम्हें पकड़ लिया जाएगा और मौत की सजा दी जाएगी?' और डाकू यह कहने की हिम्मत नहीं करता कि वह नहीं जानता था, क्योंकि वह इसके बारे में अच्छी तरह से अवगत था। क्या व्यभिचारी नहीं जानता कि वह गलत कर रहा है? क्या चोर नहीं जानता कि वह पाप कर रहा है? – तो क्या लोग, धर्मग्रंथ के बिना

भी, अपनी स्वाभाविक समझ से यह नहीं जानते कि एक ईश्वर है? उस दिन, उनके लिए यह कहना असंभव होगा, 'हम नहीं जानते थे कि एक ईश्वर है।' क्योंकि स्वर्ग से गरज और बिजली के साथ यह उनके लिए घोषित किया जाता है: 'क्या तुम नहीं जानते कि एक ईश्वर है जो सृष्टि पर शासन करता है?' (12:8–9)।

24. यह अन्याय है कि झूठी शिक्षा से भटक गए अन्य लोग यह दावा करें कि मनुष्य पूरी तरह से मृत है और किसी भी अच्छे कार्य को करने में असमर्थ है (46:3)।

25. मनुष्य के पास अभी भी वह स्वतंत्रता है जो ईश्वर ने उसे आरंभ से प्रदान की है। जैसे सिद्धजन किसी भी आवश्यकता से भले कार्य के लिए बंधे नहीं हैं, वैसे ही पाप में डूबे हुए और जिन्होंने स्वयं को शैतान का पात्र बना लिया है, वे भी बुराई के लिए बंधे नहीं हैं (15:38)।

26. आप स्वतंत्र हैं, और यदि आप विनिष्ट होना चाहते हैं, तो आपका स्वभाव आसानी से बदलने वाला है। जो कोई ऐसा करना चाहता है, वह परमेश्वर के अधीन हो सकता है और धार्मिकता के मार्ग पर चल सकता है, और अपनी इच्छाओं पर काबू पा सकता है, क्योंकि मन एक विरोधी है और दृढ़ संकल्प से, वह दुष्ट प्रवृत्तियों और नीच इच्छाओं पर विजय प्राप्त कर सकता है (15,21)।

27. फिर भी यह सोचना व्यर्थ है कि वे अपनी स्वतंत्रता से पाप के अवसरों को अपने ऊपर से दूर कर सकते हैं। मनुष्य को उपलब्ध स्वतंत्रता प्रलोभन का विरोध करने तक है, लेकिन इस क्षमता के होते हुए भी, यह आवश्यक नहीं है कि उसे अपने जुनून पर अधिकार प्राप्त हो। क्योंकि कहा गया है: *'जब तक यहोवा घर का निर्माण नहीं करता और नगर की रक्षा नहीं करता, पहरुआ जागते रहना व्यर्थ है'* और निर्माणकर्ता व्यर्थ परिश्रम करता है (भजन संहिता 126:1)। (25:1).

28. बुराई हममें अपनी पूरी शक्ति और तीव्रता के साथ काम करती है, और हर तरह की अशुद्ध इच्छाएँ उत्पन्न करती है; फिर भी यह हमसे उस तरह से नहीं मिलती-जुलती जैसे दूसरे लोग शराब को पानी में मिलाने की बात करते हैं, बल्कि यह ऐसे है जैसे एक ही खेत में गेहूँ और खर-पतवार एक साथ उगते हैं, या जैसे एक चोर और घर का मालिक एक ही घर में रहते हैं (16:1).

29. जब सूरज चमकता है और हवा चलती है, तो सूरज का अपना शरीर और अपना स्वभाव होता है, और हवा का अपना स्वभाव और अपना शरीर होता है। इसी प्रकार पाप भी आत्मा के साथ मिल गया है, फिर भी पाप और आत्मा दोनों के अपने-अपने अलग स्वभाव हैं (2:2)।

30. एक झरना स्वच्छ जल बहाता है, फिर भी उसके तल में कीचड़ जमा रहता है। यदि कोई उस कीचड़ को हिला दे, तो पूरा झरना मटमैला हो जाता है। इसी प्रकार, जब आत्मा विक्षुब्ध हो जाती है, तो वह दुराचार में मिल जाती है। और शैतान आत्मा के साथ एक हो जाता है; व्यभिचार या हत्या के दौरान, दोनों आत्माएँ एक ही सत्ता बना लेती हैं। इसीलिए कहा गया *है, 'दुष्टों के संग मिलकर न चल, क्योंकि दुष्ट व्यभिचारी के संग एक शरीर है'* (1 कुरिन्थियों 6:16)। हालाँकि, अन्य समयों में, स्वतंत्र आत्मा अपनी इच्छा से काम करती है और अपने कर्मों पर पश्चाताप करती है, रोती है, प्रार्थना करती है और परमेश्वर को अपने मन में याद करती है। और यदि आत्मा हमेशा बुराई में डूबी रहती, तो वह ऐसा कैसे कर सकती थी? क्योंकि शैतान, कठोर हृदय होकर, किसी भी तरह से नहीं चाहता कि लोग पश्चाताप की ओर मुड़ें (16:2)।

3. प्रभु, उद्धार के कर्ता

क) प्रभु पतितों के लिए एकमात्र उद्धार हैं। प्रभु ने दया की और हमारे उद्धार के लिए देह में आए। उन्होंने अपने लहू से हमारे पापों को धो दिया; पवित्र आत्मा की कृपा से उन्होंने हमारे क्षीण स्वभाव को नया किया और इस प्रकार हमें अपने स्वर्गीय राज्य के लिए योग्य बनाया।

1. संसार की उपमा एक धनी मनुष्य से दी गई है जिसके पास भव्य और विशाल घर हैं, चाँदी और सोने की प्रचुरता है, विभिन्न संपत्तियाँ और हर प्रकार के सेवक हैं, लेकिन वह अचानक बीमारी और दुर्बलता से ग्रस्त हो जाता है; उसके सभी संबंधी उसके सामने खड़े हैं और, उसकी सारी संपत्ति के बावजूद, उसे उसकी बीमारी से नहीं बचा सकते। इसलिए न तो सांसारिक समझदारी, न धन-संपत्ति, और न ही कोई और चीज़ पाप में डूबी आत्मा को पाप से मुक्ति दिला सकती है; और केवल मसीह का आगमन ही आत्मा और शरीर दोनों को शुद्ध कर सकता है (45, 3)।

२. चूँकि मानव जाति अधर्म में गर्भ में आई और पाप में जन्मी, गर्भ से ही परमेश्वर से पराया हो गया और आदम के द्वारा पाप के राज्य आरंभ होने से ही गर्भ से ही भ्रांति में रहा, परमेश्वर का मेमना अपनी दया में, अपनी ही शक्ति से संसार के पापों को दूर करने के लिए आया, पहले उस बलवान को बाँधकर और फिर उन पात्रों को लूटकर

जिन्हें उसने लूट के माल के रूप में इकट्ठा किया था, जैसा कि कहा गया है: *'तूने बंधुओं को बंधक बनाया'* (भजन संहिता 67:19)। (पत्र, पृ. 433)।

३. आज्ञा के उल्लंघन के समय से ही, शैतान और अंधकार के राजकुमार आदम के हृदय, मन और शरीर में बस गए, मानो अपनी ही सिंहासन पर। तो फिर, प्रभु अंततःक्यों आए और कुँवारी से शरीर धारण किया? क्योंकि, यदि उन्हें अव्यक्त दिव्यता के रूप में आना भाता, तो उसे कौन सहन कर पाता? इसके विपरीत, इस माध्यम—शरीर—के द्वारा उन्होंने मानवजाति से संवाद किया। और अंत में, प्रभु ने शरीर में निवास करने वाली दुष्ट आत्माओं को उनके सिंहासनों से—अर्थात्, उन अवधारणाओं और विचारों से जिनके द्वारा वे शासन करते थे—हटा दिया, और अंतरात्मा को शुद्ध किया, जिससे मन, विचार और शरीर स्वयं के लिए एक सिंहासन बन गए (6:5)।

४. परमेश्वर ने मूसा को एक काँसे का साँप बनाने, उसे उठाने और एक खंभे के शीर्ष पर बाँधने की आज्ञा दी, और साँपों द्वारा डँसे हुए सभी लोग उस काँसे के साँप को देखने से चंगे हो गए। मृत साँप ने जीवित साँपों पर विजय प्राप्त की, क्योंकि यह प्रभु के शरीर का एक प्रतिरूप था। क्योंकि प्रभु ने अपना शरीर, जो उन्होंने मरियम से प्राप्त किया था, उसे उठाया और उसे क्रूस पर चढ़ाया, उसे वृक्ष पर फैलाया और वहाँ ठोक दिया; और मृत शरीर ने उस साँप पर विजय प्राप्त की और उसे मार डाला जो हृदय के भीतर रहता और रेंगता है। इसमें एक महान चमत्कार निहित है (11:8–9)।

५. आत्मा, जो शुरू में हानिकारक जुनूनों के لاعلاج फोड़े से पीड़ित थी, को कोई भी चंगा नहीं कर सका—न तो धर्मी लोगों में से, न तो पूर्वजों में से, न तो भविष्यद्वक्ताओं में से, और न ही कुलपतियों में से। मूसा आए, लेकिन वह पूर्ण चंगाई नहीं ला सके। पुरोहित थे, बलिदान थे, दशांश थे, सब्त का पालन था, अमावस्या के पर्व थे, स्नान संस्कार थे, बलिदान थे, होमबलि थे, और व्यवस्था के अनुसार किए जाने वाले धर्म के अन्य सभी कार्य थे; फिर भी आत्मा को दुष्ट विचारों के अशुद्ध प्रवाह से चंगा या शुद्ध नहीं किया जा सका, और उसकी सारी धार्मिकता मनुष्य को चंगा करने में शक्तिहीन थी जब तक उद्धारकर्ता नहीं आए, सच्चे चिकित्सक, जो तुरंत चंगा करते हैं और मानव जाति के लिए स्वयं को छुड़ौती के रूप में देते हैं। केवल उन्होंने ही आत्मा की महान और उद्धारकारी मुक्ति और चंगाई को पूरा किया; उन्होंने इसे दासत्व से मुक्त किया और इसे अंधकार से बाहर निकाला (20:5-6)।

6. पृथ्वी से लिए गए, अपने स्वयं के उपचार—अर्थात् केवल अपने धार्मिक कार्यों से—ऐसी अदृश्य पीड़ा से आत्मा का उपचार नहीं हो सकता था; केवल स्वर्गीय और दिव्य स्वभाव की शक्ति से, पवित्र आत्मा के वरदान से—केवल इसी एक उपाय से ही कोई व्यक्ति पवित्र आत्मा द्वारा हृदय की शुद्धि के माध्यम से उपचारित हो सकता था और जीवन प्राप्त कर सकता था (20:7)।

7. जैसे एक किसान, जब वह खेत जोतने जाता है, तो उसे खेती के लिए उपयुक्त औजार और कपड़े लेने पड़ते हैं, वैसे ही मसीह ने भी, स्वर्गीय राजा और सच्चे कर्मकर्ता, जब वे पापों से उजाड़ दी गई मानवता के पास आए, तो उन्होंने स्वयं को एक शरीर में धारण किया और, एक औजार के बजाय क्रूस को उठाकर, उजाड़ आत्मा की खेती की, उससे काँटों और झाड़ियों को हटा दिया, पाप की खरपतवार को जड़ से उखाड़ दिया, और उसकी सभी पापों की शेषाओं को आग से जला दिया। और इस प्रकार, सूली के वृक्ष से इसे जोतकर, उन्होंने इसके भीतर सबसे सुंदर आध्यात्मिक बगीचा लगाया, जो प्रभु, परमेश्वर के लिए हर प्रकार के मीठे और वांछनीय फल उत्पन्न करता है (28, 3)।

8. प्रभु मसीह ने नए नियम को नवीनीकृत किया, और अपने क्रूस और मृत्यु द्वारा नरक और पाप के द्वारों को चकनाचूर कर दिया, विश्वासियों की आत्माओं को मुक्ति दी, उन्हें भीतर से सांत्वनादाता प्रदान किया, और उन्हें अपने राज्य में लाया (38, 3)।

९. व्यवस्था यह आज्ञा देती थी कि एक याजक दो कबूतर ले आए: एक को वध करे, और जीवित कबूतर पर उसके रक्त का छिड़काव करके उसे उड़ने के लिए आज़ाद छोड़ दे। यह कार्य सत्य का एक प्रकार और पूर्वाभास था। क्योंकि मसीह को मार डाला गया था, और उनका लहू, हम पर छिड़कने के बाद, हमें स्वतंत्र कर चुका है, क्योंकि इसने हमें पवित्र आत्मा के पंख दे दिए हैं ताकि हम परमेश्वरत्व की वायु में बिना किसी बाधा के उड़ सकें (47:2)।

10. हमारे प्रभु यीशु मसीह ठीक हमारे स्वभाव को बदलने, नवीनीकृत करने और बहाल करने, और इस आत्मा को—जो पाप के परिणामस्वरूप, वासनाओं द्वारा नीचा कर दी गई थी—को दिव्य आत्मा के माध्यम से उसे फिर से नया आकार देकर पुनर्जीवित करने के लिए आए। वह उन पर विश्वास करने वालों को एक नया मन, एक नई आत्मा, नई आँखें, नए कान, एक नई आत्मिक जीभ देने आए; संक्षेप में, नए मनुष्य बनाने आए (44, 1)।

11. जैसे दुश्मन, अपने अधीन हुए मनुष्य को हानिकारक वासनाओं का बोझ देकर, उसे पाप की आत्मा से अभिषेक करके, और उसमें हर तरह के अन्याय की मदिरा डालकर अपने लिए नया बना देता है, वैसे ही प्रभु ने भी मनुष्य को पाप से मुक्त करके, उसे पवित्र आत्मा से अभिषेक करके नया बना दिया (44, 2)।

12. जैसे कि दृश्यमान संसार में कोई भी अपनी मर्जी से समुद्र को पार नहीं कर सकता, जब तक उसके पास एक हल्का और चलाने में आसान जहाज न हो, जो लकड़ी का बना हो और पानी पर तैर सके—क्योंकि जो कोई भी समुद्र पार करने निकलता है, वह डूबकर मर जाता है—वैसे ही आत्मा के लिए अपनी मर्जी से पाप के कड़वे समुद्र को पार करना, उस पर विजय प्राप्त करना और उसे पार करना असंभव है, दुष्ट शक्तियों और अंधकारमय जुनूनों की अतिक्राम्य खाई को पार करना असंभव है, जब तक कि आत्मा में चपल, स्वर्गीय, प्रकाश-पंखों वाली पवित्र आत्मा को ग्रहण न करे, जो सभी दुष्टता को कुचलती और परास्त करती है (44, 6)।

ख) उद्धार प्रदान करने के बाद, प्रभु की इच्छा है कि जो लोग उद्धार पाना चाहते हैं, वे उद्धार पाएं, लेकिन वह किसी को बाध्य नहीं करते।

13. हमारे प्रभु यीशु मसीह ने, मनुष्य के उद्धार की चिंता स्वयं पर लेते हुए, उद्धार का संपूर्ण कार्य पूरा किया और, आरंभ से ही, इसे पिता, पुरखों, व्यवस्था और भविष्यद्वक्ताओं के माध्यम से संभाला; और अंत में, स्वयं आकर और क्रूस की लज्जा की परवाह न करते हुए, उन्होंने मृत्यु को सहन किया। और उनकी सारी मेहनत, उनकी सारी परवाह, इसीलिए थी कि वह स्वयं, अपनी ही प्रकृति से, आत्मा के द्वारा संतान उत्पन्न करें, यह मानकर कि वे उनकी दिव्यता के द्वारा ऊपर से जन्म लें। और जैसे सांसारिक पिता दुखी होते हैं यदि वे संतान नहीं उत्पन्न करते, वैसे ही प्रभु ने भी, मानव जाति से अपनी ही प्रतिमा के रूप में प्रेम करते हुए, उन्हें अपने दिव्य बीज से उत्पन्न करने की इच्छा की। और यदि कुछ लोग इस प्रकार के जन्म को स्वीकार नहीं करना चाहते और परमेश्वर की आत्मा के गर्भ से जन्म लेना नहीं चाहते, तो यह मसीह के लिए एक बड़ी दुख की बात है, जिन्होंने उन्हें बचाने के लिए उनके कारण दुख उठाया और सहन किया (30:2)।

14. प्रभु की इच्छा है कि सभी लोग इस जन्म के योग्य बनें, क्योंकि वे सभी के लिए मरे और सभी को जीवन के लिए बुलाया। और जीवन परमेश्वर से ऊपर से जन्म है। क्योंकि इस जन्म के बिना आत्मा का जीवित रहना असंभव है, जैसा कि प्रभु कहते हैं: *'जब तक कोई ऊपर से न जन्मे, वह परमेश्वर का राज्य नहीं देख सकता'* (यूहन्ना 3:3)। और इसलिए, जो भी प्रभु पर विश्वास करते हैं और आगे आकर इस जन्म को प्राप्त करते हैं, वे स्वर्ग में उन्हें जन्म देने वाले माता-पिता के लिए आनंद और महान हर्ष लाते हैं, और सभी स्वर्गदूत और पवित्र शक्तियाँ आत्मा से जन्मी और एक आत्मा बनी आत्मा के लिए आनंदित होती हैं (30:3)।

१५. एक किसान हर जगह बीज बोता है और आशा करता है कि वे सभी फलेंगे; परन्तु फिर वह अपनी दरांती लेकर आता है और यदि उसे कोई फल नहीं मिलता है तो वह दुखी होता है। इसी प्रकार प्रभु भी चाहते हैं कि उनका वचन मानव हृदयों में बोया जाए। पर जैसे एक किसान एक बंजर खेत पर शोक करता है, वैसे ही प्रभु एक ऐसे हृदय पर शोक करते हैं जो बंजर है और कोई फल नहीं देता (32:11)।

16. जैसे कि यदि कोई राजा, एक गरीब और दुर्बल व्यक्ति को पाकर, उससे लज्जित न हो, बल्कि उसके घावों को औषधीय मरहम से चंगा करे और उसे अपने महलों में ले जाए, और उसे बैंगनी वस्त्र और मुकुट पहनाए, और उसे अपनी मेज़ पर अपना साथी बनाए, वैसे ही स्वर्गीय राजा, मसीह, दुर्बल मनुष्य के पास आकर , उसे चंगा किया और उसे अपने शाही भोजन पर आमंत्रित किया; इसके अलावा, उसकी इच्छा के विरुद्ध जबरदस्ती किए बिना, बल्कि उपदेश के माध्यम से उस पर कार्य करते हुए, उसे इतने सम्मान पर पहुँचाया (15, 28)।

17. सुसमाचार में लिखा है कि प्रभु ने दासों को भेजा कि जो इच्छुक थे उन्हें बुलाएँ और *यह* घोषणा करें: *'मेरा भोज तैयार है'* (मत्ती 22:4), लेकिन जिन्हें बुलाया गया था उन्होंने मना कर दिया और कहा: एक ने – *'मैंने बैलों का एक जोड़ा खरीद लिया है'*, दूसरे ने – *'मैंने विवाह कर लिया है'* (लूका 14: 19–20). आप देखिए – जिसे बुलाया गया था वह तैयार था, लेकिन आमंत्रितों ने उसे ठुकरा दिया और, बेशक, दोष उन्हीं का था। देखिए, प्रभु ने उनके लिए एक राज्य तैयार किया है, उन्हें प्रवेश करने के लिए बुलाता है, लेकिन वे नहीं चाहते (15:29)।

18. प्रभु हमारे हृदयों के द्वार पर निरंतर दस्तक देते रहते हैं, ताकि हम उन्हें खोलें, और वे हमारे प्राणों में प्रवेश करके विश्राम करें, और हमारे भीतर अपना निवास बनाएं। क्योंकि वे कहते हैं: *'देखो, मैं द्वार पर खड़ा हुआ खटखटाता हूँ: यदि कोई मेरी आवाज़ सुनकर द्वार खोलता है, तो मैं उसके पास भीतर आ जाऊँगा'* (प्रकाशितवाक्य 3:20)। इसी उद्देश्य के लिए, वह महान कष्ट सहने के लिए प्रसन्न हुए, उन्होंने अपने शरीर को मृत्यु के हवाले कर दिया और हमें दासता से छुड़ाया, ताकि, हमारी आत्मा में आकर, वह वहीं अपना निवास बना सकें। क्योंकि उनका भोजन, पेय, वस्त्र, आश्रय और विश्राम सभी हमारी आत्माओं में पाए जाते हैं। इसलिए, वह हम में प्रवेश करने की इच्छा से, निरंतर द्वार पर खटखटाता रहता है। तो आइए, हम उसे ग्रहण करें और उसे अपने अंतरतम में लाएँ, क्योंकि हमारे लिए भी, वह हमारा भोजन, हमारा पान और अनंत जीवन है। और हर आत्मा जिसने उसे अपने भीतर ग्रहण नहीं किया है और उसे अपने भीतर विश्राम नहीं दिया है—या यूँ कहें कि, जिसने उसमें विश्राम नहीं पाया है—उसका स्वर्ग

के राज्य में संतों के साथ कोई वारिस-अधिकार नहीं है और वह स्वर्गीय नगर में प्रवेश नहीं कर सकता। हे प्रभु यीशु मसीह, आप स्वयं हमें उसमें प्रवेश कराइए! (30:9)।

४. प्रभु में उद्धार पाने का दृढ़ संकल्प बनाना

आत्मा की मुक्ति की यात्रा, मुक्ति की इच्छा के निर्माण और प्रभु में इसे प्राप्त करने के दृढ़ संकल्प से शुरू होती है। प्रभु ने हमारी मुक्ति को पूरा किया है, इसके लिए सब कुछ तैयार किया है, और चाहता है कि सभी का उद्धार हो। बस इतना करना आवश्यक है कि कोई व्यक्ति पहला कदम उठाए और मुक्ति की प्रक्रिया शुरू करे।

क) एक आवश्यक शर्त के रूप में हमारी इच्छा आवश्यक है।

1. मनुष्य स्वभाव से एक उद्देश्य के लिए संपन्न है, और यही वह है जिसे परमेश्वर खोजता है। और इसलिए वह आज्ञा देता है कि मनुष्य पहले समझे, और समझने के बाद, प्रेम करे और अपनी इच्छा उसी पर स्थिर करे। परन्तु किसी विचार को क्रिया में लाना, या परिश्रम करना, या कोई काम पूरा करना—यह प्रभु का अनुग्रह है, जो वह उन लोगों को देता है जो इसकी इच्छा रखते हैं और विश्वास करते हैं। इसलिए, मानवीय इच्छा, एक तरह से, एक आवश्यक शर्त है। यदि इच्छा नहीं है, तो ईश्वर स्वयं कुछ नहीं करते, भले ही वे अपनी स्वतंत्रता से ऐसा करने में सक्षम हैं। इसलिए, आत्मा द्वारा किसी कर्म की सिद्धि मनुष्य की इच्छा पर निर्भर करती है। फिर, यदि हम अपनी इच्छा को पूरी तरह से समर्पित कर दें, तो वह ईश्वर जो सभी बातों में अद्भुत और सर्वथा अकल्पनीय है, पूरे कर्म का श्रेय हमें देता है (37, 10)।

2. जैसे रक्तस्राव से पीड़ित स्त्री, यद्यपि वह चंगी नहीं हो सकी और पीड़ित ही रही, तथापि उसके पास प्रभु के पास आने के लिए पैर थे और आकर उसने चंगाई पाई; वैसे ही अंधा मनुष्य भी, यद्यपि वह देखने में असमर्थ होने के कारण प्रभु के पास न आ सकता था और न पास आ सकता था, तथापि उसने एक ऐसी पुकार लगाई जो दूतों से भी तेज चली: *'हे दाऊद के पुत्र, मुझ पर दया कर'* (मरकुस 10:47) – और इस प्रकार, विश्वास करने पर, उसे चंगाई मिली जब प्रभु उसके पास आए और उसे दृष्टि प्रदान की; इसी प्रकार आत्मा भी, यद्यपि लिज्जास्पद वासनाओं के घावों से जख्मी है, यद्यपि पाप के अंधकार से अंधी है, फिर भी उसमें यीशु से पुकारने और उन्हें पुकारने की इच्छा होती है, ताकि वे आएं और आत्मा को अनंत मोक्ष प्रदान करें (20:7)।

3. जैसे वह अंधा आदमी, यदि वह न पुकारता, और रक्तस्राव वाली स्त्री, यदि वह प्रभु के पास न आती, तो चंगा न होता, वैसे ही, यदि कोई अपनी इच्छा से और पूरे हृदय से प्रभु के पास नहीं आता, और विश्वास की दृढ़ता के साथ उनसे विनती नहीं करता, तो उसे चंगाई नहीं मिलेगी। क्योंकि वे तुरन्त चंगे क्यों हुए, जबकि हम अभी तक अपनी छिपी हुई वासनाओं से चंगे नहीं हुए हैं? हमारे अविश्वास के कारण, हमारे डगमगाने के कारण, क्योंकि हम उससे अपने पूरे हृदय से प्रेम नहीं करते और उससे सच्चे मन से विश्वास नहीं रखते, हम ने अभी तक आध्यात्मिक चंगाई और उद्धार प्राप्त नहीं किया है। इसलिए, आइए हम उस पर विश्वास करें और सच्चे मन से उसके निकट आएँ, ताकि वह शीघ्र ही हमारे भीतर सच्चा उपचार कर सके। क्योंकि उसने वादा किया है कि वह *'जो उससे माँगते हैं उन्हें पवित्र आत्मा देगा'* (लूका 11:13), जो उसके द्वार पर खटखटाते हैं उनके लिए द्वार खोलने, और जो उसे खोजते हैं उनसे मिल जाने का (मत्ती 7:7)। और *'जिसने वादा किया' वह* झूठा नहीं है (तीतुस 1:2)। (20, 8, तुलना करें 45, 2)।

४. यद्यपि एक बच्चा कुछ भी करने में असमर्थ है या अपनी माँ तक अकेले नहीं चल सकता, फिर भी, अपनी माँ को खोजते हुए, वह हिलता है, पुकारता है और रोता है। और माँ उस पर तरस खाती है; वह प्रसन्न होती है कि बच्चा प्रयास करके उसे खोजता है और रोता है। और चूँकि बच्चा उसके पास नहीं जा सकता, इसलिए लंबी खोज के बाद बच्चे के लिए प्रेम से अभिभूत माँ स्वयं उसके पास आती है और, बड़ी कोमलता से, उसे उठाती है, लाड़-प्यार करती है और उसे खिलाती है। परोपकारी ईश्वर भी उसी प्रकार उस आत्मा के साथ करता है जो आकर उसे खोजती है। लेकिन, अपने ही प्रेम और अपनी ही भलाई से और भी अधिक प्रेरित होकर, वह तर्कशील आत्मा के समीप आता है और, प्रेरित के शब्दों में, उसके साथ *'एक आत्मा'* बन जाता है (1 कुरिन्थियों 6:17)। (46, 3).

५. प्रभु दयालु और दीर्घ-सहिष्णु है, जो हमारे मन-परिवर्तन की प्रतीक्षा करता है; और यदि हम पाप करते हैं, तो वह हमारे पश्चाताप की आशा में उसे सहन करता है; और यदि हम गिरते हैं, तो वह हमें फिर से ग्रहण करने में लज्जित नहीं होता, जैसा कि भविष्यवक्ता ने कहा: *'क्या जो गिरता है, वह फिर नहीं उठता? या, यदि वह मुंह फेर ले, तो क्या वह फिर नहीं लौटता?'* (यर. ८:४)। जैसे ही हम होश में आएं और हमारा मन स्थिर हो जाए, हमें तुरंत और सही तरीके से उसकी ओर मुड़कर उसकी मदद माँगनी चाहिए; और वह हमें बचाने के लिए तैयार है, क्योंकि वह हमारी पूरी क्षमता से उसकी ओर हमारी इच्छा के उत्कट प्रयास की प्रतीक्षा करता है, एक ऐसी इच्छा जो हमारे विश्वास और उत्साह की स्वतंत्र पसंद के कारण अच्छी है; और वह स्वयं हमारे भीतर सभी प्रगति को संभव बनाता है। तो

फिर, सभी पूर्वाग्रह, आलस्य और सुस्ती को त्यागकर, हम साहसी बनने और उसके पदचिन्हों पर चलने के लिए तैयार क्यों नहीं होंगे, और दुराचार से भटककर इसे दिन-प्रतिदिन के लिए क्यों टालेंगे, क्योंकि हम नहीं जानते कि इस शरीर से हमारा वियोग कब होगा (4:17)।

ख) इच्छा कैसे बनती है।

क) ईश्वर से जागृति। प्रभु आत्मा को अदृश्य रूप से निर्देश देते हैं; कभी-कभी वह दुर्भाग्य के माध्यम से, कभी-कभी अपने प्रत्यक्ष हस्तक्षेप के माध्यम से, जैसा कि प्रेरित पौलुस के साथ हुआ था, परिवर्तन लाते हैं; लेकिन परिवर्तन का सार्वभौमिक सूचक ईश्वर का वचन है।

6. (एक व्यक्ति जो पाप की अवस्था में है) जिसे परमेश्वर जीवन में वापस लाने में प्रसन्न होते हैं, और वह उसे रोने और पश्चाताप करने के लिए प्रोत्साहित करते हैं। और यदि कोई व्यक्ति ऐसा करना जारी रखता है (अपने ऊपर शोक मनाता है), तो परमेश्वर पश्चाताप करने वाले को उसके अतीत के अपराधों के लिए फिर से रोने और पश्चाताप करने के लिए मनाते हैं (ताकि वह अपने पूरे जीवन पर विस्तार से शोक मना सके)। (15:15).

7. जब, परमेश्वर के भवन के निर्माण के लिए, आप स्वयं को दुख, कष्ट और संकटों में पाते हैं, तो जो बात आपको अपने लिए अप्रिय लगती है, वह वास्तव में आपकी आत्मा के लाभ के लिए होती है। यदि आप पर विपत्तियाँ आती हैं, तो आप अपने आप से तर्क करने लगते हैं: 'मैं संसार में दुखी हूँ; मैं संसार का त्याग करूँगा और परमेश्वर की सेवा करूँगा।' ऐसा हो सकता है कि, इस विचार तक पहुँचने के बाद, आप आज्ञा सुनते हैं: *'अपना सब कुछ बेच दो'* (मत्ती 19:21), सांसारिक संगति से घृणा करो और परमेश्वर की सेवा करो। तब आप संसार में अपनी दुर्भाग्य के लिए धन्यवाद देना शुरू कर देते हैं, इस तथ्य के लिए कि, इसके कारण, आप स्वयं को मसीह की आज्ञा का पालन करते हुए पाते हैं। अंत में, यदि आपने दृश्यमान संसार के संबंध में कुछ हद तक अपना मन बदल लिया है और संसार तथा सांसारिक संगति से अलग हो गए हैं, तो आपको अपने मन में भी परिवर्तन करना चाहिए, और सांसारिक बुद्धि को स्वर्गीय बुद्धि में बदलना चाहिए। तब आप उस आज्ञा पर मनन करना शुरू करते हैं जिसे आपने सुना है, और फिर भी आपको कोई विश्राम नहीं मिलता, बल्कि आपने जो सुना है उसे प्राप्त करने की चिंता और परिश्रम ही अपने ऊपर ले लेते हैं (32:7)।

8. संत पौलुस को ईश्वर ने कैसे पकड़ा? जैसे कोई विद्रोही, किसी को बंदी बनाकर, उसे अपने पास ले जाता है, और फिर स्वयं सच्चे राजा द्वारा पकड़ा जाता है, वैसे ही पौलुस ने भी, जब पाप की विद्रोही आत्मा उसके भीतर काम कर रही थी, तब कलीसिया का उत्पीड़न और लूटपाट की; लेकिन चूँकि उसने यह अज्ञानता से किया था, परमेश्वर के विरोध में नहीं, बल्कि ऐसा लगता था कि वह सत्य के लिए संघर्ष कर रहा था, इसलिए प्रभु ने उसे तुच्छ नहीं समझा बल्कि उसे पकड़ लिया। स्वर्गीय और सच्चे राजा ने, उसे अकथनीय तरीके से अनुग्रह देकर, उसे अपनी आवाज़ सुनने में सक्षम बनाया और एक सेवक के रूप में उसके मुँह पर प्रहार करके उसे स्वतंत्रता प्रदान की। देखो प्रभु की भलाई, और कैसे प्रभु पलक झपकते ही, दुष्टता से जुड़े और कठोर हो चुके आत्माओं को बदल सकते हैं, और उन पर अपनी भलाई और शांति प्रदान करते हैं (18:8)।

९. जैसे एक राजा, जिन लोगों पर वह अपने चार्टर और उपहार प्रदान करना चाहता है, उनके लिए पत्र लिखकर सभी को यह बताता है: 'मेरे पास आओ और मेरे शाही उपहार प्राप्त करो'—और यदि वे नहीं आते और उन्हें प्राप्त नहीं करते हैं, तो पत्र पढ़ने से उन्हें कोई लाभ नहीं होगा, परन्तु वे राजा के हाथों से सम्मान प्राप्त करने और आने से इनकार करने के कारण मृत्यु के दोषी ठहरेंगे; इसी प्रकार राजा परमेश्वर ने लोगों को पत्रों के रूप में दिव्य शास्त्र प्रदान किए हैं, यह घोषित करते हुए कि जो परमेश्वर को पुकारते हैं और विश्वास करते हैं, उन्हें परमेश्वर की दिव्यता के सार से स्वर्गीय वरदान माँगना और प्राप्त करना चाहिए। क्योंकि लिखा है: *'ताकि हम दिव्य स्वभाव के सहभागी बनें'* (2 पतरस 1:4)। लेकिन यदि कोई व्यक्ति नहीं आता, न ही माँगता, और न ही स्वीकार करता है, तो उसे धर्मग्रंथों को पढ़ने से कोई लाभ नहीं होगा; इसके विपरीत, वह स्वर्गीय राजा से जीवन का उपहार स्वीकार करने से इनकार करने के कारण मृत्यु का पात्र बन जाएगा, जिसके बिना अमर जीवन प्राप्त करना असंभव है (39)।

bb) आह्वान की ओर इच्छा को झुकाने के लिए स्वयं के भीतर संघर्ष।

10. कोई व्यक्ति ईश्वर का वचन सुनते ही इस धन्य सम्मान का तत्क्षण योग्य नहीं हो जाता। इसके विपरीत यह दावा करना किसी व्यक्ति को उसकी स्वतंत्र इच्छा से वंचित करने और मन के विरुद्ध संघर्ष करने वाली एक विरोधी शक्ति के अस्तित्व से इनकार करने के समान है। हम, हालाँकि, कहते हैं कि जो वचन सुनता है वह पश्चाताप की अवस्था में पहुँचता है, और फिर अभ्यास करने और संघर्ष की कला सीखने लगता है; वह शैतान के विरुद्ध संघर्ष और प्रयास करता है, और एक लंबे मुकाबले और संघर्ष के बाद, वह विजयी होकर एक ईसाई बन जाता है (अर्थात्, वह मसीह का एक कट्टर अनुयायी बनने का संकल्प लेता है)। (27, 20).

(बीबी) विचार और विश्वास जो इच्छा की प्रवृत्ति को प्रभावित करते हैं। स्वयं के साथ इस संघर्ष में, मन सत्य के विभिन्न प्रेरक और बाध्यकारी विचारों और विश्वासों को इकट्ठा करता है, जो उत्तेजित और प्रेरित करने में सक्षम हैं। संत मकरियस यहाँ सबसे पहले उन विचारों को रखते हैं कि परमेश्वर ने हमारे उद्धार के लिए क्या किया है, और उन वादों को जिनसे उन्होंने इस कार्य को घेर रखा है। वह विभिन्न वाक्यांशों में अक्सर इसी पर लौटते हैं।

11. आत्मा के तर्कसंगत सार में गहराई से उतरें, और ऐसा पूरे मन से करें। अमर आत्मा एक प्रकार का कीमती पात्र है। देखो, स्वर्ग और पृथ्वी कितने विशाल हैं, फिर भी ईश्वर की कृपा उन पर नहीं, बल्कि केवल तुम पर है। अपनी कुलीनता और गरिमा को देखो, क्योंकि उसने स्वर्गदूतों को नहीं भेजा, बल्कि प्रभु स्वयं तुम्हारे वकील के रूप में आए, ताकि खोए और घायल हुए लोगों को वापस बुला सकें, और तुम्हें शुद्ध आदम के मूल स्वरूप को पुनःस्थापित कर सकें। ईश्वर स्वयं आपके लिए मध्यस्थता करने और आपको मृत्यु से बचाने आए। तो, दृढ़ खड़े रहो, और कल्पना करो कि आपके लिए दिव्य व्यवस्था क्या कर रही है (26, 115. 28)।

12. कल्पना करो कि एक राजा ने किसी गरीब युवती को फटे-पुराने कपड़ों में पाया, और वह लज्जित नहीं हुआ, बल्कि उसने उसके गंदे वस्त्र उतार दिए, उसकी मैल धो दी, उसे चमकीले वस्त्रों से सजाया, और उसे राजा के भोज और दावत में अपनी संगिनी और सहभागी बना लिया। इसी प्रकार प्रभु ने एक आत्मा को पाया जो घायल और टूटी हुई थी; उन्होंने उसे चंगा किया, उसे उसके काले वस्त्रों और दुराचार की लज्जा से उतार दिया, उसे राजसी, स्वर्गीय वस्त्रों से सजाया, दिव्य, तेजस्वी और गौरवशाली, उसके सिर पर मुकुट रखा, और उसे आनंद और हर्ष के लिए शाही भोज में प्रवेश दिया (27:3)।

13. इसलिए, ईसाई धर्म कोई तुच्छ बात नहीं है; यह एक महान रहस्य है। तो, अपनी कुलीनता को पहचानें, अर्थात् यह कि आपको राजसी गरिमा के लिए बुलाया गया है, कि आप *'एक चुनी हुई जाति और एक पवित्र राष्ट्र' हैं* (1 पतरस 2:9)। ईसाई धर्म का रहस्य इस संसार के लिए असाधारण है। एक राजा की दृश्यमान महिमा और धन सांसारिक, नश्वर और क्षणिक होते हैं, जबकि वह राज्य और वह धन दिव्य, स्वर्गीय और महिमामय हैं; वे कभी समाप्त नहीं होते और कभी खत्म नहीं होते। क्योंकि स्वर्गीय मंडली में, जो स्वर्गीय राजा के साथ राज्य करते हैं—जैसे कि वह स्वयं मरे हुओं में से पहलौठा है (कुलुस्सियों 1:18)—वैसे ही जो उसके साथ राज्य करते हैं, वे भी पहलौठे हैं (27:4)।

14. मसीहियों को दिए गए वादे महान और अगोचर हैं, और वास्तव में इतने महान हैं कि स्वर्ग और पृथ्वी की सारी महिमा और वैभव, उनके अन्य अलंकरणों, विविधता, धन-संपत्ति, सुंदरता और दृश्यमान जगत के आनंद के साथ, एक ही आत्मा के विश्वास और धन-संपत्ति की तुलना भी नहीं कर सकते। अब, प्रभु की ओर से इतने सारे प्रोत्साहनों और वादों के साथ, हम कैसे न चाहें कि सुसमाचार के अनुसार अन्य सभी चीज़ों को त्यागकर, स्वयं को पूरी तरह से प्रभु को समर्पित कर दें, और केवल उसी से अपने पूरे हृदय से प्रेम करें, और उसके सिवा किसी और से प्रेम न करें? यह सब हमें प्रदान किया गया है—और यह कितनी महिमा की बात है! पिताओं और भविष्यद्वक्ताओं के दिनों से प्रभु ने हम पर कितनी बार दृष्टि डाली है! कितने वादे घोषित किए गए हैं! कितनी अनुनय-विनय! प्रारंभ से ही प्रभु हम पर कितने कृपालु रहे हैं! अंततः अपने आगमन पर, उन्होंने क्रूस के द्वारा हम पर अपनी अगणित दया दिखाई, ताकि वे हम में से जो उनकी ओर मुड़े हैं, उन्हें जीवन की ओर ले जा सकें। फिर भी हम अभी भी अपनी इच्छाओं, संसार के प्रति अपने प्रेम, अपनी दुष्ट प्रवृत्तियों और आदतों से चिपके रहते हैं, और इस प्रकार हम स्वयं को अल्पविश्वासी या यहाँ तक कि अविश्वासी साबित करते हैं! फिर भी, इन सब के बावजूद, प्रभु हम पर दयालु बने रहते हैं, अदृश्य रूप से हमारी रक्षा और हमें सांत्वना देते हैं; वह हमारे पापों के कारण हमें अंत तक संसार के दुराचार और छल-कपट के हवाले नहीं करते; अपनी महान भलाई और दीर्घ सहनशीलता के द्वारा, वह हमें नाश होने नहीं देते, यह आशा बनाए रखते हुए कि हम एक दिन उनके पास लौट आएँगे (4:17–18)।

१५. इस वचन का क्या अर्थ है: *'जिन बातों को न तो किसी ने देखा है, न सुना है, और न मनुष्य के हृदय में कभी समाया है, जो परमेश्वर ने अपने प्रेम करने वालों के लिये तैयार की हैं'* (१ कुरिन्थियों २:९)? उस समय, महान धर्मी पुरुष, राजा और भविष्यद्वक्ता जानते थे कि उद्धारकर्ता आएगा, लेकिन वे यह नहीं जानते थे, न उन्होंने सुना था, न उनके मन में कभी यह आया था कि वह दुख सहेंगे और क्रूस पर चढ़ाए जाएंगे, कि क्रूस पर लहू बहेगा, कि आग और पवित्र आत्मा से बपतिस्मा होगा, कि चर्च में रोटी और दाखरस की पेशकश की जाएगी, उनके शरीर और रक्त का प्रतीक, कि दृश्यमान रोटी में भाग लेने वाले आध्यात्मिक रूप से प्रभु के शरीर में सहभागी होंगे, कि प्रेरितों और मसीहियों को सांत्वना देने वाला प्राप्त होगा और उन्हें स्वर्गीय सामर्थ्य से परिधानित किया जाएगा, और उन्हें पवित्र

आत्मा के साथ एकता में सहभागी बनाया जाएगा। भविष्यवक्ताओं और राजाओं को यह नहीं पता था, न ही उनके मन में कभी यह आया (27, 17)।

16. चूँकि हमारे लिए ऐसी आशीषें तैयार की गई हैं, ऐसे वादे दिए गए हैं, और हमारे प्रति प्रभु का अनुग्रह ऐसा रहा है, तो आइए हम शाश्वत जीवन की ओर बढ़ने में देरी या हिचकिचाहट न करें, और आइए हम स्वयं को पूरी तरह से प्रभु को प्रसन्न करने के लिए समर्पित कर दें (49:5)।

17. आत्मा की गरिमा और इस तर्कशील प्राणी की कीमती कीमत के बारे में सुनकर, क्या आप यह महसूस करते हैं कि स्वर्ग और पृथ्वी नष्ट हो रहे हैं, जबकि आपको पुत्रत्व, भ्रातृत्व और मसीह की वधू बनने के लिए बुलाया गया है? दृश्यमान संसार में, वर से संबंधित सब कुछ वधू से भी संबंधित है; इसलिए जो कुछ भी प्रभु का है, वह आपके सुपुर्द किया गया है। क्योंकि वह स्वयं आपके लिए मध्यस्थता करने, आपको बुलाने आए। फिर भी आपको अपने बारे में कोई समझ नहीं है और आप अपनी महानता को नहीं समझते; इसलिए, एक आध्यात्मिक व्यक्ति सही ही आपके पतन पर शोक करता है, यह कहते हुए: *'मनुष्य, यद्यपि सम्मानित है, पर समझ रखता नहीं; वह मूर्ख पशुओं के समान है, और उनके समान हो जाता है'* (भजन संहिता 48:21)। (16:13)। *इसके बाद* ई , वे और तर्क प्रस्तुत करते हैं: कि हमारा उद्देश्य अपने कुल, अर्थात् प्रभु के साथ होना है; और, विशेष रूप से, कि हम तभी सुखी हैं जब हम प्रभु का अनुसरण करते हैं, और जब हम उनका अनुसरण नहीं करते तो उससे बुरी कोई स्थिति नहीं है।

18. यदि आप अपनी दृष्टि सूर्य की ओर उठाएँ, तो आप पाएँगे कि सूर्य की डिस्क स्वर्ग में है, जबकि उसकी रोशनी और किरणें पृथ्वी पर उतरती हैं, और उसकी रोशनी और भव्यता की सारी शक्ति पृथ्वी की ओर निर्देशित है। इसी प्रकार प्रभु पिता के दाहिने हाथ पर, हर एक प्रधानता और अधिकार से ऊपर विराजमान हैं, फिर भी उनकी दृष्टि पृथ्वी पर रहने वाले लोगों के हृदयों पर टिकी रहती है, ताकि वह उनकी सहायता की प्रतीक्षा करने वालों को उस स्थान पर उठा सकें जहाँ वह स्वयं वास करते हैं। क्योंकि वह कहते हैं: *'जहाँ मैं हूँ, वहाँ मेरा सेवक भी होगा'* (यूहन्ना 12:26)। परन्तु बोलने में असमर्थ पशु हमसे कहीं अधिक बुद्धिमान हैं, क्योंकि उनमें से प्रत्येक अपने ही प्रकार के साथ मेलजोल करता है: जंगली जानवर जंगली जानवरों के साथ, और भेड़ें भी अपने ही प्रकार के साथ। फिर भी आप अपनी स्वर्गीय बन्धुता, अर्थात् प्रभु की ओर नहीं लौटते, बल्कि अपने विचारों में आप दुष्ट विचारों से सहमत होते हैं और उन्हीं की ओर झुकते हैं, और इस प्रकार पाप के साथी बन जाते हैं, और इस प्रकार अपने ही विरुद्ध उसी के साथ युद्ध करते हुए और इस प्रकार स्वयं को शत्रु के हाथों शिकार बन जाने देते हो, जैसे एक गरुड़ द्वारा पकड़ा गया पक्षी खा लिया जाता है, या भेड़िया द्वारा भेड़, या जैसे कोई बच्चा साँप की ओर हाथ बढ़ाकर उससे डस लिए जाने पर मर जाता है (45, 6)।

19. आत्मा उसी की है जिसके साथ वह अपनी इच्छाओं के द्वारा संचार और एकता में है। इसलिए, या तो, अपने भीतर परमेश्वर के प्रकाश को धारण करते हुए और उसमें जीते हुए तथा हर सद्गुण से स्वयं को सजाते हुए, वह विश्राम के प्रकाश में सहभागी होती है; या, अपने भीतर पाप के अंधकार को धारण करते हुए, वह दण्ड के अधीन हो जाती है। एक आत्मा जो ईश्वर के साथ शाश्वत विश्राम और प्रकाश में जीना चाहती है, उसे अपने पूर्व कपटी अंधकार से मरना होगा और दैवीय पोषण के लिए एक अन्य जीवन में प्रवेश करना होगा। यह सुनकर, अपना ध्यान स्वयं पर केंद्रित करें: क्या यह आपके भीतर हुआ है? और यदि नहीं, तो आपको निरंतर शोक मनाना चाहिए, रोना चाहिए और पीड़ित रहना चाहिए। जो राज्य के लिए अभी भी मृत है, वह प्रभु से पुकारे और विश्वास से प्रार्थना करे कि उसे सच्चे जीवन का योग्य समझा जाए। परमेश्वर ने इस शरीर को—न अपनी स्वभाव से, और न ही स्वयं शरीर से—बनाया, पर इसे जीवन, भोजन, पेय, प्राप्त करने की क्षमता नहीं दी, कपड़े और जूते; इसके विपरीत, शरीर को स्वयं नग्न बनाकर, उसने यह व्यवस्था की कि जीवन के लिए आवश्यक सभी चीजें उसे बाहर से प्राप्त हों, और शरीर के लिए उसके बाहर मौजूद चीजों के बिना—अर्थात् भोजन, पेय, वस्त्र के बिना—जीना असंभव है। हालाँकि, यदि यह अपने स्वभाव में निहित चीज़ों तक ही सीमित रहे, और बाहर से कुछ भी ग्रहण न करे, तो यह नष्ट हो जाती है और बर्बाद हो जाती है। इसी तरह, आत्मा, जिसके भीतर परमेश्वर का प्रकाश नहीं है, फिर भी परमेश्वर के स्वरूप में बनाई गई है (क्योंकि परमेश्वर ने ऐसा आज्ञा दिया और चाहा कि उसे अनंत जीवन प्राप्त हो), वह आध्यात्मिक भोजन और आध्यात्मिक पेय अपनी प्रकृति से नहीं, बल्कि उसकी दिव्यता से, उसकी अपनी आत्मा से, उसकी अपनी रोशनी से प्राप्त करती है, और स्वर्गीय वस्त्र, जो आत्मा के सच्चे जीवन का निर्माण करते हैं (1, 8, 10)।

20. जैसे कि, शरीर में—जैसा कि पहले कहा गया है—जीवन स्वयं शरीर से नहीं आता, बल्कि उससे आता है जो इसके बाहर है, अर्थात्, पृथ्वी से, और इसके बाहर मौजूद चीज़ के बिना शरीर जीवित नहीं रह सकता; वैसे ही, जब तक आत्मा अब उस जीवितों की भूमि में पुनर्जन्म नहीं लेती, और आप वहाँ आध्यात्मिक पोषण प्राप्त नहीं करते और आध्यात्मिक रूप से विकसित नहीं होते, प्रभु के साम्हने फलते-फूलते, और उसकी दिव्यता को स्वर्गीय सौंदर्य के

अनुपम वस्त्रों में नहीं लपेटते, तो उस पोषण के बिना उसके लिए अपनी इच्छा से आनंद और विश्राम में जीना असंभव है। क्योंकि परमेश्वर का स्वभाव जीवन की रोटी दोनों का धारक है, वही जिसने कहा: *'मैं जीवित रोटी हूँ'* (यूहन्ना 6:35), *'और जीवित जल'* (यूहन्ना 4:10), *'और मनुष्य के हृदय को आनन्दित करने वाला दाखमधु'* (भजन संहिता 103:15), और *'आनन्द का तेल'* (भजन संहिता 44:8), और स्वर्गीय आत्मा का बहुविध पोषण, और परमेश्वर द्वारा प्रदान किए गए प्रकाशमय स्वर्गीय वस्त्र। यही आत्मा का स्वर्गीय जीवन है। उस शरीर के लिए हाय-हाय जो अपनी ही प्रकृतितिक सीमित रहता है, क्योंकि वह क्षीण होकर मर जाता है। आत्मा के लिए भी हाय-हाय यदि वह केवल अपनी ही प्रकृतितिक सीमित रहे, और दिव्य आत्मा के साथ उसका कोई मेल-जोल न हो, क्योंकि वह मर जाती है, क्योंकि उसे शाश्वत दिव्य जीवन का योग्य नहीं समझा गया। जैसे लोग बीमारों के लिए निराश हो जाते हैं जब उनका शरीर अब भोजन ग्रहण नहीं कर पाता, और उनके सभी प्रियजन—मित्र, रिश्तेदार और उनके प्रियजन—उनके लिए रोते हैं, वैसे ही ईश्वर और पवित्र स्वर्गदूत भी उन आत्माओं को आँसुओं के योग्य मानते हैं जो आत्मा के स्वर्गीय भोजन में भाग नहीं लेतीं और अक्षयत्व में नहीं जीतीं (1:11)।

21. अत; यदि आपके अंतर्मन ने यह सब अनुभव किया है और निस्संदेह जान लिया है, तो आप वास्तव में अनंत जीवन जी रहे हैं, और आपकी आत्मा इसी क्षण प्रभु के साथ विश्राम कर रही है; आपने वास्तव में यह प्रभु से प्राप्त किया है, ताकि आप सच्चा जीवन जी सकें। परन्तु यदि आप अपने भीतर ऐसी किसी भी बात से अवगत नहीं हैं, तो रोओ, शोक करो और विलाप करो, क्योंकि आज के दिन तक तुमने अभी तक शाश्वत और आध्यात्मिक धन प्राप्त नहीं किया है; आज के दिन तक तुमने अभी तक सच्चा जीवन प्राप्त नहीं किया है। इसलिए, अपनी दरिद्रता पर पश्चाताप करो, दिन-रात प्रभु से विनती करो, क्योंकि तुम पापों की दरिद्रता की एक भयानक अवस्था में हो। ओह, काश कोई अपनी दरिद्रता पर यह शोक भी कर ले! ओह, काश हम अपना समय इस लापरवाही से न बिताते, जैसे कि हम तृप्त हो गए हों! जो कोई भी शोक मनाता है और खोजता है, और लगातार प्रभु से मांगता है, वह अधिक शीघ्रता से उद्धार और स्वर्गीय धन प्राप्त करेगा, जैसा कि प्रभु ने अन्यायपूर्ण न्यायाधीश और विधवा की दृष्टान्त को समाप्त करते हुए कहा: *'तो क्या ईश्वर, उन लोगों के लिए न्याय नहीं करेंगे जो दिन-रात उसकी ओर पुकारते हैं?' मैं तुमसे कहता हूँ, वह उनके लिए शीघ्र ही न्याय करेगा'* (लूका 18:7-8)। (1:12)।

२२. प्रभु का सम्पूर्ण आगमन उस मनुष्य के लिए था जो अँधेरे, पाप, एक अशुद्ध आत्मा और दुष्ट शक्तियों की कब्र में मृत पड़ा था, ताकि प्रभु अब, इस युग में, इस मनुष्य को मरे हुओं में से जिला उठाएँ और उसे जीवन दें, उसे सब अँधेरे से शुद्ध करें, उसे अपनी ज्योति से प्रकाशित करें, और उसे अपनी दिव्यता के स्वर्गीय वस्त्रों में वस्त्र पहनाएँ। शरीरों के पुनरुत्थान के समय—जिनकी आत्माएँ पहले ही उठाई और महिमामय की जा चुकी हैं—ये शरीर भी महिमामय हो जाएँगे; और, उस आत्मा से प्रबुद्ध होकर जो पहले से ही प्रबुद्ध और महिमामय है, वे दिव्य प्रकाश की महिमा में, मानव हाथों से न बने स्वर्गीय निवास से परिधानित होंगे। देखो कि परमेश्वर की महिमाएँ कितनी अभिव्यक्ति से परे और अगम्य हैं! मसीहियों की असीम, अनंत और अगम्य धन-संपत्ति को व्यक्त या वर्णन करना असंभव है। इसलिए, किसी को भी ईसाई जीवन में अत्यंत सावधानी से प्रवेश करना चाहिए और उस धन को ग्रहण करना चाहिए, क्योंकि ईसाइयों का उत्तराधिकार और हिस्सा स्वयं परमेश्वर हैं। क्योंकि कहा गया है: *'प्रभु मेरा भाग और मेरा प्याला है'* (भजन संहिता 15:5)। (34, 2. 3).

23. जैसे नमक के बिना मांस सड़ जाता है, उसमें एक भयानक बदबू आ जाती है, और असहनीय बदबू के कारण हर कोई उससे मुंह मोड़ लेता है, और सड़े हुए मांस में कीड़े रेंगते हैं, वहां भोजन पाकर उसे खाते और उसमें अपना घोंसला बनाते हैं, लेकिन जैसे ही उस पर नमक छिड़क दिया जाता है, तो मांस पर पलने वाले कीड़े नष्ट हो जाते हैं और मर जाते हैं, और दुर्गंध समाप्त हो जाती है; क्योंकि कीड़ों को नष्ट करना और दुर्गंध को खत्म करना नमक का स्वभाव है। इसी तरह, हर आत्मा जो पवित्र आत्मा से मसालेदार नहीं है, जिसका स्वर्गीय नमक में कोई हिस्सा नहीं है, अर्थात्, ईश्वर की शक्ति का अभाव, सड़ जाती है और दुष्ट विचारों की तीव्र बदबू से भर जाती है; इसीलिए ईश्वर का मुख व्यर्थ विचारों, अंधकार और ऐसे प्राण में निवास करने वाली वासनाओं की भयानक बदबू से मुड़ जाता है; दुष्ट और भयानक कीड़े इसके भीतर घूमते हैं, अर्थात्, दुष्ट आत्माएं और अंधकारमय शक्तियां; वे वहीं भोजन करती हैं, घोंसला बनाती हैं और रेंगती हैं, उसे खाती और भ्रष्ट करती हैं। क्योंकि कहा गया है: *'मेरे घाव सड़ गए और फोड़े पड़ गए'* (भजन संहिता 37:6)। लेकिन जैसे ही आत्मा ईश्वर की ओर मुड़ती है, विश्वास करती है, और जीवन के नमक—सद्गुणी और दयालु आत्मा—के लिए प्रार्थना करती है, तो वह स्वर्गीय नमक जो अवतरित हुआ है, उसके भीतर के भयानक कीड़ों का नाश कर देता है, हानिकारक दुर्गंध को नष्ट कर देता है, और अपनी क्रिया की शक्ति से आत्मा को शुद्ध कर देता है। और इस प्रकार, जब सच्चे नमक ने इसे स्वस्थ और हानिरहित बना दिया है, तो इसका फिर से

स्वर्गीय प्रभु की सेवा में उपयोग किया जाता है। इसीलिए, व्यवस्था में, इस बात को दर्शाने के लिए, परमेश्वर ने आज्ञा दी कि हर बलिदान में नमक डाला जाए (लैव्यियों 2:13)। (1:5)।

24. जैसे कि दृश्यमान संसार में, जो कोई नग्न होता है वह बहुत लज्जा और अपमान सहता है, और मित्र मित्रों से, और रिश्तेदार अपने ही लोगों से मुंह मोड़ लेते हैं, यदि वे नग्न हों; और बच्चों ने, अपने पिता को नग्न देखकर, अपनी दृष्टि फेर ली ताकि वे अपने पिता के नग्न शरीर को न देखें, पास आए, *'मुँह फेर लिया'*, और उसे ढाँक दिया, अपनी आँखें फेरकर (उत्पत्ति 9:23); उसी प्रकार परमेश्वर भी उन आत्माओं से मुख मोड़ता है जो आत्मा के वस्त्र में पूर्ण निश्चय से नहीं भूषित हैं, जिन्होंने प्रभु यीशु मसीह में सामर्थ्य और सत्य में स्वयं को नहीं भूषित है (20:1)।

25. सबसे पहले मनुष्य ने, स्वयं को नग्न देखकर, लज्जित महसूस किया। नग्नता में ऐसी अपमानिता निहित है! यदि देहिक नग्नता भी इतनी लज्जा लाती है, तो आत्मा कितनी अधिक लज्जित होती है—जो दिव्य शक्ति से वंचित है और स्वयं प्रभु यीशु मसीह के उस अकथनीय, अविनाशी और आध्यात्मिक वस्त्र को नहीं पहनती, न ही उसमें लिपटी होती, जो पूर्ण सत्य है—वह अपनी वासनाओं द्वारा लज्जा और अपमान से ढकी होती है। और जो कोई उस दिव्य महिमा से वंचित है, उसे भी ठीक वैसे ही अपने प्रति लिज्जित और अपनी अपमानित स्थिति का बोध होना चाहिए, जैसे आदम को हुआ था जब वह शारीरिक रूप से नग्न था: और यद्यपि उसने अंजीर की पत्तियों का वस्त्र बनाया, फिर भी उसने अपनी दरिद्रता और नग्नता का अनुभव करते हुए लज्जा उठाई। इसलिए, ऐसी आत्मा को मसीह से माँगना चाहिए, जो वस्त्र प्रदान करता है और हमें अकथनीय प्रकाश में महिमा से परिधानित करता है, और उसे व्यर्थ के विचारों से अपना वस्त्र नहीं बनाना चाहिए, न ही अपनी ही धार्मिकता से स्वयं को धोखा देकर यह सोचना चाहिए कि उसके पास उद्धार का वस्त्र है (20, 2)।

26. जैसे एक घर जिसमें स्वामी स्वयं उपस्थित है, हर प्रकार की सजावट, सुंदरता और वैभव से भर जाता है, वैसे ही वह आत्मा भी जिसमें उसका प्रभु भीतर है और जिसमें वह वास करता है, हर प्रकार की सुंदरता और वैभव से भर जाती है, क्योंकि प्रभु, अपने आध्यात्मिक खजानों के साथ, उसका निवासी और शासक है। परन्तु उस घर पर हाय-हाय हो जिसके स्वामी अनुपस्थित हैं और जिसमें कोई प्रभु नहीं है, क्योंकि जब वह खंडहर हो जाता है और सुनसान हो जाता है, तो वह हर तरह की अशुद्धता और अव्यवस्था से भर जाता है; वहाँ, भविष्यवक्ता के वचनों के अनुसार, *'सिरिनीं और राक्षस'* निवास करने लगेंगे (यशायाह 13:21), क्योंकि एक सुनसान घर में जंगली बिल्लियाँ, कुत्ते और हर तरह की गंदगी को एक घर मिल जाता है। उस आत्मा का विनाश हो जो अपनी भयंकर गिरावट से ऊपर नहीं उठती और अपने भीतर उन लोगों को आश्रय देती है जो उसे अपने वधू-वर के साथ शत्रुता में बने रहने के लिए मनाते और मजबूर करते हैं, और जो उसके विचारों को भ्रष्ट करने का प्रयास करते हैं, उसे मसीह से दूर मोड़ते हैं (33:3)।

(gg) प्रस्तुत दृष्टियों के माध्यम से, आत्मा प्रभु का अनुसरण करने के आह्वान के प्रति समर्पित होने के लिए तैयार है, लेकिन ऐसे विचार उत्पन्न होते हैं कि ऐसा करने का अभी भी समय है, और ये विचार उसकी इच्छा को कमजोर कर देते हैं। संत मकारियुस उद्धार के कार्य को स्थगित करने के खतरे की शक्तिशाली दृष्टियों से उन्हें दूर करते हैं। ईश्वर की दीर्घ सहनशीलता समाप्त हो सकती है – और फिर विनाश अवश्यम्भावी है।

27. मुझे डर है कि हम लोगों के लिए, जो सब कुछ अनदेखा करके जीते हैं और पूर्वाग्रहों के वश में हैं, प्रेरितों की यह बात समय आने पर सच हो जाएगी, अर्थात्: *'या क्या तुम उसकी भलाई, सहनशीलता और धीरज की संपत्ति को तुच्छ समझते हो, यह न जानते हुए कि परमेश्वर की भलाई तुम्हें पश्चाताप के लिए प्रेरित करती है'* (रोमियों 2:4)? क्योंकि यदि, उनके धैर्य, कृपा और सौम्यता के सामने, हम अपने पापों की संख्या बढ़ाते हैं और, अपनी लापरवाही और उपेक्षा के माध्यम से, अपने ऊपर सबसे कठोर निन्दा लाते हैं, तो प्रेरित के वचन हम में पूरे होंगे: *'परन्तु अपनी कठोरता और अकठोर हृदय के कारण, तुम क्रोध के दिन और परमेश्वर के धर्मी न्याय के प्रकट होने के दिन के लिए अपने लिए क्रोध इकट्ठा कर रहे हो'* (रोमियों 2:5)। क्योंकि परमेश्वर का भला महान और अगम्य है, और मानव जाति के प्रति उसकी दीर्घ सहनशीलता अभिव्यक्ति से परे है, बशर्ते कि हम होश में आना चाहें और पूरी तरह से परमेश्वर की ओर मुड़ने का प्रयास करें, ताकि हम उद्धार प्राप्त कर सकें (4:19)।

28. और यदि आप परमेश्वर की दीर्घ सहनशीलता और उसकी महान भलाई को जानना चाहते हैं, तो हम इसे दिव्य प्रेरित धर्मग्रंथों से सीख सकते हैं। इज़राइलियों पर विचार करें, जिनसे वे पूर्वज आए जिनसे प्रतिज्ञाएँ की गई थीं—*'जिनसे मसीह देह के अनुसार आए, और व्यवस्था और वाचा'* (रोमियों 9:4–5)—उन्होंने कितनी बार पाप किया? वे कितनी बार भटक गए? फिर भी परमेश्वर ने उन्हें हमेशा के लिए नहीं छोड़ा, बल्कि थोड़े समय के लिए, उनके अपने भले के लिए, उन्हें दंड के अधीन किया, यह चाहकर कि कष्ट के द्वारा उनके कठोर हृदय को नरम कर दे; उसने उन्हें

वापस मोड़ा, उन्हें आगे बढ़ने के लिए प्रोत्साहित किया, उनके पास भविष्यद्वक्ताओं को भेजा, और जब वे पाप करते और उसे ठेस पहुँचाते थे तो वह उनके प्रति कितनी देर तक धैर्यवान रहा? उन्होंने पश्चाताप करने वालों का आनन्द के साथ स्वागत किया, और जब वे फिर भटक गए, तो उन्होंने उन्हें नहीं छोड़ा, बल्कि भविष्यद्वक्ताओं के द्वारा उन्हें पश्चाताप के लिए बुलाया; और यद्यपि वे बार-बार उनसे मुंह मोड़ते और उनकी ओर लौटते रहे, उन्होंने हर बार उन्हें कृपापूर्वक स्वीकार किया, प्रेम से उनका स्वागत किया, जब तक कि अंत में वे एक बड़े पाप में नहीं पड़ गए, उन्होंने अपने ही प्रभु पर हाथ उठाया, जिनका वे पितरों और पवित्र भविष्यद्वक्ताओं की परंपरा के अनुसार अपने उद्धारकर्ता, मुक्तिदाता, राजा और भविष्यवक्ता के रूप में इंतजार कर रहे थे। क्योंकि जब वह आए, तो उन्होंने उन्हें स्वीकार नहीं किया; वास्तव में, उन्होंने उनका बहुत मज़ाक उड़ाया और अंत में उन्हें सूली पर चढ़ाकर मृत्युदंड दिया। और इस महान अपमान और घोर अपराध से, उनके पाप बढ़कर अपनी परिपूर्णता तक पहुँच गए; इसलिए, अब उन्हें पूरी तरह से त्याग दिया गया है, क्योंकि जब मंदिर का पर्दा फाड़ दिया गया तो पवित्र आत्मा उनसे पीछे हट गया। इसलिए, उनका मन्दिर, जो अविश्वासियों के हवाले कर दिया गया था, नष्ट हो गया और उजाड़ दिया गया, प्रभु के वचन के अनुसार: *'एक पथ्थर पर दूसरा पथ्थर न रहेगा जो नीचे न फेंका जाए'* (मत्ती 24:2)। और इस प्रकार, उन्हें उस समय के राजाओं द्वारा, जिन्होंने उन्हें बंदी बना लिया था, निर्णायक रूप से pagans के हवाले कर दिया गया और पृथ्वी पर चारों ओर बिखेर दिया गया, और उन्हें आज्ञा दी गई कि वे कभी भी अपनी भूमि पर वापस न लौटें (4:20)।

29. इसी प्रकार अब भी, परमेश्वर, जो हम में से प्रत्येक के प्रति दयालु और अनुग्रहकारी है, अपना धीरज दिखाता है, यद्यपि वह हम में से प्रत्येक से बार-बार किए गए अपराधों को देखता है; फिर भी वह चुप रहता है, यह देखने के लिए प्रतीक्षा करता है कि क्या मनुष्य समय रहते होश में आकर अपने मार्ग बदल लेगा, ताकि वह अब और उसका अपमान न करे, और वह बड़े प्रेम और आनंद के साथ उन लोगों को स्वीकार करता है जो पाप से मुँह फेर लेते हैं। क्योंकि वह कहते हैं: *'एक पश्चाताप करने वाले पापी पर आनन्द होता है'* (लूका 15:10), और फिर: *'मेरे पिता की इच्छा यह नहीं है कि इन छोटे लोगों में से एक भी नाश हो जाए'* (मत्ती 18:14), उनमें से सबसे छोटे। लेकिन यदि कोई, ईश्वर की उस पर की गई महान दया और दीर्घ सहनशीलता के बावजूद—जब ईश्वर उसे हर पापपूर्ण उल्लंघन के लिए, चाहे वह गुप्त हो या सार्वजनिक, दंड नहीं देता, बल्कि उसे देखकर, मानो चुप रहता है, पश्चाताप की प्रतीक्षा करता है—खुद बड़ी लापरवाही में पड़ जाता है, और एक पाप पर दूसरा पाप जोड़ना शुरू कर देता है, लापरवाही पर लापरवाही जोड़ते हुए, एक अपराध पर दूसरा अपराध करते हुए और पापों की परिपूर्णता तक पहुँचते हुए, तब वह अंततः ऐसे पाप में पड़ जाता है जिससे वह बच नहीं सकता, बल्कि कुचल जाता है और, दुष्ट के हवाले हो कर, सर्वथा नाश हो जाता है (4:21)।

30. सोडोम के लोगों के साथ भी ऐसा ही हुआ। उन्होंने बहुत पाप किया और पश्चाताप करने से इनकार कर दिया, और अंततः स्वर्गदूतों के विरुद्ध अपने दुष्ट इरादे के कारण, वे ऐसे पाप में गिर पड़े कि अब पश्चाताप की कोई गुंजाइश नहीं बची थी; बल्कि उन्हें पूरी तरह से नष्ट कर दिया गया, क्योंकि उन्होंने पाप की सीमा पूरी कर दी थी और उससे भी आगे बढ़ गए थे। और इस प्रकार, परमेश्वर के न्याय द्वारा, वे आग में भस्म हो गए। ऐसा ही नूह के समय में था: बार-बार पाप में गिरने और पश्चाताप न करने के कारण, वे इस हद तक पहुँच गए कि उन्होंने सारी पृथ्वी को भ्रष्ट कर दिया। इसी प्रकार, मिस्रियों के साथ भी, जिन्होंने परमेश्वर का बहुत अपमान किया और उसकी प्रजा के विरुद्ध पाप किया, परमेश्वर फिर भी दयालु था; उसने उन पर ऐसा दंड नहीं लगाया जिससे वे पूरी तरह नष्ट हो जाएँ, बल्कि केवल एक सबक के रूप में, उन्हें धर्म-परिवर्तन और पश्चाताप के लिए प्रेरित करने हेतु, उसने उन पर हल्के प्रहार किए, अपनी दीर्घ सहनशीलता दिखाते हुए और उनके पश्चाताप की प्रतीक्षा करते हुए। लेकिन उन्होंने, परमेश्वर के लोगों के विरुद्ध बहुत बड़ा पाप किया—कभी पीछे हटते, कभी उसका पश्चाताप करते, और फिर अपनी प्राचीन अविश्वास और दुष्ट इच्छा में गहरे धँस गए—और परमेश्वर के लोगों पर कठोर परिश्रम का बोझ लाद दिया; और अंत में, जब परमेश्वर ने मूसा के द्वारा और कई चमत्कारों के माध्यम से लोगों को मिस्र से बाहर निकाला, तो उन्होंने एक बड़ा पाप किया, परमेश्वर के लोगों का पीछा करने के द्वारा। इसलिये दिव्य न्याय ने अंततःउन्हें नष्ट और विनिष्ट कर दिया, और उन्हें जल में डुबो दिया, उन्हें दृश्य जीवन के अयोग्य समझकर (4:22)।

31. हे प्रिय, हमने इस पर विस्तार से लिखा है, और इसे धर्मग्रंथ से लिए गए विचारों से पुष्ट किया है, कि हमें यथाशीघ्र प्रभु की ओर मुड़ना चाहिए और उसकी ओर दौड़ना चाहिए, जो हम पर दयालु है और हमारे सभी छल और बुराई से पूरी तरह मुड़ने की प्रतीक्षा कर रहा है; और वह उन लोगों को बड़ी प्रसन्नता से स्वीकार करता है जो उसकी ओर मुड़ते हैं – हमने इस पर विस्तार से लिखा है, मैं यह इसलिए और भी अधिक कहता हूँ, ताकि हमारी लापरवाही दिन-प्रतिदिन न बढ़े, और हमारे पाप हम में न बढ़ें, और इस प्रकार हम स्वयं पर परमेश्वर का क्रोध न लाएँ। इसलिए हम प्रयास करें कि एक सच्चे हृदय से परमेश्वर की ओर मुड़कर, उनके समीप आएँ; और चूँकि निराशा दुष्टता और कपट

का काम है, इसलिए जब हम अपने अतीत के पापों को याद करें, जो किसी व्यक्ति को निराशा, निष्क्रियता, लापरवाही और आत्मसंतोष, ऐसा न हो कि प्रभु की ओर मुड़कर आ जाने के बाद, वह मानव जाति के प्रति प्रभु की महान दया (4:24) के द्वारा उद्धार प्राप्त करे।

dd) इस बीच, जैसे ही आत्मा उद्धार का कार्य शुरू करने के संकल्प के करीब पहुँचती है, शत्रु निराशा और हताशा के अपने अंतिम, अग्निमय बाण उस पर चला देता है।

32. ऐसा होता है कि शैतान आपके हृदय में आपसे कहता है: 'देखो तुमने कितना बुरा किया है; देखो तुम्हारी आत्मा कितनी पागलपन से भरी है; तुम पापों के बोझ से इतने दबे हुए हो कि अब तुम्हारा उद्धार नहीं हो सकता।' वह ऐसा तुम्हें निराशा में डुबाने के लिए करता है, क्योंकि तुम्हारा पश्चाताप उसे अप्रिय है। क्योंकि जैसे ही पाप उल्लंघन के द्वारा प्रवेश कर जाता है, यह हर पल आत्मा से बातचीत करता है, जैसे एक व्यक्ति दूसरे से बात करता है। बदले में उसे उत्तर दो: 'प्रभु के वचन में तुम्हारे पास गवाही है: "मैं पापी की मृत्यु की नहीं, बल्कि इस बात की कामना करता हूँ कि वह अपना मन बदल ले, और दुष्ट के मार्ग से हटकर जीवित रहे" (यहे. 33:11)। क्योंकि वह इसी लिए अवतरित हुआ: पापियों को बचाने, मृतकों को जिलाने, अपने पापों में मरे हुओं को जीवन देने, और अंधकार में पड़े हुओं को प्रकाश देने के लिए।" और वास्तव में, आकर, उन्होंने हमें पुत्रत्व के लिए, पवित्र, शांतिपूर्ण नगर के लिए, अनंत जीवन के लिए, अविनाशी महिमा के लिए बुलाया है—बशर्ते कि हम अपनी शुरुआत को अच्छे अंत तक पहुँचाएँ, गरीबी, निर्वासन, और कष्ट में बने रहें, और परमेश्वर से माँगना कभी बंद न करें, द्वार पर लगातार खटखटाते रहें। जैसे शरीर आत्मा के निकट होता है, वैसे ही प्रभु भी निकट हैं और हृदय के बंद द्वार खोलने तथा हम पर स्वर्गीय धन-संपत्ति प्रदान करने के लिए तैयार हैं। वह मानवजाति के प्रति दयालु और प्रेममय हैं, और उनके वादे झूठे नहीं हैं, बशर्ते कि हम अंत तक धैर्यपूर्वक उनका अनुसरण करें (11:15)। 99.

33. फारसी शिविर और रोमन शिविर की कल्पना करो, और देखो, दो जवान, दोनों समान रूप से मजबूत और साहस से भरपूर, उनमें से निकलकर आगे आए हैं और लड़ रहे हैं। इसी प्रकार शक्ति और विवेक की विरोधी शक्तियाँ भी समान रूप से संतुलित हैं और समान शक्ति रखती हैं: जैसे शैतान चापलूसी के माध्यम से आत्मा को अपनी इच्छा के आगे झुकने के लिए प्रलोभित और लुभाता है, वैसे ही आत्मा भी हर तरह से उसका विरोध करती है और उसकी अवज्ञा करती है, क्योंकि दोनों शक्तियाँ केवल बुराई या अच्छाई की ओर झुकाव कर सकती हैं, लेकिन मजबूर नहीं कर सकतीं। ऐसी ही इच्छा को ईश्वर की सहायता प्रदान की जाती है, और इस संघर्ष के माध्यम से यह स्वर्ग से हथियार प्राप्त कर सकती है, जिनसे वह पाप पर विजय प्राप्त करेगी और उसे समाप्त कर देगी; क्योंकि आत्मा पाप का विरोध तो कर सकती है, लेकिन ईश्वर के बिना, बुराई पर विजय प्राप्त या उसे समाप्त नहीं कर सकती। लेकिन जो लोग यह दावा करते हैं कि पाप एक शक्तिशाली दैत्य की तरह है, जबकि आत्मा एक युवक की तरह है, वे गलत कहते हैं। क्योंकि यदि ऐसा अंतर होता—पाप को एक दैत्य और आत्मा को एक युवक के रूप में बताया जाना—तो विधि-प्रदाता अन्यायपूर्ण होता, वह जिसने मनुष्य को शैतान के खिलाफ युद्ध छेड़ने के लिए कानून दिया (27:22)।

34. यदि, तथापि, हमें ऐसा प्रतीत होता है कि हम पर हावी हो चुके अनगिनत पापों से मुँह मोड़ना असंभव और अव्यवहारिक है (और ऐसा विचार, जैसा कि हम पहले ही कह चुके हैं, दुष्टता का एक सुझाव है और हमारे उद्धार में एक बाधा के रूप में कार्य करता है), तो आइए हम स्वयं को याद दिलाएँ और इस तथ्य को नज़रअंदाज़ न करें कि कैसे प्रभु, अपनी कृपा से हमारे पास आकर, अंधों को दृष्टि प्रदान करते थे, लकवाग्रस्तों को चंगा करते थे, हर बीमारी को दूर करते थे, मृतकों को—जिनके शरीर पहले ही क्षय और सड़न से प्रभावित हो चुके थे—जीवित कर देते थे, बधिरों के कान खोलते थे, एक ही व्यक्ति से राक्षसों की सेना को भगा देते थे, और एक ऐसे व्यक्ति को, जो भूत-प्रेत के वश में आ गया था, मानसिक संतुलन वापस प्रदान करते थे। वह उस आत्मा को और भी अधिक परिवर्तित करेंगे जो उनकी ओर मुड़ती है, उनकी दया की खोज करती है, और सहायता के लिए उनकी पुकार करती है; वह उसे निर्लिप्तता की पवित्रता, हर सद्गुण के विकास, और मन के नवीनीकरण की ओर ले जाएँगे; वह उसे स्वास्थ्य, तर्क की अंतर्दृष्टि, और मन की शांति प्रदान करेंगे, और उसे अंधापन से मुक्ति देंगे, बौद्धिक बधिरता और अविश्वास, अज्ञान और भयहीनता की निर्जीवता से बचाकर, उसे पवित्रता, सद्गुण और हृदय की शुद्धता तक उठाएगा। क्योंकि जिसने शरीर बनाया, उसी ने आत्मा को भी बनाया। और जैसे, पृथ्वी पर रहते हुए, अपनी दया के द्वारा, उन्होंने, एक अच्छे और एकमात्र चिकित्सक के रूप में, उदारतापूर्वक उन सभी पर जो उनके पास आए और जिन्होंने उनकी मदद और चंगाई की मांग की, उनकी हर जरूरत पूरी की, वैसे ही वे आध्यात्मिक मामलों में भी उदार हैं (4:25)।

35. और इन सब के माध्यम से उन्होंने हमें अपनी कृपापूर्ण मध्यस्थता को अथक, अनवरत और निरंतर खोजने के लिए प्रेरित किया, क्योंकि वह पापियों के लिए आए थे, ताकि वे उसकी ओर लौटें, और उन लोगों को चंगा करें जो उस पर विश्वास करते हैं। यदि हम अपनी पूरी क्षमता से बुराई के पूर्वाग्रहों से मुँह मोड़ लें, अपने दुष्ट कार्यों और

सांसारिक भ्रमों से घृणा करें, और कपटी तथा व्यर्थ के विचारों से दूर हो जाएँ, तो आइए हम हमेशा, अपनी पूरी क्षमता से, उसी से चिपके रहें; और वह हमें अपनी सहायता देने के लिए तैयार है, क्योंकि वह परम दयालु है, जीवन प्रदान करता है, लाइलाज वासनाओं को ठीक करता है, और उन शरीरों को मुक्ति प्रदान करता है जो उसकी पुकार करते हैं, उसकी ओर मुड़ते हैं, और अपनी स्वेच्छा से और बिना किसी जबरदस्ती के, यथासंभव, सभी सांसारिक प्रेम से दूर हो जाते हैं, अपने मन को पृथ्वी से हटा लेते हैं, और अपनी इच्छा और खोज द्वारा उसकी ओर निर्देशित होते हैं (4, 27)।

e) जब सभी विपरीत विचार दूर हो जाते हैं, तो इच्छा को झुकाने का आंतरिक संघर्ष समाप्त हो जाता है, और अपना उद्धार करने के लिए प्रभु के लिए परिश्रम करने का एक संकल्प बनता है—एक ऐसा संकल्प जो मृत्यु जितना दृढ़ होता है। इसका अभिव्यक्ति यह है: 'मैं अब और पाप में लिप्त रहने की बजाय मरना पसंद करूँगा।'

36. संत मकरियस उस आत्मा के बारे में बात करते हैं जिसमें सच्चा संकल्प होता है: चाहे उसे किसी भी परिस्थिति का सामना करना पड़े, हजारों प्रलोभनों के बीच, सभी चीजों को सहते हुए, वह कहती है: 'भले ही मैं मर जाऊँ, मैं उसे नहीं छोड़ूँगा' (अर्थात पाप और शत्रु के लिए, प्रभु को)। (26:8)।

(zz) लेकिन अक्सर वह इस संकल्प को आत्मा की बलिदान के माध्यम से व्यक्त करता है, ठीक वैसे ही जैसे बलिदान के रूप में जानवरों की बलि दी जाती थी: क्योंकि यह संकल्प वास्तव में प्रभु के लिए एक होमबलि में आत्म-बलिदान है।

37. यदि कोई सांसारिक व्यक्ति स्वयं को बदलने का संकल्प करता है, तो वह पहले मरता है और उस पूर्व कपटी जीवन से वंचित हो जाता है (46:2)।

38. (बलिदानों के संबंध में यह आज्ञा थी) कि याजक पहले पशु की बलि दे, ताकि वह मर जाए, और फिर, उसके टुकड़े करके, उसे नमक लगाकर, अंत में आग पर चढ़ाया जाए। क्योंकि यदि याजक पहले भेड़ को बलि और मृत्यु के लिए प्रस्तुत नहीं करता है, तो वह न तो नमक लगाई जाती है और न ही प्रभु को पूरी तरह से अर्पित की जाती है। इसी प्रकार हमारी आत्मा को भी, सच्चे महायाजक मसीह के पास जाते समय, उसी द्वारा वध किया जाना चाहिए और अपनी बुद्धि तथा अपने द्वारा जिए गए दुष्ट जीवन—अर्थात् पाप—से मर जाना चाहिए, और जैसे जीवन बलिदान को छोड़ देता है, वैसे ही उसे वासनाओं की कपटपूर्णता को भी पीछे छोड़ देना चाहिए। जैसे ही आत्मा शरीर से अलग होती है, शरीर मर जाता है और वह अब वह जीवन नहीं जीता जो वह पहले जीता था—न तो वह सुनता है और न ही चलता है—वैसे ही, जब स्वर्गीय महायाजक, मसीह, अपनी शक्ति की कृपा से, आत्मा को वध के लिए सौंपता है और उसमें संसार के प्रति समर्पित जीवन को मृत्यु के घाट उतारता है, तो आत्मा उस कपटपूर्ण जीवन से मर जाती है जो वह पहले जीती थी, और अब पापपूर्ण अंधकार में न तो सुनती है, न बोलती है, न ही जीती है, क्योंकि अनुग्रह से, उसकी आत्मा की तरह, वासनाओं की कपटपूर्णता भी उससे विदा हो जाती है। और प्रेरित उद्घोषणा करते हुए कहते हैं: *'जगत मेरे लिए सूली पर चढ़ाया गया है, और मैं जगत के लिए सूली पर चढ़ाया गया हूँ'* (गलातियों 6:14)। (1, 6)।

zz) इस सत्य को मन में और भी दृढ़ता से अंकित करने के लिए, संत मकारियस विस्तार से वर्णन करते हैं कि आध्यात्मिक जीवन में सभी असफलताएँ, सभी गिरावटें और पतन, और सभी नैतिक प्रवृत्तियाँ, सभी चीजों का त्याग करते हुए प्रभु की सेवा करने के आत्म-बलिदानी संकल्प की कमी से उत्पन्न होती हैं।

39. ऐसे बहुत कम हैं जिन्होंने एक अच्छी शुरुआत को एक अच्छे अंत के साथ जोड़ा है, जो बिना ठोकर खाए अपने लक्ष्य तक पहुँचे हैं, जिनका एकमात्र प्रेम एक ही ईश्वर से है और जिन्होंने सब कुछ त्याग दिया है। कई लोग भक्ति की ओर प्रेरित होते हैं, कई दिव्य अनुग्रह के सहभागी बनते हैं, और दिव्य प्रेम से प्रभावित होते हैं; फिर भी, विभिन्न संघर्षों, परीक्षाओं, दुष्ट की कष्टों और प्रलोभनों का सामना करते हुए—क्योंकि हर कोई इस दुनिया में किसी न किसी चीज़ से प्रेम करने की इच्छा रखता है और अपने प्रेम को पूरी तरह से त्याग नहीं सकता, वे विभिन्न सांसारिक इच्छाओं की ओर लौट जाते हैं—चाहे कमजोरी और निष्क्रियता के कारण हो, या अपनी इच्छा की कायरता के कारण, या किसी सांसारिक चीज़ के प्रति प्रेम के कारण—वे दुनिया में ही बने रहे और इसकी गहराई में फँस गए। लेकिन जो लोग वास्तव में अंत तक एक अच्छा जीवन जीने के लिए दृढ़ हैं, उन्हें उस दिव्य प्रेम को धारण करते हुए, स्वेच्छा से कोई अन्य प्रेम या आसक्ति ग्रहण नहीं करनी चाहिए और न ही उससे जुड़ना चाहिए, अन्यथा वे अपनी आध्यात्मिक प्रगति में बाधाएँ खड़ी कर देंगे, पीछे मुड़ जाएँगे, और अंततः अपना जीवन खो देंगे। जिस प्रकार परमेश्वर के वचन महान, अकथनीय और अगम्य हैं, उसी प्रकार हमें भी विश्वास और आशा, परिश्रम और महान कर्मों, तथा दीर्घकालिक परीक्षाओं की आवश्यकता है। स्वर्गीय राज्य की लालसा रखने वाले व्यक्ति को जो आशीषें प्राप्त होने की आशा है, वे किसी भी तरह से तुच्छ नहीं हैं। चूंकि वह मसीह के साथ अनंत काल तक राज्य करने की इच्छा रखता है, तो क्या वह उत्साह के साथ यह संकल्प नहीं करेगा कि वह इस जीवन की संक्षिप्त अवधि के दौरान, अपनी

मृत्यु तक, संघर्षों, परिश्रिमों और प्रलोभनों को सहन करेगा? प्रभु पुकार लगाते हैं: *'यदि कोई मेरा अनुयायी बनना चाहता है, तो वह अपना इनकार करे, अपना क्रूस उठाए, और प्रतिदिन आनंदित होकर मेरा अनुसरण करे'* (मत्ती 16:24)। और फिर: *'यदि कोई मुझसे प्रेम नहीं करता, तो वह अपने पिता, माता, पत्नी, बच्चों, भाइयों और बहनों—हाँ, यहाँ तक कि अपनी जान से भी अधिक प्रेम नहीं कर सकता; वह मेरा चेला नहीं हो सकता'* (लूका 14:26)। तथापि बहुत से लोग, यद्यपि उनका इरादा राज्य प्राप्त करने का है और वे अनन्त जीवन का वारिस बनना चाहते हैं, फिर भी वे अपनी इच्छाओं के अनुसार जीना और इन इच्छाओं का अनुसरण करना—या यूँ कहें कि उस का अनुसरण करना जो उनमें व्यर्थता बोता है—त्यागते नहीं हैं, और स्वयं को त्यागे बिना ही वे अनन्त जीवन का वारिस बनना चाहते हैं, जो कि असंभव है (5:7)।

40. निश्चय ही, प्रभु का वचन सत्य है। जो निर्दोषता से चलते हैं, वे वे हैं जिन्होंने प्रभु की आज्ञा के अनुसार, स्वयं को पूरी तरह से त्याग दिया है, सभी सांसारिक इच्छाओं, बंधनों, मनोरंजन, सुखों और कार्यों से घृणा की है, एकमात्र प्रभु को अपनी दृष्टि के सामने रखते हैं, और उनकी आज्ञाओं को पूरा करने के लिए लालायित रहते हैं। इसलिए, हर कोई अपनी इच्छा से भटक जाता है यदि उसने वास्तव में आत्म-त्याग करना नहीं चुना है और, प्रेम का दावा करते हुए भी, किसी और से प्रेम करता है, इस दुनिया के किसी भी सुख या इच्छा में आनंद लेता है, और प्रभु के प्रति पूर्ण प्रेम नहीं रखता है, जितना कि स्वतंत्र इच्छा और आकांक्षा के लिए संभव है (5, 8)।

41. कभी-कभी अच्छे प्रतीत होने वाले कार्य भी महिमा और मानवीय प्रशंसा के लिए व्यर्थ हो जाते हैं, और यह परमेश्वर के सामने अधर्म, चोरी और अन्य पापों से कोई अलग नहीं है। क्योंकि कहा गया है: *'परमेश्वर उन लोगों की हड्डियाँ बिखेर देता है जो मनुष्यों को प्रसन्न करने का प्रयास करते हैं'* (भजन संहिता 52:6)। और यहां तक कि उन कर्मों में भी जो अच्छे प्रतीत होते हैं, दुष्ट अपनी मंशा को पूरा करने का एक साधन देखता है; वह सांसारिक इच्छाओं में अत्यंत चालाक और धोखेबाज़ होता है। किसी भी सांसारिक और भौतिक प्रेम के लिए, जिससे कोई व्यक्ति अपनी मर्ज़ी से खुद को बाँध लेता है, पाप उस पर हावी हो जाता है, और उसके लिए बेड़ियाँ, बंधन और एक भारी बोझ बन जाता है जो इस धोखे भरे युग में उसे डुबाता और दबाता है, और उसे अपनी शक्ति इकट्ठा करने और परमेश्वर के पास लौटने से रोकता है। इस संसार में जिस भी चीज़ से कोई व्यक्ति प्रेम करने लगा है, वह उसके मन पर बोझ बनती है, उस पर काबू पा लेती है और उसे अपनी शक्ति इकट्ठा करने से रोकती है। इसी पर संतुलन और झुकाव, और दुराचार का प्रचलन निर्भर करता है; इसी से पूरे मानव जाति की, जैसे सभी ईसाइयों की, परीक्षा होती है, चाहे वे शहरों में, या पहाड़ों में, या मठों में, या खेतों में, या सुनसान जगहों पर रहते हों; क्योंकि जब कोई व्यक्ति, अपनी ही इच्छा के जाल में फँसकर, किसी चीज़ से प्रेम करना शुरू कर देता है, उसका प्रेम उस वस्तु से बँध जाता है और अब यह पूरी तरह से ईश्वर की ओर निर्देशित नहीं रहता। उदाहरण के लिए, एक व्यक्ति धन से प्रेम करने लगा है, दूसरा सोने और चांदी से, और कोई तीसरा मानव महिमा के लिए विद्वानों की सांसारिक बुद्धि से; एक व्यक्ति अधिकार से प्रेम करने लगा है, दूसरा महिमा से; एक व्यक्ति तुच्छ सभाओं से प्रेम करता है, एक और पूरे दिन भटकाव और सुखों में बिताता है; एक और व्यर्थ विचारों से मोहित हो जाता है; एक और, मानवीय महिमा के लिए, कानून के एक प्रकार के शिक्षक के रूप में कार्य करना पसंद करता है; एक और आलस्य और उपेक्षा में आनंद लेता है; एक और कपड़ों से लगाव रखता है; एक और खुद को सांसारिक चिंताओं को सौंप देता है; एक और नींद, या मज़ाक, या अभद्र भाषा से प्रेम करता है। इस संसार में जिस भी चीज़ से कोई व्यक्ति लगाव रखता है, चाहे वह छोटी हो या बड़ी, वही उसे पीछे खींचती है और उसे अपनी ताकत जुटाने से रोकती है। जिस भी आसक्ति से कोई व्यक्ति बहादुरी से नहीं लड़ता, वही उसे प्रिय होती है; और वह उस पर काबू पा लेती है और उसे बोझिल कर देती है, जो उसके लिए बेड़ियों का एक सेट बन जाती है और उसके मन को ईश्वर की ओर मुड़ने, उन्हें प्रसन्न करने, और—केवल उनकी सेवा करके—राज्य के लिए उपयुक्त बनने और शाश्वत जीवन प्राप्त करने से रोकती है (5, 9)।

४२. लेकिन जो आत्मा वास्तव में प्रभु के लिए प्रयत्न करती है, वह अपना प्रेम पूर्णतः और सर्वथा उसी की ओर बढ़ाती है और, अपनी सारी शक्ति से, अपनी इच्छा से स्वयं को केवल उसी से बाँधती है; इसमें उसे अनुग्रह की सहायता मिलती है, वह स्वयं को नकारती है, और अपने मन की इच्छाओं का अनुसरण नहीं करती, क्योंकि हमारे साथ सदैव रहने वाले और हमें धोखा देने वाले दुष्टता के कारण, मन चालाकी भरे रास्तों पर चलता है। इस प्रकार, जैसे ही आत्मा प्रभु से प्रेम करने लगती है, वह अपने विश्वास और महान परिश्रिम के द्वारा अपनी ही फंदों से मुक्त हो जाती है, और, ऊपर से मिलने वाली सहायता के साथ, शाश्वत राज्य के योग्य बना दी जाती है; और, सच्चे मन से प्रेम करके, अपनी इच्छा से और प्रभु की सहायता से, वह अब शाश्वत जीवन से वंचित नहीं रहेगी (5, 10)।

४३. हमें एक ठोस उदाहरण से और भी स्पष्ट रूप से यह दिखाने के लिए कि कितने लोग अपनी ही इच्छा से, समुद्र में डूबकर या कैद होकर नष्ट हो जाते हैं, कल्पना कीजिए कि एक घर में आग लग गई है: एक व्यक्ति, जो खुद

को बचाने के लिए दृढ़ है, जैसे ही उसे आग का पता चलता है, बाहर दौड़ता है और, सब कुछ पीछे छोड़कर, केवल अपनी आत्मा की परवाह करने का संकल्प लेकर, खुद को बचा लेता है; दूसरा, अपने साथ घर का कुछ सामान या अन्य चीजें ले जाने का निश्चिय करके, उन्हें लाने के लिए घर में घुस गया; और जब वह उन्हें इकट्ठा कर रहा था, तो आग पर काबू पाकर घर पर हावी हो गई और उसे अंदर ही घेर लिया, और वह जलकर मर गया। क्या आप देखते हैं कि यह आदमी प्रेम के कारण अपनी ही इच्छा से आग में मर गया—अर्थात्, उसने क्षण भर के लिए स्वयं से भिन्न किसी चीज़ से प्रेम किया? इसी तरह, अन्य लोग समुद्र में भटकते हैं और एक भयंकर तूफान में फंस जाते हैं, उनमें से एक, नग्न होकर, केवल खुद को बचाने के इरादे से पानी में कूद जाता है; और इस प्रकार, लहरों द्वारा बहते हुए और केवल अपनी आत्मा की चिंता से बंधा, लहरों की सतह पर तैरते हुए, वह खारे समुद्र से बच निकलने का एक रास्ता खोज लेता है, जबकि एक अन्य ने, अपने कुछ कपड़े बचाने का निश्चिय करके, सोचा कि यदि वह उन्हें अपने साथ ले जाएगा, तो वह उनके साथ तैर सकता है और समुद्र से बाहर निकल सकता है; लेकिन उसने जो कपड़े लिए थे, वे उसे भारी पड़ गए और उसे समुद्र की गहराई में डुबो दिया, और इस प्रकार, एक तुच्छ लाभ के लिए और अपनी आत्मा की उपेक्षा करके, वह मर गया। क्या आप देखते हैं कि कैसे, अपनी ही इच्छा से, वह मृत्यु का शिकार हो गया? यह भी कल्पना कीजिए कि विदेशी आक्रमणकारियों के बारे में एक अफवाह फैली: एक आदमी, जैसे ही उसने यह सुना, तुरंत बिना किसी देरी के भाग खड़ा हुआ, और कुछ भी साथ लिए बिना निकल पड़ा; लेकिन दूसरा, या तो यह विश्वास नहीं कर रहा था कि दुश्मन आ रहे हैं, या अपने साथ कुछ सामान ले जाने की इच्छा और ऐसा करने का संकल्प लेकर, अपनी भागने में देरी कर गया, और इस प्रकार दुश्मन आ पहुँचे, उन्होंने उसे पकड़ लिया, उसे एक परदेस में बंदी बना ले गए और उसे वहाँ ' ' दासता में जीने के लिए मजबूर कर दिया। क्या आप देखते हैं कि यह आदमी भी, अपनी ही इच्छा से, अपनी निष्क्रियता, अपनी कायरता और कुछ संपत्तियों के प्रति अपने लगाव के कारण, बंदी बना लिया गया (5, 11)।

४४. जो प्रभु की आज्ञाओं का पालन नहीं करते, जिन्होंने अपना त्याग नहीं किया है, और जिन्होंने एकमात्र प्रभु से प्रेम नहीं किया है, बल्कि स्वेच्छा से सांसारिक बंधनों में खुद को बाँध लिया है, वे उन्हीं के समान हैं। यदि आप पवित्र, ईश्वर-प्रेरित धर्मग्रंथों से प्रभु के प्रति पूर्ण प्रेम की धार्मिकता जानना चाहते हैं, तो विचार करें कि कैसे अय्यूब, कहने का तात्पर्य है, अपनी सभी संपत्तियों से वंचित हो गया – उसके बच्चे, उसकी संपत्ति, उसके पशु, उसके सेवक और उसकी अन्य सभी संपत्तियाँ। उसे बहुत कुछ इकट्ठा करने वाला माना जाता था, लेकिन जब प्रभु ने उसकी परीक्षा ली, तो यह पता चला कि योब ने एक ईश्वर के सिवा कुछ भी हासिल नहीं किया था। इसी प्रकार, जब प्रभु ने अब्राहम को आज्ञा दी *कि 'अपनी भूमि और अपनों और पिता के घर से निकल जा'* (उत्पत्ति 12:1), तो उसने तुरंत, कह सकते हैं, सब कुछ छोड़ दिया: अपना देश, अपनी भूमि, अपने रिश्तेदार, अपने माता-पिता - और प्रभु की आज्ञा का पालन किया। बाद में, जिन कई परीक्षाओं और प्रलोभनों का उन्होंने सामना किया—चाहे जब उनकी पत्नी उनसे छीन ली गई हो, या जब वे एक परदेस में कठिनाइयों में रहे और उन्हें सहन किया हो—इन सभी मामलों में उन्होंने यह साबित किया कि वे एकमात्र परमेश्वर से हर चीज़ से बढ़कर प्रेम करते थे। अंत में, वादे के पूरा होने पर, कई वर्षों के बाद, जब उसे आखिरकार उसका अत्यंत प्रिय एकलौता पुत्र मिला, और परमेश्वर ने उससे इस पुत्र को स्वेच्छा से बलिदान के रूप में चढ़ाने के लिए कहा, तो इब्राहीम ने सब कुछ त्याग दिया और सचमुच अपने आप को नकार दिया। क्योंकि अपने एकलौते पुत्र की इस बलिदान से, उसने यह साबित कर दिया कि वह परमेश्वर के सिवा और किसी चीज़ से प्रेम नहीं करता था। और अगर उसने अपने पुत्र को इतनी तत्परता से दे दिया, तो कितना और अधिक, यदि उसे अपनी बाकी संपत्ति छोड़ने या उसे एक ही बार में गरीबों में बाँटने का आदेश दिया गया होता, तो वह उसे अत्यंत तत्परता और उत्साह के साथ करता। क्या आप अब प्रभु के प्रति पूर्ण और स्वैच्छिक प्रेम की धार्मिकता को देखते हैं? (5. 12)।

४५. इसी प्रकार, जो इन धर्मी लोगों के सह-वारिस बनना चाहते हैं, उन्हें परमेश्वर के सिवा किसी और से प्रेम नहीं करना चाहिए, ताकि जब उन्हें परीक्षा में डाला जाए, तो वे स्वयं को योग्य और कुशल साबित कर सकें, और प्रभु के प्रति अपने प्रेम को पूरी तरह से बनाए रख सकें। केवल वे ही जो हमेशा, अपनी स्वेच्छा से, एकमात्र ईश्वर से प्रेम करते आए हैं और सभी सांसारिक प्रेमों का त्याग करते आए हैं, वे ही अंत तक दृढ़ रह सकेंगे। परन्तु ऐसे बहुत कम लोग मिलते हैं जो ऐसा प्रेम अपनाएँ, सभी सांसारिक सुखों और इच्छाओं से मुँह मोड़ें, और उदारतापूर्वक दुष्ट की विद्रोह और प्रलोभन को सहन करें। बहुत से लोग बिना परिश्रम, बिना वीरता के कारनामों, बिना माथे के पसीने के राज्य प्राप्त करना चाहते हैं, लेकिन यह असंभव है (5:13)।

४६. जैसे संसार में कुछ लोग किसी धनी के पास फसल काटने के समय या किसी अन्य समय काम करने के लिए जाते हैं, ताकि उन्हें अपनी जीविका के लिए आवश्यक चीजें मिल सकें, और उनमें से कुछ आलसी और सुस्त होते हैं, वे दूसरों की तरह परिश्रम नहीं करते, वे उतना काम नहीं करते जितना उन्हें करना चाहिए, फिर भी, अमीर आदमी के घर

में परिश्रम किए या खुद को थकाए बिना, वे चाहते हैं—जैसे कि उन्होंने सारा काम पहले ही कर लिया हो—वही वेतन प्राप्त करें जो धैर्यपूर्वक, तेजी से और पूरी ताकत से मेहनत करने वालों को मिलता है; इसी तरह, जब हम धर्मग्रंथों को पढ़ते हैं—चाहे वह किसी धर्मी व्यक्ति के बारे में हो, कि उसने परमेश्वर को कैसे प्रसन्न किया, वह परमेश्वर का मित्र और साथी कैसे बना, या सभी संतों के बारे में—कि वे कैसे परमेश्वर के मित्र और वारिस बने, उन्होंने कितनी पीड़ा सहन की, परमेश्वर के लिए उन्होंने कितना दुख उठाया, उन्होंने कितने बहादुरी के काम और कारनामे पूरे किए—तब हम उनकी प्रशंसा करते हैं और चाहते हैं कि हमें भी उन्हीं उपहारों और सम्मानों का पात्र माना जाए, और हम उन सम्मानों और प्रतिष्ठा को प्राप्त करना चाहते हैं जो उन्हें परमेश्वर से मिलीं; हम इसकी सच्चे मन से इच्छा करते हैं, फिर भी हम ऐसा नहीं करते। हम उत्सुकता से उन गौरवशाली उपहारों को प्राप्त करना चाहते हैं, केवल उनके श्रम, पराक्रम, दुख और कष्टों को अलग रखकर, और हम उन सम्मानों और प्रतिष्ठाओं को प्राप्त करने की सच्ची इच्छा रखते हैं जो उन्हें परमेश्वर से मिलीं, जबकि हम अपने ऊपर उनकी कठिनाइयों, श्रम और पराक्रम को स्वीकार नहीं करते। लेकिन मैं तुमसे कहता हूँ कि हर व्यक्ति यही सब चाहता और लालसा करता है: यहाँ तक कि व्यभिचारी, महसूल वसूलने वाले और अधर्मी भी बिना परिश्रम या वीरता के कारनामों के, इतनी आसानी से राज्य प्राप्त करना चाहेंगे। यही कारण है कि परीक्षा के मार्ग में कई क्लेश, दुख, संघर्ष और पसीना बहाना पड़ता है: ताकि वे प्रकट हो सकें जिन्होंने वास्तव में, अपनी स्वेच्छा से और अपनी पूरी शक्ति से, यहाँ तक कि मृत्यु तक, एकमात्र प्रभु से प्रेम किया है, और उस प्रेम में उनके लिए अपने लिए और कुछ भी चाहने को न बचा हो। यही कारण है कि, सत्य में, वे प्रभु के वचन के अनुसार स्वयं को त्यागकर, और एकमात्र प्रभु से अपनी साँस से भी अधिक प्रेम करके, स्वर्ग के राज्य में प्रवेश करते हैं; और अपने महान प्रेम के लिए उन्हें महान स्वर्गीय उपहारों से पुरस्कृत किया जाएगा (5:14)।

5. परिश्रम की अवस्था

क) संकल्प ही शुरुआती बिंदु है। इसके लिए एक लक्ष्य निर्धारित करना चाहिए, ताकि मनुष्य की मेहनत व्यर्थ न जाए। तो, लक्ष्य क्या है? यह पवित्र आत्मा की कृपा से अपनी प्रकृति का नवीनीकरण प्राप्त करना है। ऐसा करने का संकल्प लेने के बाद, मनुष्य को अपने सभी प्रयासों को इसी उद्देश्य की ओर निर्देशित करना चाहिए, ताकि पवित्र आत्मा उसे शक्ति और प्रभावशीलता से आच्छादित कर दे और, आग की तरह, सब अशुद्ध को जलाकर नष्ट करना शुरू कर दे। जब यह पूरा हो जाता है, तो ऐसा है मानो आत्मा, आत्मा में प्रवेश करती है; व्यक्ति आध्यात्मिक रूप से जीवित हो उठता है, या केवल तभी वास्तव में एक मानव बनता है। यह संत मकारियस का केंद्रीय विचार है, जिसके चारों ओर अन्य सभी विचार समूहबद्ध हैं।

1. जो कोई भी परमेश्वर के पास आता है और मसीह का अनुयायी बनने की सच्ची इच्छा रखता है, उसे रूपांतरित होने के उद्देश्य से आना चाहिए, स्वयं को एक बेहतर और नए व्यक्ति के रूप में प्रस्तुत करने के लिए, अपने भीतर पुराने मनुष्य की कोई भी विशेषता बनाए रखे बिना। क्योंकि कहा गया है: *'यदि कोई मसीह में है, तो वह एक नई सृष्टि है'* (2 कुरिन्थियों 5:17)। (44. 1).

2. एक आत्मा जो मसीह में सच्चा विश्वास रखती है, उसे अपनी वर्तमान भ्रष्ट अवस्था से एक अलग, अच्छी अवस्था में प्रवेश करना चाहिए, और अपनी वर्तमान पतित प्रकृति को एक अलग, दिव्य प्रकृति में बदलना चाहिए, और पवित्र आत्मा की सहायक शक्ति के द्वारा एक नई प्रकृति बनना चाहिए; केवल तभी यह स्वर्ग के राज्य के लिए उपयुक्त बन सकती है। लेकिन यह केवल हमारे लिए संभव है जो विश्वास करते हैं, उससे सच्चा प्रेम करते हैं, और उसकी सभी पवित्र आज्ञाओं का पालन करते हैं। यदि एलीशा के मामले में, एक पेड़—जो स्वभाव से पानी पर हल्का होता है—जब पानी में डाला गया, तो उसने अपने ऊपर लोहे को धारण किया, जो स्वभाव से भारी होता है, तो प्रभु यहाँ अपनी प्रकाशमान, चपल, अच्छी और स्वर्गीय आत्मा को और भी अधिक भेजेंगे, और उसके द्वारा वह आत्मा को, जो धोखे के पानी में फँसी हुई है, हल्का कर देगा, उसे पंख देगा, उसे स्वर्गीय ऊँचाइयों तक उठाएगा, उसे रूपांतरित करेगा और उसके सच्चे स्वभाव को बहाल करेगा (44, 5)।

3. जैसे आत्मा के बिना शरीर मृत है और कुछ भी नहीं कर सकता, वैसे ही, एक स्वर्गीय आत्मा के बिना—परमेश्वर की आत्मा के बिना—आत्मा राज्य के लिए मृत है और, आत्मा के बिना, वह परमेश्वर का काम नहीं कर सकती (30, 3)।

४. इसलिए, जो कोई भी विश्वास करने और प्रभु के पास आने का प्रयास करता है, उसे प्रार्थना करनी चाहिए कि परमेश्वर का आत्मा उसे यहाँ रहते हुए ही प्राप्त हो जाए, क्योंकि वही आत्मा का जीवन है; और प्रभु के आने का उद्देश्य आत्मा को यहाँ रहते हुए ही जीवन—पवित्र आत्मा—प्रदान करना था (३०, ६)।

5. परमेश्वर ने तुम पर इतना अनुग्रह किया है कि वह पवित्र स्वर्गों से उतर आया और उसने अपने ऊपर तुम्हारा तर्कशील स्वभाव और सांसारिक शरीर धारण किया, और उन्हें अपनी दिव्य आत्मा से भर दिया, ताकि तुम भी, एक साधारण नश्वर, अपने भीतर एक स्वर्गीय आत्मा प्राप्त कर सको। और जब आपकी आत्मा आत्मा के साथ संचार में होती है, और स्वर्गीय आत्मा आपकी आत्मा में प्रवेश करती है, तो आप परमेश्वर में एक पूर्ण मानव होंगे, एक वारिस और एक पुत्र (32, 6)।

6. इसलिए, हमें प्रभु से प्रेम करना चाहिए, हर तरह से सभी सद्गुणों में उत्तम होने का प्रयास करना चाहिए, और अथक और अनवरत रूप से यह प्रार्थना करनी चाहिए कि हमें उनके आत्मा का वचन पूर्णतःऔर संपूर्णतःप्राप्त हो, ताकि जब हम अभी भी देह में हों, तब हमारी आत्माओं को जीवित किया जाए। क्योंकि यदि आत्मा, इस वर्तमान युग में, प्रचुर विश्वास और प्रार्थना के द्वारा अपने भीतर पवित्र आत्मा की पवित्रता को ग्रहण नहीं करती है, और अनुग्रह द्वारा रूपांतरित होकर दिव्य स्वभाव की सहभागी नहीं बनती है—जिसकी सहायता से आप हर आज्ञा का निर्दोष और शुद्ध रूप से पालन कर सकते हैं—तो वह स्वर्गीय राज्य के लिए अयोग्य है (44. 9). 119.

7. प्रथम मनुष्य की अवज्ञा के परिणामस्वरूप, हमने अपने स्वभाव के लिए विदेशी—हानिकारक वासनाओं—को अपने भीतर ग्रहण कर लिया है, और आदत तथा दीर्घकालिक आत्मसात के माध्यम से, इन्हें एक प्रकार से अपने स्वभाव का ही हिस्सा बना लिया है; और एक बार फिर, आत्मा के असाधारण वरदान द्वारा, इस विदेशी तत्त्व को हमसे बाहर निकालना होगा और हमें हमारी मूल शुद्धता में पुनर्स्थापित किया जाना होगा। और यदि अब, बहुत विनती, निवेदन, विश्वास, प्रार्थना और संसार से मुंह मोड़ने के द्वारा, हम अपने भीतर आत्मा के उस स्वर्गीय प्रेम को ग्रहण नहीं करते हैं, और हमारा स्वभाव, जो दुराचार से कलंकित है, प्रेम—अर्थात् प्रभु—से नहीं जुड़ता है, और आत्मा के उस प्रेम से पवित्र नहीं होता है, और हम अंत तक निर्दोष नहीं रहते, प्रभु की आज्ञाओं के अनुसार हर बात में जीते हुए, तो हम स्वर्ग के राज्य को प्राप्त नहीं कर पाएंगे (4, 8)।

ख) जो कोई भी पश्चाताप करके प्रभु की ओर मुड़ चुका है, वह संस्कार प्राप्त करने पर अनुग्रह का पहले से ही अधिकारी हो जाता है। लेकिन यह हर किसी में एक ही तरह से प्रकट नहीं होता है। कुछ लोगों पर यह तुरंत अनुग्रह करता है, जबकि अन्य लंबे परीक्षणों से गुजरते हैं, और केवल तभी यह अपनी प्रभावशीलता प्रकट करता है।

8. ईश्वर की असीम और अकल्पनीय बुद्धि, एक अथाह और अगम्य तरीके से, मानव जाति पर मुक्त इच्छा की परीक्षा के लिए अनेक प्रकार से अनुग्रह प्रदान करती है, ताकि जो लोग ईश्वर से अपने पूरे हृदय से प्रेम करते हैं और जो, उनके लिए, हर खतरे और हर कठिनाई को सहते हैं, वे प्रकट हो सकें। क्योंकि कुछ ऐसे हैं जो, संसार में रहते हुए ही—बिना किसी परिश्रम, पसीने या थकान को सहने के—जैसे ही विश्वास और प्रार्थना के साथ ईश्वर के पास आते हैं, उन्हें अग्रिम रूप से पवित्र आत्मा के वरदान और अनुग्रह प्राप्त हो जाते हैं। फिर भी ईश्वर अनुग्रह बिना किसी कारण के, अनुचित समय पर, या संयोग से नहीं देता, बल्कि किसी अकथनीय और अगम्य बुद्धिमत्ता के अनुसार देता है, ताकि यह प्रकट हो सके कि जिन लोगों को ईश्वर का अनुग्रह शीघ्रता से प्राप्त होता है, उनकी इच्छाशक्ति और स्वतंत्र इच्छा सही दिशा में निर्देशित है, अर्थात् इस बात में कि वे अपनी मेहनत के बिना उन पर प्रदान की गई कृपा के अनुपात में परमेश्वर की कृपा, दिखाए गए दयालुता और मिठास को महसूस करते हैं; इस कृपा के योग्य समझे जाने के बाद, वे परिश्रम दिखाने के लिए बाध्य हैं, अथक भक्ति, प्रयास और प्रेम के फल, जो उनकी अपनी इच्छा और विवेक से उत्पन्न होते हैं, और इन उपहारों का प्रतिदिन चुकाना—अर्थात् स्वयं को पूरी तरह से समर्पित करना, स्वयं को प्रभु के प्रेम के लिए पवित्र करना और केवल प्रभु की इच्छा को पूरा करना, साथ ही हर सांसारिक इच्छा से पूरी तरह से मुंह मोड़ना (29, 1)।

९. जहाँ तक अन्य लोगों का प्रश्न है, यद्यपि वे संसार से अलग हो गए हैं, सुसमाचार के अनुसार इस युग को त्याग दिया है, और बड़ी धैर्यता से प्रार्थना, उपवास, परिश्रम और अन्य सद्गुणों में उत्कृष्ट हैं, परमेश्वर उन्हें सहजता से अनुग्रह, विश्राम या आध्यात्मिक उपहार नहीं देता, बल्कि देरी करता है और उपहार को रोक लेता है। और यह बिना कारण के नहीं है, न ही अनुचित समय पर, और न ही केवल संयोग से, बल्कि किसी अकथनीय बुद्धिमत्ता से है, मुक्त इच्छा की परीक्षा के लिए, यह देखने के लिए कि क्या वे वास्तव में और वफादारी से परमेश्वर का सम्मान करते हैं, जिसने वादा किया है कि जो माँगते हैं उन्हें देगा और जो उसके द्वार पर दस्तक देते हैं उनके लिए जीवन का द्वार खोलेगा, यह देखने के लिए कि क्या उन्होंने वास्तव में उसके वचन पर विश्वास किया है, यह परखने के लिए कि क्या वे अटूट विश्वास में अंत तक डटे रहेंगे और पूरी लगन से खोजेंगे और माँगेंगे, क्या वे संकटों और भय में परमेश्वर से मुँह मोड़ देंगे, क्या वे आलस्य के आगे झुक जाएँगे, अविश्वास और निराशा में गिर जाएँगे, और अपनी इच्छा और स्वतंत्र पसंद की परीक्षा और देरी के कारण अंत तक डटे रहने में असफल हो जाएँगे। (29:2).

10. क्योंकि जो कोई भी ईश्वर के विलंब करने और टालमटोल करने पर जल्दी से स्वीकार नहीं करता, वह और भी तीव्रता से जलता है और स्वर्गीय आशीर्वादों की और भी प्रबल इच्छा करता है, और प्रतिदिन अधिक इच्छा, लगन, अथकता, प्रयास और सभी सद्गुणों का सार लागू करता है, भूख और प्यास, केवल उस आशीर्वाद को प्राप्त करने के लिए; और आत्मा में बसे दुष्ट विचारों से कमजोर नहीं पड़ता, सुस्ती, अधीरता और निराशा में नहीं पड़ता, और न ही, विलंब के बहाने, ढिलाई को अपनाता है, इस तरह के विचार से प्रेरित होकर: 'मुझे ईश्वर की कृपा कब मिलेगी?' – और इस प्रकार चालाकी से आलस्य में पड़ जाता है। इसके विपरीत, प्रभु स्वयं जितना भी विलंब करते हैं और टालते हैं, उसकी इच्छा में विश्वास और प्रेम की परीक्षा लेते हुए, उतने ही हद तक उसे, और भी अधिक लगन और परिश्रम से, बिना सुस्ती और बिना थकान के, परमेश्वर के वरदान को खोजना चाहिए, यह एक बार विश्वास कर लेने और इस बात से आश्वस्त हो जाने के बाद कि परमेश्वर सत्य है न कि असत्य, जिन्होंने उन लोगों पर अपनी कृपा प्रदान करने का वादा किया है जो अंत तक विश्वास और पूरी धैर्यता के साथ माँगते हैं (29, 3)।

11. विश्वासयोग्य आत्माएँ परमेश्वर को विश्वासयोग्य और सच्चा मानती हैं, और, सच्चे वचन के आधार पर, इस निष्कर्ष पर पहुँची हैं *कि 'वह सच्चा है'* (यूहन्ना 3:33)। और इसी के अनुसार, विश्वास की उपरोक्त अवधारणा के अनुसार, वे स्वयं की जाँच करते हैं कि जहाँ तक उनका संबंध है, वे किन मामलों में कमी कर रहे हैं—चाहे वह परिश्रम में हो, या प्रयास में, या लगन में, या विश्वास में, या प्रेम में, या अन्य सद्गुणों में—और अपनी पूरी क्षमता से, अत्यंत सूक्ष्मता से अपनी जाँच करने के बाद, वे स्वयं को प्रभु को प्रसन्न करने के लिए प्रेरित और आग्रह करते हैं, यह एक बार विश्वास कर लेने के बाद कि परमेश्वर, सत्य होने के नाते, उन्हें आध्यात्मिक वरदान से वंचित नहीं करेंगे यदि वे परम परिश्रम के साथ अंत तक उनकी सेवा और धैर्य में बने रहें, और यह कि देह में रहते हुए ही, उन्हें स्वर्गीय अनुग्रह का भागी बनाया जाएगा और वे अनंत जीवन प्राप्त करेंगे (29:4).

12. इस प्रकार, वे सभी चीज़ों का त्याग कर, तीव्र लालसा, भूख और प्यास के साथ केवल उसी की प्रतीक्षा करते हुए, अपना सारा प्रेम प्रभु की ओर निर्देशित करते हैं, और अनुग्रह के विश्राम और सांत्वना की हमेशा आशा करते हैं, जबकि इस संसार में किसी भी चीज़ में उन्हें कोई आराम या विश्राम नहीं मिलता, स्वैच्छिक रूप से स्वयं को बाँधते हुए, और सांसारिक विचारों का अविराम रूप से विरोध करते हुए, वे केवल ईश्वर की सहायता और मध्यस्थता की प्रतीक्षा करते हैं; वे उस क्षण की प्रतीक्षा करते हैं जब, आत्म-अनुशासन, परिश्रम और धैर्य को अपनाने वाले ऐसे आत्माओं में, प्रभु स्वयं पहले से ही गुप्त रूप से उपस्थित होंगे, उनकी मदद करेंगे, उनकी रक्षा करेंगे और उनमें सद्गुण के प्रत्येक फल को बनाए रखेंगे। क्योंकि स्वतंत्र इच्छा और स्वतंत्र प्रेम, और उसकी सभी पवित्र आज्ञाओं के प्रति अपनी क्षमता के अनुसार एक प्रवृत्ति की सीमा, एक माप और एक भार होता है। और इस प्रकार जो आत्माएँ अपने प्रेम और कर्तव्य की माप को पूरा करती हैं, वे राज्य और अनंत जीवन के योग्य बन जाती हैं (29, 5)।

(ग) संत मकारियस पवित्र धर्मग्रंथों से कई उदाहरणों के साथ और उनसे सीख लेकर समझाते हैं कि अनुग्रह का सामान्य नियम अचानक खुद पर जबरदस्ती करना नहीं है; वे यह भी बताते हैं कि यह हर विश्वासी को क्या करने के लिए बाध्य करता है।

13. आत्मा में परमेश्वर की कृपा का आध्यात्मिक कार्य महान दीर्घ-सहने, ज्ञान और मन के रहस्यमय विवेक के माध्यम से पूरा होता है, जबकि एक व्यक्ति समय के साथ और वर्षों तक महान धैर्य के साथ परिश्रम करता है। और अनुग्रह का कार्य तब उसके भीतर पूर्ण पाया जाता है, जब उसकी स्वतंत्र इच्छा, बार-बार परीक्षण के बाद, आत्मा को प्रसन्न करने वाली सिद्ध होती है और समय के साथ अनुभव और धैर्य का प्रदर्शन करती है। हम इस क्रम के स्पष्ट उदाहरण दिव्य प्रेरित धर्मग्रंथों (9:1) से प्रस्तुत करेंगे।

14. मैं जो कह रहा हूँ वह यूसुफ के साथ जो हुआ, उसके समान है। उसके विषय में परमेश्वर की इच्छा पूरी होने और दर्शनों के सिद्ध होने में कितना समय और कितने वर्ष बीत गए! और उससे पहले, यूसुफ को कितनी कठिनाइयों, दुखों और कष्टों में परखा गया! और जब उसने यह सब धैर्यपूर्वक सहन कर लिया, और हर तरह से स्वयं को परमेश्वर का एक कुशल और विश्वासयोग्य सेवक साबित कर दिया, तभी वह मिस्र का शासक बना और अपने परिवार का भरण-पोषण किया; और अदृश्य के विषय में की गई भविष्यवाणियाँ पूरी हुईं, जैसा कि परमेश्वर की इच्छा थी, जिसकी भविष्यवाणी बहुत पहले दिव्य प्रकटीकरण के माध्यम से की गई थी (9:2)।

15. दाऊद के साथ भी ऐसा ही हुआ। परमेश्वर ने उसे भविष्यवक्ता शमूएल के द्वारा राजा के रूप में अभिषेक किया। और जब उसे अभिषेक किया गया, तो साऊल ने उसका पीछा किया और उसे अपनी जान बचाने के लिए भागना पड़ा। तो फिर, परमेश्वर का अभिषेक कहाँ था? वादे की त्वरित पूर्ति कहाँ थी? क्योंकि जैसे ही उस पर अभिषेक किया गया, उसने गंभीर कष्टों को सहना शुरू कर दिया, वह जंगल में भाग गया, उसे रोज़ी-रोटी तक की कमी थी, और साऊल

की उसके विरुद्ध दुष्ट साज़िशों से बचने के लिए उसने異ायटियों के बीच शरण ली। और ऐसे कष्टों में वह रहा, जिस पर परमेश्वर ने राजा के रूप में अभिषेक किया था! बाद में, कई वर्षों तक परखे और परीक्षा में डाले जाने के बाद, कष्टों को सहन करने और उन्हें उदारतापूर्वक झेलने के बाद, उसने दृढ़ता से स्वयं को परमेश्वर के हवाले कर दिया और स्वयं से कहा: 'जो कुछ परमेश्वर ने भविष्यवाणी के अभिषेक के द्वारा मुझ में किया है, और जो कुछ उन्होंने कहा है, वह निस्संदेह पूरा होगा', – फिर, अंततः बहुत कष्ट सहने के बाद, परमेश्वर की इच्छा पूरी हुई, और कई परीक्षाओं के बाद दाऊद सिंहासन पर बैठा; और परमेश्वर का वचन प्रकट हुआ, और भविष्यवक्ता द्वारा किया गया अभिषेक दृढ़ और सच्चा साबित हुआ (9:3)। यही मूसा, इब्राहीम और नूह के विषय में भी सत्य था (9:4, 5, 6)।

16. हमने इन उदाहरणों का हवाला पवित्र शास्त्रों से इस प्रमाण के रूप में दिया है कि ईश्वर की कृपा का कार्य एक व्यक्ति में प्रकट होता है और वे पवित्र आत्मा का वरदान प्राप्त करते हैं, जिसके लिए एक विश्वासी आत्मा को केवल एक लंबे संघर्ष के बाद, महान धैर्य और उदारता की परीक्षाओं के बाद, प्रलोभनों और परीक्षणों के बाद, जब मुक्त इच्छा को हर प्रकार की पीड़ाओं से परखा गया हो, तब ही योग्य माना जाता है। जब यह किसी भी प्रकार से आत्मा को ठेस नहीं पहुँचाती, बल्कि अनुग्रह से हर बात में आज्ञाओं के अनुसार चलती है, तो इसे कामनाओं से मुक्ति प्राप्त करने, संस्कार में घोषित आध्यात्मिक दत्तक ग्रहण की पूर्णता को प्राप्त करने, साथ ही आध्यात्मिक धन-संपत्ति और उस समझ को प्राप्त करने के योग्य माना जाता है जो इस संसार की नहीं है, और जिसमें केवल सच्चे मसीही ही भाग लेते हैं। यही कारण है कि ऐसे लोग हर तरह से उन सभी से भिन्न होते हैं जो समझदार, जानकार और बुद्धिमान तो हैं, पर अपने भीतर संसार की आत्मा (9:7) को पालते हैं।

१७. अतः हम अपनी स्वैच्छिक इच्छा से और पूरी तत्परता के साथ स्वयं को प्रभु के पास जाने और मसीह के अनुयायी बनने के लिए तैयार करें, ताकि हम मसीह की इच्छा पूरी कर सकें और मसीह की सभी आज्ञाओं को याद रखकर उनका पालन कर सकें; संसार के प्रेम से पूरी तरह मुंह मोड़कर, हम अपनी आत्मा को केवल मसीह के हवाले कर दें; फिर हम यह ध्यान रखें कि हम केवल उसी में ही अपना ध्यान लगाएं, केवल उसी की ही परवाह करें, और केवल उसी की खोज करें। यदि, तथापि, देह के कारण, हम आज्ञाओं को पूरा करने और परमेश्वर की आज्ञा मानने में उचित परिश्रम करने में असफल रहते हैं, तो कम से कम हमारा मन प्रभु के प्रति प्रेम से, उन्हें खोजने और उनकी ओर प्रयासरत रहने से न भटके। और ऐसे मन से, विचारों के सही भाव के साथ प्रयासरत होकर, धार्मिकता के मार्ग पर चलकर और हमेशा अपने आप का ध्यान रखते हुए, ताकि हम उसकी आत्मा के प्रतिज्ञा को प्राप्त करें, और उसकी कृपा से उन वासनाओं के अंधकार से विनाश से बचाए जाएं जिनके द्वारा आत्मा वशीभूत हो जाती है; और इसके द्वारा हम शाश्वत राज्य के योग्य बन जाएं, और हमें सर्वदा के लिए मसीह के साथ आनन्दित होने का वरदान मिले, तथा हम पिता और पुत्र और पवित्र आत्मा की महिमा युगानुयुग करते रहें। आमीन (9, 13)।

(d) परिणामस्वरूप, जो कोई भी प्रभु की सेवा करने का संकल्प लेता है, उसे आरंभ में संघर्ष की एक अवधि सहनी पड़ती है - एक ऐसी अवस्था जिसमें, केवल अपनी तर्कसंगत इच्छा की शक्ति से, वे स्वयं को हर अच्छे काम के लिए प्रेरित करते हैं और अपनी अंतरात्मा द्वारा अस्वीकृत हर चीज़ से स्वयं को रोकते हैं, भले ही उनका हृदय इसके प्रति कोई सहानुभूति न रखता हो। तो, क्या आपने अपना मन बना लिया है? हर अच्छे काम करने और हर बुरे काम का विरोध करने के लिए खुद को बाध्य करना शुरू करें।

१८. जो कोई भी प्रभु के समीप जाना चाहता है, अनंत जीवन प्राप्त करना चाहता है, मसीह का निवास स्थान बनना चाहता है, पवित्र आत्मा से भरना चाहता है, ताकि आत्मा के फल उत्पन्न करने की अवस्था तक पहुँच सके और मसीह की आज्ञाओं को शुद्धता और निर्दोषता से पूरा कर सके, उसे सर्वप्रथम और सबसे पहले, प्रभु पर दृढ़ विश्वास करके शुरुआत करनी चाहिए, और स्वयं को पूरी तरह से उसकी आज्ञाओं की शिक्षाओं को समर्पित कर दे, हर तरह से संसार का त्याग कर दे, ताकि उसका पूरा मन किसी भी दृश्यमान चीज़ में व्यस्त न रहे। और उसे विश्वास के साथ, प्रभु की आशा में, निरंतर प्रार्थना में लगे रहना चाहिए, हमेशा उनकी आत्मा-दर्शन और सहायता की प्रतीक्षा करते हुए, हर क्षण अपने मन में केवल यही वस्तु रखनी चाहिए। फिर, अपने भीतर निवास करने वाले पाप के कारण, उसे स्वयं को हर अच्छे काम के लिए, प्रभु की सभी आज्ञाओं के पालन के लिए विवश करना चाहिए। उदाहरण के लिए: उसे हर व्यक्ति के सामने विनम्र होने के लिए खुद को मजबूर करना चाहिए, खुद को किसी और से नीच और बदतर मानना चाहिए, किसी से सम्मान, प्रशंसा या महिमा की चाह नहीं करनी चाहिए, जैसा कि सुसमाचार में लिखा है, बल्कि हमेशा अपनी आँखों के सामने एक ही प्रभु और उनके आज्ञाओं को रखना चाहिए, केवल नम्र हृदय से उसी को प्रसन्न करने की इच्छा रखते हुए, जैसा कि प्रभु कहते हैं: *'मेरे से सीखो, क्योंकि मैं नम्र और हृदय से दीन हूँ और तुम अपने प्राणों को विश्राम पाओगे'* (मत्ती 11:29)। (19, 1)।

19. इसी प्रकार, उसे यथासंभव स्वयं को अनुग्रहकारी, दयालु, करुणामय और भला बनने के लिए प्रशिक्षित करना चाहिए, जैसा कि प्रभु कहते हैं: *'दयालु और भले बनो, जैसे तुम्हारा स्वर्गीय पिता करुणामय है'* (लूका 6:36)। सबसे बढ़कर, उसे एक आदर्श के रूप में, सदैव ध्यान में रखना चाहिए, उसे प्रभु की नम्रता और उनके जीवन, उनकी कोमलता और लोगों के साथ उनके व्यवहार को ध्यान में रखना चाहिए; उसे प्रार्थना में स्थिर रहना चाहिए, यह विश्वास करते और मांगते हुए कि प्रभु आकर उसके भीतर वास करें, उसे अपने सभी आज्ञाओं के पालन में सिद्ध और मजबूत करें, और प्रभु स्वयं उसकी आत्मा का निवास-स्थान बन जाएँ। और इस प्रकार, जो वह अब विवशता में, अपने हृदय की इच्छा के विरुद्ध करता है, वह एक दिन अपनी इच्छा से करेगा, लगातार स्वयं को भलाई में प्रशिक्षित करते हुए, हमेशा प्रभु को याद करते हुए और महान प्रेम के साथ निरंतर उनकी प्रतीक्षा करते हुए। तब प्रभु, उसकी ओर से ऐसी इच्छा और अच्छा प्रयास देखकर, यह देखकर कि वह स्वयं को प्रभु को स्मरण करने के लिए कैसे विवश करता है, और कैसे उसका हृदय, उसकी इच्छा के विरुद्ध भी, निरंतर भलाई, नम्रता, कोमलता और प्रेम की ओर ले जाया जाता है, और उसे, जहाँ तक वह समर्थ है, अपनी पूरी शक्ति से, तब, मैं कहता हूँ, प्रभु उस पर अपनी कृपा बरसाता है, उसे उसके शत्रुओं और उसके भीतर निवास करने वाले पाप से मुक्ति देता है, और उसे पवित्र आत्मा से भर देता है। तब, बिना किसी प्रयास या परिश्रम के, वह परमेश्वर की सभी आज्ञाओं को पूरी सच्चाई से पूरा करता है; या यूँ कहें कि, परमेश्वर स्वयं उसके भीतर अपनी आज्ञाओं को पूरा करते हैं, और तब वह पवित्रता में आत्मा के फल उत्पन्न करता है (19:2)।

20. परन्तु जो प्रभु के समीप आता है, उसे इसलिए हर अच्छे काम के लिए स्वयं को बाध्य करना चाहिए, यदि उसमें प्रेम की कमी हो तो प्रेम के लिए स्वयं को बाध्य करना चाहिए, यदि नम्रता की कमी हो तो नम्रता के लिए स्वयं को बाध्य करना चाहिए, दयालु होने और दयालु हृदय रखने के लिए स्वयं को बाध्य करना चाहिए, तिरस्कार सहने के लिए स्वयं को बाध्य करना चाहिए, और जब उपेक्षित किया जाए, तो उदार रहने के लिए; जब अपमानित या अनादर किया जाए, तो क्रोधित न होने के लिए, जैसा कि कहा गया है: *'प्रतिशोध मत लो, प्रियजन'* (रोमियों 12:19); यदि किसी में आध्यात्मिक प्रार्थना की कमी हो, तो उसे स्वयं को प्रार्थना करने के लिए बाध्य करना चाहिए। ऐसे मामले में, ईश्वर, यह देखकर कि कोई व्यक्ति कितनी कड़ी मेहनत कर रहा है और अपने हृदय की इच्छा के विरुद्ध, बड़ी कठिनाई से खुद को रोक रहा है, उन्हें सच्ची आध्यात्मिक प्रार्थना, सच्चा प्रेम, सच्ची नम्रता, *'उदारता से भरा हृदय'*, सच्ची दया, और संक्षेप में, आध्यात्मिक फल (19:3) से भर देते हैं।

21. परन्तु यदि कोई, प्रार्थना की कमी के कारण, प्रार्थना की कृपा प्राप्त करने के लिए अकेले प्रार्थना करने के लिए स्वयं को बाध्य करता है, फिर भी वह नम्रता, विनम्रता, प्रेम, या प्रभु की अन्य आज्ञाओं के पालन के लिए स्वयं को बाध्य नहीं करता, और उनमें सफल होने के लिए न तो परवाह करता है, और न ही परिश्रम और प्रयास करता है, तो, अपने स्वयं के इरादे और स्वतंत्र पसंद के अनुसार, और अपने अनुरोध के अनुरूप, उन्हें कभी-कभी प्रार्थना की कृपा का एक हिस्सा प्रदान किया जाता है; फिर भी चरित्र में वह वैसा ही रहता है जैसा वह पहले था। उसमें नम्रता की कमी है, क्योंकि उसने नम्र बनने का प्रयास नहीं किया है और न ही खुद को इसके लिए तैयार किया है; उसमें विनम्रता की कमी है, क्योंकि उसने इसे नहीं चाहा है और न ही खुद को इसके लिए प्रेरित किया है; उसमें सभी के प्रति प्रेम की कमी है, क्योंकि प्रार्थना मांगते समय उसने इस बात का ध्यान नहीं रखा है और न ही कोई प्रयास दिखाया है (19:4)।

22. परन्तु जिस में ये गुण नहीं हैं, और जिसने इनके लिए स्वयं को प्रशिक्षित या तैयार नहीं किया है, वह भले ही प्रार्थना का अनुग्रह प्राप्त कर ले, परन्तु उसे प्राप्त करने के बाद खो देता है, और या तो घमंड में पड़ जाता है, या उस पर प्रदान किए गए अनुग्रह में फलने-फूलने और बढ़ने में विफल रहता है, क्योंकि वह स्वयं को प्रभु की आज्ञाओं के पालन के लिए पूरी तरह से समर्पित नहीं करता है। क्योंकि नम्रता, प्रेम, कोमलता और प्रभु की अन्य आज्ञाएँ आत्मा के लिए एक निवास स्थान और विश्राम हैं (19:6)।

23. इसलिए, जो कोई भी परमेश्वर को सचमुच प्रसन्न करना चाहता है, उनसे पवित्र आत्मा की स्वर्गीय कृपा प्राप्त करना चाहता है, और पवित्र आत्मा द्वारा बढ़ना और सिद्ध होना चाहता है, उसे स्वयं को परमेश्वर की सभी आज्ञाओं को पूरा करने के लिए बाध्य करना चाहिए और अपने हृदय को, उसकी इच्छा के विरुद्ध भी, वश में करना चाहिए, जैसा कि कहा गया है: *'इसी कारण मैं ने तेरी सब आज्ञाओं की ओर अपना मुंह किया है; मैं ने हर एक अन्याय के मार्ग से घृणा की है'* (भजन संहिता 118:128)। (19:7).

(ग) स्वयं को अच्छा करने के लिए प्रेरित करना संघर्ष का एक पहलू है। दूसरा है बुराई में स्वयं का विरोध करना। यह बाद वाला ही आध्यात्मिक युद्ध है। संत मकरियस इसके बारे में इस प्रकार सिखाते हैं।

२४. जो कोई परमेश्वर को सचमुच प्रसन्न करना चाहता है और दुष्टता के विरोधी पक्ष से सच्चा घृणा रखता है, उसे दो प्रकार के प्रयासों और संघर्षों में युद्ध करना चाहिए, अर्थात्: इस संसार के दृश्यमान मामलों में, सांसारिक सुखों, सांसारिक बंधनों के प्रेम और पापी आदतों से मुंह मोड़ने के लिए; और हृदय के मामलों में, दुष्टता की उन आत्माओं के खिलाफ लड़ने के लिए, जिनके बारे में प्रेरित ने कहा था: *'क्योंकि हमारा संग्राम मांस और रक्त से नहीं, बल्कि हाकिमों और अधिकारों से, इस अंधकार की दुनिया के अधिपतियों से और स्वर्गीय क्षेत्रों में बुराई की आत्मिक सेनाओं से है'* (इफिसियों 6:12)। (21:1).

२५. आज्ञा का उल्लंघन करके और स्वर्ग से निकाल दिए जाने के बाद, मनुष्य दो तरीकों से और दो प्रकार के बंधनों से बंधा है: दुनिया में – दैनिक जीवन के मामलों द्वारा, दुनिया से प्रेम द्वारा, अर्थात्, शारीरिक सुखों और वासनाओं के लिए, धन और महिमा के लिए, संपत्ति के लिए, अपनी पत्नी के लिए, अपने बच्चों के लिए, अपने रिश्तेदारों के लिए, अपने देश के लिए, अपने निवास और कपड़ों के लिए; संक्षेप में, उन सभी चीजों के लिए जो दिखाई देती हैं, जिनसे परमेश्वर का वचन हमें अपनी स्वेच्छा से अलग होने का आदेश देता है (क्योंकि हर कोई अपनी स्वतंत्र इच्छा से उन सभी दृश्यमान चीजों से जुड़ जाता है), ताकि इन सबका त्याग करके और खुद को इनसे मुक्त करके, वे आज्ञा की पूर्ण पूर्ति बन सकें; जबकि गुप्त रूप से, दुष्टात्माएं आत्मा को अंधकार की जंजीरों से उलझाती, गढ़ाती, घेराबंदी करती और बांधती हैं (21:2)।

26. अत; जब कोई, ईश्वर का वचन सुनकर, इस प्रयास में जुटता है, दैनिक जीवन के मामलों और सांसारिक बंधनों को त्याग देता है, सभी शारीरिक सुखों का परित्याग करता है और उनसे अपना संबंध तोड़ लेता है, तब, दृढ़ता के साथ अपने विचारों को प्रभु की ओर निर्देशित करते हुए, वह यह महसूस कर सकता है कि उसके हृदय के भीतर एक और संघर्ष है, एक अलग गुप्त प्रतिरोध, कपटी आत्माओं द्वारा लड़ी जाने वाली विचारों की एक अलग लड़ाई, और यह कि उसके लिए एक अलग संघर्ष आगे है। और इस प्रकार, अटूट विश्वास और महान धैर्य के साथ, निरंतर प्रभु का आह्वान करते हुए और उनकी सहायता की प्रतीक्षा करते हुए, कोई यहाँ दुष्ट आत्माओं के बंधनों, जालों, बाधाओं और अंधकार से आंतरिक मुक्ति प्राप्त कर सकता है—अर्थात्, गुप्त वासनाओं के कार्यों से (21, 3)।

27. हालाँकि, इस संघर्ष को परमेश्वर की कृपा और शक्ति से समाप्त किया जा सकता है, क्योंकि मनुष्य विरोध, अपने विचारों की भटकन, अदृश्य जुनून और दुष्ट की चालाकी से खुद को मुक्त करने में असमर्थ है। परन्तु यदि कोई इस संसार की दृश्यमान वस्तुओं से लगा रहता है, स्वयं को कई अलग-अलग सांसारिक बंधनों में उलझा लेता है, और हानिकारक वासनाओं से बहक जाता है, तो वह यह नहीं समझ पाएगा कि उसके भीतर एक और संघर्ष, एक और लड़ाई, और एक और युद्ध चल रहा है। और, ओह, काश कोई व्यक्ति बड़ी कठिनाई से इन दृश्यमान सांसारिक बंधनों, सांसारिक चिंताओं और देह संबंधी सुखों से खुद को मुक्त करने के बाद, और इस संसार से अलग होते हुए प्रभु से लगातार चिपके रहने का आरंभ करने के पश्चात्, भीतर जड़ जमा रहे वासनाओं के संघर्ष और आंतरिक द्वंद्व को पहचान सके, और दुष्ट विचारों को पहचान लेता, लेकिन यदि, जैसा कि हमने पहले कहा, वह पूरी ताकत से संसार का त्याग नहीं करता, पूरी आत्मा से सांसारिक इच्छाओं से मुंह नहीं मोड़ता, और प्रभु से पूरी तरह चिपके रहने की इच्छा नहीं करता, तो वह दुष्टता की छिपी हुई आत्माओं और गुप्त, हानिकारक वासनाओं की छलावा को नहीं पहचान पाएगा, बल्कि वह स्वयं से अपरिचित बना रहेगा, क्योंकि अपनी ही पीड़ाओं से वह अनभिज्ञ रहता है, और, अपने भीतर छिपी हुई वासनाओं को पालते हुए, वह उनसे अनजान रहता है, लेकिन फिर भी स्वेच्छा से दृश्यमान चीजों से चिपका रहता है और सांसारिक चिंताओं से जुड़ जाता है (21:4)।

28. परन्तु जो सच्चे मन से संसार का त्याग कर चुका है, जो यत्नशील है, जिसने सांसारिक बोझ को उतार फेंका है, जिसने स्वयं को व्यर्थ की इच्छाओं, देहिक सुखों, महिमा, अधिकार और मानवीय सम्मानों से मुक्त कर लिया है, और जो पूरे हृदय से इन सब से मुंह मोड़ लेता है, ऐसा व्यक्ति, जब प्रभु इस प्रकट संघर्ष में गुप्त रूप से उसकी सहायता करते हैं, संसार से अपनी इच्छा का त्याग जितना अधिक होता है, उतना ही वह स्वयं के भीतर प्रतिरोध, छिपी हुई कामनाएँ, अदृश्य बंधन, एक गुप्त युद्ध, एक गुप्त संघर्ष और एक गुप्त प्रयास पाता है। और इस प्रकार, प्रभु से प्रार्थना करके और स्वर्ग से धन्य प्रेरित द्वारा गिनाए गए आध्यात्मिक हथियार—धर्म की कवच, उद्धार का टोप, विश्वास का ढाल और आध्यात्मिक तलवार प्राप्त करके, (इफिसियों 6:14–17), – और इनसे स्वयं को सुसज्जित करके, वे प्रार्थना, धैर्य, विनती, उपवास के माध्यम से ये हथियार प्राप्त कर, शैतान द्वारा रची गई धोखाधड़ी में उसकी गुप्त युक्तियों का सामना करने में सक्षम होंगे, और सबसे बढ़कर विश्वास द्वारा, वह इस संसार के प्रधानताओं, शक्तियों और हाकिमों के विरुद्ध युद्ध कर सकेगा; और इस प्रकार, आत्मा की सहायता से और सभी सद्गुणों में अपनी लगन के द्वारा विरोधी शक्तियों पर विजय प्राप्त करके, वह पिता, पुत्र और पवित्र आत्मा की महिमा करते हुए, अनंत जीवन का योग्य बन जाएगा। उसकी महिमा और सामर्थ्य युगानुयुग हो! आमीन (21:5)।

29. कुछ कहते हैं कि प्रभु लोगों से केवल बाहरी फल चाहते हैं, जबकि परमेश्वर स्वयं जो कुछ छिपा है उसे पूरा करते हैं। लेकिन वास्तविकता में ऐसा नहीं है; इसके विपरीत, जिस हद तक कोई अपने बाहरी आचरण में अपना ध्यान रखता है, उसी हद तक उसे अपने विचारों के विरुद्ध संघर्ष और युद्ध करना चाहिए, क्योंकि प्रभु आपसे यह चाहता है कि आप स्वयं से क्रोध करें, अपने ही मन के विरुद्ध युद्ध करें, दुष्ट विचारों के आगे झुकने से इनकार करें, और उनमें कोई आनंद न लें (3, 3)।

30. आत्मा को विरोध करना, संघर्ष करना और खदेड़ना चाहिए। आपकी इच्छा, संघर्ष करते और कष्ट तथा दुख को सहते हुए, अंततः हावी होने लगती है; यह गिरती है और फिर उठती है; पाप एक बार फिर इसे नीचे गिरा देता है; दस या बीस संघर्षों में यह आत्मा पर विजय प्राप्त कर लेता है और उसे नीचे गिरा देता है, फिर भी आत्मा, समय के साथ, किसी न किसी रूप में पाप पर विजय प्राप्त करती है। और फिर, यदि आत्मा दृढ़ रहती है और किसी भी बात में नहीं डगमगाती, तो वह हावी होने लगती है, मामले को सुलझाती है और पाप पर विजय प्राप्त करती है। इस प्रकार लोग इस पर काबू पाते हैं और इसके विजेता बनते हैं (3, 4, 5)।

31. एक घोड़ा, जंगली जानवरों के बीच जंगल में चरते समय, मनुष्यों द्वारा वश में नहीं किया जाता है। लेकिन एक बार जब उसे पकड़ लिया जाता है, तो उसे वश में करने के लिए एक भारी लगाम लगा दी जाती है, जब तक कि वह ठीक से और सीधी रेखा में चलना नहीं सीख जाता। तब एक अनुभवी सवार उसे युद्ध के लिए उपयुक्त बनाने हेतु प्रशिक्षित करता है। उस समय, उस पर कवच लगाया जाता है—अर्थात्, एक ब्रेस्टप्लेट और एक विज़र—जबकि पुरानी लगाम को उसकी आँखों के सामने लटकाया और हिलाया जाता है, ताकि वह इससे परिचित हो जाए और डर न लगे। और एक सवार द्वारा इस तरह प्रशिक्षित घोड़ा, यदि वह नहीं सीखता है, तो युद्ध में इस्तेमाल नहीं किया जा सकता; लेकिन जैसे ही वह सीख जाता है और युद्ध का आदी हो जाता है, जैसे ही वह युद्ध की आवाज़ को महसूस करता है और सुनता है, वह स्वेच्छा से दुश्मनों पर टूट पड़ता है, और अपनी ही हिनहिनाहट से शत्रुओं के हृदय में भय पैदा कर देता है (23, 2)।

32. इसी प्रकार, आत्मा, पतन के समय से जंगली और विद्रोही हो गई है, संसार के मरुस्थल में जानवरों—चतुर आत्माओं—के पास आती है, और पाप की सेवा करती रहती है। लेकिन जब यह परमेश्वर का वचन सुनती है और विश्वास करती है, तो आत्मा द्वारा संयमित होकर, यह अपनी जंगली प्रकृति और सांसारिक तर्क को त्याग देती है, और सवार मसीह द्वारा मार्गदर्शित होती है। तब वह शोक, नम्रता और कष्ट में प्रवेश करती है—ये सभी उसकी परीक्षा के लिए आवश्यक हैं—ताकि आत्मा धीरे-धीरे उसे वश में कर सके, जबकि उसके भीतर का पाप धीरे-धीरे कम और समाप्त हो जाए। और इस प्रकार आत्मा, धार्मिकता के कवच, उद्धार के कवच और विश्वास की ढाल को धारण करके, और आध्यात्मिक तलवार उठाकर, अपने शत्रुओं से युद्ध करना सीखती है; और, प्रभु की आत्मा से सशस्त्र होकर, वह दुष्टता की आत्माओं से लड़ती है और दुष्ट की अग्निबाणों को बुझाती है। लेकिन आध्यात्मिक हथियारों के बिना, यह पंक्ति में शामिल नहीं होता; फिर भी जैसे ही इसके पास प्रभु के हथियार आ जाते हैं, जैसे ही यह भयंकर युद्धों को सुनता और महसूस करता है, यह *'कूदता और हिनहिनाता हुआ'* आगे बढ़ जाता है, जैसा कि यॉब की पुस्तक में कहा गया है (यॉब 39:25), क्योंकि इसके शत्रु इसकी प्रार्थना की ध्वनि मात्र से ही गिर पड़ते हैं। ऐसा पराक्रम करने और आत्मा की सहायता से युद्ध में विजय प्राप्त करने के बाद, वह बड़ी निर्भीकता से अपनी विजय की मालाएँ ग्रहण करेगी, और स्वर्गीय राजा (23:3) के साथ विश्राम करेगी।

33. जैसे ही आप संसार से अलग होते हैं और ईश्वर की खोज करने तथा उस पर मनन करने लगते हैं, तो आपको पहले से ही अपनी प्रकृति, अपनी पुरानी आदतों और उन आदतों के विरुद्ध संघर्ष करना होगा जो आपके लिए स्वाभाविक बन चुकी हैं। और इस आदत के विरुद्ध संघर्ष करते समय, आपको ऐसे विचारों का सामना करना होगा जो आपका विरोध करते हैं और आपके मन से लड़ते हैं; और ये विचार आपको खींच लेंगे और आपको उस दृश्यमान संसार में फँसा देंगे जिससे आप भागे थे। तभी आप संघर्ष और लड़ाई शुरू करेंगे, विचारों को विचारों के विरुद्ध, मन को मन के विरुद्ध, आत्मा को आत्मा के विरुद्ध, और आत्मा को आत्मा के विरुद्ध खड़ा करेंगे (32:9)।

34. क्योंकि हृदय में वास करने वाली अंधकार की एक निश्चित गुप्त और सूक्ष्म शक्ति प्रकट होती है। और प्रभु आपकी आत्मा और शरीर के निकट है; और जब वह आपके संघर्ष को देखता है, तो वह आप में गुप्त, स्वर्गीय विचारों को उत्पन्न करता है, और गुप्त रूप से आपको विश्राम दिलाना शुरू कर देता है। लेकिन इस समय के लिए वह आपको अभी भी शिक्षा के अधीन छोड़ देता है, और आपकी दुखों के बीच भी वह आपके लिए अनुग्रह प्रदान करता है। और जब आप विश्राम पाएँगे, तो वह स्वयं को आपको प्रकट करेगा, और आपको दिखाएगा कि आपके ही भले के लिए उसने आपको उस संघर्ष में रहने दिया था। जैसे एक अमीर आदमी का बेटा, जिसके पास एक शिक्षक है, जब शिक्षक उसे डाँटता है तो उसे शिक्षक का अनुशासन, शिक्षा, घाव और प्रहार कठोर लगते हैं—और यह तब तक

चलता रहता है जब तक वह एक पुरुष नहीं बन जाता, जसि बंदि पर वह अपने शक्षिक का धन्यवाद करना शुरू कर देता है—ठीक उसी तरह अनुग्रह भी दवि्य-प्रबंध के साथ तब तक शक्षिा देता है जब तक आप पूर्ण परपिक्वता तक नहीं पहुँच जाते (33. 10)।

(ई) चूँकि प्रभु के लिए काम करने का संकल्प लेने वाले से ऐसी मेहनत की अपेक्षा की जाती है, हर तरह की कठिनाई को सहने के दृढ़ संकल्प के अलावा, उसमें विवेक, सावधानी और सतर्कता भी होनी चाहिए।

35. जो कोई भी बड़ी सटीकता और पूर्णता के साथ ईसाई जीवन जीना चाहता है, वह अपनी पूरी ताकत से, सबसे पहले और सबसे महत्वपूर्ण रूप से आत्मा के अर्थ और कारण पर ध्यान देने के लिए बाध्य है, ताकि अच्छाई और बुराई के बीच सटीक अंतर करने की क्षमता प्राप्त करके, और हर मामले में यह पहचानकर कि उसकी शुद्ध प्रकृति में कुछ विदेशी घुस आया है, हम सही ढंग से और बिना ठोकर खाए जी सकें, और इस प्रकार, अपनी बुद्धि को एक आँख के रूप में उपयोग करते हुए, हम दुराचार की प्रवृत्तियों के साथ जुड़ने या उनके आगे झुकने से इनकार करने में सक्षम हों; और इसके माध्यम से, दवि्य वरदान प्राप्त करके, प्रभु (4:1) के योग्य बनें।

36. शरीर का मार्गदर्शक आँख है; यह देखती है और पूरे शरीर को सही मार्ग पर ले जाती है। तो कल्पना करो कि कोई व्यक्ति जंगली, झाड़ियों से भरे और कीचड़ वाले इलाके से गुज़र रहा है, जहाँ आग रास्ता रोकती है और तलवारें ज़मीन में ठोंकी हुई हैं; वहाँ तेज बहाव और प्रचुर पानी भी है। यदि यात्री साधन-संपन्न, सतर्क और निडर है, तो, आँख को अपना मार्गदर्शक मानकर, वह इन कठिन स्थानों से बड़ी सावधानी से गुजरता है, और अपनी पोशाक को हर तरह से अपने हाथों और पैरों से कसकर पकड़े रहता है, ताकि वह पेड़ों और कांटों में फट न जाए, कीचड़ से गंदी न हो जाए, न ही तलवारों से कट जाए, और आँख, पूरे शरीर के लिए प्रकाश का काम करते हुए, उसे रास्ता दिखाती है, ताकि वह तेज बहाव पर कुचला न जाए, या पानी में डूब न जाए, या किसी भी मुश्किल जगह पर उसे कोई चोट न लगे। इस प्रकार, एक साधन-संपन्न और चतुर यात्री, अपनी पोशाक को सावधानीपूर्वक संभाले हुए, अपनी आँखों के निर्देशन में सीधा आगे चलता है, और स्वयं को बिना चोट के रखते हुए अपनी पोशाक को जलने या फटने से बचाता है। लेकिन यदि कोई लापरवाह, आलसी, असावधान, अनाड़ी या निष्क्रिय व्यक्ति ऐसे स्थानों से गुजरता है, तो उसकी चोगा, इधर-उधर लहराती हुई, क्योंकि यात्री में अपने वस्त्र को हर तरह से ठीक करने का संकल्प नहीं होता, वह टहनियों और कांटों पर फट जाएगा, या आग से जल जाएगा, या तलवारों से चीर दिया जाएगा, या कीचड़ में गंदा हो जाएगा; संक्षेप में, उसकी सुंदर और नई चोग़ा उसकी लापरवाही, निष्क्रियता और आलस्य के कारण जल्द ही बर्बाद हो जाएगी। और यदि यात्री आँखों के मार्गदर्शन पर पूरा और उचित ध्यान नहीं देता, तो वह स्वयं किसी गड्ढे में गिर जाएगा या पानी में डूब जाएगा (4:2)।

37. उसी प्रकार, आत्मा, मानो, एक सुंदर चिटोन—शरीर का वस्त्र—धारण करती है और उसमें विवेक होता है, जो जीवन के जंगली और काँटों भरे रास्तों पर, कीचड़, आग और तेज बहाव के बीच यात्रा करते समय संपूर्ण आत्मा और शरीर का मार्गदर्शन करता है—अर्थात्, इच्छाओं, सुखों और इस युग की अन्य मूर्खताओं से, उसे हर जगह संयम, साहस, विवेक और सतर्कता से स्वयं को नियंत्रित और सुरक्षित रखना चाहिए। और इस प्रकार कि इस संसार के जंगली और काँटेदार रास्तों पर, देह की पोशाक चिंता, व्यर्थ के कार्यों और सांसारिक मनोरंजन से कहीं भी न फटे, और न ही इच्छा की आग से भस्म हो जाए, उसमें लिपटी आत्मा अपनी आँखें फेर लेती है ताकि वह धोखा न देखे, और इसी प्रकार अपने कान फेर लेती है ताकि वह बदनामी न सुने, जिह्वा को व्यर्थ की बातों से, और हाथों-पैरों को दुष्ट कर्मों से रोकती है; क्योंकि आत्मा को यह स्वतंत्रता दी गई है कि वह शरीर के अंगों को दूर मोड़ दे और उन्हें दुष्ट दृश्यों को देखने से, कुछ भी कपटी या शर्मनाक सुनने से, अनुचित शब्दों से, और सांसारिक तथा कपटी कार्यों से रोक सके (4:3)।

38. जैसे ही प्रभु देखते हैं कि कोई व्यक्ति सांसारिक सुखों, भौतिक मनोरंजन और चिंताओं, सांसारिक बंधनों और व्यर्थ विचारों के भंवर से वीरतापूर्वक मुंह मोड़ रहा है, वे ऐसे व्यक्ति पर अपनी कृपापूर्ण सहायता प्रदान करते हैं और उस आत्मा की अटूट रक्षा करते हैं, जो इस वर्तमान दुष्ट युग में अपना मार्ग सुन्दरता से पूरा करती है। और इस प्रकार, आत्मा को परमेश्वर और स्वर्गदूतों से स्वर्गीय प्रशंसा से सम्मानित किया जाता है, क्योंकि उसने हर सांसारिक इच्छा से मुंह मोड़कर, और परमेश्वर की सहायता से, इस दुनिया के रंगमंच पर अपना मार्ग पूरी तरह से पूरा किया, और इस प्रकार जहाँ तक संभव था, अपने आप को और अपने शरीर के वस्त्र को पूरी तरह से सुरक्षित रखा (4, 4)।

39. परन्तु यदि कोई, आलस्य और लापरवाही के कारण, इस जीवन में लापरवाही से चलता है, और अपनी इच्छा से हर सांसारिक इच्छा से दूर नहीं होता, और न ही पूरे मन से एकमात्र प्रभु की खोज करता है, तो उसके शरीर का वस्त्र इस संसार की काँटों और झाड़ियों से फट जाता है, इच्छा की आग से झुलस जाता है, और सुखों की कीचड़ से

अशुद्ध हो जाता है, और इसलिए, न्याय के दिन, आत्मा में खड़े होने का साहस नहीं रहता, क्योंकि वह अपने वस्त्र को दाग-रहित नहीं रख सकी, बल्कि इस युग के छल-कपट के बीच उसे कलंकित कर दिया। इसी कारण से, उसे राज्य से बाहर निकाल दिया जाता है। क्योंकि ईश्वर ऐसे व्यक्ति का क्या करेंगे जो अपनी स्वतंत्र इच्छा से स्वयं को संसार के हवाले कर देता है, उसके सुखों से मोहित हो जाता है, या भौतिक जगत में इधर-उधर भटकता रहता है? वह उन लोगों की सहायता करते हैं जो सांसारिक सुखों और अपनी पुरानी आदतों से मुंह मोड़ लेते हैं, जो हमेशा अपने विचारों को प्रभु की ओर निर्देशित करने का प्रयास करते हैं, जो अपना त्याग करते हैं, और जो एकमात्र प्रभु की खोज करते हैं। ईश्वर उन लोगों की भी रक्षा करता है जो इस संसार के मरुस्थल में, जालों और फंदों से सदैव सतर्क रहते हैं, जो भय और कांपते मन से अपना उद्धार स्वयं करते हैं (फिलिप्पियों 2:12), जो अत्यधिक सतर्कता से इस युग के जालों, उलझनों और लालसाओं से बचता है, और प्रभु की सहायता चाहता है, और अनुग्रह से उद्धार पाने के लिए उनकी दया पर भरोसा करता है (4:5)।

(ग) परिश्रमी को अपने परिश्रम के लिए प्रेरणा इस आशा और अटूट निश्चय से लेनी चाहिए कि प्रभु देखेंगे कि परिश्रम कितना लगन से किया गया है, आत्मा की निष्ठा से प्रभावित होंगे, और उसे पवित्र आत्मा प्रदान करेंगे और स्वयं उसके साथ एक हो जाएँगे। संत मकरियस अक्सर इस विषय पर बात करते हैं, और श्रम पर लगभग हर पाठ इस आशा को जगाने पर केंद्रित है।

४०. संसार में हर दृश्य प्रयास अपने श्रम के लाभ प्राप्त करने की आशा में किया जाता है। और यदि कोई इस बात का पूरी तरह से आश्वस्त नहीं है कि वह अपने श्रम के फलों का आनंद लेगा, तो उसका श्रम उसके किसी काम का नहीं है। इसी प्रकार, एक किसान फसल काटने की आशा में बोता है और, उसकी प्रत्याशा में, परिश्रम सहन करता है; कहा जाता है, *'जो हल जोतता है उसे आशा में ऐसा करना चाहिए'* (1 कुरिन्थियों 9:10)। और जो कोई पत्नी लेता है वह वारिस होने की आशा में ऐसा करता है, जबकि एक व्यापारी लाभ की तलाश में समुद्र में जाता है, जो निश्चित मृत्यु के जोखिम पर है। इसी प्रकार स्वर्ग के राज्य में भी, एक व्यक्ति इस आशा में कि उसके हृदय की आँखें प्रबुद्ध हों, इस जीवन के मामलों से अलग रहने के लिए स्वयं को समर्पित कर देता है, अपना समय प्रार्थना और विनती में व्यतीत करता है, प्रभु की प्रतीक्षा करता है कि जब वे आएँगे और स्वयं को उस पर प्रकट करेंगे, और उसे उसके भीतर निवास करने वाले पाप से शुद्ध करेंगे (14:1)।

४१. एक मसीही को आने वाले राज्य और उद्धार की आशा, आनंद और प्रत्याशा रखनी चाहिए, और यह कहना चाहिए: 'यदि मैं आज उद्धार नहीं पाता, तो मैं सुबह तक उद्धार पा लूँगा'। जो दाख की बारी लगाता है, वह काम शुरू करने से पहले ही अपने भीतर आनंद और आशा रखता है; और जब तक शराब नहीं बनी है, तब तक वह अपने मन में शराब की कूटनी का स्पष्ट चित्र बनाता है, लाभ की गणना करता है, और ऐसे विचारों के साथ अपने श्रम में लग जाता है; आशा और अपेक्षा उसे परिश्रम से काम करने के लिए प्रेरित करती हैं, और इस बीच वह अपने घर में बड़े-बड़े खर्च उठाता है। इसी तरह, एक निर्माणकर्ता और एक किसान भी भविष्य के लाभ की आशा में अपनी अधिकांश संपत्ति खर्च करते हैं। यहाँ भी ऐसा ही है: यदि किसी व्यक्ति की आँखों के सामने मुक्ति और जीवन प्राप्त करने का आनंद और आशा न हो, तो वह दुखों को सहन करने, बोझ उठाने, या संकीर्ण मार्ग पर चलने में सक्षम नहीं होगा। लेकिन उसके साथ रहने वाली आशा और आनंद उसे परिश्रम करने, दुख सहने, बोझ उठाने और संकीर्ण मार्ग पर चलने में सक्षम बनाते हैं (26:11)।

४२. एक विश्वासी को अपने लिए परमेश्वर से प्रार्थना करनी चाहिए, कि उसकी इच्छा उसके हृदय के नवीनीकरण से बदल जाए। तुम्हें अपना मन और विचार उस पर केंद्रित करने चाहिए, और अपने विचारों में उसे देखने की आशा के सिवा और कुछ भी नहीं रखना चाहिए। और इस प्रकार, एक माँ की तरह जो अपने शरारती बच्चों को इकट्ठा करती है, आत्मा पाप से बिखरे हुए विचारों को इकट्ठा करे और उन्हें शांत करे; उन्हें अपने शरीर के घर में लाए, निरंतर उपवास करते हुए और प्रेमपूर्वक प्रभु की प्रतीक्षा करते हुए, जब वह आएगा और वास्तव में उन्हें एक साथ इकट्ठा करेगा। चूँकि भविष्य अज्ञात है, तो उसे और भी अधिक आशा करनी चाहिए, अपनी आशा को दृढ़ता से नाविक में स्थापित करते हुए। कहा गया है: 'डरो नहीं, क्योंकि *मैं तुम्हारे साथ हूँ मैं तुम्हारा परमेश्वर हूँ वह सामर्थी जो तुम्हें बचाता है; मैं तुम्हारे आगे-आगे चलूँगा, और पहाड़ों को समतल करूँगा; मैं पीतल के द्वार तोड़ डालूँगा और लोहे की सलाखें चूर कर दूँगा'* (यशायाह 45:2)। और यह भी कहा गया है, *'खुद का ध्यान रखना, कहीं ऐसा न हो कि तेरे हृदय में अधर्म का वचन छिपा रहे'* (व्यवस्थाविवरण 15:9); अपने हृदय में यह न कहना, *'यह भाषा बहुतायत में और शक्तिशाली है'* (व्यवस्थाविवरण 2:21)। (31:1, 2).

43. यदि हम सुस्त न हों और अव्यवस्थित, दुष्ट विचारों को अपने भीतर जड़ जमाने न दें, बल्कि अपनी इच्छा से अपने मन को उसकी ओर आकर्षित करें, और अपने विचारों को प्रभु की ओर मोड़ने के लिए प्रेरित करें, तो

नस्सिंदेह, प्रभु अपनी इच्छा से हमारे पास आएंगे, और वास्तव में हमें अपने पास इकट्ठा करेंगे, क्योंकि सभी प्रसन्न करने वाली सेवा हमारे विचारों पर निर्भर करती है। इसलिए, प्रभु को प्रसन्न करने का यत्न करो, हमेशा अपने अंतर्मन में उनकी प्रतीक्षा करो, अपने विचारों में उन्हें खोजो, और अपनी इच्छा तथा अपनी चाह को अथक रूप से उनकी ओर मोड़ने के लिए प्रेरित और विवश करो। क्योंकि आप जितना अधिक अपने मन को उनकी खोज में लगाते हैं, उतना ही—और उससे भी अधिक—वे अपनी कृपा और दया से प्रेरित होकर आपके पास आते हैं और आपको विश्राम देते हैं। वह खड़ा रहता है और आपके मन, आपके विचारों और आपके विचारों की गतिविधियों को देखता है; वह यह देखने के लिए देखता है कि आप उसे कैसे खोजते हैं—अपने पूरे दिल से, या शायद आलस्य या उपेक्षा से (31:3)।

४४. और जब वह तुम्हें खोजने में तुम्हारी लगन देखता है, तब वह प्रकट होगा और अपने आपको तुम्हारे सामने प्रगट करेगा, तुम्हें अपनी सहायता देगा और तुम्हारे शत्रुओं से तुम्हें छुड़ाकर तुम्हारे लिए विजय सुनिश्चित करेगा। इसलिए, आइए हम इस शरीर को उठाएँ, एक वेदी स्थापित करें, उस पर अपने सभी विचार अर्पित करें, और प्रभु से प्रार्थना करें कि वे स्वर्ग से एक अदृश्य और शक्तिशाली अग्नि भेजें, जो वेदी और उस पर जो कुछ भी है, दोनों को भस्म कर दे। और बाल के सभी याजक—अर्थात् विरोधी शक्तियाँ—गिर जाएँगे, और तब हम स्वर्गीय वर्षा देखेंगे, जैसे एक मनुष्य के पदचिन्ह (3 राजा 18:44), आत्मा में उतरती हुई; इस प्रकार परमेश्वर का वचन हम पर पूरा होगा, जैसा कि भविष्यवक्ता के द्वारा कहा गया है: *'मैं दाऊद का गिरा हुआ डेरा फिर से खड़ा करूँगा, और मैं उसकी खंडहरों की मरम्मत करूँगा'* (आमोस 9:11)। (31:4–5).

जी) संत मकारियस तपस्या के अभ्यासों के विवरण में नहीं जाते, क्योंकि ये सभी उन लोगों द्वारा पहले से ही अभ्यास में थे, जिन्हें उन्होंने अपने प्रवचन दिए। वह केवल अवसर आने पर इनकी सूची देते हैं, जैसे: उपवास, जागरण, एकांत, शारीरिक श्रम, आज्ञाकारिता, पारस्परिक सहायता, और धैर्य। वे केवल प्रार्थना के बारे में ही अधिक विस्तार से बात करते हैं, क्योंकि यह सभी सद्गुणों और तपस्या के कार्यों का केंद्र है, और विशेष रूप से इसलिए क्योंकि यह वह माध्यम है जिसके द्वारा पवित्र आत्मा प्राप्त होता है।

४५. बाहरी तपस्या और जीवन के किस मार्ग को सर्वोच्च और सर्वोपरि माना जाए, इस बारे में, हे प्रियजन, यह जानो: सभी सद्गुण एक आध्यात्मिक श्रृंखला की कड़ियों की तरह एक-दूसरे से जुड़े हुए हैं; वे एक-दूसरे पर निर्भर हैं: प्रार्थना प्रेम पर, प्रेम आनंद पर, आनंद नम्रता पर, नम्रता विनम्रता पर, विनम्रता सेवा पर, सेवा आशा पर, आशा विश्वास पर, विश्वास आज्ञाकारिता पर, और आज्ञाकारिता सरलता पर। इसी तरह, दूसरी ओर, दुष्कर्म एक दूसरे पर निर्भर करते हैं: घृणा चिड़चिड़ाहट पर, चिड़चिड़ाहट अहंकार पर, अहंकार दंभ पर, दंभ अविश्वास पर, अविश्वास क्रूरता पर, क्रूरता सुस्ती पर, सुस्ती आलस्य पर, आलस्य निराशा से, निराशा अधीरता से, अधीरता इंद्रिय-कामना से; दुष्गुण के अन्य पहलू भी इसी प्रकार परस्पर जुड़े हुए हैं, जैसे कि सद्गुणों के पक्ष में, सद्गुण परस्पर जुड़े हुए हैं और एक-दूसरे पर निर्भर करते हैं (40, 1)।

४६. प्रत्येक अच्छे प्रयास में मुख्य तत्व और पुण्य का मुकुट प्रार्थना में लगन के साथ दृढ़ता है। इसके माध्यम से, ईश्वर से प्रार्थना करके, हम प्रतिदिन अन्य सद्गुणों को भी प्राप्त कर सकते हैं। अत; जो योग्य माने जाते हैं, उनमें ईश्वर की पवित्रता में एकता, आध्यात्मिक प्रभावशीलता, और मन का, मानो, प्रभु के प्रति अकथनीय प्रेम में मिलन उत्पन्न होता है। क्योंकि जो कोई भी स्वयं को प्रतिदिन प्रार्थना में स्थित रहने के लिए बाध्य करता है, वह ईश्वर के प्रति आध्यात्मिक प्रेम से दैवीय भक्ति और तीव्र इच्छा से प्रज्वलित हो उठता है, और उसे आध्यात्मिक पवित्रता की पूर्णता की कृपा प्राप्त होती है (40, 2)।

४७. हमें शारीरिक आदत से, न ही पुकार लगाने, चुप रहने या घुटने टेकने की आदत से प्रार्थना करनी चाहिए, बल्कि, अपने मन से होशपूर्वक सुनते हुए, हमें उस क्षण की प्रतीक्षा करनी चाहिए जब ईश्वर आत्मा में उसके सभी मार्गों और रास्तों और उसकी सभी इंद्रियों में आएँगे और उसका दर्शन करेंगे। इस प्रकार, कभी-कभी मौन रहना आवश्यक होता है, जबकि अन्य समयों में पुकारना और विलाप के साथ प्रार्थना करना आवश्यक होता है, बशर्ते कि मन ईश्वर पर स्थिर हो। क्योंकि जैसे शरीर, जब किसी कार्य में लगा होता है, तो वह उसमें पूरी तरह से मग्न हो जाता है, और उसके सभी अंग एक-दूसरे की सहायता करते हैं, वैसे ही आत्मा को भी पूरी तरह से प्रार्थना और प्रभु के प्रेम में समर्पित कर देना चाहिए, बिना विचलित हुए या अपने विचारों में भटकते हुए, बल्कि अपनी सारी आशा मसीह में रखनी चाहिए। और उस स्थिति में, प्रभु स्वयं इसे प्रबुद्ध करेंगे, इसे सच्ची विनती सिखाएंगे, इसे परमेश्वर के योग्य एक शुद्ध, आध्यात्मिक प्रार्थना और आत्मा और सत्य में आराधना प्रदान करेंगे (33:1–2)।

४८. जो प्रभु के समीप आते हैं, उन्हें अपनी प्रार्थनाएँ मौन, शांति और गहरी शांति के साथ अर्पित करनी चाहिए, और प्रभु को अनुचित और भ्रमित पुकारों से नहीं, बल्कि एक पश्चात्तापी हृदय और संयमित विचारों से सुनना चाहिए। ईश्वर के सेवक के लिए अव्यवस्था में नहीं, बल्कि सभी नम्रता और बुद्धिमत्ता में स्थित रहना उचित है,

जैसा कि भविष्यवक्ता ने कहा, *'मैं किस पर दृष्टि करूँगा? केवल नम्र और शांत लोगों पर, और जो मेरे वचनों से काँपते हैं'* (यशायाह 66:2)। हमें यह भी मिलता है कि मूसा और एलिया के समय में, जब परमेश्वर उन्हें दिखाई दिए, प्रभु की महिमा की उपस्थिति में कई तुरहियाँ और शक्तिशाली सेनाएँ थीं, लेकिन प्रभु का आगमन उपरोक्त वर्णन, अर्थात् शांति, मौन और प्रसन्नता से विशिष्ट और प्रकट हुआ। क्योंकि कहा गया है, *'देखो, एक मृदु, सूक्ष्म स्वर, और वहाँ यहोवा था'* (1 राजा 19:12)। और यह दिखाता है कि प्रभु का विश्राम शान्ति और व्यवस्था में ही है (6:1–2)।

४९. प्रार्थना का सच्चा आधार यह है: अपने विचारों पर ध्यान देना और गहरी मौनता और शांति में प्रार्थना करना। जो व्यक्ति प्रार्थना करता है, उसे अपने सभी प्रयासों को अपने विचारों की ओर निर्देशित करना चाहिए, दुष्ट विचारों के पोषण का कारण बनने वाली हर चीज़ को काट देना चाहिए, और अपने मन को ईश्वर की ओर निर्देशित करना चाहिए तथा अपने विचारों की इच्छाओं के अनुसार कार्य नहीं करना चाहिए, बल्कि अपने भटकते विचारों को हर दिशा से एकत्र करके एक में लाना चाहिए, और स्वाभाविक विचारों को दुष्ट विचारों से अलग करना चाहिए। पाप के बोझ के अधीन, आत्मा को, मानो, पहाड़ पर एक बड़े जंगल, या नदी के किनारे खपच्चियों, या काँटों और पेड़ों की किसी झाड़ी के समान कहा जाता है; इसलिए, जो लोग ऐसे स्थान से गुजरने का इरादा रखते हैं, उन्हें अपने हाथ फैलाने चाहिए और, प्रयास और कठिनाई से, अपने सामने की शाखाओं को अलग करना चाहिए। इसी तरह, आत्मा विरोधी शक्ति द्वारा उत्पन्न विचारों के एक विशाल जंगल से घिरी होती है; इसलिए, किसी व्यक्ति के लिए विरोधी शक्ति द्वारा उत्पन्न विदेशी विचारों को अलग पहचानने के लिए बड़ी सावधानी और सतर्कता की आवश्यकता होती है। जो लोग अपने विचारों पर ध्यान देते हैं, वे प्रार्थना का संपूर्ण कार्य आंतरिक रूप से करते हैं। ऐसे लोग, अपनी समझ और विवेक के माध्यम से, सफल हो सकते हैं, उठते हुए विचारों को दूर कर सकते हैं, और प्रभु की इच्छा में चल सकते हैं (6:3–4)।

i) एक आध्यात्मिक श्रमिक द्वारा अपनाई जाने वाली सावधानियों में, संत मकारियस सबसे बढ़कर इस बात पर जोर देते हैं कि कोई केवल बाहरी शिष्टाचार से संतुष्ट नहीं होना चाहिए। आत्मिक परिश्रम का उद्देश्य, बाहरी दृष्टिकोण से, स्वयं को सभी आत्मिक संघर्षों और सभी सद्गुणों का आदी बनाना है; फिर भी ऐसा नहीं है कि कोई वहीं विश्राम कर ले, बल्कि इस प्रयास को आंतरिक जीवन के विकास और पवित्र आत्मा की प्रभावशीलता प्राप्त करने की ओर निर्देशित करना है। फिर भी अन्य लोग यहीं तक रुक जाते हैं, और केवल उचित आचरण से अधिक कुछ भी हासिल नहीं करते, जबकि वे अपने हृदय पर कोई ध्यान नहीं देते और अनुग्रह की आत्मा की खोज नहीं करते। इसलिए वे परिश्रम तो करते हैं पर फल नहीं लाते। संत मकारियस हमें सबसे बढ़कर इससे सावधान रहने का आग्रह करते हैं।

५०. कई लोग, बाहरी आचरण का सख्ती से पालन करते हुए, अनुशासन का अभ्यास करते हुए और एक धार्मिक जीवन के लिए प्रयास करते हुए, सोचते हैं कि ऐसा व्यक्ति सिद्ध है, बिना हृदय में झाँके या वहाँ के उन विकारों पर ध्यान दिए जो आत्मा को कैद कर लेते हैं। इस बीच, अंगों के भीतर विकृतियों की जड़ निहित है, जो आंतरिक भ्रष्ट विचार के अनुरूप है, और घर के भीतर एक लुटेरा घात लगाए रहता है—अर्थात्, एक विरोधी शक्ति, और इसलिए वैमनस्यपूर्ण और, साथ ही, मन की एक शक्ति। और यदि कोई पाप के विरुद्ध संघर्ष नहीं करता है, तो आंतरिक दुराचार, धीरे-धीरे फैलते और बढ़ते हुए, एक व्यक्ति को स्पष्ट पापों में खींच लेता है और उन्हें कर्म में करने के लिए प्रेरित करता है, क्योंकि बुराई, एक झरने के खुलने की तरह, हमेशा अपने भीतर से एक धारा बहाती है। इसलिए, दुराचार की धारा को रोकने का प्रयास करो, कहीं तुम हज़ारों बुराइयों में न पड़ जाओ (15:46)।

५१. संसार दुराचार की पीड़ा से पीड़ित है और उसे इसका पता नहीं है। एक अशुद्ध अग्नि है जो हृदय को प्रज्वलित करती है, सभी अंगों में दौड़ती है, और लोगों को व्यभिचार तथा हजारों दुष्कृत्यों के लिए प्रेरित करती है। और जो लोग क्रोधित होते हैं या सुख-भोग में लिप्त होते हैं, वे अपने हृदय में, अंतर्मन में व्यभिचार करते हैं; और जब इस प्रकार बुराई को पोषण मिलता है, तो वे खुले व्यभिचार में भी पड़ जाते हैं। यही बात लालच, अहंकार, घमंड, ईर्ष्या और चिड़चिड़ेपन के लिए भी सत्य समझें। जैसे जब किसी को भोजन के लिए आमंत्रित किया जाता है और उसे अनेक व्यंजन परोसे जाते हैं, वैसे ही पाप भी मनुष्य को सब कुछ चखने के लिए प्रलोभित करता है, और फिर जो आत्मा इसमें लिप्त हो जाती है, वह बोझिल हो जाती है (15:48)।

५२. क्या कोई कह सकता है: 'मैं उपवास करता हूँ, मैं तीर्थयात्रा का जीवन जीता हूँ, मैं अपना धन उड़ा देता हूँ; अत; मैं पहले से ही पवित्र हूँ'? क्योंकि बुराई से परहेज़ करना अपने आप में पूर्णता नहीं है, जब तक कि आप पहले से ही एक विनम्र मन में प्रवेश नहीं कर चुके हैं और उस सर्प को नहीं मार चुके हैं जो मन के ठीक नीचे, आपके विचारों की गहराई में छिपा रहता है, जहाँ वह घोंसला बनाता है और आपको आत्मा के तथाकथित छिपावों और भंडारों में मार डालता है, क्योंकि हृदय एक गहरी खाई है; तो क्या आपने उसे मार डाला है और अपने भीतर की हर अशुद्धि को अपने

से बाहर निकाल फेंका है? सभी ज्ञानी, और व्यवस्था, और प्रेरित, और मसीह के आगमन का उद्देश्य शुद्धिकरण है। हर व्यक्ति चाहे यहूदी हो या यूनानी, पवित्रता से प्रेम करता है, लेकिन पवित्र नहीं हो सकता। इसलिए, यह पता लगाने का प्रयास करना चाहिए कि कैसे, और किन साधनों से, हृदय की पवित्रता प्राप्त की जा सकती है। यह केवल उसी के माध्यम से संभव है जिसे हमारे लिए सूली पर चढ़ाया गया था। वह मार्ग, जीवन, सत्य, द्वार, मोती, जीवित और स्वर्गीय भोजन है। इस सत्य के बिना, किसी के लिए भी सत्य को जानना और उद्धार पाना असंभव है। इसलिए, जैसे कि बाहरी मनुष्य और दृश्यमान वस्तुओं के संबंध में, आपने सब कुछ त्याग दिया है और अपनी संपत्ति बाँट दी है, वैसे ही, यदि आपके पास ज्ञान और वचन की शक्ति है, और सांसारिक बुद्धिमानी में आपको सब कुछ एक ओर रख देना चाहिए, और सभी को शून्य माने, तभी आप उपदेश देने के उत्साह में स्वयं को संवार पाएँगे, जो कि सच्ची बुद्धिमित्ता है, जो शब्दों की सुंदरता में नहीं, बल्कि पवित्र क्रूस के माध्यम से कार्य करने वाली शक्ति में निहित है (17:15)।

५३. योद्धा और तपस्वी के लिए सबसे महत्वपूर्ण हथियार यह है कि, हृदय में प्रवेश करने के बाद, उसे शैतान के विरुद्ध युद्ध करना चाहिए, स्वयं से घृणा करनी चाहिए, अपनी आत्मा का परित्याग करना चाहिए, उस पर क्रोध करना चाहिए, उसे फटकारना चाहिए, अपनी आदत की इच्छाओं का विरोध करना चाहिए, अपने विचारों से संघर्ष करना चाहिए, और स्वयं से संघर्ष करना चाहिए (26:12)।

54. और यदि बाहरी रूप से अपने शरीर की रक्षा करते हुए भ्रष्टता और व्यभिचार से, आपने अपने विचारों में व्यभिचार किया है और परस्त्रीगमन किया है, तो आप परमेश्वर के सामने व्यभिचारी हैं, और आपका पवित्र शरीर आपके किसी काम का नहीं होगा। जैसे एक युवक जो चालाकी से एक कुंवारी को बहकाता और उसे कलंकित करता है, अपनी व्यभिचार के कारण उसे उसके मंगेतर के लिए घृणित बना देता है, वैसे ही अदेह आत्मा भी, अपने भीतर रहने वाले साँप—धोखेबाज़ आत्मा—के साथ संगति करके, परमेश्वर के सामने व्यभिचार करती है। और लिखा है, *'जो कोई भी किसी स्त्री को वासना की दृष्टि से देखता है, वह मन में ही उसके साथ व्यभिचार कर चुका है* (मत्ती 5:28)। क्योंकि शरीर में व्यभिचार होता है, और आत्मा का व्यभिचार भी होता है, जो शैतान के साथ संगति में प्रवेश करती है। वही आत्मा या तो दानवों की संगिनी और बहन बन सकती है, या परमेश्वर और स्वर्गदूतों की; और शैतान के साथ व्यभिचार करके, यह स्वर्गीय वरा के लिए अनुपयुक्त हो जाती है (26:13)।

५५. हमने बार-बार उस किसान की दृष्टान्त कथा का उल्लेख किया है, जो परिश्रम करके भूमि में बीज बोने के बाद भी ऊपर से वर्षा की प्रतीक्षा करता है। परन्तु यदि कोई बादल न निकले और न कोई हवा चले, तो किसान की मेहनत का उसे कोई लाभ नहीं होगा, और बीज व्यर्थ ही पड़ा रहेगा। इसे आध्यात्मिक मामलों पर भी लागू करें। यदि कोई व्यक्ति केवल अपने प्रयासों तक ही सीमित रहता है और अपनी प्रकृति के लिए असाधारण को स्वीकार नहीं करता है, तो वह प्रभु के लिए योग्य फल नहीं दे सकता। तो फिर, किसी व्यक्ति का अपना काम क्या होता है? यह संसार का त्याग करने, उससे अलग होने, प्रार्थना और जागरण में बने रहने, ईश्वर और अपने भाइयों से प्रेम करने में निहित है; इन सभी में बने रहना ही उसका अपना काम है। लेकिन यदि वह केवल अपने ही काम तक सीमित रहता है और कुछ और प्राप्त करने की आशा नहीं रखता, और पवित्र आत्मा की हवाएँ उसकी आत्मा पर नहीं चलतीं, न कोई स्वर्गीय बादल दिखाई देता है, न ही स्वर्ग से उसकी आत्मा को सींचने के लिए वर्षा होती है, तो मनुष्य प्रभु के लिए योग्य फल नहीं दे सकता (26, 19)।

i) ऐसे बाहरी रूप से धर्मात्मा लोगों में, संत मकारियस विद्वानों को अलग करते हैं, जिन्होंने किताबों और बातचीत से यह सीखा है कि मामला क्या है और उस पर व्याख्या करते हैं, लेकिन स्वयं उस मामले में नहीं लगते; इसलिए, वे आध्यात्मिक समझ में अज्ञानी लोगों से भी पीछे रह जाते हैं, और उनकी व्याख्या ही तुच्छ होती है।

56. जो कोई भी उन आध्यात्मिक विषयों के बारे में बात करता है, जिन्हें उसने स्वयं नहीं चखा है, वह उस आदमी की तरह है जो दिन की गर्मी पड़ने पर एक बंजर खेत से होकर गुजरता है और, प्यास से तड़पते हुए, एक झरने का वर्णन करता है पानी से झरता हुआ, पीने का दिखावा करता है, जबकि उसके होंठ और जीभ उस प्यास से सूखे हुए हैं जो उन्हें झुलसा रही है; या उस व्यक्ति की तरह जो शहद को मीठा बताता है, पर उसने स्वयं उसे चखा नहीं है और उसकी मिठास की शक्ति के बारे में कुछ नहीं जानता। इस प्रकार, यदि जिन्होंने उनकी प्रभावशीलता का अनुभव नहीं किया है या अपने भीतर उनकी पुष्टि नहीं पाई है, वे पूर्णता, आनंद या वैराग्य के बारे में बात करते हैं, तो वास्तव में चीजें वैसी नहीं होतीं जैसी वे कहते हैं। क्योंकि जब ऐसा व्यक्ति अंततः आंशिक रूप से भी, उस कार्य को करने में सक्षम होता है, तो वह अपने मन में सोचेगा: 'यह वैसा नहीं हुआ जैसा मैंने सोचा था। 'मैंने एक तरह से सोचा, पर आत्मा दूसरी तरह से काम करता है' (17:12)।

57. रोटी और भोजन के बारे में बात करना एक बात है, और उसे खाना, उसका पोषण ग्रहण करना और हर अंग में बलवान होना एकदम दूसरी बात है। सबसे मीठे पेय के बारे में शब्दों में बात करना एक बात है, और स्वयं जाकर स्रोत से पानी भरना और उस मीठे पेय का स्वाद लेकर तृप्त होना एकदम दूसरी बात है। युद्ध, पराक्रमी योद्धाओं और वीरों के बारे में बात करना एक बात है, और किसी व्यक्ति का पाँत में खड़ा होकर दुश्मनों से लड़ना, आगे बढ़ना और पीछे हटना, प्रहार सहना और करना, और विजय प्राप्त करना, यह एकदम दूसरी बात है। आत्मिक मामलों में भी ऐसा ही है: एक बात है केवल ज्ञान और तर्क के माध्यम से कही गई बात की व्याख्या करना, और दूसरी बात है वास्तविकता में और निश्चितता के साथ, अपने आंतरिक स्व और मन के भीतर पवित्र आत्मा के खजाने, अनुग्रह, प्रेरणा और कार्य को धारण करना। जो केवल शब्द उच्चारित करते हैं वे स्वयं को धोखा दे रहे हैं और अपनी ही बुद्धि से स्वयं को फुला रहे हैं (27:12)।

58. जैसे संसार में, जब युद्ध की घोषणा होती है, तो बुद्धिमान और कुलीन लोग युद्धक्षेत्र में नहीं जाते, बल्कि मृत्यु के भय से घर पर ही रहते हैं; इसके बजाय, यह नवोदित लोग होते हैं, गरीब और आम लोग, युद्ध के लिए बुलाए जाते हैं; और ऐसा होता है कि वे दुश्मनों पर विजय प्राप्त करते हैं, उन्हें सीमाओं से भगा देते हैं, और इसके लिए राजा से पुरस्कार और मुकुट प्राप्त करते हैं, सम्मान और पदवी प्राप्त करते हैं, जबकि वे महान पुरुष उनके पीछे रह जाते हैं; आध्यात्मिक मामलों में भी ऐसा ही है। अनभिज्ञ लोग, पहली बार यह शब्द सुनकर, सत्य-प्रेमी मन से इसे कर्म में उतारते हैं और ईश्वर से आध्यात्मिक अनुग्रह प्राप्त करते हैं; लेकिन विद्वान, जो अत्यंत सूक्ष्मता से इस शब्द का अध्ययन करते हैं, युद्ध से बचते हैं और सफल नहीं होते, बल्कि उन लोगों से पीछे रह जाते हैं जिन्होंने युद्ध में भाग लिया और विजयी हुए (43:8)।

k) अत; अनुग्रह की आत्मा को प्राप्त करने के लिए हर संभव प्रयास करना चाहिए। क्योंकि यदि वह आपके भीतर नहीं है, तो आपके सभी बलिदान और परिश्रम व्यर्थ हैं, और प्रस्थान के समय राक्षस आपको पकड़ लेंगे और अपनी गहराई में खींच लेंगे। लेकिन जिसके पास आत्मा है, वह उन्हें भस्म कर देगा।

५९. यदि कोई, प्रभु के लिए, अपना त्याग करता है, इस संसार का परित्याग करता है, सांसारिक सुख-भोग, संपत्ति, पिता और माता को छोड़ देता है, स्वयं को सूली पर चढ़ाता है, और एक भटकता हुआ बन जाता है, एक भिखारी और जिसके पास कुछ भी नहीं है, फिर भी सांसारिक शांति के बजाय अपने भीतर दिव्य विश्राम नहीं पाता, अपनी आत्मा में आध्यात्मिक आनंद महसूस नहीं करता, और नश्वर वस्त्रों के बजाय दिव्य प्रकाश के वस्त्र से स्वयं को नहीं सजाता, आंतरिक मनुष्य के अनुसार; अपनी पूर्व, सांसारिक संगति के बजाय, वह अपने आत्मा में स्वर्गीय संगति को निश्चित रूप से नहीं जान पाएगा; इस संसार के दृश्यमान आनंद के बजाय, उसके भीतर आत्मा का आनंद और स्वर्गीय अनुग्रह का सांत्वना नहीं होगा, और न ही वह अपने आत्मा में, जैसा लिखा है, दिव्य संतुष्टि प्राप्त करेगा, *'जब प्रभु की महिमा उस पर प्रकट होती है'* (भजन संहिता 16: 15); संक्षेप में, इस अस्थायी आनंद के बदले में, वह अभी तक अपनी आत्मा में उस प्रत्याशित, अविनाशी आनंद को प्राप्त नहीं कर पाएगा; इस प्रकार वह स्वादहीन हो चुका नमक बन गया है; वह सभी मनुष्यों से अधिक दयनीय है, इस संसार की चीजों से वंचित और दिव्य आनंद का अनुभव न कर सका; वह अपनी आंतरिक मनुष्य में आत्मा के कार्य द्वारा दिव्य रहस्यों को जान नहीं पाया है (49:1).

६०. और जो कुछ आत्मा अपनी इच्छा से करती प्रतीत होती है—जो कुछ भी वह अपने ही बल पर निर्भर होकर आरंभ करती और पूरा करने का प्रयास करती है, यह सोचकर कि वह स्वयं और आत्मा की सहायता के बिना उस कार्य को पूर्ण कर सकती है—इसमें वह बहुत भूल करती है, क्योंकि वह स्वर्गीय निवासों के लिए अयोग्य है, एक आत्मा जो सोचती है कि वह अपने प्रयासों से और आत्मा के बिना पूर्ण पवित्रता प्राप्त कर सकती है, वह राज्य के लिए अयोग्य है। यदि कोई व्यक्ति, वासनाओं के प्रभाव में, संसार का त्याग करके ईश्वर के समीप नहीं आता, और आशा तथा धैर्य के साथ यह विश्वास नहीं करता कि उसे उसकी स्वभाविक प्रकृति से परे एक असाधारण आशीर्वाद—अर्थात् पवित्र आत्मा की शक्ति—प्राप्त होगा, और ऊपर प्रभु से अपने आत्मा में दिव्य जीवन ग्रहण नहीं करता, तो वह सच्चे जीवन का अनुभव नहीं करेगा, भौतिक मदहोशी से होश में नहीं आएगा; आत्मा में अंधकार में आत्मा का प्रकाश नहीं चमकेगा; पवित्र दिन उसमें नहीं उदय होगा; और न ही यह अज्ञानता की गहरी नींद से जागेगा, ताकि यह परमेश्वर की शक्ति और अनुग्रह के कार्य द्वारा (24:5) परमेश्वर को सचमुच जान सके,

61. इसलिए, जो कोई भी विश्वास करने और प्रभु के पास आने का प्रयास करता है, उसे प्रार्थना करनी चाहिए कि वह यहाँ रहते हुए ही परमेश्वर का आत्मा प्राप्त कर सके, क्योंकि वही आत्मा का जीवन है, और प्रभु के आने का उद्देश्य यहाँ रहते हुए ही आत्मा को जीवन देना था—पवित्र आत्मा। क्योंकि कहा गया है, *'जब तक तुम्हारे पास प्रकाश है, प्रकाश में विश्वास करो'* (यूहन्ना 12:36), *'रात आती है, जब तुम काम नहीं कर सकोगे'* (यूहन्ना 9:4)। इसलिए, यदि यहाँ कोई ऐसा है जिसने आत्मा के लिए जीवन—अर्थात् पवित्र आत्मा की दिव्य ज्योति—को नहीं माँगा

और प्राप्त नहीं किया है, तो शरीर से अलग होने के समय, वे स्वर्ग के राज्य में प्रवेश किए बिना, अंधकार के क्षेत्र में फेंक दिए जाते हैं, और शैतान और उसके स्वर्गदूतों के साथ गेहेना में अपना अंत पाएँगे। या, जैसे सोना या चाँदी, जब आग में डाला जाता है, तो और अधिक शुद्ध और खरा हो जाता है, और कुछ भी—न तो लकड़ी, न तो घास इसे बदल सकती है, क्योंकि यह स्वयं आग के समान हो जाती है और जो कुछ भी इसके पास आता है उसे भस्म कर देती है; इसी प्रकार आत्मा भी, जो आध्यात्मिक अग्नि और दिव्य प्रकाश में निवास करती है, किसी भी दुष्ट आत्मा से किसी भी बुराई को सहन नहीं करेगी, और यदि कोई भी उसके पास आएगा, तो वह आत्मा की स्वर्गीय अग्नि से भस्म हो जाएगा। या, जैसे एक पक्षी, जब ऊँची उड़ान भरता है, तो उसे कोई चिंता नहीं होती, वह न तो शिकारियों से डरता है और न ही चालाक जानवरों से, और, सभी से ऊपर उड़ते हुए, उन पर हँसता है; वैसे ही आत्मा भी, पवित्र आत्मा के पंख लगाकर और सबसे ऊँची स्वर्गीय ऊँचाइयों तक उड़ान भरते हुए, हर चीज़ पर हँसती है (30, 6)।

62. परन्तु यदि किसी के भीतर परमेश्वर की अनुग्रह अभी तक नहीं बोई और स्थापित नहीं की गई है, तो दिन-रात, जैसे कि यह कोई स्वाभाविक बात हो, उनकी आत्मा उसी से चिपकी रहे जो समय-समय पर उनका मार्गदर्शन करता है, उन्हें प्रोत्साहित करता है और उन्हें भलाई की ओर निर्देशित करता है। उनके भीतर, कम से कम, एक स्वाभाविक और अपरिवर्तनीय चीज़ के रूप में, देखभाल, भय, चिंता, और एक पश्चात्तापी हृदय हो जो हमेशा उनके भीतर दृढ़ता से स्थापित हो (16:6)।

6. उन लोगों की अवस्था जिनमें आत्मा सक्रिय हो गई है

(क) जिन लोगों ने, अच्छी अंतरात्मा और आत्म-दया के बिना, तपस्या के कार्यों को अपनाया है, उनके लिए अनुग्रह की शक्ति और प्रभावशीलता अंततः प्रकट होती है। यह हृदय में एक विशेष आध्यात्मिक गर्माहट, विचारों का शांत हो जाना, सभी सृजित वस्तुओं के प्रति अरुचि, और पृथ्वी पर कीमती मानी जाने वाली सभी चीजों के मूल्य में कमी के रूप में प्रकट होता है। वास्तव में, यह आध्यात्मिक जीवन का मूल बीज है। यहीं से आत्मा का आध्यात्मिकीकरण, उसके भावों से शुद्धिकरण, और उन भावों से उत्पन्न घावों का उपचार शुरू होता है।

1. मरियम का अनुकरण करें, और उस पर ही दृष्टि टिकाए रखें जिसने कहा: *'मैं पृथ्वी पर आग लाने आया हूँ और मैं कितना चाहता हूँ कि यह पहले से ही जल उठी होती!'* (लूका 12:49)? क्योंकि आत्मा का जलना हृदय को पुनर्जीवित करता है। अदेह और दिव्य अग्नि आत्माओं को पवित्र करती है और उन्हें शुद्ध करती है, ठीक वैसे ही जैसे शुद्ध सोने को कड़ाही में परखा जाता है, जबकि बुराई को काँटों और भूसे की तरह जला दिया जाता है, क्योंकि *'हमारा परमेश्वर भस्म करने वाली आग है'* (इब्रानियों 12:29)। इस आग की शक्ति की खोज में, धन्य दाऊद ने कहा, *'हे प्रभु, मुझे परख और आज़मा; मेरे हृदय और मेरे मन की परीक्षा कर'* (भजन संहिता 25:2)। (25:9).

2. इस आग ने क्लेओपास और उसके साथी के हृदयों को तब गर्म किया जब उद्धारकर्ता ने अपने पुनरुत्थान के बाद उनसे बात की। और स्वर्गदूत और सेवा करने वाली आत्माएँ इस आग के तेज में सहभागी होती हैं, जैसा कि कहा गया है: *'वह अपने स्वर्गदूतों को आत्माएँ बनाता है, और अपने सेवकों को जलती हुई आग'* (इब्रानियों 1:7)। यह आग, भीतरी समुद्र से भूसी को जलाकर नष्ट करके, मन को शुद्ध करती है, ताकि, अपनी प्राकृतिक विवेकशक्ति को पुनःप्राप्त करके, वह परमेश्वर के आश्चर्यों को निरंतर निहार सके, जैसे कोई कहता है, *'मेरी आँखें खोल, ताकि मैं तेरे विधान की अद्भुत बातें देख सकूँ'* (भजन संहिता 118:18)। अत; यह अग्नि राक्षसों को भगाती है और पाप का नाश करती है (25:10)।

3. जैसे लोहा, या सीसा, या सोना, या चाँदी, जब आग में डाले जाते हैं, तो वे अपनी कठोरता खो देते हैं, और नरम पदार्थों में बदल जाते हैं, और जब तक वे आग में रहते हैं, आग की गर्मी की शक्ति से, वे पिघल जाते हैं और उनकी प्राकृतिक कठोरता बदल जाती है, वैसे ही आत्मा भी, संसार को त्यागकर और एकमात्र प्रभु से प्रेम करके, हृदय की महान लालसा के साथ, परिश्रम और प्रयास के द्वारा, आशा और विश्वास के साथ निरंतर उसकी प्रतीक्षा करती है; और ईश्वरत्व की उस दिव्य अग्नि और आत्मा के प्रेम को अपने भीतर ग्रहण कर, वह वास्तव में सभी सांसारिक प्रेमों का त्याग कर देती है, और सभी वासनाओं के प्रत्येक हानि से मुक्त हो जाती है, सब कुछ त्याग देता है, अपने स्वाभाविक स्वभाव और अपनी पापी कठोरता को बदल देता है, और उस एक स्वर्गीय वधू-वर को, जिसे उसने अपने भीतर ग्रहण किया है, में सब कुछ तुच्छ समझता है, और उसी के प्रति उत्कट और अनुपम प्रेम में विश्राम पाता है (4, 14)।

४. मैं तुमसे कहता हूँ, कि यहाँ तक कि वे सबसे प्रिय भाई भी जिन्हें वह अपनी आँखों के सामने देखती है—यदि वे उस प्रेम में उसे बाधित करते हैं—तो आत्मा, कहने का भाव है, उनसे मुँह मोड़ लेती है, क्योंकि उसका जीवन और

शान्ति स्वर्गीय राजा के साथ रहस्यमय और अकथनीय सहभागिता में निहित है। क्योंकि दैहिक संगति के लिए प्रेम भी मनुष्य को उसके पिता, माता और भाइयों से अलग कर देता है, और उनसे संबंधित सब कुछ मन के लिए पराया हो जाता है। और यदि कोई पुरुष उनसे प्रेम करता है, तो वह एक बाहरी व्यक्ति के रूप में करता है, फिर भी वह अपनी पत्नी से स्नेह रखता है। क्योंकि कहा गया है, *'इसीलिए मनुष्य पिता और माता को छोड़कर अपनी पत्नी से जुड़ जाएगा, और दोनों एक शरीर बन जाएंगे'* (इफिसियों 5:31)। और इसलिए, यदि सांसारिक प्रेम इस प्रकार मनुष्य को सभी अन्य प्रेमों से अलग कर देता है, तो वे लोग जो स्वर्गीय और प्रत्याशित पवित्र आत्मा के साथ सहभागिता में प्रवेश करने के लिए वास्तव में योग्य माने गए हैं, वे संसार के सभी प्रेमों से स्वयं को कितना अधिक अलग कर लेंगे, और उन्हें हर चीज़ तुच्छ प्रतीत होगी, क्योंकि वे स्वर्गीय इच्छा से अभिभूत हैं और उस पर गहराई से निर्भर हैं; वहाँ उनकी इच्छाएँ हैं, वहाँ उनके विचार निवास करते हैं, वहाँ वे जीते हैं, वहाँ उनके विचार विचरण करते हैं, वहाँ उनका मन हमेशा रहता है, जो दैवीय और स्वर्गीय प्रेम और आध्यात्मिक इच्छा से अभिभूत है (4, 15)।

५. जिन पर दिव्य जीवन के आत्मा की ओस पड़ी है, और जिनके हृदय स्वर्गीय राजा, मसीह के प्रति दिव्य प्रेम से भेदे गए हैं, वे उस सुंदरता, उस अवर्णनीय महिमा, उस अमर वैभव, सच्चे और शाश्वत राजा, मसीह के अकल्पनीय धन-संपत्ति की ओर आकर्षित होते हैं। वे तड़प और प्रेम के लिए स्वयं को समर्पित कर देते हैं, पूरी तरह से मसीह की ओर मुड़ जाते हैं, और उन अकथनीय आशीर्वादों को प्राप्त करने के लिए तरसते हैं जिनका वे आत्मा में चिंतन करते हैं; और इस उद्देश्य के लिए वे सारी सांसारिक सुंदरता, महिमा, वैभव और सम्मान को कुछ भी नहीं समझते, और राजाओं व राजकुमारों के धन-संपत्ति को, क्योंकि वे दिव्य सौंदर्य से मोहित हो गए हैं, और स्वर्गीय अमरत्व का जीवन उनके आत्माओं में प्रवेश कर गया है। इसीलिए वे स्वर्गीय राजा के एकमात्र प्रेम की कामना करते हैं, और उसे बड़ी लालसा के साथ अकेले अपनी दृष्टि के सामने रखते हैं; उसके लिए वे सभी सांसारिक प्रेम का त्याग करते हैं और सभी सांसारिक बंधनों से अलग हो जाते हैं, ताकि वे हमेशा अपने हृदय में इस एक इच्छा को बनाए रख सकें और इसमें कुछ और न मिलाएं (5, 6)।

6. वे ईसाई जो वास्तव में अनुग्रह का स्वाद चख चुके हैं, वे ही केवल यह समझ सकते हैं कि संपूर्ण सांसारिक जगत—शाही खजाने, धन-संपत्ति, महिमा और ज्ञान के वचन—यह सब केवल एक भ्रम है, कुछ ऐसा जिसकी कोई ठोस नींव नहीं है, बल्कि क्षणभंगुर है; और यदि स्वर्ग के नीचे कुछ भी है, तो वह उनकी दृष्टि में घृणा के योग्य है। ऐसा क्यों है? क्योंकि जो स्वर्गों के ऊपर है वह अद्भुत और आश्चर्यजनक है—ऐसी कोई चीज़ जो न तो राजसी खजाने में, न ही ज्ञान के वचनों में, और न ही सांसारिक महिमा में पाई जाती है। और जो गरिमा, या धन, उन्होंने प्राप्त किया है—सभी चीजों के प्रभु और सृष्टिकर्ता को अपने अंतरतम में धारण करके—एक ऐसा अधिकार है जो क्षणिक नहीं है, बल्कि हमेशा के लिए बना रहता है (15:40–41)।

7. पवित्र आत्मा के साथ सहभागिता और उसमें भागीदारी के माध्यम से, मसीहियों के मन और समझ दृढ़ता प्राप्त करते हैं, स्थिरता, प्रसन्नता और शांति; वे अब चंचल और व्यर्थ विचारों से विचलित या विक्षुब्ध नहीं होते, बल्कि मसीह की शांति में और आत्मा के प्रेम में निवास करते हैं, ठीक वैसे ही जैसे प्रभु ने ऐसे लोगों के बारे में कहा कि वे *'मृत्यु से जीवन में'* पार हो गए हैं (यूहन्ना 5:24)। मन के नवीनीकरण, विचारों के आत्म-वध, और प्रभु के प्रति प्रेम और स्वर्गीय भक्ति के द्वारा, नई सृष्टि— —अर्थात ईसाई—संसार के सभी लोगों से विशिष्ट है। इसी उद्देश्य के लिए प्रभु आए, ताकि जो लोग प्रभु पर सच्चा विश्वास करते हैं, वे इन आध्यात्मिक आशीर्वादों के योग्य बन सकें (5:4–5)।

8. जैसे रक्तस्राव से पीड़ित स्त्री, प्रभु के वस्त्र की छोर को सचमुच विश्वास करके छू लेने पर, तुरंत चंगी हो गई, और अशुद्ध रक्त के स्रोत का प्रवाह सूख गया, वैसे ही हर आत्मा, जिसे पाप का एक लाइलाज घाव—अशुद्ध और दुष्ट विचारों का स्रोत—है, यदि वह मसीह के पास आती है और, सच्चा विश्वास करके, निवेदन करता है, तो वह वासनाओं के प्रवाह से उद्धारक चंगाई प्राप्त करेगा, और केवल यीशु की शक्ति से ही वह स्रोत, जो अशुद्ध विचारों को बहाता है, सूख जाएगा और बंद हो जाएगा; परन्तु किसी और के लिए इस घाव को चंगा करना असंभव है (20, 4)।

9. जैसे, जब सूर्य पृथ्वी के ऊपर उदय होता है, तो उसकी सारी किरणें पृथ्वी पर होती हैं, और जब वह पश्चिम में अस्त होता है, अपने निवास में लौटते हुए, वह अपनी सारी किरणों को वापस अपने में समा लेता है, वैसे ही आत्मा भी, जो पवित्र आत्मा द्वारा ऊपर से पुनर्जन्म नहीं लेती है, अपने विचारों के साथ पूरी तरह से पृथ्वी पर होती है, और उसके विचार पृथ्वी के छोर तक फैले होते हैं; परन्तु जैसे ही उसे आत्मा से स्वर्गीय जन्म और सहभागिता प्राप्त करने के लिए योग्य ठहराया जाता है, अपने सभी विचारों को एकत्र करके और उन्हें अपने भीतर रखकर, वह प्रभु की उपस्थिति में प्रवेश करती है, स्वर्ग में मनुष्य के हाथों से न बने निवास स्थान में, और उसके सभी विचार, दिव्य वातावरण में प्रवेश करके, स्वर्गीय हो जाते हैं, शुद्ध और पवित्र; क्योंकि आत्मा, दुष्ट राजकुमार—जगत की

आत्मा—की दासता से मुक्त होकर, शुद्ध और दैवीय विचारों को प्राप्त करती है, क्योंकि ईश्वर मनुष्य को दैवीय स्वभाव का सहभागी बनाने में प्रसन्न हुए (49, 3)।

b) अनुग्रह के प्रभाव के पहले ही क्षणों से यह स्पष्ट हो जाता है, लेकिन यह सोचना बहुत खतरनाक है कि यहाँ पहले से ही किसी प्रकार की पूर्णता मौजूद है। यह तो केवल शुरुआत है। अनुग्रह, अपना प्रभाव दिखाने के बाद, धीरे-धीरे हृदय पर काबू पा लेता है, जब तक कि वह सब कुछ भर न दे और पूरे आंतरिक अस्तित्व को रूपांतरित न कर दे।

10. जब दिव्य अनुग्रह का कार्य प्रत्येक व्यक्ति के विश्वास के अनुपात में आत्मा पर उतरता है, और आत्मा ऊपर से सहायता स्वीकार करती है, तो अनुग्रह उस पर केवल आंशिक रूप से ही उतरता है। और यह न सोचें कि किसी की पूरी आत्मा तुरंत प्रबुद्ध हो जाती है; उसमें दुर्गुणों का एक विशाल विस्तार बना रहता है, और एक व्यक्ति को, अपने भीतर काम कर रहे अनुग्रह के अनुरूप, महान श्रम और प्रयास की आवश्यकता होती है। इसीलिए दिव्य अनुग्रह, जो एक ही क्षण में किसी व्यक्ति को शुद्ध करके परिपूर्ण बना सकता है, मानव की स्वतंत्र इच्छा की परीक्षा लेने के लिए, धीरे-धीरे आत्मा पर आता है: कि क्या वह ईश्वर के प्रति पूर्ण प्रेम बनाए रखती है, दुष्ट के साथ कोई समझौता नहीं करती, बल्कि स्वयं को पूरी तरह से अनुग्रह के हवाले कर देती है। इस प्रकार, वह आत्मा जो समय और कई वर्षों के दौरान स्वयं को अनुकूल साबित करती है, और अनुग्रह को कोई दुख या ठेस नहीं पहुँचाती, उसे इस बहुत ही क्रमिक प्रक्रिया के माध्यम से अपने लिए सहायता मिलती है। और अनुग्रह स्वयं आत्मा के भीतर के चरागाह को अपने वश में कर लेता है; और जैसे-जैसे आत्मा, कई वर्षों तक, स्वयं को अनुग्रह के अनुकूल और सामंजस्यपूर्ण साबित करती है, यह आत्मा की सबसे गहरी शक्तियों और विचारों तक जड़ें जमा लेता है, जब तक कि पूरी आत्मा दिव्य अनुग्रह से आलिंगनबद्ध नहीं हो जाती, जो पहले से ही इस पात्र के भीतर राज करता है (41, 2)।

11. इस प्रकार कई लोग उनके भीतर अनुग्रह के कार्य करने के ही कारण भटक गए; उन्होंने सोचा कि उन्होंने पूर्णता प्राप्त कर ली है, और कहा: 'हमारा भरपूर हो गया है; हमें किसी चीज़ की कमी नहीं है।' लेकिन प्रभु अनंत और अगम्य हैं। और ईसाई यह कहने की हिम्मत नहीं करते कि उन्होंने समझ प्राप्त कर ली है, बल्कि दिन-रात स्वयं को नम्र करते हैं। आत्मा के कई भाग हैं, और उसकी गहराई महान है; और जो पाप उसमें घुस आया है, उसने उसके सभी चरागाहों और हृदय की शक्तियों पर कब्जा कर लिया है। फिर, जब कोई व्यक्ति अनुग्रह की खोज करता है, तो वह उसके पास आता है और शायद आत्मा की दो शक्तियों पर कब्जा कर लेता है। लेकिन अनुभवहीन व्यक्ति, अनुग्रह से सांत्वना पाकर, यह सोचता है कि जो अनुग्रह आया है उसने आत्मा की सभी शक्तियों को अपने वश में कर लिया है, और पाप मिट गया है। फिर भी आत्मा का अधिकांश भाग पाप की शक्ति में बना रहता है, जबकि केवल एक भाग ही अनुग्रह के प्रभाव में होता है। और वह व्यक्ति धोखा खा जाता है और यह महसूस नहीं करता (26, 17, 50, 5)।

12. किसी बीमारी से पीड़ित व्यक्ति में भी कुछ अंग स्वस्थ हो सकते हैं—उदाहरण के लिए, देखने का अंग, आँख, या कोई अन्य भाग—जबकि बाकी क्षतिग्रस्त होते हैं। आध्यात्मिक मामलों में भी यही लागू होता है। एक व्यक्ति के तीन आध्यात्मिक भाग स्वस्थ हो सकते हैं, फिर भी इसका यह मतलब नहीं है कि वह व्यक्ति पहले से ही सिद्ध है। आप देख सकते हैं कि कितने आध्यात्मिक दर्जे और चरण हैं, और कैसे बुराई एक साथ पूरी तरह से नहीं बल्कि टुकड़ों में शुद्ध और बाहर निकाली जाती है (15, 7)।

13. जैसे गर्भ में भ्रूण तुरंत मानव नहीं बन जाता, बल्कि धीरे-धीरे मानवीय रूप धारण करता है और जन्म लेता है—हालांकि एक ऐसे मानव के रूप में जो अभी परिपक्व आयु का नहीं है—लेकिन पहले कई वर्षों तक बढ़ता है और फिर एक पुरुष बनता है; और इसी तरह, जौ या गेहूं के बीज जमीन में बोए जाने पर तुरंत जड़ नहीं पकड़ते, परन्तु केवल तब, जब ठंड और हवाएँ बीत जाती हैं, वे उचित समय पर अपने तने उगाते हैं; और जो कोई नाशपाती का पेड़ लगाता है, वह तुरंत उससे फल नहीं तोड़ता; वैसे ही आध्यात्मिक मामलों में, जहाँ इतनी अधिक बुद्धि और सूक्ष्मता है, एक व्यक्ति धीरे-धीरे बढ़ता है और *'पूर्ण मनुष्य के माप तक, उसकी कद-काठी के माप के अनुसार'* पहुँचता है (इफिसियों 4:13), और न ही, जैसा कि अन्य दावा करते हैं, कि यह कपड़े उतारने और पहनने के समान है (15:39)।

14. पर जैसे एक मधुमक्खी गुप्त रूप से छत्ते में अपना शहद का छत्ता बनाती है, वैसे ही अनुग्रह गुप्त रूप से हमारे हृदयों में अपना प्रेम उत्पन्न करता है, कड़वाहट को मिठास में और कठोर हृदय को करुणा में बदल देता है। और जैसे एक चाँदी का कारीगर और नक्काशीगर, एक बर्तन को टुकड़ों में तराशते हुए, उस पर तराशे जा रहे विभिन्न जानवरों को ढक देता है, और जब वह अपना काम पूरा कर लेता है, तो वह बर्तन को उसकी पूरी भव्यता में प्रकट करता है, वैसे ही सच्चा कलाकार (मसीह) प्रभु हमारे हृदयों को अपनी नक्काशी से सुशोभित करते हैं और उन्हें

रहस्यमय ढंग से नया बनाते हैं, जब तक कि हम इस शरीर से विदा नहीं हो जाते, और तब आत्मा की सुंदरता दिखाई देगी (16:7)।

ग) इसी कारण, जिन्होंने अनुग्रह का स्वाद चखा है, वे निरंतर और अधिक चखने के लिए तरसते रहते हैं।

15. जो आत्माएँ धार्मिकता और भलाई से प्रेम करती हैं, जो बड़ी आशा और विश्वास के साथ मसीह में पूरी तरह से परिधानित होने की इच्छा रखती हैं, उन्हें दूसरों की याद दिलाने की उतनी आवश्यकता नहीं होती, न ही वे अपने भीतर परमेश्वर के लिए अपनी स्वर्गीय इच्छा और प्रेम में थोड़ी सी भी कमी को सहन करती हैं; बल्कि, मसीह के क्रूस से पूरी तरह चिपके हुए, वे प्रतिदिन अपने भीतर आध्यात्मिक वधू के प्रति अपने लगाव में आध्यात्मिक विकास की अनुभूति करते हैं; और, स्वर्गीय इच्छा से प्रेरित होकर और सद्गुणों की सच्चाई के लिए प्यासे होकर, वे आध्यात्मिक प्रबोधन के लिए प्रबल और अतृप्त लालसा करते हैं। और यदि, अपने विश्वास के कारण, उन्हें दिव्य रहस्यों का ज्ञान प्राप्त करने के योग्य समझा जाता है, या वे स्वर्गीय अनुग्रह के आनंद में सहभागी बनते हैं, तो वे स्वयं पर निर्भर नहीं करते या स्वयं को कुछ विशेष नहीं मानते; बल्कि जिस हद तक उन्हें आध्यात्मिक उपहारों के योग्य समझा जाता है, उतनी ही सीमा तक, अपनी स्वर्गीय इच्छा की अतृप्ति के कारण, वे और भी अधिक उत्साह के साथ उनकी खोज करते हैं; जितना अधिक वे अपने भीतर आध्यात्मिक प्रगति को महसूस करते हैं, उतना ही वे परमपिता के साथ एकता और अनुग्रह की वृद्धि के लिए तरसते और प्यासे रहते हैं; जितना अधिक वे आध्यात्मिक रूप से समृद्ध होते हैं, वे अपनी ही दृष्टि में और अधिक दरिद्र होते जाते हैं, क्योंकि स्वर्गीय वरा के प्रति प्रयास करने की आध्यात्मिक इच्छा की अतृप्ति के कारण, जैसा कि धर्मग्रंथ कहता है, *'जो मुझसे खाते हैं, वे फिर भी भूखे रहेंगे, और जो मुझसे पीते हैं, वे फिर भी प्यासे रहेंगे'* (सिर. 24:23)। (10:1).

१६. एक आत्मा जो परमेश्वर और मसीह से सच्चा प्रेम करती है, भले ही उसने हजारों धार्मिक कर्म किए हों, प्रभु के लिए अपनी अतृप्त लालसा के कारण, वह स्वयं को ऐसा मानती है मानो उसने अभी तक कुछ भी नहीं किया है; भले ही वह उपवास और प्रहरों द्वारा अपने शरीर को थका दे, वह इस भावना के साथ रहती है कि उसने अभी तक सद्गुण के लिए परिश्रम करना शुरू भी नहीं किया है; भले ही उसे विभिन्न आध्यात्मिक उपहारों, या प्रकटनों और स्वर्गीय रहस्यों को प्राप्त करने के योग्य माना जाए, प्रभु के प्रति अपने असीम और अतृप्त प्रेम के कारण, वह अपने भीतर पाती है कि उसने अभी तक कुछ भी प्राप्त नहीं किया है; इसके विपरीत, प्रतिदिन भूखी और प्यासी रहकर, विश्वास और प्रेम के साथ प्रार्थना में बनी रहती है, और अनुग्रह से परिपूर्ण रहस्यों और हर सद्गुण में अपने आत्म-संस्कार से तृप्त नहीं हो सकती। स्वर्गीय आत्मा के प्रेम से भेदी होकर, और अनुग्रह की सहायता से, वह अपने भीतर निरंतर स्वर्गीय वधू-वर के लिए एक तीव्र लालसा जगाती है; वह आत्मा के मंदिर में उनके साथ रहस्यमय और अगोचर सहभागिता के लिए पूर्णतःयोग्य बनना चाहती है; अपनी आत्मा के निर्मल मुख से, वह स्वर्गीय वधू-वर को आमने-सामने निहारती है, आध्यात्मिक और अकथनीय प्रकाश में; पूर्ण निश्चय के साथ, वह उसके साथ एकता में प्रवेश करती है, स्वयं को उसकी मृत्यु के अनुरूप बनाती है, और मसीह के लिए बड़ी लालसा के साथ अनवरत रूप से मृत्यु की प्रतीक्षा करती है; वह बिना किसी संदेह के विश्वास करती है कि आत्मा के द्वारा वह पाप और वासनाओं के अंधकार से पूर्ण मुक्ति प्राप्त करेगी, और आत्मा और शरीर में आत्मा द्वारा शुद्ध और पवित्र हो जाने के बाद, उसे अपने भीतर स्वर्गीय राज्य ग्रहण करने के लिए एक शुद्ध पात्र और स्वर्गीय तथा सच्चे राजा मसीह के लिए एक निवास-स्थान बनने के योग्य समझा जाएगा। और तभी वह स्वर्गीय जीवन के योग्य बनती है, क्योंकि वह पहले ही यहाँ पवित्र आत्मा का एक शुद्ध निवास-स्थान बन चुकी है (10:4)।

१७. परन्तु आत्मा के लिए अचानक, और परीक्षाओं के बिना ऐसी अवस्था प्राप्त करना संभव नहीं है। इसके विपरीत, समय के साथ, परिश्रम और संघर्षों के द्वारा, परीक्षाओं और विभिन्न प्रलोभनों के बाद, यह आत्म-संयम की पूर्ण अवस्था तक आध्यात्मिक वृद्धि और प्रगति प्राप्त करती है, और फिर, 'पाप के हर प्रलोभन' का स्वेच्छा से और साहसपूर्वक सामना करने के बाद, उसे महान सम्मानों, आध्यात्मिक उपहारों और स्वर्गीय धन-संपत्ति का योग्य समझा जाएगा, और इस प्रकार वह हमारे प्रभु मसीह यीशु के स्वर्गीय राज्य का वारिस बनेगा (10:5)।

18. मसीही धर्म भोजन और पेय है। और कोई जितना अधिक इसका स्वाद चखता है, उतना ही अधिक उसका मन इसकी मिठास से उत्तेजित होता है, जो अनियंत्रित और अतृप्त हो जाता है, और अधिक से अधिक इसकी माँग करता है और उसका आनंद लेता है। या, जैसे जब कोई प्यासा होता है और उसे एक मीठा पेय दिया जाता है, तो उसे चखने पर उसकी प्यास और भी तीव्र हो जाती है, और वह पेय के और करीब आ जाता है; वैसे ही, आत्मा का स्वाद चखने से लगभग एक अविनाशी प्यास उत्पन्न होती है, जिसकी सही रूप में ऐसे व्यक्ति की प्यास से तुलना की जाती

है। और यह केवल शब्द नहीं हैं, बल्कि पवित्र आत्मा का कार्य है, जो रहस्यमय तरीके से मन की सहायता करता है (17:13)।

19. एक झरना कल्पना कीजिए, और मान लीजिए कोई प्यासा व्यक्ति उससे पीना शुरू करता है; फिर, जब वह पी ही रहा होता है, कोई उसका ध्यान भटका देता है और उसे तृप्त होने से रोक देता है; फिर, पानी का स्वाद चखने के बाद, उसकी प्यास और भी बढ़ जाती है, और वह और भी तीव्रता से उस पेय की खोज करता है। आत्मिक मामलों में भी ऐसा ही है: किसी ने तो स्वर्गीय भोजन का स्वाद लेना और उसमें भाग लेना पहले ही शुरू कर दिया है, और अचानक, ठीक उसी क्षण, उसे रोक दिया जाता है, और कोई भी उसे तृप्त होने नहीं देता (27:7)।

20. प्रभु मानव दुर्बलता को जानते हैं—कि एक व्यक्ति जल्दी से घमंडी हो जाता है—और इसलिए वह उन्हें रोकते हैं और उन्हें निरंतर परीक्षा और क्लेश में रहने देते हैं। क्योंकि यदि, जब आप केवल थोड़ा ही प्राप्त करते हैं, तब भी आप सभी के लिए असहनीय हो जाते हैं और घमंडी हो उठते हैं, तो कितनी अधिक असहनीय हो जाएँगे यदि आपको केवल एक बार ही तृप्त होने दिया जाए। परन्तु परमेश्वर, आपकी दुर्बलता को जानकर, अपनी समझ के अनुसार आपको परीक्षाएँ भेजता है, ताकि आप नम्र हो जाएँ और अधिक उत्साह के साथ परमेश्वर को खोजें (27:8)।

(घ) प्रभु के लिए और अधिक लालायित, ऐसे लोग हर चीज़ में स्वयं को कमी और अपर्याप्त महसूस करते हैं; इसलिए नम्रता उनके भीतर गहराई से जड़ें जमाए हुए एक भावना है। यह आगे की सभी प्रगति के लिए एक पूर्वापेक्षा भी है।

21. कोई व्यक्ति आत्मा से दीन कैसे हो सकता है, विशेष रूप से जब वे अपने भीतर महसूस करते हैं कि वे बदल गए हैं, प्रगति कर चुके हैं, और एक ऐसी ज्ञान और समझ प्राप्त कर चुके हैं जो उनके पास पहले नहीं थी? जब तक कोई व्यक्ति यह प्राप्त नहीं कर लेता और प्रगति नहीं कर लेता, तब तक वे आत्मा से दीन नहीं होते हैं, बल्कि अपने आप को बड़ा समझते हैं। लेकिन जब यह समझ और प्रगति आती है, तो अनुग्रह स्वयं उसे आत्मा से दीन होना सिखाता है; और यद्यपि वह धर्मी और परमेश्वर का चुना हुआ है, उसे स्वयं को कुछ भी नहीं समझना चाहिए, बल्कि अपनी आत्मा को तुच्छ और नम्र मानना चाहिए, जैसे कि वह कुछ भी नहीं जानता और उसके पास कुछ भी नहीं है, भले ही वह जानता है और उसके पास है। और ऐसा विचार मानो मानव मन में जन्मजात और गहराई से जड़ें जमा लेता है। क्या आप यह नहीं देखते कि हमारे पूर्वज अब्राहम, जो परमेश्वर के चुने हुए थे, ने स्वयं को धूल और राख कहा (उत्पत्ति 18:27)? और दाऊद, जो राजा के रूप में अभिषिक्त था, उसके सामने परमेश्वर था, और वह क्या कहता है? *'मैं मनुष्य नहीं, पर एक कीड़ा हूँ, मनुष्यों की निन्दा और लोगों का तिरस्कार हूँ'* (भजन संहिता 21:7)। इसलिए, जो उनके सह-वारिस, स्वर्गीय नगर में सह-नागरिक बनना चाहते हैं, और उनके साथ महिमामय होना चाहते हैं, उन्हें भी वही नम्रता रखनी चाहिए और अपने आप को कुछ भी समझने के बजाय एक पश्चात्तापी हृदय रखना चाहिए (12:3–4)।

२२. जिसने अनुग्रह प्राप्त किया है, वह स्वयं को सभी पापियों से भी नीच समझता है, और ऐसा विचार उसमें स्वाभाविक रूप से उत्पन्न हो जाता है; वह परमेश्वर के ज्ञान में जितना गहराई से प्रवेश करता है, उतना ही वह स्वयं को अज्ञानी समझता है; वह जितना अधिक सीखता है, उतना ही अधिक वह स्वीकार करता है कि वह कुछ भी नहीं जानता। यह सहायक अनुग्रह ही आत्मा में स्वाभाविक रूप से ऐसा करता है (16:12)।

23. जो परमेश्वर के मार्गों में पारंगत हैं, वे स्वयं को बहुत छोटा और सर्वथा अकुशल मानते हैं; और उनके लिए स्वयं को नीच, या यहाँ तक कि कुछ भी नहीं मानना एक स्वाभाविक और अनिवार्य अभ्यास बन गया है। क्या ऐसे लोग यह नहीं समझते कि उन्हें वह दिया गया है जो उनके पास पहले नहीं था, और उन्होंने अपनी प्रकृति के लिए कुछ असाधारण प्राप्त किया है? मैं आपको बताता हूँ कि वे स्वयं को धार्मिक या सफल नहीं मानते; वे यह महसूस नहीं करते कि उन्होंने वह प्राप्त कर लिया है जो उनके पास पहले नहीं था। लेकिन जो अनुग्रह ऐसे लोगों पर उतरता है, वह उन्हें सिखाता है कि, समृद्धि प्राप्त करते हुए भी, उन्हें अपनी आत्मा को कीमती नहीं मानना चाहिए, बल्कि स्वाभाविक रूप से स्वयं को महत्वहीन स्वीकार करना चाहिए। और यद्यपि वे परमेश्वर की दृष्टि में अनमोल हैं, वे स्वयं को ऐसा नहीं मानते; अपनी समृद्धि और परमेश्वर के मार्गदर्शन में भी, वे स्वयं को, मानो, कुछ भी न जानने वाला मानते हैं, और परमेश्वर की दृष्टि में धनी होने पर भी, वे अपनी ही आँखों में गरीब दिखाई देते हैं (27:4–5)।

24. परन्तु यदि तुम किसी को अनुग्रह में सहभागी होने पर घमण्ड करते और दम्भ करते देखो, तो चाहे वह चमत्कार भी करे और मरे हुओं को भी जिला उठे, तथापि यदि वह अपनी आत्मा को अपमानित और दीन नहीं मानता, और स्वयं को आत्मा में दीन और दुखी नहीं समझता, तो वह बिना समझे ही द्वेष से भस्म हो जाता है। भले ही वह चमत्कार करे, उस पर विश्वास नहीं करना चाहिए, क्योंकि ईसाई धर्म का लक्षण यह है कि जो व्यक्ति परमेश्वर को प्रिय है, उसे भी यह बात लोगों से छिपाने का प्रयास करना चाहिए; और भले ही उसके पास राजा का सारा खजाना हो, उसे उसे छिपाकर रखना चाहिए और हमेशा कहना चाहिए: 'यह खजाना मेरा नहीं है; किसी और ने मुझे यह सौंपा है,

और मैं एक भिखारी हूँ; जब जिसने यह सौंपा है, वह चाहेगा, तो वह इसे मुझसे ले लेगा।' लेकिन यदि कोई कहता है, 'मैं धनी हूँ; मैंने जो अर्जित किया है, उससे मेरे पास काफी है; मुझे और कुछ भी नहीं चाहिए'—तो ऐसा व्यक्ति मसीही नहीं, बल्कि भ्रम और शैतान का पात्र है। क्योंकि परमेश्वर में आनंद असीम है, और जितना कोई उसका स्वाद चखता और उसमें भाग लेता है, उतना ही अधिक वह उसके लिए भूखा होता जाता है। ऐसे लोगों में परमेश्वर के लिए उत्साह और एक अदम्य प्रेम होता है; वे जितना अधिक समृद्धि और संपत्ति प्राप्त करने का प्रयास करते हैं, उतना ही अधिक वे स्वयं को भिखारी मानते हैं, मानो वे हर चीज़ में दरिद्र हों और उन्हें कुछ भी प्राप्त न हुआ हो। वे कहते हैं: 'मैं इसके लायक नहीं हूँ कि यह सूर्य मुझ पर चमके।' यह मसीही धर्म का एक संकेत है; यही नम्रता है (15:35)।

२५. यदि कोई महान विनम्रता का पालन करने में विफल रहता है, तो वह स्वयं को शैतान के हाथों सौंप देता है और उसे दी गई दैवीय कृपा से वंचित हो जाता है; और फिर उसका अहंकार प्रकट हो जाता है, क्योंकि वह नग्न और गरीब है। इसलिए, जो परमेश्वर की कृपा से धनी हुआ है, उसे महान विनम्रता और हृदय के पश्चाताप में रहना चाहिए, स्वयं को एक भिखारी और कुछ भी न रखने वाला मानना चाहिए, और सोचना चाहिए: 'जो कुछ भी मेरे पास है वह मेरा अपना नहीं है; किसी और ने मुझे यह दिया है, और जब वह चाहेगा, तो वह इसे मुझसे ले लेगा।' जो कोई भी इस प्रकार ईश्वर और मनुष्यों के सामने स्वयं को नम्र बनाता है, वह उसे दी गई कृपा को बनाए रख सकता है, जैसा कि कहा गया है, *'जो स्वयं को नम्र करेगा, उसे ऊँचा उठाया जाएगा'* (मत्ती 23:12)। ईश्वर का चुना हुआ होने के नाते, उसे स्वयं को दोषी ठहराना चाहिए; और विश्वासयोग्य होने के नाते, उसे स्वयं को अयोग्य समझना चाहिए। ऐसी आत्माएँ परमेश्वर को प्रसन्न करती हैं और मसीह द्वारा जीवित की जाती हैं (41:3).

(d) तथापि, उन्हें सबसे बढ़कर घमंड, अहंकार और दूसरों को आँकने की प्रवृत्ति से बचने की चेतावनी दी जाती है, क्योंकि इनके कारण अनुग्रह दूर हो जाता है, और अनुग्रह के बिना तुरंत पतन आता है।

26. यदि कोई राजा अपना खजाना किसी भिखारी को रखवाए, तो जो उसे सुरक्षित रखने के लिए प्राप्त करता है, वह इस खजाने को अपनी संपत्ति नहीं मानता, बल्कि हर जगह अपनी गरीबी को स्वीकार करता है, और दूसरे के खजाने को बर्बाद करने की हिम्मत नहीं करता, क्योंकि वह हमेशा अपने आप से तर्क करता है: 'यह खजाना न केवल मेरा नहीं है, बल्कि इसे एक शक्तिशाली राजा ने मुझे सौंपा है, और वह जब चाहे इसे मुझसे वापस ले सकता है।' और जिनके पास परमेश्वर की कृपा है, उन्हें भी अपने बारे में यही सोचना चाहिए, ज्ञान में नम्र रहना चाहिए, और अपनी गरीबी को स्वीकार करना चाहिए। यदि कोई भिखारी, राजा से सौंपे गए खजाने को प्राप्त करके और दूसरे की इस संपत्ति पर अपनी आशा रखकर, उस पर अपने धन के रूप में घमंड करने लगे, और उसका हृदय गर्व से भर जाए, तो राजा उससे अपना खजाना वापस ले लेता है, और जो उसे अपनी देखभाल में रखता था, वह पहले की तरह ही गरीब बना रहता है। इसलिए, यदि अनुग्रह प्राप्त करने वाले भी घमण्डी हो जाते हैं, और उनके हृदय अभिमानी हो जाते हैं, तो प्रभु अपना अनुग्रह उनसे वापस ले लेंगे, और वे प्रभु से अनुग्रह प्राप्त करने से पहले की तरह ही बने रहेंगे (15, 25)।

27. क्योंकि, आत्मा की कृपा प्राप्त करके और विश्राम में अपने लिए अनुग्रहपूर्ण सांत्वना पाकर, अपने इरादों में और आध्यात्मिक मिठास में, और इस पर भरोसा करके, वे घमंडी हो जाते हैं, लापरवाही में पड़ जाते हैं, हृदय में पश्चाताप के बिना, मन में नम्रता के बिना, और निर्लिप्तता के पूर्ण स्तर को प्राप्त किए बिना, सभी परिश्रम और विश्वास के माध्यम से अनुग्रह से पूरी तरह भरने में असफल रहते हैं, वे इसी से संतुष्ट हो जाते हैं और विश्राम करते हैं, और अनुग्रह के सांत्वना के केवल एक अंश के साथ ही संतुष्ट हो जाते हैं; ऐसे आत्मा, जो नम्रता की अपेक्षा घमंड में अधिक बढ़ गए, भले ही उन्हें कोई वरदान दिया गया हो, वे अपनी लापरवाह उपेक्षा और अपने घमंड के व्यर्थ घमंड के कारण उससे वंचित हो जाते हैं (10, 3)।

28. मैं तुम से कहता हूँ, कि मैं ऐसे लोगों को जानता हूँ, जिनके पास हर एक वरदान था, और जो आत्मा के सहभागी हुए थे, परन्तु पूर्ण प्रेम तक न पहुँचने के कारण वे गिर पड़े। एक कुलीन व्यक्ति ने संसार का त्याग कर दिया, अपनी संपत्ति बेच दी, अपने दासों को मुक्त कर दिया, और, विवेकी तथा समझदार होने के कारण, अपने सम्मानजनक जीवन के लिए पहले ही ख्याति प्राप्त कर चुका था; फिर भी, अहंकार और घमंड के आगे झुककर, वह अंततः व्यभिचार और हजारों बुराइयों में पड़ गया (27:14)।

29. एक अन्य ने, उत्पीड़न के दौरान, अपने शरीर का बलिदान कर दिया; और, एक स्वीकारकर्ता होने के नाते, बाद में, शांति की बहाली पर, उसे मुक्त कर दिया गया और उच्च सम्मान में रखा गया; मोटे धुएँ में यातना सहने के कारण उसकी पलकें क्षतग्रस्त हो गई थीं। और वह, यद्यपि सम्मानित था, जब प्रार्थना के लिए बुलाया गया, तो उसने कुछ रोटी लेकर अपने सेवक को दे दी, और उसका मन ऐसी अवस्था में था जैसे उसने कभी परमेश्वर का वचन न सुना हो (27:15)।

30. एक अन्य, एक तपस्वी, जो मेरे साथ एक ही घर में रहता था और मेरे साथ प्रार्थना करता था, अनुग्रह से इतना समृद्ध था कि मेरे बगल में प्रार्थना करते समय, वह गहरे भावुक हो जाता था, क्योंकि अनुग्रह उसके भीतर से उमड़ रहा था। उसे चंगा करने का वरदान मिला था और उसने न केवल दुष्टात्माओं को निकाला, बल्कि हाथ रखने से हाथ-पाँव से बँधे और गंभीर बीमारियों से पीड़ित लोगों को भी चंगा किया। फिर, घमंडी हो कर, संसार द्वारा महिमामंडित होकर और अपनी ही महत्वता में मग्न होकर, वह अहंकारी हो गया और पाप की गहराइयों में गिर पड़ा। तब देखो, जिसने चंगा करने का वरदान प्राप्त किया था, वह भी गिर गया। क्या तुम देखते हो कि जो प्रेम के स्तर को प्राप्त नहीं हुए हैं, वे कैसे गिरते हैं? परन्तु जिसने प्रेम प्राप्त किया है, वह उससे बँधा और मोहित होकर, एक कैदी की तरह दूसरी दुनिया में डूब जाता है और ले जाया जाता है, मानो अपनी ही प्रकृति से अनभिज्ञ हो (27:16)।

31. एक विश्वासी और सच्ची प्रेममयी आत्मा, धर्मी लोगों के लिए तैयार की गई अनंत आशीषों को और अवतरित होने वाली परमेश्वर की अनुग्रह की अकथनीय कृपा को देखकर, स्वयं को, अपनी चिंता, अपनी मेहनत और अपने प्रयास को आत्मा के अकथनीय वचनों के लिए अयोग्य मानती है। ऐसे ही हैं दीन-हृदय जिन्हें प्रभु आशीष देता है। ऐसे ही हैं जो धार्मिकता के लिए भूखे और प्यासे हैं। ऐसे ही हैं जिनका हृदय टूटा हुआ है। जिन्होंने ऐसा स्वभाव, ऐसा भक्तिभाव, ऐसा परिश्रम और सद्गुणों के प्रति ऐसा प्रेम अपनाया है, और जो अंत तक ऐसे ही बने रहे, वे ही वास्तव में जीवन और अनंत राज्य को प्राप्त कर सकेंगे। इसलिए, कोई भी भाई अपने भाई से खुद को बड़ा न समझे, और कोई भी, दुष्ट के धोखे में आकर, अहंकार में बह न जाए, यह कहते हुए, 'देखो, मेरे पास पहले से ही एक आध्यात्मिक वरदान है।' क्योंकि ईसाइयों के लिए ऐसा सोचना अनुचित है। आप नहीं जानते कि कल आपके भाई के लिए क्या लाएगा; आप नहीं जानते कि आपका या उसका अंत क्या होगा। इसके विपरीत, हर कोई, स्वयं पर ध्यान देते हुए, निरंतर अपने विवेक की परीक्षा करे और अपने हृदय की गतिविधियों को परखे, यह देखते हुए कि उनका मन कितनी सावधानी और प्रयास से परमेश्वर की ओर प्रयासरत है, और अंतिम लक्ष्य—मुक्ति, वैराग्य और आध्यात्मिक शांति—को ध्यान में रखते हुए इसे बिना रुके और लगन से प्रवाहित होने दें, किसी भी उपहार या औचित्य पर निर्भर हुए बिना (29, 7)।

32. वे भी जिन पर ईश्वर की कृपा हुई है, वे कैसे गिर जाते हैं? स्वभावतःसबसे शुद्ध विचार भी भ्रष्ट हो सकते हैं और गिर सकते हैं। एक व्यक्ति घमंड करने लगता है, दूसरे की निंदा करने लगता है और कहता है, 'तुम पापी हो' – जबकि वह स्वयं को धर्मी मानता है। क्या तुम नहीं जानते कि पौलुस क्या कहते हैं? *'मुझे शरीर में एक काँटा दिया गया, शैतान का एक दूत, जो मुझे सताता था, कहीं ऐसा न हो कि मैं अत्यधिक घमण्ड करूँ'* (2 कुरिन्थियों 12:7)। और एक शुद्ध स्वभाव में भी घमण्ड की संभावना होती है (7:4)।

33. इसलिये, मसीहियों को स्वयं हर संभव प्रयास करना चाहिए कि वे किसी को भी निन्दा न करें—न किसी खुले तौर पर वेश्या को, न पापियों को, न अधर्मी लोगों को—बल्कि सभी को सरल हृदय के भाव से देखें, एक शुद्ध दृष्टि के साथ, ताकि किसी व्यक्ति को ऐसा कुछ स्वाभाविक और अपरिहार्य लगे, किसी को तुच्छ न समझें, किसी की निंदा न करें, किसी से घृणा न करें, और लोगों के बीच भेदभाव न करें (15:8)।

34. क्या कोई व्यक्ति अनुग्रह का वरदान रखते हुए गिर सकता है? यदि वे आत्मसंतुष्ट हो जाते हैं, तो वे गिर जाते हैं, क्योंकि शत्रु कभी निष्क्रिय नहीं रहते और सुस्ती के बिना युद्ध करते हैं। तो और भी अधिक कारण है कि आप परमेश्वर के सामने अपनी खोज बंद न करें। क्योंकि यदि आप लापरवाही में पड़ जाते हैं तो आपको बहुत हानि होगी, भले ही, बाहरी रूप से, ऐसा प्रतीत हो कि आपको अनुग्रह के रहस्य में ही परखा गया है (15:14)।

35. ईसाइयों का गौरव महान है; इसकी कोई तुलना नहीं है। लेकिन यदि कोई व्यग्रता में पड़ जाता है और दुर्भावना से लूट लिया जाता है, तो वह बिना दीवारों वाले शहर के समान हो जाता है, जिसमें चोर जहाँ से चाहें बिना किसी बाधा के प्रवेश करते हैं, और उसे उजाड़ देते हैं और जला देते हैं। इस प्रकार, यदि आप भी लापरवाह और अपने प्रति असावधान हैं, तो दुष्ट आत्माएँ आती हैं, आपके मन को शून्य में बदल देती हैं और उसे उजाड़ देती हैं, इस संसार में आपके विचारों को बिखेर देती हैं (15:45)।

(ई) इसलिए, जैसे वे यह महसूस करके कि उन्हें कितना खजाना मिला है, आनंदित होते हैं, वैसे ही वे उसे खोने से डरते भी हैं, और वे अपनी आध्यात्मिक सेवा इस तरह करने का प्रयास करते हैं कि अनुग्रह के आत्मा को ठेस न पहुँचे, कहीं ऐसा न हो कि वह उनसे दूर हो जाए।

36. मजदूर अपनी आशा अपने परिश्रम या अपने जीवन में तब तक नहीं रखता जब तक उसे वह नहीं मिल जाता जिसकी वह इच्छा करता है, जब तक प्रभु आकर आत्मा की प्रत्येक अनुभूति और क्रिया में उसके भीतर नहीं वास करते। और जब उसने प्रभु की कृपा का स्वाद चख लिया है और आध्यात्मिक फलों में आनंदित हुआ है, तो अंधकार का पर्दा उठ जाएगा, और मसीह का प्रकाश अकथनीय आनंद के साथ चमकेगा; तब वह प्रभु को अपने साथ पाकर, अपने महान प्रेम के प्रति आश्वस्त होगा। एक मुनाफ़ा कमाने वाले व्यापारी की तरह, वह आनंदित होता है, फिर भी

उसी समय डाकुओं और कपटी आत्माओं से दुर्भाग्य का शोक और भय भी उसे सताता है, कहीं ऐसा न हो कि वह कमज़ोर पड़कर, स्वर्ग के राज्य, स्वर्गीय यरूशलेम (14:2) में प्रवेश करने के योग्य समझे जाने से पहले ही, किसी भी तरह से अपनी मेहनत बर्बाद कर दे।

37. जैसे समुद्र में नौकायन करने वाले व्यापारी, भले ही उन्हें अनुकूल हवा और शांत समुद्र मिल जाए, जब तक वे बंदरगाह पर नहीं पहुँच जाते, तब तक इस निरंतर भय में रहते हैं कि कहीं विपरीत हवा अचानक न उठ जाए, समुद्र उग्र न हो जाए, और जहाज़ ख़तरे में पड़ जाएगा; इसी प्रकार मसीही भी, यद्यपि वे अपने भीतर पवित्र आत्मा की अनुकूल श्वास को महसूस करते हैं, तथापि फिर भी इस भय में रहते हैं कि कहीं विरोधी शक्ति वाली कोई हवा न उठे और चले, और उनकी आत्माओं में कुछ विद्रोह और हलचल न मचा दे। इसलिए, विश्राम के बंदरगाह में, पूर्ण शान्ति में, अनन्त जीवन और अनन्त आनंद में, संतों के नगर—स्वर्गीय यरूशलेम, प्रथमजा के मंडली में प्रवेश करने के लिए बड़ी सावधानी की आवश्यकता है (इब्रानियों 12:23)। लेकिन जो लोग अभी तक इन चरणों से नहीं गुज़रे हैं, उनके लिए यह डरने के कई कारण हैं कि दुष्ट उन्हें रास्ते में किसी तरह ठोकर खाने पर मजबूर कर सकता है (43:4)।

38. एक धनी पुरुष, एक अत्यंत प्रसिद्ध राजा, अपनी कृपा एक गरीब महिला पर बरसाएगा जिसके पास अपना शरीर के सिवा कुछ नहीं है; वह उसका प्रेमी बन जाएगा और उसे अपनी दुल्हन और साथी के रूप में अपने घर ले जाने का निश्चय करेगा। और यदि वह अंततःअपने पति के प्रति अपना स्नेह दिखाती है, तो, उसके प्रति समर्पित रहते हुए, यह गरीब, बेसहारा महिला, जिसके पास अपना कुछ भी नहीं था, अपने पति की सारी संपत्ति की मालकिन बन जाती है। लेकिन यदि वह अपने कर्तव्य के विपरीत कार्य करती है और अपने पति के घर में अनुचित व्यवहार करती है, तो उसे अपमान और कलंक के साथ निकाल दिया जाता है, और वह सिर पर दोनों हाथ रखकर चली जाती है, ठीक वैसे ही जैसे मूसा का विधान एक ऐसी पत्नी के लिए निर्धारित करता है जो अवज्ञाकारी और अपने पति को अप्रसन्न करने वाली हो (व्यवस्थाविवरण 24:1), और तब वह अपने द्वारा खोए गए धन-संपत्ति और उससे वंचित हुई महिमा के बारे में सोचते हुए कष्ट सहती है और कड़वी रोती है, क्योंकि वह अपनी ही मूर्खता के कारण अपमानित हुई है (15:2)।

39. उसी प्रकार आत्मा को भी, जिसे मसीह, दिव्य वधूवर, अपने साथ एक रहस्यमय और दैवीय मिलन के लिए अपनी वधू के रूप में सगा करते हैं, और जो स्वर्गीय धन-संपत्ति में सहभागी होगी, उसे अपने सगाई-साथी मसीह को प्रसन्न करने के लिए बड़ी लगन और ईमानदारी से प्रयास करना चाहिए, और उस पर सौंपी गई आध्यात्मिक सेवा को उचित और उपयुक्त तरीके से पूरा करना चाहिए, ताकि वह हर बात में परमेश्वर को प्रसन्न करे, आत्मा को किसी भी तरह से दुखी न करे, मसीह के प्रति पूर्ण पवित्रता और प्रेम को उचित तरीके से बनाए रखे, और स्वर्गीय राजा के घर में , उस पर प्रदान की गई कृपा के प्रति पूरी भक्ति के साथ, अपना आचरण ठीक से करे। और इस प्रकार, ऐसा आत्मा प्रभु के सभी आशीर्वादों की स्वामिनी नियुक्त की जाती है; उसका शरीर भी मसीह की दिव्यता से महिमा प्राप्त करता है। लेकिन यदि वह किसी भी प्रकार से पाप कर दे, और उसकी सेवा में अपने कर्तव्य के विपरीत कार्य करती है, मसीह को प्रसन्न करने में विफल रहती है, और उसकी इच्छा का पालन नहीं करती, न ही उसमें निहित पवित्र आत्मा की कृपा के साथ सहयोग करती है, तो वह लज्जास्पद अपमान की पात्र बन जाती है और जीवन से वंचित हो जाती है, क्योंकि वह स्वर्गीय राजा के साथ सहभागिता के लिए अयोग्य और असमर्थ हो जाती है। और इस आत्मा के विषय में सभी पवित्र और बुद्धिमान आत्माओं के बीच पहले से ही शोक, दुख और विलाप है; स्वर्गदूत, सामर्थ्य, प्रेरित, भविष्यद्वक्ता और शहीद उसकी निन्दा करते हैं (15:2)।

40. इसलिए, हमें हर प्रकार की समझदारी और सावधानी से यत्न करना और अपना आचरण करना चाहिए, ताकि, जैसा लिखा है, हम भय के साथ अपना उद्धार साधें (फिलि. 2:12)। इसलिए, आप में से जो कोई भी मसीह की आत्मा के सहभागी बने हैं, वे किसी भी बात में—चाहे वह छोटी हो या बड़ी—तुच्छता से काम न करें या आत्मा की कृपा का अपमान न करें, ऐसा न हो कि आप उस जीवन से वंचित हो जाएँ जिनके सहभागी आप पहले ही बन चुके हैं (15:4),

41. और मैं एक अन्य उदाहरण द्वारा इसे और स्पष्ट करूँगा। यदि कोई दास शाही कक्षों में प्रवेश करता है और उस पर सौंपी गई वस्तु को प्रस्तुत करके राजा की सेवा करता है, तो वह इसे राजा के अपने भंडार से ही लेता है; और, खाली हाथ प्रवेश करके, वह राजा की ही पात्रों का उपयोग करके राजा की सेवा करता है। परन्तु यहाँ बड़ी समझदारी और विवेक की आवश्यकता है, ताकि सेवा करते समय वह कुछ भी अनुचित न करे, राजा की मेज़ पर एक व्यंजन के स्थान पर दूसरा व्यंजन न परोसे, बल्कि सभी व्यंजनों को, पहले से लेकर आखिरी तक, उचित क्रम में प्रस्तुत करे। और यदि, अज्ञानता और विवेक की कमी के कारण, वह राजा की अनुचित सेवा करता है, तो वह खतरे और मृत्यु के जोखिम में पड़ जाएगा (15:5)।

४२. इसी प्रकार आत्मा भी, अनुग्रह और आत्मा के द्वारा परमेश्वर की सेवा के लिए स्वयं को समर्पित करके, बड़ी समझदारी और मार्गदर्शन की आवश्यकता रखती है, कहीं वह परमेश्वर के पात्रों—अर्थात्

आध्यात्मकि सेवा की समझ—की अपनी इच्छानुसार कार्य करके, जो अनुग्रह के विरुद्ध है, किसी भी प्रकार से भूल न कर बैठे। क्योंकि आत्मा प्रभु की सेवा आध्यात्मकि सेवा के द्वारा कर सकती है, जो भीतरी मनुष्य द्वारा गुप्त रूप से की जाती है, और अपनी ही पात्रों के द्वारा, अर्थात् भीतरी मनुष्य की आत्मा के द्वारा; परन्तु उसकी पात्रों के बिना—अर्थात् अनुग्रह के बिना—कोई भी परमेश्वर की सेवा नहीं कर सकता, अर्थात् सभी बातों में परमेश्वर की इच्छा पूरी करके उसे प्रसन्न नहीं कर सकता (15, 5)।

४३. और जब आत्मा अनुग्रह प्राप्त करती है, तो उसमें बहुत विवेक और समझदारी की आवश्यकता होती है। फिर भी ईश्वर स्वयं यह सब उस आत्मा को प्रदान करते हैं जो उनसे माँगती है, ताकि वह उन्हें प्राप्त आत्मा द्वारा स्वीकार्य रूप से सेवा कर सके, किसी भी प्रकार से दुराचार से पराजित न हो, न ही अज्ञानता के कारण मार्ग से भटक कर पाप करे, लापरवाही या उपेक्षा, और अपने कर्तव्य के विरुद्ध प्रभु की इच्छा का उल्लंघन करके; क्योंकि ऐसी आत्मा को मृत्यु और विलाप की सज़ा दी जाएगी, जैसा कि दिव्य प्रेरित भी कहते हैं, *'कहीं ऐसा न हो कि मैं दूसरों को उपदेश देते हुए स्वयं अयोग्य ठहर जाऊँ'* (1 कुरिन्थियों 9:27)। क्या आप देखते हैं कि परमेश्वर के प्रेरित होते हुए भी उसे कितना भय था? इसलिए, हम परमेश्वर से प्रार्थना करें कि हम सभी जिन्होंने परमेश्वर की कृपा प्राप्त की है, हम सबसे बढ़कर अपनी आध्यात्मकि सेवा को उनकी इच्छानुसार पूरा करें, और हर बात को तुच्छ समझने की मानसिकता के आदी न हो जाएँ, बल्कि इस प्रकार, ईश्वर को प्रसन्न करने वाला जीवन जीकर और उसकी इच्छा के अनुसार आध्यात्मकि सेवकाई के द्वारा उसकी सेवा करके, हम अनंत जीवन का वारिस बनें (15:6)।

४४. जैसे कि समिति या प्रांतीय राज्यपाल, जब राजा के महल में प्रवेश करते हैं, तो वे इस बात से बहुत डरते हैं कि यदि वे अपने उत्तर में गलती कर दें तो उन्हें डाँट और दंड से कैसे बचना है, जबकि गाँव वाले और आम लोग, जिन्होंने राजकुमार को कभी नहीं देखा है, बेफिक्र रहते हैं; वैसे ही स्वर्ग के अधीन सारी दुनिया भी, सब कोई, राजाओं से लेकर भिखारियों तक, मसीह की महिमा को न जानते हुए, इस जीवन के मामलों में व्यस्त रहता है, और बहुत कम लोग न्याय के दिन के बारे में सोचते हैं; लेकिन जो आत्मा में मसीह के दरबार में प्रवेश करते हैं, जहाँ मसीह का सिंहासन खड़ा है, और हमेशा मसीह के सामने खड़े रहकर, निरंतर भय और कंपन में रहते हैं, कि कहीं वे उनके पवित्र आज्ञाओं के विरुद्ध किसी भी प्रकार से पाप न कर बैठें (15, 17)।

45. जैसे एक दास, अपने स्वामी की उपस्थिति में, भय से रहता है और उसके बिना कुछ नहीं करता, वैसे ही हमें भी अपने विचारों को प्रभु और हृदयों के जानने वाले मसीह के सामने उजागर करना चाहिए, और अपनी आशा और विश्वास उसी में रखना चाहिए, क्योंकि वही मेरी महिमा है, वही मेरा पिता है, वही मेरा धन है। इसलिए, तुम्हें अपने अंतःकरण में हमेशा सावधानी और श्रद्धा रखनी चाहिए (16, 6)।

46. जैसे एक प्रांत या शाही खजाने के मुख्य प्रशासन के प्रभारी लोग किसी भी तरह से राजा को नाराज़ न करने के लिए हमेशा चिंतित रहते हैं, वैसे ही आध्यात्मकि मामलों के प्रभारी लोग भी हमेशा चिंतित रहते हैं; और जब वे शांति में होते हैं, तब भी ऐसा लगता है मानो उन्हें कोई शांति नहीं है, क्योंकि वे अभी भी अपनी आत्माओं से अंधकार के राज्य को बाहर निकाल रहे होते हैं, जो नगर—अर्थात् आत्मा—पर आक्रमण कर चुका है—और वे बर्बर जो इसके चरागाहों पर कब्ज़ा कर चुके हैं (16:12)।

(ग) इसी उद्देश्य के लिए, वे हर संभव प्रयास करते हैं कि उनका मन प्रभु से न भटके, और अपने अंतर्मन को उसी अनुशासन में रखें जैसे एक नाविक अपने जहाज के मल्लाहों को, या एक सारथी अपने घोड़ों को रखता है।

४७. ईश्वर, जो अकथनीय और अगम्य हैं, एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाए बिना, सर्वत्र स्वयं को प्रकट करते हैं – पहाड़ों पर, समुद्र में, और गहरे गर्त की गहराइयों में; जैसे स्वर्गदूत स्वर्ग से पृथ्वी पर उतरते हैं, वैसे ही वह स्वर्ग में भी हैं, और वह यहाँ भी हैं। यदि आप प्रभु को गहराइयों में खोजें, तो आप पाएँगे कि वह वहाँ चमत्कार करते हैं। यदि आप उन्हें खाई में खोजें, तो आप पाएँगे कि वहाँ, दो शेरों के बीच, वह धर्मी दानियेल की रक्षा करते हैं। यदि आप उन्हें आग में खोजें, तो आप पाएँगे कि वहाँ वह अपने सेवकों की मदद करते हैं। यदि आप उसे पहाड़ पर खोजें, तो आप पाएँगे कि वह वहाँ है—एलिय्याह और मूसा के साथ। प्रभु सर्वत्र हैं: पृथ्वी के नीचे, स्वर्गों के ऊपर, हमारे भीतर, और हर जगह (16:5, 12)।

४८. एक ईसाई के लिए ईश्वर को सदैव मन में रखना अनिवार्य है, क्योंकि लिखा है, *'तुम अपने प्रभु परमेश्वर से अपने पूरे हृदय से प्रेम करोगे'* (व्यवस्थाविवरण 6:5); अर्थात्, प्रभु से केवल तब प्रेम करें जब आप प्रार्थना के घर में प्रवेश करें, बल्कि यात्रा करते समय, बातचीत करते समय और भोजन करते समय भी—ईश्वर को मन में रखें, और उनके प्रति प्रेम और भक्ति बनाए रखें। क्योंकि वह कहते हैं, 'जहाँ तुम्हारा खज़ाना है, वहीं तुम्हारा हृदय भी होगा' (मत्ती 6:21)जिस चीज़ से किसी व्यक्ति का हृदय जुड़ा होता है, और जिसकी ओर उसकी इच्छा उसे खींचती है,

वही उसका देवता बन जाता है। यदि हृदय हमेशा ईश्वर की खोज करता है, तो ईश्वर ही उस हृदय का स्वामी है। जैसे आग में डाली गई टहनियाँ आग की शक्ति का विरोध नहीं कर सकतीं, बल्कि तुरंत भस्म हो जाती हैं, वैसे ही, जब राक्षस उस व्यक्ति पर हमला करना चाहते हैं जिसे आत्मा के वरदानों से सम्मानित किया गया है, तो वे दिव्य अग्निमय शक्ति से झुलस जाते हैं और नष्ट हो जाते हैं, बशर्ते कि वह व्यक्ति स्वयं सदैव प्रभु से जुड़ा रहे और अपना भरोसा और आशा उसी में रखे। और भले ही दुष्टात्माएँ ठोस पहाड़ों जितनी मजबूत हों, वे प्रार्थना से आग की लपटों में घिरि जाती हैं, जैसे मोम आग से (43:3)।

49. और ऐसा होता है कि प्रभु के संत संसार के रंगमंच पर बैठते हैं और इसके छल-कपट को देखते हैं; फिर भी वे अपने अंतर में परमेश्वर से संवाद करते हैं, जबकि बाहरी रूप से ऐसा प्रतीत होता है कि वे संसार में हो रही घटनाओं को निहार रहे हैं। दुनियादार लोग चापलूसी की आत्मा के एक अलग प्रभाव के अधीन होते हैं, जिसके द्वारा वे सांसारिक ज्ञान की खोज करते हैं; लेकिन ईसाइयों की इच्छा और मन अलग है; वे एक अलग युग और एक अलग नगर के लोग हैं, क्योंकि परमेश्वर की आत्मा उनकी आत्माओं के साथ सहवास में रहती है (15:8–9)।

50. प्रेरित कहते हैं: *'मैं चाहता हूँ कि पुरुष बिना क्रोध या स्वार्थी महत्वाकांक्षा के प्रार्थना करें'* (1 तीमु. 2:8), क्योंकि, सुसमाचार के अनुसार, विचार हृदय से उत्पन्न होते हैं (मत्ती 15:19)। इसलिए, जब आप प्रार्थना करना शुरू करें, तो अपने हृदय और अपने मन पर ध्यान दें; यह इच्छा करें कि एक शुद्ध प्रार्थना आपसे परमेश्वर की ओर प्रवाहित हो; और, सबसे बढ़कर, देखें कि क्या कोई ऐसी चीज़ है जो आपकी प्रार्थना में बाधा डाल रही है, क्या आपकी प्रार्थना शुद्ध है, क्या आपका मन उसी प्रकार प्रभु में लगा है जैसे एक किसान का खेत में, एक पति का अपनी पत्नी में, और एक व्यापारी का व्यापार में; और जब आप प्रार्थना करने के लिए घुटने टेकते हैं, तो क्या अन्य विचार आपका ध्यान भटका रहे हैं (15:12)।

51. लिखा है, *'तू अपने प्रभु परमेश्वर से अपने पूरे हृदय से प्रेम कर'* (व्यवस्थाविवरण 6:5)। और तुम कहते हो, 'मैं उससे प्रेम करता हूँ, और मुझ में पवित्र आत्मा है।' परन्तु क्या तुम में सचमुच प्रभु की स्मृति, उसके प्रति प्रेम और उसके प्रति उत्साह है? क्या आप दिन-रात प्रभु के प्रति समर्पित हैं? यदि आप में ऐसा प्रेम है, तो आप शुद्ध हैं। लेकिन यदि नहीं, तो जब सांसारिक चिंताएँ और दुष्ट तथा कपटी विचार उत्पन्न हों, तो जाँचें कि क्या आप इस में सचमुच स्थिर हैं, क्या आपकी आत्मा हमेशा परमेश्वर के प्रेम की ओर आकर्षित और उस में समर्पित रहती है? क्योंकि सांसारिक विचार मन को सांसारिक और क्षणिक बातों से विचलित करते हैं, जिससे कोई ईश्वर से प्रेम या प्रभु का स्मरण नहीं कर पाता। अक्सर तो एक अनपढ़ व्यक्ति भी प्रार्थना करना शुरू कर देता है, घुटने टेकता है, और उसका मन शांति में प्रवेश कर जाता है; और जिस हद तक वह द्वेष की विरोधी दीवार को कमजोर करता है और उसके नीचे सुरंग खोदता है, उसी हद तक वह नष्ट हो जाती है, और वह व्यक्ति उस दृष्टि और ज्ञान को प्राप्त कर लेता है, जो शक्तिशाली, या बुद्धिमान, या वाक्पटु लोगों की पहुँच से परे है, और वे उसके मन की सूक्ष्मता को नाप या समझ नहीं सकते, क्योंकि वह दिव्य रहस्यों में मग्न है (15:13)।

52. जब किसी तांबे के बर्तन के बाहर आग जलती है, और आप उसमें ईंधन डालना शुरू करते हैं, तो बर्तन गर्म हो जाता है, और उसमें जो कुछ भी होता है वह बर्तन के बाहर जलाई गई आग से उबलता और खौलता है। लेकिन अगर कोई आलसी है और ईंधन नहीं डालता है, तो गर्मी कम होने लगेगी और, मानो, बुझ जाएगी। इसी प्रकार, अनुग्रह आपके भीतर एक स्वर्गीय अग्नि है। यदि आप प्रार्थना करते हैं और अपने विचारों को मसीह के प्रति प्रेम के लिए समर्पित करते हैं, तो ऐसा है जैसे आपने ईंधन डाला हो, और आपके विचार एक आग बन जाएँगे और परमेश्वर के प्रेम में डूब जाएँगे। यद्यपि आत्मा पीछे हट जाती है और आपके बाहर प्रतीत होती है, फिर भी वह आपके भीतर वास करती है और स्वयं को आपके बाहर प्रकट करती है। लेकिन यदि कोई सांसारिक मामलों या विचलन से, थोड़ा भी, विचलित हो जाता है, तो पाप लौट आता है, आत्मा पर काबू पा लेता है, और व्यक्ति पर अत्याचार करना शुरू कर देता है। आत्मा अपनी पूर्व शांति को याद करती है, और अधिक बार दुखी होने और पीड़ित होने लगती है (40, 7)।

53. एक बार फिर मन ईश्वर की ओर मुड़ता है; एक बार फिर पूर्व शांति पास आने लगती है; एक बार फिर यह अधिक गंभीरता से ईश्वर की खोज करने लगता है, यह कहते हुए: 'हे प्रभु, मैं आपसे विनती करता हूँ!' धीरे-धीरे आग बढ़ती है, जो आत्मा को प्रज्वलित और शांत करती है, ठीक वैसे ही जैसे एक कांटा धीरे-धीरे गहराई से एक मछली को खींचता है। और यदि ऐसा न होता, और आत्मा ने कड़वाहट और मृत्यु का स्वाद न चखा होता, तो वह कड़वे को मीठे से, मृत्यु को जीवन से कैसे अलग कर सकती थी, और जीवन-दायक पिता, पुत्र और पवित्र आत्मा का युगानुयुग धन्यवाद कैसे कर सकती थी! (40, 8)।

54. जैसे एक जहाज पर, यदि वह पूरी तरह से सुसज्जित हो, तो नाविक सब कुछ निर्देशित और नियंत्रित करता है, कुछ को डांटता है और दूसरों को यह निर्देश देता है कि क्या करना है, वैसे ही हृदय में भी एक नाविक—मन—और

एक अंतरात्मा है जो दोषी ठहराती है, और विचार हैं जो निंदा करते हैं और औचित्य सिद्ध करते हैं; क्योंकि प्रेरित कहते हैं: *'वे अपने ही विचारों से दोषी ठहराए या बरी किए जाते हैं'* (रोमियों 2:15)। (15. 31).

55. यदि रथ, लगाम, जानवर और अन्य सभी आवश्यक चीजें एक ही सारथी के हाथ में हों, तो जब वह चाहे, वह रथ को पूरी गति से दौड़ाता है; और जब वह चाहे, वह रथ को रोक लेता है; और फिर, जहाँ भी वह उसे मोड़ना चाहे, वह वहीं मुड़ जाता है—पूरा रथ सारथी के नियंत्रण में होता है। इसी प्रकार हृदय के भी कई स्वाभाविक विचार होते हैं जो उससे घनिष्ठ रूप से जुड़े होते हैं, जबकि मन और अंतरात्मा हृदय को मार्गदर्शन और दिशा प्रदान करते हैं और उसमें उत्पन्न होने वाले स्वाभाविक विचारों को शांत करते हैं, क्योंकि आत्मा कई भागों से मिलकर बनी है, भले ही वह एक है (15, 32)।

५६. लोग, अपने घोड़ों को काबू में करके, अपने रथों को चलाते हैं और एक-दूसरे की ओर बढ़ते हैं, प्रत्येक अपने प्रतिद्वंद्वी को उखाड़ फेंकने और हराने का प्रयास करता है। इसलिए एक तपस्वी का हृदय एक तमाशा प्रस्तुत करता है: वहाँ, दुष्ट आत्माएँ आत्मा के विरुद्ध संघर्ष करती हैं, जबकि ईश्वर और स्वर्गदूत इस संघर्ष को निहारते हैं। इसके अलावा, हर घंटे आत्मा से कई नए विचार उत्पन्न होते हैं, और दुर्भावना भी उन्हें उत्पन्न करती है। क्योंकि आत्मा के कई गुप्त विचार होते हैं, और इसी क्षण वह उन्हें उत्पन्न करती और जन्म देती है; और दुर्भावना के कई विचार और योजनाएँ होती हैं, और हर घंटे वह आत्मा के विरुद्ध नए विचार उत्पन्न करती है, क्योंकि मन सारथी है, जो आत्मा के रथ को काबू में करता है, विचारों की लगाम थामकर, और शैतानी रथ के विरुद्ध दौड़ता है, ठीक वैसे ही जैसे शैतान ने उसे आत्मा के विरुद्ध तैयार किया है (40, 5)।

ग) इससे यह स्पष्ट है कि पाप और शत्रु के विरुद्ध लड़ाई यहाँ भी समाप्त नहीं होती; अतः हृदय के विचारों और प्रवृत्तियों के विरुद्ध अनवरत संघर्ष। यहाँ यह अधिक सूक्ष्म है।

57. कई लोग, यद्यपि उनमें अनुग्रह निहित है, यह महसूस नहीं करते कि पाप उन्हें लूट रहा है। जैसे किसी घर में एक युवती और एक युवक रहते हों, और वह महिला, पुरुष के बहकावे में आकर, अंततः उससे सहमत हो जाए, व्यभिचार करे और तुच्छ हो जाए, वैसे ही पाप का भयानक सर्प आत्मा के साथ रहता है, उसे लुभाता और मनाता है; और यदि वह सहमति दे दे, तो अदेह आत्मा अदेह दुर्भावना के साथ एकता में प्रवेश कर जाती है; अर्थात्, आत्मा आत्मा के साथ एकता में प्रवेश करती है, और जो व्यक्ति दुष्ट के विचार को अपने भीतर स्वीकार करता है और उस पर सहमति देता है, वह अपने हृदय में व्यभिचार करता है। इसलिए, आपके आध्यात्मिक संघर्ष का पैमाना आपके विचारों में व्यभिचार न करने में नहीं, बल्कि अपने मन से विरोध करने और एक आंतरिक लड़ाई लड़ने, दुराचार के विरुद्ध लड़ने और उसकी अवज्ञा करने, और अपने विचारों में उससे आनंद न लेने में निहित है। और यदि प्रभु में यह तत्परता पाते हैं, तो वे अंतिम दिन आपको अपने राज्य में ग्रहण करेंगे (15:26)।

५८. यह मानवीय स्वभाव में है कि जो व्यक्ति पाप में गहराई तक डूबा हुआ है और बुराई का अभ्यास करता है, वह भी अच्छाई की ओर मुड़ सकता है, और जो पवित्र आत्मा से बंधा हुआ है और स्वर्गीय बातों में मग्न है, उसके पास भी बुराई की ओर मुड़ने की शक्ति है। और जो लोग परमेश्वर की कृपा का स्वाद चख चुके हैं और पहले ही आत्मा के सहभागी बन चुके हैं, यदि वे सावधान नहीं रहते, तो वे ठंडे पड़ जाते हैं और दुनिया में रहते समय जितने बुरे थे, उससे भी बदतर हो जाते हैं। और ऐसा इसलिए नहीं होता क्योंकि परमेश्वर परिवर्तनशील या शक्तिहीन है, या क्योंकि पवित्र आत्मा की शक्ति कम हो जाती है, बल्कि इसलिए होता है क्योंकि लोग स्वयं अनुग्रह के अनुकूल नहीं होते हैं, और इसीलिए वे भटक जाते हैं और हजारों बुराइयों में पड़ जाते हैं (15:34)।

५९. अन्य, जिन्होंने पहले ही परमेश्वर की मिठास का स्वाद चख लिया है, वे अभी भी अपने भीतर शत्रु के प्रभाव के अधीन हैं, और अनुभवहीनता के कारण, इस बात पर आश्चर्यचकित होते हैं कि परमेश्वर के आगमन के बाद भी, उनके विचार ईसाई संस्कारों के दौरान भी अपना प्रभाव डालते रहते हैं। लेकिन जो इस अवस्था के आदी हो गए हैं, वे इससे चकित नहीं होते, ठीक वैसे ही जैसे अनुभवी किसान, लंबे समय के अभ्यास के कारण, जब भरपूर फसल होती है तो पूरी तरह से निश्चिंत नहीं रहते, बल्कि अकाल और अभाव दोनों की आशंका करते हैं; और इसके विपरीत, जब उन पर अकाल या अभाव आता है, तो वे सारी आशा नहीं छोड़ते, यह जानते हुए कि समय बदलते हैं। आत्मिक मामलों में भी ऐसा ही है: जब आत्मा विभिन्न प्रलोभनों का सामना करती है, तो वह न तो हैरान होती है और न ही निराश, क्योंकि वह जानती है कि, ईश्वर की अनुमति से, दुष्ट को उसे आज़माने और दंडित करने की अनुमति है; और इसके विपरीत, अपनी महान धन-संपत्ति और शांति के बीच, वह आत्मसंतुष्ट नहीं हो जाती, बल्कि परिवर्तन की आशंका करती है (16, 3)।

60. जब कोई व्यक्ति अनुग्रह में गहराई से डूबा होता है और उससे समृद्ध होता है, तो भी उनमें दुराचार का विष रहता है, फिर भी उनके पास एक मध्यस्थ होता है जो उनकी मदद करता है। यदि कोई झरना बहता है, तो आसपास

का क्षेत्र गीला और नम बना रहता है। लेकिन जैसे ही गर्मी पड़ने लगती है, तो झरना और उसके आसपास का इलाका दोनों सूख जाते हैं। परमेश्वर के सेवकों के साथ भी ऐसा ही है, जिनमें अनुग्रह प्रचुर मात्रा में है: यह दुष्ट द्वारा जगाई गई इच्छाओं और स्वाभाविक रूप से उत्पन्न होने वाली इच्छाओं, दोनों को सूखा देता है, क्योंकि अब परमेश्वर के लोग पहले आदम से ऊपर उठ चुके हैं (16:4)।

61. कुछ लोग परमेश्वर की कृपा में ऐसी विश्राम पाते हैं कि वे अपने भीतर बसने वाले दुर्गुण से भी अधिक शक्तिशाली हो जाते हैं; और यद्यपि वे परमेश्वर के सामने प्रार्थना और महान शांति का अनुभव करते हैं, फिर भी अन्य समयों में वे दुष्ट विचारों के प्रभाव का शिकार हो जाते हैं और पापों से घिर जाते हैं, भले ही वे अभी भी परमेश्वर की कृपा में बने रहते हैं। लेकिन तुच्छ और अज्ञानी लोग, जब उनमें कुछ हद तक अनुग्रह कार्य करता है, तो वे सोचते हैं कि अब उनमें कोई पाप नहीं है; जबकि जो विवेकी और समझदार हैं, वे यह कहने का साहस नहीं करते कि ईश्वर के अनुग्रह के होते हुए भी, वे लज्जास्पद और अशुद्ध विचारों के प्रभाव से मुक्त हैं (17:5)।

62. हम अक्सर भाइयों में पाते हैं कि कुछ, महान आनंद और अनुग्रह प्राप्त करने के बाद, पाँच या छह वर्षों तक अपने बारे में कहते रहते थे: 'हमारी वासना सूख गई है' – और बाद में, जब वे खुद को वासना से पूरी तरह मुक्त समझने लगे, तो उनके भीतर छिपी हुई बुराई सक्रिय हो गई, और वे वासना से भर गए, जिस पर वे खुद पर हैरान हो गए और कहने लगे: 'ऐसा कैसे है कि इतने लंबे समय के बाद, हमारे भीतर ऐसी बुराई उत्पन्न हो गई है?' इसलिए, कोई भी समझदार व्यक्ति यह कहने की हिम्मत नहीं करेगा: 'चूँकि अनुग्रह मुझ में वास करता है, मैं पाप से पूरी तरह से मुक्त हूँ।' इसके विपरीत, मन में दो शक्तियाँ काम कर रही हैं। इस मामले में अनुभवहीन लोग, जैसे ही उन पर अनुग्रह का थोड़ा सा भी प्रभाव होता है, सोचते हैं कि वे पहले ही विजयी हो चुके हैं और पूर्ण मसीही बन गए हैं। लेकिन मेरी दृष्टि में, यह ऐसा है: जब साफ आसमान में सूरज चमकता है, और बादल आकर उसे ढक लेते हैं, और हवा को घना कर देते हैं, तो सूरज, बादलों के पीछे छिपा होने पर भी, अपनी रोशनी में या अपने अस्तित्व में किसी भी प्रकार की हानि नहीं उठाता। वैसे ही उन लोगों का हाल है जिन्होंने अभी तक पूर्ण पवित्रता प्राप्त नहीं की है। ईश्वर की कृपा में बने रहते हुए भी, अपनी आत्मा की गहराई में पाप के अधीन, वे अपने भीतर स्वाभाविक प्रवृत्तियों और विचारों को पालते हैं जो ईश्वर की ओर उनके प्रयत्न में उन्हें मजबूत करते हैं, भले ही वे पूर्णतःसद्गुण में स्थापित नहीं हैं (17, 6)।

६३. इसके विपरीत, जो लोग अपने आत्मा की गहराई में, भले पक्ष से चिपके रहते हैं—अर्थात्, जिन पर अनुग्रह का प्रभुत्व है—वे भी दुष्ट विचारों के दास और बंदी बने रहते हैं और पाप के पक्ष में पाते हैं। इसलिए, किसी व्यक्ति के लिए अनुभव के माध्यम से यह निर्धारित करने हेतु कि हमारे भीतर का हाल क्या है, बड़ी सूक्ष्मदर्शिता की आवश्यकता होती है। हालाँकि, मैं आपसे कहता हूँ कि प्रेरित भी, जिनके भीतर सान्त्वनादाता थे, पूरी तरह से निश्चिंत नहीं थे। अपनी खुशी और आनंद के साथ-साथ, उन्होंने स्वयं अनुग्रह के कार्यों के कारण ही भय और काँप भी अनुभव किया—दुष्टता के कारण नहीं; यह स्वयं अनुग्रह ही था जिसने उन्हें चेतावनी दी कि वे सबसे छोटी बात में भी भटक न जाएँ। जैसे कोई दीवार पर पत्थर का टुकड़ा फेंककर न तो कोई क्षति पहुँचाता है, और न ही दीवार को उसकी जगह से हिलाता है, या, जैसे कवच पहने हुए आदमी पर तीर चलाने वाला न तो लोहे को और न ही शरीर को कोई नुकसान पहुँचाता है, क्योंकि कवच तीर को मोड़ देता है, वैसे ही, भले ही बुराई का एक अंश प्रेरितों के पास आया, उसने उन्हें कोई नुकसान नहीं पहुँचाया, क्योंकि वे मसीह की पूर्ण शक्ति से परिधानित थे, और वे स्वयं, पूर्ण होने के नाते, धर्मी कर्म करने की स्वतंत्रता रखते थे। चूँकि कुछ लोग मानते हैं कि अनुग्रह के द्वारा, आत्मा को चिंता करने के लिए कुछ भी नहीं बचता, परमेश्वर सिद्ध लोगों से भी आत्मा की सेवा करने के लिए एक इच्छुक आत्मा की मांग करते हैं, ताकि वे अनुग्रह के अनुसार कार्य कर सकें। क्योंकि प्रेरित कहते हैं: *'आत्मा को न बुझाओ'* (1 थिस्स. 5:19)। (17, 7. 8).

64. दृश्यमान संसार में, पृथ्वी अपने आप अक्सर काँटे उगाती है; किसान मिट्टी जोतता है, उसे लगन से संवारता है और बीज बोता है, फिर भी काँटे और खरपतवार उगते और बढ़ते हैं, क्योंकि आदम को उसके पाप के बाद कहा गया था: *'पृथ्वी तेरे लिए काँटे और कंटक उगाएगी'* (उत्पत्ति 3:18). किसान एक बार फिर परिश्रम करता है, काँटों को उखाड़ता है, फिर भी वे और भी अधिक बढ़ जाते हैं। इसे आध्यात्मिक रूप से समझें: पतन के कारण, पृथ्वी हृदय से काँटे और कंटीली झाड़ियाँ उत्पन्न करती है; मनुष्य पृथ्वी को जोतता है और परिश्रम करता है, फिर भी दुष्ट आत्माओं के काँटे फिर भी उग आते हैं। तब पवित्र आत्मा स्वयं मानवीय कमजोरी की सहायता के लिए आते हैं, और प्रभु इस हृदय की मिट्टी में स्वर्गीय बीज बोते हैं और इसकी खेती करते हैं। और जब प्रभु का बीज गिरता है, तो काँटे और कँकरीली झाड़ियाँ फिर भी उग आती हैं। प्रभु स्वयं और मनुष्य एक बार फिर से आत्मा की मिट्टी को जोतते हैं, और सात दुष्ट आत्माएँ और काँटे फिर भी वहाँ प्रकट होते और उगते हैं, जब तक कि गर्मी का मौसम नहीं आ जाता, अनुग्रह प्रचुर हो जाता है, और काँटे सूर्य की गर्मी में मुरझा जाते हैं (26:21)।

65. यद्यपि दुराचार स्वयं प्रकृति में विद्यमान है, परन्तु वह केवल वहीं हावी होता है जहाँ उसे जड़ जमाने के लिए जगह मिलती है। गेहूँ की कोमल टहनियाँ खरपतवारों से दब सकती हैं। लेकिन जब गर्मियों के आने पर पौधे सूख जाते हैं, तो खरपतवार गेहूँ को बिल्कुल भी नुकसान नहीं पहुँचाते। मान लीजिए कि तीस माप शुद्ध गेहूँ के हैं, फिर भी उसमें भूसी का मिश्रण है; उदाहरण के लिए, यदि उसमें कुछ मुट्ठी भर ही हो – तो गेहूँ की प्रचुरता के बीच भूसी न के बराबर दिखाई देगी। कृपा भी इसी प्रकार है: जब किसी व्यक्ति के भीतर परमेश्वर का वरदान और कृपा बढ़ती है, और वह प्रभु में धनी हो जाता है, तो दुष्टता—भले ही वह कुछ हद तक उसमें बनी रहे—उसका कोई नुकसान नहीं कर सकती और उस पर उसकी कोई शक्ति नहीं होती, न ही वह उसमें कोई पकड़ बना सकती है। क्योंकि प्रभु के आने और उनकी व्यवस्था का यही उद्देश्य है: हमें—जो दास, दोषी और दुष्टता के अधीन हैं—मुक्त करना, और हमें मृत्यु और पाप पर विजेता बनाना (26:22)।

66. क्या प्रेरित पाप कर सकते थे यदि वे चाहते, या क्या अनुग्रह उनकी अपनी इच्छा से भी अधिक शक्तिशाली था? वे पाप नहीं कर सकते थे, क्योंकि, प्रकाश में रहते हुए और ऐसे अनुग्रह के अधिकारी होकर, वे घमंडी नहीं हुए। हालाँकि, हम यह नहीं कहते कि उनमें अनुग्रह कमजोर था; बल्कि, हम यह मानते हैं कि अनुग्रह पूर्ण आध्यात्मिक पुरुषों को भी अपनी स्वतंत्र इच्छा रखने और अपनी मर्जी से काम करने, तथा अपनी इच्छानुसार झुकने की क्षमता देता है। और मानव स्वभाव स्वयं, कमजोर होने के कारण, अपने भीतर निहित भलाई से मुँह मोड़ने की क्षमता रखता है। जैसे पूर्ण कवच और अन्य हथियारों से सुसज्जित लोग पहले से ही सुरक्षित होते हैं, और दुश्मन उन पर हमला नहीं करते—या यदि करते भी हैं, तो भी उनके पास अपने हथियार इस्तेमाल करने, दुश्मनों का सामना करने, उनसे लड़ने और विजयी होकर निकलने की शक्ति होती है— या, हथियारों के होते हुए भी, अपने दुश्मनों के खिलाफ युद्ध न करना, बल्कि उनके साथ आनंद मनाना और शांति से रहना; इसी तरह, ईसाई भी, पूर्ण शक्ति से सुसज्जित और स्वर्गीय हथियारों के मालिक होकर, यदि वे चाहें, तो युद्ध करने के बजाय शैतान के साथ मिलकर आनंद मना सकते हैं और उसके साथ शांति से रह सकते हैं, क्योंकि मानव स्वभाव आसानी से बदलने वाला है, और मनुष्य, अपनी बची हुई स्वतन्त्र इच्छा के कारण, यदि चाहे तो ईश्वर का पुत्र बन सकता है, या इसी प्रकार विनाश का पुत्र बन सकता है (27:11)।

67. क्या सिद्ध लोग दुख या कलह का सामना करते हैं? या क्या वे पूरी तरह से निश्चिंत रहते हैं? ऐसा कोई मनुष्य नहीं है जिस पर शत्रु ने आक्रमण करना बंद कर दिया हो। शैतान निर्दयी और मानवद्वेषी है; इसलिए, वह हर मनुष्य पर आक्रमण करने में संकोच नहीं करता, यद्यपि स्पष्ट रूप से वह सभी पर समान उत्साह से आक्रमण नहीं करता। कुछ लोग पाप से होने वाले तीव्र संघर्ष और यातना को सहते हैं, फिर भी वे इन परीक्षाओं के माध्यम से मजबूत होते हैं और अधिक बुद्धिमान बनते हैं, विरोधी शक्ति की परवाह किए बिना, और इस संबंध में उन्हें कोई खतरा नहीं होता, क्योंकि वे अडिग और अपने उद्धार के प्रति आश्वस्त होते हैं, क्योंकि उन्होंने दुष्टता के खिलाफ लड़ाई में अक्सर अभ्यास करके अनुभव प्राप्त किया है, और स्वयं परमेश्वर उनके साथ हैं, ईश्वर के मार्गदर्शन में, उन्हें विश्राम मिलता है। हालाँकि, अन्य लोग, जिन्होंने अभी तक इसका अभ्यास नहीं किया है, यदि केवल दुख से मारे जाते हैं और उनके विरुद्ध एक लड़ाई छिड़ जाती है, तो वे तुरंत कष्ट और विनाश में डूब जाते हैं (15, 16, 17)।

६८. कुछ लोगों ने, स्वयं को दृढ़ बनाकर और अपने भीतर परमेश्वर की अनुग्रह की प्रबल शक्ति के प्रभाव में, अपने अंगों को इतना पवित्र पाया कि उन्होंने यह निष्कर्ष निकाला कि मिसीही धर्म में अब वासना के लिए कोई स्थान नहीं था, बल्कि एक पवित्र और शुद्ध मन प्राप्त हुआ था, और आंतरिक मनुष्य पहले ही दिव्य और स्वर्गीय में उड़ान भर रहा था। इसलिए, ऐसा व्यक्ति सोचता है कि उसने निस्संदेह पूर्णता प्राप्त कर ली है, और ठीक उसी समय जब वह खुद को एक सुरक्षित बंदरगाह में पहुँचा हुआ मानता है - लहरें उसके खिलाफ उठ खड़ी होती हैं, और वह एक बार फिर खुद को समुद्र के बीच में पाता है, एक ऐसी जगह पर बह गया है जहाँ पानी और आकाश के अलावा कुछ नहीं है, और निश्चित मृत्यु है। इस प्रकार, हमारे भीतर प्रवेश कर गया पाप हर तरह की बुरी वासना को जन्म देता है। लेकिन एक बार फिर एक निश्चित अनुग्रह प्राप्त करने पर, और मानो, कहने का तात्पर्य यह है कि, समुद्र की गहराइयों से एक छोटी सी बूंद प्राप्त करने पर, वे इसी बात में घड़ी-घड़ी और दिन-प्रतिदिन एक चमत्कार घटित होता हुआ पाते हैं; और इस प्रकार, एक ऐसे असाधारण, नए और दैवीय कार्य के अधीन होकर, वे इस बात पर चकित और स्तब्ध रह जाते हैं कि कैसे वे धोखा खा गए थे। अंत में, अनुग्रह, दिव्य और स्वर्गीय होने के कारण, उसे प्रबुद्ध करता है, मार्गदर्शन करता है और उसे शांत करता है, और सभी चीजों को भलाई के लिए व्यवस्थित करता है (38, 4)।

69. अपने भीतरी मनुष्य में धार्मिकता का अभ्यास करो, जहाँ मसीह का वेदी अपवित्र न किए गए पवित्रस्थान के साथ खड़ा है, ताकि तुम्हारे अंतकरण की गवाही मसीह के क्रूस पर घमंड कर सके, जो तुम्हारे अंतकरण को निर्जीव कर्मों से शुद्ध करता है, और तुम अपनी आत्मा से परमेश्वर की सेवा कर सको, यह जानते हुए कि तुम किसकी उपासना

करते हो, जैसा कि कहा गया है: *'हम उसी की उपासना करते हैं जिसे हम जानते हैं* (यूहन्ना 4:22)। अपने आपको उस परमेश्वर के हवाले कर दो जो तुम्हें मार्गदर्शन देता है; तुम्हारी आत्मा परमेश्वर के साथ उस प्रकार एकता में प्रवेश करे, जैसे एक वधू अपने वधू-वर के साथ। क्योंकि लिखा है: *'यह रहस्य महान है; मैं यह मसीह और कलीसिया के विषय में कहता हूँ* (इफिसियों 5:32) और 'एक निर्दोष आत्मा में' (38:5)।

70. कल्पना कीजिए कि एक बगीचे में फलदार पेड़ और अन्य सुगंधित पौधे हैं; पूरा बगीचा खूबसूरती से सजाया-संवारा गया है, और सुरक्षा के लिए, बाड़ के बजाय, इसे एक नीची दीवार से घेर लिया गया है; इसके अलावा, एक तेज बहाव वाली नदी इसके बीच से होकर गुजरती है। यदि पानी थोड़ा भी दीवार से टकराए, तो वह उसकी नींव को नुकसान पहुँचाएगा, एक रास्ता बना लेगा, धीरे-धीरे नींव को पूरी तरह से क्षीण कर देगा और, एक बार बगीचे में प्रवेश कर जाने पर, सभी पौधों को तोड़कर जड़ से उखाड़ देगा, सारी मेहनत को बर्बाद कर देगा, और बगीचे को बंजर बना देगा। मानव हृदय के साथ भी ऐसा ही है। उसके भीतर उत्तम विचार होते हैं, लेकिन पाप की बाढ़ें लगातार हृदय के पास आती रहती हैं, उसे उखाड़ फेंकने और अपने पक्ष में करने के लिए तैयार। और यदि मन, यद्यपि कुछ हद तक तुच्छ हो, अशुद्ध विचारों के आगे झुक जाता है, तो चापलूसी की आत्माएँ पहले ही वहाँ अपना चरागाह पा चुकी होती हैं; वे घुस आई होती हैं और सारी सुंदरता को उजाड़ चुकी होती हैं, अच्छे विचारों को शून्य में बदल दिया होता है, और आत्मा को उजाड़ में डाल दिया होता है (43, 6)।

(i) इस लड़ाई के अलावा, एक और—एक बाहरी—उभरती है। जैसे ही परमेश्वर की कृपा मजदूर के हृदय में प्रकट होने लगती है, वैसे ही अन्य लोगों द्वारा उस पर शत्रुतापूर्ण हमले शुरू हो जाते हैं। शत्रु, जो भीतर से निकाल दिया गया है, बाहर से स्वयं को हथियारबंद करता है। यह एक मसीही की आध्यात्मिक पूर्णता के लिए एक अपरिहार्य स्थिति बन गई है।

71. परमेश्वर के लोगों को संघर्ष और वीरतापूर्ण प्रयास के लिए खुद को तैयार करना चाहिए। जैसे एक बहादुर जवान संघर्ष को सहन करता है और उस पर किए गए वार का जवाब अपने ही वार से देता है, वैसे ही मसीहियों को भी कष्टों और बाहरी तथा आंतरिक संघर्षों को सहन करना चाहिए, ताकि धैर्य के द्वारा वार सहन करके वे विजय प्राप्त कर सकें । मसीही धर्म का यही मार्ग है। जहाँ पवित्र आत्मा है, वहाँ उत्पीड़न और संघर्ष छाया की तरह साथ चलते हैं। क्या आप देखते हैं कि कैसे भविष्यवक्ताओं को, यद्यपि आत्मा उनमें कार्य करती थी, हमेशा अपने ही लोगों द्वारा सताया गया? क्या आप देखते हैं कि कैसे प्रभु, जो मार्ग और सत्य हैं, को किसी विदेशी लोगों ने नहीं बल्कि उनके अपने लोगों ने सताया? यह उनके अपने लोग—इस्राएलियों—थे जिन्होंने उन्हें सताया और सूली पर चढ़ाया। और यही बात प्रेरितों के साथ भी हुई, क्योंकि क्रूस के समय से आत्मा, यानी सांत्वना देने वाले, आए और मसीहियों में वास करने लगे; अब यहूदियों में से किसी का भी उत्पीड़न नहीं किया गया, बल्कि केवल मसीहियों को ही शहीद किया गया। इसलिए, उन्हें इस बात से आश्चर्यचकित नहीं होना चाहिए, क्योंकि सत्य का उत्पीड़न होना ही चाहिए (15:11)।

72. और यह कोई संयोग नहीं है कि योब के विषय में लिखा है, जैसा कि शैतान ने उससे अनुरोध किया, क्योंकि वह बिना अनुमति के अपनी इच्छा से कुछ भी नहीं कर सकता था। तो फिर, शैतान प्रभु से क्या कहता है? 'उसे मेरे हाथ में सौंप दो, *"जब तक वह तेरे सामने आशीष न दे"* (योब 1:11)? तो अब भी ऐसा ही है: अय्यूब वही है, परमेश्वर वही है, और शैतान वही है। ठीक उसी क्षण जब अय्यूब ने परमेश्वर की मदद देखी, अनुग्रह में उत्साही और जोशीला था, शैतान ने उसके लिए निवेदन की और प्रभु से कहा: 'चूंकि आप उसकी मदद करते हैं और उसकी रक्षा करते हैं, वह आपकी सेवा करता है। उसे त्याग दो और मुझे सौंप दो, *'कहीं ऐसा न हो कि वह तुम्हें मेरे सामने आशीष दे*?" अंत में, जैसे कि ठीक इसलिए कि आत्मा को सांत्वना मिलती है, अनुग्रह उससे पीछे हट जाता है, और आत्मा को प्रलोभनों के हवाले कर दिया जाता है। इसलिए शैतान आता है, उस पर हजारों विपत्तियाँ डालता है, साथ ही निराशा, हताशा और दुष्ट विचार लाता है, और आत्मा को कुचलता है ताकि उसे कमजोर कर सके और उसे ईश्वर में आशा रखने से हटा सके। लेकिन समझदार आत्मा, चाहे विपत्ति में हो या दुख में, आशा नहीं खोती, बल्कि जो उसके पास है, उसे मजबूती से थामे रहती है; और चाहे उस पर हजार प्रलोभनों के बीच कुछ भी आ पड़े, सब कुछ सहते हुए, वह कहती है: 'भले ही मैं मर जाऊँ, मैं उसे नहीं छोड़ूँगी' (26:7-8)।

७३. फिर भी सभी धर्मी, संकीर्ण और कठिन मार्ग पर चलते हुए, अंत तक परमेश्वर को प्रसन्न करते रहे। इब्राहीम परमेश्वर की दृष्टि में धनी थे, फिर भी संसार के संबंध में उन्होंने स्वयं को धूल और राख कहा (उत्पत्ति 18:27), और दाऊद अपने बारे में कहते हैं: *'मनुष्यों का तिरस्कार और लोगों का अपमान, एक कीड़ा और न कि मनुष्य'* (भजन संहिता 21:7)। इसी प्रकार, सभी प्रेरितों और भविष्यद्वक्ताओं ने कष्ट सहे और उनकी निंदा की गई। प्रभु स्वयं, जो मार्ग और ईश्वर हैं, अपने लिए नहीं बल्कि आपके लिए आए, ताकि आपके लिए सब प्रकार की भलाई का प्रतिमूर्ति बन सकें—देखिए कि वे किस अपमान में आए: ईश्वर, ईश्वर का पुत्र, राजा और राजाओं का पुत्र, एक

दास का रूप धारण कर लिए, वह उपचार के उपाय प्रदान करता है और पीड़ितों को चंगा करता है, जबकि बाहरी रूप से, मानो, स्वयं पीड़ितों में से एक के रूप में दिखाई देता है (26:25)।

74. परन्तु जब आप उसे बाहरी रूप से नम्र और, मानो, हम में से एक जैसा देखते हैं, तो परमेश्वर की महिमा को नज़रअंदाज़ न करें: वह हमारे लिए ऐसा प्रतीत हुआ, न कि अपने लिए। विचार करें कि क्या वह उस घड़ी सबसे अधिक नम्र नहीं था जब उन्होंने चिल्लाया, 'उसे सूली पर चढ़ा दो, उसे सूली पर चढ़ा दो!' – और भीड़ इकट्ठा हो गई! जैसे संसार में, जब कोई राजकुमार किसी दुष्ट पर सजा सुनाता है, तो सारी जनता उसकी निंदा करती है और उसे अपमानित करती है, वैसे ही प्रभु को भी, सूली पर चढ़ाए जाने के समय, मृत्युदंड पाए हुए मनुष्य के रूप में, फरीसियों द्वारा पूरी तरह से तुच्छ समझा गया। और जब उन्होंने उनके मुख पर थूक दिया, उनके सिर पर काँटों का मुकुट पहनाया, और उनके गालों पर मारा, क्या यह सभी अपमान की हद से बढ़कर नहीं था? क्योंकि लिखा है: *'मैंने अपनी पीठ उन लोगों के लिए पेश की जिन्होंने मुझे मारा, और अपना चेहरा उन लोगों के लिए जिन्होंने मेरी दाढ़ी उखाड़ी; मैंने थूक से अपना चेहरा नहीं छिपाया, और न ही मार से अपने गाल'* (यशायाह 50:6)। तो, यदि परमेश्वर ने इतना अपमान, दुख और अत्याचार सहन किया, तो आप—जो स्वभाव से ही दुर्बल और नश्वर हैं—चाहे कितनी भी विनम्रता दिखाएँ, अपने प्रभु के समान कुछ भी नहीं कर सकते। आपके लिए, परमेश्वर ने स्वयं को नम्र किया, फिर भी आप अपने ही लिए भी स्वयं को नम्र नहीं करते, बल्कि स्वयं को बड़ा बताते हैं और घमंड करते हैं। वह स्वयं पर दुख और कठिनाइयाँ लेने, और आपको अपनी शान्ति देने आए; फिर भी आप परिश्रम और पीड़ा सहने को तैयार नहीं हैं, ताकि इसके द्वारा आपके घाव भर सकें। उसकी पीड़ा और दीर्घ-सहने की महिमा युगों-युगों तक हो (26:26)।

75. यदि परमेश्वर ने पृथ्वी पर इस मार्ग पर चला, तो तुम्हें भी उनके पदचिन्हों पर चलना चाहिए। इसी प्रकार प्रेरितों और भविष्यद्वक्ताओं ने चलना सीखा। और हम, यदि प्रभु और प्रेरितों की नींव पर बने रहना चाहते हैं, तो हमें उनके उदाहरण का अनुसरण करना चाहिए। क्योंकि प्रेरित पवित्र आत्मा के द्वारा कहते हैं: *'मेरे समान बनो, जैसा मैं मसीह के समान हूँ'* (1 कुरिन्थियों 4:16)। परन्तु यदि आप मानवीय महिमा से प्रेम करते हैं, पूजे जाने की इच्छा रखते हैं, और अपने लिए आराम की तलाश करते हैं, तो आप मार्ग से भटक गए हैं। आपको क्रूस पर चढ़ाए गए के साथ क्रूस पर चढ़ाया जाना चाहिए, पीड़ित के साथ पीड़ित होना चाहिए, ताकि बाद में आप महिमामय के साथ महिमामय हो सकें (रोमियों 8:17)। क्योंकि वधू को वधू-वर के साथ दुख सहना चाहिए और, इसके द्वारा, मसीह के साथ सहभागी और सह-वारिस बनना चाहिए। और किसी को भी, बिना दुख के, संतों के नगर में एक ऐसे मार्ग से प्रवेश करने की अनुमति नहीं है जो समतल, संकरा और तंग न हो, ताकि वह राजा के साथ अनंत काल तक विश्राम कर सके और राज्य कर सके (12:5)।

76. क्या शैतान को हम पर केवल एक निश्चित सीमा तक हमला करने की अनुमति है, या उतनी जितनी वह चाहे? उसका लक्ष्य केवल ईसाइयों पर ही नहीं, बल्कि मूर्तिपूजकों और पूरी दुनिया पर भी है। इसलिए, यदि उसे जितना चाहे हमला करने की अनुमति मिल जाती, तो वह सभी को नष्ट कर देता। ऐसा क्यों है? क्योंकि यह उसका काम है और ऐसी ही उसकी इच्छा है। लेकिन जैसे एक कुम्हार, जब बर्तन आग में रखता है, तो भट्टी को संयम से हवा देता है—न तो बहुत ज़्यादा, कहीं बर्तन ज़रूरत से ज़्यादा जलकर फट न जाएँ, और न ही बहुत कम, कहीं वे बिना जले ही न रह जाएँ, वे बर्बाद नहीं होते, उसी प्रकार चाँदी और सोने की वस्तुएँ बनाने वाला कारीगर भी आग को संयम से लगाता है; क्योंकि यदि वह आग बढ़ा देता है, तो सोना और चाँदी पिघलकर तरल हो जाते हैं और नष्ट हो जाते हैं, और जैसे मानव मन बोझ की मात्रा को उस जानवर के प्रकार के अनुसार माप सकता है—चाहे वह ऊँट हो या कोई और जानवर—और यह ठीक-ठीक निर्धारित कर सकता है कि वह कितना वजन उठा सकता है, वैसे ही ईश्वर, जो मानव पात्रों की शक्ति को जानता है, विरोधी शक्तियों को विभिन्न स्तरों पर कार्य करने की अनुमति देता है (26:3)।

i) इन सब को धैर्यपूर्वक सहते हुए और शत्रु को कुछ भी न देते हुए, आत्मा धीरे-धीरे शुद्ध होती जाती है और स्वयं को पवित्र आत्मा की कृपा के सबसे शक्तिशाली प्रभावों के लिए खोल देती है, जो अंततः अंतर्दृष्टि की चमक, नैतिक आनंद की विशेष अवस्थाओं, दर्शनों और मार्गदर्शन में प्रकट होती है। यह स्पष्ट हो जाता है कि आत्मा पूर्णता के निकट आ रही है।

77. यदि कोई परमेश्वर से प्रेम करता है, तो परमेश्वर उस पर अपना प्रेम लुटाता है; जिसने एक बार परमेश्वर पर विश्वास किया है, उसे वह स्वर्गीय विश्वास प्रदान करता है, और वह व्यक्ति परिवर्तित हो जाता है। इसलिए, जैसे आप उसे अपने अंगों से एक उपहार अर्पित करते हैं, वैसे ही वह भी उसी तरह, अपने अंगों से आपकी आत्मा पर अनुग्रह करेंगे, ताकि आप सभी कार्य शुद्धता से कर सकें, प्रेम कर सकें और प्रार्थना कर सकें (15, 20)।

78. मरियम ने सब कुछ छोड़ दिया, प्रभु के चरणों में बैठ गईं, और दिन भर परमेश्वर की स्तुति करती रहीं। क्या आप देखते हैं कि उनके चरणों में बैठना प्रेम से भी बढ़कर है? लेकिन ताकि परमेश्वर का वचन और भी स्पष्ट

रूप से चमके, आगे सुनें। यदि कोई यीशु से प्रेम करता है और जैसा उसे करना चाहिए, वैसे ही उनकी सुनता है, और केवल सुनता ही नहीं बल्कि प्रेम में बना रहता है, तो परमेश्वर पहले से ही उस आत्मा को इस प्रेम के लिए किसी न किसी तरह से पुरस्कृत करना चाहता है, भले ही वह व्यक्ति नहीं जानता कि उसे क्या मिलेगा, या परमेश्वर अपनी कृपा उस आत्मा पर किस हद तक प्रदान करेगा। क्योंकि मरियम को भी, जो उनसे प्रेम करती थी और उनके चरणों में बैठती थी, उन्होंने केवल एक पुरस्कार ही नहीं दिया, बल्कि अपने सार से ही एक विशेष छिपी हुई शक्ति प्रदान की। वे ही वचन जो परमेश्वर ने मरियम से कहे, आत्मा और एक विशेष शक्ति थे। ये शब्द उसके हृदय में समा गए, उसकी आत्मा के भीतर एक आत्मा, उसकी आत्मा के भीतर एक पवित्र आत्मा बन गए, और दिव्य शक्ति ने उसके हृदय को भर दिया; क्योंकि जहाँ भी वह शक्ति जड़ जमाती है, वह अनिवार्य रूप से एक अपरिवर्तनीय संपत्ति के रूप में वहाँ बनी रहती है। यही कारण है कि प्रभु ने, यह जानते हुए कि उन्होंने उस पर क्या अनुग्रह किया था, कहा: *'मरियम ने अच्छा भाग चुना है'* (लूका 10:42)। लेकिन समय के साथ, सेवा करने की इच्छा से मार्था ने जो किया, उसने भी उसे उसी वरदान तक पहुँचाया, क्योंकि उसने भी अपनी आत्मा में दिव्य शक्ति ग्रहण की (12:16)।

79. और क्या यह आश्चर्य की बात है कि जो प्रभु के पास आए और शारीरिक रूप से उनके साथ एक हुए, उन्हें शक्ति मिली? कभी-कभी प्रेरित एक शब्द बोलते थे, और पवित्र आत्मा विश्वासियों पर उतर आता था (प्रेरितों के काम 10:44)। कोर्नेलियस ने उस वचन से शक्ति प्राप्त की जो उसने सुना। और तो और जब प्रभु ने मरियम से, या ज़कई से, या उस पापी स्त्री से बात की जिसने अपने खुले बालों से प्रभु के पैरों को पोंछा, या सामरी स्त्री से, या चोर से – तब शक्ति प्रकट हुई, और पवित्र आत्मा उनकी आत्माओं के संग एकता में प्रवेश कर गया। और अब, जो प्रभु से प्रेम करते हैं, सब कुछ पीछे छोड़कर और लगातार प्रार्थना में बने रहते हुए, गुप्त रूप से वह सीख रहे हैं जो वे पहले नहीं जानते थे। स्वयं सत्य, अपनी इच्छा से, स्वयं को उनके सामने प्रकट करते हैं और उन्हें सिखाते हैं: *'मैं ही सत्य हूँ'* (यूहन्ना 14:6)। स्वयं प्रेरितों ने, क्रूस से पहले प्रभु के साथ रहते हुए, बड़े चमत्कार देखे—जैसे कि कोढ़ियों का शुद्ध होना और मृतकों का जी उठना—फिर भी वे यह नहीं जानते थे कि दिव्य शक्ति हृदय के भीतर कैसे वास करती है और कार्य करती है; वे यह नहीं जानते थे कि वे स्वयं आध्यात्मिक रूप से पुनर्जीवित होंगे, स्वर्गीय आत्मा के साथ एकता में प्रवेश करेंगे, और एक नई सृष्टि बन जाएंगे। वे प्रभु से उनके चमत्कारों के कारण प्रेम करते थे। अंत में, प्रभु ने उनसे कहा: 'तुम चमत्कारों को देखकर आश्चर्य क्यों करते हो? मैं तुम्हें एक महान विरासत देता हूँ, जैसी पूरी दुनिया के पास नहीं है' (12:17)।

80. प्रभु के वचन उनके लिए तब तक रहस्य बने रहे जब तक कि वे मरे हुओं में से जी नहीं उठे और हमारे लिए देह सहित स्वर्ग में नहीं चढ़े। और तब परमप्रभु का आत्मा उन पर उतर आया और उनकी आत्माओं के साथ एकता में प्रवेश कर गया। सत्य स्वयं विश्वासियों की आत्माओं में अपना प्रकटीकरण करता है, और स्वर्गीय मनुष्य आपके मनुष्य के पास आता है, और उनके बीच एक एकल सहभागिता होती है। इसलिए, जो लोग सेवा में बने रहते हैं और विश्वास के प्रति उत्साह और परमेश्वर के प्रति प्रेम से सब कुछ लगन से करते हैं, उन्हें यह अंततःस्वयं सत्य के ज्ञान की ओर ले जाता है, क्योंकि प्रभु उनकी आत्माओं को स्वयं प्रकट करते हैं और उन्हें पवित्र आत्मा में निवास करना सिखाते हैं (12:18)।

८१. कहा गया है: *'चखो और देखो कि प्रभु भला है'* (भजन संहिता 33:9); और यह चखना निस्संदेह आत्मा की सक्रिय शक्ति है, जो हृदय में अपनी सेवा का कार्य करती है। जो प्रकाश के पुत्र हैं और पवित्र आत्मा में नए नियम की सेवा करते हैं, वे मनुष्यों से कुछ नहीं सीखते, बल्कि परमेश्वर द्वारा सिखाए जाते हैं। कृपा स्वयं उनके हृदयों पर आत्मा के नियम लिखती है। इसलिए, उन्हें न केवल स्याही से लिखी गई पवित्रशास्त्रों में, बल्कि हृदय की पटलियों पर भी पुष्टि मिलनी चाहिए, जहाँ परमेश्वर की कृपा आत्मा के नियमों और स्वर्गीय रहस्यों को अंकित करती है; क्योंकि हृदय पूरे देह-संरचना पर सार्वभौमिक और राजसी रूप से शासन करता है। और जब अनुग्रह हृदय के सबसे भीतरी कोनों को पकड़ लेता है, तो वह सभी अंगों और विचारों पर शासन करता है, क्योंकि वहाँ मन और सभी विचार, और आत्मा की आशा निहित है। यही कारण है कि अनुग्रह शरीर के सभी अंगों में व्याप्त हो जाता है (15:18)।

८२. ऐसा व्यक्ति, जैसा कि लिखा है (१ कुरिन्थियों २:१४), हर एक को परखता है। वह जानता है कि प्रत्येक व्यक्ति अपने शब्द किस स्रोत से लेता है, वह कहाँ ठहर गया है, और वह किस अवस्था में है; फिर भी, जो संसार की आत्मा रखते हैं, उन में से कोई भी उसे जान या परख नहीं सकता। केवल वे ही जो अपने भीतर परमेश्वर की इस स्वर्गीय आत्मा को धारण करते हैं, अपने समान को पहचान सकते हैं, जैसा कि प्रेरित कहते हैं: *'आत्मिक व्यक्ति आत्मिक बातों का न्याय करते हैं'* (9:8)।

८३. जो परमेश्वर के पुत्र बनने और पवित्र आत्मा द्वारा ऊपर से जन्म लेने के योग्य ठहराए गए हैं, जिनके भीतर मसीह है जो उन्हें प्रकाशित और सांत्वना देता है, उन्हें आत्मा कई और विविध तरीकों से मार्गदर्शन करता

है, और अनुग्रह आध्यात्मिक शांति के बीच उनके हृदयों में अदृश्य रूप से कार्य करता है। लेकिन आइए हम इस संसार के दृश्यमान सुखों से उपमाएँ लें, ताकि इन समानताओं के माध्यम से हम आंशिक रूप से यह दिखा सकें कि अनुग्रह ऐसे लोगों की आत्माओं में कैसे काम करता है। कभी-कभी वे एक शाही दावत की तरह आनंदित होते हैं, और अकथनीय आनंद और प्रसन्नता के साथ हर्षित होते हैं। अन्य समयों में, वे एक दुल्हन की तरह होती हैं, जो अपने वधू-वर के साथ मिलन में दैवीय शांति से सांत्वना पाती है। कभी-कभी, शरीर में होते हुए भी, वे निराकार स्वर्गदूतों की तरह, अपने भीतर वही हलकापन और उड़ान भरती आत्मा को महसूस करती हैं। दूसरे समय, वे ऐसे होते हैं मानो किसी भव्य दावत के आनंद में, आत्मा द्वारा प्रसन्न और मोहित, दिव्य आध्यात्मिक रहस्यों में मग्न (18:7)।

८४. परन्तु अन्य समयों में वे मानवीय जाति के लिए रोते और विलाप करते प्रतीत होते हैं, और समग्र आदम के लिए प्रार्थना करते हुए, मानवता के प्रति आध्यात्मिक प्रेम से प्रज्वलित होकर, आँसू बहाते और रोते हैं। कभी-कभी आत्मा उन्हें इतनी प्रसन्नता और प्रेम से प्रज्वलित कर देती है कि, यदि संभव होता, तो वे हर व्यक्ति को अपने हृदय में समा लेते, और दुष्टों तथा भलों के बीच कोई भेदभाव नहीं करते। कभी-कभी, आत्मा की नम्रता में, वे हर व्यक्ति के सामने स्वयं को इतना नम्र बना लेते हैं कि वे स्वयं को सभी से अंतिम और सबसे तुच्छ मानते हैं। कभी-कभी आत्मा उन्हें निरंतर अकथनीय आनंद में रखती है। कभी-कभी उनकी उपमा एक शक्तिशाली योद्धा से दी जाती है, जो राजसी कवच पहनकर अपने शत्रुओं से लड़ने के लिए निकलता है और उन्हें परास्त करने के लिए बहादुरी से लड़ता है। क्योंकि उसी प्रकार, आध्यात्मिक योद्धा आत्मा का स्वर्गीय कवच पहनता है, अपने शत्रुओं के विरुद्ध बढ़ता है और उनसे युद्ध करता है, ताकि उन्हें अपने पैरों तले कुचल सके (18:8)।

85. कभी-कभी आत्मा एक प्रकार की महान स्थिरता, मौन और शांति में विश्राम पाती है, शुद्ध आध्यात्मिक आनंद में, अकथनीय प्रसन्नता और परमानंद में निवास करती है। कभी-कभी, अनुग्रह से, वह अथाह आत्मा के मार्गदर्शन द्वारा, अकथनीय बुद्धि में कुछ बातों को समझने में सक्षम होती है—ऐसी बातें जिन्हें शब्दों में बयां नहीं किया जा सकता या जो ज़ोर से बोली नहीं जा सकतीं। कभी-कभी, एक व्यक्ति किसी भी सामान्य व्यक्ति की तरह हो जाता है। इस प्रकार अनुग्रह लोगों के बीच विभिन्न तरीकों से कार्य करता है और आत्मा का कई तरीकों से मार्गदर्शन करता है, उसे परमेश्वर की इच्छा के अनुसार विश्राम में लाता है, और उसे विभिन्न तरीकों से प्रशिक्षित करता है ताकि उसे स्वर्गीय पिता के सामने सिद्ध, निर्दोष और शुद्ध के रूप में प्रस्तुत किया जा सके (18, 9)।

86. आत्मा के ये ही कार्य, जिन्हें हमने गिना है, पूर्णता के निकट उन लोगों में एक उच्चतर स्तर तक पहुँचते हैं। क्योंकि अनुग्रह के सांत्वना के विभिन्न रूप वचन के माध्यम से विभिन्न तरीकों से व्यक्त होते हैं और लोगों में लगातार कार्य करते रहते हैं, ताकि एक कार्य के बाद दूसरा कार्य होता रहे। जब आत्मा सभी वासनाओं से पूरी तरह शुद्ध होकर, परम आत्मा की पूर्णता तक पहुँचती है, और अकथनीय सहभागिता में, परम आत्मा, यानी सांत्वना देने वाले, के साथ एकता और मिलन में आ जाती है, और परम आत्मा के साथ एक होकर, स्वयं आत्मा बनने के योग्य समझी जाती है, तो वह पूरी तरह से प्रकाश बन जाती है, सर्वत्र दृष्टि, सर्वत्र आत्मा, सर्वत्र आनंद, सर्वत्र शांति, सर्वत्र हर्ष, सर्वत्र प्रेम, सर्वत्र दया, सर्वत्र भलाई और दयालुता। जैसे समुद्र की गहराई में एक पत्थर हर तरफ से पानी से घिरा होता है, वैसे ही ये लोग भी, पवित्र आत्मा के साथ हर तरह से एक होकर, मसीह के समान बन जाते हैं, जिनके भीतर आध्यात्मिक शक्ति के गुण होते हैं, और जो अंतर्मन से निर्दोष, निर्मल और शुद्ध बने रहते हैं। क्योंकि आत्मा से नए बने हुए लोग बाहरी रूप से दुष्टता का फल कैसे उत्पन्न कर सकते हैं? इसके विपरीत, आत्मा के फल (18:10) उनमें हमेशा और हर बात में चमकते हैं।

87. कोई और घुटने टेकने के लिए प्रवेश करता है – और उसका हृदय दिव्य शक्ति से भर जाता है; उसकी आत्मा प्रभु के साथ आनंद मनाती है, जैसे एक वधू अपने वर के साथ, यशायाह भविष्यवक्ता के वचनों के अनुसार, जो कहते हैं: *'जैसे वर वधू पर आनन्दित होता है, वैसे ही प्रभु तुम पर आनन्दित होगा'* (यशा. 62:5)। और कभी-कभी, पूरे दिन किसी काम में व्यस्त रहने के बाद, वह प्रार्थना के लिए एक घंटा समर्पित करता है - और उसका अंतर्मन, बड़ी प्रसन्नता के साथ, प्रार्थना की अवस्था में, उस युग की अनंत गहराइयों में बह जाता है, ताकि उसका मन, उड़ान भरता और मोहित होकर, उसमें पूरी तरह से लीन हो जाए। इस समय, सांसारिक चिंताएँ उसके विचारों से मिट जाती हैं, क्योंकि उसके विचार दिव्य, स्वर्गीय, असीम, अगम्य और एक अद्भुत चीज़ से भर जाते हैं और मोहित हो जाते हैं, जिसे मानव होंठ उच्चारित नहीं कर सकते। इस घड़ी, एक व्यक्ति प्रार्थना करता है और कहता है: 'हे, काश मेरी आत्मा मेरी प्रार्थना के साथ ही प्रस्थान कर जाए' (8:1)।

८८. क्या कोई व्यक्ति हमेशा इस अवस्था में प्रवेश करता है? यह सच है कि अनुग्रह निरंतर बना रहता है, बचपन से ही मनुष्य में जड़ जमा लेता है और खमीर की तरह काम करता है, और मनुष्य के भीतर यह स्थायी उपस्थिति, एक तरह से, स्वाभाविक और अविभाज्य बन जाती है, मानो वह उसके अस्तित्व के साथ एक हो; फिर भी, जैसा कि

उचित लगता है, वह मनुष्य के लाभ के लिए उसके भीतर अपने कार्यों को बदलता रहता है। कभी-कभी यह आग भड़क उठती है और अधिक तीव्रता से जलती है, जबकि अन्य समयों में यह कमजोर और अधिक शांत प्रतीत होती है; दूसरे समयों में यह प्रकाश और भी तेज़ चमकता है, जबकि कभी-कभी यह अपनी किरणें संकोच से बिखेरता है, और मनुष्य में निहित प्रकाश कमजोर हो जाता है (8, 2)।

८९. इसके अलावा, कुछ लोगों को प्रकाश में क्रूस का चिह्न दिखाई दिया और वह आंतरिक आत्मा पर अंकित हो गया। कभी-कभी, प्रार्थना करते समय, एक व्यक्ति एक प्रकार के समाधि-सामान्द्र में चला जाता था; ऐसा प्रतीत होता था मानो वह चर्च में वेदी के सामने खड़ा हो, और उसे तीन रोटी दी गईं, जैसे तेल से खमीर की गई हों; और जितना वह उनका स्वाद चखता, रोटी बढ़ती और फूलती जाती थीं। कभी-कभी, एक विशेष प्रकाशमान वस्त्र भी प्रकट होता था, जैसा इस युग में पृथ्वी पर नहीं पाया जाता और जिसे मानव हाथ नहीं बना सकते। क्योंकि जैसे प्रभु, यूहन्ना और पतरस के साथ पहाड़ पर चढ़कर, अपने वस्त्रों को बदलकर उन्हें बिजली की तरह चमका दिया था, वैसे ही इस वस्त्र के साथ भी था; और इसे पहने हुए मनुष्य आश्चर्य और विस्मय से भर गया। हालाँकि, अन्य समयों में, यह प्रकाश, हृदय में प्रकट होकर, सबसे भीतरी, गहरे और सबसे छिपे हुए प्रकाश को प्रकट कर देता था; इस कारण एक मनुष्य, जो ऐसी मिठास और ऐसे चिंतन में पूरी तरह से डूबा होता था, उस पर अब अपना कोई नियंत्रण नहीं रहता था, बल्कि वह, जैसे कि, इस दुनिया के लिए एक जंगली और एक असभ्य व्यक्ति बन जाता था, प्रेम और मिठास की प्रचुरता के कारण और छिपे हुए रहस्यों के कारण, ताकि एक व्यक्ति, उस समय स्वतंत्रता प्राप्त करके, पूर्ण माप को प्राप्त करे, पवित्र और पाप से मुक्त हो जाए। लेकिन इसके बाद, अनुग्रह कम हो गया और विरोधी शक्ति का एक आवरण उतर आया; तथापि, अनुग्रह, मानो आंशिक रूप से, और पूर्णता की किसी निम्नतर डिग्री में, दिखाई देता रहा (8, 3)।

९०. एक व्यक्ति को, यूं कहें, बारह चरणों से गुजरना होता है और फिर पूर्णता प्राप्त करनी होती है। अन्य समयों में, वह वास्तव में इस अवस्था को प्राप्त करता है और पूर्णता को प्राप्त करता है। फिर अनुग्रह एक बार फिर से कमजोर रूप से कार्य करने लगता है, और मनुष्य एक पायदान नीचे उतर आता है और ग्यारहवें पर खड़ा हो जाता है। लेकिन अनुग्रह से परिपूर्ण कोई अन्य, दिन-रात उच्चतम स्तर पर खड़ा रहता है, मुक्त और शुद्ध, सदा तल्लीन और उत्कृष्ट। और अब, एक मनुष्य जिसके सामने ये चमत्कार प्रकट हुए हैं और जिसने उन्हें प्रत्यक्ष रूप से अनुभव किया है—यदि उसके साथ हमेशा ऐसा ही होता रहे—तो वह अब वचन के निर्माण का कार्य, या कोई अन्य बोझ, अपने ऊपर लेने में सक्षम नहीं रहेगा; वह, जैसा कि प्रथा है, अपने और आने वाले दिन के बारे में सुनने या चिंता करने से इनकार कर देगा, बल्कि बस एक कोने में बैठ जाएगा, विस्मय और आनंद में। इसीलिए उसे पूर्ण माप नहीं दिया जाता, ताकि वह भाइयों की देखभाल और वचन की सेवा में संलग्न हो सके, जब तक कि बाड़ का विभाजन पहले से ही नहीं तोड़ दिया गया हो और मृत्यु पर विजय प्राप्त नहीं हो गई हो (8:4)।

91. वास्तव में, हालाँकि, यह ऐसा है: संघनित हवा की तरह, एक प्रकार की उदास करने वाली शक्ति एक व्यक्ति पर रहती है और उन्हें थोड़ा ढक लेती है। दीपक जलता और निरंतर चमकता रहता है; फिर भी, मानो एक परदा प्रकाश पर पड़ा रहता है, और इस प्रकार एक व्यक्ति यह स्वीकार करता है कि वह अभी भी अपूर्ण है और पाप से पूरी तरह मुक्त नहीं है; इसलिए, यह कहा जा सकता है कि घेरे की विभाजन-दीवार पहले ही फाड़ दी गई और चकनाचूर हो गई है, फिर भी किसी अन्य संबंध में यह पूरी तरह या स्थायी रूप से नहीं फाड़ी गई है। क्योंकि ऐसे समय होते हैं जब अनुग्रह किसी व्यक्ति को अधिक प्रबल रूप से प्रज्वलित, सांत्वना और शांति देता है, और ऐसे समय भी होते हैं जब यह क्षीण हो जाता है और फीका पड़ जाता है, जैसा कि यह स्वयं व्यक्ति के लाभ के लिए व्यवस्थित करता है। तो फिर, किसने कभी, थोड़े समय के लिए भी, पूर्णता प्राप्त की है, उस अवस्था का स्वाद चखा और अनुभव किया है? आज तक मैं एक भी ऐसे ईसाई को नहीं जानता जो पूर्ण या मुक्त हो। इसके विपरीत, भले ही कोई अनुग्रह में विश्राम पा ले, रहस्यों और प्रकटवाक्यों को प्राप्त कर ले, और अनुग्रह की महान मिठास का अनुभव कर ले, पाप फिर भी उनमें निवास करता है। ऐसे लोग, अपने भीतर अनुग्रह और प्रकाश की प्रचुरता के कारण, स्वयं को स्वतंत्र और सिद्ध मानते हैं, लेकिन वे इस बात में भ्रमित हैं, क्योंकि उन्हें उसी अनुग्रह द्वारा अनुभवहीनता के कारण भटका दिया जाता है जो उनके भीतर कार्य कर रहा है। और मैंने अभी तक एक भी मुक्त व्यक्ति नहीं देखा है; और, चूँकि मैं स्वयं भी अन्य समयों में कुछ हद तक उस स्तर तक पहुँच चुका हूँ, मैं यह समझ और जान गया हूँ कि कोई भी पूर्ण व्यक्ति क्यों नहीं है (8, 5)।

९२. हमें बताइए, आप किस चरण में हैं? – अब, क्रूस के चिह्न के बाद, अनुग्रह इस प्रकार कार्य करता है और सभी अंगों तथा हृदय को शांत कर देता है कि आत्मा, परम आनंद के कारण, एक हानिरहित शिशु के समान हो जाती है, और एक व्यक्ति अब न तो किसी यूनानी, न यहूदी, न पापी और न ही सामान्य व्यक्ति को निन्दित करता है, परंतु आंतरिक मनुष्य सभी को शुद्ध नेत्रों से देखता है और संपूर्ण जगत पर आनन्दित होता है, और हर तरह से

यूनानियों और यहूदियों दोनों का सम्मान करने और प्रेम करने की इच्छा रखता है। किसी अन्य समय, वह, राजाओं का पुत्र, परमेश्वर के पुत्र में उतनी ही दृढ़ आशा रखता है जितनी अपने पिता में रखता है। उसके सामने दरवाज़े खुल जाते हैं, और वह कई आवासों में प्रवेश करता है; और जैसे ही वह प्रवेश करता है, उसके सामने फिर से उतनी ही संख्या में दरवाज़े खुल जाते हैं—उदाहरण के लिए, सौ आवासों से निकलकर सौ और आवासों में—और वह समृद्ध हो जाता है; और जितना वह समृद्ध होता है, उतने ही नए चमत्कार उसके सामने समान अनुपात में प्रकट होते हैं। एक पुत्र और वारिस के रूप में, उसे वह सौंपा गया है जिसे मानव स्वभाव व्यक्त नहीं कर सकता, न ही होंठों या जीभ से कहा जा सकता है (8:6)।

7. ईसाई पूर्णता का सर्वोच्च स्तर

1. भविष्यवक्ता यहेजकेल ने उस दिव्य और महिमामय दर्शन का वर्णन किया जिसे उन्होंने देखा था, और इसे अभिव्यक्त न की जा सकने वाली रहस्यों से भरा एक दर्शन बताया। क्योंकि उन्होंने मैदान में एक करूबों का रथ देखा, जिसे चार आध्यात्मिक प्राणियों द्वारा खींचा जा रहा था। प्रत्येक जीवित प्राणी के चार मुख थे: एक सिंह का मुख, दूसरा गरुड़ का मुख, तीसरा बछड़े का मुख, और चौथा मनुष्य का मुख। और प्रत्येक मुख के पंख थे, इसलिए यह बताना असंभव था कि कौन सा पक्ष सामने का था या पीछे का। *'उनकी जाँघें' 'आँखों से भरी थीं'*, और उनकी छाती भी आँखों से भरी थी, और कोई ऐसी जगह नहीं थी जो आँखों से भरी न हो। प्रत्येक मुख के पास तीन पहिये थे, जैसे एक पहिये के भीतर दूसरा पहिया हो, और पहियों के भीतर एक आत्मा थी। और भविष्यवक्ता ने देखा कि जो मानवीय आकृति प्रतीत होती थी, उसके पैर नीलम के समान थे। यह रथ (अर्थात्, करूब और जीवित प्राणी) प्रभु को अपने ऊपर विराजमान किए हुए था। जहाँ भी वह जाना चाहता था, जीवित प्राणी उसी दिशा में अपने मुख मोड़ लेते थे। और भविष्यवक्ता ने देखा, मानो खरूबीम के पंखों के नीचे, *एक 'मानवीय हाथ'* जो उनका सहारा देता था और उन्हें उठाए हुए था (यहे. 1:5–28 और अध्याय 10)। (1:1)।

2. जो कुछ भविष्यवक्ता ने अपनी दृष्टि में देखा वह सत्य था और इसमें कोई संदेह नहीं था, फिर भी यह किसी और चीज़ की ओर संकेत करता था; इसने किसी रहस्यमय और दिव्य चीज़ का पूर्वाभास दिया, एक रहस्य जो वास्तव में पुराने युगों से छिपा हुआ था, लेकिन अंतिम दिनों में, मसीह के आने पर प्रकट हुआ। नबी ने उस आत्मा के रहस्य को देखा जो अपने प्रभु को ग्रहण करने और उनकी महिमा का सिंहासन बनने के लिए नियत थी। क्योंकि आत्मा, जिसे आत्मा—अपना सिंहासन और वासस्थान बनाकर—अपनी ज्योति में सहभागी होने के योग्य समझा है और अपनी अगणित महिमा की सुन्दरता से प्रकाशित किया है, वह पूरी तरह से ज्योति, पूरी तरह से एक मुख, पूरी तरह से एक नेत्र बन जाती है; इसका एक भी अंग ऐसा नहीं है जो आध्यात्मिक नेत्रों की ज्योति से भरा न हो; अर्थात्, इसमें कुछ भी अंधेरा नहीं है, बल्कि यह पूरी तरह से प्रकाश और आत्मा से बना है; यह पूरी तरह से आँखों से भरा है और इसका कोई अंतिम या पिछला हिस्सा नहीं है, बल्कि यह हर कोण से एक चेहरे के रूप में दिखाई देता है, क्योंकि मसीह के प्रकाश की महिमा की अनुपम सुंदरता इस पर उतरी है और इसमें निवास करती है। और जैसे सूर्य सर्वत्र एक समान है, उसका कोई अंतिम या अपूर्ण भाग नहीं है, बल्कि समान भागों से मिलकर बना है, वह पूरी तरह से प्रकाश से दमकता है, और वह स्वयं प्रकाश है; या आग की तरह—अर्थात् आग का प्रकाश ही— पूरी तरह से स्वयं के समान और जिसमें न तो कोई पहला और न ही कोई अंतिम, न ही कोई बड़ा और न ही कोई छोटा हिस्सा हो—उसी प्रकार आत्मा भी, मसीह के मुख की ज्योति की महिमा की अनुपम सुंदरता से पूरी तरह से प्रकाशित होकर, और पवित्र आत्मा के साथ पूरी तरह से एकता में प्रवेश कर, और परमेश्वर का निवास स्थान और सिंहासन बनने के लिए योग्य समझी जाकर, पूरी तरह से एक नेत्र, पूरी तरह से प्रकाश बन जाती है, पूरी तरह से एक मुख, पूरी तरह से महिमा, पूरी तरह से आत्मा, क्योंकि मसीह ने उसे आध्यात्मिक सुंदरता से तैयार, व्यवस्थित और सुसज्जित किया है; वही जो उसे धारण करता, मार्गदर्शन करता, बनाए रखता और उठाता है। क्योंकि कहा गया है कि *'एक मनुष्य का हाथ'* करूबों के नीचे था (यहे. 1:8)। मसीह स्वयं आत्मा को वहन भी करते हैं और उसका मार्गदर्शन भी करते हैं (1:2)।

3. रथ को धारण करने वाले चार जीवित प्राणी आत्मा की सार्वभौम बौद्धिक शक्तियों का प्रतिनिधित्व करते थे। जैसे बाज़ पक्षियों पर, सिंह जंगली जानवरों पर, बैल सौम्य जानवरों पर और मनुष्य सभी प्राणियों पर शासन करता है, वैसे ही आत्मा में भी अधिक राजसी बौद्धिक शक्तियाँ हैं, अर्थात् इच्छा, विवेक, बुद्धि और प्रेम की शक्ति। आत्मा का रथ इन्हीं द्वारा शासित होता है; इनमें परमेश्वर वास करते हैं। बेशक, एक अन्य व्याख्या के अनुसार, यह संतों की स्वर्गीय कलीसिया को संदर्भित करता है। और जैसे पैगंबर वहाँ जानवरों के बारे में कहते हैं, कि उनकी ऊँचाई बहुत विशाल थी, कि वे आँखों से भरे थे, और कोई भी उनकी आँखों की संख्या नहीं गिन सकता था या उनकी ऊँचाई को माप नहीं सकता था, क्योंकि इस ज्ञान की अनुमति नहीं दी गई है—जैसे कि हर व्यक्ति को आकाश में तारे देखने और

उन पर आश्चर्य करने की अनुमति दी गई है, फिर भी किसी के लिए भी उनकी संख्या जानना असंभव है— इसी तरह, यह उन सभी को प्रदान किया गया है जो संतों की स्वर्गीय कलीसिया में प्रवेश करने और उसमें आनंद पाने का प्रयास करना चाहते हैं; लेकिन संतों की संख्या को जानना और समझना—यह एकमात्र ईश्वर का है। जो उस रथ और उपर्युक्त जीवों के सिंहासन पर विराजमान है—या हर उस आत्मा के भीतर जो उसकी सिंहासन और आसन बन गई है, एक नेत्र और प्रकाश बनकर—वह स्वयं उस पर विराजमान होकर, आत्मा की लगाम से शासन करता है और उसे उसी प्रकार मार्गदर्शन देता है, जैसा वह स्वयं जानता है। जैसे आध्यात्मिक पशु वहाँ नहीं गए जहाँ वे स्वयं जाना चाहते थे, बल्कि वहाँ गए जहाँ उन्हें बैठाने वाला और उनका मार्गदर्शन करने वाला जानता और इच्छुक था, वैसे ही यहाँ भी वह स्वयं शासन करता और मार्गदर्शन करता है, और अपनी आत्मा के माध्यम से मार्ग दिखाता है। इस प्रकार, आत्मा स्वर्ग में अपनी इच्छा से, जब चाहें, तब नहीं जाती, बल्कि परमेश्वर आत्मा को, शरीर से अलग होकर, विचारों में स्वर्ग की ओर प्रयासरत रहने का निर्देश देते हैं; और फिर, जब उनकी इच्छा होती है, तो यह शरीर में और अपने विचारों में चलती है, और उनकी ही इच्छा से पृथ्वी के छोर तक पहुँच जाती है, और वह उसे रहस्य प्रकट करते हैं। हे वास्तव में उत्कृष्ट, भले, एकमात्र और सच्चे शासक! इस प्रकार, यदि आत्मा अब महिमामय हो गई है और आत्मा के साथ एकता में प्रवेश कर गई है, तो देह भी पुनरुत्थान में सहभागी होंगे (1:3)।

४. जहाँ तक धर्मी लोगों की आत्माओं के स्वर्ग का प्रकाश बनने की बात है, प्रभु ने स्वयं प्रेरितों से कहा: *'तुम जगत का प्रकाश हो'* (मत्ती ५:१४)। स्वयं उन्हें प्रकाश बनाकर, उन्होंने आज्ञा दी कि जगत उनका द्वारा प्रकाशित हो, और कहते हैं: *'कोई दीपक जलाकर उसे माप के पात्र के नीचे नहीं रखता, परन्तु दीवट पर रखता है, कि जो कोई भी अहालेबेल में है, वह प्रकाश पा सके। इसी प्रकार, तुम्हारा प्रकाश मनुष्यों के साम्हने चमके'* (मत्ती 5:15–16)। और इसका अर्थ है: जो वरदान तुमने मुझसे प्राप्त किया है, उसे छिपाओ नहीं, बल्कि उसे उन सभी के साथ साझा करो जो इसे चाहते हैं। और फिर: *'आँख शरीर का दीपक है: यदि तेरी आँख साफ है, तो तेरा सारा शरीर प्रकाश से भर जाएगा; परन्तु यदि तेरी आँख बुरी है, तो तेरा सारा शरीर अँधेरे से भर जाएगा। सो यदि तुझ में जो प्रकाश है, वह अँधेरा हो जाए, तो वह अँधेरा कितना बड़ा होगा!'* (मत्ती 6:22-23)? जैसे आँखें शरीर का प्रकाश होती हैं—और जब वे स्वस्थ होती हैं, तो पूरा शरीर प्रकाशमान हो जाता है, लेकिन जब आँखों में कुछ चला जाता है और वे धुंधली हो जाती हैं, तो पूरा शरीर अंधकार में हो जाता है—वैसे ही प्रेरितों को पूरी दुनिया के लिए आँखों और प्रकाश के रूप में नियुक्त किया गया है। इसलिए, प्रभु ने उन्हें आज्ञा देते हुए कहा: 'यदि तुम, संसार की रोशनी होकर, दृढ़ बने रहो और पीछे न हटो, तो संसार का सारा शरीर प्रकाशित हो जाएगा। परन्तु यदि तुम, जो जगत का प्रकाश हो, मुरझा जाओ, तो अँधेरा—अर्थात् जगत का क्या होगा?" इस प्रकार, प्रेरितों ने प्रकाश बनकर, विश्वास करने वालों के लिए प्रकाश का काम किया, और उनके हृदयों को उसी पवित्र आत्मा के स्वर्गीय प्रकाश से प्रबुद्ध किया, जिससे वे स्वयं प्रबुद्ध हुए थे (1:4)।

५. जिन्होंने पुराने, सांसारिक मनुष्य को त्याग दिया, और जिनसे यीशु ने अंधकार के राज्य के वस्त्र उतार दिए, उन्हें नए, स्वर्गीय मनुष्य, यीशु मसीह में वस्त्र पहनाए गए। और प्रभु ने उन्हें अनुत्तरनीय प्रकाश के राज्य के वस्त्रों में, विश्वास, आशा, प्रेम, आनन्द, शांति, दया और कृपा के वस्त्रों में, और इसी प्रकार प्रकाश, जीवन और अकथनीय विश्राम के अन्य सभी दिव्य, जीवन-दायक वस्त्रों में वस्त्र पहनाए, ताकि जैसे परमेश्वर प्रेम, आनन्द, शांति, भलाई और दया, उसी प्रकार नया मनुष्य भी अनुग्रह से ऐसा ही बन सके (2:4–5)।

6. पूर्ण मसीही, जिन्हें पूर्णता के स्तर में प्रवेश करने और राजा के समीप आने के लिए योग्य ठहराया गया है, हमेशा स्वयं को मसीह के क्रूस के लिए एक भेंट के रूप में अर्पित करते हैं। जैसे नबियों के समय में अभिषेक को सर्वोच्च सम्मान दिया जाता था, क्योंकि राजाओं और नबियों का अभिषेक किया जाता था, वैसे ही अब आध्यात्मिक लोग, जो स्वर्गीय अभिषेक से अभिषिक्त हैं, अनुग्रह से ईसाई बन जाते हैं, ताकि वे स्वर्गीय रहस्यों के राजा और नबी बन सकें। वे पुत्र, स्वामी और देवता तीनों हैं, जिन्हें बाँधा गया, बंदी बनाकर ले जाया गया, गिराया गया, सूली पर चढ़ाया गया, और एक उपहार के रूप में अर्पित किया गया। यदि तेल से अभिषेक, जैसे कि वह जो एक सांसारिक पौधे, एक दृश्यमान वृक्ष से प्राप्त होता है, में इतनी शक्ति थी कि अभिषिक्त व्यक्ति निस्संदेह अपना पद प्राप्त कर लेता था (क्योंकि यह सभी द्वारा स्वीकार किया जाता था कि उन्हें राजा के रूप में स्थापित किया गया था, और अभिषिक्त दाऊद को तुरंत उत्पीड़न और क्लेश का सामना करना पड़ा, फिर भी सात वर्षों के बाद वह राजा बना), तो उन लोगों को तो और भी अधिक उस परमेश्वर की मुहर प्राप्त होती है, जिनके मन और आंतरिक स्वभाव को आनंद के स्वर्गीय और आध्यात्मिक तेल से अभिषेक किया गया है—जो ज्ञान प्रदान करता है और प्रसन्नता लाता है—और उन्हें उस अक्षय राज्य और अनंत शक्ति की मुहर प्राप्त होती है, जो आत्मा की प्रतिज्ञा है, – स्वयं पवित्र आत्मा और

सांत्वनादाता (तब यह समझो कि सांत्वनादाता दुख में पड़े लोगों को सांत्वना भी देता है और आनन्द से भी भरता है)। (17:1)।

7. जो स्वर्गीय रोपण के तेल, जीवन के वृक्ष—यीशु मसीह—से अभिषिक्त हैं, उन्हें पूर्णता के माप, अर्थात् राज्य और पुत्रों के रूप में गोद लिए जाने में प्रवेश करने के योग्य माना जाता है; क्योंकि इस संसार में रहते हुए भी, वे पहले ही स्वर्गीय राजा के रहस्यों में सहभागी हैं, सर्वशक्तिमान के सामने निर्भीकता रखते हैं, और उसके महल में प्रवेश करते हैं, जहाँ स्वर्गदूत और संतों की आत्माएँ वास करती हैं। क्योंकि यद्यपि उन्होंने अभी तक आने वाले युग में उनके लिए तैयार की गई पूरी विरासत प्राप्त नहीं की है, परन्तु अब प्राप्त हुए प्रतिज्ञा द्वारा, उन्होंने अपना स्थान इस प्रकार सुरक्षित कर लिया है जैसे कि वे पहले ही मुकुट पहनकर राज्य कर रहे हों; और, आत्मा की प्रचुरता और निर्भीकता के द्वारा, उन्हें यह आश्चर्यजनक नहीं लगता कि वे मसीह के साथ राज्य करेंगे। ऐसा क्यों है? क्योंकि, जब वे अभी भी देह में थे, तब भी उनके भीतर पहले से ही उस मिठास का अनुभव और उस सामर्थ्य का कार्य था (17:2)।

8. जैसे, संसार के अंत में, जब यह दृश्यमान संसार समाप्त हो जाएगा, धर्मी पहले से ही राज्य में, प्रकाश और महिमा में रह रहे होंगे, और उन्हें पिता के दाहिने हाथ पर मसीह को हमेशा के लिए महिमा में रहते हुए देखने के अलावा कुछ भी दिखाई नहीं देगा, वैसे ही ये भी, जो अब पहले से ही उस युग में उठा लिए गए और बंदी बना लिए गए हैं, वहाँ की सभी सुंदरताओं और अद्भुत बातों पर मनन करते हैं। क्योंकि जब हम अभी भी पृथ्वी पर हैं, तब स्वर्ग में हमारा एक निवास है, उस संसार के निवासी और नागरिक के रूप में हमारे मन और हमारे अंतरंग में। जैसे शुद्ध होने पर दृश्यमान आँख हमेशा सूर्य को स्पष्ट रूप से देखती है, वैसे ही मन, पूरी तरह से शुद्ध हो जाने पर, हमेशा मसीह के प्रकाश की महिमा को निहारता है और दिन-रात प्रभु के साथ रहता है, जैसे प्रभु का शरीर, परमेश्वरत्व के साथ एक हो जाने पर, हमेशा पवित्र आत्मा के साथ रहता है। लेकिन लोग इस अवस्था को एक साथ नहीं प्राप्त करते, और तब भी केवल परिश्रम, दुख और महान प्रयास (17:4) के माध्यम से ही प्राप्त करते हैं।

९. जैसे प्रभु ने, सभी प्रभुत्व और अधिकार को अलग रखकर, देह धारण किया, वैसे ही ईसाई भी पवित्र आत्मा से स्वयं को आच्छादित करते हैं और शांति में निवास करते हैं। भले ही बाहर से संघर्ष उत्पन्न हो, और शैतान घाव पहुँचाए, वे प्रभु की शक्ति द्वारा आंतरिक रूप से संरक्षित रहते हैं और शैतान के हमलों से अविचलित रहते हैं। जब शैतान ने प्रभु को जंगल में चालीस दिन तक परीक्षा में डाला, तो क्या उसने बाहरी रूप से उनके शरीर पर हमला करके उन्हें कोई हानि पहुँचाई? परमेश्वर उस शरीर में थे। इसी प्रकार, मसीही भी, भले ही बाहरी रूप से परीक्षा में डाले जाएँ, आंतरिक रूप से परमेश्वरत्व की शक्ति से भरपूर होते हैं और उन्हें कोई हानि नहीं पहुँचती। लेकिन यदि कोई इस स्तर तक पहुँच गया है, तो वह मसीह के पूर्ण प्रेम और परमेश्वरत्व की पूर्ति तक पहुँच गया है। और जो ऐसा नहीं है, वह अभी भी अपने भीतर एक लड़ाई लड़ता है। एक क्षण वे प्रार्थना में विश्राम पाते हैं, जबकि दूसरे क्षण वे दुख और संघर्ष में होते हैं। क्योंकि, यह प्रभु की इच्छा है—चूँकि एक व्यक्ति अभी भी एक शिशु है—कि प्रभु उन्हें इन संघर्षों के माध्यम से मार्गदर्शन करें। और भीतर, मानो, दो पहलू प्रकट होते हैं: प्रकाश और अंधकार, शांति और दुख; एक क्षण वे शांति से प्रार्थना करते हैं, जबकि दूसरे क्षण वे उथल-पुथल में होते हैं (26, 15)।

10. क्या तुम नहीं सुन सकते कि पौलुस क्या कह रहा है? 'यदि मेरे पास सभी वरदान हों, *और मैं अपना शरीर जलाने के लिए दे दूँ, और यदि मैं स्वर्गदूतों की भाषाओं में बोलूँ, पर प्रेम न रखूँ, तो मैं कुछ भी नहीं हूँ*' (1 कुरिन्थियों 13:1–3)। क्योंकि ये वरदान केवल पूर्णता की ओर ले जाते हैं, और जिन्होंने इन्हें प्राप्त किया है, यद्यपि वे प्रकाश में हैं, फिर भी शिशु हैं। भाइयों में से कई इस स्तर तक पहुँच गए हैं और उनमें चंगा करने, प्रकटवाणी और भविष्यवाणी करने की प्रतिभाएँ हैं; परन्तु चूँकि वे अभी तक उस सिद्ध प्रेम तक नहीं पहुँचे हैं, जिसमें *'पूर्णता का बन्धन'* (कुलुस्सियों 3:14) निहित है, उनके भीतर कलह उत्पन्न हो गई, और निराश होकर वे गिर पड़े। परन्तु जो कोई सिद्ध प्रेम को प्राप्त करता है, वह अनुग्रह का बंदी और कैदी बन जाता है। और जो कोई धीरे-धीरे प्रेम के पूर्ण माप के समीप आता है, परन्तु अभी तक प्रेम का बंदी बनने के बिंदु तक नहीं पहुँचा है, वह कलह और गिरने के खतरे में बना रहता है; और यदि वह अपनी रक्षा नहीं करता, तो शैतान उसे नीचे गिरा देगा (26:16)।

11. सभी को यह जानना चाहिए कि ऐसी आँखें हैं जो इन आँखों का सबसे भीतरी हिस्सा हैं, और ऐसा सुनना है जो इस सुनने का सबसे भीतरी हिस्सा है। और जैसे ये आँखें इंद्रियों से देखती हैं और एक मित्र या प्रियजन के चेहरे को पहचानती हैं, वैसे ही एक योग्य और विश्वासयोग्य आत्मा की आँखें, जो दिव्य प्रकाश से प्रबुद्ध हैं, आध्यात्मिक रूप से सच्चे मित्र, प्रभु के सबसे प्रिय और सबसे अधिक प्रतीक्षित वर को देखती और पहचानती हैं, जैसे ही आत्मा पूजा के योग्य आत्मा से प्रकाशित होती है। और इस प्रकार, आत्मा, अपने मन में उस लालायित और अद्वितीय,

अनुपम सुंदरता का चिंतन करते हुए, दिव्य प्रेम से भेदी हो जाती है, सभी आध्यात्मिक सद्गुणों के अनुरूप हो जाती है, और परिणामस्वरूप उस प्रभु के लिए असीम और अक्षय प्रेम प्राप्त करती है जिसकी वह लालसा करती है (28, 5)।

12. मूसा के द्वारा दिए गए विधान की छाया में, परमेश्वर ने आज्ञा दी कि सब्त के दिन सभी को विश्राम करना चाहिए और कोई काम नहीं करना चाहिए। और यह प्रभु द्वारा आत्मा को प्रदान किए गए सच्चे विश्राम का एक पूर्वाभास और छाया थी। क्योंकि आत्मा, लज्जास्पद और अशुद्ध विचारों से मुक्त होने के लिए योग्य समझी जाकर, सच्चा विश्राम करती है और सच्ची विश्राम में विश्राम करती है, सभी अंधकारमय कर्मों से निष्क्रिय और मुक्त रहती है। क्योंकि उस आदर्श विश्राम-दिन में, यद्यपि वे देह से विश्राम करते थे, परन्तु उनकी आत्माएँ कपट और दुष्टताओं से बँधी थीं; परन्तु यह सच्चा विश्राम-दिन आत्मा का सच्चा विश्राम है, जो शैतानी विचारों से मुक्त और शुद्ध रहती है, और प्रभु के अनन्त शान्ति और आनन्द में विश्राम करती है (35:1)।

13. क्योंकि प्रभु मनुष्य को विश्राम के लिए बुलाते हैं, कहते हुए: *'मेरे पास आओ, हे सब जो परिश्रमित और बोझिल हैं, और मैं तुम्हें विश्राम दूँगा'* (मत्ती 11:28)। और जो आत्माएँ आत्मसमर्पण करती हैं और उसके पास आती हैं, उन्हें वह इन भारी, बोझिल और अशुद्ध विचारों से विश्राम देता है; वे सभी अधर्म से मुक्त हो जाती हैं, सच्चे, सुखद और पवित्र सब्बाथ का पालन करें, अकथनीय आनंद और हर्ष का एक आध्यात्मिक उत्सव मनाएँ, और एक शुद्ध हृदय से, एक ऐसी सेवा करें जो शुद्ध और परमेश्वर को प्रसन्न करने वाली हो। और यही सच्चा और तेजस्वी सब्बाथ है। इसलिए हम भी परमेश्वर से विनती करें कि हम भी इस विश्राम में प्रवेश करें, लज्जाजनक, कपटी और व्यर्थ विचारों से मुक्त हों, और इस प्रकार शुद्ध हृदय से परमेश्वर की सेवा करने और पवित्र आत्मा के पर्व का उत्सव मनाने में समर्थ हों। और धन्य है वह जो इस विश्राम में प्रवेश करता है (35:1, 3)।

14. जब आत्मा प्रभु से चिपकती है, और प्रभु, अपनी दया और प्रेम में, आकर उससे चिपकते हैं, और उसकी समझ निरंतर प्रभु की कृपा में बनी रहती है, तो आत्मा और प्रभु एक आत्मा, एक मिलन, एक मन बन जाते हैं। आत्मा का शरीर पृथ्वी पर ही रहता है, जबकि उसका मन पूरी तरह से स्वर्गीय यरूशलेम में निवास करता है, तीसरे स्वर्ग में आरोहण करता है, प्रभु से एकीकृत रहता है, और वहाँ उसकी सेवा करता है (46:3)।

१५. और वह स्वयं, जो स्वर्गीय नगर में उच्च महिमा के सिंहासन पर विराजमान है, शरीर के भीतर आत्मा के साथ पूरी तरह से वास करता है, क्योंकि उसने उसकी प्रतिमा को स्वर्ग में संतों के स्वर्गीय नगर—यरूशलेम—में स्थापित किया है, और उसकी दिव्यता के अगोचर प्रकाश की वास्तविक प्रतिमा को उसके शरीर के भीतर स्थापित किया है; वह शरीर के नगर में उसकी सेवा करता है, और वह स्वर्गीय नगर में उसकी सेवा करती है। आत्मा स्वर्ग में उसकी विरासत बन गई है, और उसने उसे पृथ्वी पर अपनी विरासत के रूप में स्वीकार किया है। क्योंकि प्रभु आत्मा की विरासत बन जाता है, और आत्मा प्रभु की विरासत बन जाती है। अंधकारमय पापियों के विचार और मन भी शरीर से बहुत दूर हो सकते हैं; उनमें पलक झपकते ही बड़ी दूरियाँ तय करने, दूर के देशों की यात्रा करने की शक्ति होती है; और यह कोई असामान्य बात नहीं है कि शरीर जमीन पर लोटता रहे, जबकि मन प्रियजन के साथ किसी अन्य लोक में निवास करे, और स्वयं को, मानो, वहाँ ही जीवित देखे। और यदि एक पापी की आत्मा इतनी सूक्ष्म और तीव्र-पंख वाली है, और कुछ भी उसके मन को दूरस्थ स्थानों में होने से नहीं रोकता, तो उस आत्मा के बारे में क्या कहा जा सकता है, जिससे पवित्र आत्मा की शक्ति द्वारा अंधकार का आवरण हटा दिया गया है, जब उसकी विवेकपूर्ण आँखें स्वर्गीय प्रकाश से प्रबुद्ध हो जाती हैं, और अनुग्रह से शुद्ध होकर , दुष्टता की कामनाओं से पूरी तरह मुक्त हो जाता है, आत्मा में स्वर्गिक प्रकाश से उसकी विवेकपूर्ण आँखें प्रबुद्ध हो जाती हैं, और वह विचार में इतना विस्तृत हो जाता है कि वह सर्वत्र होता है और जहाँ और जब चाहे, मसीह की सेवा करता है (46, 4)।

16. प्रेरित कहते हैं: *'ताकि तुम सभी संतों के साथ यह समझ सको कि चौड़ाई और लंबाई और ऊँचाई और गहराई क्या है, और मसीह के उस प्रेम को जान सको जो ज्ञान से परे है, ताकि तुम परमेश्वर की सारी परिपूर्णता से भर जाओ'* (इफिसियों 3:18-19)। आत्मा के अकथनीय रहस्यों पर मनन करें, जिनसे प्रभु उस पर छाए अंधकार को दूर करते हैं और उसे प्रकट करते हैं, और स्वयं को उसके सामने प्रकट करते हैं। कैसे वह उसके मन के विचारों को चौड़ाई, लंबाई, गहराई और ऊंचाई में, सारी दृश्य और अदृश्य सृष्टि में फैलाता और बढ़ाता है (46:5)।

8. आने वाली जीवन

1. जब मानव आत्मा शरीर से विदा होती है, तब एक महान रहस्य पूरा होता है। क्योंकि यदि वह पापों की दोषी होती है, तो राक्षसों और दुष्ट स्वर्गदूतों की भीड़ आ जाती है, और अंधकार की शक्तियाँ उस आत्मा को पकड़कर अपने राज्य में ले जाती हैं। और किसी को इस पर आश्चर्य नहीं करना चाहिए, क्योंकि यदि इस जीवन और इस युग में आत्मा ने उनके अधीनता स्वीकार की, उनकी आज्ञा मानी और उनकी दास बनी, तो इस संसार से प्रस्थान करते

समय वे उसे और भी अधकि अपने वश में रखेंगे और वह उनकी शक्तकि अधीन रहेगी। जहाँ तक धर्मी लोगों का प्रश्न है, आपको यह कल्पना करनी चाहिए कि मामला ऐसा ही है। यहाँ तक कि अब भी, ईश्वर के पवित्र सेवकों के साथ स्वर्गदूत होते हैं, और पवित्र आत्माएँ उन्हें घेरे रहती हैं और उनकी रक्षा करती हैं। और जब वे शरीर से विदा होते हैं, तो स्वर्गदूत उनकी आत्माओं को अपने लोक में, शुद्ध युग में स्वीकार करते हैं, और इस प्रकार उन्हें प्रभु के पास ले जाते हैं (22)।

२. सच्ची मृत्यु भीतर है—हृदय में—और यह छिपी हुई है; इसी से भीतरी मनुष्य मरता है। इसलिए, यदि कोई मृत्यु से गुज़रकर छिपे हुए जीवन में आ गया है, तो वह वास्तव में हमेशा के लिए जीता है और नहीं मरता। भले ही ऐसे लोगों के शरीर अस्थायी रूप से नष्ट हो जाएँ, वे महिमा में फिर से उठाए जाएँगे, क्योंकि वे पवित्र किए गए हैं। इसीलिए हम मसीहियों की मृत्यु को 'नींद' और 'विदाई' कहते हैं (15, 37)।

3. जैसे एक व्यापारी, जो दूर देश से अपनी संपत्ति कई गुना बढ़ाकर लौटता है, अपने घर वालों को अपने लिए मकान, बगीचे और आवश्यक कपड़े खरीदने का संदेश भेजता है; और जब वह अपनी मातृभूमि में पहुँचता है, तो वह अपने साथ महान धन-संपत्ति लाता है, और उसके घर वाले और रिश्तेदार उसे बड़ी खुशी से स्वागत करते हैं—ऐसे ही आध्यात्मिक मामलों में भी है। जब अन्य लोग अपने लिए स्वर्गीय धन-संपत्ति प्राप्त करते हैं, तो उनके सह-नागरिक—अर्थात् पवित्र स्वर्गदूतों की आत्माएँ—इस बारे में जानकर चकित हो उठते हैं, और कहते हैं: 'पृथ्वी पर हमारे भाइयों ने महान धन-संपत्ति प्राप्त कर ली है।' ऐसे लोग, अपने प्रस्थान पर, प्रभु के साथ होकर, बड़े आनन्द से स्वर्ग में आरोहण करते हैं, और जो प्रभु के साथ निवास करते हैं, वे उन्हें ग्रहण करते हैं, और उनके लिए वहाँ दीप्तिमान और बहुत मूल्यवान निवास, बगीचे और वस्त्र तैयार कर चुके होते हैं (16:8)।

४. यदि कोई व्यक्ति संघर्ष के बीच में ही—जब उसके मन में पाप और अनुग्रह दोनों कार्यरत हों—इस संसार से चला जाता है, तो वह व्यक्ति जो दोनों से घिरा हुआ है, कहाँ जाता है? वह उस स्थान पर जाता है जहाँ उसका मन अपना लक्ष्य और अपना प्रिय निवास रखता है। यदि आपको दुख या आध्यात्मिक संघर्ष का सामना करना पड़े, तो आपको बस उनका विरोध करना चाहिए और उनसे घृणा करनी चाहिए। क्योंकि संघर्ष को उत्पन्न करना आपका काम नहीं है, बल्कि उससे घृणा करना आपका काम है। और फिर प्रभु, आपके मन को देखकर—क्योंकि आप प्रयास करते हैं और प्रभु से अपने पूरे हृदय से प्रेम करते हैं—एक ही घड़ी में आपकी आत्मा से मृत्यु को हटा देते हैं (यह उनके लिए कठिन नहीं है) और आपको अपनी छाती से लगा लेते हैं और प्रकाश में ले आते हैं; एक ही क्षण में वह आपको अंधकार के जबड़ों से छीन लेते हैं और तुरंत आपको अपने राज्य में ले आते हैं। ईश्वर के लिए एक ही क्षण में सब कुछ पूरा करना आसान है, बशर्ते कि आप उनसे प्रेम करते हों। ईश्वर किसी व्यक्ति के कर्मों की अपेक्षा करते हैं, क्योंकि आत्मा को दिव्य संगति के योग्य माना जाता है (26:18)।

५. एक गर्भवती पत्नी, कहे तो, अपने बच्चे को अँधेरे में और एक अशुद्ध स्थान में अपने भीतर धारण करती है। और जब बच्चा अंततःउचित समय पर गर्भ से बाहर आता है, तो वह आकाश, पृथ्वी और सूर्य के नीचे एक नया प्राणी देखती है, जैसा उसने पहले कभी नहीं देखा होता, और तुरंत ही दोस्त और रिश्तेदार, प्रसन्न चेहरों के साथ, बच्चे को अपनी बाहों में ले लेते हैं। लेकिन यदि, किसी जटिलता के कारण, गर्भ में ही शिशु की मृत्यु हो जाए, तो इस उद्देश्य के लिए नियुक्त डॉक्टरों के लिए तेज औजारों का सहारा लेना आवश्यक हो जाता है, और फिर शिशु मृत्यु से मृत्यु में, अंधकार से अंधकार में चला जाता है। यही बात आध्यात्मिक क्षेत्र पर भी लागू होती है। जिन लोगों ने अपने भीतर दिव्य बीज प्राप्त किया है, वे उसे अदृश्य रूप से धारण करते हैं; फिर भी, उनके भीतर निवास करने वाले पाप के कारण, वे इसे अंधेरी और भयानक जगहों में छिपाए रखते हैं। इसलिए, यदि वे स्वयं की रक्षा करते हैं और बीज की रखवाली करते हैं, तो वे उचित समय पर इसे खुले तौर पर प्रकट करेंगे; और अंत में, उनके शरीर के साथ, स्वर्गदूत और सभी स्वर्गीय सेनाएं उन्हें प्रसन्न चेहरों से प्राप्त करेंगी। लेकिन यदि कोई वीरता से लड़ने के लिए मसीह का कवच पहनने वाला ढीला पड़ जाए, तो वह जल्द ही अपने शत्रुओं के हाथों में पड़ जाएगा और, अपने शरीर से अलग होने पर, वह उस अंधकार से, जो उसे अभी घेरे हुए है, एक और, अधिक भयानक अंधकार और विनाश में चला जाएगा (43, 5)।

6. जैसे कर वसूलने वाले, संकरी गलियों में बैठकर, आने-जाने वालों को रोकते और सताते हैं, वैसे ही दुष्टात्माएँ भी आत्माओं पर नजर रखती हैं और उन्हें रोकती हैं; और यदि आत्माएँ पूरी तरह से शुद्ध नहीं हुई हैं, तो अपने शरीर को छोड़ने पर उन्हें स्वर्गीय निवासों में प्रवेश करने और अपने प्रभु के सामने उपस्थिति होने की अनुमति नहीं दी जाती है, बल्कि उन्हें वायुमंडलीय दुष्टात्माओं द्वारा नीचे ले जाया जाता है। लेकिन जो देह में रहते हैं, वे परिश्रम और महान प्रयास के द्वारा, फिर भी प्रभु से ऊपर से अनुग्रह प्राप्त कर सकते हैं, और वे, एक पुण्य जीवन के द्वारा विश्राम प्राप्त करने वालों के साथ, प्रभु के पास प्रस्थान करेंगे, जैसा कि उन्होंने स्वयं वादा किया है: *'जहाँ मैं हूँ, वहाँ*

मेरा दास भी होगा' (यूहन्ना 12:26), – और वे सर्वकाल तक पिता और पुत्र और पवित्र आत्मा के साथ राज्य करेंगे, अब और सदा, और युगानुयुग! (43, 9)।

७. प्रत्येक व्यक्ति को सभी सद्गुणों में प्रगति करके, इस मंदिर को प्राप्त करने का प्रयास करना चाहिए और यह विश्वास करना चाहिए कि यह यहीं प्राप्त होता है। क्योंकि यदि हमारा सांसारिक मंदिर नष्ट हो जाता है, तो हमारे पास कोई दूसरा मंदिर नहीं है जिसमें हमारी आत्मा निवास कर सके, 'क्योंकि जैसा कहा गया है, *'यदि हम इस सांसारिक तम्बू से वंचित हो जाते हैं, तो हम नग्न नहीं पाए जाएँगे'* (2 कुरिन्थियों 5:3), अर्थात्, हमें पवित्र आत्मा के साथ सहभागिता और एकता से वंचित नहीं किया जाएगा, जिनमें ही एक विश्वासी आत्मा विश्राम पा सकती है। इसलिए, जो हर अर्थ में और पूरी शक्ति से मसीही हैं, वे दृढ़ता से आशा करते हैं और आनंदित होते हैं, जब वे इस देह से विदा होते हैं, कि वे उस *'हथौड़े से न बने मंदिर'* के स्वामी हैं; और यह मंदिर उनमें निवास करने वाली आत्मा की शक्ति है। और यदि देह रूपी मन्दिर नष्ट भी हो जाए, तो वे इसका भय नहीं मानते, क्योंकि उनके पास एक स्वर्गीय, आध्यात्मिक मन्दिर और वह अक्षय महिमा है, जो पुनरुत्थान के दिन देह रूपी मन्दिर को पुनर्स्थापित और गौरवान्वित करेगी; जैसा कि प्रेरित कहते हैं: *'जिसने मसीह को मरे हुओं में से जिलाया, वह उसी की आत्मा के द्वारा, जो हम में वास करती है, हमारे मरणासन्न शरीरों को भी जीवित कर देगा'*, और फिर: *'ताकि यीशु का जीवन हमारे नश्वर शरीर में प्रगट हो'* (2 कुरिन्थियों 4:11), और, *'हमारा नश्वर शरीर भस्म हो जाए'*, जैसा कि कहा गया है (2 कुरिन्थियों 5:4)। (15, 16).

8. अत; आओ हम पृथ्वी पर विश्वास और सदाचार के जीवन द्वारा अपने लिए ऐसा वस्त्र प्राप्त करने का प्रयत्न करें, ताकि हम, शरीर में लिपटे हुए, नग्न न पाए जाएँ; और तब, उस दिन, हमारे शरीर का कुछ भी महिमामय न होगा। क्योंकि जिस सीमा तक कोई व्यक्ति विश्वास और परिश्रम द्वारा पवित्र आत्मा का सहभागी बनने के योग्य समझा गया है, उसी सीमा तक उसका शरीर उस दिन महिमामय होगा। जो कुछ भी आत्मा ने अब अपनी आंतरिक कोष में इकट्ठा किया है, वह तब शरीर के बाहर प्रकट और प्रदर्शित होगा, ठीक वैसे ही जैसे पेड़, जब सर्दियों के बीत जाने के बाद, सूर्य और हवाओं की अदृश्य शक्ति से गर्म हो जाते हैं, तो पत्तियाँ उत्पन्न करते हैं और गिराते हैं, फूल और फल; और जैसे उस समय जंगली फूल पृथ्वी की गहराइयों से निकलकर पृथ्वी और घास को ढकते और सजाते हैं, वैसे ही जैसे लिलियिन के फूल, जिनके बारे में प्रभु ने कहा: *'अपने पूरे वैभव में सुलैमान भी इनमें से किसी एक के समान नहीं सजाया गया था'* (मत्ती 6:29)। क्योंकि यह सब पुनरुत्थान के दिन मसीही के लिए एक उदाहरण, एक आदर्श और एक समानता के रूप में काम करता है (5:17)।

९. इस प्रकार, सभी ईश्वर-प्रेमी आत्माओं के लिए—अर्थात्, सच्चे मसीहियों के लिए—जैंथिकोस का पहला महीना है, जिसे अप्रैल भी कहा जाता है, और यह पुनरुत्थान का दिन है। उस दिन, धार्मिकता के सूर्य की शक्ति से, पवित्र आत्मा की महिमा भीतर से प्रकट होगी, जो संतों के शरीरों को ढक और परिधानित करेगी—वही महिमा जिसे उन्होंने अपनी आत्माओं के भीतर छिपा रखा था। क्योंकि जो कुछ आत्मा ने अब अपने भीतर धारण किया है, वह तब शरीर में प्रकट होगा। यह महीना गर्मियों के महीनों में पहला है (निर्गमन 12:2); यह सभी प्राणियों के लिए आनंद लाता है; यह, पृथ्वी को खोलकर, नंगे पेड़ों को वस्त्र पहनाता है; यह सभी जानवरों के लिए आनंद लाता है; यह सभी के बीच प्रसन्नता फैलाता है; ईसाइयों के लिए, यह जैंटिकोस का पहला महीना है, अर्थात्, पुनरुत्थान का समय, जिसमें उनके शरीर एक अकथनीय प्रकाश से महिमामय हो उठेंगे, जो आज भी उनके भीतर छिपा हुआ है—अर्थात् पवित्र आत्मा की शक्ति से, जो तब उनका वस्त्र, उनका भोजन, उनका पान, उनकी आनन्द, उनकी प्रसन्नता, उनकी शांति, उनका परिधान और उनका अनंत जीवन बन जाएगा। क्योंकि दिव्यता का आत्मा, जिसे वे अपने भीतर ग्रहण करने के लिए पहले ही योग्य ठहराए जा चुके हैं (5:18), तब उनके लिए स्वर्गीय तेज और सुंदरता का वास्तविक सार बन जाएगा।

10. इसलिए, हम में से प्रत्येक को प्रयास और परिश्रम करना चाहिए, सभी सद्गुणों का लगन से अभ्यास करते हुए, प्रभु पर विश्वास करते और उनसे यह याचना करते हुए कि हमारा भीतरी मनुष्य अभी से ही ऐसी महिमा में सहभागी हो, और आत्मा पवित्र आत्मा की ऐसी पवित्रता में सहभागी हो सके; और यह कि दुष्टता की अशुद्धि से शुद्ध होकर, हम पुनरुत्थान के समय हमारे पुनर्जीवित नग्न शरीरों को पहनाने के लिए कुछ पा सकें, उनके लज्जा को ढकने के लिए कुछ, उन्हें जीवित करने और स्वर्गीय राज्य में उन्हें अनंत विश्राम प्रदान करने के लिए कुछ; क्योंकि, पवित्र धर्मग्रंथों के अनुसार, मसीह स्वर्ग से आएँगे और आदम की सभी संतानों को, जो समय की शुरुआत से सोए हुए हैं, उन्हें उठाएँगे, और उन्हें दो भागों में बाँट देंगे; और जो उनके अपने चिह्न—अर्थात् पवित्र आत्मा की मुहर—को धारण करते हैं, उन्हें वह अपने दाहिने हाथ पर रखेंगे, उन्हें अपने होने की घोषणा करते हुए। क्योंकि वह कहते हैं: *'मेरी भेड़ें मेरी आवाज़ सुनती हैं'* (यूहन्ना 10:27), *'और मैं अपनी भेड़ों को जानता हूँ और मेरी भेड़ें मुझे जानती हैं'* (यूहन्ना 10:14)। फिर उनके शरीर उनके अच्छे कर्मों के लिए दिव्य महिमा से परिधानित होंगे, और वे स्वयं उस आध्यात्मिक

महिमा से परिपूर्ण होंगे जो पहले से ही उनकी आत्माओं में विद्यमान थी। और इस प्रकार, दिव्य प्रकाश से महिमामय होकर और स्वर्ग में *'वायु में प्रभु से मिलने' के लिए* उठा लिए जाकर, जैसा लिखा है, *'हम सदा प्रभु के साथ रहेंगे'* (1 थिस्स. 4:17), हम अनंतकाल तक उनके साथ राज्य करेंगे! इसलिए हम पहले से ही प्रभु की छाप और मुहर अपने ऊपर धारण करने का प्रयत्न करें, क्योंकि न्याय के समय, जब परमेश्वर पृथक्करण करेंगे और पृथ्वी के सभी कुल—सम्पूर्ण आदम—एक साथ इकट्ठा किए जाएँगे, जब चरवाहा अपनी भेड़ें बुलाएगा, तब जो भी छाप धारण करते हैं वे अपने चरवाहे को पहचान लेंगे, और चरवाहा अपनी मुहर धारण करने वालों को पहचानकर उन्हें सभी राष्ट्रों से इकट्ठा करेगा; अपनी भेड़ें उसकी आवाज़ सुनेंगी और उसके पदचिन्हों पर चलेंगी। दुनिया दो भागों में बँट जाएगी: एक भाग अंधकार का झुंड होगा, जो अनंत आग में चला जाएगा, और दूसरा – प्रकाश से भरा झुंड, जो स्वर्गीय विरासत के लिए उठाया जाएगा। जो कुछ हमने अब अपनी आत्माओं में प्राप्त किया है, वह तब चमककर प्रकट होगा, और हमारे शरीरों को महिमा से परिधानित करेगा (5, 21, 12, 13)।

11. क्या पुनरुत्थान के दिन सभी सदस्य उठाए जाएँगे? परमेश्वर के लिए कुछ भी बहुत कठिन नहीं है। ऐसा ही उसका वचन है। मानवीय दुर्बलता और मानवीय तर्क को, यह, मानो, असंभव लगता है। जैसे परमेश्वर ने, धूल और मिट्टी लेकर, एक भिन्न प्रकार की प्रकृति—अर्थात्, पृथ्वी के विपरीत, दैहिक प्रकृति—को, मानो, आकार दिया और कई प्रकार की प्रकृतियों को बनाया, जैसे: बाल, त्वचा, हड्डियाँ और स्नायु – और जैसे एक सुई, जब आग में फेंकी जाती है, तो उसका रंग बदल जाता है और वह आग में बदल जाती है, जबकि लोहे का स्वभाव नष्ट नहीं होता है बल्कि वैसा ही रहता है, वैसे ही पुनरुत्थान के दिन सभी अंग उठाए जाएंगे, और, जैसा लिखा है, *'एक भी बाल नष्ट नहीं होगा'* (लूका 21:18), और सब कुछ दीप्तिमान हो जाएगा; सब कुछ प्रकाश और अग्नि में डूब जाएगा और रूपांतरित हो जाएगा, फिर भी यह नष्ट नहीं होगा और न ही स्वयं अग्नि बन जाएगा, ताकि पूर्व की प्रकृति, जैसा कि कुछ लोग मानते हैं, अस्तित्व में न रहे। क्योंकि पितरस, पतरस ही रहता है, और पौलुस, पौलुस ही रहता है, और फिलिप, फिलिप ही रहता है; प्रत्येक, आत्मा से भरकर, अपनी प्रकृति और अस्तित्व में बना रहता है। लेकिन यदि आप यह मानते हैं कि उनका स्वभाव नष्ट हो गया है, तो अब कोई पतरस या पौलुस नहीं है, बल्कि परमेश्वर सभी चीजों और हर जगह है; और जो गेहेनना में जाते हैं वे दंड महसूस नहीं करते, जबकि जो राज्य में जाते हैं वे आशीषों का अनुभव करते हैं (15:10)।

12. कल्पना करो कि एक बगीचे में हर तरह के फलदार पेड़ हैं: उसमें नाशपाती, सेब और अंगूर की बेलें हैं, जिन पर फल और पत्तियाँ हैं; लेकिन वह बगीचा, और सभी पेड़ और पत्तियाँ, रूपांतरित हो जाते हैं और एक अलग स्वभाव धारण कर लेते हैं, और जो कुछ भी पहले था वह सब प्रकाशमान हो जाता है। इसी प्रकार पुनरुत्थान के समय मनुष्यों का रूपांतरण होगा, और उनके अंग पवित्र और दीप्तिमान हो जाएँगे (15:11)।

13. जैसे प्रभु का शरीर, जब वे पहाड़ पर चढ़े, तो महिमामय हो गया और दिव्य महिमा और अनंत प्रकाश में बदल गया, वैसे ही संतों के शरीर भी महिमामय हो जाते हैं और तेजस्वी हो उठते हैं। क्योंकि जैसे मसीह की आंतरिक महिमा मसीह के शरीर पर इतनी पूरी तरह से प्रकट हुई और चमक उठी, वैसे ही, उसी प्रकार, संतों के भीतर निवास करने वाली मसीह की शक्ति उस दिन उन पर—उनके शरीरों पर—बरसाई जाएगी, क्योंकि वे अभी भी अपने मन के द्वारा मसीह के सार और स्वभाव में सहभागी होते हैं। क्योंकि लिखा है: *'पवित्र करने वाला और पवित्र किए हुए, दोनों एक ही मूल के हैं'* (इब्रानियों 2:11), और: *'जो महिमा तूने मुझे दी है, वही मैंने उन्हें दी है'* (यूहन्ना 17:22)। जिस प्रकार एक ही लौ से अनेक दीपक जलाए जाते हैं, उसी प्रकार संतों के शरीर—ये मसीह के अंग—स्वयं मसीह के साथ एक और वही बन जाने चाहिए (15:36)।

14. और सिद्ध लोग, जब तक वे देह में रहते हैं, अपनी स्वतंत्रता के कारण चिंताओं से मुक्त नहीं होते, और भय के अधीन होते हैं; इसीलिए उन्हें परीक्षाओं में पड़ने की अनुमति दी जाती है। परन्तु जब आत्मा संतों के उस नगर में प्रवेश करती है, तभी वह शोक और परीक्षाओं के बिना वास कर सकेगी, क्योंकि वहाँ न कोई चिंता है, न शोक, न परिश्रम, न वृद्धावस्था, न शैतान, न कलह; परन्तु विश्राम, आनन्द, शान्ति और उद्धार है। वहाँ, उनके बीच में, प्रभु हैं, जिन्हें उद्धारकर्ता कहा जाता है, क्योंकि वे बंदियों को छुड़ाते हैं; उन्हें चिकित्सक कहा जाता है, क्योंकि वे स्वर्गीय और दिव्य उपचार प्रदान करते हैं और आत्मा के जुनूनों को ठीक करते हैं, जो कुछ हद तक मनुष्य पर शासन करते हैं। संक्षेप में, यीशु राजा और परमेश्वर हैं, जबकि शैतान एक यातना देने वाला और एक दुष्ट राजकुमार है (26:23)।

१५. चूँकि कुछ लोग अपनी संपत्ति बेच देते हैं, अपने दासों को आज़ाद कर देते हैं, और आज्ञाओं का पालन करते हैं, फिर भी इस संसार में आत्मा को ग्रहण करने का प्रयत्न नहीं करते, तो क्या वे इस प्रकार जीते हुए स्वर्ग के राज्य में प्रवेश नहीं करेंगे? यह चर्चा के लिए एक सूक्ष्म विषय है। क्योंकि कुछ लोग मानते हैं कि केवल एक ही राज्य और एक ही गेहेना है, जबकि हम कहते हैं कि उसी राज्य और उसी गेहेना के भीतर कई दर्जे, भेद और माप हैं।

जैसे सभी अंगों में एक ही आत्मा होती है, जो ऊपर मस्तिष्क में कार्य करती है और नीचे पैरों को गति प्रदान करती है, वैसे ही दिव्यता भी सभी प्राणियों को, स्वर्ग में रहने वालों और गर्त के नीचे रहने वालों को, अपने में समाहित करती है और पूरी सृष्टि के भीतर निवास करती है, यद्यपि अपनी असीमता और अपारता के कारण, वह सृष्टि से परे भी विद्यमान है। इसलिए, दिव्यता स्वयं लोगों की सुनती है और सभी चीजों पर बुद्धिमानी से शासन करती है। और चूँकि कुछ लोग यह जाने बिना प्रार्थना करते हैं कि वे क्या माँग रहे हैं, कुछ उपवास करते हैं, और कुछ अन्य सेवा में स्वयं को समर्पित करते हैं, ईश्वर, जो एक धर्मी न्यायाधीश है, प्रत्येक को उनके विश्वास के मापदंड के अनुसार पुरस्कृत करता है। क्योंकि जो कुछ भी वे करते हैं, वे ईश्वर के भय से करते हैं, फिर भी उनमें से सभी पुत्र, राजा या वारिस नहीं हैं (40:3)।

१६. संसार में कुछ हत्यारे हैं, कुछ व्यभिचारी, कुछ लूटमार करने वाले, जबकि कुछ अपनी संपत्ति गरीबों में भी बाँटते हैं। प्रभु इन सभी को देखता है, और जो भलाई करते हैं उन्हें विश्राम और पुरस्कार प्रदान करता है; ऐसे मापदंड हैं जो प्रचुर हैं और ऐसे मापदंड हैं जो कम हैं; यहाँ तक कि स्वयं प्रकाश में और स्वयं महिमा में भी एक अंतर है। गेहेना में ही और दंड में विषाक्त करने वाले, लुटेरे, और अन्य हैं जिन्होंने छोटे मामलों में पाप किया है। लेकिन जो यह दावा करते हैं कि केवल एक ही राज्य है, एक ही गेहेना है, और दंड की कोई श्रेणियाँ नहीं हैं, वे गलत कहते हैं। आज कितने सांसारिक लोग हैं जो तमाशों और अन्य दुराचार में डूबे हुए हैं? और कितने ऐसे हैं जो प्रार्थना करते हैं और ईश्वर से डरते हैं? ईश्वर इन दोनों को देखता है, और एक धर्मी न्यायाधीश के रूप में कुछ के लिए विश्राम और दूसरों के लिए दंड तैयार करता है (40:4)।

आदरणीय बाबा यशायाह

हमारे पूजनीय पिता इसैया, नित्रिया के बाबा, और उनकी रचनाओं का संक्षिप्त विवरण

हमारे पूज्य पिता तपस्वी इसाया ईस्वी सन् चौथी शताब्दी के उत्तरार्ध (मृत्यु 370) में रहे, जो आबा मकरियुस महान के समकालीन थे। उनके तपस्वी कार्यों का क्षेत्र मिस्र का निचला भाग था – विशेष रूप से स्केथोस (*Skethos*) का रेगिस्तान, जिसे हम आम तौर पर स्केटे (*Skete*) के नाम से जानते हैं, जो अलेक्जेंड्रिया से बहुत दूर नहीं है, जहाँ भिक्षुओं ने गहरी मौन (*सिजि*) में एक ध्यानमग्न जीवन व्यतीत किया। यह ज्ञात नहीं है कि उन्होंने किस उम्र में संन्यासी जीवन चुना; हम केवल इतना जानते हैं कि वे गरीब और विनम्र माता-पिता के पुत्र थे, जैसा कि उनके शोक-विलाप और उनके शिष्य एलीशा द्वारा उन पर की गई अपमानजनक टिप्पणियों से स्पष्ट है, जिसने अपनी परीक्षा के समय में उन्हें नीच जाति का व्यक्ति कहा था। आदरणीय यशायाह अपने समकालीन संतों के बीच सम्मानित थे, जिनमें से कई उनके उपदेशों का पालन करते थे और स्वेच्छा से उन पर पूर्ण आज्ञाकारिता दिखाते थे। वे उस समय के अलेक्जेंड्रिया के पैट्रिआर्क को भी ज्ञात थे, जिन्होंने, जब पूजनीय एलिशा ने उन पर बदनामी की, कहा: 'उन चापलूस होठों को चुप करा दो, जो धर्मी के विरुद्ध अधर्म, घमंड और तिरस्कार के साथ बोलते हैं' (भजन संहिता 30:19)। आदरणीय यशायाह अत्यंत विनम्र थे और उनमें गहरे विलाप की अनुग्रह-शक्ति थी, जैसा कि प्रलोभन के समय अपने शिष्य एलिशा को दिए गए उनके नम्र उत्तर से स्पष्ट है, जब एलिशा उनका अपमान और बदनामी कर रहा था, और उनके '14 शब्दों' से भी स्पष्ट है—जो विलाप करने की एक प्रथा है, जिसके सावधानीपूर्वक पठन से पत्थर का दिल भी नरम हो सकता है और पश्चाताप कर सकता है। स्केट में मौन में रहने वाले संतों की परंपरा के अनुसार, परम पूज्य यशायाह के दो शिष्य थे – पतरस और एलिशा। पहले के लिए, उन्होंने एक शिक्षाप्रद प्रवचन (26वां) लिखा, जबकि बाद वाले के संबंध में जेरोंडिका[10] में एक आत्मा-रक्षक वृत्तांत है। इन दो शिष्यों के अलावा, कई अन्य भिक्षु भी उनके परामर्श और शिक्षा से निर्देशित थे, जिनसे उन्होंने न केवल व्यक्तिगत रूप से बल्कि लिखित रूप में भी बातचीत की। दिन-रात दिव्य शास्त्रों का अध्ययन करके और इन उद्धारकारी स्रोतों से आध्यात्मिक ज्ञान की प्रचुर धाराएँ ग्रहण करके, वे कई अत्यंत सुंदर लेखों के लेखक बने, जो विभिन्न आत्मा-उद्धारक विषयों को कवर करते हैं और एक संपूर्ण पुस्तक का निर्माण करते हैं। आदरणीय यशायाह को गहन एकांत के प्रति उनके प्रेम और सभी लोगों से उनके तपस्वीपूर्ण अलगाव के कारण एक तपस्वी कहा जाता है, इसलिए उनके जीवन के अंतिम वर्षों में उनके सबसे करीबी शिष्य भी उनके साथ नहीं रहते थे, बल्कि समय-समय पर उनसे मिलने आते थे, जैसा कि 27वें प्रवचन से स्पष्ट है। आदरणीय पिता की रचनाओं का उल्लेख बिशप अम्मोन ने थियोफिलस, अलेक्जेंड्रिया के पैट्रिआर्क को लिखे अपने पत्र में; भिक्षु निकिफोरस ने हृदय की रक्षा पर अपने प्रवचन में;

[10] हमारे फरवरी के प्रस्तावना में – 27 तारीख के अंतर्गत।

बार्सानुफियिस महान, जॉन ऑफ़ डेमास्कस, ग्रेगरी ऑफ़ सिनाई और अन्य लोगों ने किया है। हमारे पूजनीय पिता यशायाह की स्मृति ऑर्थोडॉक्स चर्च द्वारा चीज़ वीक (Cheese Week) के शनिवार को मनाई जाती है। हमारे पास आई अबा यशायाह की कहावतों के संग्रह में 29 कहावतें शामिल हैं, लेकिन यह बहुत संभव है कि अबा यशायाह की सभी कहावतें इसमें शामिल नहीं हैं। क्योंकि उनकी कहावतों के अंशों में कुछ ऐसी निर्देश हैं जो इन कहावतों में नहीं मिलते हैं। इन कथनों के अलावा, इस बाबा के नौसिखिया भिक्षुओं के लिए नियम भी हैं, जिन्हें एनायन के बाबा बेनेडिक्ट (9वीं शताब्दी की शुरुआत) ने अपने मठवासी नियमों के संग्रह, *[11] * में संरक्षित किया है। इन नियमों के बारे में, उपरोक्त संग्रह में यह उल्लेख है कि वे बाबा के कथनों से लिए गए हैं। फिर भी, उन सभी को स्वयं कथनों में नहीं पाया जा सकता है। इसलिए यह मानना होगा कि उनमें से कई या तो बाबा की उन मौजूदा रचनाओं से लिए गए थे जो अब उपलब्ध नहीं हैं, या उन्हें अलग-अलग समय पर विभिन्न व्यक्तियों को उनकी रचनाओं से अलग सिखाया गया था - और बाद में मौखिक रूप से आगे बढ़ाए गए और किसी ने संकलित किया, जो उनके विचारों के क्रम में नहीं, बल्कि जैसे-जैसे सुने गए, वैसे ही सामान्य संग्रह में शामिल कर दिए गए। वे संत एंथनी महान के नियमों की ही भावना और विषय-वस्तु के हैं। कुछ शब्दशः उनसे समान हैं। यह मानना चाहिए कि बाबा इसाया, बाबा मैकारियिस महान के साथ, बाबा एंथनी महान के शिक्षण प्रतिभा के सबसे करीबी उत्तराधिकारी थे। *डोब्रोतोलीउबिए* में, मन की रक्षा पर बाबा इसाया का एक लेख है, जिसमें 27 अध्याय हैं। भूमिका में कहा गया है कि यह इस बाबा के वचनों का एक अंश है, और * * में इस पर संक्षिप्त निर्देश दिया गया है कि मन के प्रलोभनों से कैसे बचें, अपनी अंतरात्मा को निर्मल रखें, रहस्यमय शिक्षा को अपने हृदय में धारण करें, और पूर्ण शांति के साथ आत्मा के त्रैगुण्य स्वभाव की बुद्धिमानी से रक्षा करें। *Patrol. graec.* के खंड 40 में, इन शब्दों के बाद, *संयम और मौन पर* शीर्षक के तहत, 19 अध्यायों के साथ एक समान लेख ग्रीक पाठ के साथ मुद्रित है। ये अध्याय भी, उनके शब्दों से लिए गए अंश हैं, जैसा कि प्रत्येक अध्याय के स्रोत को निर्दिष्ट करने वाले उद्धरणों द्वारा स्वयं प्रकाशन में इंगित किया गया है। उनमें से कुछ, *दया पर* (On Benevolence) नामक ग्रंथ में पाए जाने वाले ग्रंथों के शब्दशः समान हैं। हालाँकि, इन 19 अध्यायों और *डोब्रोतोल्यूबिए* के 27 अध्यायों दोनों में ऐसी निर्देश हैं जो *वर्ड्स* में नहीं मिलते हैं। अन्य बातों के अलावा, इसी ने अब्बा इसाया के लेखन के वर्तमान संस्करण में इन दोनों लेखों को शामिल करने के लिए प्रेरणा का काम किया। इस बात का ध्यान रखते हुए कि इस बाबा से आई कोई भी बात छूट न जाए, हमने यहाँ 'स्मरणीय कथनों' में उद्धृत कथनों के अतिरिक्त, हमारे 'वर्णानुक्रमिक पैट्रिकोण' में संकलित उनके कथनों को भी शामिल किया है—हालांकि, उनका अनुवाद केवल स्लावोनिक से किया गया है, क्योंकि ग्रीक में ऐसा कोई पैट्रिकोण नहीं है। यह हमारे उत्साही तपस्वियों का कार्य है। हर कोई स्वयं देखेगा कि इन कथनों में भी कई ऐसे हैं जो ग्रंथ में नहीं मिलते। इस प्रकार, निम्नलिखित यहाँ प्रस्तुत किए गए हैं:

१. अबा इसाया के वचन। यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि पहले संस्करण में इन्हें लैटिन से अनुवादित रूप में प्रस्तुत किया गया था, जिस भाषा में ही ये मुद्रित रूप में प्रकाशित हुए हैं। हालाँकि, बाद में, जब माउंट अथोस के साधुओं ने माउंट अथोस पर ही इन शब्दों का ग्रीक पाठ खोज निकाला और इसकी एक प्रतिमास्को भेज दी, तो उस पाठ से एक नया अनुवाद किया गया, और इसी अनुवाद में अब इन्हें उन लोगों के सामने प्रस्तुत किया जाता है जो ऐसी किताबें पढ़ना पसंद करते हैं। – इस अनुवाद को तैयार करते समय, हमने जर्मन एल्डर पैसियोस द्वारा इन शब्दों के अनुवाद को ध्यान में रखा है, यह अनुवाद ऑप्टिना हर्मिटेज के एल्डरों द्वारा सौजन्यपूर्वक प्रदान किया गया था। जहाँ उपयुक्त है, वहाँ इसके संदर्भ पादटिप्पणियों में दिए गए हैं।

२. नवसिखिया भिक्षुओं के लिए उनके नियम।

3. उनके कथन।

४. *डोब्रोतोल्लुबिये* से मन की रक्षा पर एक लेख, २७ अध्यायों में।

5. तपस्या और मौन पर अध्याय।

1. उनके शिष्यों के लिए पूजनीय बाबा इसाया के वचन

1. उनके साथ रहने वाले भाइयों के लिए आबा इसाया के आज्ञा-निर्देश

1. यदि तुम मेरे साथ रहना चाहते हो, तो यीशु के लिए सुनो।

---

[11] पैट्र. लैट. खंड CIII

2. तुम में से प्रत्येक प्रभु के भय में अपनी-अपनी कोठरी में बैठे, और परमेश्वर की आज्ञा के अनुसार अपनी शारीरिक मेहनत को न छोड़ो।

3. अपनी आध्यात्मिक शिक्षा और अविराम प्रार्थना की उपेक्षा न करो, और अपने हृदय को पराये विचारों से बचाओ, ताकि तुम किसी भी व्यक्ति या इस संसार की किसी भी वस्तु के बारे में न सोचो, बल्कि हमेशा यह परखो कि तुम कहाँ ठोकर खाते हो, और अपने मार्गों को सुधारने का प्रयास करो, और एक पश्चात्तापी हृदय से परमेश्वर से विनिती करो, आँसुओं और क्लेश (देह की थकान) के साथ प्रार्थना करो, कि वह तुम्हें क्षमा करे, और हर बात में तुम्हें उसी में गिरने से बचाए।

४. हर दिन मृत्यु को अपनी आँखों के सामने रखो और इस बात पर ध्यानपूर्वक विचार करो कि तुम इस शरीर से कैसे प्रस्थान करोगे, हवा में हमसे मिलने वाली अंधकार की शक्तियों से कैसे पार पाओगे, और बिना किसी बाधा के परमेश्वर के सामने कैसे उपस्थित होगे, अपनी दृष्टि को उनके अंतिम न्याय के भयानक दिन और प्रत्येक व्यक्ति को उनके कर्मों, वचनों और विचारों के लिए दिए जाने वाले प्रतिफल पर टिकाए रखो। क्योंकि उस के *'सामने सब कुछ नंगा और उघाड़ा हुआ है'* जिसको हमें हिसाब देना है (इब्रानियों 4:13)।

5. जब तक बहुत ज़रूरत न हो, भोजन के समय या चर्च में कुछ भी न कहें, और किसी ऐसे व्यक्ति को सुधारें नहीं जो गा रहा हो, जब तक कि वह स्वयं आपसे इसके बारे में न पूछे।

6. अपने आध्यात्मिक निर्देशों की उपेक्षा किए बिना, परमेश्वर के भय से एक सप्ताह तक रसोई में सेवा करें।

7. किसी भी परिस्थिति में कोई भी अपने भाई की कोठरी में प्रवेश न करे, और न ही आप निर्धारित समय से पहले एक-दूसरे से मिलने की कोशिश करें।

8. एक-दूसरे के काम पर नज़र न रखें – कि किसी भाई ने आपसे अधिक काम किया है, या आपने उससे अधिक।

९. जब तुम काम पर जाते हो, तो व्यर्थ की बातों में मत उलझो और न ही खुद को अनुशासनहीन होने दो, बल्कि हर एक व्यक्ति ईश्वर के भय में, स्वयं और अपनी आत्मा पर, साथ ही शिक्षा और प्रार्थना पर, गुप्त रूप से (हृदय के सबसे भीतरी भाग में) ध्यान दे।

१०. जब चर्च की सेवा समाप्त हो जाए, या जब आप अपने भोजन से उठें, तो आपस में बात करने के लिए मत बैठो, ईश्वर के वचनों के बारे में भी नहीं, बल्कि तुम में से प्रत्येक अपनी-अपनी कोठरी में जाकर अपने पापों पर रोओ।

11. यदि, तथापि, आपको किसी से बात करने की आवश्यकता हो, तो यथासंभव कम बोलें, नम्रता और श्रद्धा के साथ, क्योंकि ईश्वर हमेशा आपकी सुन रहे हैं।

12. किसी भी बात पर एक-दूसरे से बहस न करो, और किसी से भी कठोरता से बात न करो; किसी का न्याय न करो, न ही उन्हें अपने होठों से या अपने दिल में तुच्छ समझो; और किसी के बारे में बिल्कुल भी बड़बड़ाओ नहीं, कहीं ऐसा न हो कि तुम्हारे होठों से झूठ निकले, और ऐसी कोई भी बात कहने या सुनने की इच्छा न करो जो तुम्हारे लिए लाभदायक न हो।

13. अपने पड़ोसी के प्रति अपने हृदय में कोई द्वेष, घृणा या ईर्ष्या न पालो, और तुम्हारे शब्द तुम्हारे हृदय से भिन्न न हों, क्योंकि *'ईश्वर का मज़ाक नहीं उड़ाया जाता'* (गलातियों 6:7), परन्तु वह सभी बातें देखता है – गुप्त और प्रकट दोनों।

14. अपने भीतर कोई भी विचार, कोई भी दुख, कोई भी इच्छा या कोई संदेह छिपाकर न रखें; उन्हें निस्संकोच अपने आबट को बताएं, और जो कुछ भी आप उनसे सुनें, उसे विश्वास के साथ व्यवहार में लाने का प्रयास करें।

१५. सावधान रहो कि मेरे आज्ञाओं का पालन करते हुए थक न जाओ, क्योंकि – मुझे क्षमा करना – उस स्थिति में मैं तुम्हें मेरे साथ रहने की अनुमति नहीं दूँगा। यदि तुम उनका पालन करते हो, तो मैं परमेश्वर के सामने तुम्हारे लिए मध्यस्थता करूँगा; लेकिन यदि तुम उनका पालन नहीं करते हो, तो वह तुम्हें तुम्हारी लापरवाही और मेरी निष्फलता, दोनों के लिए उत्तरदायी ठहराएगा। जो कोई भी मेरे आज्ञाओं का पालन करता है, गुप्त रूप से और खुले तौर पर, प्रभु परमेश्वर उसे हर बुराई से बचाएगा और हर आने वाली परीक्षा में उसकी रक्षा करेगा—चाहे वह गुप्त हो या खुली।

१६. हे मेरे भाइयो, मैं तुम से विनिती करता हूँ, याद करो कि तुम संसार से क्यों निकले हो, और अपने उद्धार का ध्यान रखो, कहीं ऐसा न हो कि तुम्हारा संसार त्यागना व्यर्थ हो जाए, और तुम परमेश्वर और उन संतों के सामने लज्जित हो जाओ जिन्होंने उसकी खातिर संसार त्यागा और अच्छी लड़ाई लड़ी।

१७. सांसारिक चीज़ों के प्रति तिरस्कार, आत्म-संयम (स्वयं को थका देने तक की तपस्या और कष्ट), नम्रता, और सभी बातों में विवेकपूर्ण ढंग से अपनी इच्छा को वश में करने का अभ्यास—और अपनी धार्मिकता पर भरोसा न

करना, बल्कि हमेशा अपने पापों को अपनी आँखों के सामने रखना—आपके भीतर सद्गुणों को विकसित करेगा। सब कोई यह जान ले: कि (शरीर का) आराम, उदार-मन (*प्लाटसिमोस* - चौड़ा रास्ता, किसी भी तरह से खुद को प्रतिबंधित न करना, अपनी इच्छा) और व्यर्थता भिक्षु के जीवन के हर फल को नष्ट कर देती हैं।

२. प्राकृतिक कानून पर

1. हे भाइयो, मैं नहीं चाहता कि तुम अनभिज्ञ रहो, कि आरंभ में, जब परमेश्वर ने मनुष्य को बनाया, तो उसने उसे स्वर्ग में बसाया, और तब उसके पास स्वस्थ इंद्रियाँ थीं, जो अपने प्राकृतिक क्रम में थीं; परन्तु जब उसने उस धोखेबाज़ की बात मानी, तो उसकी सारी इंद्रियाँ unnaturalness[12] में बदल गईं, और तब वह अपनी महिमा से वंचित हो गया। लेकिन हमारे प्रभु ने अपनी महान दया के द्वारा मानव जाति पर अपनी दया दिखाई, *'वचन देहधारी हुआ'* (यूहन्ना 1:14) – अर्थात्, वह पाप को छोड़कर, हर मानवीय दृष्टि से एक पूर्ण मनुष्य बन गए, ताकि अपने पवित्र शरीर के द्वारा हमारी अस्वाभाविक अवस्था को एक स्वाभाविक अवस्था में बदल सकें[13] । मानव जाति पर इतनी दया दिखाने के बाद, वह उन्हें एक बार फिर से स्वर्ग में बहाल करते हैं, – पतितों को उनके पदचिन्हों पर चलने और उनकी आज्ञाओं का पालन करने के द्वारा पुनर्स्थापित करके, जो उन्होंने हमें इसलिए दीं ताकि हम उन पर विजय प्राप्त कर सकें जिन्होंने हमें हमारी महिमा से बाहर निकाला – और हमें पवित्र उपासना (*लैट्रिया*) और एक शुद्ध विधान दिखाकर, ताकि मनुष्य अपनी प्राकृतिक व्यवस्था में खड़ा हो सके, जिसमें परमेश्वर ने उसे बनाया था।

२. इसलिए, जो कोई भी अपनी स्वाभाविक अवस्था में लौटना चाहता है, उसे अपनी सभी शारीरिक इच्छाओं को त्याग देना चाहिए, ताकि वह स्वयं को मन (आध्यात्मिक) की प्रकृति के अनुसार एक अवस्था में स्थापित कर सके। हमारे भीतर, स्वभाव से, एक (ईश्वर के लिए) लालसा है—और ईश्वर के लिए इस लालसा के बिना प्रेम भी नहीं है: इसी कारण दानियेल को *'इच्छाओं का पुरुष'* कहा जाता है (दानियेल 9:23), लेकिन शत्रु ने इसे (इस प्राकृतिक लालसा को) एक शर्मनाक वासना में बदल दिया है, ताकि हम हर तरह की अशुद्धता के लिए लालसा करें। मन में, स्वभाव से, परमेश्वर के लिए उत्साह होता है – और परमेश्वर के लिए उत्साह के बिना कोई प्रगति नहीं है, जैसा कि पत्र में लिखा है: *'महान वरदानों के लिए यत्न करो'* (1 कुरिन्थियों 12:31); परन्तु परमेश्वर के प्रति यह उत्साह हमारे भीतर एक अस्वाभाविक उत्साह में बदल गया है – ताकि हम एक दूसरे के विरुद्ध उत्साही हों, एक दूसरे से ईर्ष्या करें और एक दूसरे से झूठ बोलें। मन में स्वभाव से क्रोध होता है – और क्रोध के बिना किसी व्यक्ति में पवित्रता नहीं हो सकती, जब तक कि वह शत्रु द्वारा उसमें डाली गई हर चीज़ पर क्रोधित न हो, जैसे कि एलीआज़र के पुत्र फिनिहास ने, अपने क्रोध में, एक पुरुष और एक स्त्री को मार डाला, और यहोवा का क्रोध अपने लोगों से शांत हो गया (गिनती 25, 7–9); परन्तु हम में इस प्रकार का क्रोध एक दूसरे में बदल गया है, ताकि हम अपने पड़ोसी से हर तरह की अनावश्यक और बेकार बातों पर क्रोधित हो जाते हैं। मन में एक (स्वाभाविक) घृणा होती है, जैसे: जब यह एलियाह पर हावी हुई, तो उसने दुष्ट भविष्यवक्ताओं को मार डाला (3 राजा 18:40); इसी प्रकार, शमूएल ने अमालेकियों के राजा अगग के प्रति ऐसा ही किया (1 राजा 15:33)—और अपने शत्रुओं से घृणा के बिना, आत्मा का सम्मान (मूल्य और गरिमा) प्रकट नहीं होता; फिर भी यह (स्वाभाविक) घृणा हमारे भीतर एक अस्वाभाविक घृणा में बदल गई है, जो हमें अपने पड़ोसी से नफरत करने और उनसे घृणा करने के लिए प्रेरित करती है —और यही घृणा है जो हमसे सभी सद्गुणों को बाहर निकाल देती है। – अपने शत्रुओं के सामने बुद्धिमान होना मन का स्वभाव है, इस प्रकार: जब यह यॉब पर आया, तो उसने अपने शत्रुओं को डाँटा, और उनसे कहा: *'तुम अपमानजनक और तुच्छ हो, हर अच्छी चीज़ से रहित; मैं तुम्हें अपनी भेड़ों के कुत्ते होने के योग्य भी नहीं समझता'* (यॉब 30:1, 4), लेकिन शत्रुओं के प्रति यह घमंड हम में बदल गया है: हमने अपने शत्रुओं के सामने स्वयं को नम्र किया है और एक-दूसरे के प्रति घमंडी हो गए हैं, एक-दूसरे को आहत करते हैं, और स्वयं को अपने पड़ोसियों से अधिक धर्मी मानते हैं – और ऐसे घमंड के लिए, परमेश्वर मनुष्यों का शत्रु बन जाता है। मनुष्य में यही सृजित किया गया था (सृष्टि के समय उसमें स्थापित किया गया था), और जिसे, जब उसने अवज्ञा का स्वाद चखा, तो उसके भीतर भयानक वासनाओं में बदल दिया गया।

३. अतः प्रियजनो, हम यत्न करें कि इन (इन वासनाओं) को त्याग दें, और उसको प्राप्त करें जो हमारे प्रभु यीशु मसीह ने हमें अपने पवित्र शरीर में दिखाया है: क्योंकि वह *'पवित्र है और पवित्र लोगों में वास करता है'*। आइए हम अपना ध्यान रखें, ताकि हम अपनी पूरी क्षमता से परमेश्वर को प्रसन्न कर सकें, अपनी सक्रिय शक्तियों का प्रयोग करते हुए और अपने सभी अंगों को (एक तराजू की तरह) संतुलित करते हुए, जब तक कि वे अपने प्राकृतिक क्रम में बहाल न हो जाएँ, ताकि हम परीक्षा के समय में दया प्राप्त कर सकें, *'जो पूरी दुनिया पर आने वाली है'* (लूका

---

[12] *Eis ten parafysin* – अलौकिक में।

[13] टेन टेन हताफसिनि

21:26), – उसकी दया से अनवरत निवेदन करते हुए, कि हमारी विनम्रता के साथ उसकी सहायता हमारे शत्रुओं से हमारी मुक्ति के लिए प्रकट हो, क्योंकि उसकी शक्ति और सहायता, और सामर्थ्य युगानुयुग तक है। आमीन।

३. नवसिखुओं और कोठरीवासियों की स्थिति पर

1. सबसे पहले और सबसे महत्वपूर्ण, हमें नम्रता की आवश्यकता है, ताकि हर सुने हुए शब्द या हर कर्म पर हम कहने के लिए तैयार रहें: 'मुझे क्षमा करें,' क्योंकि नम्रता के द्वारा शत्रु की सभी चालाकियाँ विफल हो जाती हैं।

२. अपने किसी भी कर्म के लिए स्वयं को दोषी न ठहराओ, ताकि तुम अपने विचारों में शांत रह सको।

3. जब तुम अकेले हो तो तुम्हारे मुख पर शोक और पश्चाताप का भाव हो, परन्तु अपरिचित लोगों के साथ (इसे) प्रसन्न और सुहावना दिखाओ, ताकि परमेश्वर का भय तुम्हारे भीतर वास करे।

४. जब आप अपने भाइयों के साथ यात्रा पर निकलें, तो थोड़ी दूरी बनाए रखें ताकि आप मौन रह सकें; और चलते समय इधर-उधर न देखें, बल्कि अपने विचारों पर मनन करें, या मन ही मन ईश्वर से प्रार्थना करें। जहाँ भी आप रात के लिए रुकें, लापरवाह न बनें, बल्कि हर बात में विनम्र और नम्र रहें। जब आपको कुछ दिया जाए, तो अनिच्छा से अपना हाथ बढ़ाएँ, जैसे कि आपको ऐसा करने के लिए मजबूर किया जा रहा हो। सबसे छोटे होने के नाते, किसी और के मुँह में[14] (एक निवाला) रखने के लिए अपना हाथ बढ़ाने का आग्रह न करें। जहाँ भी आप रात के लिए सोने के लिए लेटें, किसी और के साथ कंबल साझा न करें, बल्कि लेटने से पहले अपने मन में कई प्रार्थनाएँ करें। यदि आप अपनी यात्रा से थके हुए हैं और सड़क की थकान को कम करने के लिए थोड़ा तेल लगाना चाहते हैं, तो केवल अपने पैरों पर ही तेल लगवाएँ, और उन्हें खोलते समय संकोच करें; अत्यधिक आवश्यकता या बीमारी के मामलों को छोड़कर अपने पूरे शरीर पर तेल लगाने की अनुमति न दें।

५. यदि, जब आप अपनी कोठरी में बैठे हों, कोई अजनबी आपके पास आए, तो उसके लिए भी यही करें – उसके पैरों पर तेल लगाएँ और उससे कहें: 'प्यार दिखाओ, थोड़ा तेल लो और अपने शरीर के बाकी हिस्सों पर लगाओ।' यदि वह इसे स्वीकार करने में हिचकिचाता है, तो उस पर ज़ोर न डालें; लेकिन यदि वह एक सक्रिय बुज़ुर्ग है, तो तब तक उस पर ज़ोर डालें जब तक कि आप उसके पूरे शरीर पर तेल न लगा दें।

६. जब तुम अपने से छोटे भाइयों के साथ भोजन की मेज़ पर बैठो, तो अपने मन में यह न कहो, '[15] '। भोजन करो, पर अपने पापों को याद रखो, ताकि तुम स्वाद लेकर न खाओ। केवल वही लो जो तुम्हारे सामने है; जो दूसरों के सामने है, उसे न लो। तुम्हारे वस्त्र तुम्हारे पैरों और घुटनों को ढँकें; उन्हें कसकर बाँध लो। यदि खाने वालों में कोई यात्री हो, तो उसे स्वागतपूर्ण दृष्टि से उसकी आवश्यकता के अनुसार दो, और जब वह खाना समाप्त कर ले, तो उससे दो-तीन बार कहो: 'प्यार दिखाओ; थोड़ा और खाओ।' जब आप भोजन कर रहे हों, तो अपने बगल वाले व्यक्ति की ओर अपना चेहरा न घुमाएँ; इधर-उधर न देखें; व्यर्थ की बातें न करें; 'इस पर आशीर्वाद दें' कहे बिना अपनी इच्छित वस्तु के लिए अपना हाथ न बढ़ाएँ; और जब पानी पिएँ, तो आम लोगों की तरह अपनी गले से गुर्राहट की आवाज़ न करें।

7. यदि अपने भाइयों के साथ बैठे हुए थूक आता है, तो उनके सामने न थूकें, बल्कि उठकर बाहर थूकें; दूसरों के सामने अपना शरीर न फैलाएँ: यदि आपको हाँसी आती है, तो अपना मुँह न खोलें, और वह चली जाएगी; किसी भी परिस्थिति में हँसने के लिए अपना मुँह न खोलें, क्योंकि यह लापरवाही है।

8. जब आप अपने भाई की कोई चीज़ देखें तो उस पर लालच न करें: चाहे वह कपड़े हों, पट्टा हो, या सिर का पट्टा हो; और खुद को उनके जैसा बनाने की अपनी इच्छा पर अमल न करें।

९. यदि आप कोई किताब प्राप्त करें, तो उसके बाइंडिंग (या सजावट) को न सजाएँ, क्योंकि यह एक जुनून है।

10. यदि आप किसी भी तरह से पाप करते हैं, तो (इसे स्वीकार करने में) शर्म के कारण झूठ न बोलें, बल्कि 'मुझे क्षमा करें' कहकर सिर झुकाएँ - और आपका पाप क्षमा कर दिया जाएगा।

11. यदि कोई आपसे कठोरता से बात करता है, तो उनके प्रति द्वेष न पालें, बल्कि इससे पहले कि आपके मन में अप्रसन्नता (या अपमान का भाव) उत्पन्न हो, उन्हें प्रणाम करने के लिए जल्दी करें, क्योंकि उसके तुरंत बाद क्रोध आता है।

12. यदि कोई किसी भी मामले में आप पर अन्यायपूर्वक दोष लगाता है, तो उनके खिलाफ हथियार न उठाएं, बल्कि झुक जाएं और कहें: 'मुझे माफ कर दो; मैं ऐसा फिर नहीं करूंगा,' चाहे आप मामले को जानते हों या नहीं, क्योंकि इस तरह की सभी चीजें एक नई शुरुआत के लिए एक सीढ़ी हैं।

---

[14] *बालएिन ईस स्टोमा* – एक रिवाज जो आज भी पूर्व में प्रचलित है: मेज़ से एक निवाला लेकर किसी और के मुँह में रखना, विशेष कृपा के प्रतीक के रूप में।

[15] पैसियोस में: 'im.

[16]**13.** जब आप अपना कारीगरी का काम कर रहे हों, तो लापरवाह न हों, बल्कि ईश्वर के भय से उसका ध्यान रखें, कहीं आप अज्ञानता में पाप न कर बैठें।

14. जब आप कोई शिल्प सीख रहे हों, तो अपने शिक्षक से बात करें, और उससे अक्सर यह कहने में संकोच न करें: 'कृपया इतनी कृपा करें कि आप जाँच लें कि क्या मैं यह सही कर रहा हूँ या नहीं।'

15. यदि आपका भाई आपको आपके शिल्प में लगे होने पर बुलाए, तो यह जानने के लिए जल्दी करें कि वह क्या चाहता है, और अपने काम को अलग रखकर उसकी सेवा करें।

16. भोजन के बाद, अपनी कोठरी में जाओ और अपनी प्रार्थनाएँ (*लीएटॉर्गीआस*) करो, और उन लोगों के साथ बात करने के लिए मत बैठो जिनसे तुम्हें अपने लिए कोई लाभ की उम्मीद नहीं है। लेकिन यदि वे ईश्वर का वचन बोलने वाले बड़े हैं, तो अपने आध्यात्मिक पिता से पूछो: 'क्या मैं बैठकर सुनूँ, या अपनी कोठरी में चला जाऊँ?' और जो कुछ भी वह तुमसे कहे, वैसा ही करो।

17. यदि वह (आचार्य) आपको किसी काम से बाहर भेजते हैं, तो उनसे पूछें: 'आप मुझे कहाँ रहने का निर्देश देते हैं?' और जो कुछ भी आपको चाहिए, और जो कुछ भी वे कहते हैं, उसे करें - न कुछ जोड़ें और न कुछ घटाएँ।

18. यदि आप बाहर कोई शब्द सुनें, तो उन्हें अपने मन में न रखें, और जब आप लौटें, तो उन्हें किसी और को न दोहराएँ। यदि आप अपने कानों की रक्षा करेंगे, तो आपकी जीभ पाप नहीं करेगी।

19. जब आप कुछ करना चाहें, परन्तु जिसके साथ आप रहते हैं वह उसे करना नहीं चाहता, तो उसकी खातिर अपनी इच्छा त्याग दें, ताकि कोई विवाद न हो और वह दुखी न हो।

20. जब तुम किसी भाई के साथ एक कोठरी में सह-निवासी के रूप में रहने जाओ, तो उसे किसी भी मामले में आदेश मत देना, और उससे श्रेष्ठ होने का प्रयास मत करना।

21. यदि आप अन्य भाइयों के साथ रहते हैं, तो उनके सम्मान में उनके बराबर होने की कोशिश न करें। यदि वे आपसे कुछ ऐसा करने के लिए कहें जो आप करना नहीं चाहते, तो अपनी इच्छा पर काबू पाकर उसे कर डालें, ताकि न तो उन्हें दुख हो और न ही विनम्रता (आपसे अपेक्षित नम्रता और संयम) और उनके साथ शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व का उल्लंघन हो।

22. यदि आप किसी भाई के साथ रहते हैं और वह आपसे कहता है, 'मेरे लिए कुछ पकाओ,' तो उससे पूछें, 'आप मेरे लिए क्या तैयार करवाना चाहेंगे?' और यदि वह यह कहते हुए आपके विवेक पर छोड़ देता है, 'जो आप चाहें,' तो ईश्वर के भय से जो कुछ भी उपलब्ध हो, उसे तैयार करें।

२३. यदि आप एक साथ रहते हैं (आपसी सहयोग में या सामूहिक रूप से), और कोई काम करने का हो, तो आप भी उसे करें; सभी के साथ मिलकर काम करें, और सभी की अंतरात्मा के लिए अपने शरीर को कष्ट से न बचाएँ।

24. प्रतिदिन, सुबह उठते ही, अपने हाथ के काम में लगने से पहले, परमेश्वर के वचन का अध्ययन करो; और यदि कुछ भी व्यवस्थित करने की आवश्यकता हो—चाहे वह चटाई हो, या कोई पात्र, या कुछ और—तो उसे आलस्य के बिना यथाशीघ्र कर लो।

२५. जब भुगतान वाले काम हो, तो अपने भाई को उसमें शामिल करो – और उसके सामने घमंड न दिखाओ; लेकिन अगर कोई छोटा काम हो और कोई दूसरे से कहे, 'भाई, तुम अपना काम करो, और मैं यह काम खुद कर लूंगा,' तो उसकी आज्ञा मानो: जो आज्ञा मानता है वह महान है।

26. यदि कोई मुसाफिर भाई आपसे मिलने आए, तो उसे स्वागत-भाव से नमस्कार करें और जो बोझ वह उठाए हुए है, उसे स्वयं उठा लें – और जब वह आपसे विदा हो, तो भी ऐसा ही करें। उसका अभिवादन उचित और ईश्वर के भय के साथ करें, ताकि उसे कोई हानि न हो। ध्यान रखें कि आप उससे ऐसा कुछ न पूछें जिसका आपको कोई लाभ न हो, लेकिन उससे प्रार्थना करने के लिए कहें। जब वह बैठ जाए, तो उससे कहें, 'आप कैसे हैं?' और बस इतना ही कहें; फिर उसे एक किताब दें – और उसे पढ़ने और सीखने दें; लेकिन अगर वह थका हुआ आया है, तो उसे आराम करने दें, और उसके पैर धो दें। यदि वह आपसे बात करते समय अभद्र शब्द बोले, तो उससे विनम्रतापूर्वक कहें: 'मुझे क्षमा करें—मैं कमज़ोर हूँ, और इसे सहन नहीं कर सकता।' यदि वह अस्वस्थ है, और उसके कपड़े गंदे हैं, तो उन्हें धो दें। यदि वह भोला है, और उसके फटे हुए कपड़े टूटे हुए हैं, तो उन्हें सिल दें। यदि वह उन लोगों में से एक है जो बेकार घूमते हैं, और आपके पास कुछ विश्वासयोग्य लोग हैं, तो उसका उनसे परिचय न कराएँ, बल्कि ईश्वर के प्रेम में उस पर दया दिखाएँ। लेकिन यदि वह ईश्वर के लिए यात्रा करने वाला एक भाई है और विश्राम के लिए आपके पास आया है,

---

[16] या इस प्रकार: जब आप अपना हस्तशिल्प पूरा कर लें, तो उसकी उपेक्षा न करें, बल्कि उसकी देखभाल करें, कहीं वह व्यर्थ में खो न जाए – और इसी तरह।

तो उससे अपना मुँह न मोड़ें, बल्कि आपके पास आए हुए विश्वासयोग्यों के साथ मिलकर उसका आनंदपूर्वक स्वागत करें। यदि वह गरीब है, तो उसे खाली हाथ न भेजें, बल्कि उन आशीर्वादों में से उसे दें जिनसे परमेश्वर ने आपको आशीष दी है, यह जानते हुए कि जो कुछ आपके पास है वह आपका नहीं, बल्कि परमेश्वर का एक उपहार है।

27. यदि कोई भाई आपके पास कुछ रखकर जाता है, तो उसकी अनुपस्थिति में यह देखने के लिए कि उसमें क्या है, उसे न खोलें; परन्तु यदि आपके पास जो रखा गया है वह बहुत मूल्यवान वस्तु है, तो उससे कहें: 'इसे मेरे हाथों में सौंप दो।'

28. यदि आप किसी के घर जाएँ और वे बाहर जाने के बाद आपको अकेला छोड़ दें, तो यह देखने के लिए ऊपर न देखें कि उनके घर में क्या है, और कुछ भी न खोलें—न तो अलमारी का दरवाज़ा, न कोई बर्तन, न कोई किताब—बल्कि उनके जाने पर उनसे कहें: 'जब तक आप दूर हैं, मुझे करने के लिए कुछ काम दीजिए' – और जो कुछ भी वह आपको करने के लिए देता है, उसे बिना देरी के कर डालिए।

29. जिसकी आपने परीक्षा नहीं की है, उसकी प्रशंसा न करें, और जिसे आपने सुना है, उसके बारे में ऐसा न बोलें जैसे आपने उसे देखा हो।

30. किसी के कपड़ों के कारण उसकी अवहेलना न करो (*शेमा*)।

31. चाहे आप पानी लाने के लिए खड़े हों, या आवश्यकता के कारण बैठे हों, लापरवाह न बनें, बल्कि याद रखें कि ईश्वर आपको देख रहे हैं।

32. जब तुम अपनी कोठरी में प्रार्थना करने के लिए उठो, तो लापरवाह या असावधान न बनो; और ईश्वर का सम्मान करने के बजाय, उनके क्रोध को न भड़काओ, बल्कि ईश्वर के भय में खड़े रहो; दीवार से न सहारा लगाओ, और न ही अपने पैर एक पर खड़े होकर दूसरे को मोड़कर फैलाओ, जैसा कि मूर्ख करते हैं; बल्कि अपने मन को काबू में रखो, कहीं ऐसा न हो कि वह तुम्हारी इच्छाओं के बहकावे में आ जाए, ताकि परमेश्वर तुम्हारी भेंट स्वीकार करे।

33. जब आप में से कई लोग एक साथ गा रहे हों, तो प्रत्येक व्यक्ति अपनी प्रार्थना (अपना हिस्सा, बारी-बारी से) अर्पित करे; यदि आपके बीच कोई अजनबी हो, तो उससे भी प्रेमपूर्वक प्रार्थना करने के लिए कहें। बिना झगड़े, उसे यह दो या तीन बार कहें।

34. अर्पण (रक्तहीन बलिदान) के समय, अपने विचारों का विरोध करो, अपना मन ईश्वर के भय पर केंद्रित करो, ताकि तुम पवित्र रहस्यों के योग्य माने जाओ और प्रभु तुम्हें चंगा करें।

35. सावधान रहो कि अपने शरीर को गंदगी और लापरवाही की स्थिति में न छोड़ो, कहीं अहंकार तुम्हें धोखा दे; परन्तु नवसिखुआ को अपने शरीर से संबंधित सभी मामलों में स्वयं को लापरवाही की स्थिति में रहने देना चाहिए, क्योंकि यह उसके लिए लाभदायक है।

36. नवसिखुआ को जब तक वयस्क न हो जाए, तब तक कभी भी बढ़िया कपड़े न पहनने चाहिए: यह उसके लिए एक उपाय है। जहाँ तक शराब की बात है, उसे नियम बना लेना चाहिए कि आवश्यकता पड़ने पर तीन प्याले से अधिक न पिए। जब हँसे, तो वह किसी भी तरह से अपने दाँत न दिखाए; बल्कि वह विनम्र श्रद्धा से अपना सिर झुकाए। जब सोने जाए, तो वह अपनी कमरबंद बाँधे रहे, और हर तरह से प्रयास करे कि अपने हाथ (अपने कपड़ों के अंदर) न ले जाए, क्योंकि शरीर में कई वासनाएँ होती हैं, जिनमें हृदय भी उलझ जाता है। जब उसे बाहर जाना हो, तो वह अपने चप्पल पहन ले; हालाँकि, जब वह अपनी कोठरी में हो, तो उसे प्रयास करना चाहिए कि वह चप्पल न पहने। चलते समय, वह अपने हाथ अपनी कमरपट्टे में डाल ले (या उन्हें उससे सटाकर रखे), और आम लोगों की तरह उन्हें इधर-उधर न लहराए।

37. जब आप अपने से बड़े लोगों के साथ चलें, तो किसी भी तरह से उनसे आगे न चलें। जब कोई बड़ा किसी से बात करने के लिए रुकता है, तो अहंकार न करें या न बैठें, बल्कि तब तक खड़े रहें जब तक वह आपको यह संकेत न दे कि क्या करना है।

38. जब आप किसी कस्बे या गाँव से गुजरें, तो अपनी दृष्टि नीचे रखें, ताकि आप पर (जब आप अपनी कोठरी में हों) कोई दोष न लगे।

39. यात्रा करते समय, किसी ऐसे व्यक्ति के घर में रात न ठहरें जहाँ आपका हृदय पाप में गिरने का भय रखता हो।

४०. जब कहीं खाने के लिए बुलाए जाएँ, और आपको पता चले कि कोई महिला भी वहाँ मौजूद रहेगी, तो किसी भी हालत में मत बैठें; अपने दिल में गुप्त रूप से पाप करने से तो आपको बुलाने वाले को निराश करना आपके लिए बेहतर है। यदि आप कर सकें, तो महिलाओं के कपड़ों को देखें भी नहीं। यदि यात्रा के दौरान कोई महिला आपसे कहे, 'आपको शांति मिले', तो अपनी आँखें झुकाकर अपने मन में ही उसका उत्तर दें।

४१. जब आप किसी वरिष्ठ के साथ यात्रा पर निकलें, तो किसी भी परिस्थिति में उन्हें अपना बैग उठाने न दें; लेकिन यदि आप दोनों ही नवसिखिए हैं, तो बारी-बारी से उसे उठाएँ; फिर भी, जो उसे उठाए हुए हो, उसे आगे चलने दें।

४. ' ' पर, कोठरियों में रहने वालों की यात्रा, और अंतरात्मा पर[17]

1. जब आप यात्रा कर रहे हों, और आप में से कोई एक अस्वस्थ हो, तो उसे आपसे आगे चलने दें, ताकि यदि वह बैठना चाहे, तो वह ऐसा कर सके।

२. यदि आप नवसिखिए हैं और एक साथ यात्रा कर रहे हैं, तो अपने लिए, एक बार के लिए, आचरण का एक निश्चित क्रम स्थापित करें—चाहे वह जल-पात्र के पास जाने का हो या मेज पर बैठने का—ताकि जब समय आए, तो आप एक-दूसरे के रास्ते में न आएं; लेकिन यदि इस अवसर पर एक पहले जाता है, तो अगली बार दूसरा पहले जाए।

3. जब आप किसी वरिष्ठ से किसी विचार के बारे में पूछें, तो उस विचार को उसके सामने निस्संकोच होकर रखें, यदि आप जानते हैं कि वह वरिष्ठ विश्वसनीय है और आपकी बात का सम्मान करेगा।

४. जब तुम्हें अपने भाई के पाप के बारे में पता चले, तो किसी से भी इसके बारे में बात मत करना, क्योंकि यह तुम्हारे लिए मृत्यु है।

5. जब कुछ लोग उन विचारों के बारे में बात करें जो आपको परेशान करते हैं, तो उन्हें सुनने की इच्छा न करें, कहीं यह आपके लिए कलह का कारण न बन जाए।

6. स्वयं को अक्सर प्रार्थना करने के लिए प्रेरित करो, क्योंकि प्रार्थना तुम्हारी आत्मा का प्रकाश है।

7. हर दिन इस पर मनन करो कि तुमने कहाँ पाप किया है, और यदि तुम इसके लिए प्रार्थना करते हो, तो ईश्वर तुम्हें क्षमा कर देगा।

8. यदि कोई भाई लगातार आपके सामने अपने भाई के बारे में बुराई करने लगे, तो उसे रोकने में संकोच न करें, और उस पर विश्वास न करें, कहीं आप ईश्वर के सामने पाप न कर बैठें; बल्कि उससे नम्रता से कहें: 'मुझे क्षमा करो, भाई, मैं दीन हूँ - जो तुम कह रहे हो वह मेरा ही किया है - और मैं इसे सहन नहीं कर सकता।'

9. यदि कोई भाई आपके साथ अन्याय करता है, और कोई आपके सामने उसकी बुराई करता है, तो अपने हृदय की रक्षा करें कि आपके भीतर द्वेष फिर से न जागृत हो; परन्तु परमेश्वर के सामने अपने पापों को याद करें – और यदि आप चाहते हैं कि वह उन्हें क्षमा करे – तो अपने पड़ोसी का बुरा प्रतिफल न दें।

10. यदि आप ऐसे भाइयों के साथ निकलते हैं जिन्हें आप नहीं जानते, और यह पता चलता है कि वे आपसे नीचले पद के हैं, तो हर बात में उन्हें पहले आने का सम्मान दें। यदि आप किसी मित्र से मिलने जाएँ, तो हर बात में उन्हें आपसे पहले जाने दें, चाहे वह अज़ूबा (हाथ धोने की जगह) के पास जाना हो या मेज़ पर बैठना हो, और यह दिखावा न करें कि उन्हें आपके लिए सम्मानित किया गया है, बल्कि उन्हें यह सम्मान देते हुए कहें: 'उसने मुझ पर कृपा आपके लिए की है।'

11. यदि आप किसी भाई के साथ यात्रा कर रहे हैं और अपनी आवश्यकतानुसार किसी मित्र से मिलने के लिए रुकते हैं, और अपने भाई से कहते हैं, 'यहीं रुको'—और आपका मित्र आपको रोटी खाने के लिए ज़ोर देता है—तो जब तक आप अपने भाई को न बुला लें कि वह भी आपके साथ तरोताज़ा हो सके, तब तक अपने मुँह में कुछ भी न डालें।

12. यदि आप कई भाइयों के साथ यात्रा कर रहे हैं और इतने सारे होने के कारण उन्हें अपने मित्र के घर ले जाने में संकोच हो, तो सावधान रहें कि आप उन्हें तुच्छ न समझें; और, चुपके से निकलकर, उन्हें पीछे छोड़कर अकेले रोटी न खाएं, बल्कि उनके साथ मिलकर विचार करें कि क्या करना उचित है – और जो कुछ भी वे आपसे कहते हैं, उसे नम्रता से सुनें; और उनके साथ यात्रा करते समय, अपने लिए उच्च पद न मानें, न ही एक नौसिखिए के कर्तव्यों से बचें।

13. यदि आप किसी भाई से मिलने के लिए विशेष प्रयास करते हैं और वह आपको स्वीकार नहीं करना चाहता, तो बाद में जब आप उसे रास्ते पर देखें, या यदि वह बिना बताए आपके पास आता है, तो उसके प्रति परम दया दिखाएँ।

14. यदि आप सुनते हैं कि किसी ने आपके बारे में बुरा कहा है, तो जब आप उससे कहीं मिलें, या यदि वह आपसे मिलने आए, तो उसे अपनी पूरी क्षमता से एक प्रसन्न, स्वागत करने वाला और मैत्रीपूर्ण चेहरा दिखाएँ, और आपने जो सुना है उसके बारे में उससे कुछ भी न कहें: 'आपने ऐसा क्यों कहा?' क्योंकि नीतिवचन में लिखा है: 'जो बुराई को स्मरण रखता है, वह अपराधी है।'

---

[17] ग्रीक: *'peri syneideseos'* – मुझे लगता है कि इसे इस प्रकार पढ़ना चाहिए: *'peri synodeyseos'* – जैसा कि संदर्भ की आवश्यकता है। लैटिन संस्करण को सही ढंग से इसी रूप में पढ़ा गया था, जिसका शीर्षक था: Quid in itinere observandum est। लेकिन चूँकि अंत में अंतरात्मा का भी उल्लेख है, इसलिए इसे जोड़ा गया है।

15. यदि भाइयों, तुम किसी ज़रूरतमंद भाई से मिलो, तो उससे किसी भी तरह की मांग करके उसे परेशान मत करो, बल्कि अपना भोजन करने के लिए जो कुछ तुम्हें चाहिए, वह स्वयं खरीद लो, ताकि उसके लिए भी भरपूर बच जाए – जो आवास तुम्हें वहाँ मिले, वह तुम्हारे लिए पर्याप्त है।

16. यदि आप किसी ऐसे बुज़ुर्ग से मिलें जिसे आप जानते हैं, और आपके साथ कुछ ऐसे लोग हों जिन्हें बुज़ुर्ग नहीं जानते, तो उनकी मौजूदगी में बुज़ुर्गों के प्रति विशेष साहस न दिखाएँ, बल्कि अपने साथ आए लोगों को अपनी बात रखने दें।

17. जब भाई आपके साथ रहते हों, तो उनका सख्ती से ध्यान रखें, बशर्ते वे आपकी बात मानें, यह जानते हुए कि आप उन्हें लेकर ईश्वर के सामने जवाबदेह होंगे।

18. यदि आप ईश्वर के लिए किसी तीर्थयात्री के रूप में कहीं जाते हैं, तो उस स्थान के लोगों के साथ संबंध बनाने का प्रयास न करें, और न ही उनसे बातचीत में उलझें, क्योंकि (ऐसे मामले में) आपके लिए अपने रक्त संबंधियों के साथ रहना अधिक लाभदायक है।

19. यदि आप मठों में भाइयों से मिलने के लिए पहाड़ों पर जाते हैं, तो सबसे पहले जिस व्यक्ति से आप मिलें, उसी के साथ ठहरें, और उस व्यक्ति से पहले पूछे बिना किसी दूसरे के पास न जाएँ: 'क्या मुझे जाना चाहिए या नहीं?' यदि वह इससे अप्रसन्न हो, तो उस स्थान को छोड़ने तक उसे दुखी न करें।

20. यदि (देश-विदेश में) आप रहने के लिए कोई कोठरी लेते हैं, तो स्वयं को बहुत सारे मित्र बनाने की अनुमति न दें – अस्वस्थता की स्थिति में आपके लिए एक ही काफी है, और आप अपनी तीर्थयात्रा के महत्व (ताकत, वज़न) को कम नहीं करेंगे।

21. जब आप किसी गरीब (भाई) के लिए कोई अच्छा काम करें, तो उसे अपने भोजन में हिस्सेदार बनने के लिए आमंत्रित न करें, कहीं ऐसा न हो कि आप उसके लिए किया गया अपना अच्छा काम बर्बाद कर दें।

22. यदि आप किसी ऐसे मठ (आश्रम) में प्रवेश करते हैं जिसे आप नहीं जानते, तो वहीं रहें जहाँ वहाँ का निवासी आपको रहने की अनुमति दे, और जब तक वह स्वयं आपको न बुलाए, किसी दूसरे कोठरी में प्रवेश न करें।

२३. यदि आप अपनी कोठरी में मौन व्रत का पालन कर रहे हैं और कोई भाई आपसे अपनी आवश्यकता की कोई वस्तु माँगता है, तो उस वस्तु को अपने लिए न रखें, अन्यथा आप अपने भाई के विषय में आज्ञा का उल्लंघन करेंगे। लेकिन यदि आपके पास केवल वही चीज़ें हैं जो आपके लिए आवश्यक हैं, और कोई भी अनावश्यक चीज़ नहीं है, तो उन्हें अपनी ही बर्बादी के लिए व्यर्थ न करें: क्योंकि आपके पूरे शरीर को गेहन्ना में डाले जाने से तो अपने एक अंग को खो देना बेहतर है।

२४. यदि तुम ईश्वर के लिए अपने रक्त-संबंधियों से अलग होकर एक भटकते हुए संन्यासी बने हो, तो उनके प्रति स्नेह की मधुर अनुभूति (उनकी संगति का आनंद) को अपने ऊपर हावी न होने दो, और, अपनी कोठरी में बैठे-बैठे, अपने पिता या माता के लिए पछतावे से, या भाई-बहन की यादों से, या अपने बच्चों के लिए करुणा से, या अपने हृदय में अपनी पत्नी की लालसा से परेशान न हो – क्योंकि तुमने इन सभी को पीछे छोड़ दिया है – बल्कि मृत्यु के समय अपना प्रस्थान याद करो। चूँकि तब उनमें से कोई भी आपकी मदद नहीं कर पाएगा, तो सद्गुण के लिए उन्हें पीछे क्यों न छोड़ दें?

२५. जब, अपने कोठरी में चुपचाप, आपको कोई याद आए जिसने आपके साथ अन्याय किया हो, तो उठें और पूरे दिल से ईश्वर से प्रार्थना करें कि वह उन्हें क्षमा कर दें – और प्रतिशोध का विचार आपसे दूर हो जाएगा।

26. जब आप पवित्र रहस्यों को ग्रहण करने जाएँ, तो हर तरह से अपने विचारों की रक्षा करें (या किसी भी बाहरी विचार से खुद को बचाएँ), कहीं ऐसा न हो कि आप अपनी ही निंदा के लिए भाग लें।

27. यदि रात में आप शर्मनाक सपनों से प्रलोभित होते हैं, तो दिन के समय अपने सपने में आए चेहरों के बारे में सोचने से अपने हृदय की रक्षा करें, कहीं आप उनके आकर्षण से स्वयं को अपवित्र न कर लें और अपने ऊपर प्रचंड क्रोध न ला लें; बल्कि पूरे हृदय से ईश्वर से चिपके रहें – और वह आपकी मदद करेंगे, क्योंकि वह मानवीय दुर्बलता के प्रति दयालु हैं।

28. यदि आप कठोर तपस्या करते हैं, तो अपना हृदय उस पर निर्भर न होने दें, यह सोचकर कि वही आपको बचाती है; बल्कि अपने आप से कहें कि, शरीर की थकान के कारण, ईश्वर मेरी दीनता की प्रार्थना सुनते हैं (और मुझे बचाते हैं)।

29. यदि कोई तुम्हारी निंदा करे, तो जब तक वह चुप न हो जाए, तब तक उसका विरोध मत करो; फिर, स्वयं की जाँच करने पर, यदि तुम्हें अपने भीतर वही बात मिले जो तुमने उससे सुनी है, तो इस बात पर पश्चाताप करो कि तुमने पाप किया है – और ईश्वर की कृपा तुम्हें एक बार फिर से स्वीकार कर लेगी।

30. जब आप भाइयों के साथ यात्रा करें, और उनके बीच कोई ऐसा हो जिससे आप परमेश्वर के प्रेम के कारण स्नेह रखते हों, तो उनकी उपस्थिति में उससे कोई विशेष निकटता न दिखाएँ; कहीं ऐसा न हो कि उनके बीच कोई कमजोर हो जो ईर्ष्या से मर जाए - और आप उसका पाप अपने ऊपर उठा लेंगे, क्योंकि आपने उसे पाप करने का कारण दिया।

31. जब आप कुछ लोगों से मिलने जाएँ, तो यह उम्मीद न करें कि वे आपको देखकर बहुत खुश होंगे, ताकि जब वे आपका स्वागत करें, तो आप ईश्वर का धन्यवाद कर सकें।

32. यदि अपने कोठरी में मौन में रहते हुए आपको दुर्बलता घेर ले, तो हतोत्साहित न हों, बल्कि ईश्वर का धन्यवाद करें; यदि आप देखें कि आपकी आत्मा इससे विचलित हो रही है, तो उससे कहें: 'क्या यह दुर्बलता आपके लिए उस गेहेन्ना से बेहतर नहीं है जिसमें आपको जाना है?' – और यह आपके भीतर शांत हो जाएगी।

33. यदि तुम भाइयों के पास जाते हो, और उनमें से कोई तुमसे कहता है, 'मुझे यहाँ कोई शांति नहीं मिलती, परन्तु मैं तुम्हारे साथ रहना चाहता हूँ,' तो उसे स्थान न दो, कहीं ऐसा न हो कि तुम दूसरों के लिए ठोकर का कारण बनो। परन्तु यदि वह तुमसे कहता है, 'मेरी आत्मा किसी गुप्त बात के कारण मर रही है,' तो उसे भागने का मार्ग दो, फिर भी उसे अपने साथ रहने की अनुमति न दो।

34. अपनी कोठरी में मौन में बैठे हुए, भोजन के संबंध में अपने लिए एक नियम बनाओ: अपने शरीर को वह देना जो उसे चाहिए, ताकि वह तुम्हें बनाए रखे और तुम्हें अपनी भक्ति करने में सक्षम बनाए, और ताकि तुम्हें दूसरों के पास जाने की आवश्यकता न महसूस हो; स्वाद की लालसा को संतुष्ट करने के लिए, चाहे भोजन पौष्टिक हो या न हो, आनंद के लिए कुछ भी न खाओ; यदि आपको किसी से मिलने जाना हो – चाहे वह किसी भाई से हो या किसी मठ में – तो अपने शरीर को वहाँ मिलने वाले किसी भी मीठे भोजन का पेट भरकर खाने न दें, ताकि वह जल्द से जल्द अपनी कोठरी में लौटने के लिए तरसे, और ताकि वह स्वयं का गद्दार न बन जाए।

३५. यदि दुष्ट शक्तियाँ आपके हृदय को आपकी शक्ति से परे के कार्यों की ओर झुकाने लगें, तो उनकी न सुनें, क्योंकि वे आमतौर पर किसी व्यक्ति को ऐसे कार्य के लिए उकसाती हैं जिसके लिए वह सक्षम नहीं होता, ताकि वह उनके हाथों में पड़ जाए और वे उस पर प्रसन्न हों। दिन में एक बार भोजन करें और अपने शरीर को केवल वही दें जिसकी उसे आवश्यकता है, ताकि आप तब भी उठ सकें जब आपमें अभी भी इच्छा हो (खाने के लिए)। अपनी प्रार्थना-निशाँ भक्तिपूर्वक करें, और अपने शरीर को उसकी आवश्यकता से वंचित न करें, बल्कि बुद्धिमानी और संयम के साथ अपनी प्रार्थनाएँ करें, कहीं अत्यधिक प्रार्थना-निशाँ से आपकी आत्मा म्लान न हो जाए और वह मार्ग से भटक न जाए। आधी रात आपके प्रार्थनाओं के लिए और आधी शरीर के आराम के लिए पर्याप्त है; सोने से पहले, दो घंटे प्रार्थना और भजन-गायन में बिताएं, फिर आराम करने के लिए लेट जाएं, और जब प्रभु आपको जगाएं, तो फिर से उत्साह के साथ अपनी प्रार्थनाएं करें। यदि आपको लगे कि आपका शरीर सुस्ती कर रहा है, तो उससे कहें: 'क्या तुम इस क्षणिक विश्राम के लिए तरसते हो, केवल इस लिए कि बाद में तुम्हें घोर अंधकार में डाल दिया जाए?' और यदि आप इस प्रकार धीरे-धीरे स्वयं को अनुशासित करते हैं, तो आपको शक्ति (ऊर्जा) प्राप्त होगी।

36. ऐसे लोगों से मेलजोल न रखें, जिन्हें देखकर आपका अंतरात्मा यह डरता हो कि वे जो दिखते हैं उससे अलग हैं, या आप जो चाहते हैं वे उससे अलग हैं – या यह डरता हो कि उनके माध्यम से आप दूसरों को एक अलग रोशनी में जान सकते हैं – कहीं ऐसा न हो कि आप धार्मिकता के मार्ग में एक ठोकर का कारण बनें।

37. यदि आप एक मठ में हैं और, एक दास होने पर, उसे अपने साथ रखते हैं, तो आप संन्यास-संघ पर अपमान लाते हैं; लेकिन यदि आप उसे किसी भाई को दे देते हैं, तो आप परमेश्वर के सामने पाप करते हैं। या तो उसे मुक्त कर दें और जाने दें, या उसे उसकी स्वतंत्रता प्रदान करें। यदि वह भिक्षु बनना चाहता है, तो वह स्वयं (या जैसा वह जानता है) देख लेगा। हालाँकि, उसे अपने साथ मत रखना, क्योंकि यह आपकी आत्मा के लिए हानिकारक है।

३८. यदि, किसी नगर में रहते हुए, आप ईश्वर के लिए अपने शरीर को कष्ट देते हैं, और वहाँ के लोग ईर्ष्या के कारण, आपको इसके लिए सम्मानित करना शुरू कर देते हैं, तो उस स्थान को छोड़ दें और कहीं और बस जाएँ – कहीं ऐसा न हो कि आपकी मेहनत व्यर्थ हो जाए; लेकिन यदि आपने पहले ही व्यर्थता पर विजय प्राप्त कर ली है, तो लोगों की परवाह न करें, यह जानते हुए कि ईश्वर, आपके साथ, आपके कार्यों से प्रसन्न हैं।

39. यदि आपने संसार का त्याग कर दिया है, तो अपने लिए कुछ भी बिल्कुल न रखें; और यदि आपके भीतर भटकने की इच्छा उत्पन्न हो, तो अपने शरीर को और भी अधिक शारीरिक श्रम से थकाएँ, ताकि आप अपनी कोठरी में चुपचाप रह सकें, और शांतिपूर्वक अपना भोजन ग्रहण कर सकें।

४०. यदि आप अपनी कारीगरी बेचने के लिए शहर जाते हैं, तो सांसारिक लोगों की तरह कीमत पर मोल-भाव न करें, बल्कि इसे वैसे ही सौंप दें, ताकि आपके कोठरी की शक्ति (या महत्व) कम न हो जाए।

४१. जब आप कोई ज़रूरी चीज़ खरीदें, तो मोल-भाव न करें, यह कहते हुए कि 'मैं इसके लिए इससे ज़्यादा नहीं दूँगा'; लेकिन अगर आप वह वस्तु चाहते हैं, तो खुद को थोड़ा ज़ोर डालें (पूरा भाव देने के लिए); हालाँकि, अगर आप इसे वहन नहीं कर सकते, तो चुपचाप चले जाएँ। जब बाद में विचार आपको सताने लगें, यह पूछते हुए कि आप पैसे कहाँ से लाएँगे, तो उनसे कहें: 'मैं अब उन सभी संतों जैसा हो गया हूँ, जिनकी परीक्षा ईश्वर ने गरीबी से तब तक ली जब तक उन्हें यह पता नहीं चल गया कि उनकी इच्छा सच्ची थी, और केवल तभी उन्होंने उन्हें (भोजन की) प्रचुरता में पहुँचाया।'

४२. यदि कोई भाई आपके पास कोई वस्तु रखता है, और आपको उसकी आवश्यकता हो, तो उसके बिना उसे न छुएँ, जब तक आपने उसे (पहले से) इसके बारे में न बताया हो।

४३. यदि कोई भाई आपको अलग ले जाकर कहे, 'यह या वह मुझसे खरीद लो', तो यदि आप उसे खरीद सकते हैं, तो उससे खरीद लें। हालाँकि, यदि आप दूसरों के साथ रहते हैं, तो उनके ज्ञान और सहमति के बिना ऐसा न करें, अन्यथा आप अपने साथ रहने वालों को नाराज़ कर देंगे।

४४. यदि आपको किसी काम से अपने गृहनगर जाना पड़े, तो सावधान रहें कि आप अपने खून के रिश्तेदारों के साथ अपने व्यवहार में अनावश्यक आत्मीयता न दिखाएँ, और उनकी बातचीत में दखल न दें।

४५. यदि आप अपने भाई से अस्थायी उपयोग के लिए कुछ उधार लेते हैं, तो लापरवाही न करें, बल्कि उसे जल्द से जल्द वापस करने का प्रयास करें। यदि यह कोई औजार है, तो अपना काम खत्म होते ही उसे तुरंत वापस कर दें। यदि आपके पास रहते हुए यह टूट जाता है, तो उसकी मरम्मत करें या एक नया बनाएं: इस पर ध्यान न दें।

४६. यदि आप किसी ज़रूरतमंद भाई को कुछ उधार देते हैं और देखते हैं कि वह आपको चुकाने में असमर्थ है, तो उसे परेशान न करें या उस पर दबाव न डालें, चाहे वह कुछ भी हो—चाहे पैसा हो या कपड़े—जो कुछ भी आपने अपनी क्षमता के अनुसार उसे दिया है।

४७. यदि आप किसी निश्चित स्थान पर रहने आएँ, और एक कोठरी लें, और उसमें आवश्यक सभी चीज़ों का प्रबंध करते हुए उस पर पैसा खर्च करें, और समय आने पर उसे छोड़ दें, और कोई भाई वहाँ रहने आता है, और आप बाद में स्वयं वहाँ लौटें – तो उसे बाहर न निकालें, बल्कि अपने लिए कोई दूसरी कोठरी ढूँढ़ें, कहीं ऐसा न हो कि आप परमेश्वर के सामने पाप करें। लेकिन यदि वह अपनी मर्ज़ी से चला जाता है, तो आप हर दोष से मुक्त रहेंगे। यदि आपने कोठरी में कोई सामान छोड़ा था और उसने उसका उपयोग कर लिया है, तो उससे उसे वापस मांगने की मांग न करें।

४८. जब आप अपनी कोठरी छोड़ें, तो ध्यान रखें कि वहाँ की ज़रूरी चीज़ें अपने साथ न ले जाएँ, बल्कि उन्हें किसी ज़रूरतमंद भाई के लिए छोड़ दें, और ईश्वर आपकी ज़रूरतें पूरी करेंगे, आप जहाँ भी जाएँ।

४९. अपने अधिष्ठाता से अपनी परेशान करने वाली किसी भी बात को बताने में संकोच न करें, और आप उससे मुक्त हो जाएँगे: क्योंकि आत्माओं को किसी ऐसे व्यक्ति में उससे अधिक पैर जमाने का अवसर नहीं मिलता जितना कि एक ऐसे व्यक्ति में जो अपने विचारों को, चाहे वे अच्छे हों या बुरे, छिपाता है।

50. पवित्र सहभाग (Holy Communion) के लिए जाते समय सावधान रहो, अपने भाई के प्रति द्वेष मत पालो; क्योंकि उस स्थिति में तुम स्वयं को धोखा दे रहे हो।

51. यदि धर्मग्रंथ के शब्दों में आपको कोई रूपक (अलंकारिक) अर्थ प्रकट हो, तो उनका अलंकारिक अर्थ लगाएँ, लेकिन मूल (या शाब्दिक) अर्थ को नज़रअंदाज़ न करें, कहीं ऐसा न हो कि आप पवित्र धर्मग्रंथ की तुलना में अपनी ही बुद्धि पर अधिक भरोसा करें; क्योंकि यह अहंकार का लक्षण है।

५२. यदि तुम्हारा भाई, विधर्मियों के वचनों से बहककर, अज्ञानता के कारण विश्वास से भटक जाता है, और फिर लौट आता है, तो उसकी तुच्छता न करना, क्योंकि वह अज्ञानता के कारण ऐसा हुआ।

53. विधर्मियों से बात करते समय सावधान रहो, जब कि तुम आस्था की रक्षा करना चाहते हो, कहीं उनके दुष्ट शब्दों का विष किसी भी तरह से तुम्हें आहत न कर दे।

54. यदि आपको कोई ऐसी पुस्तक मिले जिसके बारे में यह माना जाता है कि वह विधर्मी है, तो उसे पढ़ने का प्रयास न करें, कहीं ऐसा न हो कि आप अपने हृदय को घातक विष से भर लें, बल्कि उस बात पर दृढ़ता से बने रहें जो आपको सिखाई गई है, उसमें न कुछ जोड़ें और न ही उससे कुछ घटाएँ।

55. उस झूठी बुद्धि से अपना बचाव करो जो सही शिक्षा के विरोध में है, जैसा कि प्रेरित ने कहा (1 तीमु. 6:20; 1:10)।

56. यदि आप जवान हैं और आपने अभी तक शरीर को वश में नहीं किया है, तो, महापुरुषों के उच्चतम गुणों के बारे में सुनकर और उनमें आकांक्षा रखकर, यह मत सोचिए कि आप आलस्य में मग्न होकर उन्हें प्राप्त कर लेंगे:

वे आपके पास तब तक नहीं आएँगे जब तक आप उन्हें विकसित करने के लिए परिश्रम नहीं करते; लेकिन यदि आप ऐसा करते हैं, तो वे अपने आप आपके पास आएँगे।

५७. निराशा से अपना बचाव करो, क्योंकि यह एक संन्यासी के श्रम के फल को नष्ट कर देती है।

58. जब आप किसी भी वासना के विरुद्ध संघर्ष कर रहे हों, तो हतोत्साहित न हों, बल्कि परमेश्वर के सामने नम्रता से कहें: 'मैं इस पर विजय प्राप्त नहीं कर सकता; हे दयालु, मेरी मदद करो' – और आपको शांति मिलेगी।

५९. जब तुम अपनी कोठरी में बैठे-बैठे लज्जा को अपने हृदय में पनपने दो, तो अपनी आत्मा का विरोध करो, कहीं वह तुम पर हावी न हो जाए; जल्दी से ईश्वर को याद करो, कि वह तुम्हें बारीकी से देख रहा है, और जो कुछ भी तुम अपने हृदय में सोचते हो वह सब उसके सामने उजागर हो जाता है; और अपनी आत्मा से कहो: यदि तुम अपने जैसे पापियों से डरते हो, कि कहीं वे तुम्हारे पाप न देख लें, तो उस परमेश्वर से तो और भी अधिक डरना चाहिए, जो सभी पर इतनी बारीकी से दृष्टि रखता है? इस प्रकार के उपदेश से, ईश्वर का भय आपके भीतर प्रकट होगा – और यदि आप इसमें बने रहते हैं, तो आप अपनी वासनाओं के विरुद्ध दृढ़ खड़े रहेंगे, जैसा कि लिखा है: *'जो प्रभु पर भरोसा रखते हैं, वे सिय्योन पर्वत के समान हैं, जो हिलता नहीं, परन्तु यरूशलेम में सदा बना रहता है'* (भजन संहिता 124:1)।

60. यदि, युद्ध में लगे हुए, तुम शत्रु की सेनाओं के विरुद्ध खड़े हो और देखो कि वे तुम्हारे सामने थकान से लड़खड़ा गए हैं और पीछे हटकर भाग रहे हैं, तो इस पर तुम्हारा हृदय आनंदित न हो; क्योंकि इन आत्माओं द्वारा तुम्हारे विरुद्ध रची गई दुष्ट योजना उनके पीछे है, और वे तुम्हारे लिए पहले से कहीं भी बदतर युद्ध की तैयारी कर रहे हैं। वे शहर के पीछे एक विशेष युद्धदल घात में छोड़ देते हैं—और उसे हिलने के लिए मना कर देते हैं। तब, जब तुम उनके विरुद्ध चढ़ाई करते हो और उनका सामना करते हो, तो वे थकान के मारे तुम्हारे सामने भाग जाएँगे; परन्तु जब तुम्हारा हृदय इस कारण घमण्ड से भर जाएगा कि तुमने उन्हें भगा दिया है – और तुम नगर को छोड़ दोगे – तब उनमें से कुछ लोग पीछे से तुम्हारे विरुद्ध उठ खड़े होंगे, जबकि अन्य आपके सामने खड़े होंगे, और उनके बीच उस बेचारी आत्मा को रखेंगे, ताकि उसका कोई और शरणस्थान न रहे। – यह नगर परमेश्वर के सामने पूरे मन से स्वयं को नम्र करने के लिए है, जो आपको शत्रु के सभी युद्धों से बचाता है।

61. यदि तुम किसी लड़ाई के विषय में परमेश्वर से प्रार्थना करो, और वह तुम्हें न सुने, तो हियाव न छोड़ना, क्योंकि वह तुमसे बेहतर जानता है कि तुम्हारे लिए क्या अच्छा है। परन्तु जब तुम लड़ाई के समय अपनी किसी भी विनती के लिए परमेश्वर से प्रार्थना करो, तो यह न कहना: 'यह मुझसे दूर कर दे, और मुझे वह दे,' बल्कि इस प्रकार प्रार्थना करना: हे प्रभु यीशु मसीह, मेरी मदद करो, और मुझे आपके विरुद्ध पाप करने न दें, क्योंकि मैं भटक गया हूँ; मुझे अपनी इच्छा का पालन करने न दें; मुझे मेरे पापों में नाश होने न दें; अपनी सृष्टि पर दया करें; मुझे तुच्छ न समझें, क्योंकि मैं कमज़ोर हूँ; मुझे त्याग न दें, क्योंकि मैंने आप में शरण ली है; मेरे प्राण को चंगा कर, क्योंकि मैंने तेरे विरुद्ध पाप किया है; जो मुझे सताते हैं वे सब मेरे सामने हैं – और हे प्रभु, तेरे सिवाय मेरा कोई शरणस्थान नहीं; हे प्रभु, अपनी दया के लिए मुझे बचा ले; जो मेरे विरुद्ध उठते हैं, मेरी आत्मा को नाश करने की खोज में हैं, वे सब लज्जित हों; क्योंकि हे प्रभु, आप हर बात में सामर्थी हैं, और आपके द्वारा परमपिता परमेश्वर और पवित्र आत्मा को युगानुयुग महिमा मिले। आमीन। – तब आपका अंतरात्मा आपके हृदय से गुप्त रूप से वह कारण बताएगा कि ईश्वर आपकी बात क्यों नहीं सुनते; तब आपका काम यह नहीं होगा कि आप इसे अनदेखा करें, बल्कि यह होगा कि आप वही करें जो यह आपसे करने के लिए कहे। यह नहीं हो सकता कि ईश्वर किसी व्यक्ति की बात न सुनें, जबकि वह व्यक्ति ईश्वर की बात नहीं सुनता। वह मनुष्य से दूर नहीं हैं, बल्कि हमारी अपनी इच्छाएँ ही हमें सुनने से रोकती हैं। कोई भी आपको धोखा न दे: जैसे कि पृथ्वी बिना बोने और पानी दिए अपने आप फल नहीं दे सकती, वैसे ही किसी व्यक्ति के लिए आत्म-संयम (आत्म-त्याग, आत्म-बलिदान) और नम्रता के बिना (भलाई का) फल देना असंभव है।

६२. अतः हे प्रिय, हम परमेश्वर के भय में खड़े होईं, सद्गुणों के अभ्यास (*to praktikon* – अभ्यास – *ton areton)* को बनाए रखते और पालन करते हुए, *अपनी अंतरात्मा के लिए कोई ठोकर का कारण न बनें, बल्कि परमेश्वर के भय में स्वयं पर ध्यान दें, जब तक कि वह भी हमारे साथ मुक्त न हो जाए, ताकि हमारे और उसकी बीच एकता हो सके। तब वह हमारी संरक्षक के रूप में काम करेगी, जो हमें वह सब कुछ दिखाएगी जिसके संबंध में हमें '*[18] *' (अपनी इच्छा) को काट डालना चाहिए। लेकिन यदि हम इसकी अवहेलना करते हैं, तो यह हमसे मुंह मोड़ लेगी और हमें छोड़ देगी, और हम अपने शत्रुओं के हाथ में पड़ जाएंगे, जिनसे हमारे लिए कोई दया नहीं होगी, जैसा कि हमारे प्रभु ने हमें' ' में सिखाया था, यह कहते हुए: 'अपने विरोधी से जल्दी निपटारा कर लो, जबकि आप अभी भी उसके साथ रास्ते में हैं: कहीं ऐसा न हो कि आपका विरोधी आपको न्यायाधीश के हवाले कर दे, और न्यायाधीश आपको अधिकारी के हवाले*

[18] *एकोप्टोमेन*। पैसियोस में: इसमें ही हम ठोकर खाते हैं।

कर दे, और आप जेल में डाल दिए जाएँ। मैं आप से सच कहता हूँ: जब तक आप आखिरी पैसा चुका नहीं देते, तब तक आप वहाँ से बाहर नहीं निकलेंगे' (मत्ती 5:25–26)। – कहा जाता है कि अंतरात्मा एक विरोधी है, क्योंकि यह एक व्यक्ति का विरोध करती है जब वह अपने शरीर की इच्छाओं को पूरा करना चाहता है; और यदि कोई व्यक्ति इसकी बात नहीं सुनता, तो यह उसे उसके शत्रुओं के हाथों में सौंप देती है। होशे ने एप्रैम पर विलाप करते हुए क्यों कहा: *'एप्रैम ने अपने विरोधी पर विजय प्राप्त की है; उसने व्यवस्था को पैरों तले रौंद डाला है'* (होशे 5:11): उसने मिस्र को खोजा, और अपनी इच्छा के विरुद्ध अश्शूरियों के पास बंदी बना लिया गया (होशे 7:11)। मिस्र इस बात का प्रतीक है कि हृदय ने अपनी सांसारिक इच्छाओं को खोजा, जबकि 'अपनी इच्छा के विरुद्ध अश्शूरियों के पास बंदी बना लिया गया' इस बात का प्रतीक है कि, यद्यपि अनिच्छा से, वह अपने शत्रुओं की सेवा करता है।

63. अतः हे प्रियजन, हम अपना ध्यान रखें, कहीं हम अपनी ही देहिक इच्छा के हाथ में न पड़ जाएँ – और वह हमें हमारी इच्छा के विरुद्ध अश्शूरियों के हवाले न कर दे। आओ, हम इस कड़वे वचन पर ध्यान दें: अश्शूर का राजा इस्राएल के देश में आया, और उसने एप्रैम और इस्राएल को अश्शूर में निर्वासित कर दिया, और उन्हें हूज़ान की नदियों के पास, एला और अमोरह के प्रदेशों में बसा दिया, और वे आज तक वहीं रहते हैं। तब अश्शूर के राजा ने अपने ही लोगों में से कुछ को भेजा और उन्हें इस्राएल के देश में रहने की आज्ञा दी, और उनमें से प्रत्येक ने अपने लिए एक मूर्ति बनाकर उसकी उपासना की। और वे आज तक वहीं रहते हैं (2 राजा 17:6, 24, 25, 29)। यह एफ्राइम के साथ इसलिए हुआ क्योंकि उसने *'अपने विरोधी पर काबू पाया और न्याय को रौंद डाला'*।

64. हे भातनों, क्या अब तुमने यह समझ लिया है कि जो अपनी बुरी इच्छाओं का अनुसरण करते हैं और अपने विवेक को कुचलते हैं, उनका क्या हुआ है?—इसलिए, हे प्रिय, हम उनसे ईर्ष्या न करें, बल्कि हम संतों का अनुकरण करें, जिन्होंने मृत्यु तक पाप के आगे आत्मसमर्पण नहीं किया, बल्कि अपने पवित्र विवेक की आज्ञा मानी और स्वर्ग के राज्य का वारिस बने। उनमें से प्रत्येक अपनी पीढ़ी में पवित्रता में मरा, फिर भी उनके नाम युगों-युगों तक अमर हो गए हैं। – आइए हम प्रिय याकूब को एक उदाहरण के रूप में लें, जिन्होंने परमेश्वर के अनुसार हर बात में अपने माता-पिता की आज्ञा मानी; उनका आशीर्वाद प्राप्त करने के बाद, उन्होंने वहाँ संतान प्राप्त करने के लिए मेसोपोटामिया जाने की इच्छा व्यक्त की, क्योंकि वे कनान की बेटियों से संतान नहीं चाहते थे, जो अपने माता-पिता की अवज्ञा करती थीं। तब, अपनी लाठी और तेल का एक मटका लेकर, वह बेथेल नामक स्थान पर आया – जिसका अर्थ है 'ईश्वर का घर' – और वहाँ विश्राम किया; और रात में एक दर्शन में उसने स्वर्ग से पृथ्वी तक पहुँचती हुई एक सीढ़ी देखी, जिस पर ईश्वर के स्वर्गदूत चढ़ते और उतरते थे। – यहोवा उस पर खड़ा था। यह भविष्य में परमेश्वर की सेवा करने वालों के लिए एक संकेत है – कि यद्यपि आरंभ में उन्हें धार्मिकता का मुख प्रकट किया जाता है, जब तक वे इसके लिए परिश्रम नहीं करते, वे परमेश्वर को प्राप्त नहीं करेंगे। याकूब उठा और परमेश्वर से वाचा बाँधी कि वह उसका सेवक रहेगा, और परमेश्वर ने इसे पुष्ट किया, और कहा, *'मैं तेरे संग रहूँगा और तुझे सुरक्षित रखूँगा'* (उत्पत्ति 28:1–15)। इसलिए वह वहाँ एक पत्नी लेने के लिए अश्शूर देश गया, और जब उसने अपनी माँ के भाई की बेटी राहेल को देखा, तो वह उससे प्रेम करने लगा और उसके लिए सात वर्ष तक काम किया; परन्तु जब तक उसने पहले लेआ को नहीं ले लिया, तब तक राहेल उसे नहीं दी गई। और राहेल तब तक बाँझ रही जब तक उसने उसके लिए और सात वर्ष तक काम नहीं किया। इस कथन का यही अर्थ है।

65. उस भूमि को मेसोपोटामिया कहा जाता है क्योंकि यह दो नदियों के बीच स्थित है: पहली को टायग्रिस और दूसरी को यूफ्रेटिस कहा जाता है; पहली असीरियनों के विपरीत बहती है, जबकि दूसरी का कोई शत्रु (बाधा) नहीं है, लेकिन कहा जाता है कि यह खुले मैदान से होकर बहती है। टायग्रिस, जैसा कि व्याख्या किया जाता है, तर्क का प्रतीक है, जबकि यूफ्रेटिस विनम्रता का प्रतीक है। लीह को शारीरिक श्रम का प्रतीक माना जाता है, जबकि राहेल वास्तविक चिंतन का प्रतिनिधित्व करती है। यह मेसोपोटामिया में रहने वाले एक व्यक्ति में पूरा होता है, जो तर्क के साथ शारीरिक श्रम करते हुए, अस्सीरियनों की शत्रुता का विरोध करता है, और विनम्रता के माध्यम से सच्ची चिंतन तक पहुँचता है। – लेकिन राहेल ने तब तक उससे कोई संतान नहीं जनी जब तक लेआ ने अपनी सभी संतानों को जन्म नहीं दे दिया, और उसने राहेल के लिए और सात साल काम कर लिया था। इसका यही मतलब है: कि जब तक कोई व्यक्ति सक्रिय प्रयास का पूरा मार्ग पूरा नहीं कर लेता, तब तक सच्ची चिंतनशीलता उसके भीतर स्वतंत्रता (या स्वतंत्र अभिव्यक्ति) नहीं पाती। हालाँकि दोनों पत्नियाँ उसकी थीं, वह लेआ से ज़्यादा राहेल से प्यार करता था, क्योंकि बाद वाली की *'आँखें कमज़ोर थीं' – 'लेकिन राहेल का रूप बहुत सुन्दर था'* (उत्पत्ति 29:17)। पहली पत्नी की आँखें कमजोर थीं, इस कथन का यही अर्थ है – यानी, जब तक कोई व्यक्ति शारीरिक परिश्रम में लगा रहता है, वह अभी तक सच्ची मनन-चिंतन की महिमा को नहीं देख पाता, क्योंकि शत्रु, अपनी आदत के अनुसार, अपने मामलों में मनुष्यों को प्रसन्न करने की इच्छा मिला देता है; लेकिन उसे इस पर ध्यान नहीं देना चाहिए। – जब लेआ कुछ समय

के लिए संतान जन्म देना बंद कर दिया, तो उसने अपने पति को अपनी दासी जिल्पा दे दिया, और बाद में उसने फिर से संतान जन्म दिया और बच्चे का नाम अस्सर रखा, जिसका अर्थ 'धन-संपत्ति' है। जब लेआ ने बच्चों को जन्म देना समाप्त कर दिया, तब परमेश्वर ने राहेल को याद किया (उत्पत्ति 30:22)। इसका यह अर्थ है कि जब शारीरिक परिश्रम इंद्रियों को शुद्ध करता है, और वे वासनाओं से मुक्त हो जाती हैं, तो सच्ची मनन-चिंतन अपने गौरव को मन के सामने प्रकट करती है (या—पूर्ण महिमा में मन के सामने स्वयं प्रकट होती है)। – यद्यपि लेवी के पुत्र याकूब के लिए सहायक थे, फिर भी वह यूसुफ से सबसे अधिक प्रेम करता था। इसका अर्थ यह है कि, यद्यपि शारीरिक श्रम व्यक्ति को शत्रु से बचाता है, परन्तु यह सच्ची मनन-चिंतन ही है जो उसे परमेश्वर के साथ एक करती है। – याकूब ने जैसे ही यूसुफ़ को देखा, वह तुरंत अपने माता-पिता के पास लौटना क्यों चाहता था (उत्पत्ति 30:25)? क्योंकि उसने देखा कि उसके भाइयों पर एक राजा उसका जन्म हुआ है। इसके अलावा, याकूब अपनी सारी सेना (शिविर, कारवाँ) को यामोख की धारा के पार ले गया था (स्लावोनिक और रूसी में – यावोक), और दूसरी तरफ अकेले रह गए, तब उन्हें परमेश्वर के आशीर्वाद का आनंद मिला, जिसने उनसे कहा: *'तेरा नाम फिर याकूब नहीं, बल्कि इस्राएल कहलाएगा'* (उत्पत्ति 32:28), उसे इस्राएल कहा गया क्योंकि उसने शत्रु से कुश्ती की थी – (और इसीलिए ऐसा कहा गया) – जब तक कि उसे यह आशीर्वाद प्राप्त नहीं हो गया और उसने अपनी इंद्रियों को, जो शत्रु के कब्जे में थीं, (बंदी से) छुड़ाया। जब वे उससे मुक्त हो गईं, तब उसका नाम बदलकर इस्राएल रखा गया, अर्थात्, 'वह मन जो ईश्वर को देखता है'। क्योंकि जब मन परमात्मा की महिमा को देखने की अवस्था को प्राप्त कर लेता है, तो शत्रुतापूर्ण द्वेष उससे भय खाता है। देखो, यद्यपि एसाव कटुता के साथ उससे मिलने आता है, फिर भी याकूब की नम्रता उसकी दुर्भावना को शांत कर देती है, और अब वह (याकूब) स्वयं उसे (एसाव को) नहीं हराता, बल्कि परमेश्वर के साक्षात सामने अपना स्वयं का दीन होना ही उसे हराता है। यद्यपि शत्रु किसी मनुष्य से उसकी प्राप्त की हुई महान महिमा को देखकर ईर्ष्या कर सकता है, वह उस पर विजय प्राप्त नहीं कर सकता, क्योंकि परमेश्वर उसकी सहायता करते हैं, जैसा लिखा है: *'अपने जन्मस्थान पर लौट जाओ, और मैं तेरे संग रहूँगा'* (उत्पत्ति 31:3)। – अंत में, वह शलिम पहुँचा, और वहाँ उसने एक खेत खरीदा, और यहोवा के लिए एक वेदी लगाई, जिसने उसकी संकट के दिन उसकी सुनी थी (उत्पत्ति 33:19-20)। 'सलीम' नाम का अर्थ 'शांति' है, यानी: जब कोई व्यक्ति एक ऐसी लड़ाई से गुजरता है जिसमें ईश्वर उसकी रक्षा करता है, तो वह शांति की अवस्था प्राप्त करता है। और याकूब ने बारह पत्थरों का एक वेदी बनाया, और प्रतिज्ञात देश में उस पर मेसोपोटामिया में किए गए अपने श्रम के फलों से ईश्वर को एक बलिदान अर्पित किया।

६६. ऐसे ही प्रिय मूसा थे, जिन्होंने लोगों को मिस्र से निकालकर, उन्हें फिरौन के हाथ से बचाया, उन्हें लाल सागर के पार ले गए और अपने सभी शत्रुओं की मृत्यु के साक्षी बने, यहोशू को अमालेक को नष्ट करने के लिए भेजा, जबकि वह स्वयं (प्रार्थना में) पहाड़ की चोटी पर खड़े रहे, उनके हाथ अहरोन और हूर ने थाम रखे थे, ताकि वे क्रूस के चिह्न से भटक न जाएँ। जब यीशु ने बाद में अमालेक को हराकर आनंद के साथ लौटे, तो मूसा ने पहाड़ की तलहटी में बारह पत्थरों से एक वेदी बनाई, और उस स्थान का नाम रखा: *'यहोवा मेरा शरणस्थान है'* (निर्ग. 17:15), क्योंकि परमेश्वर अदृश्य हाथ से अमालेक से युद्ध करता है। – अमालेक नाम निराशा का प्रतीक है। क्योंकि जब कोई व्यक्ति अपनी इच्छाओं से मुँह मोड़ना शुरू करता है, अपने पापों को त्याग देता है, और ईश्वर की ओर मुड़ता है, तो निराशा—जो सबसे पहले उत्पन्न होती है—उनके विरुद्ध लड़ती है, और उन्हें उनके पापों की ओर वापस खींचने की कोशिश करती है। इस निराशा को ईश्वर के प्रति लगनपूर्ण भक्ति से दूर किया जाता है; इस भक्ति को संयम से बढ़ावा मिलता है, जिसे शारीरिक श्रम के माध्यम से बनाए रखा जाता है, और इसी के द्वारा इस्राएल को मुक्त किया जाता है। फिर एक व्यक्ति ईश्वर का धन्यवाद करते हुए कहता है: 'मैं कमजोर हूँ, लेकिन आप पीढ़ी-दर-पीढ़ी मेरे सहायक हैं।'

67. ऐसे ही महान भविष्यवक्ता एलियाह भी थे। वह उन सभी झूठे नबियों को तब तक नष्ट नहीं कर सका जो उसका विरोध करते थे, जब तक कि उसने बारह पत्थरों का एक वेदी नहीं बना लिया, उस पर लकड़ी की लट्ठियाँ नहीं रख दीं, उन पर पवित्र बलिदान नहीं चढ़ाया, और उस सब पर पानी नहीं डाल दिया; और परमेश्वर उसके लिए एक आग बन गया जिसने वेदी और उस पर जो कुछ भी था, सब को भस्म कर दिया। तभी, ठीक उसी क्षण, उसने अपने शत्रुओं को चुनौती दी (3 राजा 18:40 आदि)। – और जब उसने उन्हें नष्ट कर दिया, कि एक भी जीवित न बचा, तो उसने परमेश्वर का धन्यवाद किया, यह कहते हुए: 'इस सब में तू ही है, क्योंकि लिखा है कि उसने अपना मुँह अपने घुटनों के बीच रख लिया' (1 राजा 18:42)। इस प्रकार, यदि मन सावधानी से अपनी इंद्रियों पर पहरा देता है, तो वह अमरत्व (या शाश्वत जीवन) प्राप्त करता है, और अमरत्व (शाश्वत जीवन) उसे उन वचनों की ओर ले जाता है, जिन्हें परमेश्वर उसे प्रकट करते हैं। जब, बाद में, एलिया का *'युवा' 'ऊपर देखता है'* और उत्तेजित हुए सात जुनूनों में से किसी को भी नहीं देखता है, तो वह *'एक छोटे से बादल को, जो एक मनुष्य के पदचिह्न के समान था, और जो समुद्र से पानी*

उठाता था' देखता है: जो पवित्र सांत्वनादाता (3 राजा 18:43, 44) का विश्राम है। – अमरत्व यह है: अपने कर्मों को अक्षुण्ण (पूर्ण और अक्षुण्ण) रखना, और उस चीज़ पर वापस न लौटना जिसके लिए कोई क्षमा मांगता है। क्योंकि जब परमेश्वर किसी मनुष्य के कामों को स्वीकार करता है, और जो कुछ वह करता है वह शत्रु की शक्ति से सुरक्षित, अखंड बना रहता है, तो उसके शत्रु उसके विरुद्ध खड़े नहीं हो पाएँगे; जब वे देखेंगे कि उन पर उनकी कोई पकड़ नहीं है, तो वे अपने आप ही लुप्त हो जाएँगे, जैसा लिखा है: *'अपने देवताओं के नाम पुकारो, और मैं अपने प्रभु परमेश्वर का नाम पुकारूँगा; और जो देवता आग से उत्तर दे—वही परमेश्वर है* (1 राजा 18:24)। (*'उन्होंने पुकारा... और न कोई शब्द हुआ, न कोई उत्तर मिला'* – 26)। शत्रु की शक्ति द्वारा किसी व्यक्ति में बोई गई हर चीज़ के साथ ऐसा ही होता है: एक अनिच्छुक व्यक्ति में, दुश्मन अपनी इच्छा को पूरा नहीं कर सकते; वे अपनी पूरी ताकत लगा देते हैं (उसे अपने पक्ष में करने के लिए), लेकिन परमेश्वर का जन उनकी परवाह नहीं करता, क्योंकि उसका हृदय, जो परमेश्वर की इच्छा के अनुसार है, उसकी इच्छा नहीं करता - जैसा कि लिखा है: 'अपने देवता के नाम का आह्वान करो, और मैं अपने प्रभु परमेश्वर के नाम का आह्वान करूँगा'; लेकिन चूँकि उनकी इच्छा उसमें नहीं थी, उसने उन्हें किसी भी तरह से उत्तर नहीं दिया।

68. यह सब उस हर व्यक्ति के साथ होता है जो परमेश्वर की इच्छा का पालन करता है और उसकी आज्ञाओं का पालन करता है। क्योंकि उस समय के लोगों के लिए ये प्रकार थे; परन्तु यह हमारी शिक्षा के लिए लिखा गया है, हम जो उनके पदचिन्हों पर चलने का निश्चय कर चुके हैं, उस अमरत्व को प्राप्त करने का प्रयास करते हुए, जिसने उन्हें शत्रु के सभी बाणों से बचाया। उन्होंने स्वयं को परमेश्वर की शरण में डाल लिया, और उनकी सहायता के लिए प्रार्थना की, क्योंकि वे अपनी किसी भी परिश्रम पर भरोसा नहीं करते थे, और परमेश्वर का संरक्षण उनके लिए रक्षा की एक दीवार थी। वे विश्वास करते थे कि परमेश्वर की सहायता के बिना वे कुछ भी नहीं कर सकते थे , और नम्रता में उन्होंने भजनकार से कहा: *'जब तक यहोवा घर का निर्माण न करे, तब तक उसके बनाने वालों की मेहनत व्यर्थ है; जब तक यहोवा नगर की रक्षा न करे, तब तक पहरेदार की जागना व्यर्थ है'* (भजन संहिता 126:1)। और जब परमेश्वर देखता है कि किसी व्यक्ति का मन अपनी सारी शक्ति के साथ उसके अधीन हो गया है, और उसे उसके सिवा किसी की भी मदद नहीं है, तो वह उन्हें शक्ति से भर देता है, कहते हुए: *'हे याकूब, हे इस्राएल के छोटे बच्चे, डर मत'* (यशायाह 41:14), – और फिर: *'डर मत, क्योंकि मैंने तुम्हें छुड़ा लिया है; मैंने तुम्हें नाम से बुलाया है; तुम मेरे हो। और यद्यपि तुम जल से होकर गुज़रोगे, तो मैं तुम्हारे साथ रहूँगा; और नदियाँ तुम्हें डुबा न देंगी; और यद्यपि तुम आग में होकर गुज़रोगे, तो तुम न जलोगे, और उसकी ज्वाला तुम्हें न जलाएगी। क्योंकि मैं यहोवा तुम्हारा परमेश्वर, इस्राएल का पवित्र हूँ जो तुम्हें बचाता है'* (यशायाह 43:1–3)। जब मन ऐसा प्रेरक वचन सुनता है, तो वह दुश्मन की शक्ति के विरुद्ध साहसपूर्वक उठ खड़ा होता है, *यह* कहते हुए: *'मेरे साथ कौन विवाद करेगा? ... वह मेरे पास आए। देखो, प्रभु, प्रभु, मेरी सहायता करेंगे: मेरे साथ कौन बुराई करेगा? देखो, तुम सब एक वस्त्र के समान घिस जाओगे, और एक फटे कपड़े के समान घिस-घिसकर नष्ट हो जाओगे'* (यशायाह 50: 8:9). परन्तु परमेश्वर इतना सामर्थी है कि वह यह भी सुनिश्चित कर सकता है कि हम भी उन लोगों में गिने जाएँ जिन्हें नम्रता के द्वारा उसी ने सुरक्षित रखा, क्योंकि नम्रता ही उनका कवच थी और उसने उन्हें शत्रु के सभी तीरों से बचाया—परमेश्वर की कृपा से, जिसके लिए युगानुयुग शक्ति, महिमा और प्रभुत्व हो। आमीन।

5. विश्वासियों के लिए आज्ञाओं पर, और उन लोगों के आचरण पर जो शांति से एक साथ रहना चाहते हैं

1. जब तुम एक साथ सड़क पर चलते हो, तो हर बात में तुम में से सबसे कमजोर के विचारों का ध्यान रखना, चाहे उसे थोड़ा आराम करने की ज़रूरत हो, या सामान्य से थोड़ा पहले भोजन करने की।

2. जब तुम किसी काम के लिए एक साथ निकलते हो, तो तुम में से प्रत्येक अपने-अपने मामलों का ध्यान रखे, न कि अपने भाई के मामलों का: कोई भी उसे निर्देश न दे, न ही उसे आदेश दे।

3. जब आप सेल में कार्यों का विभाजन कर रहे हों, या कुछ आयोजन कर रहे हों – उदाहरण के लिए, एक चूल्हा, या कुछ और – तो जो कार्य कर रहा है, उसे अपनी इच्छा से करने दें। लेकिन अगर वह कहे, 'मुझ पर दया करो, मुझे सिखाओ, क्योंकि मुझे नहीं पता कि (ऐसा-वैसा काम) कैसे करना है,' और तुम में से कोई ऐसा हो जो जानता हो (कि इसे कैसे करना है), तो उसे कपटी न बने और न कहे, 'मुझे भी नहीं पता'—ऐसी विनम्रता ईश्वर की नहीं है।

४. यदि आपका भाई कुछ कर रहा है (जैसा उसे करना चाहिए वैसा नहीं) और आप उसे देखते हैं, तो उससे न कहें, 'आपने इसे बर्बाद कर दिया है।' लेकिन यदि वह कहे, 'मुझ पर दया करें, मुझे सिखाएँ,' और आप उसे सिखाएँ नहीं बल्कि चुप रहें, तो आप में परमेश्वर का प्रेम नहीं है, क्योंकि आप (अपने दिल में) धोखाधड़ी पालते हैं।

5. यदि तुम्हारा भाई कोई शोरबा पकाता है और वह ठीक से न बने, तो उससे यह न कहो, 'तुम्हें यह खराब पकाया है,' क्योंकि इसमें तुम्हारी आत्मा के लिए मृत्यु है। बल्कि इस बात पर विचार करो कि यदि तुम्हें स्वयं यह किसी और से सुनना पड़े तो तुम कितने दुखी होओगे - और तुम्हें सांत्वना मिलेगी।

6. जब आप सब मिलकर गाते हैं, और कोई शब्द गलत बोल दे, तो उसकी ओर इशारा न करें या उसे शर्मिंदा न करें; अगर वह कोई शब्द भूल जाए, तो उसे भूल जाने दें। लेकिन अगर वह पहले से ही कहे: 'आओ प्यार दिखाएँ', 'मुझे बताना (अगर मैं कोई गलती करूँ या कोई शब्द भूल जाऊँ)', तो फिर उन्हें बता दें।

7. जब आप भोजन कर रहे हों, और आप में से किसी को वह भोजन पसंद न आए, तो वह यह न कहे, 'मैं यह नहीं खा सकता,' बल्कि ईश्वर के लिए, मृत्यु तक, वह खुद को मजबूर करे (या तो चुप रहने के लिए या दूसरों की तरह खाने के लिए) – और ईश्वर उसके मन को शांति देगा।

8. जब आप एक साथ किसी काम पर काम कर रहे हों, और आप में से कोई डरपोकता के कारण (काम करना) बंद कर दे, तो उस पर डांट-फटकार न लगाएं, बल्कि उसके प्रति दयालु बनें, या उसके प्रति निरम रहें।

९. जब भाई आपसे मिलने आएं, तो किसी भी ऐसी बात के बारे में उनसे बिल्कुल भी सवाल न करें जो आपके नुकसान का कारण बन सकती हो, नहीं तो उनके कारण आपके कोठरी में एक बोझ (शर्मिंदिगी, दिल में एक घाव) रह जाएगा। लेकिन यदि कोई आगंतुक, खुद पर काबू न रख पाकर, आप में से किसी से कुछ ऐसा कह दे जो, जैसा कि बताया गया है, आपके नुकसान का कारण बन सकता है, तो जिसने यह सुना है वह इसे भाइयों में से किसी को न दोहराए, बल्कि चुप रहे—ताकि यह कष्ट (जैसा आया, वैसा ही) अकेले उसी से चला जाए—और वह उनके हृदय को घातक विष से न भर दे।

10. जब तुम किसी भी कारण से बाहर जाओ, तो किसी से भी अपने लिए अनुचित किसी भी बात के बारे में न पूछो, ताकि तुम अपनी कोठरी में सुरक्षित (बेख़त॒) लौट आओ। यदि, तथापि, तुम्हें कुछ ऐसा सुनने को मिल जाए जो तुम नहीं सुनना चाहते थे, तो अपनी वापसी पर उसे अपने भाइयों को न दोहराओ।

11. जब आप बाहर घूमने-फिरने जाएँ, तो जहाँ भी जाएँ, खुद को किसी भी तरह की छूट न दें, ताकि आपके आचरण की मर्यादा को देखने वाले आपके द्वारा लाभान्वित हो सकें; विशेष रूप से (गुप्त और बाहरी दोनों तरह की) मौन में (लापरवाही न करें): क्योंकि वे सभी भाव (अनुशासनहीनता से उत्पन्न व्यवहार की खामियाँ) किसी दूसरे कमजोर (भाई) में प्रकट होते हैं, उसके हृदय की निष्क्रियता (या रिक्तता) के कारण – क्योंकि वह अपने पापों को नहीं देखता। (जान लो कि) ईश्वर की सहायता, आशा, कोमलता, विवेकशीलता, अपनी इच्छा का त्याग और सभी बातों में आत्म-त्याग – ये सब नम्र-चित्त लोगों के हृदय में स्थान पाते हैं, जबकि अहंकार, बहस-विवाद, अपने भाई से अधिक ज्ञानी समझना, अपनी अंतरात्मा को कुचलना, और इस तथ्य के प्रति उदासीनता कि आपका भाई आपके कारण दुखी है, यह कहते हुए, 'यह मेरा क्या काम है?'—ये सब एक कठोर-हृदय व्यक्ति में पाए जाते हैं।

12. जब आप अपना काम करते हुए बैठे हों, और आपका भाई आपकी कोठरी में प्रवेश करे, तो एक क्षण के लिए भी यह न सोचें कि आपने उससे अधिक परिश्रम किया है, या उसने आपसे।

13. यदि आप किसी अस्वस्थ व्यक्ति के साथ काम कर रहे हैं, तो अपने हृदय में गर्व न पालें, यह चाहकर कि आप उससे अधिक कार्य करें।

14. यदि आपका भाई कोई काम करते समय उसे बिगाड़ दे, तो आप उससे इस बारे में कुछ न कहें, जब तक कि वह स्वयं आपसे न कहे: 'भाई, मुझ पर दया करो और मुझे सिखाओ'; और यदि आप, यह जानते हुए (कि इसे कैसे करना है), चुप रहें, तो इसमें ही आपकी मृत्यु है।

15. जब आप अपना शारीरिक श्रम कर रहे हों, चाहे वह कुछ भी हो, तो यह जानने का हर संभव प्रयास न करें कि आपके हिस्से में आपने कितना उत्पादन किया है और आपके भाई ने कितना किया है, क्योंकि यह अनुभवहीनता का संकेत है।

16. जब तुम अपने भाइयों के साथ काम करने जाओ, तो यह न चाहो कि उन्हें पता चले कि तुमने उनसे अधिक काम किया है। – ईश्वर मनुष्य से यही चाहता है: कि वह जो भी कर्म करे, उसे गुप्त रूप से करे।

17. यदि आपका भाई, कमज़ोरी के कारण, आपसे असंतोष का कोई शब्द कहता है, तो उसे प्रसन्नचित्त होकर सहन करें; क्योंकि यदि आप ईश्वर के न्याय—जो न्यायसंगत और निष्पक्ष है—द्वारा जो हुआ है, उसकी जाँच करें, तो आप पाएँगे कि आपने पाप किया है (न कि आपके भाई ने)।

18. यदि तुम भाइयों के साथ रहते हो, और तुम्हारे विचार तुम्हें खाने में (सामान्य से अधिक) संयम करने के लिए प्रेरित करते हैं, तो अपने विचारों से कहो: 'यहाँ रहने वाला कमज़ोर भाई मेरा स्वामी है।' यदि आप अपने संयम को बढ़ाने के लिए दृढ़ संकल्पित हैं, तो अपने लिए एक छोटा, अलग कोठरी लें, और अपने कमज़ोर भाई को परेशान न करें।

19. यदि कोई भटकता हुआ भाई आपके पास आता है, जिसके बारे में आपने पहले सुना है कि वह दिखावटी (*फिलोशेमातकोिस एस्ती*) है—अर्थात्, वह ढोंग करना, स्वयं को सर्वज्ञ, एक तपस्वी, आदि के रूप में प्रस्तुत करना पसंद करता है— जब तक उसकी यह खामी अपने आप प्रकट न हो जाए, तब तक उससे शब्दों में इस बारे में सवाल न करें; लेकिन (बाद में भी) जो आपने जान लिया है, उस पर अमल न करने का ध्यान रखें, क्योंकि अगर उस भाई को इसका पता चल गया, तो वह नाराज़ हो जाएगा।

20. यदि तुम्हें किसी चीज़ की आवश्यकता है और तुम उसे लेना चाहते हो, तो अपने भाई के विरुद्ध मन में बड़बड़ाओ नहीं (यह सोचते हुए): 'उसने अपनी मर्जी से मुझे यह क्यों नहीं दिया?', बल्कि उससे निडर और सरलता से कहो: 'मुझ पर दया करो; मुझे यह-वह दे दो, क्योंकि मुझे इसकी आवश्यकता है।' यही हृदय की पवित्र शुद्धता (या सरलता) है। लेकिन यदि आप यह नहीं कहते हैं, और इसके बजाय अपने मन में उनसे बड़बड़ाते और उनकी निंदा करते हैं, तो आप गलत हैं।

21. यदि तुम में धर्मग्रंथ के किसी वचन के विषय में विवाद उठे, तो जो उसे जानता और समझता है, वह अपनी सामर्थ्य के अनुसार अपनी इच्छा को त्याग दे (या अपने भाई के आगे झुक जाए) – और अपने भाई को आनंद में शांत कर दे। – वह वचन जो सबसे बढ़कर खोजा जाना चाहिए, वह यह है: अपने भाई के सामने स्वयं को नम्र करना।

22. जो कोई भी उस भयानक न्याय को अपने मन में रखता है, जिसके सामने उसे उपस्थित होना है, वह हर संभव प्रयास करेगा ताकि उसका मुँह बंद न हो जाए, और उस भयानक घड़ी में अपनी रक्षा के लिए कहने को कुछ भी न खोजे।

२३. इस संसार के मामलों में झाँकना मत, कहीं तुम उन स्थानों जैसे न बन जाओ जहाँ हर कोई अपना मलत्याग करने जाता है, और जहाँ, परिणामस्वरूप, एक भयानक बदबू होती है। बल्कि ईश्वर के लिए एक शुद्ध वेदी बनो, अपने भीतर एक (आध्यात्मिक) पुरोहित स्थापित करो जो हमेशा धूप जलाए (इस वेदी पर). इस वेदी को कभी धूप के बिना न छोड़ें, बल्कि स्वयं को हर प्रार्थना के साथ प्रभु के साक्षात सामने खड़े रहने के लिए निरंतर विवश करें, ताकि वह आपको सरलता और बाल-सुलभ निर्दोषता प्रदान करें, और आपसे इनके विपरीत जो कुछ भी है उसे छीन लें—अर्थात्, सारी चालाकी, शैतानी बुद्धि, जिज्ञासा (यहाँ-वहाँ घूमकर यह-वह देखने और सुनने की), आत्म-प्रेम और द्वेष; क्योंकि इस प्रकार का व्यवहार करने वालों के श्रम को ये सभी बातें नष्ट कर देती हैं। इस सब का अंतिम परिणाम यह है कि यदि कोई व्यक्ति बुद्धिमानी से ईश्वर का भय मानता है और ईश्वर द्वारा निर्देशित अपने अंतरात्मा की बात को विनम्रता से सुनता है, तो वह इन सब बातों के बारे में गुप्त रूप से स्वयं को शिक्षित करेगा। परन्तु जब वहाँ (अंदर) घर का स्वामी (परमेश्वर का भय) नहीं होता, तो ऐसे दुखी व्यक्ति का (आंतरिक) घर दूसरों की दया पर छोड़ दिया जाता है, और जो कोई चाहे वह उसमें अपनी इच्छानुसार बोल सकता है, क्योंकि उसका हृदय उसके अपने नियंत्रण में नहीं, बल्कि उसके शत्रुओं के नियंत्रण में होता है।

२४. यदि आप कोई छोटा-सा काम करने के लिए निकलने वाले हों, तो कोई भी दूसरे पर तुच्छ दृष्टि न डाले, और न ही अकेले जाए, अपने भाई को कोठरी में अंतरात्मा से पीड़ित होने के लिए छोड़कर; बल्कि उससे प्रेम से कहे: 'क्या तुम जाना चाहते हो? चलो, हम चलें।' – और यदि वह देखे कि उस समय उसके भाई को चैन नहीं है (आत्मिक रूप से शांत नहीं है), या वह शारीरिक रूप से कमजोर है, तो उसे इस बात पर ज़िद न करे कि उन्हें अभी जाना ही है, बल्कि उसे कुछ समय के लिए टाल देना चाहिए, और (अपने भाई के प्रति) करुणामय प्रेम से अपनी कोठरी में लौट आना चाहिए। सावधान रहो कि किसी भी बात में अपने भाई का विरोध न करो, कहीं तुम उसे दुखी न कर दो।

२५. जो कोई भी अपने पिता या भाई के साथ रहता है, उसे किसी भी बाहरी व्यक्ति से किसी भी बात पर सलाह नहीं लेनी चाहिए, बल्कि उसे हर बात पर उसी व्यक्ति से चर्चा करनी चाहिए जो उसके साथ रहता है: इसमें ही शांति और आज्ञाकारिता निहित है।

26. यदि आप अपने पिता या अपने भाई के साथ रहते हैं, तो सावधान रहें कि आप किसी से गुप्त रूप से दोस्ती न करें, या किसी को गुप्त रूप से पत्र न लिखें, यह चाहते हुए कि आपके साथ रहने वालों को इसके बारे में पता न चले: इससे आप स्वयं और उन्हें दोनों को बर्बाद कर देंगे।

27. यदि आप अपने से बड़े किसी के साथ रहते हैं, तो सावधान रहें कि उनके बिना पूछे गरीबों के लिए कोई भी दान का कार्य न करें – इसे गुप्त रूप से न करें।

28. जब अपने विचारों के बारे में पूछें, तो उन पर अमल करने के बाद न पूछें, बल्कि उस बात को बताएं जो आपको वर्तमान में परेशान कर रही है। चाहे वह निवास स्थान बदलना हो, या कोई हुनर सीखना हो, या अपने हुनर में बदलाव करना हो, या किसी के साथ रिश्ते में प्रवेश करना हो, या ऐसा रिश्ता समाप्त करना हो – इन सभी बातों के बारे में खुलकर पूछो, लेकिन इन्हें व्यवहार में लाने से पहले। इसी तरह, आध्यात्मिक कमजोरियों और शारीरिक वासनाओं

के संबंध में, जब तक ये विचार आपको लुभा रहे हों, तब तक पूछें – और जब आप पूछें, तो यह न कहें कि आपने अभी तक इन प्रलोभनों पर अमल नहीं किया है, बल्कि घाव के बारे में बात करें, यह कहते हुए कि आप पहले से ही घायल हैं, ताकि आपको उस घाव का इलाज मिल सके।

29. जब आप अपने विचारों के बारे में पूछें, तो पाखंडी न बनें, और एक बात के बदले दूसरी बात न कहें, या (ऐसी अभिव्यक्ति का प्रयोग न करें) जैसे कि किसी और ने ऐसा-वैसा किया हो, बल्कि सत्य बोलें, और जो कुछ भी आपसे कहा जाए उसे करने के लिए खुद को तैयार करें। यदि आप इसके विपरीत करते हैं, तो आप स्वयं का मज़ाक उड़ा रहे हैं, न कि उन बड़ों का जिनसे आप पूछ रहे हैं।

30. जब आप बुज़ुर्गों से झगड़े के बारे में पूछें, तो उन अंतर्मन की आवाज़ों को न सुनें जो बुज़ुर्गों से ज़्यादा बताती हैं, बल्कि पहले ईश्वर से प्रार्थना करें, यह कहते हुए: 'मुझ पर दया करो, और जो कुछ भी मेरे बारे में तुम्हें प्रसन्न करे, मेरे बुज़ुर्गों को प्रेरित करो कि वे मुझे बताएं;' और फिर, बुज़ुर्ग जो कुछ भी आपसे कहें, उसे श्रद्धा से करें, और ईश्वर आपका मन शांत कर देगा।

31. जब आप अपने भाइयों के साथ रहते हैं और किसी भी कारण से आपको शांति नहीं मिलती: चाहे वह शारीरिक श्रम के कारण हो, या जीवन की बाधाओं (और तंग प्रकृति) के कारण हो, या जीवन की शांति के कारण हो, या आप (सामना करने वाली कठिनाइयों) को सहन नहीं कर सकते, या निराशा के कारण, या क्योंकि आप मौन में पीछे हटना चाहते हैं, या क्योंकि आप आज्ञाकारिता का जुआ नहीं सहन कर सकते, या क्योंकि आप वह नहीं कर पा रहे हैं जो आप चाहते हैं, या क्योंकि आपके पास वह सब कुछ नहीं है जिसकी आपको आवश्यकता है, या क्योंकि आप स्वयं को महान कष्टों में डालना चाहते हैं, या क्योंकि आप कमजोर हैं और (उनके द्वारा अपेक्षित) श्रम को सहन नहीं कर सकते, – या, संक्षेप में, जो भी कारण आपका हृदय उन्हें छोड़ने के लिए प्रेरित करता है – सावधान रहें कि सहमत होकर न छोड़ें, जुए को न उतारें, और दुख में न जाएँ – न ही (उनके प्रति) अपमान की भावना से गुप्त रूप से भागें, या जब आपके भीतर (अभी भी) उनके प्रति निंदा और दोषारोपण बसता हो, उनके प्रति उत्पन्न कड़वाहट के कारण अपने भाई होने के रिश्ते को याद किए बिना नहीं – बल्कि इस समय शांति की तलाश करो, ताकि तुम जहाँ भी जाओ, तुम्हारा हृदय शांत रहे; उन भाइयों को किसी भी प्रकार से दोष दिए बिना, जिनके साथ तुमने जीवन बिताया है, उनकी निंदा अपने ऊपर ले लो; अपने दुश्मनों की (यदि वे आपको मनाने की कोशिश करें) बात न सुनो कि उनके (आपके भाइयों के) अच्छे कर्मों को बुरे कर्मों में बदल दो, ताकि तुम खुद को फटकारने से बच सको और अपने भाई की फटकार का इस्तेमाल अपनी ही गलती को छिपाने के लिए कर सको; क्योंकि ऐसा करने से तुम अपने दुश्मनों के हाथों गिर जाओगे, तुम जहाँ भी रहने के लिए बसे।

३२. जब तुम किसी स्थान पर बसने आओ, तो वहाँ के रीति-रिवाज़ सीखने तक अपने लिए कोई कोठरी न लो – कि क्या वहाँ तुम्हारे लिए कोई ठोकर है, चाहे वह अत्यधिक चिंता के कारण हो (कि वहाँ ढोने के लिए कई चिंताएँ हैं), या क्योंकि तुम कुछ ऐसे लोगों को देखोगे (जो तुम्हारे लाभ के नहीं हैं), या क्योंकि यह (आपको या उस स्थान को) जो प्रसिद्धि दिला सकता है, या क्योंकि जो शांति (वहाँ का जीवन बहुत शांतिपूर्ण और आरामदायक है), या आपके दोस्तों से आने वाली ठोकरों के कारण। यदि आप बुद्धिमान हैं, तो आप कुछ ही दिनों में पता लगा लेंगे कि वहाँ आपके लिए मृत्यु होगी या जीवन।

33. यदि आप अपना कोठरी किसी भाई को कुछ दिनों के लिए रहने के लिए देते हैं, तो उसके साथ ऐसा व्यवहार न करें जैसे वह आपके अधीन हो।

34. यदि आप कुछ समय के लिए रहने के लिए किसी से कोई कोठरी लेते हैं, तो उसमें कुछ भी नष्ट न करें, और न ही उसमें कोई बदलाव करें, जब तक कि पहले उसे देने वाले से यह न पूछ लें कि वह इसकी अनुमति देता है या नहीं; अन्यथा, यह आपके विवेक के अनुरूप नहीं होगा।

35. जब किसी के साथ रहो, या उनके साथ अस्थायी रूप से ठहरो, और तुम उनसे कोई आज्ञा पाओ, तो ईश्वर के लिए सावधान रहो, कि तुम उसे न तो अनदेखा करो, और न ही इस आज्ञा को खुलेआम या गुप्त रूप से तोड़ो।

36. यदि, अपने कोठरी में अकेले रहते हुए, आप किसी निश्चित समय पर भोजन करने का, या पका हुआ भोजन न खाने का, या कुछ और न खाने का संकल्प लेते हैं, और फिर संसार में जाते हैं, तो सावधान रहें कि भोजन करते समय (चाहे कहीं भी हों) किसी से यह न कहें: 'माफ कीजिए, मैं यह नहीं खाता,' क्योंकि इसके द्वारा आपकी सारी मेहनत व्यर्थ में आपके दुश्मनों के हाथ लग जाएगी। आपके प्रभु और उद्धारकर्ता ने कहा: 'अपने काम गुप्त रूप से करो, ताकि तुम्हारा पिता तुम्हें खुले तौर पर पुरस्कृत करे।' जो कोई भी अपने परिश्रम से प्रेम करता है, वह उनकी रक्षा करता है, ताकि वे व्यर्थ में खो न जाएँ।

37. जब तुम किसी के साथ रहते हो, तो जो भी काम तुम एक साथ करते हो, चाहे वह कोठरी के अंदर हो या बाहर, जब तुम्हारा भाई तुम्हें बुलाए, तो ध्यान रखना कि यह न कहो: 'एक क्षण रुक जाओ, मुझे बस यह छोटा सा काम पूरा करने दो' – बल्कि तुरंत उसकी आज्ञा का पालन करो।

38. जब आप एक साथ काम कर रहे हों, यदि आप बुद्धिमान हैं, तो दूसरों में जो भी दोष आप देखें, उस पर न टिकें, कहीं ऐसा न हो कि वह आपके मुख से निकल जाए और आप अपने साथ रहने वाले भाइयों से उस बारे में बोल दें, क्योंकि इसमें ही आपकी आत्मा की मृत्यु है।

39. यदि भाई आपके साथ रहते हैं, और ऐसा हो कि वे कभी-कभी पूरे दिन परिश्रम करते हैं, तो नियत समय से पहले उन्हें भोजन का स्वाद चखाकर उनका तसल्ली करें। केवल अपने बारे में ही न सोचें, बल्कि ईश्वर के निर्णय पर ध्यान दें। आप जो कुछ भी करें, हर कर्म में ईश्वर को अपनी आँखों के सामने रखें।

४०. यदि तुम रहने के लिए किसी स्थान पर आते हो—चाहे अकेले या उनसे पहले वहाँ बसे लोगों के साथ—और तुम आत्मा के लिए हानिकारक या मठ-जीवन के अनुकूल नहीं कुछ देखते हो, चाहे वह कोई शिल्प हो या कोई अन्य गतिविधि, तो उसकी निंदा करने के लिए अपना मुँह मत खोलना; परन्तु यदि वहाँ रहना तुम्हें भाता नहीं है, तो किसी अन्य स्थान पर चले जाओ, और अपनी जीभ को काबू में रखो ताकि तुम उनकी निन्दा न करो: क्योंकि इसी में तुम्हारा विनाश है।

४१. यदि आप वासनाओं के वश में हो जाते हैं, तो सावधान रहें कि कोई भी आपको अपने भावुक विचारों के बारे में एक विश्वसनीय व्यक्ति की तरह न बताए, क्योंकि ऐसी बात आपकी आत्मा के लिए विनाशकारी है।

42. यदि आपके बीच कोई मज़ाकिया बात निकल जाए, तो सावधान रहें कि आपकी हँसी इतनी ऊँची न हो कि सुनाई दे जाए: क्योंकि यह अनुशासन की कमी और ईश्वर के भय की कमी का संकेत है, क्योंकि आपके भीतर कोई रक्षक नहीं है।

43. चूँकि हमारे दिनों में परमेश्वर का क्रोध पूरे ब्रह्मांड पर आ पड़ा है, इसलिए जो कुछ भी आप सुनें उससे परेशान न हों, बल्कि अपने दिल में कहें: 'यह उस स्थान (नरक) की तुलना में क्या है जिसमें हमें अपने पापों के लिए गिरना है?'

४४. परमेश्वर के लिए प्रेम का अभ्यास करो; (जो यहाँ लिखा है उसे) पढ़ो ताकि तुम भी इसका पालन कर सको, क्योंकि विश्वासियों के लिए इसे एक तुच्छ (महत्वहीन) बात समझना कोई छोटी बात नहीं है। – यदि आप इसे सरलता और बुद्धिमानी से पालन करते हैं, तो आप आनंद के साथ परमेश्वर के पुत्र के विश्राम में प्रवेश करेंगे; परन्तु यदि आप इसे नहीं मानते हैं, तो आप यहाँ भी कष्ट सहेंगे, और जब आप शरीर से अलग होंगे, तो आपको धर्मग्रंथों के अनुसार नरक में ले जाया जाएगा। हमारे प्रभु मसीह उपरोक्त बात (अर्थात्, जो उनके आज्ञाओं का पालन करते हैं उन्हें विश्राम देने के लिए) के निमित्त आए, परन्तु हमारी कठोर हृदयता हमें हमारे हृदय की इच्छाओं से अंधा कर देती है, क्योंकि हम परमेश्वर से अधिक उन्हें प्रेम करते हैं, और हम उसे उतना प्रेम नहीं करते जितना हम अपनी कामनाओं को करते हैं।

४५. देखो, मैं अपने आपको यह भी लिखने के लिए विवश कर चुका हूँ, क्योंकि जो मैं ने पहिले लिखा था, वह तुम्हारे लिए पर्याप्त नहीं था। इसलिये, प्रेम का अभ्यास करो, और अब से संघर्ष आरंभ करो; अपने बिना खतना किए हृदयों के साथ न रहो, बल्कि जो थोड़े दिन तुम्हारे लिए बचे हैं, उन में अपनी सहायता करो (अपने उद्धार के लिए यत्न करो)। यदि आप इन बातों का पालन करते हैं—अर्थात् विनम्रता, शांति, धैर्य, अपनी इच्छा को वश में रखना, और प्रेम—तो आप एक ऐसा जीवन जिएंगे जो आपके अपने भले के लिए है; लेकिन यदि आप इनका पालन नहीं करते हैं, तो इसके विपरीत, आप इन बातों से भर जाएंगे: ईर्ष्या और उत्साह, कलह और अहंकार, बड़बड़ाहट और अवज्ञा; तब तुमने अपना समय व्यर्थ में गँवा दिया होगा, और सचमुच जब तुम इस शरीर से प्रस्थान करोगे तो नरक में जाओगे। इसलिए अपने भाइयों से पवित्र प्रेम करो, और अपनी जीभ की रक्षा करो, कहीं ऐसा न हो कि तुम कोई अनुचित शब्द बोल बैठो जो किसी भाई को आहत कर दे। क्योंकि हमारे प्रभु परमेश्वर में सामर्थ्य है कि वह हम में *इन बातों को 'करने और माने रहने' की* शक्ति दे, ताकि उसकी कृपा से हम उन सभी पवित्र लोगों के साथ दया प्राप्त कर सकें, जिन्होंने उसे प्रसन्न किया है। उसकी महिमा, सम्मान और आराधना अब और हमेशा, और अनंतकाल तक हो। आमीन।

६. जो पुण्य मौन का पालन करना चाहते हैं

जो सदाचारी मौन का पालन करना चाहते हैं—वे सावधान रहें कि वे उन चोरों को दूर भगा दें जो उन्हें लूटते हैं, और अपने समय को दासता और कठोर परिश्रम में बर्बाद न करें, अपना हृदय उनके लिए अनुचित कार्यों में लगाकर, और अपने पापों को भूलकर ।

1. शास्त्रों की बारीकी से जाँच करने का प्रेम विवाद और शत्रुता को जन्म देता है, जबकि अपने पापों पर शोक करने से शांति मिलती है। एक भिक्षु के लिए, अपनी कुटिया में बैठकर, अपने पापों की उपेक्षा करते हुए शास्त्रों की बारीकी से जाँच में लिप्त होना एक पाप है। जो कोई भी अपना हृदय (इस जाँच में) लगाता है, – 'शास्त्र ने ऐसा या वैसा क्यों कहा?' – जब तक उसने स्वयं पर विजय प्राप्त नहीं कर ली (आत्म-जागरूकता, या आत्म-नियंत्रण प्राप्त नहीं कर लिया, या स्वयं को वासनाओं से मुक्त नहीं कर लिया), उसका हृदय बेचैन रहता है और वह गहरे बंधन में होता है; लेकिन जो कोई भी किसी भी चीज़ का दास बनने से सावधानीपूर्वक बचाता है, वह परमेश्वर के साक्षात सामने स्वयं को नम्र करने से प्रेम करता है।

२. जो परमेश्वर के समान होने का मार्ग खोजता है, वह परमेश्वर का अपमान करता है, परन्तु जो यह खोजता है कि उसे (और अधिक पूर्ण रूप से) कैसे सम्मानित किया जाए, वह परमेश्वर के भय में पवित्रता से प्रेम करता है।

3. जो परमेश्वर के वचन रखता है, वह परमेश्वर को जान गया है (1 यूहन्ना 2:3) – और ऐसा व्यक्ति उन्हें एक ऋणी की तरह (तत्काल कर्तव्य की भावना के साथ) पूरा करता है।

4. जब आप उसकी मदद के लिए प्रार्थना कर रहे हों, तो परमेश्वर से उच्च (वरदानों) की मांग न करें; हो सकता है कि वह आए और आपको पाप से बचाए। परमेश्वर की कृपा अपने आप तब आती है जब उसके लिए एक ऐसा स्थान तैयार किया जाता है जो निर्दोष और शुद्ध हो।

5. जो कोई अपनी ही बुद्धि पर भरोसा करता है और अपनी ही इच्छा से चिपका रहता है, वह अपने ऊपर राक्षसों की भीड़ को खींच लेता है[19] और वह आत्मा (परमेश्वर की आत्मा) का नहीं हो सकता, जो हृदय में शोक (या पश्चाताप) लाता है।

6. जो कोई, धर्मग्रंथ के वचन देखकर, उन्हें अपनी समझ के अनुसार व्याख्या करता है, और इस पर भरोसा करता है, यह मानकर कि यह ऐसा ही है (इस पर भरोसा करके, वह यह मान लेता है कि उन वचनों को इसी तरह समझना चाहिए), ऐसा व्यक्ति परमेश्वर की महिमा या उसकी धनाढ्यता को नहीं जानता; परन्तु जो कोई, उन्हें देखकर कहता है: 'मैं नहीं जानता—मैं तो केवल एक मनुष्य हूँ,' और परमेश्वर की महिमा करता है—ऐसे व्यक्ति में परमेश्वर की संपन्नता, उसकी सामर्थ्य और उसकी समझ के अनुसार वास करती है।

7. अपने विचारों को सबके सामने जल्दी से प्रकट न करो, परन्तु केवल अपने आत्मिक पितरों को, कहीं ऐसा न हो कि तुम अपने ही हृदय पर शोक लाओ।

8. अपने होठों की रखवाली कर, ताकि तेरा पड़ोसी तेरी दृष्टि में माननीय रहे (अपने पड़ोसी के प्रति सम्मान तुम्हें उसे दोष देने से रोके)।

९. अपनी जीभ को परमेश्वर के वचन बुद्धिमानी से बोलने के लिए प्रशिक्षित करो, और मिथ्या तुम से दूर भागेगी।

10. मानवीय महिमा का प्रेम झूठ को जन्म देता है, जबकि स्वयं को और भी अधिक विनम्रता से नम्र करने से आपके हृदय में ईश्वर का भय स्थापित होता है।

11. इस संसार के गौरवशाली लोगों का मित्र बनने का प्रयास न करो, कहीं ऐसा न हो कि उनका गौरव (उनके गौरव की हानिकारकता का बोध) तुम्हारे भीतर फीका पड़ जाए।

12. यदि कोई आपके सामने अपने भाई के बारे में बुरा बोलता है, उसका तिरस्कार करता है और उसके प्रति द्वेष दिखाता है, तो उसके खिलाफ पक्ष न लें, कहीं ऐसा न हो कि आप उस मुसीबत में फँस जाएँ जिसकी आप कामना नहीं करते।

१३. सरलता और विनम्रता (अपने बारे में बहुत सोच न रखना) हृदय को कपट से शुद्ध करती है। जो कोई भी अपने भाई के साथ कपट करता है, वह हृदय के दुख से नहीं बचेगा। जो कोई एक बात कहता है पर कपट से अपने हृदय में कुछ और रखता है—उस व्यक्ति की सारी उपासना (*लीटोरगीयि* - प्रार्थनाएँ) व्यर्थ है। ऐसे किसी व्यक्ति के साथ

---

[19] *ktatai ehthran*. – सेंट यशायाह में, *'ehthra'* का अर्थ दुश्मन की शक्ति है – राक्षसों की फौज। उन्हें प्राप्त करना जमा करना, आकर्षित करना है।

संगति न करो, कहीं ऐसा न हो कि तुम उनके कलंकित विष से अशुद्ध हो जाओ। निष्पाप लोगों के साथ चलो, और तुम उनके गौरव और पवित्रता में सहभागी होओगे।

14. किसी के प्रति द्वेष न पालो, कहीं ऐसा न हो कि तुम्हारी मेहनत व्यर्थ हो जाए। सभी के प्रति सच्चे रहो, ताकि तुम अपने भीतर परमेश्वर की शान्ति को देख सको। जैसे जब किसी को बिच्छू डंक मारता है, तो उसका विष पूरे शरीर में फैल जाता है और हृदय को भी नुकसान पहुँचाता है, वैसे ही हृदय में पड़ोसी के प्रति द्वेष भी होता है: उसका विष आत्मा को घायल करता है, और वह इस बुराई से पीड़ित होती है। इसलिए, जो कोई भी अपनी मेहनत को व्यर्थ नहीं गंवाना चाहता, उसे अपने भीतर से इस बिच्छू, अर्थात् धोखे और द्वेष को, तुरंत बाहर निकाल देना चाहिए।

7. सद्गुणों पर

1. तीन गुण हैं जो हमेशा परमात्मा की कृपा से मन की रक्षा करते हैं, और जिनकी उसे आवश्यकता होती है: उसकी स्वाभाविक प्रवृत्ति, साहस और परिश्रम।

2. तीन गुण हैं, जो यदि मन अपने भीतर अनुभव करता है, तो उसे यह विश्वास हो जाता है कि उसने अमरत्व (नवीनीकरण, या अमर स्वर्गीय प्राणियों की पूर्णता) प्राप्त कर लिया है: एक को दूसरे से सटीक रूप से अलग करने वाली विवेक-बुद्धि, समय से पहले सभी चीजों की दूरदर्शिता, और किसी भी बाहरी चीज़ के प्रति उदासीनता।

3. तीन गुण हैं जो हमेशा मन पर प्रकाश डालते हैं: किसी व्यक्ति में कोई कपट न देखना, आपको नुकसान पहुँचाने वालों के प्रति अच्छा करना, और जो कुछ भी आप पर आता है उसे बिना किसी कष्ट के सहना। ये तीन गुण स्वयं से भी बड़े तीन अन्य गुणों को जन्म देते हैं: किसी व्यक्ति में धोखा न देखना प्रेम को जन्म देता है; आपको नुकसान पहुँचाने वालों के साथ अच्छा व्यवहार करना शांति लाता है; जो कुछ भी आप पर आए, उसे बिना विचलित हुए सहना नम्रता लाता है।

4. चार गुण हैं जो आत्मा को शुद्ध करते हैं: मौन, आज्ञाओं का पालन, आत्म-संयम (हर चीज़ में स्वयं को नियंत्रित करना ताकि मार्ग संकीर्ण हो), और विनम्रता।

5. मन को हमेशा निम्नलिखित चार सद्गुणों की आवश्यकता होती है: ईश्वर से प्रार्थना करना, उनसे अविराम रूप से चिपके रहना; ईश्वर के समक्ष स्वयं को नमन करना; किसी भी व्यक्ति से परेशान न होना (कि वे क्या हैं और कैसे हैं—जो कि उनका प्रश्न न करना ही है), ताकि उनका न्याय न किया जाए; और अपनी वासनाओं की बातों को न सुनना।

6. ये चार गुण आत्मा की रक्षा एक दीवार की तरह करते हैं, जिससे वह अपने शत्रुओं द्वारा उत्पन्न चिंताओं से मुक्त होकर आसानी से सांस ले सके: दया, क्रोध का अभाव, दीर्घ-सहिष्णुता, और जड़ पकड़ने वाले पाप के प्रत्येक बीज का नाश; जबकि विस्मृति का विरोध इन सभी को संरक्षित रखता है।

7. ईश्वर के अनुसार, चार सद्गुण नवसिखिए (नवसिखिए व्यक्ति) की सहायता करते हैं: निरंतर शिक्षा, परिश्रम, सतर्कता, और स्वयं को अधिक आँकना नहीं (स्वयं को कुछ विशेष समझने की कल्पना न करना)।

8. चार चीजें आत्मा को कलंकित करती हैं: अपनी दृष्टि को नियंत्रित किए बिना शहर में इधर-उधर घूमना, किसी महिला के साथ मित्रता, दुनिया के प्रसिद्ध लोगों के साथ मित्रता, और रक्त संबंधियों के साथ बातचीत का शौक।

9. चार चीजें शरीर में कामुक वासना को बढ़ाती हैं: मन भर सोना, पेट भर खाना, तुच्छ व्यर्थ की बातें, और शरीर को सजाना।

10. चार चीजें आत्मा को अंधकारमय करती हैं: अपने पड़ोसी से घृणा, उसका तिरस्कार करना, उससे ईर्ष्या करना, और उसके खिलाफ बड़बड़ाना।

11. आत्मा चार चीजों से खाली हो जाती है (Esmpt): एक स्थान से दूसरे स्थान पर घूमना, मनोरंजन का प्रेम, भौतिकवाद, और कंजूसपन।

12. क्रोध को चार चीजें बढ़ावा देती हैं: देना और लेना (लेन-देन), अपनी इच्छा पर जोर देना, सिखाने की इच्छा, और स्वयं को बुद्धिमान (तर्क का पुरुष) मानना।

13. तीन चीजें ऐसी हैं जिन्हें प्राप्त करना किसी व्यक्ति के लिए कठिन होता है—और जिनके द्वारा सभी सद्गुण संरक्षित रहते हैं: पश्चाताप, अपने पापों पर रोना, और मृत्यु को अपनी आँखों के सामने रखना।

14. तीन चीजें हैं जो आत्मा पर तब तक हावी रहती हैं जब तक वह परम पूर्णता प्राप्त नहीं कर लेती—और यही गुणों को मन के साथ रहने से रोकती हैं: बंधन (ईश्वर के अलावा किसी भी चीज़ से आसक्ति), सुस्ती, और भूल। भूल व्यक्ति के अंतिम सांस तक उससे युद्ध करती है, उसे बंजरता में धकेलती है; यह सभी विचारों से अधिक

शक्तिशाली है, और सभी बुराइयों की जननी है, और उस सब की विनाशक है जिसे एक व्यक्ति घिड़ी-घड़ी अपने भीतर बनाता है।

१५. ऐसे हैं नए मनुष्य के कर्म, और ऐसे हैं पुराने मनुष्य के कर्म! जो अपनी आत्मा से प्रेम करता है और उसे नाश नहीं करना चाहता, वह नए मनुष्य के कर्मों का पालन करता है, जबकि जो इस क्षणिक समय में शरीर के आराम से प्रेम करता है, वह पुराने मनुष्य के कर्म करता है और अपनी आत्मा का नाश करता है। – और हमारे प्रभु यीशु मसीह ने, अपने ही शरीर में नए मनुष्य को प्रकट करते हुए, कहा: *'जो कोई अपना प्राण प्रेम करता है, वह उसे खोएगा'* (यूहन्ना 12:25); *'पर जो कोई मेरा चेलो होने के कारण अपना प्राण खोएगा, वह उसे पाएगा'* (मत्ती 10:39)। वह संसार का प्रभु है; उसके द्वारा वैमनस्यता की विभाजनकारी दीवार गिरा दी गई है (इफिसियों 2:14)। उसने यह भी कहा: *'मैं शांति नहीं, बल्कि तलवार लाने आया हूँ'* (मत्ती 10:34), और फिर: *'मैं पृथ्वी पर आग लाने आया हूँ और काश कि यह पहले से ही जल रही होती!'* (लूका 12:49)। अर्थात्, जो लोग उनके पवित्र उपदेशों का पालन करते थे, उनमें उनकी दिव्यता की अग्नि (स्पष्ट रूप से मौजूद थी), और परिणामस्वरूप, उनके भीतर एक आध्यात्मिक तलवार थी, जिससे वे अपने शरीर की सभी इच्छाओं को काट देते थे। और प्रभु ने उन्हें यह कहकर आनन्द दिया: *'मैं तुम में शान्ति छोड़ जाता हूँ; अपनी शान्ति मैं तुम को देता हूँ'* (यूहन्ना 14:27)।

१६. इस प्रकार, जो इस युग में अपनी आत्माओं को बचाने का ध्यान रखते थे, और जिन्होंने अपनी इच्छाओं को काट डाला, वे उसकी पवित्र भेड़ें बन गए, जो उसे बलिदान के रूप में अर्पित की गईं। और जब वह अपनी दिव्यता की महिमा में प्रकट होंगे, तो वे उन्हें अपने दाहिने हाथ पर बुलाएंगे, यह कहते हुए: *'आओ, हे मेरे पिता द्वारा धन्य किए हुए: संसार की नींव के समय से तुम्हारे लिए तैयार किए गए राज्य का उत्तराधिकार प्राप्त करो। क्योंकि मैं भूखा था और तुम ने मुझे भोजन* दिया'… और इसी प्रकार (मत्ती 25:34 और 35)। इस प्रकार, जो इस संक्षिप्त समय में अपनी आत्माओं का बलिदान करते हैं, वे आवश्यकता के समय उन्हें पाएंगे, और उन्हें उससे कहीं अधिक बड़ा पुरस्कार प्राप्त होगा जिसकी उन्होंने उम्मीद की थी। जहाँ तक उन लोगों का सवाल है जो अपनी इच्छाओं का पालन करते हैं, वे निश्चित रूप से इस पापी युग में अपनी आत्माओं को बचाते हैं; लेकिन, चूँकि वे इसके धन-संपत्ति की व्यर्थता से बहक जाते हैं और परमेश्वर की आज्ञाओं का पालन नहीं करते, इस आशा में कि वे इस युग में हमेशा के लिए बने रहेंगे, इसलिए न्याय के समय उनकी अंधापन की लज्जा प्रकट हो जाएगी, वे शापित बकरियों के रूप में प्रकट होंगे और न्यायाधीश का भयानक निर्णय सुनेंगे, जो घोषणा करेंगे: *'मेरे पास से दूर हो जाओ, हे शापित, उस अनंत आग में जो शैतान और उसके स्वर्गदूतों के लिए तैयार की गई है। क्योंकि तुम लालची थे और मुझे खाने के लिए कुछ भी नहीं दिया*… और इसी तरह (41 और 42)। हालाँकि, उनके मुँह बंद हो जाएँगे – और वे अपनी निर्दयता और अपनी गरीबी (भूतपूर्व और वर्तमान दोनों) को याद करके कुछ भी कहने के लिए कुछ नहीं पाएँगे। सच है, वे तब कहेंगे: *'प्रभु, हमने आपको कब भूखा देखा... और आपकी सेवा नहीं की?'* (44)। लेकिन वह उन्हें चुप करा देंगे, यह कहते हुए: 'जो कोई भी मेरे इन विश्वास करने वालों में से एक के प्रति अच्छा हुआ, उसने मेरे प्रति ही अच्छा किया।'

17. अतः हे प्रियो, हम अपने आपको परखें, कि देखें कि हम में से प्रत्येक अपनी सामर्थ्य के अनुसार प्रभु की आज्ञाओं का पालन कर रहा है या नहीं; क्योंकि हम सभी अपनी सामर्थ्य के अनुसार उनका पालन करने के दायित्व में हैं—छोटे अपनी छोटता के अनुसार, और बड़े अपनी बड़ता के अनुसार। जो लोग खजाने में अपना दान डालते थे, वे धनी थे, परन्तु प्रभु निर्धन विधवा से उसकी दो लेपटा के कारण अधिक प्रसन्न हुए, क्योंकि परमेश्वर हमारी इच्छा को देखता है। तो फिर, हम अपने हृदय में निराशा को स्थान न दें (यह सोचकर कि हम बहुत कुछ नहीं कर सकते), कहीं ऐसा न हो कि (दूसरों से) ईर्ष्या हमें परमेश्वर से अलग कर दे, बल्कि हम अपनी गरीबी के अनुसार अपनी सेवा के कार्य करें। क्योंकि जैसे प्रभु ने मुख्य सभा अधिकारी की बेटी पर दया दिखाई, उसे मृतकों में से जिलाकर; जैसे उसने उस रक्तस्राव वाली स्त्री पर दया की, जिसने मसीह को जानने से पहले अपनी सारी संपत्ति डॉक्टरों पर खर्च कर दी थी; जैसे उसने शताध्यक्ष के सेवक को चंगा किया क्योंकि शताध्यक्ष ने विश्वास किया था—वैसे ही उसने कनानी स्त्री पर दया की, और उसकी बेटी को चंगा किया; और जैसे उसने अपने प्रिय लाजरुस को मृतकों में से जिलाया, इसी प्रकार उन्होंने उस गरीब विधवा के एकमात्र पुत्र को उसके आँसुओं के लिए जिलाया; और जैसे उन्होंने मरियम को, जिसने उनके पैरों पर मूर का लेप किया था, ठुकराया नहीं, वैसे ही उन्होंने उस पापी स्त्री को भी नहीं ठुकराया जिसने रोते हुए उनके पैरों पर मूर का लेप किया था; और जैसे उन्होंने पतरस और यूहन्ना को उनकी नाव से बुलाकर कहा, *'मेरे पीछे चलो'* (मत्ती 4:19), इसी प्रकार उन्होंने कर कार्यालय में बैठे मत्ती को बुलाया; और जैसे उन्होंने अन्य शिष्यों के पैर धोए, वैसे ही यहूदा के पैर भी धोए, कोई भेदभाव नहीं करते हुए; और जैसे उसने प्रेरितों पर पवित्र आत्मा, सांत्वना देने वाले को भेजा, वैसे ही उसने उसे साहस के साथ कौर्नलियुस पर भेजा; और जैसे उसने दमिश्क में पौलुस के लिए हनन्याह को यह कहते हुए विवश किया कि वह *'मेरा चुना हुआ पात्र है'* (प्रेरितों के काम 9:15), उसी प्रकार

उन्होंने इथयिोपयिाई नपुंसक के लिए सामरयिा में फलिपि को प्रेरति कयिा। क्योंकि उनके साथ पक्षपात नहीं है, न छोटे के प्रति, न बड़े के प्रति, न धनी के प्रति, न गरीब के प्रति, बल्कि वह एक (सद्) इच्छा, और उन पर विश्वास, और उनकी आज्ञाओं का पालन, और सभी के प्रति प्रेम चाहते हैं। यही उस आत्मा के लिए मुहर का काम करेगा (उसका वशिष्टि चहि्न) जब वह शरीर से अलग होती है, ठीक वैसे ही जैसे उसने अपने शष्यिों को आज्ञा दी, *यह* कहते हुए: *'इसके द्वारा सब मनुष्य जान लेंगे कि तुम मेरे शष्यि हो, यदि तुम एक दूसरे से प्रेम रखोगे'* (यूहन्ना 13:35)।

18. जब वह कहते हैं कि लोग तुम्हें पहचान लेंगे, तो वह कसिके बारे में बात कर रहे हैं, यदि दायें और बायें की शक्तियों के बारे में नहीं? (और ऐसा होगा कि), जब वरिोधी आत्मा के साथ प्रेम के चहि्न को देखेंगे, तो वे डरकर उससे पीछे हट जाएँगे, जबकि पवित्र शक्तियाँ उसके साथ आनन्दति होंगी। इसलिए प्रयिजन, हम अपनी पूरी क्षमता से ऐसे मुहर को प्राप्त करने का प्रयास करें, कि हमारे शत्रु हमें पकड़ न *सकें*। प्रभु ने कहा: *'पहाड़ पर स्थति नगर छपि नहीं सकता'* (मत्ती 5:14)। वह कसि पर्वत की बात कर रहे हैं, यदि अपने पवित्र वचन के सविा? अतः हे प्रयिजनो, आइए हम उत्साह और बुद्धमिानी के साथ उनके वचन को पूरा करने में स्वयं को लगाएँ, जो कहता है: *'जो मुझ से प्रेम रखता है, वह मेरी आज्ञाओं को पालन करेगा'* (यूहन्ना 14:23), ताकि ऐसी परश्रिम हमारे लिए एक अविनाशी और दृढ़ नगर बने, जो हमें प्रभु के वचन द्वारा हमारे सभी शत्रुओं के हाथ से सुरक्षति रखे, जब तक कि हम उनसे न मलिें (उनके साम्हने न प्रकट हों)। क्योंकि यदि हमें धैर्य मलि जाए, तो हमारे सभी शत्रु उसके पवित्र वचन की शक्ति से तति‌र-बतिर हो जाएँगे, जो उस पर्वत के समान है जसिसे बनिा हाथों के एक पत्थर कटकर नकिला और जसिने सोने, चाँदी, काँसे, लोहे और मट्टिी से बनी चार-भागों वाली मूर्ति को कुचल डाला—जैसा कि प्रेरति ने कहा: *'परमेश्वर का पूरा हथयिार पहन लो, ताकि तुम दुष्ट की युक्तियों के वरिुद्ध खड़े हो सको; क्योंकि हमारा संग्राम मनुष्यों से नहीं, बल्कि प्रधानताओं से, और अधकिारों से, और इस युग के अंधकार के हाकमिों से, और स्वर्गीय प्रदेशों में बुराई की आध्यात्मकि सेनाओं से है'* (इफसियिों 6:11-12)। ये चार प्रधानताएँ उस चार-भागीय प्रतमिा का नर्माण करती हैं, जो शत्रुता (शत्रु की शक्ति) है। परमेश्वर के पवित्र वचन ने उन्हें (प्रधानताओं को) नष्ट कर दयिा है, जैसा कि लिखा है कि जसि पत्थर ने प्रतमिा को मारा वह एक बड़ा पहाड़ बन गया और सारी पृथ्वी भर दी (दानयि‌ेल 2:34-35)।

19. अतः हे भाइयो, हम उसके (प्रभु के) आश्रय में शरण लें—वह हमारा शरणस्थान हो और हमें इन चार दुष्ट शक्तियों से बचाए, ताकि हम भी उसके सभी संतों के साथ आनन्द में (या उसका सुकून देने वाला वचन चखने, या सुनने) सहभागी हो सकें, जब वे पृथ्वी के चारों कोनों से उसके सामने इकट्ठा होंगे, और उनमें से प्रत्येक अपनी-अपनी करनी के अनुसार अपना आशीर्वाद (आशीर्वाद का प्रदान, या वह आशीर्वाद जो वशिेष रूप से उन पर प्रदान कयिा जाता है) सुनेगा। – क्योंकि उसका पवित्र नाम सामर्थी है – हमारे साथ रहने और हमें बल देने के लिए – और शत्रु की (शत्रु द्वारा उकसाई गई) भूल से हमारे हृदयों को धोखा खाने न देने के लिए, परन्तु वह हमें सुरक्षति रखेगा (और हमें वह शक्ति प्रदान करेगा) जो कुछ भी हम पर आए, उसे सहन करने के लिए, अपने पवित्र नाम की खातरि, ताकि हम उन सभी के साथ दया पाएँ जन्हिें उसकी आनंद की प्राप्ति के योग्य ठहराया गया है। उसकी महमिा, सम्मान और आराधना हो – पति‌ा को, और पुत्र को, और पवित्र आत्मा को, अब और हमेशा, और युगों-युगों तक। आमीन।

8. कथन

१. बाबा इसाइया ने कहा: मैं कभी-कभी खुद को एक ऐसे घोड़े के रूप में देखता हूँ जो बनिा मालकि या स्वामी के भटक रहा है – जसि पर कोई भी आकर सवार हो जाता है – और जब एक उसे छोड़ देता है, तो दूसरा उसे पकड़कर सवार हो जाता है।

2. उन्होंने फरि कहा: 'मैं उस व्यक्ति की तरह हूँ जसिे उसके दुश्मनों ने पकड़ लयिा है, बाँध दयिा है और कीचड़ भरी खाई में फेंक दयिा है; और अगर वह अपने प्रभु से पुकारता है, तो वे उसे चुप कराने के लिए बेरहमी से पीटते हैं।'

3. उन्होंने फरि कहा: 'मैं एक ऐसे पक्षी की तरह हूँ जसि एक छोटे लड़के ने पैर से बाँध रखा है: जब लड़का डोरी ढीली कर देता है, तो पक्षी तुरंत ऊँची उड़ान भरता है, यह सोचकर कि उसे आज़ाद कर दयिा गया है, लेकनि जब लड़का डोरी खींचता है, तो वह उसे वापस ज़मीन पर खींच लाता है। मैं खुद को इसी तरह देखता हूँ, और मैं इसका यही मतलब कहना चाहता हूँ: कि किसी को भी अपनी आखरिी साँस तक लापरवाही नहीं करनी चाहिए।

४. उन्होंने फरि कहा: यदि किसी को कुछ उधार देकर, आप उसे माफ कर देते हैं, तो आप यीशु के स्वभाव का अनुकरण कर रहे होते हैं; लेकनि यदि आप चुकाने की मांग करते हैं, तो आप आदम के स्वभाव का अनुकरण कर रहे होते हैं; और यदि आप ब्याज लेते हैं, तो यह आदम के स्वभाव के अनुसार भी नहीं होगा (अर्थात्, यह उससे नीच या उसके वपिरीत होगा)।

5. जब कोई आपको आपके द्वारा किए गए या न किए गए किसी काम के लिए दोषी ठहराता है, और आप चुप रहते हैं, तो यह यीशु के स्वभाव के अनुरूप है; यदि आप जवाब देते हैं, 'मैंने क्या किया?', तो यह उनके स्वभाव के अनुरूप नहीं है; लेकिन यदि आप शब्दशः बहस करते हैं, तो यह उनके स्वभाव के विपरीत है।

6. यदि, अपनी सेवाएँ (*लीटॉर्गाइया* – प्रार्थना सेवाएँ) करते समय, आप एक अयोग्य व्यक्ति के रूप में विनम्रता से ऐसा करते हैं, तो वे परमेश्वर को प्रसन्न करती हैं; लेकिन यदि, ऐसा करते समय, आपके हृदय में एक विचार उत्पन्न होता है और आप याद करते हैं कि कोई और (उसी क्षण) सो रहा है या (इस मामले में) लापरवाह है, तो आपका श्रम व्यर्थ है।

७. उन्होंने विनम्रता के बारे में फिर से कहा, कि उसमें किसी के बारे में यह कहने के लिए जीभ नहीं है कि वे लापरवाह हैं, या दूसरे के बारे में यह कहने के लिए कि वे तिरस्कारपूर्ण हैं; न ही उसमें दूसरों की गलतियों की जाँच करने के लिए आँखें हैं; न ही कान हैं जो आत्मा के लिए हानिकारक बातें सुनें; और यह अपने सिवा किसी और के पापों की परवाह नहीं करती, फिर भी यह ईश्वर की आज्ञा के अनुसार सभी लोगों के साथ शांति बनाए रखती है, न कि किसी मित्रता के कारण। जो कोई भी छह दिन तक उपवास करता है और इस मार्ग के अलावा महान श्रम और तपस्या (कठिन कर्म) करता है—उसका सारा श्रम व्यर्थ है।

८. उन्होंने फिर कहा: यदि कोई अपनी ज़रूरत के लिए कुछ प्राप्त करता है, परन्तु जब ज़रूरत पड़ती है तो उसे वह नहीं मिल पाता, तो उसने उसे व्यर्थ ही प्राप्त किया है। ऐसा ही वह मनुष्य है जो कहता है, 'मैं परमेश्वर से डरता हूँ,' परन्तु जब ऐसे हालात में आता है जहाँ इस डर की ज़रूरत होती है—उदाहरण के लिए, जब वह किसी ऐसी स्थिति में होता है जहाँ उसे किसी से बात करनी होती है, और उस क्षण या तो क्रोध का उफान और अभद्र आत्म-नियंत्रण की कमी, या उन मामलों में दूसरे को निर्देश देने की इच्छा जिनमें वह स्वयं पारंगत नहीं है, या मनुष्यों को प्रसन्न करने की इच्छा, या लोगों के बीच प्रसिद्ध होने की इच्छा, या अन्य जुनूनों का प्रकट होना महसूस करता है—यदि उस क्षण वह अपने भीतर परमेश्वर का भय नहीं पाता है, तो उसकी सारी मेहनत व्यर्थ है।

९. यदि हमारे प्रभु यीशु मसीह ने पहले उस मनुष्य की सभी दुर्बलताओं को चंगा नहीं किया होता जिसके लिए वे पृथ्वी पर आए थे, तो वे शायद क्रूस तक भी नहीं पहुँच पाते। प्रभु के देह में आने से पहले, मनुष्य अंधा, मूक, लकवाग्रस्त, बधिर, कोढ़ी, लंगड़ा और हर प्रकार की अस्वाभाविक परिस्थितियों से सुन्न हो गया था। लेकिन जब उन्होंने दया दिखाई और हमारे पास आए, तो उन्होंने मृतकों को जिलाया और लंगड़ों को चलना सिखाया, अंधों को देखना, गूंगों को बोलना और बधिरों को सुनना सिखाया – और उन्होंने एक नए मनुष्य को जन्म दिया, जो हर प्रकार की दुर्बलता से मुक्त था। और फिर उन्होंने क्रूस पर चढ़ाई। उनके साथ दो डाकू सलीब पर चढ़ाए गए; दाहिने ओर वाले ने उनकी महिमा की और उनसे प्रार्थना करते हुए कहा, *'हे प्रभु, अपने राज्य में मुझको याद रखना'* (लूका 23:42), जबकि बाईं ओर वाले ने उनकी निंदा की। – इसका यही अर्थ है। सुस्ती से जागने से पहले, मन शत्रु की सेनाओं के साथ मिलकर काम करता है। लेकिन जब हमारे प्रभु यीशु मसीह उसे उसकी सुस्ती से जगाते हैं और उसे सभी चीजों को स्पष्ट रूप से देखने की दृष्टि प्रदान करते हैं – और इस प्रकार वह क्रूस पर चढ़ने में सक्षम हो जाता है – तो शत्रु की शक्ति कठोर शब्दों से उसका अपमान करना शुरू कर देती है, इस आशा में कि, शायद, मन इस (बात) से कमजोर होकर, अपनी मेहनत से मुंह मोड़ लेगा और फिर से अपनी पूर्व की आलस्य की अवस्था में लौट आएगा। दोनों चोरों का यही महत्व है, जिन्हें हमारे प्रभु यीशु मसीह ने एक-दूसरे से अलग किया, और जिनमें से एक ने उनकी निन्दा की, इस आशा में कि शायद वह उन्हें उनकी आशा से हटा दे, जबकि दूसरे ने तब तक उनसे विनती करना बंद नहीं किया जब तक उसने नहीं सुना: *'आज ही तुम मेरे साथ स्वर्ग में होओगे'* (लूका 23:43)। वही स्वर्ग का विजेता सिद्ध हुआ, और अब जीवन के वृक्ष में भाग लेता है।

10. उन्होंने फिर से पवित्र सहभागिता के बारे में कहा, कि इसे ईश्वर के साथ एकता कहा जाता है। लेकिन यदि हम वासनाओं—चाहे वह क्रोध, ईर्ष्या, लोगों को खुश करने की इच्छा, अहंकार, घृणा, या कोई अन्य वासना हो—से अभिभूत हो जाते हैं, तो हम ईश्वर से बहुत दूर हैं। तो फिर, ईश्वर के साथ हमारी एकता कहाँ है?

11. जब आप अपनी सेवाएँ (प्रार्थना सेवाएँ) करते हैं और, उन्हें पूरा करने पर, इनमें से कोई भी (उल्लेखित जुनून) आपके हृदय में उभरता है, तो आपकी सारी मेहनत व्यर्थ है: ईश्वर उन्हें स्वीकार नहीं करता।

12. एक वृद्ध ने उससे कहा: 'तो फिर वे क्यों नहीं दबाते (*oy kroyoysi*), पिता[20] ?' वृद्ध ने उत्तर दिया: 'जब वर्षा बोई हुई भूमि पर पड़ती है, तो वह फसल उगाती है; लेकिन जब भूमि बिना बोई होती है, तो वह फसल कैसे उगा सकती है?' यदि कोई अपने हृदय से उन सभी अस्वाभाविक चीज़ों (अर्थात्, वासनाओं) को निकाल फेंकने का प्रयास

---

[20] वे धक्का नहीं देते – शायद ईश्वर की दया के द्वार पर, ताकि प्रार्थना फलदायी हो सके।

करता है, तो वे अब उसके भीतर हलचल नहीं करेंगी। ईश्वर चाहता है कि मनुष्य हर तरह से उसकी तरह हो। इसी कारण वह पृथ्वी पर आया और उसने दुख उठाया, ताकि हमारे कठोर स्वभाव को बदल सके, और हमारी इच्छाओं और हमारे मिथ्या ज्ञान को समाप्त कर सके, जिन्होंने हमारी आत्मा पर कब्ज़ा कर लिया था। बोलने में असमर्थ जानवरों ने अपनी प्रकृति को बनाए रखा है, जबकि मनुष्य ने अपनी प्रकृति को बदल दिया है। अब, जैसे मवेशी मनुष्य के अधीन हैं, वैसे ही प्रत्येक व्यक्ति को परमेश्वर के लिए अपने पड़ोसी के अधीन होना चाहिए: क्योंकि प्रभु इसी लिए आए थे। तो फिर, विचार करो कि वे पशु तुमसे कितने श्रेष्ठ हैं, जो अपनी ही मायावी बुद्धि पर भरोसा करते हो। इसलिए, यदि मैं अपनी स्वाभाविक अवस्था में लौटना चाहता हूँ, तो मुझे भी वैसा ही आचरण करना चाहिए, जैसे पशुओं की न तो अपनी कोई इच्छा होती है और न ही कोई बुद्धि, न केवल उन लोगों के प्रति जो मेरे साथ हैं, बल्कि उन लोगों के प्रति भी जो मेरा विरोध करते हैं: क्योंकि ईश्वर की यही इच्छा है। जो कोई कोठरी के शांत-समाधान में प्रवेश करना चाहता है और शत्रुता से (शत्रु की शक्ति से) पीड़ित नहीं होना चाहता, न ही उसका शिकार बनना चाहता है, उसे हर तरह से लोगों से अलग हो जाना चाहिए (उनकी चिंता से खुद को मुक्त करते हुए, उनके मामलों में शामिल न होते हुए), ताकि किसी को दोष न दे, न तो उनकी प्रशंसा करना, न उन्हें सही ठहराना, न चापलूसी करना, न उनकी धार्मिकता की पुष्टि करना, न किसी भी तरह से उन्हें दुखी करना, न उनकी कमियों पर ध्यान देना, न अपने दिल में उनके खिलाफ शत्रुतापूर्ण विचार की कोई काँटी पालना, और न ही अपने ज्ञान को मूर्खों पर, और न ही अपनी इच्छा को बेवकूफों पर बर्बाद करना। तब आप स्वयं को जानेंगे, और यह महसूस करेंगे कि आपके लिए क्या हानिकारक है। जो अपनी धार्मिकता पर भरोसा करता है और अपनी इच्छा से चिपका रहता है, वह शत्रुता (शत्रु की चालाकियों) से बच नहीं सकता, न ही उसे शांति मिल सकती है, और न ही वह देख सकता है कि उसमें क्या कमी है। और जब वह इस शरीर से प्रस्थान करता है, तो उसके लिए दया पाना कठिन हो जाता है। हालाँकि, इसका अंत यह है कि मनुष्य अपने पूरे हृदय और अपनी पूरी शक्ति से परमेश्वर के साथ रहे (उसका ध्यान करे, उससे लिपटा रहे, और उसे प्रसन्न करने का प्रयास करे), सभी पर दया दिखाए, रोए और परमेश्वर से उसकी सहायता और दया के लिए विनती करे।

१३. उन्होंने परमेश्वर की आज्ञाओं के संबंध में अपने पड़ोसी की शिक्षा के विषय में फिर से कहा: मुझे यह कैसे पता चले कि परमेश्वर ने मुझे स्वीकार कर लिया है, ताकि मैं किसी दूसरे से कह सकूँ: 'यह करो या वह करो', जबकि मैं स्वयं अपने पापों के कारण पश्चाताप की अवस्था में हूँ? – क्योंकि जो व्यक्ति कभी गिर चुका है, वह पश्चाताप की अवस्था में होता है। और जब तक आपको यह पता नहीं चल जाता कि आपके पापों की क्षमा आपके भीतर पूरी हो चुकी है, तब तक आपको (अपने स्वयं के उद्धार की) दृढ़ निश्चय प्राप्त नहीं हो सकता। इसका संकेत यह है कि जिस बात के विरुद्ध आपने पाप किया है, वह आपके हृदय में कतई नहीं उठती – या, यदि कोई आपसे इसके बारे में बात करता है, और आप यह भी नहीं पहचानते कि ऐसा कुछ हुआ भी है, तो यह स्पष्ट है कि आप पर दया की गई है। परन्तु यदि यह अभी भी आपके भीतर जीवित है, तो इसे दबा दो और इस पर रोओ: क्योंकि डर, कांपना और घोर क्लेश इस बात को लेकर बेपरवाह रहने के लिए हैं, जब तक कि आप परमेश्वर के सिंहासन के सामने न खड़े हो जाएँ। – यदि कोई आपसे कुछ सिखाने के लिए कहे, और आप, अपनी जान जोखिम में डालकर, उसे बताएं कि वह (जो उसे दबा रहा है) उससे कैसे मुक्त हो सकता है, फिर भी वह आपके पास उसी बात को दोहराने लौट आता है, और आपने जो बताया उसमें उसने कोई प्रगति नहीं की है, तो यह स्पष्ट है कि उसने उसे अपने जीवन में नहीं उतारा है। इसलिए, उससे दूर हो जाओ, क्योंकि वह तुम्हारी आत्मा को मार रहा है। किसी मनुष्य के लिए अपनी सच्चाई—जिसे वह परमेश्वर के अनुसार समझता है—को एक ओर रखना और परमेश्वर के अनुसार उसे सिखाने वाले के वचन को मानना एक महान बात है। उदाहरण के लिए, परमेश्वर के मनुष्य, अबा निस्तेरोस को ही लें, जिन्होंने परमेश्वर की महिमा देखी—हालाँकि उनके साथ उनकी बहन के पुत्र रहते थे, उन्होंने उन्हें कोई आज्ञा नहीं दी, बल्कि प्रत्येक को उसकी अपनी इच्छा पर छोड़ दिया, और इस बात की परवाह नहीं की कि वे अच्छे थे या बुरे। इसी तरह, उन्होंने काईन और एबेल के बारे में कहा: जब तक न तो कोई विधान था और न ही कोई धर्मग्रंथ, तब उन्हें यह या वह करने के लिए किसने सिखाया? (बेशक, ईश्वर ने), क्योंकि यदि ईश्वर किसी मनुष्य को नहीं सिखाता, तो वह व्यर्थ में परिश्रम करता है।

14. उसने फिर कहा: 'जब कोई तुम्हें अस्वास्थ्यकर बातें बोलना शुरू करे, तो उसकी बात न सुनना, कहीं वह तुम्हारी आत्मा को नष्ट न कर दे। उसके चेहरे से लज्जित न हो, और, उसे दुख पहुँचाने के डर से, अपने ऊपर ऐसी बातें होते देखना सहन न करना, यह सोचकर कि: "आखिरकार, मैं इसे अपने दिल में स्वीकार तो नहीं करता।" नहीं, ऐसा मत बोलना। तुम उस पहले मनुष्य से बड़े नहीं हो, जिसे परमेश्वर ने अपने हाथ से बनाया था – और बुरे वचनों से उसे कोई लाभ नहीं हुआ। इसलिए भाग जाओ और सुनो मत। लेकिन सावधान रहो: शरीर से भागते हुए भी यह जानने (या अपनी स्मृति में रखने) की इच्छा मत करो कि क्या कहा गया है; क्योंकि भले ही तुमने थोड़ा सा ही सुना हो, दुष्टात्माएँ

कही गई बात और तुम्हारे द्वारा सुनी गई बात को व्यर्थ नहीं जाने देंगी, बल्कि उसी से तुम्हारी आत्मा को मार डालेंगी। जैसे तुम भागो, वैसे ही अंत तक भागो।

१५. उन्होंने फिर कहा: 'जो मैं देखता हूँ, उससे मैं यह निष्कर्ष निकालता हूँ कि लाभ, सम्मान और शांति एक मनुष्य को मृत्यु के कगार तक पीड़ित करते हैं।'

१६. उन्होंने फिर कहा: 'अपने पड़ोसी को उपदेश देना आत्मा का (उसके उचित स्थान से) पतन है, और उसे एक अच्छी स्थिति में ले जाना चाहना आत्मा का महान विनाश है। क्योंकि जब भी आप अपने पड़ोसी को समझाते हैं: 'यह करो या वह करो' – तो अपने बारे में सोचें और मनन करें – कि आप, एक बेल्चा लेकर, अपने ही घर को नष्ट कर रहे हैं जबकि उसके घर को बनाने की कोशिश कर रहे हैं।

१७. उन्होंने फिर कहा: 'उस आत्मा का विनाश हो जिसने पवित्र बपतिस्मा के बाद पाप किया है!' ऐसा व्यक्ति प्रायश्चित के दौरान अपने साथ सुकून से नहीं रह सकता – चाहे वह देह में (शारीरिक पापों में) गिर गया हो, या चोरी की हो, या किसी अन्य पाप में फिसल गया हो, या किसी के शरीर को वासना की दृष्टि से देखा हो, या किसी को देखे बिना चोरी-छिपे कुछ खाया हो, या जब कोई और अपना दान रखता है[21] , तुम यह देखने के लिए उत्सुक थे कि उसमें क्या था – क्योंकि जो कोई भी इस तरह का काम करता है, वह यीशु का अपमान करता है।

18. तब किसी ने उससे पूछा: 'क्या यह मामला वास्तव में इतना महत्वपूर्ण है, पिता जी?' – और उसने कहा: 'जिसने दीवार तोड़कर पैसे लिए हैं, वह वैसे ही है जैसे शत्रु द्वारा बहकाया गया हो, और यह व्यक्ति भी (उसी शत्रु द्वारा बहकाया गया है): क्योंकि जिसने एक पर विजय प्राप्त की है, उसने इस पर भी विजय प्राप्त की है – और जो छोटे मामलों में पराजित होता है, वह बड़े मामलों में भी पराजित होता है।'

19. भले ही कोई व्यक्ति महान चमत्कार और उपचार करे, और सारी ज्ञान प्राप्त कर ले—भले ही वह मृतकों को भी जीवित कर दे—फिर भी जैसे ही वह पाप में पड़ता है, वह अपने बारे में निश्चिंत नहीं रह सकता, क्योंकि वह पश्चाताप के बोझ तले दब जाता है। इसी तरह, यदि वह तपस्या के कई कार्य करता है, लेकिन पाप में किसी को देखकर या लापरवाही में रहने वाले को देखकर , वह उस व्यक्ति का अपमान करता है—उसकी सारी तपस्या व्यर्थ हो जाती है, क्योंकि उसने निर्णय न्यायाधीश परमेश्वर पर छोड़ने के बजाय, उसे निंदा करके मसीह के एक अंग को अस्वीकार कर दिया है।

20. उसने फिर कहा: हम सब एक अस्पताल में पड़े हुए हैं – एक को आँख की बीमारी है, दूसरे को हाथ की, किसी को फोड़ा है, या कोई अन्य दुर्बलता। ऐसा होता है कि कुछ घाव पहले ही भर चुके होते हैं, लेकिन अगर कोई कुछ हानिकारक खा लेता है, तो वे फिर से खुल जाते हैं। पश्चाताप की अवस्था में रहने वाले व्यक्ति के साथ भी ऐसा ही है: जब वह किसी को दोषी ठहराता है या तुच्छ समझता है, तो वह अपने पश्चाताप को फिर से नष्ट कर देता है। – विभिन्न बीमारियों से पीड़ित, अस्पताल में लेटे हुए लोगों में से, यदि कोई अपने दर्द के कारण चिल्लाता है, तो क्या कोई दूसरा कहेगा: 'तुम चिल्ला क्यों रहे हो?' क्या हर कोई अपनी ही बीमारी के बारे में नहीं सोचता? इसी तरह, अगर मेरे पापों का दर्द मेरी आँखों के सामने होता, तो मैं किसी दूसरे पापी को नहीं देखता: जैसे, डॉक्टर की अस्पताल में लेटे हुए मरीजों में से, प्रत्येक इस बात का ध्यान रखता है कि वह कुछ भी ऐसा न खाए जो उसके घाव को फिर से खोल दे।

[22]**21.** उस आत्मा का विनाश हो जो सभी पापों से बचना नहीं चाहती! यह उससे ईर्ष्या करने और उसका विरोध करने वाले (शत्रुओं) से बहुत दुख सहती है। तो फिर, उसे सभी चीजों के लिए महान धैर्य और कृतज्ञता की आवश्यकता क्यों होती है? इस प्रकार, जब लोग (इज़राइल के) मिस्र में थे, तो उन्होंने सभी ने भरपूर खाया और पिया, जबकि वे फिरौन के लिए दासों के रूप में काम कर रहे थे। लेकिन जब प्रभु ने उन्हें मदद भेजी, यानी, मूसा के द्वारा, उन्हें फिरौन से मुक्त कराने के लिए, उन्हें कठोर श्रम और भयानक कष्टों से गुज़रना पड़ा; और ईश्वर द्वारा फिरौन पर लाई गई सभी विपत्तियों के बीच भी, मूसा तब तक विनाश से उनकी मुक्ति के बारे में निश्चित रूप से बोलने की हिम्मत नहीं कर सके, जब तक कि समय आ नहीं गया और ईश्वर ने उनसे कहा: 'मैं फिरौन पर एक और विपत्ति लाऊँगा, और तुम उससे कहना: "लोगों को जाने दो, नहीं तो मैं तुम्हारे पहलौठों को मार डालूँगा।"' तब जाकर मूसा में हिम्मत आई। और परमेश्वर ने उससे कहा: *'इन बातों को लोगों के कानों में कह, और हर पुरुष अपने पड़ोसी से, और हर स्त्री अपनी पड़ोसी से चाँदी और सोने के पात्र, और वस्त्र माँगे; और उन्हें अपने बच्चों के कंधों पर लादकर मिस्रियों का सामान लूट लो'* (निर्गमन 11:1–2)। इनमें से कुछ वस्तुओं का बाद में तम्बू के निर्माण में उपयोग किया गया था।

---

[21] *मेलोटारियन* – मिलोट – मठवासी परिधान (कमरबंद), सेंट पाकोमियस के नियम के अनुसार – बकरी की खाल से बना।

[22] अनुच्छेद के संदर्भ से यह अर्थ निकलता है: जो इच्छा करता है, इरादा करता है, या ऐसा करने के लिए निकल पड़ता है। लेकिन पैसियोस के संस्करण में: जो इच्छा नहीं करता।

22. (इसके बाद, अबा) ने कहा: 'इस बारे में बुज़ुर्ग यही कहते हैं। चाँदी और सोने के बर्तन और वस्त्र वे इंद्रियाँ हैं जो शत्रु की सेवा करती हैं: यहाँ यह कहने का तात्पर्य है कि यदि कोई व्यक्ति उन्हें शत्रु से छीनकर परमेश्वर के लिए फल नहीं लाता, तो परमेश्वर के विश्राम का आवरण उस पर नहीं उतरेगा; परन्तु यदि वह उन्हें शत्रु से छीनकर परमेश्वर को फल के रूप में अर्पित करता है, तो परमेश्वर का आवरण उस पर आएगा। जब तक यह किसी भी तरह से अधूरा था, तब तक बादल ने इसके ऊपर आवरण नहीं डाला; लेकिन जब यह पूरी तरह से तैयार हो गया, तब बादल ने इसे ढक लिया। बाद में बने मंदिर के साथ भी ऐसा ही था: जब तक उसमें कुछ कमी थी, तब तक बादल उस पर नहीं छाया; लेकिन जब वह पूरी तरह से बन गया, और दहन-बलि के रक्त और चर्बी को उसमें लाया गया, और परमेश्वर ने उनकी सुगंध सूंघी, तब बादल उस घर पर छा गया। अर्थात्, जब तक कोई व्यक्ति अपनी पूरी शक्ति और अपने पूरे मन से ईश्वर से प्रेम नहीं करता, और पूरे हृदय से उन पर निर्भर नहीं रहता, तब तक उस पर ईश्वर की विश्राम की छाया नहीं आएगी।

२३. उन्होंने फिर कहा: यदि मन, इंद्रियों के कमजोर होने (वासनाओं की दया पर होने) से पहले, सूली उठाना चाहता है, तो ईश्वर का क्रोध उस पर आता है, क्योंकि उसने अपनी इंद्रियों को पहले चंगा किए बिना, अपनी क्षमता से परे का कार्य हाथ में ले लिया है।

24. यदि आपके भीतर (वासनाओं की) दुर्गंध सक्रिय है, और आप उनसे सहानुभूति रखते हैं और उनके उत्पन्न होने का कारण बनते हैं, फिर भी अपने हृदय की बीमारी में इस पर शोक नहीं करते, तो यह आदम की प्रकृति के अनुरूप नहीं है।

२५. यदि आपका हृदय पाप पर विजय प्राप्त कर चुका है और उसे उत्पन्न करने वाली वस्तु से मुँह मोड़ चुका है, और आपने अपने लिए नरक की यातनाओं को निर्धारित किया है, और, अपनी... की कामना करते हुए (वही) सहायक हमेशा आपके साथ हो, आप उसे किसी भी तरह से दुखी न करें, बल्कि उसके सामने रोते हुए कहें: 'हे प्रभु, मुझे बचाना आपकी दया का काम है' – क्योंकि मैं स्वयं आपकी मदद के बिना शत्रु के हाथों से बचने में असमर्थ हूँ; और साथ ही आप अपने हृदय पर भी ध्यान देते हैं, कि कहीं आप उसको दुखी न करें जो आपको परमेश्वर के मार्गों में शिक्षा देता है: क्योंकि यह यीशु के स्वभाव के अनुरूप होगा – और वह आपको हर बुराई से बचाएगा। आमीन।

९. संसार का त्याग करने वालों के लिए आज्ञाएँ

1. यदि आपने संसार का त्याग कर दिया है और पश्चाताप में स्वयं को परमेश्वर के हवाले कर दिया है, तो अपने विचारों को अपने अतीत के पापों के दुख से परेशान न होने दें, मानो उन्हें इस मामले में क्षमा नहीं किया गया हो, लेकिन न ही प्रभु की आज्ञाओं के प्रति लापरवाह रहें, क्योंकि अन्यथा वह आपके अतीत के पापों को भी क्षमा नहीं करेंगे।

2. यह वही है जिसे तुम्हें मृत्यु तक पालन करना चाहिए, और इसे नज़रअंदाज़ मत करो: किसी महिला की संगति में भोजन मत करो; बहुत कम उम्र वालों से दोस्ती मत करो; जब तुम जवान हो, तो अपने भाई या अपने मठाधीश के अलावा किसी और के साथ एक ही चटाई पर मत लेटो – और ऐसा श्रद्धापूर्वक करो, लापरवाही से नहीं; अपनी नज़रों को भटकने न दो, और कपड़े पहनते समय लापरवाह मत बनो।

3. यदि आवश्यक हो, तो तीन कप तक शराब पी सकते हैं, और मित्रता के लिए इस आज्ञा को न तोड़ें।

४. उस स्थान पर न ठहरो जहाँ तुमने परमेश्वर के सामने पाप किया है, और अपनी भक्ति (प्रार्थनाओं) को न छोड़ो, कहीं ऐसा न हो कि तुम अपने शत्रु के हाथ में पड़ जाओ।

5. स्वयं को भजन संहिता का अध्ययन करने के लिए प्रेरित करें – और यह आपको (वासनाओं के) विषाक्त धुंधलों में फँसने से बचाएगा। शरीर की हर पीड़ा से प्रेम करें – और आपकी वासनाएँ वश में हो जाएँगी।

6. ध्यान रखें कि किसी भी मामले में अपनी तुलना न करें – और आपको अपने पापों पर रोने की स्वतंत्रता प्राप्त होगी।

7. झूठ से अपना बचाव करो: अन्यथा यह तुमसे ईश्वर का भय दूर कर देगा।

8. अपने विचार सभी को न बताएं, कहीं ऐसा न हो कि आप अपने पड़ोसी को ठोकर खिला दें, बल्कि अपने विचार अपने आध्यात्मिक पिताओं को प्रकट करें, ताकि ईश्वर की कृपा आप पर बनी रहे।

९. अपने शिल्प में मन लगाओ, और परमेश्वर का भय तेरे संग वास करेगा।

10. यदि तुम अपने भाई को ठोकर खाते देखो, परन्तु मृत्यु तक नहीं (1 यूहन्ना 5:16), तो उसे लज्जित न करो, कहीं ऐसा न हो कि तुम अपने शत्रुओं के हाथ में पड़ जाओ।

11. अपने द्वारा किए गए पापों के जाल में फँसने से सावधान रहो, कहीं वे तुममें फिर से जीवित न हो जाएँ।

12. नम्रता से प्रेम करो, और यह तुम्हें तुम्हारे पापों से बचाएगी।

13. पक्षपात न करो, नहीं तो सब छल तुम्हारे भीतर जड़ जमा लेगा।

14. अपने हृदय को अपने पितरों की आज्ञाकारिता के प्रति समर्पित करो, और परमेश्वर का अनुग्रह तुम में वास करेगा।

१५. स्वयं को बुद्धिमान न समझो, कहीं तुम अपने शत्रुओं के हाथ में न पड़ जाओ।

16. अपनी जीभ को 'मुझे क्षमा करो' कहना सिखाओ - और विनम्रता तुम पर आएगी।

17. अपनी कोठरी में बैठे समय, हमेशा इन तीन बातों का ध्यान रखें: शारीरिक श्रम, अध्ययन (ईश्वर का पठन और मनन), और प्रार्थना।

18. प्रतिदिन मनन करो: 'मेरे पास इस दुनिया में बिताने के लिए केवल यही एक दिन है' – और तुम परमेश्वर के सामने पाप नहीं करोगे।

19. खाने में लालची न बनो, कहीं ऐसा न हो कि तुम्हारे पुराने पाप तुम्हारे भीतर फिर से जाग उठें।

20. किसी भी श्रम में हतोत्साहित न हों (थके हुए न हों), अन्यथा शत्रु का प्रभाव आप पर हावी हो जाएगा।

21. स्वयं को अध्ययन (ईश्वर का पठन और मनन) के लिए प्रेरित करें, और ईश्वर का शान्ति आपको शीघ्र ही प्राप्त होगी: क्योंकि जैसे शहर के बाहर एक जर्जर घर गंदगी का स्थान होता है, वैसे ही आलसी नवसिखुआ की आत्मा हर अपमानजनक वासना का पात्र बन जाती है।

22. स्वयं को आँसुओं के साथ बहुत सारी प्रार्थनाएँ करने के लिए प्रेरित करो: शायद प्रभु तुम पर दया करेंगे और तुमसे पुराने पापी मनुष्य को उतार देंगे।

23. इन को अपना साथी बनाओ: परिश्रम, गरीबी, भटकना, शरीर का संयम और मौन; क्योंकि इन से ही नम्रता उत्पन्न होती है, और नम्रता हर पाप की क्षमा लाती है।

२४. हमारे भले प्रभु और परमेश्वर में इतना सामर्थ्य है कि वह हमें यह जानने और करने की शक्ति दे सकता है कि क्या सही है, ताकि हम उन संतों के साथ दया पा सकें जिन्होंने उसकी आज्ञाओं का पालन किया है। आमीन।

10. एक और वचन (उन लोगों के लिए जिन्होंने विश्वास का त्याग कर दिया है)

1. परमेश्वर ने प्रेरित पतरस को दिखाया कि किसी भी मनुष्य को अशुद्ध या अपवित्र नहीं समझना चाहिए (प्रेरितों के काम 10:15)। चूँकि उसका हृदय पवित्र हो गया था, इसलिए उसकी दृष्टि में हर मनुष्य पवित्र हो गया। परंतु जिनके हृदय वासनाओं के दास हैं, उनके लिए कोई भी पवित्र नहीं है; बल्कि, अपने हृदय की वासनाओं के कारण, वे सोचते हैं कि हर व्यक्ति भी वैसा ही है। भले ही कोई उन्हें बताए कि अमुक व्यक्ति एक अच्छा व्यक्ति है, वे अपने हृदय में इस पर तुरंत क्रोधित हो जाएँगे। इसलिए सावधान रहो, किसी को तुच्छ न समझो, न केवल अपने वचनों से, बल्कि अपने हृदय में भी नहीं।

2. जब तक कोई व्यक्ति अपने आप पर ध्यान नहीं देता, वह अपने दिल में यह सोचता रहता है कि वह परमेश्वर का मित्र है। लेकिन जब वह अपनी वासनाओं से मुक्त हो जाता है, तो वह परमेश्वर के सामने स्वर्ग की ओर अपनी आँखें उठाने में लज्जित होता है, क्योंकि वह खुद को परमेश्वर से पूरी तरह से दूर पाता है।

3. एक आदमी के दो नौकर थे और उसने उन्हें गेहूँ की कटाई के लिए अपने खेत में भेजा, और उनमें से प्रत्येक को दिन में सात गट्ठे काटने का आदेश दिया। उनमें से एक ने अपने स्वामी के आदेश को पूरा करने के लिए अपनी पूरी ताकत लगा दी, लेकिन वह ऐसा नहीं कर सका, क्योंकि वह काम उसकी ताकत से परे था; जबकि दूसरे ने, सफलता की उम्मीद छोड़कर, निराशा में अपने आप से कहा: 'एक ही दिन में ऐसा काम कौन कर सकता है? और, अपने मालिक की आज्ञा की अवहेलना करते हुए, उसने काम पर कोई ध्यान नहीं दिया, बल्कि लेटकर सो गया—कभी हांफता, कभी सोता, कभी एक तरफ से दूसरी तरफ पलटता, जैसे कोई दरवाज़ा अपनी कब्ज़ पर घूमता हो—और इस तरह पूरा दिन आलस्य में बर्बाद कर दिया। जब शाम हुई, तो वे अपने मालिक के पास गए। और उसने, उन दोनों से बात करने के बाद, परिश्रमी सेवक के काम की सराहना की, भले ही उसने जो करने का आदेश दिया गया था, उसे पूरी तरह से पूरा नहीं कर पाया था, जबकि उसने आलसी, लापरवाह को अपने घर से बाहर निकाल दिया। इसी प्रकार हमें किसी परिश्रम में हतोत्साहित नहीं होना चाहिए, न ही क में निराश होना चाहिए, बल्कि अपनी पूरी ताकत लगाकर पूरे मन से काम करना चाहिए। और मुझे विश्वास है कि ईश्वर हमें अपने संतों के बराबर स्वीकार करेंगे।

४. हर व्यक्ति को परमेश्वर के सामने हृदय और शरीर की बड़ी नम्रता के साथ बहुत प्रार्थनाएँ करनी चाहिए, यह न मानते हुए कि उन्होंने कोई भलाई की है, अपने किसी भी काम की प्रशंसा पर भरोसा न करते हुए, निंदाओं से आहत न होते हुए, अपने पापों को याद रखे, अपने शत्रुओं के साथ अपने हृदय में शांति बनाए रखे, और अपने प्रियजनों

(मत्रिों) की उपस्थति में भी, उनके साथ बात करने या उन्हें डांटने के लिए अपने होठों से कोई कड़वा शब्द निकलने न दे।

5. निष्किर्षत; एक भिक्षु को अपनी आत्मा के सभी द्वार बंद करने चाहिए और अपने सभी इंद्रियों की रक्षा करनी चाहिए, कहीं वह उनके द्वारा भ्रष्ट न हो जाए, और उन लोगों से अपनी रक्षा करनी चाहिए जो उसके पास सांसारिक बातें लाते हैं। धन्य है वह जो अपने ही पापों से संतुष्ट है (अर्थात्, उनके प्रति जागरूक होकर और उन पर शोक मनाकर, दूसरों के पापों में झाँके बिना)।

11. सरसों के दाने पर

(शब्दों में) सरसों के दाने के विषय में एक रहस्य है, जैसा कि धर्मपितामहों ने कहा है, ताकि (वे हमें) इसके अर्थ की खोज करने के लिए प्रोत्साहित करें, (इसके बारे में) लिखे हुए से निर्णय लेकर: *'स्वर्ग का राज्य सरसों के दाने के समान है, जिसे एक मनुष्य ने लेकर अपने खेत में बोया; यद्यपि यह सब बीजों में सबसे छोटा है, फिर भी जब यह बढ़ जाता है, तो यह सब जड़ी-बूटियों में सबसे बड़ा हो जाता है और एक पेड़ बन जाता है, कि आकाश के पक्षी आकर उसकी डालियों में घोंसले बनाते हैं'* (मत्ती 13:31–32)। सरसों का दाना ऐसा ही है, और उसके गुण भी ऐसे ही हैं! (और प्रभु, उन गुणों को उजागर करते हुए) यह चाहते हैं कि मनुष्य हर बात में (उसके बारे में कही गई हर बात में) उसकी नकल करे। यह कहते हुए कि यह *'सभी बीजों में सबसे छोटा' है,* वह हम में विनम्रता का संचार करते हैं - कि हमें हर इंसान से खुद को नीचा रखना चाहिए; यह कहते हुए कि यह पूरे आकार तक बढ़ गया है, वह हमें नम्रता और धैर्य की याद दिलाते हैं; कि इसका रंग अग्नि जैसा है, – यह हमें पवित्रता की याद दिलाता है, ताकि हमारे शरीर में कोई अशुद्धि न रहे; कि इसका भीतरी हिस्सा कड़वा है – यह वासनाओं से घृणा पैदा करता है, क्योंकि जो लोग शांति चाहते हैं उनके लिए यह कड़वा है; कि इसका सुखद स्वाद तब तक प्रकट नहीं होता जब तक इसे चबाया और पीसा न जाए, यह विपत्ति से उत्पन्न पीड़ा (अभावों के कारण शरीर का कड़वापन) के बारे में बताता है; जब इसे पीसा जाता है, तो यह आँखों में चुभता है – यह अपने कर्मों (या तपस्या की कठिनाइयों) की दुखदता की याद दिलाता है; इसका उपयोग (इससे बने सरसों के तेल से) मृत अंगों पर लेप लगाने के लिए किया जाता है, ताकि वे सड़ न जाएँ। इसलिए आइए हम इसके अर्थ को समझें और इसके गुणों का अनुसरण करें – और आइए हम अपने क्षतिग्रस्त अंगों पर इसे लगाएँ, ताकि वे सड़ न जाएँ या कीड़ों से ग्रस्त न हो जाएँ। क्योंकि मसीह के समान हो जाना, प्रभु यीशु को अपने भीतर समाहित करना, इसका ही अर्थ है, ताकि हम अपनी पूरी क्षमता से, उसके अनुसार (सरसों के दाने के स्वभाव के अनुसार) स्वयं को उसके लिए तैयार करने का प्रयत्न करें, यह परखते हुए कि हम उस बीज के हैं या नहीं, – क्या हम उसके स्वभाव और उसकी नम्रता को साझा करते हैं, – क्या हम उसके पिसे हुए (पाउडर) रूप, उसकी कड़वाहट, या उसके स्वाद को साझा करते हैं। – यह ईश्वर की कृपा से है कि हमें उनकी इच्छा के अनुसार ऐसा करने की शक्ति मिलती है। उनकी महिमा हो – पिता, पुत्र और पवित्र आत्मा की, युगों-युगों तक। आमीन।

12. मदिरा पर

१. *मदिरा का संस्कार।* (यह मानव स्वभाव का प्रतीक है) (या मनुष्य का), जो ईश्वर से मिलना चाहता है (ईश्वर को प्रसन्न करना चाहता है), और उस उद्देश्य के लिए अपने कार्य को पवित्रता में अखंड रखता है, ताकि ईश्वर उसे (उसके कार्य को) आनंद के साथ स्वीकार कर सकें।

2. पात्र (शराब के लिए) ठीक से पिच से सील किया गया है। यह शरीर की पवित्रता का प्रतीक है, जिसके प्रत्येक अंग को शर्मनाक वासनाओं से मुक्त (और शुद्ध) होना चाहिए, क्योंकि जो कोई भी (शारीरिक) सुखों में लिप्त है, वह ईश्वर की सेवा नहीं कर सकता।

3. जैसे एक बर्तन में शराब डालना असंभव है जो पूरी तरह से कोट नहीं किया गया हो, या जिसमें कोई दरार हो, वैसे ही हमारे लिए अपने भीतर घृणा और शत्रुता को पालते हुए परमेश्वर को प्रसन्न करना असंभव है। इसलिए आइए हम स्वयं की जाँच करें (यह देखने के लिए कि क्या ये हम में मौजूद हैं), क्योंकि वे एक व्यक्ति को पश्चाताप के कार्य में बाधित करते हैं।

४. शराब अपने बनने के आरंभ में ही खमीर उठती है। यह नए विश्वासी के लिए एक रूपक है, जो तब तक बेचैन रहता है जब तक कि वह परिपक्व होकर स्थिर नहीं हो जाता।

५. शराब (सच्ची शराब) तब तक नहीं बनती जब तक उसमें जिप्सम न मिलाया जाए, ठीक उसी तरह जैसे खमीर को सही मात्रा में मिलाना आवश्यक है। इसी तरह, एक नौसिखिया तब तक सफल नहीं हो सकता जब तक कि वह

परमेश्वर के अनुसार अपने आध्यात्मकि पिताओं से खमीर प्राप्त न करे, और वे उसे रास्ता न दिखाएँ (और उसे उस पर न ले जाएँ), जब तक कि परमेश्वर स्वयं उसे इसे देखने का अनुग्रह न दें।

6. (शराब को) घर में (उस जगह जहाँ इसे बनाया जाता है) तब तक रहने दिया जाता है जब तक कि वह जम न जाए। इसी तरह, मौन, ईश्वर के लिए दुख सहने, और ईश्वर के अनुसार सभी परिश्रम के बिना, एक नवसिखुआ के लिए (अडिग शांति) की अवस्था प्राप्त करना असंभव है।

७. यदि शराब में अनाज या टहनियाँ रह जाएँ, तो वह खट्टी हो जाती है। इसी प्रकार, एक नवसिखुआ, यदि वह अपने रक्त के संबंधियों या अन्य लोगों के बीच रहता है जो उनके समान कार्य और तपस्या में संलग्न नहीं हैं, तो वह वह चरित्र खो देता है जो उसे अपने आध्यात्मकि पितरों से प्राप्त हुआ था।

8. शराब के ऊपर मिट्टी इसलिए रखी जाती है ताकि वह वाष्पित होकर बर्बाद न हो जाए। इसी प्रकार, यदि कोई नवसिखुआ हर बात में विनम्रता का अभ्यास नहीं करता है, तो उसकी सारी मेहनत व्यर्थ हो जाती है।

९. यदि शराब का बार-बार स्वाद लिया जाए, तो वह अपनी सुगंध और स्वाद खो देती है। अक्सर एक ऐसे व्यक्ति के साथ भी ऐसा ही होता है जो अपने कर्मों का ढिंढोरा पीटता है, क्योंकि ऐसे मामले में अहंकार उसके सभी कार्यों को बर्बाद कर देता है।

10. यदि शराब का पात्र खुला छोड़ दिया जाए, तो घृणित मच्छर शराब को खराब कर देते हैं। इसी प्रकार अत्यधिक बातें, ठिठोली और व्यर्थ की बकवास (युवा भिक्षुओं की अच्छी भावनाओं को खराब कर देती हैं)।

11. यदि शराब हवा में खुली छोड़ दी जाए, तो वह अपना रूप और स्वाद खो देती है। इसी प्रकार, अहंकार किसी व्यक्ति की मेहनत के हर फल को बर्बाद कर देता है।

12. शराब को तहखानों में रखा जाता है और सुरक्षित ढक दिया जाता है। इसी तरह, हर प्रयास में मौन और विनम्रता ईश्वर के श्रमिक को 'छिपाती और बचाती' है। और इस मौन और विनम्रता के बिना किसी व्यक्ति के लिए अपने श्रम के फल को संरक्षित करना असंभव है।

13. यह सब दाखमक्षिका के साथ तब तक किया जाता है जब तक कि वह अपने बनाने वाले को प्रसन्न न कर दे – और वह अपनी मेहनत में आनंदित हो। – एक मनुष्य को यह सब तब तक करना चाहिए जब तक कि उसका काम परमेश्वर के सामने प्रसन्न न हो जाए।

14. जैसे किसी मदिरा को खोलकर चखे बिना यह जानना असंभव है कि वह कैसी है, वैसे ही किसी व्यक्ति के लिए यह संभव नहीं है कि वह अपने हृदय में साहस रखे और अपने लिए भय न माने, जब तक वह परमेश्वर के सामने न खड़ा हो जाए, और परमेश्वर उसके काम को सिद्ध न माने।

15. जैसे, यदि कोई पात्र रिसने लगे, तो उसके मालिक के लापरवाह होने पर शराब उसके जानने से पहले ही जमीन पर गिर जाएगी; वैसे ही कोई छोटा और तुच्छ (अयोग्य) कर्म एक मनुष्य के फल को नष्ट कर देता है, यदि वह लापरवाह है।

१६. अतः हे मेरे भाइयो, हम अपनी शक्ति का उपयोग अपने आप को उन सब बातों से बचाने के लिए करें जो हमारे लिए हानिकारक हैं—और प्रभु की दया और अनुग्रह हमें उस दिन यह कहने का साहस दे कि: अपनी दुर्बलता में हमने उस बात को रखने का प्रयत्न किया जो हमारा विवेक हमें बताता था, परन्तु शक्ति (क्योंकि वह) तो तेरा है, और दया, और सहायता, और रक्षा, और क्षमा, और धैर्य भी। क्योंकि मैं क्या हूँ? अब तक मैं दुष्टों के हाथ में था, जिनसे तूने मुझे बचाया है, और मेरे पास तुझे देने के लिए कुछ भी नहीं है। मैं एक पापी हूँ और तेरे उपहारों का अयोग्य हूँ, परन्तु तूने मुझे मेरे शत्रुओं के हाथ से बचाया है। आप मेरे प्रभु और मेरे परमेश्वर हैं। और महिमा, और दया, और रक्षा, और सहायता, और सामर्थ्य, युगानुयुग आपके ही हैं। आमीन।

13. जिन्होंने परिश्रम किया और अपना काम अच्छी तरह से पूरा किया

1. ये वे चिन्ह हैं जो प्रभु यीशु ने क्रूस पर चढ़ाए जाने से पहले दिखाए। *'जाओ,' उन्होंने कहा, 'और यूहन्ना को बताओ कि तुमने क्या देखा और सुना है: अंधे देख रहे हैं, लंगड़े चल रहे हैं, कोढ़ी शुद्ध हो रहे हैं, बहरे सुन रहे हैं, मरे हुए जी उठे हैं, और गरीबों को सुसमाचार का प्रचार किया जा रहा है; और धन्य है वह जो मुझ पर ठोकर नहीं खाता'* (लूका 7, 22–23)[23] .

2. इस प्रकार, प्रभु यीशु ने ऐसे कई चिन्ह दिखाए। (लेकिन हमें यह समझना चाहिए कि उनमें से प्रत्येक का, उसके शाब्दिक अर्थ के अलावा, एक रूपक महत्व भी है।) कि '*अंधे देखते हैं*' का अर्थ यह है: जो इस संसार की आशा

[23] यूहन्ना, जिसने प्रभु यीशु को बपतिस्मा दिया, इस अंश में वर्णित बात का मूर्त रूप है, क्योंकि जिसे बपतिस्मा दिया जा रहा है, उसे (बपतिस्मा देने वाले से) यह कबूल करना चाहिए कि वह क्या कर रहा है।

में लगा रहता है वह अंधा है; लेकिन यदि वह उसे त्यागकर आने वाली आशा पर अपनी दृष्टि केंद्रित करता है, तो उसने देख लिया है; इसी प्रकार: *'लंगड़े चलते हैं'* का अर्थ यह है: जो परमेश्वर की इच्छा रखता है, फिर भी हृदय के सांसारिक विचारों से प्रेम करता है, वह लंगड़ा है; लेकिन यदि वह बाद वाले को त्याग देता है और पूरे हृदय से परमेश्वर से प्रेम करता है, तो वह सीधे मार्ग पर चलना शुरू कर देगा। इसी प्रकार फिर: *'बधिर सुनते हैं'*—इसका यही अर्थ है: जो विचलित अवस्था में है (मनोरंजन के बीच रहता है) वह बधिर है, क्योंकि उसका ध्यान बाहरी चीजों से मोहित हो जाता है और वह भूल जाता है कि क्या सही है; लेकिन अगर वह हर चीज़ से खुद को अलग कर लेता है, तो वह सुनना शुरू कर देगा। और यह: *'कोढ़ी शुद्ध हो जाते हैं'*—इसका यही अर्थ है: मूसा की व्यवस्था में लिखा है: 'कोई भी अशुद्ध व्यक्ति प्रभु के भवन में प्रवेश न करे', यानी, जो अपने पड़ोसी के प्रति शत्रुता, या घृणा, या ईर्ष्या, या निंदा को पालता है; लेकिन यदि कोई इन चीजों का त्याग कर देता है, तो वह शुद्ध हो जाएगा।

3. इस प्रकार, जब अंधा अपनी दृष्टि वापस पाता है, लंगड़ा चलने लगता है, बहरा सुनने लगता है, और कोढ़ी शुद्ध हो जाता है, तो उपेक्षा के समय में (इन स्थितियों से संकेतित नैतिक पतन के कारण) मृत व्यक्ति बहाल और नवीनीकृत हो जाता है, और फिर वह अपनी इंद्रियों के माध्यम से सुसमाचार का प्रचार करता है —जो पवित्र सद्गुणों से रहित थीं—कि उसे अपनी दृष्टि प्राप्त हुई है, वह चलने और सुनने लगा है, और शुद्ध हो गया है। आपको ऐसे औचित्य का प्रस्तुतीकरण उस व्यक्ति के समक्ष करना चाहिए जिसने आपको बपतिस्मा दिया था।

४. बपतिस्मा यही है: दुष्टता का दुख (मांस का कटुकरण) नम्रता और मौन के साथ। क्योंकि यूहन्ना के विषय में लिखा है—कि उसके वस्त्र ऊँट के बाल के थे, और उसके कमर पर चमड़े का एक कमरबंद बँधा था—और वह जंगल में था (मत्ती ३:४)। यह आत्म-संयम का संकेत है। यह किसी व्यक्ति को शुद्ध करने वाली पहली चीज़ है, और यदि कोई प्रयास करता है, तो वे इसे प्राप्त कर लेते हैं; और जब वे इसे स्वयं के लिए प्राप्त कर लेते हैं, तो वे स्वयं के लिए क्रूस पर चढ़ने का मार्ग खोलते हैं। (क्रूस भविष्य की अमरता का संकेत है), पहले फरीसियों और सदूकियों को चुप कराकर (सदूकी अविश्वास का प्रतिनिधित्व करते हैं, जबकि फरीसी चालाकी, पाखंड और व्यर्थता का प्रतिनिधित्व करते हैं), जैसा कि लिखा है: *'उस दिन के बाद फिर किसी ने उससे कोई प्रश्न करने का साहस नहीं किया'* (मत्ती 22:46)।

5. अंत में, प्रभु ने फसह की तैयारी के लिए पतरस और यूहन्ना को भेजा। यह इस बात का प्रतीक है कि जब मन यह महसूस करता है कि उसके पास कुछ भी नहीं है, तो वह प्रभु की पवित्र सहभागिता से अपनी शक्तियों को पोषित करके उन्हें एक साथ एकत्रित करके और एक ही शरीर में एकजुट करके अमरत्व के लिए खुद को तैयार करता है।

6. फिर, जब यीशु ने प्रार्थना करते हुए कहा, *'यदि संभव हो, तो यह प्याला इस घड़ी मुझ से उठ जाए'* (मत्ती 26:39), तो यह हमारे विषय में एक वचन है। क्योंकि जब मन क्रूस पर चढ़ने के लिए प्रेरित होता है, तो उसे बहुत प्रार्थना और बहुत आँसुओं, और स्वयं को परमेश्वर के प्रति पूर्ण समर्पण की आवश्यकता होती है, और वह उनकी भलाई से सहायता माँगता है, ताकि वह उसकी शक्ति और रक्षक बने, जब तक कि वह उसे पवित्र और अक्षय नवीकरण में पुनर्जीवित न कर दे; क्योंकि क्रूस के समय पर बहुत खतरा होता है। और प्रार्थना करते समय, उसे अपने साथ पतरस, यूहन्ना और याकूब की आवश्यकता होती है, जो हैं: दृढ़ विश्वास, आशा से दृढ़ हुआ हृदय, और परमेश्वर के प्रति प्रेम।

७. यही उस घटना का भी महत्व है जो हमारे लिए प्रभु स्वयं, हमारे प्रिय प्रभु और परमेश्वर यीशु के साथ हुई; जो हमारे लिए सभी बातों में एक उदाहरण थे, जैसा कि प्रेरित ने कहा: *'कि मैं उसे जानूँ, और उसके पुनरुत्थान की सामर्थ्य को, और उसके दुखों की सहभागिता को, उसके मृत्यु के समान बनकर, यदि किसी प्रकार मैं मरे हुओं में से जी उठने का भाग पाऊँ'* (फिलि. 3:10–11): – वह कड़वाहट जिसे उन्होंने हमारे लिए चखा, हमें अपने भीतर हर बुरी इच्छा को जड़ से उखाड़ फेंकने (और अपना मुँह बंद रखने) के लिए प्रेरित करती है, और उनमें से किसी को भी शरीर से बाहर निकलने और कर्म में बदलने की अनुमति न देने के लिए; वह *'सिरका'* जिसे उन्होंने हमारे लिए चखा, हमें हर स्वार्थी इच्छा और हर व्यर्थ विद्रोह को दबाने के लिए प्रेरित करता है; *'थूकना'* जिससे उन्होंने हमारे लिए उन पर थूका, हमें मनुष्यों को प्रसन्न करने की सभी इच्छा और इस संसार के गौरव की सभी इच्छा को दबाने के लिए प्रेरित करता है; *'काँटों का मुकुट'*, जिसे उन्होंने बुनकर उनके सिर पर रखा, हमें अपमानों को सहने, यहाँ तक कि निरंतर अपमानों को भी सहने और बिना किसी भ्रम के सभी अपमानों को सहने के लिए प्रेरित करता है; *'बेंत'* जिससे उन्होंने हमारे लिए उसके सिर पर मारा, हमें प्रेरित करता है, कि हम हमेशा नम्रता का कवच पहने रहें, और शत्रु के सारे घमंड को कुचल दें; प्रभु यीशु को सूली पर चढ़ाए जाने से पहले *'कोड़े मारने'* के लिए सौंपे जाने की घटना हमें प्रेरित करती है कि हम सभी मानवीय निंदा और लज्जा को कुछ भी न समझें; *'उसके वस्त्रों के बँटवारे'* ने, जब कि वह स्वयं अविचलित

रहे, हमें प्रेरति कयिा कहिम क्रूस पर चढ़ने से पहले सभी सांसारकि चीजों को तुच्छ समझें, प्रेरति के वचनों के अनुसार: *'तुमने अपनी संपत्तकि के लुट जाने को भी आनंद से स्वीकार कयिा, यह जानते हुए कस्विर्ग में तुम्हें एक बेहतर वरिासत मलिी है'* (इब्रानयिों 10:34)।

८. एक व्यक्तकिो क्रूस पर चढ़ने में सक्षम होने के लएि यह सब करना चाहएि। और यदआिप वह नहीं करते जो उन्होंने कयिा, एक मानव के रूप में अपनी पूरी क्षमता से, तो आप क्रूस पर चढ़ने में सक्षम नहीं होंगे। यह हमारे लएि एक उदाहरण है कजिब कठोर-हृदय लोगों ने हमारे उद्धार के लएि उन्हें सूली पर चढ़ाया, तब छः घंटा था, ताकि हम सभी नरिाशा और हताशा के वरिुद्ध स्वयं को शक्तसिे लैस कर सकें, जब तक कपिाप मर न जाए, जैसा लखिा है, कउिन्होंने क्रूस के द्वारा शत्रुता को मार डाला। क,ि जब नौवाँ घंटा था, यीशु ने ऊँचे स्वर से पुकारा: *'एलोई, एलोई, लेमा सबख्थानी'* (मत्ती 27:46) – यह हमारे लएि एक उदाहरण है क,ि जब तक हमारे जुनून बुझ न जाएँ, तब तक उनके वरिुद्ध संघर्ष की परीक्षाओं को धैर्यपूर्वक सहने के बाद, हम अंततः नम्रता में, ईश्वर से पुकारने का साहस पा सकते हैं। यह कउिन्होंने सूर्य के अस्त होने के बाद अपनी आत्मा अर्पति की, हमारे लएि इस बात का संकेत है कयिदमिन इस दृश्यमान संसार की सभी आशाओं से मुक्त हो जाता है, तो यह इस बात का संकेत है कआिपके भीतर पाप मर गया है। मंदरि का परदा ऊपर से नीचे तक दो फाड़ हो जाना इस बात का प्रतीक है क,ि यदमिन (वासनाओं से) मुक्त हो जाता है, तो उसके और परमेश्वर के बीच की खाई मटि जाती है। कचिट्टानें फट गईं और कब्रें खुल गईं – यह हमारे लएि एक प्रतीक है क,ि जब हमारे भीतर वह मृत्यु (पाप के प्रत)ि पूरी हो जाती है, जब हर बोझ और अंधापन, और जो कुछ भी आत्मा के वपिरीत है, वह वलिीन हो जाता है, और इंद्रयिाँ, जो मृत थीं और मृत्यु का फल देती थीं, फलने-फूलने लगती हैं, और अजेय होकर उठ खड़ी होती हैं। यह कउिन्हें सुगंधति मसालों के साथ एक शुद्ध कफ़न में लपेटा गया था, हमारे लएि इस बात का प्रतीक है क,ि उस मृत्यु (पाप के प्रत)ि के बाद, पवत्रिता लपेटती है और अक्षयत्व उसे वश्रिाम देता है। कउिसे एक नई कब्र में रखा गया, जसिमें अभी तक कसिी को नहीं रखा गया था, और उसके प्रवेश द्वार पर एक बड़ा पत्थर लुढ़का दयिा गया—यह हमारे लएि एक प्रतीक है कजिब मन सभी चीजों से मुक्त हो जाता है और वश्रिाम-दनि में प्रवेश करता है, तो वह एक नए युग में प्रवेश करता है, नई बुद्धप्रिाप्त करता है, उस पर ध्यान देता है जसिमें कुछ भी नश्वर नहीं है, और अक्षय पर ध्यान लगाता है। – इसके अलावा, – *'जहाँ शरीर'* (लाश) *है, 'वहाँ गद्धि इकट्ठा होंगे'* (लूका 17:37)। – कविह अपने पतिा की महमिा में फरि से जी उठे , और कविह स्वर्ग में आरोहण कर गए और *'ऊँचे महमिा के दाहनिे हाथ' पर* बैठ गए (इब्रानयिों 1:3)—प्रेरति के वचन के अनुसार हमारे लएि एक उदाहरण हैं: *'क्योंकयिदतिुम मसीह के साथ जलिाए गए हो, तो ऊपर की वस्तुओं की खोज करो, जहाँ मसीह परमेश्वर के दाहनिे हाथ पर वरिाजमान हैं। अपना मन ऊपर की वस्तुओं पर लगाओ* (क) *'न कसिांसारकि वस्तुओं पर, क्योंकतिुम मर जाओगे'* (कुलुस्सयिों 3:1-3)।

9. उसकी पवत्रि महमिा, जो दया करती है और सभी बातों में संतों के लएि एक आदर्श रही है, हमारी दुर्बलता के लएि शक्तपिूर्वक मध्यस्थता करे, और हमारी दरद्रिता को देखकर, हमारे पापों को क्षमा करे, ताकहिम भी उन सभी के साथ दया पा सकें जो इसके योग्य हैं। आमीन।

14. शोक-प्रार्थना के कार्य

1. हाय मुझ पर, हाय मुझ पर – क्योंकमिैं अभी तक गेहेनना से छुटकारा नहीं पाया हूँ! जो मुझे उसमें खींचते हैं, वे अभी भी मुझ में अपना फल देते हैं, और उसके सभी काम मेरे हृदय में हलचल मचाते हैं; जो मुझे आग में डुबाते हैं, वे अभी भी मेरे शरीर में काम करते हैं, उसका फल देने की इच्छा रखते हैं; मैं अभी तक नहीं जान पाया हूँ कमिैं यहाँ से कहाँ जाऊँगा; मेरे लएि अभी तक सही मार्ग तैयार नहीं कयिा गया है; मैं अभी तक उन वायुमंडलीय प्रभावों (अंधकार की शक्तयिों) से मुक्त नहीं हुआ हूँ जो मेरे भीतर उनके बुरे कर्मों के कारण मेरे रास्ते में बाधा डालने की कोशशि करते हैं; मैंने अभी तक उस उद्धारकर्ता को नहीं देखा है जो मुझे उनसे बचाने के लएि आया है, क्योंकउिनकी दुष्टता अभी भी मेरे भीतर फल देती है; मैंने अभी तक अपने और न्यायाधीश के बीच कोई साहसी मध्यस्थता नहीं देखी है; मेरी ओर से यह गवाही अभी तक नहीं दी गई है कमिैं मृत्यु का पात्र नहीं हूँ; मैंने अभी तक स्वयं को दुष्टों से अलग नहीं कयिा है।

२. दुष्ट मनुष्य जेल में बंद रहने पर आनन्दति नहीं होता; लोहे में जकड़ा हुआ, वह अपनी इच्छा के अनुसार नहीं कर सकता; बेड़ी में बंद, वह दूसरे को शक्षिा नहीं दे सकता; अपनी पीड़ादायक कष्टों के बीच, उसे कोई शांति याद नहीं आती; अपने ही हाथों से बंधा, वह कोई मठिास का स्वाद नहीं चखता; और न ही वह कोई और बुराई करने की योजना बनाता है, क्योंकउिसने हर संभव तरीके से पाप कयिा है, परंतु एक टूटते हुए हृदय के साथ, वह अपने सभी बुरे

कर्मों और अपने लिए इंतजार कर रहे सभी यातनाओं पर शोक करता है, और उनके बारे में कहता है: 'हाँ, मैं इनके लायक हूँ।'

3. जो व्यक्ति सदा अपने अंतिम परिणाम के प्रति सचेत रहता है, और जो अपने पापों के लिए (जो उसे मिलना चाहिए) यातनाओं को देखता है, उसे अपने हृदय में किसी को भी निंदा करने से रोकने के लिए किसी बड़े प्रयास की आवश्यकता नहीं होती; (अपेक्षित) यातनाओं का दुख उसके हृदय को खा जाता है; कड़वा—हाय! उसका निरंतर गहन ध्यान का विषय होता है; वह दूसरों को हतोत्साहित नहीं करता; भोजन की चिंता उसके दायरे में नहीं आती; वह उन लोगों की दयालुता को स्वीकार करता है जो उसके प्रति दयालु होते हैं, लेकिन अपनी दुख के कारण, उसे इसमें कोई आनंद नहीं मिलता, क्योंकि उसने हर तरह से पाप किया है[24] ; वह उन लोगों पर क्रोध से प्रतिक्रिया नहीं करता जो उसका अपमान करते हैं, और धैर्यपूर्वक दर्दनाक कष्टों को सहन करता है, यह कहते हुए: 'मैं इनका पात्र हूँ'; दाँतों का उपहास (सिरैक 19:27) उससे दूर हो गया है; वह शोक में अपना सिर झुकाता है, उस न्याय-सिंहासन को याद करते हुए जिसके सामने उसे उपस्थित होना है; जब वह दूसरों के शब्द सुनता है, तो वह 'अच्छा' या 'बुरा' नहीं कहता; चाहे वे अच्छे हों या बुरे, उसके कान उन्हें स्वीकार नहीं करते; उसकी पलकें उस पर हावी होने वाले दुखों के कारण आँसुओं की धारा बहाती हैं। यदि वह कुलीन कुल का है, तो वह और भी अधिक शोक करता है, यह याद करते हुए कि उसे न्याय में उसे दोषी ठहराने वाले लोगों के सामने कैसी लज्जित स्थिति का सामना करना पड़ेगा। उसके लिए तैयार किए गए न्याय को ध्यान में रखते हुए, वह लोगों की परवाह नहीं करता, चाहे वे अच्छे हों या बुरे। यदि उससे जुड़े अन्य लोग हैं, तो वह उन पर ध्यान नहीं देता, न ही उनके साथ आगे क्या होगा इस पर चर्चा करता है; क्योंकि प्रत्येक अपना-अपना बोझ उठाए हुए है, जिसे मृत्यु की ओर ले जाया जा रहा है। उसका चेहरा गंभीर होता है। यातनाओं के डर से कोई भी उसकी पैरवी करने की हिम्मत नहीं करता। वह स्वयं अपने किए का जुर्म कबूल करता है, और यह भी कि वह अपने किए पापों के लिए दंड का भागीदार है।

4. मैं बिना शराब के नशे में कब तक रहूँ? ऐसी नियति के सामने, मैं बेफिक्र कब तक रहूँ? मेरे दिल के कठोर हो जाने से मेरी आँखें सूख गई हैं—और व्यर्थ की उलझनों के नशे ने मेरा सिर सूखा दिया है, जबकि मेरे दिल के जुनून ने मुझे तब तक भुला दिया है जब तक कि मैं भ्रमित नहीं हो गया। शारीरिक आवश्यकता ने मुझे बाँध रखा है, और निराशा मुझे सताती है, जो मुझे जीवन के मार्ग को त्यागने के लिए उकसाती है। मुझे कोई ऐसा मित्र नहीं मिला जो मेरी ओर से बोल सके, और न ही मेरे पास अपने साथियों को भेजने के लिए कोई उपहार है। मेरे दुष्कर्मों की खबर उन्हें मुझे स्वीकार करने से रोकती है। यदि मैं उनसे विनती करता हूँ, तो वे मेरी ओर ध्यान नहीं देते, क्योंकि वे देखते हैं कि मैं अभी तक अपनी (नैतिक) दुर्बलताओं से मुक्त नहीं हुआ हूँ, और न ही मैं उनसे खुले दिल से विनती करता हूँ (2 कुरिन्थियों 6:11)।

५. मेरे पापों की काँटें अभी तक मेरे हृदय को निरंतर भेदना शुरू नहीं हुई हैं (अर्थात्, मेरे पापों के लिए दर्दनाक पश्चाताप अभी तक नहीं हुआ है)। मेरे पापों का बोझ अभी तक मुझ पर भारी नहीं पड़ा है (यह अपने वजन से मुझे अभिभूत नहीं करता; मैं अपने पापों का भार महसूस नहीं करता)। मैंने अभी तक आग की शक्ति को पूरी तरह से महसूस नहीं किया है, जैसा कि मुझे करना चाहिए; अन्यथा, मैं इसमें न गिरने का प्रयास करता। मेरे कानों में एक आवाज़ सुनाई देती है कि नरक मेरे सामने है, क्योंकि सच्चाई यह है कि मैंने अभी तक अपने दिल को शुद्ध नहीं किया है। मेरे शरीर के घाव खतरनाक हो गए हैं, लेकिन वे अभी तक इस हद तक गले नहीं पड़े हैं कि उन्हें चिकित्सा की आवश्यकता हो। मैं लोगों से तीर के घाव छिपाता हूँ, और किसी डॉक्टर को उन्हें छूने नहीं दे सकता। उसने घावों पर लेप (या पट्टी) लगाने की पेशकश की, लेकिन मैं उनकी कड़वाहट सहन करने के लिए इतना बहादुर नहीं हूँ। डॉक्टर दयालु है और मुझसे कोई भुगतान नहीं माँगता, लेकिन मेरी आलस्यता मुझे उसके पास जाने से रोकती है। वह खुद मेरे पास इलाज करने आता है, और मुझे ऐसे पदार्थ खाते हुए पाता है जो मेरे घावों को और भड़काते हैं। वह मुझसे विनती करता है कि अब से ऐसा खाना बंद कर दूँ, लेकिन उनके स्वाद की मिठास मेरे दिल को बहका लेती है। जब मैं खा लेता हूँ, तो मुझे पछतावा होता है, लेकिन मेरा पछतावा सच्चा नहीं होता। वह (डाक्टर) मुझे भोजन भेजता है (कहते हुए): 'स्वस्थ होने के लिए इसे खाओ,' लेकिन मेरी दुष्ट आदत मुझे इसे स्वीकार करने से रोकती है। 'इस सब का अंत'—मुझे नहीं पता कि क्या करूँ?

6. हे मेरे सभी भाइयों जो मुझे जानते हो, मेरे साथ रोओ, कि मुझे अपनी शक्ति से परे सहायता मिले और मुझ पर विजय प्राप्त करे, ताकि मैं उसके (मेरे प्रभु के) शिष्य होने के योग्य बन सकूँ; क्योंकि उसकी शक्ति युगों-युगों तक है। आमीन।

---

[24] शब्दावली कुछ अस्पष्ट है। लैटिन इस बिंदु को छोड़ देता है। पैसियस इसका अनुवाद इस प्रकार करते हैं: 'जो उस पर दया दिखाते हैं, उनकी दया ही दया है; उन्हें अपने दुख का कोई अहसास नहीं है, क्योंकि वे हर तरह से पाप करते हैं।'

१५ संसार का त्याग

1. प्रिय! हम अपना ध्यान रखें, *'क्योंकि समय कम है'* (1 कुरिन्थियों 7:29)। जब कोई शरीर की परवाह करता है तो आत्मा की परवाह नहीं कर सकता। जैसे कोई एक आँख से स्वर्ग और दूसरी से पृथ्वी की ओर नहीं देख सकता, वैसे ही मन भी परमेश्वर की बातों और संसार की बातों, दोनों की परवाह नहीं कर सकता। उस बात की परवाह करना लज्जास्पद है जो इस शरीर को छोड़ने पर तुम्हारे किसी काम नहीं आएगी।

2. ध्यान में रखें कि परमेश्वर आपके द्वारा किए गए हर कर्म को देख रहे हैं। ध्यान में रखें कि परमेश्वर आपके हर विचार को देखते हैं।

3. जिसे करने में आपको दूसरों की मौजूदगी में शर्म आती है, उसे अकेले (अपने दिल में) सोचने में भी शर्म महसूस करें। जैसे एक पेड़ अपने फल से जाना जाता है, वैसे ही मन, अपने चिंतन (जिस पर उसकी नज़र टिकी होती है) से अपने विचारों को पहचानता है; और तर्कशील आत्मा, अपने चिंतन (जिस पर मन ध्यान देता है) से स्वयं को पहचानती है।

४. जब तक पाप आपको आकर्षित करता है, तब तक खुद को निर्लिप्त न समझें। जिसे (वासनाओं से) मुक्ति प्राप्त हो गई है, वह अब अपनी प्रकृति के विपरीत किए गए कर्मों पर नहीं टिका रहता। अत; जब तक आप अपने प्रभु का अपमान करते हैं, तब तक खुद को मुक्त न समझें, क्योंकि मुक्ति तब तक नहीं मिलती जब तक आपका हृदय इस संसार की किसी भी चीज़ की लालसा करना बंद नहीं कर देता।

५. अपने शरीर का ध्यान ईश्वर के मंदिर के रूप में रखें – इस तरह ध्यान रखें जैसे कि आपको फिर से उठना है और ईश्वर के सामने अपना हिसाब देना है; ईश्वर से उस व्यक्ति की तरह डरें जिसे अपने सभी कर्मों का हिसाब देना है; जैसे, जब आपके शरीर पर कोई घाव लगता है, तो आप उसे ठीक करने का ध्यान रखते हैं, वैसे ही ध्यान रखें कि पुनरुत्थान के समय यह भावहीन दिखाई दे।

6. ईश्वर से प्रार्थना करने से पहले, यह देखने के लिए कि आपने किस वासना पर विजय प्राप्त की है, प्रतिदिन अपनी जाँच करें।

7. जैसे पृथ्वी बिना बीज और पानी के फल नहीं दे सकती, वैसे ही एक व्यक्ति विनम्रता और शारीरिक श्रम के बिना पश्चाताप नहीं कर सकता।

8. जब मौसम अनुकूल होता है, तो बीज फलते-फूलते हैं; उसी प्रकार एक व्यक्ति भी आज्ञाओं के द्वारा फलता-फूलता है, जब उसका मन उन्हें मानने पर लगा रहता है। यह ईश्वर में विश्वास और ईश्वर का भय दोनों है, ताकि मनुष्य अपने अंतरात्मा को ठेस न पहुँचाए।

९. जब आप अपनी कोठरी में बैठे हों, तो यदि आपके भीतर कोई कामुक इच्छा जड़ जमा ले, तो उस विचार का विरोध करने का ध्यान रखें, कहीं वह आपको बहका न ले जाए। यह याद करने का प्रयास करें कि ईश्वर आपकी देखभाल कर रहे हैं, और जो कुछ भी आप अपने हृदय में सोचते हैं, वह सब उनके सामने उजागर हो जाता है। इसलिए अपनी आत्मा से कहो: यदि तुम अपने जैसे पापियों के सामने लज्जित होते हो (और प्रयास करते हो) कि वे तुम्हें पाप करते हुए न देखें, तो उस ईश्वर के सामने (पाप करने से कितनी अधिक) भयभीत हो, जो तुम्हारे हृदय के गूढ़ विचारों को सुनता है। अपने मन में इस तरह के चिंतन के द्वारा, आपके आत्मा में परमेश्वर का भय फिर से स्थापित होगा – और यदि आप परमेश्वर के भय का अनुसरण करते हैं, तो आप (अपने जुनून के विरुद्ध) दृढ़ रहेंगे और अब उनसे पराजित नहीं होंगे, जैसा कि लिखा है: *'जो यहोवा पर भरोसा रखते हैं वे सियोन पर्वत के समान हैं: वह कभी नहीं हिलता, परन्तु सदा यरूशलेम में बना रहता है'* (भजन संहिता 124:1)।

10. जो यह मानता है कि शरीर से प्राण निकलते समय न्याय होगा, वह किसी भी मामले में अपने पड़ोसी का न्याय नहीं कर सकता, क्योंकि उसे अपने सभी कर्मों का हिसाब परमेश्वर को देना है, जैसा कि लिखा है कि हमें *'मसीह की न्याय-कुर्सी के सामने'* उपस्थित होना है, *ताकि प्रत्येक को वह मिले जो उसने शरीर में रहते हुए किया है, चाहे वह अच्छा हो या बुरा'* (2 कुरिन्थियों 5:10)।

11. एक विश्वासी जो यह मानता है कि संतों के लिए एक राज्य है, वह स्वयं को छोटे और तुच्छ मामलों में भी निर्दोष रखने का ध्यान रखता है, ताकि वह एक चुनी हुई पात्र बन सके; क्योंकि लिखा है: *'स्वर्ग का राज्य समुद्र में डाले गए एक जाल के समान है, जो हर प्रकार की मछलियाँ इकट्ठा करता है। जब वह भर जाता है, तो वे उसे किनारे पर खींच लाते हैं, और बैठकर अच्छी मछलियों को पात्रों में छाँट लेते हैं, परन्तु खराब को फेंक देते हैं'* (मत्ती 13:47–48)।

12. एक विश्वासी जो यह मानता है कि पुनरुत्थान के दिन उसका शरीर अपनी प्राकृतिक अवस्था में पुनरुत्थित होगा, उसे इसकी देखभाल करनी चाहिए और इसे हर अशुद्धि से शुद्ध करना चाहिए; क्योंकि लिखा है: *'जो हमारे दीनता*

के शरीर को उसके महिमा के शरीर के समान रूप में परिवर्तित कर देगा, उस सामर्थ्य के अनुसार जिससे वह सब कुछ अपने अधीन कर सकता है' (फिलि. 3:21)।

13. जिसमें परमेश्वर का प्रेम जड़ जमा चुका है, उसे अब कोई सांसारिक चीज़ परमेश्वर से अलग नहीं कर सकती, जैसा कि लिखा है: *'हमें परमेश्वर के प्रेम से कौन अलग कर सकता है? क्या संकट, या क्लेश, या उत्पीड़न, या अकाल, या नग्नता, या संकट, या तलवार?'* (रोमियों 8:35)।

14. ईश्वर वास्तव में यह सुनिश्चित कर सकते हैं कि हम भी उन लोगों में गिने जाएँ जिन्होंने इस संसार की किसी भी चीज़ से स्वयं को मसीह के प्रेम से अलग नहीं होने दिया, ताकि हम भी उनके साथ हमारे प्रभु यीशु मसीह की शक्ति द्वारा अनुग्रह प्राप्त कर सकें; क्योंकि उसी की महिमा पिता के साथ, जीवन-दायक आत्मा के सहित, अब और सदा और युगानुयुग हो। आमीन।

16. परमेश्वर की सेवा करने की इच्छुक आत्मा में पाई जाने वाली आनन्द पर

1. सबसे पहले, मैं आपको परमेश्वर के भय में नमस्कार करता हूँ, और मैं आपसे विनती करता हूँ: सिद्ध बने रहें, जैसा परमेश्वर को भाता है, ताकि आपका परिश्रम व्यर्थ न जाए, और परमेश्वर इसे आपसे पूर्ण और आनन्द के साथ स्वीकार करे। एक व्यापारी, यदि उसे लाभ होता है, तो वह प्रसन्न होता है, और अपने द्वारा किए गए श्रम को कुछ नहीं समझता, क्योंकि उसने (यह) महसूस कर लिया है (कि वह कितना उपयोगी साबित हुआ है); एक पुरुष जिसने पत्नी ली है, यदि वह उसे शांति देती है और उसकी अच्छी सेवा करती है, तो वह उससे पूरे हृदय से प्रसन्न होता है, और हर बात में उस पर भरोसा करता है; जो सैनिक सेवा में भर्ती हुआ है, यदि वह अपने प्राणों की परवाह किए बिना राजा के लिए लड़कर मुकुट प्राप्त करता है, तो वह (खुशी मनाता है) कि उसे ऐसी सफलता मिली। इसी प्रकार इस नाशवान संसार के कार्य हैं, और जो लोग इन्हें करते हैं वे उनमें सफल होने पर प्रसन्न होते हैं। तो फिर, आप क्या सोचते हैं, उस व्यक्ति की आत्मा का आनंद कैसा होगा, जिसने परमेश्वर के लिए काम करना शुरू किया और सफलतापूर्वक अपना यह कार्य पूरा किया? इस संसार से उसके प्रस्थान पर, ऐसा कार्य यह सुनिश्चित करेगा कि स्वर्गदूत उसके साथ आनंद मनाएँ, यह देखकर कि वह अंधकार की शक्तियों से मुक्त हो गया है। क्योंकि जब आत्मा शरीर से निकलती है, तो देवदूत उससे मिलने के लिए उतरते हैं; परन्तु अँधेरे की सारी शक्तियाँ भी उससे मिलने के लिए निकलती हैं, जो उसे पकड़ना चाहती हैं और यह देखने के लिए खोजती हैं कि क्या उसमें उनका कुछ भी है। तब उनके विरुद्ध लड़ने वाले देवदूत नहीं होते, बल्कि आत्मा द्वारा किए गए कर्म होते हैं, जो एक दीवार की तरह उसकी ढाल बनते हैं और उसे उनसे बचाते हैं, ताकि वे उसे छू न सकें। जब उसके कर्म विजयी होते हैं, तो स्वर्गदूत उसके आगे-आगे चलते हुए तब तक गीत गाते हैं जब तक वह आनंदपूर्वक परमेश्वर के सामने नहीं खड़ी हो जाती। उस घड़ी, वह इस संसार की हर बात और अपनी सभी कठिनाइयों को भूल जाती है।

२. अतः हम इस संक्षिप्त समय में अच्छी मेहनत करने के लिए अपनी शक्ति का उपयोग करें, अपने कर्मों को हर बुराई से शुद्ध रखें, ताकि हम अंधकार के राजकुमारों के हाथों से बच सकें जो हमारा विरोध करने की कोशिश करते हैं, क्योंकि वे दुष्ट और निर्दयी हैं। धन्य है वह जिसमें उनका कुछ भी नहीं पाया जाता: उसकी खुशी और आनंद, उसका आराम और उसका मुकुट असीमित हैं। लेकिन सभी सांसारिक चीजें क्षणभंगुर हैं, चाहे कोई व्यापार में लगा हो, या विवाह में, या किसी अन्य चीज़ में जिसके बारे में मैंने पहले बात की है। प्रिय भाई! आओ हम परमेश्वर के सामने अपने आँसुओं से शक्ति प्राप्त करें; शायद उनकी भलाई हम पर दया करेगी और हमारे द्वारा किए गए अच्छे कर्मों के माध्यम से, हमें उन दुष्टता के अधिपतियों पर विजय प्राप्त करने की शक्ति भेजेगी, जो (शरीर से हमारे प्रस्थान पर) हमारा सामना करने के लिए तैयार हैं।

3. आइए हम दृढ़ हृदय से (आत्म-दया के बिना) अपना ख्याल रखें और ईश्वर के प्रति एक लालसा विकसित करें, जो हमें द्वेष की भावना से बचाएगी जब वह हमसे मिलने आएगी। आइए हम गरीबों से प्रेम करें, ताकि यह हमें लालच की भावना से बचा सके जब वह हमसे मिलने आएगी। हम सभी से, बड़े और छोटे से, शांति का प्रेम करें, क्योंकि यह हमें (घृणा की भावना से) बचाएगा जब वह हमारे सामने आएगी। हम सभी से अपने भाइयों की तरह प्रेम करें, अपने दिल में किसी के खिलाफ कोई बुराई न पालें, और किसी को बुराई का बदला बुराई से न दें; यह हमें ईर्ष्या से बचाएगा जब वह हमारे सामने आएगी। आइए हम सभी चीजों में विनम्रता से प्रेम करें, अपने पड़ोसी के शब्दों को सहन करें, चाहे वह हमें डांटे या हमारी निंदा करे: यह हमें अहंकार से बचाएगा जब वह हमारे सामने आएगा। आइए हम अपने पड़ोसी का सम्मान करने का प्रयास करें, जब उसे अपमानित किया जाए तो उसे अपनी नजरों में छोटा न समझें, चाहे वह कोई भी हो: यह हमें बदनामी से बचाएगा जब वह हमारे सामने आएगी। आइए हम दुनिया और उसके सम्मान के लाभों को तुच्छ समझें, ताकि हम ईर्ष्या से मुक्त हो सकें जब वह हमारे सामने आएगी। आओ हम अपनी जीभ को ईश्वर की

शिक्षा, सत्य और प्रार्थना में प्रशिक्षित करें, ताकि यह हमें झूठ से बचा सके जब वह हमारे सामने आए। आओ हम अपने हृदय और शरीर को कामवासना से शुद्ध करें, ताकि हम अशुद्धि से मुक्त हो सकें जब वह हमारे सामने आए। – ये सभी चीज़ें आत्मा को जब वह शरीर से अलग होती है, तब पकड़ने का प्रयास करती हैं, लेकिन यदि उसने सद्गुणों को अर्जित किया है, तो वे उसकी सहायता के लिए आएँगी।

४. तो फिर, बुद्धिमानों में से कौन होगा जो इन सब से छुटकारा पाने के लिए अपनी आत्मा को मृत्यु के हवाले करने को तैयार न होगा? इसलिए हम जो कर सकते हैं, वह करें, क्योंकि हमारे प्रभु यीशु मसीह की शक्ति हमारी नम्रता की सहायता करने के लिए पर्याप्त है। वह जानता है कि मनुष्य एक दीन प्राणी है, और उसने उसे शरीर में रहते हुए, उसकी अंतिम साँस तक, पश्चाताप की अनुमति दी है। तुम्हारा एकमात्र विचार ईश्वर की ओर हो, ताकि वह तुम्हें सुरक्षित रखे। – इस संसार के धन-संपत्ति पर ध्यान न दो, मानो कोई उन पर कोई आशा रख सकता हो, – ताकि तुम बच सको। आप इस दुनिया की हर चीज़ को पीछे छोड़कर चले जाएँगे; आप ईश्वर के लिए जो कुछ भी करेंगे, आवश्यकता के समय आपको उसी में एक धन्य आशा मिलेगी।

५. संसार के वचनों से घृणा करो, ताकि तुम्हारा हृदय परमेश्वर को देख सके। बार-बार प्रार्थना करना पसंद करो, ताकि तुम्हारा हृदय प्रकाशित हो सके। आलस्य से प्रेम मत करो, कहीं ऐसा न हो कि जब तुम पुनरुत्थान में धर्मी लोगों के साथ मिलो तो तुम्हें पछतावा हो। अपनी जीभ की रक्षा करो, ताकि तुम्हारा हृदय प्रकाशित हो सके। आलस्य से प्रेम मत करो, और परमेश्वर का भय तुम्हारे भीतर वास करेगा। अब ज़रूरतमंदों को उदार दृष्टि से दो, कहीं ऐसा न हो कि तुम संतों और उनके अच्छे कर्मों के सामने लज्जित हो जाओ। भोजन की लालसा से घृणा करो, कहीं ऐसा न हो कि अमालेक तुम्हारे रास्ते में आ जाए। अपने भक्ति-कार्य (प्रार्थना के नियम) करने में जल्दबाज़ी न करें, कहीं ऐसा न हो कि जंगली जानवर आपको निगल जाएँ। नशे तक शराब से प्रेम न करें, कहीं ऐसा न हो कि आप परमेश्वर के आनंद से वंचित रह जाएँ। विश्वासियों से प्रेम करें, ताकि उनके द्वारा आपको दया प्राप्त हो। संतों से प्रेम करें, ताकि उनका उत्साह आपको ऊँचा उठाए।

६. स्वर्ग के राज्य को याद रखो, कहीं ऐसा न हो कि उसकी लालसा तुम्हें धीरे-धीरे दूर खींच ले जाए। गेहेना पर मनन करो, ताकि तुम उसके कर्मों से घृणा करने लगो। जब तुम हर सुबह जागते हो, तो याद रखो कि तुम हर कर्म का हिसाब परमेश्वर को दोगे, और तुम उसके सामने पाप नहीं करोगे, और उसका भय तुम्हारे भीतर जड़ जमा लेगा। उससे मिलने के लिए स्वयं को तैयार करो, और तुम उसकी इच्छा पूरी करोगे। यहाँ हर दिन स्वयं की जाँच करो कि तुम कहाँ कम पड़ते हो, और तुम घोर आवश्यकता के समय में असहाय नहीं रहोगे। अपने भाइयों को अपने कर्म देखने दो, और तुम्हारा उत्साह उन्हें आगे बढ़ाएगा। हर दिन स्वयं की परीक्षा लो कि तुमने किस वासना पर विजय प्राप्त की है – फिर भी अपने बारे में बहुत ऊँचा न सोचो, क्योंकि यह ईश्वर की कृपा और शक्ति है। – अपनी अंतिम साँस तक खुद को वफादार न समझें। – घमंडी न बनें, जैसे कि आप अच्छे हों, क्योंकि आप खुद को अपने दुश्मनों के हवाले नहीं कर सकते। – इस जीवन में जब तक आप हैं – और जब तक आप अंधकार की सभी शक्तियों से परे नहीं हो गए हैं, तब तक खुद पर भरोसा न करें।

७. हे भाई, उस आत्मा से सावधान रहो जो मनुष्य को दुख देती है, क्योंकि जब तक वह तुम्हें शक्तिहीन नहीं कर देती, तब तक उसके कई जाल होते हैं। परमेश्वर के लिए शोक आनंददायक होता है जब तुम स्वयं को परमेश्वर की इच्छा में खड़ा हुआ देखते हो। तब कौन तुमसे कहता है: 'तुम कहाँ भागोगे?' तुम्हारे पास पश्चाताप नहीं है; वह शत्रु की ओर से है (और ऐसा बोलकर) किसी व्यक्ति को संयम का जीवन जीने के अपने संकल्प को त्यागने के लिए मनाता है। परन्तु परमेश्वर के लिए शोक (एक व्यक्ति पर) भारी बोझ नहीं डालता, बल्कि उनसे कहता है: 'मत डर, फिर से (परमेश्वर के पास) आ जा,' क्योंकि वह जानता है कि मनुष्य कमजोर है, और उन्हें शक्ति प्रदान करता है।

8. एक सूक्ष्मदर्शी हृदय रखो; जब विचार उत्पन्न होते हैं, तो वे तुम्हारे भीतर हल्के हो जाएँगे। जो उनसे डरते हैं, वे अपने बोझ के भार से दबे हुए हैं। जो (शत्रु के) प्रभावों से डरता है, वह यह प्रकट करता है कि उसका परमेश्वर में कोई विश्वास नहीं है।

९. संकोच और स्वयं को अज्ञानी समझना एक ऐसे व्यक्ति को प्रकट करता है जो अपनी इच्छा के लिए अपनी वासनाओं में लिप्त नहीं होता, बल्कि ईश्वर की इच्छा करता है। लेकिन जो अपने मन की बात बहुतों के सामने कहना चाहता है, वह यह प्रकट करता है कि परमेश्वर का भय उसके भीतर नहीं है। परमेश्वर का भय आत्मा का रक्षक और सहायक है, जो उसके सभी शत्रुओं को नष्ट करने के कार्य में, उसके भीतरी शासक (मन) का रक्षक है।

10. जो परमेश्वर की महिमा की खोज करता है, वह अपने भीतर से अशुद्धता को दूर करने का प्रयास करता है। विवेकपूर्ण आत्म-देखभाल वासनाओं को समाप्त कर देती है, क्योंकि लिखा है: 'ज्ञानी के लिए देखभाल मिलेगी'

(नीतवचिन 17:12. *'परहेज़गार मनुष्य पर चनि्ता आती है; परन्तु मूरख लोग बुराई की योजना बनाते हैं।' एक बीमार व्यक्त स्विास्थ्य के मूल्य को जानता है। जसि मुकुट पहनाया जाता है, उसे इसलएि पहनाया जाता है क्योंक उसिने राजा के शत्रुओं को परास्त कयिा है। आवेग होते हैं, और सद्गुण भी होते हैं। लेकनि यद हिम नरािश (आलसी) हैं, तो यह स्पष्ट है क हिम वशि्वासघातकों के समान हैं। दलि की हमि्मत आत्मा के लएि ईश्वर के बाद दूसरा सहारा है; ठीक वैसे ही जैसे हताशा (आलस्य) बुराई की सहायक है। सद्गुण प्राप्त करने वालों की ताकत इस बात में नहिति है: क यिद वे गरिें, तो उन्हें हतोत्साहति नहीं होना चाहएि, बल्क एिक बार फरि से (मोक्ष की) देखभाल करनी चाहएि। सद्गुण के साधन तर्क के साथ कएि गए शारीरकि श्रम हैं। भावनाओं का उभार लापरवाही से उत्पन्न होता है। अपने पड़ोसी की नदिा न करना उन लोगों के लएि एक दीवार (एक रक्षा) है जो बुद्धमिानी से युद्ध करते हैं; हालाँक, उसकी नदिा करना मूरखता में इस दीवार को गरिा देता है। अपनी जीभ का ध्यान रखना यह स्पष्ट करता है क कोिई व्यक्त सक्रयि लोगों में से है, जबक एिक अनयिंत्रति जीभ यह दर्शाती है क उिसमें सद्गुणों की कमी है। दान, जब ववािेक के साथ कयिा जाए, तो वह धन के प्रत तरिस्कार उत्पन्न करता है और प्रेम की ओर ले जाता है, जबक कजिंूस व्यवहार यह दर्शाता है क व्यिक्त में सद्गुणों का अभाव है। परोपकार शुद्धता उत्पन्न करता है; जबक भोिग-वलिास (मनोरंजन और सुखों पर खर्च करना) वासनाएँ उत्पन्न करता है, और क्रूरता क्रोध उत्पन्न करती है। फज़िूल चीज़ों से घृणा करना एक आध्यात्मकि उपलब्ध हिै, जबक मितिव्ययति एक शारीरकि उपलब्ध हिै। फज़िूल चीज़ों से प्रेम आत्मा का पतन है, जबक तर्क के साथ मौन इसका पुनर्स्थापन है। अत्यधकि नींद शरीर में वासनाओं को जगाती है, जबक मध्यम जागरण हृदय की मुक्त हिै। अत्यधकि नींद हृदय को सुस्त कर देती है, जबक जागते समय संयम इसे परषि्कृत करता है। व्यर्थ की बातों के बीच जागे रहने से बेहतर है क स्पिष्ट मन के साथ चुपचाप सोया जाए। रोना बनिा कसिी कष्ट के सभी बुराइयों (kakias) को दूर कर देता है। अपने पड़ोसी की अंतरात्मा को चोट पहुँचाए बनिा या आहत कएि बनिा, उसकी अंतरात्मा की रक्षा करना वनिम्रता को जन्म देता है। मानवीय महमिा धीरे-धीरे अहंकार को जन्म देती है। वशिालता का प्रेम (अपने आप को वंचतिों से प्रतबिंधति न करना) ज्ञान को दूर भगाता है, जबक पिेट का संयम कामवासनाओं को वश में करता है। भोजन की लालसा उन्हें बनिा प्रयास के जगा देती है। शरीर का आभूषण आत्मा का वनिाश है, लेकनि ईश्वर के भय में इसकी देखभाल करना अच्छा है।*

11. ईश्वर के न्याय पर ध्यान देने से आत्मा में भय उत्पन्न होता है, जबक अिपनी अंतरात्मा को कुचलने से हृदय से सद्गुण छनि जाता है। ईश्वर के प्रत प्रिेम आलस्य को दूर भगाता है, जबक नडिरता उसे उत्तेजति करती है। अपनी वाणी पर संयम रखने से मन ईश्वर की ओर आकर्षति होता है, यद कोिई बुद्धमिानी से मौन रहे; लेकनि बहुत अधकि बोलना नरािशा (आलस्य) और पागलपन (*उन्मत्तता*) को जन्म देता है। अपनी इच्छा को पड़ोसी के प्रत समर्पति करना इस बात का संकेत है क मिन सद्गुणों पर केंद्रति है, जबक (लेन-देन में) अपने पड़ोसी के साथ अपनी इच्छा पर जोर देना अज्ञानता को दर्शाता है। ईश्वर के भय में दी गई शक्षिा आत्मा को वासनाओं से बचाती है, जबक सांसारकि बातें आत्मा को अँधकारमय कर देती हैं, और उसे सद्गुणों से वमिुख कर देती हैं। संपत्त कि प्रत प्रेम मन और आत्मा को वक्षिुब्ध करता है, जबक सर्वत्याग उन्हें नवीनीकृत करता है। मौन, यद आप अपने वचिारों को व्यक्त न करने के लएि मौन रहते हैं, तो यह दर्शाता है क आप संसार का सम्मान और उसकी कलंकति महमिा चाहते हैं; लेकनि जो कोई भी नडिरता से (स्वयं की परवाह कएि बनिा) अपने पूर्वजों के सामने अपने वचिार व्यक्त करता है, वह उन्हें अपने से दूर भगा देता है।

12. जैसे एक बनिा दरवाज़ों और खड़िकयिों वाला घर, जसिमें कोई भी रेंगने वाला जीव अपनी मर्ज़ी से प्रवेश कर सकता है, वैसे ही वह मनुष्य है जो परश्रिम तो करता है पर अपने परश्रिम के फल की रक्षा नहीं करता। जैसे जंग लोहे को खा जाता है, वैसे ही मानवीय सम्मान हृदय को खा जाता है, यद वह उस पर हावी हो जाए। जसि प्रकार बेल अपने ही साथ लपिटकर फल को नष्ट कर देती है, उसी प्रकार अहंकार एक भक्षिु के कर्म को नष्ट कर देता है, यद वह उससे अभभिूत हो जाए। सभी गुणों में श्रेष्ठ वनिम्रता है, और सभी वासनाओं में श्रेष्ठ लालच है। सद्गुणों का अंत प्रेम है, और वासनाओं का अंत आत्म-संतुष्ट हिै। जैसे एक कीड़ा, पेड़ को खाकर उसे नष्ट कर देता है, वैसे ही हृदय में मौजूद द्वेष आत्मा को अंधकारमय कर देता है।

१३. आत्मा का ईश्वर के प्रत समर्पण (ईश्वर की इच्छा के प्रत आत्मसमर्पण) अपमान को अवचिलति रूप से सहने की क्षमता को जन्म देता है, और उसके आँसू (तब) सभी मानवीय चीजों से सुरक्षति रखे जाते हैं। स्वयं को अनुशासति करने में असफलता का परणिाम क्रोध को सहने (या वश में करने) में असफलता के रूप में भी होता है। अपनी वाणी को सामान्य लोगों की वाणी के साथ मलिाना (सांसारकि ढंग से सामान्य लोगों से बातचीत करना) हृदय को क्लेश पहुँचाता है और प्रार्थना के समय उस पर लज्जा लाता है, क्योंक बाद में उसमें धैर्य की कमी हो जाती है।

सांसारिक लाभों के प्रति प्रेम आत्मा को अंधा कर देता है, जबकि हर चीज़ में उनके प्रति तिरस्कार ज्ञान लाता है। परिश्रम के प्रति प्रेम वासनाओं से घृणा है, जबकि आलस्य उन्हें बिना प्रयास के बढ़ाता है।

14. नगरवासियों के साथ मेलजोल न करें, और आपके विचार आपके भीतर मौन रहेंगे। अपने बल पर भरोसा न करो – और ईश्वर की सहायता तुम्हें मिलेगी। किसी से शत्रुता न रखो, अन्यथा तुम्हारी प्रार्थना स्वीकार नहीं होगी। सभी के साथ शांति से रहो, ताकि प्रार्थना में तुम्हें धैर्य मिले। अपनी आँखों की रक्षा करो – और तुम्हारा हृदय बुराई को नहीं देखेगा। जो कोई भी वासना से किसी को देखता है, वह व्यभिचार करता है। जिसने तुम्हारा अहित किया है, उसके साथ हुए नुकसान के बारे में सुनने की इच्छा मत करो, कहीं ऐसा न हो कि तुम मन ही मन (बुराई का बदला बुराई से) चुका दो। अपने कानों की रक्षा करो, कहीं तुम उनके द्वारा अपमान न सुन लो। अपने शिल्प में परिश्रम करो, ताकि गरीबों को (तुम्हारे पास) रोटी मिले, क्योंकि आलस्य मृत्यु और आत्मा का पतन है।

१५. लगन से की गई प्रार्थना मनुष्य को बंधन (किसी भी चीज़ की लत) से मुक्त करती है, जबकि इसका थोड़ा सा भी उपेक्षा करना विस्मृति की जननी है। जो मृत्यु को शीघ्र आने की आशा करता है वह बहुत पाप नहीं करता, परन्तु जो इसे कई वर्षों बाद आने की आशा करता है वह अनेक पापों में फँस जाएगा। जो कोई भी अपने सभी कर्मों का हिसाब ईश्वर को देने के लिए तैयार रहता है, ईश्वर उसके पूरे मार्ग को हर पाप से शुद्ध करने का प्रबंध करता है; लेकिन जो कोई इसमें लापरवाही बरतता है, यह कहते हुए कि, 'मैं वहाँ किसी दिन पहुँच जाऊँगा', वह दुष्टों का पड़ोसी है। – किसी भी कार्य को करने से पहले, हर दिन याद करो कि तुम कहाँ हो और इस शरीर को छोड़ने के बाद तुम्हें कहाँ जाना है – और अपने आत्मा की एक दिन के लिए भी उपेक्षा न करो। संतों पर प्रदान किए गए सम्मान पर मनन करो, और उनका अनुकरण करने से तुम धीरे-धीरे उनके पदचिन्हों पर चलोगे; पापियों द्वारा सहन की गई अपमानों पर भी मनन करो – और यह हमेशा तुम्हें बुराई से बचाएगा।

१६. हमेशा अपने पूर्वजों की सलाह का पालन करो, और तुम अपना पूरा जीवन शांति से बिताओगे। अपने आप का ध्यान रखो – और यदि कोई विचार तुम्हें इस बात से परेशान करता है कि तुम्हारा भाई तुमसे नाराज़ है, तो उस विचार को तुच्छ न समझो, बल्कि जाकर विनम्र स्वर में अपने भाई के सामने झुक जाओ, और जब तक तुम उसे मेल-मिलाप के लिए मना न लो, तब तक पीछे न हटो। सावधान रहो कि अपने भाई के प्रति कठोर-हृदय न हो जाओ, (यह याद रखते हुए कि) हम शत्रु द्वारा पीड़ित हैं। जब तुम अपने भाइयों के साथ रहो, तो उन्हें अकेले कुछ करने का आदेश मत दो, बल्कि उनके साथ मिलकर परिश्रम करो, कहीं ऐसा न हो कि तुम अपना इनाम खो दो। जब दुष्टात्माएँ तुम्हें भोजन, वस्त्र या (सभी में) व्यापक गरीबी के बारे में परेशान करना शुरू करें, और तुम्हें यह सुझाव दें कि इस कारण तुम्हारा अपमान किया जाता है, तो उनका विरोध में उत्तर न दो, बल्कि अपना पूरा हृदय परमेश्वर को सौंप दो – और वह तुम्हें सांत्वना देगा। सावधान रहो कि तुम अपनी सेवाओं (प्रार्थनाओं) के उचित पालन की उपेक्षा न करो, क्योंकि वे आत्मा को ज्ञान प्रदान करती हैं।

१७. यदि तुमने कोई अच्छा काम किया है, तो उसकी बड़ाई मत करो; (परन्तु, दूसरी ओर, यदि तुमने बहुत बुरा किया है, तो अपने मन को उस पर अत्यधिक दुखी न होने दो, बल्कि अपने मन पर काबू पाओ ताकि तुम उसे और अधिक उस पर टिकाए न रहने दो) – और यदि तुम बुद्धिमान हो, तो तुम घमंड से अपना बचाव करोगे। यदि आप वासना के हमलों से पीड़ित हैं, तो अपने शरीर को लगातार परमेश्वर के सामने शोक और नम्रता की अवस्था में रखें, और अपने हृदय को यह विश्वास करने न दें कि आपके पाप क्षमा हो गए हैं – और आपको शांति मिलेगी। यदि ईर्ष्या आपको कुचलने लगे, तो याद रखें कि हम सभी मसीह की देह के अंग हैं, और आपके पड़ोसी का सम्मान और अपमान हम सभी का सम्मान और अपमान है, – और आपको शांति मिलेगी। यदि खाने की लालसा के माध्यम से अतिभक्षण ने आप पर युद्ध छेड़ा है, तो उनके दुर्गंध को याद करें – और आपको शांति मिलेगी। यदि आप अपने भाई को दोषी ठहराने की इच्छा से परेशान हैं, तो याद रखें कि उसे यह सुनकर दुख होगा - और बाद में उससे मिलने में आपको शर्म आएगी - और आपको शांति मिलेगी। यदि अहंकार आप पर हावी होने लगे, तो याद करें कि यह आपके सभी कर्मों को नष्ट कर देता है, और जिन्होंने इसके साथ गठबंधन किया है, उनके लिए कोई पश्चाताप नहीं है - और आपको शांति मिलेगी। यदि आपका हृदय अपने पड़ोसी को अपमानित करने की इच्छा से परेशान है, तो याद रखें कि इसके लिए ईश्वर आपको आपके शत्रुओं के हाथों में सौंप देगा - और आपको शांति मिलेगी। यदि शारीरिक सुंदरता आपका मन लुभाती है, तो उसकी बदबू को याद करें - और आपको शांति मिलेगी। यदि स्त्रियों की मधुरता तुम्हें सबसे मीठी चीज़ लगती है, तो उन लोगों को याद करो जो पहले ही मर चुके हैं, और वे कहाँ गए हैं – और तुम्हें शांति मिलेगी।

18. सभी ऐसी बातों को इकट्ठा करके और उन पर मनन करके, विवेक संघर्ष को समाप्त कर देता है। लेकिन आप ऐसी विवेकशीलता प्राप्त नहीं कर सकते जब तक कि आप पहले इसके लिए मौन (दुनिया के कोलाहल से विरक्ति) का अभ्यास न करें। मौन से तपस्या उत्पन्न होती है; तपस्या से विलाप उत्पन्न होता है; विलाप से ईश्वर भय उत्पन्न

होता है; ईश्वर भय से नम्रता उत्पन्न होती है; नम्रता से अंतर्दृष्टि उत्पन्न होती है; अंतर्दृष्टि से प्रेम उत्पन्न होता है; प्रेम आत्मा को पीड़ा से मुक्त और निर्लिप्त बनाता है। तब एक व्यक्ति को एहसास होता है कि वह ईश्वर से कितना दूर है।

19. इन सब के बाद, जो कोई भी इन सभी प्रशंसनीय गुणों को प्राप्त करना चाहता है, उसे किसी भी व्यक्ति के प्रति उदासीन रहना चाहिए, और उन्हें मृत्यु के लिए खुद को तैयार करना चाहिए। और ऐसा होगा कि, हर प्रार्थना में, वह यह महसूस करना शुरू कर देगा कि वह क्या है जो उसे ईश्वर से अलग करता है, और वह उसे नष्ट करने का प्रयत्न करेगा, क्योंकि वह ऐसे किसी भी जीवन-मार्ग (अर्थात् जो उसे ईश्वर से अलग करता है) से घृणा करने लगेगा, और ईश्वर की कृपा जल्द ही उसे ये (उल्लखिति सद्गुण) प्रदान करेगी।

20. परन्तु यह जान लो: जो कोई भी बिना भेदभाव के खाता-पीता है और इस संसार की किसी भी चीज़ से प्रेम करता है, वह इन (सद्गुणों) को प्राप्त नहीं करेगा, न ही उन्हें हासिल करेगा, बल्कि केवल स्वयं को धोखा देता है। इसलिए मैं हर उस व्यक्ति से विनती करता हूँ जो परमेश्वर के सामने पश्चाताप करना चाहता है, कि वह लालच से अपना बचाव करे, क्योंकि यह सभी वासनाओं को पुनर्जीवित करता है और आत्मा से परमेश्वर का भय भगा देता है। इसके विपरीत, पूरी शक्ति से प्रयत्न करो कि परमेश्वर से निवेदन करो कि वह तुम्हें अपना भय भेजे, ताकि परमेश्वर के प्रति तुम्हारी प्रबल इच्छा (उसके साथ संचार) के द्वारा, वह तुम्हारे भीतर उन सभी वासनाओं को जड़ से उखाड़ दे जो तुम्हारी दीन आत्मा का विरोध करती हैं और उसे परमेश्वर से अलग करने का प्रयास करती हैं, ताकि उसे अपना वारिस बना सकें। इसी उद्देश्य के लिए, शत्रु मनुष्य का विरोध करते हुए हर संभव प्रयास करते हैं।

२१. इसलिए, हे भाई, जब तक तुम इस शरीर में हो, तब तक किसी भी विश्राम (संघर्ष से) पर ध्यान न दो, और यदि तुम खुद को कुछ समय के लिए वासनाओं से मुक्त पाओ तो खुद पर भरोसा न करो, क्योंकि वे कभी-कभी एक चालाक इरादे से कुछ समय के लिए शांत हो जाती हैं, इस उम्मीद में कि शायद कोई व्यक्ति यह मानकर अपनी रक्षा ढीली कर दे कि वह उनसे पूरी तरह से मुक्त हो गया है; और फिर अचानक उस बेचारे प्राण पर झपट पड़ते हैं और उसे किसी छोटे पक्षी की तरह झपट लेते हैं; और यदि वे हर पाप में उससे अधिक शक्तिशाली साबित होते हैं, तो वे उसे बिना दया के अपमानित करते हैं, और उसे पहले वालों से भी अधिक विनाशकारी पापों में धकेल देते हैं, जिनकी क्षमा के लिए उसने पहले ही प्रार्थना की होती है।

22. अतःहम परमेश्वर के भय में चलें, और अपने कार्यों में उन्हें स्मरण रखें, और उन सभी सद्गुणों का पालन करें जो हमारे शत्रुओं की दुष्टता को दूर करते हैं। इस क्षणिक जीवन की कठिनाइयाँ और परिश्रम न केवल हमें हर बुराई से बचाते हैं, बल्कि शरीर से आत्मा के विदा होने से पहले उसके लिए मुकुट भी तैयार करते हैं।

२३. हमारे पवित्र शिक्षक, प्रभु यीशु ने, हमारे शत्रुओं की महान निर्दयता को जानकर और मानव जाति पर दया करके, हमें हृदय में दृढ़ रहने की आज्ञा दी, यह कहते हुए: 'हर समय तैयार रहो, क्योंकि तुम नहीं जानते कि चोर किस घड़ी आएगा, कहीं ऐसा न हो कि वह अचानक आकर तुम्हें सोया हुआ पाए' (मत्ती 24, 43, 44)। और एक अन्य अवसर पर, अपने शिष्यों को सिखाते हुए, उन्होंने उनसे कहा: *'खुद का ध्यान रखना, कहीं ऐसा न हो कि तुम्हारे हृदय भोग-विलास, मद्यपान और इस जीवन की चिन्ताओं से भारी हो जाएँ, और वह दिन अचानक तुम पर आ पड़े'* (लूका 21:34)। हालाँकि यह जानते हुए कि दुष्ट (आत्माएँ) हमसे संख्या में कहीं अधिक हैं, और अपने शिष्यों को यह दिखाते हुए कि उनका विरोध करने की शक्ति रखना उनका ही काम है, और इसलिए उन्हें डरने की कोई बात नहीं है, उन्होंने उनसे कहा: *'मैं तुम्हें भेड़ों के समान भेड़ियों के बीच भेजता हूँ'* (मत्ती 10:16), परन्तु उसी समय उन्होंने उन्हें आज्ञा दी कि यात्रा के लिए कुछ भी साथ न लें (लूका 9:3), क्योंकि चूँकि उनके पास उन भेड़ियों की कोई भी चीज़ नहीं थी, इसलिए भेड़िये उन्हें निगल नहीं सकते थे। जब वे उसकी आज्ञा का पालन करके सुरक्षित और कुशल वापस लौटे, तो वह उनके साथ आनन्दित हुआ, उनके लिए परमेश्वर पिता का धन्यवाद किया, और उनके हृदयों को दृढ़ करते हुए उनसे कहा: *'मैंने शैतान को बिजली की तरह स्वर्ग से गिरते देखा। देखो, मैं तुम्हें साँपों और बिच्छुओं पर और शत्रु की सारी शक्ति पर पैर रखने का अधिकार देता हूँ; और कुछ भी किसी भी प्रकार से तुम्हारा कुछ नहीं बिगाड़ सकेगा'* (लूका 10:18-19)। इस प्रकार उनका संदेश भय और सावधानी का था; परन्तु जब उन्होंने उनकी आज्ञा का पालन किया, तो उन्होंने उन्हें शक्ति के साथ अधिकार दिया।

24. ये वचन न केवल उन पर, बल्कि उन सभी पर भी लागू होते हैं जो आज्ञाओं का पालन करते हैं। उन्हें पूर्ण प्रेम से प्रेम करते हुए, उन्होंने उनसे कहा: *'डरो नहीं, हे छोटी भेड़ की भेड़! क्योंकि तुम्हारे पिता को तुमको राज्य देना भाया है। अपनी संपत्ति बेच दो और दान दो; अपने लिए ऐसे थैले बनाओ जो घिस न जाएँ, स्वर्ग में ऐसा खज़ाना जो कभी खत्म न हो* (लूका 12:32-33)। और जब उन्होंने यह वचन भी पूरा कर लिया, तो उन्होंने उनसे कहा: *', "मैं तुम्हें शांति छोड़ जाता हूँ; अपनी शांति मैं तुम्हें देता हूँ"* (यूहन्ना 14:27)। उन्हें इसका आश्वासन देते हुए, उन्होंने कहा:

"यदि कोई मुझ से प्रेम करता है, तो वह मेरी बात मानेगा; और मेरा पिता भी उससे प्रेम करेगा, और हम उसके पास आकर उसके साथ अपना घर बसाएंगे" (यूहन्ना 14:23)। उन्हें संसार से न डरने के लिए प्रोत्साहित करते हुए, उन्होंने उनसे कहा: *"संसार में तुम्हें क्लेश होगा; परन्तु हिम्मत रखो, मैं संसार पर विजय पा चुका हूँ"* (यूहन्ना 16:33)। उन्हें उनके क्लेश में हतोत्साहित न होने के लिए मजबूत करते हुए, उन्होंने उनके हृदय में आनंद भरते हुए उनसे कहा: *'तुम मेरी परीक्षाओं में मेरे साथ खड़े रहे; और जैसे मेरे पिता ने मुझे राज्य दिया है, वैसे ही मैं तुम्हें राज्य देता हूँ ताकि तुम मेरे राज्य में मेरी मेज़ पर खाओ और पियो'* (लूका 22:28–30)।

25. उन्होंने यह बात—हर किसी से नहीं, बल्कि उन लोगों से कही जिन्होंने उनकी परीक्षाओं को सहा था। लेकिन वे लोग कौन हैं जिन्होंने यीशु की परीक्षाओं को सहा है, यदि वे नहीं जो अपनी वासनाओं के विरुद्ध तब तक दृढ़ खड़े रहते हैं जब तक कि वे उन्हें समाप्त नहीं कर देते? उन्होंने यह बात उनसे तब कही जब वे क्रूस पर जा रहे थे। तो फिर, कोई भी जो उसकी मेज़ पर भोजन करना और पीना चाहता है, उसे इस क्रूस तक उसका अनुसरण क्यों करना चाहिए? क्योंकि यीशु का क्रूस हर एक वासना को वश में करना है, जब तक कि वे सभी नाश न हो जाएँ। और इस प्रकार प्रिय प्रेरित ने, उन्हें नष्ट कर देने के बाद, यह कहने का साहस किया: *'मैं मसीह के साथ सलीब पर चढ़ाया गया हूँ।' 'अब मैं नहीं जीता, बल्कि मसीह मुझ में जीवित हैं'* (गलातियों 2:19-20)। इस प्रकार, मसीह उन लोगों में जीवित हैं जिन्होंने वासनाओं को मार डाला है। इसलिए, अपने बच्चों को सिखाते हुए, इसी प्रेरित ने कहा: *'जो मसीह के हैं, उन्होंने शरीर को उसकी वासनाओं और इच्छाओं सहित सूली पर चढ़ा दिया है'* (गलातियों 5:24)। और अपने आध्यात्मिक पुत्र तीमुथियुस को लिखते हुए, उन्होंने कहा: *'यदि हम उसके साथ मरे हैं, तो हम उसके साथ जीवेंगे भी; यदि हम कष्ट सहते हैं, तो हम उसके साथ राज्य भी करेंगे; यदि हम उसे नकारते हैं, तो वह भी हमें नकार देगा'* (2 तीमुथियुस 2:11,12)।

26. तो फिर, ये वे लोग कौन हैं जो उसे अस्वीकार करते हैं, यदि वे नहीं जो अपनी देह की इच्छाओं का अनुसरण करते हैं और इस प्रकार पवित्र बपतिस्मा पर लज्जा लाते हैं? उसके नाम पर हमें पापों की क्षमा दी जाती है, पर शत्रु, ईर्ष्या के कारण, हमें पाप के द्वारा फिर से दास बना देता है। इसीलिए हमारे प्रभु यीशु मसीह ने, आरंभ से ही उसकी दुष्टता को जानते हुए, हमें हमारी अंतिम साँस तक पश्चाताप का अवसर प्रदान किया है। यदि पश्चाताप न होता, तो शायद ही कोई बच पाता। और प्रेरित, यह जानते हुए कि बपतिस्मा के बाद भी कुछ लोग पाप करते हैं, ने कहा: *'चोर फिर चोरी न करे'* (इफिसियों 4:28)।

२७. अत; पवित्र बपतिस्मा की मुहर धारण करके, हम अपने पापों को त्यागने का प्रयत्न करें, ताकि हम उस दिन दया प्राप्त कर सकें। क्योंकि प्रभु निकट हैं और आ रहे हैं, अपने महिमा के सिंहासन पर विराजमान होकर। और सभी कुल उनके सामने इकट्ठा होंगे। तब प्रत्येक व्यक्ति अपने हाथ में पकड़े हुए दीपक से प्रकट होगा कि वह क्या है। जिसके दीपक में तेल नहीं है, उसका दीपक बुझ जाएगा, और उसे अंधकार में डाल दिया जाएगा; लेकिन जिसका दीपक उज्ज्वल रूप से चमकेगा, वह प्रभु के साथ राज्य में प्रवेश करेगा।

28. अतःहे प्रियजन, हम यत्न करें कि जब तक हम शरीर में हैं, तब तक अपने पात्रों को तेल से भर लें, ताकि हमारा दीपक जलता रहे और हम प्रभु के राज्य में प्रवेश कर सकें। पात्र पश्चाताप है; उसमें तेल सभी सद्गुणों का अभ्यास है; और जलता हुआ दीपक पवित्र आत्मा है। इस प्रकार, जिस भी आत्मा अपने कर्मों से दीप्तिमान होती है, वह प्रभु के साथ राज्य में प्रवेश करेगी, जबकि जिस आत्मा को अपनी ही दुष्टता से अंधकारमय किया जाता है, वह अंधकार में चली जाएगी।

29. अत; भाइयों, यत्न करो, क्योंकि हमारा समय निकट है। धन्य है वह जो इसकी परवाह करता है। फल पक गया है और कटनी का समय आ गया है। धन्य है वह जिसने अपने फल को सुरक्षित रखा है, क्योंकि स्वर्गदूत इसे अनन्त भण्डार में इकट्ठा करेंगे। परन्तु, ओ अभागतनों के लिए हाय, क्योंकि आग उनका इन्तजार कर रही है।

30. इस संसार का उत्तराधिकार सोना और चांदी, घर और वस्त्र हैं। ये हमें केवल पाप की ओर ले जाते हैं; फिर भी जब हम यहाँ से जाते हैं, तो हम इन्हें पीछे छोड़ जाते हैं। लेकिन परमेश्वर का उत्तराधिकार असीम है, जैसा कोई आँख ने नहीं देखा, कोई कान ने नहीं सुना, और न ही किसी मानव हृदय में उत्पन्न हुआ है। और यह वही है जो प्रभु ने इस संक्षिप्त समय में उनका आज्ञापालन करने वालों पर, और उन लोगों पर प्रदान किया है जो इसे ज़रूरतमंदों को दिए गए रोटी, पानी और कपड़ों के बदले में प्राप्त करते हैं - मानवता के प्रति उनके प्रेम और शरीर की पवित्रता के लिए, अपने पड़ोसी को कोई हानि न पहुँचाने के लिए, द्वेष से मुक्त हृदय के लिए, और अन्य आज्ञाओं का पालन करने के लिए।

31. जो इन बातों का पालन करते हैं, उन्हें इस जीवन में शांति मिलती है और दूसरे उन्हें बहुत आदर की दृष्टि से देखते हैं; और जब वे इस शरीर से विदा होते हैं, तो उन्हें अनंत आनंद प्राप्त होगा। परन्तु जो अपनी पापपूर्ण

इच्छाओं का अनुसरण करते हैं और पश्चाताप नहीं करते, बल्कि अपनी नीच प्रवृत्तियों को कामुक सुखों और आत्म-वञ्चना द्वारा, वाचालता और व्यर्थ की बातों द्वारा, झगड़ालूपन और विवादप्रियता द्वारा, गरीबों के प्रति निर्दयता दिखाते हुए और परमेश्वर के न्याय से न डरते हुए, तथा अन्य पापों द्वारा संतुष्ट करते हैं, – ऐसे लोग इस जीवन में लज्जित होंगे और दूसरों द्वारा तुच्छ समझे जाएँगे; और जब वे शरीर छोड़ेंगे, तो लज्जा और अपमान उनके साथ गेहेन्ना में जाएगा।

32. परन्तु परमेश्वर हमें अपनी सेवाओं में सफल होने की सामर्थ्य दे सकता है, और हमें हर एक बुराई से बचा सकता है, ताकि हम उस परीक्षा के समय में बच जाएँ जो सारी संसार पर आने वाली है। क्योंकि हमारे प्रभु यीशु विलम्ब नहीं करेंगे, परन्तु आकर अपने साथ प्रतिफल लाएँगे, और दुष्टों को अनन्त आग में भेजेंगे, और अपने लोगों को उनका प्रतिफल देंगे। और वे उनके साथ उनके राज्य में प्रवेश करेंगे – और उनमें अनन्तकाल तक विश्राम पाएँगे। आमीन।

१७. संसार का त्याग करके एक यात्री के रूप में जीवन जीने के लिए किन विचारों को मन में रखना चाहिए

1. सभी पराक्रमो में सर्वोपरि है यात्री का जीवन, विशेषकर जब, एकांत में प्रवृत्त होकर, आप अपना (अपना घर, परिवार, स्वदेश – संपादक) पीछे छोड़ देते हैं, और पूर्ण विश्वास, आशा, और अपनी इच्छाओं के विरुद्ध एक दृढ़ हृदय धारण करके किसी अन्य स्थान पर जाते हैं। क्योंकि तब (शत्रु) तुम्हें चारों ओर से घेर लेंगे, और तुम्हें प्रलोभनों, कठोर गरीबी और बीमारी से डराना शुरू कर देंगे, यह सुझाव देते हुए कि यदि तुम उन पर काबू नहीं पा सकते, तो तुम क्या करोगे, जब तुम्हारी देखभाल करने वाला या तुम्हें जानने वाला कोई नहीं होगा? यह ईश्वर की कृपा है जो आपको परखती है, ताकि ईश्वर के प्रति आपका उत्साह और प्रेम प्रकट हो सके।

२. यदि आप अंततःएक कोठरी में एकांत में रहने का निश्चय करते हैं, तो (आपके दुश्मन) आपके मन में भय के और भी अधिक कष्टदायक विचार डालना शुरू कर देंगे, यह कहते हुए: 'किसी व्यक्ति को केवल भटकना ही नहीं बचाता, बल्कि आज्ञाओं का पालन करना बचाता है'; वे आपको कुछ रिश्तेदारों (आपके खून के रिश्तेदारों) की भी याद दिलाएंगे और कहेंगे: 'तो फिर? क्या ये वही लोग परमेश्वर के सेवक नहीं हैं?' वे आपके हृदय में (उस स्थान की) अस्वास्थ्यकर हवा और शरीर के लिए कठिनाइयों के विचार भी भरेंगे, जब तक कि आपका हृदय कायरता से थक न जाए। लेकिन यदि प्रेम और आशा आपके हृदय में अटूट बने रहें, तो (ऐसे विचार भरने वालों) की दुर्भावना आपको कोई हानि नहीं पहुँचाएगी। इस प्रकार ईश्वर के प्रति आपकी निष्ठा प्रकट होगी, और यह भी कि आप उन्हें अपने शरीर की सुख-सुविधा से अधिक प्रेम करते हैं।

3. क्योंकि जो लोग निर्वासन (परदेस में जीवन) के दुख को सहते हैं, उनके लिए दुख आशा की ओर ले जाता है, और आशा उन्हें (मांसल प्रलोभनों) से बचाती है। क्योंकि आप केवल एक परदेस में ही नहीं आ गए हैं, बल्कि आपने अपने शत्रुओं के विरुद्ध संघर्ष करने और समय आने पर उनमें से प्रत्येक को परास्त करना सीखने के लिए स्वयं को तैयार किया है, जब तक कि, निर्लिप्तता का शान्ति-लाभ प्राप्त करके, आप समय आने पर प्रत्येक को युद्ध में परास्त कर (उनसे) मुक्त नहीं हो जाते।

४. मुझे लगता है कि अहंकार पर काबू पाना और ईश्वर के ज्ञान में सफल होना एक महान और सम्मानजनक कार्य है। जो व्यक्ति अहंकार के इस कपटपूर्ण जुनून की लज्जा में पड़ जाता है, वह संसार से अलग हो जाता है और संतों के प्रति अपना हृदय कठोर कर लेता है; और अपने दुष्ट कर्मों के अंत में वह दुष्ट घमंड और झूठ बोलने की आदत (शब्दों में, और पाखंड के माध्यम से तो और भी अधिक) में पड़ जाएगा। परन्तु, हे विश्वासयोग्य दास, अपनी परिश्रमों को गुप्त रखो, और जब तुम हृदय से पश्चाताप करते हुए अपनी जीभ को रोकते हो, तो इस बात का ध्यान रखो कि तुम्हारी जीभ उन्हें चुरा न ले या तुम्हारे शत्रुओं के सामने उनका भेद न दे। जो कोई परिश्रमी है (जो परमेश्वर के काम में परिश्रम करता है), वह पश्चाताप के द्वारा सांसारिक वासनाओं और अपने सभी अपराधों को त्यागकर, परमेश्वर के सामने अपनी आत्मा को शुद्ध करता है, और उसे एक निर्दोष भेंट के रूप में उसकी तैयारी करता है, ताकि वह उसके मंदिर होने के योग्य समझा जाए। परन्तु जो कोई मानवीय महिमा से प्रेम करता है, वह निर्लिप्त नहीं हो सकता; बल्कि, उसके भीतर ईर्ष्या और जलन बसती है। ऐसा व्यक्ति अपनी आत्मा को कई प्रलोभनों के सामने खोल देता है, और उसका हृदय राक्षसों द्वारा कठोर कर दिया जाता है, क्योंकि उसे अपनी इच्छाओं को पूरा करने का अवसर बहुत कम मिलता है। हालाँकि, उसका अंत विनाश है।

५. जो लोग विनम्रता प्राप्त कर लेते हैं, उन्हें ईश्वर उनके पापों का ज्ञान कराते हैं ताकि वे उन्हें स्वीकार कर सकें (उनका प्रायश्चित कर सकें और पश्चाताप कर सकें)। यदि इसके साथ विलाप भी हो, और ये दोनों बातें (पापों का स्वीकार और विलाप) उसमें बनी रहें, तो वे उसके प्राणों से दुष्टात्माओं को भगा देंगी और उन्हें अपने सम्मान

और अपने पवित्र गुणों (वे गुण जो उनमें स्वाभाविक रूप से मौजूद हैं और जो उनसे उत्पन्न होते हैं) से पोषित करेंगी। ऐसे व्यक्ति को मानवीय निंदा की कोई परवाह नहीं होती। उसके अपने पाप, जिन्हें वह निरंतर याद करता रहता है, उसके लिए एक पूर्ण कवच का काम करते हैं, जो उसे क्रोध और प्रतिशोध से बचाते हैं, और वह धैर्यपूर्वक उस सब को सहन करता है जो उस पर आता है। क्योंकि जब वह स्वयं को परमेश्वर के सामने इतना लज्जित मानता है, और अपने पापों को अपनी आँखों के सामने रखता है, तो फिर कौन सी निंदा उसे छू सकती है (और उसके हृदय को आहत कर सकती है)?

6. यदि आप अपने पड़ोसी के शब्दों को सहन नहीं कर सकते और उससे बदला लेते हैं, तो आपके हृदय में कलह उत्पन्न होगी, जिससे आपने जो सुना है उसके कारण आपका हृदय पीड़ित होगा, और आप स्वयं कही गई बातों पर शोक करने के लिए विवश हो जाएँगे। और आप इस कैद (इस जुनून की) से पीड़ित होंगे, जो आपको मौन और एकांत में सांत्वना खोजने के लिए मजबूर करेगी, और आपके पड़ोसियों के प्रति आपके हृदय को कठोर कर देगी, मानो उनमें प्रेम ही न हो। लेकिन धीरज को विकसित करने का कार्य हाथ में लो, और यह क्रोध पर विजय प्राप्त कर लेगा; प्रेम अपमान को भर देगा, जबकि ईश्वर से प्रार्थना इन (सद्गुणों) को आपके भीतर बनाए रखेगी। प्रेम और धीरज स्वाभाविक क्रोध को नष्ट करते हैं, और यदि वे आप में बने रहें, तो आप अपने पड़ोसी से क्रोधित होने के बजाय, राक्षसों से क्रोधित होंगे, और साथ ही अपने पड़ोसी के साथ शांति बनाए रखेंगे, और अपने भीतर शोक और नम्रता धारण करेंगे।

७. जो व्यक्ति ईश्वर की खातिर और मन की शांति के लिए एक असभ्य और मूर्ख व्यक्ति के कठोर शब्दों को सहन करने में सक्षम है, उसे शांति का पुत्र कहा जाएगा। ऐसा व्यक्ति हर समय आत्मा, शरीर और आत्मा की शांति बनाए रखने के लिए पर्याप्त मजबूत होता है। जिसमें ये तीनों एक-दूसरे के साथ सामंजस्य में आते हैं, जिसमें मन के नियम के विरुद्ध उठने वाले विचार समाप्त हो जाते हैं, और देह का बंधन समाप्त हो जाता है, वह व्यक्ति शांति का पुत्र कहा जाएगा - और पवित्र आत्मा उसमें वास करेगा: क्योंकि उसने उसे अपना बना लिया है, और उससे अलग नहीं होगा।

८. धन्य हैं वे जिनका श्रम बुद्धिमानी से व्यवस्थित होता है, क्योंकि इस प्रकार उन्होंने स्वयं को हर बोझ से मुक्त कर लिया है और दुष्टात्माओं की सभी चालाकियों से बच गए हैं, विशेषकर भय के राक्षस, जो किसी व्यक्ति के द्वारा किए गए प्रत्येक पुण्य कार्य में बाधाएँ खड़ी करते हैं, जब मन ईश्वर पर अटूट ध्यान केंद्रित करता है तो उसे आलस्य में डुबो देते हैं, ताकि वे उन्हें किसी तरह से इस परिश्रम के मार्ग से भटका सकें। लेकिन मेरा मानना है कि यदि हम में प्रेम, धैर्य और आत्म-संयम है, तो वे (शत्रु) इसमें जरा भी सफल नहीं होंगे, विशेषकर यदि मन यह समझकर कि आलस्य सभी चीजों को भ्रष्ट कर देता है, इसकी निंदा करता है।

९. यदि आपने सभी दृश्यमान पदार्थों का त्याग कर दिया है, तो स्वयं को दुख के राक्षस से बचाएँ, कहीं ऐसा न हो कि (सभी चीजों में) अभाव और जीवन की दुखदता के कारण, आप महान सद्गुणों में उत्कृष्टता प्राप्त करने के अवसर से वंचित हो जाएँ, जो हैं: आत्म-निरपेक्षता (स्वयं को शून्य मानना), अपमान सहना, और सांसारिक किसी भी सम्मान के प्रति तिरस्कार। यदि आप ऐसे गुणों को प्राप्त करने का प्रयास करते हैं, तो वे आपकी आत्मा के लिए मुकुट तैयार करेंगे। केवल वे भिखारी ही नहीं हैं, जिन्होंने सभी चीज़ों का त्याग कर दिया है और जो प्रत्यक्ष रूप से दरिद्र हो गए हैं, बल्कि वे भी हैं जो सभी बुराइयों से रहित हो गए हैं और जो हमेशा ईश्वर की स्मृति के लिए तरसते हैं। न तो वे लोग जो दिखाई देने वाले कष्ट सहते हैं, वे ही वैराग्य प्राप्त करते हैं, बल्कि वे लोग जो आंतरिक मन की परवाह करते हैं और अपनी इच्छाओं को काट देते हैं: इन्हें ही सद्गुणों का मुकुट प्राप्त होगा।

10. अपने हृदय पर निगरानी रखो, अपनी भावनाओं पर ध्यान दो। और यदि ईश्वर की स्मृति आपके भीतर शांतिपूर्वक निवास करती है, तो आप उन चोरों को देख पाएँगे जो इसे लूटने का प्रयास करते हैं। जो अपने विचारों पर कड़ी निगरानी रखता है, वह उन लोगों को पहचान लेगा जो इसमें प्रवेश करके इसे कलंकित करना चाहते हैं।

11. यदि आप उत्कट हृदय से आज्ञाओं का पालन करते हैं, तो आप समझेंगे कि (आपके विचारों में) विद्रोह भड़काने वाले किस प्रकार आपको परेशान करते हैं, जो (उस स्थान को चुनने को सही ठहराने के लिए) स्वयं में कुछ भी न देने वाले किसी अन्य स्थान को चुनने का संकल्प कम कर देते हैं, और (गलत चुनाव की स्थिति में) सुझाव देते हैं: 'यदि हम पश्चाताप करें, तो हम फिर से यहीं बस जाएँगे।' वे मन को अस्थिर कर देते हैं ताकि वह (एक उल्का की तरह इधर-उधर भटकते हुए) सपना देखे और निष्क्रिय बना रहे। परन्तु जो उनकी कपटता को पहचान चुके हैं, वे अडिग रहते हैं, और उस स्थान के लिए प्रभु का धन्यवाद करते हैं जिसमें उन्होंने उन्हें धैर्य से अपना समय व्यतीत करने की अनुमति दी है। क्योंकि धैर्य, साहस और प्रेम को परिश्रम और मेहनत का इनाम मिलता है, जबकि आलस्य, कायरता और आराम की चाह एक ऐसी जगह की तलाश करते हैं जहाँ वे महिमामय हो सकें। और उनके साथ ऐसा होता है कि,

कई लोगों से मलिने वाली प्रशंसा के कारण, उनके इंद्रयिाँ कमजोर हो जाती हैं; परणिामस्वरूप, वे वासनाओं की दासता से दब जाते हैं और एक वचिलति मन और हर चीज़ से संतुष्टि के कारण आंतरकि शकि्षा को खो देते हैं।

12. संत ने यह भी कहा: यद‍ि मन, इंद्रयिों के अपनी कमजोरी (वासनाओं की बीमारी) से उबरने से पहले, क्रूस पर चढ़ने की इच्छा करता है, तो ईश्वर का क्रोध उस पर पड़ता है क्योंक‍ि उसने अपनी इंद्रयिों को पहले ठीक कए‍ि बनि‍ा, अपनी क्षमता से परे का कार्य हाथ में ले लयि‍ा है।

13. यद‍ि आपका हृदय उथल-पुथल में है और आप नहीं जानते क‍ि इसे कैसे वश में करें, तो (जान लें क‍ि) आपका आचरण ऐसा है क‍ि चाहे आप चाहें या न चाहें, वह (हृदय) उथल-पुथल में खचि जाता है। यही आदम की अस्वाभावकिता है।

14. यद‍ि आपका हृदय, अपनी संपूर्ण सत्ता के साथ, पाप से घृणा करने लगा है और उससे उत्पन्न होने वाली चीज़ों से मुँह मोड़ लयि‍ा है, और आपने, स्पष्ट मन से अपने लए‍ि (शाश्वत) यातना नर्धिारति करके, उससे (पाप से) ले जाने वाली हर चीज़ से मुँह मोड़ लयि‍ा है, और अपने मन से अपने सृष्टकिर्ता से प्रार्थना करो, क‍ि वह तुम्हारे साथ रहे, उसे कोई दुख न पहुँचाओ, बल्क‍ि उसके सामने रोते हुए कहो: 'मुझे बचाना आपके दया का काम है; क्योंक‍ि आपकी मदद के बनि‍ा, मेरे पास उनके (मेरे दुश्मनों) हाथों से बचने की कोई शक्त‍ि नहीं है,' – और (साथ ही) अपने हृदय में इस बात का ध्यान रखें क‍ि आप परमेश्वर के मार्गों में आपको सखिाने वाले को भी दुखी न करें; क्योंक‍ि यह यीशु के स्वभाव के अनुरूप है। क्योंक‍ि भले ही कोई व्यक्त‍ि सब कुछ कर ले, फर‍ि भी यद‍ि वह आज्ञाकारति‍ा, नम्रता और धैर्य प्राप्त करने में वफिल रहता है, तो वह स्वभाव के वपिरीत भटक जाता है। परन्तु अपना पूरा हृदय परमेश्वर की आज्ञाकारति‍ा के लए‍ि समर्पति करो, और सत्य में उनसे प्रार्थना करते हुए कहो: 'हे प्रभु! मैं तेरे सामने खड़ा हूँ; मुझे अपनी इच्छा (के ज्ञान) की अनुग्रह दे, क्योंक‍ि मैं स्वयं नहीं जानता क‍ि मेरे लए‍ि क्या अच्छा है। (मेरे शत्रुओं पर) वजिय दे, क्योंक‍ि मैं उनकी दुष्ट युक्तयिों को नहीं समझता।' और यद‍ि आप यीशु के स्वभाव के अनुसार चलेंगे, तो वह आपको कसिी भी बात में भटकने नहीं देंगे। परन्तु यद‍ि आप आज्ञाकारति‍ा में स्वयं को पूरी तरह समर्पति कए‍ि बनि‍ा केवल एक आज्ञा का पालन करते हैं, तो वह आपकी परवाह बल्क‍ुल भी नहीं करेंगे।

15. जैसे एक खेत अपने जोतने वाले का वरिोध नहीं करता जब वह उसे खरपतवार से साफ़ करता है और उसमें उसकी प्रकृत‍ि के अनुरूप बीज बोता है: (वैसे ही तुम्हें प्रभु के संबंध में होना चाहए‍ि)। और जैसे प्राकृतकि बीज अस्वाभावकि बीजों के साथ नहीं उग सकते, क्योंक‍ि वे उन पर हावी हो जाते हैं—क्योंक‍ि खरपतवार उनके नर्लिज्ज प्रतद्विंद्वी हैं—वैसे ही यद‍ि आप स्वयं को कामुक इच्छाओं से शुद्ध नहीं करते हैं, तो आप स्वयं को पाप से बचा नहीं सकते।

16. (आप पाप से अपनी रक्षा नहीं कर सकते) जब तक आप पहले उस चीज़ से अपनी रक्षा नहीं करते जो इसे जन्म देती है। और यह इस प्रकार है: कायरता पाप की दुष्ट माँ है; नराशा (आलस्य) स्व-इच्छा को जन्म देती है; स्व-इच्छा और असीमतति‍ा की इच्छा (जो कसिी भी प्रतबिंध या रोक को बर्दाश्त नहीं करती, और वसि्तार करना पसंद करती है) घृणा को जन्म देती है (सभी उचति चीजों के लए‍ि – 'खैर, मैं यह करूँगा'); एक हृदय जो वर्चस्व की इच्छा रखता है (क्योंक‍ि वह अनयिंत्रतति‍ा से प्रेम करने लगा है) सांसारकि बातचीत के प्रत‍ि प्रेम को जन्म देता है, आपको अनुचति और हानकिारक चीज़ों की खोज करने की इच्छा देता है, एक ऐसे व्यक्त‍ि की बात सुनने को जन्म देता है जो (एक भाई को) नदिंति करता है, शब्दों को सुनने की आदत देता है (एक व्यक्त‍ि के) और उन्हें दूसरे तक पहुँचाने की आदत; यह इस संसार की चीज़ों के पीछे भागने को जन्म देती है; यह बनि‍ा पूछे सखिाने की इच्छा को जन्म देती है; यह अपने पड़ोसी को आहत करने की इच्छा को जन्म देती है; यह कई अन्य बुराइयों को भी जन्म देती है। अत; जसिने भी सफलता प्राप्त की है या सफलता प्राप्त करना चाहता है, वह पापों को जन्म देने वाली सभी चीज़ों से बुद्धमिानी से अपना बचाव करे, और पाप स्वयं ही दूर हो जाएँगे।

१७. तपस्वी उन्हें (पापों को) और उनकी कड़वाहट को देखता है, जबक‍ि जो (मोक्ष के प्रत‍ि) लापरवाह है, वह अपने लए‍ि नरक तैयार करता है। जो शरीर की (तपस्या से होने वाली) थकान से डरता है, वह उस अवस्था को प्राप्त नहीं करेगा जो उसके लए‍ि स्वाभावकि है; परन्तु यद‍ि वह अपनी सभी कष्टों में परमेश्वर से चपिका रहता है, तो परमेश्वर उसे सांत्वना देने के लए‍ि पर्याप्त शक्तशिाली है। यद‍ि गदिोन ने जल-वाहकों को (न्यायियों 7:19) न कुचला होता, तो वह दीपकों का प्रकाश न देख पाता: इसी प्रकार, यद‍ि कोई व्यक्त‍ि अपने शरीर का तरिस्कार नहीं करता, तो वह ईश्वरत्व का प्रकाश नहीं देख पाएगा। इसी प्रकार, केनी हेबर की पत्नी याएल, यद‍ि उसने खम्भा जमीन में न ठोक दयि‍ा होता, तो वह सीसरा के घमंड को कुचल नहीं पाती (न्यायियों 4:21)।

18. जब मन शक्त‍ि प्राप्त करता है और स्वयं को उस प्रेम का अनुसरण करने के लए‍ि तैयार करता है जो देह और शरीर की सभी कामनाओं को बुझा देता है (क्योंक‍ि यह धैर्यवान, दयालु है, ईर्ष्या और घमंड से घृणा करता है,

अपने हृदय में अपनी प्रकृति से नीची कोई भी बात नहीं सोचता, और किसी भी अस्वाभाविक चीज़ को मन पर हावी नहीं होने देता), तब यह इसी शक्ति का उपयोग अस्वाभाविकता से लड़ने के लिए करता है, जब तक कि वह उसे उस चीज़ से पूरी तरह से अलग नहीं कर देता जो स्वाभाविक है। जब इस प्रकार, मन प्रभुत्व ग्रहण करता है, तो वह आत्मा का सिर बन जाता है, (और उसे सिखाता है) कि वह किसी भी अस्वाभाविक चीज़ को स्वीकार न करे, और उसे उन सभी अन्यायों का खुलासा करता है जो स्वाभाविक के साथ मिश्रित रहते हुए, अस्वाभाविक चीज़ों द्वारा उस पर हर समय किए गए थे।

19. हमारे प्रभु यीशु ने, जब उन्होंने अपने संतों पर अपना अनुग्रह प्रदान किया (और मोक्ष का निर्माण पूरा किया), तो उन्होंने सूली पर चढ़ाए गए चोरों को विभाजित किया। दो को सूली पर चढ़ाया गया, और वह उनके बीच में थे। बाईं ओर वाला यह देखकर क्रोधित था कि दाहिने ओर वाले के साथ उसकी अशुद्ध दोस्ती टूटने वाली थी। लेकिन दाहिने ओर वाले ने यीशु की ओर मुड़कर नम्रता और भय के साथ कहा: *'जब आप अपने राज्य में आएं तो मुझको याद करना'* (लूका 23:42)।

२०. इससे यह स्पष्ट है कि वे अब पहले जैसे नहीं रहे, और बाईं ओर वाला अपनी चालाक बातों से दाहिने ओर वाले को अपने पक्ष में नहीं कर सकता। जो लोग अभी तक मार्ग के इस चरण तक नहीं पहुँचे हैं, वे गिरते और फिर उठते रहते हैं जब तक कि ईश्वर की दया उन पर नहीं होती, और जब तक यह दया उन पर नहीं होती, तब तक उनका उद्धार नहीं हो सकता। इसलिए, दाहिनी ओर वाले व्यक्ति की मानसिक स्थिति प्राप्त करने के लिए भय और विनम्रता के साथ प्रयास करना चाहिए। विनम्रता व्यक्ति को अपमान सहने की शक्ति देगी।

21. जब कोई व्यक्ति स्वयं को दुष्ट से अलग करता है, तो वह वास्तव में अपने सभी पापों को पहचान लेता है, जो उसने परमेश्वर के सामने किए हैं; क्योंकि वह अपने पापों को तब तक नहीं देखता जब तक कि वह उनसे (एक दुखी हृदय के साथ) कठोर अलगाव नहीं कर लेता। लेकिन जिन्होंने इस स्तर को प्राप्त किया है, उन्होंने विलाप और प्रार्थना पाई है, और ईश्वर के सामने शर्म महसूस करने की क्षमता पाई है, अपने वासनाओं के साथ अपने दुष्ट संबंध को याद करते हुए। ईश्वर उन लोगों को मजबूत करने में समर्थ है जो नम्रता के साथ गुप्त रूप से परिश्रम करते हैं। उसी को सदा और सदा के लिए सम्मान और महिमा मिले। आमीन।

१८. क्षमा पर

1. सर्वपवित्र प्रेरित ने अपने बच्चों को आज्ञा दी: *'प्रभु निकट हैं। किसी भी बात की चिंता मत करो, परन्तु हर बात में प्रार्थना और विनती द्वारा धन्यवाद सहित अपनी याचनाएँ परमेश्वर के सामने प्रस्तुत करो'* (फिलि. 4:5–6); *'और परमेश्वर की शान्ति तुम्हारे हृदयों में राज करे'* (कुलुस्सुई 3:15)। और (प्रभु) मरकुस के सुसमाचार में अपने शिष्यों से कहते हैं: 'अपने देनदारों के सब पाप क्षमा करो, ताकि तुम्हारा पिता भी तुम्हारे पाप क्षमा करे' (मरकुस 11:25, मत्ती 6:14)। प्रभु का यह वचन एक गंभीर चेतावनी है: (इसके अनुसार) यदि आप देखते हैं कि आपका हृदय सभी के प्रति शुद्ध नहीं है, तो परमेश्वर से कुछ भी न माँगें, क्योंकि जब आप पापी होते हुए और किसी साथी मनुष्य के प्रति द्वेष रखते हुए, उस से कहते हैं जो हृदयों को परखता है: 'मेरे पापों को क्षमा कर' (जैसा मैं क्षमा करता हूँ)। ऐसा व्यक्ति अपने मन से नहीं, बल्कि अज्ञानता में केवल अपने होठों से प्रार्थना करता है। क्योंकि जो कोई भी वास्तव में पवित्र आत्मा में, शुद्ध हृदय से, अपने मन के साथ परमेश्वर से प्रार्थना करना चाहता है, वह प्रार्थना शुरू करने से पहले अपने ही हृदय की जाँच करता है, यह देखने के लिए कि क्या वह हर व्यक्ति के प्रति द्वेष से मुक्त है या नहीं। और यदि वह (शांत) नहीं है, तो वह स्वयं को धोखा देता है (प्रार्थना में), क्योंकि उसे सुनने वाला कोई नहीं है (जो उसकी प्रार्थना सुन रहा हो)। तब आपका मन प्रार्थना नहीं कर रहा होता, बल्कि निर्धारित समय केवल आदत से निभाए जा रहे होते हैं।

२. इसलिए, शुद्धता के साथ प्रार्थना का कार्य करने की इच्छा रखते हुए, पहले अपने मन की जाँच करें कि उसमें क्या है, ताकि जब आप कहें, 'मुझ पर दया करें,' तो आप स्वयं भी उससे दया करें जो आपसे माँगता है; जब आप कहें, 'मुझे क्षमा करें,' तो आप स्वयं, भले ही गरीब हों, क्षमा करें; – जब आप कहते हैं: 'मेरे अपराधों को याद न करो', और आपने स्वयं अपने पड़ोसी के पापों को याद नहीं किया है, – जब आप कहते हैं: 'उन बुराइयों को याद न करो जो मैंने जानबूझकर या अनजाने में की हैं', और आपने स्वयं (अपने पड़ोसी की ओर से) उन्हें याद नहीं किया है। यदि यही आवश्यक है, तो आपको किसी के प्रति भी कोई बुरा विचार नहीं रखना चाहिए । यदि आप इस स्तर तक नहीं पहुँचे हैं, तो आपका प्रार्थना करना व्यर्थ है: परमेश्वर आपको नहीं सुनेगा, सभी धर्मग्रंथों के अनुसार – 'मुझे क्षमा करें'।

3. प्रभु ने मत्ती के सुसमाचार में, प्रभु की प्रार्थना में यह भी कहा: *'और हमारे ऋण क्षमा कर, जैसे हम भी अपने ऋणीयों के ऋण क्षमा करते हैं'* (मत्ती 6:12)। और लूका के सुसमाचार में उन्होंने कहा: *'यदि तुम दूसरों के पाप*

क्षमा करोगे, तो तुम्हारा स्वर्गीय पिता भी तुम्हें (तुम्हारे पाप) क्षमा करेगा' (मत्ती 6:14)। संत लूका के सुसमाचार में लिखा है: *'क्षमा करो, और तुम्हें क्षमा किया जाएगा'* – लूका 6:37)। (जैसे कि: मैंने तुम्हें अपना सारा प्रेम दे दिया है, ताकि जो कुछ भी तुम ईश्वर से अपने लिए चाहते हो, वह तुम पहले स्वयं (अपने पड़ोसी के लिए) करो, और फिर तुम उसी हद तक (पापों से) मुक्त हो जाओगे, जिस हद तक तुमने दूसरों के प्रति भी ऐसा करने में सफलता प्राप्त की है। यदि आपने परमेश्वर की हर (बुद्धिमान) प्राणी के प्रति अपना हृदय शुद्ध कर लिया है, ताकि किसी के प्रति भी द्वेष न रखें, तो आपको इसे बनाए रखना चाहिए: क्योंकि परमेश्वर सत्य है, न कि केवल जीभ के शब्द। इस प्रकार, हर व्यक्ति स्वयं को गेहेन्ना से बाँधता है, और स्वयं को उससे मुक्त करता है। इच्छा से अधिक क्रूर कुछ भी नहीं है, चाहे वह मृत्यु के लिए हो या जीवन के लिए।

४. धन्य हैं वे जिन्होंने अनन्त जीवन से प्रेम किया है, जब वे ठोकर नहीं खाते। इसलिए, तुम्हें अपने हृदय में, गुप्त रूप से, उस विचार (अपमान की भावना) के विरुद्ध परिश्रम और पसीने से संघर्ष करना चाहिए, ताकि तुम उसके तीर को अपने हृदय को घायल न करने दो। लेकिन तुम्हारे लिए इसे ठीक करना तब तक मुश्किल होगा जब तक तुम हमेशा अपने पापों को अपनी आँखों के सामने न रखो। जब आप सुनें कि किसी ने आपके साथ कुछ बुरा किया है, तो इसका जवाब अपने अच्छे इरादे से दें – मन में बदला न लें, उनकी निंदा न करें, और न ही इसे सबके मुँह पर रखकर सार्वजनिक करें; और बाद में सोचें: मुझमें कुछ भी बुरा नहीं है। यदि आपको गेहेन्ना (नरक) का भय है, तो यह आपके भीतर के उन बुरे विचारों पर काबू पा लेगा जो आपको अपने पड़ोसी से बदला लेने के लिए उकसाते हैं, और आपसे कहते हैं: 'हे दुष्ट मनुष्य! तुम अपने पापों के लिए प्रार्थना करते हो, और ईश्वर ने आज तक उन (सभी को) प्रकट किए बिना, तुम्हें सहन किया है; फिर भी तुम, अपने पड़ोसी के प्रति अपने क्रोध में, उसे सभी की जुबान पर चढ़ा देते हो। क्या यह स्पष्ट नहीं है कि तुम अपने पापों पर पछतावा नहीं करते, जब तुम्हारे दिल में (अपने पड़ोसी के प्रति) कोई सहनशीलता नहीं है?

५. इसलिए, यदि आपका हृदय नरम हो जाता है और आप अपने भाई के प्रति सभी द्वेष से खुद को दूर रखते हैं, तो आपको परमेश्वर की दया मिलेगी। लेकिन यदि आपका हृदय अपने पड़ोसी के प्रति कपटी और कठोर बना रहता है, तो (जान लें कि) आपकी स्मृति अभी तक परमेश्वर के सामने नहीं आई है (आप परमेश्वर को याद नहीं करते)। मुझे क्षमा करें, क्योंकि मैं अपने पापों के कारण गरीब और नम्र हूँ, और यह लिखते समय मैं अपने हृदय में लज्जा से अपना मुख ढँक लेता हूँ।

6. यदि कोई मनुष्य स्वभाव से परमेश्वर के पुत्र की अवस्था को प्राप्त नहीं करता है, तो उसकी सारी मेहनत व्यर्थ है। एक किसान, अपने बीज बोते समय, उन्हें कहीं अधिक प्रचुरता में काटने की आशा करता है; लेकिन यदि कोई विनाशकारी हवा उठे, तो उसके हृदय में अनंत दुख होता है, क्योंकि बीज और भूमि जोतने में खर्च की गई मेहनत दोनों ही व्यर्थ में नष्ट हो गए हैं। रोम में सूली पर चढ़ाए गए प्रेरित संत पतरस ने उल्टा लटकाए जाने का अनुरोध किया, जो प्रत्येक मानव पर हावी हुई उस अस्वाभाविकता का प्रतीक है। उन्होंने (इससे) कहा (जैसे) कि हर बपतिस्मा लेने वाला व्यक्ति आदम पर आई उस दुष्ट अस्वाभाविकता को सूली पर चढ़ाने के लिए बाध्य है, जिसने उसे उसकी महिमा से गिराकर दुष्ट निंदा और शाश्वत लज्जा में डाल दिया। इसलिए, मन को साहसपूर्वक प्रयास करना चाहिए और मनुष्य के लिए जो कुछ भी दृश्यमान है (जो उसके लिए अस्वाभाविक है) उससे घृणा करनी चाहिए, और अंत तक उसके विरुद्ध तीव्रतम घृणा के साथ युद्ध छेड़ना चाहिए।

7. ये वे मुख्य (भाव, जो मनुष्य के लिए अस्वाभाविक हैं) हैं जिन्होंने आदम की सभी संतानों को अपनी पकड़ में ले लिया है: लाभ, सम्मान, शांति, पीछे छोड़कर जाने वाली चीज़ों पर गर्व (अंत में), शरीर की सजावट ताकि वह स्वच्छ और सुसज्जित दिखे, और अच्छे कपड़ों की खोज।

8. यह सब उस कामुक आनंद को पोषित करता है जिसे सांप ने हव्वा के मुँह में डाला था; और इससे हम पहचानते हैं कि हम आदम के पुत्र हैं—इन बुरे विचारों से जिन्होंने हमें ईश्वर का शत्रु बना दिया है।

९. धन्य है वह, जो सलीब पर चढ़ाया गया, मरा, गाड़ दिया गया, और नवीकरण में पुनर्जीवित हुआ, जब वह स्वयं को यीशु की प्रकृति का पाता है और उनके पवित्र पदचिन्हों पर चलता है, जिन पर उन्होंने (पृथ्वी पर) अपने मनुष्य होने के नाते, अपने पवित्र सेवकों के लिए चलना किया था। उसके लक्षण हैं: नम्रता, गरीबी, दरिद्रता, लालच का अभाव, क्षमा, शांति, अपमान सहने की शक्ति, शरीर के प्रति बेपरवाह दृष्टिकोण, और दुर्भावनापूर्ण लोगों की बदनामी के सामने निडरता; परन्तु इन सबसे बड़ा है सभी बातों का पूर्वज्ञान और नम्रता के साथ लोगों के प्रति धीरज। जो इसको प्राप्त कर लेता है और अपने भीतर की सभी अस्वाभाविकताओं को निकाल फेंकता है, वह स्पष्ट रूप से दिखाता है कि वह मसीह का, परमेश्वर के पुत्र का है, और यीशु का भाई है, जिसे युगानुयुग महिमा और आराधना मिले। आमीन।

19. जुनून पर

1. मेरे लिए भी यह उचित है कि मैं भविष्यवक्ता यशायाह के साथ कहूँ: *'मैंने प्रसूति पीड़ा में पीड़ित स्त्री की तरह सहन किया है'* (जब तक कि *'मैं उन्हें सूखाकर नष्ट न कर दूँ'* (उन सभी को) *'एक साथ'* (यशायाह 42:14)। यदि आप यह महसूस करते हैं कि पवित्र आत्मा का फव्वारा आपके भीतर बह रहा है, तो यह इस बात का संकेत है कि वे (कौन? वासनाएँ) सूखकर नष्ट हो गई हैं, ठीक वैसे ही जैसे हमारे उद्धारकर्ता ने कहा कि *'परमेश्वर का राज्य न त हाँ है और न वहाँ'*, परन्तु *'तुम्हारे भीतर है'* (लूका 17:21)। कुछ ऐसे हैं जो राज्य के कार्यों की बात तो करते हैं पर उन्हें करते नहीं हैं; कुछ ऐसे भी हैं जो राज्य के कार्य करते तो हैं पर चौकसी (ध्यान) और समझदारी के साथ नहीं; जिनमें, तथापि, उद्धारकर्ता का वचन पूरा हुआ है—कि यह *'तुम्हारे भीतर है*—ऐसे बहुत कम हैं: वे दुर्लभ और मिलना मुश्किल हैं। ऐसे लोगों पर परमेश्वर का पवित्र आत्मा अवतरित हुआ है, और सुसमाचार प्रचारक यूहन्ना के वचन उनमें पूरे हुए हैं: *'जो कोई उसके नाम पर विश्वास करता है, उसे परमेश्वर की संतान बनने का अधिकार दिया गया है: जो न तो लहू से उत्पन्न हुए, न शरीर की इच्छा से, न मनुष्य की इच्छा से, बल्कि परमेश्वर से उत्पन्न हुए'* (यूहन्ना 1, 12–13). ये उस दुख से मुक्त हो गए हैं जो हव्वा पर आया था: *'तुम पीड़ा से बच्चों को जन्म दोगी'* (उत्पत्ति 3:16)। ये उस कड़वे न्याय से मुक्त हो गए हैं जो आदम पर आया था: *'तेरे कारण भूमि पर शाप है'* (उत्पत्ति 3:17)। ये वे हैं जिन्हें वह आनंद प्राप्त हुआ है जो मरियम को प्राप्त हुआ था: *'पवित्र आत्मा तुझ पर आएगा'* (लूका 1:35)। जैसे दुख हव्वा पर और आज तक उसकी सभी संतान पर आया है, वैसे ही आनंद ने मरियम को और आज तक उसकी संतान को भी आलिंगन किया है। और जैसे हम कभी हव्वा के पुत्र थे और हमारे अपमानजनक विचारों के कारण हम पर उसका शाप अनुभव हुआ, वैसे ही हमें फिर से यह पहचानना चाहिए कि हम परमेश्वर से जन्मे हैं, पवित्र आत्मा के विचारों के द्वारा और मसीह के दुखों के द्वारा, यदि वे वास्तव में हमारे शरीरों में मौजूद हैं; क्योंकि पित्र में लिखा है: *'खुद परखो कि क्या मसीह तुम में है—जब तक कि, बेशक, तुम निष्फल नहीं ठहरते'* (2 कुरिन्थियों 13:5)।

2. इस प्रकार, जब हम सांसारिक की प्रतिमा धारण करते थे, तो हमने यह पहचाना कि हम उसके पुत्र थे, जो हमारे भीतर निवास करने वाले उसके अपमानजनक विचारों, अर्थात् वासनाओं, की अशुद्ध सत्ता से उत्पन्न हुए थे। परन्तु जिन्होंने स्वर्गीय की प्रतिमा में स्वयं को परिधानित किया है, वे यह पहचानते हैं कि वे पवित्र आत्मा के द्वारा, जो उनमें निवास करता है, उसके पुत्र हैं। इस प्रकार यशायाह ने पुकार कर कहा: *'हे प्रभु, तेरे भय के कारण हम गर्भ से गर्भित हुए, और हमने परिश्रम किया, और उद्धार की आत्मा को जन्म दिया, जिससे हम पृथ्वी पर गर्भित होते हैं'* (यशा. 26:1–8); और फिर सभोपदेशक में लिखा है: *'जैसे हड्डियाँ माँ के गर्भ में होती हैं, वैसे ही आत्मा का मार्ग है'* (सभो. 11:5)। क्योंकि जैसे पवित्र कुँवारी ने उसे देह में जन्म दिया, वैसे ही जिन्होंने पवित्र आत्मा की कृपा प्राप्त की है, वे उसे अपने हृदयों में धारण करते हैं, प्रेरित के वचनों के अनुसार, जो कहते हैं: *'आकाश का पिता तुम्हें अनुग्रह दे कि तुम अपने भीतरी मनुष्य में उसके आत्मा से बल पाए, और मसीह विश्वास के द्वारा तुम्हारे हृदयों में वास करें, और प्रेम में जड़ें जमाकर और आधार पाकर, यह समझने में समर्थ होओ कि उसकी चौड़ाई और लंबाई और ऊँचाई और गहराई क्या है, और मसीह का वह प्रेम जानो जो ज्ञान से परे है'* (इफिसियों 3, 16–18); और फिर: *'यह खजाना हमारे पास मिट्टी के बर्तनों में है, ताकि यह असाधारण सामर्थ्य परमेश्वर की ओर से हो, न कि हमारी ओर से'* (2 कुरिन्थियों 4:7),

3. अत; यदि आप उस बिंदु पर पहुँच गए हैं जिसका वर्णन निम्नलिखित शब्दों द्वारा किया गया है: *'हम उसी प्रतिमा में महिमा से महिमा तक रूपांतरित हो रहे हैं'* (2 कुरिन्थियों 3:18), और प्रेरित के वचन आप में पूरे हुए हैं, जो कहते हैं: *'तुम्हारे हृदयों में परमेश्वर की शान्ति राज करे'* (कुलु. 3:15), – और: *'यदि मसीह तुम में है*[25] , *'क्योंकि शरीर पाप के कारण मरा हुआ है'* (रोम. 8:10); यदि आप उस बिंदु पर पहुँच गए हैं जहाँ निम्नलिखित वचन भी लागू होता है: *'अंधकार से आपके हृदयों में परमेश्वर के ज्ञान का प्रकाश चमका है'* (2 कुरिन्थियों 4:6), – और यह वचन आप में पूरा हुआ है: *'अपनी कमर बँधे रहो, और अपने दीपक जला रखो; और उन मनुष्यों के समान हो जाओ जो अपने स्वामी के विवाह से लौटने की प्रतीक्षा कर रहे हैं'* (लूका 12:35–36), ताकि आपका मुँह बंद न हो जाए, और पवित्र लोगों के बीच अपनी रक्षा के लिए कहने को कुछ न रहे; यदि आप जानते हैं कि आपकी पात्र में तेल है, जैसे बुद्धिमान कुँवारियों के पास होता है, ताकि आप वधू-कक्ष में प्रवेश कर सकें और बाहर न रह जाएँ; यदि आपने महसूस किया है कि आपकी आत्मा, प्राण और शरीर निर्दोष रूप से एकजुट हुए हैं, और हमारे प्रभु यीशु मसीह के दिन निर्दोष उठेंगे; यदि आप अंतरात्मा में निर्दोष और दोषारोपण से परे हो गए हैं; यदि आप उद्धारकर्ता के वचन के अनुसार एक बालक बन गए

---

[25] पैसियस के संस्करण में: 'अपने मन में'।

हैं, जो कहते हैं: 'छोटे बच्चों को मेरे पास आने दो: *'क्योंकि परमेश्वर का राज्य ऐसा ही है'* (मत्ती 19:14): तब आप वास्तव में उसकी वधू बन गई हैं, और पवित्र आत्मा ने आपको आपके शरीर में रहते हुए ही आपके वारिस में ला दिया है। लेकिन यदि ऐसा नहीं है, तो दुख और तीखे विलाप की अपेक्षा करें; पवित्र लोगों के सामने लज्जा और अपमान आपके आगे होगा।

४. यह भी जानो: जैसे एक कुंवारी, हर सुबह उठकर, अपने वधू-वर के लिए सजने-संवरने से पहले किसी अन्य कार्य पर ध्यान नहीं देती, और बार-बार आईने में झाँकती है—कि कहीं उसके चेहरे पर कोई दाग न हो जो उसके वधू-वर को अप्रसन्न कर दे—इसी प्रकार संतों की दिन-रात यह परवाह रहती है कि वे अपने कर्मों और विचारों की जाँच करें, ताकि उन्हें पता चल सके कि वे परमेश्वर और पवित्र आत्मा के जुए के अधीन हैं या नहीं।

5. इसलिए, हे भाई, हृदय और शरीर के क्लेशों के बीच, बुद्धि से उस अनंत आनंद को प्राप्त करने के लिए परिश्रम करो; क्योंकि वे ही अल्प हैं जिन्हें इसके योग्य ठहराया गया है—वे जिन्होंने आत्मिक तलवार उठाई है और अपनी आत्माओं और इंद्रियों को वासनाओं के हर प्रकार के कलंक से मुक्त किया है, जैसा कि प्रेरित ने कहा (2 कुरिन्थियों 7:1; एफि. 6:17)। परमेश्वर हमारी दुर्बलता में हमारी सहायता करने के लिए पर्याप्त शक्तिशाली है, ताकि हम उनके पवित्र लोगों के साथ रहने के योग्य ठहरें। आमीन।

२०. नम्रता पर

नम्रता क्या है? नम्रता यह सोचना है कि आप एक पापी हैं जो परमेश्वर के सामने कुछ भी अच्छा नहीं करते। नम्रता के कार्य हैं: मौन, स्वयं को किसी भी चीज़ से न तोलना, कृपा की खोज न करना, आज्ञाकारिता, अपनी दृष्टि जमीन पर रखना, मृत्यु को अपनी आँखों के सामने रखना, झूठ से स्वयं की रक्षा करना, बातचीत में व्यर्थ की बातों से बचना, अपने वरिष्ठों का विरोध न करना या अपनी राय पर जोर न देना, अपनी परिस्थितियों को सहन करना, आराम से घृणा करना, स्वयं को परिश्रम के लिए प्रेरित करना, और किसी को दुख न पहुँचाना। तब, हे भाई, सावधान रहो कि इन बातों को ठीक-ठीक पूरा करो, कहीं ऐसा न हो कि तुम्हारी आत्मा हर एक वासना का घर बन जाए, और तुम अपना जीवन सदा के लिए व्यर्थ ही समाप्त कर बैठो। आमीन।

21. पश्चाताप पर

1. अब्बा इसैया से पूछा गया: 'पश्चाताप क्या है, या पाप से मुंह मोड़ना क्या है?' और उन्होंने उत्तर दिया, कहते हुए: 'दो रास्ते हैं: एक रास्ता जीवन की ओर जाता है, और दूसरा मृत्यु की ओर। जो एक पर चलता है वह दूसरे पर नहीं चलता।' परन्तु जो दोनों पर चलता है, वह अभी तक न तो एक में और न ही दूसरे में गिना जाता है—न तो उनमें जो राज्य में ले जाए जाते हैं, और न ही उनमें जो नरक में डाले जाते हैं। हालाँकि, यदि ऐसा कोई मर जाए, तो उस पर न्याय करने वाला परमेश्वर है, जो दयालु भी है।

2. परन्तु जो राज्य में प्रवेश करना चाहता है, वह उसकी आज्ञाओं का पालन करता है: राज्य सभी पापों का नाश है। शत्रु निश्चय ही बोते हैं, परन्तु उनके विचार जड़ नहीं पकड़ते। क्योंकि यदि मन दिव्य मधुरता के चिन्तन तक पहुँच जाता है, तो उनके तीर अब उसे भेद नहीं पाते, क्योंकि तब वह सद्गुणों के पूर्ण कवच से सुसज्जित हो जाता है, जो उसकी रक्षा करता है, उसकी लगन से देखभाल करता है, और उसे (विचारों या भावों से) परेशान होने से रोकता है, बल्कि उसे अपनी ही ध्यानावस्था में लगा देता है, ताकि वह दोनों मार्गों को जान सके और उनमें अंतर कर सके, और एक का अनुसरण करते हुए दूसरे से प्रेम कर सके।

[26]**3.** इस प्रकार, जिसने परमेश्वर की महिमा को जाना है, उसने शत्रु की कटुता को जाना है; जिसने राज्य को जाना है, उसने गेहेन्ना को जाना है; जिसने प्रेम को जाना है, उसने जान लिया है कि घृणा क्या है; जिसने परमेश्वर के लिए लालसा को जाना है, उसने संसार के प्रति घृणा को जाना है; जिसने पवित्रता को जाना है, उसने अशुद्ध गंध (कामुक वासनाओं की) को जाना है; जिसने सद्गुणों के फल को जाना है, उसने बुराई के फल को जाना है; जिसके कर्मों पर स्वर्गदूत प्रसन्न होते हैं, उसने यह भी जाना है कि जब वह दुष्टों के कर्म करता था तो वे उसमें कैसे प्रसन्न होते थे। क्योंकि जब तक आप उनसे दूर नहीं भागते, आप उनकी कड़वाहट को नहीं जान पाएंगे। कोई भी यह कैसे जान सकता है कि धन का प्रेम क्या है, जब तक कि वह सब कुछ त्यागकर ईश्वर के लिए महान गरीबी में नहीं रहता? कोई ईर्ष्या की कड़वाहट को कैसे जान सकता है, जब तक कि वह नम्रता प्राप्त नहीं कर लेता? कोई व्यक्ति क्रोध की विद्रोहशीलता को तब तक कैसे जान सकता है, जब तक वह सभी बातों में दीर्घ-सहिष्णुता प्राप्त नहीं कर लेता? कोई

---

[26] *'Fages'* – ग्रीक के अनुसार; लेकिन पाठ के प्रवाह के लिए *'fyges'* आवश्यक है। लैटिन इसे छोड़ देता है; पैसियस के संस्करण में: 'जब तक आप इसे सहन नहीं करते'।

व्यक्ति अहंकार की निर्लज्जता को तब तक कैसे जान सकता है, जब तक वह नम्रता की कोमलता प्राप्त नहीं कर लेता? कोई व्यक्ति व्यभिचार की बदबू को तब तक कैसे जान सकता है, जब तक वह परम निर्दोषता की मधुर सुगंध को नहीं जानता? कोई व्यक्ति निंदा की लज्जा को तब तक कैसे जान सकता है, जब तक वह अपनी कमियों को नहीं जानता? अपना पापों पर रोना न जानने वाला उपहास की अज्ञानता को कैसे पहचान सकता है? निराशा के भ्रम को कोई कैसे पहचान सकता है जब तक कि उसकी इंद्रियाँ स्थिर न हों और वह ईश्वर के प्रकाश को न पहचान ले?

४. इन सभी (दुष्ट भावों) का एक ही मुख है, जिसे शत्रु की शक्ति की दुर्भावना कहा जाता है; जबकि सभी सद्गुणों की एक ही माता है, जिसे ईश्वर का भय कहा जाता है, जो इसे प्राप्त करने वालों में शुद्धता से सद्गुणों को जन्म देती है और बुराई की शाखाओं को काट देती है, जैसा कि मैंने पहले कहा था। मेरे प्रिय, इसे अपने लिए प्राप्त करो, और तुम अपना पूरा जीवन शांति में बिताओगे। क्योंकि परमेश्वर का भय सभी सद्गुणों की माता है। जब तक कोई इससे नहीं गुजरता, तब तक वह अभी तक स्वर्ग के राज्य का पुत्र नहीं है; परन्तु उसे थोड़ा-थोड़ा करके तब तक प्रयास करना चाहिए जब तक कि वह उल्लेख किए गए प्रत्येक भाव को समाप्त नहीं कर लेता। यदि कोई यह जानना चाहता है कि वह इस पर परिश्रम कर रहा है या नहीं, तो यहाँ उसका लक्षण है: जब तक बायाँ पक्ष अपना प्रभाव डालता है, तब तक उनके भीतर पाप अभी तक मरा नहीं है, और दाहिने पक्ष के सद्गुण इसके साथ सह-अस्तित्व में नहीं रहते। क्योंकि लिखा है: *'क्या तुम नहीं जानते कि, तुम जिनके आज्ञाकारिता के दास बनते हो, उनके ही दास हो, चाहे पाप के जो मृत्यु की ओर ले जाता है, या आज्ञाकारिता के जो धार्मिकता की ओर ले जाती है?'* (रोमियों 6:16)। और फिर: *'या क्या तुम नहीं जानते कि यीशु मसीह तुम में है; क्या तुम्हारी समझ इतनी कम है?'* (2 कुरिन्थियों 13:5)? और फिर, याकूब कहते हैं: *'यदि तुम में कोई यह सोचता है कि वह धर्मी है, पर अपनी जीभ पर काबू नहीं रखता... तो उसका विश्वास व्यर्थ है'* (याकूब 1:26)।

5. पवित्र आत्मा हमें यह सब सिखाता है, यह दिखाते हुए कि हम अस्वाभाविकता से कैसे मुँह मोड़ें और खुद को इससे कैसे बचाएँ। क्योंकि पश्चाताप पाप से मुँह मोड़ने में ही निहित है। लेकिन पाप एक अकेली चीज़ नहीं है; बल्कि पूरे पुराने मनुष्य को ही पाप कहा जाता है। प्रेरित क्यों कहते हैं: *'क्या तुम नहीं जानते कि दौड़ में सब धावक दौड़ते हैं, परन्तु केवल एक ही इनाम पाता है?'* (1 कुरिन्थियों 9:24)? यह कौन है, यदि वह नहीं जो दृढ़ता से खड़ा होता है और (सभी के विरुद्ध) बहादुरी से लड़ता है? क्योंकि उसने (आगे चलकर, वही प्रेरित) यह भी कहा कि *'जो हर बात में प्रतिस्पर्धा करता है, वह संयम बरतता है'* (वही, पद 25)। इसलिए, भाइयों, हम अपनी देखभाल करें। लेकिन यह सच्ची देखभाल क्या है, यदि यह हमारे प्रभु यीशु मसीह की भलाई के सामने स्वयं को नम्र करना (और अपने शत्रुओं से सुरक्षा के लिए उनसे विनती करना) नहीं है? और वह उनके विरुद्ध सामर्थी है, ताकि हमारे विरुद्ध उनकी बुरी योजनाओं को विफल कर सके, जबकि मनुष्य तो केवल मांस और रक्त है।

६. उन्होंने उससे (इस बाबा) फिर पूछा: अपनी कोठरी में मौन रहने का क्या अर्थ है? और उन्होंने उत्तर दिया, कहते हुए: अपनी कोठरी में मौन रहना परमेश्वर के सामने स्वयं को नम्र करना है, और शत्रु द्वारा डाले गए हर दुष्ट विचार का विरोध करने के लिए अपनी सारी शक्ति लगाना है; क्योंकि संसार से भागने का यही अर्थ है। उन्होंने उनसे और पूछा: 'और संसार क्या है?' और उन्होंने उत्तर दिया, कहते हुए: 'संसार पाप का एक राज्य है; संसार अनुचित चीजों की एक कार्यशाला है; संसार अपनी कामुक इच्छाओं की पूर्ति है; संसार यह विश्वास है कि कोई भी हमेशा इसी युग में रहेगा; संसार आत्मा की तुलना में शरीर की अधिक परवाह करना है; संसार इस बात का घमंड करना है कि कोई छोड़ जाएगा (अंततः)। मैं यह अपनी ओर से नहीं कहता, बल्कि प्रेरित यूहन्ना इस प्रकार कहते हैं: *'संसार से और संसार की वस्तुओं से प्रेम न करो; यदि कोई संसार से प्रेम करता है, तो पिता का प्रेम उसमें नहीं है; क्योंकि जो कुछ संसार में है—मांस का वासना, आँखों की वासना, और जीवन का घमंड—वह सब पिता की ओर से नहीं, बल्कि इस संसार की ओर से है। और संसार बीत रहा है, और उसकी अभिलाषाएँ भी; परन्तु जो परमेश्वर की इच्छा करता है, वह युगानुयुग रहता है'* (1 यूहन्ना 2:15-17)। *'हे छोटे बच्चों, कोई तुम्हें धोखा न दे: जो धार्मिकता करता है, वह धर्मी है; जैसे शैतान पाप करता आया है, और पाप करता है: क्योंकि शैतान आरम्भ से ही पाप करता आ रहा है'* (1 यूहन्ना 3:7–8)। *"दुनिया की इच्छाएँ परमेश्वर से वैर हैं"* (याकूब 4:4)। फिर, प्रेरित पतरस, अपने बच्चों को दुनिया के पापों से अजनबी बनाना चाहकर, ने कहा: *"भाइयो, मैं तुम से विनती करता हूँ कि परदेशी और यात्री के नाते, उन मांसल इच्छाओं से दूर रहो, जो प्राण से लड़ती हैं"* (1 पतरस 2:11)। और हमारे प्रिय प्रभु यीशु ने, यह जानते हुए कि पापी संसार एक बोझिल जुआ है जब तक कोई व्यक्ति इसे पीछे नहीं छोड़ देता, अपने लोगों को यह कहते हुए प्रोत्साहित किया: *'इस संसार का राजकुमार आता है, और उसमें मुझमें कुछ भी नहीं है'* (यूहन्ना 14:30); और फिर: *'सारी दुनिया दुष्टता में पड़ी है'* (1 यूहन्ना 5:19)। उन्होंने अपने लोगों के बारे में यह भी कहा कि उसने उन्हें दुनिया से बाहर निकाल लिया है (यूहन्ना 15:19)। अगर पाप का सार्वभौमिक प्रसार नहीं था, तो उसने उन्हें किस दुनिया से निकाला?

7. इसलिए, जो कोई भी यीशु का चेला बनना चाहता है, उसे वासनाओं से भागना चाहिए। क्योंकि जब तक वह उन्हें अलग नहीं कर देता, वह परमेश्वर का वासस्थान नहीं बन सकता। और न ही वह उसकी दिव्यता की मिठास का अनुभव कर पाएगा जब तक कि वह उनसे मुंह न मोड़े, क्योंकि उसने स्वयं कहा है: *'आँख शरीर का दीपक है; इसलिए यदि तुम्हारी आँख साफ़ है, तो तुम्हारा सारा शरीर प्रकाश से भर जाएगा; परन्तु यदि तुम्हारी आँख बुरी है, तो तुम्हारा सारा शरीर अँधेरे से भर जाएगा'* (मत्ती 6:22-23)। इसलिए, इस पर विचार करो: यदि मन बुराई से मुक्त नहीं है, तो यह ईश्वरत्व के प्रकाश को ग्रहण नहीं कर सकता, क्योंकि तब बुराई मन के लिए एक अंधेरी दीवार बन जाती है और आत्मा को खाली कर देती है, जैसा कि सुसमाचार में लिखा है: *'कोई भी दीया जलाकर उसे घड़े से नहीं ढाँकता और न ही बिस्तर के नीचे रखता है, बल्कि उसे दीवान पर रखता है, ताकि आने-जाने वाले प्रकाश को देख सकें'* (लूका 8:16)। कहा जाता है कि यहाँ बिस्तर संसार के मिथ्यात्व का प्रतीक है। इस प्रकार, जब तक हमारा मन अस्वाभाविकता की अवस्था में रहता है, दिव्यता का दीपक इसके भीतर नहीं रह सकता। लेकिन जब मन एक ऊँचा दीपक बन जाता है, तो दिव्यता का प्रकाश उस पर चमकता है, और यह उन लोगों को पहचान लेता है जो घर में हैं; जिन्हें इसे बाहर निकालना है, उन्हें यह बाहर निकाल देता है, और जिनके साथ इसे शांति से रहना है, उन्हें छोड़ देता है। प्रभु ने उन लोगों को, जिनके मन उनकी दिव्य आज्ञाओं से प्रबुद्ध हो गए थे, यह कहते हुए क्यों आज्ञा दी: *'मैं तुम से कहता हूँ जो सुन रहे हो: अपने शत्रुओं से प्रेम करो, जो तुम से बैर रखते हैं, उन पर भलाई करो, जो तुम्हें कोसते हैं, उन पर आशीर्वाद करो, और जो तुम्हारा अपमान करते हैं, उनके लिए प्रार्थना करो। यदि कोई तुम्हें एक गाल पर थप्पड़ मारे, तो दूसरा भी उसकी ओर करो; और जो तुम्हारी एक कमीज़ ले, उसे अपना ओढ़ना भी न रोको। और जो कोई तुमसे मांगे, उसे दो; और जो तुमसे उधार लेना चाहे, उससे मुंह न मोड़ो; और जो तुमसे लेता है, उससे वापस न मांगो'* (लूका 6:27–30। तुलना करें मत्ती 5:42)।

8. उन्होंने यह उन लोगों से कहा जो संसार से भाग गए थे, क्योंकि उन्होंने सब कुछ छोड़ दिया था और अपने उद्धारकर्ता, उनका अनुसरण करने के लिए खुद को तैयार कर लिया था। इसलिए, उन्हें पूर्ण प्रेम से प्रेम करने के बाद, उन्होंने उनसे कहा: *'उठो, यहाँ से चलें'* (यूहन्ना 14:31)। तो फिर, जब वह कहते हैं, *'उठो, यहाँ से चलें'*, तो वह उन्हें कहाँ ले जा रहे हैं? वह उनके मन को इस संसार के मामलों से हटाकर अपने राज्य में उन्हें विश्राम दे रहे हैं। तो फिर, उन्होंने उन्हें प्रोत्साहित करते हुए क्यों कहा: *'मैं दाख की बेल हूँ, तुम डालें हो। मुझ में बने रहो, और मैं तुम में। जैसे एक डाली अपने आप फल नहीं दे सकती जब तक कि वह अँगूर की बेल पर बनी रहे, वैसे ही तुम भी नहीं दे सकते जब तक कि तुम मुझ में बने न रहो'* (यूहन्ना 15:4-5)। वह यह उन लोगों से कहता है जिन्होंने संसार को छोड़ दिया है, क्योंकि आत्मा उनके भीतर है और उनके हृदयों में वास करता है। *'मैं तुम्हें अनाथ नहीं छोड़ूँगा,'* वह कहते हैं, *'मैं तुम्हारे पास आऊँगा'* (यूहन्ना 14:18)। इसलिए, जो कोई भी परमेश्वर से प्रेम करता है और चाहता है कि वह उनमें वास करे, और अनाथ बने रहना नहीं चाहता, वह पहले इस बात का ध्यान रखे कि यीशु ने उन्हें क्या आज्ञा दी है, और वह उनमें वास करेगा, क्योंकि वह हमसे दूर नहीं है, और हमारे और उसके बीच में हमारी वासनाओं के सिवा और कुछ भी नहीं है।

९. हे मेरे भातृज्यो, यदि तुम अपने आप को संसार त्यागी कहलाते हो, परन्तु संसार के काम करते हुए पाए जाते हो, तो तुमने संसार का त्याग नहीं किया है, बल्कि अपने आप को धोखा दे रहे हो। प्रभु ने संसार त्यागने वालों को यह संकेत दिया, कहते हुए: *'जो कोई अपना प्राण प्रेम करता है, वह उसे खोएगा, और जो कोई अपना प्राण मेरी खातिर खो देता है, वह उसे बचाएगा* (मत्ती 10:39)। तो फिर, कोई अपना प्राण कैसे खोता है, यदि अपनी सभी शारीरिक इच्छाओं को न काटकर? और फिर: *'जो अपना क्रूस नहीं उठाता और मेरे पीछे नहीं आता,* वह *मेरा चेला नहीं हो सकता* (लूका 14:27)। वह कहते हैं, किस प्रकार का क्रूस— —हमें वहन करना है, यदि वह नहीं जो मन से सतर्क और सदाचार में दृढ़ रहने की मांग करता है, ताकि क्रूस से न गिर जाए? अर्थात्, कामनाओं से तब तक परहेज़ करना जब तक कि वे समाप्त न हो जाएँ - और मन अंततः अजेय होकर ऊपर न उठे। क्योंकि जो लोग उत्तेजित थे, उन्हें उन्होंने एक संकेत दिया, यह कहते हुए: *'जब तक गेहूँ का दाना पृथ्वी में गिरकर मर नहीं जाता, तब तक वह अकेला ही रहता है; परन्तु यदि वह मर जाता है, तो बहुत फल लाता है'* (यूहन्ना 12:24)। और जो गेहूँ के दाने की तरह मर गए हैं, उन्हें सांत्वना देते हुए, उन्होंने कहा: *'यदि कोई मेरी सेवा करता है, तो मेरा पिता उसका सम्मान करेगा; और जहाँ मैं हूँ, वहाँ मेरा सेवक भी होगा'* (यूहन्ना 12:26)। तो फिर, वे संसार की वासनाओं से घृणा करके और उसकी आज्ञाओं को पूरा करके ही यीशु की सेवा कैसे करते हैं? आज्ञाओं का पालन करने के बाद, उन्होंने उसके सामने *यह* कहने का साहस प्राप्त किया: *'हमने सब कुछ छोड़ दिया और आपका अनुसरण किया: तो फिर, हमारा क्या होगा?'* (मत्ती 19:27)? और उन्होंने उन्हें यह बताते हुए दिखाया कि उनके साथ क्या होने वाला है: *'तुम जो मेरे पीछे चले हो, आने वाले युग में, जब मनुष्य का पुत्र अपनी महिमा के सिंहासन पर बैठेगा, तब तुम भी बारह सिंहासनों पर बैठोगे, और इस्राएल के बारह*

कुल का न्याय करोगे। और जिसने भी मेरे लिए घर, या भाइयों, या बहनों, या पिता, या माता, या पत्नी, या बच्चों, या खेतों को छोड़ दिया है, उसे सौ गुना मिलेगा और अनंत जीवन का वारिस होगा' (मत्ती 19:28-29)।

10. हमारे प्रभु, परम मधुर यीशु, यह जानते हुए कि जब तक कोई व्यक्ति सभी सांसारिक चिंताओं से मुक्त नहीं हो जाता, उसका मन क्रूस तक नहीं पहुँच सकता, हमें उन सभी चीज़ों को पीछे छोड़ने की आज्ञा दी जो, आदत और संगति के द्वारा, मन को क्रूस से नीचे खींचती हैं। जब किसी ने आकर उससे कहा, *'हे प्रभु, मैं तुझसे पीछे चलूँगा,* परन्तु पहले मुझे जाकर *'अपने घर के काम-काज'* निपटा लेने दे' (लूका 9:61),—ने हमारे प्रिय यीशु ने, यह जानते हुए कि यदि वह उन चीज़ों को देखता, तो उसका हृदय फिर से उनकी ओर खिंच जाता, और वहाँ की विभिन्न परिस्थितियाँ, मानो, सही रूप में उसे रोक देतीं, उसे जाने से मना कर दिया, यह कहते हुए: *'जो कोई हल पर हाथ रखकर पीछे मुड़ता है, वह* परमेश्वर के राज्य के *योग्य नहीं'* (लूका 9:62)। (राजा के पुत्र के विवाह के दृष्टान्त के बाद, जिसमें उन्होंने बताया) कि कैसे (राजा ने) अपने पुत्र के लिए एक भोज तैयार किया और निमंत्रित लोगों को बुलाने के लिए अपने दासों को भेजा, लेकिन वे, संसार के प्रति अपने-अपने प्रेम के कारण, आ नहीं सके, उन्होंने दुख के साथ कहा: *'जो कोई मुझको अपनाना चाहता है और अपने पिता, माता, पत्नी, बच्चों, भाइयों और बहनों—हाँ, यहाँ तक कि अपनी जान से भी प्रेम नहीं करता, वह मेरा चेला नहीं हो सकता* (लूका 14:16–26)। वह यह हमें सिखाने के लिए कहते हैं कि जो कोई भी उनके राज्य में प्रवेश करना चाहता है, जब तक कि वह पहले अपने भीतर उन सभी चीजों से घृणा करने का संकल्प नहीं ले लेता जो हृदय को संसार की ओर खींचती हैं, वह उस राज्य में प्रवेश नहीं कर सकता जिसकी वह इच्छा करता है। और हमें केवल आचरण के बिना विश्वास पर भरोसा न करने के लिए प्रेरित करते हुए, प्रभु ने कहा कि राजा, *दावत में बैठे लोगों को देखने के लिए* भीतर आकर, *ने देखा कि एक आदमी विवाह के वस्त्रों में नहीं था* और आज्ञा दी कि उसे बाहरी अंधकार में फेंक दिया जाए (मत्ती 22:11–13)। वे अपने ईसाई नाम के कारण प्रवेश करते हैं, लेकिन (ईसाई) कर्मों की कमी के कारण बाहर निकाल दिए जाते हैं। इसी प्रकार प्रेरित ने भी, यह जानते हुए कि कोई भी व्यक्ति परमेश्वर की और इस संसार की दोनों चीज़ों से प्रेम नहीं कर सकता, अपने पुत्र तीमुथियुस को यह कहते हुए लिखा: *'कोई सैनिक सेवा में रहते हुए इस जीवन के मामलों में स्वयं को उलझाता नहीं है, ताकि वह अपने सेनापति को प्रसन्न कर सके। 'यदि कोई कष्ट उठाता है, तो उसे मुकुट नहीं मिलता, जब तक कि वह अन्याय से सताया न जाए'* (2 तीमु. 2:4–5)। उसे यह आशा करने के लिए प्रोत्साहित करते हुए कि उसकी मेहनत व्यर्थ नहीं जाएगी, उन्होंने उससे कहा: *'जो मजदूरी करता है, वह फल का सबसे पहले हिस्सा पाने का पात्र है'* (2 तीमु. 2:6)। और कुछ अन्य लोगों को लिखते हुए, उन्होंने कहा: *'अविवाहित मनुष्य प्रभु के कामों में लगा रहता है, कि वह प्रभु को प्रसन्न करे; परन्तु विवाहित मनुष्य संसार के कामों में लगा रहता है, कि वह अपनी पत्नी को प्रसन्न करे'* (1 कुरिन्थियों 7:32–33)। ऐसा व्यक्ति एक भयानक आवाज़ सुनेगा जो कह रही होगी: 'उसे *बाहरी अंधकार में फेंक दो: वहाँ रोना और दाँत पीसना होगा'* (मत्ती 22:13)।

11. इसलिये हे भाइयो, हम अपनी शक्ति का उपयोग करें और सदाचार के वस्त्र पहन लें, कहीं ऐसा न हो कि हम बहिष्कृत हो जाएँ; क्योंकि उस दिन कोई पक्षपात नहीं होगा। प्रेरित ने अपने बच्चों से यह क्यों कहा, *'क्योंकि ऐसे लोग परमेश्वर के राज्य के वारिस नहीं होंगे'* (गलातियों 5:21)? यह जानते हुए कि जो लोग मृतकामो से उठने के योग्य ठहरे हैं, उनका अब कोई प्रतिद्विंद्वी नहीं है, उन्होंने उन्हें आत्मा का फल दिखाया, जो यह है – *'प्रेम, आनन्द, शान्ति, धीरज, दया, भलाई, विश्वास, नम्रता, आत्मसंयम, धैर्य: ऐसी बातों के विरुद्ध,' वह कहते हैं, 'कोई व्यवस्था नहीं है'* (गलातियों 5, 22–23)। और हमारे प्रिय प्रभु यीशु ने, हमें यह दिखाते हुए कि उस दिन हमारे कर्मों का फल प्रकट होगा, कहा: *'बहुते लोग प्रवेश करने का यत्न करेंगे, पर न कर सकेंगे'*। क्योंकि घर का स्वामी, जब *'उठकर दरवाज़ा बंद कर देगा'*, तो दरवाज़ा खटखटाने वालों से कहेगा: *'मैं तुम्हें नहीं जानता'* (लूका 13:24–25)। क्या हम सचमुच ईश्वर के बारे में कह सकते हैं कि वह कुछ भी नहीं जानता? किसी भी तरह से नहीं। लेकिन जैसे वे जो दस्तक देते हैं और कहते हैं, *'हे प्रभु, हे प्रभु, हमारे लिए खोल दो'*, उन्होंने गुणों को नहीं जाना, वैसे ही वह उनसे कहता है: 'मैं तुम्हें नहीं जानता।' और उसने हमें उन लोगों के बारे में भी दिखाया जो विश्वास तो रखते हैं पर कर्म नहीं करते, यह कहते हुए: *'मैं दाख की बेल हूँ, और तुम डालियाँ हो; जो मुझ में बना रहता है, और मैं उसमें, वह बहुत फल देता है। पर जो कोई मुझ में नहीं बना रहता, वह डाल की नाईं बाहर निकाला जाता है और सूख जाता है; और उन्हें इकट्ठा करके आग में डाल देते हैं, और वे जल जाते हैं'* (यूहन्ना 15:5,6)। (जहाँ तक उन डालियों का प्रश्न है) जो अच्छा फल देती हैं, पिता उन्हें छाँटता है ताकि वे *'और भी अधिक फल दें'* (यूहन्ना 15:2)। फिर से, यह दिखाते हुए कि वह उन लोगों से प्रेम नहीं करते जो अपनी शारीरिक इच्छाओं के अनुसार काम करते हैं, उन्होंने प्रार्थना में कहा: *'मैं संसार के लिए प्रार्थना नहीं करता, बल्कि उनके लिए प्रार्थना करता हूँ जिन्हें आपने मुझे दिया है, क्योंकि वे आपके हैं'* (यूहन्ना 17:9)। और

मैं उन्हें संसार से निकाल चुका हूँ (यूहन्ना 15:19): क्योंकि संसार अपने वालों से प्रेम करता है। अंत में, वह कहते हैं: *'पिता, उन्हें दुष्ट से बचाए रखो, क्योंकि वे संसार के नहीं हैं'* (यूहन्ना 17:15-16)।

12. अतः हे भाइयो, हम अपने आप को परखें, कि हम संसार के हैं या नहीं। यदि हम संसार के नहीं हैं, तो वह हमें बुराई से बचाता है, क्योंकि उसने कहा: *'मैं न केवल इनके लिए प्रार्थना करता हूँ, बल्कि उनके लिए भी जो उनके वचन के द्वारा मुझ पर विश्वास करेंगे: कि वे सब एक हों, जैसे हम एक हैं'*। और फिर: *'जहाँ मैं हूँ, वहाँ वे भी मेरे साथ हों'* (यूहन्ना 17:20-24)। तो अब विचार करो, कि उन्होंने हमसे कितना प्रेम किया है, जब इस संसार में संघर्ष करने वाले और अपनी देहिक इच्छाओं से घृणा करने वाले उनके साथ युगानुयुग राज्य करेंगे? और प्रेरित यूहन्ना, उस महान महिमा को देखकर, ने कहा: *'जब वह प्रगट होगा, तो हम भी उसके समान होंगे'* (1 यूहन्ना 3:2), यदि हम उसकी आज्ञाओं का पालन करें और उसकी दृष्टि में जो भाता है, वही करें। और फिर वह कहते हैं: 'प्रियजनों, *आश्चर्यचकित न हो, यदि संसार तुमसे घृणा करता है। हम जानते हैं कि हम मृत्यु से जीवन में पहुँच गए हैं, क्योंकि हम अपने भाइयों से प्रेम करते हैं'* (1 यूहन्ना 3:13-14)। और फिर: *'जो धार्मिकता का अभ्यास नहीं करता, वह परमेश्वर का नहीं है, और न ही वह जो अपने भाई से प्रेम नहीं करता'* (वही, पद 11)। इसके अलावा: *'जो धार्मिकता का अभ्यास करता है, वह परमेश्वर से जन्मा है'* (1 यूहन्ना 2:29), *'परन्तु जो पाप का अभ्यास करता है, वह शैतान का है'* (1 यूहन्ना 3:8)। और फिर: *"जो कोई परमेश्वर से जन्मा है, वह पाप नहीं करता, क्योंकि उसकी संतान उसमें बनी रहती है; और वह पाप नहीं कर सकता, क्योंकि वह परमेश्वर से जन्मा है"* (1 यूहन्ना 3:9)।

13. अतः हे भाइयों, हम ऐसी गवाहियों से सांत्वना लेकर अपना भरसक प्रयत्न करें। शायद हमारे प्रभु की कृपा हम पर हो, और वह हमें इस अशुद्ध संसार के बोझ को उतार फेंकने की शक्ति भेजे। क्योंकि हमारा शत्रु सुस्त नहीं रहता, बल्कि निरन्तर हमारी घात में रहता है, और हमारी आत्माओं को छीनने का यत्न करता है। परन्तु हमारा प्रभु यीशु हमारे साथ है, और वह अपने पवित्र वचनों की शक्ति से शत्रु को रोकता है, यदि हम उनका पालन करें। क्योंकि शत्रु के विरुद्ध कौन टिक सकता है, या उसके विरुद्ध कौन बलवान है, यदि परमेश्वर के उन वचनों के सिवाय जो उसके विरुद्ध बोले गए हैं? वे उसके विरुद्ध खड़े होते हैं और अपनी शक्ति से उसे कुचल देते हैं, भले ही कोई व्यक्ति इसके प्रति अनजान हो।

14. प्रेरित पतरस ने, हमें यह सिखाते और दिखाते हुए कि कर्म एक व्यक्ति को बचाते हैं, कहा: *'अपने विश्वास में सद्गुण जोड़ो; सद्गुण में ज्ञान; ज्ञान में आत्म-संयम; आत्म-संयम में धैर्य; धैर्य में भक्ति; भक्ति में भाईचारे की दया; और भाईचारे की दया में प्रेम। क्योंकि यदि ये गुण तुम्हारे में हैं और बढ़ते जाते हैं, तो वे तुम्हें हमारे प्रभु यीशु मसीह के ज्ञान में निष्क्रिय और निष्फल होने से बचाएंगे। परन्तु जिस में ये गुण नहीं हैं, वह अंधा और निकम्मा है; उसने यह भूल गया है कि वह अपने पिछले पापों से शुद्ध किया गया था'* (2 पतरस 1:5–9)। फिर, यूहन्ना बपतिस्मा देने वाला कहता है: *"मन फिराव के योग्य फल लाओ। क्योंकि कुल्हाड़ी पहले ही वृक्ष की जड़ पर रखी जा चुकी है: इसलिये जो कोई वृक्ष अच्छा फल नहीं लाता, वह काटा जाकर आग में फेंका जाएगा"* (लूका 3:8–9)। और हमारे प्रभु यीशु कहते हैं: *'पेड़ को उसके फल से जाना जाता है'* (मत्ती 12:33)। *'क्या लोग काँटों से अंगूर, या बिच्छूबूटियों से अंजीर बटोरते हैं?'* (मत्ती 7:16)। और फिर: *"जो मुझ से 'हे प्रभु, हे प्रभु' कहते हैं, वे सब स्वर्ग के राज्य में प्रवेश नहीं करेंगे, परन्तु केवल वही जो मेरे स्वर्गीय पिता की इच्छा पर चलता है"* (मत्ती 7:21)। याकूब भी कहते हैं: *'कर्म के बिना विश्वास मरा हुआ है। भूत भी विश्वास करते हैं—और कांपते हैं। क्योंकि जैसे आत्मा के बिना शरीर मरा हुआ है, वैसे ही कर्म के बिना विश्वास भी मरा हुआ है'* (याकूब 2:20, 19:26)। इसी तरह, प्रेरित पौलुस, अपने बच्चों को यह पुष्टि करते हुए कि विश्वास के लिए कर्म आवश्यक हैं, ने उन्हें सख्त आज्ञा दी, कहते हुए: *'परंतु व्यभिचार और सारी अशुद्धता का नाम भी तुम में न लिया जाए, जैसा कि पवित्र लोगों के योग्य है; बल्कि धन्यवाद करना। क्योंकि यह तुम जान लो कि कोई वेश्यागामी, या अशुद्ध, या लोभी—अर्थात् मूर्तिपूजक—मसीह और परमेश्वर के राज्य में कोई विरासत नहीं पाता"* (इफिसियों 5:3-5)। और इस वचन की और पुष्टि करते हुए, उन्होंने उनसे कहा: *"कोई भी तुम्हें व्यर्थ वचन से धोखा न दे; क्योंकि इन बातों के कारण परमेश्वर का क्रोध आज्ञा न मानने वालों पर आता है। इसलिए इन बातों में सहभागी न बनो। क्योंकि तुम कभी अंधकार थे, परन्तु अब प्रभु में प्रकाश हो गए हो। प्रकाश के बच्चों के समान चलो; क्योंकि आत्मा का फल सब भलाई, धार्मिकता और सच्चाई में है"* (इफिसियों 5:6-9)। और फिर: *"तुम्हारे बीच से कड़वाहट, क्रोध, रोष, कलह और निन्दा, और सब प्रकार का वैर-भाव दूर हो जाए"* (इफिसियों 4:31)। *'मेरे अनुकरण करने वाले बनो,' उन्होंने यह भी कहा, 'जैसे मैं मसीह का अनुकरण करता हूँ'* (1 कुरिन्थियों 11:1)। *'क्योंकि तुम में से जितनों ने मसीह में बपतिस्मा लिया है, उन्होंने मसीह को पहन लिया है'* (गलातियों 3:27)।

१५. इसलिये हे भाइयो, हम अपने आप को परखें, कि हम ने मसीह को पहिन लिया है या नहीं। मसीह को पवित्रता से जाना जाता है, क्योंकि वह पवित्र है और पवित्र लोगों में वास करता है। और कोई पवित्र कैसे बनता है? केवल उन

बुरे कामों को छोड़कर जो वह करता आ रहा था। क्योंकि परमेश्वर की भलाई ऐसी है कि जब भी कोई व्यक्ति अपने पापों से मुँह फेर लेता है, वह उसे आनन्द के साथ ग्रहण करता है, और उसके पूर्व के पापों का कोई हिसाब नहीं लगाता, जैसा कि सुसमाचार में छोटे पुत्र के विषय में लिखा है, जिसने अपना भाग्य उड़ा-उड़ा कर व्यभिचारी जीवन में खर्च कर दिया, और अंत में सूअरों की रखवाली करने लगा और सूअरों का अन्न खाकर अपना पेट भरने की लालसा करने लगा; परन्तु अंत में, अपने किए हुए से पश्चाताप करके, यह महसूस किया कि पाप में कोई संतुष्टि नहीं है, बल्कि जितना अधिक कोई उन्हें करता है, उतना ही अधिक वह उनसे जल जाता है। इस प्रकार, जब पश्चाताप ने उसके हृदय को छुआ (शाब्दिक रूप से: उस पर दस्तक दी), तो उसने विलंब नहीं किया, बल्कि (तुरंत) अपनी सभी सांसारिक इच्छाओं को त्यागकर, नम्रता से अपने पिता के पास लौट आया। क्योंकि उसे विश्वास था कि उसका पिता दयालु है और उसके कर्मों को उसके विरुद्ध नहीं ठहराएगा। इसीलिए उसके पिता ने तुरंत आदेश दिया कि उसे पवित्रता का वस्त्र और पुत्रत्व का प्रतीक (एक अंगूठी) दिया जाए (लूका 15:11-32)। यह हमारे प्रभु यीशु मसीह ने कहा था, (हमें यह समझाने के लिए) कि यदि हम उनकी ओर लौटते हैं, तो हमें पहले सूअर का भोजन त्यागना होगा, और फिर वह हमें शुद्ध होकर स्वीकार कर लेंगे। उन्होंने यह इसलिए कहा ताकि आत्मा हतोत्साहित न हो, यह कहते हुए: 'परमेश्वर मुझसे कब सुनेंगे?' क्योंकि वह जानता है कि विनती करने वाला कब सुनने योग्य होता है, और तब वह उसे शीघ्रता से सुनेगा।

16. अतःहम पूरे मन से उसकी ओर मुड़ें और, उससे विनती करते हुए, *'हतोत्साहित न हों'* (लूका 18:1), और वह शीघ्र ही हमें सुनेगा। क्योंकि उसने स्वयं कहा है: *'माँगो, तो तुम्हें दिया जाएगा; खोजो, तो तुम पाओगे; खटखटाओ, तो तुम्हारे लिए खोला जाएगा'* (मत्ती 7:7)। अत; भाइयो, यदि हम निवेदन करें, या खोजें, या खटखटाएँ, तो हमें वह प्राप्त होगा जो हम खोजते हैं, या जो हम उससे माँगते हैं। ठीक वैसे ही जैसे मध्यरात्रि में अपने मित्र के पास आए मनुष्य ने उससे आग्रह किया, कहते हुए: *'मुझे तीन रोटी दे दो, क्योंकि मेरा एक मित्र यात्रा से मेरे पास आया है'* (लूका 11:5)—और, चूंकि उसने दरवाज़ा खटखटाना बंद नहीं किया, दूसरे ने उसे वही दे दिया जो उसने उससे मांगा था। अत; भाइयों, हम अपनी सुस्ती को त्याग दें, और स्वयं को ऐसी दृढ़ता के लिए तैयार करें: और ईश्वर, हमारी सहनशीलता को देखकर, हमें वह प्रदान करेंगे जो हम उनसे मांगते हैं। क्योंकि वह दयालु है, और चाहता है कि मनुष्य उसकी ओर लौटे, जैसा लिखा है: *'मैं तुम से सच कहता हूँ, एक पश्चाताप करने वाले पापी पर स्वर्ग में ऐसा ही आनन्द होता है'* (लूका 15:7)।

17. इसलिये, हे भातियो, परमेश्वर की ओर से ऐसी दया और अनुग्रह पाकर, हम उसी में अपनी पूरी आत्मा से परिश्रम करें, जब तक हम इस देह में वास करते हैं; क्योंकि हमारे जीवन का समय अल्पकालीन है। यदि हम प्रयास करें, तो हमें अनंत और अकथनीय आनंद का वारिस बनेंगे; परन्तु यदि हम पीछे हट गए, तो हम उस जवान के समान होंगे जिसने प्रभु यीशु से पूछा था कि कैसे उद्धार पाए। उसने उससे कहा: *'जो कुछ भी तेरे पास है, उसे बेचकर गरीबों को दे दे, और'*, अपना क्रूस उठाकर, *'मेरा अनुसरण कर'*, यह दिखाते हुए कि अपनी इच्छा का त्याग करना ही उद्धार है। लेकिन जब उस जवान ने यह सुना, तो वह बहुत दुखी हुआ और चला गया (लूका 18, 22, 23)। क्योंकि वह जानता था कि अपनी संपत्ति गरीबों को देना, क्रूस उठाने जितना कठिन नहीं है। अपनी संपत्ति गरीबों को देना केवल एक गुण है, और कोई व्यक्ति इसका अभ्यास इसलिए करता है ताकि क्रूस उठाना (आसान) हो सके; लेकिन क्रूस सभी पापों का उन्मूलन है - और यह प्रेम को जन्म देता है; प्रेम के बिना, कोई क्रूस नहीं है। तो फिर प्रेरित ने—यह जानते हुए कि ऐसे भी झूठे गुण हैं जिनमें न तो प्रेम होता है और न ही गुणों की पूर्णता—क्यों कहा: *'यदि मैं मनुष्यों और स्वर्गदूतों की भाषाओं में बोलूँ, परन्तु प्रेम न रखूँ, तो मैं एक बजता हुआ ढोल या एक खनकती झाँझ हूँ। और यदि मैं अपना सब कुछ दान भी कर दूँ, और अपना शरीर जलाने के लिए दे भी दूँ, परन्तु मुझ में प्रेम न हो, तो इससे मुझे कुछ लाभ नहीं होता। प्रेम धैर्यवान है, प्रेम सदाचार से भरपूर है; प्रेम ईर्ष्या नहीं करता; प्रेम डींग नहीं हाँकता, घमण्ड नहीं करता, अभद्र व्यवहार नहीं करता, अपना हित नहीं खोजता, क्रोधित नहीं होता, बुराई की सोचता नहीं है'* (1 कुरिन्थियों 13:1-5)।

18. अत; जो कोई प्रेम के मार्ग पर चलना चाहता है, उसे सभी लोगों की, चाहे वे अच्छे हों या बुरे, सभी चिंताओं से मुक्त हो जाना चाहिए। तब, अंतत; उनके हृदय में एक ही इच्छा—परमेश्वर की—बची रहेगी, और यह इच्छा उनकी प्रकृति के अनुरूप क्रोध को जन्म देगी; और यह क्रोध शत्रु द्वारा उत्पन्न की गई हर चीज़ के विरुद्ध खड़ा होगा। तब परमेश्वर का *'विधान'*[27] उसके भीतर वास करने के लिए स्थान पाता है, और भय के माध्यम से, प्रेम उसमें प्रकट होता है। तब ऐसा व्यक्ति साहस से बोलता है, जैसा प्रेरित ने किया था: *'मैं न केवल बँधने को तैयार हूँ, बल्कि मैं प्रभु*

[27] पैसियस के संस्करण में, कानून के सामने किनारों पर लिखा है: 'भय' – जैसा कि निम्नलिखित शब्दों के अर्थ की आवश्यकता है।

यीशु मसीह के नाम के लिए मरने को भी तैयार हूँ (प्रेरितों के काम 21:13)। धन्य है वह आत्मा जिसने ऐसा प्रेम प्राप्त किया है: क्योंकि वह तब वासना से मुक्त हो जाती है।

19. हे भाइयों, हम संसार से अलग हो चुके हैं; हम जानते हैं कि हम कौन-सी पदवी पर हैं, और यह कि प्रभु यीशु दयालु हैं, ताकि वे हम में से प्रत्येक को हमारे-अपने कर्मों के अनुसार, और छोटे को उनकी छोटी-सी स्थिति के अनुसार विश्राम प्रदान करें, जैसा कि उन्होंने कहा: *'मेरे पिता के घर में बहुत से घर हैं'* (यूहन्ना 14:2)। क्योंकि यद्यपि एक ही राज्य है, फिर भी प्रत्येक को उसमें अपनी-अपनी जगह और अपना-अपना काम मिलता है। अतः हे भाइयों, हम आलस्य के विरुद्ध प्रयत्न करें; हम अंधकार के आवरण—अर्थात् विस्मृति—को उतार फेंकें और पश्चाताप के प्रकाश को निहारें। आइए हम मर्ता और मरियम के उदाहरण को हृदय में ग्रहण करें, जो शोक और विलाप का प्रतिनिधित्व करती हैं—वे जो उद्धारकर्ता के सामने विलाप करती हैं, उनसे लाजरुस को उठाने की विनती करती हैं, अर्थात् अपने ही कई इच्छाओं के पट्टी से बँधे हुए मन को। वह, यद्यपि वह दया दिखाता है और उन्हें कार्य के लिए प्रेरित करता है, फिर भी इन पट्टियों को खोलने और उसे (जाने के लिए)। जब लाजरुस को मुक्त किया जाता है, तो मरियम और मार्था की लगन स्पष्ट हो जाती है। इसके बाद, निम्नलिखित देखा जाता है: लाजरुस यीशु के साथ निश्चिंत होकर लेटा है, मार्था उत्साह और आनंद के साथ अपनी सेवा करती है, जबकि मिरयिम, मुर्र का एक अलबस्टर का पात्र लाकर, प्रभु के पैरों पर अभिषेक करती है।

२०. इसलिये हे भाइयो, हम अपनी पूरी सामर्थ्य से यत्न करें, और परमेश्वर अपनी अति दया के द्वारा हमारी सहायता करेंगे। यदि हमने अपने हृदयों को शुद्ध नहीं रखा है, जैसा हमारे पूर्वजों ने किया था, तो कम से कम हम अपने शरीरों को पाप रहित रखने का प्रयास करें, जैसा परमेश्वर चाहता है; और हम यह विश्वास करें कि, इस अकाल के समय में जो हम पर आया है, वह हम पर भी दया करेगा, जैसे उसने अपने सभी संतों पर की है। क्योंकि यद्यपि सूर्य की महिमा एक है, और चंद्रमा की महिमा दूसरी, और एक तारा दूसरे तारे से महिमा में भिन्न है, तथापि वे सब एक ही आकाश में बसते हैं, और उनकी महिमा और आदर अब से अनंतकाल तक उसी का है। आमीन।

२१. नए मनुष्य के आचरण पर

1. मेरे प्रिय भाइयो! एक यहूदी की पहचान तीन बातों से होती है: खतना, पासोवर और सब्बाथ। क्योंकि उत्पत्ति की पुस्तक में लिखा है: *'तुम्हारे यहाँ जो भी पुरुष संतान हो, चाहे वह तुम्हारे घर में जन्मा हो या पैसे देकर खरीदा गया हो, उसे आठवें दिन खतना किया जाएगा।' परन्तु जो कोई ख़तना न कराए, वह अपनी प्रजा में से अलग किया जाएगा, क्योंकि उसने मेरी वाचा का पालन नहीं किया है'* (उत्पत्ति 17:12, 14)। अब्राहम पहले व्यक्ति थे जिनका खतना हुआ, जो इस बात का संकेत है कि उनकी 'प्राकृतिक प्रवृत्ति' मर गई थी – अर्थात्, यह प्रभु यीशु द्वारा अपने पवित्र शरीर में प्रकट किए गए नए मनुष्य की प्राचीन समय में एक पूर्व-झाँकी थी, ताकि पुरुष लिंग को ढकने वाली प्राचीन 'दुष्टता' को काटकर अलग किया जा सके। इसके बारे में प्रेरित ने भी कहा: *'तुम में भी मसीह के खतना में खतना हुआ है, जो हाथों से नहीं हुआ, बल्कि पाप भरे शरीर के खतना में हुआ है; और तुम उसके साथ बपतिस्मा में दफनाए गए, और उसी के साथ विश्वास के द्वारा परमेश्वर की सामर्थ्य से जी भी उठे'* (कुलु. 2:11, 12)। और फिर: *'अपना पुराना स्वभाव उतार दो, जो अपनी कपटी इच्छाओं से भ्रष्ट हो रहा है, और अपने मन की आत्मा में नए हो जाओ, और नया स्वभाव पहन लो, जो परमेश्वर के समान सच्चे धार्मिकता और पवित्रता में बनाया गया है'* (इफिसियों 4:22-24)। और फिर: 'पाप के प्रति मिरो, परन्तु धार्मिकता में जियो' (1 पतरस 2:24)। – यह (एक यहूदी के पहले कर्तव्य के बारे में) खतना का संदर्भ देता है। जिसके पास यह नहीं है वह खतना न किया हुआ और यहूदी नहीं है, क्योंकि उन्होंने उस वाचा का पालन नहीं किया है जिसे प्रभु यीशु ने अपने पवित्र रक्त से स्थापित की थी।

२. पवित्र पासोव के विषय में बहुत कुछ कहा जा सकता है। (पहला – खतना; दूसरा – पासोव; तीसरा – सब्बाथ)। क्योंकि मूसा कहते हैं: *'पासोव का विधान यह है: कोई परदेशी इसे न खाए; और हर दास या धन से खरीदे गए को, तुम उसका खतना करोगे, और तब वह इसे खा सकता है। कोई भी अनसुनत व्यक्ति इसे नहीं खाएगा। इसे एक ही घर में खाया जाएगा'* (निर्ग. 12:43, 46)। *'तुम्हारे कमर कसे हुए, तुम्हारे पैरों में जूते और तुम्हारे हाथों में डंडे हों'* (निर्गमन 12:11)। *'पासओवर*—यह आग में पकाया हुआ रोटी—अनखमीरी रोटी और कड़वी जड़ी-बूटियों के साथ ही खाई जानी चाहिए। उसने यह नहीं कहा: 'अपनी कमर कसकर', कहीं कोई यह न कहे कि वह यहाँ एक कमरबंद की बात कर रहा है, बल्कि: 'अपनी कमर कसकर', यह दिखाने के लिए कि वह पवित्रता की बात कर रहा है, जो अशुद्धता में यौन संभोग से उत्पन्न होने वाली हर वासना से मुक्त है। *'चप्पलें'* बोलने के लिए तत्परता, और किसी भी ऐसे आघात से भागने का संकेत देती हैं जो विवेक को नुकसान पहुँचाता है और मन को अपनी ही अशुद्धता में निहित कामुकता से उत्पन्न होने वाले हर जुनून से मुक्त होकर शुद्धता में आत्म-चिंतन करने से रोकता है। *'लाठी'* पुरुषोचित आशा है, ताकि कोई निडर

होकर मार्ग पर चल सके और प्रतिज्ञात देश में प्रवेश कर सके: ये वे हैं जिन्होंने सब्बाथ का पालन किया है। *'रक्त'* हमारे प्रभु यीशु मसीह के रक्त का प्रतीक है, और यह कि जब वह अपनी आगमनी में आएँगे और इस्राएल के पुत्रों को अपनी विरासत में ले जाएँगे, तब जो लोग तैयार हैं और अपने आत्माओं में उनके चिन्ह से अभिषिक्त हैं, वे प्रकट हो जाएँगे। *'हिसोप का एक बंडल'* लेना दुःख का प्रतीक है, क्योंकि कहा गया है: '(पासओवर को) कड़वी जड़ी-बूटियों के साथ खाओ'। तो, हे भाई, अपने आप को परखो: क्या तुम खतना किए हुए हो? क्या तुमने अपने घर के द्वार-स्तंभों पर निर्दोष मेम्ने के लहू से अभिषेक किया है? क्या तुमने अपने आप को हर सांसारिक विचार से शुद्ध किया है? क्या तुमने बिना भय के यात्रा करने और प्रतिज्ञात देश में प्रवेश करने के लिए खुद को तैयार किया है?

3. और सब्बाथ के विषय में बहुत कुछ कहा जा सकता है – और यह उन लोगों का भाग है जिन्हें सच्ची खतना की अनुग्रह मिली है, जो पवित्र पासओवर में भाग लेते हैं, जिन्हें मिस्रियों से छुड़ाया गया है, जिन्होंने उन्हें सभी को लाल सागर में डूबते हुए देखा है, और जिन्होंने अपनी कड़वी दासता से मुक्त होने के बाद सब्बाथ का पालन किया है। क्योंकि (ईश्वर) ने मूसा से *कहा: 'छह दिन तक परिश्रम करना, परन्तु सातवें दिन तेरे परमेश्वर के लिए विश्राम का दिन होगा'* (निर्ग. 20:9–10)। *'जो कोई उस दिन कोई काम करे, उस प्राण को काटा जाएगा'* (निर्ग. 31:14)। हमारे प्रभु यीशु ने स्वयं सच्चे सब्त का पालन किया, और अपने लोगों को इसका पालन करना सिखाया, शुक्रवार को (क्रूस पर) चढ़ने से पहले इसके लिए हर तैयारी करने के बाद, – अर्थात्, वे अपमान जिन्हें उन्हें झेलना पड़ा और जो उन्होंने हमारे लिए सहन किए, खुद को क्रूस पर ठोकते हुए, और जब तक उनमें सांस थी, तब तक उन्होंने खुद को किसी भी तरह से राहत देने या बख्शने की जहमत तक नहीं उठाई। जब उन्होंने पुकारा, *'मुझे प्यास लगी है'*, तो उन्होंने उनके पास सिरका लगा स्पंज लाया, और उन्होंने उसे चखकर कहा: *'यह पूरा हो गया' और उन्होंने अपना सिर झुकाया और अपनी आत्मा दे दी'* (यूहन्ना 19:28-30)। फिर उन्होंने उन्हें (सलीब से) उतारकर ज़मीन पर लेटा दिया, जहाँ वे अचल पड़े रहे, और उन्होंने सचमुच सब्त का पालन किया। इस प्रकार, अंततः प्रभु यीशु ने सातवें दिन विश्राम किया और उसे धन्य ठहराया, क्योंकि उसी दिन उन्होंने अपने सभी कार्यों से विश्राम लिया, जिनके द्वारा उन्होंने मानवीय वासनाओं को समाप्त किया, जैसा कि प्रेरित ने भी कहा है: *'उसकी विश्राम में प्रवेश करके, वह भी अपने कार्यों से विश्राम कर चुका है, जैसे परमेश्वर ने अपने कार्यों से विश्राम किया'* (इब्रानियों 4:10)। यह सच्चा सब्त है! इसलिए, जो सब्त का पालन नहीं करता वह यहूदी नहीं है। यिर्मयाह ने अपने लोगों पर रोते हुए उनसे यह क्यों कहा: 'सब्त के दिन बोझ मत उठाओ, और न सब्त के दिन बोझ उठाए हुए यरूशलेम के द्वारों से निकलना' (यिर्म. 17:21)?

4. हाय मुझ पर, मैं दुष्ट मनुष्य, जिसने ऐसे पवित्र आज्ञाओं का उल्लंघन किया है और सब्त पर भारी बोझ उठाता हूँ, यद्यपि मैं उसके (मसीह) साथ मरा हूँ, उसके साथ ...नाया गया हूँ, और सब्त का पालन किया है! तो फिर, ये कौन से भारी बोझ हैं जो मैं उठाता हूँ? (वे आवेग हैं) जिनके द्वारा मैं कार्य करता हूँ: क्रोध एक भारी बोझ है, उत्साह, घृणा, अहंकार, निंदा, आहत भावनाएँ और अपमान, दंभ, स्वयं को धर्मी समझना, हावी होना, झगड़ालूपन, आत्म-प्रेम, ईर्ष्या। ये आत्मा के भाव हैं; जहाँ तक शरीर के भावों का सवाल है – अतिसिंचिन, कामुकता, दिखावे का शौक, सुखवाद, वासना, और हृदय की कठोरता (शायद निर्दयता)। इन सभी और इसी तरह के भावों को प्रभु यीशु ने संतों के शरीरों में समाप्त कर दिया और अपने पवित्र शरीर, , में मृत्यु पर पहुँचा दिया, प्रेरित के वचनों के अनुसार, कि उन्होंने *'क्रूस के द्वारा शत्रुता को मार डाला, और आज्ञाओं में समाहित आज्ञाओं के विधान को निरस्त कर दिया'* (इफिसियों 2:16, 15) – जो पवित्र सब्बाथ है। तो, जो कोई इन भारी बोझों (वासनाओं के) को उठाता है और (उनके अनुसार) काम करता है, और सबाथ पर उनमें लिप्त रहता है, वह कैसे कह सकता है: 'मैं एक सच्चा यहूदी हूँ'? ऐसा व्यक्ति स्वयं को धोखा देता है, क्योंकि केवल नाम का ही उसे धरोहर मिला है। क्योंकि वह प्रभु यीशु से कुछ भी ग्रहण नहीं करेगा, क्योंकि वह अपने कर्मों द्वारा उस का इनकार करता है, जिसने उस को जी उठाया जिसे प्रभु ने मार डाला था, और उस को फिर से स्थापित किया जिसे उसने दफनाया था। यह स्पष्ट है कि ऐसा व्यक्ति सच्चा यहूदी नहीं, बल्कि एक झूठा यहूदी है—और न तो उसका खतना हुआ है और न ही उसने सब्त का पालन किया है। इसलिए, जब प्रभु यीशु अपनी महिमा में आएँगे, तो वे अपनी अनंत राज्य में केवल इस्राएल के सच्चे पुत्रों को ही प्रवेश देंगे, अर्थात् उन सभी को जो उनमें खतना किए हुए हैं, जिन्हें उन्होंने सभी राष्ट्रों से इकट्ठा किया है, जैसा कि प्रेरित कहते हैं – कि *'इस्राएल पर एक आंशिक कठोरता आई है, जब तक कि सभी अन्यजातियों का पूरा संख्या प्रवेश नहीं कर लेती'* (रोमियों 11:25), और फिर: *'यदि कोई इन नियमों के अनुसार चलता है, तो उन पर और परमेश्वर के इस्राएल पर शान्ति और दया हो'* (गलातियों 6:16)। क्या आप देखते हैं कि परमेश्वर के इस्राएली कौन हैं? – वे वे हैं जिनका हृदय का खतना हुआ है, और जो सब्त का पालन करते हैं, और पाप से मुक्त होते हैं। फिर वह (वही प्रेरित) कहता है: *'क्योंकि जो केवल देह में यहूदी है, वह यहूदी नहीं है, और न ही वह खतना जो देह में बाहरी है; परन्तु जो भीतर से यहूदी है, वही यहूदी है, और खतना वह है जो हृदय का है, आत्मा में, न कि अक्षर में'* (रोमियों 2:28-29)।

5. अतः हे भाइयों, हम अपने विषय में सावधान रहें! हम कब तक परिश्रम करेंगे और फिर लापरवाही से अपनी मेहनत को बर्बाद कर देंगे, यह न जानते हुए कि हमारे भीतर हमारा शत्रु वास करता है, जो हमें खुशामद करता है और (सही बात से) निरंतर हमारा ध्यान भटकाता है, जिससे हमारी आँखें दिव्य स्वभाव की कोई भी रोशनी देखने से वंचित रह जाती हैं? हे दीन आत्मा, अपने आपको परखो, तुम जो मसीह में और उनकी मृत्यु में बपतिस्मा पाए हो। उन्होंने कैसी मृत्यु मारी? यदि तुम उनके पदचिन्हों पर चलते हो, तो अपने आचरण से मुझे यह दिखाओ। वह निर्दोष थे, और हर बात में तुम्हारे लिए एक आदर्श प्रस्तुत करते हुए, उन्होंने गरीबी में जीवन यापन किया, फिर भी तुम गरीबी को सहन नहीं कर सकते। उसके *पास सिर रखने के लिए कोई जगह नहीं थी* (मत्ती 8:20), फिर भी आप एक भटकते हुए जीवन (हर जगह एक अजनबी होना) को खुशी से सहन नहीं कर सकते। उसने हर तरह की अपमान सहन किया, फिर भी आप एक भी अपमान सहन नहीं कर सकते। उसने बुराई का बदला बुराई से नहीं दिया, फिर भी आप बुराई का बदला लेने से खुद को रोक नहीं सकते। वह दुख सहते हुए क्रोधित नहीं हुए, परन्तु तुम, दूसरों के लिए बोझ बनते हुए भी और उनकी सेवा करते हुए भी, क्रोधित हो जाते हो। वह अपमानित होते हुए भी शांत रहे, परन्तु तुम तब भी बेचैन हो जाते हो जब तुम्हारा अपमान भी नहीं किया जाता। वह नम्र थे और पापियों को अपने पास बुलाते थे, परन्तु तुम अपने शब्दों से उन लोगों को भी आहत कर देते हो जो तुमसे प्रेम करते हैं। उन्होंने उस सब को आनंदपूर्वक सहन किया जो उन पर डाला गया था, फिर भी तुम, थोड़ी सी भी अपमान पर, विचलित हो जाते हो। वे पाप में पड़े लोगों के प्रति कोमल थे, फिर भी तुम अपने से बहुत बड़े लोगों के प्रति भी अहंकार से व्यवहार करते हो। उन्होंने अपने से पहले पाप करने वालों के प्रायश्चित के लिए स्वयं को अर्पित कर दिया, फिर भी तुम अपने से प्रेम करने वालों के लिए भी स्वयं को अर्पित नहीं कर सकते। यह वही है जो उसने तुम्हें दिया है; तो फिर, तुमने उसे बदले में क्या दिया है? उसे उसके कर्मों से जानो, और अपने आप को अपने कर्मों से जानो। यदि तुम उसके साथ मरे हो, तो फिर (तुम्हारे भीतर) ऐसा पाप कौन कर रहा है?

6. हे प्रिय! आओ हम उसकी पवित्र आज्ञाओं का सचमुच पालन करें, अपनी इच्छा को अलग रखें, और आज्ञाओं के प्रकाश को निहारें। यदि हम केवल उन्हीं से प्रेम करते हैं जो हमारा सम्मान करते हैं, तो हम एक अविश्वासी से क्या अलग कर रहे हैं? यदि आप उन लोगों के लिए प्रार्थना करते हैं जो आप पर अनुग्रह करते हैं, तो तोड़ा वसूल करने वाला भी ऐसा ही करता है। यदि आप उन लोगों के साथ आनंदित होते हैं जो आपकी प्रशंसा करते हैं, तो एक यहूदी भी ऐसा ही करता है। तो फिर आप, जो पाप के लिए मरे हैं और मसीह यीशु में जीवित हुए हैं, ऐसा क्या अतिरिक्त कर रहे हैं? यदि आप केवल उन्हीं से प्रेम करते हैं जो आपकी आज्ञा मानते हैं, तो आप एक पापी से बेहतर क्या कर रहे हैं? वह भी तो ऐसा ही करता है। यदि आप उनसे नफरत करते हैं जो आपको परेशान करते हैं, आपकी अवज्ञा करते हैं और आपसे झगड़ते हैं, तो आप एक अविश्वासी से अलग नहीं हैं। लेकिन आपको ऐसे व्यक्ति के लिए प्रार्थना करनी चाहिए, कि उसे (आपके साथ किए गए अन्याय के लिए) क्षमा मिल जाए। यदि आप उन लोगों के लिए शोक मनाते हैं जो आपकी बदनामी करते हैं, तो एक महसूल अधिकारी भी ऐसा ही करता है।

7. तब, हे प्रभु के नाम से बपतिस्मा पाए हुए, अपने विषय में विचार करो: क्या तुम्हारे कर्म ऐसे हैं जैसे उनमें उसने स्वयं को प्रकट किया? या तुम उसकी महिमा के दिन कैसे प्रकट होगे और मुकुट धारण करोगे, यदि तुम्हारे पास उन वासनाओं पर विजय का मुकुट नहीं है जिन्हें तुमने जीता है—वे वासनाएँ जिन्हें तुम्हारे राजा ने पहले ही जीतकर अपने आप में तुम्हारे लिए एक उदाहरण स्थापित किया है? क्योंकि जब वे, राजाओं के राजा और प्रभुओं के प्रभु, महिमा में प्रकट होंगे, तो वे अपनी महान महिमा में हर राष्ट्र के लिए दृश्यमान होंगे, हमारे लिए अपने दुख का चिह्न धारण किए हुए; लेकिन तुम्हें ऐसा प्रकट होना चाहिए कि तुम्हारे शरीर में उनके कोई भी भाव न हों, और वे तुमसे कहेंगे: 'मैं तुम्हें नहीं जानता।' वहाँ आप उन सभी संतों को देखेंगे जो उनके नाम के लिए मरे, जिन पर उनका चिह्न अंकित है, और आपको उनके सामने खड़े होने में लज्जा आएगी। सभी संतों के जीवन पर विचार करें, और आप पाएँगे कि उन्होंने बुराई सहन की पर बदला नहीं लिया: (केवल) उन सभी का लहू (ईश्वर से) पुकार उठा: 'पृथ्वी पर रहने वालों से हमारा बदला ले लो।' जहाँ तक मेरी बात है, जो शांति-प्रिय हूँ, मैं उस दिन क्या कहूँगा, जब मैं वहाँ भविष्यद्वक्ताओं, प्रेरितों, शहीदों और अन्य संतों को देखूँगा, जो दुर्व्यवहार सहते हुए, धैर्यवान रहे, बदला नहीं लिया, और न ही क्रोधित हुए, क्योंकि वे जानते थे कि यह मानव इच्छा नहीं, बल्कि शैतान की दुष्टता थी, जो उन्हें यह सब करने के लिए मजबूर कर रही थी; चाहे उन्हें मृत्युदंड दिया गया हो, पत्थर मारे गए हों, जलाया गया हो या डुबोया गया हो, उन्होंने अपने उत्पीड़क के प्रति कोई क्रोध नहीं रखा, बल्कि उनके लिए प्रार्थना की कि उन्हें क्षमा मिल जाए, यह जानते हुए कि कौन उन्हें यह सब करने के लिए मजबूर कर रहा था।

८. अतः हे प्रिय भाइ, अपने विषय में विचार कर—तू स्वयं क्या कर रहा है—और अपने मन की परीक्षा कर—कि परमेश्वर की दृष्टि में तेरे पास क्या है। क्योंकि उस घड़ी आप कुछ भी छिपा नहीं पाएँगे; मनुष्य की ईच्छाशक्ति

() से यह नहीं होगा कि वह एक बात कहे (और दूसरी न कहे); परन्तु जब पुनरुत्थान होगा, तब हर कोई अपने कर्मों के वस्त्र में उठेगा—चाहे पापों में या धार्मिकता में। ये कर्म बोलेंगे, और हर कोई अपने लिए जान जाएगा कि उसकी जगह कहाँ है। धन्य है वह जिसने प्रयास किया और उस (पाप) को त्याग दिया जो उसे गेहन्ना में खींचता, और उस (धर्म) को पहन लिया जो उसे राज्य में ले जाएगा। प्रेरित कहते हैं: '*हम जानते हैं कि यदि हमारा यह पृथ्वी का तम्बू, अर्थात् यह शरीर, नष्ट हो जाए, तो परमेश्वर की ओर से हमें एक भवन मिला है, स्वर्ग में हाथों से न बना हुआ एक अनन्त घर*' (2 कुरिन्थियों 5:1)। हमारे जीवन का समय क्षणभंगुर है, और हम स्वयं को धोखा देते हैं (विपरीत सोचकर) जब तक कि हमारी घड़ी नहीं आ जाती – और हम शाश्वत विलाप में शोक से अभिभूत हो जाएँगे।

९. अतःहम अपना हृदय दुर्बल न करें, बल्कि उसकी रक्षा और देखभाल करते हुए, और हर क्षण परमेश्वर की दया से हमारी सहायता करने की याचना करते हुए, अपनी शक्ति से सब कुछ करें। हम अपने पड़ोसियों पर उनके द्वारा मूर्खता में बोले गए शब्दों के लिए क्रोधित न हों, जो उनकी अपनी इच्छा से नहीं, बल्कि किहीं और के प्रभाव में बोले गए हैं; क्योंकि, शत्रु के उपकरण के रूप में सेवा करते हुए, वे परमेश्वर से तब तक अलग हो जाते हैं जब तक कि उन्हें हिसाब-किताब के लिए बुलाया नहीं जाता और वे इस (बुराई के) मार्ग से भाग नहीं जाते। प्रिय, सावधान रहो कि हर बात में विनम्र रहो; निंदा और जो कुछ भी तुम्हें सहना पड़े, उसे सहो, और हर समय अपनी इच्छा को वश में करने का अभ्यास करो, क्योंकि अपनी इच्छा से चिपके रहना सभी सद्गुणों को नष्ट कर देता है। जिसका मन सीधा (सद्भावनापूर्ण) होता है, वह नम्रता से अपनी इच्छा को नियंत्रित करता है, और आत्म-इच्छा से वैसे ही डरता है जैसे कोई साँप से डरता है, क्योंकि यह आत्मा के पूरे आंतरिक क्रम को भ्रष्ट कर देती है और आत्मा को अँधकारमय बना देती है, जिससे वह सद्गुणों के प्रकाश में से कुछ भी नहीं देख पाती। इसलिए, इस शापित वासना से बचने का और भी अधिक ध्यान रखें, जो गुणों को नष्ट करने के लिए उनमें मिल जाती है। इसी प्रकार, हमारे प्रभु यीशु मसीह भी तब तक क्रूस पर नहीं चढ़े जब तक उन्होंने अपने शिष्यों के बीच से यहूदा को बाहर नहीं कर दिया था। और प्रत्येक व्यक्ति, जब तक कि वह इस अपमानजनक जुनून को नहीं काटता, परमेश्वर में फल-फूल नहीं सकता: क्योंकि सभी बुराइयाँ इसके पीछे आती हैं: अधीरता इससे आती है, व्यर्थता इससे आती है; जो कुछ भी ईश्वर घृणा करते हैं, वह आत्म-तुष्ट और घमंडी की आत्मा में निवास करता है – और जो कुछ भी वे अपने हृदय को दिव्य होने के लिए मनाते हैं, वह सभी धर्मग्रंथों के अनुसार झूठा है।

10. पहले स्वयं का न्याय करना विनम्रता लाता है, जबकि बुद्धिमानी से अपने पड़ोसी के लिए अपनी इच्छा को त्यागना विनम्रता है। पवित्रता ईश्वर से '[28] ' (मेरी रक्षा करो) प्रार्थना करना है; न्याय न करना प्रेम है। धीरज अपने पड़ोसी के खिलाफ कोई बुरा विचार न रखना है। ईश्वर-प्रेमी हृदय बुराई का बदला बुराई से न चुकाना है। मौन उन मामलों में दखल न देना है जो आपसे संबंधित नहीं हैं। गरीबी द्वेष से मुक्त हृदय है। अपनी भावनाओं पर नियंत्रण ही शांति है। (सभी चीजों को) सहना ही नम्रता है। दान ही क्षमा है। यह सब अपनी इच्छा को वश में करने से उत्पन्न होता है। यह सद्गुणों के बीच सामंजस्य लाता है। यह शासक मन को शांत करता है।

11. इन सबका निष्कर्ष है: जैसा कि मैं सभी धर्मग्रंथों में देखता हूँ, ईश्वर मनुष्य से और कुछ नहीं चाहता, सिवाय इसके कि वह हर बात में अपने पड़ोसी के सामने स्वयं को नम्र करे, हर चीज़ के संबंध में अपनी इच्छा को त्याग दे, मनुष्य की सहायता के वरदान के लिए और विस्मृति की नींद तथा बंधन के प्रलोभन से अपनी आँखों की रक्षा के लिए हमेशा उनसे प्रार्थना करे, क्योंकि मानव स्वभाव चालाक और चंचल है। (हमें) संरक्षित रखना उसका (ईश्वर का) कार्य है। (हम स्वयं को) संरक्षित रखने की शक्ति प्रदान करना उसकी शक्ति है। हमारी दरिद्रता से हमें बचाना उसकी सुरक्षा है। यह उसकी ओर मुड़ना है – हमें अपनी ओर मोड़ना। यह उसका धन्यवाद है – हमें यह प्रदान करना। यह उसकी कृपा है – हमें धन्यवाद देने की कृपा प्रदान करना। यह उसकी सुरक्षा है – हमें हमारे शत्रुओं के हाथ से बचाना। उसकी महिमा और सम्मान युगानुयुग हो। आमीन।

12. परन्तु, यह वही है जो कलह को जन्म देता है, और जो निर्दयता से आत्मा को भ्रष्ट करता है: अनावश्यक बातें, व्यर्थ की बातें, अपने उद्देश्यों के अनुसार शब्दों को तोड़ना-मरोड़ना (गलत व्याख्या), आत्म-संयम की कमी, दोहरा जीभ होना, और अपनी बात पर अड़े रहना। जिस किसी में ये बातें होती हैं, उसकी आत्मा सद्गुणों से विहीन है। इन सब के बाद, यदि आत्मा प्रत्येक सद्गुण पर परिश्रम नहीं करती है, तो वह परमेश्वर के पुत्र की विश्राम-स्थली को प्राप्त नहीं कर पाएगी। अत; हे भाइयों, अपने जीवन के प्रति लापरवाह न बनो, और अपने मन को दुष्ट सुस्ती के लिए हर तरह के बहाने बनाने न दो, कहीं ऐसा न हो कि परमेश्वर के पुत्र की विश्राम-स्थली को प्राप्त करने से पहले

---

[28] पाइसियस के संस्करण में यहाँ लिखा है: 'जिस चीज़ को कोई अपना नहीं मानता, वह उसे विलाप से रिक्त कर देती है'; यह ग्रीक पांडुलिपि में नहीं मिलता है। लैटिन संस्करण में लिखा है: 'जो अपने ही जुनून से घृणा करता है, वह विलाप और आँसुओं में रहता है'।

ही तुम्हारा सारा समय व्यर्थ हो जाए: अर्थात्, सभी बातों में नम्रता, द्वेष से मुक्ति, किसी भी व्यक्ति के प्रति घृणा न रखना, परमेश्वर की नहीं होने वाली किसी भी वस्तु से आसक्ति न रखना, अपने पापों को अपनी आँखों के सामने रखना, और हर बुराई को मार डालना। और *'परमेश्वर झूठा नहीं'* (तीतुस 1:2) – ताकि वह अपनी भरपूर कृपा से हमारी कमज़ोरियों में हमारी सहायता कर सके। आमीन।

23. पूर्णता पर

1. एक संत ने कहा कि जब तक कोई व्यक्ति ईश्वर में विश्वास, ईश्वर के लिए अटूट लालसा, द्वेष की कमी, बुराई का बुराई से प्रतिफल न देने, ईश्वर के लिए दुख सहने, विनम्रता, पवित्रता, अपने पड़ोसी से प्रेम, सभी चीजों का त्याग , नम्रता, धैर्य, और एक दुखी हृदय से ईश्वर से अटूट प्रार्थना प्राप्त नहीं करता, सच्चा प्रेम, पीछे मुड़कर न देखना, अपने साथ जो कुछ भी घटित होता है उसे नज़रअंदाज़ करना, अपने अच्छे कर्मों या सेवा (प्रार्थनापूर्ण श्रम – *लेइटॉर्गिया*) पर भरोसा न करना, और दिन-प्रतिदिन जो कुछ भी घटित होता है उसके खिलाफ ईश्वर की मदद मांगना – तब तक वह उद्धार नहीं पा सकता।

२. हे मनुष्य, तेरे शत्रु सुस्त नहीं हैं। लापरवाह न हो, अपने विवेक की अवहेलना न कर, और जब तक तू अपने शत्रुओं की भूमि में है, तब तक किसी भी तरह यह विश्वास न कर कि तूने परमेश्वर के योग्य कुछ प्राप्त कर लिया है। ईश्वर के लिए कष्ट सहना (तपस्वी शारीरिक वंचितताएँ), जब बुद्धिमानी से किया जाए, तो पिछली लापरवाही की भरपाई करता है; आत्मा का विलाप आंतरिक विरोधियों द्वारा दिए गए घावों को भर देता है; ईश्वर के प्रति पूर्ण प्रेम, उनकी इच्छानुसार, अदृश्य योद्धाओं का सामना करता है; और आंतरिक पवित्रता, जो अदृश्य शत्रुओं को जीतती है, मनुष्य को ईश्वर के पुत्र के विश्राम के लिए तैयार करती है, जबकि दृश्यमान पवित्रता सद्गुणों की रक्षा करती है।

३. यदि ज्ञान (जो कुछ भी कहा गया है) का जनक है, तो वह उसका संरक्षक भी है। प्रलोभन के दौरान (हृदय में) कृतज्ञता की प्राप्ति स्वयं प्रलोभनों को उनके विरुद्ध मोड़ देती है। इस पर संदेह करना कि आपकी मेहनत परमेश्वर को प्रसन्न करती है, आपको बचाने के लिए परमेश्वर की सहायता को तैयार करता है। जिसने सत्य में ईश्वर की धर्मपरायण खोज के लिए अपना हृदय समर्पित कर दिया है, वह यह विचार भी नहीं कर सकता कि उसने ईश्वर को प्रसन्न कर लिया है। जब तक उसका अंतरात्मा उसे किसी भी असामान्य बात के लिए दोषी ठहराता है, वह स्वतंत्रता से अपरिचित रहता है। जब तक कोई अभियोजक है, तब तक कोई न्यायाधीश भी है; और जब तक न्याय है, तब तक स्वतंत्रता नहीं है। यदि, अंततः प्रार्थना करते समय, आप देखते हैं कि कोई भी बुराई आपको दोषी नहीं ठहराती है, तो आप वास्तव में स्वतंत्र हैं, और उसकी इच्छा के अनुसार, उसकी पवित्र विश्राम में प्रवेश कर चुके हैं।

४. यदि आप देखते हैं कि अच्छे फल ने आपके भीतर जड़ें जमा ली हैं, और शत्रु की निंदनीय जड़ें अब इसे घुट नहीं रही हैं; यदि विरोधी—चूँकि आप अब अपनी ही इच्छाओं से संघर्ष नहीं कर रहे हैं—स्वयं अपनी इच्छा से नहीं हटे हैं, धोखे में आकर पीछे नहीं हटे हैं; यदि एक बादल ने आपके तम्बू पर छाया कर ली है, और न तो दिन में सूरज आपको जलाता है और न ही रात में चंद्रमा (भजन संहिता 120:6), यदि आपके भीतर मंडप की सभी व्यवस्थाएँ (सभी साज-सामान) हैं, ताकि आप उसे परमेश्वर की इच्छा के अनुसार खड़ा कर सकें और उसकी रक्षा कर सकें, तो (जान लें कि) परमेश्वर द्वारा आप में विजय प्राप्त हो चुकी है, और अब से वह (आपके) मंडप पर छाया डालेगा, क्योंकि यह उसका है, वह इसके सामने-सामने जाएगा और इसके लिए एक स्थान तैयार करेगा (विश्राम, शांति)। क्योंकि यदि वह पहले उस स्थान पर विश्राम नहीं करता जिसे वह चाहता है, तो यह भी, जैसा कि धर्मग्रंथ कहता है, विश्राम नहीं कर सकता (शांति नहीं पा सकता) (गिनती 9:16-23)।

५. जब तक कोई व्यक्ति होश में नहीं आ जाता और यह स्पष्ट रूप से नहीं देख लेता कि उसमें अब (शत्रुओं के पंक्तियों से) कोई भी ऐसा नहीं है जो अस्वाभाविक प्रथाओं को सिखाकर मठवासी जीवन को बाधित करने का प्रयास करता है, तब तक बहुत खतरा रहता है। इसलिए हमें यह सुनिश्चित करना चाहिए कि उसकी भलाई (ईश्वर की, या भले ईश्वर की) का भय हम पर राज करे, कि स्मरण (मृत्यु और न्याय का) हमें लगातार सताए, और कि पवित्र नम्रता हर समय हमारे हृदयों पर राज करे, ईश्वर की कृपा से, (और इसके लिए हमें) उस चीज़ की उपेक्षा नहीं करनी चाहिए जो इन सभी (पवित्र भावनाओं और प्रवृत्तियों) को तैयार करती और संरक्षित करती है, बल्कि अंत तक इसी मानसिकता में दृढ़ रहना चाहिए – लगातार अपने पापों को देखते हुए, और जब तक हम बुराई की दासता में हैं, तब तक किसी भी बात में स्वयं पर भरोसा न करते हुए।

६. जब कोई अपने पड़ोसी की निंदा करता है, अपने भाई को मन में कोसता और तुच्छ समझता है, थोड़े से अवसर पर उस पर गाली-गलौज करता है, क्रोध में उसे समझाता है, या दूसरों के सामने उसकी बदनामी करता है, तो यह उसे

संतों द्वारा प्राप्त अनुग्रह और सद्गुणों से अलग कर देता है। क्योंकि यह एक व्यक्ति द्वारा किए गए श्रम को नष्ट कर देता है, और उनके अच्छे फलों को समाप्त कर देता है। जो कोई कहता है, 'मैं अपने पापों पर शोक करता हूँ,' फिर भी जैसा कहा गया है वैसा कुछ नहीं करता, वह मूर्ख है। जो कोई कहता है, 'मैं अपने पापों पर रोता हूँ,' फिर भी उससे कुछ हासिल नहीं करता, वह खुद को धोखा दे रहा है।

७. जो मौन की खोज करता है, परन्तु साथ ही अपने जुनून को काटने का प्रयास नहीं करता, वह सद्गुण की खोज में अंधा है। जो अपने पापों की उपेक्षा करता है और केवल दूसरों को सुधारने में लगा रहता है, वह पूरे मन से की जाने वाली प्रार्थना और परमेश्वर से की जाने वाली विवेकपूर्ण विनती से अपरिचित है। यही सच्ची बहादुरी है – जब कोई व्यक्ति अपने अतीत के पापों के विरुद्ध संघर्ष करता है, जिनके लिए वह क्षमा मांगता है, और हमेशा यह विनती करता है कि वह उनमें फिर से न पड़े, न अपने हृदय में, न अपने कार्यों में, और न ही अपनी भावनाओं में।

8. जब तक उसके पापों की याद लगातार उसके दिल पर हावी रहती है, और उसे संसार की सभी चीज़ों से दूर नहीं कर देती, ताकि वह उस पर काबू न पा सके, तब तक वह अपने पापों को नहीं रोक सकता; और, केवल उन्हीं के बारे में सोचकर संतुष्ट रहकर, वह परमेश्वर की सृष्टि की निंदा से बच नहीं सकता। धन्य है वह जिसे सत्य में इसके योग्य माना गया है, न कि पाखंड या छल से। इसके अलावा, यह उन लोगों का काम है जो सचमुच शोक मनाते हैं: इस दृश्यमान कार्य के माध्यम से, अपने मन और इंद्रियों को अपने पड़ोसी की निंदा न करने की ओर निर्देशित करना। क्योंकि यदि आप केवल अपने ही पापों में उलझे रहने में ही संतुष्ट हैं, तो यह आपको अपने पड़ोसी के पापों से अलग कर देगा—और आपको उन्हें भूलने का कारण बनेगा।

९. बुराई का बदला बुराई से चुकाना सच्चे शोक से बहुत दूर है। व्यर्थ के अहंकार के कारण सांसारिक किसी भी चीज़ के अनुरूप होना भी इससे बहुत दूर है, यहाँ तक कि विचारों में भी। इस बात पर दुख करना कि इस रूपवाद के संबंध में आपकी राय स्वीकार नहीं की गई है, इससे बहुत दूर है। अपना मनमानी करना इससे बहुत दूर है। किसी के बारे में यह कहना कि वह अच्छा या बुरा है, उसके लिए शर्म की बात है, क्योंकि वह अच्छी तरह जानता है कि वह खुद उनसे भी बदतर है। किसी ऐसे मामले के बारे में जानने की इच्छा रखना जो उसका मामला नहीं है, उसके लिए शर्म, साथ ही अज्ञानता और एक बुरी दासता का स्रोत है जो उसे अपने पापों को देखने से रोकती है।

10. यदि कोई आपको अन्याय करता है और आप उससे आहत होते हैं, तो वास्तव में यहाँ (ईश्वर का भय) नहीं है। यदि आपके कोई सांसारिक लेन-देन हैं और, हानि उठने पर, आप उस पर शोक करते हैं, तो यहाँ ईश्वर का भय नहीं है। यदि लोग आपके बारे में कुछ ऐसा कहते हैं जिसका आपको पता भी नहीं है, और आप उससे विचलित हो जाते हैं, तो इसमें (ईश्वर का भय) नहीं है। यदि कोई आपकी प्रशंसा करता है और आप उसे स्वीकार करते हैं, तो इसमें (ईश्वर का भय) नहीं है। यदि कोई आपको डांटता है और आप उससे नाराज़ हो जाते हैं, तो इसमें (ईश्वर का भय) नहीं है। यदि आप दुनिया के महान और प्रसिद्ध लोगों की तलाश करते हैं, उनकी दोस्ती चाहते हैं, तो यहाँ (ईश्वर का भय) नहीं है। यदि, आपसे बात करते समय, कोई आपसे बहस करता है और आप अपनी बात पर ही अड़े रहना चाहते हैं, तो यहाँ (ईश्वर का भय) नहीं है। यदि आपके शब्दों का तिरस्कार किया जाता है और आप उस पर शोक करते हैं, तो वहाँ (ईश्वर का भय) नहीं है। यह सब पुराने मनुष्य को प्रकट करता है, कि वह अभी भी जीवित है और अपनी शक्ति का प्रयोग कर रहा है, क्योंकि वहाँ (अंदर) कोई भी उसका विरोध करने वाला नहीं है (ईश्वर का भय नहीं है), और न ही कोई सच्चा शोक है।

11. जो ईश्वर के अनुसार कार्य करता है, उसकी आँखें भेदभाव करने वाली होनी चाहिए ताकि वह स्वयं को पहचान सके (और यह महसूस कर सके) कि वह ईश्वर का शत्रु बन जाता है (जब वह अपनी इच्छा में लिप्त होता है)। यदि आप, ईश्वर की आज्ञाओं के पालक के रूप में और ईश्वर के लिए अपने सभी कर्म बुद्धिमानी से करते हुए, यह ध्यान में रखते हैं कि आप ईश्वर को उनकी महिमा के अनुरूप प्रसन्न नहीं कर सकते, और अपने पापों को अपनी आँखों के सामने रखते हैं, तो आप उन्हें उस दुष्ट (आत्मा) का विरोध करते हुए पाएँगे जो आपको अपनी धार्मिकता की धारणा से नीचे लाने का प्रयास करता है, – और वे उस संरचना को बनाए रखेंगे जो आपके विलाप ने आपके लिए बनाई है। तब आपको एहसास होगा कि आप स्वयं को और आप कहाँ रहते हैं (आप किस अवस्था में हैं), यह जान गए हैं, और आप अपने ही दिल पर विश्वास नहीं करेंगे कि आपने जीत हासिल कर ली है। क्योंकि जब तक कोई व्यक्ति न्याय-सिंहासन के सामने नहीं खड़ा होता, और अपने बारे में (अंतिम) फैसला नहीं सुनता, और यह नहीं जान लेता कि उसकी जगह क्या है, तब तक वह इस पर विश्वास नहीं कर सकता, क्योंकि यह डर बना रहता है कि क्या उसने परमेश्वर को प्रसन्न किया है। ईश्वर के लिए दुख, जो हृदय को कुरेदता है, भावनाओं को नियंत्रित कर सकता है, और (ऐसे विचारों का) विरोध, संयम के साथ मिलकर, मन की शक्तियों को संरक्षित रखता है। लेकिन मनुष्य इससे असंतुष्ट है, और यह विश्वास नहीं कर पाता कि जब तक वह शरीर में है, उसे लगातार परिश्रम क्यों करना चाहिए।

12. धन्य हैं वे जो अपने कर्मों पर निर्भर होकर भरोसा नहीं करते, जैसे कि वे प्रभु को प्रसन्न कर रहे हों, और जो अपने कर्मों में इतने अविश्वास के कारण परमेश्वर से मिलने में लज्जित होते हैं, उसकी महिमा को समझकर, और सर्वप्रथम उसकी इच्छा के अनुसार उसकी इच्छा करने का प्रयत्न करते हुए; अपनी दुर्बलता को पहचानकर और स्वयं के लिए दुखित होकर, स्वयं के लिए शोक मनाते हुए, परमेश्वर की बाकी सृष्टि की परवाह किए बिना, जिसका न्याय स्वयं वही करेगा। जो (ईश्वर में) परिश्रम करता है उसकी विजय तब प्रकट होगी, जब वह ईश्वर के साथ पूर्ण रूप से एक हो जाने के बाद, उनकी इच्छा के अनुसार देहांत को प्राप्त होता है। लिखा है कि उसका नाम जीवन की पुस्तक में अंकित किया जाएगा – जब स्वर्गीय स्वर्गदूत गवाही देंगे कि वह इस संसार के अधिपतियों से पार हो गया है[29] । तब से उसकी स्मृति स्वर्गीय (निवासियों) के साथ रहेगी। परन्तु जब तक लड़ाई जारी है, मनुष्य भय और आतंक में रहता है, क्योंकि आज वह विजयी हो सकता है, फिर भी कल पराजित हो सकता है—या आज पराजित हो सकता है, फिर भी कल विजयी हो सकता है।

13. संघर्ष हृदय को संकुचित करता है, जबकि निर्लिप्तता अडिग रहती है। इसने पहले ही अपना मुकुट प्राप्त कर लिया है और तीन (हमारे) अलग (अंगों) की नियति के बारे में चिंतित नहीं है, जब वे परमेश्वर में एक-दूसरे के साथ शांति प्राप्त करते हैं। ये तीन भाग हैं: आत्मा, शरीर और पवित्र आत्मा, प्रेरित के अनुसार, जो अपनी दूसरी पत्री में इनके बारे में और भी लिखते हैं (1 थिस्स. 5:23)। इस प्रकार, जब पवित्र आत्मा की क्रिया द्वारा ये तीनों एक हो जाते हैं, तो वे (एक दूसरे से) फिर कभी अलग नहीं किए जा सकते। इसलिए मसीह, मरकर जी उठे, *'फिर कभी नहीं मरेगा; मृत्यु का उस पर फिर अधिकार नहीं रहेगा'* (रोमियों 6:9)। उनकी मृत्यु हमारा उद्धार थी, क्योंकि अपनी मृत्यु से उन्होंने पाप को मार डाला, और उनका पुनरुत्थान उन सभी के लिए जीवन था जो दृढ़ता से उन पर विश्वास करते हैं। उन्होंने (अपने लोगों को) उनके जुनून से चंगा किया, ताकि वे परमेश्वर में जी सकें और धार्मिकता का फल दे सकें।

14. जब तक तुम अपने शत्रुओं से (पापपूर्ण प्रलोभनों के) कष्ट सहते हो, तब तक स्वयं को (पाप के लिए) मृत न समझो, चाहे जागते हुए हो या सोते हुए: क्योंकि जब तक दरिद्र व्यक्ति दौड़ के मैदान में रहता है, उसमें कोई धैर्य नहीं होता, और (समापन की ओर) दूर से देखते हुए, वह अपने ही कर्मों पर विश्वास नहीं करता। केवल मूर्ख ही, भले ही वे दिन-प्रतिदिन गिरते रहें, खुद को विजयी समझते हैं, क्योंकि युद्ध के मैदान में कोई संघर्ष नहीं होता।

15. इसीलिए प्रभु ने अपने शिष्यों से कहा, जब उन्हें प्रचार के लिए भेज रहे थे: *'रास्ते में किसी को नमस्कार न करना'*; परन्तु घर में रहने वालों को नमस्कार करना। और *'यदि वहाँ शान्ति का पुत्र हो'*, 'उसके साथ *ठहरना'* (लूका 10:4 आदि)। और वहाँ तुम्हारी शान्ति विश्राम करेगी। फिर, एलीशा ने गेहाजी से जाते समय कहा: *'यदि* तुम किसी *मनुष्य से मिलो, तो उसे नमस्कार मत करना'*, और किसी का नमस्कार स्वीकार मत करना (2 राजा 4:29)। क्योंकि वह जानता था कि लड़का जीवित नहीं होगा, और उसमें उसे जिलाने की कोई शक्ति नहीं थी। परन्तु जब परमेश्वर का पुरुष— —अंदर आया, तो उसने लड़के को पलंग पर लेटा हुआ देखकर दरवाज़ा बंद कर दिया और पूरी तन्मयता से चमत्कारिक कृत्य किए; वह लड़के के पलंग पर चढ़ा-उतरा और सात बार इधर-उधर चला। जब परमेश्वर की आत्मा की इच्छा से उसके इंद्रियाँ जागृत हुईं, तो लड़के की आँखें खुल गईं।

16. तो फिर, हम क्या कहें, हम दीन आत्माएँ जो इस संसार की महिमा से प्रेम करते हैं, ईश्वर की महिमा से भी अधिक, जो युद्ध करना नहीं जानते, परन्तु विश्राम में प्रवेश करने के लिए शीघ्रता कर रहे हैं, और ईश्वर की दीर्घ सहनशीलता को नहीं समझते—कि वह बुरे लोगों को अच्छे फलों के साथ ही छोड़ देता है, और जब तक अच्छा फल पककर पूर्ण नहीं हो जाता, तब तक वह बुरे लोगों को इकट्ठा करने के लिए किसी को नहीं भेजता? और गेहजी ने अपनी यात्रा पूरी कर ली, परन्तु वह लड़के को जिला न सका, क्योंकि उसने परमेश्वर की महिमा से अधिक मानवीय महिमा से प्रेम किया था।

१७. धन्य हैं वे आँखें जो बुद्धि से परमेश्वर की ओर फैलने में लज्जित होती हैं, और जो अपनी बुद्धि से अपने घावों को चंगा करने का प्रयत्न करती हैं, अपने पापों को मानकर और उनकी क्षमा के लिए प्रार्थना करके। किन्तु, वे लोग धिक्कार के पात्र हैं जो अपना समय बर्बाद करते हैं, यह सोचकर कि वे निर्दोष हैं; जो अपने विवेक को कुचलते हैं, क्योंकि वे पश्चाताप की ओर ले जाया जाना नहीं चाहते, और जो यह नहीं पहचानते कि सबसे छोटा होना कोई छोटी बात नहीं है।

18. जैसे एक किसान जो बीज बोता है, यदि वे फल नहीं देते हैं, तो वह उन्हें व्यर्थ में बर्बाद हुआ मानता है और इस फल न देने की विफलता के कारण अपनी मेहनत पर शोक करता है, वैसे ही एक मनुष्य, भले ही वह सभी रहस्यों को जानता हो और हर तरह का ज्ञान रखता हो, कई चमत्कार और चंगाई करता हो, विभिन्न कष्टों को सहता हो,

---

[29] पैसियोस के संस्करण में: 'आकाशीय'।

और यहाँ तक कि अपने कपड़े भी उतार दिए जाएँ, फिर भी वह भय की अवस्था में रहता है, अपने अंतर्मन पर भरोसा नहीं करता, और विश्वासघाती दुश्मनों और बदनाम करने वालों से घिरा रहता है, जब तक कि वह ये शब्द नहीं सुन लेता: *'प्रेम कभी असफल नहीं होता; पर वह सब कुछ विश्वास करता है, सब कुछ आशा करता है, सब कुछ सहन करता है'* (1 कुरिन्थियों 13:8, 7)।

19. हे, परमेश्वर का मार्ग कितना कठिन है, जैसा कि उन्होंने कहा: *'क्योंकि संकीर्ण है वह द्वार और तंग है वह मार्ग जो जीवन की ओर जाता है, और वे थोड़े हैं जो उसे पाते हैं'* (मत्ती 7:14)! और हम, जो आलसी और वासना-ग्रस्त हैं, इस तथ्य में सांत्वना लेते हैं कि हम (कह सकते हैं) उस जुए को नहीं उठा सकते जिसके बारे में उन्होंने बात की: *'मेरा जुआ अपने ऊपर ले लो, और मुझ से सीखो, क्योंकि मैं मन से कोमल और दीन हूँ, और तुम अपने प्राणों को विश्राम पाओगे। क्योंकि मेरा जूआ सुगम है, और मेरा बोझ हल्का है'* (मत्ती 11:29–30)। और जो परमेश्वर के अनुसार बुद्धिमान और उस से डरनेवाला है, वह कौन है जो हर परिश्रम और संसार से अलग होने में, मौन में, (हृदय की) रक्षा में और (मोक्ष की) परवाह में क्लेश सहने के लिए अपनी पूरी शक्ति से प्रयास नहीं करता? फिर भी वह भी अपने होठों से परमेश्वर का नाम उच्चारण करने के लिए स्वयं को अयोग्य पाएगा। हे प्रभु, हमारे भीतर कार्यरत वासनाओं के कारण, प्रभु यीशु (पृथ्वी पर) आए ताकि हम में, *'जो शरीर के अनुसार नहीं बल्कि आत्मा के अनुसार चलते हैं'* (रोमियों 8:1-4), वे उन्हें मृत्यु के घाट उतार सकें, और हमें पिता की पूरी इच्छा प्रकट कर सकें। अपने शिष्यों को सिखाते हुए, उन्होंने उनसे कहा: *'जब तुम वह सब कर चुको जो तुम्हें आज्ञा दी गई है, तो कहो, "हम अयोग्य दास हैं; क्योंकि हमने वही किया है जो हमारा कर्तव्य था"'* (लूका 17:10-11)। उन्होंने यह उन लोगों से कहा जो परिश्रम कर रहे थे और लगे हुए थे, क्योंकि वे जानते थे कि ऐसे चोर थे जो उनके परिश्रम को चुराने के लिए तैयार थे। जो कोई भी कुछ भी जहरीला देखता है, वह डर के मारे उससे भागता है—चाहे वह साँप हो, बिच्छू हो, या कोई और जानवर जो घातक विष रखता हो। लेकिन हमारी गरीब, लज्जाहीन आत्मा हर उस चीज़ को स्वीकार कर लेती है जो उसे मारती है; वह उससे न तो भागती है, और न ही मुँह फेरती है, बल्कि उसमें आनंदित होती है और अपने हृदय में उससे मेल कर लेती है, और यही कारण है कि वह व्यर्थ में अपना समय बर्बाद करती है, और बंजर तथा निष्फल बनी रहती है।

२४. निर्लिप्तता पर

1. सदाचार के मार्ग पर ठोकरें हैं, क्योंकि शत्रु हैं, प्रलोभन है, परिवर्तन है, प्रचुरता है, संयम है, अभाव है, दुख है, आनंद है, हृदय का क्लेश है, शोक है, हृदय की शांति है, समृद्धि है, आवश्यकता है: क्योंकि यह आशा को प्राप्त करने की यात्रा है।

२. परन्तु निर्लिप्तता इन सब से बहुत दूर है और उसमें कुछ भी कमी नहीं है: क्योंकि यह परमेश्वर में है, और परमेश्वर इसमें है। इसके कोई शत्रु नहीं हैं; यह अब किसी पतन, अविश्वास, आत्म-संयम की कठिनाई, वासना के भय, किसी भी वस्तु की इच्छा, या किसी भी शत्रुतापूर्ण चीज़ के बारे में चिंता का अनुभव नहीं करती।

3. इसके गौरवशाली गुण महान और अनगिनित हैं। जब तक किसी व्यक्ति के भीतर वासना का कोई भय है, तब तक वह इससे (विरक्ति से) दूर है; जब तक किसी व्यक्ति के हृदय से निंदा उत्पन्न होती है, तब तक वह इससे (विरक्ति से) अपरिचित है।

४. यह वह शरीर है जिसे प्रभु यीशु ने स्वयं पर लिया। यह प्रेम है, जिसे उन्होंने अपने शिष्यों को आनंद के साथ अपने कर्मों में प्रकट करना सिखाया।

5. कई अज्ञानी लोग सोचते थे कि उन्होंने इसे प्राप्त कर लिया है, जबकि उनके आत्माओं में अभी भी वासनाएँ बसती थीं और उनके शरीर अभी तक पूरी तरह से शुद्ध नहीं हुए थे - और इस प्रकार वे सही रास्ते से भटक गए। भगवान के लिए, मुझे क्षमा करें।

25. अब्बा पीटर को, उनके शिष्य

1. आपने मुझे लिखकर कहा: 'मैं अपने पापों के लिए परमेश्वर से पश्चाताप करना चाहता हूँ; यदि प्रभु मुझे मेरी कड़वी सांसारिक चिंताओं से मुक्त कर दें, तो आपने ठीक कहा है: यदि मैं इस युग के मामलों से मुक्त हो जाऊँ, क्योंकि मन का एक ही समय में दो बातों में लगा रहना असंभव है, जैसे प्रभु ने कहा: *"तुम परमेश्वर और मालिक दोनों की सेवा नहीं कर सकते"* (मत्ती 6:24)। मम्मोन इस संसार की हर गतिविधि को दर्शाता है। इसलिए, यदि कोई व्यक्ति इसे नहीं छोड़ता, तो वह ईश्वर की सेवा नहीं कर सकता।

२. ईश्वर की और क्या सेवा है, यदि यह नहीं कि जब हम उनका आशीर्वाद लेते हैं तो हमारे मन में उनके अलावा कुछ भी पराये न हो, जब हम उनसे प्रार्थना करते हैं तो कोई वासना न हो, जब हम उनके लिए गीत गाते हैं तो

कोई द्वेष न हो, जब हम उनकी पूजा करते हैं तो कोई घृणा न हो, और न ही कोई दुष्ट ईर्ष्या, जो हमारे रास्ते में बाधाएँ डालती हैं जब हम उसके सामने बैठते हैं, और न ही हमारे अंगों में कोई शर्मनाक वासना जब हम उसे याद करते हैं: क्योंकि ये सभी गरीब आत्मा को घेरे हुए अंधेरी दीवारें हैं, और यह अपने भीतर ऐसी चीजों को पालते हुए परमेश्वर की शुद्ध रूप से सेवा नहीं कर सकती। यह उसके मार्ग में बाधाएँ डालती है, जो उसे ईश्वर से मिलने, अपने हृदय की गहराई में उनका आशीर्वाद देने, और प्रेम की मिठास में, हृदय के आनंद में, और उनसे प्रकाशित होने की पवित्र इच्छा के साथ उनसे प्रार्थना करने से रोकती है।

3. परिणामस्वरूप, मन हमेशा धूमिल रहता है और ईश्वर में फल-फूल नहीं सकता, क्योंकि यह बुद्धिमानी से इसे काट डालने का ध्यान नहीं रखता। फिर भी, जब तक वह इस संसार के मामलों से उदासीन नहीं हो जाता, तब तक इसके लिए इसे काटना असंभव है[30] । एक (चिंता बाहरी की ओर निर्देशित होती है) – और यह शरीर के आराम के लिए इस संसार के मामलों में स्वयं को व्यस्त कर लेता है; दूसरी, हालांकि, आंतरिक रूप से (वासनाओं की संतुष्टि की ओर) निर्देशित होती है, और सद्गुणों के लिए बाधाएँ खड़ी करती है। लेकिन आत्मा इस आंतरिक, भावुक चिंता को तब तक महसूस नहीं कर सकती जब तक कि वह बाहरी चिंता से मुक्त न हो जाए। इसलिए, प्रभु यीशु ने कहा कि जो कोई भी अपनी संपूर्ण इच्छा का परित्याग नहीं करता, वह मेरा चेला नहीं हो सकता (लूका 14:26)।

४. बाहरी चिंता किसी की अपनी इच्छा से उत्पन्न होती है, जबकि आंतरिक चिंता बाहरी प्रभावों से उत्पन्न होती है। हमारे प्रभु यीशु ने, यह जानते हुए कि इच्छा इनमें से किसी एक पर शासन करती है, आज्ञा दी कि इसे काट दिया जाए। चूँकि जब आत्मा बाहरी मामलों में व्यस्त रहती है तो मन मृत हो जाता है, तब आंतरिक वासनाएँ बिना किसी हिचकिचाहट के अपना प्रभाव डालती हैं (बिना रोक-टोक के)। इस प्रकार, यदि आत्मा यीशु के वचन—अपनी सभी इच्छाओं को त्याग देने—की आज्ञा का पालन करती है, तो वह इस संसार के हर कर्म से घृणा करने लगती है। और फिर मन जागृत हो जाता है और तब तक सतर्क रहता है जब तक कि वह उन्हें अपने घर से बाहर नहीं निकाल देता, निरंतर आत्मा की सुनते हुए और उसकी रक्षा करते हुए, ताकि वह उस चीज़ की ओर वापस न लौट जाए जिसने उसे कष्ट पहुँचाया।

५. आत्मा एक नवविवाहिता महिला के समान है, जो जब उसका पति दूर होता है, तो बिना किसी भय या लज्जा के (जैसा कि उसे करना चाहिए) लगन से घर का ध्यान रखने में विफल रहती है। लेकिन जब उसका पति अपने घर लौट आता है, तो वह तुरंत, डर के मारे, जो कर रही थी उसे छोड़ देती है और अपने पति की इच्छा के अनुसार सब कुछ संभालने लगती है। और वह, लौटकर, जहाँ भी आवश्यकता होती है, हर मामले में घर के कामों को देखता है। मन के साथ भी ऐसा ही है। जब यह उत्तेजित होता है, तो यह आत्मा की देखभाल करता है और उसे अथक रूप से बचाता है, जब तक कि वह उसके माध्यम से जन्म नहीं देती, और वह उसके बच्चों का पालन-पोषण करता है। और अंत में वे एक हृदय के हो जाते हैं; आत्मा मन के अधीन हो जाती है, और वह उसके अधीन हो जाती है, जैसा कि पित्र में लिखा है: *'क्योंकि पति पत्नी का सिर है'*। और फिर: *'पति को अपना सिर नहीं ढकना चाहिए, क्योंकि वह परमेश्वर की प्रतिमा और महिमा है; परन्तु पत्नी अपने पति की महिमा है। क्योंकि पति पत्नी से नहीं हुआ, परन्तु पत्नी पति से हुई; क्योंकि पति को पत्नी के लिए नहीं बनाया गया, परन्तु पत्नी को पति के लिए बनाया गया। इसी कारण से पत्नी का अधिकार उसके सिर पर होना चाहिए, स्वदूत के कारण। फिर भी, प्रभु में न तो पति पत्नी के बिना है, और न ही पत्नी पति के बिना। क्योंकि जैसे पत्नी पति से है, वैसे ही पति भी पत्नी से है; परन्तु सब कुछ परमेश्वर से है।'* (1 कुरिन्थियों 11:3, 7–12)।

6. यह वचन उन लोगों पर लागू होता है जिन्हें प्रभु के साथ एक होने के लिए योग्य ठहराया गया है, और जिनमें अब उनकी पुरानी प्रकृति नहीं रही। ये वे हैं जो पवित्रता में परमेश्वर से प्रार्थना करते हैं। ये वे हैं जो पवित्र हृदय से परमेश्वर का धन्यवाद करते हैं। ये वे हैं जिन्हें परमेश्वर ने ज्ञान दिया है। ये वे सच्चे उपासक हैं जिन्हें परमेश्वर खोजता है। ये वे हैं जिनके बारे में उन्होंने कहा: *'मैं उन में वास करूँगा और उन में चलूँगा'* (2 कुरिन्थियों 6:16)। जो उन्होंने कहा वह उन पर लागू होता है: कि यदि दो सहमत हों (एक दूसरे से), तो जो कुछ भी वे मेरे नाम पर माँगेंगे, वह उन्हें दिया जाएगा (मत्ती 18:19)। इस प्रकार, वह चाहता है कि उसके अपने, सभी सांसारिक चीजों से, आत्मा में बाहरी और भीतरी रूप से, और उन सभी चीजों से शुद्ध हों जिन्हें उसने अपने अवतार के माध्यम से अपने शरीर में समाप्त कर दिया, जैसा कि उसने कहा: *'मेरे में बने रहो, और मैं तुम में'* (यूहन्ना 15:4)। भाई, आप देखिए, कि वह पहले चाहता है कि हम अपने कर्मों के द्वारा उसमें रहें; तब वह हममें रहेगा, शुद्धता के लिए हमारी पूरी क्षमता के अनुसार।

---

[30] पाइसियोस के संस्करण में, यह अंश इस प्रकार है: 'क्योंकि दो चीजें हैं जो आत्मा को व्यस्त करती हैं' – दो मामले आत्मा को व्यस्त करते हैं, या दो चिंताएँ।

७. परन्तु कोई कहेगा: 'मैं बपतस्मिा के द्वारा मसीह में आया तो हूँ, परन्तु मैं (उसके अनुरूप) जीवन नहीं जी सकता।' सुनो, हे मेरे प्रयि! नश्चिति रूप से, जो कोई बपतस्मिा ग्रहण करता है, वह उसे पाप के उन्मूलन के लएि ग्रहण करता है, जैसा कि प्रेरति ने कहा: *'क्योंकि हिम बपतस्मिा में मसीह के साथ दफनाए गए, ताकि पाप का शरीर नाश हो जाए, और हम अब पाप के दास न रहें'* (रोमियों 6:4, 6)। क्योंकि मिसीह का पाप के साथ एक साथ वास करना असंभव है। इसलएि, यदि मिसीह तुम में वास करते हैं, तो पाप मर गया है, *'परन्तु आत्मा धार्मकिता के लएि जीवति है'*, जैसा कि प्रेरति ने भी कहा (, रोमियों 8:10)। क्योंकि *'एक ववािहति स्त्री अपने जीवति पति के प्रति वधिसि बँधी रहती है; परन्तु यदि उसका पति मिर जाए, तो वह अपने पति की वधिसि मुक्त हो जाती है। इसलएि, जब तक उसका पति जीवति है, यदि वह कसिी दूसरे पुरुष की हो जाती है तो वह व्यभचािरणी है; परन्तु यदि उसका पति मिर जाता है, तो वह व्यवस्था से स्वतंत्र हो जाती है, इसलएि यदि वह कसिी दूसरे पुरुष की हो जाती है तो वह व्यभचािरणी नहीं है'* (रोमियों 7:2-3)।

8. इसलएि, जो कोई यह जानना चाहता है कि मिसीह ने उनमें वास कयिा है, वह इसे अपने ही वचिारों से पहचान लेगा। जब तक पाप हृदय को खींचता है, तब तक परमेश्वर ने उनमें वास नहीं कयिा है, और उनकी आत्मा ने अभी तक उनमें वश्रिाम नहीं पाया है। क्योंकि यह उचति है कि जब कोई व्यक्ति (इसके योग्य) कर्म करता है तो परमेश्वर उसमें वास करे, और जब कोई व्यक्ति अपनी आत्मा को (वासनाओं से) मुक्त करता है तो वह परमेश्वर में हो, जैसा कि प्रेरति ने कहा: *'जो कोई व्यभचिारी के संग जुड़ता है, वह व्यभचिारी के संग एक शरीर है; परन्तु जो प्रभु से जुड़ा है, वह प्रभु के साथ एक आत्मा है'* (1 कुरन्थियिों 6:16-17)। क्योंकि हिर प्रकार की अस्वाभावकिता को वेश्या कहा जाता है।

९. इस प्रकार, जब आत्मा मुक्त हो जाती है और वायु में उसके मार्ग में आने वाली सभी बाधाओं से परे पहुँच जाती है (अर्थात्, ईश्वर की ओर उसकी उन्नति में), तो वह ईश्वर में होने लगती है और उसकी आत्मा से प्राप्त करती है – जैसा कि कहा गया है, *'यदि कोई प्रभु से एक है, तो वह प्रभु के साथ एक आत्मा है'*, – और वह उसे सखिाता है कि कैसे प्रार्थना करनी है – वह जो उसकी अनवरत आराधना करती है और उससे चपिकी रहती है। और वह उसमें वास करता है, उसका मार्गदर्शन करता है और उसे अनवरत वश्रिाम देता है, उसे अपने अगणति सम्मान और उपहारों का प्रकटीकरण करता है। क्योंकि वह बपतस्मिा के द्वारा और उसकी आत्मा के श्वास-प्रश्वास के द्वारा उससे पुनर्जीवति होती है, जैसा लखिा है: *'जो परमेश्वर से जन्मा है वह पाप नहीं करता, और दुष्ट उसे छू नहीं सकता'* (1 यूहन्ना 5:18), *'क्योंकि वह परमेश्वर से जन्मा है'* (1 यूहन्ना 3:9)। जैसा कि सुसमाचार में कहा गया है: *'यदि तुम न लौटकर बालकों के समान न बन जाओ, तो परमेश्वर के राज्य में प्रवेश न करोगे'* (मत्ती 18:3)। और फरि: *'नवजात शशिुओं के समान हो जाओ, जो शुद्ध आध्यात्मकि दूध के लएि तरसते हैं, ताकि उसी से तुम बढ़ो'* (1 पतरस 2:2)।

10. तो फरि, एक बच्चे की वशिेषताएँ क्या हैं? एक बच्चा, अगर पीटा जाए तो रोता है, और जो उसके साथ खुश होते हैं उनके साथ खुश होता है; अगर डाँटा जाए तो गुस्सा नहीं होता, और अगर उसकी प्रशंसा की जाए तो घमंडी नहीं हो जाता; अगर उसके दोस्त को उससे ज्यादा सम्मान दयिा जाए, तो उसे ईर्ष्या नहीं होती; अगर उससे कोई चीज़ छीन ली जाए, तो वह हंगामा नहीं करता; यदि वे उसे वरिासत में थोड़ा हस्सिा दें, तो वह पूछताछ नहीं करता, कसिी से ववािद नहीं करता, अपनी चीज़ों पर बुरा नहीं मानता, और कसिी से नफ़रत नहीं करता; यदि वह गरीब है, तो वह दुखी नहीं होता; यदि वह अमीर है, तो वह घमंड नहीं करता; यदि वह कसिी महलिा को देखता है, तो वह उसके पीछे नहीं भागता; कामुक सुख या अत्यधकि चिंता उस पर हावी नहीं होतीं; वह कसिी की निंदा नहीं करता, न ही कसिी पर हुक्म चलाता है; वह कसिी से ईर्ष्या नहीं करता; वह उस चीज़ के बारे में घमंड से बात नहीं करता जो वह नहीं जानता; वह अपने पड़ोसी का उसके बाहरी रूप के कारण मज़ाक नहीं उड़ाता; वह कसिी के प्रति शित्रुता नहीं पालता; वह दखिावा नहीं करता; वह इस दुनयिा के सम्मान की तलाश नहीं करता; वह धन इकट्ठा करने की कोशशि नहीं करता; वह धन का प्रेमी नहीं है; अभमिानी नहीं है; आत्म-संतुष्ट नहीं है; जुनून से नहीं सखिाता, न ही कसिी के बारे में चिंता करता है; अगर उसके कपड़े छीन लएि जाएं, तो वह परेशान नहीं होता; अपनी ही बात पर जोर नहीं देता; न तो भूख से डरता है और न ही बुराई करने वालों से; न तो जंगली जानवरों से डरता है और न ही संघर्ष से; जब उत्पीड़न आता है, तो वह डगमगाता नहीं है।

11. ऐसे ही व्यक्ति के बारे में हमारे प्रभु यीशु ने (उदाहरण के रूप में प्रस्तुत करते हुए) कहा था: *'यदि तुम न फरिो और बालकों के समान न बनो,* तो *परमेश्वर के राज्य में कभी प्रवेश न करोगे'*। परन्तु जब कोई बालक थोड़ा बड़ा हो जाता है और उसके भीतर बुराई जड़ पकड़ने लगती है, तो प्रेरति उसे डाँटते हुए कहते हैं: *'तो फरि हम और शशिु न रहें, जो इधर-उधर लहराए और हर प्रकार के धर्म के हवाओं से उड़ाए जाएँ, और मनुष्यों की चालाकी और कपटपूर्ण युक्ति के फंदों से बहक जाएँ; बल्कि प्रेम में सत्य बोलते हुए, हर प्रकार से उस में परपिूर्ण होते जाएँ'* (इफसियिों 4:14–15)। और फरि वह कहते हैं: *"शशिुओं के रूप में, मैंने तुम्हें दूध पलिाया, ठोस भोजन नहीं; क्योंकि तुम इसके लएि*

अभी तैयार नहीं थे, और न ही अब भी तैयार हो" (1 कुरिन्थियों 3:2-3)। और वह आगे कहते हैं: *"जब तक वारिस बच्चा है, वह किसी भी तरह से दास से श्रेष्ठ नहीं है, यद्यपि वह सभी का स्वामी है। फिर भी वह अपने पिता द्वारा निर्धारित समय तक अभिभावकों और न्यासियों के अधीन रहता है। इसी प्रकार, जब हम बच्चे थे, तो हम संसार के मूल तत्वों के अधीन दास बनाए गए थे"* (गलातियों 4:1–3)। और फिर: *'युवावस्था की इच्छाओं से भागो'* (2 तीमुथियुस 2:22)। हमें इस तरह की बचकानापन को अस्वीकार करना सिखाते हुए, उन्होंने कहा: *'भाइयो, मन में बालक न बनो; परन्तु बुराई में शिशु रहो, और मन में परिपक्व बनो'* (1 कुरिन्थियों 14:20)। तो, मसीह के (सच्चे) बच्चों का स्वभाव क्या है? प्रेरित पतरस के शब्दों के अनुसार यह इस *प्रकार है: 'नवजात शिशुओं के समान, हर प्रकार की बुराई, और सब छल, और कपट, और ईर्ष्या, और सब प्रकार की बदनामी को दूर करो'* (1 पतरस 2:1)। क्या आप समझते हैं, भाई, हमारे प्रभु यीशु के इन वचनों का क्या अर्थ है: *'मैं तुम से सच कहता हूं, जब तक तुम फिर कर बच्चों के समान न बन जाओ, तब तक तुम परमेश्वर के राज्य में प्रवेश नहीं कर सकते'* (मत्ती 18:3)? ये वचन भय से भरे हैं, क्योंकि हमारे प्रभु ने इन्हें शपथ के साथ कहा: *'आमीन, आमीन, मैं तुम से कहता हूँ'*: वह स्वयं ही आमीन हैं। प्रेरित ने क्यों कहा: चूँकि परमेश्वर से बड़ा कोई नहीं है, *'वह स्वयं की शपथ लेते हैं, यह कहते हुए: "निश्चय ही"* (आमीन) *"मैं तुम्हें आशीष दूँगा"* (इब्रानियों 6:13-14)।

12. अतःहम इस वचन को ठीक से समझें और भय और कम्प के साथ, हर अवसर आने पर, हर क्षण इसे पूरा करने का यत्न करें। जब शत्रु हमें हमारे पड़ोसी के प्रति द्वेष की तीर से मारता है, या क्योंकि किसी ने हमें अपमानित किया है, या हमारा अपमान किया है, या हमारी निंदा की है, या क्योंकि कोई पड़ोसी हमसे बहस करता है, ताकि हम उस पर झुक जाएँ, या जब कोई अशुद्ध क्लेश हमें चटखाने लगता है, जो हमारे पड़ोसी द्वारा हमारे साथ किए गए कृत्य की एक कड़वी याद ( ) को जगाता है, ताकि वह हमारे प्राण को क्रोध और घृणा से अँधकारमय कर दे—जब भी इस प्रकार की कोई बात हमारे प्राण के समीप आती है, तो हमें तुरंत अपने प्रभु के उस वचन को याद करना चाहिए, जो उन्होंने शपथ के साथ कहा था, यह कहते हुए: *'आमीन, आमीन, मैं तुम से कहता हूँ: जब तक तुम लौटकर बच्चों के समान न बन जाओ, तब तक तुम परमेश्वर के राज्य में प्रवेश न करोगे।"* इन वचनों को सुनकर कौन विस्मित नहीं होगा? या कौन सा बुद्धिमान, जो अपनी आत्मा को बचाना चाहता है, अपने पड़ोसी के प्रति मन में पालने वाले हर द्वेष को बाहर नहीं करेगा? या गेहन्ना में गिरने के भय से कौन अपने हृदय से सारी घृणा को जड़ से नहीं उखाड़ फेंकेगा, कहीं ऐसा न हो कि वे राज्य से बहिष्कृत हो जाएँ? क्योंकि हमारे प्रभु ने निर्णायक शब्दों में कहा: *'यदि तुम न लौटोगे और बच्चों के समान न बनोगे, तो तुम परमेश्वर के राज्य में प्रवेश नहीं करोगे'*। यह वचन उन लोगों के लिए कठिन है जो अपनी इच्छा से चिपके रहते हैं, जो संसार से प्रेम करते हैं और जिन्हें पवित्र आत्मा का वरदान नहीं मिला है (या उन्होंने नहीं जाना); क्योंकि जिस पर वह उतरता है, वह उसे सब बुराई को भुला देना और अपनी ही रीति सिखा देता है, – क्रोध के स्थान पर नम्रता, शत्रुता के स्थान पर शांति, कलह के स्थान पर विनम्रता, घृणा के स्थान पर प्रेम, और हतोत्साहित होने के स्थान पर धैर्य। ऐसे वे हैं जिन्हें पुनर्जन्म की अनुग्रह मिला है।

13. अतःहम यत्न करें कि जो कुछ महान प्रेरित ने हमसे कहा है, उसे हम अपने हृदय से काट दें, और उसे एक ओर रख दें ताकि हम छोटे बच्चों के समान हो जाएँ। ऐसा करने का ध्यान रखकर (प्रेरितों ने) और अपनी आत्मा से इसे काटकर (ताकि मसीह में शिशु बन सकें), वे बाद में पवित्र परिपक्वता और पूर्णता में लौट आए। क्योंकि प्रभु ने, उन पर श्वास फूँकने के बाद, कहा: *'पवित्र आत्मा ग्रहण करो'* (यूहन्ना 20:22); और जब वह गलील की झील पर उन पर प्रकट हुआ, तो उसने कहा: 'बच्चों, क्या तुम्हारे पास खाने के लिए कुछ है?' (लूका 24:41), यह याद दिलाते हुए कि आत्मा की श्वास द्वारा, उसने उन्हें बच्चे बना दिया था - जबकि शरीर में वे बच्चे नहीं थे। फिर लिखा है: *'देखो, मैं और वे बच्चे जिन्हें परमेश्वर ने मुझे दिया है। क्योंकि बच्चों में जो देह और रक्त का भाग है, उसी में वह स्वयं भी सचमुच सहभागी हुआ, ताकि मृत्यु के द्वारा वह उसी को नाश कर दे जिसके पास मृत्यु की शक्ति है, अर्थात् शैतान को, और उन्हें छुटकारा दिलाए"* (इब्रानियों 2:14–15)। उसने वास्तव में किसके साथ अपना मांस और रक्त साझा किया, यदि नहीं उन लोगों के साथ जिन्होंने सभी छल-कपट को त्याग दिया है और पवित्र बाल्यत्व के स्तर को प्राप्त कर लिया है? और वे भी, प्रेरित के वचनों के अनुसार, फिर से सिद्ध हो गए हैं: *'जब तक हम सब विश्वास और परमेश्वर के पुत्र के ज्ञान में एकता पर न पहुँच जाएँ, एक परिपक्व मनुष्य की अवस्था तक, मसीह की पूर्णता के मापदंड तक'* (इफिसियों 4:13)। और फिर, *'शरीर का पुनर्स्थापन प्रेम के द्वारा स्वयं की सृष्टि करता है'* (पद 16)। इस प्रकार प्रेरित यूहन्ना लिखते हैं, कहते हुए: *'मैं तुम्हें, हे छोटे बच्चों, लिखता हूँ क्योंकि तुमने पिता को जान लिया है... मैंने तुम्हें, जवानों, इसलिए लिखा है, क्योंकि तुम ने उस दुष्ट पर जय प्राप्त की है"* (1 यूहन्ना 2:13–14)। अब तुम्हें यह एहसास हो गया है कि जो लोग कभी द्वेष से ग्रस्त थे, वे स्वयं शत्रु के विरुद्ध योद्धा बन गए हैं, क्योंकि उनसे उसका पूरा कवच छीन लिया गया है, जो द्वेष है, और वे स्वयं बाद में पिता बन गए और पूर्णता के स्तर को प्राप्त कर लिए,

इसलिए प्रकाशन और रहस्य उन पर तब तक सौंपे जाते हैं जब तक वे ज्ञान, एकता, भलाई, कोमलता और पवित्रता प्राप्त नहीं कर लेते, क्योंकि ये कोमलता के गुण हैं। यही वे हैं जिन्होंने अपने शरीरों में मसीह को महिमामय किया है।

[31]**14.** अतःहे प्रिय भाइ, इस बड़े अकाल के सामने हम हियाव रखें (ऐसा लगता है, एक आध्यात्मिक एक), हम किसी भी बात में हतोत्साहित न हों, बल्कि हम निरंतर परमेश्वर की भलाई का निवेदन करें, कि वह हमें शत्रु और ईर्ष्यालु की युक्तियों से धोखा खाने न दें, जो बिना दया के बुराई करता है, और जो निर्लज्जता से लगातार कहता रहता है, 'अगर नहीं तो कल,' लेकिन मैं तब तक हार नहीं मानूंगा जब तक कि मैं उस पर विजय प्राप्त न कर लूँ। तो फिर हम क्यों न निरंतर प्रार्थना करें, जैसा कि संत दाऊद ने कहा: *'हे मेरे प्रभु परमेश्वर, मेरी ओर देखो और मुझे सुनो; हे प्रभु, मेरी आँखें खोल दो, कहीं मैं मृत्यु तक सो न जाऊँ; कहीं मेरा शत्रु यह न कहे: "मैं उस पर हावी हो गया हूँ।" जो मुझे घृणा करते हैं वे प्रसन्न होंगे यदि मैं लड़खड़ाऊँ'* (भजन संहिता 12:4-6)। यदि हमारे शत्रु हम पर विजय प्राप्त करना शुरू कर दें, तो हमें पुकार कर कहना चाहिए: *'हे परमेश्वर, तेरा समान कौन है? मौन न रह, न ही सौम्य बन, हे परमेश्वर* (हमारे शत्रुओं के प्रति सौम्य न बन)। *'क्योंकि हे परमेश्वर, तेरे शत्रुओं ने शोर मचाया है'* (उन्होंने पुकारा... उन्होंने प्रचार किया है), *'और जो तुझ से बैर रखते हैं, उन्होंने अपना सिर ऊँचा किया है। उन्होंने अपनी इच्छा से तेरी प्रजा के विरुद्ध कपटपूर्ण काम किया है'*, यह कहते हुए: 'हम इस्राएल की स्मृति को मिटा देंगे' (भजन संहिता 82:2-5)। परन्तु जो पवित्र आत्मा से भरपूर था, *उसने* कहा: *"हे परमेश्वर, मुझे एक खूँटी की नाईं, आँधी के साम्हने एक सरकण्डे की नाईं स्थापित कर। उनके मुखों पर लज्जा लिख दे, ताकि वे जान जाएँ कि पृथ्वी पर सर्वोच्च केवल तू ही है"* (भजन संहिता 82:14, 17, 19)। इस प्रकार, जो अपने विश्वास में संघर्ष करते हैं, वे अपने हृदय को अपने शत्रुओं के विरुद्ध मज़बूत करते हैं, और उनसे लड़ने के लिए उनके आने से पहले, वे स्वयं को पवित्र चट्टान, जो मसीह है, पर स्थापित करते हैं, और एक दृढ़ हृदय से कहते हैं: *"वे मुझ पर मधुमक्खियों के झुंड की तरह घिर आए, और काँटों में आग की तरह भड़क उठे; परन्तु मैं यहोवा के नाम से उन पर डट रहा"* (भजन संहिता 117:12)।

१५. जब हम देखते हैं कि हमारे शत्रुओं ने हमें अपनी चालाकी से, जो कि निराशा (आलस्य) है, घेर लिया है, या हमारे प्राणों को कामवासना की मिठास से बहका रहे हैं, या जब हमारा पड़ोसी कुछ गलत करता है तो हमें उससे क्रोध करने से रोक रहे हैं, या कामुक सुखों की इच्छा से हमारी आँखों पर बोझ डाल रहे हैं, या हमें मीठी स्वादिष्ट वस्तुओं का स्वाद चखने के लिए लुभाने का प्रयास करते हैं, या हमारे पड़ोसी के शब्दों को हमारे लिए विष बना देते हैं, या हमें किसी और के शब्दों की निंदा करने के लिए उकसाते हैं, या भाइयों के बीच भेदभाव पैदा करते हैं, कहते हुए: 'यह अच्छा है, लेकिन वह बुरा है'—इस प्रकार, जब ऐसी बातें हमें घेरे हों, तो हम हतोत्साहित न हों, बल्कि दाऊद की तरह एक दृढ़ हृदय से पुकारें, कहते हुए: *'प्रभु मेरे जीवन का रक्षक है! भले ही सेना मेरी ओर डेरा डाले, मेरा हृदय भयभीत न होगा; भले ही युद्ध मेरे विरुद्ध उठे, मैं उसी पर भरोसा रखूँगा। एक बात मैंने प्रभु से माँगी है, और मैं उसी की खोज करूँगा: कि मैं जीवन भर प्रभु के भवन में वास करूँ, ताकि मैं प्रभु की सुन्दरता को निहारूँ और उसके पवित्र मन्दिर का दर्शन करूँ। क्योंकि उसने मुझे छिपाया है... और मुझे ऊँचा उठाया है: और अब उसने मेरे शत्रुओं के ऊपर मेरा सिर उठा दिया है'* (भजन संहिता 26:1, 3-6)। यह उन लोगों का लक्षण है जिन्होंने अपने मन को मृत कर्मों से ऊपर उठा लिया है, जिन्हें प्रेरित 'रात' कहते हैं, यह कहते हुए: *'हम दिन के हैं, न कि रात के, न अँधेरे के'* (1 थिस्सलुनीकियों 5:5)। जो लोग अपने प्रति लापरवाह हैं, उनकी निंदा करते हुए, उन्होंने कहा: *'क्योंकि जो सोते हैं, वे रात को सोते हैं; और जो मदहोश होते हैं, वे रात को मदहोश होते हैं'* (पद 7)। और फिर: *'प्रभु का दिन रात में चोर की नाईं आएगा; और वे बचेंगे नहीं'* (पद 2–3), क्योंकि वे रात में हैं। परंतु जिन्होंने अपने मन को उन वासनाओं से ऊपर उठा लिया है, जो रात्रि हैं, उनसे उसने कहा: *'हे दिन के बच्चों, चलो चित्त रखो, विश्वास और प्रेम का कवच और उद्धार की आशा का टोप पहनकर'* (पद 8)।

16. अतःहम सब कुछ इस प्रकार करें कि हमारा मन सचेत और मृत कर्मों से मुक्त रहे, और हम हर समय अपनी आत्मा के साथ जागते रहें, ताकि हम केवल वही करें जो स्वाभाविक हो; क्योंकि हमारी प्रकृति परिवर्तनशील है, जैसा कि भविष्यवक्ता यशायाह के वचन कहते हैं, जिन्होंने कहा: *'हे दीन और डगमगाते, यहोवा तुझ पर अनुग्रह करता है; तुझे कोई सांत्वना नहीं मिली है'* (यशायाह 54:10-11)। क्योंकि आत्मा लोहे के समान है: यदि उपेक्षित छोड़ दिया जाए, तो वह जंग लगा लेता है; परन्तु जब वह आग से प्रज्वलित होता है, तो आग उसे शुद्ध कर देती है, और जब वह आग में रहता है, तो वह स्वयं आग के समान हो जाता है, और कोई भी उसे (अपने हाथों में) नहीं पकड़ सकता, क्योंकि वह आग है। आत्मा के साथ भी ऐसा ही है: जब तक वह ईश्वर के साथ निवास करती है और उनके साथ बैठी रहती है, तब तक वह आग बनी रहती है और उन सभी शत्रुओं को भस्म कर देती है जिन्होंने उसकी उपेक्षा के दौरान

[31] इस अंश को पैसियोस के अनुसार सुधार दिया गया है।

उसे जंग लगने पर मजबूर किया, और (यह आग) उसे लोहे की तरह नवीनीकरण में शुद्ध करती है, और अब उसे सांसारिक किसी भी चीज़ में आनंद नहीं आता, बल्कि वह अपनी ही प्रकृति में विश्राम पाती है, जिसके लिए वह योग्य बनाई गई है, क्योंकि वह मूल रूप से उसकी ही थी। लेकिन जब वह अपनी प्रकृति को त्याग देती है, तो वह मर जाती है। जैसे एक जानवर पानी में डूबने पर मर जाता है, क्योंकि उसकी प्रकृति सांसारिक है, वैसे ही मछलियाँ भी मर जाती हैं यदि उन्हें जमीन पर फेंक दिया जाए, क्योंकि उनकी प्रकृति जलीय है; इसी तरह, पक्षी, हवा में रहते हुए, शांति से रहते हैं, लेकिन जब वे जमीन पर उतरते हैं, तो उन्हें डर लगता है कि उन्हें पकड़ लिया जाएगा: इसी प्रकार एक परिपूर्ण आत्मा भी, जो अपनी स्वाभाविक प्रकृति में निवास करती है, उस प्रकृति को छोड़ते ही तुरंत मर जाती है।

17. इसीलिए जो योग्य बन गए हैं और जिन्हें ये वरदान प्राप्त हुए हैं, वे संसार को अपने लिए एक जेल मानते हैं, और इसके साथ मिलना-जुलना नहीं चाहते, कहीं ऐसा न हो कि वे मर जाएँ। ऐसी आत्मा अब दुनिया से प्यार नहीं कर सकती, भले ही वह चाह ले, अपनी पूर्व अवस्था को याद करते हुए, जिसमें वह ईश्वर में निवास करने से पहले थी, और दुनिया ने उसके साथ क्या किया था और कैसे उसे खाली कर दिया था। क्योंकि जैसे जब राजा का शत्रु किसी नगर में प्रवेश करता है, और नगर के लोग, भय से, उसके सामने आत्मसमर्पण कर देते हैं, तो वह तुरंत, अपनी दुष्टता में, राजा की मूर्तियों को नष्ट करने और उसके कानूनों को समाप्त करने के लिए आगे बढ़ता है; फिर वह अन्य कठोर कानून लागू करता है और वहाँ अपनी मूर्ति स्थापित करता है, और अंत में लोगों की पूरी भीड़ को उसके लिए मेहनत करने के लिए मजबूर करता है। लेकिन जब नागरिक गुप्त रूप से सच्चे राजा को संदेश भेजते हैं, और कहते हैं, 'आओ, हमारी मदद करो,' और वह अपने दुश्मन पर क्रोधित होकर अपनी सेना के साथ आता है, तो नागरिक यह सुनकर खुशी से उसके लिए द्वार खोल देते हैं; और वह प्रवेश करता है और अपने दुश्मन को मार डालता है, जबरदस्ती स्थापित की गई मूर्ति को नष्ट कर देता है, और कानूनों को समाप्त कर देता है; नगर हर्षित होता है, और सच्चा राजा, अपनी प्रतिमा और अपने विधान को पुनर्स्थापित कर, उसमें निवास करता है, उसे इस प्रकार दुर्गबद्ध करता है कि कोई भी फिर कभी उस पर अधिकार न कर सके, और वहाँ रहने वालों को लड़ना सिखाता है, ताकि वे अपने किसी भी शत्रु के विरुद्ध निडर होकर खड़े हो सकें। ऐसी ही आत्मा है जिसे पवित्र बपतिस्मा के बाद, शत्रु ने एक बार फिर से जबरदस्ती कब्ज़ा कर लिया; उसने उसे हर तरह के शर्मनाक छल-कपट से वश में कर लिया, राजा की प्रतिमा को उखाड़ फेंका और अपनी प्रतिमा तथा अपने नियम स्थापित कर दिए, उसे इस संसार के मामलों में उलझने के लिए मजबूर किया, उसे लापरवाही और दुष्टता से काम करना सिखाया, और सामान्यतः उसे वैसा ही बना दिया जैसा वह चाहता था; परन्तु जिस पर, अन्त में, पवित्र और महान राजा यीशु की भलाई ने पश्चाताप भेजा – और आत्मा आनन्दित हुई। पश्चाताप ने मार्ग खोल दिया, और महान राजा मसीह, उसमें प्रवेश करके, उसके शत्रु का वध किया, उसकी प्रतिमा और उसके अधर्मी नियमों को मिटा दिया, और उसे मुक्त कर, उसके भीतर अपनी पवित्र प्रतिमा स्थापित की, और उसे अपने नियम सौंपे, और उसकी सभी शक्तियों को युद्ध करना सिखाया, और अंत में वह उस आत्मा में विश्राम करता है, क्योंकि वह उसकी हो गई है। परमेश्वर की कृपा से आत्मा का यही हाल होता है!

18. इसलिए, किसी आत्मा के लिए राजा की प्रतिमा धारण किए बिना परमेश्वर के पुत्र के विश्राम में प्रवेश करना असंभव है। जैसे कोई व्यापारी राजा की प्रतिमा के बिना किसी सिक्के को स्वीकार या नहीं देता, न ही कोई तोलने वाला उसे तोलता है, और न ही राजा उसे अपने खजाने में स्वीकार करता है: इसलिए, यदि आत्मा महान राजा यीशु की प्रतिमा नहीं धारण करती है, तो स्वर्गदूत उसे प्रवेश नहीं देंगे, और राजा स्वयं उसे यह कहते हुए बाहर निकाल देंगे: 'मेरी प्रतिमा के बिना तुम यहाँ कैसे प्रवेश कर गए?' इस छवि का चिह्न प्रेम है। क्योंकि उन्होंने स्वयं कहा: *'इसके द्वारा सब लोग जान लेंगे कि तुम मेरे शिष्य हो, यदि तुम एक दूसरे से प्रेम करोगे'* (यूहन्ना 13:35)। लेकिन उनका प्रेम हमारे भीतर तब तक नहीं रह सकता जब तक आत्मा विभाजित हो, ईश्वर की खोज करते हुए इस संसार की चीजों से प्रेम करती रहे। जिस प्रकार एक पक्षी एक पंख से, या कोई बोझ उठाए हुए, उड़ नहीं सकता, उसी प्रकार आत्मा इस संसार की किसी भी चीज़ से बँधी होने पर ईश्वर में समृद्धि नहीं पा सकती। जिस प्रकार एक जहाज़, जिसमें कोई आवश्यक चीज़ की कमी हो, समुद्र यात्रा नहीं कर सकता: उसी प्रकार आत्मा के लिए भी यह असंभव है कि वह वासनाओं की लहरों को पार करे जब तक उसमें कोई सद्गुण न हो। जैसे नाविक अच्छे कपड़े, दस्ताने या जूते नहीं पहनते, और (आवश्यकता पड़ने पर) नग्न हुए बिना नाव नहीं चला सकते; वैसे ही आत्मा भी सभी सांसारिक चीजों से मुक्त हुए बिना द्वेषपूर्ण आत्माओं की लहरों को पार नहीं कर सकती। जैसे एक योद्धा, जो राजा के दुश्मनों से लड़ने जाता है, तब तक उनका सामना नहीं कर सकता जब तक उसके पास अपने पूरे कवच का कोई हिस्सा न हो; उसी प्रकार किसी संन्यासी के लिए किसी सद्गुण के बिना कामनाओं का विरोध करना असंभव है। जैसे एक दीवार से घिरे शहर में, जब दीवार का एक छोटा सा हिस्सा टूट जाता है, तो दुश्मन, उसमें प्रवेश करने की इच्छा से, अपना सारा ध्यान उस टूटे हुए हिस्से पर केंद्रित करते हैं ताकि वे उसी से प्रवेश कर सकें; और भले ही दरवाजों पर पहरेदार हों, वे

दुश्मनों का सामना तब तक नहीं कर सकते जब तक कि उस टूटे हुए हिस्से को फिर से नहीं बना दिया जाता: इसी प्रकार, एक तपस्वी भिक्षु, जब किसी भी वासना पर काबू पा लिया जाता है, तो वह शत्रुओं का सामना नहीं कर सकता और पूर्णता के स्तर को प्राप्त नहीं कर सकता।

19. यह मैं नहीं कह रहा हूँ, बल्कि पवित्र शास्त्र भी ऐसा ही कहते हैं। जैसा कि उत्पत्ति की पुस्तक में लिखा है: *'और परमेश्वर ने नूह से कहा: "मैंने तुझ में इस पीढ़ी में* केवल *तुझे ही धर्मी पाया है"* और सिद्ध' (उत्पत्ति 7:1)। फिर, उन्होंने अब्राहम से कहा: *'मेरे सामने निष्कलंक रहो, और मैं तुम्हारे साथ एक वाचा स्थापित करूँगा... एक अनंतकालिक वाचा'* (उत्पत्ति 17:1, 7)। इसहाक ने भी, जब अपने पुत्र याकूब को आशीर्वाद दिया, तो उससे कहा: *'मेरा परमेश्वर तुम्हें बल दे, ताकि तुम उसकी सारी इच्छा पूरी कर सको'* (उत्पत्ति 28:1-)। फिर, संख्याओं की पुस्तक में लिखा है: *'जो कोई मनुष्य प्रतिज्ञा करे, वह दाखरस, दाखरस का सिरका, मद्य और दाख से बने किसी भी पदार्थ को, यहाँ तक कि* अंजीर के *गूदे तक भी, न पिये'* (गिनती 6:1-4). और व्यवस्थाविवरण में: *"जब तुम अपने शत्रुओं से लड़ने को निकल जाओ, तब हर एक बुरी बात से अपनी रक्षा करो, जब तक तुम्हारा शत्रु तुम्हारे हाथ में न आ जाए"* (व्यवस्थाविवरण 23:9 -)। *'जहाँ तक इन सात जातियों का प्रश्न है, उनमें से एक को भी जीवित न छोड़ना: कहीं वे तुम्हें मुझसे पाप करने का उपदेश न दें'* (व्यवस्थाविवरण 20:16, 18)। उन लोगों को यह सिखाते हुए कि जो कहते हैं, 'आप उन्हें इतनी जल्दी कैसे नष्ट कर देंगे, जबकि वे इतने सारे हैं?' उन्हें हतोत्साहित न होने दें, उन्होंने कहा: *'तुम उन्हें एक ही वर्ष में नष्ट नहीं कर पाओगे, कहीं ऐसा न हो कि देश सुनसान हो जाए और जंगली जानवर तुम पर बढ़ जाएँ, परन्तु धीरे-धीरे, जब तक कि तुम बढ़कर मजबूत न हो जाओ... और परमेश्वर तुम्हारी सरहदों को बढ़ाएगा"* (व्यवस्थाविवरण 7:22)। परमेश्वर ने उन्हें कई बार यह भी आज्ञा दी, कि *"सावधान रहो कि तुम कनानी लोगों के साथ कोई वाचा न करो, जिन्हें मैं तुम्हारे सामने से नष्ट करने वाला हूँ"* (– पद 2)।

20. इसके अलावा, जब यहोशू ने यरीहो को घेरा और उसे नष्ट किया, तो परमेश्वर ने कहा: *'इसे और इसमें जो कुछ भी है, उस पर श्राप लगाओ'* (यहोशू 6:16)। इसके अलावा, जब यहोशू गिबियोन के लोगों से लड़ने को तैयार था, तो इस्राएली उनसे भाग गए, क्योंकि अकर ने शापित वस्तु की एक छोटी सी चीज़ चुरा ली थी, और वे अपने शत्रुओं का सामना नहीं कर सके। तब यहोशू मुँह के बल गिर पड़ा और परमेश्वर के सामने रोया, और कहने लगा, *'हे यहोवा, तू अपने लोगों का क्रोध उनके शत्रुओं से हटा दे'* (यहोशू 7:8), और *'मैं क्या करूँ?'* और प्रभु की शक्ति के प्रधान दूत ने उससे कहा, *"चूंकि तुम, हे इस्राएल, एक शपथ से बँधे हो, तुम अपने शत्रुओं के विरुद्ध नहीं ठहर सकते"* (– 13)। और (यहोशू) तब तक फिर युद्ध में नहीं गया जब तक उसने अकर को मार डाला। हम यह भी देखते हैं कि परमेश्वर ने साऊल से अमालेकियों के विषय में ली गई शपथ के कारण उसका राज्य छीन लिया। और इसके अलावा, क्योंकि योनातान ने *'अपनी छड़ी (शहद के छत्ते में)* डुबोई *और उसे अपने मुँह में डाल लिया, परमेश्वर ने उस दिन इस्राएल की नहीं सुनी'* (1 शमूएल 14:27, 37)। फिर, सभोपदेशक, हमें यह सिखाते हुए कि थोड़ी सी भी वासना सद्गुणों की शक्ति को नष्ट कर देती है, कहते हैं: *'मरे हुए मक्खी तेल की महक को बिगाड़ देती हैं'* (10:1)। यहेजकेल भी कहते हैं: उस दिन *'जब कोई धर्मी व्यक्ति अपने धार्मिकता के* मार्ग *से मुड़ जाता है और अधर्म करता है, तो मैं उस पर एक रोग लाऊँगा, और मैं उसकी धार्मिकता को याद नहीं रखूँगा'* (यहेजकेल 18:24)। फिर से, प्रेरित कहते हैं: *'थोड़ा सा खमीर पूरे आटे को खमीरित कर देता है'* (गलातियों 5:9)। जहाँ तक अननियाह और उनकी पत्नी सप्फिरा का प्रश्न है, जब उन्होंने बिक्री से प्राप्त धन में से कुछ रख लिया और झूठ बोला, तो वे इस छोटे से अपराध के कारण तुरंत प्रेरितों के पैरों तले गिर पड़े और अपनी जान दे बैठे। फिर, याकूब कहते हैं: *'क्योंकि जो कोई सारे व्यवस्था का पालन करता है, पर एक ही बात में चूक जाता है, वह सारी व्यवस्था का दोषी ठहराया गया है'* (याकूब 2:10)।

21. हमें उसकी ओर लौटने के लिए प्रोत्साहित करते हुए, परमेश्वर यहेज़केल के द्वारा कहते हैं: *'जिस दिन दुष्ट मनुष्य अपने दुष्ट मार्गों से लौटकर न्याय और धार्मिकता करता है, तो मैं उसकी दुष्टता को याद नहीं रखूँगा, परन्तु वह जीवित रहेगा'* (18:21); *'क्योंकि मुझे दुष्ट के मरने में कोई प्रसन्नता नहीं, परन्तु इस में है कि वह अपना मन बदलकर जीवित रहे। हे इस्राएल के घराने, अपना मन बदलो और जीवित रहो'* (33:11)। फिर, यिर्मयाह कहते हैं: *'हे इस्राएल के घराने, मेरी ओर फिरो, और मैं तुम पर दया करूँगा, यहोवा की यही वाणी है'* (यिर्म. 3: 12; 36:3). और फिर: *'क्या जो गिर गया है वह फिर नहीं उठता? या जो मुंह फेर गया है वह फिर नहीं लौटता? तो फिर ये मेरे लोग यरूशलेम में क्यों हठीले मन से मुंह फेर गए हैं, और अपना मन अपनी ही राह पर लगा लिया है, और लौटने से इनकार कर दिया है, यहोवा की यही वाणी है'* (यिर. 8:4,5)? *"मेरे पास लौट आओ, और मैं तुम्हारे पास लौट आऊँगा"* (मला. 3:7)। और प्रभु यीशु ने कहा: *"यदि तुम मनुष्यों के पाप क्षमा करोगे, तो तुम्हारा स्वर्गीय पिता भी तुम्हें क्षमा करेगा। परन्तु यदि तुम क्षमा न करोगे, तो तुम्हारा पिता भी तुम्हें क्षमा न करेगा"* (मत्ती 6:14–15)। इसी प्रकार, प्रेरित कहते हैं: *"यदि तुम में से कोई पाप में पड़ जाए, तो तुम जो आत्मा में हो, उसे कोमल आत्मा में फिर से सीधा करो"* (गलातियों 6:1)।

फरि, याकूब कहते हैं: *"हे भाइयो, यदि तुम में कोई सत्य के मार्ग से भटक जाए, और कोई उसे वापस लाए, तो उसे यह जान लेना चाहिए कि जो कोई पापी को उसके मार्ग की भूल से वापस लाता है, वह उसकी आत्मा को मृत्यु से बचाएगा और बहुत से पापों को ढाँपेगा"* (याकूब 5:19-20)।

22. धर्मशास्त्र की ये सभी गवाहियाँ हमें स्वयं की जाँच करने के लिए प्रेरित करती हैं कि क्या, (सही काम करने के लिए) परिश्रम करते हुए, हम अपने पड़ोसी के प्रति द्वेष रखते हैं, या क्या हम उससे कोई रंजिश रखते हैं, उसे (किसी भी बात के लिए) माफ करने से इनकार करते हैं, कहीं ऐसा न हो कि यह हमारी मेहनत को बर्बाद कर दे। ऐसे मामले में, हमारे प्रभु यीशु मसीह उस समय हमारी मदद नहीं करेंगे जब हमारे शत्रु हमें नुकसान पहुँचाने आएँगे। क्योंकि उन्होंने स्वयं ऐसे कुछ लोगों को कड़ी फटकार लगाई, यह कहते हुए: *'हे दुष्ट दास! मैंने तेरा सारा कर्ज माफ कर दिया क्योंकि तूने मुझसे विनती की थी। क्या तुझको भी अपने साथी दास पर दया नहीं करनी चाहिए थी? और अपने क्रोध में... उसने उसे यातना देने वालों के हवाले कर दिया, जब तक कि वह सारा कर्ज चुका न दे। इसी प्रकार मेरे स्वर्गीय पिता भी तुम में से प्रत्येक के साथ करेंगे, यदि तुम में से कोई भी अपने भाई की गलतियों को हृदय से नहीं माफ करेगा'* (मत्ती 18:32-35)। तो फिर, भाई, दिन-प्रतिदिन अपनी जाँच करो, यदि तुम अपना ही हृदय जानना चाहते हो—कि परमेश्वर के सामने उसमें क्या है—क्या वह (अपने भाई की) निंदा, या (उसके प्रति) घृणा, या ईर्ष्या, या तिरस्कार तो नहीं है? यदि ऐसा विष तुम्हारे हृदय में जड़ जमा ले, तो याद करो (तब) प्रभु यीशु का वचन, जो उन्होंने कहा: *'इस प्रकार तुम्हारा स्वर्गीय पिता भी तुमसे करेगा, यदि तुम में से प्रत्येक अपने भाई के अपराधों को हृदय से क्षमा न करे।'* अतः जो कोई गेहेन्ना में गिरने से डरता है, वह अपने हृदय से सारी द्वेष-भावना को निकाल दे, कहीं ऐसा न हो कि वह भयानक न्याय उस पर आ पड़े। तो, हे भाई, अपने हृदय पर ध्यान दो, और अपने शत्रुओं से सावधान रहो, क्योंकि वे सब अपनी दुष्टता में चालाक हैं। अपने हृदय में इस वचन की सच्चाई पर दृढ़ विश्वास रखो: कि किसी मनुष्य के लिए बुरा करते हुए अच्छा करना असंभव है, परन्तु किसी मनुष्य के लिए अच्छा होने के बहाने बुरा करना संभव है।

२३. इसलिये, हमारे उद्धारकर्ता ने हमें उनसे (शत्रुओं से) सावधान रहने की शिक्षा दी, यह कहते हुए: *'क्योंकि जीवन का द्वार संकरा और मार्ग तंग है, जो जीवन की ओर जाता है, और वे थोड़े हैं जो उसे पाते हैं। पर जो द्वार संकीर्ण है और मार्ग कठिन है जो जीवन की ओर जाता है, और वे थोड़े हैं जो उसे पाते हैं।' उनके* फल से तुम *उन्हें पहचानोगे' (मत्ती 7:14, 13, 15, 16)। तो फिर, उनके ये फल क्या हैं, यदि वे सभी प्रकार की अस्वाभाविकता नहीं हैं जिसके साथ वे 'उनके फल से तुम उन्हें पहचानोगे'* (मत्ती 7:14, 13, 15, 16)। तो फिर, उनके ये फल क्या हैं, अगर वह हर तरह की अस्वाभाविकता नहीं है जिससे वे हम पर हमला करते हैं, यह प्रयास करते हुए कि हमारे हृदय को उसकी ओर झुका दें? परन्तु झूठे भविष्यद्वक्ता उन लोगों को, जो परमेश्वर से अपने पूरे हृदय से प्रेम करते हैं, अपनी किसी भी शिक्षा के लिए मना नहीं सकते, जैसा कि प्रेरित के वचन कहते हैं: *'हमें परमेश्वर के प्रेम से कौन अलग कर सकता है? क्या संकट, या क्लेश, या उत्पीड़न, या अकाल, या नग्नता, या संकट, या तलवार? क्योंकि मैं जान गया हूँ कि न मृत्यु, न जीवन, न स्वर्गदूत, न प्रधानताएँ, न सामर्थ्य, न वर्तमान, न भविष्य, न ऊँचाई, न गहराई, और न कोई सृजित वस्तु हमें परमेश्वर के प्रेम से अलग कर सकती है।'* क्या आप देखते हैं, मेरे भाई, कि जो लोग पूरे हृदय से परमेश्वर से प्रेम करते हैं, वे कैसे होते हैं, कि कोई भी सांसारिक वस्तु उन्हें उसके प्रेम से अलग नहीं कर सकती?

24. अतः सावधान रहो, कहीं कोई विनाशकारी वस्तु तुम्हें परमेश्वर के प्रेम से दूर न कर दे—चाहे वह सोना हो, या चाँदी, या घर-बार, या सुख-आनंद की मिठास, या घृणा, या निंदा, या किसी वचन से हृदय को लगी चोट, या साँप द्वारा हमारे हृदयों में डाला गया कोई अन्य विष। निराश न हो (जब आप अपने भीतर ऐसी चीज़ों को पहचानते हैं), बल्कि प्रभु की आज्ञा से मूसा द्वारा बनाए गए काँसे के साँप पर अपनी दृष्टि टिकाने में शीघ्रता करो। उसने उसे पहाड़ की चोटी पर एक खंभे पर स्थापित किया, ताकि साँप द्वारा डँसा कोई भी व्यक्ति तुरंत उसे देख सके और चंगा हो सके। हमारे प्रभु यीशु मसीह की तुलना इस काँसे के साँप से की गई थी। (साँप) शत्रु है; उसकी बात मानकर, आदम परमेश्वर का शत्रु बन गया। हमारे प्रभु यीशु हमारे लिए, आदम की तरह, हर मामले में—पाप को छोड़कर—एक पूर्ण मनुष्य बने; जबकि काँसे का साँप, यद्यपि (दिखावट में) परमेश्वर के शत्रु जैसा था, उसके मन में कोई बुराई, कोई विष, कोई द्वेष नहीं है; वह रेंगता नहीं है और न ही फुफकारता है, और उसमें शत्रु की कोई आत्मा नहीं है। हमारे प्रभु यीशु ने इस प्रकार को पूरा किया, ताकि उस विष को निष्क्रिय किया जा सके जिसे आदम ने साँप के मुँह से चखा था। और जो स्वभाव अस्वाभाविक हो गया था, वह अपने स्वाभाविक स्वरूप में बहाल हो गया। परमेश्वर ने मूसा से इसी प्रकार कहा: *'तेरे हाथ में यह क्या है?' और उसने उत्तर दिया: 'एक डंडा।' और उसने उससे कहा: 'इसे ज़मीन पर फेंक दे।' तो उसने इसे ज़मीन पर फेंका, और यह एक साँप बन गया; और मूसा उससे भाग गए। और यहोवा ने मूसा से कहा: 'अपना हाथ बढ़ाकर इसकी पूँछ पकड़।' तो उसने अपना हाथ बढ़ाया, और उसे पूँछ से पकड़ लिया, और यह उसके हाथ में फिर से एक डंडा बन गया'* (निर्गमन 4:2-4)। इसके बाद, परमेश्वर ने उनसे विभिन्न अवसरों पर कहा: 'लाठी (जो साँप में

बदल गई थी) ले लो और फिरौन की आँखों के सामने उससे मिस्र की नदी पर वार करो, और उसका पानी खून में बदल जाएगा'; फिर: 'इसके साथ लाल सागर पर प्रहार करो, और वह सूख जाएगा'; और फिर: 'अपने हाथ में जो दण्ड है, जिससे तू ने समुद्र पर प्रहार किया था, उसे ले, और चट्टान पर प्रहार कर, और उसमें से जल निकलेगा' (निर्गमन 7:19; 14:16; गिनती 20:8)।

25. क्या तुम देखते हो कि कैसे, एक व्यक्ति जो कभी शत्रु और साँप था, हमारे प्रभु यीशु मसीह के पदचिन्हों पर चलने से एक लाठी में बदल जाता है, और उसका कोई भी शत्रु उसके विरुद्ध नहीं टिक सकता? यह वास्तव में एक महान रहस्य है। तो फिर, यदि साँप हमारे भीतर अपना विष बोता है, तो हम उस पर दृष्टि डालने के लिए क्यों जल्दी करते हैं जिसे क्रूस पर उठाया गया था? यह सब—दुख, क्रूस, मृत्यु—हमारे ही लिए उस पर किया गया था। और उन्होंने यह सब बिना बदले, उन्हें विषाक्त करने वालों से ठेस न पहुँचाते हुए, बिना कोई कठोर शब्द कहे सहन किया, और काँसे के सर्प की तरह अडिग बने रहे। इसलिए, यदि हम उनकी बात मानते हैं और उनके पदचिन्हों पर चलते हैं, तो हम छिपे हुए साँपों के डँसने से बचे रहेंगे। उसकी शक्ति और सहायता उसके वचनों में निहित है: *'जिस प्रकार मूसा ने जंगल में साँप को उठाया, उसी प्रकार मनुष्य के पुत्र को भी उठाया जाना चाहिए, ताकि जो कोई उस पर विश्वास करे वह नाश न हो, बल्कि अनंत जीवन पाए'* (यूहन्ना 3:14-15)। उसके पदचिन्हों पर चलने का यही अर्थ है – उसके द्वारा चंगा किया जाना। तो, हम कैसे चंगे होते हैं? यदि हम विश्वास करें कि वह ऐसा करने में शक्तिशाली है। क्योंकि जहाँ तक जंगल में डसे लोगों का सवाल है, उन्हें चंगा करने के लिए काँसे का साँप स्वयं नहीं आया, बल्कि साँप द्वारा डसा हुआ व्यक्ति विश्वास के साथ उसे देखकर चंगा हो गया। वहाँ साँपों के डँसने से कई लोग मर गए क्योंकि उन्होंने परमेश्वर के वचन पर विश्वास नहीं किया, जैसा कि प्रेरित ने कहा: *'हम मसीह को परीक्षा में न आजमाएँ, जैसा उन्होंने किया, और साँपों से नाश हो गए'* (1 कुरिन्थियों 10:9)।

26. क्या तुम जानते हो, हे भाई, कि आज भी आत्मा में एक साँप है, जो यीशु को परीक्षा में डालना चाहता है? और उसे परीक्षा में डालना और क्या है, सिवाय इसके कि उसकी आज्ञाओं पर प्रश्न उठाया जाए और उनका पालन न किया जाए, जैसा लिखा है: *'और उन में से एक, जो विद्वान था, ने उसे परीक्षा में डालने के लिए पूछा, और कहा, "हे शिक्षक, व्यवस्था में सबसे बड़ी आज्ञा कौन सी है?" यीशु ने उत्तर दिया, 'तू अपने परमेश्वर प्रेम कर अपना पूरा हृदय और अपना पूरा प्राण और अपना पूरा मन और अपनी सारी शक्ति लगाकर। इन दोनों आज्ञाओं पर सारा व्यवस्था और भविष्यद्वक्ता निर्भर करते हैं"* (मत्ती 22:35–40)। क्या आप देखते हैं कि जो प्रश्न पूछते हैं परन्तु काम नहीं करते, उन्हें परीक्षा में डालने वाले कहा जाता है? क्योंकि वे काँसे के साँप पर विश्वास नहीं करना चाहते, जो उन्हें अदृश्य साँप के विष से बचा सकता है। अपना हृदय दृढ़ रखो और निराश न हो जाओ, यह कहते हुए: 'मैं एक पापी मनुष्य होकर, धार्मिकता का पालन कैसे कर सकता हूँ?' क्योंकि जब कोई व्यक्ति अपने पापों को त्यागकर परमेश्वर की ओर मुड़ता है, तो पश्चाताप उसे नया कर देता है, जैसा कि प्रेरित कहते हैं: *'जिस प्रकार हम ने सांसारिक शरीर का स्वरूप धारण किया है, वैसे ही हम स्वर्गीय शरीर का स्वरूप धारण करेंगे'* (1 कुरिन्थियों 15:49)। क्या आप देखते हैं कि परमेश्वर ने मनुष्य को पश्चाताप के द्वारा रूपांतरित होने और उसके द्वारा पूरी तरह से नया बनाया जाने में सक्षम बनाया है?

27. जब शिशु अपनी माँ के गर्भ में होता है, तो वह हर पल उसे हर बुराई से बचाती है। यदि वह रोता है, तो वह उसे अपना स्तन देती है और उसके गाल पर धीरे से थपथपाती है, उसे इस तरह चेतावनी देती है कि वह श्रद्धापूर्वक उसका दूध पीए और अत्याचार न करे। यदि वह इसी कारण रोता है, तो वह उस पर दया करती है, जैसे अपनी कोख के फल पर करती है, उसे सांत्वना देती है, चूमती है और तब तक लाड़-प्यार करती है जब तक वह उसका स्तन नहीं पी लेता। यदि आप किसी बच्चे को सोना, या चाँदी, या मोती, या दुनिया का कोई और खजाना दिखाएँ, तो वह भले ही एक नज़र उन पर डाल ले, लेकिन जब तक वह अपनी माँ की गोद में है, वह उन सभी को ठुकरा देता है, ताकि वह उसका दूध पी सके। उसका पिता उससे काम न करने या अपने दुश्मनों के खिलाफ युद्ध में न जाने के लिए डाँट नहीं लगाता, क्योंकि वह अभी बहुत छोटा है और ऐसा करने में असमर्थ है: उसके पैर हैं, लेकिन वह उन पर खड़ा नहीं हो सकता; उसके हाथ हैं, लेकिन वह हथियार नहीं पकड़ सकता। इसलिए उसकी माँ तब तक धैर्यपूर्वक उसके साथ सहन करती है जब तक वह धीरे-धीरे बड़ा नहीं हो जाता। जब वह थोड़ा बड़ा हो जाता है और किसी और के साथ कुश्ती करना शुरू कर देता है, और वह व्यक्ति उसे ज़मीन पर पटक देता है, तो उसका पिता इस पर उससे नाराज़ नहीं होता, क्योंकि वह जानता है कि वह अभी भी एक बच्चा है। लेकिन जब वह एक पुरुष बन जाता है, तो उसका असली चरित्र सामने आता है - कि क्या वह अपने पिता के दुश्मनों का दुश्मन है। तब उसका पिता अपने मामलों को उस पर सौंप देता है, क्योंकि वह उसका बेटा है। लेकिन यदि, उसके माता-पिता द्वारा उसे पालने में की गई सारी मेहनत के बाद, वह, बड़ा होकर, उनके लिए एक अभिशाप बन जाता है, अपने माता-पिता से नफरत करने लगता है, उनकी बुद्धिमानी पर ध्यान देने से इनकार

कर देता है, और उनके दुश्मनों से दोस्ती कर लेता है, तो वे, उससे अपना अनुग्रह वापस लेकर, उसे अपने घर से निकाल देते हैं, (यह ठानकर) कि उसे उसकी विरासत भी नहीं देंगे।

28. और हम, हे भाई, अपना ख्याल रखेंगे, (अपने आपको विवश करके) पश्चाताप की शरण में बने रहने के लिए; हम इसके थनों का दूध पीएँगे, ताकि यह हमें पोषण दे। आओ हम सब दृश्यमान वस्तुओं को तुच्छ समझें, ताकि इसका दूध हमारे होठों पर मीठा हो। आओ हम उसकी शिक्षा का जुआ उठाएँ, ताकि वह और भी अधिक लगन से हमारी देखभाल करे। यदि हम अपने शत्रुओं से लड़ें, और वे हमें छोटे बच्चों की तरह गिरा दें, तो आओ हम उसके सामने रोएँ, ताकि वह हमारे पिता से उन लोगों से हमारा बदला लेने की विनती करे जिन्होंने हमें अन्याय किया है। आओ हम अपने हृदय की हर इच्छा को काट डालें, और परदेशी होने में आनंदित हों, ताकि वह हमें बचाए, जैसे उसने अब्राहम को बचाया था। आओ हम उसके हाथ के अधीन हो जाएँ, जैसे याकूब ने किया था, ताकि हम अपने पिता से आशीष प्राप्त कर सकें। आओ हम अपने हृदय की इच्छाओं से घृणा करें, जैसे मूसा ने उनसे घृणा की, और उसकी शरण में सुरक्षित रहकर, आओ हम उन लोगों के विरुद्ध उठ खड़े हों जिन्होंने उसे मारने की कोशिश की (पश्चाताप), एक ऐसे व्यक्ति के रूप में जो हर कामुक आनंद से मुक्त है। आओ हम इससे तिरस्कार न करें, कहीं ऐसा न हो कि यह हमसे घृणा करने लगे, जैसे एसाव ने किया। आओ हम इसकी पवित्रता बनाए रखें, ताकि यह हमें हमारे शत्रुओं के देश में गौरवान्वित कर सके। हमेशा इसे एक अच्छे आश्रय के रूप में रखें, जैसे कि नून के पुत्र यीशु, *'सेवक'*, कहते हैं: *'यीशु, नून का जवान पुत्र, निवास-स्थान से नहीं निकला'* (निर्गमन 33:11)। अपने हृदय में निराशा को कोई स्थान न दें, कहीं ऐसा न हो कि वह हमें प्रतिज्ञात देश में विरासत से वंचित कर दे। हम हर बात में नम्रता से प्रेम करें, और कालेब की तरह दूध और शहद से बहने वाली भूमि में प्रवेश करने की लालसा रखें। हम किसी भी हानिकारक चीज़ की लालसा न करें, कहीं ऐसा न हो कि हम अहर की तरह नष्ट हो जाएँ। हम उसके (पश्चातापी) विवेक से प्रेम करें, ताकि वह हमें हर घड़ी नम्र बनाए और राहाब की तरह परीक्षा के समय में हमारा उद्धार करे। हम किसी भी स्वादिष्ट व्यंजन में स्वाद के सुखों से प्रेम न करें, कहीं वह हमें नष्ट न कर दे, जैसा उसने एलियाह के बेटों को किया था। हम स्वयं को हर तरह के अधर्म से बचाएँ, जैसे शमूएल, जिसका अंतकरण निर्मल था, ताकि हम अपने पड़ोसी के साथ कुछ भी बुरा न करें। हम दूसरों से द्वेषपूर्ण ईर्ष्या को प्रेम न करें, कहीं ऐसा न हो कि यह (पश्चाताप) हमें त्याग दे, जैसा इसने शाऊल को त्यागा था। हम अपने पड़ोसी को बुराई के बदले बुराई न लौटाने को प्रेम करें, ताकि यह (पश्चाताप) हमें बुराई से बचाए, जैसा इसने दाऊद को बचाया था। आइए हम आत्म-प्रशंसा और घमंड से प्रेम न करें, कहीं ऐसा न हो कि यह हमें हमारे पिता की उपस्थिति से दूर कर दे, जैसा इसने अबीशालोम के साथ किया था। परन्तु आइए हम नम्रता और ईमानदारी से प्रेम करें, ताकि यह हमें हमारे पिता के सभी शत्रुओं के विरुद्ध प्रतिशोध लेने वाले बना सके, जैसा इसने सुलैमान के साथ किया था। आओ हम सभी चीजों का पूर्ण त्याग करें, अपने अंगों को हर निष्फल काम से रोकें, ताकि हमें अपने शत्रुओं के विरुद्ध एक धैर्यवान हृदय प्राप्त हो, जैसे तिशिबी एलियाह को हुआ था। आओ हम सुख-भोगी या कामुक न हों, कहीं ऐसा न हो कि वह (पश्चाताप) हमें नष्ट कर दे जैसे इसाबेल के समय हुआ था। आओ, हम मृत्यु तक प्रयास करें, कहीं ऐसा न हो कि हम नाहाब इस्राएली की तरह उसकी पवित्र विरासत खो दें। आओ, हम परमेश्वर में अपने पितरों के प्रति सभी बातों में आज्ञाकारी बनें, अपनी हर इच्छा को त्यागकर, ताकि, उनके प्रति पूर्ण समर्पण के द्वारा, उनकी आशीष हम पर बनी रहे, जैसा कि एलीशा पर बनी रही। हम धन के प्रेमी या धोखेबाज़ लोगों को खुश करने वाले न बनें, कहीं ऐसा न हो कि हम पर वह दंड आ पड़े जो गेहाज़ी पर पड़ा था। हम सभी बातों में विश्वासयोग्य लोगों (मनुष्यों) से स्वयं से अधिक प्रेम करें, ताकि वह (पश्चाताप) हमें आशीष दे, जैसा उसने शुनेमी को दिया था। हम लज्जास्पद कर्मों के कामुक प्रेमी न बनें, कहीं ऐसा न हो कि यह हमें अपनी उपस्थिति से नष्ट कर दे, जैसा कि अहियाह और ज़ेदेकियाह के साथ हुआ, जिन्हें बेबीलोन के राजा ने आग में जला दिया था। हम अपनी आत्मा के लिए, मृत्यु तक, पाप से घृणा करें, ताकि यह हमारी आवश्यकता के समय में हमारी सहायता कर सके, जैसा कि सुसन्ना के समय में किया था। हम विभिन्न स्वादिष्ट व्यंजनों के लालची न बनें, कहीं ऐसा न हो कि यह हमें छोड़ दे, जैसा कि उन लोगों को छोड़ दिया गया जिन्होंने नबूकदनेसर की मेज़ से भोजन ग्रहण किया था। हम हर बात में दुख को प्रेम करें, ताकि वह हम में प्रसन्न हो, जैसा कि अज़ारिया के साथियों में हुआ था। हम बेबीलोनियों की तरह कपटी न बनें, जिन्होंने विश्वासियों के विरुद्ध कुड़कुड़ाया था। आओ हम अपनी (प्रार्थनापूर्ण) सेवाएँ शरीर की सुस्ती में लिप्त हुए बिना करें, जैसे दानियेल, जिसने अपनी दैनिक प्रार्थनाओं को त्यागने की बजाय मरना पसंद किया। क्योंकि परमेश्वर अपने प्रेम करने वालों को प्रलोभनों से बचाने और दुष्टों का नाश करने में समर्थ है। इस प्रकार परमेश्वर में धर्मी (दानियेल) का विश्वास जानवरों को मेमनों और भेड़ों में बदल गया। प्रायश्चित का परमेश्वर धन्य है, और उसके सामने वह धन्य है जिसने उससे (प्रायश्चित से) प्रेम किया और अपनी गर्दन उसकी इच्छा (प्रायश्चित) के जुए के नीचे झुकाई, जब तक कि वह परमेश्वर की इच्छा से ऊपर से नया जन्म नहीं ले लेता।

२९. इसलिए, हे भाई, मनुष्य को बड़ी समझदारी, हर सांसारिक इच्छा का त्याग, और अपने सभी मार्गों में चौकसी की आवश्यकता होती है, ताकि वह भटक न जाए या अपने शत्रुओं (पश्चाताप के) के हाथों में न पड़ जाए। इस प्रकार, आत्म-धार्मिकता की प्रवृत्ति उसे कठोर बना देती है, पापियों की निंदा उसे दूर कर देती है, और लापरवाहों का अपमान उसे अलग कर देता है। नीतिवचन में उसके विषय में लिखा है: *'उसके घर के मार्ग संकरे हैं; पर आलसी का भोजन वह नहीं खाता। वह अपने पति के लिए सुंदर वस्त्र बनाती है। वह दूर से नौकायन करके आने वाले व्यापारी के समान है: वह अपने लिए धन-संपत्ति इकट्ठी करती है'* (नीतिवचन 31:27, 22, 14)। अतःआइए हम इन शब्दों से इसे समझने का प्रयास करें। एक व्यापारी, जब जहाज में माल लादता है, तो उसमें केवल एक प्रकार का माल नहीं, बल्कि वह सब कुछ रखता है जिससे, जैसा कि वह जानता है, उसे लाभ होगा। जब वह किसी को हानि उठाते हुए देखता है, तो वह उनसे प्रतिस्पर्धा नहीं करता, बल्कि उन लोगों से प्रतिस्पर्धा करता है जो अमीर बन गए हैं और जो अपने घरों में शांति से रहते हैं। वह किसी भी ऐसी चीज़ से दूर रहता है जिससे हानि होती है, और लाभ दिलाने वाली किसी भी चीज़ को प्राप्त करता है, जब तक कि वह अपना एक (व्यापार) नहीं खरीद लेता। उसका अपरिवर्तनीय नियम यह है: जो भी उसे लाभ पहुँचाता है, उसे उसी को फिर से खरीदने का प्रबंध करना चाहिए, और उनसे पूछना चाहिए जो उससे ईर्ष्या नहीं करते—जो धनी हो गए हैं और अपने घरों में शांति से रहते हैं—कि इसको कितने में बेचना है, और उसको कितने में खरीदना है। ऐसी ही आत्मा है जो बिना किसी बाधा के ईश्वर से मिलना चाहती है। यह एक ही प्रयास से संतुष्ट नहीं होती, बल्कि हर उस प्रयास की तलाश करती है जो लाभदायक (मोक्ष के लिए) हो; और यदि उसे किसी ऐसे प्रयास के बारे में पता चलता है जो अलाभकारी है, तो वह उससे दूर भाग जाती है, ताकि उसे कोई हानि न हो।

३०. अब, हे मेरे भाइयो, क्या तुमने स्वयं को यीशु का व्यापारी कहा है? तो फिर ऐसा ही बनो। राजा का व्यापार हानि पहुँचाने वाली किसी भी चीज़ से बहुत दूर है। यहाँ वे चीज़ें हैं जो उसके लिए अलाभकारी हैं: मानवीय महिमा, घमंड, आत्म-धार्मिकता, अहंकार, चोट पहुँचाने वाले शब्द, आत्म-संतुष्टि, डींगें हाँकना, और मनोरंजन का प्रेम। ये सभी चीजें यीशु के व्यापारियों के लिए अलाभकारी हैं, और यदि उनके पास अपनी दुकान में ऐसी चीजें हैं तो उनके लिए उसे प्रसन्न करना असंभव है। भाई, अपनी जाँच करो: तुम्हारे भीतर क्या है? अपने मन से अपनी भावनाओं की बारीकी से जाँच करो: उनमें से कौन सी परमेश्वर के लिए फल देती हैं, और कौन सी पाप की ओर आकर्षित होती हैं? क्या तुम्हारी आँखें सुख की मिठास से मोहित नहीं होतीं? क्या तुम्हारी जीभ अभद्रता से नहीं हार जाती? क्या तुम नहीं देखते कि तुम्हारा हृदय मानवीय सम्मान में आनंदित होता है? क्या आपके कानों को बदनामी में आनंद नहीं आता? यह सब मन के लिए हानिकारक है। लेवियों की पुस्तक में लिखा है: 'तू हारून से यों कहना: *"तू मेरे वेदी पर कोई भी दोषी पवित्र पशु बलिदान न करना; ऐसा न हो कि तू मर जाओ"'* (लैव. 22:18, 20)। हारून मन का प्रतीक है। चूँकि शत्रु (आमतौर पर) अपने दुष्ट कार्यों को धार्मिक कार्यों में मिला देता है, इसलिए ईश्वर ने आज्ञा दी कि उन्हें उसकी आराधना करने से पहले परखा जाए, कहीं कोई मर न जाए। हालाँकि, मरने का अर्थ है चिंतन से उतरना और उन लोगों के साथ सहमति में आ जाना जो किसी के इंद्रियों को कलंकित करना चाहते हैं।

31. ये हैं उन लोगों के वचन जिन्होंने यीशु से प्रेम किया और उन पर अपना भरोसा रखा! और उनकी आत्माएँ हर सद्गुण से सुसज्जित एक वधू बन गईं, जिनके पास अपना पवित्र दर्पण था, जैसा कि प्रेरित के शब्दों में कहा गया है: *'किन्तु हम सब, जिनका मुखावरण उठा हुआ है, प्रभु की महिमा को निहारते हुए, उसी प्रतिमा में महिमा से महिमा तक रूपांतरित हो रहे हैं , यह प्रभु की आत्मा के द्वारा है'* (2 कुरिन्थियों 3:18)। क्योंकि *'अब हम दर्पण में, परछाँह में देखते हैं; परन्तु तब हम मुखामुखा देखेंगे'* (1 कुरिन्थियों 13:12)। इस प्रकार, जो पवित्रता के द्वारा उसकी वधू बनी हैं, वे यह देखने के लिए कि क्या उनके मुख पर कोई दाग है, दर्पण की तरह अपने भीतर झाँकती हैं, कहीं ऐसा न हो कि यह उनके वरा को अप्रिय लगे। क्योंकि वह आत्मा से पवित्र, निर्दोष कुँवारियों की खोज करता है, जैसा कि रिबिका के विषय में लिखा है, कि वह बहुत सुन्दर मुख वाली थी और किसी मनुष्य को नहीं जानती थी (उत्पत्ति 24:16)। और भविष्यवक्ता कहते हैं: *'कन्याएँ उसके पीछे-पीछे राजा के पास लाई जाएँगी; उसके विश्वासयोग्य तुझ तक लाए जाएँगे'* (भजन संहिता 44:15)। *'लाई जाएँगी'* उनके पवित्र मानवत्व की ओर संकेत करता है, और *'उसके विश्वासयोग्य'* उनकी ओर उनके लगाव की ओर संकेत करता है। क्योंकि पवित्र बपतिस्मा के द्वारा पुनर्जन्म ने उन्हें सब पुरानी बातों से नया किया है, जबकि पश्चाताप उन्हें शुद्ध करता है और पवित्र कुंवारी बनाता है, जिन्होंने सब पुरानी बातों को भुला दिया है और अब उन्हें याद नहीं करते, जैसा कि भविष्यवक्ता ने उनसे कहा: *'हे पुत्री, सुन और देख; अपना कान लगा, और अपने लोगों और अपने पिता के घर को भूल जा। तब राजा तेरी शोभा की लालसा करेगा'* (भजन संहिता 44:11-12)। और सारी स्वर्गीय सेनाएँ उसकी पवित्रता के कारण चकित होंगी, जिससे पश्चाताप ने उसे शुद्ध किया है और उसे प्रभु के साथ एक शरीर बना दिया है, और वे कहेंगी: *'यह ऊपर चढ़ने वाली कौन है, जो श्वेत और अपने भाई द्वारा सुसज्जित है?'* (प्रेम गीत 8:5)?

32. अतःहम अपनी सारी शक्त आँसुओं के साथ इस प्रयास में लगाएँ कि हम धीरे-धीरे पुराने मनुष्य के कर्मों को त्याग दें, और हर हानिकारक कार्य से स्वयं को बचाएँ, जब तक कि उसका प्रेम हम पर न आए और, हमसे सांसारिक स्वरूप को हटाकर, हमारे हृदयों में अपना पवित्र, स्वर्गीय स्वरूप न स्थापित कर दे, ताकि हम उसके योग्य बन सकें, हर बुराई से शुद्ध, जैसा कि प्रेरित ने कहा है: *'जिस प्रकार हम ने सांसारिक स्वरूप धारण किया है, वैसे ही हम स्वर्गीय स्वरूप भी धारण करेंगे'* (1 कुरिन्थियों 15:49)। चूँकि प्रेरित जानते थे कि जब से आज्ञा का उल्लंघन हुआ है, तब से कोई भी मनुष्य पाप से रहित नहीं है, और यह कि पश्चाताप मनुष्य को पापरहित नवीकरण में पुनर्स्थापित कर सकता है; इसलिए उन्होंने कहा कि हमें उस व्यक्ति के कर्मों को त्याग देना चाहिए जिसने आज्ञा का उल्लंघन किया है, और उन कर्मों का अभ्यास करना चाहिए—अर्थात् हमारे प्रभु यीशु मसीह की पवित्र आज्ञाओं का, जिन्होंने दया दिखाई और मनुष्य की दासता उठाई, ताकि उसे छिपे हुए स्वर्ग में ले जा सकें और उस पर अपनी सभी पवित्र सिद्धियाँ प्रदान कर सकें, उसे जीवन के वृक्ष का स्वाद चखने की अनुमति दें, जो पवित्रता है जो उन्होंने स्वयं में प्रकट किया, और करूबों को उनके ज्वलंत हथियारों से शांत कर दिया, जो जीवन के वृक्ष के मार्ग की रक्षा के लिए नियुक्त हैं—जो उनके पवित्र वचनों का ज्ञान है, जो हर समय (विश्वासियों) की रक्षा करते हैं, और साँप के हर वचन से उनके कानों को ढकते हुए, उन्हें उस कड़वी दासता की याद दिलाते हुए जिसमें वे पहले गिर चुके थे, कहीं वे फिर से उसमें न लौट जाएँ, और उन्हें उस पर अनवरत धन्यवाद करना सिखाते हुए जिसने उन्हें अपने बहुमूल्य लहू से छुड़ाया। उन्होंने क्रूस द्वारा उनके दासत्व का अभिलेख मिटा दिया (कुलु. 2:14) और उन्हें भाई और मित्र बना दिया (यूहन्ना 15:14; 20:17), अनुग्रह से उन पर अपना आत्मा उंडेलने और उनके हृदयों को सांत्वना देने के बाद, उन्होंने कहा: *'मैं अपने पिता और तुम्हारे पिता के पास, और अपने परमेश्वर और तुम्हारे परमेश्वर के पास जाता हूँ'* (यूहन्ना 20:17)। इसके अलावा: *'हे पिता, मैं चाहता हूँ कि जहाँ मैं हूँ, वहाँ वे भी मेरे साथ हों, क्योंकि मैंने उन्हें वैसे ही प्रेम किया है जैसे आपने मुझे प्रेम किया है'* (यूहन्ना 17:24, 23)। उन्होंने हमें यह भी दिखाया कि उन्होंने यह सभी के बारे में नहीं कहा, बल्कि उन लोगों के बारे में कहा, जिन्होंने अपनी इच्छाओं को त्यागकर, उनकी पवित्र इच्छा का अनुसरण किया, और इस संसार की हर इच्छा से खुद को अलग कर लिया। क्योंकि उन्होंने कहा: *'मैंने उन्हें संसार में से चुना है; इस कारण संसार उनसे घृणा करता है, क्योंकि वे संसार के नहीं हैं'* (यूहन्ना 15:19; 17:9, 14). क्या आप देखते हैं कि यह वे हैं जिन्होंने सांसारिक चीजों को त्याग दिया है जिन्हें प्रभु यीशु की वधू बनने के लिए योग्य समझा गया है? वे उनके साथ एकता में बने रहते हैं, जैसा कि प्रेरित ने कहा: *'इसी कारण मनुष्य पिता और माता को छोड़कर अपनी पत्नी से जुड़ जाएगा, और वे दोनों एक तन हो जाएंगे। यह एक महान रहस्य है: परन्तु मैं मसीह और कलीसिया के विषय में कहता हूँ'* (इफिसियों 5:31, 32)। और फिर उसने कहा: *'कि मैं सह-वारिस, सह-सेवक, और सुसमाचार के द्वारा मसीह यीशु के विषय में उसकी प्रतिज्ञा का सहभागी होऊँ'* (इफिसियों 3:6)। क्या आप देखते हैं कि उनका पवित्र आत्मा उन लोगों में वास करता है जिन्हें प्रभु के साथ एक शरीर बनने के लिए योग्य ठहराया गया है? और वह उनकी मदद करता है; वह उनकी देखभाल करता है, जैसा कि प्रभु ने कहा: *'तुम नहीं बोलोगे, बल्कि तुम्हारा पिता तुम में बोलता है'* (मत्ती 10:20)। इसी प्रकार, प्रेरित *कहते हैं: 'परन्तु परमेश्वर ने ये बातें हमें अपने आत्मा के द्वारा प्रगट की हैं; क्योंकि आत्मा सब कुछ, यहां तक कि परमेश्वर की गहराइयों तक, परखता है'* (1 कुरिन्थियों 2:10)। वे आगे कहते हैं, *'परन्तु हमारे पास मसीह का मन है'* (पद 16)। तो फिर, मसीह का मन पाप के किसी भी विचार को कैसे रख सकता है?

33. हे भाई, इस रहस्य पर अपने हृदय से ध्यान लगाओ: कि पृथ्वी पर हर जाति अपनी ही जाति को जन्म देती है, और किसी दूसरी जाति को नहीं, चाहे वह पालतू पशु हो, कोई जंगली जानवर हो, कोई सरसरी जीव हो, या कोई पक्षी। ईश्वर ने उन्हें सभी आदम के पास क्यों लाया – यह देखने के लिए कि क्या कोई उसकी तरह का था? और कोई नहीं मिला, क्योंकि वे उसकी प्रकृति के नहीं थे। फिर ईश्वर ने आदम की एक पसली लेकर, उसे उसकी पत्नी के रूप में बनाया, ठीक वैसे ही जैसे उसने उसे पुरुष से निकाला था। यह महान रहस्य उन लोगों में भी पाया जाता है जो मसीह की वधूएँ बनती हैं, क्योंकि वे पुनर्जन्म के माध्यम से उनके सार और उनके पवित्र शरीर की हैं, जैसा कि प्रेरित कहते हैं: *'हम सब मसीह में एक शरीर हैं, और व्यक्तिगत रूप से एक-दूसरे के अंग हैं'* (रोमियों 12:5)। और फिर: *'क्योंकि हम उसके शरीर, उसके मांस और उसकी हड्डियों के अंग हैं'* (इफिसियों 5:30)। क्या आप देखते हैं कि वह क्या चाहता है? कि मनुष्य हर तरह से उसकी तरह हो, ठीक वैसे ही जैसे हव्वा आदम से आई थी और हर तरह से उसकी तरह है। क्यों, यदि हममें पशुओं का मूर्खतापन, या जंगली जानवरों की लालच, या पक्षियों का चंचलपन, या सरीसृपों का विष हो, तो ऐसी आत्माएँ कुँवारियाँ और दुल्हनें नहीं बन सकतीं, क्योंकि वे उसके कर्मों के अनुरूप नहीं हैं। भाई, क्या आप देखते हैं कि वह कैसे चाहता है कि मनुष्य उसकी तरह हो, हर तरह की अस्वाभाविकता से मुक्त, ताकि उसे उसकी वधू बनने के योग्य माना जा सके? आत्मा अपने कर्मों के माध्यम से अपने विचारों को पहचानती है। यदि यह आत्मा के कार्य

करती है, तो (यह स्पष्ट है कि) पवित्र आत्मा उसमें वास करता है, क्योंकि आत्मा के कार्य आत्मा को पुनर्जीवित करते हैं, और उसे निर्लिप्त बनाते हैं। और यह असंभव है कि पवित्र आत्मा ऐसी आत्मा में वास न करे, जैसा प्रभु ने कहा: *'यदि तुम मुझ से प्रेम करते हो, तो मेरी आज्ञाओं को मानो। और मैं पिता से प्रार्थना करूँगा, और वह तुम्हें एक और सहायक देगा—सत्य का आत्मा'* (यूहन्ना 14:15-17)। और प्रेरित यह भी कहते हैं: *'या क्या तुम अपने आपको नहीं जानते, कि यीशु मसीह तुम में है—यदि सच में तुम अकुशल नहीं हो?'* (2 कुरिन्थियों 13:5)।

34. क्या आप यह देखते हैं कि यदि कोई यीशु के कामों का अधिकारी नहीं है, तो वह मूर्ख है और उसकी दुल्हन नहीं है? सभी कुँवारियों ने अपने दीपक तैयार किए, लेकिन जिनके पास कामों की कमी थी, वे दरवाज़े के बाहर रह गईं। समुद्र में डाले गए जाल में हर तरह की मछलियाँ इकट्ठी हुईं, लेकिन केवल अच्छी मछलियों को ही राज्य में स्वीकार किया गया। खरपतवार गेहूँ के साथ-साथ उगे, लेकिन जब फसल काटने का समय आया, तो उन्हें गट्ठों में बाँधकर आग में डाल दिया गया। सभी डालें बेल पर बनी रहीं, लेकिन जो फल नहीं लाईं उन्हें आग में फेंक दिया गया। भेड़ें बकरियों के साथ चरती थीं, लेकिन उसने केवल भेड़ों को अपने साथ अंदर लिया, जबकि बकरियों को बाहर फेंक दिया गया। बोने वाले ने अपने सभी बीज समान रूप से बोए, लेकिन वह केवल उन्हीं से प्रसन्न था जो अच्छी मिट्टी में उगे। जिसने चाँदी (प्रतिभाएँ, मनस) दी, उसने वह पक्षपात के बिना दी, लेकिन केवल उसी ने उसे दोगुना किया जिसने उसे प्रसन्न किया। सभी को विवाह भोज में आमंत्रित किया गया था, लेकिन जिसने विवाह के वस्त्र नहीं पहने थे (राजा), उसने आज्ञा दी कि उसे बाहरी अंधकार में फेंक दिया जाए। ये वचन हम पर लागू होते हैं, क्योंकि हम सभी कहते हैं कि हम विश्वास करते हैं, लेकिन जिनके पास उसकी दिव्यता के कार्य नहीं हैं, उन्हें वह बाहर निकाल देगा, जैसा उसने कहा: *'क्योंकि बुलाए तो बहुत हैं, पर चुने हुए कम हैं'* (मत्ती 22:14)।

35. हे भाइयो, आओ हम स्वयं की परीक्षा करें, और प्रभु से मिलने से पहले अपने कर्मों पर विचार करें। हम उन लोगों की ओर न देखें जो अपने हृदय की सांसारिक इच्छाओं में लिप्त रहते हैं, कहीं ऐसा न हो कि हम उस महान धन को गँवा दें जो हमें आवश्यकता के समय प्राप्त होने वाला है। आइए हम इसे प्राप्त करने का प्रयास करें, और उस चीज़ को तुच्छ समझें जिसे हमें एक शत्रु के रूप में पीछे छोड़ना है। आओ उन लोगों पर मनन करें जिन्होंने अपनी सारी मेहनत नाशवान (वस्तुओं) की प्राप्ति में लगा दी, जिन्होंने उन्हें त्याग दिया और चल बसे, और इसी कारण गेहेन्ना को विरासत में पाया, क्योंकि वे प्रभु के पदचिन्हों पर चलना नहीं चाहते थे, ताकि वे उनकी दुल्हनों के योग्य ठहर सकें। इसलिए आइए हम परमेश्वर के सामने आँसुओं, दुखी हृदय और गुप्त विलाप के साथ प्रयत्न करें, ताकि (वह हमें) उनकी जैसी अपमानित स्थिति में न पड़ने दे। क्योंकि जब समुद्र में तूफ़ान आता है, और कई जहाज़ डूब जाते हैं जबकि अन्य बच जाते हैं, तो वे यह नहीं कहते, 'हम भी उनके जैसे गहराई में डूब जाएँगे,' बल्कि वे एक-दूसरे को हिम्मत न हारने के लिए प्रोत्साहित करते हैं और ईश्वर से उनकी मदद करने के लिए विनती करते हैं। सचमुच, पृथ्वी पर एक बड़ा तूफ़ान मचा हुआ है। इसलिए आओ, हम हर तरह से स्वयं को परिश्रम करने के लिए प्रेरित करें, और प्रभु से पुकारें, कहीं हम नाश न हो जाएँ: जैसे कि, जब समुद्र में तूफान आता है, तो जहाज का कप्तान हमेशा नाविकों और यात्रियों दोनों में ऐसे लोगों को पाता है जो उसका हौसला बढ़ाते हैं। (यह जान लें कि) यदि कोई मनुष्य खुद को विनाश की ओर ले जाने वाली हर चीज़ से मुक्त नहीं करता है, तो वह इस तूफानी समुद्र से बच नहीं सकता। और न ही मूसा प्रभु के लिए गीत गा सकते थे, जब तक कि वे समुद्र को पार नहीं कर लेते और उन लोगों की मृत्यु को नहीं देख लेते जिन्होंने उनके लोगों को मिस्र में ही रखना चाहा, ताकि वे वहाँ दास बने रहें। और जब वह उन्हें पार ले आया, जब वे पूरी तरह से स्वतंत्र हो गए, तभी उसने पुकार लगाई: *'हम प्रभु के लिए गीत गाएँ, क्योंकि उसने महिमामय विजय प्राप्त की है; उसने घोड़े और सवार को समुद्र में फेंक दिया है'* (निर्गमन 15:1)।

36. इस प्रकार, जब मन आत्मा की शक्तियों को देह की इच्छाओं से बचाकर उनसे मुँह मोड़ता है, तब चिंतन का स्तंभ आत्मा को देह की इच्छाओं से अलग कर देता है। तब, यदि ईश्वर देखता है कि आवेगों की निर्लज्जता आत्मा पर टूट पड़ती है, जो उसकी इंद्रियों को पाप में बनाए रखना चाहती है, जबकि मन गुप्त रूप से निरंतर ईश्वर के साथ विराजमान रहता है, तो वह उसे अपनी सहायता भेजता है और उन्हें एक ही बार में नष्ट कर देता है, जैसा लिखा है: *'यहोवा ने मूसा से कहा: "तुम मुझ से क्यों पुकार रहे हो? इस्राएलियों को आज्ञा दो कि वे अपने आप को तैयार करें। और तुम, अपने हाथ में जो दण्ड है, उसे ले लो और उसे समुद्र के पानी पर फैलाओ—और वे सूख जाएँगे"'* (निर्गमन 14:15–16)। ईश्वर अब भी मूसा को मदद का हाथ बढ़ाने के लिए विश्वसनीय है, मिस्रवासियों के हाथों से इस्राएल को बचाने के लिए—जिनकी इच्छाओं को हमने पूरा किया है—ताकि हम भी उनके लिए एक नया गीत गाने के योग्य माने जाएँ, यह कहते हुए: *'हम प्रभु के लिए गीत गाएँ, क्योंकि उन्होंने स्वयं को महिमामय रूप से महिमामंडित किया है'*। लेकिन हम यह कैसे कह सकते हैं, *'क्योंकि वह वैभव में महिमामय हुआ है'*, यदि हम अपने शत्रुओं से चिपके रहें और अपनी इच्छा से मिस्र की ओर मुड़ें, वहाँ के भोजन की लालसा करें, और हारून को आग्रह करें: *'हमें देवता बना दो'* जो

हमें मिस्र वापस ले जाएँगे (निर्ग. 32:1)—और यदि हम अपनी कायरता से इतने नम्र हो जाएँ कि हम आध्यात्मिक भोजन को तुच्छ समझें। फिर भी परमेश्वर इतना शक्तिशाली है कि वह हमें मारने वाले बछड़े को नष्ट करने के लिए मूसा को पहाड़ से हमारे पास वापस लाएगा, जिससे हमने परमेश्वर को क्रोधित किया है। ईश्वर, जिन्होंने हमें पश्चाताप की अनुग्रह-दृष्टि प्रदान की है, हमें एक बार फिर से अपने पास लाने में समर्थ हैं, और मूसा को हमारे लिए यह प्रार्थना करने के लिए शक्ति प्रदान करते हैं: *'यदि आप उनके पापों को क्षमा करें, तो उन्हें क्षमा करें; परन्तु यदि नहीं, तो मुझे जीवन की पुस्तक से मिटा दें।'* (निर्गमन 32:32), और समय आने पर यीशु को शक्ति से परिपूर्ण करना, ताकि वे उन सात जातियों का नाश करें जिन्होंने अपनी ईर्ष्यालु चालाकी से प्रतिज्ञात देश पर अधिकार कर लिया है – ताकि इस्राएल अपना उत्तराधिकार प्राप्त कर सके, और उसमें हमेशा के लिए बिना किसी ईर्ष्या के निवास कर सके। आमीन। सामर्थ्य उसी की है, सहायता उसी की है, सुरक्षा उसी की है, बुद्धि उसी की है, रक्षा उसी की है। हे प्रभु यीशु मसीह, वह हम में हैं, परमेश्वर पिता और पवित्र आत्मा की महिमा और सम्मान के लिए, युगों से पहले, अब और युगानुयुग। आमीन। हे भाई, जब तुम इसे पढ़ लो, तो इसका पालन करना सुनिश्चित करो, ताकि प्रभु तुम्हें परीक्षा के समय में रक्षा प्रदान करें। आमीन।

26. यशायाह के शिष्य, अबा पीटर द्वारा प्रसारित वचन

1. मेरे पिता ने कहा: 'जो ठीक करने की आवश्यकता है, उसे ठीक करने के लिए साहस करो। पवित्रता परमेश्वर से प्रार्थना करती है। परमेश्वर का भय और आत्म-संयम (सभी बातों में) पापों को पीछे छोड़ देते हैं। यदि कोई मनुष्य अपने हृदय में प्रतिशोध की भावना रखता है, तो उसकी प्रार्थना व्यर्थ है। इस युग (के मामलों) के बारे में सलाह या मार्गदर्शन न माँगो, और न ही उन लोगों को दो जो तुमसे माँगते हैं। अपने कान लगातार उन लोगों के लिए खुले रखो जो तुम्हारे भीतर बोलते हैं, और ईश्वर से प्रार्थना करो कि वह तुम्हें यह जानने का वरदान दे कि किन शब्दों पर ध्यान देना है। अपनी शक्ति का प्रयोग इस प्रकार करो कि तुम अपने होठों से एक बात कहो और अपने हृदय में दूसरी बात न पालो।

२. उन्होंने फिर कहा कि समझ के साथ परमेश्वर के सामने स्वयं को नम्र करना, और नम्रता से आज्ञाओं का पालन करना, प्रेम को जन्म देता है, और प्रेम वैराग्य को जन्म देता है।

3. उन्होंने यह भी कहा कि जो मौन का अभ्यास करता है, उसे हर घंटे अपनी जाँच करनी चाहिए कि क्या वह उन लोगों से आगे निकल गया है जो उसे हवा में लटकाए रखना चाहते हैं, और क्या वह यहाँ रहते हुए भी उनसे मुक्त हो गया है। जब तक कोई उनके बंधन के अधीन रहता है, तब तक वह (उनसे) मुक्त नहीं हुआ है। इसीलिए जब तक उस पर अनुग्रह नहीं हो जाता, तब तक उसके सामने कष्ट का मार्ग है।

४. उन्होंने फिर कहा: 'जो मनुष्य अपने हृदय में निन्दा पालता है, वह परमेश्वर की अनुग्रह से दूर है।' जब मैंने उनसे इसके बारे में पूछा, तो उन्होंने कहा: 'यदि आप हमारे प्रभु, यीशु मसीह का अनुसरण करना चाहते हैं, तो उनके वचन का पालन करें; यदि आप उनके साथ पुराने मनुष्य को सूली पर चढ़ाना चाहते हैं, तो आपको उन लोगों को काट डालना होगा जो आपको क्रूस से दूर ले जाते हैं, अपमान सहने के लिए खुद को तैयार करना होगा, जो आपको कड़वा बनाते हैं उनके दिलों को शांत करना होगा, खुद को नम्र बनाना होगा, अपनी इच्छाओं पर शासन करना होगा, अपने होठों को चुप रखना होगा, और अपने दिल में किसी को दोषी नहीं ठहराना होगा।

५. उन्होंने यह भी कहा कि जो मौन में है, उसे परमेश्वर से मिलने का ऐसा भय होना चाहिए कि उसकी साँसें रुक जाएँ; क्योंकि जब तक पाप उसका हृदय अपनी ओर खींचता है, तब तक वह भय उसमें सिद्ध नहीं हुआ है, और दया अभी भी उससे दूर है।

6. उन्होंने फिर कहा: 'यह अफ़सोस की बात है कि हमारे होठों पर निर्लिप्तता है, परन्तु हमारे हृदयों में अधर्म और बुराई है।'

7. उन्होंने यह भी कहा कि यदि कोई व्यक्ति अपने शरीर को प्रिय यीशु के समान बनाने के लिए मृत्यु तक प्रयास नहीं करता है, तो वह आनंद के साथ उनसे नहीं मिलेगा, और न ही वह अभी तक कड़वी दासता से मुक्त होगा।

8. और यह वही है जो उन्होंने आगे कहा: 'दया करो! दया करो! दया करो! आत्मा किस हालत में आ गई है! उसे किस पवित्रता में बनाया गया था, और अब वह किस शक्ति के अधीन है, और किस व्यर्थता से बँधी हुई है!'

9. उन्होंने यह भी कहा: 'जब तक तुम इस शरीर में हो, मैं तुमसे विनती करता हूँ, अपने हृदय को शिथिल न होने दो; क्योंकि जैसे कोई आदमी अपने खेत में अभी अंकुरित हो रहे अपने विश्वास से कोई फल की उम्मीद नहीं कर सकता—क्योंकि वह नहीं जानता कि वह उसकी कोठारियों में रखे जाने से पहले क्या हो जाएगा—वैसे ही कोई आदमी अपने हृदय को शिथिल नहीं होने दे सकता *"जब तक उसकी नाक में साँस है"* (योब 27:3), और जैसे एक आदमी को यह

नहीं पता होता कि उसकी अंतिम सांस तक उस पर क्या मुसीबत आएगी, वैसे ही एक आदमी को तब तक अपने दिल को ढीला नहीं छोड़ना चाहिए जब तक उसमें सांसें हैं, बल्कि उसे हमेशा ईश्वर से उनकी मदद और दया के लिए पुकारना चाहिए।

10. मैंने उनसे पूछा, कहकर: 'पिताजी, नम्रता क्या है, और इसका कारण क्या है?' और उन्होंने मुझसे कहा: 'आज्ञाकारिता, बिना किसी कठिनाई के नम्रता में अपनी इच्छा का त्याग, पवित्रता, अपमान सहना, पड़ोसी की बातों को बिना बोझ के सहना—यही नम्रता है।'

11. उन्होंने आगे कहा: 'धन्य है वह जिसने मसीह से मिलने से पहले नया मनुष्य प्राप्त कर लिया है।' स्वयं प्रेरित ने कहा कि *'मांस और रक्त परमेश्वर के राज्य का विरासत में अधिकारी नहीं हो सकते'* (1 कुरिन्थियों 15:50), और उन्होंने यह भी कहा: *'जब तुम में ईर्ष्या, विवाद और दल-बन्दी है, तो क्या तुम शारीरिक रीति से आचरण नहीं करते और मांस के अनुसार नहीं चलते?'* (1 कुरिन्थियों 3:3)?

12. उन्होंने फिर कहा: हम अपने शत्रुओं के हाथों ऐसी विपत्तियों में पड़ने का कारण यह है कि हमने अपने पापों को ठीक से नहीं पहचाना है और न ही विवेक के साथ शोक का अनुभव किया है; क्योंकि यदि हमारे भीतर शोक उत्पन्न होता, तो वह हमारे पापों को हमारे सामने उजागर कर देता। तब, जब हमें अपने पापों को सत्य में देखने का अवसर मिलता है, तो हमें अपने सामने खड़े लोगों के चेहरों को देखने में भी लज्जा आएगी, या फिर निर्लज्ज स्त्रियों को देखने में भी, क्योंकि वे हमसे अधिक सम्माननीय हैं; क्योंकि वे अपने पापों को इतनी निर्लज्जता से करती हैं क्योंकि वे परमेश्वर को नहीं जानतीं, जबकि हमारे हृदय पाप से भरे हुए हैं, भले ही हम विश्वासी हैं।

13. उसने फिर कहा: अपमान सहना और परमेश्वर के लिए अपनी इच्छा को अपने पड़ोसी के हवाले करना, ताकि शत्रु को प्रवेश करने का अवसर न मिले, यह एक कर्मशील व्यक्ति को प्रकट करता है; क्योंकि यदि कोई तीव्र बुद्धि का है और प्रभु यीशु के चरणों में तर्क के साथ खड़ा है, तो वह अपनी इच्छा को काट डालने का ध्यान रखेगा— —ताकि वह अपने प्रिय प्रभु से अलग न हो जाए। परन्तु जो हर बात में अपनी ही इच्छा पर अड़ा रहता है, वह विश्वासियों के साथ भी शान्ति में नहीं रहता, क्योंकि कायरता, क्रोध और अपने भाई के प्रति द्वेष उसके हृदय में सर्वदा रहते हैं। जो यह कहता है, 'यदि मैं बोलूँ या सुनूँ तो मुझे कुछ नहीं होगा,' वह एक अंधे मनुष्य के समान है, जो चाहे भीतर ले जाया जाए या बाहर निकाला जाए, प्रकाश नहीं देखता। सूर्य के उदाहरण से इसे समझो: एक छोटा सा क्षणिक बादल भी उसकी चमक और गर्मी को ढक सकता है। लेकिन यह सभी के लिए स्पष्ट नहीं है, केवल उन लोगों के लिए जो ज्ञान रखते हैं।

14. उन्होंने फिर कहा: 'एक ऐसा मनुष्य जो हमेशा अपने पापों के प्रति सचेत रहता है, उसके पास किसी दूसरे मनुष्य से बात करने के लिए जीभ नहीं है।'

१५. उन्होंने फिर कहा: 'दुनिया की हर चीज़ से और देह के आराम से नफ़रत करो, क्योंकि वे तुम्हें ईश्वर का शत्रु बना देते हैं। जैसे कोई आदमी अपने शत्रु के विरुद्ध युद्ध करता है, वैसे ही हमें भी अपने शरीर के विरुद्ध युद्ध करना चाहिए, ताकि उसे कोई विश्राम न मिले।'

१६. उन्होंने फिर कहा: 'जो भक्त ईश्वर से प्रेम करता है, उसे अपने प्रत्येक विचार पर ध्यान देना चाहिए, और उनका परीक्षण करना चाहिए और यह विचार करना चाहिए कि वे उसके शरीर से उत्पन्न होते हैं या नहीं। क्योंकि जहाँ तक किसी भी अंग पर अस्वाभाविक इच्छाओं का प्रभुत्व है, उसी हद तक वह अभी भी कुंवारा नहीं माना जाता है।'

१७. मैंने उनसे पूछा: 'सुसमाचार की प्रार्थना के शब्दों: *"तेरा नाम पवित्र हो" का* क्या अर्थ है?' और उन्होंने कहा: 'यह सिद्ध लोगों पर लागू होता है, क्योंकि हम जैसे कामनाओं से ग्रस्त लोगों के भीतर परमेश्वर के नाम का पवित्र होना असंभव है।'

१८. उन्होंने फिर कहा: 'हमारे प्राचीन पिताओं ने सिखाया कि (दुनिया से) विरक्ति, शरीर से पलायन (शरीर का त्याग) और मृत्यु का चिंतन है।'

19. उन्होंने फिर से पड़ोसी के साथ शांति के बारे में बात की, यह कहते हुए कि जहाँ शांति नहीं है, वहाँ ईश्वर का वास नहीं होता। जो अपने पापों को पहचानता है, वह शांति को भी पहचानता है। क्योंकि यह पाप नहीं हैं जो ईश्वर के वास के लिए कोई जगह नहीं छोड़ते, बल्कि विनम्रता है। वह कहता है, दाऊद ने, उरिय्याह की पत्नी के साथ पाप करने के बाद, अपने पापों के प्रायश्चित के लिए परमेश्वर को चढ़ाने के लिए इन शब्दों के सिवा कुछ भी नहीं पाया: *'टूटी हुई आत्मा परमेश्वर के लिए एक बलिदान है; टूटा और कुचला हुआ हृदय, हे परमेश्वर, तू तुच्छ नहीं जानेगा'* (भजन संहिता 50:19)।

20. उन्होंने फरि कहा कि कायरता और दूसरों की निंदा मन को विद्रोह से भर देती है और उसे ईश्वर के प्रकाश को देखने से रोकती है।

21. उन्होंने फरि कहा: 'आत्मा को भ्रष्ट करने वाले निम्नलिखिति तीन जुनूनों से बचने के लिए अपनी पूरी ताकत से प्रयास करें: लालच, महत्वाकांक्षा और आराम का प्रेम; क्योंकि जिब ये आत्मा पर हावी हो जाते हैं, तो वे इसे फलने-फूलने से रोकते हैं।'

२२. उन्होंने फरि कहा: 'यदि, अपनी कोठरी में बैठे-बैठे, आपके मन में अपने पड़ोसी का न्याय करने का विचार आए, तो अपने ही पापों को मापकर उसका न्याय करें, यह निष्किर्ष निकालते हुए कि आपके पाप आपके पड़ोसी के पापों से बड़े हैं। इसी तरह, यदि आपको ऐसा लगे कि आप धर्मी कर्म कर रहे हैं, तो यह न सोचें कि वे परमेश्वर को प्रसन्न करते हैं।' शरीर का हर स्वस्थ अंग बीमार अंग की देखभाल करता है और उसकी परवाह करता है, यह कहते हुए, 'मेरा इससे कुछ संबंध है,' और तब तक उससे सहानुभूति रिखता है जब तक वह ठीक नहीं हो जाता। कठोर हृदय वाला व्यक्ति अपने मन में कहता है: 'मैंने कभी पाप नहीं किया', जबकि जिसिने नम्रता प्राप्त की है, वह अपने पड़ोसी की निंदा को यह कहते हुए सहन करता है: 'मैंने ही पाप किया है'। जो नम्रता का तिरस्कार करता है, वह अपने मन में यह धारण करता है कि वह बुद्धिमान है और उसने किसी को कभी आहत नहीं किया, जबकि जो ईश्वर से डरता है, वह सद्गुणों की देखभाल करता है, कहीं उनमें से एक भी खो न जाए।

२३. उन्होंने फरि कहा: 'यदि, अपनी कोठरी में बैठे हुए, आप सेवा करते हैं (*लीटोरजयिन*) ईश्वर की सेवा करते हुए, और आपका हृदय ईश्वर के अलावा किसी और चीज़ की ओर आकर्षति होता है, फरि भी आप सोचते हैं कि यह पाप नहीं है—कि ये केवल विचार हैं, पाप नहीं—तो (जान लें कि) जो सेवा आप मौन में करते हैं, वह सच्ची नहीं है। यदि आप कहते हैं, 'ईश्वर उस हृदय की सेवा को स्वीकार करता है जो मैंने मौन में की है', तो (आपको यह मानना होगा कि) जब आपका हृदय मौन में बुराई के साथ मिलकर काम करता है, तब भी वह मौन ईश्वर के विरुद्ध एक पाप माना जाता है।

24. मैंने उनसे पूछा, और उन्होंने मुझे बताया कि जो व्यक्ति युद्ध या शांति के समय में कोई सहारा नहीं पाता, वह विश्वास नहीं कर सकता।

25. उन्होंने फरि से शिक्षा के बारे में कहा, कि इस मामले में भय स्वाभाविक है, कहीं ऐसा न हो कि कोई उस बात के विरुद्ध पाप कर बैठे जिसे वह सिखाता है: क्योंकि जैसे ही कोई पाप करता है, वह सिखा नहीं सकता।

26. उन्होंने फरि से पवित्र सहभागिता के बारे में कहा: 'हाय मेरे लिए! हाय मेरी दुर्दशा! क्योंकि यदि मैं परमेश्वर के शत्रुओं के साथ संगति रिखता हूँ, तो उसका साथ मेरा क्या मेल-जोल हो सकता है? इस प्रकार, भाग लेकर, मैं अपने ऊपर न्याय और निंदा लाता हूँ। क्योंकि यह वह वचन है जो हम बोलते हैं: 'पवित्र को पवित्र के लिए', अर्थात् पवित्र (को ये पवित्र (रहस्य) ग्रहण करना चाहिए)। परन्तु यदि मैं पवित्र हूँ, तो फरि ये कौन हैं जो मुझमें कार्य करते हैं?

27. मैंने उनसे पूछा, कहा: 'ईश्वर का भय क्या है?' और उन्होंने मुझसे कहा कि जो व्यक्ति किसी भी ऐसी चीज़ की ओर आकर्षति होता है जो ईश्वर की नहीं है, उसमें ईश्वर का भय नहीं है।

28. मैंने उससे फरि पूछा: 'परमेश्वर का दास क्या है?' और उसने मुझे बताया कि जब तक कोई व्यक्ति अपनी वासनाओं का दास है, तब तक उसे परमेश्वर का दास नहीं माना जा सकता; बल्कि वह उस बात का दास है जो उस पर हावी है।

29. मैंने फरि कहा: 'हाय मुझ पर! हाय मुझ पर! क्योंकि मैंने स्वयं को शुद्ध करने का प्रयत्न नहीं किया, कि मैं अनुग्रह प्राप्त कर सकूँ। हाय मुझ पर! हाय मुझ पर! क्योंकि मैंने युद्ध में अपने शत्रुओं पर विजय पाने का प्रयत्न नहीं किया, कि मैं मसीह के साथ राज्य कर सकूँ; क्योंकि दूसरा के दासत्व में बँधा हुआ कोई अपनी राजा के समीप कैसे आ सकता है? हाय मुझ पर!' हाय मुझ पर! कि हे प्रभु, आपका नाम मुझ पर है, जबकि मैं आपके शत्रुओं के लिए परिश्रम करता हूँ। हाय मुझ पर! हाय मुझ पर! कि मैं उस भोजन में भाग लेता हूँ जिससे मेरा परमेश्वर घृणा करता है, और इसी कारण वह मुझे चंगा नहीं करता।

30. मैं उसके बीमार होने पर उसके पास गया और उसे बहुत कष्ट में पाया। उसकी पीड़ा के कारण मेरे हृदय में दुःख देखकर, उसने मुझसे कहा: 'केवल ऐसी दुर्बलताओं के अधीन होने पर ही मैं उस कड़वे घड़ी को मुश्किल से याद कर पाता हूँ; परन्तु शरीर का स्वास्थ्य (ऐसे कार्यों के लिए) किसी काम का नहीं है।' यह ईश्वर के विरुद्ध युद्ध छेड़ने के लिए सुदृढ़ स्वास्थ्य की कामना करता है, परन्तु जिस वृक्ष को प्रतिदिन पानी दिया जाता है, वह न तो मुरझाता है, और न ही वह (अपने ही प्रकार का) फल देना बंद करता है।

31. उन्होंने फरि कहा: 'ईश्वर की आज्ञाओं का पालन करने के लिए मनुष्य को एक साहसी और कुलीन हृदय की आवश्यकता होती है।'

32. उसने फरि कहा: 'हाय मेरे लिए! हाय मेरे लिए! क्योंकि मेरे सामने मेरे आरोप लगाने वाले हैं, कुछ जिन्हें मैं जानता हूँ और कुछ जिन्हें मैं नहीं जानता, और मैं उन्हें नकार नहीं सकता। हाय मेरे लिए! हाय मेरे लिए! क्योंकि मेरे आरोप लगाने वाले हैं, और मैं अपने प्रभु और उनके संतों से कैसे मिलूँगा, जब मेरे दुश्मनों ने उनके सामने मेरे शरीर का एक भी अंग सही-सलामत नहीं छोड़ा है?!'

33. मैंने उससे पूछा: 'जो मौन में रहता है, उसे क्या करना चाहिए?' और उसने मुझसे कहा: 'जो मौन में रहता है, उसे निम्नलिखित तीन (गुणों) की आवश्यकता होती है: अनवरत भय, निरंतर प्रार्थना, और अपने हृदय पर अटूट पहरा।'

34. उन्होंने आगे कहा कि एक मौन व्यक्ति को अपना बचाव इस तरह से करना चाहिए कि वह एक भी ऐसा शब्द न सुने जो उसके लिए लाभहीन हो, क्योंकि यह उसके श्रम को बर्बाद कर देता है।

35. उन्होंने फरि से बाबा सेरापियन के बारे में बात की, और बताया कि जब एक वृद्ध ने उनसे पूछा, 'प्यार से बताइए, आप खुद को कैसे देखते हैं?', तो उन्होंने जवाब दिया, 'मैं उस व्यक्ति की तरह हूँ जो एक मीनार पर खड़ा होकर बाहर देखता है, और गुजरने वालों को हाथ हिलाता है, ताकि वे उसके पास न आएं।' और जिस वृद्ध ने उससे प्रश्न किया था, उसने उससे कहा: 'मैं, अपनी ओर से, स्वयं को ऐसा देखता हूँ जैसे मैंने अपने चारों ओर एक बाड़ बना ली हो और उसे लोहे के बोल्टों से बंद कर दिया हो, ताकि जब कोई खटखटाता है, तो मुझे नहीं पता होता कि वहाँ कौन है, या वे कहाँ से आए हैं, या वे क्या चाहते हैं, या वे कैसे हैं, और मैं उनके लिए दरवाज़ा नहीं खोलता जब तक वे चले नहीं जाते।'

36. उन्होंने फरि कहा: 'जो प्रभु को कुचले हुए हृदय से खोजता है, वह उसे सुनता है, यदि वह समझदारी से यह मांगे, और कुचले हुए हृदय से उसे गंभीरता से खोजे, और सांसारिक किसी भी बात से बंधा न हो, बल्कि भय के साथ अपनी आत्मा की परवाह करे, ताकि वह अपनी ही शक्ति से उसे परमेश्वर की न्याय-सिंहासन के सामने निर्दोष प्रस्तुत कर सके।'

27. 'अपने विषय में सावधान रहो' पर (व्यवस्थाविवरण 15:9)

1. अपना ध्यान सँभालकर रखो, यह साहस और विश्वास करते हुए कि हमारे प्रभु यीशु मसीह, जो परमेश्वर हैं, और अकथनीय महिमा और महानता के धनी हैं, हमारे लिए एक आदर्श बने हैं, *'ताकि हम उनके पदचिन्हों पर चलें'* (1 पतरस 2:21), और हमारे लिए परम और अतुलनीय नम्रता से स्वयं को दीन किया, दास का रूप धारण किया, गरीब हो गए, अपमान को कुछ नहीं समझा, कई और अपमानजनक अपमानों को सहन किया, और जैसा लिखा है, *'जैसे वध के लिए ले जाए गए मेमने, और जैसे ऊन काटने वाले के सामने मेमना चुप रहता है, वैसे ही उसने अपना मुँह नहीं खोला। 'विनम्रता में उनका न्याय छीन लिया गया'* (यशायाह 53:7–8), – और (अंततः) उन्होंने हमारे लिए बड़ी निंदा के साथ मृत्यु भोगी: ताकि हम भी, उनकी आज्ञा के अनुसार और अपने ही पापों के कारण, इसे स्वेच्छा से सहन कर सकें, चाहे कोई हमें सही ठहराए या गलत, हम पर अपमान करे या बदनामी करे, और – क्या कहा जाए – भले ही वे हमें मृत्यु तक ले जाएँ, हमें वध के लिए भेड़ की तरह ले जाया जाए, और हमें, मूर्ख पशुओं की तरह, बिल्कुल भी प्रतिरोध न करने दिया जाए, बल्कि, यदि हम कर सकें, तो प्रार्थना करें, या कम से कम, बड़ी नम्रता के साथ चुप रहें।

२. अपने मन पर पूरा ध्यान दो, यह विश्वास करते हुए कि ईश्वर के लिए अपमान और बेइज्ज़ती सहना, और उन्हें स्वेच्छा से और शांतपूर्वक सहना आत्मा के लिए सबसे अधिक लाभदायक और उद्धारकारी है, यह सोचते हुए कि, मेरे पापों के कारण, मैं इससे भी अधिक पीड़ा सहने का पात्र हूँ, और यह कि हर तरह से मुझे प्रभु के लिए कुछ कष्ट सहने और उठाने का योग्य समझा जाता है, ताकि, शायद, कई कष्टों और अपमानों के माध्यम से, मैं, भले ही थोड़े से ही सही, अपने ईश्वर के दुःखों का अनुकरण कर सकूँ। और जब भी आप उन लोगों को याद करें जिन्होंने आपको अपमानित किया है, तो उनके लिए दिल से और सच्चे मन से प्रार्थना करें, जैसे कि उन्होंने आपको महान आशीर्वाद दिए हों, और किसी भी तरह से उनके खिलाफ शिकायत न करें।

३. अत्यधिक सावधानी बरतें कि आत्म-महत्व और महिमा के प्रेम – महिमा, या सम्मान, या मानवीय प्रशंसा की इच्छा – को एक महान मृत्यु, अपनी आत्मा के विनाश और शाश्वत यातना के रूप में मानें; और उन्हें, तथा इस विचार को कि आप कुछ हैं, या आपने कोई सद्गुण प्राप्त किया है, या आप किसी और से बेहतर हैं, पूरी तरह से तुच्छ समझें और उनसे घृणा करें; और हर शर्मनाक इच्छा और कामुक आनंद को, चाहे वह कितना भी मामूली क्यों न हो, काट डालो; इसी तरह, खुद को अनावश्यक रूप से किसी के साथ घुलने-मिलने, या किसी और के शरीर को छूने, या गलत

समय पर थोड़ा भी खाने की अनुमति न दें; ताकि, इस तरह खुद को रखने और छोटी-छोटी बातों में खुद की रक्षा करने से, आप गंभीर (पापों) में न पड़ें, और, छोटी-छोटी बातों को तुच्छ समझकर, धीरे-धीरे बड़ी बातों में पाप न करने लगें।

४. दिल से और सच्चाई से, खुद को सभी ईसाइयों में सबसे छोटा और सबसे पापी मानने का पूरा ध्यान रखें, और अपनी आत्मा को हमेशा रोता, नम्र और कराहता हुआ रखें; और, एक अयोग्य और मूर्ख की तरह, हमेशा चुप रहें, और वास्तव में, जब तक बिल्कुल आवश्यक न हो, तब तक कुछ भी न बोलें।

५. हमेशा याद रखने और अपनी आँखों के सामने शाश्वत अग्नि और शाश्वत यातनाओं को, और उन लोगों को जो उन दंडों के भागी हैं, रखने का ध्यान रखें, और खुद को जीवित लोगों में से एक होने के बजाय वहाँ के लोगों में से एक समझें।

6. अपने आप पर बारीकी से ध्यान दो, यह जानते हुए कि हमारे प्रभु हमारे लिए मरे और फिर जी उठे, ताकि तुम अब अपने लिए नहीं, बल्कि प्रभु के लिए जियो, जो हमारे लिए *'मर गए और फिर जी उठे'* (2 कुरिन्थियों 5:15), धैर्य धारण करो और विश्वास करो कि तुम हमेशा उनकी उपस्थिति में हो, और वह तुम्हारे हृदय को देखते हैं।

7. परमेश्वर की इच्छा का पालन करने के लिए सदैव तैयार रहने का पूरा ध्यान रखें, चाहे वह मृत्यु तक हो, जीवन तक हो, या किसी भी क्लेश तक हो; यह सब अपने पूरे हृदय और विश्वास के साथ करें; और उन महान और भयानक परीक्षाओं की हमेशा अपेक्षा करें जो आप पर आने वाली हैं, जैसे क्लेश, यातनाएँ, और सबसे कड़वी मृत्यु।

8. परमेश्वर के सामने खड़े हुए व्यक्ति की भाँति, बहुत सावधान रहो कि उनकी इच्छा के बिना कुछ भी न करो, यहाँ तक कि सबसे छोटी सी बात भी नहीं। आप जो कुछ भी करना चाहें—चाहे बोलना हो, या काम करना हो, या किसी से मिलना हो, या खाना-पीना हो, या सोने जाना हो, या आप जो कुछ भी करना चाहें—सबसे पहले यह सुनिश्चित करें कि वह ईश्वर की इच्छा के अनुसार है या नहीं, और आप इसे क्यों चाहते हैं, इसका कारण स्वीकार करें; और फिर इसे ईश्वर के सामने उचित तरीके से करें। इस प्रकार, अपने सभी कर्मों और वचनों में, स्वयं को ईश्वर के समक्ष स्वीकार करो, ताकि तुम उससे अधिक परिचित हो सको और उसके सामने अधिक निडर हो सको।

९. बहुत सावधानी बरतें कि, यदि कोई आपको किसी भी तरह से ठेस पहुँचाता है और आपको दुख या क्रोध महसूस होता है, तो आप चुप रहें और प्रार्थना के माध्यम से अपने हृदय को शांत किए बिना केवल वही कहें जो उचित हो; केवल तभी आपको अंततःअपने भाई से बात करनी चाहिए। यदि आपको किसी भाई को फटकारनी पड़े, और आप खुद को गुस्से और बेचैनी की स्थिति में पाते हैं, तो किसी भी हाल में उससे कुछ न कहें, कहीं आप और भी अधिक परेशान न हो जाएँ। लेकिन जब आप देखें कि आप और वह दोनों ही अच्छे मनःस्थिति में और शांत हैं, तो उससे बात करें, फटकारने वाले की तरह नहीं, बल्कि याद दिलाने वाले की तरह, पूरी नम्रता के साथ।

10. जो परीक्षा तुम पर आने वाली है, उसकी प्रतिदिन बड़ी सावधानी से प्रतीक्षा करो, चाहे वह मृत्यु तक की हो, या बड़े दुखों और विपत्तियों की, और (जब वह आए) उसे स्वेच्छा से और बिना भ्रम के सहो, यह याद रखते हुए कि *'हमें परमेश्वर के राज्य में प्रवेश करने के लिए बहुत कष्टों से होकर गुजरना होगा'* (प्रेरितों के काम 14:22)।

11. जो कुछ भी आपके सामने है, उसमें—चाहे वह शब्द हो, कर्म हो या विचार—बड़ी सावधानी बरतें कि अपनी इच्छा या अपनी शांति की तलाश न करें, बल्कि परमेश्वर की इच्छा को सावधानी से समझें, और इसे पूरी तरह से पूरा करें; और भले ही यह कठिन लगे, स्वर्ग के राज्य के लिए इसे सहन करें और करें, यह विश्वास करते हुए कि यह आपके लिए सभी मानवीय ज्ञान से अधिक लाभदायक है: क्योंकि उसकी आज्ञा अनंत जीवन है, और *'जो प्रभु की खोज करते हैं उन्हें किसी भी अच्छी वस्तु की कमी न होगी'* (भजन संहिता 33:11)।

12. हर समय इस बात का ध्यान रखें, जैसे कि आप हमेशा परमेश्वर की उपस्थिति में हों, कि आप किसी से कुछ भी अपेक्षा न करें, बल्कि सब कुछ केवल उसी से, विश्वास के साथ, अपेक्षा करें। और आपको जो कुछ भी चाहिए, परमेश्वर से प्रार्थना करें कि आपको वह सब कुछ उनकी इच्छा के अनुसार प्राप्त हो। जो कुछ भी आपके पास है, उसके लिए हमेशा परमेश्वर का धन्यवाद करें, क्योंकि उन्होंने ही यह सब आपको प्रदान किया है। यदि आप कुछ खो देते हैं, तो किसी मनुष्य में अपनी आशा न रखें; न ही आपको किसी के विरुद्ध दुख करना या शिकायत करनी चाहिए, बल्कि इसे प्रसन्नतापूर्वक और बिना कष्ट के सहन करें, यह सोचते हुए कि: 'मैं अपने पापों के लिए इससे भी बड़ी दुखों का पात्र हूँ; फिर भी, यदि परमेश्वर मुझ पर दया करना चाहता है, तो वह कर सकता है।' यदि आप यह दृष्टिकोण अपनाते हैं, तो वह आपकी सभी ज़रूरतों को पूरा करेगा।

१३. अपने आप पर बारीकी से ध्यान दो: जब तक तुम्हें यह निश्चित न हो कि ईश्वर इसे तुम्हारे धार्मिक श्रम के पुरस्कार के रूप में भेज रहे हैं, तब तक किसी भी चीज़ को स्वीकार करने के लिए सहमत न हो; और फिर इसे पूरी शांति के साथ स्वीकार करो। लेकिन जब आप देखें कि यह अन्याय, या कलह, या धोखा और पाखंड से आता है, तो इसे

अस्वीकार कर दें और एक ओर फेंक दें, यह याद रखते हुए कि '*प्रभु के भय में थोड़ा सा भाग, बड़े-बड़े खजाने से उत्तम है*' (नीतिवचन 15:16)।

१४. अपने आप पर बारीकी से ध्यान दो, और खुद को चुप रहने के लिए मजबूर करो, ताकि परमेश्वर तुम्हें संघर्ष करने और प्रयास करने की शक्ति दे। हालाँकि, यदि किसी को आपसे बात करने की ज़रूरत है, और आप पहले स्वयं यह महसूस करते हैं कि यह ज़रूरत आशीष-प्राप्त है, और यह कि इस मामले में चुप रहने की तुलना में बात करना ईश्वर के अनुसार बेहतर है: तो अंत में ईश्वर के भय और काँपते हुए अपना मुँह खोलें, अपना चेहरा झुकाए रखें और अपने शब्दों को सम्मानजनक और उपयुक्त बनाए रखें। जब आप किसी से बात करें, तो प्रेम के लिए संक्षेप में बोलें, और जल्द से जल्द चुप हो जाएँ। यदि आपसे किसी चीज़ के बारे में पूछा जाए, तो केवल वही कहें जो आवश्यक हो, और उससे अधिक कुछ न कहें।

१५. न केवल यौन अनैतिकता से, बल्कि आँखों, कानों, जीभ और स्पर्श की वासना से भी दूर रहने का बहुत ध्यान रखें; आपकी आँखें हमेशा केवल आप और आपके काम पर टिकी रहें, और उन्हें किसी दूसरे व्यक्ति की ओर न मोड़ें, जब तक कि आप यह न देखें कि ऐसा करने की कोई पवित्र आवश्यकता है। जहाँ तक किसी आकर्षक महिला या पुरुष का सवाल है, जब तक ज़रूरी न हो, उन पर बिल्कुल नज़र न डालें। अपने कानों को किसी के खिलाफ कुछ भी सुनने की अनुमति न दें, न ही कोई व्यर्थ की बात। आपके होंठ चुप रहें, और जब तक ज़रूरी न हो, बिल्कुल भी बात न करें।

१६. हे मेरे प्रिय, जब तुम यह पढ़ो, तो इसका पालन करने का यथासंभव प्रयास करो, ताकि परीक्षा के समय परमेश्वर तुम्हारी रक्षा करें। आमीन।

28. बुराई की शाखाओं पर

1. बुराई की शाखाओं के विषय में बात करना आवश्यक है, ताकि कोई व्यक्ति जान सके कि वासना क्या है, और क्या उसे परमेश्वर से अलग करता है, और उनमें से प्रत्येक के विषय में उसकी कृपा के लिए प्रार्थना कर सके—कि उसकी सहायता उसके साथ हो और वह उसे (उनके विरुद्ध लड़ने की) शक्ति दे, जब तक कि वह उन्हें पूरी तरह से दूर न कर सके। क्योंकि वे आत्मा में घाव हैं और उसे ईश्वर से अलग करते हैं।

2. धन्य है वह जिसने उन्हें त्याग दिया है, क्योंकि वह परमेश्वर के वेदी के योग्य एक बुद्धिमान भेड़ होगा, और वह प्रभु की आनंददायक आवाज़ सुनेगा: '*शाबाश, हे भले और विश्वासयोग्य दास; तू थोड़ी सी बातों में विश्वासयोग्य रहा, मैं तुझे बहुतों पर रखूँगा: अपने प्रभु के आनंद में प्रवेश कर।*' (मत्ती 25:21). लेकिन जो लोग शरीर की इच्छाओं का अनुसरण करना चाहते हैं, और शुद्ध होने के लिए पश्चाताप की पवित्र औषधि से स्वयं को ठीक नहीं करना चाहते, वे आवश्यकता के समय नग्न पाए जाएँगे, उनके पास सद्गुण का वस्त्र नहीं होगा, और उन्हें घोर अंधकार में फेंक दिया जाएगा, जहाँ शैतान वास करता है, जो इस प्रकार के जुनूनों के वस्त्रों से सुसज्जित है, जो हैं: व्यभिचार, वासना, लालच, निंदा, क्रोध, ईर्ष्या, अहंकार, घमंड। ये ही बुराई की शाखाएँ हैं, और इन जैसी और भी कई हैं, जैसे: अनुशासनहीनता, शरीर का आभूषण-प्रदर्शन, तुच्छ कार्य, आलस्य, व्यंग्यात्मक बातें, निर्लज्ज दृष्टि, विस्तार की इच्छा, बेईमानी, ईश्वर के न्याय की अवहेलना, पड़ोसी से ईर्ष्या, अपने भाई के विरुद्ध झूठ बोलना, मनुष्यों को प्रसन्न करने की इच्छा, झूठी गवाही, झूठा ज्ञान, सिखाने की इच्छा, संसार की प्रथाओं से प्रेम, कायरता, अधीरता, अपने पड़ोसी से घृणा, स्वयं को डाँटने में विफलता (स्व-अवगतता और आत्मसंतोष की कमी), ईश्वर की महिमा के बजाय मानवीय महिमा से प्रेम, लोगों द्वारा महिमामंडित होने के लिए अपने कर्मों का प्रदर्शन करना, भव्य भोजन के प्रति प्रेम, हृदय में कामुक वासनाओं में लिप्त होना, आत्म-अपमान (या आत्म-निम्निता) को एक प्रलोभन मानना, अपने ज्ञान का घमंड करना, झगड़ालूपन, अपनी इच्छा पर जोर देना, स्वयं को समझदार और बुद्धिमान मानना, अपने भाई को मूर्ख समझना, और उसका अपमान करना।

3. यह सब एक गरीब आत्मा के भीतर तब तक होता है जब तक कि वह परमेश्वर से अलग नहीं हो जाती। ये वे भारी बोझ हैं जो आदम ने अपने ऊपर तब ले लिए जब उसने उस वृक्ष का फल चखा। इन्हीं के बारे में कहा गया है: '*उसने हमारी दुर्बलताओं को उठा लिया और हमारी बीमारियों को वहन किया*' (देखें यशायाह 53:4...)। इन्हीं को हमारे प्रभु यीशु मसीह ने क्रूस पर मार डाला। वे वे पुरानी मशकें हैं जिनमें कोई नई दाखरस नहीं डाली जाती। वे वे कफ़न हैं जिनसे लाजरुस को बाँधा गया था। वे वे राक्षस हैं जिन्हें मसीह ने सूअरों के झुंड में भेज दिया था। यही पुराना मनुष्य है, जिसे प्रेरित ने हमें उतार फेंकने की आज्ञा दी थी। उन्होंने यह कहा था: '*मांस और रक्त परमेश्वर के राज्य का वारिस नहीं हो सकते*' (1 कुरिन्थियों 15:50)। वह कहते हैं: 'क्योंकि यदि तुम शरीर के अनुसार जीओगे, तो मरोगे' (रोमियों 8:13)। ये वे निन्दनीय हैं जो आदम की मिट्टी से उगे जब उसे स्वर्ग से निकाल दिया गया था।

4. मसीह का जुआ, तथापि हल्का है: क्रमरहित पवित्रता, भलाई, नम्रता, आत्मा का आनन्द, वासनाओं पर संयम, सभी से प्रेम, पवित्र तर्क, अटूट विश्वास, कष्टों का धैर्य, स्वयं को संसार का परदेशी मानना, और शरीर से निकलकर मसीह से मिलने की इच्छा। ये वे हल्के बोझ हैं जिन्हें मसीह ने हमें उठाने की आज्ञा दी है। यह वह मार्ग है जिस पर संतों ने इसे पूरा करने तक बहुत परिश्रम किया। इसे कोई भी तब तक प्राप्त नहीं कर सकता जब तक कि वह पुराने मनुष्य को त्याग न दे, स्वयं को उससे मुक्त न कर ले, और प्रेम प्राप्त न कर ले; और प्रेम उन्हें सभी बातों के प्रति निश्चिंत बना देगा। लेकिन यह प्रेम हमारे भीतर तब तक प्रज्वलित नहीं हो सकता जब तक हम इस संसार की किसी भी चीज़ से प्रेम करते हैं, जैसा कि लिखा है: *'तुम प्रभु की मेज़ और दुष्टात्माओं की मेज़ दोनों में से किसी एक में भाग नहीं ले सकते'* (1 कुरिन्थियों 10:21)। और यशायाह कहते हैं: *'तुम्हें कौन बता सकता है कि आग जल रही है; तुम्हें कौन बता सकता है अनंतकाल का स्थान; (जब तक) वह जो धार्मिकता में चलता है, सही मार्ग पर चलता है, अधर्म और अन्याय से घृणा करता है, और रिश्वत से अपने हाथों को छुड़ाता है: जो अपने कान बंद कर लेता है ताकि वह रक्तपात के न्याय को न सुने; जो अपनी आँखें बंद कर लेता है ताकि वह अन्याय न देखे—वह एक मजबूत चट्टान में एक गुफा की ऊँचाइयों में रहेगा: 'उसका भोजन निश्चित होगा, और उसका पानी पक्का होगा'* (यशायाह 33:14-16)।

5. क्या तुम देखते हो कि परमेश्वर उन लोगों पर क्या सम्मान प्रदान करता है जो इस संक्षिप्त समय में प्रयास करते हैं और अपने दुखों को सहते हुए संसार का बोझ उतार फेंकते हैं? क्या तुम देखते हो कि परमेश्वर की सहायता उन पर कैसे आती है जिन्होंने अपनी इच्छाओं को त्याग दिया है और उनमें सभी वासनाओं को मिटा दिया है, क्योंकि उन्होंने परमेश्वर की इच्छा का पालन किया है? जहाँ तक उन लोगों क की बात है जो अपनी इच्छाओं से चिपके रहते हैं और उन्हें पूरा करना चाहते हैं, यद्यपि वे *'आत्मा में आरंभ करते हैं'*, फिर भी, अपनी इच्छा को पूरा करने की इच्छा के कारण अपने शत्रुओं के विरुद्ध दृढ़ नहीं रह पाते, *वे 'देह में समाप्त करते हैं'* (गलातियों 3:3), और अपनी मेहनत को व्यर्थ और निष्फल बना देते हैं। इसीलिए, भविष्यवक्ता यिर्मयाह उन्हें डाँटते हुए कहते हैं: *'शापित है वह जो यहोवा का काम लापरवाही से करता है'* (यिर्म. 48:10)।

6. क्या तुम यह देखते हो कि यदि ऐसे लोग हैं जो परमेश्वर की सेवा करने की इच्छा रखते हुए, अपनी वासनाओं की सेवा में परिश्रम करते हैं, तो परमेश्वर उन में वास नहीं करता, बल्कि उन्हें उनके ही भरोसे छोड़कर, उन्हें उनके (शत्रुओं के) हाथ में दे देता है? और मनुष्यों से जो सम्मान वे चाहते हैं, उसके बदले में उन्हें निंदा मिलती है, क्योंकि वे अपने शत्रुओं का सामना तब तक नहीं करते जब तक कि परमेश्वर उनकी सहायता के लिए नहीं आता और उन्हें (शत्रुओं को) अपमानित नहीं कर देता। इस प्रकार, सभी धर्मग्रंथों के अनुसार, परिश्रम, पसीना और पीड़ा के बिना, परमेश्वर किसी व्यक्ति की नहीं सुनता।

7. अतः हम परमेश्वर से अपने पूरे हृदय, आँसुओं और दुख के साथ दया की याचना करें, और प्रभु के लिए हर व्यक्ति के अधीन रहें, अपने भाइयों के सामने स्वयं को उन लोगों की भाँति निम्र करते हुए जो हमसे अधिक बुद्धिमान हैं, किसी को भी बुराई का बदला बुराई से न देते हुए, और किसी के विरुद्ध अपने हृदय में कोई बुरा विचार न पालते हुए, बल्कि हृदय की एकता में बने रहते हुए, संसार या शरीर की आवश्यकताओं के विषय में कुछ भी न बोलते हुए: 'यह मेरा है'; बल्कि प्रतिदिन अपने मन की परीक्षा करते हुए यह देखने के लिए कि वे कितनी प्रगति कर चुके हैं, और उनकी रक्षा करते हुए ताकि वे अशुद्ध विचारों को न पालें, – अपने शरीर को तृप्ति से वंचित रखना, ताकि वह हमसे अपनी वासनाओं की संतुष्टि की मांग न करे – ताकि शरीर आत्मा के सामने नम्र हो जाए, और आत्मा मन के अधीन हो जाए और एक वधू बन जाए, जो हर तरह की अशुद्धता से शुद्ध हो, और अपने वरा से पुकार कर कहे: *'मेरा भाई अपने बगीचे में आए, और उसके फल खाए'* (प्रेरितों के काम 5:1)।

८. अतः हे भाइयो, हम यत्न करें कि उसके सामने ऐसा साहस प्राप्त करके हम भी वह वचन सुनें जो उसने कहा: *'जहाँ मैं हूँ, वहाँ वे भी मेरे साथ हों*; क्योंकि मैंने उन्हें वैसे ही प्रेम किया है जैसे तूने मुझे प्रेम किया है, हे पिता। *'तुम मुझ में हो और मैं उन में हूँ'* (यूहन्ना 17:23-24)। हे परमेश्वर, कृपा करके पवित्र त्रिमूर्ति जो एकसार और अनंत है, हम पर दया करे, ताकि हम भी सभी संतों के साथ न्याय के दिन विश्राम पा सकें। उसकी महिमा और सामर्थ्य युगानुयुग बनी रहे। आमीन।

29. विलाप

1. हम जैसे तुच्छ और क्षणभंगुर प्राणियों के लिए विनाश है, कि हमारे अस्थायी, अधर्मी शारीरिक वासनाओं के कारण, हम प्रभु की महिमा को नहीं देख पाएँगे!

2. हाय हम पर, क्योंकि जबकि 'नश्वरता को अनश्वरता का वारिस बनना है' (1 कुरिन्थियों 15:50), हम, अनश्वरता का तिरस्कार करके, अनिवार्य रूप से नश्वरता की ओर आकर्षित हो रहे हैं!

3. हम पर विनाश हो, क्योंकि हम अपने शरीर—जो कीड़ों और सड़न में गलने के लिए नियत है—को पाप में पोषित करते हैं, और न तो उस आग से डरते हैं जो हमें अनंतकाल तक पीड़ा देगी और न ही उस कीड़े से जो कभी नहीं सोता!

4. हम पर विनाश हो, क्योंकि हमारे शरीर—जो अशुद्धियों से कलंकित हैं—को मसीह-प्रेमी लोगों द्वारा प्रणाम और चुम्बनों से सम्मानित किया जाता है, जबकि हम भीतर से घातक पाप को समेटे हुए चूना-पुती हुई ताबूत हैं!

5. हम पर विनाश हो, क्योंकि भोजन और स्वादिष्ट व्यंजनों में अतिशय आसक्ति के द्वारा हम अपने भीतर कामवासना के बीज पालते हैं, और इसके द्वारा हम अनियंत्रित कामुक मलिन के लिए उकसाए जाते हैं!

6. हम पर विनाश आए, क्योंकि हम नश्वर चीज़ों की तुलना अमर चीज़ों से नहीं करते, और न ही हम दिव्य और भयानक न्याय से डरते हैं!

7. हम पर विनाश हो, क्योंकि हम भलाई करने में तो कमज़ोर हैं, पर बुराई करने में उत्साही और शीघ्रता करते हैं!

8. हम पर विनाश आए, क्योंकि हमने अपने शरीर को—जो शाश्वत प्रकाश का निवास स्थान बन सकता था—शाश्वत अंधकार का निवास स्थान बना लिया है!

9. हम पर विनाश आए, क्योंकि वह जो मनुष्य का पुत्र बना, और परमेश्वर पिता के साथ एकसार है, हमारे भीतर अपना सिर रखने के लिए कोई स्थान नहीं पाता, हमारे ही लिए देहधारी होकर आया, जबकि दुष्ट लोमड़ियाँ और कपटी आत्माएँ हमारे भीतर अपना बिल बना चुकी हैं!

10. हम पर विनाश हो, क्योंकि जो हृदय से धर्मी हैं वे अपने प्राणों को निर्दोष और अपने शरीरों को पवित्र और निर्दोष प्रस्तुत करेंगे, जबकि हम, जिनके प्राण अपवित्र और शरीर अशुद्ध हैं, अनंतकाल की यातना के लिए निंदा के अलावा और कुछ की प्रतीक्षा नहीं कर सकते!

11. हम पर विनाश आए, क्योंकि हम अधर्म और हर प्रकार की अशुद्धता के प्रेमी होते हुए भी, अपने लिए संतों को मिलने वाला सम्मान का दावा करते हैं!

12. हम पर विनाश हो, क्योंकि यद्यपि हम दण्डित हैं, अनेक पापों के दोषी हैं, फिर भी हम संतों और नम्र लोगों के बीच इस प्रकार घुलते-मिलते हैं मानो हम शुद्ध और निर्दोष हों!

13. हाय हमार, क्योंकि हम अपराधों से भरे हुए हैं, फिर भी हम अपने से कहीं बेहतर लोगों को उपदेश देते और शिक्षा देते हैं!

14. हम पर विनाश हो, क्योंकि अपनी आँख में एक बड़ी लकड़ी होते हुए भी, हम निर्दोषों की तरह अपने भाइयों की छोटी-छोटी (एक काँटे की तरह) गलतियों पर निर्णय लगाते हैं और उनसे चिढ़ते हैं!

१५. हम पर विनाश हो, क्योंकि हम दूसरों पर भारी और असहनीय बोझ लादते हैं, जबकि हम स्वयं, मानो शरीर से सबसे कमजोर हों, उन्हें एक उंगली से छूने से भी इनकार करते हैं!

16. हम पर विनाश हो, क्योंकि जबकि हम दिव्य संन्यासी जीवन में कमी रखते हैं, हम शर्म के बिना दूसरों को सक्रिय सद्गुण सिखाने के लिए जल्दी करते हैं!

१७. हम पर विनाश हो, क्योंकि हमने अपने अतीत के पापों को भुला दिया है, और न तो अपने नए पापों पर पीड़ा महसूस करते हैं और न ही उनके लिए रोते हैं!

18. हम पर विनाश हो, क्योंकि परमेश्वर की मदद और अनुग्रह से अच्छी शुरुआत करने के बाद, हम अब देह-प्रेमी हो गए हैं!

19. हम पर विनाश हो, क्योंकि हम अशुद्ध विचारों में इतने डूबे हुए हैं कि जैसे अपनी ही पापों से अंधे होकर, हम यह पूछते हैं कि क्या हमने वे पाप किए हैं!

20. हम पर विनाश हो, क्योंकि जब हम खाते-पीते हैं, तो हम अपनी लालच के कारण हमारे भीतर मची उथल-पुथल को याद नहीं करते!

21. हम पर विनाश हो, क्योंकि जैसे ही राक्षस हमारे भीतर कामोत्तेजक विचार जगाते हैं, हम उन्हीं विचारों के अनुरूप, उनके लिए पहले से ही तैयार मिलते हैं!

२२. हाय हमार, क्योंकि हमने भक्तिपूर्ण प्रार्थनाओं और विचारशील पठन को त्याग दिया है, हम अपने दिन व्यर्थ के दिन-दहाड़े और व्यर्थ की बातचीत में बिताते हैं!

23. हम पर विनाश हो, क्योंकि हमारे हृदय इतने कठोर हो गए हैं कि यद्यपि हम अक्सर पश्चाताप और आँसुओं के लिए गंभीरता से प्रयास करते हैं, हम अपनी अत्यधिक लापरवाही और सुस्ती के कारण इसमें सफल नहीं हो पाते!

24. हम पर विनाश हो, क्योंकि जब परमेश्वर ने कहा, *'जो आत्मा पाप करती है, वह मर जाएगी'* (यहे. 18:4), तो हम इसकी बिल्कुल भी परवाह नहीं करते, भले ही वह निरंतर पाप करती रहे।

25. हाय हम पर, क्योंकि हमारा शरीर तृप्ति और सुखों के कारण पाप करने के लिए प्रवृत्त है, हम वासना की हद तक अशुद्ध और नीच विचारों को भड़काते हैं, अपनी आँखों के माध्यम से अपने हृदयों में दुष्ट के तीरों को ग्रहण करते हैं, और शारीरिक संपर्क के माध्यम से कामुक जानवर बन जाते हैं, न तो अपनी तर्कसंगत गरिमा पर चिंतन करते हैं और न ही शाश्वत यातना से डरते हैं!

26. हम पर हाय, क्योंकि हम शरीर के दुखों और बीमारियों के लिए बहुत कराहते और बेचैन होते हैं, फिर भी आत्मा के घावों और लाइलाज बीमारियों के प्रति असंवेदनशील बने रहते हैं!

27. हाय हम पर, क्योंकि आत्मा की सर्वोच्च शक्ति अपने दास—मांस—के अधीन है, और बुराई अच्छाई पर हावी हो जाती है, बजाय इसके कि दोनों ने उन्हें बनाने वाले ईश्वर के लिए एक ही उद्देश्य में मिलकर काम किया!

28. हाय हम पर, क्योंकि हमारे पाप दुष्ट और अशुद्ध विचारों से नए सिरे से उत्पन्न होते हैं, और हम ईश्वर का हमसे विमुख होना और अशुद्ध आत्माओं के हमारे भीतर आक्रमण में अंतर नहीं कर पाते!

29. हम पर विनाश आए, क्योंकि हम मूर्ख और अज्ञानी हैं, हम संतों के पराक्रम और कर्मों के बजाय उनकी प्रशंसा से प्रेम और सराहना करते हैं।

30. हाय हम पर, क्योंकि परमेश्वर की आज्ञाओं का पालन करने में हम न तो सेवकों का भय, न ही मजदूरों का उत्साह और समझदारी, और न ही पुत्रों का प्रेम दिखाते हैं!

31. हम पर हाय, क्योंकि लोगों को प्रसन्न करने के लिए हम सब कुछ कहने और करने से नहीं चूकते, और इस बात पर ध्यान नहीं देते कि क्या धर्मी है!

32. हाय हम पर, क्योंकि हम पाप करने पर मनुष्यों के सामने लज्जित होते हैं, परन्तु अनन्त लज्जा की परवाह नहीं करते।

33. हम पर विनाश हो, क्योंकि यद्यपि हम गरीब और अज्ञात माता-पिता से पैदा हुए थे, हम स्वयं को नहीं जानते थे (हमने अपने बारे में नहीं सोचा), फिर भी ईश्वर के समक्ष गरीबी और अज्ञातता का जीवन जीने का व्रत लेने के बाद, हम इतने घमंडी हो गए हैं कि हम स्वयं को धनी और प्रसिद्ध लोगों के बराबर देखना चाहते हैं!

34. हम पर विनाश आए, क्योंकि संसार में तो हमने दरिद्रता के कारण संयम का अभ्यास किया, परन्तु अब, जब हमें संयम के लिए बुलाया गया है, तब हम अपने पेट और शरीर के आराम को तुष्ट करने में अत्यधिक लिप्त हैं!

35. हम पर विनाश हो, क्योंकि जहाँ एक ओर स्वर्गदूत परमेश्वर का भय मानने वालों के चारों ओर इकट्ठा होते हैं, और दुष्टात्माएँ उन लोगों के चारों ओर इकट्ठा होती हैं जो परमेश्वर का भय नहीं मानते और उसकी आज्ञाओं का उल्लंघन करते हैं, वहीं हम स्वयं को दुष्टात्माओं की कतार में खड़ा कर लेते हैं!

36. हम पर विनाश हो, क्योंकि जब हम अमीरों और प्रभावशाली लोगों से मिलते और बात करते हैं, तो हम उन्हें खुश करने का प्रयास करते हैं, फिर भी जब गरीब हमसे भीख मांगने के लिए आते हैं, तो हम उनसे ऐसे मुंह मोड़ लेते हैं जैसे वे कोई उपद्रव हों!

37. हम पर विनाश हो, क्योंकि हम हर व्यक्ति के साथ वैसा व्यवहार नहीं करते जैसा हमारा कर्तव्य है, बल्कि वैसा करते हैं जैसा हमें ठीक लगता है और जो हमें भाता है।

38. हम पर विनाश हो, क्योंकि हम अपने अधिकारों (अपने दावों) को ठीक-ठीक परिभाषित करते हैं, उनका न्याय करते हैं और उनके बारे में सिखाते हैं, फिर भी हम अच्छा करने से बहुत दूर भटक गए हैं!

39. और हम पर विनाश हो, क्योंकि जबकि हम लगन से भूमि को काँटों, झाड़ियों और फल के लिए हानिकारक अन्य पौधों से साफ करते हैं, हम ईश्वर के भय से अपने आत्मा को उन बुरे और अशुद्ध विचारों से शुद्ध नहीं करते जो पवित्र सद्गुणों को भ्रष्ट करते हैं!

40. हम पर विनाश हो, क्योंकि यद्यपि हमें इस पृथ्वी से, जहाँ हम अतिथि के रूप में रहते हैं, प्रस्थान करना है, फिर भी हम कई वर्ष पृथ्वी की और नश्वर चीजों में व्यस्त रहते हैं; फिर भी, यहाँ से हमारे निकटवर्ती प्रस्थान के समय, हमें उनमें से किसी पर भी कोई अधिकार नहीं दिया जाएगा!

41. हम पर विनाश हो, क्योंकि हमें हमारे सांसारिक जीवन के हर कर्म, हर व्यर्थ वचन, और आत्मा के हर दुष्ट और अशुद्ध विचार और स्मृति का हिसाब उस भयानक न्यायाधीश को देना है; फिर भी, मानो हमें अपने पूरे जीवन के लिए जवाबदेह न होना हो, हम अपनी ही आत्माओं के प्रति लापरवाह हैं!

42. हाय हम पर, न केवल हमारी दुष्टता और अधर्म के कारण, जिससे हमने पाप किया है, बल्कि परमेश्वर के वचनों के प्रति हमारी तिरस्कार और उन पर हमारे अविश्वास के कारण भी!

43. हम पर विनाश आए, क्योंकि हम मूर्खों की तरह नश्वर चीज़ों से चिपके रहे हैं; और यद्यपि सुसमाचार के अनुसार जीवन जीकर हमारे पास अक्षय चीज़ों के साथ एक होने का अवसर था, फिर भी हमने सांसारिक चीज़ों के प्रति अपने प्रेम के कारण शाश्वत अक्षयता से अपरिचित बने रहे!

44. हम पर विनाश हो, क्योंकि हमने अक्षयत्व के बजाय घृणित क्षय को प्राथमिकता दी है!

45. हम पर विनाश आए, क्योंकि सभी वासनाओं पर विजय पाने का अवसर होते हुए भी, हमने आत्म-तुष्टि के कारण अपनी कामनाओं द्वारा पराजित होने को चुना है!

46. हम पर हाय! क्योंकि हम मनुष्यों की दृष्टि में पाप करने से लज्जित और भयभीत हैं, फिर भी उस की दृष्टि में जो गुप्त को देखता है, हम न तो कांपते हैं और न ही निन्दा करने और पाप करने से डरते हैं!

४७. हाय हम पर, क्योंकि हम अपने शब्दों में दिव्य नमक नहीं मिलाते, बल्कि हमेशा अपने पड़ोसी से ऐसे शब्द कहते हैं जो व्यर्थ और धार्मिकता से दूर होते हैं!

48. हम पर विनाश हो, क्योंकि हम लोगों से चापलूसी, धोखे और दिखावे से बात करते हैं, और इसके लिए निंदा से नहीं डरते!

४९. हाय हम पर, क्योंकि हमारी नींद और निराशा दानवों को हमारे हृदयों से कोमलता चुराने देती है!

50. हम पर विनाश हो, क्योंकि हमने संसार का त्याग तो कर दिया है, फिर भी हम अपने भावों में गृहस्थों से भी आगे निकल जाते हैं!

51. हम पर विनाश हो, क्योंकि जब स्वयं हमें बहुत शिक्षा और मार्गदर्शन की आवश्यकता है, तब हम दूसरों को तुच्छ बातों में गलती करने पर सुधारते हैं!

52. हम पर विनाश हो, यदि प्रभु हमें पृथ्वी पर परीक्षा में डालें और हमें न्याय के लिए लाएँ, जबकि हम पश्चाताप नहीं करते!

53. हम पर विनाश हो, क्योंकि हम अपने हृदय की गहराइयों में नहीं झाँकते, और इसलिए हम कामुकता और अहंकार से पराजित हो जाते हैं!

54. हम पर विनाश हो, क्योंकि हम अशुद्ध विचारों से अपनी आत्मा को लगातार कलंकित करते हैं, फिर भी हम संत माने जाने और ऐसे खिताबों से सम्मानित होने की कामना करते हैं!

55. हम पर विनाश हो, क्योंकि हमने व्यर्थ की बातों को अपनाकर शैतान के विरुद्ध संघर्ष करना भूल गए हैं!

56. धिक्कार है हम पर जो यहाँ बिना भय के पाप करते हैं! क्योंकि वहाँ हमारा सामना गेहेन्ना की न बुझने वाली आग, घोर अंधकार, कभी न सोने वाले कीड़े, विलाप और दाँत पीसने, और हमसे श्रेष्ठ तथा नीच प्राणियों के सामने शाश्वत लज्जा से होगा।

57. धिक्कार है हमारी मूर्ख और पश्चाताप न करने वाली आत्मा पर! क्योंकि मृतकों के पुनरुत्थान के समय, विलाप और दाँत पीसते हुए, वह अपने पापी शरीर में रोएगी और कराहेगी, शाश्वत अग्नि के कड़वे और पीड़ादायक यातनाओं से निराश होकर।

58. हम पर विनाश आए, क्योंकि इस निर्वासन और प्रवास की भूमि में हम शापित आनंद को तो प्रेम करते हैं, परन्तु स्वर्ग के आनंद को याद नहीं करते और स्वर्ग के राज्य का तिरस्कार करते हैं!

५९. हम पर विनाश हो, क्योंकि हम अपनी दया की कमी में मूर्ख कुँवारियों के समान हैं, और यहाँ हम अपने पड़ोसियों के प्रतिदिन-पुण्य के कार्यों के द्वारा (वहाँ) दीपक जलाने के लिए तेल नहीं खरीदते!

60. हम पर विनाश आए, क्योंकि हम दिन-रात ईश्वर से प्रार्थना करते हैं, कहते हुए, *'हे प्रभु! हे प्रभु!'*, फिर भी हम वह नहीं करते जो उन्होंने आज्ञा दी है!

61. उस पर विनाश हो जिसने इन विलापों को लिखा है, क्योंकि, यद्यपि मैं जो कुछ लिखा गया है, उसके सभी दोषी हूँ, फिर भी मैंने पश्चाताप की एक भी हल्की आह नहीं छोड़ी है!

62. उस पर विनाश हो जो दूसरों के लिए दुख मनाता है और अपनी ही दुखों की उपेक्षा करता है (वह अपने लिए दुख नहीं मनाता)!

63. हम पर विनाश आए, क्योंकि यद्यपि हमारे अंतकरण पर आरोप हैं—जो हमें निरंतर दोषी ठहराते और हमारे विरुद्ध गवाही देते हैं—फिर भी हमें लज्जा नहीं आती; और यद्यपि हम अपने किए हुए सभी कर्मों के लिए दण्ड और यातना के पात्र हैं, फिर भी हम परमेश्वर के भयानक न्याय से नहीं कांपते!

64. हम पर विनाश हो, क्योंकि जब हमारे कर्म गंध मार रहे होते हैं, तब भी हम मानवीय प्रशंसा में आनंदित होते हैं!

65. हम पर विनाश हो, क्योंकि हमारे मन का इधर-उधर भटकना, हमारा चंचलपन और भूल, हमारे हृदय से ईश्वर का भय छीन लेते हैं!

66. हाय हम पर, क्योंकि सांसारिक व्यर्थताओं में हमारी व्यस्तता हमारे हृदयों को बंजर भूमि बना देती है और आध्यात्मिक मामलों के प्रति हमारी संवेदनशीलता को सुस्त कर देती है!

67. हाय हम पर, क्योंकि जब हम ईश्वर की दीर्घ सहनशीलता से सहारे पाए हुए हैं, तब भी हमारे कर्मों के कारण मृत्यु हमें नहीं मारती; और फिर भी, ऐसी (दया) प्राप्त होने पर, हम स्वयं दयालु बनने का कोई प्रयास नहीं करते!

68. हाय हम पर, क्योंकि हम अब अपने पापों को याद नहीं करते; परन्तु जब हमारी आत्मा शरीर से अलग की जाएगी, तब वे सब—चाहे वचनों में, कर्मों में, या विचारों में—एक ही क्षण में दिखाई देंगे, हमारे हृदयों की स्मृति में अंकित और लिखे हुए, अत्यंत पीड़ादायक और कड़वे पश्चाताप के बीच!

69. हम पर हाय, क्योंकि प्रेरित की इस घोषणा के बावजूद कि *'जो कोई अयोग्य होकर (रोटी खाता) और (प्रभु का प्याला) पीता है, वह प्रभु की देह और रक्त का अपमान करता है, और यह न समझकर कि यह प्रभु का शरीर है, अपने लिए न्याय खाता और पीता है'* (1 कुरिन्थियों 11:29), हम—अपने ही अपवित्रता में डूबे हुए—ईश्वर के भयानक रहस्यों के पास जाते हैं, और अपनी रात्रिकालीन कल्पनाओं और दुष्ट विचारों में जो हमने किया है, उसके लिए खुद को बरी करते हैं! जो अशुद्ध विचारों, अशुद्ध आँखों, अशुद्ध शरीर और आत्मा व शरीर की अशुद्ध इच्छाओं के साथ परमेश्वर के पास आता है—वह स्वयं को कितनी शारीरिक बीमारियों और आत्मा की दुर्बलताओं का पात्र बना लेता है? और इसके बाद—शाश्वत यातना और अनंत लज्जा का।

70. हाय मेरी, कि मैं यह लिख रहा हूँ और कड़वे आँसू बहा रहा हूँ, फिर भी मैंने अभी तक पश्चाताप का कार्य शुरू नहीं किया है!

71. हाय मुझ पर, क्योंकि मैं सत्य बोलता हूँ, परन्तु कोई भलाई नहीं करता!

72. धिक्कार है मुझ पर, जो अच्छा सिखाता हूँ पर बुरा करता हूँ!

73. उन लोगों के लिए विनाश है जो सुख-भोग में डूबे होकर पाप करते हैं! क्योंकि उनका अंत कड़वा होगा, और उन्हें शाश्वत लज्जा प्राप्त होगी।

74. वे लोग धिक्कार के पात्र हैं जो व्यर्थ की बातों पर शोक करते हैं! क्योंकि उन्होंने स्वयं को उस आत्मा-रक्षक शोक से वंचित कर लिया है जो पश्चाताप की ओर ले जाता है।

75. धिक्कार है बदनाम करने वालों और अन्याय करने वालों पर! क्योंकि उन्होंने स्वयं को धन्य प्रेम से अलग कर लिया है।

76. धिक्कार है दुर्भावना रखने वालों और ईर्ष्यालुओं पर! क्योंकि उन्होंने स्वयं को परमेश्वर की भलाई और दया से अपरिचित बना लिया है।

77. वे लोग धिक्कार के पात्र हैं जो मनुष्यों को प्रसन्न करने का प्रयास करते हैं! क्योंकि वे परमेश्वर को प्रसन्न नहीं कर सकते।

78. शोकाकुल लोगों पर विनाश! क्योंकि वे परमेश्वर की सच्चाई से दूर हो गए हैं।

79. धिक्कार है घमण्डी लोगों पर! क्योंकि वे विधर्मी शैतान के पक्ष में खड़े हैं।

80. वे लोग विनाश के घाट उतरे जो परमेश्वर का भय नहीं मानते! क्योंकि वे अनगिनत पापों में फँस जाएँगे और इधर-उधर दोनों जगह दण्डित होंगे।

81. हाय हमारे, क्योंकि हम जूँ, जूँ के लार्वा, मक्खी, मच्छर और मधुमक्खी के डंक और काटने को (हम उनसे अपना बचाव करते हैं) सहन नहीं कर सकते, फिर भी महा अजगर के जबड़ों के विरुद्ध, जो हमें चारे की खाल की तरह डंक मारता और निगलता है, और हमें हर तरह के घातक डंकों से भेदता है, हम अपने लिए कोई मदद या शरण नहीं जुटाते!

82. हम पर विनाश आए, क्योंकि शैतान हमें सुख-भोगों और बीमारियों, कठिनाइयों और हर तरह के सांसारिक प्रलोभनों से थका देता है, फिर भी हम अपने बुरे कर्मों से मुँह मोड़ने को तैयार नहीं हैं!

83. हम पर विनाश हो, क्योंकि जब यह धर्मत्याग इतने वर्षों से जारी रहा है और इतने लोगों ने ऑर्थोडॉक्स धर्म को छोड़ दिया है, हम आँसू नहीं बहाते, हमारे दिल दुखी नहीं होते, न ही हम अपनी वासनाओं को रोकते हैं, बल्कि हम पाप पर पाप जोड़ते हैं, ताकि हमारे बुरे कर्मों और हमारे अविश्वास के लिए हमें गेहेना में तुरंत कड़वी अनंत यातना प्राप्त हो!

84. हम पर विनाश हो, जिन्होंने ये विलाप लिखे हैं, क्योंकि जैसे-जैसे हमारा अंत निकट आ रहा है, न तो हमने अपनी जवानी के बुरे कर्मों पर पश्चाताप किया है और न ही उनका शोक मनाया है, बल्कि हमने अपनी वृद्धावस्था में महान और अजेय बुराइयाँ और सबसे गंभीर पाप जोड़ दिए हैं।

85. हम पर विनाश हो, क्योंकि हमें सबसे गंभीर पीड़ाओं और विभिन्न शारीरिक बीमारियों से भी शर्म नहीं आती, बल्कि हम पाप में लिप्त रहते हैं, और जो सही है उसकी अवहेलना करते हुए, पूर्ण अनियंत्रितता और कामुकता के साथ, हम अपने घृणित और पापी शरीरों को पोषित करते हैं!

86. हम पर विनाश हो, क्योंकि हमें एक ऐसी आग से गुजरना होगा जो समुद्र की लहरों से भी अधिक प्रचंड रूप से भड़कती है, *'ताकि प्रत्येक व्यक्ति शरीर में रहते हुए जो कुछ भी उसने किया है, चाहे अच्छा हो या बुरा, उसका फल प्राप्त करे'* (2 कुरिन्थियों 5:10)।

87. हम पर हाय! क्योंकि हम उस अंधकारमय और अदेह जलन के विषय में, और वहाँ के अनंत कड़वे रोने और दांत पीसने के विषय में कोई विचार नहीं करते! क्योंकि परमेश्वर अग्नि की लौ से प्रकाश तो ले लेगा, परन्तु अधर्मी और पापियों के लिए आग में जलन और अंधकार छोड़ देगा।

88. हाय, मेरी दीन आत्मा! *'क्योंकि मेरे हृदय में बड़ी व्यथा और अविराम शोक है'* (रोमियों 9:2)! क्योंकि, जैसे मैं अपने लिए शोक मनाता हूँ, मुझे कहना ही होगा: बुराई ने मेरे मन पर छाया डाल दी है और सत्य पर पर्दा डाल दिया है; मृत्यु ने जीवन पर विजय प्राप्त की है; सांसारिक, नश्वर और क्षणिक ने स्वर्गीय, अमर और शाश्वत की जगह ले ली है; जो नीच और घृणित है वह मसीह के सच्चे प्रेम और ईश्वर की महिमा से भी अधिक मीठा और अधिक प्रिय प्रतीत हुआ है; मोह ने, सत्य को निर्वासन की सजा देकर, उसे मेरी आत्मा से बाहर निकाल दिया है; मैंने आनंद के बजाय दुख को चुना है, साहस और प्रशंसा के बजाय शर्म और अपमान; मैंने मिठास के बजाय कड़वाहट को तरजीह दी; मैंने स्वर्ग और उसके राज्य से अधिक पृथ्वी और उसकी राख से प्रेम किया; बुराई से घृणा करने वाले शत्रु का अंधकार मेरे हृदय में प्रवेश कर गया और मेरे मन में ज्ञान के प्रकाश को म्लान कर दिया।

८९. हाय मुझ पर! हाय मुझ पर! शैतान के किन-किन फंदों ने मुझे फँसाया और ठोकर मारकर इतनी ऊँचाई से नीचे गिरा दिया! मैं अपने संघर्षों से थक गया हूँ, और मेरी मेहनत व्यर्थ गई है। मेरे लिए कौन नहीं रोएगा? मेरे लिए कौन जोर-जोर से नहीं रोएगा, जो व्यर्थ की मेहनत से थक गया हूँ और बंदरगाह पर ही मेरा जहाज टूट गया है? *'मुझ पर दया करो, मुझ पर दया करो, मुझ पर दया करो, हे मित्रों'* (अय्यूब 19:21), और मेरे भले और दयालु प्रभु मसीह से विनती करें, कि वह मुझ पर दया करें और भलाई के शत्रु, शैतान के इस भयानक अंधकार को मेरे मन से दूर करें, ताकि मैं देख सकूँ कि मैं किस कीचड़ में पड़ा हूँ, और, यद्यपि उठने में समर्थ हूँ, मैं नहीं उठूँगा। या क्या मेरे संक्षिप्त समय ने ही मेरे लिए सारी आशा समाप्त कर दी है?! मुझसे बड़ी कोई बीमारी नहीं है; मेरे जैसा कोई घाव नहीं; मेरे हृदय के फाड़े जैसा कोई फाड़ नहीं; *'क्योंकि मेरे अधर्म मेरे सिर पर चढ़ आए हैं'* (भजन संहिता 37:5)। मेरे घाव तलवार के घाव नहीं हैं, और न ही मेरे मरे हुए युद्ध में मरे हैं; पर शत्रु के अग्नि-बाणों ने मुझे भेद दिया है और मेरे अंतर्मन को अंधा कर दिया है, और *'मैं अंधकार के गहिराई में डूब गया हूँ, और वहाँ खड़ा होने की कोई जगह नहीं है'* (भजन संहिता 68:3), – *'जिस भय से मैं भयभीत था, वही मुझ पर आ पड़ा है'* (अय्यूब 3:25), – *'और मृत्यु की छाया हम पर छा गई है'* (भजन संहिता 43:20)।

90. हाय मुझ पर! हे आत्मा, देख और परख वर्तमान को, जो क्षणभंगुर है, और जो थोड़ी ही देर में कड़वाहट और दुख के साथ बीत जाएगा, और भविष्य को – जो सभी से भयानक है। विचार कर, हे आत्मा, कि तू कितनी आशीषें और आशाएँ त्याग रही है, और क्या-क्या यातनाएँ तू जल्द ही विरासत में पाएगी, जो अंतहीन और बिना किसी सांत्वना के होंगी! इसलिए, अपने सिर के ऊपर से प्रकाश मिट जाने से पहले, आगे आओ; गिर पड़ो, प्रार्थना करो और अनंत प्रकाश के दाता से विनती करो कि वह तुम्हें सर्व-भक्षी ज्वाला और अंधकारमय तमिगिलि से बचाए। क्योंकि पापों को क्षमा करना और हम पर, जो उसकी दया के अयोग्य हैं, आशीषें लुटाना, उसी का काम है। उसी की महिमा और सामर्थ्य युग-युग तक बनी रहे। आमेन।

२. नवोदित भिक्षुओं के लिए नियम और सलाह[32]

प्रिय भ्राता! यदि आप इस व्यर्थ संसार को पहले ही त्याग चुके हैं और स्वयं को ईश्वर को समर्पित कर चुके हैं, तो अपने पापों पर पश्चाताप करें और आपने जो संकल्प लिया है, उस पर दृढ़ रहें। जब आपके अपने विचार आपको

[32] पैट्र. लैट. खंड CIII, पृ. 427, 434।

सताना शुरू करें, यह कहते हुए: 'आपके पिछले पापों को कभी माफ़ नहीं किया जाएगा', तो उन्हें न सुनें। लेकिन निम्नलिखित नियमों का पालन करें:

1. किसी स्त्री के साथ भोजन न करो; किसी युवक के साथ घनिष्ठ संबंध न बनाओ; किसी युवक के साथ एक ही बिस्तर पर न सोओ। जब तुम अपने कपड़े उतारो, तो अपने शरीर को न देखो।

2. यदि आपको शराब पीने के लिए कहा जाए, तो तीन छोटे प्याले से अधिक न पिएँ। इस नियम को न तोड़ें, दोस्ती की खातिर भी नहीं।

3. निर्धारित समय पर निर्धारित प्रार्थनाओं को लापरवाही से न करें, कहीं आप अपने दुश्मनों के हाथ न पड़ जाएँ। जितना हो सके भजन संहिता पर ध्यान लगाने का प्रयास करें, क्योंकि यह आपको एक अशुद्ध जीवन से बचाएगा।

४. परिश्रम और आत्म-त्याग से प्रेम करो, ताकि तुम्हारे वासनाएँ वश में आ जाएँ। किसी भी मामले में स्वयं को कुछ भी न समझो, और तुम अपने पापों पर रोना कभी बंद नहीं करोगे।

5. झूठ से अपना बचाव करो, क्योंकि यह तुमसे ईश्वर का भय दूर कर देगा। अपने अच्छे कर्मों को सभी को मत बताओ, कहीं तुम्हारा शत्रु उन्हें चुरा न ले।

6. अपनी आध्यात्मिक पितरों के सामने अपनी दुर्बलताओं का इकरार करो, ताकि तुम्हें उनके परामर्श से सहायता मिल सके।

7. स्वयं को शारीरिक श्रम के लिए प्रेरित करो, और ईश्वर का भय तुममें पुनर्जीवित होगा।

8. अपने उस भाई का न्याय न करना जिसने पाप किया है, और न उससे घृणा करना, कहीं ऐसा न हो कि तुम अपने शत्रुओं के हाथ में पड़ जाओ।

९. वाद-विवाद मत करो, अपनी ही बात पर अड़े मत रहो, कहीं ऐसा न हो कि बुराई तुम्हारे भीतर जड़ जमा ले।

10. विनम्रता से प्रेम करो और अपनी ही सलाह पर भरोसा मत करो। अपनी जीभ को 'मुझे क्षमा करो' कहना सिखाओ, और विनम्रता तुम पर आएगी।

11. जब आप अपनी कोठरी में बैठें, तो तीन बातों का ध्यान रखें: अखंड प्रार्थना, भजनों की आपकी समझ को गहरा करना, और शारीरिक श्रम।

12. अपने आप से कहो: 'मैं इस संसार में आज के दिन के अलावा और नहीं रहूँगा,' और तुम पाप से मुक्त हो जाओगे।

13. बहुत ज़्यादा बातें मत करो, कहीं ऐसा न हो कि तुम्हारे पुराने पाप तुम्हारे भीतर फिर से जीवित हो उठें। अपने काम में आलसी मत बनो; भजनों में गहराई तक उतरने का प्रयास करो – और परमेश्वर का शान्ति तुम पर आएगा।

14. प्रार्थना में रोने के लिए स्वयं को प्रेरित करो, और ईश्वर तुम पर दया करेंगे और तुमसे पुराने स्वभाव को दूर कर देंगे।

15. जान लो कि परिश्रम, गरीबी, आत्म-त्याग और मौन से विनम्रता आती है, और विनम्रता सभी पापों की क्षमा लाती है। नम्रता में एक व्यक्ति का स्वयं को पापी और अधर्मी मानना, अपनी बात पर ज़िद न करना, अपनी इच्छाओं को दबाना, अपनी नज़रें नीचे रखना, अपमान सहना, सम्मान और शांति से घृणा करना, और हर किसी से कहना शामिल है: 'मुझे क्षमा करें।' नम्रता की शक्ति से, दुश्मन भाग जाते हैं।

16. हर समय शोकित रहो, परन्तु जब भाई तुम पर आते हैं, तो उनके साथ आनन्दित होओ—ताकि परमेश्वर का भय तुम्हारे भीतर नया हो जाए।

१७. यदि आप भाइयों के साथ कहीं जा रहे हैं, तो उनसे थोड़ी दूरी बनाए रखें ताकि आप चुप रह सकें। इधर-उधर न झाँको, बल्कि भजनों में डूब जाओ और मन ही मन ईश्वर से प्रार्थना करो। जहाँ भी जाओ, स्थानीय लोगों पर बहुत भरोसा न करो। हर बात में विनम्रता और संयम बनाए रखो, और जब तक तुमसे न कहा जाए, तब तक तुम्हें जो कुछ भी दिया जाए, उसे ग्रहण न करो।

18. किसी दूसरे व्यक्ति के साथ एक ही कंबल के नीचे न सोएँ। सोने से पहले लंबी प्रार्थना करें, भले ही आप अपनी यात्रा से थके हुए हों।

19. किसी को भी अपने शरीर पर तेल लगाने की अनुमति न दें, जब तक कि आप गंभीर रूप से बीमार न हों।

20. जब आप अपने भाइयों के साथ मेज पर बैठें, तो स्वाद लेकर न खाएं, और केवल वही लें जो आपके सामने है। अपने घुटनों को मोड़े रखें। किसी और को देखने के लिए अपनी आँखें ऊपर न उठाएं। पानी लालच से या गले में गड़गड़ाहट की आवाज़ के साथ न पिएं।

21. यदि आप अपने भाइयों के बीच बैठे हुए गला साफ करने की आवश्यकता महसूस करें, तो उठें और उनसे दूर जाकर ऐसा करें। दूसरों की संगत में खिंचाव न करें या हांफें नहीं, और यदि आपको हांफ आने लगे, तो अपना मुँह न खोलें, और यह चला जाएगा।

22. हँसते समय अपना मुँह बहुत ज़्यादा खुला न रखें, क्योंकि इससे यह पता चलता है कि आप ईश्वर से नहीं डरते।

23. दूसरे की संपत्ति पर लालच न करें। यदि आपको कोई किताब मिले, तो उसे सजाएँ नहीं, क्योंकि इससे उसमें आपकी आसक्ति प्रकट होगी।

24. यदि आप किसी भी तरह से पाप करते हैं, तो उसे स्वीकार करने में शर्म न करें और झूठ बोलकर अपना बचाव न करें, बल्कि घुटने टेकें, अपने पाप का इकरार करें और क्षमा मांगें, और आपको क्षमा मिल जाएगी।

25. यदि कोई आपसे झूठ बोले, तो क्रोधित न हों, बल्कि कहें: 'मुझे क्षमा करें।'

26. अपने गुरु से प्रश्न पूछने में संकोच न करें।

27. यदि कोई आपके सेल के दरवाज़े पर तब दस्तक दे जब आप बैठे हों और अपने काम में व्यस्त हों, तो अपना काम एक तरफ रख दें और उनका ध्यान रखें।

28. बिना उचित कारण के किसी से बात न करें, न ही किसी और की बातें सुनें।

29. यदि आपका आध्यात्मिक पिता आपको किसी यात्रा पर भेजते हैं, तो उनसे पूछें कि आपको अपना आचरण कैसे करना चाहिए, और फिर उनकी आज्ञा के अनुसार कार्य करें। उनके शब्दों को संदर्भ से अलग न समझें। यदि आप अपनी आँखों और कानों की रक्षा करते हैं, तो आप अपनी जीभ से भी पाप नहीं करेंगे।

30. यदि आप किसी भाई के साथ रहते हैं, तो उसके साथ एक अजनबी की तरह रहें; उसे कुछ करने का आदेश न दें, और न ही खुद को उससे श्रेष्ठ दिखाएँ। यदि वह आपको कुछ ऐसा करने का आदेश देता है जो आप नहीं करना चाहते, तो अपनी इच्छा को अलग रख दें और उसे (इनकार करके) नाराज़ न करें, कहीं आपके बीच का शांति-सौहार्द बिगड़ न जाए। जान लें कि जो आज्ञा मानता है, वही सबसे महान है।

31. यदि आप किसी भाई के साथ रहते हैं और वह आपसे कहता है, 'कुछ पकाओ', तो पूछें, 'आप क्या पसंद करेंगे?' और यदि वह पसंद करने का अधिकार आपको दे, तो ईश्वर के भय से जो कुछ भी हाथ लगे, वही पकाएँ।

32. जब आप नींद से जागें, तो कोई भी काम शुरू करने से पहले प्रार्थना करें; फिर ईश्वर के वचन में डूब जाएँ, और तभी बिना आलस्य के अपना काम शुरू करें।

33. यात्री का आनंदपूर्वक स्वागत करो और उसे नमस्कार करो, कहीं ऐसा न हो कि तुम दोनों के लिए यह भेंट हानिकारक साबित हो। जब वह प्रवेश करे, तो उससे कोई व्यर्थ प्रश्न न पूछो, बल्कि पहले उससे प्रार्थना करने के लिए कहो; फिर, जब वह बैठ जाए, तो उससे कहो, 'तुम कैसे हो, मेरे भाई?' – और फिर उसे पढ़ने के लिए एक किताब दो। यदि वह अपनी यात्रा से थका हुआ हो, तो उसे आराम करने और अपने पैर धोने दें। यदि वह व्यर्थ बातें करने लगे, तो उससे कहें: 'मुझे क्षमा करें, मेरे भाई, मैं कमज़ोर हूँ और यह सुनना सहन नहीं कर सकता।' यदि उसके कपड़े फटे हों, तो उन्हें सिल दो। यदि वह अस्वस्थ है और उसके कपड़े गंदे हैं, तो उन्हें धो दो। लेकिन यदि वह एक आवारा है और उस समय आपके यहाँ पवित्र अतिथि हैं, तो उसे अंदर मत आने दो, बल्कि उसे उचित अभिवादन दो और उसे जाने दो। हालाँकि, यदि वह गरीब है, तो उसे बिना सांत्वना दिए मत भेजो, और उसे वही दो जो ईश्वर ने प्रदान किया है।

34. यदि कोई भाई आपके पास कुछ रखकर चला जाए, तो उसकी अनुपस्थिति में उसकी जाँच न करें।

35. यदि कोई अपनी कोठरी में कुछ छोड़कर बाहर जाता है, तो उसमें क्या है यह देखने के लिए अपनी आँखें ऊपर मत उठाओ, बल्कि जब वह जाने लगे, तो उससे कहो: 'मुझे कोई काम दो, और जब तुम बाहर हो तब मैं काम करूँगा'; और जो कुछ भी वह तुम्हें देता है, उसे उत्साह के साथ करो।

36. आलस्य या लापरवाही से प्रार्थना न करो, क्योंकि ऐसा करने से, ईश्वर को प्रसन्न करने के बजाय, तुम उनके क्रोध को भड़काओगे। प्रार्थना करते समय भय और कांपते हुए खड़े रहें, दीवार से न सहारा लगाएँ और न ही अपने पैर फैलाएँ, बल्कि एक पैर पर खड़े रहें और दूसरे को पीछे की ओर रखें। अपने विचारों का विरोध करें और उन्हें सांसारिक बातों में व्यस्त न होने दें, ताकि आपकी प्रार्थना स्वीकार हो सके।

37. जब आप धर्मविधि में भाग लें, तो अपने विचारों और भावनाओं की रक्षा करें, और सर्वोच्च परमेश्वर के सामने विस्मय में खड़े रहें, ताकि आप मसीह के शरीर और रक्त को योग्य रूप से ग्रहण कर सकें और इस प्रकार अपनी वासनाओं को चंगा कर सकें।

३८. जब तक आप जवान हैं, तब तक बुढ़ापे तक बढ़िया कपड़े न पहनें।

39. जब आप अपने से बड़े किसी के साथ यात्रा कर रहे हों, तो उनसे आगे न चलें। यदि आपका बड़ा कोई से बात करने के लिए खड़ा हो, तो आप बैठे न रहें; उनके साथ खड़े हो जाएँ और तब तक खड़े रहें जब तक वे आपको बैठने के लिए न कहें।

40. जब आप किसी नगर या गाँव में प्रवेश करें, तो अपनी दृष्टि नीचे रखें, कहीं ऐसा न हो कि जो आप देखते हैं वह आपके सेल में कलह का कारण बन जाए।

41. ऐसी जगह पर न सोएं जहाँ आपको डर हो कि आपका मन पाप कर सकता है। किसी महिला के साथ भोजन न करें, और यदि संभव हो तो उसके कपड़ों को भी न देखें।

४२. यदि आप किसी बुजुर्ग के साथ यात्रा कर रहे हैं, तो उन्हें स्वयं कुछ भी उठाने न दें। यदि आप जवान हैं, तो आप दोनों में से हर एक को अपना-अपना हिस्सा उठाना चाहिए। यदि बोझ हल्का है, तो घड़ी की टिकी के हिसाब से बारी-बारी से उसे उठाएं। बोझ उठाने वाले को आगे चलने दें, जैसे कि कमजोर व्यक्ति को चलना चाहिए; और जब वह थककर आराम करने के लिए बैठ जाए, तो उसके साथ बैठ जाएं।

४३. जब आप किसी वरिष्ठ से अपने विचारों के बारे में पूछें, तो उन्हें वैसे ही, स्वतंत्र रूप से प्रकट करें, जैसे वे हैं, उस व्यक्ति के सामने जिस पर आप अपना रहस्य रखने के लिए भरोसा करते हैं। किसी वरिष्ठ को चुनते समय, उम्र में बड़े व्यक्ति को प्राथमिकता न दें, बल्कि ज्ञान और आध्यात्मिक अनुभव से परिपक्व व्यक्ति को प्राथमिकता दें, अन्यथा आपको हानि होगी और आपके वासनाएँ बढ़ जाएँगी।

44. अपने मन को प्रबुद्ध करने के लिए, रात में लंबी प्रार्थना करने के लिए स्वयं को प्रेरित करें। अपने पापों पर मनन करें और उनके लिए परमेश्वर से प्रार्थना करें, और वह आपको क्षमा कर देगा।

४५. यदि कोई आपकी उपस्थिति में अपने भाई का न्याय करना शुरू करता है, भले ही न्याय करने वाला उन्हीं में से हो जो स्वयं आप पर न्याय करते हैं, तो उससे नम्रता से कहें: 'मुझे क्षमा करो, मेरे भाई; मैं एक पापी और कमजोर हूँ, और मैं स्वयं उस बात का दोषी हूँ जिसके बारे में आप बात कर रहे हैं, इसीलिए मैं इसे सुनना बर्दाश्त नहीं कर सकता।'

४६. सभी बातों में, अपने साथियों को अपने से पहले रखना; और यदि कोई मित्र उनकी उपस्थिति में तुम्हारा सम्मान करता है, तो कहना: 'यह तुम्हारे ही कारण है कि उसने मुझे इतना सम्मान दिया है।'

४७. यदि कोई आपसे कुछ उधार मांगे, तो मना न करें।

48. जिन लोगों को आपने ईश्वर के प्रेम के लिए त्याग दिया है, उनकी याद में अपने मन में अक्सर न टिकें, बल्कि मृत्यु और न्याय को याद रखें, और यह कि उनमें से कोई भी उस समय आपकी मदद नहीं कर पाएगा।

४९. यदि, अपनी कोठरी में बैठे-बैठे, आपको किसी ऐसे व्यक्ति का स्मरण आए जिसने आपके साथ अन्याय किया है, तो तुरंत उठें और उनके लिए अपने हृदय में प्रार्थना करें, कि ईश्वर उन पर दया करें; इस प्रकार, उनके प्रति आपका द्वेष जल्द ही समाप्त हो जाएगा।

५०. यदि आप मसीह के शरीर और लहू को ग्रहण करना चाहते हैं, तो सुनिश्चित करें कि आपके हृदय में किसी के प्रति कोई क्रोध या घृणा न रहे; और यदि आप जानते हैं कि कोई आपसे नाराज़ है, तो पहले उनसे क्षमा माँगें, जैसा कि हमारे प्रभु ने आज्ञा दी है।

५१. यदि रात में (स्वप्न में) आपको कामुकता के आक्रमणों का सामना करना पड़े, तो सावधान रहें कि दिन के दौरान उन शर्मनाक छवियों पर अपने विचारों में न टिकें, कहीं ऐसा न हो कि आपका हृदय ऐसी सुख से कलंकित हो जाए; बल्कि प्रभु के सामने गिर पड़ें, और वह आप पर दया करेंगे: क्योंकि वह मानवीय कमजोरी को जानते हैं।

५२. यदि आप स्वयं पर कठोर उपवास थोपते हैं और लंबी प्रार्थनाएँ करना शुरू करते हैं, तो यह न सोचें कि वे आपको बचा लेंगी, बल्कि विश्वास करें कि ईश्वर आपके शरीर की पीड़ा से प्रसन्न होंगे और आपकी कमजोरी में आपकी मदद करेंगे।

53. यदि आप बीमार पड़ जाएँ, तो हतोत्साहित न हों, बल्कि ईश्वर का धन्यवाद करें कि वह आपकी बीमारी के माध्यम से आपको यह आशीर्वाद दे रहे हैं।

54. अपने कोठरी में रहते हुए, अपने भोजन के लिए एक निश्चित मात्रा और एक निश्चित समय निर्धारित करें, और इससे विचलित न हों। अपने शरीर को केवल उतना ही दें जितना उसे प्रार्थना करने और ईश्वर की सेवा करने की शक्ति के लिए आवश्यक है। यदि, अपनी कोठरी के बाहर, आपको स्वादिष्ट व्यंजन परोसे जाते हैं, तो तृप्त होकर न खाएं।

55. यदि दुष्टात्माएँ आपको ऐसा कार्य करने के लिए प्रलोभित करें जिसे करने के लिए आप पर्याप्त मजबूत नहीं हैं, तो उनकी न सुनें; क्योंकि वे आमतौर पर किसी व्यक्ति के हृदय को ऐसे कार्यों में ले जाती हैं जिन्हें वे पूरा करने

में असमर्थ होते हैं, ताकि वे बाद में उन्हें निराशा में डुबो सकें और उनका मज़ाक उड़ा सकें। और उनके सभी कार्य बिना माप-तौल और बिना किसी व्यवस्था के होते हैं।

56. दिन में एक बार खाएं, लेकिन तृप्त होकर न खाएं। अपने शरीर को प्रकृति की मांग के अनुसार (आपकी प्रकृति के अनुकूल) जितना आवश्यक हो उतना ही दें।

५७. आधी रात को प्रार्थनापूर्ण जागरण के लिए और दूसरी आधी को अपने शरीर के विश्राम के लिए निर्धारित करें। सोने से पहले, दो घंटे प्रार्थना और ईश्वर की स्तुति (भजन गाने) में व्यतीत करें, फिर अपने शरीर को आराम करने दें। जब प्रार्थना के लिए उठने का समय हो और आपका शरीर सुस्त पड़ जाए, तो उससे कहें: 'क्या तुम सच में इस समय थोड़ी देर आराम करना चाहते हो, केवल बाद में अनंत यातनाओं का सामना करने के लिए? क्या यह बेहतर नहीं है कि यहाँ थोड़ी मेहनत की जाए, ताकि वहाँ तुम संतों के साथ शाश्वत विश्राम का आनंद ले सको?' तब सुस्ती आपसे दूर हो जाएगी, और दैवीय सहायता आपको प्राप्त होगी।

५८. जब आप संन्यास के व्रत लेते हैं, तो अपने सेवक को मुक्त कर दें; यदि वह आपका अनुसरण करना और संन्यास जीवन में प्रवेश करना चाहता है, तो उसे आपके साथ रहने न दें।

५९. यदि आप अपना बना हुआ सामान बेचने जाएँ, तो आम लोगों की तरह कीमत पर मोल-भाव न करें। जब कुछ खरीदें तो भी ऐसा ही करें; जान लें कि मितव्ययिता आपको ईश्वर के करीब लाता है।

60. यदि कोई भाई आपके पास कुछ रखता है और आपको उसकी आवश्यकता है, तो जब तक वह अनुमति न दे, उसे न छुएँ।

61. यदि कोई भाई आपसे शहर जाने पर उसके लिए कुछ खरीदने को कहे, तो ऐसा करें; लेकिन यदि अन्य भाई आपके साथ हैं, तो यह उनके सामने ही करें।

62. यदि आपको कोई वस्तु दी जाती है, तो आवश्यकतानुसार उपयोग करने के बाद उसे वापस कर दें, लेकिन जब तक वापस माँगी न जाए तब तक उसे अपने पास न रखें; यदि कुछ भी क्षतिग्रस्त हो जाता है, तो उसकी मरम्मत करें। यदि आप स्वयं किसी को किसी वस्तु का उपयोग करने के लिए देते हैं, तो यदि आप देखते हैं कि वे किसी भी कारण से उसे आपको वापस नहीं कर सकते, तो उसे वापस न माँगें, विशेष रूप से जब आपको स्वयं उसकी कोई आवश्यकता न हो।

63. यदि आप अपनी कोठरी छोड़कर बाद में लौटें और पाएं कि कोई दूसरा भाई पहले से ही वहाँ रह रहा है, तो अपने लिए कोई दूसरी कोठरी ढूंढें, लेकिन किसी भी परिस्थिति में उसे वहाँ से न निकालें, नहीं तो ईश्वर आपसे क्रोधित होंगे। लेकिन अगर वह स्वयं अपनी इच्छा से उसे छोड़ना चाहता है, तो आप सही हैं। अगर ऐसा करते समय वह इसके कोई सामान ले जाता है, तो उससे उसे वापस मांगने की मांग न करें।

64. यदि आप अपनी कोठरी पूरी तरह से छोड़ना चाहते हैं, तो अपने साथ इसके कोई भी सामान न लें, बल्कि इसे किसी गरीब भाई को दे दें, और ईश्वर आपको जहाँ भी जाएँ, दया दिखाएगा।

65. जब कोई अपने विचारों को अपने आध्यात्मिक पिता से छिपाता है, तो इससे शैतानों को उससे बड़ी प्रसन्नता कुछ नहीं होती। जब तक आप उनके श्रम का अनुकरण न करें, तब तक अपने आपको उन संतों जैसा न समझें।

66. धन और उसकी लालसा से अपना बचाव करो, क्योंकि यह संन्यास जीवन के फलों को भ्रष्ट कर देता है।

67. यदि आप किसी भी प्रलोभन से जूझ रहे हैं, तो हतोत्साहित न हों, बल्कि ईश्वर के सामने प्रणाम करें और कहें: 'हे प्रभु, मेरी मदद करो, क्योंकि मैं कमजोर हूँ और इस लड़ाई का सामना नहीं कर सकता' – और यदि आपका प्रार्थना शुद्ध हृदय से निकली हो, तो वह आपकी मदद करेंगे। यदि, संघर्ष के बाद, आप उस पर विजय प्राप्त करते हैं, तो उसकी बड़ाई न करें या स्वयं पर भरोसा न करें, बल्कि और भी सतर्क रहें, क्योंकि शत्रु आपके ऊपर पिछली से भी अधिक कठिन एक नई लड़ाई लाने में देरी नहीं करेगा।

६८. जब आप ईश्वर से प्रार्थना करें, तो यह न कहें: 'हे प्रभु, इसे मुझसे दूर कर दो और मुझे वह दे दो' - बल्कि कहें: 'हे प्रभु, मेरे ईश्वर, आप जानते हैं कि मेरे लिए क्या उद्धारक है; मेरी मदद करें और मुझे आपके सामने पाप करने और अपने पापों में नष्ट होने न दें, क्योंकि मैं एक पापी और कमजोर आत्मा हूँ; मुझे मेरे शत्रुओं के हाथ में न सौंपें, क्योंकि मैंने आप में शरण ली है; हे प्रभु, मेरा उद्धार करें, क्योंकि आप मेरी शक्ति और मेरी आशा हैं। – युगानुयुग आपको महिमा और धन्यवाद हो। आमीन।

3. बाबा इसाइया की कहावतें[33]

1. अबा इसाया ने कहा[34] : चूँकि पापियों और धर्मी दोनों पर एक ही प्रकार की विपत्तियाँ आती हैं, इसलिए किसी को यह नहीं सोचना चाहिए कि जो भी लोग विपत्तियों को झेलते हैं, वे सभी किसी पूर्व के पापों के कारण ही ऐसा झेलते हैं।

२. जो लोग सब कुछ केवल अपने लिए करते हैं, वे अपने अहंकार की सेवा कर रहे होते हैं, जो सभी बुराइयों में सबसे बड़ा है, जिससे अलगाव, असामाजिकता, असौहार्द, झूठ और दुष्टता उत्पन्न होती है। मनुष्य को अकेला रहने के लिए नहीं बनाया गया है, बल्कि अपने साथी मनुष्यों के साथ, और उससे भी अधिक, सभी चीजों के स्रष्टा, ईश्वर के साथ, सान्निध्य में रहने के लिए बनाया गया है। इसलिए, एक बुद्धिमान व्यक्ति को मिलनसार और ईश्वर-प्रेमी होना चाहिए, ताकि वह ईश्वर को भी प्रसन्न कर सके।

3. अबा इसैया said[35] : मानवीय महिमा के प्रेम से झूठ उत्पन्न होता है। जो कोई नम्रता द्वारा झूठ को दूर करता है, वह अपने हृदय में परमेश्वर के भय को बढ़ता हुआ देखता है। इसलिए, इस संसार की महिमा से प्रेम न करो, कहीं ऐसा न हो कि परमेश्वर की महिमा तुमसे दूर हो जाए।

४. जब, अपना कर्तव्य करते समय, आप एक अयोग्य व्यक्ति की तरह विनम्रता से ऐसा करते हैं, तो यह ईश्वर को स्वीकार्य है। लेकिन यदि, ऐसा करते समय, आपके हृदय में एक घमंडी विचार उत्पन्न होता है और आप उसे स्वीकार कर लेते हैं, और किसी अन्य को जो सुस्त और लापरवाह है, याद करके आप उसे अपने विचारों में दोषी ठहराते हैं, तो जान लें कि आपका श्रम व्यर्थ है।

5. कोई व्यक्ति कब और कैसे विनम्र होता है? जब उनके पास किसी को यह बताने के लिए जीभ न हो कि वे लापरवाह हैं, या उन पर अत्याचार करने वाले का जवाब देने के लिए; दूसरों के अपराधों को देखने के लिए आँखें न हों; अपनी आत्मा के लिए हानिकारक बातें सुनने के लिए कान न हों; किसी पर हावी होने के लिए हाथ न हों, और वे किसी पर भी दोष न लगाकर, बल्कि दोष केवल अपने ही पापों पर लगाते हों।

6. एक व्यक्ति को, सबसे बढ़कर, ईश्वर में विश्वास और उसके प्रति अटूट प्रेम प्राप्त करना चाहिए, साथ ही द्वेष से रहित होना चाहिए, बुराई का बुराई से प्रतिशोध न करना चाहिए, कठिनाई, नम्रता, पवित्रता और मानवता के प्रति प्रेम से भरा जीवन जीना चाहिए – सभी के प्रति प्रेम और आज्ञाकारिता।

7. सभी सांसारिक चीजों और शारीरिक आराम से घृणा करो, क्योंकि उन्होंने तुम्हें ईश्वर का शत्रु बना दिया है। पर जैसे कोई मनुष्य, शत्रु होने पर, उससे युद्ध करता है, वैसे ही हमें भी देह के विरुद्ध युद्ध करना चाहिए, ताकि उसे विश्राम न मिले।

8. एक भाई ने पूछा कि '*तेरा नाम पवित्र हो*' शब्दों का क्या अर्थ है। वृद्ध ने उत्तर दिया: यह सिद्ध लोगों के लिए उपयुक्त है, क्योंकि जब तक हम वासनाओं के अधीन हैं, तब तक हमारे भीतर परमेश्वर के नाम का पवित्र होना असंभव है।

९. उन्होंने फिर कहा: 'बोलने से चुप रहना बेहतर है; क्योंकि मौन एकत्र करता है, जबकि बकबक बिखेर देता है।'

10. अहंकार पर विजय प्राप्त करना एक महान कार्य है। जो इस कपटी जुनून में पड़ जाता है, वह करुणा से अपरिचित हो जाता है, सभी के प्रति कठोर-हृदय हो जाता है, और अंततःघमंड और दंभ में पड़ जाता है - यह परम बुराई है, विनाश की जननी है। तब, अपने मामलों को अपने तक ही सीमित रखें, और इस हृदय की बीमारी का ध्यान रखें, कहीं ऐसा न हो कि मनुष्यों को प्रसन्न करने के लिए, आप अपने संयम का पुरस्कार खो दें। क्योंकि जो कोई भी दूसरों को दिखाने के लिए कुछ करता है, वह स्वयं को अपने पुरस्कार से वंचित कर लेता है, जैसा कि प्रभु ने कहा है।

11. जो कोई मनुष्यों से सम्मानित होना चाहता है, वह ईर्ष्या से मुक्त नहीं हो सकता, और जो कोई ईर्ष्या पालता है, वह नम्रता प्राप्त नहीं कर सकता। ऐसा व्यक्ति अपनी आत्मा को अपने शत्रुओं के हाथ सौंप देता है, और वे उसे अनेक पापों में ले जाकर नष्ट कर देते हैं। अतःव्यर्थ की महिमा से भागो, और आने वाले युग में तुम परमेश्वर की महिमा के योग्य माने जाओगे।

12. यदि आपके मन में अपने पड़ोसी को किसी भी अपराध के लिए दोषी ठहराने का विचार आता है, तो अपने भीतर इस बात पर विचार करें कि आपने उससे अधिक पाप किया है; और जहाँ तक उस भलाई का सवाल है जो आप

---

[33] इसे 'दोस्तोवेर्नाया स्काज़ानिया' में शामिल लोगों के लिए एक पूरक के रूप में दिया गया है।
[34] संत दमास्कस द्वारा उद्धृत। Patr. graec., खंड 40, पृ. 1212.
[35] अल्फाबेटिकल पैटेरिकॉन से लिया गया।

कर रहे प्रतीत होते हैं, इस बात पर विश्वास न करें कि वह परमेश्वर को प्रसन्न करती है, और अपने ईमानदार भाई को दोष न दें। आत्म-नम्रता ही आंतरिक शांति का स्थान है।

13. अबा इसैया ने एक बार एक भाई को एक लज्जास्पद पाप करते देखा, तो उन्होंने उसे डांटा नहीं, बल्कि कहा: 'यदि परमेश्वर, जिसने उसे बनाया है, यह देखकर उसे नष्ट नहीं करते, तो मैं कौन हूँ जो उसे डांटूँ?'

14. उन्होंने यह भी कहा: 'हम उसको याद करें जिसके पास अपना सिर रखने के लिए कोई जगह नहीं थी।' हे मनुष्य, इसे समझो, और बुद्धिमान होने का ढोंग मत करो। वही है—और वह तुम्हारे लिए क्या बन गया है? सभी का प्रभु एक अजनबी है और उसका कोई घर नहीं है। हे प्रभु! मानव जाति के लिए तेरा प्रेम कितना अनुपम और महान है! मेरे लिए आपने कितनी बड़ी विनम्रता दिखाई? परन्तु यदि वही, जिसने अपनी वाणी से सब कुछ बनाया, जिसके सिर रखने को कोई ठिकाना नहीं, तो हे दुष्ट मनुष्य, तू व्यर्थता पर इतना क्यों टिका रहता है? अतृप्ति से तेरी आँखें क्यों अंधी हो गई हैं?

१५. जिसने नम्रता प्राप्त की है, वह अपने भाई का दोष अपने ऊपर ले लेता है, यह कहते हुए, 'मैंने पाप किया है।' जो अपने आप को बुद्धिमान समझता है, वह अपने भाई को तुच्छ समझता है और उसे डाँटता है, परन्तु जो अपना आप नीचा करता है, वह कभी अपने भाई को डाँटेगा नहीं।

१६. बुद्धिमानी बोलने में नहीं, बल्कि सही समय पर बोलने में है। बुद्धिमानी से चुप रहो, और बुद्धिमानी से बोलो। बोलना शुरू करने से पहले, यह विचार करो कि क्या कहना है, ताकि तुम एक उपयुक्त उत्तर दे सको। अपने ज्ञान का घमंड न करो। जो कहता है, 'मैं कुछ नहीं जानता,' वह किसी और से अधिक जानता है। ज्ञान का मुकुट स्वयं की निंदा करना और स्वयं को सभी से नीचा रखना है।

17. व्यर्थ की बकवास पाँच कारणों से होती है: फालतू बातें, अहंकार, अत्यधिक नींद, दिखावा, और अधिक खाने से। यदि आप तुच्छ झगड़ों से बचना चाहते हैं, तो इन व्यर्थ के जुनूनों के आगे न झुकें, बल्कि व्यर्थ की बातों के बजाय भजन-गायन से स्वयं को सुसज्जित करें; घमंड के बजाय मसीह की नम्रता से प्रेम करें; अत्यधिक सोने के बजाय सतर्कता से अपनी रक्षा करें; अच्छे कपड़ों के बजाय फटे-पुराने कपड़े पहनें; अत्यधिक खाने के बजाय संयम और उपवास से स्वयं को बाँधें। क्योंकि वासनाएँ, एक श्रृंखला की कड़ियों की तरह, एक-दूसरे से चिपकी रहती हैं।

18. एक धनी व्यक्ति जो इस बात को समझता है, वह अपने खजाने को अपने घर के भीतर छिपाता है, क्योंकि खुलेआम दिखाया गया खजाना ईर्ष्या को जन्म देता है और शासक से बदनामी को आमंत्रित करता है। इसी प्रकार एक सदाचारी फिर भी विनम्र भिक्षु अपने गुणों को छिपाता है, ठीक वैसे ही जैसे वह धनी व्यक्ति अपने खजाने को छिपाता है। ऐसा भिक्षु अपनी इच्छाओं के अनुसार नहीं चलता, बल्कि लगातार स्वयं की निंदा करता है और गुप्त शिक्षा में स्वयं को निर्देशित करता है, जैसा कि धर्मग्रंथ के शब्दों में कहा गया है: *'मेरे भीतर मेरा हृदय जलता है, और मेरी मनन में आग भड़कती है'* (भजन संहिता 38:4)। यह किस प्रकार की आग *है?* धर्मग्रंथ के उन वचनों को सुनो जो कहते हैं: *'हमारा परमेश्वर भस्म कर देने वाली आग है'* (इब्रानियों 12:29)। जैसे आग की उपस्थिति में मोम पिघल जाता है और घृणित अशुद्धियों का कीचड़ सूख जाता है, वैसे ही गुप्त शिक्षा द्वारा घृणित विचार सूख जाते हैं, आत्मा के जुनून मुरझा जाते हैं, मन प्रबुद्ध हो जाता है, विचार स्पष्ट हो जाता है, और हृदय आनंद से भर जाता है। गुप्त शिक्षा राक्षसों पर प्रहार करती है और बुरे विचारों को दूर भगाती है, क्योंकि यह आंतरिक मनुष्य को प्रबुद्ध करती है। जो कोई भी स्वयं को गुप्त शिक्षा से लैस करता है, वह परमेश्वर द्वारा सुदृढ़ किया जाता है, स्वर्गदूतों से शक्ति प्राप्त करता है, और मनुष्यों में सम्मानित होता है। गुप्त शिक्षा और पठन आत्मा का घर हैं, जिसमें कोई प्रवेश नहीं कर सकता; वे एक अटूट स्तंभ, एक शांत और सौम्य आश्रय हैं, जिसमें आत्मा निस्संदेह उद्धार पाएगी। जब कोई भिक्षु गुप्त शिक्षा से, अर्थात् 'हे प्रभु यीशु मसीह, परमेश्वर के पुत्र, मुझ पर दया करो' की प्रार्थना से, और पवित्र धर्मग्रंथों के एकांत अध्ययन से स्वयं को सुसज्जित करता है, तो दुष्टात्माएँ बहुत व्याकुल हो जाती हैं और बड़बड़ाने लगती हैं। यह गुप्त शिक्षा मन का दर्पण और अंतरात्मा का दीपक है। गुप्त शिक्षा कामवासना को सुखा देती है, क्रोध को वश में करती है, रोष को दूर करती है, अहंकार को मिटाती है, व्यर्थता की भावना (निराशाजनक अनुभूति) को दूर करती है, और हताशा को बुझा देती है। गुप्त शिक्षा सर्वोच्च मन को प्रबुद्ध करती है, सुस्ती को दूर करती है, कोमलता को जन्म देती है, ईश्वर का भय उत्पन्न करती है, और आँसू लाती है। गुप्त शिक्षा भिक्षु को सहज विनम्रता, एक भक्तिपूर्ण जागरण, और निर्बाध प्रार्थना प्रदान करती है। यह प्रार्थना का खजाना है, जो अनुचित विचारों को दूर करता है, राक्षसों को मार गिराता है, और शरीर को शुद्ध करता है। गुप्त शिक्षा धैर्य सिखाती है, संयम का भागीदार बनाती है, और गेहेना (नरक) की घोषणा करती है। गुप्त शिक्षा मन को व्यर्थ विचारों से मुक्त रखती है, और उसे केवल मृत्यु के बारे में सोचने के लिए निर्देशित करती है। यह गुप्त शिक्षा हर अच्छे कर्म से परिपूर्ण और हर सद्गुण से सुसज्जित है, और हर बुरे कर्म से बहुत दूर है: यह ऐसी चीजों के पास भी नहीं जाती।

४. मन के संरक्षण पर: २७ अध्याय[36]

1. वासनाओं के प्रति क्रोध मन की प्रकृति में अंतर्निहित है। क्रोध के बिना किसी व्यक्ति में पवित्रता नहीं हो सकती – अर्थात्, जब तक वह शत्रु द्वारा उसमें डाली गई हर चीज़ पर क्रोधित नहीं होता। जो व्यक्ति मन के इस स्वाभाविक क्रोध को प्राप्त करना चाहता है, उसे अपनी सभी इच्छाओं को त्याग देना चाहिए, जब तक कि वह स्वयं को एक ऐसे अवस्था में न स्थापित कर ले जो मन की विशेषता वाली हो (एक तर्कसंगत, आध्यात्मिक अवस्था जिसमें आत्मा और शरीर पूरी तरह से आत्मा के अधीन हों)।

२. यदि, शत्रु का सामना करते समय, आप देखें कि उसकी भीड़, कमजोर पड़कर, आपसे भाग रही है, तो इस पर आपका हृदय प्रसन्न न हो, क्योंकि इन शत्रुओं ने आपके लिए उनके पीछे एक चालाक घात लगा रखा है। और वहीं वे आपके विरुद्ध सबसे क्रूर हमला तैयार कर रहे हैं। जब वे तुम पर चढ़ आए, तो उन्होंने अपनी सेना का एक बड़ा हिस्सा शहर के बाहर घात में छोड़ दिया, और उन्हें हिलने-डुलने की मनाही कर दी। और इस प्रकार, जब तुमने उनका सामना किया और उनके विरुद्ध चढ़ाई की, तो वे तुम्हारी उपस्थिति से इस प्रकार भाग गए, मानो शक्तिहीन हो गए हों; लेकिन यदि तुम्हारा हृदय इस बात से गर्वित हो जाता है कि तुमने उन्हें भगा दिया, और इस प्रकार आप शहर छोड़ देते हैं, तो जो लोग घात में पीछे रह गए थे वे उठ खड़े होंगे, और जो आपके सामने भाग रहे थे वे रुक जाएँगे – और वे आपकी बेचारा आत्मा को चारों ओर से घेर लेंगे, ताकि उसके पास कोई शरण न बचे। शहर प्रार्थना है; शत्रुओं के विरुद्ध खड़ा होना मसीह यीशु में विचारों का संघर्ष है; और उनके विरुद्ध उठना क्रोध है।

3. इसलिये हे प्रियो, हम परमेश्वर के भय में चलें, और सदाचार के मार्ग पर टले रहें; और अपने अंतकरण को दोष न दें, परन्तु परमेश्वर के भय में अपना ध्यान रखें, जब तक कि वह भी हमारे संग मुक्त न हो जाए, ताकि हम और वह एक हो जाएँ, और यह अंततःहमारा रक्षक बन सकता है, जो हमें वह सब दिखाता है जो हमें ठोकर खाने का कारण बन सकता है। लेकिन यदि हम इसकी बात नहीं मानते, तो यह हमसे मुंह मोड़ लेगा और हमें छोड़ देगा। तब हम अपने शत्रुओं के हाथ में पड़ जाएँगे, जो हमें कभी जाने नहीं देंगे, जैसा कि हमारे प्रभु ने हमें सिखाया, कहते हुए: *'जब तुम अपने विरोधी के साथ रास्ते में हो*, तो *उसके साथ जल्दी निपटारा कर लो*', इत्यादि (मत्ती 5:25)। कहा जाता है कि यह विरोधी अंतरात्मा है, क्योंकि यह उस व्यक्ति का विरोध करती है जो देह की इच्छाओं का पालन करना चाहता है। यदि वह इसकी बात नहीं सुनता, तो यह उसे उसके शत्रुओं के हाथों में सौंप देगी।

४. जब परमेश्वर देखते हैं कि मन ने अपनी पूरी शक्ति से उनके प्रति समर्पण कर दिया है और केवल उन्हीं से सहायता की आशा रखता है, तो वह उसे बल देते हुए कहते हैं: *'डरो मत, क्योंकि मैंने तुम्हें छुड़ा लिया है, और मैंने तुम्हें अपने नाम से बुलाया है: तुम मेरे हो। और यद्यपि तुम जल से गुज़रोगे, तो मैं तुम्हारे साथ रहूँगा; और नदियाँ तुम्हें डुबा न देंगी; और यद्यपि तुम आग में चलोगे, तो तुम न जलोगे, और न आग की लौ तुम्हें जलाएगी। क्योंकि मैं यहोवा तुम्हारा परमेश्वर, इस्राएल का पवित्र हूँ, जो तुम्हें बचाता है'* (यशायाह 43:1–3)।

5. जब मन ऐसी प्रोत्साहन सुनता है, तो वह साहसपूर्वक अपने शत्रुओं की ओर मुड़ता है और कहता है: 'जो मुझ से लड़ना चाहे, वह मेरे विरुद्ध खड़ा हो जाए! और जो मुझ से वाद-विवाद करना चाहे, वह मेरे समीप आए! देखो, यहोवा मेरा सहायक है; मुझे कौन हानि पहुँचा सकता है? देखो, तुम सब तिलचट्टों द्वारा खाए हुए वस्त्र के समान घिस जाओगे।'

6. यदि आपका हृदय पाप से पूर्णतःघृणा करने लगा है, उसे जीतने का प्रयास कर रहा है, और पाप को जन्म देने वाली सभी चीज़ों से मुँह मोड़कर, अपने नेत्रों के सामने अनंतकाल की पीड़ा को रख चुका है, तो जान लीजिए कि आपका सहायक आपके साथ वास करता है – और आप, उसे किसी भी प्रकार से दुखी किए बिना, परन्तु उसके साम्हने रोते हुए कहिए, अपने हृदय की सुनते हुए: 'हे प्रभु, आपकी दया मुझे बचाए, क्योंकि मैं आपकी सहायता के बिना शत्रु के हाथों से बच निकलने के लिए पर्याप्त शक्तिशाली नहीं हूँ!' और वह तुम्हें हर बुराई से बचाएगा।

७. एक भिक्षु को अपनी आत्मा के सभी द्वार, अर्थात् अपनी इंद्रियों को बंद कर देना चाहिए, कहीं वह उनके द्वारा लुढ़क न जाए। जब इस प्रकार, मन देखता है कि कोई भी चीज़ उस पर अधिकार करने के लिए प्रवेश नहीं कर रही है, तो वह अपनी सभी इंद्रियों को एक साथ इकट्ठा करके और उन्हें एक शरीर बनाकर अमरत्व के लिए तैयारी करता है। (विचार: इंद्रियों के माध्यम से बाहरी दुनिया से विचलित हुए बिना मन भीतर की ओर केंद्रित होता है और उस युग में पहुँच जाता है। यह संत बेसिल द ग्रेट का भी एक विचार है)।

---

[36] डोबरोटोल के ग्रीक, पृ. 33 से।

8. जब मन किसी भी दृश्यमान और सांसारिक चीज़ की सभी आशाओं से मुक्त हो जाता है, तो यह इस बात का संकेत है कि आपके भीतर पाप मर गया है।

९. जब मन वासनाओं से मुक्त हो जाता है, तो उसके और ईश्वर के बीच जो बाधा खड़ी थी, वह दूर हो जाती है।

10. जब मन अपने सभी शत्रुओं से मुक्त हो जाता है और विश्राम करता है, तो वह एक अन्य, नए युग में होता है, जो नए और अमर को निहारता है / *'क्योंकि जहाँ शव होगा, वहाँ गिद्ध इकट्ठे होंगे'* (मत्ती 24:28)।

11. कभी-कभी दुष्टात्मा चालाकी से घात लगाकर बैठते हैं, यह देखने के लिए कि क्या कोई व्यक्ति (संघर्ष से) पहले ही विश्राम कर लेने की सोचकर अपने हृदय को पूरी तरह से आज़ाद कर देगा। (यदि ऐसा होता है), तो वे अचानक उस बेचारी आत्मा पर झपट पड़ते हैं और उसे एक छोटे पक्षी की तरह पकड़ लेते हैं। और यदि वे उस पर हावी हो जाते हैं, तो वे उसे पहले की प्रार्थना की गई पापों से भी बदतर, हर तरह के पापों से निर्दयतापूर्वक अपमानित करते हैं। इसलिए हमें परमेश्वर के भय में निरंतर बने रहना चाहिए और अपने हृदयों की दृढ़ता से रक्षा करनी चाहिए, अपने तपस्या-कार्यों को अटूट लगन से करना चाहिए और उन सद्गुणों (एक बुद्धिमानी भरा और हार्दिक स्वभाव) को बनाए रखना चाहिए जो हमारे शत्रुओं की दुर्भावना के विरुद्ध एक बाधा के रूप में कार्य करते हैं।

12. हमारे शिक्षक, यीशु मसीह ने, हमारे शत्रुओं की अत्यंत निर्दयता को जानते हुए और मानव जाति पर दया करके, यह आज्ञा दी कि हमें अपने हृदयों की रक्षा कितनी कठोरता से करनी चाहिए, यह कहते हुए: 'हर समय तैयार रहो, क्योंकि तुम नहीं जानते कि चोर किस घड़ी आएगा, ताकि जब वह आए, तो वह तुम्हें सोया हुआ न पाए' (मत्ती 24, 43 आदि)। और फिर: *'अपने विषय में सावधान रहो, कहीं ऐसा न हो कि तुम्हारे हृदय भोग-विलास, मद्यपान और इस जीवन की चिन्ताओं से भारी हो जाएँ, और वह दिन अचानक तुम पर आ पड़े'* (लूका 21:34)। इसलिए अपने हृदय पर निगरानी रखो, अपनी भावनाओं पर ध्यान दो। और यदि परमेश्वर का स्मरण तुम्हारे साथ है, तो तुम आसानी से उन शत्रुओं को पकड़ लोगे जो उसे चुराने के लिए चुपके से आ रहे हैं। क्योंकि जो अपने विचारों पर कड़ी निगरानी रखता है, वह तुरंत उन लोगों को पहचान लेगा जो उसमें प्रवेश करके उसे कलंकित करना चाहते हैं। वे मन को भ्रमित करते हैं ताकि वह विचलित हो जाए और निष्क्रिय हो जाए (अपने काम में पिछड़ जाए)। लेकिन जो उनकी चालाकी को पहचानते हैं, वे स्वयं को अडिग रखते हैं, और प्रभु से प्रार्थना करते हैं।

13. जब तक कोई व्यक्ति इस संसार में होने वाली हर चीज़ से घृणा नहीं करता, वह परमेश्वर की उचित रूप से सेवा और पूजा नहीं कर सकता। क्योंकि परमेश्वर की सेवा क्या है, यदि प्रार्थना करते समय मन में कुछ भी विदेशी (अन्य) न हो, न परमेश्वर का आशीर्वाद देते समय कामुक आनंद, न उनकी स्तुति करते समय क्रोध, न उनकी महिमा करते समय घृणा, और न उनके सामने बैठकर उनका स्मरण करते समय द्वेषपूर्ण उत्साह या ईर्ष्या? क्योंकि ये सभी अंधकारमय चीजें उस बेचारे आत्मा के चारों ओर एक दीवार बनाती हैं, और जब तक वह उन्हें अपने भीतर आश्रय देती है, तब तक वह परमेश्वर की शुद्ध सेवा नहीं कर सकती। क्योंकि वे उसे हवा में लटकाए रखते हैं और उसे परमेश्वर से मिलने (स्पष्ट मन से उनके सामने खड़े होने), चुपके से उनका धन्यवाद करने और एक मीठे हृदय से उनसे प्रार्थना करने से रोकते हैं, ताकि वह उनसे प्रबुद्ध हो सके। मन हमेशा मग्ध रहता है और ईश्वर के अनुसार जीवन में फल-फूल नहीं सकता, ठीक इसलिए क्योंकि वह बुद्धिमानी से इन सबको काट डालने का ध्यान नहीं रखता।

14. जब मन आत्मा की शक्तियों को कामुक इच्छाओं से मुक्त करने और उन्हें (एक नाव की तरह उन्हें पार ले जाकर) निर्लिप्तता की ओर ले जाने, और स्वयं आत्मा को कामुक इच्छाओं से अलग करने के लिए उत्सुक होता है, तब, यदि निर्लज्ज वासनाएँ आत्मा पर टूट पड़ती हैं, उसकी शक्तियों को अपने कब्ज़े में ले लेती हैं और उन्हें पाप की ओर खींचती हैं, और मन गुप्त रूप से निरंतर ईश्वर से पुकारने लगता है, तो ईश्वर यह देखकर अपनी सहायता भेजेंगे और उन्हें क्षण भर में दूर भगा देंगे।

१५. मैं तुझसे विनती करता हूँ, जब तक तू शरीर में है, अपने हृदय को ढीला न होने दे। क्योंकि जैसे एक किसान अपने खेत में उग रहे किसी भी अनाज पर भरोसा नहीं कर सकता, क्योंकि वह नहीं जानता कि उसे अपने कोठारों में लाने से पहले उसका क्या होगा, वैसे ही एक मनुष्य को तब तक अपने दिल को ढीला नहीं छोड़ना चाहिए जब तक उसमें सांसें हैं (अय्यूब 27:3)। वह नहीं जानता कि उसकी अंतिम साँस तक उस पर क्या-क्या कष्ट आएँगे; इसलिए, जब तक उसमें साँस है, उसे अपने दिल को कमजोर नहीं होने देना चाहिए। परन्तु उसे हमेशा परमेश्वर से उनकी सहायता और दया के लिए पुकारना चाहिए।

16. जो युद्ध के बीच में सहायता नहीं पाता, वह शांति पर भी भरोसा नहीं कर सकता।

17. जब कोई बुराई से मुंह मोड़ लेता है, तभी वह परमेश्वर के सामने अपने द्वारा किए गए सभी पापों को सचमुच पहचान पाता है: क्योंकि कोई आमतौर पर अपने पापों को तब तक नहीं देख पाता जब तक कि वह उनसे कड़वे पश्चाताप (अर्थात् हृदय के खेद और शोक के साथ) के साथ मुंह न मोड़े। जो इस स्तर तक पहुँच गए हैं, वे रोते हैं, अपनी प्रार्थनाएँ

बढ़ाते हैं, और अपने अश्लील भावों के साथ अपने अनौचित्यिपूर्ण संबंध को याद करके परमेश्वर के सामने लज्जित होते हैं। अतः भाइयों, हमें अपनी पूरी क्षमता से प्रयास करना चाहिए, और परमेश्वर अपनी प्रचुर दया से हमारी सहायता करेंगे। यदि हमने अपने हृदयों को, जैसे हमारे पूर्वजों ने किया था, सुरक्षित नहीं रखा है, तो कम से कम हम अपने शरीरों को पाप रहित रखने का प्रयास करें, जैसा कि परमेश्वर चाहता है। और हमें विश्वास करना चाहिए कि इस अकाल के समय में जो हम पर आया है, वह हम पर भी दया करेगा, जैसे वह अपने संतों पर करता है।

18. जिसने सच्ची भक्ति में परमेश्वर की खोज के लिए अपना हृदय समर्पित किया है, वह तुरंत यह निष्कर्ष नहीं निकाल सकता कि उसकी मेहनत परमेश्वर को भाती है। जब तक उसका विवेक उसे किसी भी असामान्य बात का दोषी ठहराता है, तब तक वह स्वतंत्र नहीं है। क्योंकि जहाँ एक अभियोजक है, वहाँ एक न्यायाधीश भी है; और जहाँ न्याय है, वहाँ स्वतंत्रता नहीं है। इस प्रकार, जब प्रार्थना करते समय, आप देखते हैं कि कुछ भी आपको बुराई का दोषी नहीं ठहराता है, तो कहा जा सकता है कि आप स्वतंत्र हैं और उसकी इच्छा से उसकी पवित्र विश्राम में प्रवेश कर गए हैं। जब आप देखते हैं कि अच्छे फल ने जड़ें जमा ली हैं और अब दुश्मन की खरपतवारों से दब नहीं रहा है, कि वे योद्धा जो अपनी ही चालाकी पर निर्भर थे, हालाँकि अपनी इच्छा से नहीं, परन्तु वे पीछे हट गए हैं ताकि अब वे आपके प्रेम के विरुद्ध युद्ध न करें; कि एक बादल ने आपके तम्बू पर अपनी छाया डाली है, और दिन में सूरज आपको न जलाता है, न ही रात में चाँद; कि आपके भीतर अब तम्बू के लिए सब कुछ तैयार है, उसे परमेश्वर की इच्छा के अनुसार खड़ा करने और उसकी रक्षा करने के लिए—तब जानिए कि आपने परमेश्वर की शक्ति के द्वारा विजय प्राप्त की है। तब, अंततः वह स्वयं अपनी छाया उस तम्बू पर डालेंगे, क्योंकि वह उनका है। लेकिन जब लड़ाई चल रही होती है, तो एक व्यक्ति भय और आतंक में रहता है, यह सोचते हुए कि क्या वह आज विजय प्राप्त करेगा या पराजित होगा, और क्या कल वह पराजित होगा या विजय प्राप्त करेगा। संघर्ष हृदय पर भारी पड़ता है, लेकिन निर्लिप्तता विवाद से मुक्त है: क्योंकि उसने पहले ही अपना हक पा लिया है और मनुष्य के उन तीन भागों की परवाह करना बंद कर दिया है जो कभी विभाजित थे, क्योंकि उन्होंने परमेश्वर में आपसी सुलह कर ली है। ये तीन भाग हैं: आत्मा, शरीर और पवित्र आत्मा। जब पवित्र आत्मा की क्रिया द्वारा वे एक हो जाते हैं, तो वे अब अलग नहीं किए जा सकते। यह मत सोचो कि तुम पाप से मर गए हो जबकि तुम अभी भी दुश्मनों द्वारा घिरे हुए हो, चाहे जागते हुए हो या सोते समय। जब तक वह दीन मनुष्य अभी भी दौड़ लगा रहा है, उसमें कोई धैर्य नहीं है।

19. यदि मन प्रेरित हो और शरीर की कामनाओं को बुझाने वाले प्रेम का अनुसरण करने के लिए तत्परता से संकल्प ले, और अपनी शक्ति से हृदय पर किसी भी अस्वाभाविक (कामनाओं, पाप) को हावी होने न दे, तो, इस प्रकार अस्वाभाविक का विरोध करके, वह अंततः उसको प्राप्त कर लेता है जो उसे स्वाभाविक से पूरी तरह से अलग कर देता है।

20. हे भाई, प्रतिदिन अपनी जाँच करो, और परमेश्वर के सामने अपने हृदय में झाँककर, यदि तुझे उसमें कोई वासनापूर्ण वस्तु मिले, तो उसे अपने हृदय से काट डाल, कहीं ऐसा न हो कि तुझ पर (शुद्ध होने से पहले) एक भयानक भाग्य आ पड़े।

21. अपने हृदय पर ध्यान दो, हे भाई, और अपने शत्रुओं पर चौकसी से पहरा दो: क्योंकि वे अपनी दुष्टता में चालाक हैं। अपने हृदय में इस सत्य पर पूरी तरह से दृढ़ विश्वास रखो कि किसी ऐसे व्यक्ति के साथ अच्छा व्यवहार नहीं करना चाहिए जो बुराई करता है (बुराई से प्रेम करता है)। इसीलिए उद्धारकर्ता हमें चौकस रहने की शिक्षा देते हैं, यह कहते हुए, *'जीवन का द्वार संकरा है और मार्ग कठिन है, और जो लोग उसे पाते हैं, वे थोड़े हैं'* (मत्ती 7:14)।

22. सावधान रहो कि कोई भी विनाशकारी चीज़ तुम्हें परमेश्वर के प्रेम से दूर न कर दे; अपने हृदय की रक्षा करो और हतोत्साहित न हो जाओ, यह कहते हुए: 'मैं इसे कैसे सुरक्षित रख सकता हूँ, मैं जो एक पापी हूँ?' क्योंकि जब कोई व्यक्ति अपने पापों को त्याग देता है और परमेश्वर की ओर मुड़ता है, तो उसका पश्चाताप उसे नवीनीकृत करता है और उसे पूरी तरह से नया बना देता है।

२३. दिव्य शास्त्र, पुराना और नया नियम दोनों, पूरे समय हृदय की रक्षा करने की बात करता है। एक भिक्षु को शास्त्र का उद्देश्य समझना चाहिए: यह किससे बात करता है, यह क्या कहता है, और किस उद्देश्य के लिए। उसे तपस्या के श्रम में भी लगातार दृढ़ता रखनी चाहिए और, विरोधी की चालाकियों पर ध्यान देते हुए, एक कुशल नाविक की तरह, अनुग्रह से निर्देशित होकर, मन की लहरों में नौका चलाने में सक्षम होना चाहिए, ताकि इस प्रकार, मार्ग से भटकने के बिना, केवल अपने आप पर ध्यान केंद्रित करते हुए, वह बिना विचलित मन या जिज्ञासु बुद्धि के, मौन में ईश्वर से संवाद कर सके।

२४. समय की मांग है कि हम प्रार्थना करें, ठीक वैसे ही जैसे एक नाविक को हवाओं, उथल-पुथल और तूफानों से जूझना पड़ता है। हम अच्छे और बुरे दोनों तरह के विचारों को पालने में सक्षम हैं। एक धार्मिक और ईश्वर-प्रेमी

विचार को—और वास्तव में वह है— , यानी वासनाओं का स्वामी। हम, मौन रहने वालों को, सावधानी और गंभीरता से सद्गुणों और दुर्गुणों के बीच अंतर करना और उन्हें वर्गीकृत करना चाहिए: भाइयों और संतों की उपस्थिति में किसि सद्गुण को बनाए रखना है, और जब हम अकेले हों तो किसका अभ्यास करना है; और कौन सा सद्गुण पहला है, कौन सा दूसरा और कौन सा तीसरा है; साथ ही यह भी कि कौन-सा भाव आध्यात्मिक है और कौन-सा देहिक, और कौन-सी सद्गुण आध्यात्मिक है और कौन-सी देहिक; इसके अलावा, किसि सद्गुण के कारण अहंकार मन पर आक्रमण करता है, किसके कारण व्यर्थता जड़ जमाती है, किसके कारण क्रोध उत्पन्न होता है, और किसके कारण लोभ हावी हो जाता है। क्योंकि हमें *'परमेश्वर के ज्ञान के विरुद्ध उठने वाली हर एक तर्क-वितर्क और हर एक ऊँची चीज़ को गिरा देना* चाहिए' (2 कुरिन्थियों 10:5)।

२५. पहली सद्गुण वैराग्य है, अर्थात् प्रत्येक व्यक्ति और प्रत्येक कर्म का त्याग; इससे परमेश्वर के लिए एक वांछनीय लालसा उत्पन्न होती है, और यह स्वाभाविक रूप से क्रोध को जन्म देती है, जो शत्रु द्वारा उत्पन्न की गई हर चीज़ के विरुद्ध विद्रोह करता है। तब परमेश्वर का भय मनुष्य के भीतर एक निवास स्थान पाता है, और इस भय के कार्य द्वारा, प्रेम बाद में प्रकट होता है।

26. प्रार्थना के दौरान, मनुष्य को भक्तिपूर्ण विरोधी-विचारों के माध्यम से भटकते विचारों को हृदय से दूर करना चाहिए, कहीं ऐसा न हो कि हम अपने होठों से तो ईश्वर से प्रार्थना कर रहे हों, परन्तु अपने हृदय में अनुचित विचारों को पाल रहे हों। ईश्वर मौन व्यक्ति से ऐसी प्रार्थना स्वीकार नहीं करते जो विचारों में भटकती हो और लापरवाह हो। और धर्मग्रंथ हमें हर जगह आत्मा के भावों की रक्षा करने की आज्ञा देते हैं। यदि संन्यासी की इच्छा ईश्वर के विधान के अधीन हो जाती है, और मन अपने विषयों पर शासन करना शुरू कर देता है—अर्थात्, आत्मा की सभी भावनाओं, विशेष रूप से क्रोध और कामवासना को, क्योंकि वे मन के अधीन हैं – तो हमारे भीतर सद्गुण सिद्ध होता है और धार्मिकता पूरी होती है; हमारी इच्छा ईश्वर और उनकी इच्छा की ओर निर्देशित होती है, और हमारा क्रोध शैतान और पाप के विरुद्ध निर्देशित होता है। और क्या चाहिए? – गुप्त शिक्षा।

27. जब तुम अपनी कोठरी में बैठे हो, और तुम्हारे हृदय में लज्जा की जड़ें जम जाती हैं, तो बुराई का विरोध करने का ध्यान रखना, कहीं ऐसा न हो कि वह तुम पर हावी हो जाए: ईश्वर को याद करने का प्रयास करो, कि वह तुम्हें सुन रहा है, और जो कुछ भी तुम्हारा हृदय सोचता है, वह सब उसके सामने उजागर है। अपनी आत्मा से कहो: यदि तुम अपने जैसे पापियों से डरते हो कि वे तुम्हारे पाप देख न लें, तो क्या तुम्हें उस ईश्वर से और भी अधिक नहीं डरना चाहिए, जो सब कुछ सुनता है? इस उपदेश से, परमेश्वर का भय आपकी आत्मा में प्रकट होगा, और यदि आप इसमें बने रहते हैं, तो आप वासनाओं से अडिग रहेंगे (वासनाएँ आपको बहका नहीं पाएँगी), जैसा कि लिखा है: *'जो यहोवा पर भरोसा रखते हैं वे सियोन पर्वत के समान हैं, जो हिलता नहीं, परन्तु यरूशलेम में सदा बना रहता है*' (भजन संहिता 124:1)। और आप जो भी कर्म करें, इस बात को ध्यान में रखें कि परमेश्वर आपके हर विचार को देखता है, और आप कभी पाप नहीं करेंगे। उसकी महिमा युगानुयुग होती रहे। आमीन।

५. तपस्या और मौन पर अध्याय[37]

1. तीन सद्गुण मन के सदा-मौजूद रक्षक हैं: इसकी स्वाभाविक प्रवृत्ति, साहस और आलस्य का अभाव।

2. तीन गुण हैं जो, जब मन उन्हें अपने भीतर अनुभव करता है, तो उसे यह आश्वासन देते हैं कि उसने अमरत्व प्राप्त कर लिया है: *'विवेक'*, जो एक भाव को दूसरे से सूक्ष्मता से अलग करता है; *'पूर्वदृष्टि'*, जो समय से पहले सभी चीजों को देखता है; और किसी भी बाहरी विचार के प्रति *'अनुरूपता* न करना'।

3. तीन गुण हैं जो हमेशा मन में प्रकाश लाते हैं: किसी के प्रति द्वेष न रखना, जो कुछ भी हो उसे बिना कष्ट के सहना, और जो बुरा करते हैं उनके प्रति दया दिखाना। ये तीन गुण तीन अन्य गुणों को जन्म देते हैं जो उनसे श्रेष्ठ हैं: किसी के प्रति द्वेष न रखने से प्रेम उत्पन्न होता है; जो कुछ भी हो उसे बिना कष्ट के सहने से नम्रता आती है; और जो बुरा करते हैं उनके प्रति दया दिखाने से शांति मिलती है।

4. चार गुण हैं जो आत्मा को शुद्ध करते हैं: मौन, आज्ञापालन, आत्म-त्याग और विनम्रता।

५. अबा इसाइया ने कहा: 'मैं खुद को एक ऐसे भटकते घोड़े के रूप में मानता हूँ जिसका कोई मालिक नहीं है: जो भी उसे पाता है, वह उस पर सवार हो जाता है; और जब कोई उसे जाने देता है, तो कोई और उसे ले लेता है और उसी तरह उस पर सवार हो जाता है।'

---

[37] पैट्र. ग्रेक., खंड 40, शब्दों के बाद।

6. अपना ध्यान रखें, कहीं आप उस बात में आनंद न लें जसिमें आपने कभी पाप कयिा था, नहीं तो आपके पुराने पाप आपके भीतर फरि से जीवति हो उठेंगे। वनिम्रता से प्रेम करें, और यह आपको आपके पापों से ढाँक लेगी। अपने आध्यात्मकि पतिरों की आज्ञाकारतिा को अपना हृदय अर्पति करें, और ईश्वर की कृपा आपके भीतर वास करेगी। अपने आप को बुद्धमिान न समझो, कहीं तुम अपने शत्रुओं के हाथ न पड़ जाओ। अपनी जीभ को क्षमा मांगने का अभ्यस्त बनाओ, और वनिम्रता तुम पर आ जाएगी। अपनी कोठरी में बैठे-बैठे, स्वयं को तीन बातों के लिए समर्पति करो: शारीरकि श्रम, ईश्वर का चतिंन, और प्रार्थना। प्रतदिनि यह सोचो कि हम आज इस संसार में परशि्रम करने के लिए यहाँ हैं, परन्तु कल के वषिय में मुझे कुछ पता नहीं; और तुम परमेश्वर के साम्हने पाप नहीं करोगे।

७. खाने में लालची न बनो, कहीं ऐसा न हो कि तुम्हारे पुराने पाप तुम्हारे भीतर फरि से जीवति हो उठें। कसिी भी परशि्रम में हतोत्साहति न हों, अन्यथा आप शत्रु के हमलों का शकिार हो जाएँगे। स्वयं को गुप्त शक्षिा के लिए प्रेरति करें, और जल्द ही आपको परमेश्वर में वश्रिाम (परमेश्वर का शान्त)ि मलिेगा। स्वयं को लंबे समय तक रोते हुए प्रार्थना करने के लिए प्रेरति करें, और शायद परमेश्वर आप पर दया करेंगे और आपसे पुराने, पाप-प्रेमी मनुष्य को उतार देंगे।

८. परशि्रम, गरीबी, भटकना, कष्ट और मौन से वनिम्रता उत्पन्न होती है, और वनिम्रता के लिए सभी पाप क्षमा हो जाते हैं।

९. यदि वासना आपको सताती है, तो जाग-जाग कर, भूखे-प्यासे रहकर स्वयं को थका डालें, और सभी के सामने स्वयं को नम्र बनाएँ; यदि किसी की शारीरकि सुंदरता आपका हृदय आकर्षति करने लगे, या पत्नी की इच्छा हो, तो (कब्र में होने वाली) बदबू को याद करें – और शांत रहें।

10. हे भाई! जब तक तुम इस जीवन में हो, अपने शरीर को वश्रिाम मत दो, और जब तुम देखो कि वह वासनाओं से मुक्त है तो उस पर वशि्वास मत करो। क्योंकि दुष्टात्माएँ अक्सर समय की प्रतीक्षा में रहती हैं, और यदि कोई मनुष्य अपनी मुक्ति की परवाह करना बंद कर देता है, तो वे अचानक उस बेचारे आत्मा पर हमला कर देती हैं और उसे एक छोटे पक्षी की तरह पकड़ लेती हैं; और यदि वे उस पर काबू पा लेती हैं, तो वे उसे हर तरह के पाप से नर्दियतापूर्वक वश में कर लेती हैं। इसलिए आइए हम ईश्वर के भय में खड़े हों और अपना रक्षण करें, अपने कर्तव्यों का पालन करते रहें और उन सभी सद्गुणों का पालन करें जो हमारे शत्रुओं की दुष्टता के वरिुद्ध एक सुरक्षा कवच के रूप में कार्य करते हैं। इस संक्षप्ति समय के श्रम और संघर्ष न केवल हमें दुष्ट कर्मों से बचाते हैं, बल्कि शरीर से आत्मा के प्रस्थान से पहले आत्मा के लिए मुकुट भी तैयार करते हैं। इसलिए, पवति्र बपतस्मिा की मुहर धारण करने वालों के रूप में, हम अपने पापों से मुँह मोड़ें, ताकि हमें न्याय के दनि दया मलिे। प्रयिजनो, हम प्रयास करें: क्योंकि समय नकिट है। धन्य है वह जो दनि-रात इस चतिंा में रहता है।

11. यदि आपका हृदय उथल-पुथल में है और आप नहीं जानते कि इसे कैसे नयिंत्रति करें, तो जान लें कि आपका कोई कार्य ही इसे ऐसी उथल-पुथल में खींच रहा है, चाहे आपने ऐसा करने का इरादा कयिा हो या नहीं। यदि गदिोन ने पानी के घड़ों को तोड़ने का आदेश नहीं दयिा होता, तो दीयों की रोशनी नहीं दखिाई देती (न्यायियों 7:19 आद)ि: इसलिए, यदि कोई मनुष्य अपने शरीर का तरिस्कार नहीं करता है, तो वह दव्यि प्रकाश को नहीं देख पाएगा।

12. यद,ि एक दीवार वाले शहर में, दीवार का एक छोटा सा हसि्सा टूट गया हो, तो दुश्मन, यदि वे शहर में प्रवेश करना चाहते हैं, तो वे इस टूटे हुए हसि्से पर ही अपना सारा ध्यान केंद्रति करते हैं ताकि उसी से प्रवेश कर सकें। यद्यपि पहरेदार द्वारों पर खड़े रहते हैं, वे क्षतग्रिस्त हसि्से की मरम्मत न होने तक दुश्मनों का सामना नहीं कर सकते। इसलिए जब कोई भक्षिु कसिी भी वासना के वश में होता है, तो उसके लिए अपने दुश्मनों का सामना करना असंभव हो जाता है, और वह पूर्णता की अवस्था प्राप्त नहीं कर सकता।

आदरणीय मार्क, तपस्वी

संत मार्क के जीवन और लेखन के बारे में जानकारी

संत मार्क तपस्वी को मसि्र के धर्मगुरुओं में सबसे प्रतष्ठिति माना जाता है। फरि भी, उनके जीवन के परस्थितियिों के बारे में बहुत कम ज्ञात है। पैलाडयिस (लाइव्स, अध्याय 20), जो उनसे व्यक्तगित रूप से मलिे थे, कहते हैं कि वे अत्यंत कोमल और नम्र स्वभाव के थे, इस हद तक कि इस मामले में कोई भी उनकी बराबरी नहीं कर सकता था, और वे बचपन से ही पवति्र धर्मग्रंथों का अध्ययन करना पसंद करते थे और उनसे इतने अच्छी तरह से परचिति हो गए थे कि वे पुराने और नए नयिम को कंठस्थ जानते थे (इसे सोजोमेन, *चर्च का इतहिास*, पुस्तक 6,

अध्याय 29 और 30 में भी दोहराया गया है)। उनके जीवन की कठोर तपस्या और उनके हृदय की पवित्रता ने उन्हें आध्यात्मिक पूर्णता की उच्चतम श्रेणी तक पहुँचा दिया। अलेक्जेंड्रिया के संत मकारियस पवित्र रहस्यों को ग्रहण करने के दौरान उन पर ईश्वर की विशेष कृपा की गवाही देते हैं, जो न केवल संत मार्क के विश्वास की महान शक्ति, बल्कि प्रभु के प्रति उनके प्रेम के उत्साह और उनकी परम विनम्रता की ओर भी इशारा करती है। संत मार्क सौ से अधिक वर्षों तक जीवित रहे और, यह माना जाता है कि वे पाँचवीं शताब्दी की शुरुआत में निधन हो गए। फिर भी वह संत एंथनी के जीवन और शिक्षाओं के पहले उत्तराधिकारियों के बीच रहते थे और उनसे मिलते-जुलते थे, और शायद स्वयं एंथनी के साथ भी। ईश्वर की कृपा, उनके जीवन के अनुभव और ईश्वर के वचन का उनका अध्ययन उन्हें आध्यात्मिक जीवन के रहस्यों में गहराई से पारंगत बना देता है। इस वरदान को छिपाए बिना, उन्होंने व्यापक रूप से उपदेश दिया और लिखा, लेकिन उनकी कुछ ही रचनाएँ हमें प्राप्त हुई हैं। उनके दस कथन रूसी अनुवाद में प्रकाशित हुए हैं। पैट्रिआर्क फोतिउस ने उनमें से केवल आठ का हवाला दिया, जबकि निकिफोरोस कैलिस्टोस ने इन आठ के अलावा, उनके और बत्तीस कथनों का उल्लेख किया है (चर्च का इतिहास, पुस्तक 13, अध्याय 53 और 544)। इस संग्रह में, हमने *डोब्रोतोलीउबिए* में पाए गए ग्रंथों को शामिल किया है, उनमें उनके अन्य सभी कार्यों से ली गई निर्देशों को जोड़ा है, और उन्हें निम्नलिखित क्रम में व्यवस्थित किया है:

1. भिक्षु निकोलस को एक पत्र। इसे सबसे पहले रखा गया है क्योंकि इसमें तपस्या जीवन का आरंभ से अंत तक का विवरण है। इसके बाद आएँगे:

2. संत मार्क की अन्य रचनाओं से ली गई निर्देशाएँ, जो एपिस्टल में दिए गए पाठों की निरंतरता हैं, और तुरंत बाद आने वाले अध्यायों में निहित संक्षिप्त कथनों को समझने के लिए तैयारी हैं।

3. आध्यात्मिक कानून पर दो सौ अध्याय।

4. 226 अध्याय जो उन लोगों को संबोधित हैं जो सोचते हैं कि वे अपने कर्मों से धर्मी ठहराए जा सकते हैं। अनुवाद में निम्नलिखित स्रोतों का उपयोग किया गया था: *डोब्रोतोल्यूबिये* का ग्रीक संस्करण, मिग्ने की *पैट्रोलॉजिए ग्रेके*, खंड 65 में प्रकाशित सेंट मार्क के कार्य, और फिलिस्तीन में सेंट सावा के मठ की पांडुलिपि, जो अन्य लोगों की तुलना में अधिक पूर्ण और सटीक है।

आध्यात्मिक जीवन पर मार्क तपस्वी की शिक्षाएँ

1. भिक्षु निकोलस को पत्र

1. आप लंबे समय से अपनी मुक्ति के लिए गहराई से चिंतित रहे हैं, और, ईश्वर के अनुसार जीवन जीने की बड़ी सावधानी के साथ, आपने हमें अपने बारे में सब कुछ बताया है: कि आपने एक कठोर जीवन, संयम और आत्म-त्याग के हर अन्य रूप के माध्यम से प्रभु से जुड़े रहने का संकल्प कितनी प्रबल लगन के साथ लिया, जागरण और लगन से प्रार्थना में प्रयास करते हुए; आपने उन लड़ाइयों और देह संबंधी वासनाओं की भीड़ का भी वर्णन किया जो आपके शरीर में प्रज्वलित होती हैं और पाप के नियम से आपकी आत्मा के विरुद्ध उठती हैं, जो हमारे मन के नियम का विरोध करता है; विशेष रूप से, आपने विलाप किया कि क्रोध और वासना की भावनाएं आपको बहुत कष्ट देती हैं, और आपने इन विनाशकारी वासनाओं पर काबू पाने (उन्हें पार करने) के लिए किन परिश्रमों और प्रयासों को अपनाना चाहिए, इस बारे में किसी साधन या मौखिक मार्गदर्शन की तलाश की।

2. उस समय, जहाँ तक संभव था, आपके प्रति अपने प्रेम की भावना में, मैंने आपको आत्मा-रक्षक विचार और विवेकपूर्ण परामर्श दिया, यह दिखाते हुए कि किन परिश्रमों और किन तपस्यात्मक प्रयासों से आत्मा—विवेक और प्रबुद्ध मार्गदर्शन के साथ, सुसमाचार के अनुसार बुद्धिमानी से जीते हुए—विश्वास के लिए अनुग्रह की सहायता से, हृदय के भीतर उमड़ने वाले बुरे (विचारों और भावनाओं), विशेष रूप से उल्लेखित वासनाओं पर काबू पा सकती है। क्योंकि, उन वासनाओं के स्वभाव के अनुसार—उनके प्रति प्रवृत्ति और उनसे परिचित होने के कारण—जिनसे आत्मा विशेष रूप से उत्तेजित हुई है, उसे उनके विरुद्ध एक अनवरत और अत्यंत परिश्रमी संघर्ष करना ही होगा, जब तक कि वह पाप के मांसल और अस्पष्ट प्रभावों (प्रलोभनों) को वश में नहीं कर लेती, जिनके द्वारा वह पहले वशीभूत थी, विचारों में उनके साथ एक आंतरिक संबंध के द्वारा बहकाया और बंधक बना लिया गया, (बुराई के) विचारों की बार-बार स्मृति और उनके साथ भावुक संवाद द्वारा (बाध्य)।

3. परन्तु अब, चूँकि मैं शरीर से और व्यक्तिगत रूप से आपसे दूर चला गया हूँ, हालाँकि हृदय से नहीं, मसीह के सच्चे मजदूरों और योद्धाओं के पास जंगल में गया हूँ, ताकि मैं भी अपने भाइयों के साथ मिलकर संघर्ष और लड़ाई करके—जो शत्रु के प्रभावों से लड़ रहे हैं और अपने जुनून का बहादुरी से विरोध कर रहे हैं—आलस्य को दूर कर सकूँ,

आलस्य को त्यागकर, सुस्ती को दूर करके, उत्साह और हर प्रकार की सावधानी को अपनाकर, परमेश्वर की प्रसन्नता के लिए यत्न करते हुए, मैंने आपकी निष्ठा के लिए लिखिति रूप में एक संक्षप्ति निर्देश और आत्मा-रक्षक परामर्श देने का कष्ट उठाया है, ताकि मेरे इस संक्षप्ति प्रेरणादायक पत्र में मैंने जो व्यक्तगित रूप से आपसे कहा है, उसका संक्षप्ति सारांश ध्यान से पढ़कर, आप उससे आध्यात्मकि लाभ प्राप्त कर सकें, जैसे कि हम वास्तव में आपके साथ हों।

४. हे मेरे पुत्र, यहीं से तुम्हें अपने जीवन को ईश्वर-प्रदत्त, उद्धारकारी व्यवस्था में ढालना आरम्भ करना है। तुम्हें अपने मन में, अवस्मिरणीय और सर्वदा उपस्थति, अनवरत चिंतन के साथ, मानवता से प्रेम करने वाले परमेश्वर के सभी दैवीय कार्यों—भूतपूर्व और वर्तमान दोनों—और तुम्हारी आत्मा के उद्धार के लिए उसकी सभी आशीषों को रखना चाहिए; और तुम्हें खुद को यह अनुमति नहीं देनी चाहिए, चाहे वह दुष्ट भूल (शत्रु द्वारा उकसाई गई) के बादल में डूबकर हो, या आलस्य के कारण, उनके अनेक और महान उपकारों को भूलने, और इस प्रकार अपने जीवन का शेष भाग व्यर्थ और कृतघ्नता में व्यतीत करने न दें। क्योंकि ऐसी स्मृतियाँ, एक काँटे की तरह, हृदय को भेदती हैं और उसे (ईश्वर की कृपाओं का) स्मरण करने के लिए लगातार प्रेरति करती हैं, वनिम्रता, पश्चातापी आत्मा से धन्यवाद करने, हर अच्छी बात में आनंद मनाने, (उनके आशीर्वादों के बदले में) ईश्वर के अनुसार अच्छे नैतकिता और रीति-रिवाजों और हर सद्गुण को प्राप्त करने के लिए, निम्नलिखिति भविष्यद्वाणी के वचन में एक विवेकशील मन से गहराई से उतरने के परिणामस्वरूप: *'प्रभु ने मुझ पर जो कुछ भी किया है, उसके बदले में मैं प्रभु को क्या दूँ?'* (भजन संहिता 115:3)। जब आत्मा उस ईश्वर द्वारा जन्म से प्राप्त सभी आशीर्वादों को याद करती है जो मानवता से प्रेम करता है, साथ ही उन कई वपित्तियों को जिनसे उसे बार-बार बचाया गया है, या उन कई अपराधों में जिनमें वह गरि गई है और उन पापों में जिनमें वह जानबूझकर फसिल गई है, फरि भी, धर्मी न्याय द्वारा, उसे उन आत्माओं के हवाले नहीं किया गया जो उसे वनिाश और मृत्यु के लिए धोखा देने वाली थीं, परन्तु प्रेम, धीरज और उसके अपराधों को अनदेखा करने वाले परमेश्वर ने, उसके परविर्तति होने की प्रतीक्षा करते हुए, उसे सुरक्षति रखा; और जब वह स्वेच्छा से अपनी वासनाओं के द्वारा शत्रुओं और दुष्ट आत्माओं की सेवा करती रही, उसने उसका पोषण किया, उसे आश्रय दिया और हर तरह से उसकी व्यवस्था की; और अंत में, अपनी कृपापूर्ण मार्गदर्शन से, उसे मोक्ष के मार्ग पर स्थापति किया, उसके हृदय में तपस्या जीवन के प्रति प्रेम भर दिया, उसे संसार और उसके कामुक सुखों के सभी मोह को त्यागने के लिए आनंद से प्रेरति किया, उसे तपस्या के दैवीय स्वरूप से सुशोभति किया, और में पवत्रि पिताओं द्वारा भाईचारे में गर्मजोशी से स्वागत की व्यवस्था की, (जब आत्मा यह सब याद करती है), जो एक अच्छी अंतरात्मा से निर्देशति विचारों के साथ और इस सब पर चिंतन करते हुए, क्या सदा के लिए हार्दिक पश्चाताप में नहीं रहेगी? पहले प्राप्त आशीर्वादों में ऐसी नींव होने पर, जब उसने स्वयं कुछ भी अच्छा नहीं किया था, तो क्या वह स्वयं से यह कहते हुए एक दृढ़ और शाश्वत आशा को नहीं थाम लेगा: यदि उस समय जब मैंने कुछ भी अच्छा नहीं किया, बल्कि इसके वपिरीत उसके सामने बहुत पाप किया, कामुक अशुद्धता और कई अन्य पापों में लप्ति रहा, उसने मुझसे मेरे पापों के अनुसार व्यवहार नहीं किया और न ही मुझे मेरे अधर्म के अनुसार प्रतफिल दिया, परन्तु उसने मुझ पर ऐसे वरदानों और अनुग्रहों से दया दिखाई, तो, जब मैं अंततः एक पूर्ण निर्दोष जीवन और हर सद्गुण के विकास के माध्यम से स्वयं को पूरी तरह से उसकी सेवा के लिए समर्पति करूँगा, तो वह मुझ पर कितने आशीर्वाद और कितने आध्यात्मकि वरदान प्रदान करेगा, जो मुझे हर अच्छे काम में मजबूत, मार्गदर्शन और सक्षम बनाएगा? इस प्रकार, जो कोई भी ईश्वर की कृपा को कभी न भूलते हुए, ऐसा विचार रखता है, स्वयं को हर पुण्य कार्य और हर धर्मपरायणता के कार्य की ओर झुकाता, निर्देशति करता और प्रेरति करता है, जो हमेशा उत्साही रहता है और ईश्वर की इच्छा को पूरा करने के लिए हमेशा तैयार रहता है।

५. इसलिए, प्रयि पुत्र, मसीह की कृपा से एक स्वस्थ मन रखकर, अपने भीतर हमेशा ऐसा आचरण और ऐसा अच्छा चिंतन बनाए रखो; स्वयं को ऐसा होने न दो, हानिकारक वस्मिृति के घने बादल से ढका हुआ, न ही आलस्य से अपनी प्रगति में बाधति, जो मन को व्यर्थ बना देता है और उसे उस जीवन से भटका देता है जिसे उसे जीना चाहिए, न ही अज्ञानता से विचारों में धूमिल—जो सभी बुराइयों का कारण है – न तो सर्व-भ्रष्ट आलस्य से बहककर, न तो कामुक सुखों से मोहति होकर, न तो अतिभक्षण से पराजति होकर, न तो इच्छाओं का दास बनकर और अपने भीतर अश्लील विचारों के मिश्रण से अपवत्रि होकर, न ही उस क्रोध से वशीभूत होकर जो अपने भाई से घृणा उत्पन्न करता है, न ही, किसी दयनीय और शापति बहाने पर, दुख देते और दुखी होते हुए, अपने पड़ोसी के वरिुद्ध अपने मन में बुरे विचारों को पालना शुरू करें; न ही किसी द्वारा जो शुद्ध प्रार्थना से परमेश्वर से भटक गया हो; न ही किसी द्वारा जिसका मन पशुवत विचारों से एकमत भाई की जासूसी करने के लिए बंदी बना लिया गया हो। (क्योंकि यदि इन सब को जारी रहने दिया गया, तो) ऐसे मूर्ख स्वभाव के लिए, जो सांसारिक तर्क से भरा हुआ है, और जो अंतरात्मा में बंधा हुआ

है, तुम्हें कुछ समय के लिए उन दुष्ट आत्माओं की शिक्षाप्रद सज़ा के लिए सौंप दिया जाएगा, जिनके आगे तुम झुक गए, जब तक कि तुम्हारा मन, पूरी तरह से दरिद्र और दुख व निराशा से ग्रस्त होकर, अतीत के पापों के कारण ईश्वर में आध्यात्मिक प्रगति के नुकसान के कारण, वह एक बार फिर, पूरी विनम्रता के साथ, मोक्ष के मार्ग पर चलना शुरू करेगा, प्रार्थना में बहुत परिश्रम और पूरी रात की प्रहरियों के बाद, ईश्वर और अपने पड़ोसियों के सामने अपने पापों का विनम्रतापूर्वक स्वीकारोक्ति करके उनके लिए क्षमा प्राप्त करने के बाद। इस प्रकार वह एक बार फिर होश में आने लगता है और, सुसमाचार के प्रकाश से प्रबुद्ध होकर, ईश्वर की कृपा से यह महसूस करने लगता है कि जो कोई भी स्वयं को विनम्र चिंतन और आत्म-अपमान में पूरी तरह से क्रूस के अधीन नहीं करता है, और स्वयं को सभी के सामने कुचलने, अपमान, तिरस्कार के अधीन नहीं करता, धर्मसंगत ठहराया जाना, उपहास और तिरस्कार—और यह सब प्रभु के लिए आनंदपूर्वक सहना, किसी भी मानवीय वस्तु की कामना न करना, न महिमा, न सम्मान, न प्रशंसा, न मीठा भोजन और पेय, न ही (अच्छे) वस्त्र—एक सच्चा ईसाई नहीं हो सकता।

6. अब, यदि हमारे सामने ऐसे कारनामे, संघर्ष और मुकुट पड़े हैं, तो हम कितने समय तक धर्म की झूठी आड़ में मज़ाक उड़ाए जाने देंगे और प्रभु की सेवा कपट से करेंगे, जबकि एक ही समय में मनुष्यों से सम्मान पाते हुए, मार्गदर्शक के सामने पाखंडी बनकर प्रकट होंगे? क्योंकि यद्यपि बहुत से लोग हमें संत मानते हैं, फिर भी हम स्वभाव से पशु ही हैं, जिनमें केवल धार्मिकता का बाहरी दिखावा तो है, परन्तु परमेश्वर के सामने उसकी शक्ति प्राप्त नहीं हुई है। (2 तीमु. 3:5), जबकि कई हमें कुंवारी और निर्दोष रूप से शुद्ध मानते हैं, हम भीतर उस के सामने कलंकित हैं जो हमारी इच्छाओं और अश्लील विचारों की अशुद्धियों द्वारा छिपी हुई बातों को देखता है, और हम अपनी कामनाओं के प्रभावों से दागदार हैं; फिर भी, हमारे पूरी तरह से पाखंडपूर्ण तपस्या के कारण, और मनुष्यों की प्रशंसा के कारण भी, हम इस मामले में लापरवाह हैं, हमारा मन अंधा हो गया है। तो फिर, हम कब तक मन की व्यर्थता में चलते रहेंगे, सुसमाचार की बुद्धिमत्ता को आत्मसात करने में असफल रहेंगे और ईमानदारी के जीवन को अपनाने में असफल रहेंगे, इस संकल्प के साथ कि हम उसके मार्ग पर लगन से चलें ताकि हमें भी अपने विवेक में साहस मिल सके, फिर भी हम केवल बाहरी व्यक्ति की दिखावटी धार्मिकता पर ही भरोसा करते हैं, और इस मामले की सच्ची समझ की कमी के कारण बाहरी गुणों से स्वयं को धोखा देते हैं, लोगों को प्रसन्न करना चाहते हैं और उनसे महिमा, सम्मान और प्रशंसा की तलाश करते हैं?

7. सचमुच, वह जो अँधेरे के रहस्य प्रकट करता है और हृदय के विचारों को प्रकाश में लाता है (1 कुरिन्थियों 4:5), वह न्यायी जो रिश्वत नहीं ले सकता, आएगा—वह जो न तो धनी को लज्जित करता है और न ही गरीब पर अनुग्रह करता है। वह बाहरी दिखावा हटा देगा और भीतर छिपी सच्चाई को उजागर कर देगा; और वह स्वर्गदूतों की उपस्थिति में अपने पिता के सामने उन लोगों को मुकुट पहनाएगा जो विवेक से जीते हैं—सच्चे तपस्वी और योद्धा—जबकि पाखंडी, जो केवल धार्मिकता का दिखावा करते हैं और मनुष्यों के सामने केवल बाहरी रूप से एक 'निष्कलंक' जीवन का प्रदर्शन करते हैं, वे व्यर्थ ही उस पर भरोसा करते हैं और उसी से स्वयं को धोखा देते हैं, वह उन्हें संपूर्ण पवित्र चर्च और स्वर्ग के समस्त गण के सामने गंभीरता से उजागर कर देगा, और उन्हें अत्यधिक लज्जा के साथ घोर अंधकार में भेज देगा।

८. (ऐसे लोग उन पवित्र कुँवारियों के समान हैं) जिन्होंने अपनी बाहरी कुँवारीपन की रक्षा की (क्योंकि वे इस बात के लिए बिलकुल भी दोषी नहीं ठहराई गईं) और, इसके अलावा, उनके पात्रों में थोड़ा तेल था, अर्थात्, उनके पास कुछ सद्गुण और बाहरी गुण थे, और कुछ वरदान थे, जिसके कारण उनके दीपक कुछ समय तक जले; लेकिन, लापरवाही, अज्ञानता और आलस्य के कारण, उन्होंने अपने आंतरिक जीवन पर कोई ध्यान नहीं दिया और ठीक से पहचाना नहीं अंदर अनेक प्रकार की वासनाएँ छिपी हुई थीं, जिन्हें दुष्ट आत्माओं ने भड़काया था; परिणामस्वरूप, उनके विचार शत्रुतापूर्ण प्रभावों से दूषित हो गए, और वे (कन्याएँ) अपने विचारों में इन वासनाओं के साथ जुड़ गईं, और सबसे बुरे प्रकार की ईर्ष्या, दुर्भावनापूर्ण जलन, अवज्ञा से गुप्त रूप से बहक गईं और उन पर काबू पा लिया गया, प्रतिद्वंद्विता, घृणा, क्रोध, शोक, प्रतिशोध की भावना, पाखंड, चिड़चिड़ापन, गर्व, दंभ, पुरुषों को प्रसन्न करने की इच्छा, आत्म-संतुष्टि, लालच, लापरवाही, कामुक वासना, कामुकतापूर्ण विचार, अविश्वास, निडरता (ईश्वर के सामने), भय (किसी बाहरी चीज़ का), शोक, परपीड़न, हर प्रकार की आत्म-संतुष्टि, निद्रा, अहंकार, आत्म-न्याय, घमंड, दंभ, अतृप्ति, विलासिता, लालच, निराशा—जो सभी में सबसे विनाशकारी है—और पाप के अन्य, सबसे सूक्ष्म प्रभाव। उन्होंने (कन्याओं ने) न केवल अच्छे कर्म किए और एक सम्मानजनक जीवन जिया, जिसे उन्होंने स्पष्ट रूप से दूसरों के सामने प्रदर्शित किया, और जिसके लिए उन्होंने उनसे प्रशंसा प्राप्त की, और यहाँ तक कि आध्यात्मिक वरदानों को भी, यदि उनके पास कोई थे, तो उन्होंने व्यर्थता की आत्माओं और मनुष्यों को प्रसन्न करने की इच्छा को बेच दिया; जबकि अन्य जुनूनों में बहकर, उन्होंने अपनी अच्छी कोशिशों में चालाकी और शारीरिक

योजनाओं को मिला दिया, जिससे वे कैन की बलि की तरह अशुद्ध और परमेश्वर को अप्रिय हो गईं। इन सब के कारण, वे वर के साथ आनंदित होने से वंचित हो गईं, और स्वर्गीय महल के बाहर छोड़ दी गईं, जो उनके लिए बंद है।

९. कठोर विवेक और आत्म-परीक्षण के साथ इस पर मनन करते हुए, आइए हम उस स्थिति को समझें और महसूस करें जिसमें हम खुद को पाते हैं; और, जब तक पश्चाताप और परिवर्तन का समय है, आइए हम अपने तरीकों को सुधारें, यह सुनिश्चित करते हुए कि हमारे अच्छे कर्म, शुद्धता के साथ किए जाने पर, वास्तव में अच्छे हों, और कामुक तर्क के किसी भी मिश्रण से मुक्त हों, क्योंकि लापरवाही, उपेक्षा और सच्चे ज्ञान की कमी के कारण वे एक दोषपूर्ण बलिदान की तरह अस्वीकार न कर दिए जाएँ: अन्यथा हम ब्रह्मचर्य, संयम, जागरण, उपवास और हर प्रकार के आत्म-त्याग का कष्ट उठाएंगे, और अपने दिन इसी प्रकार व्यतीत करेंगे - और फिर भी, जो हमें इतनी धार्मिकता प्रतीत होती है, वह स्वर्गीय पुरोहित, मसीह द्वारा स्वीकार नहीं की जाएगी, क्योंकि उपर्युक्त वासनाओं के कारण उसे एक अपवित्र बलिदान पाया जाएगा।

10. इसलिए, हे मेरे पुत्र, सबसे बढ़कर, जो कोई क्रूस उठाना और मसीह का अनुसरण करना चाहता है, उसे ज्ञान और समझ की चिंता करनी चाहिए, लगातार अपने विचारों की जाँच करते रहना चाहिए, उद्धार के लिए बड़ी चिंता और ईश्वर के प्रति गहरी भक्ति के साथ, साथ ही ईश्वर के उन एकजुट और समान विचारधारा वाले सेवकों से परामर्श लेते हुए जो उसी प्रयास में लगे हुए हैं, ताकि यह न जाने कि अपना मार्ग कहाँ या कैसे निर्देशित करना है, कोई उज्ज्वल दीपक के बिना अंधकार में न चले। क्योंकि स्वेच्छिक व्यक्ति, जो सुसमाचार के मार्गदर्शन और निर्देशन के बिना चलता है, अक्सर ठोकर खाता है और दुष्ट के कई गड्ढों और जालों में गिर जाता है; वह अक्सर भटक जाता है और बड़ी विपत्तियों के संपर्क में आता है, और नहीं जानता कि वह अंततः कहाँ पहुँचेगा। कई लोगों ने परमेश्वर के लिए आत्म-त्याग के महान कार्य किए हैं और बड़ी मेहनत और कठिनाइयों को सहन किया है, लेकिन उनकी स्व-इच्छा, विवेक की कमी, और अपने पड़ोसी से उद्धारकारी सलाह मांगना आवश्यक न समझना, ने ऐसे प्रयासों को परमेश्वर के लिए अप्रिय और व्यर्थ बना दिया है।

११. हे मेरे प्रिय पुत्र, जहाँ तक तुम्हारा प्रश्न है, जैसा कि मैंने इस उपदेश की शुरुआत में कहा था, पूजनीय, परोपकारी परमेश्वर द्वारा तुम पर की गई कृपा को मत भूलना, भले ही शत्रु की दुष्टता की चोरी और आलस्य द्वारा तुम उनसे भटक जाते हो; परन्तु, अपनी आँखों के सामने सभी को रखते हुए चाहे वे आध्यात्मिक हों या शारीरिक, जीवन की शुरुआत से अब तक आप पर की गई इन आशीषों पर मनन करें और उनसे सीखें, जैसा कि कहा गया है: *'उनके सभी पुरस्कारों को न भूलो'* (भजन संहिता 102:2)। इस प्रकार, आपका हृदय परमेश्वर के भय और प्रेम की ओर सहज ही प्रेरित होगा, और आप एक अनुशासित जीवन, सदाचारी आचरण, ईश्वरीय अंतरात्मा, उचित वाणी, सच्चे विश्वास, विनम्र ज्ञान और, सरल शब्दों में, अपना सम्पूर्ण अस्तित्व परमेश्वर को समर्पित करके परमेश्वर का धन्यवाद कर पाएँगे। आपके द्वारा दयालु और परोपकारी प्रभु से प्राप्त आशीर्वादों की स्मृति आपको इसी ओर ले जाएगी! उसकी कृपाओं की ऐसी स्मृति से, विशेष रूप से स्वर्ग से मिली प्रेरणा की मदद से, आपका हृदय अनजाने ही परमेश्वर के प्रेम और लालसा से भर जाएगा; क्योंकि उसने यह अद्भुत वरदान, जो उसने मानव जाति के प्रति अपने अगम्य प्रेम के कारण केवल आपको ही दिया है, किसी और पर नहीं दिया है—यहाँ तक कि उन लोगों पर भी नहीं जो आपसे अधिक योग्य हैं।

12. अत; ईश्वर से प्राप्त सभी अनुग्रहों को निरंतर मन में रखने का प्रयास करो; और विशेष रूप से, उस महान अनुग्रह और अद्भुत कृपा को याद करो जो उन्होंने तुम पर तब प्रदान की थी, जैसा कि तुमने मुझे बताया था, जब तुम अपनी माँ के साथ पवित्र स्थानों से कॉन्स्टेंटिनोपल के लिए यात्रा कर रहे थे, जब रात के समय एक भयंकर और असहनीय तूफान उठा, जिससे समुद्र में उफान आ गया, और जहाज पर सवार सभी लोग—जिनमें , नाविक और आपकी अपनी माँ भी शामिल थीं—गहराई में डूब गए, जबकि आप अकेले, दो अन्य लोगों के साथ, ईश्वर की महिमामय शक्ति द्वारा बचाए गए और किनारे पर फेंक दिए गए; (याद करो) यह भी कि प्रभु ने एन्सक्रिा की आपकी यात्रा कैसे व्यवस्थित की, जहाँ एक दयालु व्यक्ति ने आपको पितृत्वपूर्ण स्नेह से स्वीकार किया और आप सबसे धार्मिक पुत्र एपफिनेयिस के साथ प्रेम में एक हो गए, जिसके साथ आप दोनों, एक सम्मानित व्यक्ति के मार्गदर्शन में, (संसार का त्याग कर) मोक्ष के मार्ग पर चल पड़े, और परमेश्वर के पवित्र सेवकों द्वारा सच्चे बच्चों के रूप में स्वीकार किए गए।

13. परमेश्वर द्वारा आप पर दी गई इन सभी आशीषों के लिए, आप उस पर क्या लौटा सकते हैं जिसने आपको अनंत जीवन के लिए बुलाया है? जैसा कि न्याय की मांग है, आपको अब अपने लिए नहीं बल्कि मसीह के लिए जीना चाहिए, जो आपके लिए मरे और फिर जी उठे; तुम्हें हर धार्मिक सद्गुण और हर आज्ञा के पालन के लिए प्रयत्नशील रहना चाहिए, और हमेशा यह खोजते रहना चाहिए *कि परमेश्वर की इच्छा क्या है—क्या अच्छा, मनभावन और सिद्ध*

है' (रोमियों 12:2), और उसे पूरा करने के लिए अपनी पूरी शक्ति से यत्न करना चाहिए। सबसे बढ़कर, मेरे बेटे, अपनी जवानी को परमेश्वर के वचन के अधीन कर, जैसा कि यह वचन मांग करता है: *'अपने शरीर को जीवित बलिदान के रूप में प्रस्तुत करो, जो पवित्र और परमेश्वर को भाता हो—यह तुम्हारी आत्मिक आराधना है'* (रोमियों 12:1)। संयम से खाने, संयम से पीने और पूरी रात जागने के द्वारा देह की वासना की हर नमी को बुझाओ और सूखा दो, ताकि तुम भी हृदय से कह सको: *'मैं जमीन पर एक मदिरा-मशक की तरह था'*[38] , *'मैंने तेरे धर्म के कामों को नहीं भूला'* (भजन संहिता 118:83)। यह महसूस करते हुए कि आप मसीह के हैं, जैसा कि प्रेरित कहते हैं, *'अपने शरीर को उसके भावों और इच्छाओं सहित सूली पर चढ़ाओ'* (गलातियों 5:24), और *"पृथ्वी पर जो अंग हैं, उन्हें मार डालो"* (कुलुस्सियों 3:5)—अर्थात्, न केवल व्यभिचार के कर्म, बल्कि दुष्ट आत्माओं द्वारा शरीर में उत्तेजित की गई अशुद्धता को भी। और जो सच्ची, अछूती और सर्व-पूर्ण कुँवारीपन के मुकुट का पात्र समझा जाना चाहता है, वह अपने प्रयास को केवल इसी तक सीमित नहीं रखता, बल्कि, प्रेरितों की शिक्षा का पालन करते हुए, इस वासना की उत्प्रेरणाओं को ही मार डालने का प्रयत्न करता है। और वह इससे भी संतुष्ट नहीं होता, जिसने (पवित्रता के लिए) दृढ़ प्रेम से अपने हृदय में एक दैवीय और परम शुद्ध कुँवारीपन को अपने शरीर में स्थापित करने का संकल्प लिया है, बल्कि प्रार्थना करता है कि वासना का एक साधारण सा विचार भी—जो कामुक जुनून की गति या प्रभाव के बिना, मन में एक क्षणिक छाप के रूप में सुझाया जाता है—वह भी मिट जाए। लेकिन यह केवल ऊपर से मिली सहायता से, पवित्र आत्मा की एकमात्र शक्ति और वरदान द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता है, बशर्ते कि कोई इस अनुग्रह के योग्य समझा जाए।

14. इस प्रकार, जो शुद्ध, अदेह और अछूती कुँवारीपन का मुकुट प्राप्त करना चाहता है, वह तपस्या के श्रम द्वारा अपने शरीर को सूली पर चढ़ाता है, *'अंगों को मार डालता है जो पृथ्वी पर हैं'*, को कठिन और धैर्यपूर्ण संयम द्वारा क्रूस पर चढ़ाते हैं, जिससे बाहरी मनुष्य मुरझा जाता है, दुबला हो जाता है और बूढ़ा तथा कंकाल-सा हो जाता है, ताकि भीतरी मनुष्य विश्वास और आध्यात्मिक कर्मों के माध्यम से अनुग्रह के कार्य द्वारा अधिक स्वतंत्र रूप से नवीनीकृत हो सके, दिन-प्रतिदिन बेहतर की ओर बढ़ते हुए, प्रेम में बढ़ते हुए, नम्रता से स्वयं को सुसज्जित करते हुए, आध्यात्मिक आनंद में आनंदित होते हुए, मसीह से शांति का वचन प्राप्त करते हुए, दयालुता से निर्देशित होते हुए, परोपकार में लिपटे हुए, ईश्वर के भय से आलिंगित, ज्ञान और (आध्यात्मिक) समझ से प्रबुद्ध, बुद्धि से सुसज्जित, और विनम्र बुद्धि से निर्देशित। इन और इसी प्रकार के सद्गुणों के द्वारा, पवित्र आत्मा से नवीनीकृत मन अपने भीतर ईश्वर-सदृश प्रतिमा की छाप ग्रहण करता है, प्रभु की समानता की बौद्धिक, अनुपम सुंदरता से सुसज्जित होता है, और आध्यात्मिक ज्ञान की संपदा का सहभागी बन जाता है।

१५. इसलिये, हे मेरे पुत्र, अपनी युवावस्था के शरीर को संयम में रख, अपनी आत्मा को पोषण दे, और पवित्र आत्मा की सहायता से उपरोक्त सद्गुणों द्वारा अपने मन को नया कर। विविध स्वादिष्ट व्यंजनों और शराब पीने से मोटा हुआ युवा शरीर, वध के लिए तैयार एक जंगली सूअर के समान हो जाता है। इस प्रकार आत्मा कामुक सुखों की आग से कठोर हो जाती है, और मन दुष्ट वासना की प्रज्वलन से मोहित हो जाता है, जो शरीर की प्रवृत्तियों का विरोध करने में असमर्थ होता है। इस प्रकार, रक्त का उफान आत्मा का क्षय है। जहाँ तक शराब की बात है, युवाओं को इसकी महक तक भी न आने दें, कहीं ऐसा न हो कि कामवासना के प्रभाव से भीतर और शराब के सेवन से बाहर, दोहरी आग से प्रज्वलित होकर, देह की कामना दर्दनाक पश्चाताप की आध्यात्मिक मिठास को बाहर निकाल दे और हृदय में भ्रम और कठोरता पैदा कर दे। न ही युवाओं को तृप्ति तक पानी पीना चाहिए, ताकि आध्यात्मिक इच्छा (एक अच्छा स्वभाव) बनी रहे, क्योंकि पानी में संयम शरीर की पवित्रता में बहुत योगदान देता है। जब आप इसे व्यवहार में लाएंगे, तो आप अपने स्वयं के अनुभव से इसके बारे में आश्वस्त हो जाएंगे। क्योंकि मैं आपके लिए यह नियम निर्धारित करता हूँ और इसे स्थापित करता हूँ, इस अर्थ में नहीं कि मैं आप पर कोई अनिच्छित जूआ लादना चाहता हूँ, बल्कि मैं प्रेमपूर्वक सलाह देता हूँ और इसे सच्ची कन्यात्व और कठोर ब्रह्मचर्य को बनाए रखने के एक अच्छे साधन के रूप में प्रस्तावित करता हूँ, साथ ही यह आपके स्वतंत्र इच्छाशक्ति पर छोड़ देता हूँ कि आप अपनी मर्जी से करें।

१६. अब हम क्रोध के मूर्खतापूर्ण जुनून के बारे में थोड़ी बात करें, जो जब भड़कता और प्रभावी होता है, तो पूरे आत्मा को तबाह कर देता है, उसे भ्रम में डाल देता है और उसे अंधा कर देता है, और एक व्यक्ति को एक जानवर की तरह बना देता है—विशेषकर उस व्यक्ति को जो आसानी से प्रलोभित होता है और जल्दी गुस्सा करने वाला होता है। यह जुनून घमंड द्वारा मजबूत, बनाए रखा और अजेय बना दिया जाता है; और जब तक इस दुख के शैतानी वृक्ष (इब्रानियों 12:15)—यानी क्रोध और चिड़चिड़ापन के वृक्ष—को घमंड के दुष्ट जल से सींचा जाता है, तब तक यह बढ़ता और फलता-फूलता है, और अन्याय के भरपूर फल देता है। इस प्रकार, आत्मा में दुष्ट की यह इमारत तब तक

[38] 'हिम पर' – हिम में। फर हिम में सिकुड़ जाता है और कठोर तथा कठिन हो जाता है।

अविनाशी बनी रहती है, जब तक कि यह गर्व की नींव से सुदृढ़ और समर्थित होती है। इसलिए, यदि आप चाहते हैं कि यह अधर्म का वृक्ष (जिससे मेरा तात्पर्य क्लेश, क्रोध और चिड़चिड़ाहट की भावना से है) शरीर में मुरझा जाए और बाँझ हो जाए, ताकि आत्मा की कुल्हाड़ी आकर इसे काट सके, और इसे सुसमाचार के वचनों के अनुसार आग में फेंका जा सके, और यह सारी दुर्भावना के साथ मिट जाए, – यदि आप इस अधर्म के घर को, जिसे दुष्ट आत्मा बुराई के लिए आत्मा में बनाता है, ध्वस्त और खोदकर उजाड़ना चाहते हैं, तो प्रभु की नम्रता को हृदय में ग्रहण करें और उसे कभी न भूलें। घमंड के विचारों को इसकी दृढ़ नींव के रूप में रखकर—यदि आप चाहते हैं कि यह घर उजाड़ दिया जाए और खोदा जाए, तो प्रभु की नम्रता को अपनाएँ, और इसे अपने हृदय में कभी न भूलें। वह कौन हैं, और हमारे लिए उन्होंने क्या बनना स्वीकार किया? ईश्वरत्व के प्रकाश की किस ऊँचाई से—जो स्वर्गिक प्राणियों को भी उचित मात्रा में प्रकट किया गया था, और स्वर्ग में हर तर्कशील प्राणी द्वारा महिमामंडित किया गया—देवदूत, महादूत, सिंहासन, प्रभुत्व, प्रधानताएँ, शक्तियाँ, केरूबीम, सेराफिम और अन्य सभी नामहीन बुद्धिमान शक्तियाँ, जिनके नाम हमें प्राप्त नहीं हुए हैं – और अपनी अनुपम दया से वह मानव विनम्रता की कितनी गहराई तक अवतरित हुए, हर तरह से हम जैसे बन गए, जो अंधकार और मृत्यु की छाया में बैठे हैं, आदम के अपराध के कारण शत्रु द्वारा बंदी बनाए गए हैं, और हमारे भीतर काम करने वाली वासनाओं के द्वारा उस शत्रु के वश में हैं।

17. इस प्रकार, सभी दृश्य और अदृश्य प्राणियों के प्रभु हमसे, जो इतनी दासता में और एक कड़वी मृत्यु की चपेट में पीड़ित थे, लज्जित नहीं हुए, बल्कि स्वयं को नम्र किया और ग्रहण किया (अपने ऊपर) मनुष्य को लिया, जिस पर प्रभु के विधान द्वारा दंड स्वरूप दुख सहने का विधान किया गया था, और पाप को छोड़कर, अर्थात् दुष्टता की प्रवृत्तियों को छोड़कर, हर बात में हमारे समान हो गए। जो कुछ भी दिव्य आदेश द्वारा पतन के पाप के प्रायश्चित के रूप में मनुष्य पर थोपा गया था—अर्थात् मृत्यु, परिश्रम, भूख, प्यास और इसी तरह की अन्य चीजें—उसने स्वयं पर ले लिया, हमारे जैसे बनकर, ताकि हम उसके जैसे बन सकें: *'वचन देहधारी हुआ* (यूहन्ना 1:14), ताकि देह वचन बन सके; *'यद्यपि वह धनी था, तथापि* हमारे लिए *वह गरीब हो गया, ताकि उसकी गरीबी के द्वारा हम धनी हो जाएँ'* (2 कुरिन्थियों 8:9); मानवजाति के प्रति अपने महान प्रेम के कारण, वह हमसा रूप हो गया, ताकि हम भी हर सद्गुण में उसके समान बन सकें। जब से मसीह आए, मनुष्य—जिसे (आरंभ से ही) परमेश्वर के स्वरूप और समानता में बनाया गया था—पवित्र आत्मा की कृपा और शक्ति से सचमुच नया किया जाता है, और वह पूर्ण प्रेम के स्तर को प्राप्त करता है, जो भय को दूर करता है और अब विफलता के अधीन नहीं रह सकता, क्योंकि *'प्रेम कभी असफल नहीं होता'* (1 कुरिन्थियों 13:8), क्योंकि, जैसा कि यूहन्ना कहते हैं, 'ईश्वर *प्रेम है, और जो प्रेम में बना रहता है, वह ईश्वर में बना रहता है'* (1 यूहन्ना 4:16)। प्रेरितों और उन सभी, जिन्होंने उनके समान सद्गुणों में परिश्रम किया और स्वयं को पूर्ण रूप से प्रभु के समक्ष प्रस्तुत किया, तथा जिन्होंने अपने जीवन भर पूर्ण भक्ति के साथ मसीह का अनुसरण किया, उन्हें इस अवस्था के योग्य समझा गया।

18. इसलिए, यदि आप हमेशा उस विनम्रता को ध्यान में रखें, बिना कभी भूले, जो प्रभु ने हमसे अपने अगोचर प्रेम के कारण दिखाई—अर्थात्, गर्भ में परमेश्वर के वचन का अवतार, मानव स्वभाव को ग्रहण करना, एक स्त्री से उनका जन्म, उनके शारीरिक विकास के चरण, अपमान, कष्ट, अपमानजनक शब्द, उपहास, निंदा, पिटाई, थूकना, उपहास, अपमान, कarmeshनी का चोगा, कांटों का मुकुट, शासकों द्वारा उस पर लगाया गया दोष, विधर्मियों द्वारा उसके विरुद्ध उठाए गए विरोध, उसके अपने ही लोगों के ताने: *'इसे हटाओ, इसे हटाओ, इसे सूली पर चढ़ा दो'* (यूहन्ना 19:15), क्रूस, कीलें, भाला, सिरका और पित्त जो उसे पिलाया गया, मूर्तिपूजकों का हर्षोल्लास, राहगीरों का उपहास जिन्होंने कहा: *'यदि तू परमेश्वर का पुत्र है, तो क्रूस से उतर आ और हम तुझ पर विश्वास करेंगे'* (मत्ती 27: ४२) और अन्य कष्ट जो उन्होंने हमारे लिए सहे: सलीब पर चढ़ाया जाना, मृत्यु, तीन दिन तक का دفن, नरक में अवतरण – और फिर उनके दुखों के फल: मृतकों में से पुनरुत्थान, प्रभु के पास एकत्रित आत्माओं की मुक्ति के द्वारा नरक और मृत्यु का रिक्त हो जाना, स्वर्ग में आरोहण, पिता के दाहिने हाथ पर बैठना, हर एक प्रधानता और शक्ति और हर एक नाम से ऊपर जो नाम लिया गया है (इफिसियों 1:21), मृतकों में से प्रथमजा को सभी स्वर्गदूतों द्वारा सम्मान, महिमा और आराधना, उनके दुखों के कारण, प्रेरितों के वचन के अनुसार जो कहता है: *'तुम में भी वही मन हो जो मसीह यीशु में था, जो यद्यपि परमेश्वर के स्वरूप में थे, परन्तु परमेश्वर के बराबर होने को पकड़ना नहीं समझा, बल्कि उन्होंने अपना सब कुछ त्याग दिया, दास का रूप धारण किया, मनुष्य के समान हो गए: और मनुष्य के स्वरूप में पाए जाने पर, उन्होंने स्वयं को नम्र किया और मृत्यु तक, यहाँ तक कि क्रूस पर मृत्यु तक आज्ञाकारी बने रहे। इसलिये परमेश्वर ने उसे अत्यन्त ऊँचा किया और उसे वह नाम दिया जो हर नाम से ऊपर है, ताकि यीशु के नाम पर स्वर्ग में, पृथ्वी पर और पृथ्वी के नीचे हर घुटना झुक जाए, और इस प्रकार'* (फिलि. 2:5–10)... देखो, परमेश्वर की सच्चाई के अनुसार, ऊपर वर्णित प्रभु के दुखों ने मनुष्य के पुत्र को कितनी महिमा और उन्नति तक पहुँचाया है!

19. इसलिए, यदि आप ऐसे विचारों को अपने हृदय में गर्मजोशी और स्नेह के साथ रखते हैं और उनकी उपेक्षा नहीं करते हैं, तो दुख, क्रोध और चिड़चिड़ापन की भावनाएँ आप पर हावी नहीं होंगी। क्योंकि जब उनके नीचे से नींव हटा दी जाती है , अर्थात् जब अहंकार का भाव मसीह की नम्रता में डूबने से जड़ से उखाड़ दिया जाता है, तो अनियंत्रित क्रोध, उग्रता और दुख की पूरी इमारत अपने आप आसानी से ढह जाएगी। कौन सा क्रूर और पत्थर का दिल टूटकर दयालु नहीं हो जाएगा, और नम्र नहीं हो जाएगा, यदि वह हमारे लिए परमेश्वर के एकलौते पुत्र की ऐसी नम्रता को हमेशा याद रखे, और ऊपर वर्णित उनके दुखों को याद करे? क्या यह, इसके विपरीत, स्वेच्छा से धूल, राख और सभी लोगों के लिए पैर की चौकी नहीं बन जाएगा, जैसा कि धर्मग्रंथ कहता है? तो फिर, जब आत्मा, मसीह की नम्रता को देखकर, इस प्रकार स्वयं को नम्र और तोड़ती है, तो कौन सी चिड़चिड़ाहट उस पर हावी हो सकती है? कौन सा क्रोध और कौन सा दुख जड़ जमा सकता है?

२०. फिर भी ऐसा प्रतीत होता है कि इन विचारों—जो हमारे लिए उद्धारक और जीवन-दायक हैं—और इसकी बहन, आलस्य, और उनके साथी और समान, अज्ञानता—इन आत्मा की सबसे गंभीर और गहरी बीमारियों, जिन्हें पहचानना कठिन है और ठीक करना और भी कठिन है, की उपेक्षा आत्मा को बहका ले जाती है और उसे अनियंत्रित जिज्ञासा से ढक देती है (स्वयं के अलावा हर बाहरी चीज़ में जिज्ञासा दिखाकर)—ये ही अन्य सभी दुष्ट भावों के भीतर पनपने और छिपने का कारण बनते हैं: ये (ईश्वर के प्रति) निर्भीकता और सभी अच्छाइयों के प्रति उदासीनता को जन्म देते हैं, और हर वासना को आत्मा में प्रवेश करने और बिना किसी शर्म के उसके भीतर कार्य करने की स्वतंत्रता प्रदान करते हैं। जब आत्मा सर्वव्यापी विस्मृति, विनाशकारी सुस्ती और—सभी बुराइयों की जननी और पोषक—अज्ञानता से (जैसे किसी उदास पर्दे से) ढकी होती है, तो दुर्भाग्यपूर्ण, अंधा मन आसानी से हर दिखाई देने वाली, कल्पनीय या सुनी हुई चीज़ से चिपक जाता है: यह, उदाहरण के लिए, किसी स्त्री की सुंदरता को देखता है और तुरंत कामुक वासना से घायल हो जाता है। स्मृति इस प्रकार जो देखा, सुना और छुआ गया है, उसे उत्साहपूर्वक और आनंद के साथ ग्रहण करने के बाद, कल्पना और उनके साथ दुष्ट संवाद के माध्यम से, इनकी छवियों को भीतर चित्रित करती है, और इस प्रकार कामुक आत्माओं के प्रभाव से, अभी भी भावुक और दुखी मन को कलंकित करती है।

21. अंत में, शरीर स्वयं—चाहे वह स्थूल, बहुत युवा, या अत्यधिक नम हो—अपनी प्रकृति में ऐसी स्मृतियों और कृत्यों से शीघ्रता से उत्तेजित हो जाता है, और कामवासना की ओर बढ़ता है; और कभी-कभी नींद में, कभी-कभी जागते हुए, वह अपवित्रता उत्सर्जित करता है, भले ही वास्तव में पत्नी के साथ संभोग न किया हो। ऐसे व्यक्ति को कई लोग ब्रह्मचारी, कुंवारा और शुद्ध मान सकते हैं, या वह पवित्रता का दावा भी कर सकता है; फिर भी, उस परमेश्वर के सामने जो छिपी हुई बातें देखता है, वह एक घृणित व्यभिचारी और परस्त्रीगामी है, और उस दिन वह न्यायसंगत रूप से दंडित किया जाएगा जब तक कि वह परमेश्वर के सामने रोता और विलाप नहीं करता, जिसकी उपस्थिति में उसने बुराई पाल रखी है और की है, और जो योग्य पश्चाताप नहीं करता, उपवास, जागरण और अखंड प्रार्थनाओं द्वारा शरीर को वश में करके, और पवित्र स्मरणों और परमेश्वर के वचन में शिक्षा द्वारा मन को चंगा और सुधार कर। क्योंकि वह जीवित स्वर जिसने कहा है, झूठा नहीं है: *'जो कोई भी किसी स्त्री को वासना की दृष्टि से देखता है, वह मन में ही उसके साथ व्यभिचार कर चुका है* (मत्ती 5:28)। इसलिए, यह बहुत फायदेमंद है, विशेष रूप से युवाओं के लिए, कि वे महिलाओं को बिल्कुल भी न देखें, भले ही उन्हें पवित्र माना जाता हो, और, यदि संभव हो, तो सभी लोगों से अलग रहें: इस तरह वह अपने लिए आध्यात्मिक संघर्ष को बहुत आसान बना लेगा और अपनी प्रगति को अधिक ठोस रूप से महसूस करेगा, विशेष रूप से यदि वह स्वयं पर सख्त निगरानी रखता है और प्रार्थना में बना रहता है, भोजन और पेय—यहाँ तक कि पानी—में संयम का अभ्यास करता है, और लंबी जागरण करता है, साथ ही अनुभवी आध्यात्मिक पिताओं से परामर्श करता है, उनके साथ रहने और उनके मार्गदर्शन से लाभ उठाने का प्रयास करता है। क्योंकि गिवाहों के बिना, अपनी इच्छा से, अकेले रहना, या उन लोगों के साथ रहना जो आध्यात्मिक संघर्ष में अनुभवहीन हैं, अत्यंत खतरनाक है। दुष्ट (शैतान) के पास कई चालाकियाँ, कई छिपे हुए जाल और दुश्मन द्वारा हर जगह बिछाए गए विभिन्न प्रकार के फंदे हैं। इसलिए, जहाँ तक संभव हो, हर संभव तरीके से उन पुरुषों के साथ रहने और उनसे बार-बार बातचीत करने का प्रयास करना चाहिए जो आध्यात्मिक मामलों में पारंगत हों, ताकि, भले ही कोई अपनी शैशवावस्था और अपनी आध्यात्मिक आयु की अभी-अभी अपूर्ण अवस्था के कारण सच्चे ज्ञान की अपनी रोशनी से वंचित हो, उसके साथ चलकर, वह अंधकार में न चले, न ही फंदों और जालों के खतरों का शिकार हो, और न ही मन के उन जानवरों का शिकार बने जो अंधकार में छिपे रहते हैं, और जो दिव्य वचन के बुद्धिमान दीपक के बिना उसमें चलते हैं, उन्हें मोहित और भ्रष्ट कर देते हैं।

२२. परन्तु यदि तुम चाहते हो, हे मेरे पुत्र, कि तुम अपने भीतर आत्मिक प्रकाश और मार्गदर्शन का अपना दीपक प्राप्त करो और धारण करो, ताकि तुम इस युग के घोर अन्धकार में बिना किसी बाधा के चल सको *'और तुम्हारे पाँव प्रभु के मार्ग पर चलें'* (भजन संहिता ११८:१३३), और, भविष्यद्वाणी के वचन के अनुसार, *'तुमने* सुसमाचार के मार्ग की *बहुत लालसा की* है'—अर्थात्, परम उत्साही विश्वास के साथ सबसे उत्तम सुसमाचार की आज्ञाओं को पूरा करने और उनकी लालसा तथा प्रार्थना के माध्यम से प्रभु के दुखों में सहभागी होने के लिए—तो मैं तुम्हें इसे प्राप्त करने का एक अद्भुत मार्ग दिखाऊँगा, जो आत्मा की एक नैतिक, आंतरिक प्रवृत्ति में निहित है, जिसके लिए शारीरिक श्रम या वीरता के कारनामों की आवश्यकता नहीं है, बल्कि आत्मा की सावधानीपूर्वक परिश्रम, मन की प्रभुता (अंदर की सभी चीज़ों पर) और ध्यानपूर्वक विचार, जिसे ईश्वर के भय और प्रेम की सहायता प्राप्त है, इस मनोवृत्ति के साथ, आप आसानी से शत्रुओं की सेना को भागने पर मजबूर कर सकते हैं, ठीक वैसे ही जैसे धन्य दाऊद ने किया था, जिन्होंने ईश्वर में विश्वास और भरोसे के साथ, एक ही विदेशी दैत्य को मारकर, शत्रुओं और उनके लोगों के अंधकार को भागने पर मजबूर कर दिया।

२३. मेरे शब्द तीन शक्तिशाली और प्रबल विदेशी दैत्यों के लिए हैं, जिन पर मानसिक होलोफेर्नेस की संपूर्ण विरोधी शक्ति टिकी हुई है; यदि उन्हें उखाड़ फेंका और मार गिराया जाए, तो दुष्ट आत्माओं की संपूर्ण शक्ति पूरी तरह से समाप्त हो जाएगी। दुष्टों के ये तीन दैत्य, जो शक्तिशाली प्रतीत होते हैं, वे वही हैं जिनका हमने पहले ही उल्लेख किया है—अज्ञानता, सभी बुराइयों की जननी, भूल, उसकी बहन, साथी और सहायक; और, अंधकार से आत्मा के लिए काले वस्त्र और एक कफ़न बुनना—आलस्य (उदासीनता), जो पहले दो का समर्थन करता है और उन्हें मजबूत बनाता है, उन्हें स्थिरता प्रदान करता है, और यह सुनिश्चित करता है कि सबसे लापरवाह आत्मा में, बुराई, मानो, जड़ जमा ले और मूर्त रूप धारण कर ले। क्योंकि उदासीनता (उपेक्षा), विस्मृति और अज्ञानता के माध्यम से ही सभी अन्य भावों की नींव और मज़बूत होती है और बढ़ती है। एक-दूसरे के परस्पर सहायक होने और एक-दूसरे के बिना मौजूद नहीं रह पाने के कारण, वे (जब एकजुट हो जाते हैं) विरोधी की प्रबल शक्तियों और दुष्ट की मुख्य सेनानायकों का निर्माण करते हैं। उनके माध्यम से, दुष्टात्माओं का समूह आत्मा के भीतर अपने जाल बुनती है और अपनी योजनाओं को अंजाम देने में सफल हो जाती है।

२४. यदि आप अपनी वासनाओं पर विजय प्राप्त करना चाहते हैं और मानसिक आक्रमणकारियों की भीड़ को आसानी से भगाना चाहते हैं, तो प्रार्थना और ईश्वर की सहायता से, अपने विचारों को अपने भीतर एकत्रित करें और अपने हृदय की गहराई में उतरें; वहाँ, शैतान के इन तीन शक्तिशाली दिग्गजों को खोजें—अर्थात्, विस्मृति, उदासीनता, और आलस्य, और अज्ञानता—क्योंकि इन्हीं को पोषण देकर ही अन्य सभी वासनाएँ स्व-संतुष्ट हृदयों और अनियंत्रित आत्माओं में कार्य करती हैं, फलती-फूलती हैं और मजबूत होती हैं। कठोर आत्म-परीक्षण और एक सतर्क मन के द्वारा, ऊपर से मिली सहायता से, आप निश्चित रूप से इन वासनाओं को पाएँगे (अपने भीतर पहचानिए, समझिए)—जो दूसरों के लिए अज्ञात और कल्पना से भी परे हैं, सभी दुष्ट भावों में सबसे विनाशकारी—उनके विरोध में सत्य के हथियारों से: एक अच्छी स्मृति, जो सभी अच्छाइयों का स्रोत है; प्रबुद्ध ज्ञान, जिससे एक सतर्क आत्मा अज्ञानता के अंधकार को दूर करती है; और एक जीवंत उत्साह जो आत्मा को जगाता है और मोक्ष की ओर ले जाता है। तब, इन ही सद्गुणों के हथियारों को धारण करके, पवित्र आत्मा की शक्ति से, हर प्रार्थना और विनती के साथ, आप बहादुरी और साहस से उपर्युक्त तीन दिग्गजों, उन मानसिक आक्रमणकारियों, अर्थात्: पर विजय प्राप्त करेंगे (उन्हें पूरी तरह से दूर भगा देंगे)। ऊपर की बातों पर मन लगाकर, हमेशा *'जो कुछ भी सत्य है, जो कुछ भी आदरणीय है, जो कुछ भी न्यायसंगत है, जो कुछ भी पवित्र है, जो कुछ भी मनोहर है, और जो कुछ भी अच्छी प्रतिष्ठा वाला है—यदि कोई सद्गुण है और यदि कोई प्रशंसनीय बात है'* पर मनन करते हुए (फिलिप्पियों 4:8), आप सबसे हानिकारक विस्मृति को दूर भगा देंगे; प्रबुद्ध स्वर्गीय मार्गदर्शन द्वारा, आप अज्ञानता के विनाशकारी अंधकार को नष्ट करेंगे; और सबसे प्रबल उत्साह के साथ, हर अच्छे काम के लिए तैयार, आप अधर्मी उदासीनता (आलस्य) को दूर कर देंगे, जो आत्मा में बुराई को जड़ जमाने का कारण बनती है। आप इन सद्गुणों को केवल अपनी इच्छा से नहीं, बल्कि ईश्वर की शक्ति और पवित्र आत्मा की सहायता से, बहुत ध्यान और प्रार्थना के माध्यम से प्राप्त कर सकते हैं; और इस प्रकार उन्हें प्राप्त करने के बाद, आप उनके द्वारा, ऊपर बताए गए दुष्ट के तीन शक्तिशाली दैत्यों से खुद को मुक्त कर सकते हैं। जब सक्रिय अनुग्रह की शक्ति के द्वारा, सच्चे ज्ञान, परमेश्वर के वचन के स्मरण, और धर्मी उत्साह का (तीनहरा) मिलन आत्मा में बनता है और वहाँ सावधानी से संरक्षित रहता है, तो आत्मा से भूलने, अज्ञानता और उदासीनता का सबसे छोटा सा भी निशान मिट जाएगा। वे शून्य में विलीन हो जाएँगे, जबकि हमारे प्रभु मसीह यीशु में अनुग्रह, जिसकी महिमा और सामर्थ्य युगानुयुग हो, अंततःआत्मा में राज्य करेगा। आमीन।

१. मार्क द एसेटिक के लेखन पर भिक्षु निकोलस का उत्तर

ईश्वर का धन्यवाद, उसी का धन्यवाद! उसकी अतुलनीय और अकथनीय देन का धन्यवाद, कि उसने, आत्मा के प्रति प्रेम से—जो प्रबल वासनाओं से पीड़ित और सर्वशक्ति से वंचित थी—उस पर एक दयालु इच्छा से कृपा की जो पूर्णतःईश्वर को समर्पित थी; मैं कहता हूँ, आपकी सदाचारी और ईश्वर-संयुक्ता आत्मा के द्वारा, जिसके माध्यम से एक दिव्य प्रकाश से परिपूर्ण और एक आध्यात्मिक आकर्षण लिए हुए एक तेजस्वी चिंगारी मुझे भेजी गई—और श्रम और प्रेम के शब्दों के दीपक द्वारा, जो ईश्वर से युक्त मन से उत्पन्न हुए, प्रभु ने मेरी आत्मा को सबसे गहरे अंधकार और तूफ़ान से छीन लिया है, और यह संभव किया है कि मेरे विचार उन तीन दिग्गजों से प्रकट होकर जोश के साथ उठे। निश्चय ही, ये दैत्य महान और उग्र हैं, और वे मानव जाति पर हमला करना कभी बंद नहीं करते। तो फिर, वे पृथ्वी पर मुझसे भी अधिक क्रूरता और उग्रता से किस पर काबू पाते हैं, और अपनी इच्छा से अभी भी किस पर अधिकार करते हैं? परन्तु वह जो जीवित प्राणियों के विनाश में कभी प्रसन्न नहीं होता, ने मुझ पर दया दिखाई है और मुझ पर अपना धीरज तथा करुणामय प्रेम प्रदर्शित किया है; और, उस धर्मपरायण विचार को जगाकर, मेरी इच्छा को जाग्रत किया है, जो गहरी निद्रा में सोई हुई थी, और मुझे उपर्युक्त दैत्यों को इंगित कर प्रकट किया है। मैं कहता हूँ, सबसे पहले, भूल, जिसने आदम को स्वर्ग से बाहर निकाल दिया; क्योंकि यदि उसने प्रभु की आज्ञा को नहीं भूला होता, तो वह ऐसी महिमा से नहीं गिरता; और निराशा, जिसके आगे वह झुक गया और इस प्रकार अपनी पत्नी की बात मान ली; और अज्ञानता, जिसके कारण उसे यह एहसास नहीं हुआ कि वह क्या था और क्या बन गया था। प्रभु यीशु ने, पवित्र आत्मा— —के द्वारा, जो आप में वास करते हैं, इन तीन आत्माओं को मेरे लिए स्पष्ट कर दिया है। क्योंकि वास्तव में उन्होंने एक द्वधारी तलवार भेजी, जो परमेश्वर का वचन है, और उसने मेरे मन को बड़ी शांति के साथ दो भागों में चीर दिया। वह यहीं नहीं रुके, बल्कि आपके शब्दों के माध्यम से उन्होंने वास्तव में मेरी इच्छा में एक विशेष आध्यात्मिक मिठास भर दी। तो, मैं कितने मुँहों और कितनी जीभों से उस सच्चे प्रभु परमेश्वर को उसकी उन आशीषों के लिए योग्य रूप से धन्यवाद दे सकता हूँ, जिनकी आपने मुझे याद दिलाई है, या, फिर, मुझे ये कुशल और प्रेमपूर्ण वचन भेजने के लिए, जो आत्मा को सत्य की खोज करने और परमेश्वर की आज्ञाओं का पालन करने के लिए प्रेरित करते हैं, और, अंत में, उन लोगों के लिए जो परमेश्वर के मार्ग पर चलना चाहते हैं, जो अनंत जीवन की ओर ले जाता है, [उससे हुए] महान लाभ के लिए? क्योंकि आपके वचनों ने न केवल मुझे, बल्कि उन सभी को भी लाभ पहुँचाया है जिन्होंने उन्हें सुना है—उनके मन को बहुत प्रबुद्ध किया है, और उन्होंने इन स्पष्ट रूप से व्यक्त किए गए वचनों से बहुत लाभ उठाया है। इसलिए, ये शब्द स्वयं वास्तविकता जितने ही सत्य सिद्ध हुए, और इन्हें केवल शब्दों के रूप में नहीं, बल्कि हमारी आँखों के सामने एक स्पष्ट वास्तविकता के रूप में सुना गया; क्योंकि इस वचन ने तुरंत ही हमारी इच्छाओं में एक महान सतर्कता भर दी। और चूँकि यह वचन प्रभावशाली था, यह निष्क्रिय नहीं रहा, बल्कि तुरंत अनाज के कान लाया और पका फल दिया; फिर भी यह यहीं नहीं रुका, क्योंकि हम में से कोई भी इससे कभी तृप्त नहीं होता, जैसा कि ईश्वर जानता है: मैं इसे चाहे जितनी बार भी पढ़ूँ, मेरी दीन आत्मा कभी संतुष्ट नहीं होती। इसलिए, आपकी पवित्रता के मध्यस्थता द्वारा, मुझे यह वरदान मिले कि यह दिव्य चिंगारी मुझ में बनी रहे और पूर्वोक्त दैत्यों को अंत तक पूरी तरह से नष्ट कर दे; कहीं ऐसा न हो कि मैं स्वयं को भूल जाऊं और अपनी ही मनमानी सनक की विश्वासघात से, स्वयं को पूर्वोक्त बुराई में डाल दूं और अपने शत्रुओं का शिकार बन जाऊं। परन्तु मैं प्रभु यीशु मसीह में विश्वास करता हूँ, जो आप में वास करते हैं, कि आपकी धार्मिकता और उन लोगों के निमित्त जो आपकी भाँति परिश्रम करते हैं, वे मुझे तुच्छ नहीं ठहराएंगे, न ही मुझे उपर्युक्त दैत्यों के मुँह में डाल देंगे; परन्तु, अपने पवित्र सेवकों के द्वारा मुझे निरन्तर स्मरण दिलाते हुए, वे आपकी पवित्र प्रार्थनाओं के द्वारा मुझे, एक दीन आत्मा को, अपना मार्ग दिखाएंगे। इसलिए, मैं आपकी कृपामयी और पूजनीय आत्मा से विनती और प्रार्थना करता हूँ कि आप इस बात के लिए मुझ पर तिरस्कार न करें कि मैंने आशा के साथ, आपकी पवित्रता को यह उत्तर लिखने की हिम्मत की; बल्कि, पिता की खुली हुई दया को देखकर, भले ही मेरी लिखाई खराब हो, मैं आपसे निवेदन और प्रार्थना करता हूँ कि आप हर घड़ी मेरा स्मरण करें; क्योंकि प्रभु हमेशा का दौरा करते हैं [उनका] दृढ़ और अनवरत सेवक—अर्थात्, आपकी धन्य आत्मा का पवित्र मन—ताकि आपकी पवित्रता के द्वारा, मैं भी, अपने दुष्टों से मुक्त होकर, परोपकारी मसीह ईश्वर की कृपा से, एक सुखद परिणाम प्राप्त करूँ, जिनको, पिता और पवित्र आत्मा के साथ, युगानुयुग सम्मान और शक्ति प्राप्त हो। आमेन।

2. संत मार्क की शिक्षाएँ, उनके अन्य लेखों से ली गई

1. विश्वास केवल मसीह में बपतिस्मा लेने में ही नहीं, बल्कि उसकी आज्ञाओं का पालन करने में भी निहित है। पवित्र बपतिस्मा वास्तव में हमें पूर्णता प्रदान करता है, लेकिन यह उन लोगों को पूर्ण नहीं बनाता जो आज्ञाओं का पालन नहीं करते हैं।

2. यदि, बपतिस्मा के बाद भी, हम पाप के अधीन रहते हैं, तो यह इसलिए नहीं है कि बपतिस्मा अपूर्ण था, बल्कि इसलिए है कि हम आज्ञाओं के प्रति लापरवाह हैं और अपनी इच्छा के अनुसार आत्म-संतुष्टि में रहते हैं। बपतिस्मा के बाद भी न तो ईश्वर और न ही शैतान हमारी इच्छा को बाध्य करते हैं। बपतिस्मा में हमें रहस्यमय तरीके से पाप की दासता से मुक्त कर दिया गया है, जैसा कि लिखा है: *'क्योंकि जीवन के आत्मा का विधान मुझे पाप और मृत्यु के विधान से स्वतंत्र कर चुका है'* (रोमियों 8:2); फिर भी, हमें शुद्ध करने वाले की आज्ञाओं की हमारी उपेक्षा के कारण, हम पाप की शक्ति के अधीन हो गए हैं, और चूँकि हमने आज्ञाओं का पालन नहीं किया है, हम फिर से शत्रु के कैदी बन गए हैं।

३. एक व्यक्ति, अपनी स्वतंत्र इच्छा से, वहीं रहता है जहाँ वह रहना चुनता है, भले ही उसे बपतिस्मा दिया गया हो, क्योंकि आत्म-निर्णय को बाध्य नहीं किया जा सकता। जब धर्मग्रंथ कहता है, *'आत्मिक रूप से दीन लोग परमेश्वर के राज्य के वारिस होंगे'* (मत्ती 11:12), तो यह किसी की अपनी स्वतंत्र इच्छा के बारे में बात करता है, ताकि हम में से प्रत्येक बपतिस्मा के बाद, स्वयं को बुराई की ओर मुड़ने से रोक सके, बल्कि जो अच्छा है उसमें स्थिर रह सके। जो विश्वासियों ने आज्ञाओं को पूरा करने की शक्ति प्राप्त की है, उन्हें प्रभु आज्ञा देते हैं कि वे उनका पालन करने का प्रयास करें, ताकि वे पीछे न हटें।

४. आध्यात्मिक प्रयास आज्ञाओं से अलग कोई चीज़ नहीं हैं। वे ही आज्ञाएँ हैं। मुझे आज्ञाओं से अलग तपस्या के कर्म दिखाएँ। यदि आप प्रार्थना की ओर इशारा करते हैं – वह एक आज्ञा है; यदि आप विचारों को वश में करने की बात करते हैं – वह भी एक आज्ञा है ('संयमी और चौकस रहो'); यदि आप उपवास और रात्रि जागरण की बात करते हैं, वह भी एक आज्ञा है; यदि आप आत्म-त्याग की ओर इशारा करते हैं, यह एक आज्ञा है (उसे स्वयं का त्याग करना चाहिए), और आप तपस्या के जिस भी पुण्य कार्य का उल्लेख करें – वे सभी आज्ञाएँ हैं। (तपस्या का उद्देश्य आज्ञाओं का सबसे सटीक पालन है)।

५. पवित्र बपतिस्मा पूर्ण मुक्ति प्रदान करता है (पाप की दासता से, ठीक वैसे ही जैसे पश्चाताप करता है); फिर भी, किसी जुनून से स्वयं को फिर से बाँधना, या आज्ञाओं का पालन करके मुक्त रहना, यह व्यक्ति की अपनी स्वतंत्र इच्छा का विषय है। यदि कोई विचार किसी भी पापी आनंद की ओर भटकता है, तो यह व्यक्ति की अपनी स्वतंत्र इच्छा के कारण होता है, न कि किसी बाध्यता के कारण। शास्त्र के अनुसार, हमारे पास *'तर्कों को ध्वस्त करने' की* शक्ति है (2 कुरिन्थियों 10:4)। एक दुष्ट विचार, जो लोग अपने भीतर उसे ध्वस्त करते हैं, उनके लिए ईश्वर के प्रति प्रेम का संकेत है, पाप का नहीं; क्योंकि विचार का उत्पन्न होना पाप नहीं है, बल्कि मन का उसके साथ मैत्रीपूर्ण संवाद करना पाप है। यदि हम उससे प्रेम नहीं करते, तो फिर हम उस पर क्यों अटकते हैं? यह असंभव है कि कोई ऐसी चीज़ जिससे हम दिल से नफरत करते हैं, हमारी अपनी बुरी मिलीभगत के बिना हमारे दिल के साथ लंबी बातचीत करे।

6. जब, पवित्र बपतिस्मा के बाद, आज्ञाओं का पालन करने में सक्षम होते हुए भी, हम उनका पालन करने में विफल रहते हैं, तो—चाहे हमारी इच्छा न भी हो—हम पाप के कैदी बन जाते हैं (हम एक बार फिर पाप की दासता में गिर जाते हैं), जब तक कि, पश्चाताप के द्वारा, हम परमेश्वर से विनती नहीं करते, और उनके सभी आज्ञाओं की ओर नहीं मुड़ते, और वह हमारी स्वैच्छिक इच्छा के पाप को नष्ट कर देते हैं।

7. आप बपतिस्मा के द्वारा मसीह के वस्त्र पहिन चुके हैं (गलातियों 3:27) और आपके पास किलेबंदी को ढाँटने के लिए सामर्थ्य और हथियार हैं (2 कुरिन्थियों 10:4)। लेकिन यदि, उन पर अधिकार होते हुए भी, आप उनके हमले के पहले ही संकेत पर उन्हें नष्ट नहीं करते हैं, तो यह स्पष्ट है कि, अविश्वास के द्वारा, आप कामुकता में लिप्त हैं, उन्हें अपनी सहमति दे रहे हैं और उनका सहयोगी बन रहे हैं। ऐसे व्यवहार के लिए आप स्वयं दोषी हैं।

8. कभी-कभी, हमारी सहमति के बिना, कोई दुष्ट विचार—जिससे हम एक चोर की तरह घृणा करते हैं—अचानक हम पर हमला कर देता है और जबरदस्ती हमारे मन को बंदी बना लेता है। हालाँकि, इस बात का निश्चित हो जाओ कि यह विचार भी हमारे भीतर से ही उत्पन्न हुआ है; क्योंकि या तो, हमारे बपतिस्मा के बाद, हमने स्वयं को ऐसे दुष्ट विचार के हवाले कर दिया—हालाँकि हमने उस पर अमल नहीं किया—या, अपनी ही इच्छा से, हम अपने भीतर बुराई के कुछ बीज पालते हैं, जिसके कारण दुष्ट हमें अपने वश में कर लेता है, और वह, इन दुष्ट बीजों से हमें कैद करके, तब तक नहीं जाएगा जब तक हम उन्हें दूर नहीं कर देते; जबकि बुराई करने से हमारे भीतर रहने वाला दुष्ट विचार तब दूर हो जाएगा जब हम ईश्वर को पश्चाताप के योग्य कर्म अर्पित करेंगे। इस प्रकार, अनैच्छिक, परेशान

करने वाले विचार के लिए आप स्वयं दोषी हैं, क्योंकि, पहली ही हलचल पर उसे दूर करने और अपने मन को उससे शुद्ध करने की शक्ति होने के बावजूद, आपने ऐसा नहीं किया, बल्कि अपनी इच्छा से उससे बातचीत की, भले ही आपने उस पर अमल नहीं किया। (यह एक आरामदायक जगह पर आता है, एक पुराने परिचित, एक दोस्त के पास।)

९. जब तुम अपने हृदय में वह सहायता देखते हो जो तुम्हें दी गई है, तो निश्चय जानो कि यह अनुग्रह बाहर से नहीं आया है, बल्कि वह अनुग्रह जो बपतिस्मा में रहस्यमय तरीके से तुम्हें प्रदान किया गया था, अब इस हद तक प्रभाव में आ गया है कि, उस विचार से घृणा करने के बाद, तुम उससे मुँह मोड़ गए हो।

10. प्रभु मसीह ने, (बपतिस्मा की कृपा से) हमें हर प्रकार की हिंसा से मुक्त कर, हमारे हृदय में उत्पन्न होने वाले विचारों को निषेध नहीं किया, ताकि कुछ विचार, जिन्हें हृदय से घृणा की जाती है, तुरंत ही उखाड़े जा सकें, जबकि अन्य विचार उतने ही अनुपात में बने रह सकते हैं जितना हम उनसे प्रेम करते हैं, ताकि मसीह की अनुग्रह और मानवीय इच्छा दोनों प्रकट हो सकें—कि क्या प्रेम अनुग्रह के लिए परिश्रम करता है, या विचार आत्म-तुष्टि के लिए।

11. किसी प्रकार के दुष्ट संबंध की तरह, हमारी वासनाएँ और हमारे विचारों की प्रवृत्तियाँ एक-दूसरे के साथ मिलकर काम करती हैं। प्रत्येक विचार, अपने प्रेमी में जड़ जमा लेने के बाद, उसे उसके पड़ोसी को सौंप देता है, ताकि एक व्यक्ति, जो आदत से पहले की ओर दृढ़ता से खिंचा हुआ है, बाद वाली से पहले ही अपनी इच्छा के विरुद्ध बह जाता है। क्योंकि अहंकार से भरा हुआ कोई घमंड से कैसे बच सकता है? या कौन, जो नींद में मग्न होकर और सुख-भोग में डूबकर, व्यभिचार के विचारों से नष्ट नहीं हो जाएगा? या कौन, जो लालच में डूब गया, वह दया की कमी से बंधा नहीं रहेगा? और जो इन सभी बातों में आनंद लेते हैं, वे चिड़चिड़ाहट और क्रोध से कैसे बचेंगे?

12. और एक बार जब हम अनुग्रह प्राप्त कर लेते हैं, तो यह हमारी अपनी स्वतंत्र इच्छा पर निर्भर है कि हम देह के अनुसार चलें या आत्मा के अनुसार। लेकिन मानव प्रशंसा से प्रेम करते और शरीर को संतुष्ट करते हुए आत्मा के अनुसार चलना असंभव है; और न ही यह संभव है कि देह के अनुसार जिया जाए, जबकि मन ही मन वर्तमान की अपेक्षा भविष्य को प्राथमिकता दी जाए। इसलिए, हमें मानवीय प्रशंसा और शरीर के आराम से घृणा करनी चाहिए, जिनके द्वारा, हमारी इच्छा के बिना भी, दुष्ट विचार हमारे भीतर जड़ जमा लेते हैं, और प्रभु से ईमानदारी से कहना चाहिए: *'मैंने उन्हें पूर्ण घृणा से घृणा की है; वे मेरे शत्रु थे'* (भजन संहिता 138:22)।

13. कैथोलिक चर्च में बपतिस्मा लेने वालों पर, बपतिस्मा के माध्यम से रहस्यमय रूप से अनुग्रह प्रदान किया जाता है और वह गुप्त रूप से उनमें निवास करता है; फिर, जब वे आज्ञाओं को पूरा करते हैं और अपने हृदयों में आशा को पोषित करते हैं, तो यह विश्वासी में प्रकट होता है, प्रभु के वचन के अनुसार: *'जो मुझ पर विश्वास करता है, उसके भीतर से जीवित जल की नदियाँ बहेंगी। उन्होंने यह पवित्र आत्मा के विषय में कहा, जिसे उनके नाम पर विश्वास करने वालों को प्राप्त करना था'* (यूहन्ना 7:38, 39)।

14. अपने ही अविश्वास के कारण, हर कोई पाप की शक्ति का शिकार हो जाता है, *'अपनी ही वासना से बहकाया और फुसलाया जाता है; और जब वासना गर्भ धारण कर लेती है, तो वह पाप को जन्म देती है; और पाप, जब वह पूरी तरह से बढ़ जाता है, तो मृत्यु को जन्म देता है'* (याकूब 1:14-15)। किसी की अपनी वासना से मन का पाप उत्पन्न होता है, और इससे उसके अनुरूप कोई कर्म करना follows। जैसे ही कोई (बपतिस्मा के दायित्व से) भटक जाता है, वह तुरंत पाप का कैदी बन जाता है।

15. पवित्र आत्मा बपतिस्मा के क्षण में दृढ़ता से विश्वास करने वालों को दिया जाता है, लेकिन हम स्वयं ही उसे अपने भीतर दुखी करते और बुझा देते हैं। इसीलिए प्रेरित आज्ञा देते हैं: *'आत्मा को न बुझाओ'* (1 थिस्स. 5:19), *'उस पवित्र आत्मा को दुखी न करो, जिसने तुम्हें छुटकारा के दिन के लिए मुहर लगाई है'* (इफिसियों 4:30)। इसका यह अर्थ नहीं है कि हर बपतिस्मा लेने वाला व्यक्ति जिसने इस प्रकार अनुग्रह प्राप्त किया है, अपरिवर्तनीय हो जाता है और उसे अब पश्चाताप की आवश्यकता नहीं है, बल्कि यह कि बपतिस्मा से, मसीह के वरदान के द्वारा, हमें सभी आज्ञाओं को पूरा करने के लिए परमेश्वर की पूर्ण अनुग्रह प्रदान की गई है; फिर भी बाद में, जो कोई भी इस अनुग्रह को संस्कारात्मक रूप से प्राप्त करता है लेकिन आज्ञाओं का पालन करने में विफल रहता है, जिस हद तक वे उन्हें अनदेखा करते हैं, वह पाप की शक्ति के अधीन बना रहता है क्योंकि, लापरवाही के कारण, कार्य करने की शक्ति प्राप्त करने के बाद भी, वे आवश्यक कार्य करने में विफल रहते हैं। चाहे हम शीघ्रता से या धीरे-धीरे सिद्ध होना चाहें, हमें मसीह में पूरी तरह से विश्वास करना चाहिए और उसकी सभी आज्ञाओं को पूरा करना चाहिए, क्योंकि ऐसा करने की शक्ति हमें उसी से प्राप्त हुई है। हम जितने अधिक विश्वास द्वारा परमेश्वर की आज्ञाओं का पालन करते हैं, उतना ही पवित्र आत्मा हमारे भीतर अपने फल उत्पन्न करता है। संत पौलुस के अनुसार, आत्मा के फल हैं: *'प्रेम, आनन्द, शान्ति, धीरज, सौम्यता, भलाई, विश्वासयोग्यता, नम्रता और आत्म-संयम'* (गलातियों 5:22)।

१६. अत; यदि कोई विश्वासी, आज्ञाओं के अनुसार जीवन यापन करते हुए, इस के अनुरूप कोई विशेष आध्यात्मिक प्रभाव प्राप्त कर ले, तो उसे विश्वास करना चाहिए कि उसे ऐसा करने की शक्ति पहले ही प्राप्त हो चुकी है, क्योंकि बपतस्मिा में उसे आत्मा की अनुग्रह प्राप्त हुई—जो न केवल गुप्त और आध्यात्मिक गुणों, बल्कि प्रकट गुणों का भी स्रोत है। और कोई भी सदाचारी यह न सोचे कि वह केवल अपनी ही शक्ति से कुछ भी अच्छा कर सकता है; क्योंकि एक अच्छा मनुष्य, अपने आप से नहीं, बल्कि *'दिल के भले भण्डार से भलाई निकालता है'* (मत्ती 12:35), वचन कहता है, जिसका तात्पर्य भण्डार से विश्वासियों के हृदयों में छिपे हुए पवित्र आत्मा से है।

१७. प्रेरित के वचन के अनुसार यह निश्चित रूप से जानकर कि उसमें अपना बपतस्मिा के समय से ही छिपा हुआ मसीह है, वह इस संसार की सभी चीज़ों को त्यागकर, अपने ही हृदय में वास करता है, *और 'उसकी पूरी चौकसी करता है'* (नीतिवचन ४:२३)। क्योंकि *'वही है जो अपनी इच्छा के अनुसार हम में इच्छा करने और कर्म करने का कार्य करता है'* (फिलि. 2:13)। 'इच्छा करना और करना' इस वाक्यांश के द्वारा—प्रेरित यह दिखाते हैं कि सद्गुणों का अभ्यास करने की इच्छा हमारी आत्म-नियंत्रण पर निर्भर करती है, जबकि ईश्वर के बिना उनका अभ्यास करना या पापों को जड़ से उखाड़ना असंभव है। *'मेरे बिना तुम कुछ भी नहीं कर सकते'* (यूहन्ना 15:5) यह कथन भी यही अर्थ व्यक्त करता है। फिर भी, सभी बातों में हमारी अपनी भागीदारी भी आवश्यक है।

18. प्रत्येक व्यक्ति का राजसी मन सबसे पहले भीतर निवास करने वाले मसीह से, हृदय के गुप्त मंदिर से, अच्छा और हितकर परामर्श प्राप्त करता है, और उसे एक सदाचारी जीवन के माध्यम से व्यवहार में लाता है, जिसे बदले में अच्छे विचारों के द्वारा उसी मसीह को—जिन्होंने यह परामर्श दिया—समर्पित किया जाता है।

19. जो आशीषें धर्मी पुनरुत्थान के समय प्राप्त करेंगे, वे उच्च स्थान पर हैं; परन्तु उनकी सगाई और उसका प्रथम फल पहले से ही विश्वासियों के हृदयों में आध्यात्मिक रूप से कार्य कर रहा है, ताकि भविष्य के प्रति निश्चिंत होकर, हम वर्तमान की सभी चीज़ों को तुच्छ समझें और मृत्यु तक परमेश्वर से प्रेम करें। इसलिए, प्रेरित ने यह नहीं कहा: 'तुम को निकट आना है', *बल्कि 'तुम सियोन पर्वत और जीवते परमेश्वर के नगर, स्वर्गीय यरूशलेम के निकट आ गए हो'* (इब्रानियों 12:22): क्योंकि हम सभी को बपतस्मिा के द्वारा इसके लिए सक्षम बनाया गया है; फिर भी केवल वे ही इसके प्राप्त करने के योग्य माने जाते हैं जो विश्वास में स्थिर हैं—वे जो मसीह के प्रेम के लिए प्रतिदिन मरते हैं, अर्थात् वे जो इस सांसारिक जीवन के सभी विचारों से ऊपर उठकर कुछ और नहीं सोचते, सिवाय इसके कि मसीह के प्रति पूर्ण प्रेम कैसे प्राप्त किया जाए। सभी से बढ़कर इसको खोजते हुए, संत पौलुस ने कहा: *'मैं आगे बढ़ता हूँ और यदि मैं इसे अभी तक प्राप्त नहीं कर पाया हूँ तो मैं इसे प्राप्त करूँगा—जैसे मसीह ने इसे प्राप्त किया है'*, अर्थात्, कि मैं वैसे ही प्रेम करूँ जैसे मसीह ने मुझसे प्रेम किया है (फिलि. 3:12)। और जब उन्होंने इस प्रेम को प्राप्त कर लिया, तो वे अब किसी और चीज़ के बारे में सोचना नहीं चाहते थे—न तो शरीर के दुखों के बारे में और न ही सृष्टि के आश्चर्यों के बारे में—बल्कि उन्होंने सब कुछ पीछे छोड़ दिया, और कहते हैं: *'मसीह के प्रेम से हमें कौन अलग कर सकता है?'* (रोमियों 8:35-39)। वह अब किसी भी चीज़ के बारे में सोचना नहीं चाहता था, बल्कि केवल वहीं (हृदय में, मसीह के प्रेम में) निवास करना चाहता था।

20. प्रेरित ने कहा कि हमारे भीतर आत्मा का प्रथम फल है (रोमियों 8:23), जो हमारी क्षमता के माप को इंगित करता है; क्योंकि हम पूर्ण आज्ञाकारिता के सिवा आत्मा के पूर्ण कार्य को धारण नहीं कर सकते। जैसे सूर्य, पूर्ण होने के कारण, अपने भीतर से एक ऐसी कृपा प्रदान करता है जो पूर्ण, सरल और सभी के लिए समान है, फिर भी प्रत्येक व्यक्ति को सूर्य का प्रकाश केवल उसी हद तक प्राप्त होता है, जितना कि उसकी आँख शुद्ध होती है—वैसे ही पवित्र आत्मा ने भी, बपतस्मिा के क्षण से ही, उन लोगों को जो उस पर विश्वास करते हैं, अपनी सभी क्रियाओं और वरदानों को प्राप्त करने में सक्षम बनाया है: हालाँकि, उनके वरदान सभी में एक ही स्तर पर काम नहीं करते हैं, बल्कि प्रत्येक को आज्ञाओं के पालन के अनुसार दिए जाते हैं, इस हद तक कि वे अच्छे कर्मों के माध्यम से गवाही देते हैं और मसीह में अपने विश्वास के माप को प्रदर्शित करते हैं।

21. शैतानी प्रलोभन केवल एक विचार—एक दुष्ट वस्तु (कर्म) की धारणा—में ही निहित है, जो हमारे मन में प्रवेश करने के लिए, हमारे अविश्वास के माध्यम से ही एक मार्ग पाता है। क्योंकि जब, किसी भी बात की चिंता न करने, बल्कि *'अपना हृदय पूरी सावधानी से रखना'* (नीतिवचन 4:23) और अपने भीतर स्वर्ग के राज्य की खोज करने का आज्ञा प्राप्ति के बाद, मन हृदय से और उपर्युक्त प्रयास से विमुख हो जाता है; यह तुरंत शैतान के प्रलोभन के आगे झुक जाता है और दुष्ट सलाह के प्रति संवेदनशील हो जाता है। फिर भी, तब भी, शैतान के पास हमारे विचारों को गति देने की कोई शक्ति नहीं है, अन्यथा वह हम पर कोई दया न दिखाता, हर बुराई का विचार जबरदस्ती हमारे मन में डालता और हमें किसी अच्छी बात के बारे में सोचने भी न देता; परन्तु उसमें केवल पहले विचार में एक विकृत प्रवृत्ति

डालने की शक्ति है, ताकि वह हमारी आंतरिक प्रकृति की परीक्षा कर सके—कि वह किस ओर झुकती है, उसकी सलाह की ओर या परमेश्वर की आज्ञा की ओर, क्योंकि ये एक-दूसरे के विरोधी हैं।

२२. जब एक घृणित विचार भीतर जड़ जमा लेता है और गहरा हो जाता है, तो यह हमारी ओर से किसी नए स्वभाव पर नहीं, बल्कि एक पूर्व धारणा पर निर्भर करता है। ऐसा विचार एकाग्रचित्त अवस्था में स्थिर रहता है; हृदय का आक्रोश इसे विचारों और जुनून की भीड़ में बदलने से रोकता है। एकनिष्ठ (नग्न) विचार, जिसे आत्म-सचेत व्यक्ति घृणा करता है, उसमें मन को अनेक विचारों में खींचने की शक्ति नहीं होती। यह केवल तभी होता है जब हृदय इसकी सहानुभूति करता है। अत: यदि हम सभी सहानुभूति का पूर्ण रूप से त्याग कर दें, तो पहले से स्वीकृत छवियों का (मन में) प्रकट होना हमेशा एकनिष्ठ रहेगा, और अब वह हमें नुकसान नहीं पहुँचा सकता या हमारे अंतरात्मा को दोषी नहीं ठहरा सकता।

23. जब मन पूर्व-निर्मित प्रतिमाओं (छापों) के प्रति अपने प्रतिरोध की व्यर्थता को समझ जाता है और ईश्वर के समक्ष अपने अतीत के पापों को स्वीकार कर लेता है, तो यह प्रलोभन तुरंत ही दूर हो जाता है, और मन को एक बार फिर हृदय की बात सुनने और प्रार्थना के द्वारा उसे *'सम्पूर्ण सावधानी से'* सुरक्षित रखने की शक्ति प्राप्त होती है, तथा वह हृदय के सबसे भीतरी और सुरक्षित कक्षों में प्रवेश करने का प्रयास करता है, जहाँ दुष्ट विचारों की हवाएँ नहीं होतीं, जो उग्रता से भड़ककर आत्मा और शरीर को कामुकता की तेज धाराओं और अशुद्धता की बाढ़ में नहीं फेंकतीं, कोई चौड़ा और विशाल मार्ग नहीं है, जो सांसारिक ज्ञान के शब्दों और छवियों से पक्का किया गया हो, जो उसका अनुसरण करने वालों को बहका देता है, भले ही वे बहुत बुद्धिमान क्यों न हों; क्योंकि आत्मा के सबसे शुद्ध, भीतरी कक्षों और मसीह के घर में हमारा मन, नग्न होकर और इस संसार से कुछ भी साथ न लाते हुए प्रवेश करता है, चाहे वह तर्क द्वारा उचित ठहराया गया हो या नहीं, अपोस्तल द्वारा नामित *'इन तीनों'* को छोड़कर: *'विश्वास, आशा और प्रेम'* (1 कुरिन्थियों 13)। इसलिए, जो कोई सत्य से प्रेम करता है और पूरे मन से परिश्रम करना चाहता है, वह, जैसा कि ऊपर कहा गया है, पूर्व-निर्मित छापों से बह नहीं जाना चाहिए, बल्कि अपने हृदय की सुने, आंतरिक जीवन प्राप्त करने में प्रगति करें और ईश्वर के निकट आएं, बशर्ते कि वे प्रार्थना के श्रम और ईश्वर के अनुसार जीवन जीने की उपेक्षा न करें; क्योंकि जो व्यक्ति हर दिन सावधानी से स्वयं को—न केवल बाहरी रूप से बल्कि आंतरिक रूप से भी—कल्पनाओं की उड़ान और सांसारिक सुखों से रोकता है, वह अपने हृदय से श्रम करने में विफल नहीं हो सकता।

24. बुराई के प्रलोभनों से मुक्त होना केवल अपरिवर्तनीय प्रकृति की विशेषता है, न कि मानव स्वभाव की। और आदम शैतान के प्रलोभन के अधीन था, फिर भी उसमें इसे मानने या न मानने की शक्ति थी। विचारों का प्रलोभन न तो पाप है और न ही धार्मिकता, बल्कि यह हमारी स्वच्छंद प्रकृति का प्रकटीकरण है। इसीलिए हमें प्रलोभित करने की अनुमति है, ताकि जो लोग आज्ञा की ओर झुकते हैं उन्हें उनकी निष्ठा के लिए (विजयी) मुकुटों के योग्य माना जा सके, जबकि जो लोग आत्म-संतुष्टि की ओर झुकते हैं उन्हें उनकी अविश्वासनीयता के लिए निंदा के योग्य दिखाया जा सके। लेकिन हमें यह भी जानना चाहिए: हमारे भीतर होने वाले हर बदलाव के तुरंत बाद यह निर्णय नहीं लिया जाता कि हमने खुद को सक्षम साबित किया है या अस्वीकृति के योग्य, परन्तु जब, इस जीवन में हमारे पूरे प्रवास के दौरान, हमें परीक्षाओं से परखा जाता है—जीतना और पराजित होना, गिरना और उठना, भटकना और सही मार्ग पर वापस लाया जाना—तब, केवल तभी, हमारे प्रस्थान के दिन, सब कुछ ध्यान में रखने के बाद, हमें उसी के अनुसार परखा या सराहा जाएगा। इसलिए, परीक्षा अपने आप में पाप नहीं है। बिल्कुल नहीं! क्योंकि यद्यपि यह अनैच्छिक रूप से (हमारी सहमति के बिना) हमारे सामने एक ही विचार में चीजों को प्रस्तुत करता है, फिर भी हमें प्रभु से आध्यात्मिक क्रिया की शक्ति प्राप्त है, और यह हमारी अपनी शक्ति में है कि हम, सबसे पहले विचार में, यह विवेक कर लें कि क्या हानिकारक है और क्या लाभदायक है, और उन विचारों को अस्वीकार या स्वीकार करें जो आवश्यकता से नहीं, बल्कि आत्मा के स्वभाव से बढ़ते हैं।

25. चूँकि हमारी आत्मा, इंद्रिय-कामना और व्यर्थता से घिरी हुई, मूर्खता की गहराई में गिर गई है, वह न तो धर्मग्रंथ के आज्ञाओं को मानती है, न ही प्राकृतिक विवेक को, और न ही अनुभवी लोगों की सलाह को, बल्कि केवल अपने ही इरादों का अनुसरण करती है। इसलिए, अपने भीतर बुराई के इन कारणों को पालते हुए, वह उनमें निहित कर्मों से मुक्त नहीं हो सकती। जिस हद तक कोई व्यक्ति भविष्य के आशीर्वादों के संबंध में प्रभु पर विश्वास करता है, मानव महिमा और सुखों को ठुकरा देता है, उसी हद तक वह अपने विचारों को नियंत्रित रखता है, और उसी हद तक वह सुखों से प्रेम करने वाले व्यक्ति की तुलना में अधिक शांति में रहता है; इसीलिए हम अपने विचारों और अपने जीवन के तरीके दोनों में एक-दूसरे से भिन्न हैं।

२६. यह निश्चित रूप से जान लो कि प्रभु सभी लोगों के हृदयों में देखता है: और जो लोग दुष्ट विचारों की पहली झलक से ही घृणा करते हैं, उनके लिए वह तुरंत मध्यस्थता करता है, जैसा कि उसने वादा किया है, और एक बार जागृत हो जाने पर, उनके भटकते विचारों की भीड़ को उनके मन और अंतरात्मा को कलंकित करने नहीं देता; जबकि जो लोग ईश्वर में विश्वास और आशा के द्वारा ऐसे विचारों की पहली उत्प्रेरणा को दबाते नहीं हैं, बल्कि उनमें आनंद लेते हैं, उन्हें वह अविश्वासियों के रूप में बिना सहायता के छोड़ देता है, ताकि वे बाद के विचारों से परास्त हो जाएँ, जिन्हें वह दूर नहीं करता, क्योंकि वह देखता है कि हम उनकी पहली आकर्षण को नफरत करने के बजाय पसंद करते हैं।

27. कोई भी शक्ति हमें जबरदस्ती अच्छा या बुरा करने के लिए मजबूर नहीं करती है, लेकिन हम अपनी स्वैच्छिक इच्छा से जिसकी सेवा करते हैं—चाहे ईश्वर की या शैतान की—वह हमें उसी क्षेत्र की ओर प्रोत्साहित करता है जो उसके अधिकार में आता है।

28. हमारे कार्यों की उत्पत्ति विचार की दो प्रवृत्तियों से होती है, जिन पर मन का ध्यान नहीं जाता: मानवीय प्रशंसा और शरीर की संतुष्टि, जो, जब वे हमारी इच्छा की सहमति से पहले अनैच्छिक रूप से हम पर हावी हो जाती हैं, तो वे न तो कोई दुर्गुण हैं और न ही कोई सद्गुण, बल्कि केवल हमारी इच्छा की उस प्रवृत्ति के प्रकटीकरण के रूप में काम करती हैं, जिसकी ओर हम आकर्षित होते हैं। प्रभु चाहते हैं कि हम निंदा सहें और स्वयं को कष्ट दें, जबकि शैतान इसके विपरीत चाहता है; और इसलिए, जब हम उपर्युक्त प्रवृत्तियों में आनंदित होते हैं, तो यह स्पष्ट है कि, प्रभु की अवज्ञा करके, हम कामुकता की भावना की ओर झुक रहे हैं; जबकि जब हम इन प्रवृत्तियों पर शोक करते हैं, तो यह स्पष्ट है कि हमने संकीर्ण मार्ग को चुनकर, ईश्वर की ओर मुड़ रहे हैं। इसीलिए लोगों पर इन प्रलोभनों को आने दिया जाता है, ताकि जो परमेश्वर की आज्ञा से प्रेम करते हैं और उसमें आनंदित होते हैं, वे अपनी इच्छा को मसीह के अधीन कर सकें, और वह, उनके भीतर प्रवेश पाकर, उनके मन को सत्य की ओर निर्देशित कर सकें। इसके विपरीत को भी समझें: जो लोग इसके विपरीत, मानवीय महिमा और शरीर की तुष्टि से प्रेम करते हैं, वे शैतान को एक अवसर देते हैं; और वह, अंदर का रास्ता पाकर, हमें अपने बुरे सुझाव देता है, और जैसे ही हम उन विचारों में आनंद लेते हैं, वह उनमें वृद्धि करना बंद नहीं करता, जब तक कि हम उपरोक्त दोनों आसक्तियों से हृदय से घृणा करने न लगें। लेकिन हम उनसे इतना प्यार करते हैं कि हम न केवल उनके लिए सदाचार को त्याग देते हैं, बल्कि जब अवसर मिलता है, तो हम इन्हीं वासनाओं को एक-दूसरे के लिए भी बदल लेते हैं: कभी हम दिखावे के लिए शरीर को कष्ट देते हैं, तो कभी कामुक सुख के लिए अपमान सहते हैं। हालाँकि, जब हम लापरवाही से उन पर सहमति दे देते हैं, तो हम उन्हें बहाल करने के साधन खोजने लगते हैं। घमंड और शारीरिक सुख का सार ही धन का प्रेम है, जो दैवीय धर्मग्रंथ के अनुसार, सभी बुराइयों की जड़ है (1 तीमुथियुस 6:10)।

29. प्रभु ने आदम से यह नहीं कहा: *'जिस दिन तुम इसे खाओगे, उसी दिन मैं तुम्हें मार डालूँगा'*, बल्कि, उन्हें चेतावनी देते हुए, उन्होंने उन्हें धार्मिकता के विधान की भविष्यवाणी की, यह कहते हुए: *'जिस दिन तुम इसे खाओगे, उसी दिन तुम निश्चित रूप से मर जाओगे'* (उत्पत्ति 2:17)। और सामान्य रूप से, प्रभु ने यह विधान किया है कि हर कर्म के लिए, चाहे वह अच्छा हो या बुरा, एक उपयुक्त प्रतिफल स्वाभाविक रूप से मिलना चाहिए, न कि किसी विशेष आदेश द्वारा, जैसा कि आध्यात्मिक विधान को न जानने वाले कुछ लोग मानते हैं।

30. हमें याद रखना चाहिए कि यदि हम अपने किसी सह-विश्वासी से बुराई के रूप में घृणा करते हैं, तो परमेश्वर भी हमसे बुराई के रूप में घृणा करेंगे; और यदि हम किसी को पापी मानकर पश्चाताप से वंचित करते हैं, तो हमें भी (परमेश्वर द्वारा) पापियों के रूप में अस्वीकार कर दिया जाएगा, और यदि हम अपने पड़ोसी के पापों को क्षमा नहीं करते हैं, तो उसी तरह हमें भी अपने पापों के लिए क्षमा नहीं मिलेगी। इस कानून की घोषणा करते हुए, हमारे विधानदाता, मसीह ने हमसे कहा: *'न्याय मत करो, और तुम्हारा न्याय नहीं किया जाएगा; दोषी मत ठहराओ, और तुम्हें दोषी नहीं ठहराया जाएगा; क्षमा करो, और तुम्हें क्षमा किया जाएगा'* (लूका 6:37)। इस नियम को जानते हुए, पवित्र प्रेरित पौलुस ने स्पष्ट रूप से कहा: *'क्योंकि जब तुम दूसरे का न्याय करते हो, तब तुम स्वयं को दोषी ठहराते हो'* (रोमियों 2:1)। और नबी, यह न जानते हुए, ने परमेश्वर से पुकारा: *'क्योंकि तू हर एक मनुष्य को उसके कामों के अनुसार बदलेगा'* (भजन संहिता 61:13); और एक अन्य नबी, परमेश्वर की ओर से बोलते हुए, कहते हैं: *'बदला मेरा है; मैं प्रतिफल दूँगा, यहोवा का कहना है'* (व्यवस्थाविवरण 32:35)।

31. दानियेल नबी की पुस्तक में लिखा है: *'दान-पुण्य से अपने पापों का प्रायश्चित करो, और उदारता* (गरीबों के प्रति) *से अपनी अधर्म का'* (दानियेल 4:24)। लेकिन शायद आप कहेंगे: मेरे पास पैसे नहीं हैं; मैं गरीबों के प्रति उदारता कैसे दिखा सकता हूँ? आपके पास पैसे नहीं हैं, लेकिन आपकी इच्छाएँ हैं; उनका त्याग करें और उनका उपयोग अच्छा करने के लिए करें। क्या आप अपने भौतिक हाथ से दान नहीं दे सकते? एक धर्मी इच्छा के साथ दान दें: प्रभु के वचन के अनुसार, *'यदि आपका भाई आपके विरुद्ध पाप करता है, तो उसे क्षमा करें'* (लूका 17:3), और यह आपके

लिए एक महान धर्मपरायणता का कार्य होगा। यदि हम परमेश्वर से पापों की क्षमा चाहते हैं, तो हमें हर बार पाप करने पर, सभी के प्रति इसी प्रकार आचरण करना चाहिए, ताकि जो कहा गया है (सुसमाचार में) वह पूरा हो सके: *'क्षमा करो, और तुम्हें क्षमा किया जाएगा'* (लूका 6:37)। यदि कोई, जिसके पास पैसा है, गरीबों को दान देता है तो यह एक महान कार्य है; लेकिन अपने पड़ोसियों पर उनके (हमारे विरुद्ध किए गए) पापों के लिए दया दिखाना और भी अधिक महान है, पापों की क्षमा प्राप्त करने के लिए, क्योंकि आत्मा, अपनी प्रकृति से ही, शरीर से अधिक श्रेष्ठ है। हालाँकि, यदि हम परमेश्वर से (अपने पापों की) क्षमा माँगते हैं और हमें जो मांगा है वह कई गुना अधिक मिल चुका है, ताकि इस कारण से हमें यहाँ कोई हानि न हुई हो, फिर भी अपने पड़ोसियों को इस उपहार में भागीदार बनने से इनकार करते हैं, तो इस कृत्य से ही हम उस दुष्ट दास के समान हो जाते हैं, जिसने अपने स्वामी से दस टैलेंट के ऋण की क्षमा प्राप्त करने के बाद भी अपने पड़ोसी को, जो उस पर केवल सौ डेनारी का ऋणी था, क्षमा नहीं किया; जिसे प्रभु ने, मानो कानून के अनुसार न्याय करते हुए, कहा: *'हे दुष्ट दास! मैंने तेरा सारा कर्ज़ इसलिए माफ कर दिया क्योंकि तूने मुझसे विनती की थी; क्या तुझे भी अपने साथी दास पर दया नहीं करनी चाहिए थी और जैसा मैंने तेरा कर्ज़ माफ किया, वैसे ही उसका भी माफ नहीं करना चाहिए था?' 'और वह क्रोधित हो गया,'* ऐसा कहा गया है, *'और उसे यातना देने वालों के हवाले कर दिया, जब तक उसने सारा कर्ज़ चुका नहीं दिया।'* और वह इससे यह निष्कर्ष निकालता है, कहते हुए: *'इस प्रकार मेरे स्वर्गीय पिता भी आपके साथ करेंगे, यदि आप अपने भाई के अपराधों को हृदय से क्षमा नहीं करेंगे'* (मत्ती 18:32-35)।

32. प्रभु ने कहा: *'हाय तुम धनवानों!'* (लूका 6:24)। परन्तु ऐसा कहते हुए, वह उन सभी की निंदा नहीं करते जो धनी बन गए हैं, क्योंकि उनमें से कुछ ऐसे हैं जो वास्तव में जानते हैं कि अपनी संपत्ति का प्रबंधन उस ईश्वर की इच्छा के अनुसार कैसे करें जिसने इसे प्रदान किया है, और जो, जैसा कि शास्त्र कहता है, इस जीवन में सौ गुना प्राप्त करते हैं; जैसे: धन्य अब्राहम और धर्मी अय्यूब, जो दयालु होने के कारण, यहाँ और आने वाले युग में और भी धनी हो गए, परन्तु वह (जैसा कि हमने ऊपर कहा है) उन लोगों को डाँटते हैं, जो लोभी स्वभाव के होकर, परमेश्वर के वरदानों को—चाहे वे सांसारिक वस्तुओं के संबंध में हों या उसकी विभिन्न अनुदानों के—अपने लिए कर लेते हैं, और अपने पड़ोसी पर दया करने से इनकार करते हैं। क्योंकि यह प्रभु द्वारा न दी गई संपत्ति नहीं है जो इसके स्वामी को हानि पहुँचाती है, बल्कि अन्याय से उत्पन्न लालच और उसकी जननी, – अर्थात् निर्दयता – जिसे पूरी तरह से टालकर, दृढ़ विश्वासियों ने इन वर्तमान आशीर्वादों को पूरी तरह से त्याग दिया है, यह इसलिए नहीं कि उन्होंने जल्दबाजी में परमेश्वर की सृष्टि से नफरत करना शुरू कर दिया है, बल्कि मसीह में विश्वास के कारण, जिन्होंने उन्हें ऐसा करने की आज्ञा दी, और अपनी दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति उनके लिए उनसे प्राप्त की। कोई और संपत्ति के बिना भी धनी हो सकता है, जिसके पास अपने धन में वचन या ज्ञान, या दया दिखाने का कोई अन्य साधन हो, जो सभी को प्रदान किया गया है, क्योंकि वह इसे गरीबों को बांटने के लिए प्राप्त करता है।

33. जिन्होंने पाप किया है, उन्हें निराश नहीं होना चाहिए। ऐसा न हो। क्योंकि हम अपने दुष्ट कर्मों की अधिकता के कारण नहीं, बल्कि पश्चाताप करने और मसीह के चमत्कारों को पहचानने से इनकार करने के कारण दण्डित होते हैं, जैसा कि स्वयं सत्य गवाही देता है: *'क्या तुम सोचते हो,'* प्रभु कहते हैं, *'कि ये गलीलवासी, जिनका लहू पिलातुस ने उनकी बलि के साथ मिला दिया था, क्या ये यरूशलेम में रहने वाले सभी लोगों से अधिक पापी थे?' 'नहीं,' मैं तुमसे कहता हूँ 'परन्तु यदि तुम पश्चाताप नहीं करते, तो तुम भी नाश हो जाओगे। या वे अठारह जिन पर शिलोआम का मीनार गिर पड़ा और उन्हें कुचल दिया—क्या तुम सोचते हो कि वे यरूशलेम में रहने वाले सब लोगों से अधिक पापी थे?' नहीं, मैं तुम्हें कहता हूँ; परन्तु यदि तुम पश्चाताप न करोगे, तो तुम भी नाश हो जाओगे'* (लूका 13:2–5)। क्या तुम देखते हो कि हमें पश्चाताप की कमी के कारण दोषी ठहराया गया है?

34. पश्चाताप, मेरा मानना है, समय या किसी विशेष कर्म से सीमित नहीं है, बल्कि मसीह की आज्ञाओं के अनुसार, उनके द्वारा पूरा होता है। कुछ आज्ञाएं स्वभाव से अधिक सामान्य हैं, जो कई विशिष्ट आज्ञाओं को समाहित करती हैं, और एक साथ दुष्टता के कई पहलुओं को समाप्त करती हैं; उदाहरण के लिए, जैसा कि धर्मग्रंथ में कहा गया है: *'जो तुम से मांगे, उसे दो; और जो तुम्हारा ले ले, उससे वापस न मांगो'* (लूका 6:30), और: *'जो तुम से उधार लेना चाहे, उससे मुंह न फेरना'* (मत्ती 5:42); ये विशिष्ट आज्ञाएँ हैं। हालाँकि, वह सामान्य आज्ञा जो इन सभी को समाहित करती है, यह है: *'अपने सामान बेच दो और गरीबों को दे दो'*, और: *'अपना सूली उठाओ और मेरे पीछे चलो'* (मत्ती 19:21), यहाँ 'सूली' का अर्थ हम पर आने वाली पीड़ाओं को सहना है। क्योंकि जिसने सब कुछ गरीबों को दे दिया है और अपना क्रूस उठा लिया है, उसने एक ही साथ उपरोक्त सभी आज्ञाओं को पूरा कर लिया है। इसी प्रकार: *'मैं चाहता हूँ,'* प्रेरित कहते हैं, *'कि पुरुष हर जगह प्रार्थना करें, पवित्र हाथ उठाकर'* (1 तीमु. 2:8), और इसका सामान्य सिद्धांत (प्रभु): *'अपने भीतर के कक्ष में जाओ, और अपने पिता से प्रार्थना करो जो गुप्त में है'* (मत्ती 6:6), और

फिर: *'बिना थके प्रार्थना करो'* (1 थिस्सलुनीकियों 5:17): जो अपने भीतर के कक्ष में प्रवेश करता है और बिना थके प्रार्थना करता है, उसने इस प्रकार हर जगह की गई प्रार्थना को पूरी तरह से पूरा कर लिया है। यह भी कहा गया है: *'व्यभिचार मत करो, हत्या मत करो'* और इसी तरह, और इन सब का सामान्य सिद्धांत यह है: *'परमेश्वर के ज्ञान के विरुद्ध उठने वाली हर एक ऊँची चीज़ और हर तर्क को ध्वस्त करना'* (2 कुरिन्थियों 10:5)। जो तर्क-वितर्क को ध्वस्त करता है, उसने उपर्युक्त सभी दुष्कर्मों के विरुद्ध एक बाधा खड़ी कर ली है। इसीलिए जो परमेश्वर से प्रेम करते हैं और अपने विश्वास में दृढ़ हैं, वे स्वयं को सामान्य आज्ञाओं का पालन करने के लिए प्रेरित करते हैं, और साथ ही परिस्थितियों के अनुसार उत्पन्न होने वाली विशिष्ट आज्ञाओं की भी अवहेलना नहीं करते। और इसलिए मेरा मानना है कि पश्चाताप का कार्य निम्नलिखित तीन सद्गुणों के माध्यम से पूरा होता है: विचारों का शुद्धिकरण, अखंड प्रार्थना, और हम पर आने वाली विपत्तियों में धैर्य; और यह सब न केवल बाहरी रूप से, बल्कि मन में भी किया जाना चाहिए, ताकि जो लोग लंबे समय तक परिश्रम करते हैं वे इसके द्वारा निर्लिप्त हो जाएँ। और चूँकि प्रायश्चित का कार्य, जैसा कि हमारे प्रवचन ने दिखाया है, उपरोक्त तीन गुणों के बिना पूरा नहीं हो सकता, मैं इसलिए मानता हूँ कि प्रायश्चित उन सभी के लिए हमेशा उपयुक्त है जो मोक्ष प्राप्त करना चाहते हैं, पापियों और धर्मी दोनों के लिए, क्योंकि पूर्णता का ऐसा कोई स्तर नहीं है जिसके लिए उपरोक्त सद्गुणों का अभ्यास आवश्यक न हो; उनके माध्यम से, शुरुआती लोगों को धार्मिकता का परिचय मिलता है, मध्यवर्ती स्तर के लोग इसमें प्रगति करते हैं, और सिद्धजन इसमें स्थापित हो जाते हैं।

35. प्रभु सभी को आज्ञा देते हैं: *'पश्चाताप करो'* (मत्ती 4:17), ताकि आध्यात्मिक और प्रगति कर रहे लोग भी इस आज्ञा की अवहेलना न करें, और न ही सबसे सूक्ष्म और छोटे-छोटे अपराधों को भी अनदेखा करें; क्योंकि कहा गया है: *'जो तुच्छ बात को तुच्छ जानता है, वह धीरे-धीरे गिर जाएगा'* (सिरैकस 19:1)। और यह न कहो: 'एक आध्यात्मिक व्यक्ति कैसे गिर सकता है?' ऐसा ही रहने पर, वह गिरता नहीं है; लेकिन जब वह शत्रु की एक छोटी सी बात को भी अपने भीतर प्रवेश करने देता है और पश्चाताप किए बिना उसी में बना रहता है, तो वह छोटी सी बात जड़ जमाकर बढ़ जाती है, और अब वह उससे अलग रहने को सहन नहीं करती, बल्कि उसे एक ज़ंजीर की तरह अपने साथ एकता में खींच लेती है— —एक पुरानी आसक्ति जो उसे ज़बरदस्ती खींचती है। और यदि प्रार्थना के माध्यम से उससे (इस बुराई से) संघर्ष करने के बाद, वह उसे अस्वीकार कर देता है, तो वह अपनी वर्तमान आध्यात्मिक परिपक्वता के स्तर पर बना रहेगा। लेकिन यदि, बेशक, उस पर काबू पाने वाली शक्ति के बढ़ते दबाव से वह (अपने सामान्य स्तर से) भटक जाता है, जिससे संघर्ष और प्रार्थना का श्रम कम हो जाता है, तो वह अनिवार्य रूप से अन्य जुनूनों से भी भटक जाएगा। और इस प्रकार, धीरे-धीरे भटकते हुए, प्रत्येक अपनी-अपनी भटकन की हद तक, वे दैवीय सहायता से वंचित हो जाते हैं, और अंततः उन्हें उस शक्ति की बाध्यता से गंभीर पापों में धकेल दिया जाता है जिसने पहले उन्हें अपनी पकड़ में ले लिया था—कभी-कभी तो अनिच्छा से भी। लेकिन आप मुझसे कहेंगे: क्या वह बुराई के शुरुआती चरणों में रहते हुए ईश्वर से यह विनती नहीं कर सकता था कि वह परम बुराई में न पड़े? और मैं तुमसे कहता हूँ कि वह कर सकता था, लेकिन, उस छोटी चीज़ को तुच्छ समझकर और, अपनी स्वतंत्र इच्छा से, उसे अपने भीतर एक तुच्छ चीज़ के रूप में स्वीकार कर लेने के कारण, वह अब इसके लिए प्रार्थना नहीं करता, यह न समझते हुए कि यह छोटी चीज़ किसी बड़ी चीज़ की शुरुआत और कारण है: ऐसा ही अच्छाई और बुराई दोनों के साथ होता है! लेकिन जब वह वासना और प्रबल हो जाती है और अपनी इच्छा की सहायता से उसमें पैर जमा लेती है, तो वह जबरदस्ती, उसकी इच्छा के विरुद्ध, उसके खिलाफ उठ खड़ी होती है। तब, अपनी दुर्भाग्य को समझकर, वह उस दुश्मन के खिलाफ युद्ध छेड़ते हुए ईश्वर से प्रार्थना करता है, जिसकी वह अज्ञानता के कारण पहले रक्षा करता था और दूसरों के सामने उसकी वकालत करता था। हालाँकि, कभी-कभी, प्रभु द्वारा सुने जाने पर भी, उसे कोई मदद नहीं मिलती, क्योंकि यह मनुष्य के सोचे अनुसार नहीं, बल्कि हमारे लाभ के लिए ईश्वर के विधान के अनुसार आता है। क्योंकि वह, हमारी दुर्बलता और तुच्छता को जानते हुए, हमें कष्टों के माध्यम से बहुत मदद करते हैं, ताकि, बिना पीड़ा के बचाए जाने के बाद, हम उन्हीं पापों को फिर से उत्सुकता से न करें। और इस प्रकार हम यह मानते हैं कि जो कुछ हम पर आता है उसे सहना और पश्चाताप की अवस्था में बने रहना आवश्यक है, जैसा कि सबसे उपयुक्त है।

36. आप इसका विरोध करेंगे: जिन लोगों ने सचमुच ईश्वर को प्रसन्न किया है और पूर्णता प्राप्त की है, उन्हें और किस पश्चाताप की आवश्यकता है? मैं भी आपके साथ इस बात को स्वीकार करता हूँ कि ऐसे लोग रहे हैं और हैं भी, लेकिन ध्यान से सुनें और आप समझ जाएँगे कि उन्हें भी इसकी आवश्यकता है। प्रभु ने किसी स्त्री को वासना की दृष्टि से देखने को व्यभिचार के बराबर बताया है, अपने पड़ोसी पर क्रोध को हत्या के समान कहा है, और यह भी दिखाया है कि हम व्यर्थ बातों के लिए भी हिसाब देंगे (मत्ती 5:28, 29; 12:36)। तो फिर, कौन है जो दृष्टि से उत्पन्न होने वाली वासना से मुक्त है, बिना कारण के कभी किसी पड़ोसी से क्रोधित नहीं हुआ है, और न ही कभी किसी लापरवाह

शब्द का दोषी पाया गया है, ताकि उसे पश्चाताप की कोई आवश्यकता न हो? क्योंकि भले ही कोई वर्तमान में ऐसा न हो, वह कभी ऐसा था; और इसलिए, पश्चाताप के संबंध में, कोई मृत्यु तक कर्जदार बना रहता है। लेकिन मान लीजिए कि कुछ ऐसे लोग हैं जो इन कमज़ोरियों से मुक्त हैं, जैसा कवि कहते हैं, और जो जन्म से ही सभी दुष्टता से मुक्त रहे हैं, हालाँकि यह संत पौलुस के वचनों के अनुसार असंभव है: *'सभी ने पाप किया है और परमेश्वर की महिमा से रह गए हैं, और उसकी कृपा से निःशुल्क धर्मी ठहराए गए हैं'* (रोमियों 3:23, 24)। हालाँकि, यदि ऐसे लोग मौजूद भी हों, तो भी वे आदम की संतान ही हैं; सभी पाप के अधीन पैदा हुए थे और इसलिए, परमेश्वर के न्याय द्वारा, मृत्यु के लिए दण्डित हैं और मसीह के बिना उद्धार नहीं पा सकते।

37. संसार की शुरुआत से अब तक जीए हुए लोगों पर विचार करें, और आप पाएँगे कि जिन्होंने परमेश्वर को प्रसन्न किया, उनमें धार्मिकता का रहस्य पश्चाताप के द्वारा पूरा हुआ। जब तक उन्होंने इसे ठुकराया नहीं, तब तक किसी को दोषी नहीं ठहराया गया, और जब तक उन्होंने इसे नहीं चाहा, तब तक कोई धर्मी नहीं ठहराया गया। शिमशोन, शाऊल और एली, अपने बेटों सहित, जो पहले ही कुछ स्तर की पवित्रता प्राप्त कर चुके थे, परन्तु पश्चाताप से थक गए थे, ने पहले तो उसे खो दिया, और फिर, जब क्षमा का समय बीत गया, तो एक भयानक मृत्यु प्राप्त की। यदि शैतान हमसे लड़ना कभी बंद नहीं करता, तो पश्चाताप को कभी नहीं छोड़ना चाहिए। संत स्वयं को अपने पड़ोसियों के लिए भी इसका अभ्यास करने के लिए प्रेरित करते हैं, क्योंकि वे सक्रिय प्रेम के बिना पूर्ण नहीं हो सकते,

38. यदि पश्चाताप दया की याचना है, तो जिनके पास है उन्हें इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि यह न सुन लें: *'तुम तो पहले से ही तृप्त हो'* (1 कुरिन्थियों 4:8); और भी अधिक, ज़रूरतमंदों को अपनी ज़रूरत के अनुसार माँगनी चाहिए, क्योंकि *'जो कोई माँगता है, वह पाता है'* (मत्ती 7:8)। यदि जो (दूसरों पर) दया दिखाता है, उस पर स्वयं दया की जाती है, तो, मेरा मानना है, कि संपूर्ण संसार पश्चाताप से ही टिका हुआ है, जब किसी को किसी दूसरे द्वारा दैवीय सहायता मिलती है। पश्चाताप के द्वारा, ईश्वर ने नीनेवे के लोगों को बचाया, लेकिन सदोम के लोगों को नष्ट कर दिया, जिन्होंने उनकी उपेक्षा की थी।

39. भले ही हम मृत्यु तक पश्चाताप में परिश्रम करें, तब भी हम अपना कर्तव्य पूरा नहीं कर पाएंगे, क्योंकि हमने स्वर्ग के राज्य के योग्य कुछ भी नहीं किया है। क्योंकि जैसे हम खाते, पीते, बोलते और सुनते हैं, वैसे ही हमें स्वाभाविक रूप से पश्चाताप भी करना चाहिए। कभी-कभी, जो व्यवस्था के अनुसार मृत्यु का पात्र है, उसे मृत्यु-दंड दिया जाता है; परन्तु जो जीवित रहता है, वह प्रायश्चित के निमित्त विश्वास से जीवित रहता है। भले ही हम अपने पापों से नहीं, बल्कि उल्लंघन के पाप से शुद्ध हुए हैं, बपतिस्मा के द्वारा हम शुद्ध हुए हैं; शुद्ध हो जाने पर, हमें आज्ञाएँ मिली हैं; परन्तु जो बाद वाली को पूरा करने में विफल रहता है, उसने पहली वाली को कलंकित किया है, *'अपने पहिले के पापों की शुद्धि को भूलकर'* (2 पतरस 1:9), जिससे कोई भी कभी मुक्त नहीं होता, भले ही उन्होंने कभी किसी आज्ञा की अवहेलना न की हो। इसलिए, सभी के लिए पश्चाताप आवश्यक है: क्योंकि यह उन पापों को प्रकट करता है जो कभी जानबूझकर किए गए थे, लेकिन अब अनजाने में होते हैं, जब हम अपनी वासनाओं से घृणा करने और उनसे मुंह मोड़ने लगते हैं। जो इसे सीमित करता है, वह अतीत की ओर लौटता है और पुरानी अवज्ञाओं को नया कर देता है।

४०. हमारे सक्रिय जीवन के संबंध में, हम पश्चाताप के बिना कुछ भी योग्य नहीं कर सकते, लेकिन (प्रभु) हमारे इरादों के कारण हम पर महान दया दिखाते हैं। जो कोई भी स्वयं को प्रेरित करता है और अपनी मृत्यु तक पश्चाताप में दृढ़ रहता है, भले ही वह किसी प्रकार से पाप करे, वह अपनी आत्म-अनुशासन के कारण बचाया जाएगा, क्योंकि प्रभु ने सुसमाचार में इसका वादा किया है। जो कोई यह कहता है कि उसे पश्चाताप की आवश्यकता नहीं है, वह स्वयं को धर्मी मानता है और शास्त्र में उसे 'बुराई का पुत्र' कहा जाता है; क्योंकि, अपनी धार्मिकता पर अपने विश्वास के द्वारा, ऐसा प्रतीत होता है मानो उसने बिना समझे ही पश्चाताप कर लिया हो, वह क्रूस पर चढ़ने के बजाय, अपनी वासनाओं के साथ मेलजोल रखता है: क्योंकि घमंड और अहंकार वासनाएँ हैं। जो घमंडी है वह उद्धार नहीं पा सकता, क्योंकि पवित्रशास्त्र में लिखा है: *'परन्तु तिरस्कार करने वाला और घमण्डी मनुष्य, और अहंकारी, व्यर्थ हो जाएँगे'* (हाबक्कूक 2:5)। यदि नम्रता सिद्ध लोगों को किसी भी प्रकार की हानि नहीं पहुँचाती, तो वह इसके कारण—पश्चाताप—को न छोड़े। विश्वासी अब्राहम और धर्मी अय्यूब ने, अपनी नम्रता में, स्वयं को धूल और राख कहा, और ये शब्द नम्रता का संकेत हैं। तीन युवक, जो वास्तव में उदार और महान शहीद थे, उन्होंने भड़कती लपटों के बीच अपने विश्वास की गवाही दी, और अपने बारे में कहा: 'हमने पाप किया है और बुरा किया है,' उन्होंने पहले के बुरे कर्मों से पश्चाताप किया, जबकि वे पहले से ही सिद्ध थे, और उनके लगभग पूरे गीत का सार पश्चाताप ही है। तो, यदि वे भी जो परमेश्वर को सबसे अधिक प्रिय थे और अपने कर्मों में सिद्ध सिद्ध हुए, अपनी मृत्यु तक पश्चाताप की सहायता के सहारे रहे, तो फिर कौन अपनी ही योग्यता पर भरोसा कर सकता है और धार्मिकता के बहाने पश्चाताप को तुच्छ समझ सकता है?

४१. हमें उन लोगों को क्षमा करना चाहिए जिन्होंने हमसे अन्याय किया है, यह जानते हुए कि अन्याय को क्षमा करने का पुरस्कार किसी भी अन्य सद्गुण के पुरस्कार से बढ़कर है। और यदि हम ऐसा करने में असमर्थ हैं, क्योंकि पाप हम पर हावी हो गया है, तो हमें, जागरण करते और दुख सहते हुए, ईश्वर से प्रार्थना करनी चाहिए कि वह हम पर दया करें और हमें ऐसी शक्ति प्रदान करें। साथ ही, हर समय, हर जगह और हर प्रयास में, हमारा एक ही इरादा होना चाहिए: कि जब दूसरों से विभिन्न अपराधों का सामना हो, तो हम दुख करने के बजाय प्रसन्न हों; और हमें केवल या बिना कारण के प्रसन्न नहीं होना चाहिए, बल्कि इसलिए प्रसन्न होना चाहिए क्योंकि हमें (हमारे विरुद्ध) पाप करने वालों को क्षमा करने और अपने स्वयं के पापों के लिए क्षमा प्राप्त करने का अवसर मिला है। क्योंकि इसमें ही ईश्वर का सच्चा ज्ञान निहित है, जो सभी अन्य ज्ञान से अधिक विशाल है और जिसके माध्यम से हम ईश्वर से प्रार्थना कर सकते हैं और हमारी प्रार्थना सुनी जा सकती है; यह विश्वास का फल है; इससे मसीह में हमारा विश्वास सिद्ध होता है; इसके माध्यम से हम अपना क्रूस उठा सकते हैं और मसीह का अनुसरण कर सकते हैं, यह प्रथम और महानतम आज्ञाओं की जननी है; क्योंकि इसके द्वारा हम परमेश्वर से अपने पूरे हृदय से प्रेम कर सकते हैं और अपने पड़ोसी से स्वयं के समान प्रेम कर सकते हैं; इसके लिए हमें उपवास करना चाहिए, जागना चाहिए और अपने शरीर को वश में रखना चाहिए, ताकि हमारा हृदय और आंतरिक स्वभाव खुल जाए, इसे अपने भीतर ग्रहण करे और इसे फिर से बाहर न फेंके। तब, क्योंकि हम अपने पड़ोसी के पापों को क्षमा करते हैं, हम पाएँगे कि पवित्र बपतिस्मा में हम पर गुप्त रूप से प्रदान की गई अनुग्रह हमारे भीतर काम करेगी, अब छिपे हुए तरीके से नहीं, बल्कि हमारे चेतना और भावनाओं को बोधगम्य तरीके से।

४२. जो लोग कानून के अक्षर में निपुण हैं, वे केवल दूसरों को नुकसान पहुँचाने वालों को ही दोषी मानते हैं, जबकि आत्मा से प्रबुद्ध लोग, भले ही दूसरों द्वारा अन्याय किए जाने पर भी, स्वयं को दोष देते हैं—जब तक कि वे स्वेच्छा से आनन्द के साथ अन्याय को सहन न करें—और वे स्वयं को न केवल इसके लिए दोष देते हैं, बल्कि इसलिए भी कि उनकी दुखद स्थितियाँ उनके अपने अतीत के दोषों से उत्पन्न होती हैं, भले ही एक पाप दूसरे से हल्का हो सकता है। जो कोई भी अपने लिए बदला लेता है, वह, मानो, ईश्वर पर न्याय की कमी का आरोप लगाता है; लेकिन जो कोई भी उस पीड़ा को सहन करता है जो उस पर आई है, मानो वह उसकी अपनी ही हो, वह उस बुरे कर्म को स्वीकार करता है जो उसने पहले किया था, जिसके लिए वह पीड़ित है, और उसका बोझ उठाता है।

४३. अपराधों को क्षमा करने की सद्गुण में दो प्रवृत्तियाँ बाधा डालती हैं: अहंकार और कामुकता – और इसलिए, पहले मन में इनका त्याग करना चाहिए और तभी इस सद्गुण को प्राप्त करने का प्रयास करना चाहिए। अतः इन प्रवृत्तियों पर विजय पाने के लिए अपनी इच्छाशक्ति के साथ संघर्ष करें। यह एक आंतरिक संघर्ष है, बाहरी नहीं (क्योंकि यह संघर्ष हमें अपने पड़ोसियों से नहीं करना है), बल्कि एक आंतरिक संघर्ष है, और मानव जाति में से कोई भी हमारी सहायता के लिए नहीं आएगा। हमारे पास केवल एक ही सहायक होगा, जो हमारे बपतिस्मा के समय से ही रहस्यमय रूप से हमारे भीतर छिपा हुआ है - मसीह, जो अजेय है और जिससे कुछ भी छिपा नहीं है। यदि हम अपनी पूरी क्षमता से उसकी आज्ञाओं का पालन करते हैं, तो वह इस संघर्ष में हमारी सहायता करेगा। जहाँ तक हमारे विरोधियों का सवाल है, जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है: कामुकता, जो शरीर से जुड़ी है, और अहंकार, जिसका आप और मुझ पर अधिकार है। उन्होंने हव्वा को बहकाया और आदम को धोखा दिया: सुख के प्रेम ने उस वृक्ष की ओर इशारा किया, *'क्योंकि यह खाने के लिए अच्छा है', 'और देखने में आँखों को सुखदायक है'*, जबकि व्यर्थता ने इसमें यह जोड़ दिया: *'तुम परमेश्वर के समान हो जाओगे, भलाई और बुराई को जानोगे'* (उत्पत्ति 3:5–6)।

४४. (संन्यासियों ने अपनी जीवन-पद्धति कहाँ से प्राप्त की?) संन्यासी चर्च के विपरीत सोच को नहीं मानते, बल्कि प्रेरित के शब्दों में मसीह की बुद्धि का अनुसरण करने का प्रयास करते हैं: *'तुम में भी वही मन हो जो मसीह यीशु में था, जो परमेश्वर के स्वरूप में था, परन्तु उसने परमेश्वर के बराबर होने को पकड़ने की वस्तु नहीं समझा, बल्कि अपने आपको खाली किया, और दास का स्वरूप धारण किया'* (फिलि. 2:6–7)। तब जान लो, कि इस प्रकार का सोचने और जीने का तरीका ईश्वर द्वारा प्रदान किया गया है और यह एक महान सद्गुण - विनम्रता - को जन्म देता है। प्रभु ने कलीसिया को यह कार्य करने की आज्ञा दी, कहते हुए: *'उस भोजन के लिए परिश्रम न करो जो नाश होता है, बल्कि उस भोजन के लिए करो जो अनन्त जीवन तक रहता है'* ( ) (यूहन्ना 6:27)। यह कार्य क्या है? यह प्रार्थना के माध्यम से परमेश्वर के राज्य और उसकी धार्मिकता की खोज करना है, जो हमारे भीतर है, जैसा कि प्रभु ने कहा (लूका 17:21), यह वादा करते हुए कि जो लोग उसकी खोज करते हैं, उन्हें वह शरीर के लिए आवश्यक सभी चीजें प्रदान करेगा (मत्ती 6:33)। जिन लोगों ने प्रभु से यह सुना है, जिन्होंने (उनके वचन पर) विश्वास किया है और जो इसे अपनी पूरी क्षमता से पूरा करते हैं, उन्हें 'स्वभाव के विपरीत कार्य करने वाले' कहना, उस परमेश्वर का अपमान करना है, जिसने इसे आज्ञा दी थी।

४५. भिक्षु, इस जीवन-पथ का पालन करते हुए, कैसे गिरते हैं? जो इसका पालन करते हैं, वे नहीं गिरते, बल्कि वे गिरते हैं जो इसे त्याग देते हैं और व्यर्थता तथा सांसारिक मामलों की चिंता के जाल में फँसकर, इसमें सबसे महत्वपूर्ण चीज़—मैं प्रार्थना और विनम्रता की बात कर रहा हूँ—की उपेक्षा करते हैं। इसीलिए शैतान हमें सभी सांसारिक मामलों के बारे में सोचने और उन्हें करने से नहीं रोकता, बशर्ते कि वह हमें प्रार्थना और विनम्रता से दूर कर सके; क्योंकि वह जानता है कि इन दो (गुणों) के बिना जो कुछ भी किया जाता है, भले ही वह अच्छा हो, वह अंततः उसे छीन लेगा। प्रार्थना से मेरा तात्पर्य केवल वह नहीं है जो शरीर से की जाती है, बल्कि वह भी है जो एक एकाग्रचित्त मन से परमेश्वर को अर्पित की जाती है। क्योंकि यदि इन दोनों में से कोई एक (शरीर या मन) समय से पहले अलग हो जाता है, तो दूसरा, अकेला रहकर, परमेश्वर के सामने नहीं बल्कि अपनी ही इच्छा के सामने खड़ा रहता है।

४६. धन्य पौलुस, यह चाहकर कि हम प्रार्थना में किसी भी प्रकार से लापरवाह न हों, कहते हैं: *'अनवरत प्रार्थना करो'* (१ थिस्स. ५:१७); और साथ ही, मन की एकाग्र अवस्था की ओर इशारा करते हुए, उन्होंने कहा: *'इस संसार के ढंग पर न चलो, परन्तु अपने मन की नूतनता से बदलते जाओ, जिससे तुम परख और समझ सको कि परमेश्वर की इच्छा क्या है—क्या वह भली, ग्रहणयोग्य और सिद्ध है'* (रोमियों 12:2)। चूँकि परमेश्वर ने, हमारे अविश्वास और कमज़ोरी को देखते हुए, विभिन्न आज्ञाएँ दी हैं ताकि हर कोई, अपनी-अपनी कोशिशों के अनुसार, यातना से बचकर उद्धार प्राप्त कर सके, इसलिए प्रेरित हमें परमेश्वर की सिद्ध इच्छा के बारे में सिखाते हैं, यह चाहकर कि हम पर बिलकुल भी न्याय न हो; और यह जानते हुए कि प्रार्थना सभी आज्ञाओं के पालन में सहायक है, वह कभी भी इसे आज्ञा देने और इसके बारे में अनेक और विविध तरीकों से बात करने से नहीं चूकते: *'आत्मा में हर समय प्रार्थना करो, और इसी उद्देश्य के लिए पूरी लगन और प्रार्थना के साथ सतर्क रहो'* (इफिसियों 6:18)।

४७. प्रार्थना के विभिन्न रूप होते हैं: क्योंकि एक बात है परमेश्वर से एकचित्त होकर प्रार्थना करना, और दूसरी बात है शरीर से प्रार्थना में खड़े रहना जबकि मन भटकता रहे; और फिर एक और बात है कि एक समय निर्धारित किया जाए और सांसारिक वार्तालापों और कार्यों को त्यागकर, प्रार्थना करना; और फिर एक और रूप है सभी सांसारिक चिंताओं पर प्रार्थना को यथासंभव प्राथमिकता देना, उसी प्रेरित के शब्दों के अनुसार: *'प्रभु निकट हैं; किसी भी बात की चिंता मत करो, परन्तु हर बात में प्रार्थना और निवेदन द्वारा, धन्यवाद सहित, अपनी याचनाएँ परमेश्वर के सामने पेश करो'* (फिलि. 4:6)। जैसा कि धन्य पतरस कहते हैं: *'संयमी और जागृत रहो, और अपनी प्रार्थनाओं में लगे रहो, अपनी सारी चिन्ताएँ उस पर डाल दो, क्योंकि वह तुम्हारी परवाह करता है'* (1 पतरस 4:7 और अध्याय 5:7)। सबसे पहले, प्रभु स्वयं, यह जानते हुए कि सभी चीजें प्रार्थना के द्वारा स्थापित होती हैं, ने कहा: *"इस बात की चिंता मत करो कि तुम क्या खाओगे या क्या पियोगे, या क्या पहनोगे; बल्कि पहले परमेश्वर के राज्य और उसकी धार्मिकता की खोज करो, और ये सब बातें तुम्हें मिलेंगी"* (मत्ती 6:31, 33)। लेकिन शायद प्रभु हमें इसके माध्यम से अधिक विश्वास की ओर भी बुला रहे हैं: क्योंकि जो व्यक्ति सांसारिक बातों की चिंता को त्यागकर उनमें कमी न सहते हुए, शाश्वत आशीर्वादों के संबंध में परमेश्वर पर भरोसा नहीं करेगा, वह कौन होगा? इसे प्रकट करते हुए, प्रभु ने कहा: *'जो थोड़ी सी बात में विश्वासयोग्य है, वह बहुत कुछ में भी विश्वासयोग्य है'* (लूका 16:10)।

४८. प्रभु, यह जानते हुए कि शरीर की दैनिक देखभाल हमारे लिए अपरिहार्य है, ने दैनिक प्रावधान पर प्रतिबंध नहीं लगाया है, बल्कि हमें वर्तमान दिन की देखभाल सबसे उपयुक्त तरीके से करने की अनुमति दी है। वह एक धार्मिक और परोपकारी तरीके से आज्ञा देते हैं कि हमें कल की चिंता नहीं करनी चाहिए, क्योंकि देहधारी लोगों के लिए देह संबंधी जीवन के मामलों के प्रति पूरी तरह से उदासीन रहना असंभव है: प्रार्थना और संयम के माध्यम से, बहुत कुछ न्यूनतम तक कम किया जा सकता है, लेकिन (देह से संबंधित) सभी चीजों को पूरी तरह से नज़रअंदाज़ करना असंभव है। इसलिए, जो कोई भी शास्त्र के अनुसार, *'मसीह के पूर्ण स्वरूप तक बढ़ना'* (इफिसियों 4:13) चाहता है, उसे प्रार्थना पर विभिन्न सेवकाइयों को प्राथमिकता नहीं देनी चाहिए, और न ही, आवश्यकता के बिना, जैसे भी अवसर आए, लेकिन उसे उन कार्यों से भी परहेज़ या इनकार नहीं करना चाहिए जो किसी आवश्यकता से और ईश्वर की व्यवस्था से उत्पन्न होते हैं, प्रार्थना के बहाने; बल्कि, उसे (प्रार्थना और अन्य गतिविधियों के बीच) अंतर को पहचानना चाहिए और बिना हिचकिचाहट के ईश्वर की व्यवस्था की सेवा करनी चाहिए। जो कोई भी इसके विपरीत तर्क करता है, वह यह विश्वास नहीं करता कि, धर्मग्रंथ के अनुसार, एक आज्ञा दूसरी से अधिक ऊँची और महत्वपूर्ण है, और वह, नबी के शब्दों में, *'सभी आज्ञाओं द्वारा निर्देशित होने'* (भजन संहिता 118:128) की इच्छा नहीं करता है, जो ईश्वर की व्यवस्था के अनुसार उसके पास आती हैं।

४९. आवश्यक और समझदारी भरे कार्य अवश्यंभावी हैं, लेकिन हमें अनुचित कार्यों को त्यागकर प्रार्थना को प्राथमिकता देनी चाहिए; विशेष रूप से, हमें उन कार्यों को त्यागना चाहिए जो हमें बड़े खर्च और अनावश्यक धन-संचय की ओर ले जाते हैं। क्योंकि जिस सीमा तक कोई उन्हें प्रभु के लिए सीमित करता है और उनके अनावश्यक

तत्वों को हटा देता है, उसी सीमा तक मन विचलन से मुक्त रहता है; और जिस सीमा तक मन मुक्त रहता है, उतनी ही जगह शुद्ध प्रार्थना के लिए बनती है, और मसीह में सच्ची आस्था प्रदर्शित होती है। यदि, तथापि, कि , विश्वास की कमी या किसी अन्य कमजोरी के कारण, कोई ऐसा करने में असमर्थ है, तो उन्हें कम से कम सत्य को पहचानें और अपनी क्षमता के अनुसार, अपनी अपरिपक्वता को स्वीकार करते हुए, आगे बढ़ने का प्रयास करें।

५०. आइए हम आशा और प्रार्थना के द्वारा, सभी सांसारिक चिंताओं को त्यागने का प्रयास करें; फिर भी यदि हम इसे पूरी तरह से पूरा नहीं कर पाते हैं, तो आइए हम अपनी कमियों को परमेश्वर के सामने स्वीकार करें, और प्रार्थना में परिश्रमी बने रहने से कभी न रुकें; क्योंकि बार-बार की उपेक्षा के लिए डाँट खाना, पूरी तरह से परित्याग किए जाने से बेहतर है। प्रार्थना और अनिवार्य सेवा के बारे में हमने जो कुछ भी कहा है, उसमें हमें यह समझने के लिए ईश्वर के मार्गदर्शन की अत्यधिक आवश्यकता है कि हमें प्रार्थना पर कब और किस गतिविधि को प्राथमिकता देनी चाहिए। क्योंकि हर कोई, जब अपने पसंदीदा कार्य में लगा होता है, तो उसे लगता है कि वह अपना उचित कर्तव्य निभा रहा है, यह जाने बिना कि हमारे सभी कर्म ईश्वर को प्रसन्न करने के लिए होने चाहिए, न कि हमारी अपनी संतुष्टि के लिए। यह समझना और भी कठिन है कि ये आवश्यक और अनिवार्य कर्तव्य भी हमेशा एक जैसे नहीं होते, बल्कि उनमें से किसी एक को, उचित समय पर, दूसरे पर प्राथमिकता दी जानी चाहिए: क्योंकि इनमें से प्रत्येक कर्तव्य हर समय नहीं, बल्कि केवल उचित समय पर ही किया जाता है, जबकि प्रार्थना का कर्तव्य निरंतर रहने के लिए निर्धारित है; अत; हमें उन गतिविधियों पर इसे प्राथमिकता देनी चाहिए जिनमें कोई तात्कालिक आवश्यकता नहीं है। और सभी प्रेरितों ने, लोगों को इस भेद के बारे में सिखाते हुए—वे लोग जो उन्हें सेवा में लगाना चाहते थे—कहा: *'यह उचित नहीं है कि हम परमेश्वर के वचन को छोड़कर भोजन परोसने की सेवा करें। इसलिए, हे भाइयो, अपने बीच से सात ऐसे पुरुषों को चुन लो जो भले माने जाते हों, जिन्हें हम इस सेवा के लिए नियुक्त करेंगे।' जहाँ तक हमारी बात है, हम प्रार्थना और वचन की सेवा में अपना समय देंगे।' और यह प्रस्ताव सारी मंडली द्वारा मान लिया गया'* (प्रेरितों के काम 6:2–5)। तो, इससे हम क्या सीखते हैं? कि जो लोग प्रार्थना में अपना समय नहीं दे सकते, उनके लिए सेवा में लगे रहना अच्छा है, ताकि हम दोनों में से किसी से वंचित न रहें, और जो लोग बेहतर करने में सक्षम हैं, उन्हें जो बेहतर है उसे नहीं छोड़ना चाहिए।

51. आइए हम प्रार्थना का कार्य आरंभ करें और धीरे-धीरे प्रगति करते हुए, हम पाएँगे कि न केवल परमेश्वर में आशा, बल्कि दृढ़ विश्वास, सच्चा प्रेम, क्षमा, भाइयों के प्रति प्रेम, आत्म-नियंत्रण, धैर्य, आंतरिक मार्गदर्शन और प्रलोभनों से मुक्ति, ये सभी अनुग्रह के वरदान हैं; प्रार्थना के द्वारा विश्वासियों को सच्चा पाप-स्वीकार और प्रबल आँसू प्रदान किए जाते हैं; और न केवल ये (ऊपर सूचीबद्ध चीजें), बल्कि हम पर आने वाले दुखों का धैर्य, और अपने पड़ोसी के प्रति शुद्ध प्रेम, और आध्यात्मिक नियम का ज्ञान और ईश्वर की सच्चाई की प्राप्ति, और पवित्र आत्मा की प्रेरणा, और आध्यात्मिक खजाने का प्रदान, और वह सब कुछ जो ईश्वर ने विश्वासियों को यहाँ और आने वाले युग में देने का वादा किया है – (ये सभी वे प्रार्थना के माध्यम से प्राप्त करते हैं)। संक्षेप में, ईश्वर की कृपा और विश्वास के अलावा किसी अन्य तरीके से अपने भीतर ईश्वर की प्रतिमा को पुनर्स्थापित करना असंभव है, बशर्ते कि कोई, महान विनम्रता के साथ, अपने मन को बिना विचलित हुए प्रार्थना पर केंद्रित रखे।

५२. भक्ति के तीन प्रकार हैं: पहला है पाप से बचना; दूसरा है, पाप करने के बाद, हम पर आने वाले दुखों को सहना; और तीसरा है, यदि हम इन दुखों को सहने में असमर्थ हैं, तो हमारे धैर्य की कमी पर रोना। क्योंकि जो कुछ यहाँ (ईश्वर के साथ) मेल-मिलाप के उचित साधनों से ठीक नहीं किया जाता, वह अनिवार्य रूप से परलोक में हमारे लिए न्याय का कारण बनेगा, जब तक कि ईश्वर, हमें रोते और विनम्र देखकर, जैसा कि वह स्वयं जानता है, अपनी सर्वशक्तिमान कृपा से हमारे पापों को मिटा न दे।

५३. हे, मनुष्यों को प्रसन्न करने की लालसा कितनी कपटी और कितनी सूक्ष्म है; यह तो बुद्धिमानों को भी अपने वश में कर लेती है! क्योंकि अन्य जुनूनों के कर्म उन लोगों द्वारा आसानी से पहचाने जाते हैं जो उनका अभ्यास करते हैं और इसलिए वे उन लोगों को जो उनसे ग्रस्त होते हैं, विलाप और नम्रता की ओर ले जाते हैं; लेकिन मनुष्यों को प्रसन्न करने की इच्छा धर्मपरायणता के शब्दों और दिखावे से छिपी रहती है, इसलिए जिन लोगों को यह धोखा देती है, उनके लिए इसके विभिन्न रूपों को पहचानना मुश्किल हो जाता है।

54. सुनो कि धर्मग्रंथ मनुष्यों को प्रसन्न करने की इच्छा की कैसे निंदा करता है। सबसे पहले, भविष्यवक्ता दाऊद कहते हैं: *'परमेश्वर ने उन लोगों की हड्डियाँ बिखेर दी हैं जो मनुष्यों को प्रसन्न करते हैं: वे लज्जित होते हैं, क्योंकि परमेश्वर ने उन्हें नम्र किया है* (भजन संहिता 52:6), और प्रेरित कहते हैं: *'केवल मनुष्यों को प्रसन्न करने के लिए काम नहीं करते, जैसे वे जो मनुष्यों को प्रसन्न करते हैं'* (इफिसियों 6:6) और फिर: *'क्या मैं अब मनुष्यों को*

प्रसन्न करना चाहता हूँ? यदि मैं अब भी मनुष्यों को प्रसन्न करने का यत्न करता, तो मैं मसीह का दास न होता' (गलातियों 1:10)। और यदि आप पवित्र धर्मग्रंथों को पढ़ें, तो आपको इनमें बहुत कुछ मिलेगा।

55. मनुष्यों को प्रसन्न करने के विभिन्न रूप क्या हैं? इन रूपों की जननी, और इनमें पहली, अविश्वास है; और इसके बाद, इसके संतान के रूप में, आते हैं: ईर्ष्या, घृणा, चापलूसी, ईर्ष्या, झगड़ा, पाखंड, पक्षपात, केवल दिखावे के लिए सेवा, बदनामी, झूठ, सच्ची भक्ति के बजाय झूठी भक्ति का दिखावा, और इसी तरह के अन्य भाव जो पकड़ने में कठिन और अस्पष्ट होते हैं। लेकिन सबसे बुरा यह है कि कुछ लोग कुशल शब्दों से इन सभी को अच्छा बताकर बढ़ावा देते हैं, जबकि इनमें निहित नुकसान को छिपाते हैं। यदि आप चाहें, तो मैं उनके कुछ छल-कपट का खुलासा करूँगा: चालाक चापलूस, एक व्यक्ति को सलाह देते हुए, दूसरे के खिलाफ साजिश रचता है; एक की प्रशंसा करते हुए, दूसरे की आलोचना करता है; अपने पड़ोसी को समझाते हुए, वह स्वयं की प्रशंसा करता है; वह किसी मुकदमे में निष्पक्ष रूप से निर्णय लेने के लिए नहीं, बल्कि इसमें भाग लेने के लिए शामिल होता है, लेकिन दुश्मन से बदला लेने के लिए; वह चापलूसी से आरोप लगाता है, जब तक कि अपने दुश्मन को डांटकर वह उससे स्वीकार न हो जाए; वह अपनी बदनामी छिपाने के लिए नाम लिए बिना बदनामी करता है; वह गरीबों को यह बताने के लिए मनाता है कि उन्हें क्या चाहिए, जैसे कि वह उन्हें वह प्रदान करना चाहता हो, और जब वे ऐसा करते हैं, तो वह उन्हें भिखारी के रूप में प्रचारित करता है; अनुभवी लोगों के सामने विनम्रता से बात करता है, लेकिन अनुभवहीन लोगों के सामने डींगें हाँकता है, दोनों से प्रशंसा की चाह में; जब सज्जन लोगों की प्रशंसा होती है, तो उसे बुरा लगता है और वह दूसरी कहानी शुरू करके प्रशंसा को भटका देता है; वह शासकों की अनुपस्थिति में उनकी निंदा करता है, लेकिन जब वे मौजूद होते हैं, तो उनके सामने उनकी प्रशंसा करता है; विनम्र और बुद्धिमानों का मज़ाक उड़ाता है; शिक्षकों पर निंदा करने के लिए जासूसी करता है; स्वयं को सर्वोच्च बुद्धिमान दिखाने के लिए सादगी को तुच्छ बताता है; अपने सभी पड़ोसियों के सद्गुणों को अनदेखा करता है, जबकि उनके बुरे कर्मों को अपनी स्मृति में रखता है। संक्षेप में कहें तो: वह हर अवसर का लाभ उठाता है और लोगों की चापलूसी करता है, (अनजाने में) दूसरों को खुश करने के लिए अपनी अनेक इच्छाओं को प्रकट करता है: वह दूसरों के बारे में पूछताछ करके अपने बुरे कर्मों को छिपाने का प्रयास करता है। हालाँकि, सच्चे संन्यासी ऐसा नहीं करते, बल्कि इसके बिल्कुल विपरीत करते हैं: वे दया की भावना से दूसरों के बुरे कर्मों को अनदेखा करते हैं, जबकि अपने कर्मों को खुले तौर पर ईश्वर के सामने स्वीकार करते हैं; इस कारण से, जो लोग उनके इरादों को नहीं जानते, वे उनकी निंदा करते हैं, क्योंकि वे लोगों को खुश करने के बजाय ईश्वर को खुश करना चाहते हैं। इस प्रकार, कभी उसे प्रसन्न करते हुए, कभी स्वयं को नम्र बनाकर, वे दोनों के लिए प्रभु से पुरस्कार की प्रतीक्षा करते हैं, जिन्होंने कहा: *'जो अपना आप बड़ा करता है, वह नीचा किया जाएगा, और जो अपना आप नीचा करता है, वह ऊँचा किया जाएगा'* (लूका 18:14)।

56. हम पर आने वाले दुखों में से कुछ भी हम पर अन्याय से नहीं आता, बल्कि सब कुछ परमेश्वर के धर्मी न्याय के अनुसार होता है। कुछ अपने बुरे कर्मों के लिए पीड़ित होते हैं, जबकि अन्य अपने पड़ोसी के लिए पीड़ित होते हैं। इस प्रकार, भट्टी में डाले गए तीन युवक हमें इसी तरह सोचने की शिक्षा देते हैं, यह कहते हुए कि उन्हें अपनी ही गलती के कारण (दानियेल 3:28, 31) और ईश्वर की आज्ञा से डाला गया था, भले ही उन्होंने (उस समय) दूसरों का रूप धारण कर रखा था। और संत दाऊद, जब शेमी द्वारा अपमानित हो रहे थे, ने स्वीकार किया कि वह अपनी ही गलती के कारण और परमेश्वर की आज्ञा से अपमानित हुए थे (2 इतिहास 16:11)। यशायाह, यिर्मयाह, यहेजकेल, दानिय्येल और अन्य भविष्यद्वक्ताओं ने (इज़राइल के) लोगों और (अन्यजातियों के) राष्ट्रों को भविष्यवाणी की कि आने वाले समय में उन पर प्रत्येक के पापों के अनुसार संकट आएँगे, और उन्होंने उन्हें उनके पापों और उनकी विपत्तियों दोनों के बारे में बताया, क्योंकि उन्होंने इसे इस प्रकार कहा: 'क्योंकि उन्होंने ऐसा-वैसा कहा और ऐसा-वैसा किया, इसलिए उनके साथ ऐसा-वैसा हुआ।' और धन्य दाऊद, इसका स्पष्टीकरण करते हुए, भजन में कहते हैं: *'प्रभु, मैं समझ गया हूँ कि आपका न्याय धर्मी है, और आपने सचमुच मुझे नम्र किया है'* (भजन संहिता 118:75) और फिर: *'तू ने मुझे मूर्खों के उपहास के लिए सौंप दिया है। मैं चुप हो गया और अपना मुँह नहीं खोलता, क्योंकि यह तू ने किया है'* (भजन संहिता 38:9–10)।

५७. हमें उन लोगों को स्वीकार करना चाहिए जो हमें डाँटते हैं, उन्हें ईश्वर द्वारा भेजे गए डाँटने वालों के रूप में मानना चाहिए जो हमारे भीतर छिपे बुरे विचारों को उजागर करते हैं, ताकि हम अपने विचारों की सावधानीपूर्वक जाँच करके खुद को सुधार सकें, भले ही हम अपने भीतर छिपी बहुत सी बुराई से अनजान हों; क्योंकि अपने सभी दोषों को याद रखना एक सिद्ध मनुष्य की निशानी है। यदि हमारी स्पष्ट कमियाँ भी इतनी आसानी से हमारे ध्यान में नहीं आतीं, तो हमारे विचारों का तो और भी कम ध्यान जाएगा; और हमारे भीतर छिपी अधिकांश बुराई से अनभिज्ञ होने के कारण, हम उन दुखों से हैरान हो जाते हैं जो हम पर आते हैं। आइए, हम समझदार लोगों की तरह यह पहचानें कि प्रभु, हमारे

अपने भले के लिए, हमें दुख आने देते हैं और इस प्रकार हमारा बहुत भला करते हैं: सबसे पहले, इसके माध्यम से वे (बुराई भरे) विचार जो गुप्त रूप से हमें नियंत्रित करते हैं, प्रकट हो जाते हैं; और एक बार जब वे प्रकट हो जाते हैं, तो प्रभु हमें सच्ची और ईमानदार विनम्रता प्रदान करते हैं, और फिर हमें व्यर्थ अहंकार से मुक्ति और हमारे भीतर छिपी सभी बुराइयों का पूर्ण प्रकटीकरण प्रदान करते हैं। निश्चित हो जाइए कि यदि हम अपने ऊपर आने वाली पीड़ाओं को विश्वास और कृतज्ञता के साथ नहीं सहते हैं, तो हम अपने भीतर छिपी बुराई को पहचान नहीं सकते; और यदि हम इसे स्पष्ट रूप से नहीं पहचानते हैं, तो हम न तो अपने वर्तमान बुरे विचारों को अस्वीकार कर सकते हैं, न ही अतीत की बुराइयों से शुद्धता की तलाश कर सकते हैं, और न ही भविष्य के बारे में दृढ़ आश्वासन प्राप्त कर सकते हैं।

58. जो दुख और निन्दा हम पर आती है, वह सतही तौर पर हमारे पापों के अनुपात में नहीं लग सकती, लेकिन आध्यात्मिक दृष्टि से वह पूरी सच्चाई को बनाए रखती है। हम इसे पवित्र धर्मग्रंथ से भी पहचान सकते हैं: क्या उन लोगों ने, जो शीलोम के मीनार के गिरने पर मारे गए थे, मीनार को दूसरों पर गिराया था? या क्या वे बंदी, जिन्हें सत्तर वर्षों के लिए दंडस्वरूप बेबीलोन ले जाया गया था, ने दंडस्वरूप दूसरों को बंदी बनाया? इन दंडों का स्वभाव ऐसा नहीं है, लेकिन जैसे सैनिकों को, यदि किसी अपराध में दोषी पाया जाए, तो शारीरिक दंड दिया जाता है, फिर भी वे उसी बुराई को नहीं झेलते जो उन्होंने की है, वैसे ही हम सभी को भी उचित समय पर और पश्चाताप के लिए उपयुक्त तरीके से आने वाली पीड़ाओं द्वारा दंडित किया जाता है, लेकिन न तो उसी तरह, न ही उसी समय, न ही उसी माध्यम से। यही बात है—अर्थात् समय में देरी और हम पर आने वाली पीड़ाओं और हमारे पापों के बीच असमानता—जो कई लोगों को ईश्वर की सच्चाई पर अविश्वास करने के लिए प्रेरित करती है।

५९. (हम पर आने वाली) हर दुखद घटना का कारण हम में से प्रत्येक के विचारों में निहित है: मैं कह सकता हूँ कि शब्दों और कर्मों का भी इसमें हाथ है, लेकिन चूँकि वे विचार से पहले नहीं होते, इसलिए मैं सब कुछ विचारों को ही श्रेय देता हूँ। विचार पहले आता है, और फिर, शब्दों और कर्मों के माध्यम से, हमारे (और हमारे पड़ोसियों के) बीच एकता बनती है। अब, आत्मीयता दो प्रकार की होती है: एक द्वेष से उत्पन्न होती है, और दूसरी प्रेम से। आत्मीयता के माध्यम से हम एक-दूसरे को स्वीकार करते हैं, यहाँ तक कि उन लोगों को भी जिन्हें हम नहीं जानते; और अपने पड़ोसी को स्वीकार करने में अनिवार्य रूप से पीड़ा शामिल है, जैसा कि पवित्र शास्त्र कहते हैं: *'जो अपने मित्र के लिए जमानत देता है, वह शत्रु को अपना हाथ देता है'* (नीतिवचन 6:1)। इस प्रकार, हर कोई जो कुछ भी उस पर आता है, उसे न केवल अपने लिए, बल्कि अपने पड़ोसी के लिए भी सहन करता है – इस हद तक कि उन्होंने उसे अपने ऊपर ले लिया है।

60. जब किसी के दुख का कारण द्वेष हो, तो उसे स्वीकार करना अनैच्छिक होता है। और यह इस प्रकार होता है: जो कोई दूसरे (अपने पड़ोसी) से कुछ छीनता है, भले ही वह ऐसा करना न चाहे, वह उस वंचित व्यक्ति के प्रलोभनों को अपने ऊपर ले लेता है; इसी प्रकार, बदनाम करने वाला उस व्यक्ति के प्रलोभनों को अपने ऊपर ले लेता है, जिसकी उसने बदनामी की है; जबरन वसूली करने वाला, उस व्यक्ति के प्रलोभनों को जिनसे उसने वसूली की है; जो कोई दूसरे को थकाता है, वह उन प्रलोभनों को अपने ऊपर ले लेता है, जिनसे उसने थकाया है; जो कोई दूसरे के बारे में बुरा बोलता है, वह उन प्रलोभनों को अपने ऊपर ले लेता है, जिनकी उसने बुराई की है; जो तिरस्कार करता है—उसे तिरस्कारित किया जाता है; जो झूठ बोलता है, वह उस व्यक्ति की परीक्षाओं को अपने ऊपर ले लेता है, जिसकी उसने बदनामी की है; और, सब कुछ अलग-अलग सूचीबद्ध न करने के लिए, मैं संक्षेप में कहूँगा: जो कोई भी अपने पड़ोसी पर अत्याचार करता है, वह किए गए अन्याय के अनुपात में, उस व्यक्ति के प्रलोभन को अपने ऊपर ले लेता है जिस पर उसने अत्याचार किया है। दिव्य शास्त्र भी इसकी गवाही देते हैं, कहते हुए: *'जो सीधे-सादे मनुष्य के लिए गड्ढा खोदता है, वह उसी में पड़ेगा, और जो अपने ऊपर पत्थर ढेर करता है, वह उसे अपने ही ऊपर गिराएगा'* (नीतिवचन 26:27), और यह भी: *'दुष्टों की सारी युक्ति व्यर्थ होती है; परन्तु धर्मी की सारी युक्ति यहोवा से होती है'* (नीतिवचन 16:33)। *'क्या परमेश्वर अन्यायी है, जो क्रोध करता है'* (रोमियों 3:5) न केवल उन लोगों पर जो क्लेशों से दण्डित होते हैं, बल्कि उन लोगों पर भी जो इन क्लेशों के विरुद्ध लापरवाही से विद्रोह करते हैं।

61. प्रेम के लिए अपने पड़ोसी का भार स्वयं उठाना, वह है जो प्रभु यीशु ने हमें हर तरह से विरासत में दिया है, पहले हमारी आध्यात्मिक दुर्बलताओं को चंगा करके, फिर *'हर दुर्बलता और हर बीमारी को चंगा करके, संसार का पाप उठाकर'*, जो दृढ़ता से उन पर विश्वास करते हैं उन्हें नया करके और उनके स्वभाव को शुद्ध करके, उन्हें मृत्यु से मुक्ति प्रदान करते हुए, परमेश्वर की उपासना की विरासत देते हुए, धार्मिकता सिखाते हुए, यह दिखाते हुए कि प्रेम के लिए हमें मृत्यु तक बुराई सहनी चाहिए; इसके अलावा, उन्होंने हमें आत्मा की संगति और भविष्य के आशीर्वादों के माध्यम से धैर्य प्रदान किया है, *'जिसे न तो किसी आँख ने देखा है, न किसी कान ने सुना है, और न ही*

यह मनुष्य के हृदय में प्रवेश किया है (1 कुरिन्थियों 2:9)। इसलिए, वह हमारी ओर से प्रलोभनों को सहते हैं, अपमान, उपहास और दासता सहते हैं; उन्हें धोखा दिया जाता है, गालों पर मारा जाता है, उन्हें सिरका और पित्त पिलाया जाता है, सूली पर चढ़ाया जाता है और भाले से भेदा जाता है। इस प्रकार, शरीर और आत्मा दोनों में हमसे एक होकर, और हमारे दुखों को स्वयं पर लेकर, उन्होंने बाद में यह विधान पवित्र प्रेरितों और शिष्यों, भविष्यद्वक्ताओं, पिताओं और कुलपतियों को सौंप दिया, पहले कुछ को पवित्र आत्मा के द्वारा सिखाकर, और दूसरों को अपने परम पवित्र शरीर के द्वारा दिखाकर। इस आत्म-बलिदान को प्रदर्शित करते हुए, उन्होंने कहा: *'मनुष्य के प्रेम के लिए इससे बड़ा कोई प्रेम नहीं है, कि कोई मनुष्य अपने मित्रों के लिए अपना प्राण दे'* (यूहन्ना 15:13)। इसीलिए संत पौलुस ने प्रभु का अनुकरण करते हुए कहा: *'अब मैं तुम्हारे लिए अपने दुखों में आनन्दित हूँ, और अपने शरीर में मसीह की पीड़ाओं में जो कमी रह गई है, उसे उसकी कलीसिया के लिए, जो उसका शरीर है, पूरा कर रहा हूँ'* (कुलुस्सियों 1:24), जो प्रेम से की गई इस स्वीकृति का संकेत देता है।

62. क्या आप और स्पष्ट रूप से समझना चाहेंगे कि कैसे सभी प्रेरितों ने विचार, वचन और कर्म में हमारे साथ एकता स्थापित की और इस एकता के माध्यम से, हमारे परीक्षणों को सहा? (उन्होंने यह किया) विचार में: हमें धर्मग्रंथ प्रस्तुत करके, भविष्यवाणियों का हवाला देकर, हमें उद्धारकर्ता के रूप में मसीह में विश्वास करने के लिए प्रोत्साहित करके, हमें यह आश्वासन देकर कि हमें स्वभाव से परमेश्वर के पुत्र के रूप में उनकी सेवा करनी चाहिए, हमारे लिए प्रार्थना करके, आँसू बहाकर, और वह सब कुछ करके जो विचार में विश्वासयोग्य व्यक्ति द्वारा किया जा सकता है। दूसरे शब्दों में: हमसे विनती करके, हमें चेतावनी देकर, हमें सिखाकर, हमें डाँट-फटकार लगाकर, और हमारे अविश्वास के लिए हमें फटकार लगाकर, हमारी अज्ञानता की निंदा करते हुए, धर्मग्रंथों की व्याख्या करते हुए, समयों का खुलासा करते हुए, मसीह की गवाही देते हुए और यह प्रचार करते हुए कि वह हमारे लिए सलीब पर चढ़ाया गया था, यह पुष्टि करते हुए कि देहधारी वचन एक है, दो नहीं, यद्यपि हम उसे दो स्वभावों का समझते हैं, जो अविभाज्य रूप से और बिना किसी भ्रम के एकजुट हैं, हर समय, हर स्थान पर और हर कर्म में, दुष्टता से अलग रहते हुए, झूठ के साथ चलने से इनकार करते हुए, देह के गर्व करने वालों से संवाद न करते हुए, व्यर्थ के लोगों के साथ मेल न रखते हुए, घमंडी से न डरते हुए, दुष्टों का नाश करते हुए, नम्र लोगों को स्वीकार करते हुए, परमेश्वर-भक्तों को अपना मानते हुए, और हमें भी ऐसा ही करने का उपदेश देते हुए। और उनके कर्मों में: हमारे लिए सताए गए, निंदा किए गए, वंचित किए गए, अपमानित किए गए, जेलों में डाले गए, मार डाले गए, और इसी प्रकार के कष्ट सहते हुए। इस प्रकार, हमारे साथ सहभागिता में प्रवेश करके, उन्होंने हमारे परीक्षणों को भी सहा है, क्योंकि वे कहते हैं: *'यदि हम क्लेश में हैं, तो तुम्हारे उद्धार के लिए; यदि हम सांत्वना में हैं, तो तुम्हारी सांत्वना के लिए'* (2 कुरिन्थियों 1:5), यह सब उन्होंने प्रभु से प्राप्त किया, जिन्होंने कहा: *'मित्रों के लिए अपना प्राण देना, किसी मनुष्य का प्रेम इससे बड़ा नहीं है'* (यूहन्ना 15:13)। और उन्होंने इसे हम तक पहुँचाया है, यह कहते हुए: *'क्योंकि यदि प्रभु ने हमारे लिए अपना प्राण दे दिया, तो हमें भी अपने भाइयों के लिए अपना प्राण देना चाहिए'* (1 यूहन्ना 3:16), और फिर: *'एक दूसरे के बोझ उठाओ, और इसी में मसीह का विधान पूरा करो'* (गलातियों 6:2)।

63. और इस प्रकार, यदि हमने एक दूसरे के साथ दो प्रकार की सहभागिता के बारे में सीखा है—अर्थात्, स्वीकृति जो आवश्यकता से उत्पन्न होता है और जो प्रेम से उपजता है, तो, इनके अनुसार, हमें उन परीक्षाओं के बारे में जिज्ञासु न हों जो हम पर आती हैं—वे कैसे, या कब, या किसके माध्यम से हम पर आती हैं—क्योंकि केवल परमेश्वर ही जानता है कि उनमें से प्रत्येक दुष्टता की शक्तियों, उनके अनिवार्य रूप से घटित होने के समय, और उन्हें घटाने में सारी सृष्टि के सहयोग से कैसे मेल खाता है। और हमें केवल ईश्वर की सच्चाई पर विश्वास करना चाहिए और यह जानना चाहिए कि हमारे साथ जो कुछ भी अनैच्छिक रूप से होता है, वह या तो प्रेम के लिए होता है या दुर्भावना के कारण: और इसलिए हमें इसे सहन करना चाहिए, और इसे अस्वीकार नहीं करना चाहिए, कहीं ऐसा न हो कि हम अपने पापों में एक और पाप जोड़ दें।

६४. देह की इच्छा शरीर की स्वाभाविक गति है, जिसके बाद बिना सोच-विचार के वासनाओं का उदय होता है—जो नींद और शरीर की विश्राम से मजबूत होती हैं; इनके बारे में धन्य पतरस कहते हैं: *'तुम्हारे परीक्षा के लिए तुम पर आई आग की परीक्षा से अचंभित न हो, जैसे कि तुम्हारे साथ कोई अजनबी बात हो रही हो'* (१ पतरस ४:१२)। और धन्य पौलुस ने उनके विषय में कहा: *'शरीर आत्मा के विरुद्ध काम करता है, और आत्मा शरीर के विरुद्ध'*; इसीलिए वह आज्ञा देते हैं, कहते हुए: *'आत्मा के अनुसार चलो, और शरीर की इच्छाओं को पूरा न करो'* (गलातियों 5:16-17)। प्रेरितों ने यह कहा, यह चाहते हुए कि हम ऐसी प्रवृत्तियों के आगे न झुकें।

६५. जो आध्यात्मिक संघर्ष करते हैं, उन्हें (सद्गुण के अनुसरण की शुरुआत करके) उसे अंत तक पूरा करना चाहिए। जहाँ तक युवा और वृद्धों का प्रश्न है, जो अच्छे स्वास्थ्य में हैं और न तो परिश्रम से डरते हैं और न ही

शत्रुता से, उनके लिए अपने पूरे उत्साह के साथ निरंतर उपवास करना अधिक लाभदायक है: संयम से रोटी खाना और समय-समय पर (उसी अनुपात में) पानी पीना चाहिए, ताकि वे अपना भोजन तब समाप्त करें जब उन्हें कुछ हद तक भूख और प्यास महसूस हो रही हो, कहीं ऐसा न हो कि भोजन और पेय का आनंद परमेश्वर की आवश्यक सेवा में बाधा बन जाए। यदि, उपर्युक्त भोजन का सेवन करते समय, हम पूरी तरह तृप्त हो जाएँ, तो हमें जल्द ही अन्य स्वादिष्ट व्यंजनों की लालसा होगी। हालाँकि, यदि हम तृप्त नहीं होते हैं, तो, हमेशा भूखे रहते हुए, भले ही हम तृप्ति की इच्छा करें, हम तो केवल रोटी से ही तृप्त होना चाहेंगे।

६६. एक लज्जाहीन पेट पर काबू पाना कोई आसान काम नहीं है: क्योंकि यह उन लोगों के लिए एक देवता है जिन्हें यह हरा देता है, और जो कोई भी इसका आज्ञाकारण करता है, उसके लिए निर्दोष रहना असंभव है। और मैं देखता हूँ कि दुर्भाग्य न केवल अत्यधिक भोग से बल्कि भोजन से परहेज़ करने से भी उत्पन्न होता है; क्योंकि जब हम कई दिनों तक बिना भोजन के रहते हैं, तो निराशा, हमारे भीतर पैर जमा लेने के बाद, उठती है और हम पर आक्रमण करती है, और हमारी रात की जागृति नींद में बदल जाती है, और हमारी दिन की प्रार्थना कामुक विचारों में बदल जाती है, जिससे हमें नींद के कारण कोई लाभ नहीं होता और कामुक विचारों से हमें और भी अधिक हानि होती है; क्योंकि, दूसरों की तुलना में अधिक उपवास करने वाले के रूप में, हम अहंकारी हो जाते हैं और अपने से कमतर लोगों को नीची नज़र से देखने लगते हैं, और (अपने और अपने पड़ोसियों के प्रति) ऐसा रवैया किसी भी पाप से भी भारी होता है।

67. जैसे एक मूर्ख किसान, जिसने बड़ी मेहनत से अपनी खेत जोतकर उसमें बीज नहीं बोया, अपनी ही हानि के लिए परिश्रम करता है, वैसे ही यदि हम, अत्यधिक आत्म-चिंता से अपने शरीर पर परिश्रम करके, प्रार्थना के बीज नहीं बोते, तो यह स्पष्ट हो जाएगा कि हमने अपने ही हित के विरुद्ध परिश्रम किया है। लेकिन शायद कोई कहे: यदि प्रार्थना धार्मिकता का मुख्य कार्य है, तो उपवास की क्या आवश्यकता है? हर तरह से इसकी बहुत आवश्यकता है: क्योंकि जैसे एक गरीब किसान, यदि वह खरपतवारों से ढके खेत में बिना फिर से जुताई किए बोआई करता है, तो उसे गेहूं के बजाय कांटे मिलेंगे; वैसे ही, यदि हम उपवास के माध्यम से अपने शरीर को वश में किए बिना प्रार्थना का बीज बोते हैं, तो हम धार्मिकता के बजाय पाप का फल पाएंगे। क्योंकि यह शरीर उसी पृथ्वी का है, और जब तक इसे पृथ्वी की तरह ही लगन से संवारा नहीं जाता, यह कभी भी धार्मिकता का फल नहीं देगा।

६८. उपवास, जबकि यह बुद्धिमानी से करने वालों को लाभ पहुँचाता है, मूर्खता से करने वालों के लिए हानिकारक है। इसलिए, जो उपवास का लाभ चाहते हैं, उन्हें उसके हानि, अर्थात् व्यर्थता से सावधान रहना चाहिए; और जो रोटी हम खाते हैं, उसे हमने अपने लिए निर्धारित उपवास के समापन पर, भोजन से परहेज़ के दिनों में बाँटना चाहिए, ताकि, प्रतिदिन थोड़ा-थोड़ा खाकर, हम अपने शरीर की इच्छाओं को वश में कर सकें और सबसे लाभकारी प्रार्थना में अपने हृदय को दृढ़ रख सकें; ताकि, ईश्वर की शक्ति द्वारा अहंकार से संरक्षित होकर, हम अपने जीवन के सभी दिनों में विनम्र बने रहने का ध्यान रख सकें, जिसके बिना कोई भी कभी ईश्वर को प्रसन्न नहीं कर सकता।

६९. यदि हम विनम्रता के लिए प्रयत्न करते, तो हमें दण्डित होने की आवश्यकता न होती, क्योंकि हम पर जो कुछ भी बुरा और दुखद घटित होता है, वह सब हमारे अहंकार के कारण ही होता है। यदि प्रेरित के पास शैतान का एक दूत *'उसे कष्ट देने के लिए'* भेजा गया था, ताकि वह घमंडी न हो जाए, तो जब हम घमंडी हो जाते हैं, तो शैतान स्वयं हमारे ऊपर पाँव रखने के लिए कितना अधिक भेजा जाएगा, जब तक कि हम स्वयं को नम्र न कर लें। हमारे पूर्वजों के पास घर थे, संपत्ति थी, पत्नियाँ थीं, और वे अपने बच्चों का पालन-पोषण करते थे; फिर भी, अपनी अटूट विनम्रता के कारण, उन्होंने ईश्वर से संवाद किया। किंतु हम, संसार से अलग हो गए हैं, संपत्ति को ठुकरा दिया है, अपने घर छोड़ दिए हैं, और यह सोचकर कि हम ईश्वर के साथ रहते हैं, इसके बजाय अपने अहंकार के कारण राक्षसों द्वारा अपमानित किए जाते हैं। जो अभिमानी है वह स्वयं को नहीं जानता; क्योंकि यदि वह अपनी ही मूर्खता और कमजोरी को देखता, तो वह अभिमानी न होता; और जो स्वयं को नहीं जानता वह ईश्वर को कैसे जान सकता है? यदि वह उस मूर्खता को पहचान ही नहीं सकता जिसमें वह रहता है, तो वह ईश्वर की उस बुद्धिमत्ता को कैसे जान सकता है, जिससे वह बहुत दूर है और जिसके लिए वह एक अजनबी है? जो परमेश्वर को जानता है, वह उसकी महानता पर मनन करता है, और स्वयं को दोष देते हुए, धन्य अय्यूब की तरह कहता है: *'मैंने पहले तेरी बातें केवल सुना था, परन्तु अब मेरी आँख ने तुझ को देखा है। इसलिये मैं तुच्छ समझकर पश्चात्ताप करता हूँ, और धूलि और राख समझता हूँ'* (अय्यूब 42:5–6)। इस प्रकार, जो यॉब का अनुकरण करते हैं, वे उसे जानते हैं। अत: यदि हम भी परमेश्वर को देखना चाहते हैं, आओ हम स्वयं को दोष दें और नम्रता का अभ्यास करें, ताकि हम न केवल उसे अपने सामने देख सकें, बल्कि उसे अपने भीतर जीवित और वास करते हुए पाकर, उसमें आनंदित हो सकें; क्योंकि इस प्रकार हमारी मूर्खता उसकी बुद्धि से बुद्धिमान हो जाएगी, और हमारी कमजोरी हमारे प्रभु यीशु मसीह के द्वारा उसकी शक्ति से बलवान हो जाएगी।

70. उपवास, जागरण, और एक तीर्थयात्री का जीवन अच्छे कर्म हैं; फिर भी ये केवल एक सदाचारी जीवन के बाहरी श्रम हैं, जबकि ईसाई मार्ग इन (शारीरिक सद्गुणों) से अधिक आंतरिक है, और किसी को भी अपनी आशा (केवल) इनमें नहीं रखनी चाहिए। क्योंकि कुछ लोगों के साथ ऐसा होता है कि, जब वे अनुग्रह में सहभागी होते हैं, तो (शत्रु की) दुष्टता, जो अभी भी उनके भीतर छिपी रहती है, एक जाल बिछाती है: वह स्वेच्छा से उन्हें सौंप दी जाती है और निष्क्रिय बनी रहती है, फिर भी एक व्यक्ति को यह विश्वास दिलाती है कि उसका मन शुद्ध हो गया है, और बाद में उसे इस घमंड में फंसाती है कि वह एक परिपूर्ण ईसाई है, और फिर, जब कोई व्यक्ति सतर्क रहना बंद कर देता है (यह मानकर कि वह सुरक्षित है और लापरवाह हो जाता है), तो वह दुष्टता विश्वासघात से उस पर हमला करती है, गुप्त रूप से घात लगाकर बैठती है, और उसे प्रलोभित करती है, और उसे पृथ्वी की गहराइयों में गिरा देती है। क्योंकि यदि लुटेरे या सैनिक, जो बीस वर्ष की आयु के पुरुष हैं, अपने दुश्मनों के लिए घात लगा सकते हैं, जाल बिछा सकते हैं, उनका इंतज़ार कर सकते हैं और उन पर पीछे से हमला कर सकते हैं, और उन्हें चारों ओर से घेरकर उन्हें हरा सकते हैं, तो दुष्टता—जो इतने हज़ारों वर्षों से जी रही है—कितनी अधिक सक्षम होगी— और जिसका असली मकसद ही आत्माओं को नष्ट करना है। वह जानती है कि दिल के भीतर कैसे छिपकर घात लगाना है और, कुछ समयों पर, कैसे निष्क्रिय रहना है, ताकि आत्मा को अपनी ही पूर्णता की झूठी भावना में सुला दिया जाए। ईसाई धर्म का आधार इस बात पर है: कि कोई व्यक्ति, चाहे वह कितने भी धार्मिक कार्य कर ले, उसे अपने आप पर इतराना नहीं चाहिए, न ही खुद को कुछ महान समझना चाहिए, बल्कि उसे आत्मा में विनम्र रहना चाहिए। और यदि वह अनुग्रह का सहभागी बनता है, तो उसे यह न सोचे कि उसने कुछ प्राप्त कर लिया है, न ही स्वयं को महान पुरुष समझे, और न ही सिखाना शुरू करे; और महान विनम्रता, तपस्या और प्रार्थना में एक अच्छा जीवन जीते हुए, और अनुग्रह का सहभागी होते हुए, उसे अपनी आत्मा के बारे में बड़ा न सोचे। परन्तु सच्चाई में, अनुग्रह की ऐसी शुरुआत उस समय उसे विशेष रूप से इसलिए दी गई थी ताकि वह परिश्रम को सहन कर सके, भूख और प्यास, ताकि वह (अपने प्रयास में) तृप्त न हो जाए और न ही स्वयं को धर्मी और अनुग्रह में धनी समझे, बल्कि एक ऐसी माँ की तरह रोए और शोक मनाए जो एकमात्र पुत्र को जन्म देती है, जिसे पालने के बाद वह अप्रत्याशित रूप से खो देती है।

71. जो कोई अपने बाहरी जीवन और आचरण में व्यवस्था को पूरा करता है, वह केवल दुष्टता के परिणामों से ही मुक्त होता है, जो परमेश्वर को भावनाओं के अर्थहीन उभारों को बलिदान के रूप में अर्पित करता है; और ऐसा व्यक्ति, अपनी आध्यात्मिक अल्पता के कारण, मोक्ष के लिए इस प्रकार के आचरण से ही संतुष्ट रहता है।

७२. जिसने सुसमाचार के जीवन से सच्चा प्रेम कर लिया है, उसने अपनी दुष्टता की शुरुआत और अंत दोनों को ही समाप्त कर दिया है; और वह कर्म और वचन में हर सद्गुण से श्रेष्ठ है, प्रशंसा और स्वीकारोक्ति का बलिदान अर्पित करता है, क्योंकि वह सभी चिंताओं से मुक्त हो गया है। (जो) वासनाओं के कार्यों से (उत्पन्न होती है); और, उनके विरुद्ध संघर्ष से मन से मुक्त होकर, भविष्य की आशीर्वादों की आशा में एक अतृप्त आनंद पाता है जो आत्मा को पोषण देता है।

73. गेहेना का भय उन लोगों को जो (अपने सदाचारी प्रयास) अभी शुरू ही कर रहे हैं, दुष्टता से बचने के लिए प्रोत्साहित करता है, जबकि अच्छे कर्मों के पुरस्कार की इच्छा उन लोगों को जो प्रगति कर रहे हैं, अच्छा करने के लिए प्रेरित करती है; और प्रेम का रहस्य मन को सभी सृजित चीजों से ऊपर उठा देता है, और उसे ईश्वर के बाद की हर चीज़ के प्रति अंधा बना देता है। प्रभु उन्हीं लोगों में से प्रकाश डालते हैं जो ईश्वर के बाद की सभी चीज़ों के प्रति अंधे हो गए हैं (11c. 145,8), और उन्हें परम दिव्य का प्रकटीकरण करते हैं।

74. *'स्वर्ग का राज्य खमीर के समान है, जिसे एक स्त्री ने लेकर तीन* सेर *आटे में छिपा दिया, और सारा आटा खमीरित हो गया'* (मत्ती 13:33)। यह इस बात का प्रतीक है कि मन ने, प्रभु का वचन अपने भीतर ग्रहण करने के बाद, उसे अपनी त्रैगुण स्वभाव—अर्थात् प्रेरित के अनुसार, शरीर, आत्मा और प्राण—के भीतर छिपा लिया, और उन सभी की सूक्ष्मता को विचार में, इस प्रकार बिखरी हुई आटे की तरह, विश्वास के एक ही खमीर में एकत्र कर लिया, यह प्रतीक्षा करते हुए कि वह हर तरह से अपने भीतर कार्यरत वचन के अनुरूप हो जाए। इसी तरह, प्रभु ने सत्य के वचन की उपमा सरसों के दाने से दी, जो यद्यपि छोटा है, पर जब सुनने वालों के हृदयों में बोया जाता है, तो उचित कर्म के द्वारा बाद में बढ़ता है, और (पवित्रशास्त्र के अनुसार) ऊँची भूमि पर खड़े एक बड़े पेड़ जैसा बन जाता है, *जो 'आने वाले विचारों के लिए शरण का घर' है।*

75. आध्यात्मिक व्यवस्था मसीह की आज्ञाओं से मिलकर बनी है, जिनमें पहली और सबसे बड़ी आज्ञा प्रेम है; यह बुराई नहीं सोचती, बल्कि सभी चीज़ों से प्रेम करती है, सभी चीज़ों पर विश्वास करती है, सभी चीज़ों में आशा रखती है, सभी चीज़ों को सहन करती है (1 कुरिन्थियों 13:5, 7), धर्मग्रंथ के वचन के अनुसार। इसी प्रेम के द्वारा हम एक-दूसरे से अलग पहचाने जाते हैं; फिर भी हम में से कोई भी इसके मूल्य के पूर्ण माप को प्राप्त नहीं

करता है, परन्तु हमें आशा है कि मसीह का अनुग्रह हमारी कमियों की पूर्ति कर देगा, बशर्ते कि हम अपनी पूरी क्षमता से कार्य करना बंद न करें; क्योंकि परमेश्वर जानता है कि हम अपनी कमजोरी के कारण कितना कुछ करने में असमर्थ हैं, और अपनी लापरवाही के कारण प्रेम के कार्य करने में कितनी बार विफल रहते हैं। लेकिन चूँकि प्रेम न केवल स्वैच्छिक प्रयासों से बल्कि हम पर आने वाली परीक्षाओं से भी मजबूत होता है, इसलिए हमें ईश्वर की मदद से बहुत धैर्य और नम्रता की आवश्यकता है। दिव्य प्रेरित कहते हैं: *'इस युग में जो कोई अपने को बुद्धिमान समझता है, वह मूर्ख बन जाए, ताकि वह बुद्धिमान हो जाए'* (1 कुरिन्थियों 3:18)।

76. खलदीयियों का देश (प्रेरितों के काम 7:4) उन आवेगों में जिया गया जीवन है, जिसमें पाप की मूर्तियाँ बनाई और पूजी जाती हैं। दूसरी ओर, मेसोपोटामिया (वही, श्लोक 2), एक ऐसा जीवन है जो दोनों विरोधी प्रवृत्तियों से ओत-प्रोत है। परन्तु प्रतिज्ञात देश (इब्रानियों 11:9) एक ऐसी अवस्था है जो हर अच्छी वस्तु से परिपूर्ण है। इस प्रकार, कोई भी जो प्राचीन इस्राएल की तरह अपने पुराने तरीकों पर लौटता है, उसे एक बार फिर से वासनाओं की दासता में डाल दिया जाता है, और वह उस स्वतंत्रता को खो देता है जो उसे प्रदान की गई थी।

77. जिसने भी शारीरिक वासनाओं पर वीरता से विजय प्राप्त की है और दुष्ट आत्माओं के विरुद्ध पर्याप्त रूप से संघर्ष किया है, और अपनी आत्मा की भूमि से उनकी योजनाओं को भगा दिया है, उसे प्रार्थना करनी चाहिए कि उसे एक शुद्ध हृदय प्रदान किया जाए, और कि एक धर्मी आत्मा उसके भीतर नवीनीकृत हो (भजन संहिता 50:12), अर्थात्, कि वह बुराई के विचारों से पूरी तरह मुक्त हो जाए और, अनुग्रह के वरदान से, दिव्य विचारों से भर जाए, और इस प्रकार ईश्वर की मानसिक दुनिया बन जाए, जो नैतिक, प्राकृतिक और धर्मशास्त्रीय चिंतन से युक्त, उज्ज्वल और महान हो।

७८. एक शुद्ध हृदय (भजन संहिता ५०:१२) वह है जिसने परमेश्वर को एक ऐसी स्मृति अर्पित की है जो सर्वथा निराकार (छापों से शुद्ध) और प्रतिमाओं से रहित है, और जो केवल परमेश्वर की छापों को ग्रहण करने के लिए तैयार है, जिनसे वह आमतौर पर प्रकाशमान होता है।

७९. जिसने दिव्य इच्छा के द्वारा आत्मा की देह की ओर की प्रवृत्ति पर विजय प्राप्त की है, वह देह में रहते हुए भी असीम हो गया है। क्योंकि ईश्वर, जो इच्छुक की इच्छा को आकर्षित करता है, सभी चीजों से अतुलनीय रूप से श्रेष्ठ है और इच्छुक को अपनी इच्छा को ईश्वर के बाद किसी भी चीज़ से जोड़ने की अनुमति नहीं देता। अत; हम अपनी सम्पूर्ण इच्छा-शक्ति से ईश्वर की इच्छा करें, और यह सुनिश्चित करें कि हमारी स्वतंत्र इच्छा किसी भी देहगत वस्तु के अधीन न हो; हम अपनी (आत्मा की) प्रवृत्ति को वास्तव में सभी इन्द्रियगत और बौद्धिक वस्तुओं से ऊपर स्थापित करें, और (तब) हम, अपनी स्वैच्छिक इच्छा से, प्राकृतिक जीवन से कोई हानि नहीं उठाएंगे, जहाँ तक यह ईश्वर के साथ होने का प्रश्न है, जो स्वभावतःअकथनीय है।

80. महान मूसा, अपनी झोपड़ी को शिविर के बाहर रखकर—अर्थात् अपने विचार और मन को दृश्यमान से परे स्थापित करके—ईश्वर की उपासना करने लगते हैं (निर्गमन 34:8), और अंधकार में प्रवेश करके (निर्गमन 20: 21), अदृश्य और अमूर्त ज्ञान के क्षेत्र में प्रवेश करके, वह वहाँ सबसे पवित्र रहस्यों में दीक्षित होकर रहता है।

८१. जब तक हम, अपने मन से, अपने अस्तित्व और ईश्वर के बाद आने वाली सभी चीज़ों से अपनी आदतन आसक्ति से पूरी तरह से मुक्त नहीं हो जाते, तब तक हम सद्गुण में दृढ़ता प्राप्त नहीं करते। लेकिन जब, प्रेम के माध्यम से, हम इस गरिमा को प्राप्त करते हैं, तो हम ईश्वर के वादे की शक्ति को जानेंगे: क्योंकि योग्य व्यक्ति को यह विश्वास करना चाहिए कि जहाँ मन पहले प्रेम के माध्यम से अपनी शक्ति स्थापित करता है, वहाँ एक अटूट आश्वासन है। क्योंकि जब तक मन स्वयं से और जो कुछ भी कल्पना किया जा सकता है, उससे पीछे नहीं हटता, और विचार से परे एक स्थिरता में स्वयं को स्थापित नहीं करता, तब तक वह सभी चीजों में निहित परिवर्तनशीलता से मुक्त नहीं हो सकता।

82. गलील में एक ऊपरी कमरे में *'यहूदियों के डर से', 'दरवाज़े बंद करके'* बैठे हुए (यूहन्ना 20:19)—अर्थात्, दुष्टात्माओं के भय से, प्रकटियों की भूमि में सुरक्षित रहते हुए, दिव्य चिंतन की ऊँचाई पर, अपनी इंद्रियों को दरवाजों की तरह बंद कर के—वे परमेश्वर का वचन ग्रहण करते हैं, जो उनके पास एक अकल्पनीय तरीके से आता है, और बिना किसी इंद्रिय अनुभूति के उनके सामने प्रकट होता है; और शांति की घोषणा के द्वारा, यह उन्हें निर्लिप्तता प्रदान करता है, और श्वास द्वारा—पवित्र आत्मा का विभाजन—और उन्हें दुष्टात्माओं पर अधिकार प्रदान करता है, और उन्हें अपने रहस्यों (यूहन्ना 20:20) के चिन्ह प्रकट करता है।

83. जो सुसमाचार के अनुसार छठे दिन का पालन करता है, उसने पहले पाप की प्रारंभिक प्रवृत्तियों को मार डाला है, वह गुणों के द्वारा निर्लिप्तता की एक ऐसी अवस्था प्राप्त करता है जो सभी बुराइयों से शुद्ध है, और कल्पना में भावों की सूक्ष्मतम कल्पना से भी अपने मन में सब्बाथ (निर्गमन 16:29-30) का पालन करता है। और यॉर्डन पार

करके (उत्पत्ति 32:22, 30), मनुष्य ज्ञान की भूमि में पहुँचता है, जहाँ मन, जो संसार द्वारा रहस्यमय रूप से निर्मित है, परमेश्वर की आत्मा में निवास करता है।

84. सब्तों का सब्त (लैव. 16, 31) तर्कशील आत्मा का शान्ति है, जो (सृजित) प्राणियों के भीतर गुप्त रूप से निहित सभी दिव्य वचनों से भी मन को हटाकर, प्रेम के आनंद में उसे पूर्णतःएकमात्र ईश्वर में परिधानित कर देती है और, रहस्यमय धर्मशास्त्र के माध्यम से, मन को ईश्वर से सर्वथा अविभाज्य बना देती है।

3. आध्यात्मिक कानून पर 200 अध्याय

1. चूँकि आपने बार-बार यह जानने की इच्छा व्यक्त की है कि प्रेरित के अनुसार, *'विधि आध्यात्मिक है'* (रोमियों 7:14) और उन लोगों का मन और आचरण कैसा होता है जो इसका पालन करने का प्रयास करते हैं, हम अपनी क्षमता के अनुसार इस पर बात करेंगे।

2. प्रथम, ईश्वर, जैसा कि हम जानते हैं, सभी शुभ वस्तुओं की आरंभ, मध्य और अंत हैं। किन्तु शुभ[39] केवल मसीह यीशु और पवित्र आत्मा में ही अस्तित्व में आ सकता है और सुनिश्चित हो सकता है।

3. हर अच्छी चीज़ हमें प्रभु द्वारा एक विशेष उद्देश्य के लिए प्रदान की जाती है। जो कोई भी इस पर विश्वास करता है, वह इसे खो नहीं पाएगा।

4. दृढ़ विश्वास एक मजबूत मीनार है[40] । विश्वास करने वाले के लिए, मसीह ही सब कुछ है।

5. जो सर्व-शुभ का अधिष्ठाता है, वह आपके सभी कार्यों का अधिष्ठाता हो, ताकि आपके प्रयत्न परमेश्वर की इच्छा के अनुसार हों।

6. विनम्र और आध्यात्मिक व्यक्ति पवित्र शास्त्रों को पढ़ते समय, सब कुछ अपने ऊपर ही लागू करेगा, न कि दूसरों पर।

7. ईश्वर से प्रार्थना करें कि वह आपके हृदय की आँखें खोल दे, ताकि आप अनुभव से समझी गई प्रार्थना और पठन के लाभ को देख सकें।

8. जो कोई भी आध्यात्मिक वरदान रखता है और ज़रूरतमंदों के प्रति दया दिखाता है, वह इस दया के द्वारा अपने वरदान को बनाए रखता है, जबकि घमंडी लोग घमंड के विचारों से धराशायी होकर इसे खो देते हैं।

९. नम्र लोगों के होंठ सत्य बोलते हैं, और जो इसका विरोध करता है वह उस दास के समान है जिसने प्रभु के गाल पर थप्पड़ मारा हो।

10. आत्म-प्रशंसा का शिष्य न बनो, कहीं ऐसा न हो कि तुम नम्रता के बजाय अहंकार सीख जाओ।

11. धर्मग्रंथ से (उधार लिए गए) ज्ञान का घमंड न करो, कहीं ऐसा न हो कि तुम्हारा मन ईश्वर-निंदा की भावना में पड़ जाए।

12. किसी गहरे और उलझन भरे मामले को बहस के द्वारा सुलझाने का प्रयास न करें, बल्कि उस बात के द्वारा करें जो आध्यात्मिक नियम आज्ञा देता है – धैर्य, प्रार्थना और अटूट[41] आशा।

13. जो देह में प्रार्थना करता है और जिसके पास अभी तक आध्यात्मिक मन नहीं है, वह उस अंधे मनुष्य के समान है जिसने पुकार कर कहा, *'हे दाऊद के पुत्र, मुझ पर दया कर'* (मरकुस 10:48)!

14. वही मनुष्य, जो पहले अंधा था, जब उसे अपनी दृष्टि प्राप्त हुई और उसने प्रभु को देखा, तो उसने अब उन्हें दाऊद का पुत्र नहीं कहा, बल्कि उन्हें परमेश्वर का पुत्र स्वीकार किया और उनकी आराधना की (यूहन्ना 9:35-38)।

१५. अपनी प्रार्थना में आँसू बहाते समय घमण्डी न बनो, क्योंकि मसीह ने ही तुम्हारी आँखों को छुआ और तुमने आध्यात्मिक दृष्टि प्राप्त की है।

16. केवल वही, जो अंधे आदमी के उदाहरण का अनुसरण करते हुए, अपने वस्त्र उतारता है[42] और प्रभु के पास आता है, वही उसका (सच्चा) अनुयायी और सबसे उत्तम सिद्धांतों का प्रचारक बनता है (मरकुस 10:50-51)।

---

[39] बेशक, यह लोगों द्वारा किए गए अच्छे कर्मों को नहीं दर्शाता, बल्कि ईश्वर की कृपा को दर्शाता है।

[40] पूर्व में एक स्तंभ पत्थरों का ढेर नहीं होता, बल्कि एक ऊँची आवासीय इमारत होती है, जो दुष्ट लोगों से सुरक्षा प्रदान करती है।

[41] *मोनोलॉजिस्टोस* का अर्थ 'एक-शब्दीय' है; एक शब्द में, 'दृढ़निश्चयी'। कई बुजुर्ग, जब भ्रम की स्थिति का सामना करते थे, तो प्रार्थना करते और मार्गदर्शन प्राप्त करते थे।

[42] यह, बेशक, निस्वार्थ दृढ़संकल्प है।

17. बुराई (पाप), जब किसी के विचारों में (आनंद के साथ) किया जाता है, तो वह हृदय को कठोर कर देती है (उसे पत्थर बना देती है), जबकि संयम आशा के साथ मिलकर, बुराई को जड़ से उखाड़कर, हृदय को कोमल कर देता है (उसे धूल में बदल देता है)।

18. हृदय का एक उचित और लाभकारी घिसाव होता है—जो इसके कोमल होने का कारण बनता है—और एक दूसरा, अव्यवस्थित और हानिकारक घिसाव भी होता है—जो केवल इसके विनाश का कारण बनता है[43] ।

19. (विपत्तियों, दुर्भाग्यों, दुःखों) के सामने सतर्कता, प्रार्थना और धैर्य एक प्रकार की कठोर कसौटी है जो घाव करती है, फिर भी हृदय के लिए फायदेमंद है, बशर्ते कि हम आत्म-संतुष्टि के माध्यम से उनके संयोग में बाधा न डालें[44] । जो इनका और अन्य मामलों में पालन करता है, उसे सहायता मिलेगी; लेकिन जो इन्हें अनदेखा करता है और इन्हें विभाजित करता है (एक को दूसरे से अलग करता है), उसे प्रस्थान के समय असहनीय पीड़ा सहनी पड़ेगी[45] ।

20. सुख-भोगी हृदय (जो केवल सुखों की खोज करता है) प्रस्थान के समय आत्मा के लिए एक जेल और बेड़ियों का एक सेट बन जाता है; जबकि एक परिश्रमी हृदय (जो प्रभु के लिए अपनी इच्छा के विरुद्ध स्वयं को कष्ट पहुँचाना और थकाना पसंद करता है) एक खुला द्वार (अगले जीवन के लिए) है।

21. *शहर में जाने वाले लोहे के फाटक* (प्रेरितों के काम 12:10) एक कठोर हृदय हैं; पीड़ितों और पश्चातापी लोगों के लिए, वे *'अपने आप खुल जाएँगे'*, ठीक वैसे ही जैसे वे पतरस के लिए खुले थे[46] ।

22. प्रार्थना के कई रूप हैं, जो एक-दूसरे से भिन्न हैं। हालाँकि, प्रार्थना का कोई भी रूप हानिकारक नहीं है, सिवाय उस के जो प्रार्थना ही नहीं है, बल्कि शैतान का काम है।

23. एक मनुष्य, बुराई करने का इरादा रखकर, पहले अपनी प्रथा के अनुसार मन में प्रार्थना की और, परमेश्वर की व्यवस्था से (बुराई करने से) रोके जाने के बाद, बाद में (इसके लिए) बहुत धन्यवाद दिया[47] ।

24. दाऊद, कार्मेल के नबाल को मारने का इरादा करके, दैवीय प्रतिशोध की याद से इस इरादे से मुड़ गया, और बाद में इसके लिए बहुत धन्यवाद दिया। हम यह भी जानते हैं कि जब उसने ईश्वर को भुला दिया तो उसने क्या किया, और जब तक नबी नाथन ने उसे ईश्वर की याद नहीं दिलाई, तब तक वह (ईश्वर-विमुख और पश्चातापहीन) बना रहा।

25. ईश्वर का स्मरण करते हुए अपनी प्रार्थनाएँ बढ़ाएँ, ताकि जब आप उन्हें भूल जाएँ तो प्रभु आपको याद रखें।

26. जब आप पवित्र शास्त्र पढ़ते हैं, तो उसमें छिपी हुई बात को समझें (विशेष रूप से आपके लिए): *'क्योंकि जो कुछ पहिले लिखा गया, वह हमारी शिक्षा के लिए लिखा गया'* (रोमियों 15:4)।

27. धर्मग्रंथ विश्वास को *'आशा की गई बातों का निश्चय'* (इब्रानियों 11:1) कहता है और जो यह नहीं जानते कि मसीह उनमें है, उन्हें अकुशल बताता है (2 कुरिन्थियों 13:5)।

28. जैसे विचारों का पता उनके कर्मों और वचनों से चलता है, वैसे ही हृदय की गतिविधियों से भविष्य के पुरस्कारों का पूर्वाभास मिलता है (यह कि वह किस ओर आकर्षित होता है, उसे क्या भाता है)।

29. एक उदार हृदय को बदले में स्पष्ट रूप से उदारता दिखाई जाएगी, और एक दयालु हृदय को उसी प्रकार दया मिलेगी; लेकिन विपरीत, विपरीत और उसके परिणाम को जन्म देता है।

30. स्वतंत्रता का नियम सभी सत्य सिखाता है; कई लोग इसे अपने मन से पढ़ते हैं, लेकिन कुछ ही आज्ञाओं के अनुरूप पालन के माध्यम से इसे समझते हैं।

31. इसके पूर्णत्व को मानवीय गुणों में न खोजो, क्योंकि उनमें कुछ भी पूर्ण नहीं है: इसका पूर्णत्व मसीह के क्रूस में छिपा है।

32. स्वतंत्रता का विधान सच्ची समझ से पढ़ा जाता है, आज्ञाओं के पालन द्वारा समझा जाता है, और मसीह की अनुदाताओं द्वारा पूरा किया जाता है।

---

[43] चाहे कोई व्यर्थ ही खुद को सताए, या अपने आध्यात्मिक पिता से डाँट खाए, हृदय केवल घाव ही सहता है: वह आहत होता है – और दर्द होता है, फिर भी कोई लाभ नहीं होता। यह ठीक वैसे ही है जैसे किसी मरीज को गलत दवा देना।

[44] समाधान विभिन्न तत्वों का मिश्रण है, उदाहरण के लिए, पानी और शराब। उल्लिखित तीन गुणों में हमेशा एक-दूसरे के साथ सामंजस्य होना चाहिए। आत्म-तुष्टि उनके इस मेल को भंग कर देती है।

[45] तब व्यक्ति को एहसास होगा कि उसने अनजाने में गलत काम किया है।

[46] यह दया की कमी वाला हृदय नहीं है, बल्कि एक ऐसा हृदय है जो पूरी तरह से कठोर हो गया है, असंवेदनशीलता से पीड़ित है। यहाँ, संत पीटर के सामने बंद द्वारों के खुलने की व्याख्या आध्यात्मिक रूप से की गई है। दुखद पीड़ा बाहरी वंचनाओं के कारण आत्म-कड़वाहट है, जबकि पश्चाताप—मिटाना—विनाशकारी सच्चाइयों के एहसास से हृदय का बुद्धिमानीपूर्ण स्पंदन है। ये दोनों हृदय से पत्थर को हटाते हैं।

[47] यह, बेशक, किसी वास्तविक घटना का संदर्भ है, जिसे 'अप्रत्याशित आनंद' कहा जाता है।

33. जब हमारा विवेक हमें परमेश्वर की सभी आज्ञाओं का पालन करने के लिए बाध्य करता है, तो हम समझेंगे कि प्रभु का विधान निर्दोष है, और यह कि यद्यपि यह हमारी अपनी भलाई (हमारी स्वाभाविक नैतिक और धार्मिक भावनाओं और प्रवृत्तियों) द्वारा संभव बनाया गया है, फिर भी यह परमेश्वर की अनुग्रह के बिना मनुष्यों में पूरी तरह से साकार नहीं हो सकता।

34. जो मसीह की हर आज्ञा से स्वयं को बँधा हुआ नहीं मानते, वे परमेश्वर की व्यवस्था का देहिक रीति से अर्थ लगाते हैं, *'न तो वे यह समझते हैं कि वे क्या कहते हैं और न ही उन बातों को जिनकी वे पुष्टि करते हैं'* (1 तीमुथियुस 1:7); इसलिए, वे सोचते हैं कि वे इसे अपने कर्मों के द्वारा पूरा कर सकते हैं।

35. एक कर्म स्पष्ट रूप से एक अच्छा कर्म है, फिर भी उसे करने वाले का इरादा अच्छाई की ओर निर्देशित नहीं है; दूसरा अपने आप में देखने में बुरा है, फिर भी उसे करने वाले का इरादा अच्छाई की ओर निर्देशित है। और इस प्रकार केवल कर्म ही नहीं किए जाते, बल्कि कुछ लोगों द्वारा इसी तरह बोले गए शब्द भी: कुछ लोग अनुभवहीनता या अज्ञानता के कारण एक कर्म को अलग रूप में प्रस्तुत करते हैं; कुछ लोग ऐसा दुर्भावना से करते हैं; और कुछ अन्य धार्मिकता के मुखौटे के तहत ऐसा करते हैं।

36. जो व्यक्ति प्रशंसा के शब्दों में, जो साधारण लोगों की समझ से परे होते हैं, निंदा और बदनामी को छिपाता है, वह उस व्यक्ति के समान है जो विनम्र दिखते हुए भी घमंडी होता है। वे लंबे समय तक झूठ में सच्चाई को छिपाने में सफल रहते हैं, लेकिन अंततः अपनी वास्तविक प्रकृति के वश में होकर, वे अपने कर्मों से बेनकाब हो जाते हैं।

37. ऐसा होता है कि एक व्यक्ति, जब वह पड़ोसी के लिए कुछ अच्छा करते हुए प्रतीत होता है, तो उसकी आत्मा को हानि पहुँचती है, और ऐसा भी होता है कि कोई दूसरा, ठीक इसलिए कि वह उनके लिए ऐसा कोई बाहरी सेवा का कार्य नहीं करता है, अपनी आत्मा को लाभ पहुँचाता है।

38. एक निंदा द्वेष और प्रतिशोध से उत्पन्न होती है, और एक दूसरी प्रकार की निंदा होती है, जो ईश्वर और सत्य के भय से उत्पन्न होती है।

39. उस व्यक्ति की निंदा न करें जिसने पाप करना छोड़ दिया है और जो पहले से ही पश्चातापी है। लेकिन यदि, जैसा आप कहते हैं, आप ईश्वर के लिए उसकी निंदा करना चाहते हैं, तो पहले उसके सामने अपने पापों का इकरार करें।

40. ईश्वर हर सद्गुण का अधिष्ठाता है, जैसे सूर्य दिन के प्रकाश का अधिष्ठाता है।

41. सदाचार का अभ्यास करने के बाद, उस एक को याद करो जिसने कहा: *'मेरे बिना तुम कुछ भी नहीं कर सकते'* (यूहन्ना 15:5)।

42. ऐसा विधान है कि दुख में लोगों के लिए भलाई है, जबकि व्यर्थता और आनंद में बुराई है।

43. जो दूसरे की बदनामी सहन करता है, वह पाप से बचता है और अपने दुख के बीच, मध्यस्थता पाता है।

44. मसीह में विश्वास करने वाला, अपने विश्वास के अनुरूप पुरस्कार पर भरोसा करके, स्वेच्छा से हर अन्याय को सहन करता है।

४५. जो अपने साथ अन्याय करने वालों के लिए प्रार्थना करता है, वह दुष्टात्माओं को परास्त करता है, जबकि जो पहले का विरोध करता है, वह बाद वालों से घायल हो जाता है।

46. लोगों से अन्याय सहना, दुष्टात्माओं से सहने की अपेक्षा बेहतर है, परन्तु जो प्रभु को प्रसन्न करता है, वह दोनों पर जय प्राप्त कर लेता है।

४७. हर आशीर्वाद परमेश्वर की ओर से अनुग्रहपूर्वक आता है, लेकिन यह कृतघ्न, असंवेदनशील और आलसी लोगों से गुप्त रूप से चला जाता है।

48. हर पाप निषिद्ध आनंद में समाप्त होता है, जबकि हर सद्गुण आध्यात्मिक सांत्वना में समाप्त होता है। और जैसे पहला अपने समान भावनाओं को उत्तेजित करता है, वैसे ही दूसरा भी अपने समान भावनाओं को उत्तेजित करता है।

49. मानवीय निंदा हृदय में दुख उत्पन्न करती है, लेकिन यह उसे सहने वाले के लिए शुद्धता का कारण बन जाती है।

50. अज्ञानता लाभदायक चीज़ों का विरोध करने का बहाना और स्वतंत्रता दोनों प्रदान करती है, और, अधिक साहसी हो जाने पर, बुराई के आपत्तियों (या प्रस्तावों) को बढ़ा देती है।

51. जिसके पास कुछ भी कमी नहीं है, वह आने वाले दुखों को स्वीकार करे और, एक ऐसे व्यक्ति के रूप में जिसे हिसाब देना है, अपना सारा अहंकार त्याग दे।

52. गुप्त रूप से पाप करने के बाद, उसे छिपाने का प्रयास (यहाँ तक कि परमेश्वर के सामने भी) न करें – (यह न सोचें कि जो छिपा है वह छिपा ही रहता है), क्योंकि '*हर एक बात परमेश्वर के सामने नंगी और खुली है; हमें उसी के सामने अपना हिसाब देना है*' (इब्रानियों 4:13)।

53. मन में स्वयं को प्रभु के सामने प्रस्तुत करो: '*क्योंकि मनुष्य बाहरी दिखावट पर ध्यान देता है, परन्तु यहोवा हृदय पर*' (1 शमूएल 16:7)।

54. परमेश्वर में एक उद्देश्य के बिना कुछ भी न सोचें और न करें, क्योंकि जो बिना लक्ष्य के यात्रा करता है वह अपनी मेहनत व्यर्थ गँवा देता है।

55. जो बिना कारण के पाप करता है, उसके लिए पश्चाताप करना कठिन है, क्योंकि परमेश्वर की सच्चाई से छिपना असंभव है।

56. एक दुखद घटना विवेकी व्यक्ति को ईश्वर का स्मरण कराती है, जबकि यह उस व्यक्ति को उसी अनुपात में दुखी करती है जो ईश्वर को भूल जाता है।

57. प्रत्येक अनिच्छित दुख को ऐसी स्मृति में आपका शिक्षक बनने दो, और पश्चाताप की ओर आपका झुकाव कभी विफल न हो।

58. भूल अपने आप में कोई शक्ति नहीं रखती, बल्कि यह हमारी लापरवाही से ही टिकी रहती है और उसी के अनुपात में होती है।

५९. यह न कहो: 'मैं क्या करूँ? मैं तो इसे चाहता भी नहीं, फिर भी यह (भूल) आ जाती है।' ऐसा इसलिए है क्योंकि जब तुम्हें याद आया तो तुमने वह नहीं किया जो तुम्हारा कर्तव्य था।

60. आप उन अच्छे कर्मों को करें जिन्हें आप याद रखते हैं, और फिर वे भी आपको प्रकट हो जाएँगे जिन्हें आप याद नहीं रखते; और लापरवाही से अपने विचारों को विस्मृति के हवाले न करें।

61. शास्त्र कहता है: '*प्रभु के सामने नरक और विनाश प्रकट हैं*' (नीतिवचन 15:11)। यह हृदय के अज्ञान और विस्मृति को संदर्भित करता है।

62. नरक अज्ञानता है, क्योंकि दोनों अंधकारमय हैं। विनाश, हालांकि, भूल है, क्योंकि दोनों में जो कभी था उसका कुछ हिस्सा खो जाता है।

63. अपने दुष्ट कर्मों की जाँच करो, अपने पड़ोसी के नहीं, और तुम्हारा आंतरिक मंदिर लूट नहीं जाएगा।

64. लापरवाही अपनी शक्ति के भीतर किसी भी अच्छे कार्य के लिए कोई स्थान नहीं छोड़ती (यह किसी भी चीज़ के लिए स्वीकार नहीं की जाती)। दान और प्रार्थना उन लोगों को, जो अपने कर्तव्य के प्रति लापरवाह हो गए हैं, पुनःस्थापित करते हैं।

65. ईश्वर के लिए शोक भक्ति का एक अभिन्न अंग है, क्योंकि सच्चा प्रेम विपत्ति से परखा जाता है।

66. यह मत सोचो कि तुम दुख के बिना सद्गुण प्राप्त कर सकते हो: ऐसा सद्गुण (तुम्हारे द्वारा प्राप्त करते समय अनुभव की जाने वाली) शांति के कारण अविश्वसनीय (अनपरीक्षित) होता है।

67. हर अनिच्छित दुख के परिणाम पर विचार करो, और तुम उसमें पापों का नाश (शुद्धिकरण) पाओगे।

68. पड़ोसी की बहुत सी सलाह लाभदायक होती है, पर प्रत्येक व्यक्ति के लिए अपने निर्णय से अधिक उपयुक्त कुछ नहीं।

६९. जब उपचार की तलाश में हों, तो अपने अंतर्मन की सुनें; जैसा वह कहे, वैसा ही करें, और आपको लाभ होगा।

70. ईश्वर और मनुष्य का अंतरात्मा हर व्यक्ति के गुप्त कर्मों को जानते हैं, और उन्हीं के द्वारा वे सुधारे जा सकते हैं।

71. कोई व्यक्ति चाहे जितना भी कर्म करे, परन्तु ईश्वर न्याय के अनुसार उनके कर्मों के परिणाम का विधान करता है[48] ।

72. यदि आप बिना निंदा के लोगों की प्रशंसा स्वीकार करना चाहते हैं, तो पहले अपने पापों के लिए डाँट-फटकार का स्वागत करना सीखें।

73. मसीह की सच्चाई के लिए कोई भी जितनी निंदा सहन कर सकता है, लोगों द्वारा उसे सौ गुना महिमा मिल सकती है। लेकिन भविष्य (पुरस्कार) के लिए हर अच्छा काम करना कहीं बेहतर है।

---

[48] मिग्ने द्वारा प्रकाशित, सव्व. पांडुलिपि के अध्याय 71 में निम्नलिखित लिखा है: जो व्यर्थ में परिश्रम करता है (बिना उद्देश्य या क्रम के) वह हर चीज़ में गरीब है, जबकि जो आशा के साथ आगे बढ़ता है वह दोगुना धनी है।

74. जब कोई व्यक्त‍ि अपने शब्दों या कर्मों के द्वारा दूसरे को लाभ पहुँचाता है, तो दोनों को इसमें परमेश्वर की कृपा को स्वीकार करना चाह‍िए। जो इसे नहीं समझता, वह उस व्यक्त‍ि से पराज‍ित हो जाएगा जो इसे समझता है[49] ।

75. जो कपटवश अपने पड़ोसी की प्रशंसा करता है, वह बाद में उसे डांटेगा, और वह लज्ज‍ित होगा।

76. जो अपने शत्रुओं की घातों से अनभ‍िज्ञ रहता है, वह आसानी से कठोर हो जाता है, और जो वासनाओं के कारणों (उनकी जड़ों और उत्तेजकों) को नहीं समझता, वह आसानी से ग‍िर जाता है।

77. आत्म-तुष्ट‍ि (अपनी प्रसन्नता के ल‍िए कार्य करना) से लापरवाही उत्पन्न होती है, और लापरवाही से व‍िस्मृत‍ि आती है। क्योंक‍ि ईश्वर ने प्रत्येक व्यक्त‍ि को यह ज्ञान प्रदान क‍िया है क‍ि उनके ल‍िए क्या लाभदायक है।

78. एक व्यक्त‍ि अपने पड़ोसी को अपनी जानकारी के अनुसार (एक शब्द) कहता है, जबक‍ि ईश्वर श्रोता के भीतर उनकी आस्था के अनुसार कार्य करता है।

79. मैंने साधारण लोगों को देखा है ज‍िन्होंने अपने कर्मों द्वारा स्वयं को नम्र बनाया, और वे बुद्ध‍िमानों से भी अध‍िक बुद्ध‍िमान हो गए[50] ।

80. एक और साधारण व्यक्त‍ि, उनकी प्रशंसा सुनकर, उनकी व‍िनम्रता का अनुकरण नहीं क‍िया, बल्क‍ि केवल अपनी सादगी का ढिंढोरा पीटा, और इससे वह घमंडी हो गया।

81. जो ज्ञान का त‍िरस्कार करता है और अपनी अज्ञानता का घमंड करता है, वह न केवल वाणी में बल्क‍ि मन में भी अज्ञानी है।

82. जैसे शब्दों में बुद्ध‍िमत्ता होती है और बुद्ध‍िमत्ता स्वयं होती है, वैसे ही शब्दों में अज्ञानता होती है और अज्ञानता स्वयं होती है।

83. अभ‍िव्यक्त‍ि की अज्ञानता सबसे भक्त‍िमय व्यक्त‍ि को कोई हान‍ि नहीं पहुँचाती, जैसे वाच‍िक बुद्ध‍िमत्ता व‍िनम्र और बुद्ध‍िमान व्यक्त‍ि को कोई हान‍ि नहीं पहुँचाती।

84. यह न कहो: 'मुझे नहीं पता क‍ि क्या सही है और इसल‍िए यद‍ि मैं उसे नहीं करता तो मैं न‍िर्दोष हूँ।' क्योंक‍ि यद‍ि तुम उस भलाई को करते जो तुम जानते हो, तो बाकी सब कुछ धीरे-धीरे तुम्हारे ल‍िए प्रकट हो जाएगा, एक बात से दूसरी बात समझ में आएगी, जैसे एक ही पर‍िवार के सदस्य एक-दूसरे को पहचानते हैं (नीतव‍िचन, अध्याय 48)। पहले (जो ज्ञात है) को करने से पहले दूसरे (जो आप नहीं जानते) को जानने का आपके ल‍िए कोई लाभ नहीं है। क्योंक‍ि '*मन* न‍िष्क्र‍ियता (कर्मों की कमी) के कारण *घमंड करता है*', '*लेक‍िन प्रेम न‍िर्माण करता है, क्योंक‍ि यह सभी बातों को सहन करता है*' (1 कुर‍िन्थ‍ियों 8:1, 13:7)।

८५. द‍िव्य शास्त्र के शब्दों को कर्मों के माध्यम से पढ़ें, और शब्दों पर अत्यध‍िक अटकें नहीं, केवल अमूर्त व‍िचारों से स्वयं को फुलाएँ नहीं।

86. जो कर्मों को त्यागकर केवल ज्ञान से ही संतुष्ट है, वह दोधारी तलवार के स्थान पर, एक सरकंडे का डंडा थामे रहता है, जो युद्ध के समय, धर्मग्रंथ (यशायाह 36:6) के अनुसार, पहले उसके हाथ को घायल करेगा और उसे भेदकर, पहले उसके शत्रुओं में गर्व का व‍िष डाल देगा।

87. हर व‍िचार का परमेश्वर के सामने अपना माप और वज़न होता है। इस प्रकार, उनके सामने पक्षपात से सोचना, या केवल एक ही तरीके से सोचना (अर्थात्, कर्मों के ब‍िना केवल मन से, या अनुभवी लोगों से परामर्श क‍िए ब‍िना केवल अपने मन से) एक ही बात है।

88. ज‍िसने आज्ञा का पालन क‍िया है, उसे उसके कारण परीक्षा की अपेक्षा करनी चाह‍िए। क्योंक‍ि मसीह के प्रेम की परीक्षा व‍िपत्त‍ि से होती है (देखें अध्याय 65)।

८९. क‍िसी भी व‍िचार को लापरवाही से न तुच्छ समझें (नज़रअंदाज़ न करें)। क्योंक‍ि कोई भी व‍िचार ईश्वर से छ‍िपा नहीं है।

90. जब आप देखें क‍ि कोई व‍िचार आपको मानवीय मह‍िमा का वादा करता है, तो न‍िश्च‍ित रूप से जान लें क‍ि वह आपके ल‍िए अपमान तैयार कर रहा है।

९१. शत्रु आध्यात्म‍िक कानून की मांगों को जानता है और केवल मन को धोखा देने की कोश‍िश करता है (जो आध्यात्म‍िक जीवन जीते हैं, उनमें एक व‍िचार डालकर, न क‍ि क‍िसी कर्म को)। इस तरह, वह या तो अपने साथी (जब

[49] शायद एकमात्र व‍िचार यह है क‍ि, दोनों में से, जो इसे समझता है वह श्रेष्ठ है।
[50] पॉल सरल।

कोई सुझाव से सहमत हो जाता है) को पश्चाताप के श्रम (यदि वे अपना दोष स्वीकार करते हैं) के अधीन करने में सफल हो जाता है, या, यदि वे पश्चाताप नहीं करते हैं (अपना दोष स्वीकार करने में विफल रहने के बाद), तो उन्हें अनैच्छिक, दर्दनाक पीड़ा (और कठिनाइयों जो ईश्वर आमतौर पर ऐसे लोगों को उनकी शिक्षा के लिए भेजते हैं) से बोझिल करने में सफल हो जाता है। कभी-कभी ऐसा होता है कि वह लोगों को ऐसे प्रलोभनों के खिलाफ विद्रोह करने के लिए उकसाता है (जैसे कि किष्ट, शिकायत करने, ईश्वर के आदेश की अवज्ञा, और इस तथ्य की अज्ञानता के कारण कि उसने वे कष्ट स्वयं अपने ऊपर लाए हैं), ताकि इस प्रकार यहां भी दर्दनाक कष्टों को बढ़ाया जा सके (क्योंकि ईश्वर उन्हें बार-बार भेजता है ताकि वह होश में आ जाए) और, उसके प्रस्थान के समय, उसे अविश्वासी के रूप में उजागर किया जा सके (प्रोविडेंस (ईश्वरीय व्यवस्था) में उसके अविश्वास और इस तथ्य को प्रकट करने के लिए कि दोष स्वयं उसी का था)।

९२. कई लोगों ने (जीवन में) आने वाली दुर्भाग्यपूर्ण परिस्थितियों का सफलतापूर्वक विरोध किया है, लेकिन प्रार्थना और पश्चाताप के बिना कोई भी (परलोक की कठोरताओं से) नहीं बच पाएगा।

93. बुराई एक-दूसरे से अपनी ताकत लेती है; उसी तरह, अच्छाई एक-दूसरे से बढ़ती (परिपक्व होती, मजबूत होती) है। दोनों ही अपने अनुयायियों को और आगे बढ़ने के लिए प्रेरित और मार्गदर्शन करते हैं।

94. शैतान छोटी पापों को हमारी नज़रों में तुच्छ दिखाता है, क्योंकि अन्यथा वह हमें बड़े पापों में नहीं ले जा सकता।

95. लज्जास्पद वासना की जड़ मानवीय प्रशंसा है, ठीक उसी तरह जैसे पवित्रता की जड़ हमारी पापी होने की दृढ़ मान्यता है—केवल तब नहीं जब हम इसे सुनते हैं, बल्कि तब भी जब हम इसे स्वयं स्वीकार करते हैं।

96. उस व्यक्ति को कोई लाभ नहीं होता जिसने संसार का त्याग कर दिया है, परन्तु (अपने ही सुख के लिए) आत्म-तुष्टि का जीवन जीता है (हमेशा वही करता है जो मन को भाता है और सुखदायक होता है)। क्योंकि जो कुछ वह पहले अपनी संपत्ति के द्वारा करता था, वही वह अब कुछ भी न होते हुए भी करता है।

९७. फिर से, यदि तपस्वी धन अर्जित करता है, तो वह अपने आंतरिक स्वभाव में पहले वाले का भाई है, क्योंकि वह भी उसी माँ का है—जो हृदय को प्रिय लगती चीज़ों का पीछा करना है—सिर्फ एक अलग पिता का, जो उसके जुनून में बदलाव के कारण है।

98. कभी-कभी ऐसा होता है कि कोई व्यक्ति अधिक आनंद के लिए अपनी वासना को दबा देता है (क्योंकि इसके दास हुए बिना जीवन अधिक शांतिपूर्ण होता है), और अन्य लोग, उसके उद्देश्य से अनजान, उसकी प्रशंसा करते हैं; फिर भी शायद वह स्वयं महसूस करता है कि उसकी कोशिशें व्यर्थ हैं।

99. सभी पापों का कारण अहंकार और सुख की इच्छा है। जब तक कोई इनसे घृणा नहीं करता, तब तक वह अपनी वासनाओं को दबा नहीं सकता।

100. *सभी बुराइयों की जड़ धन का प्रेम है* (1 तीमुथियुस 6:10), लेकिन यह स्पष्ट है कि यह भी उनके लिए ही बनती है (यह उनसे आवश्यक है, उन पर स्थापित है, और उन पर निर्भर करती है)।

101. मन इन तीन कामनाओं से अंधा हो जाता है: धन का प्रेम, अहंकार, और सुख की कामना।

102. *चिपचिपी की तीन बेटियाँ,* जिनके बारे में धर्मग्रंथ में बताया गया है, वे हैं *'प्रियजन का प्रेम'* जो माता से उत्पन्न हुआ है, मूर्खता (नीतिवचन 30:15)।

103. तर्क और विश्वास – जो हमारी प्रकृति के ही साथी हैं – इनके अलावा किसी और चीज़ से मन्द नहीं हुए हैं।

104. उनके कारण लोगों में क्रोध, रोष, झगड़ा, हत्या और अन्य सभी बुराइयों की पूरी श्रृंखला बहुत बढ़ गई है।

105. इस प्रकार हमें धन के प्रेम, दंभ और सुख के जुनून से घृणा करनी चाहिए, क्योंकि वे दुराचारों की माताएँ और सद्गुणों की सौतेली माताएँ हैं।

106. इनके कारण, हमें आज्ञा दी गई है कि हम संसार से और संसार में किसी भी चीज़ से प्रेम न करें; (इस अर्थ में नहीं) कि हमें परमेश्वर की सृष्टि से लापरवाही से घृणा करनी चाहिए, बल्कि ताकि हम उन जुनूनों के कारणों को काट सकें।

107. 'शास्त्र कहता है, *"कोई भी जो एक सिपाही है, वह इस जीवन के मामलों में उलझता नहीं है"* (2 तीमुथियुस 2:4)। क्योंकि जो कोई भी, उनमें उलझ जाने के बाद, कामनाओं पर विजय प्राप्त करना चाहता है, वह उस मनुष्य के समान है जो भूसे से आग बुझाने का प्रयास करता है।

108. जो कोई धन, कीर्तिऔर सुखों के लिए अपने पड़ोसी से क्रोध करता है, उसने अभी तक यह नहीं समझा है किईश्वर सभी चीजों का न्यायपूर्वक शासन करता है।

109. जब आप प्रभु के वचन सुनते हैं: *'यदि कोई अपनी सारी संपत्ति का त्याग नहीं करता, तो वह मुझ योग्य नहीं'* (लूका 14:33, मत्ती 10:38), तो समझ जाइए कियह केवल संपत्तिके लिए ही नहीं, बल्कि बुराई के सभी आंतरिक स्रोतों के लिए भी कहा गया है।

110. जो सत्य को नहीं जानता वह सच्चे मन से विश्वास नहीं कर सकता। क्योंकि ज्ञान, स्वभावत; विश्वास से पहले आता है।

111. जैसे परमेश्वर ने प्रत्येक दृश्यमान प्राणी को उसकी उचित नियति दी है, वैसे ही वह मानव विचारों को भी उनकी प्रकृति के अनुसार पुरस्कृत करेगा, चाहे हम चाहें या न चाहें।

112. यदि कोई, खुलेआम पाप करके और बिना पश्चाताप के, अंत तक किसी भी कष्ट को नहीं झेलता है, तो जान लो कि उसका न्याय बिना दया के होगा।

113. जो स्पष्ट मन से प्रार्थना करता है, वह अपने सामने आने वाली पीड़ाओं को सहन करता है, जबकि द्वेषी लोग अभी तक शुद्ध हृदय से प्रार्थना नहीं कर पाए हैं।

114. जब कोई दूसरे के हाथों से हानि, अपमान या उत्पीड़न सहता है, तो वर्तमान पर नहीं, बल्कि आने वाले समय पर ध्यान केंद्रित करे; और आप पाएंगे कि वह आपके लिए कई आशीर्वादों का स्रोत बन गया है, न केवल वर्तमान में बल्कि आने वाले युग में भी।

115. जैसे कब्ज़ होने वालों के लिए कड़वा सेंधा नमक लाभदायक होता है, वैसे ही क्रोधी लोगों के लिए कड़वी विपत्तियों को सहना लाभदायक होता है: क्योंकि ये उपचार पहले वालों के स्वास्थ्य को बहाल करते हैं और दूसरे वालों में पश्चाताप उत्पन्न करते हैं।

116. यदि आप बुराई सहना नहीं चाहते, तो बुराई करना भी न चाहें: क्योंकि दूसरे के पीछे पहला अनिवार्य रूप से आता है। *'क्योंकि जो कोई जो कुछ बोएगा, वह वही काटेंगे'* (गलातियों 6:7)।

117. अपनी इच्छा से बुराई बोकर और अपनी इच्छा के विरुद्ध उसकी कटाई करके, हमें परमेश्वर के न्याय पर आश्चर्य करना चाहिए।

118. बोने और काटने के बीच एक निश्चित समय का अंतराल होना अनिवार्य है। लेकिन इसी कारण, हमें इस बात पर संदेह नहीं करना चाहिए कि प्रतिफल अवश्य मिलेगा।

119. जब हम पाप करते हैं, तो दोष शरीर का नहीं, बल्कि मन का है; क्योंकि यदि मन ने अगुवाई न की होती, तो शरीर उसका अनुसरण न करता।

120. एक गुप्त खलनायक उन लोगों से अधिक दुर्भावनापूर्ण होता है जो खुलेआम दूसरों के साथ अन्याय करते हैं; इसलिए, वह अधिक दुष्ट होता है और दंडित किया जाता है।

121. जो षड्यंत्र रचता है और गुप्त रूप से बुराई करता है, वह एक साँप है, जैसा कि शास्त्र कहता है, *'रास्ते पर घात लगाकर बैठा और घोड़े की एड़ी को काटता है'* (उत्पत्ति 49:17)।

122. जो कोई एक ही समय में किसी पड़ोसी की एक बात की प्रशंसा करता है और दूसरी बात के लिए उसे फटकारता है, वह घमंड और ईर्ष्या से ग्रस्त होता है: प्रशंसा के माध्यम से वह अपनी ईर्ष्या को छिपाने का प्रयास करता है, जबकि फटकार के माध्यम से वह खुद को अपने पड़ोसी से बेहतर साबित करता है।

123. जैसे भेड़ों और भेड़ियों को एक साथ चराना असंभव है, वैसे ही अपने पड़ोसी के प्रति विश्वासघात करने वाले के लिए दया पाना असंभव है।

124. जो कोई भी गुप्त रूप से अपनी इच्छा को आज्ञा के साथ मिलाता है, वह एक व्यभिचारी है, जैसा कि बुद्धि की पुस्तक में दिखाया गया है, और *'अपनी समझ की कमी के कारण, वह बीमारी और अपमान सहन करेगा'* (नीतिवचन 6:32-33)।

125. जैसे पानी और आग एक दूसरे के विपरीत होने के कारण नहीं मिलते, वैसे ही आत्म-न्याय और विनम्रता एक दूसरे के विरोधी हैं।

126. जो पापों की क्षमा चाहता है, वह नम्रता से प्रेम करता है, जबकि जो दूसरे को दोषी ठहराता है, वह अपने ही बुरे कर्मों को खुद पर ठोक लेता है।

127. किसी भी पाप को बिना प्रायश्चित के न छोड़ें, चाहे वह कितना भी छोटा क्यों न हो, कहीं वह बाद में आपको बड़े पापों की ओर न ले जाए।

128. यदि तुम बचना चाहते हो, तो सच्चे वचन (अपने बारे में सत्य का वचन) से प्रेम करो और कभी भी डाँट-फटकार को जल्दबाज़ी में न ठुकराओ।

129. सत्य का वचन साँप के बच्चों को परिवर्तित कर देता है और उन्हें यह दिखाता है कि भविष्य के क्रोध से कैसे बचना है (मत्ती 3:7)।

130. जो सत्य के वचन को ग्रहण करता है, वह परमेश्वर वचन को ग्रहण करता है, क्योंकि कहा गया है, *'जो तुम्हें ग्रहण करता है, वह मुझे ग्रहण करता है'* (मत्ती 10:40)।

131. छत के ऊपर से उतारा गया लकवाग्रस्त मनुष्य एक पापी है, जिसे परमेश्वर के नाम पर विश्वासियों ने डाँटा और, उनके विश्वास के कारण, उसे (पापों की) क्षमा प्राप्त हुई (लूका 5:19)।

132. हर पाप के लिए किसी को दोषी ठहराने से तो श्रद्धा और सद्भावना से अपने पड़ोसी के लिए प्रार्थना करना बेहतर है।

133. सच्चा पश्चातापी मूर्खों द्वारा उपहास का पात्र बनता है। लेकिन यह उसके लिए एक संकेत है कि उसका पश्चाताप ईश्वर को प्रसन्न करता है।

134. *सब कुछ से परहेज़ करने का प्रयत्न करो* (1 कुरिन्थियों 9:25) और (इस प्रयास से) तब तक न रुकना जब तक प्रभु ने बबेल के बीज को नष्ट नहीं कर दिया।

135. कल्पना करो कि अधर्म के बारह जुनून हैं। यदि तुम स्वेच्छा से उनमें से एक को भी अपना लेते हो, तो वह शेष ग्यारह की जगह ले लेगा।

136. पाप एक जलती हुई आग है। जितना अधिक ईंधन आप हटाते हैं, उतनी ही अधिक वह बुझ जाएगी; जितना अधिक आप डालते हैं, उतनी ही अधिक वह भड़क उठेगी।

137. यदि आप प्रशंसा से घमंडी हो जाते हैं, तो अपमान की अपेक्षा करें; क्योंकि, जैसा कि धर्मग्रंथ कहता है, *'जो अपना आप बड़ा करता है, वह नीचा किया जाएगा'* (मत्ती 23:12)।

138. केवल तभी हम उन सभी पापों को अस्वीकार कर पाएँगे, यहाँ तक कि मन में किए गए पापों को भी, जब हम उन पर काबू पाएँगे, तभी हम उन वासनाओं के विरुद्ध सच्ची लड़ाई शुरू कर पाएँगे जो हम पर हावी होती हैं।

139. एक 'स्मरण' अतीत के पापों की एक अनैच्छिक स्मृति है। जो व्यक्ति अभी भी (वासनाओं के साथ) संघर्ष कर रहा है, वह (ऐसे विचार को) एक वासना में विकसित होने से रोकने का प्रयास करता है, जबकि जिसने उन पर पहले ही विजय प्राप्त कर ली है, वह इसकी पहली ही हलचल को समाप्त कर देता है।

140. हृदय की हलचल हृदय की एक अनैच्छिक गति है, जिसके साथ कल्पनाएँ नहीं होतीं[51] । यह एक चाबी के समान है (जो पाप के लिए हृदय का द्वार खोलती है); अतःअनुभवी लोग इसे आरंभ में ही पकड़ने का प्रयास करते हैं।

141. जहाँ विचारों की कल्पनाएँ जड़ जमाती हैं, वहाँ (संभवतः) एक पूर्व-प्रवृत्ति थी: क्योंकि वह गति जो एक निर्दोष (अनैच्छिक) आवेग है, उसमें कल्पनाएँ साथ नहीं होतीं। ऐसा होता है कि कोई उनसे वैसे ही भागता है जैसे आग की एक जलती हुई अंगीठी आग से भागती है (या तो जल जाने के बाद, या जलने के डर से), जबकि कोई और उनसे तब तक मुँह नहीं मोड़ता जब तक कि लौ प्रज्वलित न हो जाए[52] ।

142. यह न कहो: 'मैं तो इसे चाहता भी नहीं, फिर भी यह (विचार) आता है।' क्योंकि, निश्चय ही, यदि यह स्वयं वस्तु नहीं, तो तुम निश्चित रूप से इसके कारणों से प्रेम करते हो।

143. जो प्रशंसा की चाह में रहता है, वह कामना की चपेट में होता है, और जो अपने ऊपर आए दुख पर विलाप करता है, वह निश्चित रूप से सांत्वना को पसंद करता है।

144. जैसे तराजू के पलड़े, वैसे ही सुखप्रेमी के मन का एक ओर ठहरना संभव नहीं। कभी वह अपने पापों पर रोता और विलाप करता है; तो कभी सुखों के पीछे भागते हुए अपने पड़ोसी से झगड़ता और संघर्ष करता है।

145. जो सब बातों की परीक्षा करता है और जो अच्छा है उसे थामे रहता है, वह उसी प्रकार निश्चय ही सब बुराई से अपने आप को बचाए रखेगा (1 थिस्स. 5:21-22)।

146. *धीरज रखने वाला मनुष्य समझ में धनी होता है* (नीतिवचन 14:29), जैसे वह भी जो ज्ञान के वचनों के लिए अपना कान लगाता है।

147. परमेश्वर की स्मृति के बिना, ज्ञान सच्चा नहीं हो सकता। पहले के बिना, बाद वाला झूठा है।

---

[51] ग्रीक वाक्यांश की संक्षिप्तता के कारण एक सारांश।

[52] यह उस बूढ़े के उत्तर के समान है जो इस प्रश्न पर दिया गया था: 'क्या किसी को विचारों को प्रवेश करने देना चाहिए?' 'उन्हें आने दो,' वह कहता, 'और फिर उनसे लड़ो और उन्हें बाहर निकाल दो।'

148. कठोर हृदय वालों के लिए, अतिसूक्ष्म ज्ञान का वचन किसी काम का नहीं है, क्योंकि भय के बिना (ऐसा व्यक्ति) पश्चाताप के श्रम को अपने ऊपर नहीं लेता।

149. नम्र लोगों के लिए, विश्वास का वचन (विश्वास के सांत्वनाओं के विषय में) उपयुक्त है, क्योंकि वे परमेश्वर की दीर्घ सहनशीलता को आजमाते नहीं हैं और बार-बार होने वाले अपराधों (परमेश्वर की इच्छा या उसकी आज्ञाओं के विरुद्ध) से नष्ट नहीं होते हैं।

150. दृढ़-इच्छाशक्ति वाले व्यक्ति को उसके अहंकार के लिए फटकारें नहीं, बल्कि उसे भविष्य की कलंक का बोझ बताएं; क्योंकि इस तरह एक समझदार व्यक्ति (अपने भीतर) फटकार को अधिक आसानी से स्वीकार कर लेगा।

१५१. जो डाँट-फटकार से प्रेम नहीं करता, वह निश्चय ही जानबूझकर अपनी वासनाओं में लिप्त रहता है, जबकि जो इससे प्रेम करता है, वह स्पष्ट रूप से उनके प्रलोभनों से दूर रहता है।

152. दूसरों की धूर्तता के बारे में सुनने की इच्छा न करो, क्योंकि ऐसा करने से उस धूर्तता के गुण हमारे भीतर भी अंकित हो जाते हैं।

153. बुरे शब्द सुनकर, उनसे बोलने वाले पर नहीं, बल्कि स्वयं पर क्रोध करें; क्योंकि दुष्ट व्यक्ति का कान धोखेबाज़ होता है, और उसका उत्तर भी[53] ।

154. यदि संयोग से कोई भी स्वयं को व्यर्थ की बातें करने वालों के समूह में पाता है, तो उसे स्वयं को उस तरह की बातों का दोषी मानना चाहिए, यदि वर्तमान के संबंध में नहीं, तो अतीत के संबंध में (क्योंकि उसने पहले उनके साथ बातें की हैं)।

१५५. यदि आप देखते हैं कि कोई पाखंडपूर्वक आपकी प्रशंसा कर रहा है, तो उम्मीद करें कि वह किसी अन्य समय आपकी आलोचना करेगा।

156. वर्तमान दुखों को भविष्य की खुशियों के बराबर समझो, और उदासीनता कभी भी आपके संकल्प को कमजोर नहीं करेगी।

१५७. यदि आप किसी भौतिक उपहार के लिए, ईश्वर को भुलाकर, किसी व्यक्ति की प्रशंसा करते हैं (यह भूलकर कि यह ईश्वर की इच्छा से होता है), तो बाद में वही व्यक्ति आपके लिए बुरा साबित होगा।

158. हर आशीर्वाद प्रभु की इच्छा के अनुसार प्रभु से आता है, और जो लोग इसे हमारे पास लाते हैं वे आशीर्वाद के सेवक हैं।

१५९. भले और बुरे के आपसी गुंथने को समचित्त से स्वीकार करो; इसके लिए, ईश्वर अंततःआपके जीवन की घटनाओं की विसंगतियों को दूर कर देंगे।

160. (अनैच्छिक) विचारों का असंतुलन अनजाने में ही अपने विचारों में भी बदलाव ला देता है। और बाहरी क्षेत्र में, ईश्वर अनैच्छिक को स्वैच्छिक से संतुलित करता है।

161. इंद्रिय (बाहरी अवस्था) बौद्धिक (आंतरिक व्यवस्था) का उत्पाद है, जो ईश्वर के आदेश से, जो (प्रत्येक को उनकी योग्यता के अनुसार) देय है, उसे लाती है।

162. जब हृदय भोगों की इच्छा से भर जाता है, तो हानिकारक विचार और शब्द उत्पन्न होते हैं। ठीक वैसे ही जैसे हम (अंदर) पदार्थ के जलने को उसकी राख से पहचानते हैं।

163. अपने मन को अपने हृदय में बनाए रखो, और तुम प्रलोभनों से परेशान नहीं होओगे; लेकिन अगर तुम वहाँ से हट जाओ, तो जो कुछ भी तुम पर आए, उसे सहन करो।

164. प्रार्थना करो कि तुम्हें परीक्षा न आए; परन्तु जब आए, तो उसे अपना समझो, परायी नहीं।

165. अपने मन को सभी आत्म-प्रेम से हटा लो, और तब तुम शैतान की चालाकियों को देख पाओगे।

166. जो कोई भी यह दावा करता है कि वह शैतान की सभी चालाकियों को देखता है, यह जाने बिना कि कैसे, वह स्वयं को सिद्ध मानता है।

167. जब मन शारीरिक मामलों की चिंता से मुक्त हो जाता है, तो वह उस स्वतंत्रता के अनुपात में शत्रु की चालाकियों को समझ पाता है।

168. जो विचारों में बह जाता है, वह उनसे अंधा हो जाता है और पाप के कर्मों को देखता है, फिर भी उनके कारणों को नहीं देख पाता।

---

[53] सच है, यह एक कहावत है, लेकिन विचार स्पष्ट है। लैटिन रूपान्तरण: 'pravarum enim rerum avditor, pravus evadit nuntius.' बुरी बातों का सुनने वाला स्वयं बुरा हो जाता है, और संदेशवाहक भी।

169. ऐसा होता है कि कोई व्यक्ति बाहरी रूप से एक आज्ञा का पालन करते हुए, (अंदर से) वासना का दास होता है और बुरे विचारों से एक अच्छे कर्म को बर्बाद कर देता है।

170. (किसी विचार को पालकर) अपने भीतर पाप के बीज को जड़ जमाने के बाद यह न कहो, 'यह मुझ पर हावी नहीं होगा' – क्योंकि जिस हद तक तुमने इसे भीतर आने दिया है, उसी हद तक तुम पहले ही इसके वश में हो चुके हो।

171. जो कुछ भी अस्तित्व में आता है, वह छोटा शुरू होता है और धीरे-धीरे पोषित होकर बढ़ता है।

172. पाप का फंदा एक बहु-सूत्री जाल है। जो कोई भी इसमें आंशिक रूप से भी फंस जाता है और सतर्क नहीं रहता, वह जल्द ही पूरी तरह से इसमें फंस जाएगा।

173. अपने शत्रुओं की दुर्भाग्यपूर्ण घटनाओं को सुनने की इच्छा न करो, क्योंकि जो कोई भी ऐसी बातें स्वेच्छा से सुनता है, वह तुरंत ही अपनी ही इच्छा का फल पाता है।

174. यह मत सोचिए कि हर कष्ट लोगों को उनके पापों के कारण ही मिलता है। क्योंकि ऐसा भी होता है कि कुछ लोग ईश्वर को प्रसन्न करते हैं, फिर भी परीक्षाओं से गुजरते हैं। और यह केवल इतना ही लिखा नहीं है कि '*दुष्ट और अधर्मी निकाल दिए जाएँगे*' (भजन संहिता 36:28), बल्कि इसी प्रकार यह भी लिखा है कि '*जो मसीह यीशु में भक्ति से जीना चाहते हैं, वे सताए जाएँगे*' (2 तीमुथियुस 3:12)।

175. दुख के समय, इंद्रिय सुख के प्रलोभन से सावधान रहें। क्योंकि यह दुख में आराम का वादा करता है, इसलिए कोई भी आसानी से इसे स्वीकार करने के लिए प्रलोभित हो सकता है।

176. कुछ लोग उन लोगों को समझदार कहते हैं जो अपने कामुक मामलों को बुद्धिमानी से संभालना जानते हैं, लेकिन वास्तव में समझदार वे हैं जो अपनी इच्छाओं पर काबू पाते हैं।

177. जब तक आपने बुराई (वासनाओं) को जड़ से न उखाड़ दिया हो, तब तक अपने हृदय की न सुनें; क्योंकि उसमें जो कुछ भी बोया जाता है, वही प्रवृत्तियाँ वह मांगेगा।

178. जैसे कुछ साँप जंगलों में पाए जाते हैं जबकि अन्य घरों में गुप्त रूप से छिपे रहते हैं, वैसे ही वासनाएँ भी हैं: कुछ केवल काल्पनिक होती हैं (मन में होती हैं), जबकि अन्य सक्रिय रूप से प्रभावित करती हैं (कर्मों में प्रकट होती हैं और उनके भीतर छिपी रहती हैं), हालांकि ऐसा होता है कि वे एक रूप से दूसरे रूप में बदल जाती हैं।

179. जब तुम देखो कि जो तुम्हारे भीतर है, वह प्रबल गति से उभरा है और तुम्हारे शांत मन को वासना की ओर खींच रहा है, तो जान लो कि अतीत में कभी मन स्वयं उसी चीज़ में मग्न था, जिसने उसे गति दी और हृदय में स्थापित कर दिया।

180. हवा की साँस के बिना बादल नहीं बनता, और न ही विचारों के उथल-पुथल के बिना जुनून का जन्म होता है।

181. यदि, जैसा कि धर्मग्रंथ सिखाते हैं, हम अब शरीर की इच्छा के अनुसार कार्य नहीं करते हैं, तो, प्रभु की सहायता से, वह भी जो पहले हमारे भीतर स्थापित था (आत्मा के जुनून और बुरी आदतें) हमें परेशान करना बंद कर देगा।

182. मन में जड़ें जमा चुकी छवियाँ उन छवियों से अधिक दुष्ट और शक्तिशाली होती हैं जो केवल मानसिक हैं, लेकिन बाद वाली छवियाँ पहले वाली छवियों से पहले आती हैं और उनका कारण होती हैं।

183. एक बुराई है जो हृदय से निकलकर, पुराने लगाव और हृदय की सहमति के कारण हम पर हावी हो जाती है; और एक बुराई है जो दैनिक घटनाओं के कारण मानसिक संघर्ष करती है।

184. ईश्वर कर्मों का निर्णय उनके इरादों से करता है। '*प्रभु तुम्हें,*' वह कहता है, '*तुम्हारे हृदय के अनुसार प्रदान करे*' (भजन संहिता 19:5),

185. जो विवेकपूर्वक मनन में नहीं रहता, वह भक्ति के लिए शारीरिक श्रम भी स्वीकार नहीं करेगा।

186. अंतरात्मा (ईश्वर की आज्ञाओं की) एक प्राकृतिक पुस्तक है: जो इसे लगन से पढ़ता है, उसे दैवीय मध्यस्थता के अनुभव प्राप्त होते हैं।

187. जो कोई सत्य के लिए (उसकी रक्षा में) स्वेच्छा से परिश्रम नहीं करता, उसे उनके नियंत्रण से परे परिस्थितियों के माध्यम से बहुत अधिक कठोर दंड दिया जाएगा।

188. जो कोई, ईश्वर की इच्छा जानने के बाद, उसे अपनी पूरी क्षमता से पूरा करता है, वह छोटी-छोटी मेहनतों के द्वारा बड़ी मेहनतों से बचेगा।

189. जो कोई प्रार्थना और धैर्य के बिना प्रलोभनों पर काबू पाने का प्रयास करता है, वह उन्हें दूर नहीं कर पाएगा, बल्कि उनमें और भी अधिक उलझ जाएगा।

190. प्रभु अपनी आज्ञाओं में छिपे हुए हैं और जो लोग उन्हें पूरा करने के अनुपात में उनकी खोज करते हैं, वे उन्हें पाते हैं।

191. यह न कहो: 'मैंने आज्ञाओं का पालन किया है, और फिर भी मुझे प्रभु नहीं मिला है।' जो कोई भी सत्य में उसकी खोज करता है, उसे शांति मिलेगी।

192. शांति, वासनाओं से मुक्ति है, जो पवित्र आत्मा के कार्य के बिना प्राप्त नहीं की जा सकती।

193. एक आज्ञा का पालन एक बात है, और सद्गुण दूसरी, यद्यपि प्रत्येक एक दूसरे से भलाई के लिए प्रेरणा लेता है।

194. एक आज्ञा का पालन उस आज्ञा को पूरा करने को कहते हैं; दूसरी ओर, सदाचार हृदय की वह अवस्था है जिससे जो कुछ भी किया जाता है वह वास्तव में ईश्वर को प्रसन्न करने वाला होता है।

195. जैसे भौतिक धन, यद्यपि सार में एक है, प्राप्त करने की वस्तुओं के संदर्भ में अनेक है, वैसे ही सदाचार भी सार में एक है, फिर भी यह अनेक कर्मों में प्रकट होता है।

196. जो कर्म किए बिना उपदेश देता है और शब्द बोलता है (जीवन-यापन पर प्रवचन), वह अधर्म में धनी है, और शास्त्र के अनुसार, *'उसकी कमाई पराये घरों में जाती है'* (नीतिवचन 5:10)।

197. *'सब सोने के सामने झुक जाएँगे,'* धर्मग्रंथ कहता है (उपदेशक 10:19)। लेकिन ईश्वर की कृपा से, मन का जीवन (आध्यात्मिक जीवन) संचालित होगा।

198. एक अच्छा विवेक प्रार्थना के द्वारा प्राप्त होता है, और शुद्ध प्रार्थना एक अच्छे विवेक के द्वारा। स्वभाव से ही, वे एक-दूसरे पर निर्भर हैं।

199. याकूब ने यूसुफ को रंग-बिरंगे वस्त्र पहनाए। और प्रभु नम्र लोगों को सत्य का ज्ञान प्रदान करते हैं, जैसा कि लिखा है: *'प्रभु नम्र लोगों को अपनी रीति सिखाएगा'* (भजन संहिता 24:9)।

200. हमेशा अपनी क्षमता के अनुसार अच्छा करो, और जब अधिक करने का अवसर मिले, तो उससे कम पर संतुष्ट न रहो; क्योंकि *'जो पीछे मुड़ता है'*, प्रभु कहते हैं, *'वह परमेश्वर के राज्य के योग्य नहीं है'* (लूका 9:62)।

4. जो लोग सोचते हैं कि वे अपने कर्मों से धर्मी ठहराए जा सकते हैं, उनके लिए 226 अध्याय[54]

1. निम्नलिखित अध्यायों में, केवल बाहरी रूप से धार्मिकता से जीने वालों के विश्वास की कमजोरी का खुलासा उन लोगों द्वारा किया गया है जो सच्चे दिल से विश्वास करते हैं और सत्य को वफादारी से जानते हैं।

2. प्रभु, यह दिखाना चाहते हुए कि यद्यपि हर आज्ञा पालन करना अनिवार्य है, फिर भी लोगों को पुत्रों के रूप में उनके रक्त के द्वारा ग्रहण किया जाता है, कहते हैं: *'जब तुम से जो कुछ आज्ञा दी गई है, वह सब कर चुको, तो कहो, 'हम अयोग्य दास हैं; क्योंकि हमने वही किया है जो हमारा कर्तव्य था''* (लूका 17:10). इसलिए, स्वर्ग का राज्य कर्मों का पुरस्कार नहीं है, बल्कि प्रभु का अनुग्रह है, जो उनके वफादार सेवकों के लिए तैयार किया गया है।

३. एक दास इनाम के रूप में स्वतंत्रता की माँग नहीं करता, बल्कि एक ऋणी की तरह स्वेच्छा से सेवा करता है, और इसे अनुग्रह के उपहार के रूप में प्रतीक्षा करता है।

4. *'मसीह हमारे पापों के लिए मरा, जैसा कि पवित्रशास्त्र कहता है'* (1 कुरिन्थियों 15:3), और वह उन लोगों को स्वतंत्रता प्रदान करता है जो उसकी निष्ठापूर्वक सेवा करते हैं। क्योंकि वह कहते हैं: *'शाबाश, हे भले और विश्वासयोग्य दास; तू थोड़ी-सी बातों में विश्वासयोग्य रहा, मैं तुझे बहुत-सी बातों पर रखूँगा: अपने प्रभु के आनन्द में प्रवेश कर'* (मत्ती 25:23)।

5. जो केवल ज्ञान पर भरोसा करता है, वह अभी तक एक वफादार सेवक नहीं है, बल्कि वह जो आज्ञाकारिता के द्वारा मसीह पर विश्वास करता है, जिसने आज्ञाएँ दी हैं।

6. जो प्रभु का सम्मान करता है, वह आज्ञा का पालन करता है, और यदि वह किसी भी प्रकार से पाप करता है या उसकी अवज्ञा करता है, तो वह उस दण्ड को अपना हक समझता है जो उसे इसके लिए मिलता है।

7. जिज्ञासु और परिश्रमी दोनों बनो, क्योंकि केवल ज्ञान ही मनुष्य को घमंडी बना देता है।

8. प्रलोभन, जो परमेश्वर की व्यवस्था से अचानक हम पर आते हैं, हमें परिश्रमी होना सिखाते हैं और अनजाने में हमें पश्चाताप की ओर ले जाते हैं।

९. लोगों पर आने वाले कष्ट उनके अपने बुरे कर्मों का परिणाम होते हैं। लेकिन यदि हम उन्हें प्रार्थना के साथ सहन करें, तो हमें फिर से आशीर्वादों में वृद्धि प्राप्त होगी।

[54] इसके विपरीत विश्वास नहीं, बल्कि हृदय की प्रवृत्ति है, जो किसी के कर्मों का स्रोत है।

10. कुछ लोगों ने, अपने सद्गुणों के लिए प्रशंसा पाकर, उसमें आनंद लिया और सोचा कि अहंकार की यह मिठास (ऊपर से) एक सांत्वना है। अन्य लोग, पाप के दोषी ठहराए जाने पर, पीड़ित हुए, और इस उपचारात्मक पीड़ा को शत्रु की दुर्भावना का कार्य माना।

11. जो अपने कर्मों के कारण, उन लोगों से खुद को श्रेष्ठ मानते हैं जो उतने उत्साही नहीं हैं, वे सही सोचते हैं कि वे अपने बाहरी कर्मों से खुद को सही ठहरा सकते हैं; लेकिन हम, जो केवल ज्ञान पर ही भरोसा करके, अनजान लोगों को नीचा समझते हैं, उनसे कहीं अधिक मूर्ख हैं।

12. कर्म के बिना ज्ञान अभी तक दृढ़ता से स्थापित नहीं हुआ है, भले ही वह सत्य हो। कर्म ही सभी बातों की पुष्टि का काम करते हैं।

13. अक्सर, (किसी मामले के बारे में) ज्ञान स्वयं कर्म की उपेक्षा से धुंधला जाता है। क्योंकि जो कर्म पूरी तरह से उपेक्षित हो जाते हैं, वे धीरे-धीरे स्मृति से मिट जाते हैं।

14. धर्मग्रंथ हमें तर्क के माध्यम से ईश्वर को जानने के लिए प्रेरित करता है ताकि हम अपने कर्मों के माध्यम से उनकी सही ढंग से सेवा कर सकें।

15. जब हम आज्ञाओं को खुले तौर पर पूरा करते हैं, तो यद्यपि हमें बदले में प्रभु से कुछ विशेष प्राप्त होता है, हम अपनी इच्छा के उद्देश्य के अनुसार लाभ प्राप्त करते हैं।

16. जो कुछ करना चाहता है, परन्तु करने में असमर्थ है, वह हृदयों का जानने वाले परमेश्वर के सामने ऐसे खड़ा होता है, जैसे उसने वह कर ही लिया हो। यह बात भलाई और बुराई, दोनों के संबंध में समझनी चाहिए।

17. मन, शरीर के बिना भी, बहुत अच्छा और बहुत बुरा करता है, जबकि शरीर, मन के बिना, कुछ भी नहीं कर सकता। क्योंकि स्वतंत्र इच्छा के निर्णय क्रिया से पहले होते हैं।

18. कुछ लोग, आज्ञाओं का पालन करने में असफल रहते हुए, सोचते हैं कि वे सही ढंग से विश्वास करते हैं; अन्य, उनका पालन करते हुए, एक उचित पुरस्कार के रूप में राज्य की उम्मीद करते हैं। दोनों सत्य के संबंध में भ्रमित हैं।

19. एक स्वामी पर अपने सेवकों को पुरस्कृत करने का कोई दायित्व नहीं है, फिर भी जो सही ढंग से सेवा नहीं करते हैं, वे भी स्वतंत्रता प्राप्त नहीं करते।

20. यदि मसीह हमारे लिए मरे, और हम *'अब अपने लिए नहीं, बल्कि हमारे लिए मरे और फिर जी उठे, उस के लिए जीते हैं'* (2 कुरिन्थियों 5:15), तो यह स्पष्ट है कि हमने मृत्यु तक उसकी सेवा करने के लिए स्वयं को समर्पित कर दिया है। तो फिर, हम दत्तक ग्रहण को एक उचित पुरस्कार कैसे मान सकते हैं?

21. मसीह स्वभाव से और उद्धार की व्यवस्था के अनुसार प्रभु हैं, क्योंकि उन्होंने हमें—जो जीवित थे—उत्पन्न किया, और पाप में मरे हुओं को अपने लहू से छुड़ाया, और इस प्रकार विश्वास करने वालों को अनुग्रह दिया।

22. जब आप धर्मग्रंथ के उन वचनों को सुनते हैं कि प्रभु प्रत्येक व्यक्ति को उनके कर्मों के अनुसार पुरस्कृत करेंगे (भजन संहिता 61:13), यह न सोचें कि कर्म (अपने आप में) गेहेना या राज्य के योग्य हैं, बल्कि यह कि मसीह प्रत्येक व्यक्ति को उनके अविश्वास या विश्वास के कर्मों के अनुसार पुरस्कृत करेंगे, हमारे सृष्टिकर्ता और उद्धारकर्ता के रूप में, न कि एक ऐसे के रूप में जो चीजों (यानी कर्मों और पुरस्कारों) को तौलता है।

23. हम जो पुनर्जन्म के स्नान के योग्य ठहराए गए हैं, हम अच्छे कर्म पुरस्कार के लिए नहीं करते, बल्कि हमें प्रदान की गई पवित्रता को बनाए रखने के लिए करते हैं।

24. हर अच्छा काम जो हम अपनी स्वाभाविक शक्तियों से करते हैं, भले ही वह हमें इसके विपरीत (अर्थात् एक बुरे काम) से दूर कर दे, बिना अनुग्रह के, हमारी पवित्रता नहीं ला सकता।

२५. संयमी अतिभिक्षण से; अलोभी लालच से; मौनी बकबक से; पवित्र इंद्रिय सुखों के लगाव से; ब्रह्मचारी व्यभिचार से; अपने पास मौजूद चीज़ों से संतुष्ट व्यक्ति लोभ से; विनम्र व्यक्ति उद्वेग (क्रोध) से दूर रहता है; विनम्र व्यक्ति घमंड से, आज्ञाकारी व्यक्ति अवज्ञा से, आत्म-निन्दक व्यक्ति पाखंड से दूर रहता है; इसी प्रकार, प्रार्थना करने वाला व्यक्ति निराशा से, स्वेच्छा से भीख माँगने वाला व्यक्ति धन संचय से, पाप स्वीकार करने वाला व्यक्ति धर्मत्याग से, और शहीद व्यक्ति मूर्तिपूजा से दूर रहता है। क्या आप देखते हैं कि कैसे हर सद्गुण, मृत्यु तक का अभ्यास किया जाए, पाप से मुँह मोड़ने के सिवा और कुछ नहीं है; और पाप से यह मुँह मोड़ना स्वभाव की बात है, न कि ऐसा कुछ जिसके लिए राज्य प्रदान किया जा सकता है?

26. मनुष्य अपनी स्वाभाविक प्रवृत्ति को मुश्किल से ही बनाए रख पाता है, जबकि मसीह, क्रूस के द्वारा, पुत्रत्व की दत्तकता प्रदान करते हैं।

27. एक विशेष आज्ञा है और एक सामान्य (सर्व-व्यापी) आज्ञा है। क्योंकि एक मामले में ज़रूरतमंदों को थोड़ी-थोड़ी मात्रा में देने की आज्ञा दी गई है, जबकि दूसरे में एक ही बार में अपनी सारी संपत्ति का त्याग करने की आज्ञा दी गई है।

[55]**28.** अनुग्रह का कार्य है, जिसे एक बच्चा (आध्यात्मिक आयु में) नहीं पहचान पाता, और दुष्टता (शत्रु) का कार्य है, जो सत्य जैसा प्रतीत होता है। ऐसे कार्यों पर बहुत देर तक विचार न करना सबसे अच्छा है, इस डर से कि किहीं धोखा न हो जाए, और न ही उनकी निंदा करना, क्योंकि उनमें सच्चाई हो सकती है; बल्कि सभी चीजों को आशा के साथ ईश्वर के पास लाना चाहिए, क्योंकि वह दोनों के लाभ को जानता है।

29. जो मन के सागर को पार करना चाहता है, उसे धैर्यवान, विनम्र और बुद्धिमान, सतर्क और संयमी होना चाहिए। लेकिन यदि वह इन चार गुणों के बिना इस प्रयास को करने के लिए खुद को मजबूर करता है, तो वह केवल अपने हृदय को पीड़ा देगा और पार नहीं कर पाएगा।

30. मौन सभी बुराइयों का त्याग है। यदि, इसके अलावा, इसे प्रार्थना में उन चार गुणों के साथ जोड़ा जाए, तो तटस्थता प्राप्त करने के लिए इससे बेहतर सहायक या छोटा मार्ग कोई नहीं है।

31. शरीर के बिना मन की मौनता प्राप्त नहीं की जा सकती, और न ही मौन और प्रार्थना के बिना उनके बीच के अंतराल को शुद्ध किया जा सकता है।

32. शरीर आत्मा के विरुद्ध काम करता है, और आत्मा शरीर के विरुद्ध (गलातियों 6:17); परन्तु जो आत्मा के अनुसार चलते हैं, वे शरीर की कामनाओं को पूरा नहीं करते।

33. मानसिक आह्वान के बिना प्रार्थना पूर्ण नहीं होती। प्रभु उस मन की सुनते हैं जो एकाग्रचित्त होकर पुकारता है।

34. एक मन जो एकाग्रचित्त होकर प्रार्थना करता है, वह हृदय को तोड़ता है। *'हे परमेश्वर, तू टूटे और कुचले हुए हृदय को तुच्छ नहीं जानेगा'* (भजन संहिता 50:19)

35. और प्रार्थना को एक सद्गुण कहा जाता है, यद्यपि यह सद्गुणों की जननी है, क्योंकि यह मसीह के साथ एकता के द्वारा उन्हें जन्म देती है।

36. जो कुछ भी हम प्रार्थना और अच्छी आशा के बिना करते हैं, वह बाद में हानिकारक और (कम से कम) अपूर्ण साबित होगा।

37. जब आप सुनते हैं कि 'जो पीछे हैं वे पहले होंगे, और जो पहले हैं वे पीछे होंगे' (मत्ती 19:30), तो इसे उन लोगों के बारे में समझें जो सद्गुणों के स्वामी हैं और जो प्रेम के स्वामी हैं। क्योंकि यद्यपि प्रेम गुणों में क्रम से अंतिम है, परन्तु गुण में यह उन सभी में पहला है, और अपने से पहले आए सभी को पीछे छोड़ देता है।

38. जब निराशा छा जाती है, चाहे प्रार्थना के दौरान हो या शत्रु की अनेक चालाकियों के कारण, तो निर्गमन और भयंकर कष्टों को याद करो। तथापि, बाहरी बातों पर विचार करने की अपेक्षा प्रार्थना और आशा के द्वारा ईश्वर से चिपके रहना बेहतर है, भले ही वे लाभदायक हों।

39. कोई भी एक गुण अपने आप में हमारे स्वभाव का द्वार नहीं खोलता (देखें अध्याय 224 और 225), जब तक कि वे सभी क्रमबद्ध रूप से एक-दूसरे पर निर्भर न हों।

40. जो विचारों पर निर्भर रहता है, वह अनुशासनहीन है; क्योंकि भले ही वे उपयोगी हों, वे आशा से अधिक उपयोगी नहीं हो सकते।

४१. हर पाप मृत्यु की ओर ले जाता है जब तक कि उसे पश्चाताप से शुद्ध नहीं किया जाता। भले ही कोई संत ऐसे पाप के कारण किसी और के लिए प्रार्थना करे, प्रार्थना सुनी नहीं जाएगी।

४२. जो सच्चे मन से पश्चाताप करता है, वह अपने अतीत के पापों को सही ठहराने का प्रयास नहीं करता, बल्कि उनके द्वारा ईश्वर को प्रसन्न करने का प्रयास करता है।

४३. हमें प्रतिदिन उस हर पुण्य कर्म का अभ्यास करना चाहिए, जिसे करना हमारी प्रकृति में संभव है। तो फिर, हमने पहले जो बुराई की है, उसके बदले में हम ईश्वर को क्या अर्पित करेंगे?

४४. भले ही हम आज अपने गुणों को कितना भी बढ़ा लें, यह केवल हमारी पूर्व की लापरवाही की निंदा है, न कि (ईश्वर के प्रति) उसका प्रायश्चित।

[55] एक यूनानी कहावत इस विचार को बखूबी व्यक्त करती है: जैसे कोई आईने में अपने ही भड़कीले परिधान को निहारता है।

४५. जो आत्मा से पछताता है (जो अपने पापों पर शोक मनाता है) परन्तु शरीर में सुस्त है (जो शरीर को हर तरह से संतुष्ट करता है), वह उस व्यक्ति के समान है जो शारीरिक रूप से खुद को पीड़ा देता है (जो शरीर को सब कुछ से वंचित करता है) जबकि उसका मन भटकता रहता है।

46. दोनों प्रकार की स्वेच्छा से ली गई पीड़ा (अर्थात् शारीरिक और आध्यात्मिक) एक-दूसरे को परस्पर सुदृढ़ करती है: आध्यात्मिक, शारीरिक को सुदृढ़ करती है, और शारीरिक, आध्यात्मिक को; लेकिन उनका अलग होना (उनकी कठिनाइयों की तुलना में) और भी बुरा और अधिक बोझिल है।

४७. जो कुछ हम पर आता है उसे सहन करना और प्रभु के वचन के अनुसार, हमें नफरत करने वाले पड़ोसी से प्रेम करना एक महान गुण है।

48. सच्चे प्रेम का चिह्न अपराधों को क्षमा करना है। इस प्रकार प्रभु ने संसार से प्रेम किया।

४९. सच्चे ज्ञान के बिना हृदय से किसी के अपराधों को क्षमा करना असंभव है, क्योंकि यह सभी को दिखाता है कि जो कुछ भी उन पर आता है वह उनके अपने कर्मों का फल है।

50. आप प्रभु के लिए जो कुछ अलग रख देते हैं, उसमें से आप कुछ भी नहीं खोएंगे, क्योंकि उचित समय पर यह आपके पास कई गुना होकर लौटेगा।

51. जब मन धार्मिकता के उद्देश्य को भूल जाता है, तो सद्गुण का बाहरी कार्य निरर्थक हो जाता है।

52. यदि विवेक की कमी (दूसरों की नहीं, बल्कि अपनी) हर व्यक्ति के लिए हानिकारक है, तो उन लोगों के लिए कितनी अधिक हानिकारक होगी जिन्होंने संयम का जीवन अपनाया है।

53. अपने कर्मों द्वारा स्वयं को एक बुद्धिमान व्यक्ति साबित करें, क्योंकि किसी कर्म से अधिक बुद्धिमानी भरा कोई शब्द नहीं होता।

54. तपस्या से धर्म की सिद्धि होती है और उसके बाद परोपकार होता है। यह बात ईश्वर के विधान और अंतरात्मा से स्पष्ट होती है।

५५. एक व्यक्ति ने एक विचार सोचा और उसे बिना परखे ही उस पर अडिग रह गया; दूसरे ने, उसे सोचने के बाद, उसे सत्य से परखा। प्रश्न यह है: उनमें से किसने अधिक धार्मिक रूप से कार्य किया?

56. कष्टों को सहना और अपनी दुर्भाग्य के लिए दूसरों को दोष न देना ही सच्ची बुद्धिमानी है।

57. जो पुरस्कार की चाह में अच्छा करता है, वह ईश्वर की नहीं, बल्कि अपनी इच्छा की सेवा करता है।

58. जिसने पाप किया है, वह पाप के अनुरूप पश्चाताप के सिवा दंड से नहीं बच सकता।

59. कुछ लोग कहते हैं कि जब तक हमें पवित्र आत्मा की कृपा प्रभावी रूप से प्राप्त नहीं हो जाती, तब तक हम अच्छा नहीं कर सकते (और यह गलत है)।

60. जिनकी इच्छा हमेशा आत्म-तुष्टि की ओर झुकी रहती है, वे यह बहाना बनाकर कि ऊपर से कोई मदद नहीं है, अपनी शक्ति के भीतर आने वाले कार्यों को भी करने से इनकार कर देते हैं।

61. जो मसीह में बपतिस्मा ले चुके हैं, उन्हें रहस्यमय रूप से पहले ही अनुग्रह प्रदान किया जा चुका है, लेकिन यह तब (स्पष्ट रूप से) प्रभावी होता है जब आज्ञाओं का पालन किया जाता है। यद्यपि यह अनुग्रह गुप्त रूप से हमारी मदद करना कभी बंद नहीं करता, फिर भी यह हमारे अपने स्वतंत्र इच्छाशक्ति में है कि हम अच्छा करें या न करें।

62. सबसे पहले, यह दैवीय रूप से विवेक को जगाता है, जिससे दुष्ट कर्म करने वालों ने भी पश्चाताप करके परमेश्वर की कृपा प्राप्त की है।

63. फिर, यह अक्सर अपने पड़ोसी की शिक्षा में छिपा होता है; यह कभी-कभी पढ़ते समय किसी विचार के बाद आता है और (उस विचार से उत्पन्न) एक स्वाभाविक परिणाम के माध्यम से मन को सत्य में शिक्षित करता है। इस प्रकार, यदि हम इस उपहार को उन और इसी प्रकार के विशिष्ट अवसरों पर छिपाते नहीं हैं जिनमें यह प्रदान किया जाता है (अर्थात्, यदि हम उस बात का पालन करते हैं जो अनुग्रह प्रेरित करता है), तो हम वास्तव में प्रभु के आनन्द में प्रवेश करेंगे (हमें सक्रिय अनुग्रह के योग्य माना जाएगा)।

64. जो आज्ञाओं का पालन करने से पहले पवित्र आत्मा की सक्रिय कृपा की खोज करता है (उसे प्राप्त करने की आशा रखता है), वह एक ऐसे दास के समान है जिसे पैसे देकर खरीदा गया हो, जो खरीदे जाने के क्षण ही अपने लिए भुगतान के साथ अपनी स्वतंत्रता का हस्तांतरण करवाना चाहता है।

65. जिसने यह अनुभव किया है कि बाहरी विपत्तियाँ परमेश्वर के न्याय के अनुसार होती हैं, उसने प्रभु की खोज करके धार्मिकता में ज्ञान प्राप्त किया है।

66. यदि, धर्मग्रंथ के अनुसार, आप *'यह ध्यान में रखते हैं कि प्रभु के मार्ग सारी पृथ्वी पर हैं'* (भजन संहिता 104:7), तो हर घटना आपके लिए परमेश्वर के ज्ञान की शिक्षिका होगी।

67. प्रत्येक व्यक्ति को उसकी आंतरिक प्रवृत्ति के अनुसार वह मिलता है जो उसका हक है (जिसका उसने पात्रता अर्जित की है), लेकिन यह विवरण कि बाहरी घटनाएँ प्रत्येक व्यक्ति की आंतरिक स्थिति से कैसे मेल खाती हैं, केवल ईश्वर ही जानते हैं।

68. जब आपको लोगों के हाथों कोई अपमान सहना पड़े, तो तुरंत *'ईश्वर से आने वाली महिमा'* (यूहन्ना 5:44) *के* पुरस्कार *को* याद करें, और इस प्रकार आप अपमान में भी दुख और भ्रम से मुक्त रहेंगे, और महिमा आने पर विश्वासयोग्य और निर्दोष बने रहेंगे।

69. जब लोगों द्वारा आपकी प्रशंसा की जाए, तो ईश्वर की कृपा से, प्रभु के निर्णय में (जानबूझकर) कोई दिखावटी बात न जोड़ें, कहीं ऐसा न हो कि सब कुछ बदल जाए और आपको इसके विपरीत (लज्जा) का अनुभव हो।

70. एक बीज मिट्टी और पानी के बिना नहीं अंकुरित होगा, और न ही कोई व्यक्ति स्वैच्छिक श्रम और दैवीय मध्यस्थता के बिना कोई लाभ प्राप्त कर सकता है।

71. बादल के बिना बारिश नहीं हो सकती, और न ही कोई निर्मल अंतरात्मा के बिना ईश्वर को प्रसन्न कर सकता है।

72. सीखने से इनकार न करें, भले ही आप बहुत बुद्धिमान हों। क्योंकि ईश्वर का विधान हमारी बुद्धि से अधिक लाभदायक है।

73. जब, किसी प्रकार की आत्म-तुष्टि के वश में होकर, हृदय आत्म-अनुशासन के मार्ग से भटक जाता है, तो यह, एक बहुत भारी पत्थर की तरह जो एक फिसलन भरी ढलान से लुढ़कता है, अटूट हो जाता है।

74. जैसे एक अनुभवहीन बछड़ा, जो घास के एक गुच्छे से दूसरे गुच्छे तक दौड़ता है, एक ऐसी जगह पर ठोकर खाता है जहाँ जमीन दोनों ओर (दाईं और बाईं) से तीव्र ढलान वाली हो, वैसे ही आत्मा का भी है, जिसे उसके विचार धीरे-धीरे (उसके उचित क्रम और ध्यान से) भटका देते हैं।

75. जब मन, प्रभु में दृढ़ होकर, आत्मा को एक पुरानी बुरी आदत से हटाता है, तो हृदय को मन और वासना द्वारा, जो इसे इधर-उधर खींचते हैं, जल्लादों की तरह मार डाला जाता है।

७६. जैसे लाभ की आशा में समुद्र में नौकायन करने वाले स्वेच्छा से सूर्य की तीव्र गर्मी को सहन करते हैं, वैसे ही जो बुराई से घृणा करते हैं, वे फटकार से प्रेम करते हैं। पहले वाले हवाओं से संघर्ष करते हैं, और दूसरे वाले अपनी वासनाओं से।

77. जैसे *'सर्दियों में या सब्बाथ पर भागना'* (मत्ती 24:20) शरीर को बीमारी और आत्मा को अशुद्धि (वास्तव में, अपमान) पहुँचाता है, वैसे ही एक बूढ़े शरीर और एक पवित्र आत्मा (पवित्र पद के व्यक्ति के रूप में) में वासनाओं को भड़काना भी ऐसा ही करता है।

78. प्रभु के समान कोई अच्छा और दयालु नहीं है, फिर भी वह उन लोगों के पापों को क्षमा नहीं करते जो पश्चाताप नहीं करते।

७९. हम में से कई ऐसे हैं जो अपने पापों पर शोक करते हैं, फिर भी स्वेच्छा से उनके कारणों को अपने भीतर पालते हैं।

80. धरती के नीचे बिल बनाने वाला अँधा गिलहरी (mole), अँधा होने के कारण तारों को नहीं देख सकता; और जो (ईश्वर में) क्षणिक के संबंध में अविश्वासी है, वह शाश्वत पर भी विश्वास नहीं कर सकता।

81. सभी अन्य अनुग्रहों से पहले एक अनुग्रह के रूप में, ईश्वर ने मानव जाति को सत्य का ज्ञान प्रदान किया है, जो सबसे पहले और सबसे महत्वपूर्ण रूप से इसके प्राप्तकर्ताओं को उस एक पर विश्वास करना सिखाता है जिसने इसे प्रदान किया।

82. जब एक पापी आत्मा अपने सामने आने वाली पीड़ाओं को स्वीकार नहीं करती (उनसे होश में नहीं आती), तो स्वर्गदूत उसके बारे में कहते हैं: *'हमने बेबीलोन को चंगा करने की कोशिश की, लेकिन वह चंगी नहीं हुई'* (यिर्म. 51:9)।

83. जो मन सच्चे ज्ञान को भूल जाता है, वह लोगों के विरुद्ध युद्ध करता है, और जो उसके लिए हानिकारक है, उसे लाभदायक समझता है।

84. जैसे आग पानी में नहीं बुझ सकती, वैसे ही ईश्वर-प्रेमी हृदय में कोई भी बुरा विचार जड़ नहीं जमा सकता। क्योंकि हर ईश्वर-प्रेमी व्यक्ति परिश्रमी होता है, और स्वेच्छा से किया गया श्रम स्वभाव से ही वासना का शत्रु है।

85. एक जुनून, जसि कर्म के माध्यम से आत्मा में स्वेच्छा से पोषति कयिा जाता है, बाद में अपने प्रेमी के भीतर हसिंक रूप से उठता है, भले ही वह ऐसा न चाहे।

86. हम अनैच्छकि वचिारों के कारणों से प्रेम करते हैं: उन चीज़ों से जनिसे वे उत्पन्न होते हैं; लेकनि इच्छुक वचिारों के मामले में, हम स्पष्ट रूप से वस्तुओं से ही प्रेम करते हैं।

87. घमंड और डींग-बाज़ी बदनामी के कारण हैं, जबकि लालच और अहंकार नर्दियता और पाखंड के कारण हैं।

88. जब शैतान देखता है कि मिन ने हृदय से प्रार्थना करना शुरू कर दयिा है, तो वह बड़े और चालाक प्रलोभन लाता है। लेकनि वह छोटे-छोटे सद्गुणों को बड़े हमलों से बाधति नहीं करेगा।

८९. एक जद्दिी वचिार कसिी व्यक्ति के पक्षपात को प्रकट करता है, जबकि इसका त्वरति उन्मूलन संघर्ष और प्रतरिोध का संकेत देता है।

90. मन में प्रवेश करने और स्वयं बदलने वाली तीन अवस्थाएँ हैं: प्राकृतकि, अलौककि और अस्वाभावकि। जब यह अपनी प्राकृतकि अवस्था में प्रवेश करता है, तो यह खुद को बुरे वचिारों का स्रोत और वासनाओं का कारण पाता है, और ईश्वर के सामने अपने पापों का इकरार करता है; लेकनि जब यह असामान्य अवस्था में होता है, तो यह ईश्वर की सच्चाई को भूल जाता है और लोगों के खलिाफ युद्ध छेड़ता है जैसे कि वे उसके साथ अन्याय कर रहे हों। और जब उसे एक अलौककि अवस्था में उठाया जाता है, तो वह अपने भीतर पवति्र आत्मा के फल पाता है, जन्हिें प्रेरति ने *'प्रेम, आनन्द, शान्ति'* आदि के रूप में वर्णति कयिा है (गलातयिों 5:22), और जानता है कि, यदि वह सांसारकि चिंताओं को प्राथमकिता देता है, तो वह वहाँ नहीं रह सकता; और वहाँ से दूर हो जाने पर, वह पाप में और उसके बाद आने वाली दुखद दुर्भाग्य में पड़ जाता है, भले ही तुरंत नहीं, बल्कि उचति समय पर, जैसा कि ईश्वर का सत्य नर्धिारति करता है।

९१. एक व्यक्ति का ज्ञान तब तक सत्य है, जब तक कि उसे उनकी कोमलता, वनिम्रता और प्रेम द्वारा पुष्टि नहीं मलिती।

92. ऑर्थोडॉक्स धर्म में बपतस्मिा लेने वाला प्रत्येक व्यक्ति रहस्यमय रूप से सभी अनुग्रह प्राप्त करेगा, लेकनि अंततःआज्ञाओं का पालन करने पर उसे इसका मूर्त प्रमाण प्राप्त होगा।

93. मसीह की आज्ञा, जब नष्ठिापूर्वक पालन की जाती है, तो हृदय की अनेक पीड़ाओं के बीच सांत्वना प्रदान करती है; फरि भी, दोनों अपने-अपने समय पर आते हैं।

94. प्रार्थना आपके हर काम का एक अभन्नि अंग हो, क्योंकि आप ईश्वर की मदद के बनिा कुछ भी नहीं कर सकते।

95. ईश्वर की सहायता प्राप्त करने के लएि प्रार्थना से अधकि शक्तशिाली कुछ भी नहीं है, और ईश्वर को प्रसन्न करने के लएि इससे अधकि उपयोगी कुछ भी नहीं है।

96. सभी आज्ञाओं की पूर्ति इसी में नहिति है: क्योंकि ईश्वर के प्रति प्रेम से बढ़कर कुछ भी नहीं है।

97. नरिंतर प्रार्थना उस व्यक्ति में ईश्वर के प्रति प्रेम का संकेत है जो इसमें स्थरि रहता है, जबकि इसकी उपेक्षा और (प्रार्थना के दौरान) ध्यान भटकना सांसारकि आसक्ति के संकेत हैं (हृदय का ईश्वर के अलावा कसिी और चीज़ से मोहति होना)।

98. जो कोई भी बनिा दुख के जागरण करता है, धैर्यपूर्वक सहन करता है और प्रार्थना करता है, वह पवति्र आत्मा की शक्ति में सहभागी होता है; परन्तु वह भी, जो इन कार्यों के दौरान दुख महसूस करने पर भी, इच्छा-शक्ति के एक कार्य द्वारा स्वेच्छा से उन्हें सहन करता है, उसे शीघ्र ही स्वर्ग से मध्यस्थता प्राप्त होगी।

99. जैसे एक आज्ञा, जैसा कि कहा गया है, दूसरी से श्रेष्ठ है, वैसे ही एक वश्विास भी दूसरे से अधकि दृढ़ साबति होता है।

100. प्रेरति के अनुसार, *एक वश्विास है जो सुनने से आता है* (रोमयिों 10:17), और *'आशा की गई वस्तुओं के संदेश में वश्विास है'* (इब्रानयिों 11:1)।

101. जो पूछते हैं उन्हें शब्दों से उत्तर देना अच्छा है, लेकनि प्रार्थना और सद्गुणों के माध्यम से उनकी सहायता करना बेहतर है: क्योंकि इनके माध्यम से, जो व्यक्ति स्वयं को ईश्वर को अर्पति करता है, वह अपने पड़ोसयिों की मदद करता है, और साथ ही स्वयं भी मदद का पात्र बनता है।

102. यदि आप जज्ञिासु लोगों को संक्षेप में कुछ कहना चाहते हैं, तो उन्हें प्रार्थना, सच्चे वश्विास और सभी दुखद परस्थितियिों में धैर्य की ओर नर्दिेशति करें, क्योंकि अन्य सभी अच्छाइयाँ इन्हीं के माध्यम से प्राप्त होती हैं।

103. जसि भी मामले में कसिी व्यक्ति ने अपनी सारी आशा ईश्वर में रख दी है, वह उस पर अपने पड़ोसियों से अब कभी झगड़ नहीं करेगा।

104. यदि शास्त्रों के अनुसार, सभी अनैच्छकि चीजों का कारण स्वैच्छकि में नहिति है, तो कोई भी व्यक्ति का उससे बड़ा शत्रु नहीं है जतिना कि वह स्वयं है।

105. सभी बुराइयों का मुख्य कारण अज्ञानता है; दूसरा है अवश्विास।

106. धैर्य और प्रार्थना द्वारा प्रलोभन से भागो। लेकनि यदि इनके अलावा, आप इसका वरिोध करते हैं, तो यह आप पर और भी अधकि बल के साथ हमला करेगा।

107. परमेश्वर की दृष्टि में नम्र लोग बुद्धमिानों में सबसे बुद्धमिान हैं, और हृदय से वनिम्र लोग बलवानों में सबसे बलवान हैं, क्योंकि वे मसीह के जुए को बुद्धमिानी से उठाते हैं।

108. हम जो कुछ भी प्रार्थना के बनिा कहते या करते हैं, वह बाद में या तो पापपूर्ण या हानकिारक साबति होता है, और हमारे समझने से पहले ही, हमारे कर्म हमें उजागर कर देते हैं।

109. कर्म, वचन और वचिारों में, केवल एक ही धर्मी है; फरि भी, वश्विास, अनुग्रह और पश्चाताप के द्वारा, कई धर्मी हैं।

110. जैसे पश्चाताप करने वाले के लिए घमंडी होना उचति नहीं है, वैसे ही जानबूझकर पाप करने वाले के लिए वनिम्र होना असंभव है।

111. वनिम्रता अंतरात्मा की नंदिा नहीं है, बल्कि ईश्वर की कृपा और उनकी दया का एक स्वीकारोक्ति है।

112. जैसे एक भौतकि घर उसके भीतर भरने वाली हवा के लिए होता है, वैसे ही मन दवि्य अनुग्रह के लिए होता है: आप भौतकि चीजों को जतिना बाहर नकिालेंगे, उतना ही भीतर प्रवेश करेगा; और आप उन्हें जतिना भीतर लाएंगे, उतना ही बाहर जाएगा।

113. घर की भौतकि सामग्री बर्तन और भोजन हैं; मन की भौतकि सामग्री अहंकार और आत्म-संतुष्टि है।

114. एक वशिाल हृदय ईश्वर में वश्विास है, जबकि एक संकीर्ण हृदय सांसारकि चंिता है।

115. आत्मा की कृपा एक और अपरवि्र्तनीय है, फरि भी यह प्रत्येक व्यक्ति में अपनी इच्छानुसार कार्य करती है।

116. जैसे पृथ्वी पर गरिने वाला वर्षा जल पौधों में उनके अंतर्नहिति गुणों—मीठे में मठिास और खट्टे में खटास—को पोषति और बनाए रखता है, वैसे ही अनुग्रह भी, वश्विासयिों के हृदयों में नविास करते हुए, अपने प्रभावों को उनके सद्गुणों के अनुरूप ढालता है, जबकि स्वयं अपरवि्र्तति रहता है।

117. जो मसीह के लिए भूखे हैं, उनके लिए यह भोजन बन जाता है; जो प्यासे हैं, उनके लिए एक मीठा पेय; जो कांपते हैं, उनके लिए वस्त्र; जो परश्रिम करते हैं, उनके लिए वश्रिाम; जो प्रार्थना करते हैं, उनके लिए यह आश्वासन कि उनकी प्रार्थना सुनी गई है; और जो रोते हैं, उनके लिए सांत्वना।

118. इस प्रकार, जब आप पवत्रि आत्मा के वषिय में धर्मशास्त्र के वचन सुनते हैं, कि वह *'प्रत्येक प्रेरति पर ठहरा'* (प्रेरतिों के काम 2:3), या कि वह *'नबी पर उतरा'* (1 शमूएल 10:10), या कि वह कार्य करता है (1 कुरन्थियिों 12:11), तो हमें कभी-कभी ठेस पहुँचती है (इफसियिों 4:30), बुझाया गया (1 थस्सिलुनीकयिों 5:19), या चढ़िाया गया (प्रेरतिों के काम 17:16), और इसी तरह कि कुछ लोगों के पास आत्मा का प्रथम फल है (रोमयिों 8:23), जबकि अन्य पवत्रि आत्मा से भर दिए गए हैं (प्रेरतिों के काम 2:4)—आत्मा के वषिय में ऐसा न सोचें कि उसमें कोई वभिाजन, परवि्र्तन या बदलाव है, बल्कि वश्विास करें, जैसा कि हमने पहले कहा है, कि वह अपरवि्र्तनीय, अचल और सर्वशक्तमिान है। इसलिए, अपने कार्यों में, वह एक ही और समान रहता है, और प्रत्येक व्यक्ति पर ईश्वरीय तरीके से जो उपयुक्त है, वह प्रदान करता है। वह सूर्य के समान है, जो बपतस्मि ग्रहण करने वालों पर स्वयं को पूरी तरह से उंडेल देता है; फरि भी हम में से प्रत्येक को उसी सीमा तक प्रकाशति कयिा जाता है कि हम उन वासनाओं से घृणा करने लगते हैं जो हमें अस्पष्ट करती हैं, और उन्हें अपने भीतर से जड़ से उखाड़ फेंकते हैं; और जसि सीमा तक हम उन से प्रेम करते पाए जाते हैं, उसी सीमा तक हम अंधकारमय हो जाते हैं।

119. जो कोई भी वासनाओं से घृणा करता है, वह उनके कारणों को भी समाप्त कर देता है; लेकनि जो कोई इन कारणों की ओर झुकता है, वह अनचि्छा से भी, वासनाओं द्वारा पराजति हो जाता है।

120. जब आपके भीतर बुरे वचिार उत्पन्न हों, तो हमें इसके लिए स्वयं को दोष देना चाहिए, न कि मूल पाप को।

121. इन वचिारों की जड़ें स्पष्ट पाप हैं जन्हिें हम में से प्रत्येक अपने हाथों, पैरों और होठों से करता है।

122. जो कसिी वासना के कारणों से घृणा करता है, उसके लिए उस वासना को अपने मन में पालना असंभव है।

123. जो अपमान का तरिस्कार करता है, वह व्यर्थता से बातचीत कैसे करेगा? जो अपमान से प्रेम करता है, उसे बदनामी से कष्ट कैसे होगा? जसिके पास एक पश्चात्तापी और वनिम्र हृदय है, वह देह के भोगों के लिए कैसे सहमत दिेगा? यदवि मसीह में वश्विास करते हैं, तो अस्थायी चीज़ों की परवाह या उनके लिए युद्ध कौन करेगा?

124. जो दूसरे द्वारा अस्वीकार कयिा जाता है, फरि भी अस्वीकार करने वाले के साथ न तो वचन में और न ही वचिार में कोई ववािद नहीं करता, उसने सच्चे ज्ञान को प्राप्त कयिा है और प्रभु में दृढ़ वश्विास का प्रदर्शन करता है।

125. *'मनुष्यों के पुत्र अपने मापों में कपटी हैं; वे सच्चे नहीं हैं'* (भजन संहति 61:10), जबक परिमेश्वर प्रत्येक व्यक्ति के लिए वही सुरक्षति रखता है जसिके वे वास्तव में हकदार हैं।

126. यदि अन्यायी के लिए (अन्याय करने में) न तो कोई अतशियता है और न ही अन्याय सहने वाले के लिए (इसे सहने में) कोई कमी, *'क्योंकि मनुष्य चक्कर लगाता रहता है, परन्तु व्यर्थ ही परशि्रम करता है'* (भजन संहति 38:7)।

127. यदि आप देखें कि कोई अपमान से गहराई से व्यथति है, तो जान लें कवि व्यर्थता के वचिारों से भरे हुए हैं और अब, अपनी अप्रसन्नता के साथ, अपने ही हृदय में बोए गए बीजों के फलों को काट रहे हैं।

128. जसिने भी उचति से अधकि शारीरकि सुखों में लप्ति रहा है, उसे इस अधकिता का भुगतान सौ गुना पीड़ा से करना होगा।

129. आचार्य का कर्तव्य है कि वह नवशष्यि से सत्य बोले; और यदि नवशष्यि उसकी बात न माने, तो उसे परणिामस्वरूप आने वाली वपित्तयिों की चेतावनी दे।

130. जो दूसरे द्वारा अन्याय सहता है और अपराधी से उचति प्रतशिोध नहीं मांगता, वह मसीह में वश्विास प्रदर्शति करता है और उसे इस जीवन में सौ गुना फल मलिेगा, और वह अनंत जीवन का वारसि होगा।

131. ईश्वर की स्मृति एक ऐसे हृदय के साथ होती है जो धार्मकिता के लिए तरसता है; लेकनि जो कोई भी ईश्वर को भूल जाता है, वह आत्म-तुष्ट और कठोर हो जाता है।

132. यह न कहो कि निर्लिप्ति व्यक्ति शोक नहीं कर सकता, क्योंकि यदि अपने लिए नहीं, तो अपने पड़ोसी के लिए तो उसे शोक करना ही चाहिए।

133. जब शत्रु भूल में कए गए पापों के कई रकिॉर्ड इकट्ठा कर लेता है, तो वह ऋणी को उन्हीं पापों को जानबूझकर करने के लिए मजबूर करता है, इस प्रकार वह अपने लाभ के लिए पाप के नियिम का दुरुपयोग करता है।

134. यदि आप ईश्वर को अखंड रूप से स्मरण रखना चाहते हैं, तो वपित्तयिों को इस प्रकार अस्वीकार न करें जैसे वे अन्यायपूर्ण हों, बल्कि उन्हें इस प्रकार सहन करें जैसे वे आपको न्यायसंगत रूप से प्राप्त हो रही हों। क्योंकि (इस भावना में) धैर्य हर मोड़ पर (ईश्वर की) स्मृति को जागृत करता है, जबकि (इस तरह सहने से) इनकार करने से हृदय का चंतिन कम हो जाता है (जो ईश्वर की ओर उसकी प्रवृत्ति को रोककर उसे पृथ्वी की ओर मोड़ देता है) और, (बोझ से मुक्त होने की) खुशी के माध्यम से, वसि्मृति को जन्म देता है।

135. यदि आप चाहते हैं कि प्रभु आपके पापों को ढक दे, तो दूसरों के सामने अपनी कसिी भी सद्गुण का घमंड न करें। क्योंकि जैसे हम अपने सद्गुणों के साथ व्यवहार करते हैं, वैसे ही ईश्वर हमारे पापों के साथ व्यवहार करता है।

136. एक सद्गुण को छपिाने के बाद, यह सोचकर घमंड न करें कि आपने अच्छा काम कयिा है। सच्चे धर्म के लिए न केवल यह आवश्यक है कि हम अपने अच्छे कर्मों को छपिाएँ, बल्कि यह भी कि हम कसिी नषिद्धि चीज़ के बारे में न सोचें।

137. जब आप कसिी के साथ अच्छा करें तो प्रसन्न न हों, बल्कि तब प्रसन्न हों जब आप (जसिकी आपने मदद की है) से मलिने वाले वरिोध को बनिा रंजशि रखे सहन करें। क्योंकि जैसे दनि के बाद रात आती है, वैसे ही बुराई भी अच्छाई के बाद आती है।

138. अहंकार, लालच और आत्म-संतुष्टि अच्छे कर्मों को तब तक अछूत नहीं छोड़ेंगे जब तक कि वे स्वयं ईश्वर के भय से पहले नष्ट न हो जाएँ।

139. अनैच्छकि, दर्दनाक कष्टों में ईश्वर की दया नहिति है, जो उन्हें सहने वालों को पश्चाताप की ओर खींचती है और उन्हें शाश्वत यातना से मुक्ति दिलाती है।

140. कुछ लोग, आज्ञाओं का पालन करते हुए, यह उम्मीद करते हैं कि यह (ईश्वर की न्याय की) तुला पर उनके पापों का प्रतकिारक बनेगा; अन्य, हालांकि, इसे हमारे पापों के लिए मरने वाले की प्रसन्नता के लिए मानते हैं। प्रश्न यह है: इनमें से कौन सा दृष्टिकोण सही है?

141. गेहेन्ना का भय और राज्य का प्रेम हमें कष्टों में धैर्य प्रदान करते हैं। और यह हमसे नहीं आता, बल्कि उससे आता है जो हमारे विचारों का मार्गदर्शन करता है।

142. विश्वासी, भविष्य की ओर देखते हुए, सांसारिक सुखों से बिना किसी हिचकिचाहट (या बिना तर्क-वितर्क के) मुंह मोड़ लेता है, जबकि अविश्वासी आत्मतुष्ट और निर्दयी होता है।

143. यह न कहें कि एक गरीब व्यक्ति, जिसके पास साधन नहीं हैं, वह सुख-भोग में लिप्त नहीं हो सकता, क्योंकि कोई व्यक्ति अपने विचारों में (कर्म की तुलना में) इंद्रिय सुखों में और भी गहराई से लिप्त हो सकता है।

144. कर्मों के ज्ञान (व्यावहारिक विवेक) और सत्य के ज्ञान में अंतर है। जैसे सूर्य चंद्रमा से बहुत श्रेष्ठ है, वैसे ही बाद वाला (सत्य का ज्ञान) पहले वाले (कर्मों के ज्ञान) से कहीं अधिक लाभदायक है।

145. कर्मों का ज्ञान (व्यावहारिक विवेक) आज्ञाओं के पालन के अनुपात में बढ़ता है, जबकि सत्य का ज्ञान मसीह में व्यक्ति की आशा के अनुपात में बढ़ता है।

146. यदि आप उद्धार पाना चाहते हैं और सत्य के ज्ञान को प्राप्त करना चाहते हैं, तो हमेशा कामुकता से ऊपर उठने का प्रयास करें और आशा के द्वारा, एक ईश्वर से चिपके रहें। इस प्रकार आत्म-बाध्यता के साथ अपने अंतर्मन की ओर मुड़ने पर, आप अपने विचारों के भ्रम के माध्यम से आपके विरुद्ध युद्ध करने वाली प्रधानताओं और शक्तियों का सामना करेंगे; लेकिन प्रार्थना के द्वारा उन पर विजय प्राप्त करके और आशा में दृढ़ रहकर, आप परमेश्वर की कृपा प्राप्त करेंगे, जो आपको आने वाले क्रोध से बचाती है।

147. जो कोई संत पौलुस के रहस्यमय शब्दों को समझता है, जिन्होंने कहा था कि *'हमारी लड़ाई बुराई की आध्यात्मिक शक्तियों के विरुद्ध है'* (इफिसियों 6:12), वह प्रभु की दृष्टांत को भी समझ जाएगा, जिसमें उन्होंने सिखाया कि हमें हमेशा प्रार्थना करनी चाहिए और हतोत्साहित नहीं होना चाहिए (लूका 18:1)।

148. विधि रूपक रूप से हमें छह दिन परिश्रम करने और सातवें दिन अपने श्रम से विश्राम करने की आज्ञा देती है। आत्मा का कार्य अपनी संपत्ति से—अर्थात् अपने कर्मों के माध्यम से—भलाई करना है, जबकि उसका विश्राम, या चैन, इस बात में निहित है, जैसा कि प्रभु कहते हैं, कि अपनी सारी संपत्ति बेचकर गरीबों को दे देना, और सांसारिक वस्तुओं से इस तरह के त्याग के माध्यम से शांति पाकर, आध्यात्मिक आशा में आनंदित होना। यही विश्राम है जिसमें संत पौलुस हमें लगन से प्रवेश करने के लिए प्रोत्साहित करते हैं, कहते हुए: *'आओ, हम उस विश्राम में प्रवेश करने का यत्न करें'* (इब्रानियों 4:11)।

149. हमने यह भविष्य को नकारते हुए या यह दावा करते हुए नहीं कहा है कि सभी पुरस्कार यहीं मिलेंगे, बल्कि (हम केवल यह संकेत देते हैं कि) मनुष्य को पहले अपने हृदय में पवित्र आत्मा का सच्चा अनुग्रह प्राप्त करना चाहिए और फिर, इसके अनुसार, परमेश्वर के राज्य में प्रवेश करना चाहिए। इसे प्रकट करते हुए, प्रभु ने यह भी कहा: *'परमेश्वर का राज्य तुम्हारे भीतर है'* (लूका 17:21)। प्रेरित ने भी यही कहा: *'विश्वास आशा की गई बातों का निश्चय है'* (इब्रानियों 11:1), और फिर: *'परीक्षा करो कि तुम विश्वास में हो कि नहीं; अपने को परखो; क्या तुम नहीं जानते कि यीशु मसीह तुम में है? जब तक कि तुम अस्वीकृत न ठहरो?'* (2 कुरिन्थियों 13:5)।

150. जो सत्य को जान चुका है, वह दुखद परीक्षाओं का विरोध नहीं करता। क्योंकि वह जानता है कि वे मनुष्य को परमेश्वर के भय की ओर ले जाती हैं।

151. अतीत के पाप, जब विस्तार से याद किए जाते हैं, तो वे अच्छी आशा वाले व्यक्ति को हानि पहुँचाते हैं। क्योंकि यदि वे दुख के साथ आत्मा में फिर से उठते हैं, तो वे मनुष्य को आशा से दूर कर देते हैं; और यदि उन्हें बिना दुख के कल्पना की जाती है, तो वे फिर से भीतर पुरानी अशुद्धि को भर देते हैं।

152. जब मन, आत्म-त्याग के द्वारा, अटूट आशा को अपना लेता है, तो शत्रु, पाप-स्वीकार के बहाने, अतीत के पापों को एक चित्र की भाँति उसके सामने चित्रित करता है, ताकि उन वासनाओं को फिर से भड़का सके—जिन्हें ईश्वर की कृपा से पहले ही भुला दिया गया था—और मनुष्य को गुप्त रूप से हानि पहुँचा सके। क्योंकि ऐसे मामले में, वह मन भी जो पहले ही प्रबुद्ध हो चुका है और वासनाओं से घृणा करता है, अनिवार्य रूप से किए गए कर्मों से म्लान हो जाता है, परेशान हो जाता है; और यदि यह अभी भी एक कुहरे की तरह ढका हुआ और वासनाओं के प्रति सहानुभूति रखता है, तो यह हर तरह से (ऐसे विचारों में) भटक जाएगा और उनकी प्रवृत्तियों के साथ भावुक रूप से संवाद करना शुरू कर देगा, ताकि ऐसी स्मृति एक स्वीकारोक्ति नहीं बल्कि एक भावुक लिप्तता बन जाएगी।

१५३. यदि आप ईश्वर के समक्ष एक निर्दोष स्वीकारोक्ति अर्पित करना चाहते हैं, तो अपने पूर्व अपराधों को विस्तार से याद किए बिना, उनके परिणामों को साहसपूर्वक सहन करें।

१५४. मनुष्य पर अतीत में किए गए पापों के लिए कठोर कष्ट आते हैं, जो हर उल्लंघन में निहित दण्ड को साथ लेकर आते हैं।

१५५. बुद्धिमान व्यक्ति सत्य को जान लेने के बाद, ईश्वर के सामने अपने कर्मों को याद करके नहीं, बल्कि जो कुछ भी उस पर आता है, उसे सहन करके स्वीकार करता है।

१५६. पापों और अपमान के कारण उत्पन्न हृदय की पीड़ा को त्यागकर, अन्य पुण्यों के द्वारा पश्चाताप प्राप्त करने का वादा न करें; क्योंकि अहंकार और असंवेदनशीलता आमतौर पर दोनों हाथों से पाप की सेवा करते हैं।

157. जैसे गुण आमतौर पर पीड़ादायक कष्टों और अपमान से उत्पन्न होते हैं, वैसे ही पाप अहंकार और सुखों से उत्पन्न होते हैं।

158. हर शारीरिक सुख एक पूर्व आराम की अवस्था (शरीर की) से उत्पन्न होता है, और यह अविश्वास ही है जो किसी को इस आराम के लिए प्रवृत्त करता है।

१५९. जो पाप के वश में है, वह अपने दम पर कामुक तर्क पर विजय प्राप्त नहीं कर सकता, क्योंकि उसके अंगों में एक अनवरत प्रज्वलन गहराई से समाया होता है।

160. जो लोग भावुक हैं, उन्हें प्रार्थना और आज्ञाकारिता में स्थिति रहना चाहिए, क्योंकि केवल इन्हीं की मदद से—या इनके लिए—ही कोई मुश्किल से अपनी भावनाओं से लड़ सकता है।

161. जो आज्ञाकारिता और प्रार्थना के द्वारा अपनी इच्छाओं के विरुद्ध संघर्ष करता है, वह एक कुशल योद्धा है, जो इंद्रिय सुखों से दूर रहकर अपने भीतरी संघर्ष को स्पष्ट रूप से प्रदर्शित करता है।

162. जो अपनी इच्छा को ईश्वर की इच्छा के अनुरूप नहीं बनाता, वह अपने प्रयासों में ठोकर खाता है और अपने शत्रुओं के हाथों में पड़ जाता है।

163. जब आप एक दूसरे से प्रेम करने वाले दो पापियों को देखें, तो जान लें कि वे एक दूसरे को आत्म-तुष्टि में मदद कर रहे हैं।

164. आत्म-धर्मी (घमंडी) और दंभी एक-दूसरे से अच्छी तरह मिलते-जुलते हैं: क्योंकि पहला दंभी व्यक्ति की प्रशंसा करता है, जो उसके सामने एक दास की तरह झुकता है, जबकि दूसरा आत्म-धर्मी व्यक्ति की स्तुति करता है, जो अक्सर उसकी प्रशंसा करता है।

165. ईश्वर-प्रेमी श्रोता को दोनों ही स्थितियों में लाभ होता है: जब उसकी सद्गुणों की प्रशंसा की जाती है, तो वह उनमें और भी अधिक उत्साही हो जाता है, और जब उसके बुरे कर्मों का खुलासा होता है, तो वह पश्चाताप करने के लिए विवश हो जाता है। हमें अपनी प्रगति के अनुसार जीना चाहिए, और अपने जीवन-यापन के अनुसार हमें ईश्वर को अपनी प्रार्थनाएँ अर्पित करनी चाहिए।

166. बेशक, मुख्य सद्गुण को बनाए रखना और व्यक्तिगत मामलों में स्वयं को व्यस्त न रखना, न ही व्यक्तिगत मामलों के लिए प्रार्थना करना अच्छा है, बल्कि केवल प्रभु के वचन के अनुसार परमेश्वर के राज्य की खोज करना है (मत्ती 6:33)। लेकिन यदि हम हर ज़रूरत की चिंता करते हैं, तो हमें हर एक के लिए प्रार्थना करनी चाहिए, क्योंकि जो कोई भी प्रार्थना के बिना कुछ भी करता है या किसी भी बात की चिंता करता है, वह अपने काम को सफल समापन तक नहीं पहुँचाता है। और ठीक यही बात प्रभु का आशय था जब उन्होंने कहा: *'मेरे बिना तुम कुछ भी नहीं कर सकते'* (यूहन्ना 15:5)।

167. जो प्रार्थना करने की आज्ञा की अवहेलना करता है, वह सबसे अयोग्य अवज्ञा में पड़ जाता है, जिसमें से एक उसे एक कैदी की तरह दूसरी में ले जाती है।

168. जो कोई भी भविष्य की आशीर्वादों की आशा से प्रेरित होकर, वर्तमान कष्टों को समान भाव से स्वीकार करता है, उसने सत्य का ज्ञान प्राप्त कर लिया है और वह आसानी से क्रोध और दुख से मुक्त हो जाएगा।

169. जो कोई सत्य के लिए तिरस्कार और अपमान स्वीकार करता है, वह प्रेरितों के पथ पर चलता है, जिसने क्रूस उठा लिया है और उसकी जंजीरों से बँध गया है। लेकिन जो कोई, इसके बिना, हृदय की सुनने का प्रयास करता है, वह मन द्वारा धोखा खाता है और शैतान के प्रलोभनों और जालों में पड़ जाता है।

170. जो संघर्ष करता है, वह न तो बिना कारणों के विचारों पर काबू पा सकता है, और न ही विचारों के बिना इन कारणों पर। क्योंकि यदि हम इनमें से किसी एक को अलग से अस्वीकार करते हैं, तो कुछ ही समय बाद हम दूसरे द्वारा दोनों में वापस फेंक दिए जाएँगे।

171. जो कोई भी किसी हानि या अपमान के डर से दूसरों पर युद्ध छेड़ता है, वह या तो इस जीवन में बहुत कष्ट सहन करेगा, या आने वाले युग में निर्दयता से यातनाएं झेलेगा।

172. जो हर बोझ से मुक्त होना चाहता है, उसे प्रार्थना में सब कुछ ईश्वर को सौंप देना चाहिए, और आशा में अपना मन दृढ़ता से उन पर टिकाए रखकर, इंद्रिय-सुखों की चिंताओं को यथासंभव तुच्छ समझना चाहिए।

173. जब शैतान देखता है कि कोई व्यक्ति बिना आवश्यकता के शारीरिक मामलों में अनुचित रूप से व्यस्त है, तो वह पहले ज्ञान के शिकार को पकड़ता है (मन को लूटता है), और फिर (इसमें सफल होने पर), सिर की तरह ईश्वर में आशा को काट देता है।

१७४. जब आप शुद्ध प्रार्थना के एकांत स्थान पर पहुँचें, तो उस समय शत्रु द्वारा उत्पन्न की गई सांसारिक बातों के विचारों को मन में न लाएँ, अन्यथा आप सर्वोत्तम को खो देंगे। क्योंकि जब वह नीचे कैद हो, तब प्रार्थना के तीरों से उस पर वार करना बेहतर है, बजाय इसके कि हम उससे तब बात करें, जब वह तुच्छ बातें हमारे ध्यान में लाकर, हमारे खिलाफ प्रार्थना करने से हमारा ध्यान भटकाने के तरीके गढ़ता है।

175. सांसारिक मामलों का ज्ञान किसी व्यक्ति के लिए प्रलोभन और निराशा के समय उपयोगी हो सकता है, लेकिन प्रार्थना के दौरान यह आमतौर पर हानिकारक होता है।

176. यदि आपको प्रभु के विषय में सिखाने के लिए बुलाया गया है, फिर भी लोग आपकी बात नहीं सुनते, तो इस पर अपने हृदय में शोक मनाएँ, परन्तु अपनी पीड़ा को खुले तौर पर न दिखाएँ। क्योंकि ऐसा शोक आपको उन लोगों के साथ दण्डित होने से बचाएगा जो आपकी बात नहीं मानते, जबकि यदि आप अपनी पीड़ा को खुले तौर पर दिखाते हैं, तो आप अभी भी उन्हीं शक्तियों द्वारा प्रलोभित होंगे।

१७७. बातचीत के दौरान, उपस्थित लोगों के लिए आवश्यक और लाभदायक बातों को न छिपाएँ; केवल जो सुखद हो उसे स्पष्ट रूप से कहें, और जो कठोर (सख्त) हो उसे परोक्ष रूप से कहें।

178. जिनके ऊपर आपका अधिकार नहीं है, उनकी बुराइयों के लिए उनके सामने फटकार न लगाएँ, क्योंकि यह सलाह देने का मामला नहीं, बल्कि अधिकार का मामला है।

179. जो बात सामान्य रूप से कई लोगों से कही जाती है, वह सभी के लिए लाभदायक होती है; फिर भी प्रत्येक व्यक्ति का अंतकरण उसे व्यक्तिगत रूप से मार्गदर्शन करता है।

180. जो सत्य बोलता है, उसे स्वयं परमेश्वर का धन्यवाद करना चाहिए, क्योंकि वह परमेश्वर से वही ग्रहण करता है जो कहा जाना चाहिए। क्योंकि सत्य वक्ता का कार्य नहीं है, बल्कि परमेश्वर का है जो (उसके भीतर या उस पर) कार्य करता है।

181. उन लोगों से विवाद में न पड़ें जिन्होंने आपसे आज्ञाकारिता का व्रत नहीं लिया है, जब वे सत्य का विरोध करते हैं, कहीं ऐसा न हो कि (निर्माण के बजाय) केवल शत्रुता उत्पन्न हो, शास्त्र के अनुसार (देखें 2 तीमुथियुस 2:23)।

182. जो कोई एक नवसिखुए को तब सहमति देता है जब वह उस बात का विरोध करता है जहाँ उसे नहीं करना चाहिए, वह इस मामले में उसे धोखा देता है और (सामान्य रूप से) उसे अपने आज्ञाकारिता के व्रत की अवहेलना करने के लिए प्रोत्साहित करता है।

183. जो कोई भी, ईश्वर के भय से, एक पापी को समझाता और उपदेश देता है, वह अपने लिए अपराध के विपरीत एक सद्गुण अर्जित करता है। लेकिन आहत और दुर्भावनापूर्ण आलोचक, आध्यात्मिक नियम के अनुसार, उसी प्रकार के जुनून में पड़ जाता है जैसा पापी का होता है।

184. जो विधि को अच्छी तरह सिखाता है, वह विधि-प्रदाता से भयभीत होता है और, उसके भय से, सभी बुराइयों से दूर रहता है।

185. दोहरे स्वभाव वाले न बनो; अर्थात्, एक ओर मत बोलो जबकि तुम्हारा अंतकरण दूसरी ओर झुका हो। क्योंकि धर्मग्रंथ ऐसे व्यक्ति को शपथ के अधीन करता है (सिरैक 28:15)।

186. कोई सत्य बोलता है और मूर्खों द्वारा उससे घृणा की जाती है; कोई पाखंडी होता है और उससे प्रेम किया जाता है: फिर भी, इन दोनों में से कोई भी पुरस्कार लंबे समय तक नहीं रहता। उचित समय पर, प्रभु प्रत्येक व्यक्ति को उनके कर्मों के अनुसार पुरस्कृत करेंगे।

187. जो भविष्य के दुखों से बचना चाहता है, उसे वर्तमान दुखों को स्वेच्छा से सहन करना चाहिए। क्योंकि इस प्रकार एक को दूसरे से मानसिक रूप से बदलकर, वह छोटे दुखों के माध्यम से बड़ी यातनाओं से बचेगा।

188. अपनी बातों में डींग-बाज़ी और अपने विचारों में अहंकार से बचें, कहीं ऐसा न हो कि आप इसके विपरीत करने लगें; क्योंकि अच्छे कर्म केवल मनुष्य से नहीं, बल्कि सर्व-द्रष्टा ईश्वर की मदद से ही पूरे होते हैं।

189. सर्व-द्रष्टा ईश्वर हमें न केवल हमारे कर्मों के लिए, बल्कि हमारे विचारों और जानबूझकर किए गए इरादों के लिए भी उचित प्रतिफल प्रदान करते हैं।

190. अनैच्छिक विचार एक पूर्व पाप से उत्पन्न होते हैं, जबकि जानबूझकर किए गए विचार स्वच्छंद मन से उत्पन्न होते हैं। इसीलिए बाद वाले, पहले वालों का कारण होते हैं।

191. बुरे वचिार जो हृदय के अनुकूल नहीं होते, उनके साथ दुख जुड़ा होता है, इसीलिए वे जल्द ही नष्ट हो जाते हैं; जबकि जो हृदय के अनुकूल होते हैं, उनके साथ आनंद जुड़ा होता है, इसीलिए उन्हें दूर करना कठिन होता है।

192. आत्म-तुष्ट व्यक्ति निंदा और अभाव पर शोक करता है, जबकि ईश्वर का प्रेमी प्रशंसा और प्रचुरता पर शोक करता है।

193. जो ईश्वर के निर्णयों को नहीं जानता, वह (अपने हृदय में) एक ऐसे मार्ग पर चलता है जिसके दोनों ओर तेज बहाव हो, और वह किसी भी हवा से आसानी से गिर जाता है: जब उसकी प्रशंसा की जाती है, तो वह घमंडी हो जाता है; जब उसकी आलोचना की जाती है, तो वह चिड़चिड़ा हो जाता है; जब वह भरपूर भोज करता है, तो वह वासना में लिप्त हो जाता है; जब वह अभाव का अनुभव करता है, वह रोता है; जब उसे कुछ पता होता है, तो वह ढोंग करता है; जब उसे नहीं पता होता, तो वह ज्ञानी होने का दिखावा करता है; जब वह अमीर होता है, तो घमंड करता है; जब वह गरीब होता है, तो पाखंडी होता है; जब वह तृप्त होता है, तो अहंकारी हो जाता है; जब वह उपवास करता है, तो वह दंभी होता है; वह उससे झगड़ता है जो उसे डांटता है, और उसे मूर्ख समझता है जो उसका बचाव करता है।

194. जब तक कोई, मसीह की कृपा से, सत्य का ज्ञान और ईश्वर का भय प्राप्त नहीं कर लेता, तब तक वह न केवल अपनी वासनाओं से बल्कि बाहरी परिस्थितियों से भी गंभीर घावों को सहन करता रहेगा।

195. जब आप किसी उलझन भरे (भ्रामक) मामले को सुलझाना चाहें, तो उसमें ईश्वर को प्रसन्न करने वाली बात खोजें, और आपको निश्चित रूप से एक लाभकारी समाधान मिलेगा।

196. जिन मामलों को ईश्वर अनुकूल मानते हैं, उनमें सारी सृष्टि सहायता करती है; और जिनसे वह मुंह मोड़ते हैं, उनमें सारी सृष्टि विरोध करती है।

197. जो प्रतिकूल परिस्थितियों का विरोध करता है, वह अनजाने में ईश्वर की आज्ञा का विरोध कर रहा है; लेकिन जो शास्त्रों के अनुसार, सच्ची समझ के साथ उन्हें स्वीकार करता है, वह प्रभु को सहन करता है।

198. जब परीक्षा आती है, तो उसका कारण या उद्देश्य न खोजें, बल्कि (ध्यान रखें) उसे कृतज्ञतापूर्वक, बिना दुख के और बिना रंजिश रखे सहन करें।

199. दूसरों का बुराई करना हमारे पाप में तब तक नहीं बढ़ता, जब तक हम उसे—बुरी सोचों के साथ—न स्वीकार करें, या उसे आत्मसात न कर लें, या उसे अपना न बना लें।

200. चूँकि ऐसा कोई व्यक्ति नहीं है जो परीक्षाओं का सामना किए बिना परमेश्वर को प्रसन्न कर सके, इसलिए हमें हर दुखद घटना के लिए परमेश्वर का धन्यवाद करना चाहिए।

201. यदि पतरस ने अपनी रात की मछली पकड़ने का काम न छोड़ा होता, तो वह अपनी दिन की बुलाहट के लिए योग्य नहीं ठहराया जाता; और यदि पौलुस को देह में अंधा न किया गया होता, तो उसे आध्यात्मिक दृष्टि नहीं मिलती; और यदि स्तिफन पर ईश्वरनिन्दा का आरोप न लगाया गया होता, तो उसके लिए स्वर्ग नहीं खुलता और वह परमेश्वर को नहीं देख पाता।

202. जैसे परमेश्वर के अनुरूप एक कर्म को सद्गुण कहा जाता है, वैसे ही अप्रत्याशित दुख को भी परीक्षा कहा जाता है।

203. परमेश्वर ने अब्राहम की परीक्षा ली; अर्थात्, उसके अपने भले के लिए उसने उसे कष्ट भेजे, यह जानने के लिए नहीं कि वह किस प्रकार का मनुष्य था—क्योंकि वह जो सर्वज्ञ है, उसे समय की शुरुआत से पहले ही जानता था—बल्कि उसे पूर्ण विश्वास का अवसर देने के लिए (कि वह उसे जाने और उसमें दृढ़ हो जाए)।

204. हर दुख हमारी इच्छा की प्रवृत्ति को प्रकट करता है, कि वह दाईं ओर झुकती है या बाईं ओर। इसलिए एक अचानक दुख को एक परीक्षा कहा जाता है क्योंकि यह अनुभव करने वाले को उसकी गहरी प्रवृत्तियों के संबंध में कसौटी पर रखता है।

205. परमेश्वर का भय हमें पाप के विरुद्ध संघर्ष करने के लिए बाध्य करता है, और जब हम संघर्ष करते हैं, तो परमेश्वर का अनुग्रह उसे नष्ट कर देता है।

206. बुद्धिमानी केवल सत्य को उसके स्वाभाविक क्रम में जानने में ही नहीं, बल्कि दूसरों द्वारा हमें पहुँचाए गए दुष्टता को इस प्रकार सहने में भी निहित है जैसे कि वह हमारी अपनी हो (जैसे कि हम इसके हकदार हों)। (के अनुभव से पता चला है कि) जो लोग पहले प्रकार के ज्ञान के साथ रहे, वे घमंड से ऊपर उठे, जबकि जिन्होंने दूसरे प्रकार का ज्ञान प्राप्त किया, उन्होंने नम्रता हासिल की।

२०७. यदि आप दुष्ट विचारों से मुक्त होना चाहते हैं, तो आत्मा की विनम्रता और शारीरिक कष्ट का अभ्यास करें; और ऐसा केवल आंशिक रूप से ही नहीं, बल्कि हर समय, हर जगह और हर प्रयास में करें।

208. जो कोई स्वेच्छा से कष्टों के द्वारा स्वयं को प्रशिक्षित करता है, वह अनैच्छिक विचारों से पराजित नहीं होगा; परन्तु जो ऐसा नहीं करता, वह अनिवार्य रूप से बाद वालों का दास बन जाएगा।

209. जब किसी अपमान के परिणामस्वरूप, आपका अंतर्मन और आपका हृदय क्रोध से भर उठता है, तो इस बात का दुख न करें कि जो सुप्त पड़ा था वह जाग गया है; बल्कि, हर्षित होकर, मन में उत्पन्न हुए विचारों को त्याग दें, यह जानते हुए कि जैसे वे पहली हलचल में ही नष्ट हो जाते हैं, वैसे ही उनके नीचे छिपा हुआ और उन्हें उत्पन्न करने वाला पाप भी आमतौर पर नष्ट हो जाता है; लेकिन यदि विचारों को जड़ जमाने और बार-बार प्रकट होने दिया जाए, तो पाप आमतौर पर बढ़ जाता है।

२१०. दिल से पश्चाताप के बिना, बुराई से पूरी तरह छुटकारा पाना असंभव है; हालाँकि, दिल तीन चीज़ों से संयम के द्वारा पश्चाताप करता है, अर्थात्: नींद, भोजन और शारीरिक आराम से। क्योंकि इन चीज़ों में संतोष आत्म-संतुष्टि को पोषित करता है, बुरी सोचों को बढ़ाता है, और प्रार्थना करने तथा उचित आज्ञाकारिता को पूरा करने में अनिच्छा पैदा करता है।

211. भाइयों का नेतृत्व करने के लिए चुने जाने के बाद, अपने पद को बनाए रखें और कुछ लोगों के विरोध के कारण जो कहा या आज्ञा दी जानी चाहिए, उसके बारे में चुप न रहें। जहाँ वे आपकी आज्ञा मानते हैं, वहाँ आपको उनके पुण्य के कारण पुरस्कार मिलेगा; जहाँ वे आज्ञा नहीं मानते, उन्हें क्षमा करें, और इसके लिए आपको उस परमेश्वर से समान (पुरस्कार) मिलेगा जिसने कहा है: *'क्षमा करो, और तुम्हें क्षमा किया जाएगा'* (लूका 6:37)।

212. दैनिक जीवन की घटनाएँ एक मेले के समान हैं। जो व्यापार करना जानते हैं, वे लाभ कमाते हैं, जबकि जो नहीं जानते, वे हानि उठाते हैं।

213. यदि कोई व्यक्ति आपके पहले शब्द से ही आपकी बात नहीं सुनता, तो उसे तर्क-वितर्क से बाध्य न करें, बल्कि उन्होंने जो लाभ अस्वीकार किया है, उसे उजागर करके उन्हें अपने पक्ष में करें। क्योंकि उनकी आज्ञाकारिता से अधिक लाभदायक आपके लिए दयालुता है।

214. जब एक व्यक्ति का भ्रष्टाचार (जिसने अवज्ञा या किसी अन्य साधन से स्वयं पर विनाश लाया है) कई लोगों तक फैलता है, तो किसी को दीर्घकाल तक सहनशील नहीं रहना चाहिए, *'अपना लाभ नहीं, बल्कि बहुतों का लाभ खोजता है, ताकि वे बच सकें'* (1 कुरिन्थियों 10:33)। क्योंकि सामान्य भलाई निजी भलाई से अधिक लाभदायक है।

215. यदि कोई किसी पाप में गिर जाता है और अपराध के अनुपात में उस पर शोक नहीं करता, तो वह आसानी से उसी (शत्रु के) जाल में फिर से फँस जाएगा।

216. जैसे एक मादा सिंह मित्रता के लिए एक बछड़े के पास नहीं जाती, वैसे ही निर्लज्जता *'ईश्वरीय शोक'* (2 कुरिन्थियों 7:10) *को* स्वीकार नहीं करती।

217. जैसे भेड़ भेड़िये के साथ संतान उत्पन्न करने के लिए संभोग नहीं करती, वैसे ही तृप्ति से संतुष्ट हृदय में सद्गुणों की संकल्पना के लिए आवश्यक शोक की कमी होती है।

218. कोई भी दैवीय शोक और दुख का अनुभव तब तक नहीं कर सकता जब तक कि वह पहले उसके कारणों से प्रेम न करे।

219. ईश्वर का भय और फटकार शोक को अपने साथी के रूप में स्वीकार करते हैं, जबकि संयम और सतर्कता शोक के अनुकूल हैं।

220. जिसको धर्मग्रंथ की आज्ञाओं और उपदेशों से होश में नहीं लाया जा सकता, उसे *'घोड़े की लगाम और गधे की काँटी' से* आगे बढ़ाया जाना चाहिए (नीतिवचन 26:3)[56] ; लेकिन यदि वह इसे भी अस्वीकार करता है, *तो 'तुम उसके जबड़ों को लगाम और लगाम से रोक दोगे'* (भजन संहिता 31:9)।

221. जो छोटे प्रलोभनों से ही आसानी से हार मान लेता है, वह निश्चित रूप से बड़े प्रलोभनों का दास बन जाएगा; परन्तु जो छोटे प्रलोभनों को तुच्छ समझता है, वह बड़े प्रलोभनों का सामना करते हुए भी प्रभु के विरुद्ध विद्रोह करेगा।

222. जो अपने गुणों का बड़बोलापन करता है, उसे फटकार कर सुधारने का प्रयास न करें, क्योंकि एक ही व्यक्ति दिखावा करने वाला और सत्य का प्रेमी, दोनों नहीं हो सकता।

223. मसीह का प्रत्येक वचन ईश्वर की दया, सत्य और ज्ञान को प्रकट करता है, और स्वेच्छा से उन्हें सुनने वालों की आत्माओं में सुनने के माध्यम से उनकी शक्ति स्थापित करता है। इसलिए, निर्दयी और अधर्मी, जिन्होंने अनिच्छा से उन्हें सुना, न केवल ईश्वर के ज्ञान को पहचानने में असफल रहे, बल्कि उन्होंने उसे भी सूली

---

[56] गधों को कोड़े से नहीं हाँका जाता, बल्कि एक डंडे से जुड़ी सुई से उनके पार्श्व में चुभाकर चलाया जाता है।

पर चढ़ा दयिा जसिने इसे सखिाया था। इसी प्रकार हमें यह भी परखना चाहिए कि क्या हम स्वेच्छा से उनकी सुनते हैं। क्योंकि उन्होंने कहा: *'जो मुझ से प्रेम रखता है, वह मेरी आज्ञाओं को मानता है, और उस से मेरा पिता प्रेम रखेगा, और मैं उससे प्रेम रखूँगा और स्वयं को उस पर प्रकट करूँगा'* (यूहन्ना 14:15, 21)। क्या आप देखते हैं कि उन्होंने अपनी अभिव्यक्ति को आज्ञाओं के भीतर कैसे छिपाया है? फिर भी, सभी आज्ञाओं में सबसे व्यापक आज्ञा ईश्वर और अपने पड़ोसी से प्रेम करना है, जो विचारों की शांति में सभी भौतिक चीजों से विरक्ति से उत्पन्न होती है।

224. यह जानते हुए, प्रभु हमें आज्ञा देते हैं, कहते हुए: *'कल की चिंता मत करो'* (मत्ती 6:34)। ऐसा ही होना चाहिए। क्योंकि वह व्यक्ति जो सांसारिक दुनिया और उसकी चिंता का त्याग नहीं कर चुका है, वह दुष्ट विचारों से कैसे मुक्त हो सकता है? लेकिन जब कोई विचारों से अभिभूत हो जाता है, तो वह उनके नीचे छिपे मूल पाप को कैसे देख पाएगा—जो आत्मा का अंधकार और निराशा है, और जिससे सभी दुष्ट विचार और इच्छाएँ उत्पन्न होती हैं—जबकि शैतान, एक ऐसे प्रलोभन के माध्यम से जो जबरदस्ती नहीं करता, उस पाप की ओर इशारा करता है, और वह व्यक्ति, व्यर्थता और आत्म-तुष्टि से प्रेरित होकर, उसके साथ मेलजोल करता है? भले ही, विचार करने पर, उसने इसे करने का संकल्प न लिया हो, फिर भी उसने उस प्रवृत्ति में आनंद लिया और उससे उलझ गया। यदि, तथापि, वह इस प्रधान पाप को नहीं पहचानता है—तो प्रार्थना करने के बाद भी, वह इससे शुद्ध कब और कैसे होगा? और शुद्ध हुए बिना, वह शुद्ध स्वभाव का स्थान (यहे. 37:27) कैसे पाएगा? और इसे न पाकर, वह मसीह के भीतरी भवन को कैसे देख पाएगा? – यदि हम भविष्यवक्ताओं, सुसमाचार और प्रेरितों के वचनों के अनुसार परमेश्वर का घर हैं (जकर्याह 2:10, यूहन्ना 14:23, 1 कुरिन्थियों 3:16)।

225. अत: हमें उपरोक्त वर्णित तरीके से इस घर को खोजने का प्रयत्न करना चाहिए, और प्रार्थना में रहते हुए, दरवाज़ों पर खटखटाना चाहिए (मत्ती 7:7), ताकि या तो यहाँ या हमारे प्रस्थान के समय, प्रभु हमारे लिए उन्हें खोल दें और यह न कहें, यदि हम पुनर्जन्म लें: *'मैं नहीं जानता कि तुम कहाँ से आते हो'* (लूका 13:25)। हमें न केवल माँगकर प्राप्त करना चाहिए, बल्कि जो हमें दिया गया है उसे सुरक्षित भी रखना चाहिए, क्योंकि कुछ लोगों ने इसे प्राप्त करने के बाद भी खो दिया है। उपरोक्त विषयों का केवल ज्ञान, या यहाँ तक कि उनका कुछ आकस्मिक अनुभव भी, उन लोगों के पास भी हो सकता है जिन्होंने देर से अपनी पढ़ाई शुरू की, और युवा; फिर भी बुजुर्ग—भक्तिमय और सबसे अनुभवी—भी मुश्किल से ही इसके निरंतर और धैर्यवान अभ्यास के मालिक हैं, क्योंकि उन्होंने अक्सर लापरवाही से इसे खो दिया है और फिर, जानबूझकर प्रयास करके, इसे खोजा और फिर से प्राप्त किया है। इसलिए, जब तक हम इस अभ्यास में पारंगत नहीं हो जाते, तब तक हम भी ऐसा करना बंद न करें, ताकि यह हम में अविभाज्य रूप से बना रहे।

२२६. अनेक में से, हमने आध्यात्मिक कानून के कुछ ही औचित्यों को सीखा है, जिन्हें हमें अथक रूप से सीखना और अभ्यास करना चाहिए; और महान भजन संहिताकार उन लोगों को प्रेरित करते हैं जो अक्सर प्रभु यीशु में गाते हैं, जिनके लिए महिमा, शक्ति और आराधना हो, अब और हमेशा के लिए। आमीन।

पोंटस के अबा इवाग्रियस

अब्बा इवाग्रियस के जीवन के बारे में जानकारी

यह ज्ञात है कि पोंटस के इवाग्रियस, जो एक तपस्वी भिक्षु और मठाधीश थे, का जन्म चौथी शताब्दी के मध्य के आसपास पोंटस यूक्सिनिस के पास आइवर नामक शहर में हुआ था (संत बेसिल का मठ इस शहर से बहुत दूर नहीं था)। उनकी वंशावली या क्षमताओं ने उस समय के महान संतों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित किया, जो उस समय फल-फूल रहे थे: बेसिल द ग्रेट, ग्रेगरी ऑफ निस्सा और ग्रेगरी द थियोलॉजिस्ट। उनके मार्गदर्शन में, वह आत्मा में और हमारे प्रभु यीशु मसीह में विश्वास और जीवन की अपनी समझ में बढ़ा और विकसित हुआ। बेसिल द ग्रेट ने उसे एक रीडर नियुक्त किया; ग्रेगरी ऑफ निस्सा ने उसे एक डिकिन का पद दिया और जब वह वहां दूसरे सार्वभौमिक परिषद में शामिल हुए तो उसे कॉन्स्टेंटिनोपल में छोड़ दिया। एक ऐसी परिस्थिति, जिसने उसकी पवित्रता को खतरे में डाल दिया, ने उसे कॉन्स्टेंटिनोपल छोड़ने के लिए मजबूर कर दिया। और इस प्रकार, यरूशलेम में थोड़ा समय बिताने के बाद, वह मिस्र के लिए रवाना हो गया, जहाँ उसने तपस्वी जीवन जिया, पहले निट्रिया में, फिर सेल्स में, और अंत में स्केटे में, उस समय के महान मठाधीशों के मार्गदर्शन में और उनकी संगति में। उनके शिष्य पल्लाडियस, जो सोक्रेटिस के अनुयायी थे, ने *लॉडैटोरिया* के अध्याय 73 में उनके बारे में लिखा है: 'मसीह के प्रसिद्ध डिकिन, प्रेरितिक जीवन के पुरुष, एवाग्रियस के कर्मों के बारे में चुप रहना अनुचित समझते हुए, और इसके विपरीत,

उन्हें लखिति रूप में दर्ज करना उचति समझते हुए, पाठकों के नर्िमाण और हमारे उद्धारकर्ता की कृपा की महमिा के लएि, मैं पहले यह वर्णन करूँगा कि उन्होंने साधु जीवन कैसे अपनाया और कैसे, अपने व्रत के योग्य प्रकार से परशि्रम करके, 54 वर्ष की आयु में मरुभूमि में नधिन कयिा, धर्मग्रंथ के वचनों के अनुसार: *'वे थोड़े ही समय में चले गए, अपनी सेवा के वर्ष पूरे करके, क्योंकि उनकी आत्मा प्रभु को प्रयि थी।'* वे पोंटस के मूल नविासी, इवोरा नगर के, एक पादरी के पुत्र थे; उन्हें सेसरयिा के बशिप सेंट बेसलि ने आर्गोस के चर्च में रीडर के रूप में नयिुक्त कयिा था। महाधर्माध्यक्ष सेंट बेसलि के नधिन के बाद, नसिा के महाधर्माध्यक्ष सेंट ग्रेगरी—जो अपोस्टोलकि महमिा प्राप्त कर चुके महाधर्माध्यक्ष बेसलि के भाई थे, और जो अत्यंत बुद्धमिान, सबसे अधकि नर्लिप्ति और अपने ज्ञान के लएि प्रसदि्ध थे—ने एवाग्रयिस की योग्यता को देखते हुए, उसे एक डकिन नयिुक्त कयिा। बाद में कॉन्स्टेंटनिोपल के महान परषिद में उनके साथ जाने के बाद, बशिप सेंट ग्रेगरी ने उन्हें वहाँ धन्य बशिप नेक्टारयिस की देखभाल में छोड़ दयिा, क्योंकि वे सभी वधिर्मों का खंडन करने में बहुत कुशल थे। और वे महान शहर में अपने शब्दों से हर वधिर्म को बहादुरी से परास्त करके प्रसदि्ध हो गए। ऐसा हुआ कि यह व्यक्ति, जसिे उसके उत्कृष्ट नैतकि सत्यनषि्ठा के लएि पूरे शहर में सम्मान दयिा जाता था, एक महलिा के प्रतकिामुक प्रेम से ग्रस्त हो गया, जैसा कि उसने स्वयं हमें बाद में तब बताया जब वह इस प्रलोभन से मुक्त हो गया था। वह महलिा भी उससे प्यार करती थी, और वह कुलीन वंश की थी। इवाग्रयिस, चूँकि वह परमेश्वर से डरता था, अपने ही ववििेक के सामने लज्जति था, और उसने दुष्टता की गंदगी तथा वधिर्मयिों की दुख में आनंद लेने वाली प्रवृत्ति की कल्पना की, उसने परमेश्वर से महलिा के इरादों को वफिल करने के लएि वनितीपूर्वक प्रार्थना की; क्योंकि, वासना से भड़ककर, वह उसे पाप में खींचने का प्रयास कर रही थी। वह उससे दूर होना चाहता था, लेकनि अनुग्रह के बंधनों में बँधा होने के कारण ऐसा नहीं कर सका। उस प्रार्थना के तुरंत बाद, जसिसे उसने स्वयं को पाप करने से रोका था, एक स्वर्गदूत उसे एक दर्शन में प्रांतीय राज्यपाल के कवच में लपिटे हुए दखिाई दयिा; उसे पकड़कर, स्वर्गदूत उसे जैसे कसिी न्यायकि अदालत में ले गया और उसे एक कालकोठरी में डाल दयिा, उसकी गर्दन में लोहे की बेड़यिाँ डाल दीं और उसके हाथों को लोहे की जंजीरों से बाँध दयिा। जो लोग उसे देखने आए, उन्होंने उसे उसके कैद का कारण नहीं बताया, लेकनि वह स्वयं, अपने ववििेक से पीड़ति, सोचता था कि उसे उस मामले के कारण ही यह सब झेलना पड़ रहा है, और उसने अनुमान लगाया कि उस महलिा के पति ने न्यायाधीश को इसकी सूचना दी होगी। इसके अलावा, उसे ऐसा भी लगा कि वहाँ और भी लोग उसी अपराध के लएि उसी समय मुकदमे का सामना कर रहे थे। इससे वह पूरी तरह से भ्रम और भय में पड़ गया। तब एक स्वर्गदूत ने उसके एक सच्चे मति्र का रूप धारण कयिा और मानो उससे मलिने आया। वह अंदर आया, और यह देखकर गहराई से स्तब्ध और दुखी हुआ कि उसका मति्र अपमानजनक कैद की बेड़यिों में जकड़ा हुआ था और चालीस अपराधयिों के बीच बंद था, और उसने उससे कहा: 'फादर डीकन! वे तुम्हें अपराधयिों के साथ इतनी अपमानजनक कैद में क्यों रख रहे हैं?' उसने जवाब दयिा: 'सच में, मुझे नहीं पता, लेकनि मुझे संदेह है कि किसी ईपार्क ने पागल ईर्ष्या के कारण मुझ पर आरोप लगाया है, और मुझे डर है कि शहर के गवर्नर को उसने रशि्वत दी होगी और मुझे कठोर सज़ा दी जा सकती है।' जो मति्र के भेष में आया था, उसने उससे कहा: 'यदि आप अपने मति्र की बात सुनने को तैयार हैं, तो मैं आपको इस शहर को छोड़ने की सलाह दूँगा, क्योंकि, जहाँ तक मैं देख सकता हूँ, आपके लएि यहाँ रहना अच्छा नहीं है।' इवाग्रयिस ने उससे कहा: 'यदि ईश्वर मुझे इस वपित्ति से बचाता है, और बाद में आप मुझे कॉन्स्टेंटनिोपल में देखते हैं, तो मुझे और भी कठोर दंड दयिा जाए।' उस मति्र ने उससे कहा: 'यदि ऐसा है, तो मैं सुसमाचार लाता हूँ; उस पर मुझे शपथ दलिाओ कि तुम इस शहर को छोड़ दोगे और एक भकि्षु बन जाओगे, और मैं तुम्हें इस वपित्ति से बचा लूँगा।' एवाग्रयिस ने कहा: 'मैं शपथ लेता हूँ, जैसा तुम चाहते हो, बस मुझे इस काले बादल से बचा लो।' इसके बाद, मति्र सुसमाचार लेकर आया और शपथ की मांग की। एवाग्रयिस ने सुसमाचार पर उससे शपथ ली कि वह एक दनि से अधकि शहर में नहीं रुकेगा, और वह भी केवल अपने सामान को एक जहाज पर चढ़ाने के लएि। इसके साथ ही, वह दर्शन समाप्त हो गया। चंिता की अवस्था में उठकर, उसने तर्क दयिा: 'भले ही यह शपथ आवेश में दी गई थी, फरि भी मैंने इसे ली है।' इसलएि, बनिा कसिी देरी के, उसने अपना सब कुछ जहाज पर लाद लयिा और यरूशलेम के लएि रवाना हो गया। वहाँ उसने संन्यासी का वेश धारण कयिा और उसे धन्य मेलानयिा रोमन ने स्वीकार कयिा। लेकनि शैतान ने एक बार फरि उसके दलि में संदेह भर दयिा और उसके संकल्प को इस कदर हलिा दयिा कि उसने फरि से अपने कपड़े बदल लएि, और उसका मन वाक्पटुता की दंभ से भर गया। लेकनि ईश्वर, जो हम सभी को वनिाश से बचाते हैं, ने उसे यहाँ भी एक और वपित्ति में डाल दयिा, उस पर बुखार भेजकर और छह महीने तक चली एक गंभीर बीमारी के माध्यम से उसके शरीर को थका दयिा, जो उसे उस रास्ते पर आगे बढ़ने से रोक रहा था जसिे उसने पहले ही शुरू कर दयिा था। जब डॉक्टरों ने उसे ठीक करने का कोई रास्ता न पाकर उससे उम्मीद छोड़ दी, तो धन्य मेलानयिा ने उससे कहा: 'मेरे बेटे, मुझे लगता है कि तुम्हारी बीमारी कोई साधारण बीमारी नहीं है; मुझे बताओ, क्या तुम्हारे मन पर कुछ बोझ है?' उसने उसे

कॉन्स्टेंटिनोपल में अपने साथ हुई हर बात का इकबालिया बयान दे दिया। धन्य ने उससे कहा: 'ईश्वर के सामने मुझे अपना वचन दो कि तुम मठवासी जीवन जीने का संकल्प करोगे, और यद्यपि मैं एक पापी हूँ, मैं प्रभु से प्रार्थना करूँगी कि वे तुम्हें पश्चाताप और तुम्हारे हृदय के सुधार के लिए दीर्घायु प्रदान करें।' जब उसने अपना वचन दे दिया, तो उसने प्रार्थना की, और इवाग्रियस कुछ ही दिनों में ठीक हो गया। उसके ठीक होने पर, उसने स्वयं उसके लिए एक मठवासी वस्त्र लाया, और उसे पहनने के बाद, वह मिस्र के लिए रवाना हो गया, जहाँ, माउंट नाइट्रियन पर दो साल रहने के बाद, वह तीसरे साल में रेगिस्तान में चला गया। वह तथाकथित 'कोठरियों' में चौदह साल तक केवल रोटी और पानी पर जीवित रहा, कभी-कभी थोड़ी सी मात्रा में तेल भी लेता था, और इस मामले में उसने खुद को कोई आराम नहीं दिया। वह न तो हरी सब्जियां, न फल और न ही अंगूर खाता था; वह न तो शराब पीता था और न ही अपना शरीर धोता था। इस प्रकार, इस व्यक्ति ने, जो पहले आराम में रहता था, स्वयं को कष्ट दिया; फिर भी यहाँ भी प्रलोभन उसे नहीं छोड़ते थे। कभी-कभी कामवासना का दानव उस पर प्रबल रूप से आक्रमण करता था, जैसा कि उसने स्वयं बताया; और फिर, कड़ाके की सर्दियों में, वह पूरी रात एक कुएँ में नग्न बैठता था, जब तक कि उसका शरीर सुन्न नहीं हो जाता था। अन्य समयों में, निन्दा की आत्मा उसे सताती थी, और तब वह चालीस दिनों तक किसी छत के नीचे नहीं जाता था, और स्वयं को कष्ट देता था। वास्तव में, उसने विभिन्न राक्षसों से इतने सारे प्रलोभनों को सहा कि उन्हें सूचीबद्ध करना भी कठिन है; राक्षसों ने उसे पीटा भी था। लेकिन इस प्रकार अपने शरीर को कष्ट देते और ऐसे परीक्षणों को सहते हुए, धन्यजन के हृदय में पवित्र आत्मा ने आंतरिक रूप से प्राण फूँका और, अपने मन को शुद्ध करने के बाद, उन्हें विवेक का वरदान और आत्माओं के बीच अंतर करने की क्षमता प्रदान की गई। मसीह के इस पराक्रमी तपस्वी ने अपनी मृत्यु से पहले हमसे कहा: 'अब तीन साल हो गए हैं, देह की वासना ने मुझे परेशान नहीं किया है।' यदि इतने कठोर जीवन, इतनी अथक तपस्या और प्रार्थना में अटूट जागरूकता के बाद भी, अच्छाई का शत्रु और विनाशकारी राक्षस इस धर्मी व्यक्ति पर इतनी जोरदार हमला कर सकता है, तो लापरवाह लोगों को इस अशुद्ध राक्षस के हाथों, या अपनी ही लापरवाही के कारण, कितना अधिक कष्ट झेलना पड़ता होगा! उन्होंने सौ प्रार्थनाएँ रचीं और तीन पुस्तकें लिखीं, अर्थात्: *'इएरा'* – या यूँ कहें *'स्टिहिरि'* (श्लोकों या दृष्टान्तों के रूप में संक्षिप्त कथन), *'मोनाहोन'* – 'मोनक' या व्यावहारिक पाठ, और *'एंटीरिटीकोन'* – 'संघर्ष' – राक्षसों और वासनाओं के खिलाफ लड़ाई पर। सुकरात (पुस्तक 4, अध्याय 23) में हमें यह भी मिलता है कि इवाग्रियस मिस्र के मैकारियस और अलेक्जेंड्रिया के मैकारियस दोनों के शिष्य थे, जिनके मार्गदर्शन में—पहले केवल नाम के लिए एक दार्शनिक ( ) होने के बाद—उन्होंने व्यावहारिक दर्शन प्राप्त किया। कॉन्स्टेंटिनोपल से मिस्र आने के बाद, वह उपर्युक्त पुरुषों से मिला और उनके जीवन के तरीके का अनुकरण करने लगा। नीचे, सुकरात एवाग्रियस के जीवन की दो घटनाओं का वर्णन अपने शब्दों में करते हैं, जिससे यह स्पष्ट होता है कि उसका महान मैकारियस के साथ कैसा संबंध था। पहला है कि अबा मकारियस ने इवाग्रियस से लोगों द्वारा की गई अपमान की स्मृति और राक्षसों द्वारा की गई अपमान की स्मृति के आत्मा पर पड़ने वाले प्रभावों में अंतर के बारे में पूछा; दूसरा है कि अबा मकारियस के निवास पर पहुँचने पर, इवाग्रियस—जो गर्मी में अपनी यात्रा से थका हुआ था—ने थोड़ा पानी माँगा और उसे पानी नहीं दिया गया। इन दोनों वृत्तांतों को अनातोलियस को लिखे उनके पत्रों (अध्याय 93 और 94) में दिया गया है। आगे चलकर, सोक्रेटिस यह भी उल्लेख करते हैं कि इवाग्रियस, अपनी पुस्तक **द ग्नोस्टिक** में, अपने बारे में लिखते हैं: 'हमने धर्मी ग्रेगरी से सीखा कि चार सद्गुण और संबंधित अवधारणाएँ हैं: विवेक, धैर्य, संयम और न्याय'। यह ग्रेगरी कौन हैं? पल्लैडियस के अनुसार, यह निस्सा के ग्रेगरी हैं, जबकि सॉक्रैटिस के अनुसार, यह नाज़ियानज़ुस के ग्रेगरी हैं, जिन्होंने कथित तौर पर उन्हें कॉन्स्टेंटिनोपल में एक डिकन के रूप में नियुक्त किया था। क्या सॉक्रैटिस ने नाज़ियानज़ुस के ग्रेगरी को निस्सा के ग्रेगरी के साथ भ्रमित किया होगा? पल्लैडियस को सच्चाई जानने की बेहतर स्थिति में होना चाहिए था। अंत में, हमें सॉक्रैटिस की रचना में निम्नलिखित विवरण मिलता है। अद्भुत अम्मोनियस, जो महाधर्माध्यक्ष अथेनासियस के साथ रोम में रहे थे और वहाँ संत पतरस और पॉल के चर्च को देखने के अलावा कुछ और नहीं देखना चाहते थे, को बाद में अलेक्जेंड्रिया के थियोफिलिस द्वारा मिस्र में बिशप पद के लिए बुलाया गया; और, इससे भागने के लिए, उन्होंने अपना दाहिना कान काट दिया ताकि, अपने शरीर को विकृत करके, वे अपना अभिषेक टाल सकें। कुछ समय बाद, अलेक्जेंड्रिया के बिशप थियोफिलिस ने इवाग्रियस को बिशप पद पर नियुक्त किया; वह भी भाग गया, लेकिन उसने अपने शरीर के किसी भी अंग को विकृत नहीं किया। अम्मोनियस से मिलने पर, इवाग्रियस ने उससे स्नेहपूर्वक कहा: 'तुमने अपना कान काटकर गलत किया; तुम ऐसे कृत्य के लिए ईश्वर के सामने उत्तरदायी होगे।' अम्मोनियस ने उत्तर दिया, 'और क्या तुम, एवाग्रियस, अपनी जीभ काटकर और स्व-प्रेम के कारण तुम पर प्रदान की गई कृपा का उपयोग करने में विफल रहने के लिए जवाबदेह नहीं होगे?' एवाग्रियस के कार्यों के बारे में, सोक्रेटिस लिखते हैं: 'उन्होंने कुछ बहुत ही उत्कृष्ट पुस्तकें लिखीं।' उनमें से एक का शीर्षक *'द मॉंक'*, या कर्म पर है; दूसरे का, *'द ग्नॉस्टिक'*, या ज्ञान प्राप्त करने

वाले व्यक्ति के लिए, जो पचास अध्यायों में विभाजित है; और तीसरे का, *'द एंटीरटीकोस'* (*एंटीररीटिकोस*), या प्रलोभन डालने वाले राक्षसों के विरुद्ध दिव्य धर्मग्रंथों से एक चयन, जो आठ भागों में विभाजित है, जो आठ विचारों की संख्या के अनुरूप है। इसके अलावा, उन्होंने भविष्य से संबंधित 600 प्रश्न संकलित किए और छंदों में लिखी दो और पुस्तकें: एक सामुदायिक मठों, या सिनोबिटिक समुदायों में रहने वाले भिक्षुओं को संबोधित, और दूसरी एक युवती को। ये पुस्तकें कितनी उल्लेखनीय हैं, यह उन्हें पढ़ने वाले ही जान पाएंगे। सोजोमेन (पुस्तक 6, अध्याय 30), उपर्युक्त अम्मोनियस के बारे में यह कहते हुए कि वह 'लंबी चोगा पहनने वाले' भिक्षुओं में से एक था जिसने ज्ञान की ऊँचाइयों को प्राप्त कर लिया था और बहुत विद्वान था—इतना कि उसने ओरिजेन, डिडिमिस और अन्य आध्यात्मिक लेखकों की कृतियों को पढ़ा था—आगे जोड़ता है: 'ज्ञानी इवाग्रियस, जो मन और वाणी से शक्तिशाली, एक अति विद्वान व्यक्ति थे, और विशेष रूप से सद्गुण की ओर ले जाने वाले विचारों (इरादों) और दुर्गुण की ओर ले जाने वाले विचारों के बीच अंतर करने में सक्षम थे, तथा स्वयं को इस प्रकार संभालने में माहिर थे कि वे पहले को पोषित करें और बाद वाले से बचें, अम्मोनियस के मित्र थे। हालाँकि, उनके लेखन से पता चलता है कि वह किस प्रकार के विद्वान थे। कहा जाता है कि उनके चरित्र में संयम था और उसमें इतनी कम अहंकार या घमंड था कि न तो उचित प्रशंसा से उनका अहंकार बढ़ा और न ही अनुचित निंदा से उन्हें कष्ट हुआ। उन्होंने ज्ञान की खोज की और नाज़ियान्ज़स के बिशप ग्रेगरी के अधीन पवित्र धर्मग्रंथों का अध्ययन किया, जिनके अधीन उन्होंने आर्चडीकन के रूप में सेवा की, जब वे कॉन्स्टेंटिनोपल के चर्च के प्रमिास थे। वह आकर्षक रूप वाले व्यक्ति थे और शानदार कपड़े पहनने में आनंद लेते थे। एक कुलीन व्यक्ति ने, अपनी पत्नी से उसकी जान-पहचान देखी और ईर्ष्या से भर गया तथा उसे मारने का निश्चय किया। जैसे ही यह साज़िश अमल में लाई जानी थी, ईश्वर ने उसे, सोते समय, एक भयानक फिर भी उद्धारकारी सपना दिखाया।' सोज़ोमेन आगे कुछ भी उल्लेखनीय नहीं जोड़ते। यह ध्यान न देने योग्य नहीं है कि सोज़ोमेन द्वारा दर्ज किए गए सॉक्रेटिस, पल्लैडियस से इस बात पर असहमत हैं कि किस ग्रेगरी ने इवाग्रियस को संरक्षण दिया और उसकी शिक्षा में योगदान दिया। पल्लैडियस ने निसा के ग्रेगरी का नाम लिया है, जबकि सोज़ोमेन ने नाज़ियान्ज़स के ग्रेगरी का नाम लिया है। उनके विवरणों को इस प्रकार सुलझाया जा सकता है: इवाग्रियस को निसा के ग्रेगरी द्वारा डीकन नियुक्त किया गया था, लेकिन वह नाज़ियानज़स के ग्रेगरी को भी जानते थे और उनके उपदेशों से लाभान्वित हुए। जब धर्मशास्त्री ग्रेगरी को पैट्रिआर्केट संभालने के लिए कॉन्स्टेंटिनोपल बुलाया गया, तो निसा के ग्रेगरी अपने अधिकार के तहत बुलाए गए परिषद में इवाग्रियस के साथ पहुंचे। यहाँ, इवाग्रियस ने संभवतःनाज़िएंज़ेन के अधीन प्रोटोडीकन के रूप में सेवा की होगी और, परिषद के बाद, दोनों ग्रेगरीज़ की सलाह पर कॉन्स्टेंटिनोपल में ही रहे। सोक्रेटिस और सोज़ोमेन उनके कॉन्स्टेंटिनोपल में होने के दौरान उनके बारे में बात करते हैं, जबकि पैलाडियस उससे पहले क्या हुआ था, उसका वर्णन करते हैं। एवाग्रियस के शिष्य के रूप में, पैलाडियस अधिक विश्वसनीय हैं, क्योंकि उन्होंने निस्संदेह जो कुछ भी उन्होंने बताया है, वह सीधे एवाग्रियस से ही सुना था। पैट्रोलॉजिया (खंड 40, पृ. 1215) एवाग्रियस की मृत्यु का वर्ष 399 बताती है। इसी स्रोत में एवाग्रियस के लेखों की समीक्षा भी शामिल है। संयोग से, धन्य जेरोम ने लिखा (एपिस्ट. 135 एड क्तेसिफि) कि 'एवाग्रियस की पुस्तकें न केवल पूरे पूर्व में यूनानियों द्वारा, बल्कि पश्चिम में भी उनके शिष्य रूफिनस द्वारा किए गए अनुवाद में लैटिनों द्वारा पढ़ी जाती हैं'। पैट्रोलॉजिया में एवाग्रियस की उन सभी रचनाओं को शामिल किया गया है जो आज भी उपलब्ध हैं। इनमें सबसे प्रमुख अनातोलीयस को संबोधित *सक्रिय जीवन पर लिखे गए अध्याय* हैं। जैसा कि अनुमान लगाया जा सकता है, यह उस पुस्तक का अवशेष है जिसे हमने उद्धृत इतिहासकारों ने **द मॉंक* का* शीर्षक दिया है। * * के अध्यायों से पहले अनातोलीयस को लिखा गया एक संक्षिप्त पत्र आता है, जो उनका परिचय देता है। इसके बाद *logos praktikos* के 71 अध्याय आते हैं—जो तपस्वी जीवन पर उपदेश हैं। इनके बाद 100 अध्याय आते हैं। हालाँकि, चूँकि इनमें से अधिकांश अध्याय पहले से ही उल्लेख किए गए 71 अध्यायों में शामिल हैं, इसलिए यहाँ केवल उन अध्यायों का पाठ प्रस्तुत किया गया है जो वहाँ शामिल नहीं हैं। कुल मिलाकर, हालांकि, 100 अध्याय हैं। हम इसका शीर्षक भी रखेंगे: 'अनातोलीउस को संबोधित, सक्रिय जीवन पर सौ अध्याय'। इसके बाद, *पैट्रोलॉजिया* में एक लेख आता है, जिसका हमारे *डोब्रोतोलुबिए* में अधिक स्पष्ट रूप से शीर्षक है: 'संन्यासी जीवन का आदर्श, यह सिखाते हुए कि किसी को तपस्या कैसे करनी चाहिए और मौन का पालन कैसे करना चाहिए'। ग्रीक *डोब्रोतोलुबिए* में भी ऐसा ही है। *पैट्रोलॉजिया* का शीर्षक सारांश देने पर भी समझाना मुश्किल है। हम अपना शीर्षक ही बनाए रखेंगे। फिर **कट एनोलॉयथयिन** (*कट* एनालॉजयिन नहीं, है ना?) *के* 33 अध्याय हैं; इनकी विषय-वस्तु है: दृश्यमान में आध्यात्मिक का प्रतिबिंब; 25 अध्याय वर्णानुक्रम में व्यवस्थित हैं; ये आध्यात्मिक मामलों पर सूत्र-वचन हैं। इनमें आगे 26 और कथन संलग्न हैं, जिन्हें वर्णानुक्रम में नहीं रखा गया है। इसके बाद आठ दुष्ट विचारों पर एक खंड है, जो प्राचीन कृति **एंटीररटिकॉन* का* हिस्सा है। अंत में, किनुइट भिक्षुओं और कुंवारी महिलाओं के लिए संक्षिप्त नियम दिए गए हैं। यह सब यहाँ अनुवाद में प्रस्तुत किया गया है।

संन्यासी इवाग्रियिस की तपस्या पर निर्देश

1. सक्रिय जीवन पर अध्याय, अनातोलीयस को संबोधित

मेरे अति प्रिय भ्राता अनातोलीयस, आपने पवित्र पर्वत (संभवतःनाइट्रियिन पर्वत) से मेरी स्केटा को पहले मुझे लिखा था, मुझसे मिस्र के मठवासी परिधान के प्रतीकात्मक अर्थ की व्याख्या करने का अनुरोध करते हुए, यह मानते हुए कि यह अन्य सभी मानवीय परिधानों से इतनी स्पष्ट रूप से भिन्न है तो यह बिना किसी उचित कारण के नहीं है। मैं खुशी-खुशी आपको वह बताऊँगा जो मैंने स्वयं पवित्र पिताओं से इसके बारे में सीखा है। कुकुल्ली हमारे उद्धारकर्ता ईश्वर की कृपा का प्रतीक है, जो संतों के मन पर छा जाती है और अपनी आच्छादन से, मसीह में उनकी बाल-सुलभता की रक्षा उन लोगों से करती है जो उन्हें निरंतर चोट पहुँचाने और घाव करने का प्रयास करते हैं। जो लोग इसे दृढ़ और सक्रिय विश्वास के साथ अपने सिर पर पहनते हैं, वे गाते हैं: 'जब तक यहोवा घर का निर्माण न करे, और नगर की रक्षा न करे, तब तक निर्माता व्यर्थ परिश्रम करता है, और पहरेदार व्यर्थ जागता रहता है' (भजन संहिता 126:1)। ऐसी पुकारें नम्रता का संचार करती हैं और अहंकार को जड़ से उखाड़ देती हैं, वह प्राचीन बुराई जिसने लूसफिर, प्रभात के तारे को, पृथ्वी पर गिरा दिया था। यह तथ्य कि उनके हाथ खाली हैं[57] उनके जीवन की गंभीरता को दर्शाता है। क्योंकि व्यर्थता जानती है कि स्वयं को कैसे छिपाना है और सदाचार की परछाईं कैसे डालनी है, वह हमेशा लोगों से महिमा की तलाश करती है और विश्वास को दूर भगाती है, जैसा कि उद्धारकर्ता कहते हैं: *'तुम विश्वास कैसे कर सकते हो, जब तुम एक दूसरे से महिमा ग्रहण करते हो और उस महिमा को नहीं चाहते जो एकमात्र परमेश्वर से आती है?'* (यूहन्ना 5:44)। सद्गुण किसी अन्य चीज़ के लिए नहीं होना चाहिए; इसके विपरीत, हर दूसरी चीज़ उसके लिए होनी चाहिए। यदि इसे स्वीकार नहीं किया जाता है, तो यह स्पष्ट हो जाएगा कि जो हमें अच्छा करने के लिए प्रेरित करता है, वह हमारे लिए सद्गुण से भी अधिक मूल्यवान है, और यह पूर्णतःअव्यर्थता होगी – ईश्वर से श्रेष्ठ किसी चीज़ की कल्पना करना और इस तरह बात करना। अनालाव (हमारा परमान), जो उनके कंधों पर क्रूस के आकार में क्रॉस-क्रॉस होता है, मसीह में विश्वास का प्रतीक है, जो नम्र लोगों को ग्रहण करते हैं (αναλαμβάνεσης), हमेशा बाधाओं को दूर करते हैं और यह सुनिश्चित करते हैं कि हमारे कार्य बिना किसी बाधा के आगे बढ़ें। उनके कमर पर बँधी पट्टियाँ सभी अशुद्धियों को दूर करती हैं और उद्घोषित करती हैं: 'किसी पुरुष के लिए अपनी पत्नी को न छूना अच्छा है' (1 कुरिन्थियों 7:1)। वे अनुग्रह से परिपूर्ण हैं, क्योंकि वे हमेशा *'अपने शरीर में प्रभु यीशु की मृत्यु को लिए फिरते हैं'* (2 कुरिन्थियों 4:10), जब वे सभी अतर्कसंगत शारीरिक वासनाओं को वश में करते हैं, सद्गुणों के अभ्यास द्वारा आत्मा में बुराई को जड़ से उखाड़ते हैं, और गरीबी से प्रेम करते हैं तथा धन के प्रेम से दूर रहते हैं, जो मूर्तिपूजा है। डंडा जीवन का वृक्ष है, जो भी इसे अपने हाथों में लेता है और उस पर भरोसा करता है, उसे मसीह में दृढ़ होने के लिए बाध्य करता है। संक्षेप में, ये वे बातें हैं जो इस योजना द्वारा प्रतीकित की गई हैं! (जब उन्हें इसमें वस्त्र पहनाया जाता है), पवित्र पिता हमेशा उनसे ये शब्द कहते हैं: हे बच्चों! ईश्वर का भय विश्वास को मजबूत करता है, और संयम उस भय को मजबूत करता है; धैर्य और आशा इसे अडिग बनाते हैं, और इनमें से ही निर्लिप्तता उत्पन्न होती है; निर्लिप्तता का फल प्रेम है, और प्रेम ही भौतिक ज्ञान का द्वार है, जो धर्मशास्त्र और परम आनंद की ओर ले जाता है। और पवित्र स्कीमा तथा बड़ों की शिक्षाओं के संबंध में वर्तमान समय के लिए इतना ही पर्याप्त है। अब हम सक्रिय और चिंतनशील जीवन के बारे में बात करें—केवल वही नहीं जो हमने (बड़ों में) देखा और (उनसे) सुना है, बल्कि वह भी जो हमें दूसरों तक पहुँचाने के लिए उनके द्वारा आज्ञा दी गई है, सक्रिय जीवन से संबंधित बातों को सौ अध्यायों में और चिंतनशील जीवन से संबंधित बातों को 650 में विभाजित करते हुए, कुछ बातों को छिपाते और कुछ पर पर्दा डालते हुए, कहीं ऐसा न हो कि हम पवित्र वस्तुओं को कुत्तों के सामने डाल दें, या मोती सूअरों के आगे फेंक दें (मत्ती 7:6), यद्यपि यह उन लोगों के लिए स्पष्ट है जो उसी मार्ग पर उनके पदचिन्हों पर चलते हैं।

1. ईसाई धर्म हमारे उद्धारकर्ता यीशु मसीह का सिद्धांत (*डॉग्मा*) है, जो जीवन, वस्तुओं के ज्ञान और परमेश्वर के ज्ञान के मामलों को जोड़ता है।

२. स्वर्ग का राज्य 'जो है' के सच्चे ज्ञान के द्वारा आत्मा का निर्लिप्त होना है।

3. परमेश्वर का राज्य परम पवित्र त्रिमूर्ति का ज्ञान है, जो मन की अवस्था के अनुसार फैला है और इसे आनंद के अनंत जीवन से परिपूर्ण करता है।

---

[57] कैसियिन लिखते हैं कि उनकी आस्तीनें केवल कोहनियों तक ही पहुँचती थीं।

४. जो कोई भी किसी चीज़ से प्रेम करता है, वह स्वाभाविक रूप से उसकी इच्छा करता है, और जिसकी कोई इच्छा करता है, उसे प्राप्त करने का प्रयास करता है। हर आनंद से पहले इच्छा होती है, और इच्छा इंद्रिय-संवेदना से उत्पन्न होती है। जो इंद्रिय-संवेदना से अप्रभावित है, वह कामना से मुक्त है।

५. राक्षस स्वयं व्यक्तिगत रूप से संन्यासियों के साथ युद्ध में संलग्न होते हैं, जबकि मठों या समुदायों में पुण्य जीवन जीने वालों के विरुद्ध, वे भाइयों में सबसे अधिक लापरवाह लोगों को हथियार देते हैं। लेकिन बाद वाला संघर्ष पहले वाले से कहीं अधिक आसान है, क्योंकि पृथ्वी पर राक्षसों से अधिक दुष्ट या उनके सभी दुष्टता को मूर्त रूप देने वाले लोग नहीं मिल सकते।

६. एक भटकता हुआ मन पठन, जागरण और प्रार्थना से स्थिर होता है। एक जलती हुई कामवासना संयम, श्रम और तपस्या से बुझती है। एक उमड़ता हुआ क्रोध भजन-कीर्तन, उदारता और दया से शांत होता है। ये सभी तब अपना प्रभाव दिखाते हैं जब इन्हें सही समय पर और उचित मात्रा में किया जाए। गलत समय पर या अत्यधिक किया गया कोई भी कार्य अल्पकालिक (अस्थिर) होता है, और जो अल्पकालिक होता है वह भलाई से अधिक नुकसान पहुँचाता है।

7. जब आत्मा विविध प्रकार के भोजन की लालसा करती है, तो हमें उसे रोटी और पानी से संतुष्ट कर देना चाहिए, ताकि वह एक पतली सी रोटी के लिए भी आभारी रहे। क्योंकि तृप्ति विविध प्रकार के भोजन की लालसा करती है, जबकि भूख रोटी से तृप्ति को भी परम आनंद मानती है[58] ।

8. पानी की कमी शरीर की संयमशीलता में बहुत योगदान करती है। गिदोन के साथ मिद्यान को हराने वाले उन तीन सौ इस्राएलियों से इस बात की पुष्टि कराओ।

9. जैसे एक ही क्षण में किसी व्यक्ति में मृत्यु और जीवन का सह-अस्तित्व असंभव है, वैसे ही किसी में प्रेम और धन का सह-अस्तित्व भी असंभव है। प्रेम न केवल धन को नष्ट कर देता है, बल्कि हमारे क्षणिक जीवन की भी बलि चिढ़ा देता है।

10. सांसारिक सुखों की खोज दुख के राक्षस के लिए एक अभेद्य किला है। क्योंकि दुख सुख की कमी है, चाहे वह वर्तमान हो या अपेक्षित। – जब तक हम किसी भी सांसारिक चीज़ से जुड़े रहते हैं, तब तक हम इस दुश्मन से छुटकारा नहीं पा सकते। वहीं वह दुख को भड़काने के लिए अपनी जाल बिछाता है, जहाँ भी वह देखता है कि हम सबसे अधिक जुड़े हुए हैं।

11. क्रोध और घृणा हृदय की जलन को बढ़ाते हैं, जबकि परोपकार और नम्रता इसे बुझा देते हैं।

12. जब तक हम गुस्से में हों, तब तक सूर्य को अस्त न होने दें, कहीं ऐसा न हो कि राक्षस रात में हमला करके हमारी आत्मा को डरा दें और अगले दिन के संघर्ष के लिए हमारे मन को और भी कायर बना दें। क्रोध के उफान के बाद आमतौर पर भयानक सपने आते हैं, और चिंतित क्रोध के अलावा और कोई भी चीज़ हमारे मन को (पंक्ति तोड़ने के लिए, यानी छोड़ देने के लिए) उतना मजबूर नहीं करती।

13. जब, किसी भी कारण से, हमारी आत्मा का चिड़चिड़ा हिस्सा बेचैन हो जाता है, तो राक्षस हमें एकांत को एक अच्छी चीज़ के रूप में सुझाते हैं, ताकि, कष्ट के कारणों को दूर करने के बाद भी, हम अपने भ्रम से मुक्त न हो सकें[59] । हालाँकि, जब कामवासना भड़कती है, तो वे हमें मिलनसार बनाने की कोशिश करते हैं (हमें लोगों के बीच बनाए रखते हैं), हमें पीछे हटने के लिए क्रूर और जंगली कहकर, ताकि, शरीरों के प्रति लालसा रखते हुए, हम (समाज में बने रहने से) शरीरों से मिल सकें। हमें उनकी बात पर विश्वास नहीं करना चाहिए, बल्कि उनके सुझाव के विपरीत करना चाहिए।

14. न तो क्रोध के विचारों में डूबें, और न ही उस व्यक्ति के खिलाफ मानसिक युद्ध छेड़ें जिसने आपको दुखी किया है, और न ही—फिर से—कामुक विचारों में, कामुक कल्पनाओं में लंबा समय बिताते हुए। पहला आत्मा को अँधेरा कर देता है, जबकि दूसरा जुनून को हवा देता है; दोनों ही मन को कलंकित करते हैं, और जब आप प्रार्थना कर रहे हों, तो अपनी कल्पना को भावुक छवियों से भरकर, मानो वे मूर्तियाँ हों, और इस प्रकार ईश्वर को एक शुद्ध प्रार्थना अर्पित करने में विफल होकर, आप तुरंत निराशा के दानव के शिकार हो जाते हैं, जो आमतौर पर ऐसी अवस्थाओं में हमला करता है और, एक कुत्ते की तरह, आत्मा को मानो कोई सड़ी हुई लाश हो, झपट लेता है।

१५. क्रोध, अपनी प्रकृति से ही, राक्षसों के विरुद्ध युद्ध करने और हर पापी आनंद का मुकाबला करने के लिए है। इसलिए, स्वर्गदूत, हमारे भीतर आध्यात्मिक आनंद जगाकर और हमें उसके परमानंद का स्वाद चखने का

---

[58] इस अध्याय का उद्धरण सेंट जॉन क्लाइमैक्स, लैडर 14, अध्याय 12 में दिया गया है।

[59] ताकि, अपनी दुखों पर काबू पाते हुए, हम दूसरों के बीच रहते हुए अपने अपमान और क्रोध की भावना को सुस्त न कर दें।

अवसर देकर, हमें अपने क्रोध को राक्षसों के विरुद्ध निर्देशित करने के लिए प्रेरित करते हैं; जबकि राक्षस, हमें सांसारिक वासनाओं की ओर खींचकर, हमें हमारे स्वभाव के विपरीत, लोगों पर अपने क्रोध से युद्ध करने के लिए मजबूर करते हैं, ताकि मन, धुंधला और विवेक से वंचित होकर, सद्गुणों का विश्वासघात करे।

16. सावधान रहो कि अपने क्रोध में तुम किसी भाई को दूर न कर दो। इसके लिए, अपने पूरे जीवन में, तुम दुख के दैत्य से नहीं बच पाओगे, जो प्रार्थना के दौरान हमेशा इसे तुम्हारे लिए एक ठोकर के रूप में प्रस्तुत करेगा।

१७. उपहारों से द्वेष मिटता है। इस बात का याकूब से प्रमाण लो, क्योंकि उसने उपहारों से एसाव को प्रसन्न किया, जबकि एसाव चार सौ आदमियों के साथ उससे मिलने आ रहा था (उत्पत्ति ३२:६, ३३:१)। परन्तु हम, अपनी गरीबी के कारण, (उपहारों के स्थान पर) एक भोजन से इस आवश्यकता को पूरा कर सकते हैं।

18. जब निराशा का दैत्य आप पर आक्रमण करे, तो अपनी आत्मा को दो भागों में विभाजित करके, एक भाग को सांत्वना देने वाला और दूसरे को सांत्वना पाने वाला बनाकर, दाऊद की निम्नलिखित छंदों को गाते हुए, अपने भीतर अच्छी आशाएँ भरें: *'हे मेरी आत्मा, तू क्यों उदास है?' 'हे मेरी आत्मा, तू क्यों व्याकुल है?' 'परमेश्वर पर भरोसा रख, क्योंकि मैं उसी से अपना धन्यवाद करूँगा; वही मेरे मुख का उद्धार और मेरा परमेश्वर है'* (भजन संहिता 41:6)।

19. प्रलोभन के समय, किसी को धार्मिकता के बहाने अपनी कोठरी नहीं छोड़नी चाहिए, बल्कि उसमें ही रहकर सहना चाहिए, और सभी हमलावरों का, विशेष रूप से निराशा के राक्षस का, साहसपूर्वक सामना करना चाहिए, जो वास्तव में सबसे दुखद है, फिर भी जो किसी भी अन्य से अधिक, आत्मा को अनुभवी बनाता है। यदि कोई भाग जाता है या संघर्ष से बचता है, तो मन अनुभवहीन, कायर और भागने के लिए तत्पर बना रहेगा।

20. अहंकार के विचार से बचना मुश्किल है, क्योंकि उसे दूर करने के लिए जो कुछ भी किया जाता है, वह अहंकार की एक नई लहर की शुरुआत बन जाता है। हालाँकि, हमारे हर धर्मपरायण विचार का राक्षसों द्वारा विरोध नहीं किया जाता है; वास्तव में, ये दुष्ट प्राणी हमें धोखा देने की उम्मीद में उनमें से कुछ का पक्ष लेते हैं।

21. जिसने भी ज्ञान को छुआ है और उसकी मिठास चखी है, वह अब अहंकार के राक्षस पर भरोसा नहीं करेगा, भले ही वह उन्हें दुनिया के सभी सुखों की पेशकश करे। क्योंकि वह आध्यात्मिक चिंतन से अधिक क्या वादा कर सकता है? लेकिन जब तक हमने ज्ञान का स्वाद नहीं चखा है, तब तक हमें सक्रिय सेवा का जीवन लगन से जीना चाहिए, और ईश्वर को अपना उद्देश्य घोषित करना चाहिए, कि हम सभी कार्य उनके ज्ञान की खातिर करते हैं।

२२. अपने पूर्व जीवन और अपने अतीत के पापों को याद करो, और यह भी कि जब तुम वासनाओं से भरे व्यक्ति थे, तो तुमने वासनाओं से रहित जीवन को कैसे अपनाया, और कैसे तुमने एक बार फिर से दुनिया से खुद को अलग कर लिया, जिसने कई मायनों में तुम्हें अक्सर बहुत नम्र बनाया। उस एक पर भी मनन करें जो आपको रेगिस्तान में सुरक्षा देता है और उन राक्षसों को आपसे दूर भगाता है जो आप पर दाँत पीसते हैं। इस प्रकार के मनन से विनम्रता आती है और घमंड के राक्षस को पैर जमाने से रोकता है।

२३. जिसे भी हम जोश के साथ याद करते हैं, उसे वास्तव में पहले जोश के साथ ही महसूस किया गया था; और इसी तरह, जिसे हम वास्तव में जोश के साथ महसूस करते हैं, उसे हम बाद में जोश के साथ याद करेंगे। जो व्यक्ति उन राक्षसों पर विजय प्राप्त कर चुका है जो भावनाओं को भड़काते हैं, उसके लिए वे चीजें जिनसे वे उन्हें भड़काते हैं, अब बेकार हो जाती हैं। क्योंकि आध्यात्मिक योद्धा भौतिक योद्धा से अधिक शक्तिशाली होता है।

24. आत्मा के भावों को गति (उनकी क्रिया के लिए) लोगों से मिलती है, जबकि शरीर के भावों को गति शरीर से मिलती है। शारीरिक भावों की क्रिया संयम से नियंत्रित होती है, और आत्मा के भावों की क्रिया आध्यात्मिक प्रेम से।

२५. जो राक्षस आत्मा के भावों पर शासन करते हैं, वे मृत्यु तक हठीलेपन से बने रहते हैं, आत्मा को पीड़ित करते हैं, जबकि जो देह के भावों पर शासन करते हैं, वे अधिक जल्दी चले जाते हैं। इसके अलावा, कुछ राक्षस, जैसे उगता या डूबता सूरज, आत्मा के केवल एक विशेष भाग को प्रभावित करते हैं, जबकि दोपहर का राक्षस आमतौर पर पूरी आत्मा को निगल लेता है और मन पर हावी हो जाता है। वासनाओं को वश में करने के बाद एक संन्यासी का जीवन इतना मधुर क्यों हो जाता है? क्योंकि तब उन वासनाओं की केवल धुंधली सी यादें ही रह जाती हैं; और जहाँ तक संघर्ष का सवाल है, संघर्ष स्वयं नहीं बल्कि उस पर चिंतन ही शेष रह जाता है।

26. यह विचार करने योग्य है कि क्या विचार ही भावनाओं को गति देता है, या भावनाएँ विचार को गति देती हैं। कुछ लोग पहले दृष्टिकोण को मानते हैं, जबकि अन्य दूसरे को। आमतौर पर, इंद्रियों द्वारा भावनाओं को गति दी जाती है; लेकिन जब किसी में प्रेम और आत्म-संयम होता है, तो वे जागती नहीं हैं, जबकि जब ये गुण नहीं होते हैं, तो वे जागती हैं। क्रोध के उपचार कामवासना से अधिक कठिन हैं, और प्रेम को महान इसलिए कहा जाता है क्योंकि यह क्रोध का

लगाम है। संत मूसा ने प्रतीकात्मक रूप से इसे 'ओफियोखोम' (साँपों से लड़ने वाला) कहा था, जब उन्होंने यह सूची दी थी कि क्या खाया जा सकता है और क्या नहीं (लैव. 11:22)।

27. राक्षसों की प्रसिद्धि और अखंड दुष्टता के कारण, जैसे ही आत्मा को उनके आगमन का आभास होता है, वह (उनके द्वारा बोए गए) विचारों के विरुद्ध भड़क उठती है, और हमलावरों का उग्र स्वभाव (क्रोध) अपनाकर अपनी रक्षा करती है।

28. हमेशा सामान्य नियमों का पालन करना संभव नहीं होता है, लेकिन परिस्थितियों पर ध्यान देना चाहिए और जहाँ तक संभव हो, उनके भीतर जो संभव है उसे करने का प्रयास करना चाहिए। यहाँ तक कि राक्षस स्वयं भी इस व्यवहारिकता के नियम से अनभिज्ञ नहीं हैं। क्योंकि, हमसे हमेशा शत्रुता रखने के बावजूद, वे हमें जो संभव है उसे करने से रोकते हैं, जबकि हमें जो असंभव है उसे करने के लिए मजबूर करते हैं। इस प्रकार, वे रोगियों को उन पर आई विपत्तियों के लिए ईश्वर का धन्यवाद करने और उदारतापूर्वक उनकी सेवा करने वालों के प्रति धैर्य रखने से रोकते हैं; वे दुर्बल लोगों को अत्यंत संयम की ओर और (बुढ़ापे या श्रम से) बोझिल लोगों को खड़े होकर भजन गाने के लिए प्रेरित करते हैं।

29. जब आवश्यकता हमें किसी नगर या गाँव में थोड़े समय के लिए ठहरने के लिए मजबूर करती है, तो, सामान्य लोगों के साथ व्यवहार करते समय, हमें अत्यंत आत्म-नियंत्रण का पालन करना चाहिए, कहीं ऐसा न हो कि हमारा मन, आत्मसंतुष्ट हो कर और पर अपनी सामान्य सतर्कता को त्याग कर, कोई जल्दबाज़ी में कुछ कर बैठे और राक्षसों द्वारा भगाया जाए।

३०. प्रलोभन के समय, प्रलोभक के विरुद्ध कुछ क्रोध भरे शब्द बोले बिना प्रार्थना शुरू न करें। क्योंकि जब आत्मा दुष्ट विचारों से कलंकित हो जाती है, तो उसकी प्रार्थना शुद्ध नहीं हो सकती। लेकिन यदि आप उनके विरुद्ध क्रोध में कुछ कहते हैं, तो आप उससे अपने विरोधियों को भ्रम में डाल देंगे और उनके सुझावों को नष्ट कर देंगे। क्रोध का आमतौर पर अच्छे विचारों पर भी समान प्रभाव पड़ता है।

31. जो कोई भी दुर्भावनापूर्ण राक्षसों को आज़माना चाहता है और उनकी चालाकियों को पहचानने का कौशल प्राप्त करना चाहता है, वे उनके विचारों का अवलोकन करें और यह नोट करें कि राक्षस किस बात पर जोर देते हैं और कहाँ पीछे हटते हैं; किन परिस्थितियों में और किस समय उनमें से कौन सा विशेष रूप से सक्रिय होता है; कौन किसके बाद आता है; और कौन किसके साथ मेल नहीं खाता; और इन सबका समाधान मसीह प्रभु से माँगें। दैत्य उन लोगों से बहुत क्रोधित होते हैं जो सच्ची समझ के साथ सक्रिय रूप से सद्गुणों का अभ्यास करते हैं (और सब कुछ प्रकाश में लाते हैं), और वे *'अंधेरे में सीधे दिल वालों को मार गिराने'* की इच्छा रखते हैं (भजन संहिता 10:3)।

32. इस अवलोकन में, आपको दो राक्षस अत्यंत तीव्र गति वाले मिलेंगे, जो लगभग हमारे मन की गति से भी आगे निकल जाते हैं – व्यभिचार का राक्षस और वह राक्षस जो हमें ईश्वर-निंदा के लिए उकसाता है। लेकिन बाद वाला अल्पकालिक है, जबकि पहला, बशर्ते कि वह कामुक विचारों को न भड़काए, हमें ईश्वर के ज्ञान में प्रगति करने से नहीं रोकता।

33. केवल वही जो उन्हें एकजुट करता है, शरीर को आत्मा से अलग कर सकता है; लेकिन आत्मा को शरीर से उस व्यक्ति द्वारा अलग किया जा सकता है जो सदाचार (तपस्या में) के लिए प्रयास करता है। क्योंकि हमारे पूर्वज तपस्या को मृत्यु का स्मरण और शरीर से पलायन कहते हैं (अर्थात्, ताकि शरीर को कामवासना में न डुबोया जाए)।

34. जो लोग अपने शरीर को भरपूर पोषण देते हैं और अपनी देखभाल को वासना की हद तक बढ़ा देते हैं (रोमियों 13:14), वे स्वयं का कोई भला नहीं करते; वे इसके बाद स्वयं से शिकायत करें, न कि उससे। इसके विपरीत, जो लोग इसी शरीर के माध्यम से आध्यात्मिक निर्लिप्तता प्राप्त कर चुके हैं और, अपनी पूरी क्षमता से (इसी के साधनों द्वारा), स्वयं को 'जो है' उसकी चिंतन में समर्पित करते हैं, वे सृष्टिकर्ता (जिन्होंने हमें यह शरीर दिया) की कृपा की घोषणा करते हैं।

35. जब मन बिना विचलित हुए प्रार्थना करना शुरू कर देता है, तो पूरा दैनिक और रात्रिकालीन संघर्ष आत्मा के चिड़चिड़े भाग के साथ संघर्ष तक सीमित हो जाता है।

36. निर्लिप्तता का एक संकेत तब होता है जब मन अपनी ही प्रकाश को देखना शुरू कर देता है, स्वप्निल कल्पनाओं में शांति पाता है, और चीजों को आसानी से (और सही ढंग से) समझ जाता है।

37. जब प्रार्थना के दौरान, मन कुछ भी सांसारिक कल्पना नहीं करता है, तो इसका मतलब है कि वह मजबूत हो गया है।

38. वह मन, जसिने ईश्वर की सहायता से सक्रयि जीवन का मार्ग पूरा कर चंतिन प्राप्त कर लयि है, आत्मा के अतार्ककि भाग की हलचलों को बहुत कम महसूस करता है, और वास्तव में कुछ भी महसूस नहीं करता: चंतिन उसे दुख से ऊपर उठाता है और इंद्रयि सुखों से अलग करता है।

39. जो आत्मा वस्तुओं से मोहति नहीं होती, वह नर्लिप्ति नहीं होती, बल्कवि वह होती है जो उन्हें याद करते समय भी अवचिलति रहती है।

40. पूर्ण पुरुष के बारे में यह सख्त मायनों में नहीं कहा जाता कवि वह 'परहेज़ करता है', और न ही नर्विैर पुरुष के बारे में कवि वह 'सहन करता है', क्योंक सिहनशीलता उस में पाई जाती है जो कष्ट सहता है, और परहेज़ उस में जो इच्छा से प्रेरति होता है।

41. बनि वचिलन के प्रार्थना करना एक महान बात है, लेकनि बनि वचिलन के गाना उससे भी महान है।

४२. जसिने अपने भीतर सद्गुणों को स्थापति कर लयि है और जो पूरी तरह से उनके द्वारा शासति है, वह अब कानून, या आज्ञाओं, या दंड को याद नहीं करता, बल्क (जैसे, स्वाभावकि रूप से) बोलता है और उसी के अनुसार कार्य करता है जो उसका सुस्थापति, कुलीन चरत्रि उसमें प्रेरति करता है।

43. दैवीय गीत हमारी कामवासना को जगाते हैं और आत्मा को शर्मनाक कल्पनाओं में डुबो देते हैं, जबक भजन, स्तोत्र और आध्यात्मकि गीत हमेशा मन को सद्गुणों की स्मृत कि ओर आकर्षति करते हैं, और साथ ही क्रोध की आग को शांत करते हैं और कामवासना को बुझाते हैं।

४४. जैसे युद्ध में लगे हुए लोग प्रहार करते हैं—और बदले में प्रहार सहते भी हैं—वैसे ही राक्षस भी, जो हमसे युद्ध में हैं; जब वे हम पर प्रहार करते हैं, तो स्वाभावकि रूप से बदले में हमसे प्रहार सहते हैं। *'मैं उन्हें मार गरिाऊँगा, और वे फरि कभी नहीं उठेंगे'* (भजन संहति १७:३९)। और फरि: *'जो मुझे और मेरे शत्रुओं को अपमानति करते हैं, वे पराजति हो गरि जाते हैं'* (भजन संहति 26:2)।

४५. ज्ञान और शांत साथ-साथ चलते हैं, और ववि‍ेक और परश्रिम साथ-साथ चलते हैं। संघर्ष के बनि कोई ज्ञान प्राप्त नहीं कर सकता, और न ही ववि‍ेक के बनि उस संघर्ष को सफलतापूर्वक लड़ सकता है। राक्षसों द्वारा भड़काए गए क्रोध का वरिोध करना ववि‍ेक का काम है, ठीक उसी तरह जैसे आत्मा की शक्तयिों को उनके स्वाभावकि कार्य करने के लएि प्रेरति करना, और इस प्रकार ज्ञान का मार्ग प्रशस्त करना।

४६. एक संन्यासी का प्रलोभन एक ऐसा वचिार है, जो आत्मा के भावुक भाग से प्रवेश करके मन को धुंधला कर देता है।

47. एक भक्षिु का पाप मन की उस नषिद्धि, पापी वासना के प्रत सिहमत मिें नहिति है।

48. देवदूत पाप के कम होने पर प्रसन्न होते हैं, जबक राक्षस पुण्य के कम होने पर प्रसन्न होते हैं। क्योंक वे दया और प्रेम के सेवक हैं, जबक वे क्रोध और घृणा के दास हैं। पहले वाले, हमारे समीप आकर, हमें आध्यात्मकि चंतिन से भर देते हैं, जबक दूसरे वाले, समीप आकर, आत्मा को शर्मनाक कल्पनाओं में डुबो देते हैं।

49. सद्गुण राक्षसों के हम पर हमलों को तो नहीं रोकते, परन्तु वे हमें उनसे अप्रभावति रखते हैं।

50. एक सक्रयि जीवन (सद्गुण का अभ्यास) आत्मा के भावुक भाग को शुद्ध करने के लएि एक आध्यात्मकि वधि है।

५१. आत्मा की शक्तयिों के पूर्ण उपचार के लएि, केवल आज्ञाओं द्वारा नर्धिारति अच्छे कर्म करना ही पर्याप्त नहीं है, जब तक क मिन एक साथ संबंधति चंतिन को बनाए नहीं रखता।

52. जैसे कोई स्वर्गदूतों द्वारा हम में डाले गए अच्छे वचिारों का वरिोध कएि बनि नहीं रह सकता, वैसे ही कोई राक्षसों द्वारा डाले गए बुरे वचिारों को भी दूर कर सकता है। पहले वचिारों के बाद मन की शांत कि अवस्था आती है, जबक बाद वालों के बाद कलह आती है।

53. नर्लिप्तिता का स्रोत प्रेम है; नर्लिप्तिता, बदले में, एक सक्रयि जीवन का फूल है, और एक सक्रयि जीवन आज्ञाओं की पूर्त मिें नहिति है। आज्ञाओं की इस पूर्त कि रक्षक ईश्वर का भय है, जो सच्चे वश्विास का फल है; वश्विास, हालांक, आत्मा का एक आंतरकि गुण है, जो आमतौर पर उन लोगों में भी पाया जाता है जन्होंने अभी तक ईश्वर में वश्विास नहीं कयि है।

54. जैसे आत्मा, शरीर के माध्यम से कार्य करते हुए, यह अनुभव करती है क कौन से अंग कमजोर हैं, वैसे ही मन, अपनी ही गत कि माध्यम से कार्य करते हुए, अपनी शक्तयिों को पहचानता है और यह देखते हुए क कौन सी शक्त उिसे (अपने ही भ्रष्टाचार के कारण) बाधति करती है, वह उस आज्ञा की खोज करता है जो उसे ठीक कर देगी।

५५. मन, एक भयंकर लड़ाई लड़ते हुए, शत्रु की चालों को नहीं देख पाता: क्योंकि ऐसे समय में यह अँधेरे में रात के समय लड़ने वाले के समान होता है। लेकिन, निर्वैरभाव प्राप्त करने पर, यह अपने शत्रुओं की चालाकियों को सहज ही पहचान लेता है।

५६. सक्रिय जीवन का परम लक्ष्य प्रेम है, और ज्ञान का अंत ईश्वर-विज्ञान है। हालाँकि, दोनों की शुरुआत विश्वास और वस्तुओं पर मनन से होती है। वे राक्षस जो आत्मा के भावुक भाग पर पनपते हैं, उन्हें सक्रिय जीवन के विरोधी कहा जाता है; जबकि वे जो विचार की शक्ति पर ही हमला करते हैं, उन्हें सभी सत्य के शत्रु और मनन के विरोधी कहा जाता है।

५७. जो कुछ भी शरीर को शुद्ध करता है, वह शुद्ध हुए व्यक्ति के साथ बाद में नहीं रहता, लेकिन सद्गुण, आत्मा को शुद्ध करने के बाद, शुद्ध आत्मा के साथ ही उसमें बने रहते हैं।

५८. तर्कशील आत्मा अपनी प्रकृति के अनुसार तब कार्य करती है जब उसका इच्छुक भाग सद्गुण के लिए प्रयास करता है, उसका प्रेरक भाग इसके लिए परिश्रम करता है, और उसका चिंतनशील भाग अस्तित्व के चिंतन के लिए समर्पित होता है।

59. जो सक्रिय जीवन में श्रेष्ठ है, वह वासनाओं को कम करता है, जबकि जो ध्यान में श्रेष्ठ है, वह अज्ञानता को कम करता है। जहाँ तक वासनाओं का प्रश्न है, कहा जाता है कि उनका पूर्ण उन्मूलन कभी नहीं होगा; जहाँ तक अज्ञानता का प्रश्न है, कहा जाता है कि उसका आंशिक रूप से अंत होगा, लेकिन पूरी तरह से नहीं।

60. जीवन में हमें जो अच्छा और बुरा मिलता है, वह गुणों और अवगुणों दोनों को बढ़ा सकता है। विवेक का कार्य है उनका उपयोग करके पहले को बढ़ावा देना और दूसरे का प्रतिकार करना।

६१. हमारी विद्वान शिक्षक (अर्थात् नाइसा के ग्रेगरी) के अनुसार, आत्मा त्रि-भागीय है। जब सद्गुण तर्कशील भाग में निवास करता है, तो उसे विवेक (फ्रोनेसिस) कहा जाता है, विवेक (सिनेसिस) और ज्ञान (सोफिया); जब यह इच्छाशक्ति वाले भाग में निवास करती है, तो इसे ब्रह्मचर्य, प्रेम और आत्म-संयम कहा जाता है; जब यह भावनात्मक भाग में निवास करती है, तो इसे साहस और धैर्य कहा जाता है; और जब यह पूरी आत्मा में व्याप्त होती है, तो इसे धार्मिकता कहा जाता है। सदबुद्धि का कार्य हमारे विरोधी शक्तियों से लड़ना, सद्गुणों की रक्षा करना, दुर्गुणों को दूर करना, और परिस्थितियों के अनुसार तटस्थ मामलों से निपटना है। विवेक का कार्य हमारे लक्ष्य में योगदान देने वाली हर चीज़ को उपयुक्त तरीके से व्यवस्थित करना है, जबकि ज्ञान का कार्य सभी पहलुओं में भौतिक और अभौतिक प्राणियों पर मनन करना है। ब्रह्मचर्य का कार्य उन चीज़ों को निष्पक्ष रूप से देखना है जो आम तौर पर हममें अतार्किक सपने और इच्छाएँ जगाती हैं; प्रेम का कार्य है, ईश्वर की छवि धारण करने वाले प्रत्येक व्यक्ति के प्रति स्वयं को उसी प्रकार प्रदर्शित करना जैसा हम मूल छवि के प्रति हैं, भले ही राक्षस हमारी दृष्टि में दूसरों को नीचा दिखाने का प्रयास करें; संयम का कार्य है मज़े से उन सभी चीज़ों को अस्वीकार करना जो स्वादेंद्रिय को प्रसन्न करती हैं। धैर्य और साहस का कार्य है अपने शत्रुओं से न डरना और स्वेच्छा से हर प्रकार की कठिनाइयों को सहना। धार्मिकता का कार्य है आत्मा के सभी अंगों को एक-दूसरे के साथ सामंजस्य और एकता में रखना।

62. बोने का फल फसल है, और सद्गुणों का फल ज्ञान है। जैसे बीज बिखेरते समय आँसू साथ देते हैं, वैसे ही फसल काटते समय आनंद साथ देता है (भजन संहिता 125:6)।

६३. कोई व्यक्ति तब तक भावुक यादों से मुक्त नहीं हो सकता जब तक कि वह अपने स्वभाव के लालची और चिड़चिड़े हिस्सों को ठीक करने का ध्यान न रखे, पहले वाले को उपवास, जागरण और खुले में सोने से नियंत्रित करके, और बाद वाले को दीर्घ सहनशीलता, क्षमा और दान द्वारा वश में करके। लगभग सभी दैवीय विचार इन्हीं दो जुनूनों से उत्पन्न होते हैं, जो मन को हर तरह की परेशानी और विनाश में धकेल देते हैं। लेकिन कोई भी इन जुनूनों से तब तक छुटकारा नहीं पा सकता जब तक कि वे उन लोगों (यानी, राक्षसों) के लिए, जो अक्सर इन साधनों से उन पर प्रहार करने की कोशिश करते हैं, भोजन और पेय, धन और महिमा, और यहाँ तक कि अपने स्वयं के शरीर को भी पूरी तरह से तुच्छ न समझें। इसलिए, हमें हर संभव प्रयास करके उन लोगों का अनुकरण करना चाहिए जो समुद्र में संकट में होते हैं, जो हवाओं की ताकत और ऊँची लहरों के कारण अपना सामान समुद्र में फेंक देते हैं। हालाँकि, ऐसा करते समय हमें बहुत सावधान रहना चाहिए कि, इस तरह से सामान फेंकते समय, हम ऐसा केवल दूसरों द्वारा देखे जाने के लिए न करें। क्योंकि ऐसा करने से हम अपना इनाम खो देंगे और पहले से भी अधिक कड़वी जहाज-दुर्घटना झेलेंगे, जब अहंकार का दानव हम पर अपनी हवा फूँकता है। इसीलिए हमारे प्रभु, सुसमाचारों में, हमारे शासक—मन—को यह निर्देश देते हुए कहते हैं: *'सावधान रहो और मनुष्यों के सामने अपनी धर्माचरण का प्रदर्शन न करो, ताकि तुम उन्हें दिखा सको; अन्यथा, तुम्हें स्वर्ग में तुम्हारे पिता से कोई प्रतिफल नहीं मिलेगा'* (मत्ती 6:1)। और फिर कहते हैं: *'जब तुम प्रार्थना करो,'* तो वे कहते हैं, *'कपटी लोगों के समान न बनो, जो बाजारों और चौराहों पर खड़े होकर प्रार्थना करना पसंद करते*

हैं, ताकि वे दूसरों द्वारा देखे जाएँ: मैं तुमसे सच कहता हूँ, उन्होंने अपना इनाम पा लिया है' (पद 5)। और फिर वे कहते हैं: *"पर जब तुम उपवास करो, तो कपटियों के समान उदास चेहरा मत बनाना, क्योंकि वे मनुष्यों को दिखाने के लिए अपना चेहरा बिगाड़ लेते हैं कि वे उपवास कर रहे हैं: मैं तुम से सच कहता हूँ, उन्होंने अपना इनाम पा लिया है"* (पद 16)। परन्तु यहाँ आत्माओं के वैद्य की सुनें, जो दान द्वारा चिड़चिड़ापन को दूर करते हैं, प्रार्थना द्वारा मन को शुद्ध करते हैं, और उपवास द्वारा कामवासना को मारते हैं; इनसे नया मनुष्य बनता है, जो अपने सृष्टिकर्ता की प्रतिमा में नया किया गया है (कुलु. 3: 10–11), जिसमें, निर्लिप्तता के कारण, *'न तो कोई पुरुष है और न कोई स्त्री; न कोई यूनानी है और न कोई यहूदी, न खतना किया हुआ है और न अखतना किया हुआ, न कोई बर्बर है और न कोई स्कूथाई, न कोई दास है और न कोई स्वतंत्र, पर मसीह सब कुछ है और सब में है'* (गलातियों 3:28)।

64. अशुद्ध विचार, जो हमारी वासनाओं के कारण हम में जड़ जमा लेते हैं, मन को पूर्ण विनाश और बर्बादी की ओर ले जाते हैं। जैसे भूखे व्यक्ति में भूख के कारण रोटी का विचार और प्यासे व्यक्ति में प्यास के कारण पानी का विचार जड़ जमाता है, वैसे ही धन के प्रेम के कारण धन और अन्य संपत्तियों का विचार, और कामुक वासना के कारण शर्मनाक विचार जड़ जमाते हैं। इसी तरह, व्यर्थता और अन्य इसी तरह की चीजों के विचारों पर हमारे अटकने की व्याख्या होती है। ऐसे विचारों में डूबे और डूबते हुए मन के लिए परमेश्वर के सामने खड़ा होना और धार्मिकता के मुकुट से विभूषित होना असंभव है। उपरोक्त त्रिगुणित मन इन्हीं विचारों से लूट लिया गया था, जिसने सुसमाचार की दृष्टान्त कथा के अनुसार, परमेश्वर के ज्ञान के भोज को अस्वीकार कर दिया था। इसी प्रकार, जिसको हाथ-पैर बाँधकर घोर अंधकार में डाल दिया गया था, उसका वस्त्र इन्हीं विचारों से बुना हुआ था, जिसे निमंत्रक ने ऐसे विवाह भोज के लिए अयोग्य समझा। विवाह का वस्त्र तर्कशील आत्मा का वैराग्य है जिसने सांसारिक इच्छाओं का त्याग कर दिया है। जहाँ तक इस बात का सवाल है कि इंद्रिय सुख की बातों के विचार, जब वे मन में घर कर जाते हैं, तो ज्ञान को क्यों भ्रष्ट करते हैं, इस पर प्रार्थना के अध्यायों में चर्चा की जाएगी।

६५. एक दैवीय विचार का विरोध तीन विचारों द्वारा किया जाता है, जो जब यह मन में गहराई से पैठ जाता है तो इसे काट देते हैं: दैवीय विचार; हमारा अपना विचार, जो हमारी स्वतंत्र इच्छा से उत्पन्न होता है जब यह भलाई की ओर निर्देशित होता है; और हमारे अपने विचारों में से एक और, जो मानवीय स्वभाव द्वारा प्रेरित होता है, जिसके द्वारा उदाहरण के लिए, मूर्तिपूजक भी अपने बच्चों से प्यार करते हैं और अपने माता-पिता का सम्मान करते हैं। हालाँकि, एक अच्छे विचार का विरोध केवल दो विचारों द्वारा किया जाता है: एक राक्षसी विचार, और हमारा अपना विचार, जो हमारी स्वतंत्र इच्छा से उत्पन्न होता है जब वह बुरे की ओर भटक जाती है। क्योंकि कोई भी बुरा विचार हमारी प्रकृति से उत्पन्न नहीं होता है: चूँकि हम शुरू से बुरे नहीं थे, क्योंकि प्रभु ने अपने खेत में अच्छा बीज बोया था। एक समय था जब बुराई नहीं थी, और एक समय आएगा जब बुराई नहीं रहेगी। सद्गुण के बीज अमिट होते हैं। मैं सुसमाचार के उस धनी व्यक्ति से इस बात का आश्वस्त हूँ, जिसने नरक में दंडित होने के बावजूद अपने भाइयों पर दया दिखाई; और दया ही सद्गुण का सबसे उत्तम बीज है।

६६. कुछ अशुद्ध दुष्टात्माएँ हमेशा उन लोगों के पास छिपी रहती हैं जो पढ़ रहे होते हैं और उनके मन को भटकाने तथा उन्हें मार्ग से भटकाने के लिए हर तरह के तरीके रचती हैं। अक्सर, स्वयं दिव्य शास्त्रों से संकेत लेकर, वे उन्हें बुरे विचारों की ओर ले जाते हैं; ऐसा होता है कि वे किसी को उसकी सामान्य आदत के विपरीत हांफने का कारण बनते हैं, या एक भारी नींद लाते हैं, जो सामान्य प्रकार की नींद से बहुत अलग होती है। मैंने इसका स्वयं अनुभव किया है, लेकिन कारण को पूरी तरह से नहीं समझ पाया, हालांकि मैं अक्सर इसका शिकार हुआ। हालाँकि, मैंने संत मकरियस से सुना है कि अनुचित समय पर हाँफना और नींद दोनों राक्षसों के कारण होते हैं; इसके प्रमाण के रूप में, वे एक प्राचीन, मान्य परंपरा के अनुसार, हाँफते समय अपने होठों पर क्रॉस का चिह्न बनाने की प्रथा का हवाला देते हैं। हम उनसे यह सब इसलिए सहते हैं क्योंकि, पढ़ते समय, हम अपना पूरा ध्यान केंद्रित नहीं करते और यह याद नहीं रखते कि हम जीवित परमेश्वर के पवित्र वचन पढ़ रहे हैं।

67. राक्षसों में उत्तराधिकार और हस्तांतरण के उदाहरण मिलते हैं, जब उनमें से कोई एक युद्ध में थक जाता है, फिर भी उसने अपने प्रिय जुनून को गति दे दी होती है। इसे देखकर मैंने निम्नलिखित पाया है: जब किसी विशेष वासना के विचार लंबे समय तक हमें शायद ही कभी आते हैं, और फिर अचानक और अप्रत्याशित रूप से जाग उठते हैं और जलने लगते हैं, भले ही हमने किसी भी लापरवाही से इसका कोई कारण न दिया हो, तो जान लो कि पहले वाले से भी अधिक दुष्ट एक दानव हम पर हावी हो गया है और, जो चला गया है उसकी जगह लेकर, उसे अपनी दुष्टता से भर दिया है। यह देखकर, मन प्रभु की शरण ले, और उद्धार का टोप पहनकर, धार्मिकता का कवच धारण करके, आध्यात्मिक तलवार खींचकर, विश्वास की ढाल उठाकर (इफिसियों 6:14-17), और आँसुओं के साथ स्वर्ग की ओर देखकर, यह कहे: प्रभु यीशु मसीह, *'मेरी उद्धार की शक्ति'* (भजन संहिता 139:8)। *'अपना कान मेरी ओर लगा; मुझे छुड़ाने में*

जल्दी कर; मेरे रक्षक और शरणस्थान का परमेश्वर बन, ताकि तू मुझे बचा सके (भजन संहिता 30:3)। विशेष रूप से, उसे उपवास और प्रहरों के द्वारा अपनी तलवार को चमकाना चाहिए। इसके बाद, भले ही उसे कुछ समय के लिए और दुष्ट के अग्निबाणों से घिरे और घेरकर मारे जाने के कारण पीड़ा सहनी पड़े, फिर भी, अंत में, यह दानव भी धीरे-धीरे अपने पूर्ववर्ती की तरह ही हो जाएगा, और शांत हो जाएगा, जब तक कि उसकी जगह लेने के लिए एक और, उससे भी अधिक दुष्ट, न आ जाए।

६८. अशुद्ध विचार अक्सर जड़ें जमा लेते हैं और कई चीजों तक फैल जाते हैं; वे एक जलते हुए जुनून से प्रेरित होकर, बड़े समुद्रों को पार करते हैं और लंबी दूरी की यात्रा करने से नहीं हिचकिचाते। लेकिन जब वे कुछ हद तक शुद्ध हो जाते हैं, तो वे इन (अनियंत्रित) से कहीं अधिक संयमित हो जाते हैं और अपने जुनून की कमजोरी के कारण कई चीजों में व्यापक रूप से नहीं फैल सकते। इसीलिए वे ज्यादातर प्राकृतिक सीमाओं के भीतर ही रहते हैं, और, जैसा कि बुद्धिमान सुलैमान कहते हैं, वे कभी-कभी उपहास करते हैं (नीतिवचन 7:12), वे अवैध आलस्य के लिए खपच्चियाँ इकट्ठा करते हैं (निर्गमन 5:12,7), और काँटों को नहीं छूते। इसलिए, मनुष्य को अपने हृदय की पूरी चौकसी से रक्षा करनी चाहिए, ताकि वह *'जाल से हिरण की तरह, और फंदे से पक्षी की तरह'* बच सके (नीतिवचन 6:5)। क्योंकि एक अशुद्ध आत्मा को शुद्ध करना, एक शुद्ध हो चुकी आत्मा को स्वस्थ करने से कहीं अधिक आसान है, जो दुःख के दानव द्वारा खड़ी की गई बढ़ी हुई बाधाओं के कारण फिर से घावों से ढक गई है, जो लगातार आँखों के पतलों में कूदता रहता है और प्रार्थना के दौरान, पापी जुनून की मूर्ति को उजागर करता है।

६९. मसीह तर्कशील स्वभाव को, जो पाप से सुन्न हो गया है, सभी युगों (अर्थात् अतीत, वर्तमान और सबसे बढ़कर, भविष्य) के चिंतन के माध्यम से (पश्चाताप के लिए) जगाते हैं, जबकि उनके पिता इस आत्मा को—जो तब मसीह की मृत्यु, पाप की मृत्यु, मर रही होती है—परमेश्वर के ज्ञान के माध्यम से उठाते हैं। यह प्रेरित के वचनों का अर्थ है: *'यदि हम उसके साथ मरे हैं, तो हम उसके साथ जीवित भी होंगे'* (2 तीमुथियुस 2:11)।

70. जब मन पुराने मनुष्य को त्याग देता है और अनुग्रह वाले में वस्त्र धारण करता है, तो प्रार्थना के दौरान, वह अपनी ही अवस्था को देखेगा, जो नीलम या स्वर्ग के रंग के समान है: जिसे पवित्र धर्मग्रंथ में परमेश्वर का स्थान कहा जाता है, जैसा कि वृद्धजनों ने सिनाई पर्वत पर देखा था (निर्ग. 24:10)।

71. मन अपने भीतर परमेश्वर के स्थान को तब तक नहीं जान पाएगा जब तक कि वह सभी भौतिक और सृजित विचारों से ऊपर नहीं उठता; फिर भी, वह उन पर तब तक नहीं उठेगा जब तक कि वह उन आसक्तियों को नहीं त्याग देता जो उसे इंद्रिय वस्तुओं से बांधती हैं और उनके बारे में विचारों को जन्म देती हैं। यह गुणों के द्वारा इन आसक्तियों को, और आध्यात्मिक मनन के द्वारा सरल विचारों को त्याग देगा; परन्तु जब उसे वह प्रकाश दिखाई देगा जो प्रार्थना के समय परमेश्वर के स्थान को अंकित करता है, तब वह इन्हें भी एक ओर रख देगा।

२. सक्रिय जीवन पर इवाग्रियस द मॉंक: सौ अध्याय

1. हमारे पवित्र और सबसे अनुभवी गुरु ने कहा: एक भिक्षु को अपने भीतर इस तरह से तैयार रहना चाहिए जैसे कि वह कल मर जाएगा, और फिर भी अपने शरीर के साथ इस तरह का व्यवहार करना चाहिए जैसे कि वह कई वर्षों तक जीवित रहेगा। क्योंकि, वे कहते हैं, यह निराशा के विचारों को समाप्त कर देता है और भिक्षु को अत्यधिक उत्साही बना देता है, जबकि यह शरीर को अच्छे स्वास्थ्य में रखता है और उसे निरंतर संयम का पालन करने के लिए मजबूर करता है।

2. मैंने जाना है कि अहंकार का राक्षस, जिसका पीछा लगभग सभी राक्षस करते हैं, निर्लज्जतापूर्वक उन लोगों के शवों पर खड़ा होता है जो उसका पीछा करते हैं और भिक्षु के सामने अपने गुणों की महानता का प्रदर्शन करता है[60] ।

३. किसी को भी राक्षसों के बीच के अंतर को पहचानना चाहिए और यह जानना चाहिए कि वे कब प्रकट होते हैं। हमारे विचारों (और हमारे कर्मों से उत्पन्न विचारों) से, हम यह जान पाते हैं कि कौन से राक्षस दुर्लभ लेकिन गंभीर हैं, कौन से निरंतर लेकिन हल्के हैं, और कौन से अचानक झपटते हैं और मन को ईश्वर-निंदा की ओर ले जाते हैं। हमें सतर्क भी रहना चाहिए ताकि जब विचार अपना ध्यान भटकाने लगें, तो अपनी सामान्य अवस्था से हटने से पहले, हम उनके विरुद्ध कुछ कहने और यह पहचानने में सफल हो सकें कि उनमें कौन मौजूद है। क्योंकि इस तरह, ईश्वर की मदद से, हम स्वयं सफल होंगे, और वे हमें देखकर विस्मित होकर दुःख के साथ उड़ जाएँगे।

---

[60] शायद, एक बार जब सभी राक्षसों को भगा दिया जाता है और परास्त कर दिया जाता है, तो कोई उन लोगों के शवों पर खड़ा हो जाता है जिन्हें उन्होंने परास्त किया है, और इसी तरह।

४. जब, संन्यासयिों से संघर्ष करते-करते, दानव थक जाते हैं, तो वे थोड़ा पीछे हटकर यह देखने के लए प्रतीक्षा करते हैं कइिस बीच कौन-सा सद्गुण उपेक्षति होगा; और, अचानक उसी ओर से हमला करके, वे उस बेचारे आत्मा को लूट लेते हैं।

5. दुष्ट राक्षस कभी-कभी अपनी ही तरह के राक्षसों से भी अधकि दुष्ट राक्षसों को मदद के लए बुलाते हैं और, एक योजना बना लेने के बाद, एक-दूसरे के खलिाफ युद्ध छेड़ते हैं, जबक एिक ही उद्देश्य - आत्मा का वनिाश - में एकजुट रहते हैं।

६. वह राक्षस जो मन को ईश्वर-नदिा और अत्यंत भ्रष्ट कल्पनाओं की ओर चुरा ले जाता है—जनि्हें लखिने में भी मुझे शर्म आती है—वह हमें परास्त न करे या हमारे धार्मकि उत्साह को दबाए न। दलिों का जानने वाला ईश्वर जानता है क,ि संसार में रहते हुए भी, हम ऐसे पागलपन के आगे नहीं झुके। इस दानव का उद्देश्य हमें प्रार्थना करना बंद करवाना है, ताक हिम अपने प्रभु परमेश्वर के सामने खड़े न हो सकें, और उस पर अपने हाथ उठाने की हमि्मत न कर सकें, जसिके वरिुद्ध हमने ऐसे वचिारों को पाला है।

७. आत्मा के भीतर काम कर रहे भावों के लक्षण या तो बोली गई कोई बात होते हैं या शरीर की कोई हरकत; इनसे हमारे शत्रु यह पहचान लेते हैं क कि्या हम उनके वचिारों को अपने भीतर पालते हैं और उनके प्रकार से पीड़ति हैं, या उन्हें अस्वीकार कर, हम अपनी ही मुक्त कि लए चतिति हैं। केवल परमेश्वर, जनि्होंने हमें बनाया है, ही सभी बातों को जैसा है वैसा जानता है और हृदय में छपिी हुई बात को जानने के लए उसे कसिी भी दृश्यमान संकेत की आवश्यकता नहीं है।

8. राक्षस गृहस्थों पर अधकितर भौतकि वस्तुओं के माध्यम से आक्रमण करते हैं, जबक संिन्यासयिों पर वे अधकितर वचिारों के माध्यम से ऐसा करते हैं, क्योंक मिरुभूम मिें उनके पास कोई भौतकि संपत्त नहीं होती है। लेकनि चूंक कि्रम की तुलना में वचिारों में पाप करना आसान और तेज़ है, इसलए मानसकि संघर्ष भौतकि वस्तुओं के माध्यम से होने वाले संघर्ष से अधकि गंभीर होता है। मन अत्यंत तीव्र और अनयिंत्रति है, जो पापी कल्पनाओं का शकिार होता है।

९. हमें नरिंतर परशि्रम करने, जागते रहने (न सोने) या उपवास करने (न खाने) की आज्ञा नहीं दी गई है, लेकनि कानून द्वारा नरिंतर प्रार्थना करने का वधिान है। क्योंक आित्मा के कामवासनापूर्ण भाग को ठीक करने के उद्देश्य से की जाने वाली वे तपस्याएँ स्वयं सक्रयि रहने के लए शरीर की आवश्यकता रखती हैं; फरि भी शरीर, बनिा पोषण के, नरिंतर परशि्रम और कष्टों को सहन नहीं कर सकता। लेकनि प्रार्थना संघर्ष के लए मन को शुद्ध और मजबूत करती है; मन इस शरीर के बनिा भी प्रार्थना करने और आत्मा की सभी शक्तयिों की रक्षा के लए राक्षसों से युद्ध करने के लए बनाया गया है।

10. जब आत्मा के कामवासनापूर्ण भाग के वरिुद्ध युद्ध करने वाले राक्षस हमें, हमारी नींद में, परचितिों से भेंट, रशि्तेदारों के साथ भोज, महलिाओं के जुलूस और इस तरह की अन्य चीजें दखिाते हैं—वे ही चीजें जनि पर कामवासना आमतौर पर पनपती है—और हम उनमें बहक जाते हैं, तो इसका मतलब है क हिम अपने ही इस भाग से पीड़ति हैं, और यह क यिह वासना हमारे भीतर प्रबल है। लेकनि जब वे हमारे चड़िचड़िे भाग पर अधकिार कर लेते हैं, तो वे हमें (हमारे सपनों में) भयानक खड़ी जगहों पर चलने के लए मजबूर करते हैं, और हमारे ऊपर सशस्त्र पुरुषों, या वषिैले साँपों और मांसाहारी जानवरों को लाते हैं। यद अिब (हमारी नींद में) हम उन स्थानों से भयभीत हो जाते हैं और, जानवरों तथा मनुष्यों द्वारा पीछा कए जाने पर, भाग खड़े होते हैं, तो हमें अपने चड़िचड़िे भाग का ध्यान रखना चाहए और, जागते हुए प्रभु मसीह को पुकारते हुए, पहले बताई गई उपचार वधियिों का उपयोग करना चाहए।

11. स्वप्न में शर्मनाक दृश्यों के बनिा, प्राकृतकि शारीरकि गतवधियिाँ यह दर्शाती हैं क आित्मा, एक तरह से, स्वस्थ है; जबक ऐिसे दृश्यों का गुंथ जाना इस बात का संकेत है क वहि बीमार है। इस संबंध में, जान लें क अिस्पष्ट चेहरों का दर्शन लंबे समय से चले आ रहे जुनून के अवशेषों की ओर इशारा करता है, जबक सि्पष्ट चेहरों का दर्शन दलि के नए घावों की ओर इशारा करता है।

12. हम दनि में अपने वचिारों के माध्यम से, और रात में अपने सपनों के माध्यम से, नरि्लप्तिता के लक्षणों का नरि्धारण करेंगे। हम नरि्लप्तिता को आत्मा का स्वास्थ्य कहेंगे, और आत्म-नयिंत्रण को इसका पोषण, क्योंक केवल वही आमतौर पर हमें पवत्रि शक्तयिों के साथ जोड़ता है, क्योंक अिदेह के साथ मलिन तभी संभव है जब हम उनके साथ सामंजस्य में हों।

१३. आत्मा की दो शांतपूिर्ण अवस्थाएँ हैं: एक प्राकृतकि रसों के क्षीण और सूख जाने का परणिाम है, जबक दूसरी तब होती है जब राक्षस पीछे हट जाते हैं। पहले वाले के साथ वनिम्रता और हृदय का पश्चाताप – आँसू और दव्यि के प्रत असिीम भक्त होती है; जबक दूसरे के बाद अहंकार और घमंड आता है, जो अन्य राक्षसों के चले जाने

के बाद संन्यासी पर हावी हो जाते हैं। जो कोई भी पहले राज्य की सीमाओं के भीतर रहता है, वह राक्षसी हमलों और चालाकियों को अधकि आसानी से पहचान लेगा।

14. अहंकार का राक्षस कामवासना के राक्षस का वपिरीत है, और दोनों का एक ही समय में आत्मा पर हमला करना असंभव है, क्योंक िउनमें से एक सम्मान का वादा करता है, जबक िदूसरा अपमान में धकेल देता है। इसलएि, जब उनमें से कोई एक पास आता है और आपको परेशान करना शुरू करता है, तो अपने भीतर उसके वपिरीत राक्षस के वचिारों को लाएँ; और यद िआप, जैसा क िकहा जाता है, एक कुल्हाड़ी से दूसरी कुल्हाड़ी को बाहर नकिाल सकते हैं, तो जान लें क िआप नरि्लपि्तता की सीमा के करीब हैं, क्योंक िआपका मन मानवीय वचिारों के माध्यम से राक्षसी सुझावों को बाहर नकिालने के लएि पर्याप्त मजबूत साबति हो गया है। लेकनि बेशक, वनिम्रता द्वारा अहंकार के वचिार को, या ब्रह्मचर्य द्वारा कामवासना के वचिार को दूर करना, परम नरि्लपि्तता का संकेत होगा। एक-दूसरे के वरिोधी सभी राक्षसों के प्रत ि इस तरह का व्यवहार करने का प्रयास करें। साथ ही, आपको पता चलेगा क िआप कसि कामवासना से सबसे अधकि भरे हुए हैं। हालाँक ि ईश्वर से पूरी शक्त िसे प्रार्थना करें क िवह आपको सखिाए और आपके दुश्मनों को दूसरे तरीके से भगाने में आपकी मदद करे।

15. जतिना अधकि एक आत्मा प्रगत िकरती है, उतने ही भयंकर उसके वरिोधी हो जाते हैं। मुझे नहीं लगता क ि वही राक्षस हमेशा उसके साथ रहते हैं। जो लोग उन प्रलोभनों का बारीकी से अवलोकन करते हैं जो उन पर आक्रमण करते हैं, वे यह सबसे अच्छी तरह जानते हैं, क्योंक िउनकी सामान्य उदासीनता पूर्व के राक्षसों के उत्तराधकिारियों, नए राक्षसों द्वारा पहले से कहीं अधकि दृढ़ता से हलि जाती है।

16. सक्रयि जीवन का वरिोध करने वाले सभी राक्षसों पर वजिय प्राप्त करने पर आत्मा में पूरण वैराग्य उत्पन्न होता है; जबक िवैराग्य को अपूर्ण कहा जाता है जब आत्मा, अपनी ही शक्त िसे और फरि भी बनिा झुके, उस पर हमला करने वाले राक्षस के खलिाफ संघर्ष करती रहती है।

17. मन उस भावों (परीक्षणों) के मार्ग से न तो गुज़रेगा, न ही सुरक्षति रूप से पार करेगा, और न ही वह अदेह लोक में प्रवेश करेगा, जब तक क िवह अपने अंतर्मन को व्यवस्थति नहीं कर लेता। यह आंतरकि अव्यवस्था अनवािर्य रूप से उसे उन लोगों की ओर वापस मोड़ देगी जनिसे उसका उद्गम हुआ है।

18. पुण्य और पाप दोनों ही मन को अंधा कर देते हैं: पुण्य के मामले में, यह पापों को नहीं देख पाता; पाप के मामले में, यह पुण्यों को नहीं देख पाता।

पवति्र पूर्वजों के वचन

1. मनुष्य को प्राचीन ऋषयिों द्वारा अपनाए गए मार्गों के बारे में पूछताछ करनी चाहएि और स्वयं उनका अनुसरण करना चाहएि। उनके उदाहरण में बहुत कुछ अच्छा पाया जा सकता है, जो कहा और कयिा गया है। इस प्रकार, उनमें से एक कहते हैं क ि प्रेम के साथ कयिा गया नरिंतर शुष्क उपवास, एक भकि्षु को शीघ्रता से वैराग्य के बंदरगाह तक पहुँचाता है। उन्होंने एक भाई को भी, जो रात में सपनों से परेशान था, उपवास करते हुए बीमारों से मलिने का आदेश देकर उनसे मुक्त ि दलिाई। क्योंक ि इस मामले पर एक प्रश्न के उत्तर में उन्होंने कहा, दान के समान कोई भी वस्तु कामवासना को पूरी तरह से शांत नहीं करता।

2. उस समय के एक बुद्धमिान व्यक्त िने धर्मनष्ठि एंथनी के पास आकर कहा: 'हे पति, आप कतिाबों से मलिने वाली शांत िसे वंचति, ऐसा जीवन कैसे सहन करते हैं?' उन्होंने उत्तर दयिा: 'हे दार्शनकि, मेरी कतिाब यह सृजति प्रकृत िहै। यह हमेशा मेरे साथ रहती है, और जब भी मैं चाहूँ, मैं इसमें ईश्वर के वचन पढ़ सकता हूँ।'

3. एक बार, एक चुने हुए पात्र, मसि्र के वरष्ठि मकरयिस ने मुझसे पूछा: 'ऐसा क्यों है क ि जब हम लोगों के प्रत ि द्वेष रखते हैं, तो हम आत्मा की स्मरण शक्त िको बाधति करते हैं[61] , फरि भी जब हम राक्षसों के प्रत ि द्वेष रखते हैं, तो हमें कोई हान िनहीं होती?' जब मुझे उत्तर देना कठनि लगा, तो मैंने उनसे स्वयं इसे समझाने के लएि कहा, तो उन्होंने कहा: 'ऐसा इसलएि है क्योंक ि पहला (क्रोधति स्वभाव) प्रकृत िके वपिरीत है, जबक ि दूसरा (क्रोधति स्वभाव) उसके अनुरूप है।'

४. एक बार, दोपहर की कड़ी धूप में, मैं पवति्र फादर मकरयिस के पास गया और प्यास से तड़फते हुए उनसे पानी पीने के लएि कहा। लेकनि उन्होंने कहा: 'छाँव से ही संतुष्ट रहो, क्योंक िइस समय कई यात्रयिों और नावकिों को उससे भी वंचति रहना पड़ता है।' बाद में, जब मैंने इस संबंध में संयम का वषिय उठाया, तो उन्होंने कहा: 'मेरे बेटे, मेरा

[61] 'मूल्यवान कथनों' में: हम ईश्वर की स्मृत ि खो देते हैं।

वश्विास करो, पूरे बीस वर्षों से मैंने खुद को रोटी, पानी या नींद की तृप्ति नहीं दी है। मैं अपनी रोटी वज़न से खाता था और पानी माप कर पीता था, और दीवार से सहारा लेकर थोड़ी सी नींद ले लेता था।'

5. एक भक्षि[62] को अपने पति की मृत्यु का समाचार मिला, लेकिन उन्होंने समाचार लाने वाले से कहा: 'अपनी ईश्वर निंदा बंद करो, क्योंकि मेरे पति अमर हैं।'

6. एक भाई ने एक बार एक वृद्ध से पूछा कि जब वह घर लौटे तो क्या उसे अपनी माँ और बहनों के साथ खाना चाहिए। वृद्ध ने उत्तर दिया: 'किसी महिला के साथ भोजन मत करो।'

7. एक भाई के पास केवल सुसमाचार था, लेकिन उसने उसे भी बेचकर, उसका पैसा भूखों को खिलाने के लिए दे दिया और ऐसा करते हुए, उसने ये यादगार शब्द कहे: 'मैंने वह वचन भी बेच दिया जो मुझसे कहता है: "अपना सब कुछ बेच डाल और गरीबों को दे दे"' (मत्ती 19:21)।

8. अलेक्ज़ेंड्रिया के पास, मैरी की खाड़ी के रूप में जानी जाने वाली खाड़ी के सबसे उत्तरी भाग में, एक द्वीप है जिस पर एक संन्यासी रहता था जो आध्यात्मिक मामलों में बहुत अनुभवी था। उसने कहा कि संन्यासी जो कुछ भी करते हैं, वे उसे पाँच कारणों से करते हैं: ईश्वर के लिए, स्वाभाविक आवश्यकता से, रीति-रिवाज से, ज़रूरत के लिए, और शारीरिक श्रम के लिए। उन्होंने यह भी कहा कि सद्गुण मूल रूप से एक है, लेकिन यह आत्मा की शक्तियों में विभिन्न रूप धारण करता है, ठीक वैसे ही जैसे सूर्य के प्रकाश का अपना कोई आकार नहीं होता, लेकिन यह आमतौर पर उन छिद्रों का आकार ले लेता है जिनसे यह गुजरता है।

९. एक अन्य भक्षि ने कहा: 'मैं क्रोध के कारणों को खत्म करने के लिए सुख-भोगों से खुद को वंचित करता हूँ। क्योंकि मैं जानता हूँ कि क्रोध हमेशा सुख-भोगों को लेकर संघर्ष को भड़काता है, मन को परेशान करता है और ज्ञान को दूर भगा देता है।' हालाँकि, बुजुर्गों में से एक कहा करते थे कि प्रेम रोटी या पैसे का भंडार संजोना नहीं जानता। उन्होंने यह भी कहा: 'मुझे ऐसा कोई उदाहरण नहीं पता जहाँ राक्षसों ने मुझे एक ही मामले में दो बार धोखा दिया हो।'

10. सभी भाइयों से समान रूप से प्रेम करना असंभव है, लेकिन कोई भी द्वेष और घृणा से मुक्त होकर, सभी के साथ निष्पक्ष व्यवहार कर सकता है। ईश्वर के बाद, सबसे अधिक प्रेम पुरोहितों से करना चाहिए, जो हमें पवित्र संस्कारों के द्वारा शुद्ध करते हैं और हमारे लिए प्रार्थना करते हैं; जहाँ तक हमारे बुज़ुर्गों का सवाल है, हमें उन्हें स्वर्गदूतों की तरह सम्मानित करना चाहिए। लेकिन अभी के लिए, हे प्रिय भाई अनातोलीयस, यह केवल मैं ही आपसे कहता हूँ: पवित्र आत्मा की कृपा से पकी हुई हमारी बेल की डालियों से हमने उतना ही पाया और इकट्ठा किया है। हालाँकि, यदि धार्मिकता का सूर्य हम पर चमकता रहे और अंगूर पूरी तरह से पक जाए, तो हम उससे वह दाखमद्य पीएंगे *जो 'मानव के हृदय को प्रसन्न करता है'* (भजन संहिता 103:15), धर्मी ग्रेगरी की प्रार्थनाओं और विनतियों के द्वारा, जिन्होंने मुझे लगाया था, और यहाँ के आदरणीय पिताओं की, जो मेरा पोषण करते हैं, और हमारे प्रभु यीशु मसीह की शक्ति से, जो मुझे पुनर्स्थापित करते हैं, जिनकी महिमा और सामर्थ्य युगानुयुग हो। आमीन।

३. मठाधीश इवाग्रियस का कार्य, मठवासी जीवन का एक चित्रण, जिसमें यह सिखाया गया है कि मनुष्य को कैसे प्रयास करना चाहिए और मौन का पालन करना चाहिए

1. यिर्मयाह में लिखा है: *'और तू इस स्थान में अपने लिए पत्नी न लेना। क्योंकि यहोवा इस स्थान में उत्पन्न पुत्रों और पुत्रियों के विषय में इस प्रकार कहता है: वे दुखद मृत्यु से मरेंगे'* (16:1 आदि)। यह अंश उसी बात की ओर इशारा करता है जैसा कि प्रेरित कहते हैं: *'एक विवाहित पुरुष सांसारिक मामलों में लगा रहता है, अपनी पत्नी को कैसे खुश रखे... और एक विवाहित महिला सांसारिक मामलों में लगी रहती है, अपने पति को कैसे खुश रखे'* (1 कुरिन्थियों 7:33–34), यदि हम यह समझें कि जब वह कहता है: 'और तुम इस स्थान में अपने लिए पत्नी न लेना' (यिर्मयाह 16:1, आदि), तो नबी केवल उन पुत्रों और पुत्रियों की बात नहीं कर रहा है जो वैवाहिक जीवन से पैदा होते हैं, *'वे एक पीड़ादायक मृत्यु से नष्ट हो जाएँगे'*, लेकिन हृदय में जन्मे पुत्रों और पुत्रियों के बारे में, अर्थात्, शारीरिक विचारों और इच्छाओं के बारे में, क्योंकि वे भी इस संसार के पीड़ादायक, दुर्बल और कमजोर तर्क में मर जाते हैं, और स्वर्गीय और शाश्वत जीवन प्राप्त नहीं करते हैं। वे कहते हैं, *'परन्तु अविवाहित प्रभु की चिन्ता में रहता है, कि वह प्रभु को कैसे प्रसन्न करे'* (1 कुरिन्थियों 7:32), और स्वर्गीय जीवन के सदाबहार और अमर फल उत्पन्न करता है।

२. ऐसा ही संन्यासी है, और संन्यासी को ऐसा ही होना चाहिए; अर्थात्, अपनी पत्नी से अलग होकर, उसे उपर्युक्त स्थान पर पुत्र या पुत्रियाँ नहीं करनी चाहिए; और केवल इतना ही नहीं, बल्कि उसे मसीह का एक सैनिक

---

[62] पैलाडियस के अनुसार – इवाग्रियस स्वयं। लेकिन इवाग्रियस यहाँ अपने नहीं, बल्कि पहले के संतों के कथनों का हवाला देते हैं।

भी होना चाहिए, जो सांसारिक चीजों से लगाव न रखता हो, चिंताओं से मुक्त हो, और इस बेचैन दुनिया के विचारों और कर्मों से अलग हो, जैसा कि प्रेरित कहते हैं: *'जो कोई सैनिक की सेवा करता है, वह नागरिकों के मामलों में उलझता नहीं, बल्कि अपने सेनानायक को प्रसन्न करने का यत्न करता है'* (2 तीमु. 2:4)। इन बातों में, सबसे बढ़कर, संन्यासी इसी में स्थिर रहे, इस संसार की सभी चीज़ों को त्यागकर और मौन की सुंदर और अच्छी विजय-चिह्नों (विजय के चिह्नों) के लिए यत्न करते हुए। मौन में संघर्ष कितना सुंदर और अच्छा है, कितना सच्चा सुंदर और अच्छा! *'उसका जुआ कोमल है और उसका बोझ हल्का है'* (मत्ती 11:30): जीवन मीठा है, परिश्रम सुखद है।

3. हे प्रिय, क्या तुम उस एकांत जीवन को वैसे ही अपनाना चाहते हो जैसा तुम्हें करना चाहिए, और मौन के पुरस्कारों के लिए प्रयत्न करना चाहते हो? दुनियावी चिंताओं को उनके सिद्धांतों और शक्तियों सहित पीछे छोड़ दो; अर्थात् ऐसे बनो मानो तुम अद्रव्य, निर्लिप्त और सभी इच्छाओं से मुक्त हो, ताकि उनसे जुड़े बेचैन उतार-चढ़ावों से मुक्त होकर तुम अच्छी तरह मौन रख सको। क्योंकि यदि कोई इन सब से स्वयं को अलग नहीं करता, तो वह इस प्रकार का जीवन जैसा उसे जीना चाहिए, वैसे नहीं जी पाएगा। विविध प्रकार के व्यंजनों के बजाय, जो ध्यान भटकाते हैं, सरल भोजन चुनें जो आसानी से मिल जाए और जिसमें कम देखभाल की आवश्यकता हो। यदि आपको शानदार व्यंजनों का कोई विचार आता है, मानो यह नवीनता के प्रेम से हो, तो उसे त्याग दें, और उस पर बिल्कुल भी ध्यान न दें। क्योंकि इसके द्वारा शत्रु आपको प्रलोभित करेगा, आपको मौन से हटाने के लिए प्रलोभित करेगा। आपके पास प्रभु यीशु हैं, जो मार्था के व्यक्तित्व में, ऐसी बातों के लिए चिंतित आत्मा को डाँट रहे हैं, और कह रहे हैं, *'तुम कई बातों के लिए चिंतित और परेशान हो। 'एक ही बात आवश्यक है'* (लूका 10:41)—अर्थात्, परमेश्वर का वचन सुनना; बाकी सब बिना किसी कठिनाई के हो जाएगा। इसीलिए वह तुरंत जोड़ता है: *'लेकिन मरियम ने अच्छा भाग चुना है, जो उससे नहीं छीना जाएगा'* (42)। आपके पास ज़रेफ़ाथ की विधवा का उदाहरण भी है, और यह भी कि उसने भविष्यवक्ता की मेजबानी कैसे की (1 राजा 17:10)। भले ही आपके पास रोटी का एक ही टुकड़ा और कुछ पानी ही क्यों न हो, आप फिर भी इन्हीं से उचित रूप से मेजबानी का अभ्यास कर सकते हैं और इसके लिए पुरस्कृत हो सकते हैं। लेकिन यदि आपके पास ये चीजें न भी हों, तो भी यात्री का केवल एक इच्छुक हृदय से स्वागत करें और उससे एक दयालु शब्द कहें; इस तरह भी, आप आतिथ्य दिखाने का इनाम कमा सकते हैं। क्योंकि कहा गया है: 'एक दयालु शब्द उपहार से बेहतर है' (सिरैक 18:16-17)।

४. तुम्हें दान-पुण्य पर भी मनन करना चाहिए। गरीबों में बाँटने के लिए धन का स्वामी बनने की इच्छा न करो। क्योंकि यह भी दुष्ट की एक फँसा है, जो अक्सर अहंकार के भेष में आता है और मन को बेचैन (अत्यधिक सक्रिय) प्रयासों में डुबा देता है। प्रभु यीशु के सुसमाचार में, आपको वह विधवा मिलती है जिसे एक अच्छा गवाह मिला है, जिसने अपनी दो चांदी के टुकड़ों से, धनी लोगों की इच्छा और शक्ति (दान के मूल्य) से भी बढ़कर दे दिया। प्रभु ने कहा, *'क्योंकि उन्होंने सभी ने अपनी-अपनी भरमार में से कोष में डाला है, परन्तु उसने अपनी गरीबी में से अपना सब कुछ डाल दिया है'* (लूका 21:4)। जहाँ तक वस्त्रों की बात है, तो अपनी ज़रूरत से ज़्यादा कपड़ों की इच्छा न करें; केवल उन्हीं का प्रबंध करें जो इस शारीरिक आवश्यकता को पूरा करने के लिए पर्याप्त हों। *'अपना बोझ प्रभु पर डाल दो'* (भजन संहिता 54:23), और वह तुम्हारा प्रबंध करेगा। *'क्योंकि वह हमारी चिंता करता है,'* परमेश्वर का वचन कहता है (1 पतरस 5:7)। यदि तुम्हें भोजन या वस्त्रों की आवश्यकता हो, तो यदि दूसरे तुम्हें वे देते हैं तो उन्हें स्वीकार करने में लज्जित न हो । क्योंकि यह अहंकार का एक रूप है। भले ही आपके पास इन चीज़ों की प्रचुरता हो, उन्हें दें जिनके पास वे नहीं हैं। परमेश्वर चाहते हैं कि उनके बच्चे (या सेवक) अपने घरेलू मामलों (या वित्त) का प्रबंधन इसी तरह करें। इसीलिए प्रेरित, कोरिन्थियों को लिखते हुए, उन लोगों के बारे में बात करते हैं जो आवश्यक वस्तुओं की कमी से पीड़ित हैं: *'तुम्हारी इस वस्तुओं में भरपूरी उनकी घटी के लिए, और उनकी भरपूरी तुम्हारी घटी के लिए, ताकि समानता हो जाए, जैसा लिखा है: "जिसके पास बहुत था, उसने नहीं बढ़ाया, और जिसके पास थोड़ा था, उसने नहीं घटाया"'* (2 कुरिन्थियों 8:14–15)। इसलिए, वर्तमान के लिए जो आपको चाहिए वह आपके पास होने पर, भविष्य—उदाहरण के लिए कल, या अगले सप्ताह, या अगले महीने, या अगले वर्ष—की चिंता न करें। जब कल आएगा, तो वह समय स्वयं तुम्हारी आवश्यकता पूरी कर देगा, यदि तुम पहले परमेश्वर के राज्य और उसकी धार्मिकता को खोजो। क्योंकि प्रभु कहते हैं: 'पहले *परमेश्वर के राज्य और उसकी धार्मिकता को खोजो, और ये सब बातें तुम्हें मिल जाएँगी'* (मत्ती 6:33)।

५. किसी जवान लड़के को अपने यहाँ मत रखना, कहीं ऐसा न हो कि शत्रु उसे फंदा लगाने के लिए इस्तेमाल करे और स्वादिष्ट भोजन की चिंता से तुम्हारे मन को बेचैन कर दे; क्योंकि तब तुम अकेले अपनी देखभाल भी नहीं कर पाओगे। यह विचार (एक युवा शिष्य रखने का) शरीर को शांत करने के लिए उत्पन्न होने दें (जैसे कि यह आवश्यक हो), लेकिन जो बेहतर है उसे खोजें, अर्थात् आध्यात्मिक शांति: क्योंकि आध्यात्मिक शांति शारीरिक शांति से कहीं बेहतर है। भले ही यह विचार यह सुझाए कि यह लड़के की भलाई के लिए किया जाना चाहिए, उस पर विश्वास न करें:

क्योंकियह हमारी चिंता नहीं है, बल्कि मठ में रहने वाले अन्य पवित्र संतों की चिंता है। केवल अपनी भलाई के प्रति चिंतित रहें, और मौन जीवन के नियम का वैसे ही पालन करें जैसा कि इसे किया जाना चाहिए। दुनियादार और बेचैन लोगों के साथ रहने में आनंद न लें। या तो अकेले रहें, या उन भाइयों के साथ रहें जो सांसारिक चीजों से विरक्त हों और आपसे सहमत हों। जो व्यक्ति सांसारिक चीजों से जुड़े और झंझटों से भरे लोगों के साथ रहता है, वह निश्चित रूप से खुद भी उनके झंझटों में फँस जाएगा और सांसारिक रीति-रिवाजों, बेकार की बातों और हर तरह के अन्य बुरे कर्मों में लिप्त हो जाएगा: क्रोध, दुख, सांसारिक चीजों के प्रति उन्मत्त आसक्ति, भय और भ्रम। माता-पिता की चिंता और पारिवारिक बंधनों से अपना ध्यान भटकने न दें। उनसे बार-बार मिलने से बचें, कहीं वे आपके कोठरी की शांति छीनकर आपको अपनी पारंपरिक परेशानियों में न खींच लें। प्रभु कहते हैं, *'जा, मुर्दों को अपने मुर्दों को □□ नाने दे; परन्तु तू चल, मेरा अनुसरण कर'* (मत्ती 8:22)। भले ही वह कोठरी जिसमें आप रहते हैं, गपशप से भरी हो, वहाँ से भाग जाएँ; उसे न छोड़ें, कहीं ऐसा न हो कि आप उसके प्रति अपने प्रेम के कारण भटक जाएँ। इसी प्रकार सब कुछ करें, और मौन प्राप्त करने के लिए सब कुछ करें, बाकी सब कुछ त्याग दें, और केवल एक ही बात का प्रयास करें: ईश्वर की इच्छा में कैसे बने रहें और अदृश्य शक्तियों के विरुद्ध सफलतापूर्वक युद्ध कैसे लड़ें।

६. यदि अपने देश में सच्ची मौनता बनाए रखना आपके लिए असंभव है, तो किसी परदेस में ऐसा करने का संकल्प लें और अपने सभी विचारों को इसी उद्देश्य की ओर निर्देशित करें। एक चतुर व्यापारी की तरह बनें, जो अपने लिए सच्ची मौनता सुनिश्चित करने के लिए हर संभव प्रयास करता है और उस उद्देश्य के लिए आवश्यक और लाभकारी सभी चीजों को स्वीकार करता है। इसके अलावा, मैं तुमसे कहता हूँ, एक तीर्थयात्री के जीवन से प्रेम करो, क्योंकि यह तुम्हें उन कठिनाइयों से मुक्त करता है जो तुम्हारे अपने देश में अपरिहार्य हैं, और केवल यही तुम्हें मौन जीवन के सभी आशीर्वादों का स्वाद चखने देता है। शहर में रहने से बचें और धैर्यपूर्वक निर्जन स्थान में रहें। संत दाऊद कहते हैं, *'मैं दूर भाग गया और निर्जन स्थान में निवास कर गया'* (भजन संहिता 54:8)। यदि संभव हो, तो शहर में बिल्कुल न जाएँ: क्योंकि वहाँ आपको कुछ भी स्वास्थ्यप्रद, कुछ भी उपयोगी, आपके द्वारा चुनी गई तपस्या के जीवन के अनुकूल कुछ भी नहीं दिखेगा। वही संत फिर कहते हैं, *'मैंने शहर में अधर्म और कलह देखी है'* (भजन संहिता 54:10)। तब, एकांत और शांत स्थानों की तलाश करो, और वहाँ बसने से न डरना। भले ही तुम वहाँ दैवीय आकृतियों को देखो, डरना मत और इस परिश्रम के क्षेत्र से भागना मत, जो हमारा उद्धार है। निडर होकर सहन करो, और तुम ईश्वर की महानता (निर्गमन 14:13), उनकी मध्यस्थता, उनकी सुरक्षा, और मोक्ष की हर अन्य गारंटी को देखोगे। *'मैं प्रतीक्षा करता हूँ'* उस धन्य पुरुष ने कहा, *'कि ईश्वर मुझे कायरता और तूफान से बचाए'* (भजन संहिता 54:9)। मनोरंजन के लिए बाहर जाने की इच्छा आपके संकल्प (मौन में रहने के) पर हावी न हो। क्योंकि वासना से प्रेरित ऐसा भटकना, द्वेष से मुक्त मन को भ्रष्ट कर देता है (1 थिस्सलुनीकियों 4:12)। इससे कई प्रलोभन उत्पन्न होते हैं। पाप में गिरने से डरें और अपनी कोठरी में दृढ़ रहें।

7. यदि आपके मित्र हैं, तो उनसे बहुत बार न मिलें। उनसे लंबी अवधि के अंतराल पर मिलना आपके और उनके लिए अधिक लाभदायक होगा। हालाँकि, यदि आपको लगता है कि वे आपको कोई हानि पहुँचा रहे हैं, तो उनके पास बिल्कुल भी न जाएँ। आपके मित्र ऐसे होने चाहिए जो आपके लिए लाभदायक हों और जो आपके जीवन के तरीके का समर्थन करते हों। धोखेबाज़ और अधर्मी लोगों से मिलने से बचें, और ऐसे किसी भी व्यक्ति के साथ एक साथ न रहें; उनके दुष्ट प्रस्तावों को अस्वीकार करें: क्योंकि वे न तो परमेश्वर की सेवा करते हैं और न ही उसकी खातिर जीते हैं। आपके मित्र शांति-प्रिय पुरुष, आध्यात्मिक भाई, और पवित्र पिता हों। क्योंकि प्रभु ने ऐसे लोगों को इस नाम से पुकारा, यह कहते हुए: *'मेरी माता और मेरे भाई और मेरी बहनें वे हैं जो मेरे स्वर्गीय पिता की इच्छा पर चलते हैं'* (मत्ती 12:50, मरकुस 3:35)। चंचल और झगड़ालू लोगों के साथ मेलजोल न रखें, और उनके भोजन पर न जाएँ, कहीं वे आपको अपने जालों में न फँसा लें और मौन जीवन के अनुशासन और कला से दूर न ले जाएँ: क्योंकि उन्हें (लोगों को बहकाने का) ऐसा जुनून होता है। उनका वचन सुनने के लिए अपना कान न लगाएँ, और उनके मन की योजनाओं को न अपनाएँ। क्योंकि वे सचमुच हानिकारक हैं। अपनी आत्मा को पृथ्वी के विश्वासियों के साथ विश्राम करने दो, और अपने हृदय को उनके विलाप के प्रति सहानुभूति में दुखी होने दो, दाऊद के उदाहरण का अनुसरण करते हुए, जो कहते हैं: *'मेरी आँखें पृथ्वी के विश्वासियों पर हैं, ताकि वे मेरे साथ वास करें'* (भजन संहिता 100:6)। यदि ईश्वर के प्रेम के मार्ग पर चलने वाला कोई व्यक्ति आपके पास आता है और आपको भोजन के लिए आमंत्रित करता है, और आप जाना चाहते हैं, तो जाएँ; लेकिन अपनी कोठरी में जल्दी लौट आएं। यदि संभव हो, तो अपनी कोठरी के बाहर कभी रात न बिताएं, ताकि मौन की कृपा हमेशा आपके साथ बनी रहे और आप बिना किसी बाधा के अपने द्वारा स्थापित कोठरी के कर्तव्यों का पालन कर सकें।

8. स्वादष्टि भोजन की अपनी लालसा में मत फँसो, और न ही वलिासी सुखों के प्रलोभन से बहक जाओ: क्योंकि, जैसा कि प्रेरति कहते हैं, *'जो वलिासति में जीती है, वह पहले ही मर चुकी है'* (1 तीमुथयिुस 5:6)। दूसरों की मेज़ का भोजन खाकर अपना पेट मत भरें, कहीं ऐसा न हो कि आप इसके आदी हो जाएँ और अक्सर बाहर भोजन करने की आदत पड़ जाए। क्योंकि कहा गया है: *'पेट की तृप्ति से मोहति न हो'* (नीतविचन 24:15)। यदि आपको बार-बार अपनी कोठरी से बाहर बुलाया जाता है, तो मना कर दें, क्योंकि कोठरी के बाहर बहुत समय बिताना हानिकारक है। यह आपको अनुग्रह से वंचति कर देता है, आपके विचारों को धुंधला कर देता है, और आपकी तीव्र इच्छा (ईश्वर के साथ मौन में रहने की) को कम कर देता है। शराब पर विचार करें: यदि यह बहुत लंबे समय तक एक ही जगह पर बिना हिलाए रखी रहे, तो यह अच्छी तरह से बैठ जाती है, और साफ़ तथा सुगंधति हो जाती है; लेकिन यदि इसे एक जगह से दूसरी जगह हिलाया जाए, तो सतह पर उभरे हुए तलछट और खमीर के कारण यह धुंधली, मैली और स्वाद में अप्रयि हो जाती है। अपने आप की तुलना उससे करें, और सबसे पहले उसकी तरह बनने का प्रयास करें: कई लोगों के संपर्क को समाप्त कर दें, ताकि आपका मन विचारों से भटक न जाए, और आपके मौन का क्रम बाधित न हो। कोई शारीरकि काम शुरू करें और स्वयं को उसमें, यदि संभव हो तो दिन-रात, समर्पति कर दें, ताकि आप न केवल किसी के लिए बोझ न बनें, बल्कि दूसरों का भरण-पोषण भी कर सकें, जैसा कि संत पौलुस प्रेरति आज्ञा देते हैं (2 थस्सि. 3:12, इफसियिों 4:28)। इस प्रकार आप निराशा के दैत्य पर विजय प्राप्त करेंगे और अन्य सभी शत्रु प्रलोभनों को समाप्त कर देंगे। क्योंकि निराशा की आत्मा आमतौर पर आलसी लोगों पर हमला करती है, जिनके बारे में बुद्धिमान कहते हैं कि वह *'आलस्य में लगा रहता है'* (नीतविचन 13:4)। आप देना और लेना में पाप से बच नहीं सकते। इसलिए, चाहे आप बेचें या खरीदें, सच्चे मूल्य की तुलना में थोड़ा नुकसान स्वीकार करें, ताकि, सच्चे मूल्य की तलाश करते हुए, आप लालची लोगों की योजनाओं से भटक न जाएं और आत्मा के लिए हानिकारक कर्मों में न पड़ें – झगड़ना, कसम तोड़ना, अपना वचन तोड़ना, और इस प्रकार हमारे पेशे की सम्माननीय गरिमा का अपमान या कलंक न लगाएँ। इसे ध्यान में रखते हुए, अपने देने और लेने में सावधानी बरतें[63] । हालाँकि, यदि आप बेहतर मार्ग चुनना चाहते हैं - और यह आपके लिए संभव है - तो अपनी देखभाल किसी और, एक विश्वसनीय व्यक्ति को सौंप दें, ताकि, इस प्रकार शांतचित्त (परेशान करने वाली चिंताओं से मुक्त, अपने भीतर शांति से) हो जाने पर, आप फिर एक अच्छा और आनंदमय जीवन जी सकें, जो आशा से भरा हो।

९. मौन का नियिम आपको ऐसे ही पुण्य कार्यों के लिए बाध्य करता है। अब मैं आपके लिए अन्य बातें बताऊँगा जिनका पालन भी इसमें करना चाहिए। तो फिर, मेरी बात सुनो, और जो मैं तुम्हें आज्ञा देता हूँ उसे आचरण में लाओ। अपनी कोठरी में बैठे-बैठे, अपने मरने के दिन को याद करो; उस समय शरीर के निर्जीव होने की कल्पना करो; उस अत्यंत दयनीय अवस्था (जिसमें आत्मा स्वयं को पाएगी) की कल्पना करो; और इससे गहराई से प्रभावति हो जाओ। इस प्रकार, आप अपने भीतर दुनिया को परेशान करने वाली व्यर्थता के प्रति तिरिस्कार को मजबूत करेंगे, अपने लिए चुने गए विनम्र भाग्य के लिए प्रेम जगाएंगे, और अपनी मौन में दृढ़ और अडिग रहने के लिए उत्सुक होंगे। नरक में आत्माओं की वर्तमान स्थिति को भी याद करो। विचार करो कि उनके लिए वहाँ कैसी स्थिति है—किस कड़वी खामोशी में, किस पीड़ादायक कराह में, किस भय और अंतिम न्याय की प्रत्याशा के सुन्नपन में—उनका अखंड मानसकि कष्ट कैसा है, और उनके अनंत आँसू कैसे हैं। पुनरुत्थान के दिन और ईश्वर के समक्ष खड़े होने को भी याद करो। उस भयानक और डरावने न्याय की कल्पना करो; मन में लाओ कि पापियों का वहाँ क्या इंतज़ार कर रहा है - ईश्वर और उनके मसीह के मुख के सामने, स्वर्गदूतों के सामने लज्जा, महादूतों, शक्तियों, और सभी लोगों के सामने; सभी यातनाओं की भी कल्पना करें – शाश्वत अग्नि, वह कीड़ा जो कभी नहीं सोता, टार्टरस, अंधकार; और इन सबके ऊपर, दांत पीसना, भय और पीड़ादायक कष्ट। धर्मियों के लिए आरक्षति आशीर्वादों को भी याद करो: परमेश्वर पिता और उनके मसीह के साथ, स्वर्गदूतों, महादूतों, शक्तियों और संतों की पूरी सेना के साथ साहसी संगति; राज्य अपने खजाने, आनंद और प्रसन्नता के साथ। इन दोनों बातों को मन में रखो। और पापियों की नियति के लिए कराहें और रोएँ; शोक के वस्त्र पहन लें, मानो आप स्वयं उनमें गिने जाएँ; लेकिन धर्मी लोगों के लिए तैयार की गई आशीर्वादों के लिए, आनंदति हों, हर्षति हों और प्रसन्न रहें। इन (आशीर्वादों) के योग्य बनने और उन (यातनाओं) से बचने का प्रयास करें। तब, यह देखो कि तुम इसे कभी न भूलो, चाहे तुम अपनी कोठरी में हो या कहीं और; इस स्मृति को अपने मन से न जाने दो, ताकि, केवल इसी के द्वारा, तुम अशुद्ध और हानिकारक विचारों से बच सको।

[63] 'लेन-देन' एक ऐसा वाक्यांश है जो सभी सांसारकि व्यवहारों और दूसरों के साथ सभी संबंधों को व्यक्त करता है। देना और लेना, दूसरों के साथ आपके व्यवहार और लेन-देन के समान ही है।

१०. प्रभु के सामने जतिना तुम्हारी शक्तिहो, उतना ही उपवास करो। यह तुम्हारे पापों और अपराधों को शुद्ध करेगा, तुम्हारी आत्मा को गरमिामय और कुलीन बनाएगा, तुम्हारे मन को पवत्रि करेगा, दुष्ट आत्माओं को भगाएगा, और तुम्हें परमेश्वर के करीब लाएगा। दनि में एक बार ग्रहण करने के बाद, दूसरी बार ऐसा करने की इच्छा न करें, कहीं ऐसा न हो कआिप बहुत अधकि नर्भिर हो जाएँ और आपका मन वचिलति हो जाए। इस तरह, आपके पास दान-पुण्य के कार्यों के लिए हमेशा कुछ न कुछ बचा रहेगा, और आपके शारीरकि वासनाओं को मृत्यु मलि जाएगी। लेकनि यदभिाई उपस्थति हों, और आपको दूसरी या तीसरी बार खाने की आवश्यकता हो, तो भौं मत चढ़ाओ या नराश मत हो, बल्कइिस बात का आनंद मनाओ कआिप भाइयों की आवश्यकताओं की पूर्तकिर पाए हैं। क्योंकजिब आप दूसरी या तीसरी बार खाते हैं, तो परमेश्वर का धन्यवाद करें कआिपने प्रेम के वधान को पूरा कयिा है, और इस परणामस्वरूप, परमेश्वर स्वयं आपके जीवन के रक्षक होंगे। ऐसा हो सकता है ककिभी-कभी बीमारी आ जाए, और शारीरकि कमजोरी के कारण आपको दो, तीन, या कई बार भी खाना पड़े; ऐसे वचिारों से परेशान न हों। क्योंकबिीमारी के समय में भी हमारे जीवन के तपस्वी अभ्यासों को सख्ती से बनाए रखने की कोई आवश्यकता नहीं है, बल्ककुिछ मामलों में रयिायत करनी चाहए, ताकआिप जल्द से जल्द स्वस्थ हो सकें और उन्हीं तपस्वी कार्यों को फरि से शुरू कर सकें। जहाँ तक इस बात का सवाल है ककिनि खाद्य पदार्थों का त्याग कयिा जाए, परमेश्वर के वचन ने कसिी पर भी रोक नहीं लगाई है; बल्क, उसने *यह* घोषति कयिा है: *'मैंने तुम्हें सब कुछ दयिा है, जैसे कखिेत के हरे पौधे। खाओ, और संदेह में न रहो'* (उत्पत्ति 9:3; 1 कुरन्थियिों 10:25, 27)। और फरि: *'जो कुछ मुँह में जाता है, वह मनुष्य को अशुद्ध नहीं करता'* (मत्ती 15:11)। अत; कुछ खाद्य पदार्थों से परहेज़ करना हमेशा हमारी अपनी स्वतंत्र इच्छा और आत्मा का एक स्वैच्छकि कार्य होना चाहए।

11. खुले में सोने, जागने और अन्य सभी कठनिाइयों को स्वेच्छा से सहन करो, उस महमिा की आशा में जो सभी संतों के साथ तुम्हें प्रकट होने वाली है। प्रेरति कहते हैं, *'क्योंकइिस समय की कठनिाइयाँ उस महमिा के बराबर नहीं हैं जो हम पर प्रकट होने वाली है'* (रोमयिों 8:18)। जब आपका हौसला टूटने लगे, तो जैसा लखिा है वैसे प्रार्थना करें (याकूब 5:13), पर भय और कम्पन के साथ, एक उदास हृदय के साथ, गंभीरता से और सतर्कता से प्रार्थना करें। कसिी को इस प्रकार प्रार्थना करनी चाहए, वशिेष रूप से हमारे दुर्भावनापूर्ण और चालाक अदृश्य शत्रुओं के लिए, जो इस प्रयास में हमें हमेशा रोकने की कोशशि करते रहते हैं। जब वे हमें प्रार्थना में खड़े देखते हैं, तो वे भी जल्दी से हमारे पास आकर हमारे मन में ऐसी बातें डाल देते हैं जनि्हें हमें प्रार्थना करते समय याद नहीं करना चाहए या जसिके बारे में हमें सोचना नहीं चाहए, ताकविे हमारे मन को बंदी बना सकें और सेवा के दौरान हमारी वनितियों और प्रार्थनाओं को नष्फिल, व्यर्थ और बेकार बना सकें। क्योंकप्रिार्थना, वनिती और नविेदन व्यर्थ और बेकार हैं, जब, जैसा कि कहा गया है, वे भय और कंपकंपी के साथ, न ही संयम और सतर्कता के साथ अर्पति की जाती हैं। यदकिोई राजा या कसिी अन्य व्यक्तकिे पास जाते समय हर कोई भय और कांपते हुए तथा पूर्ण ध्यान के साथ अपनी याचना प्रस्तुत करता है, तो क्या हमें और भी अधकि, सभी का प्रभु परमेश्वर और राजाओं के राजा तथा प्रभुओं के प्रभु मसीह के सामने, उसी प्रकार खड़े होकर, उसी तरह अपनी प्रार्थनाएँ और वनितीयाँ उन्हें अर्पति नहीं करनी चाहए? हमारे परमेश्वर की महमिा युगानुयुग होती रहे। आमीन।

४. भक्षिु इवाग्रयिस: उपमाओं पर ३३ अध्याय

1. पीलयिा आत्मा की एक हानकिारक अवस्था है, जसिमें वह ईश्वर और सभी सृष्टकिो गलत रूप में देखती है।

2. आत्म-नरीक्षण तर्कसंगत स्वभाव का एक दोष है, जसिके द्वारा यह सद्गुण और ईश्वर के ज्ञान के प्रतअिडगि हो जाता है।

3. गैंग्रीन क्रोध की सूजन और उतेजना है, जो आत्मा के तर्कशील भाग को पीड़ति करती है।

4. अंधापन मन का अज्ञान है, जो सक्रयि सद्गुणों या वास्तवकिता के ज्ञान की ओर कोई प्रयास नहीं करता।

5. पक्षाघात सक्रयि सद्गुणों के संबंध में तर्कशील आत्मा की अचलता, या सुस्ती है।

6. शथिलिता उपेक्षा के कारण तर्कशील आत्मा की ढलिाई है, जसिमें यह आध्यात्मकि शक्षिा के शब्दों को आदतन अस्वीकार करती है।

7. सुन्नता तर्कशील आत्मा का पक्षाघात है, जसिके द्वारा वह उन सद्गुणों को अस्वीकार कर देती है जनिके माध्यम से मसीह हमारे भीतर उपस्थति होते हैं।

8. कोढ़ तर्कशील आत्मा का अविश्वास है, जिसमें वह विश्वास तक नहीं पहुँचती, भले ही वह, मानो, शब्दों की सच्चाई को महसूस कर रही हो।

९. बेहोशी तर्कशील आत्मा की उस प्रवृत्ति को कहते हैं, जिसमें वह सद्गुण और ईश्वर के ज्ञान में प्रगति करने के बाद दुष्टता की ओर लौट जाती है।

10. संमर्दन तर्कशील आत्मा की एक दुष्ट अवस्था है, जिसमें वह सद्गुणों से केवल भलाई के लिए नहीं, बल्कि किसी अन्य कारण से चिपकी रहती है।

11. बहती नाक वह गुण की हानि है जिसके द्वारा मसीह की सुगंध को अनुभव किया जाता था।

12. बहरापन तर्कशील आत्मा का कठोर हो जाना है, जिसके द्वारा वह आध्यात्मिक शिक्षा से दूर भागती है।

13. मोतियाबिंद आध्यात्मिक चिंतन की अवस्था से पतन है, या अस्तित्व का एक गलत दृष्टिकोण अपनाना है।

14. हकलाना तर्कशील आत्मा की एक पीड़ा है, जिसमें, आकस्मिक घटनाओं से भटककर, यह सभी बातों में ईश्वर का धन्यवाद करने में असमर्थ हो जाती है।

15. लंगड़ापन तर्कशील आत्मा की सच्चे सद्गुण का अभ्यास करने में असमर्थता है।

१६. हाइड्रोप्स आत्मा का तर्कहीन रूप से मार्ग से भटक जाना है, जब उसकी सद्गुणों को दबा दिया जाता है, और उसमें बुराई तथा अज्ञानता का राज होता है।

17. चींटी एक मेहनती प्राणी है, जो इस युग में रहते हुए भविष्य के लिए भोजन तैयार करती है।

18. हिरीग्रिलिस (सूअरों की एक नस्ल) अशुद्ध मूर्तिपूजक हैं जिन्होंने हमारे उद्धारकर्ता मसीह की आज्ञाओं को स्वीकार किया है।

19. टिड्डियाँ बुद्धिमान आत्माएँ हैं जिन्हें मृत्यु स्पर्श नहीं करती और जो बीजों का आहार लेती हैं (शायद: मृत्यु से न डरते हुए, वे सांसारिक आशीर्वादों का आनंद लेती हैं)।

20. अस्कालावोतिस (एक प्रकार की छिपकली जो दीवारों और छतों पर स्वतंत्र रूप से दौड़ती है) एक व्यावहारिक मस्तिष्क है, जो सद्गुणों पर निर्भर होकर, दिव्य शक्तियों के ज्ञान के बीच उड़ान भरता है।

21. सिंहों का स्किमैन (एक शेर का बच्चा) एक निर्लिप्त व्यक्ति है जिसने अपने भीतर निवास करने वाले पशुओं (वासनाओं) पर विजय प्राप्त की है।

22. कोचेत एक आध्यात्मिक व्यक्ति है, जो ज्ञान से परिपूर्ण है, और जो अन्य आत्माओं को बुद्धिमान सूर्य से आने वाले दिन की घोषणा करता है।

23. हिरण एक सक्रिय व्यक्ति है जो अपने अव्यवस्थित विचारों पर सही ढंग से शासन करता है।

24. जोंक एक अशुद्ध शक्ति है जो तर्कशील आत्माओं से धर्म का रक्त चूसती है।

25. नरक अज्ञानता का अंधकार है जो किसी तर्कशील प्राणी को ईश्वर की दृष्टि खोने के बाद घेर लेता है।

26. पत्नी मूर्खता है, जो तर्कशील आत्माओं को अशुद्धि में डुबो देती है।

27. पृथ्वी एक दुष्ट राज्य है, जो दुष्टता और अराजकता से मिलकर बना है।

28. आग वह बुराई है जो तर्कशील प्राणियों के भीतर के दैवीय गुणों को नष्ट करती है।

29. जल मिथ्या ज्ञान है, जो सच्चे ज्ञान को बुझा देता है।

30. उपहास करने वाली आँख एक अशुद्ध शक्ति है जो ईश्वर के ज्ञान का उपहास करती है और जो कुछ भी अस्तित्व में है उसमें ईश्वर की बुद्धिमत्ता का अपमान करती है।

31. कौवे पवित्र शक्तियाँ हैं जो बुराई को नष्ट करती हैं।

32. गहरे गर्त तर्कशील आत्माएँ हैं, जो अज्ञान और बुराई से तबाह हो गई हैं।

33. बाज के बच्चे पवित्र शक्तियाँ हैं जिन्हें अशुद्ध राक्षसों का संहार करने का कार्य सौंपा गया है।

5. आध्यात्मिक जीवन पर उनके कथन, वर्णानुक्रम में

1. जो सम्मान चाहता है, उसके लिए सम्मान पाने वाले कार्य करना अनुचित है।

2. क्या आप ईश्वर को जानना चाहते हैं? पहले स्वयं को जानें।

3. एक सच्चा मित्र वह है जो सुखद घटनाओं की खबर साझा करने में शीघ्रता करता है।

4. नीच कर्म करते हुए स्वयं की बहुत ऊँची कल्पना करना पूरी तरह से असंगत है।

5. हर मामले में, अहंकार आत्म-ज्ञान में बाधा डालता है।

6. मूर्ख जीवन का दानव हेगेमोन (शासक) है।

7. आत्मा की महानता उसके अच्छे स्वभाव में प्रकट होती है।

8. ईश्वर-भयभीत व्यक्ति वह है जो स्वयं का खंडन नहीं करता (जो तर्कसंगत प्रकृति की मांगों के अनुसार जीता है)।

9. ईश्वर का मंदिर एक निर्दोष व्यक्ति है।

10. लालच का सबसे बुरा रूप है विलासी जीवन।

11. जो कहना चाहिए, वह कहो और जब कहना चाहिए, तब कहो। और तुम वह नहीं सुनोगे जो कहना नहीं चाहिए।

12. सबसे बड़ा धन एक वफादार मित्र है।

13. आत्मा की बीमारी व्यर्थ का स्वभाव है।

14. परदेशी और दरिद्र ईश्वर की नेत्र-औषधि हैं (प्रकाशितवाक्य 3:18)। *'अपनी आँखों पर नेत्र-औषधि लगाओ, ताकि तुम देखो।'* नेत्र-औषधि की आवश्यकता में लोगों के प्रति दिया है।

15. जो उनका स्वागत करता है, वह शीघ्र ही स्पष्ट देखेगा।

16. सभी के प्रति दान करना अच्छा है, लेकिन विशेष रूप से उन लोगों के प्रति जो चुका नहीं सकते।

17. एक सत्यवादी वक्ता ठंडे पानी का गिलास है।

18. पवित्रता और आत्मा की नम्रता एक स्वरूपधारी (cherub) के समान हैं।

19. वृद्धावस्था में सम्मान, वृद्धावस्था से पहले की परिश्रम का प्रमाण है।

20. युवावस्था में विवेक वृद्धावस्था में सम्मान की गारंटी है।

21. आत्मा का ऊपरी कक्ष ही सच्चा चिंतन है।

22. यदि आप उस चीज़ से प्रेम करते हैं जिसे आपको नहीं करना चाहिए, तो आप उससे प्रेम नहीं करेंगे जिसे आपको करना चाहिए।

23. एक (नकली) दोस्त से तो नकली सोना स्वीकार करना बेहतर है।

24. ईश्वर के समक्ष पवित्र आत्मा स्वयं ईश्वर है।

25. उस स्वार्थी आत्मा का विनाश हो जो सभी से घृणा करती है!

6. उसी लेखक के अन्य कथन

1. प्रेम की शुरुआत 'यपोलेफसि डोक्सेस' है – एक-दूसरे का सम्मान करना (या एक-दूसरे के बारे में अच्छा विचार रखना, या दूसरे के उत्कृष्ट गुणों को पहचानना)।

2. नम्रता और प्रेम में धनी होना अच्छा है।

3. एक गर्वपूर्ण विचार – एक सद्गुण की साँस।

4. दान से मार्ग सुगम बनता है।

5. एक अन्यायपूर्ण न्यायाधीश की अंतरात्मा कलंकित होती है।

6. कामुक वासनाओं का दास होना शर्मनाक है।

7. यदि आप दुख से मुक्त होना चाहते हैं, तो ईश्वर को प्रसन्न करने का प्रयास करें।

8. ईश्वर उन लोगों की परवाह करता है जो अपनी अच्छी देखभाल करते हैं।

9. एक पवित्र हृदय चिंतन के लिए एक आश्रय है।

10. यदि आप जानना चाहते हैं कि आप कौन हैं, तो यह न देखें कि आप क्या बन गए हैं, बल्कि यह देखें कि आप शुरुआत में कैसे बनाए गए थे।

11. एक घमंडी आत्मा एक सूखा कुआँ है।

12. एक घमंडी आत्मा लुटेरों का अड्डा है; यह शिक्षा की वाणी को सहन नहीं कर सकती।

13. एक सच्चे मनुष्य की सबसे बड़ी भूल शास्त्रों को न जानना है।

14. यदि आप परमेश्वर का भय मानते हैं, तो आँसुओं के द्वारा सीखें।

15. आत्मा का विनम्रता एक अविनाशी हथियार है।

16. एक धर्मी मनुष्य स्वर्ग का वृक्ष है।

17. यीशु मसीह जीवन का वृक्ष हैं। उनका सही उपयोग करो, और तुम कभी नहीं मरोगे।

18. सच्चे गरीबों को दान दो, और तुम मसीह का स्वाद चखोगे।

19. मसीह के शरीर में भाग लेना ही सच्ची शक्ति है।
20. यदि आप मसीह से प्रेम करते हैं, तो उनके आज्ञाओं को रखना न भूलें।
21. क्योंकि इसी से पहचाना जाता है कि परमेश्वर के बाद कौन भलाई करने वाला है।
22. परमेश्वर में मित्र सत्य के वचनों से मधु और दूध बहाता है।
23. एक लापरवाह आत्मा को ऐसा मित्र नहीं मिलेगा।
24. एक वासनापूर्ण मन एक क्रूर तानाशाह है।
25. सत्य के विषय में चुप रहना सोने को मिट्टी में गाड़ देने के समान है
26. जो परमेश्वर से डरता है, वह सब कुछ परमेश्वर के अनुसार करता है।

7. आठ विचारों पर, अनातोलीयस को

1. आठ मुख्य विचार हैं जिनसे सभी अन्य विचार उत्पन्न होते हैं। पहला है अतिभिक्षण, उसके बाद व्यभिचार; तीसरा है लोभ; चौथा है शोक; पाँचवाँ है क्रोध; छठा है निराशा; सातवाँ है अहंकार; आठवाँ है घमंड। ये विचार आत्मा को परेशान करते हैं या नहीं, यह हम पर निर्भर नहीं करता, लेकिन वे हमारे भीतर लंबे समय तक रहते हैं या नहीं, वे हमारे भावों को गति देते हैं या नहीं – यह हम पर निर्भर करता है।

२. अतिभिक्षण का विचार संन्यासी को यथाशीघ्र अपना तपस्वी जीवन त्यागने के लिए प्रेरित करता है, और वह पेट, यकृत या प्लीहा की बीमारियों, सूजन या किसी अन्य दीर्घकालिक बीमारी, चिकित्सा सामग्री की कमी और डॉक्टरों की कमी की कल्पनाएँ उसके मन में उकेरता है। साथ ही, यह उन कुछ भाइयों को भी याद दिलाता है जो वास्तव में ऐसी ही बीमारियों से पीड़ित रहे हैं। कभी-कभी ऐसा होता है कि शत्रु पीड़ित भाइयों के मन में यह विचार डालता है कि वे उपवास करने वालों के पास जाएँ और उन्हें बताएं कि उनके साथ क्या हुआ है, और यह भी जोड़ता है कि यह अत्यधिक कठोर तपस्या के कारण हुआ है।

३. व्यभिचार का दैत्य कामुक वासना को भड़काता है और तपस्या करने वालों पर हिंसक रूप से हमला करता है, ताकि वे यह सोचकर अपनी तपस्या छोड़ दें कि इससे उन्हें कोई लाभ नहीं हो रहा है। आत्मा को कलंकित करके, वह उसे ऐसे कार्यों के लिए मजबूर करता है, और ऐसा प्रतीत कराता है मानो वह कुछ शब्द बोल और सुन रही हो, जैसे कि वह कृत्य स्वयं उसकी आँखों के सामने हो रहा हो।

४. लालच का अर्थ है वृद्धावस्था, हाथों से काम करने में असमर्थता, भूख, बीमारी, गरीबी का दुख, और अपनी शारीरिक आवश्यकताओं के लिए दूसरों से आवश्यक चीजें स्वीकार करने की कठिनाई।

5. दुख कभी-कभी वांछनीय वस्तु की प्राप्ति न होने से उत्पन्न होता है, जबकि अन्य समयों में यह क्रोध के साथ आता है। जब यह वांछनीय वस्तु की प्राप्ति न होने से उत्पन्न होता है, तो यह इस प्रकार होता है: कुछ विचार पहले से ही मन में आते हैं और आत्मा को घर, प्रियजनों और अपने पूर्व जीवन की याद दिलाते हैं। जब वे देखते हैं कि वह विरोध नहीं करती बल्कि उनका अनुसरण करती है, और उसका मन उन विचारों के सुखों में मग्न हो जाता है, तो, उसके को पकड़कर, वे उसे दुख में डुबो देते हैं—क्योंकि ये वस्तुएँ अस्तित्व में नहीं हैं और क्योंकि, जीवन के स्थापित क्रम के अनुसार, वे संभवतःअस्तित्व में नहीं हो सकतीं। और बेचारा आत्मा—जितनी तीव्रता से उसने अपने प्रारंभिक विचारों को स्वयं समर्पित किया था, उतनी ही अधिक वह बाद वाले विचारों से चकनाचूर हो जाता है।

६. क्रोध सभी भावों में सबसे तीव्र है। यह तुरंत प्रकट होता है और उस व्यक्ति के विरुद्ध भड़क उठता है जिसने अन्याय किया है, या ऐसा प्रतीत होता है कि उसने अन्याय किया है। यह आत्मा को और अधिक कटु बना देता है; विशेष रूप से प्रार्थना के दौरान, यह मन पर कब्जा कर लेता है, और जिसने दुख पहुँचाया है, उसका चेहरा स्पष्ट रूप से सामने लाता है। ऐसा होता है कि, आत्मा में जड़ जमा लेने और शत्रुता में बदल जाने के बाद, यह कभी-कभी रात की चिंताएं, शारीरिक पीड़ा, मृत्यु का भय, और विषैले सरपटों और जानवरों के हमले पैदा करता है। ये चारों घटनाएं, जो शत्रुता के निर्माण से उत्पन्न होती हैं, कई विचारों के साथ होती हैं, जैसा कि कोई भी पर्यवेक्षक पाएगा।

७. निराशा का दैत्य, जिसे 'दोपहर का दैत्य' (भजन संहिता ९०:६) भी कहा जाता है, सभी दैत्यों में सबसे दुखद है। यह चौथे घंटे (जो हमारी गणना के अनुसार सुबह दस बजे होता है) के आसपास भिक्षु पर आक्रमण करता है और आठवें घंटे (दोपहर के दो बजे) तक उसकी आत्मा को पीड़ित करता है, और शुरुआत में उसे यह देखकर अप्रसन्न होने के लिए मजबूर करता है कि सूरज धीरे-धीरे चलता है, या बिल्कुल भी नहीं चलता, और दिन पचास घंटे जितना लंबा प्रतीत होता है। फिर वह उसे समय-समय पर खिड़की से बाहर झाँकने, या यहाँ तक कि अपनी कोठरी से बाहर कदम रखने के लिए मजबूर करता है – सूरज को देखने, यह देखने के लिए कि नौ बजने में कितना समय बाकी है; और वह उसे यह देखने के लिए इधर-उधर झाँकने के लिए प्रेरित करने में कभी चूकता नहीं कि क्या कोई भाई आसपास है। साथ ही,

वह उसमें उस स्थान और स्वयं जीवन जीने के तरीके के प्रति और अपने शारीरिक श्रम के प्रति रोष जगाता है, और यह भी जोड़ता है कि भाइयों का प्रेम सूख गया है और उसे सांत्वना देने वाला कोई नहीं है। यदि उन दिनों, किसी ने भिक्षु को ठेस पहुँचाई हो, तो राक्षस उसके रोष को बढ़ाने के लिए यह भी याद दिलाता है। फिर यह उसमें अन्य स्थानों की लालसा जगाता है जहाँ उसकी ज़रूरतों को पूरा करने के लिए आवश्यक चीज़ें पाना आसान हो, और वह एक ऐसा व्यवसाय अपनाए जो कम कठिन लेकिन अधिक लाभदायक हो। इसके साथ ही यह यह भी जोड़ता है कि प्रभु को प्रसन्न करना किसी के स्थान पर निर्भर नहीं करता; ईश्वर की पूजा कहीं भी की जा सकती है। यह इसे उसके परिवार और पूर्व संतोष की यादों से जोड़ता है, साथ ही लंबी उम्र की भविष्यवाणी करता है, तपस्या की कठिनाइयों की तस्वीर पेश करता है, और हर तरह की तरकीबें अपनाता है ताकि भिक्षु अंततःअपनी कोठरी छोड़कर तपस्या के मार्ग से भाग जाए। एक राक्षस दूसरे के तुरंत बाद नहीं आता। लेकिन जो कोई भी लड़ता है और विजयी होता है, वह इस संघर्ष के बाद, शांति की एक निश्चित अवस्था का अनुभव करेगा, और आत्मा अकथनीय आनंद से भर जाएगी।

८. व्यर्थता का विचार सभी में सबसे सूक्ष्म है। यह सदाचारी जीवन जीने वालों के सामने प्रकट होता है और उनके कर्मों का प्रचार करना शुरू कर देता है तथा लोगों से उनकी प्रशंसा इकट्ठा करता है, यह दिखाते हुए कि कैसे भगाए गए राक्षस चिल्लाते हैं, कैसे महिलाएं चंगी होती हैं, कैसे लोग उसके वस्त्रों को छूने के लिए धक्का-मुक्की करते हैं; अंत में, यह उसके लिए पुरोहित पद की भविष्यवाणी करता है, उसे उन लोगों के द्वार तक ले जाता है जो उसे खोज रहे होते हैं, जो उसकी मनाही पर, उसकी इच्छा के विरुद्ध उसे बाँधकर ले जाते हैं – और इस प्रकार, उसके भीतर व्यर्थ की आशाएँ जगाकर, वह चला जाता है, और उसे या तो घमंड के दैत्य या दुख के दैत्य द्वारा और अधिक प्रलोभित होने के लिए छोड़ देता है, जो तुरंत ही उसमें उन आशाओं के विपरीत विचार डाल देता है। कभी-कभी ऐसा होता है कि वह इस आदमी को—जो हाल तक एक सम्मानित और पवित्र पुरोहित था—व्यभिचार के दैत्य के हवाले कर देता है।

९. अहंकार का दैत्य आत्मा के सबसे विनाशकारी पतन का कारण है। वह उसमें ईश्वर को अपना सहायक मानने से इनकार करने का भाव भर देता है, बल्कि वह अपनी धार्मिकता का श्रेय स्वयं को देता है, और अपने भाइयों को मूर्ख समझता है, क्योंकि हर कोई उसके बारे में एक जैसा नहीं सोचता। अहंकार के बाद क्रोध और दुख आते हैं, और फिर परम बुराई - मन का विक्षिप्त होना और पागलपन, और हवा में कई राक्षसों का दर्शन।

८. उसके अपने विचार, जो आठ विचारों पर ग्रंथ से जुड़े हैं

1. पाँच ऐसे अभ्यास हैं जिनके द्वारा कोई व्यक्ति ईश्वर की कृपा प्राप्त कर सकता है। पहला है सच्ची प्रार्थना; दूसरा, भजन गाना; तीसरा, पवित्र शास्त्रों का पाठ; चौथा, अपने पापों, मृत्यु और अंतिम न्याय का पश्चातापी स्मरण; और पाँचवाँ, शारीरिक श्रम।

2. यदि आप देहधारी होकर ईश्वर की सेवा करना चाहते हैं, जैसे अदेह प्राणी करते हैं, तो अपने हृदय में प्रार्थना को छिपाए रखने के लिए अथक प्रयास करें। क्योंकि इस प्रकार आपकी आत्मा मृत्यु से पहले ही स्वर्गदूतों के सदृश हो जाएगी।

3. जैसे ही आत्मा शरीर से विदा हो जाती है, हमारा शरीर मृत और दुर्गंधित हो जाता है, वैसे ही वह आत्मा भी मृत और दुर्गंधित होती है जिसमें प्रार्थना का अभाव होता है। लेकिन यह कि प्रार्थना की अनुपस्थिति को किसी भी मृत्यु से अधिक कड़वी माना जाना चाहिए, यह हमें दानियेल भविष्यवक्ता द्वारा स्पष्ट रूप से सिखाया गया है, जो किसी भी घड़ी प्रार्थना से वंचित रहने के बजाय मरने के लिए तैयार थे। मनुष्य को सांस लेने से भी अधिक बार ईश्वर को याद करना चाहिए।

4. हर प्रेरणा के साथ यीशु के नाम का गंभीर स्मरण और मृत्यु पर विनम्र मनन करें। ये दोनों कर्म आत्मा को महान लाभ पहुँचाते हैं।

5. क्या आप चाहते हैं कि ईश्वर आपको जाने? सुनिश्चित करें कि आप लोगों के बीच यथासंभव अज्ञात रहें। यदि आप हमेशा याद रखें कि ईश्वर आपके हर कर्म, आपके मन और शरीर में होने वाली हर बात का साक्षी है, तो आप किसी भी मामले में पाप नहीं करेंगे और ईश्वर आपका साथी होगा।

6. दूसरों के लिए अच्छे काम करने से बढ़कर कोई भी चीज़ मनुष्य को ईश्वर के समान नहीं बनाती है। लेकिन अच्छे काम करते समय, इस बात का पूरा ध्यान रखना चाहिए कि उन्हें आत्म-प्रचार का साधन न बना दिया जाए।

7. अंततः; जो आपको ईश्वर के योग्य बनाएगा, वह यह है कि आप उनके अनुरूप कुछ भी अयोग्य न करें।

८. आप परम महिमामय रूप से ईश्वर का सम्मान तब करेंगे, जब आप अपने सद्गुणों के माध्यम से अपनी आत्मा पर उनकी छवि अंकित करेंगे।

९. जब लोग ईश्वर के करीब आते हैं तो वे बेहतर बन जाते हैं।

10. एक बुद्धिमान व्यक्ति जो ईश्वर का सम्मान और पूजा करता है, उसे ईश्वर पहचानते हैं। इसलिए, यदि वे सभी लोगों के लिए अज्ञात ही रहें तो भी वे थोड़ा भी परेशान नहीं होते। विवेक का कार्य आत्मा के उस भाग को उत्तेजित करने में निहित है जहाँ क्रोध निवास करता है, ताकि एक आंतरिक संघर्ष किया जा सके। बुद्धिमित्ता का कार्य मन को निरंतर, चौकस सतर्कता के लिए प्रेरित करने में निहित है। सत्य का कार्य उस भाग को, जिसमें इच्छा निवास करती है, केवल सद्गुण और ईश्वर की ओर निर्देशित करना है। अंत में, साहस का कार्य पाँचों इंद्रियों को नियंत्रित करना है और हमारे आंतरिक स्वरूप—अर्थात् आत्मा—या हमारे बाहरी स्वरूप—अर्थात् शरीर—को उनके माध्यम से कलंकित होने न देना है।

11. आत्मा एक जीवित, सरल, अदेह पदार्थ है, जो शारीरिक आँखों से अदृश्य है, साथ ही अमर और बुद्धि तथा विवेक से युक्त है। जैसे आँख शरीर के लिए है, वैसे ही बुद्धि आत्मा के लिए है।

12. धरती पर सभी तर्कशील प्राणियों में से, कुछ लड़ते हैं, अन्य रक्षा करते हैं, और कुछ आक्रमण करते हैं। मनुष्य लड़ते हैं, ईश्वर के स्वर्गदूत रक्षा करते हैं, और अशुद्ध शक्तियाँ आक्रमण करती हैं। लेकिन यह रक्षकों की किसी कमी के कारण नहीं है, न ही हमलावरों की ताकत की किसी अधिकता के कारण है, बल्कि यह उन लोगों की लापरवाही के कारण है जो संघर्ष करते हैं कि दिव्य चीजों और स्वयं ईश्वर का ज्ञान हमारे भीतर स्थापित नहीं होता है।

13. बुराई, सख्ती से कहें तो, कोई पदार्थ नहीं है, बल्कि भलाई की कमी है: ठीक वैसे ही जैसे अँधेरा प्रकाश की अनुपस्थिति के सिवा और कुछ नहीं है।

14. सादगी बहुत सतर्क या दूरदर्शी नहीं होती, और जो बुराई से मुक्त और उससे सुरक्षित है, वह उस पर संदेह नहीं करता।

15. वास्तव में, दुराचार निरर्थक है, और कोई भी ऐसा उपाय नहीं सोच सकता जिससे दुराचारियों को होश में लाया जा सके।

16. शुद्ध और धन्य आत्माएँ अद्भुत रूप से सूक्ष्मदर्शी होती हैं; वे तुरंत शैतान को पहचान लेती हैं और उसे भगा देती हैं, भले ही वह अन्यथा अपने हमलों में बहुत चालाक और अत्यंत दुर्भावनापूर्ण हो।

17. देह में आत्म-त्याग से बढ़कर परमेश्वर को कुछ भी प्रसन्न नहीं करता।

18. पवित्र पिताओं में से एक ने कहा कि जो कोई भी कठोर और कठिन संन्यासी जीवन को अपनाने में असमर्थ है, वह अन्य साधनों से मोक्ष प्राप्त कर सकता है। यदि उनका भिक्षुओं में विश्वास है, वे उन्हें सांत्वना देते हैं और उनकी आवश्यकताओं को पूरा करते हैं, तो यह, अन्य बातों के अलावा, उनके लिए मोक्ष की ओर ले जाने वाले सबसे महत्वपूर्ण कार्यों में से एक होगा।

19. प्रार्थनापूर्ण श्रम में रात बिताओ, और तुम्हारी आत्मा को शीघ्र ही सांत्वना मिलेगी।

20. शांत मन से पठन में संलग्न रहें, ताकि आपका मन ईश्वर के अद्भुत कार्यों के चिंतन की ओर निरंतर आकर्षित हो, जैसे कि उसे किसी फैले हुए हाथ से उठाया जा रहा हो।

21. दिन में सोना शारीरिक बीमारी, या आत्मा की निराशा, या उसकी लापरवाही, या अनुभवहीनता का संकेत है।

२२. हर आत्मा, पवित्र आत्मा की कृपा और अपनी ही मेहनत और लगन के द्वारा, निम्नलिखित गुणों को अपने भीतर एकत्रित और संयोजित कर सकती है: बुद्धिमानी से वाणी (शायद बौद्धिक संवर्धन के साथ वाक्पटुता), चिंतन के साथ कर्म, ज्ञान के साथ सद्गुण, सभी विस्मृति से मुक्त ज्ञान के साथ विश्वास; और इस तरह से कि इनमें से कोई भी गुण दूसरों से बड़ा या छोटा न हो। क्योंकि तब यह सच्चे और अच्छे ईश्वर के साथ, और केवल उसी के साथ एक हो जाता है।

23. आठ विचार हैं जिनसे हर पाप उत्पन्न होता है: एकांत जीवन जीने वालों के लिए – निराशा, व्यर्थता, अहंकार, लोभ और दुख के विचार; और दूसरों के अधिकार (मठों में) के अधीन रहने वालों के लिए – लालच, क्रोध और व्यभिचार।

९. मठों और आश्रमों में रहने वाले भाइयों के लिए निर्देश

1. हे परमेश्वर के वारिसों, परमेश्वर के वचन पर ध्यान दो! हे मसीह के सह-वारिसों, मसीह की आज्ञाओं पर ध्यान दो!

2. विश्वास प्रेम की शुरुआत है, जबकि प्रेम का अंत ईश्वर का ज्ञान है।

3. ईश्वर का भय आत्मा की रक्षा करता है, जबकि संयम उसे बलवान बनाता है।

4. मनुष्य का धैर्य आशा को जन्म देता है, और अच्छी आशा उसे गौरवान्वित करेगी।

5. जो अपना शरीर कठोर अनुशासन में रखता है, वह निर्लिप्तता प्राप्त करेगा; जो इसमें लिप्त रहता है, वह इसके कारण कष्ट भोगेगा।

6. व्यभिचार की आत्मा असंयमी शरीरों में वास करती है, जबकि पवित्रता की आत्मा पवित्र आत्माओं में वास करती है।

7. प्रेम के साथ एकांत हृदय को शुद्ध करता है, जबकि क्रोध में दूसरों से अलग होना उसे विक्षुब्ध करता है।

8. घृणा के साथ अकेले गुफाओं में छिपने से बेहतर है कि प्रेम के साथ हजारों के बीच रहना।

९. जो अपने मन में द्वेष पालता है, वह उस व्यक्ति के समान है जो भूसी में आग छिपाता है।

10. अपने शरीर को बहुत अधिक भोजन न दें, और आप बुरे सपने नहीं देखेंगे, क्योंकि जैसे पानी आग को बुझाता है, वैसे ही भूख बुरे सपनों को बुझाती है।

11. क्रोधित व्यक्ति भयभीत होता है, लेकिन नम्र व्यक्ति को कोई भय नहीं होता।

12. तेज हवा बादलों को भगा देती है, और मन में बैठी कड़वाहट आत्मा से अच्छी भावनाओं को दूर कर देती है।

13. जो अपने शत्रुओं के लिए प्रार्थना करता है, वह बुराई को याद नहीं रखता, और जो अपनी जीभ पर काबू रखता है, वह अपने पड़ोसी का अपमान नहीं करता।

14. यदि तुम्हारा भाई तुम्हें दुख पहुँचाए, तो उसे अपने घर ले आओ; उससे मिलने में संकोच न करो; अपना भोजन उसके साथ बाँटो; और ऐसा करने से तुम अपनी आत्मा को (विद्रोह से) बचाओगे, और प्रार्थना के समय तुम्हारे लिए कोई ठोकर नहीं बनेगी।

15. धनी मनुष्य ज्ञान नहीं प्राप्त कर सकता, और ऊँट सूई के छेद से नहीं निकल सकता, परन्तु परमेश्वर के लिए कुछ भी असंभव नहीं है।

16. जो धन से प्रेम करता है, वह बुद्धि नहीं देखेगा, और जो उसे संचित करता है, वह (अज्ञानता से) अंधा हो जाएगा।

17. प्रभु दीनों के तंबुओं में वास करते हैं, पर घमण्डी लोगों के घरों में शाप बढ़ेगा।

18. जो परमेश्वर की व्यवस्था को तोड़ता है, वह उसका अपमान करता है; परन्तु जो उसकी रक्षा करता है, वह अपने सृष्टिकर्ता का गौरव करता है।

19. धर्मी लोगों की आत्माओं को स्वर्गदूत ले जाते हैं, जबकि दुष्टों की आत्माओं को राक्षस पकड़ लेते हैं।

20. जहाँ पाप प्रवेश करता है, वहाँ अज्ञानता भी प्रवेश करती है; परन्तु धर्मी के हृदय ज्ञान से भरपूर होते हैं।

21. अज्ञानता के साथ धन से ज्ञान के साथ गरीबी बेहतर है।

22. सिर का सबसे बड़ा आभूषण मुकुट है; हृदय का सबसे बड़ा आभूषण ईश्वर का ज्ञान है।

23. जो दीन पर दया करता है, वह क्रोध को जड़ से उखाड़ देता है, और जो उन्हें भोजन कराता है, वह आशीषों से परिपूर्ण होगा।

24. ज्ञान नम्र हृदय में वास करता है, जबकि धैर्य का सिंहासन एक पुण्य आत्मा है।

२५. जो बार-बार प्रार्थना करता है वह प्रलोभन से बचेगा, जबकि लापरवाह का हृदय विचारों से परेशान रहेगा।

26. मदिरा में आनंद न लो, कहीं ऐसा न हो कि देह तुम्हें बहका ले।

27. अपने शरीर को अत्यधिक संतुष्ट न करो, और दुष्ट विचार तुम्हारे भीतर घट जाएँगे।

28. यह न कहो: 'आज पर्व (ईस्टर) है, मैं शराब पियूँगा', या 'कल पेंटेकोस्ट है, हम मांस खाएँगे'। क्योंकि संन्यासियों के लिए पेट भरने वाला कोई पर्व नहीं है।

29. मसीह का पासओवर पाप से (सद्गुण और पश्चाताप की ओर) पार होना है, जबकि पिंटेकोस्ट आत्मा का पुनरुत्थान है।

30. प्रभु का पर्व बुराइयों को भूलना है; परन्तु जो बुराई को याद रखता है वह विलाप से अभिभूत हो जाएगा।

31. ईश्वर का पर्व सच्चा ज्ञान है; परन्तु जो कोई झूठ और भ्रम पर ध्यान देता है, वह एक दयनीय मृत्यु पाएगा।

32. अशुद्ध आत्मा के साथ तृप्ति से शुद्ध हृदय के साथ उपवास बेहतर है।

33. जो अपने हृदय से बुरे विचारों को जड़ से उखाड़ फेंकता है, वह उस व्यक्ति के समान है जो शिशुओं को चट्टान पर पटकता है।

34. जो भिक्षु नींद से प्रेम करता है वह हर प्रकार के पाप में फँस जाएगा, लेकिन जो जागने से प्रेम करता है वह पक्षी की तरह उड़ान भरेगा।
35. अपनी जागते रहने की अवधि में व्यर्थ की बातों में न पड़ो, और न ही आध्यात्मिक वचनों को ठुकराओ, क्योंकि परमेश्वर तुम्हारे हृदय को देखता है और तुम्हारे पाप से तुम्हें निर्दोष नहीं ठहराएगा।
36. लंबी नींद प्रलोभन लाती है, लेकिन जागरण उन्हें दूर भगा देता है।
37. अत्यधिक नींद हृदय को कठोर बनाती है, जबकि जागरूकता मन को तीक्ष्ण करती है।
38. जैसे आग मोम को पिघलाती है, वैसे ही अच्छी निगरानी बुरे विचारों को पिघला देती है
39. फिर भी, व्यर्थ की बातों में समय बिताने से सोना बेहतर है।
40. एक दैवीय स्वप्न हृदय को प्रसन्न करता है, जबकि एक दानवी स्वप्न उसे परेशान करता है।
41. पश्चाताप और नम्रता आत्मा को पुनर्स्थापित करते हैं, जबकि दान और विनम्रता इसे मजबूत बनाते हैं।
42. हमेशा अपने स्वर्गीय पिता को याद रखें, और अंतिम न्याय को कभी न भूलें, और आपकी आत्मा पाप में नहीं पड़ेगी।
४३. यदि निराशा की भावना तुम पर हावी हो जाए, तो अपनी कोठरी न छोड़ो, और दुख के समय भटक मत जाओ (या दूसरे शब्दों में, दूर मत जाओ): क्योंकि जैसे रगड़ने से चांदी शुद्ध होती है, वैसे ही यदि तुम दृढ़ और अडिग रहोगे तो तुम्हारा हृदय भी प्रफुल्लित हो जाएगा।
४४. निराशा की आत्मा आँसू पोंछ देती है, जबकि दुख की आत्मा प्रार्थना को दबा देती है।
४५. जैसे आप अपनी छाती में बिच्छू को नहीं रखेंगे, वैसे ही अपने हृदय में बुरे विचारों को न पालें।
46. जैसे सोने और चांदी की परीक्षा आग से होती है, वैसे ही संन्यासी के हृदय की परीक्षा प्रलोभन से होती है।
४७. जो अपनी इच्छित महिमा प्राप्त नहीं करता वह दुखी हो जाता है, जबकि जो उसे प्राप्त कर लेता है वह अहंकारी हो जाता है।
४८. अपने हृदय में अहंकार को प्रवेश न करने दो, और ईश्वर के समक्ष यह न कहो: 'मैं यह स्वयं करने में सक्षम हूँ'—अन्यथा प्रभु तुम्हारी आत्मा को त्याग देंगे और दुष्ट राक्षस उसे वश में कर लेंगे। तब तुम्हारे आकाशीय शत्रु तुम पर हावी हो जाएँगे, और रात के भय तुम्हें घेर लेंगे।
४९. एक शुद्ध आत्मा एक चुनी हुई पात्र है; एक अशुद्ध आत्मा, हालांकि, दुखों से भर जाएगी।
50. दूध के बिना बच्चा नहीं छूटता, और वैराग्य के बिना आत्मा आनंदित नहीं हो सकती।
51. त्याग प्रेम से पहले आता है, जबकि ज्ञान से पहले प्रेम आता है।
52. ईश्वर का भय ज्ञान को जन्म देता है, जबकि मसीह में विश्वास ईश्वर का भय प्रदान करता है।
53. एक अग्नि-बाण आत्मा को जला देता है, लेकिन एक सज्जन इसे बुझा देता है।
54. हे भिक्षु, अपने पिता के वचन सुन, और उसकी शिक्षा को व्यर्थ न कर। इस प्रकार तू दुष्ट विचारों से बच जाएगा, और दुष्ट राक्षस तुझ पर विजय नहीं पाएंगे।
55. एक दुष्ट प्रबंधक (मठ में) भाइयों की आत्माओं को कष्ट पहुँचाता है, और जो कोई मठ की संपत्ति का दुरुपयोग करता है, वह पवित्रता का उल्लंघन करता है।
56. जो अपने भाई की निंदा करता है, वह नष्ट हो जाएगा, और जो दरिद्रों से घृणा करता है, वह प्रकाश नहीं देखेगा।
५७. यह न कहो: 'आज मैं ठहरूँगा, पर कल (मठ) छोड़ दूँगा', क्योंकि यह तुमने बुद्धि से नहीं सोचा है।
58. एक भटकता हुआ भिक्षु झूठ गढ़ता है, और (वापस आकर) वह अपने वरिष्ठ को धोखा देता है।
५९. जो उत्तम वस्त्र पहनता है और अपना पेट भरता है, वह लज्जास्पद विचारों को पालता है और संतों की संगति में प्रवेश नहीं करेगा।
60. जब तुम गाँव में जाओ, तो स्त्रियों के पास मत जाओ और उनसे बातचीत मत करो: अन्यथा, एक काँटा निगलने वाली मछली की तरह, तुम्हारी आत्मा उनके पीछे खिंच जाएगी।
61. एक उदार भिक्षु वैराग्य प्राप्त करेगा; लेकिन जो अपने भाइयों को दुखी करता है, उससे घृणा की जाएगी।
62. प्रभु नम्र संन्यासी से प्रेम करते हैं, परन्तु झगड़ालू को स्वयं से दूर भगा देते हैं।
63. यदि कोई भाई उदास हो, तो उसे सांत्वना दो; और यदि वह दुखी हो, तो उसके साथ दुख मनाओ: ऐसा करने से, तुम उसके हृदय को प्रसन्न करोगे और स्वर्ग में अपने लिए एक महान खजाना इकट्ठा करोगे।

64. अपने वरिष्ठ के विरुद्ध कही गई बातों को कान मत लगाओ, और जो उसका सम्मान नहीं करता, उसके मन को उसके विरुद्ध भड़काओ मत, कहीं ऐसा न हो कि प्रभु तुम्हारे कर्मों से क्रोधित हो जाएँ और तुम्हें जीवन की पुस्तक से मिटा दें।

65. एक आलसी भिक्षु को बहुत हानि होगी, और यदि वह अपनी आदतों पर बना रहता है, तो वह अपना भिक्षु वेश भी त्याग देगा।

66. दोहरे स्वभाव वाला भिक्षु भाइयों में कलह पैदा करता है, जबकि एक वफादार व्यक्ति शांति लाता है।

67. जो अपने बल पर भरोसा करता है वह गिर जाएगा, परन्तु जो अपना आप नीचा करता है वह ऊँचा किया जाएगा।

68. पेट की तृप्ति के वश में न हो, और रात को नींद तुझ पर हावी न होगी: इस प्रकार तू शीघ्र ही शुद्ध हो जाएगा, और प्रभु का आत्मा तुझ पर उतरेगा।

69. भजन गाना क्रोध को शांत करता है; और उदारता भय को दूर भगाती है।

70. जो भोजों में बार-बार जाता है, उसकी रोशनी फीकी पड़ जाएगी, और अंधकार उसकी आत्मा पर छा जाएगा।

71. रोटी को तौलकर खाओ और पानी को नापकर पीओ, और व्यभिचार की आत्मा तुमसे दूर भाग जाएगी।

72. अपने भाई के लिए फंदा न लगाओ, और न ही उसकी गिरावट पर आनंद मनाओ, क्योंकि यहोवा तुम्हारा हृदय देखता है और तुम्हारी मृत्यु के दिन तुम्हें इसका हिसाब चुकाना होगा।

73. जो कोई भी सामान्य लोगों को गुमराह करता है, वह दंड से नहीं बचेगा, और जो कोई भी उनका अपमान करता है, वह अपने ही नाम का अपमान करता है।

74. जो कोई भी शांति से प्रेम करता है, वह उसके शहद का स्वाद चखेगा, और जो कोई भी इसे बढ़ाता है, वह शहद से भर जाएगा।

75. ईश्वर का सम्मान करो और तुम अद्रव्य को जानोगे; उसकी सेवा करो, और वह तुम्हें युगों की बुद्धि प्रकट करेगा।

76. मसीह का शरीर सक्रिय सद्गुणों से मिलकर बना है: जो कोई भी इनका सेवन करता है, वह निर्लिप्त हो जाएगा।

77. मसीह का लहू कर्मों की विवेकबुद्धि है; जो इसे पीता है वह इससे प्रबुद्ध होगा।

78. प्रभु का वक्षस्थल ईश्वर का ज्ञान है: जो उस पर विश्राम करता है, वह धर्मशास्त्री बन जाएगा।

७९. जो ज्ञान से परिपूर्ण है और जो भलाई करता है, वे एक-दूसरे से मिलते हैं, और उनके बीच में प्रभु है।

80. अपने बपतिस्मा के विश्वास को न छोड़ो, और न ही आध्यात्मिक मुहर को नष्ट करो, ताकि प्रभु तुम्हारी आत्मा में वास करे और बुराई के दिनों में तुम्हारी रक्षा करे।

81. विधर्मी लोगों के वचन मृत्यु के अग्रदूत हैं; जो भी उन्हें स्वीकार करता है, वह अपनी आत्मा को नष्ट कर लेगा।

82. और अब, हे मेरे पुत्र, मेरी सुन: अविश्वासियों के द्वार के पास न जाना, और उनके फंदे पर पैर न रखना, कहीं ऐसा न हो कि तू फँस जाओ।

83. अपनी आत्मा को झूठे ज्ञान से हटा लो: मैं उनसे (जो भटक गए हैं) अक्सर बात कर चुका हूँ और उनके अँधेरे शब्दों की जाँच कर चुका हूँ, और मुझे उनमें साँप का विष मिला है। जो उन्हें स्वीकार करता है वह नाश हो जाएगा, और जो उनसे प्रेम करता है वह बुराई से भर जाएगा।

84. मैंने उनके पूर्वजों की बुद्धिमानी को देखा है, फिर भी मैंने उनके शब्दों में सत्य का कोई प्रकाश नहीं देखा है।

85. परमेश्वर के मार्ग अंधकार में लिपटे हुए हैं, और उसकी नियतियाँ मन की पहुँच से परे हैं, परन्तु धर्मात्मा उन्हें जान लेगा।

10. कुंवारी कन्याओं के लिए उनकी आज्ञाएँ

1. प्रभु से प्रेम करो, और वह तुमसे प्रेम करेगा; उसकी सेवा करो, और वह तुम्हारे हृदय को प्रकाशित करेगा।

2. अपनी माता (एबिस) का सम्मान प्रभु की माता के रूप में करो, और उस व्यक्ति के सफेद बालों का अपमान मत करो जिसने तुम्हें (आत्मिक रूप से) जन्म दिया है।

3. अपनी बहनों से अपनी माता की बेटियों के रूप में प्रेम करो, और शांति के मार्ग से न भटको।

4. उगता हुआ सूरज तुम्हारे हाथों में प्रार्थना की पुस्तक पाए, और दूसरे घंटे के बाद, तुम्हारे हाथ सुई के काम में लगे रहें।

५. निरंतर प्रार्थना करो और मसीह को याद करो, जिन्होंने तुम्हें नया जन्म दिया है।

6. पुरुषों की सभाओं से बचो, कहीं ऐसा न हो कि तुम्हारी आत्मा में कोई मूर्ति बस जाए और वह तुम्हारी प्रार्थना के समय तुम्हारे लिए एक ठोकर का कारण बन जाए।

7. मसीह तुम्हारे प्रियतम हैं; अतः सभी मनुष्यों को अस्वीकार करो, और तुम्हारा जीवन दोषारोपण के लिए खुला नहीं रहेगा।

8. चिड़चिड़ाहट और क्रोध को दूर भगाओ, और तुम्हारे हृदय में कोई द्वेष जड़ न जमाए।

९. यह न कहो, 'आज मैं भोज करूँगा, और कल मैं उपवास करूँगा,' क्योंकि तुम्हें यह नहीं पता कि आने वाला दिन क्या लाएगा।

10. मांस खाना अच्छा नहीं है, और न ही शराब पीना उचित है; दोनों की अनुमति केवल बीमारों को ही है।

11. एक बेचैन कन्या उद्धार नहीं पाएगी, और जो सुख-भोग में रहती है वह अपने वधूवर को नहीं देखेगी।

12. यह न कहो, 'दासी ने मुझे दुखी किया है; मैं उससे बदला लूंगी,' क्योंकि परमेश्वर की पुत्रियों में कोई दासता नहीं है।

13. व्यर्थ की बातों पर कान न लगाओ, और व्यर्थ की बूढ़ी स्त्रियों की गपशप से दूर भागो।

14. मत देखो मदिरों के भोज को, और न जाओ सांसारिक विवाहों में: हर कन्या जो ये काम करती है, वह प्रभु के सामने अशुद्ध है।

१५. परमेश्वर का वचन बोलने के लिए अपना मुँह खोलो, और बहुत अधिक बोलने से अपने आपको रोको।

16. परमेश्वर के सामने स्वयं को नम्र करो, और उसका दाहिना हाथ तुम्हें ऊँचा उठाएगा।

17. ज़रूरत के समय गरीबों से मुंह न मोड़ो, और तेरे दीपक का तेल (संकट के समय) कभी खत्म न होगा।

18. सब कुछ प्रभु के निमित्त करो, और मानवीय महिमा की खोज न करो; क्योंकि मानवीय महिमा मैदान के फूल के समान है, परन्तु प्रभु की महिमा सदा के लिए बनी रहती है।

19. यहोवा को एक कोमल कन्या प्रिय है, परन्तु झगड़ालू कन्या उससे घृणित है।

20. आज्ञाकारी कुँवारी को अनुग्रह मिलेगा, परन्तु विद्रोही को पूरी तरह मूर्ख।

21. यहोवा कराहनेवाली कन्या को नाश करेगा, परन्तु कृतज्ञ कन्या को मृत्यु से बचाएगा।

22. हँसी अपमानजनक है, और (आँखों की) निर्लज्जता एक कलंक है; कोई भी मूर्ख स्त्री उनमें फँस जाएगी।

23. जो उत्तम वस्त्रों से स्वयं को सजाती है, वह अपनी दृष्टि की लज्जा भी खो देती है।

24. सामान्य पुरुषों और सामान्य स्त्रियों से बहुत घनिष्ठ मत बनो, कहीं वे तुम्हारा हृदय फेर दें और धर्मी लोगों की सलाह व्यर्थ कर दें।

२५. रात में आँसुओं के साथ प्रार्थना करो, ताकि कोई यह न जान सके कि तुम प्रार्थना कर रहे हो, और तुम अनुग्रह पाओगे।

26. मनोरंजक सैर-सपाटा और दूसरों के घरों में जाना आत्मा की शांति भंग करता है और उसकी दृढ़ इच्छाशक्ति को हिला देता है।

27. एक विश्वासयोग्य कुँवारी भयभीत नहीं होती, पर एक अविश्वासयोग्य कुँवारी तो अपनी ही छाया से भी डरती है।

28. जो अपनी ही बहन को तुच्छ जानती है, वह मसीह से अलग हो जाएगी।

29. यह न कहो, 'यह मेरा है, और वह तुम्हारा है,' क्योंकि मसीह यीशु में सब कुछ साझा है।

30. दूसरे के जीने के ढंग में ताक-झाँक न करो, और अपनी बहन के पतन पर आनन्द न करो।

31. ज़रूरतमंद कुँवारियों की सेवा करो, और अपने ऊँचे पद के कारण अपने आपको बड़ा न समझो।

32. परमेश्वर की कलीसिया में, तुम्हारे होठों से कोई भी व्यर्थ बात न निकले, और किसी को भी तुच्छ न समझना, क्योंकि प्रभु तुम्हारे हृदय को जानता है और तुम्हारे सभी विचारों पर दृष्टि रखता है।

33. हर बुराई भरे विचार को अपने से दूर भगाओ, और तुम्हारे शत्रु तुम पर विजय नहीं पाएंगे।

34. अपने हृदय में गाओ, और केवल अपनी जीभ से भजन के वचन न बोलो।

35. जैसे भड़की हुई आग को बुझाना कठिन है, वैसे ही एक कुंवारी की जख्मी आत्मा को ठीक करना मुश्किल है।

36. अपनी आत्मा को दुष्ट विचारों के हवाले न करो, कहीं वे तुम्हारे हृदय को कलंकित न कर दें और तुम्हारे भीतर से शुद्ध प्रार्थना को भगा न दें।

37. दुख भारी है और निराशा सहनी कठिन है, परन्तु प्रभु के लिए आँसू उनसे भी अधिक शक्तिशाली हैं।

38. भूख और प्यास दुष्ट इच्छाओं को शांत करती हैं, जबकि धार्मिक सतर्कता मन को शुद्ध करती है।

39. क्रोध और चिड़चिड़ाहट प्रेम को दूर भगा देते हैं, जबकि रंजिश रखना व्यक्ति की प्रतिभा पर कलंक लगाता है।

40. जो अपनी बहिन की गुप्त में निंदा करती है, वह वर के कक्ष के बाहर रहेगी; वह द्वार पर पुकारेगी, पर कोई उसकी ओर ध्यान नहीं देगा।

41. निर्दयी कन्या का दीपक बुझ जाएगा, और वह अपने वर के आने का दर्शन नहीं करेगी।

42. पत्थर पर गिरी काँच की टुकड़ी टुकड़े-टुकड़े हो जाती है; इसी तरह पति से चिपकी कन्या निर्दोष नहीं रहेगी।

43. एक क्रोधित और चिड़चिड़ी कुंवारी से एक विनम्र विवाहित स्त्री बेहतर है।

44. जो हँसती है और अपने पति के शब्दों के बहकावे में आ जाती है, वह उस व्यक्ति के समान है जिसने अपने शत्रुओं को अपनी गर्दन पर फाँसी का फंदा डालने की अनुमति दे दी हो।

४५. जैसे सोने के आभूषण में मोती, वैसे ही कुँवारी अवस्था, सम्मान से घिरी हुई।

४६. वीणा के साथ शैतानी गीत आत्मा को शिथिल कर देते हैं और उसके संकल्प की दृढ़ता को कमजोर कर देते हैं; सबसे बढ़कर इसकी रक्षा करो, कहीं ऐसा न हो कि तुम दोषी पाए जाओ।

४७. उपहास में आनंद न लो, और निंदकों के साथ मत मिलो, क्योंकि प्रभु उन्हें त्याग देगा।

48. खाने-पीने में रत बहन को दोष न लगाओ, और अपनी संयम-पालन के कारण घमंड न करो; क्योंकि तुम्हें नहीं मालूम कि प्रभु ने तुम्हारे लिए क्या योजना बनाई है, और तुम में से कौन उनके सामने खड़ा होगा।

49. जो स्त्री विलाप करती है कि उसकी आँखें धुंधली हो गई हैं और उसका शरीर सूख गया है, उसे संयम में कोई आनंद नहीं मिलेगा।

50. संयम एक भारी बोझ है और पवित्रता बनाए रखना कठिन है, फिर भी स्वर्गीय वधू से मीठा कुछ भी नहीं है।

51. मैंने ऐसे पुरुष देखे हैं जो अपनी शिक्षाओं से कुंवारी लड़कियों को भ्रष्ट करते हैं और उनकी कुंवारीपन को व्यर्थ बना देते हैं।

52. परन्तु हे कन्या, परमेश्वर की कलीसिया की शिक्षा पर ध्यान दे, और कोई भी तुझे हतोत्साहित न करे।

53. ईश्वर ने स्वर्ग और पृथ्वी की रचना की और उनका पालन-पोषण करता है; कोई ऐसा स्वर्गदूत नहीं है जो पाप न कर सके, और न ही कोई राक्षस है जो स्वभाव से दुष्ट हो: ईश्वर ने दोनों को स्वतंत्र इच्छा के साथ बनाया।

54. जैसे एक मानव अमर शरीर और एक तर्कशील आत्मा से मिलकर बना होता है, वैसे ही हमारे प्रभु वास्तव में एक निर्दोष मानव के रूप में पैदा हुए, उन्होंने वास्तव में खाया, और उन्हें वास्तव में सूली पर चढ़ाया गया: वे मनुष्यों की दृष्टि में कोई भूत नहीं थे।

55. मृतकों का पुनरुत्थान होगा; यह संसार नष्ट हो जाएगा, और हमें आध्यात्मिक शरीर प्राप्त होंगे। धर्मी प्रकाश का विरासत में पाएंगे, जबकि दुष्ट अंधकार में रहेंगे।

56. कुंवारी की आँखें परमेश्वर को देखेंगी, और उसके कान उसका वचन सुनेंगे।

57. कुँवारी पवित्रता प्रभु को प्रसन्न करती है, और पवित्र कुँवारी अपने वधूवर के हाथों से एक मुकुट प्राप्त करेगी।

58. उसे विवाह का वस्त्र दिया जाएगा, और वह स्वर्ग में स्वर्गदूतों के साथ आनंद मनाएगी।

५९. उसका दीपक अखंड जलता रहेगा, और उसके दीपकदान का तेल कभी खत्म नहीं होगा; उसे शाश्वत धन-संपत्ति प्राप्त होगी और वह परमेश्वर के राज्य की वारिस होगी।

60. मसीह को याद करो, जो तुम्हारी रक्षा करते हैं, और एकसार त्रिमूर्ति को मत भूलो, जिनकी उपासना की जाती है।

11. विभिन्न दुष्ट विचारों पर, अध्याय[64]

1. सक्रिय सेवा के जीवन का विरोध करने वाले राक्षसों में, सबसे पहले हथियार उठाते हैं वे, जिन्हें कामुकता या अतिभक्षण की लालसाओं का प्रभार सौंपा गया है; वे जो हममें धन का प्रेम भरते हैं; और वे जो हमें मानवीय महिमा की खोज के लिए उकसाते हैं। बाकी सभी, उनके पीछे-पीछे चलते हुए, उन पर हमला करने की बारी लेते हैं जिन्हें उन्होंने पहले ही घायल कर दिया है। क्योंकि कोई व्यभिचार के चंगुल में तब तक नहीं पड़ सकता जब तक कि वह पहले लालच ( ) और भोग-विलास का शिकार न हो चुका हो; कोई क्रोध से तब तक पराजित नहीं हो सकता जब तक कि वह भोजन, या धन, या महिमा के लिए न खड़ा हो और संघर्ष न करे; और न ही कोई दुख के दानव से बच सकता है जब तक कि उसने इस सब में कुछ हानि न उठाई हो; और न ही कोई घमंड से बच पाएगा, जो शैतान की पहली संतान है, जब तक कि उसने *'सभी बुराइयों की जड़— धन के प्रेम'* (1 तीमु. 6:10) को न उखाड़ फेंका हो, क्योंकि, बुद्धिमान सुलैमान के शब्दों में, *'गरीबी मनुष्य को नम्र बनाती है'* (नीतिवचन 10:4), और, संक्षेप में कहें तो, कोई व्यक्ति किसी भी दानव का शिकार तब तक नहीं हो सकता जब तक कि वह पहले इन प्राथमिक दानवों से घायल न हो चुका हो। तो फिर, शैतान ने उद्धारकर्ता के सामने ये तीन विचार क्यों प्रस्तुत किए: पहला, जब उसने पत्थरों को रोटी में बदलने के लिए कहा; दूसरा, जब उसने पूरी दुनिया का वादा किया यदि वह, गिरकर, उसकी पूजा करता; और तीसरा, जब उसने उसे आश्वासन दिया कि यदि वह उसकी आज्ञा मानता, तो वह बिना किसी हानि के महिमामय हो जाएगा, इतनी ऊँचाई से खुद को फेंकने के बाद (चर्च की छत से)। लेकिन प्रभु, इन सब से ऊपर उठकर, शैतान को चले जाने का आज्ञा दी, इस प्रकार हमें यह सिखाते हुए कि जब तक हम इन तीन विचारों को तुच्छ नहीं समझते, तब तक शैतान को भगाया नहीं जा सकता।

२. सभी दैवीय विचार आत्मा में इंद्रिय वस्तुओं की छवियाँ लाते हैं, और मन, उनका छाप लेकर, उन्हें अपने भीतर ही उलट-पुलट करता रहता है। परिणामस्वरूप, विचार के विषय से ही कोई यह पहचान सकता है कि कौन-सा दानव हमारे पास आया है: उदाहरण के लिए, यदि मेरे विचारों में किसी ऐसे व्यक्ति का चेहरा आता है जिसने मुझे नुकसान पहुँचाया है या मेरा अपमान किया है, तो यह दर्शाता है कि प्रतिशोध की राक्षसी शक्ति पास आ गई है; दूसरी ओर, यदि धन या प्रसिद्धि के विचार उत्पन्न होते हैं, तो विषय-वस्तु से यह पहचानना असंभव नहीं है कि कौन हमें परेशान कर रहा है; इसी तरह, अन्य विचारों के साथ भी, उनकी विषय-वस्तु से यह निर्धारित किया जा सकता है कि कौन हमारे सामने खड़ा है और उन्हें हमारे मन में डाल रहा है। हालाँकि, मैं यह नहीं कह रहा हूँ कि इन चीज़ों की सभी यादें राक्षसों से आती हैं, क्योंकि जब कोई व्यक्ति मन को गति देता है, तो मन स्वयं आमतौर पर अतीत की छवियों को पुनःप्रस्तुत करता है; लेकिन केवल वे यादें राक्षसों से आती हैं जो साथ ही साथ चिड़चिड़ाहट या इच्छा को जगाती हैं, जो कि अस्वाभाविक है। क्योंकि ये शक्तियाँ विक्षिप्त हो जाती हैं, मन मानसिक व्यभिचार और झगड़ों में लिप्त हो जाता है, और अब वह अपने भीतर ईश्वर के विचारों को धारण करने में सक्षम नहीं रहता, उसके विधि-प्रदाता, क्योंकि यह तेज (अर्थात् ईश्वर पर निर्विघ्न ध्यान) शासक मन में तब प्रकट होता है जब प्रार्थना के दौरान सांसारिक विषयों पर घूमने वाले विचारों को दबा दिया जाता है।

3. सक्रिय जीवन पर अध्याय 63, अनातोलियस को संबोधित।

४. *'स्वप्न-दृश्यों'* पर। यह जांचने योग्य है कि कैसे राक्षस, हमारी नींद-प्रेरित कल्पनाओं में, हमारे सार्वभौम मन में छवियों को अंकित और पुनरुत्पादित करते हैं। कुछ ऐसा ही आमतौर पर मन के साथ होता है (जागते हुए भी) जब वह या तो आँखों से देखता है, या कानों से सुनता है, या किसी अन्य इंद्रिय के माध्यम से बाहर से कुछ महसूस करता है, और उसे स्मृति में रखता है; और स्मृति, शरीर के माध्यम से जो कुछ भी प्राप्त किया है उसे गति में लाकर, इन छवियों को शासक मन में लाती है। तो, मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि राक्षस (स्वप्नों में) स्मृति को गति देकर मन में छवियाँ प्रवेश कराते हैं, क्योंकि उस समय निद्रा द्वारा इंद्रियों को निष्क्रिय रखा जाता है। लेकिन फिर सवाल उठता है: वे स्मृति को गति कैसे देते हैं? क्या यह वासनाओं के माध्यम से होता है? हाँ, (यदि हम भावुक सपनों पर विचार करें), और यह इस तथ्य से स्पष्ट है कि जो लोग शुद्ध और निर्लिप्त होते हैं, वे इस प्रकार का कुछ भी अनुभव नहीं करते हैं। लेकिन स्मृति की एक सरल (निर्लिप्त) हलचल भी होती है, जो या तो हमसे या पवित्र शक्तियों से उत्पन्न होती है, जिसके माध्यम से (ऐसा लगता है कि) हम संतों से बातचीत करते हैं और उनके साथ भोजन करते हैं। हालाँकि, यह ध्यान में रखना चाहिए कि जैसे आत्मा शरीर के माध्यम से कुछ छवियों को देखती है, वैसे ही स्मृति उन्हें शरीर के बिना (यानी, या तो जुनून के साथ या उसके बिना) पुनः उत्पन्न करती है। नींद के दौरान भी यही होता है, जब शरीर विश्राम की

---

[64] यह ग्रंथ संत नीलस की रचनाओं में शामिल है। लेकिन चूँकि इनमें से कुछ अध्याय, इवाग्रियस के अन्य ग्रंथों के अध्यायों से शब्दशः समान हैं, इसलिए यह मानना तर्कसंगत है कि यह ग्रंथ, अन्य ग्रंथों की तरह, गलती से संत नीलस की रचना में शामिल हो गया था। डोब्रोतोलीउबिये के संकलनकर्ताओं ने स्पष्ट रूप से इसे इवाग्रियस के लेखों के संपूर्ण संग्रह से लिया था।

स्थिति में होता है। क्योंकि जैसे कोई प्यासा होने पर और न प्यासा होने पर दोनों समय पानी के बारे में सोच सकता है, वैसे ही कोई लालच के साथ और लालच के बिना सोने के बारे में सोच सकता है। यही अन्य वस्तुओं पर भी लागू होता है। (जागते समय और नींद दोनों में)। और जब मन को (या सोते समय अपने भीतर) ऐसे-ऐसे सपने दिखाई देते हैं, तो इस भेद में उन राक्षसों की दुष्टता को पहचानें (जो हर बात में हमारे विनाश को ध्यान में रखते हैं)। यह जानना भी आवश्यक है कि राक्षस सपने उत्पन्न करने के लिए बाहरी चीजों का उपयोग करते हैं, उदाहरण के लिए, तैरते समय लहरों की आवाज़।

५. हमारी चिड़चिड़ाहट, जब उसकी स्वाभाविक प्रवृत्ति के विपरीत तरीके से भड़काई जाती है, तो वह राक्षसों के प्रकट होने में बहुत योगदान करती है और उनकी सभी दुष्ट योजनाओं के लिए सबसे उपयोगी साबित होती है। इसीलिए उनमें से कोई भी दिन-रात इसे भड़काने का प्रयास करना बंद नहीं करता। लेकिन जब वे देखते हैं कि इसे नम्रता से नियंत्रित किया जाता है, तो वे पहले से ही किसी बहाने से इसे ढीला करने की कोशिश करते हैं, ताकि एक बार तनाव में आने पर, यह उनके पशुवत विचारों को भड़काने के प्रति संवेदनशील हो जाए। भला, चाहे न्यायसंगत कारणों से हो या अनुचित, हमें उसे भड़काने की अनुमति क्यों नहीं देनी चाहिए, ताकि हम उन लोगों के हाथों में एक खतरनाक तलवार न थमा दें जो हममें बुराई भरते हैं – जो, जैसा कि मैं जानता हूँ, कई लोग सबसे तुच्छ कारणों से करते हैं, और उचित से अधिक भड़क जाते हैं। तो मुझे बताइए, यदि आपने भोजन, धन और कीर्ति का त्याग कर दिया है, तो आप इतनी आसानी से संघर्ष की स्थिति में क्यों आ जाते हैं? आपने कुछ भी न रखने की कसम खाई है, तो फिर कुत्ते को क्यों पालते हैं? यदि वह भौंकता है और लोगों पर झपटता है, तो यह स्पष्ट है कि आप अपने भीतर कुछ छिपाकर रखते हैं और उसे बचाना चाहते हैं। मुझे यकीन है कि ऐसा व्यक्ति शुद्ध प्रार्थना से बहुत दूर है, यह जानते हुए कि क्रोध ऐसी प्रार्थना का विनाशक है। इसके अलावा , मैं हैरान हूं कि उसने संतों को कैसे भुला दिया है: दाऊद, जो पुकारता है, *'क्रोध से रुक जाओ और प्रचंड क्रोध को त्याग दो'* (भजन संहिता 36:8), और उपदेशक, जो आज्ञा देता है: *'क्रोध को अपने हृदय से दूर करो, और कपट को अपने शरीर से दूर फेंको'* (सभोपदेशक 11:10), और प्रेरित, जो हमें आज्ञा देते हैं कि हम 'हर समय और *हर स्थान में, बिना क्रोध या विवाद के पवित्र हाथ उठाएँ'* (1 तीमुथियुस 2:8)। प्राचीन रीति—प्रार्थना के दौरान कुत्तों को घर से बाहर भगाना—हमें ठीक यही सिखाती है, क्योंकि इसका अर्थ है कि प्रार्थना करने वालों में कोई क्रोध नहीं होना चाहिए। एक विधर्मी ऋषि ने तो यह भी दावा किया कि देवता पित्त या जांघ के मांस का सेवन नहीं करते, यद्यपि मुझे लगता है कि वह स्वयं यह नहीं समझता था कि वह क्या कह रहा था: क्योंकि मेरा मानना है कि पित्त क्रोध का प्रतीक है, और जांघ का मांस पशुवत वासना का। जहाँ तक इस बात का प्रश्न है कि मनुष्य को वस्त्रों या भोजन की चिंता नहीं करनी चाहिए, मुझे तो इसके बारे में लिखना भी अनावश्यक लगता है, जब उद्धारकर्ता स्वयं सुसमाचारों में इसे मना करते हैं, कहते हुए: *'अपने जीवन के विषय में चिन्ता मत करो, कि हम क्या खाएंगे, या क्या पिएंगे, या क्या पहनेंगे'* (मत्ती 6:25)। क्योंकि यह अविश्वासियों, अर्थात् मूर्तिपूजकों के लिए उपयुक्त है, जो प्रभु की व्यवस्था को अस्वीकार करते हैं और सृष्टिकर्ता का इनकार करते हैं, जबकि यह ईसाइयों के लिए पूरी तरह से अपरिचित होना चाहिए, जिन्होंने एक बार और हमेशा यह विश्वास कर लिया है कि एक ही अस्सारियस के लिए बेचे गए दो गौरैयों को भी पवित्र स्वर्गदूतों की देखभाल में रखा जाता है। इस बीच, अशुद्ध विचारों का अनुसरण करते हुए, राक्षसों की प्रथा है कि वे अत्यधिक चिंता के विचारों को भरें, ताकि यीशु को मन में *'निवास करने वाले'* विचारों के *'लोगों' से* भटकाया जा सके, और ताकि चिंतित विचारों द्वारा दबाया गया वचन *'बाँझ'* बना रहे (मत्ती 13:22)। उन्हें एक ओर रखकर, आइए हम *'अपनी चिंताएँ प्रभु पर* डाल *दें'* (भजन संहिता 54:23) *और 'जो हमारे पास है उससे संतुष्ट रहें'* (इब्रानियों 13:5), ताकि, संयमी जीवन जीकर और साधारण वस्त्र पहनकर, हम दिन-प्रतिदिन, व्यर्थता के इन स्रोतों को त्याग सकें। तो, जो कोई भी साधारण वस्त्र पहनने में लज्जित महसूस करता है, वह संत पौलुस को देखे, जिन्होंने *'ठंड और नग्नता'* (2 कुरिन्थियों 11:27) को सहन किया, और उन्हें *'धर्म के मुकुट'* (2 तीमुथियुस 4:8) *को* प्राप्त करने की निश्चित आशा से प्रेरणा मिली। लेकिन चूँकि संत पौलुस ने इस संसार को एक तमाशा और एक दौड़ कहा है (1 कुरिन्थियों 9:24), तो आइए देखें कि क्या *'उच्च बुलावा का सम्मान प्राप्त करने के लिए प्रयास करने'* (फिलिप्पियों 3:14) *के* विचारों से बोझिल व्यक्ति के लिए यह संभव है परमेश्वर के लिए और इस युग के प्रधानताओं, शक्तियों और अंधकार के हाकिमों से कुश्ती करने (इफिसियों 6:12)? कम से कम मैं तो ऐसा दावा नहीं करता, इस बहुत ही सनसनीखेज कहानी (अखाड़े में क्या होता है) से सीखकर, क्योंकि यह (लड़ाकू) निश्चित रूप से अपने कपड़ों से अटक जाएगा, जो उसे उलझा देते हैं, ठीक वैसे ही जैसे चिंता भरे विचार मन को उलझाते हैं, यदि यह कहावत सच है कि मन अपने खजाने के साथ अविभाज्य रूप से रहता है। क्योंकि कहा गया है: *'जहाँ तुम्हारा धन है, वहीं तुम्हारा हृदय भी होगा'* (मत्ती 6:21)।

6. विचारों में से, कुछ काटे जाते हैं, दूसरों का काटा जाना होता है; और कभी-कभी भले लोगों को बुरों द्वारा काटा जाता है, और कभी-कभी बुरों को भलों द्वारा काटा जाता है। पवित्र आत्मा पहले उत्पन्न विचार (जो प्राथमिकता और प्रभुत्व लेता है) पर ध्यान देता है और उसी के अनुसार हमें न्याय करता है या स्वीकार करता है। मैं क्या कह रहा हूँ? यह ऐसा ही है! उदाहरण के लिए, मेरे मन में एक विचार आता है, जैसे कि आतिथ्य, और मैं उसे प्रभु की खातिर रखता हूँ; लेकिन जब प्रलोभक आता है, तो वह इस तथ्य से उसे काट देता है कि वह मुझमें महिमा के लिए आतिथ्य करने की इच्छा पैदा कर देता है। और फिर, लोगों के सामने अच्छा दिखने के लिए मेरे मन में आतिथ्य का विचार आता है; लेकिन जब एक बेहतर विचार उत्पन्न होता है, तो वह इस तथ्य से बदल जाता है कि बेहतर विचार हमारे सद्गुण को अधिक प्रभु की ओर निर्देशित करता है और हमें यह लोगों के लिए नहीं करने के लिए प्रेरित करता है। इस प्रकार, यदि हम अपने कर्मों में ही अंततःअपने पहले विचारों के प्रति सच्चे रहते हैं, जबकि दूसरे विचार केवल एक प्रलोभन के रूप में काम करते हैं, तो हमें अपना इनाम उन्हीं पहले-आए विचारों के आधार पर ही मिलेगा; क्योंकि मनुष्य होने के नाते, और राक्षसों के खिलाफ संघर्ष में लगे होने के कारण, हममें हमेशा एक धार्मिक विचार को अछूत रखने की ताकत नहीं है, – ठीक वैसे ही, इसके विपरीत, एक बुरा विचार हमारे भीतर तब तक नहीं रह सकता जब तक कि उसे एक अच्छे विचार से रोकने का प्रयास न किया जाए, क्योंकि हमारे भीतर सद्गुण के बीज मौजूद हैं (जिन्हें दबाया नहीं जा सकता)। हालाँकि, यदि इनमें से कोई भी प्रतिद्वंद्वी विचार हावी हो जाता है, तो वह उस विचार की जगह ले लेता है जिसे लुभाया जा रहा था (अर्थात्, यह पहले विचार को पूरी तरह से विस्थापित कर देता है), और व्यक्ति अंततःइस विचार से प्रेरित होकर कार्य करने लगता है।

7. जैसा कि हमने दीर्घकालिक अवलोकन से सीखा है, दिव्य विचारों, मानवीय विचारों और राक्षसी विचारों के बीच अंतर इस प्रकार है: दिव्य विचार वस्तुओं की प्रकृति को समझने और उनके आध्यात्मिक महत्व का अन्वेषण करने का प्रयास करते हैं, जैसे: सोना क्यों बनाया गया, और यह पृथ्वी के कुछ दूरस्थ भागों में रेत की तरह क्यों बिखरा हुआ है, जहाँ इसे बड़ी मेहनत और परिश्रम से खोजा जाता है? किसी बार मिल जाने पर, इसे पानी से धोया जाता है और आग के हवाले किया जाता है, और इस प्रकार यह कारीगरों के हाथों में पहुँचता है जो इससे, परमविरिट के लिए, एक दीवट, एक धूपदान, *'कटोरे और प्याले'* (2 इति. 4:21) बनाते हैं, जिनसे, उद्धारकर्ता की कृपा से, बेबीलोन का राजा अब नहीं पीता (दानिय्येल 5:3)। तथापि, क्लोपास इन रहस्यों से प्रज्वलित हृदय लेकर आता है। दैवीय मन इस बात को नहीं जानता और न ही इसे समझ सकता है, बल्कि केवल निर्लज्जता से कामुक स्वर्ण को प्राप्त करने की इच्छा जगाता है और उससे मिलने वाले आनंद और महिमा की भविष्यवाणी करता है। लेकिन मानवीय मन न तो प्राप्ति की खोज करता है और न ही इस बात में जिज्ञासु होता है कि सोना क्या दर्शाता है; बल्कि, यह मन में सोने की एक एकल, सरल छवि पेश करता है, जो जुनून और लालच से रहित है। इसी तरह का तर्क अन्य वस्तुओं पर भी लागू किया जाना चाहिए, यदि कोई इस मॉडल के अनुसार गुप्त रूप से अपने मन का व्यायाम करना चाहे।

8. एक विचार है जिसे सही मायने में एक भटकता हुआ विचार कहा जा सकता है। यह भाइयों को अधिकतर भोर के समय दिखाई देता है और मन को एक शहर से दूसरे शहर, एक नगर से दूसरे नगर, एक घर से दूसरे घर ले जाता है; पहले तो यह साधारण बातचीत में लिप्त रहता है, और फिर, कुछ परिचितों के साथ लंबी बातचीत करने के बाद, यह अपनी ही अवस्था को भ्रष्ट कर देता है; जिनसे यह मिला है, उनके स्वभाव के अनुसार, यह धीरे-धीरे ईश्वर और सदाचार के बोध से दूर हो जाता है और अपने ध्येय और व्रत को भूल जाता है। इसलिए, तपस्वी को इस दैत्य से सावधान रहना चाहिए, यह देखते हुए कि वह कहाँ से आता है और कहाँ ठहरता है, क्योंकि वह इतनी बड़ी परिक्रमा संयोग से या बिना किसी उद्देश्य के नहीं करता, बल्कि ऐसा वह तपस्वी की मानसिक स्थिति को भंग करने के इरादे से करता है, ताकि मन, इन सब से भड़ककर और कई बातचीतों से मदहोश होकर, तुरंत कामुकता, क्रोध या दुख के राक्षस का शिकार हो जाए, जो उसके स्वभाव की स्पष्टता को सबसे बुरी तरह से नुकसान पहुँचाते हैं। लेकिन यदि हम इस राक्षस की चालाकियों को और स्पष्ट रूप से समझने का इरादा रखते हैं, तो हम अचानक उसका विरोध नहीं करेंगे, और न ही तुरंत (पिताजी को) यह बताएंगे कि वह हमारे भीतर कैसे संवाद रचता है और किस साधन से वह धीरे-धीरे मन को मृत्यु के क्षेत्र में धकेलता है; क्योंकि वह इस पर तुरंत भाग जाएगा, यह बर्दाश्त नहीं कर सकता कि कोई भी देखे कि वह यह सब कैसे करता है, और इस तरह हम वह कुछ भी नहीं जान पाएँगे जिसे जानना हम चाहते थे। लेकिन यह बेहतर है कि दूसरे या तीसरे दिन उसे अपना नाटक अंत तक खेलने दिया जाए, ताकि उसकी चालाकियों को सटीक रूप से जानकर, हम उसे फटकार के एक ही शब्द से भगा सकें। लेकिन चूँकि प्रलोभन के समय, मन बेचैन हो सकता है और यह स्पष्ट रूप से नहीं देख पाता कि हमारे भीतर क्या हो रहा है, एक बार जब शैतान चला जाए, तो यह करना चाहिए: बैठ जाइए और अपने आप से इस पर मनन कीजिए कि आपके साथ क्या हुआ, आप कहाँ से शुरू हुए और कहाँ गए, किस क्षण आपको वासना, या दुख, या क्रोध की भावना ने जकड़ लिया, और उसके बाद जो कुछ भी हुआ वह कैसे हुआ: इन सबकी

जाँच करें और इसे याद कर लें, ताकि जब यह फिर से आए, तो आप इसे बेनकाब कर सकें; उस जगह को भी नोट करें जिसमें यह छिपता है, और आप फिर इसके पीछे नहीं चलेंगे। इसके बाद, यदि आप इसे क्रोधित करना चाहते हैं, तो इसके प्रकट होते ही तुरंत इसका पर्दाफाश करें, और उस बिल्कुल पहले स्थान का नाम लें जिसमें आप (अपने मन में, उस पहली प्रलोभन भरी भटकन के दौरान) घुसे थे, फिर दूसरे और तीसरे का; क्योंकि यह बहुत चिढ़ जाता है, और शर्मिंदा होने को बर्दाश्त नहीं कर पाता। इस बात का प्रमाण कि इस तरह से उससे बात करना समय पर (और फायदेमंद) है, यह होगा कि उसके विचार आपसे दूर भाग जाएँगे, क्योंकि इतनी स्पष्ट बेनकाब होने की स्थिति में उसके लिए अपनी जगह पर टिके रहना असंभव है। इस राक्षस की पराजय के बाद सबसे भारी नींद, पलकों में झुनझुनी के साथ बहुत ठंड लगना, अत्यधिक हाँफना और कंधों में भारीपन आता है—इन सभी को पवित्र आत्मा उत्कट प्रार्थना के माध्यम से दूर करता है।

९. राक्षसों से घृणा हमें हमारे उद्धार में बहुत मदद करती है और सद्गुण के अभ्यास में बहुत उपयोगी है; फिर भी हम इसे अपने भीतर किसी तरह के अच्छे गुण के रूप में विकसित नहीं कर पाते हैं, क्योंकि कामुक आत्माएं हमारे भीतर इसे दूर कर देती हैं और एक बार फिर से आत्मा को उनके साथ संगति और घनिष्ठता के लिए बुलाती हैं। लेकिन आत्माओं के चिकित्सक इस संगति का इलाज उपेक्षा से करते हैं—जो एक ऐसी गंग्रीन से भी बदतर है जिसे ठीक करना मुश्किल है—और हमें दिन-रात उनके हाथों कुछ भयानक सहने देते हैं। परिणामस्वरूप, आत्मा उन से अपनी मूल (सामान्य) घृणा पर लौट आती है, और उसे दाऊद के वचनों में प्रभु से बोलना सिखाया जाता है: *'मैंने उनसे पूर्ण घृणा की है; वे मेरे शत्रु थे'* (भजन संहिता 138:22)। क्योंकि जो व्यक्ति कर्म और विचार दोनों में पाप नहीं करता, वह अपने शत्रुओं से पूर्ण घृणा करता है – जो परम और प्रथम (जैसा आदम में था) उदासीनता का संकेत है।

10. जहाँ तक उस राक्षस का प्रश्न है जो आत्मा को संवेदनहीन बना देता है, क्या उसके बारे में बात करने की कोई आवश्यकता है? मैं, अपनी ओर से, उसके बारे में लिखने से भी डरता हूँ। क्योंकि जैसे ही आत्मा अपनी स्वभाविक प्रकृति से विमुख हो जाती है, वह उसे पकड़ लेता है, और ईश्वर के भय तथा सभी श्रद्धा को एक ओर फेंक देता है, पाप को पाप नहीं मानता और अवज्ञा को अवज्ञा नहीं मानता, भयानक न्याय और अनंत यातना को केवल (खाली) शब्द समझकर याद करता है, और उस अग्निमय, वास्तव में पृथ्वी-कंपक हलचल का मज़ाक उड़ाता है—और यद्यपि वह ईश्वर की बात करता है, परन्तु उसकी आज्ञाओं को जानना नहीं चाहता। जब वह पाप की ओर मुड़ती है तो आप छाती पीटते हैं, और उसे कुछ महसूस नहीं होता; आप उससे धर्मग्रंथों से बात करते हैं, और वह, जैसे अंधी हो, नहीं देखती, और, जैसे बहरी हो, नहीं सुनती; आप उसे लोगों की निंदा दिखाते हैं, फिर भी वह इसे कोई महत्व नहीं देती, न ही उनके सामने उसे कोई शर्म आती है, और वह इससे अनजान रहती है, जैसे कोई सूअर जो अपनी आँखें बंद करके अपने बाड़े को तोड़कर बाहर निकल गया हो। यह दानव अहंकार के विचारों से उत्तेजित हो जाता है, यदि हम उन्हें बहुत लंबे समय तक अपने भीतर जड़ जमाने दें; और इसके कारण, *'यदि वे दिन संक्षिप्त न किए जाएँ, तो कोई भी प्राणी न बच पाएगा'* (मत्ती 24:20)। यह उनमें से एक है जो भाइयों (यानी किनोवाइट्स, सामूहिक आवासों में रहने वालों) पर शायद ही कभी हमला करता है। इसका कारण स्पष्ट है, क्योंकि दूसरों की दुर्भाग्यपूर्ण घटनाओं को देखकर—चाहे कोई बीमारी से ग्रस्त हो या अचानक मृत्यु का शिकार हो जाए—वह तुरंत ही भाग खड़ा होता है, क्योंकि ऐसे समय में दया से भरी आत्मा पश्चाताप से अभिभूत हो जाती है, और उस पर राक्षस द्वारा डाली गई अंधापन उसकी आँखों से उतर जाता है। हम (तपस्वी) इससे वंचित हैं, क्योंकि हम रेगिस्तान में रहते हैं और हमारे बीच बीमार लोगों की संख्या बहुत कम है। इस विशेष राक्षस को भगाने का एक साधन प्रदान करते हुए, प्रभु ने सुसमाचारों में हमें बीमारों से मिलने और कैदियों से मिलने का आदेश दिया, जब वे कहते हैं: *'मैं बीमार था, और तुमने मेरी देखभाल की; मैं जेल में था, और तुम मेरे पास आए'* (मत्ती 25:36)। यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि यदि कोई तपस्वी, इस दानव के आक्रमण के बाद, न तो कामुक विचारों में पड़ा है, और न ही निराशा के कारण अपनी कुटिया छोड़ गया है, तो यह दर्शाता है कि उसे स्वर्ग से वह धैर्य और पवित्रता प्राप्त हुई है जो उस पर प्रदान की गई है। धन्य है वह जिसे ऐसे निर्लिप्तता का योग्य समझा गया है! जहाँ तक उन लोगों का सवाल है, जिन्होंने ईश्वर की भक्तिपूर्ण सेवा में तपस्वी जीवन जीने का संकल्प लिया है, पर वे सामान्य लोगों के बीच बसना पसंद करते हैं, उन्हें इस दानव से सावधान रहना चाहिए। लेकिन मुझे लोगों के सामने भी उसके बारे में और कुछ बोलने या लिखने में शर्म आती है।

11. शोक की आत्मा पर। सभी राक्षस आत्मा को सुख से प्रेम करना सिखाते हैं; केवल शोक का राक्षस ऐसा नहीं करता, बल्कि वह मरुस्थल में प्रवेश करने वालों के विचारों को विचलित करता है, सभी आध्यात्मिक सुखों को काट देता है और शोक से आत्मा को सूखा देता है, क्योंकि *'एक दुखी मनुष्य की हड्डियाँ सूख जाती हैं'* (नीतिवचन 17:22)। हालांकि संयम से हमला करते हुए, वह संन्यासी को ईश्वर के मार्गों में पारंगत बना देता है; क्योंकि वह उसे इस संसार की सभी भलाईयों को तुच्छ समझने और हर आराम से मुंह मोड़ने के लिए प्रेरित करता है। लेकिन जब वह

उसे लंबे समय तक और बहुत तीव्रता से पीड़ित करता है, तो वह ऐसे विचारों को जन्म देता है जो तपस्वी को अपनी आत्मा को नष्ट करने की सलाह देते हैं, या उसे उस स्थान से दूर भागने के लिए मजबूर करते हैं; ऐसे विचारों को मन में लाने के बाद, यॉब एक बार उससे पीड़ित होते हुए कष्ट सह चुका था, क्योंकि उसने कहा: *'काश ऐसा संभव होता, तो मैं खुद को मार डालता, या मैं किसी और से मेरे लिए ऐसा करने की भीख माँगता'* (यॉब 30:24)। इस आत्मा का प्रतीक विषैला साँप है, जिसका विष, जब थोड़ी मात्रा में दिया जाता है, तो अन्य जहरों को निष्क्रिय कर देता है, लेकिन जब अधिक मात्रा में लिया जाता है, तो उसे निगलने वाले जीवित प्राणी को मार डालता है। पौलुस ने कोरिन्थ के अधर्मी मनुष्य को इस दानव के हाथों में सौंप दिया; इस कारण से उन्होंने जल्द ही उन्हें फिर से लिखा, यह कहते हुए: *'उसे अपनी कृपा में वापस ले लो, कहीं वह अत्यधिक शोक से नष्ट न हो जाए'* (2 कुरिन्थियों 2:7–8)। इस प्रकार, यह आत्मा जो लोगों को सताती है, सच्चे पश्चाताप का कारण भी है। इसीलिए संत यूहन्ना बपतिस्मादाता ने उन लोगों को जिन्हें उन्होंने फटकारा था और जिन्होंने परमेश्वर में शरण ली थी, 'साँपों की संतान' कहा, यह कहते हुए: *'तुम्हें आने वाले प्रकोप से भागने के लिए किसने चेतावनी दी? तो फिर पश्चाताप के योग्य फल लाओ; और यह कहना शुरू मत करो, "अब्राहम हमारे पिता हैं।" क्योंकि मैं तुम्हें कहता हूँ कि परमेश्वर इन पत्थरों से भी अब्राहम के लिए संतान उत्पन्न कर सकता है'* (मत्ती 3:7–9)। इसके अलावा, जो कोई भी अब्राहम के उदाहरण का अनुसरण करते हुए अपनी जन्मभूमि और अपने परिवार को छोड़ गया है (उत्पत्ति 12:1), वह इस दानव से भी अधिक शक्तिशाली हो गया है।

12. जिसने क्रोध पर विजय प्राप्त की है, उसने राक्षसों पर विजय प्राप्त की है; परन्तु जो उसका दास बन गया है, वह मठ-जीवन से अपरिचित और हमारे उद्धारकर्ता के मार्गों से दूर है, क्योंकि प्रभु, जैसा कि कहा गया है, नम्र लोगों को अपने मार्ग सिखाते हैं (भजन संहिता 24:9)। इसीलिए संन्यासियों के मन इतने दुर्गम होते हैं, क्योंकि वे नम्रता की घाटी में भाग जाते हैं। क्योंकि शायद ही कोई ऐसा सद्गुण है जिसे राक्षस नम्रता जितना भयभीत करते हों। वे महान मूसा, जिन्हें 'नम्र' कहा जाता था, में यह गुण किसी अन्य मनुष्य से अधिक था (गिनती 12:3)। और संत दाऊद ने इसके बारे में कहा, कि यह परमेश्वर की स्मरण के योग्य है, जब उन्होंने कहा: *'हे यहोवा, दाऊद और उसकी सारी नम्रता को स्मरण कर'* (भजन संहिता 131:1)। लेकिन उद्धारकर्ता ने स्वयं हमें अपने नम्र स्वभाव का अनुकरण करने की आज्ञा दी, और कहा: *'मेरे से सीखो, क्योंकि मैं मन में नम्र और दीन हूँ और तुम अपने प्राणों को विश्राम पाओगे'* (मत्ती 11:29)। परन्तु यदि कोई भोजन और पान से परहेज़ करता है, फिर भी दुष्ट विचारों से अपने भीतर क्रोध उत्तेजित करता है, तो वह एक ऐसे जहाज के समान है जो राक्षस के चलाए जाने पर समुद्र पार कर रहा है। इसलिए, हमें अपनी पूरी क्षमता से, इस कुत्ते पर नज़र रखनी चाहिए और उसे इस तरह प्रशिक्षित करना चाहिए कि वह केवल भेड़ियों को ही सताए और भेड़ों को न काटे, बल्कि सभी लोगों के प्रति हर तरह की कोमलता दिखाए (तीतुस 3:2)।

13. व्यर्थता पर। सभी विचारों में, केवल व्यर्थता का विचार ही बहुआयामी है, जो लगभग पूरे ब्रह्मांड को समाहित करता है और सभी राक्षसों के लिए दरवाजे खोलता है, जैसे किसी शहर का कोई दुष्ट देशद्रोही। यह तपस्वी के मन को लूटता है और उसे शब्दों तथा वस्तुओं की भीड़ से भरकर उसकी प्रार्थनाओं को नष्ट कर देता है, जिनके द्वारा वह अपनी आत्मा के घावों को भरने का प्रयास करता है। इस विचार को वे सभी दानव बढ़ावा देते हैं जिन्हें पहले ही परास्त कर दिया गया है; इसके माध्यम से वे एक बार फिर आत्मा में प्रवेश कर जाते हैं, इस प्रकार *'जो आखिरी है उसे पहला* बना देते *हैं'* (लूका 11:26)। इसी विचार से गर्व का विचार उत्पन्न होता है, जिसने स्वर्ग से पृथ्वी पर *'समानता की मुहर और भलाई का मुकुट' को* गिरा दिया (यहेजकेल 28:12)। लेकिन इससे मुँह फेर लो, इसमें जड़ जमाए बिना, कहीं ऐसा न हो कि हम अपनी ही जान और अपने अस्तित्व को निर्दयी के हवाले कर दें (नीतिवचन 5:9)। गंभीर प्रार्थना इस दानव को भगा देती है, जैसे कि अपनी इच्छा से कुछ भी करने या कहने से परहेज़ करना जो शापित व्यर्थता की ओर ले जाता है।

१४. जब किसी तपस्वी का मन कुछ हद तक वैराग्य प्राप्त कर लेता है, तो वह अहंकार के घोड़े पर सवार होकर नगरों में दौड़ने लगता है, और अपनी ही प्रशंसा और महिमा में अनियंत्रित रूप से मग्न हो जाता है। किन्तु, ईश्वर की कृपा से, भटकाव की आत्मा उससे मिलती है और, उसे किसी अस्तबल में बंद करके, उसे यह सिखाती है: ठीक होने से पहले अपना बिस्तर न छोड़ना, और उन अधीर रोगियों की नकल न करना जो, अपनी बीमारी के अवशेषों को संजोए हुए, यात्रा पर निकल पड़ते हैं या स्नानागार जाने लगते हैं, और इस प्रकार अपनी पुरानी बीमारियों में वापस पड़ जाते हैं। इसलिए, अपनी कोठरी में बैठे-बैठे, हमें अपने आप पर अधिक ध्यान देना चाहिए, ताकि सद्गुणों में उत्कृष्ट होकर हम बुराई के सामने अडिग हो जाएँ; ज्ञान में नवीनीकृत होकर, हम विविध चिंतन के योग्य समझे जाएँ; और प्रार्थना में उठकर, हम अपने उद्धारकर्ता के प्रकाश को और अधिक स्पष्ट रूप से देख सकें।

१५. मैं सभी दैवीय दुष्टता का वर्णन करने में असमर्थ हूँ, और मैं उनके सभी दुष्ट षड्यंत्रों को गिनने में लज्जित हूँ, अपने सबसे सरल पाठकों के लिए भी डरते हुए। हालाँकि, व्यभिचार के आत्मा की दुष्ट युक्तियों को सुनो। जब कोई व्यक्ति वासना के मामलों में एक निश्चित उदासीनता प्राप्त कर लेता है, और उसके घिनौने विचार कुछ हद तक ठंडे पड़ जाते हैं, तो वह (उनके विचारों में) पुरुषों और महिलाओं को लाता है और उन्हें एक-दूसरे के साथ खेलते हुए प्रस्तुत करता है, जबकि संन्यासी को उनके शर्मनाक कर्मों और शारीरिक हरकतों का दर्शक बना देता है। लेकिन यह प्रलोभन उस प्रकार का नहीं है जो मन में जड़ें जमाता है, क्योंकि ध्यानपूर्वक प्रार्थना और अत्यंत कठोर आहार, संयम और आध्यात्मिक चिंतन के अभ्यास के साथ मिलकर, इसे पानी रहित बादल की तरह दूर भगा देते हैं। लेकिन ऐसा होता है कि यह धूर्त तो मांस को भी छू लेता है, उसमें एक अतार्किक क्षय को भड़काता है, और हजारों अन्य चालाकियाँ रचता है, जिन्हें सार्वजनिक करने या लिखित रूप में रखने की कोई आवश्यकता नहीं है। ऐसे विचारों के पीछे छिपे दानव के प्रति क्रोध की एक तीव्र लहर उनके खिलाफ एक शक्तिशाली उपाय है; क्योंकि जब ऐसे विचारों के जवाब में यह क्रोध भड़कता है, तो वह इस क्रोध से बहुत डरता है, क्योंकि यह उसकी सभी योजनाओं को विफल कर देता है। और यही इन शब्दों का अर्थ है: *'क्रोध करो, पर पाप न करो'* (भजन संहिता 4:5)। यह प्रलोभन के समय आत्मा पर लगाया जाने वाला एक लाभकारी उपाय है। क्रोध का दानव इस दानव की नकल करता है, वह (मन के दृश्यों में) तपस्वी को उसके माता-पिता, दोस्तों या रिश्तेदारों में से किसी एक की छवि दिखाता है जो तुच्छ लोगों के हाथों अन्याय सह रहा है, और इस प्रकार उसके क्रोध को भड़काता है, यह सुझाव देते हुए कि उसे (अपने मन में अपराधी के रूप में दिखाई देने वालों के) खिलाफ कुछ बुरा कहना या कुछ करना चाहिए। एक को इस बात का ध्यान रखना चाहिए और ऐसी कल्पनाओं को तुरंत जड़ से उखाड़ देना चाहिए, कहीं ऐसा न हो कि उनमें गहराई से जड़ जमा लेने पर, वे प्रार्थना के दौरान एक सुलगती अंगीठी बन जाएँ। ऐसे प्रलोभन सबसे अधिक उन लोगों पर आते हैं जो जल्दी गुस्सा करने वाले, दूसरों के विरुद्ध कार्य करने के लिए आसानी से उकसाए जाने वाले, और जो शुद्ध प्रार्थना और हमारे उद्धारकर्ता यीशु मसीह के ज्ञान से बहुत दूर हैं।

16. प्रभु ने इस युग के विचारों को मनुष्य को सौंप दिया है, जैसे एक अच्छा चरवाहा अपने भेड़ों को सौंपता है, और उसे सहायक के रूप में इच्छा और क्रोध दिया है, ताकि वह क्रोध से भेड़ियों (दैत्य) के विचारों को भगा सके, और अपने जुनून से भेड़ों (अच्छे विचारों) से पूरे दिल से प्रेम करे, और उनकी देखभाल करे, जबकि बार-बार हवाओं और बारिश से प्रहार झेलता रहे जो उसे उसके पैरों से गिरा देती हैं। उसने उसे भेड़ों की देखभाल करने का नियम भी दिया, और *'विश्राम का स्थान और शांत जल'* (भजन संहिता 22:2), और एक सारंगी और एक वीणा, और एक عصا और एक लाठी (और यह विधान दिया) कि इस झुंड (और चरागाहों) से वह अपना भोजन करे और अपने वस्त्र पहने, और *'पहाड़ियों से घास'* इकट्ठा करे (नीतिवचन 27:25)। *'क्योंकि,'* वह कहता है, *'कौन भेड़पालन करता है और भेड़ों का दूध नहीं पीता?'* (1 कुरिन्थियों 9:7)? इसलिए, एक तपस्वी को इस झुंड की दिन-रात रखवाली करनी चाहिए, कहीं कोई संतान (भेड़ का बच्चा) जंगली जानवरों द्वारा न छीन ली जाए या डाकुओं के हाथों में न पड़ जाए; और यदि ऐसा कुछ जंगल में कहीं हो जाए, तो उसे तुरंत (उस बंदी को) शेर या मादा भालू के जबड़ों से बचाना चाहिए (1 शमूएल 17:34, 35)। ऐसे विचार भी हैं जो दरिंदों के समान हैं: एक भाई के विचार, यदि वे हमारे भीतर घृणा के साथ रहते हैं; एक स्त्री के विचार, यदि वे हमारे भीतर शर्मनाक वासना के साथ घूमते हैं; चाँदी और सोने के विचार, यदि वे लालच के साथ जड़ जमा लेते हैं; और यहाँ तक कि पवित्र उपहारों के विचार भी, यदि वे मन में व्यर्थता के साथ बसते हैं। इसी बात को अन्य विचारों के बारे में भी कहा जाना चाहिए, यदि वे वासनाओं से बहक जाते हैं। मनुष्य को न केवल दिन में (अपने झुंड की) रखवाली करनी चाहिए, बल्कि रात में भी पहरा देना चाहिए, और चौकस रहना चाहिए। क्योंकि ऐसा होता है कि कुछ लोग, शर्मनाक और चालाक कल्पनाओं में खोकर, अपना सब कुछ खो देते हैं। ठीक यही बात है जो संत जेम्स का आशय था *जब उन्होंने* कहा*: 'मैं तुम्हारे लिए जंगली जानवरों द्वारा फाड़े गए भेड़ों में से कोई भी नहीं लाया; मैंने दिन में चोरी हुई भेड़ों और रात में चोरी हुई भेड़ों की भरपाई स्वयं की है। मैं दिन में तपती धूप में और रात में ठंड में रहता था, और नींद मेरी आँखों से दूर भाग गई'* (उत्पत्ति 31, 39–40). यदि अत्यधिक थकान से हमें निराशा हो जाए, तो ज्ञान की चट्टान में शरण लेकर, हम पुण्यों से ज्ञान की तारों को झंझोड़ते हुए भजन संहिता से अपने प्रवचन की शुरुआत करें। तो आइए, हम एक बार फिर से सिनाई पर्वत के नीचे भेड़ों की रखवाली करें, ताकि हमारे पूर्वजों का परमेश्वर हमें झाड़ी (निर्ग. 3:1, 4) से बुलाए और हमें चिन्हों और अद्भुत कार्यों की शक्ति प्रदान करे।

17. मसीह तर्कशील स्वभाव को, जो पाप से सुन्न हो गया है, सभी युगों (अर्थात् अतीत, वर्तमान, और सबसे बढ़कर, भविष्य) के चिंतन के माध्यम से (पश्चाताप के लिए) जागृत करते हैं, जबकि उनके पिता इस आत्मा को—जो तब मसीह की मृत्यु मर रही होती है (बपतिस्मा या पश्चाताप के माध्यम से पाप से मुंह मोड़कर)—उठाते हैं— स्वयं

के ज्ञान द्वारा पुनर्जीवित होता है। और यही ठीक वह बात है जिसका अर्थ प्रेरित पौलुस ने तब निकाला जब उन्होंने कहा: *'यदि हम मसीह के साथ मरे हैं, तो हम विश्वास करते हैं कि हम उसके साथ जीवित भी होंगे'* (रोमियों 6:8)।

18. जब मन, पुराने मनुष्य को त्यागकर, अनुग्रह के मनुष्य को धारण कर लेता है, तो प्रार्थना के दौरान, वह अपनी ही प्रकृति को एक नीलम या स्वर्गीय रंग की भाँति देखेगा, जिसे धर्मग्रंथ 'परमेश्वर का स्थान' भी कहता है, जैसा कि बुजुर्गों ने सिनाई पर्वत पर देखा था (निर्ग. 24:10)।

19. अशुद्ध दानवों में से कुछ मनुष्य को एक मनुष्य के रूप में प्रलोभित करते हैं, जबकि अन्य एक मूक पशु के रूप में मनुष्य को परेशान करते हैं। पहले वाले, जब वे आते हैं, तो हम में व्यर्थता, या घमंड, या ईर्ष्या, या निंदा के विचार डालते हैं, जो किसी भी मूक प्राणी को प्रभावित नहीं करते, जबकि बाद वाले, जब वे पास आते हैं, तो हमारे स्वभाव के विपरीत क्रोध या वासना को भड़काते हैं; क्योंकि ये भाव हममें और मूक प्राणियों में आम हैं, और हमारी तर्कशील प्रकृति के नीचे हमसे छिपे रहते हैं (अर्थात्, वे इसके नीचे या अधीन होते हैं)। तो फिर, पवित्र आत्मा, मनुष्यों के रूप में लोगों में उत्पन्न होने वाले विचारों का उल्लेख करते हुए, क्यों कहते हैं: *'मैंने कहा: "तुम देवता हो, और तुम सब परम ऊँचे के पुत्र हो: फिर भी तुम मनुष्यों की तरह मरते हो, और एक राजकुमार की तरह गिरते हो"'* (भजन संहिता 81:6-7)। परन्तु एक मूक प्राणी के भीतर, जैसे एक मनुष्य के भीतर, चलने वाले विचारों को ध्यान में रखते हुए, कहने के लिए क्या है? *'घोड़े और खच्चर के समान न हो, जिनके पास समझ नहीं है: उनके जबड़ों पर लगाम और लगाम से रोक रखना होगा, कहीं वे तुम्हारे समीप न आ जाएँ'* (भजन संहिता 31:9)।

२०. जब कोई शत्रु आकर तुम्हें घायल कर दे, और तुम चाहो, जैसा लिखा है, कि उसकी तलवार उसके ही हृदय पर लौटा दो (भजन संहिता ३६:१५), तो जैसा हम तुम्हें बताते हैं, वैसा ही करो। अपने भीतर उस विचार का विश्लेषण करो जो उसने बोया है: कि वह कौन है, उसमें क्या है, और उसमें ऐसा क्या है जो मन को चोट पहुँचाता है। मैं क्या कह रहा हूँ? बात यह है। मान लीजिए कि उन्होंने आपको धन के प्रेम का विचार भेजा है। इसे उस मन में तोड़ें जिसने इसे ग्रहण किया, सोने के विचार में, स्वयं सोने में, और धन के प्रति जुनून में। अंत में, पूछें: इस सब का कौन सा हिस्सा पाप है? क्या यह मन है? लेकिन ऐसा कैसे हो सकता है, क्योंकि यह परमेश्वर की प्रतिमा है? या यह सोने का विचार है? लेकिन मन रखने वाला कौन है जो यह कह सकता है? तो क्या, फिर, सोना स्वयं ही पाप है? लेकिन फिर, इसे बनाया ही क्यों गया? इस प्रकार, पाप को चौथे (यानी, धन के प्रति जुनून) को ही जिम्मेदार ठहराना शेष रहता है, जो न तो अपने सार में एक स्वतंत्र वस्तु है और न ही किसी वस्तु की अवधारणा है, लेकिन एक निश्चित मानवद्वेषी आनंद, जो स्वतंत्र इच्छा से उत्पन्न होता है और मन को ईश्वर की सृष्टि का दुष्टता से उपयोग करने के लिए बाध्य करता है—एक ऐसा आनंद जिसे ईश्वर का कानून हमें दबाने का आदेश देता है। जब आप इसका परीक्षण करेंगे, तो यह विचार अपने वास्तविक स्वरूप में टूटकर समाप्त हो जाएगा, और जैसे ही आपका मन ऐसी अंतर्दृष्टि से प्रेरित होकर दुख से ऊपर उठेगा, तो राक्षस भाग जाएगा। हालाँकि, यदि आप उसकी अपनी ही तलवार उसके खिलाफ नहीं मोड़ना चाहते, बल्कि पहले उसे अपनी गदा से मार गिराना चाहते हैं, तो अपने चरवाहे के थैले से एक पत्थर उठाएँ, और इस चिंतन में प्रवेश करें: ऐसा कैसे है कि देवदूत और राक्षस हमारी दुनिया की ओर आकर्षित होते हैं, जबकि हम उनकी दुनिया की ओर आकर्षित नहीं होते? क्योंकि हमें यह विचार नहीं आता कि हम स्वर्गदूतों को ईश्वर के और करीब लाएँ, या राक्षसों को और अधिक अशुद्ध बनाएँ। साथ ही (और इस पर भी विचार करो), कि कैसे *'प्रातःका पुत्र, जो प्रातःउदय होता है, पृथ्वी पर गिर जाएगा* (यशायाह 14:12), *'और समुद्र एक उबलता हुआ बर्तन जैसा है, और तारतारस की खाई एक बंदी जैसी है: यह खाई को काँसे की भट्टी की तरह आग में लगा देता है'* (अय्यूब 41: 22–23), अपनी दुष्टता से सभी को भड़काता है और सभी पर शासन करने की इच्छा रखता है? इन बातों का चिंतन राक्षस को बहुत आहत करता है और उसकी पूरी सेना को भागने पर मजबूर कर देता है। लेकिन ऐसा व्यवहार केवल वे ही कर सकते हैं जो कुछ हद तक शुद्ध हो चुके हैं और जिन्हें घटित हुई घटनाओं के कारणों की कुछ अंतर्दृष्टि प्राप्त है। लेकिन अशुद्ध लोग इस तरह का चिंतन बनाए रखने में असमर्थ हैं; वास्तव में, भले ही दूसरों द्वारा जादू-टोना सिखाया जाए, तब भी उन्हें नहीं सुना जाएगा, जब आंतरिक लड़ाई के दौरान, उनके भीतर धूल स्तंभ की तरह उठती है और उनके जुनून के कारण सब कुछ अराजक हो जाता है। क्योंकि विदेशी आक्रमणकारियों के पूरे दल के लिए स्थिर खड़ा होना पूरी तरह से आवश्यक है, ताकि हमारे दाऊद के विरुद्ध एक ही गोलियाथ आगे आ सके। इसी प्रकार, अन्य अशुद्ध विचारों के मामले में, हम (पहले उल्लेखित) विचार के विश्लेषण और इस (दूसरे) युद्ध के रूप, दोनों का उपयोग करेंगे।

21. जब भी कोई अशुद्ध विचार बहुत जल्दी दूर हो जाए, तो हमें यह पता लगाना चाहिए कि ऐसा क्यों हुआ। चाहे यह ऐसी चीज़ों की दुर्लभता के कारण हो—अर्थात्, क्योंकि विचार की वस्तु प्राप्त करना कठिन है—या हमारे भीतर निहित उदासीनता के कारण, शत्रु हमें कोई हानि पहुँचाने में असमर्थ रहा है। उदाहरण के लिए, यदि संन्यासियों में से कोई यह कल्पना करे कि उसे प्रमुख नगर का आध्यात्मिक शासन सौंपा गया है और वह इस विचार के बारे में

दिवास्वप्नों में खो न जाए, तो यह स्पष्ट है कि यह पहले कारण (वस्तु की अप्राप्यता) के कारण होगा; लेकिन यदि कोई किसी विशेष शहर का शासक बनने का सपना देखता है (और परिणामस्वरूप इस बात की काफी संभावना है कि यह घटित हो), और वह भी इस विचार को (तिरस्कार से) देखता है, तो यह धन्य व्यक्ति वैराग्य से युक्त है। इसी प्रकार, अन्य विचारों के साथ भी, यदि हम परीक्षा की यही विधि लागू करें तो (विचार इतनी जल्दी क्यों भाग गए) यह स्पष्ट हो जाएगा। हमें अपने उत्साह और प्रयासों को प्रबल करने के लिए यह जानना आवश्यक है, क्योंकि इसके द्वारा हम यह जानेंगे कि क्या हम यॉर्डन पार कर चुके हैं और *'खजूर के पेड़ों के नगर'* (Deut. 34:3) के पास हैं, या क्या हम अभी भी जंगल में रहते हैं और विदेशियों द्वारा हम पर हमला किया जा रहा है। मेरे विचार में, लोभ का दानव अपनी धोखाधड़ी में अत्यंत कुशल और आविष्कारशील है। अक्सर, सब कुछ त्यागने की हद तक पहुँच जाने पर, वह एक प्रबंधक और गरीबों के प्रेमी का भेष धारण कर लेता है; वह ऐसे यात्रियों का गर्मजोशी से स्वागत करता है जो मौजूद ही नहीं हैं, जरूरतमंदों को आवश्यक वस्तुएँ भेजता है, शहर के कालकोठरियों में जाता है, बेचे जा रहे लोगों को छुड़ाता है, अमीर महिलाओं से मेलजोल बढ़ाता है और उन्हें बताता है कि उन्हें किस पर दया करनी चाहिए, जबकि दूसरों, जिनके हृदय पहले से ही संतुष्ट हैं, में वह संसार का त्याग भर देता है; और इस प्रकार, धीरे-धीरे, आत्मा को छलकर, वह उसे लालच के विचारों से बोझिल कर देता है और उसे अहंकार के जाल में फंसा देता है। वह अपने (तपस्वी के) ऐसे कार्यों के लिए कई लोगों को प्रभु की स्तुति करने के लिए प्रेरित करता है, जबकि कुछ लोगों को पुरोहित वर्ग के बारे में आपस में चुपचाप बात करने पर मजबूर कर देता है; वह वर्तमान पुरोहित की मृत्यु की भविष्यवाणी करता है और यह भी कहता है कि तपस्वी स्वयं (चुनाव से) बच नहीं सकता, चाहे वह इसे रोकने के लिए कुछ भी कर ले। इस प्रकार, ऐसा विचारों में उलझा हुआ दुर्बल मन, जो उसे स्वीकार नहीं करते, उनसे झगड़ता है; जो उसे स्वीकार करते हैं, उन्हें वह उत्सुकता से उपहार बाँटता है और कृतज्ञतापूर्वक, गर्मजोशी से , उनका स्वागत करता है; जबकि वह कुछ हठी (विरोधियों) को न्यायाधीशों के हवाले कर देता है और उनसे शहर से निष्कासित करने की माँग करता है। जब ऐसे विचार मन में मंडराते हैं, तो घमंड का दानव प्रकट होता है, जो बार-बार बिजली की चमक से कोठरी की हवा को झकझोरता है, पंखों वाले साँप भेजता है और, एक अंतिम बुराई के रूप में, किसी का मन छीन लेता है। लेकिन आइए हम, प्रार्थना करें कि ऐसे विचार दूर हो जाएँ, और कृतज्ञता की भावना से, अपनी मामूली परिस्थितियों को स्वीकार करने का प्रयास करें। *'क्योंकि हम इस संसार में कुछ भी नहीं लाए, और यह स्पष्ट है कि हम इससे कुछ भी नहीं ले जा सकते; परन्तु यदि हमारे पास भोजन और वस्त्र हैं, तो हम इन्हीं से संतुष्ट रहेंगे'* (1 तीमुथियुस 6:7–8), यह याद करते हुए कि संत पौलुस आगे क्या कहते हैं: *'धन का प्रेम सब बुराइयों की जड़ है'* (वही 6:10)।

२२. सभी अशुद्ध विचार हमारे भीतर वासनाओं के कारण जड़ जमाते हैं, जो मन को पूर्ण विनाश और बर्बादी में डुबो देती हैं। जिस प्रकार भूखे व्यक्ति के मन में भूख के कारण रोटी का विचार और प्यासे व्यक्ति के मन में प्यास के कारण पानी का विचार घर कर जाता है, उसी प्रकार प्रचुर भोजन से उत्पन्न धन और लज्जास्पद विचार भी संबंधित वासनाओं के कारण हमारे मन में घर कर जाते हैं। अन्य विचारों के साथ-साथ व्यर्थता के विचारों पर भी यही लागू होता है। लेकिन ऐसे विचारों से अभिभूत मन के लिए परमेश्वर के सामने खड़ा होना और धार्मिकता के मुकुट से विभूषित होना असंभव है। वह त्रिगुणित-पापी मन इन विचारों से भस्म हो गया; यह वही मन था जिसने, सुसमाचार की दृष्टान्त के अनुसार, परमेश्वर के ज्ञान के भोज को अस्वीकार कर दिया था (लूका 14:18–20)। इसी प्रकार, जो हाथ-पैर बाँधकर और घोर अंधकार में डाल दिया गया था, उसने इन्हीं विचारों से बुना हुआ वस्त्र पहना था, जिसे निमंत्रक ने विवाह-भोज के लिए अयोग्य समझा (मत्ती 22:11–13)। विवाह का वस्त्र तर्कशील आत्मा का वैराग्य है जिसने सांसारिक इच्छाओं का त्याग कर दिया है। जहाँ तक इस बात का प्रश्न है कि इंद्रिय सुख की बातें, जब वे लंबे समय तक हमारे भीतर बनी रहती हैं, तो हमारी समझ को क्यों भ्रष्ट कर देती हैं, इस पर प्रार्थना के अध्यायों में चर्चा की गई है।

23. सक्रिय सेवा के जीवन का विरोध करने वाले राक्षसों में, तीन मुख्य हैं, जिनके बाद इन विदेशी आक्रमणकारियों की पूरी सेना आती है, जो युद्ध में सबसे आगे खड़े होते हैं और, अशुद्ध विचारों के माध्यम से, आत्मा को पाप करने के लिए उकसाते हैं: सबसे पहले, वे जो अतिभक्षण की इच्छा के लिए जिम्मेदार हैं; दूसरे, जो धन के प्रेम को स्थापित करते हैं; और तीसरे, जो हमें मानवीय महिमा की खोज के लिए प्रेरित करते हैं। अत; यदि आप शुद्ध प्रार्थना चाहते हैं, तो क्रोध से अपना रक्षण करें; यदि आप पवित्रता से प्रेम करते हैं, तो अपने पेट को नियंत्रित करें, उसे रोटी की तृप्ति से वंचित रखें और उसे पानी की कमी से पीड़ित करें। प्रार्थना में चौकस रहो और द्वेष को अपने से दूर करो; आत्मा-परमेश्वर के वचन तुम्हें कभी न छोड़ें, और तुम सदाचार के हाथों से धर्मग्रंथ के द्वार पर दस्तक दो। तब हृदय की निर्लिप्तता तुम्हारे भीतर प्रकाशित होगी, और तुम अपने मन को प्रार्थना में एक तारे की भाँति

चमकते हुए देखोगे। संत नीलस ऑफ सिनाई का चयन 27वें अध्याय तक है। हम इन्हें भी शामिल करेंगे। पिछले 23 अध्याय उनके 24 अध्यायों का हिस्सा हैं।

24. जब लालच का दानव, बार-बार और भयंकर संघर्षों के बाद, आपके स्थापित संयम को कमजोर करने में असमर्थ हो जाता है, तो वह आपके मन में सबसे कठोर तपस्या की इच्छा पैदा करता है; इस उद्देश्य के लिए, वह दानियेल की कहानी को याद दिलाता है—वह क्षीण जीवन और बीज (जो उसका एकमात्र भोजन था) (दानियेल 1:16), उसे उन अन्य कुछ तपस्वियों की याद दिलाता है जो हमेशा से, शुरू से ही, इसी तरह रहते आए हैं, और उसे उनका अनुकरण करने के लिए मजबूर करता है, ताकि अत्यधिक संयम का पालन करने के बाद, वह मध्यम दर्जे का संयम भी प्राप्त करने में असफल हो जाए, जब उसका शरीर, अपनी दुर्बलता के कारण, इसके लिए अक्षम साबित हो जाता है। मेरा मानना है कि ऐसे सुझावों पर ध्यान न देना और स्वयं को रोटी, तेल और पानी से वंचित न रखना ही सही है। क्योंकि भाइयों ने अनुभव से जाना है कि ऐसा आहार ही सर्वोत्तम है, बशर्ते कि इन चीजों में से किसी का भी पेट भरकर सेवन न किया जाए और दिन में केवल एक बार ही भोजन किया जाए। और यह अद्भुत होगा यदि कोई, रोटी और पानी का पेट भरकर खाने पर भी, निर्लिप्तता का मुकुट प्राप्त कर सके। हालाँकि, 'वैराग्य' से मेरा तात्पर्य पापपूर्ण कर्मों से परहेज़ करना नहीं है—क्योंकि उसे 'संयम' कहा जाता है—बल्कि हृदय से वासनापूर्ण विचारों को काटना है, जिसे संत पौलुस ने 'भीतरी यहूदी का आध्यात्मिक खतना' (रोमियों 2:29) कहा था। यदि किसी की आत्मा ऐसे शब्दों को सुनकर डगमगाती है, तो उन्हें *'चुने हुए पात्र'* (प्रेरितों के काम 9:15) को याद करना चाहिए, वह प्रेरित जिसने भूख और प्यास सहते हुए अपना कार्य पूरा किया। इस दानव का अनुकरण निराशा की आत्मा ने भी किया; सत्य का यह विरोधी रोगी आत्मा में सबसे गहरी निर्जनता में पीछे हटने का विचार भर देता है, और उसे यूहन्ना बपतिस्मादाता और संन्यासियों के पूर्वज का अनुकरण करने के लिए प्रेरित करता है – एंथनी – ताकि, लंबे समय तक और अतिमानवीय एकांत सहन न कर पाने के कारण, वह लज्जित होकर भाग जाए, और अपनी जगह छोड़ दे; और आत्मा, बाद में घमंड करते हुए, कहेगी: *'मैंने उसकी ओर अपना मुँह किया है'* (भजन संहिता 12:5)।

२५. अध्याय ६८ के समान – इवाग्रियस प्रथम।

26. राक्षस हमारे हृदयों को नहीं जानते, जैसा कि कुछ लोग मानते हैं। क्योंकि केवल हृदयों को जानने वाले ही *'मनुष्य के मन को जानते हैं'* (अय्यूब 7:20) *'और केवल उनके हृदयों को ही बनाया है'* (भजन संहिता 32:15)। लेकिन चाहे हम जो शब्द बोलते हैं या कुछ शारीरिक हरकतों से, वे हृदय में हो रहे कई उथल-पुथल को पहचान लेते हैं। उदाहरण के लिए, मान लीजिए कि बातचीत में हमने उन लोगों की निंदा की है जिन्होंने हम पर बदनामी की है। इन शब्दों से, दुष्टात्मा यह निष्कर्ष निकालती हैं कि हम उनके प्रति द्वेष रखते हैं, और इसे हमारे मन में उनके खिलाफ बुरे विचार डालने का बहाना बनाती हैं ; एक बार जब हम इन्हें स्वीकार कर लेते हैं, तो हम द्वेष की दुष्टात्मा के जुए के नीचे आ जाते हैं, और यह दुष्टात्मा फिर हमारे भीतर उनके खिलाफ बदला लेने वाले विचारों को लगातार भड़काती रहती है। इसलिए, पवित्र आत्मा ने हमसे सही ही फटकार लगाते हुए कहा: *'बैठे-बैठे तूने अपने भाई की निंदा की है, और अपनी माता के पुत्र के लिए जाल बिछाया है'* (भजन संहिता 49:20); अर्थात्, तुमने द्वेषपूर्ण विचारों का द्वार खोल दिया है और प्रार्थना के दौरान अपने मन को विक्षिप्त किया है, लगातार अपने शत्रु के मुख को स्मरण करके, और इस प्रकार उसे एक देवता मान लिया है। क्योंकि प्रार्थना के दौरान मन जिस पर भी लगातार स्थिर रहता है, उसे यथार्थ रूप से एक देवता के रूप में पहचाना जाना चाहिए। इसलिए, हम निंदा की बीमारी से बचें; हम किसी के बारे में बुरा न बोलें, और न ही किसी पड़ोसी को याद करते समय हमारा चेहरा बिगड़ना चाहिए। क्योंकि दुष्ट दानव हमारी हर हरकत को जिज्ञासा से देखते हैं और हमारे खिलाफ इस्तेमाल की जा सकने वाली किसी भी चीज़ को बिना जांचे नहीं छोड़ते – चाहे हम उठें, बैठें, खड़े हों, चलें, बोलें या देखें – वे हर चीज़ के बारे में जिज्ञासु होते हैं, *'दिन भर चापलूसी से हमसे सीखते हैं'* (भजन संहिता 37:13), ताकि प्रार्थना के दौरान वे विनम्र मन को लज्जित कर सकें और उसकी धन्य ज्योति को बुझा सकें।

12. संन्यासी इवाग्रियस के वचन[65]

1. बाबा इवाग्रियस ने कहा: सांसारिक विषयों पर बातचीत से बचो, कहीं ऐसा न हो कि तुम्हारा मन विचलित हो जाए और तुम्हारा मौन का नियम टूट जाए।

2. उन्होंने यह भी कहा: 'बिना विचलन के प्रार्थना करना बहुत महत्वपूर्ण है, और बिना विचलन के (भजन) गाना तो और भी अधिक महत्वपूर्ण है।'

---

[65] 'स्मरणीय कथाएँ', 'उनकी उत्कृष्टता इग्नाटियस का संग्रह' और 'वर्णानुक्रमिक पैटेरिकॉन' से।

3. उन्होंने यह भी कहा: 'हमेशा अपने अंतिम गंतव्य को याद रखें; शाश्वत न्याय को न भूलें, और आप अपनी आत्मा को हर पाप से बचाएंगे।'

४. उन्होंने यह भी कहा: 'यदि प्रलोभन न होते, तो कोई भी नहीं बचता।'

५. बाबा एवाग्रयिस ने कहा: 'मोक्ष की शुरुआत आत्म-निंदा है।'

6. उन्होंने यह भी कहा: 'यदि आप निराशा में पड़ जाते हैं, तो प्रार्थना करें, लेकिन भय और कांपते हुए प्रार्थना करें; प्रार्थना करें, उत्साह और संयम के साथ।'

७. अपने संन्यासी जीवन की शुरुआत में, बाबा एवाग्रयिस एक वृद्ध के पास गए और उनसे कहा: 'बाबा! मुझे आत्मा को बचाने वाला कोई वचन दीजिए।' वृद्ध ने उनसे कहा: 'यदि आप बचना चाहते हैं, तो आप जिस किसी के पास भी जाएँ, जब तक वह आपसे न पूछे, "[66] " तब तक कुछ न बोलें।'

8. एक अवसर पर, किसी मामले पर चर्चा करने के लिए कोठरियों में एक बैठक हुई, और वहाँ अबा एवाग्रयिस बोल रहे थे। एक पुरोहित ने उनसे कहा: 'अबा, हम जानते हैं कि यदि आप अपने पक्ष में होते, तो आप बहुत पहले ही बिशप बन सकते थे और कई लोगों का नेतृत्व कर सकते थे; फिर भी अब आप यहाँ एक अजनबी की तरह बैठे हैं।' अब्बा इवाग्रयिस, यद्यपि इस बात से भावुक हो गए, पर वे विचलित नहीं हुए; सिर हिलाते हुए उन्होंने कहा: 'बिल्कुल सही, पिताजी, पर *'मैंने एक बात कही है; मैं दूसरी नहीं जोड़ूँगा'* (अय्यूब 39:35)।

९. इवाग्रयिस, अपनी *नोस्टकिस* में कहते हैं: हमने धर्मी ग्रेगरी से सीखा है कि चार प्रमुख सद्गुण हैं: विवेक (*फ्रोनेसिस*), धैर्य, ब्रह्मचर्य और न्याय। उसने कहा, विवेक का कार्य बुद्धिमान पवित्र शक्तियों पर मनन करना है; साहस का कार्य सत्य पर दृढ़ रहना है और, भले ही विरोध उत्पन्न हो, असत्य की ओर न मुड़ना है; पहले किसान से बीज प्राप्त करने के बाद, बोने वाले (शत्रु) से मुंह मोड़ लेना, उसकी दृष्टि में, chastity[67] की विशेषता है। और न्याय का कर्तव्य है कि प्रत्येक को उसका हक दिया जाए।

10. उसी ग्रंथ में वे कहते हैं: सत्य का स्तंभ, कैपाडोसिया के बेसिल कहते हैं: मनुष्यों से प्राप्त ज्ञान निरंतर अध्ययन और अभ्यास के माध्यम से परिपूर्ण होता है, जबकि अनुग्रह से प्राप्त ज्ञान सत्य, नम्रता और दया के माध्यम से परिपूर्ण होता है: पहला तो उन लोगों द्वारा भी प्राप्त किया जा सकता है जो भावुक हैं, जबकि दूसरा केवल उन निर्लिप्त लोगों द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता है, जो प्रार्थना के दौरान उस प्रकाश को देखते हैं जो उनके मन को प्रबुद्ध करता है।

11. उन्होंने वहाँ यह भी कहा: सेरापियन, टमुइटा के चर्च के स्वर्गदूत, ने कहा कि आध्यात्मिक ज्ञान में रमने से मन शुद्ध होता है, प्रेम क्रोध को ठीक करता है, और संयम कामवासना और इच्छा को नियंत्रित करता है।

12. इसके अलावा, डिडिमिस ने कहा: 'प्रोविडेंस और न्याय के बारे में अपने आप से लगातार बातचीत करें, और इन बातों को मन में रखने का प्रयास करें। प्रोविडेंस विशेष रूप से हमें पाप और अज्ञानता से उठाकर सद्गुण और ज्ञान तक ले जाने में स्पष्ट रूप से दिखाई देता है।'

खंड II

भूमिका

इस खंड के लिए लेखों का चयन करते समय, ग्रीक ***डोब्रोतोलुबिये* के** क्रम का पालन करना आवश्यक था। ऐसा किया गया है। सेंट कैसियन—जिन्हें पहले छोड़ दिया गया था—से विशेष रूप से उनके तपस्वी सिद्धांतों को चुनते हुए, और उनके मठवासी नियम को छोड़ते हुए, हम यरूशलेम के पूजनीय हेसकियिस और सिनाई के नीलस के तपस्वी निर्देश प्रस्तुत करते हैं। लेकिन यहाँ हमें ग्रीक ***डोब्रोतोलुबिये* का** अनुसरण करने में विराम लेना चाहिए; क्योंकि वहाँ कई पवित्र तपस्वी पिता—जो तपस्वी जीवन के मुख्य रूप से आंतरिक दृष्टिकोण के प्रमुख व्याख्याकार थे—को छोड़ दिया गया है, अर्थात्: सेंट एफ्रेम द सीरियन, जॉन क्लाइमैकस, बार्सानुफियस और जॉन, अब्बा डोरोथेयस, और इसाक सीरियाई। हमारी इस संकलन को उनकी शिक्षाओं से वंचित करना एक बड़ी अन्याय होगा। इसी कारण, उनसे सामग्री लेने को उचित समझा गया है। इन संतों की रचनाओं को पूरी तरह से शामिल करना अनुचित

---

[66] विद्वान एवाग्रयिस के लिए, यह कोई मामूली उपलब्धि नहीं थी।

[67] उपमा से: बीजारोपी शैतान है।

होगा, और इसकी कोई तात्कालिक आवश्यकता भी नहीं है, क्योंकि वे सभी पहले ही रूसी में अनुवादित हो चुकी हैं। उनका अनुवाद तो हो चुका है; फिर भी हर किसी के पास वे उपलब्ध नहीं हैं। इस कमी को पाटने और इन संतों की पवित्र शिक्षाओं को उन सभी आत्माओं तक पहुँचाने की हमारी इच्छा में, जो उनकी प्यासी हैं, हमने उनसे वह चुना है जो आध्यात्मिक जीवन के लिए सबसे आवश्यक है, इस निश्चितता के साथ कि यहाँ, अक्सर, एक ही शब्द पूरे खंडों का स्थान ले सकता है। इन अंशों के चयन में संत कैसियन मार्गदर्शक के रूप में काम आए; उन्होंने तपस्या का लक्ष्य भावों से हृदय की शुद्धि को निर्धारित किया, और अपने सभी तपस्या संबंधी प्रवचनों को इसी उद्देश्य की ओर निर्देशित किया। इसी को ध्यान में रखते हुए उनके लेखों से अंश संकलित किए गए हैं; यह सिद्धांत सिनै के संत नीलस से ली गई सामग्री की व्यवस्था को भी नियंत्रित करता है; इसने संत एफ्रेम से चयन में मार्गदर्शन किया; और इसने संत बार्सानुफियस और संत जॉन, संत अबा डोरोथियस और संत इसाक द सीरियन से शामिल की गई सामग्री का निर्देशन किया, यद्यपि बाद के तीनों के योगदान विशिष्ट शीर्षकों द्वारा इंगित नहीं किए गए हैं। इस प्रकार, हमारे ***डोब्रोतोल्युबिये* का** संपूर्ण दूसरा खंड ईश्वर-भक्त पिताओं की शिक्षाओं का एक संग्रह होगा, जो मुख्य रूप से हृदय की शुद्धि के लिए वासनाओं के विरुद्ध संघर्ष पर केंद्रित है – जो कि तपस्या का परम लक्ष्य है।

HTML संस्करण (2005) के लिए संपादक की टिप्पणी

***डोब्रोतोलीउबिये* के** दूसरे से पांचवें खंड के मुख्य पाठ को आधुनिक रूसी वर्तनी और उच्चारण के अनुरूप संपादित किया गया है। पवित्र शास्त्र से लिए गए उद्धरणों को अपरिवर्तित छोड़ा गया है। जहां आवश्यक हो, उनके अर्थ को पुराने और नए नियम के नए रूसी संस्करण का संदर्भ लेकर स्पष्ट किया जा सकता है। शब्दों 'mir' (समाज, कभी-कभी – संपूर्ण सृजित ब्रह्मांड), 'mir' (शांति, प्रसन्नता, सामंजस्य) और 'μνρο' (पवित्र अभिषेक के लिए एक सुगंधित मिश्रण) की वर्तनी में अंतर को भी अपरिवर्तित रखा गया है।

संत जॉन कैसियन द रोमन

उनका संक्षिप्त परिचय

संत जॉन कैसियन द रोमन का जन्म (लगभग 350–360), संभवतः मार्सेई के पास गॉल के क्षेत्र में, कुलीन और अमीर माता-पिता के यहाँ हुआ था, और उन्होंने एक ठोस अकादमिक शिक्षा प्राप्त की। छोटी उम्र से ही, उन्हें ईश्वर-प्रसन्न जीवन से प्रेम था और उसमें पूर्णता प्राप्त करने की इच्छा से जलते हुए, वे पूर्व की ओर रवाना हो गए, जहाँ उन्होंने बेथलहम के मठ में प्रवेश किया और मठवासी संस्कार ग्रहण किए। वहाँ, मिस्र के संतों के गौरवशाली तपस्वी जीवन के बारे में सुनकर, वे उन्हें देखने और उनसे सीखने की इच्छा रखने लगे। इस उद्देश्य के लिए, अपने मित्र हरमन से सहमत होकर, वह बेथलहम के मठ में दो साल रहने के बाद लगभग 390 ईस्वी में मिस्र के लिए रवाना हो गया। उन्होंने वहाँ पूरे सात साल एकांत में स्केट्स, सेलों, मठों और संन्यासियों के बीच रहकर बिताए; उन्होंने सब कुछ देखा, उसका अध्ययन किया और स्वयं उसे व्यवहार में लाया; और वे वहाँ के तपस्वी जीवन से, उसकी सभी बारीकियों के साथ, पूरी तरह से परिचित हो गए। वे 397 में अपने मठ लौट आए; लेकिन उसी वर्ष वे फिर से मिस्र के उन्हीं रेगिस्तानी क्षेत्रों के लिए रवाना हो गए और 400 तक वहीं रहे। इस अवसर पर मिस्र से निकलते हुए, सेंट कैसियन और उनके मित्र कॉन्स्टेंटिनोपल के लिए रवाना हुए, जहाँ सेंट क्रिसोस्टोम ने उनका गर्मजोशी से स्वागत किया, जिन्होंने सेंट कैसियन को डीकन और उनके मित्र को, जो दोनों में बड़े थे, पादरी (वर्ष 400 में) के रूप में नियुक्त किया। जब सेंट क्रिसोस्टोम को निर्वासन की सज़ा सुनाई गई, तो उनके वफादार अनुयायियों ने (405 में) रोम में पोप इनोसेंट के पास उनके मामले की पैरवी करने के लिए एक प्रतिनिधिमंडल भेजा, जिसमें सेंट कैसियन और उनके मित्र भी शामिल थे। यह मिशन विफल रहा। इसके बाद, संत कैसियन पूर्व नहीं लौटे, बल्कि अपने देश चले गए और वहाँ उन्होंने मिस्र के मॉडल का अनुसरण करते हुए अपना तपस्वी जीवन जारी रखा; वे अपने जीवन की पवित्रता और एक शिक्षक के रूप में अपनी बुद्धिमत्ता, दोनों के लिए प्रसिद्ध हो गए, और उन्हें पुरोहित नियुक्त किया गया। शिष्य एक-एक करके उनके पास आने लगे, और जल्द ही उनमें से एक पूरा मठ बन गया। उनके उदाहरण का पालन करते हुए, पास ही एक मठ की स्थापना की गई। दोनों मठों में, वह नियम लागू किया गया जिसके अनुसार भिक्षु पूर्वी, और विशेष रूप से मिस्र के मठों में रहते और मोक्ष प्राप्त करते थे। इन मठों का एक नए उत्साह और नए नियमों के अनुसार पुनर्गठन, और साथ ही वहाँ तपस्या करने वालों की स्पष्ट सफलता ने, गैलिक क्षेत्र के कई धर्मगुरुओं और मठों के मठाध्यक्षों का ध्यान आकर्षित किया। अपने स्वयं के मठों में ऐसी प्रथाओं को स्थापित करने की इच्छा से, उन्होंने सेंट कैसियन से उनके लिए पूर्वी मठवासी नियम लिखने का अनुरोध किया जो तपस्या की वास्तविक भावना

को दर्शाते हों। उन्होंने स्वेच्छा से इस अनुरोध को स्वीकार किया, और 12 पुस्तकों के फरमानों और 24 प्रवचनों में सब कुछ प्रस्तुत किया। सेंट कैसियन का 435 में निधन हो गया। उनका पर्व दिवस 29 फरवरी को मनाया जाता है। सेंट कैसियन के इन तपस्या संबंधी लेखों में से, पूर्व *डोब्रोतोलीउबिये* में आठ प्रमुख जुनूनों के खिलाफ संघर्ष पर आठ पुस्तकें (5–12) और तर्क पर एक (दूसरा) प्रवचन - दोनों संक्षिप्त रूप में शामिल थे। हम भी इस उदाहरण का अनुसरण कर रहे हैं। इसमें शामिल किए जाने वाले मुख्य ग्रंथ, आठ प्रमुख वासनाओं के विरुद्ध संघर्ष पर लिखी आठ पुस्तकें होंगी, जो सबसे पूर्ण अनुवाद में होंगी, और जहाँ उपयुक्त हो, वहाँ प्रबंधों और प्रवचनों से कुछ अंश भी जोड़े जाएँगे। हालांकि, यह भी आवश्यक समझा गया है कि उनके सामने संवादों से कई अंश प्रस्तुत किए जाएँ, जो आध्यात्मिक जीवन में वासनाओं के विरुद्ध संघर्ष के महत्व, या तपस्या के क्रम में इसके स्थान को दर्शाते हैं; ये इस संघर्ष की आवश्यकता को स्पष्ट करते हैं और वासनाओं तथा उनके विरुद्ध संघर्ष की एक सामान्य रूपरेखा प्रस्तुत करते हैं; और इनके बाद, आठ विचारों के विरुद्ध संघर्ष के पूर्ववर्णीय विवरण के पूरक के रूप में, दो अन्य संघर्षों का वर्णन करने वाले और अंश संलग्न किए गए हैं—अर्थात्, विचारों के विरुद्ध संघर्ष, और दुर्भाग्य तथा विपत्तियों से उत्पन्न दुख के विरुद्ध संघर्ष। अंत में, एक परिशिष्ट के रूप में, कई विषयों पर आवश्यक निर्देश शामिल किए गए हैं जो, सामान्य रूप से आध्यात्मिक जीवन से संबंधित होते हुए भी, आध्यात्मिक संघर्ष से भी घनिष्ठ रूप से संबंधित हैं; ये हैं: आध्यात्मिक जीवन के विकास में प्रेरक शक्तियों के रूप में अनुग्रह और मुक्त इच्छा पर; प्रार्थना पर, जिसमें वे एकत्रित होती हैं; आध्यात्मिक जीवन में पूर्णता की विभिन्न श्रेणियों पर, इसके लिए प्रेरणाओं के अनुसार; और प्रायश्चित के श्रमों के समापन पर। – इन परिवर्धन को हमें संत कैसियन के लेखों के सभी अंशों को इस प्रकार शीर्षक देने से क्यों रोकना चाहिए: *'आध्यात्मिक संघर्ष का एक अवलोकन'*? इस प्रकार, संत कैसियन के अंश निम्नलिखित शीर्षकों के अंतर्गत व्यवस्थित किए जाएँगे:

१. तपस्या का उद्देश्य और लक्ष्य।

२. इस उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए, हमें यह भी निर्धारित करना चाहिए कि संसार का हमारा त्याग किस रूप में होना चाहिए।

3. देह और आत्मा के बीच संघर्ष।

4. वासनाओं की एक सामान्य रूपरेखा और उनके विरुद्ध संघर्ष।

5. आठ प्रमुख आसक्तियों से मुकाबला करना: (क) अतिकाम, (ख) कामवासना की आत्मा, (ग) लोभ की आत्मा, (घ) क्रोध की आत्मा, (ङ) शोक की आत्मा, (च) निराशा की आत्मा, (छ) अहंकार की आत्मा, (ज) घमंड की आत्मा।

6. बुरे विचारों के विरुद्ध और उनके माध्यम से, दुष्ट आत्माओं के विरुद्ध संघर्ष।

7. सभी प्रकार की पीड़ाओं के विरुद्ध संघर्ष।

8. दिव्य अनुग्रह और स्वतंत्र इच्छा को आध्यात्मिक जीवन के स्रोतों के रूप में।

९. प्रार्थना पर।

10. आध्यात्मिक जीवन में मार्गदर्शन पर।

11. आध्यात्मिक जीवन में पूर्णता की विभिन्न श्रेणियों पर, उसकी ओर प्रेरणाओं के अनुसार।

12. प्रायश्चित्त कार्यों के अंत पर।

आध्यात्मिक संघर्ष का एक अवलोकन

1. तपस्या का उद्देश्य और अंत

1. सभी विज्ञानों और कलाओं का अपना उद्देश्य (scopon) और अपना अंत (telos) होता है – और इन्हीं को ध्यान में रखकर एक परिश्रमी कला प्रेमी स्वेच्छा से सभी परिश्रम और खर्च को सहन करता है। इस प्रकार किसान, कभी गर्मी तो कभी ठंड सहते हुए, अथक परिश्रम से जुताई करता है और मिट्टी को ढीला करता है, जिसका *'उद्देश्य*—उसमें से सभी विदेशी मलबा हटाकर—उसे अधिक उपजाऊ बनाना है; यह विश्वास रखकर कि अन्यथा वह *अपने 'लक्ष्य'*, अर्थात् स्वयं का भरण-पोषण करने और अपनी संपत्ति बढ़ाने के लिए भरपूर फसल प्राप्त नहीं कर पाएगा। इसी प्रकार, हमारे तपस्या का भी अपना एक उद्देश्य और अपना एक लक्ष्य है, जिसके लिए हम सभी परिश्रमों को अथक और आनंदपूर्वक करते हैं, – जिसके लिए उपवास का मामूली आहार हमें बोझिल नहीं करता, प्रार्थना में जागने की थकान हमें आनंद देती है, चिंतन के साथ धर्मग्रंथों का निरंतर पाठ कभी पर्याप्त नहीं लगता,

और हम अनवरत परिश्रम से, सभी चीजों से वंचित होकर और हर चीज़ की कमी में जीने से, या यहाँ तक कि इस अनंत रेगिस्तान के भयावह वातावरण से भी नहीं डरते।

२. हमारे तपस्या जीवन का अंत परमेश्वर का राज्य है, और लक्ष्य हृदय की पवित्रता है, जिसके बिना उस अंत को प्राप्त करना असंभव है। इस लक्ष्य पर अपनी दृष्टि टिकाए हुए, हमें अपने मार्ग को एक सीधी रेखा की तरह निश्चित रूप से निर्देशित करना चाहिए; और यदि हमारे विचार इससे थोड़ा भी भटकें, तो हमें तुरंत वापस आकर इस पर मनन करना चाहिए और उन्हें सुधारना चाहिए, जैसे कि किसी मानक का पालन करते हुए।

3. यही बात संत पौलुस सिखाते हैं जब वे मसीह का अच्छा जुआ उठाने वालों से कहते हैं: *'तुम पवित्रता में फल देते हो, और अंत में अनंत जीवन है'* (रोमियों 6:22)। इसके द्वारा वे कहना चाहते हैं, मानो: तुम्हारा लक्ष्य हृदय की पवित्रता है, और अंत में अनंत जीवन है। इसलिए, जो कुछ भी हमें इस लक्ष्य—अर्थात् हृदय की पवित्रता—की ओर ले जा सकता है, हमें उसे अपनी पूरी शक्ति से प्राप्त करना चाहिए; और जो कुछ भी हमें इससे विचलित करता है, उससे हमें हानिकारक और नुकसानदेह के रूप में बचना चाहिए। क्योंकि हम इसी के लिए सब कुछ आरंभ करते और पूरा करते हैं; इसी के लिए हम अपने माता-पिता, अपने देश, अपने पद, अपनी संपत्ति, इस संसार के आनंद और इसके सभी सुखों को त्यागते हैं—ताकि हम, दूसरे शब्दों में, हृदय की स्थिर पवित्रता बनाए रख सकें। इसलिए, यदि हम हमेशा इस लक्ष्य को ध्यान में रखें, तो हमारे सभी कार्य और विचार सीधे इसकी प्राप्ति की ओर निर्देशित होंगे। लेकिन यदि यह निरंतर हमारी दृष्टि के सामने न रहे, तो हमारे सभी श्रम और प्रयास, एक ही लक्ष्य की ओर निर्देशित न होकर, व्यर्थ ही खर्च हो जाएँगे।

४. अतः हमें इस पवित्रता के लिए ही सब कुछ करना चाहिए और सब कुछ इच्छित करना चाहिए; इसके लिए हमें मरुभूमि में जाना चाहिए, इसके लिए हमें उपवास, जागरण, परिश्रम, शारीरिक दरिद्रता, अध्ययन और अन्य सद्गुणों का पालन करना चाहिए – ताकि, दूसरे शब्दों में, हम अपने हृदयों को किसी भी विनाशकारी वासना से मुक्त कर सकें और उन्हें ऐसा ही बनाए रख सकें। हमें उपवास, जागरण, संन्यासी का जीवन और शास्त्रों के अध्ययन को इसी प्राथमिक उद्देश्य, अर्थात् हृदय की पवित्रता के लिए, अपनाना चाहिए; और इनके कारण, हमें स्वयं को इस मुख्य सद्गुण से भटकने न देना चाहिए। क्योंकि जब यह प्रधान सद्गुण हमारे भीतर संरक्षित और अक्षुण्ण रहता है, तो किसी भी परिस्थिति में यदि हम उपर्युक्त किसी भी तपस्या को त्यागने के लिए विवश हो जाएँ, तो कोई हानि नहीं होगी; परन्तु यदि हम इस एक सद्गुण का उल्लंघन करते हुए उन सभी का पालन करते रहें, तो उससे कोई लाभ नहीं होगा; क्योंकि सब कुछ उसी के लिए किया जाना चाहिए। ये कर्म अपने आप में पूर्णता नहीं हैं, बल्कि पूर्णता के साधन हैं। तो, उस व्यक्ति का प्रयास कितना व्यर्थ होगा, जो इनसे ही संतुष्ट हो जाता है, मानो *ये ही 'परम-भला' हों,* और अपने हृदय के प्रयास को इन्हीं पर रोक देता है, बजाय इसके कि उसे उस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए बढ़ाए जिसके लिए ये स्वयं वांछनीय हैं।

2. इस उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए, हमें यह भी निर्धारित करना चाहिए कि हमारे त्याग का स्वरूप कैसा होना चाहिए

1. संसार का त्याग तीन प्रकार का होता है: पहला वह है जिसमें हम शारीरिक रूप से संसार के सभी धन-संपत्ति को त्याग देते हैं; दूसरा वह है जिसमें हम अपनी पुरानी आदतों, विकारों और आवेगों, आध्यात्मिक और शारीरिक दोनों को त्याग देते हैं; तीसरी वह है जिसमें, अपने मन को सभी वर्तमान और दृश्यमान चीजों से हटाकर, हम केवल भविष्य पर मनन करते हैं और उस चीज़ की लालसा करते हैं जो अदृश्य है। प्रभु ने अब्राहम को इन तीनों त्यागों को एक साथ करने का आदेश दिया जब उन्होंने उससे कहा: *'अपने देश, अपने परिवार और अपने पिता के घर को छोड़ दो'* (उत्पत्ति 12:1): *'अपने देश से'*, अर्थात् सांसारिक धन और सांसारिक संपत्ति से; *'अपने कुल से'*, अर्थात् अपने जीवन के पूर्व तरीके, पूर्व आदतों और दुराचारों से, जो जन्म के क्षण से ही हमसे चिपके हुए हैं, और हमारे रक्त संबंधियों की तरह हमारे करीब हैं; *'आपके पिता के घर से'*, अर्थात्, संसार की हर स्मृति और उसमें हमारी आँखों के सामने आने वाली सभी चीज़ों से। ऐसा तब होता है जब, मसीह के साथ संसार के तत्वों के लिए मरकर, हम, जैसा कि प्रेरित कहते हैं, अब जो दिखाई देता है उस पर नहीं, बल्कि जो दिखाई नहीं देता उस पर देखते हैं; *"क्योंकि जो कुछ देखा जाता है वह अस्थायी है, परन्तु जो कुछ नहीं देखा जाता वह अनन्त है"* (2 कुरिन्थियों 4:18) – और, अपने हृदयों में इस अस्थायी और दृश्यमान घर से निकलकर, हम अपनी आँखें और मन उस घर की ओर मोड़ते हैं जिसमें हमें अनन्तकाल तक वास करना है; – क्योंकि *"यद्यपि हम शरीर में चलते फिरते हैं, परन्तु हम शरीर के अनुसार युद्ध नहीं करते"* प्रभु में (2 कुरिन्थियों 10:3), अपने कर्मों और अपने जीवन के द्वारा धन्य प्रेरित के वचनों का प्रचार करते हुए: *"हमारी नागरिकता स्वर्ग में है"* (फिलिप्पियों 3:20)।

२. इसका हमें बहुत कम लाभ होगा यदि हम अपनी पहली त्याग-क्रिया श्रद्धा की पूरी उत्कटता के साथ कर लें, परन्तु दूसरी को उसी जोश और उत्साह के साथ न करें—ताकि इस प्रकार इसमें सफल होकर, हम तीसरी को भी प्राप्त कर सकें, जिसमें, पुरुष के अनुसार अपने पूर्व पिता के घर को त्यागकर, हम अपने मन की दृष्टि को पूरी तरह से दिव्य की ओर निर्देशित करते हैं। इसलिए, यदि हम सच्चे पूर्णत्व को प्राप्त करना चाहते हैं, तो हमें यह प्रयास करना चाहिए कि जिस प्रकार हमने शारीरिक रूप से अपने माता-पिता, अपनी मातृभूमि, सांसारिक धन-संपत्ति और सुखों को पीछे छोड़ दिया है, उसी प्रकार हम इन सभी चीजों को अपने हृदय से भी छोड़ दें, और फिर कभी अपनी इच्छाओं को उस ओर न मोड़ें जिसे हमने तिरस्कार से अस्वीकार कर दिया है: जैसे मिस्र से निकाले गए इस्राएलियों ने, जिन्होंने स्वर्गीय मन्ना का स्वाद चखने के बाद, मिस्र के अशुद्ध और नीच भोजन की लालसा की, यह कहते हुए: *'मिस्र में हमारे लिए बेहतर था, जब हम कलशों के पास बैठते थे'* (निर्ग. 16:3; Num. 11:5). और जो कोई भी, संसार का त्याग करने के बाद, अपनी पुरानी चिंताओं में लौटता है और अपनी पुरानी इच्छाओं के बहकावे में आ जाता है, वह कर्म और से उन्हीं की तरह बोलता है: *'मिस्र* (संसार) *में मेरे लिए अच्छा था'*। केवल शरीर से संसार को पीछे छोड़ना, और केवल इस 'मिस्र' से दूर चले जाना, हमारे लिए किसी भी प्रकार से लाभदायक नहीं होगा, जब तक कि हम उसी प्रकार हृदय का त्याग प्राप्त करने में सक्षम न हों, जो उच्चतर और अधिक लाभदायक है। जिस त्याग को हमने शारीरिक कहा है, उसके बारे में प्रेरित ने यह प्रचार किया: *'यदि मैं अपना सब कुछ दान कर दूँ, और यदि मैं अपना शरीर जलाने के लिए दे दूँ, परन्तु मेरा प्रेम न हो, तो इससे मुझे कोई लाभ नहीं होता'* (1 कुरिन्थियों 13:3)। अर्थात्, भले ही मैं सब कुछ त्याग दूँ, यहाँ तक कि अपने लिए कुछ भी न रखूँ, और इस पूर्ण आत्म-समर्पण में शहादत और अपने ही शरीर को जलाना भी जोड़ दूँ, ताकि मैं मसीह के लिए अपना शरीर दे सकूँ; फिर भी यदि मैं अधीर, क्रोधित, ईर्ष्यालु या अभिमानी हूँ, यदि मैं दूसरों के अपराधों से जलता हूँ, या अपने हितों की खोज करता हूँ, यदि मैं बुराई पर मनन करता हूँ, या मुझ पर जो कुछ भी किया जाता है, उसे अधीरता और अनिच्छा से सहता हूँ; तो मेरा त्याग और बाहरी मनुष्य का दहन मेरे किसी काम का नहीं होगा, जबकि भीतरी मनुष्य उन्हीं पुराने भावों से बोझिल बना रहेगा।

३. अत; हमें अपनी पूरी शक्ति से यह सुनिश्चित करने के लिए शीघ्रता करनी चाहिए कि हमारा आंतरिक स्वरूप भी अपने पूर्व जीवन में संचित की गई सभी प्रकार की वासनाओं के धन को त्याग दे और उससे मुक्त हो जाए—ये वे वासनाएँ हैं, जो शरीर और आत्मा से चिपकी हुई हैं, वास्तव में हमारे अस्तित्व का सार हैं; और जब तक हम इस शरीर में हैं, उन्हें काटकर अलग नहीं किया जाता, वे मृत्यु के बाद भी हमारा साथ देना बंद नहीं करेंगे। क्योंकि जिस प्रकार सद्गुण, या स्वयं प्रेम—जो उनका स्रोत है—जब इस युग में प्राप्त होते हैं, तो वे अपने प्रेमी को इस जीवन के अंत के बाद भी सुंदर और दीप्तिमान बना देते हैं; उसी प्रकार पाप भी, आत्मा को घृणित रंगों से ढककर, उसे उन्हीं रंगों से रंगे हुए, उस शाश्वत धाम में ले जाते हैं। आत्मा की सुंदरता या घृणितता सद्गुणों या दुर्गुणों के स्वभाव से उत्पन्न होती है, जिससे एक विशेष रंग उत्पन्न होता है जो उसे या तो इतना तेजस्वी और सुंदर बना देता है कि वह भविष्यवाणी के वचन को सुनने के योग्य हो जाती है: *'राजा तेरी भलाई की लालसा करेगा'* (भजन संहिता 44:11), – या इतनी काली, घिनौनी और भद्दी हो जाती है कि वह स्वयं, अपनी ही भ्रष्टता की बदबू को स्वीकार करते हुए, कहेगी: *'मेरे घाव मेरी मूर्खता के कारण घिनौने और सड़न भरे हो गए हैं'* (भजन संहिता 37:6)। इसलिए, वे (सद्गुण और वासनाएँ) वास्तव में, हमारी सच्ची संपत्ति हैं, जो आत्मा से अविभाज्य बनी रहती हैं, और जिसे कोई राजा हमें दे नहीं सकता, न ही कोई शत्रु हमसे छीन सकता है। वे वास्तव में, हमारी सच्ची संपत्ति हैं, जिसे मृत्यु भी आत्मा से छीनने में असमर्थ है। (वासनाओं की दुष्ट संपत्ति को बिखेरना उन्हें मृत्यु के घाट उतारना है - जो उनके विरुद्ध संघर्ष किए बिना संभव नहीं है। यही कारण है कि जिन्होंने संसार का त्याग किया है, उन्हें अनिवार्य रूप से वासनाओं के विरुद्ध संघर्ष का सामना करना पड़ता है, जिसे उन्हें शुरू से ही करना पड़ता है। संत कैसियन अपने 'संवाद' में इस संघर्ष पर सामान्य रूप से चर्चा करते हैं – चौथा, *'मांस और आत्मा के बीच संघर्ष पर'*, और पाँचवाँ, *'आठ प्रमुख जुनूनों पर'* – जबकि 'निर्णय पुस्तकें' विशेष रूप से, आठ प्रमुख जुनूनों में से प्रत्येक के खिलाफ संघर्ष का विस्तृत विवरण प्रदान करती हैं। – हम इन सभी से सबसे आवश्यक बिंदुओं को लेंगे)।

३. शरीर और आत्मा के बीच संघर्ष

1. हमारे अंगों में एक संघर्ष है, जैसा कि हम प्रेरित में पढ़ते हैं: *'मांस आत्मा के विरुद्ध काम करता है, और आत्मा मांस के विरुद्ध; और ये एक दूसरे के विरोधी हैं, ताकि आप वे काम न करें जो आप चाहते हैं'* (गलातियों 5:17)। ईश्वर की दिव्य योजना से, यह, मानो, हमारी प्रकृति में ही रच-बस गया है। और क्या इसे, प्रथम मानव के पतन के बाद, मानव स्वभाव के एक स्वाभाविक, मानो, गुण के अलावा कुछ और माना जा सकता है, यदि यह बिना किसी अपवाद के सभी में सामान्य है? हालांकि, हमें यह मानना चाहिए कि यह परमेश्वर की इच्छा से हम में हमारे भले के लिए है, न

कि हमारी हानि के लिए, क्योंकि यह सभी में स्वाभाविक है। इसे हम में उच्चतम पूर्णता के लिए उत्साह जगाने के लिए छोड़ा गया है।

२. इस अंश में *'मांस'* शब्द *को* मनुष्य के एक अस्तित्व के अर्थ में नहीं, बल्कि कामुक इच्छा, या नीच इच्छाओं के अर्थ में समझना चाहिए; इसी तरह, *'आत्मा'* शब्द को किसी व्यक्तिगत अस्तित्व के संदर्भ में नहीं, बल्कि आत्मा की अच्छी और पवित्र इच्छाओं के रूप में समझना चाहिए। स्वयं प्रेरित ने इस अर्थ को परिभाषित किया, कहते हुए: *'आत्मा के अनुसार चलो, और शरीर की इच्छाओं को पूरा न करो; क्योंकि शरीर आत्मा के विरुद्ध काम करता है'*, इत्यादि (वही, श्लोक 16–17)। चूँकि ये दोनों इच्छाएँ एक ही व्यक्ति के भीतर मौजूद हैं, हमारे भीतर एक अनवरत आंतरिक संघर्ष चलता रहता है। जबकि शरीर की वासना, जो मुख्य रूप से पाप की ओर झुकी हुई है, केवल उसी में आनंद पाती है जो इस वर्तमान जीवन की आवश्यकताओं की संतुष्टि से संबंधित है; इसके विपरीत, आत्मा पूरी तरह से आध्यात्मिक मामलों में स्वयं को समर्पित करना चाहती है, शरीर की सबसे आवश्यक जरूरतों को भी अलग रखती है, और केवल उन्हीं को समर्पित होना चाहती है, इस नश्वर शरीर पर थोड़ी सी भी ध्यान नहीं देती। शरीर को प्रचुरता और हर तरह के सुखों में आनंद आता है; आत्मा को तो प्राकृतिक आवश्यकताओं के मामलों में ध्यान देने में भी कोई आनंद नहीं आता। पहला निद्रा और भोजन से तृप्त होना चाहता है; जबकि दूसरे के लिए, जागरण और उपवास इतने पोषक हैं कि वह स्वयं को जीवन के लिए आवश्यक मात्रा में भी निद्रा या भोजन की अनुमति नहीं देना चाहेगा। पहला हर तरह की संपत्ति में प्रचुरता चाहता है; जबकि दूसरा दैनिक उपभोग के लिए थोड़ी सी रोटी होने पर भी संतुष्ट रहता है। पहला ऐश्वर्य में जीना और चापलूसों की भीड़ से घिरा रहना चाहता है; दूसरा कठोर जीवन और एक दुर्गम रेगिस्तान की विशालता में अधिक आनंद पाता है, और मनुष्यों की संगति में कोई आनंद नहीं लेता। पहला मानवीय सम्मान और प्रशंसा से मोहित होता है; दूसरा उत्पीड़न और अपमान में आनंद पाता है।

3. जब हमारी इच्छा स्व-प्रेम और सांसारिक बुद्धि से प्रेरित होती है, तो यह इन दोनों प्रवृत्तियों के बीच एक निश्चित मध्य मार्ग तैयार करती है—जो हर निंदा के योग्य है—जो देहगत वासनाओं से परहेज़ करने का प्रयास करती है, जबकि साथ ही आत्मा की मांगों को पूरा करने में अपरिहार्य कठिनाइयों में से किसी का भी सामना नहीं करती, – शरीर को कष्ट दिए बिना शारीरिक शुद्धता प्राप्त करने की इच्छा, प्रहरों की कठिनाई के बिना हृदय की शुद्धता प्राप्त करना, शरीर के विश्राम के दौरान आध्यात्मिक गुणों में वृद्धि, कड़वी निंदा के बिना धैर्य की कृपा प्राप्त करना, सांसारिक सम्मान की हानि के बिना मसीह की नम्रता का प्रदर्शन करना, भक्ति की सादगी का अनुसरण करते हुए इस युग के अहंकार को बनाए रखना, मसीह की सेवा करते हुए मानवीय महिमा और अनुग्रह की खोज करना, बिना किसी अपमान का सामना किए निर्णायक सत्य बोलना, – संक्षेप में, वर्तमान युग के आशीर्वादों को खोए बिना आने वाले युग के आशीर्वादों को प्राप्त करना। ऐसी इच्छा सच्चे पूर्णत्व की ओर नहीं ले जाती, बल्कि व्यक्ति को उष्णताहीनता की स्थिति में रखकर, उसे उन लोगों जैसा बना देती है जिनके बारे में प्रभु प्रकाशितवाक्य में निन्दापूर्वक बात करते हैं: *'मैं तेरे कामों को जानता हूँ: तू न तो गर्म है, न ही ठंडा। काश तू ठंडा या गर्म होता। इसलिये, चूँकि तू सुस्त है, मैं तुझे अपने मुँह से निकाल डालने वाला हूँ'* (प्रकाशितवाक्य 3:15–16)। लेकिन जब अनुग्रह आता है, तो यह आत्मा की ऊर्जा को जगाता है और उसमें उन उच्च आकांक्षाओं को पुनर्स्थापित करता है जो उसे सांसारिक सभी चीजों से अलग करती हैं। उनके प्रभाव में, इच्छाशक्ति अब उदासीन और गुनगुनी नहीं रह सकती, बल्कि वह सर्वोत्तम के लिए उत्साह से भर जाती है और उससे नीची सभी चीजों का त्याग कर देती है। हालाँकि, इस बीच, उसकी पूर्व उदासीनता की स्थिति की ओर झुकाव उसके भीतर बना रहता है, और वह उसमें वापस गिरने के लिए बहुत तैयार रहती है। ऐसा होने से रोकने के लिए, उच्च आकांक्षाओं के विरोधी प्रवृत्तियाँ देह के भीतर बनी रहती हैं; इच्छा, उच्च आशीर्वादों का स्वाद चखने के बाद, उन्हें सहन नहीं कर सकती, और जैसे ही वह उन्हें पहचानती है, वह तुरंत अपने पूरे उत्साह के साथ जीवंत हो उठती है और बहादुरी से अपने उच्च आशीर्वादों की रक्षा करती है। और ऐसा होता है कि जैसे ही इच्छाशक्ति ईश्वर-विरोधी उदासीनता में फिसलती है, देह का संघर्ष उठ खड़ा होता है और उसे पूरी ताकत से जगा देता है। इससे यह स्पष्ट है कि यदि हमारे भीतर उठने वाला यह संघर्ष हमें इससे बाहर निकालने के लिए न होता, तो हम उपर्युक्त ईश्वर-विरोधी उदासीनता की अवस्था में हमेशा के लिए बने रहते। क्योंकि उस अवस्था में, जब हम आत्म-संतुष्टि के आगे झुककर अपने लिए कोई भोग-विलास करना चाहते हैं, तो देह तुरंत उठ खड़ी होती है और पापी प्रवृत्तियों और वासनाओं के डंकों से हमें घायल कर, हमें वांछनीय, सुखद पवित्रता में खड़े होने से रोकती है, और हमें एक ठंडी सुख की ओर खींचती है – जो सुखदायक नहीं है, – जैसे कि हमें काँटों से भरे रास्ते पर खींच ले जाता है। लेकिन यह ईश्वर के प्रति सुस्त पड़े उत्साह को जगा देता है; वह जाग उठता है और आगे बढ़ रहे दुश्मनों को भगा देता है। दिन-प्रतिदिन हमारे भीतर कार्य करते हुए, यह संघर्ष हमें एक लाभकारी संकल्प की ओर ले जाता है, – आलस्य और लापरवाही के जीवन को अस्वीकार करना, और बहुत परिश्रम और आत्मिक पश्चाताप

के द्वारा हृदय की पवित्रता प्राप्त करना, – कठोर उपवास, भूख, प्यास और अनिद्रा के द्वारा शरीर की पवित्रता बनाए रखना, – पठन, चिंतन और अनवरत प्रार्थना के द्वारा मन की उत्तम अवस्था में आरोहण करना।

४. कुछ इसी तरह की बात रहस्यमय ढंग से इस्राएल के शत्रु राष्ट्रों के संबंध में परमेश्वर की योजना में दर्शाई गई है, जैसा कि हम न्यायियों की पुस्तक में पढ़ते हैं: *'प्रभु ने इन राष्ट्रों को इस्राएल की परीक्षा उनके द्वारा लेने के लिए छोड़ दिया... ताकि वह उन्हें युद्ध की कला सिखा सके'* (न्यायियों ३:१-२)। – यहोवा ने ऐसा युद्ध इसलिए नहीं कराया क्योंकि वह इस्राएल के लिए शांति नहीं चाहता था, या उसकी भलाई की परवाह नहीं करता था, बल्कि इसलिए क्योंकि उसने देखा कि इससे उन्हें कितना लाभ होगा। उन राष्ट्रों द्वारा लगभग निरंतर हमलों के अधीन होने के कारण, वे परमेश्वर की मदद की निरंतर आवश्यकता महसूस किए बिना नहीं रह सकते थे, और इसलिए उन्हें उस पर निरंतर, विश्वासपूर्ण निर्भरता और प्रार्थना में बने रहना पड़ा। युद्ध के काम को छोड़ने में असमर्थ, उनके पास लापरवाही करने या आलस्य और सुस्ती के कारण सुस्त पड़ने का समय नहीं था। क्योंकि अक्सर सुरक्षा और खुशी उन लोगों को गिरा देती हैं जिन्हें दुर्भाग्य हरा नहीं सका।

५. और हम और किस बात से पाते हैं कि जो लोग देह में निष्क्रिय कर दिए गए हैं, उनकी आत्मा सुस्त पड़ जाती है, यदि यह तथ्य नहीं कि, भ्रम के कारण, इस शारीरिक आवश्यकता से मुक्त होकर, वे सोचते हैं कि उन्हें न तो शारीरिक संयम के श्रम की और न ही हृदय के पश्चाताप की आवश्यकता है? ऐसी लापरवाही से बहककर, वे सच्चे पूर्णत्व को प्राप्त करने या आत्मा के भावों से हृदय को शुद्ध करने की परवाह नहीं करते। ऐसी अवस्था, यद्यपि कामुक अवस्था से ऊपर उठती है, फिर भी केवल आध्यात्मिक ही रहती है; तथापि, स्वयं प्रभु के शब्दों में, इसे अस्वीकृति के योग्य माना जाता है – क्योंकि, ठंडक से उष्णता में आकर, यह इस घृणित उष्णता में विश्राम करने लगी है।

६. इस प्रकार, त्याग के आरंभिक चरण में ही, जैसे ही हम कामुक होना बंद कर देते हैं—अर्थात्, जैसे ही हम सांसारिक रीति-रिवाजों से अपना अलगाव शुरू करते हैं और स्पष्ट कामुक अशुद्धि से परहेज़ करते हैं— हमें तुरंत अपने भीतर आध्यात्मिक अवस्था को आत्मसात करने के लिए शीघ्रता करनी चाहिए और अपनी पूरी शक्ति से प्रयास करना चाहिए; कहीं ऐसा न हो कि केवल हम अपने बाहरी अस्तित्व में संसार का त्याग कर लें, या कामुक व्यभिचार के माध्यम से स्वयं को कलंकित करना बंद कर दें, और यह कल्पना करने लगें कि हमने पहले ही पूर्णता प्राप्त कर ली है, जिसके परिणामस्वरूप हम बाद में आसक्तियों के कारणों को जड़ से मिटाने में लापरवाह और असावधान हो जाएँ, और, इस प्रकार देह और आत्मा के बीच आधे रास्ते में ही रहकर, आध्यात्मिक पूर्णता की अवस्था प्राप्त करने में असफल रहते हैं, यह मानकर कि इस पूर्णता के लिए केवल बाहरी रूप से संसार के जीवन और सुखों से खुद को अलग करना और केवल कामुक विलासिता और व्यभिचार से बचना ही पर्याप्त है। क्योंकि यदि हम इस गुनगुनाहट (उदासीनता) की अवस्था में बने रहते हैं, जिसे सबसे बुरा माना जाता है, तो हमें प्रभु के मुँह से थूक दिया जाएगा, जैसा कि वे कहते हैं: *'क्योंकि तुम गुनगुने हो... मैं तुम्हें अपने मुँह से थूक दूँगा'* (प्रकाशितवाक्य 3:16)। प्रभु ने उन लोगों के विषय में ठीक ही घोषणा की है, जिन्हें उन्होंने प्रेम की कोख में ग्रहण किया था, किन्तु बाद में वे ठंडे पड़ गए, कि उन्हें वह एक प्रकार की घृणा के साथ थूक देंगे। क्योंकि एक देहधारी मनुष्य—अर्थात् एक सांसारिक या विधर्मी व्यक्ति—उस व्यक्ति की तुलना में अधिक आसानी से मोक्ष की ओर मुड़ता है और आध्यात्मिक पूर्णता की ऊँचाइयों पर चढ़ता है, जो मसीह का जुआ उठा तो लेता है, परन्तु पूर्णता के मार्ग पर नहीं चलता और आध्यात्मिक उत्साह की प्रारंभिक आग को ठंडा होने देता है। क्योंकि जब ऐसा व्यक्ति, जो कामुक वासनाओं से विनम्र होकर और मांसल अशुद्धि के कारण स्वयं को अशुद्ध मानकर पश्चाताप करता है और सभी पवित्रता और पूर्णता के स्रोत की ओर मुड़ता है, तो वह उस अविश्वास और लापरवाही की ठंडी अवस्था से घृणा करते हुए, जिसमें वह कभी था, और उत्साह से जलते हुए, अधिक आसानी से पूर्णता की ओर बढ़ेगा। दूसरी ओर, जो कोई भी ठंडक के साथ ईश्वर के कार्य में संलग्न होता है और, विनम्रता या उचित उत्साह के बिना, इस आह्वान के पथ पर निकल पड़ता है, वह, एक बार इस विनाशकारी संक्रामकता से प्रभावित हो जाने पर, न तो अपनी इच्छा से सुधार करने में और न ही दूसरों से सलाह स्वीकार करने में सक्षम होगा। क्योंकि, प्रभु के वचन के अनुसार, वह अपने हृदय में कहता है: *'मैं धनी हूँ, मैं समृद्धि प्राप्त कर चुका हूँ, और मुझे किसी चीज़ की कमी नहीं है'*; जबकि उसके लिए यह कहना अधिक उपयुक्त होगा: *'और यह नहीं जानता कि तुम दीन, और दरिद्र, और बेबस, और अंधे, और नग्न हो'* (प्रकाशितवाक्य 3:17)। इस प्रकार, वह एक सांसारिक व्यक्ति से भी बदतर हो जाता है, क्योंकि वह इस बात का बोध खो देता है कि वह कितना गरीब, अंधा और नग्न है, उसे कितना सुधारने की आवश्यकता है, और उसे दूसरों से कितनी अधिक शिक्षा और चेतावनी की आवश्यकता है; इसीलिए वह उद्धार का कोई भी वचन स्वीकार नहीं करता, यह महसूस किए बिना कि आने वाले युग में वह अनिवार्य रूप से सबसे कठोर न्याय और दंड के अधीन होगा।

४. वासनाओं और उनसे संघर्ष की एक सामान्य रूपरेखा

1. आठ प्रमुख वासनाएँ हैं: अतसिदि्धि, कामवासना, लोभ, क्रोध, शोक, नराशा, अहंकार और गर्व।

2. आवेग *'दो प्रकार' के* होते हैं: प्राकृतकि, जो प्राकृतकि जरूरतों से उत्पन्न होते हैं, जैसे लालच और व्यभचािर, और अस्वाभावकि, जो प्रकृत में नहिति नहीं हैं, जैसे लोभ। हालांक, उनकी *'अभव्यिक्तयाँ', 'चार प्रकार' की* होती हैं: कुछ केवल शरीर में और शरीर के माध्यम से कार्य करते हैं, जैसे क अतभिक्षण और व्यभचािर, जबक अन्य शरीर की भागीदारी के बना प्रकट होते हैं, जैसे क दंभ और अहंकार; इसके अलावा, कुछ बाहरी रूप से उत्तेजति होते हैं, जैसे क लोभ और क्रोध, जबक अन्य आंतरकि कारणों से उत्पन्न होते हैं, जैसे क नराशा और दुख। भावों के प्रभावों के प्रकट होने के इस तरीके से उन्हें दो और श्रेणयिों में पहचानने का कारण मलिता है - उन्हें शारीरकि और आध्यात्मकि में वभिाजति करना: शारीरकि भाव शरीर के भीतर उत्पन्न होते हैं और शरीर को पोषण देते हैं तथा आनंदति करते हैं; जबक आध्यात्मकि भाव आत्मा की प्रवृत्तयिों से उत्पन्न होते हैं और आत्मा को पोषण देते हैं, यद्यप उनका अक्सर शरीर पर वनिाशकारी प्रभाव पड़ता है। बाद वाले का इलाज हृदय के एक सरल, आंतरकि उपचार से होता है; जबक कामुक का इलाज दोहरे उपचार—बाहरी और आंतरकि—से होता है।

3. आइए, कही गई बातों को और अधकि वसि्तार से स्पष्ट करें। भोग-लालसा और व्यभचािर जैसी वासनाएँ, शरीर में जड़ें जमाकर, कभी-कभी आत्मा की भागीदारी के बना ही जागृत हो जाती हैं, केवल उन इच्छाओं के उत्तेजना से जनिसे वे उत्पन्न होती हैं; फरि भी वे आत्मा को भी शरीर के साथ अपने संबंध के कारण अपनी ओर खींच लेती हैं। उन्हें काबू करने के लिए, केवल मानसकि दृढ़ संकल्प से लैस होना ही पर्याप्त नहीं है; बल्क उपवास, जागरण और परशि्रम द्वारा शरीर को थकाकर वश में करना भी आवश्यक है; कभी-कभी अस्थायी एकांत आवश्यक होता है, और अक्सर पूर्ण तपस्या भी। क्योंक जैसे वे आत्मा और शरीर दोनों की भ्रष्टता से उत्पन्न होते हैं, वैसे ही केवल दोनों के प्रयास से ही उन पर काबू पाया जा सकता है। – व्यर्थता और अहंकार आत्मा में शरीर के माध्यम के बना ही उत्पन्न होते हैं। क्योंक व्यिर्थता को कसिी भी शारीरकि चीज़ की क्या ज़रूरत है, जब वह केवल प्रशंसा और महमिा की इच्छा के माध्यम से ही, जसि आत्मा को वह मोहति कर लेती है, उसे वनिाश की ओर ले जाती है? या लूसफिर के घमंड में कोई शारीरकि क्रयिा हुई, जब उसने इसे केवल अपनी आत्मा और वचिारों में ही जन्म दयिा, जैसा क पैगंबर कहते हैं: *'तुमने अपने हृदय में कहा: "मैं स्वर्ग पर चढ़ जाऊँगा... और मैं सर्वोच्च के समान होऊँगा"'* (यशायाह 14:13–14)। ऐसे घमंड में नशि्चति रूप से उसका कोई उकसाने वाला नहीं था; यह पूरी तरह से उसके भीतर ही उत्पन्न और परपिक्व हुआ था।

4. यद्यप इन आठ आसक्तयिों की उत्पत्तयिाँ और प्रभाव अलग-अलग हैं, फरि भी पहले छह—अर्थात्, अतकिाम, व्यभचिार, लोभ, क्रोध, शोक और नराशा—एक वशिेष आत्मीयता से जुड़े हुए हैं, जसिके द्वारा एक की अधकिता दूसरी को जन्म देती है। क्योंक भोग-लप्सिा ( ) के अतरिेक से वासना अनवािर्य रूप से उत्पन्न होती है; वासना से लोभ; लोभ से क्रोध; क्रोध से शोक; और शोक से नराशा उत्पन्न होती है। इसलए, संघर्ष में एक के बाद दूसरे की ओर बढ़ते हुए, इन्हें उसी क्रम में लड़ना चाहए: नराशा को दूर करने के लिए, पहले दुख को दबाना होगा; दुख को दूर करने के लिए, पहले क्रोध को दबाना होगा; क्रोध को शांत करने के लिए, लोभ को कुचलना होगा; लोभ को जड़ से उखाड़ने के लिए, कामवासना को वश में करना चाहए; कामवासना को वश में करने के लिए, पेटूता के जुनून को नयिंत्रति करना चाहए। और शेष दो जुनून, अहंकार और घमंड, इसी तरह जुड़े हुए हैं; अर्थात्, पहले के तीव्र होने से बाद वाला उत्पन्न होता है, और अत्यधकि अहंकार से घमंड का जुनून जन्म लेता है; उन पर वजिय इसी क्रम में प्राप्त की जाती है; अर्थात्, घमंड को जड़ से मटिाने के लिए, अहंकार को दबाना आवश्यक है। लेकनि ये दोनों भावनाएँ अन्य छह से उत्पत्त के अर्थ में जुड़ी नहीं हैं; क्योंक वि उनसे उत्पन्न नहीं होती हैं, बल्क उनके उन्मूलन के बाद उत्पन्न होती हैं। हम इन दो भावनाओं में वशिेष रूप से अन्य भावनाओं पर वजिय और सफलता के बाद पड़ते हैं। – हालाँक, यद्यप ये आठ आसक्तयिाँ एक-दूसरे के साथ अब बताई गई तरह के संबंध में हैं, फरि भी इन्हें चार जोड़ों में वभिाजति कयिा गया है: कामवासना का वशिेष बंधन पेटूता से, क्रोध का लोभ से, नराशा का शोक से, और अहंकार का दंभ से जुड़ा होता है।

5. प्रत्येक वासना स्वयं को एक से अधकि रूपों में प्रकट करती है।

6. इस प्रकार, अतकिाल तीन रूप लेता है: या तो यह नर्धिारति समय से पहले खाने की इच्छा पैदा करता है; या यह भोजन की गुणवत्ता की परवाह कए बना, पेट भरने तक बड़ी मात्रा में खाने की मांग करता है; या यह स्वादष्टि व्यंजनों की मांग करता है। यहीं से अव्यवस्थति भोजन, चलते-फरिते खाना, लालच और कामुक भोग उत्पन्न होते हैं। इन तीनों से आत्मा में वभिन्नि दुष्ट क्लेश उत्पन्न होते हैं: पहले से मठ के नयिम के प्रत रोष उत्पन्न होता है; इस

रोष से मठ जीवन के प्रति असंतोष इस हद तक बढ़ जाता है कि उसे सहना असंभव हो जाता है, जिसके बाद आमतौर पर जल्द ही मठ से भाग जाना होता है; दूसरा कामवासना और कामुकता को जन्म देता है; और तीसरा व्यक्ति को धन के प्रेम में डुबो देता है और मसीह की गरीबी के लिए कोई जगह नहीं छोड़ता।

7. व्यभिचार के तीन प्रकार हैं: पहला एक लिंग और दूसरे लिंग के बीच यौन संबंध के माध्यम से किया जाता है; दूसरा एक महिला के साथ यौन संबंध के बिना होता है, जिसके लिए कुलपति यहूदा के पुत्र ओनन को प्रभु ने मार गिराया था (उत्पत्ति 38:9-10), और जिसे धर्मग्रंथ में 'अशुद्धता' कहा जाता है; तीसरा मन और हृदय में किया जाता है, जिसके बारे में प्रभु सुसमाचार में कहते हैं: *'जो कोई भी किसी स्त्री को वासना की दृष्टि से देखता है, वह मन में ही उसके साथ व्यभिचार कर चुका है'* (मत्ती 5:28)। धन्य प्रेरित ने निम्नलिखित वचन में इन तीन प्रकारों की ओर इशारा किया है: *'इसलिये जो कुछ तुम्हारे सांसारिक स्वभाव से है, उसे मार डालो: व्यभिचार, अशुद्धता, कामवासना'* आदि (कुलुस्सियों 3:5)।

8. धन के प्रेम के तीन प्रकार हैं: पहले प्रकार में, यह संसार को त्याग चुके व्यक्ति को अपने सभी भोग-साधनों से वंचित होने से रोकता है; दूसरे प्रकार में, यह पहले ही सब कुछ गरीबों को दे चुके व्यक्ति को फिर से ऐसे भोग-साधन प्राप्त करने के लिए विवश करता है; तीसरे प्रकार में, यह पहले जिसके पास कुछ भी नहीं था, उसमें भी acquisitions की इच्छा जगाता है।

9. क्रोध के भी तीन प्रकार हैं: पहला वह है जो मन में ही दमते रहता है; दूसरा वह है जो वचन और कर्म में प्रकट होता है; तीसरा वह है जो लंबे समय तक मन में दमते रहता है, और जिसे द्वेष कहा जाता है।

10. दुख के दो प्रकार हैं: पहला वह है जो क्रोध के शांत होने के बाद आता है, या हुए नुकसान और हानि और इच्छाओं की पूर्ति न होने के कारण होता है; दूसरा अपने ही भाग्य को लेकर डर और चिंता से, या अनुचित चिंताओं से उत्पन्न होता है।

11. निराशा के दो प्रकार हैं: एक व्यक्ति को नींद में डुबा देती है, जबकि दूसरी उसे उसकी कोठरी से बाहर निकाल देती है।

12. यद्यपि व्यर्थता कई रूप लेती है, इसके दो मुख्य प्रकार हैं: पहले में, हम शारीरिक लाभों और दृश्यमान चीजों का घमंड करते हैं; दूसरे में, हम आध्यात्मिक मामलों से उत्पन्न व्यर्थ महिमा की इच्छा से उत्तेजित होते हैं।

13. अहंकार के दो प्रकार हैं: पहला सांसारिक है, दूसरा आध्यात्मिक, जो पहले से अधिक विनाशकारी है। यह विशेष रूप से उन लोगों को प्रलोभित करता है जो कुछ गुणों में उत्कृष्ट रहे हैं।

14. यद्यपि ये आठों प्रवृत्तियाँ संपूर्ण मानव जाति को प्रलोभित करती हैं, तथापि वे सभी पर एक समान रूप से आक्रमण नहीं करतीं। क्योंकि एक व्यक्ति में, वासना की भावना हावी रहती है; दूसरे में, क्रोध का वर्चस्व रहता है; किसी और में, अहंकार का राज होता है; और किसी अन्य में, घमंड का बोलबाला रहता है: इसलिए यद्यपि सभी भाव सभी पर आक्रमण करते हैं, हम में से प्रत्येक उनके आगे अलग-अलग तरीके और क्रम से झुकता है।

१५. अतः हमें इन वासनाओं के विरुद्ध इस प्रकार युद्ध करना चाहिए कि प्रत्येक व्यक्ति, यह पहचान कर कि कौन-सी वासना विशेष रूप से उसके लिए हानिकारक है, अपने संघर्ष को मुख्य रूप से उसी के विरुद्ध निर्देशित करे, और उस पर नजर रखने तथा उसे दबाने के लिए हर संभव प्रयास और सावधानी बरते, तथा दैनिक उपवास की भालाओं को उसी पर ताने, हर क्षण हृदय की कराहों और आहों के तीरों से उस पर प्रहार करते हुए, और उसे परेशान करने वाले इस कोलाहल के अंत के लिए ईश्वर से प्रार्थना में अनवरत आँसू बहाते हुए। क्योंकि कोई भी व्यक्ति किसी भी वासना पर तब तक विजय प्राप्त नहीं कर सकता जब तक वह इस बात से आश्वस्त न हो जाए कि वह अपनी लगन या परिश्रम से उस पर विजय प्राप्त नहीं कर सकता; यद्यपि, उसे उससे शुद्ध होने के लिए, उस उद्देश्य के लिए दिन-रात हर परिश्रम और हर प्रयास को समर्पित करना आवश्यक है।

१६. जब ऐसा योद्धा महसूस करता है कि वह अपने प्रमुख जुनून से मुक्त हो गया है, तो उसे फिर से अत्यंत ध्यान से अपने हृदय की गहराइयों की जाँच करनी चाहिए, ताकि यह पहचान कर कि बाकी की तुलना में उसके भीतर कौन सा जुनून अभी भी सबसे प्रबल है, वह अपने सभी आध्यात्मिक हथियारों को विशेष रूप से उसी के विरुद्ध निर्देशित कर सके। इस प्रकार हर बार अपने भीतर के प्रमुख जुनूनों पर काबू पाकर, वह शेष, छोटे जुनूनों पर अधिक तेज़ी और आसानी से हावी हो जाएगा।

१७. जब आप एक या अधिक वासनाओं पर विजय प्राप्त कर लें, तो आपको इस जीत पर घमंड नहीं करना चाहिए। अन्यथा, प्रभु आपके हृदय के घमंड को देखकर, उसकी रक्षा करना बंद कर देंगे - और आप, उनके परित्यक्त होकर, फिर से उसी वासना से परेशान होने लगेंगे जिस पर आपने विजय प्राप्त की थी - भले ही वह ईश्वर की कृपा से ही क्यों न हुई हो। और न ही पैगंबर ने प्रार्थना की होती: *'हे प्रभु, जो आत्मा तेरा भजन करती है, उसे*

पशुओं के हाथ न छोड़ देना (भजन संहिता 73:19), यदि उन्हें यह पता न होता कि जिनके हृदय घमंड से भर जाते हैं, वे उन वासनाओं के शिकार हो जाते हैं जिन पर उन्होंने विजय प्राप्त की थी, ताकि वे नम्र हो सकें।

५. आठ प्रमुख भावों के विरुद्ध संघर्ष

1. आठ प्रमुख भावों के विरुद्ध संघर्ष का वर्णन करते हुए, हम उनकी विशेषताओं को प्रस्तुत करेंगे, उनके कारणों की पहचान करेंगे, और उनके विरुद्ध उपयुक्त उपचार प्रस्तावित करेंगे।

1. अतिभिक्षण के विरुद्ध संघर्ष

1. पहला संघर्ष जो हमें करना चाहिए, वह है अति-भिक्षण, या अत्यधिक भोग की प्रवृत्ति के खिलाफ संघर्ष।

2. जहाँ तक भोजन से परहेज़ करने, या उपवास करने के अभ्यास का प्रश्न है, कोई एक नियम नहीं बनाया जा सकता जो सभी पर लागू हो; क्योंकि सभी शरीरों में समान शक्ति नहीं होती, और यह गुण केवल आत्मा की शक्ति से ही नहीं, बल्कि शरीर की शक्ति के अनुपात में भी होना चाहिए। हर किसी के लिए पूरे सप्ताह उपवास करना संभव नहीं है; कुछ लोग तीन या दो दिनों से अधिक समय तक भूखे नहीं रह सकते, जबकि दूसरों को सूर्यास्त तक भूखे रहना मुश्किल लगता है। न ही सब्जियां, जड़ी-बूटियां या सूखी रोटी सभी के लिए पौष्टिक होती हैं। इसके अलावा, एक व्यक्ति को पेट भरने के लिए दो पाउंड की आवश्यकता हो सकती है, जबकि दूसरा एक पाउंड या आधा पाउंड खाने के बाद भारी महसूस करता है। फिर भी, संयम का अभ्यास करने वाले सभी लोगों का एक ही लक्ष्य होना चाहिए: अपनी क्षमता के अनुसार खाना, अत्यधिक खाने में लिप्त हुए बिना। क्योंकि यह केवल भोजन की गुणवत्ता ही नहीं, बल्कि मात्रा भी है, जो आत्मा को शिथिल करती है, और उसमें एक हानिकारक, पापी आग जलाती है।

3. भले ही पेट भरने वाली कोई भी स्वादिष्ट वस्तु हो, वह कामुक वासना के बीज को जन्म देती है, और भोजन के बोझ से दबा हुआ मन अब तर्क के पतवार को सही दिशा में मोड़ने के लिए पर्याप्त मजबूत नहीं रहता। यह केवल शराब का अत्यधिक सेवन ही नहीं है जो मन को मदहोश करता है, बल्कि हर प्रकार के भोजन में अति-आसक्ति भी है, जो आमतौर पर इसे अस्थिर और डगमगाता हुआ बना देती है, और इसे शुद्ध और निर्दोष विचारों से वंचित कर देती है। क्योंकि सिदोम के लोगों के लिए, उनके भ्रष्टता और विनाश का कारण केवल शराब पीना ही नहीं, बल्कि पेट की अति-आसक्ति भी थी। सुनो कि प्रभु, भविष्यवक्ता के द्वारा, यरूशलेम की निन्दा कैसे करते हैं (यहे. 16:49)। तुम्हारी बहिन सोदोम ने किस बात में पाप किया, यदि संतुष्ट होने और अतिशय खाने के सिवाय? क्योंकि, रोटी से ऐसी संतुष्टि के कारण, वे देह की वासना की अविनाशी आग से भड़क उठे थे, इसलिए परमेश्वर के न्याय द्वारा, वे स्वर्ग से गंधक की आग से भस्म हो गए। यदि इस प्रकार, तृप्ति की लालसा से प्रेरित होकर, रोटी के सेवन में केवल उनकी अधिकता ने ही उन्हें भ्रष्टता की उथल-पुथल भरी खाई में डाल दिया, तो फिर उन लोगों के बारे में क्या कहा जा सकता है जो शारीरिक स्वास्थ्य के चरम पर होते हुए भी, मांस खाने और अत्यधिक मात्रा में शराब पीने की अनुमति देते हैं, और उन्हें न तो अपनी शारीरिक आवश्यकताओं के अनुसार, बल्कि अपनी आत्म-तुष्ट करने वाली वासना के निर्देशानुसार खाते और पीते हैं?

४. चर्च के आचार्यों ने भोजन में संयम का मापदंड इस प्रकार परिभाषित किया है: कि जब तक खाने की इच्छा बनी रहती है, तब तक हमें उस भोजन को खाना बंद कर देना चाहिए जिसे शरीर को बनाए रखने के लिए आवश्यकता हमें लेने के लिए मजबूर करती है। इसी से यह स्पष्ट होता है कि शारीरिक रूप से कमजोर व्यक्ति भी, इच्छाशक्ति के एक कार्य द्वारा भोजन की अपनी इच्छा को तब नियंत्रित कर सकता है जब मांस की दुर्बलता इसकी मांग न करती हो, और इस प्रकार मध्यमता के सद्गुण को उन लोगों के बराबर पूर्णता तक अभ्यास कर सकता है जो मजबूत और स्वस्थ हैं। क्योंकि प्रेरित भी कहते हैं: *'मांस की इच्छाओं को संतुष्ट न करो'* (रोमियों 13:14)। उन्होंने शरीर की देखभाल पर पूरी तरह से प्रतिबंध नहीं लगाया, बल्कि केवल कामवासना के कारण ऐसा करने से रोका – उन्होंने शरीर के प्रति कामवासनापूर्ण चिंता को अस्वीकार कर दिया, फिर भी जीवन के लिए आवश्यक उचित देखभाल को बाहर नहीं किया; उन्होंने पहले को मना किया, ताकि देह के सुख में लिप्त होकर हम वासना के विनाशकारी कृत्यों में न पड़ जाएँ, और दूसरे को अनुमति दी, ताकि शरीर, अनुचित कठोरता से कमजोर होकर, हमारे आध्यात्मिक कार्यों और परिश्रमों को करने में असमर्थ न हो जाए।

५. इस प्रकार, संयम की मात्रा प्रत्येक व्यक्ति की अंतरात्मा के निर्णय द्वारा निर्धारित होनी चाहिए। प्रत्येक व्यक्ति को अपने लिए मांस की बगावत के खिलाफ संघर्ष के लिए आवश्यक संयम की मात्रा निर्धारित करनी चाहिए। – नियमों द्वारा निर्धारित उपवास निश्चित रूप से पालन किए जाने चाहिए; लेकिन यदि, उनके बाद, भोजन के सेवन में संयम बनाए नहीं रखा जाता है, तो उनका पालन करने से पूर्ण पवित्रता प्राप्त नहीं होगी।

दीर्घकालकि संयम के दौरान उपवास का फल केवल उस समय शरीर की अस्थायी कमजोरी और थकान ही होगा, न कि ब्रह्मचर्य की पवित्रता, यदि इसके बाद पेट भर खाने से शरीर तृप्त हो जाता है: क्योंकि आत्मा की पवित्रता पेट के उपवास से अविभाज्य रूप से जुड़ी हुई है। जो लोग संयम के एक स्थिर और समान स्तर को बनाए रखने में संतुष्ट नहीं हैं, वे ब्रह्मचर्य की स्थायी पवित्रता के अधिकारी नहीं होते हैं। कठोर उपवास, यदि उसके बाद भोजन में अत्यधिक लिप्तता हो, तो उनका कोई मूल्य नहीं है, और उनका फल जल्द ही भोग-लालसा द्वारा प्रतिस्थापित हो जाता है। समय-समय पर लंबे और अत्यंत कठोर उपवास करने के बजाय, हर दिन भोजन से समझदारी और संयम के साथ पोषण करना बेहतर क्यों है? भोजन से अत्यधिक संयम न केवल आत्मा की दृढ़ता और स्थिरता को कमजोर करता है, बल्कि शरीर की थकान के कारण प्रार्थनाओं के अनुष्ठान को भी निर्जीव बना देता है।

6. आत्मा और शरीर की पवित्रता बनाए रखने के लिए, केवल भोजन से परहेज़ करना पर्याप्त नहीं है जब तक कि उसके साथ अन्य आध्यात्मिक सद्गुण न हों। इस प्रकार, सबसे पहले और सबसे महत्वपूर्ण, किसी को आज्ञाकारिता के सद्गुण, हृदय के पश्चाताप और शरीर की थकान के माध्यम से नम्रता सीखनी चाहिए। किसी को केवल धन और संपत्ति से बचना ही नहीं चाहिए, बल्कि उन सभी की इच्छा को जड़ से उखाड़ फेंकना चाहिए। क्योंकि केवल उनका स्वामी न होना ही पर्याप्त नहीं है - जो आमतौर पर मजबूरी में ही होता है - बल्कि किसी को खुद को उन चीज़ों की इच्छा करने की अनुमति भी नहीं देनी चाहिए, भले ही वे संयोग से मिल भी जाएँ। हमें क्रोध की आग को दबाना चाहिए, दुख के बोझ पर काबू पाना चाहिए, व्यर्थ की महिमा का तिरस्कार करना चाहिए, अहंकार के घमंड को पैरों तले कुचलना चाहिए, और ईश्वर का निरंतर स्मरण करके मन की चंचल और अस्थिर भटकन को भी काबू में रखना चाहिए। हमें हमेशा अपने हृदय को बेचैन भटकन से हटाकर ईश्वर के चिंतन की ओर वापस मोड़ना चाहिए, जैसे ही धूर्त शत्रु, जो इस चिंतन से हमारे मन का ध्यान भटकाना चाहता है, हृदय के गुप्त कोनों में प्रवेश कर जाता है।

7. जब कामवासना भड़क उठती है, तो कोई भी उसे तब तक दबा नहीं सकता, जब तक कि वह लालच की प्रवृत्ति को नियंत्रित करने के लिए पर्याप्त मजबूत न हो। इस सद्गुण की पूर्णता से ही आंतरिक मनुष्य की पवित्रता की पहचान होती है। क्योंकि आप कभी यह विश्वास नहीं करेंगे कि जिसे आप एक हल्की-फुल्की झड़प में सबसे कमजोर व्यक्ति से पराजित होते देखते हैं, वह युद्ध में सबसे शक्तिशाली विरोधियों का सामना कर सकता है।

8. इसलिए, सबसे पहले हमें अतिभक्षण की लालसा को पैरों तले कुचलना चाहिए – और अपने मन को न केवल उपवास के माध्यम से, बल्कि जागरण, तथा पठन और हृदय की निरंतर पश्चाताप के माध्यम से भी शुद्ध करना चाहिए, साथ ही उन सभी बातों को याद करते हुए जो हमें प्रलोभित कर चुकी हैं या हम पर हावी हो चुकी हैं, कभी-कभी पापों की अधिकता से भयभीत होकर कराहते हुए, तो कभी पूर्णता और पवित्रता की इच्छा से जलते हुए। और हमें इसे उस बिंदु तक लाना चाहिए, जहाँ, इस प्रकार के तपस्वी श्रम और विचारों में लगे और, मानो, मग्न रहते हुए, वह स्वयं को भोजन से पोषण देने की क्रिया को इतनी अधिक सुख की अनुमत स्रोत के रूप में नहीं, बल्कि दंड के रूप में थोपे गए एक बोझ के रूप में देखता है, और आत्मा के लिए वांछनीय होने की तुलना में शरीर के लिए अनिवार्य रूप से आवश्यक चीज़ के रूप में इससे अधिक जुड़ता है। यदि हम लगातार स्वयं को ऐसी आध्यात्मिक सतर्कता और पश्चाताप में रखते हैं, तो हम जल्द ही शरीर की वासना को वश में कर लेंगे, जो भोजन से पोषित होकर उन्माद की चरम सीमा तक पहुँच जाती है, और इसके विनाशकारी डंक को कुंद कर देंगे। इस प्रकार, प्रचुर आँसुओं और हृदय से निरंतर रोने के द्वारा, हम अपने शरीर की उस भट्टी को बुझा सकते हैं, जिसे बेबीलोन के राजा—अर्थात्, शैतान—ने हमारे भीतर प्रज्वलित किया है, जो हमें पाप के अवसरों के लिए तैयार करता है और हमारी कामनाओं को भड़काता है; क्योंकि तब, भट्टी में तेल और गोंद डालने के समान, हम और भी भयंकर रूप से जलते हैं (अश्लीलता की ओर); जब तक कि, ईश्वर की कृपा से, हमारे हृदयों में उनकी ओस भरी आत्मा की श्वास द्वारा, हमारे भीतर कामाग्नि पूरी तरह से बुझ न जाए। और यहीं हमारा पहला संघर्ष है – पूर्णता की इच्छा के माध्यम से अतिभक्षण और आत्म-संतुष्टि की कामना को दबाना! इसी कारण, हमें न केवल सद्गुणों पर मनन करके अत्यधिक भोजन की इच्छा को दबाना चाहिए, बल्कि अपने स्वभाव के लिए आवश्यक भोजन—जो ब्रह्मचर्य के अनुकूल नहीं है—को भी केवल हृदय की सावधानीपूर्वक और विचारशील ध्यान के साथ ही ग्रहण करना चाहिए। और हमें अपने जीवन के मार्ग को इस तरह व्यवस्थित करना चाहिए कि हम आध्यात्मिक साधनाओं से कभी भी विचलित न हों, सिवाय इसके कि जब शरीर की कमजोरी हमें उसकी आवश्यक देखभाल करने के लिए मजबूर करे। लेकिन जब हम आत्मा की इच्छाओं के गुलाम बनकर नहीं, बल्कि जीवन की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए इस आवश्यकता को स्वीकार करते हैं, तब भी हमें इसे यथाशीघ्र त्याग देना चाहिए, क्योंकि यह हमें हमारे मोक्ष के प्रयासों से विचलित करती है। और भोजन करते समय भी, हमें इन प्रयासों में पीछे नहीं होना चाहिए। क्योंकि हम किसी भी तरह से अपने सामने रखे भोजन से आनंद प्राप्त करने से नहीं बच सकते, जब तक कि आत्मा, दिव्य चिंतन पर अपना ध्यान केंद्रित करके, एक ही समय में सद्गुण के प्रेम और आवश्यक

चीजों की सुंदरता में और भी अधकि आनंदति न हो। वास्तव में, इस वर्तमान जीवन में सब कुछ क्षणभंगुर और तुच्छ लगने लगता है, जब कोई मन की दृष्टि को नश्वर और शाश्वत आशीर्वादों पर लगातार स्थरि रखता है, और शरीर में रहते हुए ही हृदय से आने वाले जीवन के आनंद का स्वाद चखता है।

९. ऐसे स्वभाव से, पेटूता और अति-आसक्ति की वासना पर वजिय प्राप्त करके, और अब शरीर के दास न रहकर, हमें उच्चतम संघर्षों में प्रवेश करने के योग्य माना जाएगा—अशुद्ध शक्तियों से लड़ने के लिए, जो आमतौर पर केवल उन्हीं के साथ व्यक्तिगत मुकाबला करती हैं जिन्होंने पहले ही वजिय प्राप्त कर ली है। इस प्रकार, कामुक इच्छाओं का दमन सभी युद्धों की सबसे ठोस नींव साबति होता है। जब तक कोई अपने शरीर पर वजिय प्राप्त नहीं कर लेता, तब तक कोई भी वैध रूप से लड़ नहीं सकता; और जो वैध रूप से नहीं लड़ता, उसे मुकुट नहीं मलिता।

10. क्या आप मसीह के एक सच्चे योद्धा को सुनना चाहते हैं, जो युद्ध के वैध नयिमों के अनुसार लड़ता है? – ध्यान से सुनें। – वह कहता है, *'मैं ऐसा नहीं दौड़ता कि लक्ष्य से चूक जाऊँ; मैं ऐसा नहीं लड़ता कि हवा में घूँसे मारूँ; बल्कि मैं अपने शरीर को अनुशासति करके वश में रखता हूँ, कहीं ऐसा न हो कि मैं दूसरों को उपदेश देते हुए स्वयं अयोग्य ठहर जाऊँ'* (1 कुरन्थियों 9:26–27)। क्या आप देखते हैं कि कैसे, अपने भीतर—अर्थात् अपने ही शरीर में—सबसे दृढ़ नींव पर, उसने संघर्ष के मुख्य कार्य को स्थापति कयिा है, और संघर्ष की संपूर्ण सफलता को शरीर को दंडति करने और अपने ही शरीर को वश में करने के एकल कार्य में केंद्रति कयिा है? वह कहता है, *'मैं इस प्रकार दौड़ता हूँ, जैसे कि लक्ष्यहीन न हो।'* वह व्यर्थ में नहीं दौड़ता जो स्वर्गीय यरूशलेम को नहिारता है, और उसमें एक अटल लक्ष्य रखता है, जसिकी ओर उसे अपने हृदय की तीव्र गति को दृढ़ता से नर्दिेशति करना है। जो पीछे जो कुछ है उसे भूलकर और आगे जो कुछ है उसकी ओर बढ़कर *'मसीह यीशु में परमेश्वर की ऊँची बुलाहट'* (Phil. 3:14) के लिए प्रयासरत रहता है, वह अनश्चितिता की ओर नहीं दौड़ता। 13–14), जसिकी ओर वह सदैव अपने मन की दृष्टि केंद्रति करता है, और जसिकी ओर वह अपने हृदय की सारी तत्परता के साथ शीघ्रता करता है, और वश्विास के साथ पुकारता है: *'मैंने अच्छा संघर्ष कयिा है, मैंने दौड़ पूरी कर ली है, मैंने वश्विास बनाए रखा है'* (2 तीमु. 4:7)। और चूँकि वह जानता था कि उसने मसीह के अभषिेक की *'सुगंध में'* कतिनी अथकता से, अपनी पूरी अंतरात्मा के तीव्रतम उत्साह के साथ *दौड़* लगाई थी (प्रेरतिों के काम 1:3), और शरीर को वश में करके आध्यात्मकि संघर्ष में सफलतापूर्वक वजिय प्राप्त की थी; इसलिए, नस्सिंदेह आशा के साथ, वह घोषणा करता है: *'मेरे लिए धार्मकिता का एक मुकुट रखा हुआ है, जसिे प्रभु, न्यायी, उस दनि मुझे देंगे'* (2 तीमुथयिुस 4:8)। और ताकि वह हमें पुरस्कार की इसी प्रकार की आशा प्रकट कर सकें, यदि हम उसी प्रयास के मार्ग में उनका अनुकरण करें, तो उन्होंने यह जोड़कर कहा: *'न केवल मुझ पर, बल्कि उन सभी पर भी जो उसकी प्रकट होने की लालसा करते हैं'*, यह घोषति करते हुए कि न्याय के दनि हम भी उसके मुकुट में सहभागी होंगे, यदि हम मसीह के आगमन से प्रेम करके—केवल उस आगमन से नहीं जसिमें वह उन लोगों पर भी प्रकट होंगे जो इसे नहीं चाहते, बल्कि वशिेष रूप से उस आगमन से जसिमें वह पवत्रि आत्माओं के पास उतरते हैं—मांस के संयम के माध्यम से आध्यात्मकि संघर्ष में वजिय प्राप्त करते हैं। इस बाद वाले आगमन के बारे में, प्रभु सुसमाचार में कहते हैं: *'मैं और पति उसके पास आकर उसके संग नविास करेंगे'* (यूहन्ना 14:23)। और फरि: *'देखो, मैं द्वार पर खड़ा हूँ और खटखटाता हूँ; यदि कोई मेरी आवाज़ सुनकर द्वार खोलता है, तो मैं उसके पास आकर उसके साथ भोजन करूंगा, और वह मेरे साथ'* (प्रकाशतिवाक्य 3:20)।

11. इसके अलावा, प्रेरति केवल अपने द्वारा पूरा कए गए दौड़ने के कारनामे का वर्णन नहीं करते, यह कहते हुए: *'मैं इस तरह दौड़ता हूँ, न कि व्यर्थ में'*: [जो वशिेष रूप से उनके मन के उत्साह और उनकी आत्मा के जोश को संदर्भति करता है, जसिके साथ उन्होंने मसीह का पूरे हृदय से अनुसरण कयिा, वधू के साथ गाते हुए: *'हम तेरे पदचन्हिों पर चलते हैं, तेरी शान्ति की सुगंध में'* (प्रेरतिों का गीत 1:3); और फरि: *'मेरी आत्मा तुझ से चपिकी है'* (भजन संहति 62:9)]; परन्तु वह यह भी गवाही देते हैं कि उन्होंने एक और प्रकार के संघर्ष में वजिय प्राप्त की, जब वे कहते हैं: *'इस प्रकार मैं परश्रिम करता हूँ, न कि ऐसे जैसे हवा में कोड़ा फेंकता हो; बल्कि मैं अपने शरीर को दण्ड देता हूँ और उसे वश में करता हूँ'*: जो वशिेष रूप से आत्म-संयम के कठनि परश्रिम, शरीर के दण्डन और देह की थकावट का उल्लेख करता है। यहाँ वह स्वयं को अपने ही शरीर के वरिुद्ध एक चौकस पहलवान के रूप में प्रस्तुत करता है, यह दर्शाते हुए कि उसने आत्म-संयम के प्रहारों से व्यर्थ में प्रहार नहीं कयिा, बल्कि अपने शरीर को वश में करके वजिय की सफलता सुनश्चिति करने में सफल रहा – जब, आत्म-संयम की कोड़ों से उसे वश में करके और उपवास के प्रहारों से उसे थका देने के बाद, उसने वजियी आत्मा को अमरत्व का मुकुट और अक्षयत्व की हथेली प्रदान की। क्या आप युद्ध की वैध व्यवस्था देखते हैं, क्या आप आध्यात्मकि संघर्षों के परणिाम को समझते हैं – कि कैसे योद्धा मसीह, वद्रिोही देह पर वजिय प्राप्त करके और उसे अपने पैरों तले कुचलकर, एक महान वजिेता की तरह वजिय रथ पर सवार होकर ले जाया जा रहा है?! – वह व्यर्थ में प्रयास नहीं करता, क्योंकि उसे यकीन है कि वह जल्द ही पवत्रि नगर,

स्वर्गीय यरूशलेम में प्रवेश करेगा। *'इस प्रकार वह* उपवास में *प्रयास करता है'*, अर्थात् शरीर को वश में करने में, *'ऐसे नहीं जैसे कोई हवा पर वार करता हो'*, अर्थात् ऐसे नहीं जैसे कोई संयम के प्रहारों से व्यर्थ में वार करता हो, क्योंकि उनके द्वारा वह खाली हवा पर नहीं, बल्कि अपने शरीर को वश में करने के माध्यम से, उसमें घूमने वाले दुष्टात्माओं पर वार करता है। क्योंकि जो यह कहता है, *'किसी ऐसे व्यक्ति की तरह नहीं जो हवा पर वार करता है'*, उसका तात्पर्य यह है कि खाली या शून्य हवा पर वार नहीं किया जाता, बल्कि उसमें रहने वाले कुछ प्राणियों पर भी वार किया जाता है। चूँकि वह, इन प्रकार के युद्धों (अर्थात् शरीर के साथ) पर विजय प्राप्त कर, अब फिर से अनेक विजय-मालाओं से सुसज्जित होकर उभरा, इसलिए वह स्वाभाविक रूप से सबसे शक्तिशाली शत्रुओं के हमले के अधीन आ गया; और, उनमें से पहले—ईर्ष्यालुओं—पर विजय प्राप्त करने के बाद, उसने आत्मविश्वास के साथ घोषणा करना शुरू कर दिया: *'क्योंकि हमारा संग्राम मांस और रक्त से नहीं, बल्कि हाकिमों और अधिकारों से, इस अँधेरी दुनिया की सरकारों और स्वर्गीय लोकों में बुराई की आत्मिक सेनाओं से है'* (इफिसियों 6:12)।

12. मसीह के योद्धा के लिए, जब तक वह देह में है, अपनी लड़ाइयों में कीर्ति प्राप्त करने के अवसर कभी समाप्त नहीं होते; लेकिन जितना अधिक वह अपनी विजियों की सफलताओं से गौरवान्वित होता है, उतनी ही भयंकर लड़ाइयों की एक श्रृंखला उसके सामने होती है। क्योंकि एक बार जब वह विजयी हो जाता है और अपने ही शरीर को वश में कर लेता है, तो उसकी विजियों से उकसाए हुए, मसीह के इस विजयी योद्धा के विरुद्ध कितने ही विरोधी, कितनी ही शत्रु सेनाएँ उठ खड़ी होती हैं! यह इसलिए है ताकि मसीह का योद्धा, संसार के शांति-सुख में मग्न होकर, अपने संघर्ष के गौरवशाली युद्धों को न भूल जाए, और निष्क्रियता तथा शत्रुओं से सुरक्षा की झूठी भावना से आत्मसंतुष्ट होकर, उच्चतम पुरस्कारों के योग्य विजयी वीरता का प्रदर्शन करने का उत्साह और साहस न खो बैठे। इसलिए, यदि हम उच्चतम विजय प्राप्त करना चाहते हैं, कमजोर होकर नहीं बल्कि शक्ति और साहस में वृद्धि करके, तो हमें भी युद्ध की परीक्षाओं से उसी क्रम में गुजरना चाहिए - और सबसे पहले उस कार्य को पूरा करना चाहिए जिससे हम प्रेरित के साथ कह सकें: *'मैं इस प्रकार लड़ता हूँ, जैसे हवा पर वार करने वाला नहीं; परन्तु मैं अपने शरीर को वश में करता हूँ और उसे दास बनाता हूँ'* – और फिर, जब हम इस लड़ाई में विजयी हो जाएँ, तो दूसरी लड़ाई में प्रवेश करना, जिसकी सफलता में हम फिर से प्रेरित के साथ कह सकें: *'क्योंकि हमारा संग्राम मांस और रक्त से नहीं, बल्कि प्रधानताओं, शक्तियों, इस युग के अन्धकार के हाकिमों, स्वर्गीय क्षेत्रों में बुराई की आध्यात्मिक सेनाओं से है'*। क्योंकि हम इनके विरुद्ध तब तक किसी भी तरह से युद्ध नहीं कर सकते जब तक कि हम शरीर पर विजय प्राप्त न कर लें – और यदि हम शरीर के विरुद्ध संघर्ष में लगातार पराजित होते रहें और पेट के साथ होड़ में हरा दिए जाएँ, तो हमें आत्माओं के विरुद्ध संघर्ष का अनुभव करने के योग्य कभी नहीं समझा जाएगा। और प्रेरित हमें सही ही डाँटेंगे, यह कहते हुए: *'तुम्हारे ऊपर ऐसा कोई प्रलोभन नहीं आया, जो मनुष्यों के लिए सामान्य न हो'* (1 कुरिन्थियों 10:13)।

13. एक भिक्षु जो आंतरिक युद्धों की वीरता प्राप्त करना चाहता है उसे पहले से ही यह नियम बना लेना चाहिए और ध्यान रखना चाहिए कि, भोजन के लिए नियम द्वारा निर्धारित और सभी के लिए सामान्य समय से पहले, और वास्तव में भोजन के समय के अलावा, वह किसी भी तरह से कोई भी भोजन या पेय लेने की अनुमति स्वयं को न दे, भले ही उनकी सुखदता और मिठास उसे ऐसा करने के लिए कितना भी लुभाए। भोजन समाप्त होने के बाद भी, उसे स्वयं को इस प्रकार की किसी भी चीज़ में लिप्त होने की अनुमति नहीं देनी चाहिए, चाहे वह कितनी भी मामूली क्यों न हो। इसी प्रकार, उसे नियम द्वारा निर्धारित अनुसार नींद के समय और अवधि का सख्ती से पालन करना चाहिए। और इस प्रकार की इच्छाओं को उसी उत्साह के साथ समाप्त कर देना चाहिए, जिसके साथ हमें कामुक जुनून की प्रवृत्तियों को समाप्त करना चाहिए। क्योंकि जिसने पेट की अत्यधिक इच्छाओं को दबाने में असमर्थ रहा है, वह शारीरिक वासना की तीव्रता को कैसे शांत कर पाएगा? और जिसने स्पष्ट और मामूली भावों को वश में नहीं किया है, वह उन गुप्त भावों पर कैसे विजय प्राप्त कर पाएगा, जो बिना किसी गवाह के उत्पन्न होते हैं?

14. हमें किसी बाहरी शत्रु से डरने की आवश्यकता नहीं है; हमारा शत्रु हमारे भीतर ही है। यही कारण है कि हमारे भीतर एक अनवरत आंतरिक संघर्ष चलता रहता है। यदि हम इसमें विजयी हो जाएँ, तो सभी बाहरी संघर्ष तुच्छ हो जाएँगे, और मसीह के सिपाही के लिए सभी चीजें शांति में होंगी, और सभी उसके अधीन हो जाएँगी। जब हमारे भीतर का वह (शत्रु), पराजित होकर, आत्मा के अधीन हो जाएगा, तो हमें बाहर के शत्रु से डरने का कोई कारण नहीं रहेगा। हमें यह नहीं मानना चाहिए कि हृदय की पूर्णता और शरीर की पवित्रता के लिए, केवल दिखाई देने वाले भोजन से परहेज़ करने वाला उपवास ही पर्याप्त है। नहीं, इसके साथ हमें आत्मा का उपवास भी जोड़ना चाहिए। क्योंकि उसका भी अपना हानिकारक भोजन होता है, जिसके अभ्यस्त न होने के कारण, वह शारीरिक पोषण की प्रचुरता के अभाव में भी, कामुकता के गर्त में गिर जाती है। – आत्म-निंदा इसका भोजन है, और वह भी अत्यंत सुखद। क्रोध भी इसका भोजन है, यद्यपि यह इतना हल्का नहीं है, और कभी-कभी हानिकारक, यहाँ तक कि घातक भी होता है। ईर्ष्या आत्मा

का भोजन है, जो इसके जीवन-रस को विषाक्त रूप से भ्रष्ट करती है और इसे—इस दुखी आत्मा को—दूसरों की सुखद सफलताओं से निरंतर पीड़ा देती है। उसका घमंड भोजन है जो, कुछ समय के लिए, उसे सुखद स्वाद से प्रसन्न करता है, लेकिन बाद में उसे खाली, नग्न और सभी सद्गुणों से रहित छोड़ देता है, जिससे वह बांझ और आध्यात्मिक फल देने में असमर्थ हो जाती है - और परिणामस्वरूप न केवल उसे अपने अपार श्रम के पुरस्कार से वंचित करता है, बल्कि उस पर कठोर दंड भी लाता है। अस्थिर हृदय की हर वासना और भटकन, आत्मा को उसके ही तरह के चरागाह में चराने के समान है, जो उसे हानिकारक भोजन खिलाती है, जबकि उसे दिव्य रोटी और ठोस आहार से वंचित कर देती है। इसलिए, अपने पवित्र उपवास में अपनी पूरी क्षमता से इन सभी से परहेज़ करके, हम शारीरिक उपवास के पालन को सार्थक और फलदायी बनाएँगे। क्योंकि शरीर का संयम, जब आत्मा के पश्चाताप के साथ जुड़ जाता है, तो ईश्वर को एक अत्यंत प्रसन्न करने वाला बलिदान अर्पित करता है और हृदय के शुद्ध और सुशोभित कोनों में उनकी पवित्रता के योग्य एक निवास स्थान स्थापित करता है। लेकिन यदि, शारीरिक उपवास करते हुए, हम आत्मा के सबसे हानिकारक भावों में फँस जाते हैं, तो शरीर का संयम हमारे लिए किसी भी लाभ का नहीं होगा, क्योंकि हम अपने सबसे कीमती हिस्से में अशुद्ध बने रहते हैं—अर्थात्, हम अपनी प्रकृति के उस हिस्से में भ्रष्ट बने रहते हैं जो वास्तव में पवित्र आत्मा का वासस्थान बनता है। क्योंकि नश्वर देह नहीं, बल्कि शुद्ध हृदय ही ईश्वर का निवास स्थान और पवित्र आत्मा का मंदिर बनता है। अत; जब हमारा बाह्य स्वरूप उपवास करता है, तब हमें अपने अंतर्मन को भी हानिकारक प्रलोभनों से दूर रखना चाहिए। पवित्र प्रेरित हमें इसे शुद्ध रूप में परमेश्वर के समक्ष प्रस्तुत करने के लिए प्रोत्साहित करते हैं, ताकि जब मसीह हमारे अतिथि के रूप में आएँ, तो हम उन्हें ग्रहण करने के योग्य माने जाएँ, जैसा कि वे कहते हैं: '*कि मसीह विश्वास के द्वारा तुम्हारे हृदयों में वास करें*' (इफिसियों 3:16–17)।

१५. हमें ऐसा भोजन चुनना चाहिए जो कामुक इच्छा की आग को भड़काने के बजाय उसे शांत करे, और जो इसके अलावा, आसानी से उपलब्ध हो और भाइयों की सामान्य प्रथा और रीति-रिवाज़ के अनुरूप हो। लालच तीन तरीकों से प्रकट होता है: एक व्यक्ति नियम द्वारा निर्धारित समय से पहले खाने के लिए प्रेरित होता है; दूसरा, किसी को नियम में निर्धारित भोजन के समय से पहले खाने के लिए प्रेरित करता है; तीसरा, केवल सबसे सुखद और उत्तम व्यंजनों से संतुष्ट होता है। इसलिए, एक भिक्षु को इसके विरुद्ध एक त्रिगुण नियम का पालन करना चाहिए: प्रथम, भोजन की अनुमति वाले निर्धारित समय की प्रतीक्षा करना; द्वितीय, अत्यधिक खाने में लिप्त न होना; तीसरा, कुछ साधारण और सस्ते भोजन से संतुष्ट रहना। और इस संबंध में जो कुछ भी सामान्य रीति-रिवाज और प्रथा के अनुरूप नहीं है, उसे पितरों की सबसे प्राचीन परंपरा द्वारा अनुमोदित नहीं किया जाता है, क्योंकि वह व्यर्थता, अहंकार और घमंड से कलंकित माना जाता है। न तो हमने ज्ञान और विवेक के वरदान से विशिष्ट लोगों में किसी को देखा है, और न ही उन लोगों में किसी को जाना है, जिन्हें ईश्वर की कृपा ने अनुकरण के लिए सबसे उज्ज्वल आदर्शों के रूप में प्रस्तुत किया है, जो रोटी खाने से परहेज़ करते हों, जिसे साधारण और तुच्छ माना जाता है। इसके विपरीत, हमने उन लोगों में से किसी को भी नहीं देखा जो केवल हरी सब्जियाँ, तरकारी और पेड़ के फल खाते थे, जो सबसे अनुभवी पुरुषों में गिने जाते हों, या जिन्हें विवेक और ज्ञान का वरदान प्राप्त हो।

१६. प्रेम के कार्यों को उपवास से श्रेष्ठ मानना चाहिए। यह हमने मिस्र के संतों से सीखा। क्योंकि जब हम, इन बड़ों के नियम जानने की इच्छा से, सीरिया से मिस्र आए, तो हमें वहाँ आश्चर्यजनक रूप से गर्मजोशी और हार्दिक आतिथ्य से प्राप्त किया गया - और जहाँ भी हम गए, हमारी सुविधा के लिए, उन्होंने कहीं भी नियम द्वारा निर्धारित भोजन के निश्चित समय का पालन करने पर जोर नहीं दिया, जैसा कि हम फिलिस्तीन के मठों में देखने के आदी थे—बल्कि हर जगह उन्होंने हमें उन समयों से पहले खाने की अनुमति दी, सिवाय बुधवार और शुक्रवार के। जब हमने एक वृद्ध से पूछा कि उनके बीच दैनिक उपवास का नियम इतनी ढीली-ढाली तरीके से क्यों पालन किया जाता है, तो उन्होंने उत्तर दिया: 'उपवास तो हमेशा मेरे साथ है, लेकिन मैं तुम्हें हमेशा अपने साथ नहीं रख सकता। इसके अलावा, यद्यपि उपवास अत्यधिक लाभकारी और हमेशा आवश्यक है, यह एक स्वैच्छिक बलिदान है; जबकि प्रेम के कार्यों को पूरा करना आज्ञा का एक तात्कालिक आवश्यकता है।' इसलिए, आपके भीतर मसीह को ग्रहण करके, मुझे उनका पोषण करना चाहिए। लेकिन जब मैं आपको विदा करता हूँ, तो मैं उनके लिए दिखाई गई ढील की भरपाई सबसे कठोर उपवास का पालन करके कर सकता हूँ। क्योंकि '*जब तक वर उनके साथ है, तब तक विवाह के मेहमान उपवास नहीं कर सकते। परन्तु वे दिन आएँगे जब वधू का वर उन से उठा लिया जाएगा, और तब वे उपवास करेंगे*' (लूका 5:34–35)।

17. जैसा कि पवित्र पिता कहते हैं, चरम सीमाएँ दोनों ओर से समान रूप से हानिकारक हैं – अत्यधिक उपवास और पेट का अत्यधिक सेवन, दोनों। हम कुछ ऐसे लोगों को जानते हैं, जो भक्षण के शिकार तो नहीं हुए, लेकिन अत्यधिक उपवास से दुर्बल हो गए, और अपने अत्यधिक उपवास से उत्पन्न कमज़ोरी के कारण उसी भक्षण के जुनून का शिकार हो गए।

18. हमें इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि न तो नियत समय से पहले या कामुक सुख की इच्छा से अधिक खाएं, और न ही जब मन न करे तब भी नियत समय पर भोजन करें; क्योंकि कामुक सुख की अत्यधिक इच्छा और भोजन से घृणा, दोनों हमारे शत्रु द्वारा उत्तेजित की जाती हैं। इसके अलावा, अनियंत्रित संयम अति-आसक्ति से अधिक हानिकारक है; क्योंकि अति-आसक्ति से, पश्चाताप के माध्यम से, कोई उचित आचरण में लौट सकता है, जबकि पहले से नहीं लौट सकता।

19. हमारे आरंभिक पिताओं ने अक्सर इस बारे में चर्चा की कि इन दो चरमों के बीच उचित संयम का पालन करते हुए कैसे संतुलन बनाया जाए; उन्होंने सभी अन्य प्रकार के खाद्य पदार्थों की तुलना में रोटी को प्राथमिकता दी, और इसके सेवन की मात्रा लगभग एक पाउंड वज़न वाले दो छोटे रोटी के टुकड़ों के रूप में निर्धारित की।

20. संयम का सामान्य नियम यह है कि प्रत्येक व्यक्ति को अपनी शक्ति, शारीरिक स्थिति और उम्र के अनुसार, केवल उतना ही भोजन करना चाहिए जितना शरीर के स्वास्थ्य को बनाए रखने के लिए आवश्यक हो, न कि उतना जितना तृप्ति की इच्छा माँगती है। जो कोई भी एक सुसंगत मापदंड का पालन करने में विफल रहता है—एक समय पर अत्यधिक उपवास करता है और दूसरे समय पर अधिक भोजन करता है— और इस प्रकार प्रार्थना और ब्रह्मचर्य दोनों को नुकसान पहुँचाता है: प्रार्थना को, क्योंकि बिना भोजन के कोई प्रार्थना में सतर्क नहीं रह सकता, बल्कि कमजोरी के कारण नींद आने लगती है; और ब्रह्मचर्य को, क्योंकि कामुक वासना की वह आग, जो अत्यधिक खाने से भड़कती है, कठोर उपवास के दौरान भी जलती रहती है।

21. चर्च के पितरों के अनुसार, संयमित भोजन का अर्थ है प्रतिदिन इतना ही भोजन करना कि खाने के बाद भी भूख लगती रहे। ऐसा संयम आत्मा और शरीर दोनों को संतुलित अवस्था में रखेगा, और व्यक्ति को या तो अत्यधिक उपवास, जो शरीर को कमजोर करता है, या अत्यधिक भोग, जो आत्मा को दबा देता है, में पड़ने से रोकेगा।

२२. हम धन्य मकरियुस से एक और हितकर शिक्षा प्रस्तुत करते हैं, ताकि हम उपवास और संयम पर अपनी पुस्तक को ऐसे व्यक्ति की राय के साथ एक शिक्षाप्रद निष्कर्ष पर ला सकें। वे कहते हैं कि एक भिक्षु को उपवास का अभ्यास इतनी बुद्धिमानी से करना चाहिए मानो वह शरीर में सौ साल और रहेगा; और उसे आत्मा की प्रवृत्तियों को नियंत्रित करना चाहिए—अपमानों को क्षमा करते हुए, दुख को त्यागते हुए, दुखों और हानियों को कोई महत्व न देते हुए—जैसे कि वह हर दिन मर सकता है। पहले बिंदु—अर्थात् उपवास—के संबंध में, वह आत्मा के लिए लाभकारी विवेक की सलाह देते हैं, जो भिक्षु को संयम में हमेशा दृढ़ कठोरता के मार्ग पर चलने के लिए बाध्य करेगा, और उसे शारीरिक थकान की स्थिति में भी, कठोरता से अतिशयोक्ति की ओर मुड़ने नहीं देगा; और दूसरे के संबंध में, अर्थात् भावनाओं पर संयम – एक उद्धारकारी उदारता, जो न केवल इस संसार में समृद्ध प्रतीत होने वाली चीज़ों को तुच्छ समझने के लिए पर्याप्त मजबूत हो, बल्कि दुर्भाग्य और दुखों से अडिग भी रहे, और उन्हें तुच्छ समझकर नज़रअंदाज़ करे, साथ ही अपने मन की दृष्टि को निरंतर उस स्थान पर स्थिर रखते हुए जहाँ उसे हर दिन और हर क्षण बुलाए जाने की उम्मीद रहती है।

2. व्यभिचार की आत्मा के विरुद्ध संघर्ष

1. संतों की परंपरा के अनुसार, हमारा दूसरा संघर्ष कामवासना की आत्मा के विरुद्ध है - एक ऐसा संघर्ष जो किसी भी अन्य से लंबा और अधिक निरंतर है, और जिसे बहुत ही कम लोगों ने पूरी तरह से जीता है - एक भयंकर लड़ाई जो परिपक्वता के पहले चरण में शुरू होती है, और जब तक अन्य सभी वासनाओं पर विजय प्राप्त नहीं हो जाती, तब तक नहीं रुकती। चूँकि यहाँ विद्रोह दोहरा है, और दो प्रकार के हथियारों से लड़ा जाता है, इसलिए इसका विरोध भी हाथ में दो प्रकार के हथियारों के साथ किया जाना चाहिए। केवल शारीरिक उपवास ही ब्रह्मचर्य की पूर्ण पवित्रता प्राप्त करने के लिए पर्याप्त नहीं है; इसे आत्मा के पश्चाताप और इस अत्यंत अशुद्ध आत्मा के विरुद्ध अनवरत प्रार्थना द्वारा पार किया जाना चाहिए; फिर शास्त्रों का अखंड अध्ययन बौद्धिक प्रयास के साथ संयुक्त, साथ ही शारीरिक श्रम और हाथ का काम, जो हृदय को भटकने से रोकते हैं और उसे स्वयं में वापस लाते हैं; और सबसे बढ़कर, गहरी और सच्ची विनम्रता, जिसके बिना किसी भी वासना पर विजय कभी प्राप्त नहीं की जा सकती।

२. इस जुनून का रूपांतरण हृदय के पूर्ण शुद्धिकरण पर निर्भर करता है, जिससे, प्रभु के वचन के अनुसार, इस बीमारी का विष निकलता है। *'क्योंकि हृदय से,'* वह कहते हैं, *'बुरे विचार निकलते हैं... व्यभिचार, वेश्यावृत्ति'* और इसी तरह (मत्ती 15:19)। इसलिए, मनुष्य को पहले उस चीज़ को शुद्ध करना चाहिए जिससे जीवन और मृत्यु का स्रोत प्रवाहित होता है, जैसा कि सुलैमान कहते हैं: *'अपने हृदय का सर्वथा ध्यान रख; क्योंकि जीवन के सोते उसी से निकलते हैं'* (नीतिवचन 4:23); क्योंकि शरीर उसकी इच्छा और शक्ति के अधीन है। उपवास और संयमित भोजन के नियम का निश्चय ही पूरी लगन से पालन किया जाना चाहिए, कहीं ऐसा न हो कि शरीर, भोजन की प्रचुरता से तृप्त होकर, आत्मा

की आज्ञाओं के विरुद्ध विद्रोह कर दे और, अपनी अतिशयता में, उसके शासक—आत्मा—को नीचे गिरा दे। लेकिन यदि हम अपने प्रयास के पूरे सार को केवल शरीर की थकान तक सीमित कर दें, जबकि साथ ही हम अपनी आत्मा को अन्य वासनाओं से उपवास करने में और उसे या तो ईश्वर की बातों की शिक्षा या अन्य आध्यात्मिक कार्यों में व्यस्त रखने में विफल रहते हैं; तो हम किसी भी तरह से सच्ची पवित्रता की ऊँचाइयों तक नहीं पहुँच पाएँगे; क्योंकि उस स्थिति में, जो हमारे भीतर राज करता है, वह हमारे शरीर को भी अपवित्र कर देगा, भले ही वह शुद्ध हो। इसलिए, जैसा कि प्रभु निर्देश देते हैं, हमें *'पहले प्यालों और कटोरियों का भीतर से शुद्ध करना* चाहिए*, ताकि बाहर से भी वे शुद्ध हो जाएँ'* (मत्ती 23:26)।

3. अन्य भाव आमतौर पर लोगों के साथ बातचीत और उनके साथ दैनिक गतिविधियों और कार्यों के माध्यम से शुद्ध होते हैं, और एक तरह से उन पर काबू पाने से होने वाली अप्रियता और क्लेश द्वारा ही ठीक हो जाते हैं। इस प्रकार, उदाहरण के लिए, क्रोध के उभार, अपमान और अधीरता का इलाज न केवल हार्दिक शिक्षा और सतर्क ध्यान से, बल्कि भाइयों से मिलने और इन भावनाओं को बार-बार मन में लाने से भी होता है। चूँकि जब किसी को इस प्रकार उकसाया जाता है तो वे अधिक आसानी से प्रकट होती हैं, इसलिए वे अधिक बार उजागर होती हैं और इस प्रकार अधिक तेज़ी से ठीक हो जाती हैं। लेकिन यह पीड़ा, जब शरीर थका हुआ हो और हृदय टूट गया हो, तो एकांत और लोगों से अलग रहने की भी मांग करती है, ताकि इस प्रकार इसके विनाशकारी, उन्मत्त बेचैनी के कारणों को दूर करके, कोई अधिक तेजी से पूर्ण रूप से ठीक होने की स्थिति प्राप्त कर सके। जिस प्रकार किसी भी बीमारी से पीड़ित लोगों के लिए यह लाभदायक है कि उनके लिए हानिकारक भोजन को उनकी आँखों के सामने भी न लाया जाए, कहीं ऐसा न हो कि उसे देखकर एक घातक इच्छा उत्पन्न हो जाए: इसी प्रकार मौन और एकांत इस विशेष रोग (कामवासना) के उन्मूलन में बहुत योगदान करते हैं, ताकि पीड़ित आत्मा, विभिन्न लोगों और चीजों से विचलित हुए बिना, अधिक स्वतंत्र रूप से शुद्ध बौद्धिक चिंतन तक पहुँच सके, और इसके माध्यम से कामवासना की संक्रामक हलचलों को अधिक आसानी से जड़ से उखाड़ सके।

४. संयमी होना एक बात है, और पवित्र होना एकदम दूसरी बात है, जिसमें व्यक्ति ने पवित्र अखंडता और कुंवारी मासूमियत की एक शांत अवस्था प्राप्त कर ली हो। ऐसा सद्गुण केवल उन लोगों को ही दिया जाता है जो आत्मा और शरीर दोनों से कुंवारे हैं, जैसे कि, उदाहरण के लिए, नए नियम में दोनों जॉन (पूर्वदूत और सुसमाचारकर्ता) और पुराने नियम में एलिय्याह, यिर्मयाह और दानिय्येल। उनके बराबर सम्मान करना अन्याय नहीं है, जो गिरने के बाद, लंबे तपस्वी श्रम और खोई हुई चीज़ की उत्साही खोज के माध्यम से, उनके समान आत्मा और शरीर की पवित्रता और अखंडता की अवस्था प्राप्त कर चुके हैं, और जो मांस के उभार को शर्मनाक वासना के आक्रमण से नहीं, बल्कि प्रकृति की साधारण गतिविधियों से ही महसूस करते हैं। और इसलिए, हम कहते हैं, कि जनसमूह में ऐसी अवस्था प्राप्त करना अत्यंत कठिन है - क्या यह असंभव नहीं है? - फिर भी, कोई यह उम्मीद न करे कि वह इसे हमारे तर्क से सीखेगा, बल्कि प्रत्येक व्यक्ति इसे अपने स्वयं के अंतरात्मा की जांच के माध्यम से स्वयं खोजे। – हमें इसमें कोई संदेह नहीं है कि ऐसे कई लोग हैं जो संयम का अभ्यास करते हैं, जो देह के आक्रमणों को दूर भगाते और दबा देते हैं—चाहे वे कभी-कभार हों या दैनिक रूप से—या तो गेहेना (नरक) के भय से या स्वर्ग के राज्य की इच्छा से। जहाँ तक उनकी बात है, बुजुर्गों का मानना है कि, भले ही वे कामुक उत्तेजनाओं से पूरी तरह से अभिभूत या पराजित न हों, फिर भी वे हमलों से सुरक्षित या पूरी तरह से अभेद्य नहीं हो सकते। क्योंकि जो एक योद्धा की स्थिति में है, भले ही वह अक्सर अपने विरोधी पर विजय प्राप्त करता हो और उसे परास्त कर देता हो, वह अनिवार्य रूप से कभी-कभी चिंता और स्वयं को घायल होते हुए महसूस करेगा।

5. यदि, हमारे हृदयों में, हमें प्रेरित के साथ आध्यात्मिक संघर्ष में सही मायने में प्रयास करना है (2 तीमु. 2:5), तो—अपने ही बल पर भरोसा किए बिना (क्योंकि इस कार्य को पूरा करने के लिए मानवीय प्रयास पर्याप्त नहीं हैं), बल्कि प्रभु की सहायता पर विश्वास करके—आओ, हम पूरी लगन के साथ इस अत्यंत अशुद्ध आत्मा पर विजय प्राप्त करने के लिए निकल पड़ें। क्योंकि यह वासना तब तक आत्मा की विजय का विरोध करती रहेगी, जब तक आत्मा यह महसूस नहीं कर लेती कि इस तरह के संघर्ष को सफलतापूर्वक लड़ना उसकी शक्ति से परे है, और यह कि वह अपने स्वयं के परिश्रम और प्रयासों से संभवतः विजय प्राप्त नहीं कर सकती, जब तक कि वह प्रभु की सहायता और मध्यस्थता से मजबूत न हो जाए।

6. वास्तव में, यदि सदाचार में हर सफलता प्रभु की कृपा का कार्य है, और हर वासना पर विजय उनकी जीत है, तो यह कार्य विशेष रूप से (अर्थात् पवित्रता की प्राप्ति और कामुक वासना पर विजय), यह एक विशेष अनुग्रह और वरदान है, जैसा कि पवित्र पिताओं की शिक्षाओं और इस वासना से शुद्धिकरण के अनुभवों द्वारा पुष्टि की गई है, जैसा कि उन लोगों द्वारा गवाही दी गई है जिन्हें इसे प्राप्त करने के योग्य समझा गया है। क्योंकि देह से कोई पीड़ा

न महसूस करना, एक अर्थ में, शरीर में रहते हुए भी देह से बाहर निकलने के समान है; देह में लिपटे हुए फिर भी प्रकृति के परे होना। और इसलिए यह किसी व्यक्ति के लिए, मानो, अपने ही पंखों से ऐसी दिव्य पूर्णता की ऊँचाई तक उड़ान भरना असंभव है, जब तक कि प्रभु की कृपा, पवित्रता के वरदान के माध्यम से, उन्हें पृथ्वी की कीचड़ से ऊपर न उठा ले। क्योंकि कोई भी सद्गुण सांसारिक मनुष्यों को, उनके जीवन-यापन के तरीके का अनुकरण करने में, स्वर्गीय स्वर्गदूतों के इतने करीब नहीं लाता, जितना कि पवित्रता की कृपा की प्राप्ति जिसके द्वारा वे, पृथ्वी पर रहते हुए भी, प्रेरित के अनुसार, *'स्वर्ग में एक निवास'* रखते हैं / (फिलि. 3:20), और यहाँ, अपने नश्वर शरीर में, वे पहले से ही वह प्राप्त कर चुके हैं जो संतों को आने वाले जीवन में, अपने नश्वर शरीर को त्यागने के बाद, वादा किया गया है।

7. प्रेरित क्या कहते हैं, सुनो: *'हर एक खिलाड़ी सब बातों में संयम करता है'* (1 कुरिन्थियों 9:25)। वह हमारे आध्यात्मिक संघर्ष में हमारे लिए एरिना के खिलाड़ी को एक आदर्श के रूप में प्रस्तुत करते हैं। प्रतियोगिताओं में सफल होने के लिए, वह न केवल सभी निषिद्ध खाद्य पदार्थों, मद्यपान और नशे से परहेज़ करता है, बल्कि निष्क्रियता, आलस्य और सुस्ती से भी, और निरंतर अभ्यास और समर्पण के माध्यम से अपनी ताकत विकसित करने और कौशल प्राप्त करने दोनों के लिए प्रयास करता है; वह सांसारिक और वैवाहिक मामलों की सभी चिंता और दुख को अलग रख देता है, और केवल इस चिंता में लगा रहता है कि कैसे सफलता प्राप्त की जाए और विजेता का मुकुट जीता जाए; सबसे बढ़कर, वह अपने आपको कामुक अशुद्धि से शुद्ध रखने का ध्यान रखता है, ताकि वह अपनी नींद में भी शर्मनाक सपनों से भटक न जाए, और इस प्रकार लंबी मेहनत और काफी देखभाल से प्राप्त शक्ति को कम न कर दे। यहाँ आप वह सब कुछ देखते हैं जो एक आध्यात्मिक तपस्वी को करना चाहिए; आप यह भी देखते हैं कि, अपने आध्यात्मिक प्रयास में सफलता के लिए, आपको भी सबसे बढ़कर पवित्रता और ब्रह्मचर्य का संरक्षण करना चाहिए। क्योंकि यदि नश्वर मुकुटों के लिए सांसारिक, बाहरी प्रतियोगिताओं में पवित्रता इतनी आवश्यक है, तो स्वर्गीय मुकुटों के लिए हमारी आध्यात्मिक, आंतरिक साधना में यह कितनी अधिक आवश्यक होगी? हमें न केवल कामुक पाप या अनैच्छिक अशुद्धि से बाहरी पवित्रता बनाए रखने की आवश्यकता है, बल्कि सबसे बढ़कर विचार और भावना की आंतरिक पवित्रता को बनाए रखने की भी आवश्यकता है। हमें अपने हृदय के सबसे भीतरी कोनों की हर संभव सावधानी से रक्षा करनी चाहिए। जो वे (मैदान के प्रतियोगी) केवल देह में प्राप्त करना चाहते हैं, वह हमें अपने विवेक की गहराई में रखना चाहिए, जहाँ हमारे प्रभु, हमारे कर्मों के न्यायाधीश, हमारी इच्छा की हर गतिविधि को सबसे छोटे से छोटे विवरण तक देखते हैं। इसलिए हमें यह सुनिश्चित करना चाहिए कि जिसे हम खुलेआम करने से डरते हैं, वह हमारे मन में एक लापरवाह विचार के रूप में भी न उठे, और जिसे हम दूसरों के सामने प्रकट करने से शर्मिंदा होते हैं, वह हमारे हृदय में गुप्त सहमति के द्वारा हमें कलंकित न कर दे। क्योंकि भले ही यह लोगों से छिपा हो, पर इसे स्वर्गदूतों या सर्वशक्तिमान ईश्वर स्वयं से नहीं छुपाया जा सकता, जिनसे कोई रहस्य छिपा नहीं रहता।

८. प्राप्त की गई पवित्रता की पूर्णता का एक संकेत और माप यह माना जा सकता है: कि जब हम विश्राम में हों, या गहरी नींद में डूबे हों, तो हमारे भीतर कोई प्रलोभनकारी छवि उत्पन्न न हो; या, यदि कोई उत्पन्न हो भी, तो वह इतनी प्रबल न हो कि वह किसी कामवासना को जगा सके। क्योंकि ऐसा आवेग, यद्यपि यह पाप में पूर्ण दोष नहीं बनाता, फिर भी यह एक निश्चित संकेत है कि आत्मा ने अभी पूर्णता प्राप्त नहीं की है, और यह दर्शाता है कि वासना अभी पूरी तरह से समाप्त नहीं हुई है, जब स्वप्न जैसी छवियाँ इस प्रकार का उल्लंघन करने में सफल हो जाती हैं।

९. मनुष्य के विचारों की गुणवत्ता, जिसे दिन भर की व्यस्तताओं के बीच पूरी तरह से सावधानीपूर्वक नहीं संभाला जाता, रात की नींद के दौरान प्रकट हो जाती है; और इसलिए, जब उपरोक्त उल्लंघन होता है, तो दोष सपने का नहीं, बल्कि पिछले समय में सतर्कता बनाए रखने में हुई विफलता का होना चाहिए, और मनुष्य को इसमें एक छिपी हुई बीमारी के प्रकट होने को देखना चाहिए, जिसे रात ने पहली बार उत्पन्न नहीं किया है। (जैसे कि यह पहले मौजूद ही नहीं था), बल्कि एक ऐसी बीमारी का प्रकटीकरण है जो पहले से ही भीतर छिपी हुई थी, और जिसे रात ने पहली बार नहीं लाया है। इसी प्रकार, शारीरिक बीमारियाँ भी उसी क्षण उत्पन्न नहीं होतीं जब वे प्रकट होती हैं, बल्कि वे उस क्षण से पहले की अवधि में विकसित होती हैं, जब कोई व्यक्ति बिना उचित सावधानी के अपने स्वास्थ्य के लिए हानिकारक हर तरह के भोजन का सेवन करके, रोग पैदा करने वाले कारकों को संचित कर लेता है। इसी तरह, शारीरिक बीमारियाँ उसी क्षण उत्पन्न नहीं होतीं जब वे प्रकट होती हैं, बल्कि उनसे पहले के समय में प्राप्त होती हैं, जब कोई व्यक्ति, बिना सावधानी के, स्वास्थ्य के लिए हानिकारक हर तरह के भोजन का सेवन करके, अपने भीतर रोग पैदा करने वाले द्रवों को जमा कर लेता है।

10. स्वयं ईश्वर, जो संपूर्ण मानव जाति के सृष्टिकर्ता और रचयिता हैं, अपनी सृष्टि की प्रकृति को किसी से भी बेहतर जानते हुए, उस उपाय को उसी स्रोत की ओर निर्देशित करते हैं जिससे इस जुनूनी बीमारी के कारण मुख्य रूप से उत्पन्न होते हैं, जब वे कहते हैं: *'जो कोई भी किसी स्त्री को वासना की दृष्टि से देखता है, वह अपने हृदय में*

उसके साथ व्यभिचार कर चुका है (मत्ती 5:28)। आँखों की वासना पर टिप्पणी करते हुए, वह आँखों को स्वयं उतना दोषी नहीं ठहराते जितना कि उस आंतरिक भावना को दोषी ठहराते हैं जो देखने में उनकी सेवा का गलत उपयोग करती है। यह हृदय, जो वासना के तीर से बीमार और घायल है, लालसा के साथ घूरता है – दृष्टि का वरदान, जो सृष्टिकर्ता द्वारा भलाई के लिए प्रदान किया गया है, अपनी ही वासना के कारण बुराई के कार्यों की सेवा में बदल जाता है, और इसके भीतर छिपी वासना की बीमारी देखने के कृत्य के माध्यम से उजागर हो जाती है। इसीलिए उद्धार करने वाली आज्ञा उन लोगों के लिए दी गई है जिनके जुनून के कारण दृष्टि से बुरा घाव लगता है। क्योंकि यह नहीं कहा गया है: 'अपनी आँखों की पूरी सावधानी से रक्षा करो', बल्कि: *'अपने हृदय की पूरी सावधानी से रक्षा करो'* (नीतिवचन 4:23)।

11. अपने हृदयों की पवित्रता को बनाए रखने के लिए हमारा पहला और सबसे महत्वपूर्ण कदम यह होना चाहिए: जब भी, शैतान की दुष्टता की सूक्ष्म चालाकी से, किसी भी महिला का विचार—चाहे वह हमारी माँ, बहनें, रिश्तेदार, या पवित्र महिलाएँ ही क्यों न हों—हमारे मन में आता है, तो हमें उसे यथाशीघ्र अपने विचारों से दूर भगा देना चाहिए; अन्यथा, यदि हम ऐसे विचारों में बहुत देर तक रुकें, तो हमारा शत्रु धोखेबाज़ हमारे मन को इन महिलाओं से हटाकर अन्य महिलाओं की ओर अनायासे मोड़ सकता है, जिनके माध्यम से वह आत्मा के लिए हानिकारक विचार बो सकता है। *'अपना मन पूरी सावधानी से रख' (नीतिवचन 4:23) की* आज्ञा को पूरा करने का प्रयास करते समय, हमें परमेश्वर की मूल आज्ञा के अनुसार, साँप के विषैले *'सिर'* (उत्पत्ति 3) *की* सावधानीपूर्वक *'रक्षा'* क्यों *करनी* चाहिए, अर्थात्, बुरी सोच की शुरुआत की, जिसके माध्यम से शैतान हमारी आत्मा में घुसने की कोशिश करता है; ताकि, यदि हमारी लापरवाही से उसका सिर हमारे हृदय में प्रवेश कर जाए, तो उसका पूरा शरीर भी वहाँ न रेंग सके—अर्थात्, ताकि अशुद्ध विचार और पापपूर्ण सुखों में लिप्त होने की इच्छा उत्पन्न न हो। क्योंकि एक बार दुश्मन को अंदर आने दिया, और उसने आत्मा पर कब्ज़ा कर लिया, तो वह निस्संदेह उसे अपने विषैले यातनाओं से मार डालेगा। हमें *'अपने देश में* उठने *वाले पापियों*—अर्थात्, कामुक इच्छाओं—को उनके जन्म की *'गर्भ में'* ही *'वध' करना* चाहिए (भजन संहिता 100:8), और बेबीलोन के पुत्रों को तब तक *'चट्टान पर पसिवाना' चाहिए* जब तक वे शिशु ही हों (– 136:9)। क्योंकि यदि उन्हें कोमल और कमजोर होने पर ही कुचल नहीं दिया गया, तो हमारी लापरवाही से बड़े होकर, वे हमारे विरुद्ध बड़ी शक्ति के साथ उठ खड़े होंगे, और—या तो हमें नष्ट कर देंगे, या, यदि उन्हें हरा दिया गया, तो निश्चित रूप से बड़ी आहों और परिश्रम के बिना नहीं। क्योंकि *'जब बलवान* मनुष्य'—अर्थात् हमारी आत्मा—*'हथियार बान्धकर अपना घर रखवाली करता है'*, अर्थात् परमेश्वर के भय के द्वारा हमारे हृदयों की शान्ति की रक्षा करता है, तब *'उसका सामान चैन से रहता है'* (लूका 11:21), अर्थात् उसकी दीर्घकालिक परिश्रमों और सद्गुणों के फल। *'परन्तु जब उससे बलवान् उस पर आ पड़ता है* और *उस पर जय पाता है'*, अर्थात्, शैतान, उसके द्वारा उत्पन्न विचारों को सहमति देने से, तब *'वह उसका सारा हथियार छीन लेता है, जिस पर वह भरोसा करता था'*, अर्थात्, धर्मग्रंथों की स्मृति, या परमेश्वर का भय, – *'और उसका लूटपाट बिखेर देता है'* (लूका 11:22), अर्थात्, उनके विरोध में हर प्रकार के दुष्कर्मों द्वारा उनके सद्गुणों का विनाश हो जाएगा।

12. संत पौलुस कहते हैं, *'यह परमेश्वर की इच्छा है—कि तुम पवित्र बनो'* (1 थिस्स. 4:3)। और ताकि हमें इस बारे में कोई संदेह या अस्पष्टता न रहे कि पवित्रता से उनका वास्तव में क्या मतलब है—चाहे वह सत्य हो, या प्रेम, या नम्रता, या धैर्य—क्योंकि पवित्रता इन सभी सद्गुणों के माध्यम से प्राप्त होती है—वह स्पष्ट रूप से बताता है कि पवित्रता से उसका वास्तव में क्या मतलब था: *'क्योंकि परमेश्वर की यही इच्छा है, तुम्हारा पवित्र होना: कि तुम व्यभिचार से दूर रहो; और तुम में से हर एक यह जाने कि अपनी-अपनी देह को पवित्रता और आदर के साथ सम्भाले, न कि कामुकता के वश में होकर, जैसे वे परमेश्वर को नहीं जानते, जो जाति के लोग हैं'* (1 थिस्स. 4:3–5)। देखिए कि वह ब्रह्मचर्य की कितनी प्रशंसा करते हैं, इसे पात्र—अर्थात् हमारे शरीर—का सम्मान और एक पवित्र स्थल कहते हैं। परिणामस्वरूप, इसके विपरीत, जो कोई भी कामुक जुनून में रहता है, वह अपमान और अशुद्धता की स्थिति में है और पवित्रता से दूर रहता है। – थोड़ा आगे, संत पौलुस फिर से ब्रह्मचर्य को ' ' कहते हुए जोड़ते हैं: *'क्योंकि परमेश्वर ने हमें अशुद्धता के लिए नहीं, बल्कि पवित्रता के लिए बुलाया है। इसलिए, जो कोई भी* इसे *अस्वीकार करता है* (इसका तिरस्कार करता है) *'वह मनुष्य को नहीं, बल्कि परमेश्वर को अस्वीकार करता है, जिसने हम में अपना पवित्र आत्मा दिया है'* (वही, श्लोक 7-8)। उन्होंने अपने आज्ञा को अटूट शक्ति और महत्व दिया जब उन्होंने कहा कि जो कोई भी इसे अस्वीकार करता है—अर्थात्, जो मैंने कहा है—वह मनुष्य को, अर्थात् मुझे, जो यह आज्ञा देता हूँ, तुच्छ नहीं समझता, बल्कि परमेश्वर को तुच्छ समझता है, जो मुझमें बोल रहे हैं, जिन्होंने हमारे हृदयों को अपने पवित्र आत्मा के वास के लिए नियुक्त किया है। क्या आप देखते हैं कि कैसे, सरल शब्दों में, उन्होंने इस गुण की प्रशंसा की! सबसे पहले, वह वास्तव में इसे पवित्रता का श्रेय देते हैं; दूसरे, वह यह दावा करते हैं कि इसके द्वारा हमारे शरीर का पात्र सभी अशुद्धियों से मुक्त हो जाता है; तीसरे, कि लज्जास्पद अशुद्धि को बाहर निकालने के बाद,

इस पात्र को एक पवित्र स्थान के रूप में सम्मानित किया जाएगा; और अंत में, कि इसका सबसे बड़ा लाभ यह है कि इसके द्वारा पवित्र आत्मा हमारे हृदयों में वास करेंगे।

13. मैं इसी प्रेरित से इसी के समान एक और गवाही भी उद्धृत करूँगा। – इब्रानियों को लिखते हुए, वह कहते हैं: *'सभी के साथ शान्ति के लिए यत्न करो, और उस पवित्रता के लिए भी, जिसके बिना कोई भी प्रभु को नहीं देखेगा'* (इब्रानियों 12:14)। यहाँ भी, वह स्पष्ट रूप से पुष्टि करते हैं कि पवित्रता के बिना—जिसे वह आमतौर पर आत्मा और शरीर की शुद्धता और पवित्रता कहते हैं—ईश्वर को देखना पूरी तरह से असंभव है।

14. ब्रह्मचर्य का गौरव जितना ऊँचा और अधिक स्वर्गीय है, उतनी ही अधिक तीव्र निंदाएँ यह शत्रु से उत्पन्न करती है। इसीलिए हमें और भी अधिक लगन से न केवल शारीरिक संयम, बल्कि हृदय का पश्चाताप भी करना चाहिए, प्रार्थना की अनवरत आहों के साथ, ताकि हमारे शरीर की भट्टी—जिसे बेबीलोन का राजा शारीरिक प्रलोभनों की अंगारों से निरंतर भड़काने का प्रयास करता रहता है— हमारे हृदयों में अवतरित होने वाले पवित्र आत्मा की ओस से निरंतर बुझाया और ठंडा किया जा सके।

15. हम निरंतर ऐसे मानसिक अवस्था को बनाए रख सकते हैं यदि हम हमेशा याद रखें कि ईश्वर दिन और रात के रक्षक हैं और न केवल हमारे गुप्त कर्मों बल्कि हमारे सभी विचारों के भी जानने वाले हैं - और विश्वास करें कि हमें न केवल अपने सभी कर्मों और क्रियाओं के लिए बल्कि हमारे हृदय में होने वाली हर बात के लिए भी उन्हें उत्तर देना होगा।

१६. यह सुनिश्चित करने के लिए कि सोते समय भी हम अशुद्ध सपनों से कलंकित न हों, हमें हमेशा एक सुसंगत मध्यम उपवास का पालन करना चाहिए। क्योंकि जो कोई भोजन से परहेज़ में उचित कठोरता के मापदंड का उल्लंघन करता है, वह बाद में इस मामले में भी अनिवार्य रूप से उचित उदारता के मापदंड को पार कर जाएगा। और जैसे-जैसे हमारे पोषण का स्तर बदलता है, वैसे-वैसे हमारी पवित्रता की गुणवत्ता भी अनिवार्य रूप से बदलनी चाहिए। – फिर भी, इसमें हमें हृदय में निरंतर विनम्रता और धैर्य बनाए रखना चाहिए, साथ ही दिन भर क्रोध और अन्य जुनून से सावधानीपूर्वक अपनी रक्षा करनी चाहिए। क्योंकि जैसे ही हमारे भीतर क्रोध की आग भड़कती है, कामवासना की गर्मी आसानी से उसके पीछे आ जाती है। सबसे बढ़कर, रात के समय स्वयं पर सतर्क और चौकस रहना आवश्यक है। क्योंकि जिस प्रकार दिन में पवित्रता और आत्म-अनुशासन रात्रि की पवित्रता के लिए मार्ग तैयार करते हैं, उसी प्रकार रात्रि की चौकसी हृदय—तथा आत्म-जागरूकता—को दिन के दौरान सभी अशुद्धियों का विरोध करने के लिए शक्ति और धैर्य प्रदान करती है।

17. क्या कामवासना की आग को पूरी तरह से बुझाना संभव है, जिसकी गर्मी हमारे शरीर को स्वाभाविक रूप से महसूस होती है? – आइए पहले इस मामले पर धन्य पौलुस की बात पर विचार करें। वह कहते हैं, *'अपने सांसारिक अंगों को मार डालो'* (कुलु 3:5)। तो फिर, वह हमें किन अंगों को मार डालने का आदेश देते हैं? – निश्चित रूप से हाथ-पैर या किसी अन्य अंग को काटने के लिए नहीं; बल्कि पापी देह को मार डालने के लिए, जिसके बारे में वह कहीं और कहता है: *'पाप का शरीर मर जाने दो'* (रोमियों 6:6), – और जिसमें, किसी अन्य देह की तरह, अपने अंग होते हैं। इन्हीं को प्रेरित हमें मार डालने की आज्ञा देते हैं। और वे तुरंत सूचीबद्ध करते हैं कि वे कौन से हैं। – क्योंकि, *'अपने उन अंगों को जो पृथ्वी पर हैं, मार डालो'* कहने के बाद, *वे आगे कहते हैं: 'व्यभिचार, अशुद्धता, कामवासना, दुष्ट इच्छा, और लोभ, जो मूर्तिपूजा है'*। पहला अंग है *'व्यभिचार'*: यह अवैध शारीरिक संभोग का पाप है; दूसरा अंग है *'अशुद्धता'*, जो कभी-कभी किसी महिला के साथ किसी भी शारीरिक संपर्क के बिना, या तो सोते समय या जागते समय होती है; तीसरा तत्व है *'वासना'*, जो आत्मा की गहराई में निहित है, और शरीर में कामुक इच्छा के प्रभाव के बिना प्रज्वलित हो सकती है; चौथा तत्व है *'दुष्ट वासना'*, जो न केवल उपर्युक्त अशुद्ध वासना को संदर्भित कर सकती है, बल्कि अधिक सामान्य रूप से, सभी हानिकारक इच्छाओं को भी, और जो केवल एक भ्रष्ट इच्छाशक्ति की बीमारी है; प्रेरित पापपूर्ण स्वभाव के अंतिम तत्व के रूप में *'लालच' की* पहचान करते हैं, जिससे यह पता चलता है कि मनुष्य को न केवल दूसरों की संपत्ति पर लालच करने से बचना चाहिए, बल्कि उदारतापूर्वक अपनी संपत्ति को भी तुच्छ समझना चाहिए, जैसा कि वास्तव में प्रेरितों के काम की पुस्तक में उल्लिखित विश्वासियों के पहले समुदाय ने किया था (प्रेरितों के काम 4:32, 35)। कही गई सभी बातों से, मैं यह निष्कर्ष निकालता हूँ: यदि कई लोगों ने मसीह के लिए अपनी संपत्ति का त्याग कर दिया, ताकि उन्होंने अपने दिल से न केवल धन का स्वामित्व बल्कि उसकी इच्छा को भी काट दिया, तो इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि कामुक जुनून को भी उसी तरह बुझाया जा सकता है। क्योंकि प्रेरित असंभव को संभव के साथ नहीं मिलाता। लेकिन दोनों को संभव मानते हुए, उन्होंने आज्ञा दी कि दोनों को मार डाला जाए। – और धन्य पौलुस को हमारे अंगों से कामुक वासना को जड़ से उखाड़ फेंकने की संभावना पर इतना भरोसा था कि उन्होंने न केवल इसे मार डालने की आज्ञा दी , बल्कि यह भी आज्ञा दी कि इसका नाम भी हमारे बीच न लिया जाए, कहते हुए:

'पर तुम्हारे बीच व्यभचािर और हर तरह की अशुद्धता या लोभ का नाम तक न लयाि जाए, जैसा कि पवित्र लोगों के लिए उचति है; न कोई अश्लील बात, न कोई बेवकूफी भरी बात, न कोई फूहड़ ठट्ठा, जो उपयुक्त नहीं हैं' (इफसियिों 5:3–4)। इसलिए, इसमें कोई संदेह नहीं हो सकता कि व्यभचािर की वासना को हमारे अंगों से समाप्त किया जा सकता है – क्योंकि प्रेरति ने आज्ञा दी कि उन्हें काट दिया जाए, ठीक वैसे ही जैसे लोभ, व्यर्थ की बातें और हल्के-फुल्केपन को काटा जाना है।

18. तथापि, हमें यह समझना चाहिए कि यदि हिम संयम का सबसे कठोर रूप—अर्थात्, भूख, प्यास, निराहार, और निरंतर परिश्रम—पालन करें, और आत्मा को बचाने वाली पुस्तकों को पढ़ने के लिए अटूट उत्साह के साथ स्वयं को समर्पति करें; हालाँकि, हम इन प्रयासों से ही, ब्रह्मचर्य की अखंड पवित्रता प्राप्त नहीं कर सकते, जब तक कि ईश्वर की विशेष कृपा हमारी सहायता के लिए न आए। हर कोई जान ले कि उसे उपर्युक्त तपस्या के अभ्यास को केवल इसलिए अथक रूप से करना चाहिए ताकि, उनके द्वारा धैर्यपूर्वक सहन किए गए दुख के माध्यम से, और इस प्रकार ईश्वर की दया को अपने ऊपर आकर्षति कर सके, ताकि वह देह की कलह और प्रचलति जुनून के प्रभुत्व से मुक्ति के दैवीय उपहार का पात्र समझा जाए; और यह इस आशा में नहीं कि, इन कर्मों के माध्यम से अपने स्वयं के प्रयासों से, वह उस अटूट शारीरकि पवित्रता की शुद्धता को प्राप्त कर सके जिसकी वह इतनी इच्छा करता है और जिसकी खोज में है।

19. इन चीज़ों की इच्छाओं को तब तक दबाया या अस्वीकार नहीं किया जा सकता जब तक कि उन्हें अन्य, उद्धारकारी इच्छाओं से प्रतिस्थापति न किया जाए। इसलिए, यदि हिम अपने हृदय से कामुक इच्छाओं को जड़ से उखाड़ना चाहते हैं, तो हमें उन्हें तुरंत आध्यात्मकि इच्छाओं से बदलना चाहिए, ताकि हमारी आत्मा, जो हमेशा उनकी वस्तुओं की ओर प्रयासरत रहती है, उसे क्षणकि सांसारकि सुखों के प्रलोभन पर ध्यान देने की न तो प्रवृत्ति मिलि और न ही समय। और जब, आध्यात्मकि प्रयासों में दैनकि अभ्यास के माध्यम से, हमारी आत्मा सभी चीजों से वैराग्य की ऐसी अवस्था में स्थापति हो जाती है, तो वह अनुभव के माध्यम से निम्नलिखिति पद की शक्ति को समझ पाएगी, जिसे हम सभी अक्सर दोहराते हैं, लेकनि जिसकी शक्ति केवल कुछ अनुभवी आत्माओं को ही ज्ञात है: *'मैंने प्रभु को सदा अपने सामने रखा है; क्योंकि वह मेरे दाहिने हाथ में है, मैं डगमगाऊँगा नहीं'* (भजन संहिता 15:8)। केवल वही व्यक्ति इस श्लोक की शक्ति और अर्थ को वास्तव में समझता है, जिसने उस शरीर और आत्मा की पवित्रता को प्राप्त कर लिया है, जिसके बारे में हम बात कर रहे हैं, और जो यह महसूस करता है कि वह हर पल प्रभु द्वारा संरक्षति है, ताकि वह अपने पुराने रास्तों पर वापस न लौट जाए, और उसका दाहिना हाथ—अर्थात उसके पवित्र कर्म—उनके द्वारा लगातार संरक्षति है। क्योंकि प्रभु हमेशा अपने संतों के साथ रहते हैं, बाईं ओर नहीं – क्योंकि एक पवित्र व्यक्ति के पास बाईं ओर कुछ भी नहीं है, यानी कुछ भी बुरा नहीं है – बल्कि दाईं ओर। जहाँ तक पापियों और अशुद्ध लोगों का सवाल है, वह उनके लिए अदृश्य रहते हैं, क्योंकि उनके पास दाईं ओर कोई स्थान नहीं है, जहाँ वह आमतौर पर उपस्थति रहते हैं।

२०. ब्रह्मचर्य की कई सीढ़ियाँ हैं जिनके द्वारा कोई अटूट पवित्रता तक पहुँचता है। मैं ब्रह्मचर्य में पूर्णता की इस सीढ़ी को छह भागों में विभाजति करूँगा, जिन्हें वास्तव में हमारे शरीरों की तरह सूक्ष्म रूप से पार किया जाता है, जो हर दिन सूक्ष्म रूप से वृद्धि करते हैं और हमारी जानकारी के बिना अपने पूर्ण रूप में विकसति हो जाते हैं। – ब्रह्मचर्य की *'पहली'* सीढ़ी तब होती है जब एक भिक्षु जागते समय कामुक वासना से परेशान नहीं होता है; – *'दूसरी'* तब होती है जब मन कामुक विचारों पर नहीं ठहरता है; *'तीसरी'* तब होती है जब किसी महिला को देखने पर, वह इच्छा से बिल्कुल भी परेशान नहीं होता है; *'चौथा'* तब होता है जब, जागते समय, वह शारीरकि रूप से थोड़ी सी भी हलचल नहीं होने देता; *'पाँचवाँ'* तब होता है जब शारीरकि क्रिया की ओर सबसे हल्की सी प्रवृत्ति भी मन को परेशान नहीं करती, भले ही तर्क-वितिर्क या पढ़ाई के दौरान मानव जन्म का विचार मन में आए; *'छठी'* – यदि, सोते समय भी, कोई महिलाओं के प्रलोभनकारी सपनों से परेशान नहीं होता है।

२१. पूर्ण ब्रह्मचर्य की पवित्रता, जो कामुक विचारों और क्रियाओं से संयम के आरंभकि चरणों से ही होती है, कामुक प्रवृत्तियों के पूर्ण निरोध और उनसे प्राप्त शांति से विशिष्ट होती है। पूर्ण रूप से परिपक्व ब्रह्मचर्य हमेशा शरीर और आत्मा की अटूट और अडगि पवित्रता को बनाए रखता है, और यह पवित्रता के सिवा और कुछ नहीं है। यह तब होता है जब *'मांस'*, *'आत्मा के पीछे लालसा करना'* बंद कर देता है, और उसकी इच्छाओं और सद्गुण के साथ सामंजस्य स्थापति करने लगता है, और जब दोनों शांति के एक दृढ़ बंधन से एकजुट हो जाते हैं, और, भजन रचयिता के शब्दों में, भाइयों की तरह एक साथ रहने लगते हैं (भजन संहिता 132:1)। – तब परमेश्वर उनके साथ है; क्योंकि कहा गया है कि *'उसका निवास स्थान शान्ति में है'* (भजन संहिता 75:3) – अर्थात्, संघर्ष के कोलाहल और वासनाओं के विरुद्ध संघर्ष में नहीं, बल्कि पवित्रता की शान्ति में और हृदय की निरंतर प्रसन्नता में। क्योंकि जब कोई भी,

अपनी सांसारिक वासनाओं को वश में करके, इस शांति के स्थान को प्राप्त करने के योग्य ठहराया जाता है, तो वह एक ही समय में परमेश्वर का वासस्थान बन जाता है।

3. लोभ की आत्मा के विरुद्ध संघर्ष

1. तीसरा संघर्ष जिसका हम सामना करते हैं, वह लोभ की भावना के विरुद्ध है, – एक ऐसा जुनून जो हमारी प्रकृति के लिए अपरिचित और असामान्य है, और जो एक भिक्षु में, एक कमजोर इच्छाशक्ति वाली आत्मा की कमजोरी के अलावा और कुछ से नहीं उत्पन्न होता है जो ठीक से तैयार नहीं है, और अधिकांशतः दुनिया के त्याग की एक खराब रूप से सोची-समझी शुरुआत से होता है, जिसकी नींव ईश्वर के प्रति उत्कट प्रेम नहीं था। वासनाओं की अन्य हलचलों की उत्पत्ति हमारे भीतर ही से होती प्रतीत होती है, मानो वे मानव स्वभाव में निहित और किसी तरह से शरीर में गहरी जड़ें जमाए हुए हों। हमारे जन्म के क्षण से ही मौजूद होने के कारण, उनकी सक्रियता हमारे भीतर अच्छा और बुरा अलग करने की क्षमता के प्रकट होने से पहले ही आरंभ हो जाती है – और उन पर केवल लंबे और कठिन परिश्रम से ही काबू पाया जा सकता है। लेकिन यह क्लेश (लालच) दूसरों के बाद आता है और आत्मा पर बाहरी रूप से थोपा जाता है; इसीलिए इसे अधिक आसानी से रोका और बाहर निकाला जा सकता है। लेकिन यदि, लापरवाही से, इसकी उपेक्षा की जाती है और एक बार हृदय में प्रवेश कर जाने पर, यह किसी भी अन्य से अधिक विनाशकारी और बाहर निकालने में अधिक कठिन साबित होती है: क्योंकि यह सभी बुराइयों की जड़ बन जाती है (1 तीमुथियुस 6:10), जो विभिन्न जुनूनों के लिए उत्तेजना का स्रोत बनती है।

२. यदि यह जुनून एक भिक्षु की कमजोर और ठंडी आत्मा पर हावी हो जाता है, तो यह पहले उसे थोड़ी-सी संपत्ति प्राप्त करने के लिए प्रेरित करता है, और कुछ निश्चित कारणों की एक जीवंत तस्वीर पेश करता है—जो देखने में न्यायसंगत और उचित लगते हैं—कि उसे या तो संसार का त्याग करते समय अपने लिए कुछ पैसे अलग रखना चाहिए, या बाद में उसे प्राप्त करना चाहिए। 'मठ में जो दिया जाता है,' वह शिकायत करता है, 'वह एक स्वस्थ और मजबूत शरीर के लिए अपर्याप्त और मुश्किल से ही सहनीय है। अगर आप बीमार पड़ गए, और ऐसी किसी भी स्थिति के लिए आपके पास कुछ भी अलग रखा नहीं है, जिससे आप अपनी बीमारी में अपनी मदद कर सकें, तो आप क्या करेंगे? मठ के भत्ते कम हैं, जबकि बीमारों की उपेक्षा दुखद है। यदि आपके पास अपनी शारीरिक सेहत को बहाल करने के लिए कुछ भी नहीं है, तो आपको एक दयनीय मौत मरने के लिए मजबूर होना पड़ेगा। – और मठ द्वारा प्रदान किया गया कपड़ा भी अपर्याप्त है, जब तक कि आप अपने लिए एक और जोड़ा खरीदने के लिए कुछ अलग रख न सकें। अंत में, हमेशा एक ही मठ में रहना संभव नहीं है; और उस स्थिति में, यदि आप यात्रा खर्च और समुद्री यात्रा के लिए पैसे अलग नहीं रखते हैं, तो आप जब चाहें वहां से आगे नहीं बढ़ पाएंगे, और इस प्रकार, अत्यधिक गरीबी से बाध्य होकर, आप लगातार एक मजदूर का जीवन जिएंगे, एक ऐसी दयनीय ज़िंदगी जिसमें कोई सफलता नहीं होगी। – जब कोई भिक्षु अपने मन को ऐसे विचारों में उलझा लेता है, तो वह एक डेनियस (सिक्का) भी प्राप्त करने के तरीके सोचना शुरू कर देता है; और इस उद्देश्य के लिए वह कोई निजी काम ढूंढता है, जिसे वह अपने आबा (गुरु) की जानकारी के बिना, अत्यंत सावधानी से करता है। फिर उसे गुप्त रूप से बेचकर उस बहुप्रतीक्षित सिक्के को प्राप्त करने के बाद, वह डर के मारे उसके लिए बेचैन और परेशान रहता है, यह सोचते हुए कि उसे कहाँ रखे या उसकी सुरक्षा के लिए किसके हवाले करे; इस बीच, एक और भी तीव्र चिंता उसे पहले ही सताने लगती है: उस सिक्के को दोगुना कैसे किया जाए – और वह ध्यानपूर्वक बड़ी-बड़ी योजनाएँ बनाता है कि उससे क्या खरीदा जाए, और इसे हासिल करने के लिए कौन सी युक्तियाँ अपनाई जाएँ। और जब वह अपनी इच्छानुसार इसमें सफल हो जाता है, तो उसके भीतर सोने के लिए एक अत्यंत अतृप्त लालच जाग उठता है, जो उसके द्वारा किए गए मुनाफे के बढ़ने के साथ और भी भयंकर रूप से भड़क उठता है: क्योंकि जैसे-जैसे उसकी संपत्ति बढ़ती है, वैसे-वैसे उसके प्रति उसके जुनून का उन्माद भी बढ़ता जाता है। इसके अलावा, आग में घी डालने वाले अन्य चिंतित विचार आते हैं: लंबी उम्र, अत्यधिक वृद्धावस्था, और विभिन्न प्रकार की दीर्घकालिक बीमारियों की संभावना, जिन्हें वृद्धावस्था में सहना असंभव होगा, जब तक कि किसी ने अपनी युवावस्था में बहुत सारा पैसा अलग नहीं रख लिया हो। – इस प्रकार, यह दुखी आत्मा, इस सर्प (धन के प्रेम) के फंदों में बँधी, एक अवांछनीय लालच में, अनुचित चिंता के साथ, अवैध रूप से अर्जित संपत्ति को बढ़ाने की इच्छा से और भी आगे खिंचती जाती है, और इस प्रकार अपने भीतर एक ऐसा विष पैदा करती है जो एक लौ की तरह उसे और भी क्रूरता से भस्म कर देता है। लालची विचारों से पूरी तरह ग्रस्त होकर, वह अपने मन की दृष्टि केवल उन साधनों पर केंद्रित कर लेती है जिनसे वह पैसा प्राप्त कर सके, ताकि उससे वह संन्यासी कठोरता के जुए से यथाशीघ्र भाग सके। जैसे ही उसके सामने पैसा पाने की कोई आशा जगती है, वह किसी और चीज़ की कदर नहीं करती: उसके लिए, वह झूठ बोलने, कसम तोड़ने, चोरी करने या अपनी निष्ठा तोड़ने से भी नहीं हिचकिचाएगी। संक्षेप में, सोना और लाभ की आशा हर

मामले में उसका देवता हैं, जैसे दूसरों के लिए पेट होता है। इसीलिए धन्य प्रेरित ने, इस रोग के घातक विष को पूर्व में ही भांपते हुए, इसे न केवल सभी बुराइयों की जड़, बल्कि मूर्तिपूजा भी कहा, कहते हुए: *'और लोभ'* (– जिसे मार डालो), *'जो मूर्तिपूजा है'* (कुलुस्सियों 3:5)।

3. इस व्याधि के तीन रूप हैं, जिन सभी की पुरखों ने समान घृणा के साथ निंदा की है: पहला वह है जिसकी विनाशकारी प्रकृति का वर्णन हमने ऊपर किया है - जो कुछ दुर्भाग्यशाली आत्माओं को धोखा देकर, उन्हें वह संचित करने के लिए प्रेरित करती है जो उनके पास पहले कभी नहीं था, जब वे संसार में रहते थे; दूसरा वह है जो उन्हें एक बार फिर से इच्छा करने और उस चीज़ को वापस पाने के लिए प्रेरित करता है जिसे उन्होंने संसार के त्याग की शुरुआत में पीछे छोड़ दिया था; तीसरी वह है जो संन्यास जीवन की बहुत ही गलत शुरुआत से उत्पन्न होती है—जो सभी चीजों का अपूर्ण त्याग करके शुरू किया जाता है—और यह उन लोगों को, जिन्हें यह इस आध्यात्मिक ठंडक से संक्रमित कर लेती है, भविष्य में वंचित होने की संभावना से डराकर और अविश्वास के माध्यम से उन्हें कमजोर बनाकर, सभी सांसारिक संपत्ति से पूरी तरह से मुक्त होने से रोकती है: और जो, दुनिया का त्याग करते समय उन धन-संपत्ति को अपने पास रखकर, जिन्हें उन्हें त्याग देना चाहिए था, बाद में उन्हें किसी भी तरह से सुसमाचार की पूर्णता प्राप्त करने से रोकता है— और पवित्र धर्मग्रंथ में हमें इन तीन प्रकार के पतन की निंदा के उदाहरण मिलते हैं, जिनके साथ उनके लिए कठोर दंड भी निर्धारित हैं, जैसा कि में दर्ज है। इस प्रकार, गेहाज़ी, जो पहले से जो उसके पास नहीं था उसे प्राप्त करने की इच्छा रखता था, न केवल भविष्यवाणी की कृपा प्राप्त करने के योग्य नहीं ठहरा—जो उसे अपने शिक्षक से, एक प्रकार से वंशानुगत उत्तराधिकार के रूप में प्राप्त करनी थी—बल्कि एलीशा के शाप से वह कोढ़ी भी हो गया (2 राजा 5:21, 27)। दूसरी ओर, यहूदा, उस पैसे को वापस लेने की इच्छा से जिसे उसने मसीह का अनुसरण करते समय पहले अस्वीकार कर दिया था, न केवल प्रभु के साथ विश्वासघात में पड़ गया और एक प्रेरित के रूप में अपना पद खो दिया, बल्कि उसे अपने जीवन का प्राकृतिक अंत भी नहीं मिला, और उसने आत्महत्या करके अपने जीवन का अंत कर लिया (मत्ती 27:5); जबकि हनन्याह और सप्फीरा ने अपनी संपत्ति का एक हिस्सा छिपा रखा था, जिन्हें प्रेरितों ने मृत्युदंड दिया (प्रेरितों के काम 5:1-11)।

४. उन लोगों के विषय में जिन्होंने संसार का त्याग कर दिया था, परन्तु बाद में अविश्वास से पराजित हो गए, और जो सभी सांसारिक संपत्तियों से वंचित रहने से डरते हैं, व्यवस्थाविवरण में एक रहस्यमय आज्ञा दी गई है: *'जो कोई डरपोक और कमजोर हृदय का हो'* (वह युद्ध में न जाए) *'वह जाकर अपने घर लौट जाए: कहीं ऐसा न हो कि वह अपने भाई के हृदय को भी अपने समान डरपोक बना दे'* (व्यवस्थाविवरण 20:8)। कोई पूछ सकता है, इस भविष्यवाणी से अधिक स्पष्ट और क्या हो सकता है? क्या पवित्र शास्त्र स्पष्ट रूप से यह नहीं चाहता कि वे ऐसी बुलाहट की आकांक्षा भी न करें, और न ही उसका नाम अपने ऊपर लें, बजाय इसके कि वे अपने शब्दों और बुरे उदाहरण से, अपने निराधार भय से दूसरों का मनोबल गिराएँ और उन्हें सुसमाचार की पूर्णता से भटका दें? इसलिए उन्हें युद्ध से हटकर अपने घर लौटने की आज्ञा दी गई है, क्योंकि विभाजित हृदय वाला कोई भी प्रभु के युद्ध में लड़ नहीं सकता। क्योंकि *'द्विचित्त मनुष्य अपने सब मार्गों में अस्थिर है'* (याकूब 1:8)। और उस सुसमाचार की दृष्टान्त के अर्थ पर विचार करने पर—जिसमें कहा गया है कि एक राजा, जो दस हजार सैनिकों के साथ एक ऐसे दूसरे राजा के विरुद्ध चल पड़ा था जो बीस हजार सैनिकों के साथ उसकी ओर बढ़ रहा था, और जब दूसरा राजा अभी दूर ही था, तब उसे युद्ध में सफल होने की आशा न थी, इसलिए उसने शांति के लिए दूत भेजे (स्पष्ट रूप से वह युद्ध आरंभ भी नहीं करना चाहता था)—हम उसी निष्कर्ष पर पहुँचते हैं: कि उपरोक्त व्यक्तियों के लिए दुनिया का त्याग शुरू ही न करना बेहतर है, बजाय इसके कि शुरू करने के बाद, उसमें लगन और पूरी कठोरता से बने रहने में असफल हो जाएँ, और इस प्रकार खुद को बड़े खतरे में डाल दें। क्योंकि, जैसा कि बुद्धिमान कहते हैं, *'वादा न करना तुम्हारे लिए बेहतर है, वादा करके उसे पूरा न करने से'* (उपदेशक 5:4)। यहाँ यह अच्छी तरह कहा गया है कि एक दस हज़ार के साथ आगे बढ़ता है, जबकि दूसरा बीस हज़ार के साथ। क्योंकि हम पर आक्रमण करने वाले वासनाओं की संख्या हमारी ओर से लड़ने वाले सद्गुणों की संख्या से अधिक है। लेकिन *'कोई भी... ईश्वर और धन-दौलत दोनों की सेवा नहीं कर सकता'* (मत्ती 6:24), और: *'जो कोई हल चलाने में अपना हाथ डालता है और पीछे मुड़कर देखता है, वह ईश्वर के राज्य के योग्य नहीं है'* (लूका 9:62)।

५. ऐसे लोग आमतौर पर पवित्र शास्त्र के अधिकार का सहारा लेकर अपनी लगातार लालच को सही ठहराने की कोशिश करते हैं। इसे गलत तरीके से व्याख्यायित करते हुए, वे प्रेरित और यहाँ तक कि स्वयं प्रभु के अर्थ को अपनी इच्छानुसार तोड़ने-मरोड़ने और बदलने में प्रसन्न होते हैं, अपने जीवन या समझ को धर्मग्रंथ के अर्थ के अनुरूप ढालने में असफल रहते हैं, बल्कि इसके बजाय अपनी आत्म-तुष्टि के अनुरूप धर्मग्रंथ को मरोड़ते हैं। इस मामले में भी यह दिखाने की इच्छा रखते हुए कि पवित्र शास्त्र उनकी राय से सहमत है, वे कहते हैं: 'लिखा है: *"प्राप्त करने से देना अधिक धन्य है"* (प्रेरितों के काम 20:35)। इन शब्दों की सबसे विकृत व्याख्या करते हुए, वे मानते हैं कि

वे उस कहावत की ताकत को पूरी तरह से खत्म कर देते हैं जो कहती है: *'यदि तुम सिद्ध होना चाहते हो, तो जाओ, अपनी संपत्ति बेच दो और गरीबों को दे दो, और तुम्हारे लिए स्वर्ग में खज़ाना होगा; और आओ, मेरे पीछे हो लो'* (मत्ती 19:21)। वे सोचते हैं कि इस तरह के विश्वसनीय आधार पर, उन्हें अपनी संपत्ति से हाथ नहीं धोना चाहिए, और खुद को उन लोगों से अधिक धन्य घोषित करते हैं जिन्होंने इसे त्याग दिया है, जबकि वे स्वयं अपनी पूर्व संपत्ति के माध्यम से सुरक्षित रहते हुए, अपनी अतिरिक्त संपत्ति दूसरों के साथ साझा करते हैं; जबकि वे प्रेरित के साथ, मसीह के लिए गौरवशाली गरीबी को अपनाने में लज्जित होते हैं, और अपने हाथों की मेहनत और संन्यास के मामूली भत्ते से संतुष्ट रहने को तैयार नहीं हैं। उनके पास दो में से एक विकल्प बचता है: या तो यह स्वीकार करना कि उन्होंने खुद को धोखा दिया है और कभी भी संसार का त्याग नहीं किया, जबकि वे अपनी पूर्व संपत्ति से इतने जुड़े हुए हैं; या, यदि वे कर्म और श्रम के माध्यम से मठवासी जीवन के आह्वान की परीक्षा लेना चाहते हैं, तो सब कुछ त्याग दें और बिखेर दें, ताकि उन्होंने जिन चीजों का त्याग किया है, उनमें से अपने लिए कुछ भी न रखें, और प्रेरित के साथ भूख और प्यास, ठंड और नग्नता पर गर्व कर सकें (2 कुरिन्थियों 11:27)।

6. सेसरिया के बिशप, संत बेसिल का एक कथन है, जो उन्होंने बहुत ठंड से लकवाग्रस्त एक सेनेटर से कहा था — जिसने, दुनिया को त्यागने का दावा करते हुए, अपनी कुछ संपत्ति रख ली थी, और वह अपने हाथों की मेहनत से अपना भरण-पोषण करने, या हर चीज़ में गरीबी, कठिन परिश्रम और मठ की आज्ञाकारिता के माध्यम से सच्ची नम्रता सीखने को तैयार नहीं था। 'और,' उन्होंने उससे कहा, 'तुमने एक सेनेटर का अपना दर्जा खो दिया है और न ही तुम एक भिक्षु बने हो।'

7. अतः यदि हम विधिवत आध्यात्मिक संघर्ष में संलग्न होना चाहते हैं, तो आइए हम इस विनाशकारी शत्रु को अपने हृदय से निकाल फेंकें—क्योंकि यद्यपि उसे परास्त करना कोई बड़ी उपलब्धि नहीं है, पर उससे पराजित होना अपमानजनक और लज्जास्पद दोनों है। क्योंकि एक शक्तिशाली प्रतिद्वंद्वी द्वारा पराजित होना, भले ही गिरने के कारण दर्दनाक और विजय के नुकसान के कारण खेदजनक हो, फिर भी ऐसे मामले में पराजित को प्रतिद्वंद्वी की ताकत के एहसास से कुछ सांत्वना मिलती है। हालाँकि, यदि कोई तब इस हार को झेलता है जब विरोधी का कोई खास महत्व नहीं है, और संघर्ष की प्रकृति कठिन नहीं है; तो, जमीन पर गिरने के दर्द से कहीं अधिक दर्द अपमानजनक शर्म से होगा, और हार से कहीं अधिक भारी क्षति अपमान द्वारा पहुँचाई जाएगी।

८. इस शत्रु पर अंतिम विजय और पूर्ण सफलता केवल तब ही की आशा की जा सकती है, जब एक भिक्षु का अंतःकरण एक छोटे से सिक्के के स्वामित्व से भी कलंकित न हो। क्योंकि जिस किसी के हृदय में, एक छोटे से मौद्रिक उपहार से बहककर, लालची इच्छा का बीज एक बार अंकुरित हो जाता है, उसके लिए यह असंभव है कि वह महान चीजों की लालसा की अग्नि से तुरंत भस्म न हो जाए। और मसीह का एक सिपाही तब तक विजयी बना रहेगा, सभी खतरों से परे और इस जुनून के हमले से अछूता रहेगा, जब तक कि यह सबसे नीच आत्मा उसके हृदय में अपनी वासना के बीज नहीं बो देती। जैसे सभी प्रकार के जुनूनों में, सबसे पहले सांप के सिर से सावधान रहना चाहिए, वैसे ही, विशेष रूप से इस एक के संबंध में, यह सुनिश्चित करने के लिए सबसे बारीक सावधानियां बरतनी चाहिए कि इसका सिर किसी भी तरह से भीतर न घुस जाए। क्योंकि यदि इसे प्रवेश करने दिया जाए, तो यह अपने ही पदार्थ पर पलते हुए और शक्ति में बढ़ते हुए, अपने आप ही सबसे प्रचंड आग भड़काएगा। और इसलिए, न केवल धन रखने से सावधान रहना चाहिए, बल्कि आत्मा से इसकी इच्छा को पूरी तरह से जड़ से उखाड़ फेंकना चाहिए; और यह लालच के कार्यों से बचने का मामला कम है, बल्कि इसकी जड़ को काट देने का मामला अधिक है: क्योंकि यदि धन की इच्छा हमारे भीतर बनी रहती है तो धन की कमी से हमें कोई लाभ नहीं होगा।

9. यहाँ तक कि जिसके पास पैसा नहीं है, वह भी लालच की बीमारी से मुक्त नहीं हो सकता; और न ही उन सभी संपत्तियों को त्यागने में कोई लाभ होगा जो लालच की कामना को समाप्त करने में असफल रहे हैं, जिन्होंने गरीबी के सद्गुण में ही नहीं बल्कि निर्धन होने के कार्य में आनंद लिया है, और इस कठोर आवश्यकता (ऐसा करने की) को भारी मन से स्वीकार किया है। क्योंकि जैसे सुसमाचार में घोषणा की गई है कि कुछ लोग, यद्यपि शरीर से अशुद्ध नहीं हैं, परन्तु मन से अशुद्ध हैं (मत्ती 5:28), वैसे ही वे लोग भी, जो धन के बोझ से किसी भी प्रकार से दबे हुए नहीं हैं, मन और मस्तिष्क से, लालची लोगों के साथ ही निन्दित हो सकते हैं। उन्हें धन प्राप्त करने का अवसर तो मिला ही नहीं, इच्छाशक्ति नहीं थी, जो ईश्वर की दृष्टि में आवश्यकता से भी अधिक महत्वपूर्ण होती है। तो फिर, हमें यह सुनिश्चित करने के लिए हर संभव सावधानी क्यों बरतनी चाहिए कि हमारे श्रम के फल व्यर्थ में नष्ट न हो जाएँ: क्योंकि यह पछतावा का विषय है कि हमने खुद को सब कुछ से वंचित कर गरीबी में डाल लिया, केवल यह कि इच्छा की बाँझ, पापी इच्छाओं के कारण इस श्रम के फलों को खो दें।

10. क्या आप जानना चाहते हैं कि यह जुनून किस विनाशकारी फल को जन्म देता है, और यह अन्य जुनूनों की कौन-सी उप-शाखाएँ उत्पन्न करता है, जो इसे अपनाने वाले किसी भी व्यक्ति के विनाश का कारण बनती हैं—जब तक कि इसे पूरी तरह से जड़ से न उखाड़ दिया जाए? यहूदा को देखो, जो प्रेरितों में गिना जाता था! उसने—जो इस सर्प के घातक सिर को कुचलना नहीं चाहता था—उसे अपने विष से कैसे बर्बाद कर दिया, उसे अपनी वासना के जाल में कैसे फँसा दिया, और अपराध की कितनी गहरी खाई में धकेल दिया, जब उसने उसे दुनिया के उद्धारकर्ता और मानव मोक्ष के कर्ता को चाँदी के तीस टुकड़ों के लिए बेचने की शिक्षा दी? यदि वह लालच की बीमारी से संक्रमित न हुआ होता, तो वह विश्वासघात के ऐसे अधर्मी कृत्य के लिए कभी प्रेरित न होता, और यदि वह पहले से ही अपने सुपुर्द किए गए कोष से चोरी करने का आदी न हुआ होता, तो वह प्रभु की हत्या का अपवित्र प्रेरक भी न बना होता।

11. इस जुनून के अत्याचार का सबसे चौंकाने वाला उदाहरण यह है, जो, जैसा कि हमने कहा है, एक बार जब यह किसी की आत्मा पर हावी हो जाता है, तो वह ईमानदारी के किसी भी नियम का पालन नहीं करने देता, और कोई भी लाभ उसे कभी संतुष्ट नहीं कर सकता। क्योंकि इसके उन्माद का अंत अमीर बनने में नहीं, बल्कि स्वयं को सब कुछ से वंचित करने में निहित है। उदाहरण के लिए, इसी यहूदा को ही लें: उसे गरीबों में बाँटने के लिए रखे गए धन का नियंत्रण सौंपा गया था—ताकि इस धन की प्रचुरता का भरपूर लाभ उठाकर वह कम से कम अपनी वासना को शांत कर सके—लेकिन इसके विपरीत, वह एक अनियंत्रित वासना से इतना भड़क उठा कि उसने न केवल गुप्त रूप से कोष में गबन किया, बल्कि स्वयं प्रभु को धोखा देने की भी इच्छा की। क्योंकि इस जुनून की उन्मत्तता किसी भी धन-संपत्ति से तृप्त नहीं हो सकती।

12. इसीलिए संत पतरस प्रेरित, यह जानते हुए कि जुनून के कारण कुछ भी रखने वाला व्यक्ति धन के प्रेम को उचित सीमाओं के भीतर नहीं रख सकता, और यह कि इस जुनून का अंत किसी राशि, चाहे वह छोटी हो या बड़ी, से निर्धारित नहीं होता, बल्कि सभी चीजों से स्वयं को पूरी तरह से वंचित करने से होता है, उन्होंने अननियस और सप्फिरा को अपनी संपत्ति से कुछ अपने लिए छिपाने के लिए मृत्युदंड दिया। और वे लालच से उत्पन्न एक झूठ के कारण नष्ट हो गए, ठीक वैसे ही जैसे यहूदा ने प्रभु के साथ विश्वासघात करके अपने लिए विनाश को आमंत्रित किया। उनके बीच अपराध और दंड दोनों में कितनी समानता है! वहाँ, धन के प्रति प्रेम ने विश्वासघात की ओर ले जाया; यहाँ, झूठ की ओर। वहाँ, सत्य के साथ विश्वासघात होता है; यहाँ, झूठ बोलने का पाप किया जाता है। यद्यपि दोनों ही मामलों में पाप की प्रकृति अलग प्रतीत होती है, फिर भी वे दोनों एक ही परिणाम पर समाप्त होते हैं। पहला, गरीबी से बचने की इच्छा से, उस चीज़ को फिर से पाने की लालच में था जिसे उसने अस्वीकार कर दिया था; जबकि दूसरे ने, गरीब न होने के लिए, अपनी संपत्ति का एक हिस्सा अपने पास रखने का प्रयास किया जिसे उसे या तो प्रेरितों को निष्ठापूर्वक सौंप देना चाहिए था या पूरी तरह से भाइयों में बाँट देना चाहिए था। इसीलिए, दोनों ही मामलों में, मृत्यु का समान दंड मिला: क्योंकि दोनों पाप एक ही जड़ से उपजे थे— —धन का प्रेम। – तो, फिर (इसे एक कदम और आगे ले जाते हुए), यदि उन लोगों पर इतना कठोर न्याय किया गया जिन्होंने दूसरों की संपत्ति पर लालच नहीं किया, बल्कि अपनी संपत्ति को अपने पास रखना चाहा, और अधिक प्राप्त करने की कोई इच्छा नहीं रखी, बल्कि जो उनके पास था उसे संरक्षित रखने की इच्छा रखी; तो फिर उन लोगों के बारे में क्या कहा जा सकता है जो ऐसे धन को इकट्ठा करने की लालच करते हैं जो उनके पास कभी नहीं था, और मनुष्यों के सामने गरीब appearing होते हुए भी, परमेश्वर के सामने लालच की भावना में धनी प्रकट होते हैं?

13. जिन लोगों को लालच है, उन्हें आत्मा और प्राण में कोढ़ी समझा जाना चाहिए, ठीक गेजयिस की तरह, जिसने इस संसार के नाशवान धन को लालच में रखकर, एक संक्रामक और अशुद्ध कोढ़ से ग्रस्त हो गया था। इसी अनुभव के माध्यम से, उसने हमें एक स्पष्ट संकेत दिया कि धन के प्रेम के पापी जुनून से कलंकित आत्मा, जुनूनों के आध्यात्मिक संक्रामण से ग्रस्त होती है, और प्रभु की दृष्टि में एक अनंत श्राप के अधीन, अशुद्ध के रूप में खड़ी होती है।

14. अब, यदि आपने पूर्णता की अपनी खोज में, सब कुछ पीछे छोड़ दिया है और मसीह का अनुसरण किया है, उनके वचन पर ध्यान देते हुए: *'जाओ, अपनी संपत्ति बेच दो और गरीबों को दे दो, और तुम्हारे लिए स्वर्ग में खजाना होगा; और आओ, मेरा अनुसरण करो'* (मत्ती 19:21), तो फिर, हल पर हाथ रख चुकने के बाद, आप पीछे क्यों मुड़ते हैं, ताकि स्वयं प्रभु के वचनों द्वारा आपको स्वर्ग के राज्य के लिए अयोग्य घोषित कर दिया जाए (लूका 9:62)? सुसमाचार की पूर्णता की ऊँचाई पर, अर्थात् छत पर चढ़ाए जाने के बाद, आप फिर से अपने घर में क्यों उतरते हैं, ताकि वहाँ से वह सब कुछ ले लें जिसे आपने पहले इतनी सहजता से तुच्छ समझा था (लूका 17:31)? सद्कर्मों के क्षेत्र में स्थापित हो जाने के बाद, आप फिर से सांसारिक संपत्ति का बोझ स्वयं पर क्यों लादने का प्रयास करते हैं, जिससे आपने संसार का त्याग करते समय स्वयं को मुक्त किया था? – यदि, उस समय गरीबी से चेतावनी मिलने के कारण,

आपके पास पीछे छोड़ने के लिए कुछ भी नहीं था, तो और भी अधिक, आपको अब वह प्राप्त नहीं करना चाहिए जो आपके पास पहले नहीं था। ईश्वर की आपके प्रति विशिष कृपा ही है कि आप इस प्रकार (गरीबी के माध्यम से संसार का त्याग करने के लिए) तैयार हुए—ताकि सांसारिक संपत्ति के किसी भी बंधन से बाधित हुए बिना, आप और भी शीघ्रता से उनकी ओर बढ़ सकें। हालाँकि, कोई भी गरीब इससे अपमानित महसूस न करे (कि उसके पास पीछे छोड़ने के लिए कुछ भी नहीं है); क्योंकि ऐसा कोई नहीं है जिसके पास पीछे छोड़ने के लिए कुछ न हो। जिसने सांसारिक संपत्ति प्राप्त करने की लालसा को ही जड़ से काट दिया है, उसने सभी सांसारिक संपत्तियों का त्याग कर दिया है।

१५. हम इस निर्लिप्तता के गुण को मठ में रहने के अलावा पूर्ण और निर्दोष रूप से संरक्षित नहीं कर सकते, यदि, जैसा कि प्रेरित कहते हैं, *'भोजन और वस्त्र होने पर, हम इन्हीं से संतुष्ट रहेंगे'* (१ तीमुथियुस ६:८)।

16. इसलिए, अननियस और सप्फिरा की निंदा को ध्यान में रखते हुए, संसार को त्यागने का संकल्प लेने के बाद, हम जिस भी चीज़ को पूरी तरह से छोड़ने का व्रत ले चुके हैं, उसे रखने से डरें। लालच के पाप के लिए अचूक कोढ़ से दंडित किए गए गेहाजी के उदाहरण से भी डरते हुए, आइए सावधान रहें कि हम वह न प्राप्त करें जो पहले हमारे पास नहीं था। यहूदा की दुष्टता और उसकी नियति, दोनों से समान रूप से भयभीत होकर, आइए हम फिर से पैसा इकट्ठा करने से बचने के लिए अपनी पूरी कोशिश करें, जिसे हमने एक बार और हमेशा के लिए त्याग दिया है। – सबसे बढ़कर, अपने स्वभाव की नश्वरता और अपने मृत्यु के समय की अनिश्चितता पर चिंतन करते हुए, आइए हम इस बात का ध्यान रखें कि जब प्रभु का दिन रात के चोर की तरह आए, तो वह हमारे अंतरात्मा को लालच से दागदार न पाए, भले ही वह एक ओबोला के लिए ही क्यों न हो; क्योंकि केवल वही, हमारे संसार-त्याग के सभी फलों को शून्य करके, उस बात को हमारे विरुद्ध कर देगा जो प्रभु ने सुसमाचार में धनी मनुष्य से कही थी: *'हे मूर्ख! इसी रात्रि में तेरी आत्मा तुझ से ली जाएगी; और जो वस्तुएँ तूने जुटाई हैं, वे किसकी होंगी?'* (लूका 12:20)? और कल की बिल्कुल भी चिंता किए बिना, हम किसी भी तरह से स्वयं को सामुदायिक जीवन के नियमों से भटकने न दें। इसका हम निस्संदेह पालन करने में असमर्थ होंगे, और न ही हम मठ के नियमों के तहत शांति से रह पाएंगे, जब तक कि हमारे भीतर धैर्य की सद्गुण को पहले दृढ़ता से स्थापित नहीं किया जाता, जिसका स्रोत विनम्रता के अलावा और कुछ नहीं है।

४. क्रोध की भावना के विरुद्ध संघर्ष

1. इस चौथे युद्ध में, हमें अपने आत्मा की गहराइयों से क्रोध के घातक विष को जड़ से उखाड़ फेंकना होगा। जब तक यह हमारे हृदय में रहता है और हमारे मन की आँख को हानिकारक अंधकार से अंधा कर देता है, हम भले और बुरे का सही विवेक नहीं प्राप्त कर सकते, न ही सम्मानजनक चिंतन की तीक्ष्णता; न ही हम परामर्श की परिपक्वता प्राप्त कर सकते हैं, न जीवन में भाग ले सकते हैं, न सत्य को दृढ़ता से थाम सकते हैं, और न ही सच्ची आध्यात्मिक ज्योति का अनुभव कर सकते हैं; क्योंकि कहा गया है: *'क्रोध से मेरी आँखें व्याकुल हैं'* (भजन संहिता 6:8); हम ज्ञान के सहभागी नहीं बन सकते, भले ही सभी की राय से हमें बुद्धिमान घोषित किया गया हो, क्योंकि *'मूर्खों के हृदय में क्रोध रहता है'* (सभोपदेशक 7:10); न ही हम अनंत जीवन प्राप्त कर सकते हैं, भले ही मानवीय दृष्टिकोण से हमें बुद्धिमान माना जाए, क्योंकि *'क्रोध बुद्धिमानों को भी नष्ट कर देता है'* (नीतिवचन 15:1); और न ही हम हमेशा अपने हृदय की आज्ञा के अनुसार न्याय की तुला को थाम सकते हैं, क्योंकि *'मनुष्य का क्रोध परमेश्वर की धार्मिकता को पूरा नहीं करता'* (याकूब 1:20); और हम किसी भी तरह से वह गरिमा नहीं रख सकते जो इस युग के लोगों में भी आम है, भले ही, अपने जन्म के कारण, हमें कुलीन और सम्माननीय माना जाता हो, क्योंकि *'एक क्रोधी मनुष्य अच्छे चरित्र का नहीं होता'* (नीतिवचन 11:25), और न ही हम किसी भी तरह से परामर्श की बुद्धि प्राप्त कर सकते हैं, भले ही हम व्यापक ज्ञान प्राप्त कर चुके प्रतीत हों, क्योंकि *'जल्दी में काम करने वाला मनुष्य बिना विचार के काम करता है'* (नीतिवचन 14:17); हम चिंताओं और परेशानियों से चैन से नहीं रह सकते, और न ही पाप से मुक्त हो सकते हैं, भले ही दूसरे हमें कोई तकलीफ न दें, क्योंकि *'क्रोधी मनुष्य'* (स्वयं) *'विवाद खड़ा करता है; परन्तु जो जलन-प्रवृत्त है, वह'* (बेशर्मी से) *'पापों को* प्रकट करता है' (नीतिवचन 29:22)।

2. कुछ लोग, आत्मा के इस हानिकारक रोग को बरी करने के अपने प्रयासों में, धर्मग्रंथ की सबसे अश्लील व्याख्या के माध्यम से इसके (अश्लीलता) को कम करने का प्रयास करते हैं, कहते हुए: यह कोई बड़ी बात नहीं है यदि हम अपने पाप करने वाले भाइयों से क्रोधित हों, क्योंकि परमेश्वर स्वयं उन लोगों के विरुद्ध क्रोध और प्रचंड क्रोध से जलते हैं जो या तो उन्हें जानना नहीं चाहते, या उन्हें जानते हुए भी उनका उचित आदर नहीं करते – जैसे, उदाहरण के लिए: *'और यहोवा अपने लोगों पर क्रुद्ध हुआ'* (भजन संहिता 105:40), या जैसा कि एक अन्य अंश में है, जहाँ नबी प्रार्थना करते हैं, कहते हुए: *'हे प्रभु, अपने क्रोध में मुझे डाँट मत, और अपनी जलन में मुझे दंड मत देना'* (भजन संहिता 6:2)। – और न ही उन्हें यह एहसास है कि, ऐसा करने से जहाँ वे लोगों को अपनी विनाश के लिए इस जुनून

पर अमल करने की स्वतंत्रता देते हैं, वहीं वे सभी पवित्रता के स्रोत, अनंत ईश्वर को भी एक अपवित्र, शारीरिक जुनून का अभ्यर्थी बना रहे हैं।

3. यदि धर्मग्रंथ के इन और इसी प्रकार के अंशों को शाब्दिक रूप से, एक भौतिक, इंद्रियात्मक अर्थ में समझा जाए, तो इसका यह अर्थ होगा कि ईश्वर सोता और जागता है, बैठता और चलता है, किसी की ओर मुड़ता है और उनसे मुंह मोड़ता है, पास आता है और पीछे हट जाता है - और उसके पास शारीरिक अंग हैं: एक सिर, आँखें, हाथ, पैर और इसी तरह के। – जैसे कि यह सब, परम अपवित्रता के बिना, शाब्दिक रूप से समझा नहीं जा सकता, उस के संदर्भ में जो स्वयं धर्मग्रंथ की गवाही के अनुसार, अदृश्य, अवर्णनीय और सर्वव्यापी है; वैसे ही, ईश्वरनिंदा के बिना, कोई भी उसे क्रोध और रोष के उद्रेक का श्रेय नहीं दे सकता। 'अंग' और 'गति' शब्द दैवीय गुणों और हमारी ओर उनकी दिव्य व्यवस्था की क्रियाओं को दर्शाते हैं, जिन्हें हम इन रूपकात्मक नामों के अंतर्गत अधिक आसानी से समझ सकते हैं: आँखें ईश्वर के सर्वज्ञ और सर्व-ज्ञानी स्वभाव का प्रतीक हैं; हाथ और पैर – उनकी रचनात्मकता और दिव्य व्यवस्था; मांसपेशियाँ – उनकी शक्ति और सर्वशक्तिमानता; और इसी तरह। इसी प्रकार, जब हम ईश्वर के क्रोध या प्रकोप के बारे में पढ़ते हैं, तो हमें इसे मानवीय अर्थ में नहीं, बल्कि ईश्वर के अनुकूल तरीके से समझना चाहिए, जो सभी प्रकार के उद्वेग से परे हैं; – हमें ठीक यही समझना चाहिए: कि वह इस दुनिया में अन्याय से किए गए सभी कार्यों के न्यायाधीश और धर्मी प्रतिशोधक हैं; और, ऐसी बातें पढ़ते समय ईश्वर के धर्मी दंड से डरते हुए, हमें उनकी इच्छा के विपरीत कुछ भी करने से बचने के लिए हर संभव सावधानी बरतनी चाहिए।

४. अतः वह भिक्षु, जो पूर्णता के लिए प्रयत्नशील है और आध्यात्मिक तपस्या में विधिवत परिश्रम करने की इच्छा रखता है, क्रोध और उग्रता की प्रत्येक उत्तेजना से मुक्त रहे, जब वह सुनता है कि चुने हुए पात्र उसे आज्ञा देता है: *'तुमसे सारी कटुता, क्रोध, रोष, हंगामा और बदनामी दूर हो जाएँ, साथ ही सारी द्वेषपूर्णता भी'* (इफिसियों 4:31)—जिसने, *'तुमसे सब क्रोध दूर हो जाए'* कहते हुए, क्रोध की किसी भी भावना को इस आज्ञा से बाहर नहीं रखा, मानो वह आवश्यक या लाभदायक हो। इसलिए, जब कोई भिक्षु, यदि आवश्यक हो, तो किसी पाप करने वाले भाई का उपचार करने के लिए जल्दी करता है, तो उसे ऐसा इस तरह से करना चाहिए कि, एक बहुत हल्की बीमारी—शायद बुखार—से पीड़ित व्यक्ति को उपचार देने का प्रयास करते हुए, वह अपने क्रोध में, खुद को अंधापन की बदतर पीड़ा में न डाल दे। क्योंकि जो दूसरे के घाव को भरना चाहता है, उसे स्वयं स्वस्थ और सभी बीमारियों से मुक्त होना चाहिए, कहीं ऐसा न हो कि सुसमाचार के वचन उस पर बोले जाएँ: *'हे वैद्य, पहले अपना इलाज कर'* (लूका 4:23), – और इसी प्रकार: *'तुम अपने भाई की आँख में तिनका क्यों देखते हो, पर अपनी आँख में लकड़ी की लट्ठी नहीं समझते? या तुम अपने भाई से कैसे कह सकते हो, "मेरे पास आने दे, मैं तेरी आँख से तिनका निकाल दूँ" जबकि तेरी अपनी आँख में लकड़ी की लट्ठी है?'* (मत्ती 7:3–4)!

5. क्रोध की ज्वाला जगाने वाला कारण चाहे जो भी हो, यह हृदय की आँखों को अंधा कर देता है; और हमारी बौद्धिक दृष्टि की तीक्ष्णता पर एक आवरण डालकर, यह हमें धार्मिकता के सूर्य को देखने से रोकता है। इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि आँखों पर सोने, सीसे या किसी अन्य धातु की चादर रखी जाए; धातुओं के मूल्य से उनकी पैदा की हुई अंधापन पर कोई फर्क नहीं पड़ता। – फिर भी क्रोध हमारी बहुत सेवा कर सकता है जब, अपने क्रोध में, हम अपने हृदय की कामुक प्रवृत्तियों से आहत होते हैं और इस बात पर आक्रोशित होते हैं कि हमारे वक्ष के गहन कोनों में वह उत्पन्न होता है जिसे हमें करना या जिसके बारे में बात भी नहीं करनी चाहिए, हम दूसरों के सामने लज्जित होते हैं, स्वर्गदूतों और स्वयं ईश्वर की उपस्थिति के विचार से ही भय से कांपते हैं, जो सर्वव्यापी है, और ईश्वर की सर्व-द्रष्टा दृष्टि से, जिससे हमारे अंतर्मन का कोई भी रहस्य संभवतः छिपा नहीं रह सकता। या जब हम इसी क्रोध पर क्रोधित हो जाते हैं, यह सोचकर कि यह कैसे हमारे भीतर आया, हमें अपने भाई के विरुद्ध भड़काया, और हम क्रोध के साथ इसके हानिकारक प्रलोभनों को बाहर निकाल फेंकते हैं, और इसे हमारे सीने की गहराई में छिपकर हमें नुकसान पहुँचाने नहीं देते। इस प्रकार पैगंबर हमें क्रोध करना सिखाते हैं; उन्होंने इस भावना को इतनी दृढ़ता से अपने मन से निकाल दिया कि वे अपने खुले दुश्मनों से भी बदला नहीं लेते थे, यहाँ तक कि उन लोगों से भी जिन्हें ईश्वर ने उनके हाथों में सौंप दिया था। इस प्रकार, जब शिमई, राजा दाऊद पर पत्थर चलाते हुए, सभी के सामने उनके मुँह पर उन्हें गाली दे रहा था, और अबीशै, जेरूया का पुत्र, राजा का ऐसा अपमान करने के बदले उसका सिर लेने की इच्छा रखने पर, धन्य दाऊद ने, ऐसी बात से ईश्वरीय आक्रोश से प्रेरित होकर, अपनी अटूट नम्रता बनाए रखी, और विनम्रता तथा दृढ़ धैर्य का उदाहरण प्रस्तुत करते हुए कहा: *'सरोया के पुत्र, मेरा तुझसे क्या लेना-देना? उसे अकेला छोड़ दो, और उसे कोसने दो, क्योंकि यहोवा ने उसे दाऊद को कोसने के लिए कहा है; और कौन है जो यह कहे, 'तू ने यह क्यों किया?' मेरा अपना पुत्र, जो मेरे ही शरीर से उत्पन्न हुआ है, मेरी जान का खोजी है; तो फिर जेमीनी का पुत्र तो और*

भी अधिक! उसे मुझे कोसने दो, क्योंकि यहोवा ने उसे ऐसा करने के लिए कहा है। शायद यहोवा मेरी दीनता पर दृष्टि करें और आज ही उनके शाप के बदले में मेरी सौभाग्य की अवस्था को फिर से स्थापित करें" (2 शमूएल 16:10-12)।

६. इस प्रकार, हमें क्रोध करने की अनुमति है, लेकिन ऐसे तरीके से जो उद्धार की ओर ले जाए, अर्थात्, अपने आप से और हमारे भीतर उत्पन्न होने वाले बुरे विचारों से – उनसे *'क्रोधित होने के लिए'*, और *'पाप न करने के लिए'*, अर्थात्, उन्हें अपने विनाश के लिए व्यवहार में न लाने के लिए। निम्नलिखित वचन इसी अर्थ को और भी स्पष्ट रूप से व्यक्त करता है: *"हे तुम जो अपने बिस्तरों में रहते हो, अपने हृदयों में मन बदल लो"* (भजन संहिता 4:5), अर्थात्, जब प्रलोभक सुझावों के अचानक आने से आपके हृदय में कोई भी विचार उत्पन्न हों, तो एक बार जब आप शांत चिंतन के माध्यम से क्रोध के सभी कोलाहल और उथल-पुथल को शांत करने में सफल हो जाते हैं—और, मानो, एक शांतिपूर्ण बिस्तर पर लेट जाते हैं—तो आपको उन्हें उद्धारकारी पश्चाताप के माध्यम से सुधारना और प्रायश्चित करना चाहिए। और धन्य पौलुस ने, इस वचन की शिक्षा से प्रेरित होकर, *'क्रोध करो, पर पाप न करो'* कहने के बाद, यह जोड़कर कहा: *'क्रोध में रहकर सूर्य को न ढलने दो, और शैतान को कोई स्थान न दो'* (इफिसियों 4:26-27)। यदि यह हानिकारक है कि हम क्रोधित रहते हुए धार्मिकता के सूर्य को अस्त होने दें, और यदि, जब हम क्रोधित होते हैं, तो हम तुरंत अपने हृदयों में शैतान को पैर जमाने का अवसर दे देते हैं, तो फिर उसने पहले हमें क्रोधित होने की आज्ञा कैसे दी, यह कहते हुए, *'क्रोध करो, पर पाप न करो'*? क्या वह स्पष्ट रूप से निम्नलिखित बात नहीं कहता है: अपने ही जुनून और स्वयं अपने क्रोध पर क्रोध करो, नहीं तो अन्यथा, तुम्हारी लापरवाही के कारण, धार्मिकता का सूर्य—मसीह—तुम्हारे क्रोध से अंधेरे में डूबे मन में अस्त होना शुरू हो जाएगा, और उनके चले जाने पर तुम अपने हृदयों में शैतान को जगह दे दोगे।

७. रूपक अर्थ में, 'सूर्य' को मन के रूप में समझा जा सकता है, जिसे सही मायने में सूर्य कहा जाता है क्योंकि यह हमारे हृदय के सभी विचारों और आकांक्षाओं को प्रकाशित करता है; और क्रोध के विरुद्ध निषेध को इस प्रकाशमान को क्रोध की भावना से बुझाने के लिए न करने की आज्ञा के रूप में देखा जा सकता है; ताकि, जब यह अस्त हो जाए, तो उथल-पुथल भरी भ्रम की अंधकार—जिसका स्रोत शैतान है—हमारे पूरे हृदय पर हावी न हो जाए, और हम, क्रोध के अंधकार में लिपटे हुए, इस तरह एक अंधेरी रात में न रह जाएँ कि हमें यह न पता हो कि क्या करना है। इसी संदर्भ में प्रेरितों के शब्दों को समझना चाहिए, जैसा कि वे हमें बुजुर्गों की शिक्षाओं में विरासत में मिले हैं, जो हमें एक पल के लिए भी अपने दिलों में गुस्सा आने की अनुमति नहीं देते, और सुसमाचार में इसके लिए निर्धारित दंड से बचने के लिए हर संभव सावधानी बरतते हैं: *'जो अपने भाई पर क्रोध करता है, वह न्याय के अधीन होगा'* (मत्ती 5:22)। – इसके अलावा, यदि सूर्यास्त तक क्रोधित बने रहने की अनुमति होती, तो क्रोध की भावना, ऐसी अनुमति का लाभ उठाते हुए, हमेशा सूर्यास्त से पहले, वैध रूप से, अपनी प्रतिशोध की पूर्ति करने में जल्दबाजी करती।

८. तो फिर, हम उन लोगों के बारे में क्या कहें जिनकी निर्दयता की कोई सीमा नहीं है, यहाँ तक कि सूर्यास्त के समय भी नहीं, जो उन लोगों के प्रति कई दिनों तक रंजिश पालते हैं जिनसे उनका झगड़ा हुआ है? वे कभी-कभी शब्दों में कह सकते हैं कि वे क्रोधित नहीं हैं; फिर भी उनके कार्य अक्सर उनके गहरे द्वेष को स्पष्ट रूप से उजागर कर देते हैं, जब, उदाहरण के लिए, वे उनके साथ उचित शिष्टाचार से बात नहीं करते या अपनी सामान्य दयालुता से बात नहीं करते। वे कल्पना करते हैं कि वे इसमें पाप नहीं कर रहे हैं, क्योंकि वे अपनी चिड़चिड़ाहट के लिए प्रतिशोध नहीं चाहते। लेकिन वे केवल इसे दिखाने की हिम्मत नहीं करते, या दिखाने में असमर्थ होते हैं; फिर भी यह उनके दिलों में उबलता रहता है, और वे इसे चुपचाप सहते रहते हैं, जिससे वे क्रोध के विष को अपनी ही तबाही में बदल देते हैं; वे अपने आत्मा की शक्ति से क्षोभ की कड़वाहट को तुरंत बाहर नहीं निकालते, बल्कि इसे कई दिनों तक पचाते रहते हैं, और केवल धीरे-धीरे, समय के साथ, इसे कुछ हद तक काबू करने में कामयाब होते हैं।

९. ऐसा है मानो जो व्यक्ति क्रोध के वश में होकर, बस जो कर सकता है, वही करता है, वह अब अपनी प्रतिशोध और द्वेष से संतुष्ट नहीं होता! ठीक यही वे लोग करते हैं जो अपने क्रोध की प्रवृत्तियों को रोकते हैं, शांति की इच्छा से नहीं, बल्कि बदला लेने में असमर्थता के कारण, फिर भी वे इसे यथासंभव निकालते हैं। क्योंकि, जिन लोगों से वे क्रोधित हैं, उन पर अपनी सामान्य दया को रोकने के अलावा कुछ भी करने का कोई साधन न होने के कारण, वे इसी तरह उन पर अपना क्रोध निकालते हैं। जैसे कि क्रोध को उसके बाहरी प्रकटीकरण को रोककर शांत करना ही काफी हो, जबकि दिल के कोनों से इसे बाहर निकालने की कोई आवश्यकता न हो—अन्यथा, इसके अंधकार से घिरकर, हम सही निर्णय और ज्ञान की रोशनी खो देंगे, और क्रोध की आत्मा हमारे भीतर वास करती रहेगी, तब तक हम पवित्र आत्मा का मंदिर बने रहने बंद हो जाएँगे। क्योंकि हृदय में छिपा हुआ क्रोध, भले ही उपस्थित लोगों को ठेस न पहुँचाए, परन्तु वह पवित्र आत्मा की सबसे तेजस्वी किरण को उतने ही निश्चित रूप से बाहर निकाल देता है, जितना कि खुलेआम प्रदर्शित किया गया क्रोध।

10. और कोई यह कैसे सोच सकता है कि ईश्वर हमें एक क्षण के लिए भी क्रोध पालने की अनुमति देते हैं, जब वे हमें अपनी आध्यात्मिक प्रार्थनाओं का बलिदान अर्पित करने की भी अनुमति नहीं देते यदि हमें पता हो—यह नहीं कि हम किसी दूसरे से नाराज़ हैं, बल्कि यह कि किसी दूसरे को हमसे कोई शिकायत है—यह कहते हुए: *'यदि तुम अपनी भेंट वेदी पर चढ़ाने आते हो और वहाँ तुम्हें याद आता है कि तुम्हारे भाई को तुमसे कोई शिकायत है, तो अपनी भेंट वेदी के सामने छोड़ दो; पहले जाओ और अपने भाई से मेल मिलाप करो, और फिर आकर अपनी भेंट चढ़ाओ'* (मत्ती 5:23–24)? – तो फिर, हम यह कैसे सोच सकते हैं कि हमें एक भाई के प्रति द्वेष रखने की अनुमति है—मैं कहता हूँ, कई दिनों तक नहीं, बल्कि सूर्यास्त तक भी—यदि, जब वह हमसे नाराज़ है, तब भी हम ईश्वर से अपनी प्रार्थनाएँ अर्पित नहीं कर सकते—हमसे जिनसे प्रेरित आज्ञा देते हैं: *'बिना रुके प्रार्थना करो'* (1 थिस्स. 5:17), और: *'मैं चाहता हूँ कि पुरुष हर जगह प्रार्थना करें, क्रोध या विवाद के बिना पवित्र हाथ उठाकर'* (1 तीमु. 2:8)? – इसलिए, यदि हम अपने हृदय में ऐसा विष पालते हैं, तो हमारे पास कोई विकल्प नहीं बचता – या तो कभी प्रार्थना न करें, और इस प्रकार प्रेरितों और सुसमाचार की आज्ञा की अवज्ञा के दोषी बनें जो हमें निरंतर और हर स्थान पर प्रार्थना करने का आदेश देती है, – या – यदि, किसी तरह खुद को धोखा देकर, हम इस निषेध के विरोध में अपनी प्रार्थना कहने की हिम्मत करते हैं – तो यह जान लें कि ऐसे मामले में हम प्रभु को प्रार्थना नहीं कर रहे हैं, बल्कि उनके विरुद्ध विद्रोह की भावना में, अभिमानी अवज्ञा व्यक्त कर रहे हैं।

11. लेकिन हमें सुसमाचार और प्रेरितों की आज्ञाओं पर और अधिक क्यों ठहरना चाहिए, जबकि पुराना विधान भी—जो हमारी कमजोरियों के लिए कुछ छूट देता प्रतीत होता है—इसके विरुद्ध चेतावनी देता है, यह कहते हुए: *'अपने भाई से मन में घृणा न करना'* (लैव. 19:17), और फिर: *'दुष्टों का मार्ग मृत्यु की ओर ले जाता है'* (नीतिवचन 12:28), और आगे: *'तुम्हारा हाथ प्रतिशोध नहीं लेगा, और न ही तुम अपने लोगों के पुत्रों के प्रति द्वेष रखोगे'* (लैव. 19:18)? – आप देखें कि यहाँ भी, अपने भाइयों के प्रति द्वेष न केवल कर्म में बल्कि गुप्त विचारों में भी समाप्त हो जाता है, जब किसी को हृदय से घृणा को जड़ से उखाड़ फेंकने की आज्ञा दी जाती है, और न केवल किसी अपराध का बदला लेने से परहेज़ करने के लिए, बल्कि उसे पूरी तरह से भूल जाने के लिए भी कहा जाता है।

12. कभी-कभी, अहंकार या अधीरता के वश में होकर, जब हम अपने अव्यवस्थित और अनुशासनहीन स्वभाव को सुधारने के लिए एक विशेष आंतरिक बाध्यता महसूस करते हैं, तो हम अपने आप से शिकायत करते हैं कि हममें एक 'मरुभूमि' की कमी है—जिसका तात्पर्य यह है कि हमें आशा है कि वहाँ, किसी के भी विचलित किए बिना, हम तुरंत धैर्य का सद्गुण प्राप्त कर लेंगे, इस प्रकार स्पष्ट रूप से अपनी ही लापरवाही (अपने गुस्से के उछाल को रोकने में) का बहाना बनाते हुए, और उनके उत्पन्न होने का कारण अपनी ही अधीरता को नहीं मानकर, बल्कि अपने भाइयों पर दोष मढ़ते हैं। लेकिन अगर हम इस मामले में अपनी कमियों का दोष इस तरह दूसरों पर डालते रहेंगे, तो हम कभी भी धैर्य और पूर्णता का उचित स्तर प्राप्त नहीं कर पाएंगे। अपने हृदय को सुधारने और शांत करने का कार्य किसी और की इच्छा पर न छोड़ें, जिस पर हमारा कोई नियंत्रण नहीं है, बल्कि इसे अपनी ही इच्छा की सद्भावना के भीतर रखें। हमारा क्रोधित न होना किसी और की पूर्णता पर निर्भर नहीं होना चाहिए, बल्कि हमारे अपने सद्गुण पर निर्भर होना चाहिए, जो किसी और के धैर्य से नहीं, बल्कि हमारी अपनी उदारता से प्राप्त हुआ हो।

13. इसके अलावा, किसी को केवल तभी मरुस्थल की तलाश करनी चाहिए जब वह हर तरह के जुनून से परिपूर्ण और शुद्ध हो, या भाइयों के बीच रहते हुए सभी जुनूनों को पूरी तरह से शुद्ध करने के बाद; और उसे कायरतापूर्ण पलायन के लिए नहीं, बल्कि दिव्य चिंतन की ऊँचाइयों को प्राप्त करने की इच्छा से उसमें प्रवेश करना चाहिए, जो ऊँचाइयाँ परिपूर्ण भी मरुस्थल के अलावा प्राप्त नहीं कर सकते। क्योंकि जो भी वासनाएँ हम बिना ठीक हुए रेगिस्तान में साथ ले जाते हैं, वे नष्ट होने के बजाय हमारे भीतर छिपी हुई महसूस होंगी। और जैसे रेगिस्तान उन लोगों के लिए सबसे शुद्ध चिंतन सुरक्षित रखता है जिनके हृदय शुद्ध होते हैं, और सबसे सच्ची दृष्टि में आध्यात्मिक रहस्यों का ज्ञान प्रकट करता है, वैसे ही यह आमतौर पर उन लोगों के भावों को न केवल संरक्षित करता है बल्कि और भी तीव्र कर देता है जिन्होंने उन्हें शुद्ध नहीं किया है। ऐसे मामले में, जब तक कोई उससे नहीं मिलता या संपर्क में नहीं आता, तब तक कोई व्यक्ति खुद को धैर्यवान और विनम्र समझ सकता है; लेकिन जैसे ही कोई परिस्थिति उसे कार्रवाई के लिए उकसाती है, वह तुरंत अपने पुराने स्वभाव पर लौट आता है: तब जो जुनून छिपे हुए थे, वे उसमें से उभर आते हैं और, लंबे समय की निष्क्रियता से मोटे हुए बेकाबू घोड़ों की तरह, अपने अस्तबल से बड़ी उत्सुकता और क्रोध के साथ निकल पड़ते हैं, जो उनके सवार के विनाश का कारण बनता है। क्योंकि पहले से शुद्ध न किए गए जुनून हमारे भीतर और भी अधिक उग्र हो जाते हैं, जब लोगों के बीच उन्हें प्रकट करने और नियंत्रित करने के अवसर समाप्त हो जाते हैं। और हम उस धैर्य की परछाईं भी खो देते हैं, जो हमें लगता था कि हमारे भाइयों के बीच रहते हुए हमारे पास

था—और जिसे हमने, कम से कम उनके प्रति सम्मान और सभी के सामने कायर दिखने की शर्म के कारण, लापरवाही के बेपरवाह जंगल में प्रदर्शित किया था।

14. यह ठीक उसी तरह है जैसे सभी प्रकार के विषैले साँप या जानवर, जब तक वे रेगिस्तान और अपने बिलों तथा अड्डों में छिपे रहते हैं, तब तक कोई नुकसान नहीं पहुँचाते - और फिर भी उन्हें केवल इसलिए हानिरहित नहीं घोषित कर दिया जाता क्योंकि वे ऐसी परिस्थितियों में किसी को नुकसान नहीं पहुँचाते: क्योंकि यह उनकी सौम्य प्रकृति के कारण नहीं है, बल्कि इसलिए है क्योंकि मरुभूमि उन्हें ऐसा करने के लिए मजबूर करती है; फिर भी जैसे ही उन्हें नुकसान पहुँचाने का अवसर मिलता है, वे तुरंत अपने भीतर छिपी विष और क्रूरता को प्रकट कर देते हैं। – इसी प्रकार, पूर्णता की खोज करने वालों के लिए, लोगों से क्रोध न करने से ही काम नहीं चलता (जब उनसे कोई बातचीत या संघर्ष न हो। ऐसे मामलों में क्रोध जीवित रहता है, केवल प्रतीक्षा में, और पहली ही चीज़ पर झपटने के लिए तैयार रहता है जो सामने आती है)। मुझे याद है कि कैसे, रेगिस्तान में रहते हुए, मैं कभी-कभी अपनी लेखनी की नली से नाराज़ हो जाता था अगर मुझे उसकी मोटाई या पतलापन पसंद नहीं आता था; कभी-कभी एक छोटे चाकू से, अगर उससे काटते समय वह कुंद हो जाता और पर्याप्त तेज़ी से नहीं काटता था; कभी-कभी एक चकमक पत्थर से, जब मैं पढ़ने की जल्दी में होता और उससे आग की चिंगारी पर्याप्त तेज़ी से नहीं निकलती थी; और आक्रोश की लहर कभी-कभी इतनी तीव्र होती थी कि उस निर्जीव वस्तु के खिलाफ, या वास्तव में शैतान के खिलाफ मेरे मुँह से अनजाने में कोई गाली निकल जाती थी; जिसके बाद मेरी बेचैनी दूर हो जाती थी, और मेरी आत्मा को सुकून मिलता था। इस प्रकार, पूर्णता की खोज में, क्रोध को भड़काने वाले लोगों की अनुपस्थिति का बहुत कम लाभ होता है, क्योंकि, जब तक कि पहले से ही धैर्य प्राप्त न हो, क्रोध का जुनून अपनी शक्ति मूक वस्तुओं और तुच्छ मामलों पर भी प्रदर्शित कर सकता है; क्योंकि, हमारे हृदय में रहते हुए, यह हमें एक शांतिपूर्ण मानसिक स्थिति प्राप्त करने और अन्य जुनून से खुद को मुक्त करने, दोनों से रोकता है।

15. तो फिर, यदि हम उस परम दिव्य सद्गुण को प्राप्त करना चाहते हैं, जिसके बारे में कहा गया है: *'धन्य हैं हृदय से पवित्र, क्योंकि वे परमेश्वर को देखेंगे'* (मत्ती 5:8), तो हमें न केवल अपने कार्यों से इस जुनून को दूर करना चाहिए, बल्कि अपनी आत्मा की गहराइयों से इसे जड़ से उखाड़ना भी चाहिए? क्योंकि यह बहुत कम लाभदायक होगा कि हम वाणी में क्रोध की उग्रता को दबाएँ और उसे कर्म में प्रकट न होने दें, यदि ईश्वर—जिनसे हृदय के रहस्य छिपे नहीं रहते—उसे हृदय की गहराइयों में देख लें। सुसमाचार हमें वासनाओं के फलों के बजाय उनकी जड़ों को काट डालने की आज्ञा देता है; क्योंकि एक बार जड़ें उखाड़ दी गईं, तो फल निश्चित रूप से फिर नहीं फैलेंगे, – और इस प्रकार आत्मा निरंतर सभी धैर्य और पवित्रता में बनी रह सकेगी, जब क्रोध न केवल हमारे कार्यों और कर्मों की सतह से हटा दिया जाए, बल्कि हमारे विचारों की गहराइयों से भी उखाड़ फेंका जाए। और इसलिए हमें क्रोध और घृणा को समाप्त करना चाहिए, कहीं ऐसा न हो कि हम हत्या के पाप में पड़ जाएँ, जो इनके बिना नहीं किया जा सकता। *'क्योंकि जो बिना कारण अपने भाई से क्रोध करता है, वह न्याय के अधीन होगा'* (मत्ती 5:22); और – *'जो अपने भाई से बैर रखता है, वह मनुष्यहत्या है'* (1 यूहन्ना 3:15)। क्योंकि अपने हृदय में वह उस व्यक्ति के विनाश की कामना करता है जिससे वह क्रोधित है; तब, यद्यपि लोग उसे अपने हाथ से या तलवार से खून बहाने वाला नहीं मानते, फिर भी उसे प्रभु द्वारा क्रोध की भावना के कारण हत्यारा घोषित किया जाता है; क्योंकि प्रभु प्रत्येक व्यक्ति को न केवल उसके कर्म के लिए, बल्कि उसकी इच्छा की मंशा के लिए भी पुरस्कृत या दंडित करेंगे, जैसा कि वे स्वयं भविष्यवक्ता के माध्यम से कहते हैं: *'मैं उनके कामों और उनके विचारों को जानता हूँ, और मैं सभी राष्ट्रों को इकट्ठा करने आ रहा हूँ...'* (यशायाह 66:18)। और प्रेरित कहते हैं: *'वे एक-दूसरे का न्याय या औचित्य अपने ही मन में करते हैं, उस दिन जब परमेश्वर, जो मनुष्यों से छिपा है, न्याय करेगा'* (रोमियों 2:15-16)।

16. अत; मसीह का एक चेला जो विधिवत प्रयास कर रहा है, उसे अपने भीतर क्रोध के भाव को जड़ से उखाड़ फेंकना चाहिए। इस क्लेश के पूर्ण उपचार के लिए, निम्नलिखित उपाय आवश्यक है: सबसे पहले, यह मानना कि किसी भी बहाने, चाहे वह उचित हो या अनुचित, गुस्सा होना उचित नहीं है – यह जानते हुए कि जैसे ही हमारी आंतरिक प्रकाश, हमारे हृदय की प्रकाश, क्रोध के अंधकार से ढक जाती है, हम तुरंत विवेक की प्रकाश और समझदारी तथा उचित व्यवहार की दृढ़ता, साथ ही सत्य के मानक को भी खो देंगे; फिर इस दृढ़ विश्वास को थामे रखना कि यदि हमारे भीतर क्रोध की भावना जड़ जमा लेती है, तो परिणामस्वरूप हमारी आत्मा की पवित्रता अनिवार्य रूप से धूमिल हो जाएगी, और यह पवित्र आत्मा के मंदिर के रूप में कार्य नहीं कर सकती; अंत में, इस तथ्य पर चिंतन करना कि, जब तक हम क्रोध की अवस्था में रहते हैं, हम ईश्वर के समक्ष प्रार्थना करने या अपनी विनतीएँ प्रस्तुत करने में पूरी तरह से असमर्थ रहेंगे। सबसे बढ़कर, मानव जीवन की सीमाओं की अनिश्चितता को ध्यान में रखते हुए, हमेशा यह ध्यान में रखें कि हम किसी भी क्षण इस शरीर से विदा हो सकते हैं, और न तो ब्रह्मचर्य का पालन, न ही सभी

संपत्तियों का त्याग, न धन-दौलत के प्रतितिरस्कार, और न ही उपवास और प्रार्थना सभाओं का श्रम हमारी वहाँ थोड़ी भी मदद कर पाएगा, जब ब्रह्मांड का न्यायाधीश क्रोध और घृणा के एक ही कृत्य के लिए हमें शाश्वत यातना की धमकी देता है।

५ शोक की भावना के विरुद्ध संघर्ष

1. पाँचवें युद्ध में, हमें सर्वनाशकारी दुख की तीक्ष्ण पीड़ा से बचना होगा – जो, यदि किसी तरह हमारे हृदय पर कब्जा करने का अवसर पा ले, तो दिव्य चिंतन की दृष्टि को काट देता है, और, पूरे आत्मा को पवित्र शांति की ऊँचाइयों से नीचे फेंककर, उसे पूरी तरह से कमजोर और दबंग कर देता है: यह उसे अपनी सामान्य हार्दिक लगन के साथ प्रार्थना करने से रोकता है, न ही यह उसे पवित्र धर्मग्रंथों के पाठ—उस आध्यात्मिक हथियार और उपचार—में स्वयं को समर्पित करने देता है, और न ही यह उसे भाइयों के साथ शांति और सुकून से रहने की अनुमति देता है, – और आज्ञाकारिता के सभी अनिवार्य कर्तव्यों में उसे अधीर और बड़बड़ाने वाला बना देता है; सभी सही निर्णय से वंचित करके और उसके हृदय को बेचैन करके, वह उसे, मानो, विक्षिप्त और मदहोश कर देता है, और विनाशकारी निराशा से उसे कुचल देता है और अभिभूत कर देता है।

2. क्यों, यदि हम आध्यात्मिक युद्ध में विधिवत परिश्रम करना चाहते हैं, तो हमें इस क्लेश का उतनी ही सावधानी से व्यवहार करना चाहिए? क्योंकि *'जैसे वस्त्र में कीड़े और वृक्ष में कीड़े मनुष्य के हृदय को हानि पहुँचाते हैं'* (नीतिवचन 25:21) – जैसा कि दिव्य आत्मा ने इस हानिकारक और अत्यंत विनाशकारी भाव की शक्ति को स्पष्ट और निस्संदेह रूप से व्यक्त किया है। जैसे कीड़ों से खाया हुआ वस्त्र अब किसी काम का नहीं रहता और न ही सम्मानजनक उपयोग के लिए उपयुक्त रहता है – और जैसे कीड़ों से खोखला हुआ पेड़ अब किसी भी इमारत, चाहे वह कितनी भी मामूली क्यों न हो, के निर्माण या सजावट के लिए उपयुक्त नहीं रहता, बल्कि आग के लिए ही रह जाता है: इसी प्रकार आत्मा, जो अत्यंत भयानक दुख की पीड़ा से ग्रस्त हो जाती है, अब उस उच्च-पुजारी के वस्त्र के लिए उपयुक्त नहीं रह जाती , जिसे पवित्र आत्मा, स्वर्ग से उतरकर पहले हारून की दाढ़ी पर और फिर उसके किनारों पर धारण करता है, जैसा कि संत दाऊद की भविष्यवाणी में निम्नलिखित शब्दों में वर्णित है: *'सिर पर मूर, दाढ़ी पर उतरती हुई, हारून की दाढ़ी पर, उसके वस्त्रों के किनारे तक उतरती हुई'* (132:2), – और न ही उस आध्यात्मिक मंदिर के निर्माण और अलंकरण के लिए, जिसकी नींव सबसे बुद्धिमान वास्तुकार पॉल ने तब रखी थी, जब उन्होंने कहा: *"तुम परमेश्वर का मंदिर हो, और परमेश्वर का आत्मा तुम में वास करता है"* (1 कुरिन्थियों 3:16), और जिसके लिए कुछ विशेष प्रकार की लकड़ी का उपयोग किया जाता है, जैसा कि वधू गीतों के गीत में वर्णन करती है, कहती है: *"हमारे घर के लिए देवदार के पेड़ बिछा दिए जाएँ, और हमारे सायप्रस के तख्ते"* (गीतों का गीत 1:16)। और इस प्रकार परमेश्वर के मन्दिर के लिए इन्हीं प्रकार के वृक्षों को चुना जाता है—सुगंधित और सड़न-रोधी, जो न तो क्षय के अधीन होंगे और न ही कीड़ों के कुतरने के।

3. कभी-कभी यह क्लेश किसी पूर्व के जुनून, या क्रोध, या वासना, या लालच से उत्पन्न होता है, जब कोई इस पूर्वधारणा की आशा खो देता है कि उसके मामले या संपत्ति अपनी प्रकृति के अनुसार संतोष लाएंगे; हालाँकि, अन्य समयों में, बिना किसी स्पष्ट कारण के, जो हमें धूर्त शत्रु के प्रभाव में इस गर्त में धकेल सकता था, ऐसी दुख हमें अचानक घेर लेती है कि हम अपने प्रियतम और सबसे आवश्यक लोगों का भी अपनी सामान्य आत्मीयता से स्वागत नहीं कर पाते; और वे उपयुक्त बातचीत में जो कुछ भी कहते हैं, उसे हम अनुचित और अनावश्यक समझते हैं; और हम उन्हें कोई सुखद उत्तर नहीं देते, क्योंकि हमारे दिल का हर कोना कड़वे दुख से भर जाता है।

४. यह सबसे स्पष्ट रूप से साबित करता है कि हमारे भीतर दुख की पीड़ा हमेशा दूसरों की गलती से उत्पन्न नहीं होती है, बल्कि हमारी अपनी गलती से होती है; क्योंकि हम स्वयं अपने भीतर अपने सभी दुखों के कारणों को संजोए रखते हैं, अर्थात्, वासनाओं के बीजों को, जो जैसे ही प्रलोभन की वर्षा हमारी आत्मा को सींचती है, तुरंत ही अपनी कोंपलों और फलों के रूप में फूट पड़ते हैं। कोई भी कभी पाप करने के लिए विवश नहीं होता, भले ही दूसरों का बुरा उदाहरण उन्हें इसके लिए उकसाए, जब तक कि वे अपने हृदय में उस पाप के मूल तत्व को नहीं पालते। न ही कोई यह मान सकता है, उदाहरण के लिए, कि कोई व्यक्ति किसी सुंदर महिला को देखकर और उसकी सुंदरता से प्रभावित होकर अचानक कामुक इच्छा के जुनून में पड़ सकता है (जबकि पहले वह इससे अनजान था); बल्कि, यह मानना होगा कि यदि उस क्षण उसने उस पर कामुक इच्छा की, तो ऐसा इसलिए था क्योंकि उसकी दृष्टि ने उसके भीतर छिपी एक बीमारी को सतह पर ला दिया। यही कारण है कि हमें सबसे बढ़कर, अपनी आँखों को वासना से शुद्ध करने और अपनी भावनाओं और प्रवृत्तियों को सुधारने पर अपना पूरा ध्यान केंद्रित करना चाहिए।

५. एक और प्रकार का दुख भी है - सबसे नीच - जब यह एक पापी आत्मा में अपने जीवन को सुधारने और अपने जुनून से खुद को शुद्ध करने का इरादा नहीं, बल्कि सबसे विनाशकारी निराशा पैदा करता है। यही दुख था जिसने काईन को भाइघात के बाद पश्चाताप करने से रोका, और यहूदा को, उसके विश्वासघात के बाद, प्रायश्चित का कोई साधन खोजने नहीं दिया, बल्कि उसमें पैदा हुई निराशा के कारण, उसे फांसी लगाने पर मजबूर कर दिया।

6. हमें दुख को तब ही अपने लिए लाभदायक मानना चाहिए, जब हम उसे अपने पापों के पश्चाताप, या पूर्णता की तीव्र इच्छा, या भविष्य के आनंद के चिंतन से प्रेरित होकर स्वीकार करते हों। इस बारे में धन्य पौलुस भी कहते हैं: *'क्योंकि परमेश्वर की मनशोक से पश्चाताप होता है, और वह उद्धार तक पहुँचाता है और उसका कोई खेद नहीं रहता, परन्तु संसारिक मनशोक मृत्यु को जन्म देता है'* (2 कुरिन्थियों 7:10)।

7. परन्तु वह शोक जो उद्धार तक ले जाने वाला पश्चाताप उत्पन्न करता है, निस्संदेह विश्वासयोग्य, आज्ञाकारी, अनुग्रहपूर्ण, नम्र, सौम्य, सुखद और धैर्यवान होता है; क्योंकि, ईश्वर के प्रति प्रेम से उत्पन्न होकर, जबकि यह शरीर की आत्म-तपस्या और आत्मा के खेद के माध्यम से परिपूर्णता के लिए अथक प्रयास करता है, यह एक ही समय में सफलता की आशा से लगातार सांत्वना और जीवंत होता है, और इसलिए वह मैत्री और सौम्यता की सारी सुखदता को बनाए रखती है, अपने भीतर पवित्र आत्मा के सभी फलों को धारण किए हुए, जिन्हें वही प्रेरित सूचीबद्ध करता है: *'आत्मा का फल है प्रेम, आनंद, शांति, धीरज, सौम्यता, भलाई, विश्वासयोग्यता, नम्रता और आत्म-नियंत्रण'* (गलातियों 5:22)। लेकिन यह—इस संसार का दुख—अत्यधिक शिकायत करने वाला, अधीर, कठोर, घृणित हठ, निष्फल विलाप और विनाशकारी निराशा से भरा है; यह जिस पर भी हावी हो जाता है, उसे हर प्रयास और हितकर आत्म-परीक्षण से विचलित और भटका देता है, और न केवल प्रार्थना के कार्य को दबा देता है, बल्कि उपरोक्त सभी आध्यात्मिक फलों को भी नष्ट कर देता है, जो आमतौर पर उस *'परमेश्वर के अनुसार शोक'* से उत्पन्न होते हैं।

8. क्योंकि, उस शोक के अलावा जो या तो उद्धारकारी पश्चाताप, या पूर्णता के लिए उत्साह, या भविष्य के आशीर्वादों की इच्छा से प्राप्त होता है, शोक का हर दूसरा रूप—जो सांसारिक और मृत्यु लाने वाला है—को अस्वीकार कर दिया जाना चाहिए और पूरी तरह से बाहर निकाल दिया जाना चाहिए, ठीक वैसे ही जैसे व्यभिचार की आत्मा, धन के प्रति प्रेम, और क्रोध को किया जाना चाहिए।

९. हम इस सबसे हानिकारक वासना को अपने भीतर से तब दूर कर सकते हैं, जब हम अपनी आत्मा को निरंतर आध्यात्मिक शिक्षा से पोषित करके, उसे आशा और भविष्य के आनंद के चिंतन से पुनर्जीवित और मजबूत करें। इस प्रकार हम हर तरह के दुख पर विजय प्राप्त कर सकते हैं: वे जो , पूर्व क्रोध से उत्पन्न होते हैं; वे जो लाभ की हानि या हानि होने से उत्पन्न होते हैं; वे जो हमें किए गए अन्याय से उत्पन्न होते हैं; और वे जो अनुचित मानसिक कष्ट से उत्पन्न होते हैं, और वे जो हमें घातक निराशा में डुबो देते हैं: क्योंकि, शाश्वत भविष्य के आशीर्वादों के चिंतन से लगातार सांत्वना पाकर और ऐसे मानसिक भाव में दृढ़ रहकर, हम न तो दुर्भाग्य के समय में हतोत्साहित होंगे और न ही सुख के समय में उत्साहित होंगे, दोनों को तुच्छ और क्षणिक मानते हुए। (दुख की भावना को शांत करने के लिए, संत कैसियन के अंशों का 7वां खंड भी पढ़ें – दुर्भाग्य और दुखों के खिलाफ संघर्ष पर)।

६. निराशा की भावना के विरुद्ध संघर्ष

1. हमारा छठा संघर्ष उस जुनून के खिलाफ है जिसे यूनानी αχηδια कहते हैं, और जिसे हम निराशा, ऊब या हृदय की पीड़ा कह सकते हैं। यह शोक के समान है, इसका अनुभव रेगिस्तान में भटकने वाले संतों द्वारा सबसे तीव्र रूप से किया जाता है, और यह एकांत में रहने वालों के लिए एक शत्रु है; यह हर संत को परेशान करता है, विशेष रूप से छठे घंटे के आसपास, (जो हमारी गणना के अनुसार दोपहर के 12 बजे के बराबर है), किसी प्रकार के बुखार की तरह जो, निश्चित समय पर, अपनी पूरी तरह से विघटनकारी प्रभावों के साथ बीमार आत्मा पर हमला करता है। कुछ वरिष्ठ (एवाग्रियस, खंड I, पृ. 631) इसे 'दोपहर का दानव' कहते हैं, जिसका उल्लेख भजन संहिता 90 में है।

२. जब एक भिक्षु की दीन आत्मा पर निराशा हावी हो जाती है, तो इससे उसे उस स्थान से भय, अपनी कोठरी से अरुचि, और उसके साथ या उससे कुछ दूरी पर रहने वाले भाइयों के प्रति तिरस्कार उत्पन्न होता है, वह उन्हें लापरवाह और पूरी तरह से अध्यात्मिकहीन समझता है; साथ ही यह उसे पूरी तरह से सुस्त बना देती है और उसे अपने निवास में सामान्य रूप से किए जाने वाले किसी भी कार्य से रोकती है। यह उससे अपनी कोठरी में बैठने की कोई इच्छा छीन लेता है, उसे पढ़ाई करने से रोकता है, और उसे यह आह भरने और विलाप करने के लिए मजबूर करता है कि, इतने लंबे समय तक यहाँ रहने के बाद भी, उसने कोई प्रगति नहीं की है और न ही कोई आध्यात्मिक फल प्राप्त किया है; यह उसमें यह दर्दनाक एहसास जगाता है कि वह इस जगह पर व्यर्थ ही बना हुआ है और यह कि, जबकि वह दूसरों

का मार्गदर्शन कर सकता था और कई लोगों के काम आ सकता था, उसने यहाँ किसी का पालन-पोषण नहीं किया है, न ही अपनी मार्गदर्शन और शिक्षा के माध्यम से किसी को आध्यात्मिक रूप से जन्म दिया है। इसके बाद, यह उसे दूर के मठों की प्रशंसा कराती है, उन स्थानों को आध्यात्मिक प्रगति के लिए अधिक अनुकूल और मोक्ष में योगदान देने की अधिक संभावना वाला बताती है, और वहाँ भाइयों के साथ संगति को आनंददायक और आध्यात्मिक शिक्षा से भरपूर चित्रित करती है; इसके विपरीत, यह उसकी वर्तमान परिस्थितियों को असहनीय के रूप में चित्रित करता है, और उसे याद दिलाता है कि यहाँ रहने वाले भाई किसी भी प्रकार की आध्यात्मिक शिक्षा नहीं देते हैं, और शरीर के पालन-पोषण के लिए आवश्यक सब कुछ केवल अत्यधिक श्रम से ही प्राप्त होता है। अंत में, यह तपस्वी में यह दृढ़ विश्वास जगाता है कि इस स्थान पर रहते हुए, वह तब तक मोक्ष प्राप्त नहीं कर सकता जब तक कि वह अपनी कुटिया को न छोड़ दे—जिसमें, यदि वह और अधिक देर तक रुका, तो वह मर जाएगा—और जल्द से जल्द यहाँ से किसी अन्य स्थान पर न चला जाए। इसके बाद, पाँचवें और छठे घंटे के बीच, यह उसके शरीर को इतनी थकान में डाल देता है और इतनी भूख जगाता है कि उसे ऐसा लगता है मानो वह एक लंबी यात्रा और सबसे कठिन श्रम से थका-हार गया हो, या मानो उसने बिना कुछ खाए दो या तीन दिन का उपवास किया हो। और इस प्रकार वह बेचैनी से इधर-उधर देखता है, आहें भरता है कि उसका कोई भाई उसके पास नहीं आ रहा है, बार-बार अपनी कोठरी से बाहर जाता है और वापस आ जाता है, और सूरज को घूरता है, मानो उसे डूबने की कोई जल्दी न हो। मन की ऐसी बेतुकी उलझन में, मानो अंधकार में लिपटा हो, वह किसी भी आध्यात्मिक प्रयास के अक्षम हो जाता है, और यह सोचने लगता है कि ऐसी पीड़ा का कोई अन्य उपाय नहीं है सिवाय किसी भाई से मिलने या नींद से अपना मन बहलाने के। तभी यह विनाशकारी आत्मा उस व्यक्ति को, जिसे यह सता रही है, यह सुझाने लगती है कि उसे भाइयों को आवश्यक अभिवादन देना चाहिए, या बीमारों से मिलना चाहिए, चाहे वे पास में हों या दूर; यह उसमें एक कर्तव्य के रूप में यह विचार भी डालती है कि उसे यहाँ ऐसे-ऐसे पुरुष या महिला रिश्तेदारों को ढूंढना चाहिए, और उन्हें अधिक बार मिलने जाना – कि किसी विशेष धर्मपरायण महिला, जिसने स्वयं को ईश्वर को समर्पित कर दिया है लेकिन अपने रिश्तेदारों से कोई सहारा नहीं पाती, से अधिक बार मिलना और उसे उसकी सभी आवश्यक चीजें प्रदान करना एक महान धार्मिक कार्य होगा, क्योंकि उसके अपने रिश्तेदार उसकी उपेक्षा करते हैं, – और यह कि मनुष्य को अपनी कोठरी में निष्फल और बिना किसी प्रगति के निष्क्रिय बैठने की तुलना में ऐसे धार्मिक कार्यों में अधिक परिश्रम करना चाहिए।

3. इस प्रकार शत्रु की ऐसी कपटपूर्ण युक्तियों से घिरी हुई दुर्बल आत्मा इतनी व्यथित हो जाती है कि निराशा से आत्मा में थका हुआ संन्यासी या तो स्वयं को बिस्तर पर फेंक देने का प्रयास करता है, या अपनी कुटिया के एकांत को छोड़कर, किसी साथी संन्यासी से मिलने जाकर इस विपत्ति से मुक्ति पाने का प्रयत्न करता है। लेकिन यही उपाय, जिसे वह अब इलाज के रूप में अपनाता है, जल्द ही दुश्मन द्वारा उसे और भी अधिक कष्ट पहुँचाने का साधन बना दिया जाएगा। क्योंकि शत्रु उन पर अधिक बार और अधिक प्रचंडता से आक्रमण करेगा, जिन्हें उसने अनुभव से जान लिया है कि संघर्ष शुरू होते ही वे तुरंत उससे मुँह मोड़ लेते हैं, और जो अपनी मुक्ति विजय में न होकर, प्रतिरोध में न होकर, बल्कि पलायन में खोजते हैं; जब तक कि वह धीरे-धीरे अपनी कोठरी से दूर न हो जाए, और अपने बुलावे के मुख्य उद्देश्य को भूलने न लगे, जो दिव्य, सर्वोपरि पवित्रता की खोज करना है—एक ऐसी पवित्रता जो कोठरी में निरंतर, मौन रूप से रहने और अविराम दिव्य शिक्षा के माध्यम से ही प्राप्त की जा सकती है। इस प्रकार, मसीह का सिपाही अंततःअपनी सेना से भाग जाता है, सांसारिक मामलों में उलझ जाता है, और उस सेनापति को अप्रसन्न करने लगता है (2 तीमु. 2:4), जिनकी सेवा करने का उसने वचन दिया था।

4. धन्य दाऊद ने इस क्लेश के सभी हानिकारक परिणामों को निम्नलिखित वचन में बहुत ही सुंदर ढंग से व्यक्त किया है: *'मेरी आत्मा निराशा से सो गई है'* (भजन संहिता 118:28)। और वास्तव में, ऐसे समय में शरीर नहीं बल्कि आत्मा ही सुस्त पड़ जाती है। क्योंकि इस विनाशकारी जुनून के तीर से घायल आत्मा, सद्गुण के लिए हर प्रयास और अपनी आध्यात्मिक संवेदनशीलताओं पर पहरेदारी से सचमुच सो जाती है।

५. इसलिए, मसीह का सच्चा सिपाही, जो पूर्णता के संघर्ष में विधिवित प्रयास करना चाहता है, उसे अपनी आत्मा के कोनों से इस पीड़ा को भगाने का भी प्रयास करना चाहिए, और निराशा की इस अत्यंत अनुचित भावना के विरुद्ध निडर होकर खुद को सशस्त्र करना चाहिए – ताकि वह न तो नींद के तीर से घायल होकर गिर पड़े, और न ही भक्ति के दिखावटी बहाने पर भी अपने तपस्या-स्थान के एकांत से भाग जाए।

6. क्योंकि वह किसी भी मोर्चे से जिस पर भी उसे मात करना शुरू होता है, वह या तो उसे बिना किसी प्रगति के कोठरी में रहने के लिए छोड़ देगा, एक ऐसे व्यक्ति के रूप में जो आलसी और लापरवाह है, या, उसे वहाँ से भगा देने के बाद, उसे हर प्रयास में सुस्त और आलसी बना देगा, जिससे वह लगातार भाइयों की कोठरियों और मठों में घूमता रहेगा, और उसके अलावा और कुछ नहीं सोचता कि अगला भोजन कहाँ और किस बहाने से मिल सकता है। क्योंकि एक

आलसी व्यक्ति का मन भोजन और पेट के अलावा और कुछ नहीं सोचता, जब तक कि किहीं किसी पुरुष या महिला में कोई ऐसा ही समान विचारधारा वाला व्यक्ति न मिल जाए, जो उसी उदासीनता में जकड़ा हो, तब वह उनके मामलों और जरूरतों में उलझ जाता है। धीरे-धीरे ऐसी गतिविधियों में उलझ जाने के बाद, जो उसकी आत्मा के लिए इतनी विनाशकारी हैं—मानो वह किसी साँप की कुंडली में जकड़ा हुआ हो—वह फिर कभी खुद को उनसे मुक्त नहीं कर पाएगा, ताकि वह अपने पूर्व के ध्येय के उपेक्षित कर्तव्यों पर लौट सके।

7. इस प्रकार, निराशा की भावना हम में जो मुख्य बात पैदा करती है, वह यह है कि यह हमें आलसी बना देती है, हमारे कर्तव्यों से हटा देती है और हमें सुस्ती सिखाती है। इसलिए, इसका मुकाबला करने का मुख्य तरीका है: हार न मानें; अपने काम में लगे रहें। इस संबंध में, हम निराशा के उपचार के रूप में वही ले सकते हैं जो संत पौलुस ने थिस्सलुनीकियों को श्रम के बारे में लिखा था: *'मैं आपको आग्रह करता हूँ, भाइयों... कि आप शांत रहने, अपने काम में लगे रहने और अपने हाथों से काम करने का लक्ष्य रखें'* (1 थिस्स. 4:10–11)। – वे कहते हैं: *'मैं आपको आग्रह करता हूँ कि आप परिश्रमी बनें* और *चुप रहें'* – अर्थात्, अपने-अपने कोठरी में चुपचाप रहें, ताकि आप इधर-उधर घूमने वाले व्यक्ति के लिए अपरिहार्य विभिन्न अफवाहों के बीच अपनी आंतरिक शांति न खो दें, और ताकि आप फिर दूसरों के लिए भी वही अशांति पैदा करना शुरू न कर दें; *'अपने-अपने मामलों पर ध्यान* दो' – अर्थात्, जिज्ञासा के वश में होकर सांसारिक मामलों के बारे में जानने की कोशिश न करो या विभिन्न भाइयों के आचरण में दखल न डालो – ताकि, अपनी आत्म-सुधार की परवाह करने और सद्गुणों का उत्साहपूर्वक अनुसरण करने के बजाय, तुम अपने भाइयों की निंदा करने और उन पर बदनामी करने में अपना समय बर्बाद करने के आदी न हो जाओ; *'और अपने हाथों से काम करो'* – अर्थात्, अपनी कोठरी में बैठे हुए, शारीरिक श्रम में संलग्न रहो। इस प्रकार, उन्होंने उसी बात की संभावना को ही समाप्त कर दिया, जिसके बारे में उन्होंने पहले चेतावनी दी थी। जो कोई भी अपने काम पर बैठना पसंद करता है, उसके पास इधर-उधर भटकने, दूसरों के मामलों में झाँकने, उनमें दखल देने और उनके बारे में गपशप करने का समय नहीं होता। उसी थिस्सलुनीकियों को लिखी अपनी दूसरी पत्री में, वह इसमें यह जोड़ते हैं: *'हम तुम्हें प्रभु यीशु मसीह के नाम में आज्ञा देते हैं, हे भाइयों, कि तुम किसी ऐसे भाई से अलग रहो जो अव्यवस्था में चलता है, और उस रीति के अनुसार नहीं, जो तुमने हमसे ग्रहण की है'* (2 थिस्स. 3:6)। यहाँ वह अब विनती नहीं कर रहे हैं, बल्कि आज्ञा दे रहे हैं; और केवल शब्दों से नहीं, बल्कि हमारे प्रभु यीशु मसीह के नाम पर, यह स्पष्ट करते हुए कि यह एक तात्कालिक आज्ञा है। उनके शेष प्रवचन से यह स्पष्ट है कि यह काम के संबंध में एक आज्ञा है, और जो लोग इससे बचते हैं उन्हें मसीही समुदाय के भीतर बर्दाश्त नहीं किया जाना चाहिए। – इस प्रकार, वह हमें आज्ञा देता है कि हम उन लोगों से अलग हो जाएँ जो काम करने के इच्छुक नहीं हैं और उन्हें काट दें, जैसे कि विनाशकारी आलस्य से भ्रष्ट हो चुके अंगों को, ताकि निष्क्रियता की बीमारी, एक घातक संक्रामक रोग की तरह, शरीर के स्वस्थ अंगों में न फैल जाए। यह अपने आप में परिश्रम के लिए एक शक्तिशाली प्रोत्साहन था, लेकिन वह स्वयं को उनके अनुसरण के लिए एक उदाहरण बनाकर इसे और भी सुदृढ़ करते हैं (वही, श्लोक 7)। वे कहते हैं, *'हम, आपके बीच रहते हुए, किसी का मुफ्त में अनाज नहीं खाया'* (पद 8), जबकि *'प्रभु ने आज्ञा दी है कि जो सुसमाचार का प्रचार करते हैं, वे सुसमाचार के द्वारा ही जीवित रहें'* (1 कुरिन्थियों 9:14)। तो, यदि सुसमाचार का प्रचार करने वाले और इतना ऊँचा आध्यात्मिक कार्य करने वाले ने भी मुफ्त में भोजन स्वीकार नहीं किया, तो हम अपनी सुस्ती के बचाव में क्या कह सकते हैं—हम जिनके सुपुर्द न तो वचन का प्रचार करने का काम है, और न ही हमें अपनी आत्मा की देखभाल के अलावा किसी अन्य चिंता का आदेश दिया गया है? हम किस आधार पर, खाली हाथों से, मुफ्त में रोटी खाने की हिम्मत करते हैं, जबकि उस चुने हुए पात्र ने, जो सुसमाचार प्रचार की चिंताओं से दबे हुए थे, अपने लिए इसे तब तक खाने की अनुमति नहीं दी जब तक कि यह उसकी अपनी मेहनत का फल न हो? – हालाँकि, कहीं ऐसा न लगे कि उसका अपना उदाहरण असाधारण था और सभी के अनुसरण के लिए एक आदर्श के रूप में प्रस्तुत नहीं किया गया था, प्रेरित यह स्पष्ट करते हैं कि इस तरह से काम करने वाला अकेला वही नहीं था, बल्कि उसके साथ जो भी थे—अर्थात् सिलास और तीमुथियुस, जो उसके साथ यह लिख रहे हैं—वे भी शारीरिक श्रम में लगे रहते थे। – कहीं ऐसा न लगे कि उनका उदाहरण असाधारण है और इसे सभी के अनुसरण करने के लिए एक आदर्श के रूप में प्रस्तुत नहीं किया जा रहा है, प्रेरित यह स्पष्ट करते हैं कि ऐसा करने में वे अकेले नहीं थे, बल्कि *उनके साथ जो भी थे—अर्थात् सिलास और तीमुथियुस, जो उनके साथ यह लिख रहे हैं—वे भी शारीरिक* श्रम में लगे हुए थे / (2 थिस्स. 3:9)—ताकि, यदि आप अपनी कानों को बार-बार दी गई मौखिक शिक्षा को भूल भी जाएँ, तो भी आप अपनी आँखों के सामने प्रस्तुत हमारे उदाहरणों को कम से कम अपनी स्मृति में बनाए रखें। अंत में, इतनी सारी अनुनय-विनतियों के बाद, प्रेरित अब उनसे एक शिक्षक या चिकित्सक की सलाह के साथ नहीं, बल्कि प्रेरित पद के अधिकार के साथ कहते हैं: *'यदि कोई काम करने को तैयार नहीं है, तो उसे खाने न दिया*

जाए' (– 10)! यह उन लोगों पर एक निर्णय है, जिनके इस आज्ञा का तिरस्कार करने की आशंका है या जिनके बारे में पूर्वानुमान है, जो प्रेरितीय न्याय की पीठ से सुनाया गया है।

8. और एफिसियों के नाम अपनी पत्रिका में, प्रेरित ने इसी परिश्रम के संबंध में निर्देश दिए, कहते हुए: *'चोर अब चोरी न करे, बल्कि परिश्रम करे, अपने हाथों से भलाई करता रहे, ताकि उसके पास ज़रूरतमंदों के साथ बांटने के लिए कुछ हो'* (एफि. 4:28)। – प्रेरितों के कामों में हमें यह भी मिलता है कि उन्होंने न केवल यह सिखाया, बल्कि स्वयं भी ऐसा ही किया। क्योंकि जब वह कोरिन्थुस आया, तो वह कहीं और नहीं ठहरना चाहता था, बल्कि अक्विला और प्रिस्किल्लिा के साथ रहा, क्योंकि वे उसी धंधे के माहिर थे जिसमें वह स्वयं आमतौर पर लगा रहता था – इस स्पष्ट इरादे के साथ कि वह उनके साथ काम करे (प्रेरितों के काम 18:1–3)। – बाद में, यरूशलेम जाते समय, वह मिलितुस में रुके; वहाँ से उन्होंने एफ़िसुस की कलीसिया के बुज़ुर्गों को बुलाया और, अपनी अनुपस्थिति में परमेश्वर की कलीसिया का शासन कैसे चलाना है, इस पर उन्हें निर्देश देते हुए, उन्होंने कहा कि उन्होंने न तो धन न उनसे धन-संपत्ति; कि उसके अपने हाथों ने उसकी और उसके साथियों की ज़रूरतों को पूरा किया था – और उसने यह इस लिए किया ताकि यह दिखा सके कि इस तरह परिश्रम करके, किसी को भी ज़रूरतमंदों की मदद करनी चाहिए, स्वयं प्रभु की आज्ञा को ध्यान में रखते हुए – कि *'प्राप्त करने से देना अधिक धन्य है'* (प्रेरितों के काम 20: 33–35)। इस प्रकार, परिश्रम का उदाहरण स्थापित करके, वह एक साथ यह सिखाते हैं कि अन्य साधनों से प्राप्त होने वाली चीज़ों की तुलना में, कड़ी मेहनत से अर्जित धन से ज़रूरतमंदों की मदद करना बेहतर है। यदि कोई भिक्षु इस प्रकार आचरण करता है, तो वह दोहरे सद्गुण से सुशोभित होता है: सभी सांसारिक चीजों का परित्याग करके, वह मसीह की पूर्ण गरीबी को प्राप्त करता है; और अपनी मेहनत और स्वभाव के द्वारा, वह धनी लोगों की उदारता का प्रदर्शन करता है, अपने धार्मिक कार्यों के माध्यम से परमेश्वर का सम्मान करता है और उन्हें अपने धार्मिकता के फलों से एक बलिदान अर्पित करता है।

९. मिस्र के पिता किसी भी तरह से भिक्षुओं को आलसी रहने की अनुमति नहीं देते, विशेष रूप से युवाओं को, और वे उनके श्रम में लगन से हृदय की स्थिति और धैर्य तथा विनम्रता में प्रगति के स्तर को मापते हैं। वे न केवल अपने भरण-पोषण के लिए कुछ भी स्वीकार नहीं करते, बल्कि अपनी मेहनत के फल से वे आने वाले भाइयों और यात्रियों को खिलाते हैं, और लिबिया के उन क्षेत्रों में, जो बाँझपन और अकाल से पीड़ित हैं, हर तरह का भोजन बड़ी मात्रा में भेजते हैं, और उन शहरों में भी हर तरह का भोजन बड़ी मात्रा में पहुँचाते हैं जहाँ लोग गंदे कालकोठरियों में तड़प रहे हैं, यह मानते हुए कि अपने हाथों के फल से की गई ऐसी भेंटों द्वारा वे प्रभु को भाता हुआ एक बलिदान अर्पित कर रहे हैं। – इस विषय पर, मिस्र के प्राचीन संतों ने यह कहावत भी गढ़ी है: एक काम करने वाले भिक्षु को एक ही राक्षस द्वारा प्रलोभित किया जाता है, जबकि एक आलसी भिक्षु पर अनगिनत राक्षसों का झुंड टूट पड़ता है।

10. जब मैं रेगिस्तान में रहने लगा, तो मैंने बाबा मूसा (लिबिया के; देखें उनका पहला और दूसरा प्रवचन) से कहा कि मैं निराशा की पीड़ा से पूरी तरह घिर गया था और इससे मुक्त होने का मुझे कोई और रास्ता नहीं सूझा सिवाय इसके कि मैं बाबा पॉल के पास जाऊँ: 'नहीं,' उन्होंने मुझसे कहा, 'तुमने खुद को इससे मुक्त नहीं किया, बल्कि इसके प्रति अपनी भक्ति और आज्ञाकारिता दिखाई। क्योंकि अब से यह तुम पर और भी ज़ोरदार तरीके से हमला करेगा, जैसे एक कायर और भगोड़े पर करता है, यह देखकर कि कैसे, पहली ही भिड़ंत से, तुमने खुद को हराने दिया और तुरंत युद्ध के मैदान से भाग गए—जब तक कि तुम अन्य अवसरों पर इस दुश्मन से लड़ने का संकल्प नहीं लेते, अपनी कोठरी छोड़कर या नींद में डूबकर इसके ज़ोरदार हमलों को पीछे नहीं हटाकर, बल्कि धैर्य और प्रतिरोध के द्वारा उस पर विजय प्राप्त करके। इस प्रकार अनुभव ने दिखाया है कि निराशा के आक्रमण से भागना नहीं चाहिए, उससे संघर्ष करने से कतराना नहीं चाहिए, बल्कि साहसपूर्वक उसका विरोध करके उस पर विजय प्राप्त करनी चाहिए।

७. घमंड की भावना के विरुद्ध संघर्ष

1. हमें जिस सातवें युद्ध का सामना करना है, वह घमंड की भावना के विरुद्ध है – एक ऐसी भावना जो बहुआयामी, परिवर्तनशील और सूक्ष्म है, कि सबसे तेज नजर वाले भी न केवल इससे बमुश्किल बच सकते हैं, बल्कि इसे पहचान और समझ भी सकते हैं। अन्य जुनून सरल और एकरस होते हैं, लेकिन यह बहुआयामी और विविध है; यह योद्धा पर हर तरफ से और हर दिशा में हमला करता है, जब वह अभी भी लड़ रहा होता है और जब वह पहले ही विजयी हो चुका होता है। क्योंकि यह मसीह के योद्धा को उसके वस्त्रों, उसके आचरण, उसके चलने-फिरने, उसकी आवाज़, उसकी मेहनत, उसकी जाग-जाग कर की गई प्रार्थना, उसके उपवासों, उसकी प्रार्थना, उसके एकांत, उसके अध्ययन, उसके ज्ञान, उसकी मौनता, उसकी आज्ञाकारिता, उसकी नम्रता और उसके सौम्य स्वभाव के द्वारा घायल करना चाहता

है, – और, एक अत्यंत खतरनाक पानी के नीचे की चट्टान की तरह , जो उठती लहरों द्वारा छिपी होती है, जब वे अनजान होते हैं, तो अनुकूल हवा में यात्रा करने वालों के लिए अचानक एक विनाशकारी जहाज-दुर्घटना का कारण बनती है।

2. इसलिए, जो कोई भी *'अपने दाहिने और बाएँ हाथों में धर्म के हथियारों के साथ'* शाही मार्ग पर चलना चाहता है, उसे प्रेरितों की शिक्षा के अनुसार, *'सम्मान और अपमान, बदनामी और प्रशंसा'* (2 कुरिन्थियों 6: 7–8), और परम सावधानी के साथ प्रलोभन की उठती-गिरती लहरों के बीच, तर्क और प्रभु की आत्मा के श्वास द्वारा निर्देशित होकर, सद्गुण के मार्ग पर अपनी यात्रा निर्देशित करें, यह जानते हुए कि जैसे ही हम दाईं या बाईं ओर थोड़ा भी भटकेंगे, हम तुरंत घातक पानी के नीचे की चट्टानों से टकरा जाएँगे। इसीलिए हम बुद्धिमान सुलैमान से यह उपदेश सुनते हैं: *'दाहिने वा बाएं मुंह न फेरना'* (नीतिवचन 4:27), – अर्थात्, अपने गुणों के कारण स्वयं की प्रशंसा न करें, न ही अपनी आध्यात्मिक उपलब्धियों के कारण स्वयं को महान न समझें; और न ही, जब आप वासनाओं के टेढ़े रास्ते पर भटक जाएँ, तो, जैसा कि प्रेरित कहते हैं, अपनी ही लज्जा में उनसे महिमा न खोजें (फिलि. 3:19)। – जो लोग शाही और शानदार कपड़ों की सुंदर दिखावट के माध्यम से घमंड से ग्रस्त नहीं हो सके, उनमें शैतान बेढंगे, गंदे और भिखारी जैसे कपड़ों के माध्यम से इसे बोने का प्रयास करता है; जिन्हें वह सम्मान के माध्यम से इस जुनून में नहीं डुबो सका, उन्हें वह अपमान के माध्यम से इसके लिए उकसाता है; जिन्हें वह अपनी विद्वता और वाक्पटुता पर घमंड करने के लिए मजबूर नहीं कर सका, उनमें वह मौन में ही घमंड को भड़काता है। यदि कोई खुलेआम उपवास करता है, तो वह व्यर्थ की महिमा से परेशान होता है; लेकिन यदि कोई, ऐसी महिमा की अवहेलना करते हुए, अपने उपवास को छिपाता है, तो वह आत्म-उन्नति के आक्रमण से पीड़ित होता है। घमंड की इस बीमारी से कलंकित होने से बचने के लिए, कुछ लोग अपने भाइयों की आँखों के सामने लंबी प्रार्थना करने से बचते हैं; फिर भी, जब वे गुप्त रूप से उनका अभ्यास करना शुरू करते हैं, और ऐसे कर्मों का कोई साक्षी नहीं होता, तो वे खुद से डींगें हाँकने से खुद को रोक नहीं पाते। हमारे बुजुर्ग इस कष्ट की प्रकृति को प्याज और लहसुन की तुलना से खूबसूरती से समझाते हैं, जिनकी एक परत हटाने पर, दूसरी वैसी ही परत मिलती है; और परतों को कितनी भी बार छीलने पर, वे हमेशा ढकी हुई ही मिलती हैं।

3. यह उन लोगों का पीछा करना भी बंद नहीं करता जो महिमा से भागकर, मनुष्यों के सभी संपर्क से दूर, रेगिस्तान में शरण लेते हैं; और कोई जितना अधिक दुनिया से दूर भागता है, यह उस पर उतनी ही ज़ोरदार चोट करता है। जहाँ तक मठों में रहने वालों का सवाल है, यह एक को इस तथ्य से गर्व की ओर ले जाने की कोशिश करता है कि वह काम और श्रम में किसी से भी अधिक धैर्यवान है; दूसरे को इस तथ्य से कि वह आज्ञा मानने के लिए किसी से भी अधिक उत्सुक है; और एक और को इस तथ्य से कि वह विनम्रता में सभी से श्रेष्ठ है। किसी को उसके ज्ञान की व्यापकता के कारण, किसी को पढ़ने में बिताए गए लंबे समय के कारण, और किसी को उसकी लंबी जागरण के कारण प्रलोभन में डाला जाता है। और प्रत्येक के लिए, यह क्लेश उनके गुणों के माध्यम से ही उन्हें आहत करने का प्रयास करता है, और जीवन के फल प्राप्त करने वाली चीज़ों में ही उनके विनाश के लिए ठोकरें बिछाता है। इसी प्रकार, जो लोग भक्ति और पूर्णता के मार्ग पर चलना चाहते हैं, उनके लिए बदनाम करने वाले दुश्मन भ्रम के जाल छिपाने से नहीं चूकते, यहाँ तक कि उसी मार्ग पर भी जिस पर वे स्वयं चलते हैं, जैसा कि धन्य दाऊद ने कहा: *'इस मार्ग पर, जिस पर मैं चला हूँ, उन्होंने मेरे लिए एक जाल छिपाया है'* (भजन संहिता 141:3)—ताकि, उस सद्गुण के मार्ग पर ही जिस पर हम उच्च आह्वान के सम्मान के लिए प्रयासरत कदम रखते हैं, हम अपनी ही सफलताओं के मद में चूर होकर ठोकर खाएँ; और, व्यर्थता के जाल में फँसकर, अपने आत्मा के पैरों के बँधे होने के साथ गिर पड़ें। इस प्रकार ऐसा होता है कि, जब तक हम शत्रु के आक्रमण से अजेय रहते हैं, तब तक हम स्वयं उसकी पराजय की ऊँचाई से ही पराजित हो जाते हैं।

४. अन्य सभी वासनाएँ, जब पराजित हो जाती हैं, तो फीकी पड़ जाती हैं, और जैसे-जैसे वे हराई जाती हैं, वे दिन-ब-दिन कमजोर होती जाती हैं; इसी प्रकार, स्थान या समय के प्रभाव में, वे थक जाती हैं और शांत हो जाती हैं; या हर तरह से, उनसे विपरीत गुणों के साथ उनके संघर्ष के कारण, उनसे सावधान रहना और उनसे बचना आसान हो जाता है। लेकिन यह, जब परास्त होता है, तो और भी अधिक उग्रता से लड़ने के लिए उठ खड़ा होता है; और जब ऐसा लगता है कि इसने अपनी अंतिम सांस ले ली है, तो अपनी ही मृत्यु के माध्यम से यह और भी अधिक जीवंत, स्वस्थ और शक्तिशाली हो जाता है। अन्य जुनून केवल उन्हीं पर अत्याचार करते हैं जिन्हें वे युद्ध में हरा चुके होते हैं; लेकिन यह अपने विजिताओं पर और भी अधिक प्रचंडता से हावी होता है, और जितना बुरी तरह से इसे कुचला गया होता है, उतनी ही ज़्यादा यह अपने ऊपर ही विजय पाने के उत्कर्ष के विचार से लड़ता है। विशेष रूप से यहीं पर शत्रु की सूक्ष्म चालाकी प्रकट होती है: अपनी युक्तियों से, मसीह का योद्धा अपने ही तीरों से गिर जाता है, जबकि शत्रु स्वयं उसे अपने हथियारों से हरा नहीं सका था।

५. अन्य वासनाएँ, जैसा कि हमने कहा है, एक अलग वातावरण के प्रभाव से शांत हो जाती हैं; वे तब भी शांत हो जाती हैं और समाप्त हो जाती हैं जब पाप का वस्तुनिष्ठ कारण, या उसका अवसर, या परिस्थिति दूर हो जाती है; लेकिन यह एक (वासना) तो उन लोगों के साथ रेगिस्तान में भी प्रवेश कर जाती है जो इससे बचने के लिए वहाँ भागते हैं, और किसी भी वातावरण से नहीं डरती, ठीक वैसे ही जैसे जब वस्तु दृष्टि से ओझल हो जाती है तब भी यह कमजोर नहीं पड़ती; क्योंकि यह अपनी शक्ति किसी और से नहीं बल्कि उसी व्यक्ति की सद्गुणों में मिली सफलताओं से प्राप्त करती है जिस पर यह हमला करती है। – अन्य भाव, जैसा कि हमने पहले कहा, कभी-कभी समय के साथ नरम पड़ जाते हैं और फीके पड़ जाते हैं; लेकिन इस एक के लिए, समय का बीतना न केवल कोई नुकसान नहीं करता, बल्कि इसकी व्यर्थता के लिए और भी अधिक ईंधन इकट्ठा कर देता है।

6. अंत में, अन्य आवेग, जो अपने विरोधी सद्गुणों के साथ टकराव में होते हैं और खुले तौर पर, दिन दहाड़े युद्ध छेड़ते हैं, उन पर काबू पाना और उनसे सावधान रहना आसान होता है; जबकि यह, गुणों के बीच से अपना रास्ता निकालकर और हमारी صف़ों में मिलकर, अँधेरी रात में लड़ता है, और हम सभी को और भी क्रूरता से धोखा देता है क्योंकि हम न तो इसके हमले की उम्मीद करते हैं और न ही उससे डरते हैं।

7. हम पढ़ते हैं कि यहूदा का राजा हिजकिय्याह, जो हर बात में पूर्ण धार्मिकता वाला पुरुष था, घमंड के एक ही तीर से गिर गया; और वह, जो एक ही प्रार्थना से 185,000 अश्शूरियों के सैनिकों की हत्या सुनिश्चित कर सकता था, कीर्ति के व्यर्थ प्रेम से पराजित हो गया, – वही, जिसके जीवन की सीमा और मृत्यु के दिन को ईश्वर के विधान द्वारा निर्धारित किया गया था, जिसे अपनी प्रार्थना द्वारा अतिरिक्त 15 वर्षों के लिए जीवन का विस्तार प्रदान किया गया था, और इसकी पुष्टि सूर्य के दस अंश पीछे हटने से हुई थी; वही, अपने सद्गुण के ऐसे प्रमाण और अपने प्रति ईश्वर की कृपा के ऐसे संकेत के बाद, गर्व और आत्म-बड़बोलेपन के एक ही कृत्य से सब कुछ खो बैठा, सब कुछ खो दिया, और न केवल स्वयं को, बल्कि अपने पूरे लोगों को भी ईश्वर के क्रोध के सामने उजागर कर दिया—एक ऐसा क्रोध कि जब वह स्वयं को नम्र करके अपने सभी लोगों के साथ ईश्वर से विनती करने लगा, तो वह केवल यही याचना कर सका कि यह क्रोध उसके अपने जीवनकाल में न आए (2 राजा 20; 2 इतिहास 32)। अहंकार का यही विनाशकारी और अत्यंत पापी जुनून है!

8. उपर्युक्त राजा के परदादा उज्जीयाह, जिनकी पवित्र शास्त्र में भी प्रशंसा की गई है, कई सद्गुणों और लोगों के भले के लिए कई प्रशंसनीय कार्यों और संस्थाओं के बाद, व्यर्थ के घमंड से भर गए और एक ऐसे कर्म से *'अपने प्रभु परमेश्वर का अपमान किया'* जो उन्हें अप्रिय था, वह तुरंत अपनी महिमा की ऊँचाइयों से गिर गया और कोढ़ से पीड़ित हो गया (2 इति. 26)। यह एक और दुखद पतन का उदाहरण है! आप इससे देख सकते हैं कि सुखद सफलताओं भी कितनी हानिकारक हो सकती हैं, जब उनके बीच कोई व्यर्थता और घमंड से खुद को बचाने में विफल रहता है, और कैसे, ऐसे मामलों में, जो लोग अपनी सुध नहीं लेते या खुद का ध्यान नहीं रखते, विपत्ति से विनम्र न हुए होने के कारण, उस पर विजय प्राप्त करने पर और भी अधिक कठोरता से धराशायी हो जाते हैं, और, युद्ध में मृत्यु के खतरे से बचने के बाद, अपनी विजियों और जीतों के कारण गिर पड़ते हैं।

9. प्रेरित क्यों आग्रह करते हैं: *'हम घमण्डी न हों'* (गलातियों 5:26)? और प्रभु, फरीसियों को डाँटते हुए कहते हैं: *'तुम एक दूसरे से महिमा ग्रहण करते हो, परन्तु उस महिमा को नहीं खोजते जो एक परमेश्वर से आती है, तो तुम कैसे विश्वास कर सकते हो?'* (यूहन्ना 5:44)। ऐसे ही लोगों के विषय में धन्य दाऊद एक चेतावनी के साथ कहते हैं: *'जिन मनुष्यों को प्रसन्न करना चाहते हैं, उनके हड्डियों को परमेश्वर बिखेर दे'* (भजन संहिता 52:6)।

10. नवसिखियों और उन लोगों का घमंड, जिन्होंने अभी तक सद्गुण और आध्यात्मिक ज्ञान में बहुत कम प्रगति की है, आमतौर पर उन्हें या तो अपनी आवाज़ के लहजे—अर्थात् यह कि वे दूसरों की तुलना में अधिक सुखद स्वर में गाते हैं—या इस तथ्य पर घमंड करने के लिए प्रेरित करता है कि वे दुबले-पतले कद-काठी या सुंदर रूप-रंग के हैं, या कि उनके माता-पिता अमीर और कुलीन हैं, या कि उन्होंने सैन्य सेवा और सम्मानों को ठुकरा दिया है। दूसरों को यह सुझाव देता है कि, यदि वे संसार में रहते, तो वे आसानी से सम्मान और धन दोनों प्राप्त कर लेते, भले ही वे उन्हें कभी प्राप्त नहीं कर सकते थे - इस प्रकार व्यर्थ की आशाओं की बलि चढ़ाकर उनके अहंकार को बढ़ाता है और उन्हें उस चीज़ का त्याग करने पर गर्व करने के लिए प्रेरित करता है जो उनके पास कभी थी ही नहीं।

11. दूसरों में, यह पुरोहित या डिकन बनने की इच्छा जगाता है, उनके मन में यह चित्र उकेरता है कि वे तब अपने कर्तव्यों का इतनी पवित्रता और कठोरता से पालन करेंगे कि वे अन्य पुरोहितों के लिए पवित्रता का एक उदाहरण बन सकते हैं; इसके अलावा, वे अपने आचरण और अपने उपदेशों के माध्यम से कई लोगों के लिए लाभदायक होंगे। कभी-कभी तो यह उन लोगों को भी, जो रेगिस्तान में या किसी कोठरी में एकांत में रहते हैं, यह कल्पना करने पर मजबूर कर देता है कि वे विभिन्न लोगों और मठों के घरों में जा रहे हैं, और अपनी कल्पित मान्यताओं की शक्ति से

कई लोगों को धर्मपरायण जीवन के मार्ग पर ले जा रहे हैं। और इस प्रकार यह बेचारा प्राणी ऐसी व्यर्थता से इधर-उधर ले जाया जाता है, मानो गहरी नींद में भटक रहा हो; और ऐसे विचारों की मिठास से बहक कर और ऐसे सपनों से भरकर, अधिकांशतःन तो अपने कर्मों को और न ही भाइयों की उपस्थिति को देख पाता है, भले ही वे वास्तव में उसकी आँखों के सामने हों, क्योंकि वह पूरी तरह से और मधुरता से, जैसे कोई वास्तविक घटना घट रही हो, उन विचारों की भटकन में डूबा रहता है, जिनके बारे में वह जागते हुए एक सपने में-सा भटकता रहता है।

12. मुझे याद है कि जब मैं स्केटे रेगिस्तान में रहता था, एक वरिष्ठ, एक भाई से मिलने के लिए उसकी कोठरी में आए, तो उन्होंने उसे अंदर बोलते हुए सुना और रुक गए, यह जानने की इच्छा से कि वह पवित्र धर्मग्रंथ से क्या पढ़ रहा था, या स्मृति से क्या उच्चारण कर रहा था, जैसा कि वहाँ काम करते समय प्रचलन है। और करीब झुककर, उस धर्मनिष्ठ व्यक्ति ने सुना कि वह भाई, जैसे चर्च में हो, मंडली को उपदेश दे रहा था: इसका मतलब यह था कि, घमंड की भावना से भ्रमित होकर, वह खुद को एक पादरी कल्पना कर रहा था और उस काम को कर रहा था जो लंबे समय से उसका सपना था। थोड़ी देर और इंतजार करने के बाद, बड़े भाई ने सुना कि भाई ने अपना उपदेश समाप्त कर लिया था और, अपनी भूमिका बदलकर, जैसे अब वह एक डीकन हो, यह घोषणा करने लगा: 'कैटेकुमेन चले जाएँ।' बड़े भाई ने दरवाज़े पर दस्तक दी। वह भाई बाहर आया, उसने अपनी सामान्य श्रद्धा के साथ उसका अभिवादन किया, और, उसे अंदर ले जाकर, पूछा कि वह कितनी देर से वहाँ था, इस बात की चिंता का दिखावा करते हुए कि क्या उसे बाहर बहुत देर तक खड़ा रहना पड़ा और क्या उसे इसके परिणामस्वरूप कोई असुविधा हुई थी - हालांकि सच्चाई में उसका विवेक उसकी कल्पनाओं और उनके परिणामस्वरूप किए गए कार्यों के लिए उसे कचोट रहा था। बड़े भाई ने दयालुता से उत्तर दिया: 'मैं अभी-अभी पहुँचा हूँ, ठीक उसी समय जब तुम घोषणा कर रहे थे: "जिन्हें धर्मोपदेश दिया गया है, वे चले जाएँ।"'

13. मैंने इसे यहाँ शामिल करना उचित समझा है ताकि हमारे सामने उन प्रवृत्तियों की ताकत और तरीके की एक संपूर्ण तस्वीर हो—जिनसे एक बेचारा आत्मा पीड़ित होता है—और जो हम पर आक्रमण करती हैं, हम अपने प्रति अधिक सतर्क हो सकें और, इस प्रकार, दुश्मन के जालों और फंदों से बेहतर ढंग से बच सकें। मिस्र के आध्यात्मिक पिताओं की कार्यप्रणाली ठीक इसी प्रकार की है। वे बिना किसी हिचकिचाहट के ऐसे सभी मामलों को उजागर कर देते हैं, और दूसरों तथा स्वयं के बारे में अपने विवरणों के माध्यम से – मानो वे स्वयं भी अभी उसी अनुभव से गुज़र रहे हों जिसका वे वर्णन कर रहे हैं – – वे युवा भिक्षुओं के सामने सभी प्रकार के जुनूनों के संघर्षों को उजागर करते हैं, उन संघर्षों को भी जो ये युवा पहले से ही झेल रहे हैं और उन संघर्षों को भी जो उन्हें अभी झेलने हैं; ताकि, सभी जुनूनों की धोखाधड़ियों के इस विवरण के माध्यम से, उत्साह से भरपूर नवसिखिए अपने वर्तमान संघर्षों के रहस्यों को जान सकें, और, उन्हें एक दर्पण में देखने के समान, वे न केवल उन्हें पीड़ित करने वाले जुनून के कारणों और उनसे निपटने के उपायों को समझ सकें; और जहाँ तक भविष्य के संघर्षों का सवाल है, उनके उत्पन्न होने से पहले ही, वे जान सकें कि उनसे कैसे बचें, अपने हमलावरों का सामना कैसे करें और उनसे कैसे लड़ें। जैसे सबसे कुशल चिकित्सक न केवल वर्तमान बीमारियों का इलाज करते हैं, बल्कि अपने सूक्ष्म अनुभव के माध्यम से भविष्य की बीमारियों का भी प्रतिकार करते हैं, और उन्हें सावधानीपूर्ण सलाह या औषधि के साथ रोकते हैं: इसी प्रकार आत्मा के ये सच्चे चिकित्सक, अपनी आध्यात्मिक शिक्षा के माध्यम से—जो एक प्रकार के प्रतिविष (antidote) का काम करती है—पहले से ही हृदय की उन बीमारियों को नष्ट कर देते हैं जो अन्यथा उत्पन्न हो सकती थीं, और नवोदित भिक्षुओं की आत्माओं में उनके जड़ जमाने से रोकते हैं, साथ ही उन्हें वासनाओं के हमलों के कारण और उनसे निपटने के उपाय दोनों का पता बताते हैं।

14. मसीह का एक सैनिक जो विधिवत सच्ची आध्यात्मिक लड़ाई में संलग्न होना चाहता है, उसे हर संभव तरीके से इस बहुआयामी और विविध राक्षस पर काबू पाने का प्रयास करना चाहिए। और सबसे पहले, हम इस बहुआयामी राक्षस से मिलने से बच सकते हैं—जो हर जगह हमारी बुराई पर झपटने के लिए तैयार रहता है—यदि हम दाऊद के उस कथन को ध्यान में रखें: *'प्रभु ने उन लोगों की हड्डियाँ बिखेर दी हैं जो मनुष्यों को प्रसन्न करते हैं'* (भजन संहिता 52:6), और हम स्वयं को व्यर्थ की महिमा प्राप्त करने के खोखले इरादे से कुछ भी करने या हाथ डालने की अनुमति नहीं देते हैं। इसके अलावा, हमें उसी—अच्छी सतर्कता—के माध्यम से अच्छे इरादों से किए गए कार्यों को बनाए रखने और संरक्षित करने का प्रयास करना चाहिए, ताकि घमंड की बीमारी बाद में धीरे-धीरे प्रवेश न कर सके और हमारे सभी श्रम के फलों को नष्ट न कर दे। इसी प्रकार, जो कुछ भी भाइयों में प्रथागत नहीं है और जिसका सभी द्वारा पालन नहीं किया जाता है, उसे घमंडपूर्ण कार्य के रूप में पूरी लगन से अस्वीकार कर देना चाहिए; और हमें हर कीमत पर ऐसी किसी भी चीज़ से बचना चाहिए जो हमें दूसरों से अलग खड़ा करे, या जिसे, चूँकि हम अकेले ही करते हैं, मनुष्यों की दृष्टि में हमें महिमा दिला सके। ऐसे ही आत्म-बड़प्पन के प्रदर्शनों के माध्यम से यह सबसे स्पष्ट हो

जाता है कि घमंड का घातक संक्रामण हम पर हावी हो गया है: जिसे, हालांकि, हम तब टाल सकते हैं जब हम यह ध्यान में रखें कि हम न केवल अपनी व्यर्थ की मंशा से की गई मेहनत का फल पूरी तरह से खो देंगे, बल्कि हम एक बड़े अपराध के भी दोषी होंगे और, धर्मनिंदा के अपराधी के रूप में, हमें अनंतकालिक यातना सहनी पड़ेगी; क्योंकि हमने ईश्वर की अवहेलना करते हुए लोगों के लिए वह कार्य करने का चुनाव किया है जो हमें उनके लिए करना चाहिए था, और इस प्रकार हमने ईश्वर से अधिक लोगों को, और ईश्वर की महिमा से अधिक संसार की महिमा को प्राथमिकता दी है – जैसा कि हृदयों की परीक्षा करने वाला ईश्वर तब हमें दोषी ठहराएगा।

८. घमंड की आत्मा के विरुद्ध संघर्ष

1. आठवीं और अंतिम लड़ाई हमारे सामने है: अहंकार की भावना के खिलाफ लड़ाई। यद्यपि इस जुनून को जुनूनों के विरुद्ध संघर्ष की श्रृंखला में सबसे अंत में रखा गया है, फिर भी उत्पत्ति और समय के मामले में यह पहला है। यह सबसे क्रूर और अजेय जानवर है, जो विशेष रूप से उन लोगों पर हमला करता है जो सिद्ध हो चुके हैं और जब वे सद्गुण के शिखर पर लगभग पहुँच ही जाते हैं, तो उन्हें क्रूरता से भक्षण कर डालता है।

2. अहंकार के दो प्रकार हैं: पहला वह है जो, जैसा कि हमने कहा है, उच्च आध्यात्मिक जीवन वाले पुरुषों को प्रभावित करता है; दूसरा शुरुआती और कामुक लोगों पर हावी हो जाता है। और यद्यपि अहंकार के ये दोनों प्रकार ईश्वर और मनुष्यों दोनों के सामने आत्म-महत्व की एक हानिकारक भावना से भड़के हुए हैं, पहला सीधे ईश्वर से संबंधित है, जबकि दूसरा विशेष रूप से मनुष्यों से संबंधित है। ईश्वर की इच्छा से, हम इस पुस्तक के अंतिम अध्यायों में दूसरे प्रकार की उत्पत्ति और उसके विरुद्ध उपचारों की जांच करेंगे; लेकिन अभी के लिए, हमारा इरादा पहले प्रकार पर कुछ विस्तार से चर्चा करने का है, जिससे, जैसा कि हमने ऊपर कहा है, सिद्ध पुरुष मुख्य रूप से प्रलोभित होते हैं।

3. कोई अन्य जुनून ऐसा नहीं है जो सभी सद्गुणों को इतनी पूरी तरह से नष्ट कर दे, और किसी व्यक्ति को सभी धार्मिकता और पवित्रता से इतनी पूरी तरह से वंचित कर दे, जितना कि यह दुष्ट अहंकार: यह, एक सर्वव्यापी संक्रामक रोग की तरह, केवल एक अंग या हिस्से को कमजोर करने से संतुष्ट नहीं होता, बल्कि पूरे शरीर पर एक घातक विकार डालता है , और अत्यंत दुखद पतन के माध्यम से उन लोगों को भी गिराने और नष्ट करने का प्रयास करता है जो पहले से ही सद्गुणों की ऊँचाइयों पर खड़े हैं। हर कोई अन्य जुनून अपनी सीमाओं और अपने लक्ष्य से संतुष्ट रहता है, और यद्यपि यह अन्य सद्गुणों को भी बाधित करता है, यह मुख्य रूप से एक विशेष सद्गुण के विरुद्ध निर्देशित होता है, जिसे यह प्राथमिक रूप से घेराबंदी करता है और हमला करता है। इस प्रकार, अतिसंयम—अर्थात् अत्यधिक खाने या मीठे खाद्य पदार्थों के लिए जुनून—कठोर संयम को भ्रष्ट करता है; कामवासना ब्रह्मचर्य को कलंकित करती है; और क्रोध धैर्य को बाहर निकाल देता है। इस प्रकार, एक ही वासना का गुलाम व्यक्ति अन्य सद्गुणों से पूरी तरह से रहित नहीं होता है; फिर भी, जब वह एक सद्गुण नष्ट हो जाता है—उसके विरोधी वासना के सामने गिर जाता है, जिसने उसके खिलाफ उत्साहपूर्वक हथियार उठा लिए हैं—तो अन्य सद्गुण, कम से कम आंशिक रूप से, बरकरार रह सकते हैं: लेकिन यह, जैसे ही किसी दुर्भाग्यपूर्ण आत्मा पर काबू पा लेता है, एक सबसे क्रूर तानाशाह की तरह, सद्गुण (नम्रता) के सर्वोच्च दुर्ग को जीतकर, उसके पूरे नगर को धूल चटा देता है और उसे उजाड़ देता है। पवित्रता की कभी ऊँची दीवारों को धूल-मिट्टी में मिला देने के बाद, यह उस आत्मा में स्वतंत्रता का कोई भी चिह्न नहीं रहने देता जिसे उसने वश में कर लिया है। यह जिस आत्मा को कैद करता है, वह जितनी धनी होती है, दासता का जुआ उतना ही भारी होता है, और यह सबसे क्रूर लूट के साथ उसकी सभी सद्गुणों को छीन लेता है।

४. यदि आप इस सबसे क्रूर तानाशाह की शक्ति की सीमा को और अधिक सटीक रूप से जानना चाहते हैं, तो आइए याद करें कि कैसे एक निश्चित देवदूत, जिसे उसकी भव्यता और सुंदरता की अधिकता के कारण लूसिफर नाम दिया गया था, को केवल इसी जुनून के कारण स्वर्ग से नीचे फेंक दिया गया था, और कैसे वह, अहंकार के तीर से भेदा गया, धन्य स्वर्गदूतों के उस सर्वोच्च पद से पाताल लोक में गिर पड़ा। इस प्रकार, यदि ऐसा अदेह प्राणी, जो इतने असाधारण गुणों से युक्त था, गर्व की एक ही लहर से स्वर्ग से पृथ्वी पर गिरा दिया जा सकता है, तो उस विनाशकारी पतन की महानता यह दर्शाती है कि हम, जो नश्वर शरीर में लिपटे हैं, हमें कितनी सतर्कता से इससे बचना चाहिए। – जहाँ तक इस बात का सवाल है कि हम इस जुनून के सबसे हानिकारक संक्रामण से कैसे बच सकते हैं, हम इसका पता उपरोक्त पतन की उत्पत्ति और कारणों का अनुसरण करके लगा सकते हैं। क्योंकि किसी भी दुर्बलता का इलाज करना, या किसी भी बीमारी के लिए उपचार निर्धारित करना असंभव है, जब तक कि उनकी उत्पत्ति और कारणों की पहले सावधानीपूर्वक जांच न की गई हो। – यह (आर्चेन्जेल), दिव्य तेज से सुसज्जित और सृष्टिकर्ता की उदारता से अन्य उच्च शक्तियों से भी अधिक चमकता हुआ, यह मानने लगा कि ज्ञान का यह वैभव और सद्गुण की यह सुंदरता,

जिससे सृष्टिकर्ता की कृपा से वह सुशोभित था, उसके अपने प्राकृतिक शक्तियों के कारण उसके पास थी, न कि ईश्वर के उदार उपहार के कारण। और इस कारण से गौरवान्वित होकर, उसने स्वयं को ईश्वर के बराबर समझा, एक ऐसे के रूप में जिसमें ईश्वर की तरह कुछ भी कमी नहीं थी - मानो उसे ऐसी पवित्रता में बने रहने के लिए दिव्य सहायता की कोई आवश्यकता न हो। इस प्रकार वह पूरी तरह से अपनी स्वतंत्र इच्छा की शक्ति पर निर्भर हो गया, यह मानते हुए कि यही उसे सद्गुण में पूर्ण परिपूर्णता और परम आनंद की निरंतरता के लिए आवश्यक सभी चीजें प्रचुर मात्रा में प्रदान करेगी। यही एक विचार उसके विनाशकारी पतन का प्राथमिक कारण बन गया। ईश्वर द्वारा त्यागे जाने के बाद—जिनकी उसे कोई आवश्यकता नहीं समझ आती थी—और परिणामस्वरूप तुरंत ही अस्थिर और असुरक्षित हो जाने पर, उसने अपनी प्रकृति की दुर्बलता को महसूस किया और ईश्वर की कृपा से प्राप्त आनंद को खो दिया। इस प्रकार, क्योंकि वह *'घमंडी शब्दों से' प्रेम करता था'*, जिनमें उसने अपनी दंभ में घोषणा की: *'मैं स्वर्ग पर चढ़ जाऊँगा'* (यशायाह 14:13), *'और एक चापलूस जीभ'*, जिससे, स्वयं को धोखा देते हुए, उसने कहा: *'मैं सर्वोच्च के समान होऊँगा'*, ठीक वैसे ही जैसे उसने बाद में आदम और हव्वा को धोखा दिया, उन्हें यह सुझाव देते हुए: *'तुम देवताओं के समान हो जाओगे'*: तो यहाँ उसका निर्णय है: *'इसी कारण परमेश्वर तुम्हें सर्वनाश कर देगा, तुम्हें जड़-उखाड़ देगा, और तुम्हें तुम्हारे निवास से निकाल देगा। धर्मी लोग यह देखकर डर जाएँगे; वे उस पर हँसेंगे और कहेंगे: "यह वही मनुष्य है जिसने परमेश्वर को अपना सहायक नहीं बनाया, बल्कि अपनी धन-संपत्ति की भरमार और अपनी घमंड की शक्ति पर भरोसा किया"'* (भजन संहिता 51:6-9)। अंतिम शब्द ('यह वही मनुष्य है') उन लोगों पर पूरी तरह से लागू हो सकते हैं जो ईश्वर की सुरक्षा और मदद के बिना परम भलाई प्राप्त करने की आशा करते हैं।

5. यह प्रथम पतन का कारण और प्रमुख वासना की उत्पत्ति है—जो, बाद में उस व्यक्ति के माध्यम से प्रथम-निर्मिति में प्रवेश कर गई, जिसे इससे पहले ग्रस्त किया गया था, और जिसने वासनाओं की संपूर्ण भीड़ को जन्म दिया। और वह—पहला मनुष्य—यह विश्वास करके कि वह अपनी स्वतंत्र इच्छा की शक्ति और अपने ही प्रयासों से ईश्वरत्व की महिमा प्राप्त कर सकता है, वह वह भी खो बैठा जो उसे सृष्टिकर्ता की कृपा से प्राप्त हुआ था।

6. इस प्रकार, पवित्र शास्त्र के उदाहरण और गवाहियाँ सबसे स्पष्ट रूप से यह दर्शाती हैं कि घमंड का जुनून, यद्यपि यह आध्यात्मिक लड़ाइयों की श्रृंखला में सबसे अंतिम है, फिर भी उत्पत्ति में सबसे पहला है, और यह सभी पापों और अपराधों का स्रोत है। अन्य वासनाओं के विपरीत, यह केवल अपने विरोधी सद्गुण—अर्थात् विनम्रता—को ही नष्ट नहीं करता, बल्कि सभी सद्गुणों का सामूहिक विनाशक है; और यह केवल औसत दर्जे और तुच्छ पदवी वालों को ही प्रलोभित नहीं करता, बल्कि विशेष रूप से उन लोगों को प्रलोभित करता है जो शक्ति के शिखर पर हैं। क्योंकि भविष्यवक्ता इस आत्मा के विषय में इस प्रकार कहते हैं: *'उसका चुना हुआ भोजन'* (अबदियाह 1:16)। अतः धन्य दाऊद ने, यद्यपि वह अपने हृदय के कोष्ठकों की इतनी सावधानी से रक्षा करता था कि से, जिससे उसके अंतःकरण के रहस्य छिपे हुए नहीं थे, निडर होकर उद्घोषणा की: *'हे प्रभु, मेरा हृदय घमण्डी नहीं हुआ है, और न मेरी आँखें गर्व से देखती हैं; मैं महान लोगों के काम में, और मुझ से उत्तम लोगों के काम में नहीं चला'* (भजन संहिता 130:1), – और फिर: *'मेरे घर के बीच में घमण्ड न हो'* (भजन संहिता 100:7); फिर भी, यह जानते हुए कि इस जुनून की किसी भी हलचल से बचना सिद्ध लोगों के लिए भी कितना कठिन है, उसने इस मामले में केवल अपनी ही कोशिशों पर भरोसा नहीं किया, बल्कि प्रार्थना में प्रभु की मदद मांगी, कि वह उसे इस शत्रु के बाण से घायल होने से बचाए, *यह* कहते हुए: *'घमंड का पैर मुझ पर न आए'* (भजन संहिता 35:12), (अर्थात् 'प्रभु, मुझे गर्व से प्रेरित एक भी कदम उठाने न दें'), – इस भय और आशंका में कि वह उन लोगों का शिकार न हो जाए जिनके विषय में कहा गया है: *'परमेश्वर गर्वीले लोगों का विरोध करता है'* (याकूब 4:6), – और इसके अलावा: *'जो घमण्डी है वह यहोवा की दृष्टि में शुद्ध नहीं'* (नीतिवचन 16:5)।

7. अहंकार कितना बड़ा बुराई है, जब इसके विरोधी स्वर्गदूत और अन्य शक्तियाँ इसका सामना करने के लिए अपर्याप्त हैं, लेकिन स्वयं परमेश्वर इसके विरुद्ध उठ खड़े होते हैं! यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि प्रेरित ने अन्य जुनूनों में फँसे लोगों के बारे में यह नहीं कहा कि परमेश्वर उनका विरोध करते हैं; अर्थात्, उन्होंने यह नहीं कहा: 'परमेश्वर भोगियों, व्यभिचारियों, क्रोधी, या लोभी का विरोध करते हैं', बल्कि केवल अभिमानी का। क्योंकि वे वासनाएँ या तो केवल उन्हें करने वाले व्यक्ति को ही प्रभावित करती हैं, या वे उनके साथियों, यानी अन्य लोगों के विरुद्ध निर्देशित प्रतीत होती हैं; जबकि यह विशेष रूप से परमेश्वर के विरुद्ध निर्देशित है, और इसलिए यह विशेष रूप से उसी को अपना विरोधी बनाने का पात्र है।

८. हम इस सबसे नीचें आत्मा के जालों से तब बच सकते हैं, जब हम प्रत्येक उस सद्गुण के संबंध में, जिसमें हमें लगता है कि हम सफल हो रहे हैं, प्रेरित के साथ कहें: *'मैं नहीं, बल्कि परमेश्वर का अनुग्रह जो मुझ में है'* – और:

'परमेश्वर के अनुग्रह से मैं जो कुछ भी हूँ, वही हूँ' (1 कुरिन्थियों 15:10), – और: *'क्योंकि परमेश्वर ही है जो अपनी इच्छा के अनुसार हमें इच्छा और कर्म करने के लिए हम में कार्य करता है'* (फिलि. 2:13), – जैसा कि हमारे उद्धार के कर्ता स्वयं कहते हैं: *'जो मुझ में रहता है और मैं उसमें, वह बहुत फल देता है; क्योंकि मुझ से अलग होकर तुम कुछ भी नहीं कर सकते'* (यूहन्ना 15:5), – और भजनकार प्रतिध्वनित करते हैं: *'जब तक यहोवा घर का निर्माण न करे, तब तक बनाने वालों की मेहनत व्यर्थ है; जब तक यहोवा नगर की रक्षा न करे, तब तक पहरूए की जागना व्यर्थ है'* (भजन संहिता 126:1)। और न ही किसी इच्छुक और प्रयासरत व्यक्ति की इच्छा ही, जो आत्मा के विरुद्ध युद्ध करने वाले शरीर में वस्त्र-धारित है, दिव्य अनुग्रह के विशेष आश्रय के बिना पूर्ण पवित्रता और निर्दोषता प्राप्त करने के लिए पर्याप्त है, और इस प्रकार उस वस्तु को प्राप्त करने के योग्य समझा जाए जिसकी वह इतनी प्रबल इच्छा करता है और जिसके लिए वह इतनी लगन से प्रयास करता है। क्योंकि *'हर एक अच्छा वरदान और हर एक सिद्ध उपहार ऊपर से आता है, जो ज्योतियों के पिता की ओर से उतरता है'* (याकूब 1:17)। *'क्योंकि तुम्हारे पास ऐसा क्या है जो तुमने प्राप्त नहीं किया? और यदि तुमने इसे प्राप्त किया है, तो तुम ऐसा घमंड क्यों करते हो मानो तुमने इसे प्राप्त नहीं किया?'* (1 कुरिन्थियों 4:7)।

९. मैं यह मानव प्रयास को तुच्छ बताने के लिए नहीं कह रहा हूँ, और न ही किसी को परिश्रमी और कड़ी मेहनत से हतोत्साहित करने के लिए। इसके विपरीत, मैं दृढ़ता से पुष्टि करता हूँ—मेरी अपनी राय में नहीं, बल्कि बुजुर्गों की राय में—कि उनके बिना पूर्णता प्राप्त नहीं की जा सकती, और यह कि केवल उनके माध्यम से, ईश्वर की कृपा के बिना, किसी के द्वारा भी इसे उचित स्तर तक नहीं लाया जा सकता। क्योंकि जैसे हम कहते हैं कि केवल मानवीय प्रयास, ईश्वर की सहायता के बिना, इसे प्राप्त नहीं कर सकते, वैसे ही हम यह भी मानते हैं कि ईश्वर की कृपा केवल उन्हीं पर मिलती है जो माथे पर पसीना बहाकर परिश्रम करते हैं, या, प्रेरित के शब्दों में, यह केवल उन्हीं को दी जाती है जो इच्छा रखते हैं और प्रयास करते हैं, और इस तथ्य से भी यह स्पष्ट होता है कि भजन संहिता ८८ में ईश्वर की ओर से गाया गया है: *'मैंने अपनी सहायता शक्तिमान पर स्थिर की है; मैंने मनुष्यों में से चुने हुए को ऊँचा किया है'* (पद 20)। यद्यपि, प्रभु के वचन के अनुसार, हम कहते हैं कि जो माँगते हैं उन्हें दिया जाता है, जो खटखटाते हैं उनके लिए खोला जाता है, और जो खोजते हैं उन्हें पाया जाता है; फिर भी माँगना, खोजना और खटखटाना अपने आप में इसके लिए पर्याप्त नहीं हैं, जब तक कि परमेश्वर की दया वह न दे जिसकी हम माँग करते हैं, वह न खोले जिसके लिए हम खटखटाते हैं, और हमें वह खोजने में सक्षम न बनाए जिसकी हम खोज करते हैं। वह हमें यह सब कुछ प्रदान करने के लिए तत्पर हैं, जैसे ही हम उन्हें अपनी सद्भावना प्रदान करके ऐसा करने का अवसर देते हैं: क्योंकि वह हमारे पूर्ण होने और उद्धार पाने की कामना हमसे कहीं अधिक करते हैं और उसकी प्रतीक्षा करते हैं। और धन्य दाऊद को अपने प्रयासों और परिश्रम में केवल अपनी ही ताक़त से सफलता प्राप्त करने की असंभवता का इतना गहरा एहसास था कि उन्होंने दो बार प्रार्थना की कि प्रभु स्वयं उनके कामों को सीधा करें, *यह* कहते हुए: *'हमारे हाथों के काम हमारे लिए सीधे कर, और हमारे हाथों के काम सीधे कर'* (भजन संहिता 89:17), – और फिर: *'हे परमेश्वर, उस काम को स्थिर कर जो तूने हम में किया है'* (भजन संहिता 67:29)।

10. अतः हमें इस प्रकार पूर्णता के लिए प्रयत्न करना चाहिए, और स्वयं को उपवास, जागरण, प्रार्थना, तथा हृदय और शरीर के संयम में समर्पित करना चाहिए, कहीं ऐसा न हो कि अहंकार से फूले-फले हम इन सब को व्यर्थ कर दें। हमें यह विश्वास करना चाहिए कि न केवल हम अपने प्रयासों और परिश्रमों से पूर्णता प्राप्त नहीं कर सकते, बल्कि वे ही चीजें जिनका हम इसे प्राप्त करने के लिए अभ्यास करते हैं—अर्थात्, हमारे आध्यात्मिक संघर्ष और विभिन्न आध्यात्मिक कार्य—उन्हें हम परमेश्वर की कृपा की सहायता के बिना वैसे नहीं कर सकते जैसे हमें करना चाहिए।

11. हमें हमेशा परमेश्वर का धन्यवाद करना चाहिए, न केवल इस तथ्य के लिए कि उन्होंने हमें तर्कशील प्राणी बनाया, हमें स्वतंत्र इच्छा प्रदान की, बपतिस्मा की अनुग्रह प्रदान की, और हमें व्यवस्था का मार्गदर्शन दिया, बल्कि इस तथ्य के लिए भी कि वह हमें अपनी दैनिक व्यवस्था के माध्यम से बनाए रखते हैं, अर्थात्: वह हमें शत्रु के जालों से बचाता है, हमें सांसारिक वासनाओं पर काबू पाने में मदद करता है, हमें पता भी न चले बिना हमें खतरों से बचाता है, हमें पाप में गिरने से बचाता है, हमारी मदद करता है और हमें अपने कानून की आवश्यकताओं के ज्ञान और समझ में प्रबुद्ध करता है, गुप्त रूप से हमारे भीतर हमारी लापरवाही और उल्लंघनों के लिए पश्चाताप उत्पन्न करता है, उद्धार के लिए हमें सुधारता है, हमें विशेष अनुग्रह प्रदान करता है, और कभी-कभी हमारी इच्छा के विरुद्ध भी हमें मोक्ष की ओर खींचता है। – अंत में, वह हमारी स्वतंत्र इच्छा, जो वासनाओं की ओर अधिक झुकी हुई है, को सर्वोत्तम और आत्मा के लिए सबसे लाभकारी कार्य की ओर निर्देशित करता है, और अपनी कृपा से उस पर अपने प्रभाव के माध्यम से इसे सद्गुण के मार्ग पर मोड़ देता है।

12. ईश्वर के प्रति विनम्रता का वास्तविक सार यही है; यही सबसे प्राचीन पितरों का विश्वास है, जो आज भी निर्दोष बना हुआ है, और उनके उत्तराधिकारियों द्वारा बनाए रखा जाता है। उनके द्वारा प्रकट की गई प्रेरितिक शक्तियाँ—न केवल हमारे बीच, बल्कि अविश्वासियों और डरपोक लोगों के बीच भी—उनके इस विश्वास की निर्विवाद गवाही देती हैं।

13. यहूदा का राजा योआश, शुरू में एक प्रशंसनीय जीवन जीता; लेकिन बाद में, अहंकारी हो जाने पर, वह अपमानजनक और अशुद्ध जुनूनों के हवाले हो गया, या, जैसा कि प्रेरित कहते हैं: *'अनशिक्षित मन अनुचित बातों की योजना बनाता है'* (रोमियों 1:26, 28)। ईश्वर की धार्मिकता का यही नियम है कि जो कोई भी, पश्चाताप के बिना, हृदय में घमंडी अहंकार से फूल उठता है, वह सबसे नीचे शारीरिक अपमान की लज्जा के हवाले कर दिया जाता है, ताकि इस प्रकार नम्र होकर, वह यह समझ सके कि यदि वह अब स्वयं को इतना कलंकित पाता है, तो यह इसलिए है क्योंकि उसने पहले घमंडी अहंकार से उत्पन्न होने वाली सबसे गहरी और सबसे गंभीर अशुद्धता को स्वीकार करने से इनकार कर दिया था, और यह समझने के बाद, वह दोनों ही भावों से स्वयं को शुद्ध करने के लिए प्रेरित हो सके।

14. अतः यह स्पष्ट है कि कोई भी सच्ची नम्रता के माध्यम से ही पूर्णता और पवित्रता की परम सीमा को प्राप्त कर सकता है, जो भाइयों के सामने स्पष्ट रूप से प्रकट होती है, और साथ ही हृदय के गूढ़ कोनों में परमेश्वर के सामने भी व्यक्त होती है, यह विश्वास करते हुए कि उनकी सुरक्षा और मदद के बिना, जो हर क्षण उसके साथ रहती है, वह उस पूर्णता को किसी भी प्रकार प्राप्त नहीं कर सकता जिसकी वह इच्छा करता है और जिसके लिए वह अपनी पूरी शक्ति से प्रयास करता है।

१५. अब तक, जहाँ तक हमारी सीमित क्षमताओं ने अनुमति दी है, हमने ईश्वर की सहायता से आध्यात्मिक अहंकार के बारे में पर्याप्त रूप से बात की है, जिसके द्वारा, जैसा कि कहा गया है, सिद्ध लोग प्रलोभित होते हैं। इस प्रकार का अहंकार कुछ ही लोग जानते हैं और कुछ ही लोग इसका अनुभव करते हैं, क्योंकि बहुत से लोग हृदय की पूर्ण पवित्रता प्राप्त करने का प्रयास नहीं करते, ताकि वे ऐसी परीक्षाओं तक पहुँच सकें। यह आमतौर पर केवल उन लोगों पर ही आक्रमण करता है, जिन्होंने अन्य सभी भावों पर विजय प्राप्त कर ली है, और जो पहले से ही लगभग सद्गुण के शिखर पर हैं। हमारा सबसे चालाक शत्रु, उन्हें कामुक पाप में फँसाकर उन पर विजय प्राप्त करने में असमर्थ होकर, अब उन्हें एक आध्यात्मिक पतन के माध्यम से गिराने और नीचे लाने का प्रयास करता है, और इस प्रकार उन्हें उन सभी फलों से वंचित करने की साजिश रचता है जिन्हें उन्होंने पहले बड़ी मेहनत से प्राप्त किया है। जहाँ तक हमारी बात है, जो अभी भी कामुक वासनाओं के जाल में फँसे हुए हैं, वह हमें इस तरह लुभाने की जहमत भी नहीं उठाता, बल्कि हमें भोड़े, और कह सकते हैं, कामुक अहंकार से ठोकर लगवाता है। और इसलिए, इस संबंध में—जिसमें हमारे जैसे लोगों के गिरने का सबसे अधिक खतरा है, और विशेष रूप से युवा या नवसिखिया संन्यासियों की आत्माओं का—मैं इसे आवश्यक मानता हूँ कि मैं कुछ शब्द कहूँ, जैसा कि हमने वादा किया था।

१६. यह सांसारिक गर्व, जैसा कि हमने कहा है, यदि—संसार का परित्याग करने की उचित शुरुआत करने में असफल रहने और आवश्यक उत्साह की कमी के कारण—संन्यासी की आत्मा में बना रहता है, तो यह उसे उसकी पूर्व सांसारिक अहंकार से उतरकर मसीह की सच्ची नम्रता तक पहुँचने से रोकता है; यह पहले उसे अवज्ञाकारी और हठी बनाता है; तो यह उसे नम्र और विनम्र होने, साथ ही अपने सभी भाइयों के बराबर व्यवहार करने और बिना किसी विशेषता के दूसरों की तरह जीने से रोकता है; विशेष रूप से, यह उसे परमेश्वर और हमारे उद्धारकर्ता की आज्ञा के अनुसार, सभी सांसारिक संपत्तियों से खुद को मुक्त करने की अनुमति नहीं देता; और फिर भी, जब कि संसार का त्याग सभी चीजों के सूली पर चढ़ाए जाने का प्रदर्शन ही है, और वास्तव में इसकी शुरुआत या निर्माण किसी अन्य आधार पर नहीं किया जा सकता, सिवाय इसके कि स्वयं को इस संसार के सभी मामलों के लिए आध्यात्मिक रूप से मृत माना जाए, और यह विश्वास किया जाए कि मनुष्य को हर दिन शारीरिक रूप से भी मरना चाहिए, – इसके विपरीत, यह उसे लंबी उम्र की आशा करने के लिए प्रलोभित करता है, उसे विभिन्न दीर्घकालिक बीमारियों की संभावना प्रस्तुत करता है, यदि वह, कुछ भी न बचने पर, अपने संसाधनों के बजाय दूसरों के संसाधनों से अपना भरण-पोषण करना शुरू कर दे तो उसे शर्म और लाज से बेचैन कर देता है, और उसमें यह धारणा पैदा करता है कि दूसरों के माध्यम से भोजन और वस्त्र प्राप्त करने की तुलना में अपने स्वयं के साधनों से प्राप्त करना कहीं बेहतर है, यह याद दिलाते हुए, इसकी पुष्टि में, निम्नलिखित कहावत: *'प्राप्त करने से देना अधिक धन्य है'* (प्रेरितों के काम 20:35), – जिसका सच्चा अर्थ ये लोग, जिनके हृदय सुन्न और ठंडे हो गए हैं, कभी नहीं समझ सकते।

१७. एक भिक्षु जिसने इस प्रकार संसार का त्याग खराब तरीके से शुरू किया है, वह मसीह की सच्ची और सरल नम्रता को कभी नहीं अपना सकता। वह न तो कभी अपने कुलीन जन्म का घमंड करना छोड़ेगा, न ही अपने पूर्व सांसारिक जीवन पर गर्व करना—जिसे उसने केवल शरीर से त्यागा है, हृदय से नहीं—न ही उस धन पर गर्व करना जो

उसने अपनी ही बर्बादी के लिए रख रखा है; क्योंकि इसके कारण, वह अब संन्यास के अनुशासन के बोझ को समान भाव से सहन नहीं कर सकता, न ही किसी वरिष्ठ के निर्देशों के प्रति समर्पण कर सकता है। जो कोई भी अहंकार से ग्रस्त होता है, वह आज्ञापालन या अधीनता के किसी भी नियम का पालन करना अपमानजनक समझता है; वास्तव में, वह आध्यात्मिक जीवन की पूर्णता पर सामान्य शिक्षा को सुनने के लिए भी अनिच्छुक होता है, और कभी-कभी उससे पूर्णतः विमुख हो जाता है, विशेषकर जब, अपने अंतःकरण द्वारा फटकारे जाने पर, उसे संदेह होता है कि यह जानबूझकर उसके विरुद्ध निर्देशित है। दूसरी स्थिति में, उसका हृदय और भी अधिक कटु हो जाता है और क्रोध से भर उठता है। इसके बाद, वह ऊँचे स्वर में बोलता है, अभद्र भाषा का प्रयोग करता है, एक चुनौतीपूर्ण और कटु उत्तर देता है, एक गर्वपूर्ण और बेचैन चाल अपनाता है, और बेतहाशा बकबक करने लगता है। इस प्रकार ऐसा होता है कि आध्यात्मिक संवाद न केवल उसे किसी भी प्रकार का लाभ नहीं पहुँचाता, बल्कि इसके विपरीत हानिकारक साबित होता है, और उसके लिए बड़े पाप का कारण बन जाता है।

18. मैंने सुना है कि एक युवा भिक्षु ने, जब आबा ने उसे डाँटा कि उसने 'संसार त्यागने के बाद कुछ समय तक दिखाई गई विनम्रता को त्याग दिया था और शैतानी घमंड से भर गया था', तो उसने अत्यंत अहंकार से उत्तर दिया: 'क्या मैंने कुछ समय के लिए केवल हमेशा के लिए अधीन रहने के लिए ही विनम्रता दिखाई थी?' – इस पूरी तरह से असंयमी और आपराधिक उत्तर पर, वरिष्ठ आश्चर्य से इतने स्तब्ध हो गए कि उनकी वाणी अटक गई, मानो उन्होंने ऐसे शब्द किसी मनुष्य से नहीं, बल्कि स्वयं प्राचीन लूसिफर से सुने हों, और वह ऐसी अभद्रता के विरुद्ध अपने होठों से एक भी शब्द नहीं बोल सका, बल्कि केवल अपने हृदय से आहें और कराहें भर सका, और मन ही मन हमारे उद्धारकर्ता के बारे में कहे गए शब्दों को चुपचाप दोहराता *रहा: 'जो परमेश्वर के स्वरूप में था... आज्ञाकारी बनकर स्वयं को नम्र किया*—कुछ समय के लिए नहीं (जैसा कि गर्व की शैतानी आत्मा से ग्रस्त यह व्यक्ति कहता है), बल्कि *'मृत्यु तक'* (फिलि. 2:6, 8)।

19. यह सांसारिक गर्व निम्नलिखित तरीकों से प्रकट होता है: बात करने में यह तीखा होता है, चुपचाप – चिड़चिड़ापन; हँसी-मज़ाक में, ज़ोर-ज़ोर से, शोरगुल भरी हँसी; दुख में – बेमतलब का अंधकार; जवाब में, तीखापन; बातचीतों में, तुच्छता, दिल लगाए बिना मनमानी ढंग से शब्द फेंकना। इसमें धैर्य नहीं है, यह प्रेम से अपरिचित है, अपमान पहुँचाने में निडर है, उन्हें सहने में कायर है, अपनी इच्छा और संकल्प के आगे न चलने पर आज्ञा मानने में सुस्त है, वह उपदेश के प्रति अडिग रहती है, अपनी इच्छाओं को त्यागने में असमर्थ है, दूसरों के अधीन होने में अत्यंत जिद्दी है; वह हमेशा अपनी बात मनवाने का प्रयास करती है, और कभी भी किसी और के आगे झुकने को तैयार नहीं होती; और इस प्रकार ऐसा होता है कि, हितकारी सलाह स्वीकार करने में असमर्थ हो जाने पर, वह बड़ों के निर्णय की तुलना में अपनी राय पर अधिक भरोसा करती है।

२०. पतन के ऐसे ही चरणों के माध्यम से, जो एक बार गर्व से ग्रस्त हो जाता है, वह गहराई में डूबकर, सामुदायिक जीवन के कठोर अनुशासन से भयभीत होकर पीछे हट जाता है, और, – यह मानते हुए कि, यदि वह पूर्णता के मार्ग पर थोड़ी ही प्रगति करता है, तो इसका कारण भाइयों के साथ उसका मेल-जोल उसे पीछे खींच रहा है, और यह कि, यदि वह धैर्य और विनम्रता प्राप्त करने में थोड़ी ही प्रगति करता है, तो यह दूसरों की गलती है, उनके हिस्से की बाधाओं के कारण, – उसमें एक एकांत कोठरी में रहने की इच्छा विकसित हो जाती है, या वह कई लोगों को एक कठोर जीवन शैली की ओर आकर्षित करने के उद्देश्य से एक अलग मठ स्थापित करने का भी उपक्रम करता है, और जो लोग उसकी शिक्षा और मार्गदर्शन का पालन करना चाहिए, उन्हें इकट्ठा करने की जल्दी में रहता है, इस प्रकार वह खुद को एक अयोग्य शिष्य से सबसे अयोग्य शिक्षकों में बदल देता है।

२१. अतः यदि हम चाहते हैं कि हमारी इमारत शिखर तक पहुँचे और परमेश्वर को प्रसन्न करे, तो आइए हम इसके नींव को अपनी स्वार्थी इच्छा के अनुसार नहीं, बल्कि सुसमाचार की सटीक शिक्षा के अनुसार रखने का प्रयास करें, जिसके अनुसार ऐसा नींव परमेश्वर के भय और नम्रता के अलावा और कुछ नहीं हो सकता, जो हृदय की कोमलता और सरलता से उत्पन्न हुई हो। विनम्रता, तथापि, उन सभी चीज़ों को त्यागे बिना प्राप्त नहीं की जा सकती, जिनके बिना अच्छी आज्ञाकारिता, दृढ़ धैर्य, अटूट कोमलता, या पूर्ण प्रेम में स्थिर होना असंभव है; और इनके बिना, हमारा हृदय किसी भी प्रकार से पवित्र आत्मा का वासस्थान नहीं बन सकता, जैसा कि प्रभु भविष्यवक्ता के माध्यम से घोषणा करते हैं: *'मैं किस पर दृष्टि करूँगा, परन्तु नम्र और शांत-स्वभाव वालों पर, और जो मेरे वचन से काँपते हैं'* (भजन संहिता 66:2)।

22. तो फिर, मसीह के उस सिपाही को, जो वैध रूप से आध्यात्मिक संघर्ष में संलग्न रहते हुए, प्रभु द्वारा मुकुट पहनाए जाने की इच्छा रखता है, हर संभव तरीके से इस सबसे क्रूर जानवर—जो सभी सद्गुणों को निगल जाता है—को नष्ट करने का प्रयास क्यों करना चाहिए, यह निश्चित जानते हुए कि जब तक यह उसके हृदय में रहेगा, वह

न केवल सभी भावों से खुद को मुक्त करने में असमर्थ रहेगा, बल्कि यदि वह कोई भी सद्गुण प्राप्त कर ले, तो वह भी इसके विष से नष्ट हो जाएगा। क्योंकि सद्गुणों का भवन किसी भी प्रकार से हमारी आत्मा में तब तक नहीं बनाया जा सकता जब तक कि पहले हमारे हृदय में सच्ची नम्रता की नींव नहीं रखी जाती; और यह नम्रता, सबसे दृढ़ता से स्थापित होकर, अकेले ही पूर्णता और प्रेम के भवन को, जिसे इसके उच्चतम बिंदु तक उठाया गया है, दृढ़ता से सहारा देने में सक्षम है। इस उद्देश्य के लिए, हमें सबसे पहले, सच्ची सद्भावना के साथ अपने भाइयों और बहनों के प्रति सच्ची विनम्रता प्रकट करनी चाहिए, बिना किसी भी तरह से उन्हें दुखी करने या ठेस पहुँचाने की अनुमति दिए – कुछ ऐसा जो हम तब तक हासिल नहीं कर सकते जब तक कि मसीह के प्रेम के लिए, सभी चीजों का सच्चा त्याग हमारे भीतर गहराई से जड़ न जमा ले, जिसमें सभी सांसारिक संपत्तियों का पूर्ण त्याग शामिल है; दूसरी बात, हमें हृदय की सादगी और बिना किसी दिखावे के आज्ञाकारिता और समर्पण का जुआ स्वीकार करना चाहिए, ताकि अबा की आज्ञा ' ' के अलावा, हमारे भीतर कोई अन्य इच्छा नहीं रहनी चाहिए; एक ऐसी अवस्था जिसे कोई भी तब तक नहीं देख सकता जब तक कि वह स्वयं को इस संसार के लिए मृत ही न माने, बल्कि स्वयं को मूर्ख और निरर्थक भी न समझे, और बिना किसी हिचकिचाहट के जो कुछ भी वरिष्ठ आदेश दें, उसे इस विश्वास के साथ पूरा करे कि ऐसी सभी चीजें पवित्र हैं और स्वयं ईश्वर द्वारा घोषित की गई हैं।

२३. जब हम ऐसा भाव बनाए रखते हैं, तो निस्संदेह इसके बाद नम्रता की एक ऐसी अटूट और अपरिवर्तनीय अवस्था आती है कि स्वयं को सभी से नीच समझकर, हम उस पर जो कुछ भी डाला जाता है, उसे परम धैर्य के साथ सहन करेंगे, चाहे वह कितना भी निराधार, अपमानजनक या यहां तक कि हानिकारक क्यों न हो, – मानो यह हमारे आध्यात्मिक पितरों द्वारा हम पर थोपा गया हो (आज्ञापालन या परीक्षा के एक कार्य के रूप में)। और न केवल हम ऐसी सभी बातों को आसानी से सहन करेंगे, बल्कि हम उन्हें तुच्छ और महत्वहीन भी समझेंगे, यदि साथ ही साथ, हम अपने प्रभु और सभी संतों के दुखों को लगातार अपने मन में रखें और उन्हें महसूस करें; क्योंकि तब हम जो बदनामी सहते हैं, वह हमें उतनी ही हल्की लगेगी, जितना हम उनके महान कार्यों और फलदायी जीवन से पीछे रहते हैं। इससे उत्पन्न सहन करने की प्रेरणा तब और भी प्रबल हो जाएगी, यदि हम साथ ही यह भी विचार करें कि हम भी शीघ्र ही इस संसार से चले जाएँगे और, अपने जीवन के निकट अंत में, तुरंत ही उनके आनंद और महिमा में सहभागी बन जाएँगे। ऐसा चिंतन न केवल अहंकार के लिए, बल्कि सभी वासनाओं के लिए विनाशकारी है। इसके बाद, हमें परमेश्वर के प्रति ऐसी विनम्रता को दृढ़ता से बनाए रखना चाहिए: यह तब हासिल होगा जब हमें यह विश्वास हो कि अपनी इच्छा से, उनकी मदद और अनुग्रह के बिना, हम सद्गुण की पूर्णता से संबंधित कुछ भी नहीं कर सकते, और यदि हम ईमानदारी से विश्वास करते हैं कि जो कुछ भी हमने समझने में कामयाबी हासिल की है, वह भी उनकी देन है।

६. विचारों के विरुद्ध, और उनके माध्यम से दुष्ट आत्माओं के विरुद्ध संघर्ष

1. *प्रश्न।* हम देखते हैं कि अपने सभी प्रयासों के बावजूद, हम अपना ध्यान बनाए रखने में बिल्कुल भी सफल नहीं हो पाते हैं। मन को भटकने से रोकना असंभव है। यहाँ तक कि जब कोई महसूस करता है कि हृदय किसी विशेष चिंतन की ओर गंभीरता से आकर्षित हो रहा है, तो मन, असंवेदनशीलता से उससे दूर बह जाता है, और अपार गति से वापस अपनी सामान्य भटकन में डूब जाता है। इस प्रकार, प्रत्येक दिन अनगिनत बार, यह अपनी ही कल्पनाओं की उड़ान द्वारा इधर-उधर बंदी बना लिया जाता है। परिणामस्वरूप, कोई इस कमजोरी के लिए वांछित उपचार प्राप्त करने की निराशा में भी डूब जाता है, और यह लगता है कि इस मामले पर अपना ध्यान केंद्रित करना एक व्यर्थ प्रयास है, जब कोई देखता है कि आत्मा, सब कुछ होने के बावजूद, फिर भी हर पल तीव्र उड़ानों में भटकने निकल पड़ती है। आप उसे ईश्वर के भय के द्वारा आध्यात्मिक चिंतन की ओर खींचते हैं, लेकिन इससे पहले कि वह इसमें स्थिर हो पाती, वह एक क्षण में फिर से दृष्टि से ओझल हो जाती है। और फिर, जैसे कि उसके भागने के इरादे का अनुमान लगाते हुए, आप उसे ठीक शुरुआत में ही पकड़ लेते हैं और उसे उस चिंतन में वापस खींच लाते हैं जिससे वह भटकना शुरू कर चुकी थी, मानो उसे दिल की सबसे गहरी एकाग्रता से बाँध ही देना हो—लेकिन जब आप इसी तरह उस पर मेहनत कर रहे होते हैं, तब भी वह मछली पकड़ने वाले के हाथों से छूटी साँप की तरह भीतरी अभयारण्य से और भी तेजी से फिसलकर निकल जाती है। इस प्रकार हर दिन अपने पूरे उत्साह के साथ अपने विचारों को काबू में रखने के लिए प्रयास करते हुए, और इसमें कोई सफलता न देखते हुए, कोई अनजाने ही इस निष्कर्ष पर पहुँच जाता है कि मन की ऐसी भटकन हमसे उत्पन्न नहीं होती, बल्कि निस्संदेह यह हमारी स्वभाविक प्रकृति ही है (– संकलित कृतियाँ 7, 3)।

2. मामले की ठीक से जाँच-पड़ताल किए बिना इतनी जल्दबाजी में निष्कर्ष निकालना बुद्धिमानी नहीं है। केवल अपनी किसी चीज़ में असफल होने की अक्षमता या कौशल की कमी के कारण यह मान लेना कि ऐसी सफलता किसी के लिए भी असंभव है, अनुचित है। यह ऐसा है जैसे कोई व्यक्ति खुद से तैरने और पानी में तैरते रहने में असमर्थ होने

के कारण, यह निष्किर्ष निकाले कि चूँकि उसका शरीर, अपने वज़न के कारण, पानी में नहीं तैर सकता, और चूँकि हर किसी का शरीर उसके जैसे ही होता है, इसलिए किसी का भी शरीर पानी में नहीं तैर सकता, और परिणामस्वरूप कोई भी तैर नहीं सकता – शरीरों का स्वभाव ही ऐसा है कि तैरना असंभव है। हालाँकि ऐसा निष्किर्ष उसे कितना भी सही लगे, उसका अनुभव इसे सही नहीं ठहराता। ऐसा ही आपका निर्णय भी है। हमारा मन, अपनी प्रकृति से ही, निष्क्रिय नहीं रह सकता; तो फिर, यह क्यों अनिवार्य है कि, यदि उसके भीतर अपनी गतिविधियों का अभ्यास करने और स्वयं को लगातार व्यस्त रखने के लिए पहले से सावधानीपूर्वक तैयार किए गए विषय नहीं हैं, तो वह—अपनी ही चपलता के कारण—यहाँ-वहाँ भागे और हर जगह इधर-उधर मंडराए, जब तक कि, लंबे समय के अभ्यास और निरंतर आदत के माध्यम से—जिसे आप व्यर्थ श्रम कहते हैं—वह अनुभव से न सीख ले किस सामग्री को उसे अपनी स्मृति में संग्रहीत करना चाहिए, ताकि वह अपनी अथक उड़ानों में उन्हीं पर केंद्रित रह सके, और इस श्रम में अटूट समर्पण के माध्यम से शत्रु के विरोधी सुझावों को खारिज करने की शक्ति प्राप्त कर सके—जिनके कारण वह पहले विचलित होता था—और इस प्रकार उस स्थिति (संतुलन और आंतरिक शांति की) में अडिग रह सके जिसकी वह इच्छा करता है। इसलिए, हमें मन की चंचलता और उद्देश्यहीन भटकन को मानव स्वभाव, या उसके स्रष्टा ईश्वर का दोष नहीं मानना चाहिए। क्योंकि धर्मग्रंथ का वचन सत्य है: *'ईश्वर ने मनुष्य को सीधा बनाया, परन्तु इन्होंने'* (लोगों ने) *'कई विचार खोज निकाले'* (सभोपदेशक 7:30)। परिणामस्वरूप, हमारे विचारों की गुणवत्ता हम पर निर्भर करती है। और भजनकार कहता है: *'धन्य है वह मनुष्य जिसका भरोसा तुझ पर है; वह अपनी आकांक्षाओं को अपने हृदय में रखता है'* (भजन संहिता 83:6)। देखिए, यह हमारी शक्ति में है कि हम अपने हृदयों में या तो 'उन्नति'—अर्थात् ऐसे विचार जो परमेश्वर तक पहुँचते हैं—या 'पतन'—अर्थात् ऐसे विचार जो नीचे, सांसारिक और शारीरिक चीजों की ओर गिरते हैं, स्थापित करें। यदि विचार हमारी शक्ति में नहीं होते, तो क्या प्रभु फरीसियों को यह कहते हुए फटकार नहीं लगाते: *'तुम अपने हृदयों में दुष्ट विचार क्यों पालते हो?'* (मत्ती 9:4)? न ही उन्होंने भविष्यवक्ताओं के माध्यम से आज्ञा दी होती: *'मेरी आँखों के सामने से अपने बुरे विचारों को दूर करो'* (यशायाह 1:16), और: *'तुम्हारे दुष्ट विचार तुम्हारे भीतर और कितनी देर तक रहेंगे?'* (यिर्मयाह 4:14)। (– प्रवचन 7, 4)।

3. यह सच है कि कई व्यर्थ विचार हमारी इच्छा के विरुद्ध हमें परेशान करते हैं और हमारी जानकारी के बिना ही हमें धोखा देते हैं, वे इतनी सूक्ष्मता और चालाकी से हममें प्रवेश करते हैं कि हम न केवल उनके प्रवेश को रोकने में असमर्थ होते हैं, बल्कि उन्हें समझना भी बहुत मुश्किल होता है; फिर भी, उन्हें स्वीकारना या अस्वीकार करना किसी भी व्यक्ति के लिए संभव है, जो ईश्वर की मदद से, इस उद्देश्य के लिए अपनी लगन और प्रयास लगाता है। जैसे उनका उत्पन्न होना हम पर निर्भर नहीं करता, वैसे ही उनका अस्वीकार या स्वीकृति हमारी इच्छा के अधीन है। इसके अलावा, विचारों के उत्पन्न होने पर ही, हर बात को विचारों के आक्रमण या उन आत्माओं के कारण नहीं मान लेना चाहिए जो उन्हें स्थापित करना चाहती हैं: बल्कि यह हम पर निर्भर है कि हम अपने विचारों की प्रकृति को सुधारें, और यह सुनिश्चित करें कि हमारे हृदयों में सांसारिक और भौतिक विचारों के स्थान पर आध्यात्मिक और पवित्र विचार उत्पन्न हों, यदि हमेशा नहीं, तो अधिकांशतः। जब कोई व्यक्ति पवित्र धर्मग्रंथों का बुद्धिमानी और लगन से अध्ययन करता है, भजनों और गायन का अभ्यास करता है, उपवास और जागरण में रहता है, और लगातार भविष्य—स्वर्ग के राज्य और अग्निमय गेहेना—और परमेश्वर के सभी कार्यों को याद रखता है; तो बुरे विचार कम हो जाते हैं और कम बार दिखाई देते हैं। इसके विपरीत, जब कोई व्यक्ति सांसारिक चिंताओं और देह संबंधी मामलों में व्यस्त रहता है, और व्यर्थ और बेकार की बातों में लिप्त रहता है, तो हमारे भीतर बुरे विचार बढ़ जाते हैं (– संग्रह 1, 16–17)।

४. हमारे मन के कामकाज की तुलना एक चक्की के पत्थर से की जा सकती है, जो पानी के तीव्र प्रवाह के कारण तेज़ी से घूमता है। जब तक पानी उसे घुमाता है, तब तक वह घूमना बंद नहीं कर सकता; फिर भी यह चक्की वाले पर निर्भर है कि वह गेहूँ, राई, या भूसी पीसे। इसी प्रकार, इस वर्तमान जीवन में, हमारा मन—जो सभी दिशाओं से आने वाले संस्कारों की धाराओं से लगातार गतिमान रहता है—विचारों के उथल-पुथल से मुक्त नहीं हो सकता; लेकिन इनमें से किसे स्वीकार करना या हृदय में लेना है, यह हमारी इच्छा और विवेक पर निर्भर करता है। यदि, जैसा कि कहा गया है, हम लगातार पवित्र शास्त्र के अध्ययन में लगे रहते हैं, अपनी स्मृति को आध्यात्मिक विषयों से भरते हैं, और पूर्णता की इच्छा तथा भविष्य के आनंद की आशा को पोषित करते हैं; तो इससे आध्यात्मिक विचार उत्पन्न होंगे, और हमारा मन उन विषयों पर निरंतर मनन करता रहेगा जिनमें हमने गहराई से अध्ययन किया है। हालाँकि, यदि लापरवाही और उपेक्षा के कारण, हम वासनाओं और व्यर्थ की बातों में लगे रहते हैं, या खुद को सांसारिक चिंताओं और व्यर्थ की फिक्रों को सौंप देते हैं; तो, अपनी प्रकृति के अनुसार, विचार बाद में खरपतवार की तरह उगेंगे और हमारे हृदय को हानिकारक परिश्रम देंगे, हमारे प्रभु और उद्धारकर्ता के वचन के अनुसार: *'जहाँ* तुम्हारा *धन है'*—अर्थात्, तुम्हारे कर्म और तुम्हारा ध्यान—वहाँ *'तुम्हारा हृदय भी होगा'* (मत्ती 6:21)। (कुलु. 1:18)।

5. हमें यह जानना चाहिए कि हमारे विचारों के तीन स्रोत हैं: ईश्वर से, शैतान से, और स्वयं हमसे। ईश्वर से – जब वह पवित्र आत्मा के प्रबोधन से हम पर कृपा करते हैं, और हमारे भीतर या तो उच्चतम उपलब्धि के लिए उत्साह जगाते हैं, या हमारी असफलता और आलस्य तथा लापरवाही में लिप्त रहने पर पश्चाताप उत्पन्न करते हैं; या जब वह हमें स्वर्गीय रहस्य प्रकट करते हैं और हमारे इरादों को बेहतर कर्मों की ओर निर्देशित करते हैं। इस प्रकार प्रभु ने आर्टैक्सर्कस को अभिलेखों के लिए पूछने के लिए प्रेरित किया; और जब उसे उनसे मर्दकै के अच्छे कर्मों के बारे में पता चला, तो उसने यहूदी लोगों के नरसंहार के अपने पिछले क्रूर फरमान को तुरंत रद्द कर दिया (एस्तेर, अध्याय 6)। इसी प्रकार प्रेरितों से भी वादा किया गया था: *'क्योंकि तुम नहीं, जो बोलोगे, परन्तु तुम्हारे पिता का आत्मा तुम में बोलता है'* (मत्ती 10:20)। – विचार शैतान से उत्पन्न होते हैं जब वह हमें भटकाने का प्रयास करता है, उनके माध्यम से उत्कट आनंद जगाता है, या चालाक छल से बुराई को भलाई के भेष में प्रस्तुत करता है, हमारे सामने *स्वयं को 'प्रकाश के स्वर्गदूत' के रूप में 'परिवर्तित करता है'* (2 कुरिन्थियों 11:14)। इस प्रकार उसने *'यहूदा इस्करियोत के हृदय में प्रभु को धोखा देने का विचार डाला'* (यूहन्ना 13:2), और हनन्याह के हृदय में *'पवित्र आत्मा से झूठ बोलने का विचार डाला'* (प्रेरितों के काम 5:3)। – विचार हमारे भीतर तब उत्पन्न होते हैं जब हम स्वाभाविक रूप से उस बात को याद करते हैं जो हमने देखी, सुनी, या की है (– संग्रह 1.19)।

6. हमें विचारों के इस त्रिगुण कारण को हमेशा ध्यान में रखना चाहिए, ताकि हम अपने हृदय में उत्पन्न होने वाले विचारों का उनके द्वारा न्याय न करें, बल्कि उनके अनुसार व्यवहार करें। इस संबंध में, हमें कुशल सिक्का-परखने वालों का अनुकरण करना चाहिए – जो यह सटीक रूप से पहचानना जानते हैं कि कोई सिक्का सोने का बना है, और क्या वह शुद्ध सोना है या केवल उसकी चमक में सोने जैसा दिखने वाला तांबा है; क्या उस पर राजा की प्रतिमा अंकित है, और यदि है, तो क्या वह वैध रूप से अंकित है; और क्या सिक्के का वजन भी वैध है। हमें इन सभी बातों को अपने विचारों पर आध्यात्मिक रूप से लागू करना चाहिए। सबसे पहले, हमें यह जांचना चाहिए कि हमारे हृदय में जो कुछ भी प्रवेश किया है, वह वास्तव में ईश्वर-प्रेरित ( ) है या नहीं। उदाहरण के लिए, यदि कोई विशेष शिक्षा प्रस्तुत की जाती है, तो हमें यह विचार करना चाहिए कि क्या उसे पवित्र आत्मा की दिव्य अग्नि से शुद्ध किया गया है, या क्या यह यहूदी अंधविश्वास से संबंधित है, या क्या यह दुनिया के घमंडी दर्शन से उत्पन्न है और केवल धार्मिकता का मुखौटा पहने हुए है। ऐसा करके, हम प्रेरित की इस आज्ञा का पालन करेंगे: *'हर आत्मा पर विश्वास न करो, बल्कि आत्माओं की परीक्षा करो कि वे परमेश्वर की हैं या नहीं'* (1 यूहन्ना 4:1); और हम सत्य से भटकने से सुरक्षित रहेंगे। लेकिन जिन्होंने इस चेतावनी पर ध्यान देने का ध्यान नहीं रखा, वे विश्वास से एक विनाशकारी विधर्म के अधीन हो गए। चिकनी-जुबान धोखेबाजों ने उन्हें पहले कुछ धार्मिक भावनाओं और तर्कों के साथ अपनी ओर आकर्षित किया, जो पवित्र विश्वास के अनुरूप थे, जैसे सोने की चमक से; और फिर उन्हें विश्वास के विपरीत सिद्धांत सिखाए, जिन्हें प्रारंभिक सम्मानजनक दिखावे से धोखा खाकर, उन्होंने जांच-परख करने का विचार भी नहीं किया; और, इस प्रकार नकली तांबे के सिक्के को सोना समझने के बाद, वे विधर्मी त्रुटियों में पड़ गए। – दूसरे, हमें यह सुनिश्चित करने के लिए बहुत सावधानी बरतनी चाहिए कि क्या हम पवित्र धर्मग्रंथ की कोई झूठी व्याख्या सुन रहे हैं, जो दिव्य वचनों की सच्ची समझ के शुद्ध सोने का भेष धारण करके, हमें इस कीमती धातु के दिखावे से धोखा देने का प्रयास करती है - ताकि हम इसे उस तांबे के मिश्रण के साथ स्वीकार कर लें जो झूठे तौर पर इसमें मिलाया गया है। इस प्रकार शैतान ने स्वयं मसीह उद्धारकर्ता को प्रलोभित करने का प्रयास किया। और इसी प्रकार वह हम सभी को प्रलोभित करता है, हमारे प्रभु के साथ किए गए अपने प्रयास की तरह ही, सफलता के बिना नहीं। – तीसरा, – हमें हर तरह से सतर्क रहना चाहिए, कहीं ऐसा न हो कि शत्रु, पवित्र धर्मग्रंथ के कीमती वचनों को चालाक व्याख्या के माध्यम से तोड़-मरोड़कर, हमें उन्हें गलत तरीके से लागू करने और उपयोग करने के लिए मनाने में सफल हो जाए, और इस काम को परंपरा का भ्रामक आवरण देकर छिपाए, जैसे कि यह बुजुर्गों से उत्पन्न हुआ हो, ठीक वैसे ही जैसे कोई अवैध रूप से एक नकली सिक्के पर शाही मुहर लगा सकता है। वह ऐसा करने में तब सफल होता है जब वह हमें अत्यधिक और बोझिल परिश्रम, अत्यधिक जागना, अव्यवस्थित प्रार्थनाओं और अनुचित पठन के लिए प्रलोभित करता है, और, भलाई के वादे से लुभाकर, हमें आत्मा-विनाशकारी अंत की ओर ले जाता है; या जब वह हमें अनावश्यक भ्रमण करने की सलाह देता है, ताकि हमें हमारी एकांतवास से दूर कर सके और हमें धन्य मौन से वंचित कर सके; या जब वह धार्मिक, असहाय महिलाओं की देखभाल करने का विचार डालता है, ताकि व्यक्ति को विनाशकारी चिंताओं में उलझाया जा सके; या जब वह कई लोगों का निर्माण करने के बहाने, पवित्र पद की इच्छा करने के लिए उकसाता है, जिससे व्यक्ति का ध्यान हमारे विनम्र ध्येय से भटक जाता है। इस तरह के सभी सुझाव, जो दया, धार्मिकता और परम सफलता के भेष में होते हैं, अनुभवहीन लोगों को धोखा देते हैं। दिखावटी तौर पर, वे सच्चे राजा के सिक्कों जैसे दिखते हैं; लेकिन उन्हें सच्चे आध्यात्मिक सिक्का-निर्माताओं—अनुभवी रूढ़िवादी पिताओं—द्वारा नहीं ढाला गया है, बल्कि

उन्हें नुकसान और विनाश के लिए राक्षसों की चालाकी से गढ़ा गया है। नीतिवचन लेखक का वचन उन पर पूरी तरह से लागू होता है: *'ऐसा मार्ग है जो मनुष्य को सीधा दिखाई देता है, परन्तु उसके अन्त में वह नरक के द्वारों में पहुँचाता है'* (नीतिवचन 16:25)। – अनुभवी सिक्का-निर्माता का वज़न की जाँच के संबंध में अंतिम (चौथा) अवलोकन, हमारे आध्यात्मिक प्रयासों में तब लागू होगा जब, जब भी कोई विचार हमें कुछ करने के लिए प्रेरित करे, हम उसे अपने विवेक की तुला पर रखकर, यह पूरी कठोरता से जाँचें कि क्या उसमें सच्चा वज़न है – क्या वह परमेश्वर के भय से भारी है, क्या इसमें इसके अर्थ और महत्व के संदर्भ में वह सब कुछ है जो आवश्यक है—क्या दिखावा और नवीनता इसे हल्का बनाती हैं, क्या अहंकार बाद में इसके भार को कम कर सकता है, और क्या मानवीय महिमा इसे क्षीण कर सकती है। इन सब पर विचार करने और प्रेरितों तथा भविष्यद्वक्ताओं की गवाहियों से इसे निर्धारित करने के बाद, हमें फिर या तो इसे उनके अनुरूप मानकर स्वीकार कर लेना चाहिए, या फिर, अत्यंत कठोरता से, इसे उनके विपरीत और हमारे लिए हानिकारक मानकर अस्वीकार कर देना चाहिए (– सोब. 1. 20. 21)।

७. इस प्रकार, हमें अपने हृदय के सभी कोनों की निरंतर परीक्षा करनी चाहिए, और तीव्र सतर्कता के साथ प्रवेश करने वालों के निशानों पर नज़र रखनी चाहिए, कहीं कोई मानसिक दानव, या स्वयं कोई सिंह या अजगर, वहाँ रेंगकर न आ जाए, और, और हमारे विचारों में असावधान होने पर, हमारे हृदय की गहराइयों में दूसरों के प्रवेश का मार्ग भी प्रशस्त कर दे। इस प्रकार, हमारे हृदय की मिट्टी को घण्टा-घण्टा और पल-पल तक सुसमाचार की जुताई से जोतकर—अर्थात् प्रभु के क्रूस के अनवरत स्मरण द्वारा—हम आसानी से विनाशकारी जानवरों के अड्डों और विषैले साँपों के बिलों को उजाड़ सकेंगे, और उन्हें अपने भीतर से बाहर निकाल सकेंगे (– संग्रह 1, 22)।

8. पूर्ण मन (जो अपने विचारों पर नियंत्रण रखता है) की छवि सुसमाचार में सेंचुरियन के चरित्र में खूबसूरती से मूर्त रूप में प्रस्तुत की गई है। उसके वृत्तांत में, नैतिक शक्ति – जो किसी को भी हर क्षणिक विचार से बह जाने से रोकती है, बल्कि अपने विवेक के अनुसार अच्छे विचारों को स्वीकार करने और उनसे विपरीत विचारों को बिना किसी कठिनाई के त्याग देने में सक्षम बनाती है – का वर्णन उनके निम्नलिखित शब्दों में किया गया है, यदि उन्हें रूपक रूप में समझा जाए: *'क्योंकि मैं भी एक ऐसा मनुष्य हूँ जो अधिकार के अधीन है, परन्तु मेरे अधीन सिपाही हैं; और मैं किसी से कहता हूँ "जा," तो वह जाता है; और किसी से, "आ," तो वह आता है; और अपने दास से, "यह कर," तो वह करता है'* (मत्ती 8:9)। यदि हम भी, अव्यवस्थित आंतरिक हलचलों और वासनाओं के विरुद्ध बहादुरी से लड़ते हुए, उन पर अपने अधिकार और अपनी बुद्धि का प्रभुत्व करने की शक्ति प्राप्त कर लें, अपने शरीर में युद्ध करने वाली कामवासनाओं को दबा दें, अपने विचारों के अव्यवस्थित समूह को मन के अधिकार के अधीन रख सकें, और, प्रभु के क्रूस के उद्धार करने वाले ध्वज के साथ, अपने हृदय की सीमाओं से सबसे दुष्ट शत्रु शक्तियों के समूह को भगा दें, तो ऐसी विजयों और जीतों के लिए हमें आध्यात्मिक अर्थ में एक शतमुखी के पद पर पदोन्नत किया जाएगा। और इस प्रकार, ऐसी गरिमा की ऊँचाइयों पर पहुँचकर, हम भी उसी आज्ञाकारक अधिकार और शक्ति के स्वामी होंगे, जिसके द्वारा हम अब उन विचारों से बह नहीं पाएँगे जिन्हें हम पालना नहीं चाहते, बल्कि उन विचारों में निवास और चिपके रहने में सक्षम होंगे जिनमें हमें आध्यात्मिक आनंद मिलता है, और दुष्ट प्रवृत्तियों को अधिकारपूर्वक आज्ञा देंगे: 'दूर हो जाओ!' – और वे दूर हो जाएँगे; जबकि अच्छे विचारों को आमंत्रित करते हुए: 'आओ,' और वे आएँगे; और हमारे सेवक—मांस—को हम शुद्धता और आत्म-संयम के लिए आवश्यक आज्ञा देंगे, और वह बिना किसी विरोध के इसे पूरा करेगा, आत्मा के विपरीत कामवासनाओं को अब और न जगाकर, बल्कि उसे हर आज्ञाकारिता दिखाएगा (—सोब. 7:5)।

9. लेकिन यह कैसे हासिल किया जाए? यह अपने आप तब होगा जब हम ईश्वर के साथ इतनी सच्ची एकता में होंगे कि वह हम में कार्य करे। प्रेरित इस बात की पुष्टि करते हैं जब वे कहते हैं: *'हमारी लड़ाई के हथियार देह संबंधी नहीं हैं, बल्कि ईश्वर के द्वारा किलों को ढाने के लिए शक्तिशाली हैं, और हम तर्कों तथा हर उस ऊँची चीज़ को जो ईश्वर के ज्ञान के विरुद्ध अपने आपको बड़ा ठहराती है, ध्वस्त कर देते हैं'* (2 कुरिन्थियों 10:4)। हम अपने विचारों पर काबू पाने के लिए जो कुछ भी करें, वह तब तक अप्रभावी रहेगा जब तक कि स्वयं ईश्वर, हमारे साथ अपने मिलन के माध्यम से, उसमें कार्य न करें। तब हमारे दुर्बल साधन मज़बूत और सर्व-विजयी हो जाएँगे—वे शत्रु के किलों को ध्वस्त कर देंगे और हर प्रकार के विचारों को धूल चटा देंगे और उन्हें बाहर भगा देंगे। और भविष्यद्वाणी का वचन हम में पूरा होगा: *'कमज़ोर कहे,* मैं बलवान हूँ', *'और नम्र लोग पराक्रमी हों'* (योएल 3:10-11)—और जैसा कि संत पौलुस अपने बारे में कहते हैं: *'क्योंकि जब मैं निर्बल होता हूँ, तब मैं बलवान होता हूँ'* (2 कुरिन्थियों 12:10)। क्योंकि तब *'ईश्वर की सामर्थ्य' 'हमारी दुर्बलता में'* सिद्ध होगी (– 9)। अतःआइए, हम अपने हृदय की सारी इच्छा के साथ, प्रभु के साथ एकता के लिए प्रयत्न करें, जब तक कि वह धन्य दाऊद ने अनुभव किया: *'मेरी आत्मा तेरे से चिपकी रहती है; तेरा दाहिना हाथ मुझे सम्हाले रहता है'* (भजन संहिता 62:9), – और हम में से प्रत्येक, उनके साथ मिलकर, गाना शुरू कर सकता है: *'मेरे लिये परमेश्वर से चिपका रहना अच्छा है'* (भजन संहिता 72:28)। बेशक, इसके लिए निरंतर प्रयास और

परिश्रम की आवश्यकता होती है; लेकिन इसके बिना, किसी भी प्रयास में सफलता नहीं मिल सकती। और तो और, इतने महत्वपूर्ण मामले में इसकी उम्मीद नहीं की जा सकती। कर्म के बिना कोई भी सद्गुण पूर्णता को प्राप्त नहीं करता – और हृदय के परम प्रयास के बिना कोई भी मन की स्थिरता को प्राप्त नहीं कर सकता। प्रभु के वचन यहाँ सीधे लागू होते हैं: *'परमेश्वर का राज्य बलपूर्वक लिया जाता है, और जो परिश्रम करते हैं वे उसे छीन लेते हैं'* (मत्ती 11:12)। ताकि हमारी आत्मा *'मसीह की पूर्ण कद-काठी के माप तक पहुँच सके'* (इफिसियों 4:13) - और *'प्रभु के साथ एक आत्मा'* बन सके (1 कुरिन्थियों 6:17) - इसके लिए उसे हमेशा बड़ी तीव्रता से सतर्क रहना चाहिए और अथक उत्साह के साथ इस पर परिश्रम करना चाहिए। इसे प्राप्त करने के बाद, यह प्रेरित के साथ गंभीरता से यह उद्घोष करने में शामिल हो सकता है: *'मैं उस में सब कुछ कर सकता हूँ जो मुझे बल देता है'* (फिलि. 4:13)। (– द कलेक्ट्स, पुस्तक 7, अध्याय 5 और 6 से एक सारांश)।

10. हमारा सारा ध्यान हमेशा उस एक बात की ओर क्यों केंद्रित रहना चाहिए—अर्थात्, अपने भटकते और इधर-उधर घूमते विचारों को शीघ्रता से परमेश्वर के स्मरण में वापस लाने के लिए? ठीक उसी प्रकार, जैसा कोई व्यक्ति गुंबद की गुंबदी को सही ढंग से ऊपर खड़ा करने और जोड़ने की इच्छा रखता है, वह लगातार केंद्र से एक रस्सी द्वारा संरचना के चारों ओर एक वृत्त खींचता है, जिससे उसकी वक्रता को पूरे हिस्से में एक समान दिशा मिलती है; इसी प्रकार, कोई भी व्यक्ति जो इस सहायता के बिना ऐसा कार्य करने का प्रयास करता है, भले ही उसमें बड़ी कुशलता हो, वह अचूक रूप से सही गोलाकारता बनाए नहीं रख सकता, और न ही वह एक नज़र में यह निर्धारित कर सकता है कि वह उससे कितनी दूर भटक गया है, बिना उपरोक्त शुद्धता के मार्गदर्शक का सहारा लिए: ठीक उसी प्रकार हमारी आत्मा भी है: यदि, ईश्वर की प्रेमपूर्ण स्मृति को अपने भीतर एक प्रकार के अचल केंद्र के रूप में स्थापित करने के बाद, हम बाद में, उससे आगे बढ़े और, उसे मार्गदर्शक मानकर, हर क्षण अपने सभी कार्यों और परिश्रमों की जांच करे, विचारों और कार्यों की गुणवत्ता निर्धारित करने के लिए उसे एक परीक्षण के रूप में उपयोग करे—ताकि कुछ को स्वीकार करे और कुछ को अस्वीकार करे—और उसे, एक विश्वसनीय कम्पास के रूप में, किए गए सभी कार्यों को निर्देशित करने के लिए उपयोग करे; तो वह किसी भी तरह से उस आध्यात्मिक भवन का निर्माण नहीं कर पाएगा, जैसा उसे करना चाहिए, जिसका वास्तुकार पौलुस है (1 कुरिन्थियों 3:10), और न ही वह उसे उस घर की शोभा प्रदान कर पाएगा, जिसके लिए धन्य दाऊद ने अपने हृदय में प्रभु के लिए तैयारी करने की इच्छा से पुकारा था: *'हे प्रभु, मैं तेरे भवन की शोभा और उस स्थान से प्रेम करता हूँ जहाँ तेरा महिमा निवास करती है'* (भजन संहिता 25:8), बल्कि मूर्खतापूर्वक अपने हृदय में एक ऐसा घर खड़ा करेगा जो अनाकर्षक, पवित्र आत्मा के अयोग्य और हमेशा ढहने की कगार पर होगा, जिसका भाग्य यह नहीं होगा कि उसे उस की ओर से महिमा प्राप्त हो जिसका वह प्रतीक्षा कर रहा है, बल्कि यह कि उसे आगंतुक (अर्थात् पवित्र आत्मा), बल्कि अपनी ही संरचना के मलबे के नीचे दयनीय रूप से कुचल दिया जाए (– प्रवचन 24:6)।

11. मुख्य रूप से हमारे विचारों के माध्यम से ही अंधकार की शक्तियाँ हम पर कार्य करती हैं, और बेशक हमारे लिए उनसे निपटना आसान होता अगर हम उन दुश्मनों से लगातार और बड़ी संख्या में घिरे न होते जो हमारी बुराई चाहते हैं – लेकिन इससे डरने की कोई आवश्यकता नहीं है। ये शत्रु वास्तव में लगातार हम पर बदनामी करते हैं, लेकिन वे केवल हमारे भीतर बुराई बोते और भड़काते हैं; वे हमें उसे करने के लिए मजबूर नहीं करते। यदि उन्हें न केवल बुरे विचारों को भरने बल्कि हमें जबरदस्ती अपनी ओर खींचने की शक्ति भी दे दी जाती, तो वे हमारे हृदय में जो भी पापी इच्छा जगाना चाहें, उसके कारण एक भी व्यक्ति पाप करने से बच नहीं पाता। लेकिन हम देखते हैं कि जैसे उन्हें हमें उकसाने की अनुमति है, वैसे ही हमें भी ऐसे प्रलोभनों का विरोध करने की शक्ति, और उनके आगे झुकने की स्वतंत्रता, दोनों प्रदान की गई हैं। तो फिर, डर किस बात का? – हालाँकि, यदि कोई उनके अत्याचार और हमलों से डरता है, तो ऐसे व्यक्ति को हम, इसके विपरीत, परमेश्वर का संरक्षण और परमेश्वर की सहायता प्रदान करते हैं, जो उनसे अधिक शक्तिशाली है, जैसा कि कहा गया है: *'जो तुम में है वह संसार में जो है उससे महान है'* (1 यूहन्ना 4:4), – जिनकी मध्यस्थता हमारे लिए उस शक्ति से अतुलनीय रूप से अधिक शक्ति से विजय प्राप्त करती है, जिसके साथ शत्रु पक्ष हमारे विरुद्ध उठता है। क्योंकि परमेश्वर न केवल अच्छे कामों के लिए प्रेरित करते हैं, बल्कि उनकी रक्षा भी करते हैं और उन्हें पूर्ण करते हैं; ताकि कभी-कभी, हमारी इच्छा या हमारी जानकारी के बिना, वह हमें उद्धार की ओर खींचते हैं। इसलिए यह निश्चित है कि शैतान केवल उन्हीं को धोखा दे सकता है जो स्वयं अपनी स्वेच्छा से उसकी आज्ञा मानने का चुनाव करते हैं। जैसा कि सभोपदेशक ने इन शब्दों में स्पष्ट रूप से व्यक्त किया है: *'क्योंकि जो बुराई करता है, उस पर तुरन्त दण्ड नहीं होता; इसलिये मनुष्यों के पुत्रों के मन बुराई करने में लगे रहते हैं'* (सभोपदेशक 8:11)। इसलिए यह स्पष्ट है कि हर कोई पाप करता है क्योंकि, जब बुरे विचार उन पर आक्रमण करते हैं, तो वे तुरंत

उनका खंडन करके उन्हें दूर नहीं करते। क्योंकि कहा गया है: *'शैतान का विरोध करो, और वह तुमसे दूर भागेगा'* (याकूब 4:7)। (– प्रवचन 7, 8)।

12. कुछ लोग आश्चर्य कर सकते हैं कि ये दुष्ट आत्माएँ आत्मा के साथ संवाद कैसे करती हैं—वे कैसे उससे अनदेखे में बात करती हैं, उसमें जो चाहें वह भर देती हैं, उसके विचारों और गतिविधियों को देखती हैं, और उनका उपयोग उसके नुकसान के लिए करती हैं। – लेकिन इसमें कुछ भी अजीब नहीं है। एक आत्मा दूसरी आत्मा के साथ संवाद में प्रवेश कर सकती है और उसे गुप्त रूप से प्रभावित कर सकती है, उसे वह सुझाव दे सकती है जो उसके लिए वांछनीय है। क्योंकि उनके बीच, ठीक वैसे ही जैसे मनुष्यों के बीच, स्वभाव से एक निश्चित समानता और संबंध होता है। लेकिन उनके एक-दूसरे में प्रवेश करना और एक-दूसरे पर अधिकार करना पूरी तरह से असंभव है। यह वास्तव में केवल दिव्य को ही श्रेय दिया जा सकता है (– ओपस 7, 9, 10)।

13. ऊपर जो कहा गया है, उसका राक्षसों द्वारा ग्रस्त लोगों के साथ होने वाली घटनाओं से किसी भी तरह से विरोध नहीं है, जब वे अशुद्ध आत्माओं द्वारा ग्रस्त होकर, वे बातें कहते और करते हैं जो वे नहीं करना चाहते, और उन शब्दों को उच्चारित करने के लिए मजबूर होते हैं जिन्हें वे नहीं समझते। यह सर्वविदित है कि ऐसे मामलों में सभी पर आत्माओं का एक ही तरह से प्रभाव नहीं पड़ता। कुछ पर वे इतनी पूरी तरह से हावी हो जाती हैं कि वे इस बात से पूरी तरह अनजान होते हैं कि वे क्या कर रहे हैं या कह रहे हैं, जबकि अन्य जागरूक होते हैं और बाद में इसे याद करते हैं। दोनों एक अशुद्ध आत्मा के प्रभाव से होते हैं – हालाँकि इस तरह से नहीं कि वह आत्मा के सार में प्रवेश कर, मानो उसके साथ मिलकर, उसे धारण कर, पीड़ित व्यक्ति के होठों से शब्द और वाणी बोले। वे ऐसा करने में किसी भी तरह से सक्षम नहीं हैं। जो होता है वह यह है कि अशुद्ध आत्मा, उन अंगों में निवास कर लेता है जिनके माध्यम से आत्मा कार्य करती है, और उन पर एक असहनीय भार डालकर, आत्मा की तर्कसंगत शक्तियों को एक भयानक अंधकार में ढक देता है और उनकी गतिविधि को दबा देता है (इस गतिविधि के अंगों को इस तरह दबाकर)। जैसा कि हम देख सकते हैं, यह कभी-कभी शराब के परिणामस्वरूप, साथ ही बुखार, अत्यधिक ठंड और बाहरी कारणों से उत्पन्न अन्य बीमारियों से भी होता है। क्योंकि शैतान को यह शक्ति प्राप्त हो सकती थी कि वह धन्य अय्यूब पर भी यही कष्ट डाल दे, इसलिये प्रभु ने एक विशेष आज्ञा द्वारा उसे ऐसा करने से मना कर दिया, और कहा: *'देख, मैं उसे तेरे हाथ में देता हूँ: केवल उसकी प्राण की रक्षा करना'* (यॉब 2:6), अर्थात्, आत्मा के सिंहासन को बाधित करके, उसकी बुद्धि पर आक्रमण करके, और समझने की क्षमता को नुकसान पहुँचाकर उसे पागल मत करो, जिसके द्वारा वह (यॉब) तुम्हारा विरोध करेगा (– सोब. 7:12)।

14. हालाँकि, यद्यपि आत्मा इस स्थूल और ठोस पदार्थ—अर्थात्, देह—के साथ इस प्रकार निर्बाध रूप से मिल जाती है, जो बहुत सुविधाजनक हो सकता है; तथापि, इससे यह निष्कर्ष नहीं निकलता कि यह आत्मा के साथ भी इस प्रकार एक हो सकती है, जो स्वयं भी आत्मा है, कि वह देह की तरह, उसके अस्तित्व का पात्र बन जाए। यह केवल एक ही त्रिमूर्ति के लिए संभव है, जो न केवल प्रत्येक तर्कशील प्राणी को समाहित करती है, बल्कि उसमें प्रवेश भी करती है। एक ही ईश्वर सर्वत्र और सर्वत्र पूर्ण रूप से उपस्थित है, इसलिए वह हमारे सभी विचारों, हमारी सभी आंतरिक हलचलों और हमारी आत्माओं के सभी रहस्यों को देखता है। *'कोई भी प्राणी उससे छिपा नहीं है; परन्तु सब कुछ उसके सामने नंगा और खुला हुआ है'* (इब्रानियों 4:13), – और *'वह धार्मिकता से हृदयों और मन को परखता है'* (भजन संहिता 7:10)। (– संकलन 7:13)।

१५. परन्तु अशुद्ध आत्माएँ हमारे विचारों को कैसे जानती हैं? – वे उन्हें सीधे आत्मा में नहीं पढ़तीं, बल्कि बाहरी, मूर्त संकेतों में उनके प्रकट होने से, अर्थात् हमारे शब्दों और कार्यों से, उन्हें पहचान लेती हैं। परन्तु वे उन विचारों में किसी भी प्रकार से प्रवेश नहीं कर सकतीं जो अभी तक आत्मा के भीतर से प्रकट नहीं हुए हैं। यहाँ तक कि, वे जो विचार स्वयं उत्पन्न करते हैं, वे स्वीकार किए जाते हैं या नहीं, और कैसे स्वीकार किए जाते हैं, यह भी वे आत्मा से स्वयं नहीं जानते, न ही इसके परिणामस्वरूप आत्मा के भीतर गुप्त रूप से होने वाली सबसे भीतरी हलचलों से, बल्कि आत्मा के बाहर इसकी अभिव्यक्तियों से जानते हैं। इस प्रकार, उदाहरण के लिए, यदि वे लालच का विचार भरने के बाद देखते हैं कि एक संन्यासी खिड़की और सूर्य की ओर देखने लगा है, या यह पूछने लगा है कि क्या समय हुआ है, तो वे इससे यह निष्कर्ष निकालते हैं कि उसमें लालच की इच्छा भर दी गई है। और इसमें कोई आश्चर्य नहीं कि वायुमंडलीय शक्तियाँ इसे और इसी तरह की अन्य बातों को पहचान लेती हैं, जब हम देखते हैं कि बुद्धिमान लोग भी किसी व्यक्ति की आंतरिक स्थिति को उनकी आँखों, चेहरे और अन्य बाहरी संकेतों से पहचानने में सक्षम होते हैं। निस्संदेह, जो आत्माओं की तरह, मनुष्यों की तुलना में निस्संदेह कहीं अधिक सूक्ष्म और सूक्ष्मदर्शी हैं, वे इसे और भी सटीक रूप से पहचान सकते हैं (– संकलित कृतियाँ 7, 15)।

16. यह समझना चाहिए कि सभी राक्षस लोगों में हर प्रकार की वासना को प्रज्वलित नहीं करते, बल्कि कुछ आत्माएँ प्रत्येक विशेष वासना के लिए नियुक्त की जाती हैं; क्योंकि उनमें से कुछ अशुद्ध और शर्मनाक वासनाओं में आनंदित होते हैं, अन्य ईश्वर-निंदा को पसंद करते हैं, अन्य क्रोध और उग्रता में, अन्य दुख में आनंद लेते हैं, और अन्य व्यर्थता और घमंड में – और प्रत्येक मानव हृदय में उस जुनून को बोता है जिसमें वह स्वयं विशेष रूप से आनंदित होता है; लेकिन वे सभी एक साथ अपने जुनून को भड़काते नहीं हैं, बल्कि बारी-बारी से, यह इस बात पर निर्भर करता है कि समय, स्थान और प्रलोभित व्यक्ति की ग्रहणशीलता क्या मांग करती है (– कलेक्ट. 7, 17)।

17. यह भी समझना चाहिए कि वे सभी समान रूप से बुरे या समान रूप से शक्तिशाली नहीं हैं। सबसे कमजोर आत्माएं नवसिखुओं और दुर्बल लोगों पर हमला करना शुरू कर देती हैं; और जब उन पर काबू पा लिया जाता है, तो फिर सबसे मजबूत भेजे जाते हैं – और इस प्रकार, मसीह के सिपाही को अपनी प्रगति और अपनी आध्यात्मिक शक्ति के विकास के अनुपात में, धीरे-धीरे बढ़ती हुई संघर्ष को सहना पड़ता है। और संतों में से कोई भी किसी भी तरह से इतने सारे दुश्मनों की दुर्भावना का सामना नहीं कर सकता था, या उनकी बदनामी और उग्र क्रोध के खिलाफ दृढ़ नहीं रह सकता था, यदि यह तथ्य न होता कि हमारे संघर्ष में, मसीह—हमारे सबसे कृपालु मध्यस्थ और सहायक—हमेशा हमारे साथ थे, जो योद्धाओं की शक्ति को बराबर नहीं करते थे, दुश्मनों के अव्यवस्थित हमलों को पीछे नहीं हटाते या नहीं रोकते थे, और *'हमें उस सीमा से अधिक परीक्षा में नहीं डालने देते थे, जितनी हम सहन कर सकते हैं'* (1 कुरिन्थियों 10:13)। (– संग्रह 7, 20)।

18. कि राक्षसों में हर मनुष्य को नुकसान पहुँचाने की शक्ति नहीं है, यह धन्य अय्यूब के उदाहरण से सबसे स्पष्ट रूप से प्रदर्शित होता है, जिसे शत्रु ने परमेश्वर की इच्छा द्वारा अनुमत सीमा से आगे परीक्षा देने की हिम्मत नहीं की; इसकी गवाही सुसमाचार के वृत्तांतों में दर्ज दुष्ट आत्माओं के स्वीकारोक्ति से भी मिलती है: *'यदि आप हमें भगा ही देते हैं, तो हमें सूअरों के झुंड में भेज दीजिए'* (मत्ती 8:31)। तो फिर यह मानने का और भी अधिक कारण है कि वे अपनी इच्छा से परमेश्वर के स्वरूप में बनाए गए किसी भी मनुष्य में प्रवेश नहीं कर सकते, क्योंकि परमेश्वर की अनुमति के बिना उनके पास अशुद्ध और बोलने में असमर्थ जानवरों में भी प्रवेश करने की शक्ति नहीं थी। वास्तव में, यदि उन्हें इच्छानुसार किसी भी व्यक्ति को बहकाने और उसे कड़वा करने की शक्ति दी गई होती, तो कोई भी—न केवल युवा संतों को, बल्कि पूर्ण सद्गुण वाले पुरुषों को भी—ऐसे दुष्ट शत्रुओं के झुंड से घिरे होकर, रेगिस्तान में रहने में सक्षम नहीं होता (– कलेक्ट्स 7:22)।

19. यह भी ज्ञात है कि अशुद्ध आत्माएँ उन लोगों के शरीरों में प्रवेश नहीं करतीं जिन पर वे काबू पा लेती हैं, जब तक कि उन्होंने पहले उनके मन और विचारों पर कब्ज़ा न कर लिया हो। पहले उन्हें ईश्वर के भय, ईश्वर की स्मृति और आध्यात्मिक शिक्षा से वंचित कर, वे फिर उन पर इस तरह बहादुरी से हमला करते हैं मानो वे असहाय हों और ईश्वर की सहायता व सुरक्षा से वंचित हों, और इसलिए उन्हें आसानी से हरा लिया जाता है; और अंत में वे उनमें अपना घर बना लेते हैं, जैसे कि उन्हें प्रदान किया गया कोई क्षेत्र हो। – यह भी सच है, हालांकि, कि जो लोग उनसे सबसे बुरी और अत्यधिक रूप से पीड़ित होते हैं, वे वे हैं जो, भले ही शरीर में उनके वश में नहीं होते, पर आत्मा में सबसे अधिक विनाशकारी रूप से उनके वश में होते हैं – अर्थात्, वे जो अपनी वासनाओं और कामनाओं के जाल में फंस गए हैं; क्योंकि, प्रेरित के शब्दों में, *'जिस पर कोई आत्मा हावी हो जाता है, वह उसी आत्मा का दास हो जाता है'* (2 पतरस 2:19), (– संग्रह 7, 24, 25)।

20. धर्मग्रंथ गवाही देता है कि हम में से प्रत्येक के साथ दो स्वर्गदूत सदैव उपस्थित रहते हैं – एक अच्छा और एक बुरा। भले लोगों के विषय में, उद्धारकर्ता कहते हैं: *'इन छोटे-छोटे में से किसी की भी तुच्छ न समझना; क्योंकि मैं तुम से कहता हूँ कि स्वर्ग में उनके स्वर्गदूत मेरे स्वर्गीय पिता का मुखाँसा हमेशा देखते हैं'* (मत्ती 18:10), – और धन्य दाऊद: *'यहोवा का दूत उनके चारों ओर डेरा डालता है जो उस से डरते हैं, और उन्हें बचाता है'* (भजन संहिता 33:8); उनके अस्तित्व का और प्रमाण प्रेरितों के काम की पुस्तक में मिलता है, जहाँ पतरस के विषय में कहा गया है: *'उसके पास एक दूत है'* (– 12:15)। दोनों दूतों पर *द शेफर्ड* (The Shepherd) नामक पुस्तक में विस्तार से चर्चा की गई है। – यदि हम उस एक को भी ध्यान में रखें जिसने धन्य तक पहुँच की मांग की यॉब, हम स्पष्ट रूप से समझेंगे कि वही था जिसने हमेशा उसकी बदनामी की थी, फिर भी वह उसे पाप करने के लिए कभी प्रेरित नहीं कर सका; इसीलिए उसने प्रभु से उस पर अधिकार माँगा – यह स्वीकार करते हुए कि तब तक वह यॉब के पुण्य से नहीं, बल्कि प्रभु की मध्यस्थता से पराजित हुआ था, जिन्होंने हमेशा अपनी सुरक्षा से उसकी रक्षा की थी। और यहूदा के विषय में भी कहा गया है: *'शैतान उसके दाहिने हाथ पर खड़ा हो'* (भजन संहिता 108:6)। (– संकलन 8, 17)।

7. दुर्भाग्य और विपत्तियों से उत्पन्न होने वाली हर प्रकार की पीड़ाओं के विरुद्ध संघर्ष

1. फलिस्तीन में, यरूशलेम और मृत सागर के बीच के रेगिस्तानों में, बर्बर लोगों ने अचानक भिक्षुओं पर हमला किया - और उनमें से बहुतों को पीटा। ईश्वर ने अपने सेवकों के खिलाफ ऐसी दुष्टता को होने कैसे दिया? – यह प्रश्न आमतौर पर उन लोगों के मन को परेशान करता है, जिनके पास कम विश्वास और ज्ञान होता है, और जो सोचते हैं कि संतों के सद्गुणों और कर्मों को इसी क्षणिक जीवन में पुरस्कृत किया जाता है। हम, हालांकि, जो *'अपनी आशा केवल मसीह में इस वर्तमान जीवन पर* नहीं *लगाते'*, ताकि, प्रेरित के अनुसार, *'हम सभी मनुष्यों में सबसे अधिक दीन न हों'* (1 कुरिन्थियों 15:19), ऐसे विचारों से भटकना नहीं चाहिए; कहीं ऐसा न हो कि ऐसी घटनाओं के वास्तविक स्वरूप की अज्ञानता के कारण, हम पर, जिन परीक्षाओं के अधीन हम खुद को पाते हैं, उनसे आतंक और भ्रम में पड़ जाएँ, और इस प्रकार धार्मिकता के मार्ग से भटक जाएँ (भजन संहिता 72:2), – या, इसे और भी भयावह शब्दों में कहें तो, यह मानकर कि, मानो, वह पवित्र और धर्मी लोगों को परीक्षा से नहीं बचाता, और न ही वह इस जीवन में भले लोगों को भलाई और दुष्टों को बुराई का प्रतिफल देता है – और इस प्रकार उन लोगों के साथ निन्दा का पात्र न बनें जिन्हें यशायाह के वचन के अनुसार भविष्यवक्ता सपन्याह प्रभु की ओर से धमकाता है, यह कहते हुए: *'मैं उन लोगों से बदला लूंगा जो अपने दिल में कहते हैं: "प्रभु कोई भलाई नहीं करेंगे, और न ही कोई बुराई करेंगे"'* (सेफ. 1:12), और न ही उनका वही हश्र होगा जो उन लोगों का होता है, जो ऐसी शिकायतों के साथ परमेश्वर का अपमान करते हैं: *'जो कोई भी बुराई करता है, वह यहोवा की दृष्टि में भला है, और वह उन में प्रसन्न रहता है; और न्याय का परमेश्वर कहाँ है?'* (मला. 2:17)? इसके साथ उस ईश्वर-निंदा को भी जोड़ें जिसका वर्णन भविष्यवक्ता ने थोड़ी देर बाद किया है: *'क्या हम व्यर्थ में परमेश्वर की सेवा कर रहे हैं, और उससे भी बढ़कर, क्या हमने उसकी आज्ञाओं का पालन किया है, और क्या हम सर्वशक्तिमान प्रभु के सामहने प्रार्थना में चले हैं? और अब हम परायों को आशीष देते हैं, जबकि जो कोई भी अधर्म करता है वह फल-फूल रहा है: उन्होंने परमेश्वर को ठुकराया है और फिर भी वे बच गए हैं'* (मला. 3:14-15)। – अत; इस अत्यंत घृणित भ्रम की जड़ और कारण, अर्थात् अज्ञानता से बचने के लिए, हमें सर्वप्रथम यह निश्चित रूप से निर्धारित करना चाहिए कि वास्तव में क्या अच्छा है और क्या बुरा है। फिर इस मामले में भीड़ की झूठी राय पर नहीं, बल्कि धर्मग्रंथों की सच्ची परिभाषा पर दृढ़ता से अडिग रहते हुए, हम अविश्वासियों के भ्रम से किसी भी प्रकार से भटकेंगे नहीं।

२. संसार में जो कुछ भी अस्तित्व में है और घटित होता है, वह तीन प्रकार का है, अर्थात्: शुभ, अशुभ और मध्यम मार्ग। अतःहमें यह विवेक करना चाहिए कि वास्तव में शुभ क्या है, अशुभ क्या है और मध्यम मार्ग क्या है, ताकि हमारा विश्वास, सुदृढ़ ज्ञान द्वारा संरक्षित होकर, सभी प्रलोभनों में अडिग बना रहे। मानवीय मामलों में, एक आध्यात्मिक सद्गुण को छोड़कर किसी भी चीज़ को अनिवार्य रूप से अच्छा नहीं माना जाना चाहिए, जो हमें ईश्वर की ओर ले जाने वाले सच्चे विश्वास के द्वारा, हमें इस अपरिवर्तनीय अच्छाई से अटूट रूप से चिपके रहने के लिए प्रेरित करता है। इसके विपरीत, पाप को छोड़कर किसी भी चीज़ को बुरा नहीं माना जाना चाहिए, जो हमें अच्छे ईश्वर से अलग करके, हमें दुष्ट शैतान से बाँध देता है। जो बीच में है, वह वह है जिसे लाभान्वित व्यक्ति के चरित्र और स्वभाव के आधार पर एक या दूसरे पक्ष से जोड़ा जा सकता है, जैसे: धन, शक्ति, सम्मान, शारीरिक शक्ति, स्वास्थ्य, सुंदरता, स्वयं जीवन या मृत्यु, गरीबी, शरीर की दुर्बलता, बदनामी और इसी तरह की अन्य चीजें, जो उनका उपयोग करने वाले व्यक्ति के स्वभाव और प्रकृति के आधार पर, भलाई या बुराई दोनों के लिए काम आ सकती हैं। क्योंकि प्रेरित के अनुसार, धन-संपत्ति भी अक्सर भलाई के लिए काम कर सकती है, जो *'इस वर्तमान युग में धनी लोगों को आज्ञा देते हैं कि वे भले कामों में धनी बनें, उदार और बाँटने के लिए तैयार रहें, और अपने लिए भविष्य के लिए एक अच्छा आधार जमा करें, ताकि वे अनंत जीवन प्राप्त कर सकें'* (1 तीमु. 6: 17–19): फिर भी यह बुराई में बदल जाता है जब इसे केवल जमा करने और जमीन में गाड़ने के लिए इकट्ठा किया जाता है, जैसा कि कंजूस करते हैं, या ज़रूरतमंदों के लाभ के बजाय विलासिता और सुखों पर उड़ा दिया जाता है। इसके अलावा, यह तथ्य कि शक्ति और सम्मान, शारीरिक ताकत और स्वास्थ्य तटस्थ हैं, और दोनों पक्षों के लिए उपयुक्त हैं, इस तथ्य से आसानी से प्रदर्शित होता है कि पुराने नियम के कई संतों के पास ये सभी चीजें थीं, ईश्वर को बहुत प्रिय थे; जबकि, इसके विपरीत, जिन्होंने इन आशीर्वादों का गलत उपयोग किया, उन्हें अपनी बुरी प्रवृत्तियों की सेवा में लगा दिया, उन्हें अन्यायपूर्वक या तो दंडित किया गया या मृत्युदंड दिया गया, जैसा कि राजाओं की पुस्तकें अक्सर बताती हैं। इसी प्रकार, मध्यम स्वभाव की अन्य चीजों के संबंध में समझें कि वे सच्ची भलाई नहीं हैं, जो केवल सद्गुणों में निहित है, बल्कि वे कुछ मध्यवर्ती हैं; क्योंकि जबकि वे धर्मी लोगों के लिए उपयोगी और लाभदायक हैं—जो उनका उपयोग धर्मी और आवश्यक कार्यों में करते हैं, जिससे वे अनंत जीवन के लिए अच्छाई के फलों को एक खजाने के रूप में संचित कर पाते हैं—इसके विपरीत,

वे उन लोगों के लिए न तो उपयोगी हैं और न ही लाभदायक जो उनका गलत उपयोग करते हैं, बल्कि वे उन्हें केवल पाप और मृत्यु की ओर ले जाते हैं।

३. वस्तुओं और कर्मों के बीच इस अंतर को दृढ़ता से मन में रखते हुए, और यह जानते हुए कि केवल सदाचार के अलावा कोई सच्ची भलाई नहीं है, जो ईश्वर के भय और प्रेम से उत्पन्न होती है, और यह कि पाप और ईश्वर से अलगाव के अलावा कोई सच्ची बुराई नहीं है, आइए अब हम अत्यंत ध्यान से जांच करें, क्या कभी ऐसा हुआ है कि ईश्वर ने, स्वयं या किसी और के माध्यम से, अपने किसी संत को ऐसा बुरा कार्य करने के लिए प्रेरित किया हो? आपको निस्संदेह कहीं भी ऐसा कोई उदाहरण नहीं मिलेगा। क्योंकि ऐसा कभी नहीं हुआ कि कोई दूसरा किसी को पाप में ले जा सके जब वह व्यक्ति ऐसी बुराई की इच्छा नहीं करता और उसका विरोध करता है; और यदि कभी ऐसा हुआ कि किसी को पाप में ले जाया गया, तो वह केवल वही था जिसने स्वयं हृदय की गंभीरता की कमी और एक भ्रष्ट इच्छा के कारण उस पाप को अपने भीतर उत्पन्न किया था। इस प्रकार, जब शैतान ने धर्मी अय्यूब को इस बुराई—पाप—में ले जाने का प्रयास किया, तो उसने उसके विरुद्ध अपनी पूरी कपटपूर्ण बुराई का प्रयोग किया—उसकी सारी संपत्ति छीन ली, उसके बच्चों को मार डाला, और अय्यूब के पूरे शरीर को असहनीय दर्द से भर देने वाले घावों से ढक दिया—फिर भी वह उसे किसी भी तरह से पाप के दाग से कलंकित नहीं कर सका; क्योंकि *'इन सभी परीक्षाओं में'* अय्यूब अडिग रहा और *'परमेश्वर पर मूर्खता का आरोप नहीं लगाया'* (अय्यूब 1:22)—वह ईश्वर-निंदा के आगे नहीं झुका।

४. परन्तु तब यह कैसे है कि परमेश्वर स्वयं अपने विषय में कहते *हैं: 'मैं... शान्ति का स्रष्टा और विपत्ति का कर्ता हूँ'* (यशायाह ४५:७), और भविष्यवक्ता उनकी गवाही देते हैं: *'क्या किसी नगर में ऐसी विपत्ति होती है जिसे यहोवा ने नहीं उत्पन्न किया?'* (आमोस ३:६)? – पवित्र शास्त्र में, 'बुराई' शब्द कभी-कभी दुर्भाग्यपूर्ण घटनाओं को दर्शाता है, न कि इसलिए कि वे स्वभाव से ही बुरी हैं , बल्कि इसलिए कि उन्हें उन लोगों द्वारा बुराई के रूप में देखा जाता है जिनके भले के लिए उन्हें भेजा गया है। क्योंकि परमेश्वर का वचन, जब लोगों से बात करता है, तो अनिवार्य रूप से मानवीय शब्दों में और मानवीय भावनाओं के साथ बोलता है। इस प्रकार, जीवन-रक्षक काटने और दाह करने की प्रक्रिया, जो एक डॉक्टर खतरनाक अल्सर से पीड़ित लोगों पर लाभकारी रूप से करता है, उसे सहने वालों द्वारा एक बुराई माना जाता है; इसी तरह, घोड़े की नाल के कांटे और एक पापी के लिए सुधार आनंददायक नहीं होते; और सभी अनुशासनात्मक कठोरताएँ शिक्षा प्राप्त करने वालों को कड़वी लगती हैं, जैसा कि प्रेरित कहते हैं: *'कोई अनुशासन उस समय सुखद नहीं लगता, बल्कि दर्दनाक लगता है; परन्तु बाद में यह उन लोगों के लिए धार्मिकता का शान्तिदायक फल उत्पन्न करता है जिन्हें इसके द्वारा प्रशिक्षित किया गया है' – और फिर: 'प्रभु जिस से प्रेम करता है, उन को अनुशासित करता है, और जिस पुत्र को वह ग्रहण करता है, उस को दण्ड देता है। क्योंकि ऐसा कौन सा पुत्र है जिसे उसका पिता अनुशासित नहीं करता?'* (इब्रानियों 12:6,7,11)? – इस प्रकार, *'बुराई'* शब्द का उपयोग कभी-कभी दुर्भाग्यपूर्ण घटनाओं को दर्शाने के लिए किया जाता है, जैसा कि निम्नलिखित कथन में है: *'और परमेश्वर ने उस बुराई के विषय में मन बदल लिया जो उसने उन पर करने की बात कही थी, और वह उसे नहीं किया'* (यूहना 3:10)। और फिर: *'क्योंकि हे यहोवा, तू अनुग्रह और दयालुता करनेवाला, धीमी-क्रोध करनेवाला और स्थिर प्रेम से भरपूर है, और तू मनुष्यों पर डालने का जो बुरा इरादा किया था, उस से मन फिराता है'* (योन 4:2), अर्थात्, उन गंभीर कठिनाइयों और विपत्तियों से, जिन्हें तू हमारे पापों के कारण हम पर डालने के लिए विवश है। यह जानते हुए कि ये कुछ लोगों के लिए कितने लाभदायक हैं, एक अन्य नबी, उनके प्रति शत्रुता से नहीं बल्कि उनकी मुक्ति की इच्छा से, इस प्रकार प्रार्थना करता है: *'हे प्रभु, उन पर विपत्ति ला; हे पृथ्वी के घमण्डी लोगों पर विपत्ति ला'* (यशायाह 26:15)। और प्रभु स्वयं कहते हैं: *'देखो, मैं तुम्हारे ऊपर विपत्ति लाऊँगा* (यर. 11:11), अर्थात् दुख और विनाश, जिनके द्वारा, वर्तमान समय में उद्धारकारी दण्ड पाकर, तुम अंततः मुड़कर मेरी ओर दौड़ने के लिए विवश हो जाओगे, जिसे तुमने अपने सुख के दिनों में भुला दिया था। हम उन्हें एक अंतर्निहित बुराई के रूप में क्यों नहीं पहचान सकते, जब वे कई लोगों के भले के लिए काम करते हैं और उन्हें शाश्वत आनंद की प्राप्ति की ओर ले जाते हैं? इसलिए—आइए हम अपने मूल प्रश्न पर लौटें—हर वह चीज़ जिसे आम तौर पर बुरा माना जाता है, चाहे वह दुश्मनों द्वारा हम पर थोपी गई हो या किसी अन्य तरह से हमें पीड़ा पहुँचा रही हो, हमें उसे बुराई के रूप में नहीं बल्कि एक मध्यवर्ती चीज़ के रूप में देखना चाहिए। और फिर यह अब वैसा नहीं रहेगा जैसा उसे क्रोध के आवेग में पहुँचाने वाला मानता है, बल्कि वैसा होगा जैसा उसे सहने वाला महसूस करता है। तो फिर, जब किसी संत को मृत्युदंड दिया जाता है, तो कोई यह क्यों न सोचे कि उसके साथ बुरा हुआ है, बल्कि यह कि कुछ मध्यवर्ती हुआ है? क्योंकि जबकि पापी के लिए यह बुरा है, धर्मी के लिए यह सांत्वना और बुराइयों से मुक्ति का स्रोत है। *'क्योंकि धर्मी की मृत्यु विश्राम है; उसका मार्ग छिपा हुआ है'* (अय्यूब 3:23)। धर्मी व्यक्ति को ऐसी मृत्यु से कोई हानि नहीं होती – क्योंकि उस पर कुछ भी नया या अभूतपूर्व नहीं पड़ा है, – लेकिन जो कुछ प्राकृतिक आवश्यकता से उसे होना ही था, उसे उसने शत्रु की द्वेषपूर्णता से स्वीकार

किया, जो शाश्वत जीवन के लिए लाभहीन नहीं था; और मानव मृत्यु का वह ऋण, जो उसे हमारे वर्तमान अस्तित्व के अनिवार्य नियम के अनुसार चुकाना ही था, उसने अपने लिए प्रतीक्षित महान पुरस्कार की गारंटी के रूप में दुख के समृद्ध फल के साथ चुकाया।

५. हालाँकि, यह दुष्टों को बरी नहीं करता है। दुष्ट अपराधी केवल इसलिए दंड से नहीं बचेगा क्योंकि उसके दुष्ट कर्म से धर्मी व्यक्ति को कोई खास हानि नहीं हुई। क्योंकि धैर्य धर्मी का गुण है, और इनाम का हक़दार वह नहीं है जिसने मृत्यु या पीड़ा दी, बल्कि वह है जिसने उन्हें धैर्यपूर्वक सहन किया। क्योंकि जैसे पहले वाला अपने क्रूर अत्याचार के लिए न्यायसंगत रूप से दंड भोगेगा, वैसे ही बाद वाला, किसी भी महत्वपूर्ण हानि को सहने के बावजूद, पुरस्कृत किया जाएगा; क्योंकि, अपनी आत्मा की शक्ति से परीक्षाओं और कष्टों को धैर्यपूर्वक सहन करके, उसने दुष्ट इरादे से उस पर डाली गई हर चीज़ को अपने ही भले के लिए, आने वाले जीवन में अपनी आनंद की वृद्धि के लिए, मोड़ दिया है।

6. इस प्रकार, आयोब की सहनशीलता से शैतान को कोई अच्छा इनाम नहीं मिला, जिसने अपनी परीक्षाओं के द्वारा उसे अधिक महिमामय बनाया था, बल्कि स्वयं आयोब को मिला, जिसने उन्हें साहसपूर्वक सहन किया; और न ही यहूदा को इस आधार पर अनंतकालिक यातना से मुक्ति दी जाएगी कि उसके विश्वासघात ने मानव जाति को बचाने में मदद की। क्योंकि किसी को किसी कर्म के परिणाम को नहीं, बल्कि उसे करने वाले की प्रवृत्ति को देखना चाहिए। तो फिर, हमें दृढ़ता से इस दृढ़ विश्वास को बनाए रखना चाहिए कि कोई भी व्यक्ति किसी दूसरे द्वारा तब तक नुकसान नहीं पहुँचाया जा सकता, जब तक कि वह व्यक्ति स्वयं अपनी हृदय की कमजोरी और कायरता के कारण इसे अपने ऊपर न बुला ले, जब कि धन्य प्रेरित भी एक ही श्लोक में इसी सिद्धांत की पुष्टि करते हैं: *'हम जानते हैं कि जो लोग परमेश्वर से प्रेम करते हैं, उनके लिए सब कुछ मिलकर भलाई के लिए काम करता है'* (रोमियों 8:28). क्योंकि *'सभी बातें मिलकर* धर्मात्मा *के लिए भलाई करती हैं'* कहकर, उन्होंने सब कुछ एक साथ समेट लिया—न केवल वह जिसे सुख माना जाता है, बल्कि वह भी जिसे दुर्भाग्य माना जाता है; जैसा कि वही प्रेरित कहीं और अपने बारे में कहते हैं, कि वह दोनों से होकर गुज़रे हैं: *'दाहिने और बाएं धर्म के हथियार—अर्थात् महिमा और अपमान, बदनामी और प्रशंसा: जैसे धोखेबाज़, परन्तु सच्चे; जैसे उदास, परन्तु हमेशा आनंदित; जैसे गरीब, परन्तु बहुतों को धनी बनाने वाले'*, इत्यादि (2 कुरिन्थियों 6:7–10)। इस प्रकार, सब कुछ—चाहे वह सुख हो जिसे प्रेरित दाहिने हाथ से जोड़ते हैं, और उसे शब्दों में इस प्रकार वर्णित करते हैं: *'महिमा और प्रशंसा'*, या वह दुख हो जिसे उन्होंने इन शब्दों में व्यक्त किया: *'अपमान और दुर्व्यवहार'*, जो बाईं ओर का उल्लेख करता है – यह सब एक सिद्ध पुरुष के जीवन में, *'धर्म के हथियार'* बन जाते हैं: यदि वह अपने ऊपर किए गए (भयंकर) प्रहारों को उदारता से सहन करता है, और इस प्रकार लड़ता है, अर्थात् उन ही चीज़ों को हथियार के रूप में इस्तेमाल करता है जिनसे उस पर हमला किया जाता है, और, उसे उस पर थोपने वालों के विरुद्ध धनुष, तलवार और सबसे मजबूत ढाल के रूप में इससे लैस होकर, वह अपने धैर्य और साहस को पूरी तरह प्रदर्शित करता है, और अपनी दृढ़ता की सबसे गौरवशाली विजय का उत्सव उन्हीं दुश्मन के तीरों से मनाता है जो उसे मृत्यु तक घातक घाव देते हैं; और इस प्रकार, न तो सौभाग्य से प्रसन्न होकर और न ही दुर्भाग्य से निराश होकर, बल्कि सीधे और राजसी मार्ग पर चलते हुए, वह ऐसे शांतिपूर्ण हृदय की अवस्था से, न तो आनंद की उपस्थिति से दाईं ओर धकेला जाता है, और न ही दुर्भाग्य के आक्रमण और दुख की लहर से बाईं ओर गिराया जाता है। – *'प्रभु, तेरे नियम से प्रेम करने वालों के साथ शांति है, और उनके लिए कोई ठोकर नहीं है,'* संत दाऊद गवाही देते हैं (भजन संहिता 118:165); लेकिन जिनके स्वभाव और भिन्नताओं के अनुसार वे भाग्य के हर मोड़ पर बदलते हैं, उनके बारे में कहा गया है: *'मूरख, चंद्रमा की तरह बदलता है'* (सिरैकस 27:11)। इसी तरह, सिद्ध और बुद्धिमानों के बारे में कहा गया है: *'परमेश्वर से प्रेम करने वालों के लिए, सब कुछ मिलकर भलाई के लिए काम करता है'*; जबकि कमजोर और मूर्खों के बारे में यह घोषित किया गया है: *'मूरख के लिए सब कुछ प्रतिकूल है'* (नीतिवचन 14:7), क्योंकि वह न तो खुशी का अपने भले के लिए उपयोग करता है और न ही दुर्भाग्य से उसे सुधार मिलता है। दुखों को साहसपूर्वक सहने के लिए उतनी ही नैतिक शक्ति की आवश्यकता होती है जितनी कि आनंद में उचित संयम बनाए रखने के लिए; और इसमें कोई संदेह नहीं है कि जो व्यक्ति इन दोनों परिस्थितियों में से किसी एक से अपना मार्ग भूल जाता है, वह उन दोनों में से किसी का भी सामना करने के लिए पर्याप्त मजबूत नहीं है। हालाँकि, सुख एक व्यक्ति को दुख से अधिक नुकसान पहुँचाता है। क्योंकि बाद वाला कभी-कभी, मनुष्य की इच्छा के विरुद्ध, उसे नियंत्रित करता है और नम्र बनाता है, और उसे लाभदायक पश्चाताप की ओर ले जाकर, या तो उसे कम पाप करने के लिए प्रेरित करता है, या उसे पूरी तरह से सुधारने के लिए मजबूर कर देता है; जबकि पहला, आत्मा को हानिकारक लेकिन सुखद चापलूसी से फुलाकर, उन लोगों को भयानक तबाही में धूल में मिला देता है, जो अपनी खुशियों में मिली सफलता के कारण खुद को सुरक्षित समझते हैं।

7. ऐसे सदि्ध पुरुषों को धर्मग्रंथों में रूपक रूप से *'दक्षणिहस्त'* कहा जाता है, जैसा कि एहुद के बारे में लिखा है, जैसा कि न्यायियों की पुस्तक में दर्ज है, जिसने दोनों हाथों का उपयोग ऐसे किया मानो वे उसका दाहिना हाथ हों (3:15)। हम भी ऐसी आध्यात्मिक पूर्णता प्राप्त कर सकते हैं यदि हम सुख—जिसे *'दाहिना हाथ'* माना जाता है—और दुर्भाग्य—*जिसे 'बायाँ हाथ'* कहा जाता है—दोनों को अच्छे और धर्मी उपयोग के माध्यम से सही दिशा में मोड़ें, ताकि जो कुछ भी हम पर आता है, वह प्रेरित के शब्दों में, हमारे लिए *'धर्म के हथियार'* बन जाए। हमारे अंतर्मन में, हम दो पक्षों और, यूं कहें तो, दो हाथों को पहचानते हैं। और कोई भी संत उस हाथ को, जिसे हम 'दाहिना' कहते हैं, और उस हाथ को, जिसे हम *'बायाँ'* कहते हैं, दोनों को धारण करने में विफल नहीं हो सकता; लेकिन उसकी सद्गुण की पूर्णता इस तथ्य से पहचानी जाती है कि वह दोनों को ही दाहिने हाथ में बदल देता है, और उनका सदुपयोग करता है। यह स्पष्ट करने के लिए कि हम किस बारे में बात कर रहे हैं, मैं कहता हूँ: एक संत के पास दाहिना हाथ तब होता है जब वह आध्यात्मिक प्रगति प्रदर्शित करता है – जब, पवित्र आत्मा से प्रज्वलित होकर, वह अपनी सभी इच्छाओं और लालसाओं पर सर्वोच्च शासन करता है; जब, हर शैतानी हमले से मुक्त होकर, वह बिना किसी परिश्रम या असुविधा के सांसारिक जुनून को काटता और अलग कर देता है; जब, पृथ्वी से बहुत ऊपर उठकर, और जो कुछ भी वर्तमान और सांसारिक है, उसे क्षणिक धुआं और एक खाली छाया मानता है, और उसे ऐसे कुछ के रूप में तुच्छ समझता है जो किसी भी क्षण समाप्त हो सकता है; जब, अपने मन के आनंद-उल्लास में, वह न केवल भविष्य की तीव्र इच्छा करता है बल्कि उसे सबसे स्पष्ट रूप से देखता भी है; जब वह आध्यात्मिक चिंतन से सबसे प्रभावी रूप से पोषित होता है; जब वह स्पष्ट रूप से देखता है, जैसे उसके लिए कोई द्वार खुल गया हो, वह दिव्य रहस्यों को निहारता है; जब वह प्रभु से पवित्रता और उत्साह के साथ प्रार्थना करता है; जब पवित्र आत्मा की आग से प्रज्वलित होकर, वह अपनी आत्मा की संपूर्ण लालसा से अदृश्य और शाश्वत की ओर इतना पूरी तरह से आकर्षित हो जाता है कि उसे लगता है कि वह अब देह में नहीं है; वह इस अवस्था का भी स्वामी होता है, – जब वह प्रलोभन के तूफानों में डूब जाता है, जब वह कामुक इच्छाओं की ओर कामुक उत्तेजना की लहरों से भड़क उठता है, जब वह परेशान करने वाली बेचैनी की आग से उन्मत्त क्रोध के लिए उकसाया जाता है, जब वह आत्म-उन्नयन से गर्व या दंभ के लिए प्रेरित होता है, जब वह *'मृत्यु लाने वाले शोक' से* दब जाता है (2 कुरिन्थियों 7:10), जब वह कपटी निराशा के हमलों से पूरी तरह हतोत्साहित हो जाता है, और जब, सभी आध्यात्मिक उत्साह के चले जाने पर, वह उदासीनता और एक अजीब अवर्णनीय विषाद से सुन्न हो जाता है, ताकि न केवल अच्छे विचार—जो आंतरिक उत्साह जगाते हैं—उससे दूर हो जाते हैं, बल्कि भजन, प्रार्थना, और पठन, और कोठरी में एकांतवास सब कुछ उसके लिए भयानक रूप से उबाऊ हो जाता है, और सदाचार के सभी साधन एक प्रकार की असहनीय अरुचि और अनिच्छा का सामना करते हैं – ये सभी, जब कोई भिक्षु इस प्रकार पीड़ित होता है, तो यह इंगित करते हैं कि वाम पक्ष उस पर दबाव डाल रहा है। इस प्रकार, जो कोई भी, जैसा कि हमने कहा है, दाहिनी ओर से संबंधित बातों में उत्पन्न होने वाली घमंड से नहीं फुलाया जाता, न ही बाईं ओर से संबंधित बातों में, जबकि बहादुरी से युद्ध करता है, निराशा में पड़ता है; वह दोनों हाथों का उपयोग ऐसे करेगा मानो वे उसका दाहिना हाथ हों, और दोनों प्रयासों में विजयी होकर, वह अपनी बाईं और दाईं दोनों अवस्थाओं से विजय की लोटपोट प्राप्त करेगा। ऐसी विजय-प्राप्ति, जैसा कि हम पढ़ते हैं, धन्य अय्यूब ने अर्जित की थी, जिन्हें अपने दाहिने हाथ के कर्मों के लिए मुकुट पहनाया गया था, जब वे सात बेटों के धनी और कुलीन पिता होते हुए, उनकी पवित्रता के लिए प्रतिदिन प्रभु को बलिदान चढ़ाते थे, यह इच्छा रखते हुए कि वे बलिदान न तो इतने अधिक अपने लिए, बल्कि ईश्वर को प्रसन्न और स्वीकार्य; जब उसके द्वार आने वाले सभी के लिए खुले थे; जब वह लंगड़ों का सहारा और अंधों का मार्गदर्शक था; जब दुर्बल लोगों के कंधे उसकी भेड़ों के ऊन से गर्म होते थे; जब वह अनाथों का पिता और विधवाओं का पति था; जब वह अपने हृदय में भी अपने शत्रु के पतन पर प्रसन्न नहीं हुआ। उसी अय्यूब ने, अटूट संकल्प के साथ कार्य करते हुए, अनुपम उच्च साहस से विपत्तियों पर विजय प्राप्त की: जब, एक ही क्षण में अपने सात बेटों को खोने के बाद, वह एक पिता के रूप में तीव्र शोक से व्याकुल नहीं हुआ, बल्कि परमेश्वर के सेवक के रूप में, अपने सृष्टिकर्ता की इच्छा में शांति पाया; जब, अमीर होने से सबसे गरीब, और समृद्धि से नग्नता की स्थिति में आ गया, एक स्वस्थ व्यक्ति से कोढ़ी तक, एक कुलीन और गौरवशाली व्यक्ति से एक अपमानित और तिरस्कृत व्यक्ति तक, उसने अपने आत्मा के साहस को अक्षुण्ण रखा; और जब, अंत में, अपनी सारी संपत्ति और सारा धन खोने के बाद, वह एक कूड़े के ढेर का निवासी बन गया, और मानो उसके अपने शरीर का कोई यातनाकर्ता—जो सबसे क्रूर था—मिट्टी के एक टुकड़े से निकल रहे पीप को खुरच रहा हो और अपने शरीर के हर हिस्से पर पड़े घावों में अपनी उंगलियाँ गहराई तक डालकर उनमें से कीड़े निकाल रहा हो। इस सब के दौरान, वह थोड़े से भी ईश्वर के प्रति अपमान में नहीं गिरा, न ही उसने अपने स्रष्टा के खिलाफ किसी भी तरह से शिकायत की; वास्तव में, – सबसे तीव्र प्रलोभनों के ऐसे बोझ के थोड़े भी डर के बिना, उसने अपने शरीर को ढकने वाले वस्त्र को भी फाड़ कर एक तरफ फेंक दिया—वह एकमात्र चीज़

थी जिसे शैतान की लूट से बचाया जा सकता था—और इस प्रकार उसने अपनी स्वैच्छिक नग्नता को उस पर जोड़ दिया जिससे इस सबसे क्रूर लुटेरे ने उसे प्रहार किया था। इसी प्रकार, उसके सिर के बाल—उसकी पूर्व महिमा के चिह्नों का एकमात्र अछूता हिस्सा—उसने काटकर अपने यातनाकर्ता को दे दिया; और, इस प्रकार अपने लालची शत्रु द्वारा बची हुई चीज़ को काटकर, उसने स्वर्गीय स्वर में उस पर अपनी विजय पर अपनी प्रसन्नता की घोषणा की: *"जब हम प्रभु के हाथ से भलाई ग्रहण करते हैं, तो क्या हम बुराई को सहन नहीं करेंगे? मैं अपनी माँ के गर्भ से नग्न आया हूँ, और नग्न ही वहाँ लौटूँगा: प्रभु ने दिया, और प्रभु ने ले लिया; जैसा प्रभु को ठीक लगा, वैसा ही हुआ: प्रभु का नाम धन्य हो"* (यॉब 2:10; 1:21). – मैं यूसुफ को भी सही मायने में 'कुशल' कहूँगा, क्योंकि समृद्धि के समय वह अपने पिता का प्रिय, अपने भाइयों के प्रति सम्मानजनक और परमेश्वर को भाने वाला था; विपत्ति के समय, वह पवित्र था, अपने स्वामी के प्रति विफादार, कैद में रहते हुए अत्यंत कोमल, अपने साथ किए गए अन्याय पर रंजिश न रखने वाला, अपने शत्रुओं, ईर्ष्यालुओं और यहाँ तक कि अपने संभावित हत्यारों के प्रति भी परोपकारी; अपने भाइयों के प्रति, वह न केवल अत्यंत स्नेहपूर्ण और परोपकारी था, बल्कि उदारता में भी अतुलनीय था। इन्हें और इन जैसे अन्य लोगों को सही मायने में 'समतुल्य' कहा जाता है; क्योंकि वे दोनों हाथों को अपने दाहिने हाथ के रूप में उपयोग करते हैं, और प्रेरित द्वारा गिनाए गए परीक्षणों से गुजरकर, उनके समान कह सकते हैं: *'धर्म के हथियार, दाहिने हाथ और बाएं हाथ से, सम्मान और अपमान से, आवश्यकता और प्रशंसा से'* आदि। – हम भी द्विहस्त हों, ताकि सांसारिक आशीर्वादों की प्रचुरता या कमी हमें प्रभावित न कर सके; न तो पहली हमें विनाशकारी कामुकता के सुखों में बहकाए, और न ही दूसरी हमें निराशा और शिकायत में डुबोए, लेकिन जब, दोनों ही स्थितियों में, हम परमेश्वर का समान धन्यवाद करते हैं, तो हमें सुख और दुख दोनों से समान लाभ होगा; जब हम दोनों हाथों वाले सच्चे मनुष्य, राष्ट्रों के शिक्षक, जैसे हों, जिन्होंने अपने बारे में गवाही दी: *'मैंने किसी भी परिस्थिति में संतुष्ट रहना सीख लिया है। मैं तंगी को भी जानता हूँ और मैं समृद्धि को भी जानता हूँ: हर परिस्थिति में, मैंने संतुष्ट रहने का रहस्य सीखा है, चाहे पेट भरा हो या भूखा, चाहे प्रचुरता हो या अभाव। मैं उन सब कुछ कामों को कर सकता हूँ जो मुझे बल देने वाले के द्वारा होते हैं'* (फिलि. 4:11–13)।

८. परीक्षा, जैसा कि हमने कहा है, दो प्रकार की होती है – अर्थात्, सुख और दुख के माध्यम से; हालाँकि, लोगों के परीक्षा में पड़ने का कारण तीन हैं: अधिकतर यह परीक्षा के लिए होता है, कभी-कभी सुधार के लिए, और अक्सर पापों के दंड के रूप में। इस प्रकार, जैसा कि हम पढ़ते हैं, धन्य अब्राहम और कई संतों ने परीक्षा के लिए अनगिनत कष्टों को सहन किया, ठीक वैसे ही जैसे यॉब ने किया था; और उनके लिए, यहूदी लोगों को भी मरुभूमि में परीक्षाओं से गुज़रना पड़ा, जैसा कि मूसा व्यवस्थाविवरण में कहते हैं: *'और उस सारे मार्ग को याद करो जिसमें यहोवा तुम्हारा परमेश्वर इन चालीस वर्षों में तुम्हें जंगल में ले गया, तुम्हारी परीक्षा करने और तुम्हें क्लेश देने के लिए, ताकि वह जान सके कि तुम्हारे मन में क्या था, कि तुम उसकी आज्ञाओं को मानोगे या नहीं'* (व्यवस्थाविवरण 8:2), – और जैसा कि भजन में याद किया गया है: *'मैंने तुम्हारी परीक्षा मरिबाह के जल पर ली'* (भजन 80:8)। और यह कि अय्यूब को ठीक इसी कारण से उन सभी कष्टों से गुज़रना पड़ा, इसकी गवाही स्वयं परमेश्वर देते हैं, जो कहते हैं: *'क्या तुमने सोचा था कि मैंने तुम्हें किसी अन्य उद्देश्य के लिए बनाया है, सिवाय इसके कि तुम धर्मी पाए जाओ?'* (अय्यूब 40:3)। यह सुधार के लिए तब होता है जब प्रभु, अपने धर्मी लोगों को कुछ छोटे और तुच्छ पापों के लिए, या उनकी अपनी धार्मिकता के गर्व के लिए, नम्र करते हुए, उन्हें विभिन्न परीक्षणों से गुज़ारते हैं, ताकि वर्तमान में उन्हें विचारों की हर अशुद्धि से शुद्ध करने और उनके अंतरतम में छिपी हर अशुद्धि को जलाकर नष्ट करने के बाद, अशुद्धता (यशायाह 1:25), ताकि उन्हें भविष्य के परीक्षण के लिए सोने की तरह शुद्ध प्रस्तुत किया जा सके, और उनके भीतर ऐसा कुछ भी न बचे जिसे न्याय की आग में परखे जाने के बाद, उन्हें दंडात्मक जलन द्वारा शुद्ध करने की आवश्यकता पड़े। इस अर्थ में कहा गया है: *'धर्मी के बहुत से क्लेश हैं'* (भजन संहिता 33:20); और यह भी: *'हे मेरे पुत्र, यहोवा की अनुशासना को तुच्छ न समझ, और जब वह तुझे डांटे तब हियाव न छोड़। क्योंकि यहोवा जिसे प्रेम करता है, उसे अनुशासित करता है, और हर एक पुत्र को जिसे वह ग्रहण करता है, दण्ड देता है। यदि तुम अनुशासना सहते हो, तो परमेश्वर तुम्हारे साथ पुत्रों के समान बर्ताव करता है; क्योंकि ऐसा कौन सा पुत्र है जिसे पिता अनुशासित नहीं करता?' परन्तु यदि तुम अनुशासन से रहित हो—जिसमें सभी ने भाग लिया है—तो तुम व्यभिचारी हो, और पुत्र नहीं"* (इब्रानियों 12:5–9); और प्रकाशितवाक्य की पुस्तक में: *"जिन्हें मैं प्रेम करता हूँ, मैं उन्हें डाँटता और अनुशासित करता हूँdiscipline "* (– 3:19)। यरूशलेम की प्रतिमा के अंतर्गत, ऐसे लोगों के लिए, यिर्मयाह नबी परमेश्वर की ओर से कहते हैं: *'मैं उन सब जातियों का अंत कर दूँगा'* (मैं उन्हें नष्ट कर दूँगा), *'जिनमें मैंने तुम्हें बिखेर दिया है; पर मैं तुम्हारा अंत नहीं करूँगा, फिर भी मैं तुम्हें न्याय में अनुशासित करूँगा'* (यिर्म. 30:11)। इसी उद्धारकारी सुधार के लिए संत दाऊद प्रार्थना करते हैं, कहते हुए: *'हे प्रभु, मुझे परख और आज़मा; मेरे हृदय और मेरे मन की*

खोज कर' (भजन संहिता 25:2)। इसी प्रकार, भविष्यवक्ता यिर्मयाह, ऐसे परीक्षण की उद्धारकारी प्रकृति को समझते हुए, पुकार लगाते हैं: *'हे प्रभु, हमें अनुशासित कर, परन्तु न्याय में, और क्रोध में नहीं* (यर. 10:24)। इसी प्रकार यशायाह: *'हे प्रभु, मैं तुझे धन्य कहूँगा, क्योंकि तू मुझ पर क्रुद्ध हुआ, और तेरा प्रचंड क्रोध मुझ से फिरि गया, और तू मुझ पर दयालु हुआ'* (यशा. 12:1)। पापों के कारण प्रलोभन के प्रहार भी भेजे जाते हैं। इस प्रकार प्रभु इस्राएल के लोगों पर ऐसे प्रहार भेजने की धमकी देते हैं, यह कहते हुए: *'मैं तुम्हारे विरुद्ध जंगली जानवरों के दाँत भेजूँगा, साथ ही भूमि पर रेंगने वाले जीवों के क्रोध के साथ'* (व्यवस्थाविवरण 32:24); और भजन संहिता में उनके विषय में कहा गया है: *'पापी के घाव बहुत हैं* (भजन संहिता 31:10); इसी प्रकार सुसमाचार में: *'तू पहिले अच्छा था; अब फिरि कभी पाप न करना, कहीं ऐसा न हो कि तुझ पर और भी बुरा कुछ आ पड़े'* (यूहन्ना 5:14)। कुछ लोगों पर कुछ कष्ट भेजे जाने का एक चौथा कारण भी है, जैसा कि हम धर्मग्रंथ से जानते हैं—अर्थात्, उनके द्वारा परमेश्वर की महिमा और कार्य प्रकट हो सकें। इस प्रकार, सुसमाचार में जन्म से अंधे व्यक्ति के बारे में कहा गया है: *'न तो इस मनुष्य ने और न उसके माता-पिता ने पाप किया, परन्तु ऐसा इसलिए हुआ कि परमेश्वर के काम उसके द्वारा प्रकट हों'* (यूहन्ना 9:3), और लाजरुस की बीमारी के विषय में: *'यह बीमारी मृत्यु के लिए नहीं, बल्कि परमेश्वर की महिमा के लिए है, ताकि इसके द्वारा परमेश्वर के पुत्र की महिमा हो'* (यूहन्ना 11:4)। ईश्वर के प्रतिशोध के अन्य रूप भी हैं, जो उन कुछ व्यक्तियों पर आते हैं जो बुराई की उच्चतम सीमा को पार कर चुके होते हैं, और जिनके लिए, जैसा कि हम पढ़ते हैं, दाथान, अबीराम और कोराह को दंडित किया गया था, और सबसे बढ़कर उन लोगों के लिए जिनके बारे में प्रेरित कहते हैं: *'इसी कारण से परमेश्वर ने उन्हें एक भ्रष्ट मन के हवाले कर दिया, ताकि वे वह करें जो उचित नहीं है'* (रोमियों 1:26,28)—जिन्हें सभी दंडों में सबसे कठोर माना जाना चाहिए। इन्हीं के बारे में भजनकार कहता है*: 'वे मनुष्यों के श्रम में नहीं हैं, न ही वे मानव जाति के कष्टों में भाग लेते हैं'* (भजन संहिता 72:5); क्योंकि वे प्रभु के हस्तक्षेप से उद्धार पाने या अस्थायी दण्डों के द्वारा चंगाई प्राप्त करने के योग्य नहीं हैं, जैसे कि *"जो भटक गए हैं और अपने आपको व्यभिचार के हवाले कर दिया है, और हर प्रकार की अशुद्धता करते हैं"* (इफिसियों 4:19), – और लगातार पाप में बने रहने के कारण उनके हृदय के कठोर हो जाने के कारण, वे इस युग के जीवन की बहुत ही छोटी अवधि में शुद्धिकरण और प्रतिशोध के सभी मापदंडों से परे चले जाते हैं। परमेश्वर का वचन यशायाह भविष्यवक्ता के माध्यम से ऐसे लोगों को डाँटता है: *'जैसे परमेश्वर ने सदोम और गमोरा को उजाड़ दिया, वैसे ही तुमने भी उजाड़ दिया है; और तुम आग से निकाले गए एक कोयले की तरह थे, फिर भी तुम मेरे पास नहीं लौटे, यहोवा की यही वाणी है।'* (आमोस 4:11), और यिर्मयाह नबी के द्वारा: *'मैंने अपने लोगों को मार डाला और नष्ट कर दिया, फिर भी वे अपने मार्गों से नहीं लौटे'* (यिर्म. 15:7), – और अन्यत्र: *"तुम ने उन्हें मारा, परन्तु उन्हें पीड़ा न हुई; तुम ने उन्हें कुचल डाला, परन्तु उन्होंने अनुशासन न माना; तुम ने अपने मुखाड़े पत्थर से भी अधिक कठोर कर लिए, और तुम पीछे न मुड़े"* (– 5:3)। इस प्रकार, अंततः प्रभु, एक अति कुशल चिकित्सक की भाँति, सभी उद्धारकारी उपचारों को आजमा चुकने और यह देखकर कि उनके घावों पर लगाने के लिए उद्धार का कोई और साधन शेष नहीं है, मानो उनके अधर्म की विशालता से अभिभूत हो जाते हैं, और उन पर अपनी दयालु अनुशासनात्मक कार्रवाई वापस लेने के लिए विवश होकर, उनसे यह घोषणा करते हैं: *'मेरा जलन-भाव तुमसे दूर हो जाएगा, और मैं शांत हो जाऊँगा; और मैं इस पर ध्यान न दूँगा'* (यहे. 16:42)। जहाँ तक अन्य लोगों का प्रश्न है, जिनके हृदय बार-बार पाप करने से अभी तक कठोर नहीं हुए हैं, जो अभी तक इतनी क्रूर और विनाशकारी सज़ा के पात्र नहीं बने हैं, परन्तु जो अपने उद्धार के लिए एक सुधारात्मक दण्ड स्वीकार करने में सक्षम हैं, उनके विषय में कहा गया है: *'मैं उन्हें उनकी पीड़ा के समाचार से दंडित करूँगा'* (मैं उन्हें उस दुख के समाचार से होश में लाऊँगा जो उन पर मँडरा रहा है) (होशे 7:12)।

९. कोई धैर्य और समत्वभाव कैसे प्राप्त और बनाए रख सकता है? – सच्चा धैर्य और समत्वभाव हृदय की नम्रता के बिना प्राप्त या बनाए नहीं रखे जा सकते। जब धैर्य इसी स्रोत से उत्पन्न होता है, तो विपत्ति से उत्पन्न दुख से बचने के लिए किसी कोठरी में खुद को बंद करने या रेगिस्तान में शरण लेने की कोई आवश्यकता नहीं होगी। एक बार जब यह आत्मा की गहराइयों में विनम्रता के सद्गुण में दृढ़ता से जड़ जमा लेता है, जो हमारी माता और रक्षक है, तो इसे बाहरी सहायक साधनों की आवश्यकता नहीं रहती। क्योंकि यदि हम किसी निराधार आरोप से परेशान होते हैं, तो यह स्पष्ट है कि विनम्रता की नींव हमारे भीतर दृढ़ता से स्थापित नहीं है, और हमारी आंतरिक इमारत तूफान की हल्की सी झोंका से ही विनाशकारी उथल-पुथल का शिकार हो जाती है। धैर्य तब प्रशंसनीय और सराहनीय नहीं होता जब आंतरिक शांति बनी रहे, और शत्रुओं के किसी भी बाण से अडिग रहे; परन्तु यह तब भव्य और गौरवशाली होता है जब प्रलोभनों का तूफान इसके विरुद्ध कहर बरपा रहा हो और यह अडिग बना रहे। और यह जितना अधिक कुचला और हिला हुआ प्रतीत होता है, उतना ही अधिक यह मजबूत होता है; और जितना अधिक यह प्रतीत होता है कि यह कुंद हो गया है, उतना ही अधिक यह परिष्कृत होता है। क्योंकि यह सर्वविदित है कि धैर्य का नाम कष्टों को सहने

से पड़ा है, और इसलिए कोई भी व्यक्ति धैर्यवान नहीं कहा जा सकता, सिवाय उस व्यक्ति के जो उस पर डाले गए सभी कष्टों को बिना क्लेश के सहन करता है। और ठीक इसी कारण से सुलैमान उनकी इतनी सही प्रशंसा करते हैं: *'धीरजवान मनुष्य पराक्रमी मनुष्य से उत्तम है, और जो अपना क्रोध रोकता है, वह उस से उत्तम है जो ढेले उठाता है'* (नीतिवचन 16:32)। इसके अलावा: *'धीरजवान मनुष्य समझदार होता है, परन्तु जो मनुष्य उतावला है, वह अपनी मूर्खता प्रगट करता है'* (नीतिवचन 14:29)। इस प्रकार, जब कोई, बदनामी सहने के बाद, क्रोध की आग से भर जाता है, तो उस पर की गई अपमानजनक टिप्पणी को उसके इस पाप का कारण नहीं, बल्कि उसके भीतर छिपी बीमारी (क्रोध की) को प्रकट करने का केवल एक बहाना माना जाना चाहिए, उद्धारकर्ता की दो घरों वाली दृष्टांत के अर्थ के अनुसार—एक घर चट्टान पर बना था और दूसरा रेत पर—जिन दोनों पर उफनते पानी और तूफानी हवाओं ने समान बल से आक्रमण किया, फिर भी परिणाम भिन्न थे; क्योंकि इस मामले में, ठोस चट्टान पर बना घर ऐसे प्रचंड आक्रमण से उसे कोई भी हानि नहीं हुई, जबकि रेत पर बना घर तुरंत नष्ट हो गया - और वह नष्ट हुआ, स्पष्ट रूप से, इसलिए नहीं कि वह उसकी ओर आती लहरों से टकराया, बल्कि इसलिए कि उसे मूर्खतापूर्वक रेत पर बनाया गया था। इसी प्रकार, एक पवित्र व्यक्ति पापी से इस बात में भिन्न होता है कि वह पापी के सामने आने वाली प्रलोभनों से भी अधिक शक्तिशाली प्रलोभनों का सामना करता है, बल्कि इस बात में कि वह बड़े प्रलोभनों से भी विचलित नहीं होता, जबकि पापी तो छोटे प्रलोभनों के आगे भी गिर जाता है। और, जैसा कि हमने कहा है, किसी भी धर्मी व्यक्ति का साहस तब प्रशंसनीय नहीं होगा यदि वह परीक्षा में डाले बिना विजयी हो; वास्तव में, यदि शत्रु से कोई आक्रमण ही न हो तो विजय का कोई स्थान नहीं होगा। क्योंकि *'धन्य है वह मनुष्य जो परीक्षा में स्थिर रहता है; क्योंकि जब वह परखा हुआ होगा, तो उसे जीवन का मुकुट मिलेगा, जो परमेश्वर ने अपने प्रेम करने वालों से वादा किया है'* (याकूब 1:12)। और प्रेरित पौलुस के अनुसार, *'ईश्वर की शक्ति'* शांति और आराम में नहीं है, बल्कि *'कमज़ोरी में सिद्ध होती है'* (2 कुरिन्थियों 12:9)। क्योंकि यहोवा ने यिर्मयाह से इस प्रकार कहा: *'देख, मैं ने तुझे आज एक दृढ़ नगर, एक लोहे का खम्भा और एक पीतल की दीवार बना दिया है, यहूदा के सब राजाओं, उसके हाकिमों, उसके याजकों और उस देश के लोगों के विरुद्ध; वे तेरे विरुद्ध लड़ेंगे, परन्तु तुझ पर विजय न पाएंगे, क्योंकि मैं तेरे संग हूं'* (यर. 1:18–19). (– संकलन 18:13).

10. मैं आपको ऐसे धैर्य के कम से कम दो उदाहरण प्रस्तुत करना चाहता हूँ - जिनमें से एक एक धर्मनिष्ठ महिला द्वारा प्रदर्शित किया गया था, जो धैर्य के गुण में स्वयं को परिपूर्ण बनाना चाहती थी, उसने न केवल परीक्षाओं से परहेज़ नहीं किया बल्कि कष्टों के कारण भी खोजे; और उसे चाहे कितनी भी बार अपमानित किया गया, वह परीक्षाओं के सामने नहीं डिगी। यह महिला अलेक्जेंड्रिया में रहती थी; वह कुलीन वंश की थी, और अपने माता-पिता द्वारा छोड़े गए घर में, वह भक्तिपूर्वक ईश्वर की सेवा करती थी। एक अवसर पर, दिवंगत आर्चबिशप अथेनासियस के पास जाकर, उसने उनसे चर्च की दान-राशि पर निर्भर विधवाओं में से एक को उसकी देखभाल और सहायता के लिए सौंपने का अनुरोध किया। उसने कहा, 'मुझे उन बहनों में से एक दीजिए, जिसे मैं सांत्वना दे सकूँ।' प्रधान पुरोहित ने उस महिला के अच्छे इरादों और परोपकार के कार्यों के प्रति उसके उत्साह की प्रशंसा करते हुए आदेश दिया कि उन सभी में से एक ऐसी विधवा को चुना जाए जो नैतिक ईमानदारी में बाकियों से आगे हो, गरिमा और शिष्टाचार में श्रेष्ठ हो, ताकि इस उदारता को दिखाने की इच्छा उससे लाभान्वित होने वाले की अयोग्यता से दब न जाए, और ताकि इसे दिखाने वाली, यदि बाद वाले की दुष्टता से आहत हो जाए, तो उसका विश्वास आहत न हो। इस प्रकार, इस चुनी हुई महिला को स्वीकार कर, वह उसे अपने घर ले आई और हर तरह से उसकी सेवा करने लगी। लेकिन उसकी शालीनता और नम्रता को देखकर, और उसके द्वारा किए गए दान के लिए कृतज्ञता स्वरूप हर पल सम्मान प्राप्त करके, वह कुछ दिनों बाद उपर्युक्त महायाजक के पास लौट आई और कहा: 'मैंने निवेदन किया था कि आप आज्ञा दें कि मुझे कोई ऐसा व्यक्ति दिया जाए जिसे मैं सांत्वना दे सकूँ, और जिसकी मैं पूर्ण आज्ञाकारिता से सेवा कर सकूँ।' पहले तो उसे इस अनुरोध का कारण समझ नहीं आया कि इस महिला को क्या चाहिए; और, यह सोचकर कि विधवाओं के प्रति पर्यवेक्षक की लापरवाही के कारण उसकी विनती को अनदेखा कर दिया गया है, उसने कुछ आंतरिक बेचैनी के साथ इस देरी के कारणों के बारे में पूछा। उसे बताया गया कि सभी विधवाओं में सबसे सदाचारी विधवा को उसके पास भेजा गया था। तब, यह समझते हुए कि वह बुद्धिमान पत्नी क्या चाहती थी, उसने आदेश दिया कि उसे सभी विधवाओं में सबसे अव्यवस्थित, एक ऐसी विधवा दी जाए जो क्रोध, झगड़ालूपन, हिंसा, बकबक और तुच्छता में सभी से आगे हो। जब उन्होंने उसके लिए ऐसी महिला ढूंढकर ला दी, तो उसने उसे अपने घर में बसा लिया और, उतने ही या उससे भी अधिक उत्साह के साथ, इस दूसरी महिला की भी सेवा करने लगी, ठीक वैसे ही जैसे उसने पहली की की थी; फिर भी, ऐसी सेवाओं के लिए कृतज्ञता स्वरूप, उसे उससे केवल अपमान, बदनामी, गाली-गलौज और फटकार ही मिली, जबकि दूसरी तीखी गाली-गलौज के साथ बड़बड़ाई कि उसने आर्चबिशप से मन की शांति के

लिए नहीं, लेकिन यातना के लिए, और उसे कठिन जीवन से शांतपूर्ण जीवन में लाने के बजाय, शांतपूर्ण जीवन से एक और कठिन जीवन में डाल दिया था। इस महिला की ऐसी अपमानजनक बातों में कभी-कभी इतनी हिम्मत हो जाती थी कि वह अपने हाथों को भी नहीं रोक पाती थी, जबकि दूसरी महिला ने जवाब में अपनी विनम्र सेवा और भी बढ़ा दी, और उसने यह सीखा कि अपनी क्रोध पर काबू पाना प्रतिरोध से नहीं, बल्कि उससे भी अधिक विनम्र समर्पण से और दयालु नम्रता से उसके क्रोध को वश में करना है। इस प्रकार ऐसी परीक्षाओं के माध्यम से धैर्य में पूर्ण रूप से स्थापित होकर और इस वांछनीय सद्गुण में पूर्णता प्राप्त कर, वह उक्त संत के पास उनके बुद्धिमानी भरे चुनाव और उनके लाभकारी उपदेश, तथा इस तथ्य के लिए धन्यवाद करने गई कि उन्होंने अंततः पूरी तरह से उसकी इच्छा के अनुसार, उसके लिए एक ऐसे अत्यंत योग्य शिक्षक को नियुक्त किया था, जिनके अथक अपमानों से वह प्रतिदिन धैर्य में दृढ़ होती गई, जब तक कि वह इस गुण के सर्वोच्च शिखर पर नहीं पहुँच गई। अंततः हे प्रभु, आपने मेरे आराम के लिए, ठीक उसी व्यक्ति को प्रदान किया जिसकी मैं कामना करती थी; और उस पहली शिक्षिका ने, मेरे प्रति अपने सम्मानजनक रवैये से, मुझे उससे कहीं अधिक सांत्वना और तसल्ली दी, जितनी मैंने उसे दी। – महिलाओं के बारे में इतना कहना ही पर्याप्त है, ताकि इस तरह की बात की याद न केवल हमें शिक्षा दे, बल्कि हमें लज्जित भी करे; क्योंकि जब तक हम खुद को एक कोठरी में बंद नहीं कर लेते, हम अपना धैर्य बनाए नहीं रख सकते (– कलेक्ट. 18. 14)।

11. अब हम अबा पाफनुटियस के धैर्य का एक और उदाहरण पर विचार करें, जो प्रसिद्ध स्केटे रेगिस्तान में पूर्ण एकांत में रहते थे, जहाँ वे अब एक पुरोहित के रूप में सेवा कर रहे हैं। जबकि वे एक युवा भिक्षु ही थे, तब भी वे अनुग्रह-पूर्ण पवित्रता से इतने अधिक दमकते थे कि उस समय के महान पुरुष उनकी प्रगति देखकर चकित रह गए; और, उन सभी में सबसे छोटे होने के बावजूद, उन्होंने उन्हें वरिष्ठों के समकक्ष मान लिया और उन्हें अपनी संख्या में शामिल करने का निर्णय लिया। जब यह बात पता चली, तो जो ईर्ष्या कभी उसके भाइयों के दिलों में यूसुफ के खिलाफ उठी थी, वही अब अपने ज़हरीले आग से, स्केटे के एक भाई के दिल में उसके खिलाफ भड़क उठी; इस आदमी ने दुर्भावनापूर्ण ढंग से किसी कलंक के दाग से उसकी सुंदरता को धब्बेदार करने की कोशिश की। इस उद्देश्य के लिए, जब तक कि पाफनुटियस रविवार को चर्च नहीं चले गए, तब तक प्रतीक्षा करके, वह चुपके से उनकी कोठरी में घुस गया और अपनी किताब बाँस की बुनाई के बीच छिपा दी—जो आमतौर पर वहाँ ताड़ की टहनियों से बुनी जाती है—और अपनी चालाकी से प्रसन्न होकर, वह स्वयं चर्च चला गया; और रविवार की प्रार्थना सभा के अंत में, सभी भाइयों की उपस्थिति में, उसने उस समय के एक पुरोहित, संत इसिडोर के पास शिकायत दर्ज कराई कि उसकी कोठरी से एक किताब चोरी हो गई थी। इस शिकायत ने सभी को, और विशेष रूप से पादरी को, इतना हैरान कर दिया कि वे उस स्थान पर इतने नए और अज्ञात अपराध से स्तब्ध होकर यह नहीं जान पा रहे थे कि क्या सोचें या क्या करें। तब इस मामले की सूचना देने वाले अभियोगी ने यह मांग की कि सभी भाइयों को चर्च में रोके रखते हुए, उनमें से कुछ चुनिंदा लोगों को सभी कोठरियों की तलाशी के लिए भेजा जाए। जब पादरी द्वारा इस कार्य के लिए नियुक्त तीन बुज़ुर्गों ने सभी अन्य कोठरियों की तलाशी लेने के बाद पाफनुटियस की कोठरी में आए, तो उन्हें खजूर की पत्तियों के बीच एक किताब छिपी हुई मिली, ठीक वैसे ही जैसे उस बदनाम करने वाले ने उसे वहाँ छिपाया था; और उसे लेकर, वे सीधे चर्च ले गए और उसे सभी के सामने रख दिया। पाफनुटियस, यद्यपि वह अंतरात्मा से इस पाप में किसी भी तरह की संलिप्तता से अपनी बेगुनाही को लेकर निश्चित था, फिर भी, जैसे कि चोरी का दोषी हो, उसने बड़ों के निर्णय के लिए स्वयं को प्रस्तुत कर दिया, यह घोषणा करते हुए कि वह जो भी भरपाई लगाई जाएगी उसे वहन करने के लिए तैयार है और प्रार्थना की कि उसे पश्चाताप के लिए एक स्थान प्रदान किया जाए। उसने अपनी रक्षा में कुछ नहीं कहा; विनम्र शर्म के कारण, उसे डर था कि शब्दों से चोरी के दाग को धोने का प्रयास करने पर, उस पर झूठ बोलने का और भी बड़ा दोष लग सकता है, जबकि किसी को मिली हुई चीज़ के अलावा और किसी बात पर संदेह नहीं था। एक बार कार्यवाही समाप्त हो जाने और निर्णय लिखित रूप में तैयार हो जाने के बाद, वह निराश होकर नहीं, बल्कि स्वयं को ईश्वर के निर्णय के भरोसे छोड़कर चर्च से चला गया, और उसने प्रायश्चित करना शुरू कर दिया, भरपूर आँसुओं के साथ अपनी प्रार्थनाओं को और तीव्र किया, अपने उपवास को तीन गुना कर लिया, और अत्यंत आध्यात्मिक नम्रता के साथ, दूसरों के सामने स्वयं को नम्र बनाया। जब, लगभग दो सप्ताह तक, उसने इस प्रकार शरीर और आत्मा की हर तरह की यातनाएँ सहकर खुद को थका लिया था, और फिर, एक शनिवार या रविवार की सुबह-सुबह, चर्च आया—पवित्र Communion ग्रहण करने के लिए नहीं, बल्कि उसके दरवाजों पर सिर झुकाने और विनम्रता से क्षमा याचना करने के लिए;—तब परमेश्वर, जो सभी छिपी हुई बातों का साक्षी और जानने वाला है, यह देखकर सहन न कर सका कि वह स्वयं को पीड़ा देता रहे और दूसरों द्वारा अपमानित किया जाए, उसने शैतान से वह सब कुछ प्रकट करवाया जो उस बुराई के आविष्कारक, दूसरों की संपत्ति के उस बेईमान चोर, किसी और के सम्मान के उस धूर्त बदनाम करने वाले

ने बिना किसी गवाह के किया था। क्योंकि, सबसे क्रूर राक्षस द्वारा ग्रस्त होकर, उसने स्वयं अपनी गुप्त साज़िश की सभी बारीकियों का खुलासा कर दिया; और इस प्रकार, जो अपराध और षड्यंत्रों का उत्प्रेरक था, वही उसी तरह, उसका विश्वासघाती उजागर करने वाला बन गया। इसके बाद, इस अशुद्ध आत्मा ने इस दुर्भाग्यपूर्ण भाई को बहुत बुरी तरह और लंबे समय तक सताया, इसलिए न केवल वहाँ मौजूद अन्य संतों की प्रार्थनाएँ—जिनके पास राक्षसों पर अधिकार का दैवीय उपहार था—उसे इससे मुक्त कराने में असमर्थ रहीं, बल्कि इसिडोर द प्रेसेबिटर की विशेष कृपा भी इस सबसे क्रूर सताने वाले को भगाने में विफल रही, हालाँकि, प्रभु की उदारता से, उसे उन पर इतनी शक्ति प्रदान की गई थी कि जिन पर भूत-प्रेत का साया होता था, उन्हें ठीक होने के बाद उसके द्वार पर भी नहीं लाया जाता था। ऐसा इसलिए था क्योंकि प्रभु मसीह ने यह महिमा पाफनुतियुस के लिए सुरक्षित रखी थी, ताकि अपराधी को उसी व्यक्ति की प्रार्थनाओं से ही चंगा किया जा सके जिसके विरुद्ध उसने षड्यंत्र रचा था, और उसे अपने पाप के लिए क्षमा और अपनी वर्तमान सज़ा से मुक्ति मिल सके, साथ ही उस एक के नाम की घोषणा हो सके जिसकी महिमा को उसने एक ईर्ष्यालु शत्रु की तरह धूमिल करने की आशा की थी (– संग्रह। 18:15)।

12. इस कहानी को बताने के लिए मुझे दो कारणों ने प्रेरित किया: पहला, ताकि इस मनुष्य की अटूट दृढ़ता पर चिंतन करके, हम और भी अधिक संयम और धैर्य दिखा सकें, जितना कम हम शत्रु के अपमानों के अधीन हों; दूसरा, ताकि हम इससे यह दृढ़ विश्वास प्राप्त करें कि यदि हम अपने धैर्य की सारी रक्षा और अपनी सारी आशा अपनी आंतरिक शक्ति में नहीं, बल्कि उसमें रखते हैं, तो हम प्रलोभनों के तूफान और शैतान के हमलों से सुरक्षित नहीं रह सकते, बल्कि किसी कोठरी की चारदीवारी में, या मरुभूमि के एकांत में, या संतों की संगति में, या वास्तव में हमसे बाहर किसी भी चीज़ में। क्योंकि यदि प्रभु, जिन्होंने सुसमाचार में *कहा: 'परमेश्वर का राज्य तुम्हारे भीतर है'* (लूका 17:21), तो हम व्यर्थ ही आशा करेंगे—चाहे हम अपने साथ रहने वालों की मदद से वायु के शत्रु के अपमानजनक आरोपों पर विजय प्राप्त करने की आशा करें, या शारीरिक दूरी (अर्थात् मरुभूमि में पीछे हटकर) द्वारा उन्हें दूर भगाने की, या दीवारों और छत के पीछे खुद को बंद करके (अर्थात् खुद को एक कोठरी में बंद करके) उन्हें दूर रखने की। क्योंकि संत पाफनुटियस के पास ये सभी चीज़ें थीं , और फिर भी प्रलोभक ने उन पर हमला करने का एक रास्ता खोज लिया – और न तो दीवारों का किला, न मरुभूमि का एकांत, और न ही उस समुदाय के इतने सारे संतों का मध्यस्थता इस सबसे दुष्ट आत्मा को उनसे दूर रख सकी। लेकिन चूँकि इस पवित्र सेवक ने अपने हृदय की आशा किसी बाहरी वस्तु में नहीं, बल्कि स्वयं सभी रहस्यों के न्यायी में रखी थी, इसलिए वह ऐसे हमले की चालाकियों से किसी भी प्रकार विचलित नहीं हो सका। इसी प्रकार, क्या वह व्यक्ति जिसे ईर्ष्या ने ऐसे अपराध तक धकेल दिया था, उसे भी रेगिस्तान के आशीर्वाद, एक दूरस्थ निवास की सुरक्षा, और धन्य इसडिोर, अबा और प्रेस्बिटर, और अन्य संतों की संगत का लाभ नहीं मिला? और फिर भी, जब शैतान का तूफान उसे खुद रेत पर बना हुआ पाया, तो इसने न केवल उसके निवास (उसके आंतरिक स्वरूप) पर एक भारी प्रहार किया, बल्कि उसे पूरी तरह से नष्ट कर दिया। इसलिए, आइए हम अपनी अटूट आंतरिक शांति की नींव अपने बाहर खोजना बंद करें, और यह उम्मीद करना बंद करें कि हमारे अपने धैर्य की कमजोरी को दूसरों के धैर्य से मदद मिल सकती है। क्योंकि जैसे *'परमेश्वर का राज्य हमारे भीतर है'*, वैसे *ही 'एक मनुष्य के शत्रु उसके अपने घर के लोग होते हैं'* (मत्ती 10:36)। और मुझ पर मेरे अपने भावों से अधिक कोई प्रतिरोध नहीं करता, जो मेरे अपने घर के सबसे करीबी सदस्य हैं। अतःआइए हम अपने आप पर अधिक ध्यान दें, ताकि हमारे घर के शत्रु हमें आहत न करें। क्योंकि जब हमारे अपने घर वाले हम पर उठते नहीं हैं, तो परमेश्वर का राज्य हमारे भीतर अविचलित मन की शांति के साथ वास करता है। और यदि हम अपने भीतर हो रही बातों के कारणों को ध्यान से तौलें, तो हम पाएँगे कि मैं किसी भी व्यक्ति से घायल नहीं हो सकता, यहाँ तक कि सबसे दुर्भावनापूर्ण व्यक्ति से भी नहीं, जब तक कि मैं स्वयं अपने ही हृदय की बेचैनी के द्वारा अपने ही विरुद्ध न उठूँ। क्योंकि यदि मुझे कभी चोट पहुँचती है, तो इसका कारण बाहरी आक्रमण में नहीं, बल्कि मेरी अपनी अधीरता में है। ठीक वैसे ही जैसे ठोस भोजन स्वस्थ लोगों के लिए लाभदायक होता है, लेकिन बीमारों के लिए हानिकारक; यह उसे प्राप्त करने वाले को तब तक नुकसान नहीं पहुँचा सकता, जब तक कि उसकी दुर्बलता ही उसे नुकसान पहुँचाने की शक्ति न दे दे (– सोब. 18:16)।

८. दैवी कृपा और स्वतंत्र इच्छा पर

1. हमें हमेशा दृढ़ता से यह विश्वास होना चाहिए कि हम अपनी ही मेहनत और कर्मों से किसी भी तरह से पूर्णता प्राप्त नहीं कर सकते, भले ही हम हर सद्गुण का परम परिश्रम से अभ्यास करें। केवल मानवीय प्रयासों में इतना मूल्य और शक्ति नहीं हो सकती कि वे हमें पवित्रता और आनंद की ऊँचाइयों तक पहुँचा सकें, जब तक कि प्रभु स्वयं हमारी सहायता न करें और हमारे हृदयों को हमारे लिए भले कार्यों की ओर न मोड़ें। इसलिए, हर क्षण हमें दाऊद के साथ ईश्वर से पुकारना चाहिए: *'मेरे कदमों को अपने मार्गों पर स्थिर कर, ताकि मेरे पैर न फिसलें'* (भजन संहिता

16:5),—ताकि मानव आत्मा का यह अदृश्य शासक हमारी इच्छा को सद्गुण की ओर मोड़ सके, क्योंकि यह दुराचार की ओर अधिक झुकी हुई है, चाहे वह भलाई के अज्ञान के कारण हो या वासनाओं के भ्रम के कारण। इसे भविष्यवक्ता ने भजन के एक ही छंद में बहुत स्पष्ट रूप से व्यक्त किया है: *'मैं भटकी हुई भेड़ की तरह हो गया था; परन्तु यहोवा ने मुझे स्वीकार किया'* (भजन संहिता 117:13)। छंद का पहला भाग हमारी इच्छा की अस्थिरता को दर्शाता है; और दूसरा – प्रभु की वह सहायता जो हमारे लिए हमेशा तैयार रहती है, जो, जब भी हम डगमगाने लगते हैं, हमारी ओर अपना हाथ बढ़ाता है, हमारा समर्थन करता है और हमें मजबूत बनाता है, कहीं ऐसा न हो कि हम अपनी इच्छा से ही पूर्ण पतन में गिर जाएँ। – इस प्रकार, कोई भी धर्मी व्यक्ति अपने भीतर धार्मिकता प्राप्त करने के लिए पर्याप्त शक्ति नहीं रखता है; वे निरंतर डगमगाते हैं और किसी भी क्षण गिरने के लिए तैयार रहते हैं। इसलिए, प्रभु की दया उन्हें अपने हाथ से सहारा देती है, ताकि, अपनी इच्छा की कमजोरी के कारण गिर जाने पर, वे अपने पतन में पूरी तरह से नष्ट न हो जाएँ (प्रवचन 3:12). और कौन इतना अहंकारी और अंधा होगा जो यह सोचे कि उसे ईश्वर की निरंतर सहायता की आवश्यकता नहीं है, जबकि प्रभु स्वयं सुसमाचार में स्पष्ट रूप से सिखाते हैं: *'जैसे एक टहनी अपने आप फल नहीं दे सकती जब तक कि वह अंगूर की बेल पर बनी रहे, वैसे ही तुम भी नहीं कर सकते जब तक कि तुम मुझ में बने रहो: मुझ से अलग तुम कुछ भी नहीं कर सकते'* (यूहन्ना 15:4–5)? तो फिर, यह कितना अविवेकी, वास्तव में धर्मद्रोही, है कि किसी भी अच्छे काम का श्रेय ईश्वर की कृपा और सहायता के बजाय अपने प्रयासों को दिया जाए, जबकि प्रभु के वचन गवाही देते हैं कि उनकी सहायता के बिना कोई भी आध्यात्मिक फल नहीं दे सकता (– संग्रह 3, 16)?

२. हम विश्वास करते हैं कि जैसे एक अच्छे स्वभाव की शुरुआत परमेश्वर की एक विशेष प्रेरणा से हमारे भीतर बोई जाती है, वैसे ही सद्गुणों का अभ्यास भी उसी द्वारा प्रदान किया जाता है; हालाँकि, हमारा हिस्सा परमेश्वर की प्रेरणा के प्रति समर्पित होना और उसकी मदद को अधिक या कम तत्परता से स्वीकार करना है। हम पुरस्कार या उचित दंड के पात्र हैं, यह इस बात पर निर्भर करता है कि हम लापरवाह हैं, या हम ईश्वर की आज्ञाओं और दिव्य प्रबंध के अनुरूप होने के लिए श्रद्धापूर्ण समर्पण के साथ प्रयास करते हैं, जो हमें उनकी अनुग्रहपूर्ण कृपा से प्राप्त हुए हैं। यह यरीहो के अंधों के चंगा होने में स्पष्ट रूप से प्रदर्शित हुआ। यह कि प्रभु उनके पास से गुज़रे, दैवीय व्यवस्था और दया का एक कार्य था। लेकिन यह कि उन्होंने पुकारा, *'हे प्रभु, दाऊद के पुत्र, हम पर दया कर'* (मत्ती 20:31), यह उनके विश्वास और आशा की बात थी; हालाँकि, उनकी दृष्टि का वास्तविक पुनर्स्थापन फिर भी परमेश्वर की दया के कारण था (– संग्रह 3, 19)।

3. एक किसान, भले ही वह भूमि की जुताई के लिए कड़ी मेहनत करे, जब तक कि समय पर वर्षा न हो और मौसम अनुकूल न हो, तब तक वह भरपूर फसल की उम्मीद नहीं कर सकता । इस प्रकार, जैसे परमेश्वर उन आलसी किसानों को फसल नहीं देते जो अपनी भूमि की खेती करने का कोई प्रयास नहीं करते, वैसे ही निरंतर परिश्रम भी मेहनती लोगों को कोई लाभ नहीं पहुँचाएगा जब तक कि परमेश्वर की दया उन पर अनुग्रह न करे। इसी तरह, ईश्वर के अनुसार जीवन जीने के मामले में, हमारे अपने प्रयास आवश्यक हैं, लेकिन यदि ईश्वर की कृपा हम पर नहीं होती है, तो हम किसी भी काम में सफल नहीं होंगे। अतः यह स्वीकार करो कि ईश्वर न केवल अच्छे कर्मों बल्कि अच्छे विचारों का भी प्राथमिक स्रोत है: वह हमें अपनी पवित्र इच्छा से प्रेरित करते हैं, और हमें वह शक्ति और सही अवसर देते हैं जिससे हम वह पूरा कर सकें जिसकी हम सही ढंग से इच्छा करते हैं; *'क्योंकि हर एक अच्छा वरदान और हर एक उत्तम उपहार ऊपर से आता है, और ज्योतियों के पिता की ओर से उतरता है'* (याकूब 1:17)। (– संग्रह 13, 3)।

४. ईश्वर की इच्छा सदैव यही है कि जिस मानव को उन्होंने बनाया है, वह नष्ट न हो, बल्कि अनंतकाल तक जीवित रहे। यदि ईश्वर हमारे हृदयों में भलाई की ओर झुकाव की एक चिंगारी भी देखते हैं, तो वे अपनी दया में उसे बुझने नहीं देंगे; बल्कि, यह इच्छा करते हुए कि सभी का उद्धार हो और वे सत्य के ज्ञान को प्राप्त करें, वे यह सुनिश्चित करने के लिए अपनी शक्ति के अनुसार सब कुछ करते हैं कि वह एक ज्वाला में बदल जाए। ईश्वर की कृपा सभी के निकट है; यह बिना किसी अपवाद के सभी को उद्धार और सत्य के ज्ञान के लिए बुलाती है, क्योंकि वह कहते हैं: *'मेरे पास* आओ, *हे सब मेहनत करने वालों और बोझ से दबे लोगों, और मैं तुम्हें विश्राम दूँगा'* (मत्ती 11:28)। (– प्रवचन 13, 7)।

५. यह मानवीय मन की समझ से परे है कि यह उद्धार हमारी स्वतंत्र इच्छा से भी कैसे संबंधित है, क्योंकि कहा गया है: *'यदि तुम इच्छुक हो और मेरी आज्ञा मानो, तो तुम देश की भलाई खाओगे'* (यशा. 1:19), और फिर भी यह *'न चाहने वाले का* काम है, *न दौड़ने वाले का, बल्कि उस परमेश्वर का जो दया दिखाता है'* (रोमियों 9:16) – यह कैसे है कि परमेश्वर प्रत्येक व्यक्ति को उनके कर्मों के अनुसार पुरस्कृत करेगा, और फिर भी वह स्वयं *'चाहने वाले और अपने प्रसन्न होने के अनुसार काम करने वाले' दोनों* हैं (फिलि. 2:13)—इसीलिए हमें आज्ञा दी गई है *कि 'अपने भीतर एक नया हृदय और एक नई आत्मा उत्पन्न करो'* (यहे. 18:31), जबकि यह भी कहा गया है: *'मैं तुम्हें एक नया हृदय*

दूँगा और तुम्हारे भीतर एक नई आत्मा रखूँगा' (यहे. 11:19)। इन संदेहों को सुलझाना मुश्कलि नहीं होगा यदि हम याद रखें कि हमारे उद्धार के कार्य में परमेश्वर की अनुग्रह और हमारी स्वतंत्र इच्छा दोनों शामिल हैं, और यद्यपि कोई व्यक्ति कभी-कभी सद्गुण की इच्छा कर सकता है, उन्हें इन इच्छाओं को पूरा करने के लिए हमेशा परमेश्वर की मदद की आवश्यकता होती है; जैसे ही एक बीमार व्यक्ति का केवल स्वस्थ होने की कामना करना ही पर्याप्त नहीं है; बल्कि जीवन के दाता—ईश्वर—को स्वास्थ्य बहाल करने की शक्ति प्रदान करनी चाहिए। इस बात से पूरी तरह आश्वस्त होने के लिए कि दयालु सृष्टिकर्ता द्वारा प्रदान की गई प्राकृतिक क्षमता से उत्पन्न होने वाली अच्छी इच्छाएँ भी केवल ईश्वर की मदद से ही पूरी हो सकती हैं, प्रेरित के शब्दों को याद करना ही पर्याप्त है: *'क्योंकि मुझे तो भलाई करने की इच्छा है, परन्तु मुझे वह करने की सामर्थ्य नहीं है'* (रोमियों 7:18)। (– संग्रह 13, 9)।

६. कई लोग पूछते हैं: अनुग्रह हमारे भीतर कब कार्य करता है—क्या यह तब होता है जब कोई अच्छी इच्छा हम में प्रकट होती है, या कोई अच्छी इच्छा हम में तब प्रकट होती है जब ईश्वर का अनुग्रह हम पर आता है? अनुभव दोनों की पुष्टि करता है: शाऊल और कर-संग्रहकर्ता मत्ती ने अपनी इच्छा से इन चीजों की कामना नहीं की, बल्कि एक बुलावे के जवाब में की; जबकि ज़क्काई और सूली पर चढ़ाए गए चोर ने अपनी इच्छा से ही अनुग्रह के कार्य की शुरुआत की। इस प्रकार यह समझना चाहिए: जब ईश्वर देखते हैं कि हम अच्छाई की ओर मुड़ना चाहते हैं, तो वे हमारी तत्परता का मार्गदर्शन करते हैं और उसे मजबूत करते हैं; लेकिन यदि हम अच्छाई की इच्छा नहीं रखते, या उसके प्रति उदासीन हो गए हैं, तो वे हमें उद्धारकारी प्रेरणाएँ देते हैं, जिनके द्वारा एक अच्छा स्वभाव बनता या नवीनीकृत होता है (– संग्रह 13, 11)।

7. किसी को यह नहीं सोचना चाहिए कि मानव स्वभाव केवल बुराई करने में ही सक्षम है। सृष्टिकर्ता ने हमारी आत्माओं में सभी सद्गुणों के बीज बोए हैं, लेकिन उनके विकसित होने के लिए दैवीय प्रभाव आवश्यक है; फिर भी मनुष्य में हमेशा इन अनुग्रहकारी प्रभावों को स्वीकार या अस्वीकार करने की स्वतंत्र इच्छा बनी रहती है। यदि हमारे उद्धार की व्यवस्था पूरी तरह से हम पर निर्भर नहीं होती, तो प्रेरित यह नहीं कहते: *'अपने उद्धार को भय और कम्पन के साथ पूरा करो'*; लेकिन यदि सब कुछ केवल हम पर निर्भर होता, तो उन्होंने यह नहीं जोड़ा होता: *'क्योंकि परमेश्वर है जो अपनी इच्छा के अनुसार करने और चाहने के लिए तुम में काम करता है'* (फिलि. 2. 12–13). ईश्वर की कृपा हमसे पहले भी है, जैसा कि भविष्यवक्ता कहते हैं: *'मेरे ईश्वर, उनकी दया मेरे आगे-आगे चलेगी'* (भजन संहिता 58:11), और हमारी इच्छा के बाद भी है, इसीलिए कहा गया है: *'और भोर होते ही मेरी प्रार्थना तेरे सामने जाएगी'* (भजन संहिता 87:14)। (– संकलन 13, 12)।

८. ईश्वर की कृपा हमेशा हमारी इच्छा को भलाई की ओर निर्देशित करती है, फिर भी इस तरह से कि यह हमसे समान प्रयासों की मांग करती है या उनकी अपेक्षा रखती है। ताकि यह अपने उपहार लापरवाहों पर न लुटाए, यह हमें हमारी ठंडी उदासीनता से जगाने के लिए अवसरों की तलाश करती है; ताकि अपने उपहारों का उदार वितरण अनुचित न लगे, यह उन्हें हमारी इच्छा और परिश्रम के जवाब में प्रदान करती है। तथापि, अनुग्रह हमेशा एक उपहार के रूप में दिया जाता है, क्योंकि यह हमारे मामूली प्रयासों को असीम उदारता से पुरस्कृत करता है। इसलिए, मानव प्रयास चाहे कितने भी महान क्यों न हों, वे अनुग्रह को ऐसा उपहार नहीं बना सकते जो मुक्त रूप से न दिया गया हो। अन्यजातियों के प्रेरित, यद्यपि उन्होंने कहा कि उन्होंने *'सभी प्रेरितों से अधिक परिश्रम किया'*; फिर भी वह यह जोड़ता है कि ये परिश्रमी कार्य उसके नहीं, बल्कि *'उस परमेश्वर की कृपा के* हैं *जो उसके साथ है'* (1 कुरिन्थियों 15:10)। इस प्रकार, *'मैंने परिश्रम किया'* शब्दों के साथ, वह अपनी इच्छा के प्रयासों को व्यक्त करता है; शब्दों *'मैं नहीं, परन्तु परमेश्वर की कृपा'* से – दिव्य सहायता; और वाक्यांश *'मेरे साथ'* से – वह यह दिखाता है कि कृपा ने उसकी सहायता तब की, जब वह सुस्त और लापरवाह नहीं था, बल्कि तब जब वह परिश्रम कर रहा था (– सोब., 13, 13)।

९. ईश्वर हमारे उद्धार की व्यवस्था अनेक और अगम्य तरीकों से करते हैं: जो लोग उद्धार की इच्छा रखते हैं और उसकी खोज करते हैं, उनमें वह उस इच्छा को मजबूत करते हैं; जिनमें यह कमी है, उनमें वह इसे जगाते हैं; वह हमारी उद्धार संबंधी इच्छाओं की पूर्ति में सहायता करते हैं – और पवित्र इच्छाएँ उत्पन्न करते हैं, या उन्हें पुष्ट करते हैं। इसीलिए, हम अपनी प्रार्थनाओं में उन्हें अपना रक्षक, उद्धारकर्ता और सहायक कहते हैं। सबसे कोमल पिता और एक दयालु चिकित्सक की तरह, वह हम सभी में सब कुछ पूर्ण करते हैं: कुछ में वह मोक्ष की शुरुआत करते हैं और उनके लिए उत्साह जगाते हैं, दूसरों में वह कर्मों को पूर्णता तक और गुणों को परिपूर्णता तक पहुँचाता है; वह कुछ लोगों को आसन्न पतन से रोकता है, जबकि दूसरों को मोक्ष के लिए अवसर और अनुकूल परिस्थितियाँ प्रदान करता है; वह उन लोगों की सहायता करता है जो इच्छुक और प्रयासरत हैं, जबकि दूसरों को—जो अनिच्छुक और प्रतिरोधी हैं—एक अनुकूल प्रवृत्ति की ओर आकर्षित करता है: हर जगह वह सभी चीजों को साकार करता है –

उत्तेजति करते हुए, सहायता करते हुए और पुष्ट किरते हुए – फरि भी वह उस स्वतंत्रता में हस्तक्षेप नहीं करता जो उसने स्वयं प्रदान की है (– सोब., 13, 18)।

९. प्रार्थना पर

1. कसिी को भी अपना प्राथमकि लक्ष्य और पूर्णता का शखिर, आत्मा को शांत करने और हृदय की पवत्रिता पर आधारति अखंड प्रार्थना को बनाना चाहएि, जसिकी प्राप्ति के लएि हम शारीरकि कष्ट सहते हैं और हृदय में पश्चाताप बनाए रखते हैं। इन सभी कर्मों और प्रार्थना के बीच का संबंध अटूट और पारस्परकि है। क्योंकि जैसे इन सद्गुणों का अभ्यास प्रार्थना में पूर्णता की ओर ले जाता है, वैसे ही—जब तक प्रार्थना उन सभी को पूर्ण और मुकुटति नहीं करती—वे दृढ़ और स्थरि नहीं रह सकते। जसि तरह, इनके बनिा, वह अनवरत, शुद्ध और अटूट प्रार्थना जसिे हम प्राप्त करना चाहते हैं, प्राप्त नहीं की जा सकती या पूर्ण नहीं की जा सकती; उसी तरह ये सद्गुण, जो ईश्वर के अनुसार जीवन के संचालन में इससे पहले आते हैं, अनवरत प्रार्थना के बनिा पूर्ण रूप से प्रकट नहीं हो सकते। इसलएि, हम प्रार्थना की शक्ति पर सीधे चर्चा नहीं कर सकते थे, जो सभी सद्गुणों की इमारत को मुकम्मल करती है, जब तक कि हमने पहले, उचति क्रम में, उन सभी बातों की पहचान और जांच न कर ली हो जन्हिें इसे प्राप्त करने के लएि हटाया या तैयार कयिा जाना चाहएि – या जब तक कि सुसमाचार की दृष्टांत कथा (लूका 14: 28–30), पहले इस परम उत्तम आध्यात्मकि स्तंभ के नर्िमाण के लएि आवश्यक सभी चीजों की गणना और संग्रह न कर लयिा हो; जो, तथापि, तैयार होने पर भी, जैसा कि होना चाहएि, वैसे अपना उद्देश्य पूरा नहीं करेगी, और न ही वह पूर्णता के अंतमि शखिरों को ठीक से उस पर स्थापति होने देगी, जब तक कि पहले, दुर्गुणों की सारी अशुद्धता को दूर करने और भावों के मलबे और मृत कचरे को बाहर फेंकने के बाद, सादगी और वनिम्रता की एक अत्यंत ठोस नींव हमारे हृदय की जीवति और दृढ़ भूमि पर नहीं बछिा दी जाती, मानो सुसमाचार की उस चट्टान पर (लूका 6: 48), सबसे ठोस नींव रखी जाती है, जसि पर इस स्तंभ को आध्यात्मकि गुणों के नर्िमाण के माध्यम से खड़ा कयिा जा सकता है, जो अडगि खड़ा रहेगा और अपनी ही शक्ति पर भरोसा करते हुए स्वर्ग की ऊँचाइयों तक अपना सरि उठाएगा। लेकनि जब यह ऐसी नींव पर स्थापति हो जाता है, तो चाहे जुनूनों की मूसलाधार बारशि हो जाए; चाहे उत्पीड़न की उफनती नदयिाँ उसे ध्वस्त करने के लएि टूट पड़ें; चाहे शत्रु आत्माओं का प्रचंड तूफान उस पर कहर बरपा करे—यह न केवल नष्ट नहीं होगा, बल्कि उनकी चोट को महसूस भी नहीं करेगा।

२. अत; यह सुनश्चिति करने के लएि कि प्रार्थना उचति उत्साह और पवत्रिता के साथ की जाए, हर मामले में नम्निलखिति का पालन कयिा जाना चाहएि: सबसे पहले, दुनयिावी मामलों की सभी चंिता पूरी तरह से समाप्त कर दी जानी चाहएि; दूसरी बात - न केवल कसिी वशिेष मामले या परस्थिति मिें व्यस्त रहने से बचना चाहएि, बल्कि ऐसी चीजों की याद को भी कसिी भी तरह से अनुमति नहीं दी जानी चाहएि; इसी तरह, ध्यान भटकाना, व्यर्थ की बातें, बकवास और मज़ाक करना बंद कयिा जाना चाहएि, और सबसे बढ़कर, क्रोध या शोक से उत्पन्न उथल-पुथल को पूरी तरह से दबा देना चाहएि, जबकि कामुक वासना और धन की लालसा की हानकिारक प्रवृत्तयिों को पूरी तरह से जड़ से उखाड़ देना चाहएि। एक बार जब इन और इनके समान दोषों—जो मानव की आँखों से दखिाई देते हैं—को पूरी तरह से नष्कासति और काट दयिा जाता है, और जब संपूर्ण का यह प्रारंभकि शुद्धकिरण, जो पवत्रिता और नर्िदोषता में परणित होता है, पूरा हो जाता है, तो फरि सबसे पहले, गहरी वनिम्रता की एक ऐसी दृढ़ नींव रखनी चाहएि, जो स्वर्ग तक पहुँचने वाले एक स्तंभ का समर्थन करने के लएि पर्याप्त मजबूत हो; तब, इस नींव पर, आध्यात्मकि सद्गुणों का भवन खड़ा कयिा जाना चाहएि, और आत्मा को हर तरह की उड़ान और चंचल भटकन से रोका जाना चाहएि, ताकि इस प्रकार आध्यात्मकि दृष्टि धीरे-धीरे ईश्वर के चंतिन की ओर उठने लगे। क्योंकि प्रार्थना के समय से पहले हमारी आत्मा ने जो कुछ भी ग्रहण कयिा है, वह अनविार्य रूप से प्रार्थना के दौरान मन में आता है, जसिे स्मृति का हाथ वहाँ लाता है। इसलएि, हम प्रार्थना के दौरान जसि भी अवस्था में रहना चाहते हैं, हमें प्रार्थना के समय से पहले ही उसके लएि स्वयं को तैयार कर लेना चाहएि; और जो कुछ भी हम प्रार्थना करते समय अपने भीतर नहीं पाना चाहेंगे, उसे हमें पहले ही अपने हृदय की गहराइयों से नकिाल फेंकने में शीघ्रता करनी चाहएि, ताकि हम प्रेरति की आज्ञा को पूरा कर सकें: '*अनवरत प्रार्थना करो*' (1 थस्सि. 5:17)।

3. हमारे मन की उपमा एक अत्यंत हल्के पंख, या पंखों की एक महीन गुच्छा से करना उपयुक्त है, जो कसिी भी बाहरी तरल पदार्थ से गीला न होकर, अपनी हल्कापन के कारण, हवा की हल्की सी झोंका से भी आमतौर पर बड़ी ऊँचाइयों तक ले जाया जाता है; लेकनि जब कसिी भी नमी के भार से भारी हो जाता है, तो हवा में उठने के बजाय, वह जमीन पर गरि जाता है और उसने जो नमी सोख ली है, उसके भार के कारण धरती से चपिक जाता है। हमारा मन भी ऐसा ही है: यदि यह उस पर आक्रमण करने वाले जुनून और सांसारकि चंिताओं के बोझ से दब नहीं जाता, और न ही घातक

वासना की नमी से भ्रष्ट होता है; तो, अपनी प्राकृतिक पवित्रता के कारण हल्का होकर, आध्यात्मिक चिंतन की हल्की सी झोंकी पर ही यह ऊँचा उड़ान भरता है, और, जो नीच और सांसारिक है उसे पीछे छोड़कर, स्वर्गीय और अदृश्य की ओर ले जाया जाता है। यही कारण है कि प्रभु की आज्ञाएँ हमें चेतावनी देती हैं: *'अपने विषय में सावधान रहो, कहीं ऐसा न हो कि तुम्हारे हृदय भोग-विलास, मद्यपान और इस जीवन की चिन्ताओं से भारी हो जाएँ'* (लूका 21:34)। इसलिए, यदि हम चाहते हैं कि हमारी प्रार्थनाएँ न केवल स्वर्ग तक बल्कि स्वर्गों से भी परे तक पहुँचें, तो आइए हम अपने मन को उसकी स्वाभाविक हल्कापन पर उठाने का प्रयास करें, उन्हें सभी सांसारिक दुर्गुणों और सांसारिक जुनून के हर अंश से शुद्ध करके, ताकि अब किसी भी विदेशी बोझ से दबे बिना, हमारी प्रार्थना हल्केपन से ईश्वर तक पहुँच सके।

४. उन कारणों पर ध्यान दें जिन्हें प्रभु ने हमारे मन को भारी करने वाला बताया है। उन्होंने व्यभिचार, वेश्यावृत्ति, हत्या, ईश्वर निन्दा या चोरी की ओर इशारा नहीं किया—जिन्हें सभी घोर पाप और निंदनीय माना जाता है—बल्कि अतिभिक्षण की ओर इशारा किया, नशा और इस संसार की चिंताओं और फिक्रों—जिनसे न केवल इस संसार में कोई भी दूर भागता नहीं है और न ही उन्हें शर्मनाक माना जाता है, बल्कि यह कहने में भी शर्म आती है, कि संसार को त्यागने वालों में से कुछ भी उन्हीं सुखों में लिप्त रहते हैं, और उनमें न तो अपने लिए कोई हानि देखते हैं और न ही कोई दुर्भाग्य। हालाँकि, इन तीन बुराइयों से, जो आत्मा को बोझिल करती हैं, उसे ईश्वर से अलग करती हैं और उसे पृथ्वी पर दबा देती हैं, शाब्दिक अर्थ में बचना आसान है, विशेष रूप से हमारे लिए, जो दुनिया के किसी भी संपर्क से इतने दूर हैं और इन दिखाई देने वाली चिंताओं, मद्यपान और परिपूर्णतावाद में शामिल होने का हमें कोई अवसर ही नहीं मिलता। लेकिन एक और प्रकार की आध्यात्मिक लालच और मद्यपान है, जिससे बचना अधिक कठिन है, और एक और प्रकार की सांसारिक चिंता और इस युग का दुख है, जो हमें तब भी घेरे रहता है, जब हम सभी सांसारिक संपत्ति का पूर्ण त्याग कर चुके होते हैं, जबकि हम शराब और सभी प्रकार के लालच से परहेज़ करते हैं, और जबकि हम मरुस्थल के एकांत में रहते हैं। मेरा तात्पर्य देह की कामनाओं, आसक्तियों और वासनाओं से है; जब तक हम स्वयं को इनसे शुद्ध नहीं करते, तब तक शराब के नशे या भरपूर भोजन के बिना भी, हमारे हृदय एक ऐसी मद्यपान और लालच से बोझिल हो जाएँगे जो और भी अधिक हानिकारक है। और केवल वही, जिसका मन सभी भावों के बंधनों से मुक्त होकर गहरी शांति पाता है, और जिसका हृदय अपनी सारी लालसा के साथ परम-भलाई के रूप में ईश्वर से सबसे दृढ़ता से चिपका रहता है, वह ही प्रेरितों की आज्ञा: *'बिना रुके प्रार्थना करो' को* पूरी तरह से पूरा कर सकता है।

5. मेरा मानना है कि हृदय की गहरी पश्चाताप, आत्मा की पवित्रता और पवित्र आत्मा से प्राप्त प्रबोधन के बिना प्रार्थना के सभी रूपों को समेटना असंभव है। प्रार्थना के उतने ही रूप हैं, जितनी विभिन्न अवस्थाएँ और प्रवृत्तियाँ एक ही आत्मा में, या वास्तव में सभी आत्माओं में उत्पन्न हो सकती हैं। जैसे-जैसे मन पवित्रता में प्रगति करता है और, जिस अवस्था की प्रकृति में वह ले जाया जाता है—चाहे संयोग से या अपनी ही आंतरिक कार्यप्रणाली के कारण—वह नवीनीकृत होकर उभरता है, और हर ऐसे क्षण में वह रूपांतरित हो जाता है; और इसलिए यह स्पष्ट है कि कोई भी हमेशा एक ही प्रकार की प्रार्थना नहीं कर सकता। हर कोई अलग-अलग तरह से प्रार्थना करता है जब वह आनंदित होता है, अलग तरह से जब वह दुख या दुर्भाग्य के बोझ तले दब जाता है; अलग तरह से जब वह आध्यात्मिक प्रगति में फल-फूल रहा होता है; अलग तरह से जब वह शत्रु के अनेक हमलों से दब जाता है; पापों की क्षमा की प्रार्थना करते समय अलग तरह से; अनुग्रह में वृद्धि या किसी सद्गुण की प्राप्ति या किसी वासना को वश में करने के लिए प्रार्थना करते समय अलग तरह से; गेहेना और अंतिम न्याय के विचार से भयभीत होने पर अलग तरह से; अन्य समयों में, जब वह भविष्य के आशीर्वादों की आशा और इच्छा से प्रज्वलित होता है; अन्य समयों में, जब वह आवश्यकता और खतरे में होता है; अन्य समयों में, जब वह सुरक्षा और शांति का आनंद लेता है; अन्य समयों में, जब वह स्वर्गीय रहस्यों के प्रकटीकरण से प्रबुद्ध होता है; अन्य समयों में, जब वह सद्गुणों में अपनी प्रगति की कमी और अपनी भावनाओं की शुष्कता पर शोक मनाता है।

6. विषय-वस्तु के अनुसार, प्रेरित प्रार्थना के चार प्रकारों को इस प्रकार अलग करते हैं: *'मैं सबसे पहले यही आग्रह करता हूँ कि निवेदन, प्रार्थना, मध्यस्थता और धन्यवाद किए जाएँ'* (1 तीमु. 2:1)। – *'प्रार्थना'* – δεησις – पापों के संबंध में विनती या निवेदन है, जब कोई व्यक्ति अपने द्वारा किए गए पापों, चाहे वे वर्तमान हों या अतीत, पर पश्चाताप की अवस्था में आकर, उनके लिए क्षमा मांगता है; – *'विनती'* – προσευχή – तब होती है जब, प्रार्थना करते समय, हम ईश्वर को कुछ अर्पित करते हैं या वादा करते हैं (कहते हुए: 'हे प्रभु, यदि आप दया करें तो मैं ऐसा और वैसा करूँगा'); *'मध्यस्थता'* – εντεξις – तब होती है जब, आत्मा के उत्साह में, हम दूसरों के लिए, जिनसे हम प्यार करते हैं, या पूरी दुनिया की शांति के लिए प्रार्थना करते हैं; *'धन्यवाद'* – ευχαριστία – तब होता है जब मन ईश्वर को धन्यवाद (और स्तुति) अर्पित करता है, उनकी अतीत की आशीर्वादों को याद करते हुए, या उनकी वर्तमान

आशीर्वादों को महसूस करते हुए, या उन लोगों के लिए भविष्य में ईश्वर द्वारा तैयार की गई आशीर्वादों की पूर्वदृष्टि करते हुए जो उनसे प्रेम करते हैं।

7. इन चार प्रकार की प्रार्थनाओं के बाद प्रार्थना की एक अत्यंत उत्कृष्ट अवस्था आती है, जो एकमात्र ईश्वर के चिंतन और उनके प्रति तीव्र प्रेम में निहित है, और जिसमें हमारा मन, इस प्रेम से आलिंगित और व्याप्त होकर, परमेश्वर के साथ सबसे घनिष्ठ तरीके से और विशेष ईमानदारी के साथ संवाद करता है। प्रभु की प्रार्थना—'*हमारे पिता*' आदि (मत्ती 6:9–13)—हमें इस अवस्था को गंभीरता से खोजने के लिए प्रेरित करती है। हम कहते हैं: '*हे हमारे पिता!*' और इस प्रकार, ब्रह्मांड के शासक—ईश्वर—को अपना पिता स्वीकार करके, हम यह स्वीकार करते हैं कि हमें दासत्व की अवस्था से मुक्ति मिली है और हमें ईश्वर ने अपने बच्चों के रूप में गोद लिया है। – और बाद में: '*जो स्वर्ग में हो*' जोड़कर, हम इस वर्तमान सांसारिक जीवन से, जो क्षणभंगुर है और हमें हमारे पिता से दूर करता है, पूर्ण घृणा के साथ मुंह मोड़ने की अपनी तत्परता व्यक्त करते हैं; और, इसके विपरीत, परम इच्छा के साथ उस राज्य की ओर प्रयत्न करने का, जहाँ हमारे पिता वास करते हैं, और स्वयं को ऐसी किसी भी चीज़ की अनुमति न दें जो हमें इस उत्कृष्ट गोद लेने के लिए अयोग्य बनाकर, हमें, अवैध संतान के रूप में, हमारे पिता की विरासत से वंचित कर दे और हमें ईश्वर के धर्मी न्याय की पूरी कठोरता के अधीन कर दे। ईश्वर के पुत्रों के रूप में इतनी उच्च पदवी प्राप्त करने के बाद, हमें ईश्वर के प्रति इतना पुत्रवत् प्रेम से जलना चाहिए कि हम अब अपने हितों की खोज न करें, बल्कि पूरे हृदय से उनकी महिमा - हमारे पिता की महिमा - की कामना करें, और उनसे कहें: '*तेरा नाम पवित्र हो*', इस प्रकार यह गवाही देते हुए कि हमारी संपूर्ण इच्छा और हमारा सारा आनंद हमारे पिता की महिमा में निहित है – कि हमारे पिता का सबसे महिमामय नाम महिमामय, श्रद्धापूर्वक सम्मानित और पूजित हो। शुद्ध मन की दूसरी प्रार्थना है, '*तेरा राज्य आवे*' उनके पिता का—अर्थात् वह राज्य जिसमें मसीह संतों के बीच राज्य करते हैं, जब, शैतान से हमारी ऊपर उसकी शक्ति छीन लेने और हमारे हृदयों से वासनाओं को निकाल फेंकने के बाद, ईश्वर सद्गुणों की सुगंध के माध्यम से हम में राज्य करना शुरू करते हैं—या वह राज्य जो नियत समय पर सभी सिद्ध लोगों और ईश्वर की संतानों को वादा किया गया है, जब मसीह उनसे कहेंगे: '*आओ, हे मेरे पिता द्वारा धन्य किए हुए, संसार की नींव के समय से तुम्हारे लिए तैयार किए गए अपने उत्तराधिकार को प्राप्त करो*' (मत्ती 25:34)। तीसरी प्रार्थना, जो पुत्रों के लिए उपयुक्त है: '*पृथ्वी पर भी वैसा ही हो जैसे स्वर्ग में* – जिसका अर्थ है: लोग स्वर्गदूतों जैसे हों – और जैसे वे स्वर्ग में परमेश्वर की इच्छा को पूरा करते हैं, वैसे ही पृथ्वी पर रहने वाले सभी लोग अपनी इच्छा नहीं, बल्कि उनकी इच्छा करें; इसका यह भी अर्थ है: हमारे जीवन में सब कुछ आपकी इच्छा के अनुसार हो; हम अपना सब कुछ आपको सौंपते हैं, यह विश्वास करते हुए कि आप हमारे भले के लिए सब कुछ - सुख और दुख दोनों - व्यवस्थित करते हैं, और हमारी मुक्ति की परवाह हमसे भी अधिक करते हैं। इसके अलावा: '*आज हमें हमारी प्रतिदिन की रोटी दे।*' '*प्रतिदिन*' – वह जो सभी अस्तित्व से ऊपर है – सभी अस्तित्वों में सर्वोच्च – (जो केवल '*स्वर्ग से उतरी रोटी*' हो सकती है)। जब इसमें 'आज' कहा गया है, तो यह दर्शाता है कि कल का इसका ग्रहण अपर्याप्त है, जब तक कि यह हमें अभी भी न दिया जाए, ताकि हमें इस प्रार्थना को हर समय करने की इसकी दैनिक आवश्यकता का एहसास हो, क्योंकि ऐसा कोई दिन नहीं है जिस दिन इस रोटी को ग्रहण करके अपने अंतर्मन के हृदय को मजबूत करना आवश्यक न हो। '*और हमारे कर्ज माफ कर, जैसे हम भी अपने कर्जदारों के कर्ज माफ करते हैं*' दयालु प्रभु हमें हमारे पापों की क्षमा का वादा करते हैं, बशर्ते कि हम स्वयं अपने भाइयों के लिए क्षमा का उदाहरण प्रस्तुत करें: '*हमें माफ कर, जैसे हम भी माफ करते हैं*'। यह स्पष्ट है कि, इस प्रार्थना की आशा में, केवल वे ही निडर होकर क्षमा मांग सकते हैं जिन्होंने स्वयं अपने ऋणी भाइयों को क्षमा किया है। लेकिन जो कोई भी अपने खिलाफ पाप करने वाले भाई को पूरे दिल से क्षमा नहीं करता है, वह इस प्रार्थना के द्वारा दया नहीं बल्कि निंदा मांगेगा। क्योंकि यदि उसकी यह प्रार्थना सुनी जाए, तो, उसके उदाहरण के अनुसार, उसके बाद अथक क्रोध और दंड का अपरिहार्य निर्णय के सिवा और क्या हो सकता है? '*जिसने दया नहीं दिखाई, उस पर बिना दया के न्याय किया जाएगा*' (याकूब 2:13)। '*और हमें परीक्षा में न ले जाओ*'। प्रेरित के शब्दों को याद करते हुए याकूब: '*धन्य है वह मनुष्य जो परीक्षा में स्थिर रहता है*' (याकूब 1:12); – हमें प्रार्थना के इन शब्दों को इस प्रकार नहीं समझना चाहिए: 'हमें कभी परीक्षा में न डालें', – बल्कि इस प्रकार समझना चाहिए: 'हमें परीक्षा पर विजय प्राप्त करने न दें'। अय्यूब को परीक्षा में डाला गया, लेकिन उन्हें परीक्षा में नहीं ले जाया गया; क्योंकि, ईश्वर की मदद से, '*उसने ईश्वर को मूर्ख नहीं ठहराया*' (अय्यूब 1:22), और न ही उसने अपने होठों को ईश्वर-निंदा करने वाली बड़बड़ाहट से अशुद्ध किया, जिसमें प्रलोभक उसे फंसाना चाहता था। इब्राहीम को आज़माया गया, यूसुफ को आज़माया गया, लेकिन न तो एक और न ही दूसरा प्रलोभन में लाया गया; क्योंकि उनमें से किसी ने भी प्रलोभक की इच्छा पूरी नहीं की। '*परन्तु हमें बुराई से बचा*' – अर्थात्, हमें शैतान द्वारा हमारी शक्ति से

अधकि प्रलोभति होने न देना, परन्तु *'प्रलोभन के साथ नकिलने का मार्ग भी प्रदान करना, ताकहिम उसे सहन कर सकें'* (1 कुरन्थियों 10:13)।

8. यद्यपप्रिस्तावति प्रार्थना, स्वयं प्रभु द्वारा कही गई होने के कारण, प्रार्थना की पूर्ण परपिूर्णता को समाहति करती है; फरि भी, प्रभु अपने वश्विासयिों को और भी आगे ले जाते हैं – एक नश्चित उच्च अवस्था में, जैसा कहिमने ऊपर उल्लेख कयिा है – उस उत्कट प्रार्थना की ओर, जसिे वास्तव में बहुत कम लोग जानते या अनुभव करते हैं, और, मैं कहूँगा, अभव्यिक्त भी नहीं कयिा जा सकता, जो सभी मानवीय समझ से परे है, कसिी आवाज़ की ध्वन,ि जीभ की गत,ि या कसिी भी शब्दों के उच्चारण से संकेतति नहीं होती; और जसि मन, उस दवि्य प्रकाश के प्रवाह से प्रबुद्ध होकर, दुर्बल मानवीय वाणी के माध्यम से व्यक्त नहीं करता, बल्क,ि अपनी इंद्रयिों को संयत कर, स्वयं से अनयिंत्रति रूप से, मानो एक अतप्रिचुर स्रोत से, प्रवाहति करता है, , और कसिी अकथनीय तरीके से सीधे प्रभु के पास प्रवाहति होती है, इस प्रकार उस अतसिंक्षप्ति क्षण में कुछ ऐसा प्रकट करती है जसि,े होश में आकर, वह शब्दों में व्यक्त नहीं कर सकती या वचिारों में नहीं ढूंढ सकती।

९. इस प्रकार की प्रार्थनामय अवस्था ईश्वर का एक वरदान है; हालाँक,ि सामान्य रूप से, अनुग्रह-पूर्ण प्रार्थनामय स्वभाव को कोमलता की भावना से जाना जाता है, जसिकी उपस्थतिमिन को शुद्ध और उत्कट प्रार्थना के लएि प्रेरति करती है। जैसा कअिनुभव ने दखिाया है, यह कोमलता वभिन्नि अवसरों पर उत्पन्न होती है। कभी-कभी, भजन गाते समय, कसिी वशिेष छंद के शब्दों ने उत्कट प्रार्थना का अवसर प्रदान कयिा; तो अन्य समयों में, एक भाई की मधुर आवाज़ ने वस्मिति लोगों की आत्माओं को तीव्र नविेदन के लएि प्रेरति कयिा। हम यह भी जानते हैं ककिभी-कभी स्पष्ट और भक्तपूिर्ण गायन से उपस्थति लोगों में महान उत्साह उत्पन्न होता था; और अक्सर एक सज्जन और आध्यात्मकि संवाद वाले व्यक्तकिे उपदेश ने घुटने टेकने वालों में प्रार्थनाओं की प्रचुर वर्षा की इच्छा जगाई। ऐसा भी होता था ककिसिी भाई या कसिी प्रयिजन की मृत्यु से हम कोमलतापूर्वक प्रार्थना करने के लएि उतने ही गहराई से प्रेरति होते थे। इसी प्रकार, अपनी ही उदासीनता और सुस्ती की याद कभी-कभी हमारे भीतर एक उद्धारकारी आध्यात्मकि उत्साह जगा देती थी। और वास्तव में, ऐसे उदाहरण जनिमें ईश्वर की कृपा हमारी आत्मा को सुन्नता और नींद से जगाती है, अनगनित हैं।

10. जैसे कोमलता वभिन्नि परस्थितियिों में उत्पन्न होती है, वैसे ही यह वभिन्नि तरीकों से प्रकट होती है: कभी-कभी यह एक अकथनीय आध्यात्मकि आनंद के रूप में प्रकट होती है; कभी-कभी यह आत्मा की सभी शक्तयिों और गतविधियिों को गहरी मौन में डुबो देती है; कभी-कभी यह अधकि या कम मात्रा में आँसू लाती है। आँसू, या एक वशिेष अश्रुपूर्ण स्वभाव, इसका अधकि सामान्य अभव्यिक्तहिै। ये आँसू या तो अपने पापों के बोध से हृदय के क्लेशति होने पर, या शाश्वत आशीर्वादों पर मनन और शाश्वत महमिा की इच्छा से, या स्वयं पर ईश्वर की महान आशीर्वादों के एहसास से, जसिके साथ अपनी अयोग्यता और अपर्याप्तता की भावना जुड़ी हो, या इस पृथ्वी पर हमारी दयनीय यात्रा की भावना से उत्पन्न हो सकते हैं।

11. इस बात का क्या संकेत है कप्रिार्थना सुनी गई है? – जब, प्रार्थना करते समय, हम कसिी संदेह से परेशान नहीं होते, और कुछ भी हमारी वनिती में हमारी आशा को नराशा से कम नहीं करता; यद,ि हमारी प्रार्थना के प्रवाह में ही, हमें लगता है कहिमें वह मलि गया है जो हमने माँगा था, तो हमें इस बात पर संदेह नहीं करना चाहएि कि हमारी प्रार्थनाएँ वास्तव में सुनी गई हैं। क्योंकजिो प्रार्थना करता है, उसे सुनने और मांगा हुआ प्राप्त करने के योग्य तब माना जाएगा, जब तक वह यह वश्विास करता है कपिरमेश्वर उस पर दृष्टरिखता है और उसकी वनिती को पूरा कर सकता है। क्योंकहिमारे प्रभु का वचन अटल है: *'प्रार्थना में जो कुछ भी तुम मांगो, वश्विास करो कि तुमने उसे प्राप्त कर लयिा है, और वह तुम्हारा होगा'* (मरकुस 11:24)। इस संबंध में, परमेश्वर का वचन उन कई कारणों की ओर इशारा करता है जो प्रार्थना के उत्तर मलिने में योगदान करते हैं। इस प्रकार, एक प्रार्थना तब सुनी जाती है जब दो लोग प्रार्थना करने पर सहमत हों (मत्ती 18:19), – या जब कोई वश्विास के साथ प्रार्थना करता है, भले ही वह वश्विास सरसों के दाने के बराबर ही क्यों न हो (मत्ती 17:20), – या जब कोई लगातार प्रार्थना करता है (लूका 11:8), – या जब दान को प्रार्थना के साथ जोड़ा जाता है (सीराख 29:15), – और दया के अन्य कार्यों (भजन संहति 58:6–9) के साथ। देखो कअिपनी प्रार्थना सुने जाने की कृपा प्राप्त करने के कतिने तरीके हैं; इसलएि, कोई भी स्वयं के लएि उद्धार के आशीर्वादों की खोज में नराश न हो। क्योंकमिान लो कतिुममें वे कई चीजें नहीं हैं जनिके द्वारा प्रार्थना सुनी जाती है; लेकनि नश्चिय ही तुम प्रार्थना में दृढ़ रह सकते हो, जो हर उस व्यक्तकिी पहुँच में है जो इसे चाहता है। केवल इसी के लएि, प्रभु ने यह वादा कयिा है कजिो कुछ भी माँगा जाए, वह उसे प्रदान करेंगे। इसलएि, अवश्विास में डगमगाए बनिा, हमें प्रार्थना में स्थरि रहना चाहएि, और हमें वह मलिेगा जो हम माँगते हैं। इस प्रकार प्रभु ने वादा कयिा: *'माँगो, तो तुम्हें दयिा जाएगा; खोजो, तो तुम पाओगे; खटखटाओ, तो तुम्हारे लएि खोला*

जाएगा' (लूका 11:9-10)। लेकिन जो कोई भी प्रार्थना करता है, उसे यह जानना चाहिए कि यदि उन्हें इस बात पर संदेह है कि उनकी सुनी जाएगी, तो उनकी प्रार्थना निश्चित रूप से नहीं सुनी जाएगी।

12. सबसे बढ़कर, प्रार्थना के संबंध में, हमें सुसमाचार की आज्ञा को पूरा करना चाहिए कि हम अपने स्वर्गीय पिता से प्रार्थना करने के लिए अपने भीतरी कमरे में प्रवेश करें और दरवाज़ा बंद कर लें। यह शाब्दिक रूप से किया जाना चाहिए, लेकिन आध्यात्मिक रूप से और भी अधिक। हम अपने भीतरी कक्ष में तब प्रार्थना करते हैं, जब हम अपने हृदयों को सभी विचारों और चिंताओं से पूरी तरह हटाकर, एक विशेष गुप्त तरीके से और निडर होकर प्रभु को अपनी प्रार्थनाएँ अर्पित करते हैं। हम दरवाज़ा बंद करके तब प्रार्थना करते हैं, जब हम अपने होठों को सील करके, उस से चुपचाप प्रार्थना करते हैं जो हमारे शब्दों की नहीं, बल्कि हमारे हृदयों की परीक्षा करता है। हम किसी गुप्त स्थान पर तब प्रार्थना करते हैं, जब केवल अपने हृदय और एकाग्र मन से, हम अपनी याचनाएँ केवल परमेश्वर को ही अर्पित करते हैं, ताकि सबसे शत्रुतापूर्ण शक्तियाँ भी यह न जान सकें कि हम किसके लिए प्रार्थना कर रहे हैं। गहरी शांति में प्रार्थना करना क्यों आवश्यक है? न केवल इसलिए कि हम अपने साथी उपासकों को उनकी प्रार्थनाओं से विचलित न करें या अपनी फुसफुसाहटों या उच्छारणों से उनकी भक्तिपूर्ण भावनाओं को परेशान न करें, बल्कि इसलिए भी कि हमारी प्रार्थना का इरादा (उद्देश्य) हमारे सबसे बड़े शत्रुओं से भी छिपा रहे, जो हम पर बदनामी करते हैं, विशेषकर जब हम प्रार्थना कर रहे होते हैं।

१३. हमारी प्रार्थना तब अपने उचित पूर्णता को प्राप्त करेगी जब वह, जिसके लिए प्रभु ने अपने पिता से प्रार्थना की थी, हम में पूरा हो जाए: कि *'वह प्रेम जो तूने मुझ से किया है, उन में हो'* (यूहन्ना १७:२६); और आगे: *'जैसे तू, हे पिता, मुझ में है, और मैं तुझ में हूँ, वैसे ही वे भी हम में एक हों'* (वही, पद 21)। ऐसा तब होगा जब हमारा सारा प्रेम, हमारी सारी इच्छा, हमारा सारा उत्साह, हमारा सारा प्रयत्न, हमारे सारे विचार, जो कुछ भी हम देखते हैं, जिसके बारे में हम बात करते हैं, और जिसकी हम आशा करते हैं, वह सब ईश्वर है – और जब वह एकता जो पिता और पुत्र के बीच, और पुत्र और पिता के बीच विद्यमान है, हमारे हृदयों और मन में प्रवाहित होती है – तो जैसे वह हमसे सच्ची पवित्रता और एक अटूट प्रेम से प्रेम करते हैं, वैसे ही हम भी एक शुद्ध और अविभाज्य प्रेम द्वारा उनके साथ एक हो सकें। जो इस अवस्था को प्राप्त करता है, वह एक ऐसी स्थिति में प्रवेश करता है जिसमें निरंतर प्रार्थना उसके हृदय में जलती ही रहती है; तब उसके जीवन की हर गतिविधि और उसके हृदय की हर प्रवृत्ति एक ही, अखंड प्रार्थना होगी, जो शाश्वत रूप से धन्य जीवन का पूर्वाभास और प्रतिज्ञा है।

14. प्रार्थना में परम पूर्णता प्राप्त करने के लिए, मनुष्य को ईश्वर की अखंड स्मृति में स्थिर होना चाहिए – जिसके लिए एक संक्षिप्त, बार-बार दोहराई जाने वाली प्रार्थना एक साधन के रूप में काम करती है (संवाद, 9, 36)। हमारे पूर्वजों ने पाया है कि जो व्यक्ति ईश्वर की निरंतर स्मृति के लिए प्रयास करता है, उसे निम्नलिखित प्रार्थना को अथक रूप से दोहराने की आदत डालनी चाहिए: *'हे ईश्वर, मेरी पुकार सुन; हे प्रभु, मेरी सहायता के लिए शीघ्रता कर'* (भजन संहिता 69:2)। – यह पद पूरे धर्मग्रंथ में से एक अच्छे कारण से चुना गया है: यह प्रार्थना में आवश्यक सभी मनोभावों को व्यक्त करता है और प्रार्थना करने वाले की सभी आवश्यकताओं को पूरा करता है। इसमें अपनी असहायता का एक विनम्र स्वीकारोक्ति है, यह स्वीकारोक्ति कि ईश्वर ही एकमात्र सहायक हैं, जो सहायता के लिए सदैव तत्पर हैं – यह विश्वास और आशा कि वह इस प्रार्थना को करने वाले की मदद करेंगे और उसे हर कष्ट से मुक्त करेंगे। जो कोई भी इन शब्दों से निरंतर ईश्वर को पुकारता है, वह बुद्धिमानी से अपने हृदय में यह समझता और महसूस करता है कि ईश्वर उनके साथ उपस्थित हैं, और वह पुत्र-स्नेह से परिपूर्ण हृदय के साथ एक पिता की तरह उनकी ओर मुड़ता है – और इस प्रकार वह अपने ऊपर ईश्वर की सुरक्षा, आश्रय और रक्षा को आकर्षित करता है। और इस प्रकार, यह संक्षिप्त प्रार्थना राक्षसों के हमलों के खिलाफ एक अभेद्य दीवार बन जाती है – विचारों के कोलाहल को दूर करने वाली, बुरे इरादों का खंडन करने वाली, कामुक आवेगों को वश में करने वाली, और हृदय में सभी अच्छे झुकावों को पोषित करने वाली। पिताजी ने हमें यह भी आज्ञा दी है: यदि अत्याहार का जुनून अपनी विभिन्न अभिव्यक्तियों में आपको परेशान करता है, तो पुकार लगाएँ: *'हे ईश्वर, मेरी सहायता के लिए पुकार सुनो; हे प्रभु, मेरी सहायता के लिए शीघ्र आओ'*; – या यदि आपको शरीर को वश में करने के लिए कठोर उपवास की आवश्यकता महसूस हो, और आपको खुद पर काबू पाने की उम्मीद न हो, तो प्रार्थना करें: *'हे ईश्वर, मेरी मदद की पुकार सुनो'*, और इसी तरह। यदि निराशा की भावना आपको सताती है, और दुख आपको हर उचित कार्य से रोकता है, तो कहें: *'हे ईश्वर, मेरी मदद की पुकार सुनो'*; – या यदि कोई आध्यात्मिक आनंद आपकी आत्मा में आता है, और आप इसे संरक्षित और बढ़ाना चाहते हैं, तो वही शब्द कहें: *'हे ईश्वर, मेरी पुकार सुनो'*। यदि देह की कामना अपनी मोहक मिठास के साथ उत्पन्न होती है – और आपको भय है कि यह आग पवित्रता के सुगंधित फूल को जला सकती है – तो पुकार लगाएँ: *'हे ईश्वर, मेरी पुकार सुनो'* आदि; या यदि आपके अंगों में शांति और शीतलता प्रवेश कर गई है, और आप चाहते हैं कि यह

अच्छी अवस्था बनी रहे, या आपके भीतर हमेशा के लिए वास करे, तो और भी अधकि उत्साह के साथ दोहराएँ: *'हे ईश्वर, मेरी पुकार सुनो'* आदि। इस प्रकार, हर आध्यात्मकि आवश्यकता में, इस एक प्रार्थना को दोहराएँ; और यह आपके लिए सभी बुराइयों से मुक्तिऔर आपके भीतर के सभी सद्गुणों की सुरक्षा का साधन होगा। इसलिए, इसे अपने हृदय में निरंतर गूँजने दें; हर काम और सेवा में, रास्ते में और भोजन के समय, सोते समय और जागने पर, इस छोटे से श्लोक का पाठ करना और इससे सीखना कभी बंद न करें, जब तक कि इसमें निरंतर अभ्यास के द्वारा, आप इसे सोते समय भी जपने के आदी न हो जाएँ।

१५. इसका फल, सबसे पहले और सबसे महत्वपूर्ण, यह होगा कि आप अपने विचारों की सारी संपत्तिको त्याग देंगे, और, इस श्लोक की एकता को दृढ़ता से थामे हुए, आप एकमात्र सहायक पर अपने मन को एकाग्रति करने के आदी होते जाएंगे, उन्हें अपने साथ सर्वदा उपस्थिति, सर्व-द्रष्टा और सर्व-व्यापी के रूप में देखेंगे। वहाँ से, फिर, ईश्वर के साथ सबसे जीवंत संवाद तक आरोहण करते हुए, आप और भी अधकि उत्कृष्ट रहस्यों से परिपूर्ण होने लगेंगे, ईश्वर में स्वयं को डुबोकर, केवल उसी में निवास करके, और केवल उसी में संतुष्टि पाकर। इस प्रकार, अंततः आप उस शुद्ध प्रार्थना को प्राप्त करेंगे जिसका उल्लेख ऊपर किया गया है, जो अब आपके मन में किसी भी प्रतिमा को प्रवेश नहीं करने देती, न ही यह आवाज़ की किसी ध्वनि या किसी शब्द के उच्चारण से व्यक्त होती है, बल्कि यह हृदय से अदम्य उत्साह के साथ फूटती है, मन की ईश्वर के लिए एक अकथनीय आनंदमय, प्रबल लालसा, और वह उसके समक्ष अकथनीय आहों और कराहों में प्रकट होती है।

10. आध्यात्मकि जीवन में मार्गदर्शन पर – सबसे अनुभवी लोगों से परामर्श सहति एक प्रवचन

1. एक बार, बुजुर्ग संत एंथोनी द ग्रेट के चारों ओर इकट्ठा हुए और शाम से सुबह तक विभिन्न आध्यात्मकि विषियों पर चर्चा की – और विशेष रूप से इस पर कि सभी अन्य गुणों में से कौन सा गुण हमें शैतान की धोखे की जाल में पड़ने से बचा सकता है और हमें सीधे पूर्णता के मार्ग पर ले जा सकता है। विभिन्न मत रखे गए: कुछ ने उपवास और जागरण का मत रखा; दूसरों ने अनासक्तिऔर सभी चीजों के प्रतितिरिस्कार का; कुछ ने तपस्या या मरुभूमि में संन्यास का; और कुछ ने अपने पड़ोसी से प्रेम का। जब सभी ने इस प्रकार बोल लिया, तो धन्य एंथनी बोलने लगे। 'आपने जो कुछ भी कहा है वह उन लोगों के लिए उद्धारकारी और आवश्यक है जो ईश्वर की खोज करते हैं और उनके पास आना चाहते हैं। लेकिन इन गुणों में उत्कृष्टता प्राप्त करने वालों के पतन के अनुभव हमें इनमें से किसी एक को प्राथमकिता देने की अनुमति नहीं देते हैं। क्योंकि जो कठोर उपवास और जागरण द्वारा खुद को विशिष्ट साबित करते थे, और जो निर्जन रेगिस्तान में निरंतर एकांत में रहते थे, और जो सांसारिक वस्तुओं से परम अनासक्ति( ) की अवस्था तक पहुँच गए थे, और जो दान में उदार थे, वे सभी शत्रु के जाल में फँस गए और गिर पड़े। और मेरा मानना है कि इसका कारण कुछ और नहीं बल्कि विवेक की कमी थी। क्योंकि विवेक व्यक्तिको खतरनाक चरमपंथ से बचते हुए राजसी मार्ग पर चलना सिखाता है: उदाहरण के लिए, उपवास के संबंध में, यह न तो शरीर को अत्यधकि थकाने की अनुमति देता है और न ही उसे आराम देने की। सुसमाचार में, इसे आत्मा की आँख और दीपक कहा गया है: *'देह का दीपक,'* प्रभु कहते हैं, *'आँख है: यदि तेरी आँख शुद्ध है, तो तेरा सारा शरीर प्रकाश से परिपूर्ण होगा; परन्तु यदि तेरी आँख दुष्ट है, तो तेरा सारा शरीर अँधेरे से परिपूर्ण होगा'* (मत्ती 6:22–23)। जिस प्रकार प्रकाश सब कुछ प्रकाशित करता है और आँख सब कुछ देखती है, उसी प्रकार यह भी, किसी व्यक्ति के सभी विचारों और कर्मों की समीक्षा और परीक्षण करके, यह स्पष्ट और निर्धारित करता है कि क्या किया जाना चाहिए, और किससे तथा किस चीज़ से परहेज़ किया जाना चाहिए। लेकिन जब किसी व्यक्ति में ऐसा विवेक नहीं होता, तो उसके कर्म और विचार, बिना कठोरता से परखे, जहाँ चाहें बह जाते हैं; और यहाँ शत्रु सच्चे भले के स्थान पर जो भला प्रतीत होता है उसे रख देता है, और उसे एक गड्ढा या फंदा छिपाने के लिए उपयोग करके, उन्हें उसमें डाल देता है और नष्ट कर देता है।"

2. संत एंथनी का निर्णय अनगिनित उदाहरणों से प्रमाणित होता है। आइए हम बड़े आयरन के दयनीय पतन को याद करें। उन्होंने स्वयं को अत्यंत कठोर उपवास और गहरे एकांत को समर्पित कर रखा था, और शत्रु की उकसावे पर, उन्हें किसी भी तरह से भंग न करने के लिए, उन्होंने शनिवार और रविवार को संन्यासियों की सामान्य सभाओं में जाना बंद कर दिया, जहाँ पारस्परिक चर्चा के माध्यम से तपस्या जीवन के विभिन्न मार्ग और चौराहे स्पष्ट होते थे। इससे धोखा खाकर, जो दुश्मन की अच्छी सलाह लगती थी, वह एक और भी बड़ी भ्रांति में उसके आगे झुक गया – जब वह उस रूप में प्रकट हुआ तो उसने उसे एक देवदूत समझ लिया, और उसकी बात मानकर खुद को एक सूखे कुएँ में फेंक दिया – वह बुरी तरह टूट गया और तीसरे दिन उसकी मृत्यु हो गई। – यहाँ एक और उदाहरण है: दो भाइयों ने, सबसे गहरे रेगिस्तान में जाने का निश्चय करके, यह संकल्प लिया कि वे प्रभु स्वयं द्वारा प्रदान किए गए भोजन के अलावा कोई अन्य भोजन स्वीकार नहीं करेंगे। जब, रेगिस्तान में भटकते हुए, वे इतने थक गए कि वे और चल नहीं सके,

तो उन पर माज़िक्स - एक जंगली और क्रूर लोगों ने हमला कर दिया; लेकिन उन्हें ऐसी दयनीय अवस्था में देखकर, उन्होंने उन पर दया की और उन्हें रोटी दी। उनमें से एक को होश आया और उसने रोटी स्वीकार करने के लिए सहमति दे दी, भले ही वह मनुष्यों की थी, और उसे प्रभु द्वारा भेजा हुआ मान लिया; वह अपनी ताकत वापस पा गया और बच गया। दूसरा, हालांकि, जिद पर अड़ा रहा - और भूख से मर गया। यहाँ एक और उदाहरण है: एक सख्त तपस्वी और संन्यासी खुद को स्वर्गीय शक्तियों के साथ संचार के योग्य मानता था - और दुश्मन ने इसका तुरंत फ़ायदा उठाया; वह उसके सामने एक देवदूत के रूप में प्रकट होने लगा, जो मानव कर्मों और विचारों के बारे में रहस्योद्घाटन करता था, और बिना दीपक के ही कोठरी में प्रकाश पैदा करता था। इस प्रकार उसका पूरा भरोसा जीत लेने के बाद, दुश्मन ने अंततःउसे अब्राहम की तरह अपने पुत्र को ईश्वर के लिए बलिदान करने का आदेश दिया। और यह निश्चित रूप से हो भी जाता अगर पुत्र, असामान्य तैयारियों को देखकर यह न समझ जाता कि उसे भाग जाना चाहिए। – इसके अलावा: मेसोपोटामिया में, शत्रु ने एक निश्चित तपस्वी और संन्यासी को सपनों में निःसंदेह आस्था की ओर ले गया, उसे एक दर्शन में दो लोगों को प्रस्तुत करके: ईसाई लोग, प्रेरितों और शहीदों के साथ, अंधकार, अपमान, दुख और विलाप में; और यहूदी लोग, मूसा के साथ, पैगंबरों और भविष्यवक्ताओं के साथ, दिव्य वैभव, महिमा और आनंद में – और उसे यहूदी धर्म अपनाने और खतना कराने के लिए मना लिया। – ये उदाहरण हमें यह विश्वास दिलाने के लिए पर्याप्त हैं कि विवेक की कमी पतन और बर्बादी के लिए एक खुला द्वार है।

3. विवेक ईश्वर का एक वरदान है, जिसे फिर भी विकसित और संवर्धित किया जाना चाहिए। कैसे? सबसे अनुभवी पिताओं के निर्णय को सब कुछ सौंपकर। यह विवेक की सबसे बुद्धिमानी भरी पाठशाला है, जिसमें उन लोगों को भी जो इसके लिए विशेष योग्यता नहीं रखते, यह सीखने को मिलता है कि क्या उचित है, इस पर अच्छी तरह से तर्क कैसे करें। इस प्रकार यह प्रश्न हल हो जाता है: विवेक कैसे प्राप्त किया जाता है। सच्ची विवेकशीलता सच्ची विनम्रता के माध्यम से प्राप्त होती है, जिसका पहला प्रमाण यह है कि हम पितृगणों को न केवल यह बताएँ कि हम क्या करते हैं, बल्कि यह भी कि हम क्या सोचते हैं; किसी भी मामले में अपने विचारों पर भरोसा न करना, बल्कि हर बात में बड़ों के निर्देशों का पालन करना, और केवल उसी को अच्छा या बुरा मानना जिसे वे ऐसा मानते हैं। इस प्रकार का आचरण व्यक्ति को सही रास्ते पर सुरक्षित रहने में मदद करता है और उसे शैतान के सभी जालों से बचाता है। जो व्यक्ति अपने जीवन को अपने स्वयं के निर्णय के अनुसार नहीं, बल्कि सफल लोगों की सलाह के अनुसार चलाता है, उसका दैवीय प्रलोभन का शिकार होना असंभव है। इस प्रकार, अपने विचारों को संतों के निर्णय के अधीन करना व्यक्ति की अपनी विवेकबुद्धि को प्रतिस्थापित करता है और उसे सिखाता है। शत्रु प्रकाश से घृणा करता है; इसीलिए बुराइयों के विचारों का प्रकट होना, जैसे ही वे प्रकाश में आते हैं, उन्हें भगा देता है और नष्ट कर देता है। जैसे एक साँप, जो अँधेरी बिल से बाहर प्रकाश में आकर, भागने और छिपने की कोशिश करता है: वैसे ही बुरे विचार भी, जब खुले तौर पर स्वीकारोक्ति और पश्चाताप के माध्यम से उजागर होते हैं, तो एक व्यक्ति से भागने की कोशिश करते हैं। इसे कई, कई उदाहरणों और अनुभवों से पुष्टि मिलती है।

४. बाबा सेरापियन अपने बारे में यह बताते हैं: जब मैं एक नौसिखिया था, तो मैं चोरी-छिपे बाबा से सूखी रोटी का एक टुकड़ा लेकर खा जाता था। मैं यह बहुत लंबे समय तक करता रहा, और इस वासना ने मुझ पर इतना अधिकार कर लिया कि मैं उस पर काबू नहीं पा सका। मेरे अंतर्मन ने मुझे दोषी ठहराया; फिर भी मुझे बाबा को इसके बारे में बताने में शर्म आती थी। – लेकिन दयालु ईश्वर की कृपा से, कुछ भाई संयोग से बड़े भाई के पास आए, और उन्होंने अपने विचार उनके सामने व्यक्त करना शुरू कर दिया और उन पर उनकी अनुमति मांगी। बड़े भाई ने आवश्यकतानुसार उत्तर दिया, और इसी क्रम में उन्हें भोजन में संयम के बारे में बात करनी पड़ी। फिर उन्होंने जोड़ा: 'भिक्षुओं को जितना कुछ भी हानि नहीं पहुँचाता, और राक्षसों को जितना कुछ भी प्रसन्न नहीं करता, उतना कुछ भी नहीं, जितना कि अपने आध्यात्मिक पिताओं से अपने विचारों को छिपाना।' ये शब्द मुझ पर गहरा प्रभाव डाल गए; मुझे ऐसा लगा मानो ईश्वर ने मेरे पाप उस वृद्ध को प्रकट कर दिए हों, और पश्चाताप से भरकर मैं रो पड़ा – फिर मैंने अपनी छाती से रोटी का एक टुकड़ा निकाला जिसे मैं आमतौर पर चुराया करता था, और, जमीन पर गिरकर, मैंने उनसे अपने अतीत के अपराधों को क्षमा करने और यह प्रार्थना करने का आग्रह किया कि भविष्य में मैं ऐसी चीजों से बचे रहूँ। तब वृद्ध ने कहा: 'तुम्हारे पाप-स्वीकार ने तुम्हें तुम्हारी दासता से मुक्त कर दिया है; अपने पापों को प्रकट करके, तुमने उस शैतान को धूल चटा दी है जो तुम्हारे चुप रहने के दौरान तुम्हें सता रहा था। अब तक तुमने उसे अपने ऊपर हावी होने दिया था, न तो उसका विरोध किया और न ही उसे उजागर किया; लेकिन अब जब उसे तुम्हारे हृदय से बाहर निकाल दिया गया है और उजागर कर दिया गया है, तो उसका तुम्हारे भीतर कोई स्थान नहीं रहेगा।' वरिष्ठ ने अभी अपनी बात पूरी भी नहीं की थी कि ऐसा लगा जैसे मेरे अस्तित्व की गहराई से एक जलती हुई मशाल निकल आई और पूरी कोठरी को एक भयानक बदबू से भर दिया, जिससे उपस्थित लोगों को लगा कि गंधक जल रहा है। वरिष्ठ ने आगे कहा: 'देखो, प्रभु ने

मेरे शब्दों की सच्चाई और तुम्हारी मुक्ति की स्पष्ट रूप से पुष्टि कर दी है।' इस प्रकार, स्वीकारोक्ति के कार्य के माध्यम से, मेरे भीतर से अतिभक्षण का जुनून दूर हो गया, और तब से वह पूर्व इच्छा मेरे मन में आई भी नहीं है।

5. हम शमूएल में क्या देखते हैं? – वह, जो बचपन से ही परमेश्वर को समर्पित किया गया था और जिसे उनके साथ संवाद करने का अवसर मिला था, ने अपने ही विचारों पर भरोसा नहीं किया, बल्कि परमेश्वर द्वारा दो बार बुलाए जाने पर, वृद्ध एलिया के पास दौड़ा, और उनसे यह शिक्षा प्राप्त की कि किसी को परमेश्वर के प्रति कैसी प्रतिक्रिया देनी चाहिए। इस प्रकार ईश्वर स्वयं, उस व्यक्ति के मामले में भी जिसे उन्होंने उनके साथ संवाद करने के योग्य समझा था, ने उसे बुजुर्ग की शिक्षा के माध्यम से मार्गदर्शन करना चुना, ताकि उस तरह उसे नम्रता की ओर ले जाया जा सके। – क्या हम संत पौलुस में भी यही नहीं देखते हैं? प्रभु स्वयं ने उन्हें बुलाया; लेकिन तुरंत उन्हें अननियस के पास भेज दिया, ताकि वे उनसे सत्य का मार्ग सीख सकें। – और स्वयं संत पौलुस, सुसमाचार का उपदेश देने के कई प्रयासों के बाद, अपने संदेश की पुष्टि करने के लिए यरूशलेम गए, *'कि किहीं ऐसा न हो कि मैं व्यर्थ दौड़ रहा हूँ'* (गलातियों 2:2), – भले ही पवित्र आत्मा की कृपा स्पष्ट रूप से उनके साथ थी। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि प्रभु पूर्णता का मार्ग किसी को तब तक नहीं दिखाते जब तक कि उसे आध्यात्मिक पिताओं द्वारा उस ओर निर्देशित न किया जाए, ठीक वैसे ही जैसे वे भविष्यवक्ता के माध्यम से कहते हैं: *'अपने पिता से पूछो, और वह तुम्हें बताएगा; अपने बुजुर्गों से, और वे तुम्हें बताएँगे'* (व्यवस्थाविवरण 32:7)।

11. आध्यात्मिक जीवन में पूर्णता की विभिन्न श्रेणियों पर, इसके लिए प्रेरणाओं के अनुसार

1. तीन प्रेरणाएँ लोगों को अपनी वासनाओं को वश में करने के लिए प्रेरित करती हैं, अर्थात्: भविष्य में गेहेन्ना (नरक) की यातनाओं का भय, या वर्तमान में कानूनों की कठोरता का भय; स्वर्ग के राज्य को प्राप्त करने की आशा और इच्छा; और, अंत में, सद्गुण या परोपकार के प्रति प्रेम। उस भय के बारे में कि वह मनुष्य को बुराई की गंदगी से घृणा करने के लिए प्रेरित करता है, नीतिवचन में कहा गया है: *'परमेश्वर का भय अधर्म से घृणा करता है'* (8:13)। यह भी कहा गया है कि वह आशा मनुष्य को वासनाओं के वश में होने से रोकती है: *'जो कोई उस पर आशा रखता है, वह लज्जित नहीं होगा'* (भजन संहिता 33:23)। जहाँ तक प्रेम का सवाल है, कहा जाता है कि यह पाप में गिरने से भी नहीं डरता: *'प्रेम कभी असफल नहीं होता'* (1 कुरिन्थियों 13:8)। इसलिए, प्रेरित ने इन तीन गुणों के अधिग्रहण में उद्धार के पूरे मामले का सारांश प्रस्तुत किया, यह कहते हुए: *'और अब ये तीनों शेष हैं: विश्वास, आशा और प्रेम'* (1 कुरिन्थियों 13:13)। विश्वास, भविष्य के न्याय और यातनाओं का भय पैदा करके, हमें वासनाओं की अशुद्धता से दूर करता है; आशा, स्वर्गीय पुरस्कारों की आशा के द्वारा हमारे मन को वर्तमान से हटाकर, हमें सभी शारीरिक सुखों को तुच्छ समझने के लिए प्रेरित करती है; प्रेम, अपनी अग्नि से हमारे भीतर मसीह और आध्यात्मिक सद्गुणों में प्रगति के प्रति प्रेम जगाकर, हमें उन सब चीजों से पूर्ण घृणा के साथ मुँह मोड़ने के लिए प्रेरित करता है जो इनके विपरीत हैं। यद्यपि ये तीनों सद्गुण हमें एक ही लक्ष्य तक ले जाते हैं, अर्थात् वे हमें उस सब से परहेज़ करने के लिए प्रेरित करते हैं जो निषिद्ध है; फिर भी वे उत्कृष्टता की अपनी श्रेणियों में एक-दूसरे से बहुत भिन्न हैं। पहले दो गुण उन लोगों की विशेषता हैं जो प्रगति के लिए प्रयास तो करते हैं, लेकिन अभी तक उन्होंने इन गुणों से पूरे हृदय से प्रेम नहीं किया है; तीसरा गुण, हालांकि विशेष रूप से ईश्वर का है, और उन लोगों का है जिन्होंने अपने भीतर ईश्वर की छवि और समानता को पुनर्स्थापित किया है। क्योंकि ईश्वर ही एकमात्र हैं जो सब कुछ अच्छा बनाते हैं, वह भी भय या पुरस्कार की इच्छा से नहीं, बल्कि शुद्ध प्रेम से। *"'यहोवा ने अपनी इच्छा के अनुसार सब कुछ बनाया है,'* सोलोमन कहते हैं (नीतिवचन 16:4), अर्थात्, अपनी भलाई के कारण वह योग्य और अयोग्य दोनों पर हर प्रकार के आशीर्वादों की प्रचुरता से वर्षा करते हैं; क्योंकि वह अपराधों से दुखी नहीं हो सकते, न ही मनुष्यों के अधर्म से क्रोधित होते हैं, क्योंकि वह शाश्वत रूप से पूर्ण और अपनी ही प्रकृति से अपरिवर्तनीय भलाई हैं।

२. इसलिए, जो कोई भी पूर्णता के लिए प्रयास करता है, उसे भय के पहले चरण—जिसे सही मायने में 'दासी भय' कहा जाता है—से धीरे-धीरे आशा के मार्ग पर चढ़ना चाहिए। यहाँ, एक व्यक्ति की उपमा अब एक दास से नहीं, बल्कि एक भाड़े के नौकर से दी जाती है; क्योंकि वह भविष्य के इनाम की आशा में काम करता है। यद्यपि, अपने पापों की क्षमा के प्रति आश्वस्त होकर, वह अब उनके लिए दंड से नहीं डरता, और, अपने भीतर के अच्छे कर्मों से अवगत होकर, उनके लिए एक अच्छा इनाम पाने की आशा करता है; फिर भी वह अभी तक एक पुत्र की उचित अवस्था तक नहीं पहुँचा है, जो अपने पिता की अपनी प्रति सर्व-उदार कृपा में पूर्ण विश्वास के साथ, निस्संकोच होकर उस सब को अपना मानता है जो पिता का है।

3. अतः हमें अपनी प्रगति में तेजी लानी चाहिए, ताकि *'कभी न खत्म होने वाले प्रेम'* के द्वारा, उन पुत्रों की तीसरी श्रेणी में आरोहण करके, जो पिता की सभी संपत्ति को अपनी मानते हैं, हम स्वर्गीय पिता के स्वरूप और

समानता को ग्रहण करने के योग्य समझे जाएँ और, उनके सच्चे पुत्र के उदाहरण का अनुसरण करते हुए, पुकार उठें: *'जो कुछ भी पिता के पास है वह मेरा है'* (यूहन्ना 16:15): और यही बात धन्य पौलुस भी हमारे विषय में गवाही देते हैं, यह कहते हुए: *'जो कुछ भी तुम हो— चाहे पौलुस हो, चाहे अपोलोस हो, चाहे केफा हो, चाहे संसार हो, चाहे जीवन हो, चाहे मृत्यु हो, चाहे वर्तमान हो, चाहे भविष्य हो— जो कुछ भी तुम हो'* (1 कुरिन्थियों 3:21–22)। उद्धारकर्ता की आज्ञा भी हमें ऐसे दैवी-गुणों की ओर बुलाती है: *'इसलिये सिद्ध बनो,'* वह कहते हैं, *'जैसे तुम्हारा स्वर्गीय पिता सिद्ध है'* (मत्ती 5:48)। जो लोग अभी भी दासों और भाड़े के नौकरों की अवस्था में हैं, उनके लिए अच्छाई की ओर झुकाव कभी-कभी बाधित हो जाता है, अर्थात् जब आत्मा, अपनी भावनाओं के एक प्रकार के ठंडा पड़ जाने के कारण, या सांसारिक सुखों और खुशियों द्वारा विचलित होने के कारण, गेहेना के भय या भविष्य के आशीर्वादों की इच्छा से प्रभावित होना बंद कर देती है। इस प्रकार, हम परमेश्वर को केवल उनके प्रति प्रेम की स्वाभाविक प्रेरणा के लिए प्रेम करके ही सच्ची पूर्णता प्राप्त कर सकते हैं; क्योंकि उन्होंने भी, हमारे उद्धार के अलावा किसी अन्य कारण से नहीं, पहले हमसे प्रेम किया। इस उद्देश्य के लिए, हमें भय से आशा की ओर, और आशा से ईश्वर के प्रति प्रेम—या स्वयं सद्गुणों के प्रति प्रेम—के स्तर तक, आत्मा की पूर्ण उत्कटता के साथ आरोहण करने का प्रयत्न करना चाहिए, ताकि, भलाई के प्रति ऐसी भक्ति को अपना लेने के बाद, हम, जहाँ तक मानवीय स्वभाव अनुमति देता है, उसमें दृढ़ता से स्थिर रह सकें।

४. उस व्यक्ति और उस व्यक्ति के बीच बहुत बड़ा अंतर है जो गेहेना (नरक) के डर या भविष्य के इनाम की आशा से अपने भीतर की वासनाओं की आग को बुझाता है, और वह जो दिव्य प्रेम की भावना से प्रेरित होकर, पाप और अशुद्धि से ही घृणा करता है, और अपने हृदय में शुद्धता के प्रेम और भक्ति के लिए शुद्धता के सद्गुण को संजोता है, और सभी कार्य पीड़ा के डर के बिना करता है, परन्तु सद्गुण के प्रेम से, और भविष्य में वादा किए गए पुरस्कार की आशा न करते हुए, बल्कि वर्तमान भलाई के सचेत आनंद से संतुष्ट रहते हैं। ऐसी अवस्था में, एक व्यक्ति, भले ही उसके कर्मों को देखने वाला कोई न हो, स्वयं को पाप की ओर ले जाने की अनुमति नहीं देगा, न ही पापी सुखों में लिप्त होकर गुप्त रूप से अपने विचारों को अपवित्र करेगा; क्योंकि, अपने हृदय में सद्गुण के प्रति सच्चा प्रेम पालते हुए, वे न केवल इसके विपरीत किसी भी चीज़ को अस्वीकार करते हैं, बल्कि उससे घृणा के साथ मुँह भी मोड़ते हैं। लेकिन जो कोई भी भय के कारण वासनाओं के प्रलोभन से बह जाने से रोका जाता है, वह एक बार भय द्वारा लगाई गई बाधा हट जाने पर, फिर से उसी की ओर लौट जाएगा जिसे वह प्रेम करता है, और इसलिए वह हमेशा अपने सद्गुण में दृढ़ नहीं रहेगा, न ही उसे कभी वासनाओं के संघर्ष से शांति मिलेगी; क्योंकि वह किसी भी तरह से उस दृढ़ और अटूट आंतरिक शांति को प्राप्त करने में सक्षम नहीं होगा जो पवित्रता की स्थापना से आती है। जहाँ युद्ध से विश्राम न मिले, वहाँ समय-समय पर घाव लगना स्वाभाविक है। क्योंकि चाहे कोई युद्ध-कला में कितना भी निपुण क्यों न हो, चाहे वह कितना भी वीरता से क्यों न लड़े, और भले ही वह अपने शत्रुओं को बार-बार घातक घाव पहुँचाए, फिर भी यह असंभव है कि शत्रु की तलवार कभी उसे न लगे। इसके विपरीत, जिसने भी वासनाओं के हर उभार को दबा दिया है, वह पहले से ही एक सुरक्षित शांति का आनंद लेता है, और स्वयं को सद्गुण के प्रति समर्पित कर चुका है; वह व्यक्ति इस सद्भाव की स्थिति को लगातार बनाए रखेगा, जिसमें वह पूरी तरह से डूबा हुआ है और जिसके प्रति वह पूरी तरह से समर्पित है, क्योंकि वह निश्चित है कि पवित्रता की हानि से अधिक विनाशकारी कुछ भी नहीं है। उपस्थित लोगों का सम्मान उसकी सत्यनिष्ठा में कुछ भी नहीं जोड़ता, और न ही एकांत इसे थोड़े से भी कम करता है; बल्कि, वह हमेशा और हर जगह अपने साथ न केवल अपने कर्मों बल्कि अपने विचारों का भी न्यायाधीश—अपना अंतरात्मा—लिए चलता है, और वह सबसे बढ़कर उस ईश्वर को प्रसन्न करने का प्रयास करता है, जिसके बारे में वह आश्वस्त है कि उससे न तो बचा जा सकता है, न धोखा दिया जा सकता है, और न ही छिप सकते हैं।

५. जो कोई, अपनी उत्साही मेहनत के बजाय ईश्वर की सहायता पर भरोसा करके, पूर्णता की इस डिग्री को प्राप्त करने के योग्य समझा जाता है, वह दासता की अवस्था से, जिसमें भय प्रेरक शक्ति है, और भाड़े के मजदूर की अवस्था से, जिसमें प्रेरक शक्ति व्यक्ति की आंतरिक अच्छाई नहीं बल्कि पुरस्कार की आशा होती है, पुत्रत्व की अवस्था में, जिसमें न तो भय के लिए और न ही पुरस्कार की इच्छा के लिए कोई स्थान है, बल्कि जहाँ *'अखंड प्रेम'* अनवरत रूप से कार्य करता है। जो कोई भी, ऐसे प्रेम के द्वारा, अपने भीतर ईश्वर की प्रतिमा और समानता को पुनर्स्थापित करता है, वह केवल भलाई की ओर अपने हृदय की प्रवृत्ति के कारण ही भलाई में आनंदित होगा; और धैर्य तथा नम्रता प्राप्त कर लेने के बाद, जो किसी न किसी प्रकार से ईश्वर की अपनी ही गुणों के समान हैं, वह इसके बाद पापियों के किसी भी दुराचार से क्रोधित नहीं होगा, बल्कि, उनकी कमजोरियों पर सहानुभूति और करुणा रखते हुए, उनके लिए क्षमा की प्रार्थना करते हैं, यह याद करते हुए कि वह स्वयं भी पहले इसी तरह की भावनाओं के वश में था, जब तक कि प्रभु की दया ने उसे नहीं बचाया, और यह कि उसने सांसारिक जीवन की बेड़ियों से अपनी ही कोशिशों

से मुक्त नहीं पाई, बल्कि ईश्वर की कृपा ने ही उसे इससे मुक्त किया; – ताकि वह यह महसूस कर सके कि पापियों के प्रति क्रोध नहीं बल्कि करुणा दिखाई जानी चाहिए, जबकि उसका हृदय परमेश्वर के साथ शांति में हो: *'तूने मेरे बंधन खोल दिए: 'मैं तेरा धन्यवाद-बलि चढ़ाऊँगा'* (भजन संहिता 115:7), – और इसके अलावा: *'यदि प्रभु मेरी सहायता न करते, तो मेरा प्राण शीघ्र ही अधोलोक में चला जाता'* (भजन संहिता 93:17); और इस प्रकार, कि ऐसे विनम्र मन की अवस्था में, वह सुसमाचार की पूर्णता की निम्नलिखित आज्ञा को पूरा कर सके: *"अपने शत्रुओं से प्रेम करो, जो तुमसे बैर रखते हैं, उनके लिए भलाई करो, और जो तुम्हें सताते और निकालते हैं, उनके लिए आशीष माँगो* (मत्ती 5:44); और इस प्रकार इस आज्ञा से जुड़ी प्रतिफल प्राप्त करने के योग्य ठहरो, जिससे हम न केवल परमेश्वर के स्वरूप और समानता को धारण करते हैं, बल्कि हमें परमेश्वर के पुत्र भी कहा जाता है: *'ताकि तुम हो,'* वहाँ कहा गया है, *'अपने स्वर्गीय पिता के पुत्र: क्योंकि वह अपने सूर्य को दुष्टों और भलों पर उदय करता है, और धर्मी और अधर्मी दोनों पर वर्षा भेजता है'* (पद 45)। यह महसूस करते हुए कि उसने ऐसे प्रेम को प्राप्त कर लिया है, धन्य योहन कहते हैं: *'न्याय के दिन हमें निश्चय रहे, क्योंकि जैसा वह है, वैसे ही हम भी इस संसार में हैं'* (1 योहन 4:17)। क्योंकि मनुष्य, अपनी ही प्रकृति से दुर्बल और कमजोर है, वह और कैसे 'जैसा वह है' हो सकता है, यदि वह ईश्वर की नकल करते हुए, अपने हृदय के दयालु प्रेम को अच्छे और बुरे, धर्मी और अधर्मी लोगों तक न फैलाए? – ताकि वह स्वयं भलाई के प्रति समर्पण से भलाई कर सके, और इस प्रकार स्वयं में एक ऐसे व्यक्ति को प्रकट कर सके जिसे वास्तव में परमेश्वर का पुत्र गोद लिया गया है, जिसके बारे में वही धन्य प्रेरित घोषणा करते हैं: *'परमेश्वर से जन्मा हुआ कोई भी पाप नहीं करता, क्योंकि परमेश्वर का बीज उसमें वास करता है: और वह पाप नहीं कर सकता, क्योंकि वह परमेश्वर से जन्मा है'* (1 यूहन्ना 3:9), और फिर: *'हम जानते हैं कि हर जो परमेश्वर से जन्मा है, वह पाप नहीं करता; पर जो परमेश्वर से जन्मा है, वह अपने आपको सुरक्षित रखता है, और दुष्ट उसे छू नहीं सकता'* (1 यूहन्ना 5:18)। – (हालांकि, इसे हर तरह के पाप के लिए नहीं, बल्कि केवल घातक पापों के लिए समझना चाहिए। – सच्चाई में, सबसे पवित्र आत्माओं के लिए भी उन छोटे-मोटे अपराधों में न पड़ना असंभव है जो शब्द, विचार, इच्छा में, अज्ञानता, भूल, किसी अतिशयता, या किसी अप्रत्याशित परिस्थिति के कारण होते हैं – जो, यद्यपि मृत्यु तक ले जाने वाले पाप कहलाने वाले पाप से भिन्न हैं, फिर भी कुछ न कुछ दोष और निंदा के बिना नहीं हो सकते)। इस प्रकार, जैसा कि हमने कहा है, जो कोई भी भलाई से प्रेम करता है और ईश्वर का अनुकरण करने वाला बनता है, और प्रभु की दया और दीर्घ सहनशीलता को पहन लेता है (कुलु. 3:12), वह अपने उत्पीड़क के लिए भी प्रार्थना करेगा, अपने प्रभु की तरह पुकारते हुए: *'पिता, इन्हें क्षमा कर, क्योंकि ये नहीं जानते कि क्या कर रहे हैं'* (लूका 23:34)। हालाँकि, दुष्ट वासनाओं से अभी तक शुद्ध न हुई आत्मा का एक स्पष्ट संकेत यह है कि जब कोई दूसरों के अपराधों पर कोई दया नहीं दिखाता, बल्कि उन पर कठोर निर्णय लगाता है।

12. पश्चाताप के कार्यों के समापन पर

1. पूर्ण पश्चाताप का अर्थ है उन पापों को फिर से न करना जिनके लिए हम पश्चाताप करते हैं और जिनका हमारा अंतःकरण हमें दोषी ठहराता है; उनका प्रायश्चित करने और उन्हें क्षमा किए जाने का प्रमाण हमारे हृदय से उनके प्रति थोड़ी सी भी सहानुभूति का निष्कासन है। प्रत्येक व्यक्ति यह जान ले कि वह अभी तक अपने पूर्व पापों से मुक्त नहीं हुआ है, जब तक, उनके प्रायश्चित के लिए आवश्यक परिश्रम और आहें भरते हुए, पापपूर्ण कर्मों की छवियाँ—चाहे वे उसने स्वयं की हों या समान प्रकार की—उसके मन की आँखों के सामने मंडराती रहें; और इससे, अनुचित वस्तुओं से प्रलोभित होने की तो बात ही क्या, बल्कि केवल उनके स्मरण मात्र से ही, आत्मा की आंतरिक मानसिक शांति चकनाचूर हो जाती है। इसलिए, जो कोई भी ऐसे संतोष की ओर सतर्कता से प्रयासरत है, वह तभी अपने पापों से मुक्त और अपनी पूर्व की सभी कृत्यों के लिए क्षमा प्राप्त समझे, जब वह महसूस करे कि उसका हृदय उनके प्रलोभनों से अब थोड़े से भी प्रभावित नहीं होता, और यह केवल कल्पना मात्र से नहीं है। क्योंकि पश्चाताप और क्षमा का न्यायाधीश हमारे अंतरात्मा में विराजमान है; न्याय के दिन से पहले, जब तक हम इस देह में हैं, वह हमें हमारे अपराध से मुक्ति प्रदान करता है और क्षमा की घोषणा के माध्यम से प्रायश्चित की पूर्णता की घोषणा करता है। और जो हमने कहा है, उसे और स्पष्ट रूप से व्यक्त करने के लिए, मैं कहता हूँ: हमें अंततः यह विश्वास हो जाना चाहिए कि हमारे अतीत के पापों के सभी कलंक क्षमा कर दिए गए हैं, जब हमारी हृदय से कामुक इच्छाएँ और जुनून दोनों मिट जाते हैं।

२. *प्रश्न:* लेकिन फिर, हमारे भीतर वह पवित्र और उद्धारकारी पश्चाताप और नम्रता कहाँ से उत्पन्न हो सकती है, जिसे पश्चातापी के दृष्टिकोण से इस प्रकार वर्णित किया गया है: *'मैंने अपनी अधर्म को पहचान लिया है और अपने पाप को छिपाया नहीं है: मैं अपनी अधर्म को प्रभु के सामने कबूल करूँगा'*, ताकि जो इसके बाद आता है वह

वास्तव में और न्यायसंगत रूप से हम पर लागू हो: *'और तूने मेरे हृदय के अधर्म को क्षमा किया है'* (भजन संहिता 31:5)? या प्रार्थना में स्वयं को नम्र करके, हम अपने भीतर पश्चाताप के ऐसे आँसू कैसे जगा सकते हैं जो पापों की क्षमा प्राप्त करने के लिए पर्याप्त शक्तिशाली हों, जैसा कि संत दाऊद ने किया: *'मैं हर रात अपना बिस्तर धोता हूँ; मैं अपने आँसुओं से अपना पलंग भीगता हूँ'* (भजन संहिता 6:7), यदि हम अपने हृदय से अपने पापों की हर स्मृति को दूर भगा दें, जबकि इसके विपरीत, हमें स्वयं प्रभु के वचन द्वारा उन्हें दृढ़ता से थामे रहने की आज्ञा दी गई है: *'मैं, हाँ मैं ही, वह हूँ जो तेरे अपराधों और तेरे पापों को मिटा देता है; और मैं उन्हें याद न रखूँगा: परन्तु तुझे याद रखना होगा'* (यशायाह 43:25)? ऐसा क्यों है कि मैं न केवल सिलाई करते समय, बल्कि प्रार्थना करते समय भी, जानबूझकर अपने अतीत के पापों की याद करने का प्रयास करता हूँ, ताकि सच्ची नम्रता और हृदय के पश्चाताप के लिए खुद को अधिक प्रभावी ढंग से तैयार करके, मैं भविष्यवक्ता के साथ यह कहने का साहस कर सकूँ: *'मेरी दीनता और मेरी परिश्रम को देखो, और मेरे सभी पापों को क्षमा कर दो'* (भजन संहिता 24:18)।

3. *उत्तर:* जो कहा गया है वह पश्चाताप के चरमोत्कर्ष और अंतरात्मा तथा न्याय की संतुष्टि के संकेत को दर्शाता है। जहाँ तक पापों की स्मृति का प्रश्न है, यह निस्संदेह अत्यंत उपयोगी और आवश्यक है; परन्तु केवल उनके लिए जो अभी भी पश्चाताप के श्रम में लगे हुए हैं—ताकि वे अपनी छाती पीटते हुए, अनवरत पुकार लगा सकें: *'क्योंकि मैं अपनी अधर्म को जानता हूँ, और मेरा पाप सदा मेरे सामने रहता है'* (भजन संहिता 50:5), – और यह भी: *'क्योंकि मैं अपनी अधर्म का प्रगट करूँगा और अपने पाप का ध्यान रखूँगा'* (भजन संहिता 37:19)। इस प्रकार, जब हम पश्चाताप का अभ्यास करते हैं, और अतीत के पापपूर्ण कर्मों की स्मृति हमें अभी भी आहत करती है, तो यह आवश्यक है कि हमारे अपराध-बोध की जागरूकता से उत्पन्न आँसुओं की वर्षा जलती हुई अंतरात्मा की आग को बुझा दे। लेकिन जब, हृदय की गहरी नम्रता और आत्मा के खेद के कार्य के माध्यम से, अथक प्रायश्चित्त के श्रम और आहों द्वारा, इन पापों की स्मृति को सुला दिया जाता है और दयालु ईश्वर की कृपा से आत्मा की गहराई से अंतरात्मा की चुभन दूर हो जाती है, तब यह स्पष्ट हो जाएगा कि वह प्रायश्चित्त के अंत तक पहुँच गया है, उसने यथोचित रूप से पूर्ण क्षमा प्राप्त कर ली है, और अपने सभी पापों की अशुद्धि से शुद्ध हो गया है। हालांकि, ऐसी विस्मृति केवल अतीत के पापों और भावुक प्रवृत्तियों के प्रायश्चित, और हृदय की पूर्ण और सर्वथा शुद्धि के द्वारा ही प्राप्त होती है; और जो लोग, लापरवाही या अहंकार के कारण, अपनी वासनाओं के शुद्धिकरण की उपेक्षा करते हैं, उनमें से कोई भी विनम्रता के बिना इसे प्राप्त नहीं कर सकता; परन्तु केवल वही जो, कड़वे रोने और अविराम आहों के द्वारा, भूतपूर्व अशुद्धियों के सभी मलिनता को धो डालता है, और जो, अपनी कठोर परिश्रम के द्वारा, अपनी आत्मा की सारी शक्ति से परमेश्वर को पुकार सकता है: *'मैंने अपनी अधर्म को मान लिया है, और अपने पाप को छिपाया नहीं है'* (भजन संहिता 31:5), – और: *'मेरे आँसू दिन-रात मेरा भोजन बन गए हैं'* (भजन संहिता 41:4), – ताकि, परिणामस्वरूप, वे प्रभु के अपने होठों से न्यायसंगत रूप से सुन सकें: *'मैंने तुम्हारी अधर्म को बादल की तरह और तुम्हारे पाप को संध्याकाल की तरह दूर कर दिया है'* (यशायाह 44:22)।

४. आपने पहले कहा था कि आप जानबूझकर अतीत के पापों की यादें मन में लाते हैं। ऐसा नहीं किया जाना चाहिए; भले ही ऐसी कोई याद किसी की इच्छा के विरुद्ध मन में आ जाए, उसे तुरंत दूर कर देना चाहिए, क्योंकि यह मन को शुद्ध चिंतन से भटकाती है, विशेष रूप से एकांत में रहने वाले व्यक्ति को, और उसे इस संसार की अशुद्धियों में उलझाती है और उसके भावों की गंदगी से घुटन देती है। क्योंकि जब आप उस बात की स्मृति को फिर से ताज़ा करते हैं जो आपने पहले की थी, अज्ञानता या वासना के वश में, इस संसार के राजकुमार के प्रभाव में, तो उस बिंदु से, – मैं यह मान लूँगा कि जब आप ऐसे विचारों को पालते हैं तो उन चीज़ों का कोई सुख आपको महसूस नहीं होता – फिर भी, निस्संदेह, अतीत के भ्रष्टता के साथ यह मात्र मानसिक संपर्क मन की हवा को एक घृणित गंध से दूषित कर देगा और आध्यात्मिक सुगंध, या सद्गुणों की सुगंध की मिठास को दूर भगा देगा। जब अतीत के कामुक कर्मों की स्मृति इंद्रियों को जगाती है, तो उससे वैसे ही पीछे हटना चाहिए जैसे कोई सम्मानित और गरिमामय व्यक्ति किसी निर्लज्ज और घमंडी महिला से भागता है, जो सभी के सामने गले लगाने या बातें करने के लिए उसके पास आती है। क्योंकि यदि वह तुरंत उसके स्पर्श को दूर नहीं करता और उसके साथ अनुचित बातचीत में थोड़ी सी भी देरी कर देता है, तो भले ही वह शर्मनाक आनंद के लिए सहमति देने से इनकार कर दे, फिर भी वह राहगीरों की निंदा से बच नहीं पाएगा, क्योंकि उसने कुछ अपमानजनक और निंदनीय होने की अनुमति दी है। इसी प्रकार, यदि हमें किसी संक्रामक स्मृति के द्वारा ऐसे विचारों में ले जाया जाता है, तो हमें एक क्षण के लिए भी उनमें नहीं ठहरना चाहिए, बल्कि तुरंत ही उन्हें कल्पना करने से मुँह मोड़ लेना चाहिए—ताकि जब स्वर्गदूत, गुज़रते हुए, हमें ऐसे अशुद्ध और लज्जास्पद विचारों में उलझा हुआ देखें, तो वे यह कहने से न रोकें: *'प्रभु का आशीर्वाद तुम पर हो; हम ने तुम्हें प्रभु के नाम से आशीष दी है'* (भजन संहिता 128:8)। लेकिन ऐसा अक्सर होता है कि कोई अनुभवहीन व्यक्ति, पश्चाताप की भावना में अपनी या दूसरों की

कमयिों की समीक्षा करते हुए, अनजाने में कामुकता के सबसे सूक्ष्म तीर से भेद दयिा जाता है और उसके आगे झुक जाता है – और इस प्रकार जो धार्मकिता के भेष में शुरू हुआ था, वह उनके लिए एक शर्मनाक और वनिाशकारी परणिाम में समाप्त हो जाता है। *"क्योंकि ऐसा मार्ग है जो मनुष्य को सीधा दखिाई देता है, परन्तु उसका अन्त नरक के द्वारों तक जाता है"* (नीतविचन 16:25)।

आदरणीय इसचियिस, यरूशलेम के पुरोहति

उनका संक्षपि्त परचिय

परमपूज्य इसकियिस, जो यरूशलेम के मूल नविासी थे, अपने युवा वर्षों में संत ग्रेगरी द थयिोलोजयिन के छात्र और शष्यि थे। अपने महान गुरु की मृत्यु के बाद, उन्होंने फलिस्तिीन के एक रेगस्तिान में तपस्वी जीवन व्यतीत कयिा, जहाँ उन्होंने ईसाई धर्म की आत्मा का अध्ययन जारी रखा—कभी कतिाबों के माध्यम से, कभी अपने समकालीनों, फलिस्तिीन के तपस्वयिों के साथ मौखकि चर्चाओं के माध्यम से, और कभी अपने जीवन के अनुभवों और शोध के माध्यम से। वर्ष 412 में, यरूशलेम के आर्चबशिप ने इस वद्विान तपस्वी को एक पादरी के रूप में नयिुक्त कयिा, और उस समय से, पादरी के पद को उपदेशक के पद के साथ मलिाकर, वह चर्च के इतहिास में इसके सबसे प्रसद्धि शक्षिकों में से एक के रूप में उभरे। 'महान यूथमीयस,' जैसा कि उनके शष्यि , स्कैथोपोलसि के सरिील (संत यूथमीयस के जीवन में) लखिते हैं, इस तथ्य से उन्हें बहुत सांत्वना मलिी कि जेरूसलम के पैट्रआिर्क, संत जुवेनाल, चर्च के अभषिेक के लिए 429 में उनके मठ में आए थे, और अपने साथ चर्च के एक पादरी और शक्षिक, वद्विान इसचियिस को भी लाए थे।" थयिोफेन्स, अपने क्रोनोग्राफ में, उनकी मृत्यु को थयिोडोसयिस द यंगर के शासन के 26वें वर्ष में बताते हैं, जो 432–433 के अनुरूप है। सम्राट बेसलि के कैलेंडर में, उनकी स्मृत‍ि 28 मार्च को सूचीबद्ध है। यहाँ, पूरे पूर्व की तरह, अब उनकी स्मृत‍ि चीज़ सैटरडे पर सभी पवति्र पतिाओं के साथ मनाई जाती है। इस दनि के लिए सेंट थयिोडोर द स्टुडाइट के कैनन में, नौवें श्लोक में, उन्हें महान शक्षिकों के बीच रखा गया है: बेसलि द ग्रेट, ग्रेगरी द थयिोलोजयिन, जॉन क्रसिोस्टोम, एथनासयिस द ग्रेट, दो सरिलि—यरूशलेम और अलेक्जेंड्रयिा के—सेंट एपफिेनयिस, नसिबिा के ग्रेगरी – और उन्हें 'एक अन्य धर्मशास्त्री' के रूप में संदर्भति कयिा गया है, स्वाभावकि रूप से ग्रेगरी द थयिोलोजयिन के बाद। अपने वद्विान कार्यों के कारण, आदरणीय इसचियिस संत ग्रेगरी द थयिोलोजयिन के एक योग्य शष्यि थे। सम्राट बेसलि के मेनोलोजयिन में, संत इसचियिस को पवति्र शास्त्र के उपदेशक और व्याख्याकार के रूप में मान्यता देते हुए, कहा गया है: 'उन्होंने पवति्र शास्त्र के पूरे भाग की स्पष्ट रूप से व्याख्या की और उसे सामान्य भलाई के लिए प्रस्तुत कयिा; इसीलिए वह सभी के लिए अत्यधकि प्रसद्धि और अद्भुत थे।' उनकी कई कृतयिों में से, ग्रीक डोबरोटोलुबएि के उदाहरण का पालन करते हुए, हमने इस संग्रह में थयिोडुलस को एक उपदेश शामलि कयिा है, जो 203 अध्यायों में वभिाजति है, और संयम, चौकसी और हृदय की रक्षा का अभ्यास करने के इच्छुक लोगों के लिए सबसे उपयोगी है। धन्य फ़ोटीयस, अपनी 'फलिोकालयिा' में, 198वीं रीडगिं में, इस प्रवचन का वर्णन 'स्वर्ग के राज्य की वरिासत के लिए तपस्वी जीवन जीने वालों के लिए कसिी भी अन्य लेख से अधकि उपयुक्त' के रूप में करते हैं। वे कहते हैं कि इसे स्पष्ट रूप से और हर उस पहलू में प्रस्तुत कयिा गया है जो उन लोगों के लिए आवश्यक है जो गहन अध्ययन में नहीं लगते, बल्कि अपना सारा श्रम और ध्यान एक सक्रयि जीवन के प्रयासों को समर्पति करते हैं। [अनुवाद में, थयिोटोकोस के ग्रीक पाठ को कुछ स्थानों पर मग्नि की *पैट्रोलोजयिा ग्रेका*, खंड 93 से पूरक कयिा गया है।]

थयिोडुलस को: संयम और प्रार्थना पर एक आत्मा-रक्षक और उद्धारकारी प्रवचन[68]

१. संयम एक आध्यात्मकि कला है, जो यद‍ि लंबे समय तक और नरिंतर उत्साह के साथ, ईश्वर की सहायता से, अभ्यास की जाए, तो एक व्यक्त‍ि को भावुक वचिारों, शब्दों और बुरे कर्मों से पूरी तरह से मुक्त कर देती है; यह

[68] हालाँकि ग्रीक *डोब्रोतोल्यूबयिे* में, जसिे स्वयितोrop के परम पूजनीय नकिोडेमस ने संकलति कयिा था, और साथ ही परम पूजनीय पैसयिस (वेलकिोव्स्की) द्वारा स्लावोनकि अनुवाद में, अध्यायों के लेखक का नाम 'प्रेस्बटिर हेसकियिस' दयिा गया है, संत थयिोफान द रक्लिूज़ ने, रूसी *डोब्रोतोलुबयिे* संकलति करते समय, गलती से इन्हें एक अन्य लेखक – यरूशलेम के संत हेसकियिस – से जोड़ दयिा। वास्तव में, यह कृत‍ि सनिाई के मठाधीश हेसकियिस की है।

इस प्रकार इसका अभ्यास करने वालों को अगम्य ईश्वर का सच्चा ज्ञान प्रदान करती है, जहाँ तक यह हमारे लिए संभव है, और छिपे हुए दैवी रहस्यों की गहरी समझ; और यह पुराने और नए नियम की हर आज्ञा का स्रोत और आने वाले युग के हर आशीर्वाद की दाता है। – यह, वास्तव में, हृदय की पवित्रता ही है, जो अपनी महानता और अपने उच्च गुणों के कारण—या, अधिक सच्चाई से कहें तो, हमारी असावधानी और लापरवाही के कारण—अब संन्यासियों के बीच अत्यंत दुर्लभ हो गई है; फिर भी मसीह इसे आशीष देते हैं, कहते हुए: *'धन्य हैं हृदय से पवित्र, क्योंकि वे परमेश्वर को देखेंगे'* (मत्ती 5:8)। इस प्रकार, इसे बड़ी कीमत पर प्राप्त किया जाता है। संयम, यदि वह किसी व्यक्ति में लगातार बना रहे, तो वह उनके लिए एक धार्मिक और परमेश्वर-प्रसन्न जीवन का मार्गदर्शक बन जाता है। यह चिंतन के लिए एक सीढ़ी भी है; यह हमें त्रिगुणित आत्मा (अर्थात्, तीन शक्तियाँ: तर्कशील, क्रूर और कामनाशील) की गतिविधियों को सही ढंग से नियंत्रित करना और अपनी इंद्रियों को दृढ़ता से नियंत्रित रखना सिखाती है - और इसके धारक में यह प्रतिदिन चार प्रमुख सद्गुणों (अर्थात्, ज्ञान, धैर्य, संयम और न्याय) को नवीनीकृत करती है।

2. महान विधिदाता मूसा, और उनसे भी बढ़कर पवित्र आत्मा, यह दर्शाते हुए कि यह सद्गुण कितना निर्दोष, शुद्ध, सर्व-व्यापी और उत्कृष्ट है, और हमें यह सिखाते हुए कि हमें इसे कैसे शुरू करना और इसका अभ्यास करना चाहिए, कहते हैं: *'अपने विषय में सावधान रह, कहीं तेरे हृदय में अधर्म का कोई गुप्त वचन न रहे'* (व्यवस्थाविवरण 15:9), किसी भी पापी वस्तु की उस मानसिक कल्पना को 'गुप्त वचन' कहता है जो परमेश्वर को घृणित है: जिसे पवित्र पिता भी शैतान द्वारा हृदय में लाई गई एक प्रेरणा कहते हैं, जो मन में आते ही हमारे विचारों द्वारा तुरंत अनुसरण की जाती है, जो उसके साथ जोशपूर्वक बहस करते हैं।

३. संयम हर सद्गुण और ईश्वर की आज्ञाओं का मार्ग है; इसे हृदय का मौन भी कहा जाता है, और यह मन की रक्षा के समान है, जिसे दिन-दहाड़े की कल्पनाओं से पूरी तरह स्वतंत्र रखा जाता है।

4. जैसे जन्म से अंधा व्यक्ति सूर्य के प्रकाश को नहीं देख सकता, वैसे ही जो व्यक्ति संयम से नहीं जीता, वह उस अनुग्रह की महिमा को ग्रहण नहीं कर पाता जो ऊपर से प्रचुर मात्रा में बहता है; और ऐसा व्यक्ति उन पापपूर्ण कर्मों, वचनों और विचारों से भी मुक्त नहीं होगा जो परमेश्वर को घृणित हैं। अपने अंतिम सफर में, ऐसे लोग टार्टरस के राजकुमारों (जो उनकी प्रतीक्षा में रहते हैं) से नहीं बच पाएंगे।

5. ध्यान हृदय की वह अनवरत स्थिरता है, जो हर विचार से मुक्त है, जिसमें यह मसीह यीशु के द्वारा श्वास लेता है, परमेश्वर के पुत्र और स्वयं परमेश्वर के साथ रहता है, और हमेशा, अविराम और अनंत रूप से केवल उसी में श्वास लेता है; उसी को पुकारता है, 'हे '; उसके शत्रुओं के विरुद्ध उसके साथ बहादुरी से हथियार उठाता है; और उसी के सामने अपने अपराधों का इकरार करता है, जिसके पास पापों को क्षमा करने की शक्ति है। ऐसी आत्मा, इस प्रार्थना के द्वारा, अक्सर मसीह को, जो हृदय के रहस्यों को जानता है, अपनाती है, और साथ ही हर संभव तरीके से अपनी मिठास और अपने आंतरिक संघर्ष को सभी लोगों से छिपाने का प्रयास करती है, कहीं ऐसा न हो कि धूर्त शत्रु किसी तरह उसके भीतर बुराई के लिए आसान प्रवेश पा ले और उसके सबसे पुण्य कार्यों को नष्ट कर दे।

६. संयम मन के विचार की दृढ़ स्थापना और हृदय के द्वार पर उसका खड़ा होना है; ताकि वह देख सके कि कैसे विदेशी विचार पास आते हैं—ये चोर जो चुपके से चुरा ले जाते हैं—और सुन सके कि ये विनाशक क्या कहते और करते हैं, और राक्षस किस तरह छवियाँ बनाते और स्थापित करते हैं, और उन छवियों के माध्यम से मन को कल्पनाओं में ले जाकर उसे बहकाने का प्रयास करते हैं। यदि हम ऐसी प्रक्रिया को लगन से सहन करने के लिए तैयार हैं, तो यह, यदि हम चाहें, तो अनुभव के माध्यम से आध्यात्मिक युद्ध की कला को बहुत अच्छी तरह से और स्पष्ट रूप से प्रदर्शित करेगा और हमें इसमें व्यावहारिक अनुभव प्रदान करेगा।

7. एक गहरा भय—एक ओर, ईश्वर द्वारा परित्याग का, और दूसरी ओर, बाहरी प्रलोभनों को शिक्षाप्रद रूप से अनुमति देने का—आमतौर पर एक ऐसे व्यक्ति के मन में बार-बार सतर्कता उत्पन्न करता है जो बुरे विचारों और कर्मों के स्रोत को रोकने का प्रयास कर रहा है। परीक्षाएँ ठीक इसी उद्देश्य के लिए होती हैं, और ईश्वर द्वारा अप्रत्याशित प्रलोभन भेजे जाते हैं, ताकि हमारे जीवन को सुधार सकें, विशेषकर जब किसी ने इस शुभ (सचेतता और संयम) से मिलने वाली शांति का स्वाद चखा हो – और आत्मसंतुष्ट हो गया हो। – इस बार-बार की सतर्कता से एक आदत बन जाती है; इससे – संयम की एक निश्चित स्वाभाविक निरंतरता; और इससे, अपनी प्रकृति से ही, धीरे-धीरे युद्ध का दृष्टिकोण उत्पन्न होता है, जिसके बाद यीशु की अविराम प्रार्थना, दिवास्वप्नों से मुक्त मन की मधुर शांति, और यीशु के साथ एकता से उत्पन्न एक अद्भुत अवस्था आती है।

८. वह मन जो अपने शत्रुओं के विरुद्ध मसीह को पुकारता और उसी में शरण लेता है, उस जानवर के समान है जो कुत्तों की भीड़ से घिरा होकर, किसी बाड़े के भीतर शरण लेकर, उनका बहादुरी से सामना करता है। दूर से, अदृश्य

शत्रुओं के काल्पनिक रूपों को मन में लाकर, यह उनसे लड़ने के लिए शांतिदाता यीशु से अविराम प्रार्थना करता है, और इस प्रकार उनसे अजेय बना रहता है।

९. यदि तुम जानते हो, और तुम्हें यह अनुग्रह मिला है *कि 'किल प्रभु के सामने उपस्थिति होओ*—केवल देखे जाने के लिए नहीं, बल्कि देखने के लिए भी (भजन संहिता ५:४)—तो तुम समझते हो कि मैं किस विषय में बात कर रहा हूँ। यदि नहीं, तो चतुर रहो, और यह तुम्हें प्राप्त होगा।

10. समुद्रों का संघटन जल की बहुतायत है; और संयम का संघटन और आधार आत्मा की सतर्कता और गहरी शांति में, साथ ही अद्भुत और अगोचर चिंतन के गर्भ में, और युक्तिपूर्ण नम्रता में निहित है, धर्म और प्रेम—(स्वयं में) परम संयम और मसीह यीशु से प्रार्थना है, बिना विचार के, आहों के साथ, अविराम, कठिन, फिर भी निराशा या थकान के बिना (लूका 18:1)।

11. *'जो मुझ से, 'हे प्रभु! हे प्रभु!' कहता है, वह सब मेरे पास नहीं आएगा,'* प्रभु कहते हैं, *'परन्तु जो मेरे पिता की इच्छा के अनुसार चलता है, वही स्वर्ग के राज्य में प्रवेश पाएगा'* (मत्ती 7:21)। और उसके पिता की इच्छा यह है: *'तुम जो प्रभु से प्रेम करते हो, बुराई से घृणा करो'* (भजन संहिता 96:10)। इसलिए, जब हम यीशु मसीह से प्रार्थना करें, तो हमें बुरे विचारों से घृणा करनी चाहिए – और परमेश्वर की इच्छा पूरी होती है।

12. हमारे प्रभु और परमेश्वर ने, देहधारी होकर, मानव जाति के लिए प्रत्येक सद्गुण का एक आदर्श प्रस्तुत किया और प्राचीन पतन से उठने के लिए एक आह्वान किया, तथा देह में अपने संपूर्ण सदाचारी जीवन को जीवंत रूप से चित्रित किया। उन्होंने जो कई अन्य अच्छे उदाहरण स्थापित किए, उनमें से, अपने बपतिस्मा के बाद वे जंगल में गए, जहाँ उपवास करते हुए, उन्होंने शैतान के साथ एक आध्यात्मिक लड़ाई लड़ी, जो इस तरह उनके पास आया मानो वे केवल एक मनुष्य हों; और उस पर विजय प्राप्त करने के साधनों—अर्थात् विनम्रता, उपवास, प्रार्थना और संयम—के माध्यम से, जिनका उन्होंने अभ्यास किया, यद्यपि परमेश्वर और देवों के परमेश्वर होने के नाते उन्हें इनकी आवश्यकता नहीं थी—उन्होंने हमें, अपने अयोग्य सेवकों को, यह सिखाया कि दुष्टात्माओं के विरुद्ध कैसे उचित रूप से संग्राम किया जाए।

13. जहाँ तक आत्म-अनुशासन के विभिन्न तरीकों (तकनीकों) का प्रश्न है, जो मेरी राय में, धीरे-धीरे मन को कामुक विचारों से शुद्ध कर सकते हैं—मैं इन्हें आपको साधारण और सरल भाषा में समझाने में संकोच नहीं करूँगा। क्योंकि मैं इसे बुद्धिमानी नहीं समझता, यहाँ तक कि इस प्रवचन में भी—जैसा कि बाहरी युद्धों के विवरणों में अक्सर होता है—कि शब्दों की भरमार से उस बात को अस्पष्ट किया जाए जो उपयोगी है, विशेषकर साधारण लोगों के *लिए... 'परन्तु हे मेरे पुत्र तीमुथियुस,'* मैं तुम्हें प्रेरित के शब्दों में कहूँगा, 'उस बात पर *पूरा ध्यान देना'* जिसे *तुम्हें 'पढ़ना' है* (1 तीमु. 4:13)।

14. तो, संयम का एक ही तरीका (तकनीक) है: अपने दिवास्वप्नों, या अपनी कल्पना पर निरंतर निगरानी रखना; क्योंकि दिवास्वप्नों के बिना, शैतान विचार नहीं रच सकता और उन्हें मन के सामने प्रस्तुत करके उसे धोखा नहीं दे सकता।

15. एक और तरीका है: हर समय अपना हृदय गहराई से शांत रखना, हर विचार से स्थिर रखना, और प्रार्थना करना।

16. एक और तरीका है: - नम्रता में निरंतर प्रभु यीशु मसीह से सहायता के लिए पुकारना।

17. एक और तरीका है अपनी आत्मा में मृत्यु का निरंतर स्मरण रखना।

18. ये सभी अभ्यास, मेरे प्रिय, द्वारपालों के समान हैं, जो बुरे विचारों के प्रवेश को रोकते हैं; जहाँ तक इस विचार का प्रश्न है कि मनुष्य को केवल स्वर्ग की ओर ही देखना चाहिए (हमेशा मन को स्वर्गीय वस्तुओं के चिंतन में लगाकर रखना), पृथ्वी (और जो कुछ भी सांसारिक है) को कोई महत्व न देना—जो अन्य साधनों की तरह आध्यात्मिक संयम का एक प्रभावी साधन भी है—मैं इस पर परमेश्वर की सहायता से, जो वचन प्रदान करता है, कहीं और अधिक विस्तार से चर्चा करूँगा।

१९. यदि हम वासनाओं के कारणों (उन्हें भड़काने वाले उत्प्रेरकों) को काट दें और इस जीवन-पद्धति में हमेशा बने रहने के बजाय, केवल थोड़े समय के लिए आध्यात्मिक साधनाओं में संलग्न हों; हम आसानी से कामुक वासनाओं में लौट आएँगे, और उस (अच्छे प्रयास) से हमें मन के पूर्ण अंधकार और भौतिक दुनिया में सबसे गहरी गिरावट के सिवा कोई और फल नहीं मिलेगा।

20. जो भीतर से प्रयास करता है, उसे हर क्षण निम्नलिखित चार बातों का अभ्यास करना चाहिए: विनम्रता, परम सतर्कता, विचारों का प्रतिरोध, और प्रार्थना। विनम्रता – ताकि, अपने विरोधियों – घमंडी राक्षसों – के खिलाफ लड़ाई लड़ते समय, उसके हृदय में हमेशा मसीह की सहायता मौजूद रहे: क्योंकि प्रभु घमंडियों से घृणा करते हैं।

सतर्कता – ताकि वह हमेशा अपने हृदय को किसी भी विचार से मुक्त रख सके, भले ही वह अच्छा प्रतीत हो। प्रतिरोध – ताकि, जैसे ही उसे एहसास हो कि कौन आया है, वह तुरंत दुष्ट का क्रोध के साथ प्रतिरोध करे, जैसा कि कहा गया है: *'मैं उन लोगों का उत्तर देता हूँ जो मेरे वचन का अपमान करते हैं* (भजन संहिता 118:42) – *'क्या मेरी आत्मा परमेश्वर की आज्ञा नहीं मानेगी?'* (भजन संहिता 61:2)? प्रार्थना—ताकि, फटकार के बाद, वह तुरंत अपने हृदय की गहराई से एक अकथनीय आह के साथ मसीह के पास पुकारे। और फिर तपस्वी स्वयं देखेगा कि कैसे उसका शत्रु, यीशु के नाम से, हवा द्वारा धूल की तरह बिखर जाता है और दूर भगा दिया जाता है, या कैसे धुआँ अपने भ्रमों के साथ मिलकर गायब हो जाता है।

21. जिसके प्रार्थना में विचारों की अशुद्धि न हो, उसके पास युद्ध के लिए कोई हथियार नहीं है – प्रार्थना, मैं कहता हूँ, जो आत्मा के सबसे भीतरी कोनों में लगातार काम करती रहे, ताकि प्रभु यीशु मसीह के आह्वान से, जो शत्रु गुप्त रूप से युद्ध छेड़ता है, उसे (अदृश्य रूप से) कोड़ा मारा जाए और जलाया जाए।

२२. तुम्हें मन की तीक्ष्ण और तीव्र दृष्टि से भीतर झाँकना चाहिए, ताकि प्रवेश करने वालों को पहचान सको; और एक बार पहचान लेने पर, तुम्हें तुरंत विरोध से साँप का सिर कुचल देना चाहिए, और साथ ही एक आह भरकर मसीह से पुकारना चाहिए। और तब तुम अदृश्य दिव्य मध्यस्थता का अनुभव करोगे। तब आप हृदय की धार्मिकता को भी स्पष्ट रूप से देखेंगे (कि वह धर्मपरायणता से कार्य करता है, या हृदय की धर्मपरायण क्रिया में क्या शामिल है)।

23. जैसे कोई जो अपने हाथ में एक दर्पण पकड़े हुए है और उसमें झाँकता है, दूसरों के बीच खड़ा होकर, अपना चेहरा जैसा है वैसा ही देखता है, और दूसरों को भी उसी दर्पण में झाँकते हुए देखता है: वैसे ही, जो कोई भी अपने पूरे ध्यान से अपने हृदय में झाँकता है, वह उसमें अपनी ही अवस्था देखता है, और मानसिक एथियोपियाई लोगों के उदास चेहरे देखता है।

24. मन केवल अपनी शक्ति से शैतानी भ्रम पर विजय प्राप्त नहीं कर सकता: वह ऐसा करने का कभी भी अनुमान न लगावे। क्योंकि हमारे शत्रु, धूर्त होने के कारण, पराजय का नाटक करते हैं, जबकि वे अहंकार के द्वारा किसी अन्य दिशा से योद्धा को गिराने की साजिश रचते हैं; परन्तु जब यीशु का नाम लिया जाता है, तो वे आपके विरुद्ध साजिश रचने के लिए एक क्षण का भी विराम नहीं सहन करेंगे।

२५. सावधान रहो कि अपने आप को बहुत बड़ा न समझो (न ही संघर्ष के अपने तरीके गढ़ो), जैसा प्राचीन इस्राएल ने किया था: अन्यथा तुम भी अपने मानसिक शत्रुओं के हाथों में सौंप दिए जाओगे। क्योंकि वह लोग, सर्व के परमेश्वर द्वारा मिस्रियों से छुड़ाए जाने के बाद, बाद में अपने लिए एक सहायक—एक ढला हुआ विग्रह—गढ़ लिया।

26. 'पिघली हुई मूर्ति' से अभिप्रेत हमारा दुर्बल मन है, जो दुष्टात्माओं के विरुद्ध यीशु मसीह का आह्वान करते हुए, उन्हें सहजता से भगा देता है और, कुशल कला के साथ, शत्रु की अदृश्य, युद्धप्रिय शक्तियों को भागने पर मजबूर कर देता है; लेकिन जैसे ही यह लापरवाही से केवल स्वयं पर निर्भर होने की हिम्मत करता है, यह तथाकथित तीव्र-पंख वाले प्राणी की तरह गिर जाता है और चकनाचूर हो जाता है। यह वही है जो प्रभु में विश्वास करने वाला स्वीकार करता है: *"'यहोवा,'* वह कहता है, *'मेरा सहायक और मेरा रक्षक है; उस पर मेरा हृदय भरोसा रखता है, और वह मुझे सहायता देगा, और मेरा शरीर फल-फूल उठेगा'* (भजन संहिता 27:7); और 'यहोवा के सिवाय, *मेरे विरुद्ध विश्वासघाती के लिए कौन उठेगा? या जो बुराई करते हैं, उनके विरुद्ध कौन मेरे पक्ष में खड़ा होगा?'* (भजन संहिता 93:16) – अनगिनित विचार? परन्तु जो परमेश्वर के बजाय अपने आप पर भरोसा करता है, वह एक भयानक गिरावट में गिर जाएगा। कबूतरों के झुंड, ऊँची उड़ान भरने के बाद, घूमकर नीचे गिर जाते हैं। यदि वे समय पर मुड़ने में सफल नहीं होते हैं, तो वे ज़मीन पर जा टकराते हैं और कुचलकर मर जाते हैं।

27. हे मेरे प्रिय, यदि तुम उस संघर्ष को जैसा होना चाहिए वैसे ही लड़ना चाहते हो, तो यह, हृदय की मौनता के स्वरूप और ढंग के लिए एक आदर्श मार्गदर्शक के रूप में तुम्हारे लिए हो: वह छोटा प्राणी, मकड़ी। यह छोटी मक्खियों को पकड़कर मार डालती है, और तुम भी, यदि उसकी भाँति (अपने जाल के बिल में बैठी हुई), अपने प्राण में यत्न से मौन बनाए रखो, तो हर समय बाबेल के शिशुओं को मार डालना कभी बंद न करना – जिसके लिए पवित्र आत्मा, दाऊद के द्वारा, तुम्हें धन्य कहेगा (भजन संहिता 136:9)।

28. जैसे आकाश में तारों के बीच लाल सागर का देखा जाना असंभव है, और जैसे पृथ्वी पर चलने वाले मनुष्य के लिए इस संसार की वायु में सांस लिए बिना रहना असंभव है: वैसे ही हमारे लिए, यीशु मसीह के नाम का बार-बार स्मरण किए बिना, अपने हृदय को कामुक विचारों से शुद्ध करना और उनसे अपने मानसिक शत्रुओं को भगाना असंभव है।

29. यदि, विनम्र चिंतन, मृत्यु का स्मरण, आत्म-अनुशासन, (बुराई के) विचारों से लड़ना, और यीशु मसीह का आह्वान के साथ, आप हमेशा अपने हृदय में बने रहते हैं, और इन साधनों के साथ प्रत्येक दिन मानसिक मार्ग—जो

संकरा, फिर भी आनंददायक और मधुर है—पर संयम से यात्रा करते हैं; तब आप संतों के पवित्र मनन में प्रवेश करेंगे, और मसीह से गहरे रहस्यों के ज्ञान से प्रबुद्ध होंगे, *'जिसमें बुद्धि और ज्ञान के सब खजाने छिपे हुए हैं'* (कुलुस्सियों 2:3) और *'जिसमें परमेश्वर का सारा परिपूर्णत्व देह में वास करता है'* (पद 9)। क्योंकि यीशु में आप अनुभव करेंगे कि पवित्र आत्मा आपकी आत्मा में उतर आया है, और जैसे ही मानवीय मन उससे प्रबुद्ध होता है, *वह 'बेढका चेहरा लिए परमेश्वर की महिमा को निहारता है'* (2 कुरिन्थियों 3:18)। प्रेरित कहते हैं, *'पवित्र आत्मा के सिवाय कोई नहीं कह सकता, 'हे प्रभु यीशु''* (1 कुरिन्थियों 12:3), जो (सत्य में) अपने भीतर उसे खोजने वालों की गुप्त रूप से पुष्टि करते हैं।

30. जो शिक्षा से प्रेम करते हैं उन्हें यह भी जानना चाहिए: कि दुष्ट दानव, आध्यात्मिक संघर्ष से प्राप्त महान लाभ, उससे प्राप्त ज्ञान, और ईश्वर की ओर आरोहण के कारण हमसे ईर्ष्या करते हुए, अक्सर इस मानसिक संघर्ष को हमसे छिपाते हैं और इसे दबा देते हैं, (जबकि यह भी उनका इरादा होता है कि) जब हम (उनके हमलों के खतरों को भूलकर) लापरवाह हो जाते हैं, तो वे अचानक हमारे मन को (दिवास्वप्नों में) बहका ले जाएँ, और एक बार फिर हमें अपने हृदय के प्रति असावधान और लापरवाह बना दें। क्योंकि वे निरंतर एक ही लक्ष्य और एक ही प्रयास में लगे रहते हैं: हमारे हृदयों को स्वयं पर पूरी तरह से ध्यान केंद्रित करने से रोकना, यह जानते हुए कि इससे आत्मा के भीतर कितनी संपदा एकत्र होती है। – परन्तु ठीक उसी समय (लड़ाई के ठहराव के दौरान) हम अपने प्रभु यीशु मसीह को याद करते हुए आत्मिक चिन्तन में डूब जाएँगे – और लड़ाई एक बार फिर से हमारे मन पर कब्ज़ा कर लेगी। आइए, हम सब कुछ, कहने का मतलब है, स्वयं प्रभु की सलाह से और बड़ी नम्रता के साथ करें।

31. समुदाय में रहते हुए, हमें अपनी स्वेच्छा से और इच्छुक हृदय के साथ, मठाधीश के सामने हर व्यक्तिगत इच्छा को त्याग देना चाहिए, और इस प्रकार, ईश्वर की मदद से, एक तरह से आत्मसमर्पित और इच्छाहीन बन जाना चाहिए। इसमें, हमें हर संभव प्रयास करना चाहिए कि चिड़चिड़ाहट से उकसाए न जाएँ और गुस्से के अनुचित और अस्वाभाविक उछाल को न आने दें, क्योंकि अन्यथा, आध्यात्मिक संघर्ष के समय, हम खुद को साहसहीन पाएँगे। क्योंकि हमारी इच्छा, जब तक हम स्वयं स्वेच्छा से उसे नियंत्रित नहीं करते, आमतौर पर उन लोगों के विरुद्ध भड़क उठती है जो (हमारी सहमति के बिना) जबरदस्ती उसे नियंत्रित करने का प्रयास करते हैं; और इस कारण, इस प्रकार भड़का हुआ क्रोध, दुष्टता से भौंकते हुए, युद्ध की समझ (इसे लड़ने की कला) को नष्ट कर देता है, जिसे बड़ी कठिनाई से ही प्राप्त किया जा सकता था। क्रोध आमतौर पर विनाशकारी होता है। यदि इसे दैवीय विचारों के विरुद्ध निर्देशित किया जाता है, तो यह उन्हें चकनाचूर कर नष्ट कर देता है; लेकिन यदि यह लोगों के विरुद्ध भड़कता है, तो यह हमारे भीतर उनके प्रति हमारे अच्छे विचारों को नष्ट कर देता है। इस प्रकार, क्रोध स्पष्ट रूप से सभी प्रकार के विचारों के लिए विनाशकारी है, चाहे वे बुरे हों या, जैसा कि हो सकता है, यहां तक कि धार्मिक भी। यह हमें ईश्वर द्वारा एक ढाल और धनुष की तरह दिया गया है, और तब तक ऐसा ही रहता है जब तक यह अपने उद्देश्य से भटकता नहीं है। लेकिन यदि यह उस उद्देश्य के विपरीत काम करने लगे, तो यह एक विनाशक बन जाता है। मैंने देखा है कि एक कुत्ता भी, जो कभी-कभी बहादुरी से भेड़ियों पर हमला करता है, भेड़ों को नोच सकता है।

३२. इस प्रकार, मनुष्य को अभद्रता (दूसरों के साथ व्यवहार में लापरवाह स्वतंत्रता) से जैसे सर्प के विष से, और बार-बार होने वाली बातचीत से जैसे सांपों और विषैले सर्प के अंडों से बचना चाहिए; क्योंकि वे बहुत जल्दी आंतरिक संघर्ष को पूरी तरह से भुलाने का कारण बन सकते हैं, और हृदय की पवित्रता से प्राप्त होने वाली उत्थानकारी ऊँचाइयों से आत्मा को नीचे ला सकते हैं। ऐसा विस्मरण, जो शाप के योग्य है, पानी की तरह आग का विरोध करता है, और एक निरंतर और भयंकर प्रतिद्वंद्वी है। भूल से हम आलस्य में पड़ते हैं; आलस्य से हम (आध्यात्मिक जीवन के नियमों की) उपेक्षा और निराशा की ओर बढ़ते हैं – और अनियंत्रित कामवासनाओं की ओर; और इस प्रकार हम फिर से, कुत्ते की तरह अपनी ही उल्टी पर लौट आते हैं (2 पतरस 2:22)। इसलिए, हमें मनमानी से ऐसे भागना चाहिए जैसे किसी घातक विष से भागते हैं; और हमें भूल की इस दुष्ट बीमारी का इलाज मन की अत्यंत कठोर चौकसी और हमारे प्रभु यीशु मसीह के अविराम स्मरण द्वारा करना चाहिए: क्योंकि उनके बिना हम *'कुछ भी* नहीं *कर सकते'* (यूहन्ना 15:5)।

33. साँप से मित्रता करना और उसे अपने अस्तित्व के भीतर बसाना प्रथा नहीं है, और न ही वास्तव में संभव है; न ही यह संभव है कि हम हर तरह से शरीर को लाड़-प्यार करें, उससे प्रेम करें और उसे प्रसन्न करें—सिवाय इसके कि हम उसे केवल वही दें जो सख्त आवश्यक है—जबकि साथ ही साथ हम स्वर्गीय सद्गुण के लिए प्रयास कर रहे हों। क्योंकि वह (साँप), अपनी प्रकृति से ही, उसे अपने भीतर रखने वाले को घायल किए बिना नहीं रह सकता, जबकि यह (शरीर)—इंद्रियों के कामुक आनंद की हलचल से उसे कलंकित किए बिना नहीं रह सकता जो इसे प्रसन्न करता है। जब शरीर किसी भी तरह से पाप करता है, तो उसे निर्दयता से तब तक कोड़ा मारा जाना चाहिए जब तक कि वह खून से लथपथ न हो जाए, जैसे कि शराब के नशे में धुत एक भागा हुआ दास, ताकि वह जान जाए कि उसके ऊपर

एक स्वामी (मन) है, जो उसे दंडित करने के लिए तैयार है, और ताकि वह किसी सराय में शराब की तरह इंद्रियों के नशे की तलाश न करे, कहीं ऐसा न हो कि यह रात का दास—यह नश्वर धूल—अपनी स्वामिनी (आत्मा) से अनजान रहे, जो अमर है। अंत तक अपने शरीर पर भरोसा न करो। प्रेरित कहते हैं, *"शरीर की इच्छाएँ परमेश्वर के विरोधी हैं: क्योंकि वे परमेश्वर के वचन के अधीन नहीं होतीं"* (रोमियों 8:7), – और: *"क्योंकि शरीर आत्मा के विरुद्ध काम करता है"* (गलातियों 5:17), – और फिर: *"जो शरीर में हैं, वे परमेश्वर को प्रसन्न नहीं कर सकते। परन्तु तुम शरीर में नहीं, बल्कि आत्मा में हो"* (रोमियों 8:8–9)।

34. *'विवेक' का* कार्य हमारी आवेगपूर्ण प्रकृति को लगातार आंतरिक संघर्ष और आत्म-अनुशासन की ओर निर्देशित करना है; *'ज्ञान'* का कार्य हमारी मानसिक शक्तियों को कठोर और अथक संयम और आध्यात्मिक चिंतन की ओर निर्देशित करना है; *'धर्म* का कार्य हमारी इच्छाशक्ति को सद्गुण और ईश्वर की ओर निर्देशित करना है; *'साहस* का कार्य पाँचों इंद्रियों को नियंत्रित करना और उन्हें रोकना है, ताकि वे न तो हमारे अंतर्मन या हमारे हृदय को, और न ही हमारे बाह्य स्वरूप या हमारे शरीर को कलंकित करें।

३५. *'उसका तेज इस्राएल पर* है' – उस मन पर जो यथासंभव परमेश्वर की अपनी महिमा की सुंदरता को निहारता है, *'और उसकी सामर्थ्य बादलों में है'* (भजन संहिता 67:35)—उन आत्माओं पर जो प्रकाश को निहारती हैं, जो सुबह उस पर अपनी दृष्टि टिकाती हैं जो पिता के दाहिने हाथ पर विराजमान हैं, जो उन्हें उसी प्रकार प्रकाशित करते हैं जैसे सूर्य अपनी किरणों से शुद्ध बादलों को प्रकाशित करता है, और उन्हें अत्यंत मनोहर के रूप में प्रकट करते हैं।

36. *'जो पाप करता है वह बहुतों का भला नाश कर देगा,'* दिव्य शास्त्र कहता है (उपदेशक 9:18); और मन, पाप करके, उसको नष्ट कर देता है जिसके बारे में पिछले अध्याय में लिखा है—ये स्वर्गीय पेय और भोजन।

37. हम शिमशोन से अधिक बलवान नहीं हैं, सुलैमान से अधिक बुद्धिमान नहीं हैं, धन्य दाऊद से अधिक समझदार नहीं हैं, और न ही हम परम प्रेरित पतरस से अधिक परमेश्वर से प्रेम करते हैं। अत; हम अपनी आशा स्वयं में न रखें; क्योंकि पवित्रशास्त्र कहता है कि जो अपने आप पर भरोसा करता है, वह भयानक रूप से गिर जाएगा।

38. हम मसीह से नम्रता, दाऊद से कोमलता, और पतरस से यह सीखें कि कभी-कभी होने वाली अपनी गिरावटों पर कैसे रोएँ, परन्तु शिमशोन, यहूदा और परम बुद्धिमान सुलैमान की तरह निराश न हों।

39. *"शैतान गरजने वाले सिंह की नाईं इस खोज में रहता है, कि किसि को फाड़ खाए"* (1 पतरस 5:8)। हम कभी भी हृदय की सतर्कता, संयम, (विचारों) की विवेकशीलता और हमारे परमेश्वर, मसीह यीशु से प्रार्थना करने का अभ्यास करना बंद न करें। क्योंकि आप अपने पूरे जीवन में यीशु से आने वाली सहायता से बेहतर कोई सहायता नहीं पाएंगे: क्योंकि केवल वही, परमेश्वर के रूप में, राक्षसों के जाल, चालाकियों और छल को जानते हैं।

40. अतःआत्मा निडर होकर मसीह पर भरोसा करे और उसी को पुकारे; वह किसी भी तरह से अपने शत्रुओं से न डरे: क्योंकि वह अकेले नहीं लड़ती, बल्कि भियानक राजा यीशु मसीह के साथ लड़ती है, जो सभी अस्तित्विमान चीज़ों का सृष्टिकर्ता है, जो अदेह और देहधारी, दृश्य और अदृश्य दोनों हैं।

41. जैसे पृथ्वी पर जितनी अधिक वर्षा होती है, वह उतनी ही अधिक कोमल हो जाती है; वैसे ही मसीह का पवित्र नाम, जिसे हम बिना किसी संकोच के प्रचारित करते हैं, जितनी बार हम उसका आह्वान करते हैं, वह उतनी ही अधिक हमारे हृदयों की मिट्टी को कोमल करता है, और उसे आनंद और हर्ष से भर देता है।

४२. यह भी अच्छा है कि अनुभवहीन लोग यह जान लें कि हम, जो शरीर और विचार दोनों से भारी और पृथ्वी की ओर झुके हुए हैं, अपने शत्रुओं पर विजय प्राप्त कर सकते हैं—वे जो अदेह और अदृश्य हैं, अपने दुर्भाव में दुष्ट और चालाक, तीव्र और हल्के हैं— जो आदम के समय से अब तक चली आ रही लड़ाई में कठोर हो गए हैं, उन्हें हराने का कोई अन्य साधन नहीं है, सिवाय मन की निरंतर सतर्कता और हमारे ईश्वर और सृष्टिकर्ता, यीशु मसीह का आह्वान करने के। अनुभवहीनों के लिए, यीशु मसीह की प्रार्थना अच्छी बातों का परीक्षण करने और उन्हें जानने के लिए एक प्रेरणा और मार्गदर्शक के रूप में काम कर सकती है; लेकिन अनुभवी लोगों के लिए, अच्छाई का सबसे अच्छा शिक्षक कर्म, कर्मों के माध्यम से परीक्षण, और अच्छाई का स्वाद चखना है।

४३. जैसे एक छोटा और मासूम बच्चा, किसी दूसरे को कोई करतब करते हुए देखकर, उससे प्रसन्न होता है और, अपनी मासूमियत में, इस चमत्कार करने वाले का अनुसरण करता है: वैसे ही हमारी आत्मा भी, सरल और अच्छी होने के कारण—क्योंकि उसे उसके अच्छे प्रभु ने ऐसा ही बनाया है— – शैतान के काल्पनिक सुझावों में आनंद लेती है और, उनसे मोहित होकर, उस चालाक के पास एक अच्छे आदमी की तरह दौड़ती है, जैसे एक कबूतर अपने बच्चों के लिए जाल बिछाने वाले के पास जाता है, और इस प्रकार अपने विचारों को शैतान के काल्पनिक सुझावों के साथ मिला देती है। यदि यह किसी सुंदर महिला की छवि है, या मसीह की आज्ञाओं द्वारा पूरी तरह से निषिद्ध कोई अन्य चीज़

है, तो वह उस सुंदरता से प्रेरित हुए विचार को साकार करने का एक तरीका निकालती है जो उसके सामने प्रकट हुई है; और फिर, उस विचार के साथ एक संकल्प पर पहुँचकर, वह अपने मन में कल्पित दुष्टता को अपने शरीर के माध्यम से पूरा करती है, और इस प्रकार अपने ऊपर निंदा लाती है।

४४. दुष्ट की यही चालाकी है, और ऐसे ही बाणों से वह हर शिकार को फँसाता है। इसलिए, जब तक मन ने आध्यात्मिक युद्ध में महान अनुभव प्राप्त नहीं कर लिया है, तब तक ऐसे विचारों को अपने हृदय में प्रवेश करने देना सुरक्षित नहीं है - विशेष रूप से शुरुआत में, जब हमारी आत्मा अभी भी दैवीय प्रलोभनों के प्रति सहानुभूति रखती है, उनमें आनंद लेती है, और स्वेच्छा से उनके पीछे चलती है; लेकिन जैसे ही उन्हें पहचाना जाता है, उन्हें तुरंत, उसी क्षण काट दिया जाना चाहिए जब वे पकड़े जाते हैं और जड़ जमाते हैं। किन्तु जब मन, इस अद्भुत प्रयास में लंबे समय तक संलग्न रहने के बाद, यह करतब सीख लेता है, तो वह अपने भीतर की हर चीज़ को पहचान लेगा और इस तरह की लड़ाई लड़ने में निपुणता हासिल कर लेगा, ताकि वह विचारों को सटीक रूप से पहचान सके और, जैसा कि भविष्यवक्ता कहते हैं, *'छोटी-छोटी सियारियों'* (प्रेरितों का काम 1:15) *को* आसानी से पकड़ने में सक्षम हो सके: तब कोई कुशलता से उन्हें प्रवेश करने दे सकता है, मसीह की सहायता से उनसे लड़ सकता है, उन्हें उजागर कर सकता है और उन्हें बाहर निकाल सकता है।

45. जैसे आग और पानी का एक ही मार्ग से एक ही समय में गुजरना असंभव है, वैसे ही पाप का हृदय में प्रवेश करना असंभव है जब तक कि वह पहले दुष्ट की धूर्त प्रेरणा के द्वारा हृदय के द्वार पर न खटखटाए।

४६. पहला है सुझाव; दूसरा है मिश्रण, जब हमारे विचार और दुष्ट राक्षसों के विचार आपस में मिल जाते हैं; तीसरा है मिलीभगत, जब दोनों प्रकार के विचार बुराई के लिए साजिश रचते हैं और आपस में यह तय करते हैं कि इसे कैसे अंजाम दिया जाए; चौथा, हालांकि, कामुक कृत्य या पाप है। इस प्रकार, यदि मन, सतर्क रहते हुए, स्वयं पर ध्यान देता है और प्रभु यीशु की निंदा और आह्वान के द्वारा, उत्पन्न होने के उसी क्षण में उस सुझाव को दूर भगा देता है, तो उसके बाद जो कुछ भी आमतौर पर होता है, वह नहीं होता है। क्योंकि दुष्ट, एक अदेह आत्मा होने के कारण, केवल कल्पनाओं और विचारों के द्वारा ही आत्माओं को धोखा दे सकता है। (इन कार्यों के बारे में) दाऊद परीक्षा के विषय में कहते हैं: *'प्रातकाल मैं पृथ्वी के सब दुष्टों को काट डालूँगा'* (भजन संहिता 100:8); जबकि महान मूसा संगति के विषय में कहते हैं: *'तुम उनसे संगति न करना'* (निर्गमन 23:32)।

४७. मन मन के साथ एक अदृश्य संघर्ष में संलग्न होता है—हमारे अपने मन के विरुद्ध दैवीय मन। इसलिए, हर क्षण हमें अपनी आत्मा की गहराई से मसीह को पुकारना चाहिए, कि वह दैवीय मन को दूर भगा दें और, मानवता के प्रियतम के रूप में, हमें विजय की लूट प्रदान करें।

48. आंतरिक शांति की छवि आपके लिए अपने हाथों में एक दर्पण पकड़े हुए और उसमें ध्यान से झाँकते हुए व्यक्ति के समान हो; और फिर (अर्थात्, जब आप उसकी नकल करना शुरू करते हैं) आप देखेंगे कि आपके हृदय में बुराई और भलाई दोनों कैसे अंकित हैं।

४९. हर समय सावधान रहें कि अपने हृदय में किसी भी ऐसे विचार को न पालें, जो न तो अनुचित हो और न ही देखने में अच्छा लगे, ताकि इस प्रकार आप आसानी से परायों, अर्थात् मिस्र के पहिलौठों (भावुकताओं) को पहचान सकें।

५०. संयम का सद्गुण कितना अच्छा, सुखद, उज्ज्वल, मीठा, सर्व-हितकर, दूरदर्शी (प्रसन्न) और सुंदर है! हे हमारे प्रभु मसीह, आपके मार्गदर्शन से, और मानव मन द्वारा महान विनम्रता से उत्साहपूर्वक इसका अभ्यास किया जाता है! क्योंकि यह अपनी शाखाएँ समुद्र और चिंतन की गहराइयों तक फैलाता है, और इसके अंकुर मीठे दैवीय रहस्यों की नदियों तक (भजन संहिता 79: 12), यह मन को पोषण (सिंचन, ताज़गी) देती है, जो लंबे समय से दुष्टता से झुलसा हुआ है, कपटी, दैवीय विचारों की मिठास और शरीर के उन्मत्त तर्क से, जिसमें मृत्यु निहित है।

51. संयम याकूब की सीढ़ी के समान है, जिसके शीर्ष पर ईश्वर विराजमान हैं, और जिस पर स्वर्गदूत चलते हैं। यह हमारे भीतर के हर दुष्टता को चीर देता है, बकबक, बदनामी, निंदा और कामुक जुनूनों की पूरी सूची को काट देता है, और अपनी ही मिठास से एक क्षण की भी कमी को सहन नहीं करता।

५२. हे मेरे भाइयो, हमें इसी का अपने पूरे हृदय से अनुसरण करना है। परन्तु, मसीह यीशु में शुद्ध मन से, और उसकी दृष्टि में उड़ान भरते हुए, हमें अपने अपराधों और अपने पूर्व जीवन को भी अपनी आँखों के सामने रखना चाहिए, ताकि, अपने पापों की स्मृति से कुचले और नम्र होकर, हमें आध्यात्मिक युद्ध में हमारे परमेश्वर, यीशु मसीह की अनवरत सहायता प्राप्त हो सके। क्योंकि जैसे ही अहंकार, दंभ या आत्म-प्रेम के कारण, हम यीशु की सहायता से वंचित हो जाते हैं, वैसे ही हम हृदय की पवित्रता से भी वंचित हो जाते हैं, जिसके द्वारा परमेश्वर स्वयं को मनुष्य के

सामने प्रकट करते हैं; क्योंकि, जैसा कि वादा किया गया है (मत्ती 5:8), पहला दूसरे का कारण है (हृदय की पवित्रता परमेश्वर के दर्शन की ओर ले जाती है)।

५३. एक ऐसा मन जो अपने आंतरिक कार्य की उपेक्षा नहीं करता, निरंतर आत्म-अनुशासन और आत्म-रक्षा से उत्पन्न होने वाले अन्य आशीर्वादों के साथ, उस अवस्था को भी प्राप्त करता है जहाँ पाँचों इंद्रियाँ बाहरी आने वाले पापी प्रलोभनों में सहायक नहीं बनती हैं। अपने सद्गुण—संयम—पर पूरी तरह से ध्यान केंद्रित करते हुए और हमेशा अच्छे विचारों में आनंद लेने की इच्छा रखते हुए, वह पाँचों इंद्रियों को अपने भौतिक और व्यर्थ विचारों के माध्यम से अपने मन तक पहुँचकर उसे धोखा देने की अनुमति नहीं देता; बल्कि, यह जानते हुए कि उनसे क्या-क्या धोखे उत्पन्न होते हैं, वह उन्हें भीतर से ही बहुत प्रयास के साथ नियंत्रित करता है।

५४. मन से सचेत रहो, और तुम प्रलोभनों से अभिभूत नहीं होगे। लेकिन यदि तुम इससे भटक जाओ, तो जो कुछ भी तुम पर आए, उसे सहन करो।

५५. जैसे कड़वी कड़ही उन लोगों के लिए लाभदायक है जिनकी भूख चली गई हो और जिन्हें भोजन से अरुचि हो, वैसे ही दुष्टों के लिए विपत्तियों को सहना लाभदायक है।

56. यदि आप बुराई सहन नहीं करना चाहते, तो बुराई करना भी न चाहें, क्योंकि बाद वाला अनिवार्य रूप से पहले वाले के पीछे आता है। जैसा बोओगे, वैसा ही काटोगे। इस प्रकार, जब हम, स्वेच्छा से बुराई बोकर, अपनी इच्छा के विरुद्ध (दुख) काटते हैं, तो हमें इस पर ईश्वर की न्यायशीलता पर आश्चर्य करना चाहिए।

५७. मन निम्नलिखित तीन आसक्तियों से अंधा हो जाता है: धन का प्रेम, अहंकार और सुख का प्रेम।

58. ज्ञान और विश्वास, जो हमारी प्रकृति के साथी हैं, इन भावों के अलावा किसी और चीज़ से मन्द नहीं हुए हैं।

५९. क्रोध और रोष, कलह और हत्या, और अन्य सभी भावों की पूरी श्रृंखला लोगों में इनके माध्यम से गहराई से जड़ें जमा चुकी है।

60. जो सत्य को नहीं जानता वह सच्चे मन से विश्वास नहीं कर सकता; क्योंकि ज्ञान स्वाभाविक रूप से विश्वास से पहले आता है। धर्मग्रंथ में जो कहा गया है, वह केवल हमें जानने के लिए नहीं, बल्कि उसे व्यवहार में लाने के लिए भी कहा गया है।

61. तो, आइए हम इसे व्यवहार में लाना शुरू करें। इस प्रकार, कदम-दर-कदम आगे बढ़ते हुए, हम पाएँगे कि प्रार्थना के द्वारा विश्वासियों को ईश्वर में आशा, दृढ़ विश्वास, आंतरिक ज्ञान, प्रलोभनों से मुक्ति, अनुग्रहकारी उपहार, हार्दिक स्वीकारोक्ति, और प्रचुर आँसू प्रदान किए जाते हैं; और केवल इतना ही नहीं, बल्कि कष्टों के समय में धैर्य, अपने पड़ोसी को सच्चे दिल से क्षमा करना, आध्यात्मिक नियम की समझ, परमेश्वर की धार्मिकता की प्राप्ति, पवित्र आत्मा की प्रेरणा, आध्यात्मिक खजाने की प्राप्ति, और वह सब कुछ जो परमेश्वर ने विश्वासियों से यहाँ और आने वाले युग में वादा किया है। संक्षेप में, आत्मा के लिए परमेश्वर की कृपा और उस व्यक्ति के विश्वास के अलावा किसी अन्य तरीके से परमेश्वर के स्वरूप में रहना असंभव है, जो हृदय में, गहरी नम्रता और एकाग्र प्रार्थना में वास करता है।

62. हमने अनुभव से वास्तव में एक महान आशीर्वाद प्राप्त किया है—अर्थात्, कि यदि कोई अपना हृदय शुद्ध करना चाहता है, तो उसे मन के विरोधियों के विरुद्ध प्रभु यीशु का अखंड रूप से आह्वान करना चाहिए। और देखो कि मैंने अनुभव से जो कहा है, वह धर्मग्रंथ की गवाहियों से कैसे मेल खाता है: *'तैयार हो जाओ,'* यह कहता है, *'हे इस्राएल, यहोवा अपने परमेश्वर को पुकारने के लिए'* (आमोस 4:12)। प्रेरित भी कहते हैं: *'बिना रुके प्रार्थना करो'* (1 थिस्सलुनीकियों 5:17)। और प्रभु हमसे कहते हैं: *'मेरे बिना तुम कुछ भी नहीं कर सकते। जो मुझ में बना रहता है, और मैं उसमें, वह बहुत फल देगा। परन्तु जो मुझ में नहीं रहता, वह डाल की नाईं फेंका जाता है और सूख जाता है'* (यूहन्ना 15:5–6)। प्रार्थना एक महान आशीष है, जो अपने भीतर सभी आशीषों को समाहित करती है, क्योंकि यह हृदय को शुद्ध करती है, जिसमें विश्वासियों को परमेश्वर का दर्शन होता है।

63. चूँकि नम्रता का खजाना परमेश्वर के लिए उत्तम और प्रिय है, और इसमें हमारे भीतर के सभी बुराइयों और परमेश्वर को नापसंद आने वाली हर चीज़ को जड़ से उखाड़ फेंकने की शक्ति है, इसलिए इसे आसानी से प्राप्त नहीं किया जा सकता। आप किसी दूसरे व्यक्ति में कई गुणों के कुछ व्यक्तिगत कार्य पा सकते हैं, लेकिन, उसमें नम्रता की सुगंध की खोज करने पर, आपको वह मुश्किल से ही मिलेगी। इसलिए, इस खजाने को प्राप्त करने के लिए बहुत परिश्रम और प्रयास की आवश्यकता होती है। धर्मग्रंथ शैतान को 'अशुद्ध' भी कहता है क्योंकि, शुरू से ही, उसने विनम्रता के इस कीमती खजाने को ठुकरा दिया और अहंकार से प्रेम किया। केवल इसी कारण से, उसे धर्मग्रंथों में 'अशुद्ध आत्मा' कहा जाता है। क्योंकि एक ऐसा प्राणी जो पूरी तरह से अमूर्त, अदेह और भागों रहित है, वह भौतिक

रूप से ऐसी कौन सी अशुद्धि कर सकता है, जिसके कारण उसे इस वजह से अशुद्ध कहा जा सके? स्पष्ट रूप से, उसे अशुद्ध इसलिए कहा जाता है क्योंकि वह घमंडी है, और एक शुद्ध तथा प्रकाशमान स्वर्गदूत होने से वह नीच के रूप में कलंकित हो गया है। *'हर घमंडी व्यक्ति परमेश्वर के सामने अशुद्ध है'* (नीतिवचन 16:5)। शास्त्र के अनुसार, पहला पाप *'घमंड'* है (सिरिक 10:15)। जब फिरौन ने कहा, *'मैं तुम्हारे परमेश्वर को नहीं जानता, और न ही मैं इस्राएल को जाने दूँगा'* (निर्गमन 5:2), तो उसने एक घमंडी व्यक्ति की तरह कहा।

64. मन के कई ऐसे कार्य हैं जो हमारे लिए नम्रता का धन्य वरदान प्राप्त कर सकते हैं, बशर्ते कि हम अपनी मुक्ति की उपेक्षा न करें; उदाहरण के लिए: पापों का स्मरण—वचन, कर्म और विचार में—और कई अन्य बातें, जब मानसिक रूप से समीक्षा की जाती हैं, तो नम्रता में योगदान करती हैं। जब कोई व्यक्ति लगातार अपने पड़ोसियों के गुणों पर चिंतन करता है और उनकी अन्य स्वाभाविक योग्यताओं की प्रशंसा करता है, तथा अपनी तुलना उनसे करता है, तो इससे भी सच्ची विनम्रता आती है। इस प्रकार अपने मन में अपनी दुर्दशा और दूसरों की पूर्णता से अपनी कमी को स्पष्ट रूप से देखकर, एक व्यक्ति स्वाभाविक रूप से खुद को धूल और राख समझने लगेगा, और एक इंसान के रूप में भी नहीं, बल्कि एक साधारण कुत्ते के रूप में, क्योंकि वह पृथ्वी पर सभी तर्कशील प्राणियों से हर मामले में पीछे है और उन सभी से अधिक दुर्बल और दीन है।

६५. मसीह के मुख, कलीसिया के स्तम्भ, हमारे महान पिता बेसिल कहते हैं: 'पाप से बचने और दूसरे दिन उसी पाप में फिर से न गिरने के लिए एक महान सहायता यह है: दिन के अंत में, स्वयं को और जो कुछ भी हमारा है, उसे अपने विवेक के न्याय के अधीन करना, ताकि हम देख सकें कि हमने कहाँ गलती की है और कहाँ हमने सही काम किया है। यह वही है जो अय्यूब ने अपने लिए और अपने बच्चों के लिए किया।" इस तरह की दैनिक जाँच इस बात पर प्रकाश डालती है कि हमारे साथ घड़ी-घड़ी क्या होता है (या हमें घड़ी-घड़ी स्वयं की जाँच करना सिखाती है, ताकि हम देख सकें कि हमें हर घड़ी कैसे काम करना चाहिए)।

[69]**66.** एक अन्य ईसाई धर्मगुरु, जो दैवीय मामलों में बुद्धिमानों में से एक थे, ने कहा: 'फलों की शुरुआत फूल है; और एक सक्रिय जीवन की शुरुआत आत्म-संयम है।' अतःआइए हम आत्म-संयम का अभ्यास करें, और वह भी माप और संतुलन के साथ, जैसा कि धर्मपिता सिखाते हैं, और आइए हम पूरे बारह घंटे के दिन को अपने मन को काबू में रखने में व्यतीत करें। इस प्रकार कार्य करके, ईश्वर की सहायता से और एक निश्चित आत्म-अनुशासन के माध्यम से, हम अपने भीतर के दुष्टता को बुझाने और कम करने में सक्षम होंगे। क्योंकि आत्म-अनुशासन के माध्यम से ही एक सदाचारी जीवन प्राप्त होता है, जिसके लिए स्वर्ग का राज्य प्रदान किया जाएगा।

६७. ज्ञान का मार्ग वैराग्य और विनम्रता है, जिसके बिना कोई भी प्रभु को नहीं देख पाएगा।

68. जो निरंतर अपने अंतर्मन में स्थित रहता है, और हमेशा अपने विचारों को वहीं मोड़ता है, वह आत्म-नियंत्रण का अभ्यास करता है; और केवल इतना ही नहीं, बल्कि वह दिव्यता पर मनन भी करता है, चिंतन भी करता है, और प्रार्थना भी करता है। और यह वही है जिसके बारे में प्रेरित कहते हैं: *'आत्मा के अनुसार चलो, और तुम शरीर की इच्छाओं को पूरा नहीं करोगे'* (गलातियों 5:16)।

६९. जो आध्यात्मिक मार्ग पर चलने में असमर्थ है, वह वासनापूर्ण विचारों पर ध्यान नहीं देता (अर्थात्, वह उन्हें अपने से दूर नहीं करता), लेकिन केवल शरीर में ही निरंतर व्यस्त रहता है: या तो भोग-विलास और कामुकता में लिप्त रहता है, या परेशान, क्रोधित और कटु हो जाता है, जिससे मन म्लान हो जाता है; या फिर, अत्यधिक तपस्या करके, वह हृदय को अशांत कर देता है।

70. जिसने सांसारिक जीवन—अर्थात् अपनी पत्नी, संपत्ति और इसी तरह की चीज़ों—को त्याग दिया है, उसने केवल बाहरी मनुष्य को ही भिक्षु बनाया है, परन्तु भीतरी मनुष्य को नहीं। लेकिन जिसने इन सभी चीजों के बारे में कामुक विचारों का त्याग कर दिया है, उसने भी आंतरिक पुरुष—जो मन है—को एक भिक्षु बना दिया है। और ऐसा व्यक्ति एक सच्चा भिक्षु है। बाहरी पुरुष को भिक्षु बनाना आसान है, यदि कोई चाहे, लेकिन आंतरिक पुरुष को भिक्षु बनाना कोई छोटी मेहनत नहीं है।

71. इस क्रम में, कौन वासनापूर्ण विचारों से पूरी तरह मुक्त हो गया है और जिसे निरंतर शुद्ध और अद्रव्य प्रार्थना प्राप्त हुई है – जो आंतरिक पुरुष की विशिष्ट विशेषता है?

७२. हमारी आत्मा में कई वासनाएँ छिपी हुई हैं; लेकिन वे केवल तभी प्रकट होती हैं जब उनके कारण (वस्तुएँ, अवसर) हमारी आँखों के सामने आते हैं।

---

[69] सिनाई के संत नीलस।

73. स्वयं को पूरी तरह से शारीरकि प्रशक्षिण के लिए न लगाएँ; बल्कि शरीर के लिए एक संभाले जा सकने वाले कार्य को निर्धारति करके, अपना पूरा मन आंतरकि आत्मा की ओर मोड़ें: *'शारीरकि प्रशक्षिण का थोड़ा मूल्य है, पर भक्ति का हर तरह से मूल्य है'* (1 तीमुथयिुस 4:8)।

74. जब वासनाएँ सुप्त रहती हैं – केवल इसलिए कि या तो उनके कारण (वस्तुएँ, अवसर) हटा दिए गए हैं, या दुष्टात्माएँ चालाकी से पीछे हट गई हैं – तो अहंकार उत्पन्न होता है।

७५. विनम्रता और तपस्वी आत्म-त्याग (तपस्वी शारीरकि वंचतिताओं) एक व्यक्ति को हर पाप से मुक्त करते हैं—पहला आत्मा के भावों को काटकर, और दूसरा शरीर के भावों को काटकर। इसलिए प्रभु कहते हैं: *'धन्य हैं शुद्ध हृदय वाले, क्योंकि वे परमेश्वर को देखेंगे'* (मत्ती 5:8) – वे स्वयं उसे और उसके भीतर के खजानों को तब देखेंगे, जब वे प्रेम और आत्म-संयम के द्वारा स्वयं को शुद्ध करेंगे – और यह और भी अधिक तब होगा जब वे अपनी शुद्धता बढ़ाएंगे।

76. हर सद्गुण पर मनन करने के लिए दृष्टिकोण (निरीक्षण-स्थल, पहरे का मीनार) मन का संरक्षण है, जैसे कि प्राचीन काल में दाऊद के पहरेदार ने हृदय के खतना का उल्लेख किया था (2 शमूएल 18:24)।

77. जैसे इंद्रियों के लिए हानिकारक चीज़ों को देखने से हमें हानि पहुँचती है, वैसे ही मन के संबंध में भी है।

78. जैसे कोई पौधे की जड़ को नुकसान पहुँचाने पर पूरा पौधा सूख जाता है, वैसे ही आपको यह समझना चाहिए कि यह बात मानव हृदय पर भी लागू होती है। मनुष्य को हर क्षण सतर्क रहना चाहिए, क्योंकि शिकारी कभी सोते नहीं हैं।

७९. प्रभु, यह दिखाने की इच्छा से कि हर आज्ञा पालन करने योग्य है और पुत्रत्व एक ऐसा उपहार है जो मानव जाति के लिए उनके अपने ही लहू से अर्जित किया गया है, कहते हैं: *'जब तुम से जो कुछ आज्ञा दी गई है, वह सब कर चुको, तो कहो, 'हम अयोग्य दास हैं; क्योंकि हमने वही किया है जो हमारा कर्तव्य था''* (लूका १७:१०)। इसलिए, स्वर्ग का राज्य कर्मों का पुरस्कार नहीं है, बल्कि प्रभु का एक अनुग्रहपूर्ण उपहार है, जो उनके वफादार सेवकों के लिए तैयार किया गया है। एक सेवक पुरस्कार के रूप में स्वतंत्रता की मांग नहीं करता; लेकिन (प्राप्त करने पर) एक ऋणी की तरह धन्यवाद देता है, और (न प्राप्त करने पर) एक अनुग्रह के रूप में इसकी प्रतीक्षा करता है।

80. मसीह, धर्मग्रंथ के अनुसार, हमारे पापों के लिए मरे और उन सेवकों को स्वतंत्रता प्रदान करते हैं जो उनके लिए अच्छी तरह काम करते हैं; क्योंकि वे कहते हैं: *'शाबाश, हे भले और विश्वासयोग्य दास, तू कुछ बातों में विश्वासयोग्य रहा, मैं तुझे बहुतों पर अधिकार दूँगा; अपने प्रभु के आनन्द में प्रवेश कर'* (मत्ती 25:21)। लेकिन एक वफादार सेवक वह नहीं है जो केवल ज्ञान (एक सेवक के कर्तव्य के) पर भरोसा करता है, बल्कि वह है जो आज्ञा देने वाले मसीह के प्रति आज्ञाकारिता के माध्यम से वफादारी का प्रदर्शन करता है।

८१. जो अपने स्वामी का सम्मान करता है, वह वही करता है जो उसे आज्ञा दी जाती है; लेकिन यदि वह किसी भी तरह से पाप करता है, या अवज्ञा करता है, तो वह जो कुछ भी उस पर आता है, उसे एक न्यायसंगत परिणाम के रूप में सहन करता है। (स्वाभाविक रूप से, आज्ञाओं को पूरा करने में) जिज्ञासु और परिश्रमी दोनों बनो: क्योंकि केवल ज्ञान ही मनुष्य को घमंडी बनाता है।

८२. जो परीक्षाएँ हम पर अचानक आती हैं, वे हमें दिव्य व्यवस्था द्वारा परिश्रमी होने की शिक्षा देती हैं।

83. एक तारे की पहचान उसके चारों ओर की रोशनी से होती है; लेकिन धार्मिक और ईश्वर-भयभीत लोगों की पहचान गरीबी और विनम्रता है, क्योंकि मसीह के शिष्यों की विशिष्ट और सूचक पहचान के लिए विनम्र बुद्धि और नम्र स्वभाव के अलावा और कुछ भी नहीं है। चारों सुसमाचार इसे दूर-दूर तक प्रचारित करते हैं। जो कोई भी इस प्रकार नहीं जीता—अर्थात्, विनम्रता के बिना—वह उस में भाग से वंचित है जिसने स्वयं को क्रूस और मृत्यु तक नम्र बनाया, और जो दिव्य आज्ञाओं का सक्रिय सुसमाचारिक व्यवस्थापक है, जिसने हमें वे आज्ञाएँ दिखाई जो हम पर बाध्यकारी हैं (अपने कर्मों और जीवन के माध्यम से, जैसा कि सुसमाचारों में दर्शाया गया है)।

84. *'हे तुम सब जो प्यासे हो, जल के पास आओ,'* कहते हैं भविष्यवक्ता (यशायाह 55:1); हे तुम जो परमेश्वर के लिए प्यासे हो, मन और हृदय की पवित्रता में चलो। हालाँकि, जो इससे बहुत ऊपर उठता है, उसे अपनी गरीबी की धरती की ओर भी अपनी दृष्टि मोड़नी चाहिए। नम्र लोगों से बड़ा कोई नहीं है। जैसे जहाँ प्रकाश नहीं होता, वहाँ सब कुछ अँधेरा और उदास होता है; वैसे ही, जब नम्रता नहीं होती, तो ईश्वर के अनुसार की गई हमारी सभी मेहनत व्यर्थ और निष्फल हो जाती है।

८५. *'इस बात का निष्कर्ष, इन सब को सुनो: परमेश्वर का भय मानो और उसकी आज्ञाओं का पालन करो'* (सभोपदेशक १२:१३), विचार और कर्म दोनों में। यदि आप उन्हें पालन करने के लिए स्वयं को मानसिक रूप से प्रेरित

करते हैं, तो आपको शायद ही कभी उनके लिए शारीरकि रूप से परश्रिम करने की आवश्यकता होगी। दाऊद कहते हैं: *'मैंने आपकी इच्छा करने की इच्छा की है, और आपका वधिान मेरे हृदय में है'* (भजन संहिता 39:9)।

८६. यदि कोई व्यक्ति ईश्वर की इच्छा और उसके वधिान को अपने हृदय में, अर्थात् अपने अंतरतम में नहीं बसाता, तो वह बाहरी रूप से भी उन्हें आराम से पूरा नहीं कर सकता। जो व्यक्ति विवेकी नहीं है और उदासीन है, वह, मानो, ईश्वर से कह रहा है: *'मैं तेरे मार्गों को देखने नहीं चाहता'* (अय्यूब 21:14) – निस्संदेह यह दैवीय प्रबोधन की कमी के कारण है, जिसके प्राप्तकर्ता न केवल दृढ़ विश्वास के द्वारा अपने हृदय में व्यवस्था को धारण करता है, बल्कि ईश्वर की इच्छानुसार जीवन जीने के लिए पर्याप्त मजबूत भी होता है।

८७. जैसे नमक रोटी और हर तरह के भोजन के स्वाद को बढ़ाता है, मांस को खराब होने से बचाता है और उसे लंबे समय तक सुरक्षित रखता है; वैसे ही आपको आध्यात्मिक मिठास के बुद्धिमानी से संरक्षण और हृदय की अद्भुत कार्यप्रणाली को भी समझना चाहिए। क्योंकि यह आंतरिक और बाह्य दोनों पुरुषों को दैवीय रूप से मीठा बनाता है, बुरे विचारों की बदबू को दूर भगाता है, और हमें अच्छाई में दृढ़ रखता है।

८८. आसक्ति से अनेक विचार उत्पन्न होते हैं, और उनसे—शरीर के दुष्कृत्य। जो व्यक्ति यीशु के साथ तुरंत पहले को बुझा देता है, वह बाद वाले से भी बचेगा। और वह मधुर दिव्य ज्ञान से संपन्न हो जाएगा, जिसमें वह ईश्वर को सर्वत्र सर्वदा उपस्थिति देखेगा; और, उसके समक्ष मन का दर्पण धारण करके, वह उससे प्रकाशित होगा, जैसे इंद्रिय सूर्य के सामने रखा गया पारदर्शी काँच। फिर, अंततः मन, अपनी इच्छाओं की अंतिम सीमा तक पहुँचकर, अन्य सभी आत्म-चिंतन से विश्राम करेगा।

८९. चूँकि प्रत्येक विचार किसी इंद्रिय-संबंधी वस्तु की कल्पना के माध्यम से हृदय में प्रवेश करता है (और इंद्रिय-संबंधी बौद्धिक को बाधित करता है), ईश्वरत्व की दिव्य ज्योति मिन को तब ही प्रकाशित करना शुरू करती है जब वह सर्वथा रिक्त हो जाता है और पूर्णतःनिराकार हो जाता है (यानी उसमें किसी भी प्रकार की कोई छवि या रूप प्रस्तुत नहीं होता)। क्योंकि वह प्रकाश पहले से ही शुद्ध मन में प्रकट होता है, बशर्ते कि वह सभी विचारों से खाली हो।

९०. आप अपने मन पर जितनी अधिक सतर्कता से ध्यान देंगे, उतनी ही लगन से आप यीशु से प्रार्थना करेंगे; और फिर, आप अपने मन की उतनी ही लापरवाही से निगरानी करेंगे, आप यीशु से उतनी ही दूर भटक जाएँगे। और जैसे पहला (अर्थात् मन की एकाग्रता) मन के वातावरण को बहुत प्रबुद्ध करता है, वैसे ही दूसरा—संयम और यीशु के मधुर आह्वान से मुंह मोड़ना—आमतौर पर इसे पूरी तरह से अंधकारमय कर देता है। इस मामले का हमारे द्वारा कही गई बात के अनुसार होना स्वाभाविक है - और यह अन्यथा नहीं हो सकता। जब आप इसे व्यवहार में लाएँगे तो आप इसे अनुभव से जानेंगे। क्योंकि सद्गुण, और विशेष रूप से ऐसा प्रकाश देने वाला, मीठा अभ्यास, आमतौर पर केवल अनुभव से ही सीखा जाता है।

९१. यीशु का अखंड स्मरण, एक विशेष प्रकार की हार्दिक इच्छा के साथ, जो मिठास और आनंद से परिपूर्ण हो, एक ऐसी अवस्था उत्पन्न करता है जिसमें हृदय का वातावरण, पूर्ण एकाग्रता के माध्यम से, आनंदमय शांति से भर जाता है। इसके अलावा, हृदय के पूर्ण रूप से शुद्ध होने के लिए उत्तरदायी ईसा मसीह हैं, जो परमेश्वर के पुत्र और स्वयं परमेश्वर हैं, तथा सभी भलाई का स्रोत और सृष्टिकर्ता हैं। क्योंकि वे स्वयं कहते हैं: *'मैं यहोवा परमेश्वर हूँ जो संसार को रचता है'* (यशायाह 45:7)।

९२. आत्मा, यीशु द्वारा धन्य और सांत्वना प्राप्त करके, परोपकारी को पाप-स्वीकार, धन्यवाद और उस पर आनन्दपूर्वक पुकारकर एक विशेष आनंद और प्रेम के साथ उत्तर देती है, जिसने उसे शांत किया है: क्योंकि वह अपने मन की आँख से देखती है कि वह कैसे दुष्टात्माओं के भ्रम को दूर करता है।

93. *'और मेरी* सूझबूझ वाली *आँख,'* दाऊद कहते हैं, *'मेरे "*काल्पनिक*" शत्रुओं पर दृष्टि डालेगी, और मेरा कान उन पर पड़ेगा जो मुझ पर छल करके उठते हैं'* (भजन संहिता 91:12-13)। और मैंने देखा कि *'पापियों का दंड'* परमेश्वर द्वारा मुझ में पूरा हो रहा है (भजन संहिता 90:8)। परन्तु, जब हृदय में कोई कल्पनाएँ नहीं होतीं, तो मन अपनी स्वाभाविक अवस्था में रहता है, प्रत्येक मधुर चिंतन, चाहे वह आध्यात्मिक हो या ईश्वर-प्रेमपूर्ण, के लिए तैयार रहता है।

94. इस प्रकार, जैसा कि मैंने कहा है, संयम और यीशु की प्रार्थना परस्पर निर्भर हैं – अत्यधिक सावधानी निरंतर प्रार्थना का हिस्सा है, जबकि प्रार्थना, बदले में, मन की परम संयम और सावधानी का हिस्सा है।

95. शरीर और आत्मा दोनों के लिए एक अच्छा शिक्षक मृत्यु की अविस्मरणीय स्मृति है, और बीच में आने वाली सभी चीज़ों (अर्थात्, वर्तमान क्षण और मृत्यु के समय के बीच) को एक तरफ रखकर, उसे हमेशा अपनी आँखों के सामने रखना—और वह मृत्यु-शय्या भी जिस पर हमें शरीर से अलग होने पर लेटना है, और इसी तरह।

96. भाइयों, जो हर समय अक्षुण्ण रहना चाहता है, उसे नींद के आगे नहीं झुकना चाहिए। लेकिन दो में से एक बात अवश्यंभावी है – या तो अपनी सद्गुणों से वंचित होकर गिरकर नष्ट हो जाना, या एक सशस्त्र मन के साथ सदा सतर्क रहना: क्योंकि शत्रु भी अपनी सेना के साथ सदा तैयार रहता है, और घात लगाए रहता है।

९७. हमारे प्रभु यीशु मसीह की अविराम स्मृति और आह्वान से हमारे मन में एक दिव्य अवस्था उत्पन्न होती है, बशर्ते कि हम मन में उनकी प्रति निरंतर प्रार्थना, अखंड जागरूकता, और एक द्वारपाल के कर्तव्य (अर्थात् अपने लोगों को अंदर आने देना और अजनबियों को दूर करना) की उपेक्षा न करें; लेकिन सचमुच, हम हमेशा हमारे प्रभु यीशु मसीह का आह्वान करने के उसी कार्य में लगे रहेंगे, एक उत्साही हृदय से उन पर पुकारते हुए, कि वे हमें अपने पवित्र नाम का (स्वाद चखने का) हिस्सा लेने की अनुमति दें (ताकि यह हमारे हृदयों में जड़ जमा सके)। क्योंकि बार-बार दोहराना ही सद्गुण और दुर्गुण दोनों की आदत की जननी है; और आदत तब प्रकृति की तरह सर्वोपरि हो जाती है। ऐसी अवस्था में पहुँचकर, मन स्वयं ही विरोधियों को खोजता है, जैसे झाड़ियों में खरगोश खोजता हुआ शिकारी कुत्ता; लेकिन कुत्ता तो निगलने के लिए खोजता है, जबकि मन उन्हें मार गिराने और भगा देने के लिए खोजता है।

९८. अत; जब भी हमारे भीतर दुष्ट विचारों का प्रसार होने लगे, तो हमें उनके बीच हमारे प्रभु यीशु मसीह का आह्वान करना चाहिए; और हम तुरंत देखेंगे कि वे धुएँ की तरह हवा में बिखरने लगते हैं - जैसा कि अनुभव ने हमें सिखाया है। इसके बाद, जब मन अकेला (विचलित करने वाले विचारों से मुक्त) रह जाए, तो हमें अपनी अनवरत सतर्कता और आह्वान को फिर से शुरू करना चाहिए। इस प्रकार हम हर बार ऐसी परीक्षा का सामना करने पर कार्य करेंगे।

99. जैसे नंगे होकर युद्ध करना, या कपड़े पहनकर किसी बड़े समुद्र को पार करना, या साँस लिए बिना जीना असंभव है: वैसे ही, नम्रता और मसीह से अनवरत प्रार्थना के बिना, आध्यात्मिक और गुप्त युद्ध को सीखना, और उसे कुशलता से लड़ना और दबाना असंभव है।

१००. ऐसे मामलों में अत्यधिक अनुभवी, महान दाऊद प्रभु से कहते हैं: *'मैं तेरे द्वारा अपनी शक्ति की रक्षा करूँगा'* (भजन संहिता ५८:१०) – (अर्थात्, सहायता के लिए तेरी ओर मुड़कर)। इसी प्रकार, हृदय के अधिकार और मानसिक स्थिरता के संरक्षण, जिससे सभी सद्गुण उत्पन्न होते हैं, को हम प्रभु की सहायता से प्राप्त करते हैं, जिन्होंने हमें अपने आज्ञाएँ दी हैं, और जो, जब हम निरंतर उनकी प्रार्थना करते हैं, तो हमसे उस हानिकारक विस्मृति को दूर कर देते हैं जो, किसी भी अन्य चीज़ से अधिक, हृदय की स्थिरता को नष्ट करती है, ठीक वैसे ही जैसे पानी आग को बुझा देता है। इसलिए, हे भिक्षु, आलस्य से उत्पन्न नींद के आगे न झुको, जो तुम्हारी मृत्यु का कारण बनती है; बल्कि यीशु के नाम पर अपने शत्रुओं को भगा दो, और जैसा कि एक बुद्धिमान व्यक्ति ने कहा है, यह सबसे मधुर नाम तुम्हारी साँस से चिपका रहे: और तब तुम मौन के लाभ को जानोगे।

101. जब हम, अपनी अयोग्यता के बावजूद, हमारे ईश्वर और राजा, मसीह के दिव्य और सबसे पवित्र रहस्यों में भय और कांपते हुए भाग लेने के लिए योग्य समझे जाते हैं, तो हम सबसे स्पष्ट रूप से संयम, एक स्पष्ट मन और सख्त ध्यान का प्रदर्शन करेंगे, ताकि यह दिव्य अग्नि—अर्थात्, हमारे प्रभु यीशु मसीह का शरीर, हमारे पापों और हमारे कलंकों—छोटे और बड़े दोनों को नष्ट कर दे। क्योंकि, हमारे भीतर प्रवेश करने पर, यह तुरंत हमारे हृदयों से द्वेष की दुष्ट आत्माओं को भगा देता है और हमारे पिछले पापों को क्षमा कर देता है; और हमारा मन तब दुष्ट विचारों की बेचैन पीड़ा से मुक्त हो जाता है। यदि, इसके बाद, हमारे हृदय के द्वार पर खड़े होकर, हम सावधानीपूर्वक अपने मन की रक्षा करें, तो, जब हम एक बार फिर पवित्र रहस्यों में भाग लेने के योग्य माने जाएँ, तो दिव्य शरीर हमारे मन को और भी अधिक प्रबुद्ध करेगा और उसे एक तारे की तरह चमकाएगा।

102. विस्मृति आमतौर पर मन की सतर्कता को बुझा देती है, जैसे पानी आग को बुझा देता है। लेकिन यीशु की अनवरत प्रार्थना, अटूट सतर्कता के साथ मिलकर, अंततः इसे हृदय से दूर कर देती है। प्रार्थना के लिए सतर्कता आवश्यक है, जैसे एक छोटे दीपक को मोमबत्ती की रोशनी की आवश्यकता होती है (या शायद, एक शांत हवा में रखे दीपक की तरह, ताकि वह मोमबत्ती की तरह जल सके)।

103. जो कीमती है, उसकी रक्षा के लिए बड़ी सावधानी बरतनी चाहिए; और सचमुच, हमारे लिए कीमती एकमात्र वही है जो हमें सभी सांसारिक और मानसिक बुराइयों से बचाता है। यह यीशु मसीह के आह्वान के माध्यम से मन का संरक्षण है—अर्थात्, हमेशा हृदय की गहराइयों में झाँकना और विचारों में निरंतर मौन बने रहना—यहाँ तक कि, मैं कह सकता हूँ, उन विचारों से भी जो धार्मिक प्रतीत होते हैं—और सभी प्रकार के विचारों से रिक्त होने का प्रयास करना, कहीं कि चोर उनके नीचे छिप न जाएँ। लेकिन, यद्यपि हम हृदय में धैर्यपूर्वक रहते हुए पीड़ा सहते हैं, फिर भी सांत्वना निकट ही होती है।

104. एक हृदय जो लगातार संरक्षित रहता है, जिसे अंधकारमय और धोखेबाज़ आत्माओं के दर्शन, छवियों और कल्पनाओं को स्वीकार करने की अनुमति नहीं है, आमतौर पर प्रकाश के समान विचारों को जन्म देता है। क्योंकि

जैसे एक कोयला लौ उत्पन्न करता है, वैसे ही बहुत अधकि ईश्वर करेंगे, जो पवित्र बपतस्मिा के द्वारा हमारे हृदयों में वास करते हैं, यदि वे हमारे हृदयों की वायु को द्वेष की हवाओं से शुद्ध और मन की चौकसी द्वारा सुरक्षति पाएँ, तो वे हमारी मानसकि शक्तिको चंतिन के लिए, मोमबत्ती पर लौ की तरह प्रज्वलति करेंगे।

105. हमें हमेशा अपने हृदय के अंतरंग में यीशु मसीह के नाम को घूमते हुए रखना चाहिए, ठीक वैसे ही जैसे बारशि होने से पहले आकाश में बजिली चमकती है। जो लोग आंतरकि संघर्ष में ईसा मसीह के नाम के इस आध्यात्मकि अनुभव ( ) को जानते हैं, वे यह अच्छी तरह से जानते हैं। हम इस मानसकि लड़ाई को नम्निलखिति क्रम में लड़ेंगे: पहला कार्य है ध्यान; फरि, जब हम ध्यान दें कि कोई शत्रु-वचिार पास आ गया है, तो हम क्रोध के साथ, हृदय से नकिले अभशिाप के शब्द उस पर फेंकेंगे; तीसरे, हम इसके वरिुद्ध प्रार्थना करेंगे, अपने हृदय को यीशु मसीह के आह्वान की ओर मोड़ेंगे, ताकि यह दैवीय भूत तुरंत ही गायब हो जाए; अन्यथा, मन कसिी कुशल जादूगर द्वारा बहकाए गए बच्चे की तरह, इस कल्पना के पीछे चल सकता है।

106. हम दाऊद की तरह पुकारते हुए अपना भरसक प्रयास करें: 'हे प्रभु यीशु मसीह!' – हमारी गला-फटी आवाज़ें खामोश हो जाएँ (हमारी आवाज़ खो जाए); परन्तु हमारी सूझ-बूझ वाली आँखें आशा में *'हमारे परमेश्वर प्रभु की ओर'* ऊपर देखने से कभी न थकें (भजन संहिता 68:4)।

107. अन्यायी न्यायाधीश की दृष्टांत कथा को हमेशा ध्यान में रखते हुए, जो प्रभु ने हमें यह सखिाने के लिए बताई कि हमें हमेशा प्रार्थना करनी चाहिए और हतोत्साहति नहीं होना चाहिए, (और उस पर अमल करते हुए), – हमें लाभ और न्याय दोनों मलिेंगे।

108. जैसे कसिी के लिए सूर्य को घूरते हुए अपनी पुतलयिों को चमकाए बनिा रहना असंभव है, वैसे ही, जो कोई लगातार हृदय की वायु में प्रवेश करता है, उसके लिए चमकना असंभव है।

109. जैसे इस वर्तमान जीवन में भोजन और पानी के बनिा रहना असंभव है, वैसे ही, मन के संयम और हृदय की पवित्रता—जसि संयम कहा जाता है—के बनिा आत्मा के लिए कुछ भी आध्यात्मकि और ईश्वर को प्रसन्न करने वाला प्राप्त करना, या मानसकि पाप से मुक्त होना असंभव है, भले ही कोई यातना के डर से कर्म में पाप करने से खुद को रोके।

110. तथापि, जो लोग एक प्रकार के आत्म-अनुशासन के द्वारा, कर्म में पाप करने से स्वयं को रोकते हैं, वे परमेश्वर, स्वर्गदूतों और मनुष्यों के सामने धन्य हैं: क्योंकि *'जो स्वयं को अनुशासति करते हैं'* वे *'स्वर्ग के राज्य में जबरदस्ती घुस आते हैं'* (मत्ती 11:12)।

111. मन के लिए मौन के फलों के बारे में जो बात अद्भुत है, वह यह है: कि पाप, जो पहले मन पर केवल वचिारों के रूप में दस्तक देते हैं—ताकि, यदि मन उन्हें स्वीकार कर ले, तो वे बाद में घोर, इंद्रयि-सम्बंधी पाप बन सकें— सभी हमारे आंतरकि मनुष्य के भीतर संयम के गुण द्वारा मानसकि रूप से काट दिए जाते हैं, जो उन्हें प्रवेश करने और हमारे प्रभु यीशु मसीह के मार्गदर्शन और मध्यस्थता के माध्यम से दुष्ट कर्मों में प्रकट होने की अनुमति नहीं देता।

112. पुराना नयिम बाहरी, इंद्रयि और शारीरकि कर्मों का एक आदर्श है, जबकि पवित्र सुसमाचार, जो नया नयिम है, सावधानी या हृदय की पवित्रता का एक आदर्श है। और जैसे पुराना नयिम पूर्णता तक नहीं ले गया, वैसे ही इसने परमेश्वर को प्रसन्न करने के काम में भी आंतरकि मनुष्य को संतुष्ट या पुष्ट नहीं दी: प्रेरति कहते हैं, *'क्योंकि व्यवस्था ने कुछ भी सद्धि नहीं कयिा'* (इब्रानयिों 7:19), परन्तु केवल घोर पापों को रोकती थी (दलि से दुष्ट वचिारों और इच्छाओं को काटने के लिए ताकि हृदय की पवित्रता बनी रहे, जो एक सुसमाचार आज्ञा है, जो उदाहरण के लिए, पड़ोसी की आँख या दाँत नकिालने पर रोक लगाने से भी ऊपर है): इसी प्रकार देहकि धार्मकिता और देहकि तपस्या के अभ्यासों को भी समझना चाहिए—मैं उपवास, संयम, नंगे फर्श पर सोने, खड़े रहने, जागते रहने और इसी तरह की बातों के बारे में कह रहा हूँ—जन्हिें आमतौर पर शरीर के लिए अपनाया जाता है और जो शरीर के कामवासना वाले हस्सिे को पापी प्रवृत्तयिों से शांत करने का काम करती हैं। यह सब, बेशक, अच्छा है, जैसा कि पुराने नयिम के बारे में कहा गया है (कि व्यवस्था अच्छी है); क्योंकि यह हमारे बाहरी मनुष्य को सखिाने और हमें भावुक कर्मों से बचाने का काम करता है। लेकनि ये तपस्या संबंधी अभ्यास मन के पापों के खलिाफ रक्षक नहीं हैं, और न ही वे उन्हें रोकते हैं; अर्थात्, वे हमें ईर्ष्या, क्रोध और इसी तरह की भावनाओं से मुक्त करने के लिए पर्याप्त शक्तिशाली नहीं हैं।

113. परन्तु हृदय की शुद्धता—अर्थात् मन की रक्षा और संरक्षण, जो नए नयिम का उद्देश्य है, यदि हम इसे वैसे ही पालन करें जैसे हमें करना चाहिए— दलि से सभी वासनाओं और हर बुराई को काट देती है, उन्हें जड़ से उखाड़ फेंकती है, और इसके बजाय उसमें आनंद, आशा, पश्चाताप, वलिाप, आँसू, आत्म-ज्ञान और अपने पापों का ज्ञान, मृत्यु का स्मरण, सच्ची नम्रता, ईश्वर और लोगों के प्रति असीम प्रेम, और दलि की दैवीय देखभाल का संचार करती है।

114. जैसे पृथ्वी पर चलने वाले के लिए हवा को न चीरना असंभव है, वैसे ही मानव हृदय के लिए राक्षसों द्वारा निरंतर आक्रमण से बचना या उनके छिपे हुए प्रभावों के अधीन न होना असंभव है, भले ही कोई अत्यंत कठोरता से शारीरिक तपस्या का अभ्यास करे।

115. यदि आप प्रभु के सामने केवल एक साधु प्रतीत नहीं होना चाहते—पवित्र, नम्र और हमेशा ईश्वर से एकीकृत—बल्कि वास्तव में ऐसा बनना चाहते हैं; तो पूरी ताकत से सतर्कता के सद्गुण का अभ्यास करने का प्रयास करो, जो मन की रक्षा और संरक्षण करने तथा हृदय में एक मधुर शांति और आत्मा की एक आनंदमय अवस्था स्थापित करने में निहित है, जो दिवास्वप्नों से मुक्त हो: यह एक ऐसा कार्य है जो आपको बहुतों में नहीं मिलेगा।

116. सजगता का सद्गुण मानसिक बुद्धिमत्ता कहलाता है। – और इसका अभ्यास बड़ी संयमशीलता और उत्साही लगन के साथ, यीशु की प्रार्थना के माध्यम से, विनम्रता और दृढ़ता के साथ, इंद्रियों और मन दोनों की मौनता के साथ, भोजन और पेय में संयम के साथ, और सभी पापपूर्ण चीजों से मुंह मोड़कर करें; इसे विवेक के साथ मन के मार्ग पर कुशलता से अभ्यास करें, और, ईश्वर की सहायता से, यह आपको प्रकट करेगा— —वह जो आपने अपेक्षा नहीं की थी; यह आपको ज्ञान प्रदान करेगा, आपको प्रबुद्ध करेगा, आपको बुद्धि से सम्पन्न करेगा, और आपको वह सिखाएगा जिसे आप पहले अपने मन में कल्पना भी नहीं कर सकते थे, जब आप वासनाओं और अंधकारमय कर्मों के अंधकार में चलते थे, विस्मृति और विचारों के भ्रम के गर्त में डूबे हुए।

117. जैसे घाटियों में गेहूँ भरपूर होता है, वैसे ही यह आपके हृदय में हर प्रकार की भलाई भरपूर मात्रा में उत्पन्न करेगा – या यूँ कहें कि यह आपको हमारे प्रभु यीशु मसीह स्वयं द्वारा प्रदान किया जाएगा, जिनके बिना हम कुछ भी नहीं कर सकते। और पहले आप इसे एक सीढ़ी के रूप में पाएँगे; फिर एक किताब के रूप में जिसमें आप पढ़ेंगे; और अंत में, जैसे-जैसे आप और आगे बढ़ेंगे, आप इसे एक शहर, स्वर्गीय यरूशलेम के रूप में पाएँगे, और आप सचमुच अपने मन से इस्राएल के मसीह, शक्तियों के राजा को, उनके सह-शाश्वत पिता और पवित्र आत्मा के साथ देखेंगे, जिनकी उपासना की जाती है।

118. राक्षस हमेशा हमें कपटी कल्पनाओं के माध्यम से पाप की ओर ले जाते हैं। इस प्रकार, धन और लालच की कल्पनाओं के माध्यम से, उन्होंने दुष्ट यहूदा को सभी के प्रभु और परमेश्वर के साथ विश्वासघात करने के लिए उकसाया। शारीरिक आराम—जो अपने आप में तुच्छ है—और सम्मान, धन और महिमा के झूठे सपनों के माध्यम से, उन्होंने उसे परमेश्वर की हत्या में खींच लिया, और फिर गला घोंटकर उसे आत्महत्या के लिए प्रेरित किया, जिससे उसके लिए शाश्वत मृत्यु सुनिश्चित हो गई—यह ठीक उसके विपरीत था जो उन्होंने उसे उसके सपनों में या अपने प्रलोभनों में दिखाया था, इस प्रकार उन्होंने उस विश्वासघाती का बदला चुकाया।

119. अतः देखो, कि हमारे उद्धार के शत्रु हमें झूठे स्वप्नों और खोखले वादों के द्वारा विनाश की ओर कैसे ले जाते हैं। और स्वयं शैतान भी उसी तरह स्वर्गीय ऊँचाइयों से गिर पड़ा, जैसे बिजली की कड़ak, ईश्वर के बराबर होने का सपना देखने के बाद। इस प्रकार उसने बाद में आदम को ईश्वर से अलग कर दिया, उसमें एक निश्चित दिव्य गुण (सर्वज्ञता) का सपना भरकर; और इसी तरह यह कपटी और विश्वासघाती शत्रु आमतौर पर सभी पापियों को बहकाता है।

१२०. जब हम भूल के कारण विचलित होकर, लंबे समय तक यीशु के ध्यान और प्रार्थना से दूर हो जाते हैं, तो हमारे हृदय दुष्ट विचारों के विष की कड़वाहट से भर जाते हैं। लेकिन जब, दिव्य प्रेम के लिए, दृढ़ उत्साह के साथ, हम अपने भीतरी मंदिर (अपने भीतरी कार्यशाला, हृदय में) में, जो ऊपर वर्णित है (अर्थात्, ध्यान और प्रार्थना) का सावधानीपूर्वक अभ्यास करना शुरू करते हैं, तो वह एक निश्चित दिव्य आनंद से प्रसन्न होने की अनुभूति में फिर से मिठास से भर जाता है। तभी हम दृढ़ संकल्प करते हैं कि हम हमेशा हृदय के मौन में चलें, किसी अन्य कारण से नहीं, बल्कि इसके परिणामस्वरूप अपनी आत्मा में महसूस होने वाली सुखद मिठास और आराम के लिए।

121. सभी विज्ञानों का विज्ञान और सभी कलाओं की कला दुष्ट विचारों से निपटने की क्षमता है। उनके खिलाफ सबसे अच्छा उपाय और कला यह है कि प्रभु की मदद से उनके लक्षणों के प्रकट होने पर नज़र रखी जाए, और हमेशा अपने विचारों को शुद्ध रखा जाए, ठीक वैसे ही जैसे हम अपनी शारीरिक आँखों की रक्षा करते हैं, उनसे किसी भी ऐसी चीज़ पर तीक्ष्ण रूप से नज़र रखते हैं जो गलती से उन्हें नुकसान पहुँचा सकती है और हर संभव प्रयास करते हैं कि धूल का एक कण भी उन तक न पहुँचने पाए।

122. जैसे बर्फ से आग नहीं निकलती, न पानी आग को जन्म दे सकता है, न कांटे की झाड़ी अंजीर दे सकती है: इसी तरह हर व्यक्ति का हृदय दैवीय विचारों, शब्दों और कर्मों से तब तक मुक्त नहीं होगा जब तक वे अपने आंतरिक स्वरूप को शुद्ध नहीं करते, संयम को यीशु की प्रार्थना के साथ नहीं मिलाते, विनम्रता और आंतरिक शांति प्राप्त नहीं करते, और एक सास की पूरी लगन के साथ, आगे बढ़ते हुए प्रयास नहीं करते। जो आत्मा स्वयं पर ध्यान

नहीं देती, वह अनविार्य रूप से अच्छे और पूरण वचिारों से वंचति रहती है, एक बांझ खच्चर की तरह; क्योंकि उसमें भी आध्यात्मकि ज्ञान की समझ नहीं होती। सचमुच, यीशु के नाम का स्मरण करना और कामुक वचिारों को त्यागना एक मीठा कार्य है जो आत्मा को शांति प्रदान करता है।

123. जब आत्मा शरीर के साथ एक दुष्ट समझौता करती है, तब वे मलिकर व्यर्थता का एक नगर और घमंड का एक स्तंभ बनाते हैं, और उसमें रहने के लिए अशुद्ध वचिारों को जन्म देते हैं। परन्तु प्रभु गेहेन्ना के भय के द्वारा उनकी एकता को भंग कर देता है और उन्हें अलग कर देता है, और स्वामनिी, अर्थात् आत्मा को, ववि‍ेक से काम लेने और शरीर (दास) के लिए पराये और वरिोधी वचन बोलने के लिए ववि‍श कर देता है। इसी भय से उनके बीच वभिाजन उत्पन्न होता है: *'क्योंकि जो शरीर के वश में है, वह परमेश्वर के वरिुद्ध है; क्योंकि वह परमेश्वर की व्यवस्था के अधीन नहीं होता'* (रोमयिों 8:7)।

124. हमें अपने दैनकि कर्मों का घंटा-घंटे परखना चाहिए, उन पर सावधानीपूर्वक वचिार करना चाहिए, और शाम को हमें पश्चाताप के द्वारा उनके बोझ को हल्का करना चाहिए, अपनी पूरी क्षमता से, यदि हम मसीह की मदद से, अपने भीतर के बुराई पर काबू पाना चाहते हैं। हमें यह भी परखना चाहिए कि क्या हम अपने सभी इंद्रयि संबंधी और दृश्य कर्म परमेश्वर के अनुसार, परमेश्वर की उपस्थिति में, और केवल परमेश्वर के लिए करते हैं, ताकि मूर्खता के कारण, इस प्रक्रयाि में कसिी भी अस्वास्थ्यकर भावना से हमारा अपहरण न हो जाए।

125. यदि, ईश्वर की कृपा से, हम अपनी संयम-शक्ति के द्वारा प्रतदिनि कुछ प्राप्त करते हैं, तो हमें अन्य लोगों के साथ अंधाधुंध मेलजोल नहीं करना चाहिए, कहीं ऐसा न हो कि हमें कसिी भी मोहक बातचीत से हानि पहुँचे; बल्कि हमें इस सद्गुण (संयम), जो अति सुन्दर और अति मधुर है, की खातरि सभी व्यर्थ चीजों को तुच्छ समझना चाहिए।

126. हमें आत्मा की तीन शक्तयिों को सही तरीके से, उनकी प्रकृति के अनुसार और उनके स्रष्टा—ईश्वर की मंशा के अनुरूप नरि्देशति करना चाहिए। अर्थात्: क्रोध करने वाली शक्ति को हमारे बाहरी स्व और साँप—शैतान के वरिुद्ध नरि्देशति कयिा जाना चाहिए। कहा गया है, *'क्रोध करो, और पाप न करो'* (भजन संहिता 4:5)। इसका अर्थ है कि पाप पर क्रोध करो, यानी अपने आप पर और शैतान पर, ताकि परमेश्वर के वरिुद्ध पाप न हो। हमें इच्छा की शक्ति को ईश्वर और सद्गुण की ओर नरि्देशति करना चाहिए, और साथ ही मन को दोनों पर अधपिति बनाना चाहिए, ताकि वह ज्ञान और ववि‍ेक के साथ उन्हें व्यवस्थति कर सके, उन्हें नरि्देश दे सके, दंडति कर सके और उन पर शासन कर सके, ठीक वैसे ही जैसे एक राजा अपने प्रजा पर शासन करता है। और फरि हमारे भीतर का मन, जो परमेश्वर का है, उन पर शासन करेगा (अर्थात्, जब वह उन के अधीन होने के बजाय उन पर शासन करेगा)। यद्यपि वासनाएँ मन के वरिुद्ध वद्रिोह कर सकती हैं, हम यह आज्ञा देना बंद नहीं करेंगे कि मन उन पर शासन करे। क्योंकि प्रभु के भाई यीशु कहते हैं: *'यदि कोई मनुष्य वचन में ठोकर नहीं खाता, तो वह सद्धि मनुष्य है, जो सारे शरीर को वश में कर सकता है'* (याकूब 3:2)। सचमुच, हर उल्लंघन और पाप इन्हीं तीन शक्तयिों द्वारा कयिा जाता है, और हर सद्गुण और धार्मकिता इन्हीं तीन शक्तयिों द्वारा संपन्न होती है।

127. मन म्लान और बाँझ हो जाता है जब कोई संन्यासी कसिी से सांसारकि बातों पर बोलता है, या अपने वचिारों में उन पर मनन करता है, या जब उसका शरीर और मन व्यर्थ रूप से कसिी भी इंद्रयि-सुख में व्यस्त रहते हैं, या जब वह सामान्य रूप से व्यर्थता (और तुच्छता) में लप्ति रहता है। क्योंकि ऐसे मामले में, तुरंत बाद, वह अपना उत्साह, (ईश्वर के प्रति वनिम्रता, साहस और ज्ञान) खो देता है (वह ईश्वर और ईश्वर के मार्गों को भूल जाता है): इसलिए जतिना अधकि हम अपने मन से ध्यान देते हैं, उतना ही हम प्रबुद्ध होते हैं, और जतिना अधकि हम ध्यान नहीं देते, उतना ही हम अंधकार में डूब जाते हैं।

128. जो कोई भी प्रतदिनि मन की शांति और स्थरिता के लिए प्रयास करता है, और उसे गंभीरता से खोजता है, वह सभी इंद्रयि-सुखों को सहज ही तुच्छ समझ लेगा, ताकि उसकी मेहनत व्यर्थ न जाए। लेकनि यदि वह कसिी भी झूठे तर्क (कि इंद्रयिों में लगे रहने से कोई हानि नहीं है) से अपने ववि‍ेक को धोखा देता है, तो वह वस्मिृति की कड़वी नींद में पड़ जाएगा, जसिसे दव्यि दाऊद प्रार्थना करते हैं कि वे सो न जाएँ (भजन संहिता 12:4 – *'कि मैं मृत्यु की नींद न सो जाऊँ'*)। इसके अलावा, प्रेरति कहते हैं: *'जो कोई भी भलाई जानता है और उसे नहीं करता, उसके लिए वह पाप है'* (याकूब 4:17)।

129. मन आलस्य से अपनी उचति अवस्था और संयम में लौट आता है, यदि जैसे ही हमें अपनी रुचि कम होने का एहसास हो, हम उत्साह से भर उठें और, उत्साही लगन के साथ, मन की सामान्य गतविधि (संयम और प्रार्थना) को पुनर्स्थापति करें।

130. एक चक्की का गधा उस पहिये पर चलते हुए आगे नहीं बढ़ सकता है जिससे वह बँधा होता है (वह चलता है, फिर भी तब तक उसी जगह पर रहता है जब तक पहिया नहीं रुक जाता): और मन सक्रिय सद्गुण के माध्यम से पूर्णता की ओर (अर्थात् पूर्णता की ओर ले जाने वाली संयम की ओर) तब तक आगे नहीं बढ़ेगा जब तक कि वह अपने आंतरिक (अपने विचारों के चक्र को वहीं रोककर)। क्योंकि ऐसा मन अपनी आंतरिक आँखों से हमेशा अंधा होता है, जो सद्गुण और तेजस्वी यीशु को देखने में असमर्थ है।

131. एक अच्छा और मजबूत घोड़ा अपने सवार को लेकर आनंद से दौड़ता है: उसी प्रकार मन भी प्रभु के प्रकाश में आनंदित होगा जब *वह 'सुबह* उनके सामने *उपस्थित होगा'* सभी विचारों से मुक्त होकर (यशायाह 5:4)। उत्साह से भरकर, यह मन की सक्रिय बुद्धि की *'शक्ति' से* चिंतन और अनुपम रहस्यों और सद्गुणों की अद्भुत *'शक्ति'* की ओर बढ़ेगा; और जब वह अंततःअपने हृदय में परम दिव्य विचारों की असीम गहराई को अनुभव करता है, तो *'देवताओं के परमेश्वर उसकी प्रतीक्षा करेंगे'*, उतना ही जितना उसका हृदय धारण कर सकता है (भजन संहिता 83:8)। इससे प्रभावित होकर, मन तब प्रेमपूर्वक परमेश्वर की महिमा करता है, जो दृश्यमान और सर्व-द्रष्टा है, जो इसी कारण से उस बौद्धिक दृष्टि को बचाता है जो इतनी लगन से उसकी ओर निर्देशित है।

132. बुद्धिमानी से बनाए रखी गई हृदय की मौनता, ऊँची गहराइयों को देखेगी; और मौन हो चुके मन का कान अद्भुत बातें सुनेगा।

133. एक यात्री, जो एक लंबी, कठिन और थकाऊ यात्रा पर निकला है, और इस बात से डरता है कि वह वापसी की यात्रा में अपना रास्ता भूल सकता है, सड़क के किनारे निशान, जैसे संकेत-पट्टियाँ, लगाता है, जो उसे सुरक्षित रूप से घर लौटने में मदद करेंगी: और जो व्यक्ति संयम के मार्ग पर चलता है, उसे (पिता-पुरखों से सुने हुए) शब्दों को (दिशानिर्देशक के रूप में) स्थापित करना चाहिए, और उसे स्वयं के लिए भी वही भय होना चाहिए (कि वह अपना मार्ग खो दे या पीछे मुड़ जाए)।

134. लेकिन यात्री के लिए, जिस स्थान से वह प्रस्थान किया था, उस पर लौटना खुशी का कारण है; जबकि संयमी व्यक्ति के लिए, पीछे मुड़ना तर्कशील आत्मा का विनाश और ईश्वर-प्रसन्न करने वाले कर्मों, शब्दों और विचारों से मुंह मोड़ने का संकेत है। और आत्मा की घातक नींद के दौरान, उसके मन में ऐसे विचार आएँगे जो काँटों की तरह उसे (उसकी नींद से) जगा देंगे, और उसे उस गहरे अंधकार और सुस्ती की याद दिलाएँगे जिसमें वह अपनी ही लापरवाही के कारण पड़ गया है।

१३५. दुख, निराशा और हताशा में पड़ने पर (– ऐसी निराशाजनक चरम स्थिति से जहाँ से निकलने की कोई आशा नहीं है), हमें अपने लिए वही करना चाहिए जो दाऊद ने किया – अपना हृदय और *अपनी विनती* परमेश्वर के सामने *'उंडेलना'*, और अपनी *'व्यथा'* को जैसी है वैसी ही *'घोषित' करना* प्रभु के प्रति (भजन संहिता 141:3)। क्योंकि हम परमेश्वर के सामने स्वीकार करते हैं, जो हमारे संबंध में सभी बातों को व्यवस्थित करने के लिए पर्याप्त शक्तिशाली और बुद्धिमान हैं, और हमारी पीड़ा को, यदि वह हमारे भले के लिए हो, तो हल्का (सहने में और जीतने में आसान) बना सकते हैं, और हमें विनाशकारी और विनाशकारी दुख से बचा सकते हैं।

136. लोगों के प्रति क्रोध, जो स्वाभाविक रूप से उत्पन्न न हो; ईश्वर के अनुकूल न होने वाला शोक; और निराशा—ये सभी अच्छे और विवेकपूर्ण विचारों के लिए समान रूप से विनाशकारी हैं; लेकिन प्रभु, हमारे पाप-स्वीकार के लिए उन्हें दूर करते हुए, आनंद का संचार करते हैं।

137. हमारे हृदय में हमारी इच्छा के विरुद्ध प्रवेश कर गए और वहाँ ठहरे रहने वाले विचार, आमतौर पर यीशु की प्रार्थना से दूर हो जाते हैं, जिसे हृदय के गहन मनन से संयम के साथ किया जाता है।

138. जब हम ईमानदारी और निष्पक्षता से स्वयं को कोसते हैं - या जब हम सब कुछ प्रभु को, मानो किसी मानव को (जो हममें से एक है) सौंप देते हैं, तो अनकही विचारों की भीड़ के बीच हम अपने दुख में राहत और आनंद पाएंगे। हर तरह से, इन दो तरीकों से, हमें उन सभी बातों से शांति मिलेगी जो हमें परेशान करती हैं।

139. चर्च के पिता, विधि-दाता मूसा को मन का एक प्रतीक मानते हैं—वह जो जलते हुए झाड़ में ईश्वर को देखता है, स्वयं महिमामय हो उठता है, और देवों के ईश्वर द्वारा फिरौन के लिए एक देवता नियुक्त किया जाता है; फिर वह मिस्र पर विपत्तियाँ भेजता है, इस्राएल को वहाँ से बाहर निकालता है, और व्यवस्था प्रदान करता है। जब इन सभी को रूपक रूप में, आध्यात्मिक अर्थ में लिया जाता है, तो यह मन की कार्यप्रणाली और लाभों को दर्शाता है।

140. व्यवस्थापक का भाई हारून, बाहरी मनुष्य का प्रतीक है। इसलिए, जैसे हम क्रोध में उस पर (बाहरी मनुष्य पर) आरोप लगाते हैं, वैसे ही हम उससे भी बात करें, जैसे मूसा ने अहरोन से तब बात की थी जब उसने पाप किया था: 'किस अधिकार से इस्राएल (मन, जो परमेश्वर को निहारता है) ने तुम्हें बरी ठहराया, कि तुमने उसे जीवते परमेश्वर,

सर्वशक्तिमान के प्रभु से भटकने के लिए जल्दी की (अपने ही विचारों से तुमने उसे ईश्वर के गंभीर चिंतन से भटका दिया) (निर्ग. 32:21)?

141. कई अन्य उत्तम उदाहरणों में, प्रभु, जब लाजरुस को मृतकों में से जिलाने का काम आरंभ कर रहे थे (यह कहते हुए, *'हे जवान, बाहर आ'*), यह भी प्रदर्शित किया कि जब आत्मा, एक स्त्री की तरह, ढीली संवेदनशीलता में लिप्त हो जाती है, तो हमें एक कठोर निषेध के साथ आत्मा को काबू में रखना चाहिए और सामान्यतःअपने भीतर एक कठोर (अपने प्रति) स्वभाव स्थापित करने का प्रयास करना चाहिए, जो—जिससे मेरा तात्पर्य आत्म-निंदा से है—आत्मा को आत्म-संतुष्टि, व्यर्थता और अहंकार से मुक्त करने में सक्षम है।

142. जैसे कोई बड़े जहाज के बिना समुद्र की गहराइयों को पार नहीं कर सकता, वैसे ही यीशु मसीह का नाम लिए बिना दुष्ट के दुष्ट विचारों को भगाना असंभव है।

143. डाँट-फटकार आमतौर पर ऐसे विचारों की आगे की प्रगति को रोकती है, जबकि यीशु मसीह का नाम लेने से वे दिल से बाहर निकल जाते हैं। जैसे ही आत्मा में किसी इंद्रिय वस्तु के बोध से कोई विचार उत्पन्न होता है—जैसे कि कोई व्यक्ति जिसने हमें ठेस पहुँचाई हो, या नारी सौंदर्य, या चाँदी और सोना—या जब ये सभी चीजें एक के बाद एक हमारे मन से गुजरती हैं; तो तुरंत ही यह प्रकट हो जाता है कि वे आत्माएँ जिन्होंने हमारे हृदय को ऐसी विलासिता में ले जाया है, वे हैं: द्वेष, वासना और धन का प्रेम। यदि हमारा मन भ्रमों से स्वयं की रक्षा करने में अनुभवी, प्रशिक्षित और कुशल हो, और दुष्टों के मोहक दिवास्वप्नों और चालाकियों को दिन-दहाड़े की तरह स्पष्ट रूप से देख सके, तो वह तुरंत ही, प्रतिरोध, फटकार और यीशु मसीह से प्रार्थना के द्वारा, शैतान के अग्निबाणों को आसानी से बुझा देता है, ताकि भावुक दिन-दहाड़े सपनों को हमारे विचारों को अपने पीछे खींचने से रोका जा सके, और इन विचारों को प्रलोभन के भूत से मेल खाने, या उसके साथ सौहार्दपूर्ण बातचीत करने और व्यर्थ की कल्पनाओं में लिप्त होने, या उसके साथ संगति करने से रोका जा सके – जिसके बाद, एक निश्चित अनिवार्यता के साथ, जैसे दिन के बाद रात आती है, वैसे ही बुरे कर्म होते हैं।

144. यदि, हालाँकि, हमारा मन सतर्क संयम की कला में अनुभवहीन है, तो वह तुरंत जो भी दृष्टि उसके सामने आती है, उससे जुनूनी रूप से चिपक जाता है, चाहे वह कुछ भी हो, और उसके साथ बातचीत करना शुरू कर देता है, अतार्किक प्रश्न प्राप्त करता है और उतने ही अतार्किक उत्तर देता है। तब हमारे विचार राक्षसी कल्पनाओं के साथ मिल जाते हैं, जो परिणामस्वरूप और भी अधिक उग्र हो जाते हैं और बढ़ जाते हैं, ताकि वे उस मन को, जिसे बहकाया और फँसाया जा रहा है, और अधिक सुखद, सुंदर और आकर्षक प्रतीत हों। तब हमारा मन ठीक वैसा ही कुछ सहन करता है, जैसा कि किसी मैदान में होता जहाँ कोमल मेमने चर रहे हों, और वहाँ एक कुत्ता आ जाए; और मेमने, उसके आते ही, अपनी माँ की तरह बार-बार उसकी ओर दौड़ते जाएँ, उसके पास जाने से उन्हें कोई लाभ नहीं होता, बल्कि वे केवल उसकी गंदगी और बदबू ही उठाते हैं। ठीक इसी तरह, हमारी सोच, अनुभवहीनता के कारण, मन में मौजूद सभी दैवीय कल्पनाओं की ओर दौड़ती है और, जैसा कि मैंने कहा है, उनसे मिल जाती है, ताकि कोई यह मान ले कि दोनों (अपने आप में) एक परिषद कर रहे हैं, – शरीर के माध्यम से उस चीज़ को साकार करने की योजना बनाने के लिए, जो दैवीय प्रलोभन के प्रभाव में उन्हें इतनी आकर्षक और मीठी लगती थी। इस प्रकार, आत्मा का पतन अंततः भीतर ही होता है; जिसके बाद, जैसे किसी आवश्यकता से, जो हृदय के भीतर पकी है, वह बाहरी रूप से प्रकट हो जाती है।

145. हमारा मन कुछ हल्का और अच्छे स्वभाव का होता है, जो आसानी से दिवास्वप्नों में खो जाता है और पापी विचारों के प्रति अनियंत्रित रूप से प्रवृत्त रहता है, जब तक कि वह अपने भीतर एक ऐसे विचार को न पाल ले जो, भावों का शासक होकर, उसे लगातार नियंत्रित और संयमित रखे।

146. मनन और ज्ञान आमतौर पर एक कठोर जीवन के मार्गदर्शक और उत्प्रेरक होते हैं, क्योंकि उनके मोहित हृदय, सांसारिक सुखों और जीवन के हर कामुक आनंद को तुच्छ समझने लगता है।

147. इसके विपरीत, मसीह यीशु में जिया गया सतर्कता का जीवन, चिंतन और विवेक का जनक और दिव्य आकांक्षाओं तथा सबसे बुद्धिमानी भरे विचारों का स्रोत बन जाता है, जो अपनी सहधर्मिणी—नम्रता—के साथ एकजुट होता है, जैसा कि दिव्य नबी यशायाह कहते हैं: *'जो प्रभु की प्रतीक्षा करते हैं, वे अपनी शक्ति को नया करेंगे; वे गरुड़ के पंखों पर उड़ान भरेंगे'* (यशायाह 40:31)।

148. लोगों को यह बहुत कठोर और बोझिल लगता है कि आत्मा को हर विचार से मौन रखा जाए। और वास्तव में यह कठिन और पीड़ादायक है: क्योंकि केवल उन लोगों के लिए ही नहीं जो आध्यात्मिक संघर्ष के रहस्यों में अनभिज्ञ हैं, यह पीड़ादायक रूप से कठिन है कि अदेह को देहधारी आवास के भीतर सीमित और धारण किया जाए, बल्कि उन लोगों के लिए भी जो आंतरिक, अदेह संघर्ष में परखे गए हैं। परन्तु जो कोई भी, अविराम प्रार्थना के द्वारा,

प्रभु यीशु को अपने हृदय में रखता है, वह भविष्यवक्ता के अनुसार, *'उसके पीछे चलने में न थकेगा, और न मनुष्य का जीवन चाहेगा'* (यर. 17:16), यीशु की सुन्दरता, आनन्द और मधुरता के लिए; न ही वह अपने शत्रुओं—उसके चारों ओर मंडराने वाले अशुद्ध दानवों—से लज्जित होगा, बल्कि *वह* हृदय के *'द्वारों पर उन पर चिल्लाएगा'* (भजन संहिता 126:5), और यीशु के साथ उन्हें पीछे धकेल देगा।

149. आत्मा, मृत्यु के बाद स्वर्ग के द्वारों की ओर आकाश में उड़ान भरने के बाद, मसीह के साथ होने के कारण वहाँ अपने शत्रुओं से लज्जित नहीं होगी; परन्तु तब भी, जैसे अब है, वह साहसपूर्वक उन्हें *'द्वारों पर'* पुकारेगी। बस यह ज़रूरी है कि वह अंत तक, दिन-रात प्रभु यीशु मसीह, परमेश्वर के पुत्र, से पुकारना न छोड़े; और वह अपने अटूट दिव्य वचन के अनुसार, जो उसने अन्यायी न्यायी की दृष्टान्त में कहा था, उसकी न्याय-स्थापना शीघ्रता से करेगा: *'मैं तुम से कहता हूँ, वह शीघ्र ही न्याय-स्थापना करेगा'* (लूका 18:8)—इस जीवन में और शरीर छोड़ने के बाद भी।

१५०. जैसे-जैसे आप मन के समुद्र में नौकायन करते हैं, यीशु में हौसला रखें; क्योंकि वह स्वयं आपके भीतर हैं – आपके हृदय में – रहस्यमय तरीके से आपको पुकार रहे हैं: *'हे याकूब, हे इस्राएल के छोटे बच्चे, मत डर; मैं तेरा परमेश्वर हूँ, मैं तेरा दाहिना हाथ थाम लूंगा'* (यशायाह ४१:१३-१४)। *'यदि परमेश्वर हमारे पक्ष में है,' तो 'हमारे विरुद्ध'* कौन है (रोमियों 8:31)? परमेश्वर हमारे पक्ष में है, जिसने हृदय से शुद्ध लोगों को आशीष दी है और यह विधान किया है कि अति मधुर यीशु, जो एकमात्र शुद्ध हैं, दिव्य रूप से शुद्ध हृदयों में वास करें और उनमें निवास करें। तो आइए, दिव्य पौलुस के शब्दों में, हम अपने मन को भक्ति में प्रशिक्षित करना बंद न करें (1 तीमु. 4:7)।

151. जैसा कि दाऊद कहता है, वह शान्ति की भरमार में आनन्दित होगा (भजन संहिता 36: 11), जो किसी मनुष्य के प्रति पक्षपात नहीं करता, और अपने हृदय में किसी अधर्म का न्याय नहीं करता; अर्थात्, जो दुष्ट आत्माओं की प्रतिमाओं को स्वीकार नहीं करता और इन प्रतिमाओं के माध्यम से पाप की योजना नहीं बनाता, बल्कि अपने हृदय की भूमि में कठोरता से न्याय करते और कठोर निर्णय सुनाते हुए, पाप को उसका उचित दंड देता है। महान और बुद्धिमान पिता, अपनी कुछ रचनाओं में, राक्षसों को उनकी तर्कशक्ति के कारण 'मनुष्य' कहते हैं। इसी प्रकार सुसमाचार में प्रभु कहते हैं: *'मनुष्य के शत्रु ने यह किया है'* (मत्ती 13:28), अर्थात् उसने गेहूँ के बीच खरपतवार बोया है (जिसका अर्थ है शैतान; क्योंकि उन्होंने बाद में कहा: *'बीजारोपण करने वाला शैतान है'*)। चूंकि हम इन दुष्टों का तुरंत विरोध नहीं करते, इसलिए हम अपने विचारों से पराजित हो जाते हैं।

१५२. यदि, मन की सतर्कता में निवास करना आरंभ करके, हम संयम को विनम्रता के साथ मिलाएँ और प्रार्थना को प्रतिरोध के साथ जोड़ें, तो हम मन के मार्ग पर प्रकाश के दीपक के साथ, प्रभु यीशु मसीह के पूजनीय और पवित्र नाम को धारण करके, अच्छी तरह से चलेंगे, – जो पाप को मिटाते और हमें उससे शुद्ध करते हैं, और हमारे हृदय के घर को सुशोभित और सुव्यवस्थित करते हैं। लेकिन यदि हम अपनी आशा केवल अपनी संयम या जागरूकता में ही रखते हैं, तो जल्द ही, अपने शत्रुओं के आक्रमण के अधीन होकर, हम गिर जाएँगे, नीचे गिरा दिए गए होंगे। और फिर ये सबसे धूर्त और दुर्भावनापूर्ण विरोधी हर तरह से हम पर हावी होने लगेंगे, जबकि हम बुरी इच्छाओं में, जैसे जाल में, और अधिक फँसते जाएँगे - या हम उनके हाथों पूरी तरह से कत्लेआम का शिकार हो जाएँगे, क्योंकि हमारे भीतर विजयी तलवार - यीशु मसीह का नाम - की कमी होगी। क्योंकि केवल यही पवित्र तलवार, जब सभी छवियों से शुद्ध हृदय में लगातार चलायी जाती है, तो ही उन्हें पीछे हटाने, उन्हें काट डालने, उन्हें जलाने और उन्हें भस्म करने में सक्षम है, जैसे आग भूसे को भस्म कर देती है।

१५३. अखंड जागरूकता का कार्य, जो आत्मा के लिए लाभदायक और फलदायी है, वह मन में उत्पन्न होने वाले काल्पनिक विचारों को तुरंत पहचानना है। फटकार का कार्य उस विचार को उजागर करना और लज्जित करना है जो किसी इंद्रिय वस्तु के प्रतिनिधित्व के माध्यम से हमारे मन की वायु में प्रवेश करने का प्रयास करता है। जो तुरंत शत्रुओं की हर योजना, हर शब्द, हर स्वप्न, हर मूर्ति और दुष्टता के हर स्तंभ को बुझा देता है और भगा देता है, वह प्रभु का आह्वान है। और हम स्वयं अपने मन में उन्हें हमारे महान ईश्वर, यीशु, के हाथों निर्णायक पराजय प्राप्त करते हुए देखते हैं, और उन हम लोगों की ओर से, जो नम्र, गरीब और कुछ भी काम के नहीं हैं, उनका प्रतिशोध लेते हुए देखते हैं।

१५४. कई लोग यह नहीं समझते कि हमारे विचार इंद्रिय और सांसारिक चीजों की केवल काल्पनिक छवियों के अलावा और कुछ नहीं हैं। परन्तु जब हम कुछ समय के लिए प्रार्थना में संयम-बुद्धि से बने रहते हैं, तो प्रार्थना हमारे मन को दुष्ट विचारों की हर भौतिक छवि से मुक्त कर देती है और उसे शत्रुओं के वचनों को पहचानने में सक्षम बनाती है (शायद यह सामान्य रूप से विचारों की प्रकृति—वे क्या हैं—या दुश्मनों की योजनाओं और साज़िशों की ओर इशारा करता है, जब वे ये विचार उत्पन्न करते हैं), और प्रार्थना और संयम का लाभ अनुभव करने में सक्षम बनाती है।

'तथापि तुम अपनी आँखों से देखते हो, और मन में *"देखते हो"* और मन के *पापियों के प्रतिफल को* समझते हो' (भजन संहिता 90:8), जैसा कि धन्य भजनकार दाऊद कहते हैं।

१५५. आइए, यदि संभव हो, तो मृत्यु को निरंतर याद रखें: क्योंकि इस स्मरण से हमारे भीतर सभी चिंताओं और व्यर्थताओं का त्याग, मन का संरक्षण और निरंतर प्रार्थना, शरीर से विरक्ति और पाप से घृणा उत्पन्न होती है; और, सच कहें तो, लगभग हर सजीव और सक्रिय सद्गुण इससे ही प्रवाहित होता है। इसलिए, आइए हम, यदि संभव हो, तो इसे अपनी साँस लेने जितना ही निरंतर अभ्यास करें।

156. हृदय, जब स्वप्नों से पूर्णतः विमुक्त हो जाता है, तो उसमें दिव्य और रहस्यमयी विचारों का जन्म होने लगता है, जो उसमें वैसे ही क्रीड़ते हैं जैसे शांत सागर में मछलियाँ खेलती हैं और डॉल्फ़िन उछलती हैं। एक कोमल हवा समुद्र को हिलाती है, और पवित्र आत्मा हृदय की गहराई को उत्तेजित करता है। प्रेरित कहते हैं, *'और चूंकि तुम पुत्र हो, परमेश्वर ने अपने पुत्र का आत्मा तुम्हारे हृदयों में भेजा है, जो पुकारता है, "अब्बा, पिता!"'* (गलातियों 4:6)!

१५७. हर संन्यासी अपने मन के संयत होने से पहले आध्यात्मिक अभ्यास अपनाने में संदेह और हिचकिचाहट करेगा—चाहे तो इसलिए कि उसने अभी तक उसकी सुंदरता को नहीं पहचाना है, या इसलिए कि पहचान लेने के बाद भी, उत्साह की कमी के कारण वह स्वयं को इसके लिए प्रेरित करने में असमर्थ है। लेकिन यह हिचकिचाहट निस्संदेह तब दूर हो जाएगी जब वह मन की रक्षा करने के अभ्यास में उतर जाएगा, जिसे मानसिक बुद्धिमित्ता, या मन की सक्रिय बुद्धिमित्ता के रूप में जाना जाता है। क्योंकि तब वह मार्ग पा लेगा, जिसने कहा: *'मैं मार्ग, और जीवन, और पुनरुत्थान हूँ'* (यूहन्ना 14:6)।

158. एक बार फिर वह विचारों की खाई और बेबीलोन के शिशुओं की भीड़ को देखकर विचलित हो जाएगा; लेकिन मसीह इस विचलन को भी दूर कर देते हैं, यदि हम लगातार अपने मन को उनमें स्थिर रखें और बेबीलोन के शिशुओं को त्याग दें, उन्हें इस चट्टान से टकराकर (भजन संहिता 136:9), – इस प्रकार, जैसा कि कहा गया है, उन पर उसकी इच्छा (उन पर उसका क्रोध) पूरी होती है। क्योंकि, जैसा कि बुद्धिमान कहता है, *'इस आज्ञा का पालन करो कि कोई कपटपूर्ण वचन निकलने न पाए'* (सभोपदेशक 8:5)। और प्रभु कहते हैं: *'मेरे बिना तुम कुछ भी नहीं कर सकते'* (यूहन्ना 15:5)।

१५९. जो संयम का अभ्यास करता है, वही सच्चा संन्यासी है, और जो हृदय से संन्यासी है, वही सच्चा तपस्वी है (जिसके हृदय में ईश्वर के सिवा और कुछ नहीं है)।

१६०. मानव जीवन वर्षों, महीनों, हफ्तों, दिनों और रातों, घंटों और मिनटों के क्रम से आगे बढ़ता है। उनके साथ, हमें भी अपने सदाचारी कर्मों को अंत तक (पूर्णता की ओर) बढ़ाना चाहिए—अर्थात्, संयम, प्रार्थना, और हृदय की मधुरता, साथ ही अखंड मौन बनाए रखना।

१६१. मृत्यु का समय, अंततः हम पर भी आएगा—यह आएगा, और इससे कोई बच नहीं सकता; और—हे, काश कि इस संसार का राजकुमार, तब आकर, हमारे अपराधों को इतना छोटा और तुच्छ पाए कि वह हमें न्यायसंगत रूप से दोषी नहीं ठहरा सके! – अन्यथा, हम तब रोएँगे, यद्यपि तब इसका कोई लाभ नहीं होगा। क्योंकि, जैसा कि प्रभु कहते हैं, *'जो दास अपने स्वामी की इच्छा जानता है और उसे नहीं करता, वह बहुत प्रहारों से पीटा जाएगा'* (लूका 12:47)।

१६२. धिक्कार है उन पर जिन्होंने अपने हृदय को भ्रष्ट कर लिया है! और वे तब क्या करेंगे जब प्रभु आएँगे (सिरक 2:14)? – अतः हे भाइयों, हम हृदय के कार्य में और अधिक लगन से जुटें।

१६३. सरल और निर्लिप्त विचारों के बाद भावुक विचार आते हैं, जैसा कि हमने लंबे अनुभव और अवलोकन से सीखा है; और पहले वाले बाद वालों के लिए एक प्रवेश द्वार का काम करते हैं, निर्लिप्त, भावुक के लिए।

१६४. सचमुच, मनुष्य को अपनी इच्छा से स्वयं को दो भागों में विभाजित करना चाहिए; उसे सबसे बुद्धिमानी भरे विचारों से स्वयं को चीरना चाहिए; सचमुच, उसे स्वयं का एक सुलह न करने वाला शत्रु बन जाना चाहिए। जिस व्यक्ति ने किसी का बुरी तरह अपमान किया हो और अन्याय किया हो, उसके प्रति हमारा जो भी रवैया हो, हमें अपने प्रति उससे भी बदतर—या कम से कम उतना ही—रवैया रखना चाहिए, यदि हम सबसे महान और सर्वोपरि आज्ञा, अर्थात् धन्य नम्रता—जो मसीह का वासस्थान और परमेश्वर का अवतारित जीवन है—को पूरा करना चाहते हैं। इसलिए, प्रेरित कहते हैं: *'मुझे इस मृत्यु के शरीर से कौन बचाएगा?'* (रोमियों 7:24)? *'क्योंकि शरीर परमेश्वर की व्यवस्था के विरुद्ध होता है'* (रोमियों 8:7)। इसके अलावा, यह दिखाते हुए कि शरीर को परमेश्वर की इच्छा के अधीन करना हमारे दायित्वों में से एक है, उन्होंने कहा: *'क्योंकि यदि हम स्वयं का न्याय करते हैं, तो हमें दण्डित नहीं किया जाएगा। परन्तु जब हम परमेश्वर द्वारा दण्डित होते हैं, तो प्रभु हमें अनुशासित करते हैं'* (1 कुरिन्थियों 11:31–32)।

165. फल देने की शुरुआत फूल खिलने से होती है; और एक संयमी मन की शुरुआत भोजन और पेय में संयम, सभी विचारों को अस्वीकार करने और काट देने, और हृदय की मौनता से होती है।

१६६. जब हम मसीह यीशु को जानकर, दृढ़ता से स्थापति एक संयम की अवस्था में बसना शुरू करते हैं, तो पहले हमारे मन में एक दीपक प्रकट होता है—जैसे मन के हाथ में पकड़ा गया एक दीपक जो हमें वचिारों के मार्गों पर मार्गदर्शन करता है; फरि, जैसे आकाश में घूमता हुआ, अपनी पूरी भव्यता में चंद्रमा; और अंत में, सूर्य की तरह, – यीशु, जो सूर्य की तरह धार्मकिता से प्रकाशमान हैं, अर्थात् स्वयं और अपने चंतिन के सर्व-प्रकाशक प्रकाशों को प्रकट करते हैं।

167. यही वह है जो वह रहस्यमय रूप से उस मन को प्रकट करते हैं, जो अथक उत्साह के साथ, उनकी आज्ञा का पालन करता है, जो कहती है: *'अपने हृदयों को खतना करो'* (व्यवस्थावविरण 10:16)। – हाँ, जैसा कपिहले ही कहा जा चुका है, सावधानीपूर्वक आत्म-परीक्षा मनुष्य को ये अद्भुत सत्य सखिाती है। दव्यिता पक्षपात नहीं करती। प्रभु क्यों कहते हैं: *'मेरी सुनो और समझो; क्योंकजिसिके पास है, उसे और दयिा जाएगा, और उसके पास बहुत होगा; पर जसिके पास नहीं है, उससे जो कुछ भी है वह भी छीन लयिा जाएगा'* (मत्ती 13: 12–13); और फरि: *'जो लोग परमेश्वर से प्रेम करते हैं, उनके लएि सब कुछ मलिकर भलाई के लएि काम करता है'* (रोमयिों 8:28)। क्या ये गुण (संयम और प्रार्थना) उन्हें और भी अधकि तेजी से इस ओर नहीं ले जाते?

168. एक जहाज पानी के बनिा आगे नहीं बढ़ सकता: न ही ववििेक के बनिा मन की रक्षा थोड़ी भी सफल हो सकती है, जो नम्रता और यीशु मसीह से प्रार्थना के साथ हो।

169. एक घर की नींव पत्थर होते हैं; लेकनि इस सद्गुण (मन की रक्षा) के लएि, नींव और छत दोनों हमारे प्रभु यीशु मसीह का पवति्र और पूजति नाम हैं। एक मूर्ख नावकि तूफान के दौरान जल्दी और आसानी से जहाज-दुर्घटना का शकिार हो जाएगा यदवि ह चालक दल को हटा दे, चप्पू और पालों को समुद्र में फेंक दे, और खुद सो जाए; लेकनि उससे भी अधकि तेजी से एक आत्मा राक्षसों द्वारा डुबो दी जाएगी यदवि ह परीक्षाओं की शुरुआत में ही होशयिार रहने और यीशु मसीह के नाम का आह्वान करने की उपेक्षा करती है।

170. हम जो जानते हैं, उसे हम पवति्र शास्त्र के माध्यम से आगे बढ़ाते हैं, और जो लोग तैयार हैं, उनके लएि उस बात की गवाही देते हैं, जो हमने मार्ग पर चलते हुए देखी है, यदआिप जो कहा जा रहा है उसे स्वीकार करने के लएि तैयार हैं। क्योंकप्रिभु स्वयं ने कहा है: *'यदकिोई मुझ में नहीं रहता, तो वह डाल की नाईं बाहर डाल दयिा जाता है और सूख जाता है; और उन्हें इकट्ठा करके आग में डाल देते हैं, और वे जल जाते हैं। पर जो मुझ में रहता है, और मैं उसमें रहता हूँ, वह बहुत फल देता है'* (यूहन्ना 15:5–6)। जसि प्रकार प्रकाश के बनिा सूर्य का चमकना असंभव है, उसी प्रकार यीशु के नाम में प्रार्थना के बनिा हृदय को हानकिारक वचिारों की अशुद्धसि से शुद्ध करना असंभव है। यदयिह सच है, जैसा कमिैं (अनुभव से) देखता हूँ, तो आइए हम इस नाम को उतनी बार पुकारें जतिनी बार हम साँस लेते हैं। क्योंकयिह प्रकाश है, जबकवि े (अशुद्ध वचिार) अंधकार हैं; और वह (यीशु, जन्हिें हम पुकारते हैं) परमेश्वर और प्रभु है, जबकवि े राक्षसों के सेवक हैं।

१७१. मन के संरक्षण के लएि प्रकाश-वाहक, बजिली-वाहक, प्रकाश-उत्सर्जक और अग्नि-वाहक कहा जाना उचति और उपयुक्त है। क्योंक,ि वास्तव में, यह शरीर के महानतम गुणों से भी श्रेष्ठ है, चाहे कोई कतिने भी गुण रखता हो। इसी कारण से इस गुण को इसके द्वारा उत्पन्न होने वाली तेजस्वी रोशनी के लएि सबसे सम्मानति नामों से बुलाया जाना चाहएि। जो लोग इसे प्रेम करने लगे हैं, वे यीशु मसीह की शक्तसि े, दुष्ट, नीच, अज्ञानी, मूर्ख और अधर्मी पापयिों से धर्मी, सदाचारी, शुद्ध, पवति्र और बुद्धमिान लोगों में बदल जाते हैं; और केवल इतना ही नहीं, बल्कवि े रहस्यों पर मनन करना और धर्मशास्त्रीय चंतिन में संलग्न होना भी शुरू कर देते हैं। वचिारशील बनकर, वे उस परम पवति्र, असीम प्रकाश में पहुँचा दएि जाते हैं; वे अकथनीय स्पर्शों से उसे छूते हैं; वे उसके साथ जीते और काम करते हैं, क्योंक*िउन्होंने 'चखा है कप्रिभु भला है'*; इस प्रकार इन प्रथम स्वर्गदूतों में दव्यि दाऊद के वचन स्पष्ट रूप से पूरे हुए हैं: *'कन्तिु धर्मी तेरा नाम ग्रहण करेंगे, और सीधे तेरे साम्हने नवििास करेंगे'* (भजन संहति 139:14)। और वास्तव में, केवल वे ही सच्चे अर्थों में ईश्वर को पुकारते हैं, उनसे स्वीकार करते हैं, और उनसे संवाद करने तथा उनसे प्रेम करने में हमेशा आनंदति रहते हैं।

172. बाहरी (स्व) से आंतरकि (स्व) के लएि वनिाश है; क्योंकआिंतरकि मनुष्य बाहरी इंद्रयिों से बहुत कष्ट सहता है। लेकनि कुछ भी सहने के बाद, उसे इन बाहरी इंद्रयिों के वरिुद्ध कोड़ा चलाना चाहएि। जसिने शाब्दकि रूप से आवश्यक कार्य कयिा है, उसने आध्यात्मकि रूप से आवश्यक कार्य को पहले ही समझ लयिा है।

१७३. यदहिमारा आंतरकि मन संयमी रहता है, तो, धर्मपतिामहों के अनुसार, वह बाहरी मन को भी संरक्षति रखने के लएि पर्याप्त मजबूत होता है। उनके अपने शब्दों के अनुसार, हम और दुष्ट दानव दोनों एक साथ पाप करते हैं: वे बस अपनी पसंद के अनुसार अपने वचिारों या काल्पनकि दृष्टयिों में मन के सामने पापों को चति्रति करते हैं, जबकहिम अपने वचिारों द्वारा आंतरकि रूप से और अपने कर्मों द्वारा बाहरी रूप से पाप करते हैं। दैत्य, जनिके पास

मजबूत शरीर नहीं है, वे केवल विचारों, योजनाओं और छल के माध्यम से अपने और हमारे लिए कष्ट तैयार करते हैं। लेकिन यदि ये सबसे भ्रष्ट प्राणी एक मजबूत शरीर से वंचित न होते, तो वे अपने कर्मों के माध्यम से भी निरंतर पाप करते, और हमेशा अपने भीतर एक दुष्ट इच्छा को पालते, जो बुराई करने के लिए तैयार रहती।

174. परन्तु प्रभु से हृदय से की गई प्रार्थना उन्हें चूर-चूर कर देती है और उनकी प्रलोभनों को धूल में मिला देती है। क्योंकि यीशु, परमेश्वर और परमेश्वर के पुत्र, जिन्हें हम अनवरत और आलस्यरहित रूप से पुकारते हैं, किसी भी प्रकार हमें पाप—जिसे 'प्रलोभन' कहा जाता है—भरना आरंभ भी नहीं होने देते; न ही वे विचारों के दर्पण में मन के समक्ष किसी भी प्रतिमा को प्रकट होने देते हैं, और न ही हृदय से कोई शब्द बोले जाने देते हैं। लेकिन यदि कोई भी प्रतिमा हृदय में जबरदस्ती प्रवेश नहीं कर सकती, तो, जैसा कि हमने कहा है, यह विचारों से भी खाली हो जाएगा; क्योंकि दुष्टात्माएँ आमतौर पर विचारों के माध्यम से आत्मा से गुप्त रूप से बात करती हैं और उसे बुराई सिखाती हैं।

१७५. इस प्रकार, अनवरत प्रार्थना के द्वारा, हमारे मन की वायु द्वेष की आत्माओं के अंधकारमय बादलों और हवाओं से शुद्ध हो जाती है। तब, जब हृदय की वायु शुद्ध हो जाती है, तो उसमें यीशु के दिव्य प्रकाश के चमकने में कुछ भी बाधा नहीं बनता, बशर्ते कि हम व्यर्थता, घमंड और दंभपूर्ण आत्म-बड़बोलेपन से घमंडी न हो जाएँ, अवास्तविक की चाह न करें, और इस प्रकार यीशु की सहायता से वंचित न रहें; क्योंकि मसीह इन सभी बातों से घृणा करते हैं, जो स्वयं नम्रता का आदर्श हैं।

176. अतःहम प्रार्थना और नम्रता से चिपके रहें—ये दो हथियार, जो संयम के साथ मिलकर, एक जलती हुई तलवार की तरह, आध्यात्मिक योद्धाओं को राक्षसों के विरुद्ध हथियारबंद करते हैं। यदि हम इसी तरह अपना जीवन जीते हैं, तो हर दिन और हर घंटे हमारे हृदय में एक रहस्यमयी आनंदमय भोज हो सकता है।

177. आठ प्रमुख पापी विचार हैं, जो ऐसे विचारों के पूरे क्षेत्र को घेरे हुए हैं, और जिनसे वे सभी उत्पन्न होते हैं। वे सभी हृदय के द्वारों के पास आते हैं और, मन द्वारा अनिर्धारित पाकर, एक-एक करके, प्रत्येक अपने समय पर, उसमें प्रवेश करते हैं। जब इन आठ विचारों में से कोई एक विचार हृदय तक उठता है और उसमें प्रवेश करता है, तो वह अपने साथ अशुद्ध विचारों का एक पूरा झुंड लाता है और इस प्रकार मन और हृदय को धुंधला कर, शरीर को उत्तेजित करता है और उसे शर्मनाक कर्म करने की ओर खींचता है।

178. परन्तु जो साँप के सिर (परिशिष्ट) से सावधान रहता है और, क्रोधित डाँट के साथ, क्रोध के वचन चुनकर, मुट्ठी से जैसे मूँह पर मारता है, वैसे शत्रु के मूँह पर मारता है, वह कलह को समाप्त कर देता है। क्योंकि, सिर काटकर, वह दुष्ट विचारों और सबसे दुष्ट कर्मों दोनों से बच जाता है। इसके बाद, उसका मन अशांत नहीं रहता: क्योंकि ईश्वर उसके विचारों पर उसकी सतर्कता को स्वीकार करता है और, बदले में, उसे यह ज्ञान प्रदान करता है कि अपने शत्रुओं पर कैसे विजय प्राप्त करें और हृदय को उन विचारों से कैसे शुद्ध करें जो मनुष्य के अंतर्मन को कलंकित करते हैं, जिसके बारे में प्रभु यीशु कहते हैं: *'क्योंकि हृदय से दुष्ट विचार, व्यभिचार, कामवासना निकलते हैं... ये ही मनुष्य को अशुद्ध करते हैं* (मत्ती 15:19-20)।

179. इस प्रकार, आत्मा अपने गुण, सौंदर्य और धार्मिकता में प्रभु के समान हो सकती है, ठीक वैसे ही जैसे उसे आरंभ में परमेश्वर द्वारा अच्छा और धार्मिक बनाया गया था, जैसा कि परमेश्वर के महान सेवक, एंथनी, कहते हैं: 'जब आत्मा के भीतर का मन जैसा उसे स्वभाव से होना चाहिए, वैसा होता है, तो पूरी आत्मा ही सद्गुण है'। उन्होंने फिर से कहा: 'आत्मा का धर्मी होना, उसके मन का अपनी प्राकृतिक अवस्था में होने के समान है, जैसी वह सृजित की गई थी।' और थोड़ा आगे चलकर वे फिर कहते हैं: 'आओ, हम मन को शुद्ध करें; क्योंकि मेरा मानना है कि, पूरी तरह से शुद्ध हो जाने और अपनी प्राकृतिक अवस्था में लौट आने पर, यह विवेकी बन सकता है और राक्षसों से परे देख सकता है, क्योंकि इसके भीतर वह प्रभु है जो प्रकटकिरण प्रदान करता है।' यह वही है जो महिमामय एंथनी ने कहा, जैसा कि महान एथनासियस ने एंथनी के जीवन में वर्णन किया है।

१८०. प्रत्येक विचार मन में किसी न किसी इंद्रिय वस्तु की छवि को पुन: उत्पन्न करता है: क्योंकि असीरियन (शत्रु), जो स्वयं एक आध्यात्मिक शक्ति है, हमें केवल हमारे लिए परिचित, किसी इंद्रिय वस्तु का उपयोग करके ही बहका सकता है।

१८१. जैसे मनुष्य के लिए हवा में उड़ते पक्षियों का पीछा करना, या उनके जैसे उड़ना असंभव है, क्योंकि यह हमारी प्रकृति के अनुकूल नहीं है; वैसे ही संयम और अखंड प्रार्थना के बिना, हमारे लिए अमूर्त दैवीय विचारों से छुटकारा पाना और मन की चौकस दृष्टि को स्वतंत्र रूप से ईश्वर की ओर निर्देशित करना असंभव है। यदि आपमें यह कमी है, तो आप पृथ्वी पर हैं और सांसारिक चीजों का ही पीछा करेंगे।

182. यदि आप सचमुच अपने विचारों को लज्जित करना चाहते हैं, तो आपको बिना प्रयास के मौन और अपने हृदय को चैतन्य बनाए रखना चाहिए; यीशु की प्रार्थना को अपनी साँस से चिपका रहने दें – और कुछ ही दिनों में आप इसे व्यवहार में देखेंगे।

183. जैसे कि किसी को हवा में अक्षर नहीं लिखने चाहिए, बल्कि उन्हें किसी ठोस सतह पर छेनी से उकेरना चाहिए ताकि वे लंबे समय तक संरक्षित रह सकें: इसी प्रकार हमें यीशु की प्रार्थना को अपनी परिश्रमपूर्ण संयमशीलता के साथ जोड़ना चाहिए, ताकि संयमशीलता का सुंदर सद्गुण, उनके साथ मिलकर, हमेशा हमारे भीतर पूर्ण रूप से बना रहे, और उनके द्वारा हममें हमेशा के लिए हमारे एक अविभाज्य अंग के रूप में संरक्षित रहे।

184. जैसा कि कहा गया है, अपने मामलों को प्रभु के हवाले कर दो, और तुम अनुग्रह पाओगे, ताकि पैगंबर के वचन हम पर भी और तुम पर भी लागू न हों: *'हे प्रभु, तू उनके होठों के निकट है, पर उनके हृदयों से दूर है'* (यिर्मि. 12:2)। यीशु मसीह स्वयं के अलावा और कोई भी आपके हृदय को उसकी वासनाओं से सच्चाई में शांत नहीं कर सकता, जिन्होंने स्वयं में उस चीज़ को एक किया जो बहुत दूर थी (अर्थात् दिव्यता और मानवता)।

185. अपने ही विचारों के साथ आंतरिक मानसिक संवाद और बाहरी बातचीत तथा व्यर्थ की बातें, दोनों ही आत्मा पर छाया डालते हैं। इसलिए, जो लोग अपने मन से सभी हानिकारक चीजों को दूर करने का प्रयास करते हैं, उन्हें बिना किसी दया के, इन दोनों व्यर्थ की बातों के प्रेमी—चाहे विचार हों या लोग—को दूर भगा देना चाहिए, एक अत्यंत और ईश्वर-प्रदत्त कारण के लिए, अर्थात्: – ताकि मन, धुंधला होकर, संयम में कमजोर न हो जाए: क्योंकि जब (ऐसी बातचीत से उत्पन्न) विस्मृति से धुंधला हो जाता है, तो हम अपना होश खो देते हैं (ऐसा हो जाता है मानो हमारा कोई मन ही न हो)।

186. जो कोई भी पूरी लगन से हृदय की पवित्रता को बनाए रखता है, उसका मार्गदर्शक इस मामले में उसका विधि-दाता, मसीह होगा, जो रहस्यमय तरीके से अपनी इच्छा उसे प्रकट करेंगे। दाऊद इस ओर इशारा करते हुए कहते हैं, *'मैं सुनूँगा कि यहोवा परमेश्वर मुझसे क्या कहता है'* (भजन संहिता 84:9)। विचारों की लड़ाई और उसमें ईश्वर की सुरक्षात्मक मध्यस्थता के संबंध में मन के आंतरिक संवाद को दर्शाते हुए, उन्होंने कहा: *'और एक मनुष्य कहेगा: "यदि धर्मी लोगों के लिए कोई प्रतिफल है"'* (भजन संहिता 57:12)? और फिर, दोनों पक्षों पर सावधानीपूर्वक विचार करने के बाद लिए गए निर्णय को व्यक्त करते हुए, वह कहते हैं: *'क्योंकि परमेश्वर उनका न्यायी है'* – हमारे हृदय के भीतर *'पृथ्वी पर'* दुष्ट दुष्टात्माओं का (वही)। और कहीं और वह कहते हैं: *'एक मनुष्य समीप आएगा, और हृदय गहरा होगा, और परमेश्वर की महिमा होगी'*; और फिर *'उनके फोड़े'* को *'शिशुओं के तीरों'* के रूप में गिना जाएगा (भजन संहिता 63:7-8)।

187. आइए हम हमेशा अपने आपको *उन लोगों* की तरह आचरण करें *जो 'दिल से बुद्धि में शिक्षित'* (भजन संहिता 89:12) *हैं*, और निरंतर यीशु मसीह, पिता की शक्ति और परमेश्वर की बुद्धि का श्वास लें। हालाँकि, यदि किसी तरह हम चूक जाएँ और इस बुद्धिमानी भरे कार्य-पथ को भूल जाएँ, तो अगले ही दिन सुबह हम एक बार फिर अपने मन के कमर कस लें और अपने कार्य को और अधिक दृढ़ संकल्प के साथ आरंभ करें, यह जानते हुए कि हमारे लिए, *जो 'भलाई करने के लिए बुलाए गए हैं'*, कोई बहाना नहीं है, यदि हम ऐसा नहीं करते हैं।

188. जैसे, जब हाल ही में खाया गया हानिकारक भोजन शरीर में दर्दनाक कष्ट पैदा करता है, तो जिसने उसे चखा है, वह इस हानि को महसूस करते ही, उसे बाहर निकालने के लिए जल्दी करता है, और इस प्रकार अप्रभावित रहता है: वैसे ही मन भी, जब उसने ग्रहण किए हुए दुष्ट विचारों को आत्मसात कर लिया है और उनकी आत्मा-भ्रष्ट करने वाली कड़वाहट को महसूस करता है, दिल की गहराई से उच्चारित यीशु की प्रार्थना के द्वारा उन्हें बाहर निकालने और स्वयं से दूर करने की जल्दी करता है, और इस प्रकार उनसे होने वाली सभी क्षति से बच जाता है, ठीक वैसे ही जैसे ईश्वर की कृपा से, दूसरों की शिक्षा और साथ ही अपने स्वयं के अनुभव ने समझदार लोगों को इस बात को समझने में सक्षम बनाया है।

189. संयम को अपनी साँस और यीशु के नाम के साथ मिलाएँ, या मृत्यु और नम्रता के विचार के साथ; क्योंकि दोनों से बहुत लाभ होता है।

190. प्रभु ने कहा: *'मेरे से सीखो, क्योंकि मैं मन से कोमल और दीन हूँ'* (मत्ती 11:29)।

191. प्रभु ने यह भी कहा: *'क्योंकि जो कोई इस छोटे बच्चे के समान अपना आप नम्र करता है, वह स्वर्ग के राज्य में सबसे बड़ा है'* (मत्ती 18:4); *'पर जो कोई अपना आप बड़ा करता है, वह नम्र किया जाएगा'* (लूका 18:14)। – *'मेरे से सीखो,'* वह कहते हैं। और क्या आप देखते हैं कि हमें क्या सीखना है? नम्रता। उनकी आज्ञा अनंत जीवन है; और यह आज्ञा नम्रता है। परिणामस्वरूप, जो नम्र नहीं है वह जीवन से भटक गया है, और निश्चित रूप से अपने आप को इसके बिल्कुल विपरीत पाएगा।

192. यदि प्रत्येक सद्गुण आत्मा और शरीर द्वारा उत्पन्न होता है, और यदि आत्मा और शरीर—जिनके द्वारा, जैसा कि मैंने कहा है, प्रत्येक सद्गुण सिद्ध होता है—ईश्वर की रचना हैं; तो क्या हम परम मूर्खता नहीं कर रहे हैं जब हम आत्मा और शरीर के उन अलंकरणों पर घमंड करते हैं और गर्व करते हैं जो हमारे अपने नहीं हैं? और क्या यह और भी अधिक सच नहीं है क्योंकि, घमंड को बेंत की तरह सहारा लेकर, हम स्वयं को परमेश्वर के विरुद्ध कर लेते हैं, जिसकी महानता असीम है, और इस प्रकार अपनी चरम अवज्ञा और मूर्खता के कारण अपने ही सिर पर उसकी सबसे भयानक अप्रसन्नता लाते हैं; क्योंकि '*प्रभु घमण्डी लोगों का विरोध करते हैं*' (याकूब 4:6)। नम्रता में प्रभु का अनुकरण करने के बजाय, हम अपनी व्यर्थ और घमंडी तर्क-कुतर्क से प्रभु के प्रबल शत्रु, घमंडी शैतान के साथ संगति में प्रवेश करते हैं। इसीलिए प्रेरित कहते हैं: '*तुम्हारे पास ऐसा क्या है जो तुमने नहीं पाया?*' (1 कुरिन्थियों 4:7)? क्या आपने खुद को बनाया है? यदि, तब, आपने परमेश्वर से शरीर और आत्मा प्राप्त किया है—जिससे, जिसमें, और जिसके द्वारा हर सद्गुण का अस्तित्व है—तो '*आप किस बात पर घमंड करते हैं, जबकि आपने इसे प्राप्त नहीं किया है*' (वही)? क्योंकि प्रभु ने यह सब आप पर प्रदान किया है।

193. हृदय का शुद्धिकरण, जिसके द्वारा विनम्रता और ऊपर से आने वाले हर आशीर्वाद दोनों हमारे भीतर मौजूद रहते हैं, कुछ और नहीं बल्कि यह सुनिश्चित करना है कि हानिकारक विचारों को किसी भी तरह से आत्मा में प्रवेश न करने दिया जाए।

194. मन की रक्षा, जो ईश्वर की सहायता से और एकमात्र ईश्वर की खातिर की जाती है, एक बार आत्मा में स्थापित हो जाने पर, मन को ईश्वर के अनुरूप कर्म करने की बुद्धि प्रदान करती है। यह इसके प्राप्तकर्ता को ईश्वर के अनुरूप, निर्दोष निर्णय के साथ, बाहरी कर्मों और शब्दों दोनों को व्यवस्थित करने की एक बड़ी क्षमता भी प्रदान करती है।

195. पुराने नियम में विशिष्ट महापुजारी का आभूषण (शुद्ध स्वर्ण का वक्ष-पट, जिस पर 'परमेश्वर के लिए पवित्र' शब्द अंकित थे, निर्गमन। 28:36) हृदय की पवित्रता का एक पूर्वसंकेत था, जो हमें अपने हृदय की वक्ष-पट्टी पर ध्यान देने के लिए प्रेरित करता है, यह देखने के लिए कि क्या वह पाप से काली पड़ गई है, ताकि (यदि ऐसा होता है) हम उसे आँसुओं, पश्चाताप और प्रार्थना से शुद्ध करने में शीघ्रता करें। हमारा मन एक हल्की (क्षणभंगुर) चीज़ है, और इसे पापी विचारों से दूर रखना कठिन है; हालाँकि, यह कहा जा सकता है कि यह बुरे और अच्छे दोनों तरह के मानसिक विचारों का समान रूप से अनुसरण करता है।

196. धन्य है वह जो यीशु की प्रार्थना पर अपने विचारों को इतनी दृढ़ता से स्थिर किए हुए है, और अपने हृदय में निरंतर उसकी पुकार लगाता है, जैसे हवा हमारे शरीरों से चिपकी रहती है, या एक लौ मोमबत्ती से। सूर्य, जब पृथ्वी पर से गुजरता है, तो दिन होता है; और प्रभु यीशु का पवित्र और पूजनीय नाम, जो मन में अनवरत चमकता रहता है, सूर्य सदृश विचारों की अनगिनत भीड़ को जन्म देता है।

१९७. जब बादल छंट जाते हैं, तो वायु शुद्ध प्रतीत होती है; और जब कामुक कल्पनाएँ धर्म के सूर्य, यीशु मसीह द्वारा दूर कर दी जाती हैं, तो हृदय में आमतौर पर प्रकाश और तारों जैसे विचार उत्पन्न होते हैं, क्योंकि यीशु ने हृदय की वायु को प्रकाशित कर दिया है। क्योंकि बुद्धिमान कहता है: '*जो प्रभु में आशा रखते हैं वे सत्य को समझेंगे, और विश्वासी उसके प्रेम में निवास करेंगे*' (बुद्धि. 3:9)।

198. संतों में से एक ने कहा: 'यदि तुम द्वेष रखना हो, तो उसे राक्षसों के प्रति रखो; और यदि शत्रुता करनी हो, तो सदा शरीर के साथ शत्रुता करो। शरीर एक विश्वासघाती मित्र है, और जब तृप्त हो जाता है, तो सबसे भयंकर युद्ध छेड़ता है।' और फिर: 'शरीर के साथ शत्रुता करो और पेट के विरुद्ध युद्ध छेड़ो।'

199. पिछले अध्यायों में, जिनमें पहला और दूसरा सौ शामिल हैं, हमने मन की पवित्र मौन की कष्टसाध्य साधना का वर्णन किया है, जिसमें न केवल हमारे अपने शोध का फल प्रस्तुत है, बल्कि वह भी जो धर्मनिष्ठ पिताओं के दैवीय वचन हमें मन की पवित्रता के बारे में सिखाते हैं। अब, मन की रक्षा करने के लाभ को प्रदर्शित करने के लिए थोड़ा और कहने के बाद, हम अपने प्रवचन का समापन करेंगे।

२००. तो आओ, मेरे पीछे चलो ताकि मन की धन्य रक्षा प्राप्त हो, तुम जो भी हो, जो आत्मा में '*भलाई के दिनों को देखने*' (भजन संहिता ३३:१२) *को* प्रेम करते हो – और मैं तुम्हें प्रभु के विषय में, अदेह शक्तियों के दृश्य कार्यों और निवास-स्थान के बारे में सिखाऊँगा। स्वर्गदूत सृष्टिकर्ता की स्तुति गाने से कभी नहीं थकते; न ही मन, शुद्धता में उनसे प्रतिस्पर्धा करते हुए, कभी तृप्त होगा। और जैसे अदेह (स्वर्ग में देवदूत) भोजन की परवाह नहीं करते, वैसे ही देहधारी फिर भी अदेह (पृथ्वी पर संयमी मन वाले लोग) भी इसकी परवाह नहीं करते, जब वे मन की स्थिरता के स्वर्ग में आरोहण करते हैं।

201. जैसे स्वर्गीय शक्तियाँ धन-संपत्ति से स्वयं को व्यस्त नहीं करतीं, वैसे ही वे जिन्होंने आत्मा की दृष्टि को शुद्ध किया है और सदाचार (संयम) की आदत प्राप्त की है, वे भी दुष्ट आत्माओं की दुर्भावना से स्वयं को व्यस्त नहीं करते। और जैसे वे ईश्वर में पूर्णता की सफलता के धन से विशिष्ट हैं, वैसे ही ये ईश्वर के लिए अपनी लालसा और प्रेम, दिव्यता की ओर अपने प्रयास और आरोहण से विशिष्ट हैं। और वे, परमानंद की ओर ले जाने वाले दैवी प्रेम का स्वाद चखने की एक अतृप्त लालसा के साथ, (आध्यात्मिक पूर्णता के पर्वत पर) अपनी चढ़ाई में आगे बढ़ते हुए, तब तक नहीं रुकेंगे जब तक कि वे सेराफिम के समान नहीं हो जाते, – और वे मन की गंभीरता और उत्कट आरोहण से तब तक विश्राम नहीं करेंगे, जब तक कि वे हमारे प्रभु मसीह यीशु में स्वर्गदूत नहीं बन जाते।

202. अजगर और बेसिलिस्क के विष से अधिक घातक कोई विष नहीं है; और आत्म-प्रेम के पाप से बड़ा कोई पाप नहीं है। आत्म-प्रेम की संतान—ये उड़ने वाले साँप—ये हैं: हृदय में आत्म-प्रशंसा, आत्म-संतुष्टि, लालच, व्यभिचार, दंभ, ईर्ष्या, और सभी बुराइयों का शिखर, अहंकार, जो न केवल मनुष्यों बल्कि स्वर्गदूतों को भी स्वर्ग से नीचे गिरा देता है और उन्हें प्रकाश के बजाय अंधकार से ढक देता है।

203. मैंने यह तुम्हें, थियोडुलस, मेरे मौन के नामधारी (अर्थात् हेसकियिस) को लिखा है, यद्यपि सच्चाई में मैं मौन का व्यक्ति नहीं हूँ। शायद मैंने हमारे विषय से संबंधित सब कुछ नहीं लिखा है, लेकिन हर तरह से वह जो परमेश्वर ने पिता, पुत्र और पवित्र आत्मा में प्रदान किया है, सभी बुद्धिमान प्राणियों द्वारा प्रशंसित और महिमामंडित: देवदूतों और मनुष्यों द्वारा, और अकथनीय त्रिमूर्ति एक ईश्वर द्वारा सृजित प्रत्येक प्राणी द्वारा स्तुति की जाती है, जिनका महिमामय राज्य प्राप्त करने के लिए हम भी परम पवित्र ईश्वर की माता और हमारे पूजनीय पिताओं की प्रार्थनाओं के द्वारा योग्य ठहराए जाएँ। उन्हें, असीम ईश्वर को, अनंत महिमा हो। आमीन।

सिनाई के पूजनीय नीलस

उनका संक्षिप्त परिचय

आदरणीय नीलस एक धनी और कुलीन परिवार से आए थे और, पूरी संभावना है, वे सेंट क्रिसोस्टोम के शिष्य और श्रोता थे, जब सेंट क्रिसोस्टोम अंतीयक में उपदेश दे रहे थे। उनके कुलीन जन्म और व्यक्तिगत गुणों ने उन्हें राजधानी का प्रीफेक्ट पद दिलाया। लेकिन उनकी आध्यात्मिक आकांक्षाएँ राजधानी के कर्तव्यों और जीवन शैली के विपरीत थीं। इसलिए, अपनी पत्नी — जिनसे उनके पहले से ही दो बच्चे थे — की सहमति से, उन्होंने अपने सास के पदचिन्हों पर चलते हुए, एकांत में मोक्ष की तलाश के लिए संसार को त्याग दिया। अपने बेटे थियोडुलस को साथ लेकर, वे सिनाई पर्वत पर बस गए; जबकि उनकी पत्नी और बेटी ने मिस्र के एक मठ में शरण ली। सिनाई रेगिस्तान में, आदरणीय नीलस ने अत्यंत कठोर तपस्या का जीवन जिया: उन्होंने और उनके पुत्र ने अपने हाथों से अपने लिए एक गुफा खोदी, और वहाँ रहते हुए, वे रोटी पर भी नहीं जीवित रहे, बल्कि जंगली, कड़वे पौधों पर गुज़ारा किया। फिर भी उन्होंने अपना सारा समय प्रार्थना, धर्मग्रंथ के अध्ययन, ईश्वर के चिंतन और श्रम में बिताया। यद्यपि उन्होंने संसार का त्याग कर दिया था, फिर भी पूज्य नीलस लोगों के साथ मेलजोल करना बंद नहीं हुए। हर ओर से— —और हर तरह के लोग अपनी आध्यात्मिक जरूरतों के लिए उनके पास आते थे, और कोई भी आवश्यक मार्गदर्शन और शिक्षा के बिना नहीं रहता था। यहाँ तक कि राजा ने भी प्रार्थना के लिए उन्हें पत्र लिखा, और उन्होंने राजा को संत क्रिसोस्टोम के प्रति उसके अन्याय के लिए फटकारते हुए लिखा। रेवरेंड फादर की अन्य रचनाएँ मुख्य रूप से नैतिक और तपस्वी प्रकृति की थीं। उनके लिखे हुए से यह स्पष्ट है कि उनका ज्ञान कितना विशाल और गहरा था, और इस प्रयास में उनकी मेहनत कितनी अथक थी। ईश्वर के प्रति उनके प्रेम की परीक्षा के लिए एक विशेष परीक्षा आई। अरब के बर्बर आक्रमणकारियों ने माउंट सिनाई और आसपास के क्षेत्रों पर हमला किया, सब कुछ लूट लिया, कई लोगों को मार डाला, और दूसरों को बंदी बना लिया। बाद वालों में परम पूज्य नीलस के पुत्र थियोडुलस भी थे। यह दुर्भाग्य पूजनीय के लिए भारी बोझ बन गया - और उन्हें कोई शांति नहीं मिली, विशेषकर जब सामान्य विपत्ति के दूसरे या तीसरे दिन उन्हें यह खबर मिली कि उन जंगली लोगों का इरादा उनके बेटे को प्रातःतारे - शुक्र - को बलिदान के रूप में चढ़ाने का था - हालांकि यह पुष्टि नहीं हुई थी कि इस योजना को वास्तव में अंजाम दिया गया था या नहीं। लेकिन ईश्वर ने उनके पिता के दिल को अधिक समय तक पीड़ित नहीं रहने दिया। उसे जल्द ही पता चला कि बलिदान नहीं हुआ था और कैदियों को ईसाई भूमि पर बेच दिया गया था। बाद में वह एलूसा शहर में मिला, जिसके बिशप ने उसे अन्य लोगों के साथ बर्बरों से खरीदा था, और वह पहले से ही उसे चर्च की सेवा के लिए तैयार कर रहे थे, एक भूमिका जिसके लिए उसके पिता, जो उसे लेने आए थे, को भी प्रेरित किया जा रहा था। संन्यासी जीवन के प्रति उनके प्रेम ने

उन्हें ऐसा करने से रोक दिया; और बिशप ने, उन्हें पुरोहित के रूप में नियुक्त करने के बाद, उन्हें अपने प्रिय माउंट सिनाई के लिए प्रस्थान करने का आशीर्वाद दिया, जहाँ वे अपने जीवन के बाकी दिनों तक रहे। सेंट नीलस का निधन वर्ष 390 में हुआ; वे 60 वर्षों तक सिनाई रेगिस्तान में रहे और लगभग 450 ईस्वी में उनकी मृत्यु हुई। उनका पर्व 12 नवंबर और 13 जनवरी को मनाया जाता है। जस्टिन द यंगर के शासनकाल के दौरान, उनके पवित्र अवशेष कॉन्स्टेंटिनोपल ले जाए गए और पवित्र प्रेरितों के चर्च में रखे गए। संत नीलस के लेखन से, 'प्रार्थना *पर* प्रवचन' और 'संयम पर प्रवचन' को ग्रीक *डोब्रोतोलीउबिये* में शामिल किया गया, और वहां से स्लावोनिक संस्करण में। हमने अपनी खुद की *डोब्रोतोलीउबिये* में भी *'प्रार्थना पर प्रवचन'* को शामिल किया है; जबकि, तपस्या *पर* ग्रंथ के बजाय, हम *'आठ छल के आत्माओं पर'* ग्रंथ, और *'संक्षिप्त कथनों के दो संग्रह'* और निर्देशों को शामिल करना पसंद करते हैं, जिनमें से एक का शीर्षक है: *'अध्याय या उपदेश'*, और दूसरे का: *'विचार जो व्यक्ति को नश्वर से हटाकर अमर से जोड़ते हैं'*। – लेकिन चूँकि रेवरेंड फादर ने अपने अन्य लेखों में प्रार्थना और वासनाओं के खिलाफ संघर्ष पर बहुत सारे अत्यंत लाभकारी सुझाव और निर्देश दिए हैं, और वहाँ सामान्य नैतिक संरचना और विशेष रूप से सभी चीजों से अलग जीवन पर भी प्रचुर मात्रा में शिक्षाप्रद विचार मिलते हैं: इसलिए, यह विचार करने के बाद कि हमारे परोपकारी पाठकों को इन खजानों से वंचित करना अन्याय होगा, हमने रेवरेंड फादर के उपर्युक्त लेखों से इन्हें संकलित करने का निर्णय लिया है, जिसमें प्रार्थना से संबंधित बातों को प्रार्थना के शीर्षक के अंतर्गत, कामनाओं के विरुद्ध संघर्ष से संबंधित बातों को आठ कामनाओं में से प्रत्येक के अंतर्गत, और जो सामान्य निर्माण से संबंधित है, – 'उक्तियों के संग्रह' के अंतर्गत। इसमें हम प्राचीनों के उदाहरण का अनुसरण करते हैं। क्योंकि मिग्ने द्वारा *पैट्रोलोजिया ग्रेका*, खंड 79 में, जिसमें संत नीलस के सभी लेख शामिल हैं, *'अस्थायी चीजों से हटाने और अमर चीजों से जोड़ने वाले विचारों'* के बाद – पृष्ठ 1249–50 – में एक टिप्पणी है जिसमें कहा गया है कि जिस पांडुलिपि से ये विचार वहां छपे थे, उसमें आगे चौदह और विचार आते हैं, जो आंशिक रूप से *'अनलोलुपता'* पर निबंध और आंशिक रूप से शहर के जीवन की तुलना में एकांत में रहने की *'उत्तमता'* पर निबंध से लिए गए हैं। ये उधार लिए गए अंश स्वयं मुद्रित नहीं हुए हैं; लेकिन इससे उदाहरण की प्रभावशीलता में कोई कमी नहीं आती। हम इन उधार लिए गए अंशों के उद्धरणों को लेखों के अंत में, रूसी अनुवाद में रेवरेंड की कृतियों के संस्करण के अनुसार खंड और पृष्ठ संख्या निर्दिष्ट करते हुए, इंगित करेंगे। उद्धरण के बिना वाले लेख ऊपर बताए गए पृष्ठ पर ही हैं।

संयम संबंधी निर्देश
सिनाई के पूजनीय नीलस द्वारा

1. प्रार्थना पर एक वचन

भूमिका

जब मैं अशुद्ध वासनाओं के भयंकर ज्वर में पड़ा था, तब आपने अपने ईश्वर-प्रेमी लेखन के स्पर्श से मुझे समय रहते जगाया, और महान मार्गदर्शक और शिक्षक का परमानंदपूर्वक अनुकरण करते हुए, अत्यंत लज्जास्पद रोगों से पीड़ित मेरे मन को सांत्वना से आश्वस्त किया। और इसमें कोई आश्चर्य नहीं है। धन्य याकूब के समान, महिमामय और उल्लेखनीय की खोज करना हमेशा आपका भाग्य रहा है। क्योंकि, राहेल के लिए कड़ी मेहनत करने और लियाh प्राप्त करने के बाद, आप अपनी प्रिय की खोज करते हैं, ठीक उसी प्रकार जैसे उसने उसके लिए सात वर्षों की मेहनत पूरी की (उत्पत्ति 29:20-28)। और मैं यह नहीं नकारता कि सारी रात परिश्रम करने पर भी मुझे कुछ नहीं मिला; परन्तु तुम्हारे वचन पर जाल डालने से, मैंने बहुत सारी मछलियाँ पकड़ीं—मेरे विचार से बड़ी नहीं, बल्कि एक सौ पचातीस (यूहन्ना 21:11)। और मैं इन्हें प्रेम की टोकरी में तुम्हें भेज रहा हूँ; और ऐसा करते हुए मैं तुम्हारे आज्ञापालन को पूरा कर रहा हूँ, प्रार्थना पर संबंधित संख्या में अध्यायों का संकलन करके। मैं आप पर आश्चर्यचकित हूँ और आपके अद्भुत चुनाव में बहुत आनंदित हूँ, कि आपने (और कुछ नहीं बल्कि) प्रार्थना पर अध्यायों की ही इच्छा की; और इसके अलावा, आपने केवल यह इच्छा नहीं की कि वे कागज पर लिखे जाएँ, बल्कि यह कि वे प्रेम और कोमलता के द्वारा मन में समाहित किए जाएँ। चूंकि *'सभी चीजें एक हैं, और एक का विरोध एक से है'*, बुद्धिमान सिराख (42:25) के शब्दों में, उन्हें केवल अक्षर के अनुसार स्वीकार न करें, बल्कि आत्मा में समझें। अध्यायों की कम संख्या के बारे में शिकायत न करें, जैसे कोई वह जानता हो *कि 'संतुष्ट कैसे रहा जाए और बिना किसी चीज़ के कैसे रहा जाए'* (फिलि. 4:12)। वास्तव में, शिकायत न करें, यह याद रखते हुए कि प्रभु ने विधवा के दो पैसे को

अस्वीकार नहीं किया, बल्कि उन्हें कई अन्य लोगों की धनी भेंटों की तुलना में अधिक अनुकूलता से स्वीकार किया। परन्तु इन सब के ऊपर, अपने सच्चे भाइयों के प्रति सद्भावना और प्रेम बनाए रखते हुए, बीमारों के लिए प्रार्थना करो, कि वे स्वास्थ्य प्राप्त करें और, अपने बिस्तरे उठाकर, मसीह की कृपा से चलने लगें। आमीन।

प्रार्थना पर 153 अध्याय

1. यदि कोई सुगंधित धूप तैयार करना चाहे, तो उसे नियम के अनुसार, *'शुद्ध लोहबान, कसिया, ओनिक्सा और स्टैक्ट'* (निर्गमन 30:34) के बराबर भाग मिलाने होंगे। यह सद्गुणों का चतुष्टय है[70] । जब ये सभी आत्मा में पूर्ण परिपूर्णता और समान शक्ति के साथ मौजूद होते हैं, तो मन धोखा नहीं खाएगा (बेशक, किसी आंतरिक गद्दार द्वारा, विश्वासघात से)।

२. आत्मा, सद्गुणों की पूर्णता से शुद्ध होकर,[71] मन को अडिगता की अवस्था में लाती है, जिससे वह (प्रार्थना में) आवश्यक मनोभाव को स्वीकार करने में सक्षम हो जाता है।

3. प्रार्थना मन और ईश्वर के बीच एक संवाद है। तो फिर, मन को किस मानसिक अवस्था की आवश्यकता होती है, ताकि वह बिना पीछे मुड़े (या किसी एक ओर) अपने प्रभु के पास आरोहण कर सके और किसी मध्यस्थ के बिना उनसे संवाद कर सके[72] ?

४. यदि मूसा, जो पृथ्वी पर जलते हुए झाड़ के पास जाना चाहते थे, को तब तक ऐसा करने से मना किया गया जब तक उन्होंने अपने पैरों से जूते नहीं उतार लिए (निर्गमन ३. 5), तो जब आप उसको देखना चाहते हैं जो सभी भावनाओं और विचारों से परे है, और उसके साथ संवाद करना चाहते हैं, तो आप हर भावुक विचार को अलग क्यों नहीं कर सकते?

5. सबसे बढ़कर, आँसुओं के लिए प्रार्थना करो, ताकि रोने के द्वारा तुम अपनी आत्मा के भीतर की कठोरता (ग्रीक: 'जंगलीपन') को नरम कर सको और, *प्रभु से* अपनी *'दुष्टता'* (भजन संहिता 31:5) *का* अंगीकार करने के बाद, उससे अपने पापों की क्षमा प्राप्त कर सको।

6. हर याचना प्राप्त करने के साधन के रूप में आँसुओं का उपयोग करो; क्योंकि जब तुम आँसुओं के साथ प्रार्थना करते हो तो प्रभु तुम पर बहुत प्रसन्न होते हैं।

7. जब, अपनी प्रार्थना के दौरान, आप आँसुओं की धाराएँ बहाते हैं, तो किसी भी तरह से इस पर गर्व न करें, जैसे कि आप कई लोगों से श्रेष्ठ हों। यह इसलिए है क्योंकि आपकी प्रार्थना को ऊपर से सहायता मिली है, ताकि, अपने पापों का गंभीरता से अंगीकार करने के बाद, आप अपने आँसुओं से प्रभु को प्रसन्न कर सकें।

8. अत; साधनों को ही जुनून का विषय न बना लें, कहीं ऐसा न हो कि आप उस परमेश्वर को और भी अधिक क्रोधित कर दें, जिसने आपको यह अनुग्रह (अर्थात् आँसू) प्रदान किया है। कई लोग, अपने पापों पर आँसू बहाते हुए, उन आँसुओं के उद्देश्य को भूल जाते हैं और, बहक कर, (सही रास्ते से भटक जाते हैं, या अपना चित्त खो देते हैं)।

९. धैर्य में दृढ़ रहो और गंभीरता से प्रार्थना करो, सांसारिक चिंताओं और हर प्रकार के विचारों के विचलनों को दूर करते हुए; क्योंकि वे तुम्हें परेशान और व्याकुल करते हैं, और प्रार्थना के प्रति तुम्हारी भक्ति को भंग करने का प्रयास करते हैं।

10. जब राक्षस देखते हैं कि किसी में उचित रूप से प्रार्थना करने का उत्साह और लगन है, तो वे (प्रार्थना के दौरान) उनमें किसी चीज़ के विचार डालते हैं, जैसे कि वह आवश्यक हो (और पीछे हट जाते हैं), लेकिन थोड़ी ही देर बाद वे उस याद को फिर से ताज़ा कर देते हैं, और मन को उस पर विचार करने के लिए उकसाते हैं (यदि यह कोई सवाल है, तो उसका हल निकालने के लिए; यदि कोई मामला है, तो उसे प्राप्त करने के लिए); और वह, जो चाहता है वह न पाकर, परेशान और दुखी हो जाता है। तब, जब वह (यह प्रार्थना का उत्साही भक्त) प्रार्थना करने के लिए खड़ा होता है, तो वे उसे उस बात की याद दिलाते हैं जिसके बारे में वह सोच रहा था और जिसे वह खोज रहा था, ताकि, एक बार फिर से उस मामले (जो पहले हल नहीं हुआ था) की ओर अपना मन मोड़कर, वह अपनी प्रार्थना को निष्फल बना दे।

11. प्रार्थना करते समय अपने मन को बहरा और मूक बनाने का प्रयास करो; और तब तुम वैसे प्रार्थना कर पाओगे जैसे तुम्हें करना चाहिए।

12. जब आपको कोई प्रलोभन आता है, या किसी के विरोध से आप उत्तेजित हो जाते हैं—जिससे आप विरोध करने वाले के प्रति क्रोधित हो जाते हैं, या कोई अनुचित शब्द भी बोल देते हैं; तब प्रार्थना और उसमें (ईश्वर के

---

[70] संयम, धैर्य, बुद्धि, न्याय।

[71] *डोब्रोतोल्यूबिए* में, ग्रीक और स्लावोनिक दोनों संस्करणों में लिखा है: 'आज्ञाओं का पालन'।

[72] स्लावोनिक संस्करण: 'कुछ भी नहीं के बीच में होना' – बेहतर हो सकता है।

सामने अपने अंतरात्मा में) होने वाले न्याय को याद करो – और तुरंत ही तुम्हारे भीतर का अव्यवस्थित उथल-पुथल शांत हो जाएगा।

13. तुम अपने भाई के विरुद्ध जो कुछ भी प्रतिशोध में करते हो, जो तुम्हारा अन्याय करता है, वह सब प्रार्थना के समय तुम्हारे लिए एक ठोकर का पत्थर (तुम्हें परेशान करने वाला) होगा।

14. प्रार्थना नम्रता और अक्रोध के वृक्ष की एक शाखा है।

15. प्रार्थना आनंद और कृतज्ञता की अभिव्यक्ति (प्रकट रूप) है।

16. प्रार्थना दुख और निराशा का एक उपाय है।

17. *'जाकर अपना सब कुछ बेचकर गरीबों में बाँट दे'* (मत्ती 19:21), और अपना क्रूस उठाकर अपने आपको इनकार कर (– 16:24), ताकि तू बिना विचलित हुए प्रार्थना कर सके।

18. यदि आप स्तुति की प्रार्थना करना चाहते हैं, तो प्रार्थना करते समय स्वयं को वश में रखें और अत्यधिक कड़वाहट सहते हुए, प्रार्थना के लिए धैर्य रखें।

19. आपको जो भी कष्ट सहना पड़े, धैर्य रखें; तब आप प्रार्थना के समय इसका फल पाएँगे।

20. यदि आप जैसा होना चाहिए वैसा प्रार्थना करना चाहते हैं, तो अपनी आत्मा को उदास न होने दें (या अपने हृदय में कटुता न पालें); अन्यथा, आपके प्रयास (या प्रार्थना में आपकी मेहनत) व्यर्थ हो जाएँगे।

21. *'अपना दान* वहाँ *वेदी के सामने छोड़ दे, और पहिले जाकर अपने भाई से मेल कर ले'* (मत्ती 5:24) – और फिर, जब तू लौटेगा, तो तू बिना विचलित हुए प्रार्थना करेगा; क्योंकि द्वेष प्रार्थना करने वाले के मन पर छाया डालता है और उसकी प्रार्थनाओं को अँधेरे में ढक देता है।

22. जो लोग अपने भीतर दुख (शोक) और द्वेष को पालते हैं, और उसी अवस्था में प्रार्थना करते हैं, वे उन लोगों के समान हैं जो पानी खींचकर उसे एक छेद वाली टब में डालते हैं।

23. यदि आप धैर्यवान हैं, तो आप हमेशा आनंद से प्रार्थना करेंगे।

24. जब आप जैसा होना चाहिए वैसा प्रार्थना करते हैं, तो मन में कुछ ऐसे मामले आ सकते हैं जिनके लिए अपने पड़ोसी से गुस्सा होना उचित प्रतीत हो सकता है। (सावधान रहें)। – एक सच्चे धर्मी पड़ोसी के प्रति कोई क्रोध नहीं होता। और, यदि आप देखें, तो पाएँगे कि क्रोध के बिना भी मामलों को अच्छी तरह सुलझाया जा सकता है। इसलिए, क्रोध के आगे न झुकने के लिए अपनी पूरी कोशिश करें।

25. जब किसी दूसरे को चंगा करने का प्रयास करें, तो सावधान रहें कि आप स्वयं अनचंगे न रहें, और अपनी प्रार्थना में बाधा न आने दें।

26. दूसरों पर दया दिखाकर और उन पर क्रोध न करके, आप अपने लिए दया पाएंगे, अपने आत्म-मूल्यांकन में खुद को बुद्धिमान साबित करेंगे, और उन लोगों में गिने जाएंगे जो वास्तव में प्रार्थना करते हैं।

27. क्रोध के विरुद्ध स्वयं को सशस्त्र करके, आप कभी भी वासना के प्रसार को सहन नहीं करेंगे; क्योंकि यह क्रोध को पोषित करती है, और यह मन की दृष्टि को बाधित करती है और प्रार्थना के लिए स्वभाव को नुकसान पहुँचाती है।

28. प्रार्थना करते समय, केवल बाहरी गतिविधियों और मुद्राओं तक ही सीमित न रहें, बल्कि अपने मन को महान श्रद्धा के साथ प्रार्थना की भावना तक ऊँचा उठाएँ।

29. कभी-कभी, जैसे ही आप प्रार्थना शुरू करते हैं, आप तुरंत अच्छी प्रार्थना कर लेते हैं; और कभी-कभी, बहुत प्रयास करने के बाद भी, आप इस वांछित लक्ष्य को प्राप्त नहीं कर पाते हैं; (और यह आपको इसलिए अनुमत है ताकि) आप और भी अधिक लगन से (प्रार्थना) की खोज करें और, उसे प्राप्त करने के बाद, आपकी प्रार्थना पूरी तरह से सही हो, चोरी से सुरक्षित हो।

30. जब देवदूत हमारे समीप आता है, तो जो भी हमें कष्ट देते हैं (दैत्य) वे तुरंत चले जाते हैं: मन तब महान आनंद से भर जाता है और पूरी एकाग्रता से प्रार्थना करता है। और कभी-कभी, सामान्य संघर्ष के आक्रमण के दौरान, मन संघर्ष करता है और (ईश्वरीय विचार और आध्यात्मिक कल्याण की ओर) उठने से रोका जाता है। ऐसा इसलिए है क्योंकि यह पहले से ही विभिन्न जुनूनों से कलंकित हो चुका है (यह उनसे बहक गया है और उनका स्वाद चख चुका है)। हालाँकि, यदि यह और भी लगन से खोजता है, तो यह पाएगा, और यदि यह प्रयास करने से थकता नहीं है, तो इसे खोल दिया जाएगा।

31. यह प्रार्थना न करो, 'जैसा मेरी इच्छा है, वैसा ही हो'; क्योंकि वे हमेशा परमेश्वर की इच्छा के अनुरूप नहीं होतीं। बल्कि इस प्रकार प्रार्थना करो, जैसा तुम्हें सिखाया गया है: *'तेरी इच्छा* मुझ में *पूरी हो'* (मत्ती 6:10)। और हर

मामले में, उसी से इस प्रकार प्रार्थना करो: क्योंकि वह हमेशा तुम्हारी आत्मा के लिए अच्छा और लाभदायक चाहता है, जबकि तुम हमेशा ऐसा नहीं चाहते।

32. कई बार, प्रार्थना करते समय, मैंने वही माँगा है जो मुझे अच्छा लगता था, और मैंने अपनी विनती पर ज़िद की है, मूर्खतापूर्ण ढंग से ईश्वर की इच्छा पर दबाव डालते हुए, बजाय इसके कि मैं उन्हें वह बेहतर व्यवस्था सौंप दूँ जो वे जानते हैं कि मेरे लिए लाभदायक है। लेकिन जब मुझे वह मिल जाता था जिसकी मैंने माँग की थी, तो बाद में मैं बड़ी परेशानी में पड़ जाता था, खासकर इसलिए क्योंकि मैंने यह माँग नहीं की थी कि यह परमेश्वर की इच्छा के अनुसार बेहतर हो; क्योंकि मामला वैसा नहीं निकला जैसा मैंने सोचा था।

33. परमेश्वर के अलावा अच्छा क्या है? इसलिए हमें अपने लिए जो कुछ भी है, उसे उसी के भरोसे छोड़ देना चाहिए, और हम भले रहेंगे; क्योंकि भले उपहारों का दाता स्वयं निश्चय ही भला है।

34. यदि आप ईश्वर से जो मांगते हैं, वह आपको तुरंत नहीं मिलता है तो दुखी न हों। वह आपको एक लंबे समय तक प्रार्थना में धैर्यपूर्वक खड़े रहने के लिए प्रेरित करके आप पर एक बड़ा आशीर्वाद प्रदान करना चाहते हैं। क्योंकि ईश्वर के साथ संवाद करने और उनके साथ एकता में समाहित होने से बड़ा और क्या हो सकता है?

३५. एकाग्रचित्त होकर किया गया प्रार्थना मन का सर्वोच्च कार्य है।

36. प्रार्थना मन का ईश्वर की ओर आरोहण है।

३७. यदि आप सच्ची प्रार्थना के लिए तरसते हैं, तो सब कुछ त्याग दें, ताकि आप सब कुछ का वारिस बन सकें।

38. सबसे पहले प्रार्थना करो कि तुम अपने भावों से शुद्ध हो जाओ; दूसरे, कि तुम अज्ञानता और विस्मृति से मुक्त हो जाओ; और तीसरे, कि तुम हर परीक्षा और धर्मत्याग से मुक्त हो जाओ।

39. अपनी प्रार्थना में केवल धार्मिकता और परमेश्वर के राज्य की खोज करो, अर्थात् सद्गुण और ज्ञान – और बाकी सब कुछ *तुम्हें दिया जाएगा* (मत्ती 6:33)।

40. न केवल अपनी शुद्धता के लिए, बल्कि स्वर्गदूतों की व्यवस्था का अनुकरण करते हुए, प्रत्येक व्यक्ति की शुद्धता के लिए भी प्रार्थना करना धार्मिक है।

41. विचार करो कि क्या तुम वास्तव में अपनी प्रार्थना में परमेश्वर के सामने खड़े हो, या क्या तुम मानवीय प्रशंसा की इच्छा से वशीभूत हो और उसे प्राप्त करने का प्रयास कर रहे हो, अपनी प्रार्थना को लंबा करके इस (अस्वस्थ इच्छा को) एक विश्वसनीय बहाने से छिपा रहे हो।

42. चाहे आप भाइयों के साथ प्रार्थना करें या अकेले, केवल एक रीति को पूरा करने का प्रयास न करें, बल्कि भावना के साथ प्रार्थना करने का प्रयास करें।

43. (इस प्रकार की प्रार्थना का – भक्ति की भावना में) यह लक्षण है कि मनुष्य विनम्रता में गहराई से डूबा हो, कोमलता और एक दुखी हृदय के साथ, और मौन आहों के साथ अपने पापों का इकरार कर रहा हो।

४४. यदि प्रार्थना के दौरान आपका मन भटकता है, तो आप एक भिक्षु की तरह प्रार्थना नहीं कर रहे हैं, बल्कि अभी भी एक गृहस्थ हैं, जो केवल बाहरी आवरण को सजा रहे हैं।

४५. जब आप प्रार्थना करें, तो अपनी स्मृति की पूरी ताकत से रक्षा करें, ताकि वह आप पर अपने विचार थोप न सके; बल्कि हर तरह से स्वयं को ईश्वर की सचेत उपस्थिति में उठाएँ (इस जागरूकता के साथ कि आप किसके सामने और किस उद्देश्य के लिए खड़े हैं)। क्योंकि प्रार्थना के दौरान, मन आमतौर पर स्मृति से बहुत विचलित हो जाता है (यह मन में चीजें, लोग, घटनाएँ लाती है, और इस प्रकार मन का ध्यान प्रार्थना से हटा देती है)।

46. प्रार्थना के दौरान, आपकी स्मृति या तो अतीत की घटनाओं को, या नई चिंताओं को, या उस व्यक्ति को याद दिलाती है जिसने आपको ठेस पहुँचाई है।

47. प्रार्थना करने वाले व्यक्ति से राक्षस बहुत ईर्ष्या करता है और उनके इरादे को विफल करने के लिए हर तरह की युक्तियाँ अपनाता है; इसलिए वह स्मृति के माध्यम से निरंतर विभिन्न चीजों के विचारों को भड़काता है, और शरीर के माध्यम से सभी वासनाओं को गति में लाता है, ताकि प्रार्थना के सुंदर प्रवाह (यानी प्रार्थना का श्रम) और ईश्वर की ओर आरोहण (ध्यान का उत्थान) में किसी भी तरह से बाधा डाल सके।

४८. जब वह सर्व-चतुर दानव, कई छल-कपट करने के बाद भी, भक्त (प्रार्थी) की प्रार्थना को रोकने में विफल रहता है; तो वह (अपने हमलों को) बहुत कम नहीं करता, बल्कि, जब वह व्यक्ति अपनी प्रार्थना समाप्त कर लेता है, तो वह उससे बदला लेता है। क्योंकि या तो वह उसे क्रोध से भड़काकर, प्रार्थना के द्वारा प्राप्त होने वाली उस सुंदर मानसिक स्थिति को नष्ट कर देता है, या फिर किसी मौन आनंद (इंद्रिय सुख का स्वाद चखने की प्रवृत्ति) को जगाकर, वह मन का मज़ाक उड़ाता है।

४९. जैसे तुम्हें प्रार्थना करनी चाहिए, वैसे प्रार्थना करके अप्रत्याशति की आशा रखो – और दृढ़ खड़े रहो, अपने फल की रक्षा करो। आरम्भ से ही तुम्हें यही *करने* के लिए नियुक्त किया गया था – अर्थात् *'संभालना और रखना'* (उत्पत्ति २:१५)। जब आपने अपना कर्तव्य निभा लिया (जैसा आपको प्रार्थना करनी चाहिए थी), तो आपने जो परिश्रिम से अर्जित किया है, उसे आप अनचिराक्षति क्यों छोड़ेंगे? अन्यथा, आपको अपनी प्रार्थना से कोई लाभ नहीं होगा।

५०. हमारे और अशुद्ध आत्माओं के बीच होने वाला सारा संघर्ष आध्यात्मिक प्रार्थना के सिवा किसी अन्य कारण से नहीं है, क्योंकि यह उनके लिए पूरी तरह से विरोधी और असहनीय है, जबकि हमारे लिए यह उद्धारक और लाभकारी है।

५१. दुष्टात्माएँ अपने प्रभाव से हम में अतभिक्षण, व्यभिचार, लोभ, क्रोध, द्वेष और अन्य वासनाओं को क्यों भड़काने का प्रयास करती हैं? ताकि मन, उन (वासनाओं) से सुस्त होकर, जैसा उसे करना चाहिए वैसा प्रार्थना न कर सके; क्योंकि हमारी अतार्किक प्रकृति की वासनाएँ, एक बार सक्रिय हो जाने पर, मन को तार्किक रूप से कार्य करने नहीं देतीं।

52. हम सद्गुणों का अभ्यास इसलिए करते हैं क्योंकि वे प्रकृति द्वारा आवश्यक हैं; हम उस वचन के लिए प्रकृति के अधीन होते हैं जिसने इसे अस्तित्व में लाया – (प्रभु)। हालाँकि, यह वचन आमतौर पर हमें प्रार्थना की अवस्था में स्पष्ट रूप से प्रकट होता है (हमारी चेतना पर स्पष्ट रूप से अंकित होता है)।

53. प्रार्थना की अवस्था एक निर्लिप्त प्रवृत्ति है जो परम प्रेम के माध्यम से, विवेकी और आध्यात्मिक मन को ऊँचाइयों पर उठाती है।

54. जो सच्चे मन से प्रार्थना करना चाहता है, उसे न केवल क्रोध और वासना पर काबू पाना चाहिए, बल्कि हर भावुक विचार से भी मुक्त होना चाहिए।

55. जो ईश्वर से प्रेम करता है, वह हमेशा एक पिता की तरह उनसे संवाद करता है, और हर भावुक विचार से मुंह मोड़ता है।

56. जो व्यक्ति वैराग्य प्राप्त कर चुका है, वह जरूरी नहीं कि सच्चे अर्थ में प्रार्थना कर रहा हो; क्योंकि ऐसा व्यक्ति अभी भी साधारण विचारों (चीजों के बारे में, बिना किसी भावुक उथल-पुथल के) में व्यस्त हो सकता है और उनकी कहानियों (शायद उनकी छवियों और उनके विभिन्न संयोजनों) से विचलित हो सकता है – और इस प्रकार ईश्वर से बहुत दूर हो सकता है। (कोई भावुक उथल-पुथल नहीं है, लेकिन मन दिवास्वप्न देख रहा है)।

57. लेकिन जब मन वस्तुओं के सरल विचारों में नहीं रुकता, तब भी इसका यह मतलब नहीं है कि वह प्रार्थना की अवस्था में पहुँच गया है: क्योंकि यह इन चीजों के (दार्शनिक) चिंतन और उनके कारण संबंधों में गहराई तक जाने में व्यस्त हो सकता है। यद्यपि ये सभी अमूर्तताएँ हैं, चूँकि ये वस्तुओं के बारे में अटकलें हैं, वे मन पर अपनी छवियाँ अंकित करती हैं - और इसे ईश्वर से बहुत दूर ले जाती हैं। (भावनाएँ सक्रिय नहीं हैं, लेकिन मन प्रार्थना करने के बजाय दर्शन-शास्त्र करता है: विद्वानों की अवस्था)।

५८. भले ही मन भौतिक प्रकृति के बारे में अटकलों से ऊपर उठ जाए, इसका यह मतलब नहीं है कि उसने परमेश्वर की वास्तविक उपस्थिति को देख लिया है: क्योंकि यह बोधगम्य प्राणियों (देवदूतों की दुनिया के) के ज्ञान में व्यस्त हो सकता है, और उनसे भर सकता है (उनके बारे में विविध विचारों और धारणाओं से पूर्ण हो सकता है)।

५९. यदि आप ठीक से प्रार्थना करना चाहते हैं, तो आपको परमेश्वर की आवश्यकता है, जो प्रार्थना करने वाले की प्रार्थना स्वीकार करते हैं। प्रार्थना में उनसे कहें: *'तेरा नाम पवित्र माना जाए, तेरा राज्य आए'* (मत्ती ६:९-१०), अर्थात् पवित्र आत्मा और तेरा एकलौता पुत्र। क्योंकि यह वही है जो प्रभु ने स्वयं सिखाया, यह कहते हुए कि पिता *'आत्मा और सत्य में आराधित होना चाहिए'* (यूहन्ना 4:24)।

60. जो आत्मा और सत्य में प्रार्थना करता है, वह सृष्टिकर्ता की महिमा के लिए अपने विचार सृजित वस्तुओं से नहीं, बल्कि उसी से प्राप्त करता है, जिससे उसकी स्तुति कर सके।

61. यदि आप एक धर्मशास्त्री हैं, तो आप सच्चे मन से प्रार्थना करेंगे; और यदि आप सच्चे मन से प्रार्थना करते हैं, तो आप एक धर्मशास्त्री हैं।

62. जब आपका मन, ईश्वर की लालसा से प्रज्वलित, धीरे-धीरे, मानो, शरीर से अलग हो जाता है और इंद्रिय छापों या स्मृति से उत्पन्न होने वाले सभी विचारों से मुंह मोड़ लेता है, जबकि साथ ही श्रद्धा और आनंद से भर जाता है; तब यह निष्कर्ष निकालें कि यह प्रार्थना की अंतिम सीमाओं के बहुत करीब आ गया है।

63. पवित्र आत्मा, हमारी दुर्बलता पर दया करके, हमारे पास तब भी आता है जब हम अभी शुद्ध नहीं हुए हैं; और यदि केवल वह हमारे मन को उसकी ओर सच्चे मन से प्रार्थना करते हुए पाए, तो वह उस पर उतर आता है और

उसके चारों ओर विचारों और कल्पनाओं के पूरे समूह को भगा देता है (उन्हें मिटा देता है), और इस प्रकार उसे आध्यात्मिक प्रार्थना की लालसा के लिए तैयार कर देता है।

64. अन्य आत्माएँ—चाहे वे अच्छी हों या बुरी—शरीर पर कार्य करके मन में विचार, कल्पनाएँ और कल्पनाशीलताएँ लाती हैं; लेकिन प्रभु इसके विपरीत तरीके से कार्य करते हैं: मन को स्वयं प्रेरित करके, वे उसमें उस सबका ज्ञान भरते हैं जो उन्हें प्रसन्न करता है—और मन के माध्यम से वे शरीर की अव्यवस्था को वश में करते हैं।

६५. जो सच्ची प्रार्थना से प्रेम करते हुए भी क्रोधित होता है या रंजिश रखता है, वह हर निंदा का पात्र है: क्योंकि वह ऐसे है जैसे कोई जो स्पष्ट रूप से देखना चाहता है, फिर भी एक ही समय में अपनी आँखों पर धूल झोंकता है।

66. यदि आप जैसा उचित है वैसे प्रार्थना करना चाहते हैं, तो प्रार्थना के विपरीत (शत्रुतापूर्ण) कुछ भी न करें, ताकि ईश्वर निकट आकर आप पर अवतरित हों।

67. जब आप प्रार्थना करें, तो दिव्य को किसी भी रूप में न मानें, और न ही अपने मन को किसी भी प्रतिमा में बदलने दें (या उसे किसी रूप में कल्पना करने दें, या किसी प्रतिमा को अपने मन पर अंकित होने दें); बल्कि अद्रव्य को अद्रव्य के साथ प्राप्त करें – और आप उससे एक हो जाएँगे।

६८. शत्रु के जालों से सावधान रहो: क्योंकि ऐसा हो सकता है कि, जब तुम पवित्रता और शांति के साथ प्रार्थना कर रहे हो, तो कोई अजीब और अपरिचित छवि अचानक तुम्हारे सामने प्रकट हो सकती है। यह शत्रुओं का काम है, जिसका उद्देश्य यह विचार भरकर आपको घमंड में डालना है कि ईश्वर आपको यहाँ प्रकट हुए हैं – और इसके अलावा, यह कि आप सोचें कि इस अचानक प्रकट हुई आकृति की तरह, ईश्वर में भी परिमाण (स्थान घेरना, विस्तार और भागों में विभक्त होना) है, जबकि ईश्वर में न तो परिमाण है और न ही रूप।

६९. जब ईर्ष्यालु राक्षस स्मृति को सक्रिय करने में सफल नहीं होता, तो वह रक्त और जीवन-द्रव्यों पर कार्य करता है, ताकि उनके माध्यम से मन में किसी बाहरी वस्तु की कल्पना उत्पन्न कर सके और उसे चित्रों से भर सके; और मन, ऐसे विचारों में मग्न रहने का आदी हो जाने पर, आसानी से उनमें बह जाता है; और यह सोचकर कि वह ज्ञान के एक अद्रव्य और अदृश्य क्षेत्र में आरोहण कर रहा है, वह धुएँ को प्रकाश समझकर धोखा खा जाता है।

70. अपने आप पर पहरा दो, प्रार्थना के दौरान अपने मन को भटकती सोचों से बचाओ और मन को शांत अवस्था में बनाए रखने का प्रयास करो—ताकि '*जो अज्ञानियों के प्रति दियालु है*' (इब्रानियों 5:2) वह तुम्हारे पास आए और तुम्हें प्रार्थना का गौरवशाली वरदान प्रदान करे।

71. सांसारिक मामलों में उलझे और अनंत चिंताओं से व्यथित होकर आपके लिए शुद्धता से प्रार्थना करना असंभव है: क्योंकि प्रार्थना (सभी बाहरी) विचारों को अलग रखना है।

72. जो बँधा हुआ है वह भाग नहीं सकता—और न ही कोई ऐसा मन जो किसी वासना का दास हो, वह आध्यात्मिक प्रार्थना के स्थान को समझ सकता है; इसके अलावा, वह भावुक विचारों से झूलता और उछाला जाता है, और उसका कोई ठोस आधार नहीं होता।

७३. जब मन अंततः शुद्ध और निर्विकार होकर प्रार्थना करना शुरू करता है, तो राक्षस उस पर अब बाईं ओर से नहीं बल्कि दाईं ओर से हमला करते हैं: वे ईश्वर की महिमा का, या इंद्रियों को भाने वाली कोई रूपक छवि का दर्शन प्रस्तुत करते हैं, ताकि उसे ऐसा प्रतीत होने लगे मानो उसने प्रार्थना का लक्ष्य पहले ही पूरी तरह से प्राप्त कर लिया हो। जैसा कि इस मामले में पारंगत एक व्यक्ति (एवाग्रियस) ने कहा है, यह अहंकार की कामना से, मस्तिष्क के एक निश्चित भाग पर एक दैवीय स्पर्श से, और वहाँ की नसों में होने वाली गड़बड़ी (या सूजन) से उत्पन्न होता है।

७४. मेरा मानना है कि दानव, अपनी इच्छानुसार उक्त भाग को छूकर, मन के चारों ओर की रोशनी को बदल देता है; इससे, अहंकार एक ऐसा विचार उत्पन्न करता है जो मन को लापरवाही से स्वयं को दिव्य और आवश्यक ज्ञान का श्रेय देने के लिए मजबूर करता है। चूँकि वह अशुद्ध कामुक वासनाओं से परेशान नहीं होता, बल्कि प्रार्थना में शुद्ध रहता है, इसलिए उसके मन में यह नहीं आता कि यहाँ कोई शत्रुतापूर्ण प्रभाव काम कर रहा हो, – और वह इस बात का आश्वस्त हो जाता है कि यह वास्तव में एक दैवीय प्रकटीकरण है, जबकि यह एक राक्षस से उत्पन्न हुआ है जो, अत्यधिक चालाकी का उपयोग करते हुए, मस्तिष्क के माध्यम से मन से जुड़ी प्रकाश को बदलता है, जैसा कि हमने कहा है, और स्वयं मन को आकार देता है (उसे अपना रूप देता है, या उसे यह या वह कल्पना करने का कारण बनता है)।

75. परमेश्वर का दूत, एक बार प्रकट होते ही, संक्षेप में हमारे भीतर शत्रु की गतिविधि को समाप्त कर देता है और मन की ज्योति को धोखे के बिना कार्य करने के लिए प्रेरित करता है।

76. प्रकाशितवाक्य में स्वर्गदूत के विषय में जो कहा गया है—कि वह *'संतों की प्रार्थनाओं के साथ चढ़ाने के लिए'* धूप लाता है (प्रकाशितवाक्य 8:3)—मेरा मानना है कि यह उस अनुग्रह की ओर संकेत करता है, जो स्वर्गदूत के माध्यम से कार्य करता है और सच्ची प्रार्थना करने की क्षमता प्रदान करता है; ताकि मन अंततःविचारों के भ्रम, निराशा या हतोत्साह के बिना प्रार्थना में निवास कर सके।

77. धूप के पात्र, जैसा कि वहाँ कहा गया है, *'संतों की प्रार्थनाएँ'* हैं, जो *'चौबीसों बुज़ुर्गों' द्वारा* अर्पित की गई थीं (प्रकाशितवाक्य 5:8)। पात्र से तात्पर्य ईश्वर के साथ संचार, या उनके प्रति पूर्ण, आध्यात्मिक प्रेम से है, जिसमें प्रार्थना आत्मा और सत्य में अर्पित की जाती है।

78. जब आपको यह एहसास होता है कि प्रार्थना के दौरान आपको अपने पापों पर रोने की कोई आवश्यकता महसूस नहीं होती, तो विचार करें कि आप ईश्वर से कितनी दूर भटक गए हैं, यद्यपि आपको हमेशा उसी में बने रहने के लिए बाध्य किया गया है – और आप सबसे गर्म आँसू बहाएँगे।

७९. सचमुच, यह ऐसा ही है: अपनी योग्यता (अपनी गरीबी और तुच्छता) को पहचानकर, आप मधुरता से रोएँगे, यशायाह की तरह स्वयं पर शोक मनाते हुए - जैसे *कोई जो 'अशुद्ध है और जिसके होंठ अशुद्ध हैं'* और ऐसे लोगों के बीच रहता है, अर्थात्, विरोधी (ईश्वर के - अशुद्ध शक्तियाँ या विचार), तुम सेनाओं के प्रभु के सामने खड़े होने का साहस करते हो (यशायाह 6:5)।

80. यदि आप सच्चाई में प्रार्थना करते हैं, तो आपको कई बातों में पूर्ण आश्वासन मिलेगा, और स्वर्गदूत आपके चारों ओर इकट्ठा हो जाएँगे, ठीक वैसे ही जैसे उन्होंने दानियेल के साथ किया था, और आपको यह जानकर प्रबुद्ध करेंगे कि चीजें क्यों होती हैं।

८१. जान लें कि स्वर्गदूत हमें प्रार्थना के लिए प्रेरित करते हैं और उसमें हमारे साथ खड़े होते हैं, हमारे लिए मिलकर आनंद मनाते और प्रार्थना करते हैं। इस प्रकार, यदि हम लापरवाह हैं और बुरे विचारों को पालते हैं, तो हम उनके क्रोध को बहुत भड़काते हैं; क्योंकि जब वे हमारी ओर से इतनी मेहनत करते हैं, तब हम अपने लिए परमेश्वर से विनती नहीं करना चाहते, बल्कि परमेश्वर की सेवा की उपेक्षा करके और उनके परमेश्वर और स्वामी को छोड़कर, हम (अपने विचारों में) अशुद्ध दुष्टात्माओं से बात करते हैं।

82. शांति और सुकून से प्रार्थना करें; समझदारी और प्रसन्नता से भजन गाएँ – और आप ऊँचाइयों पर उड़ान भरने वाले गरुड़ के बच्चे की तरह होंगे।

83. भजनों का गायन वासनाओं को सुला देता है और शारीरिक अनुशासनहीनता की प्रवृत्तियों को वश में कर लेता है; जबकि प्रार्थना मन को उसके अनुकूल बौद्धिक गतिविधि के साथ तालमेल बिठाती है।

84. प्रार्थना मन की गरिमा के अनुरूप एक गतिविधि है, या यूँ कहें, इसका सच्चा अनुप्रयोग है।

85. भजन गाना बहुविध बुद्धिमत्ता का प्रकटीकरण है; और प्रार्थना आध्यात्मिक ज्ञान की प्रस्तावना है।

86. मनन एक अत्युत्तम प्रयास है; यह दिव्य ज्ञान पर मनन करने के लिए मन की बौद्धिक शक्ति को जगाकर प्रार्थना में सहायता करता है।

87. यदि आपको अभी तक प्रार्थना या भजन-गायन का वरदान प्राप्त नहीं हुआ है, तो लगातार माँगें और आपको यह प्राप्त होगा।

88. *'और प्रभु ने उनसे इस विषय में एक दृष्टान्त कहा कि उन्हें हमेशा प्रार्थना करनी चाहिए और हियाव नहीं छोड़ना चाहिए'* (लूका 18:1)। इसलिए, यह प्राप्त न होने के कारण दुखी न हों या हियाव न छोड़ें; क्योंकि आप इसे उचित समय पर प्राप्त करेंगे। प्रभु ने दृष्टान्त में यह जोड़कर कहा: *'यदि मैं परमेश्वर से नहीं डरता और मनुष्यों से लज्जित नहीं होता, तौभी यह विधवा मुझे सताती रहती है, इसलिये मैं उसका न्याय करूंगा'* (– 5)। इसी तरह, *'परमेश्वर उन लोगों का शीघ्र ही न्याय करेंगे जो दिन-रात उनसे पुकारते रहते हैं'* (– 7)। अत; धैर्यपूर्वक प्रार्थना में बने रहकर हर्षित रहो।

८९. यह न चाहो कि तुम्हारे विषय में बातें वैसी हों जैसी तुम सोचते हो (कि वही सर्वोत्तम है), बल्कि वैसी हों जैसी परमेश्वर को भाती हों; और तुम अपनी प्रार्थना में शांत और कृतज्ञ रहोगे।

90. भले ही ऐसा लगे कि आप पहले से ही ईश्वर के साथ हैं, वासना के दैत्य से सावधान रहें; क्योंकि वह सबसे अधिक मोहक और चालाक है, और हर तरह से आपके संयमी मन के संकल्प को पार करने और उसे ईश्वर से भटकाने का प्रयास करता है, भले ही वह ईश्वर के सामने श्रद्धा और भय के साथ खड़ा हो।

९१. यदि आप प्रार्थना के प्रति उत्सुक हैं, तो स्वयं को दैवीय प्रलोभनों के लिए तैयार करें और धैर्यपूर्वक उनके प्रकोप को सहन करें; क्योंकि वे जंगली जानवरों की तरह आप पर हमला करेंगे और आपके पूरे शरीर को चीर-फाड़ डालेंगे।

९२. एक अनुभवी पहलवान की तरह तैयार रहो – अडिग रहो, भले ही तुम अचानक कोई भूत-प्रेत देखो; विचलित मत हो, भले ही तुम्हारे खिलाफ तलवार खींची जाए, या तुम्हारे चेहरे पर मशाल रखी जाए; हतोत्साहित मत हो (डरो मत), भले ही कोई भयानक और धोखेबाज़ प्रेतात्मा तुम्हारे सामने प्रकट हो; बल्कि दृढ़ खड़े रहो, सच्चे धर्म की घोषणा करो, और अपने शत्रुओं को निडर होकर देखो।

93. जो दुख सहता है, वह आनंद का पात्र माना जाएगा; और जो कठिनाई सहता है, वह सुख के हिस्से से वंचित नहीं रहेगा।

९४. सावधान रहो कि चालाक दुष्टात्माएँ तुम्हें किसी भी दर्शन से धोखा न दें। (यदि ऐसा हो,) तो शांतचित्त रहकर प्रार्थना करो और परमेश्वर से निवेदन करो कि यदि यह उनसे (तुम्हारे निर्माण के लिए) है, तो वे स्वयं तुम्हें ज्ञान दें; और यदि नहीं, तो वे धोखेबाज़ को शीघ्रता से तुमसे दूर भगा दें। और हौसला रखो; क्योंकि जब तुम भक्तिपूर्वक प्रार्थना करके परमेश्वर की ओर मुड़ोगे, तो ये कुत्ते टिक नहीं पाएंगे, बल्कि परमेश्वर की शक्ति से तुरंत, अदृश्य रूप से और अनजाने में प्रहार खाकर, वे तुमसे बहुत दूर भाग जाएंगे।

९५. आपको राक्षसों की निम्नलिखित चाल से भी अवगत रहना चाहिए। कभी-कभी वे स्वयं को समूहों में बाँट लेते हैं। कुछ तुम्हें लुभाने के लिए आते हैं। और जब तुम मदद माँगते हो, तो दूसरे स्वर्गदूतों के रूप में आकर पहले वालों को भगा देते हैं, ताकि तुम यह सोचकर धोखा खा जाओ कि वे सच्चे स्वर्गदूत हैं, और इस घमंड में पड़ जाओ कि तुम ऐसी चीज़ के योग्य हो।

96. यथासंभव विनम्र और साहसी बनने का प्रयास करें – और दुष्टात्माओं का शत्रुतापूर्ण आक्रमण आपकी आत्मा को स्पर्श नहीं करेगा, न ही उनकी विपत्ति आपके शरीर के पास आएगी। *'वह* (प्रभु) *तुम्हारे विषय में अपने स्वर्गदूत को आज्ञा देगा कि वह तुम्हारी रक्षा करे'* (भजन संहिता 90:10–11); और वे अदृश्य रूप से तुम्हारे ऊपर हर शत्रुतापूर्ण कृत्य को दूर कर देंगे।

97. यद्यपि जो अपनी प्रार्थना को शुद्ध रखने का प्रयास करता है, वह राक्षसों का शोर, हंगामा, चीखें और शाप तो सुनेगा, परन्तु वह अपने विचारों में भटक नहीं जाएगा और न ही उनके आगे समर्पण करेगा, बल्कि परमेश्वर से कहेगा: *'मैं बुराई से नहीं डरूँगा, क्योंकि तू मेरे साथ है'* (भजन संहिता 22:4), और इसी प्रकार।

९८. ऐसे प्रलोभनों के दौरान, अविराम, संक्षिप्त परन्तु तीव्र प्रार्थना का अभ्यास करें।

९९. यदि राक्षस आपको धमकी दें, कि वे अचानक हवा में प्रकट होकर आपको चकित कर देंगे और आपका होश छीन लेंगे, तो उनसे न डरें और ऐसी धमकियों पर बिल्कुल भी ध्यान न दें। वे केवल आपको डराने की कोशिश कर रहे हैं, यह परख रहे हैं कि क्या आप उन्हें कुछ भी मानते हैं, या क्या आप पहले ही उन्हें पूरी तरह से तुच्छ समझ चुके हैं।

100. यदि आप प्रार्थना में सर्वशक्तिमान, सृष्टिकर्ता और पालनहार परमेश्वर के सामने खड़े हैं, तो फिर आप उनके सामने इतनी मूर्खता से क्यों खड़े हैं कि, उनके प्रति अपना अटूट भय त्यागकर, आप मक्खियों और मच्छरों से डरते हैं? या क्या आप यह नहीं सुनते कि पैगंबर कहते हैं: *'तुम अपने प्रभु परमेश्वर से डरना'* (व्यवस्थाविवरण 10:20), और फिर: *'सभी उससे डरते हैं और उसकी सामर्थ्य के दर्शन से कांपते हैं'* – और इसी तरह (2 इतिहास 36, मनश्शेह की प्रार्थना)।

101. जैसे रोटी शरीर के लिए भोजन है, और सदाचार आत्मा के लिए, वैसे ही आध्यात्मिक प्रार्थना मन के लिए भोजन है।

102. प्रार्थना के पवित्र स्थान में फरीसी की तरह नहीं, बल्कि महसूल लेने वाले की तरह प्रार्थना करो, ताकि तुम भी प्रभु द्वारा धर्मी ठहरो।

103. अपनी प्रार्थना में किसी के विरुद्ध प्रार्थना न करने का प्रयास करें, कहीं ऐसा न हो कि आप जो बना रहे हैं उसे नष्ट कर दें, और इस प्रकार अपनी प्रार्थना को (ईश्वर के सामने) घृणित बना दें।

104. *'दस प्रतिभाओं'* का ऋणी तुम्हें यह सिखाए कि जब तक तुम अपने ऋणी को क्षमा नहीं करोगे, तब तक तुम्हें भी क्षमा नहीं किया जाएगा; क्योंकि कहा गया है: *'उसने उसे यातना देने वाले के हवाले कर दिया'* (मत्ती 18:34)।

105. जब आप (ईश्वर के सामने) प्रार्थना करने के लिए खड़े हों, तो अपनी शारीरिक आवश्यकताओं को एक तरफ रख दें, कहीं कीट, मच्छर या मक्खी का काटना आपको उस सबसे बड़ी कृपा से वंचित न कर दे जो प्रार्थना प्रदान करती है।

106. हमारे ध्यान में यह बात आई है कि जब एक विशेष संत प्रार्थना करने के लिए खड़े हुए, तो दुष्टात्मा ने उनका इतनी जोरदार विरोध किया कि जैसे ही उन्होंने अपने हाथ उठाए, दुष्टात्मा ने खुद को एक शेर में बदल लिया, अपने अगले पंजे उठा लिए और, उस तपस्वी की पसलियों में अपने पंजे गड़ाकर, तब तक नहीं छोड़ा जब तक कि संत ने अपने हाथ नहीं नीचे कर लिए। लेकिन वह अपनी नियमित प्रार्थनाएँ पूरी किए बिना उन्हें कभी नीचे नहीं करता था।

107. जैसा कि हम जानते हैं, जॉन द लिटिल भी ऐसे ही थे—या यूँ कहें कि सबसे महान संन्यासी—जो ईश्वर के साथ निरंतर आध्यात्मिक संवाद में रहते थे, जबकि एक राक्षस ने एक ड्रैगन के रूप में खुद को उनके चारों ओर लपेट लिया था, उनके मांस को चबाया और उनके चेहरे पर थूक दिया।

108. आपने निश्चित रूप से टावेनीसी के संतों के जीवन के बारे में पढ़ा होगा, जहाँ कहा गया है कि जब बाबा थियोडोर भाइयों से बात कर रहे थे, तो दो विषैले साँप उनके पैरों के पास आ गए; फिर भी, बिना किसी परेशानी के, उन्होंने अपने पैरों को ऐसे मोड़ लिया मानो कोई गुंबद बन गया हो, साँपों को उनके नीचे से निकल जाने दिया, और अपना प्रवचन अंत तक जारी रखा; और केवल तब ही उसने घटना का वर्णन करते हुए उन्हें भाइयों को दिखाया।

109. हमने एक अन्य आध्यात्मिक भाई के बारे में भी पढ़ा है, जब वह प्रार्थना कर रहे थे, तो एक इचिडना रेंगकर आकर उनके पैर को छू गया; फिर भी उन्होंने अपने हाथ तब तक नहीं नीचे किए जब तक कि उन्होंने अपनी नियमित प्रार्थना पूरी नहीं कर ली। और इस व्यक्ति को, जो स्वयं से अधिक ईश्वर से प्रेम करता था, कोई भी हानि नहीं हुई।

110. प्रार्थना करते समय अपनी आँखों को उस पर टिकाए रखें जो ध्यान भंग न करे, और शरीर तथा आत्मा से अलग होकर, मन से जिएँ।

111. एक अन्य संत, जो प्रार्थना में दृढ़ और मरुभूमि में मौन में रहते थे, के पास राक्षस आए और दो सप्ताह तक उनके साथ गेंद की तरह खेले, उन्हें ऊपर उछालते और एक चटाई पर पकड़ते; फिर भी वे उनके उत्कट प्रार्थना से उनके मन को जरा भी भटका नहीं सके।

112. एक और ईश्वर-प्रेमी भिक्षु के पास, जब वह रेगिस्तान में चलते हुए मानसिक प्रार्थना कर रहा था, दो स्वर्गदूत प्रकट हुए और उसके साथ-साथ चले, उसे अपने बीच में रखते हुए। लेकिन उसने एक पल के लिए भी उन पर ध्यान नहीं दिया, कहीं ऐसा न हो कि वह जो श्रेष्ठतम था उसमें हानि उठाए, क्योंकि उसे प्रेरित का वचन याद था, जो कहते हैं: '*न तो स्वर्गदूत, न कोई अधिकार, न कोई सामर्थ्य हमें मसीह के प्रेम से अलग कर सकता है*' (रोमियों 8:38-39)।

113. प्रार्थना के द्वारा, एक भिक्षु एक स्वर्गदूत के समान हो जाता है, जो '*स्वर्ग में रहने वाले पिता का मुख देखने*' (मत्ती 18:10) की लालसा करता है।

114. प्रार्थना करते समय आपको किसी भी प्रकार से किसी चेहरे या प्रतिमा को देखने की इच्छा या खोज नहीं करनी चाहिए।

115. अपने भौतिक इंद्रियों से स्वर्गदूतों, या शक्तियों, या मसीह को देखने की इच्छा न करें, कहीं ऐसा न हो कि आप भेड़िये को चरवाहे समझकर और शत्रुओं - यानी राक्षसों - की पूजा करके अपना मन खो बैठें।

116. मन के भ्रम की शुरुआत अहंकार है; इसके द्वारा प्रेरित होकर, मन दिव्यता को किसी रूप या प्रतिमा में चित्रित करने का प्रयास करता है।

117. मैं वही दोहराता हूँ जो मैंने नवसिखुओं से कहा है: धन्य है वह मन जो प्रार्थना करते समय पूर्ण मौन बनाए रखता है।

118. धन्य है वह मन जो बिना विचलित हुए प्रार्थना करता है, और उसे ईश्वर के प्रति अनवरत बढ़ती हुई लालसा प्राप्त होती है।

119. धन्य है वह मन जो प्रार्थना करते समय सांसारिक चीजों से विमुख और लालच से मुक्त रहता है।

120. धन्य है वह मन जो प्रार्थना करते समय सभी चीजों के प्रति पूर्ण उदासीनता बनाए रखता है।

121. धन्य है वह भिक्षु जो प्रत्येक व्यक्ति का सम्मान इस प्रकार करता है मानो वह ईश्वर के बाद एक देवता हो।

122. धन्य है वह संन्यासी जो सभी के मोक्ष और समृद्धि को अपना मानता है।

123. धन्य है वह संन्यासी जो स्वयं को सभी का कचरा मानता है।

124. एक संन्यासी वह है जो सभी से अलग रहते हुए भी सभी के साथ एकता में रहता है।

125. भिक्षु वह है जो स्वयं को सभी के साथ मानता है और सभी में स्वयं को देखता है।

126. जो व्यक्ति हमेशा अपने प्रथम विचार ईश्वर को अर्पित करता है, वही प्रार्थना करता है।

127. सभी झूठ और सभी शपथों से बचो, एक ऐसे भिक्षु की तरह जो प्रार्थना करने की सच्ची इच्छा रखता है; अन्यथा, तुम व्यर्थ ही एक ऐसा मुखौटा धारण करते हो जो तुम्हारा नहीं है।

128. यदि आप आत्मा में प्रार्थना करना चाहते हैं, तो शरीर से कुछ भी ग्रहण न करें – और प्रार्थना के दौरान आपके सामने अंधकार का बादल नहीं छाएगा।

129. अपनी शारीरिक आवश्यकताओं को ईश्वर के भरोसे छोड़ दो – और यह स्पष्ट हो जाएगा कि तुम अपनी आध्यात्मिक आवश्यकताओं को भी उसी के भरोसे छोड़ रहे हो।

130. यदि आपको प्रतिज्ञाएँ प्राप्त करने के योग्य माना जाता है, तो आप राज्य करेंगे। अतः इस दृष्टि से, क्या आपको अपनी वर्तमान गरीबी को आनंदपूर्वक सहन नहीं करना चाहिए?

131. गरीबी और जीवन के दुखों से मुंह न मोड़ो – ये प्रकाशमय प्रार्थना के उपकरण (पंख) हैं।

132. शारीरिक सद्गुण आपके लिए आध्यात्मिक सद्गुणों की, आध्यात्मिक सद्गुण, आध्यात्मिकता की, और ये अनात्मक और आवश्यक ज्ञान की प्रतिज्ञा हों।

133. यदि, किसी विशेष विचार के विरुद्ध प्रार्थना करते समय, आप देखें कि वह जल्दी और आसानी से शांत हो जाता है, तो इसके कारण की जाँच करें, कहीं आप किसी जाल में न फँस जाएँ और, धोखा खाकर, स्वयं के प्रति विश्वासघाती न बन जाएँ।

134. कभी-कभी ऐसा होता है कि राक्षस, आपके भीतर कुछ विचार बोकर, स्वयं आपको उनके विरुद्ध प्रार्थना करने और उनका विरोध करने के लिए प्रेरित करते हैं – और फिर तुरंत भाग जाते हैं; ताकि आप इस भ्रम में पड़ जाएँ कि आपने अपने विचारों पर काबू पाना शुरू कर दिया है और राक्षसों के मन में डर पैदा कर दिया है।

135. यदि आप किसी भी वासना या किसी भी दानव के विरुद्ध प्रार्थना करते हैं जो आपको पीड़ा दे रहा है, तो भजन रचयिता के शब्दों को याद करें: *'मैं अपने शत्रुओं का पीछा करूँगा और उन्हें पकड़ लूँगा; मैं तब तक पीछे नहीं हटूँगा जब तक वे नष्ट न हो जाएँ; मैं उन्हें मार गिराऊँगा, और वे खड़े नहीं हो पाएँगे; वे मेरे पैरों तले गिर पड़ेंगे'*, इत्यादि (भजन संहिता 17, 38–39)। परन्तु यह उचित समय पर कहो, और नम्रता से अपने विरोधियों के विरुद्ध स्वयं को सशस्त्र करो।

136. पहले रक्त बहाने की हद तक इसके लिए संघर्ष किए बिना सद्गुण प्राप्त करने का विचार न करें। दिव्य प्रेरित के अनुसार, दोषरहित बने रहने के लिए पाप के विरुद्ध मृत्यु तक संघर्ष करना चाहिए (इब्रानियों 12:4)।

137. कभी-कभी ऐसा होता है कि एक व्यक्ति को उपकार करने के बाद, आपको दूसरे से (शत्रु की साज़िशों के कारण) हानि उठानी पड़ती है, जिससे जब आप बदनामी का सामना करते हैं, तो आप कुछ अनुचित कह या कर बैठते हैं, और इस प्रकार आपने जो अच्छाई इकट्ठी की है, उसे बर्बाद कर देते हैं। चालाक दुष्टात्माओं का यही उद्देश्य होता है। इसलिए, आपको बुद्धिमानी से अपना ध्यान रखना चाहिए।

138. जब राक्षस आपके विरुद्ध आक्रमण करते हैं, तो हर संभव सावधानी बरतें कि आप उनके बंधन में न पड़ें।

१३९. रात में, दुष्ट राक्षस स्वयं आध्यात्मिक गुरु को अस्थिर करने का प्रयास करते हैं; जबकि दिन में वे लोगों के माध्यम से ऐसा करते हैं, उन्हें अप्रिय घटनाओं, उनके द्वारा फैलाई गई बदनामी और दुर्भाग्य से घेरकर।

140. इन कठोर और झगड़ालू लोगों को सहन करने से इनकार न करें। उन्हें आपको पीटने और पैरों तले कुचलने, आपको खींचने और सहलाने दें; क्योंकि इससे आपका वस्त्र और भी उज्जवल हो जाता है।

141. जब तक आपने अपने भावों का पूरी तरह से त्याग नहीं कर दिया है और आपका मन अभी भी सदाचार और सत्य के प्रति प्रतिरोध दिखाता है, तब तक आपको अपने हृदय के भीतर सुगंधित धूप (अर्थात् शुद्ध और उत्कट प्रार्थना) नहीं मिलेगी।

142. क्या आप (जैसा आपको करना चाहिए) प्रार्थना करना चाहते हैं? इस संसार से मुंह मोड़कर, अपना निवास हमेशा स्वर्ग में बसाएं—केवल शब्दों में नहीं, बल्कि दैवीय कर्मों और परम दिव्य समझ के माध्यम से।

143. यदि, केवल संकट में (गंभीर प्रलोभनों का सामना करते हुए, गिरने के खतरे में) ही आप न्यायाधीश को याद करते हैं—कि वह कितना भयानक और अडिग है—तो आपने अभी तक यह नहीं सीखा है *कि 'प्रभु की सेवा भय के साथ करो और काँपते हुए उसके सामने आनन्दित होओ'* (भजन संहिता 2:11)। जान लो कि आध्यात्मिक आनंद और सांत्वना के समय में, भय और श्रद्धा के साथ उसकी सेवा करना और भी अधिक उचित है।

144. बुद्धिमान वह मनुष्य है जो पूर्ण पश्चाताप प्राप्त करने से पहले, अपने पापों को दुख के साथ याद करना और उनके लिए अनंत अग्नि में मिलने वाली न्यायसंगत सज़ा को याद करना कभी बंद नहीं करता।

145. जो पाप में और ईश्वर के क्रोध को भड़काने में बना रहता है—और जो निर्लज्जतापूर्वक दिव्य बातों के ज्ञान और आध्यात्मिक प्रार्थना के लिए हाथ बढ़ाने का अनुमान लगाता है—वह प्रेरित की इस मनाही को स्वीकार करे कि उसके लिए बिना सिर ढके प्रार्थना करना सुरक्षित नहीं है। ऐसी आत्मा *के सिर पर*, उपस्थित लोगों के लिए (1 कुरिन्थियों 11:10), *एक देवदूत का खड़ा होना चाहिए*, जिसने विनम्रता और एक नम्र व्यक्ति के योग्य नम्रता का वेश धारण किया हो।

146. जैसे दृष्टि विकार वाले व्यक्ति के लिए दोपहर की सबसे तेज रोशनी में लंबे समय तक और ध्यान केंद्रित करके सूर्य को निहारना कोई लाभ नहीं पहुँचाता, वैसे ही एक भावुक और अशुद्ध मन के लिए आत्मा और सत्य में एक भयानक और अलौकिक प्रार्थना की कल्पना करना कोई लाभ नहीं पहुँचाता; इसके विपरीत, दिव्यता उसके विरुद्ध क्रोध उत्पन्न करेगी।

147. यदि वह, जिसके पास कुछ भी नहीं है और जो पक्षपात नहीं करता, तब तक बलिदान-स्थल पर आने वाले को स्वीकार नहीं करता, जब तक कि वह उससे मेल नहीं कर लेता जो उससे रंजिश रखता है (मत्ती 5:23), तो विचार करो कि मन के वेदी पर परमेश्वर को प्रसन्न करने वाला धूप चढ़ाने के लिए कितनी आत्म-संयम और कितनी समझदारी की आवश्यकता है।

148. शब्दों के प्रेमी न बनो, न ही महिमा के प्रेमी; अन्यथा यह स्पष्ट हो जाएगा कि यह *रीढ़ की हड्डी पर नहीं*, बल्कि आपके चेहरे पर *है कि 'दुष्ट काम कर रहे हैं* (भजन संहिता 128:3)। और आप प्रार्थना के दौरान उनके लिए उपहास का पात्र बनेंगे, जो आपको ध्यान भटका कर अस्पष्ट विचारों में बहका देते हैं।

149. जो ध्यान प्रार्थना की खोज करता है, उसे प्रार्थना मिल जाएगी। ध्यान के बाद प्रार्थना से बेहतर कुछ भी नहीं है, और यही प्रार्थना है जिसे संवारने के लिए हर संभव प्रयास करना चाहिए।

१५०. जैसे दृष्टि अन्य सभी इंद्रियों से श्रेष्ठ है, वैसे ही प्रार्थना सभी गुणों से अधिक दिव्य है।

151. प्रार्थना का पुण्य केवल मात्रा में ही नहीं, बल्कि गुणवत्ता में भी निहित है। यह *'जो प्रार्थना करने के लिए मन्दिर में गए'* (लूका 18:10) से, और निम्नलिखित शब्दों से प्रकट होता है: 'परन्तु *जब तुम प्रार्थना करो*, तो *बकबक न करो*', इत्यादि (मत्ती 6:7)।

152. जब तक आप केवल प्रार्थना के लिए उपयुक्त शरीर की मुद्रा पर ध्यान देते हैं, और आपका मन केवल मंडप की बाहरी सुंदरता से ही संबंधित है (प्रार्थना के अन्य बाहरी पहलुओं के लिए… अध्याय 44 देखें), तो जान लें कि आपने अभी तक प्रार्थना के स्थान को नहीं देखा है, बल्कि उस तक का धन्य मार्ग अभी भी आपसे दूर है।

153. जब, प्रार्थना में खड़े होकर, आप सभी अन्य सुखों से ऊपर उठ जाते हैं, तो (जान लें कि) आपने वास्तव में प्रार्थना को पा लिया है।[73]

154. प्रार्थना और पठन अद्भुत हैं; वे विचारों की व्यर्थ भटकन को समाप्त करते हैं, मन को वश में रखते हैं जो जहाँ नहीं भटकना चाहिए वहाँ भटकता है, और उसे इस अद्भुत प्रयास पर उपयोगी रूप से केंद्रित रखते हैं, बिना उसे थोड़ी भी विचलित होने देने के (1, 16)।

155. प्रार्थना हमें ईश्वर से संवाद करने के लिए तैयार करती है और, इसमें दीर्घकालिक अभ्यास के माध्यम से, हमें उनके साथ सहभागिता में लाती है; उस ईश्वर के साथ जो सबसे नीच लोगों को भी अपने प्रेम में स्वीकार करते हैं और उनके साथ मैत्रीपूर्ण निकटता से लज्जित नहीं होते, जब तक कि उनके भीतर रहने वाला प्रेम उन्हें साहस प्रदान करता है (1, 17)।

156. प्रार्थना मन को सभी इंद्रिय-संबंधी विचारों से अलग करती है, और उसे स्वयं परमेश्वर की ओर उठाती है, जो सभी चीजों से ऊपर हैं, ताकि हम उनसे संवाद कर सकें और निडर होकर उनसे जो कुछ भी हम चाहते हैं, माँग सकें; और इस प्रकार एक व्यक्ति को पवित्रता का जीवन जीने में सक्षम बनाता है, जैसे कि वह पहले ही परमेश्वर के साथ एकता में रह चुका हो और शीघ्र ही बाद में फिर से उस एकता के लिए तैयारी कर रहा हो (1:19)।

१५७. पौलुस *हमें 'प्रार्थना में स्थिर रहने'* (रोमियों १२:१२) *की* शिक्षा देते हैं, और इस प्रकार निरंतर अभ्यास के द्वारा हम में प्रार्थना की आदत डालते हैं (कुलुस्सियों ४:२; इफिसियों ६:१८)। वह हमें *'हर जगह प्रार्थना करने'* (1 तीमु. 2:8) *का* भी आज्ञा देते हैं, ताकि कोई भी आलसी व्यक्ति यह बहाना न कर सके कि वह पूजा स्थल से दूर रहता है। प्रार्थना के लिए कोई भी स्थान उपयुक्त है। परमेश्वर उन लोगों को स्वीकार करते हैं जो शुद्ध हृदय और धार्मिक कर्मों के साथ उनसे प्रार्थना करते हैं, और उनके स्वभाव को देखकर उनकी विनतियों को सुनते हैं, भले ही हमारी राय में, जिस स्थान से वे उनसे प्रार्थना करते हैं, वह किसी अन्य स्थान से अलग न हो (1:20)।

---

[73] यहाँ से संत नीलस के अन्य लेखों – *'प्रार्थना पर'* – से एक अतिरिक्त अंश आता है।

158. कभी-कभी, प्रहर के दौरान, भजन-संग्रह को जल्दी-जल्दी पढ़ना चाहिए, जबकि अन्य समयों में उन्हें गाने को प्राथमिकता देनी चाहिए। हमें अपने तरीकों में विविधता लानी चाहिए, ताकि हम अपने शत्रुओं की चालाकियों का मुकाबला कर सकें, जो कभी-कभी पाठ को जल्दबाजी में पढ़ने की इच्छा जगाते हैं, क्योंकि आत्मा निराशा से ग्रस्त हो जाती है, और कभी-कभी हमें गंभीर, सुरम्य कीर्तन के लिए उकसाते हैं (1, 234)।

१५९. जब शत्रु का विचार आपके हृदय पर आक्रमण करे, तो प्रार्थना द्वारा इस या उस चीज़ की मांग न करें, बल्कि शत्रु के विरुद्ध आँसुओं की तलवार को तेज करें। इस प्रकार के शक्तिशाली कवच से शत्रु का सामना करके, हम उसे हमारे पास से और भी शीघ्रता से पीछे हटने पर मजबूर कर देंगे।

१६०. शारीरिक श्रम करने में आनंद लो: परन्तु उससे भी अधिक प्रार्थनापूर्ण स्मरण में; क्योंकि पहला हमेशा फल नहीं देता, जबकि दूसरा निरंतर अपने श्रम का फल देता है। जब तक आप प्रार्थना का अपना कर्तव्य पूरी तरह से पूरा नहीं कर लेते, तब तक अपनी प्रार्थना में विघ्न न डालें, और इस विचार पर ध्यान न दें कि काम शुरू करने का समय हो गया है; इसी तरह, जब आप काम कर रहे हों, तो अपने कार्य में अत्यधिक मग्न न हो जाएं, कहीं ऐसा न हो कि अपनी जल्दबाज़ी में आप अपने हृदय को विक्षुब्ध कर दें और उसे प्रार्थना के लिए अयोग्य बना दें।

161. एक मन जिससे ईश्वर का विचार चुरा लिया गया है और जो उनकी स्मृति से दूर हो गया है, पापों के प्रति उदासीन हो जाता है, यहाँ तक कि बाहरी इंद्रियों के माध्यम से भी: क्योंकि न तो कान और न ही जीभ अब ऐसे मन के रक्षक के रूप में काम करने में सक्षम हैं, क्योंकि आत्म-अनुशासन के तपस्वी श्रम के प्रति प्रतिबद्धता इसके भीतर से चली गई है (1, 244)।

162. ऐसा होता है कि हम शुद्ध प्रार्थना का अभ्यास करने का प्रयास करते हैं और ऐसा करने में असमर्थ रहते हैं; लेकिन ऐसा भी होता है कि हम खुद को मजबूर नहीं करते, फिर भी आत्मा शुद्ध प्रार्थना में बनी रहती है। पहला हमारी कमजोरी से उत्पन्न होता है, जबकि दूसरा स्वर्गीय अनुग्रह से आता है, जो हमें इसके द्वारा आत्मा की पवित्रता की खोज करने के लिए बुलाता है, और हमें दोनों के माध्यम से यह सिखाता है कि यदि हम शुद्ध रूप से प्रार्थना करते हैं तो इसके लिए कोई श्रेय स्वयं को न दें, बल्कि इसे दाता का वरदान स्वीकार करें। *'क्योंकि हम नहीं जानते कि हमें जैसे चाहिए वैसे प्रार्थना कैसे करें'* (रोमियों 8:26)। जब हम अपनी प्रार्थना को शुद्ध बनाने का प्रयास करते हैं और ऐसा नहीं कर पाते, बल्कि इसके बजाय वह धूमिल हो जाती है; तो, अपने गालों पर आँसू बहाते हुए, हम ईश्वर से विनती करें कि संघर्ष की यह रात दूर हो जाए और हमारी आत्मा में प्रकाश चमके (1, 264)।

१६३. सांसारिक वासनाओं का स्मरण परेशान करने वाला है; क्योंकि यह न केवल हमें ईश्वर से संवाद करने से रोकता है, बल्कि यह उस मन को भी अश्लील छवियों की कल्पनाओं से कलंकित कर देता है—जो प्रार्थना कर रहा प्रतीत होता है। प्रार्थना में निरंतर बने रहना और मन को ईश्वर के साथ संवाद में प्रशिक्षित करना अच्छा है। लेकिन क्या हमारे साथ ऐसा होता है? – अक्सर, प्रार्थना के शब्दों से विचलित होकर, हम उन विचारों का अनुसरण करते हैं जो हमें भटकाते हैं, न तो उन्हें अस्वीकार करते हैं और न ही उनसे परेशान होते हैं – जो कि अनुचित बातें सुझाने वालों के साथ इच्छा के असहमत होने का संकेत होता। हालाँकि बाहरी रूप से हम प्रार्थना करते हुए दिखाई देते हैं – क्योंकि, घुटने टेकने के कारण, हमें देखने वालों को लगता है कि हम प्रार्थना कर रहे हैं – पर अपने मन में हम कुछ सुखद कल्पना करते हैं, दोस्तों से सौहार्दपूर्ण बातचीत करते हैं, क्रोध में अपने दुश्मनों की बुराई करते हैं, मेहमानों के साथ दावत करते हैं, रिश्तेदारों के लिए घर बनाते हैं, पेड़ लगाते हैं, यात्रा कर रहे होते हैं, व्यापार में लगे होते हैं, जबरदस्ती पवित्र सेवा में खींचे जा रहे होते हैं, हमें सौंपी गई कलीसियाओं के मामलों को बड़ी समझदारी से संभाल रहे होते हैं, और इन सब बातों को अपने मन में बार-बार सोच रहे होते हैं, अपने विचारों के सुझाए अनुसार सहमत हो रहे होते हैं, और अपने दिलों को अपनी इच्छाओं के अनुसार उन्हीं बातों के लिए तैयार होने दे रहे होते हैं (– 2, 129–130)।

164. प्रार्थना के लिए आवश्यक है कि मन को हर विचार से शुद्ध किया जाए और अपने भीतर कुछ भी प्रवेश न करने दिया जाए जो प्रार्थनापूर्ण न हो, भले ही वह सम्मानजनक ही क्यों न हो; बल्कि ईश्वर से प्रेरित व्यक्ति की भाँति, सभी चीजों से स्वयं को अलग करके, केवल उसी के साथ संवाद किया जाए (2, 131)।

165. जो कोई भी अपना समय शारीरिक श्रम और प्रार्थना के बीच बांटता है, वह काम के द्वारा शरीर को वश में करता है और उसकी अव्यवस्थित मांगों को नियंत्रण में लाता है; और आत्मा, जो शरीर के साथ मिलकर परिश्रम करती है, अंततः विश्राम की लालसा करती है, वह इस प्रकार प्रार्थना की ओर एक आसान कार्य के रूप में प्रवृत्त होती है, और उत्साह और जोश के साथ उसकी ओर ले जाई जाती है। क्योंकि उसे गतिविधि में बदलाव और एक से दूसरे में संक्रमण में आराम मिलता है, जबकि वह एक ही काम में बहुत देर तक लगे रहने पर थक जाती है; वह एकरूपता से थक जाती है, लेकिन विभिन्न प्रकार के कार्यों में आनंदित होती है; उसे ऐसा लगता है कि एक काम को अलग रखकर,

वह, मानो, सारी थकान दूर कर रही है, और यही कारण है कि वह अगले काम में एक नई ताजगी के साथ लगती है, जैसे कि वह अभी-अभी काम शुरू ही कर रही हो[74] – (2, 231. 232)।

166. जो काम करना पसंद नहीं करता, वह निष्क्रियता के माध्यम से अपनी वासनाओं को पोषित करता है और अपनी इच्छाओं को उन वस्तुओं की ओर मुड़ने के लिए पूरी छूट दे देता है जो उन्हें आकर्षित करती हैं - एक तथ्य जो प्रार्थना के दौरान सबसे स्पष्ट होता है; क्योंकि तब मन का ध्यान पूरी तरह से उसी में मग्न हो जाता है जो हृदय को व्यस्त रखता है, और वह ईश्वर से संवाद करने और उससे अपने लिए लाभप्रद वस्तुएँ माँगने के बजाय, केवल उस प्रवृत्ति के प्रलोभनों पर ही विचार करता रहता है जिसे गति दी गई है। यह जानते हुए, संत पौलुस ने आलस्य की पुरज़ोर निंदा की और अपने प्रेरितिक अधिकार से सभी को काम करने के लिए बाध्य किया (2 थिस्स. 3:6–12)। काम मन के लिए एक लंगर है और उसे एक सुरक्षित दिशा देता है। चाहे चारों ओर से तूफ़ान आ जाएँ, और हवा के झोंके जहाज के डूबने की धमकी दें; विचार दृढ़ खड़ा रहता है, जो काम के सहारे एक लंगर की तरह टिका रहता है; यह उठते विचारों से कुछ हद तक हिलता है, लेकिन खतरे में नहीं बह जाता, क्योंकि इसे थामे हुए बंधन उन हवाओं से ज़्यादा मज़बूत हैं जो इसे धकेलती हैं (2, 232, 234)।

167. जो लोग इस बहाने से शारीरिक श्रम करने से इनकार करते हैं कि उन्हें निरंतर प्रार्थना करनी चाहिए, वे वास्तव में बिल्कुल भी प्रार्थना नहीं करते हैं। यह सोचकर कि आलस्य आत्मा को चिंताओं से मुक्त कर देगा, वे उसे अनसुलझी सोचों के भूलभुलैया में उलझा देते हैं और इस प्रकार उसे प्रार्थना करने में असमर्थ बना देते हैं। काम में व्यस्त शरीर मन को नियंत्रित रखता है; मन को, आँखों की ही तरह, यह देखना चाहिए कि क्या हो रहा है और बिना किसी त्रुटि के कार्य करने में शरीर की सहायता करनी चाहिए, जबकि विश्राम कर रहा शरीर मन को भटकने के लिए पूरी छूट दे देता है; क्योंकि विश्राम के दौरान वासनाएँ जागृत होती हैं, और हर कामुक स्मरण पर वे मन को बहका ले जाती हैं और उसे एक कैदी की तरह अपने कब्जे में कर लेती हैं (2, 234. 5)।

168. सिद्धों की एक परम प्रार्थना होती है—यह मन का एक प्रकार का समाधि-आनंद है, इंद्रियों से इसका पूर्ण वियोग, जब आत्मा की अस्पष्ट आहों के द्वारा वह ईश्वर के समीप आता है, जो हृदय की प्रवृत्ति को एक लिखी हुई पुस्तक की भाँति निग्न देखता है, और जो अपनी इच्छा को शब्दहीन चित्रों में व्यक्त करता है। इस प्रकार पौलुस तीसरे स्वर्ग में उठा लिए गए और उन्हें यह नहीं पता था *कि 'वे शरीर में थे या शरीर से बाहर'* (2 कुरिन्थियों 12:2) (2, 235)।

१६९. पहले प्रकार के बाद (नीचे) प्रार्थना का एक दूसरा प्रकार है, जब शब्द बोले जाते हैं, और मन भक्ति के साथ उनका अनुसरण करता है, यह जानते हुए कि वह अपनी विनती किससे कर रहा है।

170. हालाँकि, एक प्रार्थना जो (निम्न) विचारों से बाधित होती है और शारीरिक चिंताओं में उलझी होती है, वह प्रार्थना करने वाले के लिए उपयुक्त स्थिति से बहुत दूर है। ऐसा व्यक्ति स्वयं को भी नहीं सुनता, उसके विचार इधर-उधर भटकते रहते हैं, और उसे याद नहीं रहता कि वह कौन से शब्द बोल रहा है। लेकिन यदि प्रार्थना करने वाला ऐसा हो, तो क्या दिव्य कान उस पर ध्यान देंगे, जिस पर वह स्वयं, ध्यान भटकने के कारण, कोई ध्यान नहीं देता? उन लोगों के शब्दों में जिन्होंने कहा: *'मेरी प्रार्थना सुनो; मेरी विनती पर कान लगाओ'* (भजन संहिता 16:1), और *'आपके कान मेरी विनती की आवाज़ पर ध्यान दें'* (भजन संहिता 129:2), उनका पूरा मन सावधानीपूर्वक वहीं केंद्रित था, और वह भटक नहीं जाता था, जैसा कि आमतौर पर लापरवाह लोगों के अनियंत्रित विचारों के साथ होता है (2, 236)।

2. आठ दुष्ट आत्माओं पर

1. लालच पर

1. फलदायी होने की शुरुआत फूल खिलने से होती है, और सक्रिय जीवन की शुरुआत आत्म-नियंत्रण से होती है।

२. जो अपनी भूख को नियंत्रित करता है, वह अपनी कामनाओं को कम करता है, जबकि जो लालच से वशीभूत हो जाता है, वह अपनी कामुक इच्छाओं को बढ़ाता है।

3. जीभों की उत्पत्ति अमालिक है, और वासनाओं की उत्पत्ति अतिभक्षण है।

४. आग का ईंधन लकड़ी है, और पेट का भोजन पोषण है।

5. लकड़ी की प्रचुरता बड़ी आग भड़काती है, जबकि भोजन की प्रचुरता कामवासना को पोषित करती है।

---

[74] यह अध्याय और अगला यूकाइट्स के विरुद्ध निर्देशित हैं।

6. जैसे-जैसे ईंधन खत्म होता है, आग बुझ जाती है, वैसे ही भोजन की कमी कामवासना को सूखा देती है।

7. भोजन की लालसा ने अवज्ञा को जन्म दयिा, जबकि उसका मीठा स्वाद हमें स्वर्ग से बाहर निकाल ले गया।

8. स्वादिष्ट भोजन गले को प्रसन्न करता है, लेकिन यह वासना की हमेशा बढ़ने वाली कीड़ा को भी पालता है।

९. खाली पेट प्रार्थना में जागरण के लिए तैयार करता है, जबकि भरा पेट गहरी नींद लाता है।

10. उपवास से संयम और चिंतन आता है, जबकि ऐश्वर्य और संतोष का जीवन मन को गहरी नींद में डुबो देता है।

11. उपवास करने वाले की दुआ एक चील के बच्चे की तरह ऊपर उड़ती है, जबकि पेट भर खाने वाले की दुआ तृप्ति के बोझ तले जमीन पर गिर जाती है।

12. उपवास करने वाले का मन निर्मल आकाश में एक चमकता तारा है, जबकि तृप्त व्यक्ति का मन अमावस्या की रात के आकाश की तरह अँधेरा है।

13. कोहरा सूर्य की किरणों को छुपाता है, जबकि खाए गए भोजन का घना वाष्प मन को धूमिल कर देता है।

14. एक धब्बेदार शीशा उसमें प्रतिबिंबित छवि की स्पष्ट विशेषताओं को दिखाने में विफल रहता है; और लालच से धूमिल मन की शक्ति ईश्वर के ज्ञान को ग्रहण नहीं कर सकती।

15. लंबे समय तक अनुत्पादित रहने वाली भूमि में कांटे उगते हैं; और एक अल्पाहारी के मन में लज्जास्पद विचार पनपते हैं।

16. जैसे गोबर में सुगंध नहीं होती, वैसे ही अहंकारी के भीतर चिंतन की सुगंध नहीं होती।

17. भूखे की आँख दावतों को ढूंढती है, जबकि संयमी की आँख बुद्धिमानों के जमावड़ों को खोजती है।

18. एक पेटू की आत्मा शहीदों की स्मृति के दिनों को गिनती है, जबकि संयमी की आत्मा उनके जीवन-पथ का अनुकरण करती है।

19. एक डरपोक योद्धा युद्ध का उद्घोष करने वाली तुरही की आवाज़ से काँपता है, जबकि एक पेटू उपवास की शुरुआत की घोषणा से काँपता है।

20. एक पेटू भिक्षु अपने पेट का गुलाम होता है, और उसकी कोड़े की मार के नीचे वह अपना दैनिक कर चुकाता है।

21. शीघ्रगामी यात्री शीघ्र ही नगर पहुँचता है, और तपस्वी भिक्षु मन की शांति प्राप्त करता है।

22. धीमा यात्री (कोई बसाहट न पहुँच पाने के कारण) खुले में रात बिताता है; और कामवासना से ग्रस्त भिक्षु कभी वैराग्य के घर नहीं पहुँचता।

23. धूप जलने से वायु सुगंधित होती है – और संयमी की प्रार्थना ईश्वर के लिए एक मीठी सुगंध है।

24. यदि तुम पेट भरने की लालसा के आगे हार मान लेते हो, तो तुम्हारी लालच को शांत करने के लिए कुछ भी पर्याप्त नहीं होगा; क्योंकि लालच एक आग है जो ईंधन को जलाती है और हमेशा और अधिक की मांग करती है।

२५. एक पर्याप्त माप (चाहे किसी पात्र में कुछ भी डाला जाए) पात्र को भर देता है, लेकिन पेट, भरा होने पर भी, 'काफी है' नहीं कहता।

26. हाथ उठाने से अमालेकियों को भागना पड़ा, और स्वर्ग की ओर निर्देशित कर्म भौतिक वासनाओं पर विजय प्राप्त करते हैं।

27. अपने भीतर हर उस चीज़ को नष्ट कर दो जो वासनाओं को भड़काती है, और अपने सांसारिक अंगों को पूरी तरह से मृत्यु के घाट उतार दो।

28. जैसे एक मारे गए शत्रु से आपको भय नहीं लगता, वैसे ही एक मरा हुआ शरीर आपकी आत्मा को विक्षुब्ध नहीं करेगा।

29. जैसे एक मृत शरीर को आग से कोई दर्द नहीं होता, वैसे ही एक पवित्र व्यक्ति को मृत कामुकता से कोई आनंद नहीं होता।

30. यदि तुम एक मिस्रवासी को मार गिराओ, तो उसे रेत में दफ़ना दो – अर्थात्, यदि तुम कामुक वासना पर विजय प्राप्त करते हो, तो शरीर को संतुष्ट मत करो (या उसे सूखी आहार पर रखो); क्योंकि जैसे पृथ्वी में छिपी हुई वस्तु पानी मिलने पर उग आती है, वैसे ही शरीर के भीतर छिपी कामुक वासना भी संतुष्ट होने पर फलती-फूलती है।

31. एक बुझी हुई लौ में जब ताज़ी सूखी टहनियाँ डाली जाती हैं तो वह फिर से तेज़ी से जल उठती है; और कामुक इच्छा, एक बार बुझ जाने पर, पेट के भोजन से तृप्ति पाकर फिर से जीवित हो उठती है।

32. जब शरीर थकान की शिकायत करने लगे तो उस पर दया न करें, और न ही उसे उसकी पसंद के भोजन से मन भर तृप्त करें; क्योंकि यदि वह अपनी ताकत वापस पा लेगा, तो वह आपके खिलाफ उठ खड़ा होगा और आपसे एक ऐसा अविनाशी युद्ध छेड़ेगा, जब तक कि वह आपकी आत्मा पर कब्ज़ा करके आपको व्यभिचार की वासना की दासता में न सौंप दे।

33. संयम से पोषित शरीर एक सुसज्जित घोड़े के समान है जो कभी भी अपने सवार को नहीं गिराता। जैसे लगाम से नियंत्रित घोड़ा सवार के हाथ के अधीन हो जाता है और आज्ञा मानता है, वैसे ही संयमित भोजन और सतर्कता से वश में किया गया शरीर भी उस विचार की पकड़ से नहीं छूटता जो उस पर सवार होता है, और न ही वह उस तरह हिनहिनाता है, जैसा वह एक कामुक आवेग से प्रेरित होकर करता है।

* * *

34. अत्यधिक भोजन से विचारों को पोषण मिलता है, और मद्यपान करने वाला अपनी नींद को सपनों से भर लेता है (1. 248)।

35. भोग का सुख गले से भोजन उतरते ही समाप्त हो जाता है, लेकिन इस ताबूत में वासना जीवित हो उठती है।

36. अपनी ही ज़मीन जोतने की मेहनत आराम में समाप्त होती है; लेकिन सुख के विभिन्न रूप जलन में समाप्त होते हैं (चाहे यहाँ कामुक हों, या वहाँ दंडात्मक)।

37. जो अपनी कठोर परिश्रम से शरीर के फूल को मुरझा देता है, वह शरीर में ही अपनी मृत्यु के बारे में प्रतिदिन सोचता है (क्योंकि शरीर की थकान उसे लगातार मृत्यु के बारे में सोचने के लिए मजबूर करती है) (1. 249)।

38. हृदय की सूझबूझ संयम के श्रम को शरीर की स्थिति के अनुसार समायोजित करे, ताकि जब शरीर कमजोर हो जाए, तो वह स्वयं कष्ट न भोगे।

३९. शरीर अपनी स्वाभाविक आवश्यकताओं की सीमित संतुष्टि से संतुष्ट रहे।

40. आपका शारीरिक तपस्या नैतिक उद्देश्यों की ओर निर्देशित हो, ताकि आप (पापों पर) अपने हृदय में शोक करना और अपनी आत्मा में विलाप करना सीख सकें।

४१. कामुक वासना की जननी अतिभक्षण है: क्योंकि यह कामुक वासना और कई अन्य भावों को जन्म देती है। उससे, एक जड़ की तरह, अन्य भावों की कलियाँ फूटती हैं; और जल्द ही, जिस वृक्ष से वे उत्पन्न हुईं, उसके बराबर के वृक्ष बनकर, वे स्वर्ग तक पहुँचने वाली बुराइयों में फैल जाती हैं। इस प्रकार, लालच, क्रोध और दुख, अतिभक्षी होने के संतान और वृद्धि हैं। सबसे पहले और सबसे महत्वपूर्ण, अत्याहारी को अपनी कभी न बुझने वाली इच्छा को शांत करने के लिए धन की आवश्यकता होती है; फिर, उसे उन लोगों से क्रोध आना चाहिए जो धन प्राप्त करने के रास्ते में खड़े होते हैं; और जब क्रोध कार्य करने में असमर्थ साबित होता है, तो दुख अनिवार्य रूप से आता है (2, 73)।

४२. अतिसंयम का कामुक प्रवृत्ति से सबसे घनिष्ठ संबंध है। और प्रकृति स्वयं, इन भावों के आपसी संबंध को प्रदर्शित करने के लिए, मैथुन अंगों को पेट के नीचे रखती है, जो इस निकटता से उनके घनिष्ठ संबंध को दर्शाता है। क्योंकि जब यह जुनून (वासना) कमजोर पड़ता है, तो यह ऊपर स्थित उस चीज़—अर्थात् पेट—के क्षीण होने के कारण होता है; और जब यह तीव्र होता है और सक्रिय हो जाता है, तो यह अपनी शक्ति वहीं से खींचता है। लेकिन अतिभक्षण केवल इस वासना का पोषक और धारक ही नहीं है; यह एक व्यक्ति में जो कुछ भी अच्छा है, उसे नष्ट कर देता है। जैसे ही इसका प्रभुत्व बढ़ता है, संयम, पवित्रता, साहस, धैर्य और अन्य सभी सद्गुण आमतौर पर पीछे छूट जाते हैं (2, 76)।

४३. अपनी आवश्यकताओं की सीमाओं के भीतर रहना और पूरी ताकत से उनका उल्लंघन न करने का प्रयास करना उत्तम है। यदि वासना किसी को इस जीवन के सुखों की ओर थोड़ा भी खींचती है, तो उनकी आगे बढ़ने की गति को रोकने के लिए कोई भी शब्द पर्याप्त शक्तिशाली नहीं है। क्योंकि अपनी ज़रूरतों से परे की कोई सीमा नहीं है; लेकिन अतृप्त चिंता और अंतहीन, अनियंत्रित बेचैनी (उन्हें संतुष्ट करने के लिए आवश्यक) श्रम को माप के बिना कई गुना बढ़ा देती हैं, और कामुकता को बढ़ावा देती हैं, ठीक वैसे ही जैसे लकड़ी डालने से आग की लपटें भड़क उठती हैं (2, 88)।

२. व्यभिचार पर

1. संयम से पवित्रता उत्पन्न होती है; परन्तु अतिभक्षण कामुक वासना की जननी है।

2. तेल दीपक की लौ को पोषण देता है; परन्तु स्त्रियों के संगति काम-वासना की आग को भड़काती है।

3. जैसे एक बिना बोझ वाला जहाज लहरों से इधर-उधर उछाला जाता है, वैसे ही एक अनियंत्रित मन भटकते विचारों से इधर-उधर उछाला जाता है।

4. कामवासना आत्मतुष्टि को अपना बना लेती है, मन के शत्रुओं की पंक्ति में शामिल हो जाती है, और अपने शत्रुओं के साथ मिलकर अंत तक उससे लड़ती है।

5. जो मौन से प्रेम करता है, उसे इस शत्रु के बाणों से भेदना कठिन है; परन्तु जो भीड़ में घुल-मिलता है, उसे इससे अनवरत घाव मिलते हैं।

6. एक स्त्री की दृष्टि एक विषैला बाण है; यह आत्मा को घायल करती है और उसमें विष भर देती है; और यह घाव जितना अधिक गहराता है, उतना ही अधिक नुकसान पहुँचाता है।

७. जो इन बाणों से अपनी रक्षा करता है, वह भीड़-भाड़ वाली सभाओं में नहीं जाता, न ही त्योहारों पर बेमतलब घूमता है। क्योंकि त्योहारों का सम्मान करने की सोचते हुए, अपने दुश्मनों का आसान शिकार बनने से तो बेहतर है कि घर पर चुपचाप रहकर प्रार्थना में मन लगाना।

8. यदि आप पवित्र रहना चाहते हैं तो स्त्रियों के साथ मेलजोल से बचें, और उन्हें कभी भी आपको बेधड़क संबोधित करने की स्वतंत्रता न दें; क्योंकि शुरुआत में वे या तो वास्तव में एक शर्मीली विनम्रता रखती हैं, या उसका दिखावा करती हैं, लेकिन बाद में वे कुछ भी करने की हिम्मत कर लेती हैं। – और यह आपके लिए मृत्यु की ओर ले जाने वाला एक जाल बन जाता है, एक धूर्तता से बुना गया जाल जो आपको विनाश की ओर खींचता है। उनके विनम्र शब्दों से आपको धोखा न खाने दें; क्योंकि उनमें भी एक जानवर का दुष्ट विष छिपा होता है (अंतराल से निकला एक जानवर)।

९. जवान होते हुए भी किसी जवान स्त्री के पास जाने से तो जलते हुए आग के पास जाना बेहतर है: क्योंकि आग के पास जाते समय उसकी जलन का दर्द महसूस करके, तुम तुरंत पीछे छलाँग लगा दोगे; लेकिन किसी स्त्री की बातों में बहककर, तुम तुरंत वहाँ से नहीं जाओगे।

10. पानी के किनारे उगी घास मुरझा जाती है, और स्त्रियों की संगत में व्यभिचार की कामना उत्पन्न होती है।

11. जो अपना पेट भरकर ब्रह्मचर्य का व्रत लेता है, वह ऐसे है जैसे कोई भूसे से आग की लपटों को रोकने का दावा करे। जैसे भूसे से फैलती आग की लपटों को रोकना असंभव है, वैसे ही तृप्ति से कामवासना की जलती हुई इच्छा को रोकना असंभव है।

12. एक स्तंभ अपनी नींव पर टिका रहता है – और कामुक वासना तृप्ति पर टिकी रहती है।

13. लहरों से उछाला हुआ जहाज बंदरगाह की ओर जल्दी करता है, जबकि एक पवित्र आत्मा निर्जनता की खोज करता है। जहाज समुद्र की खतरनाक लहरों से भागता है, जबकि आत्मा उन महिलाओं के चेहरों से भागती है जो विनाश लाती हैं।

14. सुसज्जित स्त्री का दर्शन लहरों से भी अधिक विनाशकारी है। जीवन के प्रति प्रेम से कोई लहरों से तैरकर बाहर निकल सकता है; लेकिन स्त्री का आकर्षक दर्शन जीवन को भी भुला देने का कारण बनता है।

15. एक मरुस्थलीय झाड़ी आग की लपटों से सुरक्षित है – और एक ब्रह्मचारी पुरुष, महिलाओं से दूर, कामुकता की भावना के प्रज्वलन से सुरक्षित है: क्योंकि जैसे आग की याद मन को नहीं जलाती, वैसे ही जब भावना को कोई ईंधन नहीं मिलता तो उसकी कोई शक्ति नहीं होती।

१६. यदि आप अपने विरोधी पर दया दिखाते हैं, तो आपका एक शत्रु होगा; और यदि आप इस वासना को क्षमा करते हैं, तो यह आपके विरुद्ध उठ खड़ी होगी।

17. एक स्त्री का दर्शन अनियंत्रित लोगों में अश्लील वासना को जगाता है, लेकिन पवित्र लोगों को ईश्वर की महिमा की ओर उन्मुख करता है।

18. यदि स्त्रियों के साथ अपने व्यवहार में कामुक वासना शांत बनी रहती है, तो उसके द्वारा दिए गए भावहीन होने के भरोसे को मत करो। क्योंकि भीड़ से घिरा हुआ कुत्ता भी अपनी पूँछ हिलाता है, लेकिन जैसे ही वह भीड़ से निकलता है, वह तुरंत अपनी अंतर्निहित क्रूरता को प्रकट कर देता है।

19. जब किसी स्त्री की स्मृति निर्लिप्त हो जाए, तो यह निष्कर्ष निकालें कि आप पवित्रता के क्षेत्र में प्रवेश कर चुके हैं। लेकिन जब आपके द्वारा मन में बनाई गई उसकी छवि आपकी आत्मा पर हावी हो जाए, तो जान लें कि आप अभी भी इस गुण से बहुत दूर हैं। फिर भी, पहले मामले में भी, ऐसे विचारों में न उलझें, और किसी महिला की छवि के साथ मन में बहुत देर तक बात न करें; क्योंकि यह वासना बार-बार लौटना पसंद करती है, और इससे होने वाला खतरा हमेशा बना रहता है।

20. जैसे मध्यम स्तर का पिघलाना चाँदी को शुद्ध करता है, जबकि अत्यधिक पिघलाने से वह नष्ट हो जाती है; उसी प्रकार ब्रह्मचर्य की आदत किसी महिला की लंबे समय तक मन में बनी रहने वाली छवि को भी बिगाड़ देती है।

21. मन में आई छवि पर अधिक देर तक न टिकें, कहीं ऐसा न हो कि वह आपके भीतर कामवासना की ज्वाला प्रज्वलित कर दे और आपकी आत्मा के खलिहान को आग लगा दे।

२२. जैसे भूसे में लंबी देर तक रहने वाली चिंगारी आग का गोला बना देती है, वैसे ही किसी स्त्री का दीर्घकालिक स्मरण कामवासना को प्रज्वलित कर देता है।

* * *

२३. यदि तुम तपस्या के श्रम द्वारा आत्मा के विरुद्ध कामना करने वाले शरीर को वश में करते हो, तो इस युग के बाद तुम धन्यवचन में प्रतिज्ञा की गई महिमा प्राप्त करोगे, उस व्यक्ति के रूप में जिसने अपने शरीर के भीतर उस वस्तु के विरुद्ध युद्ध में विजय प्राप्त की है, *जो 'तु□□ँके मन के नियम के विरुद्ध युद्ध करती है'*, और आपको *'आपके अंगों में विद्यमान पाप के नियम'* (रोमियों 7:23) *का* दास बना देता है (1, 230)।

24. समझो कि व्यभिचार के कुछ रूप एक साथ मिल जाते हैं—शारीरिक व्यभिचार और आध्यात्मिक व्यभिचार। जब एक व्यभिचारी विचार आपकी आत्मा में मिल जाता है, तो आपकी आत्मा उसमें मौजूद मोहक छाप के साथ एक हो जाती है (1, 247–8)।

25. दानव आत्मा को अपने साथ मलिन के लिए बहकाने के उद्देश्य से एक महिला का रूप धारण करता है। एक निराकार दानव कामुक विचारों के माध्यम से आत्मा को व्यभिचार में ले जाने के लिए एक महिला का रूप धारण करता है। इसलिए, किसी ऐसे भ्रम से बहक न जाएं जिसका कोई आधार नहीं है, कहीं ऐसा न हो कि आप शरीर में भी कुछ ऐसा ही कर बैठें। जो भी लोग क्रूस से आंतरिक व्यभिचार को दूर नहीं करते, वे व्यभिचार की आत्मा से बहकाए जाते हैं।

26. अपने विचारों को अल्प भोजन से दंडित करो, ताकि वे व्यभिचार के बारे में न सोचें, बल्कि भूख के बारे में सोचें।

27. अपनी आँसुओं को प्रार्थनापूर्ण जागरण के साथ मिलाओ, ताकि इस सच्ची लड़ाई में तुम्हें सहायता मिल सके।

28. वासना के विरुद्ध युद्ध के दौरान, भोज के निमंत्रणों को अस्वीकार करें।

29. कामवासना का दैत्य उत्साही तपस्वी योद्धा पर तेजी से आक्रमण करता है, अचानक उस पर कामवासना के तीरों की वर्षा करता है, क्योंकि वह तपस्वी के श्रम से उत्पन्न होने वाली दिव्य अग्नि की जलती हुई गर्मी को अधिक समय तक सहन नहीं कर सकता; और जिस व्यक्ति का संयम की कठोरता में वासना की मोहक मिठास से कमजोर हो जाता है, उसके हृदय में यह राक्षस धीरे-धीरे प्रवेश कर उससे संवाद करता है, ताकि वह दुष्ट इच्छाओं से प्रज्वलित होकर, उनके साथ संवाद करने, उनसे मोहित होने और इस पाप के प्रति अपनी घृणा को पूरी तरह से त्याग देने के लिए स्वयं को समर्पित कर दे (1, 252–3)।

30. यह सबसे खतरनाक है जब हृदय कामुक सुखों की आदत में फँस जाता है, और इस (उग्र) खर-पतवार को जड़ से काटने के लिए बहुत प्रयास करना पड़ता है।

31. अपने विचारों को वासना के सुखों में संलग्न होने की आदत न डालें, क्योंकि (उत्कट) विचारों और हलचलों की भीड़ के बीच एक आग भड़क उठती है (भजन संहिता 105:18)। आपको भड़काकर, वे आपको यह सोचने पर मजबूर कर देंगे कि शरीर की आग को रोकना मुश्किल है, कि आप अब अपनी स्वाभाविक प्रवृत्तियों का विरोध करने में सक्षम नहीं हैं - और यह कि यद्यपि आप आज आवश्यकता के कारण पाप कर सकते हैं, आप कल आज्ञा के अनुसार पश्चाताप करेंगे। क्योंकि (ईसाई) कानून दयालु है - यह पश्चाताप करने वालों के पापों को सहजता से क्षमा कर देता है। साथ ही, वे एक उदाहरण के रूप में यह भी पेश करेंगे कि कैसे कुछ लोग, संयम का अभ्यास करने के बाद, पाप में गिर गए और फिर से पश्चाताप किया, जिससे उनके धोखाधड़ी भरे परामर्श को विश्वसनीयता मिलती है; ताकि, पश्चाताप के माध्यम से आसानी से लौटने की इस आशा से प्रतिरोध के संकल्प को तोड़कर, वे पवित्रता के मंदिर को व्यभिचार का अड्डा बना सकें (1, 253–4)।

32. हे तपस्वी मनुष्य, प्रायश्चित के बहाने अज्ञात आशाओं से धोखा न खाओ। क्योंकि कई लोग, गिर जाने के बाद, तुरंत मृत्यु द्वारा छीन लिए जाते हैं, जबकि अन्य (अपने पतन से) उठ नहीं पाए, क्योंकि वे कामुक सुखों की अपनी आदत से, एक कानून की तरह, बँधे हुए थे। हे मनुष्य, तुम्हें कैसे पता है कि तुम जीवित रहोगे, या तुम पश्चाताप

करोगे, कि तुम अपने जीवन के वर्षों की सीमा निर्धारित करोगे? – इसमें पड़कर, तुम अपने शरीर की तुष्टि करते हो, जबकि तुम्हें इसके बजाय मृत्यु के स्मरण को समर्पित होना चाहिए, ताकि तुम अपने हृदय में भयानक न्याय की अधिक स्पष्ट कल्पना कर सको, और इस प्रकार अपने प्रज्वलित शरीर की कुटिलता को बुझा सको।

33. सृष्टिकर्ता ने हम और पशुओं दोनों के लिए एक ही प्राकृतिक जीवन-शैली निर्धारित की है; *'मैं तुम्हें,'* ईश्वर मनुष्य से कहते हैं, *'मैदान में हर पौधा देता हूँ: यह तुम्हारे और पशुओं के लिए भोजन होगा'* (उत्पत्ति 1:29–30)। इसलिए, मूक प्राणियों के समान पोषण प्राप्त करके, और उसे अपनी बुद्धिमत्ता से अधिक भव्य बनाकर, क्या यह उचित नहीं है कि हमें मूक प्राणियों से भी कम तर्कशील माना जाए, यदि वे (जानवर) प्रकृति की सीमाओं के भीतर रहें, ईश्वर के विधान का उल्लंघन न करें, जबकि हम—मानव, जिन्हें विवेक की संपदा प्राप्त है—प्राचीन नियम से पूरी तरह विमुख हो गए हैं? मूक प्राणियों के पास कौन-सी स्वादिष्ट वस्तुएँ हैं? कौन से बेकर और रसोइए, हज़ारों कलाओं से, उनके छोटे पेटों के लिए स्वादिष्ट व्यंजन तैयार करते हैं? क्या वे उस प्राचीन संयम से प्रेम नहीं करते, घास खाकर, जो कुछ भी मिलता है उससे संतुष्ट रहकर, और पानी पीकर—और वह भी बहुत कम? इसीलिए वे कामुक सुखों में कम लिप्त होते हैं, किसी भी तृप्तिदायक भोजन से अपनी इच्छाओं को प्रज्वलित नहीं करते, और हमेशा नर और मादा के बीच अंतर नहीं करते। क्योंकि यह इच्छा उन्हें वर्ष में एक समय पर ही प्रदान की जाती है, जब प्राकृतिक नियम, प्रजाति को बनाए रखने के साधन के रूप में, यह निर्धारित करता है कि उन्हें अपनी तरह की संतान पैदा करने के लिए संभोग करना चाहिए; हालाँकि, अन्य समय में, वे एक-दूसरे से इतनी अधिक दूरी बनाते हैं कि वे इस इच्छा को पूरी तरह से भूल जाते हैं। लेकिन मनुष्यों में, भव्य दावतों ने कामुक भोग की एक अतृप्त लालसा पैदा की है, जो उन्मत्त इच्छाओं को भड़काती है और कभी भी इस जुनून को शांत नहीं होने देती (2, 90)।

३. धन के प्रेम पर

1. लालच सभी बुराइयों की जड़ है; मुरझाई हुई टहनियों की तरह, यह अन्य सभी भावों को पोषण देती है और उससे जो पनपा है, उसे मुरझाने से रोकती है।

2. जो व्यक्ति कामनाओं को जड़ से मिटाना चाहता है, उसे पहले इनके स्रोत को ही उखाड़ फेंकना चाहिए; लेकिन जब तक धन की लालच बनी रहेगी, तब तक आप शाखाओं को काटने से कुछ भी हासिल नहीं करेंगे; क्योंकि भले ही उन्हें काट दिया जाए, वे जल्द ही फिर से उग आएँगी।

3. धन के लालची एक भिक्षु की उपमा अतिभारित जहाज के समान है, जो तूफान से उठने वाली लहरों से आसानी से डूब जाता है।

४. लोभ से मुक्त एक भिक्षु एक हल्का यात्री होता है, जो जहाँ भी जाता है आश्रय पा लेता है।

5. एक लालच रहित भिक्षु एक ऊँची उड़ान भरने वाला गरुड़ है, जो केवल भोजन की आवश्यकता से विवश होने पर ही नीचे उतरता है।

6. ऐसा व्यक्ति सभी प्रलोभनों से ऊपर होता है, सांसारिक सभी चीजों का तिरस्कार करता है, और, ऊँची उड़ान भरते हुए, सभी सांसारिक चीजों से अलग हो जाता है और दिव्य के साथ निवास करता है; क्योंकि उसके पंख हल्के हैं, चिंताओं का बोझ उन पर नहीं है।

7. जब दुख आता है, तो वह शोक के बिना उस स्थान को छोड़ देता है; जब मृत्यु आती है, तो वह संतुष्ट होकर यहाँ से चला जाता है, क्योंकि उसने अपनी आत्मा को किसी भी सांसारिक बंधन से नहीं बाँधा है।

8. परन्तु लोभी मनुष्य चिन्ताओं में उलझा रहता है, और एक कुत्ते की तरह जंजीरों में बंधा रहता है; यदि उसे हिलने के लिए मजबूर किया जाए, तो वह अपने सामान की दुखद याद को अपने साथ ले जाता है, जैसे कोई भारी और बेकार बोझ।

९. जब मृत्यु आती है, तो वह पछतावे के साथ वर्तमान को छोड़ता है; वह अपनी आत्मा त्याग देता है, फिर भी उसकी आँखें अपनी संपत्ति से कभी नहीं हटतीं – और उसे एक भागे हुए दास की तरह जबरदस्ती खींच लिया जाता है; वह अपने शरीर से तो अलग हो जाता है, पर अपनी संपत्ति से नहीं, क्योंकि उसे खींचकर ले जाने वालों से भी अधिक मजबूती से उसका जुनून पीछे रोकता है।

10. समुद्र कई नदियों का जल ग्रहण करने पर भी नहीं भरता, और लोभी मनुष्य की लालच उस धन से भी नहीं मिटती जो उसने पहले ही इकट्ठा कर लिया है; उसे दोगुना करने के बाद, वह उस दोगुनी रकम को फिर से दोगुना करने की इच्छा रखता है; और वह इसे दोगुना करना तब तक बंद नहीं करता जब तक मृत्यु इस व्यर्थ श्रम को समाप्त नहीं कर देती।

11. एक विवेकी संन्यासी केवल शरीर की आवश्यकताओं पर विचार करता है - और अपने खाली पेट को रोटी और पानी के अलावा कुछ नहीं खिलाता।

12. वह अपने पेट की संतुष्टि के लिए अमीरों की चापलूसी नहीं करेगा, और न ही वह अपने स्वतंत्र मन को कई मालिकों का गुलाम बनाएगा; क्योंकि शरीर की सेवा करने और उसकी स्वाभाविक जरूरतों को पूरा करने के लिए उसके अपने हाथ ही पर्याप्त हैं।

13. लोभ रहित भिक्षु एक चतुर पहलवान और एक तेज धावक होता है, जो शीघ्रता से *'उच्च आह्वान के सम्मान'* (Phil. 3:14) *को* प्राप्त करता है।

14. लोभी भिक्षु अपनी अनेक कमाइयों में आनंदित होता है, जबकि अलोभी भिक्षु सफलता के मुकुटों में आनंदित होता है।

15. जो भिक्षु लाभ के लिए उत्सुक है, वह कड़ी मेहनत करता है, जबकि संसार से परे रहने वाला भिक्षु अपना समय प्रार्थना और अध्ययन में व्यतीत करता है।

16. जो भिक्षु धन से प्रेम करता है, वह अपनी कोषगृहों को चाँदी से भरता है, जबकि लालच रहित व्यक्ति स्वर्ग में खजाना इकट्ठा करता है।

17. धिक्कार है उस पर जो मूर्ति बनाता है और उसे *'गुप्त रूप से'* स्थापित करता है (व्यवस्थाविवरण 27:15)। लेकिन यही बात उस पर भी लागू होती है जो धन के प्रेम के जुनून को पालता है। पहला व्यर्थ में एक झूठे देवता की पूजा करता है, जबकि दूसरा गुप्त रूप से अपने दिल में धन का सपना पालता है, मानो वह एक मूर्ति हो।

* * *

18. लालच रहित व्यक्ति निश्चिंत जीवन जीते हैं, जबकि लालची व्यक्ति के लिए धन की चाह एक निरंतर पीड़ा है (1, 237)।

19. जब आप सांसारिक चीजों की चिंताओं को अपने हृदय पर हावी नहीं होने देते, तो आप विचारों की भीड़ को बंधक बना लेते हैं। जब आप संपत्ति के स्वामी होने की इच्छा का त्याग करते हैं, तो आप बिना किसी विचलन के अपना भार उठाएंगे।

20. सांसारिक लाभ का विचार आपके लिए वृद्धावस्था और बीमारी की भविष्यवाणी करता है, ताकि आप ईश्वर में अपनी आशा को संपत्ति में अपनी आशा के साथ विभाजित कर सकें।

21. जिसने संसार का त्याग कर तपस्या का जीवन चुना है, वह विश्वास से आच्छादित रहे, प्रेम से दृढ़ और आशा से स्थिर रहे। विश्वास शून्य में रहना नहीं है, बल्कि धैर्यपूर्ण आशा और जीवंत प्रेम के साथ, सबसे उत्तम वस्तुओं के स्वामी होने का एक अटूट विश्वास है।

२२. जब आप सभी चीज़ों का त्याग कर दें, तो उन अंधेरे विचारों पर ध्यान न दें जो आपकी गरीबी के लिए आपको कोसेंगे, और आपके सामने आपकी वर्तमान परिस्थितियाँ—हर चीज़ में कमी, दरिद्रता और अपमान—रखेंगे, ताकि, ऐसी द्वेषपूर्णता के माध्यम से, वे आपको इस गौरवशाली सद्गुण पर पछतावा करने के लिए प्रेरित कर सकें। लेकिन यदि आप ऐसे तपस्या की बुद्धिमित्ता पर मनन करते हैं, तो आप जल्द ही पाएँगे कि जिन बातों के लिए आपको कोसा जाता है, उन्हीं के लिए आपके लिए एक मुकुट बुना जाएगा।

२३. आइए हम सांसारिक मामलों को एक ओर रख दें और आध्यात्मिक आशीर्वादों की ओर मुड़ें। हम कितने समय तक बचकाने खेलों में मग्न रहेंगे, बिना थोड़ा भी पुरुषोचित सोच अपनाए? बचपन में, पासा, गेंद और इसी तरह की चीजें मनोरंजन का काम करती हैं - और बच्चे ऐसी चीजों के शौकीन होते हैं जब तक वे परिपक्व नहीं हो जाते। लेकिन जब कोई पुरुष परिपक्व हो जाता है, तो वह इन सबको त्याग देता है और खुद को महत्वपूर्ण कार्यों के लिए पूरी तरह से समर्पित कर देता है। फिर भी हम सभी बचपन में ही अटके रहते हैं, बचपन की चीजों पर आश्चर्य करते हैं और उस चीज़ के बारे में चिंता करने के लिए तैयार नहीं हैं जो बेहतर है—जो पुरुषों के योग्य है। जिस प्रकार एक परिपक्व पुरुष को राख के ढेर पर बैठकर राख में बचकाना खेल बनाते देखना शर्मनाक है; उसी प्रकार, या उससे भी अधिक शर्मनाक, उन लोगों को देखना है जो शाश्वत आशीर्वादों के आनंद पर अपनी दृष्टि टिकाए हुए सांसारिक चीजों की धूल में लोट रहे हैं, और ऐसे कार्यों की अनुचितता से अपने संकल्प की गरिमा पर कलंक लगा रहे हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि इसका कारण यह है कि हम दिखाई देने वाली चीज़ों से अधिक महत्वपूर्ण किसी भी चीज़ की कल्पना नहीं कर सकते; हम वर्तमान आशीर्वादों की तुच्छता और परलोक में मिलने वाली आशीर्वादों की श्रेष्ठता से अनजान हैं; और, यहाँ सम्मानजनक माने जाने वाले वैभव से अंधा होकर, हम अपनी पूरी इच्छा के साथ उससे चिपके रहते हैं (2, 81)।

२४. तो फरि, आइए हम वर्तमान सुख-सुवधिाओं का त्याग करना शुरू करें; आइए हम संपत्ति और धन, और हर उस चीज़ को नज़रअंदाज़ करें जो हमें खींचती है और हमारे वचिारों को डुबा देती है। जैसे तूफान में, आइए हम माल को फेंक दें ताकि पतवार—मन—और यात्री—हमारे वचिार—बचाए जा सकें। यदि तूफ़ान के दौरान समुद्र में यात्रा करने वाले अपने माल की परवाह नहीं करते और अपने ही हाथों से कीमती सामान को भी समुद्र में फेंक देते हैं, जीवन को संपत्ति से ऊपर रखते हुए, तो फरि हम एक बेहतर जीवन के लिए, उस चीज़ को क्यों नहीं त्यागते जो आत्मा को गर्त में खींचती है? ईश्वर का भय हममें समुद्र के भय जितिना प्रबल क्यों नहीं है? वे, इस क्षणकि जीवन के प्रेम के कारण, अपने सामान के नष्ट होने को अधकि महत्व नहीं देते; परन्तु हम, शाश्वत जीवन की कामना करने का दावा करते हुए भी, तुच्छ वस्तुओं को भी नहीं छोड़ते, बल्कि उस बोझ से अलग होकर उद्धार पाने के बजाय, एक निरर्थक बोझ के साथ ही विनिष्ट होने का निश्चिय करते हैं। – अत; मैं आपसे विनिती करता हूँ, आइए हम सब कुछ त्याग दें। पहलवान मल्लारोधी में कपड़ों में नहीं उतरते; कुश्ती के नियिम उन्हें अखाड़े में नग्न होकर प्रतिस्पर्धा करने के लिए कहते हैं। चाहे गर्मी हो या ठंड, वे इसी तरह उतरते हैं, अपने कपड़े अखाड़े के बाहर छोड़ देते हैं। यदि उनमें से कोई नग्न होने से इनकार करता है, तो उसे कुश्ती करने से भी इनकार करना होगा। लेकिन हम, जिन्होंने प्रयास करने की प्रतिज्ञिा की है, न केवल अपने वस्त्र (संपत्ति) उतारते नहीं हैं, बल्कि अपने कंधों पर हजारों बोझ उठाए, हम युद्ध में उतरते हैं, और इस प्रकार अपने विरोधियों को हमें पकड़ने का हर अवसर प्रदान करते हैं (2, 82–83)।

२५. कोई दुष्टात्माओं से तब कैसे लड़ सकता है, जब इस (धन-संपत्ति) के कारण चारों ओर से उस पर प्रहार होते हैं? कोई लोभ की आत्मा से तब कैसे टकरा सकता है, जब उस पर धन की वर्षा हो रही हो? कोई सभी चिंताओं से मुक्त होकर राक्षसों से तब कैसे आगे भाग सकता है, जबकि वह हज़ारों चिंताओं से बोझिल हो? दिव्य शास्त्र कहते हैं: *'उस दनि नग्न व्यक्ति भाग जाएगा'* (आमोस 2:16)। नग्न वह है जो सांसारिक चिंताओं के अनगिनत फटेहाल कपड़ों में लिपटा नहीं है – नग्न वह है जिसके धन और संपत्ति के बारे में जटिल विचार उसकी गति में बाधा नहीं डालते: क्योंकि दुष्टों के लिए नग्न व्यक्ति को पकड़ना कठिन, वास्तव में असंभव है (2, 83. 84)।

२६. लड़ाई नग्न होकर लड़नी चाहिए, और केवल नग्न होकर ही नहीं, बल्कि अभिषिक्त होकर भी। नग्न होने से यह सुनिश्चित होता है कि विरोधी को पकड़ने के लिए कुछ भी नहीं मिलता, जबकि तेल से अभिषिक्त होने पर, भले ही पकड़ लिया जाए, पकड़ने वाले की पकड़ से फिसलने में मदद मिलती है। इसीलिए प्रतिद्विंद्वी एक-दूसरे पर मिट्टी डालने की कोशिश करते हैं, ताकि धूल से तेल की चिकनाहट को खुरदरा बनाकर, वे अपने प्रतिद्विंद्वी को पकड़ने पर उसे थामना आसान बना सकें। लेकिन वहाँ जो धूल है, वह हमारे संघर्ष में सांसारिक मामलों के अनुरूप है, और जो तेल है, वह यहाँ चिंताओं से मुक्ति के अनुरूप है (2, 85)।

27. चिन्ताओं से मुक्त होना पूर्ण आत्मा की विशेषता है, जबकि चिन्ताओं से दब जाना अधर्मी आत्मा की विशेषता है। पूर्ण आत्मा के विषय में कहा गया है कि वह *'काँटों के बीच कमल के समान है'* (प्रेम गीत 2:2), और इसका अर्थ है एक ऐसी आत्मा जो अनेक बातों में व्यस्त लोगों के बीच, चिन्ताओं से मुक्त होकर रहती है। सुसमाचार में भी, लिली चिंताओं से मुक्त आत्मा का प्रतीक है; क्योंकि कहा गया है: *'यह न तो परिश्रम करती है और न ही सूत कातती है'*, फिर भी यह सोलोमन से भी अधिक महिमा में सुसज्जित है (मत्ती 6:28)। जहाँ तक उन लोगों का सवाल है जिनकी देह संबंधी बहुत सी चिंताएँ हैं, उनके बारे में कहा गया है: *'दुष्टों का सारा जीवन चिंता में बीतता है'* (अय्यूब 15:20)। और वास्तव में, देह संबंधी मामलों के लिए अपनी चिंता को अपने पूरे जीवन तक बढ़ाना दुष्टता है – और भविष्य के लिए बिल्कुल भी चिंता न दिखाना (2:86)।

28. आवश्यकता ही प्राप्ति का मापदंड होनी चाहिए। जो इस मापदंड से अधिक है, वह अतिरिक्त है, जो सहायता करने के बजाय बाधा डालता है। जैसे शरीर के अनुपात में वस्त्र एक आवश्यकता और एक आभूषण दोनों का काम करते हैं, वैसे ही जो वस्त्र चारों ओर से ढीले लटकते हैं, पैरों में उलझते हैं और जमीन पर घिसटते हैं, वे, भद्दे होने के साथ-साथ, सभी कार्यों में एक बाधा बन जाते हैं: इसी प्रकार, शरीर की आवश्यकताओं से अधिक धन भी सदाचार के मार्ग में बाधा है और वस्तुओं की प्रकृति की जांच करने में सक्षम लोगों द्वारा इसकी कड़ी निंदा की जाती है (2, 87)।

29. अनासक्ति से हमारा तात्पर्य अनैच्छिक गरीबी से नहीं है, जो जब आवश्यकता से उत्पन्न होती है, तो आत्मा को कुचल देती है और अनैच्छिक होने के कारण असहनीय मानी जाती है; बल्कि विचारों पर आत्म-नियंत्रण के माध्यम से प्राप्त, थोड़े में संतुष्ट रहने का स्वैच्छिक संकल्प है, फिर भी यह एक ऐसा संतोष है जिसके लिए प्रयास की आवश्यकता होती है, और यह तब तक जारी रहता है जब तक कि अभ्यास, एक आदत बनकर, उस चीज़ को सहनीय नहीं बना देता जो लंबे समय तक कठिन और असहनीय लगती थी। केवल शारीरिक सुंदरता ही आकर्षित नहीं करती है,

बल्कि धन का वैभव भी उतनी ही प्रबलता से इच्छा को जगाता है - और दोनों ही मामलों में, उनके आकर्षण के आगे न झुकने के लिए एक साहसी आत्मा की आवश्यकता होती है।

30. सचमुच, जो इस क्षेत्र में विजय प्राप्त करते हैं, उन्हें महान और साहसी कहा जाना चाहिए, जबकि विचार संघर्ष करते हैं और बहस करते हैं, प्रभावशाली तर्कों का उपयोग करते हुए जैसे कि वे भौतिक गतिहीन हों, यह साबित करने का प्रयास करते हुए कि किसी को भीड़ की राय से सहमत होना चाहिए, और जो अच्छा प्रतीत होता है उसे वास्तव में अच्छा मानना, सर्वसम्मति से सम्माननीय माने जाने वाले को अस्वीकार न करना, सृष्टिकर्ता स्वयं द्वारा उपयोग के लिए दिए गए का परित्याग न करना, और जिसे किसी विशेष उद्देश्य के लिए, और व्यर्थ नहीं, अस्तित्व में लाया गया है, उसके अधिग्रहण की व्यर्थ निंदा न करना। ये तपस्वी वास्तव में प्रशंसा के पात्र हैं, क्योंकि उन्होंने अपने विरोधियों के सामने घुटने नहीं टेके, अपने मार्ग से नहीं भटके, और अपने शत्रुओं के हाथों नहीं पड़े। स्वस्थ विवेक के आधार पर दृढ़ता से स्थापित होकर, वे सांसारिक संपत्ति के मोह में नहीं पड़े; उन्होंने उथल-पुथल भरे जीवन की अपेक्षा सादगी भरे जीवन को वरीयता दी, और अपनी आवश्यकताओं में संयम के माध्यम से उन्होंने शांति प्राप्त की (2, 99–101)।

31. प्राचीन संतों ने निर्लिप्तता के प्रति अपने उत्साह को इस हद तक ले गए कि उन्होंने एक घर-बारहीन, आश्रयहीन जीवन जिया, प्रकृति द्वारा प्रदान किए गए किसी भी आहार पर जीवित रहे, और जहाँ-जहाँ और जैसे-तैसे भी हो सके, सोने के लिए जगह ढूंढ लेते थे। उनके सिर पर न कोई छत थी, न बिस्तर, न ही मेज़; भेड़ की खाल उनके कपड़े का काम देती थी। वे प्रभु की इस सलाह का पालन करने में बहुत सावधानी बरतते थे: *'आकाश के पक्षियों को देखो... खेत के कमलों पर विचार करो...*।' (मत्ती 6:26-28)। वे ईमानदारी से विश्वास करते थे कि शरीर की आवश्यकताओं के लिए जो कुछ भी आवश्यक था, वह अपने आप मिल जाएगा जब कोई इन चीजों के दाता, परमेश्वर को प्रसन्न करता है, और मुख्य रूप से स्वर्ग के राज्य को प्राप्त करने के लिए चिंतित रहता है (2, 102-3)।

32. फिर भी, हर तरह से पूर्ण संतोष से घिरे हमारे अपने जीवन की तुलना उन धन्य आत्माओं के जीवन से कैसे की जा सकती है—जो शरीर या शारीरिक मामलों के विचारों से परेशान नहीं थे, बल्कि दिव्य की एक शुद्ध लालसा से थे, जो उन्हें अविराम रूप से परम उत्कृष्टता की ओर खींचती थी, और उन्हें यह भूलने के लिए प्रेरित करती थी कि पृथ्वी पर क्या शानदार माना जाता है? उनके पास पृथ्वी पर शरीर के सिवा कुछ भी नहीं था, जिसे प्रकृति ने पृथ्वी से मजबूती से बाँध रखा था; फिर भी वे उसे भी उस स्थान पर अपने साथ ले जाना चाहते थे जहाँ उनका मन स्वर्गीय आशीर्वादों का चिंतन करते हुए विचरण करता था। और वे वहाँ उस आनंद से कभी अलग नहीं हुए होते, यदि प्रकृति उन्हें शारीरिक आवश्यकताओं की संतुष्टि के लिए वापस न ले आती, उस परमपिता के प्रति श्रद्धा से प्रेरित होकर जिन्होंने आत्मा को शरीर से इसलिए बाँधा था कि वह शरीर की भी देखभाल करे, भले ही वे यह जानते थे कि उससे वैराग्य रखना परम लाभदायक था (2, 104)।

३३. शारीरिक आवश्यकता तीव्र गति से बहती है और समाप्त हो जाती है; अतीत की वर्तमान से कोई चिन्ता नहीं, और वर्तमान की भविष्य से कोई चिन्ता नहीं; यह केवल वर्तमान को ही शांत करती है। लेकिन सदाचार का श्रम एक ऐसा बीज है जो अक्षय फसल देता है; – और जब यह किया जा रहा होता है, तब भी यह आनंद की आशा से अंतरात्मा को प्रसन्न करता है, और इस संसार से प्रस्थान पर यह शानदार और शाश्वत आनंद का साधन सिद्ध होता है (2, 105)।

34. चूँकि राज्य की ओर जाने वाला मार्ग इतनी कठिनाइयों से भरा है, संकरा है और हर तरफ़ से खाइयों से घिरा है, तो धन और अन्य संपत्तियों के ढेरों से खुद को बोझिल करके, और इस मार्ग पर इस तरह चलने का प्रयास करने का क्या मतलब है कि आगे बढ़ना असंभव हो जाए? भौतिक चीजों की चिंताएँ, जो मन को भटकाती हैं और व्यक्ति को ज़ोर से नीचे खींचती हैं, गिरावट की संभावना को और भी अधिक बढ़ा देती हैं, खासकर वहाँ जहाँ घटनाओं का क्रम तीक्ष्ण और गंभीर ध्यान की मांग करता है। और ऐसे ध्यान के साथ भी, उफनते पानी के बीच संकीर्ण पथ की कठिनाइयों के कारण, यात्रा शायद ही कभी ठोकरों के बिना आगे बढ़ती है; लेकिन जिन लोगों ने खुद को सांसारिक संपत्ति के अनावश्यक बोझ से बोझिल कर लिया है, उनके लिए गिरावट अपरिहार्य है। वास्तव में, धन प्राप्त करने का कार्य ही स्वयं एक पतन है (2, 111)।

35. भौतिक संपत्ति के प्रति हमारा दृष्टिकोण तीन प्रकार का है: अनासक्ति—इसके उच्चतम और मध्य रूपों में—और एक जीवन जो भौतिकवादी और अत्यधिक संग्रहशील बन गया है। उनकी उत्पत्ति इस प्रकार है। स्वर्ग में, पहले मनुष्य को यही आज्ञा दी गई थी: *'मैदान का पौधा इकट्ठा करो'* (उत्पत्ति 1:29)। जिसने यह आज्ञा दी, उसकी गरिमा इस बात की गारंटी देती है कि मनुष्य के लिए निर्धारित जीवन के लिए ऐसा आहार पूरी तरह से उपयुक्त है। हालाँकि, इस उपयुक्तता की व्याख्या के रूप में हम यह जोड़ सकते हैं कि यह ईश्वर की छवि में बनाए

गए लोगों में वांछित परिष्कार को बनाए रखने के लिए किसी भी अन्य की तुलना में कहीं अधिक अनुकूल था, ताकि विचार की शक्ति हमेशा बिना बोझ के बनी रहे और मन की गंभीरता निर्मल रहे। जब इस प्रकार, शारीरिक जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति अपने आप हो गई, तो मन निष्क्रिय नहीं रहा, क्योंकि उसका सारा समय शारीरिक श्रम से मुक्त था, बल्कि वह निरंतर आध्यात्मिक चिंतन की ओर आकर्षित हुआ, जिसने उसे अक्षय आनंद से भर दिया। ईश्वर स्वयं ने उसके भीतर इस स्वभाव को विकसित किया, और अपनी सद्इच्छा से प्रतिदिन संवाद के लिए उसके पास आते थे। – यही मनुष्य के लिए उचित जीवन का नियम है! – इसके स्वभाव को बदला या समाप्त नहीं किया जा सकता; लेकिन इसके दृश्यमान आचरण का एक अलग तरीका संभव है – जिसे बाद का पतन आवश्यक बना गया। जिसने आज्ञा का उल्लंघन किया और स्वर्ग से निकाल दिया गया, उसके लिए परमेश्वर ने उसकी पतित अवस्था के अनुरूप जीवन का एक अलग तरीका स्थापित किया, और उसे—जिन्होंने अपनी विश्राम का सही उपयोग नहीं किया था—काम और श्रम के द्वारा भोजन प्राप्त करने की आज्ञा दी; क्योंकि वह (स्वर्ग में) जब उसके पास खाली समय होता था और उसे शारीरिक श्रम की आवश्यकता नहीं होती थी, तब वह लगातार ईश्वर की सेवा में और उनके साथ एकता में नहीं रह सकता था। भोजन के लिए, उसे अपनी मेहनत की रोटी दी गई, और वस्त्रों के लिए, चमड़े की कमीज़ें – इस प्रकार लालच और घमंड पर एक सीमा निर्धारित की गई। स्वर्ग के मूल लालच-रहित जीवन को इस तरह के साधारण अधिग्रहण से बदल दिया गया, जो, इसके अलावा, इसमें शामिल कड़ी मेहनत के बावजूद, केवल उस पर ही निर्भर नहीं था, बल्कि सबसे बढ़कर ईश्वर की कृपा पर निर्भर था। व्यावहारिक रूप से, इससे जीवन के तीन तरीकों का जन्म हुआ: कुछ लोग मामूली अर्जन से ही संतुष्ट थे, वे अपनी कड़ी मेहनत करते हुए ईश्वर में अपनी आशा रखते थे; अन्य, जिन्होंने ईश्वर में अपनी आशा को और गहराई से जगाया, उन्होंने सभी प्रकार के अर्जन को पूरी तरह से त्याग दिया (स्वर्गीय गैर-अर्जन को बहाल करने के लिए उत्सुक) और ईश्वर द्वारा उनका पालन-पोषण किया जाता था; एक तीसरे समूह ने, हर तरह के श्रम में खुद को डुबोकर, आवश्यक चीज़ें प्राप्त करने की अपनी आशा इसी पर आधारित कर ली, जबकि अपने जीवन की सुरक्षा के लिए धन संचय पर निर्भर रहे। ईश्वर भुला दिया गया: धन का प्रेम उनके लिए एक ईश्वर बन गया। ये हैं स्वामित्व के प्रति हमारे दृष्टिकोण के उपर्युक्त तीन प्रकार (2, 116–123 – संक्षिप्त)।

36. यहाँ वर्णित दूसरा प्रकार (मुख्य रूप से) एक तर्कशील प्राणी के लिए उपयुक्त व्यवहार दर्शाता है, अर्थात्: अपना समय ईश्वर की सेवा में व्यतीत करना, और ईश्वर की व्यवस्था के कोष से जो कुछ भी मिलना है, उसे प्राप्त करना; अपनी आशा ईश्वर की व्यवस्था में रखना और पृथ्वी को एक उपहार मानना; सृष्टिकर्ता की निष्ठापूर्वक सेवा करना, और स्वैच्छिक भेंटों के माध्यम से सृष्टि की आवश्यकताओं को पूरा करना; यहाँ एक अजनबी बनना, और जिसे स्वर्ग में तैयार किया गया है, उसे अपना सच्चा घर मानना। सृष्टिकर्ता ने इस जीवन को आरंभ से ही निर्धारित किया था – और सभी संतों ने उनका आज्ञापालन करते हुए यह जीवन जिया (उदाहरण: एलिया, एलीशा, भविष्यद्वक्ताओं के पुत्र, यूहन्ना बपतिस्मा देनेवाला, प्रेरित) (2, 124–129)।

37. यही संतों द्वारा अपनाई गई अनासक्ति का *'सर्वोच्च' रूप* है। फिर भी, अनासक्ति का *'मध्यम'* रूप, जो इसके बाद आता है, वह भी बहुत फायदेमंद है, क्योंकि यह समय और आवश्यकता के अनुकूल है। भले ही यह सर्वोच्चता के लिए प्रतिस्पर्धा नहीं कर सकता या श्रेष्ठ जीवन शैली के बराबर होने का दावा नहीं कर सकता, फिर भी यह निस्संदेह सम्मान में दूसरा स्थान रखता है। प्रारंभिक संतों ने (पूर्ण वैराग्य के साथ) केवल आत्मा और उसे बनाने वाले ईश्वर के लिए ही जीवन जिया, शरीर को कोई महत्व नहीं दिया; फिर भी, उसकी देखभाल किए बिना भी, उनके पास उनकी सभी आवश्यकताओं की पूर्ति हो जाती थी—जो गोदामों में पहले से जमा नहीं की गई थी, बल्कि ईश्वर की कृपा से, एक कोष से मिलने की तरह, उचित समय पर प्राप्त होती थी। उनके बाद के संतों ने (दुनियावी चीजों से मध्यम दर्जे का त्याग करते हुए), शरीर की आवश्यक आराम का ध्यान रखते हुए और यह सुनिश्चित करते हुए कि हमारी पशु प्रकृति—यदि उपेक्षित छोड़ दी जाए—उसकी इच्छा के विरुद्ध विनाश में न पड़ जाए जिसने इसे हमसे जोड़ा है, अपने हाथों को केवल उसी हद तक काम में लगाया जहाँ तक शरीर की सेवा के लिए यह बिल्कुल आवश्यक था; परन्तु उन्होंने अपना अधिकांश समय आत्मा की परवाह करने में, प्रार्थना, ईश्वर के चिन्तन और उपयुक्त कार्यों में, अच्छे कर्मों में उत्कृष्टता प्राप्त करने के उद्देश्य से व्यतीत किया (2, 137)।

38. उत्तर वाले, पूरी तरह से देह बनकर, एक सांसारिक मूर्ति की सेवा में पूर्णतःसमर्पित हो गए, वे न केवल अपनी शारीरिक अस्तित्व के लिए पर्याप्त की कामना करते थे, बल्कि उस चीज़ की भी जो उनकी प्रचुरता से उन्हें उतना ही विशिष्ट दिखाए, ताकि, केवल इसी माध्यम से, वे सार्वजनिक दृष्टि में आ सकें। इस प्रकार वे स्पष्ट रूप से अपनी मूर्खता को सार्वजनिक लज्जा के लिए उजागर करते हैं, जो निंदनीय है उसे प्रशंसा का स्रोत मानते हैं, और इस प्रकार ध्यान आकर्षित करने और प्रशंसा अर्जित करने का सोचते हैं—जिसके लिए वे तिरस्कार और उपहास

के पात्र हैं। क्योंकि जिस प्रकार किसी की हैसियत के अनुरूप आचरण अनुमोदन का ठोस आधार प्रदान करता है, उसी प्रकार अपनी हैसियत के अनुपयुक्त आचरण—भले ही वह अन्य मामलों में बुरा न हो—वहाँ अत्यधिक निंदनीय है जहाँ वह अनुचित हो (2, 138)।

39. तो फिर, दोनों ओर से उनके पड़ोसियों में से *'मध्यम-श्रेणी' वाले* किसके अधिक निकट हैं? – निस्संदेह उन लोगों के, जिनके वे अपने आचरण में निकट हैं, और जिनके साथ वे जीवन-शैली में निकट होने का प्रयास करके अपना संबंध घोषित करते हैं। क्योंकि, चूँकि वे दोनों समूहों के बीच एक मध्य दर्जा रखते हैं, वे अब किसी भी ओर समान रूप से झुकाव नहीं रखते; और यद्यपि वे उनसे पीछे रहते हैं जो उनसे पहले हैं, वे सीधे-सीधे उनके पीछे-पीछे चलते हैं, युवा जोश के साथ उनके पदचिन्हों पर चलते हुए, और वे उनसे उतने ही दूर होते हैं जितना कि धावक धीरे-धीरे उन लोगों से दूर हो जाते हैं जो एक स्थिर गति से चल रहे होते हैं, या जो स्थिर खड़े होते हैं। जहाँ तक पहले और बाद वालों की बात है—उनमें कुछ भी समान नहीं है। सांसारिक धन के मालिकों और संसार से परे रहने वालों के बीच क्या मेल हो सकता है ? देह में बुद्धिमानों और आत्मा में बुद्धिमानों के बीच क्या सामंजस्य है? दुनियावी मामलों में उलझे लोगों और निश्चिंत होकर ईश्वर की सेवा करने वालों के बीच क्या समानता है? कुछ, प्रेरितों का अनुसरण करते हुए, जो कुछ भी उन्होंने अर्जित किया है, उसे त्याग देते हैं; अन्य वे चीजें प्राप्त करते हैं जो उनके पास नहीं थीं। कुछ मौन में रहते हैं, आंतरिक रूप से आध्यात्मिक प्रगति के लिए खुद को समर्पित करते हैं; अन्य हर तरह के संघर्ष करते हैं, पैसे और संपत्ति के लिए लड़ते हैं। कुछ लोग स्वर्गीय आशीर्वादों के लिए दुष्टात्माओं से लड़ते हैं; अन्य, सांसारिक आशीर्वादों के लिए, अपने ही लोगों पर हमला करते हैं। कुछ से पॉल कहते हैं: *'ताकि तुम संसार में ज्योतियों के समान चमको'* (Phil. 2:15), अर्थात् जीवन की महिमा से चमकते हुए और जो उन्हें देखते हैं, उनके लिए सकारात्मक प्रतिस्पर्धा का एक उदाहरण बनते हुए; जबकि दूसरों से कहा जाता है: *'मेरे नाम की तुम लोगों के कारण निन्दा होती है'* (रोमियों 2:24), अर्थात्, तुम लोगों के द्वारा जो अपनी बुलावा के विपरीत काम करते हो और एक ऐसा बाहरी रूप धारण करते हो जो तुम्हारे कर्मों का खंडन करता है (2:139–40)।

40. तो फिर, वह कौन सा वचन है जिसका तिरस्कार नहीं किया जाता, जो सांसारिक जीवन का त्याग करने का दावा तो करता है, पर वास्तव में उसकी सुख-सुविधाओं में डूबा रहता है? जो दुनिया को तुच्छ समझने का ढोंग तो करता है, पर सांसारिक मामलों में पागलों की तरह लगा रहता है? जिसने सांसारिक चीजों की परवाह न करने का वादा किया था, पर अपने कर्मों से उस वादे की झूठी होने को साबित करता है? क्या वह दावा करता है कि उसने व्यर्थता को अलविदा कह दिया है, फिर भी उससे अलग नहीं हो पाता? – तुम मिस्र से बाहर आ गए हो – तो फिर, तुम्हारा आलस्य से अभी भी क्या संबंध है? तुम जंगल से होकर वादा किए गए देश की ओर बढ़ रहे हो; तो फिर, तुम व्यर्थ के कामों में लगे हुए क्यों ठहरते हो, और इस लंबी यात्रा में एक सुस्त यात्री क्यों बन जाते हो? क्या आपके सामने का रास्ता इतना देखभाल माँगता है कि आप चौराहे पर भटकते रहें, और अपने विश्राम तक न पहुँच पाने का जोखिम उठाएँ? आपने हल की मूठ पकड़ ली है; तो फिर आप पीछे मुड़ते क्यों हैं, और स्वयं को स्वर्ग के राज्य के लिए अयोग्य बनाते क्यों हैं? आपने पेंटेकोस्ट के उत्साह को पीछे छोड़ दिया है; तो फिर आप पीछे मुड़कर क्यों देखते हैं, यह देखने की लालसा में कि वहाँ क्या हो रहा है? क्या आपने अपना क्रूस उठा लिया है? – तो मसीह का अनुसरण करें, सब कुछ पीछे छोड़कर, क्योंकि मसीह, जिसके साथ आप एक हो गए हैं, सभी से बढ़कर प्रेम किया जाना चाहता है (2, 141–2)।

४१. शरीर को थोड़ी ही सांत्वना चाहिए – इसकी सांत्वना का ध्यान रखो; क्योंकि तुम कुछ समय के लिए शरीर से बँधे हो, ताकि वह सदाचार के अभ्यास में तुम्हारा सहयोगी बने और आत्मा की प्रगति में बाधा न आए। परन्तु जो बैलों के काम में व्यस्त रहता है, प्रतिदिन अपनी भेड़ों के झुंड की गिनती करता है, और अथक परिश्रम से अपनी दाख की बारी, बाग़, खेतों और बगानों की देखभाल करता है, इतना कि इन परिश्रमों के लिए दिन का समय भी पर्याप्त नहीं होता—वह ईश्वर को याद करने के लिए समय कहाँ और कब निकालेगा? वह भजन कब गाएगा? वह प्रार्थना कब करेगा? वह ईश्वरीय चिंतन करने के लिए कितना समय दे सकता है? और भले ही वह अपने कई कर्तव्यों के बीच कभी-कभार ऐसा करने का अवसर पा ले, जब उसके विचार उन कार्यों से अलग नहीं होते हैं जो उसे इतना व्यस्त रखते हैं, तो वह प्रभु को एक शुद्ध प्रार्थना कैसे अर्पित कर सकता है? वह अपनी वासनाओं की गतिविधियों पर कैसे नज़र रखेगा, ताकि बेहतर या बदतर बदलाव के संदर्भ में कल और आज के बीच के अंतर को पहचान सके? वह विचारों के उलझे हुए जाल को कैसे सुलझाएगा, जो लगातार अनगिनत तरीकों से एक-दूसरे की जगह लेते रहते हैं और स्वयं अवलोकन को ही मुश्किल बना देते हैं? या क्या आप यह ध्यान नहीं देते कि कैसे आपके दैनिक कार्य दिन में आपको कुचल देते हैं, और रात में उनके बारे में आपकी चिंता आराम के समय को यातना का समय बना देती है? क्योंकि तब स्मृति—यह याद दिलाती है कि किसने सीमा का उल्लंघन किया है, किसने फसलें बर्बाद की हैं, किसने सिंचाई के लिए पानी के रास्ते बंद कर दिए हैं, किसने चरागाह में ज़हर मिलाया है, कौन कोई अन्य अपराध कर रहा है या कर चुका है,

और कैसे प्रत्येक व्यक्ति ज़िद पर अड़ा है और बहस करता है— – इस प्रकार आत्मा के चिड़चिड़े स्वभाव को उन्मत्त कर देती है, उसे प्रतिशोध के लिए उकसाती है, नींद या आराम के लिए कोई समय नहीं छोड़ती, और प्रार्थना के लिए तो और भी कम, जिसके लिए बड़ी शांति और लंबे समय तक व्यस्त न रहने की आवश्यकता होती है, जो आंशिक रूप से सभी चिंताओं से मुक्ति प्रदान करती है (2, 142–144)।

४. क्रोध पर

1. क्रोध एक उन्मत्त जुनून है; यह आसानी से बुद्धिमानों को भी क्रोधित कर देता है, आत्मा को क्रूर बना देता है, और व्यक्ति को (मित्रतापूर्ण) बातचीत से मुंह मोड़ने के लिए मजबूर करता है।

2. एक तेज हवा स्तंभ को नहीं हिलाती, और न ही जलन उस आत्मा को बहका सकती है जो क्रोध से मुक्त है।

3. पानी हवाओं की ताकत से उथल-पुथल हो जाता है, और चिड़चिड़ा व्यक्ति लापरवाह विचारों से विक्षुब्ध हो जाता है।

4. एक क्रोधित भिक्षु जंगल में एक जंगली सूअर के समान है; वह किसी को देखकर दाँत पीसता है।

5. घनी धुंध हवा को धुंधला कर देती है, और चिड़चिड़ापन क्रोधी व्यक्ति के मन को कठोर कर देता है।

6. एक क्षणिक बादल सूर्य को ढक लेता है, और अनिच्छित कड़वाहट का विचार मन को अँधकारमय कर देता है।

7. चिड़ियाघर में एक शेर लगातार दरवाज़े की कुंडियों को हिलाता रहता है, जबकि अपनी कोठरी में चिड़चिड़ा भिक्षु क्रोध भरे विचारों में खोया रहता है।

8. शांत समुद्र एक सुखद दृश्य है, लेकिन मन की शांतिपूर्ण अवस्था से अधिक सुखद नहीं।

9. शांत समुद्र में डॉल्फ़िन खेलती हैं, और एक शांतिपूर्ण मन में दैवीय विचार उत्पन्न होते हैं।

10. एक दीर्घ-सहिष्णु भिक्षु एक शांत झरना है, जो सभी को एक सुखद पेय प्रदान करता है; लेकिन क्रोधित व्यक्ति का मन हमेशा विक्षुब्ध रहता है और प्यासे को कोई पानी नहीं देता; और यदि देता भी है, तो वह मटमैला और पीने के अयोग्य होता है।

11. क्रोधी की आँखें धुंधली और लाल होती हैं, जो हृदय के उथल-पुथल को दर्शाती हैं; लेकिन धीरज रखने वाले का चेहरा शांत होता है, उसकी आँखें दयालु होती हैं और सीधे आगे देखती हैं।

12. मनुष्य की नम्रता को ईश्वर याद रखते हैं (भजन संहिता 131:1), और क्रोध से मुक्त आत्मा पवित्र आत्मा का मंदिर बन जाती है।

13. मसीह दीर्घ-सहिष्णु आत्मा में अपना सिर झुकाते हैं, और एक शांत मन पवित्र त्रिमूर्ति का निवास स्थान बन जाता है।

14. बदला लेने वाली आत्मा में लोमड़ियाँ वास करती हैं, और परेशान दिल में जंगली जानवर शरण लेते हैं।

15. एक सम्मानित व्यक्ति लज्जास्पद शरण से दूर रहता है, और ईश्वर प्रतिशोधी हृदय से दूर रहता है।

16. गिरता हुआ पत्थर पानी को उछालता है, और कठोर वचन मनुष्य के हृदय को उत्तेजित करता है।

17. अपने प्राणों से क्रोध के विचारों को दूर भगाओ और अपने हृदय में चिड़चिड़ाहट को जड़ जमाने न दो – और प्रार्थना करते समय तुम्हारा मन विचलित नहीं होगा।

18. जैसे धधकते पुआल का धुआँ आँखों को कष्ट देता है, वैसे ही प्रतिशोधी मन प्रार्थना के समय मन को कष्ट देता है।

19. क्रोधित लोगों के विचार साँप के बच्चों जैसे हैं; वे उस हृदय को ही खा जाते हैं जिसने उन्हें जन्म दिया।

20. चिड़चिड़े मनुष्य की प्रार्थना एक घृणित धुआँ है; क्रोधित की भजन-गायन एक अप्रिय ध्वनि है।

21. प्रतिशोधी की भेंट कीड़े-खाया हुआ बलिदान है; उसे शुद्धिकरण के वेदियों के पास न आने दें।

22. चिड़चिड़े व्यक्ति को परेशान करने वाले सपने दिखाई देते हैं, और क्रोधित व्यक्ति जंगली जानवरों के हमलों का सपना देखता है।

23. धीरजवान मनुष्य दर्शन में पवित्र स्वर्गदूतों की सभाओं को देखता है, और जो द्वेष नहीं रखता वह आध्यात्मिक संवाद का अभ्यास करता है, और रात में रहस्यों की व्याख्या प्राप्त करता है।

* * *

२४. जब राक्षस देखते हैं कि हम अपमान की तीव्रता से उत्तेजित नहीं हुए हैं, तो वे चुपचाप हमला करते हैं, हमारे भीतर के शासक तत्त्व (मन) को भड़काने का प्रयास करते हैं, ताकि हम उन लोगों के विरुद्ध अनुपस्थिति में विद्रोह कर दें, जिनके साथ हमने आमने-सामने शांति बनाए रखी थी (१, २२९)।

२५. जब किसी भाई के साथ किसी अप्रसन्नता के कारण हुए विवाद या झगड़े का शांतिपूर्वक अंत हो जाए, तो स्वयं को दोषी मानो, ताकि अपने हृदय की शांति में तुम्हें विचारों का संघर्ष न मिले, जिनमें से कुछ, अपमान की तुच्छता को उजागर करके, आपको इस पर विचार तक न करने के लिए दोषी ठहराएंगे, जबकि अन्य, इसकी गंभीरता पर जोर देकर, इस बात का पछतावा जगाएंगे कि इसका उतनी ही गंभीरता से जवाब नहीं दिया गया।

26. जब समुदाय के किसी भी भाई को तीव्र चिड़चिड़ाहट गहराई से दुखी करती है, तो ऐसे विचार एकांत में रहने वालों को लुभाने लगते हैं, ताकि, जिस प्रकार उन्होंने भाइयों से सौम्य धैर्य छीन लिया है, वे उन्हें प्रेम के मार्ग से भी हटा सकें।

27. जो व्यक्ति सौम्य धैर्य से क्रोध को और प्रेम से शोक को दूर करता है, वह दो सद्गुणों से दो दुष्ट, क्रूर जानवरों को दूर करता है।

28. जो घुटने टेककर दुख पहुँचाने वाले से उसके क्रोध को त्यागने का निवेदन करता है, वह एक ही क्षण में दोनों को क्लेश से मुक्त कर देता है।

29. जो क्रोधित लोगों में मेल कराता है, वह क्रोध की आत्मा पर विजय प्राप्त करता है।

30. जो व्यक्ति शांति के लिए क्रोधित व्यक्ति को सहन करता है, वह वास्तव में शांति का पुत्र है (1, 230)।

31. स्वयं को नम्र और लड़ने के लिए तैयार रहने का प्रशिक्षण दें: लोगों के प्रति नम्र, लेकिन अपने दुश्मन के खिलाफ लड़ने के लिए तैयार; क्योंकि इसमें ही क्रोध का स्वाभाविक उपयोग निहित है, अर्थात् (प्राचीन) सांप का शत्रुतापूर्वक विरोध करना (1, 235)।

32. नम्र लोगों की नम्रता अपने भाई के प्रति प्रेम से उदार होने में निहित है, जबकि उसके विरुद्ध निर्देशित (क्रोधित) विचारों के खिलाफ युद्ध छेड़ने में।

33. नम्र व्यक्ति को लड़ने के लिए भी तैयार रहना चाहिए, नम्रता को दुर्भावनापूर्ण विचारों तक न फैलाते हुए, और स्वाभाविक रूप से अपने पड़ोसियों पर लड़ाई न थोपते हुए।

34. क्रोध के स्वाभाविक उपयोग को अस्वाभाविक में न बदलें; अर्थात्, सांप की नकल करते हुए अपने भाई से क्रोधित न हों, और इस सांप के साथ मिलते-जुलते हुए दुर्भावनापूर्ण विचारों से संबंध न रखें (1, 236)।

35. नम्र व्यक्ति, जब कोई अपमानजनक बात सहता भी है, तो प्रेम को नहीं छोड़ता, बल्कि उसके लिए *'सब कुछ सहता है, सब कुछ विश्वास करता है, सब कुछ आशा करता है, सब कुछ सहन करता है'* (1 कुरिन्थियों 13:4, 7)।

36. यदि प्रेम का काम धीरज रखना है, तो क्रोध में एक भाई के खिलाफ युद्ध करना प्रेम का काम नहीं है।

37. क्रोध शोक और वैमनस्य को भड़काता है, लेकिन प्रेम इन तीनों को दूर भगा देता है।

38. यदि प्रेम में आपकी नींव दृढ़ है, तो जो आपको ठेस पहुँचाता है, उससे अधिक ध्यान उस पर दें।

39. जिसने प्रेम का सद्गुण प्राप्त कर लिया है, वह दुष्टों के विशिष्ट भावों को वश में कर लेता है।

40. जो इन तीन गुणों—विश्वास, आशा और प्रेम—का धनी है, वह एक तीन-दीवारी वाला किला होगा, जो सद्गुणों के मीनारों द्वारा, जैसे कि प्राचीरों से, सुदृढ़ किया गया है।

41. जो कोई दूसरों की बदनामी से घायल होता है, फिर भी इसके स्रोत के रूप में शैतान को दोष नहीं देता, वह केवल दुश्मन को उसके विरुद्ध तीर तैयार करने के लिए और अधिक प्रोत्साहित करता है – क्योंकि उसकी आत्मा ऐसी बदनामी से घायल होकर गिर जाती है (1, 251)।

४२. जब सबसे गंभीर बदनामी या कोई गंभीर अपमान सहन करें, तो रंजिश न रखें, बल्कि उनका आशीर्वाद करें (१, २५२)।

४३. जो राक्षसों से द्वेष रखता है, वह मनुष्यों से द्वेष नहीं रखता; परन्तु जो अपने भाई से द्वेष रखता है, वह राक्षसों के संग मेल रखता है।

44. क्रोध और घृणा हृदय में एक आग हैं, जबकि द्वेष न रखने वालों की आत्मा पर आध्यात्मिक ओस पड़ती है।

45. जैसे जलते हुए कोयले चिंगारियाँ उगलते हैं, वैसे ही क्षमा न करने वाले प्राणी द्वेषपूर्ण विचार उगलते हैं।

46. जैसे बिच्छू के डंक से अत्यधिक पीड़ा होती है, वैसे ही एक प्रतिशोधी आत्मा में सबसे कड़वा विष होता है।

४७. जब दाऊद की निन्दा की गई, तो उन्होंने उत्तर में कुछ नहीं कहा, बल्कि अबीशै की प्रतिशोध की भावना को भी रोका (२ शमूएल १६:१०)। और तुम, जब तुम्हारी निन्दा की जाए, तो न केवल निन्दा का बदला निन्दा से नहीं लेना चाहिए, बल्कि उन लोगों को भी रोकना चाहिए जो तुम्हारा बदला लेना चाहें (१, २२८)।

४८. अपमान को धैर्यपूर्वक सहें, और अपने होठों से क्रोध का द्वार बंद कर दें: इसमें ही आपकी सफलता निहित है।

४९. जो आपको धमकी देते हैं, उन्हें बिल्कुल भी जवाब न दें, ताकि अपनी खामोशी से आप उन मुँहों को बंद कर सकें जो आग उगलते हैं।

50. अपनी जीभ पर काबू रखकर, आप अपने धमकी देने वालों और अपमान करने वालों को सबसे तीव्र पीड़ा पहुँचाएंगे।

51. चुप रहने से आप अपमान से नहीं जला करेंगे; बल्कि आपका अपमान करने वाला आपकी चुप्पी से गहराई से आहत होगा, यह देखकर कि आप कितनी उदारता से उसकी अभद्रता को सहन करते हैं।

५ शोक पर

1. एक दुखी संन्यासी को आध्यात्मिक आनंद का ज्ञान नहीं होता; दुख, हालांकि, आत्मा की निराशा है और क्रोधपूर्ण विचारों से उत्पन्न होता है; क्योंकि क्रोध प्रतिशोध की लालसा करता है; प्रतिशोध न कर पाने से दुख उत्पन्न होता है।

2. शोक सिंह का मुख है, और यह आसानी से शोकग्रस्त को निगल जाता है।

3. दुख हृदय में एक कीड़ा है – और यह उसे जन्म देने वाली माँ को ही खा जाता है।

4. एक माँ अपने बच्चे को जन्म देते समय पीड़ा सहती है, लेकिन जब वह जन्म दे देती है, तो वह अपनी पीड़ा से मुक्त हो जाती है; लेकिन दुख प्रसव के दौरान भी बहुत दर्द पैदा करता है, और जन्म के बाद भी वह उसे उतनी ही पीड़ा से सताता है।

5. एक दुखी भिक्षु को आध्यात्मिक आनंद का ज्ञान नहीं होता, जैसे एक तीव्र बुखार से पीड़ित व्यक्ति को शहद का स्वाद नहीं पता चलता।

6. एक दुखी भिक्षु अपना मन ध्यान में नहीं लगा सकता, और न ही वह कभी शुद्ध प्रार्थना कर सकता है; क्योंकि दुख सभी अच्छे कार्यों में एक बाधा है।

7. पैरों में बेड़ियाँ तीव्र प्रगति में बाधा डालती हैं, जबकि दुख ध्यान में बाधा है।

8. जो बर्बर लोगों द्वारा पकड़ा गया है, वह बेड़ियों में जकड़ा होता है, जबकि वासनाओं का कैदी दुख से बंधा होता है।

९. जब कोई अन्य वासनाएँ नहीं होतीं, तो दुख का कोई प्रभाव नहीं होता, ठीक वैसे ही जैसे जब बाँधने के लिए कुछ नहीं होता तो बेड़ियाँ बाँध नहीं पातीं।

10. जो शोक से बँधा है, वह वासनाओं से पराजित हो जाता है, और अपनी पराजय के प्रतीक के रूप में अपने बंधन को सहन करता है; क्योंकि शोक आत्म-तुष्टि की इच्छा की पूर्ति न होने का परिणाम है, और ऐसी इच्छा हर वासना से जुड़ी होती है।

11. जिसने अपनी इच्छाओं पर विजय प्राप्त की है, उसने अपने भावों पर विजय प्राप्त की है; और जिसने अपने भावों पर विजय प्राप्त की है, वह शोक से पराजित नहीं होगा।

12. संयमी भोजन से वंचित होने पर शोक नहीं करते; ब्रह्मचारी लज्जास्पद कामुकता से बचने पर; अक्रोधी प्रतिशोध न ले पाने पर; विनम्र मानव सम्मान से वंचित होने पर; अलोभी असफलता पर। उन्होंने अपने भीतर की सभी ऐसी इच्छाओं को पूरी तरह से बुझा दिया है – इसीलिए उन्हें कोई दुख नहीं होता; क्योंकि निर्लिप्त व्यक्ति दुख से नहीं भेदा जाता, ठीक वैसे ही जैसे कवच पहने हुए व्यक्ति को तीर नहीं भेदता।

13. एक ढाल योद्धा को सुरक्षा प्रदान करती है, एक दीवार शहर को; लेकिन वैराग्य भिक्षु को ढाल या दीवार से भी अधिक सुरक्षा प्रदान करता है। क्योंकि एक ढाल अक्सर तीव्र गति से उड़ने वाले तीर से छेद हो जाती है, और एक दीवार कई योद्धाओं द्वारा तोड़ दी जाती है, जबकि वैराग्य पर शोक विजय प्राप्त नहीं कर सकता।

14. जिसने अपने कामों पर विजय प्राप्त कर ली है, उसने शोक पर विजय प्राप्त कर ली है; परन्तु जो कामों की मधुरता से वशीभूत हो जाता है, वह उनके बंधन से नहीं बच पाएगा।

१५. जो बार-बार दुखी रहता है, फिर भी निर्लिप्त होने का दावा करता है, वह एक बीमार आदमी की तरह है जो स्वस्थ होने का दिखावा करता है; क्योंकि जिस प्रकार एक बीमार आदमी को उसके चेहरे के रंग से पहचाना जाता है, उसी प्रकार दुख वासना-ग्रस्त व्यक्ति को बेनकाब कर देता है।

16. जो संसार से प्रेम करता है, उसके दुख अनेक हैं, परन्तु जो संसार की सभी वस्तुओं को तुच्छ समझता है, वह सदा आनंदित रहता है।

17. लोभी, हानि होने पर, कड़वे रूप से शोक करता है, जबकि जिसने धन का त्याग कर दिया है वह निश्चिंत रहता है।

18. कीर्ति-लालची अपमान सहने पर दुखी होता है, जबकि विनम्र व्यक्ति इसे एक साथी के रूप में स्वीकार करता है।

19. एक भट्टी अपरिष्कृत चांदी को शुद्ध करती है; और परमेश्वर के लिए शोक पाप में डूबे हृदय को शुद्ध करता है।

20. बार-बार पिघलाने से सीसा की मात्रा कम हो जाती है, ठीक वैसे ही जैसे सांसारिक दुख मन को कमजोर कर देता है।

21. अँधेरा आँखों की रोशनी को कम कर देता है, और दुख मन की चिंतनशील क्षमता को सुस्त कर देता है।

22. सूर्य का प्रकाश पानी की गहराई में नहीं पहुँचता, और न ही मन का उज्ज्वल चिंतन दुख में डूबे हृदय को प्रबुद्ध करता है।

23. हर व्यक्ति को सूर्योदय में आनंद आता है, फिर भी यह भी एक दुखी आत्मा को कोई सांत्वना नहीं देता।

24. पीलिया स्वादेंद्रिय को कुंद कर देता है, और दुख आत्मा से अनुभूति छीन लेता है।

२५. जो सांसारिक सुखों का तिरस्कार करते हैं, उन्हें दुखद विचारों से कष्ट नहीं होता।

* * *

26. जब तुम अपने भीतर विद्यमान त्रिमूर्ति (अर्थात् आत्मा, प्राण और शरीर) को शांति के बंधन द्वारा एक कर लेते हो, तब, दैवी त्रिमूर्ति की आज्ञा के अनुसार अपने भीतर एक होकर, तुम सुनोगे: *'धन्य हैं शांति स्थापित करने वाले, क्योंकि उन्हें परमेश्वर की संतान कहा जाएगा'* (मत्ती 5:9) (1, 230)।

27. शांति का यह बंधन महान है, क्योंकि इसके साथ आनंद आता है, जो मन की आँख को परम शुभ वस्तुओं के चिंतन के लिए प्रबुद्ध करता है।

28. यदि हम कठिन परिस्थितियों में शांति स्थापित करने का आनंद प्राप्त करते हैं, तो हम आसानी से, कृतज्ञता के साथ, अपने ऊपर आने वाले दुखों को दूर कर लेंगे और दुख के गर्जन करने वाले राक्षस को हमारे भीतर प्रवेश करने से रोकेंगे; क्योंकि, आत्मा को निगलने की कोशिश करते हुए, यह दुख के समय में उस पर सबसे क्रूरता से हमला करता है, निराशा की आत्मा के लिए मार्ग तैयार करते हुए, ताकि वे मिलकर आत्मा पर एक गहरी छाया डाल सकें और उसके प्रयासों को नष्ट कर सकें।

29. शांति का आनंद हमारा नियम हो, जो हमारे हृदयों पर लिखा हो: एक ऐसा आनंद जो दुख को दूर भगाता है, क्रोध को शांत करता है, घृणा को दूर करता है, प्रतिशोध की भावना को नष्ट करता है, निराशा को दूर करता है, और शोक को आनंद में बदल देता है (1, 231)।

30. शांति की प्रसन्नता में आश्रित, यह आनंद गुणों का एक महासागर है, जो, एक क्रॉस की तरह, शैतान के विरोधी दलों को डुबा देता है।

31. यह भी समझें कि इस आनंद के विपरीत एक और आनंद है—एक धोखेबाज़ आनंद—और, उसकी छाया से धोखा खाकर, एक को दूसरे से न समझें; क्योंकि राक्षस तो आध्यात्मिक वरदानों की भी नकल करते हैं, ताकि, एक भ्रम से मन को गुमराह करके, वे उसे पागलपन तक पहुँचा सकें। आध्यात्मिक आनंद बिना किसी बाहरी कारण के उत्पन्न होता है, जिसका परम उत्कृष्ट स्रोत ईश्वर के प्रति शोक में मिलता है।

32. ईश्वर के लिए शोक आँसुओं से आत्मा को नया करता है, आने वाली मृत्यु और न्याय के प्रति सतर्क चिंता पैदा करता है, और धीरे-धीरे मनुष्य को उन्हें लालसा के साथ प्रतीक्षा करने का पाठ पढ़ाता है (1, 232)।

33. अधूरी इच्छाएँ दुख को जन्म देती हैं; जबकि प्रार्थना और कृतज्ञता उन्हें मुरझा देती हैं।

34. मध्यस्थ दुख उन लोगों के बीच आता है जो क्रोधित होते हैं। यदि उनमें से पहला व्यक्ति जो होश में आता है, अपने जुनून से ऊपर उठता है और दूसरे की ओर हाथ मिलाने के लिए हाथ बढ़ाता है, तो वह कड़वे दुख को दूर कर देगा।

35. दुख आत्मा और शरीर दोनों की एक बीमारी है; यह आत्मा को कैदी बना लेती है, जबकि यह शरीर को मुरझा देती है, और उसे पीछे छोड़ देती है।

36. दुख अप्रिय चीज़ों (दुर्भाग्य, शोक, कष्ट) से उत्पन्न होता है; दुख से, बदले में, एक उदास मनोवृत्ति आती है (जैसा कि कहावत है: 'उसका मन नहीं लग रहा है'); और इन दोनों से ही बेतुकी झगड़ालूपन (हर बात पर बड़बड़ाना) उत्पन्न होता है।

37. यदि आप दुख और उदास मन की स्थिति पर काबू पाना चाहते हैं, तो दयालु प्रेम को अपनाएँ और कोमल आनंद को अपना आवरण बनाएँ।

38. दुख के समय में विशेष रूप से आभारी रहें: क्योंकि उनके माध्यम से मध्यस्थता की कृपा अधिक स्पष्ट रूप से महसूस होती है। इस प्रकार, कृतज्ञता के माध्यम से आप पर आने वाली पीड़ाओं से दुख को दूर करके, आप साहसी समत्व की शानदार सुंदरता को म्लान नहीं करेंगे।

६. निराशा पर

1. निराशा आत्मा की थकान है; और थकान की अवस्था में एक आत्मा, जो अपनी प्रकृति के अनुरूप चीज़ों से वंचित है, दृढ़ नहीं रह सकती और प्रलोभनों का विरोध नहीं कर सकती।

2. जैसे एक स्वस्थ शरीर के लिए भोजन आवश्यक है, वैसे ही एक साहसी आत्मा के लिए प्रलोभन आवश्यक है।

3. उत्तर की हवा बढ़ते हुए पौधों को पोषण देती है, ठीक उसी तरह जैसे प्रलोभन आत्मा के धैर्य को मजबूत करते हैं।

4. बिना पानी का बादल हवा से बह जाता है, और धैर्यहीन मन निराशा की भावना से बह जाता है।

5. बसंत की ओस खेतों में फसलों के विकास में मदद करती है, जबकि ईश्वर का वचन आत्मा के भाव को ऊँचा उठाता है।

6. निराशा की आत्मा संन्यासी को उसके आश्रम से भगा देती है; परन्तु जो धीरज रखता है, वह सदा मौन में रहता है।

7. निराश व्यक्ति बीमारों से मिलने को बाहर जाने का बहाना बनाता है, लेकिन वास्तव में उसका अपना कोई उद्देश्य होता है।

8. निराशा में डूबा भिक्षु सेवा करने के लिए उत्सुक रहता है और इसे एक आज्ञा मानकर अपनी इच्छा की पूर्ति करता है।

९. एक कोमल हवा कमजोर पौधे को झुका देती है, और भटकने का विचार आसानी से निराश व्यक्ति को बहका ले जाता है।

10. एक अच्छी तरह से जमी हुई वृक्ष हवा की ताकत से नहीं झुकता, और दृढ़ता से जमी हुई आत्माओं को निराशा नहीं सताती।

11. एक भटकता हुआ भिक्षु मुरझाई हुई मरुस्थलीय टहनी के समान है; वह थोड़ी देर के लिए अपनी कुटिया में रहता है, और फिर अनिच्छा से कहीं और चल पड़ता है।

12. एक पौधा जो जगह-जगह ले जाया जाता है, वह फल नहीं देता, और एक भटकता हुआ भिक्षु पुण्य का फल नहीं देता।

13. एक बीमार व्यक्ति एक ही भोजन से संतुष्ट नहीं होता, और एक निराश भिक्षु एक ही कार्य से संतुष्ट नहीं होता।

14. एक कामुक पुरुष एक पत्नी से संतुष्ट नहीं होता, और एक निराश भिक्षु एक कोठरी से संतुष्ट नहीं होता।

15. निराश व्यक्ति की आँखें लगातार दरवाज़े पर टिकी रहती हैं, और उसके विचार आगंतुकों पर टिके रहते हैं; दरवाज़ा चर्र-चर्र करता है, और वह कूद पड़ता है; कोई आवाज़ सुनाई देती है, और वह खिड़की से बाहर झाँकता है, और तब तक उससे हटता नहीं जब तक कि वह उससे ऊब नहीं जाता।

16. उदासीन व्यक्ति, किताब पढ़ते समय, बार-बार हांफता है और झपकी लेता है; वह अपना चेहरा मलता है, अपनी बाहें उठाकर खिंचाई करता है, और किताब से अपनी नज़रें हटाकर दीवार को घूरता है; किताब पर वापस आते हुए, वह थोड़ा पढ़ता है, पन्ने पलटते हुए, किसी शब्द के अंत को देखने के लिए उत्सुक, पन्नों को गिनता है, पूरी शीटों की संख्या का हिसाब लगाता है, लिखावट और सजावट की आलोचना करता है – और अंत में, किताब को मोड़कर, उसे

अपने सरि के नीचे रख लेता है और एक हल्की नींद में चला जाता है, क्योंकि भूख पहले से ही उसकी आत्मा को सताने लगती है और उसे अपने बारे में भी सोचने के लिए मजबूर कर देती है।

17. एक नरिाश भक्षिु प्रार्थना के मामले में आलसी होता है, और अपनी प्रार्थनाएँ कभी नहीं करता।

18. जैसे एक बीमार व्यक्त भिारी बोझ नहीं उठा सकता, वैसे ही नरिाश लोग ईश्वर का कार्य लगन से करने में असमर्थ होते हैं; क्योंकि पहिले की शारीरकि शक्त अिस्त-व्यस्त होती है, जबकि बाद वाले की आध्यात्मकि शक्त विफिल हो चुकी होती है।

19. नरिाशा का उपचार धैर्य है, और साथ ही ईश्वर के भय से, पूर्ण आत्म-अनुशासन के साथ (उत्साह की कमी के बावजूद) अपना कर्तव्य करना भी है।

२०. हर काम में, अपने लिए एक सीमा नर्धािरति करो, और उसे पूरा करने तक उसे मत छोड़ो; इसी तरह, समझदारी और गंभीरता से प्रार्थना करो – और नरिाशा की भावना तुमसे दूर भाग जाएगी।

* * *

21. अपने सभी कार्यों में साहसी धैर्य आपका मार्गदर्शन करे; क्योंकि नरिाशा आपके वरिुद्ध खड़ी है, जो पूरी दुर्भावना से लैस है, और आपके कार्यों पर नजर रखकर, उन सभी की परीक्षा करती है – और यद उिसे कोई ऐसा मलिता है जो धैर्य से सुदृढ़ नहीं है, तो वह उसे असहनीय रूप से भारी बना देती है (1, 233)।

22. जब, दव्यि सेवा के दौरान, नरिाशा की आत्मा आप पर आक्रमण करती है, तो वह आत्मा में फुसफुसाती है कि भजन-गायन एक बोझ है, और आलस्य को आपके उत्साह के वरिुद्ध एक वरिोधी के रूप में खड़ा करती है – और '' आपको भजन-गायन को जल्दी समाप्त करने के लिए उकसाती है ताकि शिरीर को आराम दयिा जा सके, क्योंकि वह, मानो, कसिी कारण से बहुत थका हुआ है।

23. जब हम रात्र जिागरण में हों, तो नरिाशा के कारण सेवा के दौरान न बैठें; क्योंकि तब राक्षस आ जाएंगे, और वचिारों की भूसी इकट्ठा करके, वे तुरंत उन्हें हृदय में बो देंगे।

24. सेवा से पहले जागने पर, हमें अपने हृदयों को उज्ज्वल वचिारों से भरना चाहिए, ताक उिन पर अपना मन केंद्रति करके, हम फरि भजन-गायन में एक उत्साही आत्मा के साथ खड़े हो सकें (1, 234)।

२५. जैसे हमारा बाहरी स्वरूप दूसरों के लिए बोझ न बने, इसके लिए अपने हाथों से परश्रिम करता है, वैसे ही हमारा आंतरकि स्वरूप भी (अपने काम में) परश्रिम करे, ताकि मिन को वचिारों से बोझलि होने न दे; क्योंकि विचार तब आत्मा पर अपना स्वयं का श्रम थोपते हैं, जब वे उसे ईश्वर के अनुरूप वचिारों से वरिक्त पाते हैं (१. २३५)।

26. अपने पड़ोसयिों के प्रत प्रिेम के कारण शारीरकि श्रम की, और ज्ञान के प्रत प्रिेम के कारण मानसकि अनुशासन की खेती करें, ताकि पहिला अजनबयिों की देखभाल करने और आलस्य को दूर करने या पूरी तरह से भगाने के काम आए, जबक दिूसरा चंतिन और वचिारों से मन की पूर्ण शुद्धि के लिए मार्गदर्शक हो।

27. हम एक जगह से दूसरी जगह न भटकें, बल्कि चिुपचाप अपने कामों में परश्रिम करें: क्योंकि आलस्य (और आलस्य) से वचिार हम पर हावी हो जाते हैं (1, 238)।

28. जब वचिार हमें उस स्थान पर जाने के लिए मजबूर करते हैं, जसि उन्होंने पहले अपनी प्रेरणाओं के द्वारा हमें प्रेम करने के लिए प्रेरति कयिा था; तो वे हमें उस पर पछतावा करने के लिए मजबूर करते हैं, ताकि वे हमें सभी बातों में चंचल और नष्फिल बना सकें।

29. स्थान परवर्तिन अधकि शांतपूिर्ण जीवन के लिए नहीं, बल्कि अधकि आध्यात्मकि जीवन के उद्देश्य से कयिा जाना चाहिए (1, 239)।

30. धैर्य, सौम्य स्वभाव और प्रेम दुख के समय में भी फलदायी होते हैं; जबकि निराशा, आलस्य और आत्म-प्रेम आरामदायक जीवन में आनंद पाते हैं।

7. व्यर्थता पर

1. व्यर्थता एक अतार्ककि जुनून है और यह आसानी से हर पुण्य कर्म में मलि जाता है।

2. पानी पर खींची गई रेखा मलि जाती है (और अदृश्य हो जाती है); उसी प्रकार एक व्यर्थ आत्मा के भीतर पुण्य का श्रम भी।

3. छाती में छपिा हुआ सफेद हाथ – और एक छपिा हुआ कर्म प्रकाश से भी अधकि चमकता है।

4. बेल अपने आप को एक पेड़ के चारों ओर लपेटती है, और जब वह शीर्ष पर पहुँचती है, तो वह जड़ को सुखा देती है; और व्यर्थता अपने आप को सद्गुणों पर गूँथती है और उनसे तब तक चिपकी रहती है जब तक कि वह उनसे उनका सारा महत्व छीन नहीं लेती।

5. अंगूर का एक गुच्छा जो ज़मीन पर गिर गया हो, या उस पर पड़ा हो, वह आसानी से सड़ जाता है; उसी तरह सदाचार भी विलासिता से चिपकने पर नष्ट हो जाता है।

6. एक व्यर्थ साधु – बिना मजदूरी का मजदूर – परिश्रम तो करता है पर उसे कोई फल नहीं मिलता।

7. छेद वाली बोरी उसमें डाली गई चीज़ को नहीं थाम सकती, और व्यर्थता सद्गुणों के पुरस्कार को नष्ट कर देती है।

8. अहंकारी का संयम भट्टी के धुएँ के समान है; दोनों ही हवा में गायब हो जाते हैं।

९. हवा मनुष्य के पदचिन्हों को मिटा देती है, और व्यर्थता दान को शून्य कर देती है।

10. चाहे आप पत्थर को कितनी भी ज़ोर से क्यों न फेंकें, वह स्वर्ग तक नहीं पहुँचता - और चापलूस की प्रार्थना भी स्वर्ग तक नहीं पहुँचती।

11. अहंकार एक छिपा हुआ चट्टान है; यदि आप उस पर चोट करते हैं, तो आप अपना माल खो देंगे।

12. एक समझदार व्यक्ति अपना खजाना छिपाता है, जबकि एक धर्मात्मा भिक्षु अपने धर्म के फलों को छिपाता है।

13. अहंकार मनुष्य को छतों पर प्रार्थना करने के लिए प्रेरित करता है; परन्तु जो अहंकार से लड़ता है, वह अपनी कोठरी में प्रार्थना करता है।

14. एक लापरवाह व्यक्ति सार्वजनिक रूप से अपनी संपत्ति का ढंढोरा पीटता है और कई लोगों को उसके प्रति द्वेष रखने के लिए उकसाता है; लेकिन तुम, एक ऐसे रास्ते पर यात्रा करते हुए जहाँ डाकू हैं, अपनी संपत्ति को तब तक छिपाए रखते हो जब तक तुम शांति के नगर में नहीं पहुँच जाते और वहाँ सुरक्षा में अपने सामान का आनंद लेना शुरू कर देते हो।

15. घमंडी की पुण्य-कर्म निराशा में किया गया बलिदान है, जिसे परमेश्वर की वेदी पर नहीं चढ़ाया जाना चाहिए (लैव. 22:22)।

16. निराशा आत्मा की शक्ति को कमजोर कर देती है, जबकि रोगी की व्यर्थता उसे स्वस्थ बना देती है, और एक वृद्ध को एक जवान से अधिक शक्तिशाली बना देती है, बशर्ते कि जो कुछ किया जा रहा है उसके बहुत से गवाह हों: तब उपवास, जागरण और प्रार्थना आसान हो जाते हैं; क्योंकि बहुतों की प्रशंसा उत्साह को जगाती है।

१७. मानव महिमा के लिए अपनी परिश्रमों को व्यर्थ मत जाने दो, और न ही भविष्य की महिमा को निरर्थक प्रशंसा के लिए बदलो; क्योंकि मानव महिमा धूल में बदल जाती है और उसकी कीर्ति पृथ्वी पर फीकी पड़ जाती है, जबकि सद्गुण की महिमा सदा के लिए बनी रहती है।

* * *

18. सच्चा सद्गुण मानवीय प्रशंसा नहीं चाहता और न ही सम्मान में आनंद लेता है – जो बुराइयों की जननी है (1, 226)।

19. सम्मान की शुरुआत लोगों को खुश करने की इच्छा है, और इसका अंत अहंकार है।

20. जो सम्मान की खोज करता है, वह स्वयं को महान बनाता है और इसलिए अपमान सहन नहीं कर सकता।

21. पुण्य-कर्म में परिश्रम आपके लिए सम्मान हो, और लालायित प्रशंसा कलंक हो (1, 227)।

22. शरीर से महिमा की चाह न करो – तुमने जो शरीर के भावों को त्यागने का संकल्प लिया है – बल्कि जो बेहतर है उसकी चाह करो, और यही तुम्हारी महिमा होगी।

23. जो सम्मान चाहता है, वह उन लोगों से ईर्ष्या करता है जो महिमा में उससे आगे हैं, और इस ईर्ष्या में घृणा भी जोड़ता है।

24. सम्मान की प्रबल इच्छा से ग्रस्त, वह किसी को भी अपने से श्रेष्ठ होते नहीं देख सकता, बल्कि वह स्वयं को सर्वोपरि मानता है, ताकि वह किसी से भी नीच न दिखे।

25. वह यह बर्दाश्त नहीं कर सकता कि उससे बेहतर लोगों को उसकी गैर-मौजूदगी में भी सम्मान मिले - और वह आमतौर पर उनके परिश्रम की महिमा को तुच्छ समझ लेता है।

26. कीर्ति-लालची के लिए निंदा सबसे भयंकर घाव है - और वह उसे निंदा करने वाले के प्रति घृणा रखने से खुद को रोक नहीं पाता।

27. कीर्त‌ि-लालची एक क्रूर स्वामिनी का दास होता है, और वह कई तानाशाहों—अहंकार, ईर्ष्या, जलन और हर तरह की बुरी आत्माओं—के पास बेचा जाता है; लेकिन जो कोई भी विनम्रता से महत्वाकांक्षा की आत्मा को वश में करता है, वह राक्षसों की पूरी सेना को भगा देता है।

28. जो कोई नम्रता से स्वयं को सभी का दास बनाता है, वह उसी के समान हो जाता है जिसने स्वयं को नम्र किया और दास का रूप धारण किया (फिलिप्पियों 2:7)।

29. यदि आप स्वयं को एक छोटे पैमाने से मापते हैं, तो आप स्वयं को दूसरों के साथ नहीं मापेंगे।

30. जो कोई आँसुओं के माध्यम से अपनी आत्मा की कमजोरी प्रकट करता है, वह अपने ही परिश्रम को महान नहीं समझता (1, 228)।

31. दुष्टात्माएँ अक्सर विनम्र लोगों को अपमान और दुर्व्यवहार के लिए बाध्य करती हैं, ताकि वे अनुचित तिरस्कार को सहन न कर सकें और अपनी विनम्रता को त्याग दें; लेकिन जो कोई विनम्रता में, साहसपूर्वक अपमान सहन करता है, वह इससे ज्ञान की ऊँचाइयों पर और भी ऊँचा उठाया जाता है।

32. मनुष्य की प्रशंसा का विचार भी अपने भीतर से दूर भगा दो, ताकि उससे पहले कि वह उत्पन्न भी हो, तुम अहंकार के स्वार्थी विचार को दूर कर सको।

33. जब, अपने भावों के कारणों के विरुद्ध संघर्ष करके, आप उन पर विजय प्राप्त करते हैं, तो किसी छलकपट भरे विचार को आपको गौरवान्वित न करने दें, कहीं ऐसा न हो कि उस पर विश्वास करके आप भ्रम में पड़ जाएँ; बल्कि उस पर जिसमें आपने परिश्रम किया है, उसकी कमियों को देखने का प्रयास करें, ताकि आपकी सफलता आंतरिक शत्रुओं द्वारा कलंकित न हो (1, 230)।

34. अन्य लोग, अपनी सफलता के लिए प्रशंसित होकर, समय के साथ आत्मसंतुष्ट हो गए; परिणामस्वरूप, न तो प्रशंसा बची और न ही उनका श्रम किसी काम का रहा।

35. अन्य लोग, अपने ही कर्मों के गर्व से कठोर होकर, स्वयं को महान कल्पना करने लगे; इस बीच, उनका अंतकरण और अधिक कठोर हो गया, दंभ की बीमारी तीव्र हो गई, और उनके विचार, आत्मा की दृष्टि को उसके घावों से हटाकर, प्रशंसा के बहाने उनके सभी श्रमों को लूट लेते थे (1240)।

36. जब आप अपने पापों के लिए सच्ची पश्चाताप करते हैं, तो राक्षस, आपके पश्चाताप के कार्यों को बढ़ा-चढ़ाकर पेश करते हुए, आपके पापों को तुच्छ बताते हैं; और अक्सर वे उन्हें विस्मृति में छिपा देते हैं, या आपको यह विश्वास दिला देते हैं कि वे क्षमा कर दिए गए हैं, ताकि, आपके प्रयासों को कमजोर करके, आप अपनी कमियों पर कड़वे शोक को आवश्यक न समझें।

37. (प्राचीन) सर्प का सबसे तीखा हथियार अहंकार है, जो हमारे सभी प्रयासों के फलों को नष्ट कर देता है। लेकिन जो कोई भी पहले से ही गुप्त पुण्यों की एक प्रति-रणनीति तैयार करता है, वह स्वयं शैतान का सिर काटने के करीब है (1, 241)।

38. अपने तपस्यापूर्ण श्रम की सुगंध को मौन की मुहर के नीचे छिपाकर रखो, कहीं ऐसा न हो कि तुम्हारी जीभ द्वारा प्रकट होने पर, उसे महिमा लूट ले जाए।

39. तपस्या के जीवन का सक्रिय रूप से पालन करते हुए अपनी जीभ को मौन रखें (अर्थात्, अपनी जीभ के बजाय आपके कर्म बोलने दें); क्योंकि उस स्थिति में, मौन में भी, आपके जीवन के विश्वसनीय गवाह आपके कर्म होंगे—आपके साथी तपस्वी। जिसके लिए कोई ठोस कर्म गवाही देते हैं, उसे अपनी जीभ से अपने बारे में गवाही देने की कोई आवश्यकता नहीं है।

४०. अन्य लोग, परिश्रम के बोझ को त्यागकर, अपने आलस्य को अतीत के कर्मों से छिपाने का प्रयास करते हैं, और उन कर्मों को—जो अब मौजूद नहीं हैं—स्पष्ट साक्ष्यों के रूप में अनिश्चितता और अविश्वसनीयता के साथ प्रस्तुत करते हैं।

४१. जैसे आप अपने पापों को लोगों से छिपाते हैं, वैसे ही आपको अपने कर्मों को भी उनसे छिपाना चाहिए। आप अपने शर्मनाक कर्मों को प्रकट करने में शर्म महसूस करते हैं, ताकि आपको निंदा और अपमान का सामना न करना पड़े - जो वास्तव में, आपकी आत्मा के लिए फायदेमंद होगा। अपने कर्मों का प्रदर्शन करने से सावधान रहें, कहीं आत्म-प्रेम का पाप आपकी आत्मा को नष्ट न कर दे। यदि आप अपनी शर्मनाक कमियों को केवल ईश्वर के सामने प्रकट करते हैं, तो लोगों के सामने उनसे लड़ने के अपने संघर्षों को प्रकट न करें, कहीं वे उन्हें विजय का सर्वोच्च गौरव न समझ लें।

४२. कुछ लोग, अपने बुरे व्यवहार के कारण लोगों में कुख्यात हो जाने पर, सदाचार का जीवन इसलिए नहीं अपनाते कि वे तपस्या के कठिन कार्यों के माध्यम से अपने पापी दोषों का प्रायश्चित करें, बल्कि अपने बारे में चलने

वाली निंदा की अफवाहों को चुप कराने के लिए ऐसा करते हैं। लेकिन यदि कोई केवल प्रतिष्ठा के लिए ही धार्मिक कार्यों में संलग्न होता है, तो वह ईश्वर की नहीं, बल्कि लोगों की सेवा करता है (1. 245. 6)।

४३. जो तपस्या जीवन में अपने चेहरे की पीलापन से विशिष्ट हैं, उन्हें मानवीय प्रशंसा से पहले ही उससे मुंह मोड़ लेना चाहिए—अर्थात्, जब, लोगों से मिलने से पहले ही, शत्रु प्रशंसा के प्रेम का विचार डालता है (१. २४९)।

44. जब तुम शराब, तेल और अन्य अधिकताओं से परहेज़ करते हुए बहुत समय व्यतीत कर लेते हो, तब प्रशंसा के विचार, समय का हिसाब लगाते हुए, तुम्हें यह सुझाव देने लगेंगे कि तुम्हें शरीर के लिए अपनी कठोर साधना में ढील दे देनी चाहिए। इन कपटी षड्यंत्रकारियों को इसके बजाय वही कहो जो उनके इरादों को विफल कर सके। इस प्रकार, भाइयों में से एक, जो राक्षसों के विरुद्ध संघर्ष में अपने श्रम के लिए अपने ही आंतरिक विचारों द्वारा प्रशंसित था, ने भजन के वचन बोले: *'जो मुझे यह कहकर लज्जित करते थे, "शाबाश, शाबाश," वे पीछे हट जाएँ'* (भजन संहिता 69:4)।

४५. स्वयं को सुंदर वस्त्रों से न सँवारें, कहीं ऐसा न हो कि आप अहंकार के दानव से और भी स्पष्ट रूप से पराधीनित हो जाएँ; क्योंकि यह वस्त्रों की सुंदरता नहीं है जो यह इंगित करती है कि आप सद्गुणों के वस्त्रों से पराधीनित हैं, बल्कि तपस्या के श्रम, सोने के आभूषणों की तरह, आपकी आत्मा के वस्त्र की सुंदरता की गवाही देते हैं (१, २५६)।

46. जो कोई भी, सक्रिय और चिंतनशील दोनों जीवन का अनुभव कर चुका हो, विचारों को परखने की कला में अनुभवहीनों को सिखाता है, उसे इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि ऐसे ज्ञान के बारे में कोई घमंड न फिसल जाए, और न ही महिमा के लिए इसे दिखाने की कोई इच्छा हो।

४७. जो व्यक्ति शारीरिक कृत्यों को करने में अपने ऊपर सबसे निर्दयता से परिश्रम करता है, उसे प्रशंसा के लिए खुद को थकाना नहीं चाहिए, न ही महिमा से खुद को ऊँचा उठाने देना चाहिए। अन्यथा, राक्षस, इन कृत्यों और महिमा से उसकी आत्मा को फुलाकर और उसके भीतर अपने प्रति और भी अधिक निर्दयता को बढ़ावा देकर, उसे और भी बड़े कृत्य करने के लिए लुभाएंगे, ताकि वह खुद को और भी अधिक गौरवान्वित कर सके। इस उद्देश्य के लिए, वे उसके विचारों के माध्यम से उसके साथ निम्नलिखित आंतरिक संवाद करते हैं: 'जैसे अमुक व्यक्ति ने स्वयं को न बख्शते हुए परिश्रम किया और इस प्रकार अपने लिए इतनी बड़ी ख्याति अर्जित की, कि लोग उसकी मृत्यु के बाद भी आज उसके बारे में बात करते हैं; तो तुम्हें भी तपस्या की चरम ऊँचाइयों तक पहुँचना चाहिए, ताकि तुम अपने लिए कीर्ति प्राप्त कर सको और तुम्हारा नाम महान बनकर तुम्हारी मृत्यु के बाद भी बड़े सम्मान से लिया जाए (1, 268)।

४८. अपने सपनों में, वे किसी और को शिक्षक की कुर्सी पर बिठाते हैं और उसे इस तरह चित्रित करते हैं मानो वह बोल रहा हो—और मानो जनमत उसे उन सभी पर प्राथमिकता दे रहा हो जो अपनी तपस्या के श्रम से प्रसिद्ध हुए हैं और जिनके पास व्यापक ज्ञान है। इस प्रकार, वे उसमें न केवल प्रतिद्वंद्विता की भावना, बल्कि उन सभी के प्रति ईर्ष्या भी जगाते हैं, जिनकी उपलब्धियाँ मनाई जाती हैं और जिनके कार्य प्रशंसा के योग्य हैं, और जिनका विशाल ज्ञान आश्चर्यजनक है (1, 269)।

४९. कभी-कभी ऐसा होता है कि वे शरीर की कामनाओं को सुला देते हैं और भीतर से अशुद्ध विचारों को बाहर खींचते हैं, इस चालाक इरादे से कि तपस्वी यह सोच सके कि, अपने जीवन की कठोरता के माध्यम से, उसने वासना की भावना पर पूरी तरह से विजय प्राप्त कर ली है, उसका हृदय शुद्ध हो गया है और वह संतों की पवित्रता के करीब आ गया है - और वह पवित्रता के सर्वोच्च शिखर पर पहुँच गया है। वे अक्सर ऐसे व्यक्ति को अपने ही कारनामों का अपने आप घमंड करने के लिए मजबूर करते हैं: 'मैंने यह और वह किया है; मैंने इस और उस तरह से प्रयास किया है और खुद को थका दिया है'—फिर भी वे उसे यह जोड़ने की अनुमति नहीं देते: *'मैं नहीं, बल्कि मुझ में जो अनुग्रह है'*। न ही वे उसे उन्हीं मामलों में ईश्वर को अपना सहायक मानने देते हैं जिनके लिए वे उसे घमंड करने के लिए मजबूर करते हैं, ताकि वह अपनी मेहनत में सब कुछ अपनी ही कोशिशों से हासिल करके, सारी प्रशंसा अपने लिए ले सके – और ईश्वर को महिमा न देने की इस विफलता के कारण, वह ईश्वर-निंदा की गहराइयों में डूब जाता है, और मूर्खतापूर्ण ढंग से खुद को आत्म-निर्भर बताकर अपना बड़बोलापन दिखाता है।

५०. जब हृदय में ऐसी महिमा-प्रेमी विचारधाराएँ सुनाई देती हैं और वह उनका विरोध नहीं करता, तो भिक्षु (और विशेष रूप से तपस्वी) मानसिक भ्रष्टता से बहुत दूर नहीं रहता; तब मन इस खतरे में होता है कि वह या तो सत्य मान लिए गए राक्षसी सपनों से, या जागरण के दौरान प्रकट होने वाले भूत-प्रेतों से, या किसी प्रकाशमान रूप में राक्षसों के प्रकट होने से भ्रम में पड़ जाए। क्योंकि शैतान स्वयं, हमें धोखा देने के लिए, कभी-कभी स्वयं को प्रकाश के स्वर्गदूत के रूप में बदल लेता है; यह वादा करते हुए कि, यदि आप उसके सामने झुक जाते हैं, तो वह आपको कोई न कोई वरदान देगा, या आपको एक नए एलिया की तरह, आग की रथ में स्वर्ग तक ले जाएगा। और ऐसा हुआ है कि

जन्हिोंने इसे सच माना, वे सत्य से भटक गए और पागलपन में पड़ गए। इससे बचने के लिए, यह याद रखते हुए कि तपस्या के कार्य प्रेम से क्यों किए जाते हैं, अपने हृदय की पूरी सावधानी से रक्षा करो, कहीं ऐसा न हो कि बाहरी कर्मों में लगे रहने के कारण, तुम भीतर से (बेवकूफ़ी भरी) आत्म-प्रशंसा द्वारा चालाकी से फँस जाओ (1, 270)।

५१. जो शुभ कर्म करते हैं, उन्हें प्रभु उपदेश देते हैं: *'जब तुम प्रार्थना करो, तो अपने भीतर के कक्ष में जाओ, और द्वार बंद करके, अपने पिता से प्रार्थना करो जो गुप्त में है'* (मत्ती ६:६), और आगे: *'जब तुम दान करो, तो अपने सामने तुरही मत बजाओ* (– 2), हमें यह आज्ञा देते हुए कि हम दिखावे के लिए कोई भी अच्छा काम न करें, जैसे कि यह एक हानिकारक कार्य हो। और भविष्यवक्ता कहते हैं, 'जो *अपना इनाम इकट्ठा करता है, वह उसे एक छेददार थैले में इकट्ठा करता है'* (हग्गै 1:6), यह दर्शाता है कि हर परिश्रम (आध्यात्मिक प्रयास और अच्छे कर्मों का) व्यर्थ की शोहरत की भ्रष्ट प्रेरणा से नष्ट हो जाता है – जैसे कि एक छेद वाली थैली के माध्यम से, जो नम्र बुद्धि द्वारा संरक्षित न किए गए हृदय से होकर गुजरती है। नम्र बुद्धि वाला हृदय वास्तव में एक खज़ाना और हर तरफ से एक मज़बूत किला है, *'जहाँ न तो कीड़ा उसे बिगाड़ता है और न ही ज़ंग उसे खाती है, जहाँ न तो चोर सेंध लगाते हैं और न ही चोरी करते हैं'* (मत्ती 6:20)। 'कीड़े' से तात्पर्य उस आत्म-तुष्टि से है जो भीतर उत्पन्न होती है, और लोगों में जो कुछ भी अच्छा है उसे नष्ट कर देती है; और 'चोरों' से—बाहर से आने वाली प्रशंसा, जो मूर्खतापूर्ण अहंकार को जगाकर, अच्छे कर्मों में लंबे समय की मेहनत से एकत्र किए गए आध्यात्मिक खजाने को जल्दबाजी में लूट लेती है। जैसे एक कीड़ा उसी पदार्थ को खा जाता है जिससे वह उत्पन्न हुआ है, और चोर दीवार को खोखला करके बड़ी मेहनत से जमा की गई (भौतिक) संपत्ति को ले जाते हैं: वैसे ही एक विचार, जो अच्छे कर्मों से गर्व को जन्म देता है, उन्हीं कर्मों के मूल्य को नष्ट कर देता है; और मानवीय प्रशंसा, कमजोर मन को खोखला करके, (घुसपैठ करती है) और वहाँ कुछ भी अच्छा नहीं छोड़ती—वह जो वैध साधनों (दरवाजों से) से बाहर से लाया गया था, और जिसे फिर वे कानों के माध्यम से बाहर निकाल देते हैं। लेकिन कोई भी इस जुनून को इस हद तक अपने ऊपर हावी न होने दे कि, दंभ की मीठी बातों के बहकावे में आकर, वे कठोर परिश्रम से अर्जित की गई अपनी सारी कमाई का पूरा नुकसान उठाएँ; परन्तु हर कोई होश में और सतर्क रहे, ताकि वह निन्दकों को, जब वे केवल नीचा दिखाने की कोशिश कर रहे हों, तब ही नष्ट कर दे, इससे पहले कि वे कोई हानि पहुँचा सकें, उन्हें उनके नीचा दिखाने की कोशिश के उसी क्षण, सूर्योदय से पहले, प्रहार करे – और विचार कर्म में बदल जाए (2, 106–7)।

८. अहंकार पर

1. अहंकार आत्मा का एक ट्यूमर (सूजन) है, जो बिगड़े हुए रक्त से भरा होता है; यदि यह परिपक्व हो जाता है, तो यह फट जाएगा और बड़ी परेशानी पैदा करेगा।

2. बिजली की चमक गरज की पूर्वसूचना देती है, ठीक उसी तरह जैसे अहंकार व्यर्थता के आगमन का संकेत देता है।

3. अहंकार अभिमानी को महान ऊँचाइयों पर ले जाता है, और वहाँ से उन्हें गर्त में फेंक देता है।

4. घमंड उन लोगों को पीड़ित करता है जो ईश्वर से मुंह मोड़ चुके हैं और अपने अच्छे कर्मों का श्रेय अपनी ही शक्ति को देते हैं।

5. जैसे कोई मकड़ी के जाले पर पैर रखता है तो वह उसमें फँसकर गिर जाता है, वैसे ही जो अपनी ताकत पर भरोसा करता है, वह भी गिरता है।

6. फलों की भरमार पेड़ की डालियों को जमीन तक झुका देती है, और अनेक सद्गुण मनुष्य की बुद्धि को विनम्र बनाते हैं।

7. सड़ी हुई उपज किसान के काम नहीं आती, और घमंडी की धार्मिकता ईश्वर के काम नहीं आती।

8. फल से लदी टहनी को सहारा थामता है, और ईश्वर का भय एक पुण्य आत्मा को सहारा देता है।

9. जैसे फल का भार टहनी को तोड़ देता है, वैसे ही अहंकार धर्मपरायण आत्मा को गिरा देता है।

10. अपनी आत्मा को घमंड के हवाले मत करो, और तुम भयानक दृश्य नहीं देखोगे; क्योंकि घमंडी की आत्मा परमेश्वर द्वारा त्याग दी जाती है और राक्षसों के आनंद का स्रोत बन जाती है।

11. रात को अहंकारी व्यक्ति हमला करने वाले अनेक जानवरों की कल्पना करता है, और दिन में भयानक विचारों से परेशान रहता है; जब वह सोता है, तो अक्सर चौंककर जाग जाता है, और जब जागता है, तो पक्षी की परछाईं से भी डरता है।

12. एक पत्ते की सरसराहट अभिमानी मनुष्य को आतंकित कर देती है, और पानी की सरसराहट उसकी आत्मा को झकझोर देती है।

13. इस प्रकार, जो व्यक्ति अभी-अभी ईश्वर के विरुद्ध हुआ है और उसकी सहायता को ठुकराया है, वह अब तुच्छ भूत-प्रेतों से भयभीत है।

14. घमंड ने महादूत को स्वर्ग से नीचे गिरा दिया और उसे बिजली की तरह पृथ्वी पर गिरा दिया। लेकिन एक मनुष्य का विनम्रता भाव उसे स्वर्ग तक उठाता है और उसे स्वर्गदूतों के साथ आनंदित होने के लिए तैयार करता है।

15. हे मनुष्य, तू इतनी ऊँची उड़ान क्यों भरता है, और बादलों से ऊपर क्यों उठता है, जबकि तू केवल धूल और राख है?

16. अपने स्वभाव पर विचार कर: तू मिट्टी और राख है, और शीघ्र ही धूल में विलीन हो जाएगा; अब तू गौरवान्वित है, परन्तु थोड़ी ही देर में तू एक कीड़ा बन जाएगा। तू उस देह पर अपना मन क्यों लगाता है जो शीघ्र ही सड़ जाएगी?

17. मनुष्य तब महान होता है जब ईश्वर उसकी मदद करता है; लेकिन जैसे ही ईश्वर उसे छोड़ देता है, उसे अपनी प्रकृति की कमजोरी का एहसास हो जाता है।

18. तुम्हारे पास ऐसा कोई भी अच्छा गुण नहीं है जो तुम्हें ईश्वर से प्राप्त न हुआ हो। तो फिर, तुम दूसरे की चीज़ का ऐसे क्यों घमंड करते हो मानो वह तुम्हारी अपनी हो? तुम ईश्वर की कृपा से मिली चीज़ का ऐसे क्यों घमंड करते हो मानो वह तुम्हारी अपनी उपलब्धि हो?

19. दाता को स्वीकार करो और स्वयं को बहुत बड़ा मत समझो; तुम ईश्वर की रचना हो; अपने स्रष्टा से मुंह मत मोड़ो।

20. ईश्वर आपकी सहायता करता है; अपने उपकारी का इनकार न करें; आप जीवन की ऊँचाइयों पर पहुँचे हैं, लेकिन यह ईश्वर ही था जिसने आपका मार्गदर्शन किया; आप सद्गुणों में उत्कृष्ट हुए हैं, लेकिन यह ईश्वर ही था जिसने आपके भीतर कार्य किया; उसको स्वीकारें जिसने आपको गौरवान्वित किया है, ताकि आप दृढ़ता से ऊँचाइयों पर बने रहें।

21. अपने साथी मानव को अपने ही सार का मानो, और अहंकार के कारण उससे अपना संबंध न इनकार करो।

२२. वह विनम्र है, जबकि तुम प्रतिष्ठित हो; फिर भी एक ही सृष्टिकर्ता ने तुम दोनों को बनाया है।

२३. विनम्र व्यक्ति का तिरस्कार न करो; वह तुमसे अधिक दृढ़ खड़ा रहता है, पृथ्वी पर चलता है, और आसानी से नहीं गिरता; परन्तु घमंडी, यदि वह गिर जाए, तो कुचल जाएगा।

24. एक घमंडी संन्यासी एक निराधार वृक्ष है जो हवा की ताकत को सहन नहीं कर सकता; लेकिन विनम्र बुद्धि एक किला है, जिसमें मनुष्य सुरक्षित रहता है।

25. एक घास का तिनका हवा के झोंके से ऊँचा उठ जाता है, जबकि अहंकारी मूर्खता के भ्रम से ऊपर उठते हैं।

26. फूटा हुआ बुलबुला शून्य में बदल जाता है – और घमंडी लोगों की स्मृति नष्ट हो जाएगी।

27. विनम्र लोगों के शब्द आत्मा के लिए सुखद मरहम होते हैं, जबकि अहंकारी लोगों के शब्द घमंड से भरे होते हैं।

28. नम्र लोगों की प्रार्थना ईश्वर को प्रभावित करती है, लेकिन अहंकारी लोगों की विनती उन्हें अप्रसन्न करती है।

29. विनम्रता घर का मुकुट है, और यह प्रवेश करने वालों को सुरक्षित रखती है।

30. जब आप सद्गुणों की ऊँचाइयों पर पहुँचते हैं, तो आपको सुरक्षा की बहुत आवश्यकता होती है: क्योंकि यदि कोई जमीन पर खड़ा व्यक्ति गिरता है, तो वह जल्द ही फिर से उठ जाएगा, लेकिन जो ऊँचाई से गिरता है, वह मरने के खतरे में होता है।

31. एक कीमती पत्थर सुनहरी जड़त से शोभित होता है, और मनुष्य की विनम्रता अनेक गुणों से दमकती है।

* * *

32. अपने पतन को भूल न जाएँ, भले ही आप पश्चाताप करें; पर अपने पश्चाताप के लिए अपने पाप को रोते हुए याद रखें, ताकि, स्वयं को नम्र बनाकर, आपका अहंकार आवश्यक रूप से कट जाए (1, 240)।

33. जो गिर गए हैं, उन्हें घमंड भरी दृष्टि से न देखो, जैसे कि तुम कोई न्यायाधीश हो, बल्कि एक संयमशील मन से स्वयं पर ध्यान दो - अपने ही कर्मों के परीक्षक और मूल्यांकनकर्ता के रूप में (1, 245)।

34. जब तुम गिरो, तो आह भरो; और जब तुम्हें सफलता मिले, तो अहंकारी न बनो। निर्दोष होने का घमंड न करो, कहीं ऐसा न हो कि वैभव के स्थान पर तुम लज्जा से परिधान पहन लो।

35. विनम्रता के विषय पर बोलने वाले सबसे वाक्पटु व्यक्तियों में से एक ने निम्नलिखित का वर्णन किया: 'एक अत्यंत वाक्पटु पिता को एक विक्षिप्त व्यक्ति ने गाल पर थप्पड़ मारा, जो पागलपन के एक भयंकर दौरे से ग्रस्त था; और पिता, तुरंत मुड़कर, उस व्यक्ति को दूसरा गाल भी थप्पड़ खाने के लिए पेश कर दिया। तब राक्षस, विनम्रता से बिजली की तरह प्रभावित होकर, चिल्लाया और तुरंत ईश्वर की सृष्टि से चला गया' (1, 259–60)।

36. जैसे वे जो पृथ्वी की गहराइयों में उतरते हैं, वहाँ से सोना निकालते हैं, वैसे ही जो स्वर्ण-सदृश विनम्रता में उतरते हैं, वे उससे सद्गुणों को प्राप्त करते हैं (1, 266)।

37. संत पौलुस हमें आज्ञा देते हैं, *'जो पीछे रह गया है उसे भूलकर, जो आगे है उसकी ओर बढ़ो'* (Phil. 3: 13). ऐसे लोग अपनी उपलब्धियों से कम, बल्कि आवश्यकताओं की तुलना में अपनी कमियों से अधिक विनम्र होते हैं, वे अधूरे कार्यों को पूरा करने का ध्यान रखते हैं और जो पहले ही पूरा हो चुका है उस पर अपना ध्यान नहीं लगाते; क्योंकि जो हो चुका है वह अक्सर तुच्छ लोगों को लापरवाही की हद तक घमंडी बना देता है, जबकि जो किया जाना बाकी है वह इस अनिश्चितता से मन को विनम्र बनाता है कि क्या उसे पूरा किया जाएगा, और पूरा होने से पहले ही दुख पैदा करता है। इसलिए, प्रभु, सद्गुणों की ऊँचाइयों पर पहुँच चुके लोगों को घमंड के प्रलोभन से बचाते हुए कहते हैं: *'जब तुम से जो आज्ञा की गई है, वह सब कर चुको, तो कहो, 'हम अयोग्य दास हैं; हमने तो केवल अपना कर्तव्य ही किया है''* (लूका 17:10)। यद्यपि वह हमें इस बात की प्रसन्नता मनाने से नहीं रोकते कि हमारा कर्तव्य पूरा हो गया है, परन्तु वह हमें अपने बारे में बड़ा सोचने की अनुमति नहीं देते। क्योंकि वह कहते हैं कि एक ऋण चुकाया गया है, न कि एक स्वैच्छिक उपहार दिया गया है (2, 112–13)।

38. अहंकार मन को घमंड की हद तक फुला देता है, यह मनुष्य को हर मानव का तिरस्कार करना और अपने साथी मनुष्य को तुच्छ समझकर उस पर घृणा से देखना सिखाता है; यह मनुष्य को बड़े-बड़े विचारों के माध्यम से पागलपन की ओर धकेलता है, उसे ईश्वर के बराबर होने का सपना देखने के लिए प्रेरित करता है, सर्व-सत्पुरुष ईश्वर की व्यवस्था और देखभाल ( ) को स्वीकार नहीं करता, और यह मान लेता है कि, अपने कर्मों के पुरस्कार के रूप में, एक व्यक्ति को अपने कर्मों का उचित प्रतिफल के रूप में जो भी अनुग्रह प्राप्त होता है, वह सब कुछ उसी को मिलना चाहिए; यह उस कार्य और सफलता में ईश्वर की सहायता को स्वीकार करने से इनकार करता है; यह स्वयं को हर अच्छे कर्म के लिए पर्याप्त मानता है; अपनी घमंड में, यह सोचता है कि उसमें सब कुछ करने की शक्ति है, जबकि वास्तव में यह पूरी तरह से शक्तिहीन है। वह पानी का एक बुलबुला है, जो अपने बारे में एक व्यर्थ की राय से फूला हुआ है, जो, यदि उस पर एक साँस भी फूँकी जाए, तो शून्य में बदल जाता है (2, 184)।

3. प्रेरक अध्याय

1. परमेश्वर का भय मानो और परमेश्वर से प्रेम करो, और अपने विवेक के स्पष्ट आदेशों के अनुसार सभी के साथ व्यवहार करो।

2. विश्वास करो कि ईश्वर स्वयं उन सभी कर्मों में तुम्हारे सामने खड़े हैं जो तुम दिन-प्रतिदिन करते हो।

3. प्रशंसा से दूर रहो, लेकिन निंदा से लज्जित होओ और उसे हृदय में ग्रहण करो।

४. जब आप सदाचार का अभ्यास करें तो आनंदित हों, लेकिन डींग न हाँकें, अन्यथा बंदरगाह में ही आपका जहाज टूट जाएगा।

5. आप कानून का पालन करने में जितना अधिक सफल होते हैं, आपको उतना ही अधिक यह पहचानना चाहिए कि आप पूर्णता से बहुत दूर हैं।

6. कोई भी काम शुरू करने से पहले उसके परिणाम पर विचार करो।

7. दिन-रात अपने अंतिम दिन का चिंतन करो, और इस वर्तमान जीवन के प्रति कोई मोह तुम्हें पृथ्वी से बाँध नहीं पाएगा।

8. उन लोगों के साथ मेलजोल न रखो, जिन्हें तुम देख सकते हो कि सज्जन उनसे घृणा करते हैं।

९. चाहे आप कार्य करें, बोलें या विचार करें, किसी को भी हानि पहुँचाने का प्रयास करें।

10. जीवन के फूलों में आनंद न लो; वे तो घास के ही फूल हैं; जैसे ही तुम उन्हें छूते हो, वे मुरझा जाते हैं।

11. दुख के समय धन्यवाद कहो, और तुम्हारे पापों का भार हल्का हो जाएगा।

12. परीक्षाओं में दृढ़ रहो; क्योंकि उन्होंने कई लोगों को, यहाँ तक कि महान लोगों को भी, दृढ़ता या आत्म-नियंत्रण में कमी वाले के रूप में उजागर किया है।

13. ईश्वर की दीर्घ सहनशीलता की आलोचना न करें; क्योंकि यह एक सार्वभौमिक उपचार है।

14. (मानव) जीवन के अव्यवस्था से घृणा करो, लेकिन इसके लिए ईश्वर को दोष न दो।

१५. हमें अपने आप का ध्यान रखना चाहिए, – तब हम दूसरों को दोष नहीं देंगे; क्योंकि हमारे भीतर भी बहुत कुछ ऐसा है जिसके लिए हम दूसरों को दोष देते हैं।

16. तुम्हारे होठों पर सदा एक प्रार्थनात्मक भजन हो; क्योंकि केवल परमेश्वर का नाम लेने से ही दुष्टात्माएँ भाग जाती हैं।

17. हमारी प्रार्थना संयम के साथ की जाए, कहीं ऐसा न हो कि हम परमेश्वर से ऐसी कोई चीज़ माँग लें जो उन्हें अप्रसन्न करे।

18. हमेशा ईश्वर को याद रखो – और तुम्हारा मन स्वर्ग के समान हो जाएगा।

19. अपनी आँखों पर काबू रखें; क्योंकि यदि आप उन पर नज़र नहीं रखते, तो वे इधर-उधर भटकती रहती हैं।

20. अपनी जीभ की रक्षा करो; क्योंकि वह अक्सर वह बात उजागर कर देती है जिसे अनकहा ही रहने देना बेहतर होता है।

21. धर्म-शिक्षा से अपने मन को संवारो; क्योंकि उसमें निरंतर शिक्षा बुराइयों की जड़ें उखाड़ देती है।

22. अपने गुणों को छिपाकर रखें, लेकिन अपने जीवन-यापन के तरीकों के लिए कई गवाह बनाने का प्रयास करें।

23. शरीर के सुखों से घृणा करो; क्योंकि वे शरीर और आत्मा दोनों को अशुद्ध करते हैं।

24. शरीर को केवल वही दें जो आवश्यक हो, न कि वही जो वह वासना से चाहता है।

25. जीवन के सुखों में आनंद न लो; क्योंकि यह मनुष्य को वर्तमान जीवन से बाँधता है, और ये दोनों ईश्वर के प्रति शत्रुता उत्पन्न करते हैं।

26. इस जीवन के आनन्दों से मुंह मोड़ो; क्योंकि ये जीवन के मार्ग पर चलने वालों को फिसलने और गिरने का कारण बनते हैं।

27. यदि तुम्हारे पास धन है, तो उसे खर्च करो; यदि तुम्हारे पास नहीं है, तो उसे संचित मत करो।

28. उपवास को एक हथियार, प्रार्थना को एक दीवार और आँसुओं को स्नान मानो।

29. तुमने जो भी पाप किए हैं, उन्हें सबको विलाप के साथ याद करो; क्योंकि इससे आत्मा में निरंतर पश्चाताप उत्पन्न होता है।

30. गरीबों को सांत्वना दो; क्योंकि वे हमारे प्रति न्यायाधीश को दयालु बनाते हैं।

31. संतों की आवश्यकताओं में भाग लें; क्योंकि उनके माध्यम से ईश्वर के साथ संचार होता है।

32. चर्च में ऐसे प्रवेश करो जैसे स्वर्ग में प्रवेश कर रहे हो, और जब उसमें हो तो सांसारिक किसी भी बात का न तो जिक्र करो और न ही उस पर विचार करो।

33. जीवन की आवश्यकताओं के लिए पर्याप्त रखने को आवश्यक समझो; परन्तु इन बातों की चिन्ता परमेश्वर पर छोड़ दो।

34. अच्छे कर्मों से शरीर को थका दो, लेकिन ध्यान रखो कि वह पूरी तरह से ढह न जाए (उनके बोझ तले)।

35. यथासंभव कम शराब पिएँ; जितना अधिक इसका सेवन नियंत्रित किया जाता है, उतना ही यह पीने वालों के लिए अधिक लाभदायक होती है।

36. अपने क्रोध पर नियंत्रण रखें; क्योंकि जब यह सभी सीमाओं से आगे बढ़ जाता है, तो यह पागलपन का जनक बन जाता है।

37. बीमारी के समय, डॉक्टरों और दवाओं के बजाय पहले प्रार्थना की ओर रुख करें।

38. सभी पुरोहितों का सम्मान करो, लेकिन अच्छे लोगों को खोजो।

39. ईश्वर के घरों से प्रेम करो, लेकिन स्वयं को भी ईश्वर के घर का हिस्सा बनाओ।

40. अक्सर चर्च जाएँ; क्योंकि यह हमें बाहरी तूफानों और परेशानियों से बचाता है।

41. पृथ्वी पर जो कुछ भी है, वह अस्थायी है; इसलिए यदि ऐसी चीजें आपसे छीन ली जाएँ तो शोक न करें।

42. जब वासना का कोई विचार आपको सताए, तो उसका मुकाबला दूसरों द्वारा देखे जाने की शर्म और ईश्वर को होने वाली ठेस से करें।

४३. अपने कानों और आँखों का रक्षण करो; क्योंकि शत्रु के सभी बाण इन्हीं द्वारा प्रवेश करते हैं।

44. जब आप प्रार्थना करें, तो अपने विचारों को परमेश्वर की ओर उठाएँ; और यदि वे भटक कर नीचे उतर जाएँ, तो उन्हें फिर से ऊपर उठाएँ।

४५. मन विचारों को उत्पन्न करना कभी बंद नहीं करता; परन्तु बुरे विचारों को भगा दो और अच्छे विचारों को पोसो।

४६. विनम्रता में आनंदित हो; क्योंकि इससे मिलने वाली ऊँचाई महान है, और वह कभी गिर नहीं सकती।

४७. शरीर की इच्छाओं को वश में करने के लिए जितना आवश्यक हो उतना प्रयास करें; और यदि आप थक जाएँ, तो अपने शरीर को कुछ आराम दें, सुख के लिए नहीं, बल्कि अपने स्वास्थ्य के लिए।

४८. बुरे विचारों को भगाने के लिए अन्य अच्छे विचारों का सहारा लें।

49. दिव्य आशीर्वादों की भव्यता पर ध्यान लगाओ, और न तो पृथ्वी से और न ही सांसारिक सुखों से तुम्हारा कोई लगाव होगा।

50. विश्वास करो कि बुरे विचार शैतान का बोया हुआ बीज हैं; इस प्रकार वे समाप्त हो जाएँगे, और बोने वाला लज्जित होगा।

51. सबसे बढ़कर सुनने से बचो; क्योंकि यह आत्मा को विचलित और लापरवाह बना देता है, और एक लापरवाह आत्मा आसानी से कानून की लगाम को तोड़ देती है।

52. आत्मा को कार्य और प्रार्थना के बीच विभाजित होना चाहिए (अर्थात्, कभी कार्य में, कभी प्रार्थना में); तब शैतान को हम पर प्रवेश करने के लिए कम रास्ते मिलेंगे।

53. यदि आप काम में लगे हों, तो आपकी जीभ गाए और आपका मन प्रार्थना करे; क्योंकि ईश्वर चाहता है कि हम हमेशा उसका स्मरण रखें।

54. आप जो भी कार्य करें, उसे प्रार्थना से धन्य करें, और विशेष रूप से उन कार्यों को जिनमें आप अपने विचारों को डगमगाता हुआ महसूस करते हैं।

55. यदि आप चाहते हैं कि आपके हाथों का काम सांसारिक न होकर दिव्य हो, तो उससे जो कुछ भी आप कमाते हैं, उसे ज़रूरतमंदों के साथ साझा करें।

56. संतों के आगमन पर आनंद मनाओ, क्योंकि उनके द्वारा परमेश्वर प्रकट होते हैं।

57. सच्चे पवित्र लोगों को उनके कर्मों से पहचानें; क्योंकि हर पेड़ को उसके फल से जाना जाता है।

58. जब आप संतों को देखें तो हमेशा कुछ सीखने का प्रयास करें; उनकी दृष्टि और उनके आचरण पर ध्यान दें, क्योंकि दोनों ही अत्यंत लाभकारी होते हैं।

५९. अपने हृदय में एक कोमल आत्मा बनाए रखने का प्रयास करें, और अपने शरीर में पवित्रता; क्योंकि ये दोनों आपको ईश्वर का मंदिर बनाते हैं।

60. इस प्रकार अपने मंदिर की रक्षा करो, उस ईश्वर के मंदिर के रूप में जिसने तुम्हें बनाया है और जो तुम्हारा न्याय करेगा, और जो सभी चीजों को इस प्रकार निर्धारित करता है कि तुम—उसकी प्रतिमा—पवित्र रहो।

61. सांसारिक लोगों से बातचीत करने से मनुष्य के विचार ईश्वर से भटक जाते हैं; अत: न केवल आपको स्वयं उनसे बात करने से बचना चाहिए, बल्कि आपको उन लोगों को भी ऐसा करने से रोकना चाहिए जो उनसे बात करते हैं।

62. जब आप पर अपमान किया जाता है, तो विचार करें कि क्या आपने अपमान के योग्य कुछ किया है; यदि नहीं, तो इस अपमान को ऐसे धुएँ के रूप में मानें जो शीघ्र ही गायब हो जाता है।

63. पश्चात्ताप से रहित हृदय को वासनाओं से मुक्त करना असंभव है; और हृदय को तीन प्रकार के संयम द्वारा पश्चात्ताप की अवस्था में लाया जाता है: अर्थात्, निद्रा, भोजन और शारीरिक विश्राम से संयम।

64. यदि आपके साथ किसी भी प्रकार का अन्याय होता है, तो धैर्य का सहारा लें – और हानि उन पर पड़ेगी जिन्होंने आपसे अन्याय किया है।

65. जब आप धन, या महिमा, या सांसारिक शक्ति देखते हैं, तो उनके क्षणिक होने पर चिंतन करें – और आप फंदे से बचेंगे।

66. दुखों को सहन करो; क्योंकि उनमें, काँटों के बीच गुलाब की तरह, सद्गुणों का जन्म होता है और वे परिपक्व होते हैं।

67. पुण्य के समान किसी को मूल्यवान न समझो, क्योंकि वह ईश्वर का प्रतिबिंब है; अतःवह अपरिवर्तनीय है, जैसे वह है।

68. उस पापी के लिए रोओ जो समृद्धि प्राप्त करता है; क्योंकि धर्मी न्यायाधीश की तलवार उस पर लटकती रहती है।

69. आलस्य को सभी बुराइयों की जड़ समझो; क्योंकि यह आपके पास मौजूद अच्छी चीज़ों को लूट लेता है और जो आपके पास नहीं हैं, उन्हें प्राप्त करने से रोकता है।

70. जब दुष्ट अपने कर्मों से लज्जित नहीं होता, तो पीड़ा और बढ़ जाती है – और पतन निराशा की ओर ले जाता है।

71. जब भी आप निराश महसूस करें, विश्वासियों के लिए संचित आशीर्वादों पर मनन करें – और आध्यात्मिक फल (आनंद) शीघ्र ही आपको प्राप्त होगा।

72. विश्वासियों को सभी के सामने विनम्र होना चाहिए; क्योंकि केवल कुछ लोगों के सामने विनम्र होना एक झूठी विनम्रता है।

73. अपने पड़ोसी से प्रेम को किसी भी चीज़ से ऊपर न रखें, सिवाय उन मामलों के जहाँ इसके कारण ईश्वर के प्रति प्रेम की उपेक्षा होती है।

74. किसी से भी आसक्त न हो और न ही ईश्वर के विधान के विपरीत पक्षपात दिखाओ; क्योंकि जो कोई भी किसी को ईश्वर से अधिक प्राथमिकता देता है, वह ईश्वर को उस व्यक्ति से कम योग्य दिखाता है।

75. दुष्टों का बचाव न करो, क्योंकि ऐसा करने से तुम उन्हें उनके बुरे कामों में प्रोत्साहित करते हो और उनके कर्मों से जुड़कर स्वयं को कलंकित करते हो।

76. पापी को समझाओ, परन्तु गिरे हुए को दोष न लगाओ; क्योंकि दूसरा काम एक बदनाम करने वाले का होता है, जबकि पहला काम एक ऐसे व्यक्ति का होता है जो सुधारना चाहता है।

77. हमेशा संतों के कर्मों को सुनने और उनके बारे में बोलने का प्रयास करें; क्योंकि यह आत्मा को सद्गुणों की नकल करने के लिए प्रेरित करता है।

78. यदि हृदय हम में से प्रत्येक के लिए एक घरेलू चर्च है, तो हमें अपनी चर्च सेवाएँ भी वहीं संपन्न करनी चाहिए।

७९. यदि चर्च में कोई सेवा हो रही हो, तो उसमें शामिल हों; लेकिन यदि नहीं, (गाने के बाद) प्रेरितों की सुसमाचार पढ़ें – और अपने कामों में लग जाएँ।

80. संतों से गुणों की महिमा का आकलन करो; क्योंकि उनकी महिमा मृत्यु के बाद भी अमर रहती है।

81. जब आपको यह एहसास होगा कि बुराई शैतान की हमारी ओर तानी हुई चमकती तलवार है, तो आप उससे नफरत करने लगेंगे।

82. यदि आप किसी गिरे हुए व्यक्ति को समझा रहे हैं, तो अपने शब्दों में करुणा मिलाएँ; तब उसके कान नरम हो जाएँगे और उसका हृदय प्रबुद्ध हो जाएगा।

83. संतों से बात करते समय, आध्यात्मिक मामलों के बारे में पूछताछ करें; लेकिन जब संतों के साथ न हों, तो ऐसी बातें न करें।

84. हमेशा अच्छे कर्म करने के लिए उत्सुक रहें, कहीं ऐसा न हो कि उन्हें अनदेखा करके आप यहाँ से केवल आधे-अधूरे होकर चले जाएँ।

85. *'इस प्रकार दौड़ो कि पुरस्कार जीत सको'* (1 कुरिन्थियों 9:24), अर्थात् बिना रुके; क्योंकि हमें जीवन के मैदान को छोड़ने तक सद्गुण का अनुसरण करना चाहिए।

86. आज्ञाओं का पालन करने में लापरवाह न बनो; क्योंकि ऐसे लोग व्यर्थ में परिश्रम करते हैं।

87. आवश्यकता पड़ने से पहले ही धैर्य का अभ्यास करो; ताकि जब आवश्यकता पड़े, तो तुम पाओ कि उसका पूरा कवच तैयार है।

88. बुरे विचारों से लड़ो और उनसे वैसा ही बोलो जैसा व्यवस्था आज्ञा देती है (अर्थात्, उनके विरुद्ध परमेश्वर के वचन से)।

८९. बड़ी लगन के साथ, अपनी दृष्टि इस जीवन से हटा लो, क्योंकि इससे उठने वाला दुष्ट धुआँ आत्मा को उत्तेजित कर देता है।

९०. यदि कोई बुरी आदत आप पर हावी हो गई है, तो उसे धीरे-धीरे छोड़ें – और बिना किसी बड़ी कठिनाई के आप अपनी आत्मा से इस कांटे को निकाल देंगे।

91. शुद्ध परमेश्वर से शुद्ध प्रेम करो; और सभी चीज़ों को उस से नीच समझो, जो सभी से ऊपर है।

92. यदि आप परमेश्वर का मंदिर बनना चाहते हैं, तो परमेश्वर को एक निरंतर बलिदान के रूप में अखंड प्रार्थना अर्पित करें।

93. लापरवाही से जीने वाले को अपना सलाहकार न बनाओ; क्योंकि वह बुराई से प्रेम करता है, इसलिए वह उस अच्छाई की सलाह नहीं दे सकता जिससे वह प्रेम नहीं करता।

94. नश्वर सभी चीज़ों से परहेज़ करो, और हर दिन रहस्यमय भोज में भाग लो; क्योंकि इस तरह मसीह का शरीर हमारा हो जाता है।

95. जब आप किसी भी प्रकार से ईश्वर द्वारा दण्डित हों, तो शिकायत न करें; क्योंकि वह एक पिता के रूप में दण्ड देते हैं, और एक उपकारी के रूप में धन्यवाद के योग्य हैं।

96. जब आपको अपमान सहना पड़े, तो प्रसन्न हों; क्योंकि यदि यह अन्यायपूर्ण है, तो इसके लिए आपका पुरस्कार महान होगा, और यदि यह न्यायसंगत है, तो इसके माध्यम से पवित्र बने रहने पर, आप दंड की पीड़ा से बचे रहेंगे।

97. जीवन के दुखों और सुखों को छाया और एक पहिये के रूप में देखो, क्योंकि वे एक छाया की तरह क्षणभंगुर हैं, और एक पहिये की तरह घूमते हैं।

98. ईश्वर में सदा समृद्धि प्राप्त करने का प्रयास करो; क्योंकि जो थोड़ा-थोड़ा करके बढ़ाता है, वह थोड़े ही समय में सभी द्वारा खोजी जाने वाली अच्छी संपत्ति इकट्ठा कर लेता है।

९९. यदि आप पीड़ादायक यातना से बचना चाहते हैं, तो कभी किसी की बुराई न करें; क्योंकि इससे ईश्वर दुखी होता है।

100. यदि आप अपने घर से दंड की हर विपत्ति को दूर रखना चाहते हैं, तो किसी साथी मानव—अपने साथी प्राणी—की बुराई न करें; क्योंकि सृष्टिकर्ता, जिसने उसे बनाया है, इस बात से न्यायसंगत रूप से दुखी होता है।

101. यदि आप सभी पापों से ऊपर उठना चाहते हैं, तो दूसरों के मामलों में दखल न दें; क्योंकि जिन बातों के लिए आप दूसरे पर दोष लगाते हैं, वे बातें स्वयं आप में भी बहुत कुछ हैं।

102. हे मनुष्य, अहंकार से बचो, भले ही तुम धनी हो, कहीं ईश्वर तुम्हारा शत्रु न बन जाए।

103. विनम्रता से प्रेम करो, भले ही तुम महान हो, ताकि तुम न्याय के दिन सम्मानित हो सको।

104. दूसरों का मज़ाक न उड़ाओ, और तुम्हें अपने पूरे जीवन में कभी भी मज़ाक सहना नहीं पड़ेगा।

105. जब आप चर्च में हों, तो अपने मन को भटकने न दें; क्योंकि जो राजा के सामने खड़े होते हैं, वे न तो हँसते हैं और न ही खुद को विचलित होने देते हैं।

106. इन शब्दों को दृढ़ता से याद करो – और यह तुम्हें जीवन भर सम्मान दिलाएगा।

107. सदाचार का जीवन जीने का प्रयास करो, ताकि तुम्हें पाप करने वालों को सुधारने का साहस मिल सके।

108. अपने अहंकार पर लगाम लगाओ; किसी की आलोचना मत करो – नहीं तो तुम पर भी घमंडी होने का दोष लग जाएगा।

109. किसी के पतन का मज़ाक न उड़ाओ, कहीं ऐसा न हो कि जिन लोगों से तुम मज़ाक नहीं चाहते, वे तुम्हारा मज़ाक उड़ाएँ।

110. इन उपदेशों का पालन करें, और वे आपके लिए महिमा का मुकुट लाएँगे।

111. इन आज्ञाओं का पालन करो, और वे तुम्हें मनुष्यों की दृष्टि में सम्माननीय और परमेश्वर को प्रसन्न करने वाले बनाएँगी; क्योंकि इसमें परमेश्वर प्रसन्न होता है, और उसकी सच्ची सेवा को ऐसी उपलब्धियों से पुरस्कृत किया जाता है।

112. हमेशा अच्छे कर्मों में उत्कृष्टता प्राप्त करने का प्रयास करें।[75]

113. न ही कोई योद्धा तब तक गौरवान्वित होता है जब तक कि वह पहले दीर्घकालिक अभ्यास से प्रशिक्षित न हो और श्रम तथा युद्ध में परखा न गया हो, तथा अनुभव के माध्यम से यह प्रदर्शित न कर दे कि वह अपने शत्रुओं पर विजय प्राप्त कर सकता है।

114. और भी अधिक, सच्चे स्वर्गीय राजा की उपस्थिति में, कोई भी पवित्र आत्मा के स्वर्गीय उपहार प्राप्त करने के योग्य नहीं माना जाता, जब तक कि उन्होंने पहले पवित्र आज्ञाओं के अध्ययन में स्वयं का अभ्यास न किया हो, और इस प्रकार स्वयं अनुग्रह के स्वर्गीय हथियार को न उठाया हो और दुष्टात्माओं के विरुद्ध संघर्ष में प्रवेश न किया हो।

115. जिस सीमा तक कोई आध्यात्मिक प्रयास में सफल होता है, उसी सीमा तक वह आत्मा के रहस्यों की ऊँचाइयों और ज्ञान के छिपे हुए खजाने तक पहुँचता है।

116. और जिस सीमा तक कोई अनुग्रह से समृद्ध होता है, उसी सीमा तक वह प्रभु की सहायता से, दुष्टता की योजनाओं को समझने में सफल होता है। उसकी महिमा और शक्ति सदा के लिए हो! आमीन। (ग्रीक पैट्रिआर्कल

[75] इससे ग्रीक पैट्रिआर्कल संस्करण में उपदेशात्मक अध्यायों का समापन होता है। मॉस्को अकादमी के अनुवाद में, जिस पांडुलिपि का उसने उपयोग किया, निम्नलिखित अध्यायों को जोड़ा गया है।

संस्करण में, इन प्रेरणादायक अध्यायों के पहले अध्याय इस प्रकार हैं – और उनके बाद आता है: 'ईश्वर का भय मानो...' और इसी तरह।)

117. उद्धार की शुरुआत स्वयं को दोषी ठहराने से होती है।

118. एक शब्द बोलने से तो पत्थर फेंकना बेहतर है।

119. जैसा आप चाहते हैं कि वे आपके साथ व्यवहार करें, वैसे ही आप उनके साथ व्यवहार करें।

120. शब्दों के बजाय कर्मों से सत्य का प्रदर्शन करें।

121. धर्मात्मा वह नहीं है जो बहुतों पर दया दिखाता है, बल्कि वह है जो किसी का अपमान नहीं करता।

122. सोने के बिस्तर पर सोने से बेहतर है, पत्तियों के बीच जमीन पर, एक साफ अंतरात्मा के साथ सोना।

123. जो आत्मा का पोषण करे, वही सच्चा मित्र है।

124. शब्दों से ईश्वर की स्तुति करो, अपने कर्मों से उनकी उपासना करो, और विचारों तथा हृदय में उनका सम्मान करो।

125. एक पुरोहित बुद्धि, अच्छे जीवन और भावना की कुलीनता से बनता है।

126. सबसे बुरी बात यह है कि कोई भी व्यक्ति लज्जास्पद चीज़ों के सामने घुटने टेक दे।

127. शब्दों से सद्गुण का अध्ययन करो, और कर्मों से उसका प्रचार करो।

128. केवल सद्गुण को एक अच्छी चीज़ ही न समझें, बल्कि उसे जैसा होना चाहिए, वैसा अपनाएँ।

129. कानून का सम्मान करो, और तुम कानून के अनुसार जियोगे।

130. एक भटकता हुआ वह है जिसे संसार की सभी चीजें अपरिचित हैं।

131. धनी लोगों की चापलूसी मत करो, परन्तु उन्हें भड़काओ भी मत।

132. मदिरा शरीर को बल देती है, परन्तु परमेश्वर का वचन आत्मा को बल देता है।

133. पौष्टिक भोजन खाओ, मीठा नहीं।

134. यदि आप भीड़ को खुश करने की कोशिश करते हैं, तो आप भीड़ जैसे हो जाएंगे।

135. सबसे बढ़कर, अपने शरीर को वश में रखो।

136. एक मेहनती व्यक्ति वह है जिसके पास फुर्सत का समय नहीं होता।

137. ईश्वर के विरुद्ध अपमानजनक बातें कहना एक अक्षम्य पाप है।

138. बड़ी परेशानी कानों और जीभ से आती है।

4. वे विचार जो व्यक्ति को क्षणभंगुर से हटाकर अक्षय से जोड़ते हैं

1. सदाचार का मार्ग संसार से पलायन है – एक अच्छा और संक्षिप्त मार्ग।

2. जो अक्षय की इच्छा रखता है, उसे नश्वर सभी वस्तुओं को शून्य मानना चाहिए।

3. यदि आप सच्चे जीवन की कामना करते हैं, तो हमेशा मानव मृत्यु की अपेक्षा करें।

4. इस वर्तमान जीवन से घृणा करो, क्योंकि तुम देखते हो कि इसका चक्र कितनी अनियमित रूप से घूमता है।

5. उन वरदानों की लालसा मत करो जिनका आनंद क्षणिक है और जिनका स्वामित्व खो जाता है।

6. जो हर बात में समृद्धि प्राप्त करते हैं, उन पर हँसो, और जो हर बात में दुर्भाग्य झेलते हैं, उन पर दया करो; क्योंकि पहला पुरस्कार की ओर ले जाता है, जबकि दूसरा ज्ञान की ओर।

7. उस धैर्य के लिए प्रयत्न करो, जो, जैसा कि हम जानते हैं, शहीदों ने प्रदर्शित किया; क्योंकि हमें भी अंतरात्मा की शहादत (अंतरात्मा की मांगों पर दृढ़ रहने) के लिए बुलाया गया है।

8. आत्मा को सर्वोपरि रखो, और तब सद्गुण का मार्ग सहजता से प्रवाहित होगा; क्योंकि सभी चीजें नश्वर हैं, लेकिन आत्मा अमर है, और अमर को नश्वर पर प्राथमिकता दी जानी चाहिए।

९. कष्टों के लिए तैयार रहो, और तुम उनसे बहुत लाभ प्राप्त करोगे।

10. ईश्वर से सुखद चीज़ों के लिए नहीं, बल्कि केवल उपयोगी चीज़ों के लिए माँगो; क्योंकि तुम भले ही सुखद चीज़ों के लिए जितनी भी माँगो, ईश्वर उन्हें नहीं देगा; और यदि किसी तरह तुम उन्हें प्राप्त भी कर लो, तो वे शीघ्र ही नष्ट हो जाएँगी।

11. गरीबी को तुच्छ न समझो; क्योंकि वह धर्म के क्षेत्र में योद्धा को किसी भी चीज़ से विचलित नहीं होने देती।

12. धन के मोह में न पड़ें; क्योंकि उससे उत्पन्न चिंताएँ अक्सर मनुष्य को उसकी इच्छा के विरुद्ध ईश्वर से दूर कर देती हैं।

13. अंत निकिट है; हे आलसी, स्वयं को प्रहारों के लिए तैयार कर।

14. कटनी दूर नहीं है; अतःआत्मा के खेत से इसकी काँटों को हटा दें।

15. न्यायाधीश से कुछ भी छिपा नहीं है; और जब हम पाप करते हैं तो अपना आप छिपाने का प्रयास करना व्यर्थ है।

16. मनुष्यों के सामने से अधिक परमेश्वर के स्वर्गदूतों के सामने—जो हम में से बहुत हैं—लज्जित हो, और हर एक लज्जाजनक काम से दूर हो जाओ।

17. न्यायाधीश के तुलाओं पर ध्यान से विचार करो – और तुम अपने जीवन से उस सब को निकाल दोगे जो उनका सच्चा भार नहीं उठा सकता (उन तुलाओं पर – या जो विदेशी तत्वों के मिश्रण के कारण नकली साबित होता है, जैसे, उदाहरण के लिए, एक सोने का सिक्का, जो अन्य तत्वों के मिश्रण के कारण अपने मानक वजन को पूरा करने में विफल रहता है)।

18. आलस्य और निष्क्रियता को अपने लिए एक हानि समझो, और जो कुछ भी हमसे अपेक्षित है, उसे करने में शीघ्रता करो।

19. इस जीवन की क्षणभंगुरता पर हमेशा चिंतन करो, और इसमें कुछ भी तुम्हारा ध्यान भटका नहीं पाएगा।

20. सांसारिक सुखों—जो अस्थायी हैं—से प्रसन्न न हो; क्योंकि वे एक कांटा हैं जो आत्मा को मछली की तरह लुभाता और पकड़ता है।

21. प्रलोभनों के विरुद्ध दृढ़ता से खड़े रहो, और आवश्यक साहस दिखाओ।

22. कभी भी आँसू बहाने वाले गरीब व्यक्ति को तुच्छ न समझो, कहीं ऐसा न हो कि तुम्हारी प्रार्थना के आँसुओं को भी तुच्छ समझा जाए।

२३. ज्ञान एक व्यक्ति के पास हो सकने वाली सबसे उत्तम संपत्ति है; फिर भी, अपनी विशिष्टता के कारण, यह केवल उसी के साथ रहना चाहता है जिसने इसे प्राप्त किया है।

24. सदाचार ईश्वर का वस्त्र है; इसे बुनों, और तुम उसको वस्त्र पहनाओगे जो सारी सृष्टि को वस्त्र पहनाता है।

२५. सांसारिक चीजें चोरों द्वारा चुरा ली जाती हैं; स्वर्गीय चीज़ों की खोज करो, जो चोरों की पहुँच से परे हैं (इन उंगलियों द्वारा प्राप्त नहीं की जा सकतीं)।

26. मनुष्य को सुखों का त्याग करना चाहिए; क्योंकि वे मनुष्य को ऐसे कर्मों में खींचते हैं, जिनके बारे में होश में आने पर पश्चाताप होता है।

27. मनुष्य को हर तरह से कामुक विचारों से घृणा करनी चाहिए, क्योंकि वे शरीर को भ्रष्ट करते हैं और आत्मा को कलंकित करते हैं।

28. सांसारिक आशीर्वाद भी परिश्रम के बिना प्राप्त नहीं होते; तो फिर हम परिश्रम के कारण दिव्य आशीर्वादों से क्यों मुंह मोड़ते हैं?

29. क्या आप बिना परिश्रम के सदाचार का अभ्यास करना चाहते हैं? ध्यान रखें कि यह परिश्रम अस्थायी है, जबकि इसका पुरस्कार शाश्वत है।

30. जो व्यर्थ (बेकार) सुखों के लिए तरसते हैं, उन्हें उस सुख की क्षणिकता और उसके बाद मिलने वाली सजा की लंबाई पर विचार करना चाहिए।

31. सभी चीजों को नाशवान समझो – क्योंकि केवल पुण्य ही अविनाशी है।

32. हर उस चीज़ से घृणा करो जो मनुष्य को पशु-सदृश बनाती है – और वह एक काम करो जो तुम्हें दिव्य बना सके।

33. सद्गुण के लिए प्रयत्न करो; क्योंकि ज्ञान के द्वारा यह आदम को एक देवता के रूप में प्रकट करता है।

34. क्या आप अपनी भूख को नियंत्रित करते हैं? तो अपनी जीभ को भी नियंत्रित करें, कहीं ऐसा न हो कि आप एक चीज़ के गुलाम और दूसरी के बेकार आजाद व्यक्ति बन जाएँ।

35. ईश्वर से प्रेम करो, और उससे अधिक अपने लोगों से आसक्त न रहो, अन्यथा, उसके वचन के अनुसार, तुम उसके योग्य सिद्ध न होगे, भले ही तुम ऐसा न चाहो।

36. दुखों को धैर्यपूर्वक सहो; क्योंकि उनमें ही उन लोगों के लिए मुकुट निहित है जो सदाचार का संग्राम करते हैं।

37. धन्य है वह जो बुराई सहन करता है, परन्तु धिक्कार है उस पर जो उसे करता है; क्योंकि जो उसे सहन करता है वह मसीह का वारिस है, परन्तु जो उसे करता है वह शैतान का सह-वारिस है।

38. उपवास का रोटी अच्छा है; क्योंकि इसमें कामुकता का कोई खमीर नहीं होता।

39. प्रार्थना का वेदी पवित्र है; क्योंकि यह परम पवित्र को हमारे निकट खींचता है।

40. न्याय को केवल सदाचार का विशेषाधिकार न समझो, क्योंकि इसके बिना हर कर्म कलंकित हो जाता है।

41. यदि आप गरीबों में बोते हैं, तो आप अपना ही बोते हैं; क्योंकि जो दूसरों का है, वह खरपतवार से भी अधिक कड़वा होता है।

४२. दयालु व्यक्ति अंधा है यदि वह अन्यायी है; क्योंकि वह एक ऐसे खेत को जोतता है जिससे वह फसल नहीं काट सकता।

43. हमेशा मृत्यु की आशा रखो, परन्तु उससे न डरो (या स्वयं को ऐसी अवस्था में मत रखो जहाँ तुम उससे न डरते हो); क्योंकि ये दोनों ही बुद्धिमानी के सच्चे लक्षण हैं।

४४. सद्गुण का आभास धारण करो, धोखा देने के लिए नहीं, बल्कि उन लोगों को लाभ पहुँचाने के लिए जो तुम्हें देखते हैं।

४५. मनुष्य को उन लोगों के बारे में भी अच्छी बात कहनी चाहिए जो अच्छा नहीं करते, ताकि वे अपने ही शब्दों से लज्जित होकर अच्छा करना शुरू कर दें।

४६. यदि आप वास्तव में स्वर्ग की इच्छा रखते हैं, तो पृथ्वी आपके लिए कुछ भी नहीं है; क्योंकि यह आपको उसकी ओर उड़ान भरने से रोकती है।

४७. धन के प्रेम से धनी बनने का प्रयास न करें; क्योंकि ईश्वर ने यह विधान किया है कि धर्मी लोग 'अपने पास जो कुछ है' उससे दान दें (लूका ११:४१)।

48. यदि एक प्याला ठंडा पानी दयालु को धर्मी ठहराता है, तो उस पर क्या पुरस्कार होगा जो सब कुछ गरीबों पर लुटा देता है?

४९. पवित्रता और करुणा सद्गुणों की जननी हैं; अतः दोनों के बिना, कोई मसीह की सेवा नहीं कर सकता (या मसीह के लिए लड़ नहीं सकता)।

50. दया को नज़रअंदाज़ न करें; क्योंकि इसी ने परम दयालु प्रभु को स्वर्ग से नीचे लाया।

51. पवित्रता की उपेक्षा न करें; क्योंकि इसके द्वारा परम पवित्र कुँवारी, मूर्तिधारण का पात्र बनकर, मानवजाति पर उस ईश्वर को प्रदान किया जो हमारे लिए मूर्तिमान हुए।

52. यह न कहो: 'मैं अपने शत्रु से बदला लूंगा'; क्योंकि स्वर्ग में हमारा एक धर्मी न्यायी (और प्रतिशोधक) है।

53. सुख-भोग में जीने, अमीर बनने और सम्मान पाने की इच्छा न करो; क्योंकि ये इस जीवन की क्षणिक व्यर्थताएँ हैं, और हमें नष्ट होने के लिए नहीं बनाया गया है।

54. मृतकों के लिए रोओ नहीं—यह एक सामान्य मार्ग है; और धन्य है वह जो इसके अंत (बिना दोष के) तक पहुँचता है।

55. पापी के लिए रोओ, गरीब के लिए नहीं; क्योंकि पहला अपने लिए एक मुकुट तैयार करता है, जबकि दूसरा यातनाएँ तैयार करता है।

56. जीवन के अनियमित रूप से घूमने वाले चक्र पर हँसो; लेकिन उस गर्त से सावधान रहो जिसमें यह उन लोगों को फेंक देता है जो इस पर सो जाते हैं।

57. ईश्वर से बहुत बात करो, और लोगों से कम; परन्तु विधि का अध्ययन करके, तुम दोनों को सुधारोगे।

५८. आत्मा के लिए लाभदायक स्नान प्रार्थना के समय आँसू हैं; लेकिन प्रार्थना के बाद, याद करो कि तुम किस बात पर रोए थे।

५९. इस संसार के शक्तिशाली लोगों की चापलूसी न करो; क्योंकि '*महाबली दण्डित होंगे*' (ज्ञान ६:६); इसीलिए उनके लिए एक ऐसा न्यायाधीश होगा जो उनके प्रति अत्यंत कठोर होगा।

60. आदम (अर्थात् पतित मनुष्य) का भाग है कि वह (अपने शरीर से, अनिच्छा से और बिना पारितोषिक के) परिश्रम करे; परन्तु व्यवस्था के अनुसार परिश्रम करके हम अपना पारितोषिक कमाते हैं।

61. हव्वा की संतानों को दुख सहना पड़ता है; लेकिन जब हम कृतज्ञता के साथ अपने दुखों को सहते हैं, तो वह शाप हमारे लिए आशीर्वाद बन जाता है।

62. अपने अंतर्मन को अपने कर्मों में मार्गदर्शक प्रकाश बनने दो; क्योंकि यह दिखाता है कि कौन सा अच्छा है और कौन सा बुरा।

63. आओ हम स्वयं का न्याय करें, और न्यायी प्रसन्न होंगे; क्योंकि वे, भले होने के कारण, जब पापी को अपना बोझ उतारते हुए देखते हैं तो आनंदित होते हैं।

64. यदि हमने कुछ भी अशुद्ध किया है, तो उसे पश्चाताप द्वारा धो डालें; क्योंकि हमें अपने भीतर परमेश्वर की प्रतिमा को शुद्ध रूप में प्रस्तुत करना चाहिए।

65. आत्मा के घावों को उजागर होने से पहले ही हम उन्हें भर दें, ताकि इस उपचार के द्वारा हम दंड की विपत्तियों से बच सकें।

66. जैसे किसी बँधे हुए के लिए चलना कठिन है, वैसे ही जो सांसारिक मामलों में उलझा हुआ है, वह पवित्रता के साथ सद्गुण के मार्ग पर नहीं चल सकता।

67. हमें पाप से घृणा करनी चाहिए; क्योंकि ऐसा करने पर, यदि कोई उसमें गिर भी जाए, तो वह उसके जालों से अधिक आसानी से बच निकलेगा।

68. जो पाप से घृणा नहीं करता, भले ही वह स्वयं पाप न करे, उसे पापियों में गिना जाता है।

69. पाप करने वाले पड़ोसी पर शोक करो, ताकि तुम स्वयं पर भी शोक कर सको; क्योंकि हम सभी पाप के दोषी हैं।

70. गिर गए मित्र को न्यायाधीश की याद दिलाओ – और इस प्रकार तुम अपनी ही पाप की चोट को शांत करोगे; क्योंकि ऐसा उपदेश एक सार्वभौमिक उपचार है।

71. जब आप कुछ कहना या करना चाहें, तो उस उत्तर को ध्यान में रखें जो आपसे जल्द ही माँगा जाएगा; और आप डर के मारे खुद को रोक लेंगे।

72. पाप के दंड से डरें, और उससे होने वाली लज्जा की कल्पना से आपको बाँधने वाली बेड़ियों से भी डरें; क्योंकि दोनों का बोझ अथाह है।

73. भविष्य की आशीर्वादों की प्रचुरता और सुंदरता दोनों ही असीमित हैं, जबकि वर्तमान आशीर्वाद केवल एक छाया, धुआँ, या पानी का बुलबुला हैं।

74. बुराई का बीज मत बोओ, क्योंकि फसल निकट है – और काँटों का बोने वाला आग की प्रतीक्षा कर रहा है।

75. पाखंडी, लालची और सुख-भोगी इस संसार के गुलाब हैं; लेकिन थोड़ी देर प्रतीक्षा करो और तुम (गुलाबों के बजाय) रौंदी हुई घास देखोगे।

76. हर बुराई हमें शैतान को एक हथियार दे देती है; लेकिन वह, उसी हथियार से लैस होकर, उन पर क्रूरता करता है जिन्होंने उसे हथियार दिया है।

77. क्या आप अपने दुश्मन को थकाना चाहते हैं? पाप को काट डालें, और फिर आप उससे वैसे ही मज़ाक उड़ा सकते हैं जैसे एक पकड़े हुए गौरैया से।

78. धिक्कार है दुष्टों पर; क्योंकि जब सभी प्रबुद्ध हो जाते हैं, तो वह अंधकार में लिपटा रहता है।

७९. धिक्कार है ईश्वर-निंदा करने वाले पर; क्योंकि न्यायाधीश के सामने उसकी जीभ बँध जाएगी, और वह अपनी रक्षा में एक शब्द भी नहीं कह पाएगा।

80. धिक्कार है अधर्मी मनुष्य पर; क्योंकि वह कठोर न्यायाधीश और धर्मी विधि-प्रदाता के सामने जाएगा।

81. धनी लोगों के लिए विनाश! धन उससे दूर भाग जाएगा, और आग उसे ग्रहण करेगी।

82. आलसी के लिए विनाश! वह अपने बर्बाद किए समय पर शोक करेगा।

83. धिक्कार है घमण्डी पर! जब वह अपनी कब्र में पड़ेगा, तब उसे पता चलेगा कि वह कौन है।

84. उस व्यभिचारी के लिए विनाश है जिसने विवाह के वस्त्र को कलंकित किया है! उसे राजा के विवाह सभागार से लज्जा के साथ बाहर फेंक दिया जाएगा।

85. विनाश हो झगड़ालू और उसके साथ शराब पीने वाले का! उनके साथ हत्यारों जैसा व्यवहार किया जाएगा और व्यभिचारियों की तरह दंडित किया जाएगा।

86. हाय उन लोगों पर जो इस संक्षिप्त समय में सुख-भोग में मग्न रहते हैं! वे खुद को एक ऐसे बछड़े की तरह मोटा करते हैं जिसे वध के लिए ले जाया जाना है।

87. धन्य है वह जो संकीर्ण मार्ग पर चलता है; क्योंकि वह मुकुटधारी होकर स्वर्ग में प्रवेश करेगा।

88. धन्य है वह जो भोगों को रौंदता है; क्योंकि राक्षस उसके सामने कांपते हैं।

89. धन्य है वह जो हृदय से शुद्ध और सद्गुणों में सच्चा है; क्योंकि वह संसार का न्याय करेगा, और संसार के साथ न्याय नहीं किया जाएगा।

90. धन्य है वह जो प्रार्थना, अध्ययन और अच्छे कर्मों में निरंतर रहता है; ऐसा व्यक्ति मृत्यु में नहीं सोएगा।

91. धन्य है वह जो एक उत्कृष्ट जीवन जीता है और विनम्र ज्ञान रखता है; क्योंकि वह मसीह का अनुकरण करता है और मसीह के साथ बैठेगा।

92. धन्य है वह जिसके होठों से व्यवस्था कभी नहीं छूटती; क्योंकि परमेश्वर ऐसे व्यक्ति के निवास से कभी नहीं छूटता।

93. धन्य है वह जो बहुतों के प्रति भलाई करता है; क्योंकि न्याय के समय वह बहुत से रक्षक पाएगा।

94. धन्य है वह जिसका पुण्य दिखावा नहीं है; क्योंकि न्यायाधीश का फावड़ा निश्चय ही सभी को बिखेर देगा।

95. धन्य है वह जो आग प्रकट होने से पहले अपने कर्मों को सुशोभित करता है, जिससे सभी वस्तुओं की परीक्षा होगी।

96. धन्य है वह जो आने वाले जीवन की ओर शीघ्रता करता है; क्योंकि वर्तमान जीवन क्षय की दुर्गंध उत्सर्जित करता है और मृत्यु की ओर आकर्षित होता है।

97. धन्य है वह जो अपने संचित पापों का प्रायश्चित करता है और पवित्र न्यायाधीश के सामने निर्मल खड़ा होता है।

९८. परन्तु बात का सार यह है: हे आत्मा, लापरवाह न बन! क्योंकि थोड़ी ही देर में तू हमारे परमेश्वर मसीह के भयानक न्याय-आसन के तराजू के सामने खड़ी होगी।

5. संत नीलस की अन्य रचनाओं से लिए गए, पिछले लोगों के समान विचार और उपदेश

1. सद्गुण का साहस शांति के समय में प्रशंसनीय है, लेकिन संघर्ष के समय में उसकी वीरता और भी अधिक प्रशंसनीय है।

2. सद्गुण स्वयं को न केवल अपने कर्मों में, बल्कि उन परीक्षाओं में भी प्रकट करता है जो उसका विरोध करती हैं।

3. वह निर्लिप्त है जिसने अनेक युद्धों में दुख सहकर विजय प्राप्त की है; परन्तु जो बिना युद्ध के सद्गुण प्राप्त करने का दावा करता है, वह अभी भी आसक्तिपूर्ण है।

4. एक ऐसा हृदय जो संघर्ष को नहीं जानता, वह सद्गुण प्रदर्शित करने के अवसर से वंचित रहता है; क्योंकि सद्गुण का नाम युद्ध में किए गए वीर कर्मों से ही मिलता है।

5. आओ, हम दृढ़ संकल्प से विचारों से प्राप्त आनंद को त्याग दें, और अपना सारा क्रोध उन्हीं पर केंद्रित करें, कहीं ऐसा न हो कि इन विचारों को आनंदपूर्वक स्वीकार करके हम उनके विषयों के प्रति भी सहानुभूति रखने लगें।

6. जिस व्यक्ति में मौन नहीं है, उसकी आत्मा इन्द्रिय-संस्कारों से संघर्ष करती है, जबकि मौन का प्रेमी, जो अपनी इन्द्रियों का रक्षण करता है, अपने विचारों से संघर्ष करता है।

७. जिन्होंने अनुग्रह से तपस्या के कार्यों के लिए शक्ति प्राप्त की है, उन्हें इस विचार से सावधान रहना चाहिए कि वे यह शक्ति स्वाभाविक रूप से अपने आप में रखते हैं। हममें जो कुछ भी अच्छा है, उसका स्रोत वही है जिसने आज्ञाओं के विषय में वचन दिया, ठीक उसी प्रकार जैसे बुराई के स्रोत का काम भ्रम का चालाक उत्प्रेरक करता है। अत: आप जो भी अच्छा काम करें, अच्छाई के स्रोत का धन्यवाद करें; लेकिन जो भी बुराई आपको अपनी प्रवृत्तियों से परेशान करती है, उसे सभी बुराइयों के आरंभकर्ता का माना।

8. प्रत्येक परिश्रम (कठिनाई, दुख) के अंत के लिए, सभी अच्छी चीजों के दाता ईश्वर का धन्यवाद करें, ताकि शत्रु की दुर्भावना ऐसे हार्दिक धन्यवाद से लज्जित हो जाए। जो कोई भी अपने कार्य में कृतज्ञता को जोड़ता है, वह पाप के विरुद्ध बुर्ज वाली एक दोहरी दीवार बनाकर, हृदय का एक अक्षय खजाना प्राप्त करेगा।

९. धन्य है वह मनुष्य जिसने एक सक्रिय जीवन को एक चिंतनशील जीवन के साथ जोड़ा है, ताकि आत्मा का क्षेत्र, दोनों स्रोतों से सिंचित होकर, अधिक प्रचुर मात्रा में सद्गुणों का उत्पादन कर सके। क्योंकि मनन बुद्धि को सबसे उत्तम वस्तुओं पर मनन करने के लिए प्रेरित करता है, जबकि क्रिया *'पृथ्वी पर स्थित अंगों: व्यभिचार, अशुद्धता, कामवासना, दुष्टता'* (कुलुस्सियों 3:5) *को* मार डालता है। इसलिए, जो व्यक्ति क्रिया और चिंतन के पूर्ण कवच से सुसज्जित है, वह दैवीय चालाकी का सामना करने के लिए पूरी तरह से सुसज्जित है।

10. राक्षस विचारों के माध्यम से आत्मा पर युद्ध छेड़ते हैं, लेकिन धैर्य—जो उनके खिलाफ अधिक प्रभावी है—उनका विरोध करता है; और जब वे इस महान युद्ध-नेता को देखते हैं, तो वे भयभीत होकर युद्ध में कूद पड़ते हैं।

11. यदि आप राक्षसों के दल के विरुद्ध सफलतापूर्वक युद्ध करना चाहते हैं, तो एकांत मौन से अपनी आत्मा (अपने इंद्रियों) के द्वारों की रक्षा करें, और संतों के वचनों को ध्यान से सुनें, ताकि इस प्रकार विचारों की काँटों को अधिक स्पष्ट रूप से पहचानना सीखकर, आप उन्हें क्रोध और अस्वीकृति से जलाकर नष्ट कर सकें।

12. जब पितरों की सलाह मानो, तो उनके कर्मों के न्यायाधीश की भाँति नहीं, बल्कि एक ऐसे व्यक्ति की भाँति बनो जो उनकी बातों को समझता और अध्ययन करता है।

13. शत्रुओं की आदत होती है कि वे पूछने वाले का ध्यान सलाहकार के कार्यों की ओर मोड़ दें, ताकि आपको उसका कठोर और आलोचनात्मक न्यायाधीश बनाकर, वे आपको उसकी उपयोगी सलाह से वंचित कर सकें।

14. जब आपको सलाह दी जाए, तो उसे अस्वीकार न करें, भले ही आप स्वयं विद्वान हों।

१५. जो पिता की आज्ञा को अनसुनी करता है, वह विधि की आज्ञा का भी अवमान करता है।

16. अपने पूर्वजों की उपलब्धियों के बारे में केवल अपनी संतुष्टि के लिए बात न करें, बल्कि स्वयं से यह अपेक्षा करें कि उन्हें साकार करने में आप सबसे अधिक परिश्रमी हों।

17. जो यह समझने का लगन से प्रयास करता है कि कौन सा विचार किस कर्म के विरुद्ध है, वह शत्रु के भ्रम के विरुद्ध संघर्ष में निपुण होगा।

18. जान लो कि तुम्हारी संपूर्ण आध्यात्मिक साधना में जो आध्यात्मिक प्रयत्न की कमी है, उसके स्थान पर एक विचार प्रवेश कर गया है जिसने उस पर अधिकार कर लिया है और जो आमतौर पर उसका विरोध करता है।

19. याद रखें कि तपस्या के कार्यों में लगे होने के दौरान, विवेक से अपने हृदय की रक्षा करें, कहीं ऐसा न हो कि बेहतर चीज़ों की उपेक्षा, उसे चुराकर, विचारों की बंधनशाही में सौंप दे। इस बंधन की उपेक्षा दुष्टता (शत्रु) के साथ मिलकर साज़िश करती है, ताकि, जैसे ही यह मन को चुरा लेती है, वह (दुष्टता – शत्रु) उसमें और भी तेजी से प्रवेश कर सके और अपनी इच्छानुसार उसे लूट सके।

20. जब एक व्यक्ति सुनने में आनंदित होता है और दूसरा किसी की बदनामी करता है, तो दोनों ही दो आत्माओं के उपकरण बन जाते हैं जो एक-दूसरे की सहायता करती हैं: क्योंकि द्वेषपूर्ण सुनना द्वेषपूर्ण बोलने को उत्तेजित करता है, और द्वेषपूर्ण बोलना द्वेषपूर्ण सुनने को भड़काता है; और दोनों, हृदय के विनाश के लिए, एक-दूसरे में आनंदित होते हैं।

21. बदनामी से अपने कान बंद रखो, कहीं ऐसा न हो कि तुम दो तरह से पाप करो: एक तो स्वयं को एक विनाशकारी जुनून का आदी बनाकर, और दूसरे दूसरों को बदनामी से रोकने में विफल होकर।

22. जो उपहास में आनंद लेता है, वह एक चोर की तरह (अपने लोगों में से) श्रेष्ठ लोगों की आत्माओं को लूटता है, और निंदा से कमजोर मन वालों को कमजोर करता है।

23. जो अपनी पड़ोसी की निंदा करने वाली जीभ से दूर भागता है, वह अपनी जीभ से निंदा को दूर भगा देगा।

24. जो निंदा करने वाले की बातें खुशी से सुनता है, वह अपने कानों के द्वारा (गर्त से) उस दानव के विष को खींचता है।

25. तुम्हारा कान इस कड़वे विष का स्वाद न चखे, कहीं ऐसा न हो कि तुम भी उसी विष को किसी और को परोसने लगो।

26. व्यर्थ की गपशप से अपनी सुनने की शक्ति को कलंकित न करो, कहीं ऐसा न हो कि इस जुनून को अपनाकर तुम कई जुनूनों के दास बन जाओ; क्योंकि एक बार जब एक जुनून ने तुम्हारे भीतर जगह बना ली, तो वह अन्य जुनूनों को भी उसी घोंसले (या अस्तबल) में ले आएगा; और एक मन जो एक बार प्रभुत्वशाली हो जाता है, वह कई जुनूनों का दास बन जाता है, जब वह किसी एक जुनून के साथ मिलकर, वह तपस्या के श्रम को पूरी तरह से त्याग देता है।

27. आप में जो कुछ भी ईर्ष्या योग्य है, उसे सर्वोपरि ईर्ष्यालुओं से छिपाएँ।

28. जब आपका मित्र, आपके कर्मों की अच्छी प्रतिष्ठा को अपने लिए अपमान समझकर, ईर्ष्या से पीड़ित हो जाता है और यहाँ तक कि किसी निंदा से उस पर छाया डालने का विचार भी करने लगता है, तो सावधान रहें कि आप स्वयं भी पीड़ित न हो जाएँ, और क्लेश के कड़वे विष को अपनी आत्मा में प्रवेश न करने दें। शैतान का उद्देश्य ठीक यही है कि वह अपनी ही ईर्ष्या की आग को भड़काए और आपको दुख में डुबो दे।

29. परन्तु हम स्वयं को नम्र बनाएँ और ऐसे लोगों *का 'और भी अधिक'* आदर करें (रोमियों 12:10), यहाँ तक कि भोजन के द्वारा भी उनके मन को शान्ति दें, जो ईर्ष्या से कटु हो गए हैं।

30. किसी ने एक वृद्ध संन्यासी को उनकी अधिक आयु के कारण रेगिस्तान छोड़ने के लिए मनाने की कोशिश की। लेकिन संन्यासी ने उससे कहा: 'मुझे ऐसा करने के लिए मजबूर करना बंद करो; क्योंकि जहाँ तक मेरा, एक पापी का, निर्वासन का समय समाप्त नहीं हो जाता, तब तक मैं नहीं जाऊँगा।'

31. जब मैंने उनसे मुझे शिक्षा का कोई वचन देने के लिए कहा, तो उन्होंने उत्तर दिया: 'सबसे पहले और सबसे बढ़कर, लगन से परमेश्वर के भय को अपने हृदय में जड़ जमाने का प्रयास करो – और फिर तुम हमेशा अपने भीतर वह आवश्यक वचन पाओगे जो मनुष्य को बुद्धि में शिक्षित करता है।'

32. उसी वृद्ध ने, ईश्वर के भय को प्राप्त करने के बारे में पूछे जाने पर, यह कहा: 'जो कोई भी मृत्यु की स्मृति को सावधानीपूर्वक मन में रखता है, वह उसी से न्याय के भय की ओर ले जाया जाता है।'

33. भय से प्रेरित होकर, दिव्य शास्त्रों को अपना दैनिक साथी बना लो; उनसे संवाद करके, तुम बाहरी विचारों के आक्रमण को दूर कर दोगे।

34. जो कोई भी, दिव्य शास्त्रों की शिक्षा के माध्यम से, अपने हृदय में आध्यात्मिक ज्ञान का खजाना इकट्ठा करता है, वह ऐसे विचारों को उससे आसानी से दूर भगा देगा।

35. रात्रि की प्रहरों में, पवित्र शास्त्रों को सुनते समय, हमें अपनी नींद से अपने कानों को सुन्न न करना चाहिए, और न ही अपनी आत्मा को विचारों का कैदी बनने देना चाहिए; बल्कि हमें शास्त्रों की तीक्ष्णता से अपने हृदय को भेदना चाहिए, ताकि पश्चाताप प्राप्त करके, हम मोक्ष के लिए उत्साह से भर जाएँ और विरोधी सुस्ती का अंत करें।

36. जो ईश्वर के प्रेम से जलता है, वह स्वर्गीय लोक को याद करके, अपने विचारों से मनुष्यों को प्रसन्न करने की सभी इच्छाओं को दूर कर देता है।

37. अपने कर्मों के साक्षी—अपने विवेक—को उस विचार के हवाले न करें जो पतन का तिरस्कार करता है और उसकी प्रशंसात्मक बातें करता है।

38. आप शरीर की कामनाओं को तब तक शांत नहीं कर सकते जब तक आप अपने शरीर पर संयम के कठोर श्रम की दवा नहीं लगाते जो उसकी कामनाओं को वश में करती है। और न ही आप आत्मा की कामनाओं को शांत कर पाएंगे जब तक आप पहले अपने हृदय को प्रेम के फलों से नहीं भरते।

39. शरीर की कामनाओं की उत्पत्ति शरीर की स्वाभाविक आवश्यकताओं से होती है - और उनका मुकाबला करने के लिए संयम आवश्यक है; जबकि आत्मा की कामनाएं आत्मा की आवश्यकताओं से उत्पन्न होती हैं - और उनका मुकाबला करने के लिए प्रार्थना आवश्यक है।

40. प्रेम निर्लिप्तता की पूर्णता है—वासनाओं का उन्मूलन: यह धैर्य लाता है, उबलते क्रोध को शांत करता है, विनम्रता उत्पन्न करता है, और अहंकार को वश में करता है।

४१. प्रेम में स्वयं परमेश्वर के सिवाय और कुछ नहीं है; क्योंकि परमेश्वर प्रेम है।

42. स्वयं को शाश्वत यातना के भय के बजाय ईश्वर के भय से आच्छादित करो – ताकि गेहेना की आग का भय तुममें एक अदम्य उत्साह (ईश्वर को प्रसन्न करने के कार्य के लिए) प्रज्वलित कर दे, और तुम अपने विचारों की दुष्टता के विरुद्ध ज्ञान अधिक सहजता से प्राप्त कर सको; क्योंकि भय ही ज्ञान की शुरुआत है।

४३. जो अनुभव के द्वारा मन की छलावा को समझाता है, उसे सभी नहीं समझ पाते, बल्कि केवल वे ही समझ पाते हैं जो स्वयं अनुभवी हों; क्योंकि इस ज्ञान का मार्ग सभी के लिए केवल अनुभव ही है।

44. अनुभवात्मक ज्ञान का विद्यालय एक सक्रिय जीवन है; इसे परम लगन से अपनाकर, हम स्वयं को जानते हैं, अपने विचारों को परखना सीखते हैं, और ईश्वर को जानते हैं।

४५. तुम्हारे कर्म ही वह शक्ति हों जो तुम्हारे विचारों को शांत करे; क्योंकि सक्रिय बुद्धिमत्ता केवल सीखी हुई या वाक्पटु बुद्धिमत्ता से कहीं अधिक बुद्धिमानी है, ठीक उसी तरह जैसे यह कहीं अधिक कठिन है; कर्म में, शब्द बिजली की तरह चमकते हैं, लेकिन जब कर्म नहीं होते, तो शब्द कर्मों की शक्ति से नहीं चमकते।

४६. विचार, आत्मा की आँख को भेदकर, हमें अंधा कर देते हैं, ताकि यहाँ तक कि सबसे अच्छे आज्ञाओं का भी सबसे बुरे तरीके से उपयोग किया जाए।

४७. राक्षस उन (भाइयों) पर क्रोधित होते हैं जो अपने मठाधीश के प्रति आज्ञाकारिता से स्वयं को अलग पहचान दिलाते हैं, और उन पर दाँत पीसते हैं, क्योंकि उन्होंने आज्ञाकारिता को संसार के निश्चिंत त्याग के साथ जोड़ा है।

४८. जो अपने पिता के आज्ञाकारी हैं, उनके लिए राक्षस, हर तरह के बहाने ढूंढकर, उनके लिए कष्ट तैयार करते हैं; और यदि इस स्थिति में क्रोध उत्पन्न हो, तो वे उनके विरुद्ध रोष भड़काते हैं, और फिर, धीरे-धीरे, इस बहाने

पर उनके प्रति अत्याचार और घृणा पैदा करते हैं कि वह अन्याय से दंड देता है और पक्षपात करता है; राक्षस ऐसा इसलिए करते हैं ताकि आत्मा को विभिन्न तरीकों से हिला-डुलाकर, वे उसे पति की गोद से छीन सकें।

49. कभी-कभी राक्षस किसी के विचारों में तपस्या के कार्यों की प्रशंसा करते हैं, और कभी-कभी वे उन्हें निरर्थक बताकर तुच्छ समझते हैं, ताकि कुछ में अहंकार पैदा किया जा सके और दूसरों में निराशा बोई जा सके। वे उन लोगों के तपस्वी कार्यों की प्रशंसा करते हैं जिन्हें वे आलस्य में नहीं ला सकते, ताकि उन्हें आत्म-तुष्टि में ला सकें; और जो लोग आत्म-तुष्टि के आगे झुकने से इनकार करते हैं, वे इस बात पर जोर देते हैं कि उनके कार्यों का कोई उद्देश्य नहीं है, ताकि इस प्रकार उन्हें आलस्य में लाकर, वे उन्हें निराशा में डुबो सकें।

५०. जब हमारे विचार हमारे तपस्वी श्रमों की प्रशंसा करते हैं, तो उन्हें तिरस्कार से त्यागकर, हम अपनी आत्मा को विनम्र बनाएँ; और जब वे इन श्रमों को निरर्थक बताकर उनका अपमान करते हैं, तो अपनी पूरी शक्ति से हम मसीह की दया की प्रशंसा करें।

५१. जिस सीमा तक आप अपने शरीर को वश में करते हैं, उसी सीमा तक अपने अंतरात्मा की जाँच करें। स्वयं को जानें, अपने विचारों की गुप्त चोरी को पहचानकर, ताकि उनके गुप्त लूटपाट के प्रति उदासीन रहकर, हम इस धारणा से भटक न जाएँ कि सद्गुण केवल जीवन की कठोर तपस्या से ही प्राप्त होते हैं।

५२. जैसे उपयोग में न आए सोने को, जब पिघलाने वाली भट्टी में डाला जाता है, तो वह और शुद्ध हो जाता है; वैसे ही एक नवसिखुआ भिक्षु भी, मठ के भीतर अपने चरित्र को परिष्कृत करने के बाद, धैर्य की कसौटियों से प्रबुद्ध हो जाता है। भाइयों के निर्देशों से वह आज्ञाकारिता सीखता है, जबकि उसे अनुशासन में रखने वाले (मठाधीश या वरिष्ठ) द्वारा दी गई सजाओं के माध्यम से, उसके भीतर दीर्घ-सहिष्णुता को गहराई से स्थापित किया जाता है। और यदि वह प्रसन्नतापूर्वक अपमान को स्वीकार करता है और अपमान में हीनता से प्रेम करने लगता है, तो, इस के विपरीत भावों से ऊपर उठकर, वह अनुग्रह द्वारा प्रदान की गई शक्ति के अनुपात में, सद्गुणों से दिन-प्रतिदिन अधिक प्रकाशमान होने लगेगा।

५३. मन तब विश्राम पाएगा, जब वह भावों के कारणों को काटकर चिंतन में प्रवेश करेगा; परन्तु जब तक भाव नहीं कट जाते, तब तक वह परिश्रम और संकट दोनों का अनुभव करता है, और अपने विरोधियों से लड़ने के लिए अस्थिर कदमों से निकल पड़ता है।

५४. पूर्वज एक संन्यासी के जीवन की तब अत्यधिक प्रशंसा करते हैं, जब इसे सही समय पर अपनाया जाता है - अर्थात्, जब कोई समुदाय में रहते हुए अपने गुणों को परिपूर्ण करने के बाद इस पर निकलता है। और ऐसे व्यक्ति को पहले स्वयं यह परखना चाहिए कि क्या वे एकांत में सफलतापूर्वक रह सकते हैं; और यदि उन्हें शक्ति की कमी के कारण यह असंभव लगता है, तो उन्हें सामुदायिक जीवन में लौट आना चाहिए, कहीं ऐसा न हो कि अपने विचारों की चालाकियों का विरोध करने की शक्ति न होने के कारण, वे अपना विवेक खो बैठें।

५५. जैसे एक विलाप करती विधवा को अपने बेटों में सांत्वना मिलती है, वैसे ही एक पतित आत्मा को तपस्या के श्रम में सांत्वना मिलती है, जो निराशा के विचारों को दूर करते हैं, श्रद्धालु पश्चाताप को गहरा करते हैं, मसीह की दया का प्रचार करते हैं, और किए गए पापों का प्रायश्चित करते हैं।

56. जैसे एक छोटा कुत्ता एक बच्चे से रोटी छीनने का प्रयास करता है, वैसे ही एक धूर्त विचार मन को हृदय से छीनने का प्रयास करता है। अत; हम शिशुओं की तरह विरोधी शक्तियों की चालाकी के प्रति अंधे न रहें, कहीं ऐसा न हो कि हम अपनी आत्मा को उनके लूट के हवाले कर दें।

57. जैसे तारों का एक जगमगाता समूह आकाश को रोशन करता है, वैसे ही दिव्य वचनों का सत्य, भीतर लाए गए दीपक की तरह, एक व्यक्ति को प्रकाशित करता है। इसलिए, हम सभी उसी सत्य की प्रतिमा को धारण करें, क्योंकि '*प्रभु एकमत वालों को एक ही घर में बसाता है*' (भजन संहिता 67:7)।

५८. जैसे सूर्य अपनी तेजस्वी किरणों से सारी पृथ्वी पर मुस्कुराता है, वैसे ही प्रेम अपने तेजस्वी कर्मों से हर आत्मा का अभिवादन करता है। यदि हम इसे प्राप्त कर लें, तो हम अपने जुनून को बुझा देंगे और स्वर्ग तक चमकेंगे। जैसे ही आप पवित्र प्रेम प्राप्त करते हैं, आप कोई भी कार्य पूरा कर लेंगे; लेकिन जब यह कमी होती है, तो किसी भी काम में सफलता नहीं मिलती - तब क्रोध भड़कता है, व्यवहार असभ्य हो जाता है, और बुद्धिमानी के नाम पर किए गए कार्यों में अहंकार घुल जाता है।

५९. पहले मनुष्य को अपने भावों से संघर्ष करना चाहिए और, महान संयम के साथ, संघर्ष के दौरान जो कुछ भी हुआ उसे स्मृति में रखना चाहिए; और फिर, अपने स्वयं के अनुभव से, दूसरों को संघर्ष के नियम सिखाने चाहिए और युद्ध की विधियों को पहले से समझाकर उनके लिए विजय को आसान बनाना चाहिए। अन्य लोग, शायद कठोर

जीवन के लंबे काल से, अपने भावों पर काबू पा लेते हैं, फिर भी वे विजय का मार्ग नहीं जानते, क्योंकि, जैसे रात की लड़ाई में, उन्होंने पूरे मामले का मार्ग नहीं देखा, और उनके मन ने शत्रु के दुर्भावनापूर्ण इरादों को नहीं पहचाना।

60. जिसने भी मौन का स्वाद चखा है और किसी भी हद तक ध्यान का अभ्यास शुरू कर दिया है, वह अपने मन को शरीर की चिंताओं से बाँधने के लिए सहमत नहीं होगा, न ही, इसे आध्यात्मिक ज्ञान से हटाकर, सांसारिक मामलों की ओर मोड़ेगा, जब कि वह अधिकांशतः ऊँचाइयों में विचरता है।

६१. जब भावों को वश में कर लिया जाता है, शत्रु किसी भी ओर से परेशान नहीं करते, और रक्षात्मक हथियारों का उपयोग करने की कोई आवश्यकता नहीं रह जाती; तब कोई अन्य की आत्माओं के संवर्धन की ओर बढ़ सकता है। लेकिन जब तक वासनाएँ सर्वोपरि हैं, और देह की चालाकियों के खिलाफ संघर्ष जारी है, तब तक किसी को अपने हथियार नहीं छोड़ने चाहिए; बल्कि, उन्हें हमेशा हाथ में रखना चाहिए, कहीं कि चालाक दुश्मन हमारे विश्राम को हम पर हमला करने और बिना खून बहाए हमें पकड़ने का अवसर न बना लें।

६२. संत मूसा इस्राएल को, जब वे प्रतिज्ञात देश में प्रवेश करते हैं और वहाँ रहने वाले लोगों को वहाँ से निकाल देते हैं, यह शिक्षा देते हैं: *'अपने विषय में सावधान रहना, कि जब वे वहाँ से निकाल दिए जाएँ, तो तुम उनके पीछे चलने के लिए प्रलोभित न हो जाओ'* (व्यवस्थाविवरण १२:३०)। – यह पाठ उन लोगों पर सबसे अधिक लागू होता है, जिन्होंने अपने जुनून को खत्म कर दिया है, लेकिन अपने दिलों पर बारीकी से ध्यान नहीं देते। क्योंकि ऐसे मामलों में, उनके भीतर अतीत की बातों की छवियाँ अंकुरों की तरह उभरने लगती हैं; और जो कोई भी उन्हें वहाँ प्रवेश करने से रोकने के बिना, बार-बार हावी होने वाली मानसिकता में पड़ने की स्वतंत्रता देता है, वह उन्हें जीतने के बाद, एक बार फिर से अपने भीतर वासनाओं के लिए एक शरण खोल देगा, और इस प्रकार जीवन को संघर्ष से असुरक्षित बना देगा। क्योंकि जुनून, भले ही उन्हें वश में कर लिया गया हो और बैलों की तरह उन्हें भूसा खाने के लिए प्रशिक्षित कर दिया गया हो, पालक की लापरवाही से, वे फिर से जंगली हो सकते हैं और पशुवत क्रूरता में गिर सकते हैं।

63. *'शापित है वह जो किसी गुप्त स्थान में मूर्ति रखता है'* (व्यवस्थाविवरण 27:15)। किसी चीज़ को हमेशा के लिए ज़मीन में छिपाना और उसे किसी गुप्त स्थान पर रखना एक समान बात नहीं है। जो चीज़ ज़मीन में छिपी होती है और इंद्रियों से अब महसूस नहीं होती, वह समय के साथ स्मृति से मिट जाती है; लेकिन जो चीज़ किसी गुप्त स्थान पर रखी जाती है, भले ही वह बाहरी लोगों से छिपी हो, वह अक्सर उसे रखने वाले को दिखाई देती है और इस प्रकार वह अपनी याद को ताज़ा करती है। मन में आकार लेने वाला और बाहर नहीं निकाला गया हर शर्मनाक विचार, जिसे गुप्त रूप से पाला जाता है, एक गुप्त स्थान पर रखी गई मूर्ति के समान है। जो कोई भी ऐसा करता है, वह कानून द्वारा निर्धारित दंड का पात्र है; क्योंकि एक शर्मनाक विचार को पालना ही मूर्ति की पूजा करने के समान है।

64. मन को भ्रष्ट करने वाली छवियों को हृदय में प्रवेश करने न दिया जाए; क्योंकि यदि हृदय अशुद्ध विचारों के अंधकार में डूब जाता है, तो वह, मानो, जबरदस्ती और अपनी इच्छा के विरुद्ध एक कामुक कृत्य में खींच लिया जाता है।

65. पवित्र आत्मा ने संतों के जीवन को इस लिए दर्ज किया है, ताकि जीवन के किसी भी मार्ग पर चलने वाला प्रत्येक व्यक्ति ऐसे उदाहरणों द्वारा सत्य की ओर ले जाया जा सके।

६६. जिन्हें अभी हाल ही में संसार के कोलाहल से मुक्ति मिली है, उन्हें सलाह दी जानी चाहिए कि वे मौन में (मठ या अपने घर की दीवारों के भीतर) रहें, और बार-बार बाहर जाकर इंद्रिय-संस्कारों द्वारा हृदय के घावों को फिर से न खोलें, और न ही पुराने पापों के साथ नए देवताओं को स्थापित करें। यह मौन उन लोगों के लिए कठिन है जिन्होंने हाल ही में संसार का त्याग किया है; क्योंकि तब स्मृति अपनी भीतर संचित सारी अशुद्धि को उकसा देती है, जिसे पहले लगातार एक के बाद एक होने वाले कार्यों के कारण करने का कोई अवकाश नहीं मिलता था। लेकिन ऐसा केवल शुरुआत में ही होता है; समय के साथ, धैर्य से लैस मौन, मन को अशुद्ध विचारों के क्लेश से पूरी तरह मुक्त कर देगा।

67. पाप से अभी-अभी मुँह मोड़ने वाले व्यक्ति का मन उस शरीर के समान है जो लंबी बीमारी के बाद अपनी ताकत फिर से हासिल कर रहा हो; चूँकि वह अभी पूरी तरह से ठीक नहीं हुआ है, इसलिए एक मामूली उत्तेजना भी बीमारी को वापस ला सकती है। उसकी ताकत अभी भी कमजोर है; यही कारण है कि किसी को सतर्क रहना चाहिए कि कहीं जुनून वापस न आ जाए, यदि कोई स्वयं को लोगों की भीड़ में बह जाने दे और उसे भड़काने का कारण दे। वे तपस्वी जो मजबूत और परिपक्व हो गए हैं, वे यहाँ युद्ध करने के लिए साहसपूर्वक आगे बढ़ सकते हैं; लेकिन जो अभी लड़ने में सक्षम नहीं हैं, उन्हें चुपचाप और घर पर रहते हुए, अपने लिए एक सुरक्षित आश्रय खोजना चाहिए।

68. जब सच्ची आंतरिक शांति होती है, और न केवल भावुक उथल-पुथल शांत हो जाती है, बल्कि उनकी यादें भी धुंधली पड़ जाती हैं; तब आत्मा, अपने भीतर शांति से निवास करते हुए, उन छवियों को पहचानने में सक्षम होती है जो पहले उस पर अंकित हुई थीं और जो भीतर छिपी हुई हैं, उनमें से प्रत्येक के साथ संघर्ष करने और उन्हें हृदय से

उखाड़ फेंकने में सक्षम होती है। लेकिन जब एक के बाद एक चित्र आते हैं, तो पिछले प्रभावों को मिटाना असंभव हो जाता है; क्योंकि मन नई छवियों में व्यस्त हो जाता है, जो अपनी अनवरत आकर्षण से आत्मा की दृष्टि को धुंधला कर देती हैं। जिस प्रकार वे लोग जो नदी का तल सूखा हुआ देखना चाहते हैं, उस स्थान से पानी निकालकर कुछ भी हासिल नहीं कर सकते जहाँ, उनके विचार में, वे जो खोज रहे हैं वह है; क्योंकि खाली हुई जगह तुरंत बहते पानी से भर जाती है; और जब ऊपर से पानी का बहाव रुका होता है, तो तल आसानी से दिखाई देता है, क्योंकि बिचा हुआ पानी अपने आप निकल जाता है, और जमीन इच्छित जांच के लिए सूखी रह जाती है: इसलिए जब इंद्रियाँ किसी बाहरी उत्तेजना का प्रवाह बंद कर देती हैं, तो भावों की अंकित छवियों को दूर करना आसान हो जाता है; लेकिन जब वे एक नदी की तरह नए और निरंतर नए प्रभाव प्रदान करती हैं, तो आत्मा को भावुक छवियों और प्रवृत्तियों से पूरी तरह शुद्ध करना न केवल कठिन बल्कि सर्वथा असंभव हो जाता है।

६९. पैगंबर आज्ञा देते हैं: *'बाबेल के बीज का संहार करो'* (यिर्म. ५०:१६)। हमारे लिए, यह एक सलाह है: इन छवियों को तब जड़ से उखाड़ फेंकना जब वे अभी इंद्रियों के गर्भ में हों, ताकि जब वे हृदय की भूमि पर गिरें, तो वे अंकुरित न हों और, उनके साथ बार-बार संवाद की वर्षा से सिंचित होकर, बुराई के फल न दें। हालाँकि, एक अन्य नबी तो उन लोगों की भी प्रशंसा करते हैं जो वासनाओं के पके होने का इंतज़ार नहीं करते, बल्कि उन्हें तब नष्ट कर देते हैं जब वे अभी स्तनपान करने वाले शिशुओं की तरह होती हैं, यह कहते हुए: *'धन्य है वह जो तुम्हारे शिशुओं को पकड़कर चट्टान से पटक देगा'* (भजन संहिता 136:9)। यॉब के शब्द समान अर्थ व्यक्त करते हैं: *'चींटियाँ इसलिए नष्ट हो गईं क्योंकि उनके पास भोजन नहीं था'* (4:11)। यह स्पष्ट है कि महान अय्यूब, जुनून के कपटपूर्ण स्वभाव को दर्शाना चाहते हुए, इसके लिए एक जटिल नाम गढ़ा: '*चींटी-शेर*, जिसमें सबसे शक्तिशाली शेर और सभी जीवों में सबसे तुच्छ, चींटी, के नामों का संयोजन है; क्योंकि वासनाओं का आक्रमण सूक्ष्म विचारों से शुरू होता है, जो चींटियों की तरह अनजाने में धीरे-धीरे प्रवेश करते हैं, लेकिन बाद में बढ़कर उन लोगों के लिए शेर के हमले से कम खतरनाक नहीं रह जाता, जो ऐसे आक्रमणों के अधीन होते हैं। तो फिर, एक तपस्वी को अपनी कामनाओं पर तब ही काबू क्यों पाना चाहिए जब वे चींटियों की तरह छोटी हों, और उनकी तुच्छता को ही एक चारे के रूप में इस्तेमाल क्यों करना चाहिए? क्योंकि यदि वे एक सिंह की ताकत प्राप्त कर लें, तो वे अजेय हो जाती हैं और महान कष्ट का कारण बनती हैं। यहाँ, किसी भी तरह से उन्हें पोषण नहीं देना चाहिए; क्योंकि उनका पोषण, जैसा कि पहले कई बार कहा जा चुका है, इंद्रियों के माध्यम से प्रवेश करने वाले वासनाओं की छवियों से होता है, जो वासनाओं को पोषित करती हैं, और प्रत्येक अपनी मूर्ति को आत्मा के विरुद्ध हथियारबंद करती है।

70. और मंदिर में, विधि-दाता ने *'जालदार खिड़कियाँ'* (यहे. 41:16) लगाईं – जिससे यह संकेत मिलता है कि जो लोग अपने हृदयों को एक मंदिर की तरह शुद्ध रखने का संकल्प लेते हैं, जैसे वहाँ की जालीदार खिड़कियाँ यह सुनिश्चित करती हैं कि कोई भी अशुद्ध वस्तु भीतर प्रवेश न कर सके, वैसे ही उन्हें आने वाले न्याय के भय से अपनी इंद्रियों की रक्षा करनी चाहिए, एक ऐसी जाली की तरह जो नवोदित और घुसपैठ करने वाली अशुद्ध कल्पनाओं के प्रवेश को रोक दे।

71. 71. जो कोई, परेशान करने वाले (उग्र) दृश्यों के विरुद्ध संघर्ष करते हुए, भविष्य की सजाओं के भय से स्वयं को उस तीव्र संघर्ष में लाने में सक्षम होता है, जैसे कोई समुद्र में उछाला गया व्यक्ति लहरों से संघर्ष करता है; वह व्यक्ति उन पर आक्रमण करने वालों पर आसानी से विजय प्राप्त कर लेगा, बिना खुद पर पड़े प्रहारों को महसूस किए, ताकि वे कहें: *'उन्होंने मुझे मारा, पर मुझे घाव नहीं लगा; उन्होंने मेरा अपमान किया, पर मैंने कोई ध्यान नहीं दिया'* (नीतिवचन 23:35), अर्थात्, उन्होंने मुझे मारा, यह सोचकर कि वे मेरा अपमान कर रहे हैं, फिर भी मुझे प्रहारों का एहसास भी नहीं हुआ, क्योंकि 'उनके *तीर शिशुओं के फोड़ों जैसे थे'* (भजन संहिता 63:8); न मैंने उनकी तानों पर कोई ध्यान दिया, और न ही मैंने यह जताया कि मुझे उनकी मौजूदगी का पता था।

72. जिनका संकल्प दृढ़ नहीं रहता, जो एक बार फिर बहक जाते हैं और अपने विचारों के आगे झुक जाते हैं, और अक्सर उस चीज़ पर लौट आते हैं जिसे उन्होंने त्याग दिया है, उनके लिए सांसारिक मामलों का त्याग करने में कोई लाभ नहीं है; इस प्रकार वे उस से अपनी आसक्ति प्रकट करते हैं, जैसे लूत की पत्नी, जो पीछे मुड़कर देखने पर नमक का स्तंभ बन गई थी, जो ऐसे लोगों के लिए एक चेतावनी है। जिस चीज़ से हम मुँह मोड़ चुके हैं, उसकी ओर बार-बार झुकाव निस्संदेह हमें उस अच्छी आदत से वापस ले जाएगा जो अभी जमी भी नहीं है; और, आगे बढ़ने की हमारी प्रेरणा को कमजोर करके, वे हमें पूरी तरह से अपनी ओर खींच लेंगे और हमें अपनी पुरानी बुरी आदतों पर लौटने के लिए मजबूर कर देंगे। इससे पुरानी, बुरी आदत और भी अधिक मजबूत हो जाएगी और यह शुरू किए गए अच्छे आचरण के अभ्यास में लौटने की शायद ही अनुमति देगी। क्योंकि आदत अभ्यास को जन्म देती है, और अभ्यास स्वभाव बन जाता है; फिर भी अपने स्वभाव को बदलना और रूपांतरित करना कठिन है। उस आत्मा के बारे में सोचिए जो अपनी आदतों का

अनुसरण करती है, कि वह अपनी मूर्तियों पर कैसे बैठी रहती है, मानो उन पर कील से ठोक दी गई हो: *'मैं,'* वह कहती है, *'तुम्हारे सामने उठ नहीं सकती, क्योंकि मैं स्वभाव से एक स्त्री हूँ'* (, उत्पत्ति 31:35)। और आत्मा, जिसने इस जीवन के मामलों में बहुत पहले ही विश्राम पा लिया है, उन पर मूर्तियों की तरह बैठी है और उनसे इतनी बँधी हुई है कि वह उनसे अलग नहीं हो सकती और न ही होगी।

73. परमेश्वर के संत शहरों से भाग गए, यह जानते हुए कि दुष्ट लोगों के साथ संगति एक संक्रामक बीमारी से कहीं अधिक भ्रष्ट करने वाली है। यहूदा छोड़कर, एलियाँ कार्मेल पर्वत पर रहे, जो जंगली जानवरों से भरा एक सुनसान पहाड़ था। उनके शिष्य एलीशा ने भी इस गुरु के उदाहरण का अनुसरण करते हुए निर्जन स्थान से प्रेम किया। और यूहन्ना यॉर्डन के जंगल में रहते थे, टिड्डियों और जंगली शहद का आहार लेकर यह दिखाने के लिए कि शारीरिक जीवन की आवश्यकताओं को पूरा करना कितना आसान है। शायद मूसा ने भी कुछ इसी तरह का संकेत दिया था जब उन्होंने इस्राएलियों को केवल एक दिन के लिए मन्ना इकट्ठा करने का नियम दिया; इसका उद्देश्य यह सिखाना था कि अपने भौतिक अस्तित्व की चिंता केवल एक दिन तक ही सीमित होनी चाहिए। वास्तव में, सभी संतों ने, *'जिनके लिए संसार योग्य नहीं था'*, आबाद दुनिया को छोड़कर, *'मरुभूमियों में भटकते रहे'* (इब्रानियों 11:37-38), मानवता के स्पष्ट दुराचारों से भागते हुए, ताकि उनकी आकांक्षाओं की शक्ति उन्हें एक बाढ़ की तरह सांसारिक जीवन की सामान्य धारा में न बहा ले जाए, जो विनाशकारी है।

74. हम परमेश्वर के स्वरूप में बनाए गए हैं ताकि हम अपने भीतर उनके गुणों को बनाए रखें, और एक आदर्श जीवन जीकर, जो हम पर दृष्टि डालते हैं उन्हें परमेश्वर के समानता के स्पष्ट संकेत प्रस्तुत करें। 'मैं,' परमेश्वर कहते हैं, *'उदार और दयालु हूँ, क्रोध में धीमा और स्थिर प्रेम में प्रचुर हूँ'* (भजन संहिता 102:8; योएल 2:13), और मैं न्याय को बनाए रखता हूँ। ये दिव्य मुखमंडल की विशेषताएँ हैं। इनके द्वारा उस आत्मा को पहचाना जाता है जिसने परमेश्वर के स्वरूप में भाग लिया है और परमेश्वरत्व की समानुभूति बन गई है। ईश्वर के प्रति प्रेम से प्रेरित होकर ईश्वरीय पूर्णता की परिपूर्णता के लिए प्रयास करते हुए, और उस शरीर के बंधनों से बँधा होने के कारण जिससे यह जुड़ा हुआ है, यह आत्म-शुद्धि की अपनी खोज में एक के बाद एक परिश्रम करता है, जब तक कि यह उस गुण को प्राप्त करने में सफल नहीं हो जाता जो दिव्य स्वभाव को विशिष्टता प्रदान करता है—सद्भावना, दीर्घ सहनशीलता, दया और मानवता के प्रति प्रेम। और फिर वह *'स्वर्गदूतों से कुछ ही कम'* हो जाती है (भजन संहिता 8:6)।[76]

७५. जो सांसारिक कलह से भागता है, जीवन की व्यर्थताओं से स्वयं को परेशान नहीं होने देता, और तुच्छ तथा गैर-जिम्मेदार लोगों की संगत से दूर रहता है, अपना अधिकांश समय घर पर मौन प्रार्थना और ईश्वर के वचन के अध्ययन में व्यतीत करता है; और जब कभी वह घर से बाहर निकलता है, तो वह गरिमामय, नम्र, शांतचित्त, दयालु और भ्रातृभावपूर्ण दिखाई देता है; ऐसे व्यक्ति को ईश्वर का सच्चा उत्साही सेवक, ईश्वर की सच्ची प्रतिमा और समानता, ईश्वर की भलाई की दिव्य किरणों से प्रकाशित, और सबसे सुंदर फूलों की तरह आकर्षक सद्गुणों के माध्यम से ईश्वर के प्रति अपनी समानता को स्पष्ट रूप से प्रकट करने वाला, कौन नहीं कहेगा?

76. ये ईश्वर के – और ईश्वर के समान बनने के लिए उत्सुक व्यक्ति के – विशिष्ट लक्षण हैं: सौम्यता, द्वेष की कमी, क्रोध की कमी, ईर्ष्या की कमी, परोपकार, करुणा, क्षमा, अच्छाई से प्रेम, दया, सम्मान, दूसरों की भलाई के प्रति चिंता, मिलनसारिता, मददगार होना, आत्म-प्रेम की कमी, – संक्षेप में, वह सब कुछ जिसमें ईश्वर भलाई की प्रचुरता प्रकट करते हैं, वही जो *'अपने सूर्य को दुष्टों और भलों पर उदय करता है, और धर्मी और अधर्मी दोनों पर वर्षा भेजता है'* (मत्ती 5:45)। इन्हीं गुणों से वह व्यक्ति पहचाना जाता है जो ईश्वर का अनुकरण करने का प्रयास करता है।

77. यह एक ही निर्देश भक्तों को निर्दोष जीवन जीने का तरीका सिखाने के लिए पर्याप्त होगा; लेकिन, यह जानते हुए कि कुछ लोगों के लिए इस ओर ले जाया जाना कितना कठिन है, संत पौलुस, कई उपदेशों के माध्यम से, कुशलतापूर्वक हमारी मानसिकता को सांसारिक व्यर्थताओं से हटाने का प्रयास करते हैं, और विभिन्न प्रशंसात्मक शब्दों से हमारे उत्साह को जगाते हैं। एक स्थान पर वे कहते हैं: *'तुम परमेश्वर का मंदिर हो'* (1 कुरिन्थियों 3:16); दूसरे स्थान पर: *'प्रकाश के बच्चों के समान चलो'* (इफिसियों 5:8); और एक अन्य स्थान पर: *'मसीह के सुसमाचार के योग्य जीवन जियो'* (फिलिप्पियों 1:27); और फिर: *'तुम मसीह की वधू हो'* (1 कुरिन्थियों 6:15); एक स्थान पर वह हमें *'पवित्र और निष्कलंक'* (इफिसियों 1:4) कहता है, और दूसरे स्थान पर – *'निष्कलंक और शुद्ध, दोष रहित परमेश्वर के बच्चे'* (फिलिप्पियों 2:15)। वे इन सब के बारे में ऐसा बोलते हैं मानो यह पहले से ही हम में हो, भले ही वास्तव में ऐसा अभी नहीं है—इस उद्देश्य से कि, यह भय मानते हुए कि यदि हम ऐसे साबित नहीं हुए तो ऐसी प्रशंसा निन्दा और उपहास में

[76] एन्सीरा की डिकिनेस को लिखे पत्र से – मिग्ने, खंड 2, पृ. 97।

बदल सकती है, हम पूरी लगन के साथ ऐसे बनने और बने रहने का प्रयास करें। पवित्र प्रेरित केवल इन्हीं प्रशंसाओं तक ही सीमित क्यों नहीं रहते, बल्कि वे विभिन्न तरीकों और साधनों को भी बताते हैं जिनके द्वारा हम *'मसीह की पूर्णता के माप तक पहुँच सकते हैं'* (इफिसियों 4:13)?

७८. सबसे पहले और सबसे महत्वपूर्ण, वह यह चाहता है कि हम संसार के लिए मरें और उसे सूली पर चढ़ाया जाए, ताकि हम इस संसार के सुखों और दुखों को बिल्कुल भी महसूस न करें। वे कहते हैं, *'तुम मर गए हो, और तुम्हारा जीवन मसीह के साथ परमेश्वर में छिपा है'* (कुलुस्सियों 3:3), यह दिखाना चाहते हुए कि मिसीह के साथ एक हुए लोग कैसे जीते *हैं—'ऊँचीं बातों की खोज में'* और *'ऊँचीं बातों पर मन लगाते* हुए'—*'जगत के तत्वों के लिए* मरे *हुए'* और अब उनके अनुसार नहीं जीते। वह यह भी कहते हैं: *'अपने शरीर परमेश्वर के समक्ष ऐसे अर्पण करो जैसे मरे हुओं में से जिलाए गए हों'* (रोमियों 6:13), एक ओर यह चाहकर कि हम ठीक उसी चीज़ के लिए मर जाएँ जो देह की कामनाओं को जन्म देती है, जो आत्मा के के विरुद्ध काम करती हैं; और दूसरी ओर, हमें उसी के द्वारा जीने की आज्ञा देकर जिसके द्वारा परमेश्वर की प्रसन्नता के लिए सदाचार के कार्य किए जाते हैं। इसीलिए वह उन लोगों को बुलाता है जिन्होंने *'पृथ्वी पर स्थित अंगों को मार डाला है'* (रोमियों 12:1; कुलु. 3:5) और जो *'जीवन की नूतनता में'* चलते हैं (रोम. 6:4), जिन्होंने अपनी देहिक इच्छाओं को मार डाला है, वे न तो बुराई की ओर प्रेरित होते हैं, और न ही वे भलाई के कार्यों के करने में सुस्त रहते हैं; क्योंकि, एक जीवित बलिदान होने के नाते, उन्होंने इसके लिए अपनी शक्ति नहीं खोई है, बल्कि, एक खिलते हुए और युवा पौधे की तरह, वे इसका उपयोग देह की पुरानी शत्रुतापूर्ण साजिशों के विरुद्ध करते हैं, अब इन मूर्खतापूर्ण इच्छाओं से भटकते नहीं हैं, क्योंकि वे पूरी तरह से देह के जीवन से आध्यात्मिक जीवन में प्रवेश कर चुके हैं, और देह से नहीं बल्कि आत्मा से जीते हैं।

79. उन लोगों से, जो देह में होते हुए भी, इसके अव्यवस्थित माँगों से परेशान होना बंद कर चुके हैं, प्रेरित कहते हैं: *'तुम देह में नहीं, पर आत्मा में हो'* (रोमियों 8:9)। क्योंकि पाप अब उनके मरणासन्न शरीर में राज्य नहीं करता था, और न ही उसने उन्हें जबरदस्ती अपने स्वभावों की आज्ञा मानने के लिए मजबूर किया, जो मन के विधान का विरोध करते थे और आमतौर पर उन्हें उनके अंगों में विद्यमान एक निश्चित विधान का दास बना देते थे; बल्कि जीवन के आत्मा का विधान मसीह यीशु में राज्य करता था, जो उन्हें मसीह की आज्ञाओं की पूर्ण आज्ञाकारिता में लाता था। इस व्यवस्था में, वे केवल उस बात में आनंद ही नहीं लेते जो आंतरिक मनुष्य के लिए सर्वोत्तम है, बल्कि वे उसे सिद्ध करते हैं, और सदाचार के लिए, उसके विपरीत परिश्रमों द्वारा, शरीर की हर उस पूर्व अवज्ञा का प्रतिशोध लेने के लिए तैयार रहते हैं, जिसे पहले उसे प्रसन्न करने के लिए अनुमत किया गया था। – जहाँ तक इस बात का सवाल है कि यह 'सज़ा' क्या है और इसे कैसे पूरा किया जाता है, प्रेरित इस प्रकार सिखाते हैं: *'जिस प्रकार तुमने पहले अपने अंगों को अशुद्धता और अनियंत्रण के दास के रूप में प्रस्तुत किया था, जिससे अनियंत्रण की ओर ले जाता था, वैसे ही अब अपने अंगों को धार्मिकता के दास के रूप में प्रस्तुत करो, जिससे पवित्रता की ओर ले जाता है'* (रोमियों 6:19)। जो लोग आदत के वश में होकर, एक बुरी आदत को अच्छी आदत में बदलने के लिए विवश हैं, वे जानते हैं कि यह परिश्रम कितना बड़ा है। परिश्रम बड़ा है, लेकिन जो लोग स्वयं को नहीं बख्शते, वे ईश्वर की कृपा से इसमें सफल हो जाते हैं। कई असफलताओं और आगे बढ़ने के कई प्रयासों के बाद, वे अंततःउन बुरे झुकावों से पूरी तरह मुंह मोड़ने में सफल हो जाते हैं, जिनके गुलाम वे थे, और अपने पूरे स्वभाव को पूरी तरह से बुरे से बेहतर में बदल लेते हैं—ताकि वे अपने सभी अंगों का उपयोग शत्रुतापूर्ण वासनाओं के विरुद्ध कर सकें, और उन्हें अधर्म के उपकरणों से धर्म के उपकरणों में बदल सकें।

८०. मन की हलचलों पर बारीकी से ध्यान दें, यह देखते हुए कि वह चीज़ों की यादें कैसे उकेरता है, और इन चीज़ों के प्रभावों को पक्षपात के साथ या बिना पक्षपात के स्वीकार करता है। कई लोग अपने कर्मों की तुलना में अपने विचारों में अपने जुनून के आगे अधिक झुक जाते हैं, चुपचाप उनसे सहमति जताते हैं और उनमें आनंद लेते हैं। भीतरी रूप से वे गिर चुके होते हैं, भले ही उनके साथ कोई दिखाई देने वाली कमियाँ न जुड़ी हों। और ऐसा भी होता है कि कुछ लोग बाहरी रूप से पूरी तरह निर्दोष प्रतीत होते हैं - फिर भी केवल वे ही अपने भीतर छिपी गंदगी से वाकिफ होते हैं, और शर्म से लाल हो जाते हैं क्योंकि जो अदृश्य है वह दृश्य के विपरीत होता है; सच्चाई उनके सम्मानजनक बाहरी स्वरूप का खंडन करती है और उनके अंतरात्मा को उचित शर्म महसूस कराती है। ऐसा व्यक्ति ताबूत से कैसे भिन्न है, जब उसकी आत्मा में अनुचित विचार पनपते हैं और वह शर्मनाक भावनाओं से भरी होती है? क्या वह ताबूत से भी बदतर नहीं है? ताबूतों में अपनी बदबू लंबे समय तक नहीं रहती, जबकि शरीर में अभी भी नमी बनी रहती है; लेकिन जैसे ही शरीर के तरल पदार्थ सूख जाते हैं, बदबू खत्म हो जाती है; लेकिन दिल, जो शर्मनाक विचारों से भरा हो, हमेशा घृणा पैदा करता है, क्योंकि वह सड़ते हुए शरीर से भी बदबूदार होता है – और उसे केवल अपनी ही शर्म में आनंद आता है।

८१. जैसे सुख और दुख कामना के अनुगामी होते हैं (पहला उसकी पूर्ति के बाद, दूसरा उसकी अपूर्णता के बाद), और कामना इंद्रिय-संवेदना से उत्पन्न होती है (बाह्य वस्तुओं से प्राप्त एक छाप, या उनके बारे में विचार); इसी प्रकार जो व्यक्ति बाद वाले (छाप, विचार) को उत्पन्न नहीं होने देता, वह पहले वाले (इच्छा और सुख या दुख) के लिए कोई स्थान नहीं छोड़ता: ठीक उसी तरह जैसे कोई व्यक्ति दरवाज़े में फंसे साँप का सिर कुचल देता है, तो दरवाज़े के बाहर सिर के पीछे उसका बाकी शरीर लटक जाता है, जो निस्संदेह दरवाज़े से आसानी से निकल जाता अगर सिर आगे बढ़कर अपना रास्ता बना लेता। आत्म-जागरूकता या संयम का यही नियम है।

८२. यदि कोई किसी बुरे चीज़ की इच्छा करता है, तो चाहे वह अपनी इच्छा पूरी करे या न करे, दोनों ही परिणाम उसके लिए समान रूप से हानिकारक हैं – अर्थात्, पहले मामले में आनंद और दूसरे में दुख। क्योंकि यह शोक *'परमेश्वर के अनुसार शोक'* नहीं है, जो, संत पौलुस के शब्दों में, *'पश्चाताप लाता है जो उद्धार की ओर ले जाता है'* (2 कुरिन्थियों 7:10); और न ही यह आनंद प्रभु में आनंद है, जैसा कि वे अनुभव करते हैं जो एक निर्मल अंतरात्मा के साथ आनंदित होते हैं (फिलिप्पियों 4:4)। यह आनंद आत्मा का एक प्रकार का भ्रम है, जिसे एक राक्षस ने भर दिया है, क्योंकि यह सच्चे भले के आनंद पर निर्भर नहीं करता, बल्कि उसके भ्रम में बह जाने पर निर्भर करता है।

83. ये उन तरीकों की विशिष्ट विशेषताएँ हैं जिनसे सद्गुण, अपने प्रति समर्पित मन को संभावित सफलता की ओर मार्गदर्शन करता है। सफलता को बहुत दूर नहीं बताया गया है, कहीं ऐसा न लगे कि सदाचार अपनी महान दूरदर्शिता से डराने का प्रयास कर रहा हो; फिर भी यह स्थिर नहीं रहती, ताकि जो लोग इसका अनुसरण करते हैं वे इसे प्राप्त कर सकें; और ऐसा इसलिए है ताकि वे मृत्यु तक अपने उत्साह में कमी न आने दें, बल्कि अपने पूरे जीवन में अपनी लगन को मजबूत करें, और इसे सभी चीजों पर लागू करें।

८४. भले ही एक पूरा जीवन सद्गुणों को विकसित करने के लिए पर्याप्त न हो, और जो लोग इसके लिए प्रयास करते हैं उन्हें अपनी शारीरिक इच्छाओं के कारण महान आत्म-संयम की आवश्यकता होती है; तो, हमारे विचारों के विचलन और चंचलता के बीच, हम ऐसी लंबी और कठिन यात्रा को सफलतापूर्वक कैसे पूरा करें, और अपने आप को अपने विरोधियों की चालाकियों से कैसे बचाएँ—जो संख्या में अधिक और अदृश्य हैं, और जो हमारे ही जुनून और भावनाओं को हमारे खिलाफ हथियार के रूप में उपयोग करते हैं, और इस प्रकार हमें उन्हीं चीजों से नीचे गिरा देते हैं जिनसे ईश्वर की कृपा ने हमें उनसे बचाव के लिए लैस किया है? इसलिए, हमें सतर्क रहना चाहिए और उन चीज़ों से भटकने नहीं देना चाहिए जिनका उपयोग हमारे विरोधी हमारे खिलाफ करते हैं। यह स्पष्ट है कि जो कुछ भी हमारे प्रयास में हमारी सफलता में योगदान नहीं देता है, वह हमारे विरोधियों के हितों की सेवा करता है।

८५. जो लोग अपने विचारों को सही दिशा देना चाहते हैं, उन्हें किन विचारों से निर्देशित होना चाहिए? – ध्यान से सुनें। – दाऊद ने एक स्थान पर कहा: *'मेरे हृदय की शिक्षा ही मेरी समझ है'* (भजन संहिता ४८:४); अन्यत्र: *'मैं सदा तेरी आज्ञाओं से सीख लूंगा'* (भजन संहिता 118:16); और फिर: *'मैं तेरे सब कामों से सीख लूंगा, और मैं तेरे कामों पर मनन करूँगा'* (76:13)। – ऐसा करो, – और तुम्हारा सदैव चंचल मन अनुचित बातों पर भटकने का समय नहीं पाएगा, बल्कि वह लगातार उसी में लगा रहेगा, जिसमें गहराई से जाने पर आनंद और महान लाभ मिलता है, जो इंद्रियों को दृष्टि से और आत्मा को चिंतन से आनंदित करता है।

६. संन्यासियों के लिए एक आह्वान

1. भोजन में अनुशासनहीनता उपवास को निष्फल कर देती है, जबकि संयम और प्रार्थना के संयोजन से कामुक इच्छाओं को दूर किया जाता है।

2. धन का प्रेम – मूर्तिपूजा की जननी – संतोष को दबा देता है, जबकि शरीर की आवश्यकताओं की चिंता ईश्वर में आशा को समाप्त कर देती है।

3. भटकता मन परमेश्वर के वचन के पठन और सतर्क प्रार्थना में बाधा डालता है।

4. क्रोध का एक झोंका उत्साह और भजन गाने को दबा देता है।

5. निराशा को धैर्य और आँसुओं से दूर भगाया जाता है, जबकि सांसारिक दुख को कामुक सुखों के प्रति अरुचि से शांत किया जाता है।

6. विनम्रता और आत्म-महत्व तथा दूसरों पर बढ़त रखने की भावना से मुक्त होने से आतिथ्य को बढ़ावा मिलता है। परन्तु घमंड—वह प्राचीन बुराई, जो प्रभु के सामने एक घृणा है, और जिसे परमेश्वर नापसंद करते हैं—केवल असीम विनम्रता से ही वश में किया जाता है, जो यह घोषणा करती है: *'मैं धूल और राख हूँ'* (उत्पत्ति 18:27), और फिर: *'जब तक यहोवा घर न बनाए, तब तक उसके बनाने वालों की मेहनत व्यर्थ है; और जो उसकी रखवाली करते हैं, उनकी पहरेदारी व्यर्थ है'* (भजन संहिता 126:1)।

7. जैसे बिना शांत किए मटमैले पानी को साफ़ करना असंभव है, वैसे ही एक भिक्षु के लिए मौन के बिना अपने आंतरिक स्वरूप को जानना असंभव है।

8. जैसे एक योद्धा के लिए बिना युद्ध में उतरे विजेता की माला से विभूषित होना असंभव है, वैसे ही भक्ति के कार्यों के बिना ईसाई बनना असंभव है।

9. जैसे एक भारी बोझ से दबे हुए तराजू का पलड़ा समतल नहीं रह सकता, वैसे ही जब सांसारिक तर्क हावी हो तो ईश्वर की आज्ञा का पालन करना असंभव है।

10. जैसे किसी शिल्प में कठोर अभ्यास के बिना महारत हासिल करना असंभव है, वैसे ही ईश्वर के समीप धर्मी हृदय के साथ निकट आए बिना प्रार्थना प्राप्त करना असंभव है।

11. जिसने शुद्ध प्रार्थना प्राप्त नहीं की है, उसके पास युद्ध के लिए कोई हथियार नहीं है।

12. जो व्यक्ति भले ही अच्छे कपड़े पहनता हो, पर ईश्वर के गुणों से रहित हो, वह राक्षसों का निवास स्थान है।

13. जैसे एक राजा एक गरीब के घर में नहीं रहता, वैसे ही मसीह पाप से कलंकित आत्मा में नहीं वास करते।

14. जैसे एक उपेक्षित खेत परिश्रम से संवारा जाता है, वैसे ही पाप में भटक गई आत्मा, यदि ईश्वर के नियम के अनुसार जीने लगे, तो वश में हो जाती है।

15. जैसे समुद्र में गहराई में पड़ा पत्थर लहरों की पहुँच से परे होता है, वैसे ही जो सद्गुणों में उत्कृष्ट है—और, मानो, उनमें डूबा हुआ है—वह शैतान से नहीं डगमगाएगा।

16. जैसे एक कुशल चिकित्सक तत्काल हाथ की बीमारी का इलाज ढूंढ लेता है, वैसे ही ईश्वर का ज्ञान, जो (मन और हृदय में) संजोया गया हो, अपने धारक को सिखाता है कि (गिरने से) अपनी रक्षा कैसे करें और सर्वोत्तम के लिए प्रयास कैसे करें।

17. जैसे एक धारा अपना मार्ग खुद बनाती है, वैसे ही एक बार अपना लिया गया पाप, अपने आप ही उसे ग्रहण करने वाले को विनाश की ओर ले जाता है।

18. जैसे एक जाल में फँसे हिरण के पास बचने का कोई आसान रास्ता नहीं होता, वैसे ही जो व्यक्ति अपनी दुनिया में मग्न होकर वासनाओं को पालता है, वह पाप से नहीं बच पाएगा; क्योंकि वासनाएँ, चालाक और आकर्षक होने के कारण, ऐसे बंधन हैं जिन्हें तोड़ना मुश्किल होता है।

19. जैसे एक बेल जो अच्छा फल नहीं देती, उसे व्यर्थ में जगह न घेरे के लिए काट दिया जाता है, वैसे ही जो कोई भी पवित्र आत्मा के फल नहीं देता, वह प्रभु से अलग कर दिया जाएगा।

20. जैसे एक तीर लगने पर मनुष्य का अछूता रहना असंभव है, वैसे ही एक बुरे विचार को मन में रखने वाले भिक्षु का उससे आहत न होना असंभव है।

21. जैसे कोई व्यक्ति जो सही मार्ग खो चुका है, एक अजनबी देश में भटकता रहता है, यह न जानते हुए कि कहाँ जाएँ, वैसे ही कोई व्यक्ति जो एकसार त्रिमूर्ति में विश्वास नहीं करता, भटकता रहता है।

22. जैसे एक व्यक्ति, यद्यपि कई भागों में विभाजित हो, सार में एक ही होता है, वैसे ही पवित्र त्रिमूर्ति, यद्यपि नामों और व्यक्तियों द्वारा विभाजित है, सार में एक ही है। आप ईश्वर के सार को नहीं समझ सकते, भले ही आप पंखों से उसकी ओर उड़ान भरें। ईश्वर अगम्य है, क्योंकि वह हमारे स्रष्टा हैं।

23. जैसे एक बनती हुई मूर्ति उसे बनाने वाले की प्रकृति को नहीं जानती, वैसे ही कोई व्यक्ति भी ईश्वर की प्रकृति को नहीं जान सकता।

24. त्रिमूर्ति पर प्रश्न न उठाओ, बल्कि केवल विश्वास करो और आराधना करो, क्योंकि जो प्रश्न करता है वह विश्वास नहीं करता।

२५. चाँदी नहीं, ज्ञान प्राप्त करो; किसी भी उत्तम सूती वस्त्र के बजाय हमारे प्रभु मसीह के तेजस्वी वस्त्र से स्वयं को आच्छादित करो, क्योंकि मृत्यु के दिन ऐसे धन का कोई काम नहीं आएगा।

26. जैसे आग काँटों को भस्म कर देती है, वैसे ही हर पापी अनंत आग में भस्म हो जाएगा, फिर भी मर नहीं पाएगा; क्योंकि उसे अनंतकाल तक यातना दी जाएगी।

27. हमारे धर्मी बनने में कुछ भी महान नहीं है; क्योंकि उस स्थिति में हम केवल वैसे ही हो जाएँगे जैसे हम शुरू में परमेश्वर द्वारा बनाए गए थे, अत्यंत अच्छे।

28. जो अपनी प्रकृति के अनुसार नहीं जीता, वह परमेश्वर की आज्ञाओं का पालन नहीं करता।

29. सारी बुद्धि परमेश्वर का भय मानने में है: परन्तु जो शिक्षा यहोवा की व्यवस्था नहीं सिखाती, वह मूर्खता और व्यर्थता है।

30. धर्मी कर्मों के बिना, विश्वास और बपतिस्मा किसी को भी अनंत आग से नहीं बचाएंगे। यदि आप मसीह के साथ एक हुए हैं, तो उसकी आज्ञाओं का पालन करें; और यदि आप भविष्य में विश्वास करते हैं, तो अनंत महिमा प्राप्त करने का प्रयास करें और अग्नि की तलवार से डरें। लेकिन यदि आप परमेश्वर की आज्ञाओं का पालन नहीं करते हैं, तो खुद को विश्वासी न कहें।

31. हर प्राणी परमेश्वर की इच्छा का पालन करता है; केवल मनुष्य ही उसकी अवज्ञा करने की हिम्मत करता है, *'जिसके द्वारा सब कुछ बनाया गया था'*।

32. हम स्वयं को शुद्ध रखकर ईश्वर को कोई लाभ नहीं पहुँचा सकते; बल्कि हम अपने लिए अनंत जीवन और अनुपम अनंत आशीर्वादों का आनंद सुनिश्चित करते हैं।

33. यह न कहो: 'मैं अपने पिता, या अपनी माता, या अपनी पत्नी, या अपने बच्चों, या किसी और के कारण परमेश्वर की आज्ञा का पालन नहीं कर सकता'; क्योंकि वे तुम्हें आने वाले क्रोध से, और उस कीड़ा से नहीं बचाएंगे जो कभी नहीं मरता। जो कोई भी तुम्हें ईश्वर और सदाचार की खोज से रोकता है, वह तुम्हारे लिए एक घृणास्पद वस्तु और घृणा का पात्र हो; ऐसे व्यक्ति के साथ *'संगीति भी न करो'*।

संत एफ्रेम सीरियाई

उनका संक्षिप्त परिचय

संत एफ्रेम का जन्म चौथी शताब्दी के शुरुआती वर्षों में निसिबिस के आसपास, या उसी शहर में, एक मामूली साधन-संपन्न परिवार में हुआ था। – उनके माता-पिता ने उनका पालन-पोषण ईश्वर के भय में किया; लेकिन उनके युवा वर्षों ने उन्हें कुछ नैतिक भूलों में डाल दिया; जिसने बाद में दिव्य प्रबंध में उसके विश्वास को धूमिल करना शुरू कर दिया, और वह यह मानने लगा कि हमारे जीवन में सब कुछ संयोग से होता है। दिव्य प्रबंध ने एक बहुत ही मार्मिक पाठ के माध्यम से उसे इन मानसिक प्रवृत्तियों से मुक्त कर दिया। उस पर भेड़ें चुराने का आरोप लगाया गया और उसे कैद कर दिया गया। उसी समय, एक और आदमी उसके साथ कैद किया गया – और वहाँ उन्हें एक तीसरा मिला। इस मामले में उन सभी को गलत तरीके से दोषी ठहराया गया था। इस कैद में सात दिन बिताने के बाद, संत एफ्रेम ने एक सपने में एक आवाज़ सुनी जो उसे बता रही थी कि, यद्यपि इस मामले में उसकी कोई गलती नहीं थी, वह अपने अतीत के पापों के लिए पीड़ा सह रहा था; इसी तरह, उसके साथी कैदी भी अपने अतीत के पापों के लिए पीड़ा सह रहे थे। जागने पर, उन्होंने यह सपना दूसरे दो साथियों को सुनाया, और तीनों ने अपने अतीत पर विचार करने के बाद यह महसूस किया कि उन्होंने वास्तव में पहले भी इसी तरह के दुष्कर्म किए थे - और वे बिना किसी सज़ा के बच निकले थे। न्यायाधीश ने सेंट एफ्रेम को बरी कर दिया, ठीक वैसे ही जैसे एक बार फिर सपने में उन्हें बताया गया था। घटनाओं के इस मोड़ ने, जो सेंट एफ्रेम के हृदय में हमारे ऊपर निगाह रखने वाली दैवीय व्यवस्था पर पूर्ण विश्वास जगा गया था, उन्हें इतना गहराई से प्रभावित किया कि उन्होंने दुनिया को छोड़ने और संन्यासियों के साथ शामिल होने के लिए पास की पहाड़ियों में जाने में कोई समय बर्बाद नहीं किया, जहाँ वे सेंट जेम्स के शिष्य बने, जो बाद में नाइसा के महान संत बने। उनके मार्गदर्शन में, संत एफ्रेम ने धर्मपरायणता के कार्य किए, ईश्वर के वचन का अध्ययन किया, और दोनों के प्रभाव में, उनके चरित्र में एक पूर्ण परिवर्तन आया। गुस्सैल और संदेहों से ग्रस्त युवक के बजाय, अब संत एफ्रेम एक विनम्र और पश्चातापी संन्यासी के रूप में दिखाई देते हैं, जो दिन-रात अपने पापों पर शोक मनाते थे और पूरी तरह से दैवीय व्यवस्था के तरीकों के प्रति समर्पित थे। अपने शिष्य के महान गुणों से अवगत संत जेम्स ने, और जब वह बिशप बन गए, तो चर्च के प्रशासन में उनकी क्षमताओं का उपयोग किया, उन्हें परमेश्वर के वचन का प्रचार करने का कार्य सौंपा, विद्यालय में बच्चों के शिक्षण का कार्य; उन्होंने उसे निकीया में प्रथम सार्वभौमिक परिषद में अपने साथ लिया, और लौटने पर उसे शहर को फारस के शापूर (337) के आक्रमण से मुक्ति दिलाने के लिए अपने निर्णयों और प्रार्थनाओं में भागीदार बनाया। संत जेम्स (338) की मृत्यु के बाद, संत एफ्रेम ने अपनी माँ के पैतृक देश, मसोपोटामिया में स्थित अमीडा शहर की यात्रा करने का निर्णय लिया, और कुछ समय के लिए उनके साथ रहे। वहाँ से, वह वहाँ के पवित्र अवशेषों की पूजा करने की इच्छा से एदेसा आकर्षित हो गए: क्योंकि वहीं उद्धारकर्ता मसीह का अबगार को दिया गया उत्तर रखा गया था; वहीं से 'बिना हाथों से बनी मसीह की प्रतिमा' प्रसिद्ध हुई; वहाँ प्रेरित थदेउस के अवशेष थे, जिन्होंने राजा, शहर और पूरे देश को विश्वास से प्रकाशित किया था; और शहर के आसपास के क्षेत्र में मठवासी जीवन फल-फूल रहा था। इस शहर में पहुँचने पर, संत एफ्रेम वहीं ठहर गए। जीविकोपार्जन का कोई साधन न होने के कारण, उन्होंने एक स्नानागार के मालिक के यहाँ एक मजदूर की नौकरी कर ली। यह पेशा उनके

स्वभाव या उनके उद्देश्यों के अनुकूल नहीं था; लेकिन उन्होंने ऊपर से मार्गदर्शन की प्रतीक्षा की, जो देर से नहीं आई। उन्होंने प्रार्थना या अपने सौंपे गए कार्यों में न लगे समय को मूर्तपूजकों के साथ बातचीत में बिताया। ऐसी ही एक बातचीत के दौरान, उन्हें रेगिस्तान के एक वृद्ध ने सुन लिया, जिन्होंने इन चर्चाओं के उच्च स्तर को देखकर सही निष्कर्ष निकाला कि संत एफ्रेम गलत जगह पर थे। इसलिए, जब बातचीत समाप्त हो गई, तो उन्होंने संत एफ्रेम से बात की और उनकी तपस्या की आकांक्षाओं के बारे में जानकर, उन्हें पास के एक मठ में शामिल होने का सुझाव दिया, जिसके लिए संत एफ्रेम तुरंत सहमत हो गए। पहाड़ों में चले जाने पर, उन्हें वहाँ वह सब कुछ मिला जिसकी उनकी आत्मा को तलाश थी। वहाँ कई महान तपस्वी थे, जिनका पूरा जीवन प्रार्थना, भजन-कीर्तन और ईश्वर की महिमा में बीता था; उनकी शरण में गुफाओं के सिवा और कुछ नहीं था; और वे साधारण भोजन भी नहीं खाते थे, बल्कि केवल पौधों पर ही निर्वाह करते थे। यह सब देखकर, संत एफ्रेम ने पूरे दिल से अपने लिए इस जीवन शैली को अपना लिया, और अपने तपस्वी श्रम और प्रार्थनाओं के साथ केवल ईश्वर के वचन का अथक अध्ययन जोड़ा। उनकी आत्मा को जल्द ही इन मरुभूमि के प्रेमियों से एक आत्मीय संबंध मिल गया; लेकिन वे विशेष रूप से तपस्वी जूलियन के घनिष्ठ मित्र बन गए, जो उनके पश्चात्तापी स्वभाव को साझा करते थे और समान रूप से दैवीय धर्मग्रंथों के अध्ययन से प्रेम करते थे। स्वयं को निरंतर ईश्वर के वचन के अध्ययन में समर्पित करते हुए, संत एफ्रेम ने उससे कोमलता और ज्ञान प्राप्त किया। फिर भी, उनके ज्ञान का खजाना, उनकी विनम्रता के कारण, और शायद इसलिए कि वे शिक्षण की एक विशेष प्रतिभा के बजाय उनके अपने बौद्धिक प्रयासों का फल थे, अधिकांशतःदूसरों से छिपा रहा—एक ऐसी प्रतिभा जो छिपी रहने की कोशिश नहीं करती, बल्कि यह मांग करती है कि उसकी शिक्षाओं को उदारतापूर्वक सभी के साथ साझा किया जाए। शीघ्र ही यह वरदान प्रदान किया गया, जैसा कि उसी सूक्ष्मदर्शी वृद्ध को प्रकट हुआ जिसने संत एफ्रेम को शहर से बाहर निकाला था, एक ऐसे दृष्टान्त में जिसमें एक तेजस्वी देवदूत ने संत एफ्रेम के मुँह में एक रहस्यमयी पुस्तक रखी। उस समय से, ईश्वर और दिव्य बातों के ज्ञान के जीवित जल से परिपूर्ण उसकी आत्मा, हार्दिक उपदेशों की एक अटूट धारा बहाने लगी। भक्ति की जीवंत भावना से ओत-प्रोत और ईश्वर की कृपा से पवित्र हुए हृदय की पूर्णता से प्रवाहित, उसके शब्द आध्यात्मिक अभिषेक से परिपूर्ण थे। सबसे प्रभावशाली उपदेश, हृदयस्पर्शी आत्म-आलोचना और दूसरों पर की गई आलोचना, बुद्धिमानी भरे नियम और सलाह, चमत्कारिक रूप से उनके होठों से फूटते थे; और अक्सर, अचानक और अप्रत्याशित रूप से, उनके भक्तिपूर्ण विचार ईश्वर की ओर उड़ान भरते थे, या तो उनके असीम प्रेम की महिमा का इकरार करने के लिए या उनसे पापों की क्षमा याचना करने के लिए। बाइबिल के उदाहरण और कहावते, एक तपस्वी के जीवन के अनुभव, प्राकृतिक दुनिया से लिए गए दृष्टान्त और तुलनाएँ—ये सभी तैयार रहते थे और उसकी सरल, साधारण बातचीत में सहज रूप से सामने आ जाते थे। लेकिन केवल नैतिक, आध्यात्मिक और तपस्वी संबंधी सबक ही उसके लेखन का विषय नहीं थे। उन्होंने पवित्र धर्मग्रंथ की व्याख्या के लिए भी काफी प्रयास किया, और उससे भी अधिक प्रयास धर्मसिद्धान्त की व्याख्या के लिए किया, विशेष रूप से उन बिंदुओं के संबंध में जिन पर समकालीन और पिछले दोनों युगों के विधर्मी लोग चूक गए थे। उनका पूरा जीवन ऐसे कार्यों को समर्पित था - और यह पहले ही समाप्ति की ओर बढ़ रहा था जब उन्हें मिस्र के तपस्वियों को देखने और कैपाडोसिया के महान आर्चपास्टर, बेसिल द ग्रेट से मिलने की इच्छा हुई। अपने साथ ग्रीक बोलने वाले एक शिष्य को लेकर, वे भूमध्य सागर तक पहुँचे और एक जहाज पर सवार हो गए। प्रार्थना और ईश्वर में विश्वास ने उन्हें और उनके साथियों को डूबने से बचाया। माउंट नाइट्रिया ने उनका एक प्रिय अतिथि के रूप में स्वागत किया और उन्हें महान पैसियस से मिलकर सांत्वना दी, जिनके साथ उन्होंने छह दिन बातचीत में बिताए, साथ ही जॉन कोलोव और अन्य बुजुर्गों से भी मिले। निट्रिया के अलावा, उन्होंने तपस्वियों द्वारा बसी अन्य जगहों का भी दौरा किया, और हर जगह उन्होंने स्वयं को ईश्वर द्वारा प्रबुद्ध व्यक्ति के रूप में एक गर्मजोशी भरी याद के रूप में छोड़ा; उन्होंने स्वयं वहां से मिस्र के तपस्वियों के जीवन और नियमों पर शिक्षाप्रद सबक सीखे, उन दोनों पर जो चल बसे थे और जो अभी भी जीवित थे। मिस्र से अपने वापसी यात्रा पर, संत एफ्रेम ने संत बेसिल महान से मिलने के लिए कैपैडोसिया में केसरिया जाने का संकल्प लिया। उनकी पहली मुलाकात चर्च में हुई। जब संत एफ्रेम चर्च में प्रवेश कर रहे थे, तब संत बेसिल महान मंडली को उपदेश दे रहे थे, और वे उनके अत्यधिक अनुग्रह-पूर्ण स्वरूप से प्रभावित हुए। संत बेसिल महान को भी पवित्र आत्मा द्वारा संत एफ्रेम के बारे में सूचित किया गया था, और उन्होंने उन्हें वेदी में शामिल होने के लिए आमंत्रित किया । वहाँ संक्षिप्त अभिवादन के बाद, बातचीत घर में जारी रही, जिसमें विभिन्न विषयों पर चर्चा हुई। कैसरिया के पवित्र पिता संत एफ्रेम को प्रेसीब्यटर (पादरी) के पद पर नियुक्त करना चाहते थे; लेकिन एडेसा का वह विनम्र भिक्षु किसी भी हालत में इस पद को स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं हुआ, और संत बेसिल उसे केवल एक डीकन के रूप में ही नियुक्त कर सके, जबकि उन्होंने अपने शिष्य को प्रेसीब्यटर के रूप में नियुक्त किया। बाद में, संत बेसिल ने अपने दो शिष्यों को संत एफ्रेम को बिशप का पद ग्रहण करने के लिए आमंत्रित

करने हेतु एदेसा भेजा; लेकिन संत एफ्रेम ने पागल होने का नाटक करते हुए, इस सम्मान को विनम्रतापूर्वक अस्वीकार कर दिया, क्योंकि वे स्वयं को इसके अयोग्य समझते थे। एदेसा में अपने एकांतवास में लौटने पर, संत एफ्रेम अपने जीवन का शेष समय एकांत में बिताना चाहते थे। लेकिन दैवीय व्यवस्था ने उन्हें एक बार फिर से अपने पड़ोसियों की सेवा के लिए बुलाया। उस समय शहर के निवासी अकाल से पीड़ित थे। अपने प्रभावशाली शब्दों से, संत एफ्रेम ने अमीरों को गरीबों के दुख को कम करने के लिए मनाया, और उनके दान का प्रबंधन करने का कार्य स्वयं अपने हाथ में ले लिया। यह चर्च के प्रति उनकी अंतिम सेवा थी। शहर से पहाड़ों में लौटने पर, वह जल्द ही बीमार पड़ गए, और अपनी वसीयत लिखने के बाद, 372 या 373 में शांतिपूर्वक निधन कर गए। वे अपने शिष्यों और एडेसा के लोगों की बाहों में, जो उनसे प्रेम करते थे, परलोक सिधार गए; लोगों, पुरोहितों और संन्यासियों की एक बड़ी सभा की उपस्थिति में, उनके शरीर को सुलाया गया; लेकिन कुछ समय बाद, उनके अक्षत अवशेषों को चर्च में स्थानांतरित कर दिया गया।

* * *

ग्रीक संग्रह *डोब्रोतोलीउबिए* में संत एफ्रेम का कुछ भी नहीं है। हम इसे एक अन्याय मानते हैं कि हमारे संग्रह को उनकी शिक्षाओं के खजाने से वंचित किया जाए। इसलिए हमने निम्नलिखित शीर्षकों के तहत उनके सबसे शिक्षाप्रद कार्यों को चुनने का निर्णय लिया है:

1. पश्चाताप और मोक्ष की खोज के लिए एक अनुनय।

2. पश्चाताप पर उपदेश।

3. उन लोगों के जीवन की एक सामान्य रूपरेखा जिन्होंने स्वयं को ईश्वर को प्रसन्न करने और अपनी मुक्ति के लिए कार्य करने के लिए समर्पित कर दिया है।

४. सद्गुणों और वासनाओं पर।

5. आठ प्रमुख जुनूनों के खिलाफ संघर्ष पर।

6. तपस्वी जीवन पर सामान्य उपदेश।

7. इन सभी के साथ, सभी पाठों का सारांश के रूप में, 50वां कथन जोड़ा गया है: तपस्वियों के लिए सलाह, साथ ही 55वें कथन से समान सलाह। (अंश 'पवित्र पिताओं के कार्य' श्रृंखला में, संत एफ्रेम की रचनाओं के संस्करण से लिए गए हैं। प्रत्येक खंड से उद्धरण उसकी विषय-सूची के बाद सूचीबद्ध किए गए हैं)।

संन्यासियों के लिए संत एफ्रेम की शिक्षाएँ

1. पश्चाताप और मोक्ष की प्राप्ति के लिए एक अनुनय

1. आओ, प्रियजनो, जब तक खरीद का दिन बाकी है, खरीददारी करने चलें। आओ, हम अनंत जीवन प्राप्त करें; हम अपनी आत्माओं का उद्धार खरीदें। आइए इस अद्भुत विचार को थाम लें; आइए हम राज्य और स्वर्ग की कामना करें।

2. इस *'ग्यारहवें घंटे'* में प्रयासरत रहो; जल्दी करो, कहीं ऐसा न हो कि तुम बंद दरवाजों के बाहर रह जाओ। शाम नज़दीक है, और पुरस्कारों का स्वामी बड़ी महिमा के साथ आ रहा है ताकि प्रत्येक व्यक्ति को उनके कर्मों के अनुसार पुरस्कृत कर सके। भाइयों, जब तक समय है, हम पश्चाताप करें।

3. प्रभु क्या कहते हैं, सुनो: *'जिस एक पापी का मन फिरता है, उसके लिए स्वर्ग में आनन्द होता है'* (लूका 15:10)। हे पापी, तू लापरवाही क्यों करता है? तू निराशा में क्यों डूबता है? यदि तेरे मन फिराने पर स्वर्ग में आनन्द होता है, तो तुझे किस बात का डर है? देवदूत आनंद मनाते हैं, फिर भी तुम लापरवाही करते हो? महादूत पश्चाताप का प्रचार करते हैं - और फिर भी तुम डरते हो? अविभाज्य, पूज्य त्रिमूर्ति तुम्हें पुकारती है, और फिर भी तुम आहें भरते हो!

४. आओ, हम यहाँ थोड़ा रो लें, ताकि वहाँ अनन्तकाल तक पीड़ा भोगते हुए न रोना पड़े। मसीह का आगमन बिजली की एक भयंकर चमक की तरह अचानक होगा। उस घड़ी, प्रत्येक को अपने कर्मों के अनुसार मिलेगा; प्रत्येक वही काटेगा जो उसने बोया है। हम सभी मसीह की न्याय-सिंहासन के सामने उपस्थित होंगे, जहाँ कुछ भी छिपा नहीं रहेगा - और प्रत्येक व्यक्ति स्वयं के लिए न्यायाधीश के समक्ष अपना हिसाब देगा। उस घड़ी, कोई भी किसी दूसरे की मदद नहीं कर पाएगा। प्रत्येक व्यक्ति भय और कंपन के साथ खड़ा रहेगा, परमेश्वर के निर्णय की प्रतीक्षा में।

5. हम पवित्र शास्त्रों और मसीह के वचनों की उपेक्षा क्यों करते हैं? सुनो प्रभु क्या कहते हैं: *'जो वचन मैंने कहा है, वही अंतिम दिन में तुम्हारा न्याय करेगा'* (यूहन्ना 12:48)। यह वचन क्या है? उसकी पवित्र सुसमाचार और पवित्र भविष्यद्वक्ताओं तथा प्रेरितों के अन्य पवित्र धर्मग्रंथ। तो फिर, हम जो लिखा है उसे नज़रअंदाज़ न करें । *'क्योंकि आकाश और पृथ्वी मिट जाएँगे, परन्तु मसीह के वचन कभी नहीं मिटेंगे'* (मत्ती 24:35)।

6. तो आओ, प्रियजनो, उस भयानक दिन के आने से पहले, हम स्वयं को परमेश्वर की कृपाओं के समुद्र में डाल दें। स्वयं परमेश्वर हमें पुकारते हैं: *'मेरे पास आओ, तुम सब... और मैं तुम्हें विश्राम दूँगा'* (मत्ती 11:28)। वह सभी को आमंत्रित करते हैं; क्योंकि वह चाहते हैं कि सभी का उद्धार हो। कोई भी हिचकिचाए नहीं; क्योंकि वह कहते हैं, *'जो कोई मेरे पास आता है, मैं उसे कभी बाहर नहीं निकालूंगा'* (यूहन्ना 6:37)। – और कौन है जो उसके पास आता है? वह है जो उसके वचन को सुनता है और उसकी आज्ञाओं का पालन करता है। अतःआइए हम उसे सुनें और उसकी आज्ञा मानें: क्योंकि *'जीवते परमेश्वर के हाथ में पड़ना एक भयानक बात है'* (इब्रानियों 10:31)।

7. हे पापी, पश्चाताप कर, मसीह के मानवजाति के प्रति असीम प्रेम को निडर होकर निहारते हुए, जिन्होंने कहा: *'मैं धर्मी को नहीं, बल्कि पापियों को पश्चाताप के लिए बुलाने आया हूँ'* (मत्ती 9:13)। जब तक समय है, तब तक पश्चाताप करो, कहीं ऐसा न हो कि तुम्हें उस भयानक न्याय में लज्जित होना पड़े, जहाँ हजारों-हजारों स्वर्गदूत और संत विस्मय में खड़े होंगे—कृत्यों की पुस्तकें खोली जाएँगी, और जो छिपा है वह प्रकट हो जाएगा—न्यायाधीश शक्तिमान है, न्याय अटल है—कृत्य उसकी आँखों के सामने उजागर हो जाएँगे—और आग की नदी। इन सब पर मनन करो, और अपना उद्धार करने के लिए शीघ्र करो।

8. आप किसका इंतज़ार कर रहे हैं? आपके मन में क्या है? क्या कोई और आपके लिए जवाब देगा? क्या आप नहीं जानते कि हर कोई अपने लिए परमेश्वर के सामने जवाब देगा – हर कोई वही काटेगा जो उसने बोया है – हर कोई अपना बोझ खुद उठाएगा? जब तक समय है, इस पाप के बोझ को उतार फेंकें।

9. आपने एक बार और हमेशा के लिए शैतान और उसके सभी कामों का परित्याग कर दिया, और कई गवाहों की उपस्थिति में आपने मसीह के साथ एक वाचा में प्रवेश किया। इसे याद रखें और इसे न भूलें। क्योंकि जान लें कि उसी क्षण स्वर्गदूतों ने आपके शब्दों—आपकी कसमें और आपके परित्याग—को दर्ज कर लिया था, और वे उन्हें न्याय के भयानक दिन तक स्वर्ग में रखते हैं। न्याय के दिन, वे आपके हस्तलिखित और आपके मुँह के शब्दों को भयानक न्याय-आसन के सामने लाएँगे। और तब आप सुनेंगे: *'मैं तुम्हें तुम्हारे ही शब्दों के अनुसार न्याय दूँगा, हे दुष्ट दास'* (लूका 19:22)। अत; अपने प्रति दयालु बनें और अपनी आत्मा को बचाएँ।

१०. दूसरों को देखो: वे कैसे प्रयास करते हैं, कैसे वे उद्धार पाने का प्रयत्न करते हैं, वे हर अच्छे काम में कितना प्रयास करते हैं, वे हर बुराई से कैसे बचते हैं, वे कैसे संकीर्ण और तंग मार्ग से प्रेम करने लगे हैं—वे उपवास करते हैं, जागते रहते हैं, दुख सहते हैं और रोते हैं, – उनके होंठ हमेशा वर का गीत गाते और उसकी स्तुति करते हैं, उनकी आँखें हमेशा उसकी सुंदरता को निहारती हैं, और उनकी आत्माएँ आनंदित होती हैं।

11. विचार करो और देखो: देखो, वर-पक्ष पहले ही समीप आ रहा है। – वह उन लोगों को मुकुट पहनाने आ रहा है जिन्होंने धार्मिकता से प्रयास किया है और जिन्होंने संकीर्ण और तंग मार्ग से प्रेम किया है; वह दयालुओं पर दया दिखाने आ रहा है, – दीन लोगों को धन्य बनाने और उनके लिए भूखे-प्यासे रहे लोगों को तृप्त करने *आ रहा है; 'वह अंधकार की छिपी हुई बातों को प्रकाश में लाने और हृदय की योजनाओं को प्रकट करने आ रहा है'* (1 कुरिन्थियों 4:5), – और *'प्रत्येक को उसके कर्मों के अनुसार प्रतिफल देने'* (रोमियों 2:6) *आ रहा है*।

12. अंत में, एक अचानक पुकार गूँजेगी: *'देखो, वर आ रहा है!'* (मत्ती 25:6)। देखो, वह लंबे समय से प्रतीक्षित आनंद, धर्मी की स्तुति, धार्मिकता का सूर्य! देखो *'वर—उसका स्वागत करने के लिए बाहर जाओ'*!

13. तब जिनके दीपक जलते हुए चमक रहे हैं और जो श्वेत वस्त्र पहने हुए हैं, वे आनंद और साहस के साथ उनका स्वागत करने निकलेंगे, इस बात का आनंद मनाते और आशा करते हुए कि उनके दीपक बुझेंगे नहीं। लेकिन तुम्हारा क्या होगा? यह महसूस करते हुए कि आपकी दीपक की लौ बुझ रही है, आप भय और दुख में, पहले वालों की ओर तेल देने की विनती लेकर मुड़ेंगे—और आप सुनेंगे: *'जो बेच रहे हैं उनके पास जाओ और कुछ खरीद लो'* (मत्ती 25:9)।

14. तुम जाओगे, लेकिन उसे खरीदने के लिए तुम्हें कहीं भी जगह नहीं मिलेगी; क्योंकि जीवन की खरीद पहले ही समाप्त हो चुकी है। तब, अत्यंत संकट में, रोते और विलाप करते हुए, तुम अपने आप से कहोगे: 'मैं जाकर मसीह की दया के द्वार पर दस्तक दूँगा।' शायद दयालु प्रभु मेरे लिए उन्हें खोल देंगे?'—तुम जाकर खटखटाते हो; लेकिन दूल्हा भीतर से तुम्हें उत्तर देता है: *'आमीन, मैं तुमसे कहता हूँ: मैं तुम्हें नहीं जानता'* (– 12)। मुझसे दूर हो जाओ, तुम जो अधर्म का अभ्यास करते हो। तुमने कोई दया नहीं दिखाई, और तुम पर भी दया नहीं दिखाई जाएगी। तुमने अपने शरीर

को तुष्ट किया है और अपने वस्त्रों को अशुद्धता से मैला किया है; तो फिर तुम यहाँ आकर मेरी राजय को कैसे कलंकित करने का इरादा रखते हो? तुमने शैतान की इच्छा पूरी की है, जबकि मेरी को अस्वीकार किया है; तुम्हारा मुझसे कोई भाग नहीं है। *'मेरे पास से दूर हो जाओ, उस अनंत आग में'* (मत्ती 25:41)।

१५. यह सुनकर, तुम वहाँ लज्जित होकर खड़े रहोगे। – उसी समय, आनन्द और उल्लास की एक आवाज़ तुम्हारे कानों में पड़ेगी; तुम अपने प्रत्येक मित्र की आवाज़ को पहचानोगे, और तब तुम कड़वाहट से आह भरते हुए कहोगे: 'हाय, मैं दुर्भाग्यशाली! मुझे किस महिमा से वंचित कर दिया गया है, और अपने बुरे और दुष्ट कर्मों के कारण मुझे किस संगति से बाहर कर दिया गया है!' – परन्तु सचमुच परमेश्वर का न्याय धर्मी है; सचमुच मैं यह वंचितता न्यायसंगत रूप से भुगत रहा हूँ। वे संयम में रहे, जबकि मैं हर प्रकार के सुख-भोग के पीछे दौड़ता रहा; – उन्होंने भजन गाए, जबकि मैंने लज्जास्पद गीत गाए; उन्होंने प्रार्थना की, जबकि मैं आलस से पड़ा रहता था या खेलने निकल जाता था; वे रोए, जबकि मैं हँसा। – इसी कारण, वे अब आनंदित हैं, जबकि मैं शोक मनाता हूँ; वे प्रसन्न हैं, जबकि मैं रोता हूँ; वे मसीह के साथ युगानुयुग राज्य करेंगे, जबकि मैं मसीह-विरोधी के साथ अनंत आग में डाल दिया जाऊँगा। हाय मुझ पर, हे दीन मनुष्य!

16. तब तुम पीड़ित होकर ऐसी और इसी प्रकार की बातें कहोगे, और तुम्हें इससे कोई लाभ नहीं होगा; क्योंकि न तो वहाँ कोई लाभ है, और न ही पश्चाताप में। – इसलिए आइए, अंततःआत्मा के उद्धार का ध्यान रखें: क्योंकि यही *'एक आवश्यक बात'* है (लूका 10:41)।

१७. शरीर की भी देखभाल की आवश्यकता है, लेकिन बहुत अधिक नहीं; परन्तु आत्मा की देखभाल अनवरत होनी चाहिए; क्योंकि आत्मा सर्वोपरि है। तुम आत्मा और शरीर से मिलकर बने हो; इसलिए आत्मा को आध्यात्मिक पोषण दो, और शरीर को शारीरिक पोषण। आत्मा को मरने न दें, बल्कि उसे परमेश्वर के वचन, भजन, स्तोत्र और आध्यात्मिक गीतों, आत्मा-रक्षक धर्मग्रंथों के पाठ, उपवास, प्रहरों, प्रार्थनाओं, आँसुओं, आशा और भविष्य के आशीर्वादों के विचारों से पोषित करें। ये सभी चीजें और इसी प्रकार की अन्य बातें आत्मा के लिए भोजन और जीवन हैं।

18. पवित्र शास्त्रों में, केवल वही धन्य हैं जो संकीर्ण मार्ग पर चलते हैं, जबकि जिन्होंने चौड़े और विशाल मार्ग को चुना है, उनके लिए सर्वत्र दुख का पूर्वानुमान दिया गया है। अतःआइए हम विनाश की ओर ले जाने वाले चौड़े मार्ग को त्याग दें, और संकीर्ण मार्ग को अपनाएँ, ताकि यहाँ थोड़ा परिश्रम करके, हम अनंत काल तक राज्य कर सकें। आओ हम परिश्रम करें, हमेशा अपनी आँखों के सामने उस एक को रखते हुए जो जीवितों और मृतकों का न्याय करने आएगा, और अनंत जीवन, अनंत राज्य, स्वर्गदूतों के साथ आनंद मनाने, और मसीह के साथ वास करने को निरंतर ध्यान में रखते हुए।

19. इस जीवन के सुखों में आनंद न लो। तुम्हारे होठों पर सदा एक भजन हो; क्योंकि परमेश्वर का नाम लेने से दुष्टात्माएँ भाग जाती हैं। यहाँ तक कि जब तुम काम में हाथ लगाओ, तब भी तुम्हारी जीभ भजन गाए और तुम्हारा मन प्रार्थना करे। प्रभु स्वयं यहाँ सभी को आने वाले जीवन के लिए स्वयं को तैयार करने के लिए आग्रह करते हैं। तो आइए हम ऐसा ही करें; और यदि हम किसी चूक के कारण पाप करते हैं, तो जब तक पश्चाताप का समय है, उसे आँसुओं से धो लें। पश्चाताप का समय थोड़ा है; परन्तु परमेश्वर का राज्य अनंत है।

20. हम संतों की स्तुति करते हैं और उनके मुकुटों के लिए तरसते हैं, फिर भी हम उनके कर्मों का अनुकरण नहीं करना चाहते। या क्या आप सोचते हैं कि उन्हें उनकी मेहनत या दुख के बिना, उपहार स्वरूप उनके मुकुट प्रदान किए गए थे? क्या आप यह सुनना चाहेंगे कि संतों को इस जीवन में किस प्रकार की विश्राम मिली? *'उन्हें पीटा गया... वे बेड़ियों में जकड़े हुए चले... उन्हें वंचित, पीड़ित, बदनाम किया* गया...' इत्यादि (इब्रानियों 11:35-38)। क्या आप उनके साथ हमेशा के लिए राज्य करना चाहते हैं? – तो उनके पदचिन्हों पर चलें।

21. हमारे पूर्वजों ने, प्रकाशमान नक्षत्रों की तरह, संपूर्ण पृथ्वी को प्रकाशित किया, क्योंकि उन्होंने काँटों और झाड़ियों के बीच, विधर्मी और अधर्मी लोगों के बीच, रत्न और कीमती मोतियों की तरह इस पर जीवन व्यतीत किया। उनके उत्कृष्ट और पवित्र जीवन-यापन के कारण, उनके शत्रु भी उनके अनुकरण करने लगे। और उनकी नम्रता को देखकर कौन पश्चाताप से भरित नहीं हुआ? यहाँ उन्होंने परिश्रम किया, और वहाँ वे आनन्दित हैं; क्योंकि परमेश्वर का उनमें महिमा हुआ, और लोग उनसे आत्मीय रूप से सुसज्जित हुए।

२२. जहाँ तक हमारे अपने जीवन के मार्ग की बात है, सीधे रास्तों को त्यागकर, यह तेज बहाव और ऊबड़-खाबड़ ज़मीन का अनुसरण करता है। हम किसी को भी नहीं देखते जो परमेश्वर के लिए, अपनी संपत्ति को पूरी तरह से त्याग गया हो, या जिसने शाश्वत जीवन के लिए संसार का पूरण रूप से परित्याग किया हो। कोई भी नम्र, विनम्र या मौन नहीं है। कोई अपमान सहन नहीं करता, कोई बदनामी सहन नहीं करता; बल्कि सभी क्रोध के लिए प्रवृत्त हैं,

बहस करना पसंद करते हैं, सभी आलसी और चड़िचड़ि हैं, और अच्छे कपड़ों की परवाह करते हैं; सभी व्यर्थ के गर्वीले और महिमा के भूखे हैं, सभी स्वार्थी हैं।

23. हम सुनते हैं कि स्वयं परमेश्वर—वचन—हमारे पापों के लिए क्रूस पर कीलों से ठोककर मृत्युदण्ड दिया गया, फिर भी हम हँसते हैं, और ध्यान भटकाने में खो जाते हैं। सूर्य, प्रभु की इस अपमान को सहन न कर सका, अपनी चमक को अँधेरे में बदल दिया; फिर भी हम अपने पापों के अँधेरे से बाहर निकलने से इनकार करते हैं। मंदिर का पर्दा, जिसने कोई पाप नहीं किया था, अपने आप फट गया; फिर भी हम नहीं चाहते कि हमारे पापों के पश्चाताप से हमारे हृदय फट जाएँ। अतःहे भाइयो, अंततःहम पश्चाताप करें, ताकि हम अपने पापों के लिए परमेश्वर को प्रसन्न कर सकें।

24. मुझे डर है कि वह दिन हम पर अचानक आ पड़ेगा, और जब हम खुद को नग्न, गरीब और अयोग्य पाएंगे, तो हमें बाहर फेंक दिया जाएगा। क्योंकि यह वही बात उन लोगों के साथ हुई जो नूह के दिनों में रहते थे: *'वे खाते-पीते, विवाह करते और विवाह कराते, बेचते और खरीदते थे, जब तक कि जलप्रलय आकर उन सब को नष्ट नहीं कर दिया'* (लूका 17:27-28)।

२५. जो कोई उद्धार पाना चाहता है, उसे उद्धार के लिए उत्सुक होना चाहिए, और जो कोई राज्य में प्रवेश करना चाहता है, उसे लापरवाह नहीं होना चाहिए। जो कोई गेहेनना की आग से बचना चाहता है, उसे धर्म के अनुसार यत्न करना चाहिए; जो कोई उस कीड़ा से नहीं फेंका जाना चाहता जो कभी नहीं सोता, उसे सचेत रहना चाहिए। जो कोई भी विवाह-भवन में प्रवेश करके आनंदित होना चाहता है, वह एक दीपक तैयार करे जो अच्छी तरह जल रहा हो, और एक पात्र में तेल रखे। जो कोई भी उस विवाह में आमंत्रित होने की आशा रखता है, वह अपने लिए सुंदर वस्त्र प्राप्त करे।

26. राजा का नगर आनंद और हर्ष से पूर्ण है, प्रकाश और प्रसन्नता से परिपूर्ण है, और जो लोग उसमें निवास करते हैं, उन्हें शाश्वत जीवन के साथ-साथ हर प्रकार की सुख-सुविधा प्रदान करता है। जो कोई भी राजा के साथ उसी नगर में निवास करना चाहता है, उसे अपनी यात्रा शीघ्र करनी चाहिए; क्योंकि दिन समाप्त होने को है, और कोई नहीं जानता कि मार्ग में आगे क्या है। ठीक वैसे ही जैसे एक यात्री, भले ही वह जानता हो कि रास्ता लंबा है, शाम तक सोने के लिए लेट जाता है, और फिर, जागने पर, देखता है कि दिन पहले ही ढलने लगा है; और जैसे ही वह चलना शुरू करता है, अचानक बादल छा जाते हैं, ओले, गरज, बिजली और हर तरफ से विपत्तियाँ आ जाती हैं, और वह न तो रात के लिए अपने ठिकाने पर पहुँच पाता है और न ही अपनी पुरानी जगह पर लौट पाता है: इसी प्रकार हमारा भी वही हश्र होगा यदि हम अपने पश्चाताप के समय में लड़खड़ाएँ। हम *'पराये और यात्री' हैं* (भजन संहिता 38:13)। अतःआइए हम समय रहते अपने नगर और अपने स्वदेश में प्रवेश करने का प्रयास करें।

27. हम, भाइयों, आध्यात्मिक व्यापारी हैं, जो अनमोल मोती की खोज में हैं, जो मसीह हमारे उद्धारकर्ता हैं—वह खजाना जिसे चुराया नहीं जा सकता। तो आइए, इस मोती को प्राप्त करने के प्रयास में सुस्त न हों। धन्य— —तीन बार धन्य है वह जो इसे प्राप्त करने का प्रयास करता है; परन्तु वह अत्यंत दुखी और दीन है जो थक गया है—न तो हमारे सामान्य सृष्टिकर्ता स्वयं को प्राप्त करने में, और न ही उससे प्राप्त होने में।

28. क्या तुम नहीं जानते कि हम सच्ची दाख की लता की डालें हैं, जो प्रभु है? इसलिए सावधान रहो, कि हम में से कोई भी बाँझ न निकल जाए। सत्य के पिता, अपनी दाख की बारी की देखभाल करते हुए, प्रेम से उन डालियों की देखभाल करते हैं जो फल देती हैं, ताकि वे और भी अधिक फल दें; परन्तु जो डालियाँ फल नहीं देतीं, उन्हें वे छाँटकर दाख की बारी से बाहर फेंक देते हैं, ताकि वे आग में जला दी जाएँ। इसलिए सावधान रहो, कहीं ऐसा न हो कि तुम निष्फल पाए जाकर छाँटे जाओ और आग में डाल दिए जाओ।

29. हम भी स्वर्ग और पृथ्वी के सृष्टिकर्ता, घर के स्वामी—मसीह द्वारा बोए गए अच्छे बीज हैं। देखो, फसल काटने का समय आ ही चुका है, और दानेदारों के हाथों में दराँतियाँ हैं: वे केवल प्रभु के संकेत की प्रतीक्षा कर रहे हैं। इसलिए सावधान रहो, कहीं ऐसा न हो कि हम भूसी निकलें, जिन्हें गट्ठों में बाँधकर हमेशा जलने के लिए आग में डाल दिया जाए (मत्ती 13:30)।

30. क्या तुम नहीं जानते कि राजाओं के राजा ने हमें अपने महल में विवाह के भोज में बुलाया है? तो फिर हम लापरवाही क्यों बरतते हैं और अपने लिए चमकदार वस्त्र, और तेज़ जलते दीपक, और अपने पात्रों में तेल प्राप्त करने का कोई प्रयास क्यों नहीं करते? क्या आप यह महसूस करने में विफल नहीं हो सकते कि वहाँ कोई नग्न प्रवेश नहीं करता? और यदि कोई विवाह के वस्त्रों के बिना प्रवेश करने पर जोर देता है, तो क्या आप नहीं जानते कि उसका क्या होगा? राजा की आज्ञा से, उसके हाथ-पाँव बाँध दिए जाएँगे, और उसे बाहर की अँधेरी में फेंक दिया जाएगा, जहाँ *'रोना और दाँत पीसना' होगा* (मत्ती 22:13)। मुझे डर है कि कामुक वासनाएँ हमें विवाह-भवन से बाहर फेंक सकती हैं, भले ही हम केवल दिखावटी आभूषणों से सुसज्जित हों।

31. कौन सा पति इतना दयालु है? कौन सा पति इतना दयावान है? कौन सा पति हमारे प्रभु जितिना प्रेम करता है, जो हम, उनके सेवकों से, प्रेम करता है? वह सभी का भरण-पोषण करता है, सब कुछ प्रचुरता से संचति करता है, हमारी आत्मा के घावों को चंगा करता है, और धैर्यवान है, यहाँ तक कि जब हम उसे त्याग देते हैं, तब भी वह चाहता है कि सिभी उसके राज्य के वारसि बनें; वह पापी के पापों को क्षमा करता है, उसमें उत्साह जगाता है, और कमजोरों पर तुरंत ध्यान देता है, कहीं वे हताश न हो जाएँ। वह अपनी शक्ति से हमें अच्छा करने के लिए बाध्य कर सकते थे, लेकिनि वह ऐसा नहीं चाहते, कहीं हमारी स्वतंत्र इच्छा उनकी स्तुति से वंचति न हो जाए। तो क्या हम उसे प्रसन्न करने का प्रयास करते-करते थक जाएँ, जबकि वह हमसे इतना प्रेम करता है और हम पर दया करता है? उसने हमारे मन की आँखों को मुक्ति दी है और उन्हें प्रकाशति किया है; उसने हमें स्वयं का ज्ञान प्रदान किया है, और हमें अपनी मठिास का स्वाद चखाया है, ताकि हम उसे पूरे मन से खोज सकें। धन्य है वह जो उसके प्रेम का स्वाद चख चुका है; इसके माध्यम से, उसने स्वयं को इसे अनवरत रूप से अनुभव करने के लिए तैयार कर लिया है।

32. ऐसा प्रभु से कौन प्रेम नहीं करेगा? उसकी भलाई की घोषणा करके उसकी उपासना कौन नहीं करेगा? तो फरि, यदि हम मुँह मोड़ लें, तो न्याय के दनि हमारा क्या बहाना होगा? या हम उससे क्या कहेंगे? कि हमने नहीं सुना, या हमें नहीं पता था, या हमें नहीं सखािया गया था? फरि भी, उसका संदेश सारी पृथ्वी पर फैल गया है। क्या ऐसा कुछ है जो उसे हमारे लिए करना चाहिए था और जो उसने नहीं किया? क्या वह हमारे लिए अपार ऊँचाइयों से, पिता की धन्य गोद से नहीं उतरा? क्या वह, अदृश्य होते हुए भी, हमारे लिए दृश्य नहीं हुआ? क्या वह, अमर अग्नि, हमारे लिए देह नहीं धारण किया? क्या वह, अमर होते हुए भी, हमारे लिए नहीं मरा, ताकि हम जीवति हो सकें? क्या उसे दफनाया नहीं गया, ताकि हम भी उसके साथ जी उठें? उसने हमें शत्रु से छुड़ाया है, उसे बाँधकर हमें उस पर आक्रमण करने की शक्ति दी है। हमने कब उसे पुकारा और उसने हमें नहीं सुना? हमने कब दरवाज़े पर दस्तक दी और उसने हमारे लिए दरवाज़ा नहीं खोला? और अगर उसने कभी देरी की, तो वह केवल हमारे इनाम को बढ़ाने के लिए था। इन सब पर विचार करते हुए, कौन लापरवाही और उदासीनता में रहेगा, और इस तरह ऐसे प्रभु का अपमान करेगा?

३३. इस पर विचार करो, हे भाई! वे भाई जो कल हमारे साथ थे, हमारे साथ बातें कर रहे थे, आज हमारे साथ नहीं हैं; उन्हें अपने और हमारे प्रभु के पास बुला लिया गया है, ताकि प्रत्येक अपना हसिाब पेश कर सके। देखो *'कल'* क्या है और *'आज' क्या है*: जैसे *'कल'* बीत गया, भोर की कली की तरह; वैसे ही *'आज'* भी बीतेगा, संध्या की छाया की तरह। तो, अपने सौदे की जाँच करो: क्या यह परमेश्वर को भाता है? हमारे दनि एक मज़ाक की तरह भाग जाते हैं। धन्य है वह जो दनि-प्रतदिनि अपने सौदे से बड़ा लाभ कमाता है और उसे अनंत जीवन में संचति करता है। परन्तु हे प्रयिो, तुम क्यों लापरवाह हो? तुम क्यों सुस्त हो? तुम क्यों आलस्य (निष्क्रियिता) में इस प्रकार मग्न रहते हो जैसे वह शराब हो?

34. दो यात्रियों की कल्पना करो, जो दोनों अपने-अपने घर जा रहे थे, जो सांझ ढलते समय रास्ते में एक-दूसरे से मिले, दोनों उस सराय में रुके जहाँ वे पहुँचे थे, और भोर होते ही अलग हो गए; उनमें से प्रत्येक को पता है कि घर पर उसका क्या इंतजार कर रहा है—धन या गरीबी, शांति या दुख। इस जीवन में हमारे साथ भी ऐसा ही है; क्योंकि यह जीवन एक सराय की तरह है, जहाँ से हम अपने-अपने घरों के लिए प्रस्थान करते समय, यह जानते हुए कि आगे क्या है, अलग हो जाते हैं। क्योंकि यह किसी के लिए भी कोई रहस्य नहीं है कि उन्होंने स्वर्ग में अपने लिए क्या भेजा है: उदाहरण के लिए, आँसुओं में डूबी प्रार्थना, या बार-बार की गई जाग-प्रार्थना, या पश्चाताप भरे हृदय से भजनों का गायन, या विनम्रता के साथ आत्म-संयम, या सांसारिक चीजों का त्याग, या मसीह के प्रति सच्चा प्रेम और भक्ति। यदि आपने ये अर्पति किए हैं, तो हियाव बढ़ाइए; क्योंकि आप विश्राम के लिए प्रस्थान कर रहे हैं।

35. तुम्हें पश्चाताप के लिए समय दिया गया है, फरि भी तुम पश्चाताप पर ध्यान नहीं देते। क्या तुम मृत्यु से कहोगे: 'रुको, मुझे पश्चाताप करने दो'? होश में आओ, प्रयिजन, होश में आओ। जब अंतिम घड़ी तुम्हारे ऊपर एक जाल की तरह छा जाएगी, तब तुम भय से चिल्लाना शुरू कर दोगे: 'हाय! मेरे दनि लापरवाही में निकिल गए। मैंने व्यर्थ के विचारों पर अपना समय बर्बाद कर दिया!' लेकिन मृत्यु के समय ऐसा सोचने से क्या लाभ होगा, जब तुम्हें इस दुनिया में बने रहने की अनुमति नहीं होगी? अब, इसके बजाय, इन शब्दों पर अपने मन से विचार करो, और उनकी शक्ति के अनुसार अपना जीवन व्यवस्थति करो।

36. कौन नहीं रोएगा, कौन शोक नहीं मनाएगा, इस तथ्य से कौन भयभीत नहीं होगा कि संसार का प्रभु, स्वयं और अपने सेवकों—नबियों और प्रेरितों—द्वारा प्रचार करते और पुकारते हैं, फरि भी कोई भी उनकी बात पर ध्यान नहीं देता? *'विवाह का भोज तैयार है,'* वह पुकारते हैं, *'मेरी वधू मार दी गई है'* (मत्ती 22:4)। वर विवाह-भवन में महिमा और वैभव के साथ विराजमान है, और जो आते हैं उन्हें आनंदपूर्वक स्वीकार करता है; द्वार खुला है, सेवक अपना उत्साह दिखाते हैं। 'जब तक द्वार खुला है, प्रवेश करने के लिए जल्दी करो; अन्यथा तुम बाहर रह जाओगे, और तुम्हें

भीतर बुलाने वाला कोई नहीं होगा।' – फिर भी कोई नहीं समझता; कोई भी प्रयास नहीं करता; आलस्य और इस संसार की चिंताओं ने हमारे मन को जंजीरों की तरह बाँध दिया है। हम दिव्य शास्त्रों की सही-सही नकल करते हैं, और उन्हें सही-सही पढ़ते हैं, फिर भी हम उनका सही-सही पालन नहीं करना चाहते; क्योंकि हम उनमें दिए गए आज्ञाओं को पूरा करने के लिए इच्छुक नहीं हैं।

37. जैसे आधी रात के समय, जब मानव जाति गहरी नींद में होती है, कभी-कभी अचानक स्वर्ग से एक बड़ी गड़गड़ाहट होती है, और भयानक गर्जना, और भयानक बिजली के साथ भूकंप आता है, और जो सो रहे होते हैं वे अचानक आतंकित हो जाते हैं; वैसे ही उस घड़ी, सबसे तेज बिजली की तरह, अचानक पूरी पृथ्वी को भयभीत करते हुए; स्वर्ग से भयानक रूप से एक तुरही बजेगी, जो सो रहे लोगों को जगाएगी और प्राचीन काल से मृत पड़े उन लोगों को भी उनकी नींद से उठाएगी: ये आकाश और *'आकाशीय शक्तियाँ काँप जाएँगी'* (मत्ती 24:29), और सारी पृथ्वी, समुद्र के जल के समान, उसके तेज के सामने हिल जाएगी; क्योंकि एक भयानक आग उसके सामने-सामने जाएगी, जो पृथ्वी को उन अधर्मों से शुद्ध करेगी जो उसे अपवित्र करते हैं; नरक अपने अनंत द्वार खोलेगा, मृत्यु का उन्मूलन हो जाएगा, और मानव स्वभाव की क्षयकारी धूल, तुरही की ध्वनि सुनकर, जीवन में वापस लाई जाएगी। तब धर्मी आनन्दित होंगे और भक्तिमान प्रसन्न होंगे; परिपूर्ण तपस्वी अपने संघर्ष की कठिनाई के लिए सांत्वना पाएंगे; शहीदों, प्रेरितों और भविष्यद्वक्ताओं को मुकुट पहनाया जाएगा। धन्य है वह जो उस घड़ी, अमर वर से मिलने के लिए *'महिमा के साथ बादलों में उठा लिए जाने'* के योग्य समझा जाएगा (1 थिस्स. 4:17)। जैसे यहाँ प्रत्येक ने अपने पंख फैलाए हैं, वैसे ही वहाँ वह ऊँचाइयों तक उड़ान भरेगा; जैसे यहाँ प्रत्येक ने अपने मन को शुद्ध किया है, वैसे ही वहाँ वह उसकी महिमा को निहारेंगे; और जिस हद तक प्रत्येक ने उससे प्रेम किया है, उसी हद तक वहाँ वह उसके प्रेम से परिपूर्ण होगा।

38. मुझे वह घड़ी याद आई और मैं काँप उठा; मैंने उस भयानक न्याय के बारे में सोचा और भय से भर गया; मैंने स्वर्ग के आनंद के बारे में सोचा और उठकर विलाप करने लगा और तब तक रोता रहा जब तक कि रोने की मेरी शक्ति ही नहीं रह गई; क्योंकि मैंने अपने दिन आलस्य और विचलन में बिताए थे, और अपने वर्ष अशुद्ध विचारों में व्यतीत किए थे – और मुझे यह एहसास भी नहीं हुआ कि वे कैसे उड़ गए, न ही मैंने यह महसूस किया कि वे कैसे बीत गए; मेरे दिन घटते गए हैं, जबकि मेरे पाप बढ़ते गए हैं। हाय! उस घड़ी मैं क्या करूँगा, जब मेरे परिचित मुझे घेरे रहेंगे—वे जिन्होंने मुझे इस धार्मिक रूप में देखकर खुशामद की, जबकि मैं भीतर से पाप और अशुद्धि से भरा था, और उस प्रभु को भूल गया था जो हृदय और मन की परीक्षा करता है। – वहाँ सच्ची लज्जा है, और उस पर विनाश हो जो वहाँ लज्जित होगा। – हे मानवता के प्रेमी और शुभकर्ता, मैं तेरी उदारताओं के द्वारा विनती करता हूँ, मुझे बाएँ हाथ पर उन बकरियों के साथ मत रखना जो तुझे दुखी करती हैं, मुझसे यह मत कहना: *'मैं तुम्हें नहीं जानता'*, बल्कि अपनी कृपा से मुझे अविराम आँसू प्रदान करें; मेरे हृदय को पश्चाताप और विनम्रता प्रदान करें, और उसे शुद्ध करें, ताकि वह आपकी कृपा का मंदिर बन जाए।

३९. हे मेरे प्रिय भाइयो, मैं आप सब से एकमत रहने का आग्रह करता हूँ; जब तक समय है, परमेश्वर को प्रसन्न करने का यत्न करो; दिन-रात अपनी प्रार्थनाओं और भजन-गायन में उसके सामने रोओ, ताकि वह हमें उस अनंत विलाप से, दाँत पीसने से, गेहेन्ना की आग से, और उस कीड़ा से बचाए जो कभी नहीं मरता, और वह हमें अपने राज्य में, अनंत जीवन में आनंद से भर दे, जहाँ से शोक, बीमारी और आहें—जहाँ हमेशा आनंद, हर्ष और प्रसन्नता होती है, और आध्यात्मिक स्वादिष्ट व्यंजनों से भरा एक भोज, जो परमेश्वर ने अपने प्रेमियों के लिए तैयार किया है। धन्य है वह जो इसके योग्य समझा जाता है; और दीन है वह जो इससे वंचित है।

40. *'धनी मनुष्य ने कहा, और सब चुप हो गए, और उसके वचन बादलों तक उठ गए'* (सीर. 13:28)। फिर भी परमेश्वर पवित्र शास्त्रों में हमसे बात करते हैं, जबकि हम चुप रहने और सुनने से इनकार करते हैं; इसके विपरीत, जब कोई बोलता है, तो कोई और सोता है, और किसी और का मन भटक जाता है। लेकिन धर्मग्रंथ क्या कहता है? *'जो परमप्रभु की व्यवस्था से अपना कान फेरता है, वह अपनी प्रार्थना को भी अपवित्र करता है'* (नीतिवचन 28:9)।

41. उस अनंत जीवन के लिए यत्न करो, जिसके लिए तुम्हें बुलाया गया है, और यह बात बहुत से गवाहों के सामने अपने अच्छे इकरार से करो: *'क्योंकि थोड़ी देर और, और जो आने वाला है, वह आएगा और विलम्ब न करेगा'* (इब्रानियों 10:37)।

42. अपनी सारी शक्ति से प्रभु का भय मानो, और दुष्टों के कामों का अनुकरण न करो; क्योंकि उनकी आग न बुझेगी, और उनका कीड़ा न मरेगा (मरकुस 9:44)।

43. उस दुष्ट पर भरोसा न करो, जो तुम्हारे मन में कपटपूर्ण विचार डालता है, यह कहते हुए: 'तुम अभी जवान हो; तुम्हारे पास जीने के लिए और भी कई साल बाकी हैं; इसलिए अब आनंद मनाओ और अपने मन में शोक न करो—अपनी वृद्धावस्था में तुम पश्चाताप कर लेना'। – क्या तुम सच में इतने मूर्ख हो, हे भाई, कि तुम्हें यह एहसास नहीं कि

दुष्ट तुम्हें इस बात में धोखा देगा? यदि तुम अपनी जवानी और अपनी शक्ति के चरम पर पश्चाताप नहीं करते, जब तुम हर कठिनाई को सहने और वीरता के काम करने में सक्षम हो, तो क्या तुम वृद्धावस्था में बुढ़ापे की दुर्बलता को बहाना नहीं बनाओगे? – और यदि तुम्हें यहाँ से तुम्हारी जवानी में ही ले जाया जाए, तो तब तुम क्या करोगे? इसलिए, शत्रु के मार्ग को त्यागो और सच्चे प्रभु की वाणी पर ध्यान दो, जिसने कहा: *'इसलिये जागते रहो और प्रार्थना करो, क्योंकि तुम न तो उस दिन और न उस घड़ी को जानते हो'* (मत्ती 25:13)।

४४. वह आएगा, वह आएगा, और वह भयानक घड़ी आने में देर नहीं लगेगी, जिसमें जब हम परीक्षा में डाले जाएँगे, तो हमारे पास कोई बहाना नहीं होगा। क्योंकि हम प्रभु को क्या उत्तर दे पाएँगे? हमारे लिए ऐसा और क्या था जो वह कर सकता था और नहीं किया? – क्या हमने परमेश्वर—वचन—को एक दास के रूप में स्वयं को नम्र करते हुए नहीं देखा, ताकि हम भी नम्र हो सकें? क्या हमने उनके अकल्पनीय मुख पर थूकते हुए नहीं देखा, ताकि हम भी अपमानित होने पर कटु न हो जाएँ? या क्या हमने यह नहीं देखा कि कैसे उनकी पवित्र पीठ को कोड़ों से पीटा गया, ताकि हम भी आज्ञाकारिता का जुआ नम्रता से उठा सकें? या क्या हमने यह नहीं देखा कि कैसे उनके मुख पर थप्पड़ मारा गया, ताकि हम, जब अपमानित हों, क्रोध से आग-बबूला न हो जाएँ? या क्या हमने उनसे यह कहते हुए नहीं सुना: *'मेरे से सीखो, क्योंकि मैं मन में नम्र और दीन हूँ'* (मत्ती 11:29), ताकि हम भी नम्र और दीन हो जाएँ, और न एक-दूसरे से ईर्ष्या करें, न एक-दूसरे को चटखारें, न एक-दूसरे को निगल जाएँ? तो फिर, हम उन्हें क्या बहाना देंगे?

४५. मैं जानता हूँ कि परमेश्वर ने बहुतों पर दया दिखाई है जिन्होंने पश्चाताप किया है; परन्तु उनमें से अधिकांश ने अज्ञानता के कारण पाप किया था। मैं जानता हूँ कि परमेश्वर ने बहुतों को क्षमा किया है; परन्तु उनके पक्ष में उनके लिए बहुत से मध्यस्थ थे। – मैं कोरह और दाथन के विषय में लिखा हुआ पढ़ता हूँ, और यह देखकर भयभीत हो जाता हूँ कि परमेश्वर ने मूसा के कारण उन्हें कैसे दण्ड दिया। मैं उसकी बहन मरियम के बारे में लिखी बात पर विचार करता हूँ, कि कैसे वह मूसा से कही गई एक ही बात के कारण कोढ़ से ग्रस्त हो गई थी - और मैं कांप उठता हूँ। यदि एक पवित्र व्यक्ति पर भी ऐसी सजा आई, तो शाश्वत परमेश्वर से कैसी यातना होगी? काईन, जिसने अपने भाई को मारा, उसे इतनी लंबी सज़ा भुगतनी पड़ी; तो फिर, उन लोगों का क्या होगा जिन्होंने ईश्वर का अपमान किया है? प्रलय के समय न्याय कठोर था, और मुझे डर है कि मेरा भी वही हश्र होगा जो उन लोगों का हुआ था जो तब मारे गए थे। ईश्वर मीनार के निर्माण से क्रोधित हुए थे, जिसे पूरा नहीं किया जा सका; तो फिर, वह मेरी अपनी गिरावट के लिए क्या करेंगे? मैंने पश्चाताप किया है, परन्तु मुझे नहीं पता कि मैंने परमेश्वर को प्रसन्न किया है या नहीं। मैं संतों से भी विनती करता हूँ; परन्तु शायद उनकी प्रार्थनाएँ स्वीकार नहीं की जाएँगी; क्योंकि मैं यहेज़केल को यह कहते हुए सुनता हूँ कि *'नूह, न ही आय्यूब, न ही दानियेल' भी* अपनी प्रार्थनाओं में सफल नहीं होंगे (यहेज़केल 14:18)।

४६. जो पिता की गोद से उतरकर हमारे लिए मोक्ष का मार्ग बने, प्रभु, अपनी दिव्य वाणी से हमें पश्चाताप के लिए प्रेरित करते हुए कहते हैं: *'मैं धर्मी को नहीं, बल्कि पापियों को पश्चाताप के लिए बुलाने आया हूँ'* (मत्ती ९:१३)। – यदि मैं यह कहूँ, तो हो सकता है कि आप मेरी न सुनें। लेकिन यदि प्रभु स्वयं यह कहते हैं, तो आप अपनी जान की परवाह किए बिना इसे क्यों अनदेखा करते हैं? यदि आप अपने भीतर यह पहचानते हैं कि आपके अंतरतम में विचारों और कर्मों का एक घाव है, तो आप अपने छिपे हुए घावों की परवाह क्यों नहीं करते? क्या आप चिकित्सक से डरते हैं?! परन्तु वह भलाई और दया से परिपूर्ण है। वह आपके लिए पिता की गोद से आए। वह आपके लिए मसीह बनकर आए, ताकि आप बिना भय के उसके पास आ सकें; वह आपके लिए मनुष्य बने, ताकि आपके गहरे घावों को चंगा कर सकें। – और वह स्वयं आपको महान प्रेम और सारी भलाई के साथ अपने पास बुलाते हैं।

४७. पश्चाताप का द्वार खुला हुआ है; हे पापी, जब तक यह खुला है, तब तक इसमें प्रवेश करने का अपना सर्वश्रेष्ठ प्रयास कर। यदि, जब इसे बंद करने का समय आएगा, तो यह तुम्हें उदासीनता में टलते हुए पाएगा, तो यह तुम्हारा इंतज़ार नहीं करेगा। हे दीन प्राणी, तुमने अपनी ही जीवन से नफरत क्यों करने लगे? – हे मनुष्य, तेरी आत्मा से बड़ा क्या है? फिर भी, हे पापी, तुमने इसकी उपेक्षा की है। प्रिय, तुम्हें नहीं पता कि स्वर्गीय चिकित्सक किस घड़ी अपने उपचार के द्वार को बंद करने का आदेश देंगे। आगे आओ, मैं तुमसे विनती करता हूँ, और चंगा होने का प्रयास करो। वे तुम्हारे पश्चाताप से स्वर्गीय सेना को प्रसन्न करना चाहते हैं। सूर्य पहले ही साँझ के समय पर पहुँच चुका है, और वह केवल तुम्हारे लिए ठहरा हुआ है, ताकि तुम पवित्र स्थल तक पहुँच सको।

४८. तुम अपने अशुद्ध शत्रु को और तकलीफ सहोगे, जो निर्लज्जता से उसकी इच्छा पूरी कर रहा है? वह तुम्हें आग में फेंकना चाहता है। यही उसके प्रयासों का उद्देश्य है! यह उन लोगों के लिए उसका उपहार है जो उससे प्रेम करते हैं! वह सभी लोगों से हमेशा युद्ध में रहता है, उन्हें बुरी और अशुद्ध इच्छाओं से प्रहार करता है; और वह, जो स्वयं अशुद्ध है, जो उसके अधीन हो गए हैं उन्हें निराशा में वापस धकेलता है, उनके हृदयों को कठोर कर देता है,

और उनके आँसू सुखा देता है, ताकि पापी पश्चाताप न कर सके। हे मनुष्य, हर तरह से उससे मुंह मोड़ लो, और उस चीज़ से घृणा और नफ़रत रखो जो उसे प्रिय है।

४९. आइए हम आरंभ करें; आइए हम तब तक प्रार्थना करें जब तक समय है। यहाँ, जब हम इस जीवन में हैं, हम हमेशा परमेश्वर को प्रसन्न कर सकते हैं। जब तक हमारे पास दया के द्वार पर दस्तक देने का समय है, तब तक हमारे लिए क्षमा प्राप्त करना कठिन नहीं है। आइए, जब तक उनके स्वीकार किए जाने का समय है, तब तक आँसू बहाएँ, ताकि आने वाले युग में प्रवेश करने के बाद, हम व्यर्थ में न रोएँ; क्योंकि वहाँ, आँसुओं का कोई मोल नहीं है।

५०. हम अपने मोक्ष की उपेक्षा क्यों करते हैं? जब तक समय है, हम चंगा क्यों नहीं होना चाहते? इस समय बहाए गए कुछ आँसुओं और पश्चाताप के लिए, ईश्वर सभी पापों को क्षमा कर देता है। यहाँ थोड़ा रोओ, नहीं तो वहाँ घोर अंधकार में हमेशा के लिए रोओगे। यहाँ पश्चाताप करो, कहीं ऐसा न हो कि तुम्हें वहाँ न बुझने वाली आग में डाल दिया जाए।

५१. कई संत और धर्मी लोग अपनी इच्छा से इस संसार और इसकी रीति-रिवाजों से मुँह मोड़ चुके हैं, और ईश्वर की आज्ञाओं में अपनी दृढ़ आशा के द्वारा, इस बात से आश्वस्त हैं कि वे आनंद के स्वर्ग में ईश्वर के आशीर्वादों का आनंद लेंगे। मसीह से प्रेम करने के बाद, उन्होंने सभी क्षणभंगुर चीजों की अपेक्षा उन्हें प्राथमिकता दी; इसलिए, वे दिन-प्रतिदिन परमेश्वर में आनन्दित होते हैं, मसीह में प्रबुद्ध होते हैं, और पवित्र आत्मा में अनवरत आनन्दित होते हैं। पवित्र त्रिमूर्ति उन पर आनन्दित होती है, स्वर्गदूत और महादूत उन पर आनन्दित होते हैं, और आनंद का स्वर्ग उन पर आनन्दित होता है।

५२. हालाँकि, अन्य लोग क्षणिक चीज़ों में फँस गए हैं और लगभग निर्विचार प्राणियों की तरह हो गए हैं। – हे मनुष्य, तू ऐसा पापपूर्ण जीवन जीकर क्या कर रहा है? ईश्वर ने तुम्हें विवेक से बनाया: फिर भी तुम स्वयं को वाणी रहित प्राणी के समान बना लेते हो। होश में आओ, कम से कम थोड़ा, और खुद को संभालो। – तुम्हारे लिए, सर्वोच्च ईश्वर स्वर्ग से पृथ्वी पर उतरे ताकि तुम्हें पृथ्वी से उठाकर स्वर्ग में ले जा सकें। तुम्हें स्वर्गीय वर की बारात में बुलाया गया है: तो फिर, तुम इतने लापरवाह क्यों हो? तुम देरी क्यों कर रहे हो? मुझसे कहो, क्या तुम विवाह के भोज के लिए उपयुक्त वस्त्रों के बिना विवाह में जाओगे? और यदि तुम इसके बिना प्रवेश करोगे, तो तुम तुरंत सुनोगे: *'हे मित्र, तुम विवाह के वस्त्रों के बिना यहाँ कैसे आ गए?'* (मत्ती 22:12)। उसे बाँधो और उसे आग की भट्टी में डाल दो। क्या आप इससे नहीं डरते, न ही इस विचार से कांपते हैं कि वह समय निकट है जब वर अपनी महिमा में प्रकट होंगे? – क्या आप नहीं जानते कि सब कुछ पहले से ही तैयार है, और स्वर्गीय तुरही संकेत का इंतजार कर रही है? – और उस घड़ी आप क्या करेंगे, यदि आप उसके लिए वैसे ही तैयारी नहीं करते जैसे आपको करनी चाहिए?

५३. मृत्यु के समय, सभी पापियों की प्रतीक्षा एक महान भय करता है। विदाई का समय सभी संतों, सभी धर्मी लोगों और सभी तपस्वियों के लिए आनंद लाता है; लेकिन वही समय लापरवाह और दुर्बल लोगों को दुख में डुबो देता है, जो उन्हें उनके पिछले जीवन की आलस्य और लापरवाही की याद दिलाता है। तब पश्चाताप उस व्यक्ति के हृदय को पीड़ित करता है जिसने अब तक अपनी मुक्ति के लिए कोई चिंता नहीं दिखाई है। इस पश्चाताप का कष्ट मृत्यु और वियोग के भय से भी बढ़कर होता है। – इसके विपरीत, धर्मात्मा, संत और तपस्वी मृत्यु और वियोग के समय प्रसन्न होते हैं, क्योंकि वे अपने नेत्रों के सामने अपने तपस्या के महान श्रम को देखते हैं: उनकी जाग-जाग कर की गई पूजा, प्रार्थनाएँ, उपवास, आँसू, नंगे धरती पर लेटना, और बोरा-कपड़े; उनकी आत्माएँ हर्षित होती हैं, क्योंकि शरीर से अलग होने के बाद वे विश्राम में प्रवेश करने की आशा करती हैं। परंतु पापियों और उन दुर्बल लोगों के लिए मृत्यु का दृश्य भयानक होता है जो इस व्यर्थ संसार में जीवन की पवित्रता की परवाह नहीं करते। और विदाई का समय पापी व्यक्ति के लिए महान दुख का स्रोत है; उसे अपनी रक्षा में कुछ भी कहने की अनुमति नहीं है; उस समय के संबंध में आज्ञा कठोरता से दी जाती है।

५४. विदाई का समय उस व्यक्ति को उदास नहीं करता जो सभी सांसारिक चीजों से मुक्त हो चुका है; लेकिन यह कामुक की मृत्यु से दुखी करता है; यह पापी को दुखी करता है; यह आलसी को दुखी करता है, जो ईश्वर को प्रसन्न करने वाला कार्य करने के लिए बहुत सुस्त थे; यह लोभी को दुखी करता है, जिन्होंने अपनी आत्मा को सांसारिक चिंताओं से बाँध रखा है; यह धनी मनुष्य के लिए शोक लाता है, क्योंकि यह अनजाने में उसे उसकी संपत्ति से अलग कर देता है; यह संसार के प्रेमी के लिए शोक लाता है, क्योंकि यह उसे संसार से अलग कर देता है। ऐसे सभी लोग मृत्यु के समय शोक करते हैं, क्योंकि वे सांसारिक चिंताओं से बँधे होते हैं। लेकिन संसार से मुक्त और उसकी चिंताओं से विरक्त आत्मा के लिए आह भरने या शोक करने के लिए क्या है? उसने स्वतंत्रता की कामना की, उसे प्राप्त किया, और सदैव वैसी ही बनी रही, ईश्वर के मार्ग पर साहसपूर्वक चलती रही, और जो उसे प्रसन्न करता है, उसे तत्परता से

करती रही। – और तुम भी, यदि तुम अपनी पूरी आत्मा से ईश्वर से जुड़े रहोगे, तो मृत्यु के क्षण से कभी नहीं डरोगे; बल्कि मृत्यु और शरीर से अलगाव तुम्हारे लिए आनंद का स्रोत बन जाएगा।

५५. दयालु ईश्वर ने हमें ज्ञान का प्रबोधन प्रदान किया है; फिर भी हम दिन-प्रतिदिन उसे अस्वीकार करते हैं। यदि हम ईश्वर की इच्छा को पूरा करते, तो हम न्याय के समय धन्य होते, उन सभी के साथ जिन्होंने उसकी इच्छा के अनुसार किया है। लेकिन, चूँकि हमने इसे पूरा नहीं किया है, इसलिए वहाँ हमारा कोई औचित्य नहीं होगा; क्योंकि हम सभी ज्ञान रखते हुए भी पाप करते हैं। हम सभी ईश्वर की व्यवस्था का अनुभव करते हैं और उन सभी वरदानों का भी जिनसे दयालु ईश्वर ने हमें धन्य किया है। उनकी कृपा हर समय हमारे हृदयों पर आती रहती है, और यदि उसे विश्राम मिलता है, तो वह आत्मा में प्रवेश कर स्थायी रूप से निवास करती है; लेकिन यदि उसे एक शुद्ध हृदय नहीं मिलता, तो वह तुरंत वापस चली जाती है। फिर भी, उनकी उदारता एक बार फिर इसे हम पापियों के पास उतरने और आने के लिए प्रेरित करती है, क्योंकि हम सभी पसंद से परिवर्तनशील हैं, लेकिन स्वभाव से नहीं। हम हमेशा विचलित और कमजोर, ईर्ष्यालु और कपटी होते हैं; हम अक्सर एक-दूसरे के बारे में बुरा सोचते हैं, कपटी विचारों को पालते हैं, और हमेशा, जैसे किसी भयानक कीचड़ में, अपने ही विचारों में डूबे रहते हैं। और जब अनुग्रह हमसे मिलने आता है, तो उसे हमारे हृदयों में अशुद्ध विचारों की दुर्गंध मिलती है, और वह तुरंत ही पीछे हट जाता है, क्योंकि उसे अपनी इच्छानुसार हमारे भीतर वास करने और रहने का कोई रास्ता नहीं मिलता। और फिर भी, अपनी दिव्य मिठास के द्वारा, यह हृदय पर एक छाप छोड़ती है, ताकि एक व्यक्ति यह महसूस कर सके कि अनुग्रह उसके पास आया था लेकिन प्रवेश का कोई मार्ग नहीं मिला; और इस प्रकार, अनुग्रह की किरणों से आनंदित होकर, वह उसे खोज सकता है। हालाँकि, अनुग्रह स्वयं हमसे पूरी तरह से पीछे नहीं हट सकता; क्योंकि, अपनी ही दया से प्रेरित होकर, वह सभी पर दया करने के लिए विवश है। क्या आप ईश्वर की व्यवस्था देखते हैं? क्या आप मसीह की दया देखते हैं? क्या आप देखते हैं कि पवित्र ईश्वर हमें हमेशा कैसे प्रेम करते हैं और चाहते हैं कि हम उद्धार पाएँ? धन्य है वह व्यक्ति जो हमेशा अनुग्रह के लिए एक शुद्ध हृदय तैयार करने का प्रयास करता है, ताकि जब वह आए, तो उसे सद्गुणों की सुगंध और आत्मा की पवित्रता मिले, और वह उसमें अनंत काल तक वास करे।

56. धन्य हैं वे जो शत्रु के जाल में पड़कर भी, उसके बंधन तोड़ने में सफल रहे और स्वयं को छिपा लिया, एक ऐसे मछली की तरह जो जाल से बच निकली हो। एक मछली, जब पानी में ही पकड़ी जाए और जाल को तोड़कर गहराई में छिप जाए, तो वह बच जाएगी; लेकिन एक बार किनारे पर खींच लिए जाने के बाद, वह खुद को बचा नहीं सकता। इसी प्रकार, जब तक हम इस जीवन में हैं, हममें ईश्वर की शक्ति है कि हम हमें बांधने वाली शत्रु की इच्छा के बंधनों को तोड़ें, पश्चाताप के द्वारा अपने पापों के भार को उतार फेंकें, और स्वर्गीय राज्य में उद्धार पाएँ। लेकिन यदि वह भयानक आज्ञा हम पर आ पड़ती है, और आत्मा निकल जाती है, और शरीर को मिट्टी के हवाले कर दिया जाता है, तो हम स्वयं की सहायता नहीं कर सकते, ठीक वैसे ही जैसे पानी से निकालकर एक पात्र में बंद की गई मछली स्वयं की सहायता नहीं कर सकती।

57. हम मृत्यु के आने तक प्रतीक्षा न करें, कहीं ऐसा न हो कि हम मृतकों के पुनरुत्थान के समय लज्जित हों; जब संत उन तेजस्वी वस्त्रों को धारण करेंगे जो उन्होंने अपने पुण्य कर्मों द्वारा अपने लिए तैयार किए हैं। यदि हम खुद को तब न केवल दिव्य महिमा से वंचित पाएँ, बल्कि काले और एक भयानक बदबू से भरे हुए भी पाएँ, तो हमें कैसी लज्जा होगी? – इसलिए आइए हम पश्चाताप के मार्ग पर चलकर और अपनी वासनाओं से खुद को शुद्ध करके ऐसे खतरे से बचने का प्रयास करें।

५८. पाप अंधकार है, और पुण्य प्रकाश है। पाप, जब प्रेम किया और किया जाता है, तो वह करने वालों को काला कर देता है; लेकिन पुण्य, जब किया जाता है, तो उसमें उत्कृष्ट होने वालों को प्रबुद्ध बनाता है।

५९. आत्मा को हमारे शरीर से ले जाने का भयानक आदेश आने से पहले, हम ईश्वर को प्रसन्न करने वाले फल उत्पन्न करें। तब उस पर हाय-हाय हो जिसने हमारे प्रभु ईश्वर का अपमान किया है और पश्चाताप नहीं किया है! वह लापरवाही से बर्बाद किए हुए समय को ढूंढ़ेगा – और उसे नहीं पाएगा। अतःआओ हम अपने प्रभु परमेश्वर के सामने रोएँ, ताकि हमें उसकी दया प्राप्त हो। जब तक हमारे पास समय है, आओ हम अपना ध्यान रखें और प्रभु का आशीर्वाद माँगें। हमारी चिंता धन के लिए नहीं है; यदि कोई उसे खो भी दे, तो उसकी जगह और कमा सकता है। यह हमारी आत्मा है जो खतरे में है; यदि हम उसे नष्ट कर देते हैं, तो हम उसे कभी वापस नहीं ला सकते (मत्ती 16:26-27)।

60. हमारे दिन व्यतीत हो रहे हैं, और अंत समीप आ रहा है। आओ हम प्रभु अपने परमेश्वर के सामने रोएँ, इससे पहले कि हम घोर अंधकार में बंद हो जाएँ। तब, बहुत रोने पर भी, हम इन दिनों को फिर से नहीं पा सकेंगे यदि हम उन्हें आलस्य में बिताते हैं और अपने उद्धार के लिए उनका बिल्कुल भी उपयोग नहीं करते हैं। *'देखो, अब ग्रहण करने*

का समय है; देखो, अब उद्धार का दनि है (2 कुरन्थियिों 6:2)। धन्य हैं वे जो चत्ति के होशयिार हैं, क्योंक उिनके सरि पर आनन्द का मुकुट बँधेगा। *"धन्य हैं जो अब रोते हैं, क्योंक उिन्हें सांत्वना मलिेगी"* (मत्ती 5:4), परमेश्वर के चुने हुओं के साथ। धन्य हैं जो प्रभु के लए परश्रिम करते हैं, क्योंक स्विर्गीय आनंद उनकी प्रतीक्षा कर रहा है।

61. न तो हम दूसरों के कर्मों से धर्मी ठहरेंगे, और न ही दूसरे हमारे कर्मों के लए दण्डति होंगे। जब हमें न्यायाधीश के सामने लाया जाएगा, नग्न और उजागर कयिा जाएगा, यह बताने के लए क हिमने क्या कयिा है, तब कोई भी दूसरे के लए दण्डति नहीं कयिा जाएगा: *'क्योंक हिर कोई अपना बोझ उठाएगा'* (गलातयिों 6:5)।

62. यद किसिी शासक के पास कसिी अपराधी के बारे में सूचना दी जाती है, तो अभयिुक्त कसिी दूसरे स्थान पर भागकर दंड से बच सकता है; लेकनि परमेश्वर के साक्षात सामने, हम कहाँ भागेंगे, उस की बातों के अनुसार जसिने कहा: *'मैं तेरी आत्मा से कहाँ जाऊँ, और तेरे साक्षात से कहाँ भागूँ? यद मिैं स्वर्ग में चढ़ूँ, तो आप वहाँ हैं; यद मिैं पाताल में उतरूँ, तो आप वहाँ हैं; यद मिैं पंख लगाकर दूर के समुद्रों में रहूँ, तो भी वहाँ आपका हाथ मेरा मार्गदर्शन करेगा, और आपका दाहनिा हाथ मुझे दृढ़ता से थामे रहेगा'* (भजन संहति 138:7-10)।

63. आइए हम पश्चाताप को संजोते हुए, संकीर्ण और तंग मार्ग पर चलें, ताक मिृत्यु का स्मरण हम में बना रहे, और हम दण्ड से छुड़ाए जाएँ। क्योंक किहा गया है: *'हाय तुम्हें जो अब हँसते हो, क्योंक तिुम रोओगे और शोक करोगे'* (लूका 6:25)। *'धन्य हैं जो अब रोते हैं, क्योंक उिन्हें सांत्वना दी जाएगी'* (मत्ती 5:4)। आइए हम कब्र में झाँकें, और हम अपनी प्रकृत कि रहस्य देखेंगे—एक दूसरे पर पड़ी हड्डयिों का ढेर, मांस से रहति खोपड़याँ, और अन्य हड्डयिाँ। जब हम उन पर नज़र डालेंगे, तो हम खुद को उनमें देखेंगे। हमारी पूर्व की रंगत की सुंदरता कहाँ है, हमारे गालों की गुलाबी चमक कहाँ है? इस पर चतिंन करते हुए, आइए हम सांसारकि इच्छाओं को त्याग दें, कहीं ऐसा न हो क पिुनरुत्थान के दनि हमें लज्जति होना पड़े।

64. हर दनि अपने प्रस्थान की उम्मीद करो, और इस यात्रा के लए खुद को तैयार करो: क्योंक उिसी घड़ी जब तुम्हें इसकी सबसे कम उम्मीद होगी, भयानक आज्ञा आएगी; और तैयार न रहने वालों पर वनिाश आएगा! हृदय का शोक एक अद्भुत चीज़ है; यह मानवीय आत्माओं को ठीक करता है।

65. जैसे नावकिों के लए हमेशा जहाज पर रहना असंभव है, या कसिी यात्री के लए सराय में ठहरकर उसे छोड़ना असंभव है, वैसे ही हमारे लए भी इस जीवन में हमेशा रहना असंभव है। हम यात्री और परदेशी हैं। अत; इसे मन की आँखों से देखकर, हमें इस जीवन से प्रस्थान के लए स्वयं को तैयार करना चाहए।

66. यद आिप एक मजदूर रहे हैं, तो अगले जीवन की ओर एक धन्य यात्रा के आगमन पर दुखी न हों। जो व्यक्त धिन-संपत्त कि साथ घर लौटता है, वह कभी दुखी नहीं होता।

६७. ईश्वर ने मनुष्य को स्वतंत्र बनाया है; इसीलए उसके लए सम्मान और दंड नर्धारति हैं: अर्थात्, जो लोग अच्छी तरह प्रयास करते हैं उनके लए सम्मान और मुकुट, और अपराधयिों तथा लापरवाहों के लए दंड और यातनाएँ। *'एक पाप है जो मृत्यु की ओर ले जाता है'* (1 यूहन्ना 5:16); और मृत्यु स्वयं पर उन लोगों द्वारा लाई जाती है जो पाप में बने रहते हैं और एक बेहतर जीवन जीने के लए नषिद्ध कर्मों से नहीं मुड़ते।

68. मृत्यु के समय भय महान होता है, जब आत्मा शरीर से अलग होती है; क्योंक इिस अलगाव के समय, आत्मा के कर्म—अच्छे और बुरे, जो उसने दनि-रात कए—उसके सामने खड़े होंगे। अपने कर्मों को देखकर कांपती हुई, वह उनसे कहती है: 'दूर हो जाओ—मुझे जाने दो।' लेकनि उसके कर्म, एक स्वर में, उससे उत्तर देते हैं: 'तुमने हमें जन्म दयिा है; हम तुम्हारे साथ न्याय के लए परमेश्वर के पास जाएँगे।'

६९. वयिोग का दनि और घड़ी कोई नहीं जानता। जब हम पृथ्वी पर नश्चिंत होकर चलते हैं और आनंद मनाते हैं, तभी अचानक एक भयानक आज्ञा हम पर आ पड़ती है—हमारी आत्मा को हमारे शरीर से अलग करने की। और पापी उस यात्रा पर नकिल पड़ता है, उस दनि और उस घड़ी जब उसे उम्मीद नहीं होती, जब उसकी आत्मा पापों से भरी होती है और उसके पास कोई रक्षा नहीं होती।

70. भाई, यह मत सोचो क तिुम पृथ्वी पर और कई साल जयिोगे – और पापपूर्ण वचिारों और कर्मों में लप्ति होकर आत्मसंतुष्ट मत हो जाओ। प्रभु की आज्ञा अचानक आएगी और पापी पर तब चढ़ आएगी जब उसके पास पश्चाताप करने और क्षमा प्राप्त करने का समय नहीं रहेगा। – और हे भाई, वयिोग के समय मृत्यु से तुम क्या कहोगे?!

७१. नरिंतर मृत्यु, वयिोग, और प्रभु के न्याय-संहािसन के सामने अपनी उपस्थत कि इंतजार करो। और अपने उद्धार के एक बुद्धमािन प्रबंधक के रूप में, हमेशा अपना दीपक तैयार रखो – और उसे आँसुओं और प्रार्थनाओं के साथ घड़ी-घड़ी परखो।

७२. दिन समाप्त हो रहा है; हमारा समय खत्म हो रहा है; फिर भी हम, अपने अविश्वास में, सोचते हैं कि अभी भी सुबह है। फसल काटने का समय आ गया है; यह युग समाप्त होने को है; स्वर्गदूत अपनी दराँतें तैयार रखे हुए हैं और संकेत का इंतज़ार कर रहे हैं। हे प्रियजन, हम डरें! दिन का ग्यारहवाँ घंटा हो चुका है, फिर भी यात्रा अभी लंबी बाकी है। आइए हम प्रयास करें कि हमें मार्ग पर पाया जाए। आइए हम चौकस रहें; आइए हम अपनी नींद को झटक दें।

७३. अपने आप से कहो: 'देखो, हमारे भाई काम कर रहे हैं, जबकि तुम और मैं अपना समय आलस्य में बिता रहे हैं; वे, जब वे दिव्य शास्त्रों को सुनते हैं, तो वर्षा से सूखी धरती की तरह पोषित होते हैं, जबकि हम, यहाँ तक कि मठ के भीतर भी, अपने विचारों को इधर-उधर भटकने देते हैं; वे संयमी हैं, जबकि हम लापरवाह हैं; वे प्रार्थना में जागते रहते हैं, जबकि हमने स्वयं को नींद और आलस्य से बाँध रखा है; उन्होंने अपना मुकुट प्राप्त कर लिया है, जबकि हम अपनी सुस्ती में पड़े हैं; वे प्रभु को प्रसन्न करते हैं, जबकि हम संसार को प्रसन्न करते हैं। तो फिर हम होश में क्यों नहीं आते, ताकि हम भी अपना इनाम प्राप्त कर सकें?

74. ये दिन, वर्ष और महीने एक सपने की तरह और संध्या की छाया की तरह बीत जाते हैं, और जल्द ही मसीह का भयानक और महान आगमन आ जाएगा। – और सचमुच वह दिन पापियों के लिए भयानक है जिन्होंने परमेश्वर की इच्छा करने और उद्धार पाने से इनकार कर दिया है। – अतःआइए, अंततःसांसारिक चीज़ों की सभी चिंताओं को त्याग दें, – और उस दिन का सामना करने की तैयारी शुरू करें।

७५. सभी चीज़ें नष्ट हो जाती हैं, सभी चीज़ें मिट जाती हैं, और उस घड़ी हमें यहाँ किए गए हमारे अच्छे कर्मों के सिवाय कुछ भी काम नहीं आएगा। तब हम में से प्रत्येक अपने कर्मों और शब्दों को धर्मी न्यायाधीश के सिंहासन के सामने लाएगा। जब हमारे कर्मों का खुलासा होगा और हमारे विचारों और शब्दों की कठोरता से जाँच होगी, तो हमारे दिल काँप उठेंगे और हमारी अंतरात्मा हिल जाएगी। जब वहाँ हमारे प्रत्येक के द्वारा गुप्त रूप से और अँधेरे में किया गया सब कुछ प्रकट हो जाएगा, तो कौन काँपेगा नहीं, कौन रोएगा नहीं, और कौन आँसू नहीं बहाएगा?

७६. इसे स्पष्ट करने के लिए, मैं आपको फलदार पेड़ों का उदाहरण देता हूँ, जो अपने मौसम में अपने पत्तों के साथ फल देते हैं। पेड़ अपनी भव्यता किसी बाहरी स्रोत से नहीं प्राप्त करते, बल्कि प्रत्येक अपने प्रकार के अनुसार अपने भीतर से ही फल देता है। उसी प्रकार, उस भयानक दिन, सभी मानव शरीर अपने भीतर से वह सब कुछ प्रकट करेंगे जो किया गया है, चाहे वह अच्छा हो या बुरा; और प्रत्येक व्यक्ति अपने कर्मों को, जैसे अच्छे और सुखद फल, और अपने शब्दों को, जैसे पत्तियाँ, भयानक न्यायाधीश के सिंहासन के सामने लाएगा। संत लोग अच्छे कर्मों का फल लाएँगे – जो सुंदर और कीमती होगा; शहीद यातनाओं और उत्पीड़न के सामने अपने प्रशंसनीय धैर्य को लाएँगे; तपस्वी संयम, जागरण और प्रार्थनाओं के अपने श्रम के फल लाएँगे। परंतु पापी, अधर्मी और अशुद्ध लोग, लज्जा, विलाप और शोक के साथ, वहाँ अशुद्धि और अधर्म का फल लाएँगे – जो सदा भड़कने वाले कीड़े और न बुझने वाली आग के लिए भोजन है।

77. तो फिर, हम इतने लापरवाह क्यों हैं? या क्या हम नहीं जानते कि हमारा क्या इंतज़ार कर रहा है? यह जानते हुए भी, हम दिन-रात क्यों नहीं रोते, ईश्वर से प्रार्थना करते हुए कि वह हमें पश्चाताप की कृपा दे, ताकि हम उस लज्जा और अनंत अंधकार से मुक्त हो सकें? वहाँ हमारे पापी होंठ चुप हो जाएँगे; वहाँ सारी सृष्टि काँप उठेगी, और प्रभु के आगमन की महिमा और भव्यता से पवित्र स्वर्गदूतों की पंक्तियाँ भी काँप उठेंगी। उस दिन हम उनसे क्या कहेंगे, यदि हम अपना सारा समय लापरवाही में बिताते हैं? – यहाँ वह धीरजवान हैं, सभी को अपनी ओर खींचते हैं और अनुग्रहपूर्वक उन्हें अपने राज्य में स्वीकार करते हैं। लेकिन वहाँ वह हिसाब माँगेंगे, और उन लोगों पर बिना दया के न्याय करेंगे जो उनका अनुसरण करना चाहते थे, फिर भी लापरवाह रहे।

७८. हमारे सामने ये बातें हैं: एक ओर, राज्य और जीवन, विश्राम और आनंद; दूसरी ओर, घोर अंधकार में अनंतकालिक यातना। – जहाँ चाहो वहाँ जाओ; तुम अपनी मर्ज़ी से कुछ भी करने के लिए स्वतंत्र हो। – इसलिए, यदि तुम लापरवाह हो, नहीं करते, बचाए जाने की इच्छा नहीं रखते, परमेश्वर के सीधे मार्गों पर नहीं चलते, और उसकी आज्ञाओं को पूरा करने की इच्छा नहीं रखते, तो तुम अपना ही नाश कर रहे हो, और स्वयं को स्वर्गीय महल से बाहर फेंक रहे हो। – पवित्र परमेश्वर ने आपके लिए अपने एकलौते पुत्र को भी नहीं बख्शा; फिर भी आप, हे दुखी प्राणी, स्वयं पर भी दया नहीं करते। – आखिरकार होश में आओ, और अपनी पापी नींद से जाग उठो!

७९. किसी ऊँचाई पर चढ़ो, और तुम देखोगे कि नीचे जो कुछ भी है वह तुच्छ है; लेकिन अगर तुम उस ऊँचाई से उतरोगे, तो तुम एक छोटे से चूना-पत्थर वाले घर पर भी आश्चर्यचकित हो जाओगे।

८०. आइए हम अपने उद्धार के लिए चिंतित हों; आइए हम मृत्यु के घड़ी के लिए चिंतित हों। हाय, मृत्यु की घड़ी कितनी भयानक है, जब आत्मा शरीर से अलग हो जाती है! – तब न तो कोई पिता अपने पुत्र के साथ जाएगा, न

कोई माँ अपनी बेटी के साथ, न कोई पत्नी अपने पति के साथ, न कोई भाई अपने भाई के साथ, बल्कि केवल प्रत्येक व्यक्ति के कर्म – उनके द्वारा किए गए अच्छे या बुरे कर्म ही साथ जाएँगे। इसलिए आइए हम अपने अच्छे कर्मों को अपने से पहले भेज दें, ताकि जब हम स्वयं वहाँ जाएँ, तो वे हमें अपने नगर में स्वागत करें।

८१. यदि आप राज्य का उत्तराधिकारी बनना चाहते हैं, तो जब आप यहाँ हैं, तब ही राजा की कृपा प्राप्त करें। आप यहाँ उनका जितना सम्मान करेंगे, उसी हद तक वह आपको गौरवान्वित करेंगे; आप यहाँ उनकी जितनी सेवा करेंगे, उतना ही वह आपको वहाँ सम्मानित करेंगे। क्योंकि लिखा है: *'जो मुझे गौरवान्वित करते हैं, मैं उन्हें गौरवान्वित करूँगा, परन्तु जो मुझे तुच्छ समझते हैं, वे लज्जित होंगे'* (1 शमूएल 2:30)। अत: उसे अपनी पूरी आत्मा से सम्मान दें, ताकि वह आपको संतों का सम्मान प्रदान करने की कृपा करें। – आप पूछ सकते हैं: 'तो फिर, मैं उसकी कृपा कैसे प्राप्त करूँ?' – यदि आपके पास कोई धन-संपत्ति है, तो ज़रूरतमंदों की मदद करके उसे सोने और चांदी के रूप में अर्पित करें। लेकिन यदि आपके पास इनमें से कुछ भी नहीं है, तो उसे अन्य उपहार अर्पित करें – विश्वास, प्रेम, आत्म-नियंत्रण, धैर्य, उदारता, नम्रता; निर्णय लेने से बचें; अपनी आँखों की रक्षा करें, ताकि वे व्यर्थता को न देखें; अपने हाथों की रक्षा करें, ताकि वे अन्याय न करें; अपने पैरों को बुराई के मार्ग से दूर मोड़ें; निराश लोगों को सांत्वना दो, दुर्बल लोगों के प्रति दयालु बनो, प्यासे को ठंडे पानी का एक घूंट दो, भूखे को रोटी का एक टुकड़ा दो; जो कुछ भी तुम्हारे पास है, और जो कुछ भी उसने तुम्हें प्रदान किया है, उसे उसके पास ले आओ; क्योंकि मसीह ने विधवा के दो छोटे सिक्कों को भी तो नहीं ठुकराया।

८२. हमें पापी के लिए प्रतीक्षा कर रहे कष्टों पर अधिक बार मनन करना चाहिए, ताकि हम पश्चाताप के लिए स्वयं को प्रेरित कर सकें और पाप के जीवन को समाप्त कर सकें। – मच्छर से छोटा क्या है? फिर भी हम उसके काटने को भी सहन नहीं कर सकते। तो वहाँ विषैले, अटूट कीड़े के साथ कैसा होगा? – जब शाम होती है, तो लोग कहते हैं: 'दीया जलाओ, क्योंकि अँधेरा है'; और दीये से अँधेरा दूर हो जाता है। तो फिर, हम वहाँ घने, अनंत अंधकार के सामने क्या करेंगे? – यहाँ, जब सूरज की किरणें किसी को झुलसाती हैं, तो वे छाँव में भाग जाते हैं। तो फिर, हम उस न बुझने वाली अग्निमय गेहेना (नरक) के साथ क्या करेंगे?

८३. होश में आओ और उस ज्वाला की उपेक्षा मत करो जो कभी बुझती नहीं है। और यदि तुम उसकी उपेक्षा करते हो, तो पहले यहाँ स्वयं को परखो कि क्या तुम उस यातना देने वाली आग की क्रूरता को सहन कर सकते हो। एक दीया जलाओ और अपनी उँगली की नोक को उसमें लगाओ। यदि तुम इस दर्द को सहन कर सकते हो, तो शायद वहाँ भी अपनी मदद कर पाओगे। लेकिन यदि, जब तुम्हारा पूरा शरीर आग से बाहर है, तब भी तुम एक छोटे से अंग का दर्द नहीं सह सकते, तो तुम क्या करोगे जब तुम्हारा पूरा शरीर, अपनी आत्मा के साथ, आग की गेहेना में फेंका जाएगा?

८४. हम इस जीवन में परदेशी और यात्री हैं; फिर भी हम नहीं जानते कि हमें यहाँ से कब ले जाया जाएगा। कई लोग, सुबह उठने के बाद, शाम तक जीवित नहीं रहे; अन्य, शाम को सो जाने के बाद, सुबह तक नहीं पहुँचे: *'मनुष्य एक साँस के समान है; उसके दिन साया-सा गुज़र जाते हैं'* (भजन संहिता 143:4)। और कौन जाने कि हमारे प्रस्थान का समय आ ही नहीं गया है? – अत: हम अपने उद्धार के विषय में आलसी न हों।

85. धन्य है वह जो मृत्यु के समय में प्रभु को प्रसन्न करने वाला पवित्र बलिदान सिद्ध होता है; धन्य है वह जो बड़े आनन्द के साथ अपने शरीर और इस व्यर्थ जीवन से विदा लेता है। स्वर्ग में उसे देखकर स्वर्गदूत उसे अपने समान एक सेवक के रूप में प्रशंसा करेंगे, जो प्रभु में पारंगत है।

८६. *'प्रभु की दृष्टि में अपने संतों की मृत्यु अनमोल है'* (भजन संहिता ११५:६); परन्तु *'दुष्टों की मृत्यु कड़वी है'* (भजन संहिता ३३:२२)—वह दिन आएगा, वह निश्चित रूप से आएगा, और वह हमसे चूककर नहीं जाएगा, वह दिन जिस पर एक मनुष्य सब कुछ और सभी को पीछे छोड़ देगा, और अकेले, सभी द्वारा परित्यक्त, नग्न और असहाय, न कोई मध्यस्थ होगा न कोई साथी, अपरिचित और असुरक्षित आगे बढ़ेगा, यदि वह दिन उसे लापरवाही की अवस्था में पाए, *'एक ऐसे दिन जिस दिन वह नहीं जानता, और एक ऐसे समय पर जिसकी वह आशा नहीं करता'* (मत्ती 24:50), – जबकि वह भोग-विलास में मग्न है, खजाने इकट्ठा कर रहा है, ऐश्वर्य में जीवन यापन कर रहा है, और व्यभिचार में लिप्त है। – अचानक वह घड़ी आ जाएगी – और सब कुछ समाप्त हो जाएगा। एक लंबी, पीड़ादायक रात – और मनुष्य, एक प्रतिवादी की तरह, वहाँ चला जाएगा जहाँ वे उसे ले जाएँगे। तब, हे मनुष्य, तुम्हें उस आत्मा के विदाई के घड़ी में अनेक सहायकों, अनेक प्रार्थनाओं की आवश्यकता होगी। तब भय महान होगा, कम्पन महान होगा, उथल-पुथल महान होगी, परलोक में प्रवेश के समय। यह हमारा समय है - एक भयानक समय, फिर भी अपरिहार्य। यह सभी के लिए सामान्य अंत है - और सभी के लिए भयानक; एक कठिन मार्ग, फिर भी जिस पर सभी को चलना है; एक संकीर्ण और तंग रास्ता, फिर भी हम सभी उस पर कदम रखेंगे; यह एक कड़वा और भयानक प्याला है, फिर भी हम सभी इसे तल तक पी जाएँगे। आत्मा तब जो अनुभव करती है वह भय और आतंक से भरा होता है, फिर भी हम में से कोई भी इसे

नहीं जानता, सिवाय उन कुछ लोगों के जो हमसे पहले वहाँ गए हैं, सिवाय उन कुछ लोगों के जिन्होंने इसे स्वयं अनुभव किया है।

८७. क्या तुम उन लोगों को नहीं देखते जो मर रहे हैं, और यह कि वह समय कितना भयानक होता है? वे किस उथल-पुथल में होते हैं, वे कैसे आहें भरते हैं, वे अपनी दृष्टि इधर-उधर कैसे दौड़ाते हैं? वे कभी-कभी अपने दाँत कैसे किटकिटाते हैं? फिर वे वह देखते हैं जो उन्होंने कभी नहीं देखा, और वह सुनते हैं जो उन्होंने कभी नहीं सुना, और वह सहते हैं जो उन्होंने कभी नहीं सहा; वे एक उद्धारकर्ता की तलाश करते हैं, और उन्हें बचाने वाला कोई नहीं है।

८८. मरने वालों में से एक कहता है: 'अलविदा, भाइयों, अलविदा। मैं एक लंबी यात्रा पर निकल रहा हूँ - एक ऐसी यात्रा जो मैंने पहले कभी नहीं की, एक ऐसी भूमि के लिए जो मेरे लिए नई है, जहाँ से कोई कभी वापस नहीं आया, एक अंधेरी भूमि के लिए जहाँ मुझे नहीं पता कि मेरा क्या इंतज़ार कर रहा है। तो मैं जा रहा हूँ – और मैं तुम लोगों के पास कभी वापस नहीं आऊँगा। यह घंटा मेरे लिए बहुत छोटा है, क्योंकि मैं बिना तैयारी के जा रहा हूँ; यह रात मेरे लिए अँधेरी है, क्योंकि मैं एक बाँझ पेड़ की तरह काटा जाऊँगा; आगे की यात्रा मेरे लिए भारी है, क्योंकि मेरे पास कोई अच्छी मार्गदर्शन नहीं है। – अब मैं देखता हूँ कि मैंने खुद को कैसे धोखा दिया, यह कहते हुए: 'मैं जवान हूँ; मैं अभी जीवन का आनंद लूँगा, और फिर पश्चाताप करूँगा; ईश्वर दयालु है और निश्चित रूप से मुझे माफ कर देगा।' हर दिन इस तरह तर्क करते हुए, मैंने अपना जीवन बर्बाद कर दिया। मुझे सिखाया गया, पर मैंने ध्यान नहीं दिया; मुझे समझाइश दी गई, पर मैं हँसा; मैंने धर्मग्रंथों को सुना, पर मैंने अपना जीवन ऐसे समाप्त किया मानो मैंने उन्हें कभी सुना ही न हो; मैंने न्याय के बारे में सुना, पर मैंने उसका मज़ाक उड़ाया; मैंने मृत्यु के बारे में सुना, पर मैंने ऐसे जिया मानो मैं अमर हूँ। और अब मैं पूरी तरह से अतैयार ही उठा लिया गया हूँ – और मेरा कोई सहायक नहीं है; अनजान, पश्चातापहीन पकड़ा गया हूँ – और मुझे छुड़ाने वाला कोई नहीं है; मैं निंदा का सामना कर रहा हूँ – और मुझे बचाने वाला कोई नहीं है। – मैंने कितनी बार पश्चाताप करने का संकल्प लिया, और फिर भी हर बार उससे भी बुरा किया? मैंने कितनी बार ईश्वर से चिपका, और फिर भी हर बार उनसे मुंह मोड़ लिया? कितनी बार उन्होंने मुझ पर दया दिखाई, और मैंने हर बार उन्हें फिर से दुखी किया? – और अब मैं पूर्ण निराशा की अवस्था में प्रस्थान करता हूँ। – आह, भाइयों, और मेरे लिए एक आँसू बहाओ!!" – इस प्रकार प्रस्थान करने वाला कभी-कभी हमसे बात करता है – और अचानक उसकी जीभ जकड़ जाती है, उसकी आँखें बदल जाती हैं, उसकी आवाज़ बैठ जाती है और उसके होंठ चुप हो जाते हैं।

८९. जब अंतिम घड़ी नज़दीक आती है, तो फ़रिश्ते—आत्माओं के कम्बाई—रवाना होने वाली आत्मा को ले जाने और उसे ईश्वर की न्याय-पीठ के सामने पेश करने के लिए भेजे जाते हैं। उन्हें आते देख, वह दरिद्र व्यक्ति—भले ही वह एक राजा, शासक, या विश्व-शासक ही क्यों न हो—भूकंप की तरह पूर्ण भ्रम में पड़ जाता है; वह हवा से लहराते पत्ते की तरह कांपता है; वह शिकारी के हाथों में एक छोटे पक्षी की तरह फड़फड़ाता है; वह भयानक शक्तियों को देखकर, अपने लिए नई और बहुत बड़ी दृश्यों को देखकर, धमकी भरे और कठोर चेहरों को देखकर, ऐसी व्यवस्था को देखकर जो उसने पहले कभी नहीं देखी थी, पूरी तरह से अचल और स्तब्ध हो जाता है। – यह सब उस क्षण में उस व्यक्ति द्वारा देखा जाता है जिसे हमसे ले जाया जा रहा है, और वह अब हम पर कोई ध्यान नहीं देता है। वह केवल अपने मन में प्रार्थनाएँ करता है, जितनी उसकी शक्ति है। उसके हाव-भाव से हम यह निष्कर्ष निकालते हैं कि वह उच्चतर शक्तियों को देख रहा है, और एक-दूसरे का इशारा पाकर, हम कहते हैं: 'चुप रहो और लेटे हुए उस व्यक्ति को और परेशान मत करो, कहीं तुम उसे भ्रम में न डाल दो। आइए हम प्रार्थना करें कि उसकी आत्मा शांति से परलोक सिधार जाए, और उसे एक दयालु न्यायाधीश मिले।'

९०. वह चल बसा; अब वह नहीं रहा; उसने अपना जीवन जी लिया है, और अब अचल, साँसहीन और मौन पड़ा है। – तो, फिर, मनुष्य क्या है? – एक सपना और एक छाया। – देवदूत – कटहिार – आत्मा को ले जाकर, हवा में ऊपर उठते हैं, जहाँ पदवीधारी और शक्तियाँ, और विरोधी शक्तियों के शासक, खड़े होते हैं। ये हमारे दुष्ट अभियोजक हैं – यहाँ, हमारे बुरे कर्मों के प्रलोभक और दर्ज करने वाले; वहाँ, यातना देने वाले। वे रास्ते में ऊपर चढ़ती आत्मा से मिलते हैं, उसकी जाँच करते हैं और अपने रिकॉर्ड के अनुसार उसके पापों का हिसाब लगाते हैं – जवानी और बुढ़ापे के पाप, स्वेच्छा से और अनजाने में किए गए, कर्म, वचन और विचार में। हे, उस बेचारे प्राण के लिए कितना भय, कितना आतंक! तब वह अंधकार में उसे घेरने वाले अनगिनत शत्रुओं के हाथों क्या अकथनीय कष्ट सहता है, जो स्वर्ग की ओर उसकी आरोहण यात्रा को रोकने, जीवन के क्षेत्र में प्रवेश करने और जीवितों के बीच निवास करने से रोकने के लिए उस पर कलंक लगाते हैं।

९१. इस प्रकार देवदूत, आत्मा को ले जाकर, उसे एक ऐसे मार्ग पर ले जाते हैं जो केवल उन्हें ही ज्ञात है। – और हम, शरीर को तैयार करके, उसे कब्रिस्तान ले जाते हैं – और यहाँ हम एक नए और भयानक रहस्य का सामना करते हैं। निकृष्ट और शक्तिशाली, राजा और आम नागरिक, स्वामी और दास - सभी एक ही धूल, एक ही मिट्टी, एक

ही राख, एक ही बदबू, एक ही क्षय बन गए हैं: एक काला व्यक्ति वैसा ही है जैसा कभी सुंदर था, जवान व्यक्ति बूढ़े व्यक्ति जैसा है, लकवाग्रस्त व्यक्ति शारीरिक रूप से मजबूत व्यक्ति जैसा है; सभी, जैसा कि आरंभ में आज्ञा दी गई थी, मिट्टी और राख बन गए हैं (उत्पत्ति 3:19)। – और कुछ भी अलग नहीं किया जा सकता। – हमारे सामने वास्तव में एक महान और भयानक रहस्य है! हम देखते हैं कि वहाँ हर युग मिट गया है, हर शारीरिक सुंदरता बदल गई है, हर मुख की शोभा मिट गई है, हर मनोहर दृष्टि फीकी पड़ गई है, हर वाक्पटु मुख बंद हो गया है, बालों की हर लट सड़ गई है – सब कुछ समाप्त हो गया है। हम बोलते हैं – और कोई नहीं सुनता – हम रोते हैं – और कोई हमारी परवाह नहीं करता।

९२. काश हम वहाँ लेटे हुए लोगों से पूछ पाते: 'तुम कहाँ चले गए, हमारे भाइयो? तुम कहाँ वास करते हो?' तुम्हारा निवास स्थान कहाँ है? हमें कोई संकेत दो, हमसे वैसे ही बात करो जैसे तुम पहले करते थे। और यह हमारे लिए शिक्षाप्रद होगा कि वे हमसे उत्तर दें: 'हम जो तुमसे अलग हो गए हैं, जो अभी भी पृथ्वी पर जीवित हैं—अर्थात् हम में से प्रत्येक की आत्मा—हम प्रत्येक आत्मा के योग्य स्थान पर हैं। और यह आपके सामने पड़ी धूल, यह राख जो आप देख रहे हैं, यह बदबू, ये सड़ी हुई हड्डियाँ – ये उन युवकों और युवतियों के शरीर हैं जिनकी आप कभी इतनी कामना करते थे। यह राख वही मांस है जिसे आपने अपनी '' बाहों में थाम रखा था और जिसे आप तृष्णा-रहित चुम्बन देते थे। ये उघड़े हुए दाँत, वे ही होंठ जिन्हें तुम दिन-रात अनगिनत चुम्बनों से ढँकते थे। यह पीबा और यह घृणित नमी – वही मांस जिसके आलिंगन में तुमने स्वयं को पाप के हवाले कर दिया था। इसलिए, देखो और निश्चित हो जाओ कि, जब तुम अपने बिस्तरों पर अपने युवा प्रेमियों को गले लगाते हो, तो तुम धूल और कीचड़ को गले लगा रहे हो। जान लो कि जब तुम उनके अंगों को चूमते हो, तो तुम बदबू और पीब को चूम रहे होते हो। यह समझ लो कि जब तुम उनके लिए प्रेम की आग में जलते हो, तो तुम्हारी इच्छा का विषय कीड़े, राख और बदबू है। मोह के बहकावे में न आओ, मूर्ख युवको और कन्याओं! युवावस्था की क्षणिक सुंदरता से धोखा न खाओ; क्योंकि हम भी, जो तुम्हारी आँखों के सामने पड़े सड़े हुए शव हैं, अपने जीवनकाल में, ठीक तुम्हारी ही तरह, सुंदर और भव्य थे, इत्रों से सजे, प्रिय, जीवन का आनंद लेते और समृद्धि में रहते थे; और अब, जैसा कि आप देख सकते हैं, यह सब एक भूत, धूल, राख और बदबू बन गया है। अब और खुद को धोखा न दो; परन्तु हमसे सीखो, जो तुमसे पहले चले गए और अब कब्र में पड़े हैं, और सावधान रहो, और निश्चिंत रहो – कि एक न्याय है, अनंत यातना है, अथाह अंधकार और एक निराशाजनक गेहेना है, एक न रुकने वाला कीड़ा है, न रुकने वाला रोना, न रुकने वाला दाँत पीसना, और अचिकित्सीय दुःख है".

९३. यही हमें हमारे भाई, जो हमसे पहले वहाँ गए हैं, सिखाते हैं—केवल शब्दों में ही नहीं, बल्कि अपने कर्मों से। अतः आइए हम अपनी नींद से जागें। आइए हम स्वयं को खोखली आशाओं से धोखा देना बंद करें। आइए हम अब चालाक शत्रु को हमें उपहास करने न दें। काश कि हम लंबी आयु का वादा करने वाले चापलूसी भरे विचारों से भटक न जाएँ। कई लोग, बहुत सारी योजनाएँ बनाने के बाद भी, सुबह तक जीवित न रह सके, बल्कि मृत्यु उन्हें अचानक ही छीन ले गई, जैसे बाज़ एक पक्षी को, या भेड़िया एक मेमने को। कुछ लोग, जो शाम को अच्छे स्वास्थ्य में सोने गए थे, वे जाग न सके; अन्य, मेज़ पर बैठे-बैठे ही अपनी अंतिम साँस ले बैठे; और कुछ अन्य चलते-फिरते या आनंद लेते हुए अचानक मर गए; कुछ और स्नानागार में ही मर गए, जहाँ उनका अंतिम स्नान हो रहा था; कुछ और अपनी शादी के दौरान, ठीक दुल्हन के कमरे में ही मौत के हाथों अचानक छीन लिए गए - और उनके शादी के कपड़े ही उनके अंतिम संस्कार के कपड़े बन गए, और शादी में संगीत बजाने वालों की जगह शोक मनाने वालों ने ले ली, और नाचने वालों की जगह रोने वालों ने। 'हम यह सब जानते हैं,' और फिर भी हम खुद को धोखा देना बंद नहीं करते। इसीलिए हमें ईश्वर से कोई दया नहीं मिलेगी; क्योंकि हम अज्ञानता से नहीं, बल्कि जानबूझकर खुद को धोखे में डालते हैं। 'तो मैं आपसे विनती करता हूँ,'—केवल सुनने वाले ही नहीं, बल्कि आपके सामने रखी गई शिक्षा के करने वाले भी बनें।

९४. इस जीवन से हमारे प्रस्थान के समय, जब आत्मा शरीर से अलग होती है, तो हमें कैसा भय और कैसी पीड़ा का सामना करना पड़ेगा?! तब एक भयानक और महान रहस्य पूरा होता है! अच्छे स्वर्गदूत और स्वर्गीय सेना की भीड़ आत्मा के पास आती है, जैसे कि सभी विरोधी शक्तियाँ और अंधकार का राजकुमार भी; दोनों पक्ष आत्मा को अपने-अपने क्षेत्र में खींचने का प्रयास करते हैं। उस क्षण, यदि आत्मा ने यहाँ अच्छे गुण अर्जित किए हैं, एक सम्मानजनक जीवन जिया है, और सदाचारी रही है; तो उसके प्रस्थान के दिन, यहाँ अर्जित किए गए सद्गुणों को अच्छे स्वर्गदूत उठा लेते हैं, जो उसे घेरे रहते हैं और किसी भी विरोधी शक्ति को उसे छूने नहीं देते; लेकिन, आनंद और प्रसन्नता के साथ, पवित्र स्वर्गदूत इसे प्राप्त करते हैं और इसे महिमा के प्रभु और राजा, मसीह के पास ले जाते हैं, और इसके साथ और सभी स्वर्गीय शक्तियों के साथ मिलकर उसकी आराधना करते हैं। और अंत में, आत्मा को विश्राम के स्थान पर, अकथनीय आनंद में, शाश्वत प्रकाश में ले जाया जाता है, जहाँ न तो शोक है, न आह, न आँसू, न ही चिंता, बल्कि जहाँ अन्य सभी लोगों के साथ जो परमेश्वर को प्रसन्न कर चुके हैं, स्वर्गीय राज्य में अमर

जीवन और शाश्वत आनंद है। – लेकिन यदि आत्मा ने इस संसार में एक लज्जास्पद जीवन जिया हो, अपमानजनक वासनाओं में लिप्त रही हो और सांसारिक सुखों तथा इस संसार की व्यर्थता में बहक गई हो, तो इस जीवन से उसके प्रस्थान के दिन, वे वासनाएँ और सुख जो उसने इस जीवन में प्राप्त किए थे, दुष्ट राक्षसों में बदल जाते हैं; वे उस बेचारे आत्मा को घेर लेते हैं और परमेश्वर के स्वर्गदूतों को उसके पास आने की अनुमति नहीं देते, परन्तु, विरोधी शक्तियों, अंधकार के राजकुमारों के साथ मिलकर, वे उसे—दयनीय, रोती हुई, निराश और विलाप करती हुई—पकड़ लेते हैं और उसे अंधेरी, उदास और दुखद स्थानों में ले जाते हैं, जहाँ सभी पापियों को न्याय के दिन और शाश्वत यातना तक रखा जाता है, जहाँ शैतान और उसके स्वर्गदूतों को डाला जाएगा।

९५. इसलिए, जब तक समय है, आइए हम पश्चाताप के द्वारा, और आत्म-त्याग तथा अच्छे कार्यों के श्रम के द्वारा अपने भावों को शुद्ध करने का ध्यान रखें, और उनके स्थान पर अपने हृदयों में सद्गुणों को रोपें, जो हमारे प्रस्थान के समय हमारे लिए मध्यस्थता करेंगे, और परमेश्वर के स्वर्गदूतों के साथ हमारे प्रभु और स्वामी के सामने खड़े होकर हम पर उनकी कृपा प्राप्त करेंगे।

2. पश्चाताप पर उपदेश

1. हाय मेरे लिए! मैं कितनी लज्जित हूँ! मेरा अंतरिक स्वरूप वैसा नहीं है जैसा मेरा बाह्य स्वरूप दिखता है! सचमुच, मुझमें केवल धार्मिकता का बाहरी दिखावा है, परन्तु उसकी शक्ति नहीं। मैं किस मुख से प्रभु परमेश्वर के सामने आऊँगा, जो मेरे हृदय के रहस्य जानता है? इतने सारे बुरे कर्मों के लिए उत्तरदायी होने के कारण, यहाँ तक कि जब मैं प्रार्थना में खड़ा होता हूँ, तो मुझे डर है कि कहीं स्वर्ग से आग न आकर मुझे भस्म न कर दे। – फिर भी मैं निराश नहीं होता, परमेश्वर की दया पर भरोसा करके।

2. मेरा हृदय कठोर हो गया है, मेरा विवेक भ्रष्ट हो गया है, मेरा मन धूमिल हो गया है। मैं एक कुत्ते की तरह *'अपने ही उल्टी* पर लौटता *हूँ'* (2 पतरस 2:22)। मुझमें सच्ची पश्चाताप नहीं है, प्रार्थना के दौरान कोई आँसू नहीं आते, भले ही मैं आहें भरता हूँ और अपने वक्षस्थल को पीटता हूँ—जो वासनाओं का निवास-स्थान है।

3. वहाँ, जो कुछ अँधेरे में किया गया है और जो कुछ खुलेआम किया गया है, वह सब प्रकट हो जाएगा। मेरी आत्मा पर कितनी लज्जा छा जाएगी जब वे लोग जो अब कहते हैं कि मैं निर्दोष हूँ, मुझे एक दंडित व्यक्ति के रूप में देखेंगे! आध्यात्मिकता को त्यागकर, मैं अपनी वासनाओं के आगे झुक गया हूँ। मैं सीखना नहीं चाहता, फिर भी सिखाने में प्रसन्न रहता हूँ; मैं आज्ञाकारिता नहीं करना चाहता, फिर भी दूसरों को वश में करना पसंद करता हूँ; मैं परिश्रम नहीं करना चाहता, फिर भी दूसरों पर बोझ डालने के लिए उत्सुक रहता हूँ; मैं दूसरों का सम्मान नहीं करना चाहता, फिर भी सम्मानित होना चाहता हूँ; मैं निंदा सहन नहीं कर सकता, फिर भी निंदा करना पसंद करता हूँ; मैं अपमानित नहीं होना चाहता, फिर भी अपमानित करना पसंद करता हूँ। – मैं सलाह देने के लिए तो समझदार हूँ, पर उसे खुद मानने के लिए नहीं; मैं वही कहता हूँ जो किया जाना चाहिए, पर वही करता हूँ जो नहीं किया जाना चाहिए।

४. यह न कहो, 'आज मैं पाप करूँगा, और कल पश्चाताप करूँगा।' परन्तु हम आज ही पश्चाताप करें; क्योंकि हम नहीं जानते कि हम कल जीवित रहेंगे या नहीं।

5. क्या हम पाप कर चुके हैं? तो हमें पश्चाताप करें, क्योंकि प्रभु उन लोगों के पश्चाताप को स्वीकार करते हैं जो सचमुच पश्चाताप करते हैं।

6. यदि कोई भाई पाप करे, तो हम उसे डाँटने में बहुत प्रसन्न होते हैं; परन्तु जब हम स्वयं पाप करते हैं, तो डाँट को अच्छी तरह से ग्रहण नहीं करते।

7. *'सत्य के विरुद्ध बहस मत करो, और अपनी सज़ा से लज्जित मत होओ। अपने पापों का इकरार करने में लज्जित मत होओ'* (सिरैक 4:29–30)। *'यह न कहो: "मैंने पाप किया है, और मेरा क्या होगा?" क्योंकि यहोवा धीरजवान है। यहोवा की ओर फिरने में विलंब न करो, और इसे दिन-प्रतिदिन टालते न रहो'* (सीराख 5:4, 8)। *'याद रखो कि प्रकोप आने में देर नहीं होगी'* (सीराख 7:18)।

8. *"काश! मेरे सिर पर पानी का एक फव्वारा और मेरी आँखों में आँसुओं का झरना होता, ताकि मैं दिन-रात अपने पापों के लिए रोता रहूँ!"* (यर. 9:1)। हँसी के विषय में मैंने कहा (सभोपदेशक 2:2): 'मेरे पास से दूर हो जा'; और आँसुओं के विषय में: 'मेरे पास आओ'; क्योंकि प्रभु के साम्हने मेरा पाप बहुत बड़ा है, और मेरे अपराध गिनती से बाहर हैं।

9. क्या आप जानते हैं कि लोगों में तीन अलग-अलग प्रकार के आँसू होते हैं? दिखाई देने वाली चीजों के लिए आँसू होते हैं – और ये बहुत कड़वे और व्यर्थ होते हैं। पश्चाताप के आँसू होते हैं, जब आत्मा अनंत आशीर्वादों की लालसा करती है, और ये बहुत मीठे और लाभकारी होते हैं। और पछतावे के आँसू होते हैं जहाँ *'रोना और दाँत पीसना'*

होता है (मत्ती 8:12) – और ये आँसू कड़वे और बेकार होते हैं, क्योंकि जब पश्चाताप के लिए अब और समय नहीं होता तो वे पूरी तरह से निष्फल होते हैं।

10. दिखावे में हम विनम्र हैं, लेकिन अपने चरित्र में हम क्रूर और अमानवीय हैं; दिखावे में हम धार्मिक हैं, लेकिन अपने चरित्र में हम हत्यारे हैं; दिखावे में हम पवित्र हैं, लेकिन अपने दिलों में हम व्यभिचारी हैं; दिखावे में हम मौन हैं, लेकिन अपने चरित्र में हम द्वेषी हैं; बाहर से तपस्वी, पर चरित्र से तपस्या पर कलंक; बाहर से उपवासी, पर चरित्र से समुद्री डाकू; बाहर से पवित्र, पर मन से व्यभिचारी; बाहर से मौन, पर मन से घुमक्कड़; बाहर से नम्र, पर चरित्र से घमंडी; बाहरी रूप से परामर्शदाता, पर चरित्र में बहकाने वाले; बाहरी रूप से सरल-हृदय, पर चरित्र में खतरनाक। – ऐसा क्यों है? क्योंकि हम अपने सामने परमेश्वर का भय नहीं रखते, और या तो हम प्रभु की आज्ञाओं को नहीं जानते, या, उन्हें जानते हुए भी, हम अपने हिसाब से उनका अर्थ तोड़-मरोड़ देते हैं।

11. और अब भी (कई वर्षों के आत्म-सुधार के बाद), मेरे भीतर अभी भी कई अशुद्ध विचार हैं – ईर्ष्या, द्वेष, आत्म-संतुष्टि, लालच, क्रोध, अहंकार और वासना। मैं स्वयं कुछ भी नहीं हूँ, फिर भी मैं खुद को कुछ मानता हूँ; मुझे दुष्टों में गिना जाता है, फिर भी मैं पवित्रता की प्रतिष्ठा पाने की कोशिश करता हूँ; मैं पाप में रहता हूँ, फिर भी मैं धर्मी माना जाना चाहता हूँ। मैं खुद एक झूठा हूँ, फिर भी मैं झूठे लोगों से चिढ़ता हूँ; मैं अपने विचारों से खुद को अपवित्र करता हूँ, फिर भी मैं यौन अनैतिक लोगों पर न्याय करता हूँ; मैं चोरों की निंदा करता हूँ, फिर भी मैं गरीबों पर अत्याचार करता हूँ; मैं शुद्ध दिखाई देता हूँ, जबकि मैं पूरी तरह से अशुद्ध हूँ; मैं चर्च में सबसे पहला स्थान चाहता हूँ, जबकि मैं अंतिम स्थान के भी योग्य नहीं हूँ; मैं अपने लिए सम्मान की मांग करता हूँ, जबकि मुझे अपमान सहना चाहिए; मैं महिलाओं के सामने आकर्षक, और अमीरों के सामने धार्मिक दिखना चाहता हूँ। अगर मेरा अपमान होता है, तो मैं बदला लेता हूँ; जब डांटा जाता हूँ, तो मैं अपना आक्रोश दिखाता हूँ; जब मुझे चापलूसी नहीं मिलती, तो मैं क्रोधित हो जाता हूँ; मैं सत्ता में रहने वालों से घृणा करता हूँ, फिर भी उनके सामने पाखंड करता हूँ; मैं योग्य लोगों का सम्मान करने से इनकार करता हूँ, फिर भी, खुद अयोग्य होते हुए, मैं अपने लिए सम्मान की मांग करता हूँ। मैं उन विचारों का वर्णन नहीं करूंगा जो मुझे प्रतिदिन व्यस्त रखते हैं, मेरी व्यर्थता की लगन, प्रार्थना की मेरी उपेक्षा, या गपशप के लिए मेरे जुनून का। लेकिन मैं चर्च जाने की अपनी तय दिनचर्या का वर्णन करूँगा, और उसमें की जाने वाली जानबूझकर की गई देरी, बनावटी मुलाकातों, धर्मपरायण महिलाओं के साथ पाखंडी बातों, उपहार स्वीकार करने में मेरी लालच, और अधिक पाने के लिए की जाने वाली चापलूसी का वर्णन करूँगा। यही मेरा जीवन है, यही मेरी कमियाँ हैं!

12. शायद कोई कहेगा, 'क्या विचार वास्तव में इतनी महत्वपूर्ण बात हैं?!' इस पर मैं कहता हूँ: वे वास्तव में बहुत महत्वपूर्ण हैं, और यहाँ शास्त्र से प्रमाण है। अय्यूब ने अपने बच्चों के लिए बलिदान चढ़ाए, यह कहते हुए, 'शायद उन्होंने अपने दिल में कुछ बुरा सोचा होगा' (1:5)। यदि विचार जवाबदेही के दायरे में नहीं होते, तो उसे अपने विचारों के पापों के लिए एक भी सांड बलिदान करने की आवश्यकता क्यों पड़ती? – कोरह की सभा में दुर्भावनापूर्ण लोगों को दंडित किया गया; और क्योंकि उन्होंने बुरे विचारों को पाल रखा था, वे जलकर भस्म हो गए। और प्रभु उद्धारकर्ता ने, अपनी दयालुता में, व्यभिचार को 'व्यभिचार', पत्नी के लिए वासना को 'स्वयं कृत्य', क्रोध को 'हत्या' कहा, और घृणा को हत्या के बराबर माना। धन्य पौलुस भी हमारे विचारों के लिए हमारी ज़िम्मेदारी की गवाही देते हैं, जब वे कहते हैं कि प्रभु न्याय के दिन *'दिल की सलाहों' को* प्रकट करेंगे और *'अंधकार की छिपी हुई बातों' को* प्रकाश में लाएंगे (1 कुरिन्थियों 4:5)। – इसलिए, यह न कहें कि विचारों का कोई मतलब नहीं है, जब उन पर सहमति देना स्वयं ही अपराध माना जाता है।

13. हमें केवल अपने विचारों पर ही विचार नहीं करना है, बल्कि इच्छाशक्ति के उस निर्णय पर भी करना है जो उन विचारों को प्रसन्न करने वाला मानती है और उनके आगे झुक जाती है। एक किसान पृथ्वी पर बीज बोता है, लेकिन सब कुछ उसे स्वीकार नहीं होता; इसी प्रकार मन इच्छा में बोता है, लेकिन सब कुछ इच्छा द्वारा अनुमोदित और स्वीकार नहीं किया जाता है। जो कुछ पृथ्वी द्वारा स्वीकार किया जाता है, उससे किसान फसल की आशा करता है; और जिसे इच्छा ने अनुमोदित और स्वीकार किया है, उसके लिए परमेश्वर हिसाब मांगता है।

14. प्रेरित ने जो स्वाभाविक रूप से कार्य करते हैं उन्हें 'आध्यात्मिक' और जो असामान्य रूप से कार्य करते हैं उन्हें 'शारीरिक' कहा; जबकि आध्यात्मिक वे हैं जो प्रकृति को भी आत्मा में बदल देते हैं। परमेश्वर प्रत्येक व्यक्ति की प्रकृति, इच्छा और शक्तियों को जानते हैं; वह अपने वचन को उनके भीतर बोते हैं, और उनकी क्षमता के अनुसार कर्मों की मांग करते हैं; वह अलौकिक रूप से आत्मा और मर्म में, प्रकृति और इच्छा में प्रवेश करता है (बिना बाद वाले को जबरदस्ती किए)। यदि कोई व्यक्ति स्वाभाविक चीजों से संतुष्ट है, तो ईश्वर उसे दोषी नहीं ठहराता; क्योंकि उसने प्रकृति का माप निर्धारित किया है और इसके लिए एक कानून बनाया है। लेकिन अगर इच्छा प्रकृति से पराजित हो जाती है, तो वह उन्हें तृष्णा और ईश्वर के कानून को तोड़ने के लिए उत्तरदायी ठहराता है।

१५. मैं पाप से घृणा करता हूँ, फिर भी मैं वासना में डूबा रहता हूँ; मैं अधर्म का परित्याग करता हूँ, फिर भी मैं अपनी इच्छा के विरुद्ध सुख के आगे झुक जाता हूँ। मैंने अपनी प्रकृति को पाप का दास बना दिया है, और पाप, मेरी स्वतंत्र इच्छा को खरीदकर, मुझ पर अनिवार्यता थोपता है। वासनाएँ मुझ पर नदी की तरह उमड़ती हैं; क्योंकि मैंने अपने मन को शरीर के साथ मिला दिया है, और पृथक्करण असंभव है। मैं अपनी इच्छा बदलने की जल्दी में हूँ, लेकिन मेरी पुरानी अवस्था इसमें मेरा विरोध करती है। मैं अपनी आत्मा को मुक्त करने की जल्दी में हूँ, लेकिन मैं कर्जों के बोझ तले दब गया हूँ।

१६. शैतान, वह दुष्ट साहूकार, मुझे चुकाने की याद नहीं दिलाता; वह उदारतापूर्वक उधार देता है, फिर भी कुछ भी वापस लेने से इनकार कर देता है। वह केवल गुलाम बनाना चाहता है, और कर्ज के बारे में कोई बहस नहीं करता; वह इसलिए उधार देता है ताकि हम वासनाओं में अमीर हो जाएँ, और जो उसने दिया है उसकी वापसी की मांग नहीं करता। मैं उससे चुकाना चाहता हूँ, फिर भी वह पहले के कर्ज में और जोड़ देता है। जब मैं उससे इसे लेने के लिए मजबूर करता हूँ, तो वह मुझे कुछ और दे देता है, ताकि ऐसा लगे कि मैं उसे उसके ही कर्ज से चुका रहा हूँ। वह मुझे नए कर्जों का बोझ देता है, क्योंकि वह मेरे पुराने जुनून को अब तक मौजूद न रहे अन्य जुनूनों से मिटा देता है। ऐसा लगता है कि पुराने चुका दिए गए हैं; फिर भी वह मुझे जुनून की नई जिम्मेदारियों में खींचता है और मुझे नई परिस्थितियों से परिचित कराता है। वह मुझे अपने जुनून के बारे में चुप रहने और उनका इकरार न करने के लिए मजबूर करता है, और मुझे नए जुनून अपनाने के लिए मनाता है, मानो वे हानिरहित हों। मैं उन जुनूनों का आदी हो जाता हूँ जिन्हें मैंने पहले कभी नहीं जाना, और उनसे विचलित होकर, मैं अपने पुराने जुनूनों को भूल जाता हूँ। मैं उन नए आए लोगों के साथ एक समझौता करता हूँ, और एक बार फिर खुद को कर्ज में पाता हूँ। मैं उनकी ओर ऐसे दौड़ता हूँ जैसे वे दोस्त हों, और जिन्होंने मुझे पैसा उधार दिया है, वे एक बार फिर मेरे मालिक बन जाते हैं। मैं खुद को आज़ाद करना चाहता हूँ, और वे मुझे एक बिकने वाला दास बना देते हैं। मैं उनकी बेड़ियों को तोड़ने की जल्दी में रहता हूँ, और खुद को नए बंधनों में बाँध लेता हूँ; और जुनून के झंडे तले लड़ने से खुद को मुक्त करने की कोशिश करते हुए, उनकी सफलता और उनके उपहारों के कारण, मैं खुद को उनका प्रबंधक पाता हूँ।

१७. हे, मुझसे दूर हो इस सर्प की दासता! दूर हो इस वासनाओं के प्रभुत्व! दूर हो यह गहराई से जड़ें जमाए पाप। इसने मेरे मन को खरीदने का वादा किया है; इसने मेरी आत्मा को अपना दास बनाने के लिए देह को बहकाया है। इसने मेरी युवावस्था पर पहले ही कब्ज़ा कर लिया, ताकि मेरी बुद्धि यह न समझ सके कि क्या हो रहा है; इसने मेरी अपरिपक्व बुद्धि को अपने साथ बाँध लिया, और उसके माध्यम से, एक तांबे की ज़ंजीर की तरह, मेरे सीमित मन को कैद कर लिया है; और अगर यह (बुद्धि) भागना चाहे, तो यह उसे जाने नहीं देता, उसे बँधा ही रखता है। पाप मन के चारों ओर बाड़ लगा देता है और ज्ञान के द्वार को बंद कर देता है। वासना मन की निरंतर रखवाली करती है, कहीं वह ईश्वर को पुकारकर देह को बेच दिए जाने से न रोक दे। वह कसम खाती है कि देह के सुख में लिप्त होना बिल्कुल भी गलत नहीं है, और इतनी सी बात के लिए कोई दंड नहीं होगा। यह उदाहरण के तौर पर भ्रमित विचारों की भीड़ का हवाला देता है, और मुझे आश्वस्त करता है कि उनका बारीकी से परीक्षण करना असंभव है; यह उनकी सूक्ष्मता (तुच्छता) का उल्लेख करता है, और मुझे विश्वास दिलाता है कि ऐसी सभी चीजें विस्मृति में चली जाएँगी। इस प्रकार दुश्मन मुझे पीछे रोकता है और बाँधता है, मुझे धोखे और चापलूसी से फँसाता है।

18. पौलुस ने पापी के विषय में कहा कि वह *'देह का है'* (रोमियों 7:14)। पाप उन लोगों द्वारा प्रवृत्त होता है जो जानबूझकर उसे करते हैं; परन्तु स्वभाव और पाप के बीच, आदतें मध्यस्थ का काम करती हैं; और वासनाएँ पाप द्वारा प्रदान की गई और स्वभाव द्वारा स्वीकार की गई चीजें हैं; इनका अभ्यास आत्मा के अधीन होने, मन के भ्रम, और दासत्व की ओर ले जाता है। क्योंकि पाप, जो देह में वास करता है, मन पर शासन करता है और आत्मा पर अधिकार कर लेता है, तथा उसे देह के द्वारा वश में कर लेता है। पाप एक प्रबंधक के स्थान पर देह का उपयोग करता है; इसके द्वारा, वह स्वयं आत्मा पर भी बोझ डालता है, और, मानो, उसका प्रबंधक बन जाता है; क्योंकि वह कार्य सौंपता है और उनके पूर्ण होने का हिसाब मांगता है। यदि उस पर प्रहार करना आवश्यक हो, तो यह मांस के माध्यम से उस पर उनका बोझ डालती है। क्योंकि इसने, मानो, मांस को ही अपनी ज़ंजीर बना लिया है, और आत्मा को वध के लिए भेड़ की तरह उसी पर रखती है; और एक उड़ान भरने वाले पक्षी की तरह, इसने उसे इस ज़ंजीर से बाँध दिया है, और उसी से, जैसे कोई शक्तिशाली दैत्य तलवार से करता है, उसकी बाहें और पैर काट दिए हैं। मैं न तो भाग सकता हूँ और न ही अपनी मदद कर सकता हूँ, क्योंकि मैं जीवित रहते हुए भी मृत हूँ; मैं अपनी आँखों से देखता हूँ, फिर भी मैं अंधा हूँ; मैं आदमी के बजाय एक कुत्ता बन गया हूँ, और यद्यपि मैं तर्कशील हूँ, मैं एक निःशब्द प्राणी की तरह व्यवहार करता हूँ।

१९. फिर भी मैं इस दयनीय, भावुक अवस्था से मुक्त होने के लिए तरसता हूँ, यदि प्रभु मेरी सहायता करें। यदि वह मुझ पर अपनी प्रचुर दया के अनुसार व्यवहार करें, तो वह मुझे पाप से मुक्त कर देंगे; और यदि वह मुझ पर अपनी भलाई उंडेलें, तो मैं उद्धार पाऊँगा। मुझे यकीन है कि यह उनके लिए संभव है - और मैं अपनी मुक्ति के लिए निराश नहीं हूँ। मैं जानता हूँ कि उनकी कृपाओं की बहुतायत मेरे पापों की बहुतायत पर विजय प्राप्त करेगी। मैं जानता हूँ कि, जब वह आए, तो उन्होंने सभी पर दया की, और बपतिस्मा में पापों की क्षमा प्रदान की। मैं इसका अंगीकार करता हूँ, क्योंकि मुझे इस अनुग्रह से लाभ मिला है। मुझे अपने बपतिस्मा के बाद किए गए पापों के लिए चंगाई की आवश्यकता है; लेकिन जिसने मरे हुओं को जिलाया, उसके लिए इस मामले में भी मुझे चंगा करना असंभव नहीं है। मैं अंधा हूँ, परन्तु उसने जन्म से अंधे आदमी को भी चंगा किया। मुझे कोढ़ी की तरह त्याग दिया गया है, परन्तु यदि वह चाहे, तो वह मुझे भी शुद्ध कर सकता है। मैं पापों के बोझ तले दब गया हूँ, परन्तु मेरी ओर उसकी भलाई पर पापों की विजय नहीं होगी। उसने ज़काईयस पर एक योग्य व्यक्ति के रूप में दया की; वह मुझ पर एक अयोग्य व्यक्ति के रूप में दया करेगा।

20. व्यर्थ के शब्दों का भी न्याय होगा। और व्यर्थ का शब्द क्या है? विश्वास का वह वादा जो कर्म में पूरा नहीं होता। कोई व्यक्ति मसीह पर विश्वास करता है और उसकी गवाही देता है, फिर भी निष्क्रिय रहता है, और मसीह की आज्ञा को पूरा करने में विफल रहता है। एक अन्य उदाहरण में, एक शब्द व्यर्थ होता है, अर्थात् जब कोई व्यक्ति अपने पापों को कबूल करता है लेकिन अपने तरीकों को नहीं सुधारता; जब वे कहते हैं कि वे पश्चातापी हैं, फिर भी फिर से पाप करते हैं। और दूसरे के बारे में बुरा बोलना एक व्यर्थ शब्द है; क्योंकि यह उस बात को बताता है जो नहीं की गई और जो नहीं देखी गई।

21. हे पापी, आओ, उस शुभ वैद्य के पास आओ, और बिना परिश्रम के चंगे हो जाओ। अपने पापों का भार उतार दो, एक प्रार्थना करो, और अपने सड़ते हुए घावों को आँसुओं से धो लो। क्योंकि यह स्वर्गीय वैद्य आँसुओं और आहों से घावों को चंगा करता है। तो फिर, अपने आँसू लेकर आओ—यह सबसे अच्छी दवा है। क्योंकि स्वर्गीय चिकित्सक की यही इच्छा है कि प्रत्येक व्यक्ति स्वयं को ठीक करे और अपने ही आँसुओं से बचाया जाए। यह उपचार दीर्घकालिक नहीं है, फिर भी यह प्रभावी है; यह केवल घाव पर अनिश्चित काल के लिए पट्टी नहीं बाँधता, बल्कि आपको तुरंत ही ठीक कर देता है। चिकित्सक को बस आपके आँसू देखने की ही प्रतीक्षा है; आगे आओ, डरो मत। उन्हें अपना घाव दिखाओ, अपने साथ उपचार लेकर आओ—आँसू और आहें।

२२. कौन आश्चर्यचकित नहीं होगा, कौन विस्मित नहीं होगा, कौन आपके महान दयालुता की प्रशंसा नहीं करेगा, हे हमारे आत्माओं के उद्धारकर्ता, जब आप अपनी चिकित्सा के लिए आँसुओं को मूल्य के रूप में स्वीकार करते हैं! हे आँसुओं की शक्ति! तुम कितनी दूर तक पहुँच गए हो! आप बड़ी निर्भीकता से बिना किसी बाधा के स्वयं स्वर्ग में प्रवेश करते हैं। हे आँसुओं की शक्ति! स्वर्गदूतों की सेनाएँ और सभी स्वर्गीय शक्तियाँ आपकी निर्भीकता पर अनवरत प्रसन्न होती हैं। हे आँसुओं की शक्ति! यदि आप चाहें, तो आप परम शुद्ध प्रभु के पवित्र और उत्तम सिंहासन के सामने आनंदपूर्वक खड़े हो सकते हैं। हे आँसुओं की शक्ति! पलक झपकते ही आप स्वर्ग तक उड़ान भरते हैं, और आप ईश्वर से वह प्राप्त करते हैं जो आप माँगते हैं; क्योंकि वह आपको मिलने के लिए बाहर आते हैं, और स्वेच्छा से क्षमा प्रदान करते हैं।

२३. मैं तुझसे, हे मेरे उद्धारकर्ता, कैसे विनती करूँ, जब मेरे होंठ बदनामी से भरे हों? मैं तेरी स्तुति कैसे करूँ, जब मेरा अंतकरण कलंकित हो? मैं तुझे कैसे पुकारूँ, जब मैं तेरी आज्ञाओं का पालन करने में असफल रहा हूँ? – परन्तु हे सर्व-सद्गुण-निधि, मुझे, एक दीन प्राणी को, तुच्छ न समझ; मुझे, एक नीच प्राणी को, न त्याग; मुझे, एक निराशा-ग्रस्त मनुष्य को, न छोड़। क्योंकि मेरे शत्रु के लिए यह एक बड़ी प्रसन्नता है कि वह मुझे स्वयं से निराश देखे; उसकी एकमात्र खुशी यह है कि वह मुझे, मेरी निराशा के कारण, अपना कैदी बनते हुए देखे: परन्तु हे प्रभु, आप स्वयं, अपनी दया के द्वारा, उसकी आशा को लज्जित करें, मुझे उसके जबड़ों से छीन लें, मुझे उसकी चालाक योजनाओं से और उन सभी जालों से छुड़ाएं जो उसने मेरे विरुद्ध बिछाए हैं! – और उन सभी से जिनका अंतकरण अपने दुष्ट कर्मों से व्यथित है, मैं विनती करता हूँ: स्वयं में आशा न खोएँ; अपने विरोधी को आनंद का कारण न दें। परन्तु निर्भय होकर परमेश्वर के पास जाएँ, उनके सामने रोएँ, और स्वयं में आशा न खोएँ। क्योंकि हमारे प्रभु पश्चाताप करने वालों में बहुत प्रसन्न होते हैं और हमारे परिवर्तित होने की प्रतीक्षा करते हैं। वह स्वयं सभी को पुकारते हैं: *'मेरे पास आओ, हे सब जो परिश्रमित और बोझिल हो, और मैं तुम्हें विश्राम दूँगा'* (मत्ती 11:28)। इसलिए, कोई भी अपने आप में आशा न खोए, भले ही उसने पाप किया हो। प्रभु केवल उन लोगों के प्रति कठोर हैं जो उन्हें अस्वीकार करते हैं और पश्चाताप नहीं करते।

२४. धन्य है वह जो पूर्ण जागरूकता के साथ रोना चुनता है, और एक पश्चातापी हृदय से प्रभु के सामने पृथ्वी पर मोती-जैसी आँसू बहाता है।

२५. धन्य है वह जसिका प्राण नव-रोपे हुए वृक्ष के समान हो गया है, और जो सदा, एक सिंचाई नहर के जल के समान, परमेश्वर के लिए आँसू बहाता है।

26. धन्य है वह जो अपनी आत्मा में अच्छे पौधे—अर्थात् सद्गुण—रोपता है, और अपने भीतर रोपे हुए पौधों को पानी देता है, आँसुओं के साथ प्रार्थना करते हुए कि उसकी रोपाई प्रभु को भाए और फलदायी हो।

27. मैं तुम्हें आँसुओं की शक्ति का उदाहरण देना चाहता हूँ। अपने अश्रुपूरित प्रार्थना के द्वारा, हन्नाह को भविष्यवक्ता शमूएल मिला, साथ ही उनके हृदय में परमेश्वर का आनंद, दुख और स्तुति भी मिली। शिमोन के घर में पापी स्त्री, जो रोते हुए प्रभु के पवित्र पैरों को अपने आँसुओं से धो रही थी, ने उनसे अपने पापों की क्षमा प्राप्त की। कोमलता (ईश्वर के सामने हृदय से रोना) आत्मा का उपचार है। जब हम उसकी लालसा करते हैं, तो यह हमारे भीतर एकलौते पुत्र को स्थापित करती है, और पवित्र आत्मा को आत्मा में खींचती है। पश्चाताप से मिलने वाली आनंद से मीठा पृथ्वी पर कोई आनंद नहीं है। क्या आप में से किसी को ईश्वर के लिए आँसुओं के इस आनंद से प्रबुद्ध किया गया है? यदि आप में से किसी ने इसका अनुभव किया है और इसमें आनंद पाया है, और प्रार्थना के दौरान पृथ्वी से ऊपर उठ गया है, तो उस क्षण आप पूरी तरह से अपने शरीर से बाहर, इस पूरे युग से परे - और अब पृथ्वी पर नहीं थे। – ईश्वर के लिए पवित्र और शुद्ध आँसू हमेशा आत्मा को पापों से साफ़ करते हैं और उसे अधर्म से शुद्ध करते हैं। ईश्वर के लिए आँसू हर समय ईश्वर के सामने धैर्य देते हैं; अशुद्ध विचार किसी भी तरह से उस आत्मा के पास नहीं आ सकते जो लगातार ईश्वर के प्रति कोमलता से प्रेरित रहती है। कोमलता एक ऐसा खजाना है जिसे चुराया नहीं जा सकता; कोमलता से मेरा तात्पर्य वह है जो केवल एक दिन के लिए नहीं, बल्कि निरंतर, दिन-रात, और जीवन के अंत तक रहता है। कोमलता एक शुद्ध झरना है जो आत्मा के फलदायी बागानों (अर्थात सद्गुणों) को पानी देती है।

28. कोई भी पाप करने से पहले, शत्रु उसकी गंभीरता को उसके दृष्टिगोचर बहुत कम कर देता है; विशेष रूप से, वह कामुक सुख की लालसा को तुच्छ बताता है, मानो उसे संतुष्ट करना फर्श पर एक कटोरी ठंडा पानी गिराने के समान हो। इस प्रकार दुष्ट व्यक्ति पाप को करने से पहले ही उसके दृष्टिगोचर तुच्छ कर देता है; लेकिन एक बार जब पाप हो जाता है, तो दुष्ट व्यक्ति उस पाप में पड़े हुए व्यक्ति की नजरों में उसकी बुराई को अत्यधिक बढ़ा-चढ़ा कर पेश करता है। ऐसा करते हुए, वह उनके भीतर निराशा की लहरें उत्तेजित करता है; और अक्सर वह उपमाओं के साथ उनका सामना करता है, और इस तरह के विचार पैदा करता है: 'तुम्हें क्या हो गया, हे व्यर्थ परिश्रमी? और तुम्हारे इस काम से क्या मिलता-जुलता है? यह इस प्रकार है: एक आदमी ने कुछ अंगूर की बेलें लगाईं, उनका पोषण किया और उनकी देखभाल की जब तक कि उनमें फल नहीं आ गए; और अंगूर इकट्ठा करने के बाद, उसने मशकों को शराब से भर दिया; लेकिन फिर, अचानक, वह उठा, एक कुल्हाड़ी ली और मशकों को तोड़ डाला; शराब बहकर बर्बाद हो गई; तुम्हारे कर्म का यह ही परिणाम है।" दुष्ट व्यक्ति मनुष्य में यही विचार भरता है, ताकि उसे निराशा की गहराइयों में धकेल सके।

२९. इसलिये, शत्रु की युक्तियों को पहले से जानकर, पाप से भागो। यदि, तथापि, तुम पाप में गिर जाओ, तो उस में बने न रहो; परन्तु उठो और अपने प्रभु परमेश्वर की ओर अपने पूरे हृदय से फिरो, ताकि तुम्हारी आत्मा उद्धार पाए। दुष्ट विचार से कहो: 'यद्यपि मैंने मटके तोड़ दिए हैं और दाखरस बिगाड़ दिया है, फिर भी मेरी दाख की बारी अक्षुण्ण है, और प्रभु धीरजवान, दया से भरपूर, दयालु और धर्मी है। और मुझे आशा है कि, उसकी कृपा की सहायता से, मैं फिर से अपनी दाख की बारी की खेती करूँगा और अपनी अंगूर की फसल इकट्ठी करूँगा, और अपने मटके पहले की तरह भरूँगा। क्योंकि यशायाह भविष्यद्वक्ता के द्वारा वह कहते हैं: *'यदि तुम्हारे पाप सुर्ख़ी के समान लाल हों, तौभी वे हिम के समान श्वेत हो जाएँगे; और यदि वे रक्तवर्ण हों, तौभी वे ऊन के समान श्वेत हो जाएँगे'* (भजन संहिता 1:18)।

30. एक व्यक्ति को, एक विचार सुझाता है और कहता है: 'तुम अभी जवान हो; तुम अपनी वृद्धावस्था में पश्चाताप करोगे।' लेकिन जिसने वृद्धावस्था प्राप्त कर ली है, उसे एक विचार सुझाता है: 'तुम बूढ़े हो गए हो - तुम पश्चाताप के श्रम को कैसे सहन कर सकते हो? तुम्हें आराम की ज़रूरत है।'

31. अपने विषय में निराश न हो, और यह न कहो, 'अब मेरा उद्धार नहीं हो सकता'। इसके विपरीत, आप अभी भी उद्धार पाने में पूरी तरह से सक्षम हैं। अपनी पूरी आत्मा से परमेश्वर के भय से प्रेम करें; और यह आपके घावों को भर देगा और आपको अब से अजेय रखेगा। जब तक आपकी आत्मा प्रभु के भय से प्रेम करती है, आप शैतान के जालों में नहीं पड़ेंगे, बल्कि ऊँची उड़ान भरने वाले एक गरुड़ की तरह होंगे। – परन्तु यदि, इसके बाद परमेश्वर के भय की उपेक्षा करने पर, तुम्हारी आत्मा घमण्डी हो जाती है, तो, स्वयं को ऊँचाई से नीचे फेंककर, वह अधोलोक की आत्माओं का खिलौना बन जाती है। और वे, उसकी आँखों पर पट्टी बाँधकर, उसे व्यभिचार के जुनून में खींच ले जाते हैं, जैसे एक जोताऊ बैल को जुल्ह में जोत दिया गया हो।

32. यदि आपको धूर्त शत्रु का कोई तीर लगता है, तो थोड़े भी निराश न हों; इसके विपरीत, चाहे आप कितनी भी बार पराजित हों, पराजित न रहें, बल्कि तुरंत उठें और शत्रु से लड़ें: क्योंकि सहायक हमेशा आपको अपना दाहिना हाथ बढ़ाने के लिए तैयार रहता है, और वह आपको आपके पतन से उठाएगा। जैसे ही आप पहली बार उस तक अपना दाहिना हाथ बढ़ाएँगे, वैसे ही वह भी आपको उठाने के लिए अपना दाहिना हाथ आपके लिए बढ़ाएगा। परन्तु दुष्ट शत्रु, जैसे ही आप गिरते हैं, आपको निराशा में डुबाने के लिए अपनी पूरी ताकत लगा देता है। उसकी बात पर विश्वास न करें; परन्तु चाहे आप दिन में सात बार ही क्यों न गिरें, फिर से उठने का प्रयास करें और पश्चाताप के द्वारा परमेश्वर को प्रसन्न करें।

33. यद्यपि हम अपनी ही दुर्बलता के कारण गिर गए हैं, फिर भी हमें पश्चाताप के द्वारा स्वयं को चंगा करने का प्रयत्न करना चाहिए। यद्यपि, मनुष्य होने के नाते, हम अपनी वासनाओं के अधीन हैं, फिर भी हमें अंत तक अपने आप से निराश नहीं होना चाहिए; इसके विपरीत, ईश्वर की सुनते हुए, हमें यह कहते हुए उनकी सुनना चाहिए: *'पश्चाताप करो, क्योंकि स्वर्ग का राज्य निकट है'* (मत्ती 4:17)। उन्होंने केवल कुछ पापों के लिए पश्चाताप का विधान नहीं किया है, जबकि अन्य को छोड़ दिया हो; इसके विपरीत, हमारी आत्माओं के चिकित्सक ने हमें हर पापी पीड़ा के लिए यह उपाय दिया है।

34. पश्चाताप एक ऐसा खेत है जिसे हर समय जोता जाता है। यह एक ऐसा वृक्ष है जो भरपूर फल देता है, और हर तरह से परमेश्वर को महिमामय फल प्रदान करता है। यह जीवन का वृक्ष है, जो पापों के द्वारा मृतकों को जीवन प्रदान करता है। यह परमेश्वरत्व के साथ एकता में है, और परमेश्वर को इसमें अपनी सृष्टि की शक्ति के रूप में आनंद आता है; क्योंकि जिन्हें पाप नष्ट करता है, उन्हें यह परमेश्वर की महिमा के लिए पुनर्जीवित करता है। यह आध्यात्मिक हित है; क्योंकि यह वह काटता है जो उसने नहीं बोया, और वह लेता है जो उसने नहीं दिया।

35. जिन्होंने भलाई की है, उन्होंने पश्चाताप के द्वारा परमेश्वर के खेत को उपजाऊ बनाया है; इसके द्वारा उन्होंने मंडली को समृद्ध किया है; इसके द्वारा उन्होंने परमेश्वर के अनाज के घरों को भर दिया है। इसके द्वारा, पृथ्वी स्वर्ग बन गई है, क्योंकि यह संतों—इन पृथ्वी के स्वर्गदूतों—से भर गई है। उन भले सेवकों का धन्यवाद हो जिन्होंने पश्चाताप के द्वारा बोई गई चीज़ को कई गुना बढ़ा दिया है।

36. परमेश्वर ने देखा कि मानव जाति शत्रु से परेशान होगी, और उसने उसके पतन के विरुद्ध पश्चाताप को स्थापित किया। शत्रु मनुष्य को पाप करने के लिए मनाता है, जबकि पश्चाताप पापी को ग्रहण करने के लिए तैयार है। शत्रु मनुष्य को अधर्म करने के लिए उकसाता है, जबकि पश्चाताप मनुष्य को लौटने की सलाह देता है। पहला निराशा की ओर ले जाता है, जबकि दूसरा उद्धार की आशा का वादा करता है। पाप विवेक को दबा देता है, जबकि पश्चाताप उसे जगाने के लिए एक लाठी का काम करता है। *'प्रभु गिरने वालों को उठाते हैं'* (भजन संहिता 145:7); और वह यह पश्चाताप के द्वारा करता है।

37. पश्चाताप में, व्यवस्था एक दीपक के समान है; क्योंकि इसके द्वारा, पाप करने वाले एक बार फिर से परमेश्वर से मिलते हैं। अधर्मी मनुष्य अंधकार में लिपटा रहता है और परमेश्वर की भलाई नहीं देख सकता; क्योंकि शत्रु ने उसकी आत्मा को निराशा से भर दिया है। लेकिन पश्चाताप, एक अच्छे चिकित्सक की तरह, आत्मा से उदासी को दूर करता है और उसे भारी करने वाली सभी चीज़ों को हटा देता है, और उसे परमेश्वर की भलाई का प्रकाश दिखाता है। शैतान, पश्चाताप को एक कठिन कार्य के रूप में प्रस्तुत करके, दुष्ट लोगों को होश में आने से रोकता है। लेकिन पश्चाताप, उसकी चालाकी को देखकर, कोमलता से पास आता है और कहता है: 'बस ईश्वर को याद करो - और मैं तुम्हारे लिए परिश्रम करूँगा। अपने मन में उनकी दया की कल्पना करो - और मैं आहें भरकर तुम्हारे लिए मध्यस्थता करूँगा। पापियों, पश्चाताप में केवल हल्की आह भरें—और मैं तुम्हें ईश्वर का सेवक बना दूँगा। और यशायाह नबी ने कहा: *'जब तुम लौटोगे और आह भरोगे, तब तुम बच जाओगे'* (यशायाह 30:15)। 'तुम्हारे लिए गवाही यह है; तुम्हें केवल पश्चाताप करना है।' यदि पापी आह भरता है, तो सांप द्वारा उस पर रखा गया पाप का बोझ उस आह के साथ दूर हो जाएगा। तब अज्ञानता की धुंध उसके मन से छंट जाएगी – आत्मा की आँख स्पष्ट हो जाएगी, और पश्चाताप आत्मा को मोक्ष की ओर मार्गदर्शन करना शुरू कर देगा।

38. जब एक पश्चातापी पापी ईश्वर की भलाई को देखता है, तो वह न केवल आह भरता है, बल्कि बड़े दुख के साथ आँसू भी बहाता है। क्योंकि आत्मा, ईश्वर से लंबे समय तक अलग रहने के बाद, उन्हें पिता के रूप में देखकर, आँसू बहाने के लिए प्रेरित होती है। क्योंकि उसने अंततः अपने सृष्टिकर्ता को देख लिया है, वह आँसू बहाती है और परमेश्वर को अपनी ओर खींचती है, क्योंकि वह पिता की कृपा से प्रेम करती है; और इस प्रकार वह उस सब से शुद्ध हो जाती है जिसके लिए साँप ने उसे प्रेरित किया था। या क्या तुमने यह नहीं सुना कि दाऊद ने क्या कहा: *'मैं हर रात*

अपना बिछौना धोता हूँ (भजन संहिता 6:7)? लेकिन पहले उसने आह भरी, और फिर वह रोने लगा। और प्रकृति में भी ऐसा ही है: पहले हवा, फिर बारिश; पहले गरज गूँजती है, फिर बादलों से बारिश की बूँदें बनती हैं।

39. दाऊद ने आह भरकर अपने बिछौने को आँसुओं से भीग दिया, क्योंकि वह व्यभिचार से अपवित्र हो गया था। उसने अपने आँसुओं से अपना बिस्तर धोया, जिसे उसने एक अवैध संबंध के द्वारा अपवित्र कर दिया था। उसने कहा: *'मैं अपनी आहों से थक गया हूँ'* (भजन संहिता 6:7); और आहें भरने का श्रम एक बीमार हृदय का फल है, जो बहुत सारे आँसू भी लाता है। इस प्रकार, आँसू उनसे पहले आने वाली आहों से बढ़ते हैं।

४०. अंतरात्मा का स्वाभाविक झुकाव ईश्वर की ओर होता है (यह ईश्वर और जो कुछ भी ईश्वर का है, उसके पक्ष में खड़ा रहता है), और इसमें घुस आई किसी भी धोखाधड़ी को खारिज कर देता है। पाप अक्सर निर्लज्जतापूर्वक दखल देता है, लेकिन अंतरात्मा, उस क्षण की परिस्थितियों का लाभ उठाकर, हावी हो जाता है। यदि कोई अंधकार में भय से ग्रस्त हो जाता है, तो यह पाप के कारण होता है: क्योंकि धर्मग्रंथ कहता है, *'दुष्ट भाग जाते हैं जब कोई उनका पीछा नहीं करता'* (नीतिवचन 28:1)। या यदि किसी जहाज पर, कोई समुद्र की तूफानी लहरों से भ्रमित हो जाता है, तो अंतरात्मा उसे उसकी दुष्टता की याद दिलाती है। या भूकंप के दौरान, यह अन्याय के कार्यों को याद दिलाता है। या जब कोई यात्रा पर होता है, तो यह उसके कामुक कर्मों को याद दिलाता है। अंत में, यदि पापी पश्चाताप नहीं करता है, तो यह उसे दोषी ठहराता है जब वह दुर्बलता और शारीरिक बीमारी में पड़ता है - और, जीवन के प्रति प्रेम के कारण, वह ईश्वर से अपने भीतर पाप को समाप्त करने का व्रत करता है। मृत्यु और शाश्वत जीवन के आशीर्वादों के नुकसान के डर से, अपने अंतरात्मा से पीड़ित होकर, वह पश्चाताप की ओर मुड़ता है – जो ईश्वर और मनुष्य के बीच एक मध्यस्थ है।

४१. सुसमाचार में उल्लेखित युवक, अपने पिता से अपनी विरासत लेकर, एक दूर के देश में चला गया और उसे वेश्याओं पर उड़ा दिया; जिसके परिणामस्वरूप उसे हर तरह से भयानक गरीबी झेलनी पड़ी। जब वह अपनी कठिनाइयों के बोझ तले दम तोड़ने लगा, तो पश्चाताप ने, उसे अपने पिता के साथ अपने पूर्व, बेफिक्र जीवन के नुकसान का एहसास कराकर, उसमें उस जीवन में लौटने की इच्छा और अपने पछतावे के माध्यम से अपने पिता को प्रसन्न करने की आशा को फिर से जगा दिया। और वह चिल्ला उठा: *'मैं उठकर अपने पिता के पास जाऊँगा, और मैं उनसे कहूँगा: पिता जी, मैंने स्वर्ग के और आपके सामने पाप किया है'* (लूका 15:18)। जब उस युवक पर, जो प्रलोभन के आगे झुक गया था, शत्रु ने धावा बोल दिया और उसके साथ जैसा चाहा वैसा किया, तब पश्चाताप शांत रहा, उसने उसके अंतरात्मा को चुप करा दिया था और कार्रवाई करने से पहले अपना समय आने का इंतज़ार कर रहा था। लेकिन जब परीक्षा का समय उस पर आया, तो पश्चाताप ने, एक माँ की तरह, अपनी गोद फैला दी, उसे गले लगा लिया, और उसे उसकी सौतेली माँ—कामुकता—के हाथों से छीनकर उसकी माँ—धर्मपरायणता—के पास लौटा दिया।

४२. उस जवान ने पुकार लगाई: *'पिताजी, मैंने स्वर्ग के विरुद्ध और आपके सामने पाप किया है।'* पाप करने वाले पुत्र ने अपने पिता को पहचान लिया, और इस बात पर शोक मनाया कि जिसने उसे बहकाया था, वह एक सौतेला पिता और एक दुष्ट था। उसने विश्वासघात देखा, उसने बहकाने वाले को देखा, और वह एक माँ की तरह पश्चाताप की शरण में भागा। लंबे समय तक वह काँटों पर जीता रहा और भूख सहता रहा; लेकिन पश्चाताप, एक दयालु माँ की तरह, इस युवक को स्वीकार कर, उसे फिर से दूध से पोषित करती है, उसे अपनी छाती का सहारा देती है – वह उसे दूध से पोषित करती है, क्योंकि पाप ने शर्म की ज़िंदगी से उसकी ताकत चूस ली थी। यदि यह दूध न होता, तो वह ठीक नहीं हो पाता। लेकिन जो उठ नहीं पा रहे थे, उन्हें पश्चाताप ने दूध पिलाकर खड़ा कर दिया। इसने अत्यंत दुर्बल लोगों को चंगा किया और उन्हें उनके पिता की बाहों में पहुँचा दिया।

४३. क्या आप देखते हैं कि कैसे पश्चाताप पहली बार पापियों को कठोर नहीं, बल्कि क्षमाशील और कोमल प्रतीत होता है! इसने न तो उपवास थोपा, न ही संयम या रात्रि जागरण की मांग की, बल्कि उन्हें इस स्वीकारोक्ति के साथ शुरू करने के लिए आमंत्रित किया: *'मैंने पाप किया है'*। यह सबसे सरल कदम के साथ शुरू होता है, यह जानते हुए कि अंतरात्मा बाकी का काम पूरा कर देगी। अंतरात्मा पश्चाताप की संरक्षक है; यह आत्मा को अपनी देखरेख में लेती है और उसे शुद्ध करने के लिए तत्पर रहती है। यह आत्मा की आज्ञाकारिता को जानती है - और एक घुड़सवार की तरह इसका मार्गदर्शन करती है। यह चाहती है कि पश्चाताप को स्वीकार किया जाए; यह चाहती है कि यह पापियों में जड़ें जमा ले, और, सूर्य की तरह, मन में प्रवेश करके उसे प्रबुद्ध करे। इस प्रकार यह उन्हें धीरे से ईश्वर की ओर ले जाती है और, थोड़े ही समय में, उन्हें अपना बना लेती है।

४४. भाइयों, जब हमारे पास पश्चाताप जैसी माँ है, तो हमें मोक्ष के लिए निराश नहीं होना चाहिए। जब ऐसी माँ हमें सांत्वना देती है, तो हमें मोक्ष की आशा नहीं छोड़नी चाहिए। इसने क्रूर शत्रु के हाथों पकड़े गए लोगों को स्वर्ग में परमेश्वर तक पहुँचाया; क्या यह निश्चित रूप से हमसे मुँह मोड़ देगा? इसने चर्च के बाहर वालों पर दया दिखाई;

क्या यह हम पर दया नहीं करेगी? कोई भी व्यक्ति दूसरों को वह बर्बाद करने की अनुमति नहीं देगा जिसे उसने खुद बड़ी मेहनत से इकट्ठा किया है। तो फिर परमेश्वर पिता हम पर, जिन्हें उन्होंने अपने पुत्र के लहू से प्राप्त किया है, दुश्मन को कैसे अधिकार दे सकते हैं? – हम उसकी भेड़ें हैं, और वह हमारा चरवाहा है। उसने पश्चाताप को शुद्ध करने वाले जल के रूप में दिया है, ताकि यदि हम किसी भी तरह से पाप करें, तो हम उससे शुद्ध हो सकें। हमारा *'स्नान'* न केवल *'पुनर्जन्म' के लिए* है, बल्कि *'नवीनीकरण' के लिए* भी है। यदि हम किसी भी तरह से पाप करते हैं, तो पश्चाताप में स्वयं को धोकर हम शुद्ध हो जाते हैं।

४५. पश्चाताप परमेश्वर का वेदी है, क्योंकि इसके द्वारा पापी परमेश्वर से प्रायश्चित करते हैं। व्यवस्था के अंतर्गत, जब लोग पाप करते थे, तो उन्हें भौतिक बलिदान चढ़ाना आवश्यक था, और इसके लिए उन्हें यरूशलेम जाना पड़ता था; फिर भी कुछ लोग कंजूसी के कारण, कुछ गरीबी के कारण, और कुछ आलस्य के कारण ऐसा करने से वंचित रह जाते थे। नए अनुग्रह में, यह सब केवल पश्चाताप द्वारा पूरा होता है, जो अंतरात्मा में एक बलिदान अर्पित करता है। इसके लिए किसी बकरी की नहीं, बल्कि पाप-स्वीकृति की आवश्यकता है। हे पापी, क्या तेरे पास कोई कबूतर नहीं है? आह भर—और ईश्वर इसे कबूतर से भी अधिक मानेगा। क्या तेरे पास कोई कबूतर नहीं है? ईश्वर के सामने अपने पापों का इकरार कर—और यही तेरी होमबलि होगी। क्या आपके पास कोई और पक्षी भी नहीं है? रोएँ—और यह आपके लिए एक बलिदान के रूप में गिना जाएगा। यदि आप प्रार्थना करते हैं, तो ईश्वर एक बछड़े के स्थान पर आपकी प्रार्थना स्वीकार करेंगे। यदि आप एक सच्चे दिल से प्रणाम करते हैं, तो आपके उत्साह को बलिदान के रूप में चढ़ाए गए बैल से भी ऊँचा माना जाएगा। आप धूप क्यों तैयार करें? पश्चाताप आपको धुएँ को जलाए बिना शुद्ध कर देगा।

४६. पश्चाताप परमेश्वर का भोजन भी है, क्योंकि इसके द्वारा परमेश्वर मानव उद्धार का स्वाद चखता है। और उद्धारकर्ता कहते हैं: *'मेरा भोजन यह है कि मैं अपने स्वर्गीय पिता की इच्छा के अनुसार चलूँ'* (यूहन्ना ४:३४)। इस प्रकार, पश्चाताप परमेश्वर का अद्भुत भोजन है; इसमें, परमेश्वर अंतरात्मा की स्वीकारोक्ति का स्वाद चखता है; पश्चाताप में, वह पश्चाताप के आँसुओं को पीता है; इसमें, वह सुगंधित सुगंध—आहों की सच्ची भावना—में आनंदित होता है; क्योंकि परमेश्वर के लिए वे एक सुगंधित धूपदान हैं। देखो—ईश्वर की अनेक भेंटें: संयम, उपवास, जागरण, लगन से किया गया प्रार्थना, विनम्रता से किया गया समर्पण; क्योंकि ये ईश्वर को अनेक बलिदानों से अधिक प्रसन्न करते हैं।

४७. पश्चाताप परमेश्वर के लिए एक भोज है; क्योंकि सुसमाचार कहता है कि परमेश्वर *'नब्बे-नौ धर्मी लोगों की अपेक्षा एक पापी के पश्चाताप करने पर* अधिक आनन्दित होते *हैं'* (लूका १५:७)। पश्चाताप, ईश्वर के लिए एक भोज का आयोजन करके, स्वयं स्वर्ग को उस भोज में बुलाता है। जब पश्चाताप उन्हें भोज के लिए आमंत्रित करता है तो स्वर्गदूत आनंदित होते हैं। सभी स्वर्गीय सेनाएँ पश्चाताप से उत्साहित होकर आनंद का भोज करती हैं।

४८. पश्चाताप पापियों को बलिदान के रूप में अर्पित करता है, फिर भी यह उन्हें पुनर्जीवित भी करता है; यह उन्हें मृत्युदंड देता है, फिर भी यह उन्हें मृतकों में से जीवित भी करता है। यह कैसे संभव है? सुनो: यह पापियों को लेता है और उन्हें धर्मी बना देता है। कल वे मरे हुए थे, लेकिन आज पश्चाताप के द्वारा वे परमेश्वर के लिए जीवित हैं; कल वे अजनबी थे, लेकिन आज वे परमेश्वर के हैं; कल वे अधर्मी थे, लेकिन आज वे पवित्र हैं। पश्चाताप एक महान कड़ाही है जो तांबे को लेती है और उसे सोने में बदल देती है; यह सीसे को लेती है और चांदी देती है। यदि आपने देखा है कि कैसे काँच नीलम, पन्ना या नीलमणि का रंग धारण कर लेता है, तो आपको पश्चाताप की शक्ति से होने वाले ऐसे परिवर्तनों पर कोई संदेह नहीं होगा। पश्चाताप, ईश्वर की इच्छा से, पश्चाताप करने वाले को पवित्र आत्मा की कृपा से जोड़ता है, और एक व्यक्ति को पूरी तरह से ईश्वर की संतान बना देता है।

४९. व्यवस्था ने आज्ञा दी कि पवित्र वस्तुएँ पूरी तरह से सोने की बनाई जाएँ। व्यवस्था देने वाले ने इन कीमती चीजों में कोई खोखलापन नहीं रहने दिया, ताकि हम जान सकें कि परमेश्वर के संत अपने भीतर पूर्ण पवित्रता रखते हैं। हे तुम जो पश्चाताप कर रहे हो, सुनो! पूरी आत्मा से परमेश्वर के निकट आओ, और वह तुम्हें पूरी तरह से शुद्ध करके पुरस्कृत करेगा। तुमने पश्चाताप की आग में शुद्धता की खोज की है; देखो कि कुछ भी अपरिष्कृत न रहे। मेरा यही मतलब है। मान लीजिए कि आप व्यभिचार से पश्चाताप कर रहे हैं। व्यभिचार के सभी रूपों को त्यागने का ध्यान रखें, क्योंकि, हर तरह की अनैतिकता उन्हीं से उत्पन्न होती है। और सिर्फ इतना ही नहीं, बल्कि हर उस चीज़ को भी त्याग दें जो उनके माध्यम से अशुद्धि की ओर ले जाती है: हँसी, मज़ाक, अपमानजनक भाषा, लालच – ये व्यभिचार के मार्ग हैं।

50. जो कुछ भी पाप है, उसे पूरी तरह से त्याग दो। जब लोगों ने पाप किया, तो पैगंबर मूसा ने आज्ञा दी कि साँप को सूली पर चढ़ाया जाए, यानी पापों को नष्ट किया जाए – और उन्होंने साँप को खोखला नहीं, बल्कि ठोस और

ढाला हुआ बनाया। ऐसा क्यों किया गया? ताकि आपको इससे यह दिखाया जा सके कि आपको सभी *'धोखे'* से पूरी तरह मुँह मोड़ लेना चाहिए। उन्होंने साँप को पूरी तरह से तांबे का बनाया, क्योंकि सभी बुराइयों की जड़ *'धन का प्रेम'* है। उन्होंने इसे भट्टी से निकाला ताकि आप अपने भीतर फैलने वाली उस *'ज्वाला' को* शांत कर सकें, जो मन के भ्रष्ट होने का कारण बनती है। उसने साँप को पेड़ पर इसलिए लटकाया ताकि, पश्चाताप के द्वारा, आप अपने भीतर इन तीनो बुराइयों को सूली पर चढ़ा सकें, क्योंकि ये आत्मा की मृत्यु की ओर ले जाती हैं।

५१. हे पश्चातापी, मेरा वचन तेरे लिए है; तेरे भीतर कोई रिक्तता न रहे; पाप का विरोध करने और चट्टान की तरह भलाई में दृढ़ रहने के अपने संकल्प में स्थिर रह। जैसा कि भविष्यवक्ता कहते हैं, *'अपने हृदय को दृढ़ कर, कि वह डगमगाए नहीं'* (भजन संहिता 111:5, 8)। आपको पत्थर की तरह दृढ़ पश्चाताप करना चाहिए, क्योंकि आपने गंभीर पाप किया है। ईश्वर उस पश्चाताप को स्वीकार नहीं करते जिसके साथ दृढ़ कर्म न जुड़ा हो। कई लोग राजाओं की चाल-ढाल की नकल करते हैं, फिर भी उन्हें राजा के रूप में सम्मानित नहीं किया जाता। इसी तरह, जो पश्चाताप करते हैं, यदि वे दृढ़ पश्चाताप नहीं करते हैं, तो वे केवल पश्चातापी प्रतीत होंगे, उनमें वह शक्ति नहीं होगी जो पश्चाताप प्रदान करता है। जो केवल दिखावे के लिए पश्चाताप करते हैं, वे न केवल एक पाप करते हैं, बल्कि कई पाप करते हैं, क्योंकि वे दूसरों को भी केवल बाहरी पश्चाताप करने के लिए प्रेरित करते हैं। ऐसे लोगों को न केवल क्षमा नहीं किया जाता है, बल्कि उनके खाते में एक और पाप जुड़ जाता है।

५२. अत; हे पापियों, क्षमा प्राप्त करने के लिए सच्चा पश्चाताप करो। प्रेरित पौलुस ने कहा कि जो कोई *'लकड़ी, पुआल और भूसे' की* नींव पर निर्माण करता है, उसे कोई इनाम नहीं मिलेगा; और उन्होंने यह न केवल धर्मशास्त्र के संबंध में, बल्कि पश्चाताप के संबंध में भी कहा। यदि कोई सच्ची पश्चाताप नहीं करता है, तो वे पानी पर तैरते हुए सरकंडों या लकड़ी के समान हैं। जो कोई भी सच्चाई के साथ पश्चाताप नहीं करता है, वह लकड़ी के समान है; और ऐसा व्यक्ति न केवल अस्वीकार कर दिया जाएगा बल्कि आग से जला भी दिया जाएगा, जैसा कि कहा गया है। किस कारण से? क्योंकि उन्होंने सोचा कि वे ईश्वर का मज़ाक उड़ा सकते हैं।

53. आइए हम भी निनिवे के लोगों की तरह पश्चाताप करें, ताकि हम भी उद्धार प्राप्त कर सकें। उन्होंने सचमुच पश्चाताप किया, और सचमुच उद्धार पाया; जैसे उन्होंने पाप किया था, वैसे ही उन्होंने पश्चाताप किया - और उन्हें स्वीकार कर लिया गया। वे केवल आंशिक रूप से ही नहीं लौटे, क्योंकि राजा और आम लोग दोनों समान रूप से रोए। केवल उनका एक हिस्सा ही नहीं बदला, क्योंकि शासक और दास दोनों एक साथ रोए। न ही उन्होंने केवल थोड़े समय के लिए पश्चाताप किया – क्योंकि पूरे तीन दिनों तक, पुरुषों और महिलाओं, शिशुओं और बुज़ुर्गों ने अपने पाप स्वीकार करना बंद नहीं किया। उन्होंने निर्णय को स्वीकार कर लिया, और जैसे मृत्यु के लिए तैयारी कर रहे हों, उन्होंने एक-दूसरे के लिए कड़वे शब्दों में विलाप किया। 'निनिवे से मेरा तात्पर्य एक व्यक्ति है, और इसके निवासियों की भीड़ से मैं आत्मा के हिस्सों और मन की क्रियाओं का प्रतिनिधित्व करता हूँ। जैसे उन्होंने सामूहिक रूप से पश्चाताप करना शुरू किया, वैसे ही हमें भी, अपनी पूरी ताकत से और एकजुट होकर, पश्चाताप करना चाहिए।'

५४. व्यवस्था में, परमेश्वर ने न केवल मूर्तियों, वेदियों और पूजा स्थलों को नष्ट करने की आज्ञा दी, बल्कि यह भी कि जले हुए पत्थरों और पेड़ों की राख, जो अशुद्ध है, शिविर से बाहर फेंक दी जाए। और आप जो पश्चाताप कर रहे हैं, यह ध्यान में रखें कि अपने भीतर से पाप के हर निशान को मिटाना आपका कर्तव्य है। यदि पाप की राख आपके भीतर रहेगी, तो अशुद्ध जानवर और कीड़े-मकोड़े आप की ओर आकर्षित होंगे। लेकिन यदि आप उन्हें अपने भीतर से बाहर निकाल देंगे, तो पाप के मच्छर या मक्खी भी आपको परेशान नहीं करेंगे। अपने मन को 'पाप के शवों' से पूरी तरह शुद्ध करें - और उनकी बदबू भी आपसे दूर हो जाएगी। ये 'पाप के शव' भावुक यादें हैं। यदि वे आपके भीतर बनी रहेंगी, तो वे आपके विचारों को धुंधला कर देंगी, और आपके विचार इधर-उधर भटकने लगेंगे, जो एक घने कोहरे की तरह आपकी आध्यात्मिक आँखों पर छा जाएँगे।

५५. आइए हम पश्चाताप द्वारा स्वयं को निचोड़ें, कहीं ऐसा न हो कि हम क्षमा की कृपा को खो दें, जैसे कि वह हमारा असली रंग हो। निचोड़ना उस चीज़ को पूरी तरह से त्यागना है जो घृणित है। क्योंकि इस तरह, हम पर प्रदान की गई कृपा (क्षमा का रंग), हमारे आत्माओं में परिष्कृत होकर, कभी भी फीकी नहीं पड़ेगी। आँसुओं से स्वयं को अच्छी तरह धोओ, जैसे रँगाई करने वाले ऊन को धोते हैं; स्वयं को नम्रता के हवाले कर दो; हर बात में स्वयं को संयमित रखो; क्योंकि इस प्रकार स्वयं को शुद्ध करके, तुम अनुग्रह प्राप्त करने के लिए पहले से ही तैयार होकर परमेश्वर के पास जाओगे।

५६. पश्चाताप करने वालों में से कुछ फिर से पाप में लौट जाते हैं, क्योंकि वे अपने भीतर छिपे साँप से अनजान थे; और भले ही वे इसके प्रति सचेत थे, उन्होंने इसे अपने भीतर से पूरी तरह से बाहर नहीं निकाला, बल्कि इसकी छवि के निशान को भीतर रहने दिया; और यह जल्द ही, जैसे गर्भ में गर्भधारण हो, अपनी दुष्टता की पूरी छवि को

पुनर्स्थापति कर देता है। जब आप कसिी ऐसे पश्चातापी को देखते हैं जो फरि से पाप करता है, तो समझ जाइए कि वह मन से नहीं बदला है; क्योंकि उसने अपने भीतर सभी पापी प्रवृत्तियों को छोड़ दिया है। हालाँकि, सच्ची पश्चाताप करने वाले का चिह्न अनुशासन और तपस्या का जीवन, अहंकार और घमंड को त्यागना, और आँखें तथा मन हमेशा प्रिय यीशु मसीह पर स्थिर रखना है, इस इच्छा के साथ कि मसीह की कृपा से, एक नया व्यक्ति बने।

५७. उस चीज़ से सावधान रहो जो सदाचार के विपरीत है। यदि तुम उपवास करते हो और फरि भी मूर्खता से हँसते हो, तो तुम आसानी से फँस जाओगे। यदि तुम प्रार्थना में रोते हो और फरि भी संगति में सांसारिक ढंग से व्यवहार करते हो, तो तुम जल्द ही जाल में फँस जाओगे। यदि, पवित्र जीवन जीते हुए, तुम लापरवाह हो, तो तुम गिरने में देर नहीं लगाओगे। पश्चाताप हृदय से होना चाहिए। पश्चाताप करने वाला व्यक्ति सुसंगत रूप से एक जैसा ही रहना चाहिए, अर्थात्, हमेशा वही बनना चाहिए जो वह पहले बनने का इरादा रखता था। यदि कोई कसिी भी मामले में कम पड़ता है, तो यह पहले से ही अपूर्ण पश्चाताप का संकेत है। यदि वे बदलते हैं, तो यह दर्शाता है कि परमेश्वर के अनुसार जीवन के लिए एक ठोस नींव उनके हृदय में नहीं रखी गई है। ऐसा व्यक्ति सिखाए जा रहे बच्चे की तरह पश्चाताप करता है, और अपनी इच्छा से नहीं बल्कि पीटे जाने के कारण मजबूरी में रोता है। सांसारिक कानून भय के माध्यम से व्यवहार को सुधारते हैं, लेकिन हृदय की प्रवृत्ति को नहीं बदलते। – इसी तरह, कुछ लोग कसिी छिपे हुए उद्देश्य से पश्चाताप करते हैं, जिसका उन्हें शायद ही एहसास होता है – समय-समय पर पाप में लिप्त होने के लिए।

५८. नबियों में से एक ने कहा: '*प्रभु की सभा में "आँसुओं" के साथ* बदनामी न हो' (मीका २:५-६)। इससे पैगंबर पश्चाताप को अस्वीकार नहीं करते, न ही वे प्रभु के सामने एक विनम्र हृदय के इकरार को बदनामी कहते हैं; बल्कि वे कहते हैं कि यदि आँसू पाखंड से और बुरे इरादे से बहाए जाएँ, तो ऐसा पश्चाताप अस्थिर होता है। और वह यह भी कहते हैं: '*अपने वस्त्र नहीं, अपने हृदय फाड़ो*' (योएल 2:13)। क्योंकि वह नहीं चाहते कि हम अपने पश्चाताप का घमंड करें, बल्कि सचमुच पश्चाताप करें। और दाऊद कहते हैं: '*मैं अपने आँसुओं से अपना बिछौना भीग करूँगा*' (भजन संहिता 6:7)। मैं चर्च में लोगों के सामने केवल दिखावा करके और महिमा पाने के लिए, ताकि वे मुझे धर्मी समझें, आँसू नहीं बहाऊँगा, बल्कि अपने बिस्तर पर मैं हर रात आँसुओं से अपना बिस्तर धोऊँगा, ताकि मैं मसीह के साथ एक हो सकूँ, जो कहते हैं: 'जब तुम अपना दरवाज़ा बंद करके प्रार्थना करो, तो तुम्हारा पिता, जो *गुप्त में* होता है, *तुम्हें प्रतिफल देगा,* और वह तुम्हें *खुले तौर पर* निर्दोष साबित करेगा' (मत्ती 6:6)।

५९. कई लोग पाप-स्वीकार का व्यापार करते हैं, अक्सर खुद को उससे बेहतर दिखाते हैं जितने वे वास्तव में हैं, और इस तरह अपने असली स्वरूप को छिपाते हैं। अन्य लोग पश्चाताप को एक व्यवसाय बना लेते हैं, इसका उपयोग अपने लिए महिमा प्राप्त करने के लिए करते हैं। कुछ और लोग पश्चाताप को अहंकार का बहाना बना लेते हैं, और क्षमा प्राप्त करने के बजाय, वे दायित्व का एक नया ऋण ले लेते हैं। आप अभी तक अपने पिछले ऋण से मुक्त नहीं हुए हैं – और फरि भी आप एक नए ऋण में पड़ रहे हैं? आप अपना ऋण चुकाने आए हैं – और फरि भी आप खुद को एक नई बाध्यता में बाँध रहे हैं? क्या आप कर्ज से मुक्त होने का प्रयास कर रहे हैं, फरि भी अपने लिए दासता का एक नया रूप तैयार कर रहे हैं? – इन शब्दों का यही अर्थ है: '*उसकी प्रार्थना को पाप माना जाए*' (भजन संहिता 108:7)। और ऐसा व्यक्ति पाप में लौटने से कैसे बच सकता है? वे एक बार फरि अपनी वासनाओं के आगे झुकने से कैसे बच सकते हैं? क्या साँप उसे चैन से रहने देगा? क्या रेंगने वाले जीव उसे सताना बंद कर देंगे? – हाय! ऐसे व्यक्ति के लिए मसीह ने जो कहा वह पूरा होगा: '*सात और, उससे भी अधिक दुष्ट आत्माएँ* उसमें वास करेंगी (लूका 11:26)।

3. प्रभु को प्रसन्न करने के लिए स्वयं को समर्पित करने वालों के जीवन की एक सामान्य रूपरेखा

अध्याय 110 से एक संक्षिप्त अंश। यद्यपि यह पाठ संन्यासियों को संबोधित है, यह सामान्यतः सभी पर लागू होता है।

1. सभी जिन्होंने स्वयं को परमेश्वर को अर्पित किया है और हमेशा '*अपने शरीरों को एक जीवित बलिदान, पवित्र और परमेश्वर को भाने वाला*' (रोमियों 12: 1), धर्मग्रंथ और पवित्र शास्त्र के बाकी हिस्सों के पवित्र वचनों के अनुसार, यह विश्वास करना चाहिए कि, हर अच्छे काम और हर सद्गुण के अभ्यास को समर्पित करके, वे मसीह की कृपा और परमेश्वर की शक्ति के द्वारा, आत्मा और शरीर में उत्पन्न होने वाले दुष्टता के भावों से पूर्ण मुक्ति और शुद्धता प्राप्त कर सकते हैं। जो हमारे लिए असंभव है, वह ईश्वर के लिए संभव है, जिन्होंने यह वादा किया है। इसके अलावा, प्रथम मानव के उल्लंघन के परिणामस्वरूप पापी वासनाएँ बाद में आत्मा और शरीर में प्रवेश कर गईं।

२. हम विश्वासियों ने पवित्र बपतिस्मा के द्वारा, अनुग्रह की प्रतिज्ञा प्राप्त की है, जो एक प्रतिभा (talent) के समान है, जिसे कई गुना बढ़ाया जाना है और इस प्रकार वायदा की गई विरासत को बढ़ाना है। पवित्र आत्मा, जो प्रेरितों को दिया गया और उनके माध्यम से परमेश्वर की एक सच्ची कलीसिया तक पहुँचाया गया, बपतिस्मा के क्षण से ही हर उस व्यक्ति में वास करता है जो शुद्ध विश्वास के साथ बपतिस्मा ग्रहण करता है –

और प्रत्येक व्यक्ति को यह *'प्रतिभा'* गुणन, संवर्धन और विकास के लिए प्राप्त होती है, जैसा कि सुसमाचार में कहा गया है।

3. जैसे इस संसार में जन्म लेने वाला कोई बालक, प्रकृति के नियम के अनुसार, पूर्ण वयस्कता तक पहुँचने तक, सदैव शिशु अवस्था में नहीं रहता: वैसे ही, जल और आत्मा से ऊपर से उत्पन्न हुआ कोई व्यक्ति भी आध्यात्मिक शिशु अवस्था में नहीं रहना चाहिए, बल्कि तपस्या के प्रयास, परिश्रम और बहुत धैर्य में निरंतर बने रहने के द्वारा, आध्यात्मिक विरोधी के विरुद्ध संघर्ष के माध्यम से, फलने-फूलने और आध्यात्मिक परिपक्वता की पूर्णता तक बढ़ने के लिए बाध्य है – या *'मसीह की पूर्णता के माप तक'*, जैसा कि प्रेरित सिखाते हैं (इफिसियों 4:13)।

४. परन्तु शारीरिक जन्म में, शिशु, प्रकृति के आवश्यक नियम के द्वारा, पुरुषत्व को प्राप्त करता है: क्योंकि परमेश्वर की व्यवस्था ने यह विधान किया है कि शारीरिक परिपक्वता अपनी इच्छा से नहीं, बल्कि प्रकृति के क्रम के अनुसार प्राप्त की जाए; जबकि ऊपर से आध्यात्मिक जन्म में, परमेश्वर ने एक अलग व्यवस्था स्थापित की है— अर्थात्, आध्यात्मिक विकास के मामले में, उन्होंने मनुष्य की स्वतंत्र इच्छा को (इस लक्ष्य की ओर) दृढ़ धैर्य के साथ किए गए परिश्रम, प्रयास और कठिन यात्रा को सौंपा है। प्रभु कहते हैं, *'संकीर्ण द्वार से प्रवेश करने का यत्न करो'* (लूका 13:24); और फिर: परिश्रम करो, क्योंकि *'जो स्वर्ग के राज्य को अपनी पूरी शक्ति से खोजते हैं, वे उसे छीन लेते हैं'* (मत्ती 11:12); और फिर: *'अपने धीरज से तुम अपनी आत्माओं को बचाओगे'* (लूका 21:19)। इस प्रकार ईश्वर की कृपा ने सब कुछ व्यवस्थित किया है, ताकि प्रत्येक व्यक्ति अपनी प्रकृति और इच्छा के अनुसार श्रम और प्रयास द्वारा आध्यात्मिक विकास प्राप्त कर सके।

5. जिस हद तक कोई व्यक्ति स्वयं को शारीरिक और आध्यात्मिक प्रयासों में समर्पित करता है, और अच्छे कर्मों में आनंद लेता है, उसी हद तक उसे मन के नवीनीकरण के माध्यम से आध्यात्मिक विकास में पवित्र आत्मा की सहभागिता प्राप्त होती है, – केवल अनुग्रह से उद्धार (की शक्ति) प्राप्त करते हुए, जबकि विश्वास, प्रेम और स्वतंत्र इच्छा के प्रयासों के माध्यम से प्रगति और पूर्णता में आगे बढ़ते हैं, ताकि, अनुग्रह और धार्मिकता दोनों से, वे अनंत जीवन के वारिस बन सकें। कोई व्यक्ति अपनी प्रगति में पूरी तरह से ईश्वर की शक्ति और अनुग्रह से ही नहीं बढ़ता, अपने मानवीय सहयोग और प्रयास के बिना नहीं; और न ही यह पूरी तरह से अपनी ही शक्ति और सामर्थ्य से होता है, पवित्र आत्मा के सहयोग और मदद के बिना, कि हम ईश्वर की पूर्ण इच्छा और पवित्रता के पूर्ण माप को प्राप्त कर सकें। क्योंकि *'यदि यहोवा घर का निर्माण न करे, तो निर्माता व्यर्थ में पहरा देता है और यदि यहोवा नगर की रक्षा न करे, तो रखवाला व्यर्थ में परिश्रम करता है'* (भजन संहिता 126:1)।

6. परमेश्वर की वह सिद्ध इच्छा क्या है, जिसे प्राप्त करने के लिए प्रेरित सभी को प्रोत्साहित और प्रेरित करते हैं (रोमियों 12:2)? – यह परमेश्वर की आत्मा के वास द्वारा हृदय का शुद्धिकरण और पवित्रिकरण है, जो निस्संदेह उस आत्मा में होता है जो विश्वास और प्रेम के साथ, स्वयं को पूरी तरह से परमेश्वर के हवाले कर देती है। प्रभु ने कहा: *'धन्य हैं शुद्ध हृदय वाले, क्योंकि वे परमेश्वर को देखेंगे'* (मत्ती 5:7); जो लोग ऐसी धन्यता प्राप्त करना चाहते हैं, उनसे वह पाप से पूर्ण शुद्धता की मांग करते हैं, अर्थात् दुष्टता के भावों से दृढ़ता से मुक्ति और अपने भीतर परम सद्गुण की पूर्ण स्थापना। नबी भी इस ओर इशारा करते हैं, जब उन्होंने प्रार्थना में कहा: *'हे परमेश्वर, मुझ में एक निष्कलंक हृदय रच दे, और मुझ में एक नया और सीधा आत्मा नया कर दे'* (भजन संहिता 50:12); और फिर, जब उन्होंने पूछा: *'प्रभु के पर्वत पर कौन चढ़ेगा, या उसकी पवित्र जगह पर कौन खड़ा होगा?'*, तो उन्होंने उत्तर दिया: *'जिसके हाथों में निर्दोषता हो और जो हृदय से शुद्ध हो'* (भजन संहिता 23:3-4)। इसके द्वारा आत्मा ने यह दिखाया कि हमें अपने ही प्रयासों से, कर्म, वचन और विचार में की गई पाप से स्वयं को पूरी तरह से अलग कर लेना चाहिए, आत्मा की पूर्ण पवित्रता के लिए प्रयासरत रहना चाहिए, और पवित्र आत्मा की कृपा से उसे प्राप्त करने की आशा रखनी चाहिए। इस प्रकार प्रेरित, उन आत्माओं का वर्णन करते हुए जो देहिक विवाह और सांसारिक बंधनों से अलग होना चाहती हैं और कुँवारी अवस्था में रहना चाहती हैं, कहते हैं: *'जो कुँवारी है वह प्रभु के कामों की चिन्ता करती है, कि वह प्रभु को कैसे प्रसन्न करे, ताकि वह पवित्र हो*—केवल *'शरीर से'* ही नहीं बल्कि *'आत्मा से'* भी (1 कुरिन्थियों 7:34)। इस प्रकार वह सिखाते हैं कि आत्मा, जो मसीह की वधू है, और पवित्र स्वर्गीय राजा के साथ एक होने की इच्छा रखती है, उसे सक्रिय और मानसिक पाप से—अर्थात्, स्पष्ट पापों और गुप्त वासनाओं दोनों से—मुक्त होना चाहिए, जैसा कि संत यूहन्ना द थियोलोजियन कहते हैं: *'जो कोई भी उस में यह आशा रखता है, वह स्वयं को पवित्र करता है, जैसे वह पवित्र है'* (1 यूहन्ना 3:3)।

7. वह आत्मा जो सांसारिक संगत से अलग हो गई है और अमर वर के साथ एकता और संगति में रहने की इच्छा रखती है, उसे न केवल स्पष्ट पापों—जैसे व्यभिचार, चोरी, लालच, बदनामी, व्यर्थ की बातें, ज़ोर से चिल्लाना, हँसी और लालच—से शुद्ध होना चाहिए— लेकिन आत्मा को और भी अधिक प्रबल आवेगों और गुप्त पापों से शुद्ध रखना

चाहिए, अर्थात्, कामवासना, व्यर्थता, मनुष्यों को प्रसन्न करने की इच्छा, पाखंड, अधिकार के प्रति प्रेम, चापलूसी, द्वेष, घृणा, अविश्वास, ईर्ष्या, अहंकार, जलन, आत्म-संतुष्टि, आत्म-प्रेम, घमंड और इसी तरह के अदृश्य *'अधर्म के जुनून'* (रोमियों 1:26) से स्वयं को मुक्त रखना चाहिए। पवित्रशास्त्र आत्मा के छिपे हुए पापों को कर्म में प्रकट हुए पापों के समान मानता है; क्योंकि वे एक ही जड़ की संतान हैं। इस प्रकार भविष्यवक्ता कुछ लोगों को डाँटता है: *'तुम अपने हृदयों में अधर्म करते हो'* (भजन संहिता 57:3)। और वह अपने लिए प्रार्थना करता है: *'मुझे मेरे गुप्त पापों से शुद्ध कर'* (भजन संहिता 18:13)। इसलिए, जैसे हम बाहरी मनुष्य—अर्थात् देह को, परमेश्वर के मन्दिर के रूप में—प्रकट पापों से बचाने का प्रयास करते हैं, वैसे ही हमें भी उसी लगन और प्रयास से भीतरी मनुष्य—अर्थात् आत्मा—को हर दुष्ट विचार से बचाना चाहिए, जैसा कि कहा गया है: *'अपनी मनसा की पूरी चौकसी कर; क्योंकि जीवन के सोते उसी से निकलते हैं'* (नीतिवचन 4:23)।

८. हम हृदय की इस शुद्धि में तभी सफल होंगे जब हम हमेशा दुष्ट विचारों—जैसे कि व्यर्थता, घृणा, घमंड, चापलूसी, वासना, प्रतिद्विंद्विता, स्वार्थ और इसी तरह के अन्य विचारों—का विरोध और प्रतिरोध करेंगे— – अत्यधिक कठोरता से स्वयं की परीक्षा लेकर, और आत्मा के गुप्त जुनून के साथ किसी भी गठबंधन या सामंजस्य से अपने मन की रक्षा करके; और, इसके विपरीत, हर अच्छे प्रयास, श्रम और कार्य में अपनी पूरी ताकत लगाकर, ताकि हमारे शत्रु के मार्ग में बाधाएँ डाल सकें। क्योंकि यदि हम इस प्रकार कार्य करते हैं, तो प्रभु, हमारे आध्यात्मिक प्रयत्न को देखकर, मानवजाति के प्रति अपने प्रेम से और अपने आत्मा की शक्ति से, निश्चय ही हमारे भीतर छिपे हुए जुनूनों से एक महान उपचार लाएंगे, और हमारे मानसिक शत्रुओं से बदला लेंगे।

९. हम संत पौलुस से सीखेंगे कि हमें किस आध्यात्मिक ऊँचाई की आकांक्षा करनी चाहिए। वे कहते हैं: हमारा पूरा उद्देश्य है *'कि हम हर व्यक्ति को मसीह में सिद्ध प्रस्तुत करें'* (कुलु. १:२८)। और जहाँ तक इस पूर्णता का प्रश्न है कि यह किसमें निहित है, उन्होंने इसे एफिसियों को अपने प्रार्थनापूर्ण आशीर्वाद में बताया, कहते हुए: 'ईश्वर आपको यह अनुग्रह दे – *"कि आप अपने आंतरिक मनुष्य में उसके आत्मा के द्वारा सामर्थ्य से बलवान हों; कि मसीह विश्वास के द्वारा आपके हृदयों में वास करें; कि आप प्रेम में जड़ें जमाकर और आधार प्राप्त करें, ताकि आप..."'* आदि (इफिसियों 3:16-18)। इन सबका मुकुट प्रेम है; उन्होंने इसे एक अन्य पत्र में और भी प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत किया, जहाँ, परमेश्वर के विभिन्न उपहारों और मनुष्य की आत्म-बलिदान की सूची देते हुए, उन्होंने प्रत्येक के साथ यह जोड़ा कि ये सभी और इसी प्रकार की अन्य बातें प्रेम के बिना कुछ भी नहीं हैं। फिर वह प्रेम को सभी वासनाओं के भक्षक और विनाशक के रूप में वर्णित करता है (1 कुरिन्थियों 13:1-8)। यह पूर्णता का शिखर है। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि जो लोग संत पौलुस द्वारा सूचीबद्ध उपहारों के योग्य तो माने गए हैं, लेकिन सबसे पूर्ण और प्रभावी आध्यात्मिक प्रेम की शक्ति द्वारा (वासनाओं से) अभी तक मुक्त नहीं हुए हैं, वे अभी भी खतरे में, संघर्ष में और भय में हैं, भले ही उनके पास पहले से ही आध्यात्मिक उपहार हैं।

10. प्रेरित ने यह उन लोगों के लिए प्रदर्शित किया जो ईसाई पूर्णता की ओर विश्वासपूर्वक बढ़ना चाहते हैं, ताकि कोई भी जिसे कोई वरदान दिया गया है, यह न सोचे कि उसने पहले ही पूर्णता प्राप्त कर ली है, भले ही अनुग्रह अभी पूरी तरह से कार्य नहीं कर रहा हो, और ताकि, यह विश्वास करके कि अब उनकी कोई आवश्यकता नहीं है, उन्होंने स्वयं को धोखा दिया हो, और, केवल तुच्छ उपहारों से संतुष्ट होकर, पूर्णता के उचित लक्ष्य तक पहुँचने में विफल न हो जाएँ। पूर्णता के इस लक्ष्य को प्रस्तुत करते हुए, प्रेरित यह सिखाते हैं कि हर कोई, प्रेम की इतनी बड़ी संपदा के सामने स्वयं को दीन समझते हुए, अच्छे कार्यों में अथक और निरंतर प्रयास करे, और आध्यात्मिक दौड़ तब तक दौड़े जब तक कि वह लक्ष्य तक न पहुँच जाए, जैसा कि कहा गया है: *'इस प्रकार दौड़ो कि तुम जीतो'* (1 कुरिन्थियों 9:24)।

11. मैंने तपस्या के उद्देश्य पर इतनी विस्तार से चर्चा इसलिए की है, ताकि जो लोग इसे अपनाना चाहते हैं, उनके मन में हमारी आशा क्या है और हमारे सामने कौन सा मार्ग है, इस बात की एक दृढ़ समझ स्थापित हो सके; और ताकि हर पुरुष और महिला ने जो स्वयं को ईश्वर को समर्पित कर दिया है, इस समझ के मार्गदर्शन में और यह लगातार ध्यान में रखते हुए कि हमें कहाँ बुलाया गया है और हमें कौन से मानक को प्राप्त करना है, हर संभव तरीके से, अपनी पूरी ताकत और अत्यंत सावधानी से, वे हमेशा उत्साहपूर्वक स्वयं को और इस दुनिया में जो कुछ भी उनके पास है, उसे अच्छे कार्यों के लिए समर्पित करें, लेकिन यह आत्म-धर्मपरायणता में न पड़ें कि हम कुछ हैं, बल्कि यह पहचानते हुए कि हम वास्तव में हमेशा कुछ भी नहीं हैं, हमारी बुलाहट के पूर्ण माप की उत्कृष्टता और मसीह के प्रेम की अथाह संपत्ति की तुलना में। *'इसलिये हम धीरज से उस दौड़ को दौड़ें जो हमारे सामने रखी गई है, और यीशु पर दृष्टि रखें, जो हमारे विश्वास का आरंभकर्ता और पूर्ण करने वाला है'* (इब्रानियों 12:1), – *'जो पीछे है उसे भूलकर, जो आगे है उसकी ओर बढ़ते हुए'* (फिलिप्पियों 3:14)।

12. तो फिर, हे भाइयो, हमें एक दूसरे के प्रति कैसे जीना और आचरण करना चाहिए? किन परिश्रमों, कठिनाइयों और अभ्यासों द्वारा सत्य के प्रेमी उपरोक्त लक्ष्य को प्राप्त कर सकते हैं? जो इस लक्ष्य के लिए प्रयासरत है, उसे संसार और सांसारिक सुखों से अलग होकर अपनी आत्मा को भाईचारे के लिए समर्पित कर देना चाहिए। उद्धारकर्ता ने इसी प्रकार आज्ञा दी जब उन्होंने यह सूची देते हुए कि उनके पदचिन्हों पर चलने की इच्छा रखने वाले को किन चीज़ों को त्यागना चाहिए, *यह* जोड़कर कहा: *'अपना प्राण भी'* (लूका 14:26)। क्योंकि अपनी आत्मा को त्याग देने, या उससे परित्याग करने का क्या अर्थ है? – स्वयं को निशिर्ता और पूर्ण रूप से भ्रातृत्व को समर्पित करना, किसी भी प्रकार से अपनी इच्छा को पूरा न करना, और दृढ़ निश्चय के साथ अपने पहनावे के कपड़ों के अलावा अपने नियंत्रण में कुछ भी न रखना, ताकि किसी भी प्रकार की चिंता के बिना, कोई हमेशा केवल वही कर सके जो आज्ञा दी जाती है, आनंदपूर्वक। जिसने अपनी आत्मा का त्याग कर दिया है, उसे अपने सभी भाइयों, और विशेष रूप से एबॉट्स (मठाध्यक्षों) को स्वामी और मालिक के रूप में सम्मानित करना चाहिए; और सभी *'विवेक'* के साथ उसे उनकी सेवा करनी चाहिए, *'सिर्फ मनुष्यों को खुश करने के लिए काम नहीं करते हुए, बल्कि मसीह के सेवकों के रूप में'* (इफिसियों 6:6)। प्रभु के आत्मसमर्पण के बाद, उसे आज्ञाकारिता के इस संकीर्ण और तंग मार्ग पर चलना चाहिए, और उसे मसीह के इस अच्छे जुए को स्वेच्छा से स्वीकार करना चाहिए, इस पर संदेह किए बिना कि यह उसके लिए महान उद्धार तैयार करता है।

१३. भाइयों को अपने बीच में सरलता, पवित्रता, एकमत, शांति और हार्दिक निष्ठा में रहना चाहिए। कोई भी अपने आप को दूसरे से बड़ा न माने, न ही अपने आप को किसी से बेहतर या श्रेष्ठ समझे; इसके विपरीत, हर कोई, मसीह के एक शिष्य के रूप में, अपने आप को सभी लोगों में सबसे छोटा माने; ताकि प्रेम, सरलता, ईर्ष्या और घमंड की अनुपस्थिति, और परमेश्वर के भय में एक-दूसरे के प्रति पारस्परिक आज्ञाकारिता के द्वारा, भाईचारे के भीतर शांति का बंधन बना रहे, जैसे कि यह मसीह यीशु में एक शरीर और एक आत्मा हो।

14. इन नियमों का पालन करने का संकल्प लेते हुए, सबसे पहले, हर कोई अपने हृदय में ईश्वर के प्रति पवित्र प्रेम और भय को पालने के लिए अपनी पूरी कोशिश करे; वे निरंतर ईश्वर से इनकी याचना करें, और प्रभु तथा स्वर्गीय प्रेम के बारंबार—या यूँ कहें कि, अनवरत—स्मरण द्वारा, अनुग्रह की सहायता से, दिन-प्रतिदिन इन्हें अपने भीतर पोषित करने का हर संभव प्रयास करें।

१५. जहाँ तक अपने पड़ोसी से प्रेम करने की बात है (इसके बाद), हम तब आसानी से सफल हो सकते हैं। पहले वाले को पहले स्थान पर रखें; फिर दूसरा, पहले वाले के बाद, समय आने पर अपनी जगह पर आ जाएगा। लेकिन यदि कोई पहले महान आज्ञा—ईश्वर के प्रति प्रेम—की उपेक्षा करता है, जो ईश्वर की सहायता से, एक आंतरिक प्रवृत्ति, एक स्पष्ट विवेक और ईश्वर के बारे में सही विचारों के माध्यम से हमारे भीतर बनता है, – और दूसरे पर ध्यान देने का संकल्प करता है, जो उससे मिलता-जुलता है, तो इससे केवल अपने भाइयों के प्रति बाहरी सेवा ही निकलेगी, और वह इस सेवा को कभी भी शुद्ध और सच्चे रूप से पूरा नहीं कर पाएगा; क्योंकि दुर्भावना की चालाकियाँ, यह पाकर कि उसका मन ईश्वर की स्मृति, उनके प्रति प्रेम और उनकी लालसा से बहुत दूर है, या तो उसके भाईयों की सेवा के संबंध में उसकी आत्मा में बड़बड़ाहट और शिकायतें जगाएंगी, और इसे कठिन तथा बोझिल दिखाएंगी, या फिर उसके अहंकार को बढ़ाएंगी और उसे सम्माननीय तथा महान होने का सपना देखने के लिए मजबूर करेंगी, तथा सभी के लाभ के लिए अपने कई कार्यों के विचार से उसे धोखा देंगी। जब कोई व्यक्ति ईश्वर की स्मृति और ईश्वर के भय से दूर होता है, तो वह अनिवार्य रूप से महिमा की तलाश करता है और जिनकी वह सेवा करता है, उनसे प्रशंसा की लालसा करता है। लेकिन जब किसी का मन और स्वभाव लगातार ईश्वर के विचारों और उनके प्रति लालसा से भरा रहता है, तो ईश्वर के प्रेम के अनुरूप, एक व्यक्ति—ईश्वर की महिमा के लिए सभी कार्य करते हुए और अपने भाइयों और बहनों के प्रति शुद्ध और ईश्वर-प्रसन्न प्रेम के कार्यों से स्वयं को समृद्ध करते हुए—अपने श्रम में पूर्ण सफलता प्राप्त करता है, जिसे ईश्वर से अनंत पुरस्कार से विभूषित किया जाना है।

१६. हम जो भी सद्गुण का अभ्यास करें, वह परमेश्वर की महिमा के लिए किया जाए, और उसे अपनी महिमा के लिए न किया जाए। आज्ञाओं का पालन केवल तभी पवित्र और शुद्ध होता है जब इसे प्रभु की स्मृति, परमेश्वर के भय और परमेश्वर के प्रति प्रेम से किया जाता है। ऐसे मनोभाव से, शत्रु—जो हमेशा आज्ञाओं की पूर्ति को कलंकित करने का प्रयास करता रहता है—हमसे दूर भाग जाता है, और आज्ञाओं में जो कुछ भी आज्ञा दी गई है, उसे पूरा करना हमारे लिए आसान और सरल हो जाता है; क्योंकि हमारे भीतर परमेश्वर का प्रेम आज्ञाओं को आसान बना देता है और उन्हें पूरा करने में आने वाली हर कठिनाई को दूर कर देता है। शत्रु विभिन्न सांसारिक प्रलोभनों द्वारा हर संभव तरीके से हमारे मन को ईश्वर की स्मृति, प्रभु के भय और प्रेम से भटकाने का प्रयास करता है, ताकि वह फिर, किसी बहाने से, हमारे हृदयों को सच्चे भले—अर्थात् ईश्वर के प्रेम—से हटाकर काल्पनिक भलों की ओर

मोड़ सके। और कोई भी व्यक्ति जो भी अच्छा काम करता है, दुष्ट उसे कलंकित और अपवित्र करने का प्रयास करता है, आज्ञा के पालन में अपनी व्यर्थता, या संदेह, या शिकायत, या इस तरह की कोई भी चीज़ के बीज मिलाकर, ताकि किया गया अच्छा काम सच्चा अच्छा न रहे - जो केवल तभी होता है जब इसे ईश्वर के लिए विनम्रता और गंभीरता से किया जाता है। इसीलिए सभी को महान ज्ञान और विवेक की आवश्यकता है, ताकि मिन शत्रु की युक्तियों और चालाकियों को पहचान सके और उनके कर्मों से सभी पापों को दूर कर सके। क्योंकि एक अच्छा कर्म भी लापरवाही या असावधानी से, या अशुद्ध इरादे से किया जा सकता है, ऐसी स्थिति में यह ईश्वर को अप्रसन्न करने वाला साबित होगा; या यह ईश्वर की इच्छा के अनुसार, सावधानी से, संयम के साथ, ईश्वर के लिए किया जा सकता है – ताकि यह ईश्वर को प्रसन्न करने वाला साबित हो।

१७. जिन्होंने स्वयं को पूरी तरह से ईश्वर को समर्पित कर दिया है, उन्हें अपनी पूरी क्षमता से सभी आज्ञाओं का पालन करना चाहिए, क्योंकि सभी के लिए यह स्पष्ट है कि धर्मपरायणता का केवल एक ही लक्ष्य है, – अर्थात्, कि सभी सद्गुणों के प्रति विश्वास और उत्साह के द्वारा हम पवित्र आत्मा द्वारा पूर्णता के योग्य समझे जाएँ, और संवेदनाओं से पूर्ण मुक्ति प्राप्त करें, यानी पवित्र आत्मा द्वारा विश्वासियों और धर्मात्माओं की आत्माओं में किया गया हृदय का शुद्धिकरण। इसलिए, प्रत्येक व्यक्ति को उतनी ही अधिक भलाई के लिए स्वयं को समर्पित करना चाहिए जितना कि ईश्वर के प्रति उसका प्रेम है। – और अंत में, यदि कोई अविराम प्रार्थना करना चाहता है, तो उसे निरंतर प्रार्थना में स्थित रहना चाहिए। (यह, बेशक, तपस्वी संन्यासियों के लिए है।)

18. इस प्रकार, यदि भाईचारे का कोई सदस्य स्वर्गीय आशीर्वादों के प्रेम से प्रार्थना के तपस्वी अभ्यास को अपनाना चाहता है, तो उसे ऐसा करने की अनुमति दी जानी चाहिए – और वह मनुष्यों और परमेश्वर दोनों के सामने प्रशंसा का सबसे योग्य है। भाई लोग, एकमत होकर और आनन्दपूर्वक, ऐसे व्यक्ति को प्रार्थना में बने रहने की अनुमति दें, ताकि वे स्वयं अपने भाई को यह अनुमति देने और उसकी दयालु सहायता करने के लिए परमेश्वर से पुरस्कार प्राप्त कर सकें; बशर्ते कि जो यह कार्य करता है, वह एकमात्र प्रभु के साथ रहने की एक अदम्य लालसा से प्रेरित होकर ऐसा करे – और व्यवहार में प्रभु की ओर निरंतर प्रयास के इस प्रयास में दृढ़ बना रहे, सभी अनावश्यक विचारों का विरोध करते हुए, ताकि इस प्रकार उसकी मेहनत का फल सभी के निर्माण के लिए प्रतिदिन प्रकट हो सके। जिसके हृदय में प्रभु के प्रति प्रेम है, भले ही वह प्रार्थना के दौरान अभी दिव्य प्रेम की तीव्र और प्रज्वलित अनुभूति न करता हो, परन्तु यदि वह स्वयं को प्रयत्नशील बनाता है, यत्न करता है और अपनी इच्छा को इस श्रम के लिए विवश करता है, स्वर्गीय प्रेम के प्रति निस्संकोच समर्पण कर देता है, और सच्ची आध्यात्मिक प्रार्थना प्राप्त करने का प्रयत्न करता है; अन्य भाइयों को प्रसन्नतापूर्वक उसे प्रार्थना में बने रहने देना चाहिए, या यूँ कहें कि वे सहायक के रूप में उसकी सहायता करें, अपने भाई की पूर्णता की ओर प्रगति को अपनी ही उपलब्धि मानें; वे प्रतिद्वंद्विता या ईर्ष्या से उसे इस मार्ग से भटकाएँ नहीं; वे इस सुंदर, उत्साही प्रयास की शुरुआत में बाधा न डालें; और वे ईश्वर की ओर उसके अच्छे प्रयास में बाधा न डालें। और ईश्वर, उनके पारस्परिक प्रेम के उत्साह को देखकर, सभी की प्रार्थनाओं को स्वीकार करेंगे, और एक-दूसरे के प्रति उनके धार्मिक और सद्भावनापूर्ण स्वभाव के लिए प्रत्येक को पुरस्कृत करेंगे।

19. जिसने प्रार्थना करने वालों के क्रम में प्रवेश किया है, जिसने अपने ऊपर सबसे बड़ा कार्य लिया है, उसे सबसे व्यापक प्रयास भी करना चाहिए; क्योंकि प्रार्थना में निरंतर बने रहने में कई बाधाएँ हैं: नींद, निराशा, शरीर की थकान, विचारों का भटकना, अधीरता, और सुस्ती; और, इन सबके अतिरिक्त, दुष्ट आत्माओं का विद्रोह, जो आत्मा के विरुद्ध युद्ध छेड़ती हैं—जो स्वभाव से ही निरंतर परमेश्वर की खोज में रहती है—उसका विरोध करती हैं और हर तरह से उसे परमेश्वर के निकट आने से रोकती हैं। इसलिए, मनुष्य को अपने भीतर हो रहे संघर्ष, धैर्य और विलाप में सदैव सतर्क और सचेत रहना चाहिए, तथा अपनी पूरी शक्ति से प्रार्थना के लिए हानिकारक किसी भी चीज़ को रोकने का प्रयास करना चाहिए।

२०. यदि हमारी प्रार्थना नम्रता, प्रेम, सरलता और दया से सुसज्जित नहीं है, तो ऐसी प्रार्थना का हमारे लिए कोई लाभ नहीं होगा; या यूँ कहें कि, यह प्रार्थना का केवल एक दिखावा होगा। यह, हालाँकि, केवल प्रार्थना पर ही नहीं, बल्कि सामान्य रूप से हर आध्यात्मिक प्रयास पर लागू होता है – चाहे वह ब्रह्मचर्य, उपवास, जागरण, भजन-कीर्तन, सेवा, या सदाचार के लिए किया गया कोई अन्य श्रम हो। यदि, इनका पालन करते हुए, हम अपने भीतर प्रेम, शांति, आनंद, सौम्यता, विनम्रता, सरलता, ईमानदारी, धैर्य, ईर्ष्या की कमी और इसी तरह के फलों को नहीं पाते हैं, तो ऐसे सभी प्रयास और कर्म व्यर्थ हैं। क्योंकि इन्हीं फलों के लिए इन्हें अपनाया जाता है; अतः जब ये फल हममें नहीं मिलते, तो हमारे सभी कर्म और सभी करतब व्यर्थ हो जाते हैं। जिनके पास ये फल नहीं हैं, वे न्याय के दिन स्वयं को मूर्ख कुंवारियों की श्रेणी में पाएंगे।

21. जो लोग अभी प्रार्थना के कार्य के लिए स्वयं को पूरी तरह से समर्पित करने में सक्षम नहीं हैं, उन्हें विश्वास और ईश्वर के भय के साथ, भाइयों की सेवा के लिए, या अपने कर्तव्यों की पूर्ति के लिए स्वयं को तैयार करना चाहिए; और इस श्रम को हाथ में लेने के बाद, इसे इस प्रकार पूरा करना चाहिए जैसे वे प्रभु की आज्ञा का पालन कर रहे हों और एक आध्यात्मिक कार्य कर रहे हों; इसे परमेश्वर के कार्य के रूप में ध्यान से करें, और प्रभु के सेवकों के रूप में आनंद से सेवा करें, और किसी भी तरह से शत्रु की दुष्टता को अपने अच्छे काम को मानवीय अनुमोदन, या शिकायत, या अहंकार, या सुस्ती, या लापरवाही की खोज के माध्यम से कलंकित न करने दें; परन्तु, इसके विपरीत, हर तरह से परमेश्वर के प्रति भय और प्रेम के साथ अपनी उत्कृष्ट आज्ञाकारिता को पवित्र करने का यत्न करो, ताकि यह उसकी दृष्टि में प्रिय हो।

२२. इसलिए, चूँकि एक ही प्रकार का जीवन जीने वाले सभी भाइयों के सामने उपरोक्त एक ही लक्ष्य है, तो प्रत्येक व्यक्ति अपनी सामर्थ्य के अनुसार प्रयत्न करे, और उसे ईश्वर पर भरोसा रखना चाहिए कि उचित परिश्रम और सदाचार के अभ्यास द्वारा, वह ईसाई पुत्रत्व के पूर्ण स्तर को प्राप्त कर लेगा। भाईचारे के भीतर सादगी, ईमानदारी, पारस्परिक प्रेम, आनंद और सभी बातों में नम्रता हमेशा एक नींव के रूप में अटूट बनी रहनी चाहिए, कहीं ऐसा न हो कि घमंडी होकर, एक-दूसरे को नीचा समझकर, या शिकायतों में पड़कर हम अपनी मेहनत व्यर्थ कर दें। और जो निरंतर प्रार्थना में लगा रहता है, वह अपने आपको उस व्यक्ति से श्रेष्ठ न समझे जो अभी ऐसी निरंतर प्रार्थना करने में सक्षम नहीं है, ताकि उसका कार्य परमेश्वर और मनुष्यों के सामने फल-फूल सके। और जिसने स्वयं को सेवा कार्य, या किसी अन्य कर्तव्य की पूर्ति के लिए समर्पित किया है, वह द्वेष के प्रभाव में आकर बड़बड़ाए नहीं, और न ही प्रार्थना और उपवास में लगे रहने वालों की निंदा करे, ताकि वह भी परमेश्वर की कृपा प्राप्त कर सके, और उसका काम परमेश्वर को भाए। – एक दूसरे के अंग होने के नाते, हम एक दूसरे को सांत्वना देने के लिए बाध्य हैं। जैसे शरीर के अंग, एक ही आत्मा द्वारा शासित, बिना ईर्ष्या के एक दूसरे की सेवा करते हैं, वैसे ही हमें भी, एक दूसरे के अंग होकर, एक ही आत्मा द्वारा शासित और एक ही जीवित सत्य के वचन से पोषित होकर, प्रेम और सरलता, दया और आनंद के माध्यम से एक दूसरे को सांत्वना देते हुए अपना आचरण करना चाहिए। – जब आपसी सादगी की ऐसी भावना बनाए रखी जाती है, तो प्रार्थना में स्वयं को समर्पित करने वालों की प्रचुरता इस मामले में अपने कर्तव्य निभाने वालों की कमियों की पूर्ति करेगी, और इसके विपरीत, जो अपने कर्तव्यों का पालन करते हैं उनकी प्रचुरता प्रार्थना में लगे रहने वालों की कमियों की पूर्ति करेगी, *'ताकि समानता हो'*, जैसा कि प्रेरित कहते हैं (2 कुरिन्थियों 8:14)। काश कि भाइयों के बीच सरलता, प्रेम, नम्रता और ईर्ष्या का अभाव स्थापित हो जाता। तब, जिस हद तक कोई व्यक्ति विश्वास करता है, प्रेम करता है और परिश्रम करता है, और उसी अनुपात में प्रतिदिन प्रगति करता है, वह राज्य के योग्य समझा जाएगा। यही तो वास्तव में स्वर्गदूतों का जीवन है! यही बात है जिसका अर्थ है: *'पृथ्वी पर भी वैसा ही हो जैसा स्वर्ग में होता है'*, जब हम एक-दूसरे के साथ ईर्ष्या से रहित आत्मा में, सरलता, प्रेम, शांति और आनंद के साथ एक हो जाते हैं, अपने पड़ोसी की सफलता को अपनी ही बढ़त मानते हैं, और इसी तरह उनकी कमजोरियों, खामियों और दुखों को अपना ही नुकसान मानते हैं, जैसा कि कहा गया है: *'केवल अपने हित की ही न सोचो, बल्कि दूसरों के हित की भी सोचो'* (फिलि. 2:4)। इस प्रकार, एक-दूसरे के प्रति करुणा दिखाकर—और विशेष रूप से मज़बूत लोगों द्वारा कमज़ोरों के लिए, और स्वस्थ लोगों द्वारा दुर्बल लोगों के लिए—हम मसीह के विधान को पूरा करने में सक्षम होंगे, जैसा कि संत पौलुस ने निर्देश दिया (गला. 6:2)।

४. सद्गुणों और भावों पर

1. यह जानना आवश्यक है कि, चूँकि मनुष्य स्वभाव से द्वैत है—अर्थात्, शरीर और आत्मा से मिलकर बना है—उसमें दो प्रकार की इंद्रियाँ भी होती हैं। पाँच मानसिक इंद्रियाँ और पाँच शारीरिक इंद्रियाँ हैं। मानसिक इंद्रियों को ऋषियों ने ' ' (आत्मा की शक्तियाँ) कहा है, और वे इस प्रकार हैं: बुद्धि, विवेक, समझ, कल्पना और अनुभूति; जबकि शारीरिक इंद्रियाँ हैं: दृष्टि, घ्राण, श्रवण, स्वाद और स्पर्श। इनसे दो प्रकार के सद्गुण और दो प्रकार के दुर्गुण उत्पन्न होते हैं। और प्रत्येक व्यक्ति के लिए यह स्पष्ट रूप से जानना अत्यंत आवश्यक है कि आत्मा के सद्गुण क्या हैं, और शरीर के सद्गुण क्या हैं, साथ ही आत्मा के भाव क्या हैं और शरीर के भाव क्या हैं।

आत्मा के गुण

२. आत्मा के सद्गुणों के संबंध में, हमारा मानना है कि मूल रूप से चार प्रमुख सद्गुण हैं, अर्थात्: साहस, विवेक, संयम और न्याय। इनसे, आत्मा के निम्नलिखित सद्गुण उत्पन्न होते हैं: विश्वास, आशा, प्रेम, प्रार्थना, विनम्रता, नम्रता, उदारता, धैर्य, दयालुता, सहनशीलता, ईश्वर का ज्ञान, समत्व, सादगी, शांति, ईमानदारी, सत्यनिष्ठा,

स्वतंत्रता, निर्णय लेने से परहेज़, व्यर्थता, डींग, अहंकार, ईर्ष्या, धोखे और धन के प्रेम से घृणा, करुणा, दया, उदारता, सम्मान, श्रद्धा, भविष्य के अमर आशीर्वादों की लालसा, परमेश्वर के राज्य की इच्छा, और परमेश्वर की संतान के रूप में गोद लिए जाने की तड़प।

शारीरिक सद्गुण

३. जहाँ तक शारीरिक सद्गुणों का प्रश्न है—जिनके बारे में यह कहना अधिक सटीक है कि ईश्वर-निर्देशित अभ्यास के माध्यम से, वे सद्गुणों के उपकरणों में बदल जाते हैं, और, यदि सभी पाखंड और मनुष्यों को प्रसन्न करने की इच्छा से मुक्त हों, तो वे एक व्यक्ति को विनम्रता और निर्लिप्तता में उत्कृष्टता प्राप्त करने के लिए प्रेरित करते हैं—वे इस प्रकार हैं: ब्रह्मचर्य, उपवास, भूख, प्यास, जागरण, पूरी रात खड़े रहना, घुटने टेकना, लगातार स्नानागार जाने से परहेज़ करना, एक ही चोगा पहनकर संतुष्ट रहना, केवल सूखा भोजन खाना, देर से और केवल थोड़ी मात्रा में खाना, केवल पानी पीना, नंगे फर्श पर लेटना, गरीबी, अनुप्राप्ति, क्षीणता, वस्त्रों की उपेक्षा, निःस्वार्थता, एकांत, मौन, अपनी कोठरी तक सीमित रहना, मितव्ययिता, अल्प में संतोष, संक्षिप्तता, शारीरिक श्रम, हर प्रकार का दुख और हर शारीरिक पराक्रम। ये सभी बातें, जब शरीर स्वस्थ हो और कामवासनाओं से ग्रस्त हो, तब अत्यंत आवश्यक और लाभदायक होती हैं; लेकिन जब वह दुर्बल हो जाए और ईश्वर की कृपा से अपनी वासनाओं पर काबू पा ले, तब वे इतनी आवश्यक नहीं रह जातीं; क्योंकि सब कुछ पवित्र विनम्रता और कृतज्ञता से पूरा हो जाता है।

आत्मा के भाव

४. आत्मा के भाव हैं: विस्मृति, सुस्ती और अज्ञानता। आत्मा की आँख—अर्थात् मन—जब इन तीन भावों से मँडराती है, तो वह अन्य भावों के अधीन हो जाती है, जैसे: अधर्मीपन, अविश्वास—अर्थात् हर प्रकार का विधर्म, ईश्वरनिंदा, चिड़चिड़ापन, क्रोध, क्लेश, चिड़चिड़ा स्वभाव, मानवद्वेष, द्वेष, अपमान, निंदा, अनुचित दुख, भय, कायरता, कलह, ईर्ष्या, जलन, व्यर्थता, अहंकार, पाखंड, झूठ, अविश्वास, असावधानी, भेदभावहीनता, दूरदर्शिता की कमी, अतृप्ति, लालच, आलस्य, दिखावा, पक्षपात, सांसारिक चीजों के प्रति लगाव, निराशा, कायरता, कृतघ्नता, बड़बड़ाहट, घमंड, अहंकार, अधिकार का मोह, लोगों को खुश करने की आदत, चालाकी, निर्लज्जता, असंवेदनशीलता, चापलूसी, गुप्तता, उपहास, कपट, जुनून के कारण पाप के आगे झुकना, पापों पर निरंतर टिका रहना, भटकता मन, आत्म-प्रेम – सभी बुराइयों की जननी, धन का प्रेम – सभी दुराचार और जुनून की जड़, दुष्टता और चालाकी।

शारीरिक वासनाएँ

५. शारीरिक वासनाएँ हैं: अति-भक्षण, अत्यधिक लिप्तता, विलासिता, मद्यपान, चोरी-छिपे खाना, कामुकता के विभिन्न रूप, व्यभिचार, परस्त्रीगमन, कामुकता, अशुद्धि, अंतर्जातीय संबंध, बाल शोषण, पशु संभोग, दुष्ट इच्छाएं और सभी प्रकार के अस्वाभाविक और शर्मनाक जुनून, चोरी, पवित्रता का अपमान, डकैती, ईर्ष्या या अतार्किक क्रोध के दौरे में हत्या, सभी प्रकार के कामुक सुख, शरीर की इच्छाओं की संतुष्टि—विशेषकर जब शरीर स्वस्थ हो—जादू-टोना, भविष्यवाणी, जादू-टोना, भविष्य बताना, भविष्यवाणी करना, दिखावा, तुच्छता, आलस्य, आभूषणों का जुनून, चेहरे पर मलहम मलना, घिनौनी विलासिता, जुआ, सांसारिक सुखों के प्रति पक्षपातपूर्ण भक्ति, शरीर को समर्पित जीवन, जो मन को सुस्त कर देता है, उसे सांसारिक और पशुवत बना देता है, और किसी को भी ईश्वर और सद्गुणों के कार्यों की ओर अपनी दृष्टि उठाने की अनुमति नहीं देता। सभी बुराइयों की जड़, और, जैसा कि कुछ लोग कह सकते हैं, प्राथमिक कारण, सुख का प्रेम, महिमा का प्रेम और धन का प्रेम है, जिससे सभी बुराइयाँ उत्पन्न होती हैं।

6. फिर भी, एक व्यक्ति तब तक कोई पाप नहीं करता जब तक कि, जैसा कि बुद्धिमान तपस्वी मार्क कहते हैं, ये शक्तिशाली दैत्य—अर्थात्, भूल, आलस्य और अज्ञानता—पहले उस पर विजय प्राप्त न कर लें और हावी न हो जाएँ। ये, बदले में, इंद्रिय सुख और आराम के जीवन, और मानवीय महिमा और मनोरंजन के प्रति आसक्ति से उत्पन्न होते हैं। और इस सब का मूल कारण, और सबसे अनुपयुक्त जननी, स्व-प्रेम है, अर्थात्, शरीर के प्रति एक अतार्किक आसक्ति और भावुक भक्ति, एक बिखरा और विचलित मन, साथ ही तीखी जीभ से गाली-गलौज, भाषण और हँसी में हर तरह की छूट, जो बहुत बुराई और कई पतन की ओर ले जाती हैं।

7. इसके अलावा, यह जानना चाहिए कि महिमा का प्रेम, जब यह एक जुनून बन जाता है, तो यह अत्यधिक विविध होता है और कई रूप लेता है; और यह कि कई सुख ऐसे हैं जो आत्मा को बहका देते हैं, जब वह परमेश्वर के सामने होशियार नहीं होती, न ही परमेश्वर के भय और मसीह के प्रेम से भरपूर होती है, जबकि वह सद्गुणों के अभ्यास

में व्यस्त होती है। क्योंकहिर तरफ से हजारों सुख प्रकट होते हैं जो आत्मा की दृष्टकिो अपनी ओर आकर्षति करते हैं: शारीरकि सुंदरता, पैसा, वलिासतिा, प्रसद्धि, आलस्य, क्रोध, स्वामत्वि, अधकिार का प्रेम, और लालच; हमारे भ्रम के लिए, ये सुख हमें प्रस्तुत कएि जाते हैं; उनका रूप उज्ज्वल और आकर्षक होता है, जो ऐसी चीजों से मोहति होने वालों को अपनी ओर खींचने के लिए पर्याप्त है, और जनिके भीतर सद्गुण के लिए एक मजबूत प्रेम नहीं होता, बल्कि उन्हें यह कठनि लगता है। हर सांसारकि आसक्ति, कसिी भी भौतकि चीज़ की हर प्रवृत्ति, चाहे वह कतिनी भी तुच्छ क्यों न हो, उस व्यक्ति में आनंद और एक सुखद अनुभूति पैदा करती है जो उसकी ओर आकर्षति होता है—हालांकि यह अनुचति और अंततःहानकिारक है—और आत्मा की कामना करने की शक्ति को इतनी पूरी तरह से दास बना देती है कि जो व्यक्ति जुनून के आगे झुक गया है, जब उससे वह वस्तु छनि जाती है जसिे वह प्यार करता है, तो वह चड़िचड़िापन में डूब जाता है, दुख, क्रोध और द्वेष। और यदि इस आसक्ति के अतरिक्ति, कोई मामूली आदत भी कसिी व्यक्ति पर हावी हो जाए, तो, अहो! यह एक अतार्कक आसक्ति से मोहति व्यक्ति को, उसमें नहिति आनंद के कारण, पूरी तरह से उसके हवाले कर देती है।

८. कामवासना का सुख, जैसा कि ऊपर कहा गया है, अनेक प्रकार का होता है, और उसकी संतुष्टि न केवल व्यभचिार और अन्य कामुक सुखों में, बल्कि अन्य आसक्तियों में भी होती है। और ब्रह्मचर्य केवल व्यभचिार और कामुक सुखों से परहेज़ करने में ही नहीं, बल्कि अन्य आसक्तियों से भी मुक्त होने में नहिति है। इसलिए, लोभी, धन-प्रेमी और लालची व्यक्ति पवित्र नहीं होते। जैसे एक व्यक्ति शारीरकि सुंदरता से मोहति होता है, वैसे ही दूसरा धन से मोहति होता है। और बाद वाला तो और भी कम पवत्रि होता है; क्योंकि उसमें पहले वाले जैसी वह प्रवृत्ति नहीं होती, जो उसे प्रकृति की ही मांगों से प्रेरति करती है। क्योंकि, नष्पिक्ष रूप से कहें तो, वह सवार जसिे सबसे सही मायने में अकुशल कहा जाता है, वह वह नहीं है जो एक जद्दिी और उत्साही घोड़े को काबू नहीं कर सकता, बल्कि वह है जो एक शांत और आज्ञाकारी घोड़े को नहीं संभाल सकता। और इन सब से यह स्पष्ट है कि धन का जुनून बाकी सभी से बड़ा है और यह स्वाभावकि नहीं है; और इसकी ओर के आवेग हमारी प्रकृति में नहीं, बल्कि एक वकिृत इच्छा में नहिति हैं; इसीलिए जो कोई भी इससे वशीभूत हो जाता है, वह एक अक्षम्य पाप करता है। अतःहमें स्पष्ट रूप से यह समझना चाहिए कि सुख के प्रति प्रेम केवल व्यभचिार और शारीरकि आनंद तक ही सीमति नहीं है, बल्कि यह आत्मा की इच्छा और पक्षपात के माध्यम से हम जनि सभी चीजों से प्रेम करते हैं, उन सभी में मौजूद है।

९. जुनून को और भी स्पष्ट रूप से समझने के लिए, हमने नम्निलखिति जोड़ना आवश्यक समझा है। आत्मा तीन भागों में वभिाजति है: तर्कशील, क्रूर और कामनाशील। और तर्कशील शक्ति के पाप इस प्रकार हैं: अवश्विास, वधिर्म, असावधानी, ईश्वरनदिा, भेदभावहीनता, कृतघ्नता, और आत्मा की कामनाशील शक्ति से उत्पन्न पापों के प्रति सहमति। इन पापों के उपचार और नवािरण के उपाय हैं: ईश्वर में अटूट वश्विास, सत्य और अचूक सद्धिांत, आत्मा के वचनों का नरिंतर अध्ययन, शुद्ध प्रार्थना, और ईश्वर का अखंड धन्यवाद। क्रोध की शक्ति के पाप इस प्रकार हैं: क्रूरता, घृणा, करुणा की कमी, प्रतशिोधीपन, ईर्ष्या, हत्या और इसी प्रकार के नरिंतर वचिार। इन पापों के उपचार हैं परोपकार, प्रेम, नम्रता, भ्रातृत्व प्रेम, करुणा, धैर्य और दयालुता। कामवासना की शक्ति के पाप इस प्रकार हैं: अत्यधकि भोजन, खाने में अतशिय लप्तिता, मद्यपान, व्यभचिार, परस्त्रीगमन, अशुद्धि, कामुकता, लालच, और खोखली महमिा, सोने, धन और कामुक सुखों की लालसा। उपवास, संयम, आत्म-त्याग, लोभ-रहतिता, गरीबों पर पैसा खर्च करना, भवषि्य के आशीर्वादों के लिए प्रयास करना, परमेश्वर के राज्य की इच्छा, और परमेश्वर के बच्चों के रूप में गोद लिए जाने की लालसा इन पापों के उपचार और उन्हें ठीक करने का काम करती हैं।

10. अब मैं उन तीव्र वचिारों के बारे में बोलूँगा जनिके द्वारा प्रत्येक पाप कयिा जाता है। कुल मलिाकर आठ दोष हैं: अतभिक्षण, व्यभचिार, लोभ, क्रोध, शोक, नराशा, अहंकार और गर्व। इन सभी वचिारों का हमें परेशान करना या न करना हमारी शक्ति में नहीं है; लेकनि ये वचिार हमारे भीतर बने रहें या न रहें, और ये हमारी भावनाओं को जगाएँ या न जगाएँ, यह हमारी शक्ति में है। लेकनि प्रलोभन, *संगति, वासना, संघर्ष, सहमति*—जो व्यक्ति को कर्म की ओर खींचती है और उससे मलिती-जुलती *है—स्व-पहल,* और *बंधन में अंतर है। प्रलोभन* दुश्मन द्वारा दयिा गया एक सरल सुझाव है, उदाहरण के लिए: 'ऐसा और वैसा करो', ठीक वैसे ही जैसे दुश्मन ने हमारे ईश्वर मसीह से कहा था: *'कहो, 'इन पत्थरों से रोटी बन जाएँ''* (मत्ती 4:3)। और यह, जैसा कि कहा गया है, हमारी शक्ति के भीतर नहीं है। दूसरी ओर, *संगति,* शत्रु द्वारा सुझाए गए वचिार को स्वीकार करना है, और, मानो, उससे जुड़ना और आनंद के साथ उससे बात करना है, जो हमारी अपनी इच्छा से होता है। *वासना* शत्रु द्वारा सुझाए गए वचिार के साथ संगति के परणिामस्वरूप बनी हुई आदत है, और, मानो, उसके बारे में नरिंतर चतिन और दनि-रात सपना देखना है। *संघर्ष* वचिार और मन के बीच पारस्परकि वरिोध है, जो या तो वचिार से जुनून को खत्म करने की ओर या कसिी जुनूनी वचिार के आगे झुकने की ओर उन्मुख होता है, जैसा कि प्रेरति कहते हैं: *'मांस आत्मा के वरिुद्ध कामना करता है, और आत्मा मांस के वरिुद्ध; और*

ये एक दूसरे के विरोधी हैं (गलातियों 5:17)। *बन्धन* हृदय का एक जबरदस्ती, अनैच्छिक प्रलोभन है, जिस पर पूर्वाग्रह और पुरानी आदत का प्रभुत्व होता है। *सहमति,* वासना के साथ सहमति की विचार में अभिव्यक्ति है; और *'स्व-क्रिया'* एक भावुक विचार के आगे झुकने का वास्तविक कृत्य है।

11. जो कोई भी, शुरू से ही अपने प्रतिरोध और दृढ़ता के द्वारा, पहली—अर्थात् प्रारंभिक आकर्षण—को अपने से दूर कर देता है, वह एक ही साथ बाकी सभी पर अंत कर देता है। अतिभिक्षण का नाश संयम से होता है; व्यभिचार का दैवी प्रेम और भविष्य की लालसा से; लोभ का गरीबों के प्रति करुणा से; क्रोध का सभी के प्रति दया और प्रेम से; सांसारिक दुख का आध्यात्मिक आनंद से; निराशा का धैर्य से, ईश्वर के प्रति दृढ़ता और कृतज्ञता; व्यर्थता – सद्गुणों के गुप्त अभ्यास और पश्चात्ताप से भरे हृदय के साथ निरंतर प्रार्थना द्वारा; अहंकार – घमंडी फरीसी की तरह किसी को निंदा या तुच्छ न समझकर, बल्कि स्वयं को सभी में सबसे नीच समझकर। इस प्रकार, मन, उपर्युक्त सभी आसक्तियों से मुक्त होकर और ईश्वर तक आरोहण कर, यहाँ ही पवित्र आत्मा की प्रतिज्ञा प्राप्त करके धन्य जीवन जीना शुरू कर देता है; और इस संसार से निष्काम और सच्चे ज्ञान के साथ प्रस्थान करने पर, पवित्र और दिव्य त्रिमूर्ति के प्रकाश में, दिव्य स्वर्गदूतों के साथ, अनंत काल तक प्रकाशमान होकर स्थापित किया जाता है।

12. आत्मा, जैसा कि ऊपर कहा गया है, तीन भागों से मिलकर बनी है; क्योंकि इसके भीतर तीन शक्तियाँ हैं: विचार, क्रोधशील शक्ति और कामना शक्ति। यदि क्रोधशील शक्ति में प्रेम और सद्भावना, और कामना शक्ति में पवित्रता और ब्रह्मचर्य हो, तो विचार शुद्ध होता है। लेकिन यदि भावनाओं में मानवद्वेष हो, और इच्छाओं में कामुकता हो, तो बुद्धि अंधकारमय हो जाती है। जब भाव इसके अधीन होते हैं, तो बुद्धि स्वस्थ, पवित्र और प्रकाशमान होती है; यह आध्यात्मिक रूप से ईश्वर की सृष्टि के बीच संबंधों पर मनन करती है और पवित्र और धन्य त्रिमूर्ति तक ऊँची उठाई जाती है। इसी तरह, चिड़चिड़ापन तब प्रकृति के अनुरूप होता है जब कोई सभी लोगों से प्रेम करता है, उनमें से किसी से शिकायत नहीं करता, और कोई रंजिश नहीं रखता। और कामुकता तब प्रकृति के अनुरूप होती है जब, आत्म-संयम, विनम्रता और लोभ-रहितता के माध्यम से, यह वासनाओं को मार डालती है—अर्थात्, कामुक सुख, लाभ की लालसा, और क्षणिक महिमा की लालसा; क्योंकि इच्छा की तीन-गुणा प्रवृत्ति होती है: या तो कामुक सुखों की ओर, या खोखली महिमा की ओर, या धन के मोह की ओर – और इस प्रवृत्ति के कारण, जो विवेक के विपरीत है, मनुष्य ईश्वर और ईश्वर की आज्ञाओं की उपेक्षा करता है, अपनी ही गरिमा को भूल जाता है, अपने पड़ोसी के प्रति कटु हो जाता है, विचारों को धुंधला कर देता है और सत्य की ओर दृष्टि उठाने से रोकता है। लेकिन जिसने भी, जैसा कि ऊपर कहा गया है, यहाँ पर ही, विचार का उच्चतम तरीका प्राप्त कर लिया है, उसे स्वर्ग के राज्य का पूर्वाभास होता है, वह एक धन्य जीवन जीना शुरू कर देता है, और उन लोगों के लिए तैयार की गई आनंद की प्रतीक्षा करता है जो परमेश्वर से प्रेम करते हैं, जिसके हम अयोग्य लोग भी, मसीह की कृपा से, योग्य ठहराए जाएँ।

13. यह समझना महत्वपूर्ण है कि किसी भी सद्गुण की पूर्ण परिपूर्णता उस व्यक्ति द्वारा प्राप्त नहीं की जा सकती, जो अपने पूरे जीवन में, सक्रिय और विवेकपूर्ण प्रयास के माध्यम से उसे प्राप्त करने के लिए अथक लगन के साथ प्रयास नहीं करता है। यह दान-पुण्य, प्रार्थना, प्रेम, या किसी भी प्रमुख सद्गुण—साहस, विवेक, ब्रह्मचर्य और न्याय—पर लागू होता है। – इन सद्गुणों का अभ्यास करने के लिए अथक प्रयास करते हुए, किसी को भी इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि वह स्वार्थी उद्देश्यों को साथ लेकर चलकर उनके मूल्य और महत्व को कम न करे, नष्ट तो दूर की बात है, जैसे कि दूसरों को खुश करने की इच्छा, खोखला गौरव, और इसी तरह की चीजें। और सबसे बढ़कर, मनुष्य को सदैव सद्गुणों का अभ्यास विवेक के साथ करना चाहिए – जो सभी सद्गुणों से श्रेष्ठ है, मानो वह एक रानी हो, और सद्गुणों का सद्गुण।

14. जो लोग सद्गुणों में उत्कृष्टता प्राप्त करना चाहते हैं और पाप से बचने का प्रयास करते हैं, उनके लिए यह समझना भी आवश्यक है कि, जैसे आत्मा शरीर से अतुलनीय रूप से श्रेष्ठ है, वैसे ही आत्मा के सद्गुण—विशेषकर वे जो ईश्वर के नाम पर हैं और जो उनका अनुकरण करते हैं—शरीर के सद्गुणों से श्रेष्ठ हैं; जैसे आत्मा के दुराचार शरीर के दुराचारों से अधिक गंभीर और अधिक हानिकारक होते हैं, उनके प्रभावों और उनसे मिलने वाली सज़ाओं दोनों में , हालाँकि मुझे नहीं पता कि यह बात कई लोगों की समझ से क्यों परे है। नशा, व्यभिचार, चोरी और इनके समान दुराचार—जिन्हें, स्वाभाविक रूप से, कई लोग घृणा की दृष्टि से देखते हैं—से वे बचते, डरते और परहेज़ करते हैं; फिर भी वे उन पापों के प्रति उदासीन रहते हैं जो कहीं अधिक गंभीर हैं, अर्थात् आत्मा के पाप – ईर्ष्या, द्वेष, अहंकार, कपट, और सभी बुराइयों की जड़ – धन का प्रेम, और इनके समान पाप।

5. आठ प्रमुख जुनूनों के खलिाफ संघर्ष पर, सामान्य रूप से

1. जान लो कि आठ विचार हैं जिनसे सभी बुराइयाँ उत्पन्न होती हैं: अतिसिंचिन, व्यभिचार, धन का प्रेम, क्रोध, अनुचित समय का शोक, निराशा, व्यर्थता और घमंड। ये ही हर व्यक्ति के विरुद्ध युद्ध छेड़ते हैं।

२. जहाँ तक आपका सवाल है, यदि आप *'अतिभिक्षण' पर* काबू पाना चाहते हैं, तो संयम को अपनाएँ, ईश्वर का भय रखें - और आप उस पर काबू पा लेंगे।

3. यदि आप *'व्यभिचार'* पर विजय प्राप्त करना चाहते हैं, तो सतर्कता और आत्म-त्याग से प्रेम करें, हमेशा मृत्यु के बारे में सोचें, और किसी भी महिला के साथ बातचीत में कभी न पड़ें – और आप विजयी होंगे।

4. यदि आप *'लालच'* पर विजय प्राप्त करना चाहते हैं, तो सादगी और मितव्ययिता से प्रेम करें।

5. यदि आप *'क्रोध' पर* विजय प्राप्त करना चाहते हैं, तो नम्रता और उदारता का अभ्यास करें, और यह ध्यान में रखें कि यहूदियों ने हमारे प्रभु यीशु मसीह के साथ कितना बुरा किया; फिर भी वह, एक मानवता-प्रेमी ईश्वर के रूप में, उन पर क्रोधित नहीं हुए, बल्कि इसके विपरीत उनके लिए प्रार्थना की, यह कहते हुए: *'पिता, इन्हें* यह पाप *क्षमा कर*: *'क्योंकि वे नहीं जानते कि वे क्या कर रहे हैं* (लूका 23:34)।

6. यदि आप अनुचित *'दुख' पर* विजय प्राप्त करना चाहते हैं, तो किसी भी क्षणिक बात पर कभी शोक न करें; लेकिन यदि आप किसी शब्द से आहत होते हैं, या परेशान होते हैं, या अपमानित होते हैं, तो शोक न करें, बल्कि इसके विपरीत, आनंदित हों। केवल तब शोक मनाओ जब तुम पाप करो; परन्तु तब भी संयम बरतो, कहीं ऐसा न हो कि तुम निराशा में पड़कर नाश हो जाओ।

7. यदि आप *'निराशा' पर* काबू पाना चाहते हैं, तो कोई शिल्प-कला अपनाएँ, भले ही थोड़े समय के लिए ही क्यों न हो, या पढ़ें, या बार-बार प्रार्थना करें।

8. यदि आप *'घमंड' पर* काबू पाना चाहते हैं, तो प्रशंसा, सम्मान, अच्छे कपड़े, सम्मान की जगह, या विशेष व्यवहार को पसंद न करें; इसके विपरीत, आलोचना और अपमान को पसंद करें, आपके बारे में झूठ फैलाए जाने पर भी: और खुद को किसी भी पापी से अधिक पापी मानकर खुद को कोसें।

९. यदि आप *'अहंकार' पर* काबू पाना चाहते हैं, तो आप जो कुछ भी करें, यह न कहें कि यह आपके अपने परिश्रम या आपकी अपनी शक्ति से प्राप्त हुआ है; लेकिन चाहे आप उपवास करें, जागते रहें, चाहे आप नंगे जमीन पर सोएं, भजन गाएं, या कई प्रणाम करें, कहें कि यह ईश्वर की मदद और उनकी सुरक्षा में किया गया है, न कि मेरी अपनी ताकत या मेरे अपने प्रयासों से।

१. अतिभिक्षण के विरुद्ध संघर्ष पर

1. एक भिक्षु को मांस की लालसा नहीं करनी चाहिए, और न ही नशे तक शराब पीनी चाहिए: अन्यथा आपका मन सुस्त हो जाएगा, और आपकी सांसारिक चिंताओं का कोई अंत नहीं होगा।

2. एक युवा भिक्षु में एक अच्छे जीवन के संकेत शराब और अत्यधिक बात करने से विनिम्र और विवेकपूर्ण संयम हैं। जो इन चीजों से प्रेम करता है वह एक अच्छे जीवन में अंत तक दृढ़ नहीं रहेगा।

3. अपने भाई को नशे में धुत होने तक शराब पीने के लिए मजबूर न करो, भले ही वह लंबे समय से पी रहा हो; क्योंकि एक जहाज को बनाने में लंबा समय लगता है, फिर भी वह एक ही वार से एक क्षण में चूर-चूर हो जाता है।

४. जो कोई भी सांसारिक सुख की इच्छा करता है, वह अपने ऊपर कई विपत्तियाँ लाता है; परन्तु धीरज रखने वाले उद्धार पाएंगे।

5. प्रभु में भोजन करना और प्रभु का धन्यवाद करना, उन लोगों को निन्दना से बेहतर है जो भोजन से परहेज़ करते हैं और प्रभु का धन्यवाद करने वालों को दोषी ठहराते हैं।

6. क्या तुम भोजन के लिए बैठे हो? अपनी रोटी खाओ, परन्तु अपने पड़ोसी को दोष न लगाओ, कहीं ऐसा न हो कि तुम्हारी निन्दा के कारण तुम अपने भाई को खाने वाले बन जाओ।

7. विश्वास में दृढ़ रहो, और जो कुछ प्रभु में तुम्हारे सामने परोसा जाए, उसे खाओ। यदि कोई ऐसी चीज़ परोसी जाए जिसे तुम खाना नहीं चाहते, तो उसे मेज़ से मत हटाओ, जबकि दूसरे उसे खाना चाहते हों और प्रभु का धन्यवाद करना चाहते हों।

8. क्या तुम भोजन के लिए बैठे हो? एक मनुष्य की तरह खाओ, और एक मूर्ख की तरह इधर-उधर मत ताको।

9. एक भाई ने कहा: 'मैं किसी तरह की घृणा के कारण मांस खाना नहीं छोड़ता: क्योंकि *"परमेश्वर की हर रचना अच्छी है, और कुछ भी अस्वीकार नहीं किया जाना चाहिए"* (1 तीमुथियुस 4:4); परन्तु चूंकि लिखा है: *"मूर्ख के लिए मिठास व्यर्थ है"* (नीतिवचन 19:10), इसलिए एक भिक्षु के लिए जानवरों का मांस खाना अनुचित है।'

10. जब टुकड़े (बचे हुए भोजन) परोसे जाएँ, तो उन पर नाक मत सकिोड़ना; क्योंकि प्रभु ने अपने शष्यिों को आज्ञा दी कि वे बचे हुए टुकड़ों को इकट्ठा कर लें, *'ताकि कुछ भी व्यर्थ न जाए'* (यूहन्ना 6:12)।

11. कसिी व्यक्ति के लिए शराब के नशे में होना एक कलंक है; मैंने कई लोगों को देखा है, पर मुझे नशे में धुत व्यक्ति जैसा कोई नहीं मिला।

12. संयम शरीर को थकाता है, जबकि अतिभक्षण मन को सुस्त कर देता है।

13. हे संन्यासी, स्वयं पर कठोर रहो और अपने शरीर को वश में रखो, कहीं ऐसा न हो कि तुम निष्कासित कर दिए जाओ।

14. अपने शरीर में परिश्रम करो, और तुम परमेश्वर के लिए फल उपजाओगे।

१५. हे भिक्षु, क्या तुम भाइयों की संगति में शांति पाना चाहते हो? भाइयों के सामूहिक भोजन से संतुष्ट रहो; *'और* तुम्हारे शरीर के लिए *चंगाई होगी'* और *'तुम्हारी हड्डियों को आराम मिलेगा'* (नीतिवचन ३:८), और तुम्हारी आत्मा को कोई हानि नहीं होगी। *'परन्तु यदि तू प्यालों और गिलासों पर अपनी आँखें लगावे, तो बाद में तू ऐसे दर्द से पीड़ित होगा, जैसे साँप ने डँसा हो'* (नीतिवचन 23:31)।

16. एक शेर, अपने पेट के लिए शिकार का पीछा करते हुए, कैदी बन जाता है; और पेटू अपने पेट के सुख के लिए स्वयं को नम्र बनाता है।

17. भरपूर भोजन मन को सुस्त कर देता है, परन्तु उचित आत्म-संयम उसे शुद्ध करता है।

18. जो मद्यपान करता है और क्रोधुक होता है, वह अपने भाइयों की आत्मा को उत्तेजित करता है, और लज्जा सदा उसके साथ रहती है।

19. जो मनुष्य साँझ को पीता है, वह वह करता और कहता है जो उसे नहीं करना चाहिए, और भोर को पछताता है; परन्तु यदि वह फिर दाखरस पाता है, तो वैसा ही करता है।

20. नशे में धुत होने तक शराब मत पीओ, भले ही तुम्हारे साथ बैठे मित्र तुम्हें ऐसा करने के लिए उकसाएँ: क्योंकि अगर शराब तुम पर हावी हो गई, तो जिन्होंने तुम्हें उकसाया था, वे ही सबसे पहले तुम्हारे द्वारा भटक जाएँगे।

21. अहंकारी पेटू भोजन से अपना पेट भरने के लिए परिश्रम करता है और कष्ट भोगता है, और एक बार खा लेने के बाद पचाने में भी कष्ट भोगता है; लेकिन संयम स्वास्थ्य और चित्त की स्थिरता लाता है।

22. एक पेटू भिक्षु कई बातों की चिंता करता है, लेकिन संयमी भिक्षु खेत में हरिण के समान है।

23. हे संन्यासी, अपने पेट की चिंता मत कर, और तुझे शांति मिलेगी।

24. जंगल की सारी लकड़ियाँ आग को बुझाने के लिए पर्याप्त नहीं हैं; मांस भी उतना ही अतृप्त है, आप इसे जितना भी तृप्त करें।

२५. एक नशे में धुत गड़रिया अपने हवाले की गई भेड़ों की रखवाली नहीं करेगा, और एक आलसी गड़रिया स्वयं जंगली जानवरों का शिकार बन जाएगा। क्योंकि *'एक शराबी के हाथों में काँटे उगते हैं'* (नीतिवचन २६:९), जबकि संयमी की आत्मा परमेश्वर से चिपकी रहती है।

26. संयम धैर्य का गुण है।

27. दूसरों को खुश करने के लिए नशे में होने तक शराब न पियो; क्योंकि तब जब वे तुम्हें नशे में पाएँगे तो तुम्हें बहुत शर्मिंदगी होगी।

28. तुमने रोटी चखी है और तृप्त हो गए हो! उस परमेश्वर की महिमा करो जिसने तुम्हारा पोषण किया है। और यदि तुम अपने शरीर को थोड़े में ही संतुष्ट रखना चाहते हो, तो उस परमेश्वर की महिमा करो जिसने तुम्हें बल दिया है, और सबके सामने यह न कहो: 'मैंने रोटी का यह-वह हिस्सा नहीं खाया है'। – इससे आपको क्या मिलता है? – क्या आप केवल उन लोगों की निंदा नहीं कर रहे हैं जो खाते हैं और धन्यवाद देते हैं?

29. एक पेटू भिक्षु उपवास को दुख का समय कहता है, जबकि संयमी भिक्षु उपवास करते समय भी उदास नहीं दिखता।

३०. अत्यधिक संयम का अभ्यास करना, मुझे लगता है, प्रशंसनीय नहीं है; और न ही उचित संयम की उपेक्षा करना लाभदायक है। जैसे निर्धारित भोजन से लंबे समय तक विचलन सुस्ती और सेवा के लिए शक्ति की कमी को जन्म देता है, वैसे ही भोजन में अतिशय लिप्तता भी निंदा को आमंत्रित करती है। कहा गया है: *'हाय तुम्हें जो अब तृप्त हो, क्योंकि तुम भूखे होओगे'* (लूका 6:25)। इसके अलावा, संयमहीन व्यक्ति, संयम की कमी के कारण, कामुक वासनाओं में पड़ जाता है। इसलिए, मनुष्य को शरीर को ईश्वरीय और उचित तरीके से नियंत्रित करना चाहिए।

31. (भोजन पर) तरोताज़ा होने के बाद, कोठरियों में इधर-उधर न घूमें, बल्कि अपनी कोठरी में चुपचाप रहें; क्योंकि शैतान ने कई लोगों को शराब के द्वारा भटका दिया है। इसलिए, तरोताज़ा होने के बाद, किसी और की कोठरी

में होना लापरवाही और दुराचार का आभास देता है। ऐसे समारोहों में, आत्माएँ पाप में गिर जाती हैं, विशेष रूप से जब मठाधीश का अधिकार निष्क्रिय रहता है। क्योंकि जो कोई भी परमेश्वर के भय से अपने मन को नियंत्रित नहीं करना चाहता, उसे व्यर्थ के कार्यों से रोकने के लिए मानवीय भय की आवश्यकता होती है, ठीक वैसे ही जैसे एक दास अपने स्वामी की सख्तता के कारण पवित्र रहता है।

३२. सादा और आवश्यक भोजन खाओ, कहीं ऐसा न हो कि तुम्हारा मन *'भोज-विलास, मद्यपान और इस जीवन की चिन्ताओं'* (लूका २१:३४) से सुस्त हो जाए। क्योंकि ऐसे जुनूनों से ग्रस्त लोग व्यभिचार को व्यभिचार नहीं मानते, न ही परस्त्रीगमन को परस्त्रीगमन, और वे उन सभी बातों से परहेज़ नहीं करते जो異邦, जो परमेश्वर को नहीं जानते, करते हैं; बल्कि वे ये सब कुछ बिना किसी डर के करते हैं, और कीचड़ में लोटने वाले सूअरों से किसी भी तरह भिन्न नहीं हैं; वे न तो व्यवस्था को याद करते हैं, न ही भविष्यद्वक्ताओं को, और न ही स्वयं प्रभु को, जो पाप की अधर्मीता ( ) को नष्ट करने के लिए देहधारी हुए। इसलिए, मांस और शराब के आदी न बनो, कहीं ऐसा न हो कि तुम्हारा मन आध्यात्मिक वरदानों को ग्रहण करने में असमर्थ हो जाए।

33. स्नान, शराब या बहुत अधिक मांस में लिप्त न रहें, कहीं ऐसा न हो कि आप महत्वपूर्ण मामलों में पाप करके अतिकठिन संकटों में पड़ जाएँ।

34. स्वच्छंद लोगों की बातों पर ध्यान न दो – जो अपनी वासनाओं और शारीरिक कामनाओं के दास बन गए हैं।

35. अधिक खाने और अधिक पीने का सुख केवल उसी क्षण तक होता है; अगले दिन, वे मन को बेचैनी और सुस्ती से भर देते हैं।

36. एक भिक्षु एक ही स्थान पर अधिक समय तक नहीं रहता, और न ही उसे मन की शांति मिलती है, जब तक कि वह पहले मौन और संयम से प्रेम न करने लगे। क्योंकि मौन स्थिरता और निरंतर प्रार्थना सिखाता है, जबकि संयम मन को विचलित होने से बचाता है। अंत में, जिन्होंने इसे प्राप्त कर लिया है, वे हृदय की एक शांतिपूर्ण अवस्था की आशा कर सकते हैं।

37. पेट के संतोष से धोखा न खाओ, *'न ही उस दाखरस से मतवाले बनो, जिसमें व्यभिचार है'* (इफिसियों 5:18)। एक बात के सिवाय तुम्हें किसी भी चीज़ से कोई लाभ नहीं होता: परमेश्वर की इच्छा को पूरा करना।

३८. जान लो कि जिस हद तक कोई व्यक्ति अपने शरीर के वश में रहता है—अपने ही नुकसान के लिए—वह अपने भीतर वासनाओं को बढ़ाता है, और अंततःआत्मा, शरीर की बुरी आदतों के बोझ तले दबकर, बाँझ हो जाती है। इसलिए उद्धारकर्ता कहते हैं: *'अपने विषय में सावधान रहो, कहीं तुम्हारे मन भोग-विलास, मद्यपान और इस जीवन की चिन्ताओं से भारी न हो जाएँ'* (लूका 21:34)। इसीलिए प्रेरित कहते हैं: *'मैं अपने शरीर को दण्ड देता हूँ और उसे वश में करता हूँ, कहीं ऐसा न हो कि मैं दूसरों को उपदेश देते हुए स्वयं अयोग्य ठहर जाऊँ'* (1 कुरिन्थियों 9:27)। – परन्तु यदि कोई स्वयं को प्रभु के कार्य के लिए प्रेरित करता है, तो उसी अनुपात में उसका शरीर बलवान हो जाता है, और उसकी आत्मा प्रबुद्ध हो जाती है। जिस प्रकार एक पहलवान कुश्ती की कला के लिए अपने शरीर को प्रशिक्षित करने हेतु लगातार शारीरिक व्यायामों में समय लगाता है, उसी प्रकार धर्मपरायण तपस्वी को भी हर अच्छे कार्य का अभ्यास करना चाहिए, जैसा कि प्रेरित कहते हैं: *'खुद को धार्मिकता में प्रशिक्षित करो'* (1 तीमु. 4:7–8)।

२. वासना के विरुद्ध संघर्ष

1. कामुक व्यक्ति, जब वह महिलाओं से मिलता है, तो प्रसन्न हो जाता है और उनकी सुंदरता की ओर आकर्षित हो जाता है; उनकी शारीरिक आकर्षण उसे पागल कर देती है, उनके चेहरों की सुंदरता उसे प्रसन्न करती है, उनके बदन की सुडौलता उसे मंत्रमुग्ध कर देती है, और महिलाओं से बातचीत में वह आनंद से पिघल जाता है; जब वह जो उसने देखा है उसे याद करता है, तो वह कामुक सपने देखता है, अपने मन में महिलाओं के चेहरे, उनके भावुक भाव, उनकी मोहक मुस्कान, उनकी पलकों की झपकी, उनके परिधान की सुंदरता, उनकी चापलूसी भरी बातें, और उनके होठों के स्पर्श की स्पष्ट कल्पना करता है। उसे पुरुषों की संगत बोझिल लगती है; लेकिन जब वह महिलाओं को देखता है, तो उसका चेहरा खिल उठता है, और वह अपनी सेवाएँ देने के लिए इधर-उधर भागता है; तभी उसे गाने के लिए सुर मिलता है, कोई चतुर बात कहने, हँसने, और खुद को मनोरंजक और सुखद प्रस्तुत करने की क्षमता मिलती है।

2. अपनी दृष्टि को इधर-उधर भटकने न दो, और किसी की सुंदरता को घूरकर न देखो, कहीं ऐसा न हो कि तुम्हारा शत्रु तुम्हारी ही आँखों के द्वारा तुम्हें गिरा दे।

3. भटकती आँख एक संन्यासी का पतन है। भटकती आँख उसे बहुत दुख देती है जो उसका अनुसरण करता है। यदि आप अपनी आँखों को भटकने से नहीं रोकते, तो आप ब्रह्मचर्य के सीधे रास्तों पर नहीं चलेंगे।

४. यदि आप संयम को प्रेम करते हैं, तो आप कामवासना के राक्षस को वश में कर लेंगे।

5. जो भी अपने शरीर के शरीरिक इंद्रिय (कामवासना) को पोषित करता है, वह दुष्ट कामनाओं को पोषित करता है, और उसके भीतर लज्जास्पद विचार समाप्त नहीं होंगे।

6. जो अपनी आँखों को नियंत्रित करता है, उसे प्रकाश मिलेगा; परन्तु जो अपनी दृष्टि को भटकने देता है, वह अपने ऊपर एक बोझ ले लेता है। क्योंकि कहा गया है: *'वासना की उड़ान एक ऐसे मन को भ्रष्ट कर देती है जो दुष्ट नहीं है'* (ज्ञान 4:12)।

7. यदि, जुनून में बहकर, आप अपनी आँखों को व्यर्थता पर टकटकी लगाते हैं, तो उन्हें तुरंत रोकें, कहीं आप कामुक आनंद की लज्जा में न पड़ जाएँ।

8. जब शरीर उत्तेजित हो, तो अपने शरीर को न छुएँ, कहीं ऐसा न हो कि आप और भी अधिक उत्तेजना को भड़का दें।

९. भिक्षु, अपने प्रति सचेत रहो; स्त्रियों से मिलते समय सचेत रहो।

10. उस साँप से भागो जो शरीर को चबाता है; और भी अधिक भागो उस स्त्री से जो आत्मा को चबाती है।

11. जो स्त्री के सौंदर्य पर मनन करता है, वह अपने आत्मा में उसके सौंदर्य की इच्छा बोता है; और जो उसके घर के द्वार पर ठहरता है, वह बर्फ पर चलने वाले के समान है; क्योंकि प्रलोभन निकट ही है।

12. दो पहलवान एक स्त्री की संगत में एक भिक्षु के समान हैं। परन्तु संयमी पुरुष लाभ प्राप्त करेगा, और वह स्वयं लुट नहीं जाएगा।

13. अपमानजनक बातों की ओर अपना कान न लगाओ, कहीं ऐसा न हो कि तुम्हारा मन अशुद्ध हो जाए। *'जैसे धुआं आंखों के लिए होता है'* (नीतिवचन 25:20), वैसे ही एक अपमानजनक बात आत्मा के लिए हानिकारक है।

14. यदि व्यभिचार की आत्मा तुम्हें सताती है, तो उसे डाँटकर कहो: 'हे गंध से भरे, हे अशुद्धता के दानव, प्रभु तुझे नाश करे।' क्योंकि हम उसको जानते हैं जिसने कहा है: *'जो मन शरीर की ओर लगा रहता है, वह परमेश्वर के विरोधी होता है'* (रोमियों 8:7)।

१५. जो कोई भी पवित्रता और शुद्धता से प्रेम करता है, वह परमेश्वर का मंदिर बन जाता है।

16. *'यदि कोई परमेश्वर के मन्दिर को नाश करता है, तो परमेश्वर उसे नाश कर देगा'* (1 कुरिन्थियों 3:17), पवित्र शास्त्र कहता है। व्यभिचार के दानव का कुत्ते की तरह विरोध करो; ऐसे विचारों से बहकने के लिए किसी भी तरह से सहमति न दो; क्योंकि एक चिंगारी से कई अंगारे उत्पन्न होते हैं, और एक बुरे विचार से बुरी इच्छाएँ बढ़ती हैं। कीचड़ की बदबू को मिटाने से भी अधिक, उन यादों को मिटाने का प्रयास करो।

17. जैसे एक सुगंधित खुशबू घ्राणेंद्रिय को प्रसन्न करती है, वैसे ही पवित्र आत्मा भी पवित्रता में प्रसन्न होता है और मनुष्य के भीतर वास करता है।

18. जैसे एक सूअर कीचड़ में लोटने में आनंद लेता है, वैसे ही राक्षस व्यभिचार और अशुद्धि में आनंद लेते हैं।

19. पवित्रता में महान प्रकाश, आनंद, शांति और धैर्य निवास करते हैं; परंतु व्यभिचार में दुख, निराशा, अतृप्त निद्रा और घोर अंधकार निवास करते हैं।

20. हे भिक्षु, मसीह के प्रेम में पवित्रता से प्रेम कर; यह तेरे जीवन के लिए उतना ही उपयुक्त है जितना कि बढ़ई के लिए छेनी।

21. एक भिक्षु, वासना से पीड़ित होने पर, ने शैतान को डाँटते हुए कहा: 'अंधकार में जा, शैतान! क्या तू नहीं जानता कि यद्यपि मैं अयोग्य हूँ, तथापि मैं मसीह के अंगों को धारण किए हुए हूँ?' और तुरंत ही वह वासना शांत हो गई (जैसे किसी ने दीपक बुझा दिया हो); जिस पर वह अपने मन में चकित हुआ और प्रभु की महिमा की।

22. तुम इतनी लापरवाही से सजने-संवरने का शौक क्यों रखते हो? सुनो, प्रेरित क्या कहते हैं: *'युवावस्था की कामनाओं से भागो'* (2 तीमु. 2:22)। क्या तुम नहीं जानते कि तुम किस दुश्मन से लड़ रहे हो? क्या तुम नहीं जानते कि किसी दूसरे आत्मा के लिए फंदा बनना कितना दुखद है? तुम यह विचार करने में कैसे चूक सकते हो कि ऐसे काम करने वालों का क्या सड़न और क्षय इंतजार कर रहा है? मैं आपके लिए यह स्पष्ट करना चाहता हूँ कि यदि बाहरी व्यक्ति सुसज्जित है, फिर भी आत्मा का निवास स्थान अशुद्ध है, तो उसकी सुंदरता का विनाश देर से नहीं होगा। लेकिन यदि आप आंतरिक सुंदरता प्राप्त करते हैं, तो इस सुंदरता से, और इस प्रकाश से, कुछ बाहरी व्यक्ति पर भी चमकेगा, और ऐसी सुंदरता शाश्वत है!

२३. जो अपना वस्त्र सुशोभित करता है और अपना पेट भरता है, वह बहुत निन्दा सहता है; परन्तु जो समझदार है, वह अपने शत्रुओं के लिए भयानक है।

24. यदि काम करते समय वासना की आत्मा तुम्हें परेशान करे, तो प्रार्थना में अपने हाथ उठाने के लिए आलसी न बनो, और विश्वास की प्रार्थना तुम्हारे लिए खड़ी होगी।

२५. अपने भीतर की वासना को उससे पहले दबा दो, इससे पहले कि वह तुम्हें दबा दे, क्योंकि यह उन लोगों को, जो इसके आगे झुक जाते हैं, नरक की गहराइयों में ले जाती है।

26. शांति और पवित्रता (शुद्धता) से प्रेम करो, ताकि तुम प्रभु परमेश्वर का मुख देखने के योग्य ठहरो।

27. हे भाई, ठट्ठा करने से परहेज़ करो, कहीं ऐसा न हो कि तुम निर्लज्ज बन जाओ; क्योंकि निर्लज्जता व्यभिचार की जननी है।

28. मद्यपान करने वालों के कक्ष में मत जाओ, कहीं तुम अचानक ब्रह्मचर्य की संपदा न खो बैठो।

29. जब तुम्हारे शरीर में वासना भड़क उठे, तो अविनाशी आग और अनंत कीड़े को याद करो, और तुम्हारे अंगों की जलन तुरंत बुझ जाएगी; अन्यथा, ढीला पड़कर तुम हार जाओगे और पश्चाताप करोगे, और पश्चाताप के दुख की आग तुम्हें भस्म कर देगी, और तुम पाप करने के आदी हो जाओगे, यहाँ तक कि पश्चाताप करते हुए भी। शुरुआत में, इस इच्छा की हर हलचल पर सख्त रहने का प्रयास करें, ताकि आप इससे पराजित न हो जाएँ - और आप इस संघर्ष में इसे हार मानने की आदत न डाल लें। क्योंकि आदत एक दूसरी प्रकृति है। भोग की आदत आपको कभी भी आत्म-अनुशासन प्राप्त करने नहीं देगी। यह हमेशा बनाती और नष्ट करती है, पाप करती है और पश्चाताप करती है। यदि आप प्रलोभन में आने पर अपनी रक्षा की ढील देने के आदी हो जाते हैं, तो आपके पांडुलिपि में हमेशा के लिए अंकित हो जाएगा: *'पश्चाताप'*। जो कोई भी अपनी इच्छाओं के सामने हार मानने का आदी है, उसे उसका अंतर्मन हमेशा दोषी ठहराता है; वह हर समय दुखी रहता है, और भले ही वह दूसरों की उपस्थिति में प्रसन्न चेहरा बनाए रखता हो, परन्तु भीतर से वह अपने विवेक की निन्दा के कारण हताश रहता है। क्योंकि कामवासना का सामान्य परिणाम उन लोगों के लिए अत्यधिक दुख लाना है जो इसमें लिप्त होते हैं। इसलिए, अपनी पूरी आत्मा से ध्यान लगाओ, और हमेशा परमेश्वर को अपने भीतर बसाए रखो।

३०. अपने विषय में सावधान रहो, और मृत्यु तक शुद्ध बने रहने का यत्न करो, ताकि तुम अपने अमर वरा के साथ धैर्य और आनन्द के साथ मिलो। पवित्रता का आदर करो; और यह तुम्हें स्वर्गीय महल में ले जाएगी। इसीलिए प्रेरित ने कहा: *'मैंने तुम्हें एक पति के लिए मंगनी कर दिया है, एक पवित्र कुँवारी के रूप में, ताकि तुम्हें मसीह के सामने पेश करूँ'* (2 कुरिन्थियों 11:2)।

31. अपने शरीर को पाप से बचाओ, कहीं ऐसा न हो कि तुम सृष्टिकर्ता के सामने दोषी ठहरो; क्योंकि हमने स्वयं को प्रभु के लिए एक भेंट के रूप में अर्पित कर दिया है, और अब हमारे अपने शरीर पर हमारा कोई अधिकार नहीं है, और न ही हम अपनी इच्छा से इस भेंट को वापस ले सकते हैं। यदि कोई, ईश्वर से व्रत लेकर, प्रभु को भेंट अर्पित करता है, और याजक, भेंट ग्रहण करके, उसे मंदिर में रख देता है, तो भले ही भेंट अर्पित करने वाला बाद में पश्चाताप करे, एक बार प्रभु को अर्पित हो जाने के बाद उसे उस भेंट को वापस लेने की शक्ति नहीं रहती; और यदि वह उसे चोरी से चुराने का प्रयास करे, तो वह अपनी ही संपत्ति लेने वाले के रूप में आरोप से मुक्त नहीं होगा, बल्कि एक धर्मद्रोही व्यक्ति के रूप में दंड भोगेगा। इसी प्रकार, जिन्होंने अपनी आत्मा को परमेश्वर को अर्पित कर दिया है, उनके अपने शरीर पर अब अधिकार नहीं रहता।

32. बुरी सलाह से सावधान रहो। क्योंकि अक्सर ऐसा होता है कि जो सदाचार से भटक गए हैं, वे दूसरों को भी भटकाने का प्रयास करते हैं, ताकि वे ही अकेले अनैतिक जीवन में लिप्त न रहें। वे चापलूसी से बात करते हैं, ताकि उनका आज्ञापालन करने वालों को पवित्रता से दूर ले जा सकें और उन्हें पाप में धकेल सकें। स्वयं गिर जाने के बाद, वे न केवल फिर से उठने से इनकार करते हैं, बल्कि जानबूझकर दूसरों को प्रलोभन में—पतन और भ्रष्टाचार की ओर—ले जाते हैं। और शैतान उन्हें कांटे पर चारे के रूप में इस्तेमाल करता है। *'उनके गले खुली कब्रें हैं'*, जो *'अशुद्धता की कामनाओं'* को समर्पित हैं (रोमियों 3:13; रोमियों 1:26)। उनसे सावधान रहो, कहीं वे तुम्हें अपनी चिकिनी-चुपड़ी बातों से जला न दें।

33. धन्य हैं वे जो नम्रता में पवित्रता (शुद्धता) को बनाए रखते हैं! – परन्तु कोई भी तब तक (इस मामले में) शांति प्राप्त करने की आशा न करे जब तक वह शत्रु के प्रलोभनों के आगे झुकता रहे: क्योंकि तब यह यातना देने वाला उन्हें कामुक विचारों और सुखों के द्वारा कैदी बना लेगा, भले ही वे कोई शर्मनाक कार्य न करें। ऐसी अवस्था में, चूँकि उन्होंने पत्नी को नहीं जाना है, शत्रु उनके मन में यह विचार डालता है कि वे अपनी कुँवारी अवस्था का दावा करें, जबकि उनका पूरा शरीर वासना की अशुद्धि से भर जाता है। इस प्रकार शत्रु उन्हें इस बात का घमंड करने पर मजबूर करता है कि वे पाप से मुक्त हैं, जबकि वह उन्हें *'पित्त की गुच्छा और कड़वाहट की गुच्छा'* (व्यवस्थाविवरण 32:32) से भर देता है,

34. यह तो स्पष्ट है कि किसी को शराब में लिप्त नहीं होना चाहिए या महिलाओं के साथ समय नहीं बिताना चाहिए; क्योंकि हर कोई खुद स्पष्ट रूप से देख सकता है कि यह सदाचार से कितना अलग है। और किसी को राक्षसों की चालाकी से केवल इसी एक चीज़ से ही नहीं बचना चाहिए, बल्कि पुरुषों के साथ स्त्री-सुलभ बातचीत से भी बचना चाहिए, जो कामुक आनंद को जगा सकती है और आत्मा को विनाश की ओर ले जा सकती है। – हम महिलाओं से मिलने से इसलिए नहीं बचते कि हम उन्हें धोखेबाज़ मानते हैं, बल्कि इसलिए कि महिलाओं से मिलने और बात करने के द्वारा, दुश्मन हमें आसानी से गिरा सकता है और हमें परमेश्वर की आज्ञाओं का उल्लंघन करने के लिए प्रेरित कर सकता है। हालाँकि, हमें धोखेबाज़ आत्माओं की चालाकी से हर तरफ से अपनी रक्षा करनी चाहिए, और पवित्र आत्मा के पूरे कवच और शक्ति में अपनी आशा रखनी चाहिए। जो कोई भी दुश्मन के खिलाफ एक दरवाज़ा बंद करता है लेकिन उसके लिए दो अन्य खोल देता है, और खुद को सुरक्षित समझता है, वह खुद को धोखा दे रहा है। नहीं; मनुष्य को हर तरफ से अपनी रक्षा करनी चाहिए, और बहाने खोजने वालों को कोई बहाना नहीं देना चाहिए।

३५. पवित्रता के सद्गुण के प्रति लापरवाह न हो, बल्कि अपनी आत्मा में पवित्रता (शुद्धता) को बनाए रखने के लिए अपनी पूरी शक्ति से प्रयास करो, क्योंकि इसी के लिए तुमने संसार को त्यागा है। अपनी कुँवारी अवस्था की रक्षा करो, ताकि पवित्र आत्मा तुममें वास करे। लज्जास्पद इच्छाओं और तुच्छ लाड़-प्यार पर ध्यान न दें; स्वयं को शुद्ध रखें, और यदि आपके भीतर पाप की ज्वाला जलने लगे, तो उसे प्रभु के प्रति आँसुओं और प्रार्थना से बुझा दें, जो पवित्रता की खोज करने वालों और उसमें उसकी सेवा करने वालों से प्रेम करते हैं। – एक धार्मिक मन में ब्रह्मचर्य एक अनमोल खजाना है। यदि आप इसे प्रेम करते हैं, तो प्रभु आपको महिमामय बनाएंगे, और आप सभी बातों में सफल होंगे।

36. यदि आपके भीतर कामुक संघर्ष उत्पन्न हो, तो डरो मत और हतोत्साहित मत हो। ऐसा करने से, आप शत्रु को अपने विरुद्ध प्रोत्साहित करोगे, और वह आपके भीतर प्रलोभन भरे विचार बोने लगेगा, यह सुझाव देते हुए: 'जब तक आप अपनी वासना को संतुष्ट नहीं करते, तब तक आपके भीतर की आग बुझना असंभव है।' परन्तु *'प्रभु के लिए धीरज से सहो'*; अपनी प्रार्थना को रोते हुए उसकी भलाई के सामने अर्पित करो, और वह तुम्हें *'सुनेगा'*, और *'वासनाओं की खाई'* से तुम्हें *'ऊपर उठाएगा'*, अर्थात्, अशुद्ध विचारों से, और *'कीचड़ की कीचलि'* से, अर्थात्, शर्मनाक कल्पनाओं से, और पवित्रता (शुद्धता) की *'चट्टान'* पर 'अपने *पैर जमाओ'* (भजन संहिता 39:1-3), और तुम उसे सहायता देखोगे जो तुम्हारे पास उससे आई है। तब धैर्य धारण करो; अपने विचारों को शिथिल न होने दो, नाव से पानी निकालते समय थक मत जाओ: क्योंकि जीवन का बंदरगाह पास है। *'जब तुम अभी भी बोल ही रहे होगे, तब वह कहेगा: "मैं यहाँ हूँ"* (यशायाह 58:9)। परन्तु वह तुम्हारी वीरता देखने के लिए प्रतीक्षा करता है, यह देखने के लिए कि क्या तुम सचमुच पाप से मृत्यु तक लड़ने के लिए तैयार हो। इसलिए हियाव न खोएँ; परमेश्वर आपको नहीं छोड़ेंगे। वह आपके संघर्ष को देख रहे हैं; पवित्र स्वर्गदूतों के चेहरे और राक्षसों का समूह भी इसे देख रहा है। स्वर्गदूत विजेता को मुकुट पहनाने के लिए तैयार हैं; राक्षस, पराजित को लज्जित करने के लिए। तो, सतर्क रहो। न तो अपने (देवदूतों) को दुखी करो, और न ही अजनबियों (दैत्यों) को आनंद दो।

37. परमेश्वर की आँखों से कुछ भी छिपा नहीं है। शत्रु से यह कहकर धोखा न खाओ कि, *'वह नहीं देखेगा'*। तुम परमेश्वर के चरणों में खड़े हो। इसे अनदेखा न करो। क्योंकि लिखा है: *'आकाश मेरा सिंहासन है, और पृथ्वी मेरा पादपीठ है'* (प्रेरितों के काम 7:49)।

38. यह कोई दुर्भाग्य नहीं है कि वासनाएँ हम पर आक्रमण करती हैं और हमें उनके विरुद्ध संघर्ष करना पड़ता है; परन्तु यह एक विपत्ति है यदि हम, अपनी इच्छाओं में लिप्त होकर, अपने विरोधियों के सामने गिर पड़ें। अतः अपने भीतर जलने वाली वासना का विरोध करो, ताकि तुम अनबुझने वाली ज्वाला से बच सको। क्योंकि यदि कोई वासना तुम्हें एक बार जीत लेती है, तो वह पीछे नहीं हटेगी, बल्कि और भी अधिक आक्रमण करेगी। तब सतर्क रहो, कहीं ऐसा न हो कि तुम परमेश्वर के मुख की महिमा खो दो।

39. हम नशे से दूर रहें; हम, जहाँ तक संभव हो, महिलाओं की संगत से दूर रहें: क्योंकि एक महिला का वचन हृदय में *'एक फंदा'* जैसा है (नीतिवचन 7:21), और जो उसकी बात मानता है वह शर्मनाक संबंध में फँस जाता है।

40. सावधान रहो कि क्षणिक सुखों में फँस न जाओ, कहीं ऐसा न हो कि तुम अनंत जीवन खो दो। तुम्हें एक व्यापारी बनने के लिए बुलाया गया है; पूरी तरह से होशियार रहो, कहीं ऐसा न हो कि तुम अपने मोती खो दो, कहीं ऐसा न हो कि शत्रु तुम्हारा खजाना चुरा ले और अपने माल के साथ तुम्हारे जहाज को डुबा दे, और कहीं ऐसा न हो कि तुम खाली हाथ घर लौट आओ। शत्रु, यह जानते हुए कि जो लोग शरीर के अशुद्धियों से स्वयं को शुद्ध रखते हैं, वे परमेश्वर के सामने क्या महिमा प्राप्त करते हैं, उनके विरुद्ध विचारों से एक भयंकर युद्ध छेड़ता है, यह खोजते हुए कि उन विचारों से उन्हें फँसा दे ताकि, उन विचारों के बहकावे में आकर, वे भविष्य की महिमा से वंचित रह जाएँ। और यदि उसे

कोई ऐसी आत्मा मलिती है जो अशुद्ध वचिारों को अस्वीकार करती है, तो वह उस पर अक्सर हमला नहीं करता, फरि भी वह उससे पूरी तरह से पीछे नहीं हटता। बल्कि वह वहाँ जाता है जहाँ, जैसे ही वह एक हल्का धक्का देता है, उसके लिए दरवाज़ा तुरंत खुल जाता है; और वह उस व्यक्ति में, जो उसका कोई वरिोध नहीं करता, सबसे अशुद्ध इच्छाओं से शरीर और आत्मा को कलंकति करता है; अंत में, जैसे कि वह एक अच्छा सलाहकार हो, वह उसमें यह वचिार डालता है: 'इस तरह अपने शरीर को दबाने के बजाय तुम्हारे लिए दुनिया में जाकर एक साथी बनाना बेहतर है।' लेकनि इस तरह की कोई भी बात समझदार लोगों के पास नहीं आती। इसलिए, अपने बारे में सावधान रहो, कहीं ऐसा न हो कि तुम्हारे साथ भी ऐसा ही हो।

४१. याद करो कि तुमने परमेश्वर से क्या वादा कयिा था और अपनी पवित्रता (शुद्धता) को बनाए रखो, ताकि तुम प्रभु की अनुग्रह में भाग ले सको। इन शब्दों पर ध्यान दो: *'व्यभचिार से भागो'* (१ कुरन्थियों ६:१८)। – क्या तुम जानना चाहते हो कि व्यभचिार कतिना गंभीर पाप है? देखो: जन्हिें जंगल में साँपों ने नहीं मार सका, वे मद्यािन के देश में व्यभचिार के कारण पतति हुए। यदि तथापि तुम पाप में गरि गए हो, तो अपने पतन में बने न रहो, और परमेश्वर की दीर्घ सहनशीलता और उसकी दया की उपेक्षा न करो। *'याद रखो कि मृत्यु दूर नहीं है'* (सीर. 14:12)। याद रखो कि तुम परमेश्वर के हाथों से नहीं बच सकते। इसलिए, लापरवाह न बनो, बल्कि पश्चाताप करो, रोओ, और इस बात पर वलिाप करो कि तुम भटक गए हो; क्योंकि भले ही हम अपना पतन भूल जाएँ, परमेश्वर जो हमें बनाता है, वह प्रत्येक के कर्मों को जानता है।

४२. लापरवाह न बनो, बल्कि शत्रु के वरिुद्ध दृढ़ खड़े रहो, और उस दरार को बंद कर दो जसिसे शत्रु आमतौर पर तुम्हें नष्ट करने के लिए प्रवेश करता है, ताकि कोई आसान रास्ता न पाकर, वह खाली हाथ लौट जाए। और दरार को रोकने का अर्थ है उन इंद्रयिों की रक्षा करना जनिके द्वारा अच्छाई और बुराई दोनों आत्मा में प्रवेश करती हैं—अर्थात्, दृष्टि, श्रवण, घ्राण, स्पर्श और स्वाद—और अपने वचिारों को उस ओर भटकने न देना जहाँ उन्हें नहीं जाना चाहिए। उन वशिालकायों को याद करो जन्होंने अपने प्रभुत्व से पृथ्वी को तहस-नहस कयिा था, और कैसे प्रभु ने जलप्रलय द्वारा एक क्षण में उन्हें पृथ्वी के मुख से मटिा दयिा; और उनकी शक्ति का उन्हें कोई काम नहीं आया। सदोम और गमोरा के देश पर वचिार करो, कि वह अपने नविासयिों के पापों के कारण कैसे नष्ट हो गया; और न तो उनकी वलिासति और न ही उनका घमंड उनके कसिी काम आया। इसलिए आइए हम अपनी ही मुक्ति का ध्यान रखें, कहीं ऐसा न हो कि अचानक मृत्यु हम पर भी आ पड़े, और कहीं ऐसा न हो कि हम यहाँ से बड़ी नदिंा के साथ चले जाएँ।

४३. उस व्यक्ति से कहो जो तुममें दुष्ट और अशुद्ध इच्छाएँ भरता है: 'हे सत्य के शत्रु! क्या मुझे अपनी ही लज्जा मटिाकर तुम्हारी इच्छा पूरी करनी चाहिए? अपने जैसे भ्रष्ट लोगों के पास जाओ। तुमने सूअरों के झुंड की माँग की है! उनके साथ डूब जाओ। जहाँ तक मेरी बात है, मैं अब अपनी इच्छाओं का दास नहीं रहूँगा। मैं अतीत से तंग आ चुका हूँ; अब से मैं सत्य पर ध्यान दूँगा, और अपने ईश्वर से वनिती करूँगा कि वह मुझे आपके मार्गों से पूरी तरह से मुक्त कर दें। उन्होंने मुझे पवित्र आत्मा दयिा, और मैंने उन्हें दुखी कयिा है; उन्होंने मुझे एक शुद्ध आत्मा और शरीर दयिा, और मैंने उन्हें अपवित्र कर दयिा है।" हे मेरे प्रयि, ऐसे ही उस व्यक्ति से बोलो जो आप में ऐसे जुनून जगाता है।

४४. संतों में से एक ने कहा: 'व्यभचिार एक कुत्ते के समान है; यदि आप उसे सहलाएँगे, तो वह आपको नहीं छोड़ेगा, परन्तु यदि आप उसे भगा देंगे, तो वह भाग जाएगा।' अपने बारे में सचेत रहो, और अपने जीवन की उपेक्षा मत करो। सावधान रहो कि थोड़ी सी सुख-भोग के लिए तुम अपने श्रम का फल नष्ट न कर दो – कि अशुद्धता के कारण तुम अपने कर्मों का प्रतफिल न खो दो – कि अशुद्धता के कारण तुम मौन, जागरण, संयम और अन्य सद्गुणों का प्रतफिल नष्ट न कर दो; उस मनुष्य के समान न बनो जो अपनी कमाई की मजदूरी को एक छेद वाले थैले में रखता है। – प्रभु के भय से अपनी रक्षा करो।

४५. यदि आप कसिी तेजस्वी सुंदरी से बात कर रहे हों, तो अपनी आँखों की रक्षा करें, कहीं वासना आपके मन को वचिलति न कर दे; क्योंकि तब आप लंबी-लंबी बातें करने लगेंगे, आपके शब्द कामुक उत्साह से भरे होंगे; और ऐसा होगा कि जब आप होंठों से पवित्रता की बात करेंगे, तब आपके मन में वासना को जगह दे रहे होंगे और उसमें पूरी तरह से डूबे होंगे। इसलिए, जब आपके साथ ऐसा कोई संयोग हो, तो बातचीत को बीच में ही समाप्त कर देना और मौन का सहारा लेना बेहतर है। क्योंकि धर्मग्रंथ कहता है: *'वह अपनी बहुत सी बातों से उसे बहका लेती है'* (नीतविचन 7:21)। इस प्रकार की बार-बार होने वाली बातचीत आत्मा को बहुत हानि पहुँचाती है।

४६. एक व्यभचिारी उस व्यक्ति से प्रेम नहीं कर सकता जो उसके जुनून से घृणा करता है, लेकनि *'एक आदमी अपने ही जैसे लोगों से चपिका रहता है'*।

४७. अपनी वासना पर काबू पाने के तरीके खोजें; क्योंकि यह आपके अपने प्रयासों पर छोड़ दयिा गया है।

४८. कामुकता से बचाव का पहला उपाय है, बार-बार और एक स्पष्ट मन से प्रार्थना करना, और फरि मन और शुद्ध वचिारों को नयिंत्रण करने देना, आत्मा की श्रद्धेय प्रवृत्तकि अनुकूल न होने वाले अश्लील शब्दों को बोलने से परहेज़ करना, इस नश्चितिता के साथ कप्रिभु अचूक न्यायाधीश हैं। सचेतता और न्याय की अपेक्षा आंतरकि हलचल को नष्ट कर देगी और बढ़ती हुई कामवासना को सुखा देगी; और ऐसी आत्मा में स्थरिता होगी (कामवासना की प्रवृत्तयिाँ शांत हो जाएँगी)।

४९. यदआिप ब्रह्मचारी हैं, तो अपने संयम का घमंड न करें, बल्कवििनम्रता से प्रभु से प्रार्थना करें कवि अंत तक आपके रक्षक बने रहें। क्योंकयिह असामान्य नहीं है कअिंगूर के बगीचे में चार पैरों वाले जानवरों का अचानक आक्रमण, पहरेदार की लापरवाही के कारण, फलों को अचानक नष्ट कर दे।

५०. जब आप सोने जाएँ, तो आवश्यकता से अधकि बस्तिर न बछिाएँ; क्योंकआिराम स्वाभावकि रूप से आपके शरीर को प्रज्वलति कर सकता है और वासना की अंगीठी को बहुत भड़का सकता है।

५१. धन्य है वह जो अपने शरीर की रक्षक मसीह के लिए एक पवत्रि स्थान के रूप में रक्षा करता है, और अपने आत्मा को अयोग्य कर्मों से लज्जति नहीं कयिा है, बल्कप्रिभु को प्रसन्न करने वाला बना रहा है। धन्य है वह जसिने घृणति और लज्जास्पद कर्मों से घृणा की है, और स्वयं को प्रभु को प्रसन्न करने वाले एक जीवति बलदिान के रूप में अर्पति कयिा है।

52. धन्य है वह जो अपने कर्मों द्वारा यातना देने वाले (शैतान—आत्माओं के अत्याचारी) को फटकारता है, और कामवासना की ज्वालाओं के भय से पराजति नहीं हुआ है; क्योंकउिसकी आत्मा पवत्रि आत्मा की ओस से सचिति होगी।

५३. यदतिुम उन लोगों के वरिुद्ध बहादुरी से लड़ते हो जो तुम्हारी मेहनत के फल (व्यर्थ वचिारों) को चुराना चाहते हैं; तो सावधान रहो ककिोई चालाकी से नीचे से आकर तुम्हें नीचे न गरिा दे (एक कामुक वचिार)। परन्तु अपने वचिारों को व्यवस्थति रखो (सतर्क रहो), कहीं ऐसा न हो कतिुम एक अनुकूल हवा को पहचान न सको, और अपना उपकरण तैयार रखो, ताकतिुम जहाज़ को जीवन के बंदरगाह में ले जाकर बचा सको।

54. कौन है जो अपने बगीचे में अंजीर का पेड़ लगाता है, फरि भी उसके फल की नगिरानी नहीं करता? तो फरि पवत्रिता और ब्रह्मचर्य की रक्षा करना और भी अधकि आवश्यक है। – या फरि, जसिे सर्प ने डसा हो, वह उसके बलि के पास जाने से बचने का ध्यान न रखे? यदडिसे जाने के बाद भी वह अपना हाथ उसके बलि में डाले, तो उसे फरि से डस लयिा जाएगा; तो उसकी मृत्यु का दोषी कौन होगा? क्या वह वषिैला जीव है, या वह व्यक्तजिो अपनी रक्षा करने में वफिल रहा? – जो कहा गया है, उसे अच्छी तरह समझो।

५५. एक भक्षिु के लिए कसिी स्त्री के साथ मेलजोल करना हानकिारक है। और यदआिपके भीतर अभी भी देह की कोई कामना है, तो कसिी कुंवारी के पास बलि्कुल भी न जाएँ। जो भक्षिु स्त्रयिों के साथ शराब पीने में समय बतिाता है, वह स्वयं को आग में झोंकने वाले से कोई बेहतर नहीं है। उनसे मलिने से भागो, ठीक वैसे ही जैसे एक पहाड़ी बकरी फंदे से भागती है।

५६. अपने शरीर की पवत्रिता की रक्षा करो। यदतिुम इसे मसीह के प्रेम से बनाए रखते हो, तो तुम हर सद्गुण में सहज ही उत्कृष्ट हो जाओगे। तुम में वास करने वाला पवत्रि आत्मा तुम पर प्रसन्न होगा, क्योंकतिुम अपने ईश्वर के मंदरि को पवत्रिता और धार्मकि इच्छा की सुगंध से भर देते हो - और वह तुम्हें हर अच्छे काम में बल देगा। और सद्गुणों तथा दैवी पवत्रिता में उत्कृष्टता प्राप्त करने के लिए, आपके पास नम्निलखिति तीन सहायक साधन हैं: पेट और जीभ का संयम, और आँखों पर संयम। तीनों का पालन करना आवश्यक है। यद, उदाहरण के लिए, आप पहले दो का पालन करते हैं लेकनि अपनी आँखों को भटकने से रोकने में असफल रहते हैं, तो आप स्थायी पवत्रिता प्राप्त नहीं कर पाएंगे। जसि प्रकार एक टूटी हुई पानी की नली पानी नहीं रोक सकती, उसी प्रकार एक भटकती हुई आँख पवत्रि मन को नहीं रोक सकती। *'अजनबयिों की सुंदरता पर दृष्टनि डालो'* (सरिैक स 9:8) – और तुम्हारा मन परमेश्वर के भय पर स्थरि रहे (यशायाह 118:120)।

५७. एक संन्यासी को अपने शरीर या पैरों को वशिेष सावधानी से नहीं धोना चाहिए। जैसे वे लोग जो शरीर और वस्त्रों की सुंदरता में सुख की तलाश करते हैं, वैसे ही धर्म का तपस्वी अपने वरिोधयिों के खलिाफ वपिरीत करके खड़ा होता है।

58. पवत्रिता (शुद्धता) और अशुद्धकि बीच संघर्ष कोई मामूली बात नहीं है। जो लोग हमें अपवत्रिता में सहायता करते हैं, वे यह वचिार जगाते हैं: 'कोई तुम्हें नहीं देखता; तुम कसिसे डरते हो?' लेकनि जो लोग हमें पवत्रिता में सहायता करते हैं, वे उनसे कहते हैं: 'ईश्वर देखता है – और उसके दूत तुम्हारे साथ हैं; तो फरि तुम कैसे कह सकते हो, "कौन तुम्हें देखता है?"' प्रलोभी जारी रखता है: 'वे कहाँ हैं? 'यहाँ अभी तक कोई दखिाई नहीं दे रहा है।' इस पर, पवत्रिता

का समरथन करने वाले उसे बीच में टोकते हैं: 'क्या तुम नहीं देख सकते?! – तुमने सत्य कहा है: क्योंकि लिखा है: *"उनकी दुष्टता ने उन्हें अंधा कर दिया है"* (ज्ञाना. 2:21)। *"क्या आँख का स्रष्टा हम पर दृष्टि नहीं डालता?"* (भजन संहिता 93:9)? तुम परमेश्वर से कहाँ छिप सकते हो (भजन संहिता 138:1-12)?" – यही बात है जिसे तुम्हें अपने हृदय में बसा लेना चाहिए – और पाप का तुम पर और अधिकार न रहेगा, और न ही पाप का दुख तुम पर हावी होगा, बल्कि पवित्र आत्मा में आनंद और शांति तुम्हें प्राप्त होगी।

५९. प्रभु में अपने शरीर की पवित्रता को एक अनमोल मोती के समान सुरक्षित रखो; अपने वस्त्रों का दिखावा न करो; अपनी दृष्टि को नीचे रखो, और अपनी आत्मा को ऊपर की ओर मोड़ो; किसी जवान के साथ बहुत घनिष्ठ न बनो, और किसी स्त्री से बात करना भी एक अनावश्यक बात है; किसी जवान लड़के से लंबी बातचीत न करें, और मद्यपान करने वालों तथा ठट्ठा करने वालों के साथ मेलजोल न करें, बल्कि परमेश्वर के भय में पूरी तरह से बने रहें, प्रेरित की आज्ञा को याद करते हुए: *'शराब से मतवाले न बनो, क्योंकि उसमें व्यभिचार है'* (इफिसियों 5:18)।

60. कभी-कभी ऐसा होता है कि दुष्ट ऐसा प्रलोभनपूर्ण विचार डालता है: 'एक कामुक विचार हर पल तुम्हें परेशान करता है; तुम्हें इस पीड़ा को और कितनी देर तक सहना होगा और इसे सहना होगा? शरीर को संतुष्ट करो, ताकि संघर्ष में न रहो; बाद में पश्चाताप कर लेना - यह कोई बड़ी बात नहीं है।' उसका स्पष्ट दिमाग से जवाब दो: 'लेकिन कौन मुझे यह बता सकता है कि अगर मैं अपने शरीर की इच्छाओं को पूरा करूँ, तो मुझे पश्चाताप के लिए समय मिल जाएगा, और मैं उन लोगों के साथ बहा नहीं दिया जाऊँगा जो अधर्म का अभ्यास करते हैं? क्योंकि हमारी *ज़िंदगी धरती पर एक तम्बू भर है'* (अय्यूब 8:9)। अगर ऐसा होता, तो क्या मेरे लिए पाप करना और तलवार उठाकर आत्महत्या करना एक समान नहीं होता? – और आप यह कैसे कह सकते हैं कि यह कोई तुच्छ बात है? क्योंकि मैं देखता हूँ कि जिन्होंने इस प्रलोभन के आगे आत्मसमर्पण नहीं किया है, उन्हें कितना सम्मान दिया जाता है, और जिन्होंने इसमें लिप्त होकर पाप किया है, वे कितने अपमानित होते हैं। यूसुफ की पीढ़ी-दर-पीढ़ी, स्वर्ग और पृथ्वी पर प्रशंसा की जाती है, जबकि मिस्र की स्त्री का उपहास किया जाता है; पवित्र सुसन्ना की महिमा की जाती है, जबकि कामुक बुजुर्गों ने सभी पीढ़ियों के लिए एक बुरा नाम पीछे छोड़ दिया है। – आप फिर भी कैसे कह सकते हैं: 'इसे बस एक बार संतुष्ट करो और तुमको शांति मिल जाएगी'? 'हे शैतान, क्या तू नहीं जानता कि एक जानवर, एक बार मांसाहारी आदतों का आदी हो जाए, तो वह इस जुनून में और भी अधिक लिप्त हो जाता है? और फिर भी तू मुझे यह यकीन दिलाना चाहता है कि अगर मैं अपनी वासना को शांत कर लूँ, तो यह मुझे फिर कभी परेशान नहीं करेगी। ईश्वर न करे, हे चालाक धोखेबाज़, जो एक शेर की तरह मेरी आत्मा को निगलना चाहता है। तुम्हारी मिठास कड़वी है; तुम्हारा सुझाव बुराई की गहराई है; तुम्हारे वादे मृत्यु और विनाश से भरे हैं। तुम मुझमें एक ऐसा पाप भर रहे हो जो मुझे प्रभु की कृपा से वंचित कर देगा और पवित्र आत्मा को दुख पहुँचाएगा। *'जिसके साथ,'* मैं *'अपने छुटकारा पाने के दिन* मुहरबंद किया गया *था'* (इफिसियों 4:30); फिर भी तुम कहते हो कि इसका कोई परिणाम नहीं है। तुम मुझे *'मसीह के अंगों को वेश्या के अंग बनाने'* (1 कुरिन्थियों 6:15) के लिए लुभाते हो, ताकि मैं एक ही क्षण में अपना अमर खजाना खो दूँ और उस पवित्रिकिरण को गँवा दूँ जिसके बिना कोई भी प्रभु को नहीं देखेगा। और यह, तुम्हारी दृष्टि में, कुछ भी नहीं है? तुम मुझे प्रभु को क्रोधित करने के लिए उकसा रहे हो, ताकि उस भयानक दिन, भयानक न्याय-सिंहासन के सामने, मुझे उनसे, न्यायी से, यह सुनना पड़े: 'हे दुष्ट दास, जो परमेश्वर के प्रेम की अपेक्षा इंद्रिय-सुखों में अधिक रत है, तूने अपनी अशुद्धियों और अपने पापों से पृथ्वी को कलंकित किया है।' और क्या यह महत्वपूर्ण नहीं है? – क्या तुमने स्वयं धर्मी परमेश्वर के भयानक न्याय की कठोरता और अपरिवर्तनीयता का अनुभव नहीं किया है, जो *'तुम्हारे साथ पाप करने वाले स्वर्गदूतों को* भी *नहीं बख्शेगा, बल्कि उन्हें अंधकार के कैदियों के रूप में बाँधकर, उन्हें महान दिन के न्याय के लिए उन लोगों द्वारा पहरे में रखवाएगा जो यातना झेल रहे हैं'*? और फिर भी तुम कहते हो: 'इसका कोई परिणाम नहीं है'? – तुम झूठ, चापलूसी और विनाश हो। झूठ और चापलूसी से तुम मन की आँखों को अंधा कर देते हो और दूसरों को इस क्षणिक आनंद को अनंत जीवन पर ترجیح देने के लिए बहकाने में कामयाब हो जाते हो। लेकिन हम, प्रभु के प्रति स्वयं को समर्पित कर चुके हैं, तुमसे नहीं डरते। प्रभु हमारी शक्ति हैं; प्रभु हमारा शरणस्थान हैं; प्रभु हमारे सहायक और रक्षक हैं।"

६१. व्यभिचार के दैत्य को न केवल भोजन से संयम द्वारा, बल्कि आँखों के संयम द्वारा भी शक्तिहीन किया जाता है, *'कि मैं व्यर्थता न देखूँ'* (भजन संहिता ११८:३७)। एक इधर-उधर भटकती नज़र में पहले से ही व्यभिचार होता है, जिसके बारे में प्रभु ने गवाही दी: *'जो कोई भी किसी स्त्री को वासना की दृष्टि से देखता है, वह मन में ही उसके साथ व्यभिचार कर चुका है'* (मत्ती 5:28)। ऐसा व्यभिचार उस व्यक्ति में जड़ से उखाड़ दिया जाता है जो अपनी आँखों को नीचे और अपनी आत्मा को प्रभु की ओर मोड़ता है; और जिसने अपने पेट पर विजय प्राप्त की है, उसने अपनी दृष्टि पर भी विजय प्राप्त की है। भटकती आँख एक भयानक विश्वासघाती है।

62. भटकती आँखों से उत्पन्न होने वाला विवाद आत्मा को वासना से प्रज्वलित कर देता है, चाहे वस्तु मौजूद हो या अनुपस्थित। यह तो सोते समय भी हृदय के सामने वस्तु को प्रस्तुत कर देती है; क्योंकि दुष्टात्माएँ मन में एक प्रलोभनपूर्ण छवि चित्रित करती हैं और मन पर कब्ज़ा कर लेती हैं, तथा उस व्यक्ति की आँखों द्वारा पहले देखी गई प्रलोभनपूर्ण वस्तु की छवि को फिर से ताज़ा कर देती हैं। इसी कारण से पैगंबर प्रार्थना करते हैं: *'मेरी आँखों को फेर दो, ताकि वे व्यर्थता न देखें'*।

63. जब एक राक्षस आपके भीतर एक प्रलोभनकारी वस्तु का चित्र बनाना शुरू करता है, और आपके मन में एक ऐसी महिला की सुंदरता को रंगता है जिसे आपने कभी देखा भी नहीं है; अपने भीतर ईश्वर का भय धारण करो, और उन लोगों को याद करो जो अपने पापों में सो रहे हैं – अपने प्रस्थान के दिन पर मनन करो, जब तुम्हारी आत्मा तुम्हारे शरीर से अलग हो जाएगी – उस भयानक और डरावनी आवाज़ की कल्पना करो जो उन लोगों द्वारा सुनी जाएगी जिन्होंने सत्य की उपेक्षा की है और मसीह की आज्ञाओं का पालन करने में विफल रहे हैं: *'मेरे पास से दूर हो जाओ, हे शापित, उस अनंत आग में जो शैतान और उसके स्वर्गदूतों के लिए तैयार की गई है'* (मत्ती 25:41) – उस कीड़ा की भी कल्पना करो जो कभी नहीं मरता और उस अनंत यातना की। इस पर मनन करो और इसे अपने मन में रखो – और सुख की लालसा तुम्हारे विचारों से वैसे ही मिट जाएगी जैसे आग के सामने मोम पिघल जाता है; क्योंकि दुष्टात्मा और क्षणिक पल ईश्वर के भय के सामने टिक नहीं सकते।

64. जो कोई भी वासना का विरोध नहीं करता, बल्कि अपनी आँखों को स्वतंत्र रूप से भटकने देता है, उसने निश्चित रूप से पहले ही अपने मन को कामवासनाओं के हवाले कर दिया है; और यदि मानव लज्जा न होती, तो वह एक से अधिक बार अपने शरीर को कलंकित कर चुका होता। क्योंकि यदि वह स्वयं को संयम में नहीं रखता और लगातार परमेश्वर के भय को अपनी आँखों के सामने नहीं रखता, तो वह अपने शरीर को कलंकित करने में देरी नहीं करेगा। क्योंकि इस दानव, जो आँखों को भटकने के लिए सिखाता है, के पीछे एक और दानव आता है, जो वास्तव में शरीर में पाप करता है। यदि दूसरा देखता है कि पहला आत्मा को भटकाने और उसे लापरवाह बनाने में सफल हो गया है, तो वह तुरंत एक शारीरिक पाप करने के लिए भी उकसाना शुरू कर देता है। जिस पर उसकी अपनी आँखें हावी हो जाती हैं, उसे वह कुछ इस तरह का सुझाव देने लगता है: 'तुमने पहले ही अपने इरादे में पाप कर लिया है और अपने हृदय में व्यभिचार किया है; तुम पहले ही आज्ञा तोड़ चुके हो, और आज्ञा उल्लंघन का पाप पहले ही तुम्हारे खाते में डाल दिया गया है। इसलिए, अब अपनी वासना को पूरा करो। क्योंकि करना और इच्छा करना एक ही बात है। कम से कम अपनी वासना में आनंद तो लो।' – लेकिन उसके विचारों पर विश्वास मत करो, प्रेरित के शब्दों के अनुसार: *'हम उसकी योजनाओं को नहीं समझते'* (2 कुरिन्थियों 2:11)। क्योंकि इसी से वह तुम्हारी आत्मा को फँसाने का प्रयास करता है। – इस दानव को, जो आपको एक अनैतिक पाप करने की सलाह देता है, आपको कहना चाहिए: 'यद्यपि मैं अपनी आँखों से गिर गया हूँ और अपने हृदय में व्यभिचार किया है, फिर भी मैं अपने व्यभिचारी हृदय को पश्चाताप की आहों से तोड़ता हूँ, और अपनी गिरी हुई आँखों को आँसुओं से धोता हूँ। क्योंकि *'हे परमेश्वर, तू टूटे और कुचले हुए हृदय को तुच्छ नहीं जानेगा'* (भजन संहिता 50:19)।

65. यदि आपको किसी गाँव में जाना पड़े, तो स्त्रियों से बात करके अपना मनोरंजन न करें, कहीं ऐसा न हो कि आपकी आत्मा उस पक्षी की तरह फँस जाए जिसने साँप निगल लिया हो। तब और भी सतर्क रहें; क्योंकि आप गिरने से बहुत दूर नहीं हैं। यदि आप अपना ध्यान रखते हैं, तो आप एक सुरक्षित बंदरगाह में होने के समान होंगे। परमेश्वर के भय और श्रद्धा के साथ प्रलोभन से लड़ें। निर्मलता व्यभिचार की जननी है। यदि महिलाएँ देखें कि आप उनके साथ बहुत बेधड़क व्यवहार करते हैं और तुच्छ बातें करते हैं, तो वे आपको और भी बुरे कामों के लिए उकसाएँगी और आपका पतन कराएँगी। – लेकिन आप भी सतर्क रहें, कहीं अन्य लोग पश्चाताप और श्रद्धा के बहाने अपने शब्दों से आपके संकल्प को कमजोर न कर दें। एक संत ने कहा: वे इस प्रकार बोलते हैं, ताकि आपको वासना की ओर झुका सकें।

66. यदि आप ध्यान दें कि कोई विशेष विचार आपको किसी युवक या सुंदर महिला की ओर खींच रहा है, तो जान लें कि आप शत्रु के जालों के करीब आ रहे हैं। यदि, चेतावनी दिए जाने के बाद भी, आप अपना इरादा नहीं छोड़ते, तो जान लें कि आप पहले से ही जाल में फँस चुके हैं, और आपके लिए कामुक इच्छा पर काबू पाना आसान नहीं होगा। आप कह सकते हैं: 'मुझे इससे कोई नुकसान नहीं होता।' लेकिन क्या अपने पैरों को जलाए बिना जलती हुई कोयलों पर चलना संभव है?

६७. यदि आप पवित्र बनना चाहते हैं, तो संयम का अभ्यास करें और हानिकारक भेंटों को समाप्त कर दें। जिस हद तक कोई व्यक्ति प्रलोभन पैदा करने वाली चीज़ के करीब जाता है, उसी हद तक उसके लिए अपने दिल को परेशान करने वाले विचारों और दुष्ट इच्छाओं की प्रज्वलन से मुक्त रखना असंभव है; क्योंकि एक चेहरे का दर्शन और

वाणी की ध्वनि उसे कामवासना के लिए उत्तेजित करती हैं। जैसे एक स्पंज, जब किसी गीली चीज़ पर रखा जाता है, तो फूल जाता है और नमी को सोख लेता है, वैसे ही एक ऐसे व्यक्ति का भी होता है जिसके विचार अस्थिर हैं: यदि वे कामुक बातें करने वालों के पास जाते हैं या उनसे देर तक बातें करते हैं, तो वे हानि को सोख लेते हैं; इसलिए, इस से मदहोश होकर, वह अपनी किसी गलती के बिना ही मदहोश हो जाता है, और चूँकि वह पहले से ही हानिकारक चीज़ों से भर चुका होता है, इसलिए वह आध्यात्मिक वचन ग्रहण नहीं करता है।

६८. जो अपना सुधार करना चाहता है और पवित्रता में स्थिर होना चाहता है, उसे पवित्र विचारों से दृढ़तापूर्वक चिपके रहना चाहिए, अच्छे कर्मों से शरीर को थकाना चाहिए, और ईश्वर के अखंड स्मरण द्वारा, अपने मन को सभी बुराइयों और लज्जास्पद बातों से शुद्ध करना चाहिए। इसके द्वारा, हमारा मन अनुग्रह से भर जाता है; और ईश्वर का अनुग्रह, मन में निवास करते हुए और उस पर शासन करते हुए, जब धूर्त शत्रु प्रवेश करने का प्रयास करते हैं तो उनके लिए मार्ग अवरुद्ध कर देता है।

६९. जब आप एक समझदार महिला को देखते हैं जो सुंदरता से दमकती है, जिसकी दृष्टि तेजस्वी है, गाल दमकते हुए हैं, और चेहरे पर एक तरह की बनावटी भाव-भंगिमा है – और वह आपके विचारों को जगाती है और आपकी इच्छाओं को तीव्र करती है – तो इस पर मनन करें कि जो आपको चकित कर रहा है वह मिट्टी है, और जो आपको भड़का रहा है वह राख है; – और आपकी आत्मा का क्रोध शांत हो जाएगा। अपने विचार उसके चेहरे की त्वचा पर केंद्रित करें, और तब आप उसकी सुंदरता की पूर्ण निरर्थकता देखेंगे; क्योंकि आपको उसमें हड्डियों, स्नायुओं और एक भयानक बदबू के सिवा कुछ भी नहीं मिलेगा। यह भी कल्पना करें कि वह बूढ़ी हो जाती है, बदल जाती है, मर जाती है, और यह सारा रंग फीका पड़ जाता है। सोचो कि वह क्या है जो तुम्हें चकित करता है, और लज्जित हो जाओ – और, लज्जित होने के बाद, पश्चाताप करो।

70. धन्य है वह मनुष्य जो परमेश्वर को प्रसन्न करने की चिंता करता है और अपने शरीर को शुद्ध रखता है, ताकि वह मसीहा राजा का पवित्र मन्दिर बन सके। हे मनुष्य, क्या तूने अपनी स्वेच्छिक इच्छा से पहले ही एक मंदिर बन लिया है? दिन-रात अपने प्रति सचेत रह, कहीं तेरा मंदिर अपवित्र न हो जाए। यदि तू इसे शुद्ध और अपने प्रभु की सेवा के योग्य बनाए रखता है, तो परमेश्वर का आत्मा तेरे भीतर वास करेगा और तुझे दिन-प्रतिदिन अधिक पवित्र करेगा।

७१. विश्वास, आशा और प्रेम से स्वयं को सुसज्जित करो, और एक मज़बूत पहरेदार की तरह दृढ़ खड़े रहो, जो परमेश्वर के मंदिर की रक्षा सभी अशुद्ध विचारों से करता हो। हमेशा चौकस रहो, लगातार निरीक्षण करते रहो और शैतान के लूटने वालों पर नज़र रखो; क्योंकि जैसे ही ये लुटेरे किसी सुस्त और विचलित व्यक्ति को पाते हैं, वे हमेशा उस पर झपट पड़ते हैं ताकि उसके दयनीय देह रूपी मंदिर को अशुद्ध कर दें, ताकि वह अब प्रभु के योग्य न रहे। तो, सतर्क रहो, कहीं ऐसा न हो कि तुम स्वयं दुष्ट के इन लुटेरों—अर्थात्, अशुद्ध विचारों और दुष्ट इच्छाओं—का स्वागत कर रहे हो।

७२. कामवासना की जड़ निर्लज्ज होती है। यदि आप इसे हर दिन काटते हैं, तो यह हर घंटे मुरझा जाती है। कामवासना की जड़ को अपने हृदय से पूरी तरह से उखाड़ फेंकें, ताकि यह न तो मुरझाए और न ही घंटे-घंटे फिर से उगे। यदि आप इसे हजार बार काटते हैं, तो यह दोगुनी बार उगेगी - जब तक कि आप इसे पूरी तरह से उखाड़ न दें।

७३. अपने आप पर चौकस रहो, कहीं पवित्र और परम-शुद्ध प्रभु के बजाय, तुम दुष्ट शत्रु को अपने मंदिर में प्रवेश करने की अनुमति न दे दो, और कहीं तुम्हारा मंदिर इस दुष्ट शत्रु, जो भलाई से घृणा करता है, की निर्लज्जता से अपवित्र न हो जाए। वह अपने इरादे में निर्लज्ज और जिद्दी है; भले ही आप उसे बार-बार फटकार लगाकर भगाएँ, वह निर्लज्जतापूर्वक प्रवेश करने का प्रयास करता है। यदि आप उसे अपने मंदिर में प्रवेश करने दें, तो ईश्वर आपको त्याग देंगे। और आपका मंदिर हर तरह की अशुद्धि, बदबू और अंधकार से भर जाएगा।

3. धन के प्रेम के विरुद्ध संघर्ष पर

1. उस लाभ की खोज न करो जो आत्मा के लिए हानिकारक हो; क्योंकि आत्मा से अधिक कीमती और क्या है?

2. एक गरीब भिक्षु जो नम्रता में चुप रहता है, वह एक धनी भिक्षु से बेहतर है जो घमंड और अहंकार से भरा है।

3. जो कोई सोने से प्रेम करता है, वह धर्मी नहीं ठहरेगा; परन्तु जो कोई प्रभु से प्रेम करता है, वह धन्य होगा। जो कोई अपनी आशा सोने में रखता है, वह गिर जाएगा; परन्तु जो कोई अपनी आशा प्रभु में रखता है, वह उद्धार पाएगा।

4. यदिआप धन के प्रेम से प्रेम करते हैं, तो आप इस संसार से कुछ भी बिना छोड़े जाएँगे; लेकिन यदिआप लालचहीनता से प्रेम करते हैं, तो आप स्वर्गीय धन से वंचित नहीं रहेंगे।

5. यदिआप गरीबी से प्रेम करते हैं, तो आप व्यभिचार के दानव को भागने पर मजबूर कर देंगे।

6. जो कोई अपने कोठरी में सोना छिपाता है, वह अपने भीतर गर्व और अवज्ञा की कामनाओं को संचित करता है। लेकिन जो कोई अपनी खजाना-गृह में प्रार्थनाएँ और दान इकट्ठा करता है, वह परमेश्वर में धनी होता है। दूसरे अपने लिए धन संचित करते हैं, लेकिन तुम, हे भिक्षु, अपने लिए प्रार्थनाएँ और दान संचित करो।

7. हमें केवल वही खोजना चाहिए जो हमारी आवश्यकताओं को पूरा करे; क्योंकिअधिकता केवल ध्यान भटकाती है और कोई लाभ नहीं देती।

8. जो भिक्षु अपने सांसारिक माता-पिता से विरासत चाहता है, वह प्रलोभन में पड़ता है, लेकिन जो प्रभु को खोजता है, वह उद्धार पाएगा।

९. यह न कहो, 'जब मैं बूढ़ा हो जाऊँगा तो क्या खाऊँगा?' क्योंकिहमें आने वाले दिन के लिए भी चिंता करने की अनुमतिनहीं है, और फिर भी तुम पहले से ही वृद्धावस्था के बारे में चिंता कर रहे हो। आइए हम *'पहले परमेश्वर के राज्य और उसकी धार्मिकता की खोज करें, और ये सब चीजें हमारे लिए भी जोड़ दी जाएँगी'* (मत्ती ६:३३)। हालाँकि, यदिहम इसे सबसे ऊपर नहीं खोजते हैं, तो यह स्पष्ट हो जाएगा किहम इसकी बिल्कुल भी परवाह नहीं करते हैं। इसलिए, *'अपना बोझ प्रभु पर डाल दो, और वह तुम्हें सहारा देगा'* (भजन संहिता 54:23)।

10. एक लोभी भिक्षु सूखी खजूर की तरह है, जबकिजो लोभी नहीं है वह छाँटे हुए खजूर के पेड़ की तरह है जो ऊँचा बढ़ता है।

11. सांसारिक चीजों से लगाव रखने वाला एक भिक्षु उस बाज़ की तरह है जिसके पैरों में पट्टियाँ बँधी हों; वह जहाँ भी उतरता है, वहीं फँस जाता है। लेकिन जो सांसारिक चीजों से लगाव नहीं रखता, वह एक यात्री की तरह है, जो हमेशा निकलने के लिए तैयार रहता है।

12. सोना धैर्य नहीं लाता, लेकिन विश्वास उन्हें जो इसे प्राप्त कर लेते हैं, एक ठोस नींव पर स्थापित कर देता है।

13. हम हर बेकार की चिंता को क्यों नहीं त्याग देते और सांसारिक चीजों के बोझ से खुद को क्यों नहीं मुक्त कर लेते? क्या तुम नहीं जानते किद्वार संकरा है और मार्ग कठिन है, और लालची लोग इसमें प्रवेश नहीं कर सकते? ईश्वर उन लोगों से प्रेम करते हैं जो लालची नहीं हैं, जिन्होंने मसीह के लिए स्वेच्छा से तंगियों और दुखों को सहा है, अपनी मेहनत में, अपनी जाग-तपस्या में, और बहुत कष्टों में।

14. लेने के लिए अपना हाथ फैलाओ नहीं, बल्किदेने के लिए फैलाओ (सिरैक 4:35)।

15. लालच का जुनून सबसे दुखद है, क्योंकियह *'सभी बुराइयों की जड़'* है (1 तीमुथियुस 6:10)। क्या आप जानना चाहेंगे किइस जुनून को कैसे जड़ से उखाड़ा जाता है? – अपने पूरे हृदय और अपनी पूरी आत्मा से परमेश्वर में आशा रखने से।

16. एक अन्य भाई में, दुष्ट व्यक्तिहाथ के काम के प्रतिअत्यधिक उत्साह भर देता है। इससे धन के प्रेम का जुनून उत्पन्न होता है। तब आत्मा, धन के प्रेम—जो समस्त बुराइयों की जड़ है—से घायल होकर, भिक्षु को सुबह सामान्य से पहले अपने हस्तशिल्प पर बैठने और शाम को उचित समय से बाद में इसे बंद करने के लिए प्रेरित करती है; ताकि, यदिसंभव हो, तो वह प्रार्थना या दैवीय अनुष्ठान के बारे में न सोचे, और धन के प्रेम से प्रेरित होकर, केवल अपने काम में ही व्यस्त रहे। जब सेवा के लिए घंटी बजती है, तो यह भाई सभी के बाद आता है, और किसी से पहले सेवा छोड़ने के बहाने ढूंढता है। – यह जानकर, अपना बचाव करो, कहीं ऐसा न हो कितुम पूरी तरह से निषिद्ध मार्ग पर भटक जाओ और अपना पद खो दो। – क्योंकिदुश्मन यहीं नहीं रुकता। लेकिन, अंदर का रास्ता मिल जाने पर, वह दूसरों को बहकाने में सफल हो जाता है, यह सुझाव देते हुए: 'तुम बहुत मेहनत करते हो, फिर भी तुम्हारे पास दिखाने के लिए लगभग कुछ भी नहीं है; जाओ और कोई अधिक लाभदायक धंधा सीखो।' – मामले को पूरी तरह से समझे बिना, कोई भाई इस सलाह पर चलकर संसार में चला जाता है; और वहाँ हमेशा के लिए रह जाता है। इसलिए, सावधान रहो।

१७. ब्रह्मचर्य केवल व्यभिचार और कामुक सुखों से परहेज़ करने में ही नहीं, बल्किअन्य वासनाओं से भी मुक्त होने में निहित है। लालची, धन-प्रेमी और लोभी पवित्र नहीं होते। जैसे कोई व्यक्तिशारीरिक सुंदरता से मोहित होता है, वैसे ही दूसरा धन से मोहित होता है; और , बाद वाला, अधिक हद तक पवित्र नहीं है; क्योंकिउसमें पहले वाले जैसी वह प्रेरणा नहीं होती, जो उसे प्रकृतिकी ही मांगों से प्रेरित करती है। धन का जुनून स्वाभाविक नहीं है, और

इसके प्रति प्रवृत्तियाँ हमारी प्रकृति में नहीं बल्कि एक विकृत इच्छा में निहित हैं; अतः जो कोई भी स्वेच्छा से इसके आगे झुकता है, वह एक अक्षम्य पाप करता है।

४. क्रोध के विरुद्ध संघर्ष पर

1. जो अपने भीतर से क्रोध और चिड़चिड़ाहट की भावना को दूर कर देता है, वह कलह और विद्रोह से दूर रहता है; वह हमेशा आत्मा में शांत, चेहरे पर प्रसन्न और मन से स्वस्थ रहता है – और पवित्र आत्मा का वासस्थान होता है।

2. नम्र व्यक्ति जब अन्याय किया जाए तो भी प्रसन्न रहता है; अपमानित होने पर भी धन्यवाद देता है; क्रोधित लोगों को प्रेम से वश में करता है; जब मारा जाए तो भी अपनी शांति नहीं खोता; जब झगड़ा किया जाए तो शांत रहता है; – जब अधिकार के अधीन होता है, तो वह प्रसन्न होता है; (दूसरे के) अहंकार से उसे चोट नहीं पहुँचती; वह अपमान में भी प्रसन्न रहता है; वह अपने गुणों का घमंड नहीं करता; वह सभी के साथ शांति से रहता है; वह अपने वरिष्ठों के प्रति आज्ञाकारी होता है; वह किसी भी कार्य के लिए तैयार रहता है; वह कपट से मुक्त होता है; वह ईर्ष्या को नहीं जानता।

3. ईर्ष्या रहित व्यक्ति सम्मान की चाह नहीं करता; वह जो आनंदित होते हैं उनके साथ आनंदित होता है, जो समृद्धि प्राप्त करते हैं उनकी मदद करता है, जो सद्गुणों का मार्ग अपनाते हैं उन्हें प्रसन्नता से देखता है, जो उचित रूप से जीवन यापन करते हैं उनकी प्रशंसा करता है, और, सामान्य रूप से, ईर्ष्या और प्रतिद्वंद्विता से मुक्त होकर, दूसरों की हर सफलता और हर वीरतापूर्ण कार्य में प्रसन्न होता है।

४. जो ईर्ष्या और द्वेष से पीड़ित है, वह दयनीय है; क्योंकि वह शैतान का सहयोगी है, जिसके *'द्वारा ईर्ष्या से मृत्यु संसार में आई'* (ज्ञान 2:24)। उसका हृदय हमेशा दुख से थका रहता है, उसका शरीर पीला पड़ जाता है, और उसकी शक्ति क्षीण हो जाती है। ईर्ष्या और प्रतिद्वंद्विता एक भयानक विष हैं: उनसे बदनामी, घृणा और हत्या उत्पन्न होती है।

५. जिसने निंदा करके अपनी जीभ को घायल नहीं किया, उसने अपने हृदय और विवेक को दाग रहित रखा है। जिसने निंदा की भावना से पराजित नहीं हुआ, उसने वास्तव में यह पहचाना है कि वह स्वयं भी देहधारी है, और उसने स्वयं को प्रतिशोधी होने से बचाया है। जो निंदकों के साथ मेलजोल नहीं रखता, वह स्वर्गदूतों के साथ निवास करेगा। जिसने निंदा से अपने कानों और जीभ को विषाक्त नहीं किया है, वह प्रेम की उपचारक शक्ति से परिपूर्ण है। जिसने निंदा से अपने होठों को कलंकित नहीं किया है, उसके होंठ पवित्र आत्मा के फलों से परिपूर्ण हैं।

6. जो किसी की निंदा करता है, वह स्वयं को दोषी ठहराता है। निंदा में बदनामी, घृणा और परपीड़ा होती है; और उसे सही मायने में एक भ्रातृहंता माना जाता है।

7. भक्ति के भेष में छिपी घृणा या ईर्ष्या सोने के पात्रों में कड़वा पानी है। इसके भीतर जीवन का वृक्ष रोपें, और यह मीठा हो जाएगा। हमारे उद्धारकर्ता के क्रूस द्वारा, धूर्त शत्रु के सभी अपमान समाप्त हो जाते हैं।

8. प्रेम मन की आँखों को प्रबुद्ध करता है; लेकिन जो कलह और झगड़े से प्रेम करता है, वह उस व्यक्ति के समान है जो अक्सर अपना हाथ साँपों के बिल में डालता है।

9. यदि आप अपने हृदय में द्वेष की भावना पालते हैं, तो आप क्रोध और अज्ञानता, और साथ ही दुख का निवास-स्थान बन जाएँगे - और आपके मुख का तेज बदल जाएगा। क्योंकि कहा गया है: *'द्वेषी का मार्ग मृत्यु की ओर ले जाता है'* (नीतिवचन 12:28)।

10. जो मन में द्वेष पालता है, वह उस साँप के समान है जिसे वह अपनी छाती में पालता है।

11. क्रोधित मनुष्य अपने भाइयों की आत्मा को उत्तेजित कर देगा, परन्तु प्रेम में धीरज रखने वाला परमेश्वर का भय मानता है।

12. उत्तर की हवा समुद्र को उकसाती है, और गर्म स्वभाव मनुष्य के विचारों को; परन्तु उदारता चिड़चिड़ाहट को दूर करती है, और चिड़चिड़ाहट के बिना क्रोध समाप्त हो जाता है।

13. एक अनियंत्रित घोड़ा अपने सवार को दुष्टों के हाथों में सौंप देता है, और एक क्रोधित व्यक्ति मुसीबत में पड़ जाता है।

14. हे भिक्षु, ईर्ष्या की बात न सुन; अपने भाई के विरुद्ध षड्यंत्र न लगा, और उसे कोई अपमानजनक नाम न दे। जैसे तू उसे अपमान में उसके स्थान से हटाना चाहता है, सावधान रह कि वही बात तुझ पर न पड़े, जिसका तू दूसरे के विरुद्ध षड्यंत्र करता है। *'जो अपने पड़ोसी के लिए गड्ढा खोदता है, वह उसी में पड़ेगा'* (सभोपदेशक 10:8)। सुनो क्या लिखा है: *'दुष्ट अपने ही जाल में फँसेंगे'* (भजन संहिता 140:10)।

१५. यह बहाना न बनाओ: 'यह भाई समुदाय को नुकसान पहुँचा रहा है।' लेकिन किसी दूसरे के साथ बुराई न करो, और बुराई करने वालों के साथ मेलजोल न रखो; क्योंकि परमेश्वर *'दिलों और मन की गहराइयों की जाँच करता है'* (भजन संहिता ७:१०)।

16. जिसने धीरज और दया का मार्ग पाया है, उसने जीवन का मार्ग पाया है।

17. जो अपने भाई की सफलता से ईर्ष्या करता है, वह स्वयं को अनंत जीवन से वंचित कर लेता है, परन्तु जो अपने भाई की सहायता करता है, वह अनंत जीवन में उसका साथी होगा। क्योंकि यदि न्याय के दिन, बुराई करने वालों और उनके सहायकों दोनों को दंड दिया जाएगा, तो क्या प्रभु अपनी इच्छा की पूर्ति में सहायता करने वाले को और भी अधिक पुरस्कृत नहीं करेंगे?

18. बिना नियंत्रण के क्रोध करने से तो मुस्कुरा कर चिड़चिड़ाहट को शांत करना बेहतर है।

19. धुआँ मधुमक्खियों को भगा देता है, जबकि द्वेष हृदय से ज्ञान को दूर कर देता है।

20. प्रभु से प्रार्थना करो, और उसकी भलाई के सामने आँसू बहाओ: तब तुम्हारी आत्मा में द्वेष जड़ न पकड़ेगा, और तुम्हारी प्रार्थना उसके सामने *'धूप के समान'* होगी (भजन संहिता 140:2)।

21. जो कोई भी जहाँ कहीं भी रहे शांति से जीना चाहता है, उसे अपनी शांति नहीं बल्कि प्रभु में दूसरों की शांति की खोज करनी चाहिए, और उसे अपने लिए शांति मिलेगी। लेकिन झगड़ालू और चिड़चिड़े स्वभाव वाले को कभी शांति नहीं मिलेगी।

22. यदि भाइयों के बीच झगड़ा हो जाए, तो जो पहले पश्चाताप करेगा, उसे विजय का मुकुट मिलेगा; परन्तु दूसरे को भी मुकुट मिलेगा, बशर्ते कि वह पश्चाताप को न ठुकराए, बल्कि शांति के लिए आवश्यक कार्य स्वेच्छा से करे।

23. मनुष्य में चिड़चिड़ापन उसके लिए एक फंदा है; परन्तु जिसने अपने चिड़चिड़ेपन पर विजय प्राप्त की है, वह इस फंदे से बच गया है।

24. प्रभु भाइयों की एकता में वास करते हैं, जबकि उनकी शत्रुता दुष्ट को प्रसन्न करती है।

25. जो कोई भी गलत काम के लिए दोषी ठहराए जाने पर चुप रहता है, वह अपने दिल में कड़वाहट पालता है; लेकिन जो कोई भी नम्रता और शांति के साथ अपना बचाव करता है (या स्वीकार करता है), वह कोई कड़वाहट नहीं पालता।

26. एक चिड़चिड़ा और उग्र व्यक्ति जल्दी से गाली-गलौज करता है, जबकि शांत व्यक्ति बुद्धिमान होता है।

27. चिड़चिड़ापन क्या है? यह एक निर्लज्ज और शर्महीन जुनून है, जिसके बाद पश्चाताप होता है; लेकिन जो व्यक्ति इसमें पड़ जाता है, उसका हृदय दुख खा जाता है।

28. जो विद्रोह से प्रेम करता है, उसे अचानक विनाश, विभाजन और अपूरणीय तबाही आ घेरेगी; क्योंकि वह उन सभी बातों में आनंदित होता है जो प्रभु को घृणित हैं; परन्तु जो शान्ति से प्रेम करता है, वह शान्ति का वारिस होगा; और मनुष्य में नम्रता चिड़चिड़ापन को रोकती है।

29. चिड़चिड़ापन और प्रतिशोधी भावना साँप के विष के समान हैं; क्योंकि वे चेहरे को विकृत कर देते हैं, मन को परेशान करते हैं, नसों को कमजोर कर देते हैं, और व्यक्ति से उसके काम करने की शक्ति छीन लेते हैं; लेकिन नम्रता और प्रेम इन सब को दूर करते हैं।

30. द्वेष को कैसे समाप्त किया जाए? अपने प्राणों में परमेश्वर के भय और मृत्यु के दिन की स्मृति को बसाकर। *'अंत को याद करो, और झगड़े से रुक जाओ'* (सिरैक 28:6)। मृत्यु को याद करो, और घमंडी न बनो; क्योंकि थोड़ी ही देर में तुम्हें कब्र में लिटा दिया जाएगा; और तुम्हारे बुरे कर्म तुम्हें क्या लाभ पहुँचाएँगे?

31. शांति स्थापित करने वाले बनें, ताकि आप 'ईश्वर के पुत्र' की उपाधि के योग्य माने जाएँ।

32. आग का ईंधन लकड़ी है; क्रोध का ईंधन अहंकार है।

33. क्या तुम अपना क्रोध नियंत्रित करना चाहते हो? नम्रता को अपनाओ, और दीन व विनम्र लोगों के मार्ग पर चलो।

34. यदि भाई एक-दूसरे के साथ बड़े संकट में हों, तो शांति स्थापित करने वाला धन्य है; परन्तु जो उन्हें झगड़ने के लिए उकसाता है, वह दण्ड से नहीं बचेगा।

35. एक नम्र और विनम्र व्यक्ति में ज्ञान की आत्मा निवास करती है; परन्तु प्रभु उन लोगों से प्रेम करते हैं जो ज्ञान के मार्ग पर चलते हैं।

36. एक नम्र और मौन भिक्षु अनन्त जीवन का वारिस होगा।

37. एक नम्र भिक्षु एक रक्षक है जो वासनाओं पर नजर रखता है।

38. यदि तुम्हारा भाई तुमसे पाप कर बैठा है तो उसे क्षमा करो, और प्रभु तुम्हारे अपराध क्षमा करेंगे।

39. जसि भाई ने आपको ठेस पहुँचाई है, उसके पास जाने में जल्दी करें, और उसके सामने शुद्ध हृदय से पश्चाताप करें, उस वचन के अनुसार जसिने आज्ञा दी कि भाई के पापों को न केवल *'सात बार, बल्कि सित्तर बार सात' बार* क्षमा किया जाए (मत्ती 18:22)।

४०. हे भाई, अपने भाई का पश्चाताप परमेश्वर द्वारा भेजे हुए की ओर से आया हुआ मान ले, कहीं ऐसा न हो कि तू उसे अपमानित कर जो उसे भेजने वाला है और अपने ऊपर उसका क्रोध भड़काए।

41. अपने भाई पर उसके दुख के दिन आक्रमण न करो, और उसके शोक में वृद्धि न करो।

42. अपने भाई से रंजिश मत रखो; क्योंकि लिखा है: *'रंजिश रखने वालों का मार्ग मृत्यु की ओर ले जाता है'* (नीतिवचन 12:28)।

43. क्या आप अपमान सहन नहीं कर सकते? चुप रहें, और आपको शांति मिलेगी।

44. अपने आप का ध्यान रखें, कहीं ऐसा न हो कि क्रोध, चिड़चिड़ापन और प्रतिशोधी भावना आप पर हावी हो जाएँ – क्योंकि ये आपको चिंता और अव्यवस्था का जीवन जीने के लिए प्रेरित करेंगी। लेकिन उदारता, नम्रता, दयालुता और वह सब कुछ विकसित करें जो ईसाइयों के लिए उपयुक्त है, ताकि आप एक शांतिपूर्ण और सुकून भरा जीवन जी सकें।

45. अपने हृदय में किसी के प्रति घृणा न पालो, और बुराई का बदला बुराई से न लो; बल्कि प्रेम का संवर्धन करो, जिसे पवित्र शास्त्रों ने हर गुण से ऊपर रखा है; क्योंकि उन्होंने इसकी तुलना स्वयं सृष्टिकर्ता से की है, यह कहते हुए: *'ईश्वर प्रेम है'* (1 यूहन्ना 4:8)।

४६. प्रभु उस गिरे हुए व्यक्ति को, जो अपने भीतर कोई बैर या ईर्ष्या नहीं रखता, उस गिरी हुई अवस्था में नहीं छोड़ेंगे; बल्कि उसे फिर से उठने के लिए सहारा देंगे – क्योंकि उसने प्रेम को अस्वीकार नहीं किया है। दूसरी ओर, जो दृढ़ खड़ा दिखाई देता है लेकिन घमंड से फूल गया है और भीतर से द्वेष रखता है, वह सुरक्षित नहीं है; क्योंकि द्वेष के अंधकार ने उसकी आँखों को अंधा कर दिया है, और वह नहीं देखता कि वह कहाँ जा रहा है।

47. जल्दी क्रोध करने का प्रयत्न न करो, कहीं ऐसा न हो कि तुम बिना कारण के मदहोश हो जाओ और क्रोध के जुनून का बोझ स्वयं पर लाद लो।

४८. पड़ोसी की सफलता पर आनन्दित और प्रसन्न होना पूर्णता का लक्षण है; जबकि जब दूसरे की प्रशंसा की जाती है तो दुखी और असंतुष्ट होना एक बुरे चरित्र और दुर्भावनापूर्ण स्वभाव का संकेत है।

४९. प्रेम में विलीन हुए बिना सद्गुण को पूर्णता तक पहुँचाना एक असंभव कार्य है (१ कुरिन्थियों १३:२)। प्रेम के बिना, हम स्वर्ग के द्वार तक जाने वाले सीधे रास्ते से बहुत दूर भटक जाएँगे। इसलिए हम आँसू बहाएँ, ताकि हम घृणा, ईर्ष्या, अहंकार और हर शैतानी मलिनता के बंधनों से मुक्त हो सकें। जो समृद्धि प्राप्त करते हैं, उनके गुणों से आहत होना एक शैतानी कर्म है। घृणा ने दानवों में जड़ें जमा ली हैं; उनकी सबसे बड़ी इच्छा है कि सभी का सर्वनाश हो जाए। किन्तु संत, प्रभु के उदाहरण का अनुसरण करते हुए, *'चाहते हैं कि सब मनुष्य बचें और सत्य के ज्ञान में पहुँचें'* (1 तीमु. 2:4); क्योंकि, प्रेम से परिपूर्ण होकर, उन्होंने अपने पड़ोसी से वैसा ही प्रेम किया है जैसे उन्होंने स्वयं से किया है।

५०. धैर्यवान बनें, ताकि आप विवेक में मजबूत हो सकें। धैर्य एक अद्भुत उपहार है; यह चिड़चिड़ापन, क्रोध और तिरस्कार को दूर करता है, और आत्मा को एक शांतिपूर्ण अवस्था में लाता है।

५१. जब कोई आपकी बदनामी करे, तो क्रोध से आग-बबूला न हों; बल्कि तुरंत, विनम्रता और चेहरे पर मुस्कान के साथ, अपनी चिड़चिड़ाहट को शांति में बदल दें। हालाँकि, याद रखें कि जब आप चिढ़े हों तो मुस्कान दूसरे व्यक्ति में और भी अधिक क्रोध पैदा करती है। इसलिए, पहले अपने दिल को शांत करें, फिर मुस्कुराकर बोलें। आग आग से नहीं बुझती। और आप, प्रेम और सौम्यता से, उस क्रोधित व्यक्ति के क्रोध को शांत करें। यदि कोई भाई इससे होश में नहीं आता है, तो हम उसे ठीक करने के लिए हर तरह के अन्य उपाय करने का प्रयास करेंगे, ताकि अंत में उसका क्रोध उस पर हावी न हो जाए, और हमारे परमेश्वर को किए गए सभी बलिदानों को अप्रसन्न न कर दे (मत्ती 5, 23–24)। आइए हम अपने उद्धारकर्ता प्रभु का अनुकरण करें, *'जिन्होंने अपमानित होने पर बदले में अपमान नहीं किया'* (1 पतरस 2:23), और दाऊद का, जिन्होंने शिमई की निंदा के जवाब में कहा: *'उसे शाप देने दो, क्योंकि प्रभु ने उसे दाऊद को शाप देने के लिए कहा है... प्रभु मेरी नम्रता को तुच्छ न जानें'* (2 शमूएल 16:10,12)।

५२. जब तक हम अभी भी क्रोधित हैं, तब तक सूर्य अस्त न हो, बल्कि हम अपने सभी ऋणी लोगों को क्षमा करें, और प्रेम को प्रबल करें, क्योंकि यह बहुत से पापों को ढाँपता है। जो कोई भी अपने भाई से वैर रखता है, और ईश्वर को कुछ अर्पित करने का विचार करता है, उसे कुत्ते की बलि चढ़ाने वाले, या वेश्या की कीमत चढ़ाने वाले के

समान माना जाएगा। जो कोई भी अपने भाई से वैर रखता है – और यह सोचता है कि वह मसीह से प्रेम करता है – वह एक झूठा है और स्वयं को धोखा देता है।

53. यदि तुम्हें अपने भाई से कोई शिकायत है, या तुम्हारे भाई को तुमसे कोई शिकायत है, तो मेल कर लो। यदि तुम ऐसा नहीं करते, तो जो कुछ भी तुम परमेश्वर को चढ़ाओगे वह स्वीकार नहीं किया जाएगा (मरकुस 11:25; मत्ती 5:23–24)। लेकिन यदि आप प्रभु की इस आज्ञा का पालन करते हैं, तो निडर होकर उनसे प्रार्थना करें, यह कहते हुए: 'प्रभु, मेरे ऋणों को क्षमा कर, जैसे मैं आपकी आज्ञा का पालन करते हुए अपने भाई को क्षमा करता हूँ!' और मानवता के प्रेमी उत्तर देंगे: 'यदि तुमने क्षमा किया है, तो मैं भी क्षमा करूँगा; यदि तुमने माफ किया है, तो मैं भी तुम्हारे ऋणों को माफ करूँगा।'

5. दुख के विरुद्ध संघर्ष पर

1. जो व्यक्ति बदनामी या अन्याय सहन करने पर धैर्य रखता है, वह उस व्यक्ति के समान है जिसने एक शेर को पिंजरे में बंद कर रखा हो; परन्तु जो बदनामी और अन्याय का बदला लेता है, वह उस व्यक्ति के समान है जो स्वयं को (हथियार से) मारता है।

2. हम हतोत्साहित न हों; क्योंकि हम इस जीवन में हमेशा के लिए नहीं रहेंगे।

3. अपने हृदय में शोक को प्रवेश न करने दो; *'क्योंकि इस संसार का शोक मृत्यु को जन्म देता है, परन्तु परमेश्वर के अनुसार शोक* तुम्हें अनन्त जीवन प्रदान करता है (2 कुरिन्थियों 7:10)।

4. एक भिक्षु जो साहसपूर्वक जो कुछ भी हो सकता है, उसे सहने के लिए तैयार रहता है, वह केवल थोड़ा दुख ही अनुभव करेगा।

5. अपने हृदय में शोक को प्रवेश न करने दो, बल्कि प्रभु में सांत्वना लो।

6. यदि आप बदनामी के शिकार होते हैं, और बाद में आपके विवेक की पवित्रता प्रकट हो जाती है, तो घमंडी न हो जाएँ, बल्कि उस प्रभु की नम्रता से सेवा करें जिसने आपको मानवीय बदनामी से बचाया है, कहीं ऐसा न हो कि आप एक भयानक पतन में गिर जाएँ।

7. एक कपटी आत्मा, जब चापलूसी की जाती है, तो अहंकारी हो जाती है, और जब अपमानित की जाती है, तो क्रोध से भर उठती है; लेकिन एक अच्छी आत्मा न तो चापलूसी में आनंदित होती है और न ही अपमान का बदला लेती है।

8. धैर्य की कोई सीमा नहीं है, बशर्ते कि वह प्रेम में डूबा हो।

९. दुख के दिन प्रभु का धैर्य धरो, ताकि क्रोध के दिन वह तुम्हें शरण दे।

10. पीड़ित का उपहास न करो, न ही भटकते हुए को देखकर प्रसन्न हो, कहीं ऐसा न हो कि यहोवा तुम्हारे विरुद्ध क्रोधित हो जाएँ, और तुम शोक के दिन बिना सुरक्षा के रह जाओ।

11. यह मत सोचो कि तुम अकेले ही किसी और से ज़्यादा दुख सह रहे हो। जैसे पृथ्वी पर रहने वाले किसी व्यक्ति के लिए हवा से बचना असंभव है, वैसे ही इस दुनिया में रहने वाले किसी व्यक्ति के लिए दुखों और बीमारियों के प्रलोभन से बचना असंभव है। जो सांसारिक चीजों में व्यस्त रहते हैं, वे सांसारिक दुखों से पीड़ित होते हैं; जबकि जो आध्यात्मिक चीजों के लिए प्रयास करते हैं, वे आध्यात्मिक कारणों से पीड़ित होते हैं। लेकिन बाद वाले धन्य होंगे; क्योंकि प्रभु में उनका फल भरपूर है।

12. यदि हम उद्धारकर्ता परमेश्वर के बंदी हैं, तो हम दुख के बंधन को उठाने में लज्जित नहीं होंगे, बल्कि उन्हें आनंद के साथ सहन करेंगे, स्वर्ग से उनके आगमन की प्रतीक्षा में, जब वह हमें संतों की कतार में गिनेंगे; क्योंकि जिन्होंने उनके दुख में भाग लिया है, वे उसी प्रकार उनके सांत्वना में भी भाग लेंगे (2 कुरिन्थियों 1:7)।

13. अब दो प्रकार का शोक है जिससे संसार का हर व्यक्ति घिरा हुआ है: परमेश्वर के लिए शोक और सांसारिक शोक; और इस जीवन को इनमें से किसी एक के बिना जीना असंभव है—या तो परमेश्वर के लिए शोक के बिना या सांसारिक शोक के बिना। – सांसारिक शोक भारी होता है और इसमें कोई पुरस्कार नहीं है; परन्तु परमेश्वर के लिए शोक अपने साथ सांत्वना लाता है, और हमें अनंत जीवन के वचन से और भी अधिक आनन्दित करता है। जब आप पहले वाले शोक के अधीन हों, तो उसे दूसरे में बदलने के लिए शीघ्रता करें – और आप अपने हृदय से पीड़ादायक शोक को दूर कर देंगे।

14. यदि, जब आप नम्रता और श्रद्धा से परमेश्वर का काम कर रहे हों, तो शत्रु, जो आपको धर्मी जीवन जीने से रोकना चाहता है, आपके विरुद्ध विचारहीन लोगों को खड़ा कर दे, तो न डरें, हियाव न खोएँ, और सीधे मार्ग से न भटकें। *'प्रभु की प्रतीक्षा करो'* (भजन संहिता 26:14), हे परमेश्वर के चुने हुए, ताकि जो लोग अब तुझे कोसते हैं,

वे तेरे महिमामय उद्धार से चकित हों, जैसा लिखा है: *'धर्मी, जब मृत्यु उस पर आती है, तो वह शान्ति में विश्राम करेगा'* (सोलोमन की बुद्धि 4:7)।

१५. जैसे भट्टी में आग सोने और चाँदी को परखती है, वैसे ही संकटों में मनुष्यों की आत्माएँ भी परखी जाती हैं, जिनका सहायक प्रभु होता है।

16. हम परीक्षाओं से न डरें, बल्कि मसीह में उच्च बुलावे के सम्मान के लिए निडर होकर प्रयास करें। क्योंकि प्रभु उन सभी को मुकुट पहनाते हैं जो उनसे प्रेम करते हैं।

17. जो कोई भिक्षु बनना चाहता है, पर अपमान, तिरस्कार और हानि को सहन नहीं कर सकता, वह कभी भी भिक्षु नहीं बनेगा।

१८. अपमान और बदनामी को उदारतापूर्वक सहें, एक 'बुरा' नाम को 'अच्छा' नाम समझें, और सबसे अयोग्य नाम को भी एक सुखद नाम मानें। – और मनुष्य को हमेशा यह याद रखना चाहिए कि *'प्रभु का दास झगड़ालू नहीं, बल्कि सभी के प्रति कोमल होना चाहिए'* (2 तीमु. 2:24)।

19. यदि आप बीमार पड़ जाएँ, तो व्यर्थ के उपचारों या मानवीय सुरक्षा का सहारा न लें; बल्कि हमें धैर्यपूर्वक ईश्वर की दया की प्रतीक्षा करनी चाहिए, ताकि वह सभी बातों में हमारा मार्गदर्शन करे; क्योंकि ऐसे समय भी आते हैं जब शरीर को भी होश में लाने की आवश्यकता होती है। सभी बातों में, हम प्रभु को प्रसन्न करें, *"क्योंकि वह हमारी परवाह करता है"* (1 पतरस 5:7)। जब कोई व्यक्ति बीमार होता है, तो उसकी आत्मा और भी अधिक प्रभु की खोज करने लगती है। सुधार क्यों अच्छा है, बशर्ते कि जिसे सुधार दिया जा रहा है वह धन्यवाद दे? निश्चय ही ऐसा व्यक्ति कहेगा: *'यदि हम प्रभु से भलाई ग्रहण करते हैं, तो क्या हम बुराई भी सहन नहीं करेंगे? प्रभु का नाम युगानुयुग धन्य हो'* (अय्यूब 2:10; 1:21)।

20. परीक्षा के समय मनुष्य को हियाव नहीं छोड़ना चाहिए, बल्कि प्रार्थना और अच्छे कामों में जागृत रहना चाहिए – उन नाविकों की नकल करते हुए जो समुद्र में यात्रा करते हैं, जब तूफ़ान उठता है, तो वे हर चीज़ पर चौकस नज़र रखते हैं, सतर्क रहते हैं और मदद के लिए परमेश्वर को पुकारते हैं। प्रभु उन लोगों की अवहेलना नहीं करते जो सच्चे मन से उनकी आराधना करते हैं। इसलिए, जब हम पर दुख आता है, तो हमें भी प्रभु में शरण लेनी चाहिए, जैसा कि कहा गया है: *'हे प्रभु, हमारी संकट में हम आपको याद करते हैं'* (यशायाह 26:16)। समुद्र हमेशा शांत नहीं रहता; और इस जीवन में परीक्षाओं के बिना यात्रा करना असंभव है। लेकिन यदि हम प्रभु में अपने विश्वास को एक पतवार की तरह दृढ़ता से थामे रहें, तो यह हमें जीवन के बंदरगाह में ले जाएगा; – और फिर, अपनी कष्टों को त्यागकर, हम जीवन और अक्षयत्व के वस्त्र से परिधानित होंगे।

21. यदि हमें दुख आता है, तो हमें आनन्द के आगमन की प्रतीक्षा करें। हम समुद्र में नौकायन करने वालों को एक उदाहरण के रूप में लें। जब हवा उठती है और एक भयंकर तूफ़ान आता है, तो वे शांत मौसम की प्रतीक्षा करते हुए लहरों से लड़ते हैं; और जब शांत मौसम लौटता है, तो वे तूफ़ान की प्रतीक्षा करते हैं; और इस प्रकार वे हमेशा सतर्क रहते हैं, कि कहीं हवा का कोई अचानक झोंका उन्हें बिना तैयारी के पकड़कर समुद्र में पलट न दे। हमें भी इसी प्रकार काम करना चाहिए। जब हमें दुख और कठिनाइयाँ आती हैं, तो हमें राहत और मदद के लिए परमेश्वर की ओर देखना चाहिए, ताकि यदि दुख बना रहे, तो यह विचार कि अब हमारे पास उद्धार की कोई आशा नहीं है, हमारी मृत्यु का कारण न बने। और इसी तरह, जब हम प्रसन्न हों, तो हमें दुख की अपेक्षा करनी चाहिए, ताकि अपनी प्रसन्नता के बीच हम अपने आँसुओं को न भूल जाएँ।

२२. प्रलोभनों और दुखों में दृढ़ रहो, और उस वासना का विरोध करो जो तुम्हें भड़काती है, ताकि तुम भी, बिना पकी ईंट की तरह, बारिश की बूंदों से बहाए न जाओ, और ताकि तुममें वह दृढ़ता की कमी न पाई जाए, जिसे तुम अपने पास समझते हो।

२३. ईश्वर को प्रसन्न करने का निश्चय करके, धैर्यवान बनें। प्राचीन पीढ़ियों को देखें, और आप देखेंगे कि सभी संतों ने निरंतर और धैर्यपूर्ण सहनशीलता के माध्यम से प्रतिज्ञाओं को प्राप्त किया। इसलिए, आइए हम हर दिन खुद को प्रोत्साहित करें, ताकि हम भी उनके साथ स्वर्ग के राज्य के वारिस बन सकें। – हमारे अविश्वास के कारण धैर्य हमसे दूर हो जाता है। अपना हृदय प्रभु पर टिकाओ, और एक विश्वासयोग्य विश्वासी के रूप में साहस रखो, कहीं ऐसा न हो कि तुम महान शोक के कारण अपनी आंतरिक शक्ति खो दो। उन लोगों की कल्पना करो जिन्होंने निर्वासन में, खदानों में और कठोर दासता में यातनाएँ सहन कीं – और प्रभु के लिए तुम पर आने वाली पीड़ाओं को स्वीकार करो।

24. यदि तुम्हें कष्ट सहना पड़े, तो उसे सहना अभी तक सबसे बड़ा बुराई नहीं है; परन्तु कष्ट में बने रहना बोझिल और खतरनाक दोनों है। यदि, आपके दूर होने के दौरान, किसी ने आपके बारे में बुरा कहा हो, और कोई और

आकर आपको बताता है कि अमुक भाई ने आपके बारे में बुरा कहा है, तो, एक बुद्धिमान व्यक्ति के रूप में, यह पहचानिए कि यह किसके प्रलोभन का परिणाम है, और अपने भाई के प्रति दुखी न हों। और जिसने आपको यह सूचना दी है, उससे कहें: 'यद्यपि उसने मेरा अपमान किया है, वह मेरा भाई है, और मैं स्वयं इस अपमान का पात्र था; इसके अलावा, उसने यह अपने आप से नहीं किया, बल्कि शत्रु ने हमारे बीच वैमनस्य फैलाने के लिए ऐसा किया है। परमेश्वर दुष्ट की युक्तियों को विफल करे, मेरे भाई पर दया करे, और हमें न छोड़े।' – यदि तुम्हें फिर से सामने अपमानित किया जाए, तो इससे आहत न हो, और अपने मन को उत्तेजित न होने दो। – परन्तु जब ऐसा हो कि हम अपने किसी पाप के कारण अपमान सहते हैं, तो हम कठोर-हृदय न हों, बल्कि अपनी ही दोष को सुधारें।

२५. यदि जो दुखी लोगों को सांत्वना देता है, वह एक आध्यात्मिक व्यक्ति है, तो वह उनके पास हानि पहुँचाने के लिए नहीं, बल्कि महान लाभ के लिए आता है। लेकिन जिसकी मानसिकता सांसारिक है, वह कोई लाभ नहीं पहुँचाएगा; वास्तव में, दुखी लोगों को सांत्वना देने के लिए आकर, वह उन्हें और भी अधिक दुखी कर देगा।

26. आप एक अप्रिय शब्द सुनते हैं - और आप दुखी हो जाते हैं। लेकिन यदि आपको किसी शब्द से सही ढंग से फटकार लगाई जाती है, तो इस बात पर प्रसन्न हों कि आपको आपके अपने भले के लिए फटकार लगाई गई है, और अपनी कमियों को सुधारने का प्रयास करें। क्या आपको अन्यायपूर्वक फटकार लगाई गई है? यदि आप इसे समान भाव से सहते हैं तो आपका पुरस्कार और भी बड़ा होगा। और प्रेरितों को, जैसे वे दुष्ट हों, नगर के बीच कोड़ों से पीटा गया; फिर भी वे न तो क्रोधित हुए, और न ही वे आक्रोशित हुए, बल्कि इस बात पर आनन्दित हुए, *'क्योंकि उन्हें उसके नाम के लिए अपमान सहने के योग्य समझा गया था'* (प्रेरितों के काम 5:41)। आप भी आनन्दित हों, कि आपको भी उसके नाम के लिए अपमान सहने के योग्य समझा गया है।

27. शायद कोई लापरवाह आत्मा कहे: 'मुझे दुख है कि इतनी मेहनत के बाद मेरे साथ ऐसा हुआ है।'—क्या यह तुम्हें दुख पहुँचाता है, हे प्रभु के सेवक? क्या यह आपके लिए बेहतर नहीं होगा कि आप इससे यह पहचान लें कि, इतने वर्षों की मेहनत के बाद भी, आपके भाव अभी भी अजेय हैं, और, इसे पहचानने के बाद, इसी क्षण से उन पर काबू पाना शुरू कर दें? *'क्योंकि यदि कोई अपने को कुछ समझता है, जबकि वह कुछ नहीं है, तो वह अपने को धोखा देता है'* (गलातियों 6:3)। एक नाविक की कुशलता तूफान के समय ही पता चलती है। जो कोई घमंड करता है, 'मैंने इतने वर्षों तक मठवासी जीवन जिया है', फिर भी इस जीवन-शैली का कोई प्रमाण नहीं दिखाता, वह अपने साथ उस शिल्प के औजार ले चलता है जिसे उसने अभी तक सीखा ही नहीं है। – तुम्हें एक छोटी सी परीक्षा आई, और तुम तुरंत मठवासी जीवन के मार्ग से भटक गए, मानो मठवासी जीवन को ही पूरी तरह त्याग दिया हो। एक ही क्षण में, तुमने इतने वर्षों की मेहनत बर्बाद कर दी है। – नहीं, भाई, अपने दुश्मनों की ओर अपनी पीठ मत दिखाओ; बल्कि दृढ़ खड़े रहो, लड़ो, और तुम्हारे दुश्मन तुमसे भाग जाएँगे। विश्वास का कवच पहनो, *'उद्धार का हेलमेट'* धारण करो, पवित्र आत्मा की *'तलवार'* लो, *'जो परमेश्वर का वचन है'* (इफिसियों 6:17), – और लड़ो, ताकि तुम में वास करने वाला पवित्र आत्मा तुम्हारे पराक्रम पर आनन्दित हो।

28. यदि तुम एक छोटी परीक्षा को सहन नहीं कर सकते, तो एक बड़ी परीक्षा को कैसे सहन करोगे? यदि तुम एक जवान पर विजय प्राप्त नहीं कर सकते, तो एक परिपक्व पुरुष पर कैसे विजय प्राप्त करोगे? यदि तुम एक वचन को सहन नहीं कर सकते, तो एक प्रहार को कैसे सहन करोगे? यदि तुम एक थप्पड़ या प्रहार को सहन नहीं कर सकते, तो क्रूस को कैसे उठाओगे? यदि आप क्रूस का भार नहीं उठाते हैं, तो आप स्वर्ग में उन लोगों के साथ महिमा का वारिस कैसे बनेंगे जो कहते हैं: *'तेरे ही कारण हम दिन भर मार डाले जाते हैं; हम वध के लिए भेड़ों के समान गिने जाते हैं'* (भजन संहिता 43:23)? क्या हम, भाइयों, यह भूल गए हैं कि हमारे सामान्य प्रभु ने हमारे लिए क्या सहा? उनका अपमान किया गया, उन्हें नीचा दिखाया गया; उन्होंने उनसे कहा, *'तुम्हारे में दानव है'* – और वह क्रोधित नहीं हुए; उन्होंने उन्हें धोखेबाज़ कहा, उन्हें थप्पड़ मारा, पीटा, उन्हें क्रूस पर ठोक दिया; उन्होंने पित्त मिला हुआ सिरका चखा, और उनकी पसली में भाले से भेद दिया गया। उन्होंने यह सब हमारे उद्धार के लिए सहा। और हम—हाय हम दीन प्राणियों!—उनके लिए, जिन्होंने हमारे लिए इतना दुख सहा, एक भी अपमान या एक भी शब्द सहने को तैयार नहीं हैं।

29. जो कोई परमेश्वर को प्रसन्न करना चाहता है और विश्वास के द्वारा परमेश्वर का वारिस बनना चाहता है, ताकि उसे परमेश्वर का पुत्र कहा जाए, जो पवित्र आत्मा से जन्मा हो, उसे सबसे पहले, दयालुता और धैर्य का वेश धारण करके, अपने रास्ते में आने वाले दुखों, दुर्भाग्यों और कठिनाइयों को साहसपूर्वक सहना चाहिए, – चाहे ये शारीरिक बीमारियाँ और कष्ट हों, या लोगों द्वारा अपमान और अन्याय, या विभिन्न अदृश्य दुख जो दुष्ट आत्माएँ आत्मा पर इस इरादे से डालती हैं कि उसे ढिलाई, सुस्ती और अधीरता में ले जाया जाए, और इस प्रकार उसे जीवन में प्रवेश करने से रोका जाए। हालाँकि, यह सब परमेश्वर की पूर्वनिर्धारित योजना, के माध्यम से होता है, जो प्रत्येक

आत्मा को विभिन्न दुखों से परखा जाने देती है, ताकि जो लोग परमेश्वर से अपने पूरे हृदय से प्रेम करते हैं, वे परमेश्वर में आशा खोए बिना, बल्कि अनुग्रह, विश्वास और धैर्य के साथ मुक्ति की निरंतर अपेक्षा के साथ, सभी चीजों को साहसपूर्वक सहन करके प्रकट हो सकें, – और ताकि, इस प्रकार हर परीक्षा को सहन करने के बाद, वे स्वर्ग के राज्य के योग्य बन सकें।

३०. कोई भी आत्मा जो धैर्य नहीं रखती और हर प्रलोभन तथा हर दुख को दृढ़ता से सहन नहीं करती, बल्कि इसके बजाय व्यथित, निराश, क्रोधित, चिंतित हो जाती है, और संघर्ष की उपेक्षा करती है, या यहाँ तक कि निराश हो जाती है; जैसे कि उसे मुक्ति की कोई आशा नहीं रही; उस आशा को अपने भीतर बनाए रखने में विफल रहा है, जो अटूट विश्वास के साथ ईश्वर की दया की प्रतीक्षा करती है, वह निश्चित रूप से जीवन का पात्र नहीं बनता; क्योंकि उसने सभी संतों का अनुसरण नहीं किया है, न ही प्रभु के पदचिन्हों पर चला है। देखें और ध्यान दें कि कैसे, आदिकाल से, धर्मपिता, कुलपिता, भविष्यवक्ता, प्रेरित और शहीदों ने इस परीक्षा और दुख के मार्ग को पार करके, परमेश्वर को प्रसन्न किया, और उन्हें महान पुरस्कारों के योग्य माना गया।

31. परमेश्वर उस आत्मा को, जो उस पर विश्वास करती है और धैर्य रखती है, इतनी हद तक परीक्षा में नहीं डालते कि वह निराशा की हद तक पहुँच जाए, अर्थात् ऐसी परीक्षाओं और दुखों में न फँसे जिन्हें वह सहन न कर सके (1 कुरिन्थियों 10:13)। न ही दुष्ट आत्मा इच्छानुसार आत्मा को परीक्षा में डालता है या उसे दुख का बोझ देता है, बल्कि केवल उतनी ही सीमा तक जो परमेश्वर द्वारा अनुमत है। आत्मा केवल सभी बातों को धैर्यपूर्वक सहन करे, विश्वास के द्वारा आशा को दृढ़ता से थामे रहे, और परमेश्वर से सहायता और सांत्वना की आशा रखे; और यह असंभव है कि उसे परित्यक्त किया जाए। इसके विपरीत, आत्मा जितना अधिक प्रयास करती है, विश्वास और आशा के साथ ईश्वर की ओर मुड़ती है, और निस्संदेह उनसे सहायता और उद्धार की आशा करती है, उतनी ही तेजी से प्रभु उसे हर उस दुख से मुक्त करते हैं जो उसे पीछे रोकता है। क्योंकि वह जानते हैं कि आत्मा को कितना परीक्षण और प्रलोभन सहना चाहिए—और वह केवल उतना ही अनुमति देते हैं। यदि कोई कुम्हार बर्तन बनाकर उन्हें भट्टी में नहीं पकाता, ताकि वे आग में पकने पर कठोर हो जाएँ, तो वे मानव उपयोग के लिए उपयुक्त नहीं होंगे। लेकिन जब वह उन्हें भट्टी में रखता भी है, तो वह जानता है कि उन्हें तैयार होने तक आग में कितनी देर तक रखना है, और वह उन्हें ज़रूरत से ज़्यादा देर तक भट्टी में नहीं छोड़ता, कहीं वे ज़्यादा पके होने से फट न जाएँ; और न ही वह उन्हें समय से पहले बाहर निकालता है, कहीं वे अधपके और उपयोग के लिए अनुपयुक्त न रह जाएँ। अब, यदि लोग क्षणिक बातों में इतनी सूझ-बूझ और ज्ञान दिखाते हैं, तो परमेश्वर उन आत्माओं की ज़रूरतों को कितना अधिक जानता है जो परीक्षाओं और प्रलोभनों में उसकी प्रसन्नता पाने और शाश्वत जीवन प्राप्त करने की लालसा रखते हैं।

32. जैसे कि सन तब तक महीन धागे कातने के लिए उपयुक्त नहीं होता जब तक उसे कई बार न पीटा जाए, फिर भी जितना अधिक उसे पीटा जाता है, वह उतना ही शुद्ध और कातने के लिए अधिक उपयुक्त हो जाता है: इसी प्रकार एक ईश्वर-प्रेमी आत्मा भी, जब कई प्रलोभनों और परीक्षाओं से गुजरती है, और साहसपूर्वक दुखों को सहन करती है, तो वह अधिक शुद्ध और आध्यात्मिक प्रयास के लिए अधिक उपयुक्त हो जाती है, और अंततःस्वर्ग के राज्य को विरासत में पाने के लिए योग्य मानी जाती है। – दुख और परीक्षाएँ आत्मा को सदाचारी और दृढ़ बनाती हैं, यदि वह साहसपूर्वक, स्वेच्छा से और ईश्वर में विश्वास के साथ जो कुछ भी उस पर आता है उसे सहन करे, और प्रभु से मुक्ति तथा उनकी दया की अटूट आस्था के साथ प्रतीक्षा करे।

33. आत्माएँ जो परीक्षा के रूप में कष्टों से गुज़रती हैं, और दुष्ट आत्माओं द्वारा विभिन्न तरीकों से पीड़ित होती हैं—चाहे गुप्त रूप से, दुख के आंतरिक बोझ या दुष्ट विचारों के माध्यम से, या खुले तौर पर, शारीरिक पीड़ाओं के माध्यम से—यदि वे साहसपूर्वक सहन करती हैं, अपनी आशा बनाए रखती हैं, और प्रभु से अपने पुरस्कार की प्रतीक्षा करती हैं; वे धार्मिकता के मुकुटों के योग्य माने जाएँगे, और न्याय के दिन परमेश्वर के सामने शहीदों के समान ही साहस प्राप्त करेंगे। क्योंकि क्लेशों में सहन की गई पीड़ा एक जैसी ही है, चाहे उसे कुछ लोग क्रूस पर सहते हों या अन्य लोग उन पर कार्य करने वाली दुष्ट आत्माओं के हाथों सहते हों।

34. यदि शत्रु किसी को बुराई में नहीं ले जा पाता या अपने विचारों से उसे नीचा नहीं गिरा पाता, तो वह उस व्यक्ति पर दुख डालता है ताकि उसका मन मुरझा जाए, और तभी उसमें जो चाहे बो देता है। और यदि इस सब के बावजूद भी वह उन्हें बुराई की ओर नहीं ले जा पाता है, तो वह उन्हें जीवन में हर सुख-सुविधा प्रदान करता है; वह उन्हें गौरवान्वित करता है और एक बड़े भ्रम में डाल देता है, जो सभी वासनाओं से अधिक खतरनाक और बुरा है, क्योंकि यह एक व्यक्ति को घमंडी बना देता है, उन्हें कामुकता की खाई में खींच लेता है, और ईश्वर की, अपनी कमजोरी की, और मृत्यु के समय की स्मृति को दूर भगा देता है। वह किसी व्यक्ति की प्रवृत्तियों को पहचानता है और उनके विरुद्ध हो जाता है, ताकि हर प्रकार के अधर्म से उनका विरोध कर सके।

35. सभी चीजें ईश्वर से आती हैं—चाहे अच्छी हों या दुखद; लेकिन कुछ उनकी कृपा से आती हैं, कुछ उनके अनुशासन से, और कुछ उनकी अनुमति से। उनकी कृपा से, जब हम सदाचार से जीवन यापन करते हैं; क्योंकि ईश्वर को यह प्रसन्न करता है कि जो सदाचार से जीवन यापन करते हैं, उन्हें धैर्य की मालाओं से अलंकृत किया जाए; अनुशासन के लिए, जब, पाप में गिरने पर, हमें सुधार किया जाता है; और ईश्वर की अनुमति से, जब, सुधार किए जाने के बाद भी, हम पश्चाताप नहीं करते। – फिर से, अनुशासन के लिए, ईश्वर हमें जो पाप करते हैं, उन्हें दंड देता है, ताकि हम संसार के साथ दंडित न हों, जैसा कि प्रेरित कहते हैं: *'हमें प्रभु द्वारा दंड दिया जाता है, ताकि हम संसार के साथ दंडित न हों'* (1 कुरिन्थियों 11:32)। – इसका अर्थ है: *'उस नगर में कोई विपत्ति नहीं है जो यहोवा ने नहीं भेजी'* (आमोस 3:6); जैसे कि अकाल, महामारियाँ, रोग, पराजय और युद्ध; क्योंकि ये सभी हमें हमारे पापों से शुद्ध करने का काम करते हैं। – परन्तु परमेश्वर अनुमति देता है आ उन लोगों को पूरी तरह से त्याग देता है जो या तो पाप के बिना जीना नहीं चाहते, या जो, डाँट-फटकार के बाद भी, पश्चाताप नहीं करते बल्कि पाप में बने रहते हैं / *'तब परमेश्वर उन्हें एक भ्रष्ट मन के हवाले कर देता है'*, अर्थात्, वह उन्हें *'अनुचित काम करने' की* स्वतंत्रता देता है (रोमियों 1:28)।

6. निराशा के विरुद्ध संघर्ष पर

1. एक बड़बड़ाऊ व्यक्ति किसी भी काम के लिए अयोग्य होता है और उसमें उसे करने की इच्छा भी नहीं होती। वह आलसी होता है और अपनी जिम्मेदारियों से बचने के लिए हमेशा एक तैयार बहाना रखता है। और वह दूसरों को भी बिगाड़ता है, यह कहते हुए: 'इसका क्या फायदा? उसका क्या फायदा? इसमें से किसी का भी कोई फायदा नहीं है।'

2. आलसी व्यक्ति, जब भजन गाने के लिए बुलाया जाता है, तो चिढ़ जाता है; जब प्रार्थना के लिए जगाया जाता है, तो पेट दर्द और सिरदर्द का बहाना बनाता है। यदि उसे डांटा जाए, तो वह कहता है, 'खुद सीख लो'; यदि उसे कुछ सिखाया जाए, तो वह चिल्लाता है, 'यह तो मैं खुद ही जानता हूँ'।

3. एक काम करने में सक्षम व्यक्ति का आलस्य करते हुए दूसरे की रोटी खाना सही नहीं है, जबकि प्रेरित कहते हैं: *'मैंने अपनी ज़रूरत को दूर रखा है, और ऐसा ही करता रहूँगा'* (2 कुरिन्थियों 11:9)।

४. एक शिकायत करने वाला भिक्षु बहुत हानि उठाता है; परन्तु जो धैर्य से सब कुछ सहन करता है, वह आनन्द का वारिस होगा।

5. यदि निराशा की भावना आप पर हावी हो जाए, तो अपना घर न छोड़ें, बल्कि इस भावना का धैर्य से विरोध करें। उस विचार को आपको मनाने न दें जो आपको एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाने के लिए प्रेरित करता है। क्योंकि यदि आप इस विचार के आगे झुक गए, तो आपके पास कभी धैर्य नहीं होगा।

6. परन्तु भिक्षु यह कहे: 'यहाँ कलह और कष्ट है, जबकि वहाँ (किसी-न-किसी स्थान पर) एक शांतिपूर्ण और निश्चिंत जीवन है' (वहाँ जाने का विचार करते हुए)। क्योंकि क्या तुम जानते हो कि हमसे कौन युद्ध करता है? क्या वह हमारा शत्रु, शैतान नहीं है? और वह *'पूरी पृथ्वी पर इधर-उधर फिरता है'* (अय्यूब 2:2)। क्योंकि, आप जहाँ भी जाएँ, आप आकाश के नीचे ही रहेंगे; अत: आप हर जगह शैतान की पहुँच में रहेंगे। तो फिर, वहीं रहने में क्या बेहतर है, जहाँ आप हैं, *कि 'शैतान का विरोध करो, और वह तुमसे दूर भागेगा'*; और इसके विपरीत, *'परमेश्वर के समीप आओ, और वह तुमसे समीप आएगा'* (याकूब 4:7, 8)?

7. आलसी भिक्षु बहाने बनाता है और कहता है: 'आज मैं यहाँ रहता हूँ, और कल मैं किसी दूसरे स्थान पर जाऊँगा; तो फिर मैं क्यों परिश्रम करूँ?'

8. आलसी भिक्षु अपने लिए अनेक बहाने बनाता है – और सुस्त रहने वाला संकट में पड़ जाएगा।

9. जो निरंतर एक कोठरी से दूसरी कोठरी में घूमता रहता है, उसे व्यर्थ के विचार आते हैं; परन्तु जो वहीं रहता है जहाँ उसे बुलाया गया है, वह अधिक शान्ति में रहता है।

10. एक भटकता हुआ भिक्षु मुसीबत से तब तक बचे नहीं रहता जब तक कि वह सचेत न रहे; परन्तु जो जहाँ उसे बुलाया गया है वहीं रहता है, वह शीघ्र ही शान्ति पा लेता है।

11. आलस्य तुम्हें सुखद लग सकता है, पर उसका अंत कड़वा होता है; काम करते-करते तुम थक सकते हो, पर बाद में तुम प्रसन्न होओगे।

12. एक आलसी और स्वार्थी (स्व-दया करने वाला) भिक्षु, जैसे ही वह करने के लिए काम देखता है, छिप जाता है, फिर भी रात के खाने में वह खुद को पहले वालों में रखता है।

13. मृत्यु और दंड का स्मरण निराशा के दैत्य के विरुद्ध एक तलवार है।

14. सभी भारी बोझों में, निराशा सबसे भारी है, विशेष रूप से जब अविश्वास के साथ हो; क्योंकि इसके फल घातक विष से भरे होते हैं।

15. हे भिक्षु, तुमने अपना कोठरी छोड़ दिया है और संसार में भटक रहे हो। क्या तुम *'नगर में अत्याचार और कलह'* (भजन संहिता 54:10) से नहीं डरते?

16. उस प्यासे आदमी से अधिक आलसी और कौन है जो एक झरने के पास बैठकर भी पानी निकालने और अपनी प्यास बुझाने के लिए हाथ नहीं बढ़ाता? – और उस आदमी से अधिक लापरवाह और कौन है जिसके पास एक किताब है, फिर भी वह उसे पढ़ने की उपेक्षा करता है?

17. जो पढ़ना सीखना चाहते हैं, उन्हें सिखाने का कष्ट उठाओ, ताकि जब वे परमेश्वर के अद्भुत कार्यों के बारे में पढ़ें, तो वे उनके अद्भुत नाम का धन्यवाद करें; और परमेश्वर तुम्हारा प्रतिफलदाता होगा।

18. निराशा में डूबा एक भिक्षु आलस्य से ग्रस्त हो जाता है; और जब वह धैर्यवान होता है, तो अहंकार से ग्रस्त हो जाता है; परन्तु जो वास्तव में प्रभु से प्रेम करता है, वह दोनों को अस्वीकार कर देता है।

19. एक आलसी भिक्षु को अनेक प्रकार से हानि होगी, जबकि एक संयमी भिक्षु एक भी घंटा बर्बाद नहीं करेगा।

२०. एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाने के शौकीन न बनो; बल्कि धैर्य के द्वारा, उस स्थान में आने वाली कठिनाइयों से लाभ उठाओ जहाँ तुम रहते हो। मुझसे कहो, जब हम दोनों सारी दुनिया घूम लें, तो क्या हमें एक कोठरी ही नहीं मिलेगी, यदि हम उद्धार पाना चाहते हैं? और यदि हम में एक सामुदायिक आवास में रहने का धैर्य नहीं है, और एकांत में भी शांति नहीं मिलती, तो फिर हम अंततःशरण कहाँ पाएंगे? यह ऐसा कहने जैसा है: 'मैं सूरज की गर्मी सहन नहीं कर सकता, और न ही छाया को बर्दाश्त कर सकता हूँ।' मुझे डर है कि अंत में, वही गुफा हमें आश्रय देगी।

21. हम हृदय से दृढ़ रहें; क्योंकि हृदय की दुर्बलता सदाचार के विपरीत है। यदि हमें थोड़ी निराशा हो तो हम हतोत्साहित न हों, बल्कि एक अच्छे यात्री की तरह स्वयं को प्रेरित करें। जब कोई यात्री रास्ते में थक जाता है, तो वह यात्रा जारी रखने के अपने लक्ष्य को नहीं छोड़ता, बल्कि खुद को इन शब्दों से सांत्वना देता है: 'अब ज्यादा दूर नहीं है; तुम अपनी ठिकाने पर पहुँचकर आराम करोगे।' – और प्रभु, यह देखकर कि हम खुद को कैसे प्रेरित करते हैं, हमें शक्ति प्रदान करेंगे और हमारी कठिनाइयों को आसान बनाएँगे।

२२. अपनी ज़रूरतों को पूरा करने के लिए, परमेश्वर पर भरोसा करके काम करें। मेहनत से दुखी न हों; कई लोग, कुछ भी किए बिना, अपनी ही आलस्य के बोझ तले दबे हुए थे। काम करना सीखें, ताकि आपको भीख माँगना न सीखना पड़े। अपने काम में लापरवाही न करें। *'प्रभु निकट है'* (फिलि. ४:६)।

23. अपने कोठरी में बैठे-बैठे हतोत्साहित न हों, यह याद करते हुए कि पवित्र शहीदों को बहुत यातनाओं के बाद लोहे की जंजीरों में जकड़ा गया था। इसलिए, हम कोठरी की असुविधाओं से न भागें, न ही काम के लिए तरसें, यह याद करते हुए कि कई संतों को प्रभु के लिए खदानों में भेजा गया था। यदि हम उन समयों में रहते, तो क्या हम वास्तव में यातनाओं के कारण अपने जीवन के तरीके को बदल देते? क्या हम वास्तव में अत्यंत कठिन परिस्थितियों के कारण अपने विश्वास का परित्याग कर देते?

२४. जहाँ तुम रहते हो, उस स्थान पर दृढ़ता से बने रहो और आलस्य का विरोध करो। क्योंकि स्थान बदलने या दूरी से नहीं, बल्कि केवल मन की एकाग्रता से ही तुम वासनाओं को वश में कर सकते हो। हमें *'धैर्य' की* आवश्यकता है ताकि *'परमेश्वर की इच्छा पूरी करके, हम प्रतिज्ञाएँ प्राप्त कर सकें'* (इब्रानियों १०:३६)। जो व्यक्ति निराशा में डूब जाता है, वह धैर्य से उतना ही दूर होता है, जितना एक बीमार व्यक्ति स्वास्थ्य से। सद्गुण निराशा में नहीं, बल्कि धैर्य में पहचाना जाता है। बदले में, धैर्य तब नवीनीकृत और मजबूत होता है जब मन चिंतन और दिव्य शिक्षा में लगा रहता है। इस तरह से पोषित होकर, मन को शक्ति मिलती है, ठीक वैसे ही जैसे शरीर को पौष्टिक भोजन से मिलती है। लेकिन यदि मन इस अनुग्रह और इस गरिमा से मुँह मोड़ लेता है, तो वह वास्तव में गरीब और दुर्बल हो जाएगा। इसलिए, सांसारिक चीजों से अपना लगाव त्यागकर, अपने मन को इस दिव्य साधना में प्रशिक्षित करें। और आपको अपने शरीर को एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जाने की, न ही बिना किसी पवित्र उद्देश्य के यात्राओं से उसे थकाने की कोई आवश्यकता होगी। क्योंकि *'परमेश्वर का राज्य हमारे भीतर है'* (लूका 17:21)।

२५. जब आप अपने भीतर यह महसूस करें कि पवित्र शास्त्रों को पढ़ने से आपको ऊब होती है, और आप आध्यात्मिक शिक्षा सुनने से कतराते हैं, तो जान लें कि आपकी आत्मा एक गंभीर बीमारी में पड़ गई है। क्योंकि यही दुष्टता की शुरुआत है, जिसके द्वारा पीड़ित लोगों ने मृत्यु का फल काटा है।

26. धन्य है वह जो, घड़ी-घड़ी, अपने भीतर सुंदर और अच्छे विचारों को संजोता है – और आशा के द्वारा निराशा के दुष्ट जुनून पर काबू पाता है, जिसके विरुद्ध प्रभु के तपस्वी संघर्ष करते हैं।

27. धन्य है वह जो प्रभु के कार्य में एक पराक्रमी योद्धा के समान हो गया है, जो सुस्त लोगों को जगाता है और प्रभु के मार्ग पर कमजोर हृदय वालों को प्रोत्साहित करता है।

28. धन्य है वह जिसे निराशा की भावना ने एक कायर की भाँति नहीं गिराया है; परन्तु उसने पूर्ण धैर्य प्राप्त किया है, जिसके लिए सभी संतों ने अपने मुकुट प्राप्त किए हैं।

29. जब निराशा की भावना आपको परेशान करे, तो उसके विचारों से बहक न जाएँ; बल्कि उसी स्थान पर बने रहें जहाँ परमेश्वर ने आपको स्थापित किया है, और अपने मन में उस प्रेम का चिंतन करें जो आपको परमेश्वर के लिए तब था जब आप पहली बार मठ के द्वार पर आए थे। आइए हम उसी प्रेम को अंत तक बनाए रखें, और प्रभु के प्रति एक पहलवान की तरह दृढ़ता बनाए रखें, जो सहनशीलता के द्वारा उस पर काबू पा लेता है जो उस पर वार करता है। क्योंकि '*जो अंत तक सहन करेगा, वह उद्धार पाएगा*' (मत्ती 10:22)।

३०. पूरी रात की प्रार्थना से पहले, एक भाई के मन में एक विचार आया: 'आज आराम करो, और प्रार्थना के लिए मत उठो।' लेकिन उसने उस विचार से जवाब दिया: 'कौन जाने? शायद तुम कल नहीं उठोगे; इसलिए, तुम्हें आज उठना चाहिए।' और जब वह काम कर रहा था, तब भी उसके मन में एक विचार आया: 'आज आराम कर, और कल काम करना।' लेकिन उसने फिर से उत्तर दिया: 'नहीं, मैं आज काम करूँगा, और कल का ध्यान प्रभु रखेंगे।'

३१. यदि निराशा आपको परेशान करती है, तो हतोत्साहित न हों, बल्कि प्रभु से प्रार्थना करें कि वह आपको धैर्य प्रदान करें। आपकी प्रार्थना के बाद, बैठ जाएँ, अपने विचारों को एकत्र करें, और भजनकार के शब्दों से अपनी आत्मा को सांत्वना दें: '*हे मेरी आत्मा, तू क्यों उदास है? तू मुझे क्यों क्लेश देती है? परमेश्वर में आशा रख, क्योंकि मैं फिर उसकी स्तुति करूँगा जो मेरे मुख का उद्धारकर्ता और मेरा परमेश्वर है*' (भजन संहिता 41:6)। यह भी कहें: 'हे मेरी आत्मा, तू इतनी उदास क्यों है? आखिरकार, हम इस दुनिया में हमेशा नहीं रह सकते। सुनो कि भजनकार क्या कहता है: *"मैं पृथ्वी पर एक यात्री और एक परदेशी हूँ जैसे मेरे सभी पूर्वज थे"* (भजन संहिता 38:13)। हम भी तुम्हारे साथ चले जाएँगे, जब परमेश्वर को प्रसन्न होगा। धर्मी का जीवन उनकी मृत्यु के बाद शुरू होता है। इसीलिए भविष्यवक्ता, आने वाले जीवन की लालसा करते हुए, कहते हैं: '*जैसे हरिण नदियों के जल के लिए तरसता है, वैसे ही हे परमेश्वर, मेरी आत्मा तेरे लिए तरसती है; मैं कब आकर तेरे सामने उपस्थित होऊँगा?*' (भजन संहिता 41:2-3)। संतों ने इस वर्तमान जीवन को एक जेल माना। इसीलिए उनमें से एक ने आनंदपूर्वक कहा: '*अब, प्रभु, आप अपने दास को शांति से जाने दे रहे हैं*' (लूका 2:29); जबकि एक अन्य ने घोषणा की कि वह '*मुक्त होकर मसीह के साथ होने*' के लिए तरसता था (फिलिप्पियों 1:23)।

32. जब सुबह होती है, तो भाई उठता है, और अपनी प्रार्थनाएँ कहने के बाद, अपने हाथ के काम में लग जाता है। तब भलाई का शत्रु, यानी दानव, उसमें निराशा का एक विचार डालता है।

33. यदि, जब निराशा उस पर आती है, तो भाई काम और परिश्रम करना जारी रखता है, तो, अनुग्रह की मदद से, वह निराशा को अपने से दूर भगा देता है। लेकिन यदि, जब निराशा उस पर आती है, तो भाई उसे धैर्य से दूर नहीं करता है, तो वह उससे पराजित हो जाता है और उसका कैदी बन जाता है। अपने विचारों को पूरी छूट दे, वह अपने आप से कहने लगता है: 'आज मैं कुछ ठीक नहीं महसूस कर रहा हूँ और अस्वस्थ हूँ। आज मैं आराम करूँगा, और सुबह दो दिन का काम करूँगा।' इस प्रकार, इस पहले दिन, भाई कुछ भी नहीं करता, इस उम्मीद में कि सुबह इस लापरवाही की भरपाई कर लेगा। हालाँकि, अगले ही सुबह, अच्छाई से नफरत करने वाला दानव उस पर कल से भी गहरी निराशा डालता है। तब, पहले से ही अपने विचारों से पराजित, भाई उठता है और अपना काम छोड़ देता है - और या तो वह उसे बिल्कुल नहीं करता, या फिर उसे आधे मन से, एक उचित कार्य के रूप में नहीं, करता है। – या दुश्मन उसे उसकी कोठरी से बाहर खींच लेता है और उसे इधर-उधर भटकाता है।

34. आप जो भी कर रहे हों, यदि दुश्मन आपके काम के दौरान आपके ऊपर निराशा लाता है, तो इस विरोधी का मुकाबला करने के लिए किसी समान शिल्प की ओर इशारा करें (यह जोड़ते हुए: 'क्या आप देखते हैं कि वे क्षणिक के लिए कैसे परिश्रम करते हैं? तो फिर, आप शाश्वत के लिए परिश्रम करने से क्यों अनिच्छुक हैं?")। और आप जो भी कार्य करें, आपका अंतरात्मा गवाह बने कि जो आप कर रहे हैं वह ईश्वर के अनुसार है – और आप (निराशा से) बच जाएँगे।

7. व्यर्थता के विरुद्ध संघर्ष पर

1. हे भिक्षु, जो मैं कहता हूँ उसे समझो: हम दोनों में—तुम और मैं—बाहर से आदर-सम्मान, परन्तु कोठरी के भीतर लापरवाह कामुकता न हो; कहीं ऐसा न हो कि *हम 'चूने से पोते हुए कब्रों'* जैसे हो जाएँ (मत्ती 23:27)। क्योंकि हर जगह एक ही परमेश्वर हैं, जिनकी महिमा युगानुयुग हो! आमीन।

2. जो भिक्षु अपनी शक्ति का घमंड करता है, वह मूर्खों में पहला है; एक भिक्षु के लिए अपनी शक्ति का घमंड करना लज्जा और अपमान का कारण है: *'जो घमंड करे, वह प्रभु में घमंड करे'* (1 कुरिन्थियों 1:31)।

3. क्या आप अच्छी प्रतिष्ठा प्राप्त करना चाहते हैं? *'नम्रता से अपने मामलों का संचालन करो'* (सिरिक 3:17)।

4. अपमानित होकर भी उसे महसूस न करना अभी तक कोई सद्गुण नहीं है; परन्तु भक्त के लिए उसे महसूस करना और सहना एक सद्गुण है। क्योंकि कहा गया है: *'आलसी लज्जित नहीं होता'* (नीतिवचन 20:4)।

5. कीर्ति का प्रेम आत्मा का रोग है, एक दुष्ट जुनून है।

6. लिखा है: *'तुम्हारे अपने मुँह से नहीं, बल्कि धर्मी तुम्हारी प्रशंसा करें; तुम्हारे अपने होठों से नहीं, बल्कि एक परदेशी से'* (नीतिवचन 27:2)। और फिर: *'चाँदी और सोना चरित्र की परीक्षा हैं'*: और एक मनुष्य *'उनके होठों से परीक्षा में पड़ता है जो उसकी प्रशंसा करते हैं'* (वही 21)।

7. प्रभु के निमित्त सभी का आदर करो, और अपने लिए आदर न खोजो, और तुम प्रभु की अनुकूलता पाएँगे।

8. कभी भी ऐसे व्यक्ति के धोखे में न आओ जो लोगों को खुश करना चाहता है, परन्तु प्रभु को नहीं।

९. हे मेरे प्रिय, गुप्त रूप से प्रभु की आज्ञाओं का पालन करो, और प्रभु तुम्हें खुले तौर पर पुरस्कृत करेगा।

10. यदि तुम देखो कि पृथ्वी पर किसी मनुष्य ने बड़ा सम्मान प्राप्त किया है, तो इस पर आश्चर्य मत करो; बल्कि उस पर आश्चर्य करो जिसने सांसारिक महिमा से घृणा की है।

11. सावधान रहो कि अपने लिए अत्यधिक सम्मान की इच्छा करते हुए, तुम अपने आप पर अपमान न लाओ; क्योंकि किसी व्यक्ति के लिए सच्चा सम्मान परमेश्वर की इच्छा के अनुसार सब कुछ करने में है, जबकि बड़ी अपमान आज्ञाओं का उल्लंघन करने में है।

12. हर मामले में स्वयं को कुशल दिखाने का प्रयास न करो, कहीं तुम व्यर्थता में न पड़ जाओ, जो महिमा, क्रोध और दुख के प्रेम की ओर ले जाती है। सबसे बढ़कर, सभी बातों में स्वयं को सरल और सौम्य बनाने का प्रयास करो।

13. वाक्पटुता पर गर्व करके डींग न हाँकें, बल्कि साधारण, अनपढ़ लोगों के अनुभव से प्राप्त शिक्षा का प्रचार करें, ताकि आप मसीह के प्रेरितों के शिष्य बन सकें; क्योंकि बाहरी ज्ञान में डींग हाँकना निषिद्ध है, विशेष रूप से मसीहियों के लिए। *'जो घमंड करना चाहता है, वह प्रभु में घमंड करे'* (2 कुरिन्थियों 10:17)।

14. जो केवल मनुष्यों को प्रसन्न करने के लिए सदाचार का अभ्यास करते हैं, उन्होंने अपने उद्धार की नींव चट्टान पर नहीं बल्कि रेत पर रखी है; इसलिए, जैसे ही बारिश होती है, नदियाँ उफानती हैं और हवाएँ (प्रलोभन) चलती हैं, वे अपने ही विचारों से बहा लिए जाते हैं। यदि वे गिरते नहीं हैं, बल्कि वैसे ही जीते हैं जैसे उन्हें जीना चाहिए, तो वे बड़े घमंड से भर जाते हैं; और जब वे गिरते हैं, तो वे स्वयं को व्यर्थ निराशा के हवाले कर देते हैं।

15. *'कोई भी अपने आप पर घमण्ड न करे'* (2 कुरिन्थियों 10:18)। परन्तु पहले अपने ही कर्मों की जाँच करो: क्या तुमने सचमुच उस प्रशंसा के योग्य जीवन जिया है जो तुम स्वयं पर करते हो? क्या तुमने कामवासना पर विजय प्राप्त की है, गरीबी को अपनाया है, बदनामी से घृणा की है, व्यर्थ की शोहरत के प्रति अपने प्रेम को त्याग दिया है, शारीरिक इच्छा से घृणा की है, क्या आपने कामवासना से घृणा की है, क्या आपने सचमुच किसी को कोई हानि नहीं पहुँचाई है, क्या आपने अपनी कामनाओं पर विजय प्राप्त की है, क्या आप सचमुच अपमानित होने पर क्रोधित नहीं हुए हैं, और जब अपनी प्रशंसा सुनी है, तो क्या आप घमंड से भर नहीं गए हैं, क्या आपने प्रभु से अपनी पूरी शक्ति से प्रेम किया है और अपने पड़ोसी से स्वयं के समान प्रेम किया है? – यदि, हालाँकि, हमने इसका पालन नहीं किया है, तो हमें अपने बारे में घमंड क्यों करना चाहिए? – हमें प्रभु की दया के सामने इस पर रोना चाहिए, कि वह हमारे कठोर हो चुके हृदयों को चंगा करे और हमें उसके योग्य जीवन जीने के लिए बल दे।

१६. हमें लोगों के सामने दिखावा करने के लिए कुछ भी नहीं करना चाहिए, बल्कि हर बात में हमें शुद्ध हृदय से काम करना चाहिए; क्योंकि परमेश्वर जानते हैं जो कुछ छिपा और गुप्त है, और हम केवल उनसे ही अपना प्रतिफल पाने की आशा रखते हैं।

१७. एक व्यर्थ व्यक्ति, यदि थोड़ी-सी संपत्ति वाला भी हो, तो राजा का खिताब धारण कर लेने पर भी राजा नहीं बन जाता; इसी प्रकार एक संन्यासी जो सामूहिक भोजन के समय पाखंडपूर्वक उपवासी और ब्रह्मचारी होने का ढोंग करते हुए गुप्त रूप से भोजन करता है, वह अभी तक एक तपस्वी नहीं है। वह छल का जाल बुनता है – और संतों के धर्मपथ पर नहीं चलता, बल्कि उन लोगों के मार्ग पर चलता है जो मनुष्यों को प्रसन्न करना चाहते हैं।

८. अहंकार के विरुद्ध संघर्ष

1. घमंडी व्यक्ति से पीछे रहना बर्दाश्त नहीं कर सकता – और जब वह किसी श्रेष्ठ व्यक्ति से मिलता है, तो या तो वह उससे ईर्ष्या करता है या उसके साथ प्रतिस्पर्धा करता है। प्रतिद्वंद्विता और ईर्ष्या साथ-साथ चलती हैं, और जिस व्यक्ति में इनमें से एक जुनून होता है, उसमें दोनों मौजूद होते हैं।

२. जो इन भावों को पालता है वह दूसरों की सफलता से पीड़ित होता है; लेकिन जो उनसे मुक्त है वह इससे दुखी नहीं होता। ऐसा व्यक्ति दूसरे को सम्मान दिए जाने पर विचलित नहीं होता; न ही वह दूसरे के उत्थान से परेशान होता है, क्योंकि वह सभी को प्राथमिकता देता है और हर किसी को स्वयं से ऊपर रखता है।

3. विनम्रता के बिना, हर उपलब्धि, आत्म-संयम का हर कार्य, आज्ञाकारिता का हर कार्य, लोभ-रहितता का हर कार्य, और सीखने का हर कार्य व्यर्थ है।

४. अहंकार की अशुद्ध आत्मा धूर्त और बहुआयामी होती है, और हर किसी पर हावी होने के लिए हर संभव प्रयास करती है: यह बुद्धिमान को बुद्धि से, शक्तिशाली को शक्ति से, धनी को धन से, सुंदर को सुंदरता से, और कलाकार को कला से फँसाती है।

5. यह आध्यात्मिक जीवन जीने वालों को भी उसी तरह लुभाने से नहीं चूकता, और अपने जाल बिछाता है— संन्यासी के लिए, उसके संन्यास में; ब्रह्मचारी के लिए, उनकी ब्रह्मचर्य में; मौन रहने वाले के लिए, उनकी मौनता में; अलोभी के लिए, उसकी अलोलुपता में; प्रार्थी के लिए, उनकी प्रार्थना में। कुल मिलाकर, यह अपने विषबुझे बीज बोने का प्रयास करता है।

6. घमंड के विरुद्ध एक उपाय के रूप में, इसके विरुद्ध निर्देशित धर्मग्रंथ के निम्नलिखित और अन्य समान अंशों को अधिक बार पढ़ें: *'जब तुम वह सब कर चुको जो तुम्हें आज्ञा दी गई है, तो कहो, "हम अयोग्य दास हैं"* (लूका 17:10)। *'यदि कोई अपने आपको कुछ समझता है, जबकि वह कुछ नहीं है, तो वह अपने आपको धोखा देता है'* (गलातियों 6:3)। *'जो बात मनुष्यों में महँगी है, वह परमेश्वर के देखने में घृणा की वस्तु है'* (लूका 16:15)। *'मेरे से सीखो, क्योंकि मैं मन से कोमल और दीन हूँ, और तुम अपने प्राणों को विश्राम पाओगे, प्रभु यीशु कहते हैं'* (मत्ती 11:29)। *"अपनी दीनता में प्रभु ने हम पर ध्यान दिया है; उसने हमें हमारे शत्रुओं के हाथ से छुड़ाया है"* (भजन संहिता 135:23)। *"मैं ने अपना मन नम्र किया, और उसने मुझे चंगा किया"* (भजन संहिता 114:5)। *"जो कोई घमण्डी है, वह यहोवा की घृणा की वस्तु है"* (नीतिवचन 16:5)।

7. यदि तुम अच्छे स्वास्थ्य में हो, तो घमण्ड न करो, वरन् सावधान रहो।

8. जो अपना बड़प्पन दिखाता है, वह अपने लिए अपमान लाता है; परन्तु जो नम्रता से अपने पड़ोसी की सेवा करता है, वह महिमा पाएगा।

९. घमण्ड तुम्हें नीचा दिखाए, इससे पहले घमण्ड के विचार को नीचा दिखाओ। अहंकार तुम्हें गिराए, इससे पहले अहंकार के विचार को गिरा दो। वासना तुम्हें कुचलने से पहले वासना को कुचल दो।

10. अपने भाई को उसके असंगत व्यवहार के लिए दोष न लगाओ, कहीं ऐसा न हो कि तुम स्वयं उसी कमज़ोरी में पड़ जाओ।

11. जिस नवांग में नम्रता नहीं है, उसके पास प्रतिरोध करने का कोई हथियार नहीं है; और ऐसा व्यक्ति बड़ी पराजय झेलेगा।

12. भिक्षु स्वयं को सभी से नीच समझें – और उन्हें आशा प्राप्त होगी। क्योंकि *'जो स्वयं को नम्र करेगा, वह ऊँचा किया जाएगा, और जो स्वयं को ऊँचा करेगा, वह नीचा किया जाएगा'* (लूका 18:14)।

13. एक भिक्षु के विरुद्ध बुराई के आरोप हैं: अहंकार, अभद्रता, कठोरता, निर्लज्जता, लापरवाही, क्रोधप्रवणता और मूर्खता।

14. यदि तुम घमंड से प्रेम करते हो, तो तुम राक्षसों के हो; यदि तुम नम्रता से प्रेम करते हो, तो तुम प्रभु मसीह के हो।

15. एक घमंडी व्यक्ति बहुत दुख सहन करेगा, लेकिन नम्र-चित्त वाले हमेशा प्रभु में आनंदित होंगे।

16. अहंकार हमेशा सम्मान चाहता है; लेकिन नम्रता महिमा में गौरवान्वित नहीं होती, न ही अपमान में परेशान होती है; क्योंकि वह प्रभु से अपने पुरस्कार की प्रतीक्षा करती है।

17. घमंड बुद्धिमानों की आँखों पर पर्दा डाल देता है, जबकि नम्रता उन्हें प्रेम से प्रकाशित करती है; क्योंकि प्रभु *'दीनों को अपना मार्ग सिखाता है'* (भजन संहिता 24:9)।

18. मनुष्य का अपने आप पर भरोसा करना खतरनाक है, परन्तु जो यहोवा पर भरोसा रखता है, वह बचाया जाएगा।

19. जो अपने वस्त्रों को सजाता है वह घमण्डी हो जाता है; और एक घमण्डी संन्यासी उस बाज़ की तरह है जिसके पंख अभी नहीं उगे हैं।

20. विनम्र बुद्धिवाला भिक्षु प्रकाश और तीव्र गति से चलने वाला तथा (कह सकते हैं) एक निपुण निशानेबाज होता है।

21. जैसे लोहा सभी चीज़ों को शुद्ध और वश में करता है, वैसे ही ईश्वर की नम्रता शत्रु की युक्तियों को नष्ट करती है।

२२. जैसे एक शिकारी के लिए भाला और एक योद्धा के लिए हथियार होता है, वैसे ही एक भिक्षु के लिए विनम्रता होती है।

२३. अहंकार किसी व्यक्ति के लिए खतरनाक है, चाहे वह किसी भी रूप में हो। अहंकार से प्रेम न करो; क्योंकि उसमें कोई लाभ नहीं है। हर दुर्बलता की देखभाल से उपचार हो जाता है, पर घमंड की बीमारी एक ऐसा बुराई है जिसका इलाज करना कठिन है; क्योंकि यह उपचार की औषधि को ठुकरा देती है और अपने लिए एक घातक विष तैयार कर लेती है। परमेश्वर के सेवकों में यह न मिले।

24. क्या आप महान बनना चाहते हैं? – सभी में सबसे छोटा बनें (मरकुस 9:35)।

25. यदि कोई भाई मठ छोड़ देता है, तो अपने मन में उसे तुच्छ न समझो, और न ही उसकी आँखों में अनादर करो: *'अपने जन्म के दिन को तुच्छ न समझो'* (नीतिवचन 3:28)।

26. उस की सुनें जो कहता है: *'सावधान रहो कि तुम दृढ़ बने रहो, कहीं गिर न पड़ो'* (1 कुरिन्थियों 10:12), और यह भी: *'अपने आप पर घमण्ड न करो, बल्कि परमेश्वर तुम्हें प्रशंसा दे'* (2 कुरिन्थियों 10:18)। क्योंकि बहुतों ने अपने मन में यह सोचा कि उन्होंने बाज़ी मार ली है और वे काबू में हैं; पर जो सबसे बुरे थे वे और भी बुरे हो गए, जबकि निराश लोगों को अनुग्रह मिला; क्योंकि परमेश्वर *'घमण्डी लोगों का विरोध करता है, पर नम्र लोगों को अनुग्रह देता है'* (याकूब 4:6)।

27. यदि तुम किसी ऐसे मनुष्य को देखो जो आज्ञा न माननेवाला, घमण्डी और *'अपनी ही दृष्टि में बुद्धिमान हो'*, तो उसकी जड़ पहले से ही आधी सूख चुकी है; क्योंकि वह परमेश्वर के भय से मिलने वाले पोषण को अपने भीतर ग्रहण नहीं करता। परन्तु यदि तुम किसी ऐसे मनुष्य को देखो जो शांत और नम्र हो, तो जान लो कि उसकी जड़ दृढ़ है; क्योंकि वह परमेश्वर के भय से पोषित होता है।

28. नम्रता की सफलता महान है और महिमा महान है, और इसमें कोई पतन नहीं है। नम्रता का चिह्न है अपने भाई की ज़रूरतों को दोनों हाथों से पूरा करना, ठीक वैसे ही जैसे आप स्वयं सहायता प्राप्त करेंगे।

29. एक घमंडी और अवज्ञाकारी व्यक्ति कड़वे दिन देखेगा; लेकिन नम्र और धैर्यवान हमेशा प्रभु में आनंदित होंगे।

30. एक नम्र और धीरज वाले व्यक्ति को पाना एक महान बात है; उनकी भलाई की कोई सीमा नहीं है।

31. जो कोई अपने भाई से ऊपर उठना चाहता है, उसका दानव उपहास करते हैं।

32. वर्षा से खरपतवार फलते-फूलते हैं, और सांसारिक लोगों के साथ मेलजोल से अहंकार पनपता है। परन्तु जो यहोवा का भय मानते हैं, वे अपना बड़प्पन नहीं दिखाते।

33. यदि तुम्हें कोई वरदान मिला है, तो घमण्ड मत करो; क्योंकि आप में एक भी पूर्णता ऐसी नहीं है, *'जो आपने* परमेश्वर से *नहीं पाई'* (1 कुरिन्थियों 4:7); और यदि आप उसकी आज्ञाओं और इच्छा के अनुसार नहीं चलते हैं, तो वह अपना दिया हुआ वरदान आपसे छीन लेगा और उसे किसी बेहतर व्यक्ति को दे देगा: और तब आप उस व्यक्ति की तरह हो जाएंगे जिससे स्याही में डूबी कलम छीन ली गई हो।

34. मनुष्य चाहे अपने हृदय के घमंड में स्वयं को कितना भी ऊँचा उठा ले, वह फिर भी उसी मिट्टी पर चलता है जिससे उसे उठाया गया है और जिसमें वह लौट जाएगा; परन्तु प्रभु नम्र लोगों को ऊँचा उठाता है।

35. घमंड गिरा देता है, जबकि नम्रता विजय का पुरस्कार प्राप्त करती है।

36. भले ही तुम अपने भाइयों के सामने सोने की तरह शुद्ध सिद्ध हो जाओ, फिर भी अपने आपको एक अनुपयोगी पात्र समझो, और तुम घमंड से बचोगे, जो परमेश्वर और मनुष्यों दोनों को घृणित है।

37. यदि तुम देखो कि कोई भाई पाप कर रहा है, और तुम उससे दूसरे दिन भेंट करो, तो उसे तुच्छ न समझना, उसे मन में पापी न समझना: क्योंकि तुम नहीं जानते कि शायद तुमसे अलग होने के बाद, उसने अपने पतन के बाद कुछ अच्छा किया, और हाँफों और कड़वी आँसुओं से प्रभु को प्रसन्न किया।

38. हमें दूसरों को दोष देने से बचना चाहिए; परन्तु हम में से प्रत्येक को स्वयं को नम्र करना चाहिए, भजन के वचनों में अपनी बात कहते हुए: *'मेरे अधर्म मेरे सरि पर लद गए हैं; वे मुझ पर एक भारी बोझ की तरह भारी पड़ गए हैं'* (भजन संहिता 37:5)।

39. हे सर्व के शासक प्रभु, मुझे ऐसा हृदय न दे कि मैं आज्ञाकारिता और पिता की शिक्षा से घृणा करूँ; मुझ से घमंडी विचार दूर कर दे; क्योंकि हे प्रभु, तू घमंडी लोगों को निषिद्ध कर चुका है (भजन संहिता 118:21)।

40. केवल मेरी दृष्टि ही नीचे न हो, परन्तु मेरा हृदय भी अन्य लोगों से ऊपर न उठे।

41. यदि दो नवसिखिए एक वृद्ध के साथ रहते हैं, तो उनमें से प्रभु के सामने कौन बड़ा है? वह जो परमेश्वर के भय में अपने भाई के सामने स्वयं को नम्र करता है। क्योंकि जिसने कहा, *'जो स्वयं को नम्र करेगा, वह ऊँचा किया जाएगा'* (लूका 18:14), उसने सत्य कहा।

42. जो कोई पत्थर को हिलाना चाहता है, उसे उत्तोलक ऊपर से नहीं, बल्कि नीचे से लगाना चाहिए – और फिर पत्थर आसानी से पलट जाएगा। – यह नम्रता का एक आदर्श है!

४३. घमंड ईश्वर और मनुष्यों दोनों को घृणित है, परन्तु प्रभु उन लोगों को ऊँचा उठाता है जो नम्रता से प्रेम करते हैं।

४४. गरिमा, सम्मान या महानता नहीं, बल्कि विनम्रता, आज्ञाकारिता, प्रेम, धैर्य और सौम्यता ही स्वर्ग के राज्य में ले जाती हैं—ये ही एक व्यक्ति को बचाती हैं। क्या तुमने नहीं सुना कि शैतान को उसके घमंड के कारण स्वर्ग से निकाल दिया गया था? क्या तुमने नहीं सुना कि परमेश्वर का विरोध करने के कारण उसे कितनी महान महिमा से वंचित कर दिया गया था?

45. विनम्र व्यक्ति घमंड नहीं करता और न ही गर्व करता है, बल्कि वह प्रभु की आदर से उनकी सेवा करता है। विनम्र व्यक्ति अपनी इच्छा सत्य के विरुद्ध थोपता नहीं है, बल्कि सत्य का पालन करता है। नम्र व्यक्ति अपने पड़ोसी की सफलता से ईर्ष्या नहीं करता, न ही उसकी दुर्भाग्य (पतन) में प्रसन्न होता है; इसके विपरीत, वह जो प्रसन्न होते हैं उनके साथ प्रसन्न होता है और जो विलाप करते हैं उनके साथ विलाप करता है। नम्र व्यक्ति वंचितता और गरीबी से निराश नहीं होता, न ही समृद्धि और महिमा में घमंडी बनता है, बल्कि वह उसी सद्गुण में दृढ़ रहता है। नम्र व्यक्ति न केवल अपने से ऊँचे लोगों का, बल्कि अपने से नीचे के लोगों का भी सम्मान करता है। नम्र व्यक्ति चिड़चिड़ा नहीं होता, किसी का अपमान नहीं करता, और किसी से झगड़ा नहीं करता। नम्र व्यक्ति न तो जिद्दी होता है और न ही आलसी, भले ही उसे आधी रात को काम के लिए बुलाया जाए; क्योंकि उन्होंने स्वयं को प्रभु की आज्ञाओं के पालन के लिए समर्पित कर दिया है। नम्र व्यक्ति न तो द्वेष जानता है और न ही कपट, बल्कि सरलता से प्रभु की सेवा करता है, और सभी के साथ शांति से रहता है। एक विनम्र व्यक्ति, यदि डांटा जाए तो बुरा नहीं मानता, और यदि दंडित किया जाए तो धैर्य नहीं खोता; क्योंकि वह उस परमेश्वर का शिष्य है जिसने हमारे लिए क्रूस को सहन किया। एक विनम्र व्यक्ति आत्म-प्रेम से घृणा करता है, और इसलिए वह श्रेष्ठता की खोज नहीं करता, बल्कि इस संसार में स्वयं को एक जहाज पर एक अस्थायी यात्री के रूप में मानता है।

४६. भले ही आपने संपूर्ण दिव्य शास्त्र का अध्ययन किया हो, सावधान रहें कि शास्त्र के विपरीत, ऐसा कोई विचार आपको अहंकारी न बना दे; क्योंकि ईश्वर द्वारा प्रेरित संपूर्ण शास्त्र हमें नम्रता सिखाता है। और जो कोई भी उसने जो सीखा है उसके विपरीत सोचता या कार्य करता है, वह स्वयं को एक अपराधी साबित करता है।

४७. यदि अहंकार, स्वार्थ, या धन की भावना आपको परेशान करती है, तो उससे बहक न जाएँ, बल्कि दुष्ट और कपटी आत्मा की सेनाओं के विरुद्ध दृढ़ खड़े रहें। अपने मन की आँखों से प्राचीन इमारतों, जर्जर मूर्तियों, जंग से खुरदरे स्तंभों की कल्पना करो – और अपने मन में इस पर विचार करो, और सोचो कि इन सब के मालिक और निर्माता अब कहाँ हैं; और प्रभु को प्रसन्न करने का यत्न करो, ताकि तुम स्वर्ग के राज्य के योग्य ठहरो: *'क्योंकि सब प्राणी घास के समान हैं, और मनुष्य की सारी महिमा घास के फूल के समान है'* (1 पतरस 1:24)। राजसी गरिमा और महिमा से अधिक ऊँचा और अधिक गौरवशाली क्या है? तथापि राजा भी मर जाते हैं, और उनकी महिमा भी। परन्तु जो स्वर्ग के राज्य के योग्य ठहराए गए हैं, वे ऐसी किसी भी बात का अनुभव नहीं करेंगे, वे स्वर्ग में स्वर्गदूतों के साथ शान्ति और आनन्द में निवास करेंगे, जो रोग, शोक और आह से मुक्त है, आनन्द और प्रसन्नता में, स्वर्ग के राजा और सारी पृथ्वी के प्रभु की स्तुति, महिमा और प्रशंसा करते हुए।

४८. यदि आप दिव्य सेवा में सबसे पहले पहुँचते हैं और अंत तक वहीं रहते हैं, तो इस विचार से अहंकारी न बनें; क्योंकि अहंकार एक बिल की तरह है जिसमें एक साँप छिपा रहता है और जो भी पास आता है उसे मार डालता है।

४९. हम स्वयं को बड़ा न मानें, बल्कि स्वयं को नम्र करें। और हमारे पास स्वयं को बड़ा मानने की क्या ताकत है, जब थोड़ी सी भी कठिनाई हमें घुटनों पर ला देती है? इसलिए, हम नम्रता से प्रेम करें, कहीं ऐसा न हो कि प्रभु हमसे मुंह मोड़ लें।

50. हर जगह और हर काम में, नम्रता आपके साथ रहे। क्योंकि जैसे शरीर को कपड़ों की ज़रूरत होती है, चाहे बाहर गर्मी हो या ठंड, वैसे ही आत्मा को भी लगातार नम्रता का वस्त्र धारण करने की आवश्यकता होती है। नम्रता से वंचित हो जाने से तो नग्न और नंगे पांव चलना बेहतर है; क्योंकि प्रभु उन लोगों को ढाँकता है जो इसे प्रेम करते हैं।

५१. एक विनम्र मानसिकता बनाए रखें, कहीं ऐसा न हो कि महान ऊँचाइयों पर पहुँचकर आप एक भयानक गिरावट में टूटकर गिर जाएँ।

५२. नम्रता की शुरुआत आज्ञाकारिता है। आपकी प्रतिक्रिया की नींव और वस्त्र दोनों नम्रता हों; आपका वचन ईश्वर के प्रेम में सरल और अनुग्रहकारी हो। अहंकार अडिग, अवज्ञाकारी, विद्रोही होता है और अपने ही विचारों का अनुसरण करता है। लेकिन नम्रता आज्ञाकारी, शांत और विनम्र होती है, जो छोटे और बड़े दोनों का सम्मान करती है।

53. अपने लिए धर्मपरायणता का जीवन चुनने के बाद, सावधान रहो कि दुष्ट, धर्मपरायणता के भेष में, तुममें एक विदेशी विचार—अर्थात् घमंड और अहंकार—न भर दे, जो तुम्हें अपने भाइयों के साथ मिलकर काम करने के लिए अनिच्छुक बना देगा। दूसरे भाइयों की तरह काम करो, और अपनी धर्मपरायणता की रक्षा करो।

54. यदि अहंकार का कोई विचार आपको परेशान करता है, तो उस विचार से कहें जो आपसे लड़ रहा है: 'मुझसे दूर हो जा, हे दुष्ट विचार। मैंने क्या किया है, और किस सद्गुण में मैं उत्कृष्ट रहा हूँ, कि तुम मेरे मन में ऐसे विचार डालो? संतों को *'पथराव किया गया, उन्हें आरी से चीर दिया गया, उन्हें परीक्षाओं से परखा गया, उन्हें तलवार से मार डाला गया'* (इब्रानियों 11:37)। स्वयं प्रभु, सभी के शासक ने, हमारे लिए क्रूस को *'सह लिया'*, और लज्जा को तुच्छ समझा (– 12:2)। परन्तु मैं, जिसने अपना सारा जीवन पाप में बिताया है, न्याय के दिन क्या उत्तर दूँगा?' – और इस प्रकार आप अपने से घमंड को दूर भगा देंगे।

५५. एक भाई ने कहा: 'मैंने प्रभु से नम्रता की आत्मा माँगी, ताकि जब मेरा भाई मुझे कुछ करने का आदेश दे, तो मैं अपने आप से कह सकूँ: "यह तुम्हारा स्वामी है; उसकी आज्ञा मानो"; और यदि कोई दूसरा भाई मुझे आज्ञा दे, तो मैं फिर से कहूँ: "यह तुम्हारे स्वामी का भाई है"।' और यदि कोई बच्चा मुझे आज्ञा दे, तो मैं कहूँगा: 'अपने स्वामी के पुत्र की आज्ञा मानो।' – और इस प्रकार, अनुग्रह की सहायता से, विदेशी विचारों का विरोध करते हुए, वह एक शांत मन से अपने कार्यों में लगा रहा।

56. निडरता से घमंड पैदा होता है; और घमंड अवज्ञा की जननी है। विनम्रता और नम्रता, इन गुणों से युक्त लोगों को परमेश्वर के भय से बाँधती है, जैसे परमेश्वर के मंदिर में दृढ़ता से स्थापित एक स्तंभ।

५७. आत्म-तुष्टि के राक्षस से सावधान रहो, कहीं तुम घमंड और अवज्ञा की भावना में न पड़ जाओ और अपने आप को नुकसान न पहुँचाओ। प्रभु के अधीन रहना और अपने हाथों से अच्छा काम करना लज्जा की बात नहीं है। यह छोटी सी भट्टी—और वह पीड़ा जो तुम प्रभु के लिए सहते हो—तुम्हें अनंत जीवन प्रदान करेगी। कल्पना कीजिए कि कोई एक ड्रैक्मा को सोने के कई हज़ार टैलेंट से बदल दे; दुष्टता करने वालों की प्रतीक्षा कर रही भविष्य की पीड़ा की तुलना में संन्यासी जीवन के सभी दुःखों का यही परिणाम होता है। आप थोड़ा त्यागते हैं, फिर भी आपको बहुत कुछ दिया जाता है। – इसलिए, अहंकार का त्याग करें, और प्रभु आपका भाग होंगे।

५८. सच्ची विनम्रता से युक्त व्यक्ति की विशिष्ट विशेषताएँ और लक्षण इस प्रकार हैं: स्वयं को सभी पापियों से अधिक पापी मानना, ईश्वर के सामने कुछ भी अच्छा न किया होना; हर समय स्वयं को दोष देना, हर स्थान पर और हर कर्म के लिए; किसी की निंदा न करना और पृथ्वी पर स्वयं से अधिक पापी या अधिक लापरवाह कोई व्यक्ति न पाना, बल्कि हमेशा सभी की प्रशंसा और महिमा करना; कभी भी किसी की निंदा, तिरस्कार या बदनामी न करना; हर समय मौन रहना, और पूछे बिना या अत्यंत आवश्यकता के मामलों में कुछ भी न कहना; और जब पूछा जाए, या जब कोई उद्देश्य हो, या जब अत्यधिक आवश्यकता किसी को बोलने और जवाब देने के लिए मजबूर करे, तो नरमी से, शांतिपूर्वक, संक्षेप में, जैसे विवशता और शर्म के साथ बोलना चाहिए; किसी भी बात में अनावश्यक रूप से खुद को आगे न बढ़ाना, न ही किसी के साथ आस्था या किसी अन्य बात पर बहस करना; लेकिन अगर कोई अच्छी बात कहे, तो उससे कहना: 'हाँ', और अगर बुरी बात कहे, तो जवाब देना: 'जैसा आप चाहें'; आज्ञाकारी रहो और अपनी इच्छा को एक हानिकारक चीज़ के रूप में घृणा करो; हर समय अपनी दृष्टि जमीन पर निचाईं रखो; अपनी मृत्यु को अपनी आँखों के सामने रखो; कभी भी व्यर्थ की बातों में मत उलझो, कभी भी लापरवाही से मत बोलो, कभी झूठ मत बोलो, कभी अपने वरिष्ठों का विरोध मत करो; अपमान, तिरस्कार और हानियों को आनंदपूर्वक सहना; आलस्य से घृणा करना

और परिश्रम से प्रेम करना; किसी को दुख न पहुँचाना, न ही किसी की अंतरात्मा को आहत करना। ये ही सच्ची नम्रता के लक्षण हैं; और धन्य है वह जो इनसे युक्त है; क्योंकि यहाँ वह परमेश्वर का निवास-स्थान और मंदिर बनना आरंभ करता है, और परमेश्वर उसमें वास करता है – और वह राज्य का वारिस बन जाता है।

59. एक पापी के लिए स्वयं को पापी मानने में कोई विनम्रता नहीं है: बल्कि विनम्रता इस बात में निहित है—कि स्वयं के भीतर बहुत और महान चीजों के प्रति जागरूक होते हुए भी, कोई अपने बारे में कुछ भी महान कल्पना न करे। जो पौलुस के समान है, वही विनम्र है; फिर भी वह अपने बारे में कहता है: *'मैं अपने आप में कुछ नहीं समझता'* (1 कुरिन्थियों 4:4), या: *'मसीह यीशु पापियों को बचाने के लिए आए, जिनमें मैं सबसे बड़ा हूँ'* (1 तीमुथियुस 1:15)। इस प्रकार, अपने मन में स्वयं को नम्र बनाते हुए अपने गुणों से गौरवान्वित होना—यही सच्ची नम्रता है!

६. तपस्या जीवन पर सामान्य पाठ

1. जीभ पर संयम – बहुत अधिक न बोलना, न फजिूल बातें करना, न बदनामी करना; शब्दों से दूसरों को आहत न करना, गाली-गलौज न करना, व्यर्थ की बातों में न पड़ना, पीठ पीछे न बोलना, गपशप न करना, रहस्य न खोलना, उन मामलों में दखल न देना जो हमारे नहीं हैं।

2. कानों का संयम – अपनी सुनने की शक्ति को नियंत्रित करना और व्यर्थ की गपशप से प्रभावित न होना।

3. आँखों पर संयम – अपनी दृष्टि को नियंत्रित करना और पापपूर्ण रूप से सुखद या अनुचित चीजों पर अपनी निगाहें न टिकाना।

4. क्रोध में संयम – अपने क्रोध को नियंत्रित करना और अचानक भड़क न उठना।

5. महिमा के संबंध में संयम: प्रशंसा और सम्मान की इच्छा या खोज न करना, घमंड न करना, अहंकारी न होना, और अपने आप में अत्यधिक गर्व न रखना।

6. विचारों में संयम – ईश्वर के भय से विचारों को वश में रखना, मोहक और भड़काऊ विचारों के आगे न झुकना, और उनमें आनंद न लेना।

7. भोजन में संयम: प्रचुर, मीठे या महंगे भोजन की इच्छा या खोज न करें; अनियमित समय पर भोजन न करें; अतिशय खाने के लालच में न पड़ें; भोजन की गुणवत्ता से लालच न करें; और एक के बाद एक व्यंजन की लालसा न करें।

8. पीने में संयम: न तो शराब और न ही पानी को बिना माप के पीना; कुशलता से तैयार किए गए मिश्रणों का आनंद न लेना; विभिन्न पेय पदार्थों की तलाश न करना; अनावश्यक रूप से शराब न पीना; और दावतों में न जाना।

९. पापपूर्ण वासना से संयम – वासना की आकस्मिक उत्तेजनाओं के आगे न झुकना, शर्मनाक विचारों के आगे न झुकना, शरीर की इच्छाओं को पूरा न करना, बल्कि ईश्वर के भय से अपनी कामनाओं पर अंकुश लगाना।

10. पवित्र पिताओं ने हमें पश्चाताप और तपस्या के कार्यों के लिए एक अद्भुत नियम दिया है, कहते हुए: 'केवल आज ही उपवास न करें, जबकि कल के लिए भोज तैयार कर रहे हों; आज केवल पानी न पिएँ, जबकि कल के लिए शराब ढूंढ रहे हों; आज केवल बाल-कपड़ा न पहनें, जबकि कल अच्छे कपड़े पहन रहे हों; केवल आज ही नम्र और विनम्र न बनो, बल्कि कल अहंकारी और घमंडी बनो; केवल आज ही शांत और आज्ञाकारी न बनो, बल्कि कल अव्यवस्थित और अडिग बनो; केवल आज ही खुद को रोने और विलाप करने के लिए न दो, बल्कि कल हँसी और उदासीनता के लिए; केवल आज ही नंगे जमीन पर न सोओ, बल्कि कल एक नरम बिस्तर पर आराम करो। परन्तु, हे मेरे प्रिय, एक ही नियम का पालन करो, जिससे तुम परमेश्वर को प्रसन्न कर सको और अपने तथा अपने पड़ोसी के लाभ के लिए हो सको।

11. चालीस या पचास वर्षों तक, पवित्र पिता अपने नियम को नहीं बदला—अर्थात्, उनका सुंदर और निर्दोष आत्म-संयम, जो भोजन, वाणी, खुले में सोने, नम्रता के मामलों में देखा गया, नम्रता, विश्वास और प्रेम, लोभ-रहितता, और रोते हुए और पश्चाताप के साथ अखंड प्रार्थना – और इस प्रकार उन्होंने स्वयं को शुद्ध किया। इसीलिए परमेश्वर उनमें वास करता था और उनमें महिमा प्राप्त हुई।

12. यदि कोई स्वयं को हर दुष्ट कर्म से, अशुद्ध विचारों से, भ्रष्ट इच्छाओं से, क्रोध, चिड़चिड़ापन, ईर्ष्या, अहंकार, दंभ, घृणा, बदनामी, निंदा, व्यर्थ की बातों से - एक शब्द में कहें तो, – हर उस चीज़ से जो परमेश्वर को घृणित है, और यदि इन चीज़ों से मुंह मोड़ने के बाद भी, वे खुद को उनसे दूर नहीं रखते; तो परमेश्वर उनके भीतर नहीं वास करेगा। इसलिए, प्रियजनों, आइए हम खुद को शुद्ध करें, ताकि परमेश्वर हम में वास करे – और हम उसके वचनों के वारिस होने के योग्य बन सकें।

13. क्या आप जानना चाहते हैं कि आपके हृदय में क्या है? – ध्यान से सुनें! – प्रशंसा के प्रति प्रेम इस बात का संकेत है कि हम व्यर्थ हैं; स्वादिष्ट भोजन में आनंद यह दर्शाता है कि हम पेटू हैं; उपेक्षा यह प्रकट करती है कि हम आलसी हैं; लालच यह दर्शाता है कि हम मसीह से प्रेम नहीं करते; ईर्ष्या यह उद्घोषित करती है कि हममें प्रेम नहीं है; दूसरों की निंदा करने में हमें जो आनंद मिलता है, वह यह संकेत करता है कि हम घृणा से भरे हैं। इस प्रकार, अदृश्य आत्मा शारीरिक कार्यों के माध्यम से दृश्यमान हो जाती है, जो यह प्रकट करती है कि वह अच्छी है या बुरी।

14. पर जीभ उस बात का सबसे अनियंत्रित प्रचारक है जिसे हृदय प्रेम करता है और जिससे वह चिपका रहता है; हमारे हृदय के रहस्य हमारे होठों के द्वारा प्रकट होते हैं। जब हमारे होंठ खुले और बिना पहरे के होते हैं, तो हमारे शब्द बिना सोचे-समझे बह निकलते हैं, और हृदय में जो कुछ भी है, उसे सबके सामने ला देते हैं। इसलिए, यदि आप हृदय के विचारों को जानना चाहते हैं, तो होठों पर ध्यान दें; उनसे आप जान पाएंगे कि हृदय किसकी परवाह करता है और किसके लिए प्रयास करता है—चाहे वह सांसारिक हो या स्वर्गीय, आध्यात्मिक हो या शारीरिक, सुख हो या संयम, लालच हो या संतोष, विनम्रता हो या अहंकार, प्रेम हो या घृणा। हृदय के खजाने से, होंठ आने वालों को भोजन प्रदान करते हैं, और जीभ जिस बात में व्यस्त रहती है, वह यह प्रकट करती है कि हृदय क्या प्रेम करता है - मसीह, या इस संसार की किसी वस्तु को।

१५. हमारी आत्मा स्वभाव से अच्छी है, लेकिन अपनी स्वतंत्र इच्छा से बुरी हो जाती है। वासनाएँ अस्वाभाविक हैं; उन्हें दुष्ट इच्छा द्वारा स्थापित और विकसित किया जाता है - और आदत उन्हें स्वयं प्रकृति जितना ही मजबूत बना देती है। स्वभाव बंधन है; आदत ही इच्छा है। इच्छा, जो स्वतंत्र है, मानो एक किसान है जो अपनी मर्जी से हमारे स्वभाव में बुरी और अच्छी दोनों आदतों को बोता है। प्रकृति वह मिट्टी है जिसे हम जोतते हैं; इच्छाशक्ति किसान है; और दिव्य शास्त्र वे सलाहकार और शिक्षक हैं जो हमारे किसान को यह निर्देश देते हैं कि उसे कौन सी बुरी आदतों को जड़ से उखाड़ना चाहिए और किन अच्छे गुणों को विकसित करना चाहिए।

१६. हमारा किसान चाहे कितना भी गंभीर और उत्साही क्यों न हो, दैवीय शास्त्रों की शिक्षा के बिना वह न तो मजबूत है और न ही जानकार। दिव्य शास्त्रों के उपदेश उसे समझ और शक्ति प्रदान करते हैं, और अपनी ही शाखाओं से, प्रकृति के वृक्ष पर कलम करने के लिए अच्छे सद्गुण प्रदान करते हैं—अर्थात्: विश्वास, आशा, प्रेम, ज्ञान, परिश्रम और इसी तरह के अन्य। लेकिन यदि हमारा किसान, अपने अहंकार में, कभी अपने शिक्षक और सलाहकार को छोड़ने का निर्णय ले ले, तो मेरा तात्पर्य है, दिव्य शास्त्रों को त्याग देता है, तो वह भूल से काम करने लगता है, और प्रकृति पर वह रोपाई करता है जो उससे विदेशी है; मेरा तात्पर्य है: अविश्वास, अज्ञानता, घृणा, ईर्ष्या, गर्व, अहंकार, कीर्ति का प्रेम, लालच, कलह, विवाद और ऐसी ही कई अन्य बातें; क्योंकि, विधिदाता को त्याग देने पर, वह स्वयं भी उनसे त्याग दिया जाता है। लेकिन यदि, पश्चाताप करने के बाद, वह स्वयं को दोषी ठहराता है और, विधिदाता के चरणों में गिरकर, कहता है: 'मैंने आपको त्यागकर पाप किया है'; तब विधिदाता, मानवता के प्रति अपने विशिष्ट प्रेम में, तुरंत उसे स्वीकार कर लेते हैं, उसे समझ और अपने स्वभाव के क्षेत्र को फिर से विकसित करने की शक्ति प्रदान करते हैं, ताकि वह उसमें मौजूद बुरी आदतों को जड़ से उखाड़ सके और उनकी जगह अच्छे सद्गुणों को रोप सके। इसके अलावा, वह उसे इसके लिए मुकुट प्रदान करता है और उस पर प्रशंसा की वर्षा करता है।

१७. तो फिर, तुमने संसार का त्याग क्यों किया है, यदि तुम अभी भी सांसारिक सुखों की तलाश करते हो, नग्नता के बजाय वस्त्रों की, और प्यास के बजाय मदिरा की? – तुम्हें युद्ध के लिए बुलाया गया है, फिर भी तुम दुश्मन के खिलाफ बिना हथियार के लड़ना चाहते हो; पहरा देने के बजाय, तुम नींद में डूब जाते हो; रोने और विलाप करने के बजाय, तुम हँसी-ठिठोली में लग जाते हो; प्रेम के बजाय, तुम अपने भाई से नफ़रत करते हो। तुम्हें आज्ञाकारिता के लिए बुलाया गया है, फिर भी तुम विद्रोह करते हो। तुम्हें परमेश्वर के राज्य की विरासत के लिए बुलाया गया है, फिर भी तुम सांसारिक चीजों पर अपना मन लगाते हो, और नम्रता और विनम्रता के बजाय घमंड और अहंकार दिखाते हो।

18. हे भाइयों, हम आध्यात्मिक व्यापारी हैं, और सांसारिक व्यापारियों के समान हैं। एक व्यापारी हर दिन अपना लाभ-हानि हिसाब लगाता है; और यदि उसे कोई हानि हुई हो, तो वह उसे पूरा करने का हर संभव प्रयास करता है। इसी प्रकार, प्रियजनों, हर दिन, शाम और सुबह दोनों समय, सावधानीपूर्वक विचार करें कि आपका काम कितना आगे बढ़ा है। – और *'शाम को'*, अपने हृदय के मंदिर में प्रवेश करके, हिसाब लगाओ और खुद से पूछो: 'क्या मैंने किसी भी तरह से परमेश्वर को क्रोधित किया है? क्या मैंने व्यर्थ की बातें कही हैं? क्या मैं लापरवाह रहा हूँ? क्या मैंने अपने भाई को दुखी किया है? क्या मैंने किसी की निंदा की है? जब मेरे होंठ भजन गा रहे थे, तो क्या मेरा मन सांसारिक चीजों की ओर भटक नहीं रहा था? क्या मेरे भीतर कोई सांसारिक इच्छा उत्पन्न हुई, और क्या मैंने आनंदपूर्वक उसमें लिप्त होकर उसे पूरा नहीं किया? क्या मैंने सांसारिक चिंताओं को अपने ऊपर हावी होने नहीं दिया?' यदि आप उपर्युक्त

किसी भी मामले में हानि उठा चुके हैं, तो जो खो गया है उसकी भरपाई करने का प्रयास करें; फिर आह भरें और रोएँ, कहीं ऐसा न हो कि आप फिर से उसी जाल में फँस जाएँ। और *'सुबह'*, एक बार फिर अपना हिसाब-किताब लगाओ और पूछो: 'यह रात कैसी रही? क्या मुझे अपने प्रयास से कुछ मिला? क्या मेरा मन मेरे शरीर के साथ जागा हुआ था? क्या मेरी आँखों से आँसू बहे? क्या मैं प्रार्थना में घुटने टेकते समय नींद के बोझ तले दबी नहीं थी? क्या मेरे मन में बुरे विचार आए, और क्या मैंने उन्हें आनंद के साथ नहीं पोसा?" यदि आप इनमें से किसी भी चीज़ से प्रभावित हुए हैं, तो खुद को ठीक करने का प्रयास करें; अपने दिल पर पहरा लगाएँ, ताकि आपको फिर से वैसा ही कष्ट न झेलना पड़े। – यदि आप इतने सतर्क रहेंगे, तो आप अपने खजाने को सुरक्षित रखेंगे; और इस तरह आप अपने प्रभु को प्रसन्न करेंगे और स्वयं को लाभ पहुँचाएंगे।

१९. अपने आप का ध्यान रखो, कहीं तुम आलस्य के शिकार न हो जाओ; क्योंकि आलस्य का प्रचलन विनाश की शुरुआत है। मधुमक्खी का अनुकरण करो, और उसके अद्भुत रहस्य पर ध्यान दो, कि वह पृथ्वी पर बिखरे हुए फूलों से अपना श्रम कैसे इकट्ठा करती है। अपने मन को इस तुच्छ प्राणी में प्रवेश करने दो। भले ही पृथ्वी के सभी ऋषि और संसार के सभी दार्शनिक एक साथ इकट्ठा हो जाएँ, वे भी इसकी बुद्धि की गहराई को नहीं नाप सकते। और हर समझदार व्यक्ति, इसके परिश्रम को देखकर, सृष्टिकर्ता परमेश्वर की स्तुति करता है, और इस बात पर आश्चर्यचकित होता है कि इतनी छोटी सी प्राणी से इतनी बुद्धि कैसे आ सकती है। इसी प्रकार, मेरे प्रिय, मधुमक्खी के समान बनो, और दिव्य धर्मग्रंथों से अपने लिए एक समृद्ध और अक्षय खजाना इकट्ठा करो, और उसे स्वर्ग की राह पर भेज दो।

२०. एक भिक्षु युद्ध में जाने वाले योद्धा के समान है, जो अपने शरीर को चारों ओर से पूर्ण कवच से ढक लेता है, विजय प्राप्त होने तक सतर्क रहता है, और इस बात पर चौकस रहता है कि कहीं शत्रु अचानक उस पर आक्रमण न कर दे, और यदि वह सावधानी बरतने में विफल रहता है, तो वह कैद न हो जाए। इसी प्रकार, यदि कोई भिक्षु, स्वयं को ढीला छोड़कर सुस्त हो जाता है, तो वह आसानी से शत्रु द्वारा पकड़ लिया जाता है; क्योंकि शत्रु उसमें अशुद्ध विचार डालता है, जिन्हें वह खुशी से स्वीकार कर लेता है—जिससे मेरा तात्पर्य अहंकार और व्यर्थता, साथ ही ईर्ष्या और निंदा, लालच और अतृप्त नींद के विचारों से है, और, इसके अलावा, उसे निराशा की ओर धकेलता है। यदि, तथापि, कोई भिक्षु सदा सतर्क रहता है, तो वह ईश्वर की कृपा की सहायता प्राप्त करता है, ईश्वर उसे सिखाते हैं कि उन्हें कैसे प्रसन्न किया जाए, और वह ईश्वर को प्रसन्न करने वाला और ईश्वर की स्तुति करने वाला दोनों बन जाता है। जिस प्रकार जो कोई दर्पण में स्वयं को देखता है, वह देखने वाला और देखा जाने वाला दोनों होता है, उसी प्रकार, जब अनुग्रह किसी व्यक्ति में विश्राम पाता है और उनके भीतर वास करता है, तो वह न केवल उस व्यक्ति को महिमामय बनाता है, बल्कि स्वयं भी उनके द्वारा महिमामय होता है।

21. अनुग्रह की सहायता के बिना, हृदय में पर्याप्त शक्ति नहीं हो सकती और न ही यह प्रभु के सामने ठीक से पाप-स्वीकृति करने के लिए पश्चाताप से भर सकता है; इसके विपरीत, एक व्यक्ति गुणों से रहित और निर्धन होता है, और उसके भीतर नीच और अशुद्ध विचार जड़ जमा लेते हैं, *'जैसे खंडहर पर एक रात का कौवा'* (भजन संहिता 101:7)। अत; मनुष्य का यह कर्तव्य है कि वह अनुग्रह का आह्वान करे, ताकि जब वह आए, तो वह उसे प्रकाशित कर सके—यह मनुष्य का कर्तव्य है कि वह स्वयं को शुद्ध करके, उस अनुग्रह को खोजे कि वह उसमें निवास करे और उसकी सहायता करे; और अनुग्रह से वह हर सद्गुण में फल-फूलेंगे, और उससे प्रबुद्ध होकर, आने वाले युग के आशीर्वादों की विविधिता और भव्यता को समझ सकेंगे। अनुग्रह उनके लिए एक दीवार और एक किला बन जाता है, और उन्हें इस युग से आने वाले युग के जीवन के लिए बचाता है।

२२. पूर्ण सद्गुण प्राप्त करने का प्रयास करो, जो ईश्वर को प्रिय उन सभी से सुसज्जित हो (इसी को प्रेम कहते हैं)। इसे एकल सद्गुण कहा जाता है और इसमें सभी सद्गुणों की सुंदरता और विविधिता समाहित है। जिस प्रकार एक शाही मुकुट कीमती पत्थरों और उत्तम मोतियों के बिना नहीं बनाया जा सकता, उसी प्रकार यह एकल सद्गुण विभिन्न सद्गुणों की सुंदरता के बिना असंभव है। यह पूरी तरह से एक शाही मुकुट के समान है। जैसे बाद वाला (मुकुट), यदि उसमें एक भी रत्न या एक भी मोती की कमी हो, तो वह राजसी सिर पर नहीं चमक सकता, वैसे ही यह एकल सद्गुण, यदि उसमें अन्य सद्गुणों में पाई जाने वाली सुंदरता का कोई एक पहलू भी न हो, तो उसे पूर्ण सद्गुण नहीं कहा जा सकता।

23. यह उत्तम व्यंजनों की तरह भी है, जो हर तरह के उत्तम मसालों से तैयार किए जाते हैं, लेकिन नमक के बिना नहीं। जिस प्रकार ये उत्तम व्यंजन, यदि उनमें नमक की कमी हो, तो खाने के अयोग्य और बेस्वाद हो जाते हैं, उसी प्रकार यह सद्गुण भी, जो विभिन्न सद्गुणों की सारी सुंदरता से सुसज्जित है, यदि मसीह और अपने पड़ोसी के प्रति प्रेम से रहित हो, तो सर्वथा अप्रिय है।

24. यह एक पूर्ण और सुंदर वर्णमाला के समान है, जिसमें अक्षर बहुत ही सुंदरता से बनाए और सजाए गए हैं, लेकिन यदि इससे एक भी अक्षर हटा दिया जाए तो यह पूरी तरह से बेकार हो जाती है। इसी प्रकार, यह सद्गुण, यदि अन्य सद्गुणों में से किसी एक से वंचित हो जाए, तो पूरी तरह से बेकार साबित होता है।

२५. और यह एक ऐसे महान गरुड़ की तरह भी है जो ऊँची उड़ान भर रहा है, जो, जाल में फँसे भोजन को देख कर, अपनी पूरी ताकत से उस पर झपटता है; पर, शिकार को झपटने की अपनी उत्सुकता में, उसके पंजे उलझ जाते हैं, और इस छोटी सी बात के कारण, उसकी सारी शक्ति बँध जाती है: और यद्यपि बाहरी रूप से, उसका पूरा शरीर जाल से मुक्त और बाहर प्रतीत होता है, फिर भी उसकी सारी शक्ति जालों से बँध जाती है। इसी प्रकार, यह सद्गुण, यदि किसी सांसारिक वस्तु से बँध जाए, तो दम घुटना, कमजोर पड़ना और नष्ट हो जाना शुरू हो जाता है, और यह अब ऊँचाइयों तक उड़ान भरने में सक्षम नहीं रहता; क्योंकि यह पृथ्वी से बँध जाता है।

26. जैसे एक मनुष्य एक कीमती और उत्तम मोती की खोज में गहराई में गोता लगाता है, और उसे पाकर, बड़े धन-संपत्ति के साथ तट पर आ जाता है। इसी प्रकार, इस जीवन की सभी अशुद्धियों से स्वयं को मुक्त करो, इस सद्गुण को अपना आवरण बनाओ, और इससे सुसज्जित होकर, दिन-रात सतर्क रहो, कहीं यह तुमसे छिन न जाए। कोई भी विपत्ति उस आत्मा को हिला नहीं सकती जिसके पास यह गुण है—न भूख, न नग्नता, न निराशा, न बीमारी, न गरीबी, न उत्पीड़न, न ही कोई अन्य शैतानी प्रलोभन। यदि वह सतर्क रहती है, तो इससे और भी अधिक बढ़ती है और उसका मुकुट बँधता है, वह परमेश्वर में लगातार फलती-फूलती और प्रबुद्ध होती रहती है। यहाँ तक कि मृत्यु भी इसे नुकसान पहुँचाने में असमर्थ है; इसके विपरीत, शरीर से प्रस्थान करने पर, स्वर्गदूत इसे आनंदपूर्वक स्वर्ग में स्वीकार करते हैं, और इसे ज्योतियों के पिता के पास ले जाते हैं।

27. पिता और पुत्र, पवित्र आत्मा के साथ, उस पर आनन्दित होते हैं। पिता उस पर आनन्दित होते हैं क्योंकि उसने उनसे प्रेम किया और उनसे सिवाय किसी और से प्रेम नहीं किया। उनके एकमात्र पुत्र उस पर आनन्दित होते हैं क्योंकि वह उनकी लालसा करती थी और उनसे सिवाय किसी और की खोज नहीं करती थी। पवित्र आत्मा उस पर आनन्दित होता है क्योंकि वह उसके लिए एक पवित्र मंदिर बन गई है, और उसने उसमें निवास कर लिया है। स्वर्ग और स्वर्गीय सेनाएँ उस पर आनन्दित होती हैं, और एक स्वर में वे प्रणाम करते हैं और पिता, पुत्र और पवित्र आत्मा की महिमा करते हैं, यह देखकर कि वह धार्मिकता की सारी सुंदरता में स्वदूतों जैसी सद्गुणों से सुसज्जित है। स्वर्ग उसकी खुशी मनाता है, क्योंकि उसने इसे अपनी विरासत के रूप में प्राप्त किया है। एकमात्र अच्छे और परोपकारी ईश्वर की महिमा और वैभव हो, जो अपनी दया में हमें अपना राज्य प्रदान करते हैं।

28. हम इस संक्षिप्त समय में संयमी रहें और परिश्रम करें। साँझ समीप है। प्रतिफलदाता महिमा में आ रहे हैं, प्रत्येक को उसके कर्मों के अनुसार प्रतिफल देने के लिए। सावधान रहो कि तुम में से कोई भी, सफल होकर, आत्मसंतुष्ट न हो जाए और इस प्रकार उद्धारकर्ता के असीम पुरस्कार से वंचित न रह जाए। एक भिक्षु बोए हुए खेत के समान है जो फलदायी वर्षा और ओस से लहलहाकर आनंद का फल देता है; और जब फसल काटने का समय आता है, तो किसान को यह चिंता होती है कि ओले और जंगली जानवर खेत को नष्ट न कर दें। जब किसान फसल में अपना पुरस्कार प्राप्त करता है, कटी हुई फलों को अनाज के घर में इकट्ठा करने के बाद, तो वह आनंदित और प्रसन्न होता है, और परमेश्वर का धन्यवाद करता है। इसी प्रकार, इस शरीर में रहते हुए, भिक्षु को अनंत जीवन की परवाह करनी चाहिए, और अंतिम दिन तक तपस्या में परिश्रम करना चाहिए, कहीं ऐसा न हो कि लापरवाही के कारण वह अपने जीवन के पूरे मार्ग को निष्फल बना दे। और जब, किसान की तरह, अपना श्रम पूरा करके, वह अपने श्रम के फलों को स्वर्ग ले जाता है, तो वह स्वर्गदूतों के लिए आनंद और हर्ष लाता है।

29. कल्पना करो कि कोई व्यक्ति राजा के सामने खड़ा होकर उससे बात कर रहा है, और एक साथी सेवक की पुकार सुनकर, वह राजा के साथ उस अद्भुत और महिमामय वार्तालाप को छोड़कर सेवक से बात करने लगता है; वैसे ही है वह व्यक्ति जो भजनों के गायन के समय वार्तालाप करता है। हे प्रिय, हमें इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि हम किसके सामने खड़े हैं। जिस प्रकार स्वर्गदूत, महान श्रद्धा के साथ उसकी उपस्थिति में खड़े होकर, सृष्टिकर्ता के लिए भजन गाते हैं, उसी प्रकार हमें भी भजन गाए जाने के समय विस्मय में खड़े होना चाहिए। ऐसा न हो कि जब हमारे शरीर उपस्थित हों, तो हमारे मन कहीं और हों।

30. तीन प्रकार के आचरण बुराई को बढ़ाते हैं, और एक चौथा शुभ कार्यों में नहीं गिना जाता: जब युवा आज्ञा का उल्लंघन करते हैं; जब बड़े अपने जूनियर्स की सफलता से ईर्ष्या करते हैं; जब धर्मपरायण लोग अनुचित कार्यों में बहक जाते हैं; और जब मठाधीश, अपनी ही अज्ञानता के कारण, भाइयों पर अत्याचार करता है और उन्हें बोझिल करता है।

31. तीन प्रकार के कर्म पुण्य बढ़ाते हैं, और चौथा प्रकार प्रभु और मनुष्यों को प्रसन्न करता है: जब भ्राते नम्रता और सत्य में एकमत हों; जब एक भाई दूसरे को प्रभु के भय में शक्षिा दे; जब छोटे बड़े के अधीन हों जैसे उनके स्वामी के; और जब मठाधीश अपने भ्राताओं से स्वयं के समान प्रेम करे, और वास्तव में उनकी आत्माओं के उद्धार की परवाह करे।

32. यदि आप किसी को किसी वस्तु का व्यापार करते हुए देखें, तो अपने आप से कहें: 'यह व्यक्ति क्षणकि की लालसा करते हुए, क्षणभंगुर वस्तुओं को इकट्ठा करने के लिए इतना कुछ सहन कर रहा है। निश्चिय ही तुम, हे मेरी आत्मा, शाश्वत के विषय में हतोत्साहित नहीं होओगी?" – यदि तुम लोगों को आपस में झगड़ते हुए देखो, तो अपने मन में कहो: "ये लोग किसी ऐसी बात पर इतनी मेहनत करते और आपस में बहस करते हैं जो किसी भी प्रकार का लाभ नहीं देती। निश्चित रूप से तुम, हे मेरी आत्मा, जो अनेक गुणों से युक्त हो, जैसा कि तुम्हें करना चाहिए, परमेश्वर की ओर मुड़ने में विफल नहीं होगी, ताकि तुम्हारा ऋण क्षमा हो जाए?" – यदि तुम लोगों को मिट्टी का घर बनाते हुए देखो, तो अपने आप से कहो: "ये लोग, मिट्टी का घर बनाते हुए, इस कार्य को पूरा करने के लिए अपना प्रयास कर रहे हैं। निश्चिय ही तुम, हे मेरी आत्मा, शाश्वत धामों की उपेक्षा नहीं करोगी?" परन्तु एक-एक करके बातें करके अपने वचन को लंबा न खींचने के लिए, मैं यह कहूँगा: जो कुछ भी हम जीवन में देखते हैं, आइए हम सांसारिक विचारों और सांसारिक तर्क को आध्यात्मिक विचारों से बदलें, और उस कृपा से जो हमारी सहायता करती है, हमें निश्चित रूप से लाभ होगा।

33. एक संन्यासी क्या है? एक संन्यासी उस मनुष्य के समान है जो किसी ऊँची जगह से गिरते हुए, ज़मीन से बहुत ऊपर लटकी एक रस्सी को देखता है, उसे पकड़ लेता है, उससे चिपका रहता है, और प्रभु से मदद के लिए लगातार पुकारता रहता है, यह जानते हुए कि यदि वह कमज़ोर पड़कर दोनों हाथों से रस्सी को छोड़ देगा, तो वह गिरकर मर जाएगा।

34. क्योंकि हम प्रभु के लिए थोड़ा दुख सहने को तैयार नहीं हैं, हम अनजाने में कई और गंभीर दुखों में पड़ जाते हैं। क्योंकि हम प्रभु के लिए अपनी इच्छा त्यागने को तैयार नहीं हैं, हम अपने ऊपर आध्यात्मिक हानि लाते हैं। क्योंकि हम प्रभु के लिए आज्ञाकारिता और अपमान की स्थिति में रहने को सहन नहीं कर सकते, हम स्वयं को धर्मी लोगों के आराम से वंचित कर लेते हैं। क्योंकि हम प्रभु के लिए हमें दी गई चेतावनियों पर ध्यान नहीं देते, हम स्वयं को राक्षसों का खिलौना बना लेते हैं। क्योंकि हम लाठी से दी गई ताड़ना को स्वीकार नहीं करते, हमारे लिए एक कालकोठरी इंतज़ार कर रही है, जिसमें कोई सांत्वना देने वाला नहीं होगा।

३५. छलकपट करने वाले—शत्रु—ने हम में से प्रत्येक में विभिन्न तरीकों से अपना विष भर दिया है, और अपनी चालाकी से वह हम में से प्रत्येक को ठोकर खाने के लिए प्रेरित करता है। एक ने उपवास किया है, फिर भी वह प्रतिद्वंद्विता और ईर्ष्या के हवाले हो जाता है। दूसरा शर्मनाक इच्छाओं से परहेज़ करता है, फिर भी वह व्यर्थता की बेड़ी में जकड़ा हुआ है। फिर कोई और जागरण में उत्कृष्ट रहा है, फिर भी वह निंदा के जाल में फँसा हुआ है। एक निंदा से बचता है, फिर भी वह अवज्ञा और विद्रोह से भरपूर है। एक अन्य भोजन से परहेज़ करता है, फिर भी घमंड और अहंकार में डूब जाता है। एक अन्य प्रार्थना में अथक है, फिर भी चिड़चिड़ापन और क्रोध को खुद पर हावी होने देता है। एक अन्य किसी छोटी सी बात में सफल हो गया है और पहले से ही उन पर हुकुम चलाता है जो उससे अधिक लापरवाह हैं। प्रत्येक, किसी न किसी तरह से, पाप से बंधा है - और कोई भी इसे महसूस नहीं करता।

36. हमारा संघर्ष दिखाई देने वाले लोगों के विरुद्ध नहीं है, जिनसे हम अपनी सूझबूझ बनाए रखकर खुद को सुरक्षित कर सकते हैं। जिनके विरुद्ध हम युद्ध करते हैं वे अदृश्य हैं। इसलिए, लापरवाहों के लिए खतरा बहुत बड़ा है, लेकिन विजेताओं के लिए इनाम भी बहुत बड़ा है। – हम उन्हें कुशलता से युद्ध में लड़ेंगे और उन पर विजय प्राप्त करेंगे। – यदि शत्रु, – मैं एक उदाहरण देता हूँ, – हमें अतिभक्षण के लिए उकसाता है, तो हम उपवास से उस पर प्रहार करेंगे; यदि वह हममें किसी स्त्री के प्रति कामवासना जगाता है, तो धैर्य का अभ्यास करके हम उस भावना पर विजय प्राप्त करेंगे, और शत्रु तुरंत हमसे भाग जाएगा; यदि वह हमें क्रोध के लिए उकसाता है, तो हम स्वयं को शांति से सशस्त्र करेंगे; यदि वह हमें चिड़चिड़ाहट की ओर धकेलता है, तो हमें नम्रता का सहारा लेना चाहिए; यदि वह हमारे भीतर घृणा जगाता है, तो हमें प्रेम से चिपके रहना चाहिए; यदि वह हमें सम्मान की चाह में उकसाता है, तो हमें विनम्रता दिखानी चाहिए; यदि वह हमें महिमा की चाह में उकसाता है, तो हमें अपनी तुच्छता को अपनाना चाहिए; यदि वह हमें सपना दिखाकर ऊँचाइयों पर ले जाता है, तो हमें अपने सामने प्रभु की विनम्रता को रखना चाहिए। – यदि हम इस प्रकार शत्रु का विरोध करते हैं, तो वह हमारे विरुद्ध नहीं टिकेगा और भाग जाएगा, और अनुग्रह हमारे पास लौट आएगा।

३७. हे तपस्या के प्रेमी, अपने प्रति सचेत रहो, कहीं तुम्हारे दिन व्यग्रता में व्यतीत न हो जाएँ। अपने भीतर कपटी विचारों को न पालो, कहीं तुम्हारी शक्ति अपने शत्रु के विरुद्ध संघर्ष में न कम हो जाए। हमेशा अपने मन में

सबसे प्रिय प्रभु को धारण रखें, ताकि आपके तपस्या के प्रयास को सफलता का मुकुट मिल सके। अपने तपस्या के प्रयास के संघर्षों को शीघ्र करें; क्योंकि अचानक वह दिन आएगा जब परिश्रमी लोगों को मुकुट पहनाया जाएगा, और आलसी पछताएंगे। जब तक समय है, तब तक सद्गुण अर्जित करो; अपनी आँखों के लिए श्रद्धा, अपने कानों के लिए सत्य, अपनी जीभ के लिए जीवन के वचन, अपने पैरों के लिए रोगियों से भेंट, अपने हृदय के लिए अपने प्रभु की प्रतिमा, और अपने अंगों के लिए पवित्रता में सफलता अर्जित करो, ताकि तुम स्वर्गदूतों और मनुष्यों के सामने अधिक सम्मान के योग्य माने जाओ। एक निर्जीव वृक्ष को सम्मानित किया जाता है यदि उस पर किसी नश्वर राजा की प्रतिमा लगी हो; तो फिर, इस वर्तमान और आने वाले युग में, एक आत्मा जिसमें ईश्वर वास करता है, उसका सम्मान कितनी अधिकता से किया जाएगा।

38. हे मित्रो, आओ हम प्रभु के सामने दण्डवत प्रणाम करें, ताकि वह हमें शत्रु की युक्तियों को पहचानने के लिए आत्मा का ज्ञान प्रदान करें—हमारा विरोधी, जो हर सुन्दर वस्तु से घृणा करता है। क्योंकि वह हमारे मार्ग में ठोकरें, प्रलोभन, हानि, इस युग के व्यग्रतापूर्ण विचार, देहिक सुख, इस संसार में दीर्घायु की आशा, हमारे कष्टों के समय भय, प्रार्थना में सुस्ती, स्तोत्र गाते समय निद्रा और देहिक आत्मसंतोष रखता है। लेकिन वह जितना परिश्रमी है, हम उतने ही लापरवाह हैं; और वह जितनी अधिक बुरी योजनाएँ बनाता है, हम उतना ही अधिक अपने कर्तव्य की उपेक्षा करते हैं, भले ही हम जानते हैं कि हमारे दिन गिने हुए हैं - और महिमा का प्रभु आ रहा है।

39. हमने जीवन का फल धारण करने का संकल्प लिया है। लेकिन हमारे फल के लिए उसे पकाने के लिए आँसू नहीं हैं; आँसुओं की साँस से उसे फलने-फूलने के लिए पश्चाताप नहीं है; उसे तीव्र ताप से बचाने के लिए विनम्रता नहीं है; सांसारिक वस्तुओं से वैराग्य नहीं है, कहीं ऐसा न हो कि कोई विपरीत वस्तु उसे भारी कर दे; ईश्वर के प्रति प्रेम नहीं है—वह मजबूत जड़ जो फल को सहारा देती है; सांसारिक चीजों की कोई परवाह नहीं है; कोई सतर्कता नहीं है, न ही प्रार्थना से संयत कोई जागरूक मन है। इन सुंदर और अच्छे गुणों के बजाय, हमारे पास उनके विपरीत गुण हैं: उग्र क्रोध और चिड़चिड़ापन है, जिससे कुचला हुआ फल किसी भी काम के लायक नहीं रहता; लालच है, जो इसे दबा देता है; बड़ी निराशा है। क्या ये सभी विपरीत परिस्थितियाँ इसे वैसे ही पकाने देंगी, जैसा इसे पकाना चाहिए, ताकि यह अपने प्रभु के योग्य बन सके?

४०. ताकि, प्रत्येक व्यक्ति के जीवन के मार्ग को देखकर, हम उनके आचरण का अनुकरण कर सकें—अर्थात्, कि कैसे प्रत्येक व्यक्ति, उत्साह से लैस होकर, *'उच्च बुलावा के सम्मान'* की ओर शीघ्रता से बढ़ता है (फिलि. ३:१४)—हमें एक व्यक्ति में सावधानीपूर्वक एक पूर्ण और अटूट विश्वास देखना चाहिए, एक अन्य में, ईश्वर में आशा; एक और में, प्रभु और अपने पड़ोसी के प्रति द्विविध प्रेम; और एक अन्य में, कैसे, ईश्वर के भय में, वह अपनी पहरेदारी करता है, हर दुष्ट कर्म से स्वयं की रक्षा करता है, एक ऐसा जीवन जीता है जो न तो निंदनीय है और न ही आलोचना के योग्य, बल्कि, इसके विपरीत, अपने आचरण की पवित्रता और निर्दोषता के लिए सभी द्वारा प्रशंसित होता है।

४१. देखो कैसे कोई अन्य, विभिन्न वासनाओं द्वारा शत्रु द्वारा घिरकर, ईश्वर की प्रार्थना में शरण लेता है और प्रेम तथा पश्चाताप के साथ उनमें चिपककर, अनुग्रह की सहायता प्राप्त करता है और अनुचित तथा अशुद्ध विचारों से मुक्त हो जाता है, – कड़वी रोती आँखों और आहों के साथ, अपने किए पर पश्चाताप करते हुए, अपने पापों पर शोक मनाते हुए, प्रार्थना और जागरण में उन्हें ईश्वर के समक्ष स्वीकार करते हुए, उपवास, संयम और दुःख के माध्यम से कठिनाइयों को सहते हुए, और इन हथियारों से स्वयं को बचाने का प्रयास करते हुए। इसलिए, एक सच्चे योद्धा की तरह, मृत्यु तक लड़ने का प्रयास करें, – यह ध्यान में रखते हुए कि तपस्या कोई तुच्छ विषय नहीं है, और मोक्ष केवल महान परिश्रम से ही प्राप्त होता है।

४२. उन लोगों का अनुसरण करो जो संसार का पूर्ण त्याग करते हैं – और तुम आसानी से सद्गुणों की ऊँचाइयों तक पहुँच जाओगे। जब आप किसी में सांसारिक वस्तुओं से पूर्ण वैराग्य देखते हैं – कि कैसे उन्होंने सब कुछ पीछे छोड़कर अपने मन को सभी चिंताओं से मुक्त करने का प्रयास किया, ताकि वे बिना किसी विचलन के प्रार्थना में स्वयं को समर्पित कर सकें, और कोई भी विचार या चिंता उनकी प्रार्थना में बाधा न डाले – तो उन्हें अनुकरण करने के लिए अपनी पूरी शक्ति लगाएँ। जो कोई भी शुद्ध हृदय से, प्रेम और आँसुओं के साथ ईश्वर से प्रार्थना करता है, वह अपने मन में, जैसे दर्पण में, स्वयं ईश्वर को प्रतिबिंबित करता है। और यह अनमोल आशीर्वाद गरीबी, दरिद्रता और हर प्रकार की कठिनाइयों से भरे जीवन के माध्यम से प्राप्त होता है। *'जीवन का द्वार संकरा है और मार्ग कठिन है जो जीवन की ओर जाता है'* (मत्ती 7:14)।

४३. अपने जीवन-यापन में संतों का अनुकरण करें – कुछ का श्रद्धा और ईश्वर के भय में, कुछ का विनम्रता में, कुछ का आत्म-अपमान और आत्म-निंदा में, कुछ का मौन में, कुछ नम्रता में, कुछ सौम्य धैर्य में, कुछ अनुनय

और शांति में, कुछ मैत्री और मन की एकता में, कुछ संयम और विवेक में, कुछ सौम्य व्यवहार, मैत्री और सहिष्णुता में, कुछ अपराधों को क्षमा करने में, साहस और उदारता; कुछ वीरता और आज्ञाकारिता के कारनामों में; कुछ शारीरिक श्रम और अपने भाइयों की सेवा में; कुछ आत्मा के उत्साह और जोश में; कुछ संसार से पूर्ण निर्लिप्तता और प्रतिदिन एक सूली पर चढ़ाए गए व्यक्ति के रूप में मरने में; कुछ आत्मा की दृढ़ता और सत्य के प्रेम में; कुछ पवित्रता और कुँवारीपन में। साथ ही देखें – कुछ में दया और मदद करने की तत्परता, दूसरों में चरित्र की कोमलता और अच्छाई, कुछ में करुणा और दया, कुछ में निष्पक्षता और न्याय, कुछ में सादगी और विनम्रता, कुछ में थोड़े में संतोष और संयम, जिसकी विशेषता सरलता और स्पष्टवादिता है, जो अनवरत प्रार्थना, भजन-गायन और आँसुओं की धाराओं से – संक्षेप में, हर किसी में ईश्वर-प्रसन्न जीवन के गुणों को खोजें – और उनका अनुकरण करें।

४४. आइए हम ऊपर की वस्तुओं की ओर देखने का, ऊपर की वस्तुओं के विषय में सोचने का, ऊपर की वस्तुओं को हमेशा याद रखने का, ऊपर की वस्तुओं से पूरी तरह से जुड़े रहने का, ऊपर की वस्तुओं के साथ निरंतर संगति में रहने का प्रयास करें – और किसी भी तरह से अपनी दृष्टि नीचे की वस्तुओं की ओर न मोड़ें, जहाँ सुख हैं, जहाँ इस धोखेबाज़ और जीवन-विनाशकारी संसार की कामनाएँ हैं। दिल की आँख से स्वर्गीय चीज़ों को निहारना हमेशा अच्छा है, और इस बात का पूरा ध्यान रखना चाहिए कि इस आँख के पुतली में कुछ भी न आए—चाहे वह कोई दुष्ट विचार हो या ईश्वर को अप्रिय कोई और चीज़—जो मन को मुरझा दे।

४५. हमें निरंतर प्रार्थना करनी चाहिए कि प्रभु हमें शैतान की युक्तियों से बचाए। क्योंकि ये विचार केवल तब ही हमें अभिभूत नहीं करते जब हम अपनी कोठरी में अकेले बैठे होते हैं, बल्कि ये तब भी प्रबल होकर उठते हैं जब हम प्रभु के घर में इकट्ठा होते हैं; जिससे हम मनुष्यों के शरीरों को भी अशुद्ध दृष्टि से देखने लगते हैं; और साँप हमें काल्पनिक विचारों के माध्यम से लज्जास्पद कृत्य तक ले जाता है। वह विचारों का एक मिश्रण बोता है ताकि भाई विचलित हो जाए और शुद्ध मन से हमारे उद्धारकर्ता—ईश्वर के परम पवित्र रहस्यों पर ध्यान न दे सके। – तथापि, अपनी आँखों की रक्षा करके और अपने मन को सतर्क रखकर, पवित्र व्यक्ति ईश्वर की कृपा ( ) की सहायता से इस पर विजय प्राप्त करता है। इसलिए, मनुष्य को अपने हृदय और अपनी इंद्रियों की अत्यंत सतर्कता से रक्षा करनी चाहिए; क्योंकि इस जीवन में हम एक महान युद्ध लड़ते हैं; और हमारा शत्रु उग्र है।

४६. संघर्ष को नहीं छोड़ना चाहिए। जो अपनी वासनाओं के साथ शांति में है—वह उनके खिलाफ युद्ध कैसे कर सकता है, जबकि वह पहले ही खुद को पापी सुखों की दासता में बेच चुका है और स्वेच्छा से यातना देने वाले को कर देता है? क्योंकि जहाँ शत्रुता है, वहाँ युद्ध है; जहाँ युद्ध है, वहाँ संघर्ष है; जहाँ संघर्ष है, वहाँ मुकुट हैं। यदि कोई कड़वी दासता से मुक्त होना चाहता है, तो उसे शैतान के साथ युद्ध में उतरना चाहिए। इस युद्ध में विजयी होकर, संतों को स्वर्गीय आशीर्वाद प्राप्त हुए।

४७. जो कोई भी शत्रु की उपहास से मुक्त होना चाहता है और उसकी कड़वी दासता से खुद को छुटकारा दिलाना चाहता है, उसे हमारे इस अत्याचारी की इच्छा का विरोध करना चाहिए और सृष्टिकर्ता के प्रेम के लिए उससे युद्ध करना चाहिए। क्योंकि वे अपने संघर्ष का पराक्रम तब दिखाएंगे, जब वे केवल अपने होठों से नहीं बल्कि अपने हृदय की प्रवृत्ति से भी उससे कहेंगे: 'हे शैतान, हम तेरी बात नहीं मानेंगे, और न ही अब तेरी कामनाओं की सेवा करेंगे।' लेकिन संघर्ष के दौरान, ईश्वर से प्रार्थनापूर्ण स्वर में प्रार्थना करनी चाहिए; ताकि वह अपने उन सेवकों को लज्जित करे जो बुराई चाहते हैं। तब, इस उग्र यातना देने वाले को वासना की भट्टी को सात गुना प्रज्वलित करने दो; जो प्रभु में आशा रखते हैं वे शीघ्र ही इस भट्टी को ओस में बदलते देखेंगे - और वह यातना देने वाला, जो कभी भय उत्पन्न करता था, वह स्वयं उनके सामने कांपेगा।

४८. संतों में से एक ने कहा: 'उसके बारे में सोचो जो अच्छा है, ताकि उस पर न सोचो जो बुरा है; क्योंकि मन निष्क्रिय नहीं रह सकता'। – अतः हम अपना मन परमेश्वर के वचन के अध्ययन, प्रार्थना और अच्छे कर्मों में लगाएँ। क्योंकि व्यर्थ के विचारों में व्यस्त रहने से व्यर्थ के कर्म उत्पन्न होते हैं; जबकि अच्छे विचारों में व्यस्त रहने से अच्छा फल मिलता है।

49. भले ही आप कोई दिखाई देने वाले आँसू न बहाएँ, पर हृदय में पश्चाताप हो; क्योंकि आँसुओं में भी अंतर होता है। – परन्तु धन्य है वह, जो अपने प्राण में एक दर्पण की तरह प्रभु को निहारता है, और अपने आँसुओं के साथ, उनकी भलाई की उपस्थिति में उनकी स्तुति करता है; क्योंकि उसकी प्रार्थना सुनी जाएगी।

५०. यदि आप एक चुनी हुई पात्र बनना चाहते हैं, तो प्रभु में अपने आध्यात्मिक मार्गदर्शक के प्रति आज्ञाकारिता और नम्रता में उत्कृष्टता प्राप्त करें। संतों का जीवन आज्ञाकारिता के माध्यम से गौरवान्वित होकर, दीप्तिमान बना है। यहोशू, मूसा के प्रति अपनी पूर्ण आज्ञाकारिता के द्वारा, उनके उत्तराधिकारी बनने के वरदान के योग्य समझे गए। शमूएल को, याजक एलिया के प्रति आज्ञाकारिता में रहते हुए, ईश्वर की वाणी सुनने का

सौभाग्य प्राप्त हुआ। एलीशा ने अपनी आज्ञाकारिता के द्वारा अपने गुरु की विशेष कृपा प्राप्त की। ईश्वर स्वयं—वचन—देहधारी होकर, नम्रता और आज्ञाकारिता का जीवन जिए, जैसा कि सुसमाचारकार कहते हैं: *'और वह उन के वश में रहा'* (लूका 2:51)। प्रेरित ने यह भी कहा: *'उसने स्वयं को नम्र किया, यहाँ तक कि मृत्यु के प्रति, क्रूस पर मृत्यु के प्रति भी आज्ञाकारी बना'* (फिलि. 2:8)। आपने एक अच्छे संकल्प के साथ शुरुआत की है; तो अब दृढ़ रहें, ताकि प्रभु आपको स्वर्ग के राज्य में नम्र और दीन लोगों के साथ गौरवान्वित करें।

५१. एक भाई, अपने आध्यात्मिक पिताओं की आज्ञा का पालन करते हुए, एक दूसरे भाई के पास गया और कहा: 'मैं अपने आध्यात्मिक पिताओं को छोड़कर अकेले ही मौन का अभ्यास करना चाहता हूँ।' दूसरे ने उत्तर दिया: 'एक आदमी था जिसके एक बेटा था, जिसे उसने एक गुरु के हवाले कर दिया ताकि वह उसे अपना धंधा सिखा सके। लड़के ने अपने काम पर कोई ध्यान नहीं दिया। और कुछ दिनों बाद, यह लड़का अपने पिता के पास आया और कहा: 'पिताजी, मुझे मेरे शिक्षक से दूर ले जाइए; मैं यह हुनर अकेले ही बेहतर सीख सकता हूँ।' लेकिन उसके पिता ने उससे कहा: 'अगर, दूसरों से सीखते हुए भी, तुमने उनके मार्गदर्शन में कुछ नहीं सीखा है, तो तुम अकेले किसी भी काम में कैसे सफल हो सकते हो?' मैं देख सकता हूँ कि तुमने अपना कौशल ठीक से नहीं सीखा है, और मुझे डर है कि तुम्हारे लिए मेरी सारी कोशिशें व्यर्थ गई हैं। इसलिए, अपने काम को ठीक से करो और गुरु के मार्गदर्शन में इसका अभ्यास करो, ताकि इस कौशल में निपुण होकर, तुम बाद में इससे अपनी आजीविका कमा सको।" – इसलिए हम भी, भाई, प्रभु के अधीन रहने के जुए को उतार फेंकने का प्रयत्न न करें, कहीं ऐसा न हो कि हम परमेश्वर को प्रसन्न करने के काम में अकुशल रह जाएँ, और परीक्षा में पड़ने पर असहाय हो जाएँ।

५२. जब हम अपने भावों पर विजय प्राप्त कर, अपने भीतर की हर सांसारिक प्रवृत्ति को जड़ से उखाड़ देंगे, तब पवित्र आत्मा की कृपा, हमारे भीतर विश्राम पाकर, हमारे हृदयों को प्रकाशित करेगी, जैसे तेल से भरा और बत्ती लगा हुआ एक तैयार दीया। लेकिन यदि हम अभी भी अपनी वासनाओं के दास हैं और उनमें डूबे रहते हैं, तो हम तेल और बत्ती से वंचित दीपक के समान हैं - और हम अंधकार में बैठे हैं। इसलिए, आइए हम मन की रोशनी को ग्रहण करने के लिए स्वयं को तैयार करने का ध्यान रखें; आइए हम आध्यात्मिक जीवन की खोज करें, ताकि हमारा मन, पवित्र आत्मा के शासन में आकर, और हमारा शरीर, आत्मा का सहभागी बनकर, हमारे भीतर पवित्र हो जाए।

५३. *एक* दृष्टान्त। दो आदमी तीस स्टेडियम दूर एक नगर के लिए रवाना हुए। जब वे दो या तीन स्टेडियम चल चुके थे, तो उन्हें सड़क के किनारे एक छायादार बगीचा मिला, जिसके बीच से पानी की धाराएँ बहती थीं, और वहाँ कई सुखद स्थान थे। जब यात्री इस स्थान में पहुँचे, तो उनमें से एक, जल्द से जल्द शहर देखने की इच्छा से, उसमें से तेज़ी से निकल गया, जबकि दूसरा रुककर इधर-उधर देखने लगा और पीछे रह गया। आस-पास देखकर, उसने भी शहर जाने की इच्छा की, लेकिन, गर्मी से डरकर, वह पेड़ों की छाया में ही रह गया। लेकिन जब वह वहीं रुककर उस जगह की सुखदता का आनंद ले रहा था, तो जंगल से एक जानवर निकला, उसे पकड़ लिया और अपने बिल में घसीट ले गया। इस बीच, दूसरा आदमी, जो इस स्थान से आकर्षित नहीं हुआ, सुरक्षित रूप से शहर पहुँच गया। – इस दृष्टांत का अर्थ निम्नलिखित है: दो आदमी वे हैं जो धार्मिकता के मार्ग पर चल पड़े हैं और उस पर परिश्रम करना शुरू कर दिया है। रास्ते में आकर्षक स्थान संसार और उसके प्रलोभन हैं। जो आगे बढ़ा, वह उन लोगों का प्रतीक है, जो किसी भी चीज़ पर ध्यान दिए बिना, *'मसीह में उच्च बुलावा का सम्मान प्राप्त करने'* (फिलि. 3:14) *के लिए* शीघ्रता करते हैं। और जो आकर्षक दृश्य से मोहित हो गया, वह उन लोगों का प्रतीक है, जिन्होंने अपना लक्ष्य भूलकर, अपने मन को अदृश्य से हटाकर दृश्य की ओर मोड़ लिया। गरमी धर्म की कठोर साधना है। यह तथ्य कि वह आदमी, एक ही स्थान पर ठहरकर, एक जानवर का शिकार हो गया, यह दर्शाता है कि जब कोई व्यक्ति सांसारिक इच्छाओं पर अपना मन लगाता है, तो उस इच्छा से पाप उत्पन्न होता है और, उस आदमी पर काबू पाकर, उसे एक क्रूर जानवर की तरह खा जाता है—जैसा कि लिखा है: *'वासना जब गर्भ धारण करती है, तो पाप को जन्म देती है; और पाप जब परिपक्व हो जाता है, तो मृत्यु को जन्म देता है'* (याकूब 1:15)। अतःहम सांसारिक इच्छाओं से भागें, कहीं ऐसा न हो कि हम फिर से पाप के दास बन जाएँ।

54. व्यर्थ की बातों से बचो, कहीं तुम शर्मनाक विचारों में न पड़ जाओ। जैसे अच्छे शब्द आत्मा के लिए लाभदायक हैं, वैसे ही बुरे शब्द उसे भ्रष्ट करते हैं, जैसा कि प्रेरित कहते हैं: *'बुरी संगत अच्छी आदतों को बिगाड़ देती है'* (1 कुरिन्थियों 15:33)।

५५. जब आप लापरवाह लोगों को देखते हैं जो मठवास में बूढ़े हो गए हैं, तो आपको बहुत सावधानी बरतनी चाहिए, कहीं ऐसा न हो कि उनकी नकल करते हुए आप भी उसी रास्ते पर चल पड़ें; और कहीं ऐसा न हो कि तपस्वी बनकर आप उनके प्रति अहंकारी हो जाएँ, जिसका अर्थ है कि आप अपने ऊपर घमंड को हावी होने दें। उसकी सुनें जो कहता है, *'अपने विषय में सावधान रहो'*, और अपनी आत्मा की सावधानी से रक्षा करो।

56. अपने विचार हर किसी को न बताएं, बल्कि केवल उन्हीं को बताएं जिन्हें आप आध्यात्मिक जानते हैं। क्योंकि शैतान के कई जाल हैं। आध्यात्मिक लोगों से कुछ भी न छिपाएं, कहीं ऐसा न हो कि शत्रु को पैर जमाने का अवसर मिल जाए और वह आपके भीतर वास करने लगे। लेकिन सांसारिक लोगों से सलाह-मशविरा न करें।

57. व्यर्थ की बातों से बचना चाहिए और परमेश्वर के भय के प्रति लापरवाह लोगों से कोई संबंध नहीं रखना चाहिए; क्योंकि वे कुछ भी उपयोगी नहीं कहते, प्रभु के लिए कुछ भी नहीं करते, और न तो सदाचार, न ही भक्ति, न ही पवित्रता के बारे में बात करते हैं। उनके शब्द एक घातक फंदा हैं; उनकी सलाह नरक की खाई है; उनकी संगति आत्मा का विनाश है।

58. सावधान रहो कि मनुष्य के सम्मान या महिमा के लिए, या भोजन, पेय या वस्त्रों के लिए परमेश्वर के सामने अपनी निर्भीकता न खो बैठो; क्योंकि ये सभी चीजें नाशवान हैं, जबकि प्रत्येक व्यक्ति के, चाहे वह अच्छा हो या बुरा, कर्म दर्ज किए जाते हैं। *'अपने मन को ऊपर की बातों पर लगाओ, न कि धरती की बातों पर'* (कुलुस्सियों 3:2), ताकि आप स्वर्गीय पिता का वचन प्राप्त कर सकें।

५९. सांसारिक राजा के सिपाही अपने राजा को खुश करने के लिए खून बहाते हैं; लेकिन आपको खून बहाने की कोई आवश्यकता नहीं है—बस स्वयं को पाप से पराजित न होने दें, कहीं ऐसा न हो कि वह मृत्यु का फल दे (रोमियों ७:५)। जागरूक रहो, भाई, जागरूक रहो, और अपने कार्यों में दृढ़ रहो। परमेश्वर अन्यायी नहीं है और वह आपके परिश्रम को नहीं भूलेगा। लेकिन अपनी कोठरी में रहते हुए भी आप जो कठिनाइयाँ सहते हैं, उनके लिए भी सत्य का प्रकाश आप पर चमकेगा। *'विश्वास के भले युद्ध लड़ो'* (1 तीमु. 6:12), ताकि शत्रु पर जय प्राप्त करके, तुम निर्लज्ज होकर महिमा के राजा की आराधना कर सको। क्योंकि प्रभु न केवल तलवार से मारे गए और अपने अत्याचारियों के हाथों पीड़ित हुए लोगों को मुकुट देता है, बल्कि उन लोगों को भी जो तपस्या और प्रेम में निपुण साबित हुए हैं। जैसे पहले वालों ने प्रभु के लिए अपमान सहन किया, वैसे ही बाद वालों ने भी प्रभु के लिए दुख और तपस्या का जीवन सहा है।

60. अपने आप का ध्यान रखो, और *'तुम्हारे हृदय में कोई दुष्ट विचार* न हो'। दुष्ट विचारों के आगे न झुको। इसी प्रकार पुराने समय का एक मनुष्य पीड़ित हुआ, जिसने अपनी झाड़ी में अपनी शपथ से कुछ छिपा रखा था (यहोशू 7:1-26); और इसी प्रकार भविष्यवक्ता एलिशा के सेवक गेहाजी भी पीड़ित हुआ। उन्होंने केवल परमेश्वर से ही नहीं, बल्कि मनुष्यों से भी अपना आप छिपाया। उन्होंने अपना अपराध गुप्त रूप से किया; फिर भी उन्होंने अपना दंड खुलेआम प्राप्त किया। एक को सार्वजनिक रूप से पत्थर मारकर मार डाला गया, जबकि दूसरे को कोढ़ से पीड़ित कर दिया गया (2 राजा 5:27)। क्योंकि यह व्यर्थ नहीं कहा गया है: *'ईश्वर का मज़ाक नहीं उड़ाया जाता; क्योंकि मनुष्य जो कुछ बोता है, वही काटेगा'* (गलातियों 6:7)।

61. शत्रु हमें किस साधन से परास्त करता है? हमारे भीतर हमारे वासनाएँ किस साधन से बढ़ती हैं? – क्या यह हमारी अपनी अवज्ञा के माध्यम से नहीं है? – जब हमें सिखाया जाता है, तो हम ध्यान नहीं देते; जब हमारी गलतियों को सुधारने के लिए हमें डाँटा जाता है, तो हम बहरे कान बना लेते हैं। हम लोगों से तो छिपते हैं, परन्तु परमेश्वर की उपेक्षा करते हैं। वह भयानक साँप हम में यह 'बुद्धि' डालता है कि हम उन लोगों को बातों ही से परास्त कर दें जो हमें सुधारना चाहते हैं; और इस प्रकार पाप हम में बढ़ जाता है, क्योंकि उसका विरोध करने वाला कोई नहीं होता।

६२. एक भिक्षु में आध्यात्मिक पतन की शुरुआत हँसी और कामुकता से होती है। हे भिक्षु, जब तुम अपने भीतर यह देखो, तो जान लो कि तुम बुराई की गहराई में डूब गए हो। ईश्वर से प्रार्थना करना बंद मत करो कि वह तुम्हें इस मृत्यु से मुक्त करे। हँसी और कामुकता न केवल युवा भिक्षुओं को बल्कि बुजुर्गों को भी शर्मनाक वासनाओं में धकेल देती हैं। एक संत ने कामुकता के बारे में कहा: 'कामुकता एक झुलसाने वाली हवा की तरह है; यह भिक्षु के फलों को नष्ट कर देती है।' अब, हँसी के बारे में सुनो: हँसी एक व्यक्ति को उन लोगों को वादा की गई धन्यता से वंचित कर देती है जो रोते हैं (मत्ती 5:4), यह मन की शांति को नष्ट करती है, पवित्र आत्मा को ठेस पहुँचाती है, आत्मा को नुकसान पहुँचाती है, और शरीर को भ्रष्ट करती है। हँसी सद्गुण को भगा देती है; इसमें मृत्यु की कोई स्मृति नहीं होती, न ही यातना का कोई विचार।

६३. विलाप की शुरुआत आत्म-ज्ञान है। अतःहमारा विलाप मनुष्य के लिए नहीं, बल्कि परमेश्वर के लिए हो, जो हृदय के रहस्यों को जानता है, ताकि हम उससे आशीष प्राप्त कर सकें। इसलिए, हमें दिखावे में तो प्रसन्न रहना चाहिए, प्रभु के उपहारों और पवित्र आत्मा में आनंदित होना चाहिए; परन्तु हमें अपने हृदय में रोना और विलाप करना चाहिए, परमेश्वर से विनती करते हुए कि वह हमारे सभी पापों को क्षमा करे और हमारे जीवन के अंत तक हमें उन से हमेशा के लिए बचाए रखे। रोना निर्माण करता है और रक्षा करता है; रोना आँसुओं से आत्मा को धोता है और उसे

शुद्ध करता है। रोना पवित्रता को जन्म देता है, कामवासनाओं को समाप्त करता है, और सद्गुणों को मजबूत करता है। रोना परमेश्वर को प्रसन्न करता है और स्वर्गदूतों से सांत्वना लाता है।

64. स्वयं को आध्यात्मिक कार्यों में समर्पित करें, ताकि ईश्वर की स्मृति आपके भीतर बनी रहे; लेकिन व्यर्थ की बातों से घृणा करें; क्योंकि बदबू और सुगंध का मेल असंभव है।

65. तपस्वी तीन प्रकार के विवादों से मुक्त रहता है—देखने, सुनने और बोलने से। और चौकस सामुदायिक भिक्षु भी इसी प्रकार तीन प्रकार के विवादों से मुक्त रहता है—खरीदने, बेचने और डाकुओं के हमलों से। लेकिन जहाँ भी कोई हो, उसे अपने आप का ध्यान रखना चाहिए और अपने विवेक को शुद्ध रखना चाहिए।

६६. ऐसा न कहो: 'मैं मठ में प्रवेश कर गया हूँ, और मैं एक देवदूत का स्वरूप धारण करता हूँ।' लोगों को केवल बाहरी दिखावा ही प्रसन्न नहीं करता, बल्कि स्वयं ईश्वर को प्रसन्न करता है; सबसे बढ़कर आवश्यक है अच्छे कर्मों का फल। – अत; एक फलदार वृक्ष की तरह दृढ़ खड़े रहो, अपने पुण्यों के फलों की रक्षा करो, कहीं *'अहंकार' की* कीट भीतर न आकर तुम्हारे भीतर के विनम्रता के फल को न चट कर जाए; कहीं *'दंभ'* तुम्हारी भक्ति पर छा न जाए; कहीं *'क्रोध'* तुम्हारी नम्रता को न छीन ले; चिड़चिड़ाहट आपकी सौम्यता को नष्ट न करे, झगड़ा आपकी शांति को भंग न करे, शत्रुता मित्रता के मार्ग में बाधा न बने, रंजिश पारस्परिक प्रेम को कम न करे, द्वेष सद्भाव के बंधन को न तोड़े, *'अतिभिक्षण'* उपवास में बाधा न डाले, लालच संयम को नष्ट न करे, *"लापरवाही"* ने आपकी लगन को बाधित नहीं किया है, नींद ने आपकी चौकसी को सुस्त नहीं किया है, *"निराशावाद"* ने आपके उत्साह को भारी नहीं किया है, सुस्ती ने आपकी सेवा में बाधा नहीं डाली है, बड़बड़ाहट ने आपके आज्ञाकारिता को कम नहीं किया है, *"अवज्ञा"* ने आज्ञाकारिता के मार्ग को अवरुद्ध नहीं किया है, व्यर्थ की बातें भजन-गायन पर हावी नहीं हुई हैं, चंचलता ने प्रशंसा पर विजय प्राप्त नहीं की, हँसी ने रोने पर, *व्यभिचार ने* पवित्रता को भ्रष्ट नहीं किया, और धन के प्रेम को लालच-रहितता पर तरजीह नहीं दी गई। सावधान रहो कि मसीह से अधिक अपने माता-पिता से प्रेम न करो, और न ही राज्य की तुलना में संसार में अधिक आनंद खोजो; कहीं गपशप का जुनून तुम्हारी जीभ को उकसाए; कहीं किसी से ईर्ष्या तुम्हें सताए; कि धोखा आपके हृदय की पवित्रता को कलंकित न करे, कि कपट आपको सच्चे आशीर्वादों के आनंद से वंचित न करे, कि चोरी आपको राज्य से बाहर न करे, कि झूठ आपको स्वर्ग के द्वार से रोक न दे, कि मनुष्यों को प्रसन्न करने की इच्छा आपके साहस को नष्ट न करे, कि सुखों के प्रति प्रेम आपको परमेश्वर के प्रेम से वंचित न करे, कि वासना आपके हृदय के पश्चाताप को बुझा न दे।

67. जिस हद तक कोई व्यक्ति अपनी इच्छा को नियंत्रित और वश में करता है, उसी हद तक वह सफलता की ओर बढ़ता है। और कोई व्यक्ति जितना ज़िद्दी होकर अपनी इच्छा से चिपका रहता है, उतना ही वह अपने लिए नुकसान करता है। इसलिए, अपनी इच्छा का दास बनने की इच्छा न करो, बल्कि ईश्वर की इच्छा के प्रति आज्ञाकारी बनो।

६८. जब आप अपने कर्तव्य निभाने के लिए, या किसी से बात करने के लिए अपनी कोठरी से बाहर निकलें, तो अपनी आँखों की रक्षा करें, और अपने हृदय को धर्मपरायण विचारों से प्रेरित करते हुए, अपने आप से कहें: 'आप कोई चित्रकार नहीं हैं, और न ही आप लोगों की तस्वीरों की नकल करना सीखने के लिए बाहर गए हैं।' अपने प्रति सचेत रहें। यदि आपका ध्यान इंद्रियों में लगा है, तो आप कैसे, एक दर्पण-सा निर्मल मन लेकर, दिव्य बातों पर मनन कर सकते हैं, आनंद पा सकते हैं और ईश्वर की स्मृति में आनंदित हो सकते हैं?

६९. दूसरों के पापों की जाँच-पड़ताल करना बंद करो, कहीं ऐसा न हो कि इससे तुम्हारे धार्मिक विचार स्वाभाविक रूप से भ्रष्ट हो जाएँ।

७०. मौन का अभ्यास करो; यह तुम्हें अनेक बुराइयों से बचाएगा। पापियों की दुर्दशा को निरंतर याद रखो, यह भय मानते हुए कि तुम भी शीघ्र ही उनमें गिने जा सकते हो।

७१. हम स्वार्थी न बनें; क्योंकि स्वार्थिता से ही, जैसे शाखाओं से, सभी वासनाएँ उत्पन्न होती हैं। हालाँकि, स्वार्थिता प्रेम द्वारा समाप्त हो जाती है, जो सभी को मन की एकता की ओर खींचता है और उन्हें एक साथ बाँधता है। प्रेम एक महान और कीमती खजाना है। इसलिए, प्रेम से दूर न होने का प्रयास करें।

७२. जैसे हम अपनी मुक्ति के लिए चिंतित रहते हैं, वैसे ही हम अपने भीतर के पड़ोसी को विश्वास, प्रेम, धैर्य, पवित्रता, आज्ञाकारिता, नम्रता और ईश्वर के भय में सद्गुणों का एक आदर्श प्रस्तुत करें, बुरी इच्छाओं से बहकने के बजाय, आध्यात्मिक परिश्रम में लगे रहें।

73. ईश्वर की आज्ञाओं को स्वीकार करने के लिए, कबूतर जैसी सरलता धारण करो; और शत्रु की युक्तियों को दूर भगाने के लिए, साँप जैसी चतुराई रखो।

74. बुद्धिमानी से हानिकारक संगति से दूर रहें, ताकि आपका अंतर्मन शांति से विश्राम कर सके।

75. नाट्यकारों के साथ समय न बिताओ, कहीं तुम्हारे विचार भ्रष्ट न हो जाएँ; क्योंकि उनके शब्द सबसे अधिक हानिकारक होते हैं। वे बड़ों को जवानों की तरह व्यवहार करने के लिए मजबूर करते हैं, और युवाओं को कानून-विहीन कर्मों में खींचते हैं।

76. जब कोई रोता है, तो पाप करना असंभव है; और हृदय से पश्चाताप करने वाला कोई भी बुराई की साजिश नहीं रचता। हृदय से पश्चाताप आँसू लाता है, और आँसुओं के बाद दुष्ट कर्मों से बचकर बुराई में कमी आती है।

७७. यदि आप जवान हैं, तो स्वयं को मौन और परिश्रम का आदी बनाएं। परिश्रम आपको बोझिल नहीं बनाएगा, और मौन आपकी आत्मा के प्रकाश को अविनाशी बनाए रखेगा, और किसी भी जुनून से उसे मद्धिम नहीं होने देगा।

७८. किसी व्यक्ति को उसके बाल या वस्त्र संसारिक नहीं बनाते, बल्कि एक बुरा चरित्र और सांसारिक तथा अशुद्ध इच्छाओं की प्रवृत्ति बनाती है, जिससे आत्मा नीच हो जाती है।

७९. किसी को संन्यासी न तो मुंडन और न ही वेशभूषा बनाती है, बल्कि दिव्य इच्छा और एक दिव्य जीवन शैली बनाती है, जिसमें जीवन की पूर्णता प्रकट होती है।

80. प्रलोभन के सामने स्वयं को बड़ा न समझो; क्योंकि एक बार प्रलोभन आ जाने पर, यह अक्सर उन लोगों को भी लज्जित कर देता है जो दृढ़ प्रतीत होते हैं। इसीलिए सतर्क रहना चाहिए, और इस प्रकार मन को गिरने से सुरक्षित रखना चाहिए।

81. हर काम और हर विचार को इस तरह करो कि वह ईश्वर को प्रसन्न करे; क्योंकि यदि इस इरादे का अभाव हो, तो तुम्हारे सभी कर्मों का मूल्य समाप्त हो जाता है।

82. चाहे आप समुदाय में रहते हों या सभी से अलग-थलग, मौन में, आप जो चाहते हैं, अर्थात् एक शुद्ध हृदय और एक पश्चात्तापी आत्मा, उसे नज़रअंदाज़ न करें। जिसने भी इन्हें प्राप्त कर लिया है, उसे परमेश्वर द्वारा अपमानित नहीं किया जाएगा; लेकिन इन्हें नज़रअंदाज़ करना एक बड़ा खतरा है।

83. अपने आत्मा को दैवीय जल (ईश्वर का वचन और संस्कार) से सींचो, ताकि वह फल-फूल सके और धार्मिकता में फल दे सके। हमें आत्मा के लिए लाभदायक चीज़ों का प्रयास करना चाहिए, जैसे जानवर हरे चरागाहों की ओर दौड़ते हैं।

84. जब आत्मा स्वस्थ होती है, तो शरीर में भी अच्छे कार्यों की शक्ति होती है; लेकिन यदि आत्मा दुष्ट विचारों में खो जाती है, तो शरीर भी अनिवार्य रूप से पाप से भ्रष्ट हो जाएगा।

८५. दुष्ट प्रतिदिन हमारी आत्मा के लिए छिपे हुए जाल बिछाता है, ताकि उसे बहकाकर वह उसे अनंतकालिक यातना में डाल सके। ये जाल मिठास से भरे होते हैं, ताकि वे उन आत्माओं को बहका सकें और लुभा सकें जो अपने प्रति लापरवाह हैं। हे भाई, मोहक विचारों से बहककर इस नश्वर मिठास में आनंद न ले। एक विचार एक बहकाने वाला है; यदि वह आत्मा में प्रवेश कर जाए, तो वह उसे पापी विचारों से प्रसन्न करता है, ताकि बाद में वह उसे पाप से मार सके। और वह आत्मा के लिए एक जाल बन जाता है। लेकिन होश में आओ और इस जाल को तोड़ने के लिए जल्दी करो, प्रार्थना, आँसुओं, संयम और सतर्कता के द्वारा उस विचार को अपनी आत्मा से भगा दो। – अन्य सभी मामलों में, सतर्क रहें, और एक लुभावने विचार पर एक पल के लिए भी न टिकें। हमेशा प्रार्थना, उपवास और आँसुओं के साथ ईश्वर की ओर मुड़ें, ताकि आप सभी जालों, प्रलोभनों और वासनाओं से मुक्त हो सकें।

८६. हम सतर्क योद्धा बनें; हम हर दिन युद्ध में दुष्ट पर विजय प्राप्त करें। आइए हम इस युद्ध के नियमों का अध्ययन करें: यह अदृश्य है, और इसका नियम है कि हम स्वयं को सभी सांसारिक चीजों से वंचित करें। यदि हम मृत्यु की प्रतीक्षा करें, उसे प्रतिदिन अपनी आँखों के सामने रखें, तो हम पाप नहीं करेंगे। यदि आप स्वयं को सभी सांसारिक चीजों से मुक्त कर लेते हैं, तो आप युद्ध में पराजित नहीं होंगे। क्योंकि सांसारिक चीजें हमें नीचे खींचती हैं, और वासनाएँ हृदय की आँखों पर पर्दा डाल देती हैं; इस प्रकार अधर्मी हमारे खिलाफ़ युद्ध में हम पर विजय प्राप्त कर लेता है।

८७. हे भिक्षु, यह तर्क मत करो: 'तपस्या के कष्ट बहुत बड़े हैं, परन्तु मैं कमज़ोर और दुर्बल हूँ, तपस्या करने में असमर्थ हूँ।' – यदि आप किसी दूर की भूमि की यात्रा करने का संकल्प लेते हैं, तो आपके लिए एक ही क्षण में पूरा रास्ता तय करना असंभव होगा; लेकिन हर दिन एक विश्राम स्थल से दूसरे तक यात्रा करके, समय के साथ, आप उस भूमि तक पहुँच जाएँगे जिसे आपने अपने मन में रखा है। स्वर्ग के राज्य और आनंद के स्वर्ग के बारे में भी यही कहा जाना चाहिए। हर कोई पूरे जीवन की मेहनत से ही वहाँ पहुँचता है – उपवास, संयम और जागरण के माध्यम से। संयम, आँसू, प्रार्थना, जागरण और प्रेम – ये वे विश्राम-स्थल हैं जो स्वर्ग की ओर ले जाते हैं। उन्हें धैर्यपूर्वक - और आनंद के साथ सहन करें। प्रत्येक पड़ाव के बाद, आपकी आत्मा के कदम मजबूत होंगे - और स्वर्ग की ओर ले जाने वाले आपके मार्ग में आपको कोई कठिनाई नहीं होगी।

८८. शत्रु उस व्यक्ति में, जिसने बिना अधिक विचार किए संन्यास जीवन में प्रवेश किया है, अनुचित स्वतंत्रता की भावना भर देता है। और जो श्रद्धा के कारण संन्यासी बना है, उसमें वह अपनी शक्ति से परे की आकांक्षाएँ भर देता है। लेकिन जो वास्तव में ईश्वर से भयभीत है, वह इन दोनों विचारों से भटकता नहीं है। ईश्वर का भय उसके हृदय को सीधे मार्ग पर चलने के लिए प्रकाशित करता है।

८९. एक भाई, संन्यास का व्रत लेने के बाद, समुदाय छोड़ने के विचार से जूझ रहा था। – और उसके विचारों ने उसे यह उदाहरण प्रस्तुत किया: 'बगीचे में इस हरियाली को देखो; यदि इन क्यारियों की देखभाल करने वाला माली पौधों को उखाड़कर कहीं और नहीं लगाता, तो वे नहीं बढ़ेंगे।' लेकिन भाई ने इन विचारों का इस प्रकार उत्तर दिया: 'क्या माली वास्तव में इन क्यारियों में बोई गई हर चीज़ को उखाड़ देगा? क्या वह क्यारी में वह नहीं छोड़ेगा जिसे वह पोषित कर सकती है? – इसके अलावा, जो उखाड़ दिया गया है वह उतना सुरक्षित नहीं है जितना कि जो अपनी जगह पर रहता है। इसलिए, तुम्हें भी उन लोगों में से एक होना चाहिए जो उखाड़े नहीं जाते।' – और इस प्रकार, अनुग्रह की मदद से, उन्होंने उस विचार पर विजय प्राप्त की।

९०. एक भिक्षु को विवेकी होना चाहिए, ताकि वह पहचान सके कि विरोधी उसके विरुद्ध क्या षड्यंत्र रचता है – और कुछ बातों को हँसकर, कुछ को नम्रता से, और कुछ का खंडन करने के लिए एक सुविचारित शब्द का प्रयोग करे।

९१. जब तक आत्मा सांसारिक चीजों के लिए तरसती है, इस दुनिया की विभिन्न इच्छाएं और विचारों में आत्मा के सामने आने वाले व्यर्थ सुख उसकी शक्ति को कम कर देते हैं; और इस वजह से, कोठरी में रहने वाला आलस्य में पड़ जाता है। लेकिन जब कोई संसार का पूर्ण रूप से त्याग कर देता है, उससे और उसके मोह से घृणा करने लगता है, और पूरे हृदय और आत्मा से स्वयं को प्रभु का दास बना देता है, तो आलस्य उस पर हावी नहीं होगा, और परिणामस्वरूप वह अपना काम करने के लिए स्वतंत्र रहेगा। उसे केवल व्यर्थता के विचार के विरुद्ध संघर्ष का सामना करना पड़ेगा; लेकिन प्रभु का सेवक इस विचार को भी दूर भगा देगा, अपनी कमजोरी और इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि उसके पास जो भी वरदान है, वह प्रभु का दिया हुआ है, इस कहावत के अनुसार: 'जो *तुम्हारे पास है, वह तुम्हें मिला है'* (1 कुरिन्थियों 4:7)? उसे देह की दुर्बलता से भी एक संघर्ष का सामना करना पड़ता है; फिर भी प्रभु का सेवक इसके कारण भय से पराजित नहीं होगा, और न ही वह स्वयं को परमेश्वर के प्रेम से अलग करेगा, उस वचन के अनुसार जिसने कहा: *'हमें परमेश्वर के प्रेम से कौन अलग कर सकता है?'* (रोमियों 8:35-39)? क्योंकि सभी वासनाओं के पीछे व्यभिचार की आत्मा होती है; परन्तु लज्जाजनक वचनों से दूर रहो, और तुम अशुद्ध विचारों से बचोगे।

92. बुद्धिमान वृद्ध भाइयों के लिए मरहम हैं, जो आत्मा का अभिषेक करते और उसे बल देते हैं।

९३. यदि तुमने संसार का त्याग कर दिया है, तो अपने कार्य में लग जाओ, ताकि तुम वह मोती प्राप्त कर सको जिसकी तुम खोज में हो। क्योंकि कुछ ऐसे हैं जिन्होंने संसार का त्याग कर दिया और सांसारिक जीवन से अलग हो गए—कुछ ने सैन्य सेवा छोड़ दी, दूसरों ने अपनी संपत्ति उड़ा दी—लेकिन अंत में, अपनी इच्छा के वश में होकर वे गिर पड़े; क्योंकि ईश्वर की इच्छा के अनुसार जीने के बजाय अपनी इच्छा के वश में होने से अधिक विनाशकारी कुछ भी नहीं है। उन्होंने मुख्य द्वार से सभी सांसारिक चीजों को छोड़ने का दिखावा किया, लेकिन एक छिपे हुए दरवाजे से दुनिया में लौट आए।

९४. किसी व्यक्ति में ज्ञान की सुगंध यह है: कि वह हर परिस्थिति में स्वयं को दोष देता है, और स्वयं को दोष देते हुए, उसी भूल में पड़े दूसरे की निंदा नहीं करता।

९५. वह जिसका हृदय विचारों के तूफान से घिरा हो और जो वासनाओं से वशीभूत हो, वह न तो मनुष्य के सामने लज्जित होता है और न ही ईश्वर से डरता है। यदि वह एक शासक है, तो वह बिना किसी डर के बुराई करता है। यदि, हालाँकि, वह कमजोर और गरीब है, तो वह भी अपनी प्रकृति की स्थूलता के आगे झुककर, लज्जा के बिना दुष्टता से काम करता है।

९६. योद्धाओं के लिए युद्ध संक्षिप्त होता है, लेकिन मोक्ष के उत्सुक लोगों के लिए यह प्रभु के पास उनके प्रस्थान तक जारी रहता है। इसलिए, किसी को भी इस कार्य को पूरी लगन, संयम और धैर्य के साथ आरंभ करना चाहिए। यदि आप एक सिंह को मारने का निश्चय करते हैं, तो दृढ़ संकल्प के साथ उस पर टूट पड़ें, कहीं ऐसा न हो कि वह कुम्हार के बर्तन की तरह आपकी हड्डियाँ कुचल डाले। यदि आपको समुद्र में फेंक दिया जाए, तो जब तक आप सूखी भूमि पर न पहुँच जाएँ, तब तक हतोत्साहित न हों, कहीं ऐसा न हो कि आप पत्थर की तरह गहराई में डूब जाएँ। यदि आप किसी प्रतियोगिता में प्रवेश करते हैं, तो संयमित रहें, कहीं ऐसा न हो कि आपका प्रतिद्वंद्वी आपको हराकर प्रसन्न हो जाए, और कहीं आपको मुकुट के विपरीत कुछ न मिल जाए।

९७. जो कोई भी भिक्षु बनना चाहता है, उसे पुरुषोचित सहनशक्ति के लिए तैयार रहना चाहिए, कहीं ऐसा न हो कि भिक्षु जीवन में प्रवेश करने पर वह कहे: 'मुझे नहीं पता था कि मेरे साथ ऐसा होगा।' यह आपको बता दिया गया है। तो फिर, अपने विचारों को व्यवस्थित करें, और धैर्य से स्वयं को सुसज्जित करें—ताकि अपने मुंडन के समय यह कहने के बाद: 'मैं सब कुछ सहन करूँगा', और फिर आप अगले ही सुबह इस व्रत को वचन और कर्म दोनों से तोड़ते हुए न पाए जाएँ। परमेश्वर के स्वर्गदूत पास ही खड़े रहते हैं और आपके होठों से निकली हर बात को सुनते हैं। सावधान रहें कि झूठ न बोलें; क्योंकि प्रभु *'झूठ बोलने वालों का नाश कर देंगे'* (भजन संहिता 5:7)।

९८. प्रभु की सेवा करने वालों पर कई परीक्षाएँ आती हैं। लेकिन जो व्यक्ति पूरे मन से स्वयं को ईश्वर के मार्गदर्शन के हवाले कर देता है और ईश्वर की इच्छा में रहता है, वह उन सभी पर विजय प्राप्त कर लेता है। ईश्वर हमसे केवल दृढ़ संकल्प की मांग करते हैं, और वह स्वयं हमें शक्ति प्रदान करते हैं और विजय देते हैं: *'वह उन लोगों के लिए ढाल है जो उसकी शरण लेते हैं'* (भजन संहिता १७:३१)।

99. लापरवाहों को न देखो; बल्कि अपने आप पर ध्यान दो, ईश्वर को अपनी आँखों के सामने रखो, उस व्यक्ति के उदाहरण का अनुसरण करो जिसने लिखा है: *'मैंने प्रभु को सदा अपने सामने स्थापित किया है; क्योंकि वह मेरे दाहिने हाथ में है, मैं नहीं डगमगाऊँगा'* (भजन संहिता 15:8)।

100. हम किसी को दोष न दें; क्योंकि हम नहीं जानते कि वे अपनी कोठरी में स्वयं का आचरण कैसे करते हैं, या परमेश्वर के सामने कैसे परिश्रम करते हैं; यदि हम उन्हें हँसते या बातें करते देखें तो उन्हें दोष न दें; क्योंकि हम नहीं जानते कि उनकी कोठरी में उनका मानसिक हाल क्या है। हम में से प्रत्येक को अपने आप का ध्यान रखना चाहिए; क्योंकि हम में से प्रत्येक को अपने लिए परमेश्वर के सामने अपना हिसाब देना होगा।

101. क्या आप प्रलोभन पर विजय प्राप्त करना चाहते हैं? अपनी इच्छा की हर छाप को मिटा दें। यदि कोई बात आपको अच्छी लगे, परन्तु प्रभु में आबट उसे अच्छी न माने, तो प्रभु यीशु मसीह के नाम पर उसकी आज्ञा मानो। विवादों में पड़ना या अपनी इच्छा का अनुसरण करना ही पतन का संकेत है। सब सुनो कि भजन में क्या कहा गया है: *'भय के साथ प्रभु की सेवा करो, और काँपते हुए उसके सामने आनन्द मनाओ। डाँट-फटकार स्वीकार करो, कहीं ऐसा न हो कि प्रभु को क्रोध आ जाए, और तुम धर्मी की मार्ग से भटक जाओ'* (भजन संहिता 2:11–12)।

102. हम ऐसा व्यवहार न करें कि आज हम संयम और नम्रता का अभ्यास करें, जबकि कल हम अतियौवन और अहंकार के आगे झुक जाएँ; आज – मौन, जागरण, विनम्रता; और कल – मनोरंजन, अतृप्त निद्रा, अवज्ञा और इसी तरह की अन्य बातें; आज हम संसार का त्याग करते हैं, सभी सांसारिक चीजों का त्याग करते हैं, अपने देश, दोस्तों और माता-पिता का त्याग करते हैं, प्रभु में अपनी आशा रखते हैं, जबकि कल हम अपने देश, अपने रिश्तेदारों और अपनी विरासत को देखने के लिए तरसते हैं - एक ऐसी लालसा जो हमें अनेक बुराइयों में डुबो देती है। आइए हम याद रखें कि लूत की पत्नी, पीछे मुड़कर देखने पर, नमक का स्तंभ बन गई थी। और प्रभु सिखाते हैं: *'जो कोई हल पर हाथ रखकर पीछे मुड़कर देखता है, वह परमेश्वर के राज्य के योग्य नहीं है'* (लूका 9:62)।

103. हमेशा उस दिन को याद रखें, जब आपने सभी सांसारिक चीजों को त्यागकर, प्रभु के लिए संसार छोड़ दिया था, जब आप परमेश्वर के भय से जल उठे थे और आपकी आत्मा प्रभु के लिए जल रही थी। और इस मानसिक स्थिति को अंत तक दृढ़ता से थामे रहें; क्योंकि *'जो अंत तक टिकेगा, वह उद्धार पाएगा'* (मत्ती 10:22)।

104. आपके मन में आने वाले विचारों के प्रति सतर्क रहें; क्योंकि यही संघर्ष की शुरुआत है। वर्षा के पानी के तालाब से एक सीख लें। बारिश के तुरंत बाद, जब वर्षा का आशीर्वाद अभी-अभी तालाब में एकत्रित हुआ होता है, तो पानी मटमैला होता है, लेकिन फिर, जैसे-जैसे समय बीतता है, यह और अधिक स्पष्ट हो जाता है। – धैर्य रखें; आपके विचार भी शांत हो जाएँगे – और आपको शांति प्रदान करेंगे।

105. दुष्ट विचारों के विषय में इस दृष्टान्त को सुनो। जब अंगूरों की बेलों से अंगूर इकट्ठा किए जाते हैं, उन्हें मदिरा-प्रेस में डालकर रस निकालने के लिए निचोड़ा जाता है, और बर्तनो में डाला जाता है, तो मदिरा पहले-पहले इतनी उबलती है मानो सबसे प्रचंड आग से तपी हो, कि यहाँ तक कि सबसे उत्तम बर्तन भी, उसकी ताकत को सहन न कर पाकर, कभी-कभी तनाव से फट जाते हैं। इसी प्रकार मनुष्य के विचारों के साथ होता है, जब वे इस व्यर्थ युग और इसकी चिंताओं से मुड़कर स्वर्गीय राज्य की ओर उन्मुख होते हैं। दैत्य, किसी व्यक्ति में उत्साह सहन न कर पाकर, उसके मन को विभिन्न तरीकों से भ्रमित करते हैं, इस इरादे से कि उसमें *'भ्रष्टता का अंधकार'* (अब्बा 2:15) मिला सकें; और यदि उन्हें कोई दोष रहित पात्र मिल जाए—अर्थात् एक अविश्वासी और संदेह करने वाली आत्मा—तो वे उसे चूर-चूर कर देते हैं। दैत्य, भेड़ियों की तरह, भिक्षुओं के कोठों में मंडराते हैं, उनके लिए खुला हुआ कोई दरवाज़ा ढूंढते हैं, ताकि घुसकर वे अपने अधीन आत्मा को भ्रष्ट कर सकें। लेकिन अगर उन्हें दरवाज़ा बंद मिलता है, और आत्मा विश्वास में दृढ़ रहती है, तो वे उदास चेहरों के साथ लौट जाते हैं।

106. अपने सभी कर्मों में विनम्रता बनाए रखो, जो आज्ञाकारिता की जननी है। – द्विचित्तिता को त्यागो, और सभी बातों में विश्वास का वस्त्र धारण करो, ताकि प्रभु, तुम्हारी आत्मा के उत्साह को देखकर, तुम्हारे कर्मों में तुम्हें बल दें। – अपने भीतर आलस्य, प्रतिद्वंद्विता, हर प्रकार की दुष्टता और ईर्ष्या से गहरी घृणा पालें, क्योंकि आपने प्रभु के लिए सब कुछ त्याग दिया है। जान लें कि यदि ऐसे विचारों के कारण आप शुरुआत में ही सुस्त पड़ गए, तो बाद में आपको बहुत परिश्रम और हानि सहनी पड़ेगी।

107. जैसे आप अपने आँगन में गंदगी को जमा नहीं होने देते, वैसे ही अपने भीतर कामुक इच्छाओं को हावी न होने दें।

108. चौड़े रास्ते पर, निम्नलिखित होते हैं: द्वेष, लापरवाही, लालच, मद्यपान, अय्याशी, व्यभिचार, कलह, चिड़चिड़ापन, अहंकार, चंचलता और इसी तरह की अन्य बातें; और इनके बाद आते हैं: अविश्वास, अवज्ञा, विद्रोह, और सभी बुराइयों में सबसे बुरी बुराई, निराशा। – और संकीर्ण मार्ग पर, निम्नलिखित पाए जाते हैं: मौन, संयम, पवित्रता, प्रेम, धैर्य, आनंद, शांति, विनम्रता और इसी तरह के गुण। और इनके बाद अमर जीवन आता है।

109. विशेष रूप से कामुकता से अपना बचाव करो, कहीं तुम बकबक और निर्लज्जता के दास न बन जाओ, कहीं तुम राक्षसों के लिए आनंद का स्रोत न बन जाओ, और अंततःअपने भाइयों के साथ अपना संगतिभाव न खो बैठो। खेतों को चरने वाले जंगली गधे उतने नहीं हैं जितनी कामुकता संन्यासियों की मेहनत को बर्बाद कर देती है।

110. आइए हम उन लोगों की कल्पना करें जो सांसारिक राजा के सामने खड़े होते हैं और उसके नश्वर सिंहासन की सेवा करते हैं; वे अपने राजा के सामने कितनी एकाग्रता और भय के साथ खड़े होते हैं? क्या हमें, विश्वासियों के रूप में, स्वर्गीय राजा के सामने और भी अधिक भय और कांपते हुए और पूरी श्रद्धा के साथ खड़ा नहीं होना चाहिए? इसलिए, मैं यह उचित नहीं समझता कि हम हमारे प्रभु और उद्धारकर्ता यीशु मसीह के शरीर और लहू के पवित्र रहस्यों को निर्लज्ज दृष्टि से देखें। और पवित्र धर्मग्रंथ हमें इस बात का विश्वास दिलाते हैं, कहते हुए: *'मोशे काँप गया और देखने की हिम्मित नहीं की'* (जलते हुए झाड़ी की ओर) (प्रेरितों के काम 7:32)।

111. मेरी समझ में, तीन प्रकार की नींद हैं जो रात में मनुष्य को परेशान करती हैं। *'पहली'* एक भाई पर दुष्ट की करतूतों से तब आती है जब वह भजन गाना शुरू करता है। लेकिन अगर भाई में आलस्य नहीं है, तो इसका कोई भी प्रभाव नहीं होता; हालाँकि, यह उसे और भी बुरी तरह से परेशान करती है, यदि भाई का पेट भोजन और ी पेय से भरा हो। *'दूसरी'* एक भाई पर दिव्य सेवा के दौरान, उसकी अपनी लापरवाही के कारण आती है, जब वह सेवा के अंत तक बने रहने का प्रयास नहीं करता, और सेवा के बीच में ही भजन गाने वालों को छोड़कर सोने के लिए जाने की इच्छा करता है। *'तीसरी'* नियमित सेवा के समापन पर, प्रकृति की आज्ञा से अनुभव की जाती है। – अत; लापरवाह न बनें। क्या आपने यह नहीं सुना कि भविष्यवक्ता शमूएल, बार-बार बुलाए जाने पर भी, एक बार भी उठने में विफल नहीं हुए, भले ही वे तब भी एक युवक ही थे? जब आप दिव्य सेवा में, भाइयों के बीच या अकेले, हमारे उद्धारकर्ता यीशु मसीह की महिमा करने के लिए खड़े हों, और नींद की पहली झपकी आपको परेशान करे: उन्हें भांपते ही उनका विरोध करें, कहीं ऐसा न हो कि अपनी ही सुस्ती के कारण आप परमेश्वर की सेवा के फल से वंचित रह जाएँ; बल्कि दृढ़ता से सहन करें, भले ही नींद एक या दो बार आपकी आँखें बंद कर दे; अपनी जगह न छोड़ें – और आपको बहुत लाभ होगा। अतृप्त नींद की लत, पेटूता की लालसा के समान है। यदि कोई बहुत अधिक खाने का आदी है, तो प्रकृति बहुत कुछ मांगती है; लेकिन यदि कोई संयम का आदी है, तो प्रकृति अतिशियोक्ति की मांग नहीं करती। मछली पकड़ने वालों को उदाहरण के रूप में लें: वे अपने काम को नज़रअंदाज़ किए बिना पूरी रात जागते रहते हैं। लेकिन अगर उनमें से कोई, नींद के बोझ तले दबकर और लापरवाही करते हुए, सो जाता है; तो जब वह अपनी नींद से जागता है, तो वह देखेगा कि उन्होंने कुछ भी नहीं पकड़ा है। और वह अपनी लापरवाही के लिए खुद को कोसना शुरू कर देगा। यदि आप भी आलस्य और नींद के आगे झुक जाते हैं तो आपके साथ भी ऐसा ही होगा, जैसा कि पैगंबर कहते हैं: *'वे अपनी नींद में सो गए, और उन्हें कुछ भी नहीं मिला'* (भजन संहिता 75:6)।

112. जैसे समुद्र में एक जहाज, यदि उसमें एक छोटा सा छेद हो जाए और उसे तुरंत ठीक करने का कोई प्रयास न किया जाए, तो वह अपने बड़े आकार के बावजूद लहरों में डूब जाएगा, वैसे ही उस आत्मा का भी है जिसने दुश्मन की चालाकियों को अपने ऊपर हावी होने दिया है, जब तक कि वह अपने स्रष्टा की ओर न लौटे। इसीलिए, हे मेरे भाइयो, हमें संयम और महान नम्रता की आवश्यकता है। जो कुछ भी दुष्ट है, वह ईश्वर की ओर हृदय फेरने से शक्तिहीन हो जाता है।

113. कभी-कभी ऐसा होता है कि कोई व्यक्ति पानी खींचने के लिए एक पात्र ले जाता है, लेकिन उसमें पानी भरने के बिना, उसे पलट देता है और तोड़ देता है। उसी प्रकार वह व्यक्ति है, जो ईसाई पूर्णता प्राप्त करने के लिए

मठ में प्रवेश करने के बाद, ईश्वर की कृपा को अस्वीकार कर देता है और एक बार फिर सांसारिक जीवन में लौट आता है।

114. विश्वास सभी अच्छाइयों की जननी है, और इसके द्वारा एक व्यक्ति हमारे प्रभु और उद्धारकर्ता यीशु मसीह के वचनों की पूर्ति प्राप्त करता है, जैसा कि लिखा है: *'विश्वास के बिना परमेश्वर को प्रसन्न करना असंभव है'* (इब्रानियों 11:6)। – लेकिन शैतान का सबसे फलदायी लाभ अविश्वास है, जो हर दुष्ट काम की जननी है। इससे द्विचित्तता उत्पन्न होती है, जो एक अव्यवस्था है। कहा गया है, *'द्विचित्त मनुष्य अपने सब मार्गों में अस्थिर है'* (याकूब 1:8)।

115. क्या आप प्रलोभनों और बदनामी से बचना चाहते हैं? प्रभु के विषय में अपने होठों पर एक द्वार लगाओ, *'और अपनी आँखों को हटा ले, कि वे व्यर्थता पर न देखें'* (भजन संहिता 118:37) – और आप दोनों से बचेंगे: मौन के द्वारा बदनामी से, और अपनी आँखों की रक्षा करके प्रलोभनों से। यदि हम अपने भीतर इस पर विजय प्राप्त नहीं करते हैं, तो हम जहाँ भी जाएँ, अपने दुश्मनों को अपने भीतर ही साथ लेकर चलेंगे। उन पर विजय प्राप्त करें, और आप जहाँ भी रहें, आपको शांति मिलेगी।

116. प्रार्थना और उपवास उत्कृष्ट हैं, लेकिन दान उन्हें मजबूत करता है; क्योंकि कहा गया है: *'मैं दया चाहता हूँ, बलिदान नहीं'* (होशे 6:6)। और उद्धारकर्ता दयालुओं को आशीष देता है: *'धन्य हैं दयालु, क्योंकि उन्हें दया मिलेगी'*। और स्वर्गदूत कोर्नेलियस से क्या कहते हैं: *'तेरी प्रार्थनाएँ और तेरा दान परमेश्वर के सामने स्मरण के लिए चढ़ा है'* (प्रेरितों के काम 10:4) – केवल तुम्हारी प्रार्थनाएँ ही नहीं, बल्कि तुम्हारा दान भी।

117. किसी अन्य काम के बहाने चर्च की सेवा को नज़रअंदाज़ न करें। जैसे बारिश बीज को पोषित करती है, वैसे ही चर्च की सेवा सद्गुणों में आत्मा को मज़बूत करती है।

118. इस तरह से व्यवहार न करें कि आज आप ईश्वर के कार्य में मौन और भक्ति में रहें, और अगले ही सुबह सेल से सेल में, या उससे भी बदतर, गाँव-गाँव घूमने निकल पड़ें। परन्तु हर समय मौन में रहो, यह याद रखते हुए कि जिस हद तक कोई मौन रहता है, उसी हद तक उसके विचार शुद्ध होते हैं – और जिस हद तक कोई मौन से विमुख होता है, उसी हद तक उसका मन कठोर हो जाता है।

119. प्रभु का भय शत्रु के विरुद्ध एक दृढ़ स्तंभ है। इस स्तंभ को न गिराओ, और तुम कभी कैद नहीं होओगे। मानवता के प्रेमी से चिपके रहो, और नबी के साथ उसकी भलाई के लिए पुकारो: *'हे प्रभु, मैंने तुझ पर अपना भरोसा किया है; मुझे कभी भी शाश्वत रूप से लज्जित न होने दे; मुझे अपनी धार्मिकता से छुड़ा और बचा'* (भजन संहिता 30:1–6)। तब प्रभु आपसे कहेंगे: *'मैं तुम्हारे साथ रहूँगा; मैं तुम्हें न छोड़ूँगा और न तुच्छ जानूँगा। दृढ़ रहो और हौसला रखो'* (यहोशू 1:5–6)।

120. आइए हम उदार हों, और एक-दूसरे के बोझ उठाएँ, गिर गए और शत्रु द्वारा बंदी बनाए गए लोगों को उठाने का प्रयास करें। कौन सा योद्धा, यह देखकर कि उसका साथी शत्रु द्वारा बंदी बना लिया गया है, युद्ध में नहीं उतरता और उसे उसके अपहरणकर्ताओं के हाथ से छुड़ाने के लिए उनसे नहीं लड़ता? और जब वह उसे बचाने में असमर्थ होता है, तो वह अपने मित्र को याद करके रोता और दुखी होता है। तो क्या हमें एक-दूसरे के लिए अपना जीवन और भी अधिक नहीं देना चाहिए? क्योंकि हमारे प्रभु और उद्धारकर्ता यीशु मसीह ने कहा है: *'मित्रों के लिए अपना प्राण देना, इससे* बढ़कर *प्रेम किसी ने* नहीं *किया'* (यूहन्ना 15:13)।

121. जो मनुष्य अपने दिन आलस्य में बिताता है, वह स्वयं को धोखा देता है, वह न तो उन आशीर्वादों के बारे में सोचता है जो प्रभु ने धर्मी लोगों के लिए तैयार किए हैं, और न ही पापियों के लिए निर्धारित दंड के बारे में, और बिना किसी डर के सुखों में लिप्त रहता है। ऐसे व्यक्ति में, दुष्ट हर तरह की देहगत वासनाओं को भड़काता है; फिर भी वह इसे महसूस नहीं कर पाता, ठीक वैसे ही जैसे दरवाजे उनके माध्यम से आने-जाने वालों पर ध्यान नहीं देते; क्योंकि वासना, उसके मन में जड़ जमा लेने के बाद, उसकी आँखों पर पर्दा डाल देती है।

122. कामुकता और मनोरंजन से भागो; संयम द्वारा अतिभक्षण को, अलोभ द्वारा लालच को, मौन द्वारा वाचालता को, एकांतवास द्वारा बेचैनी को, भविष्य के आशीर्वादों के स्मरण द्वारा सुस्ती को, और नम्रता द्वारा अवज्ञा को नियंत्रित करो; सबसे बढ़कर, कामुकता से दूर भागो, जो मेरी दृष्टि में सभी बुराइयों की जड़ है। यदि तुम इसे नियंत्रित नहीं करते, तो यह तुम्हें निर्लज्ज बना देगी। लेकिन यदि तुम इसे नियंत्रित करते हो, तो तुम धन्य होओगे; क्योंकि कहा गया है: *'धन्य है वह मनुष्य जो आदर के भय से सब बातों का भय मानता है'* (नीतिवचन 28:14)।

123. अपने आप का ध्यान रखें, कहीं आप अपना समय आलस्य और विचलन में बर्बाद न कर दें। आपने अपने लिए एक दाख की बारी लगाई है; उसे बाड़ से घेरें। तुम्हें अपने लिए एक बगीचा मिला है; उसके फल की रक्षा करो, ताकि अंत में तुम उसमें आनंदित हो सको; और अपनी मेहनत से जोती भूमि में अपनी सूअरों को मत जाने दो, कहीं वे उसे

उजाड़ न दें। एक दिन के लिए बनाने और दो दिनों में नष्ट करने का क्या लाभ? इस तरह के काम करने से, काम कभी पूरा कैसे होगा?

124. सभी प्रकार के पापी प्रलोभन पूरी मानवता में बिखेरे गए हैं, ताकि एक व्यक्ति अपने मन के साथ लगातार संघर्ष कर सके। लेकिन कुछ संघर्ष करते हैं, जबकि अन्य प्रलोभन के आगे झुक जाते हैं और गिर जाते हैं; और वे गिरते हैं—एक किसी चीज़ में, दूसरा किसी दूसरी चीज़ में, प्रत्येक व्यक्ति के स्वभाव के अनुसार। यह दुश्मन की भागीदारी के बिना नहीं होता, फिर भी वह हमारी प्रवृत्तियों का ध्यान रखता है। और जब वह किसी व्यक्ति को पापी इच्छाओं से बांधना चाहता है, तो वह उन्हें उन्हीं इच्छाओं से बांधता है जिनमें उन्हें आनंद आता है, ताकि वे अपने बंधनों में आनंद लेते हुए, कभी खुद को मुक्त करना न चाहें। जो हमें बाँधता है वह चालाक है, और वह अच्छी तरह जानता है कि प्रत्येक व्यक्ति को किससे और कैसे बाँधना है; वह जानता है कि यदि वह किसी को अनैच्छिक बंधनों से बाँधता है, तो मन तुरंत उन्हें तोड़ देगा और जल्द ही भाग जाएगा। इसलिए, वह प्रत्येक व्यक्ति को उस चीज़ से बाँधता है जो उन्हें आनंद और आराम देती है। यही कारण है कि, जब हम बंधित होते हैं, तो हम शोक नहीं करते बल्कि उसमें आनंदित होते हैं - और जब हम फँसे होते हैं, तो हम उस पर गर्व करते हैं; हम इस पर गर्व करते हैं क्योंकि जो व्यक्ति, उदाहरण के लिए, ईर्ष्या से बंधा है—बशर्ते कि वह व्यभिचार से बंधा न हो—वह खुद को किसी भी चीज़ से बंधा हुआ नहीं मानता, और जो घमंड से बंधा है—बशर्ते कि वह घोर अन्याय से बंधा न हो—वह खुद को नीचें बंधनों से मुक्त समझता है। बंधे हुए लोगों में से कोई भी अपने बंधनों से अवगत नहीं होता, और न ही वे उनके लिए बिछाए गए जालों को देख पाते हैं। वे सभी नशे में धुत लोगों के अज्ञान से पीड़ित हैं। जो बंधा हुआ है, वह नशे की स्थिति में व्यक्ति की तरह नहीं जानता कि वह बंधा हुआ है। अपने नशे में वे अपने बंधनों को भूल जाते हैं, और अपने आनंद में वे अपने चारों ओर बिछाए गए जालों को नहीं देखते।

125. ध्यान में रखें कि पापी वासना का मिश्रण सभी अच्छाइयों को भ्रष्ट और नष्ट कर देता है: जब नीच चालाकी इसमें मिल जाती है तो सत्य नष्ट हो जाता है; यदि कामवासना उसे छू ले तो पवित्रता कलंकित हो जाती है; यदि आस्था भविष्यवाणियों पर भरोसा करती है तो वह नष्ट हो जाती है; यदि दान में अहंकार समाहित हो तो वह कलंकित हो जाता है; यदि उपवास निंदा के लिए रास्ता दे तो वह अपमानित हो जाता है। अत; अपना ध्यान रखें और ऐसे शुभ-विनाशकारी मिश्रणों की अनुमति न दें।

126. तुम्हें अपने शरीर के प्रत्येक अंग की उपयुक्त ढंग से रक्षा करनी चाहिए। यदि तुम्हारा शरीर व्यभिचार से मुक्त है, तो अपने होठों को दूसरों की निंदा करने से बचाओ। मुँह व्यभिचार नहीं कर सकता, लेकिन वह झूठ बोल सकता है और बदनामी कर सकता है। यदि आपके अंगों में से एक निर्दोष है, जबकि दूसरा दोषी है, तो उस एक सदस्य की निंदा से आप पूरे तौर पर निंदा के पात्र बन जाते हैं। निंदा को तुच्छ न समझें। शिकारियों के शिकार होने वालों के उदाहरण से यह सीखें कि किसी भी छोटी चीज़ को भी अनदेखा न करें। ऐसा होता है कि एक पक्षी एक छोटे से पंजे से जाल में फँस जाता है, और उसके पंखों की शक्ति एक बेकार पंजे की नोक से वश में कर ली जाती है; और भले ही पक्षी पूरी तरह से जाल के बाहर हो, फिर भी वह पूरी तरह से उसमें फँस जाता है।

127. हम बुरे विचारों से दूर रहें; क्योंकि विचारों का न्याय कर्मों के बराबर होता है। हम अच्छे विचारों की ओर मुड़ें, जिन्हें हृदयों के परीक्षक से कर्मों के बराबर पुरस्कार मिलता है। एक इरादा ही एक कर्म है; क्योंकि उसमें, सभी सृष्टि के स्रोत की तरह, हमारी स्वतंत्रता की नींव निहित है।

128. दयालु प्रभु ने हमें शत्रु के सभी हमलों के विरुद्ध हथियार प्रदान किए हैं। बस उनका उपयोग करने में आलसी न बनें, और आपको कोई हानि नहीं होगी। यदि शत्रु हम पर अपने अग्निबाण चलाता है, तो हमारे पास एक अजेय ढाल है - प्रार्थना; यदि वह हमें झूठ के जाल में फँसाने का प्रयास करता है, तो हम सत्य का सहारा लें, और हम बच जाएँगे; यदि वह आपको मानवद्वेष से आहत करने का प्रयास करता है, तो उसे मानवतावाद की शक्ति से सामना करें; यदि वह आपको अहंकार से जकड़ ले, तो विनम्रता से उसका मुकाबला करें; यदि वह कामुक वासना जगाए, तो शीघ्रता से ब्रह्मचर्य के कवच को धारण करें; यदि वह हमें अतृप्ति से आक्रमण करे, तो हम स्वयं को पंख बनाएँ – उपवास। – इस प्रकार, जैसे हमारे शत्रुओं के पास तीर हैं, वैसे ही हमारी कमज़ोरी के भी तीर हैं। युद्ध में हार हथियारों की कमी से नहीं, बल्कि लापरवाही और उनका उपयोग करने में हिचकिचाहट से होती है।

129. इसका क्या लाभ है यदि किसी के पास सब कुछ है, फिर भी उसमें उद्धार करने वाला प्रेम नहीं है? यदि कोई राजा और राजकुमारों को आमंत्रित करने के लिए एक बड़ा भोज तैयार करे, और सब कुछ इतनी शानदार ढंग से तैयार करे कि कुछ भी कमी न रहे, फिर भी उसमें नमक न हो: क्या ऐसे भोज का स्वाद लेना संभव होगा? निस्संदेह नहीं। यही बात यहाँ भी लागू होती है। चाहे किसी ने अपनी कुँवारी अवस्था बनाए रखी हो, उपवास किया हो, रातों में जागकर प्रार्थना की हो, गरीबों को आश्रय दिया हो, भेंट, पहला फल या उपज अर्पित करने का इरादा किया हो,

गिरजाघर बनाए हों, या कुछ और भी किया हो—प्रेम के बिना, ईश्वर के समक्ष यह सब कुछ भी नहीं है (1 कुरिन्थियों 13:1–4)।

130. आओ हम अपनी ओर वादा की गई अनंत आशीर्वादों को प्राप्त करने का ध्यान रखें; आओ हम तब तक इसमें लग जाएँ जब तक प्रकाश है, जब तक बाज़ार अभी बंद नहीं हुआ है; आओ हम आने वाले जीवन के लिए गरीबों और बेसहारा लोगों में से मित्र बनाएँ। आओ हम उनसे तेल खरीदें और उसे अपने आगे भेज दें; क्योंकि यहाँ, परलोक के दीयों का तेल विधवाओं, अनाथों, दुर्बल, अपंग, लंगड़ों, अंधों और उन सभी दरिद्रों द्वारा बेचा जाता है जो गिरजाघर के दरवाजों पर बैठे होते हैं।

131. जब तुम प्रार्थना में परमेश्वर के सामने खड़े हो, तो सावधान रहो कि तुम्हारे शानदार वाद्ययंत्र, जिन पर तुम परमेश्वर के लिए गाते हो—अर्थात्, तुम्हारे विचार—तुम्हारे शत्रुओं द्वारा लूट न लिए जाएँ। जब तुम्हारा वाद्ययंत्र तुमसे छीन लिया गया हो—अर्थात्, जब तुम्हारे विचार बंदी बना लिए गए हों—तो तुम परमेश्वर की सेवा कैसे या किससे करोगे? ईश्वर की सेवा के लिए आवश्यक है कि आपके विचार, आपकी आत्मा की संपूर्ण शक्ति और सामर्थ्य, और आपका सम्पूर्ण मन विचलित न हो और ईश्वर पर केंद्रित हो। अपने सोने में तांबा या सीसा न मिलाएं—अर्थात् अपनी आत्मा में बहुत सारे अशुद्ध विचार न मिलाएं। जैसे एक वधू, जो किसी पति के लिए मंगनी की गई हो, यदि वह दूसरों द्वारा बहका दी जाए, तो वह उसकी दृष्टि में घृणित हो जाती है: वैसे ही आत्मा भी, अशुद्ध विचारों से बहककर और उनके आगे झुककर, अपने स्वर्गीय वरा, मसीह, के लिए एक घृणास्पद वस्तु बन जाती है। – उसे हर संभव तरीके से ऐसे विचारों से सभी संबंधों से बचना चाहिए और उन पर झुकने में कोई आनंद नहीं लेना चाहिए, ताकि प्रभु, उसकी अपने प्रति प्रेम को देखकर, उससे प्रसन्न हों, और आकर, उन शत्रुओं को नष्ट कर दें जो उसके विचारों को उनसे भटकाने की कोशिश करते हैं। क्योंकि जैसे ही प्रभु देखते हैं कि आत्मा गंभीरता से अपने भीतर एकत्रित होने का प्रयास कर रही है, अनवरत प्रभु की खोज कर रही है, रात में उनकी प्रतीक्षा कर रही है, और दिन में उनकी ओर पुकार रही है; तो वह उसकी प्रतिशोध लेने में विलंब नहीं करेंगे, और उसे उसके भीतर शेष बची हुई हर बुराई से शुद्ध कर देंगे, और उसे स्वयं को एक निर्दोष वधू के रूप में प्रस्तुत करेंगे।

132. अपना हृदय खोलो; अपने जीवन के सभी दिनों में ईश्वर की लालसा करने का संकल्प लो। ईश्वर की लालसा करना ही शाश्वत आनंद, प्रबोधन और शाश्वत हर्ष है। यदि तुम सदैव उनकी लालसा करोगे, तो वह सदैव तुममें वास करेंगे। – वह उनका वास है जो उनका भय मानते हैं – और वह उनकी इच्छा पूर्ण करते हैं जो उनसे प्रेम करते हैं।

१३३. क्या आप ईश्वर का एक पवित्र और निर्मल मंदिर बनना चाहते हैं? हमेशा अपने हृदय में ईश्वर की प्रतिमा को बनाए रखें। ईश्वर की प्रतिमा से मेरा तात्पर्य कोई चित्रमय प्रतिनिधित्व नहीं है, बल्कि वह प्रतिमा है जो अच्छे कर्मों, उपवास, जागरण, अच्छाई में प्रगति, आत्म-संयम और प्रार्थनाओं के माध्यम से आत्मा में अंकित होती है; और इस स्वर्गीय, सर्वोच्च प्रतिमा के लिए रंग हैं शुद्ध विचार, सभी सांसारिक चीजों को त्यागना, और एक ऐसा जीवन जो हमेशा शुद्ध हो।

134. न तो संसार में और न ही संन्यास जीवन में कोई भी संघर्ष के बिना मुकुट प्राप्त करता है; क्योंकि संघर्ष के बिना, कोई भी न तो अक्षय मुकुट प्राप्त कर सकता है और न ही अनंत जीवन। क्योंकि यह वर्तमान जीवन हमेशा एक युद्धक्षेत्र के समान है। क्या तुम संघर्ष में स्वयं को सिद्ध साबित करना चाहते हो? हमेशा स्वयं को सद्गुणों से आच्छादित करो, जैसे संघर्ष के हथियारों से। क्या तुमने स्वयं को सद्गुण से आच्छादित किया है? इसे त्यागने से बचने के लिए अथक प्रयास करो।

135. पवित्र पूर्वजों के जीवन और सद्गुणों का अनुकरण करने का प्रयास करें। उनके जीवन के मार्ग पर चलें और जैसा उन्होंने प्रयास किया, वैसा ही प्रयास करें, – अपने मन से प्रयास करें, अपनी आत्मा से प्रयास करें, अपने शरीर से प्रयास करें; अपने वस्त्रों में तपस्वी बनें, अपने भोजन में तपस्वी बनें, अपनी वाणी में तपस्वी बनें, अपनी दृष्टि में तपस्वी बनें, अपने विचारों में तपस्वी बनें – ताकि आप सभी बातों में सिद्ध हो सकें।

136. अपने प्रति सचेत रहो, ताकि प्रार्थना के दौरान आपका ध्यान भटक न जाए। जब आप प्रार्थना में परमेश्वर के सामने खड़े हों, तो भय और कांपते हुए उनके सामने खड़े रहें। अपने हृदय से सांसारिक मामलों के सभी विचारों और चिंताओं को काट दें। प्रार्थना के समय, पूर्णतः एक स्वर्गीय देवदूत बनें, और यह सुनिश्चित करने का प्रयास करें कि आपकी प्रार्थना पवित्र, शुद्ध और निर्दोष हो, ताकि, उसे ऊपर उठते हुए देखकर, स्वर्ग के द्वार तुरंत उसके लिए खुल जाएँ; ताकि, उसे (वहाँ ऊपर उठते हुए) देखकर, देवदूत और महादूत सभी उसे आनंद के साथ अभिवादन करें और उसे परम शुद्ध प्रभु के पवित्र और उत्तम सिंहासन के सामने लाएँ। इस प्रकार, प्रार्थना के समय, हमेशा करूब और सेराफिम की तरह परमेश्वर के सामने साष्टांग प्रणाम करें।

137. आपकी लड़ाई कोई साधारण लड़ाई नहीं है; इसके विपरीत, सभी फरिश्ते और उनका प्रभु उस लड़ाई को देख रहे हैं जो आप दुश्मन के खिलाफ लड़ रहे हैं। – इस प्रकार, जब आप शत्रु पर विजय प्राप्त करते हैं, तो ईश्वर और स्वर्गदूत आपको सराहेंगे: और स्वर्गदूत, हर्षित होकर, उस ईश्वर की महिमा करेंगे, जिसने आपको बुराई पर विजय प्राप्त करने के लिए शक्ति प्रदान की है। इसी कारण से, यह लड़ाई दिन-प्रतिदिन तीव्र होती जा रही है, ताकि आप विश्वास में निपुण हो सकें, ईश्वर की महिमा हो सके, और लोग आपके उदाहरण का अनुसरण कर सकें।

138. थकान के कारण निराशा में न पड़ें, बल्कि अपनी आशा को मन में बनाए रखें। क्योंकि जहाँ महान कार्य हैं, वहाँ पुरस्कार हैं; जहाँ युद्ध है, वहाँ सम्मान है; जहाँ संघर्ष है, वहाँ मुकुट है। इसे ध्यान में रखते हुए, धैर्य के पाठों से स्वयं को सुदृढ़ करें। पवित्रजनों के साथ पुकारते हुए स्वयं को निरंतर प्रोत्साहित करो: *'साहस करो, और तुम्हारा हृदय दृढ़ हो; प्रभु की प्रतीक्षा करो'* (भजन संहिता 26:14)।

139. अपने प्रस्थान के लिए अपने मामलों को तैयार करो; अपने खेत में सब कुछ व्यवस्थित करो; और यह खेत यही जीवन है: एक अच्छी ढाल लो—नया नियम; अपने सामान को काँटों से घेर लो (काँटों की झाड़ियों की एक बाड़ बनाओ)—उपवास, प्रार्थना और शिक्षा के द्वारा। यदि आपके पास ऐसा बाड़ है, तो वह जानवर—अर्थात् शैतान—अंदर नहीं आएगा। अपनी आत्मा को एक सुंदर दाख की बारी की तरह संवारें—और जैसे दाख की बारियों की रखवाली करने वाले तालियाँ बजाते और ज़ोर से चिल्लाते हैं, और ऐसी आवाज़ से घुसपैठियों को रोकते हैं: इसी प्रकार आप भी करें – अपनी आवाज़ उठाएँ, भजन गाते हुए उद्घोष करें, और आप उस धूर्त जानवर – यानी सियार, यानी शैतान – को भगा देंगे। शत्रु पर निरंतर नज़र रखें, यदि आपकी इच्छा अनुचित कर्मों की ओर मुड़ने की हो। और यदि वह तुम्हारी आत्मा में, जैसे किसी गुलेल से, घृणित विचार फेंकना शुरू करे, तो विश्वास का ढाल थाम लो, और आशा का कवच पहन लो। *'आत्मा की तलवार, जो परमेश्वर का वचन है'* (इफिसियों 6:17) उठा लो। और, इस प्रकार शत्रु के विरुद्ध स्वयं को सशस्त्र करके, दृढ़ रहो, और युद्ध में लापरवाह न बनो; इसके विपरीत, हर बात में संयमी बनो, यह कहते हुए: 'हम उसकी युक्तियों को जानते हैं!'

140. जब आपके भीतर एक दुष्ट विचार उत्पन्न होता है, तो अपनी तलवार खींचो—अर्थात् अपने हृदय में परमेश्वर का भय जगाओ—और आप शत्रु की सारी शक्ति को काट डालोगे। और एक सैन्य तुरही के बजाय, पवित्र शास्त्रों का उपयोग करें। जैसे एक तुरही अपनी ध्वनि से योद्धाओं को इकट्ठा करती है, वैसे ही पवित्र शास्त्र, हमें पुकारकर, अच्छे विचारों को इकट्ठा करते हैं; और, परमेश्वर के भय के द्वारा उन्हें व्यवस्थित करके, शत्रु का विरोध करने के लिए उन्हें एक सेना बनाते हैं: क्योंकि हमारे विचार, योद्धाओं की तरह, राजा के शत्रुओं से लड़ते हैं। और इसके अलावा, जैसे एक तुरही अपनी ध्वनि से युद्ध के दौरान युवा योद्धाओं को अपने विरोधियों का सामना करने के लिए तैयार रहने के लिए उत्साहित करती है, वैसे ही पवित्र शास्त्र भी आपके भीतर भलाई के लिए उत्साह जगाते हैं और आपके भावों के विरुद्ध संघर्ष के लिए आपको मजबूत बनाते हैं।

141. जहाँ तक आपकी शक्ति आपको अनुमति दे, स्वयं को यथासंभव धर्मग्रंथ पढ़ने के लिए प्रेरित करें, ताकि यह आपके उन विचारों को एकत्र कर सके, जिन्हें शत्रु अपनी दुष्ट योजनाओं द्वारा बिखेरता है, आपके भीतर चालाक विचारों को भरते हुए, जबकि वह या तो आपको बार-बार दुख देता है या आपको कई सफलताएँ और सांसारिक सुख प्रदान करता है। वह ऐसा अपनी ही दुर्भावना से करता है, मनुष्य को ईश्वर से दूर करने के इरादे से।

142. संयमी बनें, और हमेशा खुद को पढ़ने के लिए लगन से समर्पित करने का प्रयास करें, ताकि यह आपको सिखा सके कि दुश्मन के जालों से कैसे बचना है और अनंत जीवन कैसे प्राप्त करना है।

143. पवित्र शास्त्रों को पढ़ने से भटका हुआ मन स्थिर होता है और परमेश्वर का ज्ञान प्राप्त होता है। क्योंकि लिखा है: *'शांत हो जाओ, और जानो कि मैं परमेश्वर हूँ'* (भजन संहिता 45:11)। आप सुनते हैं कि ईश्वर का ज्ञान उन लोगों को प्राप्त होता है जो शुद्ध हृदय से दिव्य धर्मग्रंथों का पाठ करते हैं। इसलिए, लापरवाही न करें, बल्कि इस पाठ – और प्रार्थना – का अभ्यास करें, ताकि आपका मन प्रबुद्ध हो सके, और आप *'पूर्ण और परिपूर्ण, जिसमें कुछ भी कमी न हो'* (याकूब 1:4) बन सकें।

144. कुछ लोग कुलीनों, राजकुमारों और राजाओं से बात करने का घमंड करते हैं; लेकिन आपको इस बात का घमंड करना चाहिए कि आप पवित्र शास्त्रों में पवित्र आत्मा से बात करते हैं; क्योंकि पवित्र आत्मा उन्हीं के माध्यम से बोलता है।

145. दिव्य शास्त्रों को पढ़ने और निरंतर प्रार्थना में बने रहने का प्रयास करें। क्योंकि हर बार जब आप उनके माध्यम से ईश्वर से संवाद करते हैं, तो आपका शरीर और आत्मा पवित्र हो जाते हैं। यह जानते हुए, उन्हें अधिक बार अभ्यास करने का प्रयास करें।

146. यदि आप पढ़ नहीं सकते, तो उन स्थानों से दूर न रहें जहाँ आप सुन सकते हैं और लाभान्वित हो सकते हैं; क्योंकि लिखा है: *'यदि तुम किसी समझदार मनुष्य को देखो, तो उसे खोजो, और तुम्हारा पाँव उसके द्वार के चौखट पर ठहरे'* (सिरिक 6:36)। यह न केवल उन लोगों के लिए फायदेमंद है जो पढ़ नहीं सकते, बल्कि उन लोगों के लिए भी जो पढ़ सकते हैं; क्योंकि कई लोग यह जाने बिना पढ़ते हैं कि वे क्या पढ़ रहे हैं।

147. ध्यान रखें कि जब आप पढ़ना चाहें, तो शत्रु आपको निराशा या विचलन पैदा करके, या यह कहकर बाधित न करे: 'पहले ऐसा-वैसा काम कर लो, क्योंकि यह कोई बड़ा काम नहीं है; और फिर, शांत मन से, तुम पढ़ना'। ऐसा सुझाव देकर, वह शारीरिक श्रम के लिए एक विशेष उत्साह भी जगाता है, ताकि वह आपको जल्द से जल्द पढ़ने से भटका सके। वह ऐसा तब करता है जब वह देखता है कि कोई भाई लगन से पढ़ रहा है और उससे लाभ उठा रहा है, और उसे इस प्रयास से भटकाने और इन तथा अन्य बहानों से उसे रोकने का प्रयत्न करता है। उस पर विश्वास न करें; बल्कि उस प्यासे हरिण की तरह बनें जो जल के झरनों पर आने के लिए लालायित है, अर्थात् दिव्य शास्त्रों पर, ताकि आप उनसे पी सकें और अपनी प्यास बुझा सकें, जो आपको वासनाओं से झुलसा रही है।

148. जब प्रभु आपको धर्मग्रंथों का कोई वचन पढ़ने और समझने का वरदान देते हैं, तो सावधान रहें कि वह व्यर्थ में आपसे चूक न जाए; बल्कि उस पर अपने मन से मनन करें, उसे अपने हृदय पर उकेर लें, और उसे अपनी स्मृति में अमिट रूप से सुरक्षित रखें। क्योंकि लिखा है: *'मैं तेरी आज्ञाओं से सीख लूंगा'* (भजन संहिता 118:16); और फिर: *'मैंने तेरे वचन अपने हृदय में छिपा रखे हैं'* (– 11)।

149. जब आप पढ़ें, तो उत्साह और लगन के साथ पढ़ें; प्रत्येक शब्द पर बड़ी सावधानी से ध्यान दें, और केवल पन्ने न पलटें, बल्कि यदि आवश्यक हो, तो एक श्लोक को दो, तीन, या कई बार पढ़ने में भी संकोच न करें, ताकि आप उसका अर्थ समझ सकें।

१५०. जब आप पढ़ने या किसी को पढ़ते हुए सुनने के लिए बैठें, तो पहले ईश्वर से प्रार्थना करें, कहकर: 'हे प्रभु यीशु मसीह!' मेरे हृदय की कान और आँखें खोल, ताकि मैं तेरे वचन सुन सकूँ और तेरी इच्छा पूरी कर सकूँ। *'मेरी आँखें खोल, और मैं तेरे विधान के आश्चर्यकर्मों को समझूँगा'* (भजन संहिता 118:18)। हे मेरे परमेश्वर, मैं विश्वास करता हूँ कि तू मेरे हृदय को ज्ञान प्रदान करेगा।" – हमेशा परमेश्वर से इस प्रकार प्रार्थना करें, कि वह आपके मन को प्रबुद्ध करें और आपको अपने वचनों की शक्ति का ज्ञान दें। कई लोग, अपनी ही समझ पर भरोसा करके, भ्रांति में पड़ गए हैं, और *'ज्ञानी होने का दावा करते हुए, वे मूर्ख बन गए हैं'* (रोमियों 1:22)।

१५१. मौन को एक मजबूत दीवार के रूप में प्राप्त करो; क्योंकि मौन तुम्हें वासनाओं से ऊपर उठाएगा। आप ऊपर से युद्ध लड़ेंगे, जबकि वे नीचे से लड़ेंगे। अतः परमेश्वर के भय से मौन प्राप्त करें, और शत्रु का कोई भी बाण आपको हानि नहीं पहुँचाएगा। परमेश्वर के भय सहित मौन एक अग्निमय रथ है जो इसे प्राप्त करने वालों को स्वर्ग तक उठा ले जाता है।

१५२. मौन पश्चाताप की जननी, पापों का दर्पण, अनवरत आँसुओं का स्रोत, अपने विचारों और उनके तर्क को देखने का विद्यालय, उपवास की नींव, लालच के विरुद्ध एक बाधा, प्रार्थना और पठन के अभ्यास का क्षेत्र है, विचारों का शांतिकरण, चिंताओं से एक अटूट आश्रय, एक अच्छा और हल्का जूआ जो इसे उठाने वालों को सांत्वना देता है और बनाए रखता है, श्रद्धा की माता, वासनाओं के लिए एक जेल, आँखों, जीभ और कानों के लिए एक लगाम, लालचहीनता की मदिरा, मसीह का फलदायी खेत, जो अच्छे फल देता है।

१५३. अपने लिए यह अच्छा हिस्सा प्राप्त करो, जिसे मरियम ने चुना था, जो प्रभु के चरणों में बैठकर और केवल उसी से जुड़कर, मौन का एक आदर्श बनीं। इसके लिए प्रभु ने उनकी प्रशंसा की, और कहा: *'मरियम ने अच्छा हिस्सा चुना है, जो उससे छीन लिया नहीं जाएगा'* (लूका १०:४२)। देखो मौन कैसा होता है! प्रभु स्वयं उन लोगों की प्रशंसा करते हैं जिन्होंने इसे प्राप्त किया है। अतः मौन प्राप्त करो, और तुम *'प्रभु' में* आनंदित होओगे (भजन संहिता 36:4), उसके चरणों में बैठकर और केवल उसी से चिपके रहकर, ताकि आप निडर होकर कह सकें: *'मेरी आत्मा आप में चिपकी रहती है; आपका दाहिना हाथ मुझे थामे रहता है'* (भजन संहिता 62:9)।

१५४. बीमारियाँ अचानक लाइलाज नहीं हो जातीं, बल्कि उपेक्षा से एक बुरी शुरुआत लेकर, वे अपार क्षति में बदल जाती हैं। और आत्मा में वासनाएँ एक छोटे से कारण से उत्पन्न होती हैं, लेकिन यदि उन्हें जड़ से नष्ट नहीं किया जाए, तो वे आत्मा में अपार अव्यवस्था पैदा करती हैं। क्या आप देखते हैं कि तांबे पर एक हरा दाग कैसे गहरा और गहरा होता जाता है? – इसलिए, समझें कि जब किसी वासना की उपेक्षा की जाती है तो वह आत्मा के साथ क्या करती है। यदि आप जंग को नहीं हटाते, तो आप दाग से छुटकारा नहीं पा सकते; यदि आप शरीर की प्रकृति को वश में नहीं करते, तो आप वासना को स्वयं से दूर करने में सफल नहीं होंगे। जंग तांबे से कसकर चिपक जाता है: उसी प्रकार वासना भी किसी की प्रकृति में जड़ जमा लेती है। जो कोई तांबे को जंग लगने से पहले साफ़ कर लेता है, उसे फिर इसकी कोई

चिंता नहीं रहती; जो कोई आत्मा को सद्गुणों से आच्छादित करता है, वह खतरे से परे रहेगा और बुराई के छिपे हुए भ्रष्टाचार को भी नहीं झेलेगा। पॉलिश करने पर तांबे में चमक आ जाती है, ठीक वैसे ही जैसे कपड़ों में होती है; और यदि तांबे को जंग से खराब होने से पहले ही पॉलिश किया जाए, तो वह लंबे समय तक अच्छी तरह काम देगा; अन्यथा, जो चमक उसे मिलती है वह धोखा देने वाली होती है; ऐसा बर्तन नाजुक होता है और जल्द ही खराब हो जाता है, ठीक वैसे ही जैसे खराब तांबे से बना बर्तन। और आत्मा, यदि वह पहले से ही भ्रष्ट हो चुकी हो और फिर सदाचार की ओर मुड़ती है, तो वह संदेह में पड़ती है, और संदेह से भ्रष्टता में चली जाती है।

155. जैसे आत्मा अपने आर्द्र शरीर के साथ मिलकर देहधारी बन जाती है, वैसे ही शरीर भी आध्यात्मिक बन जाता है जब आत्मा, ईश्वर के बीज के साथ मिलकर, अक्षुण्ण रहती है। और संत पौलुस आध्यात्मिक और देहधारी लोगों के बीच अंतर करते हैं। वह जानता था कि सांसारिक लोगों के पास भी आत्मा होती है, और आध्यात्मिक लोगों के पास भी शरीर होता है; लेकिन किसी व्यक्ति में जिस तत्व का प्रभुत्व अधिक होता है, उसी तत्व के नाम से पूरे व्यक्ति को जाना जाता है। यदि किसी व्यक्ति में देह आत्मा पर हावी हो, तो वह सांसारिक है; लेकिन यदि आत्मा देह पर हावी हो, तो वह आध्यात्मिक है। अन्यत्र, इसी अर्थ को व्यक्त करते हुए, वह कहते हैं: *'मांस देह आत्मा के विरोधी हैं, और आत्मा देह के विरोधी; क्योंकि ये एक दूसरे के विरोधी हैं, इसलिये तुम वह नहीं कर सकते जो तुम चाहते हो'* (गलातियों 5:17)। सुसमाचार में कहा गया है कि परमेश्वर का राज्य उन लोगों का है जो उसे लगन से खोजते हैं (मत्ती 11:12)। आत्मा प्रकृति को दैवीय स्तर पर उठाने का प्रयास करती है; क्योंकि देह के माध्यम से प्रकृति सांसारिक की ओर आकर्षित होती है। प्रकृति के विरुद्ध आत्मा का यह संघर्ष एक संग्राम है, और यह दो प्रकार से होता है: नव-परिवर्तित लोगों में, ताकि वे देह के साथ एकता में न पड़ें; और सिद्ध लोगों में, ताकि स्वयं शरीर भी आध्यात्मिक बना दिया जाए।

156. यदि मनुष्य का सार अमर आत्मा है, तो मनुष्य को अक्षयत्व की ओर मोड़ने में ईश्वर की ओर से कोई अन्याय नहीं है; वह जटिल मानवीय स्वभाव पर कोई जबरदस्ती नहीं थोपते, बल्कि केवल आत्मा की शक्ति के द्वारा, पाप से भ्रष्ट हुए शरीर को, एक सेवक के रूप में, अक्षयत्व की ओर अपनी इच्छा से आकर्षित होने के लिए प्रेरित करते हैं। जिस प्रकार एक अग्निकुंड में तांबा आग का रूप धारण कर लेता है , उसी प्रकार शरीर भी अक्षयत्व के साथ मिलकर आध्यात्मिक हो जाता है। वही तांबा, जब धरती में दफन हो जाता है, तो जंग से खा जाता है और धूल में बदल जाता है; और इसी प्रकार है कामवासनाओं में डूबा हुआ शरीर।

157. संत देह को कैसे देखते हैं? – देह की प्रकृति विश्राम की लालसा करती है, फिर भी वे इसे कुचलने और कड़वा करने का और अधिक प्रयास करते हैं। हमारी प्रकृति (भ्रष्ट, कामुक) महिमा में आनंद लेती है, जबकि वे, अपमानित होने पर भी, सांत्वना पाते हैं और अपने कर्मों को छिपाए रखते हैं। देह की प्रकृति भोजन का स्वाद चाहती है; लेकिन वे उपवास द्वारा इसे थका देते हैं और तपस्या के श्रम से इसे दुर्बल कर देते हैं। प्रकृति में वैवाहिक जीवन की प्रवृत्ति होती है; लेकिन वे संयम द्वारा इसे नियंत्रित करते हैं और कामुक उत्तेजना के सभी कारणों को समाप्त कर देते हैं। प्रकृति जीवन की सुख-सुविधाओं का अनुसरण करती है; लेकिन संत, जब अन्याय सहते हैं, तो उसे सहन करते हैं; जब लूटे जाते हैं, तो इसे उदारतापूर्वक सहन करते हैं। आम तौर पर, वे प्रभु के वचन के अनुसार सांसारिक जीवन को पूरी तरह से त्याग देते हैं: *'अपना क्रूस उठाओ और मेरे पीछे चलो'* (मत्ती 16:24)। प्रेरित भी यही सिखाते हैं, कहते हुए: *'अपने उन अंगों को मार डालो जो पृथ्वी पर हैं'* (कुलुस्सियों 3:5)। वह परमेश्वर की सृष्टि को विनाश के लिए नहीं ठहराता; बल्कि, वह आत्मा के प्रयास द्वारा उसके भीतर जो अस्वाभाविक है उसे मृत्यु देकर देह को जीवित करना चाहता है। उसने यह नहीं कहा: 'शारीरिक अंगों को मार डालो', बल्कि *'वे अंग जो पृथ्वी पर हैं'*। तो, ये क्या हैं? – व्यभिचार, अशुद्धता, दुष्ट वासना, लोभ, और ऐसी ही सभी चीजें। मांसल मनुष्य, जो पाप से अपमानित और भ्रष्ट हो गया है, ऐसी सभी बातों में आनंदित होता है। पाप प्रकृति पर अत्याचार करता है। और इस प्रकार प्रकृति, संतोष के बजाय, अपनी तृष्णा में खो जाती है; प्यास बुझाने के लिए पेय के बजाय मद्यपान में; विवाह के बजाय व्यभिचार में; सत्य के बजाय झूठ में; प्रेम के बजाय शत्रुता में। ये सभी चीजें प्रकृति के लिए विदेशी हैं, और प्रेरित हमें इन्हें मार डालने की शिक्षा देते हैं, अपनी भ्रष्ट प्रकृति को नियंत्रित करके ताकि वह आत्मा के नियंत्रण में रहकर अपनी सीमाओं को न लांघे। और जब उद्धारकर्ता ने कहा कि एक तपस्वी के लिए *'लंगड़ा'* या *'गरीब'* होकर राज्य में प्रवेश करना बेहतर है (मत्ती 18:8), तो उन्होंने उन अंगों को काटने का आदेश नहीं दिया जिन्हें उन्होंने बनाया था, बल्कि उन्हें पाप के उपकरण न बनाने का आदेश दिया।

158. मसीह के लिए संघर्ष करने की इच्छा रखने वाले किसी भी व्यक्ति को ऐसा कवच प्राप्त करना चाहिए जो उसे शैतान के विरुद्ध दृढ़ता से खड़े होने और हमारे उद्धारकर्ता को प्रसन्न करने में सक्षम बनाए, अर्थात्:

159. कलह के बजाय, सरसों के दाने के समान, एकसार और अविभाज्य त्रिमूर्ति में विश्वास अपनाओ। जैसे सरसों का दाना पूरी तरह से गोल होता है और, मानो, स्व-चालित होता है, वैसे ही तुम्हारा विश्वास स्व-चालित हो। विश्वास की गति ही सद्गुण है। कुछ लोगों के पास विश्वास तो है पर कर्म नहीं; यह विश्वास नहीं है, क्योंकि यह मृत *है* – जैसा कि कहा गया है: *'कर्म रहित विश्वास मृत है'* (याकूब 2:20)। जिस किसी के पास विश्वास है और वह विश्वास के कर्म करता है, उसके पास विश्वास एक आत्म-संचालित सरसों के दाने के समान है। इसे प्राप्त करो, और विश्वास में दृढ़ और अचूक रहो, हमारे उद्धारकर्ता की आज्ञाओं को मानने की इच्छा से जलते रहो, ताकि तुम भी उनसे सुन सको: *'शाबाश, हे भले और विश्वासयोग्य दास; अपने प्रभु के आनन्द में प्रवेश कर'* (मत्ती 25:23)। प्रभु ने उसे उसके कर्मों के कारण 'भला' और उसके विश्वास के कारण 'विश्वासयोग्य' कहा।

160. कवच के स्थान पर, भविष्य के आशीर्वादों की आशा को अपनाओ, *'जिसे न तो किसी ने देखा है, न किसी ने सुना है, और न ही यह मनुष्य के हृदय में प्रवेश किया है, और जिसे स्वर्गदूत भी देखने के लिए तरसते हैं'* (1 पतरस 1:12; 1 कुरिन्थियों 2:9)। यह आशा आपको कष्टों और दुखों में दृढ़ सांत्वना देती है, और इसकी स्मृति आपको प्रसन्न करेगी। मसीह के धन्य शहीदों ने इस बात पर ध्यान दिया; तीव्र यातनाओं के बीच, भयानक और विविध प्रकार के अत्याचारों के बीच, भड़कते हुए आग के बीच, उन्होंने इस प्रिय आशा को अपनी आँखों के सामने बनाए रखा, और इसलिए स्वेच्छा से और कृतज्ञतापूर्वक सभी बातों को सहन किया, ताकि वे केवल वही प्राप्त कर सकें जिसकी उन्होंने आशा की थी। इस आशा को निरंतर अपनी आँखों के सामने रखें, ताकि जिस बात की आप आशा करते हैं उसकी लालसा आपको किसी क्षणिक बात के बारे में सोचने न दे, और इसके अलावा वह आपके भीतर हर अच्छे काम के लिए तत्परता जगाए।

161. कमरबंद के बजाय, ईश्वर और अपने पड़ोसी के प्रति पूर्ण प्रेम से स्वयं को कस लें: प्रेम यह सुनिश्चित करेगा कि आप बिना किसी बाधा के आगे बढ़ें। जो व्यक्ति कमरबंद पहनता है वह सभी चीजों से आराम से और बिना किसी बाधा के गुजरता है; और भी अधिक, जो प्रेम से सुसज्जित है वह सभी स्थानों से आराम से गुजरता है। क्योंकि *'प्रेम'*, जैसा कहा गया है, *'सब कुछ सहता है, सब कुछ विश्वास करता है, सब कुछ आशा करता है, सब कुछ सहन करता है'* (1 कुरिन्थियों 13:7); इससे परिपूर्ण होकर, संत पौलुस ने कहा: *'कोई दुर्बल है, और मैं दुर्बल नहीं हूँ? जो भटक जाता है, और क्या मैं अपना धैर्य नहीं खो देता'* (2 कुरिन्थियों 11:29)? देखो प्रेम की करुणा और शक्ति!

162. जूतों के बजाय नम्रता धारण करो: जैसे जूतों को पैरों तले रौंदा जाता है, वैसे ही जो नम्रता प्राप्त कर लेता है, वह स्वयं को इस तरह से चलाता है कि जब कोई भी उस पर पैर रखता है, तो वह इसे प्राकृतिक व्यवस्था के अनुरूप ही मानता है। और तुम भी, भाई, नम्रता प्राप्त करो। ये शारीरिक जूते नहीं, बल्कि आध्यात्मिक हैं: वे आपकी रक्षा करेंगे, *'कहीं आपका पैर पत्थर पर न ठोकर खाए'* (भजन संहिता 90:12)। धन्य दाऊद ने, नम्रता प्राप्त करके, कहा: *'मैं एक कीड़ा हूँ, न कि मनुष्य'* (भजन संहिता 21:7)। देखो कि परमेश्वर नम्रता से कितना प्रेम करता है, जो लोग इसे प्राप्त कर लेते हैं, उनके कितने करीब आता है, और कैसे वह हमेशा उन पर अनुग्रह की दृष्टि रखता है। क्योंकि लिखा है: *'वह ऊँचे स्थान पर रहता है, फिर भी नम्र लोगों पर अनुग्रह की दृष्टि रखता है'* (भजन संहिता 112:5–6), और फिर: *'उसकी दृष्टि दरिद्रों पर रहती है'* (भजन संहिता 9:29). जब आप गरीबों के बारे में सुनें, तो उन लोगों के बारे में न सोचें जो सांसारिक संपत्ति से वंचित हैं; क्योंकि कई राजाओं ने परमेश्वर को प्रसन्न किया है , और कई गरीब लोग नाश हो गए हैं। लेकिन वह उन लोगों को गरीब कहते हैं जो आत्मा से गरीब हैं, जैसा कि कहा गया है: *'धन्य हैं आत्मा से दरिद्र, क्योंकि स्वर्ग का राज्य उन्हीं का है'* (मत्ती 5:3)।

163. ढाल के बजाय, पवित्र क्रूस से अपनी रक्षा करें, और उससे अपने अंगों तथा अपने हृदय पर निशान लगाएँ। और केवल अपने हाथ से क्रूस का चिह्न न बनाएं, बल्कि अपने विचारों में भी, आप जो भी कार्य करते हैं, उसे इस चिह्न से अंकित करें: आपका आना-जाना, आपका बैठना और उठना, और आपका बिस्तर – और आप जो भी सेवा करें, सबसे पहले, आशीर्वाद के लिए, स्वयं को पिता, पुत्र और पवित्र आत्मा के नाम पर क्रूस के चिह्न से अंकित करें। यह एक अत्यंत शक्तिशाली हथियार है – और यदि आप इस हथियार से सुरक्षित हैं तो कोई भी आपको कभी नुकसान नहीं पहुँचा सकता। यदि पृथ्वी के राजा की मुहर धारण करने वाले को भी कोई नुकसान नहीं पहुँचा सकता, तो जब हम स्वयं पर महान स्वर्गीय राजा की ऐसी मुहर धारण करते हैं, तो हमारा सामना करने में कोई कितना भी सक्षम कैसे हो सकता है। भाई, इस हथियार का जितना हो सके उतना उपयोग करो; क्योंकि यह शत्रु के बाणों का दृढ़ता से सामना करता है। क्रूस के चिह्न से स्वयं की रक्षा करना कभी न भूलें; और आप उन जालों को तोड़ देंगे जो शैतान ने आपके लिए बिछाए हैं; क्योंकि लिखा है: *'इस मार्ग पर, जब मैं उस पर चल रहा था, उन्होंने मेरे लिए एक जाल बिछाया'* (भजन संहिता 141:4)। हमेशा स्वयं पर क्रूस का चिह्न लगाएँ; और बुराई आपकी आत्मा को छू नहीं पाएगी।

१६४. धनुष के बजाय, प्रार्थना में अपने हाथ फैलाओ, जैसा कि लिखा है: *'तूने मेरी भुजाओं को काँसे का धनुष बना दिया है'* (भजन संहिता 17:35)। क्योंकि वास्तव में, शत्रुओं के विरुद्ध 'काँसे का धनुष' पूरी जागरूकता से की गई प्रार्थना में फैलाए गए हाथ हैं; यही वह तीर है, जिसे धनुष खींचने वाले ने कुशलता से छोड़ा है। यदि आप अपने विचारों को भटकने दें, तो आप उस व्यक्ति की तरह होंगे जो अपने हाथों में धनुष तो पकड़े है लेकिन अपने शत्रु पर तीर कैसे निशाना साधना है यह नहीं जानता, और वह तीर आकाश में चला देता है। क्या यह निशाना आपके शत्रु को डराएगा यदि आप धनुष अपने हाथों में पकड़े हैं और तीर उसे न मारकर यूँ ही कहीं भी चला दें? – बिल्कुल भी नहीं। केवल तभी प्रार्थना ईश्वर के समीप आती है, जब कोई विवेक से प्रार्थना करता है, अपने विचारों को भटकने नहीं देता, और यह समझता है कि वह कौन है, किसके सामने खड़ा है, और किससे संवाद कर रहा है। और तब दुश्मन बहुत कष्ट सहता है, मानो उसके हृदय में एक तीर लगा हो। तब, ईश्वर की कृपा से, आत्मा अधिक से अधिक फलती-फूलती है, जबकि दुश्मन ईश्वर के स्वर्गदूत द्वारा हवा में उड़ाई गई धूल की तरह भाग जाता है। यही कारण है कि जो लोग विवेक से प्रार्थना करते हैं और अपने विचारों को वश में करने के लिए साहसपूर्वक प्रयास करते हैं, वे दुश्मन को पीड़ा पहुँचाते हैं।

165. पूर्ण जागरूकता के साथ प्रार्थना करें (यह जानते हुए कि आप किससे और किस लिए प्रार्थना कर रहे हैं)। और यदि, प्रार्थना करते समय, कुछ भी—चाहे आपकी आँखों के माध्यम से या किसी अन्य कारण से, आपका मन भटक जाता है, तो जान लें कि यह शत्रु का काम है, और अपनी प्रार्थना समाप्त करने में जल्दबाजी न करें; बल्कि, स्वयं को डाँट कर, अपने मन को फिर से एकत्रित करें, और फिर पूरी जागरूकता के साथ प्रार्थना करें, ताकि आप जान सकें कि आप परमेश्वर से क्या माँग रहे हैं और किस उद्देश्य से माँग रहे हैं, और ताकि आप अनावश्यक या लंबा-चौड़ा न बोलें। – और यह शैतान का काम है कि वह एक विचार को बेतरतीब ढंग से छोड़े गए तीर की तरह फेंकता है, और किसी व्यक्ति को उससे संबंधित बात पर ध्यान केंद्रित करने नहीं देता। क्योंकि वह जानता है कि यदि कोई व्यक्ति अपनी प्रार्थना जारी रखता है, तो जिसने उसे बनाया है वह उसे सुनेगा, भले ही वह अनगिनत पापों का अपराधी हो। इसीलिए दुश्मन उसे भटकने वाले विचारों में ले जाता है, ताकि उसके विचार आकाश में छोड़े गए तीर की तरह उड़ जाएँ। और ऐसा होता है कि जब उसके हाथ प्रार्थना में फैले होते हैं, तो उसकी जीभ एक बात कहती है, जबकि उसका मन कुछ और सोचता और कल्पना करता है - दुश्मन का मज़ाक उड़ाने के लिए। इसलिए, मेरे भाइयो, जो विशेष रूप से आवश्यक है और जिसकी आपको विशेष आवश्यकता है, उसके लिए हमेशा परमेश्वर से माँगो, और इस आवश्यकता की भावना के अनुसार। यरीहो के दो अंधे लोगों पर विचार करो। उन्होंने प्रभु से पुकारा: *'हे दाऊद के पुत्र, हम पर दया कर'*। और जब प्रभु ने उनसे पूछा, *'तुम मुझसे क्या करवाना चाहते हो?'* – तो उन्होंने अपनी बीमारी और अपने हृदय के कष्ट में विनती की, *'कि उनकी आँखें खुल जाएँ'* (मत्ती 20:30)। उन्होंने यह नहीं कहा: 'हमें यह या वह दे दो'; क्योंकि क्या उनकी ज़रूरतें बहुत नहीं थीं? लेकिन उन्होंने उस एक चीज़ को माँगा जिसमें उनकी ज़रूरत सबसे ज़्यादा थी। – कनान की स्त्री के बारे में सोचिए – वह प्रभु से क्या पुकारती है? – *'हे प्रभु, मुझ पर दया करें! मेरी बेटी पर एक राक्षस का कड़ा शिकंजा कसा हुआ है'* (मत्ती 15:22)। उसने अपने हृदय की पीड़ा के सिवाय और कुछ नहीं कहा। इसी प्रकार, क्या वे सभी जो उसके पास आए, ने अपने-अपने हृदय की पीड़ा उसे नहीं बताई? यदि कोई बीमार व्यक्ति डॉक्टर के पास आता है, तो क्या वह यह नहीं बताता कि उसे क्या तकलीफ है? और तुम भी, हे मेरे भाइयो, परमेश्वर के सामने अपनी आत्मा की पीड़ा प्रस्तुत करो। – तब, अपने मन की आँखों से और विश्वास की शक्ति से, उनके दर्शन करो, ताकि, जैसा लिखा है, तुम *'सिंहासन पर विराजमान, ऊँचे और उत्कृष्ट'* (यशायाह 6:1) *को* देख सको, और उनके सामने खड़े स्वर्गदूतों और महादूतों की सेनाओं को; और उनकी भलाई के सामने स्वयं को भूमि पर लोटकर, अपनी विनती उनके सामने अर्पित करो। सबसे पहले अपने पापों का अंगीकार करो, और केवल तभी उसके सामने अपने वचन, या अपना दुख प्रस्तुत करो, ताकि वह अपनी भलाई के द्वारा तुम पर दया करे, और तुम पर अपनी कृपाएँ बरसाए: हे आत्मा! *'तेरे बड़े विश्वास के कारण, जैसा तू चाहती है, वैसा ही तुझ पर हो जाए'* (मत्ती 15:28)।

१६६. जिनकी आध्यात्मिक आँखें प्रबुद्ध और सदैव खुली हैं, वे यह अच्छी तरह जानते हैं कि वे दुष्ट की परीक्षाओं से अपनी शक्ति से नहीं, बल्कि ईश्वर की अजेय शक्ति से ही मुक्त होते हैं। एक व्यक्ति के लिए उपलब्ध स्वतंत्रता केवल शैतान का विरोध करने के संकल्प—या उसके अभाव—में निहित है; फिर भी, जब वह विरोध करने में सक्षम होता है, तब भी वह अपनी वासनाओं पर पूर्ण अधिकार नहीं रखता। यदि मानव स्वभाव, पवित्र आत्मा के पूर्ण कवच के बिना भी, शैतान की चालाकियों का सामना करने में सक्षम होता, तो प्रभु ने हमें प्रार्थना में यह कहने की आज्ञा नहीं दी होती: *'हमें परीक्षा में न ले जाओ, परन्तु हमें दुष्ट से बचाओ'*। इसलिए, जो कोई भी दुष्ट की अग्नि-बाणों से मुक्त होना चाहता है, निर्लिप्तता प्राप्त करना चाहता है और दिव्य महिमा में सहभागी होना चाहता है, वह, एक अतृप्त इच्छा के साथ, पूरे हृदय और पूरी शक्ति से, हमेशा ऊँचे से सहायता माँगो, ताकि उसकी सहायता से वह

कामनाओं पर विजय प्राप्त कर सके, और ऐसी विजय के माध्यम से—जो व्यर्थ नहीं है—पवित्रता के क्षेत्र को प्राप्त कर सके, *'जहाँ केवल वे ही प्रभु को देखेंगे जिन्होंने इसे प्राप्त किया है'*।

१६७. ईश्वर का एक निर्दोष बालक बनने का प्रयत्न करो, और उस विश्राम में प्रवेश करने का प्रयत्न करो *'जिसमें मसीह हमारे लिए पहले से गए हैं'* (इब्रानियों ६:२०); प्रथमज के साथ स्वर्गीय कलीसिया में अपना नाम अंकित कराने का प्रयत्न करो; स्वर्गीय यरूशलेम में आरोहण करने का प्रयत्न करो, जहाँ मधुरता का स्वर्ग स्थित है। – परन्तु यह जानो कि जब तक तुम धाराओं की तरह दिन-रात आँसू न बहाओ, तब तक तुम्हें इन अद्भुत आशीषों के योग्य नहीं समझा जाएगा, जैसा कि संत कहते हैं: *'मैं हर रात अपना बिस्तर धोता हूँ: मैं अपने आँसुओं से अपना पलंग भीगता हूँ'* (भजन संहिता 67:7)। क्या आप नहीं जानते कि *'जो आँसुओं से बोते हैं, वे आनंद से काटेंगे'* (भजन संहिता 125:5)? इसलिए भविष्यवक्ता कहते हैं: *'मेरे आँसुओं को छिपाओ नहीं'* (भजन संहिता 38:13); और फिर: *'मैंने अपने आँसू तेरे सामने रखे हैं, जैसा कि तेरे वचन में है'* (भजन संहिता 55:9); और फिर: *'मेरे आँसू दिन-रात मेरा भोजन रहे हैं'* (भजन संहिता 41:4); *'और मैंने अपनी पीने की वस्तु को विलाप के साथ मिलाया है'* (भजन संहिता 101:10)। जागरूकता के साथ, बड़े दुख के बीच, हृदय की गहनतम आंतरिक आकांक्षा के शुद्ध उत्साह में बहाए गए आँसू, आत्मा का भोजन हैं, वह स्वर्गीय रोटी जो आत्माओं को शाश्वत जीवन के लिए पोषण देती है।

168. जैसे कि यह दृश्यमान स्वर्ग है, जिसे वितान कहा जाता है, वैसे ही इसके ऊपर एक और स्वर्ग है, जो प्रकाश से दमकता है और शारीरिक आँखों से अदृश्य है, जहाँ स्वर्गदूतों की सेनाएँ निवास करती हैं। वहाँ एक ऐसा तम्बू है जो हाथों से नहीं बनाया गया है, जिसमें पवित्र स्वर्गदूत अपनी सेवा करते हैं। यह सब दिव्य, अनुपम, तेजस्वी है, और इस युग का नहीं, बल्कि किसी अन्य दुनिया का है, जहाँ न तो रात है, न दुष्ट आत्माएँ, न ही कलह। लेकिन चूँकि हर किसी को, चाहे वह कोई भी हो, आंतरिक नेत्र से दिव्य को देखने की अनुमति नहीं है; इसलिए, मानो एक पर्दा हो, आकाशीय गगन स्थापित किया गया है, ताकि वे वहां से सभी को न देखें, बल्कि केवल उन लोगों को देखें जो हृदय से शुद्ध और मन से पवित्र हैं—उनके सह-नागरिक और सह-सैनिक। और जब यह पर्दा उठाया जाएगा, तो धर्मी लोगों के लिए यह प्रकट हो जाएगा कि उनके लिए क्या प्रतीक्षा कर रहा है।

१६९. एक उदास आत्मा और एकाग्र मन के साथ दी गई लंबी प्रार्थना स्वर्ग तक पहुँचती है। जैसे पानी, जब समतल जमीन पर बहते हुए और खुली जगह का आनंद लेते हुए, ऊँचाई पर नहीं चढ़ता, लेकिन जब पाइप, नीचे से उसके प्रवाह को रोकते हुए, उसे संकुचित करते हैं, तो, संकुचित होकर, वह किसी भी तीर से तेज़ी से ऊपर की ओर बढ़ता है: इसी प्रकार मानव मन भी जब बड़ी स्वतंत्रता का आनंद लेता है तो फैल जाता है और बिखर जाता है; लेकिन जब हृदय का पश्चाताप और पीड़ा उसे बाधित करती है, तो इस सुंदर दमन में, वह दुख में उड़ान भरता है और ईश्वर के प्रति शुद्ध और उत्कट प्रार्थनाएँ भेजता है। कि दुख के साथ की गई प्रार्थनाएँ विशेष रूप से सुनी जाती हैं, इसकी गवाही पैगंबर देते हैं, जो कहते हैं: *'जब मैं संकट में था, तो मैंने उसे पुकारा, और उसने मेरी सुनी'* (भजन संहिता 119:1)। तो आइए, हम अपने विवेक को जगाएँ और अपने पापों के स्मरण से अपनी आत्मा में शोक जगाएँ, ताकि हमारी प्रार्थनाएँ सुने जाने योग्य बनें—संयमी, सतर्क, और अपनी पुकारों के साथ स्वर्ग तक पहुँचने में सक्षम। पश्चाताप और दुख की तीव्र अनुभूति से अधिक प्रभावी रूप से हमारी सुस्ती और आलस्य को दूर करने वाला कुछ भी नहीं है, जो मन को एक ही बिंदु पर केंद्रित करती है और उसे स्वयं में वापस लाती है। जो कोई भी इस प्रकार शोक मनाता और प्रार्थना करता है, वह प्रार्थना के बाद अपनी आत्मा में महान सांत्वना भर सकेगा। ठीक वैसे ही जैसे बादलों का जमाव पहले हवा को मुरझा देता है, लेकिन जब उनसे बारिश होती है और बादल एक-एक करके अपने भीतर जमा भाप को खो देते हैं, तो हवा फिर से साफ और उज्ज्वल हो जाती है: इसी तरह आत्मा का दुख, जब तक वह भीतर ही सीमित रहता है, हमारे विचारों को अँधेरा कर देता है; लेकिन जब वह प्रार्थना के शब्दों के माध्यम से आँसुओं में खुद को थका देता है और बाहर आ जाता है, तो वह आत्मा में महान स्पष्टता लाता है, और प्रार्थना करने वाले के मन में, प्रकाश की किरण की तरह, ईश्वर की मदद के विचार को उतारता है।

१७०. क्या आप बिना विचलित हुए प्रार्थना करना चाहते हैं? – सुनिश्चित करें कि आपकी प्रार्थना आपकी आत्मा की गहराई से निकले। जैसे गहरी जड़ें जमा चुके पेड़, भले ही हवाओं से हजार बार झकझोरे जाएँ, टूटते नहीं हैं और उखड़ भी नहीं सकते, क्योंकि उनकी जड़ें पृथ्वी की गहराइयों में दृढ़ता से जमी होती हैं, वैसे ही आत्मा की गहराइयों से निकली प्रार्थनाएँ, दृढ़ता से जड़ें जमाकर, ऊपर की ओर बढ़ती हैं, और कोई भी विचारों का व्यवधान उन्हें भटका नहीं सकता। पैगंबर हमें इसका एक उदाहरण देते हैं, स्वयं के बारे में कहते हुए: *'हे प्रभु, मैं गहराई से तुझे पुकारता हूँ'* (भजन संहिता 129:1)।

१७१. मैंने विजयी लोगों के शस्त्रागार का निरीक्षण किया, यह समझने की कोशिश करते हुए कि कौन सा हथियार उसे उठाने वालों को निर्णायक विजय दिलाता है। 'वहाँ मेरी दृष्टि के सामने अनेक हथियार प्रस्तुत हुए,' और

उनमें से प्रत्येक से एक शानदार विजय प्राप्त की जा सकती है। सबसे पहले, मैंने शुद्ध उपवास देखा—वह तलवार जिसकी धार कभी नहीं कुंद होती। फिर मैंने ब्रह्मचर्य, पवित्रता और पवित्रता देखी—वह धनुष जिससे तीखे तीर दुष्टों के हृदय को भेद देते हैं। मैंने गरीबी भी देखी, जो चाँदी और सभी सांसारिक संपत्तियों को तुच्छ समझती है – यह कवच जो शैतान के धूर्त बाणों को हृदय तक पहुँचने से रोकता है। वहाँ मैंने पवित्रता ( ) को देखा – यह ढाल; और शांति – यह मजबूत भाला, जिससे शैतान काँप उठता है और भाग खड़ा होता है। मैंने पहरेदारी देखी – यह कवच; प्रार्थना – ये कवच-पट्टियाँ; और धार्मिकता – यह हल्का युद्ध रथ। – लेकिन जब मैंने इन सभी हथियारों की जाँच की और विचार किया कि उनमें से कौन सा सबसे शक्तिशाली है, तो मैंने विनम्रता के दुर्ग को देखा और पाया कि इससे मज़बूत कुछ भी नहीं है; क्योंकि कोई भी शत्रु हथियार इसे भेद नहीं सकता, और दुष्ट इसे पर कब्ज़ा करने में असमर्थ है। इसलिए, यदि आप उस युद्ध में विजयी होना चाहते हैं जो आप लड़ रहे हैं, तो विनम्रता के दुर्ग के पीछे शरण लें; वहीं आश्रय लें और इस रक्षा को न छोड़ें – और शिकारी आपको कैद नहीं कर पाएगा; अपने अन्य हथियारों पर पूरी तरह से भरोसा न करें, कहीं ऐसा न हो कि दुष्ट आपको हरा दे।

७. तपस्वियों के लिए उपदेश

१. संन्यास की शुरुआत ईश्वर के भय से होती है; क्योंकि जो संन्यासी ईश्वर से नहीं डरता, वह स्वयं को ईश्वर के राज्य के द्वार के बाहर पाएगा। एक संन्यासी के लिए एक अच्छे जीवन की शुरुआत ईश्वर के ज्ञान से होती है; क्योंकि ईश्वर का अज्ञान संन्यासी की आत्मा को अंधकारमय कर देता है।

2. एक भिक्षु की अच्छी विरासत ब्रह्मचर्य और पवित्रता है; लेकिन जिसके पास ये नहीं हैं, वह पूर्वजों की विरासत से वंचित है।

3. एक भिक्षु का तपस्या का प्रयास धर्मग्रंथों का अध्ययन करना और ईश्वर की आज्ञाओं को पूरा करना है; जो भिक्षु इसमें संलग्न नहीं होता, वह तपस्वी नहीं है।

4. एक भिक्षु का पोषण ईश्वर की इच्छा को पूरा करना है; इन्द्रिय-भोग वाला भोजन, तथापि, एक भिक्षु को मसीह के सामने नहीं लाएगा, बल्कि *'पेट में जाकर शौचालय में निकल जाता है'* (मत्ती 15:17)।

5. एक भिक्षु का पैर, सुव्यवस्थित ढंग से चलता हुआ, चर्च की सीढ़ियों पर चले; परन्तु वह संयमहीन होकर घर-घर न भटके।

6. एक भिक्षु को बुद्धिमानों से सलाह लेनी चाहिए; मूर्खों की सलाह को अपने हृदय में जड़ जमाने न दें।

7. एक भिक्षु जो भजनों, स्तोत्रों और आध्यात्मिक गीतों के द्वारा जागता रहता है, वह रात के भ्रम को दूर भगाता है; परन्तु एक भिक्षु जो अपने अच्छे कर्मों से घमंड कर सोता है, वह मकड़ी के जाल बुनता है।

8. एक साहसी भिक्षु मसीह के क्रूस द्वारा शैतान के जालों से बचता है।

९. एक भिक्षु जो स्थिर है और पृथ्वी की ओर झुका हुआ है, वह सभी बातों में शैतानी ढंग से काम करता है (आज्ञाओं का उल्लंघन करके, चालाकी और आत्म-संतुष्टि के माध्यम से)।

10. एक भिक्षु के विचार हमेशा अच्छे कर्मों में लगे रहने चाहिए। एक भिक्षु का अनुशासन सदाचारी विचारों से बनता है। एक भिक्षु की सतर्कता अशुद्ध विचारों को वश में करती है।

11. एक भिक्षु का संस्कार एक अच्छी आत्मा है जो सुसमाचार के अनुसार फल देती है। जो भिक्षु इसे विकसित करता है, वह सबसे पहले इसके फल का स्वाद चखता है।

12. एक भिक्षु के भीतर अमर शक्ति अनासक्ति है, जो क्रूस को उठाती है; लेकिन धन का प्रेम उनके लिए विनाशकारी है, क्योंकि यह उन्हें स्वर्ग के राज्य से वंचित कर देता है।

13. एक भिक्षु के लिए एक अच्छा उपहार ब्रह्मचर्य है, जो एलियाह के रथ में उसे स्वर्ग तक उठाता है। ब्रह्मचर्य की शक्ति भोजन से परहेज़ में निहित है; लेकिन जो भिक्षु शराब में लिप्त रहता है वह अपने शरीर को कलंकित करता है।

14. आँखों से बहने वाले आँसू जीवन का वृक्ष हैं, जो विनम्रता में लगातार ऊँचा बढ़ता है। जो भिक्षु इसे प्राप्त करता है, वह अच्छा फल पाएगा।

15. एक भिक्षु जो अपने दान का सबके सामने ढिंढोरा पीटता है, वह घृणा उत्पन्न करता है – और वह प्रभु से यह सुनने को पाएगा: *'तुम्हें अपना इनाम मिल चुका है'* (मत्ती 6:2)। परन्तु जो इसके बारे में बताने में लज्जित होता है, उसे प्रभु से अपना इनाम मिलेगा, जो जानता है कि गुप्त में क्या किया जाता है।

16. *जब 'ईश्वर का जो हिस्सा है, वह ईश्वर को'* देना हो, तो घमंड मत करो, हे भिक्षु; बल्कि प्रभु से प्रार्थना करते हुए कहो: 'हे प्रभु, मैं आपके लिए वही लाया हूँ जो आपका है, और केवल आपसे ही मैं अपनी आत्मा का उद्धार चाहता हूँ।'

17. प्रभु उस भिक्षु की सुनता है जो शुद्ध हृदय से अपनी रात्रि की प्रार्थना करता है; दिन में वह उसे स्वयं दिन के समान प्रकाशमान बना देता है, और दिन-प्रतिदिन वह उसे और भी अधिक प्रकाशमान प्रकट करता है।

18. प्रभु एक भिक्षु के गर्व में नहीं, बल्कि उसकी विनम्रता में पवित्र आत्मा वास करते हैं।

19. भिक्षु का चोगा (बुना हुआ नहीं, बल्कि आध्यात्मिक) कभी भी कलंकित न हो। ऐसा भिक्षु मध्यरात्रि में वर के साथ महल में प्रवेश करेगा।

20. हे भिक्षु, वर का स्वागत करने के लिए तेल तैयार करो; क्योंकि यदि तुम्हारे पास दीपक में डालने के लिए कुछ भी नहीं होगा, ताकि वह तेज़ी से जल सके, तो तुम मूर्ख कुँवारियों के साथ महल के बाहर रह जाओगे।

21. संन्यासी का जीवन, स्वर्गदूतों की नकल करते हुए, पापों का दहन हो; यह एक पश्चातापी की अनवरत फलदायिता होनी चाहिए।

२२. भिक्षु का जीवन उसके समस्त अंगों पर कामवासना के त्याग की मुहर लिए हुए हो: जॉन द फॉररनर का जीवन उसके लिए एक आदर्श है।

23. दानवों का तूफ़ान संन्यासियों से दूर भागे; और उनमें दैवीय शांति का वास हो। हे संन्यासी, जब दानवों का तूफ़ान उठे, तो अपनी चिड़चिड़ाहट पर काबू पाओ; क्योंकि संन्यासी का जीवन हमेशा नम्रता और धैर्य से परिपूर्ण होना चाहिए।

24. जो संन्यासी परमात्मा के प्रति उत्साह की ज्वाला से दहकता है, वह दुष्टात्माओं को भगा देता है; परन्तु जो (घमंडी) प्रतिद्वंद्विता से प्रेरित संन्यासी अपने भाई से प्रतिस्पर्धा करता है, वह शैतान को अपनी ओर खींचता है।

२५. जब तक आप क्रोधित हों तब तक सूर्य को अस्त न होने दें, और आपके चिढ़े हुए गले से निकलने वाली अव्यवस्थित चीख-पुकार से अपने भाइयों को परेशान न करें।

26. भजनों को सुनने से मुंह न मोड़ो, क्योंकि यह स्वर्गदूतों का गायन है; परन्तु दैवीय तमाशों के कोलाहल से भागो, क्योंकि यह एक दैवीय भ्रम है।

27. मसीह का क्रूस सदा आपकी ललाट पर हो, और परमेश्वर का भय आपके हृदय में।

28. शुद्ध हृदय के साथ जुड़ी हुई मौनता, संन्यासी को पवित्र आत्मा के तेल से अभिषिक्त करती है।

29. एक अच्छा स्वभाव भाईचारे के प्रेम को बढ़ावा देता है और कलह को दूर भगाता है।

30. जो प्रभु से एक है, वह स्वयं को शैतान के हवाले नहीं करेगा, कहीं ऐसा न हो कि उसे वधू-कक्ष में लज्जित होना पड़े।

31. संन्यासी की अजेय ढाल उसके होठों पर स्वर्गदूतों का गायन है; मृत्यु, तथापि उसके लिए एक निद्रा है, जो उनके गायन से भी अधिक आनंददायक है।

32. एक भिक्षु का खजाना स्वेच्छा से गरीबी है; उसमें लिपटा भिक्षु दिव्य है। स्वर्ग में अपने लिए खजाना संचित करो; क्योंकि आनंद के युग अनंत हैं।

33. आपका मन सदा दिव्य शास्त्रों में लगा रहे। आपका द्वार लोहे की कुंडियों से नहीं, बल्कि मुख्य आधार (प्रभु यीशु के नाम, जिसका प्रचार संयम के साथ किया जाता है) से बंद रहे।

34. प्रार्थना में संन्यासी का मुखमंडल अद्भुत हो जाता है, और उसके द्वारा अनुभव की गई आध्यात्मिक आनंद की झलक संपूर्ण संन्यासियों के समुदाय को आनंदित करती है।

35. एक संन्यासी जो अपनी वासना में नहीं पड़ता और शराब से प्रेम नहीं करता, वह एक देवदूत के समान हो जाता है।

36. एक संन्यासी की आत्मा में चमकती अक्षुण्णता अकथनीय सुंदरता है; फिर भी जब वह अक्षुण्णता कलंकित हो जाती है तो उसका चेहरा सबसे भयानक हो जाता है।

37. एक भिक्षु के लिए सबसे बुरी बात पाप में गिरना है; यह उसके भीतर के सभी अच्छे गुणों को खा जाता है, जैसे आग पुआल को खा जाती है।

38. एक भिक्षु जिसने संसार का त्याग कर दिया है, मसीह का साथी बन जाता है; लेकिन जो सांसारिक मामलों में उलझा रहता है, वह सेनापति—मसीह को प्रसन्न नहीं करता।

39. जो भक्षिु धन का लोभी नहीं है, वह स्वर्ग के राज्य का सच्चा प्रचारक है, जबकि लोभ से ग्रस्त व्यक्ति एक ऐसा मनुष्य है जो दयनीय रूप से नष्ट हो गया है।

40. ब्रह्मचर्य, निर्मल कुँवारी अवस्था के साथ, एक युवा भक्षिु का आभूषण है।

41. आज्ञाकारिता एक भक्षिु के लिए एक खजाना है: जो भी इसे प्राप्त करता है, उसे प्रभु सुनेंगे।

42. भक्षिु को शुभ वचन बोलने चाहिए, और अपने होठों से सर्वोच्च के वचन का उच्चारण करना चाहिए।

४३. भक्षिु स्वेच्छा से भूख सहन करे, ताकि सांसारिक शरीर को नम्र बनाए और दिव्य आत्मा को ऊँचा उठाए।

44. एक भक्षिु सत्य वचन बोले, और उसके होठों से मिथ्या दूर हो।

45. जब आप कठोर शब्द सुनें, तो क्रोधित न हों, बल्कि विनिम्र बनें; क्योंकि शांति स्थापित करने वाले बनकर आपको शांति का निश्चित पुरस्कार मिलेगा, और आपको सर्वोच्च का पुत्र कहा जाएगा।

46. जंगली गधों को सिंह से भय लगता है; उसी प्रकार एक भक्षिु को कामुक विचारों से भय खाना चाहिए।

४७. जो संन्यासी उपवास के बाहर खाने की अनुमति देता है, वह उस स्तम्भ की नींव को खोखला करने वाले के समान है (जिसमें वह रहता है)।

48. जैसे एक बवंडर मैदान में धूल उड़ाता है, वैसे ही एक अहंकारी भक्षिु मठ के भीतर कामवासना को भड़काता है।

४९. पृथ्वी पर एक देवदूत एक अच्छा भक्षिु है, जो कामवासना के बाणों से अप्रभावित रहता है।

50. अहंकार के आगे न झुकें, अन्यथा आप एक भयानक पतन का शिकार होंगे। पॉल के विनिम्रता का अनुकरण करें, ताकि आप उनके सह-वारिस बन सकें।

51. मूसा की नम्रता को अपना आदर्श बनाओ, ताकि परमेश्वर तुम्हारे पत्थर जैसे कठोर हृदय को जल की झील में बदल दे, और तुम, इसके लाभों का अनुभव करके, प्रशंसा के साथ घोषणा कर सको: *'प्रभु ने मुझे विश्राम के जल में ले चलने दिया है'* (भजन संहिता 22:2)।

52. जानो कि निम्रता कितनी अद्भुत है, और इसे अपने लिए चुनो; क्योंकि यह मनुष्य को स्वर्ग तक उठाती है। नम्रता के लिए तुम्हें एक अच्छा प्रतिफल दिया जाता है—स्वर्ग का राज्य: इसके लिए हतोत्साहित न होओ।

५३. एक युवा भक्षिु, व्यर्थता को तुच्छ समझते हुए, पवित्रता में दृढ़ रहे। पवित्रता से पोषित एक भक्षिु ईश्वर द्वारा पवित्र किया गया एक पौधा है।

54. उपवास संन्यासी के लिए लगाम है; जो कोई इस लगाम को उतार फेंकता है, वह *एक 'जंगली घोड़ा'* बन जाता है (यर. 5:8)। जो युवा संन्यासी अपने पेट पर लगाम नहीं लगाता, वह कामुक पाप से खुद को रोक नहीं पाएगा।

55. दिन-रात, सतर्क भक्षिु प्रार्थना में लगनशील रहता है; अपने हृदय पर चोट करते हुए, वह आँसू बहाता है और स्वर्ग से अभिषेक तेल अपने ऊपर उतारता है।

56. पृथ्वी पर जीवन का वृक्ष वह भक्षिु है जो वासनाओं का दास नहीं है और जिसने दैवीय जीवन को अपनाया है।

५७. शैतान के विरुद्ध सबसे तीखी तलवार संन्यासी के होठों पर एक भजन है।

५८. एलीशा का सूखा वृक्ष गहराइयों से लोहा खींचता है; उसी प्रकार एक संन्यासी का शरीर, सूखकर, आत्मा को (वासनाओं की) गहराइयों से खींचता है। एक संन्यासी का उपवास कामुकता की धाराओं को सुखा देता है। एक संन्यासी के लिए, उपवास की सीमा मृत्यु है; और काश यह उसे उसके निधन से पहले न छोड़े।

59. वासनाओं के विरुद्ध तलवार प्रार्थना में भक्षिु की सतर्कता है। भक्षिु की प्रार्थना के लिए कोई सीमा निर्धारित नहीं है; अत; उसे हर समय प्रभु का धन्यवाद करना चाहिए।

60. जिस भक्षिु का क्रोध के दिन अपनी जीभ पर संयम नहीं रहता, उसके लिए अपने भावों पर विजय प्राप्त करना आसान नहीं है। जो भक्षिु क्रोधित हो जाता है, वह अपनी आत्मा का वध करता है और तीखे बाणों से अपने पड़ोसी को घायल करता है।

61. परीक्षा आने से पहले ही अपना हथियार तैयार रखो; यह तुम्हें परीक्षा के समय स्वयं को कुशल साबित करने में मदद करेगा।

62. धन संचित न करो, न ही देह के सुखों में लिप्त रहो: संकीर्ण और तंग मार्ग के लिए आवश्यक है कि आप उस पर बेकार की हर चीज़ को अलग रख दें। पौलुस के उदाहरण का अनुसरण करो, *'मैंने सब कुछ हानि समझा, ताकि मैं मसीह को प्राप्त करूँ'* (फिलि. 3:8)। धन और देह-सुख स्वर्ग के द्वारों से प्रवेश नहीं पाएंगे। अतःप्रेम, अलोभ और संयम का पालन करो; और तुम उन द्वारों के बाहर नहीं रहोगे।

६३. एक भिक्षु के भीतर जलने वाली आग कामुकता है, जो मद्यपान से प्रज्वलित होती है। मसीह एक अनंत प्रवाहित होने वाला स्रोत हैं; उनसे खींचकर, उस बदबूदार आग को बुझा दो।

64. कोई बुरा शब्द न बोलो; अन्यथा तुम ऐसे दाख की बारी बन जाओगे जिसमें काँटे उगते हैं। अपने पड़ोसी से बात करते समय सबसे सुखद शब्दों का प्रयोग करो, मधुमक्खी का अनुकरण करो, जो हमेशा कड़वाहट से रहित शहद लाती है।

65. एक तुच्छ साधु विचारों के तूफान से इधर-उधर उछाला जाता है; परन्तु जो अपने आप पर काबू रखता है, वह सुसमाचार के वचनों से बल पाता है। परन्तु एक लापरवाह साधु अपने ही विचारों से घुट जाता है, जैसे गेहूँ काँटों से घुट जाता है।

66. अपने भाई के विरुद्ध अपने हृदय में कोई कठोर वचन न पालो, ताकि तुम प्रार्थना में यह घोषणा कर सको: *'हमें क्षमा करो... जैसे हम क्षमा करते हैं'* (मत्ती 6:12)।

67. एक भिक्षु के लिए प्रशंसा का मुकुट शांति और पवित्रता है; जो कोई इन्हें प्राप्त करता है वह *'प्रभु को देखेगा'* (इब्रानियों 12:14)।

68. एक भिक्षु की बुद्धिमत्ता इस बात में नहीं है कि वह जाने कि उसे कौन से श्रम करने हैं, बल्कि उन श्रमों को बुद्धिमानी से करने में है। जो ऐसा है, वह वचन से नहीं, बल्कि कर्म से सिखाता है।

69. एक बुद्धिमान भिक्षु, राक्षसों की भीड़ से लड़ते हुए, उनके बाणों से घायल नहीं होता; मसीह के क्रूस से बल पाकर, वह साँप के सिर को कुचल देता है।

70. एक संन्यासी का सबसे कीमती खजाना ब्रह्मचर्य है, जो परोपकार की ज्योति से प्रकाशित होता है। जिसने इसे प्राप्त किया और संरक्षित रखा, वह निस्संदेह वधू-कक्ष में प्रवेश करेगा।

71. सर्वोच्च के आज्ञाओं का पालन करो, और पितरों के नियमों को मानो; और तुम स्वर्ग के राज्य के वारिस बनोगे।

७२. एक संन्यासी जो कामुक और अहंकारी है, वह प्रलोभन और शैतान के जाल में फँस जाएगा; लेकिन नम्र को शांति और पवित्रता का मुकुट मिलेगा।

७३. जो भिक्षु अतिक्षुधा से खाता है, वह भ्रम और रात्रिकालीन कल्पनाओं में पड़ जाएगा; परन्तु जो उपवास करता है, उसका बिस्तर अपवित्र नहीं होता, और उसकी नींद निर्विघ्न होती है।

74. जो संन्यासी ईश्वर से भयभीत है, वह किसी भी हानिकारक बात को सहन नहीं करेगा, क्योंकि प्रभु ऐसे व्यक्ति की रक्षा करते हैं, और उसके मृत्यु के दिन उसके लिए प्रायश्चित का बलिदान होगा।

७५. एक भिक्षु की विनम्रता महान कार्यों में नहीं, बल्कि प्रलोभनों में परखी जाती है। कष्टों में एक भिक्षु का धैर्य, यदि वह उसे निष्ठापूर्वक निभाता है, तो उसे एक निश्छल आशा प्रदान करता है। और वह अपनी अंतिम साँस तक इस पर दृढ़ रहे, क्योंकि *'जो अंत तक सहन करेगा, वह उद्धार पाएगा'* (मत्ती 10:22)। हे भिक्षु, धैर्य रखो; क्योंकि दुःख का समय थोड़े दिन का है, परन्तु आनंद के युग अनंत हैं।

७६. भिक्षु का गायन अविराम हो; क्योंकि सेराफिम अविराम स्तुति करते हैं। हे भिक्षु, तेरे होठों पर एक आध्यात्मिक गीत हो, जो तुझ पर आने वाले प्रलोभनों के भार को हल्का करे।

७७. आज्ञाकारी भिक्षु धन्य साहस के साथ क्रूस के सामने खड़ा होगा; क्योंकि क्रूस पर प्रभु हैं, जो मृत्यु तक—यहाँ तक कि क्रूस की मृत्यु तक—आज्ञाकारी रहे।

78. प्रार्थनापूर्ण नम्रता में, एक भिक्षु की आवाज़, स्थिर होठों से, ईमानदारी से परमेश्वर तक उठे।

७९. पृथ्वी पर एक सच्चा प्रकाश वह संन्यासी है जिसने अपनी जीभ से बदनामी नहीं की है। जो ऐसा है, और उसने अपने शरीर को पापों से कलंकित नहीं किया है, वह मसीह का मित्र है।

८०. यदि एक भिक्षु पर ईश्वर का भय हावी हो जाए, तो वह एक अटूट स्तंभ के समान है। एक भिक्षु जिसने ईश्वर का भय नहीं अर्जित किया है, वह आसानी से अपने शत्रुओं द्वारा कैद कर लिया जाएगा।

81. जो भिक्षु जिसके पास कुछ भी नहीं है, वह पृथ्वी पर एक शुद्ध प्रकाश है; क्योंकि *'धन का प्रेम, जो सभी बुराइयों की जड़ है'* (1 तीमुथियुस 6:10), कोई अच्छा फल नहीं देता।

82. एक भिक्षु के लिए मांस खाना और शराब पीना, अपने भाइयों का मांस निंदा द्वारा चबाने से बेहतर है।

83. सोना अग्नि-भट्टी में परखा जाता है, और एक भिक्षु भिक्षुओं की भीड़ में जाना जाता है।

84. शत्रु को परास्त करने के लिए एक भिक्षु के हाथ श्रद्धापूर्वक परमेश्वर की ओर उठाए जाएँ, मूसा का अनुकरण करते हुए, जिन्होंने अपना हाथ क्रूस के आकार में उठाकर अमालेक को परास्त किया था।

८५. उस भिक्षु पर भरपूर अनुग्रह रहता है जो प्रतिदिन सूली पर चढ़ाया जाता है और मरता है; स्वर्गदूत उस पर प्रसन्न होते हैं, और उसे स्वर्ग के राज्य में स्वागत करते हैं।

86. उपवास वासनाओं का लगाम है, और वासनाओं का दमन दान के साथ प्रार्थना है।

87. जो संन्यासी कामवासनाओं से ऊपर है, वह बर्फ से भी अधिक श्वेत है; केवल मसीह की कामना करते हुए, वह देखेगा कि मसीह अनुग्रह के दिन उसे मुकुट कैसे पहनाते हैं।

88. जो भिक्षु फुसफुसाता है, वह अनेक भिक्षुओं को भगा देगा और अपने मित्रों को बिखेर देगा। साँप ने अपनी फुसफुसाहट से हव्वा को स्वर्ग से बाहर निकाल दिया; और जो भिक्षु फुसफुसाता है, वह उसी के समान है, क्योंकि वह अपने पड़ोसी की आत्मा का नाश करता है और अपनी आत्मा को नहीं बचाता।

८९. जो कोई अपने हृदय में बुद्धिमानी से गाता है, उसे परमेश्वर सुनेगा। भिक्षु की आत्मा एक एकाग्र दृष्टि से परमेश्वर को निहारें; क्योंकि उसके लिए यह उचित है, कि संसार को त्यागकर और मसीह के साथ एक होकर, वह सभी सांसारिक चीजों को तुच्छ समझे।

९०. आत्मा, जो पवित्र आत्मा से सुगंधित है, अपनी घ्राण इंद्रिय को साँप से पवित्र रूप से बचाती है, कहीं वह उसमें कामवासना की गंदगी को न सूंघ ले। – इसी प्रकार, जिसके हृदय में ईश्वर का भय है, उसे कामुकता की गंदगी स्पर्श नहीं करेगी।

91. हमेशा स्पष्टवादी और ईमानदार रहने का प्रयास करो, और अपने हृदय में एक बात रखकर होठों से दूसरी बात मत कहो; क्योंकि यह धोखाधड़ी है।

92. सत्यवादी बनो और झूठ मत बोलो, क्योंकि झूठ शैतान से आता है।

93. बुराई का बदला बुराई से न चुकाओ; परन्तु यदि कोई तुम्हारा बुरा करे, तो उसे क्षमा करो, ताकि परमेश्वर भी तुम्हें क्षमा करे।

94. यदि आप प्रतिशोधी भावना से पीड़ित हैं, तो उस भाई के लिए पूरे दिल से प्रार्थना करें, और प्रतिशोध की भावना आपसे दूर हो जाएगी।

95. सावधान रहो कि अपने भीतर ईर्ष्या की भावना को न पालो, कहीं शैतान तुम्हें जीवित ही न खा जाए; बल्कि पाप-स्वीकृति के लिए जाओ और ईश्वर से प्रार्थना करो कि वह तुम्हें ऐसे खतरे से बचाए।

96. यदि आप किसी को पाप करते देखें, तो उसका पाप प्रकट न करें, उसकी निंदा न करें, और उसके प्रति घृणा न पालें, कहीं ऐसा न हो कि आप भी उसी पाप में पड़ जाएँ; बल्कि कहें: 'मैं उनसे भी बदतर हूँ; और यद्यपि उन्होंने आज पाप किया है, मैं कल पाप करूँगा।'

97. यह भी जानो कि राक्षस मौन, उपवास, जागरण, संयम, विनम्रता, प्रार्थना, आँसू और अन्य तपस्वी गुणों से डरते हैं।

98. यदि आप चाहते हैं कि ईश्वर आपको आँसू, पश्चाताप और वैराग्य प्रदान करें, तो लगातार अपने आप को मृत्यु और अपनी कब्र की याद दिलाएँ।

९९. यदि आप शैतान के धोखे में आकर किसी पाप में पड़ जाते हैं, चाहे वह छोटा हो या बड़ा, तो निराश न हों या खुद को बर्बाद होने के लिए दोषी न ठहराएँ, बल्कि पाप-स्वीकार और पश्चाताप का सहारा लें, और ईश्वर आपसे मुंह नहीं मोड़ेंगे।

100. शहरों में जाने में आनंद न लें; क्योंकि यदि आप पाप को नहीं देखते हैं, तो आप शुद्ध रहेंगे।

101. नशे की हद तक शराब न पियो; अन्यथा, आपका हृदय सुखों के पीछे पागलों की तरह दौड़ पड़ेगा।

102. दिन में दो बार भोजन न करो, कहीं ऐसा न हो कि तुम्हारा शरीर भारी हो जाए, और उसके साथ ही तुम्हारे वासनाएँ भी प्रबल हो जाएँ।

103. बहुत अधिक मत सोओ, वरना तुम झूठ *में पड़ जाओगे*।

104. बहुत अधिक बातें न करें, कहीं आप झूठ में न फँस जाएँ।

105. अपनी ज़रूरतों से ज़्यादा कुछ भी अपने लिए न जुटाओ, और अपनी हैसियत के अनुसार ही खर्च करो।

106. मौन रहो, और अपने काम में लगे रहो।

107. अपनी जीभ और अपने पेट को पूरी ताकत से काबू में रखें।

108. ज्ञान में नम्र रहो; ऐसा व्यवहार करो मानो तुम अज्ञानी और अनपढ़ हो।

109. सभी लोगों के प्रति कोमल रहो।

110. बहुत बातूनी होने और हँसने में बहुत हानि है; और एक समझदार व्यक्ति मौन का पालन करता है।

111. हमेशा मृत्यु को अपनी आँखों के सामने रखो, और प्रलोभन तुम्हें कभी गिरा नहीं पाएगा।

112. शाम और सुबह, अपने आप की जाँच करो कि तुमने अपना समय कैसे बिताया है; लेकिन यह प्रयास (निरंतर आत्म-ध्यान और अपने दिल पर नज़र रखना) के बिना नहीं किया जा सकता।

113. ईश्वर से भय करो, जैसे कि तुम्हें अपने सभी कर्मों का हिसाब देना है।

114. हर दिन अपने आप से पूछो: तुमने किस जुनून पर काबू पाया है?

115. जो यह मानता है कि न्याय होगा, वह किसी का न्याय नहीं करता, बल्कि स्वयं का और भी अधिक रक्षण और रक्षा करता है, यहाँ तक कि सबसे छोटे और तुच्छ बुरे कर्म से भी।

116. जो कोई विश्वास करता है कि उसका शरीर मरे हुओं में से जी उठाया जाएगा, वह उसे अशुद्धता से शुद्ध रखने का ध्यान रखता है।

117. ईश्वर के भय में स्वयं को स्थापित करने के बाद, वह सब कुछ करें और पूरा करें जो आपको करना चाहिए – और अपने अंतरात्मा की प्रेरणाओं को नज़रअंदाज़ न करें; बल्कि उस पर ध्यान दें, ताकि वह भी आपका रक्षक बने, और तुरंत आपको दिखा दे कि आप किसमें गिर रहे हैं, कभी आपका साथ न छोड़े, और न ही आपको अपने शत्रुओं के हाथों में गिरने दे।

118. जानो कि जब एक संन्यासी का मन अपनी इच्छा से हटकर ईश्वर की ओर मुड़ना शुरू करता है, तो पहले निराशा उस पर हावी होती है। ऐसी निराशा को दूर करने के लिए निम्नलिखित उपाय हैं: प्रार्थना और ईश्वर पर अखंड ध्यान; यह ध्यान संयम से बना रहता है, और संयम को शारीरिक श्रम द्वारा सुरक्षित रखा जाता है। *जीवन की ओर ले जाने वाला* द्वार ऐसा ही संकरा है (मत्ती 7:14)।

119. यदि तुमने प्रभु से सच्चे मन से प्रेम किया है और आने वाले राज्य को प्राप्त करने का यत्न कर रहे हो, और अपने पापों के कारण परिश्रम करने का संकल्प लिया है, तो न्याय और अनंतकालिक यातना को याद करो, जो इस संसार से तुम्हारे प्रस्थान की प्रतीक्षा में भय के साथ है।

120. न तो धन से लगाव रखें, न ही संपत्ति से, न ही अपने माता-पिता से, न ही सांसारिक महिमा से, न ही दोस्तों से, न ही रिश्तेदारों से, न ही भाइयों से, और न ही वास्तव में किसी भी सांसारिक चीज़ से। इन बातों की कोई चिंता या परवाह न करो; बल्कि सभी बंधनों को तोड़कर, सभी चिंताओं को त्यागकर, और उनसे घृणा करके—यहाँ तक कि अपने ही शरीर को इन सब से वंचित करके—एक निश्चिंत और लगन वाले हृदय से मसीह का अनुसरण करो, हमेशा स्वर्ग की ओर देखते हुए और वहाँ से सहायता की प्रतीक्षा करो। क्योंकि मृत्यु अचानक है, और न्याय निकट है। और धिक्कार है उन पर जो तैयार नहीं हैं!

संत जॉन क्लाइमस

उनका संक्षिप्त परिचय

संत जॉन के माता-पिता, उनके जन्मस्थान और माउंट सीनाई के मठ में उनके प्रवेश से पहले की परिस्थितियाँ अज्ञात हैं। उनकी रचनाओं से यह स्पष्ट है कि उन्होंने अच्छी शिक्षा प्राप्त की थी; लेकिन ईश्वर के साथ रहने की उनकी तीव्र इच्छा ने उन्हें संसार और उसकी महिमा को छोड़कर सिनाई के मठ में जाने के लिए विवश कर दिया, जो उस समय अपने बुद्धिमान संतों के लिए प्रसिद्ध था। वह 16 वर्ष की आयु में मठ में प्रवेश कर गए और स्वयं को वरिष्ठ मार्टिरियोस के निर्देशन और मार्गदर्शन में रख लिया, जिन्होंने चार साल बाद, जब वह 20 वर्ष के थे, उन्हें भिक्षु के रूप में दीक्षा दी। अपने वरिष्ठ के प्रति उनकी आज्ञाकारिता इतनी महान थी कि ऐसा लगता था कि उनकी अपनी कोई इच्छा ही नहीं थी; फिर भी अपने साथी भिक्षुओं के प्रति उन्होंने स्वयं को सरल और विनम्र रखा, और किसी के प्रति भी श्रेष्ठता का भाव नहीं दिखाया। अपने वरिष्ठ के साथ 19 वर्ष बिताने के बाद, संत जॉन उन्हें खो बैठे, और उनकी मृत्यु के बाद, उन्होंने अकेले रहने के लिए एक एकांत स्थान चुना, जो मठ से पाँच स्टेडियम दूर स्थित फोला के नाम से जाना जाता था। यहाँ उन्होंने 40 वर्षों तक जीवन व्यतीत किया। उनका एकांत जीवन शांतिपूर्ण था, जो कठोर तपस्या से भरा हुआ था, जिसे वह फिर भी छिपाना जानते थे, ताकि वे किसी भी तरह से असाधारण न दिखें। हर शनिवार और रविवार को वह चर्च में दिव्य लिटर्जी में भाग लेने, मसीह के पवित्र रहस्यों में शामिल होने, और फिर पवित्र पिताओं से बातचीत करने और उनके मार्गदर्शन के प्रकाश में अपने मन की स्थिति की जाँच करने के लिए मठ में आता था। ऐसे आयोजनों के दौरान, संत जॉन अक्सर बोलते थे, और स्वाभाविक रूप से, उनके शब्दों का दूसरों की तुलना में अधिक महत्व होना ही था। इससे विनम्र लोग प्रसन्न होते थे; लेकिन कुछ कम सूझबूझ वाले लोगों ने उस बुद्धिमान वक्ता पर अहंकार का संदेह करना शुरू कर दिया, और वे इस संदेह को छिपा नहीं सके। तब, दुर्बल लोगों

को भटकाने से बचने के लिए , सेंट जॉन ने स्वयं पर पूर्ण मौन का नियम लगाया, जिसका उन्होंने पूरे एक वर्ष तक कड़ाई से पालन किया; और उन्होंने इसे उन्हीं लोगों की विनम्र प्रार्थनाओं के बाद ही तोड़ा जिन्होंने उन्हें ऐसा तपस्या का कार्य करने के लिए मजबूर किया था। चालीस वर्ष मौन में बिताने के बाद, सभी भाइयों की सर्वसम्मत इच्छा से, संत जॉन को सिनाई के मठ का मठाधीश चुना गया। लेकिन चार साल तक इस आध्यात्मिक झुंड का नेतृत्व करने के बाद, वह एक बार फिर अपने एकांत में लौट आए, और अपनी मृत्यु से कुछ ही समय पहले वे अपने जीवन के 80वें वर्ष, वर्ष 563 में, परलोक सिधार गए। अपने ही नाम के रैफ़ के मठाधीश के अनुरोध पर, सेंट जॉन ने *द लैडर ऑफ़ डिवाइन एसेन्ट* लिखा, जिसमें उन्होंने 30 सीढ़ियों में आध्यात्मिक पूर्णता की ओर आरोहण के चरणों का वर्णन किया है। उन्होंने 'द लैडर' के साथ 'चरवाहे के लिए एक वचन' भी संलग्न किया, जिसमें उन्होंने एक आध्यात्मिक चरवाहे के कर्तव्यों को बताया है। 'द लैडर' के 30 शब्दों में से, हम निम्नलिखित शीर्षकों के तहत एक चयन प्रस्तुत करते हैं:

1. तपस्या के सामान्य सिद्धांत
2. पश्चाताप पर
3. सद्गुणों और भावों पर, और सामान्य रूप से बाद वालों के खिलाफ संघर्ष पर
4. आठ प्रमुख भावों के विरुद्ध संघर्ष: (ख) कामवासना; (ग) क्रोध; (ङ) निराशा; (च) अहंकार
5. निर्लिप्तता पर

संत जॉन क्लाइमक्स की तपस्या संबंधी शिक्षाएँ

1. तपस्या के सामान्य सिद्धांत

1. ईश्वर उन सभी के लिए जीवन और मोक्ष है, जिन्हें स्वतंत्र इच्छा की शक्ति प्राप्त है।

२. जो व्यक्ति एक भौतिक और नश्वर शरीर में रहते हुए स्वयं को ईश्वर को समर्पित कर देता है, वह निराकारों के जीवन और अवस्था का अनुकरण करता है: – वह हर समय, हर स्थान पर और हर कर्म में केवल ईश्वर के वचनों और आज्ञाओं का पालन करता है, – हमेशा अपनी इंद्रियों को काबू में रखता है और आत्म-त्याग तथा आत्म-निंदा का अभ्यास करता है, – हमेशा मृत्यु, शोक और अपने आत्मा में पीड़ा पर ध्यान करता है, – स्वर्गीय आशीर्वाद प्राप्त करने के लिए दुनिया द्वारा प्रशंसित भौतिक वस्तुओं से मुंह मोड़ लेता है।

3. जिन्होंने भी गंभीरता से सांसारिक जीवन का त्याग किया है, उन्होंने निस्संदेह ऐसा या तो आने वाले राज्य के लिए, या अपने पापों की अधिकता के कारण, या ईश्वर के प्रति प्रेम के कारण किया है। यदि, हालाँकि, उनके इरादे इनमें से कोई भी नहीं थे, तो संसार से उनका विमुख होना अनुचित था। फिर भी, हमारे शुभ मार्गदर्शक यह देखने के लिए प्रतीक्षा कर रहे हैं कि उनके इस मार्ग का परिणाम क्या होगा।

४. जब हम मिस्र छोड़कर फिरौन से भागना चाहते हैं, तो हमें भी एक मूसा की आवश्यकता होती है—अर्थात्, परमेश्वर के सामने और परमेश्वर के द्वारा एक मध्यस्थ—जो हमारे कर्मों और आचरण के बीच खड़ा होकर, हमारी ओर से परमेश्वर की ओर अपने हाथ उठाए, ताकि उसकी अगुवाई में, हम पापों के समुद्र को पार कर सकें और वासनाओं के अमालेक पर विजय प्राप्त कर सकें।

५. जो भी देह में रहते हुए स्वर्ग पर चढ़ने का प्रयास करते हैं, उनके लिए आत्म-अनुशासन (स्वयं पर नियंत्रण) और अनवरत आत्म-त्याग (स्वैच्छिक वंचनाएँ) वास्तव में आवश्यक हैं - विशेष रूप से त्याग की शुरुआत में, जब तक कि हमारी सुख-प्रेमी प्रकृति शुद्ध नहीं हो जाती और हमारा कठोर हृदय ईश्वर के प्रेम से गर्म नहीं हो जाता। क्योंकि इस प्रयास में परिश्रम—सचमुच परिश्रम—और महान, छिपी हुई पीड़ा अपरिहार्य है, जब तक हमारा मन, यह उग्र और सुख-प्रेमी कुत्ता, पवित्र और प्रेममय नहीं हो जाता। – हालाँकि, हे उत्साही और दुर्बल! – हम उत्साहित रहें। आइए हम प्रभु मसीह के सामने अपनी दुर्बलता का इकरार करें, उसे अटूट विश्वास के साथ, दृढ़ हाथ से, उनके समक्ष प्रस्तुत करें – और हमें निश्चय ही उनकी सहायता मिलेगी, – यहाँ तक कि हमारी योग्यता से भी परे, बशर्ते हम हमेशा नम्रता की गहराई तक स्वयं को नम्र करें।

६. जो लोग इस प्रयास को अपनाते हैं, उन्हें एक ठोस नींव रखने के लिए, सब कुछ त्यागना चाहिए, सब कुछ तुच्छ समझना चाहिए, सब कुछ पर हँसना चाहिए, और सब कुछ एक ओर रख देना चाहिए। निम्नलिखित तीन-स्तंभों वाली नींव अच्छी है: द्वेष-रहितता, उपवास और ब्रह्मचर्य।

७. एक दृढ़ शुरुआत (संकल्प) निस्संदेह हमारे लिए लाभदायक होगी, भले ही हम बाद में कमजोर हो जाएँ; क्योंकि जो आत्मा कभी साहसी थी, यदि वह कमजोर हो जाती है, तो वह अपने पूर्व उत्साह की स्मृति से, जैसे किसी तीखे हथियार से, घायल हो जाती है। कुछ लोग ढीले पड़ जाने के बाद भी, इस तरह कई बार खुद को संभाला है।

8. जब आत्मा, विश्वासघात करते हुए, उस धन्य और प्रिय उत्साह को नष्ट कर देती है, तो उसे तत्पश्चात इस कारण की सावधानीपूर्वक जाँच करनी चाहिए कि वह उसे क्यों खो बैठी; और उसे अपने सभी प्रयास और अपना सारा उत्साह उसी कारण की ओर निर्देशित करना चाहिए; क्योंकि पूर्व का उत्साह उसी द्वार से सिवाय उसके द्वारा पुनःप्राप्त नहीं किया जा सकता, जिससे वह प्रस्थान कर गया था।

९. हमारे त्याग की शुरुआत में, हम निस्संदेह कठिनाई, आत्म-बाध्यता और दुख के साथ सदाचार का अभ्यास करते हैं; लेकिन जैसे-जैसे हम प्रगति करते हैं, हम उनमें दुख महसूस करना बंद कर देते हैं, या केवल थोड़ा सा महसूस करते हैं; और जब हमारी कामुक तर्कशक्ति पर विजय प्राप्त हो जाती है और वह उत्साह की अग्नि से मोहित हो जाती है, तो हम उन्हें पूर्ण आनंद, इच्छा और दिव्य उत्साह के साथ अभ्यास करते हैं।

10. गृहस्थों ने मुझसे पूछा: 'हम अपनी पत्नियों के साथ रहते हुए और सांसारिक चिंताओं में उलझे हुए, सबसे उत्तम ईसाई जीवन कैसे प्राप्त कर सकते हैं?' – मैंने उनसे उत्तर दिया: 'जितना भी भला कर सकते हैं, उतना करें; किसी की निंदा न करो, चोरी न करो, किसी से झूठ न बोलो, किसी के सामने घमंड न करो, किसी के प्रति द्वेष न रखो, चर्च के जमावड़ों की उपेक्षा न करो, ज़रूरतमंदों पर दया करो, किसी को गुमराह न करो, किसी के सम्मान का उल्लंघन न करो, और अपनी पत्नियों के प्रति विफादार रहो। – यदि आप ये बातें करेंगे, तो आप स्वर्ग के राज्य से दूर नहीं रहेंगे।

11. आइए हम इस महान प्रयास को आनंद और साहस के साथ आरंभ करें। आइए हम अपने शत्रुओं से न डरें; क्योंकि वे हमारी आत्मा के मुख को निहारते हैं, यद्यपि वे स्वयं अदृश्य हैं – और जब वे देखते हैं कि वह भय से बदल गई है, तो वे हम पर और भी भयंकर रूप से हथियार उठाते हैं, यह देखकर कि हम आतंकित हो गए हैं। इसलिए हमें निडर होकर उनका सामना करने के लिए खुद को सशस्त्र करें; क्योंकि कोई भी एक साहसी योद्धा का मुकाबला नहीं कर सकता।

12. जो वास्तव में मसीह की सेवा करना चाहते हैं, उन्हें सबसे पहले और सबसे महत्वपूर्ण रूप से, अपने आध्यात्मिक पिताओं की मदद से और अपनी सूझबूझ से, अपने लिए उपयुक्त स्थानों और जीवन के तरीकों, मार्गों और शिक्षा के रूपों का चयन करना चाहिए; क्योंकि सामुदायिक जीवन सभी के लिए फायदेमंद नहीं है, और न ही हर कोई मौन के लिए उपयुक्त है। प्रत्येक व्यक्ति को यह विचार करना चाहिए कि कौन सा मार्ग उनके अपने गुणों के अनुरूप है।

13. संपूर्ण मठवासी जीवन संगठन के तीन मुख्य रूपों और तपस्या के तरीकों से मिलकर बना है: या तो तपस्वी एकांत और आश्रम में; या एक, या अधिकतम दो साथियों के साथ मौन में; या, अंत में, एक सामुदायिक परिवेश में धैर्यपूर्वक निवास करना।

14. जिसने भी प्रभु से सच्चा प्रेम किया है, जो भी आने वाले राज्य को सच्चे मन से चाहता और खोजता है, जिसे अपने पापों का सच्चा खेद है, जिसने अपने भीतर न्याय और अनंत यातना की स्मृति को सच्चे मन से स्थापित किया है, जो भी इस जीवन के अंत से सच्चा भयभीत है, अब किसी भी सांसारिक चीज़ से प्रेम नहीं करेगा; अब संपत्ति और अधिग्रहण, न ही इस दुनिया के वैभव और सम्मान, न ही किसी भी सांसारिक चीज़ में व्यस्त या चिंतित नहीं रहेगा; परन्तु, ऐसी सभी चिन्ताओं को त्यागकर, और यहाँ तक कि अपने ही शरीर से घृणा करके, वह मसीह का अनुसरण करेगा, निर्वस्त्र और चिन्ताओं तथा आलस्य से मुक्त, निरन्तर स्वर्ग की ओर दृष्टि बनाए हुए और वहाँ से सहायता की प्रतीक्षा करेगा, उस संत के वचनों के अनुसार जिन्होंने कहा: *'मेरी आत्मा आप पर चिपकी रहती है'* (भजन संहिता 62:9), और एक अन्य सदैव-स्मरणीय के शब्दों में: *'हे प्रभु, मैं तेरा अनुसरण करने से न तो थका हूँ और न ही मैंने मानव विश्राम के दिन की इच्छा की है'* (यिर्मयाह 17:16)।

15. यह हमारे लिए लज्जा की बात है कि हम सब कुछ पीछे छोड़कर फिर से उन्हीं बातों में उलझे रहें। यही वास्तव में पीछे मुड़ना और परमेश्वर के राज्य में न ले जाए जाने का अर्थ है।

16. सुनो कि प्रभु ने उस युवक से क्या कहा, जिसने लगभग सभी आज्ञाओं का पालन कर लिया था: 'तुम्हें एक बात और करनी है: अपनी संपत्ति बेच डालो और गरीबों को बाँट दो, और स्वयं को एक भिखारी बना लो, ताकि तुम दूसरों से भीख प्राप्त कर सको' (लूका 18:22, मत्ती 19:21)।

17. हमें सावधान रहें कि, यह सोचते हुए कि हम संकीर्ण मार्ग पर चल रहे हैं, हम वास्तव में कहीं चौड़े और विशाल मार्ग पर न भटक जाएँ। संकीर्ण मार्ग का वास्तविक वर्णन यह है: देह का संयम, रात भर की जाग, पानी का संयमित सेवन, रोटी की कमी, अपमान का शुद्धिकरण करने वाला पेय, निंदा, उपहास, गाली-गलौज, अपनी इच्छा पर

काबू पाना, हमलों को सहना, तरिस्कार के सामने कराहना नहीं, भारी कष्टों को सहना – ताकि अन्याय होने पर साहसपूर्वक सहन किया जाए, बदनाम किए जाने पर रंजिश न रखी जाए, दोषी ठहराए जाने पर क्रोध न किया जाए, और अपमानित किए जाने पर विनम्र रहा जाए। धन्य हैं वे जो यहाँ दिखाए गए मार्ग पर चलते हैं, क्योंकि '*आकाश का राज्य उन्हीं का है*' (मत्ती 5:3–12)।

18. जो कोई यह सोचता है कि वह किसी भी वस्तु से आसक्त नहीं है, फिर भी उससे वंचित होने पर मन ही मन दुखित होता है, वह स्वयं को धोखा दे रहा है।

19. यह आश्रय (संसार का त्याग) मोक्ष और दुर्भाग्य दोनों का कारण है; यह उन लोगों को ज्ञात है जो मन के इस सागर को पार करते हैं। लेकिन यह एक दयनीय दृश्य है जब जो लोग गहरी खाई से बच गए हैं, वे स्वयं इसी आश्रय में डूब जाते हैं।

20. संसार से अलग हो जाने के बाद, उससे लगाव मत करो; क्योंकि वासनाएँ जल्दी लौट आती हैं।

21. उन स्थानों से भागो जो तुम्हें एक विपत्ति की तरह गिरने का अवसर देते हैं; क्योंकि जब हम निषिद्ध फल को नहीं देखते, तो हम उसकी इतनी तीव्र इच्छा नहीं करते।

२२. हम लूत का अनुकरण करने का प्रयास करें, न कि उसकी पत्नी का; क्योंकि आत्मा, जिस स्थान से वह आई है, वहाँ लौटकर एक ऐसे नमक के समान हो जाएगी जिसने अपनी शक्ति खो दी है, और वह निष्क्रिय हो जाएगी। मिस्र से भाग जाओ और फिर कभी न लौट आओ; क्योंकि जो हृदय वहाँ लौट गए हैं, उन्होंने यरूशलेम – अर्थात्, निर्लिप्तता की भूमि – को नहीं देखा है।

23. जो तुम्हारा बोझ (पापों का) उतारने में सक्षम और इच्छुक हो, वही तुम्हारा पिता हो; पश्चाताप, जो तुम्हें कलंक से मुक्त कर सकता है, वही तुम्हारी माता हो; तुम्हारा भाई स्वर्गीय चीजों की खोज में एक सहकर्मी और प्रतिद्वंद्वी हो; मृत्यु के स्मरण को अपना अविभाज्य साथी बना लो; आपकी हृदय की आहें आपके प्रिय संतान हों; आपका शरीर आपका सेवक हो, और स्वर्गीय शक्तियों को अपना मित्र बनाएं, क्योंकि आपकी आत्मा के प्रस्थान के समय यदि वे आपके मित्र होंगी तो वे आपके लिए लाभदायक होंगी। '*ये*' '*उस पीढ़ी के लोग हैं जो प्रभु की खोज में लगे रहते हैं*' (भजन संहिता 23:6)।

24. संसार से अलग होते समय हमें ऐसे स्थान चुनने चाहिए जहाँ आराम और अहंकार के अवसर न हों – और जो विनम्र हों; अन्यथा हम वासना से कार्य कर रहे हैं।

25. जैसे एक आँख से आकाश और दूसरी से पृथ्वी को देखना असंभव है, वैसे ही कोई भी व्यक्ति जिसने विचार और कर्म में संसार के साथ सभी संबंध नहीं तोड़े हैं, उसके लिए आध्यात्मिक विपत्तियों से बचना असंभव है।

26. एक अच्छा और सुव्यवस्थित चरित्र बहुत परिश्रम और प्रयास से प्राप्त होता है; लेकिन जो लंबे प्रयास से प्राप्त किया गया है, वह एक क्षण में खोया जा सकता है: '*क्योंकि बुरा संगत अच्छाई को बिगाड़ देता है*' (1 कुरिन्थियों 15:33)।

२. पश्चाताप पर

1. पश्चाताप बपतिस्मा का नवीनीकरण है। पश्चाताप अंतरात्मा का शुद्धिकरण है। पश्चाताप अपने जीवन को सुधारने के लिए ईश्वर के साथ एक वाचा है। पश्चाताप अपने पूर्व पापों के विपरीत, अच्छे कर्म करके प्रभु के साथ मेल-मिलाप करना है। पश्चाताप आत्म-निंदा की भावना है, और बाहरी चिंताओं से मुक्त होकर स्वयं का ध्यान रखना है। पश्चाताप आशा की बेटी और निराशा का अस्वीकार है।

२. हमारे लिए जो अन्याय की खाई में गिर गए हैं, यह असंभव है कि हमें उससे बाहर निकाला जाए जब तक कि हम नम्रता की गहराई में न डूबें।

3. एक है पश्चातापी लोगों की विनम्रता; एक है उन लोगों द्वारा अनुभव किया गया अंतरात्मा का वेदना जो अभी भी अपने पाप में गिर रहे हैं; और एक है विनम्रता की आनंदमय संपदा जो ईश्वर के कार्य द्वारा सिद्ध लोगों पर आती है। दूसरे (प्रकार की विनम्रता) का चिह्न अपमान को पूर्ण रूप से सहन करना है। – पुरानी आदतें अक्सर उन लोगों पर भी अत्याचार करती हैं जो उन पर रोते हैं। और इससे आश्चर्यचकित न हों। हमारे गिरने के कारण और तरीके आत्मा के लिए अस्पष्ट और पूरी तरह से अकल्पनीय हैं: कुछ लापरवाही से उत्पन्न होते हैं, कुछ आध्यात्मिक अनुशासन की उपेक्षा से, और कुछ ईश्वर के मुंह मोड़ लेने से। हालाँकि, किसी ने मुझसे कहा कि हमारे घरेलू मामलों के कारण होने वाले पतन से हमें शीघ्र वापसी की अनुमति मिलती है; क्योंकि जो हमें उनमें डालता है, वह दुख के दैत्य को हमें लंबे समय तक थामे रहने नहीं देता।

४. जब कोई घाव अभी ताज़ा और कच्चा होता है, तो वह आसानी से भर जाता है; लेकिन पुराने घाव, जिन्हें उपेक्षित छोड़ दिया जाता है और जिन्हें सड़ने दिया जाता है, वे आसानी से नहीं भरते, और उन्हें भरने के लिए बहुत मेहनत, काटने, पट्टी बांधने और दाह-चिकित्सा की आवश्यकता होती है। समय के साथ कई घाव असाध्य हो जाते हैं, लेकिन *'ईश्वर के लिए सब कुछ संभव है'* (मत्ती 19:26)।

5. पतन से पहले, दुष्टात्माएँ हमें परमेश्वर को मानवजाति के प्रति प्रेम करने वाला दिखाती हैं, लेकिन पतन के बाद उसे अथाह कठोर दिखाती हैं।

6. उस शत्रु की न सुनो, जो तुम्हारे पतन के बाद, तुम्हारे अपराध की तुच्छता के बारे में तुम्हें फुसफुसाता है, यह कहते हुए: 'जब तक तुम यह या वह नहीं करते, यह कुछ भी नहीं है।' अक्सर छोटी-छोटी भेंटों ने भी न्यायाधीश के महान क्रोध को शांत किया है (और इसके विपरीत भी)।

7. जो कोई भी वास्तव में अपने पापों की क्षमा का आश्वासन चाहता है, वह उस दिन को व्यर्थ मानता है जिस दिन वह रोता नहीं है, भले ही उसने उस दिन कुछ अच्छा किया हो।

८. कोई भी जो अपने पापों पर रोना चाहिए, उसे इस काम में अपनी लगन न छोड़नी चाहिए, और न ही खुद को इस तरह की आशा से धोखा देना चाहिए: 'अपने जीवन के अंत में (मृत्यु के समय) मुझे क्षमा का वचन मिलेगा।' जो अज्ञात है, उसे निश्चित नहीं माना जा सकता। इस आश्वासन के साथ *'मुझे चैन दो'*, *'ताकि मैं यहाँ से जाने से पहले विश्राम कर सकूँ'* (भजन संहिता 38:14)। *'जहाँ प्रभु का आत्मा है, वहाँ बन्धन छूट जाते हैं'* (2 कुरिन्थियों 3:17); जहाँ अनमोल नम्रता है, वहाँ बन्धन छूट जाते हैं। परन्तु जिनमें ये दोनों बातें नहीं हैं, वे स्वयं को धोखा न दें: वे बँधे हुए हैं।

९. जो संसार में रहते हैं, वे ही इन प्रकाशनों से अपरिचित हैं। लेकिन उनमें से कुछ, दान के मार्ग पर चलकर, अपने प्रस्थान के समय यह महसूस करेंगे कि यह उनके लिए कितना फलदायी है।

10. जो अपने लिए रोता है, वह दूसरे के रोने, या पतन, या निन्दा को पहचान नहीं पाएगा। – एक कुत्ता, जो किसी जानवर से घायल हो जाता है, वह उसके प्रति और भी अधिक क्रोधित हो जाता है, और घाव के दर्द के कारण उस पर बेकाबू होकर टूट पड़ता है।

11. आइए हम इस पर विचार करें कि क्या हमारा अंतरात्मा हमें फटकारना बंद कर दिया है क्योंकि वह, मानो, बुराई से दबा दिया गया है, न कि इसलिए कि वह शुद्ध हो गया है। एक गिरावट के लिए क्षमा का संकेत यह निरंतर स्वीकारोक्ति है कि कोई कर्जदार है।

12. हम सभी सावधान रहें, विशेष रूप से हम में से जो गिर गए हैं, कहीं नास्तिक ओरिजिन की हानिकारक शिक्षा हमारे हृदयों में प्रवेश न कर जाए। उस घृणित सिद्धांत ने मानवजाति के प्रति ईश्वर के प्रेम पर सबसे अधिक जोर दिया, जो इंद्रिय सुखों की तलाश करने वालों को बहुत भाता है।

13. हमारे आध्यात्मिक संघर्ष की शुरुआत में ही, हमें अपने पापों का इकरार अपने धर्मनिष्ठ न्यायाधीश (आध्यात्मिक पिता) से निजी तौर पर करना चाहिए; लेकिन यदि वह ऐसा आदेश दें, तो सभी की उपस्थिति में। क्योंकि जब फोड़े उजागर हो जाते हैं, तो इससे वे और बिगड़ते नहीं, बल्कि ठीक हो जाते हैं।

14. पाप-स्वीकृति के दौरान, बाहरी रूप-रंग और भीतरी अनुभूति और विचार दोनों में, एक मृत्युदंडित अपराधी के समान हो जाओ, जिसका मुख जमीन की ओर झुका हो; और यदि संभव हो, तो अपने आँसुओं से अपने आध्यात्मिक पिता के पैरों को भीगो दो, मानो वे स्वयं मसीह के पैर हों।

15. राक्षस आमतौर पर हमें या तो अपने पापों का अपने आध्यात्मिक पिता से बिल्कुल भी इक़रार न करने के लिए, या फिर अपने पापों का दोष दूसरों पर मढ़ते हुए उनका इक़रार करने के लिए प्रलोभित करते हैं।

16. घमंड की आत्मा से भटकें नहीं, बल्कि अपने पापों को अपने आध्यात्मिक पिता के सामने बिना कुछ छिपाए स्वीकार करें; क्योंकि आत्म-निंदा के बिना, शाश्वत लज्जा से मुक्त होना असंभव है। अपना घाव डॉक्टर के सामने खोलकर दिखाओ और उससे यह कहने में लज्जित न हो: 'पिताजी, यह मेरा अल्सर है, मेरा घाव है; यह किसी और के कारण नहीं हुआ, बल्कि मेरी ही लापरवाही के कारण हुआ है: इसके लिए कोई और दोषी नहीं है—न कोई मनुष्य, न कोई आत्मा, न कोई शरीर, न ही कोई और चीज़—बल्कि केवल मेरी ही लापरवाही है'।

17. यूहन्ना बपतिस्मा देने वाले ने बपतिस्मा से पहले उनके पास आने वालों से पाप-स्वीकृति की मांग की, न कि इसलिए कि उसे स्वयं इसकी आवश्यकता थी, बल्कि उनके उद्धार की चाह में।

18. पश्चाताप करने वालों के लिए चिड़चिड़ापन से उत्पन्न होने वाले क्लेश से अधिक घृणित कुछ भी नहीं है, क्योंकि पश्चाताप के लिए महान विनम्रता की आवश्यकता होती है, जबकि चिड़चिड़ापन महान अहंकार का संकेत है।

19. सूरज की एक किरण, जो किसी दरार से घर के अंदर प्रवेश करती है, उसमें मौजूद हर चीज़ को रोशन कर देती है, यहाँ तक कि हवा में तैरती हुई महीन धूल भी दिखाई देने लगती है: उसी तरह, जब प्रभु का भय हृदय में प्रवेश करता है, तो वह उसके सभी पापों को प्रकट कर देता है।

20. जिस प्रकार पानी अक्षरों को धो देता है, उसी प्रकार एक आँसू भी पापों को शुद्ध कर सकता है।

21. जैसे पानी की कमी के कारण अक्षर अन्य साधनों से मिटाए जाते हैं, वैसे ही आँसुओं से वंचित आत्माएँ दुःख, आहों और बहुत शोक के माध्यम से अपने पापों को शुद्ध करती हैं और उनका प्रायश्चित करती हैं।

२२. जैसे एक ताज़ा घाव जल्दी भर जाता है, वैसे ही, इसके विपरीत, पुराने आध्यात्मिक घाव भरने में मुश्किल होते हैं, हालांकि वे ठीक हो सकते हैं।

23. जैसे किसी के पिता का निधन हो जाने पर, अंतिम संस्कार से लौटते ही विवाह समारोह में शामिल होना लज्जास्पद होता है, वैसे ही अपने पापों पर रोने वालों के लिए इस वर्तमान युग में लोगों से शांति, सम्मान या महिमा की चाह करना अनुचित है।

24. जैसे कानून-पालन करने वाले नागरिकों के आवास दंडित अपराधियों से भिन्न होते हैं, वैसे ही अपने पापों पर शोक करने वालों का जीवन निर्दोषों से पूरी तरह से अलग होना चाहिए।

25. आत्मा की संवेदनशीलता इसकी स्वाभाविक संपत्ति है; लेकिन पाप इस संवेदनशीलता को सुस्त कर देता है। अंतरात्मा या तो बुराई के विराम का कारण बनती है या उसकी कमी का। अंतरात्मा, बपतिस्मा के समय हमें दिए गए संरक्षक देवदूत की वाणी का परिणाम है। इसीलिए हम देखते हैं कि जो बपतिस्मा द्वारा प्रबुद्ध नहीं हुए हैं, वे अपने बुरे कर्मों के लिए अपनी आत्मा में उतने कष्ट नहीं भोगते जितना कि विश्वासी भोगते हैं, यद्यपि इसका कारण पूरी तरह से स्पष्ट नहीं है।

२६. जो कोई भी अपने पापों के बोझ से मुक्त होना चाहता है, वह शहर के बाहर कब्रों के पास बैठने वालों का अनुकरण करे, और वे गर्म और उत्कट आँसू बहाना बंद न करें, और उसे अपने हृदय के मौन रुदन से तब तक न रुकना चाहिए, जब तक कि वह भी यीशु को आते हुए न देखे और अपने हृदय से कठोरता का पत्थर लुढ़काते हुए न देखे, और, लाजरूस के समान, हमारे मन को पाप के बंधनों से मुक्त करते हुए, और अपने सेवकों—देवदूतों को आज्ञा देते हुए: *'उसे* उसके जुनूनों से *खोल दो और उसे जाने दो'* (यूहन्ना 11:44), निर्वैरभाव की आनंद की ओर।

३. सद्गुणों और वासनाओं पर – और सामान्यतः उत्तरार्द्ध के विरुद्ध संघर्ष पर

1. विवेक हर समय, हर स्थान और हर मामले में ईश्वर की इच्छा की सच्ची समझ है; यह केवल उन लोगों में पाया जाता है जिनका हृदय शुद्ध है।

2. जिसने प्रमुख तीनों भावों (अहंकार, धन का प्रेम, लालच) पर विजय प्राप्त कर ली है, उसने अंतिम पाँचों पर भी विजय प्राप्त कर ली है (व्यभिचार, क्रोध, दुःख, निराशा, गर्व); लेकिन जो पहले पर विजय प्राप्त करने में लापरवाह है, वह एक पर भी विजय प्राप्त नहीं कर पाएगा।

3. सभी दैवीय हमले तीन मुख्य कारणों से होते हैं: या तो हमारी अपनी लापरवाही से, या अहंकार से, या शैतान की ईर्ष्या से।

4. हमें, सभी परिस्थितियों में, अपने अंतरात्मा (जो विश्वास और प्रभु की आज्ञाओं से प्रबुद्ध है) को परमेश्वर के अनुरूप स्थापित करना चाहिए; और यह पहचानकर कि हवाएँ किस दिशा से चलती हैं, हमें उसके मार्गदर्शन के अनुसार अपनी पालें लगानी चाहिए।

5. उन सभी कर्मों में जिनसे हम ईश्वर को प्रसन्न करने का प्रयास करते हैं, राक्षस हमारे लिए तीन गड्ढे खोदते हैं: प्रथम, वे हमारे अच्छे कार्य में बाधा डालने का प्रयास करते हैं; दूसरा, जब वे इस पहले प्रयास में पराजित हो जाते हैं, तो वे यह सुनिश्चित करने का प्रयास करते हैं कि जो किया गया है वह ईश्वर के अनुसार नहीं है; और जब वे इस योजना में भी विफल हो जाते हैं, तो, चुपके से हमारी आत्मा पर चढ़कर, वे हमें इस तरह खुशामद करते हैं जैसे हम ईश्वर को प्रसन्न करने वाले तरीके से जी रहे हों। – पहले प्रलोभन का विरोध उत्साह (मोक्ष के लिए) और मृत्यु की चिंता से किया जाता है; दूसरे का आज्ञाकारिता और विनम्रता से; और तीसरे का निरंतर आत्म-निंदा से। *'यह परिश्रम हमारे सामने है, जब तक कि* परमेश्वर की *आग हमारे पवित्र स्थान में प्रवेश नहीं कर जाती'* (भजन संहिता 78:16)। – तब हममें बुरी आदतों का उग्र स्वरूप नहीं रहेगा; *'क्योंकि हमारा परमेश्वर भस्म करने वाली आग है'* (इब्रानियों 12:29) जो वासना की हर उत्तेजना और हर हलचल, हर बुरी आदत, हर कठोरता और अंधकार को, चाहे वह आंतरिक हो या बाहरी, दृश्यमान हो या मानसिक, *भस्म कर देती है*।

6. जब राक्षस आत्मा पर विजय प्राप्त करते हैं और मन की रोशनी को अंधकारमय कर देते हैं, तो हम दुर्भाग्यों में, अब कोई गंभीर ध्यान, कोई तर्क, कोई ज्ञान, या कोई लज्जा नहीं रहेगी; बल्कि उनकी जगह पर होगा: कठोर हृदयता, असंवेदनशीलता, विवेक की कमी, और अंधापन।

7. आत्मा का *लूट-खसूट* तब होती है जब हम उस चीज़ को अच्छा मानते हैं जिसमें कोई अच्छाई नहीं है - यह धन-संपत्ति का एक अहसास न होने वाला अभाव है, आत्मा का एक अज्ञात बंधन है। आत्मा की *'हत्या'* तर्कसंगत मन का विनाश है, जो दुष्ट कर्मों में पतन के माध्यम से होता है (मृत्युपरायण पापों द्वारा ईश्वर के भय, अंतरात्मा और आध्यात्मिक संवेदनशीलता का दमन)। आत्मा का *'विनाश'* अन्याय करने के बाद निराशा में पतन है।

8. जो अपने जुनून के गुलाम रहे हैं और उन्होंने पश्चाताप किया है, वे हौसला रखें! क्योंकि भले ही वे हर खाई में गिर गए हों, हर फंदे में फँस गए हों, और हर बीमारी से पीड़ित हुए हों; फिर भी, ठीक हो जाने पर वे सभी के लिए प्रकाशस्तंभ और उपचारक, दीपक और मार्गदर्शक बनेंगे, जो हर बीमारी के स्वभाव और रूपों की घोषणा करेंगे, और अपने ही अनुभव के माध्यम से गिरने की कगार पर खड़े लोगों को बचाएंगे।

९. *सभी* (नवसिखुओं) *के लिए* सबसे उत्तम 'वर्णमाला' इस प्रकार है: आज्ञाकारिता, उपवास, बोरा, राख, आँसू, पाप-स्वीकृति, मौन, नम्रता, सतर्कता, धैर्य, ठंड, परिश्रम, विश्वास के लिए कष्ट, अपमान, पश्चाताप, क्षमा, भाईचारा, नम्रता, सरल और निःसंदेह विश्वास, सांसारिक मामलों के प्रति उदासीनता, माता-पिता के प्रति शुद्ध घृणा, निष्पक्षता, द्वेष रहित सादगी, स्वैच्छिक आत्म-त्याग।

10. *जो 'समृद्धि' प्राप्त करते हैं उनकी* अवस्था और विशेषताएँ हैं: अहंकार का अभाव, क्रोध का अभाव, अच्छी आशा, मौन, विवेक, न्याय की दृढ़ स्मृति, दया, आतिथ्य, मध्यम शिक्षा, अखंड प्रार्थना, और धन के प्रेम का अभाव।

11. *'भक्ति में सिद्ध'* आत्माओं की सीमा, अवस्था और नियम इस प्रकार हैं: एक अजेय हृदय, पूर्ण प्रेम, नम्रता का स्रोत, मन का प्रवाह, मसीह की प्रेरणा, अनवरत प्रकाश और प्रार्थना, ईश्वर की प्रकाश्यता की प्रचुरता, मृत्यु की लालसा, जीवन से घृणा, शरीर से अरुचि, संसार के लिए एक प्रार्थनामय मध्यस्थ, मानो ईश्वर को दया दिखाने के लिए विवश कर रहा हो, देवदूतों का सहकर्मी, समझ का गहन सागर, संस्कारों का धाम, अनुपम प्रकटीकरणों का भांडार, मानवता का उद्धारकर्ता, राक्षसों पर प्रभु, वासनाओं का स्वामी, शरीर का स्वामी, प्रकृति का शासक, पाप से परे, निर्लिप्तता का धाम, प्रभु की सहायता से प्रभु का अनुकरण करने वाला।

12. हमें निरंतर आध्यात्मिक अर्थ की देखभाल करनी चाहिए और उसे खोजना चाहिए; क्योंकि जब वह प्रकट होता है, तो बाहरी इंद्रियाँ आत्मा पर अपना भ्रामक प्रभाव डालना बंद कर देंगी; और यह जानते हुए, एक बुद्धिमान व्यक्ति ने कहा: *'और तुम परमेश्वर का ज्ञान प्राप्त करोगे'* (नीतिवचन 2:5, 3)।

13. संन्यासी जीवन, कर्म, वचन, विचार और आचरण के मामले में, हृदय की प्रेरणाओं के अनुसार जिया जाना चाहिए। यदि ऐसा नहीं है, तो यह संन्यासी जीवन नहीं होगा, दैवीय जीवन तो दूर की बात है।

14. कुछ लोग, कह सकते हैं, स्वाभाविक रूप से संयम, या मौन, या पवित्रता, या विनम्रता, या नम्रता, या कोमलता की ओर झुकाव रखते हैं; लेकिन दूसरों का स्वभाव उपरोक्त सद्गुणों के लगभग पूरी तरह से विपरीत होता है, फिर भी वे खुद को उनका अभ्यास करने के लिए मजबूर करते हैं; और यद्यपि वे कभी-कभी विफल हो जाते हैं, फिर भी मैं उन्हें पहले वालों से अधिक प्रशंसा करता हूँ, क्योंकि वे ही हैं जो अपने स्वभाव पर विजय प्राप्त करते हैं।

१५. संन्यासी स्वर्गदूतों का प्रकाश हैं, और स्वयं सभी लोगों के लिए प्रकाश हैं; और इसलिए उन्हें सभी बातों में एक अच्छा उदाहरण बनने का प्रयास करना चाहिए, *'किसी को भी किसी भी बात में ठेस न पहुँचाते हुए'* (२ कुरिन्थियों ६:३), न कर्म में और न वचन में।

16. पवित्र त्रिमूर्ति की सहायता से, हम तीन प्रमुख वासनाओं के विरुद्ध तीन सद्गुणों से स्वयं को सशस्त्र करें। यदि हम ऐसा नहीं करते हैं, तो हम स्वयं पर अनगिनत परेशानियाँ लाएँगे।

17. यदि हमारे कर्मों के द्वारा ईश्वर हमारे भीतर जागृत होते हैं, तो उनके शत्रु बिखर जाएँगे; और यदि हम दर्शन के द्वारा उनके समीप आते हैं, तो *'जो उनसे* और हमसे *घृणा करते हैं, वे उनकी* और हमारी *उपस्थिति से भाग जाएँगे'*।

18. तो, केवल शब्दों के बजाय, मुख्य रूप से परिश्रम के द्वारा, हम दिव्य सच्चाइयों के ज्ञान को सीखने का प्रयास करें; क्योंकि प्रस्थान के समय हमें शब्दों नहीं, बल्कि कर्मों को दिखाना है।

19. जो लोग सुनते हैं कि एक खजाना किसी ज्ञात स्थान पर छिपा है, वे उसे खोजते हैं, और बड़ी कठिनाई से उसे पाकर, वे जो पाया है उसे सावधानी से संरक्षित करते हैं; लेकिन जो लोग बिना प्रयास के अमीर हो गए हैं, वे बर्बाद करने वाले होते हैं।

20. आठ मुख्य भावुक विचारों से कौन से पाप उत्पन्न होते हैं, और तीन मुख्य भावों में से प्रत्येक अन्य पाँचों का जनक कौन है? – व्यभिचार की जननी अतिभक्षण है; निराशा की जननी अहंकार है; दुख और क्रोध तीनों मुख्य भावों से उत्पन्न होते हैं; और गर्व की जननी अहंकार है। – जहाँ तक इस बात का सवाल है कि आठ प्रमुख जुनूनों से कौन से पाप उत्पन्न होते हैं, मैं यह कहूँगा: अनियंत्रित जुनूनों में न तो कोई समझ होती है और न ही कोई व्यवस्था, बल्कि केवल अराजकता और अव्यवस्था होती है।

21. अनुचित समय पर हँसी, उदाहरण के लिए, कभी-कभी कामवासना के दानव से उत्पन्न होती है; कभी-कभी अहंकार से, जब कोई व्यक्ति भीतर ही भीतर निर्लज्जता से अपनी प्रशंसा करता है; और कभी-कभी हँसी तृप्ति से उत्पन्न होती है।

22. अत्यधिक निद्रा कभी-कभी तृप्ति से होती है; कभी-कभी उपवास से, जब उपवास करने वाले प्रसन्न होते हैं; कभी-कभी निराशा से, और कभी-कभी बस स्वभाव से।

23. बकबक कभी-कभी तृप्ति से होती है, और कभी-कभी अहंकार से।

24. ईश्वर निंदा, सार में, अहंकार का उत्पाद है; लेकिन यह असामान्य नहीं है कि यह किसी के पड़ोसी को उसी बात के लिए निंदा करने से, या राक्षसों की शत्रुतापूर्ण ईर्ष्या से उत्पन्न हो।

25. हृदय का कठोर हो जाना कभी-कभी तृप्ति से, कभी-कभी असंवेदनशीलता से, और कभी-कभी किसी वस्तु के प्रति आसक्ति से उत्पन्न होता है। और आसक्ति, बदले में, कभी-कभी व्यभिचार से, कभी-कभी धन के प्रेम से, कभी-कभी लालच से, कभी-कभी दंभ से - और कई अन्य कारणों से उत्पन्न होती है।

26. कपट अहंकार और क्रोध दोनों से उत्पन्न होता है।

27. पाखंड आत्म-संतोष और आत्म-इच्छा से उत्पन्न होता है।

28. हालाँकि, इनके विपरीत गुण, इनके विपरीत गुणों से ही उत्पन्न होते हैं। लेकिन चूँकि मेरे पास इनमें से प्रत्येक पर अलग से चर्चा करने का समय नहीं है, मैं संक्षेप में सामान्य रूप से कहूँगा कि इन सभी उल्लेखित भावों पर काबू पाना ही नम्रता है—और जिसने भी इस गुण को प्राप्त कर लिया है, उसने सभी भावों पर विजय प्राप्त कर ली है।

29. जो भय हम अपने वरिष्ठों के प्रति अनुभव करते हैं, वह हमें ईश्वर के भय का उदाहरण बने; और भौतिक सुंदरता के प्रति प्रेम हमें ईश्वर के प्रेम का आदर्श बने: क्योंकि कुछ भी हमें अपने सद्गुणों के लिए उदाहरण लेने से नहीं रोकता, भले ही वे उदाहरण उनके विपरीत कार्यों से ही क्यों न हों।

30. ईश्वर केवल परिश्रम में प्रकट नहीं होते, बल्कि सादगी और विनम्रता के साथ किए गए परिश्रम में प्रकट होते हैं। यद्यपि '*ईश्वर की सामर्थ्य दुर्बलता में सिद्ध होती है*' (2 कुरिन्थियों 12:9), प्रभु उस श्रमिक को अस्वीकार कर देंगे जिसमें विनम्रता की कमी है।

31. बीमारी कभी-कभी हमें हमारे पापों से शुद्ध करने के लिए भेजी जाती है; और कभी-कभी हमारे अहंकार को कुचलने के लिए।

32. हमारे भले और सर्व-भले स्वामी और प्रभु, यह देखकर कि कोई अपने आध्यात्मिक प्रयासों में बहुत आलसी है, उसकी आत्मा को दुष्ट विचारों और भावों से शुद्ध करने के लिए, एक कम कठिन प्रयास के रूप में, बीमारी से उसके शरीर को नम्र करते हैं; और कभी-कभी ऐसा ही करते हैं।

33. हमारे साथ जो कुछ भी घटित होता है, चाहे वह दृश्यमान हो या अदृश्य, उसे तीन प्रकार से ग्रहण किया जाता है: या तो एक अच्छे स्वभाव से, या एक भावुक स्वभाव से, या इन दोनों के बीच के किसी स्वभाव से। मैंने तीन भाइयों को देखा जिन्होंने एक हानि झेली थी: उनमें से एक क्रोधित था, दूसरा अविचल रहा, जबकि तीसरे ने इसे बड़ी खुशी से स्वीकार किया।

34. मैंने ऐसे किसानों को देखा है जो एक ही प्रकार के बीज जमीन में बोते थे; फिर भी उनमें से प्रत्येक का अपना अलग इरादा था: एक अपने कर्ज चुकाने के लिए, दूसरा अमीर बनने के लिए, और तीसरा उपहारों से अपने प्रभु का सम्मान करने के लिए; जबकि अन्य का मन इस बात में था कि वे जीवन के इस मार्ग से गुजरने वालों से अपने अच्छे कर्मों के लिए प्रशंसा प्राप्त करें, या अपने ईर्ष्यालु दुश्मन को चिढ़ाएँ, या आलस्य के लिए लोगों की फटकार से बचें। – इन किसानों द्वारा बोए गए बीजों के नाम ये हैं: उपवास, जागरण, दान, विभिन्न प्रकार की सेवा और इसी तरह के अन्य। भाई स्वयं प्रभु के प्रकाश में अपने इरादों की सावधानीपूर्वक जाँच करें।

३५. जैसे, जब हम झरनों से पानी निकालते हैं, तो कभी-कभी अनजाने में पानी के साथ एक मेंढक भी उठा लेते हैं; वैसे ही, सद्गुणों का अभ्यास करते समय, हम अक्सर उनमें गुप्त रूप से गुंथे हुए वासनाओं को भी पूरा कर लेते हैं। इस प्रकार – भक्षणशीलता आतिथ्य के साथ गुंथी होती है; प्रेम के साथ – व्यभिचार; विवेक के साथ – अत्यधिक

कठोरता; बुद्धिमानी के साथ – चालाकी; नम्रता के साथ – संदेह, सुस्ती, आलस्य, पर-निंदा, हठ और अवज्ञा; मौन के साथ – शिक्षा का दमन; आनंद के साथ – घमंड; आशा के साथ—आलस्य; एक बार फिर प्रेम के साथ—निंदा; मौन के साथ—निराशा और आलस्य; पवित्रता के साथ—कड़वाहट; विनम्र बुद्धिमत्ता के साथ—अनुमान (बिना माप के); और इन सभी के बाद, एक सामान्य उपचार के रूप में—या यूँ कहें कि एक विष—घमंड आता है।

36. जब हम प्रभु से कुछ माँगें और हमें बहुत समय तक उत्तर न मिले, तो हमें दुखित न होना चाहिए। प्रभु स्वयं यह चाहेंगे कि सभी लोग एक क्षण में ही निर्लिप्त हो जाएँ (लेकिन हमारी अपनी इच्छा से उन्हें महान बाधाएँ मिलती हैं)।

37. जो कोई भी ईश्वर से कुछ माँगता है और उसे प्राप्त नहीं करता, वह निस्संदेह निम्नलिखित कारणों में से किसी एक के कारण उसे प्राप्त करने में विफल रहता है: या तो इसलिए कि वे सही समय से पहले माँगते हैं; या इसलिए कि वे अपनी क्षमता से अधिक और अहंकार के कारण माँगते हैं; या इसलिए कि, यदि उन्हें वह मिल जाता जो उन्होंने मांगा था, तो वे अहंकारी हो जाते या आलस्य में पड़ जाते।

38. ऐसा होता है कि कुछ लोगों में—केवल विश्वासियों में ही नहीं बल्कि अविश्वासियों में भी—सभी वासनाएँ चली जाती हैं, और केवल वह एक वासना रह जाती है जो, एक प्राथमिक बुराई के रूप में, अकेले ही बाकी सभी को प्रतिस्थापित कर देती है, और जो इतनी हानिकारक है कि वह किसी को स्वर्ग से भी नीचे गिरा सकती है (यह अहंकार है)।

39. दिव्य अग्नि द्वारा आत्मा से खाए और जड़ से उखाड़े जाने के कारण, वासनाओं का सार समाप्त हो जाता है।[77]

40. कभी-कभी राक्षस अपनी मर्जी से पीछे हट जाते हैं, ताकि हमें सुरक्षा की झूठी भावना में सुला सकें। लेकिन फिर वे अचानक उस बेचारे आत्मा पर हमला करते हैं, उसे लूटते हैं, और उसे बुराइयों का इतना आदी बना देते हैं कि बाद में वह खुद पर ही बदनामी करती है और खुद से ही युद्ध करती है।

41. मैं इन राक्षसों के पीछे हटने के एक और रूप से भी अवगत हूँ - जो तब होता है जब आत्मा पापी आदतों में पूरी तरह से जकड़ जाती है। इसका एक उदाहरण हम शिशुओं में देखते हैं, जो लंबे समय से चली आ रही आदत के कारण, जब उनकी माताएं उन्हें स्तनपान नहीं करने देतीं, तो अपनी उंगलियाँ चूसते हैं।

४२. मैं उदासीनता के एक पाँचवें रूप से भी अवगत हूँ, जो आत्मा में महान सादगी और प्रशंसनीय दुर्भावना की कमी से उत्पन्न होता है। ऐसे लोगों की सहायता ईश्वर की ओर से आती है, *'जो हृदय से सीधे लोगों को बचाता है'* (भजन संहिता 7:11), और वे स्वयं इस बात से अनजान रहते हैं कि वह उन्हें उनके भावों से मुक्त कर रहा है। ठीक वैसे ही जैसे शिशु, जब उनके कपड़े उतार दिए जाते हैं, तो वे अपनी नग्नता पर बिल्कुल भी ध्यान नहीं देते।

४३. पाप और वासना, स्वाभाविक रूप से, मानव स्वभाव का हिस्सा नहीं हैं। ईश्वर वासनाओं का स्रष्टा नहीं है। हालाँकि, उन्होंने हमारे स्वभाव पर कई सद्गुणों की कृपा की है, जिनमें निम्नलिखित शामिल हैं: परोपकार—क्योंकि मूर्तिपूजक भी दयालु होते हैं; प्रेम—क्योंकि मूक जानवर भी अक्सर एक-दूसरे को खोने पर आँसू बहाते हैं; विश्वास – क्योंकि हम सभी इसे अपने भीतर उत्पन्न करते हैं; आशा – क्योंकि चाहे हम दें या प्राप्त करें, बोएं या नौका चलाएं, हम ऐसा धन प्राप्त करने की आशा में करते हैं। अब, यदि—जैसा कि प्रदर्शित किया गया है—प्रेम और सद्गुण स्वाभाविक रूप से हमारे स्वभाव में निहित हैं, और प्रेम ही कानून की पूर्ति है, तो यह स्पष्ट है कि सद्गुण हमारे स्वभाव से अपरिचित नहीं हैं। और जो लोग अपनी कमजोरी के आधार पर सद्गुण का अभ्यास करने में अपनी विफलता का बहाना बनाते हैं, उन्हें लज्जित होना चाहिए।

४४. परन्तु जहाँ तक पवित्रता, संयम, नम्रता, प्रार्थना, जागृति, उपवास और निरन्तर पश्चाताप का प्रश्न है, ये सद्गुण स्वभाव से परे हैं। इनमें से कुछ हमें लोगों ने अपने उदाहरण द्वारा सिखाए; स्वर्गदूतों ने दूसरों के लिए आदर्श का काम किया; और अन्य लोगों के लिए, स्वयं वचन-स्वरूप परमेश्वर शिक्षक और दाता हैं।

४५. कभी-कभी ऐसा होता है कि जब हम प्रार्थना में लगे होते हैं, तो कोई ऐसा परोपकारी कार्य उत्पन्न हो जाता है जिसमें कोई देरी नहीं की जा सकती। ऐसे मामले में, प्रेम के कार्य को प्राथमिकता देनी चाहिए। क्योंकि प्रेम प्रार्थना से बड़ा है, क्योंकि प्रार्थना एक विशेष सद्गुण है, जबकि प्रेम सभी सद्गुणों को समाहित करता है।

---

[77] ऑप्टिना अनुवाद में, निम्नलिखित जोड़ दिखाई देता है: 'और जैसे-जैसे भौतिकता का नाश होता है और आत्मा शुद्ध होती है, वासनाएँ भी पीछे हट जाती हैं, जब तक कि कोई व्यक्ति स्वयं एक भौतिकवादी जीवन शैली और आलस्य के माध्यम से उन्हें वापस न खींच ले'।

४६. यह असामान्य नहीं है कि ईश्वर, अपनी दिव्य योजना के निर्णय से, आध्यात्मिक लोगों में कुछ बहुत ही मामूली प्रवृत्तियाँ छोड़ देते हैं, ताकि इन मामूली, लगभग पापरहित कमजोरियों को देखकर, वे स्वयं पर बहुत दोष लगाएँ, और इस प्रकार विनम्रता की अक्षय संपत्ति प्राप्त करें।

४७. जिसने आरंभ से ही आज्ञाकारिता में जीवन नहीं जिया, वह विनम्रता प्राप्त नहीं कर सकता, क्योंकि जिसने भी स्वयं को कोई कला सिखाई है, वह अपने बारे में बड़ा सोचने लगता है।

48. धर्मगुरु सक्रिय जीवन को दो मुख्य गुणों तक सीमित करते हैं: उपवास और आज्ञाकारिता। और यह सही भी है; क्योंकि पहला कामुकता का विनाशक है, जबकि दूसरा इस विनाश की रक्षा नम्रता से करता है। और रोने का दोहरा प्रभाव होता है, क्योंकि एक ओर यह पाप को नष्ट करता है, और दूसरी ओर यह नम्रता को जन्म देता है।

४९. धर्मपरायण लोगों का लक्षण है कि वे हर पूछने वाले को दें; जो नहीं पूछते उन्हें भी देना सबसे धर्मपरायण लोगों का कर्म है; और जिसने लिया है उससे वापस न लेना, विशेषकर जब वह वापस दे सकता है, यह केवल निर्लिप्त लोगों का गुण है।

50. सभी भावों और सद्गुणों के संबंध में, हमें लगातार यह परखना चाहिए कि हम कहाँ खड़े हैं – शुरुआत में, बीच में, या अंत में।

51. राक्षसों के हम पर सभी हमले निम्नलिखित तीन कारणों से होते हैं: आत्म-संतुष्टि, अहंकार और राक्षसों की ईर्ष्या।

५२. ऐसे विचारों के विरुद्ध प्रार्थना करना एक बात है; उनका विरोध करना दूसरी; और उन पर ध्यान न देकर उनसे ऊपर उठना (या उन पर अधिकार करना) एक और बात है। इनमें से मध्य वाला (यानी जो उनका खंडन करने में सक्षम है) अक्सर अपनी तैयारी की कमी के कारण पहले तरीके का सहारा लेता है; लेकिन पहला अभी दूसरे तरीके से अपने शत्रुओं को पीछे नहीं हटा पाता है; जबकि तीसरा अंततःअपने शत्रुओं का उपहास उड़ाता है।

53. जैसे तीव्र गंध-बोध वाले लोग इत्र की महक का पता लगा सकते हैं, भले ही कोई उसे गुप्त रूप से अपने साथ रखे: उसी प्रकार एक शुद्ध आत्मा दूसरों में उस सुगंध को पहचानती है जो उसे स्वयं ईश्वर से प्राप्त हुई है – और उस बदबू को भी, जिससे वह पूरी तरह से मुक्त है, भले ही दूसरों को इसका एहसास न हो।

54. यद्यपि सभी निर्लिप्त नहीं हो सकते, फिर भी सभी को बचाया जा सकता है।

55. उन परायों को आप पर हावी न होने दें, जो आपको ईश्वर की अकथनीय लीला और मानवता के प्रति ईश्वर की कृपा पर प्रश्न उठाने के लिए उकसाते हैं – और जो गुप्त रूप से यह सुझाव देते हैं कि प्रभु कुछ लोगों पर दूसरों की अपेक्षा अधिक कृपा करते हैं। ये अहंकार की संतान हैं – और वे स्वयं को ऐसा स्वीकार करते भी हैं।

56. कुछ लोगों ने कहा है कि कुछ राक्षस दूसरों का विरोध करते हैं; लेकिन मैंने यह जाना है कि वे सभी हमारा विनाश चाहते हैं।

57. हर आध्यात्मिक प्रयास, चाहे वह दृश्यमान हो या मानसिक, उससे पहले व्यक्ति की अपनी स्वतंत्र इच्छा और सबसे सच्ची इच्छा होती है, जो ईश्वर की सहायता से साकार होती है। क्योंकि यदि पूर्व (स्वतंत्र इच्छा और इच्छा) पहले नहीं आते, तो बाद (ईश्वर की सहायता) का अनुसरण नहीं होगा।

५८. उपदेशक कहता है, 'स्वर्ग के नीचे हर बात का एक समय होता है।' अत; हम घमंडी उत्साह से धोखा न खाएं, जो हमें उचित समय पर आने वाली चीज़ को समय से पहले खोजने के लिए प्रेरित करता है। बीजाई के समय, हम फसल से संबंधित चीज़ों की तलाश न करें; क्योंकि हमारे परिश्रम को बोने का एक समय है, और अनुग्रह के अनुपम उपहारों को काटने का एक समय है। अन्यथा, उचित समय पर भी, हमें वह नहीं मिलेगा जो उस समय के लिए उपयुक्त और उचित है।

५९. कुछ लोगों को ईश्वर की अकल्पनीय व्यवस्था द्वारा, उनके श्रम से पहले अनुग्रह के वरदान प्राप्त हुए हैं; कुछ को उनके श्रम के बीच में; कुछ को उनके श्रम के बाद; और कुछ को तो मृत्यु के समय भी। यह देखने के लिए एक परीक्षा है कि उनमें से कौन बाकी से अधिक विनम्र है।

60. एक निराशा होती है जो अनेक पापों और अंतरात्मा के बोझ से उत्पन्न होती है; और एक निराशा होती है जो घमंड और अहंकार से उत्पन्न होती है, जब पाप में पड़े हुए लोग सोचते हैं कि वे (बख्शे जाने के) योग्य भी नहीं थे। – पहली का इलाज पाप से परहेज़ और अच्छी आशा से होता है; दूसरी का इलाज नम्रता और किसी को भी परख न करने से होता है।

६१. अपने सभी कार्यों और कर्मों में, चाहे वे बाहरी हों या आंतरिक, यह जांचें कि क्या वे वास्तव में ईश्वर को प्रसन्न करने के लिए किए गए हैं। इस बात का संकेत कि हमारे कर्म ईश्वर को प्रिय हैं, यह है: आरंभिक अवस्था

वालों के लिए विनम्रता में प्रगति; मध्यवर्ती अवस्था वालों के लिए आंतरिक संघर्ष का विराम; और सिद्ध लोगों के लिए दिव्य प्रकाश का गुणन और प्रचुरता।

62. जब आकाश बादलों से मुक्त हो जाता है, तो सूर्य अपनी पूरी शोभा के साथ प्रकट होता है; उसी प्रकार आत्मा को पापों की क्षमा प्राप्त होने और वासनापूर्ण आदतों (और विचारों) से मुक्त होने पर, निस्संदेह दिव्य प्रकाश का दर्शन होता है।

63. कुछ लोग चमत्कारों और अन्य दृश्यमान आध्यात्मिक वरदानों में सबसे बड़ी प्रसन्नता पाते हैं, यह न जानते हुए कि कई बहुत बेहतर वरदान हैं जो छिपे हुए हैं और इसलिए पाप में गिरने से सुरक्षित हैं।

64. जो व्यक्ति वासनाओं से पूरी तरह शुद्ध हो चुका है, वह अपने पड़ोसी की आत्मा को देखता है—उसके वास्तविक सार को नहीं, बल्कि उसकी संरचना, भावनाओं और प्रवृत्तियों को; जबकि जो व्यक्ति अभी भी प्रगति कर रहा है, वह आत्मा का मूल्यांकन उसके शारीरिक कर्मों से करता है।

65. जो आत्मा से दुर्बल हैं, उन्हें दैहिक रोगों, विपत्तियों और बाहरी प्रलोभनों के द्वारा प्रभु के आगमन और उनकी ओर उनकी दया को पहचानना चाहिए; परन्तु सिद्धजन, अपने भीतर पवित्र आत्मा की उपस्थिति और अपनी वरदानों में वृद्धि के द्वारा परमेश्वर के आगमन को पहचानते हैं।

६६. दुष्ट आत्माओं में एक राक्षस है—एक अग्रदूत—जो, जैसे ही हम जागते हैं, हमें लुभाने के लिए आता है और हमारे सबसे पहले के विचारों को कलंकित करता है। अपने दिन की शुरुआत प्रभु को समर्पित करें; क्योंकि आप जिन्हें सबसे पहले देते हैं, वे उसी के हो जाएंगे। एक बहुत ही कुशल चिकित्सक ने एक बार मुझसे निम्नलिखित शब्द कहे, जो ध्यान देने योग्य हैं: 'सुबह की शुरुआत से ही मैं अपने पूरे दिन का मार्ग जान जाता हूँ'।

67. हमारे ऊपर आने वाली परीक्षाओं में, राक्षस हमें कुछ अविवेकपूर्ण कहने या करने के लिए प्रेरित करते हैं; और जब वे हम पर विजय प्राप्त नहीं कर पाते, तो वे चुपचाप आकर ईश्वर के प्रति गर्वपूर्ण कृतज्ञता की भावना डालते हैं।

68. जिन्होंने दिव्य विषयों में ज्ञान की खोज की है, वे मृत्यु के बाद स्वर्ग में जाते हैं, जबकि जो सांसारिक चीजों से चिपके रहते हैं, वे पाताल लोक में उतरते हैं; क्योंकि अपने शरीर से अलग हुई आत्माओं के लिए कोई तीसरा, मध्यवर्ती स्थान नहीं है।

69. जैसे एक प्यासा हरिण पानी के लिए तरसता है, वैसे ही संन्यासियों को ईश्वर की इच्छा को समझने के लिए तरसना चाहिए; और केवल इस इच्छा के लिए ही नहीं, बल्कि तब भी जब हमारी अपनी इच्छा उसमें घुल-मिल जाती है, और जब एक विरोधी शक्ति काम कर रही होती है। उन्हें यह भी विचार करना चाहिए कि कौन से कर्म बिना किसी देरी और बिना किसी हिचकिचाहट के किए जाने चाहिए, और कौन से बिना जल्दबाजी और विवेक के साथ किए जाने चाहिए।

७०. जो कोई भी प्रभु की इच्छा जानना चाहता है, उसे पहले अपने भीतर की अपनी इच्छा को मार डालना चाहिए; और, विश्वास और सच्ची सादगी के साथ ईश्वर से प्रार्थना करने के बाद, उन्हें विनम्र हृदय से और मन में किसी भी संदेह के बिना अपने पितरों और भाइयों से परामर्श करना चाहिए; और उन्हें उनके परामर्श को इस प्रकार स्वीकार करना चाहिए जैसे कि वह ईश्वर के मुख से निकला हो, भले ही वह उनके अपने तर्क के विपरीत हो। – जो इस नियम का पालन बिना किसी संदेह के करते हैं, वे महान विनम्रता से भर जाते हैं। – और ईश्वर उन्हें भटकने नहीं देते।

७१. कुछ लोगों ने इस प्रकार ईश्वर की इच्छा को जाना: उन्होंने अपने विचारों को आत्मा की किसी भी इच्छा की ओर झुकाव से अलग कर लिया—अर्थात्, उस ओर से भी जो किसी कार्य के लिए प्रेरित करती है और उस ओर से भी जो उसका विरोध करती है; और, अपने मन को उसकी अपनी इच्छा से मुक्त करके, उन्होंने उसे कुछ निश्चित दिनों के लिए प्रबल प्रार्थना के साथ प्रभु के समक्ष प्रस्तुत किया; और इस प्रकार उन्होंने उसकी इच्छा का ज्ञान प्राप्त किया—या तो इसलिए कि उनके मन के भीतर के मन ने उन्हें मानसिक रूप से इसका प्रकटीकरण किया, या इसलिए कि उन विचारों में से एक उनके आत्मा से पूरी तरह से गायब हो गया।

७२. अन्य लोगों ने, अपने प्रयास में आई दुखों और कठिनाइयों को देखकर, यह निष्कर्ष निकाला कि यह दैवी इच्छा के अनुसार था। इसके विपरीत, अन्य लोगों ने अपने प्रयास में मिली अप्रत्याशित सहायता को महसूस करके, यह अनुभव किया कि यह ईश्वर को प्रसन्न करने वाला था, और अपने आप से कहा: 'ईश्वर केवल उन लोगों की सहायता करते हैं जो अच्छा चुनते हैं।'

73. जिसने दिव्य प्रबोधन द्वारा स्वयं में ईश्वर को प्राप्त किया है, वह शीघ्र ही ईश्वर की पवित्र इच्छा से अवगत हो जाता है, दोनों ही मामलों में—जहाँ त्वरित कार्रवाई आवश्यक है और जहाँ विलंब किया जा सकता है—द्वितीय माध्यम (अर्थात् अनुकूल परिस्थितियों) द्वारा।

74. ईश्वर धर्मपरायण है, और जो लोग विनम्रतापूर्वक उसके द्वार पर दस्तक देते हैं, उनके प्रति वह अपनी दया के द्वार बंद नहीं करेगा।

75. सभी परिस्थितियों में हमें अपने इरादों की जांच करनी चाहिए: क्योंकि प्रभु हमारे सभी कर्मों में उन पर दृष्टि रखते हैं। जो कुछ भी पक्षपात और सभी अशुद्धियों से मुक्त है, और केवल ईश्वर के लिए किया जाता है, न कि किसी अन्य कारण से, वह हमारे पक्ष में लिखा जाएगा, भले ही वह पूरी तरह से अच्छा न हो।

७६. ऐसे साहसी आत्माएँ हैं जो ईश्वर के प्रति गहरे प्रेम और हृदय की विनम्रता के कारण, अपनी क्षमता से परे के कार्यों का प्रयास करती हैं; लेकिन ऐसे घमंडी हृदय भी हैं जो (हमारे शत्रुओं के उकसावे पर) उन्हीं कार्यों में हाथ डालते हैं। क्योंकि हमारे दुश्मन अक्सर जानबूझकर हमें हमारी क्षमता से परे के कार्य करने के लिए उकसाते हैं, ताकि उनमें असफल होकर, हम निराशा में पड़ जाएँ और अपनी ताकत के मुताबिक किए जाने वाले कार्यों को भी छोड़ दें - और इस तरह हम अपने दुश्मनों के लिए उपहास का पात्र बन जाएँ।

७७. मैंने उन लोगों को देखा है जो आत्मा और शरीर से कमज़ोर थे, जिन्होंने अपने कई पापों के कारण, अपनी क्षमता से परे की उपलब्धियाँ हासिल करने का प्रयास किया, लेकिन वे उन्हें सहन नहीं कर सके। मैंने उनसे कहा कि ईश्वर पश्चाताप का मूल्यांकन किसी के कर्मों के पैमाने से नहीं, बल्कि किसी की विनम्रता के पैमाने से करते हैं (जिसके साथ रोना, पश्चाताप और पाप से मुंह मोड़ना शामिल है)।

78. कभी-कभी किसी की परवरिश चरम बुराइयों का कारण होती है, और कभी-कभी बुरी संगत; लेकिन अक्सर किसी की अपनी आत्मा का भ्रष्टाचार ही उसके विनाश के लिए पर्याप्त होता है। जिसने भी खुद को पहले दो बुराइयों से मुक्त कर लिया है, वह शायद खुद को तीसरी से भी मुक्त कर सकता है; लेकिन जिस पर तीसरी हावी है, वह किसी भी स्थान के लिए अयोग्य है। स्वर्ग से अधिक सुरक्षित कोई स्थान नहीं है; फिर भी वहाँ भी कुछ लोग अपनी भ्रष्ट इच्छा के कारण नष्ट हो गए हैं।

७९. अशुद्ध आत्माओं में कुछ ऐसी भी हैं जो दूसरों से अधिक चालाक होती हैं। वे केवल हमें पाप में ले जाकर ही संतुष्ट नहीं होतीं, बल्कि हमें दूसरों को भी बुराई में साथी बनाने के लिए उकसाती हैं, ताकि हम पर सबसे भयानक यातनाएँ लाई जा सकें। – मैंने एक आदमी को देखा जिसने अपनी पापी आदत दूसरे को सिखा दी; बाद में, होश में आने पर, उसने पश्चाताप करना शुरू कर दिया और पाप से मुंह मोड़ लिया; लेकिन चूंकि जिसको उसने सिखाया था वह पाप करना बंद नहीं हुआ, इसलिए उसका पश्चाताप, वास्तव में, सच्चा नहीं था।

८०. आध्यात्मिक पिताओं के कर्मों और गुणों के वृत्तांतों को सुनना मन और आत्मा में उत्साह जगाता है; और उनकी शिक्षाओं को सुनना अंधकार में एक दीपक, भटके हुए को सही रास्ते पर वापस लाना, और अंधों के लिए ज्ञान का प्रकाश है।

८१. जो कोई भी प्रभु को एक पवित्र शरीर और एक शुद्ध हृदय अर्पित करना चाहता है, उसे क्रोध-नियंत्रित और संयमित जीवन जीना चाहिए, क्योंकि इन दो गुणों के बिना हमारा सारा श्रम व्यर्थ होगा।

82. गुणों में बेटियाँ हैं, और गुणों की माताएँ हैं। बुद्धिमान व्यक्ति सबसे बढ़कर माताओं को प्राप्त करने का प्रयास करता है। ईश्वर स्वयं, अपने ही कार्य के माध्यम से, माताओं को उपदेश देते हैं, जबकि बेटियों को उपदेश देने के लिए कई शिक्षक होते हैं।

83. हमें सावधान रहना चाहिए कि (भोजन में) आनंद की कमी की भरपाई नींद की अधिकता से न करें, और इसके विपरीत भी; क्योंकि इस प्रकार का आचरण मूर्खतापूर्ण है।

84. अशुद्ध आत्माओं में वे भी हैं जो हमारे आध्यात्मिक जीवन की शुरुआत में हमारे लिए दिव्य शास्त्रों की व्याख्या करते हैं। वे आमतौर पर यह काम व्यर्थ लोगों के हृदयों में करते हैं, और धर्मनिरपेक्ष विज्ञानों में प्रशिक्षित लोगों में तो और भी अधिक करते हैं, ताकि धीरे-धीरे उन्हें धोखा देकर, वे अंततः उन्हें विधर्म और ईश्वरनिंदा में डुबो सकें। हम इस दैवीय 'धर्मशास्त्र'—या यूँ कहें, 'ईश्वर-विरोधी संघर्ष'—को उन व्याख्याओं के दौरान आत्मा में उत्पन्न होने वाले भ्रम और अव्यवस्थित, अनियंत्रित आनंद से पहचान सकते हैं।

८५. हम सदाचार और प्रेम में प्रगति करना कभी बंद नहीं करेंगे, न तो इस युग में और न ही आने वाले युग में, हमेशा प्रकाश (ऊपर से प्रबुद्धता) के माध्यम से समझ का नया प्रकाश प्राप्त करते हुए। और स्वर्गदूत, ये बुद्धिमान प्राणी, प्रगति के बिना नहीं रहते, बल्कि हमेशा महिमा पर महिमा और समझ पर समझ प्राप्त करते हैं।

86. उन लोगों के कठोर आलोचक न बनें जो वाणी से महान गुणों की शिक्षा देते हैं, जबकि अच्छे कर्मों में सुस्त हैं; क्योंकि कर्म की कमी अक्सर ऐसी शिक्षा के लाभ से पूरी हो जाती है। हम सभी ने समान रूप से सब कुछ प्राप्त नहीं किया है: कुछ लोग कर्म की तुलना में वाणी में अधिक निपुण हैं, जबकि अन्य में, इसके विपरीत, कर्म वाणी से अधिक शक्तिशाली है।

८७. ईश्वर बुराई का स्रष्टा नहीं है; अतःजो लोग कहते हैं कि कुछ वासनाएँ आत्मा के लिए स्वाभाविक हैं, वे भ्रमित हैं, यह महसूस किए बिना कि हमने स्वयं अपनी स्वाभाविक प्रवृत्तियों को बुराई के लिए वासनाओं में बदल दिया है। उदाहरण के लिए, स्वभाव से हमारे भीतर संतानोत्पत्ति के लिए बीज मौजूद है, फिर भी हम इसका उपयोग अवैध कामुकता के लिए करते हैं; प्रकृति से हमारे भीतर क्रोध भी है, जो उस प्राचीन सर्प के विरुद्ध निर्देशित है, फिर भी हम इसका उपयोग अपने पड़ोसी के विरुद्ध करते हैं; हमें उत्साह दिया गया है ताकि हम सद्गुणों के लिए उत्साही हों, फिर भी हम दुर्गुणों के लिए उत्साही हैं... और इसी तरह।

88. एक आत्मा जो सुस्त नहीं है, राक्षसों को स्वयं के विरुद्ध युद्ध के लिए उकसाती है; और जैसे-जैसे युद्ध बढ़ते हैं, वैसे-वैसे मुकुट भी बढ़ते हैं। जो अपने विरोधियों से घायल नहीं होता, उसे कोई मुकुट नहीं मिलेगा; लेकिन जो उस पर आने वाले हमलों के सामने हतोत्साहित नहीं होता, उसकी देवदूत एक पराक्रमी योद्धा के रूप में प्रशंसा करेंगे।

८९. अपने भीतर की भावुक प्रवृत्तियों के प्रकट होने पर लगातार गौर करें; और आप देखेंगे कि आपके भीतर कई ऐसे जुनून हैं जिन्हें हम, आध्यात्मिक बीमारियों से ग्रस्त होने के कारण, पहचान नहीं पाते—या तो हमारी कमजोरी के कारण या किसी गहरी जड़ें जमा चुकी पापी आदत के कारण।

९०. राक्षस अक्सर हमें सबसे आसान और सबसे लाभकारी कार्यों से भटकाते हैं, और हमें सबसे कठिन कार्यों को करने के लिए उकसाते हैं।

91. ईश्वर की इच्छानुसार संगठित एक समुदाय एक आध्यात्मिक धुलाईघर है, जो आत्मा के हर दाग, हर कठोरता और हर कुरूपता को धो देता है। दूसरी ओर, आश्रम को उन लोगों के लिए एक रंगाईघर कहा जा सकता है, जिन्होंने पहले वासना, द्वेष और चिड़चिड़ापन से स्वयं को शुद्ध किया है, और केवल तब ही मौन में प्रविष्ट हुए हैं।

९२. व्यभिचार, क्रोध, अतिभक्षण, निराशा और आलस्य के राक्षस हमारे मन को फुलाने की शक्ति नहीं रखते (बल्कि उन्हें विनम्र बनाते हैं); जबकि लोभ, पद-प्रेम, वाचालता और कई अन्य राक्षस आमतौर पर स्वयं पाप में गर्व का बुराई जोड़ देते हैं; और निर्णय का दानव इस संबंध में उनसे मिलता-जुलता है।

93. यदि कोई भिक्षु, सांसारिक लोगों से मिलने या उन्हें अपने घर में आमंत्रित करने के बाद, उनसे अलग होने के एक घंटे या एक दिन बाद, अपनी प्रगति में बाधा डालने वाले जाल से मुक्त होने पर प्रसन्न होने के बजाय, दुख के तीर से आहत हो जाता है, तो वह अहंकार या वासना की भावनाओं का खिलौना बन जाता है।

94. हमें बहुत सावधानी से विचार करना चाहिए कि हमें अपने जुनून के वश में होने वाली वस्तुओं के खिलाफ कब और किन परिस्थितियों में दृढ़ता से खड़ा होना चाहिए और उनसे लड़ना चाहिए, और कब पीछे हटना चाहिए; क्योंकि कभी-कभी, कमजोरी के कारण, भागना बेहतर होता है, ताकि हम आध्यात्मिक रूप से न मर जाएँ।

९५. जैसे शांत मौसम में हवाएँ केवल समुद्र की सतह को ही परेशान करती हैं, जबकि अन्य समय में वे उसकी गहराइयों तक को हिला देती हैं, वैसे ही हमें अंधकार की हवाओं के संबंध में भी यही निष्कर्ष निकालना चाहिए; क्योंकि जो लोग वासनाओं में डूबे होते हैं, वे उनके हृदय की गहराइयों तक को उथल-पुथल में डाल देते हैं, जबकि उन लोगों में जिन्होंने उन पर विजय प्राप्त की है, वे केवल मन की सतह को ही हिलाते हैं; अत; उत्तर वाले लोग अपने भीतर अपनी सामान्य शांति, जो अछूती रही है, को शीघ्रता से पुनःस्थापित कर लेते हैं।

९६. संयम स्वास्थ्य की जननी है; और संयम की जननी मृत्यु का विचार तथा हमारे प्रभु, स्वामी और ईश्वर द्वारा चखा गया सिरके में मिला हुआ पित्त का अटूट स्मरण है।

९७. मौन पवित्रता का कारण और सहायक है; उपवास शरीर की कामनाओं को शांत करता है; और हृदय का पश्चाताप दुष्ट और कामुक विचारों का शत्रु है।

98. जैसे एक साँप संकीर्ण मार्ग से रेंगकर बाहर निकले बिना अपनी पुरानी खाल नहीं उतार सकता, वैसे ही हम भी उपवास और आत्म-त्याग के संकीर्ण और तंग मार्ग पर चलने के बिना अपनी पुरानी बुरी आदतों, आत्मा के भ्रष्टाचार, और पुराने मनुष्य के वस्त्र को नहीं उतार सकते।

99. जैसे पंखों के नीचे गर्माए अंडे जीवित हो उठते हैं, वैसे ही आध्यात्मिक पिता से छिपाए गए विचार कर्मों में बदल जाते हैं।

100. जैसे अच्छे घोड़े, जब एक साथ दौड़ते हैं, तो एक-दूसरे को आगे बढ़ाते हैं, वैसे ही अच्छे भाइयों के सामूहिक जीवन में, एक दूसरे को पवित्र उत्साह के लिए प्रेरित करता है।

101. जैसे बादल सूर्य को ढक लेते हैं, वैसे ही दुष्ट विचार मन को अँधकारमय कर नष्ट कर देते हैं।

102. जैसे गरीब, राजा के खजाने को देखकर, अपनी गरीबी को और भी अधिक महसूस करते हैं, वैसे ही आत्मा भी, पवित्र पिताओं के महान सद्गुणों के वृत्तांतों को पढ़कर, अनैच्छिक रूप से अपने सोचने के तरीके में और भी अधिक विनम्र हो जाती है।

103. जैसे इत्र उठाने वाला अपनी इच्छा के विरुद्ध भी सुगंध फैलाता है, वैसे ही जो अपने भीतर प्रभु की आत्मा को धारण करता है, वह अपने शब्दों और अपनी नम्रता से पहचाना जाता है।

104. जैसे चोर उस स्थान में जल्दबाजी से प्रवेश नहीं करते जहाँ वे राजा के हथियार खुलेआम पड़े देखते हैं, वैसे ही मन के चोर भी उस व्यक्ति से चोरी करने में हिचकिचाते हैं जिसने प्रार्थना को अपने हृदय से जोड़कर वहाँ स्थापित कर लिया है।

105. जैसे एक कुशल नाविक के साथ जहाज, ईश्वर की कृपा से, सुरक्षित रूप से बंदरगाह में प्रवेश करता है, वैसे ही आत्मा, एक अच्छे चरवाहे के होने पर, आराम से स्वर्ग में प्रवेश करती है, भले ही उसने कभी कई पाप किए हों।

106. जैसे कोई मार्गदर्शक के बिना, चाहे वह कितना भी चतुर क्यों न हो, अपने रास्ते से आसानी से भटक जाता है, वैसे ही जो अपने दम पर संन्यास के मार्ग पर चलता है, वह आसानी से नष्ट हो जाता है, भले ही वह इस दुनिया का सारा ज्ञान जानता हो।

107. जो शरीर से कमज़ोर है और उसने कई गंभीर पाप किए हैं, उसे नम्रता और उससे संबंधित सद्गुणों के मार्ग पर चलना चाहिए; क्योंकि उसे कोई दूसरा मोक्ष नहीं मिलेगा।

108. अपने किए गए अन्याय को पहचानना उससे मुँह मोड़ने की ओर ले जाता है; और उससे मुँह मोड़ना ही पश्चाताप की शुरुआत है। पश्चाताप की शुरुआत ही मोक्ष की शुरुआत है, जबकि मोक्ष की ओर बढ़ने की शुरुआत एक अच्छा संकल्प (ईश्वर को प्रसन्न करने का) है। यह अच्छा संकल्प अच्छे कर्मों को जन्म देता है, और अच्छे कर्मों की शुरुआत ही सद्गुण है। सद्गुणों की शुरुआत उनका सार है, और सद्गुण का सार कर्म है। सद्गुण का निर्माण स्थिरता (विचार और उसके प्रति उत्साह में) है, जबकि निरंतर विचार (और उत्साह) का फल और परिणाम आदत है। आदत का फल अच्छाई द्वारा आत्मा का शुद्धिकरण है; और आत्मा का यह शुद्धिकरण भय की जननी है। भय स्वर्गीय और सांसारिक, दोनों आज्ञाओं के पालन को जन्म देता है; और आज्ञाओं का पालन प्रेम का एक संकेत है। प्रेम की शुरुआत नम्रता की संपदा है; नम्रता की संपदा प्रेम की परिपूर्णता है; और फिर उन लोगों में ईश्वर का पूर्ण वास होता है जो निष्काम भाव से हृदय में शुद्ध हो गए हैं; *'क्योंकि वे परमेश्वर को देखेंगे'* (मत्ती 5:8)।

४. आठ प्रमुख जुनूनों के विरुद्ध संघर्ष पर

1. अतिभक्षण के विरुद्ध संघर्ष

1. यह अद्भुत होगा यदि कोई भी, कब्र में उतरने से पहले, पेट के आक्रमणों से मुक्त हो जाए।

2. अतिभक्षण के जुनून में, पेट, तृप्त होने पर भी, चिल्लाता है: 'मुझे भूख लगी है!' और जब अत्यधिक भरकर फूल जाता है, तो चिल्लाता है: 'मैं भूखा मर रहा हूँ।' यह जुनून, जब आँखों के सामने स्वादिष्ट व्यंजन होते हैं, तो मनुष्य को एक ही बार में सब कुछ निगल जाने के लिए उकसाता है।

3. जो सिंह को बार-बार सहलाता है, वह उसे पालतू बना लेता है; पर जो शरीर को खुश करता है, वह केवल उसकी उग्रता को बढ़ाता है।

४. पेट का दास भोज को स्वादिष्ट व्यंजनों से सम्मानित करने के लिए ढूंढता है; लेकिन ईश्वर का सेवक इस बात पर विचार करता है कि वह किन उपहारों से स्वयं को समृद्ध कर सकता है।

5. जब कोई अतिथि आता है, तो पेटू अपनी अतृप्त भूख से प्रेरित होकर आतिथ्य का दिखावा करता है; और वह सोचता है कि आगंतुक को आराम देने का अवसर, उसके लिए भी, अपनी मनमर्जी करने की एक अनुमति है। वह शराब पीने के बहाने उस मुलाकात को लेता है; और सद्गुण को छिपाने के बहाने, वह वासना का दास बन जाता है।

6. अक्सर अहंकार का टकराव लालच से होता है: और ये दो जुनून एक दूसरे के खिलाफ युद्ध छेड़ते हैं, जैसे एक खरीदे हुए दास के लिए। लालच व्यक्ति को भोग करने के लिए मजबूर करता है, जबकि अहंकार व्यक्ति को अपनी सद्गुण दिखाने के लिए प्रेरित करता है; लेकिन एक समझदार व्यक्ति इन दोनों खाइयों से बचता है; और जानता है कि एक जुनून का मुकाबला दूसरे से करने के लिए अनुकूल क्षण का उपयोग कैसे करना है।

7. यदि देह अभी भी उग्र है, तो उसे हर समय और हर जगह संयम द्वारा वश में करना चाहिए। जब यह शांत हो जाए (जो, वैसे भी, मुझे अपनी मृत्यु से पहले देखने की उम्मीद नहीं है), तो हम दूसरों से अपना संयम छिपा सकते हैं।

8. यदि आपके आध्यात्मिक पिता आपको, एक युवक के रूप में, भोजों में शराब पीने की अनुमति देते हैं, तो देखें कि वह स्वयं किस प्रकार के व्यक्ति हैं: यदि वह ईश्वर-भयभीत हैं, तो आप थोड़ी-बहुत पी सकते हैं; लेकिन यदि वह

पूरी तरह से विवेकी नहीं हैं, तो आपके लिए, उनके आशीर्वाद की परवाह किए बिना, संयम बनाए रखना बेहतर है, विशेष रूप से जब तक आप अभी भी कामुक वासना की आग से संघर्ष कर रहे हैं।

९. पेट को वश में करने में, हमें समझदारी से धीरे-धीरे आगे बढ़ना चाहिए: पहले हम वजन बढ़ाने वाले भोजन को छोड़ेंगे, फिर उस भोजन को जो भूख बढ़ाता है, और बाद में उस भोजन को जो मीठा और मनभावन है। अपने पेट को मध्यम और पचने में आसान भोजन दो, ताकि मध्यम तृप्ति से तुम उसके लालच से मुक्त हो जाओ, और भोजन के शीघ्र पचन से कामोत्तेजना से ऐसे छुटकारा पाओ जैसे किसी कोड़े से।

10. जो पाप में नहीं पड़े हैं, उनके लिए विशेष संयम केवल तब आवश्यक है जब कामोत्तेजना जागृत होती है; लेकिन जो पाप में पड़ चुके हैं, उनके लिए यह मृत्यु तक भी आवश्यक है; अपने अंत तक, उन्हें अपने शरीरों को कोई आराम न दें और बिना समझौते के उनके विरुद्ध लड़ें। पहले वालों को केवल मन का उचित क्रम बनाए रखना चाहिए; जबकि बाद वालों को आत्मा के विलाप और (भूख और प्यास से) क्षीण होने के द्वारा ईश्वर को भी प्रसन्न करना चाहिए।

11. आने वाले अग्नि-परीक्षण पर ध्यान लगाकर हम पेट को वश में करें। पेट के आगे झुककर, कुछ लोगों ने (कामवासना से उत्पन्न उत्तेजना के कारण) अंततःअपने ही अंग काट लिए हैं - और दोहरी मृत्यु पाई है। ध्यान से देखो और तुम पाओगे कि अत्यधिक भोग ही हमारे साथ होने वाली (कामवासना के सागर में) डूबने की एकमात्र वजह है।

12. जो उपवास करता है, उसका मन संयम के साथ प्रार्थना करता है, जबकि असंयमी का मन अशुद्ध कल्पनाओं से भरा होता है। पेट के तृप्त होने से आँसुओं का स्रोत सूख जाता है, जबकि संयम से सूखा हुआ पेट आँसू लाता है।

13. जो अपना पेट पूजता है, और साथ ही व्यभिचार की आत्मा पर विजय पाने का प्रयास करता है, वह उस व्यक्ति के समान है जो तेल से आग बुझाता है।

14. जब पेट नियंत्रित होता है, तो हृदय विनम्र होता है; परन्तु यदि वह भोजन से तृप्त हो जाए, तो हृदय अपने विचारों में गर्वित हो उठता है।

१५. आत्म-संयम द्वारा अपने पेट को नियंत्रित करो, और इस प्रकार तुम अपने मुँह को चुप करा दोगे; क्योंकि जीभ अपनी शक्ति प्रचुर भोजन से प्राप्त करती है।

16. जो अपना पेट भरता है, वह अपनी आंतों को बढ़ाता है; परन्तु जिसने आत्म-संयम से भूखा रहकर उन्हें सिकोड़ लिया है, वे धीरे-धीरे सिकुड़ जाती हैं; और एक बार सिकुड़ जाने पर, वे फिर अधिक भोजन की मांग या स्वीकार नहीं करतीं।

17. जान लो कि अक्सर शैतान पेट पर बैठ जाता है और मनुष्य को तृप्त नहीं होने देता, भले ही वह मिस्र का सारा भोजन खा जाए और नील नदी का सारा पानी पी जाए।

18. यदि आपने मसीह से संकीर्ण और तंग मार्ग पर चलने का वचन दिया है, तो अपने पेट पर संयम रखें। अतिभक्षण का *'चौड़ा मार्ग'* विशाल है, *जो* विलासिता के माध्यम से *'विनाश की ओर ले जाता है', 'और कई लोग उस पर चलते हैं'*; लेकिन संयम का *'संकीर्ण द्वार और कठिन मार्ग', जो* पवित्रता के *'जीवन की ओर ले जाता है', 'और कुछ ही लोग इससे प्रवेश करते हैं'* (मत्ती 7:14)।

19. जब आप भोजन से लदी मेज़ पर बैठे हों, तो अपने मन की आँखों के सामने मृत्यु और न्याय की कल्पना करें; क्योंकि इस तरह भी आप, कम से कम कुछ हद तक, अतिभक्षण की लालसा को रोक सकते हैं। जब आप शराब पीएँ, तो हमेशा अपने प्रभु के सिरके और पित्त को याद रखें; और इस प्रकार, आप या तो संयम की सीमाओं के भीतर रहेंगे, या कम से कम, होश में आने पर, आप अपने विचारों को विनम्र बनाएँगे।

20. संन्यासी समुदायों में सभी पतन और व्रत-भंग का कारण अति-भक्षण है। यदि आप इस रखेल को जीत लेते हैं, तो हर जगह आपके निर्लिप्तता प्राप्त करने में सहायता करेगी; लेकिन यदि वह आप पर हावी रहेगी, तो आप कब्र तक हर जगह कष्ट सहेंगे।

21. मृत्यु का सजीव स्मरण खाने में अतिशय भोग को रोकता है; और जब खाने में अतिशय भोग विनम्रता से नियंत्रित होता है, तो अन्य वासनाएँ भी उसी समय समाप्त हो जाती हैं।

22. एक बार, जब मैं अभी जवान था, मैं एक नगर या गाँव में आया – और वहाँ, जब मैं अपना भोजन कर रहा था, तो अचानक मुझे लालच और अहंकार के विचारों ने घेर लिया; लेकिन लालच के परिणामों से डरकर, मैंने अहंकार से पराजित होना बेहतर समझा। साधारण लोगों में सभी बुराइयों की जड़ धन का मोह है, जबकि संन्यासियों में यह अतृप्त भोग-लालसा है।

23. मैंने ऐसे पराक्रमी पुरुषों को देखा है, जिन्होंने किसी आवश्यकता के कारण अपने पेट को भोजन से थोड़ी राहत दी, और बाद में इस दुखिया शरीर को सारी रात खड़े रहकर थका दिया; और इस प्रकार उसे तृप्ति से मुक्त होकर आनंदित होना सिखाया।

24. संन्यास जीवन की शुरुआत में अतिकाल और अहंकार से पूरी तरह मुक्त होना एक असंभव कार्य है। लेकिन हमें पेट की तुष्टि करके अहंकार से लड़ना नहीं चाहिए।

25. जैसे कोई अपराधी जिसे मौत की सज़ा सुनाई जा चुकी हो और जो फाँसी के तख्ते की ओर जा रहा हो, वह सार्वजनिक तमाशों की बात नहीं करता, वैसे ही जो व्यक्ति सचमुच अपने पापों पर शोक करता है, वह अपने पेट की लालसा को नहीं पालता।

26. जैसे बहुत अधिक खाद से कई कीड़े पैदा होते हैं, वैसे ही अत्यधिक भोजन से कई चूकें, दुष्ट विचार और (शर्मनाक) सपने आते हैं।

27. यदि अति-भक्षण की चरम सीमा तब है जब कोई अपनी इच्छा के विरुद्ध खुद को खाने के लिए मजबूर करता है, तो संयम की चरम सीमा तब है जब कोई अपनी प्रकृति को तब रोकता है जब वह लालसा करती है, भले ही उस क्षण उसने कुछ भी गलत न किया हो।

28. जैसे मोटे पक्षी ऊँचा उड़ नहीं सकते, वैसे ही जो व्यक्ति अपने शरीर के भोग में लिप्त रहता है, उसके लिए स्वर्ग में जाना असंभव है।

29. जैसे सूखा कीचड़ सूअरों के काम नहीं आता, वैसे ही तपस्या की मेहनत से मुरझाया हुआ शरीर अब राक्षसों को संतुष्ट नहीं करता।

३०. (*तृष्णा का स्वीकारोक्ति*)। आप मुझसे छुटकारा कैसे पाना चाहते हैं, जबकि मैं आपकी प्रकृति से ही बँधी हूँ? – मेरा प्रवेश द्वार भोजन की आवश्यकता है, जबकि आदत मुझे अतृप्त बनाती है – जो, आत्मा की संवेदनहीनता और मृत्यु की भूल के साथ मिलकर, मेरे प्रति आपके जुनून की नींव के रूप में काम करती है। – मेरा पहला पुत्र व्यभिचार है; उसके बाद दूसरा वंशज हृदय की कठोरता है; और तीसरा है उबासी। दुष्ट विचारों का सागर, गंदगी की लहरें, अकथनीय अशुद्धता की गहराई – ये भी मुझसे ही उत्पन्न होते हैं। मेरी बेटियाँ हैं: आलस्य, बकबक, अभद्रता, उपहास, ईश्वरनिंदा, परपीड़ा, क्रूरता, अवज्ञा, असंवेदनशीलता, मन का बंधन, घमंड, अहंकारी और पागल आत्मविश्वास, संसार से प्रेम, जिसके बाद कलंकित प्रार्थना आती है, उड़ते हुए विचार और अक्सर अप्रत्याशित दुर्भाग्य; और इन सबके बाद निराशा आती है – जो सभी जुनून में सबसे प्रबल है। – मेरे पापों की याद मेरे विरुद्ध उठती है, लेकिन हावी नहीं हो पाती। मृत्यु का विचार मेरे लिए एक प्रबल शत्रु है, लेकिन मनुष्यों में ऐसा कुछ भी नहीं है जो मुझे पूरी तरह से नष्ट कर सके। जिसने भी सांत्वनादाता को प्राप्त किया है, वह मेरी अवस्था के लिए मेरी प्रार्थना में उनकी शरण में रोता है, और उनसे विनती किए जाने पर, वह मुझे उनके भीतर कामवासना से कार्य करने की अनुमति नहीं देते। लेकिन जिन्होंने उन्हें चखा भी नहीं है, वे हर तरह से मेरी मिठास में आनंद लेने का प्रयास करते हैं।

२. व्यभिचार के विरुद्ध संघर्ष

1. पेट का तृप्तिभाव व्यभिचार की जननी है, जबकि पेट का संयम शुद्धता का स्रोत है।

2. जब हम तृप्त हो जाते हैं, तो लालच की आत्मा चली जाती है, और हमारे ऊपर व्यभिचार की आत्मा को भेजती है, उसे हमारी स्थिति के बारे में सूचित करते हुए, और कहती है: 'जाओ और अमुक को बहकाओ; उसका पेट तृप्त है, और इसलिए तुम्हें बहुत कम परेशानी होगी'। यह आत्मा, आते ही, मुस्कुराती है और, नींद से हमारे हाथ-पैर बाँधकर, हमारे साथ अपनी मनमानी करती है, आत्मा को कामुक कल्पनाओं से और शरीर को कामुक उत्सर्जन से कलंकित करती है।

३. शुद्धता के संरक्षण में प्रशिक्षित लोगों में से कोई भी उसकी प्राप्ति का श्रेय स्वयं को न दे, क्योंकि अपने ही स्वभाव पर काबू पाना किसी के लिए भी एक असंभव कार्य है; और जहाँ स्वभाव पर काबू पाया जाता है, वहाँ उस परमेश्वर के आगमन को पहचाना जाता है जो स्वभाव से परे है; क्योंकि, बिना किसी विरोध के, छोटा बड़े द्वारा समाप्त कर दिया जाता है।

४. पवित्रता की शुरुआत तब होती है जब विचार कामुक कल्पनाओं के साथ नहीं मिलते, और सपने में समय-समय पर बिना कल्पनाओं के उत्सर्जन होता है; पवित्रता का मध्य चरण तब होता है जब प्राकृतिक क्रियाएं केवल भोजन से संतुष्टि के कारण उत्पन्न होती हैं, और कल्पनाओं तथा उत्सर्जन से मुक्त होती हैं; जबकि शुद्धता का अंत शरीर का संयम है, जिसके पहले अशुद्ध विचारों का संयम होता है।

५. जो प्रार्थना द्वारा कामुक कुत्ते को भगाता है, वह एक सिंह से लड़ने वाले के समान है; जो प्रतिरोध के द्वारा इसे वश में करता है, वह ऐसे है जैसे उसने अपने शत्रु को भगा दिया हो और उसका पीछा कर रहा हो; परन्तु जो स्वयं प्रलोभन से पूर्णतःमुक्त हो गया है, जिसने एक बार के लिए ही सही, उसके लिए स्वयं तक पहुँचने का कोई मार्ग असंभव बना दिया है, वह यद्यपि देह में रहता है, परन्तु वह पहले ही कब्र से उठ चुका है।

6. यदि पवित्रता का लक्षण स्वप्न में भी कोई कामुक प्रवृत्ति महसूस करना है, तो निश्चित रूप से कामुकता की चरम सीमा जागृत जीवन में केवल विचारों और स्मृतियों से ही उत्सर्जन का अनुभव करना होगा।

7. जो इस विरोधी के विरुद्ध शारीरिक श्रम और पसीने के द्वारा युद्ध करता है, वह उस व्यक्ति के समान है जिसने अपने शत्रु को रस्सी से बाँध दिया है; जो अपने शत्रु से संयम और सतर्कता के द्वारा लड़ता है, वह उस व्यक्ति के समान है जिसने अपने शत्रु को लोहे की बेड़ियों से बाँध दिया है; और जो उसके विरुद्ध नम्रता, सहनशीलता और आत्म-त्याग के हथियार से लैस होता है, वह उस व्यक्ति के समान है जिसने अपने विरोधी को मार डाला और उसे रेत में छिपा दिया है।

8. कुछ लोग अपने कर्मों द्वारा इस यातना देने वाले को बाँधते हैं, अन्य विनम्रता द्वारा, और कुछ अन्य ईश्वर की आंतरिक प्रेरणा द्वारा। पहले वाले प्रभात के समान हैं, दूसरे पूर्णिमा के समान, और तीसरे दमकते हुए सूर्य के समान; परन्तु वे सभी स्वर्ग में निवास करते हैं।

९. लोमड़ी सोने का नाटक करती है, और राक्षस ब्रह्मचारी होने का; पहली पक्षी को धोखा देने के लिए, और दूसरा आत्मा को नष्ट करने के लिए। अपने पूरे जीवन के लिए इस नाजुक शरीर पर भरोसा न करें; न ही इस पर तब तक निर्भर रहें जब तक हम मसीह के सामने न खड़े हो जाएँ।

10. नव-धर्म-परिवर्तितों में, देहगत पापों में पतन आमतौर पर भोजन की प्रचुरता से होता है; मध्यवर्ती स्थिति वालों में, वे गर्व से होते हैं, और नव-धर्म-परिवर्तितों के समान ही कारण से; लेकिन पूर्णता की ओर बढ़ने वालों में, वे केवल अपने पड़ोसियों को आंकने से होते हैं।

11. कुछ लोग उन लोगों की प्रशंसा करते हैं जो स्वभाव से (जन्म से) नपुंसक हैं, कि वे शरीर के कष्टों से मुक्त हो गए हैं; परन्तु मैं उन लोगों की प्रशंसा करता हूँ जो दिन-प्रतिदिन स्वयं को नपुंसक बनाते हैं, और जो अपने विचारों से—एक छुरी की तरह—स्वयं को खतना करने के आदी हो गए हैं।

12. आपत्ति-तर्क से वासना के राक्षस को उखाड़ फेंकने का विचार मत करो; उसके पास अपने पक्ष में अनुकूल आधार हैं, क्योंकि वह हमारी अपनी प्रकृति के माध्यम से हम पर युद्ध करता है।

13. जो कोई भी अपने शरीर के विरुद्ध संघर्ष करने, या अपनी ही शक्ति से उस पर विजय पाने की आशा रखता है, वह व्यर्थ में परिश्रम करता है। क्योंकि जब तक प्रभु शारीरिक वासना के घर को नष्ट नहीं कर देता और आत्मा का घर नहीं बना देता, जो अपनी ही कोशिशों से इसमें सफल होने का प्रयास करता है, वह व्यर्थ में जागता और उपवास करता है।

14. प्रभु के सामने अपनी स्वभाव की दुर्बलता को प्रस्तुत करो, सभी बातों में अपनी पूर्ण असहायता को स्वीकार करो, और तुम अनजाने ही पवित्रता का वर प्राप्त करोगे।

१५. जो लोग फिसलकर वासना की खाई में गिर गए हैं, वे जेम्स द्वारा देखी गई सीढ़ी पर चढ़ने-उतरने वालों से बहुत पीछे रह जाते हैं; और ऐसी चढ़ाई फिर से शुरू करने के लिए, उन्हें बहुत परिश्रम और परम तपस्या की आवश्यकता होती है।

16. पत्नी की जानकारी के बिना भी व्यभिचार होता है – जो अस्वाभाविक होने के कारण, व्यक्ति को अधिक पीड़ा देता है। यह एक प्रकार की मृत्यु और विनाश है जिसे हम हमेशा अपने भीतर, और विशेष रूप से अपनी युवावस्था में, साथ लेकर चलते हैं। लेकिन मैं इस विनाश के बारे में लिखने की हिम्मत नहीं करता, क्योंकि मेरा हाथ इन शब्दों से रोका गया है: '*जो काम गुप्त में किए जाते हैं, उनके बारे में कहना* या उल्लेख करना भी *लज्जास्पद है*' (इफिसियों 5:12)।

१७. अमानवीय शत्रु, व्यभिचार का उकसाने वाला, ईश्वर को उदार दिखाता है, यह सुझाव देते हुए कि वह इस जुनून के प्रति बहुत सहिष्णुता दिखाते हैं, मानो यह स्वाभाविक हो। लेकिन इस षड्यंत्रकारी पर बारीकी से ध्यान दें, और आप पाएंगे कि, एक बार यह पाप कर दिए जाने के बाद, वह पहले से ही ईश्वर को एक अलग रूप में पेश करता है—केवल न्यायप्रिय और अक्षम्य के रूप में। वह पहली बात हमें पाप में खींचने के लिए कहता है, और दूसरी हमें निराशा में डुबोने के लिए।

18. जब, पाप करने के बाद, हम पीड़ा और निराशा से पीड़ित होते हैं, तो हमारी आदत नहीं है कि हम और अधिक गिरावटों के आगे झुकें; लेकिन जब ये भावनाएँ शांत हो जाती हैं, तो दुष्ट शत्रु एक बार फिर से हमसे मानव जाति के लिए ईश्वर के प्रेम के बारे में बात करना शुरू कर देता है।

19. प्रभु, अक्षय और अदेह होने के कारण, हमारे शरीर की पवित्रता और अक्षयता में आनन्दित होते हैं; परंतु राक्षस किसी भी बात में उतना आनन्दित नहीं होते जितना कि घृणित व्यभिचार में, और किसी भी कामना को उतना प्रिय नहीं करते जितना इस कामना को, जो शरीर को कलंकित करती है।

२०. सुखदायी फलों की मिठास का स्रोत पृथ्वी और ओस है; और पवित्रता का स्रोत आज्ञाकारिता सहित मौन है। केवल मौन के द्वारा प्राप्त शरीर की पवित्रता, संसार के समीप रहते हुए, अक्सर अडिग नहीं रहती; परन्तु जो आज्ञाकारिता से प्राप्त होती है, वह सर्वत्र प्रशंसनीय और अडिग है।

21. जो केवल संयम से इस संघर्ष को शांत करने का प्रयास करता है, वह उस व्यक्ति के समान है जो एक हाथ से समुद्र की गहराई से तैरकर बाहर निकलने का प्रयास कर रहा हो। संयम को विनम्रता के साथ मिलाएँ; क्योंकि विनम्रता के बिना संयम का कोई उपयोग नहीं होता।

२२. आप अपने भीतर जिस भी जुनून को राज करते हुए पाते हैं, सबसे पहले उसी के विरुद्ध खुद को सशस्त्र करें, और विशेष रूप से अपने स्वाभाविक आंतरिक शत्रु के विरुद्ध। क्योंकि यदि आप और मैं इस जुनून पर विजय प्राप्त नहीं करते हैं, तो दूसरों पर विजय हमें कोई लाभ नहीं पहुँचाएगी; लेकिन इस मिस्री को मार गिराने के बाद, हम भी निश्चित रूप से नम्रता की झाड़ी में परमेश्वर को देखेंगे।

२३. परीक्षा में, मुझे आनंद, आँसू और सांत्वना का अनुभव हुआ, और अपनी भोली-भाली समझ से मैंने सोचा कि यह एक आध्यात्मिक फल था, लेकिन यह शत्रु की धोखाधड़ी थी।

२४. हे युवक, धोखा न खा! मैंने कुछ लोगों को अपने प्रियजनों के लिए प्रार्थना करते देखा है, जो यद्यपि कामुक वासना से प्रेरित थे, फिर भी वे सोचते थे कि वे पवित्र प्रेम का कर्तव्य निभा रहे हैं।

२५. जब हम सोने के लिए लेटते हैं, तब हमें सबसे अधिक सतर्क रहना चाहिए; क्योंकि तब मन, शरीर से अलग होकर, राक्षसों से कुश्ती करता है; और यदि उसने अभी तक वासना की मिठास के प्रति सारी सहानुभूति नहीं तोड़ दी है, तो वह आसानी से एक गद्दार बन जाता है।

26. मृत्यु का स्मरण यीशु की प्रार्थना के साथ सोए और आपके साथ उठे; क्योंकि जब आप सोते हैं तो इन आचरणों के अलावा कोई भी चीज़ आपको इतनी शक्तिशाली मध्यस्थता प्रदान नहीं कर सकती।

27. नींद के दौरान उत्सर्जन कभी-कभी अधिक भोजन के कारण, और आम तौर पर शरीर के अत्यधिक भोग के कारण होता है; कभी-कभी अहंकार के कारण, जब हम लंबे समय तक उत्सर्जन से मुक्त रहने के बाद घमंडी हो जाते हैं; कभी-कभी इस तथ्य के कारण कि हम अपने पड़ोसी की निंदा करते हैं; और कभी-कभी बस राक्षसों की ईर्ष्या के कारण। ईश्वर कुछ लोगों के साथ ऐसा होने देते हैं, ताकि इस दुर्भाग्य के माध्यम से वे निष्पाप व्यक्ति को विनम्रता सिखा सकें।

28. दिन के समय आपने जो सपने देखे हैं, उन पर विचार करने की अनुमति स्वयं को न दें; क्योंकि राक्षसों का यही इरादा होता है कि वे हमें जागते समय ऐसे सपनों के माध्यम से अपवित्र करें।

29. वासना के प्रलोभन के तूफान के दौरान, निम्नलिखित हमारी बहुत मदद करते हैं: एक बाल वाली कमीज़, राख, पूरी रात प्रार्थना में खड़े रहना, भूख, भयंकर प्यास—जिसे बस कुछ बूँदें बुझा दें—कब्रिस्तानों में रहना, और सबसे बढ़कर, हृदय की नम्रता; और यदि संभव हो, तो एक आध्यात्मिक पिता, या एक उत्साही भाई, जो मदद करने में तत्पर और अनुभव में बुद्धिमान हो; क्योंकि मैं इसे एक चमत्कार मानता हूँ कि कोई भी, अपने दम पर, इस गर्त से अपनी नाव को बचा सके।

३०. एक व्यक्ति ने एक असाधारण रूप से सुंदर महिला को देखकर, उसके माध्यम से सृष्टिकर्ता की महिमा की। उसे देखते ही, उसके भीतर ईश्वर के प्रति प्रेम प्रज्वलित हो उठा, और उसकी आँखों से आँसुओं का एक झरना फूट पड़ा। और यह देखना अद्भुत था कि जो बात किसी और के लिए विनाश का कारण बनती, वह उसके लिए, स्वाभाविक क्रम से परे, एक विजय का मुकुट बन गई। यदि ऐसा व्यक्ति समान परिस्थितियों में हमेशा इस तरह महसूस करता और कार्य करता है, तो उसने सामान्य पुनरुत्थान से पहले ही अक्षयत्व प्राप्त कर लिया है।

31. भजनों और गीतों के संबंध में भी हमें उसी सिद्धांत का पालन करना चाहिए। जो ईश्वर से प्रेम करते हैं, उन्हें आमतौर पर सांसारिक और आध्यात्मिक दोनों तरह के गीतों से पवित्र आनंद, ईश्वर के प्रति प्रेम और आँसुओं की अनुभूति होती है, जबकि जो इंद्रिय सुखों से प्रेम करते हैं, वे इसके विपरीत भावनाओं से प्रेरित होते हैं।

32. कुछ लोग कहते हैं कि कामुक पाप का स्वाद चखने के बाद शुद्ध कहा जाना असंभव है; परन्तु मैं, उनके मत का खंडन करते हुए, कहता हूँ कि जो ऐसा चाहता है, उसके लिए एक जंगली जैतून के पेड़ को कलम लगाकर एक अच्छे पेड़ में बदलना संभव और उचित है। यदि राज्य की कुंजियाँ देह से पवित्र किसी व्यक्ति को सौंपी गई होतीं, तो

उपर्युक्त लोगों की राय सही ठहर सकती थी। परन्तु उन्हें उस व्यक्ति से लज्जित होना चाहिए, जो सास होने के बावजूद पवित्र हो गया है और राज्य की कुंजियाँ धारण करता है।

३३. देहगत वासना का सर्प कई रूप धारण करता है: जो लोग इसके मधुर स्वाद को नहीं चख चुके हैं, उन्हें यह केवल एक बार चखने और फिर रुकने का सुझाव देता है; लेकिन जिन्होंने इसे चख लिया है, उन्हें यह धूर्त सर्प फिर से चखने के लिए उकसाता है। पहले वाले में से कई, इस बुराई से अनजान होने के कारण, संघर्ष से मुक्त रहते हैं; जबकि बाद वाले, इस घृणित कृत्य का अनुभव कर चुके होने के कारण, संघर्ष और उकसावे को सहते हैं। हालाँकि, इसका विपरीत भी अक्सर होता है।

34. जब हम नींद से एक अच्छे और शांतिपूर्ण मनःस्थिति में उठते हैं, तो यह पवित्र स्वर्गदूतों के छिपे हुए प्रभाव के कारण होता है, विशेषकर यदि हम प्रार्थना और संयम में सोए हों। लेकिन ऐसा भी होता है कि हम एक उदास और परेशान मनःस्थिति में उठते हैं, और इसका कारण बुरे सपने होते हैं।

35. इसमें कोई आश्चर्य नहीं कि अद्रव्य, अद्रव्य के विरुद्ध संघर्ष करे; परन्तु यह एक चमत्कार है—और वास्तव में एक अद्भुत चमत्कार—कि पदार्थ में लिपटा हुआ कोई व्यक्ति, अपने ही इस पदार्थ के विरुद्ध संघर्ष करते हुए, जो शत्रु और विश्वासघाती है, अद्रव्य शत्रुओं को भागने पर मजबूर कर दे।

36. विवेकी धर्मपिता मानते हैं कि एक वस्तु *'गुण'* है, *दूसरी 'संयोग'*, तीसरी *'संयोजन'*, चौथी *'बन्धन'*, पाँचवी *'संघर्ष'*, और एक और जिसे आत्मा का तथाकथित *'भाव'* कहा जाता है। वे 'अवस्थिति' को एक साधारण शब्द (विचार), या किसी वस्तु की एक छवि के रूप में परिभाषित करते हैं, जो मन में फिर से प्रकट होती है और हृदय में लाई जाती है; *'संयोग'* प्रकट हुई छवि के साथ संवाद है, चाहे वह जुनून के साथ हो या निर्लिप्त रूप से; *'अवशोषण'* आत्मा का देखी गई चीज़ की ओर झुकाव है, जिसके साथ आनंद भी होता है; *मोह* वह है जो हृदय को देखी गई वस्तु द्वारा हिंसक और अनैच्छिक रूप से आकर्षित करता है, या उससे उसका पूर्ण विलियन है, जो हमारे स्वस्थ स्वरूप को बाधित करता है; *'संघर्ष'* शब्द का प्रयोग विरोधी के खिलाफ कड़ी प्रतिरोध क्षमता के लिए किया जाता है, जिसका अंत इच्छानुसार विजय या पराजय में होता है; जबकि *'वासना'* उस कामुक प्रवृत्ति को दर्शाता है जो आत्मा में जड़ जमा लेने के बाद, लंबे समय की आदत के माध्यम से, आत्मा के एक प्राकृतिक गुण के रूप में परिवर्तित हो जाती है, ताकि आत्मा अब स्वेच्छा से और अपनी मर्जी से उसकी संतुष्टि के लिए प्रयास करती है। इन सभी में से, पहला पापरहित है; दूसरा पूरी तरह से ऐसा नहीं है; तीसरा संघर्ष में लगे व्यक्ति के स्वभाव के आधार पर पापी या पापरहित हो सकता है। यह संघर्ष या तो पुरस्कार की ओर ले जा सकता है या यातना की ओर। बंधन का निर्णय एक मामले में तब होता है जब यह प्रार्थना के दौरान होता है, और दूसरे में जब यह अन्य समयों पर होता है – एक मामले में जब उदासीन विषयों के बारे में सोचा जा रहा हो, और दूसरे में जब बुरी चीजों के बारे में सोचा जा रहा हो। जहाँ तक *कामुकता* ( ) की बात है, निस्संदेह हर मामले में इसकी निंदा की जाती है, और, जब तक कि उसे तदनुरूप पश्चाताप के कार्य द्वारा शुद्ध नहीं किया जाता, यह शाश्वत यातना के अधीन है। लेकिन जो कोई भी पहले वाले—अर्थात आरंभिक आवेग—को उदासीनता से (उस पर विचार किए बिना अस्वीकार करते हुए) व्यवहार करता है, वह एक ही वार में जो कुछ भी उसके बाद आता है, उसे काट देता है।

37. धर्मपितामहों में सबसे अधिक प्रबुद्ध और विवेकी लोगों ने एक और विचार का भी उल्लेख किया है, जो उपरोक्त सभी से भी अधिक सूक्ष्म है। इसे 'विचार की एक झलक' कहा जाता है - जो किसी विशिष्ट समय के बिना, बिना किसी शब्द या छवि के, तीर की गति से, प्रलोभित व्यक्ति में वासना जगाता है। शरीर में इससे अधिक क्षणिक कुछ भी नहीं, मन में इससे अधिक तीव्र या त्वरित कुछ भी नहीं, कि जिस तरह यह विचार—एक ही सूक्ष्म अनुस्मारक से—कालातीत, अनकहा, और कुछ के लिए तो अज्ञात भी—अचानक आत्मा में अपनी उपस्थिति दर्ज कराता है, बिना उससे पूर्व परामर्श या सहमति के। – जिसने भी, आँसुओं के माध्यम से, समझ पाया है इस विचार की इतनी सूक्ष्मता को (समझना, ग्रहण करना) हमें यह भी समझा सकता है कि कैसे ऐसा होता है कि आत्मा, एक ही नज़र से, या हाथ के स्पर्श से, या गायन की ध्वनि से, बिना सोचे-समझे या इरादा किए, भावुक होकर भटक जाती है (कामवासना से कलंकित और भ्रष्ट हो जाती है)।

38. कभी-कभी वासना, आत्मा के भीतर उत्पन्न होकर, शरीर में प्रवेश कर जाती है, जबकि अन्य समयों में यह शरीर से आत्मा में प्रवेश करती है। बाद वाला आमतौर पर संसार में रहने वालों के साथ होता है, जबकि पहला उन लोगों के साथ होता है जो संन्यासी जीवन जीते हैं, क्योंकि उनमें वासना की वस्तु (या पदार्थ) की कमी होती है।

39. जब, हमारे नश्वर शरीर के सहयोगी—शैतान—के साथ एक लंबे संघर्ष के बाद, हम अंततः उपवास की चट्टानों और विनम्रता की तलवारों से उसे अपने दिलों से बाहर निकाल देते हैं, तो यह शापित प्राणी, हमारे शरीर के

भीतर रेंगने वाले कीड़े की तरह, एक विशेष तरह की गुदगुदी वाली अनुभूति से हमें कलंकित करने का प्रयास करता है, जो अनुचित और अस्पष्ट आंदोलनों को उत्तेजित करती है।

४०. यह राक्षस किसी भी अन्य की तुलना में अधिक बारीकी से उस क्षण की प्रतीक्षा करता है जब हम शारीरिक रूप से उसके विरुद्ध प्रार्थना करने में असमर्थ होते हैं। और तभी यह घृणित प्राणी हम पर हमला करने का एक विशेष प्रयास करता है।

४१. जिन लोगों ने अभी तक हृदय से सच्ची प्रार्थना प्राप्त नहीं की है, उनके लिए (कामोत्तेजक वासनाओं के विरुद्ध संघर्ष में) शारीरिक प्रार्थना में स्वयं को लगाना सहायक होता है – जिससे मेरा तात्पर्य है – हाथ उठाना, छाती पीटना, आकाश की ओर कोमलता से आँखें उठाना, आहों के साथ कराहें, और बार-बार घुटने टेकना; – हालांकि वे अक्सर दूसरों की मौजूदगी के कारण ऐसा करने में असमर्थ रहते हैं। – ऐसे समय में राक्षस विशेष रूप से उन पर हमला करने का प्रयास करते हैं; और, मन की दृढ़ता और प्रार्थना की अदृश्य शक्ति के माध्यम से उनका विरोध करने की ताकत अभी तक न होने के कारण, वे कभी-कभी उन पर हमला करने वालों के आगे मजबूरन झुक जाते हैं। ऐसे मामले में, आपको, यदि संभव हो, तो लोगों से जितनी जल्दी हो सके दूर हो जाना चाहिए, थोड़ी देर के लिए कहीं नज़रों से दूर छिप जाना चाहिए – और वहाँ, अपनी आँखें दुख से उठाकर, यदि आप कर सकें तो आध्यात्मिक रूप से, और यदि नहीं, तो कम से कम शारीरिक रूप से – और अपने हाथों को क्रूस के आकार में फैलाकर, इस प्रकार काल्पनिक अमालेक को लज्जित और पराजित करना चाहिए, – उस से पुकारो जो बचाने के लिए सामर्थी है, बनावटी शब्दों से नहीं, बल्कि निम्र उद्गारों से, सबसे पहले और प्रमुख रूप से पुकारते हुए: *'मुझ पर दया कर, क्योंकि मैं निर्बल हूँ'* (भजन संहिता 6:3)। फिर, अनुभव के द्वारा, तुम सर्वोच्च की शक्ति को जानोगे, और अदृश्य सहायता से तुम अदृश्य शत्रुओं को भगा दोगे। इस प्रकार युद्ध करने के आदी हो जाने पर, आप जल्द ही केवल अपनी आत्मा से ही अपने शत्रुओं को भगा सकेंगे: क्योंकि यह दूसरा वरदान परमेश्वर द्वारा उन लोगों को पुरस्कार स्वरूप दिया जाता है जो पहले वाले का अभ्यास करते हैं।

४२. उस प्रत्येक व्यक्ति की अवहेलना को जीवन के जल के रूप में उत्सुकता से पियो, जो तुम्हें यह उपाय देना चाहता है, जो तुम्हें कामुक इच्छाओं से शुद्ध करता है; क्योंकि तब तुम्हारी आत्मा में गहरी पवित्रता चमकेगी, और तुम्हारे हृदय में परमेश्वर का प्रकाश कम नहीं होगा।

४३. अंधकारमय अग्नि के गर्त, निर्दयी सेवकों, निर्दयी और कठोर न्यायाधीश, नरक की ज्वालाओं की अनंत गहराइयों, और पाताल लोक की ओर जाने वाले संकरे मार्गों, भयानक खाइयों, और इस प्रकार की अन्य चीजों का चित्रण करने और उन्हें याद करने से कभी न चूकें; ताकि इन स्मृतियों से उत्पन्न भय के द्वारा, आप अपने भीतर से कामुकता की अनुभूति को दूर कर सकें, स्वयं को अक्षय पवित्रता के साथ जोड़ सकें, और अपने आत्मा में अद्रव्य प्रकाश की किरण को ग्रहण कर सकें, जो अन्य सभी अग्नियों से अधिक चमकीली चमक बिखेरती है।

44. एक राक्षस है जो, जैसे ही हम अपने बिस्तर पर लेटते हैं, हमारे पास आता है और हमें चालाक और अशुद्ध विचारों से बमबारी करता है: ताकि, प्रार्थना के साथ उनका मुकाबला करने के लिए बहुत आलसी होने के कारण, और अशुद्ध विचारों के साथ सो जाने पर, हम बाद में अशुद्ध सपनों से अभिभूत हो जाएँ।

४५. जिसे आँखों ने न देखा हो, उसे केवल सुनकर गला स्वाद लेने के लिए तीव्र इच्छा नहीं करता; इसी प्रकार, जो शरीर से शुद्ध हैं, वे व्यभिचार के विरुद्ध संघर्ष में इसके (व्यभिचारी) सुखों के अज्ञान से महान राहत प्राप्त करते हैं।

४६. जैसे कोई सिंह से लड़ते हुए उसकी ओर से अपनी दृष्टि हटा लेता है तो वह तुरंत ही नष्ट हो जाता है, वैसे ही जो अपनी देह के विरुद्ध संघर्ष करता है—यदि वह उसे विश्राम दे देता है।

४७. जो लोग देह की वासना से लड़ते हैं, उनके लिए मौन कभी-कभी उचित होता है - लेकिन केवल एक ऐसे गुरु की अनुमति से जो उन्हें अच्छी तरह जानता हो।

४८. मैंने जाना है कि निराशा का दैत्य व्यभिचार के दैत्य से पहले आता है और उसके लिए मार्ग तैयार करता है; शरीर को पूरी तरह से आराम देकर और उसे नींद में डुबाकर, वह व्यभिचार के दैत्य को सोने वाले में, जैसे जागते जीवन में होता है, वैसे ही अपवित्रताएँ करने में सक्षम बनाता है।

49. जैसे एक सांसारिक राजा को यह घृणित लगता है जब कोई उसके सामने खड़ा हो और साथ ही उससे मुंह फेरकर उसके शत्रुओं से बातें कर रहा हो, वैसे ही प्रभु को भी यह घृणित लगता है जब कोई प्रार्थना में उनके सामने खड़ा हो और साथ ही अशुद्ध विचारों को मन में पाल रहा हो।

५०. जब यह कुत्ता (कामवासना का दैत्य) तुम पर आता है, तो उसे प्रार्थना के आध्यात्मिक हथियार से भगा दो; और चाहे वह कितनी भी निर्लज्जता से डटे रहे, उसे हार मत मानो।

५१. (*कामवासना का स्वीकारोक्ति*) आत्मा पूछती है: 'मुझे बताओ, मेरे जीवनसाथी – मेरी अपनी प्रकृति (क्योंकि मैं तुम्हारे बारे में किसी और से नहीं पूछना चाहती) – मुझे बताओ, मैं तुमसे अप्रभावित कैसे रह सकती हूँ? मैं उस पीड़ा पर कैसे काबू पा सकती हूँ जो तुम मुझे देती हो?" वह, अपनी आत्मा का उत्तर देते हुए, कहती है: "मैं तुम्हें वह नहीं बताऊँगी जो तुम स्वयं नहीं जानती; लेकिन मैं तुम्हें वह बताऊँगी जिसे हम दोनों समझते हैं। मुझमें मेरा पिता है – आत्म-प्रेम (आत्म-संतुष्टि और आत्म-दया)। दूर से, आत्म-संतुष्टि और आराम का हर रूप मेरी उत्तेजना को तैयार करता है; इस आराम और इसके साथ होने वाले कर्मों से, एक कामुक आग मेरे भीतर भड़क उठती है। और फिर, गर्भ धारण करने के बाद, मैं पापों को जन्म देती हूँ; और ये, एक बार पैदा हो जाने पर, बदले में निराशा के माध्यम से आत्मा की मृत्यु को जन्म देते हैं। – यदि तुम मेरी और अपनी कमजोरी को पहचान लेते हो – जो स्पष्ट और गहरी दोनों हैं – तो तुम मेरे हाथ बाँध दोगे। यदि तुम मेरे गले को भूखा रखोगे, तो तुम मेरे पैर बाँध दोगे, ताकि मैं और आगे न बढ़ सकूँ। यदि तुम आज्ञाकारिता से अपना मिलन कर लेते हो, तो तुम मुझसे अपना बंधन तोड़ दोगे। और यदि तुम विनम्रता प्राप्त कर लेते हो, तो तुम मेरा सिर काट दोगे।

३. धन के प्रेम के विरुद्ध संघर्ष

1. धन का प्रेम अविश्वास की बेटी है। यह अपनी ही वकालत के लिए संभावित कमजोरियों, वृद्धावस्था के आगमन, और सूखे के कारण हुई अकाल की अचानक शुरुआत को बहाने के रूप में इस्तेमाल करती है।

2. धन का प्रेमी एक उपहासकर्ता और सुसमाचार का जानबूझकर उल्लंघन करने वाला है। (सुसमाचार की आत्मा प्रेम है।) परन्तु जिसे में प्रेम है वह धन का भण्डार नहीं करेगा। जो कोई दोनों (प्रेम और धन) के साथ आगे बढ़ने की कोशिश करता है, वह स्वयं को धोखा देता है।

3. जो अपने लिए शोक करता है, वह (न केवल अपने धन-संपत्ति को, बल्कि) अपने शरीर का भी त्याग कर देता है; और यदि समय की मांग हो, तो वह उसे भी नहीं बख्शेगा।

४. यह न कहो कि तुम्हें गरीबों के लिए भीख इकट्ठी करने की ज़रूरत है (ताकि उनकी मदद करके तुम परमेश्वर का राज्य प्राप्त कर सको), क्योंकि परमेश्वर का राज्य दो लेप्टा में भी खरीदा जा सकता है।

5. यात्रा का प्रेमी और धन का प्रेमी एक-दूसरे से मिले; और बाद वाले ने पहले वाले को असावधान कहा।

6. जिसने इस (धन के) जुनून पर विजय प्राप्त की है, उसने सभी चिंताओं को समाप्त कर दिया है; लेकिन जो इससे बंधा है (वह हमेशा चिंताओं से पीड़ित रहता है) और वह कभी भी शुद्ध हृदय से प्रार्थना नहीं कर सकता।

7. धन के प्रति प्रेम दान देने के दिखावे से शुरू होता है, लेकिन गरीबों से घृणा पर समाप्त होता है। और वह (धन-प्रेमी), जब तक इकट्ठा कर रहा होता है, दयालु होता है; लेकिन जैसे ही वह पर्याप्त इकट्ठा कर लेता है, वह अपनी मुट्ठियाँ भींच लेता है।

8. मैंने धन में भिखारियों को देखा है, जो आध्यात्मिक रूप से गरीबों का जीवन जीते हुए, आध्यात्मिक रूप से अमीर बन गए हैं और अपनी पूर्व गरीबी को भूल गए हैं।

9. अनासक्त व्यक्ति (पार्थिव चीजों के लिए) सभी चिंताओं को त्याग देता है, जीवन और उसके मामलों के बारे में चिंता नहीं करता है, और बिना किसी बाधा के अपने रास्ते पर चलता है। वह ईश्वर पर अपना सारा दुख छोड़कर दुनिया का स्वामी बन जाता है। वह किसी व्यक्ति को अपनी ज़रूरत के बारे में नहीं बताएगा, बल्कि जो कुछ भी आता है उसे प्रभु के हाथ से आया हुआ स्वीकार करता है।

10. अनासक्त व्यक्ति किसी भी वस्तु से लगाव नहीं रखता, और जो उसके पास है, उसके बारे में ऐसा सोचता है मानो वह मौजूद ही न हो; क्योंकि जब उसने एक तपस्वी बनने का संकल्प लिया, तो वह पहले ही सभी चीजों का त्याग कर चुका था। जो कोई भी किसी भी चीज़ के लिए दुखी होता है, वह अभी तक अनासक्त नहीं है।

11. अलोभी व्यक्ति शुद्ध हृदय से प्रार्थना करता है, जबकि लोभी व्यक्ति प्रार्थना के दौरान भौतिक वस्तुओं की छवियों से भर जाता है, और ऐसा लगता है मानो वह उन्हीं से प्रार्थना कर रहा हो।

12. जो आज्ञापालन में रहते हैं, वे धन के प्रेम से मुक्त होते हैं; क्योंकि जब उन्होंने अपना शरीर भी समर्पित कर दिया है, तो उनके पास और क्या हो सकता है?

13. जिसने दिव्य आनंद का स्वाद चखा है, वह सांसारिक चीज़ों को कुछ भी नहीं समझता; परन्तु जिसने पहले वाले आनंद का स्वाद नहीं चखा है, वह दूसरे की प्राप्ति में आनंदित होता है।

14. हे संन्यासियों! हम पक्षियों से भी कम विश्वासवान न हों, जो न बोते हैं और न इकट्ठा करते हैं।

१५. वह महान है जसिने भक्तिपूर्वक सभी संपत्तियों का त्याग कर दयिा है; लेकनि जो उन्हें अपनी स्वेच्छा से त्यागता है वह पवत्रि है। पहला सौ गुना प्राप्त करेगा, चाहे संपत्त‍ि में हो या उपहार में, जबक‍ि दूसरा शाश्वत जीवन का वारसि होगा।

१६. समुद्र में लहरें कभी नहीं रुकतीं, और चांदी के प्रेमी में क्रोध और दुख कभी नहीं मटिता।

17. अटूट श्रद्धा सभी चंताओं का अंत कर देती है, जबक‍ि मृत्यु का स्मरण मनुष्य को शरीर का भी त्याग करना सखिाता है।

18. योब में लालच का कोई अंश नहीं था; इसीलएि, सब कुछ खो देने के बाद भी, वह अवचिलति रहा।

19. *'सभी बुराइयों की जड़'* को *'धन का प्रेम'* कहा जाता है (1 तीमुथयिुस 6:10); क्योंक‍ि इससे घृणा, चोरी, ईर्ष्या, फूट, झगड़ा, कलह, द्वेष, क्रूरता और हत्या उत्पन्न होती है।

20. वश्विास और तीर्थयात्रा का जीवन धन-प्रेम की मृत्यु हैं; जबक‍ि दया और प्रेम स्वयं शरीर को भी बख्शते नहीं।

21. जैसे पैरों में बेड़ियाँ पहने हुए लोग आराम से नहीं चल सकते, वैसे ही धन संजोने वाले स्वर्ग नहीं चढ़ सकते।

22. यद‍ि लोभ की चरम सीमा तब होती है जब कोई व्यक्त‍ि धन संचय करना बंद नहीं कर सकता, या उससे कभी संतुष्ट नहीं होता; तो लालचहीनता की पराकाष्ठा अपने शरीर को भी न बख्शने में निहित है।

23. आओ हम सभी चंताओं को त्याग दें; क्योंक‍ि हमने स्वयं को चंताओं से मुक्त लोगों में नामांकति कर लयिा है। यद‍ि हम इसे पूरा नहीं करते हैं तो हमारे पास अपने लएि कोई बहाना नहीं हो सकता। हम एक बात याद रखें: कजिनि लोगों ने पवत्रि बपतस्मिा के नवीनीकरण के माध्यम से प्रभु को ग्रहण कयिा है, उन्हें *'ईश्वर की संतान बनने का अधकिार'* (यूहन्ना 1:12) प्रदान कयिा गया है; इसीलएि उनसे कहा जाता है: *'शांत रहो, और जानो क‍ि मैं परमेश्वर हूँ'* (भजन संहिता 45:11)।

24. हम पर यह एक बड़ी लज्जा की बात है क‍ि हमने सब कुछ त्याग दयिा है, और हमें—मनुष्य द्वारा नहीं बल्क‍ि प्रभु द्वारा—बुलाया गया है, क‍ि हम ऐसी कसिी भी चीज़ में लप्ति हों जो हमारी महान आवश्यकता के समय, अर्थात् आत्मा के प्रस्थान के घड़ी में, हमें कोई लाभ न पहुँचा सके। जैसा क‍ि प्रभु ने कहा है, इसका अर्थ है पीछे मुड़ना और स्वर्ग के राज्य में प्रवेश न पाना।

25. लोभ का दानव उन लोगों पर युद्ध छेड़ता है जो सांसारकि नहीं हैं; और जब वह उन पर वजिय प्राप्त नहीं कर पाता, तो वह उनके सामने भखिारी प्रस्तुत करता है और, दान के बहाने, उन्हें अवास्तवकि से वास्तवकि की ओर लौटने के लएि मनाता है।

26. जैसे वे जो सोने के लएि मट्टिी का आदान-प्रदान करते हैं, उन्हें बहुत बड़ा नुकसान होता है, वैसे ही वे भी, जो भौतकि लाभ के लएि अपनी आध्यात्मकि उपलब्धयिों का प्रचार-प्रसार करते हैं, उन्हें सिवाय हान‍ि के कुछ नहीं होता।

४. क्रोध के वरुिद्ध संघर्ष

1. *क्रोध* छपिी हुई घृणा का स्मरण है, अर्थात् रंजशि। *'क्रोध'* उस व्यक्त‍ि को नुकसान पहुँचाने की इच्छा है जसिने अपमान कयिा है। *'चड़िचड़िापन'* (जल्दी गुस्सा आना) हृदय का एक क्षणकि उभार है। *'दुख'* आत्मा में बसी एक अप्रयि (परेशान करने वाली) भावना है। *'क्रोध'* एक अच्छे स्वभाव का भ्रष्टाचार और आत्मा का अपवत्रि होना है।

2. कुछ लोग, जो चड़िचड़िापन और क्रोध के प्रत‍ि प्रवृत्त होते हैं, इस पर ध्यान नहीं देते हैं और इस जुनून को ठीक करने में खुद को व्यस्त नहीं करते हैं, यह सोचकर क‍ि बुद्धमिान ने क्या कहा: *'क्रोध की प्रवृत्त‍ि ही उसका पतन है'* (सरिैक 1:22)।

3. क्रोध, एक चक्की के तीव्र घूमने की तरह, एक क्षण में आत्मा के गेहूँ और फलों को पीसकर नष्ट कर सकता है—जो एक पूरे दनि में कुछ और नहीं कर सकता। इसलएि, मनुष्य को स्वयं पर सावधानीपूर्वक नगिरानी रखनी चाहएि। यह एक प्रबल हवा से फूंक मारी गई लौ की तरह है, जो धधकती आग की तुलना में आत्मा के खेत को अधकि तेजी से झुलसा और नष्ट कर देती है।

४. नष्पिक्षता अपमान की एक अतृप्त इच्छा है, ठीक वैसे ही जैसे व्यर्थ लोगों में प्रशंसा की अत्यधकि इच्छा होती है। नष्पिक्षता अपने स्वभाव पर एक वजिय है, जो परश्रिम और पसीने से प्राप्त होती है, और अपमान से अवचिलति रहते हुए हासलि की जाती है।

५. नम्रता आत्मा का एक अटूट स्वभाव है, जो अपमान और प्रशंसा दोनों के सामने एक समान रहता है।

6. अक्रोध की शुरुआत तब होठों का मौन है जब हृदय परेशान हो; इसका मध्य तब विचारों का मौन है जब आत्मा थोड़ी सी विचलित हो; और इसका अंत अशुद्धि की हवाओं के सामने अडिग स्थिरता है।

7. जैसे आग पर लगातार पानी डालने से वह पूरी तरह बुझ जाती है, वैसे ही सच्ची विलाप की आँसूएँ आमतौर पर क्रोध और रोष की हर ज्वाला को बुझा देती हैं।

8. जैसे प्रकाश के प्रकट होने से अँधेरा दूर हो जाता है, वैसे ही नम्रता की सुगंध से हर कष्ट और क्रोध दूर हो जाता है।

९. पश्चाताप करने वालों के लिए चिड़चिड़े क्रोध से अधिक अनुचित कुछ भी नहीं है; क्योंकि ईश्वर की ओर मुड़ने के लिए महान विनम्रता की आवश्यकता होती है; और चिड़चिड़ापन स्वयं के बारे में उच्च विचार का संकेत है।

10. यदि नम्रता की पराकाष्ठा इस बात में निहित है कि एक चिड़चिड़े व्यक्ति की उपस्थिति में भी उसके प्रति अपने हृदय में शांतिपूर्ण और स्नेहपूर्ण बने रहना; तो, निस्संदेह, क्रोध की चरम सीमा इस बात में निहित है कि कोई व्यक्ति, अकेले में, अपने आप से, उस व्यक्ति के खिलाफ एक भयंकर लड़ाई और संघर्ष करता है जिसने उसे ठेस पहुँचाई है, और इसे शब्दों और इशारों के माध्यम से व्यक्त करता है।

11. यदि पवित्र आत्मा आत्मा का शान्ति है, और क्रोध हृदय का कलह है, तो चिड़चिड़े क्रोध जैसी कोई बाधा उनके हमारे भीतर वास करने में नहीं है।

12. होंठों का मौन क्रोध के खिलाफ पहला हथियार है; लेकिन मौन के बहाने, मन में रंजिश पालना संभव है। और यह इससे भी बदतर है; क्रोध में भी मन की बात कहना बेहतर है। कुछ लोग, गुस्से में, खाना छोड़ देते हैं – जिससे यह जुनून और भी गहरा हो जाता है; जबकि अन्य बहुत अधिक खा लेते हैं – और यह उन्हें उग्र क्रोध में धकेल देता है; फिर भी, मध्यम प्रकार के सांत्वना देने से अक्सर ऐसे क्रोध को शांत करने में मदद मिली है। इसलिए, इस जुनून के खिलाफ संघर्ष में बड़ी सावधानी की आवश्यकता होती है। और प्रकृति स्वयं इसकी सहायता करती है, ठीक वैसे ही जैसे वह कामुक वासना के साँप की करती है।

13. कभी-कभी मधुर गायन सफलतापूर्वक चिड़चिड़ाहट को दूर कर देता है; हालाँकि, अन्य समयों में, जब यह अत्यधिक और अनुचित होता है, तो यह कामुकता को बढ़ावा देता है। इसलिए इस उपाय का उपयोग करना चाहिए, और इसके मात्रा तथा समय दोनों का विवेकपूर्ण निर्धारण करना चाहिए।

14. क्रोध करने वालों के लिए समुदाय में रहना अधिक लाभदायक है, जबकि कामवासना से ग्रस्त लोगों के लिए व्यभिचार और घोर अशुद्धि के उपचार के रूप में मौन का जीवन जीना बेहतर है। जहाँ तक इन दोनों में से किसी भी दोष से पीड़ित लोगों का प्रश्न है, उन्हें स्वयं को अपने आध्यात्मिक पिता के हाथों में सौंप देना चाहिए, ताकि वह कभी-कभी उन्हें मौन में रख सकें, और कभी-कभी उन्हें सामुदायिक आज्ञाकारिता के कार्यों में लगा सकें।

१५. कड़वाहट से हृदय की आँख को परेशान करना एक बड़ी बुराई है, जैसा कि कहा गया है: *'मेरी आँख क्रोध से व्याकुल है'* (भजन संहिता ६:८); लेकिन शब्दों में क्रोध की आंतरिक उथल-पुथल को व्यक्त करना और भी बड़ी बुराई है; अपने हाथों को इसमें शामिल करना भी पूरी तरह से मठवासी जीवन—देवदूतों जैसे और दिव्य जीवन—के विपरीत और उससे अपरिचित है।

16. आइए हम बारीकी से देखें, और हम देखेंगे कि जो लोग जल्दी क्रोध करते हैं, उनमें से कई लोग लगन से जागरण, उपवास और मौन का अभ्यास करते हैं - और शत्रु उन्हें इसमें बाधित नहीं करता; क्योंकि वह जानता है कि पश्चाताप और विलाप के कार्यों के बीच भी, इस जुनून के पोषण और पुनःप्रज्वलन के लिए ईंधन कैसे तैयार किया जाए।

17. धन्य नम्रता की शुरुआत, आत्मा की कड़वाहट और पीड़ा के बावजूद, धैर्यपूर्वक अपमान सहने में निहित है; मध्य चरण उन्हें सहते हुए अपने हृदय को दुःख और चिंता से मुक्त रखना है; और पूर्णता, यदि प्राप्त हो, तो उन अपमानों को स्वयं की प्रशंसा का स्रोत मानने में निहित है।

18. नवसिखुओं में क्रोध की कमी, जो प्रायश्चित के रोने से उत्पन्न होती है, और सिद्ध लोगों में क्रोध के प्रति दृढ़ता में अंतर है। पहले में, क्रोध को आँसुओं द्वारा, एक प्रकार की लगाम की तरह, रोका जाता है, जबकि दूसरे में इस सर्प को वैराग्य की तलवार से मार गिराया जाता है।

19. मैंने तीन भिक्षुओं को देखा जो सभी ने एक साथ अपमान सहा था। उनमें से एक ने अपमान महसूस किया लेकिन चुप रहा; दूसरे ने अपने लिए प्रसन्नता मनाई लेकिन जिसने उसका अपमान किया था, उसके लिए दुःखी हुआ; तीसरे ने, हालांकि, अपने पड़ोसी द्वारा किया गया नुकसान अपने मन में अंकित कर लिया, और उसके लिए उत्कट आँसू बहाए। यहाँ हम भय, पुरस्कार और प्रेम के अभ्यासियों को देखते हैं।

२०. रंजिश रखना क्रोध की चरम अभिव्यक्ति है: अपनी स्मृति में (हमारे पड़ोसी द्वारा हम पर किए गए) पापों को संजोए रखना, क्षमा के मार्ग से मुंह मोड़ना (जैसा कि ईश्वर द्वारा निर्धारित है: 'क्षमा करो, और तुम्हें क्षमा किया जाएगा'), – सभी पूर्व सद्गुणों का विनाश, एक ज़हर जो आत्मा को मारता है, एक कीड़ा जो दिल को खाता है, प्रार्थना करने में शर्म (कोई कैसे कह सकता है: 'हमें क्षमा करें, जैसे हम क्षमा करते हैं?'), आत्मा में ठोका गया एक कील, अनवरत पाप, अथक अत्याचार, घड़ी-घड़ी बुराई।

21. जिसने अपने क्रोध को वश में कर लिया है, उसने द्वेष के बीजों को अंकुरित होने से पहले ही कुचल दिया है; क्योंकि पितृत्व केवल एक जीवित पिता से ही आता है।

22. जिसने प्रेम प्राप्त किया है, वह वैर से अपरिचित हो गया है; परन्तु जो वैर पालता है, वह अपने भीतर अनवरत कष्टों को बढ़ाता है जिन्हें कोई विश्राम नहीं मिलता।

२३. यदि तुम्हें द्वेष रखना ही है, तो उसे राक्षसों के विरुद्ध रखो; और यदि शत्रुता पालनी ही है, तो उसे हर समय अपने ही शरीर के विरुद्ध पालो। शरीर एक कृतघ्न और विश्वासघाती मित्र है; जब उसे मनमानी करने दी जाती है, तो वह और भी अधिक हानि पहुँचाता है।

24. प्रतिशोधी हृदय धर्मग्रंथों का एक विकृत व्याख्याकार है, जो आत्मा के वचनों को अपने अनुकूल मोड़ता है। परन्तु यह प्रभु यीशु द्वारा हमें दी गई प्रार्थना से लज्जित हो जाए, जिसे हम प्रतिशोधी हृदय रखते हुए उच्चारित नहीं कर सकते।

२५. यदि, अपने ऊपर कठोर परिश्रम करने के बाद भी, आप अपने हृदय से इस काँटे को नहीं निकाल पाते हैं, तो उस व्यक्ति के सामने जाकर पश्चाताप में स्वयं को नम्र करो जिससे आप शत्रुता रखते हैं, भले ही केवल शब्दों में ही क्यों न हो; और उसके प्रति अपनी पुरानी कपटपूर्णता से लज्जित होकर, आप उसे अपने प्रेम में गले लगा लेंगे, और आपका विवेक आपको आग की तरह चुभेगा।

26. केवल तब ही अपने आप को इस क्लेश से मुक्त न समझें, जब आप अपने ऊपर अत्याचार करने वाले के लिए प्रार्थना करें, या उस पर उपहार दें, या उसे भोजन के लिए आमंत्रित करें; बल्कि तब, जब यह सुनकर कि उसे कोई दुर्भाग्य, चाहे मानसिक हो या शारीरिक, हुआ है, आपको दर्द महसूस हो और आप उसके लिए वैसे ही रोएँ जैसे आप अपने लिए रोते।

27. प्रभु यीशु के दुखों की स्मृति एक प्रतिशोधी हृदय को चंगा करती है – एक ऐसा हृदय जो उनके द्वेष की कमी से अत्यधिक लज्जित हो गया है।

28. कुछ लोग क्षमा प्राप्त करने के लिए स्वयं को कष्ट और पसीने में झोंकते हैं, लेकिन क्षमा करने वाला उनसे आगे है। क्योंकि यह कहावत सच है: *'यदि तुम* जल्दी *क्षमा करोगे, तो तुम्हें भी* उदारतापूर्वक *क्षमा किया जाएगा'* (लूका 6:37)।

29. रंजिश न रखना सच्चे पश्चाताप का संकेत है; परन्तु जो कोई, अन्याय याद करते हुए, यह सोचता है कि पश्चाताप हो रहा है, वह उस मनुष्य के समान है जो अपनी नींद में यह कल्पना करता है कि वह दौड़ रहा है।

30. मैंने उन लोगों को देखा है जो रंजिश रखते हैं, जो दूसरों को रंजिश न रखने की सलाह देते हुए भी, अपने ही शब्दों से लज्जित होकर इस जुनून से मुंह मोड़ लेते हैं।

31. बदनामी घृणा और रंजिश से उत्पन्न होती है – एक सूक्ष्म पीड़ा, एक छिपी हुई पिस्सू जो प्रेम का रक्त चूसती है।

32. कुछ लोग बदनामी को प्रेम का भेष देते हैं, सुधारने की इच्छा के रूप में। लेकिन यदि आप अपने पड़ोसी से प्रेम करते हैं, तो उसकी बुराई न करें, बल्कि उसके लिए प्रार्थना करें। केवल ऐसा ही आचरण प्रभु को प्रसन्न होता है।

33. जो कोई भी निंदा की भावना से मुक्त होना चाहता है, उसे अपनी फटकार गिरने वाले पर नहीं, बल्कि प्रलोभित करने वाले शैतान पर करनी चाहिए। क्योंकि कोई भी ईश्वर के विरुद्ध पाप करना नहीं चाहता, यद्यपि हर कोई जबरदस्ती से मुक्त है (अर्थात्, वे अपनी इच्छा से पाप करते हैं)।

34. पापों की क्षमा के सबसे संक्षिप्त मार्गों में से एक है किसी का न्याय न करना; क्योंकि कहा गया है: *'न्याय न करो, और तुम पर न्याय नहीं किया जाएगा'* (लूका 6:37)।

35. जैसे आग पानी के विरोधी है, वैसे ही पश्चाताप करने वाले के लिए दूसरों का न्याय करना अनुचित है। भले ही आप किसी को उसी क्षण पाप करते देखें जब उसकी आत्मा उसके शरीर से अलग हो रही हो, उसका निंदा न करें, क्योंकि ईश्वर का न्याय मनुष्यों से छिपा हुआ है। कुछ लोग स्पष्ट रूप से बड़े पाप में पड़े हैं, जबकि उन्होंने गुप्त रूप

से और भी बड़े पुण्य कार्य किए हैं; और जो गपशप करना पसंद करते हैं, वे भटक गए हैं, क्योंकि वे धुएँ को तो देखते हैं लेकिन उसके पीछे छिपे सूर्य को नहीं देख पाते।

36. अनुभव ने दिखाया है कि हम अपने पड़ोसी के जिन भी पापों, चाहे वे शरीर के हों या आत्मा के, की निंदा करते हैं, हम स्वयं उनमें ही गिरेंगे।

37. जो लोग अपने पड़ोसी के अपराधों की निंदा करने में जल्दबाज़ और कठोर होते हैं, वे इस जुनून के कारण क्रोधित होते हैं, क्योंकि उनमें अपने स्वयं के पापों की पूर्ण और निरंतर स्मृति और उनके लिए शोक की कमी होती है। क्योंकि यदि कोई, आत्म-प्रेम के आवरण से मुक्त होकर, अपने बुरे कर्मों को सच्चाई से देखता है, तो वह अपने अलावा किसी और चीज़ की परवाह नहीं करेगा, यह सही तर्क देते हुए कि अपने लिए शोक मनाने के लिए एक पूरा जीवन भी पर्याप्त नहीं होगा, भले ही वह सौ साल जिए, और भले ही वह अपने ही आँखों से पूरी यॉर्डन नदी को बहते हुए देखे।

38. राक्षस, जो आत्माओं के हत्यारे हैं, हमें या तो पाप करने के लिए उकसाते हैं या, यदि हम पाप नहीं करते हैं, तो पाप करने वालों को दोषी ठहराने के लिए, ताकि इस प्रकार वे हमें - और जो पाप नहीं करते हैं उन्हें भी - कलंकित कर सकें।

39. जान लो कि शत्रुता की भावना से, पड़ोसी की शिक्षाओं, कर्मों और गुणों की आलोचना करने में आनंद लेना एक प्रतिशोधी और ईर्ष्यालु व्यक्ति का लक्षण है।

40. मैंने ऐसे लोगों को देखा है जो गुप्त रूप से गंभीर पाप करते हैं, जो बस अघोषित ही रहते हैं, फिर भी, अपनी ही पवित्रता से आश्वस्त, उन पर निर्दयता से हमला करते हैं जो प्रकाश में आए छोटे-मोटे पापों में गिर गए हैं।

41. न्याय करना ईश्वर के अधिकार का एक लज्जास्पद हड़प है; और निंदा करना अपनी ही आत्मा का विनाश है।

42. जैसे अहंकार, बिना किसी अन्य जुनून के भी, एक व्यक्ति को नष्ट कर सकता है, वैसे ही निंदा अपने आप में हमें पूरी तरह से नष्ट कर सकती है। इस प्रकार उस फरीसी को इसी के लिए दोषी ठहराया गया था।

43. क्रोधी मनुष्य और कपटी का मलिन हुआ; और उनकी बातचीत में सत्य का एक भी शब्द नहीं पाया गया। यदि आप पहले वाले के हृदय में झाँकेंगे, तो आपको क्रोध मिलेगा; और यदि आप दूसरे वाले की आत्मा की जाँच करेंगे, तो आपको कपट दिखाई देगा।

44. जैसे हवाएं गहरे गर्त को उकसाती हैं, वैसे ही क्रोध, किसी भी अन्य भाव से अधिक, मन को बेचैन कर देता है।

45. (*इस जुनून का इकरार*)। हमें बताओ, हे पागल और लज्जास्पद जुनून, तुम्हारे जनक का क्या नाम है जिसने तुम्हें जन्म दिया, और तुम्हारी दुष्ट माँ का क्या नाम है जिसने तुम्हें जन्म दिया; साथ ही, तुम्हारे नीच बेटों और बेटियों के नाम क्या हैं; और केवल इतना ही नहीं, बल्कि तुम्हारे विरुद्ध कौन संघर्ष करते हैं, और तुम्हारा वध कौन करते हैं? – "मेरी कई माताएँ हैं , और एक से अधिक पिता। मेरी माताएँ हैं: अहंकार, लालच, भोग-लिप्सा, और कभी-कभी व्यभिचार; जबकि मेरा मुख्य पिता घमंड है। मेरी बेटियाँ हैं: द्वेष, घृणा, शत्रुता, और आत्म-न्याय। मेरे प्रतिद्वंद्वी वे सद्गुण हैं जो मेरी बेटियों के विपरीत हैं – धैर्य और कोमलता; जबकि मेरी बदनाम करने वाली विनम्रता है।"

5. दुख के विरुद्ध संघर्ष

1. जिसने संसार से घृणा कर ली है, वह दुख से मुक्त हो गया है। लेकिन यदि कोई भी किसी दृश्यमान वस्तु से लगाव रखता है, तो वह अभी तक उससे मुक्त नहीं हुआ है; क्योंकि कोई प्रिय वस्तु से वंचित होकर कैसे दुखी न हो? यद्यपि हमें सभी बातों में आत्म-नियंत्रण बनाए रखना चाहिए, फिर भी हमें इस संबंध में सबसे बढ़कर सावधान और सतर्क रहना चाहिए।

2. जब मठाधीश हमें डांट-फटकार और निंदा के माध्यम से लाभकारी अपमान से परखते हैं, तो हमें सर्वव्यापी न्यायाधीश के भयानक शब्दों को याद करना चाहिए; और हमारे भीतर उत्पन्न हुई लापरवाह पीड़ा और दुख को हम निस्संदेह नम्रता और धैर्य से, एक द्विधारी तलवार की तरह, काट डालेंगे।

३. यदि हम गिर गए हैं, तो हमें सर्वप्रथम दुख की भावना के विरुद्ध हथियार उठाना चाहिए; क्योंकि वह, हमारी प्रार्थना के दौरान प्रकट होकर और परमेश्वर के सामने हमारी पूर्व की धृष्टता की याद दिलाकर, हमें प्रार्थना से भटकाने का प्रयास करती है।

४. दीन लोगों के प्रति प्रेम चिड़चिड़ापन का इलाज है; जबकि भजन-गायन, दया और लोभ-रहितता दुख के संहारक हैं।

5. जैसे बहुत अधिक लकड़ी की आग लौ को दबा देती है और बुझा देती है, और बहुत सारा धुआँ उत्पन्न करती है, वैसे ही अत्यधिक शोक आत्मा को, मानो, धुएँ से भरा और अँधेरा बना देता है, और आँसुओं की धारा को सुखा देता है।

6. संकीर्ण मार्ग अपमान, निंदा, उपहास, दुर्व्यवहार और कष्टों के बोझ से चिह्नित है। और यह उद्धार की ओर ले जाता है यदि आप—जब अन्याय किया जाए—धैर्यपूर्वक सहन करते हैं; जब बदनाम किया जाए—द्वेष न करें; जब अपमानित किया जाए—क्रोधित न हों; और जब दोषी ठहराया जाए—नम्रता से समर्पण करें। धन्य हैं वे जो इस मार्ग पर चलते हैं, क्योंकि स्वर्ग का राज्य उन्हीं का है (मत्ती 5:3–12)।

७. स्वेच्छा से सभी दुखों को सहना ही पश्चाताप का सच्चा, उद्धारकारी मार्ग है।

८. स्वयं को न केवल पहले से झेली गई दृश्य और अदृश्य पीड़ाओं के लिए, बल्कि और भी बड़ी पीड़ाओं के लिए योग्य समझना, सक्रिय पश्चाताप का एक संकेत है।

9. जैसे पानी, जब बंद किया जाता है, तो ऊपर की ओर उठता है, वैसे ही दुर्भाग्य से दबी आत्मा भी पश्चाताप में ईश्वर की ओर ऊपर की ओर प्रवाहित होती है और उद्धार पाती है।

10. एक अबा किर के साथ मठ में हर दिन दुर्व्यवहार किया जाता था; और नौकर लगभग हर दिन उसे भोजनशाला से बाहर निकाल देते थे, इसलिए वह अक्सर बिना भोजन के रह जाता था। मैंने (संत जॉन क्लाइमक्स) उससे पूछा कि वह इस बारे में क्या सोचता है। उसने जवाब दिया: 'मुझ पर विश्वास करें, पिताजी, मेरे ये गुरु यह परख रहे हैं कि क्या मैं सचमुच एक भिक्षु हूँ। और चूँकि वे यह गंभीरता से नहीं करते हैं, मैं, उनके इरादे को जानते हुए, इसे खुशी-खुशी सहन करता हूँ और दुखी नहीं होता।' – दो साल बाद, मरने से पहले, उन्होंने कहा: 'मैं आप लोगों का धन्यवाद करता हूँ; क्योंकि आपने मेरे अपने उद्धार के लिए मुझे परीक्षा में डाला, मैं सत्रह वर्षों से राक्षसों के प्रलोभनों से मुक्त रहा हूँ।'

11. एक और व्यक्ति, एक वृद्ध मैसेडोन, को दंड के रूप में, हमेशा नवसिखुओं के बीच रहने की उचित सज़ा दी गई थी; लेकिन जब उसकी अवधि पूरी हो गई, तो उसने स्वयं इस अपमानजनक प्रायश्चित में रहने की अनुमति मांगी, मानो उसने कोई घोर पाप किया हो। – बाद में, उसने संत जॉन क्लाइमक्स से स्वीकार किया: "मुझे हर आंतरिक संघर्ष में कभी इतनी राहत नहीं मिली, और मैंने अपने भीतर दिव्य प्रकाश की मिठास को पहले कभी इस तरह महसूस नहीं किया जैसा अब कर रहा हूँ।"

12. जब हमें कटु आलोचनाओं से पीड़ा होती है, तो हमें अपने पापों को याद करना चाहिए, जब तक कि प्रभु, हमारी आवश्यकता और हमारे द्वारा स्वयं पर पहुँचाई गई हानि को देखकर, कृपा करके हमारे पापों को मिटा न दें – और हमारे हृदय को कुरेदने वाले दुखों को आनंद में परिवर्तित न कर दें, जैसा कि भजन रचयिता कहते हैं: *'मेरे हृदय में मेरी बहुत सी क्लेशों के कारण, तेरी सांत्वनाओं ने मेरी आत्मा को आनन्दित किया है'* (भजन संहिता 93:19)।

१३. धन्य है वह जो परमेश्वर के लिए प्रतिदिन डाँट-फटकार और अपमान सहता है, और स्वयं को सहन करने के लिए विवश करता है; वह शहीदों के साथ आनन्दित होगा और स्वर्गदूतों के साथ निडर होकर बात करेगा। – जो कोई भी धर्मनिष्ठ या अधर्मी फटकार को अस्वीकार करता है, वह अपने स्वयं के उद्धार को अस्वीकार करता है, लेकिन जो कोई भी इसे स्वीकार करता है, चाहे दुख के साथ हो या बिना, उसे जल्द ही अपने पापों की क्षमा प्राप्त होगी।

14. हे मेरे पुत्र! यदि तुम पहले अपमान सहने के लिए स्वयं को प्रस्तुत करोगे, तो तुम धन्य मन की शांति प्राप्त करने के लिए बहुत कम परिश्रम करोगे।

१५. जैसे एक छोटी सी लौ बहुत सारी मोम को पिघला देती है, वैसे ही एक मामूली अपमान अक्सर अचानक हृदय को नरम कर देता है, उसे शांत करता है, और उसकी सारी उग्रता, सारी कठोरता और कड़वाहट को मिटा देता है।

16. एक नवसिखुआ की आत्मा में होने वाली चिढ़, अपमान और इस तरह की सभी घटनाएँ वर्मवुड (एक प्रकार की कड़वी जड़ी-बूटी) की कड़वाहट के समान हैं, जबकि प्रशंसा, सम्मान और स्वीकृति को शहद के समान माना जाता है। लेकिन वर्मवुड सभी आंतरिक अशुद्धियों को शुद्ध करता है, जबकि शहद आमतौर पर कड़वाहट को बढ़ाता है।

६. निराशा की भावना के विरुद्ध संघर्ष

1. निराशा आत्मा का शिथिल पड़ जाना, आध्यात्मिक प्रयासों की उपेक्षा, और अपने संकल्प से मुंह मोड़ लेना है; साधारण लोगों का आनंद, ईश्वर का बदनाम करने वाला, मानो वह निर्दयी और अमानवीय हो; भजन-गायन में

यह सुर-मेल से बाहर है, प्रार्थना में दुर्बल, फिर भी शारीरिक सेवा में लोहे की तरह मजबूत, हाथ के काम में परिश्रमी, और आज्ञाकारिता में त्वरित और इच्छुक है।

2. आज्ञाकारिता में जीवन यापन करने वाला मनुष्य निराशा को नहीं जानता; और इंद्रिय सुखों के माध्यम से वह आध्यात्मिक रूप से समृद्ध प्राप्त करता है।

3. सामुदायिक जीवन निराशा का शत्रु है, लेकिन मौन तपस्वी के लिए यह एक स्थायी साथी है; यह मृत्यु से पहले उससे दूर नहीं होगा, और न ही उसके निधन तक उससे संघर्ष करना बंद करेगा। तपस्वी की कुटिया को देखकर, यह मुस्कुराता है, और पास आकर, उसके पास ही बस जाता है।

4. एक चिकित्सक सुबह बीमारों से मिलता है, जबकि निराशा मध्याह्न के आसपास तपस्वियों से मिलती है।

५. निराशा आतिथ्य को प्रेरित करती है, और अपने हाथ के काम से दान देने के सुझावों से परेशान करती है; यह उत्सुकता से बीमारों से मिलने के लिए प्रेरित करती है, यह शब्द याद दिलाते हुए: *'मैं बीमार था और तुम मेरे पास आए'* (मत्ती २५:३६); यह लगातार आग्रह करती है: 'दुखी और हतोत्साहित लोगों के पास जाओ' – और, स्वयं हतोत्साहित होने के कारण, हमें हतोत्साहित लोगों को सांत्वना देने की सलाह देती है।

६. जो प्रार्थना करने के लिए निकले हैं, उन्हें यह आवश्यक कार्यों की याद दिलाती है, और किसी न किसी आशीर्वाद के साथ, एक मौन लगाम की तरह, हमें प्रार्थना से भटकाने के लिए हर संभव साधन रचती है।

7. अन्य सभी भावों पर एक ही सद्गुण द्वारा विजय प्राप्त की जाती है; लेकिन एक भिक्षु के लिए, निराशा सर्व-व्यापी मृत्यु है। बुराई के सभी आठ नेताओं में, निराशा की भावना सबसे दुखद है।

8. जब भजन-गायन नहीं होता, तो निराशा उत्पन्न नहीं होती; और नियम के अंत में (जिस दौरान नींद आने लगती है), आँखें प्रसन्नता से खुलती हैं।

९. निराशा के दौर में, देह की प्रलोभनियाँ प्रकट होती हैं; और (ध्यानमग्न) भिक्षु को निराशा जितने मुकुट नहीं लाती, उतने अन्य कोई भी चीज़ नहीं लाती।

10. जो अपने लिए रोता है, वह निराशा को नहीं जानता।

11. जो भिक्षु धन से प्रेम करता है, वह निराशा को नहीं जानता: वह हर क्षण प्रेरित के वचनों को याद करता है: *'जो आलसी है, वह न खाए'* (2 थिस्सलुनीकियों 3:10), और एक अन्य: *'इन हाथों ने मेरी और मेरे साथियों की सेवा की है'* (प्रेरितों के काम 20:34)।

12. निराशा कभी-कभी इंद्रिय सुखों में लिप्त होने से उत्पन्न होती है, और कभी-कभी ईश्वर के सामने अनादर से।

13. लगन से किया गया प्रार्थना निराशा का प्रतिषेधक है; जबकि अंतिम न्याय की याद उत्साह (ईश्वर की इच्छानुसार कार्य करने के लिए) उत्पन्न करती है।

14. अच्छी आशा वह तलवार है जिससे भिक्षु निराशा पर विजय प्राप्त करता है और उसे मार डालता है।

१५. (*निराशा का स्वीकारोक्ति*)। हमें बताओ, हे लापरवाह और सुस्त वासना: तुम्हें दुष्टता में किसने जन्म दिया? तुम्हारी संतानें कौन हैं? तुम्हारे विरुद्ध युद्ध कौन करता है? और तुम्हारा वधकर्ता कौन है? – (*उत्तर*)। – मेरी कई माताएँ हैं: कभी-कभी, आत्मा की संवेदनहीनता; कभी-कभी, स्वर्गीय आशीर्वादों को भूल जाना; और कभी-कभी, अत्यधिक परिश्रम। मेरे वंशज, जो मुझमें निवास करते हैं, वे हैं निवास-स्थान में परिवर्तन, आध्यात्मिक पिता की आज्ञाओं की अवहेलना, अंतिम न्याय को भूल जाना, और कभी-कभी, मठवासी व्रत का त्याग। मेरे विरोधी, जो मुझे बाँधते हैं, वे सुई का काम करते हुए भजन गाना है। मेरा शत्रु मृत्यु का विचार है; फिर भी प्रार्थना, शाश्वत आशीर्वाद प्राप्त करने की दृढ़ आशा के साथ, मुझे मार डालती है।

७. व्यर्थता के विरुद्ध संघर्ष

1. व्यर्थता श्रम का अपव्यय है, पसीने की हानि है, आत्मा के खजाने की चोर है, जीवन के खलिहान में एक चींटी है जो, यद्यपि छोटी है, हमारे श्रम के फलों और हमारे कर्मों के पुरस्कारों को चुराने के लिए हमेशा तैयार रहती है।

२. दंभ हर चीज़ से चिपका रहता है: जब मैं उपवास करता हूँ तो मुझे गर्व होता है, लेकिन जब मैं अपनी संयम को दूसरों से छिपाने के लिए अपना उपवास तोड़ता हूँ, तो मुझे फिर से गर्व होता है, खुद को बुद्धिमान समझते हुए; जब मैं अच्छे कपड़े पहनता हूँ तो दंभ मुझ पर हावी हो जाता है; लेकिन जब मैं फटे-पुराने कपड़े भी पहनता हूँ, तब भी मुझे गर्व होता है; अगर मैं बोलता हूँ, तो अहंकार मुझ पर हावी हो जाता है; अगर मैं चुप रहता हूँ, तो यह फिर से मुझ पर हावी हो जाता है। इस त्रिशूल को आप जिस भी दिशा में फेंकें, इसकी नोक हमेशा ऊपर की ओर रहेगी।

3. एक व्यर्थ व्यक्ति मूर्तिपूजक होता है। वह सोचता है कि वह ईश्वर का सम्मान कर रहा है, लेकिन वास्तव में वह ईश्वर को नहीं बल्कि लोगों को प्रसन्न करता है।

४. जो भी दिखावा करना पसंद करता है, वह घमंडी है। घमंडियों का उपवास बिना फल का रहता है, और उनकी प्रार्थना निष्फल होती है; क्योंकि वे दोनों ही काम मानव प्रशंसा के लिए करते हैं।

5. एक व्यर्थ तपस्वी स्वयं को दोहरा नुकसान पहुँचाता है, क्योंकि वह अपने शरीर को थका देता है पर उसे कोई फल नहीं मिलता।

6. प्रभु अक्सर हमारी आँखों से उन गुणों को छिपा देते हैं जो हमने अर्जित किए हैं; लेकिन जो व्यक्ति हमारी प्रशंसा करता है—या यूँ कहें कि चापलूसी करता है—वह अपनी प्रशंसा से हमारी आँखें खोल देता है, और जैसे ही वे खुलती हैं, गुणों का धन गायब हो जाता है (यह, मानो, हमारी दृष्टि से खाया जाता है)।

7. चापलूस राक्षसों का सेवक, अहंकार का उत्प्रेरक, करुणा का विनाशक, सद्गुणों का नाशक, और जो व्यक्ति को सच्चे मार्ग से भटकाता है, होता है / *'जो तुम्हें आशीर्वाद देते हैं, वे तुम्हारी चापलूसी करते हैं, और वे तुम्हारे पैरों में ठोकरें डाल रहे हैं,'* नबी (यशायाह 3:12) कहते हैं।

8. मैंने ऐसे लोगों को देखा है जो रोते हैं, जो प्रशंसा किए जाने पर, प्रशंसा से क्रोधित हो उठते हैं, और, जैसा कि व्यापार में अक्सर होता है, एक भावना को दूसरी भावना से बदल देते हैं।

९. जब कोई पड़ोसी, या यहाँ तक कि कोई मित्र, आपको फटकारता है, चाहे आपकी अनुपस्थिति में या आपकी उपस्थिति में, तो प्रेम दिखाएँ – उसकी प्रशंसा करें।

10. मानव प्रशंसा को हृदय से अस्वीकार करना एक महान बात है, लेकिन राक्षसों की प्रशंसा से स्वयं को दूर रखना उससे भी बड़ी बात है।

11. जो स्वयं अपनी निंदा करता है, वह विनम्रता नहीं दिखाता (क्योंकि स्वयं से अपमान कौन सहन कर सकता है?); बल्कि वह जो, जब कोई दूसरा उसे डाँटता है, तो उस व्यक्ति के प्रति अपना प्रेम कम नहीं करता।

12. जब अहंकार का राक्षस देखता है कि तपस्वी ने, चाहे थोड़ी ही मात्रा में, हृदय की शांति प्राप्त कर ली है, तो वह तुरंत उसे दुनिया में निकलने के लिए प्रेरित करता है, यह कहते हुए: 'जाओ और डूबती आत्माओं को बचाओ।'

13. व्यर्थता तुच्छ लोगों को बाहरी लोगों की उपस्थिति में विनम्रता का भेष धारण करने और अपने आचरण, मुखमंडल और स्वर में धार्मिकता दिखाने के लिए प्रेरित करती है; भोजन के समय यह उन्हें स्पष्ट रूप से परहेज़ करने के लिए मजबूर करती है; भजन-गायन के दौरान, यह आलसी को उत्साही और सुर-बधिर को सुरमय बना देती है।

14. घमंड अनुग्रहित लोगों को अभिमानी बना देता है, और जिनकी अवहेलना की जाती है, उनमें द्वेष की भावना बो देता है।

१५. व्यर्थता स्वाभाविक प्रतिभाओं से बहुत आसानी से चिपक जाती है, और उनके माध्यम से अक्सर अपने दुखी दासों पर विनाश लाती है।

16. एक बार मैंने देखा कि घमंड का दानव अपने साथी दानव, क्रोध के दानव को, कैसे बाहर निकालता है। एक भाई दूसरे भाई से क्रोधित हो गया; लेकिन जब आम लोग आए, तो वह अचानक चुप हो गया, क्योंकि उसने एक बार फिर खुद को घमंड के हवाले कर दिया था; क्योंकि वह एक साथ इन दोनों मालिकों की सेवा नहीं कर सकता था।

17. जो कोई भी दंभ का दास बन जाता है, वह दोहरा जीवन जीता है: एक बाहरी रूप से, और दूसरा विचारों और भावनाओं के क्षेत्र में; एक निजी तौर पर, और दूसरा सार्वजनिक रूप से।

18. जिसने स्वर्गीय महिमा का स्वाद चखा है, वह स्वाभाविक रूप से सभी सांसारिक महिमाओं को तुच्छ समझता है; और मुझे आश्चर्य होगा यदि कोई, जिसने पहले वाले का स्वाद नहीं चखा है, बाद वाले को पूरी तरह से तुच्छ समझ ले।

19. मैंने देखा है कि कैसे कुछ लोगों ने अहंकार के कारण अपने आध्यात्मिक प्रयास शुरू किए; लेकिन बाद में, अपने प्रयासों में अपना इरादा बदलकर, उन्होंने एक निंदनीय शुरुआत को एक प्रशंसनीय अंत से सजाया।

20. जो कोई भी स्वाभाविक उपहारों, जैसे कि हाज़िरजवाबी, जल्दी समझने की क्षमता, पढ़ने और उच्चारण में कौशल, तीव्र बुद्धि, और अन्य समान क्षमताओं, जो बिना प्रयास के हमें मिलती हैं, पर घमंड करता है, वह कभी भी स्वाभाविक आशीर्वादों से ऊपर कुछ भी प्राप्त नहीं कर पाएगा; क्योंकि *'जो थोड़ी सी बात में विश्वासयोग्य नहीं है, वह बहुत में भी विश्वासयोग्य नहीं होगा'* उसके घमंड के कारण (लूका 16:10)।

21. जो कोई भी अपने परिश्रम के बदले में परमेश्वर से उपहार मांगता है, वह एक अस्थिर नींव पर खड़ा है; लेकिन जो कोई, इसके विपरीत, स्वयं को हमेशा परमेश्वर का ऋणी मानता है, वह अचानक स्वयं को अपनी सबसे बड़ी अपेक्षाओं से भी परे स्वर्गीय धन-संपत्ति से समृद्ध पाएगा।

22. इस उकसाने वाले की न सुनो जब वह तुम्हें सुनने वालों के लाभ के लिए अपने गुणों का प्रचार करना सिखाता है; *'क्योंकि मनुष्य को क्या लाभ यदि वह* सारी दुनिया प्राप्त कर ले, *परन्तु अपनी आत्मा खो दे?'* (मत्ती 16:26)। एक विनम्र और ईमानदार स्वभाव, और उसके अनुरूप शब्दों से अपने पड़ोसियों को जितना लाभ होता है, उतना और किसी चीज़ से नहीं होता। इस तरह हम दूसरों को भी घमंडी न बनने के लिए प्रोत्साहित करेंगे; और इससे अधिक लाभदायक और क्या हो सकता है?

23. प्रशंसा आत्मा को गौरवान्वित और फुला देती है; लेकिन जब आत्मा गौरवान्वित होती है, तो अहंकार उस पर हावी हो जाता है, जो उसे स्वर्ग तक उठाता है और फिर उसे गर्त में फेंक देता है।

24. दुष्ट घमंड हमें उस सद्गुण का दिखावा करना सिखाता है जो हममें नहीं है, जिससे हम उद्धारकर्ता के वचनों से धोखा खा जाते हैं: *'अपनी रोशनी ऐसा चमके लोगों के सामने, कि वे तुम्हारे भले काम देखकर पिता के महिमा करें जो स्वर्ग में है'* (मत्ती 5:16)।

25. अपने पड़ोसी को ठेस न पहुँचाने के विचार से अपनी लज्जा को मत छिपाओ; यद्यपि इस उपाय को अपनाना हमेशा लाभदायक नहीं हो सकता, बल्कि यह पापों की विशेष प्रकृति पर निर्भर करता है।

26. जब हमारे प्रशंसक—या, यूँ कहें, हमारे चापलूस—हमारी प्रशंसा करना शुरू करते हैं, तो हमें तुरंत अपने अनेक पापों (और ईश्वर के न्याय, जो मनुष्य के न्याय जैसा नहीं है) को याद करना चाहिए, और हम देखेंगे कि हम उनके द्वारा हमारे सम्मान में कही या की गई बातों के अयोग्य हैं।

27. जो हृदय से सरल हैं, वे इस विष से विशेष रूप से प्रभावित नहीं होते हैं; क्योंकि घमंड सरलता का विनाश और दिखावे का जीवन है।

28. अक्सर ऐसा होता है कि एक कीड़ा, परिपक्वता प्राप्त करने के बाद, पंख उगाता है और बड़ी ऊँचाइयों पर उड़ान भरता है; उसी प्रकार अहंकार भी, मजबूत होने पर, घमंड को जन्म देता है, जो सभी बुराइयों का स्रोत और चरम है।

29. अहंकार के उन्मूलन की शुरुआत अपने होठों पर नियंत्रण रखने और अपमान को अपनाने में निहित है; मध्य चरण अहंकार से सभी मानसिक लगाव को काटना है; और अंत (यदि वास्तव में इस गर्त का कोई अंत है) यह है कि दूसरों की उपस्थिति में बिना शर्म के वह काम किया जाए जो अपमान लाता है।

30. अपनी कुलीनता को छिपाओ, और अपने उच्च जन्म का घमंड मत करो, कहीं ऐसा न हो कि तुम बातों में एक तरह के और कर्मों में दूसरे तरह के बन जाओ।

31. मैंने एक अनुभवहीन शिष्य को देखा, जो कुछ लोगों की उपस्थिति में अपने गुरु के गुणों का बड़बोली से बखान कर रहा था; और दूसरे की फसल से अपने लिए महिमा पाने का सोचकर, उसने अपने ऊपर अपमान ही ला लिया, जब सभी ने उससे कहा: 'एक अच्छे पेड़ से बेकार की टहनी कैसे निकली?'

32. व्यर्थता वाचालता के सिंहासन पर भव्य रूप से प्रकट होना पसंद करती है; लेकिन होंठों का मौन व्यर्थता का अंत कर देता है।

33. जो लोग घमंड के दानव के आगे झुक जाते हैं, वे कामुक विचारों से अस्थायी रूप से मुक्त होने पर, अपने बारे में बहुत ऊँचा सोचने लगते हैं और तभी उन्हें कामुकता की अचानक लहरें झकझोर देती हैं। परिणामस्वरूप उत्पन्न होने वाली कामुक प्रवृत्तियाँ उन्हें अपने हृदय की गहराइयों में छिपी व्यर्थता को पहचानने के लिए प्रेरित करती हैं, और उन्हें यह सिखाती हैं कि कभी-कभी प्राप्त होने वाली हृदय की पवित्रता का श्रेय अपनी लगन और प्रयास को न दें, प्रेरित की आज्ञा का पालन करते हुए: *'जो तुम्हारे पास है, वह तुम्हें मिला है'* (1 कुरिन्थियों 4:7), चाहे सीधे परमेश्वर से, या दूसरों की मदद और उनकी प्रार्थनाओं के द्वारा।

34. मौन और स्थिरता घमंड के शत्रु हैं; लेकिन यदि आप किसी समुदाय में रहते हैं, तो अपमान सहन करें।

35. यदि अत्यधिक अहंकार वह है जब कोई व्यक्ति अपने लिए प्रशंसा करने वाला आसपास न देखकर, अकेले में अहंकारी व्यवहार करता है, तो पूर्ण विनम्रता का लक्षण यह है कि दूसरों की उपस्थिति में भी व्यर्थ विचारों पर विजय प्राप्त न हो।

8. अहंकार के विरुद्ध संघर्ष

1. अहंकार ईश्वर का अस्वीकार है, लोगों के प्रति तिरस्कार है, निंदा की जननी है, प्रशंसा की उपज है, ईश्वर की सहायता को ठुकराना है, पतन का कारण है, क्रोध का स्रोत है, दूसरों के कर्मों का कड़वा यातनादाता है, अमानवीय न्यायाधीश है, ईश्वर का विरोधी है, ईश्वर निंदा की जड़ है।

2. अहंकार की *शुरुआत* व्यर्थता के जड़ जमाने में होती है; इसका '*मध्य* चरण अपने पड़ोसी को तुच्छ समझना, अपने ही प्रयासों का निर्लज्ज ढंग से गुणगान करना, मन में आत्म-प्रशंसा करना और फटकार से घृणा करना है; जबकि इसका '*अंत*' ईश्वर की सहायता को अस्वीकार करना, अपने ही प्रयासों पर घमंडी निर्भरता और एक शैतानी स्वभाव है।

3. मैंने ऐसे लोगों को देखा है जो अपने होठों से परमेश्वर का धन्यवाद करते थे, जबकि अपने मन में घमंड करते थे। इसका एक स्पष्ट उदाहरण फरीसी है, जब उसने कहा: '*हे परमेश्वर, मैं तेरा धन्यवाद करता हूँ*' (लूका 18:11)।

4. जहाँ पतन हुआ, वहाँ घमंड पहले ही जड़ें जमा चुका था, क्योंकि घमंड ही पतन का अग्रदूत है।

5. एक आत्म-धर्मी भिक्षु दृढ़ता से विरोध करेगा; लेकिन एक विनम्र भिक्षु न केवल विरोध करने से परहेज़ करेगा, बल्कि अपनी आँखें उठाने की हिम्मत भी नहीं करेगा।

6. सरू का पेड़ न तो झुकता है और न ही जमीन पर लोट जाता है; उसी प्रकार, एक घमंडी भिक्षु में विनम्र आज्ञाकारिता नहीं हो सकती।

7. यदि '*परमेश्वर घमण्डी लोगों का विरोध करता है*' (याकूब 4:6), तो फिर उनकी दया कौन कर सकता है? – और यदि '*जो कोई भी घमण्डी है वह यहोवा के लिए घृणास्पद है*' (नीतिवचन 16:5), तो फिर उसे कौन शुद्ध कर सकता है?

8. जो डाँट-फटकार को तुच्छ समझता है, वह अपने अहंकार को प्रकट करता है; परन्तु जो उसे ग्रहण करता है, उसने अपने आपको अहंकार के बन्धनों से मुक्त कर लिया है।

9. एक बार एक बुद्धिमान वृद्ध ने एक अहंकारी भाई को फटकार लगाई; लेकिन बाद वाला, अपनी आत्मा में अंधा हो कर, बोला: 'मुझे माफ करें, पिताजी, मैं बिल्कुल भी अहंकारी नहीं हूँ।' तब बुद्धिमान वृद्ध ने उत्तर दिया: 'मेरे बेटे, तुम यह कैसे और स्पष्ट रूप से साबित कर सकते हो कि तुम अहंकारी हो, बजाय इसके कि तुम यह दावा करो कि तुममें कोई अहंकार नहीं है?'

10. गर्वीले स्वभाव के लोगों के लिए आज्ञाकारी होना, सबसे नम्र और तिरस्कृत जीवन जीना, और गर्व के विनाशकारी परिणामों तथा इसके अलौकिक उपचारों के वृत्तांत पढ़ना सबसे अधिक लाभदायक है।

11. दूसरों के आभूषणों का घमंड करना शर्मनाक है, और ईश्वर की दी हुई चीज़ों पर गर्व करना मूर्खता की चरम सीमा है। केवल उन्हीं गुणों का घमंड करो जो तुम्हारे जन्म से पहले तुममें थे; जहाँ तक उन गुणों का सवाल है जिन्हें तुमने अपने जन्म के बाद अर्जित किया है, ईश्वर ने वे तुम्हें वैसे ही दिए हैं, जैसे उन्होंने तुम्हारा जन्म ही दिया है। – यदि आपने अपनी बुद्धि की सहायता के बिना कोई सद्गुण विकसित किए हैं, तो वे ही आपके हों, क्योंकि स्वयं बुद्धि भी आपको ईश्वर द्वारा प्रदान की गई है। – और यदि आपने अपने शरीर के बिना कोई करतब दिखाए हैं, तो वे केवल आपके अपने प्रयास का परिणाम थे; क्योंकि शरीर भी आपका नहीं है - यह ईश्वर की रचना है।

12. जब तक आपने अपने बारे में न्यायाधीश का अंतिम निर्णय नहीं सुना है, तब तक अपने गुणों पर भरोसा न करें; क्योंकि सुसमाचार में हम देखते हैं कि विवाह भोज में पहले से ही लेटा हुआ एक व्यक्ति भी हाथ-पैर बाँधकर बाहरी अंधकार में फेंक दिया गया था (मत्ती 22:13)।

13. हम स्वयं की परीक्षा करना और अपने जीवन की तुलना हमारे से पहले गए पवित्र पिताओं और महान पुरुषों से करना बंद न करें; और हमें पता चलेगा कि हमने इन महान पुरुषों के पदचिन्हों पर चलने के लिए अभी तक एक भी कदम नहीं उठाया है - वास्तव में, हमने अपने व्रत भी वैसे नहीं निभाए हैं जैसे हमें निभाने चाहिए थे, बल्कि हम अभी भी संसार के मार्गों पर ही चलते हैं।

14. एक भिक्षु नम्रता का एक गहरा गर्त है, जिसमें उसने स्वयं को डाल लिया है, और जिसमें उसने हर दुष्ट आत्मा को डुबा दिया है।

१५. अहंकार से पापों का भूल जाना होता है; परन्तु उनका स्मरण अहंकार का मध्यस्थ है।

16. अहंकार आत्मा का दरिद्रता है, जो स्वयं को धनी समझती है और अंधकार में होते हुए भी प्रकाश का स्वामी होने का भ्रम पालती है।

17. अहंकारी सेब की तरह होते हैं, जो भीतर से सड़े होते हैं पर बाहर से सुंदरता से चमकते हैं।

18. घमंडी लोगों को शैतान, प्रलोभक की आवश्यकता नहीं होती; उन्होंने स्वयं को अपना शैतान और विरोधी बना लिया है।

19. घमंडी हृदयों में अपमानजनक शब्द उत्पन्न होते हैं, जबकि विनम्र आत्माओं में दिव्य दर्शन उत्पन्न होते हैं।

20. मुझे नहीं पता कि ऐसा कैसे होता है कि इतने सारे अहंकारी, जो स्वयं से अनजान होते हैं, सोचते हैं कि उन्होंने वैराग्य प्राप्त कर लिया है, और केवल इस दुनिया को छोड़ने पर ही उन्हें अपनी दयनीयता का एहसास होता है।

21. जो अहंकार का कैदी है, उसे मुक्ति के लिए ईश्वर की असाधारण सहायता की सख्त आवश्यकता होती है; क्योंकि मोक्ष के मानवीय साधन उसके लिए बेकार हैं।

22. अनापत्तिजनक विचार अहंकार से उत्पन्न होते हैं, जबकि अहंकार किसी को उन्हें एक आध्यात्मिक पिता को बताने से रोकता है। इसीलिए अक्सर ऐसा होता है कि यह पीड़ा कुछ लोगों को निराशा में डुबो देती है, और उनकी सारी आशा को नष्ट कर देती है, जैसे कोई कीड़ा एक पेड़ को खाकर खत्म कर देता है।

23. ऐसे कोई विचार नहीं हैं जिन्हें (अहंकार के कारण) ईश्वर-निन्दा के विचारों की तरह कबूल करना सबसे मुश्किल हो; इसलिए, वे अक्सर कई लोगों के भीतर वृद्धावस्था तक बने रहते हैं। फिर भी, हमारी ओर से राक्षसों और बुरे विचारों को कुछ भी उतना बल नहीं देता जितना कि यह तथ्य कि हम उन्हें कबूल नहीं करते, बल्कि उन्हें अपने दिलों में पालते हैं - जो उन्हें पोषित करता है।

24. किसी को भी यह नहीं सोचना चाहिए कि वे ईश्वर-निंदा के विचारों के दोषी हैं; क्योंकि प्रभु हृदयों के जानने वाले हैं और जानते हैं कि ऐसे शब्द और विचार हमारे नहीं, बल्कि हमारे शत्रुओं के हैं।

२५. आइए हम निन्दा की भावना को तुच्छ समझना सीखें, और, उसके द्वारा उत्पन्न विचारों पर बिल्कुल भी ध्यान दिए बिना, उससे कहें: *'मेरे पीछे हट जा, शैतान;* मैं *अपने प्रभु परमेश्वर* की आराधना करता हूँ, *और* मैं *उसी की* सेवा करूँगा; परन्तु तुम्हारी *'बीमारी'* और तुम्हारे वचन 'तुम्हारे ही *सिर पर लौटें*', और तुम्हारी निन्दा इसी युग में और आने वाले युग में तुम्हारे *'सिर पर'* पड़े (भजन संहिता 7:17)।

26. जो इस शत्रु को तुच्छ जानता है, वह उसके कष्ट से मुक्त हो जाता है; परन्तु जो उससे किसी अन्य प्रकार से लड़ने का इरादा रखता है, वह उससे पराजित हो जाएगा। जो शब्दों से आत्माओं को वश में करने का प्रयास करता है, वह उस व्यक्ति के समान है जो हवाओं को रोकने का प्रयास करता है।

27. जब पवित्र नम्रता हमारे भीतर फलने-फूलने लगती है, तब हम सभी मानवीय प्रशंसा और महिमा को तुच्छ समझने लगते हैं। और जब यह पूर्ण परिपक्वता पर पहुँच जाता है, तो हम न केवल अपने अच्छे कर्मों को कुछ भी नहीं समझेंगे, बल्कि हम उन्हें एक घृणास्पद वस्तु भी मानेंगे, यह सोचकर कि हम अनजाने में गुणों को बर्बाद करके प्रतिदिन अपने पापों के बोझ में वृद्धि करते हैं।

28. परिश्रमयुक्त पश्चाताप और विलाप, जो सभी मल से शुद्ध हो चुके हैं, हृदय में विनम्रता का एक मंदिर बनाते हैं और रेत पर बनी अहंकार की झोपड़ी को गिरा देते हैं।

29. अहंकार के लुप्त होने और विनम्रता के स्थापित होने के लक्षण हैं: अपमान और तिरस्कार को प्रसन्नतापूर्वक स्वीकार करना, क्रोध को शांत करना, और अपने ही गुणों पर विश्वास की कमी।

30. जो स्वयं पर नियंत्रण नहीं रखता, उसके लिए सभी आसक्तियों का अंत अहंकार और घमंड ही है। लेकिन उनका विनाशक—नम्रता—अपने धारक को हर घातक विष (आसक्तियों का) से सुरक्षित रखती है।

31. एक विनम्र भिक्षु अपनी समझ से परे के मामलों में दखल नहीं देता; लेकिन अहंकारी तो प्रभु की आज्ञाओं की गहराइयों को भी नापने का प्रयास करते हैं।

32. राक्षसों ने भाइयों में से एक सबसे सूक्ष्मदर्शी के पास आकर उसे खुशामद की। लेकिन इस विनम्र और बुद्धिमान व्यक्ति ने उनसे कहा: "यदि तुम मेरे हृदय में मेरी प्रशंसा करना बंद कर दो, तो मैं तुम्हारे चले जाने से यह निष्कर्ष निकालूँगा कि मैं महान हूँ; लेकिन यदि तुम मेरी प्रशंसा करना बंद नहीं करते हो, तो मैं तुम्हारी प्रशंसा में अपनी अशुद्धता देखता हूँ; क्योंकि *'प्रभु के सामने हर अहंकारी अशुद्ध है'* (नीतिवचन 16:5)। 'इसलिए, या तो चले जाओ, ताकि मैं खुद को एक महान व्यक्ति मान सकूँ; या मेरी प्रशंसा करो—और मैं तुम्हारे द्वारा महान विनम्रता प्राप्त करूँगा।' वे तर्क की इस दोधारी तलवार से इतने प्रभावित हुए कि वे तुरंत ही गायब हो गए।

33. अहंकारी होना एक बात है, अहंकारी न होना दूसरी, और विनम्र होना तीसरी। एक व्यक्ति दिन भर दूसरों को आँकता रहता है; दूसरा किसी को आँकता नहीं, पर स्वयं को भी दोषी नहीं ठहराता; जबकि तीसरा, निर्दोष होते हुए भी, हमेशा स्वयं को दोषी ठहराता है।

34. जब एक घोड़ा अकेले दौड़ता है, तो उसे खुद लगता है कि वह तेज़ दौड़ रहा है; लेकिन जब वह दूसरों के साथ दौड़ता है, तो उसे एहसास होता है कि वह कितना धीमा है। (खुद की तुलना सबसे अच्छे से करो, और तुम घमंड से बचोगे)।

३५. अशुद्ध राक्षसों ने एक ध्यानशील तपस्वी के हृदय में गुप्त रूप से प्रशंसा भर दी। लेकिन वह, दिव्य प्रेरणा से निर्देशित होकर, आत्माओं की चालाकी पर एक ऐसे धार्मिक युक्ति से काबू पाने में सक्षम था: उसने अपनी

कोठरी की दीवार पर सर्वोच्च सद्गुणों के नाम लिखे, अर्थात्, पूर्ण प्रेम, दैवीय नम्रता, शुद्ध प्रार्थना, अक्षुण्ण पवित्रता, और इसी तरह के अन्य। जब भी उसके विचार तब उसकी प्रशंसा करने लगते, तो वह उनसे कहता: 'चलो, परीक्षा देने चलते हैं' – और, दीवार के पास जाकर, वह वहां लिखे नामों को पढ़कर सुनाता – और जोड़ता: 'जब तुम इन सभी सद्गुणों को प्राप्त कर भी लो, तब भी जान लो कि तुम अभी भी ईश्वर से बहुत दूर हो'।

36. यदि आप प्रार्थना के प्रति अटूट प्रेम प्राप्त करना चाहते हैं, तो पहले अपने हृदय को दूसरों के पापों को न देखने का प्रशिक्षण दें; लेकिन इसके लिए अग्रदूत अहंकार से घृणा होना चाहिए।

37. यदि हम स्वयं को समझना चाहते हैं, तो स्वयं की परीक्षा और जाँच-पड़ताल करना बंद न करें; और यदि, आत्मा की सच्ची अनुभूति में, हम यह मान लें कि हमारा हर पड़ोसी हमसे श्रेष्ठ है, तो ईश्वर की दया हमसे दूर नहीं है।

38. कई लोग खुद को पापी कहते हैं, और शायद वे सचमुच ऐसा ही सोचते हैं; लेकिन (दूसरों के हाथों) अपमान से दिल को परीक्षा में डाला जाता है।

39. जो कोई भी कहता है कि उन्हें नम्रता की सुगंध आती है – प्रशंसा प्राप्त करते समय भी, भले ही उनका हृदय मुश्किल से ही प्रभावित होता हो – वे धोखा न खाएं, क्योंकि वे भ्रामक हैं।

४०. *'प्रभु, महिमा हमें नहीं, हमें नहीं, बल्कि तेरे नाम को हो,'* किसी ने अपनी आत्मा की गहराई में कहा (भजन संहिता ११३:९); क्योंकि वह जानता था कि मानव स्वभाव, इतना नाजुक होने के कारण, बिना हानि के प्रशंसा ग्रहण नहीं कर सकता। *'महान मंडली में मेरी स्तुति तुझ से है'* (भजन संहिता 21:26) – आने वाले युग में; परन्तु उससे पहले, मैं इसे सुरक्षित रूप से ग्रहण नहीं कर सकता।

41. नींबू के पेड़ का यह स्वाभाविक गुण है कि जब वह बाँझ होता है, तो उसकी टहनियाँ ऊपर की ओर बढ़ती हैं; लेकिन जब उन्हें नीचे झुकाया जाता है, तो उन पर फल लगने की अधिक संभावना होती है। – जो ज्ञान प्राप्त कर चुका है, वह इसे समझता है।

४२. यदि कुछ स्वर्गदूतों का अहंकार उन्हें राक्षसों में बदल देता है, तो निस्संदेह विनम्रता राक्षसों को स्वर्गदूतों में बदल सकती है। अतःपतित लोग, ईश्वर में विश्वास करके, हौसला रखें।

43. आत्मा को गरीबी में रहने और भीख पर गुज़ारा करने से अधिक विनम्र करने वाला कुछ भी नहीं है।

४४. जो कोई भी बातचीत में, जिद पर अड़ा रहता है कि वह अपनी ही राय का बचाव करे, भले ही वह सही हो, तो उसे पता होना चाहिए कि वह एक शैतानी बीमारी (अहंकार) से पीड़ित है; और, यदि वह अपने बराबर वालों से बातचीत में ऐसा व्यवहार करता है, तो उसके बड़े उसे डाँट-फटकार कर ठीक कर सकते हैं; लेकिन यदि वह अपने से बड़े और बुद्धिमान लोगों के साथ ऐसा व्यवहार करता है, तो लोग इस बीमारी का इलाज नहीं कर सकते।

४५. एक बार मैंने सबसे कुशल बुजुर्गों में से एक से पूछा कि आज्ञाकारिता का विनम्रता से क्या संबंध है। उन्होंने उत्तर दिया: एक समझदार नौसिखिया, भले ही वह मृतकों को जीवित कर दे और आँसुओं का वरदान प्राप्त कर ले; और विवाद से मुक्त हो जाए, हमेशा यही सोचता है कि यह सब उसके आध्यात्मिक पिता की प्रार्थना से ही संभव हुआ है – और वह व्यर्थ के घमंड से हमेशा दूर रहता है; और वास्तव में, वह ऐसी चीज़ का घमंड कैसे कर सकता है, जिसे उसने स्वयं की मेहनत से नहीं बल्कि किसी और की मदद से हासिल किया है?

४६. समुदाय में रहते हुए, अपने आप का ध्यान रखें, और किसी भी तरह से अन्य भाइयों से अधिक धर्मी दिखने का प्रयास न करें; अन्यथा आप दो बुराइयाँ करेंगे: आप अपने झूठे और दिखावटी उत्साह से भाइयों को आहत करेंगे, और आप खुद को घमंड का कारण देंगे।

४७. उत्साही रहो, परन्तु अपने हृदय में, अपने बाहरी आचरण में इसे किसी भी प्रकार से व्यक्त किए बिना—न अपनी आकृति से, न किसी शब्द से, न ही किसी सूक्ष्म संकेत से; सभी बातों में अपने भाइयों के समान रहो, ताकि अहंकार से बचा जा सके।

४८. झूठी सहानुभूति से अहंकार पैदा होता है, जबकि सच्ची सहानुभूति सांत्वना देती है।

४९. जो अपने ही आँसुओं पर गर्व करता है और मन में उन लोगों को निन्दित करता है जो नहीं रोते, वह ऐसे है जैसे किसी ने अपने शत्रु के विरुद्ध राजा से हथियार माँगे और उनसे ही अपना वध कर ले।

५०. यदि कोई यह महसूस करता है कि वह अहंकार और क्रोध, चालाकी और पाखंड से आसानी से प्रभावित हो जाता है—और इन दुश्मनों के खिलाफ नम्रता और सद्भावना की दोधारी तलवार चलाना चाहता है—तो उसे, मानो, उद्धार की धुलाई-शाला, यानी भाइयों की सभा में प्रवेश करने के लिए जल्दी करनी चाहिए, – और वास्तव में उनमें से सबसे कठोर, जब वह अपनी दुष्ट आदतों से पूरी तरह छुटकारा पाना चाहता है; ताकि वहाँ, भाइयों की फटकारों, अपमानों

और परेशानियों से हिलकर, उनसे मानसकि रूप से आहत होकर, और कभी-कभी शारीरकि रूप से भी उत्पीड़ति, रौंदा और लात मारी जाकर, वह अपने आत्मा के वस्त्र को – उसमें बसी गंदगी से – शुद्ध कर सके।

५१. मैंने देखा है कि अहंकार नम्रता का कारण बन सकता है। क्योंकि घमंड का फल पाप में पतन है; और पाप में यह पतन अक्सर, उन लोगों के लिए जो उद्धार चाहते हैं, नम्रता का कारण बनता है।

५२. एक अभिमानी आत्मा भय की दास होती है; स्वयं पर निर्भर होकर, वह प्राणियों की सूक्ष्म से सूक्ष्म आवाज़ और यहाँ तक कि परछाइयों से भी डरती है।

53. अनैतिक को मनुष्य सुधार सकते हैं, कपटी को स्वर्गदूत, लेकिन अभिमानी को स्वयं ईश्वर ही चंगा करते हैं।

54. दिखाई देने वाला अहंकार दुखद परिस्थितियों से ठीक होता है; लेकिन अदृश्य अहंकार सबसे पहले और सबसे प्रमुख रूप से अदृश्य (ईश्वर) द्वारा ही ठीक होता है।

55. आत्मा की दृष्टि से अहंकार पर निरंतर निगरानी रखें; क्योंकि सभी छल-कपटों में, इस जुनून से अधिक विनाशकारी कुछ भी नहीं है।

56. यदि विनाश का संकेत—अर्थात् अहंकार का—तब होता है जब कोई छोटे और तुच्छ मामलों में भी स्वयं को बड़ा मानता है; तो विनम्रता का उद्धारकारी संकेत यह है कि महान कार्यों और सुधारों में भी एक विनम्र मनस्थिति बनाए रखी जाए।

57. एक बार मैंने इस पागल जादूगरनी को अपने हृदय में पकड़ लिया, जो वहाँ अपनी माँ—अहंकार—के कंधों पर सवार थी; आज्ञापालन के बंधनों से दोनों को बाँधकर, और नम्रता की कोड़े से पीटकर, मैंने उन्हें यह बताने के लिए मजबूर किया कि वे मेरी आत्मा में कैसे प्रवेश कर गईं। आखिरकार, प्रहारों के नीचे, उन्होंने कहा: 'हमारी न कोई शुरुआत है और न ही कोई जन्म, क्योंकि हम स्वयं सभी भावों की शासक और माताएँ हैं। हमारे एक शत्रु की हमसे कोई छोटी-मोटी शत्रुता नहीं है – आज्ञाकारिता से उत्पन्न हृदय का पश्चात्ताप। लेकिन किसी के अधीन रहना—यह हम सहन नहीं कर सकते; इसीलिए, स्वर्ग में भी शासक रहकर, हम वहाँ से पीछे हट गए। संक्षेप में: हम हर उस चीज़ की माताएँ हैं जो विनम्रता के विपरीत है; और जो कुछ भी इसकी सहायता करता है, वह हमारा विरोधी है। हालाँकि, यदि हम स्वर्ग में भी इतनी शक्ति के साथ प्रकट हों, तो आप हमारी उपस्थिति से कहाँ भागेंगे? हम अक्सर अपमान सहने, आज्ञाकारिता और सहनशीलता का अभ्यास करने, रंजिश न रखने, और अपने पड़ोसी की सेवा के पीछे-पीछे चलते हैं। हमारी संतान आध्यात्मिक पुरुषों का पतन हैं: क्रोध, बदनामी, क्लेश, चिड़चिड़ापन, चिल्लाहट, ईश्वरनिंदा, पाखंड, घृणा, ईर्ष्या, परपीड़ा, हठ और अवज्ञा। एक बात है जिसका हम विरोध करने की ताकत नहीं रखते—आपके द्वारा बुरी तरह पीटे जाने पर, हम आपसे यह भी कहेंगे: 'यदि आप प्रभु के सामने सच्चे मन से स्वयं की निंदा करते हैं, तो आप हमें मकड़ी के जाले की तरह तुच्छ समझेंगे।' 'आप देखते हैं,' अहंकार ने कहा, 'कि जिस घोड़े पर मैं सवार हूँ वह घमंड है; परंतु पवित्र नम्रता और आत्म-निंदा उस घोड़े और उसके सवार पर हँसेंगे, और मधुर स्वर में विजय का वह गीत गाएंगे: *'हम यहोवा के लिए गीत गाएं, क्योंकि वह महिमा से गौरवान्वित है: उसने घोड़े और उसके सवार को समुद्र में फेंक दिया है'* (निर्ग. 15:1), अर्थात्, नम्रता की गहराई में।"

५. निर्लिप्तता पर

1. गगनमंडल का वैभव तारों में निहित है, जबकि निर्लिप्तता की शोभा सद्गुणों में निहित है।

२. वह निर्लिप्त कहा जाता है, और है, जिसने अपने शरीर को वासनाओं के प्रति अडिग बना लिया है, अपने मन को सारी सृष्टि से ऊपर उठा लिया है, अपनी सभी इंद्रियों को अपने मन के अधीन कर लिया है, और अपनी आत्मा को प्रभु के साक्षात सामने प्रस्तुत किया है, जो हमेशा अपनी ही शक्ति से भी परे, उसकी ओर बढ़ता रहता है।

3. कुछ लोग यह भी कहते हैं कि निर्लिप्तता शरीर के पुनरुत्थान से पहले आत्मा का पुनरुत्थान है, जबकि अन्य कहते हैं कि यह ईश्वर का पूर्ण ज्ञान (ईश्वर के साथ एकता) है—जो केवल स्वर्गदूतों से ही कम है।

४. प्रभु में सिद्ध लोगों की यह पूर्ण और अनंत सिद्धता, जैसा कि इसका स्वाद चख चुके किसी ने मुझे बताया, अंततः मन को पवित्र करती है और उसे सभी भौतिक चीजों से अलग करती है, ताकि, इस स्वर्गीय शरणस्थली तक पहुँचने पर, यह अपने जीवन का अधिकांश भाग देह में रहते हुए स्वर्गीय की एक आनंदमग्न दृष्टि में व्यतीत करे।

5. एक निर्लिप्तता है, और निर्लिप्तता से भी अधिक निर्लिप्तता है। क्योंकि एक बुराई से तीव्र घृणा करता है, जबकि दूसरी सद्गुणों से अतृप्त रूप से समृद्ध होती है।

6. पवित्रता (ब्रह्मचर्य) को भी निर्लिप्तता कहा जाता है। और यह सही भी है; क्योंकि यह सामान्य पुनरुत्थान और नश्वर वस्तुओं की अक्षयशीलता का पूर्वाभास है।

7. यदि वासनाओं के पूर्ण दासत्व का संकेत किसी व्यक्ति की उन लगभग सभी विचारों का पालन करने की तत्परता में निहित है, जो चुपके से राक्षसों द्वारा डाले जाते हैं, तो मैं पवित्र निर्लिप्तता के संकेतों के रूप में दाऊद के साथ, बिना किसी झूठ के यह कहने की क्षमता को मानता हूँ: *'मैंने उस दुष्ट को नहीं जाना जो मुझसे मुँह मोड़ता है'* (भजन संहिता 100:4), और यह नहीं जानता कि वह कैसे आया, या क्यों आया, या कैसे चला गया; मैं इन सभी बातों के प्रति उदासीन हो गया हूँ, परमेश्वर के साथ पूर्ण रूप से एक होकर, और हमेशा इसी अवस्था में बने रहने की आशा करता हूँ।

८. जो कोई भी इस अवस्था में रहने के योग्य समझा गया है, वह यहाँ रहते हुए, नश्वर देह में लिपटा हुआ, जीवित परमेश्वर का मंदिर बन जाता है, जो उसे उसके सभी वचनों, कर्मों और विचारों में मार्गदर्शन और शिक्षा देता है; और, इस आंतरिक प्रबोधन के कारण, वह प्रभु की इच्छा को समझता है, मानो किसी आवाज़ को सुन रहा हो, और, सभी मानवीय शिक्षाओं से ऊपर उठकर, कहता है: *'मैं कब आऊँगा और परमेश्वर के साक्षात दर्शन करूँगा?'* (भजन संहिता 41:3)? क्योंकि मैं स्वर्ग की अपनी लालसा की पीड़ा अब और सहन नहीं कर सकता, बल्कि मैं उस अमर सौंदर्य की खोज करता हूँ जो आपने मुझ पर पतन से पहले प्रदान किया था।

९. निर्लिप्त व्यक्ति—और क्या कहा जाए?—*'अब अपने लिए नहीं जीता, बल्कि मसीह उसमें जीवित हैं'* (गलातियों २:२०), जैसा कि उन्होंने कहा, *जिन्होंने* 'सत्य *के लिए संघर्ष किया, दौड़ पूरी की, और विश्वास बनाए रखा'* (२ तीमुथियुस ४:७)।

10. जैसे एक राजसी मुकुट एक ही रत्न से नहीं बना होता, वैसे ही यदि हम एक भी सद्गुण की उपेक्षा करते हैं तो निर्लिप्तता प्राप्त नहीं की जा सकती।

11. विनम्रता आज्ञाकारिता से उत्पन्न होती है, और विनम्रता से निर्लिप्तता आती है, जो विनम्रता की पूर्ति है। विनम्रता की शुरुआत आज्ञाकारिता है; और निर्लिप्तता, जो विनम्रता की बेटी है, अपनी माँ को परिपूर्ण करती है।

12. कुछ लोग निर्लिप्तता और वरदानों, चमत्कारों तथा विवेक की शक्ति की प्रचुरता की खोज में अपने शरीर को थका देते हैं; लेकिन ये बेचारे प्राणी यह नहीं समझते कि इन आशीर्वादों की जननी परिश्रम नहीं, बल्कि सबसे बढ़कर नम्रता है।

13. जिसने स्वयं को विनम्रता के गुण से जोड़ लिया है, वह कोमल, शांत, सहजता से दयालु होने वाला, दयालु, और सबसे बढ़कर शांतिपूर्ण, आनंदित, आज्ञाकारी, निश्चिंत, सतर्क, सुस्त नहीं होता, और—और क्या कहा जाए? – निर्लिप्त, क्योंकि *'अपनी नम्रता में प्रभु ने हम पर ध्यान दिया है, और हमें हमारे शत्रुओं से छुड़ाया है'* (भजन संहिता 135:23-24), – हमारे भावों और कलंकों से।

14. कई लोगों को पापों की क्षमा शीघ्रता से प्राप्त हुई है, – परन्तु कोई भी शीघ्रता से निर्विकारी नहीं हुआ है; क्योंकि इसे प्राप्त करने के लिए लंबा समय, प्रेम की बहुत मेहनत, और ईश्वर की सहायता की आवश्यकता होती है।

पवित्र पूजनीय पितामह बर्सानुफियुस और योहन

उनका संक्षिप्त विवरण

निकोडेमस द हेजियोराइट द्वारा संकलित *द लाइव्स ऑफ़ द सेंट्स* से लिया गया: संत बरसानुफियस मूल रूप से मिस्र के थे। छोटी उम्र से ही, वे तपस्या का जीवन जीने की तीव्र इच्छा से भरे थे। एक बार, घोड़ों की दौड़ के मैदान से गुजरते हुए, वह उसमें प्रवेश कर गया और वहाँ सभी को एक-दूसरे से आगे निकलने के लिए जी-तोड़ प्रयास करते देख, उसने अपने मन में कहा: 'क्या तुम देखते हो कि नश्वर मुकुट पाने वाले कितनी लगन से प्रयास कर रहे हैं?' 'क्या हमें और भी अधिक प्रयास नहीं करना चाहिए—हम, जो स्वर्ग के राज्य के वारिस हैं?'" और वह उस तमाशे से चला गया, उसका आत्मा तपस्या के जीवन के लिए पहले से भी अधिक उत्साही हो गया। क्या वह मिस्र के किसी मठ में था, यह अज्ञात है। परंपरा सूचित करती है कि वह पलेस्टाइन में ही एक भिक्षु था। पवित्र स्थानों की पूजा करने के लिए यरूशलेम आने के बाद, वह वहीं रहे और शुरू में बूढ़े मार्सेलस के मार्गदर्शन में रहे, फिर गाजा के पास अबा सेरिड के मठ में चले गए। वहाँ, परम तपस्या के लिए प्रयासरत, उन्होंने मठ के बाहर अपने लिए एक छोटा सा कोठरीनुमा कमरा बनाया और उसमें खुद को बंद करके, सबसे मधुर मौन में आनंदित हुए। इस मौन की अवधि की शुरुआत में, मठ से उसके

लिए सप्ताह में केवल तीन रोटी लाई जाती थीं। लेकिन जैसे ही वह विलाप में डूब गया और अपने आँसुओं से महान मधुरता प्राप्त करने लगा, वह इस अकथनीय मधुरता की अनुभूति से अक्सर केवल एक रोटी पर ही संतुष्ट रहता था, और कई मौकों पर तो वह उसे भी खाना भूल जाता था। इस प्रकार वह कभी सप्ताह में दो बार, तो कभी एक बार ही खाता था; क्योंकि वह अक्सर आध्यात्मिक पोषण की ओर आकर्षित होते थे, जिसकी मिठास उन्हें शारीरिक भोजन भूलने पर मजबूर कर देती थी। जैसे-जैसे समय बीतता गया, अनवरत आँसुओं से स्वयं को धोते हुए, उस धन्य व्यक्ति ने अपने हृदय को आध्यात्मिक और शारीरिक वासनाओं से इतना शुद्ध कर लिया कि वह शत्रु के बाणों से ऊपर उठ गए, उन्होंने मन की शांति प्राप्त की—जो पवित्र आत्मा के वरदानों का पात्र है— – और उस अवस्था को प्राप्त कर लिया जिसमें उसकी हर कामुक प्रवृत्ति और कल्पना सो गई थी, या यूँ कहें कि मर गई थी; यही कारण था कि वह अपनी कोठरी को एक कब्र कहता था। जिस क्षण से ही उसने अपने हृदय को वासनाओं से शुद्ध किया और पवित्र आत्मा का मंदिर और वास-स्थान बनने के योग्य समझा गया, उस शुद्धता के परिणामस्वरूप, वह उत्कृष्ट, सच्ची और पूर्ण विनम्रता से समृद्ध हो गया, जिसके द्वारा उसने स्वयं को केवल शब्द में ही नहीं, बल्कि कर्म में भी धूल और राख माना - और हमेशा अपने आप से कहा: 'मैं कौन हूँ? और कौन मुझे कुछ भी मानता है?' ऐसी विनम्रता के कारण, उन्हें सभी गुणों में सबसे महान—विवेक, जो ईश्वर द्वारा एक प्रबंधक के रूप में भिक्षु को प्रदान किया जाता है—का योग्य माना गया। विवेक के माध्यम से, महान बर्सानुफियस को अंतर्दृष्टि का वरदान प्राप्त हुआ, जिसके द्वारा, जैसा कि दमिश्क के संत पीटर द्वारा समझाया गया है, इंद्रिय और बोधगम्य प्राणियों के मानसिक और छिपे हुए सारों को समझा जाता है। इस अंतर्दृष्टि के माध्यम से, उन्हें दूरदर्शिता और भविष्यवाणी का वरदान प्राप्त करने के योग्य माना गया – दूर की घटनाओं को जैसे कि वे पास की हों, और भविष्य को जैसे कि वह वर्तमान हो, देखने का वरदान (Resp. 31. 812)। ईश्वर की कृपा से, वह लोगों के अंतर्मन को भी समझते थे, और जो उनसे प्रश्न करते थे, उन्हें उनके शब्दों के अनुसार नहीं, बल्कि उनके मन और विचारों की दिशा के अनुसार उत्तर देते थे। और दिव्य दाऊद के वचनों के अनुसार, निरंतर अपने हृदय में परमेश्वर की ओर आकांक्षा करते हुए, और विनम्रता में विनम्रता, मौन में मौन, और प्रेम में प्रेम जोड़ते हुए, वह अंततः परमेश्वर में परमानंद—अत्युच्च वरदान—को प्राप्त करने के योग्य ठहराया गया, जिसमें वह सातवें स्वर्ग तक उठाया गया, न कि विचारों के स्वप्निल पंखों पर, बल्कि पवित्र आत्मा की अनुपम शक्ति में; और वहाँ उन्होंने एक आशीष प्राप्त की और परमेश्वर के राज्य के अनुपम आशीषों और रहस्यों को देखा, यह न जानते हुए कि वे शरीर में थे या शरीर से बाहर, ठीक वैसे ही जैसे महान पौलुस ने किया था (2 कुरिन्थियों 12:3)। और बाद में उन्हें चमत्कार करने का प्रचुर वरदान प्राप्त हुआ, ताकि वे प्रभु यीशु मसीह के नाम पर मरे हुओं को जिला सकें, दुष्ट आत्माओं को निकाल सकें, असाध्य रोगों को चंगा कर सकें, अन्य महान कर्म और चमत्कार कर सकें, और एलियाह की तरह, स्वर्ग को बंद और खोल सकें। महान बर्सानुफियस, जो धर्मपितामहों में प्रसिद्ध थे, उन्हें ऐसे महान् वरदान प्राप्त करने और सद्गुणों में इतनी महान् पूर्णता प्राप्त करने के योग्य माना गया। हालाँकि, उन्होंने ये महान् वरदान ऐसी परीक्षाओं के बीच प्राप्त किए कि कई लोग न केवल वास्तव में उन्हें सहन नहीं कर पाते, बल्कि केवल सुनकर भी उन्हें समझ नहीं पाते। इसी प्रकार, यह परम धन्य पुरुष गंभीर बीमारियों से पीड़ित थे, लेकिन उन्होंने उन्हें इतनी वीरता से सहन किया कि, बीमार होने के बावजूद, उन्होंने न तो कभी अपने आराम के लिए बिस्तर पर लेटना उचित समझा, और न ही उन्होंने अपना शारीरिक श्रम ही बंद किया। यह संत छठी शताब्दी में, सम्राट जस्टिनियन के शासनकाल में रहते थे, और पूरे पचास साल या उससे अधिक समय तक, एक भी व्यक्ति ने उन्हें नहीं देखा। केवल एक बार वे कुछ भाइयों के सामने प्रकट हुए और उनके पैर धोए, ताकि उनके अस्तित्व के बारे में किसी भी संदेह को दूर किया जा सके। और अपने जीवन के अंत के करीब, उन्होंने चर्च के भले के लिए अपनी प्रिय मौन को त्याग दिया, जब जस्टिनियन ने एफोर्टोडोसिट्स का उत्पीड़न शुरू कर दिया, जिनकी उन्होंने पहले रक्षा की थी, क्योंकि वे उनकी शिक्षाओं को स्वीकार नहीं करते थे। यरूशलेम के पैट्रिआर्क, इस आवश्यकता के समय में, इस महान बाबा को सम्राट के पास यह विनती लेकर जाने के लिए मनाया कि वह अपना क्रोध दया में बदल दें। यह मिशन सफल रहा। अब्बा के शब्दों की शक्ति से प्रभावित होकर, सम्राट ने उन लोगों पर नियोजित उत्पीड़न को रोक दिया जिन्हें वह व्यक्तिगत रूप से अपने प्रति अवज्ञाकारी मानता था, और यरूशलेम की कलीसिया पर अपनी कृपा बहाल की, तथा बर्सानुफीयस के माध्यम से उसे उपहार भेजे। महान अब्बा की 563 में मृत्यु हो गई। अन्य लोग, वर्ष का उल्लेख किए बिना, सामान्यतः कहते हैं: 600 से पहले। एक अन्य वरिष्ठ, आदरणीय जॉन, ने बर्सानुफियस की ही तरह मौन का जीवन जिया, और उन्हें भी उसी आत्मा के वरदानों से सम्मानित किया गया, विशेष रूप से और सबसे बढ़कर दूरदर्शिता और भविष्यवाणी के वरदानों से, इसीलिए उन्हें एक नबी कहा जाता था। यह ज्ञात नहीं है कि आदरणीय जॉन मूल रूप से कहाँ के थे, और न ही यह कि वह इस मठ में कैसे आए। वह महान बर्सानुफीयस की पहली कोठरी में रहते थे, जबकि बाद वाले ने उसी मठ के पास अपने लिए एक और कोठरी का प्रबंध किया था - और वह अपनी

मृत्यु तक 18 साल तक वहाँ मौन में रहे। किसी ने भी उन्हें मुस्कुराते, शर्मिंदा होते, या आँसुओं के बिना दिव्य रहस्यों को ग्रहण करते हुए नहीं देखा, जैसा कि उस मठ के मठाधीश ने उनके बारे में गवाही दी। दिव्य कृपा से, आदरणीय जॉन ने कई अन्य बातों की भविष्यवाणी की, जो ठीक वैसे ही हुईं जैसे उन्होंने पूर्वानुमान लगाया था, ने अपनी मृत्यु की भी भविष्यवाणी की, और इसके बारे में कहा: 'मैं बाबा सेरिड के कोठारियों में मरूँगा। अगर बाबा सेरिड और कुछ समय जीवित रहते, और मैं पाँच साल और जीवित रहता, लेकिन चूंकि ईश्वर ने यह मुझसे छिपा दिया और उन्हें ले गए, मैं भी अब और नहीं जियूँगा।" लेकिन चूँकि अबा एलियान, जो उस समय उम्र में अभी जवान थे, संन्यास ग्रहण करने और मठ के मठाध्यक्ष नियुक्त होने के बाद, मठ के नियमों या भाइयों का शासन कैसे करना है, यह न जानते हुए, उन्होंने धन्य से विनती की जॉन: 'मुझे बस दो हफ्ते का समय दे दीजिए, ताकि मैं आपसे मठ और उसके प्रशासन के बारे में पूछ सकूँ।' बूढ़े ने, उस पर दया करके और अपने भीतर वास करने वाले पवित्र आत्मा से प्रेरित होकर, कहा: 'बहुत अच्छा, मैं दो हफ्ते और तुम्हारे साथ रहूँगा।' और अब्बा एलियान ने उनसे मठ समुदाय के प्रबंधन से संबंधित हर बात के बारे में पूछा। दो सप्ताह के अंत में, आदरणीय ने पूरे मठ समुदाय को बुलाया और, प्रत्येक को व्यक्तिगत रूप से नमस्कार करने के बाद, उन्हें उनकी कोठरियों में वापस भेज दिया; और फिर, शांतिपूर्वक, उन्होंने अपनी आत्मा ईश्वर के हाथों में सौंप दी। आदरणीय जॉन की मृत्यु के बाद, संत वरसानूफ़ियस पूरी तरह से मौन हो गए और किसी को भी कोई और उत्तर नहीं दिया, जैसा कि अबा डोरोथियस अपने दूसरे प्रवचन की प्रस्तावना में कहते हैं; वरसानूफ़ियस के मौन हो जाने के बाद, उन्होंने उस मठ को छोड़ दिया और अपनी अलग समुदाय की स्थापना की।

* * *

ये धन्य पिता, जिन्होंने अपने पड़ोसियों से पूरे हृदय से प्रेम किया, न केवल अपने जीवनकाल में उन पर आध्यात्मिक आशीर्वादों की वर्षा करते थे, बल्कि अपनी मृत्यु के बाद भी ऐसा करना जारी रखते हैं, क्योंकि उन्होंने हमें अपनी संतान के लिए एक पितृ विरासत के रूप में अपने दैवीय उत्तरों की यह आत्मा-रक्षक पुस्तक छोड़कर गई है, ताकि हम इसे लगन से पढ़कर इससे महान आध्यात्मिक लाभ प्राप्त कर सकें। इस पुस्तक में बिशपों, पुरोहितों, भिक्षुओं, गृहस्थों, बुज़ुर्गों, युवाओं, बीमारों और स्वस्थ लोगों सहित विभिन्न प्रकार के लोगों द्वारा पूछे गए विभिन्न प्रश्नों के 850 उत्तर शामिल हैं। इनमें से कुछ उत्तर तथाकथित 'अन्य एल्डर जॉन' द्वारा लिखे गए थे, जबकि अन्य - वास्तव में, उनमें से अधिकांश - महान एल्डर बार्सानुफियस स्वयं द्वारा दिए गए थे, जिन्होंने उन्हें स्वयं नहीं लिखा बल्कि अबा सेरिड के माध्यम से लिखा। इसके अलावा, निम्नलिखित परिस्थिति वास्तव में उल्लेखनीय है। जब महान बर्सानुफियस ने अपने उत्तर देना शुरू किया, तो उन्होंने अबा सेरिद को बुलाया, अपना उत्तर उन्हें सुनाया, और उन्हें इसे लिखने का निर्देश दिया (यह उत्तर मायरोसव के मठ के एक भिक्षु, जॉन के लिए था)। अब्बा सेरिद, यह उम्मीद किए बिना कि वह संत द्वारा कहे गए सभी शब्दों को अपने मन में रख पाएगा, यह सोचकर हैरान था कि वह इतने सारे शब्दों को कैसे लिखेगा, और उसने मान लिया कि एल्डर उसे स्याही और कागज लाने के लिए कहेंगे ताकि वह सुनते हुए, सब कुछ शब्दशः लिख सके। संत वरसानुफियस ने, उन्हें प्रदान की गई विवेक की कृपा से, सेरिद के गुप्त विचार को जान लिया; उनका चेहरा आग की तरह चमक उठा, और उन्होंने सेरिद से कहा: "जाओ, लिखो, और डरो मत; भले ही मैं तुम्हें अनगिनत शब्द लिखने के लिए कहूँ, जान लो कि पवित्र आत्मा तुम्हें कही गई बात से एक शब्द भी अधिक या कम लिखने नहीं देगा, भले ही तुम स्वयं ऐसा चाहो, बल्कि वह तुम्हारे हाथ को सही क्रम में, निष्ठापूर्वक सब कुछ लिखने के लिए मार्गदर्शन करेगा।" यह पुस्तक ऐसी है! अद्भुत तर्क से परिपूर्ण, यह सबसे कठिन प्रश्नों का समाधान करती है – यह धैर्य की शिक्षिका है, शिकायतों को मिटाने वाली है, एक तलवार जो मनुष्य की अपनी इच्छा को काट देती है, एक कुल्हाड़ी जो मनुष्यों को प्रसन्न करने की इच्छा को धराशायी कर देती है, सच्ची और पूर्ण नम्रता का मार्गदर्शक, जो हमें स्वयं को शून्य समझना सिखाता है, पश्चाताप का अग्रदूत, आँसुओं की जननी, और आत्माओं के उद्धार तथा प्रभु मसीह में पूर्णता के लिए एक मध्यस्थ है।

तपस्या पर निर्देश

(तपस्या के प्रयासों और वासनाओं के विरुद्ध संघर्ष से संबंधित सभी अंशों को लगातार चुनें)

1. प्रेरित के वचन पर ध्यान दो: *'हर परिस्थिति में धन्यवाद दो'* (1 थिस्स. 5:18), और हर बात के लिए परमेश्वर का धन्यवाद करो। चाहे आप दुख में हों, या आवश्यकता में, या कष्ट में, या बीमारी और शारीरिक परिश्रम में - आप पर जो कुछ भी आता है उसके लिए परमेश्वर का धन्यवाद करें, क्योंकि *'हमें परमेश्वर के राज्य में प्रवेश करने के लिए बहुत कष्टों से होकर गुजरना होगा'* (प्रेरितों के काम 14:22)। इसलिए, आपकी आत्मा डगमगाए नहीं, और न ही आपका हृदय किसी भी बात में ढीला पड़े; बल्कि प्रेरित के वचन याद रखें: *'यद्यपि हमारा बाहरी मनुष्य क्षीण हो*

जाता है, तौभी हमारा भीतरी मनुष्य दिन-दिन नया होता जाता है (2 कुरिन्थियों 4:16)। जब तक आप कष्ट सहन नहीं करते, तब तक आप क्रूस पर चढ़ नहीं सकते और उसके उद्धारकारी फलों में सहभागी नहीं हो सकते।

2. जब एक जहाज समुद्र में होता है, तो वह खतरों और हवाओं के कहर के संपर्क में रहता है। लेकिन जब वह एक शांत और सुरक्षित बंदरगाह पर पहुँचता है, तो वह अब खतरों, आपदाओं या हवाओं के कहर से नहीं डरता, बल्कि सुरक्षित रहता है। इसी प्रकार, जब तक आप लोगों के बीच रहते हैं, दुख, खतरों और मन की हवाओं के झटकों की अपेक्षा करें। लेकिन जब आप आपके लिए तैयार की गई शांति की बंदरगाह पर पहुँचेंगे, तो आपको कोई भय नहीं होगा।

3. सामान्य भलाई के लिए काम करते समय आप जो दुख और शारीरिक परिश्रम सहते हैं, उसमें हतोत्साहित न हों; क्योंकि इसका भी अर्थ है *'अपने भाइयों के लिए अपना जीवन देना'* (1 यूहन्ना 3:16), और मुझे आशा है कि इस परिश्रम के लिए प्रतिफल महान होगा। जिस प्रकार प्रभु ने मिस्र में अकाल के समय अपने भाइयों की देखभाल के लिए यूसुफ को नियुक्त किया था (भजन संहिता 32:19), उसी प्रकार उन्होंने आपको समुदाय की सेवा के लिए नियुक्त किया है। मैं, अपनी ओर से, आपको प्रेरित के वचन दोहराता हूँ: *'इसलिये हे मेरे बच्चे, पवित्र आत्मा की कृपा से दृढ़ हो जा'* (2 तीमुथियुस 2:1)।

४. एक ईश्वर के लिए किए गए श्रमों के द्वारा प्रभु की विश्राम-स्थिति प्राप्त करता है, जबकि दूसरा इसे नम्रता के द्वारा प्राप्त करता है। परन्तु तुम्हें ऐसा स्वभाव बनाए रखना चाहिए कि तुम दोनों ही से इसे प्राप्त कर सको, जब तुम्हारे भीतर क्रोध समाप्त हो जाए, जो तुम्हारे हृदय में चिड़चिड़ापन को वश में करने के परिणामस्वरूप होता है; और तब धर्मशास्त्र का वचन तुम में पूरा होगा: *'मेरी दीनता और मेरी परिश्रम पर दृष्टि कर, और मेरे सब पापों को क्षमा कर'* (भजन संहिता 24:18)। परमेश्वर आपका प्राण, आपका शरीर और आपकी आत्मा को हर बुराई से, शैतान द्वारा डाली गई हर विपत्ति से, और आपके विचारों में विद्रोह भड़काने वाली हर कल्पना से बचाए।

5. सबसे बढ़कर, निराशा की आत्मा से अपना बचाव करो, जो सब बुराई और तरह-तरह के प्रलोभनों को जन्म देती है। मसीह की भेड़-बकरियों द्वारा तुम पर डाली गई दुख के कारण तुम्हारा हृदय क्यों कमजोर और थका हुआ हो जाता है? जो मैं तुमसे कहने वाला हूँ उसे ध्यान से सुनो: धीरज सभी अच्छी चीजों की जननी है। मूसा की ओर देखो, जिन्होंने *'पाप के क्षणिक सुखों का आनंद लेने के बजाय परमेश्वर के लोगों के साथ दुख सहना'* चुना (इब्रानियों 11:25)।

६. सावधान रहो कि चालाक साँप तुमसे लूट न लें और अपनी विष (क्रोध) से तुम्हें विषाक्त न कर दें। यह घातक है। कोई भी बुराई के द्वारा कभी भलाई नहीं कर सकता, क्योंकि बुराई स्वयं मनुष्य पर हावी हो जाती है। इसके विपरीत, *'बुराई' को 'भलाई'* से जीता जाता है (रोमियों १२:२१)। आप *'अखाड़े में'* खड़े हैं; इसीलिए आपको जंगली जानवरों से लड़ना होगा, ठीक वैसे ही जैसे प्रेरित ने एफ़िसुस में किया था (1 कुरिन्थियों 15:32), जिसने जानवरों को हराने का घमंड किया था। तुम्हें समुद्र में एक तूफ़ान में फेंक दिया गया है; इसलिए तुम्हें कई खतरों को सहना होगा और उफनती लहरों के खिलाफ संघर्ष करना होगा। परमेश्वर की मदद से उन पर विजय प्राप्त करने के बाद, तुम हमारे प्रभु मसीह यीशु में एक शांतिपूर्ण बंदरगाह में प्रवेश करोगे।

7. तुम उन विचारों से परेशान हो जो तुम्हें दूसरों को दुखी करने और स्वयं दूसरों से दुखी होने के लिए मजबूर करते हैं। परन्तु, हे मेरे भाई, यह जान ले कि यदि कोई किसी दूसरे को कृत्य से या वचन से ठेस पहुँचाता है, तो वह स्वयं बाद में सौ गुना अधिक ठेस पाएगा। इसलिए, हर बात में धीरज धर, और सावधान रह कि किसी भी बात में अपनी इच्छा न थोप। अपने विचारों की सावधानीपूर्वक जाँच करो, कहीं वे तुम्हारे हृदय को घातक विष (क्रोध) से संक्रमित न कर दें, और तुम्हें धोखा देकर एक मक्खी को ऊँट और एक कंकड़ को चट्टान समझने पर न मजबूर कर दें, ताकि तुम उस व्यक्ति की तरह न बन जाओ जिसके अपनी आँख में लकड़ी का टुकड़ा है और वह दूसरे की आँख में झाग देखता है।

8. तुम खुद को पापी कहते हो, फिर भी वास्तव में तुम ऐसा दिखाते हो कि तुम खुद को पापी नहीं मानते। जो व्यक्ति खुद को पापी और कई बुराइयों का कारण स्वीकार करता है, वह किसी का विरोध नहीं करता, किसी से झगड़ता नहीं है, न ही किसी पर क्रोधित होता है, बल्कि सभी को खुद से बेहतर और बुद्धिमान मानता है। यदि आप पापी हैं, तो आप अपने पड़ोसी को डाँटते और उस पर दोष क्यों लगाते हैं, मानो आपको दुख उसी से मिला हो? – ऐसा लगता है कि आप और मैं अभी तक खुद को पापी मानने के स्तर पर नहीं पहुँचे हैं। – देखो, भाई, हमने खुद को कितना लज्जित किया है: हम अपने होठों से तो कहते हैं, पर हमारे कर्म कुछ और ही दिखाते हैं। – जब हम अपने विचारों से जूझते हैं, तो हमें उन्हें अस्वीकार करने की शक्ति क्यों नहीं मिलती? क्योंकि हम पहले अपने पड़ोसी को आंकने में झुक जाते हैं, और इससे हमारी आध्यात्मिक शक्ति कमजोर हो जाती है, और हम अपने भाई पर दोष मढ़ते हैं जबकि दोष स्वयं हम पर होता है। – हर विचार को प्रभु पर डाल दो, यह कहते हुए: 'परमेश्वर जानते हैं कि क्या अच्छा है' – और तुम्हें शांति मिलेगी – और धीरे-धीरे तुम सहन करने की शक्ति प्राप्त करोगे।

९. जो कोई निंदा सहन नहीं कर सकता, वह महिमा नहीं देखेगा; और यदि वे अपने आप को कटुता से शुद्ध नहीं करते हैं, तो वे मिठास का स्वाद नहीं चखेंगे। आप अपने भाइयों के बीच और विभिन्न परीक्षणों में प्रवेश कर चुके हैं, ताकि आप शुद्ध और परखे जा सकें: और सोने की परीक्षा आग के सिवा और किसी चीज़ से नहीं होती। कदापि अपने लिए कोई नियम न बनाओ, क्योंकि ऐसा करने से तुम स्वयं को कलह और चिंता में डालोगे; परन्तु परमेश्वर के भय से, समय के अनुसार जो उचित है उसे समझो, और उत्साह के वश में होकर कुछ भी न करो; यथासंभव क्रोध से दूर रहो, किसी की निंदा न करो, और विशेष रूप से उन लोगों से प्रेम करो जो तुम्हें परीक्षा में डालते हैं। यदि आप ध्यान से देखें, तो आप पाएँगे कि वे ही हमें सफलता की ओर ले जाते हैं।

10. क्लेशों में धीरज धरो, जैसे कोई प्रभु के वचन को प्राप्त कर चुका हो, जो कहता है: *'जगत में तुम्हें क्लेश होगा, परन्तु हिम्मत रखो, क्योंकि मैं जगत पर विजय पा चुका हूँ'* (यूहन्ना 16:33); ताकि तुम अजेय प्रेम प्राप्त कर सको, जो इसे प्राप्त करने वालों को राजसी दरबारों में ले जाता है और उन्हें मसीह के भाई बना देता है।

11. दूध मथो, और तुम्हें मक्खन मिलेगा; परन्तु यदि तुम थन को हाथ से निचोड़ोगे, तो खून बहेगा (नीतिवचन 30:33)। यदि कोई एक पेड़ या बेल को हूप्स (एक प्रकार की चक्की) की तरह मोड़ना चाहता है, तो उसे धीरे-धीरे मोड़ना चाहिए, और वह नहीं टूटेगी; लेकिन अगर वे इसे अचानक और ज़ोर से मोड़ते हैं, तो पेड़ तुरंत टूट जाएगा। (यह मठाधीशों के सख्त उपायों - और संतों के अत्यधिक तपस्या के प्रयासों का उल्लेख करता है)।

12. क्या तुम देहधारी मनुष्य की नाईं क्लेशों से थके हो? या क्या तुमने यह नहीं सुना कि तुम्हारे लिए क्लेशों की प्रतीक्षा है? और क्या तुम यह नहीं जानते कि *'धर्मियों के बहुत क्लेश हैं'* (भजन संहिता 33:20)—और उन से उनकी परीक्षा होती है, जैसे सोने की अग्नि-भट्टी में? इसलिए, यदि हम धर्मी हैं, तो हमें स्वेच्छा से दुखों की परीक्षा के अधीन हो जाना चाहिए; लेकिन यदि हम पापी हैं, तो हमें उन्हें वैसे ही सहना चाहिए जैसे हम इसके पात्र हैं। – आइए हम संसार की शुरुआत से सभी संतों को याद करें, – और आइए हम याद करें कि उन्होंने भलाई करते हुए, अच्छा बोलते हुए, और सत्य में अटूट बने रहते हुए कितनी पीड़ा सहन की। लोगों ने उनकी मृत्यु तक उनसे घृणा की और उनका तिरस्कार किया – और, उद्धारकर्ता के शब्दों में, *'उन्होंने अपने शत्रुओं और जो उन्हें सताते थे, उनके लिए प्रार्थना की'* (मत्ती 5:44)। क्या आपको भी, पवित्र यूसुफ की तरह, दासता में बेचा गया है? क्या आपने भी, मूसा की तरह, बचपन से वृद्धावस्था तक शत्रुता सहन की है? क्या आपको भी दाऊद की तरह सताया गया है, जिसे शाऊल के हाथों सताया गया था? या, योनह की तरह, क्या आपको समुद्र में फेंका गया था? तो फिर, आपका मन कमजोर क्यों हो जाता है? एक कायर की तरह हतोत्साहित या भयभीत न हो, कहीं ऐसा न हो कि तुम परमेश्वर के वचनों से वंचित रह जाओ। एक अविश्वासी की तरह भयभीत न हो, बल्कि अपने हतोत्साहित विचारों को मज़बूत करो। हर बात में कष्टों से प्रेम करो, ताकि तुम संतों का एक कुशल पुत्र बन सको।

13. जो नगर पहुँचना चाहता है, वह सुस्त नहीं रहता; जो काम करना चाहता है और उगता हुआ सूरज देखता है, वह आलस्य नहीं करता; जो अपने खेत में खाद डालना चाहता है, वह उसे उपेक्षित नहीं करता। परन्तु जो नगर पहुँचना चाहता है, वह संध्या से पहले वहाँ पहुँचने के लिए जल्दी करता है; जो अपना काम पूरा करना चाहता है, वह उगता हुआ सूरज देखकर प्रसन्नचित्त होकर अपने काम पर जाता है, इस डर से कि कहीं कुछ भी उसे देर न कर दे; और जो अपनी खेत में खाद डालना चाहता है, वह ऐसा करने का प्रयास करता है, इससे पहले कि वह किसी भी काम के लिए पूरी तरह से अनुपयुक्त हो जाए। – *'जिसके सुनने के लिए कान हैं, वह सुने!'*

14. क्या आप दुखों से मुक्त होना चाहते हैं और उनसे बोझिल नहीं होना चाहते? – उनसे भी बड़े दुखों की प्रतीक्षा करें, – और आपको शांति मिलेगी। आयोब और अन्य संतों को याद करें, और उन दुखों को याद करें जिन्हें उन्होंने सहा; उनका धैर्य अपनाएँ, – और आपकी आत्मा को सांत्वना मिलेगी। साहस रखें, मजबूत बनें, और प्रार्थना करें।

१५. रोओ, सिसक-सिसक कर रोओ; किसी विशेष के रूप में देखे जाने की कोशिश मत करो, और किसी भी तरह से अपनी तुलना दूसरों से मत करो। दुनिया से मुंह मोड़ो, अपना क्रूस उठा लो, सांसारिक चीज़ों को त्याग दो, अपने पैरों की धूल झाड़ दो, *'अपमान की परवाह मत करो'* (इब्रानियों 12:2), काल्दीयों के साथ भट्टी में ईंधन मत डालो, कहीं ऐसा न हो कि तुम परमेश्वर के क्रोध से उनके साथ जल जाओ। हर व्यक्ति को अपने से श्रेष्ठ समझो – अपने मृतकों के लिए रोओ – अपना ही लट्ठा काटो – अपने ध्वस्त घर का पुनर्निर्माण करो – चिल्लाकर कहो: *'हे दाऊद के पुत्र, मुझ पर दया कर... ताकि मैं देख सकूँ'* (लूका 18:38, 41)।

१६. जब तक हमारे पास समय है, आइए हम अपने आप पर ध्यान दें और चुप रहना सीखें। और यदि आप सभी चीजों के साथ शांति में रहना चाहते हैं, तो हर व्यक्ति के प्रति मृत हो जाएं, और आपको शांति मिलेगी। मैं यह विचारों के संबंध में, सभी कर्मों के संबंध में, लोगों के साथ हमारे व्यवहार के संबंध में, और हमारी चिंताओं के संबंध में कहता हूं।

17. आपने लिखा: 'मेरे पापों के लिए प्रार्थना करें।' और मैं भी आपसे कहता हूँ: 'मेरे पापों के लिए प्रार्थना करें।' क्योंकि कहा गया है: *'जैसा तुम चाहते हो कि दूसरे तुम्हारे साथ करें, वैसे ही तुम भी उनके साथ करो'* (लूका 6:31)। यद्यपि मैं नीच और सभी मनुष्यों में सबसे छोटा हूँ, फिर भी मैं आज्ञा के अनुसार अपनी पूरी क्षमता से ऐसा ही करता हूँ: *'एक दूसरे के लिए प्रार्थना करो, ताकि तुम चंगे हो जाओ'* (याकूब 5:16)।

18. यदि आप विश्वास के विषय में तर्क नहीं कर सकते, तो तर्क न करें। जो विश्वास में दृढ़ है, यदि वह विधर्मी या अविश्वासियों से बात करता और बहस करता है, तो वह कभी भी पराजित नहीं होगा; क्योंकि उसके भीतर यीशु, शांति और सुकून के राजकुमार, वास करते हैं। और ऐसा व्यक्ति, एक शांतिपूर्ण बहस के बाद, प्रेमपूर्वक कई विधर्मियों और अविश्वासियों को हमारे उद्धारकर्ता यीशु मसीह के ज्ञान की ओर ले जा सकता है। जहाँ तक आपकी बात है, चूँकि अन्य विषयों पर चर्चा करना आपकी क्षमता से परे है, इसलिए राजसी मार्ग, अर्थात् पवित्र पिताओं के विश्वास (और आज हमारे लिए – सात सार्वभौमिक परिषदों द्वारा पुष्टि किए गए विश्वास) को दृढ़ता से थामे रहें, जिसमें आपका बपतिस्मा हुआ था: यह उन लोगों के लिए सटीकता से सब कुछ समाहित करता है जो पूरी तरह से समझते हैं। अपने पापों और इस बात पर अधिक ध्यान दें कि ईश्वर आपसे कैसे मिलेंगे।

19. जब आप अपने लिए की गई प्रशंसा सुनें, तो धर्मग्रंथ के वचनों को याद करें: *'हे मेरे लोगों, जो तुम्हें धन्य कहते हैं, वे तुम्हें छल रहे हैं, और वे तुम्हें भटका रहे हैं'* (यशायाह 3:12)। इस तरह की चापलूसी हमें अपने कर्मों की नीचता को देखने से रोकती है: ऐसा लगता है कि यह उन लोगों को भी नुकसान पहुँचाती है जिन्होंने कुछ आध्यात्मिक प्रगति हासिल कर ली है, और ईश्वर में विश्वास से दूर ले जाती है, जो कहते हैं: *'तुम कैसे विश्वास कर सकते हो, जब तुम एक-दूसरे से महिमा ग्रहण करते हो?'* (यूहन्ना 5:44)? जो प्रेरित की नम्रता को अपनाता है, वह अंत में *'मूर्ख होने' को* चुनेगा, *ताकि वह बुद्धिमान बन सके'* (1 कुरिन्थियों 3:18)। और जो अपने आपको आध्यात्मिक होने के बजाय बुद्धिमान दिखाता है, मुझे आश्चर्य है कि क्या वह घमंड के लिए निर्धारित निंदा से बच पाएगा।

20. (*रात में डर के प्रश्न पर*)। नागरिक तब तक दुश्मन के आक्रमण से डरते हैं जब तक उन्हें राजा से कोई मदद नहीं मिलती। लेकिन जब उन्हें यह खबर मिलती है कि एक कमांडर उनके शहर में प्रवेश कर गया है, तो वे अब परेशान नहीं होते, यह जानते हुए कि उनके नेता उनकी देखभाल कर रहे हैं। भले ही वे शत्रु के आने की खबर सुनें, एक रक्षक होने के कारण, वे अब डरा नहीं करते। इसी तरह, यदि हम ईश्वर में विश्वास रखते हैं, तो हम राक्षसों से नहीं डरते; क्योंकि ईश्वर हमें अपनी सहायता भेजते हैं।

21. घंटे और भजन चर्च की परंपरा का हिस्सा हैं, और सभी लोगों को (प्रार्थना में) सामंजस्य में लाने के साथ-साथ सामुदायिक जीवन में कई लोगों के बीच सामंजस्य को बढ़ावा देने के लिए अच्छी तरह से स्थापित हैं। हालाँकि, स्केट्स न तो घंटे का जाप करते हैं और न ही भजन गाते हैं, बल्कि एकांत में शिल्प कौशल, पढ़ाई और मनन का अभ्यास करते हैं, और कुछ समय बाद प्रार्थना के लिए खड़े होते हैं। जब आप प्रार्थना में खड़े हों, तो आपको पुराने स्वभाव से मुक्ति के लिए प्रार्थना करनी चाहिए, , या *'हमारे पिता' की* प्रार्थना करनी चाहिए, या दोनों एक साथ, और फिर अपने हस्तशिल्प के लिए बैठ जाना चाहिए। जहाँ तक प्रार्थना में खड़े होकर प्रार्थना जारी रखने की अवधि का सवाल है, मैं यह कहूँगा: यदि आप प्रेरित के वचनों के अनुसार *'अनवरत प्रार्थना करें'* (1 थिस्स. 5:17), तो किसी अवधि को निर्दिष्ट करने की कोई आवश्यकता नहीं है।

२२. जहाँ तक रात में सोने का सवाल है, सूर्यास्त से गिनती शुरू करके शाम को दो घंटे प्रार्थना करो; और डोकसोलॉजी समाप्त करने के बाद, छह घंटे सोओ, फिर जागकर प्रार्थना के लिए उठो और शेष चार घंटे जागते रहो। गर्मियों में भी ऐसा ही करो; लेकिन रातों की संक्षिप्तता के अनुसार डोकसोलॉजी को छोटा करो और कम भजन पढ़ो।

23. प्रभु ने हमें नम्रता प्राप्त करने का तरीका सिखाया, यह कहते हुए: *'मेरे से सीखो, क्योंकि मैं मन से कोमल और दीन हूँ, और तुम अपने प्राणों को विश्राम पाओगे'* (मत्ती 11:29)। यदि आप भी पूर्ण शांति प्राप्त करना चाहते हैं, तो पहचानें कि प्रभु ने क्या सहा, और स्वयं भी उसे सहें, और सभी बातों में अपनी इच्छा को त्याग दें। उद्धारकर्ता स्वयं ने कहा: *'मैं स्वर्ग से इसलिए नहीं आया कि मैं अपनी इच्छा करूँ, बल्कि उस पिता की इच्छा करूँ जिसने मुझे भेजा है'* (यूहन्ना 6:38)। तथापि, पूर्ण नम्रता में निन्दा, अपमान और उन सभी बातों को सहना शामिल है, जो हमारे शिक्षक, मसीह यीशु ने सहे। यह इस बात का भी संकेत है कि एक व्यक्ति ने पूर्ण प्रार्थना प्राप्त कर ली है - अर्थात्, कि वह अब परेशान नहीं होता, भले ही सारी दुनिया उसे अपमानित करे।

२४. पूर्ण प्रार्थना का द्वार तब खुलता है जब कोई अपने विचारों को विचलित करने वाली चीज़ों से मुक्त हो जाता है और देखता है कि उसका मन, प्रभु द्वारा प्रबुद्ध होकर, आनंद से भर गया है। जो व्यक्ति पूर्ण रूप से प्रार्थना करता है, वह वही है जो स्वयं को संसार और उसकी सुख-सुविधाओं से अलग कर लेता है; और जब कोई

व्यक्ति ईश्वर के लिए लगन से अपना कार्य करता है, तो यह ध्यान भटकाव नहीं, बल्कि ईश्वर को भाने वाली लगन है।

25. भोजन और पेय में संयम के संबंध में, धर्मपिता सिखाते हैं कि किसी को भी सामान्य से कुछ कम मात्रा में सेवन करना चाहिए, यानी, अपना पेट पूरी तरह से नहीं भरना चाहिए। और प्रत्येक व्यक्ति को स्वयं के लिए, पके हुए भोजन और शराब दोनों में, उचित मात्रा निर्धारित करनी चाहिए। हालाँकि, संयम केवल भोजन और पेय तक ही सीमित नहीं है, बल्कि यह बातचीत, नींद, कपड़ों और सभी इंद्रियों तक भी फैला हुआ है; इन सभी चीजों में संयम की एक सीमा होनी चाहिए।

26. भोजन और पेय की मात्रा को कैसे निर्धारित करें ताकि वह उचित मात्रा से थोड़ी कम हो? – भोजन की कुल मात्रा, यानी रोटी और अन्य व्यंजनों में से, एक औंस से थोड़ा कम अलग रखें; और जहाँ तक शराब और पानी की बात है, प्रत्येक में से आधे कप से थोड़ा कम अलग रखें। यदि आप अपने आप पर ध्यान देते हैं और केवल एक बार पीना आपके लिए आसान है, तो यह अच्छा होगा; लेकिन यदि आप ऐसा नहीं कर सकते, तो दो बार पिएँ, हालाँकि हर बार उचित मात्रा से कम। और भ्रम और आंतरिक कलह के समय में, किसी को भोजन और पेय की सामान्य मात्रा को भी थोड़ा कम कर देना चाहिए, यानी भोजन को और एक औंस, और सभी पेय को और एक कप – ताकि कुल भोजन की मात्रा को दो औंस और कुल पेय की मात्रा को एक कप कम किया जा सके।

27. और कोई व्यक्ति उचित मात्रा कैसे निर्धारित करे, या उसे कैसे पता चले कि उसे कितना खाना और पीना चाहिए? – सभी प्रकार के भोजन, यानी रोटी, अन्य भोजन और सब्जियों के संबंध में कई दिनों तक स्वयं का अवलोकन करके, कोई व्यक्ति अनुभव से जान सकता है कि उसके शरीर को कितनी मात्रा में भोजन और पेय की आवश्यकता है (ताकि वह बोझ महसूस किए बिना तृप्त हो सके)। इस माप से, वे एक औंस भोजन और आधा कप पेय अलग रख लें। और युद्ध के समय, वे एक और औंस और आधा कप और अलग रख लें।

28. 'अपनी शक्ति के अनुसार' संयम क्या है? 'अपनी शक्ति के अनुसार' संयम का अर्थ है भोजन और पेय का सेवन करना, जैसा कि बताया गया है—अर्थात्, उन्हें उचित मात्रा से थोड़ा कम मात्रा में लेना—और यही नियम नींद पर भी लागू होता है। लेकिन यदि कोई, श्रम और थकान के कारण, इससे थोड़ा अधिक सेवन करता है, तो यह नियम का उल्लंघन नहीं होगा: 'अपनी शक्ति के अनुसार'। – आप पूछ सकते हैं: नींद का मापदंड क्या होना चाहिए? – धर्मगुरु इस के लिए आधी रात निर्धारित करते हैं। जहाँ तक भोजन का सवाल है, तब खाना बंद कर दें जब आप अभी भी थोड़ा और खाने की इच्छा रखते हों – और इस तरह, हमेशा इसे संयम से ग्रहण करें।

२९. मनमानी पर खाने का क्या मतलब है, और प्रकृति की मांग के अनुसार खाने का क्या मतलब है? – मनमानी पर खाने का मतलब है शरीर की ज़रूरत के कारण नहीं, बल्कि पेट (और गले) को खुश करने के लिए खाना। हालाँकि, यदि आप देखते हैं कि आपका शरीर किसी दूसरी तरह के भोजन को पसंद करता है, उसकी मिठास के लिए नहीं बल्कि उसकी हल्कापन के लिए, तो उसे खाना मनमानी नहीं है। कुछ लोगों को स्वभाव से ही मीठा खाना पसंद होता है, दूसरों को नमकीन, और कुछ को खट्टा: – और यह मनमानी नहीं है। – लेकिन किसी विशेष भोजन के प्रति विशेष लगाव होना और उसे लालच से इच्छा करना – यह एक मनमानी है – जो अतिभक्षण की दासी है। – यदि आप जानना चाहते हैं कि क्या आप पर खाने की लत सवार है, तो आप इसे इस तरह से जान सकते हैं: यदि भोजन आपके विचारों पर हावी है (जिससे आप उसका विरोध नहीं कर सकते), तो आप एक भूखे हैं। हालाँकि, यदि ऐसा कोई प्रभाव नहीं है, और आप स्वतंत्र रूप से शरीर की जरूरतों के अनुसार जो भी भोजन उपयुक्त है, वह खाते हैं, तो आप भूखे नहीं हैं। भक्षण की एक और निशानी है – भोजन के समय से पहले खाने की इच्छा होना; ऐसा कभी नहीं करना चाहिए, जब तक कि कोई उचित कारण न हो।

३०. यदि (अतिभक्षण की) लालसा मुझ पर पहले ही हावी नहीं होती, बल्कि खाने के ठीक पहले उत्पन्न होती है, तो मुझे क्या करना चाहिए - क्या मुझे भोजन छोड़ देना चाहिए, या नहीं? – जब आप दूसरों के साथ भोजन कर रहे हों, तो भोजन से इनकार न करें: लेकिन, ईश्वर का नाम लेकर, लालच को दूर भगाएँ और संयम से खाएँ; खुद को याद दिलाते हुए कि यह भोजन जल्द ही सड़न में बदल जाएगा। हालाँकि, जब आप अकेले और भूखे हों, तो रोटी और जो भी अन्य भोजन आपको मिले, खा लें, बशर्ते आपको उस पर कोई आपत्ति न हो।

31. क्या किसी को अपने हृदय में उत्पन्न होने वाले हर विचार के बारे में बुजुर्गों से परामर्श करना चाहिए? – किसी को अपने हृदय में उत्पन्न होने वाले हर विचार के बारे में उनसे परामर्श नहीं करना चाहिए, बल्कि केवल उन विचारों के बारे में करना चाहिए जो मन में टिके रहते हैं और उसे पीड़ित करते हैं। यह उस व्यक्ति के समान है, जिसे भले ही कई लोग परेशान करते हों, वह इन परेशानियों को अनदेखा कर देता है और उन पर ध्यान नहीं देता। लेकिन अगर कोई उठकर उस पर हमला कर दे, तो वह इस मामले की सूचना शासक को दे देता है।

32. क्या हमें उस विचार का विरोध करना चाहिए जो हमसे लड़ता है? – विरोध मत करो; क्योंकि इस इच्छा के शत्रु यही चाहते हैं, और (आपका विरोध देखकर) हमला करना बंद नहीं करेंगे; बल्कि उनके विरुद्ध प्रभु से प्रार्थना करो, अपनी दुर्बलता को उनके सामने रखो, और वह न केवल उन्हें दूर कर सकते हैं, बल्कि उन्हें पूरी तरह से नष्ट भी कर सकते हैं।

33. रात्रि के दर्शन और अपवित्रताएँ होती हैं, कभी-कभी अहंकार से, कभी-कभी तृप्ति से, और कभी-कभी शैतान की ईर्ष्या से। दूसरे के संबंध में, यह कहा जाना चाहिए कि जब, हमारी ओर से, अहंकार और अति-आसक्ति दुश्मन की मदद नहीं करते हैं, तो वह इसे बार-बार नहीं दोहरा सकता। जैसे एक निर्माणकर्ता, यदि उसे आवश्यक सामग्री नहीं मिल पाती है, तो उसकी मेहनत व्यर्थ जाती है; वैसे ही शैतान भी है।

34. मैं अपनी भूख को नियंत्रित करना और अपने खाने की मात्रा कम करना चाहता हूँ, फिर भी मैं ऐसा नहीं कर पाता। भले ही मैं कभी-कभी इसे कम कर भी लेता हूँ, थोड़ी ही देर बाद मैं अपनी पुरानी मात्रा पर वापस आ जाता हूँ; यही बात पीने पर भी लागू होती है। ऐसा क्यों है? – इससे कोई भी मुक्त नहीं है, सिवाय उन लोगों के जो संयम प्राप्त कर चुके हैं, जैसे उस व्यक्ति ने कहा: *'मैं अपनी रोटी खाना भूल गया हूँ; मेरी आहों की आवाज़ से मेरी हड्डियाँ मेरे शरीर से चिपक गई हैं'* (भजन संहिता 101:5-6)। ऐसा व्यक्ति जल्द ही भोजन और पेय में कमी कर लेता है; क्योंकि आँसू ही उसकी रोटी का काम करते हैं – और अंततः वह उस बिंदु पर पहुँच जाता है जहाँ वह पवित्र आत्मा से पोषित होता है। भाई, मेरा विश्वास करो, मैं ऐसे दर्जे के एक व्यक्ति को जानता हूँ; सप्ताह में एक या दो बार, और अक्सर उससे भी अधिक, वह आध्यात्मिक भोजन की ओर आकर्षित होता है, और उसकी मिठास के कारण वह भौतिक भोजन को भूल जाता है; लेकिन जब रोटी खाने का समय आता है, तो वह, मानो, तृप्त हो जाता है और उसे खाना नहीं चाहता, और खाते समय, वह खुद को कोसता है, यह कहते हुए: 'मैं हमेशा इस अवस्था में क्यों नहीं रहता?' और वह और भी आगे बढ़ना चाहता है।

35. ऐसी अवस्था कैसे प्राप्त की जाए? – जब किसी व्यक्ति के सभी विचार ईश्वर में एक हो जाते हैं; तब यह देह भी ईश्वर की ओर निर्देशित विचारों का अनुसरण करेगी – और आत्मा का आनंद हृदय में प्रकट होता है, जो आत्मा को पोषण देता है और शरीर को तृप्त करता है, और दोनों को बलवान बनाता है। ऐसा व्यक्ति अब कमजोर या निराश नहीं होता; क्योंकि उस क्षण से, यीशु उनके सहायक के रूप में कार्य करते हैं, और उन्हें उस स्थान की दहलीज़ के पास लाते हैं *'जहाँ से हर बीमारी, दुख और आह दूर भाग जाती है'* (यशायाह 51:11)—और पवित्रशास्त्र का वचन उसमें पूरा होता है: *'क्योंकि जहाँ तुम्हारा धन है, वहीं तुम्हारा हृदय भी होगा'* (मत्ती 6:21)। यह नम्रता ही है जो एक व्यक्ति को इस अवस्था तक पहुँचाती है।

३६. कोई प्राकृतिक शारीरिक कमजोरी (ब्रह्मचर्य के कारण) और राक्षस के कारण होने वाली कमजोरी में अंतर कैसे कर सकता है, और किसी को कितना भोजन खाना चाहिए? – कमजोरी के बारे में, मैं यह कहूँगा: यदि शरीर, अपनी दैनिक भोजन (आम संयम की मात्रा के साथ) लेते समय, कमजोर हो जाता है, तो यह राक्षसों के कारण है; अन्यथा (जब संयम की मात्रा अत्यधिक हो), यह स्वाभाविक कमजोरी है। आत्म-संयम की सामान्य सीमा यह है कि मेज़ से उठते समय थोड़ी असंतुष्टि महसूस हो, जैसा कि बुज़ुर्गों ने नौसिखियों के लिए निर्धारित किया है। – जब कोई व्यक्ति बाद में इसमें और अधिक आत्म-संयम में स्थापित हो जाता है, तो आदत से पहले ही प्रशिक्षित होने के कारण, यह उसके ध्यान से नहीं छूट सकता कि उसे कितना खाना चाहिए।

३७. 'मेरे लिए प्रार्थना करो; मैं बड़े दुख में हूँ।' – जो धीरज और दुख के द्वारा संसार के प्रति वास्तव में मरते हैं, वे परिपक्वता के स्तर तक पहुँचते हैं। हे प्रिय भ्राता! – प्रभु ने क्रूस को सहन किया – क्या तुम्हें भी अपनी दुखों में आनंदित नहीं होना चाहिए, जिनके सहन करने से स्वर्ग के राज्य में प्रवेश मिलता है? यह एक अच्छा संकेत है कि तुम दुखी हो। क्या तुम नहीं जानते कि जब प्रभु किसी के लिए अपनी कृपा तैयार कर रहे होते हैं, तो दुख और परीक्षाएँ बढ़ जाती हैं? और सामान्य रूप से, जब तक प्रभु आपको शारीरिक विश्राम न भेजें, तब तक शारीरिक विश्राम की खोज न करें, क्योंकि शारीरिक विश्राम प्रभु को घृणित है। और प्रभु ने कहा: *'जगत में तुम्हें क्लेश होगा'* (यूहन्ना 16:33)।

38. किसी को अपने लिए दैनिक भोजन अलग क्यों रखना चाहिए? – यदि आप अपनी कोठरी में अपने लिए दैनिक भोजन अलग रखते हैं, तो यह आपको चिंता और कलह में डाल देगा। जो कुछ भी ईश्वर भेजे, उससे संतुष्ट रहें। *'जो सीधा चलता है, वह आशा में चलता है'* (नीतिवचन 10:9)।

39. भजन पढ़ते समय, क्या प्रत्येक भजन के बाद *'प्रभु की प्रार्थना' का* पाठ करना चाहिए? – *'प्रभु की प्रार्थना' का* एक बार पाठ करना पर्याप्त है।

४०. उस मार्ग का अनुसरण करो जिस पर हम भी चले हैं, अपने पूर्वजों के पदचिन्हों पर चलते हुए। मुझे याद नहीं कि जब हमें पूर्ण शान्ति मिली, तो हमने कभी उसका लाभ उठाया हो; बल्कि हमने हर तरह से कोशिश की कि हर ओर से थोड़ी-सी तकलीफ और दुख मिला लें, उस से डरते हुए जिसने कहा: *'तुमने अपनी भलाई अपने वक्ष में इकट्ठी कर ली है'* ((लूका 16:25), और यह ध्यान में रखते हुए कि *'हमें परमेश्वर के राज्य में प्रवेश करने के लिए बहुत कष्टों से होकर गुजरना चाहिए'* (प्रेरितों के काम 14:22)। इस प्रकार हमने तब भी काम किया जब हमारे हाथों में बहुत सारी संपत्तियाँ आईं, और परमेश्वर जानता है कि हम किस गरीबी में रहे, उस के लिए जिसने हमारे लिए गरीब होने का चुनाव किया। – सभी बातों में मन की शांति की खोज करना अच्छा नहीं है। जो कोई भी इसकी खोज करता है, वह अपने लिए जीता है, न कि परमेश्वर के लिए; क्योंकि ऐसा व्यक्ति अपनी इच्छा को वश में नहीं कर सकता।

४१. प्रभु चाहते हैं कि आप हर व्यक्ति को अपने से श्रेष्ठ समझें। अपने आध्यात्मिक पिता की हर बात में आज्ञा मानिए, और जो कुछ भी वह आपसे कहते हैं, उसे कीजिए, चाहे वह खाने-पीने की बात हो या किसी अन्य मामले की। यदि आपकी निंदा की जाती है, तो आनंद मनाइए; यह आपके लिए बहुत लाभदायक है। यदि आपको अपमानित किया जाता है, तो उसे सहन करें; *'क्योंकि जो अंत तक सहिष्णु रहेगा, वह उद्धार पाएगा'* (मत्ती 10:22)। हर बात के लिए परमेश्वर का धन्यवाद करें; क्योंकि धन्यवाद हमारी कमजोरियों के लिए परमेश्वर के सामने मध्यस्थता करता है। हर बात में और हर समय, स्वयं को पापी और भटकने वाला समझो – और परमेश्वर तुम्हारा न्याय नहीं करेंगे; हर बात में नम्र रहो और तुम अनुग्रह प्राप्त करोगे।

४२. सभी परिस्थितियों में, हम नम्रता का सहारा लें; क्योंकि निम्र लोग जमीन पर लेटे हैं, और जो जमीन पर लेटा है—वह कहाँ गिर सकता है? लेकिन जो ऊँचा है वह गिरने के लिए प्रवृत्त है। यदि हमने पश्चाताप किया है और सीधे हो गए हैं, तो यह हम में से नहीं है, बल्कि परमेश्वर का एक वरदान है; क्योंकि *'प्रभु गिरने वालों को उठाता है और अंधों को देखने का सामर्थ्य देता है'* (भजन संहिता 145:8)।

४३. बीमारी ईश्वर की ओर से हमें दी गई एक चेतावनी है, और यदि हम ईश्वर का धन्यवाद करें तो यह हमें समृद्धि प्रदान करती है। क्या अय्यूब ईश्वर के एक विश्वासयोग्य मित्र नहीं थे? फिर भी, उन्होंने ईश्वर का धन्यवाद करते और उन्हें आशीष देते हुए क्या-क्या नहीं सहा? – और उनकी सहनशीलता ने अंततः उन्हें अतुलनीय महिमा तक पहुँचाया। थोड़ी देर (अपनी बीमारी में) धैर्य रखें, *'और आप परमेश्वर की महिमा देखेंगे'* (यूहन्ना 11:40)। – और यदि आप (बीमार होने पर) उपवास नहीं कर सकते, तो दुखी न हों; परमेश्वर किसी से भी उसकी शक्ति से बढ़कर परिश्रम की मांग नहीं करता। इसके अलावा, उपवास क्या है, सिवाय शरीर के एक अनुशासन के, जिसका उद्देश्य स्वस्थ शरीर को वश में करना और उसे वासनाओं के विरुद्ध कमजोर बनाना है, जैसा कि प्रेरित के शब्दों में कहा गया है: *'जब मैं कमजोर होता हूँ, तब मैं मजबूत होता हूँ'* (2 कुरिन्थियों 12:10)। बीमारी इस से भी बड़ी सज़ा है, और इसे उपवास के स्थान पर गिना जाता है - वास्तव में, इसे उपवास से भी अधिक महत्व दिया जाता है। जो कोई भी इसे धैर्य से सहन करता है, और ईश्वर का धन्यवाद करता है, वह उस धैर्य के द्वारा अपने उद्धार का फल प्राप्त करता है। उपवास के द्वारा शरीर की शक्ति को कमजोर करने के बजाय, वह पहले से ही बीमारी से कमजोर हो चुकी है। तो फिर ईश्वर का धन्यवाद करो कि तुम्हें उपवास की मेहनत से बचाया गया है। भले ही आप दिन में दस बार खाएं, परेशान न हों; आप इसके लिए दोषी नहीं ठहराए जाएंगे, क्योंकि आप ऐसा अपनी तुष्टि के लिए नहीं कर रहे हैं।

४४. (विश्वास के फलों से) ईर्ष्या के कारण, राक्षस हमारे मन में अविश्वास भरते हैं; और यदि हम इसे स्वीकार कर लेते हैं, तो हम उनके दास और सहयोगी बन जाते हैं।

४५. (*दैनिक अभ्यास*)। आपको थोड़ा-बहुत भजन गाने का अभ्यास करना चाहिए, और थोड़ा-बहुत ज़ोर से प्रार्थना करनी चाहिए (याद से प्रार्थना); आपको अपने विचारों की जाँच करने और उनकी रक्षा करने के लिए भी समय चाहिए। जहाँ तक भजन-गाने और याद से प्रार्थनाओं का पाठ करने की बात है, अपने लिए सख्त सीमाएँ न रखें, बल्कि उतना ही करें जितना प्रभु आपको करने की शक्ति देते हैं; और न ही आपको पढ़ने और मौन प्रार्थना की उपेक्षा करनी चाहिए। थोड़ा यह, थोड़ा वह, और इस प्रकार आप अपना दिन ईश्वर को प्रसन्न करते हुए बिताएँगे। हमारे पवित्र पिताओं के पास कोई निश्चित नियम नहीं था, परन्तु वे पूरे दिन भर अपने नियम का पालन करते थे: वे कुछ समय के लिए भजन गाते थे, कुछ समय के लिए मन ही मन प्रार्थनाएँ जपते थे, कुछ समय के लिए अपने विचारों की जाँच करते थे, और, यद्यपि केवल थोड़ा ही, अपने भोजन का ध्यान रखते थे – और वे यह सब ईश्वर के भय से करते थे। क्योंकि कहा गया है: *'तुम जो कुछ भी करो, सब कुछ परमेश्वर की महिमा के लिए करो'* (1 कुरिन्थियों 10:31)।

४६. अपनी पीड़ा में शत्रु आपको बेचैन न करे। क्या परमेश्वर की अनुमति के बिना किसी पर कभी कोई परीक्षा या पीड़ा आती है? नहीं। परमेश्वर हमारी आत्माओं के लाभ के लिए ऐसा होने देता है, जबकि शैतान हमें चीजों को अलग तरह से प्रस्तुत करता है, ठीक वैसे ही जैसे उसने बहुत समय पहले किया था जब उसने हमारे प्रथम माता-

पिता को स्वर्ग से निकाल दिया था। – लेकिन हम इस पर विचार नहीं करते, और यह भूल जाते हैं कि परमेश्वर हमें हर अशुद्धता से शुद्ध करने के लिए क्लेश भेजते हैं, और हम परेशान और निराश हो जाते हैं। – यदि आप बचना चाहते हैं, तो अपने विचारों पर भरोसा न करें; क्योंकि दुष्टात्मा आपके भीतर बुराई के बीज बोती हैं और एक चीज़ के बदले दूसरी चीज़ पेश करती हैं। किसी पर किसी भी बात का आरोप न लगाएँ, बल्कि हर काम में अपने पड़ोसी को प्रसन्न करने का प्रयास करें। और किसी के बारे में भी बुरे विचार मन में न रखें; क्योंकि ऐसा करने से आप स्वयं बुरे बन जाते हैं, क्योंकि दुष्ट लोग बुरा सोचते हैं, और भले लोग भला सोचते हैं। जब आपके मन में यह विचार आए: 'वे मेरे बारे में बात कर रहे हैं' – तो जान लें कि यह शत्रु है जो आपको फुसफुसा रहा है। ऐसे संदेहों को कभी मन में न पालो। सब कुछ सहन करो, आनंदित और प्रसन्न रहो; क्योंकि धीरज का पुरस्कार महान है। और राक्षसों पर विश्वास मत करो; क्योंकि जो वे तुम्हें दिखाते हैं वह वास्तविक नहीं है: वे केवल किसी न किसी तरह तुम्हें भ्रमित करने की कोशिश करते हैं।

४७. ('एक और अपमान')। भाई, मैं तुम्हारी भोली-भाली प्रकृति को देखकर हैरान हूँ। क्या तुम सच में सोचते हो कि शैतान किसी को भी लुभाना कभी बंद करता है? – इसके अलावा, क्या कोई उस पर दोष लगा सकता है जो शैतान के वश में हो, जो जमीन पर गिर जाता है और उसके मुँह से झाग निकलता है? – इसी तरह, उन लोगों को दोष नहीं दिया जा सकता जिन्हें शैतान हमारे विरोध और हम पर अपमान करने के लिए उकसाता है। दोष उनका नहीं है, बल्कि उस वासना का और उस व्यक्ति का है जो उसे भड़काता है। शत्रु आपको भ्रमित करता है – और आप अपने पापों को नहीं देखते, बल्कि अपने पड़ोसी के पापों को बारीकी से देखते हैं; आप अपने भाई के अपराधों पर ही अड़े रहते हैं, जबकि अपने पापों को भूल जाते हैं । – और आप आखिर हैं कौन, जो दूसरों के पापों को देखें? – लाजरूस को याद करें – उसने कितनी देर तक सहन किया, परमेश्वर का धन्यवाद हो?

४८. 'मैं कल्पनाओं (नींद में शर्मनाक) में पड़ गया हूँ।' – ईश्वर हमें कल्पनाओं और अन्य जुनून में पड़ने देते हैं ताकि हम अपनी कमजोरी को पहचान सकें, और अपना भरोसा और उम्मीद खुद पर नहीं, बल्कि केवल उसी पर रखें। – फिर भी यह न सोचें कि हम ईश्वर की इच्छा से कल्पनाओं और अन्य वासनाओं के आगे झुक जाते हैं; बल्कि, ईश्वर हमें हमारी ही लापरवाही के कारण ऐसा होने देते हैं, और मानवता के प्रति अपने प्रेम के कारण, वह हमारे भीतर प्रकट हुई बुराई का उपयोग हमारे उद्धार के लिए हमें विनम्र बनाने हेतु करते हैं। तब जानो कि तुम कौन हो, और न केवल परमेश्वर के सामने बल्कि लोगों के सामने भी स्वयं को नम्र बनाओ, अपनी सारी चिन्ताओं को उसी के हवाले कर दो जो हम जो कुछ भी माँगते या सोचते हैं, उससे अतुलनीय रूप से अधिक करने में समर्थ है।

४९. 'मैं प्रलोभनों से थक गया हूँ'। – हतोत्साहित न हों, भाई; परमेश्वर ने आपको नहीं छोड़ा है और न ही छोड़ेंगे। जान लें कि हमारे सामान्य पिता आदम पर प्रभु द्वारा सुनाया गया यह निर्णय: *'अपने माथे के पसीने की कीमत पर अपनी रोटी खाओगे'* (उत्पत्ति 3:19), अपरिवर्तनीय है। जैसे कड़ाही में परखे जाने पर सोना शुद्ध होकर राजसी मुकुट के योग्य बन जाता है, वैसे ही एक व्यक्ति भी, जो दुखों से परखा जाता है—यदि वह उन्हें धन्यवाद के साथ सहन करता है—तो वह राज्य का पुत्र बन जाता है। अतः विश्वास करो कि जो कुछ भी तुम पर आता है, वह तुम्हारे भले के लिए है, ताकि तुम भी परमेश्वर के सामने निर्भयता प्राप्त कर सको।

५०. (*निराश रोगी के लिए*)। हमारे उद्धारकर्ता के दुखों पर मनन करो—जैसे कि तुम भी उनके साथ अपमान, घाव, तिरस्कार, थूका जाने का दुर्व्यवहार, कarmesīन रंग के वस्त्र का अपमान, काँटों के मुकुट की लज्जा, पित्त मिला हुआ सिरका, सहन कर रहे हो, कीलों के ठोकने का दर्द, भाले से भेदन, पानी और रक्त का प्रवाह – और अपनी स्वयं की पीड़ाओं के लिए इससे सांत्वना प्राप्त करो। प्रभु आपकी मेहनत व्यर्थ नहीं होने देंगे। उन्होंने आपको थोड़ी-सी बीमारी सहने की अनुमति दी है, ताकि जब आप उस घड़ी में संतों को उनके धैर्यपूर्ण दुख के फल और महिमा को धारण किए हुए देखें, तो आप उनके लिए अजनबी न रहें, बल्कि उनके और यीशु के साथ सहभागी बनें, और संतों के साथ मिलकर परमेश्वर के सामने निडर हो सकें। तो इसलिए दुखित न हो; परमेश्वर ने तुम्हें भुला नहीं दिया है, बल्कि अपनी संतान के समान तुम्हारी परवाह करते हैं, न कि *एक 'व्यभिचारी'* के समान।

51. काश कि हमारे उस महान भाई से हम सभी को सहायता मिले; मेरा तात्पर्य हमारे प्रभु यीशु मसीह से है, जो हमें अपना भाई बनाने में प्रसन्न हुए (इब्रानियों 2:11)। और हम पहले ही ऐसे बन चुके हैं, और स्वर्गदूत हमें आशीष देते हैं। – ओह, हमारा भाई तो क्या ही महान है! महाबली, हमें बल देने के लिए; – शक्तिशाली, हमारे साथ लूट का माल बाँटने के लिए; – सेनापति, युद्ध में हम पर आक्रमण करने वाले हमारे शत्रुओं को मार गिराने के लिए; – चंगा करने वाले, हमारे बाहरी स्वरूप के साथ हमारे भीतरी स्वरूप को चंगा करने के लिए, बाद वाले को पहले वाले के अधीन करते हुए; – एक पोषक, जो हमें आध्यात्मिक भोजन से पोषित करे, – जीवित, जो हमें बनाए रखे, – दयालु, जो हम पर दया करे, – उदार, जो हम पर अनुग्रह करे, – राजा, जो हमें भी राजा बनाए, – ईश्वर, जो हमें भी देवता बनाए। – इसलिए,

यह जानते हुए कि सभी चीजें उसी में पाई जाती हैं, उसी से प्रार्थना करें – और वह आपके हृदय की विनती पूरी करेगा, बशर्ते कि आप स्वयं उसे रोकें नहीं।

52. प्रभु यीशु, जिन्होंने कहा, *'माँगो, तो तुम्हें दिया जाएगा'* (यूहन्ना 16:24), आपकी सभी याचनाएँ पूरी करें। केवल अपने घर को पूरी तरह से शुद्ध करके, परमेश्वर के उपहारों को प्राप्त करने के लिए तैयार करें। वे केवल एक शुद्ध घर में ही संरक्षित रहते हैं - और केवल वहीं अपनी सुगंध बिखेरते हैं, जहाँ कोई अशुद्धि नहीं है। जो कोई भी उनका सेवन करता है, वह पुराने मनुष्य से अलग हो जाता है, संसार के लिए सूली पर चढ़ाया जाता है, जैसे संसार उसके लिए है, और हमेशा प्रभु में जीता है। चाहे दुश्मन की लहरें कितनी भी ज़ोर से टकराएँ, वे उसके जहाज़ को तोड़ नहीं सकतीं; और उस पल से वह अपने दुश्मनों के लिए एक खौफ बन जाता है—क्योंकि वे उस पर पवित्र मुहर देखते हैं—और जितना अधिक वह उनके लिए दुश्मन बनता है, उतना ही अधिक वह महान राजा का एक सच्चा और प्रेम करने वाला मित्र बनता है।

५३. दैवीय वासनाओं और कल्पनाओं से उत्पन्न चिंताओं को आप पर हावी न होने दें। विश्वास रखें कि, यद्यपि राक्षस हमें कष्ट देते हैं और प्रलोभित करते हैं, वे कुछ भी करने में सफल नहीं होंगे, बल्कि हमारी सदाचारिता को और भी बढ़ाएंगे, बशर्ते हम स्वयं पर सतर्क रहें और थोड़ा धैर्य बनाए रखें। तो आइए, हम अपने प्रयासों में सुस्ती न करें, कहीं ऐसा न हो कि हम अपने दयालु और दयालु ईश्वर द्वारा हमें दिए गए वादों को खो दें। दान करने का कार्य ईश्वर पर निर्भर है, और उसे संरक्षित करने का कार्य हमारा है। और इस बात पर आश्चर्यचकित न हों कि ईश्वर के पवित्र वचनों और अतुलनीय वरदानों के बाद भी, दुष्टात्माएँ एक बार फिर आपके विरुद्ध अपनी लज्जास्पद वासनाओं को भड़काती हैं, इस आशा में कि वे आपकी असीम संपत्ति को चुरा सकें, लेकिन याद करो कि वे कितने निर्लज्ज थे जब, स्वयं ईश्वर द्वारा पवित्र आय्यूब की गवाही देने के बाद भी, उन्होंने धैर्य के इस स्तंभ को गिराने के लिए उनके विरुद्ध ऐसी परीक्षाएँ और यातनाएँ दीं; फिर भी वे उन पर विजय प्राप्त नहीं कर सके, और न ही वे उनके तेजस्वी विश्वास और कृतज्ञता के खजाने को लूट सके। सोने को आग से शुद्ध किया जाता है, अर्थात् धर्मी मनुष्य को अनेक परीक्षाओं से। परमेश्वर ने यह अनुमति दी और होने दिया कि धर्मी मनुष्य के विषय में उनकी विशेष गवाही के बाद भी, उनके सेवक को प्रभु के अधिक सम्मान और महिमा तथा उनके शत्रुओं की पूर्ण पराजय के लिए परीक्षा में डाला जाए। अतः हियाव न खोओ। वादों की मुहरें अक्षुण्ण रहती हैं; *'परन्तु यहोवा की प्रतीक्षा कर'* (भजन संहिता 26:14); *'जो अन्त तक सहिष्णु रहेगा, वह उद्धार पाएगा'* (मत्ती 24:13), हमारे प्रभु मसीह यीशु के विषय में।

५४. (*उत्तर*)। – आपके विचारों में उथल-पुथल इसलिए होती है क्योंकि आपका हृदय चंचल है। – आपको शराब से पूरी तरह परहेज़ करने की आवश्यकता नहीं है, बल्कि इसे संयम से पीएँ। – बैठकर सोने से अंततः विनम्रता आती है। – हालांकि, सामान्य रूप से, स्वयं को पूरी तरह से ईश्वर को समर्पित कर दें, उनके प्रति श्रद्धा में।

५५. अपने आप का ध्यान रखें; दुष्टात्माएँ आपको कम लाभ वाली चीज़ों की ओर लुभाना चाहती हैं, जैसे कि बैठे-बैठे सोना, या तकिया न रखना – जो *'पुदीना, जीरा और सौंफ़'* के समान है – और वे *'कानून के बड़े मामलों की उपेक्षा करने' का* विचार डालती हैं (मत्ती 23:23), अर्थात् क्रोध को शांत करना, चिड़चिड़ापन शांत करना, और सभी बातों में आज्ञाकारिता प्राप्त करना। वे इन बातों को आपके भीतर इसलिए बोते हैं ताकि आपके शरीर को थका दिया जाए, जिसके परिणामस्वरूप आप बीमार पड़ेंगे और, आवश्यकतानुसार, आपको एक नरम बिस्तर और विभिन्न प्रकार के भोजन की आवश्यकता होगी; लेकिन इसके बजाय, एक ही सिरहाने से संतुष्ट रहें और उस पर ईश्वर के भय के साथ विश्राम करें। अपने बर्तन में आध्यात्मिक उपचारों का मिश्रण डालो, जैसे: नम्रता, आज्ञाकारिता, विश्वास, आशा और प्रेम; क्योंकि जो इनका स्वामी है, वह स्वर्गीय राजा मसीह के लिए एक भोज तैयार करता है।

५६. 'मैं एक ईश्वर-निन्दाकारी विचार से बहक गया हूँ।' – काफी समय हो गया है जब से वह ईश्वर-निन्दाकारी दानव, जो उसे स्वीकार करने वाली आत्माओं का नाश करता है, आपके विरुद्ध निकला है। उसने आपको जुए से (गले की बेड़ी - वासनाएँ) पकड़ लिया है, ताकि आपको मार डाले। हे, ईश्वर न करे कि वह आप पर अपनी इच्छा पूरी करे (2 तीमु. 2:26)। – लेकिन निराश न हों। परमेश्वर, जो आपके पश्चाताप को स्वीकार करते हैं, आपके सामने खड़े हैं। बंधन के भ्रम से जागें – और सबसे बढ़कर, अपने क्रोध और चिड़चिड़ाहट को शांत करें, यह जानते हुए कि वे एक व्यक्ति को परमेश्वर के विरुद्ध घातक निन्दा तक ले जाते हैं; इसके बजाय नम्रता प्राप्त करो, जो दुष्टात्माओं को जला देती है; आज्ञाकारिता, जो परमेश्वर के पुत्र के लिए मनुष्य में प्रवेश करने का मार्ग खोलती है; विश्वास, जो मनुष्य को बचाता है; आशा जो किसी को भी लज्जित नहीं करती; और प्रेम, जो मनुष्य को परमेश्वर से दूर होने से रोकता है। आपने इन सद्गुणों को विकसित करने का ध्यान नहीं रखा है; इसके विपरीत, आपने उनके विपरीत—क्रोध, चिड़चिड़ापन और पूर्ण विनाश—उपरोक्त उल्लेखित ईश्वर-निंदा को चुना है। लेकिन अपने मार्गों को सुधारने का प्रयास करें, ईश्वर की भलाई पर मनन करें और इस पर विचार करें कि प्रभु ने कितनी आशीर्वादें प्रदान की हैं। –

अतीत के लिए क्षमा मिल गई है, लेकिन अब से अपने मार्ग सुधारो। – 40 दिनों तक, ईश्वर से पश्चाताप करें, प्रतिदिन तीन प्रणाम करते हुए और कहते हुए: 'मुझे क्षमा करें, हे मेरे ईश्वर, जिसने आपकी निंदा की है!' और अपने निंदक होठों से, दिन में तीन बार उनका इकरार करें, कहते हुए: 'महिमा आपके लिए है, हे मेरे ईश्वर, और धन्य हैं आप सदा के लिए - आमीन!' – और फिर से उसी पाप में न पड़ो, कहीं ऐसा न हो कि तुम पर इससे भी बुरा कुछ आ पड़े। अपने हृदय की संवेदनहीनता के कारण तुम क्रोध में आ गए, और क्रोध से तुम पवित्र Communion से दूर हो गए: पूरी तरह फँसकर, तुम निन्दा के गड्ढे में भी गिर पड़े। – और यदि दयालु ईश्वर का हस्तक्षेप और संतों की प्रार्थनाएँ न होतीं, तो आपकी आत्मा निराशा के विनाश में पड़ जाती। देखिए, मुझ सबसे तुच्छ के माध्यम से, ईश्वर आपसे बात करते हैं: आपने पाप किया है – अब और पाप न करें। अपने अतीत के पापों के लिए भी प्रार्थना करें। ईश्वर दयालु हैं और, यदि हम ऐसा चाहें (अपना मार्ग सुधारना), तो हमारे पापों को क्षमा कर देते हैं।

५७. (मैं अबा पर दुखित हूँ कि उन्होंने दूसरों को प्राथमिकता दी।) भाइयो! तुम स्वयं को बहका रहे हो। क्या तुम नहीं जानते कि *'प्रत्येक व्यक्ति अपनी ही वासना से खींचा और फँसाया जाता है'* (याकूब 1:14)? – स्वयं के अलावा किसी और की परवाह मत करो, और दूसरों के मामलों में दखल मत दो, क्योंकि इससे तुम्हें किसी भी तरह का लाभ नहीं होता। – और देखो कि शैतान ने इतनी तुच्छ बात से कैसे तुम्हारे हृदय को परेशान कर दिया है। – तो फिर उठो, परमेश्वर के हाथ के सहारे उठो, – और अपने विचारों पर भरोसा मत करो, जिनके द्वारा दुष्टात्माएँ तुम्हें अपनी इच्छानुसार चीजें दिखाती हैं।

५८. (जब सम्मान का कोई कार्य करने का अवसर मिले)। किसी भी बात के लिए सम्मानित होने में आनंद लेने से बचें, और ऐसी आज्ञाकारिता दिखाएँ जो विद्रोह को दूर भगा दे, जिसे परमेश्वर और उनके प्रेम करने वाले घृणा करते हैं। आज्ञाकारिता से चिपके रहें, जो मनुष्य को स्वर्ग तक उठाती है और जो इसे प्राप्त करते हैं उन्हें परमेश्वर के पुत्र के समान बनाती है।

५९. (पश्चाताप कैसे शुरू करें?) यदि आप पश्चाताप शुरू करना चाहते हैं, तो उस स्त्री ने जो पाप किया था, *उसने* जो किया उसे ध्यान में रखें: *'अपनी आँसुओं से उसने प्रभु के पैर धोए'* (लूका ७:३८)। रोना सभी के पापों को धो देता है। लेकिन एक व्यक्ति परिश्रम के द्वारा, धर्मग्रंथ के बहुत अध्ययन, धैर्य, भयानक न्याय और शाश्वत लज्जा पर चिंतन, और आत्म-त्याग के माध्यम से विलाप प्राप्त करता है, जैसा कि प्रभु ने कहा: *'जो कोई मुझसे अनुसरण करना चाहता है, उसे अपने को नकारना होगा, अपना क्रूस उठाना होगा, और मेरे पीछे चलना होगा'* (मत्ती 16:24)अपने आप को नकारना और अपना क्रूस उठाना का अर्थ है: सभी बातों में अपनी इच्छा को अलग रखना और स्वयं को कुछ भी नहीं समझना।

60. (मेरी शारीरिक कमजोरी के कारण, मैं संतों की तरह प्रयास नहीं कर सकता)। यदि आप कमजोर हैं और बहुत कुछ सहन नहीं कर सकते, तो आप जो कर सकते हैं, वही करें, अपनी आवश्यकता से कुछ कम भोजन और पेय लें; क्योंकि परमेश्वर ने विधवा के दो पैसे स्वीकार किए और उन पर अन्य सभी बातों से अधिक प्रसन्न हुए। – स्वयं को प्रशिक्षित करें कि दूसरों को हल्के में न लें, – और आप बच जाएँगे।

६१. मेरे भीतर उत्पन्न होने वाले विचार कहते हैं: 'एक परदेश में जाओ, और वहाँ तुम बच जाओगे।' – यह शत्रु की ओर से आता है, जो आपको सत्य के भेष में यह प्रस्ताव देता है, ताकि, आपका मज़ाक उड़ाने के बाद, वह आपको कई लोगों के लिए परीक्षा का विषय बना दे, ताकि आप उनकी ओर से भी निन्दा सहन करें। – फिर भी, तुम्हें अपनी सुस्ती और अहंकार के कारण इस सब का सामना करना पड़ता है। राक्षस तुम्हारी सुस्ती और अहंकार में अपनी चालाकियाँ जोड़ देते हैं, ताकि वे तुम्हारी आत्मा को नष्ट कर सकें। तो, अपना बहुत ध्यान रखें, और इन विचारों के विरुद्ध संघर्ष करें, लापरवाही और घमंड को भगाएँ; अपनी इच्छा से कुछ भी न करें, और अपने भीतर उत्पन्न होने वाले विचारों और आत्म-तर्क को स्वीकार न करें: अन्यथा, आप एक गंभीर पतन का सामना करेंगे। स्थिरता प्राप्त करो, और यह तुमसे अपने पड़ोसी के प्रति अपनी इच्छानुसार कार्य करने की स्वतंत्रता को दूर कर देगी, जो मनुष्य में सभी बुराइयों का कारण है; सभी चिंताओं को त्याग दो, और तुम परमेश्वर की सेवा करने के लिए स्वतंत्र हो जाओगे; हर मनुष्य के लिए मृत हो जाओ, और तुम एक अजनबी बन जाओगे; स्वयं को कुछ भी न समझो, और तुम्हारा मन परेशान नहीं होगा; यह न सोचो कि तुमने कुछ अच्छा किया है – और तुम्हारा इनाम पूरी तरह से तुम्हारे लिए सुरक्षित रखा जाएगा। इसके अलावा, याद रखो कि तुम बहुत समय तक शरीर में नहीं रहोगे, और ऐसी चीजें करने का प्रयास करो कि उस दिन तुम निडर होकर कह सको: *'मैंने खुद को तैयार किया है और लज्जित नहीं हुआ'* (भजन संहिता 118:60)। भाई! परिश्रम के बिना कोई नहीं जी सकता, और संघर्ष के बिना किसी को मुकुट नहीं मिलता। अपने उद्धार के लिए प्रयास करने के लिए स्वयं को प्रेरित करो – और ईश्वर तुम्हारी सहायता करेंगे, *'जो यह चाहते हैं कि सभी मनुष्य बचें और सत्य के ज्ञान तक पहुँचें'* (1 तीमुथियुस 2:4)।

62. मठ में रहने वाला हर व्यक्ति संन्यासी नहीं होता, परन्तु संन्यासी वह है जो संन्यासी जीवन का पालन करता है। प्रभु ने कहा: *'जो मुझ से, हे प्रभु, हे प्रभु, कहता है, वही सब के सब स्वर्ग के राज्य में प्रवेश नहीं करेगा, परन्तु केवल वही जो मेरे स्वर्गीय पिता की इच्छा पर चलता है'* (मत्ती 7:21)। हे भाई! तुम पूछते हो – तुम दुश्मन को तुम पर उपहास करने और तुम्हें गिरने के खतरे में डालने की अनुमति क्यों देते हो? – फिर भी तुम जो कहा गया है उसे करने का कोई प्रयास नहीं करते। तुम फिर से पूछते हो और, व्यर्थता और दूसरों को खुश करने की इच्छा से, उसे उनके पास भेज देते हो – और इस प्रकार निकट भविष्य में प्रगति करने से खुद को रोकते हो। हमें समय इसलिए दिया गया है ताकि, अपनी वासनाओं को पहचानकर, हम उन्हें दूर करने के लिए रोते-धोते हुए परिश्रम करें। यदि, अपनी कोठरी में रहते हुए, आपके विचार भटकते हैं, तो इसके लिए खुद को दोष दें, और ईश्वर के सामने अपनी कमजोरी स्वीकार करें।

६३. जो कोई भी भिक्षु बनना चाहता है, उसे किसी भी मामले में अपनी कोई इच्छा नहीं रखनी चाहिए। प्रभु मसीह ने हमें यह सिखाते हुए कहा: *'मैं अपनी इच्छा करने के लिए संसार में नहीं आया'* (यूहन्ना 6:38)। यदि, तथापि, आप एक काम करते हुए दूसरे को अस्वीकार करते हैं, तो आप इस प्रकार यह दिखाएंगे कि आप अपने से अधिक बुद्धिमान हैं जो आपको आज्ञा देते हैं, और यह राक्षसों द्वारा उपहास किए जाने के समान है। इसलिए, आपको हर बात में आज्ञा माननी चाहिए, भले ही आपको ऐसा लगे कि आज्ञा दिया गया कार्य पाप रहित नहीं है। वह आबा जो आपको यह कार्य सौंपता है, वह आपके पाप को उठाएगा, और वह आपके लिए उत्तरदायी होगा। यदि कार्य आपके लिए अत्यधिक असुविधाजनक या खतरनाक है, या आपकी शक्ति से परे है, तो इस बात को आबा को समझाएँ, और जैसा वह उचित समझे वैसा करें।

६४. (जब मैं बातचीत में लग जाता हूँ, तो मैं बहक जाता हूँ और खुद को खो देता हूँ; बाद में, मुझे शर्मिंदगी और दुख होता है।) कमजोर लोगों को इसमें और कीर्ति के प्रेम में गिरने से रोकने के लिए, उन्हें हर कीमत पर बकबक से बचना चाहिए और कोई बहाना बनाकर बात कर रहे लोगों से हटकर बातचीत को समाप्त कर देना चाहिए। – जब बातचीत लाभकारी हो और किसी अधिक महत्वपूर्ण कार्य में बाधा न डालती हो, तो उनके बोलने तक रुकें; लेकिन यदि बातचीत का कोई लाभ नहीं है, तो कहें: 'मुझे क्षमा करें, मैं कमजोर हूँ,' और विदा हो जाएँ।

65. दूसरों से मिलते समय व्यवहार कैसे करना चाहिए? जब किसी से मिलें, तो केवल अभिवादन तक ही सीमित रहें; फिर कहें: 'मेरे लिए दुआ करें, मैं कुछ काम से जा रहा हूँ,' और वहाँ से चले आएं। और जब आपसे किसी बात के बारे में पूछा जाए, और आपको इसका जवाब पता हो, तो वह बता दें और आगे बढ़ें; लेकिन अगर आपको पता न हो, तो कहें: 'मुझे नहीं पता,' और आगे बढ़ें।

६६. मैं सामाजिक समारोहों को समाप्त करना चाहता हूँ: क्या मुझे ऐसा तुरंत करना चाहिए, या धीरे-धीरे? – यदि आप उन्हें एक ही बार में समाप्त कर देते हैं, तो आपको शांति मिलेगी; अन्यथा, आप अपने और दूसरों दोनों के लिए बहुत कष्ट का कारण बनेंगे।

67. (एक मरीज पूछता है कि क्या उसे चिकित्सा की किताबें पढ़नी चाहिए।) उन्हें पढ़ें, लेकिन उन्हें पढ़ते समय, या चिकित्सा उपचारों के बारे में किसी से पूछते समय, यह न भूलें कि ईश्वर के बिना कोई भी उपचार प्राप्त नहीं करता। जो कोई भी चिकित्सा की कला को अपनाता है, उसे स्वयं को ईश्वर के नाम समर्पित कर देना चाहिए, और ईश्वर उसे सहायता प्रदान करेंगे। चिकित्सा की कला किसी व्यक्ति को धार्मिक होने से नहीं रोकती; लेकिन इसे भाइयों के लिए एक शिल्प के रूप में अपनाओ। जो कुछ भी तुम करो, उसे ईश्वर के भय से करो, और तुम संतों की प्रार्थनाओं से संरक्षित रहोगे।

६८. 'मैं दिन भर व्यस्त रहता हूँ - और यह मुझे ईश्वर का स्मरण करने से रोकता है।' – कभी-कभी ऐसा होता है कि कोई व्यक्ति किसी विशेष शहर के बारे में बहुत कुछ सुनता है, लेकिन जब वह उसमें प्रवेश करता है, तो उसे यह एहसास नहीं होता कि यह वही शहर है जिसके बारे में उसने सुना था। इसी प्रकार, भाई, तुम दिन भर ईश्वर का स्मरण करते हो और तुम्हें इसका एहसास भी नहीं होता। एक आज्ञा का होना और उसे ईश्वर की अपनी आज्ञा मानते हुए पालन करने का प्रयास करना—यहीं में आज्ञाकारिता और ईश्वर का स्मरण दोनों निहित हैं।

69. हमें हर दिन भोजन की आवश्यकता होती है, लेकिन हमें इसे स्वाद लेकर नहीं खाना चाहिए। जब हम इसे लेते हैं, तो इसे देने वाले ईश्वर का धन्यवाद करते हुए, और खुद को अयोग्य मानते हुए, तब ईश्वर यह सुनिश्चित करते हैं कि यह हमारे लिए पवित्रता और आशीर्वाद का साधन बने। इसी तरह, यदि आपको किसी चीज़ की आवश्यकता है और आप उसे प्राप्त करने में सफल हो जाते हैं, तो आपको मदद करने वाले ईश्वर का धन्यवाद करें, और खुद को अयोग्य समझें; और ईश्वर उस चीज़ के प्रति आपके सभी लगाव को दूर कर देंगे।

70. हर कोई अपनी क्षमता के अनुसार अपने पड़ोसी से प्रेम करता है; लेकिन पूर्ण प्रेम का मापदंड यह है कि अपने पड़ोसी से वैसा ही प्रेम किया जाए जैसा स्वयं से किया जाता है, और यह सब परमेश्वर के प्रति अपने प्रेम के लिए किया जाए। – युवा एक-दूसरे के प्रति अपने मूर्खतापूर्ण प्रेम के कारण और निजी बातचीत के लिए एक साथ इकट्ठा होने के कारण गिरने के लिए प्रवृत्त होते हैं। – एक-दूसरे के प्रति उनके प्रेम का मापदंड यह होना चाहिए: एक-दूसरे की निंदा न करना, एक-दूसरे से नफरत न करना, एक-दूसरे को तुच्छ न समझना, केवल अपने हितों की तलाश न करना, एक-दूसरे से शारीरिक सुंदरता या किसी भी शारीरिक लक्ष्य के लिए प्रेम न करना, और जब तक पूरी आवश्यकता न हो, एक साथ न बैठना, कहीं ऐसा न हो कि वे अभद्रता में पड़ जाएं, जो एक भिक्षु के जीवन के सभी फलों को नष्ट कर देती है और उसे एक मुरझाए हुए पेड़ की तरह बना देती है।

७१. 'मैं उद्धार पाना चाहता हूँ, परन्तु मुझे उद्धार का मार्ग नहीं पता।' – हे भाई! परमेश्वर ने पवित्र शास्त्र और संतों के माध्यम से हमें उद्धार का मार्ग दिखाया है, यह कहते हुए: *'अपने पिता से पूछो, और वह तुम्हें बताएगा; अपने बुजुर्गों से, और वे तुम्हें बताएँगे'* (व्यवस्थाविवरण 32:7)। – अत; यदि आप मोक्ष के मामले में भटकना नहीं चाहते, तो अपने आध्यात्मिक पिताओं से परामर्श किए बिना कुछ भी न करें, और आप परमेश्वर की कृपा से भटकेंगे नहीं, *'जो चाहता है कि सभी मनुष्य बचें और सत्य के ज्ञान में पहुँचें'* (1 तीमु. 2:4)।

७२. 'एक विचार मुझे बताता है कि यदि मैं कहीं जाकर अकेले रहूँ, तो मैं पूर्ण मौन प्राप्त कर लूँगा।' – हमारे प्रभु यीशु मसीह ने, क्रूस से पहले, कई कष्ट और अपमान सहन किए, और केवल उसके बाद ही उन्होंने क्रूस पर चढ़ाई। इसी तरह, कोई भी तब तक पूर्ण और फलदायी स्थिरता और पवित्र तथा पूर्ण जीवन की शांति प्राप्त नहीं कर सकता, जब तक कि वह पहले मसीह के साथ (अपने भाइयों के बीच रहते हुए) कष्ट न सह ले और उनके सभी दुखों को सहन न कर ले, प्रेरित के शब्दों को याद करते हुए: *'यदि हम उसके साथ कष्ट सहते हैं, तो हम उसके साथ महिमामय भी होंगे'* (रोमियों 8:17)। स्वयं को धोखा न दें; मोक्ष का कोई अन्य मार्ग नहीं है सिवाय इसके।

७३. (बीमार व्यक्ति से)। यह बीमारी तुम पर इसलिए आई है ताकि तुम बिना फल दिए ईश्वर के पास न जाओ। यदि तुम इसे सहन करते हो और ईश्वर का धन्यवाद करते हो, तो यह तपस्या के श्रम के स्थान पर तुम्हारे पक्ष में गिनी जाएगी, क्योंकि तुम बहुत समय तक मठवासी जीवन में नहीं रहे हो।

७४. किसी को आज्ञा के बिना कहीं नहीं जाना चाहिए; क्योंकि जो कुछ हम अपनी इच्छा से करते हैं वह परमेश्वर को प्रसन्न नहीं करता। लेकिन जब आप आज्ञा से जाते हैं, तो जिसने आपको भेजा है उसकी आज्ञा को पूरा करने के कार्य में ही प्रार्थना और परमेश्वर को प्रसन्न करने, दोनों का समावेश है, जिसने कहा: *'मैं स्वर्ग से इसलिए नहीं आया कि मैं अपनी इच्छा करूँ, बल्कि उस पिता की इच्छा करूँ जिसने मुझे भेजा है'* (यूहन्ना 6:38)।

७५. (आज्ञापालन मेरे लिए बहुत कठिन हो रहा है। क्या मुझे मदद माँगनी चाहिए?) भाई! जो कोई भी यीशु के पास आना चाहता है और उद्धार के मार्ग पर चलना चाहता है, उसे हर क्षण परीक्षाओं और दुखों की अपेक्षा रखनी चाहिए। पवित्र शास्त्र कहता है: *'हे मेरे पुत्र, यदि तू प्रभु की सेवा करने निकलता है, तो अपनी आत्मा को परीक्षा के लिए तैयार कर'* (सीराख 2:1)। और प्रभु ने कहा: *'जो कोई मुझसे पीछे चलना चाहता है, उसे अपना ही इनकार करना होगा,* प्रतिदिन *अपना क्रूस उठाना होगा, और मेरे पीछे चलना होगा'* (मत्ती 16:24)। इसलिए, जो कोई भी उसका चेला बनना चाहता है, उसे मृत्यु तक आज्ञाकारी बने रहना चाहिए। किसी और को बुलाने की तुलना में अकेले रहना और स्वयं थोड़ी मेहनत करना आपके लिए अधिक लाभदायक है। आपके आध्यात्मिक जीवन में स्वतंत्रता तब उतनी अधिक मजबूत नहीं होती जब कोई भाई केवल आपकी मदद करता है, जितना कि तब होती है जब वह लगातार आपके साथ रहता है।

76. (किसी को अपने विचारों के बारे में किससे पूछना चाहिए, और क्या यह सही है कि एक व्यक्ति से पूछने के बाद, वही सवाल किसी दूसरे से पूछा जाए?) – मनुष्य को उसी से पूछना चाहिए जिस पर उसका विश्वास है, और जिसे वह अपने विचारों को सहन करने में सक्षम जानता है, और जिस पर वह ईश्वर की तरह विश्वास करता है; लेकिन एक ही विचार के बारे में किसी दूसरे से पूछना अविश्वास और संदेहवाद का कृत्य है। यदि आप मानते हैं कि ईश्वर अपने संत के माध्यम से बोलते हैं, तो फिर यहाँ परीक्षा की क्या आवश्यकता है, या एक ही बात के बारे में किसी और से पूछकर ईश्वर को आजमाने की क्या ज़रूरत है?

77. 'किसी मामले के बारे में मार्गदर्शन प्राप्त करने से पहले किसी को कितनी बार प्रार्थना करनी चाहिए?' – जब आप अपने बड़े से नहीं पूछ सकते, तो आपको हर मामले के बारे में तीन बार प्रार्थना करनी चाहिए; और उसके बाद, देखें कि आपका दिल किस ओर झुकता है, भले ही वह एक बाल के बराबर ही क्यों न हो – और उसी के अनुसार कार्य करें; क्योंकि मार्गदर्शन हर तरह से हृदय के लिए स्पष्ट और प्रकट हो जाता है।

७८. 'तीन बार प्रार्थना कैसे करनी चाहिए - अलग-अलग समय पर, या तुरंत? कभी-कभी देरी करना संभव नहीं होता।' – यदि आपके पास समय हो, तो तीन दिनों के दौरान तीन बार प्रार्थना करें; लेकिन यदि कोई तात्कालिक आवश्यकता हो, जैसे उद्धारकर्ता के कष्टकाल के दौरान, तो अपने उदाहरण के रूप में उन्हें लें कि वे प्रार्थना करने के लिए तीन बार अलग हुए, और तीन बार प्रार्थना करते समय, उन्होंने वही शब्द बोले (मत्ती 26:44)।

७९. (मार्गदर्शन पर)। जब कोई जहाज लहरों से उछाला जाता है, यदि उसमें एक नाविक हो, तो वह, ईश्वर द्वारा उसे दी गई बुद्धि से, जहाज को बचाता है, और उसमें सवार लोग उसे सुरक्षित देखकर आनंदित होते हैं। सबसे बढ़कर, एक बीमार व्यक्ति डॉक्टर की याद से बहुत उत्साहित होता है, और उसकी कुशलता से तो और भी अधिक; और डाकुओं के खतरे में पड़ा एक यात्री पहरेदारों की आवाज़ से प्रोत्साहित होता है, और उनकी उपस्थिति से तो और भी अधिक। यदि वास्तव में ऐसा ही है, तो क्या पिता का उत्तर, '', इसे सुनने वालों सभी के लिए कहीं अधिक आनंद नहीं लाना चाहिए, विशेषकर जब यह ईश्वर से की गई सच्ची प्रार्थना के साथ हो, जिसने कहा: *'एक दूसरे के लिए प्रार्थना करो, ताकि तुम चंगे हो जाओ'* (याकूब 5:16)?

८०. जो अपना पाप स्वीकार करता है, वह उनमें धर्मी ठहरता है, जैसा कि धर्मग्रंथ के वचन कहते हैं: *'पहिले अपनी अधर्म के कामों का स्मरण करा, ताकि तू धर्मी ठहरे'* (यशायाह ४३:२६), और फिर: *'मैंने कहा, "मैं अपने अपराधों का प्रभु से स्वीकार करूंगा," और आपने मेरे हृदय के पाप को क्षमा किया* (भजन संहिता 31:5)। आइए हम अब से अपना ध्यान रखें, क्योंकि परमेश्वर ने हमारे पिछले पापों को क्षमा कर दिया है।

८१. यदि कोई उपवास करते समय अपनी ओर से उसमें कुछ जोड़ता है, या मनुष्यों की महिमा और उससे लाभ पाने के लिए उपवास करता है, तो उसका उपवास परमेश्वर को घृणित है। सभी बातों में ऐसा ही है। कोई भी पुण्य कर्म जो केवल ईश्वर के प्रेम से नहीं, बल्कि जिसमें व्यक्ति की अपनी इच्छा भी मिली-जुली हो, वह अपवित्र और ईश्वर को अप्रिय है। इसे दैवीय विधान से भी समझा जा सकता है, जो कहता है: *'तुम अपने खेत में मिश्रित बीज न बोओ, और न ऊन और सन के मिले-जुले कपड़े का वस्त्र अपने लिए बनाओ'* (व्यवस्थाविवरण 22:9-11; लेवी 19:19)।

82. जब भजन संहिता को याद करें, तो अहंकारी न बनें, कहीं ऐसा न हो कि आप हवा को व्यर्थ शब्दों से भर रहे हों, और यह आपके दंड का कारण बन जाए। परमेश्वर का वचन भलाई का बीज है; यदि यह आपके भीतर निष्फल सिद्ध होता है, तो आप उस मनुष्य के साथ दंडित किए जाएँगे जिसने उसे दिए गए चाँदी को गुणा करने के लिए जमीन में गाड़ दिया था।

83. हम उन शब्दों में किस प्रकार धन्यवाद दे सकते हैं, जिन्होंने हमें पहले बनाया, फिर शत्रु के विरुद्ध हमारी सहायता की – और, सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि, उन्होंने हमारे पश्चाताप के लिए एक स्थान प्रदान किया, और पापों की क्षमा तथा हमारे हृदयों को बल देने के लिए अपना ही देह और लहू प्रदान किया? – हम उसे कभी भी वैसा धन्यवाद नहीं दे पाएंगे जितने का वह हकदार है; फिर भी, आइए हम उसे वह धन्यवाद अर्पित करें जो हम कर सकते हैं, अपने होठों से और अपने दिलों में – विशेष रूप से उसकी खातिर मृत्यु तक सभी बातों को सहन करके – और वह, मानवता के लिए अपने प्रेम में, इस सब को सुसमाचार में विधवा के दो चांदी के टुकड़ों के समान गिनेगा।

८४. जब कोई ईश्वर को भाने वाला कार्य आपके सामने आता है, और एक विपरीत विचार उसका विरोध करता है, तो इसी तथ्य से यह ज्ञात होता है कि वह कार्य वास्तव में ईश्वर को भाने वाला है। – परन्तु एक प्रार्थना करो, – और देखो: यदि, जब तुम प्रार्थना कर रहे हो, तो तुम्हारा हृदय भलाई में दृढ़ हो जाता है और यह भलाई घटती है बजाय बढ़ने के, तो चाहे वह विरोधी विचार जो तुम्हें परेशान करता है बना रहे या न बने, जान लो कि यह विषय परमेश्वर की ओर से है; क्योंकि जो अच्छा है उसे शैतान की ईर्ष्या के कारण हमेशा प्रबल विरोध का सामना करना पड़ता है, लेकिन वह (अच्छाई) प्रार्थना के द्वारा इस पर विजय प्राप्त करता है। हालाँकि, यदि दिखावटी अच्छाई शैतान द्वारा डाली गई हो, और उससे विरोध भी उत्पन्न हो; तो प्रार्थना के द्वारा दिखावटी अच्छाई भी कम हो जाती है, और उसके साथ दिखावटी विरोध भी। ऐसे मामले में, यह स्पष्ट है कि शत्रु उस विचार का विरोध करता है जिसे उसने स्वयं उत्पन्न किया है, केवल इसीलिए ताकि हमें उस विचार को अच्छा मानने के लिए धोखा दे सके।

85. जब कोई विचार तुम्हारी प्रशंसा करे, और तुम उसके कारण होने वाली हानि से बच न सको, तो ईश्वर का नाम पुकारने का प्रयास करो, और अपने विचार से कहो: 'शास्त्र कहता है: *"मेरे लोगो, जो तुम्हारी प्रशंसा करते हैं वे तुम्हें धोखा दे रहे हैं और तुम्हें ठोकर खिला रहे हैं"* (यशायाह 3:12)। जब दूसरे आपकी प्रशंसा करें तो भी ऐसा ही करें – यह याद रखते हुए कि जो मानवीय प्रशंसा स्वीकार करते हैं उन्हें कोई लाभ नहीं होता, जैसा कि प्रभु स्वयं कहते हैं: *'तुम एक दूसरे की महिमा ग्रहण करते हो, और उस महिमा को ग्रहण नहीं करते जो परमेश्वर से आती है, तो तुम मुझ पर कैसे विश्वास कर सकते हो?'* (यूहन्ना 5:44)? – सामान्य रूप से, मनुष्य को मन और हृदय में यह रखना चाहिए कि उसे *'प्रभु में घमंड करना चाहिए'* (2 कुरिन्थियों 10:17); क्योंकि यदि हमें परमेश्वर से कुछ भी मिला है, तो वह सब

कुछ परमेश्वर की सहायता से ही है। तो फिर प्रेरित ने, इतनी महानता प्राप्त करने के बाद, अपने बारे में घमंड क्यों नहीं किया, बल्कि पुकार कर कहा: *'ईश्वर की कृपा से मैं जो कुछ भी हूँ'* (1 कुरिन्थियों 15:10)?

86. जब, भजन गाने, प्रार्थना करने, या पढ़ने के दौरान, कोई बुरा विचार उत्पन्न होता है; उसे अनदेखा करें, और भजन गाने, प्रार्थना या पठन पर अधिक ध्यान केंद्रित करें, ताकि आप जिन शब्दों का उच्चारण कर रहे हैं, उनसे शक्ति प्राप्त कर सकें; यदि वह बना रहता है, तो ईश्वर का नाम पुकारने का प्रयास करें, और ईश्वर आपकी मदद करेंगे और शत्रुओं की युक्तियों को विफल कर देंगे।

८७. 'प्रार्थना, पठन और भजन-गायन में पश्चाताप कैसे प्राप्त किया जाए?' – प्रार्थना में पश्चाताप अपने स्वयं के पापों को याद करने से आता है। जो प्रार्थना करता है उसे अपने कर्मों को याद करना चाहिए, और यह भी कि ऐसे कर्म करने वालों का न्याय कैसे किया जाता है, और उस भयानक आवाज़ को याद करना चाहिए: *'मेरे पास से दूर हो जाओ, हे श्रापित, उस अनंत आग में'* (मत्ती 25:41)। – जहाँ तक पढ़ने और भजन-गाने की बात है, भक्ति तब उत्पन्न होती है जब कोई अपने मन को बोले जा रहे शब्दों पर केंद्रित करता है और उनमें निहित शक्ति को अपनी आत्मा में ग्रहण करता है। यदि, इसके बावजूद, आपके भीतर उदासीनता बनी रहती है, तो हतोत्साहित न हों, बल्कि धैर्यपूर्वक प्रयास करते रहें; क्योंकि परमेश्वर दयालु, उदार और धीरजवान है, और वह हमारे प्रयासों को स्वीकार करता है। भजन रचने वाले के इन शब्दों को हमेशा याद रखें: *'मैंने धीरज से यहोवा की प्रतीक्षा की, और उसने मेरी सुनवाई की'* (भजन संहिता 39:1)। इससे सीखकर, विश्वास रखें कि परमेश्वर की दया शीघ्र ही आप पर आएगी।

८८. यदि भजन गाते समय या जब आप दूसरों के साथ हों, तब आप ईश्वर का स्मरण करते हैं, तो यह न सोचें कि जब तक आप शब्द ज़ोर से नहीं बोलते, तब तक आप उन्हें पुकार नहीं रहे हैं; बल्कि याद रखें कि वह हृदयों का जानने वाला है और हृदय को देखता है - और उन्हें अपने हृदय में पुकारें। धर्मग्रंथ में ऐसा कहा गया है: *'अपना दरवाज़ा बंद करो और गुप्त में अपने पिता से प्रार्थना करो'* (मत्ती 6:6)। – भले ही आप अपने मन में परमेश्वर का नाम न जपें, बल्कि केवल परमेश्वर को याद करें, यह भी उन्हें पुकारने के समान ही है – और यह आपकी मदद करने के लिए पर्याप्त है।

८९. पश्चाताप के साथ सच्चा रोना अतीत के पापों का प्रायश्चित करता है और अशुद्धियों को धो देता है; और ईश्वर के नाम के द्वारा यह उसे प्राप्त करने वाले व्यक्ति की निरंतर रक्षा करता है, हँसी और विचलन को दूर करता है, और अनवरत विलाप को बनाए रखता है; यह एक ढाल है जो शैतान के सभी अग्निबाणों को झटक देती है (इफिसियों 6:16); जिसके पास यह है वह कलह से पूरी तरह अछूता रहता है, चाहे लोगों के बीच हो या वेश्याओं की संगति में भी।

९०. अपूर्ण विलाप आता और जाता रहता है, यह इस बात के अनुसार होता है कि मोक्ष के लिए विचार (उत्साह) बारी-बारी से प्रबल होता है और शांत होता है। लेकिन जब वह उत्साह स्थिर हो जाता है, तो महान और निरंतर पश्चाताप होता है, और इसके बाद सच्चा रोना आता है, जिसे प्राप्त करने के लिए मनुष्य को स्वयं को बाध्य करके प्रयास करना चाहिए।

९१. विनम्रता सभी बातों में अपनी इच्छा को काटने में, और किसी भी चीज़ की परवाह न करने में निहित है। वासना (कामवासना, लोभ, लालच) की जड़ को काटने का अर्थ है अपनी इच्छा को त्यागना, स्वयं को यथासंभव कष्ट देना, और इंद्रियों को दुरुपयोग करने के बजाय उनके उचित सीमाओं के भीतर रखने के लिए बाध्य करना; इसके द्वारा, न केवल इनकी, बल्कि अन्य वासनाओं की जड़ भी कट जाती है।

९२. ईश्वर की इच्छा के प्रति सर्वस्व समर्पण व्यक्ति को कष्ट से बचाता है, चाहे कुछ भी हो जाए। फिर भी, भ्रम उत्पन्न हो सकता है और वह व्यक्ति को कृतज्ञता और आनंद के साथ जो हुआ है उसे स्वीकार करने से रोक सकता है। ऐसे मामले में, व्यक्ति को ईश्वर की इच्छा के प्रति अपनी भक्ति को नवीनीकृत करके, इस दृढ़ विश्वास को फिर से स्थापित करके कि सभी चीजें ईश्वर से आती हैं, और यह कि ईश्वर से जो कुछ भी आता है वह हमारे भले के लिए होता है, इस भ्रम के खिलाफ संघर्ष करना चाहिए। – हमारे अपने प्रयासों से ही कुछ भी अच्छा नहीं होता, बल्कि ईश्वर की शक्ति और इच्छा से होता है। फिर भी ईश्वर हमसे अपनी इच्छा के अनुसार प्रयास करने की मांग करते हैं, न कि किसी चालाकी या धोखे पर आधारित प्रयास, जो दुष्ट से आता है।

९३. कोई भी उपदेशात्मक भाषण मौन से बेहतर और अधिक अद्भुत नहीं है। हमारे पूर्वजों ने इसका सम्मान किया और इसे संजोया, और इसके माध्यम से वे महिमामय हुए। लेकिन चूँकि हम, अपनी दुर्बलता के कारण, अभी तक सिद्धों के मार्ग पर चलने तक नहीं पहुँचे हैं, तो आइए हम उस बात पर बात करें जो निर्माण के लिए उपयोगी है - और धर्मग्रंथों की व्याख्या में उतरने के बजाय, पितृपुरुषों के वचनों का सहारा लेकर बात करें; क्योंकि यह प्रयास अनभिज्ञ लोगों के लिए कोई छोटा खतरा नहीं है। पवित्रशास्त्र की बात आध्यात्मिक रूप में की जाती है, और देहधारी मनुष्य आध्यात्मिक बात को समझ नहीं सकता। यह बेहतर है कि हम अपने प्रवचन में पितृवाक्यों की ओर मुड़ें, और

उसमें नहिति लाभ को प्राप्त करें। परन्तु हमें उनका प्रयोग संयम से करना चाहिए, उस एक के वचनों को याद करते हुए जसिने कहा: *'बहुत बातों में पाप से बचना नहीं हो सकता'* (नीतविचन 10:19)। और इससे हम घमंड और दंभ के वचिारों में न पड़ें, इस बात का ध्यान रखें कयिदि हम जो कहते हैं उसे स्वयं नहीं अपनाते, तो हम अपनी ही नदिा करते हैं।

९४. यदमिौन को अच्छी बातचीत से अधकि लाभदायक माना जाता है, तो सांसारकि प्रकृतकि मामलों (जैसे कशिहर, गाँव, व्यापार, शांतऔिर युद्ध, और इसी तरह) पर होने वाली बातचीत में यह और भी अधकि लाभदायक है। लेकनि जब हम चुप नहीं रह सकते और ऐसे वषियों पर बातचीत में खचि जाते हैं, तो कम से कम बातचीत को लंबा न खींचें, कहीं कहिम वाचालता के कारण शत्रु के कसिी जाल में न फँस जाएँ।

९५. यदआिप स्वयं को सांसारकि या आध्यात्मकि मामलों पर चर्चा करने वाले लोगों की संगत में पाते हैं, तो कुछ ऐसा कहें जसिमें कोई हाननि हो, लेकनि ववििेक से बोलें, केवल इस लएि कआिपके साथी आपको चुप रहने के लएि प्रशंसा न करें। लेकनि जब आप इस तरह से काम करते हैं—अर्थात, कम बोलते हैं—तब भी सावधान रहें कउिन्हें अधकि बोलने के लएि दोष न दें।

९६. जब आप कुछ करने का इरादा करते हैं, और आप अपने वचिारों में बेचैनी की अनुभूतकिरते हैं, और यह बेचैनी ईश्वर का नाम लेने के बाद भी बनी रहती है, भले ही एक बाल बराबर ही क्यों न हो; तो इससे यह जान लें कजिो कर्म आप करना चाहते हैं, वह आपको दुष्ट ने सुझाया है, और उसे न करें; क्योंकबिेचैनी की भावना से कयिा गया कोई भी कार्य ईश्वर को प्रयि नहीं होता। – लेकनि जब कोई इस बेचैनी का वरिोध करता है (जब कोई वचिार उत्पन्न होता है जो इसका वरिोध करता है), तो उसे तुरंत उस मामले को हानकिारक नहीं मानना चाहिए, बल्कयिह जांचना चाहिए कि वह अच्छा है या नहीं – और यदवािह अच्छा नहीं है, तो उसे त्याग दें; यद,ि हालांक,ि वह अच्छा है, तो उसे बेचैनी की परवाह कएि बनिा पूरा करें।

९७. यद,ि बातचीत शुरू करने के बाद, आपको एहसास हो कयिह पापपूर्ण है, तो इसे इस प्रकार रोक दें: 'नहीं, आइए इसके बारे में बात न करें'; या, एक पल के लिए रुककर कहें: 'मैं भूल गया/गई कमिैं कसि बारे में बात कर रहा/रही था/थी' – और बातचीत को कसिी दूसरे, पापरहति वषिय की ओर मोड़ दें।

98. आत्म-न्यायकिी क्या है? यह तब होता है जब कोई पाप से इनकार करता है, जैसा कहिम आदम, हव्वा, काईन और ऐसे ही अन्य लोगों के मामले में देखते हैं, जन्हिोंने पाप कयिा लेकनि, खुद को सही ठहराने की इच्छा से, अपने पाप से इनकार कर दयिा।

९९. जैसा ककिहा गया है, हर वचिार और हर कर्म की यह जांच करनी चाहिए कविह अच्छा है या नहीं, और जो अच्छा है उसे करना चाहिए जबकजिो अच्छा नहीं है उसे अस्वीकार कर देना चाहिए। हालाँक,ि यह सुनश्चिति करने के लिए कजिो अच्छा है उसके साथ भ्रम न हो, मनुष्य को इसके पीछे के प्रचलति वचिार की जाँच करनी चाहिए—वह उद्देश्य जसिसे वह कुछ भी करता है—और जब आप ईश्वर के भय से इसका प्रश्न करते हैं, तो ईश्वर आपको भूल में पड़ने नहीं देंगे। – लेकनि कसिी भी स्थतिमिें, ईश्वर का नाम लेने न भूलें।

१००. (उस व्यक्तकि लिए जसि उसके भाई ने मारा हो और जो उससे अलग होना चाहता हो)। परेशान न हों, कहीं आप जल्दबाज़ी में कोई कदम न उठा लें, खासकर ऐसे व्यक्तकि प्रतजिसिके वचिार ईर्ष्यालु शैतान द्वारा धुंधले हो गए हों। कुछ बीमार लोग, जनिके मन तेज बुखार से धुंधले हो जाते हैं, उन लोगों को सताते हैं जो स्वस्थ हैं और उनकी सेवा करते हैं, और उन्हें इसका एहसास भी नहीं होता, क्योंकबिीमारी उन पर पूरी तरह से हावी हो चुकी होती है। इसी प्रकार जो व्यक्तप्रिलोभन में है, वह भले ही अपनी आत्मा को नष्ट कर रहा हो, उसे इसका एहसास नहीं होता; क्योंकविह अपने कष्ट की तीव्र इच्छा के नशे में होता है, जो वरिोधी की करतूतों के कारण होता है, जो हमेशा और हर तरह से उसके सामने सब कुछ तोड़-मरोड़ देता है, ताकउिसे वनिाश के गड्ढे में फेंक सके। वह क्रोध या प्रतशिोध के योग्य नहीं है, बल्कदिया और सहनशीलता के योग्य है। इनके माध्यम से, ईश्वर हमें परीक्षा में पड़ने की अनुमतदिेते हैं - और वह यह अनुमतसिावधानी से देते हैं, ताकहिम उनके सामने ऐसे लोगों के रूप में प्रकट हों जो परखे जा चुके हैं। अत; हमें अपने पड़ोसी के प्रतउिसकी शारीरकि और मानसकि दोनों लड़ाई के दौरान उदार होना चाहिए, क्योंककिहा गया है: *'एक दूसरे के बोझ उठाओ, और इस प्रकार मसीह के वधिान को पूरा करो'* (गलातयिों 6:2)। – अपने स्थान को छोड़ने और अपने भाई से अलग होने के लिए प्रलोभति न हो; क्योंकयिह परमेश्वर के अनुसार नहीं होगा, बल्कशिैतान की इच्छा की पूर्तहिोगी, और यदआिप ऐसा करने का नश्चिय करते हैं, तो शत्रु वश्रिाम नहीं करेगा, बल्कऔिर भी बुरी बातों पर उतर जाएगा। अपने भाई के लिए पूरे हृदय से प्रार्थना करना और हमारे प्रभु मसीह यीशु में उससे प्रेम करना बेहतर है।

101. (भय से परेशान एक भाई को)। हे भाई! तुम्हें परमेश्वर की महिमा करनी चाहिए कि वह तुम में धर्मशास्त्र का वह वचन पूरा कर रहा है जो कहता है: *'परमेश्वर विश्वासयोग्य है; वह तुम्हें तुम्हारी शक्ति से अधिक परीक्षा में नहीं डालना चाहेगा'* (1 कुरिन्थियों 10:13)। आपकी सामर्थ्य के अनुसार, वह आपको आध्यात्मिक युद्ध में प्रशिक्षित होने देता है; लेकिन वह महान पुरुषों को उनकी सामर्थ्य के अनुसार महान परीक्षाओं से परखता है, और वे इसमें आनन्दित होते हैं; क्योंकि परीक्षा एक व्यक्ति को सफलता की ओर ले जाती है। जहाँ लाभ है, वहाँ संघर्ष भी है। इसलिए, परीक्षाओं से डरो नहीं, बल्कि उनमें आनन्द मनाओ, क्योंकि वे सफलता की ओर ले जाती हैं। इस परीक्षा को तुच्छ समझो। परमेश्वर आपकी मदद करते हैं और आपकी रक्षा करते हैं।

102. विनम्रता और नम्रता को अपनाने का प्रयास करें; किसी भी परिस्थिति में यह ज़िद न करें कि चीजें आपके तरीके से ही की जाएँ, क्योंकि इससे क्रोध उत्पन्न होता है; किसी का भी न्याय न करें या किसी को छोटा न समझें, क्योंकि इससे हृदय थक जाता है और मन अंधा हो जाता है, और इससे उदासीनता और हृदय का कठोर हो जाना आता है। सदैव सतर्क रहें, परमेश्वर के वचन का अध्ययन करें, क्योंकि इसके द्वारा हृदय स्वर्गीय अग्नि से गर्म होता है, जैसा लिखा है: *'और मेरी शिक्षा में आग प्रज्वलित होगी'* (भजन संहिता 38:4)। अपने होठों को व्यर्थ की बातों और बकवास से बचाओ, और अपने हृदय को दुष्ट वचनों का आदी न होने दो। ईश्वर के सामने स्वयं को नम्र करो, यह कहते हुए: *'हे परमेश्वर, मुझ पापी पर दया करो'* (लूका 18:13); और वह तुम पर दया करेंगे, तुम्हें सुरक्षित रखेंगे, और सभी बुराइयों से बचाएंगे, ताकि तुम अंधकार से सच्चे प्रकाश में, भ्रम से सत्य में, और मृत्यु से हमारे प्रभु मसीह यीशु में जीवन में आ सको।

103. शरीर को उतना (भोजन) दें जितनी उसे आवश्यकता है; और आपको कोई हानि नहीं होगी, भले ही आप दिन में तीन बार खाएं। यदि कोई व्यक्ति दिन में केवल एक बार, लेकिन लापरवाही से खाता है, तो उससे उसे क्या लाभ होता है? – अतिभक्षण के बाद व्यभिचार का प्रलोभन आता है – और फिर शत्रु शरीर पर नींद का बोझ डालता है, ताकि उसे अपवित्र कर सके।

104. यदि आपको कभी-कभी (शासन में) सेवा करते समय और शारीरिक काम करते समय बहुत कमजोरी महसूस हो तो आश्चर्यचकित न हों। इस मार्ग की प्रकृति ऐसी ही है: कभी व्यक्ति एक तरह महसूस करता है, और कभी दूसरी, ठीक वैसे ही जैसे एक यात्री कभी समतल रास्ते पर चलता है, कभी तेज बहाव और पहाड़ों का सामना करता है, और फिर से समतल जमीन पर आ जाता है। अपनी कमजोरी पर ध्यान न दें; बल्कि आगे बढ़ें और अपना कर्तव्य निभाएँ।

105. (नियमों के विपरीत खाने के लिए मजबूर एक बीमार व्यक्ति के लिए)। ईश्वर उस व्यक्ति की निंदा नहीं करते जो आनंद के लिए नहीं, बल्कि शारीरिक कमजोरी के कारण खाता है। कुछ खाद्य पदार्थ हमें अतिभक्षण और शारीरिक इच्छाओं से बचाने के लिए वर्जित हैं; लेकिन जहाँ कमजोरी हो, वहाँ इन प्रतिबंधों को त्याग दिया जाता है; क्योंकि जहाँ कमजोरी होती है, वहाँ ईश्वर से प्रार्थना होती है।

106. (एक बीमार व्यक्ति से, जिसने अपनी थकान में प्रार्थना माँगी थी)। हे मेरे निराश और बड़बड़ाने वाले भाई! तुम क्यों दुखी हो? तुम क्यों पुकार रहे हो? तुम दूर से मदद क्यों मंगवाते हो, जबकि यीशु तुम्हारे पास ही खड़े हैं और चाहते हैं कि तुम उनसे मदद के लिए पुकारो! – उस से पुकार लगाओ: *'हे गुरु!'* और वह तुम्हें उत्तर देगा। उसके वस्त्र के छोर को छूओ, और वह तुम्हें न केवल इस एक कष्ट से, बल्कि तुम्हारे सभी दुखों से चंगा कर देगा। यदि तुम्हारा मन वहाँ होता जहाँ उसे होना चाहिए; तब विषैले साँपों और बिच्छुओं के डंक भी आपको वहाँ से शारीरिक बीमारी की अनुभूति तक नहीं ला सकते: ' ' *'मैंने अपनी आहों की ध्वनि के कारण अपना भोजन लेना भूल गया हूँ'* वह कहता है (भजन संहिता 101:5)। दुखी न हों; परमेश्वर की दया आपके निकट है।

107. शरीर को तुच्छ समझो, जिसे कीड़े खा जाएँगे; जब वह क्षय के हवाले हो जाएगा तो वह तुम्हारे किसी काम नहीं आएगा। प्रेरित कहते हैं: *'मांस की इच्छाओं को संतुष्ट न करो'* (रोमियों 13:14)।

108. (बीमार व्यक्ति: 'क्या मैं शरीर की कमजोरी में लिप्त हो जाऊँ?') ईश्वर ने हमें विवेक दिया है ताकि हम दिव्य धर्मग्रंथों के माध्यम से सही मार्ग पर निर्देशित हो सकें। प्रेरित कहते हैं: *'सब कुछ परखो; जो अच्छा है उसे थामे रहो'* (1 थिस्स. 5:20)। किसी को बस इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि वह जुनून के कारण कुछ भी न खाए या करे; लेकिन जो कुछ भी कोई कमजोरी या आवश्यकता के कारण करता है, उसे न तो पाप और न ही भोग माना जाता है। अच्छे स्वास्थ्य में, आराम की इच्छा वासना से प्रेरित होती है; लेकिन जब हम आवश्यकता के कारण शरीर का पोषण करते हैं, तो यह हमारे कर्तव्यों को पूरा करने में हमारी सहायता करेगा। यदि हम उन जानवरों की देखभाल करते हैं जो हमारी ज़रूरतों को पूरा करते हैं, तो हमें आत्मा के उपकरण के रूप में शरीर की और भी अधिक देखभाल करनी चाहिए। जब कोई उपकरण कुंद हो जाता है, तो यह कारीगर को रोकता है, भले ही वह तेज-तर्रार और जानकार क्यों न

हो। प्रेरित ने, सेंट तीमुथियुस की बीमारी और कमजोर पेट को देखते हुए, उन्हें दाखरस पीने का निर्देश दिया (1 तीमु. 5:23), हालाँकि उन्होंने उन्हें *'एक प्रचारक का काम'* करते हुए *'कष्ट सहने'* (अभावों को सहने) *का* भी आदेश दिया (2 तीमु. 4:5)। और सभी बातों में मनुष्य को विवेक से निर्देशित होना चाहिए – और वह जल्द ही मार्गभ्रष्ट नहीं होगा।

109. 'मेरे विरुद्ध युद्ध दिन-ब-दिन और भी भयंकर होते जा रहे हैं।' – हे भाई! युद्ध का समय कर्म का समय है; सुस्त न हो, बल्कि कर्म कर। युद्ध लड़; और जब यह तीव्र हो जाए, तो स्वयं को भी मजबूत कर, यह पुकारते हुए: 'हे प्रभु यीशु मसीह!' तुम मेरी दुर्बलता और मेरा दुख देखते हो; मेरी सहायता करो, *और 'जो मेरा पीछा करते हैं, उनसे मुझे बचाओ, क्योंकि मैंने तुम्हारा शरण लिया है'* (भजन संहिता 141:7; 142:9); और प्रार्थना करो कि तुम्हें शुद्ध हृदय से परमेश्वर की सेवा करने की शक्ति मिले।

११०. ईश्वर ने लोगों को दो उपहार दिए हैं जिनके द्वारा वे पुराने मनुष्य के सभी भावों से बचाए और मुक्त किए जा सकते हैं: नम्रता और आज्ञाकारिता; फिर भी हम उनके लिए प्रयास नहीं करते, न ही हम उनमें बने रहना चाहते हैं या उनसे मार्गदर्शन लेना चाहते हैं। – सभी भटकनों को त्याग दो, अपनी गर्दन नम्रता और आज्ञाकारिता के लिए झुकाओ, और तुम अनुग्रह प्राप्त करोगे। यदि आप संतों से जो सुनते हैं, उसे विनम्रता और आज्ञाकारिता से करते हैं, तो प्रभु आपको अपनी कृपापूर्ण सहायता प्रदान करेंगे, न केवल उस कार्य में जिसमें आप लगे हुए हैं, बल्कि यह भी सुनिश्चित करेंगे कि आपके सभी उपक्रम सफल हों, क्योंकि वह अपने भयभीत करने वालों के मार्ग की रक्षा करते हैं और उनकी यात्रा की रक्षा करते हैं। आप क्रोधित क्यों हैं? आप बहस क्यों करते हैं? यदि आप निरंतर ईश्वर की सहनशीलता में बने रहते हैं तो ईश्वर की दया आपकी मदद करेगी। क्रोधित, चिड़चिड़े और ईर्ष्यालु होना बंद करें। हर मनुष्य के प्रति अपनी आसक्ति को समाप्त कर दें। अपने आप से पूछें: 'मैं कौन हूँ?' – *'धूल और राख'* (उत्पत्ति 18:27) *'और एक कुत्ता'* (मत्ती 15:27)। दूसरों को तुच्छ समझकर या उनका मज़ाक उड़ाकर उनका न्याय न करें। खुद को यह कहने से रोकें: 'यह क्या है? वह क्यों है?' (सिरैक 39:22)। 'मैं इस या उस व्यक्ति के बराबर क्यों नहीं हूँ?' लेकिन ईश्वर के भय के साथ, अपने छोटे से काम में लगन से काम करें, और आपको इसके लिए कोई छोटा-मोटा इनाम नहीं मिलेगा।

111. जब निराशा से आलस्य उत्पन्न होता है और वह हाथ के काम में बाधा डालता है, तो मनुष्य को उठकर प्रार्थना करनी चाहिए और प्रार्थना करना बंद नहीं करना चाहिए – और प्रभु प्रार्थना के द्वारा उस आलस्य को दूर कर देंगे।

112. (उस व्यक्ति से जो अंतिम बनना चाहता था – केवल इसलिए कि उसे मठ में स्वीकार किया जा सके)। – अंतिम स्थान पर होना – यह आपकी खोज का विषय नहीं है। – यह आपके आबा (Abba) पर निर्भर है; और आपका काम है स्वयं को आज्ञाकारिता के लिए तैयार करना।

113. यदि कोई व्यक्ति स्वयं अपनी पूरी क्षमता से प्रयास नहीं करता, और संतों की प्रार्थनाओं के साथ अपनी मेहनत को नहीं जोड़ता, तो संतों द्वारा उसके लिए की गई प्रार्थनाओं से उसे कोई लाभ नहीं होगा। जब वे उसके लिए उपवास करते और प्रार्थना करते हैं, जबकि वह कामुक सुखों में लिप्त रहता है और अव्यवस्थित व्यवहार करता है, तो उसके लिए उनकी प्रार्थनाओं से क्या लाभ होगा? क्योंकि यहाँ वह पूरा होता है जो धर्मग्रंथ में कहा गया है: *'एक बनाता है, और दूसरा गिराता है; केवल वही फलता-फूलता है जो परिश्रम है'* (सिरैक. 34:23)? और प्रेरित कहते हैं: *'धर्मी व्यक्ति की प्रार्थना शक्तिशाली और प्रभावशाली होती है'* (याकूब 5:16), अर्थात्, जब कोई पवित्र और धर्मी व्यक्ति एक पापी के लिए प्रार्थना करता है, तो पापी को भी पश्चाताप के माध्यम से संतों की प्रार्थनाओं में सहायता करनी चाहिए।

114. जब कोई दूसरे से कुछ माँगता है, और दूसरे के पास वह नहीं है, तो वे माँग की गई चीज़ न देने के लिए दोषी नहीं ठहराए जाएँगे। और प्रेरित पतरस ने, जब एक लँगड़े आदमी ने उनसे भीख माँगी, तो कहा: *'मेरे पास न चाँदी है और न सोना'* (प्रेरितों के काम 3:6), और उन्होंने उसे देने के लिए पैसे उधार नहीं लिए। इसी प्रकार, यदि किसी के पास केवल अपने लिए आवश्यक चीज़ें ही हैं, तो उसे वह भी दान पर खर्च नहीं करनी चाहिए, कहीं ऐसा न हो कि बाद में जब वह स्वयं ज़रूरतमंद हो जाए, तो कठिनाई सहन न कर पाने के कारण वह दुखित हो। और जब कोई भिखारी उससे ज़िद करता है, और वह कहता है, 'मुझे क्षमा करो, मेरे पास तुम्हें देने के लिए कुछ भी नहीं है,' तो यह कोई झूठ नहीं है; क्योंकि जिसके पास केवल अपनी सख्त ज़रूरत भर ही है, उसके पास दूसरे को देने के लिए कुछ भी नहीं है। उसे भिखारी से कहना चाहिए, 'मुझे क्षमा करो, मेरे पास केवल अपनी सख्त ज़रूरत भर ही है।' उन पाँच कुँवारियों को याद करें, जब दूसरों ने उनसे अपने दीयों के लिए तेल देने को कहा, तो उन्होंने उत्तर दिया: *'यह हमारे और तुम्हारे लिए पर्याप्त नहीं होगा'* (मत्ती 25:9)। और प्रेरित पौलुस, कोरिन्थियों को लिखते हुए कहते हैं: *'तुम्हारी भरपूरता उनकी कमी को पूरा करे'* (2 कुरिन्थियों 8:14), और: *'ताकि जब दूसरों को आनंद मिले, तब तुम्हें दुख न हो'* (2 कुरिन्थियों 8:13)।

115. जब आप दान देना चाहें, लेकिन कोई विचार आपको संदेह में डाल दे कि आपको देना चाहिए या नहीं; तो अपने विचारों की जाँच करें, और यदि आपको लगे कि वे कंजूसपन से प्रेरित हैं, तो दें, और उतना ही नहीं जितना आपने दिया जाना उचित समझा था, उससे थोड़ा और भी दें।

116. 'जो कुछ भी नहीं दे सकता, वह आनंद में कैसे भाग ले सकता है?' – आनंद केवल दान करने वालों को ही वादा नहीं किया गया है। – *'आत्मिक रूप से दीन धन्य हैं*, *'शोक मनाने वाले धन्य हैं*, आदि (मत्ती 5:3 आदि)। तो, यदि आप दान नहीं दे सकते, तो आत्मा से दीन बनें, ताकि आप संतों के साथ स्वर्ग के राज्य के वारिस बनें। इस संसार में अपने पापों के लिए रोओ, ताकि तुम शोक करने वालों के साथ सांत्वना पा सको। नम्रता प्राप्त करो, ताकि तुम पृथ्वी के वारिस बन सको। हृदय से पवित्र बनो, ताकि तुम परमेश्वर को उनकी महिमा में देख सको। प्रभु के लिए अपमान, उत्पीड़न और झूठी निंदा सहो, ताकि तुम स्वर्ग में एक महान इनाम प्राप्त करने के आनंद में आनंदित हो सको।

117. यदि प्रभु का विधान एक बात आज्ञा देता है, जबकि इस संसार का विधान इसके विपरीत बताता है: तो क्या करना चाहिए? – परमेश्वर का विधान सर्वोपरि है; क्योंकि यह आत्मा के उद्धार की बात करता है, जबकि सांसारिक विधान, जो देहिक है, देहिक लोगों से बात करता है।

118. आपका प्रेम मुझसे इस बात के बारे में पूछता है कि आप कभी-कभी अपने सामने खड़े व्यक्ति को बड़ी लगन से निहारते हैं – और अपनी आत्मा में मोहित हो जाते हैं। यह स्पष्ट रूप से शैतान के प्रलोभनों का उल्लेख करता है। ऐसे समय में, आपको हमारी प्रकृति के क्षय और बदबू को याद करना चाहिए, और यह भी कि जब हम अपनी कब्रों में लेटे होंगे तो हम कैसे बदल जाएँगे। अपने नेत्रों के सामने परमेश्वर के आने वाले भयानक न्याय की भी कल्पना करो, और यह भी कि ऐसा करने वालों का क्या परिणाम होगा, और जब हमारे कर्म स्वर्गदूतों और महादूतों के सामने, सभी लोगों और धर्मी न्यायी के सामने उजागर हो जाएँगे, तो तुम उस महान लज्जा को कैसे सहन कर पाओगे, और कैसे इन कर्मों को करने वालों के मुँह तब बंद हो जाएँगे। उससे डरें जिसने कहा है: *'अपने आपको धोखा न दो: न व्यभिचारी, न परस्त्रीगामी, न नपुंसक, न समलैंगिक परमेश्वर के राज्य के वारिस होंगे'* (1 कुरिन्थियों 6:9–10), और: *'जो कोई भी किसी स्त्री को वासना की दृष्टि से देखता है'* इत्यादि। (मत्ती 5:28)। आपको इस बात को ध्यान में रखना चाहिए, और उन लोगों की संगत से दूर रहना चाहिए जिनके प्रति आप यह संघर्ष महसूस करते हैं; फिर भी, उन्हें यह न बताएं कि आप उनसे किनारा क्यों कर रहे हैं, कहीं ऐसा न हो कि आप उन्हें विभिन्न संदेहों का कारण दे दें। – और जब भी आपको उनसे बात करने की आवश्यकता हो, तो सहायता के लिए परमेश्वर के पवित्र नाम का आह्वान करें, यह कहते हुए: हे प्रभु यीशु! 'मेरी रक्षा करो, और मेरी दुर्बलता में मेरी सहायता करो।' और डरो मत; वह तुम्हारे शत्रुओं की धनुष तोड़ देगा, क्योंकि उसके नाम में बुराई निष्प्रभ हो जाती है। बहुत बोलने के बजाय थोड़ा बोलो, और अपने कानों या अपने विचारों को बेकाबू न होने दो; बल्कि गरिमा और बिना भ्रम के अपना आचरण करो, ताकि कोई भी यह न जान सके कि क्या हो रहा है। यदि, इसके द्वारा, आपको शक्ति मिलती है, तो अपने शत्रुओं के प्रति धृष्ट न बनें, क्योंकि वे निर्लज्ज हैं, और भले ही वे हजार बार पराजित हो जाएँ, वे फिर से लड़ाई शुरू कर देंगे। परन्तु विजयी परमेश्वर मनुष्य की नम्रता की सहायता करता है, जिसके निमित्त उसने अपनी इच्छा से देहधारी होने का चुनाव किया।

119. 'मन कामुक विचारों में कैसे उलझ जाता है?' – मन का उलझना या भटकना (और बंधन) केवल कामुक जुनून के संबंध में ही नहीं, बल्कि अन्य मामलों में भी होता है। मन विचलन के कारण इसके अधीन हो जाता है – और जब ऐसा होता है, तो एक व्यक्ति को खुद से कहना चाहिए: 'हे प्रभु, अपने पवित्र नाम की खातिर मुझे क्षमा कर; अपनी ही लापरवाही के कारण मैं इसके अधीन हो गया हूँ। मुझे विचलन और शत्रु के हर जाल से बचा।' – और इस ध्यान-भंग को पहचानने का संकेत यह हो: यदि कोई दूसरे से बात कर रहा है, और उसका मन इधर-उधर भटकता है, तो ऐसा होता है कि जब वह एक बात कर रहा होता है, तो उसके विचार दूसरी ओर चले जाते हैं। ध्यान-भंग वास्तव में यही है। – इसी तरह, कामुक विचार हमें भटकाते हैं। ऐसा होता है कि जब कोई दूसरे से बात कर रहा होता है, यदि शत्रु मन को दैवी संयम से भटकाने में सफल हो जाता है, तो, ध्यान भटकने के परिणामस्वरूप, मन में कामुक इच्छा उत्पन्न होती है। – और यह भी ध्यान भटकाव का एक रूप है, क्योंकि यह चिंतन या स्मरण से उत्पन्न नहीं हुआ, बल्कि व्यक्ति भूल के कारण इससे बहक गया। – होश में आने पर, ऐसे व्यक्ति को, जैसा कि ऊपर बताया गया है, खुद को संयत करना चाहिए और ईश्वर की दया में शरण लेनी चाहिए; प्रभु दयालु हैं और वे उसे एक भटकते हुए पुत्र की तरह स्वीकार करेंगे। लेकिन जब बिना किसी विचलन के भी किसी के विचारों में ऐसा संघर्ष उत्पन्न होता है, तो उसे संयम बनाए रखना चाहिए, ऐसे विचारों में आनंद नहीं लेना चाहिए, उन पर टिका नहीं रहना चाहिए, बल्कि तुरंत प्रभु परमेश्वर की ओर मुड़ जाना चाहिए।

120. स्त्रियों से सभी प्रकार की बातचीत से बचना ही उत्तम है। यदि आवश्यकता उन्हें से बात करने के लिए विवश करती है, तो हमें दूसरों के माध्यम से ऐसा करने का प्रयास करना चाहिए। यदि यह भी असंभव हो, तो उनके साथ

बातचीत करते समय हमें आग के पास जाने वाले की भाँति आचरण करना चाहिए। जैसे कोई आग से जलने से बचने के लिए हर सावधानी बरतता है, वैसे ही हमें महिलाओं के साथ आग के पास जाते हुए जैसा व्यवहार करना चाहिए – और हमें परमेश्वर के भय में दृढ़ता से स्थापित होना चाहिए। परिस्थितियाँ चाहे कैसी भी हों, हमें महिलाओं को न देखें। हमें अपनी आँखों को बेकाबू न होने दें, न ही उनके साथ बातचीत में देर करें; क्योंकि इससे वासना की आग भड़कती है; परन्तु हमें उनसे शीघ्रता से दूर हटने का प्रयत्न करना चाहिए, और परमेश्वर से प्रार्थना करनी चाहिए कि वह हमें इस कठिन घड़ी में हमारे सामने रखी गई शैतान की फंदा से बचाए, और हमें निरंतर परमेश्वर का स्मरण करना चाहिए – और उसकी महान शक्ति हमारे प्रभु मसीह यीशु में हमारी दुर्बलता को ढक लेगी।

121. 'क्या मेरे लिए मठ में जाने के इरादे से अपनी पत्नी को छोड़ देना सही है?' – आपको अपनी मर्जी से उसे नहीं छोड़ना चाहिए, क्योंकि आप प्रेरित की आज्ञा का उल्लंघन करेंगे, जो कहते हैं: *'यदि आप किसी पत्नी से बँधे हैं, तो छूट की तलाश न करें'* (1 कुरिन्थियों 7:27)। यदि वह (आपके उसे छोड़ने के बाद) पाप करती है और व्यभिचारी जीवन जीती है, तो यह पाप आप पर होगा; बशर्ते कि आप उसे आपसी सहमति से, उससे परामर्श करने के बाद, और उसके अपने भले के लिए न छोड़ें। – परन्तु इस मामले को परमेश्वर पर छोड़ दें; और जैसा उनका मानवजाति के प्रति प्रेम उचित समझेगा, वैसे ही वे कार्य करेंगे।

122. मनुष्य को इस संसार की चीज़ों पर किसी भी तरह से शोक नहीं करना चाहिए, बल्कि केवल स्वयं पाप पर शोक करना चाहिए। इसी तरह, *'जो आनंद मनाते हैं उनके साथ आनंद मनाना'* का अर्थ है, परमेश्वर के अनुसार सद्गुण में उत्कृष्टता प्राप्त करने वालों के आनंद में सहभागी होना और भविष्य के आशीर्वादों की आशा में आनंदित होना; और *'जो रोते हैं उनके साथ रोना'* का अर्थ है, पापियों के पापों के लिए उनके पश्चाताप में उनके प्रति सहानुभूति रखना।

123. (*'शांति स्थापित करने वालों को धन्य है'* पर)। अपने हृदय में शांति लाना बेहतर है: यह सभी के लिए उपयुक्त है - और जो ऐसा करता है वह धन्य है। लेकिन मतभेद रखने वालों में सुलह कराना हर किसी के लिए उपयुक्त नहीं है, बल्कि केवल उनके लिए है जो ऐसा अपने आप को किसी भी तरह की हानि पहुँचाए बिना कर सकते हैं। हालाँकि, कमजोर लोगों को सभी के बीच शांति में आनंदित होना चाहिए, लेकिन उन्हें हर व्यक्ति के सुलह के लिए मध्यस्थ नहीं बनना चाहिए, सिवाय उन लोगों के जिन्हें वे प्रभु में प्रेम करते हैं; और तब भी, केवल तभी जब इससे उनकी अपनी आत्मा को कोई हानि न पहुँचे।

124. 'मुझे कोई व्यक्ति अपमानित कर रहा है: मुझे क्या करना चाहिए?' – उस पर एहसान करो।

125. 'जब कोई संत मेरे पास आता है, तो मेरे पास उसे देने के लिए कुछ भी उपयुक्त नहीं होता - और मैं दुखी हो जाता हूँ।' – ऐसा विचार शैतान से आता है। उनके लिए वही देना पर्याप्त है जो आपके पास है, जैसा कहा गया है: *'जो तुम्हारे पास है उससे संतुष्ट रहो'* (इब्रानियों 13:5), – और ईश्वर उन्हें आपके उत्साह के बारे में अवगत कराएंगे। जब आप भी कहीं जाते हैं, तो वहाँ शांति मिलने की उम्मीद न करें – और आप निराश नहीं होंगे; लेकिन यदि, उसे पाने की उम्मीद करके, आपको वह नहीं मिलती, तो आप जिसने आपको आश्रय दिया है, उसकी बुराई करेंगे: परन्तु बदनामी आत्मा की मृत्यु है। – हर बात के लिए धन्यवाद दीजिए: क्योंकि इसी में आत्मिक और आत्मा-पोषक पोषण और शांति निहित है।

126. जो परमपितामहों से सलाह माँगता है, वह मसीह का अनुकरण करता है, जिन्होंने *'दास का रूप धारण करके स्वयं को नम्र किया'* (फिलि. 2:7-8)। जो मनुष्य बिना सलाह के जीता है, वह अपने ही लिए शत्रु है, क्योंकि धर्मग्रंथ कहता है: *'हर काम सलाह से करो'* (सिरि. 32:21)। अपनी इच्छा का पालन करने की तुलना में विनम्रता से पूछना अधिक लाभदायक है; क्योंकि प्रभु स्वयं पूछने वाले की विनम्रता और ईमानदारी के हृदय के लिए, पूछे जाने वाले के मुँह में यह कहने के लिए डाल देते हैं कि क्या कहना है।

127. विश्वास के बारे में कभी बहस न करें: ईश्वर आपसे यह नहीं चाहते, बल्कि केवल यह चाहते हैं कि आप पवित्र चर्च से बपतिस्मा के समय प्राप्त की गई सही आस्था पर विश्वास करें और उनके आज्ञाओं का पालन करें। इसे बनाए रखें, और आप उद्धार पाएँगे। हालाँकि, यदि आपसे पूछा जाए, तो कहें: 'मुझे क्षमा करें, हे पवित्र पिताओं, यह मेरे समझ से परे है।'

128. किसी भी ऐसी बात की जाँच-पड़ताल न करें जिसकी परमेश्वर आपसे अपेक्षा नहीं करते, बल्कि जैसा कि मैंने ऊपर कहा है, सच्चे विश्वास की स्वीकारोक्ति से ही संतुष्ट रहें, और उससे परे किसी भी बात के बारे में जिज्ञासु न हों।

129. जब आप आम लोगों के साथ हों और वे व्यर्थ की बातें करने लगें, यदि आपको कहीं विशेष जाने की आवश्यकता न हो, तो वहाँ से चले जाएँ; लेकिन जब आवश्यकता हो, तो उन्हें दोष दिए बिना, बल्कि अपनी ही कमजोरी को पहचानते हुए, अपना मन अपनी प्रार्थना में लगाएँ। – हालाँकि, यदि वे आपके प्रति सद्भावना रखते हैं और आप

जानते हैं कि वे परमेश्वर के वचन को सुनने के इच्छुक हैं, तो इस व्यर्थ की बात को कुछ उपयोगी चीज़ में बदलने का प्रयास करें – उन्हें संतों के जीवन से कुछ बताकर।

१३०. जब आपका कोई परिचित विधर्मी अनुमानों पर अडिग रहे, तो उसे सच्चे धर्म को जानने के लिए समझाइए, लेकिन उससे बहस न करें, और उसके अनुमानों को सुनने की इच्छा न करें, कहीं ऐसा न हो कि आप उसके विष से प्रभावित हो जाएँ। यदि वह विश्वास की सच्चाई सुनना चाहता है, तो उसे पवित्र पिताओं की ओर निर्देशित करें, जो मसीह में उसके लिए लाभदायक हो सकते हैं। इस प्रकार आप स्वयं को नुकसान पहुँचाए बिना परमेश्वर की इच्छा के अनुसार उसकी मदद करेंगे। लेकिन यदि, पहली और दूसरी चेतावनी के बाद, वह अपने रास्ते नहीं सुधारता है, तो, प्रेरित के शब्दों में, *'उससे अलग हो जाओ'* (तीतुस 3:10)।

१३१. 'मेरा विवेक मुझे बार-बार घर से बाहर न निकलने के लिए कहता है, फिर भी ऐसा होता है कि सप्ताह में कई चर्च सेवाएँ होती हैं: क्या मुझे उनमें शामिल होना चाहिए, या घर पर रहकर प्रार्थना में मन लगाना बेहतर है?' – यदि आप जानते हैं कि जब आप घर से बाहर निकलते हैं, तो आपके संपर्क आपको नुकसान पहुँचाते हैं, तो आपके लिए अक्सर बाहर न जाना लाभदायक है, यहाँ तक कि चर्च सेवाओं के लिए भी नहीं, बल्कि केवल समय-समय पर जाना चाहिए; क्योंकि मौन मनुष्य को कई बुराइयों से बचाता है।

132. "यदि, तथापि, मुझे घर से निकलना आवश्यक हो, चाहे अपनी ज़रूरतों के लिए हो या अपने पूर्वजों की खातिर, तो क्या ऐसी स्थिति में चर्च न जाने का बोझ मेरी अंतरात्मा पर भारी नहीं पड़ेगा?" – यदि आपको आवश्यकता के कारण या पितृपक्ष के आदेश से घर से बाहर जाना पड़े, तो ईश्वर के भय के साथ अपने कार्यों को करने का प्रयास करें, और चर्च सेवा छूटने की चिंता न करें; परन्तु अपने घर लौटें, और वहाँ अपने पापों पर चिंतन करें। हालाँकि, यदि आप आलस्य या विचलन के कारण घर से बाहर निकलते हैं, तो बेहतर है कि आप चर्च की सेवा में जाएँ और अपने मन को भटकने न दें, बल्कि अपने आप पर ध्यान दें।

133. "क्या रात में चर्च जाना (प्रार्थना के लिए) अच्छा है, या घर पर ही यथासंभव प्रार्थना करना?" – घर पर प्रार्थना करना अच्छा है, क्योंकि चर्च में बातचीत होती है।

134. "एक विचार मेरे सामने मेरे लिए आवश्यक साधनों की कमी प्रस्तुत करता है, यह सुझाव देते हुए कि मैं अपने परिवार का भरण-पोषण नहीं कर सकता - और इससे मुझे दुख होता है।" - यह हर तरह का दुख है। यदि हम परमेश्वर में आशा रखते, तो वह स्वयं हमें अपनी इच्छा के अनुसार मार्गदर्शन करते। इसलिए, *'अपना बोझ प्रभु पर डाल दो'* (भजन संहिता 54:23), और वह इतना शक्तिशाली है कि वह तुम्हें और तुम्हारे घर वालों को बिना किसी दुख या शोक के, सभी आवश्यक चीजें प्रदान कर सकता है। उससे कहो: *'तेरी इच्छा पूरी हो'*, और वह तुम्हें दुख या शोक में नहीं छोड़ेगा।

१३५. 'जब मैं कुछ अन्याय करता हूँ और फिर उसकी भरपाई कर देता हूँ, तो मेरा मन घमंडी हो जाता है, यह सुझाव देते हुए कि मैंने कुछ अच्छा किया है; इस मामले में मुझे इसे क्या कहना चाहिए?' – उससे कहो: परमेश्वर के बिना हम कुछ भी अच्छा नहीं कर सकते, जैसा कि उन्होंने स्वयं कहा: *'मेरे बिना तुम कुछ भी नहीं कर सकते'* (यूहन्ना 15:5)। और प्रेरित कहते हैं: *'तुम्हारे पास ऐसा क्या है जो तुमने प्राप्त नहीं किया?' परन्तु यदि तुमने इसे प्राप्त किया है, तो क्यों इस प्रकार घमण्ड करते हो जैसे कि तुमने इसे प्राप्त नहीं किया हो?'* (1 कुरिन्थियों 4:7)। अत: यदि हम भलाई करने में भी घमण्ड नहीं कर सकते, तो हमें बुराई से दूर रहने में तो और भी कम घमण्ड करना चाहिए। इस बात पर घमण्ड करना कि हम पाप नहीं करते, एक बड़ी मूर्खता है।

136. 'हर भोजन में एक स्वाभाविक मिठास होती है: क्या यह उसे खाने वाले को नुकसान नहीं पहुँचाती?' – प्रभु परमेश्वर ने हर तरह के भोजन में मिठास प्रदान की है, और जो इसे धन्यवाद के साथ ग्रहण करता है, उसे इसमें कोई हानि नहीं है। हालाँकि, किसी को हमेशा लत से बचना चाहिए: क्योंकि यह आत्मा के लिए हानिकारक है।

137. 'क्या यह अनुचित नहीं है कि किसी भी काम को इस तरह से किया जाए कि वह साफ-सुथरा और व्यवस्थित हो जाए, जैसे कि, उदाहरण के लिए, जब मैं कोई इमारत बना रहा हूँ, या कुछ और कर रहा हूँ?' – किसी चीज़ को इस तरह बनाना अनुचित नहीं है कि वह साफ-सुथरी और सुंदर बनकर तैयार हो, उस उद्देश्य के लिए जिसके लिए उसे बनाया गया है, लेकिन आसक्ति के बिना, क्योंकि प्रभु सभी शुद्ध चीज़ों में प्रसन्न होते हैं। हालाँकि, यदि आप अपने भीतर किसी वस्तु के प्रति लगाव महसूस करें, तो उसके अंत को याद करें—कि वह नाशवान है—और आप शांत हो जाएँगे; क्योंकि एक भी ऐसी चीज़ नहीं है जो हमेशा एक ही रूप में बनी रहे, बल्कि सभी चीज़ें क्षणभंगुर और परिवर्तनशील हैं।

आदरणीय बाबा डोरोथयिस

उनके बारे में एक संक्षपि्त ववरिण

अब्बा डोरोथयिस छठी शताब्दी के अंत और सातवीं शताब्दी की शुरुआत में प्रसदि्ध थे। उन्होंने अपनी प्रारंभकि युवावस्था धर्मनरिपेक्ष वज्ञिानों का अध्ययन बड़ी लगन से करते हुए बताई। अपनी शक्षिा पूरी करने के बाद, वह कुछ समय के लिए अपने पैतृक देश में, अब्बा सेरडि के मठ से बहुत दूर नहीं, शायद अशकेलोन या गाजा में रहे। उनके पास पर्याप्त साधन थे। जल्द ही उनकी मुलाकात महान संतों बार्सानुफयिस और जॉन से हुई, जनिकी शक्षिाओं ने उन्हें सब कुछ पीछे छोड़कर आबा सेरडि के मठ में, जहाँ वे रहते थे, मठवासी संन्यास ग्रहण करने के लिए प्रेरति कयिा। उनके मार्गदर्शन में उन्होंने अपना संन्यासी प्रशक्षिण प्राप्त कयिा, हालांक मिुख्य रूप से वृद्ध जॉन के मार्गदर्शन में, और साथ ही उन्होंने मठ के मठाधीश द्वारा सौंपी गई जम्मिेदारयिों को भी पूरा कयिा, जन्होंने पहले उन्हें अतथि गृह और फरि औषधालय के पर्यवेक्षण का काम सौंपा। सेवा के इस अंतमि दौर के दौरान, वह संत डोसथियिस के गुरु थे। अब्बा सेरडिा और एल्डर सेंट जॉन की मृत्यु के बाद, जब उनके साझा गुरु, महान बार्सानुफयिस, पूरी तरह से अपनी कोठरी में चले गए, तो रेवरेंड डोरोथयिस ने अब्बा सेरडिा के समुदाय को छोड़ दयिा और एक अन्य मठ के मठाधीश बन गए। उनके शष्यिों को दएि गए उनके उपदेश, संभवतः इसी अवधकि के हैं। ये शक्षिाएँ, जनिकी संख्या इक्कीस है, कई पत्रों के साथ मलिकर, इस पति के लेखन से हमारे लिए वरिासत के रूप में बची हुई एकमात्र सामग्री हैं, जनिकी शक्षिा की रोशनी न केवल मठवासी समुदायों में बल्क ईिसाइयों के बीच भी दूर-दूर तक फैली। उनकी मृत्यु का वर्ष लगभग 620 माना जाता है। उनका पर्व दवािस 5 जून है।

तपस्वयिों के लिए नर्दिेश

(क्रमबद्ध अंश)

1. अपनी कृपा से, ईश्वर ने हमें ऐसे आज्ञाएँ दी हैं जो हमें शुद्ध करती हैं, ताक यिद हिम चाहें, तो इन आज्ञाओं का पालन करके हम न केवल पापों से बल्क स्वियं जुनून से भी शुद्ध हो सकें। क्योंक जिुनून एक चीज़ हैं, और पाप दूसरी। वासनाएँ हैं: क्रोध, अहंकार, सुख की लालसा, घृणा, बुराई की इच्छा, और इसी तरह की अन्य। पाप, हालांकि, वासनाओं के स्वयं के कर्म हैं, जब कोई उन्हें कर्म में करता है, यानी, अपने शरीर से उन कृत्यों को करता है जनिके लिए उसकी वासनाएँ उसे प्रेरति करती हैं; क्योंक कोिई व्यक्त उिन पर कार्य कएि बनिा भी वासनाएँ रख सकता है।

2. (पुराने) वधिान का उद्देश्य हमें यह सखिाना था क हिम वह न करें जो हम स्वयं सहन नहीं करना चाहेंगे; इसीलिए इसने हमें केवल बुराई करने से रोका। अब, हालाँक (िनए नयिम में), हमसे उस भावना को ही दूर करने की अपेक्षा की जाती है जो हमें बुराई करने के लिए प्रेरति करती है – स्वयं घृणा, स्वयं वासना, स्वयं कीर्त कि प्रेम, और अन्य भावनाएँ।

3. प्रभु क्या कहते हैं, सुनो: *'मेरे से सीखो, क्योंक मिैं मन से कोमल और दीन हूँ और तुम अपने प्राणों को वश्रिाम पाओगे'* (मत्ती 11:29)। यहाँ उन्होंने सभी बुराइयों की जड़ और कारण तथा उसका उपाय प्रकट कयिा – जो कुछ भी अच्छा है, उसका कारण; उन्होंने स्पष्ट रूप से दखिाया क घिमंड ने हमें नीचा दखिा दयिा है, और यह क दियिा केवल इसके वपिरीत, अर्थात् वनिम्रता के माध्यम से ही प्राप्त की जा सकती है। – हमें इन सभी दुखों से क्यों गुज़रना पड़ा है? क्या यह घमंड के कारण नहीं है? मनुष्य को हर प्रकार की आनंद-सुख के साथ बनाया गया था और वह स्वर्ग में था। लेकनि उसे एक काम न करने की आज्ञा दी गई थी, और फरि भी उसने वह कयिा। क्या आप घमंड को देखते हैं? क्या आप अवज्ञा (अहंकार की बेटी) को देखते हैं? – तब ईश्वर ने कहा: मनुष्य एक भी आनंद का अनुभव करने में असमर्थ है; यद वि ह दुर्भाग्य का अनुभव नहीं करता है, तो वह और भी आगे बढ़कर पूरी तरह से नष्ट हो जाएगा; यद वि ह नहीं जानता क दिुःख और परश्रिम क्या हैं, तो वह यह भी नहीं जान पाएगा क आिनंद और शांत क्यिा हैं; – और उन्होंने उसे स्वर्ग से नकिाल दयिा। – वहाँ उसे अपने ही आत्म-प्रेम और अपनी ही इच्छा के हवाले कर दयिा गया, ताक वि उसकी हड्डयिाँ तोड़ दें, और इसके माध्यम से वह यह सीख सके क उिसे स्वयं का नहीं बल्क ईिश्वर की आज्ञाओं का पालन करना है, और ताक अिवज्ञा का दुःख ही उसे आज्ञाकारति का आनंद सखिाए, जैसा क नििबी ने कहा है: *'तुम्हारा परमेश्वर से भटकना तुम्हें* एक सबक सखिाएगा' (यर. 2:19)। – अब भी, परमेश्वर की भलाई पुकारती है: *'हे सब मेहनत करने वालों और बोझ से दबे लोगों, मेरे पास आओ, और तुम अपने प्राणों के लिए वश्रिाम पाओगे'* (मत्ती 11:28)। यह ऐसा है जैसे कहना हो: तुमने परश्रिम कयिा है और कष्ट सहे हैं, और अवज्ञा के बुरे परणिामों का अनुभव कयिा है; तो अब आओ, और वापस लौट आओ; उस घमंड के बजाय, जसिसे तुमने स्वयं को मार डाला है,

विनम्रता से स्वयं को पुनर्जीवित करो। *'मेरे से सीखो, क्योंकि मैं मन में नम्र और दीन हूँ और तुम अपने प्राणों को विश्राम पाओगे'* (मत्ती 11:29)।

४. अबा मार्क ने कहा: हृदय के पश्चाताप के बिना, बुराई से मुक्त होना और सद्गुण प्राप्त करना असंभव है। हृदय के पश्चाताप के द्वारा, एक व्यक्ति आज्ञाओं का आज्ञाकारी बन जाता है, बुराई से मुक्त हो जाता है, सद्गुण प्राप्त करता है - और फिर अपने विश्राम पर आरोहण करता है।

5. कुछ ईश्वर-प्रेमी लोगों ने, पवित्र बपतस्मिा के माध्यम से वासनाओं की क्रियाओं को वश में कर लिया था, और वे स्वयं वासनाओं पर विजय प्राप्त कर निर्लिप्त बनना चाहते थे; ऐसे थे संत एंथनी, संत पाकोमियस और अन्य ईश्वर-धारी फादर। उन्होंने *'मांस और आत्मा की हर अशुद्धि से स्वयं को शुद्ध करने'* का संकल्प लिया (2 कुरिन्थियों 7:1)। लेकिन यह जानते हुए कि संसार में रहते हुए, इसे प्राप्त करना आसान नहीं है, उन्होंने जीवन का अपना एक विशेष तरीका, जीने का एक विशेष तरीका, अर्थात् संसार से अलग एकांत का जीवन अपनाया, और संसार से भागकर रेगिस्तान में रहने लगे, उपवास और जागरण में परिश्रम करते हुए, नंगे जमीन पर सोते हुए, और उन्होंने अपने स्वदेश और संबंधों, अपनी संपत्तियों और अधिकारों का पूर्णतः त्याग कर, हर प्रकार की अन्य कठिनाइयों को सहन किया।

6. उन्होंने न केवल आज्ञाओं का पालन किया, बल्कि परमेश्वर को भेंटें भी दीं। आज्ञाएँ सभी मसीहियों को दी गई हैं, और हर मसीही का उन्हें मानना अनिवार्य है। यह दुनिया में राजा को देय श्रद्धांजलि के समतुल्य है। लेकिन जैसे दुनिया में महान और कुलीन लोग होते हैं जो न केवल राजा को कर देते हैं बल्कि उसे उपहार भी देते हैं – जिसके लिए उन्हें विशेष सम्मान, पुरस्कार और प्रतिष्ठा प्रदान की जाती है: इसी प्रकार धर्मपिताओं ने न केवल आज्ञाओं का पालन करके परमेश्वर को श्रद्धांजलि अर्पित की, बल्कि उन्हें उपहार भी दिए – कुँवारीपन और निर्लिप्तता, जो आज्ञाएँ नहीं बल्कि स्वतंत्र इच्छा के कार्य हैं: क्योंकि पहले के बारे में कहा गया है: *'जो कोई इसे स्वीकार कर सकता है, वह स्वीकार करे'* (मत्ती 19:12), और दूसरे के बारे में: *'यदि तुम सिद्ध होना चाहते हो... तो अपनी संपत्ति बेच डालो और गरीबों को दे दो'* (मत्ती 19:21)।

7. उन्होंने अपने लिए संसार को सूली पर चढ़ाया, और फिर स्वयं को संसार के लिए सूली पर चढ़ाने लगे, प्रेरित का अनुकरण करते हुए, जो कहते हैं: *'संसार मेरे लिए सूली पर चढ़ाया गया है, और मैं संसार के लिए'* (गलातियों 6:15)। क्योंकि जब कोई मनुष्य संसार का त्याग करता है और एक भिक्षु बन जाता है—अपने माता-पिता, अपनी संपत्ति, और सभी सांसारिक मामलों और चिंताओं को पीछे छोड़कर—तो वह अपने लिए संसार को सूली पर चढ़ाता है। और जब, बाहरी चीजों से खुद को मुक्त करने के बाद, वह स्वयं सुखों, या चीजों की लालसा, और अपनी इच्छाओं के विरुद्ध संघर्ष करता है, और स्वयं कामनाओं को मार डालता है, तो वह खुद को संसार के लिए सूली पर चढ़ाता है – और प्रेरित के साथ साहसपूर्वक कह सकता है: *'संसार मेरे लिए सूली पर चढ़ाया गया है, और मैं संसार के लिए'*।

८. हमारे पूर्वजों ने, संसार को अपने लिए सूली पर चढ़ाने के बाद, स्वयं को भी संसार के लिए सूली पर चढ़ाया, और तपस्या के प्रयासों में स्वयं को समर्पित कर दिया। जहाँ तक हमारी बात है, यद्यपि ऐसा प्रतीत होता है कि हमने संसार को छोड़कर और मठ में प्रवेश करके संसार को अपने लिए सूली पर चढ़ा दिया है; फिर भी हम स्वयं को संसार के लिए सूली पर चढ़ाना नहीं चाहते, क्योंकि हम अभी भी इसके सुखों से प्रेम करते हैं, अभी भी इसके प्रति आसक्ति रखते हैं, इसकी महिमा के प्रति सहानुभूति रखते हैं, और अपने भीतर भोजन, वस्त्र और अन्य व्यर्थ की चीजों के प्रति लगाव बनाए रखते हैं। हालाँकि, हमें ऐसा नहीं करना चाहिए; जिस प्रकार हमने संसार और उसकी संपत्ति का त्याग किया है, उसी प्रकार हमें उन चीज़ों के प्रति अपनी आसक्ति का भी त्याग करना चाहिए।

९. हमने संसार को त्याग दिया है; तो आइए हम उससे अपना लगाव भी त्याग दें। क्योंकि लगाव हमें फिर से संसार से बाँधता है और उससे जोड़ता है, भले ही वे तुच्छ, साधारण और निरर्थक चीजों से संबंधित हों। लेकिन यदि हम पूरी तरह से परिवर्तित और आसक्तियों से मुक्त होना चाहते हैं, तो हमें अपनी इच्छाओं को काटना सीखना चाहिए— चाहे वे जिन चीजों से संबंधित हों, वे कितनी भी तुच्छ क्यों न हों। क्योंकि किसी व्यक्ति की अपनी इच्छा पर नियंत्रण करने से अधिक लाभ उसे किसी और चीज़ से नहीं मिलता; और वास्तव में, कोई व्यक्ति किसी अन्य सद्गुण से जितना लाभान्वित होता है, उससे कहीं अधिक लाभ इस से प्राप्त करता है। इस बीच, अपनी इच्छा और आवेगों का ऐसा दमन क्षण-प्रतिक्षण हो सकता है। मान लीजिए कोई व्यक्ति चल रहा है; एक विचार उसे कहता है: 'इधर-उधर देखो,' लेकिन वह अपनी इच्छा को दबा देता है और नहीं देखता। वह लोगों को बातें करते हुए देखता है; एक विचार उसे कहता है: 'उनसे एक-दो शब्द बोलो', लेकिन वह उस इच्छा को दबा देता है और कुछ नहीं कहता। वह रसोई के पास जाता है; एक विचार उसे कहता है: 'अंदर जाओ और पूछो कि रसोइया क्या बना रहा है', लेकिन वह उस इच्छा को दबा देता है और अंदर नहीं जाता, और इसी तरह आदि। – इस प्रकार अपनी इच्छाओं को दबाकर, वह उन्हें दबाने का आदी हो जाता है और छोटे-छोटे मामलों से शुरू करके, उस बिंदु तक पहुँच जाता है जहाँ वह बड़े मामलों में भी उन्हें सहजता और

शांति से दबा लेता है; और इस प्रकार अंततःउसकी अपनी कोई इच्छा ही नहीं रहती, और जो कुछ भी होता है, वह शांत रहता है। इस प्रकार, अपनी इच्छा को काटने से, निष्पक्षता प्राप्त होती है, और निष्पक्षता से, ईश्वर की सहायता से, कोई पूर्ण वैराग्य तक पहुँचता है।

10. एक वृद्ध ने कहा: 'सबसे बढ़कर, हमें नम्रता की आवश्यकता है।' उन्होंने ऐसा क्यों कहा? – उन्होंने यह क्यों नहीं कहा कि सबसे बढ़कर, हमें आत्म-संयम की आवश्यकता है? क्योंकि प्रेरित कहते हैं: *'खेलों में भाग लेने वाले सभी लोग हर बात में आत्म-संयम करते हैं'* (1 कुरिन्थियों 9:25)। या उन्होंने यह क्यों नहीं कहा कि सबसे बढ़कर, हमें ईश्वर के भय की आवश्यकता है? क्योंकि धर्मग्रंथ में लिखा है: *'प्रभु का भय ज्ञान की आरम्भ है'* (नीतिवचन 1:7)। फिर उसने यह भी क्यों नहीं कहा कि सबसे बढ़कर, हमें दान या विश्वास की आवश्यकता है? क्योंकि कहा गया है: *'दान और विश्वास से पाप शुद्ध होते हैं'* (नीतिवचन 15:27), और फिर: *'विश्वास के बिना परमेश्वर को प्रसन्न करना असंभव है'* (इब्रानियों 11:6)। तो फिर, इन सभी अत्यंत आवश्यक बातों को एक तरफ रखकर, वह केवल नम्रता पर ही क्यों जोर देते हैं? वरिष्ठ इसके द्वारा हमें दिखाते हैं कि न तो ईश्वर का भय, न दान, न विश्वास, न आत्म-संयम, और न ही कोई अन्य सद्गुण विनम्रता के बिना पूर्ण हो सकता है। क्योंकि विनम्रता के द्वारा ही शत्रु और विरोधी के सभी बाण टूट जाते हैं। सभी संतों ने इसके मार्ग पर और इसके श्रम के द्वारा ही यात्रा की है। भजनकार पुकारता है, *'मेरी नम्रता और मेरी मेहनत को देखो, और मेरे सब पापों को क्षमा करो'*; और फिर: *'मैं ने अपना मन नम्र किया, और यहोवा ने मुझे बचाया'* (भजन संहिता 24:18; 114:6)।

11. उसी वृद्ध ने कहा: विनम्रता किसी पर क्रोधित नहीं होती, न ही यह किसी को क्रोधित करती है। विनम्रता आत्मा पर ईश्वर की कृपा को आकर्षित करती है; और जब ईश्वर की कृपा आती है, तो यह आत्मा को इन दो दुष्ट भावों से मुक्त करती है। क्योंकि अपने पड़ोसी पर क्रोधित होने और उसे क्रोधित करने से अधिक दुष्ट और क्या हो सकता है? – लेकिन क्या मैं यह कह रहा हूँ कि विनम्रता हमें केवल इन दो भावों से ही मुक्त करती है? यह आत्मा को हर भाव और हर परीक्षा से मुक्त करती है।

12. जब संत एंथनी ने अपने सामने शैतान के सभी जाल बिछे हुए देखे और, आह भरकर, ईश्वर से पूछा, 'तो फिर उनसे कौन बच सकता है?', तो ईश्वर ने उन्हें उत्तर दिया, 'नम्रता उनसे बचती है', और, और भी आश्चर्यजनक रूप से, जोड़ा, 'वे उसे छू भी नहीं सकते'। क्या आप इस सद्गुण की शक्ति देखते हैं? सचमुच, विनम्रता से अधिक शक्तिशाली कुछ भी नहीं है; कुछ भी इसे परास्त नहीं कर सकता। यदि किसी विनम्र व्यक्ति पर कोई दुखद घटना घटती है, तो वह तुरंत स्वयं को दोष देता है, यह स्वीकार करते हुए कि वह इसके योग्य है – और न तो किसी को फटकारता है, न ही किसी अन्य पर दोष मढ़ता है। इस प्रकार, वह जो हुआ है, उसे बिना कष्ट, बिना दुख, पूर्ण शांति के साथ सहन करता है; और इसलिए वह किसी पर क्रोधित नहीं होता, न ही किसी को क्रोधित करता है।

13. जैसे अहंकार के दो प्रकार होते हैं, वैसे ही विनम्रता के भी दो प्रकार होते हैं। *'अहंकार का पहला प्रकार'* तब होता है जब कोई भाई को फटकारता है, उसकी निंदा करता है और उसे इस तरह अपमानित करता है मानो वह तुच्छ हो, जबकि वह स्वयं को उससे श्रेष्ठ समझता है। यदि ऐसा व्यक्ति जल्द ही होश में नहीं आता है और अपने तरीकों को सुधारने का प्रयास नहीं करता है, तो वह धीरे-धीरे *'अहंकार के दूसरे रूप' में* फिसल जाता है, जो स्वयं ईश्वर के विरुद्ध अहंकार है और वह अपने कर्मों और गुणों को ईश्वर के बजाय स्वयं को श्रेय देता है, मानो उसने उन्हें ईश्वर की मदद के बिना, अपने स्वयं के प्रयासों, अपनी स्वयं की ज्ञान और बुद्धि से पूरा किया हो। इससे हम देख सकते हैं कि नम्रता के दो प्रकार क्या हैं। *'पहली'* नम्रता का अर्थ है अपने भाई को स्वयं से अधिक बुद्धिमान और हर तरह से श्रेष्ठ मानना - या स्वयं को सभी से नीच समझना। *'दूसरी'* नम्रता, हालांकि, अपने कर्मों का श्रेय ईश्वर को देना है। और यही संतों की पूर्ण नम्रता है।

14. पूर्ण विनम्रता आज्ञाओं के पालन से उत्पन्न होती है। जब पेड़ों पर बहुत सारे फल होते हैं, तो फल स्वयं शाखाओं को नीचे की ओर झुका देता है और उन्हें लटका देता है; जबकि कोई फल न देने वाली शाखा ऊपर की ओर बढ़ती है और सीधी रहती है। हालाँकि, कुछ पेड़ (जैसे नींबू के पेड़) ऐसे भी होते हैं जो अपनी शाखाओं के ऊपर की ओर बढ़ने पर फल नहीं देते; लेकिन अगर कोई एक पत्थर लेता है, उसे एक शाखा से बाँधता है और उसे नीचे की ओर झुकाता है, तो वह फल देती है। इसी तरह, जब आत्मा स्वयं को नम्र बनाती है, तो वह फल देती है, और जितना अधिक फल वह देती है, उतनी ही अधिक वह स्वयं को नम्र बनाती है। इसी कारण, संत जितना अधिक ईश्वर के निकट आते हैं, उतना ही अधिक वे स्वयं को पापी समझते हैं। इस प्रकार अब्राहम, जब उसने प्रभु को देखा, तो उसने स्वयं को *'धूल और राख'* कहा (उत्पत्ति 18:27); यशायाह ने परमेश्वर को उनकी महिमा में देखकर पुकारा: *'हाय, मैं नाश हुआ, क्योंकि मैं अशुद्ध मनुष्य हूँ'* (यशायाह 6:5)।

१५. कोई भी अनुभव से न सीखने तक यह बता नहीं सकता कि विनिम्रता क्या है, या यह आत्मा में कैसे उत्पन्न होती है। कोई भी केवल शब्दों से ही इसे समझ नहीं सकता। एक बार, बाबा ज़ोसिमि नम्रता के बारे में बात कर रहे थे (कि कोई व्यक्ति जितिना पवित्र होता है, वह उतना ही नम्र होता है), और वहाँ मौजूद एक सोफ़िस्ट ने उनसे पूछा: 'क्या आप नहीं जानते कि आप में सद्गुण हैं? आखरिकार, आप देखते हैं कि आप आज्ञाओं का पालन कर रहे हैं: तो ऐसा कैसे है कि, ऐसा करते हुए भी, आप खुद को एक पापी मानते हैं?' वरिष्ठ के पास उसे देने के लिए कोई जवाब नहीं था, लेकिन उन्होंने बस कहा: 'मुझे नहीं पता कि तुमसे क्या कहूँ, लेकिन मैं खुद को एक पापी मानता हूँ।' और जब उस सोफ़िस्ट ने उनसे सवाल करके परेशान करना जारी रखा: 'कैसे?' – तो वरिष्ठ ने केवल जवाब दिया: 'मुझे नहीं पता कैसे; लेकिन मैं सचमुच खुद को ऐसा ही मानता हूँ। मुझे परेशान मत करो।' और इसलिए, जब बाबा अगथोन अपने जीवन के अंत के करीब थे, और भाइयों ने उनसे कहा, 'क्या आप भी डरते हैं, पिताजी?', तो उन्होंने उत्तर दिया: 'जितिना हो सका, मैंने खुद को आज्ञाओं का पालन करने के लिए मजबूर किया, लेकिन मैं एक इंसान हूँ, और मैं कैसे जान सकता हूँ कि मेरे कर्म ईश्वर को प्रसन्न करते हैं या नहीं? क्योंकि ईश्वर का न्याय एक बात है, और मनुष्य का दूसरा।'

16. जहाँ तक विनम्रता का प्रश्न है, एक वृद्ध ने यह कहा: 'विनम्रता का मार्ग बुद्धिमानी से किए गए शारीरिक श्रमों, स्वयं को सभी से नीच समझने, और ईश्वर से अविराम प्रार्थना करने से है।' – शारीरिक श्रम आत्मा को विनम्रता की ओर ले जाता है, क्योंकि आत्मा शरीर के प्रति सहानुभूति रखती है और उसमें होने वाली हर चीज़ में हिस्सेदार होती है। जैसे शारीरिक श्रम शरीर को विनम्र बनाता है, वैसे ही आत्मा भी उसके साथ विनम्र हो जाती है। स्वयं को सभी से नीच समझना विनम्रता की एक विशिष्ट विशेषता है, और इस पर अभ्यास करने तथा स्वयं को प्रशिक्षित करने से स्वाभाविक रूप से विनम्रता की जड़ें पनपती हैं और उस अहंकार का उन्मूलन होता है जिसे हमने पहला दोष कहा है। क्योंकि कोई भी व्यक्ति, जो यह जानता है कि वह ईश्वर की मदद के बिना कोई भी सद्गुण नहीं अपना सकता, वह कभी भी प्रार्थना करना बंद नहीं करता, और वह स्वयं को सभी से नीच समझता है। – इसी तरह, निरंतर प्रार्थना करना स्पष्ट रूप से घमंड - दूसरे प्रकार - के विरुद्ध है। क्योंकि यह स्पष्ट है कि जो यह जानता है कि वह ईश्वर की मदद के बिना कोई भी सद्गुण नहीं कर सकता, वह स्वयं को विनम्रता की ओर झुकाता है, और ईश्वर से यह प्रार्थना करना कभी बंद नहीं करता कि वह उस पर अपनी कृपा करें। ऐसा क्यों है कि जो व्यक्ति अविराम प्रार्थना करता है, भले ही उसे कुछ भी करने के लिए योग्य माना जाए, वह यह जानते हुए कि उसने ऐसा क्यों किया, अहंकारी नहीं हो सकता? क्योंकि वह इसे अपनी ताकत नहीं मान सकता, बल्कि अपनी सभी सफलताओं का श्रेय ईश्वर को देता है; वह हमेशा उनका धन्यवाद करता है और हमेशा उनसे प्रार्थना करता है, यह सोचकर कांपता रहता है कि कहीं वह ऐसी मदद से वंचित न हो जाए। इस प्रकार, वह विनम्रता से प्रार्थना करता है और प्रार्थना से विनम्र बनता है; और जितिना अधिक वह सदाचार में प्रगति करता है, उतना ही अधिक वह विनम्र बनता है; और जैसे-जैसे वह विनम्र बनता है, उसे सहायता मिलती है और वह विनम्रता में प्रगति करता है।

17. जब ईश्वर ने मनुष्य की सृष्टि की, तो उसने उसके भीतर कुछ दिव्य स्थापित किया—एक विचार जो एक चिंगारी के समान है, जिसमें प्रकाश और ऊष्मा दोनों हैं—एक ऐसा विचार जो मन को प्रबुद्ध करता है और उसे दिखाता है कि क्या अच्छा है और क्या बुरा। इसे अंतरात्मा कहा जाता है—और यह प्राकृतिक कानून है। इस नियम – अंतरात्मा – का पालन करके, पूर्वजों और सभी संतों ने, लिखित नियम से भी पहले, ईश्वर की कृपा प्राप्त की। लेकिन जब, पतन के माध्यम से, लोगों ने अपने अंतर्मन को दबाया और कुचला, तो लिखित व्यवस्था आवश्यक हो गई, पवित्र भविष्यद्वक्ताओं की आवश्यकता हुई, और हमारे प्रभु यीशु मसीह का आगमन भी आवश्यक हो गया – ताकि उसे प्रकट किया जाए और बहाल किया जाए, और जो चिंगारी दम तोड़ चुकी थी, वह उनके पवित्र आज्ञाओं का पालन करने से फिर से प्रज्वलित हो सके।

18. अब यह हमारी शक्ति में है कि या तो हम इसे एक बार फिर से दबा दें, या यदि हम आज्ञाकारी हों तो इसे हमारे भीतर चमकने और हमें प्रबुद्ध करने दें। जब हमारा अंतरात्मा हमें कुछ करने के लिए कहता है, और हम उसकी अवहेलना करते हैं – और जब वह हमसे फिर से बात करता है, और हम कोई कार्रवाई नहीं करते, बल्कि उस पर पाँव पटकते रहते हैं; तो हम उसे दबा देते हैं – और वह हमसे स्पष्ट रूप से बात नहीं कर पाता क्योंकि उस पर बोझ का भार है, लेकिन, अंतरात्मा के पीछे से चमकने वाले दीपक की तरह, वह हमें ऐसी चीजें दिखाना शुरू कर देता है जो दिन-ब-दिन और अधिक अंधेरी होती जाती हैं। जिस प्रकार बहुत कीचड़ वाले पानी में कोई भी अपना चेहरा नहीं पहचान सकता, उसी प्रकार पाप के कारण हम यह समझने में असफल रहते हैं कि हमारा अंतकरण हमसे क्या कह रहा है – ताकि हमें ऐसा लगे कि मानो हमारा कोई अंतकरण ही नहीं है।

19. अंतरात्मा को एक विरोधी कहा जाता है क्योंकि यह हमेशा हमारी दुष्ट इच्छा का विरोध करती है और हमें याद दिलाती है कि हमें क्या करना चाहिए लेकिन हम नहीं करते; और यदि हम वह करते हैं जो हमें नहीं करना चाहिए,

तो यह हमें दोषी ठहराती है। इसीलिए प्रभु ने इसे एक विरोधी कहा है, और हमसे आज्ञा देते हैं: *'जब तुम अपने विरोधी के साथ रास्ते में हो तो उससे सुलह कर लो'* (मत्ती 5:25), यानी, इस संसार में, जैसा कि संत बेसिल द ग्रेट कहते हैं।

20. अतःजब हम इस संसार में हैं, तो अपने विवेक की रक्षा करें; हम उसे किसी भी बुराई का दोषी ठहराने न दें; हम किसी भी बात में, भले ही वह सबसे छोटी ही क्यों न हो, उस पर पाँव न रखें। ध्यान रखें कि इस छोटे और, असल में, तुच्छ मामले की उपेक्षा करके, हम बड़े मामलों की भी उपेक्षा करने लगते हैं। यदि कोई यह कहना शुरू कर दे: 'अगर मैं यह तुच्छ चीज़ खा लूँ तो क्या फर्क पड़ता है? अगर मैं इस या उस चीज़ को देख लूँ तो क्या फर्क पड़ता है?', तो इससे: 'इसमें क्या बात है, उसमें क्या बात है' – वह एक दुष्ट आदत में पड़ जाता है और जो महान और महत्वपूर्ण है उसे तुच्छ समझना और अपने विवेक को कुचलना शुरू कर देता है; और इस प्रकार, बुराई में कठोर होकर, वह पूरी तरह से असंवेदनशील हो जाने के खतरे में पड़ जाता है।

21. मनुष्य को परमेश्वर के प्रति, अपने पड़ोसी के प्रति, और वस्तुओं के प्रति अपने विवेक को बनाए रखना चाहिए। – परमेश्वर के प्रति, जो कोई उनके आज्ञाओं को तुच्छ नहीं समझता, वह अपने विवेक को बनाए रखता है; और यहाँ तक कि उन 'छोटी-छोटी बातों' में भी जिन्हें लोग नहीं देखते, और जिनकी कोई हमसे माँग नहीं करता, मनुष्य गुप्त रूप से परमेश्वर के प्रति अपने विवेक को बनाए रखता है। – अपने पड़ोसी के संबंध में अपनी अंतरात्मा को स्पष्ट रखना इस बात की मांग करता है कि कोई भी ऐसा कुछ भी न करे, जो, जैसा कि हम जानते हैं, उसके पड़ोसी को नाराज़ करता हो या उसे प्रलोभन में डालता हो, चाहे वह कर्म, वचन, दिखावे या दृष्टि से हो। – भौतिक चीजों के संबंध में अपनी अंतरात्मा को स्पष्ट रखना किसी भी वस्तु के साथ दुर्व्यवहार न करने, उसे क्षतिग्रस्त होने न देने, और उसे अनावश्यक रूप से त्यागने न देने में निहित है। – इन सभी मामलों में, मनुष्य को अपनी अंतरात्मा को शुद्ध और निष्कलंक रखना चाहिए, ताकि वह उस परेशानी में न पड़े जिसके बारे में प्रभु स्वयं हमें चेतावनी देते हैं (मत्ती 5:26)।

२२. संत यूहन्ना कहते हैं: *'पूर्ण प्रेम में भय नहीं होता'* (१ यूहन्ना ४:१८)। लेकिन फिर पवित्र भविष्यवक्ता दाऊद कैसे कहते हैं: *'हे उसके सब पवित्र जनो, यहोवा का भय मानो'* (भजन संहिता 33:10)? यह दर्शाता है कि भय दो प्रकार का होता है: एक प्रारंभिक, और दूसरा पूर्ण – एक शुरुआती लोगों की विशेषता है, और दूसरा उन पूर्ण संतों की विशेषता है जिन्होंने पूर्ण प्रेम के स्तर को प्राप्त कर लिया है। जो कोई दंड के भय से परमेश्वर की इच्छा को पूरा करता है, वह अभी भी एक नौसिखिया है; लेकिन जो कोई परमेश्वर से प्रेम के कारण—परमेश्वर को प्रसन्न करने के लिए—परमेश्वर की इच्छा को पूरा करता है, उसे यह प्रेम पूर्ण भय की ओर ले जाता है, जिसके द्वारा, परमेश्वर के साथ रहने की मिठास का स्वाद चखने के बाद, वह भटकने से डरता है, उसे खोने से डर लगता है। और यही प्रेम से उत्पन्न पूर्ण भय है जो प्रारंभिक भय को दूर करता है।

२३. जब तक कोई पहले मूल भय को प्राप्त नहीं कर लेता, तब तक वह पूर्ण भय को प्राप्त नहीं कर सकता। बुद्धिमान सिराख कहते हैं: *'ईश्वर का भय ही आरंभ और अंत है'* (सिराख १:१५, १८)। 'आरंभ' से तात्पर्य प्रारंभिक भय से है, जिसके बाद संतों का पूर्ण भय आता है। प्रारंभिक भय एक आध्यात्मिक अवस्था की विशेषता है। यह आत्मा को किसी भी पतन से बचाता है; क्योंकि कहा गया है: *'प्रभु के भय से हर कोई बुराई से दूर रहता है'* (नीतिवचन 15:27)। लेकिन जो कोई दंड के भय से बुराई से दूर रहता है, जैसे कोई दास जो अपने स्वामी से डरता है, वह धीरे-धीरे अपनी इच्छा से अच्छा करने लगता है – पहले, एक मजदूर की तरह, अपने अच्छे कर्मों के लिए किसी पुरस्कार की आशा में। यदि, तथापि, वह इसी प्रकार जारी रखता है—एक दास की तरह डर से बुराई से बचते हुए, और एक मजदूर की तरह पुरस्कार की आशा में अच्छा करते हुए; तब, परमेश्वर की कृपा से भलाई में स्थिर रहते हुए और इसी अनुपात में परमेश्वर के साथ एक होकर, वह अंततःभलाई का स्वाद चख लेता है, उसे एक निश्चित समझ प्राप्त हो जाती है कि वास्तव में क्या अच्छा है - और अब वह उससे अलग होना नहीं चाहता। तब वह एक पुत्र की गरिमा प्राप्त करता है, और भलाई को उसकी अपनी खातिर प्रेम करता है – और यद्यपि वह डरता है, यह इसलिए है क्योंकि वह प्रेम करता है। यही महान और पूर्ण भय है।

24. इस क्रमिक प्रक्रिया का वर्णन पैगंबर दाऊद ने भी निम्नलिखित शब्दों में किया है: *'बुराई से मुंह फेर लो और भलाई करो; शांति की खोज करो और उसका पीछा करो'* (भजन संहिता 33:15)। वे कहते हैं, *'बुराई से दूर हो जाओ'*, अर्थात् सामान्य रूप से सभी बुराइयों से बचो; हर उस कर्म से दूर हो जाओ जो पाप की ओर ले जाता है। लेकिन यह कहने के बाद, वह यहीं नहीं रुके, बल्कि उन्होंने यह भी जोड़ा: *'और भलाई करो'*। क्योंकि ऐसा होता है कि कुछ लोग बुराई तो नहीं करते, पर भलाई भी नहीं करते; और, उदाहरण के लिए, वे दूसरों को नुकसान नहीं पहुँचाते, पर दया भी नहीं दिखाते, या वे नफरत तो नहीं करते, पर प्यार भी नहीं करते। यह कहने के बाद, वह तार्किक रूप से आगे कहते हैं: *'शांति की खोज करो और उसका अनुसरण करो*।' उन्होंने केवल *'खोजो'* नहीं कहा, बल्कि 'उसके लिए पूरी लगन से प्रयास करो, ताकि तुम उसे प्राप्त कर सको' कहा। – इन शब्दों पर अपने मन से पूरा ध्यान दो, और संत द्वारा देखी

गई सूक्ष्मता पर ध्यान दो। – जब किसी को बुराई से दूर होने की कृपा मिलती है, और फिर, ईश्वर की मदद से, वह लगन से अच्छा काम करता है, तो शत्रु के हमले तुरंत उसके विरुद्ध उठ खड़े होंगे – और वह प्रयास करता है, परिश्रम करता है और व्यथित रहता है, कभी एक दास की तरह बुराई में लौटने का डर मानते हुए, तो कभी एक मजदूर की तरह अपने अच्छे कामों के लिए पुरस्कार की आशा करते हुए। लेकिन दुश्मन के हमलों को सहते हुए, उससे लड़ते और उसका विरोध करते हुए; इन प्रवृत्तियों से प्रेरित होकर, वह, भले ही अच्छा कर रहा हो, फिर भी बहुत दुख और बहुत परिश्रम के साथ ऐसा करता है। किन्तु जब उसे परमेश्वर से सहायता मिलती है और वह भलाई करने में कुछ कुशलता प्राप्त कर लेता है, तब वह शांति को देखता है, तब वह शांति को महसूस करता है, तब वह समझता है कि वह दुखद संघर्ष क्या है, और शांति का आनंद और हर्ष क्या है। – और केवल तभी वह शांति की खोज करना शुरू करता है, उसके लिए गंभीरता से प्रयास करता है, ताकि उसे प्राप्त कर सके, उसे पूरी तरह से हासिल कर सके, और उसे अपने भीतर स्थापित कर सके। जो इस स्तर को प्राप्त कर लेता है, वह अंततःशांति स्थापित करने वालों के धन्य भाग का अनुभव करता है (मत्ती 5:9)। – और इस बिंदु से, ऐसी आत्मा को उस भलाई के आनंद के अलावा किसी अन्य कारण से भलाई करने के लिए कौन मना सकता है? तभी ऐसा व्यक्ति पूर्ण भय को जानता है।

२५. संतों ने कहा है कि एक व्यक्ति ईश्वर का भय तब प्राप्त करता है जब वह मृत्यु और परलोक के कष्टों को सदैव अपने मन में रखता है – यदि वह हर शाम यह जांच करता है कि उसने दिन कैसे बिताया, और हर सुबह यह देखता है कि रात कैसे बीती – यदि वह अहंकारी नहीं होता, और अंत में, यदि वह ईश्वर-भयभीत व्यक्ति के घनिष्ठ सान्निध्य में रहता है। क्योंकि कहा जाता है कि एक भाई ने एक वृद्ध से पूछा: 'पिताजी, मुझे ईश्वर का भय कैसे रखना चाहिए?' वृद्ध ने उससे उत्तर दिया: 'जाओ और ईश्वर-भयभीत व्यक्ति के साथ रहो – और उसके ईश्वर के भय से ही, वह तुम्हें भी ईश्वर का भय रखना सिखाएगा।' – हम कहे गए बातों का ठीक उल्टा करके अपने से ईश्वर का भय भगा देते हैं: न तो हमें मृत्यु की याद रहती है और न ही यातना की; हम अपने बारे में कोई ध्यान नहीं देते और यह नहीं परखते कि हम अपना समय कैसे बिताते हैं; बल्कि हम लापरवाही से जीते हैं और उन लोगों के साथ मेलजोल रखते हैं जिन्हें ईश्वर का कोई भय नहीं है – और हम अहंकारी हो जाते हैं। और यह आखिरी बात सबसे बुरी है: यह पूर्ण विनाश है; क्योंकि कोई भी चीज़ अ , यानी अहंकार, की तरह ईश्वर के भय को आत्मा से नहीं भगाती। एक बार अबा अगथोन से इस बारे में पूछा गया, और उन्होंने कहा: 'अभद्रता एक तेज, झुलसाने वाली हवा की तरह है, जिसके चलने पर हर कोई भाग जाता है, और जो पेड़ों पर लगे हर फल को बर्बाद कर देती है।' – ईश्वर हमें इस सर्व-विनाशकारी जुनून – अभद्रता से बचाए।

26. अहंकार के कई रूप होते हैं: कोई व्यक्ति शब्द, हाव-भाव और दृष्टि में अहंकारी हो सकता है। अहंकार के कारण, कुछ लोग व्यर्थ की बातें करने लगते हैं, सांसारिक विषयों पर बात करते हैं, हास्यास्पद तरीके से व्यवहार करते हैं, और दूसरों को अश्लील हँसी के लिए उकसाते हैं। अभद्रता तब भी होती है जब कोई बिना आवश्यकता के दूसरे को छूता है, हँस रहे किसी व्यक्ति की ओर हाथ बढ़ाता है, किसी को धक्का देता है, उनके हाथ से कुछ छीन लेता है, या किसी को बेधड़क घूरता है: यह सब अभद्रता का काम है; यह सब आत्मा में ईश्वर के भय की अनुपस्थिति से उत्पन्न होता है - और इससे, एक व्यक्ति धीरे-धीरे पूर्ण लापरवाही में गिर जाता है। – इसीलिए ईश्वर ने, जब उन्होंने कानून की आज्ञाएँ दीं, कहा: *'इज़राइल के लोग श्रद्धालु बने रहें'* (लैव. 15:31); क्योंकि श्रद्धा और विनम्र संकोच के बिना, कोई व्यक्ति न तो स्वयं ईश्वर का सम्मान करता है और न ही एक भी आज्ञा का पालन करता है। क्योंकि निर्लज्जता से अधिक हानिकारक कुछ भी नहीं है—इसीलिए यह सभी भावों की जननी है, जो श्रद्धा को बाहर निकाल देती है, आत्मा से ईश्वर के भय को दूर कर देती है, और लापरवाही को जन्म देती है।

27. अबा बार्सानुफियस के शिष्य, अबा जॉन, जब उनसे मिलने आने वाले भाइयों को विदा करते थे, तो वे निम्नलिखित चार कथनों को दोहराने की आदत रखते थे—कभी एक, कभी दूसरा—: 'अपने पड़ोसी के प्रति अपने विवेक को निर्मल रखकर, नम्रता उत्पन्न होती है; – किसी को भी अपनी इच्छा को अपने भाई की इच्छा पर कभी तरजीह नहीं देनी चाहिए; – जो कुछ भी मानवीय है उससे भागो और तुम बच जाओगे; – *'एक दूसरे के बोझ उठाओ, और इस प्रकार मसीह की व्यवस्था को पूरा* करो' (गलातियों 6:2)। – हर बार वह इन कथनों की शुरुआत इस तरह के शब्दों से करता था: 'मैंने एक बार कहा था, भाई, – ईश्वर प्रेम को बनाए रखे, – पूर्वजों ने कहा', – और इसके बाद वह अपना कोई एक कथन जोड़ता था।

28. आप जिस भी कार्य का सामना करें, भले ही वह अत्यंत महत्वपूर्ण हो और उसमें बहुत सावधानी की आवश्यकता हो, मैं नहीं चाहता कि आप उसे हिचकिचाहट या भ्रम के साथ करें; बल्कि यह सुनिश्चित रखें कि आप जो भी कार्य करते हैं—चाहे वह बड़ा हो या छोटा—वह लक्ष्य का एक-आठवां हिस्सा है, और अपनी शांति बनाए रखें, भले ही इसका मतलब कार्य पूरा न कर पाना ही क्यों न हो, साढ़े सात अंश हैं। अत; यदि आप कोई कार्य हाथ में लेते

हैं और उसे पूर्णतःतथा संपूर्ण रूप से पूरा करना चाहते हैं, तो केवल कार्य को करने का ही प्रयास न करें—जो, जैसा कि मैंने कहा, वांछित परिणाम का एक-आठवां हिस्सा है—बल्कि साथ ही, अपनी भलाई को अक्षुण्ण रखने का भी प्रयास करें—जो साढ़े सात अंश हैं। हालाँकि, यदि अपनी सेवा के कार्य को पूरा करने के लिए, बहस करते समय उत्तेजित हो जाना और स्वयं या किसी अन्य को नुकसान पहुँचाना आवश्यक हो जाए, तो आपको एक-अष्टमांश की रक्षा करने के लिए सात-अष्टमांश को खोना नहीं चाहिए।

29. बुद्धिमान सुलैमान नीतिवचन में कहते हैं: *'जिनके पास मार्गदर्शन नहीं, वे पत्तों की तरह गिर जाते हैं; परन्तु परामर्शियों की भीड़ में ही उद्धार है'* (नीतिवचन 11:14)। क्या आप देखते हैं कि पवित्र शास्त्र हमें क्या सिखाता है? यह हमें प्रोत्साहित करता है कि हम स्वयं पर भरोसा न करें, स्वयं को सर्वज्ञ न मानें, यह विश्वास न करें कि हम स्वयं का शासन कर सकते हैं, क्योंकि हमें मदद की ज़रूरत है; हमें उन लोगों की ज़रूरत है जो हमें परमेश्वर के अनुसार निर्देश देते हैं। उन लोगों से अधिक दुखी या विनाश के करीब कोई नहीं है जिनके पास परमेश्वर के मार्ग पर कोई मार्गदर्शक नहीं है। क्योंकि इस कहावत का क्या अर्थ है: 'जिनके पास मार्गदर्शन नहीं है वे पत्तों की तरह गिर जाते हैं'? – एक पत्ता पहले तो हमेशा हरा-भरा और सुंदर होता है, लेकिन फिर वह धीरे-धीरे मुरझा जाता है, गिर जाता है, और अंत में पैरों तले कुचल जाता है। इसी प्रकार एक व्यक्ति जब अपने हाल पर छोड़ दिया जाता है, तो वह भी शुरुआत में उपवास, जागरण, मौन, आज्ञाकारिता और अन्य सद्गुणों के लिए हमेशा उत्साही होता है; लेकिन फिर यह उत्साह धीरे-धीरे ठंडा पड़ जाता है, और, उसे निर्देशित करने, उसका समर्थन करने, या उसके भीतर इस उत्साह को फिर से जगाने वाला कोई न होने के कारण, वह अनजाने में मुरझा जाता है, गिर जाता है, और अंत में अपने दुश्मनों का एक आज्ञाकारी दास बन जाता है, जो फिर उसके साथ अपनी मनमर्जी करते हैं।

३०. जो अपने विचारों और कर्मों को सबके सामने खोलकर रखते हैं और हर काम परामर्श के बाद करते हैं, उनके बारे में बुद्धिमान कहते हैं: *'बचाव बहुतों की सलाह में है'*। वे यह नहीं कहते, 'कई लोगों की सलाह में'—जिसका अर्थ है कि हर किसी से परामर्श करना चाहिए—बल्कि यह कि हर बात पर परामर्श करना चाहिए—स्वाभाविक रूप से उन लोगों से जिन पर हमें विश्वास है, और इस तरह से नहीं कि एक बात कहकर दूसरी बात छिपाई जाए, बल्कि सब कुछ सामने रखकर सभी मामलों पर सलाह लेनी चाहिए; क्योंकि ऐसे व्यक्ति के लिए *'कई लोगों की सलाह में'* ही सच्ची मुक्ति है।

31. जब हम अपने विचारों और इरादों को प्रकट नहीं करते हैं और अनुभवी लोगों की सलाह नहीं लेते हैं, तो हम अपनी इच्छा से चिपके रहते हैं और अपने ही औचित्यों का पालन करते हैं (यानी, जिसे हम स्वयं धार्मिक मानते हैं)। और फिर, प्रतीत होता है कि हम एक अच्छा काम कर रहे हैं, लेकिन हम अपने लिए जाल बिछाते हैं और बिना समझे ही बर्बाद हो जाते हैं। क्योंकि हम ईश्वर की इच्छा को कैसे समझ सकते हैं, या खुद को पूरी तरह से उसके हवाले कर सकते हैं, यदि हम खुद पर भरोसा करते हैं और अपनी ही इच्छा से चिपके रहते हैं? – इसीलिए बाबा पिमेन ने कहा कि 'हमारी इच्छा मनुष्य और ईश्वर के बीच पीतल की एक दीवार है'।

32. जो लोग अपनी बुद्धि पर भरोसा करते हैं और अपनी इच्छा के आगे झुक जाते हैं, उनके लिए शत्रु जैसा चाहे वैसा जाल बिछाता है। लेकिन जिन लोग हर काम परामर्श से करते हैं, उनके पास उसकी कोई पहुँच नहीं है। इसीलिए वह उन पर प्रश्न करने और शिक्षा देने से नफरत करता है; वह ऐसे शब्दों की आवाज़, उनकी ध्वनि से ही नफरत करता है। और क्या मैं बताऊँ कि क्यों? – क्योंकि वह जानता है कि जैसे ही लोग प्रश्न पूछना और लाभदायक बातों पर चर्चा करना शुरू करेंगे, उसकी दुर्भावना तुरंत उजागर हो जाएगी। और वह सबसे ज़्यादा इस बात से डरता है कि उसे पहचान लिया जाए, क्योंकि तब वह अपनी मनमानी साज़िशें नहीं रच सकता। जब कोई किसी अनुभवी से सलाह मांगता है और प्राप्त करता है: 'यह करो, लेकिन वह मत करो', या: 'अब इसके लिए समय नहीं है', और अन्य समयों पर: 'अब समय है'; तब शैतान उसे नुकसान पहुँचाने या गिराने का कोई रास्ता नहीं ढूंढ पाता, क्योंकि वह हमेशा सलाह लेता है और हर तरफ से अपनी रक्षा करता है - और इस प्रकार उसमें यह कहावत पूरी होती है: *'बहुत सलाह में ही उद्धार है'*।

33. शत्रु उन लोगों से प्रेम करता है जो अपनी ही बुद्धि पर भरोसा करते हैं; क्योंकि वे उसकी सहायता करते हैं और अपने ही जाल बुनते हैं। मुझे एक भिक्षु के पतन का कोई और कारण नहीं पता, सिवाय इसके कि वह अपने ही हृदय पर भरोसा करता है। कुछ लोग कहते हैं कि कोई व्यक्ति इस या उस कारण से गिरता है; लेकिन मुझे गिरावट का कोई और कारण नहीं पता, सिवाय इसके कि कोई व्यक्ति अपनी इच्छा का अनुसरण करता है। यदि आप किसी को गिरा हुआ देखें, तो जान लें कि उसने अपनी इच्छा का अनुसरण किया है। इससे अधिक खतरनाक, इससे अधिक विनाशकारी कुछ भी नहीं है।

34. मैं आपसे हमेशा कहता हूँ कि छोटी-छोटी इच्छाओं को पूरा करने से ही हम गंभीर पाप करने लगते हैं। अपने पड़ोसी की निंदा करने से अधिक दुखद क्या है? ईश्वर किस चीज़ से इतना घृणा करता है, और किससे वह इतनी घृणा के साथ मुंह मोड़ता है? और फिर भी एक व्यक्ति उस चीज़ से इतनी बड़ी बुराई में पड़ जाता है जो तुच्छ लगती है - अपने पड़ोसी से थोड़ी सी भी ठेस पहुँचने पर खुद को आहत होने देने से। क्योंकि जब इसकी अनुमति दी जाती है, तो मन अपने पापों को नज़रअंदाज़ करना शुरू कर देता है और अपने पड़ोसी के पापों पर ध्यान देने लगता है। और इससे (ऐसा करने की आदत से) गपशप, ताने, बदनामी - और अंत में - विनाशकारी निंदा उत्पन्न होती है। लेकिन अपने पड़ोसियों को ताने मारना, बदनाम करना और उनकी निंदा करने से बढ़कर कुछ भी ईश्वर को इतना क्रोधित नहीं करता, कुछ भी एक व्यक्ति को (कृपा से) इतना नग्न नहीं करता और विनाश की ओर नहीं ले जाता।

35. किसी के बारे में बुरा बोलना एक बात है, और उन्हें दोषी ठहराना या उनका अपमान करना एक बिल्कुल दूसरी बात है। किसी के बारे में बुरा बोलने का मतलब है उनके बारे में यह कहना: 'अमुक ने झूठ बोला, या व्यभिचार किया, या गुस्सा हो गया, या कोई और गलत काम किया।' यह वह है जिसने एक भाई की बदनामी की है, यानी उसके पाप के बारे में भावुक होकर बात की है। लेकिन निंदा करने का मतलब है यह कहना: 'अमुक व्यक्ति एक झूठा, व्यभिचारी, या क्रोधित व्यक्ति है।' यह वह है जिसने उसकी आत्मा के स्वभाव की ही निंदा की है, यह कहते हुए कि वह ऐसा-वैसा है और उसे उसी रूप में दोषी ठहराया है: और यह एक गंभीर उल्लंघन है।

36. फरीसी, अपने गुणों के लिए परमेश्वर से प्रार्थना करते और धन्यवाद देते समय, झूठ नहीं बोला बल्कि सत्य बोला, और उसे इसके लिए दोषी नहीं ठहराया गया: क्योंकि जब हम कोई अच्छा काम करने में सक्षम होते हैं तो हमें परमेश्वर का धन्यवाद करना चाहिए, क्योंकि उन्होंने इसमें हमारी मदद और सहायता की है। उसे इसके लिए दोषी नहीं ठहराया गया; न ही यह कहने के लिए कि *'मैं दूसरे लोगों जैसा नहीं हूँ'*। लेकिन जब, कर वसूलने वाले की ओर मुड़कर, उसने कहा, *'या इस कर वसूलने वाले जैसा'*; तो वह (दूसरे को दोषी ठहराने के कारण स्वयं) दोषी ठहराया गया। क्योंकि उसने उसी व्यक्ति को, उसकी आत्मा की उसी प्रवृत्ति को, उसके पूरे जीवन को दोषी ठहराया। इसीलिए कर वसूल करने वाला दूसरे आदमी के बजाय धर्मी ठहराया गया (लूका 18:11)।

37. किसी को धर्मी ठहराना या दोषी ठहराना केवल परमेश्वर का काम है, क्योंकि वह हर आत्मा के स्वभाव, साथ ही उनकी शक्ति, आकांक्षाओं और वरदानों, उनके शारीरिक बनावट और क्षमताओं को जानता है - और इसी के अनुसार, वह प्रत्येक व्यक्ति को न्यायपूर्वक दोषी या धर्मी ठहराता है। क्योंकि उन सभी चीजों के सृष्टिकर्ता और सर्वज्ञ के सिवा, यह सब वास्तव में कौन जान सकता है?

38. कभी-कभी हम अपने पड़ोसी को न केवल दोषी ठहराते हैं बल्कि उसे अपमानित भी करते हैं; क्योंकि दोषी ठहराने और अपमानित करने में अंतर होता है। अपमान तब होता है जब कोई व्यक्ति न केवल किसी दूसरे को दोषी ठहराता है बल्कि उससे घृणा भी करता है—उससे घृणा करते हुए उससे ऐसे मुंह मोड़ लेता है जैसे वह कोई घृणित वस्तु हो: यह दोषी ठहराने से भी बदतर और कहीं अधिक विनाशकारी है।

39. जो लोग उद्धार चाहते हैं, वे अपने पड़ोसी की कमियों पर ध्यान नहीं देते, बल्कि हमेशा अपनी ही कमियों को देखते हैं और फलते-फूलते हैं। ऐसा ही वह व्यक्ति था, जिसने अपने भाई को पाप करते देखा, तो उसने आह भरकर कहा: 'हाय मुझ पर! जैसे उसने आज पाप किया है, वैसे ही मैं कल पाप करूँगा।' क्या आप आत्मा की बुद्धिमानी को देखते हैं? उसने अपने भाई को दोष देने से बचने का तरीका तुरंत कैसे खोज लिया? क्योंकि 'कल मैं भी ऐसा ही करूँगा' कहकर, उसने अपने मन में यह भय और चिंता भर दी कि वह भी जल्द ही पाप कर सकता है - और इस प्रकार उसने अपने पड़ोसी को दोष देने से बच गया। इसके अलावा, वह इससे संतुष्ट नहीं हुआ, बल्कि अपने आप को उसके पैरों में गिराते हुए कहने लगा: 'और यह अपने पाप से पश्चाताप करेगा, परन्तु मैं वैसा पश्चाताप नहीं करूंगा जैसा मुझे करना चाहिए; मैं पश्चाताप प्राप्त नहीं कर पाऊंगा; मैं पश्चाताप करने में असमर्थ रहूंगा।' क्या आप दिव्य आत्मा की प्रबुद्धता को देखते हैं?

४०. कभी-कभी ऐसा होता है कि निंदा का विष, हमारी आत्मा से छलककर, दूसरों पर भी उड़ेलने का प्रयास करता है। और इसलिए, जब हम किसी ऐसे भाई से मिलते हैं, जो सभी के साथ शांति से रहता है, तो हम जल्दी से उसे यह बताने लगते हैं: 'ऐसा-वैसा हुआ है' – और हम उसके हृदय में निंदा का पाप भरकर उसे हानि पहुँचाते हैं। हम इन शब्दों से नहीं डरते: *'तब उस पर हाय हो जो अपने मित्र को धुँधली भ्रष्टता से भटकाता है'* (हाबक्कूक 2:15); फिर भी हम राक्षसों का काम करते हैं और इसकी परवाह नहीं करते। क्योंकि भ्रमित करने और नुकसान पहुँचाने का काम, अगर राक्षसों का नहीं तो और किसका है? और इस प्रकार हम खुद को राक्षसों का साथी पाते हैं, जो हमारे और हमारे पड़ोसी के विनाश का कारण बनता है। ऐसा क्यों है? क्योंकि हमारे भीतर प्रेम नहीं है। क्योंकि *'प्रेम बहुत से पापों को ढाँप देता है'* (1 पतरस 4:8)।

४१. संत पापी की निंदा नहीं करते और न ही उससे मुँह मोड़ते हैं, बल्कि उस पर दया करते हैं, उसके लिए दुख मनाते हैं, उसे समझाते हैं, उसे सांत्वना देते हैं, एक बीमार अंग की तरह उसका उपचार करते हैं, और उसे बचाने के लिए सब कुछ करते हैं। – जब भाई आए और घबराहट में उनसे कहा: 'जाइए और देखिए, पिताजी, क्या किसी भाई की कोठरी में कोई महिला है?' तो सेंट अम्मोन ने क्या किया? उन्होंने क्या दया दिखाई? यह महसूस करते हुए कि भाई ने एक महिला को एक टब के नीचे छिपा रखा था, वह गए और उस पर बैठ गए, और उन्होंने उन्हें पूरी कोठरी की तलाशी लेने का आदेश दिया। जब उन्हें कुछ नहीं मिला, तो उन्होंने उनसे कहा: 'भगवान आपको क्षमा करें।' इस प्रकार उन्होंने उन्हें शर्मिंदा किया और उनकी बहुत बड़ी भलाई की, यह सिखाते हुए कि उन्हें अपने पड़ोसी के खिलाफ आरोपों पर जल्दी विश्वास नहीं करना चाहिए; और उन्होंने उस भाई को न केवल एक धर्मपरायण तरीके से बचाकर, बल्कि सही समय पर उसे होश में लाकर भी सुधार किया। क्योंकि, सभी को बाहर भेजने के बाद, उन्होंने उसका हाथ पकड़कर उससे कहा, 'भाई, अपनी आत्मा के बारे में सोच!' – यह भाई तुरंत लज्जित हो गया, पश्चाताप करने लगा, और उसने अपने पाप को छोड़ दिया। इस प्रकार उस वृद्ध के मानवता के प्रति प्रेम और करुणा का उसके आत्मा पर अत्यंत लाभकारी प्रभाव पड़ा।

४२. एक वृत्त की कल्पना करें, जिसका केंद्र बीच में है, और त्रिज्याएँ केंद्र से निकलती हैं। ये त्रिज्याएँ केंद्र से जितनी दूर तक जाती हैं, वे उतनी ही अधिक अलग होती जाती हैं और एक-दूसरे से दूर चली जाती हैं; इसके विपरीत, वे केंद्र के जितना करीब आती हैं, वे एक-दूसरे के उतना ही करीब आती हैं। अब मान लीजिए कि यह वृत्त संसार है, वृत्त का ठीक केंद्र ईश्वर है, और केंद्र से परिधि तक, या परिधि से केंद्र तक जाने वाली सीधी रेखाएँ (विकिरण) मानव जीवन के मार्ग हैं। और यहाँ भी वही सिद्धांत लागू होता है। जिस हद तक संत परमेश्वर के निकट आने की इच्छा से वृत्त के केंद्र की ओर प्रवेश करते हैं, उसी हद तक, जैसे ही वे प्रवेश करते हैं, वे परमेश्वर और एक-दूसरे, दोनों के निकट आते हैं; और यह इस तरह से है कि जिस हद तक वे परमेश्वर के निकट आते हैं, वे एक-दूसरे के भी निकट आते हैं, और जिस हद तक वे एक-दूसरे के निकट आते हैं, वे परमेश्वर के भी निकट आते हैं। – दूरी के संबंध में भी यही सिद्धांत समझें। जब वे ईश्वर से मुंह मोड़कर बाहरी चीज़ों की ओर मुड़ते हैं, तो यह स्पष्ट है कि जिस हद तक वे केंद्र से दूर जाते हैं और ईश्वर से खुद को दूर करते हैं, उसी हद तक वे एक-दूसरे से भी दूर हो जाते हैं – और जिस हद तक वे एक-दूसरे से दूर होते हैं, उसी हद तक वे ईश्वर से भी दूर होते हैं। प्रेम का स्वभाव ऐसा ही है: लेकिन जिस हद तक हम बाहर रहते हैं और ईश्वर से प्रेम नहीं करते, उसी हद तक हम में से प्रत्येक अपने पड़ोसी से भी दूर है। हालाँकि, यदि हम ईश्वर से प्रेम करते हैं, तो जिस हद तक हम उनके प्रति अपने प्रेम के माध्यम से ईश्वर के करीब आते हैं, उसी हद तक हम अपने पड़ोसियों के साथ प्रेम में एकजुट होते हैं; और जिस हद तक हम अपने पड़ोसियों के साथ एकजुट होते हैं, उसी हद तक हम ईश्वर के साथ भी एकजुट होते हैं।

43. ऐसा क्यों होता है कि कभी-कभी जब कोई अपमानजनक टिप्पणी सुनता है, तो वह उस पर ध्यान नहीं देता और बिना घबराए उसे सहजता से ले लेता है, मानो उसने कुछ सुना ही न हो, जबकि दूसरी बार, जैसे ही वह इसे सुनता है, वह तुरंत घबरा जाता है? ऐसा क्यों होता है? वे विचलित न होने का कारण यह है: **सबसे पहले**, ऐसा होता है कि कोई व्यक्ति, प्रार्थना या किसी अच्छे आध्यात्मिक अभ्यास के बाद, अच्छे मनोदशा में होता है, और इसलिए अपने भाई को क्षमा करता है और उसके शब्दों से विचलित नहीं होता है; **ऐसा भी** होता है कि कुछ लोगों को किसी विशेष व्यक्ति से बहुत लगाव होता है, और इसलिए वे उस व्यक्ति द्वारा उन पर किए गए हर अत्याचार को बिना किसी कष्ट के सहन कर लेते हैं; **ऐसा भी** होता है कि कुछ लोग अपमान करने वाले की अवहेलना करते हैं, और उसकी अपमानजनक बातों को कोई महत्व नहीं देते। – लेकिन लोग इसके विपरीत से परेशान होते हैं – या तो इसलिए कि वे अच्छे मनःस्थिति में नहीं होते हैं, या इसलिए कि वे उस व्यक्ति के प्रति द्वेष रखते हैं जिसने उनका अपमान किया है – और अन्य कारणों से भी। – फिर भी, इस सारी परेशानी का मुख्य कारण यह है कि हम स्वयं की निंदा नहीं करते।

४४. बाबा पिमेन ने कहा: 'जो व्यक्ति स्वयं की निंदा करता है, वह जहाँ भी जाए, चाहे उसे कोई भी हानि, अपमान या अन्य दुख क्यों न हो, वह पहले से ही स्वयं को सभी अप्रिय चीजों का योग्य मानता है और कभी परेशान नहीं होता। क्या ऐसी अवस्था से अधिक बेफिक्र कुछ है?'...

४५. कोई कह सकता है: 'यदि कोई भाई मेरा अपमान करता है, और मैं, स्वयं की जाँच करने पर, पाता हूँ कि मैंने उसे ऐसा करने का कोई कारण नहीं दिया है, तो मैं स्वयं को कैसे दोष दूँ?' – सच्चाई यह है कि यदि कोई व्यक्ति ईश्वर के भय से अपनी जाँच करता है, तो उसे पता चलेगा कि उसने हर तरह से इसका कारण दिया है, चाहे कर्म से, वचन से या आचरण से; और यदि यह नहीं पता चलता कि उसने वर्तमान समय में कोई कारण दिया है, तो निश्चित रूप से, किसी अन्य समय में, उसने उसे इस या किसी अन्य मामले में दुख पहुँचाया है, या शायद उसने किसी दूसरे भाई को ठेस पहुँचाई है और उसे उसके लिए पीड़ा सहनी चाहिए थी – या अक्सर किसी अन्य पाप के लिए। इसीलिए मैं कहता हूँ

कि यदि कोई व्यक्ति ईश्वर के भय से स्वयं की जाँच करता है और अपने अंतर्मन की कठोरता से पड़ताल करता है, तो वह निश्चित रूप से स्वयं को दोषी पाएगा और स्वयं को कोसेगा।

46. ऐसा होता है कि कोई व्यक्ति, मौन एकांत में बैठकर, शांति से रहता है। लेकिन फिर एक भाई आता है, और बातचीत के दौरान कुछ अप्रिय कह देता है, और वह तुरंत ही भ्रम में पड़ जाता है – और बाद में कहता है: 'काश वह मेरे पास न आता और मुझे परेशान न करता, तो मैं पाप न करता।' – यह कितनी हास्यास्पद तर्कशैली है! क्या जिसने उससे वे शब्द कहे, उसने उसमें वह जुनून डाला? उसने तो बस उस चीज़ को सतह पर ला दिया जो पहले से ही उसमें थी; – और अब उसे अपने भाई के लिए शोक नहीं करना चाहिए, बल्कि अपने जुनून पर पश्चाताप करना चाहिए, और खुद को कोसना चाहिए। ऐसा व्यक्ति सड़ी हुई रोटी के समान है, जो बाहर से तो अच्छी दिखती है पर भीतर से फफूंदी लगी होती है; और जब कोई उसे तोड़ता है, तो उसकी सड़न सामने आ जाती है – या एक साफ बर्तन के समान है जो भीतर से बदबू और दुर्गंध से भरा होता है, और जब कोई उसे खोलता है, तो उसकी बदबू तुरंत महसूस होती है। इसी प्रकार यह आदमी भी, जैसा उसे लगता था , शांति में था, इस बात से अनजान कि वह जुनून उसके भीतर था; भाई ने उससे एक ही शब्द कहा और उसके भीतर छिपी सड़न को उजागर कर दिया। इसलिए, यदि वह क्षमा चाहता है, तो उसे पश्चाताप करना चाहिए, और स्वयं को कोसना चाहिए। केवल इसी मार्ग से वह पवित्रता प्राप्त करेगा और समृद्धि हासिल करेगा। उसे उस भाई का भी धन्यवाद करना चाहिए कि उसने उस पर इतना बड़ा उपकार किया।

४७. जैसे ही आत्मा पाप करती है, वह उससे थक जाती है; क्योंकि पाप उसे कमजोर और थका देता है जो स्वयं को उसके हवाले कर देता है; और इसलिए जो कुछ भी उस पर आता है, वह उसे बोझिल कर देता है। लेकिन अगर कोई व्यक्ति अच्छाई में फलता-फूलता है, तो जैसे-जैसे वह फलता-फूलता है, जो कभी बोझिल था, वह उसके लिए आसान हो जाता है।

४८. किसी भी स्थिति में, हमें दुख को देखना चाहिए। चाहे कोई हमारे लिए कोई अच्छा काम करे या हमें किसी दूसरे के हाथों कोई हानि पहुँचे, हमें इसे एक परीक्षा मानना चाहिए, और हमें जो कुछ भी होता है उसके लिए ईश्वर का धन्यवाद करना चाहिए, हमेशा खुद को डाँटते हुए और यह कहते हुए कि अगर हमारे साथ कुछ अच्छा होता है, तो यह हमारे प्रति ईश्वर की दयालु व्यवस्था का काम है, और अगर कुछ बुरा होता है, तो यह हमारे पापों के कारण है।

४९. हम दुर्भाग्यशाली हैं, जो प्रतिदिन पाप करते हैं और अपनी वासनाओं में लिप्त रहते हैं! हमने अपने पूर्वजों द्वारा दिखाए गए धर्मपरायण मार्ग—आत्म-निंदा के मार्ग—को त्याग दिया है, और अपने पड़ोसी की निंदा करने के टेढ़े रास्ते पर चल रहे हैं। और हम में से प्रत्येक, हर मामले में, दोष अपने भाई पर मढ़ने और पूरा बोझ उस पर डालने का प्रयास करता है; प्रत्येक आलसी है और एक भी आज्ञा का पालन नहीं करता, फिर भी यह मांग करता है कि हमारा पड़ोसी सभी आज्ञाओं का पालन करे।

५०. वह वृद्ध कहाँ हैं, जिन्होंने जब पूछा गया, 'पिताजी, इस मार्ग पर आपको सबसे महत्वपूर्ण बात क्या मिली?' तो उत्तर दिया, 'हर बात में स्वयं को दोष देना?' – इसी प्रकार बाबा पिमैन ने भी एक आह भरकर कहा, 'सभी सद्गुण इस घर में प्रवेश कर गए हैं, लेकिन एक सद्गुण के बिना मनुष्य के लिए दृढ़ खड़ा रहना मुश्किल है।' उन्होंने उससे पूछा, 'वह कौन सी सद्गुण है?' उन्होंने उत्तर दिया: 'कि एक मनुष्य स्वयं को डांटे।' और संत एंथनी ने कहा: 'ईश्वर के समक्ष अपने पाप स्वयं पर लेना - और अपनी अंतिम साँस तक प्रलोभन की आशा करना, एक महान कर्म है।' और हर जगह हमें मिलता है कि हमारे पूर्वजों को शांति मिली क्योंकि, उन्होंने सब कुछ—यहाँ तक कि सबसे छोटी चीज़ को भी—ईश्वर के हवाले कर दिया था, और वे हमेशा इस नियम का पालन करते थे: हर बात में स्वयं को दोष देना।

५१. संतों ने कहा है कि संन्यासियों के लिए क्रोध करना या किसी का अपमान करना उचित नहीं है; और इसके अलावा: 'जिसने चिड़चिड़ाहट पर विजय प्राप्त की है, उसने राक्षसों पर विजय प्राप्त की है, लेकिन जिस पर यह जुनून हावी हो जाता है, वह संन्यासी जीवन से पूरी तरह से अपरिचित है,' और इसी तरह। – तो फिर, हम अपने बारे में क्या कहें, जब हम न केवल चिड़चिड़ाहट और क्रोध के आगे झुक जाते हैं, बल्कि रंजिश भी पालते हैं? – हम ऐसी दयनीय और अमानवीय (आत्मिक) स्थिति पर शोक करने के सिवा और क्या कर सकते हैं? – बंधुओं, आइए, हम अपने आप का ध्यान रखें, और ईश्वर की मदद से, इस विनाशकारी जुनून की कटुता से खुद को मुक्त करने का प्रयास करें।

५२. भाइयों के बीच अक्सर असहमति और शिकायतें उत्पन्न होती हैं, लेकिन वे आमतौर पर इन झगड़ों को सुलझाने और शांति स्थापित करने के लिए जल्दी करते हैं। हालाँकि, ऐसा भी होता है कि कुछ लोग, मेल-मिलाप के लिए झुकने के बाद भी, एक भाई के प्रति द्वेष पालते रहते हैं और उसके खिलाफ विचार रखते हैं। यह द्वेष है – और इसमें इस बात का बहुत ध्यान रखने की आवश्यकता है कि कोई इसमें फँसकर नष्ट न हो जाए। जिसने क्रोधित होने के तुरंत बाद शांति स्थापित कर ली है, उसने अपने क्रोध को तो शांत कर लिया है, लेकिन द्वेष के विरुद्ध अभी तक प्रयास नहीं किया है – और इसलिए वह अपने भाई के प्रति द्वेष पालता रहता है। क्योंकि रंजिश पालना, क्रोध, चिड़चिड़ापन

और भ्रम में अंतर होता है। आपको इसे बेहतर ढंग से समझने में मदद करने के लिए, मैं एक उदाहरण दूँगा। जो कोई भी आग भड़काता है, वह पहले एक छोटी सी अंगीठी लेता है: यह उस भाई का शब्द है जिसने ठेस पहुँचाई है। यदि आप इस शब्द को सहन करते हैं, तो आपने अंगीठी को बुझा दिया है। लेकिन अगर आप सोचते हैं: 'उसने ऐसा क्यों कहा? तो फिर, मैं उसे ऐसा-वैसा कहूँगा; अगर वह मेरा अपमान नहीं करना चाहता था, तो वह ऐसा नहीं कहता - तो मैं भी उसका अपमान करूँगा - जरूर।' – यहाँ आपने लकड़ी की टहनियाँ, या कुछ इसी तरह की चीजें डाल दी हैं, ठीक वैसे ही जैसे आग भड़काने वाला करता है, और धुआँ पैदा किया है, जो कि बेचैनी है। भ्रम विचारों की वह हलचल और उथल-पुथल है जो हृदय को बेचैन और चिढ़ाती है। और चिढ़ाना उस व्यक्ति के विरुद्ध एक प्रतिशोधी विद्रोह है जिसने दुख पहुँचाया है, जो अभद्रता में बदल जाता है, जैसा कि धन्य अबा मार्क ने कहा: 'विचारों से पोषित द्वेष हृदय को चिढ़ाता है; लेकिन प्रार्थना इसे मार डालती है।' यदि आपने भाई की एक छोटी सी बात को दिल पर लगा लिया होता, तो आप इस छोटी सी चिंगारी को अशांति उत्पन्न होने से पहले ही बुझा देते। – फिर भी, यदि आप चाहें, तो उसे ताजा होने की अवस्था में ही मौन, प्रार्थना, या हृदय से की गई एक नम्र प्रार्थना के द्वारा आसानी से बुझा सकते हैं। – लेकिन यदि आप 'धधकते' रहते हैं—अर्थात्, अपने मन में इस तरह के विचारों से चिढ़ और बेचैनी पैदा करते हैं: 'वह ऐसा क्यों करता है… तो मैं भी ऐसा ही करूँगा'—तो आपका दिल भड़क उठेगा और चिड़चिड़ाहट का बुखार चढ़ जाएगा। – यदि आप चाहें, तो क्रोध को पनपने से पहले इसे भी बुझा सकते हैं। लेकिन यदि आप स्वयं को उत्तेजित और चिढ़ाते रहते हैं, तो आप आग में घी डालने वाले व्यक्ति के समान होंगे, जिससे एक प्रचंड ज्वाला उत्पन्न होती है - और यही क्रोध है। और क्रोध, यदि वह गहरा जाता है, तो द्वेष में बदल जाता है, जिससे कोई व्यक्ति तब तक मुक्त नहीं होगा जब तक कि वह अपना ही खून (पसीने और आत्म-अनुशासन के माध्यम से) न बहा दे।

५३. अब आपने सुन लिया है कि प्रारंभिक भ्रम क्या है, चिड़चिड़ापन क्या है, क्रोध क्या है, और द्वेष क्या है। क्या आप देखते हैं कि एक शब्द कैसे इतनी बुराई को जन्म दे सकता है? क्योंकि यदि आपने पहले खुद को डांटा होता, धैर्यपूर्वक अपने भाई की बातों को सहन किया होता, और उससे बदला लेने की कोशिश नहीं की होती, न ही एक शब्द का जवाब दो या पाँच शब्दों में दिया होता, न ही बुराई का बदला बुराई से लिया होता; तो आप इन सभी बुराइयों से मुक्त हो गए होते। इसीलिए मैं आपसे कहता हूँ: अपने जुनून को हमेशा तब ही काट दें जब वे अभी नए हों, इससे पहले कि वे जड़ें जमा लें, आपके भीतर दृढ़ता से स्थापित हो जाएँ, और आपको बोझिल करना शुरू कर दें; क्योंकि तब आपको उनसे बहुत अधिक पीड़ा सहनी पड़ेगी। एक छोटी सी घास की टहनी को उखाड़ना एक बात है, और एक बड़े पेड़ को जड़ से उखाड़ना बिल्कुल दूसरी बात है।

५४. कोई बुराई का बदला बुराई से न केवल कर्म से, बल्कि वचन, आचरण और दृष्टि से भी ले सकता है। कुछ लोग सोचते हैं कि वे वास्तव में बुराई का बदला बुराई से नहीं लेते, लेकिन ऐसा निकलता है कि वे वचन से, या आचरण से, या इशारे से, या एक नज़र से ऐसा करते हैं; क्योंकि इन सभी चीज़ों से कोई भी अपने भाई को ठेस पहुँचा सकता है - और यह भी बुराई का बदला बुराई से लेना ही है। दूसरा व्यक्ति, हालाँकि, अपने साथ हुए अन्याय का बदला लेने का कोई प्रयास नहीं करता—न कर्म से, न वचन से, न हाव-भाव से, न इशारे से—लेकिन वह अपने भाई के प्रति मन में द्वेष रखता है और उसके लिए दुखी रहता है। एक और, भले ही वह अपने भाई के प्रति कोई दुख न रखता हो, यदि वह सुनता है कि किसी ने उस भाई का किसी भी तरह से अपमान किया है, या उसे डांटा या अपमानित किया है - और इस पर प्रसन्न होता है - तो वह भी अपने दिल में बुराई का बदला बुराई से चुकाने वाला पाया जाता है। एक अन्य के हृदय में कोई द्वेष नहीं होता, और न ही उसने उसका अपमान करने वाले की अपमानित होने की खबर सुनकर प्रसन्नता महसूस की; वास्तव में, यदि उस व्यक्ति का अपमान होता है तो वह दुखी भी होता है; फिर भी वह दूसरे की समृद्धि पर भी प्रसन्न नहीं होता - क्योंकि, उदाहरण के लिए, जब वह उस व्यक्ति की प्रशंसा और पक्षपात होते देखता है, तो वह दुखी होता है; और यह भी, द्वेष का एक रूप है, भले ही वह सबसे हल्का हो।

५५. एक और प्रकार का व्यक्ति, यदि कोई उसे आहत कर दे, और वे एक-दूसरे के सामने झुककर आपस में सुलह कर लें, तो वह उस व्यक्ति के साथ शांति से रहता है और अपने दिल में उसके प्रति कोई बुराई नहीं पालता; लेकिन जब कुछ समय बाद, वह व्यक्ति फिर से उसे कुछ दुखद बात कह देता है, तो वह पिछली घटना को याद करने लगता है और वह न केवल दूसरी बार की गई गलती से बल्कि पहली बार की गई गलती से भी परेशान हो जाता है। – यह उस व्यक्ति की तरह है जिसके घाव पर उसने एक पट्टी लगा रखी हो; भले ही घाव अब भर गया हो और उस पर त्वचा जम गई हो, वह जगह अभी भी नाजुक होती है; और अगर कोई उस पर पत्थर फेंके, तो वह जगह शरीर के किसी भी अन्य हिस्से की तुलना में अधिक घायल होगी और तुरंत से खून बहने लगेगा। उस आदमी के साथ भी ऐसा ही होता है: उसे एक घाव था, और उसने उस पर प्लास्टर लगाया – यानी, उसने अपना सिर झुकाया और मेल-मिलाप के माध्यम से घाव, यानी अपने गुस्से को ठीक कर लिया; उसने अपने मन में एक भी बुरा विचार न रखने का प्रयास करते हुए, कड़वाहट

के खलिाफ खुद को मजबूत करना भी शुरू कर दयिा। इसका मतलब है कि घाव भर रहा है; लेकनि यह अभी पूरी तरह से नहीं भरा है - उसमें अभी भी कड़वाहट का एक अंश बचा है, जसिसे अगर उस व्यक्ति को थोड़ी सी भी चोट लग जाए तो घाव आसानी से फरि से खुल सकता है।

५६. आंतरकि पीब को पूरी तरह से दूर करने का प्रयास करना चाहएि, ताकि प्रभावति क्षेत्र पूरी तरह से ठीक हो जाए, और कोई कुरूपता न बचे और यह बताना असंभव हो जाए कि वहाँ कभी कोई घाव था भी। तो, यह कैसे हासलि कयिा जाए? – जसिने आहत कयिा है, उसके लएि पूरे दलि से प्रार्थना करके, और कहकर: 'हे ईश्वर, उसकी प्रार्थनाओं के लएि मेरे और मेरे भाई की मदद करो!' – इस प्रकार अपने भाई के लएि प्रार्थना करके, कोई करुणा और प्रेम दखिाता है; और उसकी प्रार्थनाओं के लएि स्वयं की सहायता माँगकर, कोई स्वयं को नम्र बनाता है। और जहाँ करुणा, प्रेम और नम्रता है, वहाँ चड़िचड़िापन, या प्रतशिोध की भावना, या कसिी अन्य जुनून के लएि क्या जगह है? – और अबा ज़ोसमिा ने कहा: 'भले ही शैतान अपनी सारी दुष्टता की चालाकयिों का सहारा ले ले, अपने सभी राक्षसों के साथ, मसीह की आज्ञा के अनुसार वनिम्रता द्वारा उसकी सभी योजनाएँ नष्फिल और कुचल दी जाएँगी।' और एक अन्य वरष्ठि ने कहा: 'जो अपने शत्रु के लएि प्रार्थना करता है, वह प्रतशिोधी नहीं होगा।'

५७. बड़ों की सलाह को व्यवहार में लाओ, तब तुम सचमुच समझोगे कि वे क्या कह रहे हैं; यदि तुम उसे व्यवहार में नहीं लाओगे, तो तुम केवल शब्दों से ही तपस्या का मार्ग कभी नहीं सीख सकते। कौन सा व्यक्ति, जो कोई कला सीखना चाहता है, केवल शब्दों से ही उसमें पारंगत हो जाता है? नहीं; पहले वह काम करता है और गलतयिाँ करता है, काम करता है और अपनी रचना को नष्ट कर देता है; और इस प्रकार, धीरे-धीरे, परशि्रम और धैर्य से, वह उस कला को सीखता है, ईश्वर की मदद से, जो उसके परशि्रम और उसकी इच्छा को देखता है। फरि भी हम कलाओं की कला को केवल शब्दों से ही सीखना चाहते हैं, बनिा काम शुरू कएि। क्या यह संभव है?! – इसलएि आइए हम अपने आप का ध्यान रखें, और जब तक हमारे पास समय है, तब तक परशि्रम से काम करें।

५८. हमें हर तरह से सतर्क रहना चाहएि, कहीं झूठ से हम लूट न जाएँ, क्योंकि झूठा परमेश्वर के साथ एकता में नहीं है। झूठ परमेश्वर से अपरचिति है। धर्मग्रंथ कहता है कि *'झूठ शैतान से है'*, कि वह *'एक झूठा और झूठ का पति है'* (यूहन्ना ८:४४)। देखो, शैतान को झूठ का पति कहा जाता है, जबकि परमेश्वर सत्य हैं; क्योंकि वह स्वयं कहते हैं: *'मैं मार्ग, सत्य और जीवन हूँ'* (यूहन्ना 14:6)। देखएि कि हम झूठ के द्वारा स्वयं को कसिसे अलग करते हैं और कसिके साथ जोड़ते हैं! – इसलएि, यदि हम सचमुच बचना चाहते हैं, तो हमें सत्य से अपनी पूरी शक्ति और पूरे उत्साह से प्रेम करना चाहएि, और हर झूठ से अपना बचाव करना चाहएि, कहीं वह हमें सत्य और जीवन से अलग न कर दे।

५९. झूठ के तीन अलग-अलग प्रकार हैं: एक वचिार में झूठ होता है, दूसरा वचन में, और तीसरा उसके जीवन-यापन के तरीके में। – जो व्यक्ति अपने ही अनुमानों को सत्य मान लेता है, वह वचिारों में झूठ बोलता है, यानी अपने पड़ोसी के बारे में नरिाधार संदेह; जैसे, जब वह कसिी को अपने भाई से बात करते हुए देखता है, तो वह अपने ही अनुमान लगाता है: 'वह मेरे बारे में कुछ कह रहा है' – और इसी तरह। – ऐसा व्यक्ति वचिार में झूठ बोलता है; क्योंकि वे कुछ भी सच नहीं बोलते, बल्कि केवल अपनी राय के अनुसार बोलते हैं, और इससे बदनामी, अफवाह, शत्रुता और नदिा उत्पन्न होती है। – संक्षेप में, झूठ वह बोलता है जो, उदाहरण के लएि, जागरण के लएि उठने में बहुत आलसी होने के कारण, यह नहीं कहता: 'मुझे माफ करना, मैं उठने में बहुत आलसी था'; बल्कि कहता है: 'मुझे बुखार था, मैं अस्वस्थ था', और दर्जनों झूठे शब्द गढ़ता है – ताकि एक भी बार सरि न झुकाना पड़े या खुद को नम्र न करना पड़े। इसी तरह, यदि वह कुछ चाहता है, तो वह स्पष्ट रूप से नहीं कहेगा, 'मैं यह चाहता हूँ', बल्कि अपनी बात को तोड़-मरोड़ कर पेश करेगा, कभी बीमारी का तो कभी ज़रूरत का हवाला देगा - और अपनी इच्छा पूरी होने तक झूठ बोलता रहेगा। अंततः लोग ऐसे व्यक्ति पर वशि्वास करना बंद कर देते हैं, भले ही वह सच बोल रहा हो। – जो अपनी ही ज़िंदगी के साथ झूठ बोलता है, वह ऐसा है जो व्यभचिारी होते हुए भी ब्रह्मचारी होने का दखिावा करता है; या, लालची होते हुए भी खुद को दयालु के रूप में प्रस्तुत करता है; या, घमंडी होते हुए भी वनिम्रता का ढोंग करता है।

60. हमें अपना ध्यान रखना चाहएि। यदि हम इसे व्यर्थ में गँवा देते हैं तो हमें यह समय कौन देगा? सचमुच, एक समय आएगा जब हम इन दनिों के लएि तरसेंगे और उन्हें पाएँगे नहीं। बाबा आर्सेनयिस हमेशा अपने आप से कहते थे: 'आर्सेनयिस, तुमने संसार क्यों छोड़ा?'

61. यदि हम थोड़ा प्रयास करें, तो हम न तो बहुत दुखी होंगे और न ही कठनिाइयों का अनुभव करेंगे। क्योंकि यदि कोई व्यक्ति खुद को तपस्या करने के लएि प्रेरति करता है, तो नरिंतर प्रयास करने से वह धीरे-धीरे प्रगति करता है और फरि आसानी से सद्गुण का अभ्यास करता है; क्योंकि ईश्वर, यह देखकर कि वह खुद को प्रेरति कर रहा है, उसे सहायता प्रदान करते हैं। इसलएि हमें स्वयं को प्रेरति करना चाहएि; क्योंकि यद्यपि हम अभी पूर्णता प्राप्त

नहीं कर पाए हैं, यदि हम प्रयास करते हैं, तो हमें हमारे प्रयास के द्वारा सहायता प्राप्त होगी, और इस सहायता से हम हर प्रकार के सद्गुण प्राप्त कर लेंगे। इसीलिए संत-पितरों में से एक ने कहा: 'अपना रक्त दो और आत्मा प्राप्त करो', अर्थात्, प्रयास करो, और तुम सद्गुण की आदत प्राप्त करोगे।

62. जैसे कोई बढ़ईगीरी सीखना चाहता है, तो वह किसी दूसरे धंधे में नहीं लगता, वैसे ही जो लोग आध्यात्मिक कला सीखना चाहते हैं, उन्हें किसी और चीज़ में मन नहीं लगाना चाहिए, बल्कि दिन-रात इसे प्राप्त करने का अध्ययन करना चाहिए। हालाँकि, हर चीज़ में एक माप-दौल होनी चाहिए। एक वृद्ध ने कहा: 'राजमार्ग पर चलो और पड़ावों (वर्स्ट) को गिनो।' क्योंकि सद्गुण अतिशयोक्ति और कमी के बीच का मध्य मार्ग हैं। इसीलिए धर्मग्रंथ में कहा गया है: 'दाहिने या बाएं न मुड़ो, बल्कि राजमार्ग पर चलो' (व्यवस्थाविवरण 5:32; 17:11)।

६३. बुराई अपने आप में कुछ भी नहीं है, क्योंकि यह किसी भी प्रकार का अस्तित्व नहीं है और इसका कोई संयोग नहीं है। लेकिन आत्मा, सद्गुण से भटककर, भावुक हो जाती है और पाप को जन्म देती है, और फिर उस में कोई स्वाभाविक विश्राम न पाकर दुखी होती है। क्या एक पेड़ में, अपनी प्रकृति से ही, कीड़े होते हैं? लेकिन उसमें थोड़ी सी सड़न लग जाती है; इस सड़न से एक कीड़ा पैदा होता है – और यही कीड़ा पेड़ को खा जाता है। इसी प्रकार आत्मा स्वयं बुराई उत्पन्न करती है – और फिर उसी बुराई से स्वयं पीड़ित होती है, जैसा कि ग्रेगरी द थियोलोजियन ने कहा: 'आग पदार्थ का उत्पाद है; और यह पदार्थ को भस्म कर देती है, ठीक वैसे ही जैसे बुराई दुष्टों को खा जाती है।'

64. हम शारीरिक बीमारी में भी यही देखते हैं: जब कोई अव्यवस्थित जीवन जीता है और अपने स्वास्थ्य का ध्यान नहीं रखता, तो शरीर में किसी चीज़ की अधिकता या कमी उत्पन्न हो जाती है, और इससे वह व्यक्ति बाद में बीमार पड़ जाता है; फिर भी, इससे पहले कोई बीमारी बिल्कुल नहीं थी, और वह कभी अस्तित्व में ही नहीं थी; और फिर, एक बार जब शरीर ठीक हो जाता है, तो बीमारी पूरी तरह से समाप्त हो जाती है। ठीक उसी तरह, बुराई आत्मा की एक बीमारी है, जिसे उससे स्वाभाविक रूप से संबंधित और उसके योग्य स्वास्थ्य, यानी सद्गुण, से वंचित कर दिया गया है।

६५. एक व्यक्ति में तीन अवस्थाएँ होती हैं: या तो वे अपनी वासना के अनुसार कार्य करते हैं, उसका विरोध करते हैं, या उसे जड़ से उखाड़ फेंकते हैं। जो व्यक्ति अपने जुनून को पूरा करता है और उसमें लिप्त रहता है, वह उसी पर अमल करता है। जो व्यक्ति जुनून का विरोध करता है, वह उस व्यक्ति की तरह है जो अपने हाथों से अपने दुश्मन के तीरों को निकालकर अपने ही दिल में ठोक लेता है। और जो व्यक्ति जुनून को जड़ से उखाड़ फेंकता है, वह वही है जो इसके खिलाफ संघर्ष करता है और कार्य करता है।

66. जो अपनी वासना पर चलता है, वह उस मनुष्य के समान है जिसे उसके शत्रु के बाणों से आघात पहुँचने पर वह उन्हें निकालकर स्वयं अपने हृदय में ठोक लेता है। जो अपनी वासना का प्रतिरोध करता है, वह उस व्यक्ति के समान है जिस पर शत्रु के बाणों की वर्षा तो होती है, पर वह कवचधारी होता है, और इसलिए उसे कोई घाव नहीं लगता। और जो व्यक्ति कामवासना को जड़ से उखाड़ फेंकता है, वह ऐसे है जैसे कोई व्यक्ति, जिस पर उसके शत्रु के तीर बरस रहे हों, उन्हें तोड़ डाले या शत्रु के हृदय में वापस फेंक दे, जैसा कि भजन संहिता में कहा गया है: *'उनके हथियार उनके ही दिल में घुस जाएँ, और उनकी धनुषें टूट जाएँ'*

६७. एक भाई सात दिन तक बुखार से पीड़ित रहा, और अब चालीस दिन और बीत चुके हैं, फिर भी उसे अपने भीतर कोई शक्ति नहीं मिलती। 'यह दीन मनुष्य सात दिन तक बीमार रहा' – लेकिन तब से कितने दिन बीत गए हैं, और वह अभी तक ठीक नहीं हुआ है? आत्मा के साथ भी ऐसा ही है: कोई थोड़ा सा ही पाप कर सकता है, लेकिन फिर उसे सीधा होने से पहले अपना ही खून बहाने में कितना समय लगता है?

68. हम देखते हैं कि हमारे भाइयों को हमारे बीच से उठा लिया जाता है, फिर भी हम अपनी ओर कोई ध्यान नहीं देते, जबकि हम जानते हैं कि हम भी धीरे-धीरे मृत्यु के और करीब पहुँच रहे हैं। अतःआइए हम अपनी ओर ध्यान दें, और जब तक समय है, इसे व्यर्थ न गंवाएं। हम उस वृद्ध के वचनों को याद रखने में कैसे चूक सकते हैं, जिन्होंने कहा था कि यदि कोई सोने या चांदी के रूप में अपना धन खो देता है, तो वह उसकी जगह दूसरा पा सकता है; लेकिन यदि हम आलस्य और सुस्ती में जीकर अपना समय खो देते हैं, तो हम जो खो गया है उसकी भरपाई के लिए दूसरा समय नहीं पा सकेंगे। सच्चाई यह है कि हम इस समय का एक घंटा भी खोजेंगे और वह हमें नहीं मिलेगा।

६९. एक महान संत अपने शिष्यों के साथ एक ऐसी जगह पर चल रहे थे जहाँ बड़े और छोटे विभिन्न प्रकार के सरू के पेड़ थे। संत ने अपने एक शिष्य से कहा: 'इस सरू के पेड़ को उखाड़ो।' सरू का पेड़ छोटा था, और उस भाई ने तुरंत उसे एक हाथ से उखाड़ लिया। संत ने पहले वाले से भी बड़े एक और पेड़ की ओर इशारा किया और कहा: 'इसे भी उखाड़ो।' उस भाई ने दोनों हाथों से उसे हिलाया और बाहर खींच लिया। वृद्ध ने एक और, उससे भी बड़े पेड़ की ओर इशारा किया। उसने उसे भी बड़ी कठिनाई से बाहर खींच लिया। फिर वृद्ध ने एक और, उससे भी बड़े पेड़ की ओर इशारा

किया। अत्यधिक प्रयास से, उस भाई ने पहले उसे जोर से हिलाया, परिश्रम किया और पसीना बहाया, और अंत में इस पेड़ को भी बाहर खींच लिया। अंत में, बड़े भाई ने उसे एक और भी बड़ा सरू का पेड़ दिखाया। लेकिन भाई, भले ही उसने उस पर बहुत मेहनत की और पसीना बहाया, उसे उखाड़ नहीं सका। बड़े भाई ने, यह देखकर कि वह अकेले यह नहीं कर सकता, एक दूसरे भाई से उसकी मदद करने को कहा। और वे दोनों बड़ी मुश्किल से उसे उखाड़ पाए। – तब वृद्ध ने अपने शिष्यों से कहा: 'वासनाओं का भी यही हाल है; जब वे छोटी होती हैं, तो हम चाहें तो उन्हें आसानी से जड़ से उखाड़ सकते हैं; लेकिन अगर हम उनके साथ वैसा ही व्यवहार करें जैसे वे अभी भी छोटी हों, तो वे और मजबूत हो जाती हैं, और वे जितनी मजबूत होती जाती हैं, उतनी ही अधिक मेहनत की मांग करती हैं; और जब वे हमारे भीतर गहराई से जड़ जमा लेते हैं, तो फिर बड़ी कोशिश करने पर भी हम उन्हें स्वयं से नहीं उखाड़ सकते, जब तक कि हमें कुछ ऐसे संतों से मदद न मिले जो ईश्वर के माध्यम से हमारी सहायता करते हैं।"

70. नबी बेबीलोन की बेटी से कहते हैं: *'धन्य है वह जो तुम्हारे छोटे-छोटे बच्चों को पकड़कर चट्टान पर पटक देगा'* (भजन संहिता 136:9)। – बेबीलोन की बेटी उन सभी बातों का प्रतीक है जो पापी और ईश्वर के विरोधी हैं। उसकी संतान भावुक विचार और कर्म हैं। धन्य है वह जो अपने भीतर उत्पन्न होने वाले दुष्ट विचारों को आश्रय नहीं देता, और उन्हें अपने भीतर बढ़ने और बुराई को साकार करने का अवसर नहीं देता; बल्कि जब वे अभी छोटे होते हैं, और जड़ जमाने और उसके विरुद्ध उठने से पहले, वह हर संभव तरीके से उन्हें अटूट संकल्प की चट्टान पर कुचलने और प्रभु यीशु मसीह के नाम पर उन्हें नष्ट करने का प्रयास करता है।

71. संतों ने हमें दिखाया है कि एक व्यक्ति को धीरे-धीरे स्वयं को कैसे शुद्ध करना चाहिए: हर शाम उन्हें यह जांचना चाहिए कि उन्होंने दिन कैसे बिताया है, और फिर सुबह, कि उन्होंने रात कैसे बिताई है, और जो भी पाप उन्होंने किए हों, उनके लिए परमेश्वर के सामने पश्चाताप करना चाहिए। लेकिन जहाँ तक हमारी बात है, चूँकि हम बहुत पाप करते हैं, इसलिए हमारी भूल-चूक के कारण, छह घंटे बीत जाने के बाद भी, हमारे लिए यह आवश्यक है कि हम अपना परीक्षण करें कि हमने अपना समय कैसे बिताया है और किस प्रकार पाप किया है।

72. जो कोई भी इस तरह स्वयं की जाँच करता है, वह पाएगा कि बुराई धीरे-धीरे कम होने लगती है - और यदि उन्होंने नौ पाप किए हैं, तो वे आठ करेंगे; - और इस प्रकार, ईश्वर की मदद से धीरे-धीरे प्रगति करते हुए, वे अपने भीतर वासनाओं को जड़ जमाने नहीं देंगे। किसी भी वासना की आदत में पड़ जाना एक बड़ी दुर्भाग्य की बात है।

73. जिसने एक बार क्रोध किया है, उसे पहले से ही क्रोधित नहीं कहा जाता, न ही जिसने एक बार व्यभिचार किया है, उसे पहले से ही व्यभिचारी कहा जाता है, और न ही जिसने एक बार दया दिखाई है, उसे दयालु कहा जाता है; लेकिन सद्गुण और दुर्गुण दोनों में, उनमें बार-बार अभ्यास करने से, आत्मा एक आदत डाल लेती है, और उसके बाद यह आदत या तो उसे पीड़ा देती है या उसे शांत करती है। सदाचार शांति लाता है: क्योंकि हम जितना अधिक अच्छा करते हैं, सदाचार की हमारी आदत उतनी ही अधिक बढ़ती है, और इसके माध्यम से हम अपने प्राकृतिक स्वभाव को पुनःप्राप्त करते हैं और अपने कल्याण की मूल स्थिति में लौट आते हैं। लेकिन दुर्गुण हमें पीड़ा देता है: क्योंकि इसके माध्यम से हम एक ऐसी आदत प्राप्त करते हैं जो हमारे स्वभाव के लिए अपरिचित और शत्रुतापूर्ण है, और जो उसे नष्ट कर देती है।

74. यदि एक गरुड़ जाल से पूरी तरह से मुक्त हो, लेकिन केवल एक पंजे से उसमें उलझ जाए, तो यह छोटा सा विवरण ही उसे शक्तिहीन करने के लिए पर्याप्त है – और शिकारी जब चाहे उसे पकड़ सकता है। आत्मा के साथ भी ऐसा ही है: यदि वह एक भी वासना को आदत बनने देती है, तो शत्रु उसे जब चाहे गिरा सकता है, क्योंकि उस वासना के कारण वह उसके हाथों में होती है। अत; किसी भी वासना को अपनी आदत न बनने दो, बल्कि दिन-रात प्रयास करो और ईश्वर से प्रार्थना करो, ताकि तुम परीक्षा में न पड़ो। हालाँकि, यदि हम, जैसा कि मनुष्य होते हैं, अधीन हो जाएँ और पाप में गिर जाएँ, तो हमें तुरंत उठने का प्रयास करना चाहिए, उस पर पश्चाताप करना चाहिए, परमेश्वर की भलाई के सामने रोना चाहिए, और सतर्क और दृढ़ रहना चाहिए। और परमेश्वर, हमारी सद्इच्छा, हमारी नम्रता और हमारे पश्चाताप को देखकर, हम पर अपनी सहायता का हाथ फैलाएगा और हम पर दया करेगा।

७५. हमें जो कुछ भी होता है उसे परमेश्वर के सामने लाना चाहिए और कहना चाहिए: परमेश्वर की इच्छा के बिना कुछ भी नहीं होता; परमेश्वर जानते हैं कि यह या वह अच्छा और लाभकारी है, और इसीलिए यह वैसा ही होता है जैसा यह होता है। परमेश्वर की सृष्टि की सभी चीज़ों में, ऐसी कोई भी चीज़ नहीं है जो अच्छी न हो, बल्कि *'यह बहुत अच्छा था'* (उत्पत्ति 1:31)। इसलिए, किसी को भी उस पर दुख नहीं करना चाहिए जो उन पर आता है, बल्कि, इसे ईश्वर को सौंपकर, शांति पाना चाहिए। कुछ लोग ऐसे होते हैं जो उन पर आने वाले दुखों से इतने अभिभूत हो जाते हैं कि वे स्वयं जीवन का त्याग कर देते हैं और मृत्यु को मीठा मानते हैं, केवल अपने दुखों से छुटकारा पाने के लिए: लेकिन यह

कायरता और बड़ी मूर्खता से उत्पन्न होता है। वे उस भयानक आवश्यकता से अनजान हैं जिसका हमें तब सामना करना पड़ता है जब आत्मा शरीर से अलग होती है।

७६. एक बहुत उत्साही भाई ने एक वृद्ध से पूछा: 'मेरी आत्मा मृत्यु की लालसा क्यों करती है?' वृद्ध ने उत्तर दिया: 'क्योंकि आप उन दुखों को सहन नहीं करना चाहते जिनका आप सामना कर रहे हैं, यह महसूस किए बिना कि आने वाले दुख यहाँ के दुखों से कहीं अधिक भारी हैं।' – और एक दूसरे भाई ने भी वृद्ध से पूछा: 'मैं अपनी कोठरी में रहते हुए लापरवाही में क्यों पड़ जाता हूँ?' और उन्होंने उससे कहा: 'क्योंकि तुम अभी तक न तो उस विश्राम को जानते हो जो तुम्हारा इंतज़ार कर रहा है और न ही आने वाले कष्ट को। क्योंकि अगर तुम सच में यह जानते, तो भले ही तुम्हारी कोठरी कीड़े-मकोड़ों से भरी हो, और तुम उनमें गर्दन तक खड़े हो, तुम इसे बिना किसी सुस्ती के सह लेते'. लेकिन हम, सोते हुए, बचाए जाना चाहते हैं, और इसलिए दुख में तड़पते हैं; जबकि हमें परमेश्वर का धन्यवाद करना चाहिए और खुद को धन्य मानना चाहिए कि हमें यहाँ थोड़ा दुख सहने के योग्य समझा जाता है, ताकि वहाँ हमें बहुत बड़ी शांति मिल सके।

७७. इवाग्रियस ने कहा: 'जो कोई भी वासनाओं के आगे झुकता है और ईश्वर से जल्द से जल्द मरने की प्रार्थना करता है, वह एक ऐसे बीमार व्यक्ति के समान है जो एक बढ़ई से अपने बिस्तर को जल्द से जल्द काट देने की विनती करता है (जिस पर उसे अपनी पीड़ा में कुछ आराम मिलता था)। क्योंकि इस शरीर में रहते हुए, आत्मा को अपनी वासनाओं से राहत और कुछ हद तक आराम मिलता है: यहाँ एक व्यक्ति खाता है, पीता है, सोता है, बातचीत करता है, और अपने दोस्तों के साथ मेलजोल करता है। लेकिन जब आत्मा शरीर छोड़ती है, तो वह अपने ही भावों के साथ अकेली रह जाती है, और इसलिए हमेशा उन से पीड़ित रहती है; उन से पराजित होकर, वह उनकी आग से झुलस जाती है – और उन से इतनी अधिक पीड़ित होती है कि वह ईश्वर को याद भी नहीं कर सकती। ईश्वर की यह स्मृति आत्मा को सांत्वना दे सकती है, जैसा कि भजन संहिता में कहा गया है: *'मैंने ईश्वर को याद किया और प्रसन्न हुआ'* (भजन संहिता 76:4); लेकिन इसके भाव इसे ऐसा करने से रोकते हैं।

78. पृथ्वी पर यहाँ के दुखों से, आप कुछ हद तक यह समझ सकते हैं कि वहाँ का यातना कैसी होती है। उदाहरण के लिए, जब किसी को बुखार होता है, तो उसे क्या जलाता है? इस जलन को किस प्रकार की आग पैदा करती है? इसी प्रकार, वासनाओं से ग्रस्त आत्मा वहाँ हमेशा अपनी ही बुरी आदतों से पीड़ित रहती है, जो उसमें लगातार जलने और उसे भड़काने वाली वासनाओं की कड़वी यादें और पीड़ादायक छापें लिए रहती हैं।

79. और कौन भय के बिना यातना के भयानक स्थानों को याद कर सकता है—आग, अंधेरा, यातना देने वालों के निर्दयी सेवक, और धर्मग्रंथ में वर्णित अन्य यातनाएँ: राक्षसों के साथ रहना, जिनके लिए ही उस स्थान की आग तैयार की गई है (मत्ती 25:41)? – और केवल निंदा की लज्जा ही कितनी कुचलने वाली और घातक है? संत क्रिसोस्टोम कहते हैं: "भले ही आग की कोई नदी न बहे और कोई भयानक स्वर्गदूत मौजूद न हों, परन्तु केवल सभी लोगों को न्याय के लिए बुलाया जाए, और—कुछ, प्रशंसा पाकर, महिमामय किए जाएँ, जबकि अन्य अपमानित होकर भेज दिए जाएँ, ताकि वे परमेश्वर की महिमा को न देखें; क्या उस लज्जा और अपमान की सज़ा, और ऐसी आशीषों से वंचित होने का दुख, किसी भी गेहेना से अधिक भयानक नहीं होगा?" –

80. अतःहम स्वयं को शुद्ध करने का प्रयत्न करें, ताकि हम ऐसी विपत्ति से उद्धार पा सकें। निश्चित रूप से प्रयास की आवश्यकता है: और हम परिश्रम करें, ताकि हमें दया मिल सके। जब कोई खेत का मालिक अपने खेत की उपेक्षा करता है, तो क्या वह जंगली नहीं हो जाता? – और वह जितनी अधिक उपेक्षा करेगा, क्या वह उतना ही अधिक काँटों और कंटीली झाड़ियों से नहीं भर जाएगा? और जब वह बाद में अपनी उपेक्षित खेत से उन सभी खरपतवारों को साफ करना चाहेगा, तो क्या उसकी उपेक्षा जितनी अधिक होगी, उसके हाथ उतने ही अधिक खून से सने नहीं होंगे? – क्योंकि उसे केवल खरपतवारों को काटना ही नहीं है, बल्कि उन्हें जड़ से उखाड़ना होगा; अन्यथा वे चाहे वह उन्हें कितना भी काट डाले, सब फिर से उग आएँगे। हमारी आत्मा के साथ भी ऐसा ही है। जब हम इसकी उपेक्षा करते हैं, तो यह हर तरह की बुरी भावनाओं के खरपतवारों से भर जाती है; लेकिन जब, होश में आकर, हम इसे शुद्ध करने लगते हैं, तो दर्दनाक परिश्रम अपरिहार्य है: क्योंकि हमें केवल भावनात्मक कर्मों से परहेज़ ही नहीं करना चाहिए, बल्कि भावनाओं की आदतों को ही जड़ से उखाड़ देना चाहिए। फिर भी, भावनात्मक आदत से बुरा कुछ भी नहीं है। संत बेसिल द ग्रेट कहते हैं, 'एक बुरे आदी पर काबू पाना कोई छोटी उपलब्धि नहीं है, क्योंकि एक आदी, लंबे समय तक जड़ जमा लेने पर, अक्सर स्वभाव की ताकत प्राप्त कर लेता है।'

८१. न केवल वासनाओं को काटना चाहिए, बल्कि उनके कारणों को भी; फिर अपने चरित्र की मिट्टी को पश्चाताप और आँसुओं से ठीक से उपजाऊ बनाना चाहिए – और तभी अच्छे बीज, यानी अच्छे कर्म, बोना शुरू करना चाहिए। क्योंकि ठीक वैसे ही एक खेत के साथ होता है—यदि, उसे साफ और खाद डालने के बाद, उसमें कोई अच्छा

बीज नहीं बोया जाता है, तो खरपतवार उग आते हैं और, साफ किए जाने से मिट्टी को ढीला और नरम पाकर, उसमें और गहरी जड़ें जमा लेते हैं: एक व्यक्ति के साथ भी ऐसा ही है: यदि वे अपने पूर्व कर्मों से पश्चाताप करके और अपने चरित्र को सुधारने के बाद, सद्गुणों को प्राप्त करने का प्रयास नहीं करते हैं, तो सुसमाचार में एक अशुद्ध आत्मा के अपने पूर्व निवास स्थान पर लौटने के बारे में जो कहा गया है, वह सच हो जाता है, अब शुद्ध और झाड़ू लगा हुआ, सात अन्य आत्माओं के साथ – जिसके परिणामस्वरूप वह व्यक्ति पहले से भी बदतर स्थिति में पहुँच जाता है (मत्ती 12:44)।

८२. जो कोई भी उद्धार पाना चाहता है, उसे न केवल बुराई से बचना चाहिए, बल्कि भलाई करने का भी दायित्व है, जैसा कि भजन में कहा गया है: *'बुराई से मुंह फेर और भलाई कर'* (भजन संहिता ३३)। उदाहरण के लिए, यदि कोई क्रोधी था, तो उसे न केवल गुस्सा होने से बचना चाहिए, बल्कि नम्रता भी प्राप्त करनी चाहिए; यदि कोई अभिमानी था, तो उसे न केवल अहंकार से बचना चाहिए, बल्कि विनम्र भी बनना चाहिए। क्योंकि हर वासना के विरुद्ध एक सद्गुण होता है: अहंकार – विनम्रता, कंजूसपन – उदारता, व्यभिचार – पवित्रता, कायरता – धैर्य, क्रोध – नम्रता, घृणा – प्रेम।

83. जिस प्रकार हमने एक बार सद्गुणों को त्याग दिया और उनके स्थान पर वासनाओं को अपना लिया, उसी प्रकार अब हमें न केवल वासनाओं को त्यागने का प्रयास करना चाहिए, बल्कि उनके स्थान पर अपने भीतर सद्गुणों को स्थापित करने का भी प्रयास करना चाहिए। हम स्वाभाविक रूप से अपने भीतर उन सद्गुणों को रखते हैं जो हमें ईश्वर द्वारा दिए गए हैं। क्योंकि ईश्वर ने, मनुष्य को बनाने के ही कार्य में, उसमें सभी सद्गुणों को स्थापित किया, जैसा कि उन्होंने कहा: *"आओ हम मनुष्य को अपनी प्रतिमा में, अपनी समानता के अनुसार बनाएँ"* (उत्पत्ति 1:26)। कहा गया है: *'हमारी प्रतिमा में'* – क्योंकि परमेश्वर ने आत्मा को अमर और स्वतंत्र बनाया; और 'हमारी समानता के अनुसार' का संबंध सद्गुण से है – जैसे कि: *'पवित्र बनो, क्योंकि मैं पवित्र हूँ'* (1 पतरस 1:16)। परिणामस्वरूप, सद्गुण हमारी प्रकृति में अंतर्निहित हैं; लेकिन वासनाएँ हमारी प्रकृति की नहीं हैं, बल्कि उसमें प्रवेश कर जाती हैं – अर्थात्, जब आत्मा आत्म-संतुष्टि में लिप्त हो जाती है, तो वह सद्गुण से भटक जाती है और अपने भीतर वासनाओं को पालती है।

८४. अबा पिमेन ने अच्छी बात कही जब उन्होंने कहा कि एक भिक्षु की प्रगति परीक्षाओं में प्रकट होती है: क्योंकि एक भिक्षु जो सचमुच *'प्रभु की सेवा करने निकलता है'* उसे *'अपनी आत्मा को परीक्षा के लिए तैयार करना'* चाहिए (सिरैक 2:1)—ताकि वह उस पर कभी भी हैरान या विचलित न हो जो कुछ भी उस पर आता है, यह विश्वास करते हुए कि ईश्वर की व्यवस्था के बिना कुछ भी नहीं होता। और जो कुछ भी ईश्वर की व्यवस्था का हिस्सा है, वह पूरी तरह से अच्छा है और आत्मा के लाभ के लिए है; क्योंकि जो कुछ भी ईश्वर करते हैं, वह हमारे लाभ के लिए करते हैं, हमसे प्रेम और दया करते हुए। और हमें, जैसा कि प्रेरित ने कहा, *'हर बात के लिए धन्यवाद देना चाहिए'* (इफिसियों 5:20; 1 थिस्स. 5:18) उसकी भलाई के लिए धन्यवाद दें, और जो कुछ हम पर आता है उस पर कभी दुखी न हों या हतोत्साहित न हों, बल्कि जो कुछ भी हमारे साथ होता है उसे बिना कष्ट के, नम्रता और परमेश्वर में आशा के साथ स्वीकार करें, यह विश्वास करते हुए कि परमेश्वर हमसे जो कुछ भी करता है, वह अपनी भलाई के कारण, हमसे प्रेम करते हुए और हमारे अपने भले के लिए करता है।

85. यदि किसी का कोई मित्र है और वह निश्चित है कि वह उससे प्रेम करता है, तो भले ही वह उसके हाथों कुछ कष्ट झेलता हो—यहाँ तक कि कोई गंभीर कष्ट भी—वह सोचता है कि उसके मित्र ने ऐसा प्रेम के कारण किया है, और वह कभी यह नहीं मानेगा कि उसके मित्र का इरादा उसे नुकसान पहुँचाने का था: हमें तो और भी अधिक ईश्वर के बारे में सोचना चाहिए, जिन्होंने हमें बनाया और हमें अस्तित्व में लाया, जिन्होंने हमारे लिए अवतार लिया और हमारे लिए मरे, कि वह हमारे साथ सब कुछ अपनी भलाई और हमारे प्रति प्रेम के कारण करते हैं। कोई एक मित्र के बारे में सोच सकता है: वह मेरे लिए प्रेम और करुणा के कारण सब कुछ करता है (और हमेशा इस तरह से कार्य करने के लिए तैयार रहता है); लेकिन उसमें हमेशा मेरे संबंध में सब कुछ सर्वोत्तम रूप से व्यवस्थित करने की बुद्धि की कमी होती है; इसलिए ऐसा होता है कि, अनजाने में, वह मुझे नुकसान पहुँचा देता है। लेकिन हम ईश्वर के बारे में ऐसा नहीं कह सकते; क्योंकि वह बुद्धि का स्रोत है, वह सब कुछ जानता है जो हमारे लिए लाभदायक है, और उसी के अनुसार हमारे संबंध में सब कुछ, यहाँ तक कि सबसे तुच्छ मामलों को भी, व्यवस्थित करता है। फिर, एक मित्र के बारे में यह कहा जा सकता है कि, यद्यपि वह हमसे प्रेम करता है और हमारी परवाह करता है और हमारे मामलों को संभालने के लिए पर्याप्त समझदार है, वह उन मामलों में हमारी मदद करने में असहाय है जहाँ वह सोचता है कि वह हमें लाभ पहुँचा सकता है। लेकिन ईश्वर के बारे में यह भी नहीं कहा जा सकता; क्योंकि उसके लिए सब कुछ संभव है, और उसके लिए कुछ भी असंभव नहीं है। इन सब को देखते हुए, हमें हमारे साथ जो कुछ भी होता है, उसे कृतज्ञतापूर्वक स्वीकार

करना चाहिए, यह मानते हुए कि वह हमारे परोपकारी और कृपालु प्रभु, ईश्वर की ओर से आया है, भले ही वह कष्टदायक क्यों न हो।

८६. यदि कोई परीक्षा को धैर्य और विनम्रता से सहन करता है, तो वह उसे बिना किसी हानि के पार हो जाएगी; लेकिन यदि वह हतोत्साहित हो जाता है, विचलित हो जाता है, और दूसरों को दोष देता है, तो वह केवल खुद पर बोझ डालता है और कोई लाभ नहीं कमाता, बल्कि केवल खुद को नुकसान पहुँचाता है; जबकि परीक्षाएँ उन लोगों के लिए बहुत लाभ लाती हैं जो बिना विचलित हुए उन्हें सहन करते हैं।

८७. हमें लज्जित नहीं होना चाहिए, भले ही जुनून हमें लज्जित कर दे। हे उत्कट भाव वाले, तुम आश्चर्यचकित क्यों हो, और जब जुनून तुम्हें परेशान करता है तो तुम लज्जित क्यों हो? 'तुमने स्वयं इसे अपने भीतर पोषित किया है; तुम स्वेच्छा से इसे अपने भीतर आश्रय देते हो – और फिर भी तुम परेशान हो? तुमने इसकी प्रतिज्ञाएँ स्वीकार की हैं, और फिर भी तुम पूछते हो: "यह मुझे क्यों परेशान करता है?" सहना, प्रयास करना, और ईश्वर से तुम्हारी सहायता के लिए प्रार्थना करना बेहतर है; क्योंकि जो व्यक्ति वासनाओं में लिप्त हो चुका है, उसके लिए उनके कष्टदायक आक्रमणों से मुक्त होना असंभव है। अब्बा सिसोए के अनुसार, उनके पात्र आपके भीतर ही हैं; उन्हें उनका हक़ दें, और वे आपसे दूर चले जाएँगे। चूँकि हम उनसे प्रेम करने और उन्हें सक्रिय करने लगे हैं, इसलिए हमारे लिए उन उत्कट विचारों से अप्रभावित रहना असंभव है जो हमें, हमारी इच्छा के विरुद्ध भी, अपनी कामनाओं पर अमल करने के लिए मजबूर करते हैं; क्योंकि हमने स्वेच्छा से खुद को उनके हवाले कर दिया है।

८८. जो कोई भी अपनी वासना पर कार्य करने से पहले कामुक विचारों से घिर जाता है, वह अभी भी अपने ही शहर में है; वह स्वतंत्र है, और ईश्वर उसकी मदद के लिए मौजूद है। क्योंकि जैसे ही वह इस मामले में ईश्वर के सामने स्वयं को नम्र करता है और थोड़ा संघर्ष करता है, ईश्वर की मदद उसे वासना के आक्रमण से बचाने के लिए प्रकट होगी। लेकिन यदि कोई संघर्ष करने से इनकार कर देता है और, स्वयं को सुख-भोग में डुबोकर, कामुक आनंद के आगे झुक जाता है, तो ईश्वर की सहायता उससे पीछे हट जाती है, और वासना उसे वासनापूर्ण कर्मों में खींच लेती है; और इसका परिणाम यह होगा कि वह अनजाने में उसी वासना की सेवा करने लगेगा।

८९. कहा जाता है कि जब एक महान वृद्ध के एक शिष्य को कामुक संघर्ष से घिरा हुआ था, और वृद्ध ने उसके संघर्ष को देखकर उससे कहा: 'यदि तुम चाहो, तो मैं ईश्वर से प्रार्थना करूँगा कि वह तुम्हारे लिए इस कामुक संघर्ष को शांत कर दे,' तो शिष्य ने उत्तर दिया: 'यद्यपि यह मेरे लिए कठिन और बोझिल है, पिताजी, मैं अपने भीतर अपने श्रम का फल देखता हूँ; अत; ईश्वर से प्रार्थना करें कि वह मुझे धैर्य प्रदान करें।' वृद्ध ने उत्तर में उससे कहा: 'अब मुझे पता चला कि तुम फल-फूल रहे हो और मुझसे आगे निकल रहे हो।' ऐसे ही वे हैं जो वास्तव में मोक्ष की कामना करते हैं! और यही है परीक्षा के जुए को विनम्रता से सहने का अर्थ!

९०. जब परमेश्वर ने मूसा को इस्राएलियों को मिस्र और फिरौन की दासता से बाहर निकालने के लिए भेजा, तो फिरौन ने उन पर और भी अधिक श्रम का बोझ लाद दिया। इसी प्रकार शैतान भी, जब वह देखता है कि ईश्वर ने किसी आत्मा पर दया की है और उस पर रहम करने तथा उसे उसके जुनून के बोझ से मुक्त करने के लिए तैयार है, तो वह उस पर और भी अधिक जुनून का बोझ डाल देता है और उससे और भी ज़ोरदार तरीके से लड़ता है। लेकिन संत-पुरुष, यह जानते हुए, अपने उपदेश के माध्यम से एक व्यक्ति को मज़बूत करते हैं और उसे भय के आगे झुकने नहीं देते। *'साहसी बनो, और हे प्रभु की आशा रखने वालों, तुम्हारा हृदय हर्षित हो'* (भजन संहिता 30:25)।

९१. ईश्वर का भय आत्मा को आज्ञाओं का पालन करने के लिए प्रेरित करता है, और आज्ञाओं के द्वारा आत्मा का घर बनता है। अतःहम ईश्वर से डरें और अपने लिए घर बनाएं, ताकि हमें सर्दी, बारिश, बिजली और गरज के समय आश्रय मिल सके, क्योंकि जिसके पास घर नहीं है वह सर्दियों में बहुत दुख झेलता है।

९२. आत्मा का घर कैसे बनाया जाए, यह एक भौतिक घर के निर्माण से सीखा जा सकता है। जो कोई घर बनाता है, वह चारों ओर दीवारें खड़ी करता है, और केवल एक दीवार तक ही सीमित नहीं रहता; अन्यथा, वह अपने खर्च और मेहनत को व्यर्थ ही बर्बाद कर देगा। इसी प्रकार, एक आध्यात्मिक घर बनाना चाहने वाले व्यक्ति को अपनी इमारत के किसी भी पहलू की उपेक्षा नहीं करनी चाहिए, बल्कि उसे समान रूप से और सामंजस्यपूर्ण ढंग से खड़ा करना चाहिए। यही बात थी जिसका अभिप्राय अबा जॉन ने तब कहा था जब उन्होंने कहा था: 'मैं चाहता हूँ कि कोई व्यक्ति हर दिन हर सद्गुण में थोड़ा-थोड़ा बढ़े' – और जैसा कि कुछ लोग करते हैं, वैसा नहीं, जो एक ही सद्गुण से चिपके रहते हैं और उसी में बने रहते हैं, केवल उसी एक का अभ्यास करते हैं और बाकी की ओर कोई ध्यान नहीं देते।

९३. इस प्रकार आत्मा का घर सभी ओर से समान रूप से और सामंजस्यपूर्ण ढंग से निम्नलिखित तरीके से बनाया जाता है। – सबसे पहले, नींव रखनी चाहिए, जो कि विश्वास है: क्योंकि *'विश्वास के बिना परमेश्वर को प्रसन्न करना असंभव है'* (इब्रानियों ११:६)। और फिर, इस नींव पर, एक को भवन को समान रूप से बनाना चाहिए - अर्थात्:

यदि आज्ञाकारिता का अवसर आता है, तो आज्ञाकारिता का पत्थर रखना चाहिए; यदि किसी भाई से दुख मिलता है, तो धैर्य का पत्थर रखना चाहिए; यदि संयम का अवसर मिलता है, तो संयम का पत्थर रखना चाहिए। इस प्रकार, जिस भी सद्गुण के लिए अवसर उत्पन्न होता है, उस भवन में एक पत्थर रखना चाहिए, और इस प्रकार इसे हर तरफ से खड़ा करना चाहिए, भवन में कभी करुणा का पत्थर, कभी अपनी इच्छा को वश में करने का पत्थर, कभी नम्रता का पत्थर, और इसी तरह रखकर। लेकिन इन सब में, धैर्य और साहस को विकसित करने का ध्यान रखना चाहिए: क्योंकि वे आधार-स्तंभ हैं; उनके द्वारा ही यह भवन एक साथ बँधा रहता है और दीवार दीवार से जुड़ती है, जिससे वे एक-दूसरे से न झुकें या अलग न हो जाएँ। धैर्य और साहस के बिना, कोई भी किसी सद्गुण का अभ्यास नहीं कर सकता। इसीलिए कहा गया है: *'अपने धैर्य से तुम अपनी आत्माओं को बचाओगे'* (लूका 21:19)।

९४. जो घर बनाता है, वह हर पत्थर पर चूना लगाता है; क्योंकि यदि वह बिना चूने के एक पर एक पत्थर रखता है, तो पत्थर गिर जाएँगे और घर ढह जाएगा। आत्मा के निर्माण में चूना विनम्रता है, क्योंकि इसे पृथ्वी से लिया जाता है और यह सभी के पैरों के नीचे रहता है। और विनम्रता के बिना किया गया कोई भी सद्गुण, सद्गुण नहीं है। यह बात पिता के वचनों में भी कही गई है: 'जिस प्रकार कीलों के बिना जहाज नहीं बन सकता, उसी प्रकार विनम्रता के बिना कोई भी उद्धार नहीं पा सकता'। – एक साधारण घर की छत होती है। आध्यात्मिक घर की छत प्रेम है, जो गुणों की पूर्णता को दर्शाता है, ठीक वैसे ही जैसे एक घर की छत उस घर का सर्वोच्च तत्व होती है। – छत के चारों ओर एक दीवार होती है ताकि, जैसा कि कानून कहता है (Deut. 22:8), बच्चे छत से न गिरें। आत्मा के घर में यह दीवार संयम, सावधानी और प्रार्थना है; और बच्चे वे विचार हैं जो आत्मा में उत्पन्न होते हैं, जिन्हें संयम और प्रार्थना द्वारा नियंत्रित किया जाता है।

९५. परन्तु इस निर्माण के काम में, एक और बात की आवश्यकता है, अर्थात्, कि निर्माणकर्ता कुशल हो। क्योंकि यदि वह कुशल नहीं है, तो वह दीवार टेढ़ी-मेढ़ी बना सकता है, और घर एक दिन ढह जाएगा। कुशल वह है जो गुणों का बुद्धिमानी से अभ्यास करता है; क्योंकि ऐसा होता है कि कुछ लोग पुण्य का श्रम तो करते हैं, लेकिन चूँकि वे इस श्रम को बुद्धिमानी से नहीं करते, वे स्वयं ही उसे बर्बाद कर देते हैं, या लगातार काम को बिगाड़ते रहते हैं; और इस तरह वे निर्माण को पूरा नहीं करते, बल्कि केवल बनाते और नष्ट करते हैं।

९६. यहाँ कई उदाहरणों में से एक है। यदि कोई अहंकार के कारण या यह सोचकर कि वह कोई विशेष पुण्य का अभ्यास कर रहा है, उपवास करता है, तो ऐसा व्यक्ति मूर्खता से उपवास करता है, और परिणामस्वरूप बाद में अपने भाई को कोसने लगता है, खुद को कुछ महान समझते हुए; और ऐसा होता है कि उसने एक पत्थर रखकर दो हटा दिए ही हैं, बल्कि अपने पड़ोसी की निंदा करने के कारण वह पूरी दीवार को गिराने के खतरे में पड़ जाता है। लेकिन जो कोई बुद्धिमानी से उपवास करता है, वह यह नहीं सोचता कि वह कोई विशेष पुण्य कर रहा है, और न ही वह उपवासी के रूप में प्रशंसा चाहता है; बल्कि यह विश्वास करता है कि संयम के द्वारा वह पवित्रता प्राप्त करेगा, और इसके द्वारा वह विनम्रता प्राप्त करेगा, जैसा कि धर्मपिता कहते हैं: 'विनम्रता का मार्ग बुद्धिमानी से किए गए शारीरिक श्रम में निहित है', आदि। ऐसा व्यक्ति एक कुशल निर्माता साबित होता है, जो अपने घर को दृढ़ता से बनाने में सक्षम है।

९७. इस विचार से भटकें नहीं कि सदाचार आपकी शक्ति से परे और आपके लिए अवांछनीय है; बल्कि, विश्वास से प्रेरित होकर, निडर होकर शुरुआत करें, ईश्वर के समक्ष अपनी सद्भावना और लगन दिखाएँ – और आप वह सहायता देखेंगे जो वह आपको सदाचार का अभ्यास करने के लिए प्रदान करेंगे। – दो सीढ़ियों की कल्पना करें: एक स्वर्ग की ओर जाती है, और दूसरी नर्क की ओर; आप, हालांकि, दोनों सीढ़ियों के बीच जमीन पर खड़े हैं। यह न सोचें या न कहें: 'मैं जमीन से कैसे उड़ सकता हूँ और अचानक खुद को स्वर्ग की ऊँचाई पर, यानी सीढ़ी के शीर्ष पर पा सकता हूँ?' बस इतना ध्यान रखें कि गलत करके नीचे न फिसलें; जहाँ तक ऊपर जाने का सवाल है, थोड़ा-थोड़ा करके चढ़ने का प्रयास करें, और जो भी अच्छा काम आपके सामने आए, उसे करें। हर कर्म एक सीढ़ी ऊपर चढ़ने जैसा होगा। इस प्रकार, ईश्वर की मदद से एक सीढ़ी से दूसरी सीढ़ी पर चढ़ते हुए, आप अंततः सीढ़ी के शीर्ष पर पहुँच जाएँगे।

९८. यदि हम खोजेंगे, तो हमें मिलेगा; और यदि हम माँगेंगे, तो हमें दिया जाएगा; क्योंकि सुसमाचार कहता है: *'माँगो, तो तुम्हें दिया जाएगा; खोजो, तो तुम पाओगे; खटखटाओ, तो तुम्हारे लिए द्वार खोला जाएगा'* (मत्ती ७:७)। कहा गया है, *'माँगो'*, ताकि हम प्रार्थना में मदद के लिए ईश्वर से प्रार्थना कर सकें; और *'खोजो'* का अर्थ है कि, यह देखने के बाद कि सद्गुण कैसे आता है और इसे क्या लाता है, हमें तदनुसार इसे प्राप्त करने के लिए अपने स्वयं के प्रयासों को लगाना चाहिए। *'खटखटाना'* का अर्थ है आज्ञाओं का पालन करना; क्योंकि जो कोई भी खटखटाता है, वह अपने हाथों से ऐसा करता है, और हाथ कर्म का प्रतीक हैं। इस प्रकार, हमें केवल पूछना ही नहीं चाहिए, बल्कि

खोजना और करना भी चाहिए, और जैसा कि प्रेरित कहते हैं, *'हर अच्छे काम के लिए तैयार रहने का* प्रयास करना *चाहिए'* (2 कुरिन्थियों 9:8; 2 तीमुथियुस 3:17) - अर्थात्, ईश्वर की इच्छा को बुद्धिमानी से पूरा करने के लिए पूरी तरह से तैयार रहना, जैसा कि वह चाहते हैं और जैसा उन्हें भाता है।

९९. प्रेरित ने हमें आज्ञा दी *कि 'परीक्षा करो कि परमेश्वर की इच्छा क्या है—क्या वह भली, ग्रहणयोग्य और सिद्ध है'* (रोमियों १२:२)—ताकि हम फिर उसी के अनुसार चलें। – तो, परमेश्वर की भली इच्छा क्या है? – यह एक दूसरे से प्रेम करना, दयालु होना, दान-पुण्य करना और इसी प्रकार के कार्य करना है; यही *'परमेश्वर की भली इच्छा' है*। और *'परमेश्वर की भाती इच्छा'* क्या है? हर कोई जो कुछ अच्छा करता है, वह ऐसा नहीं करता कि वह परमेश्वर को भाता हो। उदाहरण के लिए, ऐसा होता है कि कोई एक गरीब लेकिन सुंदर अनाथ लड़की को पाता है; वह उसकी सुंदरता के कारण उससे प्रभावित हो जाता है – और वह उसे अपने घर ले आता है और उसका पालन-पोषण करता है, एक ओर तो एक गरीब अनाथ के रूप में और साथ ही, एक सुंदर लड़की के रूप में भी। यह ईश्वर की इच्छा है और *यह 'अच्छी' है*, लेकिन *'मनभावन' नहीं*; जबकि जो *'मनभावन'* है वह तब होता है जब कोई दया का कार्य किसी मानवीय उद्देश्य से नहीं, बल्कि ईश्वर की खातिर करता है, जिसने इसका आदेश दिया है, स्वयं अच्छाई के लिए, शुद्ध करुणा से: यह ईश्वर को भाता है। – अंत में, ईश्वर की *'पूर्ण'* इच्छा तब पूरी होती है जब कोई दया का कार्य करता है, कंजूसता से नहीं, आलस्य से नहीं, तिरस्कार से नहीं, बल्कि अपनी पूरी ताकत और अपनी पूरी इच्छा से, इस प्रकार दया दिखाता है जैसे वह स्वयं उसे प्राप्त कर रहा हो, और इस प्रकार दयालुता दिखाता है जैसे वह स्वयं दयालुता प्राप्त कर रहा हो: तब ईश्वर की पूर्ण इच्छा पूरी होती है। – इस प्रकार एक व्यक्ति ईश्वर की इच्छा को पूरा करता है, जो अच्छी, प्रसन्न करने वाली और पूर्ण है।

100. लालच के दो प्रकार हैं: पहला वह है जब कोई व्यक्ति स्वादिष्ट भोजन की तलाश करता है और हमेशा बहुत अधिक खाने की इच्छा नहीं रखता, बल्कि कुछ स्वादिष्ट चाहता है; दूसरी वह है जब कोई व्यक्ति लालच से ग्रस्त हो जाता है – और वह न तो स्वादिष्ट भोजन की इच्छा रखता है, न ही उसके स्वाद की परवाह करता है, बल्कि केवल खाते ही रहना चाहता है, यह परवाह किए बिना कि भोजन क्या है, और केवल अपना पेट भरने में ही लगा रहता है। पहले को 'गले का लालच' और दूसरे को 'पेट का लालच' कहा जाता है। – जो कोई भी अपने पापों के शुद्धिकरण के लिए उपवास करना चाहता है, उसे इन दोनों प्रकार की लालच से बचना चाहिए; क्योंकि ये शरीर की जरूरतों को नहीं बल्कि उसकी वासनाओं को संतुष्ट करते हैं, और यदि कोई इनमें लिप्त होता है, तो इसे उसके खिलाफ एक पाप माना जाता है।

101. हालाँकि, उपवास के दौरान, हमें न केवल उपरोक्त भोजन संबंधी नियम का पालन करना चाहिए, बल्कि हमें हर दूसरे पाप से भी बचना चाहिए, ताकि, जैसे हम अपने पेट से उपवास करते हैं, वैसे ही हम अपनी जीभ से भी उपवास कर सकें, और निंदा, झूठ, व्यर्थ की बातों, अपने भाइयों को नीचा दिखाने, क्रोध, और जीभ से किए जाने वाले हर दूसरे पाप से बचें। हमें अपनी आँखों से भी उपवास करना चाहिए, यानी व्यर्थ की चीजों को न देखना, अपनी आँखों को बेकाबू न छोड़ना, और किसी को भी निर्लज्जता से या बिना डर के न देखना। इसी तरह, हमें अपने हाथों और पैरों को हर बुराई से दूर रखना चाहिए।

102. जब हम एक-दूसरे से मिलें तो हमारा उद्देश्य क्या होना चाहिए? – सबसे पहले, हमें प्रेम के लिए एक-दूसरे से मिलना चाहिए; दूसरे, परमेश्वर का वचन सुनने के लिए, क्योंकि परमेश्वर का वचन भाइयों की भीड़ के बीच बेहतर ढंग से समझा जाता है: जब कोई कुछ नहीं जानता, तो कोई दूसरा जानता है, और पहला, दूसरे से पूछकर, वह भी सीख जाता है; अंत में, अपनी आत्मा की स्थिति और हालत को समझने के लिए – और दूसरों से आचरण के उदाहरण लेने के लिए, जैसा कि संत एंथनी ने किया, एक से नम्रता, दूसरे से विनम्रता, एक और से मौन सीखा, और इस तरह हम जिस भी व्यक्ति से मिलते हैं, उसके गुणों को अपने भीतर एकत्र करते हैं।

103. दूसरों को देखते समय, सबसे बढ़कर संदेह से बचना चाहिए, जिससे हानिकारक निर्णय उत्पन्न होता है। मेरे कई अनुभव इस सच्चाई की पुष्टि करते हैं कि हर कोई दूसरों को अपने स्वभाव के अनुसार आंकता है। मैं एक उदाहरण देता हूँ। मान लीजिए कि कोई व्यक्ति रात में किसी निश्चित स्थान पर खड़ा था, और तीन लोग उसके पास से गुजर रहे थे। उसे देखकर, उनमें से एक ने सोचा: 'वह किसी के जाने और व्यभिचार करने का इंतजार कर रहा है'; दूसरे ने: 'वह जरूर चोर होगा'; तीसरे ने: 'उसने पास के घर के किसी व्यक्ति के साथ कहीं प्रार्थना करने के लिए जाने की व्यवस्था की है' – और वह उस व्यक्ति का इंतजार कर रहा है। तो तीन लोगों ने एक ही आदमी को, एक ही जगह पर देखा, फिर भी उन्होंने उसके बारे में एक जैसी राय नहीं बनाई; एक ने एक बात सोची, दूसरे ने दूसरी, और तीसरे ने कुछ और – और स्पष्ट रूप से प्रत्येक ने अपनी-अपनी मानसिक स्थिति के अनुसार सोचा। जिस प्रकार विषादग्रस्त और दुबले-पतले स्वभाव वाले व्यक्ति का शरीर, चाहे भोजन पौष्टिक ही क्यों न हो, उसे खाने से हर चीज को घटिया द्रव

में बदल देता है, उसी प्रकार एक बुरे स्वभाव वाली आत्मा भी हर चीज़ से हानि पहुँचाती है, भले ही वे चीजें जिनसे उसका सामना होता है, अच्छी ही क्यों न हों। लेकिन अच्छे स्वभाव वाला व्यक्ति एक स्वस्थ शरीर वाले व्यक्ति के समान है, जिसमें, भले ही वह कुछ हानिकारक खा ले, वह उसके भीतर स्वास्थ्यवर्धक रसों में बदल जाता है। इसी प्रकार, यदि हमारा स्वभाव अच्छा है और हम अच्छे मानसिक संतुलन में हैं, तो हम हर चीज़ से लाभ उठा सकते हैं, भले ही वह चीज़ अपने आप में लाभदायक न हो।

104. मैंने एक भाई के बारे में सुना है, जो जब भी भाइयों में से किसी के पास जाता और उसकी कोठरी झाड़ी हुई और अव्यवस्थित देखता, तो वह अपने आप से कहता: 'धन्य है यह भाई, जिसने सांसारिक मामलों की सभी चिंताओं को त्याग दिया है और उसने अपने मन को इतना पूरी तरह से स्वर्ग की ओर मोड़ दिया है कि उसे अपनी कोठरी को व्यवस्थित करने का भी समय नहीं मिलता।' इसी तरह, यदि वह किसी और के पास जाता और उसकी कोठरी साफ़-सुथरी, झाड़ी-पोंछी हुई देखता, तो वह फिर से अपने आप से कहता: 'जिस प्रकार इस भाई की आत्मा शुद्ध है, उसी प्रकार उसकी कोठरी भी शुद्ध है, और उसकी कोठरी की अवस्था उसकी आत्मा की अवस्था के अनुरूप है।' और वह कभी किसी को लापरवाह या घमंडी नहीं कहता था, बल्कि अपनी अच्छी प्रवृत्ति के कारण, वह सभी को अच्छा ही देखता था, और सभी से लाभान्वित होता था। काश कि अच्छा ईश्वर हमें भी वही अच्छी प्रवृत्ति प्रदान करे, ताकि हम भी सभी से लाभान्वित हो सकें और कभी भी अपने पड़ोसी की कमियों पर ध्यान न दें।

105. *'संन्यास जीवन में प्रशिक्षित हो रहे लोगों के लिए निर्देश'*। यदि आप आज्ञाकारिता में रहते हैं, तो कभी भी अपने हृदय पर भरोसा न करें, क्योंकि यह लंबे समय से चले आ रहे जुनून से अंधा हो जाता है। किसी भी बात में अपने निर्णय का पालन न करें, और मार्गदर्शन और सलाह मांगे बिना अपने लिए कुछ भी तय न करें। यह न सोचें या यह धारण न करें कि आप अपने गुरु से बेहतर या अधिक धर्मी हैं, और उनके कार्यों की जाँच-पड़ताल न करें। ऐसा करने से, आप हमारे पूर्वजों के मार्ग पर शांति और सुरक्षा के साथ चलेंगे और आज्ञापालन करेंगे। हर बात में स्वयं को बाध्य करो और अपनी इच्छा को वश में करो; और मसीह की कृपा से, शिक्षा के द्वारा, तुम अपनी इच्छा को वश में करने के आदी हो जाओगे, और फिर तुम ऐसा बिना बाध्यता या दुख के करोगे, ताकि सब कुछ तुम्हारी इच्छानुसार हो जाए। यह इच्छा न करो कि सब कुछ तुम्हारी इच्छानुसार हो; बल्कि यह इच्छा करो कि जैसा होगा वैसा ही हो, और इस तरह तुम सभी के साथ शांति से रहोगे। और विश्वास करो कि हमारे साथ जो कुछ भी होता है, हर छोटी से छोटी बात तक, वह ईश्वर की व्यवस्था के अनुसार होता है, और तब तुम जो कुछ भी तुम पर आएगा उसे बिना किसी कष्ट के सहन करोगे। मानिए कि अपमान और निंदा आपके आत्मा के अहंकार को ठीक करने वाली औषधियाँ हैं, और उन लोगों के लिए प्रार्थना करें जो आपको निंदा करते हैं, जैसे कि वे आपकी आत्मा के सच्चे चिकित्सक हों, यह निश्चित जानते हुए कि जो अपमान से नफरत करता है, वह विनम्रता से नफरत करता है, और जो उससे दुखी होता है, उससे दूर भागता है, वह नम्रता से दूर भागता है। अपने पड़ोसी के दोष जानने का प्रयास न करें, और शत्रु द्वारा आपके मन में डाले गए संदेहों को न पालें; परन्तु यदि हमारी अपनी दुर्बलता के कारण आपके मन में ऐसे विचार उत्पन्न हों, तो उन्हें शुभ विचारों में बदलने का प्रयत्न करें। हर बात के लिए धन्यवाद दें, और सद्गुण तथा पवित्र प्रेम को बढ़ाएँ। सबसे बढ़कर, हम सभी हर बात में अपने विवेक की रक्षा करें—ईश्वर के प्रति, अपने पड़ोसी के प्रति, और सांसारिक चीज़ों के प्रति; और कुछ भी कहने या करने से पहले, हम यह परख लें कि क्या वह ईश्वर की इच्छा के अनुसार है; और फिर, प्रार्थना करने के बाद, हम उसे कहें या करें, अपनी कमज़ोरी को ईश्वर के समक्ष रखकर और उनकी सहायता माँगकर।

106. यदि आप चाहते हैं कि विश्वास के पवित्र विचार सही समय पर अपना सुखद प्रभाव डालें, और अनुचित आवेगों, विचारों और भावनाओं को शांत करें, तो उनका लगातार अभ्यास करें, उन्हें अपने मन में बार-बार दोहराएँ – और मुझे ईश्वर में विश्वास है कि आपको शांति मिलेगी। इसी तरह, प्रार्थना को शिक्षा के साथ मिलाएँ। इसमें उत्कृष्टता प्राप्त करने का प्रयास करें, ताकि जब आपको शारीरिक या आध्यात्मिक दुख हो, तो आप उसे बिना शोक, बिना उदासी और धैर्य के साथ सहन कर सकें।

107. जब आप सुनें कि आपने कुछ ऐसा किया है जो आपने नहीं किया है, तो इससे आश्चर्यचकित या परेशान न हों, बल्कि तुरंत जिसने यह बात कही है, उसके सामने नम्रता से सिर झुकाएँ और कहें: 'मुझे क्षमा करें, और मेरे लिए प्रार्थना करें' – और फिर चुप रहें, जैसा कि संतों ने कहा है। और जब वह आपसे पूछे, 'क्या यह सच है या नहीं?', तो विनम्रता से सिर झुकाकर, जैसा हुआ वैसा ही सच बताएं; और बोलने के बाद, फिर से विनम्रता से सिर झुकाकर कहें: 'मुझे क्षमा करें और मेरे लिए प्रार्थना करें'।

108. यदि, भाइयों से मिलने या संपर्क में आने पर, आप मन की एक स्थिर अवस्था बनाए नहीं रख पाते हैं, तो कम से कम यह प्रयास करें कि किसी भी चीज़ से बहकाए न जाएँ, किसी की निंदा न करें, किसी के बारे में बुरा न बोलें,

और न ही किसी भाई के शब्दों, कर्मों या गतिविधियों की जाँच-पड़ताल करें – क्योंकि इससे आपको कोई लाभ नहीं होगा; बल्कि हर चीज़ से अपने लिए शिक्षा ग्रहण करने का प्रयास करें।

109. जान लें कि जो कोई भी किसी विचार से परेशान होता है, या उस पर दुख मनाता है, और उसका इकरार नहीं करता, वह उससे स्वयं के विरुद्ध ताकत दे देता है; अर्थात्, वे उस विचार को उनके विरुद्ध संघर्ष करने और उन्हें और भी अधिक पीड़ा पहुँचाने की शक्ति देते हैं। लेकिन यदि कोई , वह इसका इकरार करता है और अपने विचार के विरुद्ध संघर्ष और विरोध करना शुरू कर देता है, और उसके विपरीत करता है, तो वह वासना कमजोर हो जाएगी और उसमें उससे लड़ने या उसे दुख पहुँचाने की शक्ति नहीं होगी। और फिर, धीरे-धीरे, प्रयास करने और ईश्वर से सहायता प्राप्त करने के द्वारा, वह स्वयं वासना पर विजय प्राप्त कर लेगा।

110. बाबा पिमेन ने कहा कि ईश्वर का भय, ईश्वर से प्रार्थना करना, और अपने पड़ोसी के प्रति अच्छा करना, ये तीन प्रमुख सद्गुण हैं। – उन्होंने ईश्वर के भय को पहले स्थान पर रखा क्योंकि ईश्वर का भय हर सद्गुण से पहले आता है, क्योंकि *'प्रभु का भय ज्ञान की शुरुआत है'* (भजन संहिता 110:10), और *'ईश्वर का भय मनुष्य को बुराई से दूर करता है'* (नीतिवचन 15:27)। फिर उन्होंने ईश्वर से प्रार्थना करने के बारे में कहा क्योंकि मनुष्य अपनी इच्छा से न तो कुछ भी अच्छा कर सकता है और न ही सद्गुण प्राप्त कर सकता है, बल्कि हर बात में उसे अपने प्रयासों के साथ-साथ ईश्वर की मदद की भी आवश्यकता होती है, जो ईश्वर के भय से प्रेरित होते हैं। और अंत में उन्होंने अपने पड़ोसी के प्रति भलाई करने की बात की क्योंकि यह प्रेम का एक कार्य है, जो ईसाई पूर्णता का शिखर है (रोमियों 13:10)।

111. जब आत्मा सुन्न हो जाती है, तो पवित्र धर्मग्रंथों और ईश्वर-धारी पितरों के शिक्षाप्रद वचनों को बार-बार पढ़ना, और ईश्वर के भयानक न्याय, आत्मा का शरीर से प्रस्थान, और उन भयानक अंधकारमय शक्तियों पर चिंतन करना लाभदायक होता है जो उसकी प्रतीक्षा कर रही हैं—जिनके साथ उसने इस क्षणिक और विपत्तिपूर्ण जीवन में बुराई की है।

संत इसाक द सीरियन

उनका संक्षिप्त परिचय

संत इसाक नीनेवे के मूल निवासी थे। उनके माता-पिता के बारे में कुछ भी ज्ञात नहीं है। अपनी युवावस्था के चरम पर, संसार और सभी सांसारिक चीजों से अलग होकर, वे अपने भाई के साथ संत मैथ्यू के मठ में प्रवेश कर गए, और वहाँ उन्होंने मठवासी जीवन जीना शुरू किया। इस मठ में तपस्या में पूर्णता प्राप्त करने और सद्गुणों में पर्याप्त प्रगति करने के बाद, उनमें मौन की तीव्र इच्छा जागृत हुई। अत; मठ से काफी दूर हटकर, वे एक संन्यासी की कुटिया में बस गए और पूर्ण एकांत का जीवन जीने लगे, किसी से भी मेलजोल न रखकर केवल स्वयं और ईश्वर में ही मग्न रहे। उनके अपने भाई ने, उपर्युक्त मठ का प्रशासन संभालने के बाद, उन्हें रेगिस्तान छोड़ने और अपने पूर्व निवास पर लौटने के लिए दृढ़ता से आग्रह किया और विनती की; लेकिन वह रेगिस्तान से इतने जुड़े हुए थे कि वह थोड़े समय के लिए भी इसे छोड़ने पर सहमत नहीं हुए। फिर भी, जो कुछ उनके भाई की विनतियों से हासिल नहीं हो सका, वह दैवीय प्रकटीकरण द्वारा पूरा हुआ। संत इसाक, अपने भाई की अवज्ञा करने के बाद, पिता के अधीन हो गए, जिन्होंने उन्हें नीनेवे के चर्च का शासन करने के लिए स्वर्ग से बुलाया था। इसलिए, उन्होंने रेगिस्तान छोड़ दिया और नीनेवे के महानगर के बिशप के रूप में अभिषिक्त हुए। क्योंकि यह उचित था कि इस दीपक को रेगिस्तान के एकांत में छिपाकर न रखा जाए, बल्कि इसे पादरीत्व के दीपक-धारक पर रखा जाए, और यह अपनी दिव्य सद्गुणों की तेज किरणें दूर-दूर तक फैलाए। लेकिन यह बहुत लंबे समय तक नहीं चला: जैसे ही यह प्रकाश चमका, यह फिर से छिप गया। संत ने निम्नलिखित कारण से बिशप की पदवी छोड़ दी। बिशप के आवास पर दो व्यक्ति आए—एक लेनदार और एक देनदार—पहला दूसरे से कर्ज की तत्काल अदायगी की मांग कर रहा था, जबकि दूसरा, अपने कर्ज को स्वीकार करते हुए, पहले से थोड़ी मोहलत देने का अनुरोध कर रहा था। लेकिन लेनदार ने जवाब दिया: 'अगर उसने मुझे तुरंत कर्ज नहीं चुकाया, तो मैं उसे सीधे न्यायाधीश के पास ले जाऊँगा।' संत इसाक ने उनसे कहा: 'यदि सुसमाचार की आज्ञा के अनुसार, आप उससे बिल्कुल भी चुकाने की मांग नहीं कर सकते, जिसने आपकी चीज़ ली है, तो आपको उस पर कितनी अधिक उदारता दिखानी चाहिए जो आपसे जल्द ही कर्ज चुकाने का वादा कर रहा है।' लेकिन उस निर्दयी व्यक्ति ने उत्तर दिया: 'अभी के लिए सुसमाचार की आज्ञा को एक तरफ रख दो।' – और वह और सुनने को तैयार नहीं था। तब परमेश्वर के पवित्र व्यक्ति ने अपने मन में कहा: 'यदि वे प्रभु की सुसमाचार की आज्ञाओं का पालन नहीं करते हैं,

तो मेरे लिए यहाँ करने के लिए और क्या बचा है?' – इसके अलावा, यह देखकर कि प्रशासन की अनिवार्य मांगों से उस एकांत और शांति जिनकी वह रेगिस्तान में आदत डाल चुका था, कितनी बाधा पहुँच रही थी, उसने सिंहासन छोड़कर अपने प्रिय रेगिस्तानी आश्रम में लौटने का निश्चय किया। अपनी मृत्यु तक वहाँ रहते हुए, संत इसाक ने राक्षसों और देह के विरुद्ध अपने संघर्ष में क्या-क्या कारनामे किए, वे सक्रिय और चिंतनशील दोनों प्रकार के जीवन के लिए आवश्यक सद्गुणों में कितने निपुण थे, उन्होंने क्या आध्यात्मिक पूर्णता प्राप्त की, और कैसे, यहाँ तक कि इस जीवन में भी, उन्हें दैवी कृपा प्राप्त थी – इस पर बात करना अनावश्यक होगा: कोई भी आसानी से उनके लेखों से इसके बारे में जान सकता है। संत इसाक ने बड़े पैमाने पर लिखा, और उन्होंने जो कुछ भी लिखा वह अनुभव से लिया गया था। उन्होंने पहले उन सभी अनुभवों को स्वयं सक्रिय रूप से जिया था जिन्हें उन्होंने बाद में लिखा, और अपने सक्रिय उदाहरण के माध्यम से उन्होंने अपने मार्गदर्शन में आने वालों को निर्देश दिया। इस प्रकार, रेगिस्तान से भी, उन्होंने शुद्ध और जीवन-दायक जल की एक अक्षय धारा बहाना जारी रखा, जिससे उन्होंने अपने भाइयों की आत्माओं की प्रचुरता से तृप्ति की। संत इसाक की रचनाएँ सिरियाक और अरबी में हमें प्राप्त हुई हैं; इनमें से लगभग आधी का अनुवाद ग्रीक में किया गया है – और ग्रीक से रूसी में, पवित्र पिताओं की 91 कृतियों में से एक के रूप में। संत इसाक छठी शताब्दी के अंत में अपने स्वर्गीय धाम सिधार गए। आर्चबिशप सेरजियस के कैलेंडर के अनुसार, उनका पर्व दिवस 28 जनवरी है।

संयम संबंधी निर्देश

(संक्षिप्त लेखों में उद्धृत)

1. ईश्वर का भय सदाचार की शुरुआत है; यह विश्वास का फल है और हृदय में तब बोया जाता है जब मन सांसारिक विकर्षणों से मुक्त हो जाता है, ताकि कोई व्यक्ति अपने भटकते विचारों को भविष्य के पुनरुत्थान के चिंतन में एकत्र कर सके।

२. सद्गुण की नींव रखने के लिए, किसी व्यक्ति के लिए यह सबसे अच्छा है कि वह सांसारिक मामलों से खुद को दूर रखे और उस कानून का पालन करे जो धर्मी और पवित्र मार्गों को प्रकाशित करता है, जैसा कि पवित्र आत्मा ने भजनकार के माध्यम से (भजन संहिता 22:3; 118:35) इंगित किया।

3. जीवन के मार्ग की शुरुआत अपने मन से निरंतर ईश्वर के वचन का अध्ययन करने और गरीबी का जीवन जीने से होती है। एक को दूसरे से पोषण देना दूसरे को परिपूर्ण करने में मदद करता है। यदि आप ईश्वर के वचनों का अध्ययन करके स्वयं को पोषित करते हैं, तो यह गरीबी में आपकी सफलता में सहायक होता है; और लालचहीनता में सफलता आपको ईश्वर के वचनों के अध्ययन में उत्कृष्टता प्राप्त करने के लिए अवकाश प्रदान करती है। बदले में, दोनों का संवर्धन गुणों की संपूर्ण इमारत के शीघ्र निर्माण में योगदान देता है।

४. संसार से अलग हुए बिना, कोई भी ईश्वर के समीप नहीं आ सकता। 'अलग होने' से मेरा तात्पर्य भौतिक स्थानांतरण से नहीं, बल्कि सांसारिक मामलों से विमुखता से है। संसार से अलग होने का सद्गुण अपने मन को संसार में व्यस्त न रहने देना है।

5. जब किसी व्यक्ति में अनुग्रह प्रचुर मात्रा में होता है, तो जिस धार्मिकता की वह लालसा करता है, उसके मार्ग पर (या उस मार्ग की बाधाओं का सामना करते समय) मृत्यु का भय उसके लिए तुच्छ हो जाता है – और वह अपनी आत्मा के भीतर कई कारण खोज लेता है कि क्यों, ईश्वर के भय के लिए, वह कष्टों को सहने के लिए तैयार है, क्योंकि यह अपेक्षित ही है; तब शरीर के लिए अप्रिय और उसे पीड़ा पहुँचाने में सक्षम हर चीज़, भविष्य में उसकी आशा की तुलना में, उसकी नज़रों में तुच्छ हो जाती है। परन्तु जब किसी व्यक्ति में अनुग्रह की कमी बढ़ती है, तो उसमें और उसके साथ जो होता है वह कही गई बात का विपरीत है: तब ज्ञान, जो पूछताछ से प्राप्त होता है (जो केवल मूर्त चीजों पर निर्भर हो सकता है), विश्वास पर हावी हो जाता है; हर मामले में परमेश्वर पर भरोसा नहीं होता; और मनुष्य के संबंध में परमेश्वर की व्यवस्था को अलग तरह से समझा जाता है। ऐसा व्यक्ति लगातार भयों का शिकार रहता है, उन लोगों की चालाकियों के कारण जो अपने तीरों से *'अँधेरे में* उसे *गिरा देने' के लिए* घात लगाए रहते हैं (भजन संहिता 10:2)।

6. हृदय में संदेह आत्मा में भय लाता है; लेकिन विश्वास इच्छाशक्ति को दृढ़ बना सकता है, भले ही अंग काट दिए जाएँ। जिस हद तक आपके भीतर देह का प्रेम प्रबल है, उसी हद तक आप अपने प्रियजन के चारों ओर मंडरा रहे अनेक विपत्तियों का सामना करते हुए साहसी और निडर नहीं हो सकते।

7. पवित्र व्यक्ति वह नहीं है जिसके मन में संघर्ष, परिश्रम और प्रयास के दौरान अश्लील विचार समाप्त हो जाते हैं, बल्कि वह है जो अपने हृदय की ईमानदारी के द्वारा अपने मन की दृष्टि को पवित्र रखता है, और उसे

अनुचित विचारों की ओर भटकने नहीं देता। – और जब उसकी अंतरात्मा की ईमानदारी उसकी आँखों की दृष्टि के माध्यम से (शुद्धता के नियम के प्रति) उसकी निष्ठा की गवाही देती है, तो लज्जा उसके विचारों के सबसे भीतरी कक्ष पर एक आवरण की तरह लटकी रहती है, और उसकी पवित्रता, एक कुंवारी कन्या की तरह, मसीह में विश्वास के द्वारा संरक्षित रहती है।

८. अशुद्धि की ओर आत्मा की पूर्व-विद्यमान प्रवृत्तियों को दूर करने के लिए, दिव्य शास्त्र के अध्ययन के प्रति प्रेम में और उसके विचारों की गहराई को समझने में स्वयं को डुबोने से अधिक सहायक कुछ भी नहीं है। जब विचार शब्दों के भीतर छिपी बुद्धि को समझने के आनंद में डूब जाते हैं; तब, जिस हद तक कोई व्यक्ति उनसे ज्ञान प्राप्त करता है, उसी हद तक वह संसार को पीछे छोड़ देता है और संसार में जो कुछ भी है उसे भूल जाता है। – फिर भी, जब मन केवल दिव्य धर्मग्रंथों के सागर के पानी की सतह पर तैरता है, और धर्मग्रंथ के अर्थ की गहराई में प्रवेश नहीं कर सकता; यहाँ तक कि यह तथ्य भी—कि वह शास्त्र को समझने के उत्साह में लगा हुआ है—उसके लिए पर्याप्त है कि वह अपने विचारों को प्रशंसनीय वस्तु के एक ही विचार से दृढ़ता से बाँध ले, और उन्हें भौतिक तथा सांसारिक चीज़ों की ओर भटकने से रोक दे।

९. शास्त्र में आपको जो कुछ भी मिले, उसमें शब्दों के उद्देश्य को खोजें, ताकि आप संतों के विचारों की गहराई में प्रवेश कर सकें और उन्हें अधिक सटीकता से समझ सकें। जो लोग अपने जीवन में ज्ञान की ओर दिव्य अनुग्रह से निर्देशित होते हैं, वे हमेशा, मानो, पाठ की आयतों से होकर गुजरने वाली एक बुद्धिमानी की किरण को महसूस करते हैं, जो मन के लिए केवल शब्दों और उस बात के बीच अंतर करती है जो गहरे अर्थ के साथ आत्मा से कही जाती है।

10. यदि कोई व्यक्ति अर्थ से परिपूर्ण श्लोकों को बिना उनमें गहराई से उतरा पढ़ता है, तो उसका हृदय दरिद्र ही रहता है (कुछ भी चख नहीं पाता), और उसके भीतर की पवित्र शक्ति क्षीण हो जाती है—वह शक्ति जो आत्मा की अद्भुत समझ के माध्यम से हृदय को परम आनंद प्रदान करती है।

11. हर वस्तु स्वाभाविक रूप से अपनी समान वस्तु की ओर आकर्षित होती है। और आत्मा, जिसमें स्वयं में आत्मा का एक अंश होता है, जब वह कोई ऐसा कथन सुनती है जिसमें एक छिपी हुई आध्यात्मिक शक्ति होती है, तो वह उस कथन के अर्थ की ओर तीव्रता से आकर्षित होती है। हर व्यक्ति आध्यात्मिक रूप से बोले गए उस वचन से आश्चर्यचकित नहीं होता, जिसमें एक महान, छिपी हुई आध्यात्मिक शक्ति निहित होती है। सदाचार पर एक प्रवचन के लिए एक ऐसे हृदय की आवश्यकता होती है जो सांसारिक मामलों में व्यस्त न हो; लेकिन एक ऐसे व्यक्ति में जिसका मन क्षणभंगुर चीजों की चिंता से बोझिल है, सदाचार उसके मन में इसे प्रेम करने या प्राप्त करने की इच्छा को नहीं जगाता।

12. किसी के पूरे अस्तित्व द्वारा भौतिक दुनिया से विरक्ति ईश्वर के साथ मिलन से पहले होती है, यद्यपि अनुग्रह की व्यवस्था के अनुसार, कुछ लोगों में अक्सर बाद वाली, यानी मिलन, पहले आती है। संन्यासी जीवन का क्रम सभी लोगों के सामान्य क्रम से भिन्न होता है। – आप, हालांकि, सामान्य क्रम का पालन करें। यदि अनुग्रह आप में पहले आता है, तो यह उसका अपना मामला है; और यदि ऐसा नहीं होता है, तो सभी लोगों के मार्ग का अनुसरण करें और आप भी आध्यात्मिक स्तंभ की ऊँचाइयों पर पहुँचेंगे।

13. सद्गुण की खोज में आत्मा की अतृप्ति शरीर की उन दृश्य (इंद्रिय) इच्छाओं के एक हिस्से को अपने लाभ में बदल देती है, जिसके साथ वह जुड़ी हुई है। संयम हर चीज़ को सुशोभित करता है। संयम के बिना, वह भी जो सुंदर माना जाता है, हानिकारक हो जाता है।

14. क्या आप अपने मन के माध्यम से ईश्वर के साथ संवाद करना चाहते हैं? – दान का अभ्यास करें। आध्यात्मिक प्रेम का कोई दूसरा मार्ग नहीं है, जो स्वयं के भीतर अदृश्य छवि (ईश्वर की) अंकित करता है, जब तक कि कोई सबसे पहले उतना ही उदार होना शुरू न कर दे जितना कि हमारा स्वर्गीय पिता परिपूर्ण है, जैसा कि प्रभु ने कहा (लूका 6:36)।

१५. जैसे एक चित्रकार जो दीवारों पर पानी का चित्र बनाता है, वह उस पानी से अपनी प्यास नहीं बुझा सकता, वैसे ही एक कर्म रहित वचन भी है। जो कोई उस सद्गुण की बात करता है जिसे उसने स्वयं अपनाया है, वह उसे अपने श्रोता तक वैसे ही पहुँचाता है जैसे एक व्यक्ति दूसरे को अपनी मेहनत से कमाया हुआ धन देता है। और जो कोई अपने भण्डार से सुसमाचार को सुनने वालों के कानों में बोता है, वह निडर होकर बोलता है, और अपने आत्मिक बच्चों से कहता है, जैसे वृद्ध याकूब ने पवित्र यूसुफ से कहा था: *'मैं तुम्हें तुम्हारे भाइयों से* एक अंश *अधिक देता हूँ, जो मैंने* अमोरीयों से *अपनी तलवार और अपने धनुष से लिया है'* (उत्पत्ति 48:22)।

16. किसी ने खूबसूरती से कहा है कि मृत्यु का भय उस मनुष्य को दुखी करता है जिसे अपने ही विवेक ने दोषी ठहराया हो; परन्तु जो अपने भीतर एक अच्छा विवेक रखता है, वह मृत्यु की उतनी ही इच्छा रखता है जितनी वह जीवन की रखता है।

17. यदि कोई बात आपकी आत्मा में गहराई से बस गई है, तो उसे न केवल इस जीवन के लिए अपना खजाना समझें, बल्कि यह भी विश्वास करें कि वह आपके साथ आने वाले जीवन में भी जाएगी। और यदि यह कोई अच्छी बात है, तो आनंद मनाओ और अपने हृदय में परमेश्वर का धन्यवाद करो; लेकिन यदि यह कोई बुरी बात है, तो शोक करो और आहें भरो, और जब तक तुम शरीर में हो, तब तक इससे मुक्त होने का प्रयास करो।

18. जो पीड़ित और कड़वाहट में डूबे हुए हैं, उनके गहरे दुखों को हमेशा ध्यान में रखें, ताकि आप स्वयं पर आने वाले छोटे और तुच्छ दुखों के लिए उचित धन्यवाद दे सकें, और उन्हें आनंद के साथ सहन कर सकें।

19. उदासीनता और सुस्ती के समय, अपने हृदय में अपनी पूर्व लगन के दिनों को याद करो, कि तुम कैसे हर छोटी-से-छोटी बात का ध्यान रखते थे; तुमने क्या-क्या कारनामे किए, और कितने उत्साह के साथ उन लोगों का विरोध किया जो तुम्हारी प्रगति में बाधा डालना चाहते थे। इस प्रकार के स्मरण से, आपकी आत्मा एक बार फिर से गहरी नींद से जाग उठेगी; यह उत्साह की ज्वाला में नए सिरे से लिपट जाएगी, मानो मृतकों में से जी उठी हो, और शैतान और पाप के विरुद्ध प्रबल संघर्ष के द्वारा, यह अपनी पूर्व अवस्था में लौट आएगी।

२०. क्रूस का कार्य दोहरा है: एक में देह के दुखों (भौतिक अभावों, जो वासनाओं के विरुद्ध संघर्ष में अपरिहार्य हैं) को सहना शामिल है, और इसे 'सही अर्थ में सक्रिय कार्य' कहा जाता है; जबकि दूसरे में मन की सूक्ष्म गतिविधियाँ, दिव्य चिंतन, और प्रार्थना में बने रहना आदि शामिल है, और इसे 'चिंतन' कहा जाता है। पहला आत्मा के भावुक भाग को शुद्ध करता है, जबकि दूसरा आत्मा के तर्कसंगत भाग को प्रबुद्ध करता है। कोई भी व्यक्ति जो, पहले भाग में पूरी तरह से प्रशिक्षित हुए बिना, इसके मिठास से आकर्षित होकर—अपनी सुस्ती का उल्लेख तो छोड़ ही दें—इस दूसरे भाग पर चला जाता है, *वह 'पृथ्वी पर शरीर के अंगों को* मार *डालने' में* पहले विफल रहने के कारण क्रोध का भागी बनेगा। (कुलुस्सियों 3:5)—अर्थात्, क्रूस को धैर्यपूर्वक उठाने के अभ्यास द्वारा अपने विचारों की दुर्बलता को ठीक करने में असफल रहने के बाद—क्रूस की महिमा का मन में सपना देखने की हिम्मत करना। प्राचीन संतों का यही अभिप्राय था जब उन्होंने कहा कि यदि मन, अपनी इंद्रियों के कमज़ोरी से ठीक हो कर और शांति प्राप्त करने से पहले, उन्हें पीछे छोड़ कर क्रूस पर चढ़ने का प्रयासरूप करता है, तो ईश्वर का क्रोध उस पर पड़ता है। क्योंकि जिसके मन को लज्जास्पद वासनाओं ने कलंकित कर दिया है, और जो अपने मन की इच्छाओं को काल्पनिक विचारों से तुरंत पूरा करता है, उसके होंठ एक निषेध से सील कर दिए गए हैं क्योंकि, उसने पहले अपने मन को कष्टों के द्वारा शुद्ध नहीं किया, न ही अपनी सांसारिक इच्छाओं को वश में किया, परन्तु, कानों से सुनी हुई बातों और स्याही से लिखी गई बातों पर भरोसा करके, वह शरीर से अंधा होते हुए भी, सीधे अँधेरे से भरे मार्ग पर चल पड़ा है।

21. कल्पना करो कि सदाचार शरीर है, ध्यान आत्मा है, और दोनों मिलकर एक पूर्ण मानव बनाते हैं, जो दो भागों: इंद्रिय और तर्कशील, से आत्मा द्वारा एकजुट हुए हैं। और जैसे शरीर के अंगों के निर्माण के बिना आत्मा के लिए वह अवस्था प्राप्त करना असंभव है जिसमें वह अपने अस्तित्व को प्रकट कर सके, वैसे ही आत्मा के लिए सदाचार के अभ्यास के बिना ध्यान प्राप्त करना असंभव है।

22. यह सुनने के बाद कि मनुष्य को संसार से अलग हो जाना चाहिए, संसार को पीछे छोड़ देना चाहिए, और संसार में जो कुछ भी है उससे स्वयं को शुद्ध करना चाहिए, आपको पहले यह समझना और पहचानना होगा—सामान्य धारणाओं के माध्यम से नहीं, बल्कि शुद्ध तर्कसंगत धारणाओं के माध्यम से—कि *'संसार'* शब्द का वास्तव में क्या अर्थ है, और इस नाम में कौन से भेद शामिल हैं; और आप यह विवेक कर पाएँगे, कि आपकी अपनी आत्मा कितनी दुनिया से अलग है, और उसमें दुनिया के कौन से तत्व मिले हुए हैं। – 'दुनिया' एक समष्टिगत शब्द है जिसमें उन चीज़ों को शामिल किया जाता है जिन्हें हम 'वासनाएँ' कहते हैं। जब हम वासनाओं को समग्र रूप से संदर्भित करना चाहते हैं, तो हम उन्हें 'दुनिया' कहते हैं; लेकिन जब हम उन्हें उनके व्यक्तिगत नामों के अनुसार अलग करना चाहते हैं, तो हम उन्हें 'वासनाएँ' कहते हैं।

२३. जब आप यह समझेंगे कि संसार क्या है, तो, इसके द्वारा अभिप्रेत सभी चीज़ों को अलग करके, आप यह भी समझेंगे कि आप संसार से कैसे बंधे हुए हैं, और किन तरीकों से आपने खुद को इससे अलग किया है। संक्षेप में कहें तो: संसार एक देहगत जीवन और शरीर की चालाकी है। किसी व्यक्ति के संसार से अलग होने का पता इसी बात से चलता है कि वह इस से अलग हो गया है।

24. लोगों में शरीर का भय इतना प्रबल होता है कि परिणामस्वरूप, वे अक्सर कुछ भी प्रशंसनीय या सम्मानजनक करने में असमर्थ हो जाते हैं। लेकिन जब आत्मा का भय शरीर के भय पर हावी हो जाता है, तो शारीरिक भय आध्यात्मिक भय से भस्म हो जाता है, ठीक वैसे ही जैसे मोम जलती हुई आग की शक्ति से भस्म हो जाता है।

२५. आत्मा स्वभाव से निर्लिप्त है। भाव-भावनाएँ उस पर आरोपित हैं – और आत्मा स्वयं ही इनके लिए दोषी है। – यदि आत्मा का स्वभाव कभी दिव्य प्रकाश को ग्रहण करने के कारण प्रकाशमान और शुद्ध था, और जब यह अपनी मूल अवस्था में लौटती है तो फिर से ऐसा ही हो जाता है; तो यह निस्संदेह सत्य है कि जैसे ही आत्मा एक भावुक अवस्था में प्रवेश करती है, वह अपने स्वभाव से परे हो जाती है, जैसा कि चर्च के शिष्य मानते हैं।

26. आत्मा की स्वाभाविक अवस्था ईश्वर की सृष्टियों—संवेदी और बौद्धिक दोनों—का ज्ञान है। उसकी अलौकिक अवस्था पूर्व-अस्तित्वमान दिव्यता पर मनन करने की गति (या क्रिया और अवस्था) है। हालाँकि, उसकी अस्वाभाविक अवस्था आत्मा की गति, या उसका स्वभाव और जीवन-यापन का तरीका है, जैसा कि उन भावुक लोगों में पाया जाता है जो अपनी भावनाओं के दास होते हैं। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि आत्मा के जुनून, अपनी प्रकृति से, आत्मा के नहीं हैं।

27. यदि आप मानव स्वभाव के रहस्यों को जानना चाहते हैं और अभी तक आत्मा द्वारा उन्हें पहचानने के बिंदु पर नहीं पहुँचे हैं, तो आप उन्हें प्रत्येक व्यक्ति के शब्दों, जीवन-यापन के तरीके और स्वभाव के माध्यम से पहचान लेंगे। जो आत्मा से शुद्ध और आचरण से निर्दोष है, वह हमेशा पवित्रता के साथ आत्मा के वचन बोलता है, और, अपनी समझ के स्तर के अनुसार, दिव्य और अपने भीतर के विषय में तर्क करता है। लेकिन जिनके हृदय वासनाओं से भरे होते हैं, उनकी जीभ उन्हीं से प्रेरित होती है। यदि वे आध्यात्मिक विषयों पर बोलें, तो वे वासना के प्रभाव में तर्क करेंगे। बुद्धिमान व्यक्ति ऐसे व्यक्ति को पहली ही मुलाकात में पहचान लेते हैं, और शुद्ध लोग उनकी दुर्गंध को सूंघ सकते हैं।

28. एक संन्यासी के कर्तव्य इस प्रकार हैं: देह से मुक्ति, प्रार्थना के समय शारीरिक श्रम, और हृदय में ईश्वर का अखंड स्मरण।

29. प्रार्थना एक बात है, और प्रार्थना में मनन दूसरी बात है, यद्यपि प्रार्थना और मनन एक-दूसरे से उत्पन्न होते हैं। प्रार्थना बोआई है; मनन फसल की कटाई है, जिसके दौरान कटनी करने वाला उस अकथनीय दृश्य से विस्मित हो जाता है कि कैसे, उसके बोए गए छोटे और सूखे बीजों से, अनाज की इतनी सुंदर बालें अचानक उसके सामने उग आई हैं।

३०. उद्धारकर्ता ने उपवास के माध्यम से हमारे उद्धार का कार्य शुरू किया। इसी प्रकार, जो भी इस आधार पर उद्धारकर्ता के पदचिन्हों पर चलते हैं, वे अपने प्रयास की शुरुआत स्थापित करते हैं, क्योंकि उपवास ईश्वर द्वारा तैयार किया गया एक हथियार है। – और कौन है, जो इस पर मनन करके इसके सत्य से आश्वस्त नहीं होगा? – यदि स्वयं विधि-दाता उपवास करते हैं, तो विधि से बँधा कोई भी व्यक्ति उपवास कैसे कर सकता है? यही कारण है कि, उपवास से पहले, मानव जाति को कोई विजय नहीं पता थी, और शैतान ने कभी भी हमारी प्रकृति के हाथों हार का अनुभव नहीं किया; लेकिन इस हथियार से वह वास्तव में परास्त हुआ। और हमारे प्रभु इस विजय के नेता और प्रथम-जन्मे थे, ताकि वह हमारी प्रकृति के सिर पर पहला विजयी मुकुट रख सकें। और जैसे ही शैतान किसी भी मनुष्य पर यह हथियार देखता है, यह विरोधी और यातना देने वाला तुरंत भय से ग्रस्त हो जाता है, और उद्धारकर्ता के हाथों मरुभूमि में अपनी पराजय को याद करते हुए ई करता है – और उसकी शक्ति तुरंत कुचल जाती है, और हमारे प्रधान सेनापति द्वारा हमें दिया गया यह हथियार उसे देखते ही उसे जला देता है। – उपवास के कवच से सुसज्जित व्यक्ति हमेशा उत्साह से भरपूर रहता है। – जो कोई इसमें स्थिर रहता है, उसका मन अटूट होता है, जो सभी तीव्र वासनाओं का सामना करने और उन्हें दूर करने के लिए तैयार रहता है।

31. तब कर्म और श्रम आत्मा में वैराग्य लाते हैं, *'पृथ्वी पर स्थित अंगों' को* मृत्यु के घाट उतारते हैं, और विचारों को विश्राम प्रदान करते हैं, जब हम मौन का पालन करते हैं, जब बाह्य इंद्रियों से उत्पन्न छापों के कारण आत्मा में उत्पन्न कोलाहल समाप्त हो जाता है। अन्यथा, इसमें सफलता असंभव है। क्योंकि यदि किसी पेड़ को प्रतिदिन पानी दिया जाए, तो क्या उसकी जड़ कभी सूख जाएगी? क्या एक पात्र में कभी पानी खत्म हो जाता है जिसमें प्रतिदिन पानी डाला जाता है? – जब कोई व्यक्ति स्थिरता प्राप्त करता है, तो आत्मा आसानी से कामवासनाओं को पहचान लेती है, और आंतरिक पुरुष, जो आध्यात्मिक प्रयास के लिए प्रेरित होता है, उन पर विजय प्राप्त करता है, और दिन-प्रतिदिन आत्मा को शुद्धता की ओर उठाता है।

32. किसी के शुद्ध होने की बात कब कही जा सकती है? – जब कोई सभी लोगों को अच्छा देखता है, और कोई भी उसे अशुद्ध या मलिन नहीं लगता, तो वह वास्तव में हृदय से शुद्ध होता है।

33. अपनी कोठरी में मौन से रहने वाले एक तपस्वी के लिए क्या करना उचित है? – क्या एक विवेकी और गंभीर व्यक्ति को वास्तव में यह बताने की आवश्यकता है कि जब वह अपने आप के साथ अकेला हो तो उसका आचरण कैसे करना है? – एक भिक्षु की कोठरी में रोने के सिवा और क्या काम होता है? और इससे बेहतर और क्या काम हो सकता है? स्वयं भिक्षु का अस्तित्व और उसका एकांत, जिसे मानव आनंद से दूर एक कब्र के समान माना जाता है, उसे सिखाते हैं कि उसकी गतिविधि रोना है। और सभी संतों ने इस जीवन को रोते हुए ही त्यागा। – अतःहम प्रभु से प्रार्थना करें कि वे हमें विलाप की कृपा प्रदान करें। क्योंकि यदि हमें यह कृपा, जो सभी उपहारों में सर्वोत्तम और उत्कृष्ट है, प्राप्त हो जाए, तो उसकी सहायता से हम पवित्रता प्राप्त कर लेंगे; और एक बार जब हम उसे प्राप्त कर लेंगे, तो वह इस संसार में हमारे जीवन के अंत तक हमसे छीनी नहीं जाएगी।

३४. हृदय से शुद्ध लोग धन्य हैं, क्योंकि ऐसा कोई क्षण नहीं होता जब वे आँसुओं की मिठास में आनंदित न हों—जिसमें वे हमेशा प्रभु को देखते हैं। जब आँसू उनकी आँखों में होते हैं, तो उन्हें उनकी प्रार्थना की ऊँचाइयों में उनके प्रकाशन का दर्शन प्राप्त होता है, और उनकी कोई प्रार्थना आँसुओं के बिना नहीं होती। ठीक यही बात प्रभु का आशय था जब उन्होंने कहा: *'धन्य हैं शोक करने वाले, क्योंकि उन्हें सांत्वना मिलेगी'* (मत्ती 5:4)। क्योंकि जब एक भिक्षु को, आँसुओं की शक्ति के द्वारा, भावुकता के क्षेत्र से परे जाने और आध्यात्मिक पवित्रता के मैदान में प्रवेश करने की कृपा मिलती है, तो वह वह सांत्वना पाता है जो परमेश्वर अपनी पवित्रता के लिए शोक करने वालों को देते हैं। आँसू बहाना और रोना निर्लिप्तता का वरदान है। और यदि रोने और विलाप करने वाले की आँसू, कुछ समय के लिए, न केवल उसे निर्लिप्तता की ओर मार्गदर्शन कर सकती हैं, बल्कि उसके मन को वासनाओं की स्मृति से पूरी तरह शुद्ध और मुक्त भी कर सकती हैं, तो फिर उन लोगों के बारे में क्या कहा जा सकता है जो, पूर्ण जागरूकता के साथ, दिन-रात इस अभ्यास को करते हैं?

35. संतों में से एक ने कहा कि शरीर पाप का मित्र बन जाता है जब वह प्रलोभन से डरता है, कि कहीं वह अति में न चला जाए और अपना जीवन न खो दे। इसलिए, पवित्र आत्मा उसे मरने के लिए विवश करता है (तपस्वी को मृत्यु के लिए स्वयं को समर्पित करने की प्रेरणा देकर)। क्योंकि वह जानता है कि जब तक वह नहीं मरता, वह पाप पर विजय प्राप्त नहीं कर सकता। यदि कोई चाहता है कि प्रभु उसमें वास करें, तो वह अपने शरीर को प्रभु की सेवा करने, प्रेरित द्वारा बताई गई आत्मा की आज्ञाओं में परिश्रम करने, और प्रेरित द्वारा वर्णित शरीर के कार्यों (गलातियों 5:19) से अपनी आत्मा की रक्षा करने के लिए विवश करता है। लेकिन शरीर, पाप का आदी हो जाने पर, दैहिक कृत्यों में विश्राम पाता है, और परमेश्वर की आत्मा को इसके फलों में कोई विश्राम नहीं मिलता। क्योंकि जब शरीर उपवास और नम्रता से थक जाता है, तब आत्मा प्रार्थना से बल पाती है।

36. जब शरीर मौन के दुखों से अत्यधिक दब जाता है, अभावों और कठिनाइयों को सहता है, और अपने जीवन को खोने की कगार पर होता है, तो वह आमतौर पर आपसे विनती करता है, यह कहते हुए: 'मुझे सभ्य जीवन जीने के लिए थोड़ी स्वतंत्रता दें; मैं अब सही मार्ग पर चल रहा हूँ, क्योंकि मैं हर तरह की पीड़ाओं से परखा गया हूँ'। और जैसे ही, दया करके, आप उसे उसके दुखों से शांत करते हैं और उसे कुछ राहत देते हैं, तो यह धीरे-धीरे आपको चापलूसी से फुसफुसाना शुरू कर देगा (और इसकी चापलूसी बहुत शक्तिशाली है): 'हम संसार में भी अच्छी तरह से जी सकते हैं, उन्हीं नियमों से जिनसे हम अब जी रहे हैं; क्योंकि हम कई तरह से परखे जा चुके हैं। बस मुझे लुभाओ, और अगर मैं तुम्हारी इच्छानुसार नहीं हुआ, तो हम वापस आ सकते हैं। मरुभूमि हमसे नहीं भागेगी।' – उस पर विश्वास मत करो, भले ही वह विनम्रता से विनती करे और कई वादे करे। वह जो कहता है उसे पूरा नहीं करेगा। जब आप उसकी मांग के आगे झुकते हैं, तो वह आपको बड़ी गिरावटों में धकेल देगा, जिनसे आप उठने और बचने में असमर्थ होंगे।

37. जब, प्रलोभनों का सामना करने के बाद, तुम निराशा में पड़ जाते हो और उनसे थक जाते हो, तो अपने आप से कहो: 'एक बार फिर तुम एक अशुद्ध और शर्मनाक जीवन की लालसा कर रहे हो।' – और यदि तुम्हारा शरीर तुमसे कहे: 'अपना जीवन लेना एक बड़ा पाप है,' तो उत्तर दो: 'मैं अपना जीवन इसलिए ले रहा हूँ क्योंकि मैं अशुद्धि में नहीं जी सकता। मैं यहाँ मर जाऊँगा ताकि अपनी आत्मा की सच्ची मृत्यु—ईश्वर से मृत्यु—का साक्षी न बनूँ। दुनिया में एक नीच जीवन जीने से तो मेरे लिए यहाँ मरना बेहतर है। मैंने अपने पापों के लिए यह मृत्यु स्वेच्छा से चुनी है। मैं अपनी जान ले रहा हूँ क्योंकि मैंने प्रभु के विरुद्ध पाप किया है; मैं अब उनकी क्रोध को और भड़काऊँगा नहीं। ईश्वर से दूर जीवन का क्या लाभ? मैं ये कठिनाइयाँ सहन करूँगा ताकि स्वर्ग की आशा से वंचित न हो जाऊँ। इस संसार में मेरे जीवन की ईश्वर को क्या परवाह, यदि मैं इसमें दुष्टता से जिएँ और ईश्वर के क्रोध को भड़काऊँ?"

38. एक संन्यासी के लिए संसार और सांसारिक चीजों को देखना हानिकारक है। और उस व्यक्ति के मन में कितना बड़ा परिवर्तन होता है, जो लंबे समय तक अपने भीतर मौन रहने के बाद, अचानक संसार के भँवर में वापस गिर जाता है, और ऐसी चीजों को देखता और सुनता है जो उसके लिए अपरिचित होती हैं! – हमें उन लोगों से धोखा न खाएं जो

यह दावा करते हैं कि कुछ चीजों को सुनने और देखने में हमें कोई हानि नहीं है, कि हमारे विचार एकांत में या संसार में एक जैसे ही रहते हैं, कि हमारी शालीनता को न तो कोठरी के अंदर और न ही बाहर कोई बाधा पहुँचती है, और न ही उसमें कोई प्रतिकूल परिवर्तन आता है, और यह कि लोगों और चीजों से मिलते-जुलते समय, हम वासनाओं का कोई उथल-पुथल महसूस नहीं करते। केवल ऐसे ही दृढ़ आत्मा वाले लोग इसका दावा कर सकते हैं—जो, भले ही उन्हें घाव लगें, उन्हें महसूस नहीं करते। लेकिन हम अभी तक ऐसी दृढ़ता प्राप्त नहीं कर पाए हैं; हम अभी भी ऐसे सड़ते हुए घावों को लिए हुए हैं जिनमें कीड़े पड़ जाएँगे यदि एक भी दिन के लिए, उन्हें उपेक्षित कर दिया जाए, बिना पट्टी के, बिना प्लास्टर के, और पट्टियों से सुरक्षित न किया जाए।

39. आत्मा, एक बार जब विश्वास में स्वयं को ईश्वर के हवाले कर देती है और बार-बार उसकी सहायता का अनुभव कर लेती है, तो वह अपनी भलाई के लिए और चिंतित नहीं रहती, बल्कि विस्मिय और मौन से बँध जाती है, और अपने पूर्व आचरण के तरीकों पर लौटकर उन्हें अपनाने में असमर्थ हो जाती है, अन्यथा वह ईश्वर की परम कृपा से वंचित हो जाएगा, जो गुप्त रूप से अविराम रूप से आत्मा की देखभाल करती है, उसकी परवाह करती है, और उसकी निरंतर निगरानी करती है – और वह इससे वंचित नहीं होगा क्योंकि ऐसे मामले में, यह अहंकारपूर्वक यह सपना देखता पाया जाएगा कि यह अपनी ही समझ की शक्ति से अपने लिए पर्याप्त रूप से प्रदान कर सकता है।

४०. जिन लोगों में विश्वास का प्रकाश नहीं रहता, वे ऐसी निर्लज्जता नहीं करते कि वे अपनी प्रार्थनाओं में फिर से ईश्वर से कहें: 'हमें यह प्रदान करें', या: 'इससे हमें मुक्त करें' – और न ही वे अपने लिए बिल्कुल भी परवाह करते हैं; क्योंकि विश्वास की आध्यात्मिक आँखों से वे हर क्षण पिता की व्यवस्था को देखते हैं, जिसके द्वारा वह सच्चा पिता उनकी रक्षा करते हैं; वह, अपने असीम महान प्रेम से, सभी सांसारिक पितृ प्रेम से परे हैं, और जो, सभी से ऊपर, हमें प्रचुरता से सहायता करने में सक्षम हैं और उनकी शक्ति है, उस सीमा से भी अधिक जितना हम पूछते, सोचते या कल्पना कर सकते हैं।

४१. जिसने भी विश्वास की मिठास चखने का योग्य समझा गया है, और जो लौकिक ज्ञान की ओर लौट गया है, वह उस व्यक्ति के समान है जिसने एक कीमती मोती पाया और उसे एक तांबे के सिक्के के लिए बदल दिया; और इसके अलावा, उस व्यक्ति के समान है जिसने पूर्ण स्वतंत्रता को त्याग दिया और भय और बंधन से भरी गरीबी की स्थिति में लौट आया।

४२. ज्ञान के आरोहण और अवरोहण के तीन मानसिक माध्यम हैं। ये माध्यम हैं: शरीर, आत्मा और परमात्मा। ज्ञान ईश्वर की तर्कशील प्राणियों को दी गई एक देन है, जो उनकी सृष्टि की शुरुआत में उन्हें प्रदान की गई थी; और अपनी प्रकृति से यह सरल और अविभाज्य है, जैसे सूर्य का प्रकाश, लेकिन इसके कार्य करने के तरीके के अनुसार इसमें परिवर्तन और विभाजन होते हैं। – इस कार्यप्रणाली के क्रम को सुनो।

43. *'ज्ञान की प्रथम श्रेणी'*। जब ज्ञान का अनुसरण कामुक इच्छा करती है, तो यह निम्नलिखित रूपों को एक में जोड़ देती है: धन, अहंकार, आभूषण, शारीरिक आराम, मौखिक ज्ञान की खोज—जो इस संसार में शासन करने और आविष्कारों, कलाओं और विज्ञानों में नवाचार को जन्म देने के लिए उपयुक्त है—और वह सब कुछ जिससे इस दृश्यमान संसार में शरीर को मुकुट पहनाया जाता है। – और इन विशिष्ट विशेषताओं के द्वारा, यह सोच विश्वास के विरुद्ध हो जाती है। – इसे केवल ज्ञान कहा जाता है; क्योंकि यह सभी दैवीय व्यवस्था को बाहर करता है, और शरीर के प्रभुत्व के कारण, मन में एक अतार्किक शक्तिहीनता भर देता है और अपनी सारी चिंता पूरी तरह से केवल इसी दुनिया की ओर निर्देशित करता है। इस दर्शन की स्वयं के बारे में धारणा इस प्रकार है: मानो यह एक मानसिक शक्ति हो जो गुप्त रूप से मनुष्य पर शासन करती हो, एक दैवीय व्यवस्था जो उस पर पूरी तरह से निगरानी रखती हो और उसकी देखभाल करती हो। इसलिए, यह संसार के शासन को ईश्वर की दिव्य व्यवस्था का परिणाम नहीं मानता; बल्कि मनुष्य में जो कुछ भी अच्छा है, उससे उसकी हानि से मुक्ति और कठिनाइयों तथा अनेक विपत्तियों के खिलाफ उसकी प्राकृतिक सुरक्षा जो हमारे स्वभाव के साथ गुप्त रूप से और खुले तौर पर जुड़ी होती हैं, उसे उसकी अपनी समझदारी और उसके अपने तरीकों का परिणाम प्रतीत होता है। स्वयं को धोखा देने वाले ज्ञान की यही धारणा है। यह कल्पना करता है कि सब कुछ उसकी अपनी योजना के अनुसार होता है; और इसमें यह उन लोगों से सहमत है जो यह दावा करते हैं कि इस दुनिया का कोई शासन नहीं है। हालाँकि यह अनवरत चिंता और शरीर के भय के बिना नहीं रह सकती; और इसलिए यह कायरता, दुख, निराशा, दानवों के भय, लोगों के भय, लुटेरों की अफवाहों, मौतों की खबरों, बीमारी में चिंता, अकाल और आवश्यक वस्तुओं की कमी के समय चिंता, मृत्यु के भय से परास्त हो जाती है, दुख और जंगली जानवरों का भय, और इसी तरह की सभी प्रकार की चीजें – जो मन को एक ऐसे समुद्र की तरह बना देती हैं जिसमें, घड़ी-घड़ी, दिन-रात, लहरें उठती रहती हैं और तैर रहे लोगों पर टूटती रहती हैं। चूँकि जीवन का यह तरीका, उस पर विश्वास की आशा में स्वयं की देखभाल ईश्वर को सौंपने में असमर्थ है, इसलिए यह लगातार अपनी हर बात से

संबंधति युक्तियों और साधन बनाने में व्यस्त रहता है। हालाँकि, जब भी किसी भी मामले में इसके द्वारा रचे गए तरीके अप्रभावी साबति होते हैं - और यह इसमें काम कर रही रहस्यमय व्यवस्था को पहचानने में विफल रहता है - तो यह उन लोगों से झगड़ता है जो इसे रोकते और इसका विरोध करते हैं। इस संबंध में, भले-बुरे के ज्ञान का वृक्ष इस मानसकिता के भीतर लगाया गया है, जसिने प्रेम को जड़ से उखाड़ दयिा है। – इसमें अहंकार और घमंड का बोलबाला है। – यह घमंड तो करती है, परन्तु अंधकार में चलती है, – और अपनी संपत्ति की तुलना पृथ्वी पर रहने वालों से करती है, यह न समझते हुए कि उससे भी कुछ बेहतर है।

४४. *'ज्ञान की दूसरी सीढ़ी'*। जब कोई व्यक्ति पहली सीढ़ी छोड़कर, आध्यात्मिक विचारों और इच्छाओं में लगा रहता है; तो, आत्मा के स्वभाव के प्रकाश में, वे निम्नलिखित उत्कृष्ट कर्म करते हैं: उपवास, प्रार्थना, दान, दिव्य शास्त्रों का अध्ययन, एक सदाचारी जीवन, वासनाओं के विरुद्ध संघर्ष, और इसी तरह। सभी अच्छे कर्म, आत्मा में पाए गए सभी उत्तम गुण, और मसीह के दरबार में सेवा में नियोजित अद्भुत तरीके—मार्गदर्शन के इस दूसरे चरण में, उनकी शक्ति के कार्य द्वारा—पवित्र आत्मा द्वारा ही पूरे किए जाते हैं। और यही वह है जो हृदय को विश्वास की ओर ले जाने वाले मार्ग दिखाता है, और उसमें सच्चे जीवन की ओर मार्गदर्शन को एकत्र करता है। पश्चाताप के बाद, पवित्र आत्मा की कृपा से हृदय को शुद्ध करने के उद्देश्य से, अच्छे कार्यों और तपस्या के श्रम किए जाते हैं। फिर भी यहाँ भी, मार्ग अभी भी सांसारिक और कठिन है। यह केवल वह मार्ग प्रदान करता है जो हमें विश्वास की ओर ले जाता है और उसका मार्गदर्शन करता है। मार्गदर्शन का एक और भी उच्च स्तर है। और यदि कोई सफल होता है, तो उसे मसीह की मदद से उस स्तर तक उठने का अवसर मिलेगा, जब वह लोगों से अलग एकांत में, धर्मग्रंथों के अध्ययन, प्रार्थना और अन्य अच्छे कार्यों के माध्यम से अपने आचरण की नींव रखता है, जिनके द्वारा मार्गदर्शन के दूसरे प्रकार से संबंधित सभी कुछ पूरा होता है। और इन्हीं के माध्यम से सब कुछ सुंदर साध्य होता है; इसे ही मामलों का संचालन कहा जाता है; क्योंकि इंद्रिय कार्यों के माध्यम से, देह की इंद्रियों द्वारा, कोई बाहरी स्तर पर अपना कार्य करता है।

४५. *आचरण की तीसरी डिग्री पूर्णता की डिग्री है।* अब सुनें कि एक व्यक्ति कैसे परिष्कृत होता है, आध्यात्मिकता प्राप्त करता है, और अपने जीवन के तरीके में अदृश्य शक्तियों के समान हो जाता है, जो अपनी सेवा इंद्रियों द्वारा उत्पन्न कर्मों के माध्यम से नहीं, बल्कि मन की देखभाल के माध्यम से करती हैं। जब यह समझ सांसारिकता और सांसारिक मामलों की चिंता से ऊपर उठ जाती है, और भीतर की आँखों से ओझल उस पर अपने विचारों का अन्वेषण करने लगती है, और उसकी दृष्टि ऊपर की ओर बढ़ती है तथा आने वाले युग की चिंता में विश्वास, हमें जो वादा किया गया है उसकी लालसा, और छिपे हुए रहस्यों की खोज से निर्देशित होती है; तब विश्वास स्वयं इस ज्ञान को आत्मसात करता है, इसे रूपांतरित करता है, और इसे नया जन्म देता है, ताकि यह पूरी तरह से आत्मा बन जाए। तब यह पंखों पर उड़कर अदेह लोक में पहुँच सकता है, अमूर्त सागर की गहराइयों को छू सकता है, बुद्धिमान और इंद्रिय प्राणियों की प्रकृति के भीतर शासन के दैवी और अद्भुत कार्यों की कल्पना मन में कर सकता है, और एक सरल तथा सूक्ष्म मन द्वारा बोधगम्य आध्यात्मिक रहस्यों की खोज कर सकता है। तब अंतकरण की इंद्रियाँ उस परमात्मा की गति के लिए जागृत हो जाती हैं, जो उस अमरत्व और अक्षय जीवन में प्रचलित होगी; क्योंकि इसी वर्तमान जीवन में भी, मानो गुप्त रूप से, आध्यात्मिक पुनरुत्थान प्राप्त होता है, जो सार्वभौमिक पुनरुत्थान की एक सच्ची गवाही है।

४६. ज्ञान के तीन चरण ये हैं। – जिस क्षण कोई व्यक्ति बुराई को भलाई से अलग करना शुरू करता है, और जब तक वह इस दुनिया से प्रस्थान नहीं कर जाता, उसकी आत्मा का ज्ञान इन्हीं तीन चरणों में बना रहता है। और सभी अधर्म और दुष्टता की परिपूर्णता, और धर्म की परिपूर्णता, और आत्मा के सभी रहस्यों की गहराइयों को समझने की क्षमता, इन तीन चरणों के भीतर ज्ञान के एक ही रूप से उत्पन्न होती है; और इसी के भीतर मन की हर गति निहित है, चाहे वह ऊपर उठे या नीचे उतरे, भले में, या बुरे में, या भले और बुरे के बीच के मध्य मार्ग में। इन्हीं श्रेणियों को संतों द्वारा: प्राकृतिक, अप्राकृतिक और अलौकिक कहा जाता है। और ये वे तीन दिशाएँ हैं जिनके अनुसार तर्कशील आत्मा की स्मृति को ऊपर उठाया और नीचे उतारा जाता है, जब, जैसा कि कहा गया है, कोई या तो प्रकृति के अनुरूप सत्य का अभ्यास करता है, या, प्रकृति से परे जाकर, प्रकृति से परे ईश्वर के चिंतन में इसकी स्मृति में मग्न हो जाता है, या फिर राक्षसों की भीड़ के साथ परिश्रम करते हुए अपने विवेक की संपत्ति को बर्बाद कर, सूअरों को चराने निकल जाता है।

४७. ज्ञान का पहला चरण आत्मा को ईश्वर की ओर यात्रा के श्रम के लिए ठंडा करता है। दूसरा चरण आत्मा को विश्वास के चरण में स्थित उस वस्तु की ओर तीव्र प्रगति के लिए उत्साहित करता है। तीसरा चरण, हालांकि, श्रम से विश्राम है, जिसमें मन एक ही अभ्यास में, भविष्य के रहस्यों में आनंदित होता है। लेकिन चूँकि हमारी

प्रकृतिअभी तक आध्यात्मिक मृत्यु की अवस्था और देह के बोझ से पूरी तरह ऊपर नहीं उठ सकती, जब तक कोई व्यक्ति देह में रहता है, वह दोनों के बीच एक संक्रमणकालीन अवस्था में रहता है। एक दयनीय भिखारी की तरह, उसकी आत्मा सद्गुण के दूसरे, मध्य चरण में सेवा करना शुरू कर देती है; दूसरे समयों में, उन लोगों की तरह जो पुत्रत्व की आत्मा प्राप्त कर चुके हैं, स्वतंत्रता के रहस्य में, यह आध्यात्मिक अनुग्रह में आनंदित होती है, उसे प्रदान करने वाले की योग्यता के अनुसार; और फिर से यह अपने कर्मों की विनम्रता में लौट आती है, जो शरीर की सहायता से किए जाते हैं। क्योंकिएक अपूर्ण युग में कोई पूर्ण स्वतंत्रता नहीं है।

४८. दूसरे स्तर पर कार्य कर्म और उसके निरंतर अभ्यास में निहित है; जबकितीसरे स्तर पर कार्य विश्वास का कार्य है, जो कर्मों से नहीं होता, बल्किआध्यात्मिक मानसिक छवियों के माध्यम से, एक शुद्ध आध्यात्मिक कृत्य में पूरा होता है; और यह इंद्रियों से परे है। – हालाँकि, विश्वास से हमारा तात्पर्य वह नहीं है जो कोई व्यक्ति पूजनीय दैवीय हाइपोस्टेसिस (Divine Hypostases) के बीच के अंतर और हमारे स्वभाव को धारण करके अवतार की अद्भुत व्यवस्था के बारे में रखता है – यद्यपि यह विश्वास अत्यंत उच्च है; – बल्कि वह विश्वास जो अनुग्रह के प्रकाश से आत्मा में प्रकाशित होता है, जो हृदय को बुद्धिमानीपूर्ण गवाही से मजबूत करता है, ताकि वह आशा की निश्चितता में न डगमगाए, जो सभी संदेहों से परे है। और यह विश्वास कानों की सुनने की क्षमता को तीक्ष्ण करने से नहीं, बल्कि उन आध्यात्मिक नेत्रों के द्वारा प्रकट होता है जो आत्मा के भीतर छिपे रहस्यों को, मांस के पुत्रों की आँखों से छिपी हुई अदृश्य दिव्य संपदा को देखते हैं, और जिन्हें आत्मा ने उन लोगों के लिए प्रकट किया है जो मसीह की मेज़ में भाग लेते हैं, मसीह के विधान द्वारा शिक्षा में, जैसा कि प्रभु ने कहा: 'यदि तुम मेरी आज्ञाओं को मानोगे, तो मैं तुम्हें सान्त्वना देनेवाला, अर्थात् सत्य का आत्मा, भेजूँगा, *जिसे संसार ग्रहण नहीं कर सकता, और जो तुम्हें सब सत्य का ज्ञान सिखाएगा'* (यूहन्ना 14:17, 26)।

४९. *ज्ञान के प्रकारों के बीच एक और अंतर है।* जो ज्ञान दृश्यमान से संबंधित है, या जो इंद्रियों के माध्यम से उसको ग्रहण करता है जो दृश्यमान से संप्रेषित होता है, उसे प्राकृतिक कहा जाता है। हालाँकि, जो ज्ञान मन की शक्ति से संबंधित है और, अपने आप में, अदेह प्राणियों के स्वभावों से संबंधित है, उसे आध्यात्मिक कहा जाता है; क्योंकिधारणा आत्मा द्वारा ग्रहण की जाती है, न कि इंद्रियों द्वारा। और इन दो स्रोतों (दृश्य और आध्यात्मिक चीजों की धारणा) के कारण, दोनों प्रकार का ज्ञान आत्मा तक बाहरी रूप से आता है। लेकिन दिव्य शक्ति द्वारा प्रदान किया गया ज्ञान अलौकिक कहा जाता है; और यह ज्ञान से भी अधिक अकल्पनीय और उच्च है। और आत्मा इस ज्ञान का चिंतन स्वयं के बाहर की किसी भौतिक वस्तु से नहीं प्राप्त करती, जैसा कि पहले दो प्रकार के ज्ञान में होता है; बल्किअपने भीतर, अमूर्त रूप से, चुपचाप, तीव्रता से और अपेक्षा से परे, यह उसके अस्तित्व की गहराइयों से प्रकट और प्रकट होता है; क्योंकि, जैसा किमसीह ने कहा, *'स्वर्ग का राज्य तुम्हारे भीतर है'* (लूका 17:21)—यह किसी पूर्वाभास के माध्यम से आशा को पोषित नहीं करता, न ही यह *'पालन-पोषण के साथ'* आता है, बल्कि सबसे भीतरी मन में अंकित छवि के भीतर, यह अपने आप प्रकट होता है, बिना किसी विचार के। ज्ञान का पहला प्रकार अथक प्रयास और परिश्रमपूर्वक अध्ययन का परिणाम है; दूसरा एक अच्छे जीवन और दृढ़ आस्था का परिणाम है; और तीसरा केवल आस्था के भाग्य के रूप में प्रदान किया जाता है, जिसके द्वारा ज्ञान को एक ओर रख दिया जाता है और कर्म समाप्त हो जाते हैं।

५०. हमारे पूजा-पाठ के ग्रंथों में निहित प्रार्थनाओं की शक्ति पर संदेह न करें, भले ही प्रार्थनाओं या प्रतिघण्टा पाठ के दौरान उनमें तीव्र भावना और अनवरत पश्चाताप न हो।

51. अनुभव से बोले गए किसी भी शब्द को आवश्यक मान लें, भले ही बोलने वाला विद्वान न हो; क्योंकि यद्यपि एक राजा का खजाना पृथ्वी पर किसी से भी बड़ा होता है, फिर भी वह एक भिखारी से लिया गया एक वस्त्र भी पूरक के रूप में स्वीकार करने से नहीं हिचकिचाता; और छोटी-छोटी धाराओं से ही नदियाँ भरती हैं और अपने प्रवाह में महान बन जाती हैं।

५२. भले का स्मरण और बुरे का स्मरण, मानो एक उँगली की तरह, हमें या तो हमारे विचारों की लज्जा या हमारे जीवन की महानता की ओर इशारा करते हैं, और प्रत्येक, अपनी प्रकृति के अनुसार, हमारे भीतर उन विचारों और प्रवृत्तियों को मजबूत करता है जो या तो धार्मिक हैं या दुष्ट। हम अपने मन के गूढ़ कोनों में इनके साथ व्यस्त रहते हैं; फिर भी इस मानसिक व्यस्तता में हमारे जीवन का मार्ग चित्रित होता है, और इसमें हम स्वयं को देख सकते हैं।

53. एक प्रेम ऐसा है जो तेल से जलने वाले छोटे दीपक के समान है, जो तेल सूख जाने पर बुझ जाता है – या बारिश से बहने वाली उस धारा के समान है जिसका प्रवाह उस पानी के सूख जाने पर रुक जाता है जो उसे पोषित करता है। लेकिन एक प्रेम ऐसा भी है जो धरती से फूटने वाले झरने के समान है, जो कभी सूखता नहीं। पहला मानव प्रेम है; दूसरा दिव्य है, जिसका स्रोत ईश्वर है।

54. क्या आप अपनी सेवा के दौरान भजनों के पाठ में आनंद लेना चाहते हैं, और उन आत्मा के वचनों के अर्थ को समझना चाहते हैं जिन्हें आप उच्चारति करते हैं? – श्लोकों की संख्या को पूरी तरह से अलग रख दो, श्लोकों की लय पर ध्यान मत दो, और आम दिखावे को त्याग दो; बल्कि अपने मन को आत्मा के वचनों के अध्ययन में डुबो दो, जब तक कि तुम्हारी आत्मा उच्च अंतर्दृष्टि से प्रेरित न हो जाए, और इसके माध्यम से प्रशंसा, या सकारात्मक दुःख की ओर प्रेरित न हो जाए। – एक गुलामीपूर्ण दृष्टिकोण में (केवल निर्धारित पाठ को दोहराने में), मन को कोई शांति नहीं मिलती; और भ्रम आमतौर पर मन को अर्थ और समझ के स्वाद से वंचित कर देता है और विचारों को बिखेर देता है। भ्रम को शैतान की रथ कहना उचित है, क्योंकि शैतान की आदत है, एक सारथी की तरह, मन पर सवार होने की, अपने साथ कई प्रकार की वासनाओं को लेकर, उनके साथ दुखी आत्मा में प्रवेश करने की, और उसे भ्रम में डुबो देने की।

५५. शत्रु द्वारा आपके मन में डाले गए विचारों से बहस न करें, बल्कि ईश्वर से प्रार्थना करके उनसे अपनी बातचीत को बीच में ही रोक दें। हमारे पास हमेशा ऐसे विरोधी विचारों का इस तरह से विरोध करने की शक्ति नहीं होती कि उन्हें हमेशा के लिए रोका जा सके; इसके विपरीत, ऐसे मामलों में, हम अक्सर उनसे एक ऐसा घाव खा जाते हैं जिसे भरने में बहुत समय लगता है। आपकी सारी बुद्धि और सारी समझदारी के बावजूद, दुश्मन आपको गिराने में सफल हो जाते हैं। लेकिन जब आप उन पर काबू पा भी लेते हैं, तब भी उन विचारों की अशुद्धता आपके मन को कलंकित करेगी, और उनकी दुर्गंध आपकी नाक में लंबे समय तक बनी रहेगी। हालाँकि, पहले तरीके को अपनाने से, आप इन सब और भय से मुक्त हो जाएँगे; क्योंकि ईश्वर के सिवा कोई और मदद नहीं है।

56. जब, अपनी कोठरी के सन्नाटे में रहते हुए, आप शारीरिक कार्य की ओर मुड़ें, तो अपने पिता की आज्ञा को धन के प्रति अपने प्रेम के लिए बहाना न बनाएं। निराशा से बचने के लिए, आपका कार्य छोटा हो जो मन को परेशान न करे; लेकिन यह न भूलें कि प्रार्थना, अपने उचित क्रम में, सर्वोपरि है।

५७. निश्चिंत रहो कि तुम्हारा रक्षक हमेशा तुम्हारे साथ है - और यह कि, सभी अन्य प्राणियों के साथ, तुम एक ही प्रभु के अधीन हो, जो एक ही इशारे से सभी चीजों को गति में लाता है और सभी चीजों का विधान करता है। तब दृढ़ खड़े रहो, और प्रसन्न रहो। न तो राक्षस, न ही शिकारी जानवर, और न ही दुष्ट मनुष्य तुम्हें नुकसान पहुँचाने या नष्ट करने की अपनी इच्छा को पूरा कर सकते हैं, जब तक कि शासक की इच्छा इसकी अनुमति न दे, और इसे एक निश्चित हद तक जगह न प्रदान करे। इसलिए, अपनी आत्मा से कहो: 'मेरा एक रक्षक है जो मेरी रक्षा करता है; और जब तक ऊपर से आज्ञा न हो, कोई भी प्राणी मेरे सामने नहीं आ सकता। यदि, हालाँकि, मेरे प्रभु की इच्छा यह है कि दुष्ट सृष्टि पर हावी हो जाएँ, तो मैं इसे बिना दुःख के स्वीकार करता हूँ, यह न चाहकर कि मेरे प्रभु की इच्छा अधूरी रह जाए।' इस प्रकार, अपनी परीक्षाओं के बीच, आप आनंद से भर जाएँगे, यह जानकर और पूरी तरह से महसूस करके कि यह सर्वोच्च की इच्छा है जो आपको नियंत्रित और निर्देशित करती है। इस प्रकार, प्रभु में आशा रखकर अपने हृदय को मज़बूत करें।

५८. जीभ पर संयम न केवल मन को ईश्वर की ओर उड़ान भरने के लिए प्रेरित करता है, बल्कि यह गुप्त रूप से शरीर द्वारा किए गए स्पष्ट कार्यों को भी महान शक्ति प्रदान करता है, जिससे उनका पूर्ण होना संभव होता है; और यह उसी प्रकार गुप्त कर्मों में भी प्रकाश डालता है, जैसा कि पूर्वज कहा करते थे, क्योंकि अपने होठों की रक्षा करने से अंतरात्मा ईश्वर की ओर उड़ान भरती है, बशर्ते कोई पूर्ण जागरूकता के साथ मौन का पालन करे।

५९. प्रत्येक सद्भावना के विचार के साथ '*उत्साह*' आता है, जिसकी प्रबलता जलते हुए कोयले के समान मानी जाती है; और यह आमतौर पर इस विचार की रक्षा करता है, और किसी भी विरोध, बाधा या अवरोध को उसके पास आने से रोकता है। यह एक ऐसा गुण है जिसके बिना कोई भी अच्छाई उत्पन्न नहीं हो सकती। मसीह में वस्त्र-धारी एक व्यक्ति ने इस उत्साह को एक कुत्ता और ईश्वर के विधान का रक्षक कहा है। उत्साह की यह शक्ति दो प्रकारों से जागृत, सुदृढ़ और प्रज्वलित होती है, घर (आत्मा) की रक्षा के लिए – और इसी प्रकार, इसे दो प्रकारों से थकान, निद्रा और आलस्य में लाया जाता है। यह (सबसे पहले) तब जागृत और प्रज्वलित होती है जब किसी व्यक्ति के मन में एक निश्चित '*भय*' आता है, जिससे वे अपने द्वारा प्राप्त किए गए, या प्राप्त करने का इरादा रखे गए, भले के चोरी हो जाने या नष्ट हो जाने से डरते हैं। जब यह भय जागृत होता है, तो उत्साह दिन-रात एक जलती हुई भट्टी की तरह प्रज्वलित होता है - और, एक केरूब (स्वर्गदूत) की तरह, लगातार अपने आसपास की निगरानी करता है और बाहर और अंदर, दोनों ओर से आने वाले सभी शत्रु प्रलोभनों से अपने भले की उत्साहपूर्वक रक्षा करता है। इस उत्साह के प्रज्वलित होने का एक और तरीका है: जब आत्मा में सद्गुण की इच्छा सबसे अधिक प्रबल हो जाती है। और आत्मा में यह इच्छा जितनी अधिक बढ़ती है, उतनी ही अधिक सद्गुण के प्रति उत्साह प्रज्वलित होता है। इसके शांत होने का पहला कारण है जब आत्मा में भलाई की इच्छा ही कम हो जाती है या समाप्त हो जाती है; और दूसरा

कारण तब होता है जब आत्मविश्वास और साहस का कोई विचार आत्मा में प्रवेश करता है और वहाँ जड़ जमा लेता है—और एक व्यक्ति यह आशा करने, सोचने और इस विचार से चिपके रहने लगता है कि उसे किसी भी शक्ति से हानि का डर रखने का कोई कारण नहीं है; इसलिए वह सतर्कता का हथियार त्याग देता है, और घर बिना पहरे के रह जाता है; प्रहरी कुत्ता सो जाता है और लंबे समय तक अपनी पहरेदारी छोड़ देता है। ये दोनों बातें इसलिए होती हैं क्योंकि अहंकार का कोई बहुत सूक्ष्म विचार आत्मा में प्रवेश कर गया है और वहाँ जड़ जमा चुका है; या क्योंकि कोई व्यक्ति क्षणिक चीजों की चिंता में, या दुनिया के साथ बार-बार होने वाले आकर्षक संपर्क में अधिक लिप्त हो गया है। या यह गर्भ से आ सकता है, जो सभी बुराइयों की जननी है। जब भी कोई तपस्वी संसार के संपर्क में आता है, तो उसकी आत्मा तुरंत ही थक जाती है। ऐसा ही तब होता है जब वह कई ऐसे लोगों के संपर्क में आता है, जो अहंकार के कारण, अनिवार्य रूप से उसकी आत्मा को कुचल देते हैं। दुनिया के संपर्क में आने वाले एक तपस्वी का मन उस नाविक के समान है जो समुद्र को शांति से पार करता है, लेकिन अचानक खुद को डूबी हुई चट्टानों के बीच पाता है और उसका जहाज टूट जाता है।

60. अच्छाई का चुनाव करना उस व्यक्ति का काम है जो उसे चाहता है; लेकिन उस चुनाव को पूरा करना ईश्वर का कार्य है। इसके लिए, एक व्यक्ति को ईश्वर की मदद की आवश्यकता होती है। इसलिए, आइए हम यह सुनिश्चित करें कि जब भी हमारे भीतर कोई अच्छी इच्छा उत्पन्न हो, तो उसके बाद हम बार-बार प्रार्थना करें, न केवल उसकी मदद के लिए, बल्कि यह जानने के लिए भी कि क्या यह इच्छा ईश्वर की इच्छा के अनुकूल है या नहीं। क्योंकि हर अच्छी इच्छा ईश्वर की ओर से हृदय में प्रवेश नहीं करती, बल्कि केवल वही प्रवेश करती है जो लाभकारी हो।

61. कभी-कभी कोई व्यक्ति भलाई की इच्छा करता है, फिर भी ईश्वर उसकी मदद नहीं करते; क्योंकि कभी-कभी ऐसी इच्छा शैतान से आती है, हमारे लाभ के लिए नहीं बल्कि हमारे नुकसान के लिए – या तो इसलिए कि वांछित प्रयास हमारी क्षमता से परे है, क्योंकि हम अभी तक इसके लिए उपयुक्त जीवन-पथ पर नहीं पहुँचे हैं, – या क्योंकि यह उस जीवन शैली से अलग है जिसे हमने अपनाया है, – या क्योंकि अभी वह समय नहीं आया है जब इसे पूरा किया जा सकता है, या जब हम इसे शुरू कर सकते हैं, – या क्योंकि हमारे पास इसे पूरा करने के लिए न तो पर्याप्त ज्ञान है और न ही शारीरिक शक्ति, – या क्योंकि समय की परिस्थितियाँ इसमें हमारे पक्ष में नहीं हैं। इस बीच, शैतान इस तरह की बात को विश्वसनीय दिखाने के लिए भरसक प्रयास करता है, ताकि हमें इसे करने के लिए राज़ी करके, वह हमारे मानसिक शांति को भंग कर सके या हमारे शरीर को नुकसान पहुँचा सके। इसलिए, अच्छे इरादों पर भी सावधानी से विचार करना चाहिए। हालाँकि, सब कुछ सलाह-मशविरे से करना बेहतर है।

62. पुण्य दुख की जननी है; दुख से विनम्रता आती है; और विनम्रता पर अनुग्रह प्रदान किया जाता है। और जो पुरस्कार बाद में मिलता है, वह न तो स्वयं पुण्य के लिए होता है, न ही उसके लिए किए गए श्रम के लिए, बल्कि उनसे उत्पन्न होने वाली विनम्रता के लिए होता है। यदि, हालांकि, वह विनम्रता खो जाती है, तो पूर्व का प्रयास व्यर्थ हो जाएगा।

63. प्रभु केवल आज्ञाओं का पालन ही नहीं, बल्कि आत्मा का सुधार चाहते हैं, जिसके लिए उन्होंने आज्ञाएँ स्थापित कीं। – शरीर अच्छे और बुरे दोनों कर्मों में एक ही प्रकार से कार्य करता है; मन, हालांकि, अपने स्वभाव के अनुसार या तो धार्मिक होता है या पाप करता है।

64. परीक्षाओं के बिना दिया गया उपहार प्राप्त करने वालों के लिए विनाश है। यदि आप ईश्वर के सामने अच्छा करते हैं, और वह आपको कोई उपहार देते हैं, तो उनसे विनती करें कि वह आपको आपकी योग्यता के अनुसार विनम्र होने की क्षमता दें, या उपहार पर एक संरक्षक नियुक्त करें, या उसे आपसे दूर कर दें, ताकि यह आपके विनाश का कारण न बने। क्योंकि धन का स्वामित्व सभी के लिए लाभदायक नहीं है।

६५. सद्गुणों के साथ दुख आते हैं। जो कोई दुखों से दूर भागता है, वह निस्संदेह सद्गुणों से भी विमुख हो जाता है। यदि आप सद्गुण चाहते हैं, तो हर प्रकार के दुख को स्वीकार करें। क्योंकि दुख ही नम्रता को जन्म देते हैं। जब तक हम सच्चे ज्ञान को प्राप्त नहीं कर लेते, हम परीक्षाओं के माध्यम से नम्रता के और करीब पहुँचेंगे। क्योंकि जो कोई भी बिना दुख के अपने सद्गुण में रहता है, उसके लिए घमंड का द्वार पूरी तरह से खुला रहता है।

66. जब कोई व्यक्ति अहंकार में रहता है, तो रक्षक देवदूत, जो उसके निकट रहता है और उसमें धर्म की चिंता जगाता है, उससे दूर हो जाता है। लेकिन जब कोई व्यक्ति इस देवदूत का अपमान करता है, और वह उससे दूर हो जाता है, तो एक अजनबी (अंधकार की आत्मा) उसके करीब आ जाता है - और उस समय से उसके पास धार्मिकता की कोई परवाह नहीं रहती।

६७. ईश्वर अक्सर धर्मात्माओं को विभिन्न चीजों से परीक्षा में डालने की अनुमति देते हैं—वह उन्हें हर तरफ से परीक्षाओं का सामना करने देते हैं, उनके शरीरों को पीड़ा देते हैं, जैसा उन्होंने आयोब के साथ किया था, उन्हें गरीबी में डालते हैं, लोगों को उनसे मुंह मोड़ने पर मजबूर करते हैं, और उन्होंने जो कुछ अर्जित किया है, उस पर आघात करते हैं; फिर भी उनके आत्माओं को कोई हानि नहीं पहुँचती। – और यह असंभव है, जब हम धर्म के मार्ग पर चलते हैं, कि हमें दुख का सामना न करना पड़े, कि शरीर बीमारी और परिश्रम से थक न जाए – और फिर भी अडिग रहे, बशर्ते कि हम सदाचार से जीने को प्रेम करें। – जब कोई मनुष्य ईश्वर के मार्ग पर चलता है, और उसके साथ ऐसा कुछ होता है; तो उसके लिए अपने मार्ग से भटकना उचित नहीं है, बल्कि उसे इसे बिना शिकायत के, आनंद के साथ स्वीकार करना चाहिए, और ईश्वर का धन्यवाद करना चाहिए कि उन्होंने उसे यह अनुग्रह भेजा है, और इस बात के लिए कि उसे, ईश्वर की कृपा से, परीक्षा में पड़ने और पैगंबरों, प्रेरितों और अन्य संतों के दुखों में भागीदार बनने के योग्य समझा गया है, जिन्होंने इस मार्ग के लिए दुख सहन किए। चाहे प्रलोभन उसे लोगों से, राक्षसों से, या देह से प्राप्त हों, उसे इसके लिए धन्यवाद देना चाहिए। क्योंकि ईश्वर के लिए यह असंभव है कि वह सत्य के लिए परीक्षाएँ भेजने के अलावा, उस व्यक्ति पर कोई कृपा करे जो उनके साथ रहना चाहता है; ठीक उसी तरह जैसे कोई व्यक्ति मसीह की कृपा के बिना इस महानता के योग्य नहीं हो सकता—अर्थात् परीक्षाओं में प्रवेश करना और आनंदित होना। यह मामला इतना महान है कि संत पौलुस स्पष्ट रूप से इसे एक उपहार कहते हैं जब किसी व्यक्ति को परमेश्वर में आशा के लिए पीड़ा सहने के योग्य समझा जाता है, और वे फिलिप्पियों से कहते हैं: *'क्योंकि परमेश्वर ने तुम्हें न केवल उस पर विश्वास करने का, बल्कि उसके लिए दुख सहने का भी अनुग्रह दिया है'* (फिलि. 1:29)। इसी तरह, संत पतरस ने अपने पत्र में लिखा है: *'यदि आप धार्मिकता के लिए दुख उठाते हैं, तो आप धन्य हैं'* (1 पतरस 3:14) – क्योंकि आप मसीह के दुखों में सहभागी बन गए हैं। आपको समृद्धि में रहते हुए न तो आनंदित होना चाहिए, और न ही दुख के समय में उदासीन रहना चाहिए, और न ही ऐसी परीक्षाओं को ईश्वर के मार्ग से अलग मानना चाहिए। क्योंकि उसका मार्ग अनादि काल से और पीढ़ी दर पीढ़ी क्रूस और मृत्यु के द्वारा स्थापित किया गया है। और ऐसा विचार (भगवान के मार्ग पर आधे मन से चलने का) कहाँ से आता है? – इससे यह समझें कि आप भगवान के मार्ग से बाहर हैं और उससे भटक रहे हैं; आप संतों के पदचिन्हों पर चलना नहीं चाहते, या आप अपने लिए एक और, विशेष मार्ग बनाने का इरादा रखते हैं, और उस पर बिना किसी पीड़ा के चलना चाहते हैं। ईश्वर का मार्ग दैनिक क्रूस है। उदासीनता का जीवन जीते हुए कोई भी स्वर्ग नहीं पहुँचा है। – जहाँ तक उदासीनता के मार्ग की बात है, हम जानते हैं कि इसका अंत कहाँ होता है।

68. सच्चे धर्मी लोग हमेशा अपने भीतर यह महसूस करते हैं कि वे ईश्वर के अनुग्रह के अयोग्य हैं – और यह तथ्य कि वे वास्तव में धर्मी हैं यह इस तथ्य से स्पष्ट है कि वे स्वयं को दुखी और ईश्वर की देखभाल के अयोग्य मानते हैं, और इसका इकरार गुप्त रूप से और खुलेआम करते हैं, और उन्हें पवित्र आत्मा द्वारा ऐसा करने में सक्षम बनाया जाता है, ताकि वे इस जीवन में रहते हुए कष्ट और पीड़ा में बने रहें। परमेश्वर ने, तथापि, उनके लिए आने वाले युग में विश्राम का समय सुरक्षित रखा है। और जिनमें प्रभु वास करते हैं, वे इसी कारण से विश्राम करने या दुख से मुक्त होने की इच्छा नहीं करते, यद्यपि समय-समय पर उन्हें रहस्यमय रूप से आध्यात्मिक सांत्वना दी जाती है।

६९. आत्मा की यही इच्छा है, कि उसके प्रियजन परिश्रम में बने रहें। जो विश्राम में रहते हैं, उनमें परमेश्वर का आत्मा नहीं वास करता। इसी से परमेश्वर के पुत्रों का अन्य लोगों से भेद होता है: कि वे क्लेशों में जीते हैं; जबकि संसार ऐश्वर्य और विश्राम पर गर्व करता है। ईश्वर की यह इच्छा नहीं थी कि उनके प्रियजन जब देह में हों तो विश्राम करें, बल्कि उन्होंने यह चाहा कि, संसार में रहते हुए, वे दुख, कठिनाई, परिश्रम, गरीबी, नग्नता, आवश्यकता, अपमान, अपमानजनक शब्दों, एक थके हुए शरीर और दुखद विचारों में बने रहें, ताकि जो वचन बोले गए थे वे उनमें पूरे हों: *'जगत में तुम्हें क्लेश होगा'* (यूहन्ना 16:33)। प्रभु जानते हैं कि जो लोग शान्ति में रहते हैं, वे उनके प्रेम में नहीं टिक सकते, और इसलिए वह उनसे शान्ति और आनन्द को दूर रखते हैं।

70. संतों द्वारा परमेश्वर के प्रति दिखाए गए प्रेम के माध्यम से, जो उनके नाम के लिए कष्ट सहने में प्रकट हुआ, उनके हृदय को परमेश्वर को बिना आवरण के मुख से देखने और उनसे आशा के साथ कुछ माँगने का *'साहस'* प्राप्त होता है। – साहसी प्रार्थना की शक्ति महान है। इसलिए, ईश्वर अपने संतों को हर तरह के दुख से परीक्षा में डालने की अनुमति देते हैं, ताकि वे उनकी सहायता का अनुभव कर सकें और यह महसूस कर सकें कि ईश्वर उनकी कितनी परवाह करते हैं। इन परीक्षाओं के माध्यम से वे ज्ञान प्राप्त करते हैं, और अनुभव से उन्हें सभी चीजों का ज्ञान मिलता है, ताकि राक्षस उनका मज़ाक न उड़ा सकें। यदि ईश्वर उन्हें केवल एक अच्छी चीज़ में ही प्रशिक्षित करते, तो अन्य क्षेत्रों में उनका मार्गदर्शन अधूरा रह जाता, और वे संघर्ष के समय अंधे हो जाते।

७१. यदि कोई व्यक्ति पहले विपत्ति से परखा नहीं जाता, तो वह अच्छाई की कदर नहीं जानता, ताकि जब वह बुराई के बीच अच्छाई का सामना करे, तो वह उसे समझदारी से इस्तेमाल कर सके, जैसे कि वह उसकी अपनी हो। अनुभव और अभ्यास से सीधे प्राप्त ज्ञान कितना आनंददायक है, और यह उन लोगों को कितनी शक्ति प्रदान करता है जिन्होंने लंबे समय के अनुभव से इसे अपने भीतर अर्जित किया है – यह उन लोगों द्वारा पहचाना जाता है जिन्होंने इस ज्ञान की सहायता, स्वाभाविक प्रवृत्ति की कमजोरी और दैवीय शक्ति की सहायता का अनुभव किया है, और इसके बारे में आश्वस्त हो गए हैं। क्योंकि वे यह तभी जान पाते हैं जब ईश्वर, पहले उन्हें सहायता करने से अपनी शक्ति को रोककर, उन्हें मानव स्वभाव की कमजोरी, प्रलोभनों की कठिनाई, शत्रु की चालाकी, और उनके सामने संघर्ष की प्रकृति का एहसास कराते हैं, कि वे स्वभाव से कैसे संपन्न हैं, और कैसे उन्हें दिव्य शक्ति द्वारा संरक्षित किया गया, उन्होंने कितनी दूरी तय की है, ईश्वर की शक्ति ने उन्हें कितना ऊँचा उठाया है, और जब यह दिव्य शक्ति उनसे वापस ले ली जाती है तो वे हर वासना के खिलाफ संघर्ष में कितने शक्तिहीन हो जाते हैं—ताकि इन सब से वे विनम्रता प्राप्त करें, ईश्वर के निकट आएं, उसकी मदद की प्रतीक्षा करने लगें, और प्रार्थना में लगे रहें। और उन्होंने यह सब कहाँ से प्राप्त किया होता, यदि उन्हें ईश्वर की अनुमति से इस बुराई में गिरकर बहुत सी बुराइयों का अनुभव न मिला होता, जैसा कि प्रेरित कहते हैं: *'कहीं ऐसा न हो कि मैं उन विशिष्ट प्रकटनों के कारण घमंडी हो जाऊँ, इसलिये मेरे शरीर में एक काँटा दिया गया, शैतान का एक दूत'* (2 कुरिन्थियों 12:7)? लेकिन परीक्षाओं में, बार-बार ईश्वर की सहायता का अनुभव करने पर, एक व्यक्ति दृढ़ विश्वास भी प्राप्त करता है; जिससे वह निडर हो जाता है और परीक्षाओं में समभाव प्राप्त करता है।

७२. परीक्षा हर व्यक्ति के लिए लाभदायक है। तपस्वियों को इसलिए परीक्षाओं का सामना करना पड़ता है ताकि वे अपनी आध्यात्मिक संपत्ति में कुछ जोड़ सकें; आत्मसंतुष्ट लोगों को, ताकि वे स्वयं को नुकसान से बचा सकें; नींद में डूबे लोगों को, ताकि वे जागने के लिए खुद को तैयार कर सकें; जो दूर खड़े हैं, उन्हें, ताकि वे ईश्वर के और करीब आ सकें; जो ईश्वर के हैं, उन्हें साहसपूर्वक आनंदित होने के लिए। – हर अनअनुभवी पुत्र को अपने पिता के घर से धन अपने लाभ के लिए नहीं मिलता। इसीलिए ईश्वर पहले परीक्षा और कष्ट देते हैं, और फिर अपना वरदान प्रदान करते हैं।

73. जब कोई व्यक्ति उदासीनता की अवस्था में होता है, तो वह मृत्यु के समय से डरता है; लेकिन जब वह ईश्वर के करीब आता है, तो वह आने वाले न्याय से डरता है; फिर भी जब वह पूरी तरह से ईश्वर की उपस्थिति में प्रवेश करता है, तो प्रेम से दोनों भय नष्ट हो जाते हैं। – ऐसा क्यों है? – क्योंकि जब तक कोई व्यक्ति देह के क्षेत्र में रहता है और एक सांसारिक जीवन जीता है, वह मृत्यु से भयभीत रहता है। लेकिन जब वह आध्यात्मिक समझ में होता है और एक सदाचारी जीवन जीता है, तो उसका मन हर पल आने वाले न्याय की याद में लगा रहता है; क्योंकि, स्वभाव से ही सीधा होने के कारण, वह आध्यात्मिक क्षेत्र में चलता है, अपनी समझ और जीवन के तरीके में लगा रहता है, और ईश्वर के निकट आने के लिए अच्छी तरह से तैयार रहता है। लेकिन जब वह सत्य के उस ज्ञान को प्राप्त कर लेता है, जो ईश्वर के रहस्यों के ज्ञान के जागृत होने और भविष्य के लिए उसकी आशा को मजबूत करने के माध्यम से उसके भीतर आता है, तो वह कामुक मनुष्य—जो एक पशु की तरह वध से डरता है—और विवेकी मनुष्य, जो ईश्वर के न्याय से डरता है, दोनों प्रेम में लीन हो जाते हैं; और पुत्र बनकर, वह एक भयानक लाठी से अनुशासित होने के बजाय प्रेम से सुसज्जित होता है, यह कहते हुए: *'मैं और मेरे पिता का घराना तो प्रभु की सेवा करेंगे'* (यहोशू 24:15)।

74. धन्य है वह जिसके विचार सदैव ईश्वर पर रहते हैं, और जो अपने हृदय के ज्ञान में केवल उसी के साथ संवाद में रहता है। ईश्वर में आनंद इस सांसारिक जीवन से भी अधिक शक्तिशाली है; और जिसने इसे पा लिया है, वह न केवल दुख की परवाह नहीं करेगा, बल्कि अपनी ही ओर दृष्टि भी नहीं डालेगा। प्रेम जीवन से भी मीठा है, और ईश्वर की समझ, जिससे प्रेम का जन्म होता है, वह तो शहद और शहद के छत्ते से भी मीठी है। क्योंकि प्रेम के लिए, जिनसे प्रेम है उनके खातिर एक दुखद मृत्यु को स्वीकार करना कोई दुख नहीं है। प्रेम ज्ञान का फल है; और ज्ञान आध्यात्मिक स्वास्थ्य का फल है, जबकि आध्यात्मिक स्वास्थ्य धैर्यपूर्वक सहन करने से उत्पन्न एक शक्ति है।

७५. शाश्वत जीवन ईश्वर में सांत्वना है; और जिसने भी ईश्वर में सांत्वना पाई है, वह सांसारिक सांत्वना को अनावश्यक मानता है। यदि किसी ने आत्मा से ज्ञान प्राप्त किया है, तो वह उसे स्वयं ज्ञान से पहचानता है, जो उसके अस्तित्व की गहराई में और उसकी भावनाओं में, उसे विनम्र आचरण सिखाता है। यदि किसी ने नम्रता प्राप्त की है, तो वह इसे इस तथ्य से पहचानता है कि वह दुनिया को अपने संबंध या अपने शब्दों के माध्यम से खुश करना घृणित समझता है; और यह कि इस दुनिया का वैभव उसकी दृष्टि में घृणित है।

७६. (कर्म में) वासनाएँ वे प्रवृत्तियाँ हैं, जो इस संसार की चीज़ों से उत्तेजति होकर, आवश्यकता के बहाने जीवन की ज़रूरतों को पूरा करने के लिए मनुष्य को लुभाती हैं; और जब तक यह संसार बना रहता है, तब तक ये प्रवृत्तियाँ समाप्त नहीं होतीं। लेकिन जसि व्यक्तिको दैवी कृपा प्राप्त हुई है, जसिने इससे परे कुछ उच्चतर का स्वाद चखा और अनुभव कयिा है, वह इन प्रवृत्तयिों को अपने हृदय में प्रवेश करने नहीं देता; क्योंकि उनकी जगह एक और, बेहतर इच्छा उनमें हावी हो गई है – और न तो ये वासनाएँ स्वयं और न ही जो वे उत्पन्न करती हैं, उनके हृदय के पास आती हैं, बल्कि बाहर, निष्क्रयि रहती हैं – ऐसा इसलिए नहीं कि अब कोई तीव्र इच्छाएँ नहीं हैं, बल्कि इसलिए कि जो हृदय उन्हें ग्रहण करता, वह उनके लिए मृत है और किसी और चीज़ से जीवति है; यह इसलिए नहीं कि मनुष्य ने तर्क और अच्छे कर्मों के अभ्यास से शांति प्राप्त कर ली है, बल्कि इसलिए कि उसके मन में उसे परेशान करने के लिए कुछ भी नहीं है, उसकी चेतना तृप्त हो चुकी है, क्योंकि उसने किसी और चीज़ में आनंद पाया है।

७७. यदि हम संयम के नियम और विवेक की साधना को नियंत्रण में रखें, तो कामनाओं के विरुद्ध संघर्ष मन के पास भी नहीं आएगा। वे हृदय में प्रवेश करने से संघर्ष के द्वारा नहीं, बल्कि चेतना और समझ के संतृप्ति—जिससे आत्मा भर जाती है—और आत्मा के भीतर पाए जाने वाले अद्भुत चिंतन की इच्छा के द्वारा रोकी जाती हैं। जब तक कोई व्यक्ति जीवति है, उसे अपने खजाने की रक्षा के लिए संयम, सतर्कता और चौकसी की आवश्यकता होती है। लेकिन अगर वह अपने लिए निर्धारित सीमा (उपवास) को छोड़ देता है, तो वह कमजोर हो जाएगा और लूट लिया जाएगा। किसी को केवल फल देखने तक ही परिश्रम नहीं करना चाहिए; बल्कि किसी को अंत तक प्रयास करना चाहिए। क्योंकि यह असामान्य नहीं है कि पके हुए फल को भी अचानक ओले से मार गिराया जाए।

७८. यदि हम स्वयं को अच्छे चिंतन (हृदय में शिक्षा) की आदत डाल लें, तो जैसे ही हम अपने वासनाओं का सामना करेंगे, हमें उनसे शर्म आएगी। लेकिन हमें उनके अपराध के कारण अपनी वासनाओं के करीब आने में भी शर्म आएगी।

७९. जब, ईश्वर के प्रेम से, आप कोई कर्म करना चाहें, तो इस इच्छा की सीमा मृत्यु को निर्धारित करें; और इस प्रकार आप वास्तव में हर वासना के विरुद्ध संघर्ष में शहादत के पद पर आरोहण के योग्य माने जाएँगे, और उस सीमा के भीतर आप जो कुछ भी सामना करेंगे उससे आपको कोई हानि नहीं होगी, बशर्ते आप अंत तक दृढ़ रहें और ढीले न पड़ें। एक दुर्बल मन के विचार सहनशक्ति को भी दुर्बल बना देते हैं; लेकिन एक दृढ़ मन अपने अनुयायियों को एक ऐसी शक्ति प्रदान करता है जो प्रकृति में नहीं होती।

८०. इस संसार का जीवन पत्थर पर उकेरे गए अक्षरों के समान है; और जो चाहे उनमें जोड़ सकता है या घटा सकता है, और अक्षरों को बदल सकता है। लेकिन आने वाली ज़िंदगी खाली पन्नों पर अंकित पांडुलिपियों की तरह है, जो शाही मुहर से सीलबंद हैं, जिनमें न तो कुछ जोड़ने की और न ही कुछ घटाने की अनुमति है। इसलिए, जब हम परिवर्तन के बीच में हैं, तो हमें अपने प्रति सचेत रहना चाहिए; और जब तक हमारे अपने जीवन की पांडुलिपि पर हमारा अधिकार है—जिसे हम अपने ही हाथों से लिखते हैं—तब तक हमें इसे सदाचारी जीवन से समृद्ध करने और अपने पूर्व जीवन की कमियों को मिटाने का प्रयास करना चाहिए। क्योंकि जब तक हम इस संसार में हैं, ईश्वर इस जीवन से हमारे प्रस्थान के क्षण तक न तो भलाई पर और न ही बुराई पर अपनी मुहर लगाता है।

८१. प्रार्थना के लिए अभ्यास की आवश्यकता होती है, ताकि मन उसमें दीर्घकाल तक लगे रहने से निपुण हो जाए। प्रार्थना से पहले एकांत (अकेलापन, सभी बाहरी चीजों से विचारों को हटाना) होता है। प्रार्थना के लिए एकांत आवश्यक है, और प्रार्थना इसलिए आवश्यक है ताकि हम ईश्वर के प्रति प्रेम प्राप्त कर सकें; क्योंकि प्रार्थना के माध्यम से ही हमें ईश्वर से प्रेम करने के कारण मिलते हैं।

८२. हमें यह जानना चाहिए कि ईश्वर के साथ हर निजी संवाद, ईश्वर के लिए एक अच्छे मन की हर चिंता, आध्यात्मिक मामलों पर हर चिंतन प्रार्थना द्वारा स्थापित होता है, प्रार्थना के नाम से जाना जाता है, और इस नाम के अंतर्गत एक साथ लाया जाता है, – चाहे आप इसका अर्थ विभिन्न पठन, या ईश्वर की महिमा में ओठों की आवाज़, या प्रभु के लिए एक विचारशील शोक, या शारीरिक प्रणाम, या भजनों का गायन, या बाकी सब कुछ समझें जो सच्ची प्रार्थना की संपूर्ण रस्म बनाता है, जिससे ईश्वर का प्रेम जन्म लेता है; क्योंकि प्रेम प्रार्थना से आता है, और प्रार्थना एकांत में रहने से; हमें एकांत की आवश्यकता है ताकि हम परमेश्वर के साथ अधिक स्वतंत्र रूप से संवाद कर सकें।

83. अपने भीतर सकारात्मक परिवर्तन के समय घमंड से सावधान रहें। प्रार्थना में प्रभु के सामने इस घमंड की बारीकियों के संबंध में अपनी कमजोरी और अपनी अज्ञानता को सावधानीपूर्वक प्रकट करें, ताकि आप किसी भी शर्मनाक बात में परित्यक्त न हों या प्रलोभन में न पड़ें; क्योंकि घमंड के बाद व्यभिचार आता है, और आत्म-तुष्टिकरण के बाद भ्रम।

84. जब आप सभी अन्य तपस्या संबंधी प्रथाओं को तराजू के एक पलड़े पर और मौन को दूसरे पर रखेंगे, तो आप पाएँगे कि मौन उन पर भारी पड़ता है। लोगों के पास बहुत सी सलाहें होती हैं; लेकिन जब कोई मौन के करीब आता है, तो उसके लिए उन सलाहों पर अमल करना अनावश्यक हो जाएगा, और उसके पिछले कर्म भी अनावश्यक साबित होंगे, और वह खुद को उन कर्मों से ऊपर पायेगा; क्योंकि वह पूर्णता के करीब आ गया है।

८५. दान को हमेशा आपके लिए सर्वोपरि रखें। हमारी दया एक दर्पण हो, ताकि हम अपने भीतर वह समानता और वह सच्ची प्रतिमा देख सकें जो ईश्वर के स्वभाव और ईश्वर के सार में विद्यमान है। एक क्रूर और निर्दयी हृदय कभी शुद्ध नहीं होगा। एक दयालु व्यक्ति अपनी आत्मा का चिकित्सक होता है; क्योंकि, मानो, भीतर से एक प्रबल हवा से, वे वासनाओं के अंधकार को दूर करते हैं। यह, सुसमाचार के जीवन के वचन के अनुसार, एक अच्छा ऋण है जो हम ईश्वर को देते हैं।

८६. जब तुम अपने बिस्तर के पास जाओ, तो उससे कहो: 'हे बिस्तर, आज रात शायद तू मेरा ताबूत होगा; और मुझे नहीं पता कि क्षणिक नींद के बजाय, शाश्वत नींद इसी रात मुझ पर हावी हो जाएगी।' इसलिए, जब तक तुम्हारे पैर चलते हैं, तब तक बंधन में पड़ने से पहले, जो कभी न खुलें, अच्छे कर्म करने निकल पड़ो। जब तक तुम्हारी उंगलियाँ हैं, मृत्यु के आने से पहले प्रार्थना में स्वयं को सूली पर चढ़ा लो। जब तक तुम्हारी आँखें हैं, उन्हें धूल से ढकने से पहले आँसुओं से भर लो। जैसे ही हवा लगते ही गुलाब मुरझा जाता है, वैसे ही यदि तुम्हारे अस्तित्व को बनाने वाले तत्वों में से कोई एक भी तुममें बंद हो जाए, तो तुम मर जाओगे। हे मनुष्य, हृदय में यह बात बसा ले कि तेरा प्रस्थान निकट है, और स्वयं से निरंतर कहो: 'देखो, जो दूत मेरे लिए आया है, वह तो पहले से ही द्वार पर है। तो फिर मैं यहाँ क्यों बैठा हूँ?' मेरा प्रस्थान शाश्वत है; कोई वापसी नहीं होगी।

८७. जो मसीह से वार्तालाप करना पसंद करता है, वह एकांत को भी पसंद करता है। लेकिन जो बहुतों के बीच रहना पसंद करता है, वह इस संसार का मित्र है। यदि आप पश्चाताप से प्रेम करते हैं, तो मौन से भी प्रेम करें। क्योंकि मौन के बिना, पश्चाताप पूर्णता को प्राप्त नहीं करता है। यदि आप मौन से प्रेम करते हैं—जो पश्चाताप की जननी है—तो खुशी-खुशी उस थोड़ी-सी शारीरिक असुविधा, निंदा और अपमान को अपनाएँ जो आपके मौन के कारण आप पर डाला जाएगा। मौन के प्रति भक्ति मृत्यु की एक निरंतर प्रतीक्षा है। जो कोई भी इस मानसिकता के बिना मौन में प्रवेश करता है, वह इस जीवन शैली से अनिवार्य रूप से जुड़ी हुई बातों को सहन नहीं कर सकता।

८८. जब तक हमारे हृदय में संसार का नाश न हो जाए, तब तक हमें मौन से प्रेम करना चाहिए। हमें हमेशा मृत्यु को याद रखना चाहिए, और इस विचार से अपने हृदय से ईश्वर के समीप आना चाहिए – और सांसारिक सुख हमें तुच्छ प्रतीत होंगे।

८९. मौनियों में से एक ने कहा: 'मैं मौन का अभ्यास इसलिए करता हूँ ताकि पढ़ते और प्रार्थना करते समय श्लोक मुझे आनंददायक लगें। और जब, उन्हें समझने के आनंद से, मेरी जीभ मौन हो जाती है; तब, जैसे किसी सपने में, मैं एक ऐसी अवस्था में प्रवेश करता हूँ जिसमें मेरे इंद्रियाँ और विचार शांत हो जाते हैं। और फिर, जब यह मौन जारी रहता है, तो स्मृतियों के कोलाहल से मेरा हृदय शांत हो जाता है, और आंतरिक विचारों के माध्यम से आनंद की लहरें निरंतर मुझ तक पहुँचती हैं, जो अचानक, सभी अपेक्षाओं से परे, मेरे हृदय को आनंदित करती हैं।"

९०. एक अन्य ने कहा: "मौन नए विचारों के बहाने और कारणों को समाप्त कर देता है, और अपनी ही दीवारों के भीतर हम पहले जिन बातों में व्यस्त थे, उनकी स्मृति को क्षीण और मुरझाने के लिए छोड़ देता है। और जब पुराने विचार क्षीण हो जाते हैं, तो मन उन्हें सुधारकर अपनी उचित व्यवस्था में लौट आता है।"

91. एक और कहते हैं: "अपने लिए एक ऐसा अभ्यास चुनें जो आनंद लाए – रात के दौरान अखंड जागरण, जिसके दौरान सभी धर्मपिता ने पुराने मनुष्य को त्याग दिया और उन्हें मन का नवीनीकरण प्राप्त हुआ। इन घड़ियों में आत्मा उस अमर जीवन का अनुभव करती है, और इस अनुभव के माध्यम से अंधकार के वस्त्रों को त्याग देती है और स्वयं में पवित्र आत्मा को ग्रहण करती है।"

९२. और इसके अलावा: "इन (बाहरी) इंद्रियों को मौन और लोगों से विरक्ति के बिना आत्मा के अधिकार के अधीन करना असंभव है; क्योंकि तर्कशील आत्मा, इन इंद्रियों—और अपनी ही इंद्रियों—के साथ स्वाभाविक रूप से एकजुट और गुंथी हुई होने के कारण, उनके प्रभाव में, अनजाने में विचारों से बहक जाती है, जब तक कि कोई व्यक्ति गुप्त प्रार्थना में सतर्क न रहे।"

93. जैसे संयम का कान उपवास के पसीने के बीज से निकलता है, वैसे ही कामवासना की तीव्रता तृप्ति से उत्पन्न होती है, और अशुद्ध अति-आसक्ति से। जब पेट भूखा और विनम्र होता है, तो शर्मनाक विचार आत्मा में प्रवेश नहीं कर सकते।

९४. कैसे आपकी सुंदरता, अर्थात् पवित्रिता, नंगे धरती पर लेटने से, भूख की उस पीड़ा से जो नींद छीन लेती है, शरीर के उस कष्ट से प्रकट होती है, जो भोजन त्यागने पर पसलियों और पेट के बीच एक गहरी खाई बन जाता है! हमारे शरीर में लिया गया हर निवाला और देह की हर विश्राम-स्थिति हमारे भीतर शर्मनाक कल्पनाओं और भयानक फैंटेसी को जन्म देती है; और जैसे ही वे उत्पन्न होती हैं, वे हमें शर्मनाक कार्यों की ओर एक गुप्त प्रवृत्ति के लिए उकसाती हैं। लेकिन पेट और हमारे विचारों की रिक्तता हमारे मन को एक मरुस्थल बना देती है, जो विचारों से अछूता और सभी विद्रोही विचारों से शांत रहता है।

९५. *मौन का पालन करने वाले के लिए कुछ आवश्यक निर्देश:* यदि विभिन्न सेवाओं के दौरान, आप स्वयं को यथासंभव मन की चंचलता से मुक्त पाते हैं, और अचानक आपकी जीभ पर काबू हो जाता है, और आपकी स्वतंत्र इच्छा के बिना मौन की बेड़ियाँ आपकी आत्मा पर पड़ जाती हैं, और यह लंबे समय तक मौन के बाद होता है; तो जान लो कि अपनी मौन में तुम प्रगति कर रहे हो, और नम्रता ने तुम्हारे भीतर जड़ें जमाना शुरू कर दिया है। क्योंकि केवल मौन वास्तव में निंदनीय है। यदि आप अपने आत्मा में यह महसूस करें कि उसमें उत्पन्न होने वाले प्रत्येक विचार, प्रत्येक स्मृति और आपके मौन के दौरान होने वाले चिंतन के क्षणों में, आपकी आँखें आँसुओं से भर आती हैं, और आँसू बिना बुलाए आपकी गालों पर बहने लगते हैं; तो जान लो कि तुम्हारे सामने एक दरार पड़नी शुरू हो रही है, जो विरोधियों के विनाश के लिए है। यदि आपको अपने भीतर यह अनुभव होता है कि समय-समय पर, आपके विचार—बिना किसी पूर्व इरादे के, और सामान्य क्रम से हटकर—आपके भीतर बहुत गहराई तक उतर जाते हैं, और लगभग एक घंटे, या जितने भी समय के लिए, इसी अवस्था में बने रहते हैं, और फिर आप देखते हैं कि आपके विचारों में शांति छा जाती है—और आपके साथ ऐसा बार-बार होता है; तो जान लो कि एक बादल तुम्हारे आवास पर छाना शुरू हो गया है। हालाँकि, यदि जब तुम इस कार्य को शुरू करते हो, तो तुम्हें उन वासनाओं से शांति नहीं मिलती जो तुम्हें परेशान करती हैं, तो आश्चर्यचकित मत हो। जिस प्रकार संसार की गहराइयाँ, जब सूर्य की किरणों से वंचित हो जाती हैं, तो लंबे समय तक अंधेरी रहती हैं, उसी प्रकार औषधियों की सुगंध और लोहबान की खुशबू, जो हवा में फैलती है, बिखरने और गायब होने से पहले काफी समय तक बनी रहती है; इसी तरह, कामवासनाएँ, जैसे कसाई की दुकान पर खून चाटने के आदी कुत्ते, जब उन्हें उनका सामान्य भोजन नहीं दिया जाता है तो तब तक भौंकती रहती हैं, जब तक कि उनकी पुरानी आदत की शक्ति टूट नहीं जाती। हालाँकि, जब आप आगे बढ़ेंगे, तो आपको अपनी आत्मा में निम्नलिखित स्पष्ट संकेत निकट ही मिलेंगे: आप हर चीज़ में आशा से मज़बूत होंगे और प्रार्थना से समृद्ध होंगे; – जब भी आप लोगों से मिलेंगे और मानव स्वभाव की दुर्बलता को महसूस करेंगे, तो आपका मन कभी भी उस चीज़ की कमी नहीं महसूस करेगा जो आपके भले के लिए हो (प्रत्येक ऐसा अवसर आपको अहंकार से बचाएगा); – आपके पड़ोसी की खामियाँ आपकी नज़रों में ध्यान देने योग्य नहीं रहेंगी; – आप इस शरीर से उसी इच्छा के साथ विदा होने के लिए तरसेंगे, जिससे आप आने वाले युग में निवास करना चाहेंगे; – आपके साथ होने वाली हर दुखद परीक्षा के संबंध में, चाहे वह खुले तौर पर हो या गुप्त रूप से, आप पाएँगे कि यह सब आप पर न्यायपूर्वक और ईश्वर के निर्णय के अनुसार आया है, और आप इसके लिए ईश्वर का धन्यवाद करेंगे।

९६. वासनाएँ या तो कुछ कल्पनाओं से, या कल्पनाओं के बिना एक अनुभूति से, और स्मृति से उत्तेजित होती हैं—जो शुरुआत में बिना किसी वासनापूर्ण हलचल या विचारों के होती है—जो बाद में चिड़चिड़ाहट को जन्म देती है।

९७. पढ़ाई के साथ निरंतर जागरूकता, और उसके बाद बार-बार प्रणाम करना, परिश्रमी अभ्यास के माध्यम से, मन की एक शांतिपूर्ण अवस्था लाने में निश्चित रूप से सफल होगा। और जिसने भी इसे प्राप्त किया है, उसने ठीक इन्हीं साधनों के द्वारा ऐसा किया है। जो लोग इसे फिर से प्राप्त करना चाहते हैं, उन्हें मौन में रहना चाहिए, और साथ ही जो कहा गया है उसका अभ्यास करना चाहिए; लेकिन सबसे पहले और सबसे महत्वपूर्ण, उन्हें अपने विचारों को अपनी आत्मा के अलावा किसी और चीज़ से जुड़ने न देना चाहिए; उन्हें आंतरिक मनन का अभ्यास करना चाहिए, और अपने ही कार्यों पर चिंतन करते हुए, उन्हें ठीक उन्हीं का अभ्यास करना चाहिए जिनमें हमें एक विशेष भावना विशेष रूप से करीब लगती है, एक ऐसी भावना जो हमें अच्छे मानसिक दायरे में स्थापित करती है।

९८. प्रत्येक तर्कशील स्वभाव में अनगिनत परिवर्तन होते हैं, और प्रत्येक व्यक्ति में हर क्षण परिवर्तन होते हैं। एक सूक्ष्मदर्शी व्यक्ति स्वयं का परीक्षण करके इसे समझ सकता है; यदि वे संयमित-चित्त बने रहें और अपने मन में स्वयं का अवलोकन करें, तो वे आसानी से पता लगा लेंगे कि किसी भी समय उनके विचारों में क्या परिवर्तन होते हैं, वे कैसे अचानक एक शांतिपूर्ण अवस्था से भ्रम की स्थिति में चले जाते हैं, और किन कारणों से। संत मकारियस ने अपने भाइयों को दिए गए निर्देशों में इस बारे में लिखा है, और उन्हें बुरी ओर होने वाले बदलावों पर निराश न होने की सलाह दी है; क्योंकि शुद्धता की सीढ़ी पर खड़े लोग भी, ठीक वैसे ही जैसे हवा ठंडी हो जाती है, हमेशा एक बेहतर स्थिति से एक बदतर स्थिति में गिरने का अनुभव करते हैं, भले ही उनकी ओर से कोई लापरवाही या आत्म-संतुष्टि

हो; इसके विपरीत, जब वे अपने अनुशासन का पालन करते हैं, तब भी उनकी इच्छा के विरुद्ध ऐसे पतन उन पर आते हैं। धन्य मार्क भी यही पुष्टि करते हैं, कहते हुए: 'हर किसी में परिवर्तन होते हैं, जैसे हवा में होते हैं।' *'हर किसी में'*, अर्थात्, न केवल सबसे निम्न और सबसे बुरे में, बल्कि सबसे सिद्ध लोगों में भी। जैसे प्रकृति में ठंड के तुरंत बाद गर्मी आती है – और इसी तरह ओले के बाद कुछ ही समय में मौसम साफ हो जाता है – वैसे ही हमारे आध्यात्मिक अनुशासन में भी है: कभी संघर्ष होता है, तो कभी अनुग्रह से सहायता मिलती है; कभी-कभी आत्मा उथल-पुथल में होती है और क्रूर लहरें उसके विरुद्ध उठती हैं – और फिर एक परिवर्तन होता है, क्योंकि अनुग्रह आता है और मानव हृदय को परमेश्वर की ओर से आनंद और शांति, तथा पवित्र और शांतिपूर्ण विचारों से भर देता है।

९९. अत; जब आप उथल-पुथल में हों, तो निराश न हों; और जब आप शांति से घिरे हों, तो अहंकारी न बनें। इसके विपरीत, अपने भीतर उन अशुद्ध विचारों और उन अश्लील कल्पनाओं की अधिक बारीकी से जाँच करें जो उथल-पुथल के समय, विचारों के भ्रम और अव्यवस्था के घड़ी में आपके मन में जड़ें जमा चुकी थीं; – इस पर भी चिंतन करो कि तुम्हारे जुनून तुम्हें कितनी जल्दी भटका ले गए, और जब तुम्हारा मन धूमिल था तो तुम उनसे बातें करते रहे ; और जान लो कि यह सब हमारे विनम्र होने के लिए ईश्वर की व्यवस्था से हुआ, क्योंकि वही हमारे प्रत्येक के लिए लाभकारी चीजों की व्यवस्था करते हैं।

१००. विनम्रता, पुण्य कर्मों के बिना भी, कई पापों को क्षम्य बना देती है; लेकिन विनम्रता के बिना, पुण्य कर्म भी व्यर्थ हो जाते हैं, और वास्तव में हमें बहुत नुकसान पहुँचाते हैं। जैसे सभी भोजन में नमक होता है, वैसे ही हर सद्गुण में विनम्रता होती है। इसे प्राप्त करने के लिए, हमें निरंतर आत्म-निम्नता और विवेकपूर्ण दुख के साथ अपने विचारों में शोक करना चाहिए। और यदि हम इसे प्राप्त कर लेते हैं, तो यह हमें ईश्वर के पुत्र बना देगा।

101. हमारे प्रभु ने प्रार्थना में हमारी कमजोरी के लिए सहारा दिखाया है, यह कहते हुए: 'जागो, *"जागते रहो और प्रार्थना करो, कहीं तुम परीक्षा में न पड़ो"* (मत्ती 26:41)। प्रार्थना करो और सुस्त न बनो, बल्कि हर समय *'जागरूक रहो और प्रार्थना करो'* (कुलु. 4:2–3)। *'माँगो, तो तुम्हें दिया जाएगा; खोजो, तो तुम पाओगे'*; *'खटखटाओ, तो तुम्हारे लिए खोला जाएगा। क्योंकि जो कोई माँगता है, उसे मिलता है, और जो खोजता है, वह पाता है, और जो दरवाज़ा खटखटाता है, उसके लिए दरवाज़ा खोला जाएगा'* (मत्ती 7:7-8)। उन्होंने विशेष रूप से अपने इस वचन पर ज़ोर दिया और हमें एक मित्र की दृष्टांत कथा के साथ अधिक लगन के लिए प्रेरित किया, जो आधी रात को अपने मित्र के पास आया और उससे रोटी माँगी। प्रभु कहते हैं: *'मैं तुम से कहता हूँ, भले ही वह उसका मित्र होने के कारण उसे न दे, परन्तु उसकी लगन के कारण उठकर उसे वह सब कुछ देगा जिसकी उसे आवश्यकता है'* (लूका 11:8)। और तुम, प्रार्थना करो, और आलसी न बनो। धैर्य के लिए यह कितनी अकथनीय प्रोत्साहना है!

102. प्रभु जानते हैं कि मृत्यु से पहले वे हमसे भटकने की संभावना नहीं छीन लेंगे; कि यह परिवर्तन बहुत निकट है—अर्थात्, सद्गुण से दुर्गुण में संक्रमण; कि मनुष्य और उसकी प्रकृति इसके विपरीत को अपनाने में सक्षम हैं; यही कारण है कि उन्होंने हमें सतर्क रहने और निरंतर प्रार्थना में प्रयास करने की आज्ञा दी है। और उन्होंने हमें केवल स्पष्ट परिवर्तन से खुद को बचाने के लिए ही नहीं, बल्कि उस चीज़ की सूक्ष्मता और अगम्यता के कारण भी प्रार्थना करने की आज्ञा दी है, जिसका हम लगातार सामना करते हैं, और जिसे उन अवस्थाओं में हमारे मन से समझा नहीं जा सकता, जिनमें हम अक्सर अपनी कोई पसंद के बिना ही खुद को पाते हैं। क्योंकि, यद्यपि हमारे विचार बहुत दृढ़ हैं और भलाई से जुड़े हुए हैं, तथापि उनकी व्यवस्था हमें बार-बार प्रलोभन के कगार पर छोड़ देती है और हमें उनमें डाल देती है, जैसा कि धन्य पौलुस ने कहा: *'मुझे शरीर में एक काँटा दिया गया'* (2 कुरिन्थियों 12:7–9)।

103. यह संसार एक प्रतिस्पर्धा और प्रतियोगिताओं का अखाड़ा है। यह संघर्ष का समय है। और संघर्ष के दौरान, और प्रतियोगिता के दौरान, कोई नियम नहीं होता; अर्थात्, राजा अपने योद्धाओं पर तब तक कोई सीमा नहीं लगाता जब तक प्रतियोगिता समाप्त नहीं हो जाती, और हर व्यक्ति को राजाओं के राजा के द्वार पर लाया जाता है और वहाँ यह देखने के लिए परखा जाता है कि क्या उन्होंने प्रतियोगिता में विजय प्राप्त की है या अपनी कमर तोड़ ली है। यहाँ केवल एक ही नियम है: सतर्क रहना और दृढ़ खड़े रहना। – तो फिर, हम प्रार्थना में लापरवाह न हों, और न ही प्रभु से सहायता माँगने में इतने आलसी हों, जिनके बिना हम उनके लिए प्रसन्न करने वाला कुछ भी नहीं कर सकते। – हमें दृढ़ता से यह ध्यान रखना चाहिए कि जब तक हम इस दुनिया में हैं और देह में रहते हैं, भले ही हम स्वर्ग तक उड़ जाएँ, हम निष्क्रिय और परिश्रम के बिना नहीं रह सकते, न ही चिंता से रहित हो सकते हैं।

104. इस प्रयास में पूर्णता निम्नलिखित में निहित है: पश्चाताप, पवित्रता और आत्म-सुधार में। (पश्चाताप करने वाला व्यक्ति वासनाओं के विरुद्ध एक संघर्ष में प्रवेश करता है - और तब तक संघर्ष करता है जब तक कि हृदय उनसे शुद्ध नहीं हो जाता; हृदय की शुद्धि ही संघर्ष का अंत है, और पूर्णता के क्षेत्र का प्रवेश द्वार है)।

105. किसी ने पूछा: 'पश्चाताप क्या है?' और उन्होंने उत्तर दिया: 'अपने पुराने तरीकों को त्यागना और उन पर शोक करना'; और यह भी: 'एक पश्चात्तापी और विनम्र हृदय'।

106. उनसे यह भी पूछा गया: 'एक व्यक्ति विनम्रता कैसे प्राप्त कर सकता है?' और उन्होंने कहा: 'अपने पापों और मृत्यु की निकटता को निरंतर याद करके, विनम्र कपड़े पहनकर – हमेशा सबसे नीची जगह चुनकर, और हर परिस्थिति में स्वेच्छा से सबसे छोटे और विनम्रता सिखाने वाले कार्यों को अपने ऊपर लेकर – अवज्ञा न करके, – मौन रहना, – सभाओं में जाने का आनंद न लेना, अज्ञात रहना चाहना और किसी भी पद पर निर्वाचित न होना, – किसी भी संपत्ति को पूरी तरह से अपनी निचिली शक्ति पर छोड़ देना, – बहुत से लोगों से बातचीत से घृणा करना, – लाभ का कोई मोह न रखना, और, इसके अलावा, मन में किसी भी व्यक्ति की आलोचना और दोषारोपण करने की स्थिति से ऊपर रहना, चाहे कारण कितना भी तुच्छ क्यों न हो, और ईर्ष्या से ऊपर रहना, – उस प्रकार का व्यक्ति न होना जिसके हाथ सभी पर हों और जिस पर सभी के हाथ हों, बल्कि अकेलेपन में अपने काम से काम रखना, और स्वयं के सिवा दुनिया की किसी भी चीज़ की देखभाल अपनी जिम्मेदारी न लेना। संक्षेप में: भटकन, गरीबी और एकांत का जीवन – यही विनम्रता को जन्म देता है और हृदय को शुद्ध करता है।"

107. जिन्होंने पूर्णता प्राप्त की है, उनका चिह्न यह है: यदि उन्हें अपने पड़ोसियों के प्रेम के लिए दिन में दस बार जलने के लिए सौंप दिया जाए, तो भी वे इससे संतुष्ट नहीं होंगे, जैसा कि मूसा (निर्गमन 32:32), धन्य पौलुस (रोमियों 9:3), और अन्य प्रेरितों द्वारा प्रदर्शित किया गया है। – ईश्वर ने अपनी सृष्टि से प्रेम के कारण अपने पुत्र को क्रूस पर मृत्यु के हवाले कर दिया। और यदि उनके पास इससे भी अधिक कीमती कुछ होता, तो वह भी हमें दे देते, ताकि हमारे द्वारा अपनी प्रजा को अपने लिए जीत सकें। – इस उदाहरण का अनुसरण करते हुए, सभी संत, पूर्णता के लिए प्रयास करते हुए, अपने पड़ोसी के प्रति प्रेम की पूर्णता के माध्यम से ईश्वर के समान बनने का प्रयास करते हैं।

108. कोई भी इस प्रेम की ऊँचाई तब तक प्राप्त नहीं कर सकता जब तक कि वह इसे अपनी आशा के रहस्य की गहराई में महसूस न करे। जो इस संसार से प्रेम करते हैं, वे अपने साथी मनुष्यों के लिए प्रेम प्राप्त नहीं कर सकते। जब कोई प्रेम प्राप्त करता है, तो वह उस प्रेम के साथ स्वयं ईश्वर में वस्त्र-धारित हो जाता है। और जिसने ईश्वर को प्राप्त कर लिया है, उसे न केवल उनके साथ कुछ और स्वीकार करने से इनकार करना चाहिए, बल्कि अपने शरीर को भी त्यागना चाहिए। क्योंकि यदि कोई, संसार के प्रति प्रेम के कारण, इस संसार और इस जीवन में स्वयं को लिपटाता है, तो वह तब तक ईश्वर में लिपटा नहीं जाएगा, जब तक वह इसे त्याग नहीं देता। क्योंकि स्वयं ईश्वर ने इसकी गवाही दी है, कहते हुए: *'यदि कोई* इस (दुनिया) को नहीं त्यागता, और *अपनी आत्मा से प्रेम नहीं करता, तो वह मेरा चेला नहीं हो सकता'* (लूका 14:26)। मनुष्य को न केवल इसे त्यागना चाहिए, बल्कि इससे घृणा भी करनी चाहिए।

109. आशा इतनी मीठी क्यों है, और उसकी उपस्थिति में सभी कर्म क्यों आसान हो जाते हैं? – क्योंकि उस घड़ी संतों की आत्माओं में (कल्याण के लिए) एक स्वाभाविक इच्छा जागृत होती है, जबकि आशा उन्हें मठ में अपने ही प्याले से इसका पान करने देती है, और उन्हें आनंद से भर देती है। इसलिए, वे अब परिश्रम को महसूस नहीं करते, बल्कि परिश्रम और दुख के प्रति असंवेदनशील हो जाते हैं; और अपनी पूरी यात्रा के दौरान उन्हें ऐसा लगता है मानो वे हवा पर चल रहे हों, न कि अपने मानव पैरों से चल रहे हों; क्योंकि उनके लिए मार्ग की कठिनाई अदृश्य है; उनके सामने कोई पहाड़ या धाराएँ नहीं हैं, और रास्ते में जो ऊबड़-खाबड़ जगहें हैं वे उनके लिए चिकनी हो जाती हैं (यशायाह 40:4)। उनका ध्यान अपने पिता की गोद की ओर मुड़ जाता है—और आशा स्वयं, मानो एक उंगली से, उन्हें हर पल उस चीज़ की ओर इशारा करती है जो दूर और अदृश्य है, फिर भी विश्वास की गुप्त आँख से दृश्यमान है; और इस दूरस्थ लक्ष्य की इच्छा, मानो आग की तरह, उनकी आत्मा के हर हिस्से को प्रज्वलित करती है। उनके विचारों की संपूर्ण आकांक्षा वहीं तक फैली है, और वे वहाँ पहुँचने के लिए सदैव तत्पर रहते हैं। – इस प्रकार आशा उन्हें आग की तरह प्रज्वलित करती है, और वे इस आनंदपूर्वक आरंभ किए गए तीव्र और अनवरत प्रवाह में स्वयं को विश्राम नहीं दे सकते।

110. निर्लिप्तता केवल भावों को महसूस न करने में ही नहीं, बल्कि उन्हें अपने भीतर जड़ जमाने न देने में भी है। संतों द्वारा अर्जित, अनेक और विविध गुणों, जो प्रकट और गुप्त दोनों हैं, के परिणामस्वरूप, उनमें वासनाओं पर विजय प्राप्त हो चुकी है, और वे आसानी से उनकी आत्मा के विरुद्ध नहीं उठ सकतीं; न ही उनके मन को अपने तर्क में लगातार सतर्क रहने की आवश्यकता होती है; क्योंकि यह हर समय उन विचारों से भरा रहता है, जो पूर्ण जागरूकता के साथ, उत्कृष्टतम सद्गुणों पर चिंतन और विमर्श द्वारा मन में उत्पन्न होते हैं। और जैसे ही वासनाएँ हिलने लगती हैं, मन अचानक ही, मानो, एक ऐसी अंतर्दृष्टि से मोहित हो जाता है जो उसमें प्रवेश कर चुकी होती है; और वासनाएँ, जैसा कि धन्य मार्क ने कहा, उनमें, मानो, निष्क्रिय बनी रहती हैं।

111. मन, ईश्वर की कृपा से, पुण्य कर्म करते और ज्ञान के समीप पहुँचते हुए, मुश्किल से ही उसको अनुभव कर पाता है जो आत्मा का नीच और मूर्खतापूर्ण भाग है। क्योंकि ज्ञान उसे ऊँचाइयों पर उठाता है और संसार की सभी चीज़ों से अलग कर देता है। और संतों की पवित्रता, उनके मन की सूक्ष्मता, लचीलेपन और तीक्ष्णता के कारण, साथ ही उनके तपस्वी प्रयासों के कारण, उनके मन शुद्ध हो जाते हैं और अपने शरीर के संयम के माध्यम से स्वयं को प्रबुद्ध पाते हैं। और, मौन में उनके प्रशिक्षण और उसमें उनके दीर्घकाल तक बने रहने के परिणामस्वरूप, हर आंतरिक चिंतन उन्हें आसानी से और शीघ्रता से प्राप्त हो जाता है, और जिस पर वे चिंतन करते हैं, वह उन्हें आश्चर्य से भर देता है। साथ ही, वे आमतौर पर चिंतन-मनन से परिपूर्ण रहते हैं, और उनके मन में समझने की वस्तुओं की कभी कमी नहीं होती, न ही वे कभी उस चीज़ के बिना रहते हैं जो उनके भीतर आत्मा का फल उत्पन्न करती है। लंबे समय से चली आ रही प्रथा के माध्यम से, उनके हृदय में जुनून जगाने वाली यादें मिट जाती हैं, और शैतान के प्रभुत्व की शक्ति कमजोर हो जाती है। क्योंकि जब आत्मा उन पर टिका कर वासनाओं के साथ मेल नहीं करती, तो चूंकि वह लगातार अन्य चिंताओं में व्यस्त रहती है, वासनाओं की शक्ति उसकी आध्यात्मिक संवेदनशीलताओं को अपनी पकड़ में नहीं रख सकती।

112. जैसे अहंकार आत्मा को ऊँचा उठाता है और उसे अपने ही विचारों के बादलों में उड़ने तथा सारी सृष्टि में घूमने-फिरने की स्वतंत्रता देता है, वैसे ही विनम्रता स्थिरता के माध्यम से आत्मा को एक बिंदु में संकुचित कर देती है – और वह अपने भीतर केंद्रित हो जाती है। जिस प्रकार शरीर के भीतर आत्मा दृष्टि से और सभी लोगों के संगम से छिपी रहती है, उसी प्रकार एक सच्चा विनम्र व्यक्ति न केवल दूसरों द्वारा देखा या जाना जाना चाहता है, बल्कि उसकी यही इच्छा होती है कि वह स्वयं में डूब जाए, शून्य हो जाए, मानो वह अस्तित्व में ही न आया हो, मानो वह अभी अस्तित्व में आया ही न हो। – और जब तक ऐसा व्यक्ति छिपा रहता है, स्वयं में समाया रहता है और संसार से अलग रहता है, तब तक वह पूर्णतः अपने प्रभु के साथ रहता है।

113. विनम्र व्यक्ति कभी भी सभाओं, भीड़, हलचल को देखने के लिए नहीं रुकता, शोर या धूमधाम को नहीं देखता; वह शब्दों, बातचीत, चिल्लाहट या इंद्रियों के विचलन पर कोई ध्यान नहीं देता; उसकी इच्छा कई चीजों का मालिक बनने या लगातार व्यस्त रहने की नहीं, बल्कि हर समय मुक्त रहने, चिंताओं से मुक्त रहने की होती है, ताकि उसके विचार उससे परे न भटकें। क्योंकि वह निश्चित है कि यदि वह कई चीजों में शामिल हो गया, तो वह विचारों के भ्रम से मुक्त नहीं रह पाएगा; क्योंकि कई मामलों के साथ कई चिंताएँ और जटिल विचारों की भीड़ होती है; और इसके माध्यम से वासनाओं का द्वार खुलता है, विवेक की शांति दूर हो जाती है, और शांति का द्वार बंद हो जाता है। इसलिए, विनम्र-चित्त व्यक्ति अपने आप को अत्यधिक से बचाता है; और इसके माध्यम से वह हर समय स्थिरता, शांति, सुकून, विनम्रता और श्रद्धा में रहता है।

114. विनम्र और बुद्धिमान व्यक्ति कभी भी जल्दबाज़ी, हड़बड़ी, भ्रम, या आवेगपूर्ण और तुच्छ विचारों से चिह्नित नहीं होता है, बल्कि हर समय शांति में रहता है। ऐसी कोई भी चीज़ नहीं है जो उसे चकित, बेचैन या भयभीत कर सके; क्योंकि न तो दुख में वह अपना आपा खोता है, न ही वह विचलित होता है, और न ही आनंद में वह चकित या बहकता है। बल्कि उसकी सारी खुशी और प्रसन्नता उसी में निहित है जो उसके प्रभु को प्रसन्न करता है।

115. विनम्र-चित्त व्यक्ति ईश्वर से प्रार्थना करने या कुछ भी माँगने की हिम्मत भी नहीं करते, और न ही वे जानते हैं कि किस लिए प्रार्थना करें; बल्कि वे बस अपने सभी इंद्रियों के साथ मौन रहते हैं, और केवल परम पूजनीय महिमा के मुखमंडल से उन पर आने वाली दया और इच्छा की प्रतीक्षा करते हैं, – जब वह अपना मुख भूमि पर झुकाता है, और उसके हृदय की आंतरिक दृष्टि पवित्रतम स्थान के द्वारों तक उठाई जाती है, जहाँ वह अंधकार में वास करता है, जिसके सामने सेराफिम की आँखें बंद हैं, – और केवल इस प्रकार बोलने और प्रार्थना करने की हिम्मत करता है: 'हे प्रभु, तेरी इच्छा के अनुसार, मेरे साथ भी वैसा ही हो'।

116. ईश्वर के समक्ष सरलता से चलो, मन की चालाकी से नहीं। सरलता के पश्चात् विश्वास आता है; परन्तु चालाकी की सूक्ष्मता और धूर्तता के पश्चात् अहंकार आता है; और अहंकार, बदले में, ईश्वर से अलगाव की ओर ले जाता है।

117. जब आप प्रार्थना में परमेश्वर के सामने खड़े हों, तो अपने विचारों में ऐसे हो जाइए जैसे आप एक निरुत्तर शिशु हों। किसी भी ज्ञान के आधार पर परमेश्वर के सामने बात न करें, बल्कि बाल-सुलभ विचारों के साथ उनके समीप आएं, और उनके सामने इस प्रकार चलें, कि आप उस पितृत्वपूर्ण देखभाल के योग्य ठहरें जो पिता अपने शिशु बच्चों के लिए रखते हैं। कहा गया है: *'प्रभु छोटे बच्चों की रक्षा करते हैं* (भजन संहिता 114:5) – न केवल वे जो शरीर से छोटे हैं, बल्कि वे भी जो संसार में बुद्धिमान हैं, जिन्होंने अपनी शिक्षा को एक ओर रखकर, अपनी इच्छा से, स्वयं को छोटे बच्चों के समान बना लिया है, और उस सर्वव्यापी बुद्धि के बारे में सीखना शुरू कर दिया है जिसे (किताबों से)। ईश्वर

से प्रार्थना करें कि वह आपको इस विश्वास के स्तर को प्राप्त करने का वरदान दे। इसके लिए आलस्य के बिना प्रार्थना करें, इसे उत्साह के साथ खोजें, और जब तक कि आप इसे प्राप्त न कर लें, तब तक बड़ी गंभीरता से निवेदन करते रहें। यह आपको तब प्रदान किया जाएगा जब आप पहले, विश्वास के साथ, स्वयं को अपनी चिंताएँ ईश्वर पर सौंपने और अपनी चिंता को उनकी दिव्य व्यवस्था से बदलने के लिए प्रेरित करेंगे। और जब ईश्वर आप में यह संकल्प देखेंगे—कि आपने एक शुद्ध मन से स्वयं को स्वयं ईश्वर के हवाले कर दिया है, न कि स्वयं के; और आपने स्वयं को अपनी आत्मा के बजाय ईश्वर में आशा रखने के लिए विवश कर लिया है— तब वह अकथनीय शक्ति आपके भीतर वास करेगी, और आप मूर्त रूप से महसूस करेंगे कि निःसंदेह एक शक्ति आपके साथ है - वही शक्ति जिसे अपने भीतर महसूस करके, कई लोग बिना किसी डर के आग से गुजरते हैं, और इस डर में कि वे डूब सकते हैं, अपने विचारों को डगमगाए बिना पानी पर चलते हैं।

118. क्या आपको ऐसा नहीं लगता कि, हर तरह से, इस आध्यात्मिक ज्ञान को आत्मा के ज्ञान समझ लिया जाए? – न केवल इस आध्यात्मिक ज्ञान को आत्मा के ज्ञान समझना असंभव है, बल्कि आत्मा के ज्ञान का उत्साहपूर्वक अभ्यास करने वाले किसी भी व्यक्ति द्वारा इसे इंद्रियों के माध्यम से महसूस करने की संभावना भी नहीं है। और यदि उनमें से कोई भी इस दूसरे आध्यात्मिक ज्ञान के निकट आना चाहता है, तो जब तक वे इस मानसिक ज्ञान—और इसके सभी सूक्ष्म मोड़ों और घुमावों, और इसकी जटिल विधियों—को त्याग नहीं देते, और जब तक वे एक बाल-सुलभ सोच नहीं अपना लेते, तब तक वे आध्यात्मिक ज्ञान के थोड़ा भी निकट नहीं आ पाएंगे। इसके विपरीत, मानसिक मार्गदर्शन की आदतें और अवधारणाएं उनके लिए एक बड़ी बाधा बनी रहती हैं, जब तक कि वे धीरे-धीरे उन्हें जड़ से न उखाड़ दें। यह आध्यात्मिक मार्गदर्शन सरल है और मानसिक विचारों में नहीं झलकता। जब तक मन अनेक विचारों से मुक्त नहीं हो जाता और शुद्धता की एकरूप सादगी को प्राप्त नहीं कर लेता, तब तक वह आध्यात्मिक मार्गदर्शन को ग्रहण नहीं कर पाएगा।

119. यदि आपने एक बार स्वयं को प्रभु के हवाले कर दिया है, जो आपकी रक्षा करने और आपकी देखभाल करने के लिए सर्व-सक्षम हैं, तो फिर ऐसे मामलों के बारे में चिंता न करें, बल्कि अपनी आत्मा से कहें: 'हर मामले में, वह जिसके हवाले मैंने एक बार अपनी आत्मा की थी, मेरे लिए पर्याप्त है। मैं यहाँ नहीं हूँ; वह यह जानता है।' – तब आप वास्तव में ईश्वर के चमत्कार देखेंगे – आप देखेंगे कि ईश्वर अपने भक्तों को बचाने के लिए सदैव निकट रहता है, और कैसे उसकी दिव्य कृपा, भले ही अदृश्य हो, आपको घेरे हुए है। लेकिन क्योंकि वह रक्षक जो आपके साथ रहता है, शारीरिक आँखों से अदृश्य है, इसलिए आपको उस पर इस तरह संदेह नहीं करना चाहिए जैसे कि वह वहाँ नहीं है; क्योंकि वह अक्सर स्वयं को शारीरिक आँखों के सामने भी प्रकट करता है, ताकि आपको सांत्वना मिल सके।

120. जैसे ही कोई व्यक्ति सभी दृश्यमान सहायता और मानवीय आशा को त्याग देता है, और विश्वास तथा शुद्ध हृदय से ईश्वर का अनुसरण करता है, तो अनुग्रह तुरंत ही उसका अनुसरण करता है और सहायता के विभिन्न रूपों के माध्यम से उसे अपनी शक्ति का अनुभव कराता है। सबसे पहले, यह स्वयं को इन दृश्यमान, शारीरिक मामलों में प्रकट करता है, और उस पर अपनी व्यवस्था के माध्यम से उसकी सहायता करता है, ताकि इस मामले में वह अपने भीतर काम कर रही ईश्वर की व्यवस्था की शक्ति को और भी तीव्रता से महसूस कर सके। प्रकट रूप में इस मदद को पहचानकर, उसे छिपी हुई मदद का भी भरोसा हो जाता है; इस क्रम में, अनुग्रह उसके सामने कठिन विचारों और इरादों की जटिल उलझन को उजागर करता है, जिसके परिणामस्वरूप कोई व्यक्ति उनके अर्थ, उनके आपसी संबंध और उनके आकर्षण को आसानी से पहचान सकता है, और यह भी कि वे एक-दूसरे से कैसे उत्पन्न होते हैं – और आत्मा को नष्ट करते हैं। साथ ही, अनुग्रह उसके सामने राक्षसों की सभ दुष्टता को उजागर कर देता है, और, मानो, उँगली से उसे वह दिखाता है कि यदि वह यह जान न पाया होता तो उसे क्या-क्या सहना पड़ता। तब उसके मन में यह विचार आता है कि उसे प्रार्थना में हर छोटी-बड़ी चीज़ के लिए अपने सृष्टिकर्ता से माँग करनी चाहिए।

121. जब ईश्वर की कृपा इन सभी मामलों में ईश्वर पर भरोसा करने के उसके संकल्प को मजबूत करती है, तो वह धीरे-धीरे प्रलोभनों का सामना करना शुरू कर देता है। और अनुग्रह उसकी क्षमता के अनुरूप परीक्षाओं को उस पर आने देता है, ताकि वह उनका भार उठा सके। और इन परीक्षाओं में, सहायता मूर्त रूप में उसके निकट आती है, ताकि वह दृढ़ बना रहे, जब उसे धीरे-धीरे सिखाया जाता है और वह बुद्धि प्राप्त करता है, और ईश्वर पर भरोसा करके, अपने शत्रुओं से घृणा करने लगता है। क्योंकि किसी व्यक्ति के लिए आध्यात्मिक लड़ाइयों में बुद्धिमान बनना, अपने प्रदाता को जानना, अपने ईश्वर को महसूस करना, और उनमें दृढ़ विश्वास में स्थिर रहना, परीक्षाओं को सहन करके प्राप्त हुई शक्ति के अलावा असंभव है।

122. जैसे ही अनुग्रह को यह आभास होता है कि किसी व्यक्ति के विचारों में संदेह की एक झलक उठने लगी है, और वह अपने आप को महान समझने लगा है, तो यह तुरंत ही उसके विरुद्ध प्रलोभनों को तीव्र और मजबूत होने देता है, जब तक कि वह अपनी कमजोरी को न पहचान ले और एक बार फिर से, विनम्रता में, ईश्वर से चिपक न जाए।

123. इस बात पर आश्चर्य न करें कि जब आप सद्गुण का अभ्यास करने निकलते हैं, तो हर तरफ से आपके ऊपर कठोर और गहरी उदासी आ पड़ती है; क्योंकि किसी सद्गुण को तब तक सद्गुण नहीं माना जाता, जब तक उसके अभ्यास में कठिनाई न हो। इसीलिए संत जॉन (कोलोव या नबी) ने कहा: 'सद्गुणों का सामना आमतौर पर कठिनाइयों से होता है; यह निंदनीय है जब यह आराम से जुड़ा हो'। और धन्य मार्क कहते हैं: 'हर परिपूर्ण सद्गुण को एक क्रूस कहा जाता है जब यह आत्मा की आज्ञा को पूरा करता है'। यह प्रेरितों की शिक्षा है कि '*जो कोई भी* प्रभु के भय में और *मसीह यीशु में जीना चाहता है, उसे सताया जाएगा*' (2 तीमु. 3:12)। परन्तु प्रभु कहते हैं: *'जो कोई मेरी खातिर अपना प्राण खोएगा, वह उसे पाएगा* (मत्ती 16:25)। इसी कारण, वह आपको आरंभ में ही क्रूस प्रदान करते हैं, ताकि आप पहले स्वयं को क्रूस के प्रति समर्पित करें, और केवल तभी अपनी आत्मा को उनका अनुसरण करने के लिए भेजें।

124. निराशा से अधिक शक्तिशाली कुछ भी नहीं है। वह न तो दाहिने से और न ही बाएँ से पराजित होती है। जब कोई व्यक्ति अपने विचारों में अपनी ज़िंदगी से सारी आशा छीन लेता है, तो उससे अधिक दुस्साहसी कोई नहीं होता। उसका कोई भी शत्रु उसके विरुद्ध नहीं टिक सकता, और कोई भी दुख ऐसा नहीं है जिसका नाम लेने मात्र से उसका संकल्प डगमगा जाए; क्योंकि जो भी दुख उस पर आता है, वह मृत्यु से भी हल्का है, और उसने स्वयं पर मृत्यु स्वीकार करने के लिए अपना सिर झुका लिया है।

125. शांति की आशा ने हर समय लोगों को यह भूलने पर मजबूर किया है कि क्या महान, अच्छा और सदाचारी है। हमारे समय से पहले और आज तक, किसी और कारण से नहीं बल्कि ठीक इसी कारण से, लोग थक जाते हैं; और वे न केवल विजय प्राप्त करने में विफल रहते हैं, बल्कि वे सबसे अच्छा भी खो देते हैं। इसलिए, संक्षेप में कहें तो, यदि कोई व्यक्ति स्वर्ग के राज्य की उपेक्षा करता है, तो यह निश्चित रूप से थोड़ी सी सांसारिक आराम की आशा के कारण ही होता है। कौन नहीं जानता कि पक्षी आराम की सोचकर जाल के पास आते हैं?

126. जब मन सदाचार के लिए उत्सुक होता है, तो बाह्य इंद्रियाँ किसी भी कठिनाई के आगे नहीं झुकतीं। जब हृदय आत्मा में उत्साही होता है, तो शरीर दुखों से विचलित नहीं होता, न भय में पड़ता है, और न ही भय से पीछे हटता है; क्योंकि तब मन, हीरे की तरह, अपनी दृढ़ता से अपने भीतर की सभी प्रलोभनों का विरोध करता है। अतः हमें उत्साही बनें – और सुस्ती, जो आलस्य को जन्म देती है, हमसे भाग जाएगी। उत्साह साहस को जन्म देता है और आत्मा को विजयी शक्ति प्रदान करता है। जब आत्मा अपने स्वाभाविक उत्साह को उनके विरुद्ध लगाती है, तो राक्षसों की कौन सी शक्ति इसका सामना कर सकती है?

१२७. हमारे प्राचीन पूर्वजों को यह ज्ञात था कि हमारा मन हमेशा दृढ़ रहने और पहरा देने में सक्षम नहीं होता, और अन्य समयों में वह यह भी पहचानने में असमर्थ होता है कि उसके लिए क्या हानिकारक है, उन्होंने सांसारिक संपत्ति से वैराग्य को एक हथियार की तरह धारण किया और उस रेगिस्तान में चले गए, जहाँ कोई ऐसी सांसारिक गतिविधि नहीं है जो वासनाओं को जन्म दे, ताकि उन्हें चिड़चिड़ाहट, इच्छा या द्वेष का कोई कारण न मिले। इन सबके और इसी तरह की अन्य बातों के विरुद्ध, उन्होंने स्वयं को एक अभेद्य स्तंभ की तरह सुरक्षित और संरक्षित किया।

128. जब कोई व्यक्ति वैराग्य में रहता है, तो इस जीवन से विदा होने का विचार निरंतर मन में आता रहता है – और वह इसके लिए तैयारी करने का निरंतर ध्यान रखता है, – वह सभी आराम से दूर रहता है; संसार को त्यागने का विचार उसके मन में स्पष्ट रूप से उठता है; वह बिना भय के खतरों का सामना करने के लिए अपने हृदय को मजबूत बनाता है; वह मृत्यु से नहीं डरता, क्योंकि वह हर पल उस पर अपनी दृष्टि टिकाए रखता है; वह दुखों को, यदि वे आते हैं, तो प्रसन्नता और आनंद के साथ स्वीकार करता है, यह जानते हुए कि वे मुकुट लाते हैं। लेकिन यदि ऐसा हो कि उसे कोई क्षणिक वस्तु प्राप्त हो जाए, तो उसी क्षण उसके प्राणों में शरीर के प्रति प्रेम जागने लगता है; कामुक सुख के विचार उत्पन्न होते हैं, साथ ही उस उद्देश्य की पूर्ति के लिए आवश्यक साधनों के विचार भी आते हैं; यहाँ से, वह हृदय की दृढ़ता जो उसके पास सांसारिक वस्तुओं से अलग होने पर थी, जब वह संसार से ऊपर था, उससे दूर होने लगती है, और उसकी आत्मा ऐसे विचारों से घिरने लगती है जो उसके जीवन के लिए भय पैदा करते हैं; इस प्रकार, ईश्वर में उसकी दृढ़ आशा उससे दूर हो जाती है।

१२९. *विभिन्न कथन।* – जैसे पानी में डूबे सिर वाले के लिए शुद्ध हवा में सांस लेना असंभव है, वैसे ही सांसारिक चिंताओं में डूबे हुए के लिए उस नई दुनिया की अनुभूतियों में सांस लेना असंभव है। जैसे एक घातक बदबू शरीर की प्रकृति को बिगाड़ देती है, वैसे ही एक अश्लील दृश्य मन की शांति को भंग कर देता है। जैसे पास की चट्टान से टकराने पर शीशा अखंडित नहीं रह सकता, वैसे ही एक संत, जब वह लंबे समय तक किसी महिला की संगति में रहता है और

उससे बातचीत करता है, तो वह अपनी पवित्रता को बनाए नहीं रख सकता और अपवित्र होने से बच नहीं सकता। जिस प्रकार एक प्रबल और निरंतर जलप्रवाह से पेड़ उखड़ जाते हैं, उसी प्रकार शरीर पर लक्षित प्रलोभनों की बाढ़ से हृदय से संसार के प्रति प्रेम उखड़ जाता है। जैसे कड़वी दवाएँ शरीर से अस्वास्थ्यकर तरल पदार्थों की अशुद्धि को दूर करती हैं, वैसे ही दुख की तीव्रता दुष्ट वासनाओं से हृदय को शुद्ध करती है। जैसे युद्ध के मैदान में अपने शत्रु को क्षमा करने वाले के लिए स्वयं को अक्षुण्ण रखना असंभव है, वैसे ही तपस्वी के लिए अपने शरीर को क्षमा करके अपनी आत्मा को विनाश से बचाना असंभव है। जैसे कोई युवती, किसी भयानक दृश्य को देखकर, अपने माता-पिता के पास दौड़ती है, उनके वस्त्रों से चिपक जाती है और मदद के लिए पुकारती है, वैसे ही आत्मा भी, जितना अधिक वह प्रलोभनों के भय से व्यथित और दबी होती है, उतनी ही जल्दी ईश्वर से चिपकने के लिए दौड़ती है, और अखंड प्रार्थना में उनका आह्वान करती है। और जब तक प्रलोभन एक के बाद एक उस पर आक्रमण करते रहते हैं, तब तक वह अपनी प्रार्थना को दोगुना कर देती है; लेकिन जैसे ही वह मुक्त हो जाती है, वह स्वयं को व्यर्थ के विचारों के हवाले कर देती है। जिस प्रकार राजा के पास कोई बड़ा उपहार लेकर आने वाले को वह अपनी कृपापूर्ण दृष्टि से पुरस्कृत करता है, उसी प्रकार युगों के महान राजा, ईश्वर, उस व्यक्ति के पापों को क्षमा करते हैं, जिसकी प्रार्थना आँसुओं से भरी होती है, और उसे अपनी अनुकूल दृष्टि से पुरस्कृत करते हैं। जैसे कोई व्यक्ति एक कीमती मोती लेकर, डाकुओं से भरी सड़क पर चलता है, हमेशा इस डर में रहता है कि उस पर हमला हो जाएगा और उसे लूट लिया जाएगा; उसी प्रकार, जो पवित्रता के मोती को धारण करता है और इस संसार में चलता है—जो शत्रुओं से भरा मार्ग है—वह इन लुटेरों के भय से तब तक मुक्त नहीं हो सकता जब तक कि वह कब्र के धाम, अर्थात् विश्राम की भूमि, में न पहुँच जाए। जैसे एक आदमी जो शोक के दिन शराब पीता है, नशे में चूर होकर अपनी कठिन परिस्थिति के सभी दुखों को भूल जाता है, वैसे ही जो ईश्वर के प्रेम से मदहोश है, वह इस संसार में—अर्थात्, विलाप के घर में—अपनी सभी कठिनाइयों और दुखों को भूल जाता है, और अपने इस नशे के कारण सभी पापी वासनाओं के प्रति असंवेदनशील हो जाता है, उसका हृदय परमेश्वर में आशा से दृढ़ हो जाता है, उसकी आत्मा पंखों वाले पक्षी की तरह हल्की हो जाती है, उसका मन हर क्षण पृथ्वी से ऊपर उठ जाता है; उसके विचार मानवता से परे उड़ान भरते हैं, और वह परमपिता के साथ अमरत्व में आनंदित होता है।

130. विनम्रता ईश्वरत्व का वस्त्र है। अवतारित वचन ने स्वयं को इसमें लपेटा, और इसके माध्यम से हमारे शरीर में हमसे बात की, अपनी महानता और महिमा की भव्यता को इस विनम्रता से ढक लिया, ताकि सृष्टि उसे निहारकर भस्म न हो जाए। सृष्टि उसकी ओर तब तक नहीं देख सकती थी, यदि वह स्वयं इसके एक अंश को धारण कर, इस प्रकार इसके साथ बात करने के लिए न आता। इसलिए, जो कोई भी इस विनम्रता के वस्त्र को धारण करता है, वह स्वयं मसीह को धारण करता है; क्योंकि जिस स्वरूप में मसीह अपनी सृष्टि के लिए दृश्यमान थे और उसके बीच में रहे, उसी प्रकार वह भी अपने अंतर्मन को वस्त्र पहनाना चाहता है।

131. विनम्रता एक निश्चित रहस्यमयी शक्ति है, जो उनके संपूर्ण जीवन-यात्रा के पूरा होने पर सिद्ध संतों को प्राप्त होती है। यह शक्ति अनुग्रह की शक्ति द्वारा केवल उन्हीं को प्रदान की जाती है जो सद्गुण में सिद्ध हैं, क्योंकि यह सद्गुण सभी चीजों को समाहित करता है।

132. जो कोई भी विनम्र, मौन या कोमल है, उसने अभी विनम्रता की पदवी प्राप्त नहीं कर ली है। और न ही हम उसे 'ज्ञान में विनम्र' कहेंगे जो अपने पापों को याद करते और उन पर शोक करते समय विनम्रता दिखाता है; यद्यपि यह प्रशंसनीय है, क्योंकि उसके पास अभी विनम्रता नहीं है, बल्कि वह कुशलता से उसे अपने करीब खींचता है - वह केवल विनम्रता चाहता है, फिर भी उसके पास वह अभी नहीं है। सच्चा नम्र व्यक्ति अपनी तर्कशक्ति से नम्रता के लिए कारण गढ़ने की आवश्यकता में नहीं रहता, बल्कि बिना किसी प्रयास या आत्म-बाध्यता के सभी कार्यों में नम्रता प्रकट करता है।

१३३. यदि कोई पूछे कि नम्रता कैसे प्राप्त की जाए, तो हम उससे कहेंगे: *'शिष्य के लिए* अपने शिक्षक के समान, और दास के लिए अपने स्वामी के समान होना *पर्याप्त है* (मत्ती १०:२५)। देखो कि जिसने नम्रता का आज्ञा दिया और यह वरदान प्रदान किया, उसने स्वयं इसे प्रदर्शित किया – उसकी नकल करो, और तुम इसे प्राप्त करोगे।

134. हमें हर कीमत पर ऐसी किसी भी चीज़ से बचना चाहिए जो हमारे भीतर दुष्ट भावों को भड़काती हो; विशेष रूप से, हमें अपने भीतर इन भावों के कारणों और जो भी उन्हें गति देता है, उन्हें जड़ से उखाड़ना चाहिए, भले ही वे कितने भी मामूली क्यों न हों; और जब, इसके बावजूद, ये भाव उत्पन्न होते हैं, तो हमें उनका विरोध करना चाहिए और उनसे लड़ना चाहिए। इन दोनों उद्देश्यों के लिए, सबसे उत्तम उपाय है कि मनुष्य अपने अंतर्मन में डूब जाए, और वहाँ एकांत में निवास करे, तथा अपने हृदय के दाख की बारी की अविराम रूप से खेती करे। जब हमारा मन वहाँ एकांत और निःशब्दता में निवास करता है, तो अब मन ही नहीं है जो वासनाओं के विरुद्ध युद्ध करता है, बल्कि अनुग्रह है।

१३५. उद्धारकर्ता के आने का उद्देश्य, जब उन्होंने हमें हमारी भावुक अवस्था के लिए शुद्ध करने वाले उपचारों के रूप में अपना जीवन-दायक आज्ञाएँ दीं, आत्मा को 'ई' से शुद्ध करना था, अर्थात् प्रथम उल्लंघन से उत्पन्न क्षय, और उसे उसकी मूल अवस्था में बहाल करना था। जैसे औषधियाँ एक बीमार शरीर के लिए होती हैं, वैसे ही आज्ञाएँ एक भावुक आत्मा के लिए हैं। और यह स्पष्ट है कि आज्ञाएँ वासनाओं के विरोध में स्थापित की गई हैं, पापी आत्मा के उपचार के लिए।

136. आज्ञाओं के उल्लंघन के द्वारा हम पर भ्रष्टता आई। इससे यह पहले से ही स्पष्ट है कि उनका पालन करने से स्वास्थ्य फिर से बहाल हो जाता है। और आज्ञाओं का पालन किए बिना—जब तक कि हम पहले आत्मा की पवित्रता की ओर ले जाने वाले उस मार्ग पर न चलें—हमें आत्मा के शुद्धिकरण की इच्छा या आशा भी नहीं करनी चाहिए। और यह न कहें कि ईश्वर, हमारे आज्ञाओं का पालन किए बिना भी, अपनी कृपा से हमें आत्मा का शुद्धिकरण प्रदान कर सकते हैं। ये प्रभु के निर्णय हैं, और कलीसिया हमें इस प्रकार की किसी भी चीज़ के लिए पूछने का आदेश नहीं देती है। यहूदी, बेबीलोन से यरूशलेम लौटते समय, प्राकृतिक मार्ग से यात्रा करते थे; लेकिन यहेजकेल अलौकिक रूप से यरूशलेम पहुँचे और, दिव्य प्रकटवाक्य के द्वारा, भविष्य के नवीनीकरण के साक्षी बने। आत्मा की पवित्रता के मामले में भी कुछ इसी प्रकार होता है। कुछ लोग अत्यधिक परिश्रम भरे जीवन में, अपने ही रक्त की कीमत पर, आज्ञाओं का पालन करके, सु-पहचाने मार्ग से आत्मा की पवित्रता प्राप्त करते हैं; जबकि दूसरों को यह अनुग्रह के वरदान के रूप में दी जाती है। और यह उल्लेखनीय है कि हमें प्रार्थना में उस पवित्रता के लिए पूछने की अनुमति नहीं है जो हमें अनुग्रह से दी गई है, जबकि साथ ही हम आज्ञाओं का पालन करके बिताए गए जीवन का परित्याग कर रहे हों। क्योंकि उस धनी मनुष्य से जिसने प्रभु से पूछा, *'मुझे अनन्त जीवन का वारिस बनने के लिए क्या करना चाहिए?'*, प्रभु ने स्पष्ट रूप से कहा: *'आज्ञाओं का पालन करो'* (लूका 10:25)। लेकिन जब उस धनी मनुष्य ने और मार्गदर्शन के लिए आग्रह किया, तो उन्होंने कहा: *'यदि तुम सिद्ध होना चाहते हो, तो जाओ, अपनी संपत्ति बेच दो और गरीबों को दे दो, और अपना क्रूस उठाकर मेरे पीछे चलो'* (मत्ती 19:21)। और इसका अर्थ है: जो कुछ भी तुम्हारे पास है, उससे मर जाओ, तब मुझ में जियो; पुराने संवेगों की दुनिया से अलग हो जाओ, और तब आत्मा की नई दुनिया में प्रवेश करो। क्योंकि प्रभु ने, *'अपना क्रूस उठा लो'* (मत्ती 16:24) कहकर, मनुष्य को संसार की सभी चीज़ों के प्रति मरना सिखाया। और जब उसने अपने भीतर पुराने मनुष्य, या वासनाओं को मार डाला, तब उन्होंने उससे कहा, *'मेरे पीछे चलो'*। पुराने मनुष्य के लिए मसीह के मार्ग पर चलना असंभव है।

१३७. धन्य बेसिल द ग्रेट, और धन्य ग्रेगरी, जो मरुभूमि के प्रेमी थे और मौन की प्रशंसा करते थे, वे मौन नहीं हुए क्योंकि वे आज्ञाओं का पालन करने में असफल रहे थे, बल्कि उन्होंने पहले संसार में रहकर वे आज्ञाएँ निभाईं जो समाज में रहने वालों को निभानी चाहिए, और फिर उन्होंने आत्मा की पवित्रता प्राप्त की और उन्हें आध्यात्मिक मनन के योग्य समझा गया। और इसके बाद वे मरुस्थल की खामोशी की तलाश में लग गए; और उस समय से उन्होंने अपने अंतर्मन के साथ वास किया; इसलिए वे चिंतनशील बने और आध्यात्मिक मनन में तब तक रहे जब तक कि उन्हें अनुग्रह द्वारा मसीह की कलीसिया के चरवाहे बनने के लिए बुलाया नहीं गया।

138. मरुभूमि वासनाओं को सुला देती है। लेकिन इसके लिए एक व्यक्ति से एक बात की मांग होती है: अपनी वासनाओं को सुला देना, और वास्तव में, जब वे हमारे विरोध में डटी रहें तो उन्हें जड़ से उखाड़ फेंकना—अर्थात् उन पर विजय प्राप्त करना। जिन वासनाओं को सुला दिया गया है, वे जैसे ही सक्रिय होने का कोई कारण मिलता है, फिर से जाग उठती हैं। इसलिए हमें मरुभूमि की कामना केवल इसलिए नहीं करनी चाहिए कि वह वासनाओं को सुला देती है, बल्कि हमें यह इच्छा करनी चाहिए कि, इंद्रिय सुखों की कमी और सभी से अलग-थलग रहने के बीच, हमें वहाँ ज्ञान प्राप्त हो, और मसीह में आंतरिक, आध्यात्मिक मनुष्य हमारे भीतर नया हो जाए; ताकि हम हर समय अपने ऊपर निगरानी रख सकें, और हमारा मन सतर्क हो जाए, जो हर पल अपनी रक्षा करे, और उसकी आशा की स्मृति उससे छीनी न जाए।

१३९. हमारे प्रभु ने, ताकि हम अपने स्वर्गीय पिता की महानता के अनुरूप बन सकें, हमारे लिए दया का विधान किया है; फिर भी भिक्षु दया की अपेक्षा मौन को प्राथमिकता देते हैं। इसे कैसे सुलझाया जा सकता है? प्रभु ने दया की आज्ञा दी है ताकि हम अपने स्वर्गीय पिता के समान हो सकें, क्योंकि यह दयालु लोगों को ईश्वर के और करीब लाती है। और हम, एक भिक्षु के रूप में, मौन का सम्मान करते हैं, दया को त्यागकर नहीं, बल्कि व्यर्थ की चिंता और बेचैनी से खुद को यथासंभव दूर करने का प्रयास करते हुए; – हमारा इरादा अपने कर्तव्य (अपने पड़ोसियों के प्रति) की उपेक्षा करने का नहीं है, बल्कि हम मौन को इसलिए महत्व देते हैं ताकि (अधिक सटीक रूप से, एक अन्य उच्च कर्तव्य को पूरा करने के लिए) हम ईश्वर के चिंतन में स्थित रह सकें, जिसके माध्यम से हम अपनी पवित्रता को सर्वोत्तम रूप से पुनर्स्थापित कर सकते हैं और ईश्वर के करीब आ सकते हैं। हालाँकि, यदि किसी समय हमारे भाइयों

को हमारी वास्तविक आवश्यकता हो, तो हमें इसकी उपेक्षा नहीं करनी चाहिए। अतः आइए हम हर समय हर तर्कशील प्राणी के प्रति आंतरिक रूप से दयालु रहने के लिए स्वयं को निरंतर प्रेरित करें। क्योंकि यही वह है जो प्रभु की शिक्षा हम में प्रेरित करती है, और इसी में—न कि किसी व्यर्थ चीज़ में—हमारी मौन की विशिष्टता निहित है। और हमें न केवल अपनी इस आंतरिक करुणा को बनाए रखना चाहिए, बल्कि जब परिस्थितियाँ इसकी मांग करें, तो हमें अपने प्रेम को खुले तौर पर प्रदर्शित करने में भी लापरवाही नहीं करनी चाहिए।

140. जीवन के दाता ने आज्ञाओं की पूर्णता को दो आज्ञाओं में संक्षेपित किया है, जो अन्य सभी को समाहित करती हैं: ईश्वर से प्रेम, और ईश्वर की प्रतिमा से समान प्रेम। पहली आध्यात्मिक चिंतन के उद्देश्य को पूरा करती है; दूसरी, चिंतन और कर्म दोनों के उद्देश्य को। क्योंकि ईश्वर का स्वभाव सरल, अदृश्य है, और स्वभावतःउसे किसी चीज़ की आवश्यकता नहीं है; और मन, अपनी आत्म-चिंतन में, स्वाभाविक रूप से ईश्वर के संबंध में किसी चीज़ की आवश्यकता नहीं रखता ; शारीरिक क्रिया में, इसकी क्रिया सरल है और यह मन के एक ही भाग में प्रकट होती है, जो पूजनीय सार की सरलता के अनुरूप है, जो शारीरिक संवेदना से परे है। और दूसरा आज्ञा-विधान, अर्थात् अपने पड़ोसी से प्रेम, स्वभाव की द्वैतता के कारण, यह आवश्यक करता है कि हम उसी प्रकार देह में उसको पूरा करने की इच्छा करें, जैसा कि हम अपनी चेतना में अदृश्य रूप से पूरा करते हैं। चूँकि कर्म सर्वत्र चिंतन से पूर्व होता है, इसलिए किसी के लिए भी इस उच्चतर अवस्था के क्षेत्र में उठना असंभव है जब तक कि वे पहले अपने कर्मों द्वारा निम्नतर को पूरा न करें। और कोई भी व्यक्ति अपने पड़ोसी के प्रति प्रेम के संबंध में, यह दावा नहीं कर सकता कि वह अपनी आत्मा से इसमें उत्कृष्ट है, यदि वह उस भाग की उपेक्षा करता है जिसे उसकी क्षमता के अनुसार और समय व स्थान के अनुरूप, शरीर से किया जाता है। क्योंकि केवल इसी पूर्ति के माध्यम से यह निश्चित होता है कि एक व्यक्ति के भीतर पूर्ण प्रेम विद्यमान है। और जब हम, जहाँ तक संभव हो, इसमें निष्ठावान और सच्चे होते हैं, तो आत्मा को सरल और अतुलनीय अवधारणाओं में, उच्च और दिव्य चिंतन के महान क्षेत्र तक पहुँचने के लिए शक्ति दी जाती है। लेकिन जहाँ शरीर में दिखाई देने वाले कर्मों के माध्यम से अपने पड़ोसी से प्रेम करना संभव नहीं है, वहाँ हमारे पड़ोसियों के प्रति हमारा प्रेम, जो केवल आत्मा द्वारा किया जाता है, ईश्वर के समक्ष पर्याप्त है।

141. जो ईश्वर से सर्वोपरि प्रेम करना चाहता है, उसे अपनी आत्मा की पवित्रता बनाए रखने का ध्यान रखना चाहिए; और आत्मा की पवित्रता, वासनाओं पर विजय प्राप्त करके और उन्हें जड़ से उखाड़कर प्राप्त की जाती है। वासनाएँ पवित्रता के सामने बंद एक द्वार हैं। जब तक कोई इस बंद द्वार को नहीं खोलता, तब तक वह हृदय के निर्मल और शुद्ध क्षेत्र में प्रवेश नहीं कर पाएगा। और इसके बिना, आत्मा प्रार्थना के समय में निडरता प्राप्त नहीं कर सकती; क्योंकि यह निडरता पवित्रता और उसे प्राप्त करने में किए गए प्रयासों का फल है। यह उस क्रम में होता है जिसमें यह सब घटित होता है: धैर्य, आत्म-अनुशासन के साथ, शुद्धता के लिए वासनाओं के विरुद्ध संघर्ष करता है; यदि आत्मा वासनाओं पर विजय प्राप्त करती है, तो वह शुद्धता प्राप्त करती है; और सच्ची शुद्धता मन को प्रार्थना के समय में धैर्य प्राप्त करने में सक्षम बनाती है।

142. हम ईश्वर से किसी भी ऊँची चीज़ की माँग करने से बचें; परन्तु सबसे बढ़कर, जो कुछ भी हम पर आए, उसके लिए धैर्य प्राप्त करें – और, अपने भीतर और अपने विचारों के संबंध में महान विनम्रता और पश्चाताप के साथ, हम अपने पापों की क्षमा और मन की शांति के लिए प्रार्थना करें। एक संत ने लिखा है: 'जो कोई स्वयं को पापी नहीं मानता, उसका प्रार्थना प्रभु द्वारा स्वीकार नहीं की जाती।' यह लिखा है कि '*परमेश्वर का राज्य आचरण के पालन से नहीं आता*' (यानी, दिखावे से नहीं) - (लूका 17:20)। हमारी ओर से, हम पश्चाताप के कार्यों और परमेश्वर को भाने वाले जीवन के द्वारा हर संभव तरीके से अपने हृदय को व्यवस्थित करने का प्रयास करेंगे; यदि हमारे हृदय का स्थान शुद्ध और अशुद्ध न किया हुआ है, तो प्रभु का राज्य अपने आप आ जाएगा। जहाँ तक हम '*प्रकट रीति से*' जो खोजते हैं—अर्थात् परमेश्वर के ऊँचे वर—इसकी परमेश्वर की कलीसिया द्वारा अनुमोदन नहीं है; और जिन्होंने ऐसी चीजें प्राप्त की हैं, उन्होंने अपने ऊपर घमंड और पतन लाया है। और यह इस बात का संकेत नहीं है कि कोई व्यक्ति परमेश्वर से प्रेम करता है, बल्कि यह आत्मा की एक बीमारी है। और हम परमेश्वर के उत्कृष्ट उपहारों की खोज कैसे कर सकते हैं, जब पौलुस अपनी पीड़ाओं पर घमंड करता है और मसीह की पीड़ाओं में सहभागी होने को परमेश्वर की ओर से एक महान उपहार मानता है?

143. जब तक आत्मा वासनाओं से पीड़ित है, तब तक वह अपनी इंद्रियों से आध्यात्मिक को नहीं जानती, और न ही वह जानती है कि उसकी लालसा कैसे की जाए; बल्कि वह उसकी लालसा केवल उस बात के माध्यम से करती है जो वह सुनती है और धर्मग्रंथों के माध्यम से। आत्मा की आंतरिक शक्ति मसीह के दुखों के साथ एकता में, आज्ञाओं के गुप्त पालन के माध्यम से इन बीमारियों से चंगा हो जाती है। प्रारंभ में, मसीह के अवतार के माध्यम से, हमारी प्रकृति को नवीनीकरण प्राप्त हुआ और यह मसीह के दुख और मृत्यु के साथ एक हो गई; और फिर, रक्तपात के

माध्यम से इस नवीनीकरण के बाद, यह पवित्र हो गई और नए और पूर्ण आज्ञाओं को प्राप्त करने में सक्षम हो गई। और यदि ये आज्ञाएँ रक्त-पात से पहले, हमारी प्रकृति के नवीनीकरण और पवित्रता से पहले लोगों को दी गई होतीं; तो, शायद, नवीनतम आज्ञाएँ भी, प्राचीन आज्ञाओं की तरह, केवल आत्मा में दुराचार को समाप्त कर देतीं, लेकिन आत्मा से दुराचार की जड़ को ही मिटा नहीं पातीं। अब, हालाँकि, ऐसा नहीं है: आंतरिक कार्य और नए और आध्यात्मिक आज्ञाएँ, जिन्हें आत्मा परमेश्वर के भय से रखती है, आत्मा को नवीनीकृत और पवित्र करती हैं, और चुपचाप इसके सभी अंगों को चंगा करती हैं। क्योंकि यह सभी के लिए स्पष्ट है कि प्रत्येक आज्ञा आत्मा के भीतर चुपचाप किसी वासना का उपचार करती है, और उनकी प्रभावशीलता उपचार करने वाले और उपचारित होने वाले दोनों को स्पष्ट रूप से महसूस होती है, ठीक वैसे ही जैसे रक्तस्राव से पीड़ित महिला के साथ हुआ था।

144. आत्मा के भावुक भाग का उपचार अनुग्रह द्वारा भी हो सकता है, जैसा कि धन्य प्रेरितों के मामले में था। लेकिन यह ईश्वर की विशेष पसंद का मामला है; हालांकि, आमतौर पर आत्मा वैध मार्ग से स्वास्थ्य प्राप्त करती है। अर्थात्: जिसने आज्ञाओं का पालन और सच्चे जीवन के कठिन श्रम द्वारा कामनाओं पर विजय प्राप्त की है, उसने वैध—सामान्य—मार्ग से आध्यात्मिक स्वास्थ्य प्राप्त किया है; और इस संसार की भौतिकता से परे दूध से पोषित होकर, ने अपने भीतर अपनी पूर्व प्रकृति को समाप्त कर दिया है और आरंभ के समान, पुनर्जन्म लिया है, आध्यात्मिक क्षेत्र में, और अनुग्रह से, आंतरिक मनुष्य की समझ प्राप्त करके, आत्मा के क्षेत्र में दृश्यमान हो गया है, और स्वयं में नई, सरल दुनिया को ग्रहण कर लिया है।

145. जब मन नवीनीकृत हो जाता है और हृदय पवित्र हो जाता है, तो उसमें उत्पन्न होने वाली सभी अवधारणाएँ उस दुनिया की प्रकृति के अनुसार प्रेरित होती हैं जिसमें यह प्रवेश करता है। सबसे पहले, उसमें दिव्य प्रेम प्रेरित होता है , और यह स्वर्गदूतों के साथ मिलन और आध्यात्मिक ज्ञान के रहस्यों के प्रकटीकरण के लिए तरसता है; उसका मन प्राणियों के आध्यात्मिक ज्ञान से शुद्ध हो जाता है, और पवित्र त्रिमूर्ति के रहस्यों का चिंतन तथा हमारे लिए स्थापित दैवीय व्यवस्था के रहस्य उसमें प्रकाशित होते हैं; और फिर यह भविष्य की आशा के ज्ञान के साथ पूर्ण रूप से एकता में प्रवेश करता है।

146. यदि आत्मा, भावुकता के क्षेत्र में बँधे होने के दौरान, आध्यात्मिक को वास्तव में समझने में सक्षम होती, तो उसे आध्यात्मिक दुनिया के रहस्यों की पूछताछ करने या ज्ञान प्राप्त करने की कोई आवश्यकता नहीं होती। लेकिन यह स्पष्ट है कि जब तक वासनाएँ मौजूद हैं, तब तक सीखना और ज्ञान कोई लाभ नहीं पहुँचाते, और वे उस द्वार को खोलने के लिए अपर्याप्त हैं जो पवित्रता के सामने बंद है। हालाँकि, जब वासनाएँ आत्मा से दूर हो जाती हैं, तो मन प्रबुद्ध हो जाता है और प्रकृति के शुद्ध क्षेत्र में स्थापित हो जाता है, और उसे प्रश्नों की कोई आवश्यकता नहीं होती; क्योंकि वह स्पष्ट रूप से उन आशीर्वादों को देखता है जो उनके उचित स्थान पर पाए जाते हैं। क्योंकि जैसे बाहरी इंद्रियाँ सीखने के परिणामस्वरूप उन स्वभावों और वस्तुओं को नहीं जानतीं जिनसे वे संपर्क में आती हैं, बल्कि प्रत्येक इंद्रिय स्वाभाविक रूप से उस वस्तु को जानती है जो उससे मिलती है: उसी तरह, आध्यात्मिक चिंतन की कल्पना करें। क्योंकि मन, जो आत्मा के गूढ़ रहस्यों में प्रवेश करता है, यदि वह अपनी स्वाभाविक अवस्था में है, तो वह मसीह की महिमा का पूर्ण रूप से ध्यान करता है, और न तो पूछता है और न ही सीखता है, बल्कि मसीह में विश्वास और आशा के उत्साह के अनुपात में, इच्छा की स्वतंत्रता से परे, नई दुनिया के रहस्यों में आनंदित होता है।

147. यदि आपकी इच्छा है कि आपका हृदय नई दुनिया के रहस्यों का निवास-स्थान बने, तो पहले शारीरिक कर्मों के द्वारा स्वयं को समृद्ध करें: उपवास, जागरण, पूजा, तपस्या, धैर्य, विचारों पर विजय, आदि। अपने मन को धर्मग्रंथों को पढ़ने और उनमें गहराई से उतरने में लगाएँ; आज्ञाओं को अपनी आँखों के सामने लिख लें; और अनवरत प्रार्थनापूर्ण संवाद तथा प्रार्थना के शब्दों पर गहरे चिंतन के माध्यम से, अपने हृदय से हर उस प्रतिमा और हर समानता को जड़ से उखाड़ फेंकें जो पहले आपके भीतर बनी थी। अपने मन को हमेशा उद्धारकर्ता के घर के रहस्यों में गहराई से उतरने के लिए प्रशिक्षित करें; अपने लिए उस ज्ञान और चिंतन की खोज करना बंद कर दें जो, अपने उचित स्थान और समय पर, मौखिक वर्णन से परे हैं, और आज्ञाओं का अभ्यास करना और पवित्रता की खोज में लगे रहना जारी रखें, और प्रभु से बुद्धि का जीवन प्रदान करने के लिए प्रार्थना करें। इस जीवन की शुरुआत, मध्य और अंत निम्नलिखित हैं: मसीह के साथ एकता के द्वारा सभी चीज़ों से अलग होना। हालाँकि, यदि आप रहस्यों पर मनन करने के लिए तरसते हैं, तो आज्ञाओं को केवल उनके ज्ञान की इच्छा से ही नहीं, बल्कि कर्मों के द्वारा अपने भीतर विकसित करें। आध्यात्मिक मनन हमारे भीतर पवित्रता के क्षेत्र में कार्य करता है।

148. विश्वास के रहस्य के बच्चों के बीच चिंतन, विश्वास के साथ एकीकृत होता है, और धर्मग्रंथ के चरागाहों पर पोषित होता है। ज्ञान की पहुँच से परे शब्द, विश्वास के माध्यम से हमारे लिए बोधगम्य हो जाते हैं, और हम उन्हें

चिंतन के माध्यम से जानते हैं, जो शुद्धकिरण के द्वारा होता है। आध्यात्मिक रहस्यों के लिए, जो समझ से परे हैं और जिन्हें न तो शरीर की इंद्रियों द्वारा और न ही मन की तर्कशक्ति द्वारा ग्रहण किया जा सकता है, परमेश्वर ने हमें विश्वास दिया है, जिसके द्वारा हम केवल यह जानते हैं कि ये रहस्य मौजूद हैं। और इसी विश्वास से हमारे भीतर उनके संबंध में आशा (अर्थात्, उन्हें समझने की आशा) उत्पन्न होती है। विश्वास द्वारा हम स्वीकार करते हैं कि परमेश्वर सभी चीजों का प्रभु, शासक, सृष्टिकर्ता और आयोजक है। परिणामस्वरूप, अपने विवेक से प्रेरित होकर, हम संकल्प लेते हैं कि हमें उसकी आज्ञाओं का पालन करना चाहिए, और यह समझते हैं कि पुरानी आज्ञाओं का पालन भय से होता है, जबकि मसीह की जीवन-दायक आज्ञाओं का पालन प्रेम से होता है, जैसा कि प्रभु कहते हैं: *'यदि तुम मुझ से प्रेम करते हो, तो मेरी आज्ञाओं का पालन करो। और मैं पिता से प्रार्थना करूँगा, और वह तुम्हें एक और सहायक देगा'* (यूहन्ना 14, 15, 16)। सहायक के आगमन से, उनका तात्पर्य आध्यात्मिक रहस्यों के प्रकटीकरण की अनुदान है; इसलिए, आत्मा की प्राप्ति में, जिसे प्रेरितों ने प्राप्त किया, आध्यात्मिक ज्ञान की पूर्णता निहित है। और प्रभु ने अपने पिता से मध्यस्थता करने के बाद, उन्हें सांत्वना देने वाले को देने का वादा किया, ताकि जब वे उसकी आज्ञाओं का पालन करें और स्वयं को शुद्ध करें, तो वह सदा उनके साथ रहे। क्या आप देखते हैं कि आज्ञाओं का पालन करने से, मन गूढ़ मनन के अनुग्रह और आध्यात्मिक ज्ञान के प्रकाशनों के योग्य बन जाता है?

149. आज्ञाओं का पालन करने से तब ऐसी शक्ति का प्रकटीकरण होता है, जब यह उन्हें प्रदान करने वाले के प्रेम से किया जाता है, न कि भय से। इसलिए, ध्यान की ओर ले जाने वाला वैध द्वार प्रेम है। ज्ञान के प्रकटीकरण और गूढ़ मनन की सभी चढ़ाइयों पर, दिव्य प्रेम उन लोगों का मार्गदर्शन करता है जिन्होंने इसे प्राप्त किया है, ऊपर और नीचे दोनों ओर। इसलिए, पहले प्रेम प्राप्त करना चाहिए; और उसके बाद, आध्यात्मिक मनन हमारे पास स्वाभाविक रूप से आएगा। और धन्य पौलुस की बुद्धिमानी को समझें, कि कैसे उन्होंने अनुग्रह से प्राप्त सभी वरदानों को एक ओर रख दिया और उन सभी में सबसे आवश्यक की खोज की—वह जिसके द्वारा वरदान प्राप्त और संरक्षित होते हैं, अर्थात् प्रेम (1 कुरिन्थियों अध्याय 13)। यह प्रकट होने का स्थान है; और इस स्थान में, मनन अपने आप हमारे सामने प्रकट हो जाता है। जिस प्रकार, जैसे-जैसे आत्मा स्वाभाविक रूप से परिपक्व होती है, वह दुनिया में मौजूद चीजों का नया ज्ञान ग्रहण करती है, और दिन-प्रतिदिन इसे और अधिक सीखती है, उसी प्रकार, आध्यात्मिक क्षेत्र में, एक व्यक्ति आध्यात्मिक चिंतन और दिव्यता की अनुभूति ग्रहण करता है, और इसे उस हद तक सीखता है जहाँ मन तर्कपूर्ण जीवन में परिपक्व होता है। लेकिन जब वह प्रेम के क्षेत्र में प्रवेश करता है, तो वह आध्यात्मिक का उसके उचित स्थान पर चिंतन करता है।

१५०. जब तक कोई व्यक्ति आध्यात्मिकता को अपने ऊपर उतारने का प्रयास करता है, तब तक वह प्राप्त नहीं होती। और यदि वह साहस करके सपना देखता है, और अपनी दृष्टि आध्यात्मिकता की ओर उठाता है, और समय आने से पहले अपनी समझ से उसे प्राप्त करने का प्रयास करता है, तो उसकी दृष्टि जिल्द ही धुंधली हो जाती है, और वास्तविकता के बजाय, वह भूत-प्रेत और प्रतिबिंबों को देखता है। जैसे ही आप इसे अपने विवेकपूर्ण मन से समझ लेते हैं, आप अनुचित समय पर चिंतन की खोज नहीं करेंगे। हालाँकि, यदि आपको ऐसा लगता है कि अभी भी (शुद्धता और प्रेम के क्षेत्र में प्रवेश करने से पहले) आप ध्यान का अनुभव कर रहे हैं, तो यह ध्यान एक भ्रम की परछाई मात्र है, न कि सच्चा ध्यान; क्योंकि मन में कल्पित हर चीज़ का एक आभास और एक स्वप्निल प्रतिबिंब होता है, जबकि सच्चा ध्यान भी होता है। और प्राकृतिक क्रम में, कभी वास्तविक देखा जाता है, और कभी इसका विपरीत; आँख वास्तविकता के बजाय एक छाया देखती है, वहाँ पानी देखती है जहाँ कोई पानी नहीं है, हवा में तैरती हुई इमारतें देखती है, जबकि वे जमीन पर खड़ी होती हैं। उसी घटना की कल्पना मन के क्षेत्र में भी करें जैसे आप भौतिक क्षेत्र में करते हैं।

१५१. यदि मन की दृष्टि आज्ञाओं का पालन करने और मौन जीवन के कर्मों द्वारा शुद्ध नहीं होती, यदि यह प्रेम के प्रकाश की पूर्णता को प्राप्त नहीं करती, और यदि यह मसीह के नवीनीकरण में उम्र के साथ प्रगति नहीं करती, तो यह दिव्य मनन का सच्चा द्रष्टा नहीं बन सकता। फिर भी, वे आध्यात्मिक समानताएँ जिन्हें मन अपने लिए बनाने का प्रयास करता है, उन्हें भ्रम कहा जाता है, वास्तविकता नहीं। और मन का एक चीज़ के बजाय दूसरी चीज़ देखना इस तथ्य से उत्पन्न होता है कि वह शुद्ध नहीं हुआ है। ऐसा ही मामला बाहरी दार्शनिकों के साथ भी था, जो उस चीज़ को आध्यात्मिक मानते थे, जिसके बारे में उन्होंने ईश्वर से सच्ची शिक्षा प्राप्त नहीं की थी – और अनावश्यक घमंड में इसके बारे में बकबक करते थे, एक ईश्वर को बहुदेववाद में विभाजित करते थे, अपने विचारों का मज़ाक उड़ाते हुए आपस में बोलते और सहमत होते थे, और अपने पागल विचारों के इस भ्रम को 'चीजों की प्रकृति पर अनुमान' कहते थे।

152. इंद्रयि और अति-इंद्रयि स्वभावों तथा स्वयं पवित्र त्रमिूर्ति का सच्चा चंतिन मसीह के प्रकाशन द्वारा प्रदान कयिा जाता है। मसीह ने यह मानवजाति को सखिाया और उन्हें यह दखिाया जब, अपनी हाइपोस्टेससि के माध्यम से, उन्होंने पहली बार मानव स्वभाव का नवीनीकरण कयिा, उसे बहाल कयिा और उसे उसकी मूल स्वतंत्रता प्रदान की, और स्वयं ने अपने जीवन-दायक आज्ञाओं के माध्यम से हमारे लएि सत्य तक आरोहण का मार्ग प्रशस्त कयिा। और हमारी प्रकृति वास्तवकि, न कि काल्पनकि, चंतिन की दर्शक बनने में तभी सक्षम होती है, जब कोई व्यक्ति प्रारंभकि कष्ट, परशि्रम और दुख को सहन करके, पुराने, वासनाओं से ग्रस्त मनुष्य को त्याग देता है, ठीक वैसे ही जैसे एक नवजात शशिु उन वस्त्रों को त्याग देता है जनिमें उसे अपनी माँ के गर्भ से बाहर लाया जाता है। तब मन, आध्यात्मकि रूप से पुनर्जीवति होकर, अपने वास्तवकि स्वदेश के चंतिन को ग्रहण करने में सक्षम हो जाता है।

१५३. और यह मनन मन के लएि पोषण का काम करता है, जब तक कि वह उस अवस्था में नहीं पहुँच जाता जहाँ वह पहले से भी उच्चतर मनन प्राप्त कर सकता है; क्योंकि एक मनन व्यक्ति को दूसरे की ओर ले जाता है, जब तक कि मन पूर्ण प्रेम के क्षेत्र में नहीं आ जाता। प्रेम आध्यात्मकि का धाम है, और इसकी जड़ें आत्मा की पवत्रिता में गहरी होती हैं। जब मन प्रेम के क्षेत्र में प्रवेश करता है, तो कृपा कार्य में लग जाती है; मन आध्यात्मकि चंतिन प्राप्त करता है और गूढ़ का द्रष्टा बन जाता है।

154. जैसा कि मैं पहले ही कह चुका हूँ, बौद्धकि चंतिन के प्रकाशन का वरदान दो तरीकों से प्रदान कयिा जाता है। कभी-कभी यह अनुग्रह द्वारा उत्कट वशि्वास के लएि प्रदान कयिा जाता है; और कभी-कभी आज्ञाओं का पालन करने और पवत्रिता के लएि। अनुग्रह से, जैसा कि धन्य प्रेरतिों के मामले में था, जन्होंने आज्ञाओं का पालन करके नहीं बल्कि उत्कट वशि्वास से अपने मन को शुद्ध कयिा; क्योंकि उन्होंने सादगी से मसीह में वशि्वास कयिा और नस्सिंदेह, प्रज्वलति हृदयों से, उनका अनुसरण कयिा। और जब मसीह ने कलीसयिा के नर्मिाण का अपना परम पवत्रि कार्य पूरा कर लयिा, तो उन्होंने उन्हें आत्मा, यानी सांत्वना देने वाले को भेजा, जसिने उनके मन को शुद्ध और परपिूर्ण कयिा, और उनके भीतर पुराने, वासनाओं से बँधे मनुष्य को प्रभावी रूप से मार डाला, और उनके भीतर नए, आध्यात्मकि मनुष्य को प्रभावी रूप से जीवति कर दयिा। – इस प्रकार धन्य पौलुस रहस्यमय रूप से नवीनीकृत हुए, और इसके बाद उन्हें प्रकाशन के रहस्यों का चंतिन प्राप्त हुआ। यह दर्ज नहीं है कि यीशु ने उससे खुले तौर पर क्या कहा, लेकनि यह लखिा है कि हनन्याह ने उससे कहा: *'भाई साऊल,* हमारे *प्रभु यीशु* ने, *जो तुझ पर मार्ग में प्रगट हुए, मुझे तेरे पास भेजा है, ताकि तेरी आँखें खुल जाएँ और तू पवत्रि आत्मा से भर जाए'* (प्रेरतिों के काम 9:17)। – और जब उस ने उस का बपतस्मिा दयिा, तो वह पवत्रि आत्मा से भर गया; और उसने प्रकटनों के छपि हुए रहस्यों को जान लयिा, ठीक वैसे ही जैसे पवत्रि प्रेरतिों के साथ हुआ था, जनिसे प्रभु यीशु ने कहा था: *'मुझे तुमसे और भी बहुत कुछ कहना है, परन्तु तुम अभी उसे सहन नहीं कर सकते; फरि जब पवत्रि आत्मा आएगा, तो वह तुम्हें सारी सच्चाई में मार्गदर्शन करेगा, और आने वाली बातें तुम्हें बताएगा'* (यूहन्ना 16:12-13)।

१५५. और ठीक उसी समय, जब धन्य पौलुस ने पवत्रि आत्मा को प्राप्त कयिा और उनके द्वारा नए सरि से बने, तब उन्हें प्रकाशन के रहस्यों के योग्य समझा गया; उन्होंने प्रकाशन की आत्मा के द्वारा मनन करना शुरू कयिा, और इस मनन में आनंदति हुए; उन्होंने अगोचर वचन सुने, उसने परम प्रकृति के चंतिन को देखा, स्वर्गीय शक्तयिों के दर्शनों पर वस्मिति हुआ, और आध्यात्मकि में आनंदति हुआ। और यह वैसा न हो जैसा कि विधर्मी (यूक्टटिाई) अपनी मूर्खता में दावा करते हैं, कि उसने यह आरोहण अपनी इच्छा से प्राप्त कयिा! मन वहाँ बलि्कुल भी आरोहण नहीं कर सकता। इसके वपिरीत, पौलुस को प्रकाशन की आत्मा में उठा लयिा गया था, जैसा कि उन्होंने स्वयं कोरन्थियिों के नाम अपने पत्र में लखिा है (2 कुरन्थियिों 12:2, 4), इन व्यर्थ लोगों के वपिरीत, जन्होंने स्वयं को पवत्रि प्रेरतिों के समान ठहराया और अपने वचिारों के सपनों को 'आध्यात्मकि मनन' कहा।

156. उन लोगों के बारे में जो वासनाओं से भरे हैं और दैहकि तथा अदैहकि के नयिमों के अध्ययन में लगे रहते हैं, और जो इसलएि उन बीमारों से अलग नहीं हैं जो स्वास्थ्य संरक्षण के नयिम सखिाते हैं, एक संत ने लखिा है: 'धन्य है...' पौलुस, जब उन्हें उन शष्यिों के बारे में पता चला जन्होंने आज्ञाओं की अवहेलना की थी और अपने जुनून पर काबू नहीं पाया था, फरि भी रहस्यों पर मनन करने की आनंद की लालसा रखते थे—एक ऐसा आनंद जो केवल उन्हीं जुनूनों से शुद्धकिरण के माध्यम से ही संभव है—तो उन्होंने उनसे कहा: 'पहले वासनाओं के पुराने मनुष्य को उतार फेंको, और फरि सृष्टकिर्ता के समानता में रहस्यों के ज्ञान से नवीनीकृत नए मनुष्य को धारण करने की लालसा करो; और मेरी या अन्य प्रेरतिों की परमानंद की लालसा मत करो, जो वास्तव में अनुग्रह से सद्धि होता है; क्योंकि *"परमेश्वर जसि पर चाहता है उस पर दया करता है, और जसिे चाहता है उसे कठोर बना देता है"* (रोमयिों 9:18)। क्योंकि उसकी इच्छा के वरिुद्ध कौन ठहर सकता है, या उसकी इच्छा का वरिोध कौन कर सकता है? – परमेश्वर कभी-कभी मुक्त रूप से प्रदान करते हैं; अन्य समयों में वे कर्मों और शुद्धकिरण की मांग करते हैं, और केवल तभी उपहार भेजते

हैं; और कभी-कभी, कर्मों और शुद्धकिरण के बाद भी, वे इसे यहाँ प्रदान नहीं करते, बल्कि इसे अपनी इच्छति समय पर दर्शन प्रदान करने के लिए सुरक्षति रखते हैं।"

157. हम पाते हैं कि वह इस तरह इस से भी छोटे उपहार के संबंध में कार्य करते हैं—अर्थात् पापों की क्षमा के संबंध में। क्योंकि वह बपतस्मिा निःशुल्क प्रदान करते हैं, और विश्वास के सिवा और कुछ भी नहीं मांगते; जबकि, बपतस्मिा के बाद पापों के लिए पश्चाताप के मामले में, वह तुरंत क्षमा नहीं करते, बल्कि परिश्रिम, दुख, शोक, पश्चाताप, आँसू और लंबे समय तक रोने की मांग करते हैं - और केवल तभी वह क्षमा करते हैं। उन्होंने चोर को सूली पर बोले गए एक ही स्वीकारोक्ति के लिए तुरंत क्षमा कर दिया, और उसे राज्य का वादा किया; लेकिन पापी स्त्री से उन्होंने विश्वास और आँसुओं की भी मांग की।

१५८. जो आत्मा ईश्वर से प्रेम करती है, उसे ईश्वर में और केवल उसी में विश्राम मिलता है। पहले, अपने भीतर के हर बाहरी बंधन को तोड़ें, और फिर आप अपने हृदय में ईश्वर के साथ एक हो पाएँगे; क्योंकि ईश्वर के साथ एकता से पहले भौतिक दुनिया से विरक्ति होती है। एक शिशु को दूध पचाने के बाद ही रोटी दी जाती है: और जो व्यक्ति दिव्य रूप से समृद्धि प्राप्त करना चाहता है, उसे पहले दुनिया से अलग होना चाहिए, ठीक वैसे ही जैसे एक शिशु अपनी माँ की गोद और स्तनों से अलग होता है। शारीरिक श्रम आध्यात्मिक श्रम से पहले आता है, ठीक वैसे ही जैसे आदम में फूंकी गई आत्मा से पहले धूल थी। जिसने शारीरिक श्रम प्राप्त नहीं किया है, वह आध्यात्मिक श्रम का भी स्वामी नहीं हो सकता; क्योंकि बाद वाला पहले वाले से ही उत्पन्न होता है, ठीक वैसे ही जैसे गेहूं के एक खाली दाने से अनाज की बाली निकलती है। और जिस व्यक्ति में आध्यात्मिक श्रम की कमी है, वह आध्यात्मिक वरदानों से भी वंचित है।

१५९. जैसे आँसुओं में बोया हुआ बीज आनंद की फसल देता है, वैसे ही ईश्वर के लिए कष्ट सहना भी आनंद से परिपूर्ण होगा। किसान को पसीने से कमाई गई रोटी मीठी लगती है; वैसे ही धार्मिकता के कर्म उस हृदय को मीठे लगते हैं जिसने मसीह की शिक्षा ग्रहण की है। एक इच्छुक आत्मा के साथ अपमान और नम्रता दोनों को सहन करो, ताकि तुम ईश्वर के सामने निडर हो सको। एक बुद्धिमान व्यक्ति जो हर कठोर शब्द को सहन करता है, और जिसने उसे कहने वाले के साथ पहले कोई बुराई नहीं की है—भले ही वह अपने सिर पर काँटों का ताज रख ले—वह फिर भी धन्य है, क्योंकि उसे एक अक्षय मुकुट पहनाया जाता है, हालाँकि वह स्वयं इसके बारे में अनजान है।

१६०. जिसने विवेक से व्यर्थ की कीर्ति से परहेज़ किया है, उसने अपने आत्मा में आने वाले युग को महसूस किया है। जो इस वर्तमान जीवन में शांति की खोज करता है, उसका मन पहले से ही आने वाले युग पर केंद्रित हो चुका है। लेकिन जो लाभ के प्रेम से बंधा है, वह अपने जुनून का दास है। यह न सोचें कि केवल सोने और चांदी का संग्रह ही लालच है; यह तो किसी भी वस्तु का संग्रह है—जिससे आपकी इच्छा जुड़ी हो। ऐसे व्यक्ति की प्रशंसा न करें जो शारीरिक कष्टों से पीड़ित है, फिर भी एक ही समय में इंद्रियों को पूरी छूट दे देता है—जिससे मेरा तात्पर्य है कान, खुला और अनियंत्रित मुँह, और भटकती हुई आँखें।

161. जानो कि ऋणी लोगों के पापों को क्षमा करना धर्म का एक कार्य है। तब तुम अपने पूरे मन में शांति और स्पष्टता देखोगे। यदि दयालु अपने धर्म से ऊपर नहीं उठते, तो वे दयालु नहीं हैं – अर्थात्, सच्चे दयालु न केवल अपनी संपत्ति से लोगों को दान देते हैं, बल्कि दूसरों से होने वाले अन्याय को भी प्रसन्नतापूर्वक सहते हैं और उन पर दया दिखाते हैं। जो अपने भाई के लिए अपना जीवन त्याग देता है, वह दयालु है, न कि जो केवल दान देकर अपने भाई पर दया दिखाता है। और वह दयालु है जो, यदि उसका भाई उसे डांटे, तो वह पलटकर जवाब देने और उसका मन दुखी करने की हिम्मत नहीं करता।

१६२. जागरण के अभ्यास से प्रेम करो, ताकि तुम्हें अपनी आत्मा के निकट लोगों में सांत्वना मिले। मौन में अध्ययन के लिए स्वयं को समर्पित करो, ताकि तुम्हारा मन हमेशा ईश्वर के चमत्कारों की ओर उठे। धैर्य के साथ गरीबी से प्रेम करो, ताकि तुम्हारा मन एकत्रित हो जाए और विचलन से मुक्त रहे। ऐश्वर्यपूर्ण जीवन से घृणा करो, ताकि तुम्हारे विचार अबाधित रहें। कई चीजों से परहेज़ करो, और केवल अपनी आत्मा की परवाह करो, ताकि तुम उसे आंतरिक शांति के व्यर्थ व्यय से बचा सको।

१६३. पवित्रता से प्रेम करो, ताकि प्रार्थना के समय तुम्हें ईश्वर के सामने लज्जित न होना पड़े। अपने कर्मों में पवित्रता प्राप्त करो, ताकि प्रार्थना में तुम्हारी आत्मा प्रबुद्ध हो सके, और मृत्यु की स्मृति तुम्हारे मन में आनंद जगा सके। अपने काम में आलसी न बनो, कहीं ऐसा न हो कि अपने दोस्तों के बीच खड़े होने पर तुम्हें शर्मिंदगी उठानी पड़े। अपनी स्वतंत्रता को उस चीज़ से बाँधो मत जो आनंद का स्रोत है, कहीं ऐसा न हो कि तुम दासों के दास बन जाओ। अपने परिधान में साधारण वस्त्रों को प्राथमिकता दो, ताकि मन में उत्पन्न होने वाले विचारों को, अर्थात् हृदय के अहंकार को, विनम्र किया जा सके। जो वैभव को प्रेम करता है, वह विचारों की स्वतंत्रता प्राप्त नहीं कर सकता; क्योंकि हृदय आंतरिक रूप से बाहरी दिखावट के समान आकार ले लेता है।

164. विनिम्रता के बाद सभी चीजों में आत्म-संयम और मध्यमता आती है। नम्रता, निरंतर आत्म-संयम के माध्यम से, चिंतन प्राप्त करती है और आत्मा को पवित्रता से सुशोभित करती है; जबकि अहंकार, अपने ही विचारों के अनवरत उथल-पुथल और भ्रम के माध्यम से, जो कुछ भी उससे मिलता है उससे अपवित्र खजाने इकट्ठा करता है और हृदय को कलंकित करता है। यह वस्तुओं की प्रकृति को एक अशुद्ध दृष्टि से देखता है और मन को शर्मनाक कल्पनाओं से भर देता है, जबकि विनिम्रता आत्म-चिंतन के माध्यम से आध्यात्मिक रूप से स्वयं को संवारती है और इसे प्राप्त करने वालों को प्रशंसा करने के लिए प्रेरित करती है।

165. आपके लिए गुलामों को दासता से मुक्त करने की अपेक्षा पाप के बंधनों से स्वयं को मुक्त करना बेहतर है। आपके लिए अपनी ही आत्मा के साथ शांति में रहना—जो आपके भीतर त्रिगुण स्वभाव, अर्थात् शरीर, आत्मा और पवित्र आत्मा के अनुरूप है—उनकी अपेक्षा बेहतर है जो विभिन्न विचारों वाले हैं, उन्हें अपने उपदेश द्वारा शांत करने से। ग्रेगरी कहते हैं: 'ईश्वर के लिए धर्मशास्त्र में संलग्न होना अच्छा है, लेकिन किसी व्यक्ति के लिए ईश्वर के लिए स्वयं को शुद्ध करना बेहतर है।' मृतकों को जीवित करने की तुलना में, यह अधिक लाभकारी है कि आप यह सुनिश्चित करें कि आपके विचारों को दिव्य की ओर निर्देशित करके, आपके भीतर की आत्मा में जो कुछ वासनाओं के कारण गिरा है, उसे पुनर्स्थापित किया जाए।

१६६. अपने पूरे जीवन में, जहाँ भी आप जाएँ, खुद को एक अजनबी समझें, ताकि आप अपने आचरण में संयम की कमी से होने वाले नुकसान से खुद को बचा सकें। हमेशा अपने होठों से आशीर्वाद दें, और आपकी निंदा नहीं की जाएगी, क्योंकि निंदा से निंदा पैदा होती है, जबकि आशीर्वाद से आशीर्वाद पैदा होता है। हर मामले में, स्वयं को अभावग्रस्त समझो, ताकि तुम सीख सको – और अपने पूरे जीवन में तुम स्वयं को बुद्धिमान साबित कर सको। किसी दूसरे को वह बात मत बताओ जिसका तुमने स्वयं अनुभव नहीं किया है, कहीं ऐसा न हो कि तुम्हें स्वयं पर शर्म आए, और कहीं तुम्हारा जीवन परखे जाने पर तुम्हारे झूठ का पर्दाफाश न हो जाए।

167. विधर्मी शिक्षाओं को पढ़ने से सावधान रहो, क्योंकि इससे आपके भीतर ईश्वर-निंदा की भावना जागृत होने की सबसे अधिक संभावना होती है। ईश्वर की व्यवस्था पर शिक्षकों की रचनाएँ बार-बार और कभी थके बिना पढ़ें, क्योंकि वे मन को ईश्वर की सृष्टि और कार्यों में व्यवस्था को पहचानने में मार्गदर्शन करती हैं; वे अपनी बुद्धिमत्ता से इसे मजबूत करती हैं; अपनी सूक्ष्मता से, वे इसे प्रकाशमान विचार प्राप्त करने के लिए तैयार करती हैं; और वे सुनिश्चित करती हैं कि यह शुद्धता के साथ ईश्वर की सृष्टि की समझ की ओर अग्रसर हो। पवित्र सुसमाचार पढ़ें, जो परमेश्वर द्वारा संपूर्ण ब्रह्मांड के ज्ञान के लिए विरासत में दिया गया है, ताकि आपका मन परमेश्वर के आश्चर्यों में डूब जाए। आपकी पढ़ाई किसी भी चीज़ से विचलित न होने वाली खामोशी में हो, और शरीर की अत्यधिक चिंता तथा दैनिक जीवन के कोलाहल से मुक्त हो, ताकि आप अपनी आत्मा में, मधुर मनन के माध्यम से, हर अनुभूति से परे, सबसे मधुर स्वाद का अनुभव कर सकें, और ताकि आपकी आत्मा इसमें स्थिर होकर इसका अनुभव कर सके।

१६८. अपनी आत्मा को शुद्ध करो; अपनी प्रकृति से परे की सभी चिंताओं को त्याग दो; अपने विचारों और गतिविधियों पर पवित्रता और विनिम्रता का आवरण डालो; और इसके माध्यम से तुम जान पाओगे कि तुम्हारी प्रकृति के भीतर क्या है, क्योंकि विनिम्र लोगों पर रहस्यों का प्रकटीकरण होता है।

१६९. यदि आप अपनी आत्मा को प्रार्थना के कार्य, जो मन को शुद्ध करता है, और एक स्पष्ट मन प्राप्त करने के लिए रात में जागने के लिए समर्पित करने का इरादा रखते हैं, तो संसार की दृष्टि से दूर हो जाएँ, लोगों से मिलना बंद कर दें, और अपनी कोठरी में, जैसा कि प्रथा है, लोगों को न आने दें, दोस्तों से, भले ही लाभ के बहाने, सिवाय उन लोगों के जो आपके और आपके साथी तपस्वियों के समान विचार और समान आत्मा वाले हों; आंतरिक संवाद से होने वाले व्यवधान से सावधान रहें, और बाहरी संवाद को त्यागकर, अपने प्रार्थना के साथ दान को मिलाएँ, और आपकी आत्मा सत्य के प्रकाश को देखेगी। क्योंकि जिस हद तक हृदय बाहरी मामलों से परेशान होना बंद कर देता है, उसी हद तक मन दिव्य विचारों और कार्यों की समझ के माध्यम से समझ और आश्चर्य प्राप्त कर सकता है। क्योंकि आत्मा जल्दी से एक बातचीत को दूसरी से बदल देती है, यदि हम थोड़ी सी लगन दिखाएँ।

170. एक विचारधारा को दूसरी से बदलने के लिए (व्यर्थ को आत्मा-उद्धारक से), स्वयं को धर्मग्रंथ और संतों के जीवन के अध्ययन के लिए समर्पित करें। और जब आप अपनी प्रार्थना और अपने दैनिक नियम का पालन करने लगते हैं, तो दुनिया में जो आपने देखा और सुना है उस पर चिंतन करने के बजाय, आप पाएंगे कि आप उन दिव्य शास्त्रों पर चिंतन कर रहे हैं जिन्हें आपने पढ़ा है; और इस चिंतन के माध्यम से, सांसारिक मामलों के आपके विचार विस्मृति में खो जाएंगे; और इस तरह मन शुद्ध हो जाता है। और यही बात उस लिखे हुए का अर्थ है: कि जब आत्मा प्रार्थना की ओर मुड़ती है तो पठन उसकी सहायता करता है; और इसी प्रकार: प्रार्थना के माध्यम से आत्मा अपने

पठन में प्रबुद्ध होती है। और पठन, बाहरी विचलनों के बजाय, विभिन्न प्रकार की प्रार्थनाओं के लिए पोषण प्रदान करता है; और इसलिए, पठन के माध्यम से, आत्मा प्रबुद्ध होती है, ताकि वह हमेशा आलस्य या विचलन के बिना प्रार्थना कर सके।

171. कामुक और पेटू लोगों का आध्यात्मिक विषियों का अध्ययन करना उतना ही अनुचित है, जितना कि एक वेश्या का पवित्रता पर उपदेश देना। एक अत्यधिक अस्वस्थ शरीर भारी भोजन सहन नहीं कर सकता; और सांसारिक मामलों में व्यस्त मन दिव्यता के अध्ययन के करीब नहीं जा सकता। गीली लकड़ी में आग नहीं जलती; और न ही उस हृदय में दिव्य उत्साह प्रज्वलित होता है जो सांसारिक शांति से प्रेम करता है। जैसे कोई व्यक्ति जिसने स्वयं अपनी आँखों से सूर्य को नहीं देखा, वह केवल सुनी-सुनाई बातों के आधार पर किसी को उसकी रोशनी का वर्णन नहीं कर सकता—और न ही वह उस प्रकाश को महसूस कर सकता है—वैसे ही वह व्यक्ति है जिसने अपनी आत्मा से आध्यात्मिक विषियों की मिठास का स्वाद नहीं चखा।

172. यदि आपके पास अपनी दैनिक आवश्यकताओं से अधिक कुछ भी अतिरिक्त है, तो उसे गरीबों को दे दें, और निडर होकर अपनी प्रार्थनाएँ करने के लिए आगे बढ़ें; अर्थात्, एक पुत्र की तरह अपने पिता से बातचीत करें। दान से बढ़कर कोई भी चीज़ हृदय को ईश्वर के करीब नहीं ला सकती; और स्वेच्छा से गरीबी अपनाने से बढ़कर कोई भी चीज़ आत्मा को शांति नहीं देती। जब आप दें, तो उदारतापूर्वक दें, अपने चेहरे पर सौम्य भाव के साथ, और मांगे गए से अधिक प्रदान करें। योग्य और अयोग्य में अंतर करने का प्रयास न करें; अच्छाई करने के मामले में सभी लोग आपकी दृष्टि में समान हों। क्योंकि इस तरह आप अयोग्य लोगों को भी अच्छाई की ओर खींच सकते हैं, क्योंकि आत्मा शारीरिक साधनों के माध्यम से जल्दी ही ईश्वर के भय की ओर आकर्षित होती है।

173. अपनी कोठरी को अनावश्यक चीज़ों से खाली करो, क्योंकि यह तुम्हें संयम की ओर ले जाएगा, भले ही तुम ऐसा न चाहो। हर चीज़ में संयम व्यक्ति को आत्म-नियंत्रण सिखाता है। जो लोग बाहरी लड़ाई में विजयी हो चुके हैं—जिससे मेरा तात्पर्य इंद्रियों द्वारा आत्मा पर छेड़ी गई लड़ाई से है: सुनना, देखना आदि—उन्हें आंतरिक लड़ाई से भी डरने की आवश्यकता नहीं है। जब कोई व्यक्ति नगर के द्वार—अर्थात् इंद्रियों—को बंद कर लेता है, तो वह अपने भीतर ही संघर्ष करता है, और नगर के बाहर बुराई की साजिश रचने वालों से नहीं डरता। धन्य है वह जो, यह जानते हुए, स्वयं को अनेक कार्यों से परेशान नहीं करता, बल्कि अपनी सारी शारीरिक गतिविधि को प्रार्थना के श्रम की ओर मोड़ देता है।

174. जब ईश्वर आपके हृदय को भीतर से पश्चाताप के लिए प्रेरित कर रहे हों, तो निरंतर झुकें और घुटने टेकें। यदि उस क्षण, राक्षस आपको अन्य मामलों में व्यस्त होने के लिए मनाने लगें, तो अपने हृदय को किसी और चीज़ में मग्न न होने दें; और फिर देखें तथा आश्चर्य करें कि उसका आपके लिए क्या परिणाम होता है। तपस्या के संघर्षों में और कुछ भी इतना महत्वपूर्ण या इतना कठिन नहीं है, और न ही इससे राक्षसों को इतनी ईर्ष्या होती है, जितना कि जब कोई मसीह के क्रूस के सामने दिन-रात प्रार्थना करते हुए, मानो उसके हाथ पीछे बांध दिए गए हों, स्वयं को नमन करता है। यदि आप नहीं चाहते कि आपका उत्साह ठंडा पड़ जाए, और न ही आँसुओं से थकें, तो स्वयं को इसी में समर्पित कर दें; और धन्य हैं आप यदि आप दिन-रात जो कहा गया है उस पर ध्यान देते हैं, और कुछ और नहीं चाहते। यदि आप प्रयास नहीं करेंगे, तो आप इसे प्राप्त नहीं करेंगे; और यदि आप द्वार पर उत्साहपूर्वक दस्तक नहीं देंगे और इसके सामने अविराम जागते नहीं रहेंगे, तो आपकी पुकार सुनी नहीं जाएगी।

१७५. जब तक बाहरी मनुष्य सभी सांसारिक चीजों से नहीं मर जाता—केवल पाप से ही नहीं, बल्कि हर कर्म से—और इसी तरह भीतरी मनुष्य दुष्ट विचारों से, और जब तक शरीर की स्वाभाविक प्रवृत्तियाँ इतनी वश में नहीं हो जातीं कि हृदय में कोई पापी मिठास न जागृत हो, तब तक मनुष्य में परमेश्वर की आत्मा की मिठास जागृत नहीं होगी; उसके अंग इस जीवन में पवित्रता प्राप्त नहीं करेंगे, और दिव्य विचार उसकी आत्मा में प्रवेश नहीं करेंगे, वे अप्रतिभाष्य और अदृश्य बने रहेंगे। – और जब तक कोई व्यक्ति अपने हृदय में सांसारिक मामलों की सभी चिंताओं को—शरीर की आवश्यक आवश्यकताओं को छोड़कर—त्याग नहीं देता और इन चीजों की देखभाल ईश्वर पर नहीं छोड़ देता; तब तक, उसके भीतर आध्यात्मिक आनंद उत्पन्न नहीं होगा।

176. जो व्यक्ति दृढ़ विश्वास और भावना के साथ, उस समानता को मन में रखता है, जिसके लिए सभी का सामान्य लक्ष्य है, उसे सांसारिक जीवन का त्याग करने के लिए किसी अन्य शिक्षक की आवश्यकता नहीं है। जो व्यक्ति स्वेच्छा से वासना के कारणों से पीछे नहीं हटता, वह अनजाने में पाप में फँस जाता है। पाप के कारण इस प्रकार हैं: शराब, स्त्रियाँ, धन और शारीरिक स्वास्थ्य; हालाँकि, ऐसा इसलिए नहीं है कि ये स्वभाव से ही पाप हैं, बल्कि इसलिए कि मानव स्वभाव इनकी ओर आसानी से पापी वासनाओं की ओर झुक जाता है, और इसलिए किसी को इससे सावधानीपूर्वक सावधान रहना चाहिए। लोग गरीबी से घृणा करते हैं, लेकिन ईश्वर के लिए एक घमंडी आत्मा और एक

उच्च मन कहीं अधिक घृणित हैं। लोग धन का सम्मान करते हैं; लेकिन ईश्वर के लिए, एक विनम्र आत्मा सम्माननीय है।

१७७. यदि आप अच्छा करना शुरू करना चाहते हैं, तो पहले उन प्रलोभनों के लिए खुद को तैयार करें जो आपको घेरेंगे। क्योंकि यह शत्रु का रीति है—जब वह देखता है कि किसी ने उत्कट श्रद्धा के साथ एक सदाचारी जीवन आरंभ कर दिया है—तो वह उन्हें विभिन्न भयानक प्रलोभनों से घेर लेता है, ताकि भय के मारे वे अपने अच्छे संकल्प में ठंडे पड़ जाएँ और ईश्वर को प्रसन्न करने वाले कर्मों के प्रति उनका उत्साह समाप्त हो जाए। इसलिए, सदाचार पर आक्रमण करने वाले प्रलोभनों का साहसपूर्वक सामना करने के लिए खुद को तैयार करें, और तभी उनका अभ्यास शुरू करें।

178. ईश्वर की आज्ञाएँ संसार के सभी खजानों से महान हैं। जिसने उन्हें प्राप्त किया है, वह अपने भीतर ईश्वर को पाता है। जो हमेशा ईश्वर की देखभाल में विश्राम करता है, उसने ईश्वर को अपना रक्षक पाया है। जो ईश्वर की इच्छा को पूरा करने की लालसा रखता है, उसके मार्गदर्शक स्वर्गदूत होंगे। जो पाप से डरता है वह बिना किसी बाधा के भयानक यात्रा पूरी करेगा, और अंधकार में उसे अपने सामने और अपने भीतर प्रकाश मिलेगा। प्रभु पाप से डरने वालों के कदमों की रक्षा करते हैं, और जब प्रलोभन उत्पन्न होता है, तो ईश्वर की दया उनके आगे रहती है। जो अपनी अवज्ञाओं को तुच्छ समझता है, वह पहले से भी बदतर स्थिति में गिर जाता है और सातगुनी सज़ा भुगतता है।

१७९. विनम्रता से दान बोओ, और न्याय के दिन दया की फसल काटोगे। जिस किसी भलाई को तुमने नष्ट किया है, उसे उसी से फिर से प्राप्त करो। तुमने पवित्रता को नष्ट कर दिया है; जब तक तुम व्यभिचार में रहते हो, ईश्वर तुमसे दान स्वीकार नहीं करेगा; क्योंकि वह तुम्हारे शरीर की पवित्रता चाहता है। और हर रोग का इलाज उसकी अपनी विशिष्ट दवा से होता है। तुम ईर्ष्या से पराजित हो गए हो; तो फिर तुम (ईर्ष्या के बजाय) नींद से लड़ने का प्रयास क्यों करते हो?

180. जब कोई पाप अभी छोटा है और पूरा नहीं हुआ है, तो उसे जड़ से उखाड़ फेंको, इससे पहले कि वह अपनी शाखाएँ दूर-दूर तक फैलाए और फल देने लगे। जब तक दोष आपको छोटा लगता है, तब तक लापरवाही न करें; क्योंकि बाद में आप उसमें एक निर्दयी स्वामी पाएंगे और उससे एक दास, एक कैदी की तरह भागेंगे। लेकिन जो कोई भी शुरुआत में ही एक वासना का विरोध करता है, वह जल्द ही उस पर विजय प्राप्त कर लेगा।

१८१. जो व्यक्ति अपमान का बदला लेने का साधन होते हुए भी उसे खुशी से सहन कर लेता है, उसे ईश्वर में विश्वास के द्वारा ईश्वर से सांत्वना प्राप्त हुई है। और जो व्यक्ति अपने ऊपर लगाए गए आरोपों को विनम्र बुद्धिमानी से सहन करता है, वह पूर्णता को प्राप्त कर लेता है, और पवित्र स्वर्गदूत उस पर आश्चर्य करते हैं। क्योंकि कोई अन्य सद्गुण इतना ऊँचा और अभ्यास करने में इतना कठिन नहीं होगा।

182. जब तक आपको परीक्षा में नहीं डाला गया है - और आप स्वयं को अपरिवर्तित नहीं पाते - तब तक स्वयं को मजबूत समझकर भरोसा न करें। अपनी ही शक्ति पर भरोसा न करें, कहीं ऐसा न हो कि कमजोरी के कारण आप गिर जाएँ; और फिर, अपनी ही गिरावट के माध्यम से, आप अपनी कमजोरी को जान जाएँगे। अपने ज्ञान पर भरोसा न करें, कहीं ऐसा न हो कि दुश्मन, बीच में आकर, आपको अपनी चालाकी से फँसा ले। अपने कर्मों के बारे में अपनी बातों में कभी घमंड न करें, कहीं आपको शर्मिंदगी न उठानी पड़े। जिस बात पर भी कोई मनुष्य घमंड करता है, ईश्वर उसे बदल देता है, ताकि वह विनम्र हो जाए और नम्रता सीख जाए।

१८३. अपनी आँखें निरंतर परमेश्वर की ओर उठाए रखो; क्योंकि परमेश्वर की सुरक्षा और व्यवस्था सभी लोगों को घेरे हुए है, फिर भी वह अदृश्य है, और स्वयं को केवल उन्हीं के सामने प्रकट करता है जिन्होंने स्वयं को पाप से शुद्ध कर लिया है और जो हमेशा परमेश्वर के, और केवल उसी के, बारे में सोचते हैं। परमेश्वर की व्यवस्था उनके सामने सबसे अधिक तब प्रकट होती है जब, परमेश्वर के लिए, वे परीक्षा में पड़ते हैं। क्योंकि तब वे ईश्वर की व्यवस्था को, मानो अपनी भौतिक आँखों से उन्हें निहार रहे हों, प्रत्येक पर आने वाली परीक्षा के परिमाण और कारण के अनुसार अनुभव करते हैं, ताकि ये तपस्वी साहस के लिए प्रेरित हों, जैसा कि याकूब, यहोशू, तीन युवकों के साथ हुआ था, पतरस और अन्य संतों के लिए, जिनके समक्ष दैवीय व्यवस्था किसी मानवीय रूप में प्रकट हुई, जो उन्हें धार्मिकता में प्रोत्साहित और मजबूत करती थी।

184. क्या हमें उन तपस्वियों के बारे में कुछ कहने की आवश्यकता है, जो संसार से अपरिचित हैं, और उन संन्यासियों के बारे में? उन्होंने रेगिस्तान को एक शहर में बदल दिया, उसे स्वर्गदूतों की बस्ती और निवास-स्थान बना दिया। स्वर्गदूत उनके जीवन की धार्मिकता के कारण हमेशा उनके पास आते थे, और एक ही प्रभु के योद्धाओं के रूप में, वे कभी-कभी साथ-साथ लड़ते थे। अपने जीवन के सभी दिनों में उन्होंने रेगिस्तान से प्रेम किया, और ईश्वर के

प्रति प्रेम के कारण उन्होंने पृथ्वी के पहाड़ों, गुफाओं और दरारों में अपना घर बनाया। चूँकि उन्होंने स्वर्गीय चीज़ों से प्रेम करने के लिए सांसारिक चीज़ों को त्याग दिया था, और स्वर्गदूतों के अनुकरणकर्ता बन गए थे, इसलिए सबसे पवित्र स्वर्गदूतों ने, न्याय के अनुसार, उनसे अपनी उपस्थिति नहीं छिपाई, बल्कि उनकी हर इच्छा को पूरा किया और हर बात में उन्हें हर प्रकार की सहायता प्रदान की।

185. जो कोई एक बार और हमेशा के लिए स्वयं को ईश्वर को समर्पित कर देता है, वह अपना जीवन मानसिक शांति में व्यतीत करता है। आसक्ति के बिना, आत्मा विचारों के कोलाहल से स्वयं को मुक्त नहीं कर सकती – और जब तक इंद्रियों को शांत नहीं किया जाता, तब तक कोई मानसिक शांति का अनुभव नहीं कर सकता। प्रलोभनों का सामना किए बिना, कोई भी आध्यात्मिक ज्ञान प्राप्त नहीं कर सकता। परिश्रमपूर्वक अध्ययन के बिना, कोई भी विचारों की सूक्ष्मता को नहीं समझ सकता। विचारों की स्थिरता के बिना, मन गहनतम रहस्यों में प्रवेश नहीं कर पाएगा। विश्वास में आशा के बिना, आत्मा साहसपूर्वक प्रलोभनों का सामना नहीं कर सकती। ईश्वर की स्पष्ट सुरक्षा का अनुभव किए बिना, हृदय ईश्वर में आशा करने में असमर्थ है। यदि आत्मा पूर्ण समझ के साथ मसीह के दुखों में सहभागी नहीं होती है, तो उसका मसीह के साथ कोई संगति नहीं होगी।

186. जो कोई भी भिखारी पर दया करता है, उसके रक्षक के रूप में ईश्वर होते हैं, और जो कोई ईश्वर के लिए गरीब होता है, उसे अक्षय खजाने मिलेंगे। ईश्वर को किसी चीज़ की कमी नहीं है, लेकिन उन्हें आनंद होता है जब वे देखते हैं कि कोई व्यक्ति उनके स्वरूप का सम्मान करता है और उनके लिए उसकी आराधना करता है। जब कोई आपसे वह मांगे जो आपके पास है, तो अपने मन में यह न कहें: 'मैं इसे अपने लिए रखूँगा, ताकि मुझे इसमें आराम मिल सके, और ईश्वर इस व्यक्ति की ज़रूरतों का प्रबंध कहीं और से कर देगा।' ऐसे विचार अधर्मी लोगों के योग्य हैं जो ईश्वर को नहीं जानते। एक धर्मी और अच्छा व्यक्ति अपना सम्मान दूसरे को नहीं देगा, और न ही वह अनुग्रह के समय को आलस्य में व्यतीत होने देगा। एक गरीब और ज़रूरतमंद व्यक्ति का भरण-पोषण ईश्वर द्वारा किया जाता है, क्योंकि प्रभु किसी को भी नहीं छोड़ते; लेकिन तुमने, गरीबों को अपने पास से दूर भगाकर, ईश्वर द्वारा दिए गए सम्मान से मुंह मोड़ लिया है और अपने आप से उसका अनुग्रह हटा लिया है। इसलिए, जब आप देते हैं, तो प्रसन्न हों और कहें: 'तेरा महिमा हो, हे परमेश्वर, कि तूने मुझे सांत्वना देने के लिए किसी को खोजने में सक्षम बनाया।' यदि, हालाँकि, आपके पास देने के लिए कुछ भी नहीं है, तो और भी अधिक प्रसन्न हों और परमेश्वर का धन्यवाद करते हुए कहें: 'मैं तेरा धन्यवाद करता हूँ, हे मेरे प्रभु, कि तूने मुझे यह अनुग्रह और सम्मान दिया है—कि मैं तेरे नाम के लिए दरिद्र बनूँ—और मुझे तेरी आज्ञाओं के मार्ग पर आने वाले क्लेशों का, बीमारी और गरीबी में, स्वाद चखने का अवसर दिया है, ठीक वैसे ही जैसे तेरे संतों ने, जिन्होंने इसी मार्ग पर चलना है, उनका स्वाद चखा है।'

187. हमारा स्वभाव वासनाओं का शिकार हो गया है; इस संसार में कई प्रलोभन हैं; बुराई आपसे दूर नहीं है; यह आपके भीतर से उत्पन्न होती है और आपके पैरों तले पड़ी है। जिस प्रकार हमारे सामने युग एक दूसरे के निकट होते हैं, उसी प्रकार प्रलोभन लोगों के निकट होते हैं; और ईश्वर ने यह आपके लाभ के लिए अत्यंत बुद्धिमानी से व्यवस्थित किया है, ताकि आप निरंतर उनके द्वार पर दस्तक दें, ताकि कष्ट का भय आपके मन में उनकी स्मृति को स्थापित करे, ताकि आप प्रार्थना में उनके निकट आएं और आपका हृदय उनकी अनवरत स्मृति से पवित्र हो जाए। ईश्वर ने तुम्हें दुख से प्रतिरक्षित नहीं बनाया, कहीं ऐसा न हो कि तुम देवता बनने की इच्छा रखते हुए उसी भाग्य के वारिस बनो जो मूल रूप से एक केरूब था लेकिन बाद में, घमंड के कारण, शैतान बन गया; न ही उसने तुम्हें अपरिवर्तनीय और अचल बनाया, कहीं ऐसा न हो कि तुम निर्जीव प्राणियों की प्रकृति जैसे बन जाओ।

188. परमेश्वर के सामने स्वयं को निरंतर शुद्ध करो, उन्हें अपने हृदय में रखो, कहीं ऐसा न हो कि उन्हें याद किए बिना बहुत समय रहने के बाद, जब तुम उनके सामने आओ तो तुम्हें साहस की कमी खले। क्योंकि परमेश्वर के सामने साहस, उनके साथ बार-बार संगति और बहुत प्रार्थना का परिणाम है। मनुष्यों के साथ मेलजोल शरीर के माध्यम से होता है, जबकि ईश्वर के साथ मेलजोल आत्मा द्वारा उनकी स्मृति, प्रार्थना में उन पर ध्यान, और स्वयं को उन पर पूर्ण रूप से समर्पित करने से होता है। ईश्वर की दीर्घकालिक स्मृति बनाए रखने से, आत्मा कभी-कभी आश्चर्य और विस्मय से भर जाती है। *"जो प्रभु की खोज करते हैं, उनके हृदय आनंदित हों।"* हे दण्डित लोगों, *"प्रभु को खोजो,"* *और* आशा में *दृढ़ हो जाओ; "उसका मुख खोजो"* पश्चाताप के द्वारा (भजन संहिता 104:3, 4) – और उसके मुख की पवित्रता से पवित्र हो जाओ और अपने पापों से शुद्ध हो जाओ।

189. जब अधर्मी पर परीक्षा आती है, तो उसे परमेश्वर को पुकारने या उससे उद्धार की आशा रखने की कोई आशा नहीं होती; क्योंकि अपने विश्राम के दिनों में वह परमेश्वर की इच्छा से भटक गया था। तुम्हारे ऊपर दुख आने से पहले, परमेश्वर से प्रार्थना करो; और संकट के समय तुम उसे पाओगे – और वह तुम्हें सुनेगा। नूह की कश्ती

शांतिके समय तैयार की गई थी; उसकी लकड़ियाँ सौ वर्षों से अधिक समय में काटी गई थीं, और क्रोध के समय दुष्ट नष्ट हो गए, जबकि यह धर्मी लोगों के लिए एक शरण बन गई।

190. जिन लोगों में शांति मृत है, वे अपमान को खुशी से सहते हैं; लेकिन जिन लोगों में शांति जीवित है, वे अपमान सहन नहीं कर सकते, बल्कि अहंकार के वश में होकर, क्रोधित हो जाते हैं, और मूर्खतापूर्ण व्यवहार के कारण भ्रम में पड़ जाते हैं या दुख से अभिभूत हो जाते हैं। जो कोई अपमान के प्रति धैर्य और उदारता के गुणों में श्रेष्ठता प्राप्त करना चाहता है, उसे अपने परजिनों से अलग होकर एक भटकता हुआ बन जाना चाहिए; क्योंकि अपने ही देश में इस गुण में श्रेष्ठता प्राप्त करना असंभव है। अपने ही लोगों के बीच ऐसी पीड़ाओं को सहना महान और शक्तिशाली लोगों का लक्षण है - और यह केवल उनके लिए ही संभव है जिनके लिए यह संसार मर चुका है; क्योंकि वे अब इस वर्तमान युग में किसी भी सांत्वना की उम्मीद नहीं करते।

191. जैसे अनुग्रह विनम्रता के निकट होता है, वैसे ही पीड़ादायक परीक्षाएँ घमंड के निकट होती हैं। प्रभु की दृष्टि नम्र लोगों पर रहती है, उन्हें प्रसन्न करने के लिए; परन्तु प्रभु का मुख घमण्डी लोगों के विरुद्ध रहता है, उन्हें नम्र करने के लिए। अपनी महानता में ऐसा व्यक्ति बनो जिसे आसानी से अनदेखा किया जा सके, बजाय इसके कि अपनी तुच्छता में घमंड करने वाला बनो। जो सम्मान चाहता है, सम्मान उससे भागता है; परन्तु जो सम्मान से भागता है, सम्मान उसका पीछा करता है। जो परमेश्वर के लिए भूखा और प्यासा रहता है, परमेश्वर उसे अपनी आशीषों से तृप्त करेगा। जो परमेश्वर के लिए नग्नता सहन करता है, वह उसे अक्षयत्व और महिमा का वस्त्र पहनाएगा। जो कोई ईश्वर के लिए दरिद्र होता है, उसे उसकी सच्ची संपदा से सांत्वना मिलती है। अपने पूरे जीवन में स्वयं को पापी मानो, ताकि तुम अपने पूरे जीवन में धर्मी ठहर सको। विनम्र लोगों के साथ मिलो, और तुम उनके तरीकों को सीखोगे। सभी के प्रति दयालु और सम्मानजनक रहना हमेशा तुम्हारी आदत होनी चाहिए।

192. आत्मा के लाभ के लिए, ईश्वर ने उसे भावों के अधीन होने की अनुमति दी है; फिर भी उन्होंने दूसरे जीवन से पहले उसे भावों से ऊपर रखना लाभकारी नहीं समझा। – और आत्मा का भावों के अधीन होना अंतरात्मा की चुभन के लिए लाभकारी है; लेकिन भावों में बने रहना निर्लज्जता और लापरवाही है। जिस प्रकार अतिभिक्षण विचारों में कलह उत्पन्न करता है, उसी प्रकार वाचालता और तुच्छ बातचीत मूर्खता की ओर ले जाती हैं और मन को उसके उचित क्रम से भटका देती हैं। सांसारिक मामलों की चिंता आत्मा को भ्रम में डाल देती है, और उनसे परेशान होना मन को विक्षुब्ध करता है और उसे उसकी शांति से वंचित कर देता है। स्वर्गीय साधनाओं में संलग्न भिक्षु के लिए यह उचित है कि वह हर समय हर सांसारिक चिंता से मुक्त रहे, ताकि अपने भीतर प्रविष्ट होकर, उसे वर्तमान युग की कोई भी वस्तु न मिले। ऐसी सभी चीजों से मुक्त होकर, वह फिर बिना किसी विचलन के, दिन-रात प्रभु के विधान का अध्ययन कर सकता है।

193. मन की पवित्रता के बिना शारीरिक श्रम एक बाँझ गर्भ और मुरझाए स्तनों के समान है; क्योंकि यह ईश्वर के ज्ञान के समीप नहीं जा सकता। वे शरीर को तो थका देते हैं, पर मन के भावों को जड़ से उखाड़ फेंकने का कोई ध्यान नहीं करते; और इसलिए उन्हें कुछ भी प्राप्त नहीं होता। जैसे काँटों में बोने वाला कुछ भी नहीं काट सकता, वैसे ही जो व्यक्ति द्वेष और लालच से अपना नाश कर लेता है, वह किसी भी काम में सफल नहीं हो सकता, बल्कि उन चिंताओं से उत्पन्न अनिद्रा के कारण अपने बिस्तर पर कराहता रहता है जो उस पर हावी रहती हैं।

194. यदि आत्मा ईश्वर की स्मृति और दिन-रात अखंड जागरूकता से प्रकाशित हो, तो प्रभु वहाँ (उसके भीतर) एक मेघ स्थापित करते हैं जो उसकी रक्षा करता है, जो दिन में छाया देता है और उसकी रात को अग्निमय प्रकाश से प्रकाशित करता है; उसके अंधकार में, प्रकाश चमकता है।

195. जैसे एक बादल चंद्रमा की रोशनी को ढक लेता है, वैसे ही तृप्त पेट से निकलने वाली वाष्प आत्मा से ईश्वर की बुद्धि को भगा देती है। जैसे सूखी लकड़ी में आग की लपटें जलती हैं, वैसे ही पेट भर जाने पर शरीर जलता है। जिस प्रकार एक ज्वलनशील पदार्थ, जब दूसरे पर लगाया जाता है, तो अग्नि की लपट को बढ़ा देता है, उसी प्रकार शारीरिक इच्छाओं की विविधता शरीर के भीतर कामुक प्रवृत्तियों को तीव्र कर देती है। दिव्य ज्ञान इंद्रिय सुखों को समर्पित शरीर में नहीं बसता; और जो कोई भी अपने शरीर से प्रेम करता है, वह ईश्वर की कृपा प्राप्त नहीं कर पाएगा। जिस प्रकार प्रसव की पीड़ा से एक बच्चा इस संसार में आता है और माँ को आनंदित करता है, उसी प्रकार जब गला पीड़ित होता है, तो आत्मा में ईश्वर के रहस्यों का फल जन्म लेता है। जिस प्रकार एक पिता अपने बच्चों का ख्याल रखता है, उसी प्रकार मसीह भी उस शरीर का ख्याल रखते हैं जो उनके लिए पीड़ा सहता है - और वह हमेशा उनके होठों के पास रहता है।

196. एक तीर्थयात्री वह है जिसके विचार सभी सांसारिक चीजों से ऊपर उठ गए हैं। एक भिक्षु वह है जो संसार से अलग रहता है, और हमेशा ईश्वर से प्रार्थना करता है कि वह उसे भविष्य का आशीर्वाद प्रदान करें। एक

संन्यासी की संपत्ति रोने में मिलने वाला सांत्वना है, और मन की गहराइयों में चमकने वाला विश्वास का आनंद है। एक कुंवारी वह है जिसने न केवल अपने शरीर को कामुक मिलन से अछूता रखा है, बल्कि वह इसके सबसे छोटे से स्मरण से भी लज्जित होती है। यदि आप पवित्रता से प्रेम करते हैं, तो पठन और निरंतर प्रार्थना का अभ्यास करके शर्मनाक विचारों को दूर भगाएँ; और फिर आपके पास ऐसी चीजों की ओर स्वाभाविक प्रवृत्तियों के खिलाफ एक हथियार होगा; और इसके बिना, आत्मा में पवित्रता देखना असंभव है।

197. यदि आप वास्तव में दयालु हैं, तो जब आपकी हक की संपत्ति आपसे छीन ली जाए, तो मन ही मन दुखी न हों, और न ही इस नुकसान के बारे में बाहरी लोगों से बात करें। जिन्होंने आपसे अन्याय किया है, उनके द्वारा पहुँचाई गई क्षति को अपनी दया से सोख लें, जैसे शराब की कड़वाहट बहुत सारे पानी में घुल जाती है। उन लोगों पर अपने अच्छे कर्मों के द्वारा अपनी दया की प्रचुरता का प्रदर्शन करें जिन्होंने आपको अन्याय किया है, ठीक वैसे ही जैसे धन्य एलीशा ने अपने उन दुश्मनों के साथ व्यवहार किया था जो उसे बंदी बनाना चाहते थे (2 राजा 6:13–23)।

198. जो व्यक्ति वास्तव में विनम्र और बुद्धिमान है, जब उस पर अन्यायपूर्ण आरोप लगाया जाता है, तो वह नाराज़ नहीं होता, न ही वह उस मामले में अपनी रक्षा के लिए कुछ कहता है जिसमें उस पर अन्यायपूर्ण आरोप लगाया गया है, बल्कि वह बदनामी को सत्य मान लेता है, और लोगों को यह विश्वास दिलाने की कोशिश नहीं करता कि उस पर झूठी बदनामी की गई है, बल्कि क्षमा मांगता है। कुछ लोगों ने स्वेच्छा से अपने ऊपर अनैतिक होने का ठप्पा लगा लिया, हालांकि वे ऐसे नहीं थे; जबकि अन्य लोग व्यभिचारी कहलाने को सहते रहे, यद्यपि वे व्यभिचार करने से कोसों दूर थे, और उन्होंने आँसुओं के साथ गवाही दी कि वे एक ऐसे पाप का फल उठा रहे थे जो उन्होंने नहीं किया था, और वे उन लोगों से क्षमा माँगते हुए रोए जिन्होंने उनसे एक ऐसे अपराध के लिए अन्याय किया था जो उन्होंने नहीं किया था, जबकि उनकी आत्माएँ हर तरह की पवित्रता और निर्दोषता से सुशोभित थीं। फिर भी अन्य लोग, इस भय से कि गुप्त रूप से पालन किए गए जीवन के अनुकरणीय नियमों के लिए उनकी प्रशंसा न हो, स्वयं को दिव्य नमक से घुल-मिलकर पवित्र मूर्ख के रूप में प्रस्तुत करते थे; वे अपनी स्थिरता में अडिग रहे, ताकि अपनी पूर्णता की चरम सीमा पर, पवित्र स्वर्गदूत उनके गुणों के प्रचारक बनें।

199. उद्धारकर्ता ने पिता के साथ अनेक निवासों के विषय में बोलते हुए, उस क्षेत्र में रहने वालों के बीच बुद्धि के विभिन्न स्तरों का उल्लेख किया—अर्थात्, आध्यात्मिक वरदानों में भेदभाव और अंतर, जिनका वे अपनी बुद्धि के अनुपात में आनंद लेते हैं। क्योंकि उन्होंने अनेक निवासों के बारे में स्थानों की विविधता के अनुसार नहीं, बल्कि उनके वरदानों के स्तरों के अनुसार कहा। जिस प्रकार प्रत्येक व्यक्ति अपनी दृष्टि की शुद्धता और ग्रहणशीलता के अनुसार दृश्यमान सूर्य का आनंद लेता है, और जिस प्रकार एक ही घर में एक ही दीपक से प्रकाश भिन्न-भिन्न होता है, भले ही वह प्रकाश कई अलग-अलग प्रकाशों में विभाजित न हो, इसी प्रकार आने वाले युग में सभी धर्मी अविभाज्य रूप से एक ही भूमि पर बसते हैं, फिर भी प्रत्येक अपनी-अपनी मात्रा में एक ही आध्यात्मिक सूर्य से प्रकाशित होता है, और अपनी-अपनी योग्यता के अनुसार आनंद और प्रसन्नता को अपनी ओर आकर्षित करता है, मानो एक ही वातावरण, एक ही स्थान, एक ही सिंहासन, एक ही दृश्य और एक ही प्रतिमा से। – और कोई भी दूसरे की कृपा के माप को नहीं देखता, चाहे वह ऊँची हो या नीची, ताकि, यदि वे किसी मित्र की श्रेष्ठ कृपा और अपनी कमी को देखें, तो यह उनके लिए दुख और शोक का कारण न बने। वहाँ, हर कोई, उन्हें दी गई कृपा के अनुसार, अपने ही माप में मन ही मन प्रसन्न होता है। हालाँकि, इन सब के बाहर, एक ही दृश्य और एक ही साम्राज्य है – और इन दो स्तरों के अलावा, जिनसे मेरा तात्पर्य एक स्वर्गीय साम्राज्य और दूसरा सांसारिक साम्राज्य है, उनके बीच, पुरस्कारों की विविधता में विविधता है।

२००. जब शैतान किसी व्यक्ति के मन को कामुक विचार से कलंकित करना चाहता है, तो वह पहले व्यर्थ की शोहरत के प्रति उसके प्रेम के माध्यम से उसकी धैर्यता की परीक्षा लेता है, और इस विचार की शुरुआत किसी जुनून के रूप में नहीं दिखती। यही तरीका वह आमतौर पर उन लोगों के साथ अपनाता है जो अपने मन की रक्षा करते हैं, और जिनमें किसी भी अश्लील विचार को जल्दी से प्रवेश कराना असंभव होता है। लेकिन जब वह किसी व्यक्ति को उसके किले से अलग कर देता है और वह अपने पहले विचार पर अटकने लगता है और अपने किले से भटक जाता है, तो वह उसे व्यभिचार की याद दिलाने वाली किसी चीज़ से आमने-सामने ला खड़ा करता है, और मन को अनुचित वस्तुओं की ओर भटका देता है। मन पहली बार में इन विचारों के अचानक आगमन से चकरा जाता है – और फिर उनसे समझौता कर लेता है – और विचार से कार्य तक पहुँच जाता है। लेकिन यदि मन पीछे हट जाए और ऐसे विचारों की पहली हलचल को रोक दे, तो, ईश्वर की मदद से, वह इस वासना पर आसानी से काबू पा सकता है।

201. वासनाओं का विरोध करने की तुलना में गुणों को याद करके उन्हें दूर करना बेहतर है, क्योंकि जब वासनाएँ अपने उचित क्षेत्र से बाहर निकलती हैं और लड़ने के लिए उठती हैं, तो वे मन पर अपनी छवियों और समानताओं को

अंकति कर देती हैं। यह लड़ाई मन पर बहुत शक्तिप्राप्त कर लेती है, जो वचिारों को बहुत परेशान करती है और उन्हें भ्रम में डाल देती है। लेकनि यदि कोई हमारे द्वारा बताए गए पहले नयिम के अनुसार कार्य करता है, तो एक बार उन (वासनाओं) को भगा दएि जाने के बाद मन में उनका एक नशिान भी नहीं बचता।

२०२. जब तक कोई व्यक्ति सांत्वनादाता को प्राप्त नहीं करता, तब तक उसे दवि्य शास्त्रों की आवश्यकता होती है ताकि अच्छाई की स्मृति उसके वचिारों पर अंकति हो सके, और ताकि निरिंतर पढ़ने से, उसके भीतर अच्छाई की ओर झुकाव का नवीनीकरण हो सके, और उसकी आत्मा पापपूर्ण रास्तों की सूक्ष्मता से सुरक्षति रह सके: क्योंकि उसने अभी तक आत्मा की उस शक्ति को प्राप्त नहीं कयिा है, जो मोह को दूर करती है और आत्मा के लिए लाभकारी वचिारों को नयिंत्रति करती है। जब आत्मा की शक्ति किसी व्यक्ति के भीतर कार्यरत आत्मा की शक्ति में अवतरति होती है, तो शास्त्रों के नयिम के स्थान पर, आत्मा की आज्ञाएँ हृदय में जड़ जमा लेती हैं; और तब वह आत्मा द्वारा गुप्त रूप से सखिाया जाता है और उसे इंद्रयि पदार्थ की सहायता की कोई आवश्यकता नहीं होती; क्योंकि जिब तक हृदय पदार्थ से सीखता है, तत्क्षण भ्रम और वस्मिृति शिक्षिा का अनुसरण करती हैं; परन्तु जब आत्मा द्वारा शक्षिा दी जाती है, तो स्मरण अक्षुण्ण रहता है।

203. एक नवोदति पक्षी वह मन है जो पश्चाताप के द्वारा, अभी-अभी वासनाओं के बंधनों से उभरा है, और जो प्रार्थना के दौरान, सांसारकिता से ऊपर उठने का प्रयास करता है, परन्तु नहीं उठ पाता; इसके वपिरीत, वह अभी भी उड़ने की शक्ति के अभाव में पृथ्वी की सतह पर रेंगता है। हालाँकि, पठन, अच्छे कर्मों, ईश्वर के भय और अनेक सद्गुणों के प्रति चिंतिा के माध्यम से, यह अपने वचिारों को एकता में एकत्र करता है; क्योंकि यिह इससे परे कुछ भी जानने में असमर्थ है। और यह थोड़े समय के लिए मन को अछूत रखता है; लेकनि बाद में यादें लौट आती हैं, और वे हृदय को वक्षिुब्ध और कलंकति कर देती हैं; क्योंकि मिनुष्य ने अभी तक उस स्वतंत्रता के शांत वातावरण का अनुभव नहीं कयिा है, जसिमें वह केवल बहुत समय के बाद, सांसारकि चीज़ों को भूलकर, अपने मन को ले जाता है; क्योंकि उसिने केवल शारीरकि पंख प्राप्त कएि हैं—अर्थात् बाहरी रूप से अभ्यास की जाने वाली सद्गुण—लेकनि उसने अभी तक चिंतनशील सद्गुणों को नहीं देखा है, न ही उन्हें अनुभव करने के योग्य माना गया है; और ये ही मन के पंख हैं जनि पर कोई व्यक्ति दवि्य के समीप आता है और सांसारकि से मुंह मोड़ लेता है।

२०४. जब तक कोई व्यक्ति इंद्रयि संबंधी कसिी भी चीज़ से प्रभु की सेवा करता है, तब तक इंद्रयि संबंधी वस्तुओं की छवयिाँ उसके वचिारों में अंकति रहती हैं, और वह दवि्य को देहधारी रूपों में कल्पना करता है। लेकनि जब वह एक आंतरकि अनुभूति प्राप्त करता है, तो उस अनुभूति के अनुपात में, उसका मन समय-समय पर वस्तुओं की छवयिों से ऊपर उठ जाएगा।

२०५. जब आपकी आत्मा अंधकार से बाहर नकिलने के करीब पहुँचती है, तो यह आपके लिए संकेत होगा: आपका हृदय आपके भीतर जलता है और दनि-रात आग की तरह भड़कता है; और इस प्रकार आप संपूर्ण जगत को धूल और राख समझते हैं; आप भोजन की भी इच्छा नहीं करते, क्योंकि आपके आत्मा के भीतर नरिंतर उभरने वाले नए, अग्नमिय वचिारों की मठिास के कारण। अचानक आपको आँसुओं का एक फव्वारा प्रदान कयिा जाता है, जो अपने आप बहती एक धारा की तरह है, जो आपके सभी कार्यों में मलि जाती है—अर्थात् जब आप पढ़ते, प्रार्थना करते और ध्यान करते हैं, जब आप भोजन और पेय लेते हैं, और आपके सभी कार्यों में। और जब आप यह अपने आत्मा में देखें, तो हयिाव रखें, क्योंकि आपने समुद्र पार कर लयिा है; और अपने मामलों में इतने परशि्रमी बनें, और इतनी सावधानी से पहरा दें, कि अनुग्रह आप में दनि-प्रतदिनि बढ़ता जाए। जब तक आपको यह अपने भीतर नहीं मलि जाता, तब तक आपने अपनी यात्रा पूरी नहीं की है, और न ही आप परमेश्वर के पर्वत में प्रवेश कएि हैं। लेकनि यदि, आँसुओं की कृपा को पा लेने और प्राप्त करने के बाद भी, वे रुक जाएँ, और आपका उत्साह बनिा कसिी अन्य परविर्तन के—अर्थात्, बनिा शारीरकि दुर्बलता के—ठंडा पड़ जाए, तो आपका वनिाश नशि्चति है! अहंकार, उदासीनता या सुस्ती में पड़कर तुमने क्या बर्बाद कर दयिा है?! – लेकनि जहाँ तक आँसुओं के बाद की बात है, हम उस पर बाद में लखिेंगे।

२०६. यदि तुम्हारे पास करने के लिए कोई काम नहीं है, तो गुणों की बात मत करो। ईश्वर के समक्ष कसिी भी प्रार्थना या बलदिान से अधकि कीमती हैं उनके लिए और उनके कारण दुख; और सभी धूप से अधकि सुगंधति है उनकी पसीने की गंध। शारीरकि श्रम के बनिा प्राप्त की गई कसिी भी सद्गुण को गर्भ का एक समय से पहले का और नर्जिीव फल समझो। धर्मात्माओं की भेंट उनकी आँसुओं की बूँदें हैं, और ईश्वर को प्रयि बलदिान उनकी जागते समय की आहें हैं। धर्मी और जो शरीर के बोझ से दबे हुए हैं, वे प्रभु को पुकारेंगे, और बीमारी में वे परमेश्वर से प्रार्थना करेंगे; और उनकी पुकार के स्वर से, पवति्र अधकिारी उनकी सहायता के लिए आएँगे ताकि उन्हें आशा के साथ प्रोत्साहति और सांत्वना दें; क्योंकि पवित्र स्वर्गदूत, पवति्र पुरुषों के समीप होने के कारण, उनके दुखों और कष्टों में सहभागी होते हैं।

२०७. शराब शरीर को गर्म करती है, लेकिन परमेश्वर का वचन मन को गर्म करता है। जो उत्साह से जलते हैं, वे उस बात के विचारों से प्रेरित होते हैं जिसकी वे आशा करते हैं और अपना मन आने वाले युग पर केंद्रित करते हैं। शराब के नशे में चूर लोग अपने सामने कोई बाधा नहीं देखते: इसी प्रकार, आशा के नशे में चूर लोग न तो दुख को जानते हैं और न ही इस संसार की किसी भी चीज़ को। धन्य हैं वे लोग, जिन्होंने दुखों के सागर और ईश्वर के प्रेम के लिए, सादगी और निःसंदेह स्वभाव से कमर कसी है, और पीछे मुड़कर नहीं देखते। जो लोग आशा के साथ इस कठिन मार्ग पर निकलते हैं, वे न तो पीछे मुड़ते हैं, और न ही इसके स्वभाव पर विचार करने के लिए रुकते हैं। लेकिन जब वे समुद्र पार कर लेते हैं, तो मार्ग की कठिनाई को देखकर, वे ईश्वर का धन्यवाद करते हैं कि उन्होंने उन्हें संकटों, तेज बहावों और रास्ते की ऐसी कठोरताओं से बचाया - भले ही वे उस समय इसके बारे में अनजान थे। आशा, एक यात्रा पर निकलकर, आरंभिक उत्साह के साथ आगे बढ़ती है, शरीर की बिलकुल भी परवाह नहीं करती, और यह सोचे बिना कि उसने जो परिश्रम किया है उसका फल मिलेगा या नहीं। जब आप ईश्वर का कोई कार्य आरंभ करना चाहें, तो पहले अपनी इच्छा बना लें, जैसे कि आप अब इस संसार में नहीं रहेंगे, जैसे कि आप मृत्यु के लिए तैयार हैं और इस वर्तमान जीवन से निराश हो गए हैं, जैसे कि आपका समय समाप्त हो गया हो। हर अच्छे काम की शुरुआत साहस के साथ करो, और ऐसे कामों को दोहरे मन से शुरू मत करो; ईश्वर में अपनी आशा को लेकर तुम्हारा हृदय चंचल न हो, कहीं ऐसा न हो कि तुम्हारी मेहनत व्यर्थ हो जाए और तुम्हारा काम एक बोझ बन जाए।

208. जो ईश्वर के अनुसार जीते हैं, उनके कर्म इस प्रकार हैं: कोई व्यक्ति एक पूरा दिन अपना सिर ज़मीन पर टिकाकर बिताता है, और ऐसा दिव्य सेवाओं, यानी घंटों के अनुष्ठान के बजाय करता है। एक अन्य व्यक्ति कई प्रार्थनाओं को निरंतर और लंबे समय तक घुटने टेकने के साथ जोड़ता है। फिर एक अन्य व्यक्ति अपने लिए दिव्य सेवाओं को आँसुओं की बहुतायत से बदल देता है और उसी में संतुष्ट रहता है। एक अन्य व्यक्ति जो पढ़ा जा रहा है उसके अर्थ में प्रवेश करने का प्रयास करता है, और इसे एक विशिष्ट नियम के साथ जोड़ता है। एक और अपनी आत्मा को भूख से पीड़ित करता है, ताकि वह दिव्य सेवाएँ करने में असमर्थ हो जाए। एक और, भजनों पर गहन ध्यान में डूबा हुआ, अपनी सेवा को अखंड बनाता है। एक और अपना समय पढ़ने में बिताता है, और उसका हृदय प्रफुल्लित हो उठता है। एक और स्वयं को चिंतन में खो देता है, पवित्र धर्मग्रंथों में दिव्य अर्थ को पहचानता है। एक अन्य व्यक्ति, छंदों में वर्णित आश्चर्यजनक अद्भुतताओं से चकित होकर, अपने सामान्य पठन से विमुख हो जाता है और मौन में डूब जाता है। एक अन्य, इन सभी का स्वाद चखकर और तृप्त होकर, पीछे हट गया और निष्क्रिय हो गया। एक अन्य, केवल थोड़ा सा चखकर और घमंडी हो कर, भूल में पड़ गया। एक को गंभीर बीमारी और अक्षमता के कारण अपने नियम का पालन करने से रोका गया; दूसरे को किसी आदत, या किसी इच्छा, या स्वच्छंदता, या दंभ, या लालच, या भौतिक संपत्ति जमा करने की प्रवृत्ति के प्रभुत्व ने रोक दिया। एक और लड़खड़ाया पर फिर उठ खड़ा हुआ, और जब तक कि उसने उस कीमती मोती को प्राप्त नहीं कर लिया, तब तक वह मुड़ा नहीं।

209. सभी चीजों की शुरुआत ईश्वर के प्रति एक अच्छे इरादे से होती है (ईश्वर को प्रसन्न करने का संकल्प)। इसके बाद, सांसारिक मामलों से अलग होने पर, उपवास, पाठ, पूरी रात जागना और संयम से चौकसी करना – प्रत्येक व्यक्ति की शक्ति के अनुसार – और कई प्रणाम करना, जो दिन के दौरान करने के लिए फायदेमंद हैं, और अक्सर रात में भी। आपकी न्यूनतम संख्या तीस सजदा करना हो – फिर पवित्र क्रॉस के सामने झुककर इस प्रकार समापन करें। लेकिन ऐसे भी हैं जो अपनी शक्ति के अनुसार, प्रणामों की इस संख्या को बढ़ाते हैं। इस बीच, अन्य लोग एक ही प्रार्थना में तीन घंटे बिताते हैं, मन को शांत रखते हैं, और बिना किसी जबरदस्ती या भटकते विचारों के जमीन पर मुंह के बल प्रणाम करते हैं (यानी, कुछ लोग बार-बार लेकिन थोड़े समय के लिए प्रार्थना करते हैं; जबकि अन्य केवल एक बार, लेकिन लंबे समय तक प्रार्थना में खड़े रहते हैं)।

२१०. हमारे विरोधी, शैतान, की एक पुरानी आदत है कि वह उन लोगों के खिलाफ अपने संघर्ष को चालाकी से बदलता रहता है जो इस तपस्या के प्रयास को अपनाते हैं। उनके खिलाफ विभिन्न हथियारों का उपयोग करते हुए, और व्यक्ति के इरादे के अनुसार खुद को ढालते हुए, वह अपने मुकाबले की विधि को बदलता है। *दुश्मन की लड़ाई की पहली रणनीति* – जो स्वभाव से आलसी और विचारों में कमजोर हैं, उन पर वह शुरू से ही प्रबल रूप से हमला करता है, उनके सामने शक्तिशाली प्रलोभन रखता है, ताकि पहली ही कोशिश से ही उन पर भय सवार हो जाए, और उनका मार्ग उन्हें क्रूर और पार न करने योग्य लगे – और वे कहते हैं: 'यदि मार्ग की शुरुआत ही इतनी कठिन और मुश्किल है, तो क्या कोई आगे आने वाली कई कठिनाइयों के साथ इसे अंत तक सहन कर सकता है?' और शैतान उनसे अधिक समय तक युद्ध नहीं करता - बल्कि जल्द ही उन्हें भागने पर मजबूर कर देता है। ऐसा इसलिए है क्योंकि उन्होंने संदेह और उदासीनता के साथ प्रभु के प्रयास को शुरू किया। लेकिन ईश्वर हमें यह आज्ञा देते हैं कि हम उनके लिए मरने की तत्परता के साथ इस प्रयास को शुरू करें, और वचन देते हैं कि वे निष्ठावान श्रमिक को शहादत के सम्मान से

विभूषित करेंगे। चूँकि उन्होंने शुरुआत में ही खुद को मृत्यु के हवाले करने का संकल्प नहीं लिया था, इसलिए वे इतने कमजोर साबित होते हैं। परिणामस्वरूप, वे किसी भी लड़ाई में अब दृढ़ नहीं रहते, क्योंकि वे स्वार्थी होते हैं और सबसे बढ़कर, अपने शरीर की रक्षा करते हैं। और दुश्मन उन्हें एक तूफान की तरह भगा देता है, क्योंकि उनमें वह आध्यात्मिक शक्ति नहीं देखता जो आमतौर पर संतों में देखी जाती है। मनुष्य अपनी इच्छा से ही ईश्वर की ओर प्रयास करता है, और ईश्वर सहयोग करते हैं, मदद करते हैं, और उसे उसके बारे में अपनी दिव्य व्यवस्था प्रकट करते हैं। और शैतान किसी व्यक्ति के पास नहीं आ सकता, या उस पर प्रलोभन नहीं ला सकता, जब तक कि वह व्यक्ति उसके आगे समर्पण न कर दे, या ईश्वर इसकी अनुमति न दे।

211. *दूसरा तरीका।* – जहाँ तक उन लोगों का सवाल है जिन्हें शैतान बहादुर समझता है, जो मृत्यु को कुछ नहीं मानते और बड़े उत्साह के साथ अपने कार्य में लग जाते हैं, शैतान उनका तुरंत सामना नहीं करता, न ही उनके पहले आक्रमण पर उनसे लड़ता है, यह जानते हुए कि उत्साही योद्धाओं को आसानी से पराजित नहीं किया जा सकता। इसलिए, जब तक वह उन्हें इस अवस्था में देखता है, तब तक वह उन्हें छूने की हिम्मत भी नहीं करता, जब तक कि वह यह न देख ले कि उनका उत्साह ठंडा पड़ गया है, और उन्होंने उन दैवीय वचनों और स्मरणों को त्याग दिया है जो उनकी सहायता करते हैं, और इस कारण उनके मन में तैयार किए गए हथियार एक ओर रख दिए गए हैं। जैसे ही वे अपने मूल इरादों से भटकना शुरू करते हैं, और अपनी ही इच्छा से उस चीज़ की रचना करने लगते हैं जो उन पर काबू पाने के काम आती है, अपने ही तर्क की चापलूसी से, जो उन्हें भीतर से ही कमजोर कर देती है, और वे अपनी ही इच्छा से आलस्य से उत्पन्न विचारों के भटकने के कारण अपनी आत्माओं के लिए विनाश का एक गड्ढा खोदना शुरू कर देते हैं, जिससे उनके मन और हृदय में ठंडक छा जाती है – तब वह उन पर बिना किसी दया के टूट पड़ता है। फिर भी शैतान अब तक उन पर हमला करने से बचता रहा है, क्योंकि जो लोग प्रबल उत्साह के साथ ईश्वर की ओर प्रयासरत हैं, उन पर एक विशेष शक्ति की रक्षा रहती है, जो उनमें आशा जगाती है और उन पर विश्वास करती है। इसी कारण ईश्वर उन पर शैतान की दुष्टता की प्रचंडता को दूर करता है, और वह उनके पास भी नहीं आती। जब दुश्मन उन्हें हमेशा निहारते रहने वाले रक्षक को देखता है तो वह संयमित रहता है। जब तक वे मदद के साधनों—प्रार्थनाओं और विनम्रता के श्रम—को त्यागते नहीं हैं, मध्यस्थ और सहायक उनसे कभी दूर नहीं होते।

212. अत; जब आप ईश्वर के पदचिन्हों पर चलते हुए अपने प्रयास के प्रत्येक चरण में उस आरंभ और प्रारंभिक उत्साह को याद करें, जो आपने इस मार्ग पर पहली बार निकलते समय महसूस किया था, और उन उत्कट विचारों को भी याद करें, जिनके साथ आपने पहली बार अपना घर छोड़ा और सेना में शामिल हुए थे। हर दिन स्वयं का परीक्षण करो, ताकि तुमने जो भूमिकाएँ निभाई हैं, उनमें तुम्हारी आत्मा का उत्साह ठंडा न हो जाए, और न ही उस जोश में जो तुम्हारे प्रयास की शुरुआत में तुममें जल रहा था। और सैन्य शिविर के बीच अथक रूप से अपनी आवाज़ उठाएँ, इस भूमि के पुत्रों को वीरता के लिए प्रोत्साहित और प्रेरित करते हुए, साथ ही दुश्मन को यह दिखाते हुए कि आप संयम बनाए हुए हैं। साथ ही, विश्वास के साथ ईश्वर से प्रार्थना करो, उनकी दयालुता के सामने रोओ, आँसू बहाओ और तब तक परिश्रम करो जब तक कि वह तुम्हें एक सहायक न भेजे। और तब तुम फिर कभी पराजित नहीं होओगे।

२१३. *दुश्मन के युद्ध की तीसरी युक्ति* – जब दुश्मन उस शक्ति को देखता है जो एक व्यक्ति को उसके उत्साह और ईश्वर के प्रति उसके श्रद्धापूर्ण आह्वान के माध्यम से ईश्वर से प्राप्त होती है, तो वह उस देवदूत को भगाने का कोई रास्ता खोजने का प्रयास करता है जो उसकी मदद कर रहा है, – अर्थात्, वह उसके भीतर गर्व के विचारों को भड़काने का प्रयास करता है, ताकि वह अपने आप से सोचे कि उसकी सारी शक्ति उसकी अपनी ताकत पर निर्भर करती है, और वह स्वयं, अपनी ही शक्ति से, अपने विरोधी और अपने संहारक से अपनी रक्षा करता है। जो कोई भी शत्रु द्वारा बोए गए ऐसे विचारों पर विश्वास करता है, उससे ईश्वर की सहायता हट जाएगी - और वह शत्रु के हाथों में पड़ जाएगा। लेकिन जो कोई भी इन सुझावों के आगे नहीं झुकता, बल्कि उनकी सहायता करने वाले की स्मृति को दृढ़ता से थामे रहता है, और अपने हृदय की दृष्टि को स्वर्ग की ओर निर्देशित करना कभी बंद नहीं करता; ऐसे व्यक्ति के विरुद्ध शत्रु युद्ध की नई विधियाँ रचता है।

214. *शत्रु के युद्ध की चौथी युक्ति* इस बात में निहित है कि वह किसी व्यक्ति पर उसकी स्वाभाविक आवश्यकताओं (विशेषकर पत्नी की आवश्यकता और जीवन यापन के साधनों की आवश्यकता) के माध्यम से अत्याचार करना शुरू कर देता है। (पत्नी के संबंध में।) यद्यपि वह किसी व्यक्ति को ऐसा करने के लिए मजबूर नहीं कर सकता, क्योंकि वह व्यक्ति मौन द्वारा संरक्षित है और उसका निवास पाप के अवसरों और कारणों से दूर है, फिर भी वह तपस्वियों के मन में इसे एक भ्रम के रूप में दिखाने का प्रयास करता है, और सत्य के भेष में उनमें झूठे सपने भरने का प्रयत्न करता है। इसके अलावा, ताकि वे उस चीज़ की इच्छा करने लगें जिसका उन्होंने सपना देखा है, वह

उनकी इच्छाओं को भड़काता है और उन्हें शर्मनाक विचारों में खोने, उन पर सहमति देने और उन्हें अपना दोष मानने के लिए प्रेरित करता है। क्योंकि शत्रु जानता है कि तपस्वी के लिए, उस पर विजय और जीत उसके अपने विचारों से ही प्राप्त होती है और एक क्षण में ही पूरी हो जाती है – जैसे ही कोई विचार अपनी जगह से हिलता है और अपनी ऊँचाई से धरती पर उतर आता है, और उसकी इच्छा एक पल के लिए भी अपनी सहमति दे देती है, – ठीक वैसे ही जैसा कई लोगों के साथ हुआ जब उन्होंने स्त्री सौंदर्य के बारे में दिवास्वप्न देखे। हालाँकि, यदि वे दुनिया से एक या दो कदम दूर होते, तो दुश्मन अक्सर वास्तव में महिलाओं को उनके पास लाने का सहारा लेता था। इस और इसी तरह के अन्य तरीकों से, दुश्मन कभी-कभी लापरवाह और उन लोगों पर हावी हो जाता था जिनके दिल दृढ़ नहीं थे। लेकिन अन्य लोग इन प्रलोभनों से अधिक मजबूत साबित हुए और, ईश्वर की कृपा से, शत्रु और उसके भ्रमों पर विजय प्राप्त की। (दूसरे प्रलोभन के संबंध में)। शत्रु अक्सर उन्हें उनके सपनों में सोना, कीमती वस्तुएँ और अन्य खजाने दिखाता था; और कभी-कभी वह वास्तव में उन्हें ये चीजें इस उम्मीद में दिखाता था कि, शायद, वह ऐसे दृश्यों के माध्यम से उनमें से किसी एक को उसकी प्रगति में रोकने और उसे अपने किसी जाल और फंदे में फँसाने में सफल हो जाए। यह इसलिए अनुमत है ताकि यह परखा जा सके कि जब उनकी एकांतवास की जीवन-यात्रा में, उनकी वंचना और गरीबी के बीच, इन चीज़ों को हटा दिया जाता है, तो क्या वे वास्तव में ईश्वर-प्रेमी हैं; और क्या, जब उनका सामना इन चीज़ों से होता है, तो वे प्रयास करते हैं, ईश्वर के प्रेम से, उन्हें तुच्छ समझें, और, उनके प्रलोभन में पड़ने पर भी, उन्हें हावी न होने दें, क्योंकि वे ईश्वर के प्रेम की तुलना में उन्हें कुछ भी नहीं समझते। सच्चे तपस्वी हार नहीं मानते, और परीक्षा में वे भट्टी में परखे सोने की तरह शुद्ध पाए जाते हैं; जबकि लापरवाह और कमजोर लोग अभाव के समय में थोड़ी सी भी कठिनाई से हार मान लेते हैं और अपने तपस्या के प्रयास को त्यागकर पीछे हट जाते हैं।

215. जैसे ही कोई अपनी कमजोरी को महसूस करता है और वास्तव में उसे अनुभव करता है, वह तुरंत अपनी आत्मा को सुस्ती से जगाता है और सतर्कता से लैस हो जाता है। लेकिन कोई भी अपनी कमजोरी को तब तक महसूस नहीं कर सकता जब तक कि कम से कम एक छोटी सी प्रलोभन—चाहे वह शारीरिक हो या आध्यात्मिक—उसे घटने न दिया जाए, और उसे उससे मुक्ति न मिल जाए। क्योंकि तब वह अपने प्रयासों और उपायों की व्यर्थता को स्पष्ट रूप से देखेगा – वह देखेगा कि उसकी सावधानी, आत्म-संयम और उसकी आत्मा के लिए सुरक्षा के साधन, जिनसे उसे सुरक्षा की उम्मीद थी, किसी भी काम नहीं आए, और यह कि मुक्ति इन सबके अलावा आई। इससे उसे यह निश्चित विश्वास हो जाता है कि वह स्वयं कुछ भी नहीं है, और केवल ईश्वर की सहायता ही बचाती है। जो कोई भी यह महसूस कर लेता है कि उसे ईश्वर की मदद की ज़रूरत है, वह बहुत सारी प्रार्थनाएँ करता है। और जितना अधिक वह इन प्रार्थनाओं को बढ़ाता है, उतना ही उसका हृदय विनम्र होता है। क्योंकि जो कोई भी प्रार्थना करता है और माँगता है, वह विनम्र हुए बिना नहीं रह सकता। *'हे परमेश्वर, तू टूटे और कुचले हुए हृदय को तुच्छ नहीं जानेगा'* (भजन संहिता 50:19)। जैसे ही कोई व्यक्ति स्वयं को नम्र बनाता है, ईश्वर की दया तुरंत उस पर छा जाती है। और फिर हृदय दिव्य सहायता को महसूस करता है और अपने भीतर (ईश्वर में) विश्वास की एक विशेष शक्ति पाता है। और जब कोई व्यक्ति यह महसूस करता है कि ईश्वर की सहायता वास्तव में उसे संभाले हुए है, तो उसका हृदय वास्तव में विश्वास से भर जाता है। इससे वह यह महसूस करता है कि प्रार्थना मदद मांगने वालों के लिए एक शरण है, उद्धार का स्रोत है, आशा का खजाना है, उथल-पुथल से बचाने वाला एक बंदरगाह है, कमजोरों के लिए एक सहारा है, परीक्षा के समय में एक आश्रय है, युद्ध में मुक्ति की एक ढाल है, दुश्मनों के खिलाफ एक तीखा तीर – और उसे यह प्रकट किया जाता है कि आध्यात्मिक आशीर्वादों की संपूर्ण भीड़ प्रार्थना के माध्यम से उसके लिए सुलभ हो जाती है। इस बिंदु से आगे, वह विश्वास की प्रार्थना में आनंद लेने लगता है; वह अब परिश्रम और थकान के साथ प्रार्थना नहीं करता, बल्कि हार्दिक आनंद और आश्चर्य के साथ, बिना रुके कृतज्ञता की अभिव्यक्ति करते हुए, अनगिनत बार घुटने टेकता है।

216. ईश्वर की सहायता की महान इच्छा से प्रेरित होकर, एक व्यक्ति प्रार्थना में डूबा रहकर ईश्वर के निकट आता है। लेकिन जिस हद तक वह अपनी इच्छा से ईश्वर के निकट आता है, उसी हद तक ईश्वर भी अपनी कृपा-दानों के साथ उसके निकट आते हैं, और उसकी महान विनम्रता के कारण उससे अनुग्रह नहीं छुपाते। हालाँकि, कभी-कभी उदार ईश्वर उस व्यक्ति से अनुग्रह के उपहार रोक लेते हैं, ताकि यह उसके लिए ईश्वर के करीब आने के लिए एक प्रोत्साहन का काम करे, और ताकि, अपनी ज़रूरत के कारण, वह व्यक्ति ईश्वर के सामने लगातार बना रहे, जो उसके लाभ के लिए कुछ प्रदान करने के लिए तैयार हो। ईश्वर कुछ प्रार्थनाओं को शीघ्रता से स्वीकार करते हैं—अर्थात्, वे जिनके बिना कोई भी उद्धार नहीं पा सकता—जबकि वे दूसरों को स्वीकार करने में देरी करते हैं। कुछ परिस्थितियों में, वह उससे शत्रु की भस्म कर देने वाली शक्ति को दूर करता है, जबकि अन्य में वह उसे परीक्षा में गिरने देता है, ताकि यह परीक्षा उसके लिए ईश्वर के और करीब आने का कारण बने - और ताकि वह परीक्षा में तपने

का तरीका सीख सके, और अपनी कमजोरी के प्रमाण को अपनी आँखों के सामने रखकर, विनम्रता में और अधिक दृढ़ हो सके। क्योंकि उस धर्मी व्यक्ति के कर्म, जिसने अपनी कमजोरी को नहीं पहचाना है, ब्लेड के धार पर होते हैं – और वह गिरने और गर्व के विनाशकारी शेर से बहुत दूर नहीं है। जो अपनी कमजोरी को नहीं जानता, उसमें विनम्रता की कमी है; और जिसके पास यह नहीं है, वह अभी तक पूर्णता को प्राप्त नहीं हुआ है; और जो इसको प्राप्त नहीं हुआ है, वह हमेशा भय में रहता है; क्योंकि उसका नगर लोहे के स्तंभों और काँसे की दहलीज़ों पर, अर्थात् विनम्रता पर, स्थापित नहीं है। विनम्रता के बिना, मनुष्य का कार्य (जो चाहा जाता है) परिपूर्ण नहीं हो सकता, और आत्मा की मुहर अभी तक उसकी स्वतंत्रता के दस्तावेज़ पर नहीं लगी है – तब तक वह दास बना रहता है, और उसका कार्य भय से मुक्त नहीं होता।

२१७. इसलिये, प्रभु अपने संतों के पास विनम्रता के कारण और एक पश्चात्तापी हृदय के साथ उत्कट प्रार्थना में रहते हैं, ताकि जो उनसे प्रेम करते हैं वे विनम्रता के द्वारा उनके समीप आ सकें। और वह अक्सर उन्हें उनके स्वभाव की प्रवृत्तियों और लज्जास्पद तथा अशुद्ध विचारों की प्रवृत्तियों से डराता है; अक्सर लोगों से मिली फटकारों, अपमानों और तानों के माध्यम से; कभी-कभी शारीरिक बीमारियों और व्याधियों के माध्यम से; अन्य समय, गरीबी और बुनियादी जरूरतों की कमी से, या तीव्र भय, परित्याग, शैतान के खुले हमलों, और विभिन्न भयानक घटनाओं के कष्ट से। और यह सब इसलिए है ताकि उनके पास विनम्रता के कारण हों और ताकि वे आलस्य की नींद में न पड़ें।

218. जब ऐसा होता है कि आपकी आत्मा भीतर से अंधकार से भर जाती है, और जैसे पृथ्वी पर बादलों की धुंध से सूर्य की किरणें अस्पष्ट हो जाती हैं, आपकी आत्मा कुछ समय के लिए आध्यात्मिक सांत्वना से वंचित हो जाती है, और आपके भीतर अनुग्रह का प्रकाश मुरझा जाता है, क्योंकि आपकी आत्मा पर वासनाओं का बादल छा जाता है, और क्योंकि आपके भीतर आनंद देने वाली शक्ति कुछ कम हो जाती है, और एक असामान्य उदासी ने आपके मन पर छाया डाल दी है; इस विचार से परेशान न हों, बल्कि धैर्य रखें – आचार्यों की रचनाएँ पढ़ें, स्वयं को प्रार्थना करने के लिए प्रेरित करें – और सहायता की प्रतीक्षा करें। यह जल्द ही आएगी, बिना आपके एहसास के भी। जिस प्रकार पृथ्वी को घेरे हुए वायु के अंधकार से सूर्यकिरणों द्वारा पृथ्वी का मुख प्रकट होता है, उसी प्रकार प्रार्थना आत्मा के भीतर वासनाओं के बादलों को भगा सकती है और बिखेर सकती है, और मन को आनंद और सांत्वना की ज्योति से प्रकाशित कर सकती है।

219. जब तक आप आँसुओं के क्षेत्र तक नहीं पहुँच जाते, तब तक आपका अंतर्मन अभी भी संसार की सेवा करता है – यानी, आप अभी भी एक सांसारिक जीवन जीते हैं, और आप अभी भी अपने बाहरी स्वरूप के माध्यम से ईश्वर का कार्य करते हैं, जबकि आपका अंतर्मन बाँझ बना रहता है; क्योंकि इसका फल आँसुओं से शुरू होता है। जब आप आँसुओं के क्षेत्र में पहुँचते हैं, तो जान लें कि आपका मन इस संसार के कालकोठरी से बाहर आ गया है, उसने नए युग के पथ पर कदम रख दिया है, और एक अद्भुत नई हवा की सुगंध को सूंघना शुरू कर दिया है। आँसू इसलिए बहने लगते हैं क्योंकि आध्यात्मिक शिशु का जन्म निकट है। सभी की माता, अनुग्रह, एक रहस्यमय तरीके से आने वाले युग के प्रकाश में दिव्य प्रतिमा को प्रकट करने के लिए लालायित है। लेकिन इस प्रकार का रोना वैसा नहीं है जैसा उन लोगों में कभी-कभी होता है जो मौन का अभ्यास करते हैं (कभी-कभी ध्यान के दौरान, कभी-कभी पढ़ते समय, कभी-कभी प्रार्थना के दौरान)। मैं इस प्रकार के *रोने* की बात नहीं कर रहा हूँ, बल्कि उस रोने की बात कर रहा हूँ जो *दिन-रात, अनवरत रूप से* होता है। जिसने इस अवस्था को प्राप्त कर लिया है, उसकी आँखें *दो साल या उससे अधिक समय तक* पानी के झरने की तरह बहती रहती हैं, और फिर उसके विचार शांत हो जाते हैं। और विचारों के शांत हो जाने पर, उस हद तक जहाँ तक प्रकृति अनुमति देती है, मनुष्य *उस 'विश्राम'* में प्रवेश करता है जिसके बारे में संत पौलुस ने कहा था (इब्रानियों 4:3)। और इस शांतिपूर्ण विश्राम के माध्यम से, मन *रहस्यों पर मनन करना* शुरू कर देता है। तब पवित्र आत्मा उसके लिए स्वर्गीय बातें प्रकट करना शुरू कर देता है – और *परमेश्वर उसमें वास करता है*, और उसमें आत्मा का फल उत्पन्न करता है। लेकिन और सुनो: जब तुम विचारों के शांत होने के क्षेत्र में प्रवेश करते हो, तो तुम्हारे भीतर आँसुओं का सैलाब आ जाएगा – और आँसू तुम्हारे पास उचित मात्रा में, और उचित समय पर आएँगे।

220. एक व्यक्ति की प्रगति के तीन चरण होते हैं: आरंभिक चरण, मध्य चरण, और सिद्ध चरण। *पहले चरण* में रहने वाले, यद्यपि उनकी मानसिकता अच्छाई की ओर झुकी होती है, फिर भी वे अपने मन को वासनाओं से प्रभावित पाते हैं। *दूसरा चरण* वासना की अवस्था और निर्वासना की अवस्था के बीच एक मध्य मार्ग है, जहाँ एक व्यक्ति के भीतर अच्छे और बुरे विचार समान रूप से उत्पन्न होते हैं, और वे प्रकाश और अंधकार दोनों का विकिरण जारी रखते हैं। इसके अलावा, यदि वह थोड़े समय के लिए भी दिव्य शास्त्रों के बार-बार पाठ से और अपने मन में दिव्य मानसिक छवियों को बनाने से रुक जाता है, जबकि बाहरी मामलों में सावधानी बरतता है—जिससे आंतरिक संरक्षण उत्पन्न होता है—तो व्यक्ति वासनाओं में फँस जाता है। लेकिन यदि वह वर्णित तरीके से आध्यात्मिकता के प्रति अपनी लगन

को पोषति करता है, – शास्त्रों के अध्ययन के माध्यम से अच्छे विचारों की खोज करना, उन्हें विकसित करना और उन्हें भौतकिता के क्षेत्र में भटकने से रोकना, प्रेमपूर्वक अपनी आत्मा की रक्षा करना, और अथक प्रार्थना में धैर्य के साथ ईश्वर से चपिके रहना – तो ईश्वर अंततःउसके लिए अपना द्वार खोलेंगे, वशिष रूप से उसकी विनम्रता के कारण; क्योंकि रहस्यों का प्रकटीकरण नम्र-हृदय वाले को प्राप्त होता है (और यह *तीसरा क्रम है*)।

२२१. ईश्वर में आशा से पहले ईश्वर के लिए परिश्रम और अपने काम में बहाई गई पसीना होती है। यदि आप ईश्वर में विश्वास करते हैं, तो आप अच्छा कर रहे हैं। लेकिन विश्वास को कर्मों की आवश्यकता होती है, और ईश्वर में आशा सद्गुण के लिए कष्ट सहने में प्रकट होती है। क्या आप मानते हैं कि ईश्वर अपनी सृष्टि की परवाह करते हैं और सर्वशक्तिमान हैं? तो अपने विश्वास के साथ उपयुक्त कर्मों को भी जोड़ें; और फिर ईश्वर आपकी सुनेंगे। हवा को अपने हाथ में थामने का प्रयास न करें, यानी कर्मों के बिना विश्वास। यह असामान्य नहीं है कि कोई अनजान व्यक्ति ऐसे रास्ते पर चल पड़े जहाँ कोई जंगली जानवर, या हत्यारे, या कुछ इसी तरह की चीज़ हो; और इस प्रकार ईश्वर की दिव्य व्यवस्था उसे नुकसान से बचाती है, या किसी तरह यात्री की गति को धीमा कर देती है जब तक कि जंगली जानवर हट नहीं जाता, या किसी मुलाकात के द्वारा उसे रास्ते से भटका देती है। कभी-कभी एक दुष्ट साँप रास्ते पर अनदेखा पड़ा रहता है; लेकिन ईश्वर, किसी व्यक्ति को उस प्रलोभन में नहीं डालना चाहते, साँप को अचानक फुंकारने का कारण बनते हैं – वह अपनी जगह से हिलता है और यात्री के आगे रेंगता है, जो उसे देखकर सावधानी बरतता है और बच जाता है। अक्सर ऐसा होता है कि कोई घर, या दीवार, या पत्थर गिरता है – जबकि कोई वहाँ बैठा होता है – और ईश्वर, मानवता के प्रति अपने प्रेम में, एक देवदूत को गिरती हुई वस्तु को तब तक रोकने का आदेश देते हैं जब तक वहाँ बैठे लोग हट नहीं जाते या उन्हें बुलाकर नहीं ले जाया जाता; और जैसे ही वे हट जाते हैं, वह तुरंत गिरती हुई वस्तु को गिरने देता है। यह सब और इसी तरह की अन्य बातें ईश्वर की सामान्य और सार्वभौमिक व्यवस्था का कार्य हैं; लेकिन धर्मी लोगों पर एक विशेष और निरंतर व्यवस्था होती है। ईश्वर ने अन्य लोगों को अपने मामलों को विवेकपूर्ण ढंग से प्रबंधित करने और ईश्वर की व्यवस्था के अंतर्गत अपनी बुद्धि का उपयोग करने की आज्ञा दी है; लेकिन धर्मी व्यक्ति ने बुद्धि के बजाय विश्वास प्राप्त किया है, जिसके द्वारा वह किसी से नहीं डरता, बल्कि *'एक शेर की तरह आत्मविश्वास से चलता है'* (नीतिवचन 28:1)। और जैसे उसकी स्थिर भक्ति परमेश्वर के प्रति समर्पित है, वैसे ही परमेश्वर उसके विषय में कहते हैं: *'मैं उसकी संकट में उसके साथ हूँ; मैं उसे उद्धार दूँगा और उसे सम्मान दूँगा; मैं उसे दीर्घायु से तृप्त करूँगा और उसे अपना उद्धार दिखाऊँगा'* (भजन संहिता 90:15-16)। जो अपने काम में सुस्त और आलसी है, वह ऐसी आशा नहीं रख सकता। लेकिन जो कोई भी हर बात में परमेश्वर के साथ रहता है, अपने कर्मों की भलाई के द्वारा उसकी निकटता प्राप्त करता है, और अपने हृदय की आँखों को निरंतर उसकी कृपा की ओर निर्देशित करता है; ऐसा व्यक्ति अपने विषय में वही कह सकता है जो दिव्य दाऊद ने कहा था: *'मेरी आँखें कमज़ोर हो गई हैं, क्योंकि मैंने अपनी आशा अपने परमेश्वर में लगाई है'* (भजन संहिता 68:4)।

222. जब हम संसार से भागना चाहते हैं, तो कोई भी चीज़ हमें उससे इतना पूरी तरह से अलग नहीं करती, हमारे भीतर हमारे वासनाओं को इतना मृत नहीं करती, और हमें आध्यात्मिक जीवन के लिए इतना जीवित नहीं करती, जितना कि रोना और हार्दिक, तर्कसंगत शोक। लेकिन इसी तरह, कोई भी चीज़ हमें दुनिया का इतना साथी अपराधी नहीं बनाती, न ही हमें ज्ञान के खजाने और ईश्वर के रहस्यों के ज्ञान से इतना दूर करती है, जितना कि तुच्छता और हमारे आचरण की स्वतंत्रता में, हमारे विचारों का भटकना। – और यह उस पथभ्रष्ट दानव का काम है। अतः मैं प्रेमपूर्वक आपसे विनती करता हूँ कि आप शत्रु की दुष्टता से सावधान रहें, कहीं ऐसा न हो कि वह, व्यर्थ की बातों द्वारा, आपके हृदय में मसीह के प्रति आपके प्रेम की लगन को ठंडा कर दे—वह जिन्होंने आपके लिए, क्रूस पर पित्त का स्वाद चखा—और कहीं ऐसा न हो कि शत्रु, परमेश्वर के सामने उस मधुर अभ्यास और धैर्य के स्थान पर, जागते हुए आपके प्राण को अनेक स्वप्नों से न भरे, और न ही सोते समय उसे अतार्किक दृश्यों के जाल में फँसाए, जिनकी दुर्गंध स्वर्गदूत सहन नहीं कर सकते। स्वयं को मसीह की नम्रता का अनुकरण करने के लिए प्रेरित करो, ताकि उनके द्वारा आपके भीतर प्रज्वलित अग्नि और भी शीघ्र भड़क उठे— —जिसके द्वारा संसार की सभी हलचलें जड़ से उखाड़ दी जाती हैं, वे हलचलें जो नए मनुष्य को मार डालती हैं और पवित्र और सर्वशक्तिमान प्रभु के प्रांगण को अपवित्र करती हैं। क्योंकि मैं संत पौलुस के साथ यह कहने की हिम्मत करता हूँ कि हम परमेश्वर का मंदिर हैं (1 कुरिन्थियों 3:16)। इसलिए, जैसे परमेश्वर स्वयं पवित्र हैं, वैसे ही हम उनके मंदिर को शुद्ध करें, ताकि वह उसमें निवास करने की इच्छा करें। और चूँकि वह स्वयं पवित्र है, आइए हम उसके मंदिर को पवित्र करें; आइए हम इसे हर अच्छे और सम्मानजनक कार्य से सजाएँ, और शुद्ध और हार्दिक प्रार्थना के माध्यम से परमेश्वर की इच्छा की शांति की सुगंध से इसे सुगंधित करें। तब उसकी महिमा का मेघ आत्मा पर छा जाएगा, और उसकी भव्यता का प्रकाश हृदय के भीतर चमकेगा।

२२३. एक ऐसा व्यक्ति जो अनेक चिन्ताओं में उलझा रहता है, वह मौन नहीं रह सकता; क्योंकि अनेक कार्य उसकी स्थिरिता और मौन को भंग कर देते हैं, भले ही वह ऐसा न चाहे। एक भिक्षु को स्वयं को ईश्वर के समक्ष रखना चाहिए और हमेशा अपनी दृष्टि ईश्वर की ओर उठानी चाहिए, यदि वह वास्तव में अपने मन की रक्षा करना चाहता है, उसमें प्रवेश करने वाली बाहरी प्रवृत्तियों को दूर करना चाहता है, और अपने विचारों की शांति में यह विवेक करना चाहता है कि क्या प्रवेश करता है और क्या निकलता है। जब तक आपकी इंद्रियाँ अनियंत्रित हैं, तब तक अपने आत्मा में प्रकाश, न तो स्थिरिता और न ही शांति की तलाश करें, जब तक कि आप चिंताओं से मुक्त न हों। अखंड प्रार्थना के बिना, ईश्वर के निकट जाना असंभव है। इसके अलावा, प्रार्थना के श्रम के बाद, मन पर नई चिंताओं का भार विचारों को बिखेर देता है। आँसू, प्रार्थना के दौरान छाती पीटना, और प्रार्थना जारी रखने का उत्कट उत्साह हृदय में आँसुओं की मिठास के उत्साह को जगाते हैं, और हृदय प्रशंसनीय आनंद के साथ ईश्वर की ओर उड़ान भरता है, पुकारते हुए: *'हे परमेश्वर, हे बलवंत जीवते परमेश्वर, मेरी आत्मा* तुझी *के लिए प्यासी है; मैं कब आकर तेरे दर्शन से प्रसन्न होऊँगा?'* (भजन संहिता 41:3)। – जिसने इस मदिरा का स्वाद चखा है और फिर उससे वंचित हो गया है, वह अच्छी तरह जानता है कि वह किस दयनीय स्थिति में रह जाता है, और उसकी सुस्ती के कारण उससे क्या छीन लिया गया है।

२२४. जो लोग मौन में रहते हैं, उनके लिए लोगों से भेंट-मुलाकात और उनसे बातचीत कितनी हानिकारक होती है! – जैसे एक भारी ओलावृष्टि, जो अचानक पेड़ों के फलों पर गिरती है, उन्हें कुचल देती है और नष्ट कर देती है, वैसे ही लोगों से भेंटें, भले ही संक्षिप्त ही क्यों न हों, सद्गुणों के फूलों को कुचल देती हैं, जो अभी-अभी खिले हैं और पश्चाताप के जल की धाराओं द्वारा रोपी गई आत्मा की डंठल को शानदार ढंग से सजा रहे हैं (भजन संहिता 1:3)। जैसे एक भारी ओलावृष्टि, जो मुश्किल से धरती से निकली हरियाली पर गिरती है, उसे झुलसा देती है, वैसे ही लोगों से मिलना भी मन की जड़ को झुलसा देता है, जिसने सद्गुण के अनाज का उत्पादन करना शुरू कर दिया है। जैसे एक कुलीन और सम्मानित व्यक्ति, जब वह शराब पीकर नशे में हो जाता है, तो वह अपनी कुलीनता को भूल जाता है और शराब के नशे में आए अजीब विचारों के कारण स्वयं का मज़ाक बनवाता है, वैसे ही लोगों को देखने और उनसे बातचीत करने से आत्मा की पवित्रता भी विक्षिप्त हो जाती है: – एक व्यक्ति अपनी सावधानी भूल जाता है; उसके विचारों में उसके संकल्प का निशान मिट जाता है, और एक प्रशंसनीय जीवन शैली की नींव उखड़ जाती है।

२२५. हे मनुष्य, यह मत सोचो कि संन्यास जीवन में रात्रि जागरण से अधिक महत्वपूर्ण कोई अभ्यास है। इसके द्वारा, यदि तपस्वी सांसारिक मामलों या क्षणभंगुर की चिंता से विचलित नहीं होता है, तो उसका मन थोड़े ही समय में पंखों की तरह ऊँचा उड़ान भरकर ईश्वर की आनंदमयता में लीन हो जाएगा। यदि कोई भिक्षु विवेक के साथ मानसिक सतर्कता में स्थित रहता है, तो आप उसे ऐसा देखेंगे मानो वह देहधारी न हो। यह असंभव है कि जो लोग अपना पूरा जीवन इस साधना में व्यतीत करते हैं, उन्हें ईश्वर उनके संयम, उनके हृदयों की जागरूकता, और उनके विचारों के सतर्क मोड़ के लिए बिना किसी वरदान के छोड़ दें। सतर्क रहने का श्रम करने वाली आत्मा के चेरुबिम की आँखें होंगी, ताकि वह अपनी दृष्टि को निरंतर ऊपर उठाकर दिव्य दृश्य का मनन कर सके।

२२६. जिसने इस दिव्य परिश्रम को चुना है, उसे दिन के दौरान सामाजिक समारोहों के कोलाहल और सांसारिक मामलों की चिंता से हर तरह से अपना बचाव करना चाहिए; अन्यथा, वह नींद से परहेज़ करने की कठिनाई तो सहन करेगा लेकिन उससे कोई फल नहीं पाएगा; क्योंकि ऐसे मामले में, मन के लिए भजन-गायन और प्रार्थना में ठीक से भाग लेना असंभव होगा। लेकिन जब कोई, दिन के दौरान सांसारिक चिंताओं में व्यस्त रहने के बजाय, दिव्य शास्त्रों के अध्ययन को समर्पित करता है—जो मन को मजबूत करता है, विशेष रूप से प्रार्थना को पोषित करता है, और प्रार्थना से गहराई से जुड़ी जागराता में सहायता करता है— तब इस पाठ में कोई सही मार्ग का मार्गदर्शक पाता है, वह पाता है जो सर्व-पोषक प्रार्थनापूर्ण चिंतन का बीज है, जो विचारों को भटकने से रोकता है और आत्मा में निरंतर ईश्वर की स्मृति बोता है।

२२७. निरंतर मौन, पठन, संयमित भोजन और जागरण के साथ, शीघ्र ही मन को विस्मित कर देता है, बशर्ते मौन तोड़ने का कोई कारण न हो। जो विचार मौन रहने वालों में अपने आप और बिना किसी जानबूझकर किए प्रयास के उत्पन्न होते हैं, वे दोनों आँखों को, जिनसे आँसू बहते हैं और उनकी अधिकता गालों पर छा जाती है, बपतिस्मा के कुंड जैसा बना देते हैं।

228. जब तक कोई हृदय से पाप के कारणों से सच्ची घृणा नहीं करता, तब तक वह पाप की शक्ति से उत्पन्न आनंद से मुक्त नहीं होता। यह सबसे कड़वी लड़ाई है (पाप के आनंद के विरुद्ध), जो व्यक्ति को रक्तपात के बिंदु तक भी नहीं छोड़ती। इसमें, एक के स्वाधीनता की परीक्षा सद्गुण के प्रति एक के प्रेम की एकता (और विशिष्टता) में होती है। इस संघर्ष में ही पाप की शक्ति निहित है, जिसके द्वारा शत्रु आमतौर पर पवित्र आत्माओं को भ्रम में डाल

देता है, और उन्हें उस अनुभव को करने के लिए मजबूर कर देता है जिसे उन्होंने कभी भी अपने भीतर स्वीकार नहीं किया था। और यह एक अदृश्य संघर्ष का समय है, जो अत्यंत कठिन हो जाता है जब यह लड़ाई, गहरी आदत के कारण, उन लोगों पर बहुत अधिक शक्ति प्राप्त कर लेती है जिन्होंने अपने ही विचारों के आगे झुककर पहले ही हार मान ली होती है।

२२९. आलस्य से सावधान रहो; क्योंकि उसमें निश्चित मृत्यु निहित है - और उसके बिना उन लोगों के हाथों में गिरना असंभव है जो हमें दास बनाने की कोशिश करते हैं। उस दिन, ईश्वर हमारा न्याय भजनों के लिए नहीं, न ही प्रार्थना में हमारी लापरवाही के लिए करेंगे, बल्कि इस तथ्य के लिए करेंगे कि इस लापरवाही से हम राक्षसों को प्रवेश देते हैं। और जब, अपने लिए जगह पाकर, वे प्रवेश करते हैं और हमारी आँखों के द्वार बंद कर देते हैं, तो वे हम पर अत्यंत यातनादायक तरीके से वह थोपेंगे जो हमें ईश्वर की निंदा और सबसे कठोर दंड के अधीन करता है। कोठरी के भीतर इसकी (भजन-गायन और प्रार्थना की सेवा) का पालन बुद्धिमानों द्वारा, प्रकाशन की आत्मा के अनुसार, हमारे जीवन की रक्षा के लिए स्थापित किया गया है; फिर भी मूर्ख इसके उपेक्षा को तुच्छ समझते हैं। क्योंकि बाद वाले इससे होने वाले नुकसान पर ध्यान नहीं देते हैं, इसलिए उनके मार्ग की शुरुआत और मध्य दोनों ही अज्ञानी स्वतंत्रता से विशेषता रखते हैं, जो वासनाओं की जननी है।

२३०. हम यह सुनिश्चित नहीं कर सकते कि हमारे पास वासनाओं के कोई कारण न हों; इसलिए, हम अपनी इच्छा के विरुद्ध भी प्रलोभित होते हैं। हम अपने लिए पापों की इच्छा नहीं करते - फिर भी ऐसा होता है कि हम आनंद के साथ उन कारणों को स्वीकार कर लेते हैं जो हमें उन तक ले जाते हैं; और फिर ये कारण ही पापों के प्रभावों का कारण बन जाते हैं। जो कोई भी वासनाओं के अवसरों से प्रेम करता है, वह अनजाने में ही उनका दास बन जाता है। जो कोई भी अपने पापों से घृणा करता है, वह पाप करना बंद कर देगा; और जो कोई भी उनका इकरार करता है, उसे क्षमा मिल जाएगी। हालाँकि, किसी व्यक्ति के लिए एक पापी आदत को तब तक छोड़ना असंभव है जब तक कि वह पहले पाप से घृणा विकसित न कर ले, और अपने अपराधों का इकरार करने से पहले क्षमा प्राप्त करना असंभव है।

२३१. जब तक कोई व्यक्ति अपने भीतर अपने पापों के आनंद के विष को पालता है, तब तक उसके लिए जो कुछ भी वह करता है, उचित ही लगता है। और जैसे ही प्रकृति अपने उचित क्रम से भटक जाती है, इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि वह शराब से मदहोश है या वासना से: क्योंकि दोनों ही व्यक्ति को उसकी वर्तमान स्थिति से दूर ले जाती हैं - और दोनों ही शरीर में एक जैसी उथल-पुथल पैदा करती हैं; यद्यपि साधन भिन्न हैं, परिणाम एक ही है।

२३२. यदि आप अपनी कोठरी में अकेले हैं और अभी तक सच्ची मनन-शक्ति प्राप्त नहीं की है, तो हमेशा ट्रॉपारिया और कैथिस्मा पढ़ने, मृत्यु पर ध्यान लगाने और भविष्य की आशा करने में स्वयं को व्यस्त रखें। यह सब मन को एक ही बिंदु पर केंद्रित करता है और सच्ची मनन-शक्ति आने तक इसे भटकने से रोकता है; क्योंकि आत्मा की शक्ति वासनाओं से अधिक शक्तिशाली है। भविष्य की आशा के लिए, ईश्वर के स्मरण में स्वयं को व्यस्त रखें; ट्रॉपारिया के अर्थ को अच्छी तरह समझने का प्रयास करें, और उन सभी बाहरी चीजों से सावधान रहें जो आपको इच्छाओं के लिए उकसाती हैं; और साथ ही, अपनी कोठरी में किए जाने वाले छोटे-छोटे कार्यों में भी सावधान रहें। अपने विचारों की जाँच करो, और प्रार्थना करो कि तुम्हें अपने सभी कार्यों में विवेक प्राप्त हो: इससे तुम्हारे लिए आनंद का प्रवाह शुरू हो जाएगा; और फिर तुम ऐसी दुखों को पाओगे जो शहद से भी मीठी होंगी।

२३३. दृश्य और मूर्त सद्गुणों के माध्यम से ही कोई भी वासनाओं पर काबू पा सकता है; और आध्यात्मिक ज्ञान के अध्ययन के माध्यम से ही कोई भी मन की भटकन पर काबू पा सकता है। हमारा मन चंचल है, और जब तक इसे किसी प्रकार के चिंतन द्वारा नियंत्रित नहीं किया जाता, यह भटकना कभी बंद नहीं करता। और उपरोक्त गुणों में पूर्णता के बिना, इस संरक्षण की अवस्था को प्राप्त करना असंभव है; क्योंकि जब तक कोई अपने शत्रुओं पर विजय प्राप्त नहीं कर लेता, तब तक कोई शांति नहीं हो सकती। वासनाएं आत्मा के छिपे हुए गुणों के लिए एक बाधा के रूप में काम करती हैं; और जब तक उन्हें पहले बाहरी गुणों द्वारा वश में नहीं किया जाता, तब तक आंतरिक गुण उनके पीछे छिपे रहते हैं।

234. ईश्वर के प्रति प्रेम स्वाभाविक रूप से प्रबल होता है, और जब यह किसी पर बिना माप के हावी हो जाता है, तो यह उस आत्मा को आनंद से भर देता है। जिसने इस प्रेम का अनुभव किया है, उसमें एक असाधारण परिवर्तन स्पष्ट होता है: उसका चेहरा दीप्तिमान और प्रसन्न हो जाता है, और उसका शरीर गर्म हो उठता है; उससे भय और लज्जा दूर हो जाते हैं; वह भयानक मृत्यु को भी आनंद के रूप में देखता है; उसके मन का चिंतन स्वर्गीय विषयों में किसी भी बाधा को नहीं आने देता; वह बाहरी वस्तुओं से उत्पन्न होने वाली हलचल को महसूस नहीं करता, क्योंकि भले ही वह कुछ करता है, वह इसके प्रति पूरी तरह से अनजान रहता है – क्योंकि उसका मन चिंतन में ऊँचा उड़ता है, और उसके विचार हमेशा, मानो किसी से संवाद कर रहे हों। प्रेरित और शहीद एक समय इस आध्यात्मिक आनंद से भर

गए थे। कुछ ने दुनिया की यात्रा की, परिश्रम किया और अपमान सहन किया, जबकि अन्य, भयानक पीड़ाओं के सामने, हतोत्साहित नहीं हुए, बल्कि उन्हें बहादुरी से सहन किया। – इस बीच अन्य लोग रेगिस्तानों, पहाड़ों और गुफाओं में भटकते रहे – और अपने अव्यवस्था में वे सबसे सुव्यवस्थित थे; उन्हें मूर्ख माना जाता था, फिर भी वे बुद्धिमानों में सबसे बुद्धिमान थे।

२३५. तपस्या पवित्रता की जननी है; इससे मसीह के रहस्यों का पहला अनुभव प्राप्त होता है – जिसे आध्यात्मिक ज्ञान का पहला चरण कहा जाता है। एक मलिन आत्मा पवित्र राज्य में प्रवेश नहीं करती, और न ही वह संतों की आत्माओं के साथ संवाद करती है। अपने पवित्रता के सद्गुण को आँसुओं, उपवास और एकांत मौन से सजाएँ। ईश्वर के लिए थोड़ा दुख, बिना दुख के किए गए महान कार्य से बेहतर है। जो बिना प्रयास के किया जाता है—अर्थात् सांसारिक लोगों का मार्ग जो बाहरी रूप से दान का अभ्यास करते हैं, जबकि भीतर कुछ भी प्राप्त नहीं करते। लेकिन अपने भीतर प्रयास करें, और मसीह के लिए पीड़ा सहें, ताकि आप मसीह की महिमा में भाग लेने के योग्य माने जाएँ। मन तब तक यीशु के साथ महिमामय नहीं होगा जब तक शरीर मसीह के लिए पीड़ा नहीं सहता।

236. क्रूस पर चढ़ने के दो तरीके हैं: एक है शरीर का सूली पर चढ़ना, और दूसरा है चिंतन में आरोहण; पहला, वासनाओं से मुक्ति के परिणामस्वरूप होता है, और दूसरा, आत्मा के कर्मों की प्रभावशीलता के परिणामस्वरूप। मन तब तक वश में नहीं होगा जब तक शरीर उसके अधीन नहीं हो जाता। मन का राज्य शरीर का सूली पर चढ़ाया जाना है: और मन तब तक ईश्वर के अधीन नहीं होगा जब तक स्वतंत्रता को विवेक के अधीन नहीं किया जाता। जो कोई स्वयं को ईश्वर के अधीन कर लेता है, वह सब कुछ अपने अधीन करने के करीब होता है।

२३७. जो कुछ भी अच्छा है उसकी नींव, शत्रु की कैद से आत्मा की वापसी, प्रकाश और जीवन की ओर ले जाने वाला मार्ग—यह सब निम्नलिखित दो अभ्यासों में निहित है: स्वयं को एकता में एकत्रित करना और हर समय उपवास करना; अर्थात्, बुद्धिमानी और समझदारी से भोजन से संयम का अभ्यास करना, बिना छोड़े एक ही स्थान पर रहना, और निरंतर ईश्वर के चिंतन में लगे रहना। यही है इंद्रियों का वश में करना, मन की संयमशीलता, शरीर में उत्पन्न होने वाली उग्र वासनाओं का वश में करना, विचारों की प्रकाशमान गति, सदाचारी कर्मों में परिश्रम, आँसू और नश्वरता की स्मृति, शुद्ध ब्रह्मचर्य, जो हर कल्पना और प्रलोभनकारी विचार से परे है; संक्षेप में, इसलिए सच्चे मनुष्य की स्वतंत्रता, आध्यात्मिक आनंद और राज्य में मसीह के साथ पुनरुत्थान। तब जो कोई भी इन दो मार्गों को अनदेखा करता है, वह जान ले कि वह न केवल उपरोक्त सभी बातों में स्वयं को हानि पहुँचाएगा, बल्कि वह सभी सद्गुणों की नींव को भी हिला देगा - और निम्नलिखित दो दुर्गुणों में गिर जाएगा, जो पहले वाले के विपरीत हैं: अर्थात्, कामुक विलासिता और निर्लज्ज परिपूर्णता। ये कही गई बातों के विपरीत की बिल्कुल शुरुआत हैं - और वे आत्मा में सभी वासनाओं के लिए जगह बनाती हैं।

२३८. शत्रु, हमारी स्वाभाविक आवश्यकताओं के समय को जानता है, जो प्रकृति को स्वयं को संतुष्ट करने के लिए प्रेरित करती हैं—यह जानते हुए कि आँखों के भटकने और पेट के तृप्त होने से, मन भ्रम में पड़ जाता है, ठीक ऐसे ही समयों में, हमें हमारी स्वाभाविक आवश्यकताओं को बढ़ाने और हमारे भीतर कपटी विचारों की छवियाँ बोने के लिए प्रयासरत रहता है, ताकि तीव्र संघर्ष में, वासनाएँ प्रकृति पर हावी हो जाएँ, और मनुष्य पाप में डूब जाए। इसलिए, जैसे दुश्मन ऐसे समय की प्रतीक्षा करता है, वैसे ही हमें भी, विशेष रूप से इन्हीं समयों में, सावधान रहना चाहिए, और इन सुझाए गए विचारों की इच्छा को जल्दबाजी में पूरा करने की अनुमति नहीं देनी चाहिए, न ही लालच को विजय प्राप्त करने देना चाहिए, और सबसे बढ़कर, अपने मौन के स्थान से न हटें, न ही उस जगह जाएँ जहाँ यह हमारे लिए सुविधाजनक हो, कहीं ऐसा न हो कि हम इससे रेगिस्तान को पूरी तरह छोड़ देने के बहाने दे दें।

२३९. शत्रु दिन-रात हमारी आँखों के सामने खड़ा रहता है, निरीक्षण करता है, प्रतीक्षा करता है और किसी भी खुले दरवाज़े की तलाश में रहता है जिससे वह हमारी इंद्रियों में प्रवेश कर सके। और जब हम किसी एक बात में भी लापरवाही बरतते हैं, तो यह चालाक और निर्लज्ज कुत्ता हम पर अपने तीर चला देता है। कभी-कभी प्रकृति स्वयं शांति, स्वतंत्रता, हँसी, विचारों का ऊँचा उड़ान भरना और आलस्य की लालसा करने लगती है - और यह जुनून का स्रोत और विद्रोह का गर्त बन जाती है; और कभी-कभी विरोधी इन चीजों को आत्मा में भर देता है। ध्यान रखें कि आप छोटी-छोटी बातों में खुद को व्यस्त न करें, कहीं ऐसा न हो कि आप बड़ी बातों में लिप्त हो जाएँ और बड़ी गिरावट का शिकार हो जाएँ। और लापरवाही का एक छोटा सा काम, जैसा कि किसी ने कहा है, अक्सर बड़े खतरों को जन्म देता है। छोटी और तुच्छ बातों में भी होश में रहना—यही बुद्धिमानी है।

२४०. जब बात अपने जीवन को सुरक्षित रखने की हो तो हतोत्साहित न हों, और इसके लिए मरने में आलसी न बनें; क्योंकि कायरता निराशा का संकेत है, और लापरवाही दोनों की जननी है। एक डरपोक व्यक्ति यह प्रकट करता है कि वह दो बीमारियों से पीड़ित है, अर्थात् जीवन के प्रति प्रेम और विश्वास की कमी। जीवन के प्रति प्रेम

अविश्वास का संकेत है। लेकिन जो कोई भी इसे नज़रअंदाज़ करता है, वह यह साबित करता है कि वह अपनी पूरी आत्मा से ईश्वर में विश्वास करता है और भविष्य की प्रतीक्षा करता है। हृदय का साहस और खतरे की परवाह न करना दो कारणों में से एक से उत्पन्न होता है: या तो ईश्वर में गहरी आस्था, या कठोर हृदयता। कठोर हृदयता के बाद अहंकार आता है, जबकि आस्था के बाद हृदय की विनम्रता आती है।

२४१. कोई व्यक्ति तब तक ईश्वर में आशा प्राप्त नहीं कर सकता जब तक कि उसने पहले, अपनी पूरी क्षमता से, उनकी इच्छा को पूरा न किया हो। क्योंकि ईश्वर में आशा और हृदय का साहस अंतरात्मा की गवाही से उत्पन्न होते हैं, और केवल हमारे मन की सच्ची गवाही के माध्यम से ही हम ईश्वर में आशा रखते हैं। मन की गवाही इस तथ्य में निहित है कि किसी व्यक्ति का अंतरात्मा उसे, उसकी क्षमता के अनुसार किसी भी बाध्यता को नज़रअंदाज़ करने के लिए, बिल्कुल भी दोषी नहीं ठहराता। यदि हमारा हृदय हमें दोषी नहीं ठहराता, *तो 'हम परमेश्वर के सामने निश्चित हैं'* (1 यूहन्ना 3:21)। इसलिए, धृष्टता सद्गुण में प्रगति और एक निर्मल अंतरात्मा का परिणाम है।

242. किसी व्यक्ति का निरंतर मौन और स्थिरता का पालन निम्नलिखित तीन कारणों से होता है: या तो मानवीय महिमा के लिए, या सद्गुण के प्रति तीव्र उत्साह से, या क्योंकि व्यक्ति के भीतर एक निश्चित दिव्य संवाद होता है, और उनका मन उसकी ओर आकर्षित होता है। सद्गुण कई और विविध शारीरिक कर्मों के प्रदर्शन में नहीं, बल्कि हृदय की सबसे बुद्धिमानी भरी आशा में निहित है; क्योंकि एक सही उद्देश्य इसे ईश्वर से जोड़ता है। मन, बिना शारीरिक कर्मों के, अच्छा कर सकता है; लेकिन शरीर, हृदय की बुद्धिमानी के बिना, भले ही कुछ करे, उससे कोई लाभ नहीं उठा सकता। तथापि, जब कोई ईश्वर-भक्त पुण्य कर्म करने का अवसर पाता है, तो वह अपने कर्मों के श्रम द्वारा ईश्वर के प्रति अपने प्रेम को प्रदर्शित करने में विफल नहीं रहता।

२४३. कामुक वासना की प्रवृत्तियों के विरुद्ध संघर्ष में, स्त्रियों को न देखने को अपने लिए एक शक्तिशाली हथियार समझो; क्योंकि शत्रु हमारे भीतर वह नहीं ला सकता जो प्रकृति अपनी शक्ति से करने में सक्षम है। यह न सोचें कि प्रकृति उसे भूल जाती है जो ईश्वर ने उसमें संतानोत्पत्ति और इस प्रयास में लगे लोगों की परीक्षा के लिए स्वाभाविक रूप से स्थापित किया है। लेकिन इच्छा की वस्तुओं से दूर रहना, शरीर में कामवासना को मार डालता है, उसे भूलने का कारण बनता है, और उसे जड़ से उखाड़ देता है। वस्तुएँ, जब दिखाई न दें, तो एक हल्की और मुश्किल से महसूस होने वाली हलचल पैदा करती हैं; लेकिन वस्तुएँ, जब दिखाई दें, तो अपनी निकटता से कामनाओं को जगाती हैं, उन्हें वैसे ही पोषित करती हैं जैसे तेल दीपक की लौ को पोषित करता है – और एक ऐसी कामना को फिर से भड़काती हैं जो पहले से ही शांत हो चुकी होती है और बुझ चुकी होती है। बाहरी रूप से कुछ भी जोड़े बिना, स्वाभाविक गति इच्छा की पवित्रता को बाधित नहीं कर सकती या ब्रह्मचर्य को भंग नहीं कर सकती; क्योंकि ईश्वर ने प्रकृति को अच्छी इच्छा की ओर उसके झुकाव पर विजय प्राप्त करने की शक्ति नहीं दी है। हालाँकि, यदि हम कभी-कभी इंद्रियों के बहकावे में आ जाते हैं, और या तो अत्यधिक खाने-पीने में, या महिलाओं की संगत में, उन्हें घूरने और उनके बारे में बात करने में लिप्त हो जाते हैं—जो पूरे शरीर में कामवासना की आग को भड़काता और तेज़ी से फैलाता है; तब हम इसके द्वारा शरीर के भीतर स्वाभाविक रूप से सौम्य गति को एक उग्र और अनियंत्रित गति में बदल देते हैं - प्रकृति में इन जोड़ के माध्यम से, जो हमारी अपनी इच्छा की प्रवृत्तियों से प्रेरित होते हैं। ईश्वर ने जो कुछ भी बनाया है, उसे सुंदर और अनुपात में बनाया है। और जब तक हमारे भीतर प्रकृति के साथ सामंजस्य का मापदंड ठीक से संरक्षित रहता है, तब तक प्राकृतिक गतिविधियाँ हमें रास्ते से भटकने के लिए मजबूर नहीं कर सकतीं: बल्कि शरीर में केवल सामंजस्यपूर्ण गतिविधियाँ ही जागृत होती हैं, जो केवल यह इंगित करती हैं कि हमारे भीतर एक प्राकृतिक वासना मौजूद है, परन्तु वे इतनी तीव्र हलचल और उथल-पुथल पैदा नहीं करतीं कि जो पवित्रता में बाधा डाल सकें।

२४४. कभी-कभी अंगों में एक हलचल होती है, जो हमारे अहंकार के कारण ईश्वर द्वारा अनुमत होती है। हम इस संघर्ष को इस बात से जानते हैं कि जब हम लंबे समय तक अपने प्रति सचेत रहे हों और परिश्रम किया हो, यहाँ तक कि खुद को कुछ हद तक सफल भी मान लिया हो, तो हमें इसे सहने की अनुमति दी जाती है ताकि हम नम्रता सीख सकें। अन्य परीक्षाएँ हमारी आलस्य और देह की अत्यधिक तुष्टि से उत्पन्न होती हैं, जो हमारे जीवन के क्रम में सभी दर्दनाक और कठिन चीजों को त्यागने के माध्यम से होती हैं—सबसे बढ़कर, कोठरी में निरंतर बंद रहना और शारीरिक श्रम की मेहनत। कठिनाई, मुसीबत और जीवन की तंग परिस्थितियाँ कामुकता को रोकती और कुंद करती हैं; जबकि आराम, सुख और देह की शांति इसे उकसाती, पोषित और पुनर्जीवित करती हैं। ईश्वर और उनके स्वर्गदूत तब प्रसन्न होते हैं जब हम आवश्यकता में होते हैं, जबकि शैतान और उसके दूत तब प्रसन्न होते हैं जब हम आराम में होते हैं। दुख और संकट आज्ञाओं की पूर्ति को व्यापक बनाते हैं और उसे सुगम बनाते हैं; जबकि आराम वासनाओं को जन्म देता है, और इस प्रकार आज्ञाओं की पूर्ति में बाधा डालता है और उसे दबाता है। कठिनाइयों से ग्रस्त

शरीर में, विचार खतरनाक कल्पनाओं के लिए जगह नहीं बना पाते। जब कोई व्यक्ति खुशी-खुशी परिश्रम और दुखों को सहन करता है, तो वह अपने विचारों को आसानी से काबू में कर सकता है, क्योंकि परिश्रम उन्हें निष्क्रिय कर देता है। जब कोई व्यक्ति अपने अतीत के पापों को याद करके खुद को दंडित करता है, तो ईश्वर उस पर कृपा दृष्टि डालता है। ईश्वर इस बात पर प्रसन्न होते हैं कि उनके मार्ग से भटकने के कारण, उसने स्वयं पर दंड लगाया है— जो पश्चाताप का संकेत है। और जितना अधिक वह अपनी आत्मा पर पाबंदियाँ लगाता है, उतनी ही ईश्वर की कृपा उस पर बढ़ती है। लेकिन कोई भी खुशी जिसका कारण सद्‌गुण में नहीं है, वह उसे अनुभव करने वाले में तुरंत कामुक प्रवृत्तियों को जगा देती है।

२४५. सद्‌गुण एक के बाद दूसरे का अनुसरण करते हैं, ताकि सद्‌गुणों का मार्ग कठिन या बोझिल न हो, ताकि कोई व्यक्ति समय के साथ उनमें प्रगति कर सके और ऐसा करने में राहत पा सके, और ताकि इस प्रकार, सद्‌गुणों के लिए सहन की गई कठिनाइयाँ भी, एक अच्छी चीज़ के रूप में, सुखद हो सकें। इस प्रकार, कोई भी तब तक सच्ची वैराग्य की प्राप्ति नहीं कर सकता जब तक कि वह प्रलोभनों को आनंदपूर्वक सहने के लिए खुद को तैयार न करे। और कोई भी तब तक प्रलोभनों को सहन नहीं कर सकता जब तक कि वह इस बात से आश्वस्त न हो कि जिन दुखों के लिए उसने खुद को तैयार किया है, उनके बदले में उसे शारीरिक आराम से भी बढ़कर कुछ प्राप्त हो सकता है। जो कोई भी भौतिक चीजों से खुद को वंचित करता है, लेकिन इंद्रियों की वास्तविकता – जिनसे मेरा तात्पर्य दृष्टि और श्रवण से है – से खुद को वंचित नहीं करता है, उसने अपने ऊपर दोहरा दुख लाया है, और वह और भी अधिक पीड़ित और दुखी होगा। क्योंकि यदि वस्तुओं की केवल मानसिक छवियाँ, स्वयं वस्तुओं के बिना, किसी व्यक्ति में एक पीड़ादायक अनुभूति उत्पन्न करती हैं – तो फिर हम क्या कहेंगे जब वस्तुएँ स्वयं उपस्थित और पास में हों? – इस मामले में, इन वस्तुओं से उत्पन्न अनुभूतियों से, एक व्यक्ति ठीक वैसे ही पीड़ित होता है जैसे उसने पहले क्रिया करते समय पीड़ित हुआ था; क्योंकि उन वस्तुओं की आदत की याद कभी उसके मन से नहीं जाती। इस दृष्टिकोण से एक तपस्वी का जीवन कितना अद्‌भुत है! उसमें, केवल विचार ही प्रलोभन के रूप में रहते हैं; फिर भी यह इन विचारों को वश में करने में बहुत और शक्तिशाली रूप से योगदान देता है।

२४६. किसी ऐसे व्यक्ति से सलाह न लें जो आपके समान जीवन-पथ पर न चलता हो, भले ही वह अत्यंत बुद्‌धिमान क्यों न हो। अपने विचारों को एक शिक्षित दार्शनिक के बजाय, जो अपने शोध के आधार पर तर्क तो करता है पर उसे व्यवहार में परख नहीं पाता, एक अनपढ़ व्यक्ति को सौंप दें, जिसने उस विषय में व्यावहारिक अनुभव प्राप्त किया हो। अनुभव प्राप्त करना केवल कुछ चीजों के पास जाकर और उनके बारे में कोई ज्ञान प्राप्त किए बिना उन्हें देखना नहीं है, बल्कि उनके साथ लंबे समय तक जुड़कर, व्यक्तिगत अनुभव के माध्यम से उनके लाभ और हानि को स्पष्ट रूप से समझना है। यह असामान्य नहीं है कि कोई चीज़ सतह पर हानिकारक लगे, फिर भी अपने मूल में लाभ से भरी हो; और इसके विपरीत, यह भी असामान्य नहीं है कि कोई चीज़ लाभकारी लगे, फिर भी भीतर से हानि से भरी हो। इसलिए, ऐसे व्यक्ति की सलाह लें जिसने स्वयं सब कुछ परखा हो, जो आपके अपने मामलों में विचारणीय बातों पर धैर्यपूर्वक चर्चा कर सके – और जो विश्वसनीय रूप से यह बता सके कि आपके लिए वास्तव में क्या लाभदायक है।

२४७. जब आपको अपने मार्ग पर अपरिवर्तनीय शांति मिले, तो सतर्क रहें; क्योंकि आप संतों के थके हुए पैरों द्वारा चली गई सीधी राह से बहुत दूर हैं। जब तक आप राज्य के नगर के मार्ग पर हैं, आपके लिए यह एक संकेत हो कि आप ईश्वर के नगर के निकट आ रहे हैं: आपको शक्तिशाली प्रलोभनों का सामना करना पड़ेगा; – और आप जितना करीब आएँगे और जितना आगे बढ़ेंगे, आपके सामने प्रलोभन उतने ही बढ़ते जाएँगे। अतः जैसे ही आप अपने मार्ग पर अपनी आत्मा में सबसे बड़े और सबसे प्रबल प्रलोभनों को महसूस करें; जान लो कि उस क्षण तुम्हारी आत्मा वास्तव में गुप्त रूप से एक नए, उच्च स्तर पर पहुँच गई है, और जिस अवस्था में वह है, उसमें उसके लिए अनुग्रह बढ़ा दिया गया है; क्योंकि अनुग्रह की महानता के अनुपात में, ईश्वर आत्मा को परीक्षाओं की क्लेश में ठीक उसी हद तक ले जाता है। यदि आत्मा कमजोर है और उसमें महान प्रलोभनों का सामना करने के लिए पर्याप्त शक्ति नहीं है, और इसलिए वह उनसे न गुज़रने का अनुरोध करती है, और ईश्वर उसके अनुरोध को स्वीकार कर लेते हैं; तो निश्चित रूप से जान लो कि जिस हद तक आत्मा में महान परीक्षाओं के लिए पर्याप्त शक्ति की कमी है, उसी हद तक उसमें महान उपहारों की क्षमता भी नहीं है; और जैसे उसे महान परीक्षाओं तक पहुँच नहीं दी जाती, वैसे ही उसे महान उपहार भी नहीं दिए जाते। क्योंकि ईश्वर किसी महान परीक्षा के बिना कोई महान वरदान नहीं देते; वरदान ईश्वर द्वारा परीक्षाओं के अनुपात में, अपनी बुद्‌धिमत्ता के अनुसार निर्धारित किए जाते हैं, जिसकी गहराई उन प्राणियों के लिए समझना असंभव है जिन्हें उन्होंने बनाया है।

२४८. सदाचारी जीवन शुरू करने पर और *'जैसे-जैसे यह आगे बढ़ता है'* सामना होने वाले प्रलोभन, उन प्रलोभनों से भिन्न होते हैं जो हृदय के *'घमंड को विनम्र करने'* के लिए अनुमत होते हैं। आत्मा पर *उसकी 'प्रगति'* और विकास

के लिए आध्यात्मकि छड़ी से पड़ने वाले प्रलोभन, और जनिके माध्यम से उसे सखिाया, परखा और संघर्ष में लाया जाता है, वे इस प्रकार हैं: आलस्य, शरीर में भारीपन, अंगों की कमजोरी, नराशा, वचिारों का भ्रम, शारीरकि थकान से उत्पन्न संदेह, आशा का अस्थायी नुकसान, मन का अंधकार, मानवीय सहायता की कमी, शरीर की आवश्यकताओं की कमी, और इसी तरह की अन्य परीक्षाएँ। ये परीक्षाएँ आत्मा में एकांत और असहायता की भावना, हृदय का अँधेरा और वनिम्रता को जन्म देती हैं। हालाँकि, दव्यि व्यवस्था इन परीक्षाओं को सहने वालों की शक्ति और आवश्यकताओं के अनुसार ही नर्धारति करती है। इनमें आराम और पराजय, प्रकाश और अंधकार, संघर्ष और सहायता दोनों साथ-साथ मौजूद होते हैं; संक्षेप में, बंधन और वशिालता। और यह इस बात का संकेत है कि कोई व्यक्ति ईश्वर की मदद से तरक्की कर रहा है।

२४९. वे प्रलोभन जो, ईश्वर की अनुमति से, उन लोगों पर आते हैं जो ईश्वर की भलाई के सामने *'स्वयं को बड़ा मानते हैं'* और अपने *'अहंकार' से* ईश्वर को ठेस पहुँचाते हैं, वे इस प्रकार हैं: लोगों में ववि‍ेक की शक्ति का हटना; मन में भटकते वचिारों का एक बेचैन एहसास, जो उनके अहंकार को तोड़ने के लिए उन्हें दयिा जाता है; चड़िचड़िापन; हर चीज़ को अपनी मर्जी से चलाने की इच्छा; शब्दों पर झगड़ना; दूसरों को डांटना; एक ऐसा दलि जो सभी का तरिस्कार करता है; मन का पूरण भ्रम; ईश्वर के नाम का अपमान; मूर्खतापूरण, हास्यास्पद वचिार, जैसे कि लोग उन्हें अनदेखा कर रहे हों, उनका सम्मान शून्य कर दयिा गया हो; और, गुप्त रूप से और खुले तौर पर, वभिन्नि तरीकों से, वे राक्षसों द्वारा अपमान और दुर्व्यवहार के अधीन होते हैं; अंत में, दुनयिा के साथ मेल-जोल और संगति में रहने की इच्छा, बनिा रुके बात करना और लापरवाह बकवास में शामलि होना, हमेशा खबरें खोजना और यहां तक कि झूठी भवष्यिवाणयिां भी, और अपनी ताकत से कहीं ज्यादा का वादा करना। और ये ही आध्यात्मकि प्रलोभनों का सार हैं। शारीरकि प्रलोभनों में शामलि हैं: दर्दनाक, जटलि, लंबे और इलाज में मुश्कलि दौरे; दुष्ट और अधर्मी लोगों से लगातार सामना; उत्पीड़क के हाथों में पड़ना; अप्रत्याशति ठोकरें और खतरनाक गरिावटें; और स्वयं तथा अपने परविार के लिए वनिाशकारी दुर्भाग्य। यहाँ हमने जो कुछ भी बताया है, वह अहंकार के प्रलोभनों की श्रेणी से संबंधति है। इनकी शुरुआत एक व्यक्ति में तब होती है जब वे अपनी ही नजर में बुद्धमिान दखिने लगते हैं। और वे इन सभी दुर्भाग्यों से गुजरते हैं क्योंकि वे अहंकार के ऐसे वचिारों को आत्मसात करते हैं: आपके पास जतिना अधकि अहंकार होगा, उतना ही अधकि वह आप में समा जाएगा।

२५०. एक और प्रकार का प्रलोभन है - धैर्य की कमी से उत्पन्न होने वाली कायरता। हर कठनि परस्थिति और हर दुख, यदि धैर्य के बनिा सामना कयिा जाए, तो तीव्र पीड़ा की ओर ले जाता है; क्योंकि एक व्यक्ति में धैर्य दुर्भाग्य को दूर करता है, जबकि कायरता पीड़ा की जननी है। धैर्य सांत्वना की जननी है - और एक नशि्चति शक्ति, जो आमतौर पर एक उदार हृदय से उत्पन्न होती है। बनिा दव्यि उपहार के, जो अथक प्रार्थना और आँसू बहाने से प्राप्त होता है, कसिी व्यक्ति के लिए अपनी दुखों में ऐसी शक्ति पाना मुश्कलि है। जब ईश्वर कसिी व्यक्ति को महान दुखों से गुज़ारना पसंद करते हैं, तो वे उसे कायरता की चपेट में आने देते हैं। और इससे नराशा की एक प्रबल शक्ति उत्पन्न होती है, जसिमें वह अपनी आत्मा को कुचला हुआ महसूस करता है - और यह गेहेना (नरक) का पूर्वाभास है; क्योंकि इससे हजारों प्रलोभन उत्पन्न होते हैं: भ्रम, चड़िचड़िाहट, ईश्वरनंदिा, भाग्य के वरिुद्ध शकियतें, वकिृत वचिार, एक देश से दूसरे देश जाना, और इसी तरह की अन्य बातें। इन सबका कारण आपकी अपनी लापरवाही है। आपने स्वयं इस के लिए कोई उपचार खोजने का ध्यान नहीं रखा है। फरि भी, इन सब के लिए केवल एक ही उपचार है: हृदय का वनिम्रता। इसके बनिा, कोई भी इन बुराइयों की बाधा को तोड़ नहीं सकता। जैसे-जैसे वनिम्रता बढ़ती है, वैसे-वैसे वपित्ति में धैर्य भी बढ़ता है; जैसे-जैसे धैर्य बढ़ता है, दुख का बोझ हल्का हो जाता है, और सांत्वना मलिती है; जैसे-जैसे सांत्वना बढ़ती है, वैसे-वैसे ईश्वर के प्रति प्रेम भी बढ़ता है; और जैसे-जैसे प्रेम बढ़ता है, वैसे-वैसे पवत्रि आत्मा का आनंद भी बढ़ता है। ईश्वर अपने सेवकों से प्रलोभन नहीं हटाते, बल्कि उनके वशि्वास और उनकी इच्छा के प्रति समर्पण के कारण उन्हें प्रलोभनों में धैर्य प्रदान करते हैं।

२५१. देह में ईश्वर के अनुसार जयिा गया जीवन शारीरकि कर्मों से मलिकर बनता है – सदाचारी गतविधि के माध्यम से शरीर को वासनाओं से शुद्ध करने के लिए शारीरकि प्रयास। मन के अनुसार जयिा गया जीवन हृदय की बात है, जसि न्याय के सावधानीपूर्वक वचिार के साथ, साथ ही हृदय की नरिंतर प्रार्थना, ईश्वर की व्यवस्था और देखभाल पर चंतिन के साथ, नजिी और सामान्य दोनों रूपों में, अवरिाम रूप से कयिा जाता है, जैसा कि पूरे संसार में देखा जाता है, और छपि हुए जुनून से खुद को बचाना, ताकि आंतरकि और आध्यात्मकि क्षेत्र में कोई भी जुनूनी चीज़ न मलि।

252. बपतस्मिा के बाद लोगों को अनुग्रह पर अनुग्रह के रूप में पश्चाताप दयिा जाता है; क्योंकि पश्चाताप ईश्वर से दूसरा जन्म है। पश्चाताप दया का द्वार है; इस द्वार के माध्यम से हम ईश्वर की दया में प्रवेश करते हैं, और इस प्रवेश के अलावा कोई दया नहीं पा सकता। पश्चाताप दूसरी अनुग्रह है, और यह वशि्वास और भय से

उत्पन्न होती है; हालाँकि, भय एक पितृत्व की लाठी है जो हमें आशीर्वादों के आध्यात्मिक स्वर्ग को प्राप्त करने तक नियंत्रित करती है: जिसके बाद यह हमसे दूर हो जाती है। स्वर्ग परमेश्वर का प्रेम है, जिसमें सभी आनंद का आनंद निहित है। जीवन का वृक्ष ईश्वर का प्रेम है, जिससे आदम दूर हो गया; और तब से उसे कोई आनंद नहीं मिला; बल्कि वह काँटों के देश में परिश्रम और मेहनत करता रहा। ईश्वर के प्रेम से वंचित लोग, यदि धार्मिकता में चलते हैं, तो अपनी मेहनत की कमाई की रोटी खाते हैं, जो उसके पतन के बाद पहले मनुष्य के लिए निर्धारित की गई थी। जो प्रेम में जीता है, वह परमेश्वर से जीवन का फल उत्पन्न करता है, और इसी संसार में भी वह पुनरुत्थान की हवा में साँस लेता है। प्रेम ही राज्य है; इसके विषय में प्रभु ने रहस्यमयी ढंग से प्रेरितों से वादा किया था कि वे उनके राज्य में इसका स्वाद चखेंगे। क्योंकि कहा गया है: *'तुम मेरी राजगृह की मेज़ पर खाओगे और पियोगे* (लूका 22:30)—इसका प्रेम के अलावा और क्या अर्थ हो सकता है?—देखो, *'वह दाखमधु जो मनुष्य के हृदय को आनन्दित करता है'* (भजन संहिता 103:15)। धन्य है वह जो इस दाखमधु को पीता है!

253. जैसे जहाज़ या नाव के बिना बड़े समुद्र को पार करना असंभव है, वैसे ही कोई भी भय के बिना प्रेम को प्राप्त नहीं कर सकता। हम अपने और मन के स्वर्ग के बीच के इस दूषित समुद्र को केवल पश्चाताप की नाव में ही पार कर सकते हैं, जिसे भय के नौकर चलाते हैं। लेकिन यदि भय के नौकर उस पश्चाताप के जहाज़ को नहीं चलाते, जिस पर हम इस संसार के सागर को पार करके ईश्वर तक की यात्रा करते हैं, तो हम इस कलुषित सागर में डूब जाएँगे। पश्चाताप जहाज़ है, भय उसका नाविक है, और प्रेम दिव्य बंदरगाह है। भय हमें पश्चाताप के जहाज़ पर चढ़ाता है, जीवन के दूषित सागर को पार कराता है, और हमें दिव्य बंदरगाह, यानी प्रेम तक, ले जाता है। जो भी परिश्रम करते हैं और बोझिल हैं, वे पश्चाताप के माध्यम से इस बंदरगाह पर आते हैं। और जब हम प्रेम को प्राप्त कर लेते हैं, तो हम ईश्वर को प्राप्त कर लेते हैं, और हमारी यात्रा पूरी हो जाती है, और हम आने वाले संसार के द्वीप पर आ जाते हैं, जहाँ पिता, पुत्र और पवित्र आत्मा निवास करते हैं।

254. एक ज्ञान है जो विश्वास से पहले होता है, और एक ज्ञान है जो विश्वास से उत्पन्न होता है। विश्वास से पहले का ज्ञान प्राकृतिक ज्ञान है, जबकि विश्वास से उत्पन्न होने वाला ज्ञान आध्यात्मिक ज्ञान है। प्राकृतिक ज्ञान अच्छाई को बुराई से अलग करता है, और इसे प्राकृतिक विवेक कहा जाता है, जिसके द्वारा हम स्वाभाविक रूप से, बिना सीखे, अच्छाई को बुराई से पहचानते हैं। ईश्वर ने इस विवेक को तर्कसंगत स्वभाव में स्थापित किया है; जबकि, सीखने की सहायता से, यह संवर्धित और समृद्ध होता है। ऐसा कोई भी मानव नहीं है जिसके पास यह नहीं है। यह तर्कशील आत्मा के भीतर प्राकृतिक ज्ञान की शक्ति है, एक ऐसी शक्ति जो उसमें निरंतर सक्रिय रहती है। तर्कशील स्वभाव का सम्मान उस विवेक में निहित है जो भलाई को बुराई से अलग करता है, और पैगंबर ने सही कहा है कि जिन्होंने इसे खो दिया है, वे मूर्ख जानवरों के समान हैं (भजन संहिता 48:13)।

255. प्राकृतिक अंतर्ज्ञान, जो विश्वास से पहले आता है, विश्वास और ईश्वर का मार्ग है। ईश्वर द्वारा हमारी प्रकृति में स्थापित होने के कारण, यह स्वयं हमें विश्वास दिलाता है कि हमें उस ईश्वर पर विश्वास करना चाहिए, जिसने सभी चीजों को अस्तित्व में लाया। यह विश्वास हमारे भीतर भय उत्पन्न करता है; और यह भय हमें पश्चाताप और अच्छे कार्यों के लिए प्रेरित करता है; क्योंकि अच्छे कार्यों के माध्यम से ही किसी व्यक्ति को आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि, या रहस्यों की अनुभूति प्राप्त होती है, जो सच्चे चिंतन के विश्वास को जन्म देती है। आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि केवल विश्वास से ही उत्पन्न नहीं होती; लेकिन विश्वास ईश्वर के भय को जन्म देता है, और ईश्वर के इस भय के माध्यम से, जब हम उसके अनुसार कार्य करना शुरू करते हैं, तो इस भय की क्रिया से आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि का जन्म होता है, जैसा कि संत क्रिसोस्टोम ने कहा: 'जब कोई व्यक्ति ईश्वर के भय के अनुरूप इच्छा और एक सही सोच का तरीका प्राप्त कर लेता है, तो उसे जल्द ही छिपी हुई चीजों का प्रकटीकरण प्राप्त होता है।' 'छिपी हुई चीजों के प्रकटीकरण' से उनका तात्पर्य आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि से है।

256. फिर भी यह ईश्वर का भय नहीं है जो इस आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि को जन्म देता है; बल्कि, यह अंतर्दृष्टि ईश्वर के भय का अभ्यास करने के लिए एक उपहार के रूप में प्रदान की जाती है। ईश्वर के भय का अभ्यास पश्चाताप है; और पश्चाताप, अपना पूरा चक्र पूरा करके समाप्त होने पर, उस स्थान पर ले जाता है जहाँ आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि प्रदान की जाती है। आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि छिपी हुई चीज़ों का बोध है। और जब कोई इस अदृश्य वास्तविकता का बोध करता है, तो उस बोध के भीतर एक अलग तरह का विश्वास जन्म लेता है—जो पहले विश्वास के विपरीत नहीं है, बल्कि उस विश्वास की पुष्टि करता है। इसे चिंतनशील विश्वास कहा जाता है। तब तक सुनना था; अब चिंतन है, और चिंतन सुनने से अधिक निश्चित है।

२५७. यह सब उस स्वाभाविक ज्ञान से उत्पन्न होता है जो भले और बुरे में अंतर करता है। यह सद्गुण का अच्छा बीज है। एक व्यक्ति के भीतर इस प्राकृतिक ज्ञान के बाद आता है – अंतरात्मा का निरंतर कचोटना, – मृत्यु

की अविराम स्मृति और एक निश्चित पीड़ादायक चिंता जो जीवन के अंत तक बनी रहती है, – और इसके बाद, शोक, निराशा, ईश्वर का भय, स्वाभाविक संकोच, – अपने अतीत के पापों पर शोक, उचित परिश्रम, सामान्य मार्ग की स्मृति, उसके लिए स्वयं को तैयार करने की चिंता, – इन द्वारों से सुगमता से गुजरने के लिए ईश्वर से आँसुओं भरी विनती, जिनसे होकर हर प्राणी को जाना पड़ता है, – संसार के प्रतितिरस्कार और सद्गुण के लिए एक तीव्र संघर्ष। यह सब प्राकृतिक ज्ञान के माध्यम से प्राप्त होता है – और हर किसी को अपने कर्मों की तुलना इससे करनी चाहिए। जब यह स्पष्ट हो जाता है कि किसी व्यक्ति ने इसे प्राप्त कर लिया है, तो इसका मतलब है कि वे प्राकृतिक मार्ग का अनुसरण कर रहे हैं; और जब वे इससे परे उठकर प्रेम में प्रवेश करते हैं, तो वे प्रकृति से ऊपर उठ जाते हैं – और उनके लिए, हर चीज़ में संघर्ष, भय, परिश्रम और थकान समाप्त हो जाती है। प्राकृतिक ज्ञान के यही परिणाम हैं। – और हम यह अपने भीतर तब पाते हैं जब हम अपनी आत्म-तुष्ट इच्छा से इस समझ को धुंधला नहीं करते। – और हम इस चरण में तब तक बने रहते हैं जब तक हम प्रेम को प्राप्त नहीं कर लेते, जो हमें इन सब से मुक्त कर देता है। हम सब ने जो कुछ भी कहा है, उसके आधार पर हर कोई स्वयं की परीक्षा करे और जांच करे कि उसका मार्ग कहाँ है: चाहे वह अस्वाभाविक में हो, या स्वाभाविक में, या अलौकिक में।

२५८. एक अच्छा विचार केवल दैवी कृपा से ही हृदय में जड़ जमाता है; एक दुष्ट विचार केवल प्रलोभन और परीक्षा के लिए ही व्यक्ति के पास आता है। जिस व्यक्ति ने अपनी कमजोरी की सीमा को पहचान लिया है, उसने नम्रता की पूर्णता प्राप्त कर ली है। ईश्वर के उपहार हृदय को आकर्षित करते हैं, और उसे अखंड कृतज्ञता के लिए प्रेरित करते हैं। प्रभु सभी मानवीय कमजोरियों को सहन करते हैं, फिर भी वह हमेशा बड़बड़ाने वाले व्यक्ति को बर्दाश्त नहीं करते, और न ही उसे बिना सुधार के छोड़ते हैं। विनम्रता अनुग्रह से पहले आती है; और घमंड दंड से पहले आता है। घमंडी लोग ईश्वर-निंदा में गिरने के लिए छोड़ दिए जाते हैं; जो लोग अपने सक्रिय सद्गुणों का घमंड करते हैं, उन्हें व्यभिचार में गिरने के लिए छोड़ दिया जाता है; और जो लोग अपनी बुद्धि का घमंड करते हैं, उन्हें अज्ञानता के अंधेरे जालों में गिरने के लिए छोड़ दिया जाता है।

२५९. जो कोई, ईश्वर का स्मरण करते हुए, प्रत्येक व्यक्ति का सम्मान करता है, वह व्यक्ति, ईश्वर की गुप्त व्यवस्था द्वारा, प्रत्येक व्यक्ति से सहायता प्राप्त करता है। जो अन्याय के खिलाफ खड़ा होता है, उसे ईश्वर अपना रक्षक मिलता है; जो अपने पड़ोसी की मदद के लिए हाथ बढ़ाता है, उसे स्वयं की सहायता के लिए ईश्वर की शक्ति मिलती है। जो अपने भाई पर उसके दोष का आरोप लगाता है, उसे ईश्वर स्वयं अभियोजक के रूप में मिलता है। जो कोई अपने भाई को निजी तौर पर सुधारता है, वह अपनी ही बुराई को दूर करता है; लेकिन जो कोई किसी पर किसी सभा के सामने आरोप लगाता है, वह अपने ही घावों का दर्द बढ़ाता है। एक दोस्त जो गुप्त रूप से फटकारता है, वह एक बुद्धिमान चिकित्सक है, लेकिन जो कई लोगों की मौजूदगी में ठीक करता है, वह एक अपमान करने वाला है।

260. ईश्वर प्रेम से उपदेश देते हैं, और प्रतिशोध नहीं लेते (ईश्वर न करे)! वह केवल अपनी प्रतिमा को चंगा करना चाहते हैं, और उनमें कोई क्रोध नहीं रहता। जो कोई पुरस्कार के लिए अच्छा करता है, वह जल्द ही बदल जाएगा। भले ही कोई व्यक्ति इस जीवन में ईश्वर की ओर अपने प्रयास में स्वयं को कितना भी परिपूर्ण कर ले, सब कुछ ईश्वर से परे ही रहता है; परन्तु आने वाले युग में, ईश्वर उन्हें अपना मुख दिखाता है – यद्यपि ठीक वैसे नहीं जैसे वह है। यहाँ धर्मात्मा ईश्वर के चिंतन में जितनी भी गहराई तक प्रवेश कर लें, वे केवल एक दर्पण की तरह प्रतिबिंब ही देखते हैं, जबकि वहाँ वे सत्य के साक्षात्कार को देखते हैं।

261. सूखी लकड़ी में लगी आग को बुझाना मुश्किल है: और यदि ईश्वर की ऊष्मा संसार का त्याग करने वाले के हृदय पर पड़ती है, तो उसकी ज्वाला बुझती नहीं है – और वह आग से भी अधिक प्रचंड रूप से जलती है। जब पाप की शक्ति अंगों में प्रवेश करती है, तो मन सभी संयम भूल जाता है: और ईश्वर का स्मरण, जब यह आत्मा के चरागाह पर अधिकार कर लेता है, तो हृदय से दृश्यमान संसार की सभी स्मृतियों को मिटा देता है। इस संसार में आने वाले युग का अनुभव समुद्र में एक छोटे से द्वीप के समान है; और जो इसके समीप आता है, वह इस युग के दृश्यों की लहरों से अब और नहीं उछाला जाता। एक भिक्षु, जब तक वह इस जीवन में और अधिक परिश्रम करने की आवश्यकता महसूस करता है, तब तक वह शरीर से वियोग के विचार से दुखी होता है; लेकिन जब वह अपनी आत्मा में महसूस करता है कि उसने अपने समय का भरपूर उपयोग किया है और अपना वचन प्राप्त कर लिया है, तो वह आने वाले युग के लिए तरसता है। जब एक व्यापारी समुद्र में होता है, तो भय उसके पूरे अस्तित्व पर हावी हो जाता है, कि कहीं लहरें उसके विरुद्ध न उठ जाएँ और उसके उद्यम की आशा डूब न जाए; और जब एक भिक्षु संसार में होता है, तो भय उसके जीवन पर हावी हो जाता है, कि कहीं उसके भीतर एक तूफान न उठ जाए और उसका कर्म—जिसके लिए उसने अपनी जवानी से लेकर अपनी वृद्धावस्था तक परिश्रम किया है—नष्ट न हो जाए।

262. एक नाविक, समुद्र पार करते समय, तारों को निहारता है और उनसे अपने जहाज को उस बंदरगाह तक पहुँचाता है जहाँ वह जाना चाहता है; और एक भिक्षु प्रार्थना में निहारता है, क्योंकि वही उसे सही मार्ग पर रखती है और उसकी यात्रा को उस बंदरगाह की ओर निर्देशित करती है जिसकी ओर उसका जीवन हर क्षण की प्रार्थना में निर्देशित होता है। एक तैराक कपड़े उतारकर मोती खोजने के लिए समुद्र में कूदता है; और एक भिक्षु, सभी सांसारिक चीजों को त्यागकर, अपने भीतर मोती—यीशु मसीह—को खोजने के लिए अपना जीवन व्यतीत करता है, और जब वह उन्हें पा लेता है, तो वह उनसे अलग किसी और चीज़ की खोज नहीं करता।

263. एक कन्या के लिए सार्वजनिक सभाओं और भीड़-भाड़ में रहना हानिकारक है, और एक भिक्षु के मन का कई लोगों से बातचीत में होना भी। एक पक्षी, चाहे वह कहीं भी हो, अपने घोंसले के लिए प्रयास करता है ताकि वह अपने बच्चों को वहीं पाल सके; और एक विवेकी भिक्षु जीवन का फल अपने भीतर प्रकट करने के लिए अपने स्थान पर शीघ्रता से जाता है। बादल सूर्य को ढक लेते हैं; और अत्यधिक बातचीतों से वह आत्मा अंधकारमय हो जाती है जो प्रार्थनापूर्ण मनन से प्रकाशित होने लगी है। साइरन नामक एक पक्षी के बारे में कहा जाता है कि जो कोई भी उसकी मधुर आवाज़ सुनता है, वह इतना मोहित हो जाता है कि, रेगिस्तान में उसका पीछा करते हुए, वे उसके गीत की मिठास के कारण अपना जीवन ही भूल जाते हैं, और गिरकर मर जाते हैं। आत्मा के साथ भी ऐसा ही है। जब दिव्य मधुरता उस पर उतरती है, तो ईश्वर के वचनों की मधुर ध्वनि से प्रेरित होकर, जो मन में गहराई से अंकित हैं, वह पूरी तरह से उनके पीछे खिंच जाती है, ताकि वह अपने शारीरिक जीवन को भूल जाती है; और शरीर अपनी इच्छाओं से रहित हो जाता है, जबकि आत्मा इस जीवन से ऊपर उठकर ईश्वर तक पहुँच जाती है।

264. एक पेड़, जब तक वह पहले अपने पुराने पत्ते नहीं गिरा देता, तब तक वह नई टहनियाँ नहीं निकालता; और एक भिक्षु, जब तक वह अपने हृदय से अपने पिछले कर्मों की सारी स्मृति को नहीं मिटा देता, तब तक वह मसीह यीशु में नए फल और टहनियाँ नहीं लाता। जिस सीप में मोती बनता है, उसमें कहा जाता है कि बिजली से एक प्रकार की चिंगारी उत्पन्न होती है, और वह हवा से पोषण ग्रहण करती है; तब तक, वह केवल मांस ही रहता है: और एक भिक्षु का हृदय, जब तक वह मन के माध्यम से दिव्य पोषण ग्रहण नहीं करता, उसका कार्य कुछ साधारण होता है, और वह अपने खोल के भीतर सांत्वना के फल को नहीं पालता। एक कुत्ता जो अपनी ही नथुनों को चाटता है, वह अपना ही खून पीता है, और अपने ही खून की मिठास के कारण, उसे उस नुकसान का एहसास नहीं होता जो वह खुद को पहुँचा रहा है; और एक भिक्षु जो व्यर्थता में मग्न रहने का आदी है, वह अपना ही जीवन पीता है, और एक पल के लिए महसूस हुई मिठास के कारण, वह उस नुकसान से अनजान रहता है जो वह खुद को पहुँचा रहा है।

265. पवित्र शास्त्रों में निहित संस्कारों के शब्दों के पास प्रार्थना के बिना और ईश्वर की सहायता मांगे बिना न जाएं, बल्कि कहें: 'हे प्रभु, मुझे उसमें निहित शक्ति का अनुभव प्राप्त करने का वरदान दें'। प्रार्थना को पवित्र धर्मग्रंथों में कही गई बातों के सच्चे अर्थ की कुंजी मानें। जब आप अपने हृदय से ईश्वर के समीप आना चाहें, तो पहले शारीरिक श्रम के माध्यम से उनके प्रति अपना प्रेम साबित करें। इनमें ही जीवन की शुरुआत निहित है – और प्रभु ने इन्हें पूर्णता की नींव के रूप में स्थापित किया है। आलस्य को आत्मा के अंधकार की शुरुआत समझो; और जैसे एक अंधकार दूसरे को जन्म देता है, वैसे ही बातचीत के लिए होने वाली सभाएँ भी। यदि उपयोगी बातें भी, जब अनियंत्रित हों, तो अंधकार की ओर ले जाती हैं, तो व्यर्थ की बातें तो और भी अधिक ले जाती हैं। आत्मा लंबी-लंबी बातचीत की भीड़ से तुच्छ हो जाती है।

266. जीवन-शैली में संयम और स्थापित नियम मन को प्रबुद्ध करते हैं और भ्रम को रोकते हैं। अव्यवस्था (स्थिर नियमों की कमी) से उत्पन्न मन का भ्रम आत्मा में अंधकार लाता है, और यह अंधकार बदले में और अधिक भ्रम को जन्म देता है। मन की शांति अच्छे व्यवस्था का परिणाम है, और शांति से प्रकाश उत्पन्न होता है; और प्रकाश व शांति से, मन में शुद्ध वायु दमकती है।

267. स्वार्थी आत्मा ज्ञान से वंचित रहती है, जबकि दयालु आत्मा को आत्मा द्वारा बुद्धिमान बनाया जाएगा। दिव्य उपहारों तक हृदय की पहुँच की कुंजी अपने पड़ोसी से प्रेम के माध्यम से दी जाती है, और जैसे-जैसे हृदय शरीर के बंधनों से मुक्त होता है, वैसे ही उसके सामने ज्ञान का द्वार भी खुलता है। अपने पड़ोसी से प्रेम कितना सुंदर और प्रशंसनीय है, बशर्ते कि उससे जुड़ी देखभाल हमें ईश्वर के प्रेम से विचलित न करे!

268. हमारे आध्यात्मिक भाइयों के साथ संवाद कितना सुखद है, बशर्ते कि हम ऐसा करते हुए ईश्वर के साथ अपनी सहभागिता बनाए रख सकें! यह अच्छा है कि हम अपने आध्यात्मिक भाइयों से बातचीत करें, बशर्ते कि संयम बरता जाए, यानी, बशर्ते कि इस बहाने हम अपने आंतरिक कार्य और जीवन शैली, और ईश्वर के साथ अपने अटूट मिलन को न खो दें। दूसरी बात पहले वाली के आरंभ में ही बाधित हो जाती है; क्योंकि मन एक साथ दो वार्तालापों को बनाए रखने के लिए पर्याप्त नहीं है। आध्यात्मिक भाइयों के साथ अत्यधिक बातचीत भी हानिकारक हो सकती है;

और जहाँ तक सांसारिक लोगों का सवाल है, उन्हें दूर से देखना भी हानिकारक है; वास्तव में, उन्हें देखे बिना भी, केवल उनकी आवाज़ की ध्वनि ही हृदय की शांति को भंग करने के लिए पर्याप्त है।

२६९. जैसे आत्मा स्वभाव से शरीर से श्रेष्ठ है, वैसे ही आध्यात्मिक शरीर भी भौतिक शरीर से श्रेष्ठ है। लेकिन जैसे शरीर का निर्माण मूल रूप से उसमें प्राण फूँकने से पहले हुआ था, वैसे ही शारीरिक कर्म भी आध्यात्मिक कर्मों से पहले होते हैं। और बिना चूके बनाए जाने वाला जीवन ही महान शक्ति का निर्माण नहीं करता। एक बूँद, जो लगातार गिरती रहे, सबसे कठोर पत्थर को भी घिस डालती है। जब आपके भीतर के आध्यात्मिक पुरुष के जागने का समय निकट आता है, तो आपके प्राणों में आनंद जग उठता है, और आपके विचार आपके हृदय में निवास करने वाली मधुरता से आच्छादित हो जाते हैं। लेकिन जब संसार एक बार फिर आपके भीतर उठने का प्रयास करता है, तो आपके भीतर विचारों का उथल-पुथल बढ़ जाता है। 'संसार' से मेरा तात्पर्य उन वासनाओं से है जो मन के उथल-पुथल से उत्पन्न होती हैं। जब वे जन्म लेती हैं और परिपक्व हो जाती हैं, तो वे पाप बन जाती हैं और व्यक्ति को मार डालती हैं। जिस प्रकार बच्चे बिना माँ के नहीं जन्मते, उसी प्रकार वासनाएँ मन की उड़ान के बिना नहीं जन्मतीं, और पाप का संपादन वासनाओं के साथ संवाद के बिना नहीं होता।

270. यदि हमारे आत्माओं में धैर्य बढ़ता है, तो यह इस बात का संकेत है कि हमें गुप्त रूप से सांत्वना की कृपा प्राप्त हुई है। जब आत्मा अपनी आशा के आनंद और ईश्वर की प्रसन्नता में मग्न हो जाती है, तो शरीर को कोई दुख महसूस नहीं होता, भले ही वह दुर्बल हो। तब वह बिना अपनी शक्ति में किसी कमी के दिखाए, एक दोहरा बोझ उठाने में सक्षम हो जाता है। ऐसा ही तब होता है जब आत्मा उस आध्यात्मिक आनंद में प्रवेश करती है। यदि आप अपनी जीभ पर काबू रखें, तो ईश्वर आपको हार्दिक कोमलता की कृपा प्रदान करेंगे, ताकि आप उसी में अपनी आत्मा को देख सकें, और इस प्रकार आध्यात्मिक आनंद में प्रवेश कर सकें। जिस हद तक कोई व्यक्ति ईश्वर के लिए परिश्रम करता है, उसी हद तक उसके हृदय को अपनी प्रार्थना में साहस प्राप्त होता है; और जिस हद तक कोई व्यक्ति अनेक बातों से विचलित रहता है, उसी हद तक वह ईश्वर की सहायता से वंचित रहता है।

271. *पहला विचार* जो मानवजाति के प्रति ईश्वर के प्रेम से एक व्यक्ति में प्रवेश करता है और आत्मा को जीवन की ओर मार्गदर्शन करता है, *वही विचार है जो इस प्रकृति के भाग्य के संबंध में हृदय* में जड़ें जमाता है। इस विचार के स्वाभाविक परिणामस्वरूप संसार के प्रति उपेक्षा उत्पन्न होती है; और यही किसी व्यक्ति में जीवन की ओर ले जाने वाले प्रत्येक शुभ प्रवृत्ति की शुरुआत का संकेत है। यही दिव्य शक्ति है, जो व्यक्ति के साथ रहती है, और जब वह उनके भीतर जीवन को प्रकट करना चाहती है, तो इसकी नींव रखती है। – और यदि कोई व्यक्ति सांसारिक चिंताओं और व्यर्थ की बातों द्वारा हमारे द्वारा बताए गए इस विचार को अपने भीतर समाप्त नहीं करता है, बल्कि इसे चुपचाप पोषित करता है, ध्यान में इस पर मनन करता है, और स्वयं को इसके लिए समर्पित कर देता है; तो यह उसे एक ऐसे गहन ध्यान की ओर ले जाएगा जिसका वर्णन कोई भी शब्दों में नहीं कर सकता। शैतान इस विचार से नफरत करता है, और मनुष्य से इसे मिटाने के लिए अपनी पूरी ताकत से उस पर हमला करता है। और अगर संभव होता, तो वह ध्यान भटकाकर किसी व्यक्ति के मन से ऐसे विचार को मिटाने के लिए उसे पूरी दुनिया का साम्राज्य भी दे देता। क्योंकि वह धूर्त जानता है कि यदि यह विचार किसी व्यक्ति में बस जाए, तो उसका मन इस भ्रम की पृथ्वी पर नहीं रहता, और उसकी युक्तियाँ उसके पास नहीं आ सकतीं।

272. *इसके बाद एक और मार्ग* शुरू होता है, जब कोई व्यक्ति एक अच्छा जीवन जीता है और उस पर चिंतन करने तथा उसका अभ्यास करने के अनुभव के करीब आता है, जब उसे ऊपर से *'आध्यात्मिक ज्ञान की मिठास का स्वाद चखने की कृपा'* प्राप्त होती है। इस प्रक्रिया की शुरुआत इस प्रकार होती है: सबसे पहले, एक व्यक्ति को मानवता के प्रति ईश्वर की व्यवस्था का आश्वासन मिलता है, वह सृष्टिकर्ता के प्रेम से प्रबुद्ध होता है, और साथ ही तर्कशील प्राणियों के क्रम और उनके प्रति ईश्वर की महान देखभाल पर आश्चर्य से भर जाता है। यहीं से, उसके भीतर ईश्वर की मधुरता और ईश्वर के प्रति प्रेम की ज्वाला प्रज्वलित होती है, जो उसके हृदय में भड़कती है और आत्मा तथा शरीर दोनों की कामनाओं को भस्म कर देती है। यह प्रेम, दृढ़ परिश्रम और एक स्पष्ट अंतरात्मा के साथ, फिर अचानक प्रज्वलित होने लगता है - और एक व्यक्ति इससे, जैसे शराब से, मदहोश हो जाता है, और उसका हृदय ईश्वर के वश में हो जाता है। जिस हद तक कोई व्यक्ति सदाचारी जीवन, आत्म-अनुशासन, और पढ़ने तथा प्रार्थना में समय बिताने का प्रयास करता है, उसी हद तक यह शक्ति उसके भीतर स्थापित और मजबूत होती है।

273. जब हम खुद को अंधकार की स्थिति में पाएं तो हमें निराश न हों। मैं उस विशेष अंधकार का उल्लेख कर रहा हूँ जिसमें, कभी-कभी, आत्मा तरपती है, मानो लहरों के बीच हो; और चाहे कोई व्यक्ति धर्मग्रंथ पढ़े या सेवा करे, वे जिस भी कार्य को हाथ में लेते हैं, अंधकार ही अंधकार का पीछा करता है। ऐसा व्यक्ति कार्य को छोड़ देता है, और

अक्सर उसे उसके पास जाने की भी अनुमति नहीं मिलती। यह घंटा निराशा और भय से भरा होता है; परमेश्वर में आशा और उस पर विश्वास का आराम आत्मा द्वारा पूरी तरह से त्याग दिया जाता है – और पूरी आत्मा संदेह और भय से पूरी तरह भर जाती है। लेकिन ईश्वर आत्मा को ऐसी अवस्था में अधिक समय तक नहीं छोड़ते; बल्कि वे शीघ्र ही एक रास्ता निकालते हैं (1 कुरिन्थियों 10:13)। और मैं आपको इस बात की ओर इंगित करूँगा और कुछ सलाह दूँगा: यदि आपके पास खुद को नियंत्रित करने की शक्ति नहीं है और आप प्रार्थना में अपने मुँह के बल गिर पड़ते हैं; तो अपने सिर पर एक चादर ओढ़ लो और तब तक सो जाओ जब तक यह अंधकार का समय तुम पर से बीत न जाए, लेकिन अपनी कोठरी से बाहर मत निकलो। जो चिंतनशील जीवन जीना चाहते हैं, और जो अपनी यात्रा में विश्वास के आराम की तलाश करते हैं, वे इस प्रलोभन के प्रति सबसे अधिक संवेदनशील होते हैं। इसलिए, यह समय उन्हें सबसे अधिक मन की चंचलता से पीड़ित और थका देता है; और इसके बाद अक्सर ईश्वरनिंदा होती है, जबकि कभी-कभी व्यक्ति पर पुनरुत्थान के बारे में संदेह और अन्य ऐसी बातों का आक्रमण होता है जिनके बारे में हमें बात नहीं करनी चाहिए। शारीरिक श्रम में लगे लोग इन प्रलोभनों से पूरी तरह मुक्त होते हैं। उन्हें एक अलग तरह की निराशा होती है, जो सभी को ज्ञात है, और जो इन और इसी तरह के प्रलोभनों से अपनी प्रकृति में भिन्न होती है। धन्य है वह जो द्वार के बाहर कदम रखे बिना इस पर सहन करता है। हालाँकि, यह संघर्ष एक ही घंटे में समाप्त नहीं होता है; न ही अनुग्रह अचानक लौटता है और आत्मा में जड़ जमाता है, बल्कि धीरे-धीरे। और एक दूसरे के लिए रास्ता देता है: कभी प्रलोभन, और कभी सांत्वना।

274. अनुचित ईर्ष्या से ग्रस्त व्यक्ति कभी भी मानसिक शांति प्राप्त नहीं करता; और जो उस शांति से अपरिचित है, वह आनंद से भी अपरिचित है। यदि मानसिक शांति को पूर्ण स्वास्थ्य कहा जाए, और अनुचित ईर्ष्या उस शांति के विपरीत है, तो इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि जो कोई भी दुर्भावनापूर्ण ईर्ष्या पालता है, वह पहले से ही एक गंभीर बीमारी से पीड़ित है। प्रकट शारीरिक मामलों में कमजोरी और असहायता के कारण उत्पन्न ईर्ष्यापूर्ण दुख से भरा हृदय, इन सभी शारीरिक मामलों की जगह ले लेता है। मन के दुख के बिना शारीरिक मामले आत्मा के बिना शरीर के समान हैं। जो मन में दुखी होता है और अपनी वासनाओं को पूरी छूट दे देता है, वह उस व्यक्ति के समान है जो शारीरिक रूप से पीड़ित हो, और जिसका मुँह उसके लिए हानिकारक किसी भी भोजन के लिए खुला हो, या उस व्यक्ति के समान है जिसके एकमात्र पुत्र हो - और जो, धीरे-धीरे, उसे अपने ही हाथों मार डालता है।

275. एक ही घर में एक मादा शेर और एक भेड़ की तरह हैं: एक स्त्री के साथ संभोग और संवाद। ईश्वर के समक्ष दया रहित कर्म उस मनुष्य के समान हैं जो अपने पिता के सामने अपने पुत्र का वध करता है। जैसे समुद्र में फेंकी गई एक मुट्ठी रेत तुच्छ होती है, वैसे ही ईश्वर की व्यवस्था और दया की तुलना में सभी प्राणियों के पाप तुच्छ हैं। और जैसे पानी से परिपूर्ण एक झरना एक मुट्ठी धूल से नहीं भरता, वैसे ही सृष्टिकर्ता की दया अपनी प्राणियों के दुराचारों से परास्त नहीं होती। बदला लेना और प्रार्थना करना समुद्र में बीज बोने और फसल की उम्मीद करने जैसा है। जैसे आग की लपट अपने आप ऊपर उठती है, वैसे ही दयालु लोगों की प्रार्थनाएँ स्वर्ग तक पहुँचती हैं। जैसे पानी ढलान से नीचे बहता है, वैसे ही जब चिड़चिड़ाहट हमारे दिलों में प्रवेश कर लेती है तो उसकी शक्ति भी बह निकलती है।

276. एक ईश्वर के भय से उत्पन्न विनम्रता होती है, एक ईश्वर के प्रेम से उत्पन्न विनम्रता होती है, और एक आनंद से उत्पन्न विनम्रता होती है। जो ईश्वर के भय से विनम्र है, उसके साथ हर समय उसके सभी अंगों में संकोच, इंद्रियों का संयम, और एक पश्चात्तापी हृदय रहता है। नम्र लोगों का संगम परमेश्वर को प्रिय है, जैसे सेराफिम का मंडली। एक पवित्र शरीर परमेश्वर के सामने शुद्ध बलिदान से भी अधिक कीमती है। ये दो गुण—नम्रता और पवित्रता—आत्मा में पवित्र त्रिमूर्ति के लिए सगाई का वचन तैयार करते हैं।

277. अपने अंतर्मन पर नज़र रखें, लेकिन वैसे नहीं जैसे आप अपनी दृष्टि पर रखते हैं; क्योंकि आंतरिक संघर्ष, निस्संदेह, बाहरी संघर्ष से निपटना आसान है। भाई, यह न सोचें कि शरीर को एक अच्छे और सुव्यवस्थित अवस्था में लाए बिना आंतरिक विचारों को रोका जा सकता है। दुश्मनों से ज़्यादा आदतों से डरो। जो व्यक्ति अपने भीतर किसी आदत को पालता है, वह उस व्यक्ति की तरह है जो आग में घी डालता है। अगर कोई आदत एक बार कुछ माँगती है, और उसकी माँग पूरी नहीं होती है, तो अगली बार आपको वह कमज़ोर लगेगी। लेकिन अगर आप एक बार उसकी इच्छा के आगे झुक जाते हैं, तो दूसरी बार वह आप पर कहीं ज़्यादा ज़ोर से हमला करेगी।

278. ऐसे किसी से दोस्ती न करें जिसे हँसना और दूसरों के सामने दिखावा करना पसंद हो; अन्यथा, वे आपको आलस्य में लिप्त होने की आदत सिखा देंगे। जब कोई आपकी उपस्थिति में अपने भाई के बारे में बुरा बोलना शुरू करे, तो अपनी नज़रें नीचे कर लें। ऐसा करते ही, आप ईश्वर के सामने और उनके सामने दोनों ही जगह खुद को समझदार साबित करेंगे। यदि आप किसी ज़रूरतमंद को कुछ देते हैं, तो अपने उपहार से पहले अपने चेहरे पर प्रसन्नता लाएँ, और

एक दयालु शब्द से उसके दुख को दूर करें। जब आप ऐसा करते हैं, तो आपकी दयालुता उसके मन में आपके किसी ऐसे उपहार से भी अधिक कीमती होगी जो उसकी ज़रूरतों से भी बढ़कर हो। अपने सभी कर्मों में, शारीरिक संयम और निर्मल अंतरात्मा को पहले रखें; क्योंकि उनके बिना, हर कर्म ईश्वर के सामने व्यर्थ है।

279. वे तुम्हारा उत्पीड़न करें, पर तुम बदले में उनका उत्पीड़न न करना; वे तुम्हें सूली पर चढ़ाएँ, पर तुम बदले में उन्हें सूली पर न चढ़ाना; वे तुम्हारा अन्याय करें, पर तुम बदले में उनका अन्याय न करना; वे तुम्हारी बदनामी करें, पर तुम बदले में उनकी बदनामी न करना। अदालत में जाना मसीही जीवन का मार्ग नहीं है; मसीह की शिक्षा में इसका कोई संकेत भी नहीं है। जो आनन्द मनाते हैं उनके साथ आनन्द मनाओ, और जो दुख करते हैं उनके साथ दुख करो; क्योंकि यह पवित्रता का चिह्न है। दुखितों के साथ दुख करो; पापियों के लिए आँसू बहाओ; जो पश्चाताप करते हैं उनके साथ आनन्द मनाओ। सभी लोगों के प्रति मैत्रीपूर्ण रहो, फिर भी अपने विचारों में अकेले रहो।

280. किसी की निंदा या अपमान न करो, यहाँ तक कि उन लोगों का भी नहीं जो सबसे दयनीय जीवन जीते हैं। अपने वस्त्र उस पर फैला दो जो गिर गया है और उसे ढक दो। जान लो कि इसीलिए हमें अपनी कोठरी के दहलीज से बाहर नहीं निकलना चाहिए, ताकि हम मनुष्यों के बुरे कर्मों से अनभिज्ञ रह सकें; और फिर, अपने मन की इस अज्ञानता में, हम सभी लोगों को पवित्र और अच्छा देखेंगे। यदि तुम अपने शरीर से परिश्रम नहीं कर सकते, तो कम से कम अपने विचारों में शोक मनाओ। यदि आप दो दिन तक उपवास नहीं कर सकते, तो कम से कम शाम तक उपवास करें; लेकिन यदि आप शाम तक भी उपवास नहीं कर सकते, तो पेटूता से सावधान रहें। यदि आप शांति स्थापित करने वाले नहीं हैं, तो कम से कम कलह बढ़ाने वाले न बनें। यदि आप अपने मित्र की निंदा करने वाले को चुप नहीं करा सकते, तो कम से कम उससे बातचीत करने से बचें।

281. जान लो कि यदि तुमसे आग निकलती है और दूसरों को जलाती है, तो ईश्वर तुम्हें अपनी आग से नष्ट हुई आत्माओं के लिए जवाबदेह ठहराएगा। और यदि तुम स्वयं आग नहीं भड़काते, परन्तु जो ऐसा करता है उससे सहमत हो और इसमें आनंद लेते हो, तो न्याय के दिन तुम्हें भी उसके साथियों में गिना जाएगा। इस दुनिया में लोग जिस भी मार्ग पर चलते हैं, उन्हें तब तक शांति नहीं मिलती जब तक वे ईश्वर में आशा नहीं रखते। हृदय को परिश्रम और परीक्षाओं से तब तक राहत नहीं मिलती, जब तक आशा उसमें प्रवेश नहीं करती, उसे शांत नहीं करती और उसमें आनंद नहीं भर देती। यही बात है जिसके बारे में पूजनीय होठों ने कहा: *'मेरे पास आओ, हे सब मेहनत करने वालों और बोझ से दबे लोगों, और मैं तुम्हें विश्राम दूँगा'* (मत्ती 11:28)। मन की रोशनी विश्वास को जन्म देती है; विश्वास आशा के सांत्वना को जन्म देता है; और आशा, बदले में, हृदय को मजबूत करती है।

282. परमेश्वर के पुत्र ने क्रूस को सहन किया; इसलिये हम पापी निडर होकर पश्चाताप में अपना भरोसा रखते हैं। मन के दुख सभी शारीरिक परिश्रम की जगह लेने के लिए पर्याप्त हैं। संत ग्रेगरी कहते हैं: 'जो परमेश्वर के साथ एकता में है, वह अनुग्रह का मंदिर है – और हमेशा उनके न्याय के विचार में व्यस्त रहता है'। धन्य बेसिल ने कहा: 'अनवरत प्रार्थना आत्मा में ईश्वर का एक स्पष्ट विचार उत्पन्न करती है; और जब हम अपने भीतर ईश्वर की स्मृति स्थापित करते हैं, तो ईश्वर स्वयं हमारे भीतर वास करते हैं।' इस प्रकार हम ईश्वर का मंदिर बन जाते हैं। एक पश्चात्तापी हृदय ईश्वर में विश्राम के लिए एक तैयारी का काम करता है।

283. हम अपने आलस्य के क्षणों में जो कुछ प्राप्त करते हैं, वही हमारी प्रार्थना के दौरान हमें शर्मिंदा करता है। संयम किसी व्यक्ति की (शारीरिक) विश्राम से अधिक मदद करता है; जबकि विचलन (विचारों का भटकना) उसे (शारीरिक) विश्राम से अधिक हानि पहुँचाता है। घरेलू कलह विश्राम से उत्पन्न होती है और व्यक्ति को परेशान करती है, फिर भी उसमें इसे समाप्त करने की शक्ति होती है। क्योंकि जैसे ही कोई व्यक्ति आराम छोड़कर अपने काम पर लौटता है, ये झगड़े उससे दूर हो जाते हैं और चले जाते हैं। लेकिन आत्म-नियंत्रण की कमी से जो होता है, वह आराम से होने वाले परिणाम के समान नहीं है। आराम के दौरान जब कोई व्यक्ति अपनी स्वतंत्रता के दायरे में रहता है, तो वह अपनी स्थापित नियमों के अनुसार वापस आ सकता है और खुद पर शासन कर सकता है; क्योंकि वह अभी भी अपनी स्वतंत्रता के दायरे में है। लेकिन स्वयं को अनुमति देकर (सुखद विचारों के लिए), वह अपनी स्वतंत्रता के दायरे से बाहर कदम रखता है। यदि किसी व्यक्ति ने आत्म-निरीक्षण को पूरी तरह से नहीं छोड़ा होता, तो वह उस चीज़ के आगे जबरदस्ती और अनिच्छा से झुकने के लिए मजबूर नहीं होता जो उसे कोई शांति नहीं देती।

२८४. हे मनुष्य, अपनी किसी भी इंद्रिय को स्वतंत्रता न दे, कहीं ऐसा न हो कि तू उस बिंदु पर पहुँच जाए जहाँ स्वतंत्रता में लौटना असंभव हो जाए। आलस्य केवल युवाओं को ही हानि पहुँचाता है, जबकि भोग-विलास बूढ़ों और सिद्ध लोगों दोनों को हानि पहुँचाता है। जो लोग आलस्य के कारण बुरे विचारों में पड़ जाते हैं, वे आत्म-परीक्षा की ओर लौट सकते हैं और अपने उत्तम जीवन-पथ पर पुनःस्थापित हो सकते हैं। लेकिन जो लोग अपने कर्म के उत्साह में

आत्म-परीक्षा की उपेक्षा कर देते हैं, उन्हें उनके उत्तम जीवन-पथ से वेश्यावृत्ति के जीवन में बंदी बनाकर ले जाया जाता है।

285. हमें केवल तब दुख नहीं करना चाहिए जब हम किसी काम को करने के लिए प्रलोभित होते हैं, बल्कि विशेष रूप से तब जब हम उसी बात में कठोर हो जाते हैं; क्योंकि प्रलोभन अक्सर सिद्ध लोगों पर भी आता है, जबकि उसमें कठोर हो जाना आत्मा का पूर्ण रूप से अंधकारमय हो जाना है। हमारे प्रलोभनों पर हमें जो शोक होता है, उसे शुद्ध कर्म के स्थान पर अनुग्रह द्वारा हमें श्रेय दिया जाता है। जो कोई भी, पश्चाताप की आशा में, जानबूझकर दूसरी बार प्रलोभन के आगे झुकता है, वह परमेश्वर के प्रति कपटपूर्ण व्यवहार करता है; मृत्यु उसे अनायास घेर लेती है, और वह उस समय तक नहीं पहुँच पाता जिसके बारे में उसने पुण्य कर्म करने की आशा की थी।

286. जिसने भी अपनी इंद्रियों को पूरी छूट दी है, उसने अपने हृदय को भी पूरी छूट दी है: क्योंकि हृदय की क्रियाएँ बाहरी इंद्रियों के लिए बंधन का काम करती हैं। यदि कोई इस प्रयास में विवेक के साथ संलग्न होता है, तो यह निम्नलिखित तीन विशेषताओं से स्पष्ट हो जाता है: अर्थात्, वह कामुक सुखों का दास नहीं होता, वह अतिभक्षण में लिप्त नहीं होता, और वह स्वयं को चिड़चिड़ा होने नहीं देता। जहाँ ये तीनों मौजूद हैं, वहाँ कोई सच्चा आंतरिक क्रम नहीं होता, भले ही बाहरी आवरण निर्दोष हो। शरीर की प्रति सावधानीपूर्वक उपेक्षा सभी चीजों से वैराग्य, शांति की उपेक्षा, और मानवीय स्नेह के प्रति उदासीनता को जन्म देती है। यदि कोई ईश्वर के लिए स्वेच्छा से और प्रसन्नतापूर्वक हानि को स्वीकार करता है, तो वे भीतर से शुद्ध होते हैं। जो व्यक्ति उसका सम्मान करने वालों को देखकर प्रसन्न नहीं होता, और उसका अपमान करने वालों से नाराज़ नहीं होता, वह इस जीवन में संसार के लिए मृत हो गया है।

287. किसी पापी से घृणा न करो; क्योंकि हम सभी उत्तरदायी हैं। यदि तुम ईश्वर के लिए उसके विरुद्ध खड़े हो, तो उसके लिए रोओ। और तुम उससे नफ़रत क्यों करोगे? उसके पाप से नफ़रत करो, और उसके लिए प्रार्थना करो, ताकि तुम मसीह जैसे बन सको, जो पापियों पर क्रोधित नहीं हुए, बल्कि उनके लिए प्रार्थना की। ईश्वर की भलाई का प्रचारक बनो; क्योंकि ईश्वर तुम पर शासन करते हैं, भले ही तुम इसके लायक नहीं हो; क्योंकि तुम उन पर बहुत के ऋणी हो, फिर भी उनकी सजा तुम पर स्पष्ट नहीं है, और तुमने जो छोटे-छोटे काम किए हैं, उनके लिए वह तुम्हें बड़ी-बड़ी चीज़ों से पुरस्कृत करते हैं।

288. परमेश्वर का भय प्रेम के कारण भय मानो, न कि उनके भयानक नाम के कारण। उनसे वैसा प्रेम करो जैसा करना तुम्हारा कर्तव्य है—न इस लिए कि वे भविष्य में तुम्हें क्या देंगे, बल्कि इस लिए कि हमने वर्तमान में जो कुछ प्राप्त किया है, और इस एक संसार के लिए जिसे उन्होंने हमारे लिए बनाया है। प्रारंभ में हमें अस्तित्व में लाने के लिए किसने उसे राज़ी किया? जब हम उसे याद नहीं करते तो हमारी सिफ़ारिश कौन करता है? जब हम अभी अस्तित्व में भी नहीं थे, तो किसने हमारे इस शरीर को जीवन दिया? पृथ्वी पर ज्ञान का विचार कहाँ से जड़ जमाता है? वह कौन सी असीम भलाई है जो हमारी पापी प्रकृति को नए जीवन में पुनर्स्थापित करती है! आओ, हे विवेकी लोगो, और अचंभित हो जाओ। कौन, बुद्धिमान और अद्भुत मन वाला, हमारे स्रष्टा की दया की यथोचित रूप से अद्भुत प्रशंसा कर सकेगा?

289. जिस सीमा तक कोई व्यक्ति इस संसार को तुच्छ समझता है और ईश्वर के भय के प्रति उत्सुक रहता है, उसी सीमा तक ईश्वर की व्यवस्था उसके समीप आती है – और गुप्त रूप से वह व्यक्ति व्यवस्था की सहायता को महसूस करता है, और उसे समझने के लिए उसे शुद्ध विचार प्रदान किए जाते हैं। यदि कोई स्वेच्छा से सांसारिक वस्तुओं से वंचित करता है, तो जिस हद तक वह उनसे वंचित होता है, उसी हद तक वह ईश्वर की दया से साथ रहता है और मानवता के प्रति ईश्वर के प्रेम से पोषित होता है। जहाँ तक उन आत्माओं का सवाल है जो स्वेच्छा से सभी चीजों का त्याग करके सच्चे जीवन को प्राप्त करने के लिए पर्याप्त मजबूत नहीं हैं, वह उन्हें अनैच्छिक पीड़ाओं के माध्यम से सद्गुण की ओर ले जाता है, जैसा कि हम गरीब लाजरस के मामले में देखते हैं। ईश्वर उस व्यथित हृदय के समीप है जो संकट में उससे पुकारता है। भले ही वह कभी-कभी हमें शारीरिक कष्टों और अन्य पीड़ाओं से गुज़रने के लिए बाध्य करता है, प्रभु पीड़ित की आत्मा के प्रति उनकी पीड़ा की तीव्रता के अनुपात में महान प्रेम दिखाता है।

290. जब मसीह के प्रेम की लालसा आप में इतनी प्रबल नहीं है कि मसीह में आनंद के कारण, आप अपनी सभी पीड़ाओं में निर्लिप्त बने रहें, तो जान लें कि मसीह की अपेक्षा संसार आप में अधिक वास करता है। जब बीमारी, गरीबी, शारीरिक थकान, या शरीर की भलाई के लिए भय आपके विचारों को इस हद तक विचलित कर देता है कि वे आपको आपकी आशा के आनंद और प्रभु को प्रसन्न करने की आपकी चिंता से हटा देते हैं; तो जान लें कि यह आपका शरीर है जो आप में जीवित है, न कि मसीह। सरल शब्दों में कहें तो: जो भी आपके भीतर बाकी सब पर हावी है, वही आपके भीतर रहता है। यदि आपको अपनी ज़रूरत की कोई चीज़ कमी नहीं है, और आपका शरीर स्वस्थ है, और आप

किसी भी प्रतिकूल चीज़ से नहीं डरते—और फिर भी आप कहते हैं कि आप इस तरह मसीह की ओर शुद्ध रूप से चल सकते हैं—तो जान लें कि आप मन से बीमार हैं और परमेश्वर की महिमा का स्वाद चखने से वंचित हैं।

291. कहीं ऐसा न हो कि आप कहें कि ऐसा कोई व्यक्ति कभी नहीं हुआ जिसका मन कमजोरी से पूरी तरह ऊपर उठा हो, जबकि उसका शरीर प्रलोभनों और दुखों से कुचला जा रहा था, और जिसमें मन के दुख पर मसीह के प्रेम की विजय हुई हो, – मैं आपको शहीदों की याद दिलाऊँगा, और देखिए कि कैसे उनकी सहनशीलता, जो मसीह के प्रेम की शक्ति से मजबूत हुई थी, ने महान दुख और शारीरिक बीमारी पर विजय प्राप्त की। और केवल वही नहीं थे जिन्होंने ऐसी दृढ़ता दिखाई; वहाँ दार्शनिक, मूर्तिपूजक जो सच्चे परमेश्वर को नहीं जानते थे, थे जिन्होंने साहस की उल्लेखनीय शक्ति दिखाई। उनमें से एक ने मौन रहने का नियम बना लिया था - और मृत्यु के स्पष्ट खतरे के बावजूद इस संकल्प से विचलित नहीं हुआ। दूसरों ने अपनी स्वाभाविक इच्छाओं को पूरी तरह से दबा दिया; कुछ ने बदनामी को सहजता से सहन किया; दूसरों ने दुख के बिना क्रूर बीमारियों को सहा; और कुछ ने दुख और बड़ी विपत्तियों में अपना धैर्य दिखाया। यदि उन्होंने यह सब व्यर्थ की महिमा और आशा के लिए सहन किया, तो क्या हम भिक्षुओं को, जिन्हें ईश्वर के साथ सहभागिता के लिए बुलाया गया है, कहीं अधिक नहीं सहना चाहिए?

खंड III

भूमिका

यह *डोब्रोतोलुबिये* के रूसी संस्करण का तीसरा खंड है। यहाँ संलग्न लगभग सभी लेख ग्रीक *डोब्रोतोलुबिये* से लिए गए हैं। एकमात्र अतिरिक्त सामग्री है अबा ज़ोसिमा के साथ एक वार्तालाप, जिन्होंने मिस्र की संत मेरी को मार्गदर्शन दिया था, और संत मैक्सिमस द कन्फेसर के लेखों से एक तपस्वी प्रवचन। यह सब निम्नलिखित क्रम में दिया गया है:

1. फोटिकी के बिशप, धन्य डायडोचस द्वारा सौ अध्यायों में एक मठवासी प्रबंध, जिसमें मुख्य सद्गुणों की उच्चतम श्रेणियों की दस परिभाषाएँ दी गई हैं।

2. कारपाफ़ोस के पूजनीय जॉन – एक सौ अध्याय – सांत्वनादायक और उत्साहवर्धक।

3. अबा ज़ोसिमा के प्रवचन।

४. संत मैक्सिमस द कन्फेसर – क) प्रश्नोत्तर के रूप में तपस्या पर एक ग्रंथ। ख) चार सौ अध्याय – प्रेम पर। ग) उनके सात सौ अध्यायों में से चुने गए आध्यात्मिक और व्यावहारिक अध्याय।

5. पूजनीय फलासियस: चार सौ अध्याय – प्रेम, संयम और आध्यात्मिक जीवन पर।

6. एडसा के बिशप सेंट थियोडोरस – 100 शिक्षाप्रद अध्याय।

7. किसी अन्य थियोडोर द्वारा – एक शिक्षाप्रद और चिंतनशील प्रवचन।

8. अबा फिलेमोन का एक अत्यंत लाभकारी वृत्तांत।

९. आदरणीय थियोग्नोस्टस – सक्रिय और ध्यानमग्न जीवन पर, ७५ अध्याय।

10. सिनाई के आदरणीय फिलोथियस: संयम पर 40 अध्याय।

11. एल्डर एलिया द्वारा – फूलों का बगीचा। *HTML संस्करण (2005) के लिए संपादक की टिप्पणी:* ***डोब्रोतोल्यूबिए* के** दूसरे से पांचवें खंडों के मुख्य पाठ को आधुनिक रूसी वर्तनी और उच्चारण के अनुरूप संपादित किया गया है। पवित्र शास्त्रों से उद्धरणों को जस का तस छोड़ा गया है। जहाँ आवश्यक हो, उनके अर्थ को पुराने और नए नियमों के आधुनिक रूसी संस्करण का संदर्भ लेकर स्पष्ट किया जा सकता है। शब्दों 'мiр' (समाज, कभी-कभी – संपूर्ण सृजित ब्रह्मांड), 'мир' (शांति, व्यवस्था, एकता, सामंजस्य) और 'μvpo' (पवित्र अभिषेक के लिए एक सुगंधित मिश्रण) की वर्तनी में अंतर को भी अपरिवर्तित रखा गया है।

धन्य डायडोचस, फोतीकी के बिशप
इल्यूरियन एपरिस में

उनका संक्षिप्त परिचय

उनके बिशप बनने से पहले सेंट डायडोचस की उत्पत्ति और प्रारंभिक जीवन के बारे में कुछ भी ज्ञात नहीं है। हालाँकि, अपने बिशप के कार्यकाल के दौरान, वह अपने पवित्र जीवन और अपने बुद्धिमानी भरे उपदेशों दोनों के लिए प्रसिद्ध थे। अफ्रीका में यूटिका के बिशप विक्टर ने अपनी *हिस्ट्री ऑफ द पर्सेक्यूशंस बाय द वैंडल्स* (मिग्ने, *पैट्रोल. Lat. vol. 58), जो उन्होंने लगभग 490 में लिखा था, खुद को उनका शिष्य बताते हुए, उन्हें इस उपाधि से सम्मानित करते हैं और जोड़ते हैं कि "यह धन्य दियादोचुस हर तरह की प्रशंसा के योग्य हैं, क्योंकि उन्होंने ऑर्थोडॉक्स सिद्धांत और ईसाई जीवन पर बहुत से कार्य पीछे छोड़े हैं।" – इससे यह निष्कर्ष निकाला जाना चाहिए कि वे पाँचवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में सक्रिय थे, और संभवतःइसकी समाप्ति से कुछ समय पहले ही उनकी मृत्यु हो गई, जैसा कि इस तथ्य से अनुमान लगाया जा सकता है कि उनका हस्ताक्षर एपिरस के बिशपों द्वारा सम्राट लियो (457–473) को लिखे गए पत्र में भी दिखाई देता है। उनके जीवन के अन्य विवरण अज्ञात हैं। उनकी रचनाओं में, अब तक निम्नलिखित ज्ञात हैं: (क) दो प्रवचन – एक प्रभु के स्वर्गारोहण पर, जिसमें परमेश्वर के वचन के अवतार के रूढ़िवादी सिद्धांत को बताया गया है, और दूसरा अरिअनों के विरुद्ध; (ख) तपस्या जीवन पर 100 अध्याय, जिसमें प्रमुख सद्गुणों में पूर्णता की अंतिम सीमाओं पर 10 परिचयात्मक दिशानिर्देश शामिल हैं। यरूशलेम के पैट्रिआर्क सोफ्रोनीयस ने मोनोफिसाइट्स के विरुद्ध अपने परिपत्र पत्र में इन लेखों से अंश उद्धृत किए हैं (फोटियस की ग्रंथसूची – संख्या 231); संत मैक्सिमस द कन्फेसर ने भी एक से अधिक अवसरों पर उनका उल्लेख किया है। तपस्या पर उनके अध्यायों के संबंध में, जिन्हें हमने अपने संग्रह में शामिल किया है, धन्य फोटियस निम्नलिखित टिप्पणी करते हैं: "यह कृति (अर्थात् 100 अध्याय) तपस्या के अभ्यास में लगे लोगों के लिए अत्यंत लाभकारी है, और जो लोग, लंबे अभ्यास के माध्यम से, पूर्णता की ओर ले जाने वाले कर्मों में निपुणता प्राप्त कर चुके हैं, उनके लिए इसमें कुछ भी अस्पष्ट नहीं है; क्योंकि ऐसे मामले में, पाठ में बताई गई शिक्षा के बाद अनुभव से प्राप्त ज्ञान सहजता से पीछे-पीछे आ जाता है।" *डोब्रोतोलुबिये* के ग्रीक संस्करण के संकलनकर्ताओं ने, इस कृति की प्रस्तावना में, कहा है: कि हमारे पवित्र पिता डायडोचस कर्म में बुद्धिमान और चिंतन में प्रबुद्ध व्यक्ति थे; यह बात कोई भी जान सकता है जो इस कृति से यह जानना चाहता है, जो हमें अपरिवर्तित रूप में प्राप्त हुई है और जिसे उन्होंने अपने लंबे समय के अनुभव और अपने हृदय की दिव्य आकांक्षाओं से आध्यात्मिक ज्ञान ग्रहण करते हुए, इतनी खूबसूरती से रचा था। इसे सौ अध्यायों में विभाजित करते हुए, वे उनमें इस प्रिय सद्गुण के गहरे रहस्यों को सावधानीपूर्वक प्रकट करते हैं, और उन्हें दिव्य शास्त्रों के बार-बार उद्धरणों तथा विश्वास से प्रबुद्ध मन के चिंतन से समृद्ध करते हैं। कहा जा सकता है कि इस कृति में उन्होंने अपने अनुयायियों—तपस्वियों और ईश्वर-वाहक पिताओं—के लिए पवित्र संयम सहित सभी सद्गुणों पर एक अनुकरणीय शिक्षा छोड़ी है। क्योंकि आप पाएँगे कि उनमें से बहुत से लोग सत्य के सबसे विश्वसनीय मार्गदर्शक के रूप में इन अध्यायों की ओर मुड़ते हैं, और संयम पर अपनी रचनाओं में इनसे शब्दशः उद्धरण देते हैं। एंड्रोनिकोस पलाइओलोगोस के शासनकाल के दौरान आयोजित परिषद के बाद, यह ग्रेगरी और शिमियन ऑफ़ थेस्सालोनिकी, ग्रेगरी ऑफ़ सिनाई, परम पावन कैलिकिस्टस, और कई अन्य लोगों द्वारा किया गया था, जिससे उनकी शिक्षा की निर्दोष प्रकृति की गवाही मिलती है। पवित्र चर्च चीज़ शनिवार को संत डायडोचस की स्मृति का सम्मान करती है, साथ ही उन सभी संतों का भी, जो अपने तपस्या कार्यों द्वारा प्रकाशित हुए। इस दिन की सेवा में, दूसरे ओड में, निम्नलिखित गाया जाता है: 'मैं सबसे सम्मानित पिताओं, यूस्टैथियस और जुवेनाल के साथ डायडोचस का गायन करता हूँ।'

मुख्य सद्गुणों में पूर्णता की परम सीमाओं या शिखर पर धन्य दियादोकोस का प्रवचन

1. विश्वास में पूर्णता की सीमा, या शिखर, मन का ईश्वर में निर्लिप्त डूबना है।

2. आशा की सीमा प्राप्त होने वाले आशीर्वादों की ओर मन का मुड़ना है।

3. धैर्य की सीमा है धैर्य में दृढ़ खड़ा रहना, अदृश्य को मानो मन की आँखों के लिए दृश्य हो।

४. अलोभिता होने की अंतिम सीमा यह है कि किसी वस्तु को स्वामित्व में रखने की इच्छा न करना, ठीक वैसे ही जैसे कोई दूसरा उसे स्वामित्व में रखना चाहता है।

5. समझ का शिखर यह है कि ईश्वर में परमानंद (या पूर्ण समर्पण) की अवस्था में स्वयं के प्रति सचेत न रहना।

6. विनम्रता की सीमा अपने अच्छे कर्मों को दृढ़ निश्चय से भूल जाना है।

7. अक्रोध की सीमा क्रोध न होने की तीव्र इच्छा है।

8. पवित्रता की सीमा ईश्वर से निरंतर जुड़ी रहने वाली भावना है।

९. प्रेम की सीमा उन लोगों के प्रतिअपना मैत्रीपूर्ण स्वभाव कई गुना बढ़ाना है जो आपको अपमानित और गालियाँ देते हैं।

10. ईश्वर के स्वाद में पूर्ण परिवर्तन का शिखर मृत्यु के दुख को आनंद मानना है।

एक आध्यात्मिक ग्रंथ, जो सक्रिय अभ्यास के सौ अध्यायों में विभाजित है, और आध्यात्मिक ज्ञान व विवेक से परिपूर्ण है।

1. *उन तीन गुणों पर, जो नेताओं की तरह, मन के आध्यात्मिक चिंतन से पहले होने चाहिए।*[78]

भाइयो, आध्यात्मिक मनन में विश्वास, आशा और प्रेम—और सबसे बढ़कर प्रेम—आगे का मार्ग दिखाएँ; क्योंकि वे दो (विश्वास और आशा) हमें केवल दृश्यमान वस्तुओं को तुच्छ समझना सिखाते हैं, जबकि प्रेम सद्गुण के द्वारा आत्मा को ही परमेश्वर के साथ मिला देता है, और अदृश्य को आध्यात्मिक अनुभूति से समझता है।

2. *कोई व्यक्ति कब और कैसे अच्छा बनता है।*

स्वभाव से, केवल एक ही ईश्वर है जो अच्छा है। लेकिन एक व्यक्ति भी अच्छे चरित्र को विकसित करने के लिए उत्सुक प्रयास करके अच्छा बन जाता है, और स्वभाव से जो वह नहीं है, उससे परिवर्तित होकर उस की समानता में आ जाता है जो स्वतःअच्छा है, जब आत्मा, भलाई के लिए उत्सुक प्रयास के माध्यम से, ईश्वर के साथ इतनी एक हो जाती है जितना वह चाहती है और अपनी पूरी ताकत से सक्रिय रूप से खोजती है; क्योंकि कहा गया है: *'भले और दयालु बनो, जैसे तुम्हारा स्वर्गीय पिता भला है'* (लूका 6:36; मत्ती 5:48)।

३. *पाप कब और कैसे शुरू होता है।*

प्रकृति में कोई बुराई नहीं है, और न ही कोई स्वभाव से बुरा है: क्योंकि परमेश्वर ने कुछ भी बुरा नहीं बनाया है। परन्तु जब कोई, हृदय की इच्छाओं के द्वारा, अपने भीतर बुराई की प्रतिमा को लाता है, तब, यद्यपि यह प्रकृति में मौजूद नहीं है, यह उस व्यक्ति द्वारा चाही गई रूप में मौजूद होना शुरू कर देती है। इसीलिए, परमेश्वर को निरंतर और लगन से याद करते हुए, किसी को भी बुराई की आदती प्रवृत्तियों पर ध्यान नहीं देना चाहिए; क्योंकि प्रकृति में जो अच्छाई मौजूद है, वह आदत के द्वारा बाहरी रूप से प्रकृति में प्रवेश करने वाली बुराई से अधिक शक्तिशाली है – क्योंकि पहली तो सदा से मौजूद है, जबकि दूसरी केवल तब अस्तित्व में आती है जब उसे स्वयं पैदा किया जाता है।

४. *हम ईश्वर की प्रतिमा में कब और कैसे पहुँचते हैं?*

हम सभी ईश्वर की छवि में बनाए गए मानव हैं; लेकिन ईश्वर के सदृश होना केवल उन लोगों का विशेषाधिकार है, जिन्होंने परम प्रेम से अपनी स्वतंत्रता ईश्वर को समर्पित कर दी है। क्योंकि जब हम अपने स्वामी नहीं होते, जब हम स्वयं को नकारते हैं, तब हम उस ईश्वर के समान हो जाते हैं, जिन्होंने अपने प्रेम के द्वारा, हमें स्वयं से मेल-मिलाप कराया है; – एक ऐसी अवस्था जिसे कोई भी तब तक प्राप्त नहीं कर सकता जब तक कि वह अपनी आत्मा को आत्म-संतुष्ट और आत्म-तुष्ट जीवन के प्रलोभनों से बहकने से न रोक ले।

५. *यह कैसे सुनिश्चित करें कि इच्छाशक्ति हमेशा केवल भलाई के लिए तैयार रहे।*

आत्म-नियंत्रण तर्कशील आत्मा की स्वतंत्र इच्छा है, जो सहजता से उस ओर प्रयत्न करती है जिसकी वह इच्छा करती है। हमारे पास केवल भलाई के लिए ऐसी स्वतंत्र इच्छा तब ही तैयार होगी जब हम हमेशा हर बुरे विचार को अच्छे विचारों से जड़ से उखाड़ फेंकेंगे।

6. *सच्ची दृष्टि का प्रकाश क्या है,*

और क्या है जो मन को इस प्रकाश का उपयोग करने में सक्षम बनाता है।

सच्चे ज्ञान का प्रकाश अच्छाई और बुराई के बीच त्रुटिहीन रूप से अंतर करने की क्षमता है। और फिर (अर्थात्, जब ऐसा विवेक मौजूद हो और स्वयं जीवन उसी के अनुसार व्यवस्थित हो) धर्मपरायण मार्ग, मन को सत्य के सूर्य, ईश्वर की ओर उठाते हुए, उसे उस असीम बौद्धिक प्रबोधन में ले जाता है – जैसे कोई व्यक्ति, जिसने साहस (विश्वास और आशा) के साथ, अंततःएक ही प्रेम को प्राप्त कर लिया हो। जो धर्म है, उसे अपमान करने वालों और पैर तले रौंदने वालों के हाथों से बिना क्रोध के उत्साह के साथ वापस छीनना चाहिए; क्योंकि धर्मपरायणता का उत्साह (क्रोधित) घृणा से नहीं, बल्कि (प्रेमपूर्ण) फटकार और समझाने से विजय प्राप्त करता है।

7. *आध्यात्मिक वचन क्या लाता है- और कैसे*

प्रेम की गति ईश्वर पर विमर्श को कैसे सरल और प्रचुर बनाती है।

---

[78] ये शीर्षक ग्रीक पाठ में नहीं हैं। इन्हें लैटिन अनुवादक ने बनाया था। यह मानते हुए कि ये संत डायडोचस की बुद्धिमानी भरी शिक्षाओं को समझने और याद करने में बहुत मदद करेंगे, हमने इन्हें उनसे उधार लिया है (पैट्रोलोजिया ग्रेका, मिग्ने, खंड 65)।

आध्यात्मकि वचन बुद्धि में संतोषजनक दृढ़ विश्वास उत्पन्न करता है; क्योंकि यह (वचन) प्रेम की क्रिया के द्वारा ईश्वर से उत्पन्न होता है। तो फिर, हमारा मन धर्मशास्त्रीय चिंतन की लहरों में बिना किसी कष्ट और बोझ के सहजता से क्यों नहीं चलता, और प्रबुद्ध विचारों की गंभीर और पीड़ादायक कमी से क्यों नहीं पीड़ित होता? इस अवस्था में, यह प्रेम की क्रिया की इच्छानुसार, दूरगामी चिंतन में स्वतंत्र रूप से उड़ान भरता है। ईश्वर के बारे में बात करते समय, प्रेम से उत्पन्न मन की प्रबुद्धता की प्रतीक्षा विश्वास के साथ करना वास्तव में एक अच्छी बात है; क्योंकि ईश्वर के बिना, जब मन ईश्वर के बारे में दर्शन करने निकलता है, तो उससे अधिक दयनीय और दुखद कमी और कुछ नहीं है।

८. दिव्य विषयों पर संवाद शुरू करने का उचित समय।

जिस प्रकार आत्मा में प्रबुद्ध न हुआ व्यक्ति आध्यात्मकि चिंतन में नहीं लगना चाहिए, उसी प्रकार पवित्र आत्मा की कृपा से समृद्ध रूप से प्रकाशित व्यक्ति को भी ऐसे विषयों पर चर्चा नहीं करनी चाहिए: क्योंकि पहले मामले में, प्रबुद्ध विचारों की कमी मन को अज्ञानता के अंधकार में ढक लेती है, जबकि बाद वाले में, उनकी प्रचुरता व्यक्ति को बोलने से रोकती है, क्योंकि ऐसे समय में आत्मा, ईश्वर के प्रेम में मग्न होकर, मौन में प्रभु की महिमा का आनंद लेना चाहती है; इसलिए, जब आध्यात्मकि उत्साह की एक मध्यम डिग्री देखी जाती है, तो दिव्य संवाद (ईश्वर के बारे में बातचीत) में संलग्न होना चाहिए; क्योंकि ऐसा संतुलन आत्मा को महिमामय शब्दों की एक विशिष्ट छवि प्रदान करता है (जो अदृश्य आध्यात्मकि वास्तविकताओं को सटीक और स्पष्ट रूप से दर्शाते हैं), और साथ ही, प्रत्याशित आध्यात्मकि प्रबोधन वक्ता के विश्वास को पोषित करता है, ताकि शिक्षक प्रेम से प्रवाहित होने वाले ज्ञान के फल का स्वाद चखने में पहला हो। *'मजदूर पहले अपनी अनाज की हिस्सेदारी पाने का हकदार है'* (2 तीमु. 2:6)।

९. ज्ञान के वरदान और बुद्धि के वरदान पर,

कि कैसे उनमें से प्रत्येक ज्ञान प्रदान करता है, और उन्हें कैसे प्राप्त किया जाता है।

पवित्र आत्मा ज्ञान और बुद्धि दोनों का स्रोत है, जैसे कि वह सभी दिव्य वरदानों का है; फिर भी, इनमें से प्रत्येक वरदान का, अन्य सभी की तरह, कार्य करने का अपना विशिष्ट तरीका (ऊर्जा) है। इसीलिए प्रेरित गवाही देते हैं कि एक को बुद्धि दी गई है, और दूसरे को भविष्यवाणी (1 कुरिन्थियों 12:8)। दिव्यदृष्टि आत्मा को ईश्वर के साथ एक अनुभवात्मक (ठोस) तरीके से जोड़ती है, लेकिन आत्मा को इस या अन्य आध्यात्मकि मामलों पर संवाद में संलग्न होने के लिए प्रेरित नहीं करती है; यही कारण है कि कुछ लोग जो ध्यानमग्न जीवन जीते हैं, यद्यपि अपनी धारणा में प्रबुद्ध होते हैं, फिर भी दिव्य मामलों पर संवाद करने का साहस नहीं करते हैं। हालाँकि, यदि किसी को ईश्वर-भय से प्राप्त होने वाले ज्ञान के साथ (जो दुर्लभ है) बुद्धि प्रदान की जाती है, तो वह प्रेम से दृष्टि के गूढ़तम प्रभावों (ऊर्जाओं) को प्रकट करती है; क्योंकि दृष्टि आमतौर पर एक आंतरिक प्रभाव के माध्यम से ज्ञान प्रदान करती है, जबकि बुद्धि वचन के माध्यम से ऐसा करती है। वे इस प्रकार प्राप्त होते हैं: ज्ञान पूर्ण निर्लिप्तता के बीच प्रार्थना और गहरी मौनता से उत्पन्न होता है; जबकि बुद्धि आत्मा के वचनों के विनम्र अध्ययन से, और सर्वोपरि सर्व-प्रदाता ईश्वर की कृपा से प्राप्त होती है।

10. *जब आत्मा उथल-पुथल में हो, तो मौन रहना चाहिए;*

और जब यह शांत हो जाए, तो संवाद में संलग्न होना चाहिए,

जबकि विनिम्रता से मन को नियंत्रित करते हुए।

जब आत्मा वासनाओं के प्रति क्रोध से उत्तेजित हो जाती है, तो मनुष्य को यह एहसास होना चाहिए कि यह मौन रहने का समय है, क्योंकि यह संघर्ष का समय है। लेकिन जब मनुष्य देखता है कि यह उथल-पुथल शांत हो गई है, चाहे प्रार्थना के द्वारा हो या दान-पुण्य के द्वारा, तो उसे दिव्य शब्द बोलने की प्रेम-प्रेरणा के आगे समर्पित हो जाना चाहिए, और साथ ही विनम्रता के बंधनों से मन के पंखों को बाँधकर रखना चाहिए; क्योंकि यदि कोई आत्म-नम्रीकरण द्वारा स्वयं को परम रूप से विनम्र नहीं बनाता है, तो वह ईश्वर की महानता के बारे में यथोचित रूप से नहीं बोल सकता।

11. *आध्यात्मकि वचन दंभ की ओर नहीं ले जाता,*

जबकि सांसारिक ज्ञान का वचन ऐसा करता है।

ऐसा क्यों है? आध्यात्मकि वचन आत्मा को दम्भ से मुक्त रखता है; क्योंकि, इसे आध्यात्मकि प्रकाश की संपदा की अनुभूति से भरकर, यह सुनिश्चित करता है कि आत्मा को मानवीय सम्मान की कोई आवश्यकता न हो। इसीलिए यह मन को हर समय व्यर्थ के विचारों से मुक्त रखता है, और उसे पूरी तरह से ईश्वर के प्रेम में डुबो देता है। हालाँकि, सांसारिक ज्ञान का वचन हमेशा एक व्यक्ति को महिमा के प्रेम की ओर बुलाता है; क्योंकि यह किसी

को उसकी इंद्रियों के माध्यम से उससे प्राप्त होने वाले भले (जो हृदय को तृप्त कर दे) का अनुभव करने में असमर्थ है, और इसके बजाय, यह अपने अनुयायियों को मानवीय प्रशंसा का प्रेम प्रदान करता है, जो स्वयं व्यर्थ लोगों की एक रचना है। यदि हम उन घंटों को, जब हमें बोलने की आवश्यकता नहीं होती, परमेश्वर की गर्मजोशी भरी याद में, निश्चिंत मौन में बिताएँ, तो हम स्वयं परमेश्वर के आध्यात्मिक वचन के इस गुण को पहचानने में विफल नहीं होंगे।

12. *आत्म-प्रेम और ईश्वर के प्रेम पर –*

और आत्म-प्रेमी तथा ईश्वर-प्रेमी की क्या विशेषता होती है।

जो स्वयं से प्रेम करता है वह ईश्वर से प्रेम नहीं कर सकता; परन्तु जो ईश्वर के प्रेम की प्रचुरता के कारण स्वयं से प्रेम नहीं करता, वही वास्तव में ईश्वर से प्रेम करता है। ऐसा व्यक्ति कभी भी अपनी महिमा नहीं चाहता, बल्कि हमेशा केवल ईश्वर की महिमा की ही खोज करता है। क्योंकि जैसे आत्म-प्रेमी व्यक्ति स्वाभाविक रूप से अपनी महिमा की तलाश करता है, वैसे ही ईश्वर-प्रेमी व्यक्ति स्वाभाविक रूप से अपने स्रष्टा की महिमा की तलाश करता है और उससे प्रेम करता है। ईश्वर की आत्मा से परिपूर्ण एक ईश्वर-प्रेमी आत्मा का यह स्वभाव है कि वह अपने द्वारा पालन किए जाने वाले सभी आज्ञाओं की पूर्ति में केवल ईश्वर की महिमा की तलाश करे, जबकि अपने लिए, विनम्रता में आनंदित हो। क्योंकि महिमा परमेश्वर की है, उनकी महानता के कारण, जबकि नम्रता मनुष्य की है, ताकि इसके द्वारा हम परमेश्वर के साथ एक हो सकें: क्योंकि यदि हम भी ऐसा करना चाहते हैं, तो, बपतिस्मा देने वाले सेंट जॉन के उदाहरण का अनुसरण करते हुए, प्रभु की महिमा में आनंदित होकर, हम अनवरत रूप से कहेंगे: *'उसका बढ़ना चाहिए, पर हमारा घटना चाहिए'* (यूहन्ना 3:30)।

13. *यह कब और क्यों होता है*

कि कोई व्यक्ति स्वयं को ईश्वर से प्रेम न करते हुए प्रतीत हो,

जैसे कि वे चाहें, जबकि वास्तव में वे उससे बहुत गहराई से प्रेम करते हैं।

मैंने एक व्यक्ति को देखा जो लगातार दुखी और रोता रहता था क्योंकि वह परमेश्वर से उतना प्रेम नहीं करता था जितना वह चाहता था, जबकि वास्तव में वह उनसे इतना प्रेम करता था कि वह लगातार अपने मन में यह तीव्र इच्छा रखता था कि परमेश्वर ही उसमें महिमा पाएँ, जबकि वह स्वयं कुछ भी न हो। ऐसा व्यक्ति यह नहीं समझ पाता कि वह वास्तव में क्या है, और न ही उसे स्वयं उसके बारे में कही गई प्रशंसाओं में कोई आनंद आता है। क्योंकि, विनम्रता की अपनी महान लालसा में, वह अपनी योग्यता को नहीं समझता; परन्तु, जैसे व्यवस्था याजकों को आज्ञा देती है, वैसे ही वह परमेश्वर की सेवा करता है, और परमेश्वर के प्रेम की एक विशेष प्रबल प्रवृत्ति के द्वारा, वह अपनी योग्यता की स्मृति को धुंधला कर देता है, वह नम्रता की प्रबल इच्छा से, ईश्वर के प्रति अपने प्रेम की गहराई में, अपने लिए मिलने वाली प्रशंसा को छिपा लेता है, ताकि अपने विचारों में वह हमेशा खुद को एक नीच नौकर समझे, मानो उससे अपेक्षित गरिमा उससे पूरी तरह से अपरिचित हो। इस प्रकार आचरण करते हुए, हमें भी प्रभु के प्रेम की असीम संपत्ति के लिए, जिसने हमसे इतना प्रेम किया है, सभी सम्मान और महिमा से परहेज़ करना चाहिए।

14. *उस व्यक्ति के विषय में जो अपने हृदय की गहराई में परमेश्वर से प्रेम करता है,*

और कैसे, आत्म-स्नेह को पूरी तरह से त्यागकर,

ईश्वर के प्रति एक आनंदमय प्रेम में पहुँचता है।

जो कोई भी अपने हृदय की गहराई से ईश्वर से प्रेम करता है, वह ईश्वर द्वारा जाना जाता है। क्योंकि जिस सीमा तक कोई अपने हृदय की गहराई में ईश्वर के प्रति प्रेम प्राप्त करता है, उसी सीमा तक वह ईश्वर के प्रेम में निवास करता है। ऐसा व्यक्ति एक विशेष उत्कट उत्साह के साथ, मन की प्रबुद्धता की लालसा करना क्यों नहीं छोड़ता, और उसके लिए इतनी तीव्रता से प्रयास करता है कि कभी-कभी उसे अपनी हड्डियों की ताकत तक की पूरी थकान महसूस होती है, और वह, मानो, स्वयं से अनभिज्ञ हो जाता है, फिर भी ईश्वर के प्रेम से पूरी तरह से परिवर्तित और मग्न हो जाता है? ऐसा व्यक्ति, इस जीवन में, उपस्थित भी है और अनुपस्थित भी; क्योंकि अपने शरीर में यात्रा करते हुए भी, अपनी आत्मा की गति से, प्रेम की शक्ति द्वारा, वह निरंतर ईश्वर के समीप आता है – और आश्चर्यजनक रूप से उनके द्वारा स्वीकार किया जाता है। क्योंकि, प्रेम की अक्षय अग्नि से अपने हृदय में अनवरत जलते हुए, वह अनिवार्य रूप से परमेश्वर से हृदय से लगा रहता है, क्योंकि उसने परमेश्वर के प्रति इस प्रेम की शक्ति से आत्म-प्रेम का पूरी तरह से परित्याग कर दिया है। वह कहता है, *'क्योंकि, यदि हम उन्मत्त हैं, तो यह परमेश्वर के लिए है; यदि हम होश में हैं, तो यह तुम्हारे लिए है'* (2 कुरिन्थियों 5:13)।

१५. *जब कोई अपने पड़ोसी से प्रेम करना आरंभ करता है,*

और क्यों सांसारिक प्रेम जल्द ही फीका पड़ जाता है,

जबकि आध्यात्मिक प्रेम कभी समाप्त नहीं होता।

जब कोई ईश्वर के प्रति गहिरा प्रेम महसूस करना शुरू करता है, तो, आध्यात्मिक अर्थ में, वह अपने पड़ोसी से भी प्रेम करना शुरू कर देता है, और एक बार शुरू करने के बाद, वह रुकता नहीं है: ऐसा ही प्रेम है जिसके बारे में सभी पवित्र धर्मग्रंथ बात करते हैं। सांसारिक प्रेम, आध्यात्मिक भावना से बंधा न होने के कारण, जैसे ही थोड़ा सा भी अवसर मिलता है, बहुत आसानी से उड़ जाता है। आध्यात्मिक प्रेम, हालांकि, ऐसा नहीं है: भले ही कोई कुछ कष्ट सहन करे, ईश्वर-प्रेमी आत्मा में, जो ईश्वर के प्रभाव में है, प्रेम का बंधन नहीं टूटता: क्योंकि, ईश्वर के प्रति प्रेम की ऊष्मा से स्वयं को गर्म करके, यह तुरंत ही एक अच्छे स्वभाव में लौट आता है और, महान आनंद के साथ, अपने पड़ोसी के प्रति प्रेम को अपनाता है, भले ही उनसे काफी अपमान सहन किया गया हो, या बड़ा नुकसान उठाना पड़ा हो; क्योंकि तब कलह की कटुता ईश्वर की मिठास में पूरी तरह से घुल जाती है।

१६. *हृदय में ईश्वर के प्रति प्रेम,*
कि इसे कैसे प्राप्त किया जाता है; साथ ही पूर्ण प्रेम पर,
जो ईश्वर के शुद्धकिरण भय से मुक्त है, और एक अन्य प्रकार के प्रेम
जो अपूर्ण है, और शुद्ध करने वाले भय के साथ संयुक्त है।

कोई भी व्यक्ति तब तक ईश्वर से पूरे हृदय से प्रेम नहीं कर सकता, जब तक उसने पहले अपने हृदय में ईश्वर का भय न जगाया हो; क्योंकि आत्मा केवल तभी सक्रिय प्रेम प्राप्त करती है, जब वह ईश्वर के भय के प्रभाव से शुद्ध और कोमल हो चुकी हो। फिर भी, कोई भी व्यक्ति तब तक ईश्वर का भय—और उससे प्राप्त होने वाले फल—को प्राप्त नहीं कर सकता, जब तक वह सभी सांसारिक चिंताओं से मुक्त न हो; क्योंकि केवल तभी जब मन पूर्ण स्थिरता और चिंता से मुक्त होकर विश्राम में होता है, तब ही ईश्वर का भय उस पर उद्धारकारी प्रभाव डालना शुरू करता है, और उस भय की प्रबल अनुभूति से उसे सभी सांसारिक स्थूलता से शुद्ध करके सर्व-सद् ईश्वर के प्रति पूर्ण प्रेम तक इस प्रकार उठाता है। इस प्रकार, भय उन धर्मी लोगों का गुण है जो अभी भी शुद्ध हो रहे हैं, जिनमें प्रेम का एक मध्यम स्तर मौजूद है, जबकि पूर्ण प्रेम उन लोगों का गुण है जो पहले ही शुद्ध हो चुके हैं, जिनमें कोई भय नहीं है, क्योंकि '*पूर्ण प्रेम भय को बाहर निकाल देता है*' (1 यूहन्ना 4:18)। ये दोनों केवल धर्मी लोगों में पाए जाते हैं, जो पवित्र आत्मा के कार्य द्वारा सद्गुणों में प्रगति कर रहे हैं। इसीलिए धर्मग्रंथ एक स्थान पर कहता है: '*हे तुम सब जो उसके पवित्र हो, परमेश्वर का भय मानो*' (भजन संहिता 33:10), और दूसरे स्थान पर: '*हे तुम सब जो उसके प्रति भक्तिमान हो, प्रभु से प्रेम करो*' (भजन संहिता 30:24), ' ' – जिससे हमारे लिए यह स्पष्ट हो जाता है कि परमेश्वर का भय केवल उन धर्मी लोगों की विशेषता है जो अभी भी शुद्ध हो रहे हैं, जिनके पास, जैसा कि कहा गया है, प्रेम का एक मध्यम स्तर है, जबकि पूर्ण प्रेम उन धर्मी लोगों की विशेषता है जो शुद्ध हो चुके हैं; और उनमें अब कोई भयपूर्ण विचार नहीं रहता, बल्कि पवित्र आत्मा के कार्य द्वारा, परमेश्वर के प्रति आत्मा की अखंड उत्सुकता और आसक्ति ही शेष रहती है, जैसा कि भविष्यवक्ता कहते हैं: '*मेरी आत्मा तुझ से चिपकी रहती है; तेरा दाहिना हाथ मुझे सम्हाला रखे*' (भजन संहिता 62:9)।

१७. *परमेश्वर के भय की शक्ति द्वारा एक बीमार आत्मा कैसे चंगा होना शुरू करती है,*
और कैसे, धीरे-धीरे, इसे प्रेम के द्वारा पूर्ण स्वास्थ्य तक पहुँचाया जाता है।

जिस प्रकार शरीर में होने वाले घाव, यदि उन्हें जैसे होना चाहिए वैसे साफ और तैयार नहीं किया जाता है, तो वे डॉक्टरों द्वारा लगाए गए औषधियों का असर नहीं करते हैं; लेकिन जब उन्हें साफ कर दिया जाता है, तो वे औषधियों का असर करती हैं और इस प्रकार पूर्ण रूप से ठीक हो जाती हैं: इसी प्रकार आत्मा, जब तक वह लापरवाह रहती है और कामुकता के कोढ़ से ढकी रहती है, तब तक वह परमेश्वर के भय को महसूस नहीं कर सकती, भले ही कोई उसे परमेश्वर के भयानक और अटूट न्याय के बारे में लगातार समझाता रहे; परन्तु जब यह पूर्ण आत्म-ध्यान के अभ्यास द्वारा स्वयं को शुद्ध करना शुरू करती है, तो यह परमेश्वर के भय को एक प्रकार की जीवन-दायक औषधि के रूप में महसूस करना शुरू कर देती है, जो फटकारों के प्रभाव से इसे किसी आग में की तरह भस्म कर देता है; और इस प्रकार, धीरे-धीरे शुद्ध होकर, यह अंततःपूर्ण शुद्धि को प्राप्त करती है। साथ ही, उसमें जितना अधिक प्रेम होता है, उतना ही भय घटता है, जब तक कि वह पूर्ण प्रेम को प्राप्त नहीं कर लेती, जिसमें, जैसा कि कहा गया है, कोई भय नहीं है, बल्कि ईश्वर की महिमा से उत्पन्न पूर्ण वैराग्य है। सबसे पहले परमेश्वर का भय, और अंततःप्रेम—जो मसीह में पूर्णता के विधान की पूर्ति है—हमारे लिए अनवरत स्तुति का स्रोत बने।

१८. *सांसारिक चिन्ताओं में उलझी आत्मा ईश्वर से प्रेम नहीं कर सकती*
या यहाँ तक कि अपनी स्थिति का सही आकलन भी नहीं कर सकती।

जो आत्मा सांसारिक चिंताओं से मुक्त नहीं हुई है, वह न तो ईश्वर से सच्चे मन से प्रेम करेगी और न ही जैसा होना चाहिए, वैसे शैतान से घृणा करेगी। इस सांसारिक जीवन की चिंता उस पर एक भारी आवरण की तरह बोझिल होती

है, और उसका मन इस मामले पर अपने भीतर एक न्याय-सभा स्थापति नहीं कर पाता, ताकि वह अपने भीतर उस सभा (अंतरात्मा) के अचूक निर्णयों को सुन सके। इसीलिए हर तरह से संसार से अलग-थलग होना आवश्यक है।

19. *एक शुद्ध आत्मा की विशेषता।*

एक शुद्ध आत्मा की पहचान ईर्ष्या से रहति शब्दों, दुर्भावना रहति उत्साह, और प्रभु की महिमा के लिए अटूट चिंता से होती है। तब (जब आत्मा शुद्ध होती है) मन निष्ठापूर्वक अपनी तुला स्थापति करता है (जैसे तराजू के पलड़े सेट किए जाते हैं), और सभी चीजों के अपने निर्णय में संयम बनाए रखता है, जैसे कि सबसे शुद्ध और सबसे अक्षुण्ण न्यायालय में।

20. *कर्मों को विश्वास के साथ, और विश्वास को कर्मों के साथ मिलाना आवश्यक है।*

कर्म रहति विश्वास, और विश्वास रहति कर्म, दोनों ही समान रूप से अस्वीकार्य हैं। एक विश्वासी को, अपने विश्वास को साबति करने के लिए, प्रभु को कर्म अर्पति करने चाहिए। और यदि हमारे पिता इब्राहीम ने उसका फल—अपने पुत्र को—परमेश्वर के लिए बलिदान के रूप में नहीं चढ़ाया होता, तो हमारे पिता इब्राहीम का विश्वास भी धार्मिकता के रूप में नहीं गिना जाता।

21. *कर्म रहति विश्वास क्या है, और प्रेम में कार्य करने वाला विश्वास क्या है?*

जो ईश्वर से प्रेम करता है, वह सच्चे मन से विश्वास करता है और विश्वास के कार्य ईश्वर-भय से करता है। लेकिन जो केवल विश्वास करता है, प्रेम में और उसी विश्वास में स्थिर हुए बिना जिसे वह अपना होने का दिखावा करता है, वह वास्तव में उसे धारण नहीं करता। वह एक तरह की हल्की-फुल्की मानसिकता से विश्वास करता है, जिसमें महिमामय प्रेम की प्रभावकारी (और एकजुट करने वाली) सीध का अभाव होता है। केवल *'प्रेम द्वारा कार्य करने वाला विश्वास'* (गलातियों 5:6) ही गुणों का महान शिखर है।

२२. किसी *को जिज्ञासावश विश्वास की गहराइयों में खोज-परख नहीं करनी चाहिए।*

जो विश्वास की गहराइयों को परखता है, वह विचारों की लहरों से इधर-उधर उछाला जाता है; लेकिन जो इसे सरल हृदय से मनन करता है, वह एक मधुर आंतरिक शांति का अनुभव करता है। विश्वास की गहराई, विस्मृति का जल होने के कारण, जिज्ञासु विचारों से परखी या निहारी जाने को सहन नहीं करती। इसलिए आइए हम सरल मन से इन जलराशियों पर नौका चलाएँ, ताकि इस प्रकार हम ईश्वर की इच्छा के बंदरगाह तक पहुँच सकें।

२३. *जब आत्मा, हृदय की अनुभूति या स्वाद के माध्यम से नहीं कर सकती*

स्वर्गीय आशीर्वादों की सुगंध ग्रहण कर सके, भले ही वह उन्हें तीव्रता से चाहती हो।

कोई भी तब तक सच्चे मन से प्रेम या विश्वास नहीं कर सकता जब तक वह स्वयं अपना न्यायाधीश न बने। क्योंकि जब हमारा अंतरात्मा अपनी ही फटकारों से परेशान होता है, तो मन को परम आशीर्वादों की सुगंध को महसूस करने की अनुमति नहीं मिलती, बल्कि वह तुरंत संदेह से विक्षिप्त हो जाता है: विश्वास के पिछले अनुभवों के कारण, आत्मा एक गर्मजोशी भरी प्रवृत्ति के साथ उनकी लालसा करती है, फिर भी, जैसा कि मैंने कहा है, एक फटकारने वाले अंतकरण के बार-बार होने वाले कष्टों के कारण, वह अब उन्हें हृदय की भावनाओं में प्रेमपूर्वक प्राप्त नहीं कर सकती। हालाँकि, यदि हम सबसे प्रबल प्रार्थना और एकाग्रता के द्वारा स्वयं को शुद्ध करते हैं, तो हम इस लालायित आशीर्वाद को एक बार फिर से प्राप्त करेंगे, और साथ ही हमें इसके लिए ईश्वर-प्रदत्त, और भी अधिक गहरी कृतज्ञता प्राप्त होगी।

24. *द्वैत अर्थ, शारीरिक और आध्यात्मिक, और कैसे एक को करना चाहिए*

आत्मिक इंद्रिय को स्वर्गीय वस्तुओं के आनंद के लिए जागृत करना चाहिए।

जिस प्रकार हमारी शारीरिक इंद्रियाँ अनैच्छिक रूप से हमें हमारे लिए दृश्यमान आशीर्वादों की ओर खींचती हैं, उसी प्रकार हमारी बौद्धिक—या आध्यात्मिक—इंद्रिय भी आमतौर पर हमें अदृश्य आशीर्वादों की ओर मार्गदर्शन करती है जब वह दिव्य सद्गुणों का आस्वादन करती है। हर वस्तु उसी की लालसा करती है जो उससे मिलती-जुलती हो: आत्मा, अदेह होने के कारण, दिव्य आशीर्वादों की लालसा करती है, जबकि शरीर, पृथ्वी का होने के कारण, सांसारिक सुखों की लालसा करता है। इस प्रकार, यदि हम परिश्रम द्वारा अपने कठोर शरीर को परिष्कृत करें, तो हम अनुभव के माध्यम से अदेह का अनुभव करने की अवस्था को निश्चय ही प्राप्त करेंगे।

25. *आत्मा की संवेदनशीलता, अपने कार्य में, एक थी*

निर्दोषता की अवस्था में एक था; पतन के माध्यम से यह विभाजित हो गया,

और पवित्र आत्मा का अनुग्रह इसे एक बार फिर से एकता की सादगी में बहाल कर देता है।

कि प्राकृतिक शक्ति एक है, यह हमें पवित्र ज्ञान (अनुग्रह से प्रबुद्ध मन) की क्रिया से ही सिखाया जाता है। आदम के उल्लंघन के द्वारा, यह क्रिया के दो रूपों में विभाजित हो गया; परन्तु पवित्र आत्मा के द्वारा, यह फिर

से एक और सरल बना दयिा जाता है। फरि भी कोई भी यह अपने भीतर तब तक नहीं समझ सकता, जब तक कि वे भवषि्य के आशीर्वादों की आशा में, इस जीवन के आशीर्वादों को स्वेच्छा से त्याग न दें, और संयम के द्वारा देह की इंद्रयिों की हर इच्छा को सूखा न दें। क्योंकि केवल ऐसे लोगों में ही मन, चिंता से पूरी तरह मुक्त होकर और अपने कार्यों को सही और दृढ़ता से करते हुए, इंद्रयिों के माध्यम से अकथनीय ढंग से दैवीय भलाई का अनुभव करता है; और साथ ही, जैसे-जैसे यह आगे बढ़ता है, यह अपनी खुशयिाँ शरीर के साथ साझा करता है, और प्रेम के असीम शब्द के साथ स्वीकारोक्ति के माध्यम से अपनी प्रसन्नता व्यक्त करता है, यह कहते हुए: *'मेरा हृदय उस पर भरोसा रखता है, और वह मेरी सहायता करेगा; मेरा शरीर फल-फूल उठेगा, और मैं उसकी स्तुति करूँगा'* (भजन संहिता 27:7)। इस प्रकार की आनंद, जो इस उदाहरण में आत्मा और शरीर दोनों में होती है, शाश्वत अवनिाशी जीवन की एक वनिम्र याद दलिाती है।

26. *मन को अवचिलति रखना चाहिए,*

ताकि विचिारों को सही ढंग से परखा जा सके, कि वे ईश्वर से हैं या शैतान से।

जो लोग आध्यात्मकि वकिास के लिए प्रयास करते हैं, उन्हें हमेशा अपने वचिारों को नयिंत्रति रखना चाहिए, ताकि मन उन वचिारों को सही ढंग से पहचान सके जो उस पर आक्रमण करते हैं; और, उन्हें पहचानने के बाद, अच्छे और ईश्वर-प्रेरति वचिारों को स्मृति के कोष में संग्रहीत करे, जबकि अस्वास्थ्यकर और दैवीय वचिारों को आत्मा के कोनों से बाहर फेंक दे। और समुद्र, जब शांत होता है, तो मछली पकड़ने वालों को उसकी गहराइयों तक दखिाई देता है, ताकि वहाँ चलने-फरिने वाले लगभग कोई भी जीव उनसे छपिे न रहें; लेकनि जब हवाओं से वह उथल-पुथल मच जाता है, तो वह अपनी अथाह धुंधलकापन में उस सब कुछ छपिा लेता है, जसिे सुखद शांति के समय उसने उदारतापूर्वक प्रकट कयिा था; जसिके परणिामस्वरूप मछली पकड़ने की तरकीबें रचने वालों की कला बेकार हो जाती है। चिंतिनशील मन के साथ भी यही होता है, वशिेषकर जब आत्मा की गहराइयों को अन्यायपूर्ण क्रोध से हलिा दयिा जाता है।

27. *अपनी कमयिों को पूरी तरह से समझने वाले इतने कम क्यों हैं,*

और इसे प्राप्त करने के लिए क्या आवश्यक है।

बहुत कम लोग ही हैं जो अपनी सभी कमयिों से पूरी तरह वाकफि हों, और जनिका मन कभी ईश्वर की याद से भटकता न हो। जैसे हमारी शारीरकि आँखें, जब स्वस्थ होती हैं, तो हवा में उड़ते हुए सूक्ष्म मच्छरों और मक्खयिों तक को भी स्पष्ट रूप से देख सकती हैं; लेकनि जब वे धूल-मट्टिी या नमी से ढँक जाती हैं, तो वे बड़े और लगातार सामने रहने वाले वस्तुओं को ही, यद्यपि धुंधले रूप में, देख पाती हैं, जबकि अपनी दृष्टि से छोटे वस्तुओं को बलि्कुल भी देख नहीं पातीं: इसी प्रकार आत्मा भी, जब आत्म-चिंतिन द्वारा वह सांसारकिता से उत्पन्न अंधकार को दूर करती है, तो अपनी छोटी-छोटी कमयिों को भी बहुत बड़ा मानती है, और बड़ी कृतज्ञता के साथ आँसू पर आँसू बहाती है, उन पर वलिाप करती है – जैसा कि कहा गया है: *'धर्मी तेरे नाम का प्रचार करेंगे'* (भजन संहिता 139:14); परन्तु जब वह सांसारकि स्वभाव से वशीभूत हो जाता है, तो भले ही वह हत्या या कोई अन्य दण्डनीय अपराध कर दे, उसे बहुत कम पश्चाताप होता है; जहाँ तक अन्य दोषों की बात है, वह उन्हें महसूस भी नहीं कर पाता, और अक्सर उन्हें गुणों के रूप में भी देखता है, और उन दुष्ट आत्मा की तरह, उनका जोशपूर्वक बचाव करने में भी शर्म नहीं आती।

28. *पवति्र आत्मा आत्मा को कैसे शुद्ध करता है, और इसे प्राप्त करने के लिए हमें क्या करना चाहिए।*

मन को शुद्ध करना केवल पवति्र आत्मा का ही कार्य है। क्योंकि जब तक वह सब से बलवान नहीं आता, और उस शकिारी को पकड़कर बाँध नहीं देता (लूका 11:22), जो उससे छीन लयिा गया है, उसे वापस नहीं पाया जा सकता। इसलिए यह उचति है कि हम हर सद्गुण के द्वारा, और सबसे बढ़कर मन की शांति के द्वारा, अपने भीतर पवति्र आत्मा को प्रसन्न करें, ताकि हमारे भीतर ववि‍ेक का दीपक सदैव जलता रहे; क्योंकि जब वह आत्मा के गहनतम कोनों में अनवरत रूप से प्रकाशति होता है, तो न केवल दुष्टात्माओं के सबसे छोटे, अंधकारमय सुझाव मन में प्रकट होते हैं, बल्कि वे उस पवति्र और महमिामय प्रकाश द्वारा उजागर होकर शक्तहिीन और अस्थरि भी हो जाते हैं। इसीलिए प्रेरति कहते हैं: *'आत्मा को बुझाओ नहीं'* (1 थस्सि. 5:19), अर्थात्, बुरे कर्मों या वचिारों से पवति्र आत्मा की कृपा को *'अपमानति'* (इफसियिों 4:30) मत *करो,* कहीं ऐसा न हो कि हम उस सर्व-वजियी ' ' दीपक से वंचति हो जाएँ। क्योंकि इस प्रकार बुझाया जाने वाला सर्वदा उपस्थति और जीवन-दायक आत्मा नहीं है, बल्कि उसकी व्यथा—या यूँ कहें कि उसका हट जाना—हमारे मन को कठोर और ज्ञान के प्रकाश से पराया कर देती है।

29. *पाप से पहले आत्मा की संवेदनशीलता की एकता पर*

और पाप के कारण उसके वभिाजन – और इस तथ्य पर

जब एक अतार्ककि इच्छा एकजुट हो जाती है

और यह तर्कसंगत के अनुरूप है।

जैसा कि मैंने कहा है, आत्मा में केवल एक ही प्राकृतिक शक्ति है [क्योंकि पाँचों प्रसिद्ध शारीरिक इंद्रियाँ एक अलग मामला हैं; वे शरीर की आवश्यकताओं की पूर्ति करती हैं, जैसा कि सर्व-पवित्र और परोपकारी ईश्वर की आत्मा हमें सिखाती है]; लेकिन अब, आत्मा की गतिविधियों के प्रकट होने पर, यह दो भागों में विभाजित हो गई है, बुराई की प्रवृत्ति के कारण, जो अवज्ञा के माध्यम से मन से जुड़ गई है। कभी-कभी, यह आत्मा के भावुक भाग की ओर आकर्षित होती है—जिसके द्वारा हम इस जीवन की نعمت में मधुर आनंद लेते हैं; अन्य समयों में, यह अपनी तर्कसंगत, बौद्धिक गतिविधियों में आनंदित होती है—क्योंकि, जब हम आत्म-संयम का अभ्यास करते हैं, तो हमारा मन दिव्य सुंदरताओं से पोषित होने के लिए तरसता है। इसलिए, यदि हम इस संसार की वस्तुओं को तुच्छ समझने के आदी हो जाएँ, तो अंततः हम पवित्र आत्मा के सहवास के द्वारा, जो हम में वास करता है, आत्मा की सांसारिक इच्छाओं को उसकी तर्कसंगत प्रकृति के अनुरूप ला सकेंगे। क्योंकि जब तक उसकी दिव्यता हमारे हृदय के सबसे भीतरी कोनों को प्रभावी रूप से प्रकाशित नहीं करती, हम स्वर्गीय आशीर्वादों का एक अविभाजित अनुभूति से, अर्थात् आत्मा की संपूर्ण प्रवृत्ति से, स्वाद लेने में असमर्थ रहेंगे।

३०. *मन का विवेक कब और कैसे सच्चे सांत्वनाओं को झूठी सांत्वनाओं से अलग करता है।*

मन की शक्ति उसकी विवेक-बुद्धि है, जो आध्यात्मिक मामलों को सटीक रूप से अलग करती है। जिस प्रकार हमारे शरीर की स्वाद इंद्रिय, जब वह स्वस्थ अवस्था में होती है, तो बिना चूके अच्छे को बुरे से अलग पहचानती है, और सुखद की इच्छा करती है (जबकि अप्रिय चीज़ों से मुंह मोड़ लेती है): उसी प्रकार हमारा मन भी, जब वह एक अच्छे मनोभाव में और क्षणिक चीज़ों से पूर्ण रूप से अलग होकर कार्य करना शुरू करता है, तो वह दिव्य सांत्वना का भरपूर अनुभव कर सकता है और इसके विपरीत किसी भी चीज़ से थोड़े भी भटक नहीं सकता। क्योंकि जैसे शरीर, सांसारिक सुखों का स्वाद लेकर, इस संबंध में अचूक अनुभव प्राप्त करता है; वैसे ही मन भी, जब वह सांसारिक कल्पनाओं से ऊपर उठता है, तो पवित्र आत्मा के सांत्वना का स्वाद चख सकता है और उसे बिना किसी त्रुटि के पहचान सकता है, जैसा कि कहा गया है: *'चखो और देखो कि प्रभु भला है'* (भजन संहिता 33:9), और, प्रेम के अविस्मरणीय कार्य के माध्यम से इस अनुभव को ध्यान में रखते हुए, पवित्र प्रेरित के वचनों के अनुसार, त्रुटि के बिना यह समझने के लिए कि क्या सर्वोत्तम है: *'और यह मैं प्रार्थना करता हूँ कि तुम्हारा प्रेम ज्ञान और हर प्रकार की समझ में और अधिक बढ़ता जाए, ताकि तुम यह परख सको कि क्या उत्तम है'* (फिलि. 1:9)।

३१. *शैतान के झूठे सांत्वना पर, जिसे वह मनुष्य के सोते समय भरता है,*
और कैसे मन यीशु के नाम की हार्दिक पुकार से इसे दूर करता है
और स्वयं शैतान को भागने पर मजबूर कर देता है।

जब मन पवित्र आत्मा की अनुग्रहकारी सांत्वना को महसूस करना शुरू करता है, तो शैतान भी रात की शांति के दौरान, सबसे सूक्ष्म प्रकार की नींद (या सोते समय) के क्षण में, एक मीठी सी अनुभूति के माध्यम से आत्मा में अपनी सांत्वना भर देता है। यदि, उस समय, मन स्वयं को प्रभु यीशु के पवित्र नाम को अत्यंत स्नेहपूर्ण स्मरण में धारण करते हुए पाता है, और इस परम पवित्र और महिमामय नाम का उपयोग भ्रम के विरुद्ध एक निश्चित हथियार के रूप में करता है, तो वह धूर्त धोखेबाज़ तुरंत पीछे हट जाता है, लेकिन बदले में अंततः अपनी ही सूरत से आत्मा पर हमला करता है (और केवल विचारों के माध्यम से नहीं)। इस प्रकार, दुष्ट की कपटी युक्तियों को सही ढंग से पहचानकर, मन आध्यात्मिक मामलों में अंतर करने में अधिक से अधिक सफल होता है।

32. *आत्मा के आराम पर, चाहे जागते हुए*
या जबकि वह नींद में विश्राम कर रहा हो, और कैसे शैतान
सोते समय आत्मा को झूठी सांत्वना से धोखा देने का प्रयास करता है।

सच्ची सांत्वना या तो तब होती है जब शरीर जागृत होता है, या जब वह नींद में डूब रहा होता है, जब कोई, ईश्वर की गर्मजोशी भरी स्मृति में, मानो प्रेम से उनके करीब खींचा जाता है; जबकि कपटी, मोहक सांत्वना, जैसा कि मैंने कहा है, हमेशा उस क्षण में होती है जब तपस्वी एक सूक्ष्म प्रकार की उनींदापन या विचलित अवस्था में पड़ जाता है, जबकि ईश्वर की उसकी याद केवल मध्यम होती है। जो ईश्वर से उत्पन्न होती है, वह स्पष्ट रूप से धर्मनिष्ठ तपस्वियों की आत्माओं को आत्मा की भावनाओं के एक शक्तिशाली प्रवाह के माध्यम से ईश्वर के प्रेम में खींचती है; जबकि यह आमतौर पर आत्मा को मोहक आकर्षण की एक निश्चित हवा में लपेट लेता है और, जब शरीर सो रहा होता है, तो किसी सुखद चीज़ के स्वाद द्वारा उस अनुभूति को चुराने का प्रयास करता है, भले ही मन ईश्वर की स्मृति में कुछ हद तक सचेत बना रहता है। – इस प्रकार, यदि, जैसा कि मैंने कहा है, मन ऐसे समय में प्रभु यीशु के प्रति गंभीरता से सचेत रहता है, तो यह तुरंत शत्रु की इस छलपूर्ण साँस को, जो सुखद प्रतीत होती है, दूर कर देता है, और

आनन्दपूर्वक उसके विरुद्ध लड़ने के लिए आगे बढ़ता है, और अनुग्रह से, अपने सबसे प्रशंसनीय आध्यात्मिक अनुभव के द्वारा, उसके विरुद्ध हथियार तैयार रखता है।

३३. *पवित्र आत्मा में आनंद और शैतान के झूठे आनंद में क्या अंतर है,*
और जब शैतान झूठी सांत्वना से धोखा देने लगता है।

यदि आत्मा, एक अटूट और एकनिष्ठ गति के साथ, परमेश्वर के प्रेम से प्रज्वलित हो जाती है, और स्वयं शरीर को भी इस अवर्णनीय प्रेम की गहराई में खींच लेती है—चाहे जागते हुए, या, जैसा कि मैंने कहा है, जब संन्यासी, पवित्र अनुग्रह से प्रेरित, निद्रा में डूबा होता है, जब आत्मा उस एक चीज़ के अलावा और कुछ भी नहीं सोचती, जिससे वह प्रेरित है; – तो मनुष्य को जानना चाहिए कि यह पवित्र आत्मा का कार्य है। उस अनुपम दिव्य मधुरता से उत्पन्न सुखद अनुभूतियों से पूरी तरह भर जाने के कारण, वह उस क्षण कुछ और सोच ही नहीं सकती, बल्कि केवल स्वयं को एक अक्षय आनंद से परिपूर्ण महसूस करती है। हालाँकि, यदि ऐसी उत्तेजना की अवस्था में, मन एक निश्चित चंचलता, एक संदेहास्पद या अशुद्ध विचार को महसूस करता है, और यदि, इस मामले में, वह बुराई को दूर करने के लिए, और केवल ईश्वर के प्रति प्रेम से नहीं, बल्कि प्रभु के पवित्र नाम का आह्वान करती है; – तो यह महसूस किया जाना चाहिए कि यह सांत्वना धोखेबाज़ से आती है, और यह आनंद का केवल एक भ्रम है। ऐसी खुशी बाहरी रूप से भर दी जाती है, और यह आत्मा के अंतर्निहित गुण या स्थायी स्वभाव के रूप में प्रकट नहीं होती है; स्पष्ट रूप से, यहाँ शत्रु आत्मा को बहकाने का प्रयास करता है। यह देखकर कि मन अपनी भावनाओं का सच्चा विवेक दिखाना शुरू कर रहा है, वह अपनी निश्चित सांत्वनाओं से आत्मा को सांत्वना देने के लिए पास आता है, जो अच्छी प्रतीत होती हैं, इस आशा में कि इस भ्रामक, फीकी मिठास से विचलित होकर, वह धोखेबाज़ के साथ अपनी उलझन को पहचानने में विफल रहेगा। इन संकेतों से हम *'सत्य के आत्मा और धोखे के आत्मा' में* अंतर कर सकते हैं। (1 यूहन्ना 4:6)। – फिर भी, किसी के लिए भी इंद्रियों से दिव्य भलाई का स्वाद चखना, या शैतान के कष्ट को मूर्त रूप में अनुभव करना असंभव है; जब तक कि कोई अपने भीतर यह निश्चित न कर ले कि अनुग्रह ने उसके मन की गहराई में अपना वास कर लिया है, जबकि दुष्ट आत्माओं के लिए हृदय के अंगों के अलावा और कहीं घोंसला बनाने की कोई जगह नहीं है। हालाँकि, दुष्टात्माओं की यह बिलकुल भी इच्छा नहीं है कि लोग किसी भी तरह से यह जान लें, कहीं ऐसा न हो कि मन, इसे निश्चित रूप से जानकर, परमेश्वर के अखंड स्मरण द्वारा अपने आप को उनके विरुद्ध सशस्त्र कर ले।

34. *प्रेम के दो प्रकारों पर– स्वाभाविक और आध्यात्मिक (कृपा-पूर्ण)*
और उनके बीच के अंतर।

आत्मा में एक स्वाभाविक प्रेम है, और पवित्र आत्मा द्वारा उसमें प्रेम डाला जाता है। पहला, यदि हम चाहें, तो हमारी अपनी इच्छा के माध्यम से अनुपातिक गति में आता है; यही कारण है कि जैसे ही हम अपनी इच्छा को निरंतर प्रयास से बनाए रखना बंद कर देते हैं, तो दुष्ट आत्माएं इसे आसानी से लूट लेती हैं। लेकिन यह प्रेम आत्मा को ईश्वर के प्रति प्रेम से इतना प्रज्वलित कर देता है कि आत्मा के सभी अंग दिव्य प्रेम की अनुपम मिठास से एक असीम सरलता के साथ चिपके रहते हैं; क्योंकि तब मन, मानो, आध्यात्मिक (कृपा-युक्त) ऊर्जा से भरकर, प्रेम और आनंद की एक प्रचुर धारा बहा देता है।

३५. *ईश्वर की कृपा पर, कि कैसे वही अकेले आत्मा की उथली हलचलों को शांत करती है।*

जैसे उथल-पुथल भरा समुद्र, जब उस पर अभिषेक का तेल डाला जाता है, तो आमतौर पर शांत हो जाता है, क्योंकि तेल की समृद्धि तूफान की उठती लहरों की ताकत पर काबू पा लेती है: वैसे ही हमारी आत्मा, जो पवित्र आत्मा की कृपा से अभिषिक्त है, एक मधुर शांति से भर जाती है; क्योंकि, जैसा कि भविष्यवक्ता कहते हैं: *'किन्तु हे मेरी आत्मा, परमेश्वर के साम्हने शांत हो जा'* (भजन संहिता 61:6) – तब, अपनी प्रसन्नता के लिए, उसके भीतर का प्रत्येक उथल-पुथल शांत हो जाता है, और वह उस आत्मा की कृपा के आगे समर्पित हो जाती है जो उस पर छा जाती है, और उससे उत्पन्न होने वाली शांति से परिपूर्ण हो जाती है। इसलिए, उस समय राक्षस आत्मा में चाहे जितनी भी अशांति पैदा करने का प्रयास करें, वह अपने भीतर शांति और आनंद से परिपूर्ण रहती है। लेकिन कोई भी तब तक ऐसी अवस्था प्राप्त नहीं कर सकता, और न ही उसमें बना रह सकता है, जब तक कि वह निरंतर ईश्वर के भय से अपनी आत्मा को अनुशासित और शांत न करे; क्योंकि प्रभु का भय उन लोगों को जो प्रयास करते हैं, एक प्रकार की पवित्रता और निर्दोषता प्रदान करता है। *'प्रभु का भय शुद्ध है,'* भविष्यवक्ता कहते हैं, *'जो युगानुयुग तक रहता है'* (भजन संहिता 18:10)।

36. *आत्मा परमेश्वर की महिमा को कैसे और कब अनुभव कर सकती है;*
और शैतान की छल-कपट पर, जो कभी-कभी प्रकाश दिखाता है,
या प्रकाश जैसी कोई वस्तु।

मन की इस अनुभूति को सुनकर कोई यह न सोचे कि उसे इंद्रियों के द्वारा ईश्वर की महिमा दिखाई देती है। हम कहते हैं कि जब आत्मा शुद्ध होती है, तो वह एक प्रकार के अनुपम स्वाद के माध्यम से दैवी सांत्वना का अनुभव करती है, लेकिन इस तरह से नहीं कि अदृश्य में से कुछ भी इंद्रियात्मक रूप से उसके सामने प्रकट हो; *'क्योंकि अब हम विश्वास से चलते हैं, दृष्टि से नहीं'*, जैसा कि धन्य पौलुस कहते हैं (2 कुरिन्थियों 5:7)। इसलिए, यदि आध्यात्मिक जीवन में प्रयासरत कोई भी व्यक्ति प्रकाश, या कोई अग्निमय दर्शन देखे, या कोई आवाज सुने, तो उसे किसी भी परिस्थिति में ऐसे प्रकट होने को सत्य न मानना चाहिए। क्योंकि यह स्पष्ट रूप से शत्रु की एक धोखाधड़ी है - और जिनके साथ ऐसा हुआ है, उनमें से कई अज्ञानता के कारण, सच्चे मार्ग से भटक गए हैं। हम, हालाँकि, जानते हैं कि जब तक हम इस नश्वर शरीर में परदेशी के रूप में रहते हैं, हम परमेश्वर से अलग हैं (2 कुरिन्थियों 5:6)—अर्थात्, हम न तो उन्हें और न ही स्वर्ग में उनकी अद्भुत बातों को देख सकते हैं।

37. *ईश्वर द्वारा भेजे गए स्वप्नों और शैतान द्वारा प्रेरित स्वप्नों पर, और उनके बीच के अंतर पर।*

ईश्वर के प्रेम से आत्मा तक पहुँचने वाले स्वप्न आध्यात्मिक स्वास्थ्य के अचूक संकेतक हैं। वे एक चित्र से दूसरे चित्र में नहीं बदलते; वे भय नहीं पैदा करते, न ही वे हँसी या अचानक दुख को भड़काते हैं, बल्कि परम कोमलता के साथ आत्मा के पास आते हैं और उसे आध्यात्मिक आनंद से भर देते हैं; इसीलिए आत्मा, शरीर के जागने के बाद भी, पूरी लालसा के साथ उस आनंद की खोज करती है जो उसने सपने में अनुभव किया था। दैवीय दृष्टियों के साथ, यह सब इसके विपरीत होता है - वे एक ही रूप में नहीं रहते, न ही वे अपने स्वरूप को लंबे समय तक एक शांत मन को प्रकट करते हैं; क्योंकि वे उस चीज़ से लंबे समय तक संतुष्ट नहीं रह सकते जो उनकी अपनी इच्छा से नहीं है, बल्कि जिसे वे केवल अपनी ही कपटपूर्णता से आकर्षित करते हैं। साथ ही, वे लंबी-लंबी बातें करते हैं और बड़ी-बड़ी बातों का वादा करते हैं, जबकि धमकियों से हमें और भी अधिक डराते हैं, अक्सर योद्धाओं का रूप धारण करते हैं; कभी-कभी वे एक ऊँचे स्वर में आत्मा की चापलूसी करते हुए गाते हैं। जब मन स्पष्ट होता है, तो वह उन्हें जल्दी पहचान लेता है, और—कभी-कभी मानसिक प्रयास से वह शरीर को जगा देता है, जबकि अन्य समयों में वह उसी अवस्था में बने रहने को प्राथमिकता देता है, इस बात की प्रसन्नता व्यक्त करते हुए कि वह उनकी धोखाधड़ी को पहचानने और सपने के भीतर भी उन्हें बेनकाब करने में सक्षम हुआ है, जिससे उनमें अपने ही खिलाफ एक महान क्रोध उत्पन्न होता है। – हालाँकि, ऐसा भी होता है कि अच्छे सपने भी आत्मा को आनंद नहीं, बल्कि एक प्रकार का मधुर दुख और एक ऐसा आँसू देते हैं जो दर्द नहीं देता। यह उन लोगों के साथ होता है जिन्होंने पहले ही महान विनम्रता प्राप्त कर ली है।

३८. *किसी भी स्वप्न पर विश्वास न करने का सद्गुण।*

हमने अनुभव वाले बुजुर्गों से जो स्वयं सुना है, उसके आधार पर अच्छे और बुरे सपनों में अंतर करना बताया है। तथापि, हमें उस नियम पर और भी दृढ़ता से अडिग रहना चाहिए—एक महान सद्गुण के रूप में—कि हमें किसी भी सपने पर किसी भी हालत में विश्वास नहीं करना चाहिए। क्योंकि सपने, अधिकांशतः मन की मूर्तियों, कल्पना की लीला, या, जैसा कि मैं पहले ही कह चुका हूँ, हमारे खर्च पर शैतान का उपहास और मनोरंजन ही हैं। यदि, इस नियम का पालन करते हुए, हम कभी-कभी ईश्वर द्वारा भेजे गए किसी स्वप्न को स्वीकार करने में असफल हो जाते हैं, तो प्रेममय प्रभु यीशु हम पर इसके लिए क्रोधित नहीं होंगे, यह जानते हुए कि हम शैतान की चालाकियों के डर से ऐसा करने की हिम्मत करते हैं। क्योंकि यद्यपि सपनों को परखने की उपरोक्त विधि ठोस है, तथापि ऐसा होता है कि आत्मा, किसी शत्रु-प्रेरित आनंद-उन्मत्तता से सुन्न हो कर और अनजाने में कलंकित हो कर – एक ऐसी अवस्था जिससे, मुझे विश्वास है, कोई भी अछूता नहीं है – विवेक की सुई खो बैठती है और बुरे सपनों को अच्छे समझ बैठती है।

39. *एक उदाहरण जो यह साबित करता है कि ईश्वर किसी को भी जवाबदेह नहीं ठहराता*

क्योंकि उसने उसकी ओर से भेजे गए सपनों पर विश्वास नहीं किया।

जो कहा गया है, उसके प्रमाण के रूप में निम्नलिखित घटना को देखें: एक मालिक, लंबे समय तक घर से दूर रहने के बाद, रात में द्वार पर खड़ा होता है और अपने नौकर को इसे खोलने के लिए पुकारता है; नौकर, यह निश्चित रूप से पहचान नहीं पा रहा था कि यह उसके मालिक ही थे, इसलिए उसने दृढ़ता से उन्हें अंदर आने से इनकार कर दिया, इस डर से कि आवाज़ की समानता से धोखा खाकर, वह किसी बदमाश को अंदर ले आ सकता है और इस प्रकार अपने मालिक द्वारा सौंपी गई संपत्ति के प्रति विश्वासघात कर सकता है; और जब दिन चढ़ा, तो मालिक न केवल इस बात पर नाराज़ नहीं हुआ, बल्कि इसके विपरीत उसने उसकी बहुत प्रशंसा की, यह मानते हुए कि नौकर ने अपनी ही आवाज़ को धोखा समझ लिया था, क्योंकि वह अपनी संपत्ति का कोई भी हिस्सा खोना नहीं चाहता था।

४०. *आत्मा द्वारा अपने भीतर की आध्यात्मिक ज्योति की अनुभूति पर, शत्रु की ज्योतियों पर*

और इस पर कि दुनिया में रहते हुए, कोई दुनिया से अलग कैसे रहे।

इसमें कोई संदेह नहीं है कि जब दिव्य प्रकाश हमारे मन के भीतर मूर्त रूप से कार्य करना शुरू कर देता है, तो वह पूरी तरह से प्रकाशमान हो जाता है, ताकि वह स्वयं उस प्रकाश को प्रचुर मात्रा में अनुभव कर सके जो उसमें निहित है। ऐसा हमेशा तब होता है जब आत्मा भावों पर दृढ़ अधिकार प्राप्त कर लेती है। लेकिन ऐसा होता है कि शत्रु की दुष्टता से, मन में इसी जैसी कोई वस्तु मायावी रूप से प्रकट होती है, कभी प्रकाश के रूप में, कभी आग के रूप में; जैसा कि दिव्य पौलुस सिखाते हैं, कहते हुए कि यहाँ तक कि *'शैतान' भी* कभी-कभी *'स्वयं को प्रकाश के स्वर्गदूत के रूप में प्रकट करता है'* (2 कुरिन्थियों 11:14)। इसलिए, किसी को भी ऐसे आशा (अर्थात् अपने भीतर प्रकाश देखने की आशा) के साथ तपस्या के जीवन में प्रवेश नहीं करना चाहिए, कहीं ऐसा न हो कि शैतान आत्मा को प्रलोभन के लिए तैयार पाकर वास्तव में उसे भटका दे। लेकिन इस संबंध में एक बात को ध्यान में रखना चाहिए, अर्थात् हर इंद्रिय और हृदय की पूर्ण दृढ़ता से परमेश्वर के प्रति प्रेम प्राप्त करना – जो कि परमेश्वर से अपनी पूरी आत्मा, पूरे हृदय और पूरे मन से प्रेम करना है (लूका 10:27)। जो कोई भी इस प्रकार परमेश्वर की कृपा से प्रेरित होता है, वह संसार में रहते हुए भी संसार से अलग रहता है।

४१. *आज्ञाकारिता पर— कि यह सबसे महान गुण है,*

यह प्रेम का द्वार है और सभी सद्गुणों का अग्रदूत है।

आज्ञाकारिता, जैसा कि सर्वविदित है, आरंभिक (नवसिखुआ) सद्गुणों में सबसे प्रमुख है; क्योंकि यह अहंकार को समाप्त करती है और हमारे भीतर विनम्रता उत्पन्न करती है। इसीलिए यह मसीह—ईश्वर—के प्रति प्रेम के द्वार के रूप में कार्य करती है, उन लोगों के लिए जो इसे स्वेच्छा से अपनाते हैं। इसे त्याग देने के बाद, आदम नरक की गहराइयों में गिर गया। परन्तु प्रभु ने, उसे प्रेम करके, हमारे उद्धार के लिए, क्रूस और मृत्यु तक अपने पिता के आज्ञाकारी रहे (फिलि. 2:8), – और यह, भले ही वह अपनी महिमा में किसी भी प्रकार से से हीन नहीं थे – ताकि, अपनी आज्ञाकारिता से, वह मानव की अवज्ञा के दोष का प्रायश्चित कर सकें और आज्ञाकारिता में जीने वालों को एक धन्य और शाश्वत जीवन की ओर ले जा सकें। इसलिए, जो लोग शैतान के घमंड के विरुद्ध संघर्ष करते हैं, उन्हें सर्वप्रथम इस गुण के लिए प्रयासरत होना चाहिए; और यह गुण, मार्गदर्शन करते हुए, तब निश्चियपूर्वक उन्हें सभी सद्गुणों के मार्ग दिखाएगा।

४२. *इस तथ्य पर कि सभी चीजों में संयम का अभ्यास किया जाना चाहिए,*

ताकि सद्गुण केवल शरीर द्वारा ही नहीं,

बल्कि वे भी जो आंतरिक व्यक्ति को शुद्ध करते हैं।

संयम सभी सद्गुणों का एक अनिवार्य अंग है; इसीलिए *'जो अनुशासन करता है'* उसे 'हर बात से *परहेज़' करना* चाहिए (1 कुरिन्थियों 9:25)। जिस प्रकार, जब मानव शरीर का सबसे छोटा अंग भी हटा दिया जाता है, तो व्यक्ति का पूरा रूप विकृत हो जाता है, भले ही वह छोड़ा गया अंग कितना भी छोटा क्यों न हो: उसी प्रकार, जब कोई व्यक्ति एक भी सद्गुण की उपेक्षा करता है, तो वे संयम की संपूर्ण भव्यता को बाधित कर देते हैं, भले ही वे इसे महसूस न करें। तो फिर, हमें न केवल उन सद्गुणों का अभ्यास क्यों करना चाहिए जो शरीर के लिए कठिन हैं, बल्कि उन सद्गुणों का भी जो हमारे अंतर्मन को शुद्ध करने की शक्ति रखते हैं? क्योंकि शरीर को पवित्र रखना क्या उपयोग है, जब आत्मा अवज्ञा के दैत्य के साथ व्यभिचार करती है? या फिर उस व्यक्ति का मुकुट कैसे सजेगा जो तो खाने-पीने की लत और हर दूसरी शारीरिक वासना से खुद को बचाता है, पर अहंकार और दंभ की अनदेखी करता है, और थोड़ी सी भी अपमान सहन नहीं कर पाता; जबकि यह जानते हुए कि धार्मिकता का प्रकाश केवल उन लोगों के धार्मिक कर्मों से (प्रतिकार की) तराजू को संतुलित करेगा, जिन्होंने उन्हें विनम्रता की भावना से किया है?

४३. *भोजन में संयम के लाभ और उसके अभ्यास के तरीकों पर।*

जो आध्यात्मिक जीवन में प्रयास करते हैं, उन्हें सभी अनकही कामनाओं से इतना घृणा करनी चाहिए कि यह घृणा उनके लिए स्वाभाविक हो जाए। जहाँ तक भोजन में संयम का प्रश्न है, इसका पालन इस प्रकार किया जाना चाहिए कि कोई भी किसी भी भोजन को घृणित मानने तक कभी न पहुँचे। यह एक शैतानी कर्म है और यह शपथ लेने के समान है। क्योंकि हम कुछ खाद्य पदार्थों से इसलिए परहेज़ नहीं करते कि वे स्वभाव से बुरे हैं - ईश्वर न करे! – बल्कि इसलिए कि, उनसे परहेज़ करके, हम शरीर की प्रबल कामनाओं को उतनी ही मात्रा में वश में कर सकें; और यह भी ताकि हमारे उपभोग से बचे हुए भोजन को गरीबों की दैनिक ज़रूरतों की पूर्ति के लिए लगाया जा सके – जो सच्चे प्रेम का संकेत है।

४४. *भोजन और अन्य सुखों के आनंद को त्यागना कैसे आसान बनाया जाए।*

जो कुछ भी परोसा जाता है, उसे परमेश्वर का धन्यवाद करते हुए खाना और पीना, दृष्टि के नियम के विरुद्ध किसी भी तरह से नहीं है; क्योंकि परमेश्वर की सभी सृष्टियाँ *'बहुत अच्छी' हैं* (उत्पत्ति 1:31)। लेकिन अपनी मर्जी

से अधकि खाने और मठिाइयाँ खाने से परहेज़ करना अत्यंत समझदारी और बुद्धमिानी है। – फरि भी हम अपनी सामने रखी गई सुख-सुवधिाओं को तब तक इतनी सहजता से त्याग नहीं सकते, जब तक कि हम वास्तवकि अभ्यास और अनुभव के माध्यम से, अपनी सभी इंद्रयिों से दवि्य मठिास का स्वाद न चख लें।

४५. *अत्यधकि संयम के अस्वीकार पर,*

ताकि शरीर आध्यात्मकि प्रयासों के लिए मजबूत बना रहे।

जैसे अत्यधकि भोजन के भार से हमारा शरीर मन को कुछ हद तक लापरवाह और सुस्त बना देता है, वैसे ही अत्यधकि संयम से थका हुआ शरीर आत्मा के चंतिनशील भाग को नराश और तर्क करने के लिए अनचि्छुक बना देता है। इसलिए, शरीर की शक्ति और ऊर्जा की स्थिति के अनुसार अपनी शारीरकि आहार-वधि को समायोजति करना उचति है: जब यह स्वस्थ हो, तो इसे आवश्यक रूप से संयमति कयिा जाए, और जब यह कमजोर हो, तो प्रतबिंधों में कुछ ढील दी जाए। जो व्यक्ति आध्यात्मकि प्रयासों में लगा हुआ है, उसे शरीर को शथिलि नहीं होने देना चाहिए, बल्कि कार्य के लिए आवश्यक रूप से मजबूत बना रहना चाहिए, ताकि शारीरकि श्रम के माध्यम से भी आत्मा का उचति रूप से शुद्धकिरण हो सके।

४६. *सामान्य संयम की कठोरता में ढील देने पर*

भाइयों या अन्य यात्रयिों के आगमन के अवसर पर।

जब, कसिी भी भाई या कसिी यात्री के आगमन पर, अहंकार, इस अवसर का लाभ उठाते हुए, सक्रयि हो जाता है और, अपने वषि से हमें फुलाकर, हमें भोजन के संबंध में अपने नयिम का उल्लंघन न करने के लिए उकसाना शुरू कर देता है; तो भोजन की सामान्य मात्रा को कुछ हद तक कम करना और भी अधकि आवश्यक हो जाता है। क्योंकि इस प्रकार हम शैतान को अपने से दूर भगा देंगे, क्योंकि वह अपने प्रलोभन की वफिलता पर शोक मनाता है, और हम प्रेम के वधिान को समझदारी से पूरा करेंगे, साथ ही इस ढील के माध्यम से हमारे उपवास के रहस्य को प्रकट होने से बचाएंगे।

४७. *उपवास और अन्य शारीरकि सद्गुणों पर –*

कि केवल वे ही, हृदय की अच्छी प्रवृत्ति के बनिा,

ईश्वर के समक्ष कोई मूल्य नहीं रखते।

उपवास, यद्यपि यह पवति्रता की इच्छा रखने वालों को तैयार करने का एक साधन है, का मूल्य है, लेकनि ईश्वर की दृष्टि में नहीं। इसलिए, जो धर्मपरायणता का अभ्यास करते हैं उन्हें इसके बारे में घमंड नहीं करना चाहिए, बल्कि केवल ईश्वर में वशि्वास के माध्यम से अपने लक्ष्य को प्राप्त करने की आशा करनी चाहिए। और कसिी भी कला के गुरु, अपनी कला के पूर्ण कौशल में, अपनी योग्यता अपने औज़ारों की गुणवत्ता से नहीं, बल्कि धैर्यपूर्वक एक काम को पूरा करने से साबति करते हैं; और यही अकेले इस बात का संकेत है कि वे अपनी कला में कतिने नपिुण हैं।

४८. *आत्मा में आध्यात्मकि फलदायति्व के लिए मद्यपान में संयम के लाभों पर।*

जसि प्रकार मध्यम मात्रा में पानी से सिंचति मट्टिी उसमें बोए गए शुद्ध बीज से भरपूर फसल देती है, जबकि अत्यधकि वर्षा से भीगी मट्टिी केवल कांटे और बेर देती है: इसी प्रकार हृदय की मट्टिी भी, जब हम मध्यम मात्रा में शराब पीते हैं, तो अपने प्राकृतकि बीजों को शुद्ध रूप में उत्पन्न करती है, और जो पवति्र आत्मा द्वारा इसमें बोए गए हैं, वे अच्छे फल देते हैं और फलदायी होते हैं; लेकनि जब हम अत्यधकि शराब पीकर इसे बहुत अधकि पानी देते हैं, तो यह अपने सभी वचिारों में केवल कांटे और कंटीली झाड़याँ ही उत्पन्न करती है।

४९. *शराब पीने में अनुशासनहीनता पर, और यह कैसे शर्मनाक वासनाओं को जन्म देती है।*

जब हमारा मन शराब के नशे की लहरों में बह जाता है, तो वह न केवल सपनों में राक्षसों द्वारा प्रस्तुत छवयिों को कामुक रूप से नहिारता है, बल्कि अपने भीतर कुछ सुंदर चेहरों को भी गढ़कर, इन कल्पनाओं में कामुक आनंद लेता है, मानो वे जीवति प्राणी हों। क्योंकि जब शरीर के कामुक अंग शराब की गर्मी से गर्म हो जाते हैं, तो एक प्रकार का बाध्यकारी दबाव मन पर आता है कि वह कामुक आनंद के साथ अपने भीतर ऐसे जुनून की परछाइयों को उत्पन्न करे। इसीलिए हमें संयम का पालन करते हुए, इस तरह के अतवािद से होने वाले नुकसान से बचना चाहिए। तब मन, पाप का चति्रण करने के लिए प्रेरति करने वाली मठिास के अभाव में, पूरी तरह से कल्पना से मुक्त रहता है और, उससे भी बेहतर, कामुक आनंद से मुक्त रहता है।

५०. *भूख बढ़ाने वाले पेय पदार्थों के सेवन से बचने पर,*

और जो कृत्रमि रूप से तैयार कएि गए हैं।

जो लोग शरीर की बढ़ती इच्छाओं को वश में करना चाहते हैं, उन्हें कृत्रमि रूप से तैयार कएि गए पेय पदार्थों को नहीं छूना चाहिए, जनि्हें इस तरह की खोजों के पीछे के षड्यंत्रकारी 'भूख बढ़ाने वाले' (appetisers) कहते हैं, इस

कारण से कवि आमतौर पर पेट में कई व्यंजनों के प्रवेश का मार्ग प्रशस्त करते हैं। क्योंकनि केवल उनका स्वभाव तपस्या में लगे शरीरों के लिए हानिकारक है, बल्कि उनमें मौजूद पदार्थों का बेतुका मिश्रण ईश्वर-भयभीत अंतरात्मा को बहुत ठेस पहुँचाता है। आखिर शराब में अपनी प्राकृतिक अवस्था में ऐसा क्या कमी है, जो उसमें विभिन्न मीठे पदार्थ मिलाकर उसकी ताकत को कम करने की आवश्यकता हो?

५१. *प्रभु एक बेंत से बँधे स्पंज से सूली पर सिरका स्वीकार करके क्या सिखाना चाहते थे?*

हमारे प्रभु, और इस पवित्र (तपस्वी) जीवन के शिक्षक, यीशु मसीह को, उनके दुख-क्लेश के समय, शैतान की आज्ञाओं का पालन करने वालों द्वारा पीने के लिए सिरका दिया गया, ताकि हमें, जैसा कि मुझे लगता है, उस भावना का एक स्पष्ट उदाहरण मिल सके, जिससे हमें अपने पवित्र संघर्षों को आरंभ करना चाहिए। इससे ऐसा प्रतीत होता है कि वह कह रहे हैं: जो पाप के विरुद्ध संघर्ष करते हैं, उन्हें मीठे खाद्य पदार्थों या पेय पदार्थों का सेवन नहीं करना चाहिए; बल्कि उन्हें संघर्ष की कड़वाहट को धैर्यपूर्वक सहना चाहिए। एक व्यक्ति होज़बेल और स्पंज के बीच भी एक समानता खींच सकता है, ताकि दोनों के माध्यम से हम अपने शुद्धिकरण की छवि को और अधिक पूरी तरह से चित्रित कर सकें। पहला, एक कठोर वस्तु होने के कारण, हमारे संघर्षों की प्रकृति का प्रतीक है, जबकि दूसरा, स्नान-संस्कार में उपयोग होने के कारण, हमें शुद्धिकरण की पूर्ण परिपूर्णता की याद दिलाता है।

५२. *आध्यात्मिक व्यक्ति को स्नानागार नहीं जाना चाहिए; और क्यों।*

कोई भी स्नानघर जाने को पाप या मूर्खतापूर्ण नहीं समझेगा; लेकिन संयम के लिए इससे परहेज़ करना, मैं एक ऐसा कर्म कहता हूँ जो साहसी और अत्यंत पवित्र दोनों है। क्योंकि ऐसे मामले में, न तो हमारा शरीर उस सुखद स्नान द्वारा संतुष्ट होता है, और न ही आत्मा में आदम की लज्जास्पद नग्नता की याद जगती है, ताकि, उसकी तरह, हम नग्नता की दूसरी लज्जा को ढकने के लिए पत्तियाँ खोजें। यह हमारे लिए विशेष रूप से आवश्यक है, जिन्होंने हाल ही में इस जीवन के हानिकारक भ्रष्टाचार से मुक्ति पाई है, और जिन्हें अपने शरीर की निर्मल पवित्रता के माध्यम से ब्रह्मचर्य की सुंदरता के साथ अविभाज्य एकता में बने रहने के लिए हर संभव प्रयास करना चाहिए।

५३. *मठों में बीमारी के इलाज के लिए चिकित्सक को क्यों बुलाया जाना चाहिए;*

और मरुभूमि में एकांतवास करने वालों को ऐसे मामलों में क्या करना चाहिए।

बीमारी के समय डॉक्टर को बुलाने से रोकने वाली कोई बात नहीं है। ईश्वर ने पूर्व में ही देख लिया था कि उपचार की कला की आवश्यकता होगी और वह इस बात से प्रसन्न थे कि यह अंततःमानवीय अनुभव के आधार पर विकसित हो; इस उद्देश्य के लिए, उन्होंने अपनी रचनाओं के बीच पहले से ही दवाओं के अस्तित्व की व्यवस्था कर रखी थी। हालाँकि, उपचार के लिए आशा उन पर नहीं बल्कि हमारे सच्चे चिकित्सक और उद्धारकर्ता, यीशु मसीह पर रखनी चाहिए। मैं यह बात उन लोगों से कहता हूँ जो मठों या नगरों में तपस्वी जीवन जीते हैं, इस कारण से कि, उन पर घटित होने वाली घटनाओं के क्रम को देखकर, वे प्रेम से घिरे होने पर हमेशा विश्वास का अटूट अभ्यास बनाए नहीं रख सकते, – या वास्तव में ताकि वे घमंड और शैतान के प्रलोभन में न पड़ें, जिसके कारण उनमें से कुछ कई लोगों के सामने यह घोषणा कर देते हैं कि उन्हें डॉक्टरों की कोई आवश्यकता नहीं है। लेकिन यदि कोई दो या तीन समान विचारधारा वाले भाइयों के साथ सुनसान स्थानों में संन्यासी का जीवन यापन करता है, तो वह चाहे किसी भी बीमारी से पीड़ित हो, उसे स्वयं को उस एकमात्र प्रभु के हाथ सौंप देना चाहिए, जो हमारे सभी रोगों और दुर्बलताओं का चिकित्सक है। प्रभु के द्वारा, यहाँ तक कि सुनसान जगह पर भी, उसे अपनी बीमारियों में भरपूर सांत्वना मिलती है; इसके अलावा, जैसे उसका विश्वास कभी सूखता नहीं है, वैसे ही उसे अपने धैर्य के गुण का दिखावा करने का कोई अवसर नहीं मिलता, क्योंकि वह रेगिस्तान के कोमल आवरण से सुरक्षित रहता है। इसी कारण, प्रभु एकचित्त लोगों को अपने घर में लाते हैं (भजन संहिता 67:7)।

54. *बीमारी में हतोत्साह क्या है, और समभाव क्या है।*

जब हम हमें घेरने वाली बीमारियों से अत्यधिक व्यथित होते हैं, तो हमें यह महसूस करना चाहिए कि निग्न आत्मा अभी भी शरीर के प्रेम की दास है। क्योंकि जिस प्रकार यह सांसारिक सुखों की लालसा करती है और इस जीवन के सुख-सुविधाओं को त्यागने से इनकार करती है, उसी प्रकार यह बीमारी के कारण शरीर के लिए सुखद वस्तुओं का आनंद न ले पाने को एक बड़ा बोझ मानती है। – यदि, तथापि, यह बीमारी से उत्पन्न दुखों को कृतज्ञतापूर्वक सहन करती है, तो यह एक संकेत है कि यह निर्लिप्तता की सीमाओं से दूर नहीं है। फिर, यह मृत्यु की स्वयं को ही सच्चे जीवन में प्रवेश के साधन के रूप में आनंद के साथ क्यों प्रतीक्षा करती है?

५५. *आवश्यक यह है कि आत्मा इस संसार की सुख-सुविधाओं में आनंद न ले,*

बल्कि शरीर से मुक्त होने की इच्छा करे?

आत्मा तब तक शरीर से मुक्त होने की इच्छा नहीं करेगी जब तक कि वह इस संसार (यानी, जो कुछ भी सांसारिक और लौकिक है) के प्रति पूरी तरह से उदासीन नहीं हो जाती। – सभी शारीरिक इंद्रियाँ विश्वास का विरोध करती हैं, क्योंकि इंद्रियाँ केवल वर्तमान का आनंद लेना चाहती हैं – जो यहाँ और अभी है – जबकि विश्वास भविष्य के आशीर्वादों की प्रचुरता का वादा करता है। एक प्रयासशील व्यक्ति को हरे-भरे, छायादार पेड़ों, बहते झरनों, फूलों से भरे मैदानों, शानदार घरों, और प्रियजनों के साथ सुखद वार्तालापों के बारे में कभी क्यों नहीं सोचना चाहिए – ठीक उसी तरह जैसे किसी को भव्य भेंटों को याद नहीं करना चाहिए, यदि उसे कभी उनका सम्मान मिला हो। लेकिन उसे आवश्यक चीजों का कृतज्ञतापूर्वक उपयोग करना चाहिए, और इस जीवन को सभी कामुक सुखों से परे, एक प्रकार की तीर्थयात्रा मानना चाहिए। क्योंकि केवल इस तरह से अपने विचारों को नियंत्रित करके ही हम उन्हें पूरी तरह से शाश्वत जीवन की ओर ले जाने वाले मार्ग की ओर निर्देशित कर सकते हैं।

56. *जैसे कि शारीरिक इंद्रियों का अनियंत्रित भोग*
ईश्वर और उनकी आज्ञाओं की स्मृति में बाधा डालता है,
और इस बुराई से कैसे बचें।

ईव ही पहली हैं जो हमें बताती हैं कि जब हम बिना संयम के दृष्टि, स्वाद और अन्य इंद्रियों में मग्न होते हैं, तो वे हृदय की स्मृति को मिटा देती हैं। जब तक उसने उस निषिद्ध वृक्ष को वासना की दृष्टि से नहीं देखा था, तब तक उसने ईश्वर की आज्ञा को सावधानीपूर्वक याद रखा था: इस कारण, मानो ईश्वर के प्रेम के पंखों की छाया में, वह अपनी नग्नता से भी अनभिज्ञ थी। परन्तु जब उसने उस वृक्ष को कामनापूर्ण दृष्टि से देखा, उसे बड़ी कामना से छुआ, और अंत में अनियंत्रित कामना से उसका फल चखा; उसमें तुरंत कामुक आत्म-संतुष्टि की प्रवृत्ति विकसित हो गई और, नग्न अवस्था में इस जुनून के साथ एक हो जाने के बाद, उसने अपनी सारी इच्छा वर्तमान सुखों की खोज में लगा दी, इस प्रकार फल के दृश्यमान आकर्षण के माध्यम से, उसने स्वयं और आदम दोनों के पतन में योगदान दिया; जिसके परिणामस्वरूप मानव मन के लिए ईश्वर या उनके आज्ञाओं को याद रखना कठिन हो गया। हम, हालाँकि, जब हम अपने ही हृदय की गहराइयों में झाँकते हैं तो परमेश्वर को हमेशा अपने मन में रखते हुए, इस हृदय का मार्गदर्शन करेंगे—जो जीवन के प्रलोभनों के प्रति उसी प्रकार प्रवृत्त है, जैसे अंधे अपनी आँखों के प्रति होते हैं—क्योंकि वास्तव में यह सच्ची आध्यात्मिक बुद्धिमित्ता का स्वभाव है कि वह हम में केवल सतही नहीं, बल्कि '*देखने में सुंदर क्या है' को देखने* की प्रेरणा को बनाए रखे। यह वही है जो सबसे अनुभवी अय्यूब हमें सिखाते हैं, कहते हुए: '*यदि मेरा हृदय मेरी आँखों के मार्ग पर चला भी हो*' (अय्यूब 31:7)। ऐसा आचरण परम आत्म-संयम का एक निश्चित संकेत है।

57. *ऐसा कैसे है कि जो आत्मा में चलता है, वह देह संबंधी इच्छाओं के बारे में कुछ नहीं जानता,*
और शैतान व्यर्थ ही उसकी पवित्रता को परीक्षा में डालता है?

हमेशा अपने हृदय में निवास करते हुए, वह इस जीवन की सभी आकर्षक चीजों से बहुत दूर रहता है; और, आत्मा में चलता हुआ, उसे कामुक वासनाओं को जानने के लिए प्रेरित नहीं किया जा सकता। चूँकि, इस प्रकार, एक ऐसा व्यक्ति सद्गुणों से ढाल लेकर अपनी यात्रा जारी रखता है, और इन सद्गुणों को ही अपनी पवित्रता के नगर के द्वारपालों के रूप में रखता है; इसलिए उसके विरुद्ध राक्षसों की सभी चालाकियाँ निष्फल हो जाती हैं, भले ही कभी-कभी इस कामवासना के तीर, जो सभी में सामान्य है, प्रकृति की खिड़कियों तक भी पहुँच जाते हैं।

५८. *निराशा पर, जो कभी-कभी कामुक वासनाओं के निष्कासन के बाद मनुष्य पर आक्रमण करती है* –
यह क्या है और इसे कैसे दूर करें।

जब आत्मा इस संसार की सुंदर चीजों की इच्छा करना बंद कर देती है, तो उसमें आमतौर पर निराशा की एक भावना घर कर जाती है, जो न तो उसे वचन की सेवा में स्वेच्छा से परिश्रम करने देती है, और न ही उसमें भविष्य के आशीर्वादों के लिए एक दृढ़ इच्छा छोड़ती है, लेकिन यह वर्तमान जीवन को भी पूरी तरह से निरर्थक, सद्गुणों के योग्य कर्मों से रहित के रूप में प्रस्तुत करता है, और के ज्ञान को ही तुच्छ समझता है, इसे कई अन्य लोगों को प्रदान की गई किसी चीज़ के रूप में, या हमारे लिए कुछ भी विशेष प्रकट न करने वाली चीज़ के रूप में देखता है। हम इस सुस्त और दुर्बल करने वाले जुनून से बचेंगे यदि हम अपने विचारों को अत्यंत संकीर्ण सीमाओं के भीतर सीमित रखें, और केवल ईश्वर की स्मृति को ही मन में रखें; क्योंकि केवल इसी तरह आत्मा, अपने उचित उत्साह तक उठकर, उस निरर्थक दुर्बलता को स्वयं से दूर कर सकती है।

59. *अनवरत से आध्यात्मिक प्रयास में कितनी बड़ी सहायता है*
हृदय की गहराइयों में यीशु के नाम की उष्ण स्मृति।

जब हम ईश्वर की स्मृति से इसके सभी पलायन के मार्गों को अवरुद्ध कर देते हैं, तो हमारी चंचलता को संतुष्ट करने के लिए हमारे मन को कोई ऐसा कार्य देना आवश्यक है जो उस पर बाध्यकारी हो। उसे केवल प्रभु यीशु का पवित्र नाम ही दिया जाना चाहिए, जिसके द्वारा ही यह निर्धारित लक्ष्य को प्राप्त करने में अपनी उत्कट इच्छा को पूरी तरह से संतुष्ट करता है। लेकिन यह समझना चाहिए कि, जैसा कि प्रेरित कहते हैं, *'पवित्र आत्मा के सिवाय कोई भी यह नहीं कह सकता कि "हे प्रभु यीशु"'* (1 कुरिन्थियों 12:3)। हमारी ओर से यह आवश्यक है कि उपरोक्त वाक्यांश ('प्रभु यीशु मसीह', आदि) मन की गहराइयों में लगातार उच्चारित किया जाए, जो उसमें पूरी तरह से लीन हो, इस तरह से कि कोई भी व्यक्ति किसी भी बाहरी कल्पनाओं में न भटक जाए। जो लोग इस पवित्र और महिमामय नाम को निरंतर अपने मन में, अपने हृदय की गहराई में धारण करते हैं, वे अपने ही मन की ज्योति (विचारों की स्पष्टता, या सभी आंतरिक हलचलों की एक विशिष्ट जागरूकता) को देख सकते हैं। और इसके अलावा: यह अद्भुत नाम, जब गहन ध्यान के साथ मन में धारण किया जाता है, तो यह आत्मा में उत्पन्न होने वाले हर प्रकार के कलंक को बहुत स्पष्ट रूप से जला देता है। *'क्योंकि हमारा परमेश्वर भस्म करने वाली आग है' जो* सभी बुराइयों को *भस्म कर देती है,* जैसा कि प्रेरित कहते हैं (इब्रानियों 12:29)। इसी से, अंततः प्रभु आत्मा को अपनी महिमा के प्रति महान प्रेम में ले जाते हैं; क्योंकि वह अति महिमामय और बहु-आकांक्षित नाम, उसकी स्मृति द्वारा मन को एक उष्ण हृदय में खींचकर, हम में उसकी भलाई को निर्बाध रूप से प्रेम करने की आदत डालता है; क्योंकि तब उसकी राह में खड़ा होने के लिए कुछ भी नहीं बचता। और यही वह अनमोल मोती है जिसे वे प्राप्त करते हैं जिन्होंने इसे पाने की अनुग्रहकारी प्रसन्नता के साथ अपनी सारी संपत्ति त्याग दी है।

६०. *दोहरी आनंद पर – प्रारंभिक और पूर्ण,*
और उनके बीच के आँसुओं के बारे में।

एक आनंद है जो आरंभ है, और दूसरा जो पूर्णता है: पहला आत्म-केंद्रित सपनों से मुक्त नहीं है, जबकि दूसरा विनम्रता से सुदृढ़ होता है; उनके बीच में दैवीय शोक और पीड़ा रहित विलाप है। *'क्योंकि ज्ञान के अधिक होने से समझ भी अधिक होती है, और समझदार मनुष्य शोक पाता है'* (उपदेशक 1:18)। इसी कारण, पहले तो आत्मा को आरंभ से उत्पन्न होने वाली आनंद से वीरता के कार्यों के लिए प्रेरित करना चाहिए; फिर उसे पवित्र आत्मा की सच्चाई की फटकार और परीक्षा के अधीन करना चाहिए, जो अतीत में किए गए पापों और आत्म-भूल में अभी भी बन रही प्रवृत्तियों, दोनों के संबंध में है। *"क्योंकि हे यहोवा, तेरे दण्ड के समय तू ने मनुष्य को दण्ड दिया है, और उसकी आत्मा को जाल की नाईं क्षीण कर दिया है"* (भजन संहिता 38:12)। ताकि, परमेश्वर के दण्ड ने जब उसे भट्ठी में परखा, तब वह परमेश्वर की उष्ण स्मृति में निष्कपट आनन्द का प्रभाव प्राप्त कर सके।

६१. *ईश्वर को भूलने और उनकी स्मृति को पुनःस्थापित करने पर,*
पहले के कारण, और बाद वाले के साधन,
और उसके उच्चतम प्रकटीकरण पर।

जब आत्मा क्रोध से विक्षुब्ध, या भोग-लिप्सा से दबी, या गहरे शोक से आच्छादित होती है, तब मन ईश्वर की स्मृति बनाए नहीं रख सकता, भले ही उसे किसी प्रकार ऐसा करने के लिए विवश कर दिया जाए। क्योंकि, इन भावनाओं की उग्रता से पूरी तरह से ढँक जाने पर, यह अपनी ही संवेदनशीलता से पूरी तरह से अपरिचित हो जाता है; अतः इच्छा को अपनी छाप छोड़ने के लिए कोई स्थान नहीं मिलता, जिससे मन ईश्वर के चिंतन की एक अविस्मरणीय और अपरिवर्तनीय छवि धारण कर सके, क्योंकि ऐसे समय में उसकी स्मृति भावनाओं की कठोरता से मंद पड़ जाती है। – लेकिन जब यह ऐसी परेशानियों से मुक्त होता है, तो, भले ही कभी-कभी विस्मृति एक पल के लिए प्रिय प्रभु के विचार को चुरा ले जाए, मन, अपनी ताजगी और जीवंतता पुनः प्राप्त कर, तुरंत उस अत्यधिक-आकांक्षित और उद्धारकारी साधना को उत्साह के साथ थाम लेता है; क्योंकि तब अनुग्रह स्वयं आत्मा के साथ ध्यान करता है और पुकारता है: 'हे प्रभु यीशु मसीह!' ठीक वैसे ही जैसे एक माँ, अपने बच्चे को सिखाते समय, उसके साथ बार-बार 'पिता' नाम दोहराती है, जब तक कि वह उसे उस बिंदु पर नहीं ले आती जहाँ, बच्चे द्वारा बोले जा सकने वाले किसी भी अन्य शब्द के बजाय, वह स्पष्ट रूप से 'पिता' कहता है, यहाँ तक कि अपनी नींद में भी। इसलिए, प्रेरित कहते हैं: *'आत्मा स्वयं हमारी दुर्बलता में हमारा सहायक होता है: क्योंकि हम नहीं जानते कि हमें कैसे प्रार्थना करनी चाहिए, पर आत्मा स्वयं हमारे लिए ऐसी आहें भरता है जो शब्दों से परे हैं'* (रोमियों 8:26)। क्योंकि, चूँकि हम प्रार्थना की इस सद्गुण की पूर्णता में अभी भी शिशु हैं, हमें निस्संदेह उसकी सहायता की आवश्यकता है; ताकि, जब उसकी अनुपम मिठास हमारे सभी विचारों को अपना आलिंगन कर उन्हें मधुर बना दे, तो हम अपनी संपूर्ण प्रवृत्ति से ईश्वर और हमारे पिता को याद करने और उनसे प्रेम करने के लिए प्रेरित हों। क्योंकि, जैसा कि वही अद्भुत पौलुस कहते हैं, *'हम उनसे पुकार कर कहते हैं: "अब्बा, पिता"'* (रोमियों 8:15), जब हम उनसे प्रेरित होकर परमेश्वर पिता को पुकारते हैं।

६२. *क्रोध पर– इसे कब और कैसे अनुमत कयिा जा सकता है।*

क्रोध, कसिी भी अन्य भाव से अधकि, आमतौर पर आत्मा को वक्षिुब्ध करता है और उसे भ्रम में डाल देता है; फरि भी ऐसे अवसर आते हैं जब यह उसके लिए अत्यंत लाभदायक होता है। इस प्रकार, जब हम नरि्लज्ज पापयिों, या कसिी अन्य प्रकार से नरि्लज्ज लोगों पर, ताकि वे बच सकें, या कम से कम लज्जति हो सकें, नसि्संकोच क्रोध करते हैं, तो हम अपनी आत्मा के लिए नम्रता के समान ही लाभ लाते हैं; क्योंकि ऐसे मामले में हम हर तरह से परमेश्वर की धार्मकिता और भलाई के उद्देश्यों को आगे बढ़ा रहे होते हैं। इसी प्रकार, जब आत्मा में कामुक प्रवृत्तयिाँ उत्पन्न होती हैं, तो इस पाप पर और भी अधकि क्रोधति होकर, हम अक्सर आत्मा को होश में लाते हैं और उसे इसका वरिोध करने के लिए पुरुषोचति शक्ति प्रदान करते हैं। और इसमें कोई संदेह नहीं है कि, जब हम आत्मा की अत्यंत पीड़ा की अवस्था में होते हैं, तो हम उस आत्मा को ही क्रोधपूर्वक फटकार कर, जो इस पीड़ा का कारण है, ज्ञान के द्वारा उन भयानकताओं से भी ऊपर उठ सकते हैं जनिके द्वारा मृत्यु हमें वश में करने का घमंड करती है: क्योंकि, हमें यह दखिाना चाहकर, प्रभु ने लाजरुस के पुनरुत्थान पर, पहले अपनी आत्मा में नरक को डांटा और स्वयं को मजबूत कयिा, और केवल तब, एक अडगि इच्छा-शक्ति के साथ—जैसा कि वे अपने सभी कार्यों में हमेशा करते थे—लाजरुस की आत्मा को उसके शरीर में वापस कयिा। इसलिए, मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि पवति्र क्रोध हमारे स्वभाव में परमेश्वर द्वारा, जन्होंने हमें बनाया है, अधकितर धर्म के एक उपकरण के रूप में दयिा गया था; और यदि हव्वा ने इसका उपयोग सांप के वरिुद्ध कयिा होता, तो वह उस जुनूनी इच्छा के वनिाशकारी प्रभाव का शकिार नहीं होती। यही कारण है कि मेरा मानना है कि जो व्यक्ति धर्मपरायणता के उत्साह से पवति्र क्रोध का प्रयोग करता है, वह धार्मकि प्रतफिल के तराजू पर उस व्यक्ति की तुलना में अधकि अनुकूल सद्धि होगा, जो मन की जड़ता के कारण कभी क्रोधति नहीं होता; क्योंकि दूसरे व्यक्ति में, मानव वचिारों और भावनाओं का शासक अप्रशक्षिति रहता है, जबकि दूसरा, सद्गुणों के अश्वों पर सवार, सदा ही संग्राम में बना रहता है, और राक्षसों की भीड़ के बीच दौड़ता है, नरिंतर ईश्वर के भय में संयम के चार-घोड़ों वाले रथ का प्रशक्षिण करता है—जसिे पवति्र शास्त्र ने *'इज़राइल का रथ'* कहा है, जैसा कि हमें दव्यि एलयिाह के स्वर्ग आरोहण के वृत्तांत में मलिता है (2 राजा 2:12)। ईश्वर ने प्रारंभकि यहूदयिों को चार गुण कई अलग-अलग तरीकों से सखिाए; इसीलिए ज्ञान (साहस, न्याय और संयम) के ऐसे शष्यि को स्वर्ग में उठा लयिा गया, और ऐसा प्रतीत होता है कि जब उनकी आत्मा को आग के भँवर में उठाया गया, तो उनके रथ के घोड़े ये ही गुण थे।

63. *आध्यात्मकि जीवन में सद्धि व्यक्ति के लिए कानूनी ववािदों में पड़ना उचति नहीं है।*

जसिको पवति्र ज्ञान प्रदान कयिा गया है और जसिने ईश्वर की मठिास का स्वाद चखा है, उसे कभी भी मुकदमा नहीं करना चाहिए (जब कोई उसके खलिाफ शकियित दर्ज कराता है), न ही स्वयं कसिी के खलिाफ मुकदमा शुरू करना चाहिए, भले ही कोई उसके कंधों से कपड़े भी छीन ले; क्योंकि इस युग के अधकिारयिों का न्याय ईश्वर के न्याय से नीच है – या यूँ कहें कि, ईश्वर के न्याय की तुलना में यह कुछ भी नहीं है; और ईश्वर की संतान और इस युग के लोगों में क्या अंतर है, सवािय इसके कि बाद वालों के न्याय की तुलना पहले वालों के न्याय से नहीं की जा सकती; इसीलिए पहले वाले को मानवीय न्याय कहा जाता है, और बाद वाले को ईश्वर का न्याय। इसी प्रकार हमारे प्रभु *ने 'जब उनationa की गई, तो उन्होंने बदले में अपमान नहीं कयिा; जब उन्हें पीड़ा दी गई, तो उन्होंने धमकी नहीं दी'* (1 पतरस 2:23); इसके वपिरीत, उन्होंने न केवल चुपचाप अपने वस्त्र उतारने को सहन कयिा, बल्कि—जो अतुलनीय रूप से महान है—उन्होंने उनके वरिुद्ध दुष्टता करने वालों की मुक्ति के लिए पति से प्रार्थना की। हालाँकि, इस संसार के लोग मुकदमेबाजी करना तब तक बंद नहीं करेंगे जब तक कि वे उन लोगों से, जनिके खलिाफ वे मुकदमा करते हैं, ब्याज सहति वह नहीं प्राप्त कर लेते जसिकी वे माँग करते हैं, वशिेष रूप से जब वे ऋण पर लाभ की माँग करते हैं: ताकि उनका 'न्याय' अक्सर बड़े अन्याय की शुरुआत बन जाता है।

64. *यह बेहतर है, सहनीय अन्याय को ईश्वर के नरि्णय के भरोसे छोड़कर,*

न्यायालय जाने से अधकि प्रार्थना पर ध्यान देना और अपने हृदय की रक्षा करना उत्तम है।

मैंने कुछ धर्मनष्ठि लोगों को कहते सुना है कि कसिी को भी हमारे पास जो कुछ भी हमारे अपने भरण-पोषण और गरीबों के कल्याण के लिए है, उसे लूटने की अनुमति नहीं देनी चाहिए; कहीं ऐसा न हो कि इस तरह की बुराई को सहन करके, हम उन लोगों के पाप के दोषी बन जाएँ जो हमें अन्याय करते हैं, और वशिेष रूप से जब हम यह सब ईसाइयों के हाथों भुगतते हैं, – लेकनि इस तरह से काम करना अपने आप को बचाने की तुलना में अपनी संपत्ति को बचाने की इच्छा करने के अलावा और कुछ नहीं है। क्योंकि यदि, प्रार्थना और अपने हृदय की जाँच-पड़ताल को नज़रअंदाज़ करके, मैं मुझ पर अन्याय करने वालों से न्याय माँगने लगूँ और अदालतों में भटकने लगूँ, तो यह स्पष्ट है कि जो मैं खोज रहा हूँ वह मेरे अपने उद्धार से कहीं अधकि प्रयि है, उद्धार के स्वयं आज्ञा का तो कहना ही क्या। और मैं उस सुसमाचार की आज्ञा का अनुयायी कैसे हो सकता हूँ जो मुझे सखिाती है: *'जो तुम्हारा है, उसे लेने वाले का वरिोध मत*

करो' (लूका 6:30), जब तक कि प्रेरित के शब्दों में, मैं *'अपने सामान के लूटे जाने पर आनन्दित न होऊँ'* (इब्रानियों 10:34), जबकि यह आज्ञा उस व्यक्ति को लालच के पाप से भी मुक्त नहीं करती जो, एक अदालती फैसले के माध्यम से, उससे गलत तरीके से लिया गया सामान वापस पाता है? अस्थायी (अर्थात, क्षणिक मामलों का न्याय करने के लिए मनुष्यों द्वारा स्थापित अदालतें) ईश्वर के अक्षय न्याय को खारिज नहीं कर सकतीं; और दोषी पक्ष को उन कानूनों का पालन करना चाहिए जिनके अधीन उसका मामला है, और जिनके द्वारा उसे अपना बचाव करना चाहिए। यह वास्तव में एक अच्छी बात है कि हम उन लोगों के हाथों हिंसा सहें जो हमें नुकसान पहुँचाना चाहते हैं, और उनके लिए प्रार्थना करें, ताकि उनके पश्चाताप के कारण—न कि इस कारण से कि वे हमें वह लौटा दें जो उन्होंने हमसे चुराया है—उनके जबरन वसूली का पाप क्षमा हो जाए। क्योंकि परमेश्वर के धार्मिक स्वभाव की यही मांग है कि हम उस अत्याचारी को स्वयं—उसकी लूटी हुई संपत्ति को नहीं—पश्चाताप के द्वारा पाप से मुक्त मान लें।

६५. *जो कुछ भी तुम्हारे पास है, उसे बेच दो और गरीबों को दे दो; विनम्रता, सबसे बढ़कर, मनुष्य को इसके लिए प्रेरित करती है।*

यह सबसे उपयुक्त और, सबसे बढ़कर, आत्मा के लिए सबसे लाभदायक है कि भक्ति के सच्चे मार्ग को जानने के बाद, कोई तुरंत अपनी सारी संपत्ति बेच दे और प्राप्त धन को गरीबों में बाँट दे, प्रभु की आज्ञा के अनुसार, और स्वयं को इस बहाने से न भटकाए कि वह हमेशा आज्ञा (गरीबों की मदद करने की) को पूरा करने की स्थिति में रहना चाहता है, और इस मोक्षदायक आज्ञा (एक ही बार में सब कुछ दे देने की) की अवहेलना करे। इससे हमें, सबसे पहले, एक अधिक शांतिपूर्ण निश्चिंतता प्राप्त होगी; और इससे, बदले में, एक ऐसी गरीबी मिलेगी जो बदनामी से परे है—एक ऐसी गरीबी जो स्वयं एक उच्चतर स्तर की है—और जो दूसरों को हमारे खिलाफ अनुचित आरोप लगाने का कोई कारण नहीं देती, जब हमारे पास ऐसा कुछ भी नहीं बचेगा जो लालची लोगों के दिलों में लालच की आग को भड़का सके। तब, किसी भी अन्य सद्गुण से अधिक, विनम्रता हमें आत्मीयता से भर देगी और हमारे अंतरतम में शांति लाएगी, मानो हम नग्न हों; ठीक वैसे ही जैसे एक माँ, अपने बच्चे को अपनी बाहों में लेकर, उसे अपनी गोद में सांत्वना और गर्माहट देती है, जब वह अपनी बाल-सुलभ सरलता में, अपना वस्त्र उतारकर खुद से दूर फेंक देता है, और अपनी महान मासूमियत में, अपने वस्त्र की बहुरंगी सुंदरता की तुलना में नग्नता को स्वयं के लिए अधिक प्रिय पाता है। क्योंकि कहा गया है: *'प्रभु छोटे बच्चों की रक्षा करते हैं: उन्होंने मुझे नम्र बनाया और मुझे बचाया'* (भजन संहिता 114:5)।

६६. *सब कुछ दान कर देना ही नम्रता का मार्ग है।*

प्रभु हमारे दान के हिसाब-किताब का हिसाब लेंगे, *'जिसके पास है उसके अनुसार, और जिसके पास नहीं है उसके अनुसार नहीं'* (1 कुरिन्थियों 8:12)। इसलिए, यदि मैं, ईश्वर के भय से और उत्कट सद्भावना के साथ, प्रभु की आज्ञा का पालन करते हुए, थोड़े समय में वह सब कुछ दे दूँ जो मैं अन्यथा कई वर्षों में बाँटता, तो जब मेरे पास कुछ भी नहीं बचेगा तो मुझे किस बात के लिए फटकारा जाएगा? – लेकिन कोई कहेगा: (यदि हम सब कुछ दे दें), तो वे गरीब, जो अब हमारी मामूली दान-दक्षिणा से गुज़ारा करते हैं, अपना दान कहाँ से पाएँगे? – ऐसे व्यक्ति के लिए, यहाँ एक उपयुक्त शिक्षा है: केवल अपने स्वार्थ को छिपाने के लिए, ईश्वर की दृष्टि में कुछ भी निंदनीय योजना बनाने का दुस्साहस न करें। ईश्वर अपनी सृष्टि की देखभाल के लिए साधन कभी नहीं खोएंगे, जैसा कि उन्होंने आरंभ से ही किया है। और इस या उस व्यक्ति के दान करने के लिए प्रेरित होने से पहले, क्या गरीब भोजन या वस्त्रों के बिना रह गए थे? तो निश्चिंत हो जाइए कि जब कोई सत्य को जान ले, तो उसके लिए यह कहीं बेहतर है कि वह धन के जुनून से प्रेरित मूर्खतापूर्ण योजनाओं और अहंकार को त्यागकर, और अपनी ही इच्छाओं से घृणा करके—जिसका अर्थ है अपनी ही आत्मा से घृणा करना—सब कुछ उदारतापूर्वक गरीबों की सेवा में खर्च कर दे। ताकि बाद में, अपनी संपत्ति के निरंतर वितरण के लिए आत्म-प्रशंसा में आनंदित होने का कोई और कारण न रहे, हम स्वयं को इस प्रकार नम्र बना सकें, मानो हम कुछ भी अच्छा नहीं कर रहे हों। क्योंकि जब हम धन-संपत्ति में लबरेज़ होते हैं, तो हम अपनी इच्छानुसार उसका वितरण करने में बहुत आनंदित होते हैं, मानो खुशी-खुशी किसी दैवीय आज्ञा का पालन कर रहे हों; लेकिन जब हम सब कुछ दान कर देते हैं, तो हम विनम्रता और पश्चाताप की भावनाओं से भर जाते हैं, मानो हमने कुछ भी धर्मपरायण कार्य नहीं किया हो। परिणामस्वरूप, आत्मा, महान विनम्रता से, अपने भीतर मुड़ती है, ताकि जो हम अब दैनिक भीख के माध्यम से प्राप्त नहीं कर सकते, उसे हम लगन से प्रार्थना, धैर्य और विनम्र ज्ञान के माध्यम से प्राप्त करने के योग्य माने जाएँ; क्योंकि कहा गया है: *'गरीब और ज़रूरतमंद तेरे नाम की स्तुति करेंगे, हे प्रभु'* (भजन संहिता 73:21)। इसके अलावा, धर्मशास्त्रीय प्रवचन का वरदान ईश्वर द्वारा उन लोगों को छोड़कर किसी पर नहीं दिया जाता है, जिन्होंने पहले स्वयं को ईश्वर के सुसमाचार की महिमा के लिए अपनी सभी संपत्तियों का त्याग करने के लिए तैयार किया हो, ताकि ईश्वर-प्रसन्न गरीबी में, वे ईश्वर के राज्य की समृद्धि का प्रचार कर सकें। शब्दों से

यही अभिप्रेत है: *'हे परमेश्वर, तूने दीनों के लिये अपनी भलाई तैयार की है'*, और इस जोड़ से: 'यहोवा प्रचारक को सामर्थ्य सहित वचन देगा' (भजन संहिता 77:11, 12)।

६७. *धर्मशास्त्रीय चिंतन के वरदान पर – इससे कितनी और किस प्रकार की आशीषें प्रवाहित होती हैं।*

हमारे परमेश्वर की सभी देन अत्यंत उत्तम हैं और हर आशीष का स्रोत हैं; फिर भी उनमें से कोई भी हृदय को उनकी भलाई से प्रेम करने के लिए उतना नहीं जगाता और प्रेरित नहीं करता जितना धर्मशास्त्र का अध्ययन करता है। क्योंकि, परमेश्वर की भलाई का सर्वप्रथम फल होने के नाते, यह आत्मा पर सर्वोत्तम वरदान प्रदान करता है: सबसे पहले, यह हमें इस जीवन के सभी सुखद आरामों को आनंदपूर्वक तुच्छ समझने के लिए तैयार करता है, क्योंकि इसमें हमारे पास क्षणिक आरामों के स्थान पर परमेश्वर के वचनों की अगणनीय धनाढ्यता है; और फिर यह हमारे मन को एक प्रकार के अग्निमय परिवर्तन से प्रबुद्ध करता है और इस प्रकार उसे सेवा करने वाले आत्माओं का सहभागी बनाता है। प्रिय, जैसा कि उचित है, स्वयं को तैयार करके, हम इस सद्गुण की ओर प्रयत्न करें, जो गौरवशाली, सर्व-द्रष्टा है, सभी सांसारिक चिंताओं को दूर करता है, मन को अकथनीय प्रकाश की किरणों में ईश्वर के वचनों से पोषित करता है, और—संक्षेप में कहने के लिए— – पवित्र भविष्यद्वक्ताओं के माध्यम से, वह वाचिक—अर्थात् तर्कसंगत—आत्मा को परमेश्वर वचन के साथ अविभाजित सहभागिता के लिए तैयार करती है। और मनुष्यों की आत्माओं में—हे अद्भुत चमत्कार!—परमेश्वर के बारे में बोलने वाले भजन व्यवस्थित करके, यह दिव्य मलिनकर्त्ता परमेश्वर की महानता का उच्च स्वर में गायन करती है।

68. *हमारा मन क्यों*

प्रार्थना के लिए उतना उत्सुक नहीं जितना कि धर्मशास्त्रीय चिंतन के लिए:

और ऐसी मनन में सफलता के लिए प्रार्थना कितनी आवश्यक है।

हमारा मन, अधिकांशत; प्रार्थना की ओर कम ही झुकता है, क्योंकि वह प्रार्थना के सद्गुण से बाधित और प्रतिबंधित होता है; जबकि यह धर्मशास्त्रीय चिंतन की ओर अधिक सहजता से आकर्षित होता है, क्योंकि ईश्वर की चिंतन की व्यापकता और असीमता के कारण। इसलिए, ताकि हमारे भीतर इसके भटकने को पूरी छूट न दे दें, और न ही कल्पना की ऊँची उड़ानों को असीमित रूप से समर्पित होने की इसकी प्रवृत्ति में लिप्त हों, आइए हम मुख्य रूप से प्रार्थना में स्वयं को समर्पित करें, भजन-गायन और धर्मग्रंथ के पाठ में, साथ ही बुद्धिमान पुरुषों की व्याख्याओं की उपेक्षा न करते हुए, जिनके वचन विश्वास के सच्चे ज्ञान से परिपूर्ण हैं। इस प्रकार करने से, हम न केवल उसे अपनी बातों को अनुग्रह के वचनों के साथ मिलाने से रोकेंगे, और न ही उसे, घमंड के वश में होकर, आत्म-संतुष्टि और बकबक के प्रभाव में कल्पना की उड़ानों से विचलित होने देंगे; बल्कि हम उसे ध्यान के दौरान दिवास्वप्नों से मुक्त रखना भी सीखेंगे और उसके लगभग सभी विचारों को आँसुओं से भरा कर देंगे। मौन के क्षणों में अपने भीतर विश्राम पाकर, और सबसे बढ़कर प्रार्थना की मिठास में मग्न होकर, वह न केवल उपरोक्त भावुक उथल-पुथल से मुक्त हो जाता है, बल्कि, नवीनीकृत होकर, वह दिव्य ध्यान में स्थित रहने की शक्ति सहजता से और बिना प्रयास के प्राप्त कर लेता है, और साथ ही साथ महान विनम्रता के साथ विवेकपूर्ण निर्णय (व्यावहारिक ज्ञान) में भी उत्कृष्टता प्राप्त करता है। हालाँकि, यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि प्रार्थना चिंतन की किसी भी गहराई से परे है; यह स्वयं केवल उन लोगों की विशेषता है जो हर अनुभूति और धारणा में पवित्र अनुग्रह से परिपूर्ण हैं।

६९. *अनुग्रह प्रारंभ में आत्मा पर सबसे स्पष्ट रूप से कार्य करता है,*

और फिर इसका प्रभाव कम हो जाता है और यहाँ तक कि पूरी तरह से छिप भी जाता है।

यह आत्मा के लिए कितना लाभकारी है। शुरुआत में, अनुग्रह आमतौर पर अपनी रोशनी से आत्मा को प्रकाशित करता है, जिसके साथ इसका एक प्रबल अनुभव भी होता है; लेकिन जब आध्यात्मिक ईसाई जीवन में प्रगति होती है, तो, अधिकांशतः ईश्वर-प्रेमी आत्मा के बिना जाने, यह उसके भीतर अपने रहस्य संपन्न करता है: ताकि बाद में (एक बार आत्मा शांत हो जाने पर) यह हमें आनंद के साथ दिव्य चिंतन के पथ पर ले जा सके, जैसे कि हमें अभी-अभी अज्ञान से ज्ञान में बुलाया गया हो; जबकि हमारी (आत्मा को उसकी वासनाओं से शांत करने की) जद्दोजहद के बीच, यह हमारे विचारों को व्यर्थ होने से बचा सके। हमारे लिए उचित है कि हमें उचित मात्रा में शोक में डाला जाए, जैसे कि हमें अनुग्रह ने त्याग दिया हो, ताकि हम और भी अधिक विनम्र हो सकें और हमारे बारे में प्रभु के विधान के प्रति समर्पण करना सीख सकें; और फिर, उचित समय पर, धन्य आशा से प्रेरित होकर आनंद में प्रवेश करें: क्योंकि जैसे असीम दुख आत्मा को निराशा और हताशा में ले जाता है, वैसे ही अत्यधिक आनंद उसे घमंड और दंभ की ओर ले जाता है। मैं उन लोगों के बारे में बात कर रहा हूँ जो जीवन और समझ में अभी शिशु हैं। अनुग्रह के प्रबोधन और परित्याग के बीच प्रलोभन होता है; और दुख और आनंद के बीच आशा होती है। क्योंकि कहा गया है:

'मैंने धीरज से प्रभु की प्रतीक्षा की, और उसने मेरी सुनी' (भजन संहिता 39:2), – और फरि: *'मेरी अनेक कष्टों के बीच, तेरे सांत्वनाओं ने मेरी आत्मा को आनन्दति कयिा है'* (भजन संहिता 93:19)।

70. *वाचालता आत्मा के लिए कतिनी हानकिारक है, और मौन कतिना लाभदायक है।*

जैसे स्नानागार के दरवाज़े, जब बार-बार खोले जाते हैं, तो वे भीतर की गर्मी को जल्दी ही बाहर नकिल जाने देते हैं, वैसे ही आत्मा भी, जब बहुत से लोग बोलते हैं—भले ही वे केवल अच्छी बातें ही क्यों न कहें—तो वह अपनी स्मृत (जो आध्यात्मकि चीज़ों की व्यवस्था में स्थति चेतना है) को वाणी के द्वार से नकिल जाने देती है। परणिामस्वरूप, मन अंततः अपने सबसे शुद्ध वचिारों से वंचति हो जाता है, और वचिारों की अव्यवस्थति बाढ़ से प्रेरति होकर, वह उपस्थति लोगों से भ्रमति होकर बोलता है। ऐसे मामले में, उसमें अब पवति्र आत्मा नहीं रहती, जो हमारे वचिारों को व्यर्थ की कल्पनाओं से बचाती है: क्योंक यिह आत्मा, जो अच्छी और सभी क्लेशों तथा व्यर्थ की कल्पनाओं से मुक्त है, बकबक से दूर रहती है। – दूसरी ओर, मौन लाभदायक है, क्योंक यिह बुद्धमिानी भरे वचिारों की जननी है।

७१. *एक ईश्वर-प्रेमी आत्मा को सत्य की इंद्रयि का शासन कैसे करना चाहएि।*

ज्ञान का वचन स्वयं हमें सखिाता है क, शुरुआत में, ईश्वर-प्रेमी आत्मा (ईश्वर को प्रसन्न करने के मार्ग पर चलने के बाद) अनेक भावों, वशिेषकर क्रोध और घृणा से घरि जाती है। यह इस स्थति सि दुष्ट आत्माओं की क्रयिा के कारण नहीं, बल्क आध्यात्मकि जीवन में अपनी प्रगत कि मार्ग के कारण ही गुजरती है। जब तक आत्मा सांसारकि तर्क से संचालति होती है, तब तक वह सत्य के प्रत उदासीन रहती है, भले ही वह दूसरों को इसे पैरों तले रौंदते हुए देखे; क्योंक, अपनी ही इच्छाओं में पूरी तरह से व्यस्त होने के कारण, उसे ईश्वर के सत्य की कोई परवाह नहीं होती। लेकनि जब यह अपने भावों और इच्छाओं से ऊपर उठने लगती है, तो—दुनयिावी चीजों से वैराग्य और ईश्वर के प्रत प्रेम के द्वारा—यह अब सपने में भी ईश्वर की सच्चाई को त्यागते हुए देखने का सहन नहीं कर सकती, बल्क दुष्टों पर तब तक क्रोधति और आक्रोशति होती है जब तक क विह इन सच्चाई के अपराधयिों को ही एक दैवीय मन की कार्यप्रणाली के द्वारा अपनी गरमा की रक्षा करते हुए नहीं देख लेती। (ईश्वर के भय में आकर और पश्चाताप करके)। इस प्रकार, वह स्वाभावकि रूप से अधर्म करने वालों से घृणा करती है, जबक धिर्मपरायण लोगों से गहरा प्रेम करती है; क्योंक जिब उसकी चादर—शरीर—अत्यधकि संयम से शुद्ध हो जाती है, तो आत्मा की आँख धोखा नहीं खाती (गलत दृष्टकिोण की ओर भटकती नहीं)। हालाँक, अन्यायियों से घृणा करने की तुलना में उनकी असंवेदनशीलता पर शोक करना कहीं बेहतर है: क्योंक यिद्यप वि घृणा के पात्र हैं, सत्य का वचन इस बात को अनुमोदति नहीं करता क ईिश्वर-प्रेमी आत्मा घृणा से उत्तेजति हो, क्योंक जिब आत्मा में घृणा होती है, तो सच्चा ज्ञान नष्क्रयि हो जाता है।

७२. *धर्मशास्त्रीय मन और वद्विान का मन।*

ईश्वर-वद्यिा का मन, जो परमेश्वर के वचनों से ही आत्मा में मधुर और परष्कृित होता है, पर्याप्त व्यापकता के साथ नर्लिप्तिता की अपनी सीमा तक पहुँचता है। क्योंक *'प्रभु के वचन'*, जैसा क कहा गया है, *'शुद्ध वचन हैं, धरती पर परष्कृित, चाँदी से शुद्ध की गई'* (भजन संहिता 11:7)। और वद्विान का मन, अनुग्रह-पूर्ण प्रभावों की परीक्षा द्वारा स्थापति होकर, वासनाओं से ऊपर उठता है। धर्मशास्त्री भी, यद विह अपने भीतर सबसे वनिम्र प्रवृत्तयिों को वकिसति करता है, तो वद्विान के अनुभव में सहभागी होता है; और वद्विान, कुछ हद तक, ध्यानमग्न सद्गुण में सहभागी होता है यद उिसकी आत्मा का तर्कशील भाग त्रुट सि मुक्त है। क्योंक ऐिसा नहीं है क हिर कोई इन दो वरदानों को पूर्णता में प्राप्त कर लेता है; ताक जिो कोई भी इनमें से एक का स्वामी है, यह देखकर आश्चर्यचकति हो क दिूसरा उससे श्रेष्ठ है, और धार्मकि जीवन के लिए उत्साह के साथ नम्रता में उत्कृष्ट हो सके। इसीलिए प्रेरति कहते हैं: *'एक को आत्मा के द्वारा ज्ञान का वचन मलिा है, और दूसरे को उसी आत्मा के वषिय में ज्ञान का वचन'* (1 कुरन्थियिों 12:8)।

73. *वाणी से की जाने वाली प्रार्थना और हृदय से की जाने वाली प्रार्थना पर।*

जब आत्मा अपने स्वाभावकि फलों में परपिूर्ण होती है, तो वह सबसे ज़ोर से भजन गाती है और सबसे बढ़कर आवाज़ से प्रार्थना करने की ओर झुकती है। लेकनि जब वह पवति्र आत्मा से प्रेरति होती है, तो वह एक ही हृदय में सभी आनंद और मठिास के साथ गाती और प्रार्थना करती है। पहली अवस्था के बाद एक स्वप्नलि आनंद (जो आत्म-संतोष से उत्पन्न होता है) आता है; दूसरी के बाद एक आध्यात्मकि आँसू, और फरि एक ऐसी वशिेष आनंद जो मौन को पसंद करता है: क्योंक जिब आवाज़ को रोका जाता है, तब स्मृत गिर्म बनी रहती है, और यह हृदय को कुछ आँसू-पैदा करने वाले और आत्म-परीक्षण वाले वचिारों को उत्पन्न करने के लिए प्रेरति करती है। इसमें, सचमुच, कोई प्रार्थना के बीज देख सकता है, जो आँसुओं से लेकनि आनंदपूर्वक हृदय की मट्टिी में बोए गए हैं, एक भरपूर फसल की दृढ़ आशा में (भजन संहिता 125:5)। हालाँक, जब हम महान दुख से अभभिूत होते हैं, तो हमें अपने भजन थोड़े ज़ोर

से गाने चाहिए, और आशा के आनंद से दुख की आहों को दबाना चाहिए, जब तक कि भजन की धुन की हवा से दुख का यह भारी बादल छँट न जाए।

74. *ईश्वर के प्राकृतिक और अनुग्रह-पूर्ण प्रेम पर।*

जब आत्मा स्वयं को जानती है, तो उसमें से एक विशेष प्रकार की ऊष्मा और ईश्वरीय भक्ति की किरणें फैलती हैं: क्योंकि, इस जीवन की चिन्ताओं से विचलित न होकर, वह अपने भीतर से (ईश्वर के लिए) एक विशेष प्रेम को संसार में प्रतिबिंबित करती है, और उचित मात्रा में शांति के स्रोत, ईश्वर की खोज करती है; लेकिन यह स्मरण (खोजे गए ईश्वर का) जल्द ही विलीन हो जाता है, या तो इसलिए कि इंद्रिय छापें इस स्मरण को धुंधला कर देती हैं, या इसलिए कि प्रकृति, अपनी दरिद्रता में, अपनी ही अच्छाई को जल्दी ही समाप्त कर देती है। यही कारण है कि यूनानी दार्शनिक, यद्यपि उन्होंने संयम के द्वारा इसे प्राप्त करने का प्रयास किया, परन्तु जैसा उन्हें करना चाहिए था, वैसा उन्हें प्राप्त नहीं हुआ; क्योंकि उनका मन शाश्वत और सर्व-सत्य बुद्धि से प्रभावित नहीं था। हालाँकि, पवित्र आत्मा द्वारा हृदय पर प्रदान की गई ईश्वर-प्रेमपूर्ण ऊष्मा, सबसे पहले, पूरी तरह से शांतिपूर्ण और अखंड है; इसके अलावा, यह आत्मा के प्रत्येक भाग को ईश्वर से प्रेम करने के लिए बुलाती है और हृदय से फूटकर नहीं निकलती, बल्कि अपनी इच्छा से ही पूरे व्यक्ति को एक प्रकार के असीम प्रेम और आनंद से भर देती है। यही वह है जिसे जानने वालों को प्राप्त करने का प्रयास करना चाहिए। क्योंकि स्वाभाविक प्रेम इस बात का संकेत है कि प्रकृति संयम से नहीं फलती-फूलती; फिर भी यह मन को निर्वैर्यता तक नहीं उठा सकता, जैसा कि आध्यात्मिक (कृपा-पूर्ण) प्रेम करता है।

७५. *आत्मा पर अनुग्रह के प्रकाशमान प्रभाव के बारे में, –*

और अंधकारमय शक्तियों के प्रभाव में इसके अंधकारमय होने पर।

जिस प्रकार हमारे चारों ओर की हवा, जब उत्तर की हवा चलती है, तो एक विशेष सूक्ष्मता और इस हवा के ताज़गी भरे प्रभाव से शुद्ध हो जाती है; लेकिन जब दक्षिणी हवा चलती है, तो वह, मानो, इस हवा से उत्पन्न एक निश्चित भारीपन के कारण गाढ़ी हो जाती है, जो अपने क्षेत्रों से दूर ले जाती है और पूरे ब्रह्मांड में एक प्रकार की सूखी धुंध फैलाती है: इसी प्रकार आत्मा भी, जब वह सत्य और पवित्र आत्मा की श्वास के प्रभाव को ग्रहण करती है, तो वह तब पूरी तरह से दैवीय अंधकार से मुक्त हो जाती है; लेकिन जब इसे भ्रम की आत्मा से जोरदार झटका लगता है, तो यह पाप के बादलों से पूरी तरह ढक जाता है। इसलिए, हमें हमेशा अपनी पूरी ताकत से अपनी कोशिश को पवित्र आत्मा की शुद्ध करने वाली और जीवन-दायक श्वास की ओर निर्देशित करना चाहिए, यानी उस आत्मा की ओर जिसे भविष्यवक्ता यहेजकेल ने एक दर्शन में उत्तर से आते हुए देखा था (– 1:4): ताकि हमारी आत्मा का चिंतनशील भाग, सर्वोपरि, शुद्ध बना रहे, और हम दोषरहित होकर दिव्य दर्शनों में प्रवेश करने के योग्य माने जाएँ, प्रकाश के वातावरण में उसको निहारते हुए जो प्रकाश में है। यही सच्चे ज्ञान का प्रकाश है।

७६. *सत्य की आत्मा और भ्रम की आत्मा बपतिस्मा से पहले और बाद में आत्मा में कैसे कार्य करती हैं।*

कुछ लोगों ने यह धारणा गढ़ी है कि अनुग्रह और पाप—अर्थात् सत्य का आत्मा और भ्रम का आत्मा—बपतिस्मा लेने वालों के मन में एक साथ छिपे रहते हैं: क्योंकि, वे कहते हैं, एक मन को भलाई की ओर बुलाता है, जबकि दूसरा इसके विपरीत बुलाता है। हालाँकि, मैंने दिव्य धर्मग्रंथों और मन के अपने अनुभव से यह समझा है कि, बपतिस्मा से पहले, अनुग्रह बाहरी रूप से आत्मा को भलाई की ओर निर्देशित करता है, जबकि शैतान उसकी गहराइयों में छिपा रहता है, जो मन को सभी धार्मिक मार्गों से रोकने की कोशिश करता है; जिस क्षण हम बपतिस्मा में पुनर्जीवित होते हैं, शैतान बाहर होता है, और अनुग्रह भीतर होता है। यही कारण है कि हम पाते हैं कि जिस प्रकार कभी भ्रम आत्मा पर राज करता था— —ठीक उसी प्रकार बपतिस्मा के बाद सत्य उस पर राज करता है। इसके बाद, शैतान पहले की तरह ही आत्मा पर कार्य करता रहता है, और अक्सर पहले से भी अधिक प्रबल रूप से, लेकिन अनुग्रह के साथ सह-अस्तित्व में रहने वाले के रूप में नहीं—भगवान न करे!—बल्कि, ऐसा कह सकते हैं, शरीर की दुर्बलता के माध्यम से, शब्दहीन सुखों के प्रलोभन द्वारा, मन के सामने सुलगता हुआ। यह ईश्वर की अनुमति से होता है, ताकि कोई व्यक्ति तूफ़ान, आग और प्रलोभन से गुज़रकर ही भलाई के आनंद को प्राप्त कर सके। क्योंकि कहा गया है: *'हम आग और पानी से गुज़रे हैं, और तुमने हमें विश्राम के स्थान पर पहुँचाया है'* (भजन संहिता 65:12)।

77. *जिस प्रकार ईश्वर की कृपा आत्मा में कार्य करती है।*

अनुग्रह, जैसा कि मैंने कहा है, जिस क्षण हम बपतिस्मा ग्रहण करते हैं, उसी क्षण से मन (आत्मा) की गहराइयों में गुप्त रूप से वास करना शुरू कर देता है, और अपनी उपस्थिति को मन की अपनी ही अनुभूति से भी छिपाए रखता है। लेकिन जब कोई व्यक्ति अपनी संपूर्ण इच्छा (हृदय) से ईश्वर से प्रेम करना शुरू करता है, तो अनुग्रह मन की इंद्रियों के माध्यम से एक अकथनीय वचन के साथ आत्मा से बात करता है, और उसे अपनी आशीर्वादों का एक

अंश प्रदान करता है। परिणामस्वरूप, जो कोई भी अपने भीतर इस खोज को हमेशा के लिए थामे रखना चाहता है, वह बड़ी प्रसन्नता के साथ सभी वर्तमान आशीर्वादों को त्यागना चाहता है, ताकि वह उस खेत को पूरी तरह से प्राप्त कर सके जिसमें उसने जीवन का छिपा हुआ खजाना पाया है (मत्ती 12:44)। क्योंकि जब कोई सभी सांसारिक धन-संपत्ति का त्याग कर देता है, तो वह अपने भीतर उस स्थान को पाता है जहाँ परमेश्वर का अनुग्रह छिपा है। फिर, जैसे-जैसे आत्मा आगे बढ़ती है, दिव्य वरदान (अनुग्रह) अपने कल्याणकारी स्वभाव को मन में प्रकट करता है; लेकिन उसी समय प्रभु राक्षसों को आत्मा को और भी अधिक कष्ट पहुँचाने की अनुमति देते हैं, ताकि वह उसे भलाई और बुराई के बीच बुद्धिमानी से भेद करना सिखा सकें, और उसे अधिक विनम्र बना सकें; क्योंकि जब वह ऐसी परीक्षाओं के अधीन होती है, तो वह राक्षसों के विचारों की कलंकितता से उत्पन्न महान लज्जा से अभिभूत हो जाती है।

78. *बपतिस्मा के द्वारा, पवित्र आत्मा हृदय में उंडेल दिया जाता है, जबकि दुष्ट आत्मा को बाहर निकाल दिया जाता है;*

लेकिन इससे पाप के प्रलोभनों का अंत नहीं होता।

हम आत्मा की तर्कसंगत (आध्यात्मिक) गति के माध्यम से परमेश्वर के स्वरूप में बनाए गए हैं; जबकि शरीर, मानो, उसका निवास स्थान है। लेकिन चूंकि, आदम के उल्लंघन के कारण, न केवल आत्मा के विशिष्ट गुण कलंकित हुए, बल्कि हमारा शरीर भी क्षय के अधीन हो गया: सर्व-पवित्र परमेश्वर वचन ने देह धारण किया और, परमेश्वर के रूप में, अपने ही बपतिस्मा के माध्यम से, हमें पुनर्जन्म के लिए उद्धार का जल प्रदान किया: क्योंकि हम पवित्र और जीवन-दायक आत्मा की क्रिया द्वारा जल में पुनर्जन्म लेते हैं, जिसके परिणामस्वरूप हम तुरंत आत्मा और शरीर दोनों से शुद्ध हो जाते हैं, बशर्ते कि हम पूरे हृदय से परमेश्वर के पास जाएँ। इस क्षण, पवित्र आत्मा हम में वास करता है, जबकि पाप (या पाप का पिता) उसे द्वारा बाहर निकाल दिया जाता है, क्योंकि आत्मा की एकता और सरलता—इसके विशिष्ट गुण—को देखते हुए, इन दोनों अस्तित्वों का उसमें एक साथ रहना असंभव है, जैसा कि कुछ लोगों ने सोचा है। इसके अलावा, जब पवित्र बपतिस्मा के माध्यम से दिव्य अनुग्रह, समानता की प्रतिज्ञा के रूप में, परमेश्वर की प्रतिमा की विशेषताओं के साथ असीम प्रेम में एक हो जाता है, तो दुष्ट के लिए स्थान कहाँ है – क्योंकि प्रकाश और अंधकार के बीच कोई संगति नहीं है? (2 कुरिन्थियों 6:14)। इस प्रकार, जैसे-जैसे हम पवित्र प्रयासों के मार्ग पर चलते हैं, हम विश्वास करते हैं कि '*पुनर्जन्म के स्नान*' (1 तीमु. 3:5) के द्वारा घृणित सर्प को मन की गहराइयों से बाहर निकाल दिया जाता है; फिर भी हम इस बात पर आश्चर्यचकित नहीं हैं कि बपतिस्मा के बाद भी, हम अच्छे और बुरे दोनों विचारों का अनुभव करते रहते हैं। क्योंकि पवित्रता का स्नान, यद्यपि यह पाप की मैल को धो देता है, परन्तु हमारी इच्छाओं की द्वैतता को नष्ट नहीं करता, और न ही यह दुष्टात्माओं को हमसे युद्ध करने और हमसे कपटपूर्ण बातें कहने से रोकता है; ताकि उस प्राकृतिक अवस्था में रहते हुए हम जो कुछ भी बनाए रखें, उसे हम धार्मिकता के हथियार उठाकर परमेश्वर की शक्ति से सुरक्षित रख सकें।

७९. *अनुग्रह मन की शक्तियों के माध्यम से कार्य करता है, जबकि शैतान देहगत इंद्रियों और वासनाओं के माध्यम से कार्य करता है।*

शैतान, जैसा कि मैंने कहा है, पवित्र बपतिस्मा द्वारा आत्मा से निष्कासित हो जाता है; फिर भी, उपरोक्त कारणों से, उसे शरीर के माध्यम से उस पर कार्य करने की अनुमति दी जाती है। ईश्वर की कृपा आत्मा की गहराइयों में, अर्थात् मन में, स्थापित की जाती है। क्योंकि, जैसा कहा गया है, '*राजा की पुत्री की सारी महिमा भीतर है*', जो राक्षसों के लिए अदृश्य है (भजन संहिता 44:14)। यही कारण है कि जब हम प्रेमपूर्वक परमेश्वर को याद करते हैं, तो हमें ऐसा लगता है कि दिव्य प्रेम, मानो, हमारे हृदय की गहराइयों से एक धारा की तरह उमड़ता है; जबकि दुष्ट आत्माएँ शारीरिक इंद्रियों पर आक्रमण करती हैं और उनमें निवास कर लेती हैं, और उन लोगों पर, जिनकी आत्माएँ अभी भी शैशवावस्था में हैं, अपने अधीन शरीर के माध्यम से सहजता से कार्य करती हैं। इस प्रकार, दिव्य प्रेरित के अनुसार, हमारा मन हमेशा आत्मा के विधान के अनुकूल रहता है; जबकि दैहिक इंद्रियाँ सहज ही कामुक प्रवृत्तियों की ओर आकर्षित होती हैं (रोमियों 7:18)। परिणामस्वरूप, उन लोगों में जो ज्ञान में उत्साहपूर्वक उत्कृष्टता प्राप्त करते हैं, अनुग्रह, मन और स्वयं शरीर की शक्तियों के माध्यम से, उन्हें अवर्णनीय आनंद से भर देता है; लेकिन जब हम भक्ति के मार्ग पर लापरवाही और असावधानी से चलते हैं, तो राक्षस, हमें इस स्थिति में पाकर, हमारे शरीर की इंद्रियों के माध्यम से हमारी आत्मा को दास बना लेते हैं, और उसे जबरदस्ती उस ओर खींचते हैं जिसकी वह इच्छा नहीं करती—वे हत्यारे हैं।

८०. *उन लोगों के विरुद्ध जो कहते हैं कि बपतिस्मा पाए हुओं के हृदयों में अनुग्रह और पाप एक साथ रहते हैं।*

जो लोग कहते हैं कि दो सिद्धांत, अर्थात् अनुग्रह की आत्मा और पाप की आत्मा, विश्वासियों के हृदयों में सह-अस्तित्व में हैं, वे सुसमाचार लेखक के शब्दों का हवाला देते हैं: '*ज्योति अन्धकार में चमकती है, और अन्धकार*

ने उसे न छीन लयिा' (यूहन्ना 1:5), और निष्किर्ष निकालते हैं कि दैवीय प्रकाश दुष्ट के साथ सह-अस्तित्व में रहते हुए किसी भी तरह से कलंकित नहीं होता है, भले ही दैवीय प्रकाश किसी तरह से दैवीय अंधकार के पास आ जाए। लेकिन यह सुसमाचार अंश ऐसे लोगों का खंडन भी करता है, यह दिखाते हुए कि वे पवित्र धर्मग्रंथों के विपरीत तर्क करते हैं। क्योंकि जैसे परमेश्वर—वचन, यह सच्चा प्रकाश—अपने प्राणियों के सामने अपने शरीर में प्रकट होने के लिए प्रसन्न होकर, मानवजाति के प्रति अपने असीम प्रेम के द्वारा हम में अपनी पवित्र ज्ञान की ज्योति प्रज्वलित की, वैसे ही संसार की बुद्धि ने यह नहीं समझा, अर्थात् परमेश्वर की इस योजना को नहीं पहचाना, क्योंकि *'जो मन शरीर की ओर लगा रहता है, वह परमेश्वर के विरोधी होता है'* (रोमियों 8:7): इसी कारण से धर्मशास्त्री ने ऐसा शब्द प्रयोग किया; और कुछ और शब्द कहने के बाद, यह अद्भुत व्यक्ति जोड़ता है: *'क्योंकि सच्चा प्रकाश, जो संसार में आने वाले हर मनुष्य को प्रबुद्ध करता है'* – इसके बजाय: मार्गदर्शन करता है और जीवन देता है। *'क्योंकि वह जगत में था, और जगत उसकी ही दया से उत्पन्न हुआ, पर जगत ने उसे न पहचाना। वह अपने ही घर आया, और उसके अपनों ने उसका स्वागत न किया। पर जितनों ने उसे ग्रहण किया, उन्हें उसने परमेश्वर की संतान बनने का अधिकार दिया, अर्थात् जो उसके नाम पर विश्वास करते हैं'* (यूहन्ना 1:9–12)। और परम बुद्धिमान पौलुस, इस वाक्यांश: *'उन्होंने उसे ग्रहण नहीं किया'* (उन्होंने उसे नहीं पहचाना) की व्याख्या करते हुए कहते हैं: *'यह नहीं कि मैं प्राप्त कर चुका हूँ या सिद्ध हो चुका हूँ; परन्तु मैं उस को पकड़ने के लिए यत्नशील हूँ, जिस ने मुझे पकड़ा है'* (फिलि. 3:12)। इस प्रकार, सुसमाचार लेखक शैतान के बारे में नहीं कह रहे हैं जब वे कहते हैं कि उसने सच्ची रोशनी को नहीं पहचाना—क्योंकि वह शुरू से ही उससे पराये थे—बल्कि इन शब्दों से वे उन लोगों को सही ढंग से फटकारते हैं जो परमेश्वर की शक्तियों और चमत्कारों के बारे में सुनते हुए भी, उसकी बुद्धि के प्रकाश के पास आना नहीं चाहते, क्योंकि उनके हृदय अंधकारमय हो गए हैं।

81. *दो प्रकार की दुष्ट आत्माएँ हैं: सबसे सूक्ष्म, जो आत्मा के विरुद्ध युद्ध करती हैं,*
और सबसे मोटे, जो शरीर पर अधिक कार्य करते हैं।

ज्ञान का वचन हमें सिखाता है कि दो प्रकार की दुष्ट आत्माएँ होती हैं: कुछ अधिक सूक्ष्म होती हैं, और अन्य अधिक स्थूल भौतिक। सबसे सूक्ष्म आत्माएँ आत्मा के विरुद्ध युद्ध करती हैं, जबकि सबसे स्थूल आत्माएँ आमतौर पर कुछ शर्मनाक, कामुक प्रवृत्तियों के माध्यम से देह को फँसाती हैं; इसीलिए आत्मा पर हमला करने वाले और शरीर पर हमला करने वाले दुष्टात्माएँ हमेशा एक-दूसरे के विरोधी रहती हैं, भले ही लोगों को नुकसान पहुँचाने का उनका उत्साह समान हो। जब अनुग्रह किसी व्यक्ति के भीतर नहीं रहता, तो दुष्टात्माएँ, साँपों की तरह, हृदय की गहराई में घोंसला बना लेती हैं, और आत्मा को भलाई की इच्छा की ओर मुड़ने से रोकती हैं। लेकिन जब अनुग्रह मन में गुप्त रूप से निवास करता है, तो वे, अंधेरे बादलों की तरह, हृदय के हिस्सों में से होकर गुजरते हैं, और पापी वासनाओं और विभिन्न भ्रामक कल्पनाओं में बदल जाते हैं, ताकि स्मरण के द्वारा इन कल्पनाओं से मन का ध्यान भटकाकर, वे उसे अनुग्रह के साथ संबंध से दूर मोड़ सकें। इस प्रकार, जब आत्मा पर हमला करने वाली आत्माएँ हमें भीतर की वासनाओं को भड़काने के लिए उकसाती हैं, विशेषकर अहंकार और घमंड के लिए—जो सभी बुराइयों की जननी है—तो हमें, अपने ही शरीर के क्षय को याद करके, महिमा के प्रेम से उत्पन्न आत्म-बड़प्पन के इस घमंड को लज्जित करना चाहिए। हमें वही करना चाहिए जब राक्षस, शरीर के विरुद्ध युद्ध छेड़ते हुए, हमारे हृदयों को शर्मनाक कामवासनाओं से उबालने के लिए तैयार करते हैं: क्योंकि यह स्मरण ही, ईश्वर के स्मरण के साथ मिलकर, दुष्ट आत्माओं के सभी प्रलोभनों को शक्तिपूर्वक विफल कर देगा। यदि, तथापि, ऐसी स्मृति के उत्तर में, आत्मा के दानव मानव स्वभाव की असीम तुच्छता का विचार, यह सोचकर कि मांस के क्षय के कारण उसमें कोई गरिमा नहीं है, मन में डालना शुरू कर दें (क्योंकि जब कोई उन्हें ऐसे विचारों से पीड़ित करना शुरू करता है तो वे ऐसा करना पसंद करते हैं), – हमें स्वर्ग के राज्य के सम्मान और महिमा को याद करें, साथ ही ईश्वर के निष्पक्ष न्याय की कठोरता को ध्यान में रखना न भूलें; ताकि हम इस प्रकार की कायरतापूर्ण निराशा को रोक सकें, और इस तरह अपने हृदयों को दृढ़ता और शक्ति प्रदान कर सकें—जो शीघ्र और आसानी से वासना के प्रति झुक जाते हैं—ताकि वे इसके विरुद्ध दृढ़ खड़े रह सकें।

82. *शैतान अनुग्रह में रहने वालों के हृदयों में वास नहीं कर सकता;*
परन्तु वह शरीर के द्वारा उन पर युद्ध छेड़ता है।

प्रभु हमें अपनी पवित्र सुसमाचार में सिखाते हैं कि जब शैतान लौटता है और अपने घर को झाड़-पोंछ कर खाली पाता है—अर्थात् हृदय को उजाड़—तो वह अपने साथ और भी सात दुष्टात्माएँ ले आता है, और उनमें प्रवेश करके वहाँ अपना घर बसा लेता है, और उस व्यक्ति की अंतिम दशा पहली से भी बदतर हो जाती है (लूका 11: 25)। इससे यह समझना चाहिए कि जब तक पवित्र आत्मा हमारे भीतर वास करता है, शैतान आत्मा की गहराइयों में प्रवेश करके

वहाँ नहीं रह सकता। लेकिन दैवीय पौलुस भी इस दृष्टकिोण की उसी समझ को सखिाते हैं – इस वषिय की सच्ची प्रकृति को तपस्वी (अनुभवात्मक) ज्ञान के माध्यम से (यानी, यह वास्तव में क्या है) देखने के बाद, वे कहते हैं: *'क्योंकि मैं मन से परमेश्वर की व्यवस्था में आनंदति होता हूँ, परन्तु मैं अपने अंगों में एक दूसरी व्यवस्था देखता हूँ जो मेरी बुद्धि की व्यवस्था के वरिुद्ध लड़ती है, और मुझे बंदी बनाकर पाप की व्यवस्था के अधीन कर देती है जो मेरे अंगों में है'* (रोमयिों 7:22–23)। जहाँ तक उन लोगों का प्रश्न है जो आत्मा के अनुसार जीने में सफल हुए हैं, वह आगे कहते हैं: *'अब जो मसीह यीशु में हैं, उनके लिए कोई दण्ड-नरि्णय नहीं है, जो शरीर के अनुसार नहीं, बल्कि आत्मा के अनुसार चलते हैं। क्योंकि जीवन का आत्मा जो मसीह यीशु में है, ने मुझे पाप और मृत्यु की व्यवस्था से स्वतंत्र कर दयिा है"* (रोमयिों 8:1-2)। और एक अन्य अंश में, यह दखिाने के लिए कि शैतान शरीर से उस आत्मा पर युद्ध छेड़ता है जो पवति्र आत्मा का सहभागी बन गया है, वह कहता है: *"इसलयिे खड़े हो जाओ, अपने कमर में सत्य का कमरबंद बाँधकर, धार्मकिता का बख्तर पहनकर और अपने पैरों में शान्ति के सुसमाचार की तैयारी के जूते जूतों में डालकर; इन सब के ऊपर वशि्वास की ढाल उठा लो, जसिसे तुम उस दुष्ट के सब जलते हुए तीरों को बुझा सको; और उद्धार का टोप और आत्मकि तलवार, जो परमेश्वर का वचन है, ले लो"* (इफसियिों 6:14–17)। लेकिन बंधन एक बात है, और संघर्ष दूसरी; क्योंकि पहले का अर्थ ह , कसिी को अपनी शक्ति से जबरदस्ती कब्जा करना है, जबकि बाद वाला एक समान और वरिोधी संघर्ष को दर्शाता है। इसीलिए प्रेरति कहते हैं कि शैतान उन आत्माओं पर अग्नबािणों से हमला करता है जो अपने भीतर प्रभु मसीह को धारण करती हैं। क्योंकि आमतौर पर ऐसा ही होता है: जो कोई अपने हाथों से अपने वरिोधी तक नहीं पहुँच सकता, वह उन पर बाणों का प्रयोग करता है, ताकि वह उस शत्रु को बाणों की उड़ान से दूर से ही घायल कर सके जसिसे वह लड़ रहा है; और इस प्रकार शैतान, क्योंकि वह अब पहले की तरह, उन प्रयास करने वालों के मन में, उनके भीतर अनुग्रह की उपस्थति के कारण, नविास नहीं कर सकता; इसलिए, शरीर में रहते हुए, वह कामुक आर्द्रता पर झपटता है, और उसकी आकर्षण के द्वारा आत्मा को बहकाने का प्रयास करता है। इसीलिए शरीर को सूखा कयिा जाना चाहिए, ताकि कामुक नमी से आकर्षति मन इंद्रयि-सुख के जाल में न फँसकर गरि पड़े। प्रेरति के शब्दों से ही यह स्पष्ट हो जाता है कि जो लोग प्रयासरत हैं, उनका मन दवि्य प्रकाश के प्रभाव में है, और इसीलिए वह परमेश्वर के वश में है और उसमें आनंदति होता है; जबकि शरीर, अपने स्वयं के दुष्ट स्वभाव के कारण, दुष्ट आत्माओं के वश में है, और इसीलिए वह उनके दुष्ट सुझावों के आगे झुकने के लिए आकर्षति होता है। इससे यह स्वतः स्पष्ट है कि मन ईश्वर और शैतान के लिए कोई सामान्य नविास स्थान नहीं है: अन्यथा, जब मैं अपने मन से ईश्वर के वधिान की सेवा कर रहा होता, और अपने शरीर के साथ पाप के वधिान की सेवा करूँ, यदि मेरा मन अपनी सारी स्वतंत्रता के साथ दुष्टात्माओं का वरिोध न करे, स्वेच्छा से उस पर अनुग्रह के कल्याणकारी प्रभाव को स्वीकार न करे, जबकि उसी समय शरीर नशिब्द आनंदों की सुखद सुगंध से लुभाया जाता है, क्योंकि, जैसा कि मैंने कहा है, मैं दुष्टात्माओं को उसमें वास करने देता हूँ? प्रेरति कहते हैं: *'क्योंकि मैं जानता हूँ कि मुझ में—अर्थात् मेरे शरीर में—कोई भली वस्तु वास नहीं करती'* (रोमयिों 7:18)। इस प्रकार, उन लोगों में जो अपने संघर्षों के द्वारा पाप का वरिोध करते हैं (क्योंकि प्रेरति यहाँ अपने बारे में नहीं बोल रहे हैं), राक्षस मन के वरिुद्ध युद्ध छेड़ते हैं, जबकि शरीर, सुखद और मनभावन प्रवृत्तयिों के द्वारा, उन्हें आराम देने और वासना में फँसाने का प्रयास करता है; क्योंकि, धर्मी नरि्णय से, उन्हें पाप के वरिुद्ध गंभीरता से संघर्ष करने वालों के शरीर की गहराइयों में भी छपिने की अनुमति है, क्योंकि मानवीय तर्क की इच्छा हमेशा प्रलोभन के अधीन रहती है। लेकिन यदि कोई, इस जीवन में भी, तपस्या के श्रम द्वारा, मरने में सक्षम है, तो वह अंततः पूरी तरह से पवति्र आत्मा का वासस्थान बन जाता है; क्योंकि ऐसा व्यक्ति मृत्यु से पहले ही उठ चुका होता है – जैसा कि स्वयं धन्य पौलुस थे, और जैसे वे सभी थे और हैं जन्हिोंने पूरण भक्ति के साथ पाप के वरिुद्ध संघर्ष कयिा और कर रहे हैं।

83. *ठीक उसी प्रकार जैसे शैतान द्वारा उत्पन्न वचिारों को हृदय से उत्पन्न माना जाता है।*

हृदय स्वयं अच्छे और बुरे दोनों वचिारों को जन्म देता है; हालाँकि, यह अपनी प्रकृति से बुरे वचिारों को उत्पन्न नहीं करता है, बल्कि उनमें से कुछ को इसलिए पालता है क्योंकि अतीत के प्रलोभनों के कारण बुराई की याद इसकी आदत बन गई है, जबकि उनमें से अधकिांश—और वास्तव में सबसे दुष्ट वचिार—यह राक्षसों की दुष्टता से प्राप्त करता है। हालाँकि, हम उन सभी को, मानो, हृदय से ही नकिलते हुए समझते हैं; यही कारण है कि कुछ लोगों ने सोचा है कि हमारे मन में अनुग्रह और पाप दोनों एक साथ रहते हैं, और उन्होंने प्रमाण के रूप में प्रभु के वचनों का हवाला दयिा है: *'क्योंकि जो कुछ मुख से नकिलता है, वह हृदय से नकिलता है, और यही मनुष्य को अशुद्ध करता है। क्योंकि हृदय से दुष्ट वचिार, हत्या, व्यभचािर, कामवासना और ऐसी ही बातें नकिलती हैं* (मत्ती 15:18, 20)। फरि भी वे यह नहीं समझते कि हमारा मन, एक अत्यंत सूक्ष्म शक्ति के कार्यों के द्वारा, उन दुष्ट वचिारों का भांडार बन जाता है जन्हिें दुष्ट आत्माएँ उसमें डालती हैं; क्योंकि, देह के कार्यों के द्वारा, शरीर—जो आत्म-संतुष्टि का प्रवृत्त है—आत्मा

को इसमें खींचता है, यद्यपि हम नहीं जानते कि कैसे, अपने साथ उसके मलिन के कारण; क्योंकि मांस (शरीर) कामवासना के प्रलोभन को अत्यंत रूप से प्रेम करता है। इसी कारण से, दुष्टात्माओं द्वारा आत्मा में डाले गए विचार हृदय से उत्पन्न होते प्रतीत होते हैं, और जब हम उनमें आनंद लेने की इच्छा करते हैं तो हम उन्हें अपना बना लेते हैं: यही वह बात है जिसकी प्रभु निंदा करते हैं, जैसा कि दिव्य वचन स्वयं प्रकट करता है, और उन्होंने उपरोक्त उद्धृत शब्द कहे। क्योंकि जब कोई चालाक शैतान द्वारा उसमें डाले गए विचारों में आनंदित होता है, और उनके स्मरण को, मानो, अपने हृदय पर अंकित कर लेता है, तो क्या यह स्पष्ट नहीं है कि वह बाद में इन विचारों को अपने भीतर से ही उत्पन्न करता है?

84. *धर्मग्रंथ से एक उदाहरण जो यह समझाता है कि अनुग्रह और शैतान*
हृदय में एक साथ नहीं रह सकते।

प्रभु सुसमाचार में कहते हैं कि एक बलवान मनुष्य को उसके घर से तब तक नहीं निकाला जा सकता जब तक कि उससे भी बलवान कोई उसे बाँध न दे, उसकी सारी संपत्ति लूट न ले, और उसे बाहर फेंक न दे (मत्ती 12:29)। तो फिर, ऐसी अपमान के बाद, यह निष्कासित व्यक्ति कैसे फिर से प्रवेश कर सकता है और घर के सच्चे स्वामी के साथ वहाँ रह सकता है, जो अपनी इच्छा से अपने ही घर में विश्राम करता है? और कौन सा राजा, जिसने अपने विरुद्ध विद्रोह करने वाले एक तानाशाह को पराजित किया हो, चाहेगा कि वह उसके साथ अपने शाही कक्षों में घूमे? क्या वह इसके बजाय उसे तुरंत तलवार से नहीं काट डालेगा, या, उसे बाँधकर, सबसे लंबे यातना और सबसे दयनीय मृत्यु के लिए अपने सैनिकों के हवाले नहीं कर देगा?

८५. *आध्यात्मिक जीवन के अनुभवों से इसका प्रमाण,*
या इस बात का कि समृद्धि प्राप्त कर रहे व्यक्ति में अनुग्रह और पाप कैसे कार्य करते हैं।

यदि कोई, इस आधार पर कि हम अच्छा और बुरा दोनों सोचते हैं, यह निष्कर्ष निकालता है कि पवित्र आत्मा और शैतान मन में एक साथ रहते हैं, तो ऐसे व्यक्ति को यह जान लेना चाहिए कि ऐसा हमारे साथ इसलिए होता है क्योंकि हमने अभी तक यह अनुभव नहीं किया है या नहीं देखा है *कि प्रभु कितना भला है* (भजन संहिता 33:9)। क्योंकि पहले, जैसा कि मैंने ऊपर पहले ही कहा है, अनुग्रह बपतिस्मा लेने वालों में अपनी उपस्थिति को छिपाए रखता है, आत्मा की स्वैच्छिक इच्छा की प्रतीक्षा में; लेकिन जब कोई व्यक्ति पूरी तरह से ईश्वर की ओर मुड़ता है, तो अनुग्रह किसी अकथनीय अनुभूति के माध्यम से हृदय के सामने अपनी उपस्थिति प्रकट करता है; और एक बार फिर आत्मा की प्रतिक्रिया की प्रतीक्षा करता है, जबकि इस बीच राक्षसों के तीरों को उसकी भावनाओं की गहराइयों तक पहुँचने देता है, ताकि वह परमेश्वर को अत्यंत उत्साह और सबसे विनम्र मनोभाव के साथ खोज सके। यदि, परिणामस्वरूप, कोई व्यक्ति अंततः दृढ़ संकल्प के साथ आज्ञाओं का पालन करने और प्रभु यीशु को अविराम पुकारने में आगे बढ़ना शुरू करता है; तो पवित्र अनुग्रह की अग्नि हृदय की बाहरी इंद्रियों तक फैल जाती है, और मानव धरती की कांटों को मूर्त रूप से भस्म कर देती है; जिसके परिणामस्वरूप शैतान की सलाह और सुझाव उस स्थान (जहाँ हृदय अनुग्रह में है) से परे ठहरने के लिए कोई जगह नहीं पाते, और वे केवल आत्मा के भावुक भाग को हल्के से छूते हैं। लेकिन जब कोई व्यक्ति, तपस्या के प्रयासों के द्वारा, सभी सद्गुणों से युक्त हो जाता है, और विशेष रूप से सांसारिक संपत्ति से पूर्ण निर्लिप्तता में, तो अनुग्रह उसके पूरे अस्तित्व को एक गहरे, अकथनीय अनुभूति से प्रकाशित कर देता है, और उसमें परमेश्वर के प्रति परम प्रेम को प्रज्वलित कर देता है; तब राक्षसों के बाण शारीरिक इंद्रियों तक पहुँचने से पहले ही बुझ जाते हैं, क्योंकि पवित्र आत्मा की श्वास हृदय को गहरी शांति से भर देती है, जबकि राक्षसों के अग्नि बाण हवा में उड़ते ही बुझ जाते हैं। हालाँकि, जिसने इस पद को प्राप्त कर लिया है, उसे भी कभी-कभी ईश्वर द्वारा राक्षसों के दुष्ट प्रभाव के अधीन होने की अनुमति दी जाती है, जिससे ऐसे समय में उसका मन अप्रकाशित रह जाता है, ताकि हमारी स्वतंत्र इच्छा अनुग्रह के बंधनों से पूरी तरह से बँध न जाए—न केवल इसलिए कि पाप को तपस्या के प्रयासों से जीतना चाहिए, बल्कि इसलिए भी कि मनुष्य को आध्यात्मिक अनुभव में प्रगति करते रहना चाहिए: क्योंकि जिसे बात को सिखाए जाने वाले में पूर्ण माना जाता है, वह उस शिक्षा की संपदा की तुलना में अपूर्ण है जो परमेश्वर अपनी प्रगति के प्रति उत्साही प्रेम में प्रदान करते हैं, भले ही कोई व्यक्ति, इस प्रगति के लिए परिश्रम करते हुए, याकूब को दिखाई गई सीढ़ी के सर्वोच्च शिखर पर भी चढ़ जाए।

86. *ईश्वर की अनुमति शिक्षा के लिए है, और ईश्वर का अस्वीकार दंड के लिए है।*

प्रभु स्वयं कहते हैं, *'शैतान स्वर्ग से गिर गया है'* (लूका 10:18), ताकि वह पवित्र स्वर्गदूतों के महिमामय निवास को न देख सके: तो फिर वह, जो परमेश्वर के भले सेवकों की संगति के अयोग्य है, परमेश्वर के साथ मानव मन को अपना निवास स्थान कैसे साझा कर सकता है? भले ही यह कहा जाए कि यह दिव्य अनुमति से होता है, यह कोई निर्णायक प्रमाण नहीं है। क्योंकि शैक्षिक अनुमति किसी भी तरह से आत्मा को दिव्य प्रकाश से वंचित नहीं करती

है; ऐसे मामलों में जो होता है वह केवल इतना है कि अनुग्रह, जैसा कि मैंने पहले ही कहा है, मन से अपनी उपस्थिति को छिपा देता है, ताकि शैतान की कटुता से प्रेरित होकर, आत्मा, सभी भय और महान विनम्रता के साथ, ईश्वर से सहायता मांगे, जबकि वह अपने भीतर शत्रु के दुष्ट प्रभाव का अनुभव कर रही हो। जैसे एक माँ, जिसका बच्चा स्तनपान के नियमों को मानने से इनकार कर रहा है, उसे थोड़ी देर के लिए अपनी गोद से छोड़ देती है, ताकि बच्चा, अपने चारों ओर खड़े भद्दे अजनबियों या कुछ जंगली जानवरों से डरकर, बड़े डर और आँसुओं के साथ, उसकी गोद में वापस आ जाए। लेकिन ईश्वर के प्रतिकार से, दी गई कभी-कभार की अनुमति आत्मा को—जो ईश्वर को अपने भीतर नहीं चाहती—राक्षसों के हाथों में, जैसे बँधी हुई, सौंप देती है। लेकिन हम ऐसे बच्चे नहीं हैं जिन्हें अलग कर दिया जाए; बल्कि, जैसा कि हम मानते हैं, हम परमेश्वर की कृपा के सच्चे संतान हैं, जिन्हें दुर्लभ अनुमतियों और बार-बार मिलने वाले सांत्वनाओं द्वारा पोषित किया जाता है, ताकि, हमारे प्रति ऐसी कृपा के प्रभाव में, हम *'मसीह की पूर्णता के कद के माप'* (इफिसियों 4:13) *तक* पहुँचने के लिए बढ़ सकें।

८७. आत्मा पर ईश्वर की शिक्षाप्रद सहनशीलता के प्रभावों पर

और उसकी दंडात्मक परित्याग;

और इस पर कि दोनों के सामने कैसे आचरण करना चाहिए।

शिक्षा के लिए ईश्वर की अनुमोदक क्रिया सबसे पहले आत्मा पर महान दुख, अपमान की भावना और कुछ हद तक निराशा की चोट करती है, ताकि उसमें अहंकार और दूसरों को प्रभावित करने की इच्छा को कुचला जा सके, और उसे उचित नम्रता में लाया जा सके। लेकिन तुरंत बाद, यह हृदय में परमेश्वर का एक कोमल भय, एक अश्रुपूर्ण स्वीकारोक्ति, और परम धन्य मौन की एक महान इच्छा उत्पन्न करता है। जबकि परमेश्वर की अरुचि से उत्पन्न परित्याग आत्मा को उसके हाल पर छोड़ देता है, और यह निराशा और अविश्वास, अहंकार और क्रोध से भर जाती है। इसलिए यह हम पर अनिवार्य है, कि इन दोनों—आत्म-संतुष्टि और परित्याग—को जानते हुए, प्रत्येक की प्रकृति के अनुसार उचित समय पर ईश्वर के पास जाएँ: पहले वाले में, हमें उसे धन्यवाद और व्रत अर्पित करने चाहिए, क्योंकि वह दयालुतापूर्वक हमारे स्वभाव की अव्यवस्था को सांत्वना से वंचित करके दंडित करता है, ताकि वह हमें, एक पिता की तरह, भलाई और बुराई के बीच स्पष्ट रूप से अंतर करना सिखा सके; और यहाँ, पापों का निरंतर स्वीकार, अविराम आँसू और अधिक एकांत, ताकि, ऐसे परिश्रमी प्रयास के द्वारा, हम ईश्वर से विनती कर सकें और उन्हें प्रेरित कर सकें कि वे पहले की तरह हमारे हृदयों पर दृष्टि डालें। हालांकि, यह समझना चाहिए कि जब, ईश्वर की अनुमोदक व्यवस्था द्वारा, आत्मा शैतान के साथ आमने-सामने की लड़ाई में संलग्न होती है, तो अनुग्रह, भले ही वह स्वयं को छिपा ले, अदृश्य सहायता के माध्यम से आत्मा की सहायता करता है, ताकि उसके शत्रुओं को यह दिखाया जा सके कि उन पर विजय केवल आत्मा का ही कार्य है,

८८. एक उदाहरण स्पष्ट करता है

क्यों आत्मा अनुग्रह की उपस्थिति में भलाई और बुराई की कल्पना करती है।

और जो कोई भी आध्यात्मिक पर चिंतन करने के योग्य समझा जाता है। ठीक वैसे ही जैसे, जब कोई सर्दियों में कहीं खुले स्थान पर, दिन की शुरुआत में पूर्व की ओर मुख करके खड़ा होता है, तो उसके शरीर का सामने वाला हिस्सा सूर्य से गर्म हो जाता है, जबकि पिछला हिस्सा सूर्य की गर्मी से अप्रभावित रहता है, क्योंकि उस क्षण सूर्य सीधे उसके ऊपर नहीं होता है: ऐसा ही उन लोगों का है जो अभी अपनी आध्यात्मिक यात्रा की शुरुआत में हैं; अर्थात्, उनके हृदय कभी-कभी पवित्र अनुग्रह से आंशिक रूप से गर्म हो जाते हैं, और इसीलिए उनके मन तब आध्यात्मिक चिंतन का फल देना शुरू कर देते हैं; लेकिन उनके हृदय के बाहरी हिस्से अभी भी सांसारिक विचारों में व्यस्त रहते हैं, क्योंकि हृदय के सभी हिस्से अभी तक अपनी सबसे गहरी कोठरी में अनुग्रह के पवित्र प्रकाश से प्रबुद्ध नहीं हुए हैं – (जिसे कुछ लोग, इसे समझने में विफल होकर, यह मानते हैं कि जो लोग आध्यात्मिक रूप से प्रयास करते हैं, उनके मन के भीतर दो विरोधी शक्तियाँ होती हैं)। यही कारण है कि आत्मा एक ही समय में अच्छा और बुरा दोनों पर मनन करती है, ठीक वैसे ही जैसे, ऊपर दिए गए उदाहरण में, एक व्यक्ति एक ही क्षण में ठंड और गर्मी दोनों महसूस करता है। क्योंकि जब से हमारा मन ज्ञान की द्वैतता में फँसा है, तब से उसमें, अपनी इच्छा के विरुद्ध भी, एक ही क्षण में बुराई और अच्छाई दोनों के बारे में सोचने की एक निश्चित बाध्यता रही है, विशेष रूप से उन लोगों में जो तर्क की सूक्ष्मता प्राप्त करते हैं। क्योंकि चाहे कोई भी हमेशा अच्छी चीजों के बारे में सोचने की कितनी भी कोशिश कर ले, बुराई तुरंत मन में आ जाती है, क्योंकि आदम के उल्लंघन के समय से ही मानवीय स्मृति किसी तरह से दो प्रकार के विचारों में विभाजित हो गई है। लेकिन यदि हम परम उत्साह के साथ परमेश्वर की आज्ञाओं का पालन करना शुरू कर दें, तो अनुग्रह, उसकी उपस्थिति की गहरी अनुभूति से हमारे सभी इंद्रियों को प्रकाशित करते हुए, हमारी सभी पापी यादों को जलाकर भस्म कर देगा; और हमारे हृदयों को अटूट प्रेम की शांति से

मीठा करते हुए, हमें सांसारिक चीजों के बजाय आध्यात्मिक चीजों के बारे में सोचने का आदी बना देगा। यह अक्सर उन लोगों के साथ होता है जो पूर्णता के करीब पहुँच रहे हैं, जो अपने हृदय में प्रभु की निरंतर स्मृति बनाए रखते हैं।

८९. *बपतिस्मा के द्वारा, अनुग्रह परमेश्वर की प्रतिमा को पुनर्स्थापित करता है,*
और फिर ईश्वर के सदृशता को चित्रित करती है
साथ ही मनुष्य के सद्गुण प्राप्त करने के प्रयासों के साथ,
जिसमें प्रेम ईश्वर समानता का सर्वोच्च लक्षण है।

पवित्र अनुग्रह हमें पुनर्जन्म देने वाले बपतिस्मा के माध्यम से दो आशीर्वाद प्रदान करता है, जिनमें से एक दूसरे से कहीं श्रेष्ठ है। लेकिन एक आशीर्वाद यह तुरंत प्रदान करता है; अर्थात्, स्वयं पानी में ही यह आत्मा की उन सभी विशेषताओं को नवीनीकृत और प्रबुद्ध करता है जो ईश्वर की प्रतिमा का निर्माण करती हैं, और हमसे पाप के हर दाग को धो देता है; जबकि दूसरे आशीर्वाद को यह हम में हमारे साथ मिलकर साकार करने के लिए प्रतीक्षा करता है: यही वह है जो ईश्वर के सदृशता का निर्माण करता है। – इस प्रकार, जब मन, गहरी अनुभूति के साथ, सर्व-पवित्र आत्मा के आशीर्वादों में भाग लेना शुरू करता है, तो हमें यह एहसास होना चाहिए कि अनुग्रह, मानो, ईश्वर की प्रतिमा के लक्षणों पर दिव्यता के लक्षणों को चित्रित करना शुरू कर देता है। क्योंकि जैसे चित्रकार पहले एक ही रंग से किसी व्यक्ति की आकृति का खाका खींचते हैं, और फिर, धीरे-धीरे, एक के ऊपर एक रंग चढ़ाते हैं, वे जिस व्यक्ति का चित्र बना रहे होते हैं, उसकी आकृति को इतना जीवंत बना देते हैं कि वह उसके बालों तक का भी मिलान कर लेती है: इसी प्रकार ईश्वर की पवित्र कृपा भी पहले बपतिस्मा के द्वारा मनुष्य में ईश्वर की प्रतिमा के लक्षणों को पुनर्स्थापित करती है, और उसे उस अवस्था में वापस ले आती है जिसमें वह सृजित होने के समय था; और जब वह देखता है कि हम अपनी पूरी इच्छा से ईश्वर की समानता की सुंदरता की कामना करते हैं, और उसकी कार्यशाला में नग्न और निडर खड़े हैं, तो जैसे-जैसे आत्मा में एक के बाद एक सद्गुण खिलते हैं, और उसका मुख महिमा से महिमा तक ऊँचा उठाया जाता है, वह उस पर ईश्वर की समानता की विशेषताएँ प्रदान करता है: जिसके द्वारा इंद्रियाँ यह प्रकट करती हैं कि ईश्वर के सदृशता के लक्षण हम में कैसे प्रतिबिंबित होते हैं, जबकि उस सदृशता की पूर्णता को हम अनुग्रह के प्रबोधन द्वारा पहचानते हैं। मन, एक निश्चित परिमाण में और अकथनीय सामंजस्य में फलते-फूलते हुए, इंद्रियों के माध्यम से सभी सद्गुणों को ग्रहण करता है; लेकिन कोई भी तब तक आध्यात्मिक प्रेम को प्राप्त नहीं कर सकता जब तक कि वह पवित्र आत्मा द्वारा मूर्त रूप से और उसकी संपूर्णता में प्रबुद्ध न हो जाए। क्योंकि यदि मन दिव्य प्रकाश से ईश्वर के प्रति पूर्ण समानता प्राप्त नहीं करता है, तो, भले ही उसमें अन्य सभी सद्गुण हों, वह पूर्ण प्रेम में संलग्न नहीं रहता; क्योंकि केवल तभी कोई व्यक्ति ईश्वर के सद्गुण के समान पूर्ण हो जाता है (मैं उस ईश्वर के प्रति समानता की बात कर रहा हूँ जो किसी व्यक्ति की क्षमता के भीतर है), जब वह दिव्य प्रेम की समानता भी धारण करता है। जैसे जब किसी का चित्र बनाया जाता है, तो सबसे मनभावन रंग और सबसे आवश्यक विशेषताएँ—जब चित्रित चेहरे पर लगाई जाती हैं—तो वे उसे, मुस्कान तक भी, चित्रित व्यक्ति के बिल्कुल समान बना देती हैं: इसी प्रकार, जब दिव्य अनुग्रह किसी व्यक्ति में ईश्वर की समानता को चित्रित करता है, तो प्रेम का तेजस्वी गुण, एक बार लागू हो जाने पर, यह प्रकट करता है कि ईश्वर की प्रतिमा की विशेषताएँ पूरी तरह से ईश्वर-सदृशता के वैभव तक ऊँची उठा दी जाती हैं। और प्रेम के सिवाय कोई भी सद्गुण आत्मा को निर्लिप्तता (वासनाओं से शुद्धता और मुक्ति) प्रदान नहीं कर सकता: क्योंकि '*विधि का पूर्ति प्रेम है*' (रोमियों 13:10); इस प्रकार, यद्यपि हमारा भीतरी मनुष्य प्रेम के अनुभव के माध्यम से प्रतिदिन नवीनीकृत होता है, वह केवल प्रेम की पूर्ण परिपूर्णता के साथ ही पूर्ण परिपक्वता प्राप्त करता है।

९०. *आरंभ में, किसी को अनुग्रह के सांत्वनाओं का पूरा स्वाद दिया जाता है,*
और फिर वे छिपा दिए जाते हैं; पहला उत्साह बनाए रखने के लिए
आत्मिक प्रयासों के लिए, और दूसरा ताकि प्रयास करने वाला नम्र हो जाए।

प्रेम में अनुग्रह का पूर्ण प्रकटीकरण… और यह कैसे होता है। अपनी आध्यात्मिक प्रगति की शुरुआत में ही, यदि कोई परमेश्वर के गुण से परम प्रेम करता है, तो पवित्र आत्मा आत्मा को परमेश्वर की मिठास का एक पूर्ण और सुनिश्चित स्वाद प्रदान करता है, ताकि मन निश्चितता और स्पष्टता से जान सके कि ईश्वर-प्रेमपूर्ण परिश्रम का फल कितना महान है; लेकिन फिर वह इस जीवन-दायक उपहार की समृद्धि को लंबे समय तक छिपाए रखता है, ताकि, भले ही हम सभी सद्गुणों में उत्कृष्ट हों, हम खुद को कुछ भी न समझें, क्योंकि हम अपने भीतर यह नहीं देखते कि पवित्र प्रेम एक स्थायी स्वभाव बन गया है। क्योंकि ऐसा अक्सर होता है कि निस्संदेह प्रेम की आत्मा कभी-कभी आध्यात्मिक जीवन में प्रयासरत आत्माओं पर इतनी ज़ोरदार चोट करती है कि वे उनसे भी शत्रुता रखने लगते हैं जो उनसे प्रेम करते हैं, और यहाँ तक कि उन्हें नमस्कार करते और चूमते समय भी, वे शत्रुता के इस भ्रष्ट करने

वाले कार्य को बनाए रखते हैं। इसके कारण, आत्मा बहुत दुख और पीड़ा से ग्रस्त हो जाती है, क्योंकि यद्यपि वह अपने स्मरण में आध्यात्मिक प्रेम को संजोए रखती है (प्रेम के दायित्व के प्रति सचेत रहते हुए), वह उसे अपनी भावनाओं में अनुभव नहीं कर सकती, जो आत्मा को उसके सबसे उत्तम प्रयासों की अपर्याप्तता के कारण प्रतीत होता है। इसीलिए हमें, फिलहाल, इच्छाशक्ति के बल पर प्रेम के कार्य करने के लिए खुद को मजबूर करना चाहिए, ताकि इस तरह हम इसे पूर्ण भावना और सुनिश्चित संतुष्टि के साथ चख सकें; फिर भी पूर्णता में, इस देह में रहने वालों में से कोई भी इसे प्राप्त नहीं कर सकता, सिवाय उन संतों के जो शहादत और पूर्ण स्वीकारोक्ति तक पहुँचे हों—क्योंकि जो कोई भी इसे प्राप्त करता है, वह पूरी तरह से बदल जाता है और भोजन के पास भी अनिच्छा से जाता है; क्योंकि दिव्य प्रेम से पोषित व्यक्ति में, इस संसार की भलाइयों की क्या इच्छा रह सकती है? इसी कारण से, अति बुद्धिमान पौलुस, ज्ञान के उस महान भांडार ने, जब हमें धर्मी लोगों के भविष्य के सांत्वनादायक वचनों की घोषणा करते हुए इस सत्य के अपने अनुभव से कहा: *'परमेश्वर का राज्य खाने-पीने का नहीं, बल्कि धार्मिकता, शांति और पवित्र आत्मा में आनंद का है'* (रोमियों 14:17), जो पूर्ण प्रेम का फल हैं। इस प्रकार, जो आध्यात्मिक जीवन में प्रगति कर रहे हैं, वे यहाँ अक्सर प्रेम के कार्य में सहभागी हो सकते हैं; फिर भी कोई भी तब तक पूर्ण परिपूर्णता को प्राप्त नहीं कर सकता जब तक कि *'मरनहार देह'* पहले *'भस्म'* न हो जाए (2 कुरिन्थियों 5:4)।

९१. *परमेश्वर के प्रति अनुग्रह-पूर्ण प्रेम के कार्य पर।*

एक व्यक्ति जिसने परमेश्वर से अटूट प्रेम किया था, उसने मुझसे कहा: जब मैंने परमेश्वर के प्रेम को मूर्त रूप में अनुभव करने की इच्छा व्यक्त की, तो दयालु प्रभु ने मुझे उसे पूरी संवेदना और संतुष्टि के साथ प्रदान किया; और मैंने इस प्रभाव को इतनी तीव्रता से महसूस किया कि मेरी आत्मा ने तब एक अकथनीय आनंद और उत्सुकता के साथ, अपना शरीर छोड़कर प्रभु के पास जाने और इस अस्थायी जीवन के मार्ग को पूरी तरह से भूल जाने की इच्छा की। और जिसने भी ऐसे प्रेम की शक्ति का अनुभव किया है, भले ही उसे किसी और के हाथों हजारों अन्याय और वंचनाएँ झेलनी पड़ी हों, वह उनके प्रति क्रोध नहीं रखता, बल्कि उस व्यक्ति से आध्यात्मिक रूप से जुड़ा रहता है जो उसका अपमान करता है और उससे अन्याय करता है; परन्तु वह केवल उन लोगों के विरुद्ध जोश से भर जाता है जो गरीबों पर हमला करते हैं, या *'परमेश्वर के विषय में झूठ बोलते हैं'*, जैसा कि धर्मग्रंथ कहता है (भजन संहिता 73:6), या जो अन्यथा दुष्टता से जीते हैं। क्योंकि जो परमेश्वर से स्वयं से कहीं अधिक प्रेम करता है, या जो स्वयं से बिल्कुल भी प्रेम नहीं करता और केवल परमेश्वर से ही प्रेम करता है, वह अब अपने सम्मान के लिए नहीं खड़ा होता, बल्कि केवल यही चाहता है कि उस सत्य का सम्मान किया जाए जिसने उसे अनंत महिमा से सम्मानित किया है। और वह यह इच्छा किसी क्षणिक या अस्थायी इच्छा से नहीं रखता, बल्कि ईश्वर के प्रति प्रेम के अपने पूर्ण अनुभव के कारण, यह एक अपरिवर्तनीय चरित्र के रूप में उसकी प्रवृत्ति बन जाती है। इसके अलावा, यह समझना चाहिए कि जो व्यक्ति ईश्वर द्वारा ऐसे प्रेम के लिए प्रेरित होता है, वह अपने भीतर प्रेम की क्रिया के दौरान स्वयं विश्वास से भी ऊपर उठ जाता है, ठीक वैसे ही जैसे वह पहले से ही परमपवित्र को अपने हृदय की भावना में पूर्ण प्रेम के साथ विश्वास में धारण करता है। संत पौलुस हमें स्पष्ट रूप से इस बात की ओर इशारा करते हैं जब वे कहते हैं: 'और *अब ये तीनों शेष हैं: विश्वास, आशा और प्रेम; पर इन सब में सबसे महान प्रेम है'* (1 कुरिन्थियों 13:13)। क्योंकि जो कोई भी, जैसा कि मैंने कहा है, परमेश्वर को प्रेम की प्रचुरता में धारण करता है, वह उस क्षण अपने विश्वास से कहीं महान होता है, क्योंकि वह पूरी तरह से प्रेम में डूबा होता है।

९२. *धर्मशास्त्रीय अध्ययन में सफलता के लिए यह कितना आवश्यक है*

दूसरों के साथ बिगड़ी हुई शांति को बहाल करना।

दिव्य ज्ञान का कार्य, अपनी प्रकृति से ही, हमें काफी दुख पहुँचाता है, जब हम किसी को किसी चिड़चिड़ाहट के कारण नाराज़ करके उसे अपना शत्रु बना लेते हैं। इसी कारण से, यह हमारे विवेक को तब तक चुभता रहता है, जब तक कि हम स्पष्टीकरण और माफी के माध्यम से, अपमानित व्यक्ति को हमारे प्रति उनकी पूर्व सद्भावना में वापस नहीं ला देते। ऐसी पीड़ा विशेष रूप से तीव्रता से तब महसूस होती है जब इस दुनिया का कोई व्यक्ति हमसे नाराज़ होता है, भले ही अनुचित रूप से। यह हम पर भारी बोझ डालती है और हमें बहुत परेशान करती है, क्योंकि हर तरह से हम उनके लिए एक ठोकर और अपमान का कारण बने हैं। परिणामस्वरूप, हमारा मन तब धर्मशास्त्रीय चिंतन करने में असमर्थ हो जाता है; क्योंकि ज्ञान, जो अपने सार में पूरी तरह से प्रेम है, हमारे विचारों को दिव्य चिंतन उत्पन्न करने तक फैलने नहीं देता, जब तक कि हम पहले उस व्यक्ति को फिर से प्रेम में न गले लगा लें जो हमसे अन्यायपूर्वक क्रोधित है। यदि वह ऐसा नहीं चाहते, या हमारे बीच से हट गए हैं, तो यह हमारा कर्तव्य है कि हम आत्मा के असीमित प्रवाह के साथ अपनी सद्भावना में उनके मुखमंडल की छवि ग्रहण करके, अपने हृदयों की गहराई में प्रेम के विधान को पूरा करें। क्योंकि जो लोग ईश्वर का ज्ञान प्राप्त करना चाहते हैं, उन्हें अपने मन में उन लोगों के मुखमंडल को

भी एक क्रोध-रहति वचिार के साथ प्रस्तुत करना चाहिए जो अन्यायपूर्वक क्रोधति हैं। जब ऐसा होता है, तो मन न केवल धर्मशास्त्र के क्षेत्र में अचूक रूप से गत करिेगा, बल्कि प्रेम के कार्य में पूर्ण साहस के साथ भी उठेगा, जैसे दूसरे सीढ़ी से पहली सीढ़ी पर चढ़ रहा हो।

९३. *सदाचार का मार्ग पहले कठनि और कड़वा होता है,*

लेकनि बाद में आसान और सुखद हो जाता है।

सदाचार का मार्ग उन लोगों को कठोर और भयानक लगता है जो अभी-अभी धर्मपरायणता से प्रेम करना शुरू कर रहे हैं, इसलिए नहीं कि वह स्वभाव से ऐसा है, बल्कि इसलिए कि मानव स्वभाव, माँ के गर्भ से निकलने के क्षण से ही, सुखों में लिप्त जीवन जीने का आदी है; लेकिन जो लोग पहले ही इसके मध्य तक पहुँचने में सफल हो चुके हैं, उनके लिए यह पूरी तरह से अच्छा और आनंददायक प्रतीत होता है: क्योंकि जब हमारे बुरे झुकाव अच्छे आचरणों से दबा दिए जाते हैं, तो अविवेकी सुखों की स्मृति भी मिट जाती है; परिणामस्वरूप, आत्मा अब सभी सद्गुणों के मार्गों पर महान आनंद के साथ चलती है। इसलिए, प्रभु, हमें मोक्ष के मार्ग पर ले जाते हुए, कहते हैं कि जीवन की ओर जाने वाला द्वार संकरा है और मार्ग कठनि है, और जो उसे पाते हैं वे थोड़े हैं (मत्ती 7:14); लेकिन जो लोग उत्सुकता से उनके पवित्र आज्ञाओं का पालन करना शुरू करना चाहते हैं, उनसे वह कहते हैं: *'मेरा जोड़ा सुगम है और मेरा बोझ हल्का है'* (मत्ती 11:30)। इसलिए, अपने प्रयास की शुरुआत में, हमारे लिए यह अनिवार्य है कि हम कुछ हद तक बाध्य इच्छा से ईश्वर की पवित्र आज्ञाओं को पूरा करें, ताकि दयालु प्रभु, हमारी अच्छी मंशा और हमारी मेहनत को देखकर, हमें तत्परता और एक इच्छुक आत्मा प्रदान करें, ताकि हम खुशी से उनकी महिमामय इच्छा के अधीन हो सकें: *क्योंकि 'इच्छा प्रभु* द्वारा *निर्मित होती है'* (नीतिवचन 8:35)। इसके बाद, हम बड़ी प्रसन्नता के साथ, अविराम रूप से भलाई करना शुरू करेंगे; और तब हम वास्तव में महसूस करेंगे कि *'ईश्वर ही है जो अपनी इच्छा के अनुसार हम में इच्छा करने और कर्म करने का कार्य करता है'* (फिलिप्पियों 2:13)।

९४. *बाहरी और आंतरिक प्रलोभन उन लोगों को सक्षम बनाते हैं जो प्रयास करते हैं*

जो अपने भीतर दिव्य सौंदर्य को अंकित करने में सक्षम हैं।

जैसे बिना गर्म और पिघलाए हुए मोम पर रखी गई मुहर का छाप ठीक से नहीं बैठती, वैसे ही कोई व्यक्ति भी, जब तक परिश्रमों और दुर्बलताओं से परखा नहीं जाता, ईश्वर के सद्गुण की मुहर को नहीं धारण कर सकता। इसलिए प्रभु दिव्य पौलुस से कहते हैं: *'मेरा अनुग्रह तेरे लिए पर्याप्त है; क्योंकि मेरी सामर्थ्य दुर्बलता में सिद्ध होती है'* (2 कुरिन्थियों 12:9)। प्रेरित स्वयं इस प्रकार घमंड करते हैं, कहते हुए: *'इसलिये मैं बड़े आनन्द से अपनी दुर्बलताओं पर और भी अधिक घमंड करूँगा, कि मसीह की सामर्थ्य मुझ पर बनी रहे'* (वही)। इसी प्रकार, नीतिवचन में लिखा है: *'प्रभु जिसे प्रेम करता है, उसे अनुशासित करता है; वह हर उस पुत्र को दण्ड देता है जिसे वह स्वीकार करता है'* (नीतिवचन 3:12)। प्रेरित 'कमजोरियों' को सूली के दुश्मनों के विद्रोह के रूप में संदर्भित करते हैं, जो उस समय उन पर और सभी संतों पर अक्सर पड़ती थीं, ताकि वे, जैसा कि वे कहते हैं, प्रकटनों की अधिकता से ऊँचे न उठें (2 कुरिन्थियों 12:7); बल्कि विनम्रता के द्वारा, बार-बार अपमानों के माध्यम से दिव्य वरदान को श्रद्धापूर्वक संरक्षित करते हुए, पूर्णता के स्वरूप में बने रहें। हम, हालाँकि, दुष्ट विचारों और शारीरिक कष्टों को 'कमज़ोरियाँ' कहते हैं। क्योंकि उन दिनों, पाप के विरुद्ध संघर्ष करने वाले संतों के शरीर, घातक घावों और विभिन्न अन्य कष्टों के अधीन होते हुए भी, उन वासनाओं से बहुत ऊपर थे जो पाप के द्वारा मानव स्वभाव में प्रवेश कर गई थीं; परन्तु अब, जैसे-जैसे प्रभु में मंडलीयों की शान्ति बढ़ती है, वैसे-वैसे भक्ति-निष्ठ संन्यासियों के शरीरों को बारम्बार क्लेशों से और उनकी आत्माओं को दुष्ट विचारों से परखना आवश्यक है। यह विशेष रूप से उन लोगों पर लागू होता है जिनका ज्ञान शक्तिशाली है, जो हर प्रकार की समझ और निश्चय से युक्त है, ताकि वे व्यर्थता और अहंकार के शिकार न हो जाएँ, और महान विनम्रता के लिए, जैसा कि मैंने कहा है, पवित्र पैगंबर के वचनों के अनुसार, अपने हृदयों में दिव्य सौंदर्य की मुहर प्राप्त कर सकें: *'हे प्रभु, तेरा मुखमंडल हम पर प्रकट हो'* (भजन संहिता 4:7)। अत; हमारे विषय में प्रभु की ओर से दी गई ऐसी सलाह को कृतज्ञतापूर्वक सहना उचित है; और तब हमारी बीमारियाँ और दुष्ट विचारों के विरुद्ध हमारा संघर्ष, दोनों ही एक दूसरे शहादत के रूप में गिने जाएँगे। क्योंकि जिसने उन दिनों में धर्मात्मा शहीदों से दुष्ट शासकों के मुँह से कहा था, यह कहते हुए, 'मसीह का त्याग करो और इस युग की महिमा से प्रेम करो', वही अब भी परमेश्वर के सेवकों से इसी प्रकार बोलता है; वह जो तब अपने शैतानी षड्यंत्रों के माध्यम से धर्मी लोगों के शरीरों को पीड़ित करता था और सम्मानित शिक्षकों का भयंकर रूप से अपमान करता था—वही अब भक्ति के स्वीकार करने वालों पर, बड़े अपमान और तिरस्कार के साथ, विभिन्न प्रकार की पीड़ाएँ डालता है, विशेषकर जब वे प्रभु की महिमा के लिए, बड़े सामर्थ्य से उत्पीड़ित गरीबों की सहायता करते हैं। इसी कारण, हमें सभी परिश्रम और धैर्य के

साथ, अपने भीतर परमेश्वर के सामने विवेक की ऐसी गवाही को विकसित करना चाहिए: *'मैं धीरज से रहा, और यहोवा ने मेरी सुन ली'* (भजन संहिता 39:2)।

९५. *नम्रता के दो प्रकार: सामान्य व्यक्ति की नम्रता और सिद्धों की नम्रता।*

नम्रता आसानी से प्राप्त नहीं होती: जितनी अधिक नम्रता होती है, उसे प्राप्त करने के लिए उतनी ही अधिक मेहनत करनी पड़ती है। यह उन लोगों को दो प्रकार से प्राप्त होती है जो पवित्र ज्ञान ग्रहण करते हैं: जब तपस्वी आध्यात्मिक प्रगति के मध्य में होता है, तो वह अपने बारे में सबसे विनिम्र दृष्टिकोण बनाए रखता है, चाहे वह शारीरिक दुर्बलता के कारण हो, या धार्मिक जीवन के उत्साही लोगों के प्रति शत्रुता रखने वालों से उत्पन्न विपत्ति के कारण हो, या दुष्ट विचारों के कारण; परन्तु जब मन पूर्णतया सचेत हो जाता है और पवित्र अनुग्रह से स्पष्ट रूप से प्रकाशित हो जाता है, तो आत्मा स्वाभाविक रूप से विनिम्रता को अपनाने लगती है। क्योंकि, ईश्वर की कृपा से दिव्य अनुग्रह से पोषित और पूर्ण होकर, यह अब महिमा के प्रेम से फूला-फूला नहीं रह सकता, भले ही यह ईश्वर की आज्ञाओं का अखंड रूप से पालन करे; बल्कि, यह दिव्य सद्गुण के साथ अपने मलिन के बोध में, स्वयं को सबसे तुच्छ मानता है, (अर्थात्, कि वह ईश्वर की दया से ऐसी है)। वह विनिम्रता अधिकांशतःशोक और निराशा के साथ होती है, जबकि यह एक सर्व-ज्ञानी नम्रता से युक्त आनंद है; पहली, जैसा कि मैंने कहा है, उन लोगों को मिलती है जो अपने आध्यात्मिक संघर्षों के बीच में हैं, जबकि बाद वाली उन लोगों को प्रदान की जाती है जो पहले से ही पूर्णता के करीब आ रहे हैं। इसी कारण, यह असामान्य नहीं है कि कुछ लोग सांसारिक सफलताओं से अभिभूत हो जाते हैं, जबकि यह व्यक्ति, भले ही कोई उसे दुनिया के सभी साम्राज्यों की पेशकश करे, अडिग रहता है; और वह न केवल पाप के सबसे भयानक तीरों से नहीं डरता, बल्कि उन्हें महसूस भी नहीं करता; क्योंकि, पूरी तरह से आध्यात्मिक होने के कारण, उसे अब बाहरी महिमा का कोई एहसास नहीं रहता। हालाँकि, तपस्वी हर तरह से पहले चरण से गुज़रने के बाद ही इस अंतिम चरण तक पहुँचता है: क्योंकि अनुग्रह हमें दूसरा आशीर्वाद तब तक नहीं देगा जब तक कि वह पहले हमारे परीक्षणों के माध्यम से हमारी इच्छा को नरम नहीं कर लेता, और पहले चरण के दौरान ही भावनाओं को एक शिक्षाप्रद तरीके से उत्पन्न होने देता है।

९६. *व्यर्थ और दुष्ट विचारों और शब्दों से स्वयं की रक्षा करने के बारे में।*

जो इस संसार के सुखों से प्रेम करते हैं, वे विचारों से अपराधों तक पहुँच जाते हैं। लापरवाह उत्साह में बहकर, वे अपनी लगभग सभी कामुक योजनाओं को वासना के साथ व्यक्त करते हैं, या तो अश्लील शब्दों में या अवैध कृत्यों में। और जो लोग तपस्वी जीवन जीने का संकल्प लेते हैं, वे ऐसे पतन से आगे बढ़कर दुष्ट विचारों या दुष्ट और हानिकारक वाणी की ओर बढ़ जाते हैं (दुष्ट कर्मों से तो मुंह मोड़ लेते हैं, परन्तु फिर भी अस्वास्थ्यकर विचारों और वाणी के क्षेत्र में ही बने रहते हैं)। और राक्षस, यदि वे ऐसे लोगों को देखते हैं—चाहे वे गपशप और बदनामी में लिप्त हों, या व्यर्थ और अनुचित बातचीत में लगे हों, या अनुचित रूप से हँस रहे हों, या अत्यधिक क्रोधित हो रहे हों, या व्यर्थ और खोखली महिमा की लालसा कर रहे हों—तो वे तुरंत झुंड के झुंड उन पर हमला कर देते हैं। वे अपनी दुष्टता के लिए घमंड को बहाना बनाकर, और किसी अंधेरी दरवाज़े की तरह उसमें से कूदकर, उनकी आत्माओं को लूटते हैं। इसलिए, यह उचित है कि जो लोग सदाचार के अनुसरण के लिए स्वयं को समर्पित करते हैं, वे न तो कीर्ति की इच्छा करें, न ही बहुतों की संगति खोजें, न ही बार-बार बाहर घूमने जाएँ, न ही किसी की निंदा करें—भले ही वह व्यक्ति निंदा का पात्र हो—न ही लंबी-चौड़ी बात करें, भले ही वे एक अच्छी बात कह सकें; क्योंकि वाचालता मन को अपार रूप से बिखेर देती है और न केवल इसे आध्यात्मिक प्रयास के अयोग्य बना देती है, बल्कि इसे निराशा के दैत्य के हाथों में भी सौंप देती है, जो धीरे-धीरे इसे कमजोर कर देता है, फिर इसे अनंत दुख के दैत्य के हवाले कर देता है, और अंत में क्रोध के दैत्य के। इसीलिए मन को हमेशा पवित्र आज्ञाओं का पालन करने और प्रभु की महिमा को गहराई से याद करने के लिए प्रशिक्षित करना चाहिए। क्योंकि, जैसा कि धर्मग्रंथ कहता है, जो आज्ञाओं का पालन करता है, वह *'एक छलपूर्ण वचन से भटक नहीं जाएगा'* (उपदेशक 8:5), अर्थात्, वह अनुचित विचारों या शब्दों में नहीं जाएगा।

९७. *प्रभु का निरंतर स्मरण और अखंड प्रार्थना*

मन की सतर्कता के साथ मिलकर – हृदय को शुद्ध करने का एकमात्र साधन है।

जब हृदय शैतान के हमलों को एक तीव्र जलन के साथ महसूस करता है, ताकि प्रलोभित व्यक्ति को ऐसा लगे जैसे वह स्वयं तीरों को सहन कर रहा हो, तो यह इस बात का संकेत है कि आत्मा ने जुनून से गहराई से घृणा करना शुरू कर दिया है। और यही उसकी शुद्धि की शुरुआत है। क्योंकि यदि यह पाप की निर्लज्जता से होने वाले महान दर्द को सहन नहीं करता है, तो बाद में यह धार्मिकता की उदारता में प्रचुर आनंद नहीं ले पाएगा। इसके बाद, जो कोई भी अपने हृदय को शुद्ध करना चाहता है, उसे निरंतर प्रभु यीशु की स्मृति से उसे गर्म रखना चाहिए, और इसी को अपने मनन और अपनी अथक आध्यात्मिक मेहनत का एकमात्र उद्देश्य बनाना चाहिए। जो लोग अपने भ्रष्ट स्वभाव से

छुटकारा पाना चाहते हैं, उन्हें कभी-कभी प्रार्थना करने और कभी-कभी न करने का व्यवहार नहीं करना चाहिए, बल्कि उन्हें हमेशा एक चौकस मन से प्रार्थना का अभ्यास करना चाहिए, भले ही वे पूजा के स्थानों से दूर रहते हों। क्योंकि जैसे कोई सोना शुद्ध करने निकलता है, यदि वह भट्टी को थोड़े समय के लिए भी आग के बिना छोड़ दे, तो शुद्ध हो रहा अयस्क फिर से कठोर हो जाता है: वैसे ही, जो कभी ईश्वर को याद करता है और कभी नहीं, वह प्रार्थना से लाभ तो प्राप्त करता प्रतीत होता है, परन्तु प्रार्थना बंद करने से उसे खो देता है। लेकिन सदाचार से प्रेम करने वाले मनुष्य का यह स्वभाव है कि वह ईश्वर की निरंतर स्मृति द्वारा हृदय की सांसारिकता को जलाकर भस्म कर दे, ताकि जैसे-जैसे बुराई अच्छी स्मृति की अग्नि से धीरे-धीरे वाष्पित हो जाती है, आत्मा अपनी पूर्ण महिमा में, पूरी तरह से अपनी स्वाभाविक चमक पर वापस लौट सके।

९८. *निर्लिप्तता, या हृदय की पवित्रता, क्या है? निर्लिप्तता का अर्थ यह नहीं है कि राक्षसों द्वारा घेरा न जाना, क्योंकि उस स्थिति में, प्रेरित के अनुसार, हमें 'दुनिया से अलग हो जाना' होगा* (१ कुरिन्थियों ५:१०); बल्कि यह है कि जब वे हम पर आक्रमण करते हैं, तो हम अछूते रहते हैं; जैसे कवच पहने योद्धा अपने शत्रुओं के तीरों के सम्मुख होते हैं, और उड़ते तीरों की आवाज़ सुनते हैं, और यहाँ तक कि उन पर छोड़े गए तीरों को भी देखते हैं, फिर भी वे अपने सैन्य परिधान की मज़बूती के कारण उनसे अप्रभावित रहते हैं। लेकिन जहाँ ये लोहे से सुरक्षित रहते हैं, वहीं ये युद्ध के दौरान घायल नहीं होते; परन्तु हम, शुभ कर्मों का आचरण करके—पवित्र ज्योति के सम्पूर्ण कवच और उद्धार के कवच को धारण करके—दैत्य-सेनाओं के अंधकारमय समूह को तितर-बितर कर देंगे: क्योंकि पवित्रता केवल बुराई करना बंद करने से ही नहीं, बल्कि भलाई के प्रति सर्व-व्यापी उत्साह के द्वारा अपने भीतर की बुराई को पूरी तरह से भस्म करने से प्राप्त होती है।

९९. *उन दो राक्षसों के बारे में जो सबसे लंबा संघर्ष करते हैं*–

अत्यधिक उत्साह और कामुक वासना का राक्षस।

और उनसे कैसे लड़ना है। जब परमेश्वर का कोई पुरुष अपने भीतर के लगभग सभी भावों पर विजय प्राप्त कर लेता है, दो राक्षस अभी भी उसके विरुद्ध युद्ध छेड़ते रहते हैं: जिनमें से एक आत्मा को कष्ट देता है, जो ईश्वर के प्रति उसके महान प्रेम के कारण उसे अत्यधिक उत्साह के लिए उकसाता है, ताकि वह किसी और को अपने से अधिक ईश्वर को प्रसन्न न करने दे; जबकि दूसरा शरीर को कष्ट देता है, जो उसे कामुक वासना की ओर एक प्रकार की अग्निमय प्रवृत्ति से उकसाता है। यह शरीर के साथ होता है, पहली बात तो इसलिए क्योंकि ऐसी कामुक सुख हमारी प्रकृति में अंतर्निहित है, जो संतानोत्पत्ति के लिए उसमें डाला गया है, इसीलिए इसे पार पाना इतना मुश्किल है; और दूसरी बात, ईश्वर की अनुमति से। क्योंकि जब प्रभु किसी तपस्वी को सद्गुणों के संवर्धन में बहुत ऊँचा उठता हुआ देखते हैं, तो वे कभी-कभी उसे इस दुष्ट राक्षस द्वारा कष्टित होने की अनुमति देते हैं, ताकि वह स्वयं को सभी जीवित लोगों में सबसे नीच समझने लगे। इस जुनून का ऐसा हमला कभी-कभी अच्छे कर्म करने के बाद होता है, और कभी-कभी पहले, ताकि इस जुनून की प्रवृत्ति—चाहे वह कर्मों से पहले हो या बाद में—आत्मा को अपनी ही नजर में सबसे अयोग्य दिखाए, भले ही उसने कितने भी महान कर्म क्यों न किए हों। – लेकिन पहले वाले के खिलाफ (जो अत्यधिक उत्साह जगाता है) से हम अपनी विनम्रता और प्रेम को बढ़ाकर लड़ेंगे, और दूसरे (शारीरिक वासना के दानव) से – संयम, सहनशीलता और मृत्यु की गहरी स्मृति द्वारा लड़ेंगे, ताकि इसके माध्यम से, अपने भीतर पवित्र आत्मा के अखंड कार्य को महसूस करते हुए, हम प्रभु में, इन भावों से भी श्रेष्ठ हो सकें।

100. *हमें ईश्वर के समक्ष अपने सभी अनैच्छिक और अज्ञात पापों का इक़रार करना चाहिए:*

अन्यथा, मृत्यु का समय एक भारी बोझ होगा।

हम में से जो पवित्र ज्ञान के सहभागी बने हैं, उन्हें निश्चित रूप से मन की अनैच्छिक भटकनों का भी हिसाब देना होगा, जैसा कि हौबेलस कहता है: *'तुमने मेरे मार्ग को अंकित कर रखा है; यदि मैंने अनजाने में पाप किया हो'* (हौबेलस 14:17) – और यह उचित भी है। क्योंकि यदि कोई हमेशा ईश्वर की स्मृति में लगा रहता है और उनके पवित्र आज्ञाओं की अवहेलना नहीं करता है, तो वह न तो अनजाने में और न ही जानबूझकर पाप में पड़ेगा। अतः हमें अपनी अनजाने में हुई चूकों के लिए भी तुरंत प्रभु के समक्ष एक पश्चात्तापी स्वीकारोक्ति करनी चाहिए, और इसे अपनी नियमित प्रार्थना के नियम के पालन के साथ जोड़ना चाहिए। चूँकि किसी व्यक्ति के लिए मानवीय कमियों में न पड़ना असंभव है, (और इसलिए किसी को हमेशा उन्हें प्रभु के सामने स्वीकार करना चाहिए), जब तक कि किसी की अंतरात्मा, प्रेम के आँसुओं में, उनके क्षमा के प्रति आश्वस्त न हो जाए: क्योंकि, जैसा कि संत यूहन्ना कहते हैं: *'यदि हम अपने पापों को मान लें, तो वह हमारे पापों को क्षमा करने और हमें सब अधर्म से शुद्ध करने में विश्वासयोग्य और धर्मी है'* (1 यूहन्ना 1:9)। इसीलिए हमें निरंतर पश्चातापी स्वीकारोक्ति की भावना पर ध्यान देना चाहिए (और इस भावना को पोषित करना चाहिए), कहीं ऐसा न हो कि हमारा अंतकरण स्वयं को यह धोखा दे कि वह पहले ही पर्याप्त

रूप से पश्चातापी हो चुका है और उसने ईश्वर के सामने स्वीकारोक्ति कर ली है। क्योंकि परमेश्वर का न्याय हमारी अंतरात्मा के न्याय से कहीं अधिक कठोर है, भले ही कोई इस बात पर पूरी तरह से आश्वस्त हो कि उसने कुछ भी गलत नहीं किया है, जैसा कि हमारे परम बुद्धिमान पौलुस सिखाते हैं, कहते हुए: *'फिर भी मैं स्वयं की प्रशंसा नहीं करता; क्योंकि मुझे अपने विषय में कुछ भी ज्ञान नहीं है, परन्तु इससे मेरा औचित्य सिद्ध नहीं होता: प्रभु ही मेरे न्यायकर्ता हैं'* (1 कुरिन्थियों 4:3–4)। यदि, तथापि, हम इन (अनजाने और अचेतन) पापों का भी उचित रूप से इकरार नहीं करते हैं, तो हमारे प्रस्थान के समय हमें अपने भीतर एक अस्पष्ट भय का अनुभव होगा। लेकिन हम जो प्रभु से प्रेम करते हैं, हमें यह इच्छा करनी चाहिए और प्रार्थना करनी चाहिए कि उस समय हम किसी भी भय से मुक्त रहें: क्योंकि जो कोई उस समय भय में होगा, वह नरक के अधिपतियों के पास से स्वतंत्र रूप से नहीं गुज़रेगा, क्योंकि वे आत्मा के इस डर को उनके दुष्टता में उसकी मिलीभगत के संकेत के रूप में देखते हैं, ठीक वैसे ही जैसे कि वे स्वयं में है। परन्तु आत्मा, परमेश्वर के प्रेम में आनन्दित होकर, शरीर से अलग होने के समय, शान्ति के स्वर्गदूतों के साथ सभी अंधकारमय सेनाओं से ऊपर उड़ान भरती है; क्योंकि ऐसी आत्मा, मानो, आध्यात्मिक प्रेम से पंखयुक्त होती है, और इस प्रेम में उसे व्यवस्था की पूर्ण और निर्दोष पूर्ति प्राप्त होती है। इसीलिए जो लोग ऐसी धृष्टता से इस जीवन से प्रस्थान करते हैं, उन्हें प्रभु के दूसरे आगमन पर सभी संतों के साथ उठा लिया जाएगा। परन्तु जो लोग मृत्यु के समय, भय से थोड़ा भी अभिभूत हो जाते हैं, वे तब अन्य सभी लोगों की भीड़ के बीच, न्याय के अधीन खड़े लोगों के रूप में छोड़ दिए जाएँगे, ताकि न्याय की आग से परखे जाने के बाद, वे हमारे अनुग्रहकारी परमेश्वर और राजा, यीशु मसीह से अपने कर्मों के अनुसार अपना उचित प्रतिफल प्राप्त कर सकें । क्योंकि वह धार्मिकता का परमेश्वर है, और जो लोग उससे प्रेम करते हैं, उन पर वह अपनी राज्य की संपदा युगानुयुग प्रदान करता है। आमीन।

कुछ पूछताछों के जवाब में, सेंट मैक्सिमस की वर्तमान सौवें अध्याय के निम्नलिखित शब्दों की व्याख्या: 'कि, न्याय की अग्नि में परखे जाने के बाद…' और इसी तरह। 'जो परमेश्वर के प्रति पूर्ण प्रेम प्राप्त कर चुके हैं और, सद्गुण के द्वारा, अपनी आत्मा के पंखों को उड़ान भरने के लिए पर्याप्त हल्का बना चुके हैं, वे, प्रेरित के अनुसार, बादलों में उठा लिए जाते हैं और न्याय के लिए नहीं आते; परन्तु जो उस पूर्णता को प्राप्त नहीं हुए हैं, और जो, अच्छे कर्मों में लगे होने पर भी, पाप से मुक्त नहीं हैं – वे न्याय की अदालत के सामने आते हैं, और वहाँ, अपने अच्छे और बुरे कर्मों की जाँच के द्वारा, मानो आग में परखे जाते हैं; यदि उनके अच्छे कर्मों का पलड़ा भारी हो जाता है, तो उन्हें दंड से छूट मिल जाती है।"

हमारे पूजनीय पिता जॉन ऑफ कार्थॉस

उनका संक्षिप्त परिचय

हमारे पवित्र पिता कार्थोसोस के जॉन के बारे में कुछ भी ज्ञात नहीं है—वे कौन थे, वे किस युग में फलते-फूलते थे, उन्होंने अपना तपस्वी जीवन कहाँ बिताया, या उनके बारे में कुछ भी। उनके बारे में एकमात्र विवरण धन्य फोतिउस के 201वें पाठ में मिलता है: 'मैंने एक पुस्तक पढ़ी है जिसमें, प्रमुख सद्गुणों की दस परिभाषाओं और डायडोचस के सौ अध्यायों का अनुसरण करते हुए, एपिरस में फोटिकी के बिशप, और परमपूज्य नीलस की कई रचनाओं के साथ-साथ, करपाथोस के जॉन की एक रचना भी है, जिसे उन्होंने यह शीर्षक दिया है: 'भारत से सांत्वना की तलाश में आए भिक्षुओं के लिए सांत्वना का एक वचन'। और यह रचना भी सौ अध्यायों से मिलकर बनी है।" – सेंट जॉन की डायडोचस और नीलस के साथ इस तुलना से, यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि उन्हें उनके समकालीन माना जाता था और वे पाँचवीं शताब्दी में रहते थे। कार्थोपोस रोड्स और क्रीट के बीच एक बड़ा द्वीप है। सेंट जॉन या तो उस जगह के मूल निवासी थे या एक भिक्षु के रूप में वहाँ रहते थे। – इन शब्दों के साथ, पवित्र पिता अपने पाठकों में अपने दुखों को सहने और आने वाली परीक्षाओं को झेलने का साहस पिता समान भरते हैं।

भारत में रहने वाले भिक्षुओं को, जिन्होंने उन्हें लिखा था, एक सौ प्रेरक अध्याय

जब पृथ्वी के राजाओं को वसंत के फूल भेंट किए जाते थे, तो अनुरोध करने वालों में से कुछ को न केवल अस्वीकार नहीं किया जाता था, बल्कि कभी-कभी उन्हें विशेष उपहार भी दिए जाते थे। इसी प्रकार, आपके अनुरोध पर, जब मैं स्वर्ग में निवास करने वालों के लिए अन्यत्र से एकत्रित सौ शब्दों की बुद्धिमत्ता लाता हूँ, तो मुझे कृपापूर्वक स्वीकार किया जाए और आपके प्रार्थनाओं के उपहार का पात्र समझा जाए।

1. चूँकि सभी वस्तुओं का राजा शाश्वत है, और उसके राज्य का न कोई आरंभ है न कोई अंत, अतःयह उचित ही है कि जो लोग उसकी सेवा करने और उन सद्गुणों के लिए स्वयं को समर्पित कर चुके हैं—जो उसे प्रिय हैं—वे परम परिश्रम करें। क्योंकि इस वर्तमान जीवन के सम्मान, चाहे वे कितने भी शानदार क्यों न हों, इस वर्तमान जीवन के साथ ही समाप्त हो जाते हैं; जबकि वे जो ईश्वर योग्य लोगों पर प्रदान करते हैं, वे हमेशा के लिए रहते हैं, क्योंकि वे अमरत्व के साथ प्रदान किए जाते हैं।

2. धन्य दाऊद, सभी प्राणियों की ओर से ईश्वर का भजन गाते हुए, देवदूतों और सभी स्वर्गीय सेनाओं का उल्लेख करने के बाद, जो पृथ्वी पर भी उतरीं, और उन्होंने न तो जानवरों, न मवेशियों, न पक्षियों और न ही रेंगने वाले जीवों को छोड़ा, उनके लिए एक ऐसा भजन गाकर उनका सम्मान किया, जो उन्हें बनाने वाले की पूजा के समान है, और मानो यह इच्छा व्यक्त की कि प्रत्येक प्राणी को इसमें अपना उचित हिस्सा मिले। तो फिर, एक भिक्षु, जिसे नीलमणि-स्वर्ण से उपमित किया गया है, भजन-गायन में कभी ढीला कैसे पड़ सकता है या उसमें आलसी कैसे हो सकता है?

3. जैसे आग ने झाड़ी को घेर लिया पर उसे भस्म नहीं किया, वैसे ही शरीर की गर्मी उन लोगों में न तो शरीर को और न ही मन को कष्ट देती है और न ही अपवित्र करती है, जिन्हें वैराग्य का वरदान मिला है, भले ही उनका शरीर बहुत भारी और गर्म हो: *'क्योंकि यहोवा का शब्द ज्वाला को काट देता है'* (भजन संहिता 28, 7) प्रकृति का, और ईश्वर की इच्छा और उनका वचन उसको अलग करते हैं जो प्रकृति से एकजुट है।

४. चंद्रमा, कभी बढ़ता, कभी घटता, उस व्यक्ति की स्थिति का प्रतीक है जो कभी अच्छा करता है, कभी पाप करता है, और फिर, पश्चाताप के माध्यम से, सद्गुण के मार्ग पर लौट आता है। पापी का मन खोया नहीं जाता—जैसा कि आप में से कुछ सोचते हैं—ठीक उसी तरह जैसे चंद्रमा का शरीर घटता नहीं है, बल्कि उसकी रोशनी घटती है। इस प्रकार, पश्चाताप के द्वारा, एक व्यक्ति वह तेज पुनःप्राप्त करता है जो उसका है, ठीक वैसे ही जैसे चंद्रमा, घटते-घटते, एक बार फिर अपनी सामान्य रोशनी से सुसज्जित हो जाता है। *'जो कोई मसीह पर विश्वास करता है, वह यदि मर भी जाए, तो भी जीवित रहेगा'* (यूहन्ना 11:25)। *'और तुम जानोगे कि मैं यहोवा हूँ: मैंने कहा है, और मैं उसे पूरा करूँगा'* (यहेजकेल 37:14)।

५. जब आपके मन में शत्रुतापूर्ण कल्पनाओं का एक झुंड आपके विरुद्ध उठता है, और आप, उन पर झुककर, पराजित हो जाते हैं, तो जान लें कि आप कुछ समय के लिए दिव्य अनुग्रह से अलग हो गए हैं; और इसलिए, के अनुसार, आप पर न्यायसंगत रूप से निर्णय लिया गया है और आपको आपके अपने पतन के हाथों सौंप दिया गया है। अतःप्रयास करें, कि अनुग्रह कभी भी, एक पल के लिए भी, आपकी लापरवाही के कारण आपसे न छूटे। जब, प्रलोभन से ऊपर उठकर, आप एक के बाद एक उमड़ते हुए, कामुक विचारों की दीवार और शत्रु की दुष्टता के बुरे सुझावों पर काबू पाने में सक्षम हो जाते हैं, तो इस बात को पहचानने में विफल होकर कि यह स्वर्ग से आपको प्रदान किया गया एक वरदान है, कृतघ्न न बनें; बल्कि प्रेरित के साथ कहकर यह स्वीकार करो: *'यह मैं नहीं, बल्कि मेरे साथ रहने वाला परमेश्वर का अनुग्रह है'* (1 कुरिन्थियों 15:10), जिसने मुझमें यह विजय अर्पित की है, मुझे उन अशुद्ध विचारों से ऊपर उठाया जो मेरे विरुद्ध उठे, और *'मुझे अधर्मी मनुष्य से बचाया'*, अर्थात् शैतान और पुराने मनुष्य से (भजन संहिता 17:49)। आत्मा के पंखों से ऊँचा उठाकर, और जैसे शरीर से अलग होकर, मैं उन दानवों से ऊपर उड़ने में सक्षम हुआ जो मेरा पीछा कर रहे थे—जो आमतौर पर मानव मन को कामुकता के जाल में फँसाते हैं—इससे मुक्ति की विनती करने के बाद, मैं पुकारता हूँ: 'जिसने मुझे मिस्र के देश से निकाला', अर्थात्, आत्मा-विनाशकारी संसार से, जो इस गुप्त हाथ से मेरे लिए लड़ते हुए, अमालेक को मार गिराया और मुझे यह आशा दी कि प्रभु हमारे सामने से अन्य अश्लील वासनाओं के राष्ट्रों को भी नष्ट कर देंगे (निर्ग. 17:14–16)। हमारे इस परमेश्वर से बुद्धि और सामर्थ्य प्राप्त होगी: क्योंकि कुछ लोगों को बुद्धि तो मिली है, पर अपने शत्रुओं पर जय पाने के लिए आत्मा का सामर्थ्य नहीं मिला है। वह तुम्हारा सिर तुम्हारे शत्रुओं से ऊपर उठाएगा, और तुम्हें *'कबूतर के पंख'* प्रदान करेगा, *और तुम उड़कर परमेश्वर के साथ विश्राम करोगे'* (भजन संहिता 54:7)। प्रभु आपकी मांसपेशियों को पीतल के समान मज़बूत कर देगा, और आपको अपने विरोधी के विरुद्ध डटे रहने, फुर्तीले और मजबूत दिखाएगा, और जो कोई भी आपके विरुद्ध उठता है, उसे आपके पैरों तले कुचल देगा (भजन संहिता 17:35-40)। इसलिए, आपकी पवित्रता को बनाए रखने के लिए प्रभु का धन्यवाद करें, क्योंकि उन्होंने आपको आपके शरीर और रक्त की वासनाओं के हाथों में, न ही उनके माध्यम से काम करने वाली अशुद्ध और भ्रष्ट करने वाली आत्माओं के हाथों में सौंपा है, बल्कि उन्होंने आपको अपनी दहिनी भुजा से एक दीवार की तरह सुरक्षित रखा है। उसके लिए एक वेदी बनाओ, जैसे मूसा ने अमालेकियों को भागने के बाद की थी (निर्गमन 17:15), और उसके लिए गाओ: *'इसी कारण मैं तेरा धन्यवाद करूँगा और* तेरी *स्तुति करूँगा,* हे प्रभु, *और तेरे नाम का*

गायन करूँगा, तेरी सामर्थ्य की बड़ाई करूँगा' (भजन संहिता 17:50), क्योंकि आपने मेरे जीवन को क्षय से बचाया है और मुझे एक ऐसी दुष्टता के जालों और फंदों से छीन लिया है जो सर्वव्यापी, बहुआयामी और धूर्त है।

6. दुष्ट राक्षस हमारे भीतर अशुद्ध वासनाओं को प्रज्वलित करते हैं, उन्हें नया करते हैं, बढ़ाते हैं और गुणा करते हैं; जबकि दैवीय वचन पर मनन, विशेषकर जब आँसुओं की वर्षा के साथ हो, तो वे उन्हें मृत्यु की ओर ले जाता है और नष्ट कर देता है, भले ही वे गहराई तक जड़ें जमा चुके हों, और धीरे-धीरे आत्मा और शरीर दोनों के घातक पापपूर्ण कार्यों को इस प्रकार समाप्त कर देता है मानो वे कभी मौजूद ही न थे: बशर्ते कि हम प्रार्थना और आशा में थके न हों, बल्कि प्रभु के प्रति अपनी भक्ति में दृढ़ और अटूट बने रहें।

7. मसीह शिशुओं के समान निर्दोष विश्वासियों के मुख से स्तुति क्यों करते हैं? निश्चय ही, ताकि भजन-गायन के द्वारा, वह शत्रु और प्रतिशोधकर्ता को कुचल सके जो बिना माप के अत्याचार करता है – सद्गुणों का शत्रु, दुर्भावनापूर्ण प्रतिशोधकर्ता, शैतान। क्योंकि कहा गया है, *'अपने तेज के बहुत बड़े होने के कारण तूने अपने विरोधी को नाश किया'* (निर्गमन 15:7) और वे शत्रु जो हमसे युद्ध करते हैं।

8. प्रत्येक व्यक्ति अपने मार्ग के फल काटता है – आधे फल अभी, और आधे आने वाले युग में।

९. एक भिक्षु को हमेशा सबसे कठोर तपस्या बनाए रखनी चाहिए, वासनाओं से धोखा नहीं खाना चाहिए, और गहरी मौनता का अभ्यास करना चाहिए।

10. राक्षस, जो हमारी आत्मा के शत्रु हैं, कुछ लोगों को हमें तुच्छ प्रशंसा देने के लिए प्रेरित करते हैं, और फिर हमें उसमें आनंद लेने के लिए प्रलोभित करते हैं। यदि, अहंकार के कारण ढीले पड़कर, हम फिर व्यर्थता के आगे झुक जाते हैं, तो हमारे शत्रुओं के लिए हमें पूरी तरह से कैद कर लेना बहुत आसान हो जाएगा।

11. तुम्हारी निंदा करने वाले को स्वीकार करना, तुम्हारी प्रशंसा करने वाले को स्वीकार करने से बेहतर है, क्योंकि, धर्मग्रंथ के अनुसार, बाद वाला उस व्यक्ति से अलग नहीं है जो शाप देता है (नीतिवचन 27:14)।

12. जब आप उत्साहपूर्वक उपवास का कठिन कार्य कर रहे हों, लेकिन कमज़ोरी के कारण उसमें लड़खड़ा जाएँ, तो पश्चातापी हृदय के साथ सभी का प्रबंधक और न्यायी परमेश्वर की ओर धन्यवादपूर्वक मुड़ें। यदि आप हमेशा प्रभु के सामने इस प्रकार नम्रता से स्वयं को प्रस्तुत करते हैं, तो आप किसी मनुष्य के सामने कभी घमंडी नहीं होंगे।

13. शत्रु, यह जानते हुए कि प्रार्थना हमारा सबसे विजयी हथियार है—और उसके लिए एक विनाशकारी हथियार—और हर तरह से हमें इससे भटकाने का प्रयास करते हुए, कभी-कभी हममें उन हेलेनिक लेखों से जुड़ने की इच्छा पैदा कर देता है, जिनसे हम भटक चुके हैं। लेकिन हमें उसकी प्रलोभनों पर ध्यान न दें; कहीं ऐसा न हो कि हम अपने आध्यात्मिक अभ्यास के नियमों और व्यवस्था से भटक जाएँ, और अंजीर और अंगूर की बेलों के गुच्छों के बजाय काँटे और बेर इकट्ठा कर लें। *'क्योंकि इस संसार का ज्ञान परमेश्वर के वहाँ मूर्खता है'* (1 कुरिन्थियों 3:19)।

14. *'मैं तुम्हें बड़े आनन्द का शुभ समाचार देता हूँ'* स्वर्गदूत कहता है, *'जो सब लोगों के लिये होगा'* (लूका 2:10), और न कि केवल किसी एक समूह के लिए। और फिर: *'सारी पृथ्वी तेरे सामने दण्डवत करे और तेरा भजन गावे'* (भजन संहिता 65:4), और न कि केवल पृथ्वी का एक हिस्सा। हालाँकि, गाना उन लोगों का लक्षण नहीं है जो किसी चीज़ के लिए आँसू बहाकर प्रार्थना करते हैं, बल्कि उन लोगों का है जो अपनी इच्छित वस्तु प्राप्त करके आनंदित होते हैं। यदि ऐसा है, तो हमें निराश न हों, बल्कि आनंदित होकर अपना जीवन जिएँ, और इन शब्दों से ऐसे आनंद और संतोष के लिए प्रेरणा लें। हालाँकि, इस आनंद को परमेश्वर के भय से संतुलित करें, जैसा कि कहीं और कहा गया है: *'काँपते हुए प्रभु में आनन्दित हो'* (भजन संहिता 2:11)। इसी प्रकार मरियम के साथ रहने वाली स्त्रियाँ भी कब्र से भय और बड़े आनन्द के साथ भाग गईं (मत्ती 28:8)। शायद हम भी एक दिन, भय और आनंद के साथ, अपने मन के कब्र से भागेंगे। और यह अद्भुत होगा यदि हम बिना भय के ऐसा करें; क्योंकि कोई भी पापहीन नहीं है, चाहे वह मूसा हो या प्रेरित पतरस। फिर भी ऐसे लोगों में, दिव्य प्रेम, विजय प्राप्त करने के बाद, प्रस्थान के समय भय को बाहर निकाल देता है।

15. आपके पास धर्मग्रंथ में गवाही है कि भावुक व्यक्ति, पूरे हृदय और पूरी नम्रता से विश्वास करने पर, निर्लिप्तता का वरदान प्राप्त करता है। आज प्रभु 'समझदार' *चोर से* कहते हैं, *'तू मेरे साथ स्वर्ग में होगा'* (लूका 23:43); और रक्तस्राव वाली स्त्री से: *'तेरा विश्वास तुझे बचा गया; कुशलता से जा*—निष्काम भाव का आनंद (मरकुस 5:34)। ऐसे और भी कई समान अंश हैं, जैसे: *'तेरे विश्वास के अनुसार तुझे हो'* (मत्ती 9:29)।

१६. जब, अपने भावों के प्रति कठोर रहते हुए, हम राक्षसों द्वारा लज्जास्पद विचारों से और भी अधिक प्रबल रूप से आक्रमित होते हैं; तब हमें, सबसे बढ़कर, प्रभु में अपने विश्वास को दृढ़ करना चाहिए, और अपने भीतर प्रतिज्ञात अनंत आशीर्वादों में सबसे दृढ़ आशा को स्थापित करना चाहिए, जिन्हें हमारे शत्रु, ईर्ष्या के कारण,

हमसे छीनने और हमसे अलग करने का प्रयास करते हैं। क्योंकि यदि ये आशीषें अत्यंत महान न होतीं, तो दुष्टात्माएँ हमसे इतनी ईर्ष्या से जलतीं नहीं, और न ही वे हमें दुष्ट विचारों से इतनी बार घेरतीं, इस आशा में कि वे अपनी दुष्टता को संतुष्ट कर लें, और इस बार-बार होने वाले और असहनीय कष्ट के द्वारा हमें निराशा में धकेल दें।

17. कुछ लोग मानते हैं कि सच्चा ज्ञान (पहचाने गए सत्य के आधार पर) कर्म में निहित है। इसलिए, अपने कर्मों के माध्यम से विश्वास और ज्ञान दोनों को प्रदर्शित करने का और भी अधिक प्रयास करें; क्योंकि जो केवल ज्ञान का घमंड करता है, वह यह सुनने को पाएगा: *'वे परमेश्वर को जानने का दावा करते हैं, पर उनके काम उसे नकारते हैं'* (तीतुस 1:16)।

18. अधिकांशतः उत्सवों और पवित्र सभाओं के दौरान, और विशेष रूप से जब कोई रहस्यमय भोजन में भाग लेने का इरादा रखता है, तो राक्षस तपस्वी को शर्मनाक कल्पनाओं और वीर्यस्राव द्वारा अपवित्र करने का प्रयास करते हैं। फिर भी, यह भी उस व्यक्ति को कुचलने या कमजोर करने के लिए पर्याप्त नहीं है जो सभी चीजों को धैर्य और साहस से सहन करने का आदी है। और जो सीधे होने का ढोंग करते हुए टेढ़े हो जाते हैं, उन्हें हमारे विरुद्ध घमंड न करने दें।

19. दृढ़ता और उत्साह के कारण, शत्रु बदला लेते हैं, और आत्मा को विभिन्न और अकथनीय प्रलोभनों से पीड़ित करते हैं; परन्तु हियाव रखो! इन महान और अनगिनत दुखों से, तुम्हारे लिए एक मुकुट बुना जाता है। इसके *अलावा, 'कमज़ोरी में ही मसीह की शक्ति सिद्ध होती है'* (2 कुरिन्थियों 12:9), और सबसे दुखद परिस्थितियों में पवित्र आत्मा की कृपा फलने-फूलने लगती है, जैसा कि भविष्यवाणी का वचन हमें आश्वस्त करता है: 'क्योंकि,' यह कहता है, *'अंधकार में धर्मी के लिए एक प्रकाश चमकता है'* (भजन संहिता 111:4); *बशर्ते,* बेशक, *"कि आपमें वह धीरज हो और अंत तक उस आशा पर दृढ़ता से बने रहें, जिस पर हम घमंड करते हैं"* (इब्रानियों 3:6)।

20. हँसी, ठट्ठा और व्यर्थ की बातों के समान कोई भी वस्तु सामान्यतः अच्छे स्वभाव को इतनी अधिक बाधित नहीं करती। और फिर भी, ईश्वर का भय, सावधानीपूर्वक भक्ति, ईश्वर के वचनों में निरंतर शिक्षा, प्रार्थना से स्वयं को सुसज्जित करना, और फलदायी सतर्कता का अनुसरण करना - इनसे बढ़कर कोई भी चीज़ एक थकी हुई आत्मा को नवीनीकृत नहीं करती और उसे ईश्वर के निकट आने के लिए तैयार नहीं करती।

21. यह आत्मा के लिए उचित और लाभदायक दोनों है कि वह हर दुख को दृढ़ता से सहन करे, चाहे वह लोगों से हो या राक्षसों से, यह जानते हुए कि हम हर कठिनाई के पात्र हैं, और इसके अलावा, इसके लिए स्वयं के सिवा किसी को दोष न दे। जो अपनी दुर्भाग्य के लिए दूसरे को दोष देता है, वह सही और उचित निर्णय से भटक जाता है।

22. कभी-कभी ऐसा होता है कि कोई व्यक्ति, चाहे वह परिश्रमी हो, बढ़ी हुई प्रलोभनों के कारण सही मार्ग से भटक जाता है, और अपनी उचित स्थिति से बाहर कदम रख देता है, जो, जैसा कि धर्मग्रंथ कहता है, *'उसकी सारी बुद्धि और सारी कुशलता को नष्ट कर देती हैं'* (भजन संहिता 106:27)। यह इसलिए अनुमत है *'ताकि हम अपने आप पर भरोसा न करें'* (2 कुरिन्थियों 1:9), *'और ताकि इस्राएल यह न कहे कि, 'मेरे अपने हाथ ने मुझे बचाया है''* (न्यायियों 7:2)। परन्तु हियाव रखो, क्योंकि तुम फिर से अपनी पहिले की महिमामय अवस्था में बहाल हो जाओगे, जब परमेश्वर की आज्ञा से, वह दुष्ट—जो तुम्हें हर चीज़ को जुनून से देखने और सुनने के लिए मजबूर करता है और तुम्हें पाप करने के लिए उकसाता है—तुम्हारे पास से दूर कर दिया जाएगा और भगा दिया जाएगा; क्योंकि वह मन को एक घने बादल की तरह ढक देता है, और देह को एक अकथनीय भारीपन और बोझ का अनुभव कराता है; और जन्मजात विचार, जो अपने आप में एक नवजात शिशु की तरह सरल और निर्दोष होता है, उसे वह हर पाप में जटिल और अत्यधिक कुशल बना देता है, और उसे कभी इस ओर तो कभी उस ओर झुकाकर भ्रष्ट और विकृत कर देता है।

23. मनुष्य एक महान प्राणी है, जो अपने भीतर विकसित होता है और अपने गुणों के लिए सम्मानित होता है। और फिर भी यह महान प्राणी पाप से वैसे ही डरता है जैसे एक हाथी चूहे से डरता है, *'कहीं ऐसा न हो कि मैं दूसरों को उपदेश देते हुए स्वयं अयोग्य ठहर जाऊँ'* (1 कुरिन्थियों 9:27)।

24. जैसा कि दानियेल कहता है (7:25), शैतान न केवल संसार के अंत में *'महानतम के विरुद्ध शब्द बोलेगा'*; बल्कि अभी भी ऐसा होता है कि, हमारे विचारों के माध्यम से, वह स्वयं स्वर्ग के विरुद्ध घोर अपमानजनक बातें उगलता है, और स्वयं परमप्रभु, उनकी सृष्टि, और मसीह के पवित्र रहस्यों का अपमान करता है। परन्तु हम, ज्ञान की चट्टान पर दृढ़ता से खड़े होकर, न तो इससे डरना चाहिए और न ही इस दुष्ट की धृष्टता पर चकित होना चाहिए, बल्कि, विश्वास और उत्कट प्रार्थना से स्वयं को सशस्त्र करके, और सर्वोच्च की सहायता से, शत्रु का साहसपूर्वक सामना करना चाहिए।

२५. धमकियों और अपमान के साथ, दुश्मन निडरता से उस आत्मा पर हमला करता है जो अभी-अभी शरीर से अलग हुई है, और वह उसके दोषों का एक कटु और भयानक अभियोजक बनकर प्रकट होता है। फिर भी, तब यह भी

देखा जा सकता है कि कैसे एक ईश्वर-प्रेमी और विश्वासयोग्य आत्मा, भले ही वह पहले पापों से कई बार घायल हो चुकी हो, उसके हमलों और धमकियों से नहीं डरती, बल्कि प्रभु में दृढ़ खड़ी रहती है, आनंद से परिपूर्ण और साहस से प्रेरित होती है, क्योंकि वह देखती है कि स्वर्गदूतों का दल उसका साथ दे रहा है और विश्वास का प्रकाश एक दीवार की तरह उसकी रक्षा कर रहा है; और वह बड़ी निर्भीकता से दुष्ट शैतान के विरुद्ध पुकारती है: 'हे परमेश्वर के अजनबी, हमारा तुझसे क्या काम? हे स्वर्ग से गिराए गए और दुष्ट का दास, हमारा तुझसे क्या काम? तुम्हारा हम पर कोई अधिकार नहीं है; मसीह, परमेश्वर के पुत्र, का हम पर और सभी चीजों पर अधिकार है; हमने उसी के विरुद्ध पाप किया है, और उसी के सामने हमें अपना हिसाब देना है, और हमारी गारंटी के रूप में हमारे प्रति उसकी दया और उसके सम्मानित क्रूस के द्वारा उसमें हमारा उद्धार है। जहाँ तक तुम्हारा सवाल है, हमसे दूर भाग जाओ, हे शापित। तुम हमारा कुछ नहीं बिगाड़ सकते, और न ही मसीह के सेवकों का। – ऐसे साहसी शब्दों पर, शैतान, जो अपनी आत्मा को चीर रहा है, अंततः टूट जाएगा, एक चीख निकालते हुए, मसीह के नाम का सामना न कर पाकर; जबकि आत्मा, उससे श्रेष्ठ होकर और शत्रु से ऊपर उठकर, उसे भगा देगी, ठीक वैसे ही जैसे एक तथाकथित तेज-पंखों वाला पक्षी कौवे को भगा देता है। – इसके बाद, आनंद के साथ, इसे दिव्य स्वर्गदूतों द्वारा इसकी स्थिति के अनुसार निर्धारित स्थान पर ले जाया जाता है।

26. कि एक मामूली प्रलोभन भी, जो कभी-कभी ईश्वर की इच्छा से अनुमत होता है, उत्साही की प्रगति में एक बाधा बन सकता है—इस बात की पुष्टि एकेनिस, सबसे छोटी मछली, आपको करे: एक ही स्पर्श से, यह सभी प्रकार के सामान से लदे जहाज को रोक देती है और उसे आगे बढ़ने से रोकती है; उस व्यक्ति को भी याद करो जो अपने बारे में कहता है: *'मैं, पौलुस—मैं जिसने एक या दो बार तुम्हारे पास आने का इरादा किया, पर शैतान ने मुझे रोक दिया'* (1 थिस्सलुनीकियों 2:18)। फिर भी, इससे तुम्हें भ्रमित न होने दो, बल्कि धैर्य के साथ इसके विरुद्ध संघर्ष करो, और तुम अनुग्रह प्राप्त करोगे।

27. जब सद्गुणों से संपन्न कोई, आलस्य के कारण, सही मार्ग से भटक जाता है, तो दुष्ट पूर्व के पुत्र, अमालेक से—या, वैकल्पिक रूप से, मिद्यान (न्यायियों, अध्याय 6)—उसके विरुद्ध उठ खड़े होते हैं, – एक शक्ति जो व्यभिचार को समर्पित है – अपनी ऊँटों के साथ, यानी अनगिनत कामुक यादों के साथ, और वे पृथ्वी के सभी फलों को भ्रष्ट करते हैं, यानी सबसे सदाचारी कर्मों और रीति-रिवाजों के फलों को; परिणामस्वरूप, इज़राइल अंततः गरीबी में पड़ जाता है, निराशा में डूब जाता है और प्रभु से पुकारने के लिए विवश हो जाता है। तब स्वर्ग से उस पर एक अच्छा विचार भेजा जाता है, एक ऐसा मनुष्य जो महान विश्वास और विनम्रता में गिदोन की नकल करता है [क्योंकि उसने कहा: *'मेरा हज़ार मनस्सेह में सबसे छोटा है'* (न्यायियों 6:15)]; और वह तीन सौ दुर्बल पुरुषों के साथ इतने विशाल आक्रमणकारियों के विरुद्ध हथियार उठाता है, और अनुग्रह की सहायता से, अपने शत्रुओं पर विजय का गौरवशाली प्रतीक ऊँचा करता है।

28. आप *'विषैले साँप और अजगर पर पैर* नहीं *रख* सकते*, और सिंह तथा सर्प को कुचल नहीं सकते'* (भजन संहिता 90:13), जब तक कि आप दीर्घकालीन प्रार्थना द्वारा ईश्वर से विनती करके स्वर्गदूतों को अपने सह-योद्धा के रूप में स्वीकार नहीं करते, ताकि वे आपको अपनी बाहों में उठाकर सभी सांसारिक ज्ञान से ऊपर उठा सकें।

29. जब उनमें से कोई भी जो दृढ़ता से प्रयास करते हैं, पराजित हो जाए, तो वे हतोत्साहित न हों या अपने संकल्प में ढीला न पड़ें, बल्कि यशायाह के वचनों से हौसला लेकर वे सीधे खड़े हों और इस भजन को गाते हुए सांत्वना प्राप्त करें: 'हे *शक्तिमानों, आत्मसमर्पण करो*!'—हे चालाक राक्षसों! *'क्योंकि यदि तुम फिर उठो भी, तो भी एक बार फिर पराजित होओगे; और जो भी युक्ति तुम बनाओ, प्रभु उसे नाश कर देगा, क्योंकि परमेश्वर हमारे साथ है'* (यशायाह 8:9-10)—वह परमेश्वर, जो गिरने वालों को उठाता है और जैसे ही हम पश्चाताप करते हैं, हमारे शत्रुओं को शोक और क्लेश से चीर-फाड़ देता है।

30. परीक्षाओं के माध्यम से प्रशिक्षित हो रहे व्यक्ति के लिए दुख से बचना असंभव है; लेकिन इसके बाद, ऐसे लोगों को महान आनंद, और मीठे आँसुओं और दैवीय विचारों के योग्य माना जाता है, क्योंकि उन्होंने अपने हृदयों में दुख और पश्चाताप को विकसित किया है।

31. यदि इसहाक, जिसने इसकी इच्छा की, और न ही एसाव, जिसने उस वांछित आशीर्वाद को चाहा, उन्हें वह नहीं मिला जिसकी उन्होंने आशा की थी (रोमियों 9:16)—क्योंकि परमेश्वर दया नहीं दिखाता, आशीर्वाद नहीं देता और पवित्र आत्मा से अभिषेक नहीं करता उस पर जिसे हमने चुना है, बल्कि उस पर जिसे उसने स्वयं, संसार की नींव से पहले, अपनी सेवा करने के लिए पूर्वनिर्धारित किया था— तो हम किसी भी भांति निराश या ईर्ष्यालु नहीं होंगे जब हम किसी भी भाइयों, जो दीन और सबसे छोटे हैं, को सद्गुणों में उत्कृष्ट होते हुए देखेंगे। आपने निश्चय ही यह भी सुना होगा कि प्रभु दृष्टान्त में क्या कहते हैं: *'इस मनुष्य के लिए स्थान करो'* (लूका 14:9)—ताकि जो आपसे ऊपर है

वह अपना स्थान ग्रहण कर सके। इसलिए हमें इस न्यायाधीश पर और भी अधिक आश्चर्य करना चाहिए, जिन्होंने बुद्धिमानी से और अकथनीय रूप से यह विधान बनाया है कि सबसे छोटा और सबसे अंतिम व्यक्ति प्राथमिकता ले और नेतृत्व करे, जबकि हमें अंतिम रहना चाहिए, भले ही हम कर्मों और वर्षों दोनों में उससे श्रेष्ठ हों। प्रभु ने प्रत्येक व्यक्ति को जो भी माप दिया है, हमें उसी में संतुष्ट रहना चाहिए। *'यदि हम आत्मा के अनुसार जीते हैं, तो आत्मा के अनुसार ही चलें'*, जैसा कि लिखा है (गलातियों 5:25)।

32. किसी भी परिस्थिति में आपको सहमत नहीं होना चाहिए जब आपके अधिकार के अधीन कोई आपसे कहे: 'मुझे कुछ समय के लिए, सद्गुण के लिए, यह या वह उपक्रम आज़माने और उसे इस या उस तरह से करने का अधिकार दें।' क्योंकि जो कोई भी ऐसा बोलता है, वह स्पष्ट रूप से अपनी इच्छा को पूरा करना चाहता है, और साथ ही सर्वोत्तम आज्ञाकारिता की प्रतिज्ञाओं को भी दरकिनार करना चाहता है।

33. जैसा कि आप देखेंगे, देह और आत्मा के भाव, चाहे वे कितने भी अधिक क्यों न हों, समय आने पर और ईश्वर की व्यवस्था से, उन्मूलित हो जाएँगे; परन्तु मसीह की दया कभी समाप्त नहीं होगी। क्योंकि *'प्रभु की दया इस युग से लेकर आने वाले युग तक उन पर है जो उसका भय मानते हैं'* (भजन संहिता 102:17)।

34. राजा के कोषागार सोने से भर जाएँगे; और सच्चे संतों के मन ज्ञान से भर जाएँगे।

35. कभी-कभी ऐसा होता है कि एक शिक्षक को उन लोगों के कारण अपमानित किया जाता है जिन्होंने उससे आध्यात्मिक लाभ प्राप्त किया है। क्योंकि, जैसा कि कहा गया है, *'हम अपमानित हैं'*—मांस के दास होने के कारण अपमानित—*'और कमजोर; परन्तु तुम मसीह में सम्मानित और मजबूत हो'* (1 कुरिन्थियों 4:10)।

36. मांस के द्वारा भ्रष्टता का स्रोत और आधार एक कामुक विचार है। परन्तु जो गिरावट के बाद होश में आ गया है, वह पश्चाताप के द्वारा उसे अपनी आत्मा से निकाल देता है। क्योंकि कहा गया है: 'तुम्हारे लिए रोना ही अच्छा था, ताकि वह दुष्ट और अयोग्य विचार जो तुम्हें यह करने के लिए उकसाता था, तुममें से दूर हो जाए' (1 कुरिन्थियों 5:2)। इस प्रकार, रोना भ्रष्टाचार की आत्मा का विरोध करता है।

37. कलंक और शक्तिहीनता से पीड़ित व्यक्ति को सदाचार का अभ्यास करने के लिए कौन यह घोषणा करेगा कि वह यीशु को न केवल भविष्य में, बल्कि यहाँ भी, निर्लिप्तता के माध्यम से आने वाले युग की महान शक्ति और महिमा के साथ देखेगा? इसलिए, सारा की तरह, उसकी आत्मा—जो बाँझपन में बूढ़ी हो गई थी और, वादे के अनुसार, अंततः धार्मिकता के एक पुत्र को जन्म दिया—कहेगी: 'ईश्वर ने मुझे हँसी दी है', अर्थात्, उन्होंने मुझ पर बहुत बड़ी खुशी प्रदान की है, मेरे कई जुनूनों के कारण हुई कई वर्षों की दुख के बाद; या, एक अन्य अनुवाद के अनुसार: 'ईश्वर ने मुझे *फिर से* जवान कर दिया है*' – 'मेरी जवानी गरुड़ की जवानी के समान नयी हो गई है'* (भजन संहिता 102:5)। क्योंकि पहले पापों और लज्जास्पद वासनाओं में बूढ़ा हो गया था, मैं अब नया जन्म पाया हूँ, और जवान और कोमल हो गया हूँ, जबकि पहले शरीर से कठोर हो गया था; और अब मैं सांसारिक चीजों को तुच्छ समझता हूँ, क्योंकि मैंने अपनी प्रकृति के अनुरूप सरलता और उदासीनता को अपना लिया है, जब परमेश्वर की प्रचुर दया से मेरा मन स्वस्थ हो गया, और ज्ञान के यॉर्डन में मेरे बपतिस्मा के द्वारा, मेरा शरीर सीरियाई नामान की तरह, एक शिशु के शरीर जितना कोमल हो गया; मैं अब एकचित्त हूँ, क्योंकि मुझे ईश्वर की कृपा से सर्प की चालाकी और दुष्ट विचारों की सेना से मुक्ति मिली है, जो दुष्टता में अत्यंत निपुण और भौतिक जगत (कामोन्माद में डूबी हुई) में गहराई से जड़ें जमाए हुए हैं।

38. मान लीजिए कि प्रभु स्वयं आपसे कहें: 'एक ही समय में, मैंने आपसे एक विशेष वरदान ले लिया है, जिसमें आपको मन की संतुष्टि और विश्राम मिलता था; और उसकी जगह मैंने आपको एक अन्य वरदान दिया है, जो उनसे मूल्य में समान है। तथापि तुम, जो छीन लिया गया है उसके बारे में सोचते हो और जो दिया गया है उस पर कोई ध्यान नहीं देते, तुम कराहते हो, बीमार पड़ जाते हो और दुख से घायल हो जाते हो; फिर भी तुम मुझसे दुख स्वीकार करके मुझे आनन्द देते हो (2 कुरिन्थियों 2:2), क्योंकि मैं तुम्हारे भले के लिए दुख देता हूँ, तुम्हें नष्ट करने के लिए नहीं बल्कि बचाने के लिए, उस की परवाह करते हुए जिसे मैं अपना पुत्र मानता हूँ।"

३९. अपने ऊपर यह आज्ञा थोप लो कि मछली न खाओ, और देखो कि कैसे शत्रु इसके बाद तुम्हें मछली की लालसा की ओर लगातार धकेलना शुरू कर देगा, और कैसे तुम स्वयं भी उसी चीज़ का स्वाद चखने के लिए पागलों की तरह दौड़ पड़ोगे जिसकी तुम्हें इच्छा भी नहीं करनी चाहिए, ताकि तुम, मानो, वही अनुभव कर सको जो आदम के साथ हुआ था; क्योंकि उसने भी, 'इस वृक्ष का फल तू नहीं खाएगा,' यह सुनकर, अपनी सारी इच्छा के साथ उस एक निषिद्ध वस्तु पर अपना मन लगा लिया।

40. ईश्वर कुछ लोगों को बुद्धि के द्वारा बचाता है, और दूसरों को सरलता और कोमलता के द्वारा; क्योंकि तुम्हें यह जानना चाहिए कि ईश्वर कोमल लोगों को नहीं ठुकराएगा।

41. जो प्रार्थना में अधिक गंभीरता से स्वयं को समर्पित करते हैं, वे अधिक भयानक और तीव्र प्रलोभनों के अधीन होते हैं।

42. यदि आप निर्लिप्तता के लिए पूर्वनिर्धारित हैं, तो लापरवाही में न पड़ें, बल्कि उसे प्राप्त करने के लिए अपनी पूरी शक्ति से प्रयास करें। क्योंकि *'जब हम इस तम्बू में होते हैं तो हम कराहते हैं, और अपनी स्वर्गीय वासस्थान से परिधानित होने की लालसा करते हैं; ताकि जो नश्वर है वह जीवन में निगल लिया जाए'* (2 कुरिन्थियों 5: 2:4), न केवल दुनिया के अंत में शारीरिक रूप से, बल्कि जब हम अभी भी यहाँ हैं तो आध्यात्मिक रूप से भी, एक प्रतिज्ञा के रूप में। क्योंकि *'मृत्यु विजय में निगल ली गई है'* (1 कुरिन्थियों 15:54)। और सभी मिस्रवासी जो हमारा पीछा करते हुए और हम पर अपमान करते हुए आएँगे, वे स्वर्ग से भेजी गई शक्ति की लहरों में निगल लिए जाएँगे।

43. यदि आप उस व्यक्ति को भूल गए हैं जिसने कहा: *'मैं इस बात का ध्यान रखता हूँ कि, जब मैं दूसरों को उपदेश देता हूँ, तो मैं स्वयं अयोग्य न ठहरूँ'* (1 कुरिन्थियों 9:27), और: *'अपना ध्यान रखो, कहीं तुम भी गिर न जाओ'* (1 कुरिन्थियों 10:12), – और यह भी: *'अपना ख़्याल रखना'* (पुरोहितों के लिए एक शब्द), *'कि तुम भी परीक्षा में न पड़ो'* (गलातियों 6:1), – यदि आप सुलैमान के इतने बड़े अनुग्रह के बाद सही मार्ग से भटकने और उसके अपराधों को भूल गए हैं; – यदि आप महान पतरस के अप्रत्याशित इनकार को भुला बैठे हैं: तो अपनी ही बुद्धि पर भरोसा करो, अपने जीवन के तरीके पर गर्व करो, अपनी महान तपस्या की लंबाई का घमंड करो, और घमंड को स्थान दो। – परन्तु, हे भातरो, – किसी भी तरह से सुस्त न हो जाओ (पीठ के बल लेटे हुए), न ही लापरवाही को अपनाओ, – बल्कि डरते रहो, जब तक तुम्हारे नाकों में साँस है, भले ही तुम मूसा की आयु तक पहुँच गए हो, और प्रार्थना करो, यह कहते हुए: *'हे प्रभु, वृद्धावस्था में मुझे न त्याग; जब मेरी शक्ति क्षीण हो जाए, तो हे परमेश्वर, मेरे उद्धारकर्ता, मुझे न छोड़! तेरे ही विषय में मेरा गीत होगा'* (भजन संहिता 70:9, 6)।

44. प्रभु आपसे कहते हैं, जैसा उन्होंने मत्ती से कहा था: 'मेरे पीछे चलो' (मत्ती 9:9). – यदि अब, जीवन के मार्ग पर अपने लंबे समय से प्रिय प्रभु का गंभीरता से अनुसरण करते हुए, आप वासना की चट्टान पर अपने पैर से ठोकर खाते हैं और अचानक पाप में गिर जाते हैं, या, कीचड़ भरी ज़मीन का सामना करते हुए, आप बार-बार और अनजाने में फिसलकर गिर जाते हैं; तो चाहे आप कितनी भी बार गिरें और अपने शरीर को असह्य पीड़ा दें, उतनी ही बार आप फिर से उठेंगे और, अपनी पूर्व उत्साह के साथ, अपने प्रभु के पदचिन्हों पर दौड़ेंगे, जब तक कि आप उनके पास न पहुँच जाएँ। इस प्रकार, *'मैं पवित्र* ध्यान *में तेरे सामने उपस्थित हुआ हूँ, तेरी उद्धार करने वाली शक्ति और तेरी महिमा को देखने के लिए; और तेरे नाम में मैं अपने हाथ उठाऊँगा, और मैं आनन्द और प्रसन्नता से भर जाऊँगा, और मेरे होंठ* तेरा गीत गाएंगे' (भजन संहिता 62:3–6)। मेरे लिए 'ईसाई' नाम प्राप्त करना एक महान सम्मान की बात है, जैसा कि प्रभु मुझे यशायाह के मुख से कहते हैं: *'तुम्हारे लिए दास कहलाना एक महान सम्मान की बात है'* (यशायाह 49:6)।

४५. जहाँ यह कहा गया है कि *'पिता उन से जो उनसे माँगते हैं, भले-भले वर देंगे'* (मत्ती ७:११), और जहाँ यह कहा गया है कि *'वह उन से जो उससे माँगते हैं, पवित्र आत्मा देगा'* (लूका ११:१३): ये शब्द हमें सिखाते हैं कि परमेश्वर के प्रार्थना करने वाले सेवक न केवल पापों की क्षमा के लिए, बल्कि स्वर्गीय वरदानों के लिए भी योग्य माने जाते हैं, और वे यह सोचकर अपनी खोज में दृढ़ होते हैं कि प्रभु ने ऐसी आशीषें धर्मी लोगों से नहीं, बल्कि पापियों से वादा की है। इसलिए, अनवरत और अटूट संकल्प के साथ माँगो, भले ही तुम सदाचारी जीवन में पूर्ण नहीं हो, कमजोर और किसी भी चीज़ के अयोग्य हो – और तुम महान चीज़ें प्राप्त करोगे।

४६. अविश्वासी या अल्पविश्वासी इस बात पर विचार करे कि कैसे चींटी उड़ान भरती है, और कैसे एक विशेष कीड़ा पक्षी बन जाता है, और जीव-जंतुओं में कितनी अन्य अद्भुत घटनाएँ घटित होती हैं; ताकि, इस प्रकार अविश्वास और निराशा की दुर्बलता को त्यागकर, वे अंततःउड़ान भर सकें और, एक वृक्ष की तरह, महिमामय ज्ञान उत्पन्न कर सकें। क्योंकि प्रभु कहते हैं, *'मैं ही वह हूँ जो सूखे वृक्ष में जीवन डालता है और मुरझाई हुई हड्डियों को पुनर्जीवित करता है'* (यहे. 17:24; 37:4 और 9)।

४७. हम किसी भी तरह से, शारीरिक आवश्यकताओं के लिए, चिंता में नष्ट न हों; बल्कि हम अपनी पूरी आत्मा से परमेश्वर पर विश्वास करें, जैसा कि एक बार किसी नेक मनुष्य ने कहा था: 'प्रभु पर भरोसा रखो, और वह तुम पर भरोसा रखेगा' – और जैसा कि धन्य प्रेरित पतरस लिखते हैं: *'संयमी बनो और अपनी प्रार्थनाओं में जागते रहो'* (1 पतरस 4:7)—अपनी सारी चिन्ताएँ परमेश्वर पर डाल दो, क्योंकि वह तुम्हारी परवाह करता है (1 पतरस 5:7)। यदि आप अभी भी संदेह करते हैं और यह विश्वास नहीं करते कि वह आपकी परवाह करता है, कि वह आपके लिए प्रबंध करेगा, तो मकड़ी को देखें और विचार करें कि मनुष्य मकड़ी से कितना अलग है—एक मकड़ी, मैं कहता हूँ, जो किसी भी चीज़ से कमजोर या अधिक शक्तिहीन नहीं है। फिर भी उसके पास कोई धन-संपत्ति नहीं है, वह दूर-दूर तक यात्राएँ

नहीं करता, मुकदमा नहीं करता और न ही क्रोधति होता है, और उसके कोई गोदाम नहीं हैं; वह अपना जीवन पूर्ण नम्रता, पवित्रिता और पूर्ण मौन में बतिाता है, दूसरों के मामलों में कोई रुचि नहीं लेता, लेकनि वह अपने काम में लगा रहता है, चुपचाप और शांतपूर्वक अपने मामलों का ध्यान रखता है; इस प्रकार, बनिा बोले, वह आलस्य से प्रेम करने वालों को बताता है कजिो परश्रिम करने को तैयार नहीं है, उसे खाना नहीं चाहएि; और वह इतना मौन रहता है कवि‍ह स्वयं पाइथागोरस से भी बहुत आगे है, जसि‍े यूनानी अपने वाणी पर संयम रखने की क्षमता के लएि सभी दार्शनकिों से बढ़कर प्रशंसा करते हैं; पाइथागोरस सभी से बात नहीं करते थे, लेकनि कभी-कभी अपने दोस्तों से गुप्त रूप से बातचीत करते थे; वे कभी-कभी बैलों और चीलों को भी संबोधति करते थे, और ऐसे शब्द कहते थे जो हँसने योग्य और अर्थहीन होते थे; वे पूरी तरह से शराब से परहेज करते थे और केवल पानी पीते थे। मकड़ी ने अपनी पूर्ण मौनता से पाइथागोरस की वाणी पर संयम को भी पीछे छोड़ दयिा; और उसने पानी पीने से भी परहेज़ करके शराब से उसकी परहेज़ को भी पीछे छोड़ दयिा। ऐसी मौन अवस्था में वह नाजुक और नम्र मकड़ी रहती है, जसिे खुले में नकिलना और इधर-उधर भटकना पसंद नहीं है, और न ही अत्यधकि परश्रिम और थकान में लप्ति होना; और जो उच्च स्थान पर नविास करता है, वह नम्र प्राणयिों पर दृष्टरिखता है (और मकड़ी से अधकि नम्र कुछ भी नहीं है), अपनी दवि्य व्यवस्था को उस पर भी वसि्तार करता है, और प्रतदिनि उसके आवास के पास एक छोटा सा शकिार भेजता है, जसिसे छोटे कीड़े उसके जाल में फँसकर उसका आहार बनते हैं।

४८. शायद कोई व्यक्तजिो पेटपूजा का दास हो, वह कहे: 'मैं बहुत कुछ खाता हूँ, और चूँकमिैं परणिामस्वरूप इतना खर्च करता हूँ, मैं कई सांसारकि चिंताओं और लेन-देन में उलझने से खुद को नहीं रोक सकता।' लेकनि ऐसे व्यक्तकिो अटलांटकि महासागर में चरने वाले वशिाल व्हेलों को भी देखना चाहएि, और देखना चाहएि कवि‍े परमेश्वर द्वारा कतिनी प्रचुरता से पोषति होते हैं और कभी भूखे नहीं रहते, भले ही इनमें से प्रत्येक जानवर इतनी मछलयिाँ खाता है जतिनी सबसे अधकि आबादी वाले शहर में भी एक दनि में नहीं खाई जा सकतीं। पवति्र भवषि्यवक्ता गाते हैं (भजन संहति 107:27): *'सभी तेरा ही इन्तजार करते हैं; समय पर उनका भोजन दे।'* चाहे कोई बहुत खाए या थोड़ा, ईश्वर दोनों का पालन-पोषण करता है। यह सुनकर, आप भी, जनिका हृदय वशिाल और असीम है, अपना सम्पूर्ण अस्तति्व ईश्वर और वशि्वास को सौंप दें, हर सांसारकि चिंता और अत्यधकि चिंतति मन को त्याग दें, और अवशि्वासी न बनें, बल्कवशि्वासी बनें।

४९. यदहिम सचमुच ईश्वर को प्रसन्न करना चाहते हैं और उनसे परम आनंदपूर्वक प्रेम प्राप्त करना चाहते हैं, तो आइए हम अपना मन ईश्वर के समक्ष पूर्णतःनरि्वस्त्र प्रस्तुत करें, अपने साथ या अपने भीतर इस संसार से कुछ भी न लाएँ—न कौशल, न ज्ञान, न ही कपटपूर्ण तर्क—भले ही हमने सारी सांसारकि बुद्धमिें महारत हासलि कर ली हो। क्योंकपिरमेश्वर उन लोगों से मुंह मोड़ लेते हैं जो घमंड और दंभ से पोषति, आत्म-तुष्ट स्वभाव के साथ उनके पास आते हैं। कुछ टीकाकारों ने व्यर्थ आत्म-तुष्टकिो सही ही आत्म-संतुष्टऔिर आत्म-बड़बोली के रूप में वर्णति कयिा है।

५०. हम लंबे समय से जमी हुई पाप पर कैसे काबू पा सकते हैं? आत्म-अनुशासन की आवश्यकता है (या अपनी इच्छाओं पर अपनी इच्छा को थोपने का कार्य)। क्योंकहिा गया है: *'एक मनुष्य अपनी ही मेहनत से परश्रिम करता है, और दूर भगाता है'* (जबर्दस्ती दूर भगाता है) *'अपना वनिाश'* (नीतविचन 16:26), हमेशा अपने वचिारों और हृदय को पवति्रता की ओर नरि्देशति करने का प्रयास करते हुए। कानूनों द्वारा हिंसा को हिंसा से नष्ट करने (यानी पाप की हिंसा को सद्भावना की हिंसा से) से मना नहीं कयिा गया है। जब हम कसिी अच्छे प्रयास के लएि आत्म-अनुशासन लागू करते हैं (यानी जब हम खुद को एक अच्छी आकांक्षा को क्रयिान्वति करने के लएि मजबूर करते हैं), तो हम उस शक्तकिी प्रतीक्षा करते हैं जो हमें स्वर्ग से आने वाली है, जो यरूशलेम में वास करती है (लूका 24:49), अर्थात्, अनवरत प्रार्थना और अन्य सद्गुणों में बने रहते हुए, जब तक कयिह महान शक्तहिम पर न आ जाए—एक ऐसी शक्तजिो हमारे कमजोर प्रयासों की तरह नहीं है, बल्कएिक ऐसी शक्तजिसिे शारीरकि होंठों से व्यक्त नहीं कयिा जा सकता, पापी स्वभाव और दुष्टात्माओं की दुष्टता, बुराई की ओर हमारी आत्माओं की प्रवृत्त,ि और सभी अनुचति शारीरकि आवेगों पर शक्तशिाली रूप से वजिय प्राप्त करते और उन्हें वश में करते हुए। वह कहता है, *'स्वर्ग से एक शब्द हुआ, जैसे कसिी जोर की आँधी का'* (प्रेरतिों के काम 3:2), ताकहिमसे उस बुराई को जबरदस्ती बाहर नकिाल सके जो हमें लगातार गलत की ओर खींचती है।

५१. 'शत्रु *अपनी फंदा में, जैसे सहि अपने बलि में, घात लगाकर बैठता है'* (भजन संहति ९:३०), जो हमसे अशुद्ध और अधर्मी वचिारों के फंदों और जालों को छपिाता है; परन्तु हम भी, यदहिम सुस्त न हों, तो उसके लएि और भी बड़े और अधकि खतरनाक फंदे, जाल और घात लगा सकते हैं। क्योंकप्रिार्थना और भजन, जागरण और नम्रता, पड़ोसी

की सेवा और दया, धन्यवाद और दिव्य वचनों को सुनना—ये शत्रु के लिए एक घात हैं; और एक फंदा, और एक गड्ढा, और कोड़े, और उलझनें, और एक घुटन।

५२. परिपक्व वृद्धावस्था तक जीवित रहने के बाद, दिव्य दाऊद, जिन्होंने उन्हें चुना था, उस परमेश्वर का धन्यवाद करते हुए, परमेश्वर के आशीर्वादों के अपने बयानों के अंत में कहते हैं: 'अब आपके सेवक को यह साहस मिला है कि वह आपसे यह प्रार्थना करे।' यह हमें यह समझाने के लिए कहा गया है कि हृदय की एक शांत प्रवृत्ति की शुरुआत प्राप्त करने के लिए, एक महान प्रयास की आवश्यकता है, और प्रार्थना में बहुत समय बिताना चाहिए—यह दूसरा, निश्चित 'हृदय का स्वर्ग'—जहाँ मसीह वास करते हैं, जैसा कि प्रेरित कहते हैं: *'या क्या तुम नहीं जानते कि यीशु मसीह तुम में है?'* (2 कुरिन्थियों 13:5)?

53. यदि मसीह *'हमारे लिए परमेश्वर की ओर से बुद्धि, और धार्मिकता, और पवित्रता, और छुटकारा बन गए हैं'* (1 कुरिन्थियों 1:30), तो स्पष्ट है कि वह हमारे विश्राम भी हैं। क्योंकि वह कहते हैं: *'मेरे पास आओ, हे सब मेहनत करने वालों और बोझ से दबे लोगों, और मैं तुम्हें विश्राम दूँगा'* (मत्ती 11:28)। इसलिए यह कहना उचित है कि वह मानवजाति के लिए सब्त बन गया, अर्थात् विश्राम। क्योंकि मानवजाति केवल मसीह में ही विश्राम पा सकती है।

54. जैसे एक पतन का प्याला और एक क्रोध का प्याला है, वैसे ही एक दुर्बलता का भी प्याला है, जिसे प्रभु हमसे ग्रहण करके उचित समय पर हमारे शत्रुओं के हाथों में सौंप देते हैं, ताकि हम नहीं बल्कि दुष्टात्माएं दुर्बल हों और गिरें।

55. जैसे बाहरी मामलों में मुद्रा-विनिमयकर्ता, बुनकर, पक्षी-पकड़ने वाले, सैनिक और निर्माणकर्मी होते हैं, वैसे ही आंतरिक मामलों में, हमारे विचारों में जुआरी, विषाक्तकर्मी, समुद्री डाकू, शिकारी, व्यभिचारी, हत्यारे और इसी तरह के लोग होते हैं; ऐसे लोगों को तुरंत धार्मिक प्रतिरोध और प्रार्थना द्वारा बाहर निकाल दिया जाना चाहिए, विशेष रूप से व्यभिचारियों को, कहीं ऐसा न हो कि वे पवित्र स्थान को अशुद्ध कर दें और परमेश्वर के मनुष्य को घृणित बना दें।

56. प्रभु उद्धार केवल शब्दों के द्वारा ही नहीं देते, जैसा कि उस चोर के साथ हुआ जिसने सूली से उन पर पुकारा, बल्कि विचारों के द्वारा भी। इस प्रकार, रक्तस्राव से पीड़ित स्त्री ने अपने भीतर पहचाना (अर्थात् उसने विश्वास से सोचा): *'यदि मैं केवल उसके वस्त्र के किनारे को छू लूँ, तो मैं चंगी हो जाऊँगी'* (मत्ती 9:21); और अब्राहम के दास ने रेबेका के विषय में *'अपने मन में परमेश्वर से बात की'* (उत्पत्ति 24:15)।

५७. लगभग तुरंत ही किया गया पाप, पापी को परमेश्वर की ओर ले जाता है, जैसे ही वह पाप की बदबू, बोझ और उन्माद से अवगत होता है। लेकिन जो पश्चाताप करना नहीं चाहते, उन्हें पाप परमेश्वर की ओर नहीं धकेलता; बल्कि, पाप उन्हें मजबूती से पकड़े रखता है और उन्हें अटूट बंधनों में बाँध देता है, और उनकी विनाशकारी इच्छाओं को अत्यधिक तीव्र कर देता है।

58. जेजेबेली के जादू-टोने से सावधान रहो (2 राजा 9:22), जिनमें से सबसे दुष्ट घमंड और व्यर्थ महिमा के विचार हैं। हालाँकि, आप परमेश्वर की कृपा से उनसे मुक्ति पा सकते हैं, यदि आप अपनी आत्मा को नम्र और संयमित करते हैं, और प्रभु के सामने स्वयं को दीन बनाते हैं, उनसे अपनी मदद के लिए पुकारते हुए और यह स्वीकार करते हुए कि जिस मुक्ति की आप खोज कर रहे हैं वह एक स्वर्गीय उपहार है। इसीलिए कहा गया है: *'कोई भी कुछ नहीं ग्रहण कर सकता जब तक कि उसे स्वर्ग से न दिया जाए'* (यूहन्ना 3:27)।

५९. कभी-कभी ऐसा होता है कि, जब भ्रातृ-समाज एकत्र होता है, तब एक व्यर्थ विचार मन में आ जाता है, जो आपको अनुचित कुछ कहने के लिए प्रेरित करता है; परन्तु दैवीय विचार आपको इस बकबक करने वाले, अनुचित विचार को दूर भगाने के लिए प्रेरित करते हैं। – इसलिए, यदि आप इसे सदाचारी मौन से दूर नहीं भगाते, बल्कि अहंकार से फूले होने के कारण इसे बाहर आने देते हैं; तब तुम्हें इसके बुरे परिणामों को भुगतना पड़ेगा – और तुम्हें न्यायसंगत रूप से या तो किसी बड़े पाप के हवाले, या किसी बाहरी विपत्ति के हवाले, या भाइयों की ओर से गंभीर कष्टों के हवाले, या आने वाले युग में यातना के हवाले कर दिया जाएगा: क्योंकि व्यर्थ और बेकार बातों के लिए भी, जो अनसिखिलाई जीभ से निकलती हैं, हमें हिसाब देना होगा; इसीलिए हमें अपनी जीभ की अच्छी तरह से रक्षा करनी चाहिए।

60. जो लोग कामुक सुखों, क्रोध, दंभ और अन्य वासनाओं से प्रलोभित होते हैं, उन्हें दिन में सूरज और रात में चाँद से झुलसा हुआ बताया गया है (भजन संहिता 120:6)। अतःप्रार्थना करो कि दिव्य, ओस-बख्श बादल तुम पर छा जाए, ताकि तुम शत्रु की झुलसाने वाली गर्मी से बच सको।

61. जो मद्यपान से प्रेम करते हैं और जो धूमधाम वाले भोजों के दास हैं, उन्हें अपने पास आने की हिम्मत कदापि न दें, और न ही उन लोगों को जो निर्लज्ज बातें करने के लिए उत्सुक हैं, भले ही वे सफेद बालों वाले हों, और

भले ही उन्होंने लंबे समय तक संन्यासी जीवन जयिा हो; कहीं ऐसा न हो कि उनका भ्रष्टाचार आप पर भी छा जाए, और आप भी हृदय से अशुद्ध और अखतना कएि हुए लोगों में गनिे जाएँ।

62. पहले तो कुंजियाँ पतरस को सौंपी जाती हैं, और फरि उसे प्रभु मसीह का इनकार करने की अनुमति दी जाती है, ताकि इस प्रकार के पतन से उसके अहंकार पर अंकुश लग सके। इसी प्रकार, यदि समिझ की कुंजी प्राप्त करने के बाद, आप वभिनि्न प्रलोभनों का शकिार हो जाते हैं, तो इससे आश्चर्यचकति न हों; बल्कि एकमात्र सर्व-ज्ञानी प्रभु की महमिा करें, जो ऐसे पतन के माध्यम से, दवि्य ज्ञान के पीछे आने वाले अहंकार को नयिंत्रति करते हैं: क्योंकि प्रलोभन ईश्वर की व्यवस्था द्वारा एक लगाम हैं, जो मानवीय अहंकार को रोकने में सक्षम हैं।

63. यदि प्रभु अक्सर हमारे आशीर्वाद छीन लेते हैं, जैसे, उदाहरण के लएि, अय्यूब की संपत्ति; क्योंकि प्रभु ने इसे दयिा था, और प्रभु ने इसे छीन लयिा (अय्यूब 1:21): तो नश्चिय ही वह बुराई जो शाश्वत ने हम पर लाई है, हमारे हाथों से भी ले ली जाएगी; क्योंकि, जैसा कि बुद्धमिान कहता है, *'भलाई और बुराई दोनों प्रभु से आती हैं'* (सरिैकस 11:14)। और जो हम पर बुराई लाता है, वही हमें अनंत महमिा के साथ अनंत आनंद भी प्रदान करता है। प्रभु कहते हैं, 'जसि प्रकार मैंने तुम्हारा नाश करने और तुम पर बुराई लाने के लएि पहरा दयिा, उसी प्रकार मैं तुम्हारा पुनर्नरि्माण करूँगा और तुम्हारा नाश नहीं करूँगा; मैं तुम्हें रोपूँगा और तुम्हें उखाड़ूँगा नहीं।' लोकप्रयि कहावत को चुप करा दयिा जाए, जो कहती है: 'एक बार जब चीजें बगिड़ जाती हैं, तो वे फरि कभी ठीक नहीं होतीं।' क्योंकि जसिने हमारे मामलों को बदतर बना दयिा है, वही नश्चिति रूप से, एक बार फरि, अप्रत्याशति रूप से उन्हें सबसे उज्ज्वल स्थति में बदल सकता है।

64. जो व्यक्ति आत्म-संयम, प्रार्थना, या कसिी अन्य सद्गुण के द्वारा, अधकि शक्ति और वजिय की अधकि इच्छा के साथ दुष्ट आत्माओं पर आक्रमण करता है—वह स्वयं उनसे गहरे घाव पाएगा, इस हद तक कि वह नराशा में भी पड़ सकता है, यह संदेह करते हुए कि आध्यात्मकि मृत्यु की नदिंा उसकी आत्मा पर है, और यह पुकारने के लएि ववशि हो जाएगा: *'मुझे इस मृत्यु के शरीर से कौन बचाएगा?'* (रोमयिों 8:24); क्योंकि शत्रु मेरी इच्छा के वरिुद्ध मुझे अपने नयिमों का पालन करने के लएि बाध्य करता है।

65. यह केवल इतना लखिा नहीं है, जैसा कि कुछ लोगों ने एक-दूसरे से कहा है: *'उठो, हम उन लोगों के पास चलें जो आशा में जीते हैं और शांति में वास करते हैं'* (न्यायियों 18:9-10); और फरि: 'आओ, *हम यहूदा पर चढ़ाई करें, और उनसे* कपटी वचनों से *बात करके, हम उन्हें* सत्य *से भटका देंगे*' (यशायाह 7:5-6)। इसलएि ऐसा है कि दुष्ट दानव आमतौर पर उन लोगों के वरिुद्ध प्रलोभन की तलवारें तेज करते हैं जन्होंने मौन का जीवन चुना है, और अधकि धार्मकि और ईश्वर-भयभीत लोगों पर अधकि क्रोध के साथ हमला करते हैं, उन्हें धार्मकिता के कार्यों के माध्यम से ही, अकथनीय बदनामी के साथ, पाप में फँसाते हैं; ताकि, कम से कम इस तरह से, उन्हें मसीह में वशि्वास, प्रार्थना और आध्यात्मकि सांत्वना से हटाया जा सके, और इस प्रकार वे पराजति हो जाएँ। परन्तु हम, हे प्रभु, दाऊद (भजन संहति 79:19) के साथ बोलते हुए, तब तक आप से न हटेंगे जब तक आप हमें दया न दखिाएँ, और जो हमें नगिलते हैं वे हम से दूर न हो जाएँ; हम तब तक आप से न हटेंगे जब तक आप हमें परीक्षा में डालने वालों को दूर जाने की आज्ञा न दें, और हम धीरज और अडगि नरि्लप्तिता से पुनर्जीवति न हो जाएँ। क्योंकि प्रलोभन मानव जीवन का मूल तत्व है, और अक्सर, एक नयित समय पर, वही जो हमें हमारे मार्ग पर लगाता है, हमें अजनबयिों के चरणों में गरिने देता है; लेकनि एक महान और पराक्रमी आत्मा का स्वभाव है कि वह दुखद दुर्भाग्यों के सामने नराश न हो।

66. यदि शैतान इतना शक्तशिाली है कि वह, भले ही कोई व्यक्ति ऐसा न चाहे, उसे अपनी इच्छा के अनुसार मोड़ सकता है और उसे अपने पक्ष में कर सकता है, क्योंकि वह अपने सच्चे, प्राकृतकि क्रम से भटक गया है; तो वह दूत कतिना अधकि शक्तशिाली होगा, जो एक नरि्धारति समय पर, ईश्वर से आज्ञा प्राप्त करके, एक व्यक्ति के पूरे स्वभाव को बेहतर के लएि बदल सकता है? और यदि बर्फीला उत्तर इतना शक्तशिाली है कि वह पानी के सबसे कोमल स्वभाव को पत्थर की कठोरता में बदल देता है, तो फरि सबसे गर्म दक्षणि क्या नहीं कर सकता? यदि हवा, जब अत्यधकि ठंडी हो जाती है, तो सभी को अपने अधीन कर लेती है और हर चीज़ को अपनी ठंड से भर देती है—क्योंकि *'कोई भी पाला के सामने कैसे टकि सकता है?'* (भजन संहति 147:6)— तो फरि, गर्मी अपनी प्रकृति के अनुसार सभी चीज़ों को बदलने में कैसे वफिल हो सकती है? क्योंकि गर्मी के सामने कौन टकि सकता है? अतः आइए हम यह वशि्वास करें कि हमारे मन का ठंडा और काला कोयला, देर-सवेर, दैवीय अग्नि के स्पर्श से गर्म और दीप्तमिान हो जाएगा।

67. इस वर्तमान युग में भी, हमारे अंतर्मन के यूसुफ में प्रकट होने वाली सच्ची गवाही और चहि्नों के साथ, एक वैराग्य की अवस्था है जसिमें हमारा मन, मस्रि से नकिलकर, कामुक इच्छाओं और छपिे हुए, सबसे शर्मनाक बंधन से मुक्त हो जाता है, और एक ऐसी भाषा सुनता है जसि वह नहीं जानता था, दैत्यों की भाषा नहीं, जो अशुद्ध है

और सुदृढ़ तर्क को भ्रष्ट करती है, बल्कि स्वर्गदूतों की पवित्र भाषा, जो मन को भौतिक से अलौकिक में परिवर्तित करती है – एक ऐसी भाषा जो इसे ग्रहण करने वाली आत्मा को प्रबुद्ध करती है।

68. मैंने कुछ भाइयों के बारे में सुना है जो शरीर से बहुत पीड़ित हैं और उपवास करने में असमर्थ हैं, जो मुझसे यह प्रश्न लेकर आए हैं: हम उपवास के बिना, शैतान और वासनाओं से कैसे मुक्ति पा सकते हैं? ऐसे व्यक्ति को उत्तर देना चाहिए कि यह केवल भोजन से परहेज़ करने से नहीं, बल्कि हृदय से ईश्वर को पुकारने से भी है, ताकि आप बुरी प्रवृत्तियों और उन्हें भड़काने वालों को जड़ से उखाड़ फेंक सकें और दूर भगा सकें। क्योंकि कहा गया है: *'वे अपनी संकट में प्रभु को पुकारे, और उन्होंने उन्हें उनकी मुसीबतों से छुड़ाया'* (भजन संहिता 106:6); और यह भी लिखा है: 'मैंने अधोलोक के गर्भ से पुकारा, *और* तूने मेरी पुकार सुनी: *"मेरी जान कब्र से ऊपर उठा"* (योन 2:3, 7)। क्योंकि *'जब तक'*, वह कहता है, 'दुष्टता—अर्थात् पाप का भार—नष्ट *नहीं हो जाती, मैं परमप्रभु पर पुकारता रहूँगा'* (भजन संहिता 56:23), ताकि, मुझे परम आशीर्वाद प्रदान करते हुए, वह अपनी शक्ति से पाप की जड़ को ही नष्ट कर दे, और कामवासना से भरे मन की मूर्तियों को मिटा दे, और मूर्तिपूजा से मुक्त लोगों के सामने हमारी उन कमजोरियों को प्रकट कर दे, जो मूर्तियों से भरी हैं। इसलिए, यदि आपको आत्म-संयम का वरदान प्राप्त नहीं हुआ है, तो जान लें कि प्रभु, आपकी प्रार्थना और आशा के लिए, जब आप उनसे पुकारें तो आपको सुनना चाहते हैं। अब जब आपको प्रभु के आपके विषय में निर्णय का ज्ञान हो गया है, तो उपवास के इस महान कार्य को करने में अपनी असमर्थता पर शोक न करें, बल्कि प्रार्थना और सौम्य धैर्य के द्वारा स्वयं को शत्रु से मुक्त करने का प्रयत्न करें। यदि दुर्बलता और क्लेश के विचार आपको उपवास के नगर से बाहर निकालते हैं, तो किसी दूसरे नगर (मत्ती 10:23) में भाग जाएँ, अर्थात् प्रार्थना और धन्यवाद के नगर में।

69. फिरौन ने प्रार्थना में कहा: 'ईश्वर मुझसे यह मृत्यु दूर कर दे' – और उसकी सुनी गई; इसी प्रकार, उन दुष्टात्माओं की भी सुनी गई जिन्होंने प्रभु से विनती की कि उन्हें गर्ता में जाने की आज्ञा न दें। क्या एक ईसाई, जो आध्यात्मिक मृत्यु से मुक्ति के लिए प्रार्थना करता है, उसकी सुनी नहीं जाएगी?

70. एक समय होता है जब कोई दैवीय अनुग्रह से प्रबुद्ध और सांत्वना प्राप्त करता है; लेकिन जब वह अनुग्रह क्षीण हो जाता है, तो व्यक्ति मानसिक उथल-पुथल और अनुचित इच्छाओं में पड़ जाता है, और या तो इसके बारे में बड़बड़ाता है, या व्यर्थ की निराशा के आगे झुक जाता है, बजाय इसके कि वह प्रार्थना के माध्यम से बहादुरी से प्रयास करके अपने भीतर उस उद्धारकारी मानसिक स्थिति को पुनर्स्थापित करे; ऐसा है जैसे एक गरीब आदमी जो राजा के महल से भीख पाकर, इस बात पर नाराज़ हो कि उसे राजा की मेज़ पर बैठने के लिए अंदर नहीं बुलाया गया।

71. *"धन्य हैं वे जिन्होंने न देखकर भी विश्वास किया"* (यूहन्ना 20:29), ठीक वैसे ही धन्य हैं वे जो अनुग्रह के विनम्र करने वाले कार्य के द्वारा, अपने भीतर कोई आराम न पाकर, बल्कि इसके विपरीत, दुखों और घोर अंधकार की एक श्रृंखला का सामना करते हुए, निराशा में नहीं पड़ते, बल्कि विश्वास से बल पाकर, वीरता से सहन करते हैं, इस निश्चय में कि वे अदृश्य को देखते हैं।

72. ईश्वर की कृपा से उचित समय पर—कई संघर्षों, लड़ाइयों और आँसुओं के बाद—इसे खोजने वालों को दी गई विनम्रता, उन लोगों में पाई जाने वाली विनम्रता से अतुलनीय रूप से अधिक शक्तिशाली और उत्कृष्ट है जो सद्गुण से भटक गए हैं। जिन्हें इसके योग्य माना जाता है, वे वास्तव में पूर्ण पुरुष हैं।

73. जब शैतान प्रभु को छोड़ गया, 'तो *स्वर्गदूत आए और उन्होंने उनकी सेवा की'* (मत्ती 4:11)। और जैसे यह लिखा नहीं है कि प्रभु के प्रलोभन के समय स्वर्गदूत उपस्थित थे, वैसे ही, जब भी हम किसी समय प्रलोभित होते हैं, स्वर्गदूत बहुत दूर नहीं जाते; फिर, जब प्रलोभक चले जाते हैं, तो वे हमारे पास आते हैं और हमारी सेवा करते हैं, दैवीय विचार, शक्ति, प्रबोधन, पश्चाताप, सांत्वना, धैर्य, आनंद और वह सब कुछ प्रदान करते हुए जो उस आत्मा को बचाता, मजबूत करता और पुनर्स्थापित करता है जिसने संघर्ष में परिश्रम किया है। नथनेल से कहा गया: *'अब से, तुम मनुष्य के पुत्र पर स्वर्गदूतों को उतरते और चढ़ते हुए देखोगे'* (यूहन्ना 1:51), अर्थात्, अब से स्वर्गदूतों की सेवा और सहायता मानव जाति पर प्रचुर मात्रा में बरसाई जाएगी।

74. उस महापुजारी को याद करो जिसके दाहिने हाथ पर शैतान उसका विरोध करने के लिए खड़ा था (ज़ेकार्याह 3:1)—अर्थात्, हर धार्मिक विचार, वचन और कर्म—ताकि जब ऐसा ही कुछ हो तो तुम चकित न हो जाओ।

७५. एक भिक्षु को यह जानना चाहिए कि दुर्बलता क्या है, जैसा कि शब्दों में है: *'हे प्रभु, मुझ पर दया कर, क्योंकि मैं दुर्बल हूँ'* (भजन संहिता ६:३), और ईश्वर से विमुख होना क्या है – यह शैतान और उसके स्वर्गदूतों का क्लेश है।

76. जैसे लोहे को आग के प्रवेश के प्रति अभेद्य बनाया जाता है, वैसे ही बार-बार की गई प्रार्थनाएँ मन को शत्रु के विरुद्ध युद्ध में सबसे शक्तिशाली बनाती हैं; इसीलिए दुष्टात्माएँ पूरी ताकत से कोशिश करती हैं कि हम

प्रार्थना में अपनी धैर्यपूर्ण दृढ़ता में आलस्य के कारण ढीले पड़ जाएँ, क्योंकि वे जानती हैं कि यह उनके लिए शत्रुतापूर्ण है और युद्ध में मन के लिए एक हथियार है।

77. दाऊद ने उन लोगों के उत्साह की प्रशंसा की जो उसके साथ ज़िकलग से परदेशियों के विरुद्ध निकले थे, भले ही वे थके हुए थे और बोसोर की धारा के पास ही रुके रहे।[79] जबकि, बर्बर लोगों के विरुद्ध लड़ाई से विजयी होकर लौटने पर, और कुछ लोगों को यह कहते सुनकर कि जो लोग थकान के कारण धारा के किनारे रुके रहे थे, उन्हें लूट का हिस्सा नहीं दिया जाना चाहिए – और यह देखकर कि वे शर्मिंदा थे, और उनके पास कहने के लिए कुछ भी नहीं था – परम दयालु दाऊद ने उनकी रक्षा करते हुए कहा: वे माल के पास तैनात थे उसकी रक्षा के लिए, और उसने उनके लिए उतना ही हिस्सा अलग रखा जितना उसने उन योद्धाओं को दिया था जिन्होंने बहादुरी और उत्साह के साथ लड़ाई लड़ी थी (1 शमूएल 30:21)। अब इस पर विचार करें: यदि किसी भाई में जो पहले [उपवास, प्रार्थना सभा और इसी तरह के अभ्यासों के लिए] उत्कट उत्साह दिखाता था और फिर उनमें कुछ सुस्त हो गया, हम यह मान लें कि उसके आंतरिक सद्गुण (उसका अच्छा स्वभाव) – विश्वास, पश्चाताप, नम्रता, विलाप, धैर्य, आशा, उदारता आदि; तो यह व्यक्ति, जो प्रभु यीशु मसीह की प्रतीक्षा करते हुए उन पर चिपका रहता है और धैर्यपूर्वक उनमें बना रहता है, यद्यपि बाहरी कर्मों में कमजोर है, फिर भी, जैसा कि उचित है, एक निश्चित अनंतकालीन उपहार प्राप्त करेगा।

७८. जो लोग कर्म और चिंतन दोनों में स्वयं को पूरी तरह से परमेश्वर को समर्पित कर चुके हैं, उन्हें लेवी और याजक कहा जाता है; जबकि 'लेवीय पशु' (गिनती, अध्याय 3) वे हैं, जो यद्यपि सद्गुण के मार्ग पर दृढ़ता से चलने में शक्तिहीन हैं, तथापि सद्गुण में आनन्दित होते हैं, उसकी अनवरत इच्छा करते हैं और अपनी पूरी क्षमता से उसके लिए प्रयास करते हैं, भले ही बुराई के कारण, जो उनकी शक्ति छीन लेती है, वे इसमें हमेशा सफल नहीं होते। लेकिन उचित समय पर, वे भी—यह आशा की जाती है—केवल मानव जाति के प्रति ईश्वर के प्रेम से, निर्लिप्तता का वर प्राप्त करेंगे। क्योंकि कहा गया है: *'हे प्रभु, तुमने गरीब की इच्छा सुनी है'* (भजन संहिता 9:38)।

७९. हम अक्सर उन प्रहारों को देखते और महसूस करते हैं जो शत्रु हम पर खुलेआम और गुप्त रूप से करता है; लेकिन वे यातनाएँ और कष्ट जो वह हमारे हाथों से सहता है—चाहे हम सद्गुणों में उत्तम हों, या अपने पापों का पश्चाताप करें, या अपमान सहें, या विपत्तियों को धैर्यपूर्वक सहन करें, या प्रार्थना में दृढ़ रहें, या धर्म के अन्य कार्य करें—जो उसे चीर डालते हैं, उसे पीड़ा देते हैं, रोता है और उसका हृदय टूट जाता है—यह सब, परमेश्वर की व्यवस्था से, हम नहीं देखते, कहीं ऐसा न हो कि हम घमंडी हो जाएँ। जैसा कि प्रेरित कहते हैं, *'क्योंकि परमेश्वर के सामने यह धर्मी है कि जो तुम्हें क्लेश देते हैं, उन्हें क्लेश से बदला दिया जाए'* (1 थिस्स. 1:6)।

80. यदि ज़मीन या चट्टान पर लंबा समय से सड़ा हुआ एक ठूंठ पानी की नमी से नए रोपे गए की तरह अंकुरित हो जाता है, तो हमारे लिए भी यह संभव है, जब हम पवित्र आत्मा की शक्ति से पुनर्जीवित होते हैं, कि हम उस अक्षयत्व को प्रकट करें जो हमें स्वभाव से प्राप्त है, और फल दें, जैसे एक नए रोपे गए पेड़ को देते हैं, भले ही हम पुराने मनुष्य में गिर गए हों।

८१. उस आत्मा से, जो प्रलोभनों की अधिकता और पापों की भीड़ के कारण निराश हो जाती है, और कहती है, 'आशा खत्म हो गई; हम बर्बाद हो गए', वह ईश्वर क्या कहते हैं, जो हमारे उद्धार से निराश नहीं होते? *'तुम जीवित रहोगे, और तुम देखोगे कि मैं प्रभु हूँ'* (यहे. ३७:६)। हालाँकि, उस आत्मा को, जो इस बात से हैरान है कि वह मसीह में कैसे और किन गुणों की शक्ति से फिर से जन्म ले सकती है, कहा गया है: *'पवित्र आत्मा तुझ पर आएगा'* (लूका 1:35)। जहाँ पवित्र आत्मा मौजूद है, वहाँ प्रकृति के नियमों या कारणों और प्रभावों के सामान्य क्रम को न खोजें। क्योंकि सर्वशक्तिमान और पूजनीय पवित्र आत्मा, अपनी शक्ति से, आपके भीतर वह कर देगा जो प्रकृति के अनुसार असंभव है, ताकि आप चकित रह जाएँ। इसके अलावा, वह अब आपके मन को—जो पहले वशीभूत था—एक विजेता के रूप में प्रकट करेगा। क्योंकि वह सान्त्वनादाता, जो ऊपर से हम पर उतरता है, सभी चीजों से ऊपर है; और वह आपको सभी प्राकृतिक प्रवृत्तियों और दैवीय जुनूनों से ऊपर उठाएगा।

८२. अपने कुलीन मन की चमक को अक्षुण्ण रखने का प्रयास करें। यदि आप सभी चीजों को वासना से देखने लगते हैं, तो इसका मतलब है कि प्रभु ने आपको अँधकारमय कर दिया है, आपके चेहरे पर एक पर्दा डाल दिया है - और *'आपकी आँखों की रोशनी आपके साथ नहीं है'* (भजन संहिता ३७:११)। हालाँकि, यदि आप में यह गुण है भी, तो थके नहीं और हतोत्साहित न हों, बल्कि संत दाऊद के साथ प्रार्थना करें: *'हे प्रभु, अपनी ज्योति और अपना सत्य मेरे पास*

---

[79] सेकेलाग से रवाना होने वाले पूरे दल में 600 पुरुष थे। उनमें से 200, वासरोवा धारा तक पहुँचने के बाद, आगे जाने की ताकत नहीं रख पाए। दाऊद उन्हें आपूर्ति की रक्षा के लिए वहीं छोड़ गए और 400 के साथ आगे बढ़ गए। – उनका उत्साह, बेशक, इस बात से स्पष्ट है कि वे किस तरह रवाना हुए।

भेजो, जो निराशा से अँधा हो गया है, मेरे मुख का उद्धार और मेरा परमेश्वर' (भजन संहिता 42:3, 5); *'अपना आत्मा भेज, और वे सृजित हो जाएँगे, और तू पृथ्वी का मुख नया कर देगा'* (भजन संहिता 103:30)।

83. धन्य है वह जो यहाँ दिन-रात प्रार्थनाओं और भजनों से अतृप्त होकर तृप्त होता है, और पवित्र शास्त्र के गौरवशाली पाठ से स्वयं को मजबूत करता है; क्योंकि ऐसा संगम आने वाले युग में आत्मा को अक्षय आनंद देगा।

84. पूरी शक्ति से गिरने से बचने का प्रयास करो; क्योंकि एक बहादुर योद्धा के लिए गिरना उचित नहीं है; लेकिन यदि तुम गिर भी जाओ, तो जल्दी उठो, और इस अच्छे संघर्ष में एक बार फिर दृढ़ता से खड़े हो जाओ। भले ही पूर्व वाला (गिरना) अनुग्रह के हटने के कारण तुम पर दस बार हो जाए, परन्तु उत्तर वाला—अर्थात् तुम्हारा उठना—दस गुना अधिक हो। और आपके जीवन के अंत तक ऐसा ही होगा। क्योंकि लिखा है: *'यदि धर्मी सात बार गिरे, तो वह सात बार उठ खड़ा होगा'* (नीतिवचन 24:16)। जब तक आप पवित्र स्कीमा (अर्थात् ईश्वर की सेवा करने का संकल्प) के हथियार को, आँसुओं और ईश्वर से प्रार्थना के साथ, दृढ़ता से थामे रहते हैं, तब तक आप उन लोगों में गिने जाते हैं जो दृढ़ खड़े रहते हैं, भले ही आप अक्सर गिरते हों। जब तक आप एक पराक्रमी योद्धा की तरह संतों के साथ बने रहेंगे, आपको सामने से घाव लगेंगे – जिनके लिए आपकी प्रशंसा होगी, क्योंकि घायल होने पर भी आप नहीं झुके, नहीं मिले और न ही पीछे हटे। लेकिन यदि आप संन्यासियों से मुँह मोड़ेंगे, तो आपको पीछे से घाव लगेंगे, जैसे किसी भगोड़े और कायर को लगते हैं, जिसने अपना रास्ता खो दिया हो और अपनी पंक्ति छोड़ दी हो।

८५. निराशा पाप से भी बदतर है। विश्वासघाती यहूदा लड़ाई में कायर और अकुशल था; इसीलिए वह निराशा में डूब गया; और दुश्मन, उस पर टूट पड़ा, ने उसके गले में फंदा डाल दिया। हालाँकि पितरस—जो दृढ़ता की चट्टान थे—एक युद्ध-निपुण व्यक्ति की तरह एक भयंकर गिरावट झेलने के बाद, अपने अत्यधिक दुख के बीच न तो हतोत्साहित हुए और न ही निराश हुए, बल्कि खड़े होकर, उन्होंने एक टूटे और विनम्र हृदय से सबसे कड़वे आँसू बहाए; और , हमारे विरोधी, ने यह देखकर, मानो सबसे प्रचंड ज्वाला से चेहरे पर झटका लगा हो, तुरंत पीछे हट गया और तेज चीखें मारते हुए बहुत दूर भाग गया।

86. निम्नलिखित तीन आसक्तियों के विरुद्ध, एक भिक्षु को अंत तक एक अथक लड़ाई लड़नी चाहिए: अतिसिद्धि के विरुद्ध, व्यर्थता के विरुद्ध, और धन के प्रेम के विरुद्ध, जो मूर्तिपूजा है।

87. इस्राएल के एक राजा ने भजन, स्तोत्र और आत्मिक गीतों के द्वारा, जो दाऊद की वीणाओं के साथ और उसके अपने शब्दों में गाए गए थे, ट्रॉग्लोडाइट्स के लोगों और उनसे जुड़े अन्य बर्बर लोगों को हराया (2 इतिहास 12:3; 20:22)। आपके भी ये बर्बर ट्रोग्लोडाइट्स—दैत्य—हैं जो आपकी इंद्रियों और अंगों पर अत्याचार करते हैं, आपकी देह को वासना से पीड़ित करते हैं, और आपको जुनून के साथ देखने, सुनने और सूंघने, अभद्र शब्द बोलने, अश्लीलता से भरी आँखें रखने, और बैबिलोन की तरह, आंतरिक और बाहरी रूप से दोनों तरह से भ्रमित होने के लिए उकसाते हैं। इसलिए, बड़ी आस्था के द्वारा, और भजनों, स्तोत्रों और आत्मिक गीतों के द्वारा, अपने भीतर बुराई करने वाले इन गुफावासियों को पूरी तरह से नष्ट करने का ध्यान रखो।

88. जैसे प्रभु चाहते हैं कि मनुष्य मनुष्य के द्वारा उद्धार पाए, वैसे ही शैतान यह सुनिश्चित करने का प्रयास करता है कि मनुष्य मनुष्य के द्वारा नष्ट हो जाए। इसीलिए किसी को भी तिरस्कार करने वाले, दुर्भावनापूर्ण या बहुत बातूनी व्यक्ति के साथ मेलजोल नहीं करना चाहिए, नहीं तो वह भी उसके साथ नरक में पहुँच जाएगा। क्योंकि धर्मी लोगों के करीब आने वाले भी मुश्किल से ही मोक्ष प्राप्त कर पाते हैं। लेकिन यदि कोई बिना भय के एक कपटी व्यक्ति के साथ मेलजोल रखता है, तो उसे जहाज के टूटने, जैसे कि महामारी या कोढ़, का सामना करना पड़ेगा। और कौन उस पर तरस खाएगा जो प्रसन्न मुख से एक अजगर के पास जाता है? अतः जीभ पर काबू न रखने वालों से, कलह फैलाने वालों से, और जो भीतर और बाहर दोनों जगह बेचैन हैं, उनसे भागो।

८९. जो कोई बुद्धिमान, समझदार और ईश्वर का मित्र कहलाना चाहता है, उसे पूरी लगन से प्रयास करना चाहिए कि वह अपनी आत्मा को उसी अवस्था में प्रभु के समक्ष प्रस्तुत करे, जिस अवस्था में उसे उनसे प्राप्त हुई थी: शुद्ध, निर्दोष और पूरी तरह से दोषरहित। इसके लिए उसे स्वर्ग में मुकुट पहनाया जाएगा और स्वर्गदूतों द्वारा धन्य कहा जाएगा।

९०. एक दयालु शब्द ने एक बार उस भ्रष्ट डाकू को शुद्ध और पवित्र कर दिया और उसे स्वर्ग में पहुंचा दिया। और एक कठोर शब्द ने मूसा को प्रतिज्ञात देश में प्रवेश करने से रोक दिया। इसलिए, हम अपनी जीभ को एक छोटी-मोटी तकलीफ न समझें; क्योंकि बदनाम करने वाले और बकवास करने वाले अपने लिए स्वर्ग के राज्य का द्वार बंद कर लेते हैं। – यद्यपि संसार का व्यक्ति यहाँ कुछ सफलता प्राप्त कर सकता है, वहाँ उसे कोई सफलता नहीं मिलेगी, *'परन्तु दुष्ट अपने ही विनाश में फँस जाएँगे'* (भजन संहिता 139:12)। एक बुद्धिमान व्यक्ति ने सही कहा

है कि अपनी जीभ के कारण गिरना, ऊँचाई से गिरने से बेहतर है। अतःहमें संत याकूब की बात माननी चाहिए, जो लिखते हैं: *'हर कोई सुनने में शीघ्र, बोलने में धीमा हो'* (याकूब 1:19)।

९१. कहीं ऐसा न हो कि हम व्यर्थता के मोह में भटक जाएँ और अपना ध्यान खो दें, हमें उस नबी की बात माननी चाहिए, जो कहते हैं: *'आओ, हे मेरी प्रजा, अपने पवित्र स्थान में प्रवेश करो'* – अपने हृदय के पवित्र स्थान में, जो प्रत्येक संवेदी छाप से छिपा हुआ है, उस निराकार निवास में, जो निर्लिप्तता और पवित्र अनुग्रह की छाया से प्रकाशित है – *'अपने द्वार बंद कर लो'* सब दृश्यमान चीज़ों के विरुद्ध, *'शरण लो, चाहे वह कितनी भी छोटी क्यों न हो'* – क्योंकि सारा मानव जीवन ही छोटा है – और इसके बाद वह जोड़ता है: *'जब तक यहोवा का प्रकोप समाप्त नहीं हो जाता'* (यशायाह 26:20), जैसा कि किसी और ने कहा: *'जब तक अधर्म समाप्त नहीं हो जाता'* (भजन संहिता 56:2)। क्योंकि अधर्म, और परिणामस्वरूप राक्षस, वासनाएँ और पाप, परमेश्वर का क्रोध हैं, जैसा कि यिशायाह परमेश्वर से कहते हैं: *'देखो, तुम क्रोधित हो, और हमने पाप किया है'* (64:5)। एक व्यक्ति प्रार्थना में लगातार अपने हृदय की सुनकर और अपने भीतर, अपने अभेद्य धाम में बने रहने का गंभीर प्रयास करके इस क्रोध से बचता है। क्योंकि, जैसा कि कोई कहता है, 'ज्ञान को अपनी अंतरतम आत्मा में खींचो' (देखें नीतिवचन 8:12; सिराख 45:31; 51:18); क्योंकि *'राजा की बेटी की सारी शोभा भीतर है'* (भजन संहिता 44:14), एक और कहता है, और जोड़ता है: *'यह वही काम है जो मेरे सामने रखा गया है, जब तक मैं परमेश्वर के भवन में प्रवेश न करूँ'* (भजन संहिता 72:17), *'और मेरी विरासत का पर्वत'* (भजन संहिता 67:17), *'तैयार की गई रहने की जगह में'* (भजन संहिता 32:14), जिसे हे प्रभु, आपने *'उस पवित्र स्थान में* बनाया है *जिसे आपके हाथों ने तैयार किया है'* (भजन संहिता 77:54)।

९२. जो सच्चे मन से संसार का त्याग करना चाहता है, वह धन्य भविष्यवक्ता एलिशा के उदाहरण का अनुसरण करे, जिन्होंने अपने साथ अपनी संपत्ति में से कुछ भी नहीं लिया, क्योंकि वे ईश्वर के प्रति अपने महान प्रेम से प्रेरित थे, जो उनके भीतर एक ज्वाला की तरह जलता था। वह जो कुछ भी उसके पास है, उसे ज़रूरतमंदों में बाँट दे, और इस प्रकार प्रभु का क्रूस उठाकर, वह स्वेच्छा से एक स्वैच्छिक मृत्यु की ओर जाए – जो शाश्वत राज्य का द्वार है।

93. जब तुम महसूस करो कि अमोरी तुम्हारे भीतर बल पकड़ रहा है, एक ओक के वृक्ष की तरह, तो प्रभु से विनतीपूर्वक प्रार्थना करो कि वह इसके फल को ऊपर से मुरझाए—अर्थात् कर्म में किया गया पाप—और इसकी जड़ों को नीचे से—अर्थात् अशुद्ध विचारों को। और प्रभु अमोरी को तुम्हारी उपस्थिति से दूर करे!

९४. जब आप उन लोगों को हमारी मौन का मज़ाक उड़ाते हुए देखें तो आश्चर्यचकित न हों, क्योंकि वे स्वयं चुप नहीं रह सकते; उनके दुष्ट प्रभाव को बिना द्वेष के गायन से दूर करना बेहतर है, अपने भीतर परमेश्वर के प्रति अपनी महान आज्ञाकारिता को मज़बूत करते हुए, और गीत में पुकारते हुए: *'परन्तु हे मेरी आत्मा, परमेश्वर की आज्ञा मान'* (भजन संहिता 61:6); *'क्योंकि उन्होंने मुझसे प्रेम करने के बजाय मेरी निंदा की, परन्तु मैं प्रार्थना करता रहा'* (भजन संहिता 108:4), अपने और उनके चंगाई के लिए।

९५. जब तक समुद्र पर तेज हवा नहीं चलती, तब तक लहरें नहीं उठतीं; और जब तक कोई दानव हम पर आक्रमण नहीं करता, तब तक न तो आत्मा और न ही शरीर वासनाओं से विचलित होता है।

96. यदि आप प्रार्थना और दैवीय अनुग्रह से हमेशा गर्म रहते हैं, तो, जैसा कि पवित्र शास्त्र कहते हैं, आप प्रकाश के कवच से सुसज्जित हैं। आपका वस्त्र गर्म है, जबकि आपके शत्रु, मानो, दोहरे वस्त्र से सुसज्जित हैं—लज्जा और ठंड से कांपने में।

97. अपने पापों को ध्यान में रखते हुए, छाती पर प्रहार करने में आलसी न बनो, ताकि ऐसे प्रहारों से तुम अपने कठोर हृदय को तोड़ और नरम कर सको, जैसे पत्थर तोड़ने वाले लोहा-युक्त मिट्टी को तोड़ते हैं; और तुम उसमें सोने की एक नस पाओगे, और उस छिपे हुए खजाने पर आनंदित होओगे।

98. परम आशीषों की कामना और पवित्र आत्मा के वचनों के पवित्र चिन्तन की अग्नि आपकी आत्मा की वेदी पर अनवरत जलती रहे।

99. यदि आप हमेशा *'शांति के सुसमाचार का प्रचार करने के लिए तैयार रहने का जूता पहनने का* प्रयास करते *हैं'* (इफिसियों 6:15), तो आप निश्चित रूप से अपने और अपने पड़ोसी के घर को व्यवस्थित कर लेंगे। लेकिन यदि आप (विपत्ति का सामना करते समय) हतोत्साहित हो जाते हैं, तो आपको अनदेखी करके ठुकरा दिया जाएगा, और व्यवस्था के अनुसार, *आप 'उस व्यक्ति का नाम विरासत में पाएंगे जिसके जूते उतार दिए गए हैं'* (व्यवस्थाविवरण 25:9-10)।

100. यदि, यूहन्ना के अनुसार, परमेश्वर प्रेम है, तो जो कोई प्रेम करता है वह परमेश्वर में रहता है और परमेश्वर उसमें रहता है। अतःजो कोई अपने पड़ोसी से घृणा करता है, प्रेम के बंधन को तोड़ता है, उसने स्पष्ट रूप से प्रेम के स्थान पर घृणा ग्रहण की है। जो अपने पड़ोसी से घृणा करता है, जो उसी स्वभाव का है, वह ईश्वर से बहुत दूर

है, *'क्योंकि ईश्वर प्रेम है, और जो प्रेम में रहता है, वह ईश्वर में रहता है, और ईश्वर उसमें रहता है'* (1 यूहन्ना 4:16)। उसी की महिमा और सामर्थ्य युगानुयुग हो। आमीन।

धन्य अबा ज़ोसिमा (फ़िलिस्तीनी)

उनका संक्षिप्त परिचय

माननीय ज़ोसिमा की वार्तालापों के एक प्राचीन लैटिन अनुवादक ने इन्हें निम्नलिखित प्रस्तावना के साथ प्रस्तुत किया है: 'मैं इन वार्तालापों का बहुत आदर करता हूँ और उन्हें अत्यधिक महत्व देता हूँ, क्योंकि उनमें स्पष्ट रूप से वर्णित तपस्या के सच्चे स्वरूप के कारण, क्योंकि उनमें व्याप्त प्रचुर आध्यात्मिक अभिषेक के कारण, और क्योंकि वे जो पवित्रता की सबसे मधुर सुगंध बिखेरते हैं, उसके कारण। मैंने कभी भी किसी चीज़ को इतनी स्वेच्छा से नहीं लिखा है, न ही अपने हृदय में इतनी प्रसन्नता के साथ किसी चीज़ का अनुवाद किया है। इसने मुझे यह पता लगाने के लिए प्रेरित किया कि उनके लेखक कौन थे और वे किस युग में रहे, क्योंकि यह निश्चित रूप से ज्ञात नहीं था। "'संवादों' में से बहुत से संवाद सुरक्षित नहीं बचे हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि इन्हें एक समर्पित श्रोता ने तब दर्ज किया था जब उसने इन्हें एक वृद्ध भिक्षु के मुख से सुना था, जो अपने कई वर्षों के संन्यासी जीवन के दौरान, ईसाई पूर्णता के सभी चरणों से गुज़रा था और ईश्वर की कृपा से, मानव जाति के लिए सुलभ पवित्रता के सर्वोच्च शिखर पर पहुँच गया था। संवादों के लेखक को धन्य बाबा ज़ोसिमा के रूप में संदर्भित किया गया है। जहाँ तक रिकॉर्डर का सवाल है, इस बात का केवल संकेत दिया गया है कि वह उनके नियमित श्रोताओं में से एक था, और संभवतःउस मठ का एक भाई था जहाँ बाबा ज़ोसिमा यॉर्डन के किनारे रहते थे। 'लेकिन, फिर, यह धन्य बाबा ज़ोसिमा कौन हैं? इस मामले की लंबी और सावधानीपूर्वक जांच के बाद, मैं अंततःइस निष्कर्ष पर पहुँचा हूँ कि: हमारे संवादों के लेखक और कोई नहीं बल्कि वही प्रतिष्ठित जोसिमा हैं, जिन्हें स्वर्ग से इस लिए चुना गया था कि वे पश्चातापी संत मेरी ऑफ़ इजिप्ट का जीवन स्वयं उनके मुख से सुनें, और इस पूजनीय माता को मार्गदर्शन प्रदान करें तथा उनका अंतिम संस्कार संपन्न करें।" वे इस दृष्टिकोण का समर्थन इस बात की ओर इशारा करके करते हैं कि इन शिक्षाओं को देने वाले बाबा ज़ोसिमा के जीवन की कुछ परिस्थितियाँ, उन बाबा ज़ोसिमा के जीवन की परिस्थितियों के समान हैं, जिन्होंने मिस्र की संत मरियम को देखा था और उनकी कहानी सुनाई थी।

1. मिस्र की संत मेरी के जीवन के वृत्तांत में कहा गया है कि अबा ज़ोसिमा, जो कम उम्र में ही एक मठ में प्रवेश कर गए थे, वहाँ 53 साल तक रहे; फिर, ऊपर से मिली एक विशेष प्रेरणा के बाद, वे यॉर्डन नदी के किनारे के एक मठ में चले गए; और उसी मठ से निकलते समय उन्होंने संत मेरी को देखा। और इन्हीं वार्तालापों में, यह उल्लेख है कि अब्बा ज़ोसिमा, जिन्होंने इन्हें कहा था, पहले टायर के एक निश्चित मठ में रहते थे (अध्याय 24); बाद में, ये वार्तालाप उन्हें नेपल्स (समारिया में, अध्याय 14) से गुज़रते हुए दर्शाते हैं; और अंत में सेंट गेरासिमस के मठ में (अध्याय 2)। बाद वाले संदर्भ स्पष्ट रूप से पहले वाले को समझाते हैं।

2. संत मरियम के वृत्तांत में, अबा ज़ोसिमा के बारे में कहा गया है कि वह आध्यात्मिक अनुभव से समृद्ध थे और इस कारण से, कई लोगों ने उनका मार्गदर्शन लिया—न केवल उनके अपने मठ से, बल्कि दूर-दूर के अन्य मठों से भी (अनुच्छेद 2 - ग्रीक में)। यह स्पष्ट है कि उन्हें लिखना पसंद नहीं था, बल्कि वे केवल बोलते थे। उन्होंने संत मेरी का वृत्तांत भी नहीं लिखा, बल्कि उसे मौखिक रूप से बताया, जैसा कि यह भाइयों के बीच तब तक संरक्षित था जब तक कि संत सोफ्रोनीयस ने इसे लिखित रूप नहीं दिया । यह कि इन निर्देशों के लेखक का स्वभाव भी ऐसा ही था, यह इस तरीके से प्रदर्शित होता है जिससे वे प्रस्तुत किए गए हैं: उनसे पूछा गया, और उन्होंने बताया। उनकी उन्तीसवीं बातचीत सेंट गेरासिमस के मठ में होती है। यह मानना उचित है कि बाकी सभी वार्तालाप भी वहीं सुने गए थे और उनके किसी निकटतम शिष्य द्वारा रिकॉर्ड किए गए थे।

3. इन शिक्षाओं के लेखक अबा ज़ोसिमा, जो संतों (पैटर्स) के कथनों का हवाला देने के शौकीन थे, सभी शुरुआती बुज़ुर्गों का हवाला देते हैं, और ऐसा इस तरह से करते हैं कि उस समय उनकी यादें अभी भी ताज़ा थीं। यह चौथी शताब्दी के अंत और पाँचवीं शताब्दी की शुरुआत की ओर इशारा करता है। ऐसा माना जाता है कि मिस्र की मरियम का निधन लगभग 430 ईस्वी में हुआ था। अब्बा ज़ोसिमा, संभवतःसत्तर वर्ष की आयु में, यॉर्डन नदी के तट पर एक मठ में चले गए। वे इस मठ में लगभग तीस वर्षों तक रहे; क्योंकि वे सौ वर्ष की आयु में निधन कर गए। पाँचवीं शताब्दी के पहले भाग में रहने वाले किसी व्यक्ति के लिए, चौथी शताब्दी के संतों की कहावतें उनकी स्मृति में ताज़ा रही होंगी।

इस तरह के संकेत, जिन्हें संवादों के लेखक की पहचान करते समय स्वीकार किया जाना चाहिए, उनके उद्गम का समय और जिस तरीके से वे अस्तित्व में आए, उसे भी निर्धारित करते हैं। बाबा बोले; एक शिष्य, जो आध्यात्मिक संवर्धन के लिए उत्सुक था, ने नोट किया। इस प्रकार सभी संवाद इस प्रकार शुरू होते हैं: 'बाबा जोसिमा बोले, या कहा, या सुनाया'। इसमें कोई संदेह नहीं हो सकता कि जैसे कई संवाद हुए, वैसे ही कई संवाद दर्ज भी किए गए। ये संवाद एक अंश प्रतीत होते हैं जिसे 'स्पिरिचुअल मेडो' (लिमोनेरियम) के संकलक जॉन मॉस्कस ने देखा और पढ़ा था। पूजनीय जोसिमा का पर्व दिवस 4 अप्रैल है। *पैट्रोलॉजिया* (संपादक: मिग्ने) में, ये संवाद खंड 78 में शामिल हैं। ये सेंट सावस द पैलेस्टिनीन के मठ की पांडुलिपि *पेटेरिकॉन* में भी पाए जाते हैं, जहाँ इन्हें पहले अध्याय के अंत में एक परिशिष्ट के रूप में रखा गया है। पांडुलिपि में, संवाद बिना किसी विभाजन के प्रस्तुत किए गए हैं। मुद्रित संस्करण में, 14 खंड हैं; हालाँकि, इनमें से कुछ खंडों में एक से अधिक वार्ताएँ शामिल हैं। अनुवाद में, प्रत्येक निर्देश और प्रत्येक वृत्तांत को एक अलग प्रविष्टि के रूप में रखना अधिक उपयुक्त समझा गया। यह और भी आवश्यक था क्योंकि सभी वार्ताएँ मुद्रित संस्करण में शामिल नहीं हैं, और जो शामिल हैं उनमें से कुछ को पूरी तरह से शामिल नहीं किया गया है। इससे 31 अनुभाग बन गए हैं।

धन्य बाबा ज़ोसिमा के प्रवचन

1. अपने होठों पर क्रॉस का चिह्न बनाकर, धन्य जोसिमा ने इस प्रकार कहना शुरू किया: परमेश्वर वचन, देहधारी होकर, उन पर जिन्होंने विश्वास किया और उन पर जो विश्वास रखते हैं, महान अनुग्रह प्रदान किया। यह हमारे अपने समय में भी संभव है कि हम विश्वास करें और यदि हम चाहें तो अभी से ऐसा करना शुरू कर दें। क्योंकि यदि हमारी इच्छा ऐसा चाहती है और अनुग्रह हमारे भीतर कार्य करता है, तो जो कोई भी चाहे वह संपूर्ण संसार को शून्य मान सकता है। तब उन्होंने जो कुछ भी हाथ लगा—लगता है एक पुआल का टुकड़ा, या कोई काँटा, या कोई और तुच्छ वस्तु—उसे उठाया और जोड़ दिया: 'इस (पुआल) के कारण कौन झगड़ करेगा या बहस करेगा, रंजिश रखेगा या दुख में डूब जाएगा, सिवाय शायद उस व्यक्ति के जिसने सचमुच अपना दिमाग खो दिया हो?' क्या ईश्वर का कोई पुरुष, जो ईश्वर की इच्छा के अनुसार जीवन में सफल होता है और आगे बढ़ता है, संपूर्ण संसार को इस पुआल से अधिक कुछ नहीं मानेगा, भले ही उसके पास वास्तव में सब कुछ हो? क्योंकि, जैसा कि मैं हमेशा कहता हूँ, वस्तुओं का अभाव हानिकारक नहीं है, बल्कि उनसे आसक्ति रखना हानिकारक है। कौन नहीं जानता कि हम जो कुछ भी रखते हैं, उसमें हमारा शरीर हमसे सबसे अधिक प्रिय है? अत; यदि समय आने पर हमें अपने शरीर की भी परवाह न करने की आज्ञा दी जाती है, तो क्या यह और भी अधिक सत्य नहीं है उन चीज़ों के लिए जो हमारे पास उससे अलग हैं? हालाँकि, किसी को अपनी संपत्ति को बेतरतीब ढंग से बिखेरना नहीं चाहिए, जैसे किसी को बेतरतीब ढंग से अपनी जान नहीं देनी चाहिए: क्योंकि ऐसा व्यवहार केवल एक पागल व्यक्ति का ही होता है; लेकिन व्यक्ति को तब तक इंतजार करना चाहिए जब तक समय इसकी मांग न करे, ताकि वह ऐसे कार्य के लिए तैयार हो सके। इस संबंध में, उन्होंने एक भाई का स्मरण किया जिसके पास सब्जियाँ थीं, और कहा: 'क्या उसने उन्हें नहीं बोया था? क्या उसने उन पर मेहनत नहीं की थी? क्या उसने उन्हें नहीं काटा था? क्या उसने उन पर खाद नहीं डाली थी? फिर भी उसने उन्हें बेतरतीब ढंग से नहीं उखाड़ा या एक ओर नहीं फेंका; बल्कि केवल इस तरह से देखा मानो उसके पास वे हों ही नहीं।' यहाँ तक कि जब एक बूढ़ा उसे परखने के इरादे से उसके पास आया, और उन्हें उखाड़ना शुरू किया, तो उसने खुद को उसके सामने दिखाया भी नहीं, बल्कि छिप गया; और जब केवल एक जड़ बची, तो उसने उससे कहा: 'यदि आप चाहें, पिताजी, इसे छोड़ दें, और हम इसी का भोज करेंगे।' इसी से पवित्र वृद्ध ने पहचान लिया कि वह परमेश्वर का सच्चा सेवक था, और सब्जियों का दास नहीं, और उससे कहा: 'हे भाई, परमेश्वर का आत्मा तुम पर प्रसन्न हुआ है।' – यदि वह सब्जियों से लगाव रखता, तो वह तुरंत ही शोक और कष्ट के द्वारा इसका प्रकटीकरण कर देता; परन्तु उसने यह दिखाया कि वह उन्हें इस प्रकार मानता था मानो उसके पास कुछ भी न हो। और बाबा ज़ोसिमा ने निष्कर्ष निकाला: राक्षस ऐसे उदाहरणों पर ध्यान देते हैं; और यदि वे देखते हैं कि कोई व्यक्ति भौतिक चीजों के प्रति उदासीन है, उनके नुकसान से परेशान नहीं है, तो वे इससे यह निष्कर्ष निकालते हैं कि वह पृथ्वी पर चलता है लेकिन अपने भीतर कोई सांसारिक बुद्धि नहीं रखता है।

२. सारी शक्ति इच्छाशक्ति की आकांक्षाओं में निहित है। एक प्रबल इच्छाशक्ति एक ही घंटे में, उसके बिना लंबे समय के परिश्रम की तुलना में, ईश्वर को अधिक प्रसन्न कर सकती है। एक सुस्त और आलसी इच्छाशक्ति निष्क्रिय होती है।

3. राक्षस तब डर जाते हैं जब वे देखते हैं कि कोई व्यक्ति अपमान, अनादर, हानि और हर तरह की अन्य विपत्तियों के अधीन होते हुए भी, इस बात पर दुखी नहीं होता कि उसे यह सहना पड़ा, बल्कि इस बात पर दुखी होता है

कि उसे यह सहने के बाद भी साहसपूर्वक सहन नहीं कर पाया: क्योंकि वे इससे यह निष्कर्ष निकालते हैं कि उसने सच्चे मार्ग पर कदम बढ़ा दिया है और ईश्वर की आज्ञाओं के अनुसार पूर्णता में चलने की दृढ़ इच्छा रखता है। – इस पर, बाबा ज़ोसिमा को संत पाचोमियस याद आए और यह याद आया कि जब उनके बड़े भाई ने उन्हें डाँटते हुए कहा था: 'अपनी अहंकार में मठ का विस्तार करना बंद करो,' तो उन्होंने क्या किया था। संत पाचोमियस यह कार्य स्वर्ग से प्राप्त एक आज्ञा के अनुसार कर रहे थे। जब उन्होंने यह सुना, तो यद्यपि वह अपने अच्छे काम पर अडिग रहे, फिर भी उनमें आक्रोश की एक लहर उठी; फिर भी उन्होंने उस समय अपने भाई के विरुद्ध कुछ नहीं कहा। जब रात हुई और उनके हृदय में उठ रही अप्रिय हलचल शांत हो गई, तो वह अपने छोटे प्रार्थना कक्ष में गए और रोते हुए प्रार्थना करने लगे, कहते हुए: 'हे ईश्वर! मैं अभी भी कामुक विचारों को पालता हूँ; मैं अभी भी देह के अनुसार जीता हूँ। हाय, मेरी दशा! अत; *'मुझे मरना चाहिए'*, धर्मग्रंथ के अनुसार (रोमियों 8:13)। ऐसे संघर्षों के बाद, हृदय की ऐसी तैयारी के बाद, मैं फिर से क्रोध में बह जाता हूँ, भले ही यह एक अच्छे कारण के लिए हो। हे प्रभु, मुझ पर दया करें, कहीं मैं सर्वथा नष्ट न हो जाऊँ! क्योंकि यदि आप मुझे पूर्ण रूप से भलाई में स्थापित नहीं करते, और शत्रु मुझे में कोई छोटा सा भी आधार पा ले, *तो* मैं उसका कैदी बन जाऊँगा: *'क्योंकि जो कोई सारे व्यवस्था का पालन करता है, पर एक ही बात में चूक जाता है, वह सारी व्यवस्था का दोषी ठहराया गया है'* (याकूब 2:10)। परन्तु मुझे विश्वास है कि यदि आप, अपनी महान उदारता में, मेरी सहायता करें, तो मैं अंततः आपके संतों के मार्ग पर चलना सीख जाऊँगा, हमेशा *'जो आगे है उसकी ओर बढ़ता रहूँगा'* (फिलि. 3:13), और मैं शत्रु को वैसे ही लज्जित करूँगा जैसे मुझे करना चाहिए। 'अन्यथा, हे प्रभु, मैं उन लोगों को कैसे सिखाऊँगा जिन्हें आप मेरे साथ यह जीवन जीने के लिए बुलाएंगे, यदि मैं पहले स्वयं और शत्रु पर विजय प्राप्त नहीं करता?' इस प्रकार की प्रार्थना में वह पूरी रात रहा, और भोर होने तक ये शब्द रोते हुए बोलता रहा; और उसके पैरों के नीचे से पसीने से पानी का एक तालाब बन गया, क्योंकि फिसल काटने का समय था, और वह जगह बहुत गर्म थी। धन्य जोसिमा ने कहा, 'मैं इस पर चकित हूँ, क्योंकि उसके आँसुओं को कोई सीमा नहीं थी। ऐसा कैसे है कि परमेश्वर ऐसी प्रबल इच्छा को, जो अन्य सभी बातों के प्रति मृत हो कर केवल इसी एक बात के लिए हो, अपनी ओर से माँगी गई सभी आशीषें नहीं देते?'

४. बाबा ज़ोसिमा ने आगे कहा: जब कोई व्यक्ति अपने मन में किसी ऐसे व्यक्ति को लाता है जिसने उसे ठेस पहुँचाई हो, या उसे नुकसान पहुँचाया हो, या उसकी निंदा और बदनामी की हो, या उसके साथ कोई और बुराई की हो, और उसके खिलाफ साजिशें रचता है, तो वह स्वयं पर ही बदनामी लाता है, ठीक वैसे ही जैसे राक्षस करते हैं; और फिर वह स्वयं ही उसके लिए पर्याप्त बदनामी का कारण बन जाता है। और 'जब वह साजिशें रचता है' से मेरा क्या मतलब है? – यदि वह उसे एक उपकारी और चंगा करने वाले के रूप में याद नहीं करता है, तो वह उसके साथ बहुत अन्याय कर रहा है। क्योंकि वह उसी वासना को सतह पर लाता है जिससे आप पीड़ित हैं, ताकि उसे ठीक किया जा सके; और इसलिए आपको उसे मसीह द्वारा आपके पास भेजे गए एक चंगा करने वाले के रूप में याद करना चाहिए। मसीह के वास्ते, आपको ऐसी कृपा के लिए कृतज्ञ होकर सब कुछ सहना चाहिए। लेकिन यदि आप इसका सही उपयोग नहीं करते हैं और अपने दुष्ट जुनून से मुंह नहीं मोड़ते हैं, तो इसके लिए प्रभु परमेश्वर को दोषी नहीं ठहराया जा सकता। यह तथ्य कि आप पीड़ित हैं, इस बात का संकेत है कि आपकी आत्मा बीमार है; यदि आप बीमार नहीं होते, तो आप पीड़ित नहीं होते। इसलिए आपको आभारी होना चाहिए कि, इसके माध्यम से, आप अपनी बीमारी की प्रकृति को पहचान पाए हैं, और आपको उससे जो कुछ भी सहन किया है, उसे प्रभु यीशु स्वयं द्वारा भेजे गए एक उपचारात्मक उपाय के रूप में प्रेम से स्वीकार करना चाहिए। लेकिन अगर, धन्यवाद देने के बजाय, आप नाराज़ हो जाते हैं, इसके खिलाफ विद्रोह करते हैं, शिकायत करते हैं और इसके खिलाफ साजिश रचते हैं; तो ऐसा करके आप, मानो, प्रभु यीशु से कह रहे हैं: 'मैं तुम्हारे द्वारा चंगा नहीं होना चाहता; मैं तुम्हारे उपचारों को स्वीकार नहीं करना चाहता; मैं अपनी चोटों में सड़ना चाहता हूँ, मैं दुष्टात्माओं के अधीन होना चाहता हूँ। मैं प्रभु को नहीं जानता; और वह कौन है जिसकी मैं आज्ञा मानूँ (निर्ग. 5:2)?' और अंत में, प्रभु क्या करेंगे?' – प्रभु, हमारी दुर्बलताओं के प्रति अनुग्रहकारी होकर, हमें उनके उपचार के लिए आज्ञाएँ दी हैं, जैसे कि दाह-चिकित्सा और रेचक औषधियाँ। क्योंकि जो कोई चंगा होना चाहता है और उसकी खोज करता है, उसे—चाहे वह कितना भी दर्दनाक क्यों न हो—चुपचाप वह सब कुछ सहना चाहिए जो चिकित्सक निर्धारित करता है। क्योंकि शारीरिक रूप से बीमार व्यक्ति को भी चीरे और दाहक-उपचार सहना, या रेचक दवा लेना सुखद नहीं लगता; परन्तु, इस बात से आश्वस्त होकर कि इसके बिना बीमारी से छुटकारा पाना असंभव है, वह स्वयं को डॉक्टर के हाथों में सौंप देता है, इस विश्वास के साथ कि उसके सामने मौजूद इस थोड़े से दर्द के द्वारा वह एक गंभीर आंतरिक विकार और एक पुरानी बीमारी से मुक्त हो जाएगा। लेकिन यीशु मसीह का 'दाहक' वह है जो चोट और हानि पहुँचाता है।

५. उन्होंने आगे कहा: 'प्रलोभनों और विचारों को नष्ट करो, और एक भी संत नहीं बचेगा।' जो उद्धार करने वाले प्रलोभन से भागता है, वह शाश्वत जीवन से भागता है। एक संत यह भी कहते हैं: 'पवित्र शहीदों पर उन मुकुटों को किसने प्रदान किया, यदि उनके यातनादाताओं ने नहीं? सेंट स्टीफन को चारों ओर ऐसी महिमा किसने दी, यदि उन लोगों ने नहीं जिन्होंने उसे पत्थरों से मार डाला?' – इस पर एक अन्य संत का कथन जोड़ते हुए, जिन्होंने कहा: 'मैं उन लोगों को दोष नहीं देता जो मेरा अपमान करते हैं; बल्कि, मैं उन्हें अपना उपकारी कहता हूँ और उनका सम्मान करता हूँ; और न ही मैं आत्माओं के चिकित्सक को अस्वीकार करता हूँ, जो मेरी व्यर्थ आत्मा को अपमान की औषधि देते हैं, कहीं ऐसा न हो कि एक दिन वह मेरी आत्मा से कहे: *"हमने ब[illegible] को चंगा किया है, फिर भी वह चंगी नहीं हुई"* (यिर्म. 51:9); और फिर: *'मैं कितनी बार तुम्हारे बच्चों को एक माँ मुर्गी की तरह अपने पंखों के नीचे इकट्ठा करना चाहती थी, पर तुमने न चाहा! देखो, तुम्हारा घर तुम्हारे लिए सुनसान छोड़ दिया गया है'* (लूका 13:34,35)।

६. उन्होंने आगे कहा: एवाग्रियस को डर था कि प्रभु, उसे डाँटते हुए, उससे कह सकते हैं: 'तुम घमंड से पीड़ित थे, और मैंने तुम्हारे ऊपर अपमान का उपचार भेजा, ताकि तुम इसके द्वारा शुद्ध हो जाओ; परन्तु तुम चंगे नहीं हुए।' – अतः हम यह मान लें कि हमारे बारे में कोई भी स्पष्ट सत्य नहीं बोलता, सिवाय उस व्यक्ति के जो हमें डाँटता है। प्रभु, जो हृदयों और मन को परखते हैं, जानते हैं कि यदि सभी लोग हमें प्रशंसा और चापलूसी करें, तब भी हमारा सम्पूर्ण अस्तित्व निन्दा और कटु वचनों की निन्दा का पात्र है। यदि वे कहें, 'तुमने यह और वह किया है,' तो मैं उत्तर दूँगा, 'लेकिन मैंने जो कुछ भी किया है, उसमें क्या भला है?' – मेरी प्रशंसा और चापलूसी करने वाले ही मेरे बारे में झूठ बोलते हैं, और मुझे डाँटने और अपमानित करने वाले ही मेरे बारे में सच बोलते हैं; और वे भी मेरे बारे में अभी तक पूरा सच नहीं बोलते। यदि वे जान पाते—मेरे बुरे कर्मों के पूरे समुद्र को नहीं, बल्कि केवल उनका एक अंश—तो वे मेरी आत्मा की बदबू और दुर्गंध से विमुख हो जाते। यदि मानव शरीर का प्रत्येक अंग हमारी निंदा करने के लिए एक जीभ में बदल जाए, तो मुझे यकीन है कि तब भी वे हमारी अपमानिता को पूरी तरह व्यक्त नहीं कर पाएंगे। हर अभियोजक केवल एक निश्चित हिस्से की निंदा करता है; वह पूरा नहीं जान सकता। यदि अय्यूब कहता है, *'मैं लज्जा से भर गया हूँ'* (अय्यूब 10:15), और जो कुछ भरा होता है उसमें और कुछ नहीं समा सकता, तो हम क्या कहेंगे, हम जो बुराई का गहरा गड्ढा हैं? शैतान ने हमें हर पाप के द्वारा नम्र बनाया है – और हमें उन लोगों का आभारी होना चाहिए जो हमें अपमान के द्वारा नम्र बनाते हैं: क्योंकि जो लोग अपने अपमान के लिए आभारी होते हैं, वे शैतान के सिर पर वार करते हैं। पवित्र पिताओं ने कहा है कि यदि निम्रता को नरक में लाया जाता है, तो उसे स्वर्ग में उठाया जाएगा; और इसके विपरीत, यदि अहंकार को स्वर्ग में ऊँचा उठाया जाता है, तो उसे नरक में लाया जाएगा। कौन एक विनम्र व्यक्ति को किसी के खिलाफ बुरे विचार रखने, या किसी की निंदा करने, या किसी और पर दोष मढ़ने के लिए मजबूर कर सकता है? क्योंकि एक विनम्र व्यक्ति चाहे कुछ भी सहन करे, या कुछ भी सुने, वह इसे अपनी निंदा करने और स्वयं को विनम्र बनाने का अवसर मानता है। यह सुनकर, धन्य जोसिमा को याद आया कि कैसे बाबा मूसा, जब पुरोहितों ने उन्हें वेदी से यह कहते हुए भगा दिया था, 'निकल जा, इथियोपियाई,' तो उन्होंने स्वयं को इस प्रकार नम्र करना शुरू कर दिया, 'उन्होंने तुम्हारे साथ अच्छा किया है, काले आदमी! चूँकि तुम इंसान नहीं हो, इंसानों के बीच मत चलो। उन्होंने अच्छा किया।'

7. उन्होंने यह भी कहा: 'हमारे पवित्र और सक्रिय गुरु, बाबा अम्मोन, जो कहते हैं, उनसे जो हम सुनते हैं, उसे व्यवहार में लाने का इससे बेहतर तरीका और क्या है: 'अपने आप पर बारीकी से ध्यान दो: तुमने संसार को क्यों छोड़ा, और तुम यहाँ क्यों हो?' – और हर संभव प्रयास करो, जब कोई तुम्हें कोई दुख पहुँचाए, तो चुप रहने का और एक भी शब्द न बोलने का, जब तक कि तुम्हारा हृदय अविराम प्रार्थना से शांत न हो जाए; और केवल तभी अपने भाई से क्षमा माँगो। क्योंकि जो कोई भी सच्चे और सीधे मार्ग से प्रेम करता है, वह किसी भी बात से परेशान होने पर, हमेशा स्वयं को कड़ी फटकार लगाता है और दोषी ठहराता है, यह कहते हुए: 'हे मेरी आत्मा, तू क्यों क्रोधित है, और तू पागल की तरह क्यों उछल-कूद कर रही है? इसी कृत्य से तू दिखाती है कि तू बीमार है। क्योंकि यदि तू बीमार न होती, तो तू पीड़ित न होती।' तो फिर, खुद को फटकारना बंद करके, आप अपने भाई को क्यों फटकारते हैं, जिसने आपको आपकी बीमारी दिखाई? कर्म और सत्य के द्वारा प्रभु मसीह की आज्ञाओं को सीखें, जिन्होंने *'जब उन पर अपमान किया गया, तो बदले में अपमान नहीं किया'*, और जब उन्हें पीड़ा दी गई, तो उन्होंने प्रतिरोध नहीं किया (1 पतरस 2:23)। सुनो कि वह क्या कहते हैं, और अपने कर्मों से क्या प्रदर्शित करते हैं: *'मैंने अपनी पीठ उन लोगों के लिए पेश की जिन्होंने मुझे मारा, और अपने गाल उन लोगों के लिए जिन्होंने मेरी दाढ़ी उखाड़ी; मैंने थूक से अपना चेहरा नहीं छिपाया'* (यशायाह 50:6)। फिर भी तुम, ओ दुर्भाग्यपूर्ण आत्मा, थोड़ी सी अपमान और अनादर, कुछ तिरस्कार और अरुचि, निंदा और बदनामी के कारण, वहाँ बैठकर अनगिनत शत्रुतापूर्ण विचारों की बुनावट करते हो, और इस प्रकार राक्षसों की तरह ही अपने ऊपर बदनामी लाते हो। एक राक्षस ऐसी आत्मा के साथ उससे अधिक और क्या कर सकता है जो

वह स्वयं अपने साथ करता है? हम मसीह के क्रूस को देखते हैं, और हर दिन हम उनके द्वारा हमारे लिए सहे गए दुखों के बारे में पढ़ते हैं; फिर भी हम स्वयं एक भी अपमान सहन नहीं कर सकते। सचमुच, हम सीधे रास्ते से भटक गए हैं।

८. उन्होंने यह भी कहा: यदि कोई मथुसelahह जितना लंबा जीवन जिए, फिर भी उस सीधे रास्ते पर न चले जिस पर सभी संत चले, – मैं अपमान और अन्यायपूर्ण हानियों के मार्ग, और उन्हें धैर्यपूर्वक सहने की बात कर रहा हूँ – वह व्यक्ति न तो थोड़े से और न ही बहुत से सफल होगा, और आज्ञाओं में छिपे हुए खजाने को नहीं पाएगा, बल्कि अपने जीवन के सभी वर्षों को व्यर्थ में ही बर्बाद कर देगा। उन्होंने आगे कहा: 'जब मैं धन्य डायोनिसिया के साथ था, तो एक भाई ने उनसे आशीर्वाद स्वरूप कुछ माँगा, और उन्होंने उसे वह दिया जो और जितना भी वह दे सकती थीं। लेकिन चूँकि उसे उसकी अपेक्षा से कम मिला, वह उन पर और मुझ पर अपमानजनक शब्द कहने और बकवास करने लगा।' यह सुनकर, वह क्रोधित हो गईं और किसी तरह उसका बदला लेना चाहती थीं। यह समझते हुए, मैंने उनसे कहा: 'तुम क्या कर रही हो? ऐसा करके तुम अपने ऊपर बदनामी ला रही हो और अपनी आत्मा को सभी सद्गुणों से वंचित कर रही हो। और तुम ऐसे व्यवहार को कितनी लायकता से सहन कर रही हो, जबकि मसीह ने इसे तुम्हारे लिए सहन किया था? मैं जानती हूँ, मैडम, कि आपने अपनी सारी संपत्ति को इस तरह बर्बाद कर दिया है जैसे वह कूड़ा हो, लेकिन यदि आप नम्रता नहीं अपनाती हैं, तो आप एक लोहार की तरह होंगी जो लोहे के टुकड़े पर वार तो करता है लेकिन वह चीज नहीं बना पाता जिसकी उसे ज़रूरत है। सुनिए कि ईश्वर-वाहक इग्नाशियस क्या कहते हैं: 'नम्रता की खोज करो, जिससे इस संसार के राजकुमार की सारी शक्ति नष्ट हो जाती है।' इस बात का संकेत कि संसार को पूरी तरह से त्याग दिया गया है, यह है कि किसी भी चीज़ से परेशान न होना। ऐसा होता है कि एक आदमी, कई खजानों को तुच्छ समझकर, एक सुई से जुड़ जाता है, और यह लगाव उसे भ्रम और चिंता में डाल देता है। फिर सुई उसके खजानों की जगह ले लेती है। इस प्रकार कोई व्यक्ति एक सुई, या एक कौल, या एक चोगा, या एक किताब का दास बन जाता है, और ईश्वर का सेवक होना बंद कर देता है। एक बुद्धिमान व्यक्ति ने सही कहा है कि 'आत्मा में जितने भी जुनून हैं, उतने ही मालिक हैं।' और प्रभु कहते हैं: 'जहाँ तुम्हारा खजाना है, वहीं तुम्हारा हृदय भी होगा' (मत्ती 6:21)। और पवित्रशास्त्र कहता है: *'क्योंकि जिस-जिस पर कोई वस्तु हावी हो जाती है, वह उसकी दासी बन जाता है'* (2 पतरस 2:19)। यह सुनकर, उसने आश्चर्य से मेरी ओर देखा और कहा: 'तुम्हें वह परमेश्वर मिले जिसकी तुम लालसा करते हो।'

९. धन्य ने यह भी कहा: आत्मा उद्धार चाहती है, लेकिन, व्यर्थ की चीजों की लालसा और उनकी चिंता में, वह मोक्ष के लिए आवश्यक परिश्रम से कतराती है। यद्यपि वास्तव में आज्ञाएँ भारी नहीं हैं, बल्कि हमारी बुरी इच्छाएँ हैं। हालाँकि, ऐसा होता है कि कभी-कभी, समुद्र में डूबने या डाकुओं के हाथ लगने के डर से, हम सब कुछ तुच्छ समझ लेते हैं और अपनी संपत्ति को खुशी-खुशी त्याग देते हैं जब हम देखते हैं कि मृत्यु हमारे निकट है; लेकिन अगर, पृथ्वी पर थोड़ा और जीने के लिए, हम हर चीज़ को तुच्छ समझते हैं और बाकी सब कुछ खोकर खुद को बचाना—चाहे डाकुओं से हो या समुद्र से—एक आशीर्वाद मानते हैं; और अगर कोई, जो कुछ ही समय पहले किसी तुच्छ बात पर पागलपन में बकबक कर रहा था, वह भी केवल अपने अस्थायी जीवन को बचाने के लिए सब कुछ त्याग देता है, तो हम वही तर्क शाश्वत जीवन पर क्यों नहीं लगाते? जैसा कि एक संत ने कहा, ईश्वर का भय समुद्र के भय जितना प्रबल क्यों नहीं है?

10. इसकी पुष्टि के लिए, बाबा ने निम्नलिखित घटना सुनाई, जो उन्होंने दूसरों से सुनी थी। एक बार, एक रत्न-व्यापारी अपने बच्चों के साथ एक जहाज पर सवार हुआ, जिसके पास बहुत सारे कीमती पत्थर और मोती थे, जिन्हें वह उस देश में लाभ पर बेचने की उम्मीद कर रहा था जहाँ वह जा रहा था। ईश्वर की कृपा से, वह जहाज पर उसकी सेवा करने वाले एक छोटे लड़के का विशेष रूप से प्रिय हो गया; और उसने उस लड़के को सांत्वना दी, जैसे कि उसे स्वयं उससे सांत्वना मिली थी, और उसे वही भोजन दिया जो वह स्वयं खाता था। एक दिन, इस छोटे लड़के ने नाविकों को आपस में फुसफुसाते हुए सुन लिया; ध्यान से सुनने पर, उसे पता चला कि उन्होंने व्यापारी को उसके कीमती पत्थरों के कारण समुद्र में फेंकने का फैसला किया था। इससे वह बहुत दुखी हो गया। जब वह बाद में, अपनी आदत के अनुसार, दुखी भाव लिए रत्न-व्यापारी के पास उसकी सेवा करने आया, तो व्यापारी ने उससे पूछा: 'आज तुम इतने दुखी क्यों हो?' लड़के ने सच बताने की हिम्मत न करते हुए जवाब दिया, 'कुछ नहीं।' व्यापारी ने फिर पूछा: 'क्या तुम्हें कोई बात परेशान कर रही है? सच बताओ—क्या है?' लड़का फूट-फूट कर रो पड़ा और उससे बोला: 'नाविकों ने आपके खिलाफ ऐसा षड्यंत्र रचा है।' व्यापारी ने पूछा, 'क्या सचमुच?' लड़के ने जवाब दिया, 'हाँ, उन्होंने आपस में यही तय किया है।' तब व्यापारी ने अपने बेटों को बुलाया और कहा: 'मैं जो कुछ भी करने को कहूँ, बिना किसी विरोध के करना।' फिर, एक कपड़ा बिछाकर, उसने उनसे कहा: 'संदूकों को यहाँ लाओ।' वे उन्हें ले आए। और वह पत्थर रखने लगा। सभी पत्थर रख देने के बाद, उसने कहा: 'जीवन ऐसा ही है!' 'इन सब चीज़ों के कारण, मुझे समुद्र में फेंके जाने का खतरा है और, थोड़ी ही देर बाद, बिना कुछ साथ ले जाए मारे जाने का।' फिर उसने अपने बच्चों को आदेश दिया: 'इसे सब समुद्र में

फेंक दो'; और, उसकी बात पर, उन्होंने तुरंत सब कुछ समुद्र में फेंक दिया। नाविक हैरान रह गए, और उनकी बुरी योजना विफल हो गई। यह वृत्तांत समाप्त करके, धन्य बाबा ज़ोसिमा ने जोड़ा: 'क्या आप देखते हैं कि उसके विचार अचानक कहाँ मुड़े; वह कैसे तुरंत ही वाणी और कर्म दोनों में बुद्धिमान हो गया? और यह इस क्षणिक जीवन को बचाने के लिए था। और उसने सही काम किया, यह तर्क देते हुए कि यदि वह मर जाता, तो ये पत्थर उसके किसी काम के नहीं होते?' फिर भी हम मसीह की आज्ञाओं के लिए थोड़े से भी नुकसान या वंचित होने को उदासीनता से सहन नहीं करना चाहते। लेकिन अगर हम दुखी हुए बिना नहीं रह सकते, तो हमें उस व्यक्ति के विनाश के लिए दुखित होना चाहिए जिसने हमें नुकसान पहुँचाया है, न कि संपत्ति के नुकसान के लिए; क्योंकि जिसने अन्याय किया है, उसने स्वयं को राज्य से बाहर कर दिया है: *'क्योंकि अधर्मी परमेश्वर के राज्य के वारिस नहीं होंगे'* (1 कुरिन्थियों 6:9); परन्तु तुम अन्यायियों को, उसने अनन्त जीवन दिया है, जैसा कि प्रभु ऐसे लोगों से कहते हैं: 'प्रसन्न और हर्षित रहो, क्योंकि तुम्हारा प्रतिफल स्वर्ग में महान है' (मत्ती 5:12)। हम, हालाँकि, मसीह के एक अंग के नाश पर अपना दुख त्यागकर, क्षणभंगुर और तुच्छ, नाशवान और निरर्थक चीजों के विचारों में बैठे और खोए रहते हैं। सचमुच, हम हर दंड के योग्य हैं। परमेश्वर ने हमें शरीर के अंगों के पद पर स्थापित किया है, जिसका सिर मसीह हमारा परमेश्वर है, जैसा कि प्रेरित ने कहा: *'शरीर के सब अंग, यद्यपि बहुत हैं, पर एक ही शरीर हैं'* (1 कुरिन्थियों 12:12)। और सबका सिर मसीह है (इफिसियों 1:22)। इसलिए, जब कोई भाई आपको दुख पहुँचाता है, तो यह ऐसा है जैसे कोई पीड़ित हाथ या दुखती आँख दूसरे अंग को पीड़ा पहुँचाती हो। क्योंकि हम अपने हाथों को काटकर अलग नहीं करते, न ही जब वे हमें दर्द देते हैं तो अपनी आँखें फोड़ डालते हैं, यह सोचकर कि इन दोनों में से किसी एक अंग को खोना हमारे लिए कहीं अधिक हानि होगी; इसके विपरीत, हम उन पर क्रूस का चिह्न—मसीह की यह सबसे सम्मानित मुहर—बनाते हैं, और संतों से प्रार्थना करने के लिए कहते हैं, और उनकी ओर से परमेश्वर को अपनी विनम्र प्रार्थनाएँ अर्पित करते हैं, और साथ ही आँखों की दवा और पट्टी भी तैयार करते हैं, ताकि उनकी सहायता से हम उस पीड़ित अंग को ठीक कर सकें। इसलिए, जैसे आप अपनी आँख या अपने हाथ के लिए प्रार्थना करते हैं, कि वे ठीक हो जाएँ और आपको और दर्द न दें, वैसे ही अपने भाई के लिए भी प्रार्थना करें। फिर भी हम, यह देखते हुए कि मसीह के अंगों को इतना आध्यात्मिक नुकसान पहुँच रहा है, न केवल उनके लिए दुख नहीं करते, बल्कि उनके विरुद्ध प्रार्थना भी करते हैं। यह वास्तव में उन लोगों का लक्षण है जिनके पास दयालु हृदय नहीं है।

11. धन्य ने यह भी कहा: जिसने उदारता के खजाने—प्रेम और करुणा—को अर्जित किया है, वह पहले स्वयं को आनंद और लाभ पहुँचाता है, और फिर अपने पड़ोसी को; जबकि, इसके विपरीत, द्वेष पहले उसे ही घायल करता है और नुकसान पहुँचाता है जो इसे पालता है। हालाँकि ऐसा लग सकता है कि वह अपने पड़ोसी को नुकसान पहुँचाता है—चाहे वह संपत्ति में हो, या सम्मान में, या यहाँ तक कि शरीर में ही क्यों न हो —वास्तव में वह स्वयं को अनंत जीवन से वंचित कर लेता है। इस पर, बाबा ने यह कहावत जोड़ दी: 'जो आत्मा के लिए हानिकारक नहीं है, वह मनुष्य के लिए भी हानिकारक नहीं है।'

12. उन्होंने यह भी कहा: 'किसी ने मुझसे कहा: "अब्बा, हमारे लिए बहुत सारे आज्ञा-नियम बनाए गए हैं, और जब कोई यह विचार करना शुरू करता है कि वह क्या पालन कर रहा है और क्या नहीं, तो उसका मन भ्रमित हो जाता है।"' मैंने उनसे उत्तर दिया: 'यह तुम्हें परेशान न करे; परन्तु यह बात ध्यान में रखो: यदि तुम सांसारिक वस्तुओं से आसक्त नहीं हो, तो तुम हर एक सद्गुण का सहज ही अभ्यास करोगे। उन पर विवाद किए बिना, तुम मन में द्वेष नहीं रखोगे, और तब अपने शत्रुओं के लिए प्रार्थना करने में तुम्हें क्या कठिनाई होगी? क्या यह पृथ्वी खोदने के समान है?' – लेकिन धैर्य का मार्ग अपनाओ; संपत्ति के अन्यायपूर्ण नुकसान को सहज भाव से सहो; अपमान के लिए धन्यवाद दो – और तुम पवित्र प्रेरितों के शिष्य बनोगे, जो कोड़े खाने के बाद दरबार से लौटकर *'इस बात पर आनंदित हुए कि उन्हें मसीह के नाम के लिए अपमानित होने के योग्य समझा गया'* (प्रेरितों के काम 5:41)। और वे, पवित्र और शुद्ध होकर, मसीह के नाम के लिए अपमान स्वीकार कर गए; हम, हालाँकि, अपने ही पापों के कारण अपमानित होना चाहिए। हम लज्जास्पद हैं, भले ही कोई हमें लज्जित न करे – और हम शापित हैं: *'क्योंकि,'* भविष्यवक्ता कहते हैं, *'जो तेरी आज्ञाओं से भटक जाते हैं, वे शापित हैं'* (भजन संहिता 118:21)। मसीह के नाम के लिए अपमान सहना सभी के लिए नहीं है; सभी के लिए नहीं, बल्कि केवल पवित्र और शुद्ध लोगों के लिए, जैसा कि मैंने कहा है; हालाँकि, हम जैसे लोगों का कर्तव्य है, कि हम कृतज्ञतापूर्वक अपमान को स्वीकार करें, यह स्वीकार करते हुए कि हम अपने बुरे कर्मों के लिए सही दंड भोग रहे हैं। उस आत्मा का विनाश हो जो, अपने अशुद्ध कर्मों को जानते हुए और यह देखते हुए कि वह जो कुछ भी भुगत रही है वह सही है, वहाँ बैठकर अपनी ही अंतरात्मा को धोखा देती है और विचारों को गढ़ती है, यह कहते हुए: 'उसने मुझसे ऐसा-वैसा कहा, उसने मेरा अपमान किया और मुझे गाली दी'—इस प्रकार अपने ऊपर बदनामी लाती है और अपने लिए राक्षसों का स्थान ग्रहण कर लेती है। क्योंकि जो कुछ कलाकारों के साथ होता है,

वही आत्मा के साथ भी होता है। जैसे एक गुरु, अपनी कला एक शिष्य को सिखाने के बाद, उसे अकेले काम करने के लिए छोड़ देता है और अब उसे उसके बगल में बैठने की ज़रूरत नहीं होती, बल्कि वह केवल कभी-कभी यह देखने के लिए जाँच करता है कि क्या शिष्य आलसी हो गया है या उसने अपना काम बिगाड़ तो नहीं दिया: इसी तरह राक्षस भी, यदि वे कोई आज्ञाकारी आत्मा देखते हैं जो बुराई के विचारों को आसानी से स्वीकार कर लेती है, तो वे उसे इस शैतानी कला के हवाले कर देते हैं, और अब उसके बगल में बैठना आवश्यक नहीं समझते, यह विश्वास रखकर कि आत्मा स्वयं पर कलंक लगाने के लिए पर्याप्त है; वे केवल समय-समय पर यह देखने के लिए आते हैं कि क्या वह भटक गई है।

१३. अबा ने यह भी कहा: 'क्या सभी से प्रेम करना बेहतर नहीं है, और क्या सभी द्वारा प्रेम किया जाना अधिक सुखद नहीं है? और मसीह की आज्ञाएँ क्या ऐसी हैं जो सांत्वना न देती हों?' – फिर भी इच्छाशक्ति उन्हें पूरा करने का प्रयास नहीं करती; क्योंकि यदि वह ऐसा करती, तो ईश्वर की कृपा की सहायता से, सब कुछ उसके लिए आसान हो जाता, जैसा कि मैंने अक्सर कहा है, और जैसा कि दिव्य एंथनी कहते हैं: सद्गुण के लिए, केवल हमारी इच्छा और अनुभव ही पर्याप्त हैं; हमें स्वर्ग के राज्य को प्राप्त करने के लिए बहुत दूर की यात्रा करने की आवश्यकता नहीं है, न ही सद्गुण के लिए समुद्र पार करने की। – कोमल और विनम्र व्यक्ति को कैसी शांति का अनुभव होता है?! सचमुच, *'शान्तिप्रिय लोग पृथ्वी के वारिस होंगे और शान्ति की भरमार में आनन्दित होंगे'* (भजन संहिता 36:11)।

14. धन्य व्यक्ति ने यह भी बताया: एक बार, हम (मैं, एक भाई और कई धर्मनिरपेक्ष लोग) नेपल्स (समारिया में) जाने वाले रास्ते पर चल रहे थे और उस जगह पहुँचे जहाँ सीमा शुल्क चौकी थी। साधारण लोगों ने, यह जानते हुए कि वहाँ की प्रथा क्या थी, बिना एक शब्द कहे कर चुका दिया; लेकिन मेरे साथ जो भाई था, उसने विरोध करना शुरू कर दिया और उनसे कहा: 'तुम्हारी हिम्मत कैसे हुई भिक्षुओं से भुगतान की माँग करने की?!' यह सुनकर, मैंने उससे कहा, 'भाई, तुम क्या कर रहे हो? तुम यह कहने के अलावा और कुछ नहीं कह रहे हो, "हालाँकि अनिच्छा से, मुझे एक संत के रूप में सम्मान दो।"' बात कुछ और होती अगर वह आपकी सद्भावना और विनम्रता को देखकर खुद शर्मिंदा हो जाता और कहता, 'मुझे माफ करें, मैं इसे नहीं लूंगा।' और इस तरह आपने नम्र और विनम्र प्रभु के शिष्य के रूप में काम नहीं किया है। जो देय है वह चुका दो, और शांति से अपने रास्ते जाओ।"

१५. एक अन्य अवसर पर, जब मैं पवित्र नगर में था, मसीह का एक प्रेमी मेरे पास आया और कहा: 'मेरे और मेरे भाई के बीच थोड़ी अनबन हो गई है; और मेरा भाई मुझसे मेल नहीं करना चाहता। कृपया मध्यस्थता करें और उससे बात करें।' मैं खुशी-खुशी इसके लिए मान गया, और उसके भाई को बुलाकर उससे बात की, उसे प्रेम और शांति की ओर प्रेरित किया। वह मानता हुआ लगा, लेकिन फिर उसने मुझसे कहा: 'नहीं, मैं उससे सुलह नहीं कर सकता, क्योंकि मैंने क्रूस की कसम खाई है कि मैं नहीं करूँगा।' तब, मुस्कुराते हुए, मैंने उससे कहा: 'तुम्हारी कसम का मतलब यह है: "मैं आपके पवित्र क्रूस की कसम खाता हूँ कि मैं आपके आज्ञाओं का पालन नहीं करूँगा, बल्कि आपके शत्रु, शैतान की इच्छा पूरी करूँगा।"' तब जान लो, कि न केवल हम किसी भी दुष्ट कर्म को करने के अपने वचन पर कायम रहने के लिए बाध्य नहीं हैं, बल्कि हमें इस प्रकार कार्य करने का संकल्प लेने के लिए पश्चाताप और पछतावा करना चाहिए – जैसा कि ईश्वर-वाहक बेसिल ने कहा; यदि हेरोद होश में आ जाता और अपनी कसम को पूरा नहीं करता, तो वह मसीह के अग्रदूत का सिर कलम करने के महान पाप में नहीं पड़ता। अंत में, मैंने उन्हें पवित्र सुसमाचार का वह अंश सुनाया कि कैसे, जब प्रभु संत पतरस के पैर धोना चाहते थे, तो उन्होंने, शपथ लेने वालों के लिए विशिष्ट उत्साह के साथ, कहा, *'आप मेरे पैर नहीं धोएंगे'* – और फिर न केवल इसके लिए सहमति दी, बल्कि और भी अधिक की इच्छा की (यूहन्ना, अध्याय 13)।

१६. धन्य व्यक्ति ने फिर कहा: 'मुझसे पूछा गया था कि क्रोध को कैसे नियंत्रित किया जाए,' और मैंने उत्तर दिया: 'क्रोध को नियंत्रित करने का पहला कदम, जब क्रोध भड़क रहा हो तो बात न करना है।' हम इसका एक उदाहरण अबा मूसा में देखते हैं, जब संतों ने उन्हें परखने की इच्छा से सभा में आपस में कहा: 'यह इथियोपियाई हमारी सभा में क्यों आता है?' – यह सुनकर, वे चुप रहे; और जब सभा के बाद, कुछ लोगों ने उनसे पूछा कि क्या वे परेशान हुए थे, तो उन्होंने उत्तर दिया: *'मैं परेशान हुआ और मैंने कुछ नहीं कहा'* (भजन संहिता 76:5)। लेकिन वह शुरुआत में था। – हालाँकि, जब वह परिपक्व हो गया – और एक डिकन के रूप में नियुक्त हो गया – तो वह न केवल चुप रहा बल्कि अविचलित भी रहा। यह इस प्रकार हुआ: आर्चबिशप, उसे परखने की इच्छा से, पुरोहितों से कहा: 'जब अबा मूसा पवित्र स्थल में प्रवेश करें, तो उन्हें बाहर भेज दो, और उनका पीछा करते हुए यह सुनो कि वे क्या कहते हैं।' जब वह पवित्रस्थान में प्रवेश किया, तो पुरोहितों ने उससे कहा: 'बाहर जा, हे काले रंग वाले इथियोपियाई।' और वह बाहर गया, यह कहते हुए: 'उन्होंने तुम्हारे साथ अच्छा किया है; चूँकि तुम आदमी नहीं हो, तो तुम लोगों की सभा में क्यों प्रवेश करते हो?' (अब्बा मूसा की सच्ची कथा, अध्याय 3, 4)। अब वह न केवल उपहास के सामने चुप रहा, बल्कि वह लज्जित

भी नहीं हुआ; और वह न केवल लज्जति नहीं हुआ, बल्कि उसने स्वयं को डांटा भी। लज्जति होना और चुप रहना अपूर्ण और नौसखियों का लक्षण है; लेकनि लज्जति न होना भी सद्धिों का लक्षण है, जैसा कि भविष्यवक्ता कहते हैं: *'मैंने स्वयं को तैयार कयिा और लज्जति नहीं हुआ'* (भजन संहति 118:60)। और यह एक महान गुण है। – फरि भी, जब हम खुद पर काबू पाने और क्रोध आने पर चुप रहने के लिए खुद को मजबूर करने का प्रयास नहीं करते हैं, तो हम अक्सर खुद को शुरुआती लोगों से भी नीचे पाते हैं, यह सोचकर कि अपनी बड़ी लापरवाही में, यह गुण बहुत ऊँचा और हमारी पहुँच से बाहर है। हम अपने ऊपर इस परश्रिम को शुरू करने की कोई इच्छा भी नहीं दखिाते, और इस प्रकार ईश्वर की कृपा को अपनी सहायता के लिए आकर्षति नहीं करते; या, यदि हम ऐसी इच्छा दखिाते भी हैं, तो वह दुर्बल, अस्थरि और ईश्वर से कोई भी आशीर्वाद प्राप्त करने के अयोग्य होती है।

१७. इस पर परम-पुण्यवन्त ने कहा: हमारे जीवन का मार्गक्रम इस प्रकार है: जो कोई भी इस कार्य में अपनी इच्छा से परश्रिम करता है, उसे अनुग्रह से वह सब कुछ प्राप्त होता है जो उसके लिए आवश्यक है। जैसे एक कसिान, भले ही वह थोड़ा ही बोए, फरि भी यदि ईश्वर उसके श्रम को आशीर्वाद दे, तो वह बहुत बड़ा फसल काटता है, जैसा कि इसहाक के वषिय में लखिा है: *'इसहाक ने उस देश में बोआई की और उसी वर्ष सौ गुणा जौ की फसल काटी; क्योंकि यहोवा ने उसे आशीष दी थी'* (उत्पत्ति 26:12): तो यदि प्रभु हमारे स्वतंत्र इच्छाशक्ति के श्रम को आशीष दें, तो हम सभी कार्यों को बनिा परश्रिम, बनिा जबरदस्ती और मठिास के साथ करेंगे - और हर चीज़ से लाभान्वति होंगे। आत्म-अनुशासन और धैर्य के साथ की गई प्रार्थना एक ऐसी प्रार्थना को जन्म देती है जो सरल, शुद्ध और मीठी होती है। और जो आत्म-अनुशासन के साथ अभ्यास कयिा जाता है, वह इच्छा का कार्य है, जबकि जो आनंद के साथ कयिा जाता है, वह अनुग्रह का कार्य है। क्या हम कला में महारत हासलि करने की प्रक्रयिा में भी यही नहीं देखते हैं? जो कोई भी कोई कला सीखता है, उसे सीखने की दृढ़ इच्छा के साथ ऐसा करना चाहिए; शुरुआत में वह कठनिाई से परश्रिम करता है, एक भाग को दूसरे के साथ सामंजस्यपूर्ण बनाने में वफिल रहता है, और अक्सर गलतियाँ करता है। लेकनि वे हतोत्साहति नहीं होते; इसके बजाय, वे फरि से काम में जुट जाते हैं, और भले ही वे एक बार फरि गड़बड़ कर दें, वे काम को नहीं छोड़ते, इस प्रकार अपने शकि्षक को अपनी इच्छाशक्ति की दृढ़ता का प्रदर्शन करते हैं। यदि वे हतोत्साहति हो जाते हैं और अपनी मेहनत छोड़ देते हैं, तो वे कुछ भी नहीं सीखेंगे; लेकनि यदि, बार-बार गलतियाँ करने के बावजूद, वे कार्य को नहीं छोड़ते, बल्कि धैर्यपूर्वक परश्रिम करते रहते हैं, तो अंततः ईश्वर की कृपा से, वे उस कला में पारंगत हो जाते हैं और धीरे-धीरे बनिा बोझ के, आनंद के साथ, और इतनी सफलता के साथ हर तरह की चीजें बनाने लगते हैं कि उससे जो कमाई होती है वह उनके पूरे भरण-पोषण के लिए पर्याप्त होती है। इसी प्रकार, आध्यात्मकि जीवन के मामले में, जो कोई सद्गुणों को वकिसति करने का संकल्प लेता है, उसे यह नहीं सोचना चाहिए कि वह उनमें तुरंत सफल हो जाएगा, क्योंकि यह असंभव है; बल्कि उसे प्रयास करना चाहिए, और यद्यपि शुरुआत में उसके प्रयास पूरी तरह से सहज नहीं हो सकते, उसे जो उसने शुरू कयिा है, उससे पीछे न हटे, अन्यथा वह सफलता प्राप्त नहीं करेगा; बल्कि उसे बार-बार प्रयास करते रहना चाहिए, ठीक वैसे ही जैसे कोई व्यक्ति कोई कला सीखना चाहता है। जब वह इस तरह धैर्य के साथ, हताश हुए बनिा परश्रिम करता है, तो ईश्वर उसकी इच्छाशक्ति के परश्रिम पर अनुकूल दृष्टि डालेंगे, और उसे बनिा कसिी जबरदस्ती के सभी कार्य करने की शक्ति प्रदान करेंगे। और ठीक यही बात है जो अबा मूसा का आशय था जब उन्होंने कहा: सद्गुण प्राप्त करने के इच्छुक लोगों के लिए शक्ति, संयोगवश गरि जाने पर हतोत्साहति न होने में नहीं, बल्कि उसी लक्ष्य के प्रति अपने उत्साह और परश्रिम को नवीनीकृत करने में नहिति है।

१८. उन्होंने यह भी कहा: हर सद्गुण के लिए परश्रिम और समय दोनों की, और उसके लिए एक सच्ची इच्छा की आवश्यकता होती है; सबसे बढ़कर, इसके लिए ईश्वर की सहायता की आवश्यकता होती है। क्योंकि यदि ईश्वर हमारी इच्छा में सहायता नहीं करते हैं, तो हमारा परश्रिम व्यर्थ होगा, ठीक वैसे ही जैसे एक कसिान का परश्रिम व्यर्थ हो जाएगा जसिने अपनी खेत जोतकर बीज बोया है, यदि ईश्वर उसके बीज को अंकुरति नहीं करते हैं। हालाँकि, ईश्वर की सहायता के लिए हमारी प्रार्थनाओं और वनितियों की आवश्यकता होती है; क्योंकि केवल उन्हीं के माध्यम से हम अपनी ओर से मध्यस्थता करने के लिए ईश्वर की मदद प्राप्त करते हैं। यदि हम प्रार्थना की उपेक्षा करते हैं, तो ईश्वर हमारी मेहनत पर अनुकूल दृष्टि कैसे डालेंगे? इसी प्रकार, यदि हम प्रार्थना करते भी हैं, लेकनि आलस्य से, ध्यान भटकाकर, या बहुत जल्द प्रार्थना से थक जाते हैं, तो हमें कुछ भी प्राप्त करने के योग्य नहीं समझा जाएगा, जैसा कि मैं आपसे हमेशा कहता रहा हूँ: क्योंकि ईश्वर हमारी इच्छा को देखता है और उसी के आधार पर अपना नर्िणय लेकर अपनी कृपा प्रदान करता है। क्या अबा मूसे कभी डाकुओं के सरगना नहीं थे? क्या उसने अनगनित अपराध नहीं कएि, जसिके कारण उसे अपनी दुष्टता के कारण अपने स्वामी से छपिना पड़ा? लेकनि चूंकि उसने अपने कार्य को साहसपूर्वक और इतनी प्रबल दृढ़ संकल्प के साथ आरंभ कयिा , हर कोई जानता है कि वह कनि ऊंचाइयों

तक पहुंचा, इतना कि उसे परमेश्वर के चुने हुए लोगों में गिना गया, जैसा कि उसके जीवन के लेखक ने वर्णन किया है। जहाँ तक हमारी बात है, यद्यपि हमारे त्याग की शुरुआत में हम उत्साह की गर्माहट दिखाते हैं, समय के साथ, अपनी ही लापरवाही से, हम उसे खो देते हैं, और ईश्वर तथा अपने पड़ोसियों के प्रति प्रेम के स्थान पर, ठंडी, खाली और बेकार चीजों से जुड़ जाते हैं; और इसके अलावा, यदि हम कोई अच्छा काम करने में सफल हो जाते हैं, तो हम उसका श्रेय स्वयं को देते हैं, मानो हमने उसे अपनी ही शक्ति से पूरा किया हो, न कि ईश्वर से प्राप्त किया हो; जबकि सत्य कहता है: *'जो तुम्हारे पास है, वह तुम्हें प्राप्त हुआ है। तो, यदि यह तुम्हें प्राप्त हुआ है, तो तुम क्यों घमंड करते हो मानो यह तुम्हें प्राप्त ही नहीं हुआ?'* (1 कुरिन्थियों 4:7)।

19. उन्होंने यह भी कहा: यदि प्रभु यीशु ने यह देखा होता कि हम जो कुछ उन्होंने हमें पहले ही दे दिया था, उसका उपयोग हम अपने भले और उनकी महिमा के लिए कर रहे थे, तो वे हमें उन्हीं आशीषों से वंचित या शक्तिहीन नहीं कर देते, जिनसे उन्होंने पवित्र पुरखों को समृद्ध किया था। लेकिन जब वह देखता है कि हमारी अपनी अव्यवस्था के कारण, हम उन थोड़े और कम उपहारों को भी जो उसने पहले ही हमें दिए हैं, अपनी ही हानि के लिए उपयोग कर रहे हैं; तो, मानवता के प्रति प्रेम के कारण, वह हमें और बड़े उपहारों का भरोसा नहीं सौंपता, कहीं ऐसा न हो कि हम अंत में विनिष्ट हो जाएँ। यदि वह देखता कि हम हमें पहले से दिए गए थोड़े से उपहारों को अपने भले के लिए लगा रहे हैं; तो, निस्संदेह, जैसा कि मैंने पहले कहा, वह हम पर और भी अधिक उपहारों की वर्षा करने में असमर्थ नहीं होता। ईश्वर, जैसा कि मैं हमेशा कहता हूँ, भला होने के कारण, हमें हर चीज़ से लाभ उठाने की स्वतंत्रता और अवसर दिया है; लेकिन अपनी पक्षपातपूर्णता और दुरुपयोग के कारण, हम ईश्वर के उपहारों को बर्बाद कर देते हैं और खुद को उनसे वंचित कर लेते हैं, जब हम अपनी ही द्वेषपूर्णता और दुष्टता के कारण, पहले से प्राप्त आशीर्वादों को अपनी ही हानि में बदल देते हैं।

20. धन्य व्यक्ति अक्सर यह भी कहते थे: कोई भी विश्वासयोग्य आत्मा को हानि नहीं पहुँचा सकता; परन्तु जो भी कष्ट वह सहन करता है, उसे आशीर्वाद के रूप में गिना जाएगा। एक मजदूर, चाहे परिश्रम से थका-हार हो, यह जानकर कि उसे अपनी मेहनत का फल मिलेगा, प्रसन्नचित्त होकर काम करता रहता है; लेकिन अविश्वासी, जब कठिनाइयों का सामना करता है, तो अपने अविश्वास के कारण नरक-सा दुख भोगता है। विश्वासी, अपनी सभी कठिनाइयों के बीच, विश्वासयोग्य बने रहते हैं और अपने धैर्य के लिए अपने पुरस्कार की आत्मविश्वास के साथ प्रतीक्षा करते हैं, और इससे उन्हें बहुत सांत्वना मिलती है; लेकिन अविश्वासी, जिनके पास कोई विश्वास नहीं है, वे प्रभु से क्या सांत्वना प्राप्त कर सकते हैं? वह अपने ही विचारों में डूबा रहता है, थोड़ी सी भी दुख की स्थिति में भी, अपने आप से बड़बड़ाता है: 'उसने मुझसे ऐसा कहा, लेकिन मेरे पास भी उसके लिए कहने को कुछ है' - वह रंजिश पालता है और ऐसी असंभव चीजों की साजिश रचता है जिन्हें वह पूरा करने में पूरी तरह से असमर्थ है। क्योंकि जो कुछ भी लोग साजिश रचते हैं, वह सब वे वास्तव में पूरा नहीं कर सकते। नहीं; बल्कि केवल वही जो ईश्वर उन्हें करने की अनुमति देते हैं – और यह भी, वह अपनी दिव्य व्यवस्था से अकेले ही निर्धारित करते हैं। अक्सर कोई व्यक्ति दूसरे को बुराई पहुँचाने की योजना बनाता है; लेकिन यदि ईश्वर इसकी अनुमति नहीं देते, तो उसके प्रयास व्यर्थ हो जाते हैं, और मानवीय स्वतंत्र इच्छा की केवल परीक्षा होती है। लोगों ने पवित्र पुरखों को बुराई पहुँचाने की कितनी बार साजिशें रचीं! फिर भी, चूँकि ईश्वर ने इसकी अनुमति नहीं दी, कोई भी उन्हें कोई नुकसान नहीं पहुँचा सका, जैसा कि लिखा है: *'उसने किसी को भी उन्हें उत्पीड़ित करने नहीं दिया, और न ही राजाओं ने उनके विरुद्ध कुछ कहा: मेरे अभिषिक्तों को छूना नहीं, और मेरे नबियों के साथ विश्वासघात करना नहीं'* (भजन संहिता 104, 14–15)। लेकिन जब परमेश्वर अपनी शक्ति की प्रचुरता दिखाना चाहते हैं, तो वे सबसे निर्दयी लोगों के हृदय को भी दया दिखाने के लिए प्रेरित करते हैं, जैसा कि दानियेल की पुस्तक में लिखा है: *'और परमेश्वर ने दानियेल को खसाशों के सरदार की दृष्टि में अनुग्रह और दया दी* (दानियेल 1:9)। धन्य है वह आत्मा जो ईश्वर की लालसा के द्वारा, वास्तव में अपने आपको उनके उपहारों को ग्रहण करने के लिए तैयार कर लेती है; क्योंकि वह ऐसी आत्मा को किसी भी बात में नहीं छोड़ता, बल्कि हर बात में उसकी रक्षा करता है, यहाँ तक कि उन मामलों में भी जिन्हें वह अज्ञानता के कारण उससे नहीं माँगती। ज्ञानियों ने अच्छी बात कही है: 'बुद्धिमान मनुष्य परमेश्वर के आच्छादन में रहता है' (भजन संहिता 30:21)। शाऊल ने धन्य दाऊद को मारने का कितनी बार प्रयास किया? उसने क्या नहीं किया? वह सफल होने में कैसे असफल रहा? लेकिन जैसे प्रभु दाऊद की रक्षा करते थे, वैसे साऊल की हर एक योजना व्यर्थ हो गई; और इतना ही नहीं, बल्कि वह स्वयं भी अक्सर परमेश्वर के हाथों में पड़ जाता था, जिन्होंने फिर भी उस पर कोई कटु या प्रतिशोधी द्वेष नहीं रखा और उसे क्षमा कर दिया।

21. एक बार बाबा से पूछा गया: 'जब दूसरे कोई व्यक्ति को अपमानित और बदनाम करते हैं तो वह क्रोधित होने से कैसे बच सकता है?' उन्होंने उत्तर दिया: 'जो कोई भी अपने हृदय में स्वयं को सबसे तुच्छ समझता है, वह किसी

भी अपमान से विचलित नहीं होता, जैसा कि बाबा पिमेन ने कहा: "यदि आप स्वयं को नम्र बनाएँ, तो आपको शांति मिलेगी।"'

[80]**२२.** बाबा ने यह भी कहा: 'मेरे साथ रहने वाले और मुझसे स्कीमा प्राप्त करने वाले भाइयों में से एक भाई— जिसे मैंने हर सद्‌गुण में शिक्षित करने का प्रयास किया, और जिसके प्रति मैं कभी-कभी उसकी कमजोरी के कारण उदार रहता था, क्योंकि वह नाजुक स्वभाव का था—ने एक दिन मुझसे कहा: "मेरे बाबा! मैं आपसे बहुत प्यार करता हूँ।" मैंने उनसे उत्तर दिया: 'मुझे अब तक ऐसा कोई व्यक्ति नहीं मिला जो मुझसे उतना प्रेम करता हो जितना मैं उससे करता हूँ। अब तुम कहते हो कि तुम मुझसे प्रेम करते हो – और मैं तुम्हारा विश्वास करता हूँ – लेकिन यदि मेरी ओर से तुम्हारे साथ कुछ अप्रिय होता है, तो तुम वैसे ही नहीं रहोगे। जहाँ तक मेरी बात है, मैं तुम्हारे हाथों चाहे जो भी दुख सहूँ, मैं हमेशा तुम्हारे प्रति समान भाव रखूँगा, और कुछ भी मुझे तुमसे प्रेम करने से नहीं रोक सकता। उसके कुछ ही समय बाद, – और मुझे नहीं पता कि उस पर क्या सवार हो गया था – उसने मुझसे कई बातें कहना शुरू कर दिया, यहाँ तक कि शर्मनाक शब्द भी बोले; और मैंने यह सब सुना। फिर मैंने अपने आप से कहा: वह यीशु की सेवा में एक उपचारक है, जिसे मेरे व्यर्थ आत्मा के उपचार के लिए भेजा गया है। ऐसे लोगों से, कोई सचेत व्यक्ति चापलूसों द्वारा खोई हुई अपनी प्रतिष्ठा वापस पा सकता है। वह मेरे सच्चे उपकारी हैं। और मैंने उन्हें हमेशा अपने चिकित्सक और उपकारी के रूप में याद रखा। जिन्होंने मुझे उनके शब्दों के बारे में बताया, उनसे मैंने कहा: 'उन्होंने केवल मेरी स्पष्ट दोषों को पहचाना, और वह भी सभी को नहीं, बल्कि केवल एक निश्चित हिस्से को; जबकि मेरी छिपी हुई कमियाँ अनगिनत हैं।' कुछ समय बाद, वह मुझसे सीज़रिया (फ़िलिस्तीन में) में मिला। वह पास आया और, अपनी आदत के अनुसार, मुझे गले लगाया और चूमा, और मैंने भी उसे गले लगाया, जैसे हमारे बीच कभी कुछ हुआ ही न हो। ऐसी बदनामी के बाद, जब हम मिले तो उसने मुझे इस तरह गले लगाया, निस्संदेह इसलिए क्योंकि मैंने उसे कोई संदेह नहीं दिखाया और न ही नाराज़गी का कोई छोटा सा भी संकेत दिया, भले ही मैंने यह सब सुन लिया था। लेकिन वह स्वयं मेरे पैरों पर गिर पड़ा और उन्हें पकड़कर बोला: 'मुझे माफ कर दो, मेरे पिता, भगवान के वास्ते, कि मैंने आपके बारे में इतनी बुराई कही।' जहाँ तक मेरी बात है, उसे स्नेह से चूमकर मैंने उससे कहा: 'क्या ईश्वर के प्रति तुम्हारा प्रेम तुम्हें याद दिलाता है कि जब तुमने मुझसे कहा था, "मैं तुमसे बहुत प्यार करता हूँ", तो मैंने उत्तर दिया था कि मैंने कभी ऐसा पुरुष नहीं देखा जो मुझसे उतना प्यार करता हो जितना मैं ईश्वर से करती हूँ, और यह कि अगर तुम्हारे साथ कुछ भी अप्रिय हुआ, तो तुम पहले जैसे नहीं रहोगे, जबकि मैं, चाहे तुम्हारे हाथों मुझे कितनी भी पीड़ा सहनी पड़े, तुम्हारे प्रति हमेशा वैसी ही रहूँगी, और कुछ भी मुझे तुमसे प्रेम करने से नहीं रोक सकता? – तुम्हारा दिल पक्का हो कि तुमने जो कुछ भी कहा, वह मुझसे छिपा नहीं है; पर जहाँ और जिससे भी, मैंने सब कुछ सुन लिया, और कभी यह नहीं कहा कि ऐसा नहीं है, और कोई भी मुझे कुछ बुरा कहने के लिए मना नहीं सका; पर मैंने यह भी कहा: 'जो वह कहता है वह सच है, और वह प्रेम से कहता है'; और, आपको अपना मानते हुए, मैं अपनी प्रार्थनाओं में आपको याद करने से कभी नहीं चूका हूँ; और आपको मेरे प्रेम का और भी बड़ा प्रमाण देने के लिए, मैं आपको यह बताऊँगा कि, जब मेरी आँख एक बार गंभीर रूप से बीमार पड़ गई थी, तो आपको याद करते हुए, मैंने उस पर पवित्र क्रॉस का चिह्न लगाया और कहा: 'हे प्रभु यीशु मसीह! उसकी खातिर, मुझे चंगा कर!' – और मैं तुरंत चंगा हो गया।

२३. धन्यजन यह भी अक्सर कहते थे: 'हम मनुष्य यह नहीं जानते कि हम यह कैसे सुनिश्चित करें कि हमसे प्रेम किया जाए और हमें सम्मान दिया जाए, लेकिन हमने इसका सारा एहसास खो दिया है। यदि कोई अपने भाई के प्रति थोड़ा भी धैर्य दिखाता है जब वह उससे क्रोधित हो या उसके लिए दुखी हो, तो वह जल्द ही होश में आ जाएगा, और, यह महसूस करते हुए कि दूसरा उसके साथ कितना धैर्यवान रहा, वह उसके लिए अपनी आत्मा तक भी अर्पित कर देगा।' यह सुनकर, धन्य व्यक्ति ने एक बार एक ऐसे भाई को याद किया जिसने उन्हें बताया था कि उसका एक आबा (गुरु) था जो अत्यंत विनम्र था, जिसे उसके महान सद्‌गुण और किए गए चमत्कारों के कारण पूरा देश परमेश्वर के स्वर्गदूत के रूप में सम्मान देता था। एक दिन, यह भाई, शत्रु द्वारा उकसाया गया, उसके पास आया और सभी के सामने उसकी बुरी तरह निंदा करने लगा। वरिष्ठ शांत भाव से खड़े रहे, उनके होठों को देखते हुए, और फिर कहा: 'मेरे भाई, ईश्वर की कृपा तुम्हारे होठों पर है!' लेकिन वह भाई, और भी अधिक क्रोधित होकर, चिल्लाया: 'मैं जानता हूँ कि तुम यह क्यों कह रहे हो, हे मूर्ख और पेटू बूढ़े—यह इसलिए है ताकि तुम खुद को विनम्र दिखा सको।' इस पर वृद्ध ने उत्तर दिया: 'बिल्कुल सही कहा, मेरे भाई; जो तुम कह रहे हो वह उचित है।' – इसके बाद, किसी ने वृद्ध से पूछा: 'हे परमेश्वर के वृद्ध, क्या आप हक्के-बक्के नहीं रह गए थे?' 'नहीं,' उन्होंने उत्तर दिया, 'लेकिन मैंने अपनी आत्मा में महसूस किया कि वह, मानो, मसीह द्वारा ढकी हुई थी।' – इस पर धन्य व्यक्ति ने आगे कहा: 'सचमुच, ऐसे लोगों का

[80] पूर्व में रोगों का उपचार जलाकर करने की प्रथा है।

धन्यवाद किया जाना चाहिए और उनका सम्मान किया जाना चाहिए: जो भावुक हैं उन्हें उन्हें अपनी आत्मा के घावों को भरने वाले चिकित्सक के रूप में देखना चाहिए, जबकि जो भावहीन हैं उन्हें उन्हें स्वर्ग के राज्य की दाता के रूप में देखना चाहिए।'

२४. धन्य ने यह भी सुनाया: 'जब मैं अभी भी टायर के मठ में था, वहाँ से जाने से पहले, एक वृद्ध, जो अपने गुणों के लिए प्रसिद्ध थे, हमारे पास आए। जब हमने स्मरणीय कथाओं की पुस्तक और पवित्र वृद्धों के बुद्धिमानी भरे वचनों को पढ़ना शुरू किया (क्योंकि परम पुण्यशाली उन्हें पढ़ना पसंद करते थे और, मानो, उन्हें आत्मसात करते थे तथा उनसे प्रत्येक सद्गुण की शिक्षा ग्रहण करते थे) और जब हम उस वृद्ध की कथा पर पहुँचे, जब चोर उसके पास आए और उन्होंने कहा कि उन्होंने उसकी कोठरी की हर चीज़ ले लेने का निर्णय लिया है, उन्होंने शांत भाव से उत्तर दिया: 'ले लो, मेरे बच्चों, जो भी तुम्हें ठीक लगे'; और जब वे सब कुछ लेकर चले गए, एक ही थैला पीछे छोड़ गए, तो उन्होंने उसे उठाया और उनके पीछे दौड़ते हुए चिल्लाए: 'मेरे बच्चों! 'हमारी कोठरी में जो तुम भूल आए हो, वह वापस ले लो'; और वे, उस बूढ़े आदमी की द्वेष-रहितता से प्रभावित होकर, पश्चाताप से एक-दूसरे से कहते हुए सब कुछ उसकी कोठरी में वापस ले आए: 'सचमुच, यह परमेश्वर का आदमी है'; – जैसे ही हमने यह पढ़ा, उस बूढ़े आदमी ने मुझसे कहा: 'तुम जानते हो, मेरे अब्बा, यह कहानी मेरे लिए बहुत लाभदायक रही है।' मैंने उससे कहा: 'कैसे, पिताजी?' उन्होंने उत्तर दिया: 'एक बार, जब मैं यॉर्डन के पास के क्षेत्रों में ठहरा था, तो इसे पढ़कर मैं उस वृद्ध से चकित हो गया और कहा: "प्रभु, कृपा करें कि मैं भी उन लोगों के पदचिन्हों पर चलूँ जिनका जीवन-पथ (स्कैमा) आपने मुझे अपनाने में सक्षम बनाया है।" और इस प्रकार यह इच्छा मुझमें बनी रही। और देखो, दो दिन बाद, कुछ लुटेरे आए और उन्होंने दरवाज़ा खटखटाया। मैं तुरंत पहचान गया कि वे डाकू थे और मैंने अपने आप से कहा: 'धन्यवाद हो भगवान का! अब मेरी इच्छा का फल पाने का समय आ गया है।' फिर, दरवाज़ा खोलकर, मैंने उनका गर्मजोशी से स्वागत किया, और दीपक जलाकर, उन्हें अपना सामान दिखाने लगा, यह कहते हुए कि 'चिंता मत करो; जैसा कि मैं प्रभु में विश्वास करता हूँ, मैं आपसे कुछ भी नहीं छिपाऊँगा।' उन्होंने मुझसे कहा: 'क्या आपके पास कोई सोना है?' मैंने जवाब दिया, 'हाँ है,' 'ये तीन सिक्के हैं,' और मैंने उनके सामने पात्र खोल दिया। उन्होंने उन्हें ले लिया और शांति से चले गए। धन्य व्यक्ति मुस्कुराते हुए बोले, 'मैंने उनसे पूछा: "क्या वे आपके पास लौट आए, जैसे वे उस वृद्ध के पास लौटे थे?" उन्होंने तुरंत जवाब दिया, "भगवान न करे, मेरे मन में यह विचार भी नहीं आया कि वे वापस आ सकते हैं।"' – इस पर परम पूज्य ने आगे कहा: 'बड़े भाई का उत्साह ऐसा था, और ईश्वर की कृपा ( ) ने, जो संतों का अनुकरण करने की उनकी तत्परता से उन्हें मिली, उन्हें यह दिया – कि वे न केवल दुखी नहीं हुए, बल्कि ऐसे प्रसन्न हुए, जैसे किसी को कोई विशेष आशीर्वाद मिला हो।'

२५. जैसा कि मैंने पहले आपके साथ बात करते समय बताया था, धन्य ने कहा कि यदि हम अपने क्रोधित भाई के प्रति थोड़ा धैर्य दिखाएं, तो हम उसकी आत्मा जीत लेंगे: इसलिए अब मैं आपको, इसी संबंध में, वह बताना चाहता हूँ जो मैंने पिडिया के मठाधीश, धन्य सर्जियस से सुना था। उन्होंने मुझसे कहा: एक बार हम एक पवित्र वृद्ध के साथ यात्रा कर रहे थे और हमारा रास्ता भटक गया। यह न जानते हुए कि कहाँ जाएँ, हम एक बोए हुए खेत में पहुँच गए और फसल का थोड़ा सा हिस्सा रौंद दिया। यह देखकर, वहाँ काम कर रहे एक किसान ने हमें गुस्से में डाँटना शुरू कर दिया, और चिल्लाया: 'हे संन्यासियों! क्या आप ईश्वर का भय नहीं मानते? 'यदि आपके हृदय में ईश्वर का भय होता, तो आप ऐसा नहीं करते।' पवित्र वृद्ध ने तुरंत हमसे कहा: 'प्रभु के लिए, कुछ भी मत कहना।' लेकिन उन्होंने किसान की ओर सौम्य भाव से मुड़कर कहा: 'तुम सच कह रहे हो, मेरे बच्चे; यदि हममें ईश्वर का भय होता, तो हम ऐसा नहीं करते।' किसान ने फिर से गुस्से में उन्हें डाँटना शुरू कर दिया। वरिष्ठ ने उससे एक बार फिर कहा: 'तुम सच कह रहे हो, कि अगर हम भिक्षु होते, तो हम ऐसा नहीं करते। लेकिन, प्रभु के वास्ते, हमें क्षमा करो; हम स्वीकार करते हैं कि हमने तुमसे पाप किया है।' यह सुनकर किसान इतना भावुक हो गया कि, पास आकर, वह वरिष्ठ के पैरों पर गिर पड़ा और कहा: 'प्रभु के वास्ते, मुझे क्षमा करें, पिताजी, और मुझे अपने साथ ले जाएँ।' 'और वास्तव में वह हमारा पीछा कर रहा था,' धन्य सेरजियस ने कहा, 'और मठ पहुँचने पर, उसने स्कीमा ग्रहण कर लिया।' 'यह,' अबा जोसिमा ने आगे कहा, 'वह है जो पवित्र वृद्ध की नम्रता और दया, ईश्वर की मदद से, हासिल कर सकीं—एक आत्मा जो ईश्वर की छवि में बनाई गई है, जो ईश्वर के लिए सभी संसारों के धन के साथ उनके अंधकार से भी अधिक वांछनीय है।'

26. अबा ज़ोसिमा ने आगे कहा: एक बार, जब मैं धन्य सेरजियस के साथ था, तो उन्होंने मुझसे कहा: 'हमारे लिए धर्मग्रंथ से कुछ पढ़ो।' मैंने नीतिवचन पढ़ना शुरू किया और, जब मैं उस अंश पर पहुँचा जिसमें कहा गया है: *'जहाँ बहुत से वृक्ष होते हैं, वहाँ आग फैलती है; परन्तु जहाँ झगड़ा भड़काने वाला कोई नहीं, वहाँ विवाद समाप्त हो जाता है'* (नीतिवचन 26:20), मैंने उनसे पूछा: 'इस कथन का क्या अर्थ है?' उन्होंने उत्तर दिया: 'जिस प्रकार पेड़ एक आग की लपट का (भौतिक) कारण होते हैं, और यदि वे पर्याप्त नहीं हैं, तो आग जल्द ही बुझ जाती है; उसी प्रकार वासनाओं

के भी कारण होते हैं; और यद‍ि कोई इन कारणों को काट देता है, तो वासनाएँ निष्क्रिय बनी रहती हैं।' अर्थात्: व्यभिचार के कारण, जैसा कि बाबा मूसा ने कहा, हैं: बिना संयम के खाना-पीना, मन भर सोना, आलस्य से बैठना, मनोरंजन करना, व्यर्थ की बातें, और सजने-संवरने का शौक। यदि कोई इन सभी को छोड़ दे, तो व्यभिचार की कामना शक्तिहीन हो जाएगी। फिर, क्रोध के कारण, जैसा कि उन्होंने भी कहा, हैं: देना और लेना (परेशान करने वाले लेन-देन में शामिल होना), मनमानी करना, आदेश देने का शौक रखना, और खुद को बुद्धिमान समझना। जो कोई भी इनका त्याग कर देता है, वह पाएगा कि क्रोध का जुनून उन पर हावी नहीं हो पाता। सभी जुनूनों का यही हाल है। और यही बात थी जिसका अभिप्राय अब्बा सिसोए से था, जब एक भाई ने उनसे पूछा: 'जुनून मुझसे क्यों नहीं जाते?' उन्होंने उत्तर दिया: 'क्योंकि उनके पात्र—अर्थात् उनके कारण—आपके भीतर हैं; उन्हें उनका वादा करें, और वे चले जाएँगे।'

27. एक अन्य अवसर पर उन्होंने कहा: 'एक द्वि-स्वभाव वाला व्यक्ति जिसमें क्रोध का उछाल नहीं रुकता, वह ऐसा है जो पहली उत्तेजना से संतुष्ट नहीं होता, बल्कि अपने भीतर क्रोध का दूसरा उछाल भड़काता है।' जो कोई भी, क्रोधित होकर, तुरंत होश में आ जाता है और, अपनी गलती को समझते हुए, उस भाई से क्षमा मांगता है जिससे वह क्रोधित था, उसे दोहरा-क्रोधी नहीं कहा जाता; उसके भीतर अपमान समाप्त हो जाता है; क्योंकि जैसे ही वह, अपनी गलती को समझते हुए, अपने भाई से मेल-मिलाप कर लेता है, अपमान के लिए उसके भीतर कोई जगह नहीं रह जाती। लेकिन जो कोई क्रोधित होकर अपनी गलती को स्वीकार नहीं करता, बल्कि स्वयं को और भी अधिक क्रोध के लिए भड़काता है, और इस बात का पछतावा नहीं करता कि वह क्रोधित हुआ, बल्कि इस बात का पछतावा करता है कि उसने अपने क्रोध में और भी अधिक कुछ क्यों नहीं कहा – ऐसे व्यक्ति को दोहरा-क्रोधी कहा जाता है; और उसके भीतर का द्वंद्व शांत नहीं होता, क्योंकि गुस्सा शांत होने के बाद, प्रतिशोध की भावना, वैमनस्य और द्वेष उस पर हावी हो जाते हैं। – प्रभु यीशु मसीह हमें ऐसी प्रवृत्ति से बचाएँ, और हमें नम्र और दीन लोगों में अपना हिस्सा प्रदान करें।

28. वह अक्सर यह भी कहते थे कि शैतान की चालाकी का मुकाबला करने के लिए बहुत सतर्कता और पर्याप्त बुद्धिमानी की आवश्यकता होती है; क्योंकि ऐसा होता है कि वह कभी-कभी बिना किसी कारण के चिंता और असंतोष को भड़काता है, यहाँ तक कि बहाने भी सुझाता है जो सच लग सकते हैं, ताकि ऐसा प्रतीत हो कि चल रहे मामले में गुस्सा होना उचित है, और इसके लिए एक ठोस कारण है। लेकिन वह जो कुछ भी सुझाए, जो लोग वास्तव में पवित्र संतों के मार्ग पर चलना चाहते हैं, उन्हें यह जानना चाहिए कि किसी भी प्रकार की चिड़चिड़ाहट, चाहे वह कितनी भी उचित क्यों न लगे, की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए, जैसा कि मकारियस कहते हैं: 'संतों को क्रोधित नहीं होना चाहिए'; और आगे: 'किसी को भी अपने पड़ोसी को दुख नहीं देना चाहिए'। उन्होंने हमें यह भी बताया: कुछ समय पहले, मैंने एक कुशल लिपिक को मेरे लिए कुछ किताबें नकल करने का काम सौंपा था। काम पूरा करने के बाद, उसने मुझे संदेश भेजा: 'मैंने काम पूरा कर लिया है; आप जो उचित समझें, उसे भेजिए और किताबें ले जाइए।' एक भाई, यह सुनकर, मेरी ओर से लिपिक के पास गया और तय की गई राशि का भुगतान करके किताबें ले आया। इस बीच, यह न जानते हुए कि क्या हुआ था, मैंने हमारे भाई को एक पत्र और भुगतान के साथ उन्हें लेने के लिए भेजा। जब लेखक को इससे एहसास हुआ कि किताबें लेने वाले भाई ने उसका मज़ाक उड़ाया है, तो वह बहुत नाराज़ हो गया और बोला: 'मैं ज़रूर जाकर उससे इसका बदला लूंगा - मुझे मज़ाक उड़ाने के लिए भी और जो उसकी नहीं थी, उसे लेने के लिए भी।' जहाँ तक मेरी बात है, यह सुनकर मैंने उसे संदेश भेजा: 'भाई, तुम तो जानते ही हो कि हम किताबें प्रेम, नम्रता और विनम्रता सीखने के लिए प्राप्त करते हैं; लेकिन यदि किताबें प्राप्त करने का यही उद्देश्य , झगड़ों का कारण बने, तो मैं उन्हें नहीं रखना चाहता, ताकि झगड़ा न हो: *'क्योंकि परमेश्वर के सेवक के लिए झगड़ना ठीक नहीं है'* (2 तीमुथियुस 2:24)। इस प्रकार, किताबें लेने से इनकार करके, मैंने यह सुनिश्चित किया कि उस भाई को जानबूझकर कोई ठेस न पहुँचे।

29. एक बार, जब वे हमारे साथ बैठे आत्मा के उद्धार के मामलों पर चर्चा कर रहे थे, तो परम पुण्यशील ने पवित्र वृद्धों के कथनों का उद्धरण करना शुरू किया; और, जब वे अबा पिमेन के उस कथन पर पहुँचे—कि जो स्वयं को दोषी ठहराता है, उसे हर जगह शांति मिलती है—और उस कथन पर जो माउंट निट्रिया के अबा ने इस प्रश्न के उत्तर में कहा था: 'पिताजी, इस मार्ग पर आपने सबसे अधिक क्या प्राप्त किया है?' 'हर समय स्वयं पर आरोप लगाना और खुद को कोसना,' उन्होंने उत्तर दिया; जिस पर प्रश्नकर्ता ने कहा: 'और इसके अलावा कोई दूसरा रास्ता नहीं है।' इन कथनों को याद करते हुए, परमपूज्य ने कहा: 'संतों के शब्दों में कितनी शक्ति होती है! और सचमुच, उन्होंने जो कुछ भी कहा, वह अनुभव और सत्य से कहा, जैसा कि दिव्य एंथनी गवाही देते हैं।' उनके शब्द इसलिए शक्तिशाली हैं क्योंकि वे कर्मवीरों द्वारा कहे गए थे, ठीक वैसे ही जैसे एक बुद्धिमान व्यक्ति सभी को आज्ञा देते हैं: 'तुम्हारा जीवन तुम्हारे शब्दों की पुष्टि करे।' इस पर, बाबा ने हमें निम्नलिखित घटना सुनाई: जब मैं बाबा गेरासिमस की लावरा में बहुत लंबे समय से नहीं था, हम एक दिन मेरे एक प्रिय भाई के साथ आत्मा के मोक्ष से संबंधित मामलों पर बातचीत

कर रहे थे। मुझे ऊपर उल्लखिति अबा पमिन के शब्द याद आए, और नीट्रयिा के उस दूसरे वरष्िठ के शब्द, और उस भाई ने मुझसे कहा: 'मैंने अनुभव से इन शब्दों की सच्चाई जानी है, और उन्हें व्यवहार में लाने से मलिने वाली शांतिका स्वाद चखा है।' मैं इस लावरा के एक नश्िचति डकिन के साथ सच्ची दोस्ती में रहता था। मुझे नहीं पता क्यों, लेकनि उसने एक खास मामले को लेकर मुझ पर शक करना शुरू कर दयिा; वह इस बात से नाराज़ हो गया और मुझे उदास नजरों से देखने लगा। उसकी इस उदासी को देखकर, मैंने उससे इसका कारण बताने के लिए कहा, और उसने मुझसे कहा: 'तुमने ऐसा-वैसा कयिा था।' यह न समझते हुए कमिैंने ऐसा कुछ कयिा था, मैंने उसे अपनी बेगुनाही का भरोसा दलिाना शुरू कर दयिा; लेकनि उसने जवाब दयिा: 'मुझे माफ करो, मुझे यकीन नहीं हो रहा है।' अपने कोठरी में लौटकर, मैंने अपने दलि में यह खोजबीन की कक्या मैंने कभी ऐसा कुछ कयिा था – और मुझे कुछ भी नहीं मलिा। बाद में, जब उन्होंने अर्पण करने के लिए प्याला उठाया, तो मैंने उनसे कसम खाकर कहा कमिुझे वह काम करने की कोई याद नहीं है; लेकनि तब भी वह इससे आश्वस्त नहीं हुए। तब, अपना धैर्य वापस पाकर, मैंने बुज़ुर्गों के इन शब्दों को याद कयिा, और उनकी सच्चाई पर पूरी तरह से आश्वस्त होकर, मैंने अपने वचिारों को भीतर की ओर मोड़ा और कहा: 'डीकन मुझसे सच्चे दलि से प्यार करता है, और इस प्यार से प्रेरति होकर, उसने मुझे मेरे बारे में अपने दलि की बात बता दी है, ताकमिैं खुद को काबू में रख सकूँ और ऐसा कोई काम न करूँ।' हालाँकि, हे मेरी दुखी आत्मा, जैसा तुम कहती हो, ऐसा कौन सा काम है जो तुमने नहीं कयिा? तुमने हजारों बुरे काम कएि हैं, और उन्हें भूल गई हो। कल या दस दनि पहले तुमने जो कयिा, वह कहाँ है? क्या तुम्हें वह याद है? तो क्या तुमने यह भी वैसा ही नहीं कयिा, जैसे तुमने वह कयिा था – और उसे भी वैसा ही भूल गई, जैसे तुम पहले वाले को भूल गई थीं? इस प्रकार, मैंने मन में नश्िचय कयिा कमिैंने वास्तव में यह कयिा था; पर जैसे मैं पहले वाले को भूल गया था, वैसे ही मैं इसे भी भूल गया था। और मैं प्रभु और डकिन का धन्यवाद करने लगा, क्योंकउिनके द्वारा प्रभु ने मुझे मेरा पाप पहचानने और उस पर पश्चाताप करने में सक्षम बनाया था। तब मैं उठा, और इन वचिारों को मन में लेकर मैं डकिन के सामने पाप-स्वीकार करने और उसे धन्यवाद देने के लिए अपने भाई के पास गया। लेकनि जैसे ही मैंने दरवाज़ा खटखटाया, उसने पहले ही दरवाज़ा खोल दयिा और मुझे प्रणाम करते हुए कहा: 'मुझे क्षमा करो; दुष्टात्माओं ने मुझे तुम्हारे बारे में उस कृत्य का संदेह करने के लिए गुमराह कयिा था; क्योंकपिरमेश्वर ने सचमुच मुझे आश्वस्त कयिा है कतिुम उस अपराध के दोषी नहीं हो'; और उसने मुझे और आश्वस्त करने की अनुमतनिहीं दी, यह कहते हुए: 'अब इसकी कोई आवश्यकता नहीं है।' यह सब कहने के बाद, धन्य जोसमिा ने कहा: 'यह वह है जो सच्ची वनिम्रता ने उस भाई के हृदय में कयिा जो उससे प्रेम करता था: न केवल उसने डकिन के व्यवहार पर कोई आपत्तनिहीं की, न ही उससे कोई नाराज़गी महसूस की—सबसे पहले, उस पर संदेह करने के लिए, दूसरी बात, उसकी नर्दिोष होने की बात पर वशि्वास न करने के लिए – बल्कउिसने एक ऐसा पाप भी अपने ऊपर ले लयिा जो उसने कयिा ही नहीं था, और इतना ही नहीं, बल्कउिसने डकिन का धन्यवाद भी कयिा। क्या आप देखते हैं कयिह सद्गुण क्या कर सकता है? यह उन लोगों को उपलब्धकिी कतिनी ऊँचाइयों पर ले जाती है जो इसे प्रेम करते हैं? क्योंकयिदि भाई चाहता, तो उसे उस डकिन के कारण राक्षस बनने के एक हजार कारण मलि जाते। लेकनि चूँकविह सद्गुण के प्रतसिमर्पति था, इसलिए उसने न केवल उससे कोई आपत्तनिहीं की, बल्कउिसे धन्यवाद भी दयिा, क्योंकसिद्गुण ने उसके हृदय पर अधकिार कर लयिा था। तो यदहिमने भी पहले अपने भीतर नम्रता और वनिम्रता के बीज बोए होते और अपने हृदयों को उनके लिए तैयार कयिा होता, तो शत्रु के पास अपने बुरे बीज बोने के लिए कोई स्थान न होता। लेकनि जब वह हमें अच्छे वचिारों से रक्ित पाता है, या उससे भी बुरा, जब हम स्वयं को बुराई के लिए उकसाते हैं, तो वह हमें अपनी दुष्टता से भरने के लिए इसे एक अवसर के रूप में पकड़ लेता है। हालाँकि, सद्गुण के प्रतप्रिेम के साथ, इसका वपिरीत सत्य है: क्योंकतिब प्रभु, यह देखकर कआित्मा कैसे उद्धार की लालसा करती है और कतिनी लगन से वह अपने भीतर अच्छे बीज बोती है, आत्मा की इस सद्भावना के कारण उसे अपने वरदानों से भर देते हैं।

30. एक बार, धन्य बाबा ने एक ऐसे वरष्िठ को याद कयिा जन्हिें उनके पड़ोसी भाई ने लूट लयिा था – और यह जानते हुए भी उन्होंने उस भाई की कभी नदिंा नहीं की, बल्कयिह कहते हुए और भी अधकि परशि्रम कयिा, 'शायद भाई को ज़रूरत होगी' – और उन्होंने संतों की दयालुता पर आश्चर्य व्यक्त कयिा, और नम्िनलखिति घटना सुनाई। जब मैं पेडयिाडा में ठहरा था, तो एक मठाधीश ने मुझे यह बात बताई: हमारे मठ के पास एक वृद्ध रहते थे, और वे एक अत्यंत धन्य आत्मा थे। उनके पड़ोसी एक भाई ने, एक दनि जब वे वृद्ध बाहर गए हुए थे, शैतान के प्रलोभन के वश में होकर, उनकी कोठरी खोली, अंदर गया और उनके सामान और कतिाबें अपने लिए ले लीं। जब बूढ़ा भक्षिु लौटा और अपनी कोठरी खोलने पर उसने अपनी चीज़ें गायब पाईं, तो वह उस भाई के पास यह बताने गया। लेकनि उस भाई की कोठरी में प्रवेश करते ही, उसने अपनी चीज़ें उसके बीच में पड़ी हुई देखीं, क्योंकउिस भाई को उन्हें छपिाने का समय ही नहीं मलिा था। हालाँकि, भाई को शर्मिंदा या डाँटना नहीं चाहकर, उन्होंने अचानक पेट दर्द होने का बहाना कयिा

और बाहर चले गए - जहाँ वे काफी देर तक रुके रहे, जैसे कोई शौच-आवश्यकता पूरी कर रहे हों, ताकि इस बीच भाई को सामान वापस रखने का समय मिल सके। बाद में उसके पास लौटकर, उसने किसी और बात पर बात करना शुरू कर दिया; और उस भाई का भेद नहीं खोला। कुछ दिनों बाद, बड़े भाई का सामान उसके पास मिला, और उसे गिरफ्तार कर पहरे में रख दिया गया। बड़े भाई को इस बारे में कुछ भी नहीं पता था; लेकिन जब उसे पता चला कि उसका भाई जेल में है, और यह नहीं जानता था कि वह वहां क्यों है, तो वह मुझसे मिलने आया,' मठाधीश कहते हैं, 'क्योंकि वह अक्सर हमसे मिलने आता था,' और उसने पूछा: 'मेरा एक काम करो, मुझे कुछ अंडे और कुछ सादे रोटी के टुकड़े दो।' मैंने उससे कहा: 'निश्चित रूप से अब आपके साथ कोई होगा?' 'हाँ,' बड़े भिक्षु ने उत्तर दिया; और वह ये चीजें लेकर तहखाने में अपने भाई को सांत्वना देने गया। जैसे ही वह तहखाने में दाखिल हुआ, भाई उसके पैरों पर गिर पड़ा और बोला: 'अब्बा, मैं यहाँ तुम्हारी ही वजह से हूँ, क्योंकि तुम्हारा सामान मैंने ही चुराया था; लेकिन आपकी किताब अमुक व्यक्ति के पास है, और आपके कपड़े अमुक व्यक्ति के पास हैं।' बड़े भाई ने उससे कहा: 'मेरे बेटे, निश्चिंत रहो, मैं इस कारण से यहाँ नहीं आया हूँ; मुझे तो यह भी नहीं पता था कि तुम मेरी जगह यहाँ हो; लेकिन जब मुझे पता चला कि तुम यहाँ हो, तो मुझे दुख हुआ, और मैं तुम्हें सांत्वना देने आया हूँ: लो, देखो—अंडे और ताज़ा रोटी। अब मैं जाऊँगा और तुम्हें यहाँ से बाहर निकालने के लिए जो कुछ भी करना पड़ेगा, करूँगा।' वह गया और कुछ अधिकारियों से पूछा, जो उसकी सदाचार के लिए उसे जानते थे; और उन्होंने भाई को जेल से रिहा करने का आदेश दिया।

31. उसी बुज़ुर्ग के बारे में यह भी कहा जाता है कि एक बार वह अपने लिए कुछ कपड़े खरीदने बाज़ार गया। उसने वे कपड़े खरीदे और एक सोने का सिक्का चुकाया। उसे कुछ छोटे सिक्कों से बकाया चुकाना था। उसने कपड़े उठाए और उन्हें अपने नीचे रख लिया, और छोटे सिक्के गिनकर एक छोटी सी तख्ती पर रखने लगा। तभी, कोई व्यक्ति आया और उसके नीचे से कपड़े खींचने की कोशिश करने लगा। यह भांपते हुए, साधु को समझ आ गया कि इसका क्या मतलब है, और, मजदूर पर तरस खाकर, सिक्का पकड़े हुए खिंचाव करते हुए धीरे-धीरे उठने लगे, जब तक कि वह आदमी कपड़े खींचकर चला नहीं गया; और साधु ने उसे डांटा नहीं। इसके बाद, धन्य जोसिमा ने कहा: "उसके कपड़ों का, या उससे चोरी की गई चीज़ों का क्या मूल्य था? लेकिन उसकी स्वतंत्र इच्छा कितनी कीमती है! उसने दिखाया कि उनके स्वामित्व के बावजूद, वह ऐसा था मानो उसके पास कुछ भी न हो।" जब वे उससे छीन लिए गए, तो वह वैसा ही रहा, न तो उसने इस पर शोक मनाया और न ही क्रोधित हुआ; क्योंकि, जैसा कि मैं हमेशा कहता हूँ, कब्ज़ा करने का कार्य हानिकारक नहीं है, बल्कि आसक्ति के साथ कब्ज़ा करना हानिकारक है। भले ही इस वरिष्ठ के पास पूरी दुनिया होती, वह ऐसा होता मानो उसके पास कुछ भी न हो: क्योंकि उसने जो किया, उससे यह दिखाया कि वह सभी चीजों से मुक्त था। इसलिए, हे भाइयों, हम पवित्र पुरखों के उदाहरणों का अनुकरण करने का प्रयत्न करें और उनके वचनों को लगन से पूरा करें, ताकि यहाँ अच्छे फल लाकर, हम हमारे प्रभु मसीह यीशु में अनंत आशीषों के योग्य ठहरें, जिनका महिमा और सामर्थ्य पिता और पवित्र आत्मा के साथ, अब और सदा और युगानुयुग रहे। आमीन।

संत मैक्सिमस द कन्फेसर

उनका संक्षिप्त परिचय

कॉन्स्टेंटिनोपल के संत मैक्सिमस, कुलीन वंशज। धर्मशास्त्र, दर्शनशास्त्र और उस समय आवश्यक अन्य सभी विषयों में व्यापक शिक्षा प्राप्त करने के बाद, उन्हें सम्राट हेराक्लियस के दरबार में शामिल किया गया और उन्होंने मुख्य सचिव के रूप में सफलतापूर्वक तथा बड़ी प्रशंसा के साथ अपने कर्तव्यों का पालन किया। जब मोनोथेलीट संप्रदाय का उदय हुआ—जिसके लिए सम्राट और पैट्रिआर्क दोनों आंशिक रूप से दोषी थे—और महल, शहर तथा साम्राज्य के अन्य हिस्सों में अशांति फैलने लगी, तो संत मैक्सिमस ने इसे संसार त्यागकर मठ में प्रवेश करने की अपनी लंबे समय से चली आ रही इच्छा को पूरा करने का एक शुभ अवसर माना। अपने कर्तव्यों से त्यागपत्र देकर, वे क्रिसोपोलिस (641) के मठ में प्रवेश कर गए और कठोर मठवासी नियमों के अनुसार, तपस्या में पूरी लगन से संलग्न हो गए, और हर तरह से सभी के लिए अनुकरण योग्य उदाहरण प्रस्तुत किया। परिणामस्वरूप, जब मठ के लिए एक नए मठाधीश की आवश्यकता हुई, तो सभी ने सर्वसम्मति से उन्हें इस पद के लिए चुना, जिसे उन्होंने न तो स्वयं को सुख-सुविधा देने और न ही लोगों को खुश करने की कोशिश करते हुए, पूरी निष्ठा से निभाया। इस बीच, मोनोथेलिटिक विधर्म दरबार और पैट्रिआर्क के समर्थन से बढ़ता और फैलता रहा; और इसके साथ ही, अशांति भी बढ़ गई। इस उथल-पुथल को सहन करने के इच्छुक न होकर, संत मैक्सिमस ने मठ छोड़ दिया और रोम के लिए रवाना हो गए। रास्ते में, वे कुछ समय के लिए अफ्रीका में कारथेज रुके, जहाँ आयोजित परिषद में, उन्होंने कॉन्स्टेंटिनोपल

के पैट्रआर्क परिस के व्यक्ति में मोनोथेलज़्मि की अस्थिरता की निंदा की, जो वहाँ मौजूद थे लेकिन पद से हटा दिए गए थे। फिर वह रोम के लिए रवाना हुए, जहाँ उन्होंने जल्द ही पोप सेंट मार्टिन द्वारा बुलाई गई मोनोफिसाइट्स के खिलाफ एक परिषद में भाग लिया, जो सम्राट के टाइपिकॉन को स्वीकार करने और उस पर हस्ताक्षर करने के फरमान के जवाब में थी—अर्थात्, उस आस्था-सूची के विवरण को जिसे उन्होंने तैयार किया था, जिसमें मोनोफिसाइट्स के विधर्म को शामिल किया गया था। इस परिषद में, मोनोफिज़िटिज़्म, शाही टाइपिकॉन, और इस विधर्मी सिद्धांत को स्वीकार करने वाले सभी लोगों की ' ' की निंदा की गई और उन पर पाबंदी लगा दी गई। इसके बाद, इस परिषद के फरमान को पश्चिम और पूर्व में, दूर-दूर तक फैलाया गया। इससे क्रोधित होकर, सम्राट ने पोप संत मार्टिन और संत मैक्सिमस को गिरफ्तार करने और उन्हें कॉन्स्टेंटिनोपल ले जाने का आदेश दिया। वहाँ पहुँचने पर, संत मार्टिन ने अकल्पनीय यातनाएँ सहने के बाद, उन्हें चेरसोनेसोस में निर्वासित कर दिया गया, जहाँ उनकी मृत्यु (655) हुई। जहाँ तक संत मैक्सिमस का सवाल है, उन्होंने उन्हें अपने पक्ष में लाने की कोशिश शुरू कर दी, जिसे उन्होंने बहुत उत्साह से किया: पहले शाही महलों में; फिर कॉन्स्टेंटिनोपल की एक जेल में; फिर थ्रेसियाई शहर विज़िया में, जो पवित्र शहीद की पहली कैद का स्थल था; बाद में, वहाँ से बुलाए जाने के बाद, वापस कॉन्स्टेंटिनोपल में, सेंट थियोडोर के मठ में, जहाँ उन्हें - एक अधिक गंभीर और खतरनाक माहौल में - रखा गया था। कार्रवाई सेनेटर्स द्वारा संचालित की गई, जिसमें बिशप भी कभी-कभी मौजूद रहते थे। उद्देश्य था कि संत मैक्सिमस को उनके सिद्धांत को स्वीकार करने, या कम से कम टाइपिकॉन पर हस्ताक्षर करने, या फिर चुप रहने के लिए मनाया जाए। इसका कोई परिणाम नहीं निकला। संत मैक्सिमस द्वारा बोली गई ऑर्थोडॉक्सी की सच्चाई हर अवसर पर विजयी साबित हुई, जिसने उनके विरोधियों को न केवल चुप रहने के लिए बल्कि उनके सामने झुकने के लिए भी मजबूर कर दिया। इस सत्य के योद्धा के साहस को तोड़ने के लिए वादों, धमकियों और दूसरों को पता लगे बिना सच्चाई से कैसे पार पाया जाए, इस पर निर्देशों के माध्यम से प्रयास किए गए; अंत में, आखिरी बैठक में, उन्होंने पिटाई का सहारा लिया। कुछ भी काम नहीं आया; और संत मैक्सिमस को सेलम्व्रिी के रास्ते पेरवेरा, मार्मारा सागर के पश्चिमी तट पर, दूसरी निर्वासन स्थल पर निर्वासित कर दिया गया। लेकिन सत्य के दुश्मनों को चैन नहीं मिला; और संत मैक्सिमस को अंतिम उपदेशों के लिए एक बार फिर कॉन्स्टेंटिनोपल बुलाया गया, जो तीन चरणों में अधिक जोर-शोर से दिए गए, फिर भी व्यर्थ रहे: शाही कक्षों में, जेल में, और फिर से कक्षों में, जहाँ अंतिम निर्णय लिया गया: शहीद के जीवन को बचाने के लिए नहीं, बल्कि उसे मृत्यु से भी अधिक भयानक यातनाओं का शिकार बनाने के लिए। और इस उद्देश्य के लिए, उसे शहर के प्रिफेक्ट के हवाले कर दिया गया। इसी अमानवीय यातना देने वाले ने, पूजनीय संत को पकड़कर, उन्हें प्राटोरियम में ले गया, उन्हें नग्न होने का आदेश दिया, और उन्हें जमीन पर लिटाकर, उन्हें सबसे तेज कोड़ों से पिटवाने का आदेश दिया। और उन्होंने परमेश्वर के उस वरिष्ठ को इतनी अमानवीय रूप से पीटा कि उनके शरीर पर एक भी स्थान अछूता नहीं रहा, और उनके नीचे की जमीन खून से लाल हो गई। – फिर, मुश्किल से सांस लेते हुए, उसे एक कालकोठरी में डाल दिया गया। अगली सुबह, संत को वापस प्रेटोरीयम ले जाया गया, – और एक और भी क्रूर सज़ा दी गई: उन्होंने उसकी जीभ काट दी, जिसने परमेश्वर का वचन बोला था और विधर्म की निंदा की थी, और शिक्षाप्रद और व्याख्यात्मक पुस्तकें लिखने के लिए चाकू और कुल्हाड़ी से उसका दाहिना हाथ काट दिया। फिर, उसे प्राटोरियम से बाहर घसीटकर, नग्न और नंगे पैर, उसका उपहास उड़ाने के लिए बाज़ार में जुलूस निकाला गया, और लोगों को उसकी कटी हुई जीभ और हाथ दिखाया गया। अंत में, ऐसी अमानवीय यातनाओं और अपमान के बाद, संत को मिंग्रेलिया में दूर के निर्वासन में भेज दिया गया; और वहाँ उन्हें शेमर जेल में कैद कर दिया गया, जहाँ तीन साल की पीड़ा और हर तरह की कठिनाइयों को सहने के बाद, संत मैक्सिमस की मृत्यु हो गई, और मृत्यु से पहले उन्हें एक भविष्यसूचक दर्शन द्वारा सांत्वना दी गई। यह वर्ष 662 में हुआ। संत मैक्सिमस का पर्व 21 जनवरी को मनाया जाता है। संत मैक्सिमस ने कई लेखन छोड़े, जो धर्मशास्त्रीय और वाद-विवाद संबंधी दोनों थे, लेकिन विशेष रूप से नैतिक और तपस्या संबंधी थे। ग्रीक कृति *ऑन चैरिटी* में इनमें से निम्नलिखित शामिल हैं: प्रेम पर चार सौ अध्याय; परम पवित्र त्रिमूर्ति और परमेश्वर के वचन के अवतार पर सात सौ अध्याय; और सद्गुणों और भावों पर और अध्याय; साथ ही प्रभु की प्रार्थना पर एक व्याख्या। हमने अपने संग्रह में निम्नलिखित को शामिल किया है: प्रार्थना पर सभी अध्याय, जैसे वे हैं; जबकि सात सौ अध्यायों में से हमने उन अध्यायों को चुना है जिन्हें समझना अधिक आसान है, और जो अधिक नैतिक और तपस्वी प्रकृति के हैं। यहाँ से जो छोड़ दिया गया है, उसकी जगह, हमने मिग्ने के संस्करण के बाद, एक मठवासी प्रवचन को शामिल किया है। इस प्रकार, संत मैक्सिमस के निम्नलिखित कार्य प्रस्तुत किए गए हैं:

1. तपस्या पर प्रवचन, एक शिष्य के प्रश्नों और वरिष्ठ के उत्तरों के रूप में

2. प्रेम पर चार सौ अध्याय (एक नए अनुवाद में)

3. दार्शनिक और व्यावहारिक अध्याय, ग्रीक 'On Goodness' के सात सौ अध्यायों से चयनित

1. तपस्या के वचन, एक शिष्य के प्रश्नों और वृद्ध के उत्तरों के रूप में

1. एक भाई ने वृद्ध से पूछा: 'मैं आपसे विनती करता हूँ, पिताजी, मुझे बताइए, प्रभु के अवतार का उद्देश्य क्या था?' – वृद्ध ने उत्तर दिया: 'भाई, मैं तुम पर हैरान हूँ, कि जब तुम हर दिन धर्म-विश्वास-सूत्र सुनते हो, तो तुम मुझसे यह पूछते हो।' – 'फिर भी, मैं तुम्हें बताऊँगा, कि प्रभु के अवतार का उद्देश्य हमारा उद्धार था।' उस भाई ने कहा: 'मुझे समझाइए, पिताजी, ऐसा कैसे?' – उस वृद्ध ने उत्तर दिया: 'क्योंकि मनुष्य, जिसे आरंभ में परमेश्वर ने बनाया और स्वर्ग में रखा, ने आज्ञा का उल्लंघन किया और क्षय और मृत्यु के अधीन हो गया; तब, इस तथ्य के बावजूद कि ईश्वर की बहुविधि व्यवस्था द्वारा हर तरह से और हर रूप में उसे भलाई की ओर निर्देशित किया गया था, वह लगातार केवल बुराई में ही फलता-फूलता रहा, जो कई सांसारिक वासनाओं से निराशा की ओर धकेला गया था: इसी कारण से, परमेश्वर का एकलौता पुत्र, अनंत वचन, जो जीवन और अमरत्व के स्रोत, परमेश्वर पिता से उत्पन्न हुआ है, हम पर जो अंधकार और मृत्यु की छाया में बैठे हैं, प्रकट हुआ (यशायाह 9:2)। मत्ती 4:16), पवित्र आत्मा और परम पवित्र कुँवारी से अवतार लेकर – और हमें एक ईश्वरीय जीवन का आदर्श दिखाया, स्वर्ग के राज्य के वादे के साथ पवित्र आज्ञाएँ उन लोगों को दीं जो उनके अनुसार जिएँगे, और शाश्वत यातना की धमकी उन लोगों को दीं जो उनका उल्लंघन करेंगे; और उद्धारकारी कष्ट सहने और मरे हुओं में से जी उठने के बाद, उन्होंने हमें पुनरुत्थान और अनंत जीवन की आशा प्रदान की, अपनी आज्ञाकारिता के द्वारा आदि पाप के दोष का प्रायश्चित किया और अपनी मृत्यु के द्वारा मृत्यु की शक्ति को नष्ट किया, ताकि '*जिस प्रकार आदम में सब मरते हैं, उसी प्रकार उन में भी सब जीवित किए जाएँगे*' (1 कुरिन्थियों 15:22); और अंत में, स्वर्ग में आरोहण करके और स्वयं को पिता के दाहिने हाथ पर विराजमान करके, उन्होंने जीवन की प्रतिज्ञा के रूप में पवित्र आत्मा को भेजा – हमारे आत्माओं के प्रबोधन और पवित्रता के लिए, और उद्धार के लिए प्रयासरत लोगों को उनके आज्ञाओं का पालन करने में सहायता करने के लिए। देखो, संक्षेप में, प्रभु के अवतार का उद्देश्य क्या था!

2. भाई ने कहा: 'पिताजी, मैं संक्षेप में सुनना चाहता हूँ कि मुझे उद्धार पाने के लिए किन आज्ञाओं का पालन करना चाहिए?' – एल्डर ने उत्तर दिया: प्रभु ने स्वयं अपने पुनरुत्थान के बाद प्रेरितों से कहा: '*इसलिये जाओ और सब जातियों के लोगों को चेला बनाओ, उन्हें पिता और पुत्र और पवित्र आत्मा के नाम से बपतिस्मा दो, और उन्हें यह सिखाओ कि जो कुछ मैं ने तुम से आज्ञा दी है, उसे मानें रहो*' (मत्ती 28:19-20)। इस प्रकार, जीवन-दायक और ईश्वर-उत्पन्न त्रिमूर्ति के नाम पर बपतिस्मा लेने वाले प्रत्येक व्यक्ति के लिए उनके द्वारा आज्ञा दी गई हर बात का पालन करना अनिवार्य है। प्रभु ने सभी आज्ञाओं के पालन को सच्चे विश्वास से अविभाज्य रूप से जोड़ दिया है, यह जानते हुए कि यदि एक दूसरे से अलग हो जाए, तो किसी व्यक्ति का उद्धार होना असंभव है। इसीलिए दाऊद ने, सच्चा विश्वास रखते हुए भी (वह केवल उसी से संतुष्ट नहीं था), परमेश्वर से कहा: '*मैंने तेरी सब आज्ञाओं की ओर अपना मुँह किया है; मैं हर एक अन्याय के मार्ग से घृणा करता हूँ*' (भजन संहिता 118:128)। अधर्म के हर मार्ग के विरुद्ध, प्रभु ने हमें ऐसे आज्ञाएँ दी हैं जो उसके विपरीत हैं; और यदि कोई उनमें से किसी एक की भी अवहेलना करता है, तो वह उसी से अधर्म के विपरीत मार्ग पर चल पड़ता है।

3. भाई ने कहा: 'पिताजी, कौन सभी आज्ञाओं को पूरा कर सकता है - जब वे इतनी सारी हैं?!' – वृद्ध ने उत्तर दिया: 'जो प्रभु का अनुकरण करता है और पद-पद पर उनका अनुसरण करता है।' भाई ने कहा: 'लेकिन प्रभु का अनुकरण कौन कर सकता है? प्रभु परमेश्वर थे, यद्यपि वे मनुष्य बने, जबकि मैं एक पापी मनुष्य हूँ, जो अनगिनत वासनाओं का दास है। तो फिर मैं प्रभु का अनुकरण कैसे कर सकता हूँ?' बड़े भाई ने उत्तर दिया: 'जो लोग संसार और उसकी व्यर्थताओं के दास हैं, उनमें से कोई भी प्रभु की नकल नहीं कर सकता; लेकिन जो *यह* कह सकते हैं, "*हमने सब कुछ छोड़ दिया और तेरे पीछे हो लिया*" (मत्ती 19:27), उन्हें प्रभु की नकल करने और उसकी सभी आज्ञाओं द्वारा निर्देशित होने की शक्ति प्राप्त होती है।' भाई ने पूछा: 'कौन सी शक्ति?' – वृद्ध ने उत्तर दिया: 'सुनो कि वह स्वयं क्या कहते हैं: "*देखो, मैं तुम्हें साँपों और बिच्छुओं पर और शत्रु की सारी शक्ति पर पैर रखने का अधिकार देता हूँ; और कुछ भी तुम्हें किसी भी प्रकार से हानि नहीं पहुँचाएगा*" (लूका 10:19)।'

४. ऐसी शक्ति और अधिकार प्राप्त करने के बाद, प्रेरित पौलुस ने कहा: '*मेरे अनुकरण करो, जैसे मैं मसीह के अनुकरण करता हूँ*' (फिलि. ३:१७)। और फिर: '*अब जो मसीह यीशु में हैं, उनके लिए कोई दण्ड-निर्णय नहीं है, जो शरीर के अनुसार नहीं, बल्कि आत्मा के अनुसार चलते हैं*' (रोमियों ८:१)।। और फिर: '*जो मसीह के हैं, उन्होंने अपने शरीर को उसकी वासनाओं और इच्छाओं सहित सूली पर चढ़ा दिया है*' (गलातियों 5:24)। साथ ही: '*मैं मसीह के साथ सूली पर चढ़ाया गया हूँ, और अब मैं जीवित नहीं हूँ, बल्कि मसीह मुझ में जीवित है*' (गलातियों 6:14)।

5. इसी सामर्थ्य और सहायता के विषय में भविष्यद्वाणी करते हुए, दाऊद ने कहा: *'जो परमप्रभु की छाया में रहता है, वह स्वर्ग के परमेश्वर की छाया में विश्राम करेगा। वह प्रभु से कहता है: 'तू मेरा ढाल और मेरा शरणस्थान है, हे मेरे परमेश्वर, जिस पर मैं भरोसा करता हूँ''* (भजन संहिता 90:1–2)। और थोड़ा आगे: *"तू बिच्छू और साँप पर पैर रखेगा; तू शेर और सर्प को रौंद डालेगा... 'वह अपने दूत को तेरे विषय में आज्ञा देगा कि वे सब मार्गों में तेरी रक्षा करें'* (11–13)। लेकिन जो लोग शरीर से जुड़े हैं और संसार की व्यर्थता से प्रेम करते हैं, वे यह सुनें कि प्रभु उनसे क्या कहते हैं: 'जो पिता या माता से मुझसे अधिक प्रेम करता है, वह मुझ योग्य नहीं है' (मत्ती 10:37)। और फिर: *'जो अपना क्रूस उठाकर मेरे पीछे नहीं आता, वह मेरा चेला नहीं हो सकता'* (लूका 14:27)। साथ ही: *'जो कोई भी अपनी सारी संपत्ति का त्याग नहीं करता, वह मेरा चेला नहीं हो सकता'* (33)। और इस प्रकार, जो कोई भी उसका चेला बनना चाहता है, स्वयं को उसके योग्य साबित करना चाहता है, और दुष्टात्माओं के विरुद्ध उससे शक्ति प्राप्त करना चाहता है, वह देह के हर प्रकार के सुख-भोग से परहेज़ करता है और स्वयं को सांसारिक वस्तुओं के हर लगाव से मुक्त करता है; और इस प्रकार प्रभु की आज्ञाओं के लिए अदृश्य शत्रुओं के विरुद्ध संघर्ष करता है – ठीक वैसे ही जैसे प्रभु स्वयं ने हमसे पहले ऐसा उदाहरण प्रस्तुत किया, जब वे उनके अधिपति द्वारा जंगल में परीक्षा में डाले गए, और जब वे (अपनी सार्वजनिक सेवकाई के दौरान) संसार में प्रकट हुए, तो उनके प्रभाव में काम करने वालों द्वारा परीक्षा में डाले गए।

6. उस भाई ने कहा: 'परन्तु, पिताजी, प्रभु की आज्ञाएँ तो बहुत हैं; और कौन उन सब को मन में रख सकता है, ताकि उन सब के लिए यत्न करे, विशेषकर मैं, जो सीमित समझ वाला मनुष्य हूँ? – मैं एक संक्षिप्त वचन (एक सरल नियम) क्यों सुनना चाहूँ, ताकि उसे मानकर मैं अपना उद्धार सुनिश्चित कर सकूँ?' उस वृद्ध ने उत्तर दिया: 'यद्यपि आज्ञाएँ बहुत हैं, भाई; फिर भी वे सभी एक ही वचन में संक्षेपित हैं, अर्थात् यह: *'तुम अपने प्रभु परमेश्वर से... अपनी पूरी शक्ति से, अपनी पूरी बुद्धि से प्रेम करोगे; और अपने पड़ोसी से अपने समान प्रेम करोगे'* (लूका 10:27)। जो इस वचन का पालन करने का प्रयास करता है, वह एक ही समय में सभी आज्ञाओं का पालन करता है। लेकिन जो कोई भी, जैसा कि ऊपर कहा गया है, सांसारिक वस्तुओं के सभी लगाव का त्याग नहीं करता, वह न तो परमेश्वर से और न ही अपने पड़ोसी से सच्चा प्रेम कर सकता है। सांसारिक वस्तुओं से लगाव रखना और साथ ही परमेश्वर से प्रेम करना असंभव है। और यही बात प्रभु का आशय थी जब उन्होंने कहा: *'कोई भी दो मालिकों की सेवा नहीं कर सकता'* (मत्ती 6:24). और: *'तुम परमेश्वर और धन-दौलत दोनों की सेवा नहीं कर सकते'* (लूका 16:13)। क्योंकि जिस हद तक मन इस संसार की चीजों से चिपका रहता है, उसी हद तक वह उनका दास बन जाता है और परमेश्वर की आज्ञा को तुच्छ समझता है, और निडर होकर उसका उल्लंघन करता है।

7. भाई ने कहा: 'फादर, आप इस आसक्ति से किस प्रकार की चीज़ों का मतलब ले रहे हैं?' वृद्ध ने उत्तर दिया: 'भोजन, धन, हर तरह की संपत्ति, महिमा, अपने रिश्तेदारों और इस तरह की अन्य चीज़ों से।' – भाई ने कहा: 'लेकिन फादर, क्या ईश्वर ने ये सभी चीजें नहीं बनाईं, और लोगों को उनके उपयोग के लिए नहीं दीं?' तो अब वह हमसे इन चीज़ों को छूने तक भी कैसे मना कर सकता है!' बड़े भाई ने उत्तर दिया: 'निस्संदेह, ईश्वर ने यह सब बनाया और लोगों को उनके उपयोग के लिए दिया—और जो कुछ भी ईश्वर से आया है वह अच्छा है (उत्पत्ति 1:31) (और फिर हमें दिया गया), ताकि हम इसका सही उपयोग करके ईश्वर को प्रसन्न कर सकें। परन्तु हम, अपनी सोच में कमज़ोर और सांसारिक होने के कारण, प्रेम की आज्ञा की अपेक्षा भौतिक वस्तुओं को प्राथमिकता देते आए हैं, और उनसे आसक्त हो जाने के कारण हम एक-दूसरे से झगड़ते हैं। हमें हर व्यक्ति के प्रति प्रेम को सभी दृश्यमान चीजों से, और यहाँ तक कि स्वयं शरीर से भी अधिक प्राथमिकता देनी चाहिए, क्योंकि यह प्रेम परमेश्वर के प्रति हमारे प्रेम का संकेत है, जैसा कि प्रभु स्वयं सुसमाचार में दिखाते हैं, और कहते हैं: *'यदि तुम मुझ से प्रेम रखते हो, तो मेरी आज्ञाओं को मानो'* (यूहन्ना 14:15)। तो फिर, यह आज्ञा क्या है, जिसके पालन से यह साबित होगा कि हम उससे प्रेम करते हैं? फिर से सुनें कि वह क्या कहते हैं: *'मेरी आज्ञा यह है, कि तुम एक दूसरे से प्रेम करो'* (यूहन्ना 15:12)। क्या आप देखते हैं - एक दूसरे के प्रति पारस्परिक प्रेम ईश्वर के प्रति प्रेम का निर्माण करता है, जो ईश्वर की हर आज्ञा की पूर्ति है (रोमियों 13:10)? इसीलिए प्रभु आज्ञा देते हैं कि न केवल हमें इस दुनिया की चीजों से लगाव नहीं रखना चाहिए, बल्कि हमें उनके लिए अपनी सभी संपत्तियों का त्याग भी करना चाहिए, उन लोगों के लिए जो सच्चे मन से उनके शिष्य बनना चाहते हैं।

8. भाई ने कहा: 'आपने कहा, पिताजी, कि हर व्यक्ति के प्रति प्रेम को सभी दृश्यमान चीजों और यहां तक कि अपने ही शरीर पर भी प्राथमिकता लेनी चाहिए; लेकिन मैं ऐसे व्यक्ति से कैसे प्रेम कर सकता हूँ जो मुझसे घृणा करता है और मुंह मोड़ लेता है? जो मुझसे ईर्ष्या करता है, बदनामी फैलाता है, मेरे खिलाफ साजिश रचता है, और मुझे नुकसान पहुँचाने की कोशिश करता है – मैं ऐसे व्यक्ति से कैसे प्रेम कर सकता हूँ? – वृद्ध ने उत्तर दिया: 'सरीसृपों और जानवरों

के लिए, जो प्रवृत्ति से शासित होते हैं, यह निश्चित रूप से असंभव है कि वे अपने साथ किए गए अन्याय का अपनी पूरी क्षमता से बदला न लें; लेकिन ईश्वर की प्रतिमा में बनाए गए लोगों के लिए यह संभव है।' – वृद्ध ने उत्तर दिया: 'सरीसृपों और जानवरों के लिए, जो प्रवृत्ति से शासित होते हैं, उनके लिए अपने ऊपर हुए नुकसान का अपनी पूरी क्षमता से बदला न लेना वास्तव में असंभव है; लेकिन ईश्वर की प्रतिमा में बनाए गए, तर्क से शासित, ईश्वर के ज्ञान से सम्मानित, और उनसे व्यवस्था प्राप्त करने वालों के लिए, यह संभव है कि वे अपने अपमान करने वालों से मुंह न मोड़ें और उनसे प्रेम करें जो उनसे घृणा करते हैं।' यही कारण है कि प्रभु ने, जब कहा, *'अपने शत्रुओं से प्रेम करो, जो तुम से बैर रखते हैं, उन पर भलाई करो* इत्यादि (मत्ती 5:44), तो यह आज्ञा निस्संदेह असंभव के रूप में नहीं, बल्कि संभव के रूप में दी है; अन्यथा, उन्होंने इस आज्ञा का उल्लंघन करने वालों के लिए दंड निर्धारित नहीं किया होता। कि ऐसा प्रेम संभव है, यह स्वयं प्रभु और उनके शिष्यों द्वारा व्यवहार में प्रदर्शित किया गया था, जिन्होंने अपने पड़ोसी के प्रति प्रेम के लिए मृत्यु तक प्रयास किया, और उन्हें मार डालने वालों के लिए प्रार्थना की। लेकिन हम, सांसारिक चीजों और सुख-भोग में आसक्त होकर, और आज्ञाओं की अपेक्षा (सांसारिक चीजों और सुखों को) प्राथमिकता देकर; इसलिए हम उनसे प्रेम करने में असमर्थ हैं जो हमसे घृणा करते हैं; और केवल इतना ही नहीं, बल्कि अक्सर, उनके कारण, हम उनसे भी मुंह मोड़ लेते हैं जो हमसे प्रेम करते हैं, और इस प्रकार अपने आप को स्वभाव में जानवरों और रेंगने वाले जीवों से भी बदतर साबित करते हैं। इस प्रकार, इस तरह से ईश्वर के पदचिन्हों पर चलने में असमर्थ, हम उनके उद्देश्य को नहीं जान सकते, जिससे हम अपने लिए शक्ति प्राप्त कर सकें।

९. भाई ने कहा: 'देखो, पिताजी, मैंने सब कुछ पीछे छोड़ दिया है—मेरा परिवार, मेरा सामान, संसार के सुख और वैभव—ताकि मेरे पास इस शरीर के सिवा कुछ भी न बचे; और फिर भी मैं एक ऐसे भाई से प्रेम नहीं कर सकता जो मुझसे घृणा करता है और मुंह मोड़ लेता है, यद्यपि मैं व्यवहार में बुराई का बदला बुराई से न चुकाने का प्रयास करता हूं। मुझे बताइए, मुझे क्या करना चाहिए ताकि मैं ऐसे व्यक्ति से दिल से प्रेम कर सकूँ - और वास्तव में कोई भी जो किसी भी तरह से मेरा अपमान करता है या मेरी निंदा करता है? - वृद्ध ने उत्तर दिया: 'आपके अपमान करने वाले से प्रेम करना असंभव है, यहाँ तक कि उस व्यक्ति के लिए भी जिसने संसार और संसार में जो कुछ भी है, उसे त्याग दिया है, जब तक कि वह वास्तव में प्रभु के उद्देश्य को नहीं जानता। लेकिन जब प्रभु उसे यह जानने का वरदान देते हैं, और वह इसके मार्गदर्शन के अनुसार चलने के लिए उत्सुक हो जाता है, तो वह उन लोगों से हृदय से प्रेम करने में सक्षम हो जाएगा जो उससे घृणा करते हैं और उसका अपमान करते हैं, ठीक वैसे ही जैसे प्रेरितों ने प्रेम किया था, क्योंकि वे इसे जानते थे।

10. भाई ने कहा: 'प्रभु का यह उद्देश्य क्या है? कृपया मुझे समझाइए, पिताजी।' – वृद्ध ने उत्तर दिया: 'यदि आप प्रभु के उद्देश्य को जानना चाहते हैं, तो ध्यान से सुनें। हमारे प्रभु यीशु मसीह, जो स्वभाव से परमेश्वर हैं और जिन्होंने मानवजाति से प्रेम के कारण, एक स्त्री से जन्म लेकर मनुष्य बनने की कृपा की, दिव्य प्रेरित के अनुसार व्यवस्था के अधीन थे, ताकि एक मनुष्य के रूप में आज्ञाओं का पालन करके, वे आदम के प्राचीन श्राप को समाप्त कर सकें। यह जानते हुए कि पूरी व्यवस्था और भविष्यद्वक्ताओं का आधार दो आज्ञाओं पर टिका है: – *'तुम अपने प्रभु परमेश्वर से अपने पूरे हृदय से प्रेम करना, और अपने पड़ोसी से अपने समान प्रेम करना'* – उन्होंने आरंभ से अंत तक इसी प्रकार कार्य करने का निश्चय किया, ताकि वे इन आज्ञाओं का पूरी तरह से, फिर भी मानवीय रूप में पालन कर सकें। परन्तु शैतान, जिसने आरंभ में मनुष्य को धोखा दिया था और इस प्रकार मृत्यु पर अधिकार प्राप्त कर लिया था, शैतान, यह देखकर कि पिता ने उनके बपतिस्मा के समय उनकी गवाही दी, और कैसे उन्होंने—एक मनुष्य के रूप में—स्वर्ग से पवित्र आत्मा को प्राप्त किया, जो उसी स्वभाव का है, और फिर शैतान द्वारा परीक्षा देने के लिए मरुभूमि में चले गए—शैतान ने अपना पूरा आक्रमण उनके विरुद्ध किया, इस आशा में कि वह उन्हें परमेश्वर के प्रेम की अपेक्षा इस संसार की भलाई को प्राथमिकता देने के लिए प्रेरित कर सके। यह जानते हुए कि तीन चीजें हैं जिनके इर्द-गिर्द सभी मानवीय (इच्छाएँ और सुख) घूमते हैं, अर्थात् भोजन, धन और महिमा—जिनके द्वारा वह हमेशा लोगों को विनाश की खाई में धकेलता है—उसने प्रभु को भी इन तीनों से बहकाने की कोशिश की; लेकिन प्रभु ने, स्वयं को इन सब से ऊपर साबित करते हुए, सख्त लहजे में आज्ञा दी: 'मेरे पीछे हो जा, शैतान।'

11. यही परमेश्वर के प्रेम का सच्चा चिह्न है (अर्थात्, ऐसी बातों से ऊपर उठना), और शैतान, इस कारण से प्रभु यीशु मसीह को इसे तोड़ने के लिए मना न कर सका, उसे दिया गया वचन तोड़वाने में विफल रहने पर, बाद में जब प्रभु ने अपना सार्वजनिक कार्य शुरू किया, तो शैतान ने विधर्मी यहूदियों के माध्यम से हर संभव तरीके से उन्हें अपने पड़ोसी से प्रेम करने की आज्ञा का उल्लंघन करने के लिए उकसाने की कोशिश की। इस उद्देश्य के लिए, जब प्रभु जीवन के मार्ग सिखा रहे थे और अपने कर्मों से स्वर्गीय जीवन का एक आदर्श प्रस्तुत कर रहे थे, मृतकों के पुनरुत्थान की घोषणा कर रहे थे और विश्वासियों को अनंत जीवन तथा स्वर्ग के राज्य का वादा कर रहे थे, जबकि

अविश्वासियों को अनंत यातना की धमकी दे रहे थे, और अपने वचनों की सच्चाई की पुष्टि करने के लिए अद्भुत दैवीय चिह्न दिखा रहे थे, लोगों को विश्वास की ओर बुला रहे थे, – उसने विधर्मियों फरीसियों और शास्त्रियों को उनके विरुद्ध तरह-तरह की बदनामी करने के लिए उकसाया, ताकि वे, जैसा कि उन्होंने आशा की थी, प्रलोभनों का सामना करने में असफल हो जाएँ, और वह अपने बदनाम करने वालों के प्रति घृणा करने के लिए प्रेरित हो जाएँ – और वह, षड्यंत्रकारी, इस प्रकार उन्हें अपने पड़ोसी से प्रेम करने की आज्ञा का उल्लंघनकर्ता दिखाकर अपना उद्देश्य प्राप्त कर लेता।

12. परन्तु प्रभु ने, परमेश्वर के रूप में, उसकी योजनाओं को जानते हुए, उन फरीसियों के प्रति कोई घृणा नहीं रखी जिन्हें वह उनके विरुद्ध उकसा रहा था (क्योंकि ऐसा कैसे हो सकता था, जब वह स्वयं ही भलाई हैं?), बल्कि इसके विपरीत, उनके प्रति अपने प्रेम के द्वारा, उन्होंने स्वयं उकसाने वाले को ही निरुत्तर कर दिया। इस प्रकार, यद्यपि वे, शत्रुतापूर्ण उकसावे के अधीन होकर, उसे अस्वीकार कर सकते थे, और यदि उन्होंने उसे स्वीकार किया भी, तो यह इसलिए था क्योंकि उन्होंने अपनी मर्जी से, लापरवाही और असावधानी के कारण, उकसाने वाले के सुझावों के आगे आत्मसमर्पण कर दिया; फिर भी प्रभु उन्हें सिखाते, डाँटते, फटकारते और उनके लिए रोते, और साथ ही हर तरह की भलाई करने से कभी नहीं चूकते; उन्होंने बदनामी को धैर्यपूर्वक सहन किया और पीड़ा को सहनशीलता से झेला – उन्हें प्रेम का हर कार्य दिखाते हुए। अपने विरुद्ध भड़काए गए लोगों के प्रति ऐसे प्रेम से, उन्होंने भड़काने वाले को चकित कर दिया। कितनी अद्भुत लड़ाई! घृणा के बदले, वह प्रेम दिखाते हैं, और अपनी भलाई के द्वारा वह द्वेष के पिता को उखाड़ फेंकते हैं। उनसे इतना बुरा बर्ताव सहने के बाद—या, अधिक सटीक रूप से कहें तो, उनके लिए—प्रेम की आज्ञा के लिए, मानवीय शब्दों में, मृत्यु के कगार तक संघर्ष करने, और शैतान पर पूर्ण विजय प्राप्त करने के बाद, उन्होंने अंततः हमारे लिए, पुनरुत्थान का मुकुट प्राप्त किया; – और इस प्रकार नए आदम ने पुराने को नया कर दिया। – दिव्य प्रेरित के इन शब्दों का यही अर्थ है: *'तुम में भी वही मन हो जो मसीह यीशु में था'*, इत्यादि (फिलि. 2:5)।

13. प्रभु का यही उद्देश्य था: मनुष्य के रूप में हमारे लिए, प्रेम की आज्ञा का पालन करते हुए, मृत्यु तक पिता के प्रति आज्ञाकारी रहना, और साथ ही शैतान को परास्त करना, और उसके द्वारा भड़काए गए शास्त्री और फरीसियों के हाथों उससे पीड़ा सहना। इस प्रकार, मानो पराजित होने के लिए स्वेच्छा से आत्मसमर्पण करते हुए, उसने उस पर विजय प्राप्त की जिसने उसे पराजित करने का प्रयास किया, और संसार को उसकी अत्याचारी सत्ता से छीन लिया। *'क्योंकि मसीह दुर्बलता में सूली पर चढ़ाया गया'* (2 कुरिन्थियों 13:4), परन्तु इसी दुर्बलता से उसने मृत्यु को मृत्यु पर विजय दी और उसको नाश किया जिसके पास मृत्यु का अधिकार है (इब्रानियों 2:14)। इसी प्रकार पौलुस ने स्वयं भी अपने भीतर कमजोरी का अनुभव किया, और उसने *'अपनी कमजोरियों पर* घमंड किया*, ताकि मसीह की शक्ति उसमें वास करे'* (2 कुरिन्थियों 12:9)।

14. इस विजय की प्रकृति पर विचार करने के बाद, संत पौलुस ने एफिसियों को लिखा: *'क्योंकि हमारा संग्राम मांस और रक्त से नहीं, बल्कि प्रधानताओं, शक्तियों और इस संसार की अंधकारमय सरकारों और अधिपतियों से है'*, इत्यादि (एफि. 6:12)। और जो अदृश्य शत्रुओं के विरुद्ध युद्ध में लगे हुए हैं, उन्हें उन्होंने धार्मिकता का कवच, आशा का हेलमेट, विश्वास की ढाल और आध्यात्मिक तलवार धारण करने की आज्ञा दी, *'ताकि वे दुष्ट के सभी जलते हुए तीरों को बुझा सकें'* (पद 11–14)। इस संघर्ष की प्रकृति को व्यवहार में प्रदर्शित करते हुए, उन्होंने कहा: *'क्योंकि मैं व्यर्थ नहीं दौड़ता; मैं हवा पर मुक्का मारने वाले की तरह मुक्केबाजी नहीं करता; परन्तु मैं अपने शरीर को अनुशासित करता हूँ और उसे वश में करता हूँ, कहीं ऐसा न हो कि मैं दूसरों को उपदेश देकर स्वयं अयोग्य ठहर जाऊँ'* (1 कुरिन्थियों 9: 26–27), और फिर: *'आज तक हम भूखे और प्यासे रहते हैं, हम फटेहाल हैं, और हम कष्ट में हैं'* (1 कुरिन्थियों 4:11), और आगे: *'मेहनत और परिश्रम में, कई रातें जागकर, सर्दी में और नंग-धड़ंग रहकर'* (2 कुरिन्थियों 11:27)।

15. उसी संघर्ष के साथ उसने उन राक्षसों के विरुद्ध युद्ध किया जो देहिक वासनाओं को भड़काते हैं, और अपने शरीर की थकान से उन्हें दूर भगाया। अपने कर्मों से ही हमें उन राक्षसों पर विजय का उदाहरण दिखाते हुए, जो घृणा को भड़काते हैं, और जो इसी उद्देश्य के लिए सबसे लापरवाह लोगों को धर्मपरायण लोगों के विरुद्ध खड़ा कर देते हैं, ताकि वे उनसे प्रलोभित होकर, उनसे घृणा करने लगें और इस प्रकार प्रेम की आज्ञा का उल्लंघन करें – उन्होंने कहा: *'जब हम अपमानित होते हैं, तो हम आशीर्वाद देते हैं; जब हम सताए जाते हैं, तो हम सहन करते हैं; जब हम बदनाम किए जाते हैं, तो हम समझाते हैं: क्योंकि हम संसार की कचरा-टोकरी, पृथ्वी की कीचड़ बन गए हैं'* (1 कुरिन्थियों 4:12-13)। दैत्यों ने लोगों को प्रेरित किया कि वे प्रेरित की निंदा करें, उनकी बदनामी करें और उनका उत्पीड़न करें, ताकि वे उन लोगों के प्रति घृणा से प्रेरित हो जाएँ जिन्होंने उनकी निंदा की, उनकी बदनामी की और

उनका उत्पीड़न किया – इस उद्देश्य से कि वे उन्हें प्रेम की आज्ञा का उल्लंघन करने के लिए प्रेरित कर सकें। परन्तु प्रेरित, उनके इरादों से अनभिज्ञ, जिन्होंने उसे डांटा-फटकारा, उन्हें आशीष दी, जिन्होंने उसका उत्पीड़न किया, उन्हें वह सहन किया, और जिन्होंने उसकी निन्दा की, उनसे विनती की कि वे उन्हें ऐसा करने के लिए उकसाने वाले दुष्टात्माओं से मुंह मोड़ लें और सद्भगवान की ओर लौट आएं; और इस प्रकार उन्होंने उद्धारकर्ता के उदाहरण का अनुसरण करते हुए, भलाई से बुराई पर विजय प्राप्त करके, बुराई सिखाने वाले राक्षसों के दल को हमेशा परास्त किया। इस प्रकार, उन्होंने और अन्य प्रेरितों ने संपूर्ण विश्व को राक्षसों से मुक्त किया और उसे परमेश्वर को समर्पित किया, और अपनी विजय से उन पर विजय प्राप्त की जिन्होंने सोचा था कि उन्होंने जीत हासिल कर ली है। और इसलिए, हे भाई, यदि तुम भी इसी एक लक्ष्य पर दृढ़ रहोगे, तो तुम भी अपने शत्रुओं से प्रेम कर पाओगे; परन्तु यदि नहीं, तो नहीं कर पाओगे; क्योंकि अन्यथा यह असंभव है।

१६. भाई ने कहा: 'सचमुच, पिता, ऐसा ही है, और अन्यथा नहीं।' – और इसी कारण प्रभु ने, यहूदियों के हाथों अपमानित, गालों पर थप्पड़ खाए और अन्य कष्टों को सहन किया, – यह सब इस दया के कारण सहन किया कि वे अज्ञानता के कारण '' और भटक गए थे, ठीक वैसे ही जैसे उन्होंने क्रूस पर कहा: *'पिता, उन्हें क्षमा कर, क्योंकि वे नहीं जानते कि वे क्या कर रहे हैं'* (लूका 23:34), जबकि क्रूस पर शैतान और उसके अधिपतियों की चालाकी और धोखे पर विजय प्राप्त करते हुए; क्योंकि आपने जैसा कहा है, प्रेम की आज्ञा के लिए उन्होंने मृत्यु तक उनके विरुद्ध संघर्ष सहन किया। उसने यह विजय हम पर प्रदान की है; और मृत्यु की शक्ति को नष्ट करके, उसने संपूर्ण जगत को जीवन के रूप में अपना पुनरुत्थान प्रदान किया है। परन्तु मेरे लिए प्रार्थना करें, हे पिता, कि मैं प्रभु और उनके प्रेरितों के उद्देश्य को पूरी तरह से समझ सकूँ, और इसके बाद परीक्षा के समय संयमी रहूँ, और शैतान और उसके दानवों की चालाकी से धोखा न खाऊँ।

१७. बुज़ुर्ग ने उत्तर दिया: 'यदि तुम हमेशा इन बातों को मन में रखोगे, तो तुम (दुष्ट की चालाकी) को पहचान सकोगे।' लेकिन जब आपको यह एहसास हो कि जैसे आपको परीक्षा में डाला जाता है, वैसे ही आपके भाई को भी परीक्षा में डाला जाता है; तो अपने परीक्षा में डाले गए भाई को क्षमा करें, लेकिन परीक्षा में डालने वाले शैतान का विरोध करें, जो आपके परीक्षा में डाले गए भाई के प्रति आपके मन में घृणा भरना चाहता है, और उसकी चालाकियों के आगे न झुकें। यही बात परमेश्वर के भाई, याकूब, सिखाते हैं जब वे अपनी पत्री में कहते हैं: 'परमेश्वर के अधीन हो जाओ; शैतान का विरोध करो, और वह तुमसे दूर भाग जाएगा' (4:7)। और इसलिए, यदि, जैसा कि कहा गया है, आप उपरोक्त बातों को हमेशा गंभीरता से ध्यान में रखते हैं, तो आप प्रभु और उनके प्रेरितों के उद्देश्य को समझ पाएंगे, और लोगों से प्रेम कर पाएंगे, जब वे गलत करते हैं तो उनके प्रति दया दिखाएंगे, और साथ ही हमेशा प्रेम के द्वारा चालाक दुष्टात्माओं का विरोध करेंगे। लेकिन यदि आप और हम विलासी, लापरवाह और उपेक्षित हैं, और अपने विचारों को कामुक सुखों के हवाले कर देते हैं, तो हम राक्षसों के विरुद्ध नहीं, बल्कि स्वयं अपने और अपने भाइयों के विरुद्ध युद्ध लड़ रहे होंगे; और हम उनके कारण लोगों के विरुद्ध युद्ध करके राक्षसों को प्रसन्न कर रहे होंगे।

१८. भाई ने कहा: 'हाँ, पिताजी; यह हमेशा मेरी ही लापरवाही के कारण है कि दुष्टात्माओं को मुझ पर उठने का अवसर मिल जाता है। लेकिन मैं आपसे विनती करता हूँ, पिताजी, मुझे बताइए कि मैं संयम कैसे प्राप्त करूँ।' वरिष्ठ ने उत्तर दिया: 'पार्थिव चीजों से पूर्ण विरक्ति और पवित्र धर्मग्रंथों का निरंतर अध्ययन आत्मा को ईश्वर के भय की ओर ले जाता है; और ईश्वर का भय संयम की ओर ले जाता है।' और फिर आत्मा यह देखना शुरू कर देती है कि राक्षस उसके विचारों के माध्यम से कैसे युद्ध छेड़ते हैं, और उन्हें दूर करती है: जैसा कि दाऊद ने भी कहा था: *'मेरी आँख अपने शत्रुओं पर टिकी है'* (भजन संहिता 53:9)। राक्षसों के प्रति ऐसे ही प्रतिरोध को ध्यान में रखते हुए, प्रमुख प्रेरित पतरस ने अपने शिष्यों को प्रोत्साहित करते हुए कहा: *'संयमी और चौकस रहो, क्योंकि तुम्हारा विरोधी शैतान गरजने वाले सिंह की तरह इस खोज में रहता है कि किसे फाड़ खाए: उससे दृढ़ विश्वास के साथ लड़ो'* (1 पतरस 5:8)। और प्रभु ने कहा: *'जागते रहो और प्रार्थना करो, ताकि तुम परीक्षा में न पड़ो'* (मत्ती 26:41)। इसी प्रकार, सभोपदेशक कहते हैं: *'यदि शासक की आत्मा तुम पर आ पड़े,* तो *अपना स्थान न छोड़ना* (10:4)। मन का स्थान सदाचार, ज्ञान और परमेश्वर का भय है। अंत में, अद्भुत प्रेरित, जिन्होंने बड़ी संयम और साहस के साथ परिश्रम किया, ने कहा: *'यद्यपि हम शरीर में चलने वाले हैं, तौभी हम शरीर के अनुसार युद्ध नहीं करते; क्योंकि हमारे युद्ध के हथियार शरीर के नहीं, पर परमेश्वर के द्वारा किलेबंदी ढाँक देने के लिए सामर्थी हैं: हम परमेश्वर के ज्ञान के विरोध में उठाई गई हर एक ऊँची वस्तु को ढाँक देते हैं, और हर एक विचार को मसीह की आज्ञाकारिता में बंदी बनाकर लाते हैं, और हर एक अवज्ञा को दंड देने के लिए तैयार रहते हैं'* (2 कुरिन्थियों 10:3–6)। – तो यदि आप भी संतों का अनुकरण करें और, बड़ी मेहनत से, परमेश्वर के लिए स्वयं को हर बात से खाली कर लें, तो आप संयमी बनेंगे।

19. एक भाई ने कहा: 'पिताजी, निरंतर परमेश्वर के साथ रहने के लिए मनुष्य को क्या करना चाहिए?' वृद्ध ने उत्तर दिया: 'मन के लिए हर समय एक परमेश्वर के साथ रहना असंभव है जब तक कि वह निम्नलिखित तीन गुणों को प्राप्त नहीं कर लेता: प्रेम, आत्म-नियंत्रण और प्रार्थना। प्रेम क्रोध को वश में करता है, संयम कामवासना को सूखा देता है, और प्रार्थना, मन को सभी विचारों से मुक्त करके, उसे स्वयं ईश्वर के सामने नग्न प्रस्तुत करती है। ये तीनों गुण सभी सच्चाइयों को समाहित करते हैं; और इनके बिना, मन एक ईश्वर के साथ नहीं रह सकता।

२०. भाई ने कहा: 'मैं आपसे विनती करता हूँ, पिताजी, मुझे सिखाएँ कि प्रेम क्रोध को कैसे वश में करता है?' बड़े भाई ने उत्तर दिया: 'प्रेम का कार्य है अपने पड़ोसी से प्रेम करना और उसका भला करना, उसके प्रति धैर्य रखना और उसके द्वारा किए गए सभी कष्टों को सहना, जैसा कि अक्सर कहा गया है। ऐसी गुणों के होने पर, प्रेम स्वाभाविक रूप से उस व्यक्ति में क्रोध को वश में कर लेता है जिसने इसे प्राप्त किया है।' भाई ने कहा: 'ये कोई छोटी बातें नहीं हैं; फिर भी धन्य है वह जिसने इसे प्राप्त कर लिया है। मैं, हालांकि, इससे सचमुच बहुत दूर हूँ; फिर भी मैं आपसे विनती करता हूँ, पिताजी, मुझे बताएं, धैर्यवान होने का क्या अर्थ है?'

21. वृद्ध ने उत्तर दिया: 'दुर्भाग्य के बीच आत्मा में दृढ़ रहना, हर बुराई को सहना और परीक्षा के अंत की प्रतीक्षा करना, बिना खुद को क्रोध से पराजित होने देना, या कोई मूर्खतापूर्ण शब्द बोलना, या संदेह पालना, या एक धर्मपरायण व्यक्ति के अनुकूल नहीं विचारों को मन में रखना, जैसा कि धर्मग्रंथ कहता है: 'धीरजवान मनुष्य कुछ समय के लिए सहन करता है, और बाद में आनंद उसका पुरस्कार होगा: *"कुछ समय के लिए वह अपने वचन और* अपने मन को *विश्वासियों के सामने प्रकट नहीं करता"* (सिरैक 1:23–24)।

२२. धैर्य के गुण ऐसे हैं! – और केवल इतना ही नहीं, बल्कि स्वयं को परीक्षा का कारण मानना भी धैर्य का एक गुण है। और शायद वास्तव में ऐसा ही है (अर्थात्, कारण हमारे भीतर ही है)। क्योंकि हम पर जो कुछ भी आता है, वह हमारी शिक्षा के लिए, या अतीत के पापों के प्रायश्चित के लिए, या वर्तमान की लापरवाही को सुधारने के लिए, या भविष्य के पतन को रोकने के लिए होता है। जो कोई भी यह मानता है कि परीक्षा उन बताए गए कारणों में से किसी एक के लिए उस पर आई है, वह दंडित होते समय क्रोधित नहीं होगा – विशेष रूप से जब वह उसी समय अपने स्वयं के पापों के प्रति सचेत हो; वह परीक्षा किसके माध्यम से आई, उस पर दोष नहीं लगायेगा: क्योंकि चाहे उसके माध्यम से हो या किसी और के माध्यम से, उसे तो वैसे भी ईश्वर के निर्णयों का प्याला पीना ही था; – बल्कि वह अपना मन ईश्वर की ओर मोड़ेगा और उस पर धन्यवाद करेगा जिसने इस परीक्षा की अनुमति दी, केवल स्वयं को दोष देगा और स्वेच्छा से सुधार को स्वीकार करेगा, जैसा दाऊद ने शिमई के संबंध में और अय्यूब ने अपनी पत्नी के संबंध में किया था। लेकिन मूर्ख व्यक्ति अक्सर परमेश्वर से दया माँगता है; फिर भी जब दया आती है, तो वह उसे स्वीकार नहीं करता, क्योंकि वह वैसी नहीं आती जैसी वह चाहता था, बल्कि वैसी आती है जैसी आत्मा के चिकित्सक को लाभदायक लगता है। इसीलिए वह हतोत्साहित और बेचैन रहता है—कभी लोगों पर क्रोधित होता है, तो कभी ईश्वर के विरुद्ध अपमानजनक बातें कहता है; और इस तरह वह अपनी कृतघ्नता प्रकट करता है और अनुशासन की छड़ी से उसे कोई चंगाई नहीं मिलती।

23. भाई ने कहा: 'आपने इसे अच्छी तरह समझाया, पिताजी। लेकिन मैं आपसे विनती करता हूँ, मुझे यह भी बताइए कि संयम कामवासना को कैसे सूखा देता है।' वरिष्ठ ने उत्तर दिया: 'संयम मनुष्य को हर उस चीज़ से दूर रहने की शिक्षा देता है जो एक आवश्यक आवश्यकता को पूरा नहीं करती, बल्कि केवल सुख देती है; यह जीवन के लिए आवश्यक चीज़ों के अलावा किसी अन्य चीज़ को छूने की अनुमति नहीं देता; यह मनुष्य को सुखद चीज़ों के पीछे भागने नहीं देता, बल्कि केवल उपयोगी चीज़ों की खोज करने का आदेश देता है; और यह मनुष्य को आवश्यकता के अनुसार भोजन और पेय को मापने की शिक्षा देता है, ताकि शरीर में अत्यधिक आर्द्रता जमा न हो, और केवल शरीर के जीवन को बनाए रखती है, उसे कामुक इच्छाओं से मुक्त रखती है। इस प्रकार संयम कामवासना को सूखा देता है। – इसके विपरीत, सुख और भोजन-पेय की प्रचुरता पेट को भड़काती है और लज्जास्पद कामवासना की सबसे प्रबल इच्छा को जगाती है, जो एक व्यक्ति को एक अतार्किक जानवर की तरह अवैध मेलजोल की ओर खींचती है। तब आँखें निर्लज्ज हो जाती हैं, हाथ अनियंत्रित हो जाते हैं, जीभ केवल वही बोलती है जो कानों को भाए, और कान स्वेच्छा से केवल व्यर्थ बातें सुनते हैं; मन ईश्वर की उपेक्षा करता है, और आत्मा न केवल विचारों में व्यभिचार करती है बल्कि शरीर को भी एक अनुचित कृत्य में खींच लेती है।

२४. भाई ने कहा: 'सचमुच, पिताजी। लेकिन मैं आपसे प्रार्थना के बारे में भी सिखाने का अनुरोध करता हूँ, और यह कि यह मन को सभी विचारों से कैसे अलग करती है।' वृद्ध ने उत्तर दिया: 'हमारे विचार वस्तुओं के बारे में धारणाएँ हैं, जिनमें से कुछ इंद्रियात्मक हैं, जबकि अन्य बौद्धिक हैं। जब मन इनसे व्यस्त होता है, तो वह इनके बारे में विचारों को पालता है और उन पर छानबीन करता है। हालाँकि, प्रार्थना की कृपा मन को ईश्वर के साथ जोड़ती है, और—

ईश्वर के साथ जोड़कर—इसे सभी वचिारों से मुक्त करती है। तब मन, अपनी नरि्मल अवस्था में ईश्वर से संवाद करते हुए, ईश्वर-सदृश हो जाता है। ऐसा बन जाने पर, यह ईश्वर से ईश्वरीय चीज़ों के लएि माँग करता है, और अपनी वनिती में कभी असफल नहीं होता (इसे हमेशा वही मलिता है जो यह माँगता है)। इसीलएि प्रेरति हमें *'अनवरत प्रार्थना करने'* (1 थस्सि. 5:17) *की* आज्ञा देते हैं, ताकि हम अधकि बार अपने मन को ईश्वर से जोड़कर, धीरे-धीरे सांसारकि चीजों से अपना लगाव त्याग सकें।

२५. भाई ने कहा: 'लेकनि मन नरिंतर कैसे प्रार्थना कर सकता है? क्योंकि जब हम गाते या पढ़ते हैं, जब हम कसिी से बात करते हैं, या कसिी की सेवा करते हैं, तो हम स्वाभावकि रूप से अपने मन को कई वचिारों और छवयिों के साथ भटकने देते हैं।' वृद्ध ने उत्तर दयिा: 'दवि्य शास्त्र असंभव का आदेश नहीं देता।' स्वयं प्रेरति, जनिके माध्यम से ये शब्द बोले गए, उन्होंने गीत गाए, पढ़ाई की, और अपने (प्रेरतिीय) मंत्रालय के कर्तव्यों का पालन कयिा – और फरि भी उन्होंने अखंड प्रार्थना की। – नरिंतर प्रार्थना करने का अर्थ है अपने मन को परमेश्वर पर महान श्रद्धा और उत्कट इच्छा के साथ स्थरि रखना, उनमें आशा बनाए रखना, और सभी बातों में - अपने कर्मों और परस्थितियिों में - उन पर भरोसा रखना। इस मानसकिता में, प्रेरति कहते हैं: *'हमें परमेश्वर के प्रेम से कौन अलग कर सकता है? क्या संकट, या क्लेश?'* – और इसी तरह (रोमयिों 8:35)। और थोड़ी देर बाद: *'मैं यह जान गया हूँ कि न तो मृत्यु, न जीवन, न स्वर्गदूत'* (38)। और फरि: *'हम हर तरह से कष्टति हैं, परन्तु कुचले हुए नहीं; परेशान हैं, परन्तु नराश नहीं; सताए जाते हैं, परन्तु नष्ट नहीं कएि जाते; प्रभु यीशु की मृत्यु को सदा अपने शरीर में फरिते हुए रखते हैं, ताकि यीशु का जीवन भी हमारे शरीर में प्रकट हो'* (2 कुरन्थियिों 4:8-10)।

26. इस मानसकिता में रहते हुए, प्रेरति ने अवरिाम प्रार्थना की: क्योंकि अपने सभी मामलों और परीक्षाओं में, जैसा कि कहा गया है, वह परमेश्वर की आशा से चपिका रहा। वास्तव में, सभी संत अपनी पीड़ाओं में हमेशा आनंदति होते थे, इस आशा में कि उनके माध्यम से वे दैवी प्रेम के आदी हो सकें। इसीलएि प्रेरति ने कहा: *'इसलएि मैं बड़े आनन्द से अपनी दुर्बलताओं पर घमण्ड करूँगा, कि मसीह की सामर्थ्य मुझ में वास करे'* (2 कुरन्थियिों 12:9)। और थोड़ा आगे: *'क्योंकि जब मैं नरि्बल होता हूँ, तब मैं बलवान होता हूँ'* (पद 10)। परन्तु हम दीन आत्माओं के लएि हाय! क्योंकि हम पवति्र पुरखों के मार्ग से भटक गए हैं, और इसीलएि हम सभी आध्यात्मकि प्रयासों से रहति हैं।

27. एक भाई ने कहा: 'पताजी, ऐसा क्यों है कि मुझे पश्चाताप नहीं होता?' वृद्ध ने उत्तर दयिा: 'क्योंकि न तो तुम्हारे और न ही मेरे सामने परमेश्वर का भय है। यह इसलएि है क्योंकि हम हर तरह की बुराइयों का आश्रय बन गए हैं, और हम परमेश्वर की भयानक सज़ाओं को महज़ कल्पना की उपज मानकर उनका तरिस्कार करते हैं।' उदाहरण के लएि, जब कोई पापयिों के वषिय में परमेश्वर की ओर से मूसा को यह कहते हुए सुनता है: *'क्योंकि मेरी जलन से आग भड़क उठेगी', 'यह नरक की सबसे नीची गहराइयों तक फैल जाएगी; यह पृथ्वी और उसकी फसलों को भस्म कर देगी, और पहाड़ों की नींव को जला देगी'* (व्यवस्थावविरण 32:22-23), तो वह कैसे पश्चातापी नहीं हो सकता? और फरि: *'मैं अपनी तलवार को बजिली की तरह तेज करूँगा; मेरा हाथ न्याय करेगा, और मैं अपने शत्रुओं से बदला लूँगा, और मैं उनसे बदला लूँगा जो मुझ से बैर रखते हैं'* (41)। या जैसा कि यशायाह पुकारता है: *'सयिोन में अधर्मी पीछे हट गए हैं; दुष्टों पर भय छा जाएगा: तुम्हारी आत्मा की शक्ति व्यर्थ हो जाएगी; तुम आग से भस्म हो जाओगे। तुम्हें कौन बताएगा कि आग जल रही है? तुम्हें अनंत वश्रिाम के स्थान के वषिय में कौन बताएगा?"* (यशायाह 33:14)। और फरि: *"वे नकिलकर उन लोगों की लाशें देखेंगे जन्होंने मुझसे वद्रिोह कयिा है: क्योंकि उनका कीड़ा न मरेगा, और उनकी आग न बुझेगी; और वे सब मनुष्यों के लएि घृणास्पद होंगे मांस"* (यशायाह 66:24)। या जैसा यरि्मयाह कहते हैं: *'रात होने से पहले, और तुम्हारे पैर अँधेरी पहाड़यिों पर ठोकर खाने से पहले, अपने प्रभु परमेश्वर की महमिा करो; और जब तुम प्रकाश की प्रतीक्षा करोगे, तब मृत्यु की चादर छा जाएगी, और तुम अँधेरे में डाल दएि जाओगे'* (यरि्मयाह 13:16)। और फरि: *"हे मूर्ख और अज्ञानी लोगों, यह सुनो, जनिकी आँखें हैं पर वे नहीं देखते, और कान हैं पर वे नहीं सुनते। क्या तुम मुझसे नहीं डरोगे, यहोवा की यही वाणी है, या मेरी उपस्थति में लज्जति नहीं होओगे?"* (यरि्म. 5:21–22)। और फरि: *"तुम्हारा परमेश्वर से मुँह मोड़ना तुम्हें दण्ड देगा, और तुम्हारा दुष्टापन तुम्हें दोषी ठहराएगा; मान लो और देखो कि मेरे पास से दूर हो जाना तुम्हारे लएि बुरा और कड़वा है," यहोवा की यहीवाणी है... "मैंने तुम्हें एक फलदार दाख की बारी के रूप में लगाया था, जो पूरी तरह से सच्ची थी; तुम कैसे एक कड़वी, परदेशी दाख की बारी में बदल गए?"* (यरि्म. 2: 19–21)? और फरि: *'मैं मज़ाक करने वालों के बीच नहीं बैठा, परन्तु मैं तेरे हाथ के भय से अकेला बैठा; क्योंकि मैं कटुता से भर गया था'* (यरि्म. 15:17)।यह सुनकर कौन भयभीत नहीं होगा कि यहेज़केल क्या कहते हैं: *'तुम्हारा अंत आ गया है; मैं तुम पर अपना प्रकोप उंडेलूँगा, और तुम्हारे कर्मों के अनुसार तुमसे प्रतशिोध लूँगा, और तुम्हारी सारी घृणति कृत्य तुम पर लाऊँगा। मेरी आँख न तो क्षमा करेगी, और न ही मैं दया दखिाऊँगा... और तुम जान जाओगे कि मैं ही यहोवा हूँ जो मार डालता है'* (यहे. 7:3, 9)। यह सुनकर कौन दंग नहीं हो जाएगा कि दानयिेल न्याय के

दिन का वर्णन कैसे करता है, कहता है: *'मैं ने देखा, और वहाँ सिंहासन रखे हुए थे, और प्राचीनकाल का एक पुरुष अपना सिंहासन ग्रहण किया; उसका वस्त्र हिम के समान श्वेत, और उसके सिर के बाल शुद्ध ऊन के समान थे; उसका सिंहासन प्रज्वलित अग्नि का था, और उसके पहिये जलती हुई अग्नि के थे। उसके सामने आग का एक नदी-सा प्रवाह निकल रहा था: हजारों-हजारों उसकी सेवा कर रहे थे, और अनगिनित लोग उसके सामने खड़े थे: न्याय-सिंहासन लगा दिया गया, और पुस्तकें खोल दी गईं'* (दानिय्येल 7:9-10), अर्थात् प्रत्येक व्यक्ति के कर्म। और फिर: *'रात के एक दर्शन में, देखो, स्वर्ग के बादलों पर मनुष्य के पुत्र के समान एक आया, और वह प्राचीनकाल के समीप आकर उसके सामने उपस्थित किया गया; और उसे प्रभुत्व और महिमा और राज्य दिया गया, कि सब जातियां, राष्ट्र और भाषाएं उसकी सेवा करें: उसका प्रभुत्व एक शाश्वत प्रभुत्व है, जो कभी नष्ट नहीं होगा, और उसका राज्य नष्ट नहीं किया जाएगा। मेरे भीतर मेरी आत्मा व्याकुल हो गई, मैं, दानियेल, और मेरे सिर में जो दर्शन हुए, वे मुझे चकरा गए'* (दानियेल 7:13-15)।

28. दाऊद की इस बात को सुनकर कौन न काँपेगा: *'परमेश्वर ने एक बार कहा; मैंने इसे दो बार सुना है: क्योंकि परमेश्वर की सामर्थ्य, और हे प्रभु, आपकी दया; क्योंकि आप हर एक मनुष्य को उसके कामों के अनुसार प्रतिफल देंगे'* (भजन संहिता 61:12, 13)? – और फिर, सभोपदेशक क्या कहते हैं: *'मामले का सार यह है: यह सब सुन, परमेश्वर का भय मान, और उसकी आज्ञाओं का पालन कर; क्योंकि यह हर मनुष्य पर लागू होता है; क्योंकि परमेश्वर हर प्राणी को हर पाप के लिए न्याय में लाएगा, चाहे वह अच्छा हो या बुरा'* (सभो. 12:13-14)?

29. प्रेरित से यही बात सुनकर कौन कांप नहीं उठेगा, जो कहते हैं: *'क्योंकि हम सभी को मसीह की न्याय-सिंहासन के सामने उपस्थित होना है, ताकि हर कोई वही पाए जो उसने शरीर में रहते हुए किया है, चाहे अच्छा हो या बुरा'*? (2 कुरिन्थियों 5:10; रोमियों 14:10)। तो फिर, इसके बाद हम में से कौन अपनी अविश्वासिता और अपनी आत्माओं की अंधाधुंधी पर नहीं रोएगा – कि, यह सब सुनने के बाद भी, हम पश्चाताप नहीं करते और न ही ऐसी लापरवाही और ऐसी बेपरवाही पर कड़वे आँसू बहाते हैं, जिसके विषय में यिर्मयाह ने पूर्वदृष्टि से कहा था: *'शापित है वह जो प्रभु का काम लापरवाही से करता है'* (यिर्म. 48:10); यदि हम अपनी आत्माओं के उद्धार के लिए चिंतित होते, तो हम प्रभु के वचन से काँप उठते और उसकी आज्ञाओं को पूरा करने के लिए अपनी पूरी शक्ति से शीघ्रता करते, जिनसे हमारा उद्धार होता है। लेकिन हमने, स्वयं प्रभु से यह सुनने के बावजूद: *'जीवन की ओर ले जाने वाले संकीर्ण द्वार से प्रवेश करो'* (मत्ती 7:13–14), विनाश की ओर ले जाने वाले चौड़े और विशाल मार्ग को चुना है। क्योंकि जब वह जीवितों और मरे हुओं का न्याय करने आएगा, तब हम उससे यह सुनेंगे: *'हे श्रापित लोगो, मुझ से दूर हो जाओ, उस अनंत आग में जो शैतान और उसके दूतों के लिए तैयार की गई है'* (मत्ती 25:41)।

30. और हम यह केवल तभी नहीं सुनेंगे जब हम बुरे काम करते हैं, बल्कि यदि हम भलाई करने में लापरवाही करते हैं और अपने पड़ोसी से प्रेम करने में विफल रहते हैं, तब भी हम इसे सुनेंगे। यदि, इसके अलावा, हम बुरे कर्म भी करते हैं, तो हम आत्मा की ऐसी दयनीय अवस्था में उस दिन को कैसे सहन करेंगे? हमें यह भी महसूस करना चाहिए कि *'तुम व्यभिचार न करना, तुम चोरी न करना, तुम हत्या न करना'*—आदि—इन आज्ञाओं को मूसा के द्वारा प्राचीनों से कहा गया था (मत्ती 5:28)। हालाँकि, प्रभु यह जानते हुए कि एक मसीही के लिए जीवन में पूर्णता प्राप्त करने के लिए, केवल इन आज्ञाओं का पालन करना ही पर्याप्त नहीं है, ने कहा: *'अमीन, मैं तुम से कहता हूँ, जब तक तुम्हारा धार्मिकता शास्त्रियों और फरीसियों की धार्मिकता से बढ़कर न हो, तब तक तुम परमेश्वर के राज्य में प्रवेश नहीं कर सकते'*। इसीलिए, उन शब्दों से पहले और बाद में, उन्होंने हमेशा आत्मा की पूर्ण पवित्रता की मांग की—जिसके लिए शरीर को भी पवित्र किया जाता है—और सभी लोगों के लिए सच्चे प्रेम का उपदेश दिया, जिसके माध्यम से हम स्वयं उनके प्रति प्रेम प्राप्त कर सकते हैं। उन्होंने स्वयं में और अपने शिष्यों में हमारे लिए यह उदाहरण स्थापित किया, जैसा कि कई बार कहा गया है।

31. उस दिन हमारे पास क्या बहाना होगा, जब हमारे सामने ऐसा उदाहरण होने के बावजूद हम इतनी लापरवाही बरतते रहें? हम पर विलाप करते हुए, यिर्मयाह कहते हैं: *'कोई मेरे सिर पर पानी डाल दे, और मेरी आँखों से आँसुओं का सोता फूटे, ताकि मैं* इस प्रजा के लिए *दिन-रात रोऊँ'* (यिर्म. 9:1)—कि इतनी कृपा के योग्य बनकर भी, हम इतनी लापरवाही बरतते हैं, या इससे भी बदतर, हर तरह की बुराइयों से भर जाते हैं। मैं मूसा को हमारे बारे में भी बात करते हुए सुनता हूँ: *'याकूब ने खाया और तृप्त हो गया; वह मोटा और तंदरुस्त हो गया; तब उसने अपने को बनाने वाले परमेश्वर को त्याग दिया और अपनी मुक्ति के परमेश्वर से मुंह मोड़ लिया'* (व्यवस्थाविवरण 32:15)। मीकाह भी हमारे लिए विलाप करते हैं, और कहते हैं: *'हाय, मेरी आत्मा! क्योंकि धर्मी पृथ्वी से मिट गए हैं, और मनुष्यों में कोई भी ऐसा नहीं है जो सीधा काम करे; हर कोई द्वेष के साथ अपने पड़ोसी पर अत्याचार करता है; वे बुराई करने के लिए अपने हाथ*

तैयार करते हैं (मीकाह 7:2-3)। इसी प्रकार, भजन लेखक ने हमसे यह प्रार्थना की: 'हे यहोवा, मुझे बचा, क्योंकि धर्मियों का अभाव हो गया है; क्योंकि मनुष्यों के बीच से सच्चाई लुप्त हो गई है' (भजन संहिता 11:2)।

32. हमारी दशा पर विलाप करते हुए, प्रेरित भविष्यद्वाणी के रूप में कहते हैं: *'वे सब भटक गए हैं; वे सब मिलकर भ्रष्ट हो गए हैं; कोई भी भलाई करने वाला नहीं है, एक भी नहीं। उनके गले खुली कब्रें हैं; उन्होंने अपनी जीभ से धोखा दिया है; उनके होठों के नीचे साँप का विष है; उनके मुँह शाप और कड़वाहट से भरे हैं। विनाश और कपट उनके मार्गों में है, और वे शांति का मार्ग नहीं जानते। उनके आँखों के सामने परमेश्वर का भय नहीं है'* (रोमियों 3:12–18)। और फिर, हमारे वर्तमान दुष्ट जीवन के संबंध में एक भविष्यसूचक दर्शन में, वह तीमुथियुस को लिखते हैं: *'यह तुम समझ लो: अंतिम दिनों में कठिन समय आएंगे। क्योंकि लोग स्वार्थी, धन के लालची, घमंडी, अहंकारी, ईश्वर-निन्दक, माता-पिता की आज्ञा न मानने वाले, कृतघ्न, पवित्रताहीन, प्रेमहीन, निर्दयी, निन्दक, आत्मसंयमहीन, क्रूर, प्रेमहीन, विश्वासघाती, लापरवाह''—आदि होंगे'* (2 तीमुथियुस 3:1-4)। तब हमें धिक्कार है, क्योंकि हम दुष्टता की चरम सीमा पर पहुँच चुके हैं। क्योंकि हम में से कौन इन गिनाए गए दुष्टता के रूपों का दोषी नहीं है? क्या यह भविष्यवाणी हम में पूरी नहीं हुई है? क्या हम सब पेटू नहीं हैं? क्या हम सब सुख के प्रेमी नहीं हैं? क्या हम सब भौतिक चीजों से पागलों की तरह नहीं जुड़े हुए हैं? क्या हम सभी क्रोधी नहीं हैं? क्या हम सभी प्रतिशोधी नहीं हैं? क्या हम सभी हर सद्गुण के विश्वासघाती नहीं हैं? क्या हम सभी बदनाम करने वाले नहीं हैं? क्या हम सभी निंदा करने वाले नहीं हैं? क्या हम सभी अनादर करने वाले नहीं हैं? क्या हम सभी अपने भाइयों के प्रति शत्रु नहीं हैं? क्या हम सभी दंभी नहीं हैं? क्या हम सभी घमंडी नहीं हैं? क्या हम सभी अभिमानी नहीं हैं? क्या हम सभी व्यर्थ-गर्वित नहीं हैं? क्या हम सब पाखंडी नहीं हैं? क्या हम सब कपटी नहीं हैं? क्या हम सब ईर्ष्यालु नहीं हैं? क्या हम सब अवज्ञाकारी नहीं हैं? क्या हम सब आलसी नहीं हैं? क्या हम सब कपटी नहीं हैं? क्या हम सब लापरवाह नहीं हैं? क्या हम सब उद्धारकर्ता की आज्ञाओं के प्रति लापरवाह नहीं हैं? क्या हम सब हर तरह की बुराई से भर नहीं गए हैं? क्या हम परमेश्वर के मंदिरों के बजाय मूर्तिपूजक तीर्थस्थल नहीं बन गए हैं? पवित्र आत्मा के स्थान पर, दुष्ट आत्माओं का आश्रय? क्या हम केवल दिखावे के लिए ही परमेश्वर को 'पिता' नहीं कहते? क्या हम, परमेश्वर के पुत्रों के स्थान पर, गेहन्ना के पुत्र नहीं बन गए हैं? क्या हम यहूदियों से भी बदतर नहीं हो गए हैं, हम जो अब मसीह के महान नाम को धारण करते हैं? और फिर भी कोई भी ऐसा सत्य सुनकर ठेस नहीं पहुँचाता। यहाँ तक कि वे (यहूदी), यद्यपि अधर्मी थे, ने कहा: *'हमारा एक ही पिता है, परमेश्वर'*; परन्तु उद्धारकर्ता से उन्होंने सुना: *'तुम अपने पिता शैतान के हो, और तुम अपने पिता की इच्छाओं को पूरा करना चाहते हो'* (यूहन्ना 8:41, 44)।

33. क्या यह उचित नहीं है कि हम भी, उसकी आज्ञाओं के उल्लंघनकर्ता होने के नाते, उससे ऐसी बातें सुनें? देखो, प्रेरित ने आत्मा से संचालित *लोगों को* 'परमेश्वर की संतान' कहा। वह कहता है, *'जितने लोग परमेश्वर की आत्मा से संचालित हैं, वे परमेश्वर की संतान हैं'* (रोमियों 8:14)। तो फिर, हम खुद को परमेश्वर की संतान कैसे कह सकते हैं जब हम सांसारिक तर्क से निर्देशित होते हैं? वह कहता है, जिनका मार्गदर्शन आत्मा करता है, उन्हें आत्मा के फलों से स्पष्ट रूप से पहचाना जाता है। प्रेरित कहते हैं, आध्यात्मिक फल है प्रेम, आनन्द, शान्ति, धीरज, सौम्यता, भलाई, विश्वासयोग्यता, नम्रता और संयम (गलातियों 5:22)। क्या इनमें से कोई भी हम में है? क्या यह इसके विपरीत नहीं है? इसलिए, हमें ईश्वर की संतान नहीं कहा जाना चाहिए, बल्कि इसके विपरीत कहा जाना चाहिए। जो किसी से जन्मता है वह उसी जैसा होता है जिसने उसे जन्म दिया है। लेकिन प्रभु कहते हैं: *'जो आत्मा से जन्मा है, वह आत्मा है'* (यूहन्ना 3:6)। परन्तु हम तो आत्मा के लालची, देह बन गए हैं, और इसलिये यह न्यायसंगत निर्णय हम पर भी लागू होता है: *'मेरी आत्मा मनुष्य से सदा के लिये विवाद न करेगी, क्योंकि वह देह है'* (उत्पत्ति 6:3)। जब हमारे भीतर मसीह का कुछ भी नहीं है, तो हम खुद को मसीही कैसे कह सकते हैं?

34. कोई कह सकता है: 'मेरा मसीह में विश्वास है; क्या केवल उसी में विश्वास मेरे उद्धार के लिए पर्याप्त है?' लेकिन प्रेरित याकूब इसका विरोध करते हुए कहते हैं: *'भूत-प्रेत भी विश्वास करते हैं—और कांपते हैं'* (याकूब 2:19)। और फिर: *'कर्म के बिना विश्वास अपने आप में मृत है'* (17:26)। – क्या हम सचमुच उस पर विश्वास करते हैं?! हम भविष्य के संबंध में उस पर विश्वास करने का दावा कैसे कर सकते हैं, जब हम वर्तमान और यथार्थ के संबंध में विश्वास नहीं करते? और हम विश्वास नहीं करते: क्योंकि हम सांसारिक वस्तुओं से जुड़े हुए हैं, हम शरीर के अनुसार जीते हैं, और हम आत्मा के विरुद्ध युद्ध करते हैं। परन्तु जो मसीह में सच्चा विश्वास रखते हैं और उसके आज्ञाओं के पालन द्वारा उसे अपने हृदय में ग्रहण कर चुके हैं, वे कहते हैं: *'अब मैं जीवित नहीं, बल्कि मसीह मुझ में जीवित है। और जो जीवन मैं अब देह में जीता हूँ, वह मैं परमेश्वर के पुत्र पर विश्वास करके जीता हूँ, जिसने मुझ से प्रेम किया और अपने आप को मेरे लिए दे दिया'* (गलातियों 2:20)। इसीलिए, दूसरों के उद्धार के लिए, उनके भक्त अनुयायियों और उनकी आज्ञाओं के सच्चे पालनकर्ताओं के रूप में, उनके लिए दुख सहते हुए, उन्होंने कहा: *'जब हम अपमानित*

होते हैं, तो हम आशीर्वाद देते हैं; जब हम सताए जाते हैं, तो हम सहन करते हैं; जब हम बदनाम किए जाते हैं, तो हम सांत्वना देते हैं (1 कुरिन्थियों 4:12)। क्योंकि उन्होंने उसका वचन सुना था, जिसमें आज्ञा दी गई थी: '*अपने शत्रुओं से प्रेम करो, जो तुम से बैर रखते हैं, उन पर भलाई करो, जो तुम्हें कोसते हैं, उन पर आशीष करो, और जो तुम्हारा अपमान करते हैं, उनके लिए प्रार्थना करो*' (मत्ती 5:44)। इस प्रकार, उनके वचनों और कर्मों दोनों के द्वारा, मसीह, जो उनमें कार्य कर रहे थे, प्रकट हुए। हम, हालाँकि, चूँकि हम उनके सभी आज्ञाओं के विपरीत कार्य करते हैं, हम खुद को हर तरह की अशुद्धता से भरा हुआ पाते हैं। यही कारण है कि हम परमेश्वर के मंदिर के बजाय, चोरों का अड्डा बन गए हैं; प्रार्थना के घर के बजाय, लुटेरों का अड्डा; एक पवित्र जाति के बजाय, एक पापी जाति; परमेश्वर की प्रजा के बजाय, पाप से भरी प्रजा; पवित्र जन की संतान के बजाय, एक दुष्ट बीज; परमेश्वर के पुत्रों के बजाय, अधर्म के पुत्र ; क्योंकि प्रभु की आज्ञाओं को त्यागकर, हम अशुद्ध वासनाओं के द्वारा दुष्ट आत्माओं की सेवा करते हैं – और इस्राएल के पवित्र को क्रोधित कर दिया है।

35. इसीलिए महान यशायाह, हम पर विलाप करते हुए और साथ ही हमारे पतन में हमारी मदद करने की इच्छा रखते हुए, पुकार कर कहते हैं: '*तुम अभी भी अधर्म का अभ्यास करके स्वयं को क्यों घायल करते हो? हर सिर में फोड़ा है, और हर हृदय शोकग्रस्त है: पैरों से लेकर सिर तक उसमें कोई सलामती नहीं है: न कोई खरोंच, न फोड़ा, न कोई जलता हुआ घाव: क्या लगाने के लिए न कोई मरहम है, न कोई तेल, न कोई पट्टी?*" (1:5–6)। तो, इससे क्या निष्कर्ष निकलता है? '*सिय्योन की बेटी दाख की बारी में झाड़ी की तरह, बगीचे में फलों के गोदाम की तरह, घेराबंदी में पड़े नगर की तरह रह गई है*' (-8)। हमारी आत्मा के इस उजाड़पन को दिखाते हुए, प्रेरित ने यह भी कहा: '*और जैसे उन्होंने अपनी समझ में परमेश्वर को मानना उचित नहीं समझा, वैसे ही परमेश्वर ने उन्हें एक भ्रष्ट मन के हवाले कर दिया, ताकि वे ऐसे काम करें जो मनुष्यों के योग्य नहीं हैं— जो हर प्रकार के अधर्म, दुष्टता, छल, लोभ और कपट से भरे हुए हैं; ईर्ष्या, हत्या, कलह, छल और कपट से भरे हुए हैं; फुसफुसाने वाले, बदनाम करने वाले, ईश्वर-निंदा करने वाले, उपद्रवी, घमंडी, अहंकारी, बुराई के आविष्कारक, माता-पिता की अवज्ञा करने वाले, अज्ञानी, हठी: प्रेमहीन, अविश्वसनीय, निर्दयी। परन्तु कुछ ऐसे भी हैं, जिन्होंने परमेश्वर के न्याय को समझ लिया है— कि जो ऐसे काम करते हैं वे मृत्यु के योग्य हैं— वे न केवल स्वयं उन्हें करते हैं, बल्कि उन्हें करने वालों की सहमति भी देते हैं।*' *इसी कारण से परमेश्वर ने उन्हें अपमानजनक वासनाओं के हवाले कर दिया, ताकि वे आपस में अपने-अपने शरीरों को अपवित्र करें*' (रोमियों 1:28–32, 26, 24)। और इससे क्या परिणाम निकलता है? यह कहता है, '*परमेश्वर का क्रोध स्वर्ग से प्रगट होता है, जो मनुष्यों के सब अधर्म और निर्दोषिता के विरुद्ध है*' (पद 18)।

36. आत्मा के इस उजाड़पन को सूचित करते हुए, प्रभु ने कहा: '*हे यरूशलेम, हे यरूशलेम, जो भविष्यद्वक्ताओं को मार डालता है और तेरे पास भेजे गए लोगों को पत्थर से घात करता है, मैं कितनी बार तेरे बच्चों को एक साथ इकट्ठा करना चाहता था, जैसे एक मुर्गी अपने चूजों को अपने पंखों के नीचे इकट्ठा करती है, परन्तु तुमने न चाहा!' तुम्हारा घर तुम्हारे लिए उजाड़ छोड़ दिया गया है*" (मत्ती 23:37–38)। यशायाह ने फिर से इस तथ्य को देखा कि हम, साधुओं के रूप में, अपनी सेवाएँ केवल शारीरिक रूप से करते हैं, जबकि ईश्वर की आध्यात्मिक सेवा की उपेक्षा करते हैं; फिर भी, इसके बावजूद, हम अपने आप में ही डूबे रहते हैं। उन्होंने कहा: '*हे सोदोम के हाकिमों, यहोवा का वचन सुनो; हे गोमोर्रा के लोगो, परमेश्वर की विधि पर ध्यान दो।' 'मेरे लिए तुम्हारे बहुत से बलिदानों का क्या उपयोग?' प्रभु कहते हैं। 'मैं मेषों की होमबलि और बछड़ों की चर्बी से तंग आ गया हूँ, मुझे बैलों और बकरियों के लहू की कोई इच्छा नहीं है। क्योंकि तुम्हारे हाथों से ये वस्तुएँ मेरे भवन में लाने के लिए किसने माँगी हैं? और यदि तुम मुझे अनाज का सप्तमांश भी ला दो, तो वह भी व्यर्थ है: धूप मेरे लिए एक घृणास्पद वस्तु है; मैं तुम्हारे नवचंद्रमा, तुम्हारे सब्बाथ, और तुम्हारे नियत पर्वों को सहन नहीं करूँगा; मेरी आत्मा तुम्हारे उपवासों, तुम्हारी गंभीर सभाओं, और तुम्हारे उत्सवों से घृणा करती है; तुम मेरे लिए एक बोझ बन गए हो; मैं अब और तुम्हारे पापों का भार नहीं उठा सकता। जब तुम मेरी ओर अपने हाथ फैलाओगे, तब मैं तुमसे अपनी आँखें फेर लूँगा; भले ही तुम अपनी प्रार्थनाएँ बढ़ा दो, मैं तुम्हें नहीं सुनूँगा।*" ऐसा क्यों है? *क्योंकि,* वह कहता है, '*तुम्हारे हाथ खून से भरे हैं*' (यशायाह 1:10-15), चूँकि '*जो अपना भाई से बैर रखता है, वह मनुष्यहत्या है*' (1 यूहन्ना 3:15)। इसलिए, प्रेम रहित कोई भी तपस्या परमेश्वर को अप्रिय है।

37. और परमेश्वर, हमारी कपटता को दूर से उजागर करते हुए, कहते हैं: '*ये लोग अपने होठों से मेरी आराधना करते हैं, पर उनका हृदय मुझसे दूर है; वे व्यर्थ में मेरी आराधना करते हैं* – और इसी तरह (यशायाह 29:13)। निस्सन्देह, जो कुछ हमारे प्रभु ने फरीसियों को फटकारते हुए कहा, वह आज के हम पाखंडियों पर भी बहुत उपयुक्त है, जिन्हें इतनी कृपा मिली है, फिर भी वे चरित्र में उनसे भी बदतर निकलते हैं। क्या हम भी भारी और असहनीय बोझ नहीं बाँधते और उन्हें लोगों के कंधों पर लाद देते हैं, जबकि हम स्वयं उन्हें एक उँगली से भी छूना नहीं चाहते (लूका 11:46)? – क्या हम भी अपने सब काम मनुष्यों के देखने के लिए नहीं करते (मत्ती 6:5)? क्या हमें भी दावतों में आदर

का स्थान और सभाओं में पहलि बैठना पसंद नहीं है? क्या हमें भी मनुष्यों से 'गुरु, गुरु' कहलाना पसंद नहीं है – और जो हमें ऐसा आदर नहीं देते, उन्हें हम मृत्यु तक सताते नहीं हैं? क्या हमने समझ की कुंजी तो नहीं ले ली है, परन्तु इसके द्वारा मार्ग खोलने के बजाय, हम लोगों के सामने स्वर्ग का राज्य बंद कर देते हैं—ताकनि तो हम स्वयं प्रवेश करें, और न ही दूसरों को प्रवेश करने दें? क्या हम अंधा मार्गदर्शक नहीं हैं, जो मक्खी को तो छान लेते हैं पर ऊँट को नगिल जाते हैं? क्या हम प्याले और थाल की केवल बाहरी सफाई नहीं करते, जबकभीतर हम लूट, लालच और अत्याचार से भरे रहते हैं? क्या हम पुदीना, सोआ और जीरे का दसवाँ हस्सा तो देते हैं, पर न्याय और ईश्वर के प्रेम की उपेक्षा नहीं करते? क्या हम सीलबंद कब्रों जैसे नहीं हैं, जो बाहर से लोगों को धर्मी दखिाई देते हैं, जबकभीतर हम कपट, अराजकता और हर तरह की अशुद्धता से भरे हैं? क्या हम शहीदों की कब्रें नहीं बनाते और प्रेरतिों के अवशेषों को नहीं सजाते, जबकअपने चरत्रि में हम उन्हीं जैसे हैं जन्होंने उन्हें मारा (मत्ती 23: 3–32)? तब, इस दशा में हमारे लिए कौन नहीं रोएगा? हमारी बन्धुवाई पर कसिका मन नहीं पसीजेगा? क्योंक इसी कारण, हम, परमेश्वर के आदरणीय पुत्र, मट्टी के बरतन गनि गए हैं। इसी कारण, हमारा सोना मुरझा गया है, और हमारी उत्तम चाँदी बदल गई है (वलािपगीत 4:1–2)। इसी कारण, हम, सयिोन के नज़ीरी, जो बर्फ़ से भी अधकि चमकदार थे, इथयिोपयिाई के समान हो गए हैं; यद्यपहिम दूध से भी अधकि श्वेत थे, हम स्याही से भी अधकि काले हो गए हैं। इसी कारण, हमारा मुख कोयले से भी अधकि काला हो गया है; हमारी अधर्मता सदोम की अधर्मता से भी अधकि बढ़ गई है; इसी कारण, हम, दनि और प्रकाश के पुत्र, रात और अंधकार के पुत्र बन गए हैं (1 थस्सि. 5:5)। इसी कारण, हम, राज्य के पुत्र, गेहन्ना के पुत्र बन गए हैं। इसी कारण, हम, परमप्रभु के पुत्र, मनुष्यों की तरह मरते हैं, और राजकुमारों में से एक की तरह गरि जाते हैं (भजन संहिता 80:7)। इसी कारण हमें अधर्मी शत्रुओं के हाथ में सौंप दयिा गया है—अर्थात् दुष्ट और उग्र राक्षसों के—और पृथ्वी पर सबसे अधर्मी और कपटी शासक के, अर्थात् उनके अधपितशैतान के; क्योंक हमने पाप कयिा है और अधर्म कयिा है, हमारे प्रभु परमेश्वर की आज्ञाओं का उल्लंघन कयिा है (दानय्येल 3, 29–32), जन्होंने परमेश्वर के पुत्र को पैरों तले रौंद डाला और वाचा के लहू को तुच्छ समझा (इब्रानयिों 10:29)। परन्तु हे प्रभु, *'अपने नाम के लिए हमें सदा के लिए त्याग न दे; अपनी वाचा को नष्ट न कर, और अपनी दया को हम से न हटा'* (दानय्येल 3: 34–35), स्वर्ग में हमारे पिता, अपनी उदारता के लिए, अपने एकलौते पुत्र की सद्भावना के लिए, और अपने पवत्रि आत्मा की दया के लिए। *"हे प्रभु, हमारे पूर्व के अधर्म को याद न करें; हे प्रभु, आपकी उदारताएँ शीघ्र हमारे समीप आएं, क्योंकहिम अत्यंत दरद्रि हो गए हैं। हे परमेश्वर, हमारे उद्धारकर्ता, अपने नाम की महमिा के लिए हमारी सहायता करें; हे प्रभु, हमें बचाएं और अपने नाम के लिए हमारे पापों से शुद्ध करें"* (भजन संहिता 78, 8:9), हमारे मूल को याद करते हुए, जसि आपके एकलौते पुत्र ने मानवता के प्रतप्रिेम से हमसे लयिा और स्वर्ग में हमारे लिए धारण कयिा, हमें उद्धार की एक दृढ़ आशा प्रदान करते हुए, कहीं हम नराशा के कारण और भी बुरे न हो जाएँ। उसके बहुमूल्य लहू के लिए हमारी सहायता करें और हमें बचाएँ, जो उसने संसार के जीवन के लिए बहाया; उसके पवत्रि प्रेरतिों और शहीदों के लिए, जन्होंने उसके नाम के लिए अपना लहू बहाया; और पवत्रि भवष्यिद्वक्ताओं, पतिरों और कुलपतयिों के लिए, जन्होंने आपके पवत्रि नाम को प्रसन्न करने का प्रयास कयिा। हे प्रभु, हमारी प्रार्थनाओं को तुच्छ न समझें, और अंत तक हमें न छोड़ें। क्योंकहिम अपनी धार्मकिता पर भरोसा नहीं करते, बल्कआपकी दया पर भरोसा करते हैं, जसिसे आप अपने लोगों का पालन-पोषण करते हैं। हम आपसे प्रार्थना करते हैं और आपकी कृपा मांगते हैं, कहिमारे उद्धार के लिए आपके एकलौते पुत्र द्वारा हमारे लिए तैयार कयिा गया संस्कार हमारे लिए नन्दिा का कारण न बने; हमें अपनी उपस्थतिसि दूर न करें। हमारी अयोग्यता को तरिस्कार न करें, बल्कअपनी महान दया के अनुसार हम पर दया करें; और अपनी अनुग्रहों की बहुतायत से, हमें हमारे अधर्म से शुद्ध कर दें, ताक, बनिा कसिी दण्ड के आपकी महमिा के साक्षात दर्शन कर, हम आपके एकलौते पुत्र की सुरक्षा के योग्य ठहरें, और अपने पापों के कपटी और पश्चातापहीन दास न पाए जाएँ। हे सर्वशक्तमिान प्रभु, हमारी प्रार्थना सुनें, क्योंक हम आप के सविाय कसिी अन्य ईश्वर को नहीं जानते; हम आपके नाम का आह्वान करते हैं। तू ही वह है जो सर्व में सर्व कार्य करता है, और तुझ से ही हम हर सहायता की आशा रखते हैं। हे परमेश्वर, स्वर्ग से हमारी ओर देख, और अपनी पवत्रि महमिा के नवास-स्थान से हमें नहिार / *'तब, तेरा जोश और तेरी शक्तकिहाँ है? तेरी दया और अनुग्रह की प्रचुरता कहाँ है, क्योंकतिूने हम पर धीरज रखा है? क्योंकआप हमारे पिता हैं, क्योंकअब्राहम ने हमें जन्म नहीं दयिा, न ही इस्राएल ने हमें जन्म दयिा; परन्तु हे प्रभु, आप हमारे पिता हैं; हमें बचा लीजिए, क्योंकआरम्भ से ही आपका पवत्रि नाम हम पर रहा है"* और आपका एकलौता पुत्र और आपकी पवत्रि आत्मा। *'हे प्रभु, आपने हमें अपने मार्ग से क्यों भटका दयिा, और हमारे हृदय क्यों कठोर कर दिए, जसिसे हम आपसे न डरें?'* हे प्रभु, अपनी पवत्रि कलीसयिा और अपने प्राचीन सभी संतों के लिए, अपने दासों को वापस लाएँ; *'ताकहिम कम से कम आपके पवत्रि पर्वतों का वारसि बनें: हमारे शत्रुओं ने आपके पवत्रि स्थान को रौंद डाला है। हम वैसे ही थे जैसे पुराने दनिों*

में, जब आप हम पर शासन नहीं करते थे, और न ही आपके नाम का हम पर आह्वान कयिा जाता था" (यशायाह 63:15–19)।

38. *'यदि आकाश खुल जाएँ, तो पहाड़ तेरे सामने काँप उठेंगे और पघिल जाएँगे, जैसे आग के सामने मोम पघिलता है; और आग तेरे शत्रुओं को भस्म कर देगी, और तेरा नाम तेरे वरिोधियों में भय उत्पन्न करेगा। जब तू अपने महिमामय कार्य करेगा, तब पहाड़ तेरे सामने काँप उठेंगे। प्राचीन काल से हमने न तो सुना है, और न ही हमारी आँखों ने किसी ऐसे परमेश्वर को देखा है, जो आप के सविाय हो, और उन कामों को जो आप उन लोगों के लिए करेंगे जो आपकी दया की प्रतीक्षा करते हैं। क्योंकि दिया उन लोगों के लिए सुरक्षति है जो धार्मकिता करते हैं, और आपके मार्ग याद कएि जाएंगे: क्योंकि आप क्रोधति थे, और हमने पाप कयिा है।"* – यह कहना बेहतर होगा: हमने पाप कयिा है, और आप क्रोधति थे। *'इसी कारण से हम भटक गए हैं, और हम सब अशुद्ध के समान हो गए हैं, हमारी सारी धार्मकिता मैली ओढ़नी के समान है; और हम अपनी अधर्म के कारण पत्तियों की नाईं मुरझा गए हैं: इसलिए हवा हमें उड़ा ले जाती है, और कोई भी ऐसा नहीं है जो आपके नाम का आह्वान करे, न ही कोई जो आपको दृढ़ता से पकड़ने का स्मरण करे: क्योंकि आपने हमसे अपना मुख फेर लयिा है, और हमें हमारी अधर्म के कारण सौंप दयिा है। और अब, हे प्रभु, तू हमारा पिता है; हम सब तेरे हाथों का काम हैं। हम पर बहुत क्रोध न कर, और हमारी अधर्म को सदा के लिए न याद कर; परन्तु अब हम पर दृष्टि कर, क्योंकि हम सब तेरी प्रजा हैं। तेरा पवत्रि नगर उजाड़ पड़ा है; सयि्योन जंगल के समान हो गया है; यरूशलेम श्राप बन गया है। हमारा पवत्रि भवन, और वह महिमा जसिे हमारे पूर्वजों ने धन्य कहा था, आग में भस्म हो गया है, और हमारी सारी शोभा एक साथ नष्ट हो गई है। और इन सब बातों के लिए, हे प्रभु, आपने सहन कयिा है; आपने चुपचाप रहकर हमें बहुत नीचा दखिाया है"* (यशायाह 64:1–12)।

39. यह आपके प्राचीन लोगों के साथ एक पूर्वाभास के रूप में हुआ था, लेकनि अब यह वास्तव में हम पर घटति हुआ है। *'हम अपने पड़ोसयिों,* यानी राक्षसों, *के लिए एक कहावत बन गए हैं, हमारे चारों ओर के लोगों के लिए एक उपहास और एक मज़ाक'* (भजन संहिता 78:4)। परन्तु स्वर्ग से दृष्टि करके देखो, और अपने पवत्रि नाम के नमित्ति हमारा उद्धार करो। यह अनुग्रह करो कि हम अपने वरिोधीयों की चालाकी को समझें और हमें उनकी युक्तियों से छुड़ाओ। अपनी सहायता हम से न रोको, क्योंकि हम अपने आप में उन पर जय पाने के लिए पर्याप्त नहीं हैं जो हम पर आक्रमण करते हैं; परन्तु तुम हमारे सब शत्रुओं से हमारा उद्धार करने में सामर्थी हो। हे प्रभु, अपनी दया से हमें इस संसार की सभी कष्टों से बचा, ताकि हम निर्मल अंतरात्मा से जीवन के समुद्र को पार करके, आपके भयानक सिंहासन के सामने निर्मल और निष्पाप बनकर प्रकट हों और अनंत जीवन के योग्य ठहरें।

40. यह सब सुनकर और गहरे पश्चाताप से भरकर, भाई ने बूढ़े से आँखों में आँसू लिए कहा: 'जहाँ तक मैं देखता हूँ, पिताजी, मेरे लिए उद्धार की कोई आशा नहीं है। *"क्योंकि मेरे पाप मेरे सरि से ऊपर हो गए हैं"* (भजन संहिता 37:5)। कृपया मुझे बताएं, मुझे क्या करना चाहिए?' बड़े ने उत्तर दयिा: 'मनुष्यों के लिए स्वयं को बचाना असंभव है; परन्तु परमेश्वर के लिए सब कुछ संभव है, जैसा कि प्रभु स्वयं ने कहा (मत्ती 19:26), और इसलिए *"आओ हम अपने आप को उसके सामने स्वीकारोक्ति में प्रस्तुत करें... आओ हम उसके सामने झुकें और प्रणाम करें, और हमें बनाने वाले प्रभु के सामने रोएं: क्योंकि वह हमारा परमेश्वर है"* (भजन संहिता 94: 2:6), क्योंकि हम भविष्यवक्ता यशायाह के द्वारा उनका वचन सुनते हैं: *'जब तुम लौटोगे, तब तुम बच जाओगे'* (यशायाह 30:15)। और फरि: *'क्या यहोवा का हाथ उद्धार करने में असमर्थ है? या क्या उसने अपना कान इतना भारी कर लयिा है कि वह सुन नहीं सकता?' परन्तु तुम्हारे पाप तुम्हारे और परमेश्वर के बीच में आ गए हैं; तुम्हारे पापों के कारण उसने अपना मुँह तुम से फेर लयिा है, ताकि वह दया न करे"* (यशायाह 59:1–2)। वह क्यों कहता है: *"अपने को धोओ, और पवत्रि हो जाओ; मेरी आँखों के साम्हने अपनी आत्मा से दुष्टता दूर करो; अपनी दुष्टता से रुक जाओ; भलाई करना सीखो; न्याय की खोज करो; उत्पीड़ितों की रक्षा करो; अनाथों का न्याय करो; वधिवा का पक्ष लो; और आओ, हम तर्क करें,' यहोवा कहता है। 'यद्य तुम्हारे पाप सुर्ख हों, तो वे हमि के समान श्वेत हो जाएंगे; यद्य वे रक्तवर्ण हों, तो वे ऊन के समान श्वेत हो जाएंगे।' और यदि तुम इच्छुक और आज्ञाकारी हो, तो तुम इस देश की अच्छी वस्तुएँ खाओगे; क्योंकि यहोवा का मुख ये वचन बोल चुका है'* (यशायाह 1:16–20); वह योएल के माध्यम से भी कहते हैं: *"अपने पूरे हृदय से, उपवास, रोने और शोक के साथ मेरी ओर लौट आओ; अपने वस्त्र नहीं, बल्कि अपने हृदय फाड़ो; और अपने प्रभु परमेश्वर की ओर लौट आओ, क्योंकि वह अनुग्रह और दया से भरपूर है, क्रोध में धीमा और अटूट प्रेम में महान है"* (योएल 2, 12–13)। और यहेजकेल *से उसने* आज्ञा दी*: 'कह: हे मनुष्य के पुत्र, इस्राएल के घराने से कह, "हमारे अपराध और हमारे अधर्म हम पर हैं; हम उनसे दबे जा रहे हैं; तो फरि हम कैसे जीवति रह सकते हैं? उनसे कहो: 'जीवति परमेश्वर की यह बात है, मुझे पापी के मरने में कोई आनंद नहीं, बल्कि यह कि दुष्ट अपना मार्ग छोड़कर जीवति रहे: हे इस्राएल के घराने, अपने बुरे मार्गों से लौट आओ; तुम क्यों मरना चाहोगे?'"* (यहे. 33:10–11)। राजाओं की तीसरी पुस्तक, जो परमेश्वर

की भलाई की प्रचुरता को दर्शाती है, यह कहती है: जब आहाब—जो नबूत के दाख की बारी में था, जिसे उसने जेजेबेल द्वारा नबूत की हत्या करके अपनी विरासत में लिया था—ने एलियाह के वचन सुने, जिसने कहा: *'प्रभु इस प्रकार कहता है: क्योंकि तुमने उसी स्थान पर, जहाँ कुत्तों ने उसका लहू चाटा था, वहाँ मारकर कब्ज़ा किया है, इसलिए कुत्ते तुम्हारा लहू भी चाटेंगे... और यिज़्बेल् के कुत्ते उसे यिज्रेएल के उपनगर में नोच डालेंगे।' जब आहाब ने ये बातें सुनीं, तो वह यहोवा के साम्हने से छिप गया; और वह रोता हुआ चला गया, और उसने अपने वस्त्र फाड़े, और बोरी का कपड़ा कमर में बाँधा, और उपवास किया, और दिन-रात 'बोरी का कपड़ा ओढ़े रहा'। "और यहोवा का वचन एलियाह के पास आया, और कहा: 'क्या तूने देखा है कि आहाब ने मेरे सामने कैसे अपना आप नीचा किया है? – इस कारण मैं उसके दिनों में उस पर यह विपत्ति न लाऊँगा'"* (1 राजा 21:19, 23, 27, 29)। और भविष्यवक्ता दाऊद कहते हैं: *'मैंने अपनी अधर्म को मान लिया और अपने पाप को नहीं छिपाया। मैंने कहा, "मैं अपने अधर्म का प्रभु के सामने अंगीकार करूँगा," और आपने मेरे हृदय की दुष्टता को क्षमा कर दिया। इसलिये हर एक भक्तिमान व्यक्ति आवश्यकता के समय आपसे प्रार्थना करेगा'* (भजन संहिता 31:5,6)। सुसमाचार में, प्रभु कहते हैं: *'पश्चाताप करो, क्योंकि स्वर्ग का राज्य निकट आ गया है'* (मत्ती 4:17)। और जब पतरस ने उनसे पूछा: *'प्रभु, मेरा भाई मेरे विरुद्ध कितनी बार अपराध करे, और मैं उसे माफ करूँ—सात बार तक?'* स्वभाव से ही अच्छे और अपनी भलाई में अगणनीय होने के कारण, उन्होंने उससे कहा: *'मैं तुझसे यह नहीं कहता कि सात बार तक, बल्कि सित्तर बार तक सात'* (मत्ती 18:21-22)। ऐसी भलाई की तुलना किससे की जा सकती है? मानव जाति के प्रति ऐसे प्रेम की तुलना हम किससे करें?

४१. इस प्रकार पुराने और नए नियमों से परमेश्वर के भय, तथा मनुष्यों के प्रति उनकी भलाई और प्रेम को जानकर, आइए हम पूरे मन से उनकी ओर लौटें। भाइयों, हम क्यों नाश हों? आओ हम अपने पापी हाथों को शुद्ध करें, अपने द्विमुखी हृदयों को सुधारें, शोक करें, पश्चाताप करें, और अपने पापों पर रोएँ। आओ हम अपने बुरे कर्मों से रुक जाएँ; आओ हम प्रभु की दया पर भरोसा करें, उसकी सजा से डरें, और उसकी आज्ञाओं का पालन करने का संकल्प लें। आओ हम एक-दूसरे से पूरे दिल से प्रेम करें; आओ हम कहें: 'तुम हमारे भाई हो' – और जो हमें घृणा करते और अपमानित करते हैं, उनके द्वारा भी प्रभु का नाम महिमामय हो। जब हम एक-दूसरे से परीक्षा में पड़ें तो एक-दूसरे को क्षमा करें, क्योंकि हम सभी अपने सामान्य शत्रु से घिरे हुए हैं। आइए हम अपने बुरे विचारों का विरोध करें, और ईश्वर को अपना सहयोगी बनाएँ, तथा इस प्रकार अपने भीतर से दुष्ट और अशुद्ध आत्माओं को भगाएँ। आइए हम शरीर को आत्मा के अधीन करें, उसे तपस्या के सभी प्रकार के अभ्यासों द्वारा वश में करें और वश में लाएँ। आइए हम स्वयं को शरीर और आत्मा की हर अशुद्धि से शुद्ध करें। आइए हम एक दूसरे को प्रेम और अच्छे कामों में प्रोत्साहित करें। आइए हम दूसरों से ईर्ष्या न करें, और न ही उन लोगों के विरुद्ध उत्तेजित हों जो हमसे ईर्ष्या करते हैं। आइए हम एक दूसरे के प्रति सहानुभूति दिखाएँ, और नम्रता से एक दूसरे को चंगा करें। आइए हम एक दूसरे की निंदा या उपहास न करें, क्योंकि हम एक दूसरे के शरीर के अंग हैं। आइए हम उदासीनता और लापरवाही को त्याग दें, और आइए हम दुष्ट आत्माओं के विरुद्ध साहसपूर्वक संघर्ष करें। हमारे पास पिता के पास हमारे लिए मध्यस्थ, धर्मी यीशु मसीह हैं; और वे हमारे पापों का प्रायश्चित हैं: अतःआइए हम उनसे शुद्ध हृदय और अपनी पूरी आत्मा से प्रार्थना करें, और वे हमारे पापों को क्षमा करेंगे। *'क्योंकि जो सच्चे मन से उसकी पुकार करते हैं, प्रभु उन सब के निकट है* (भजन संहिता 144:18)। यह क्यों कहा गया है: *'प्रभु को स्तुति का बलिदान चढ़ाओ, और परमप्रभु को अपनी मनसा पूरी करो; अपनी संकट के दिन मुझ से पुकार, और मैं तुझे निकाल लूंगा, और तू मेरी महिमा करेगा'* (भजन संहिता 49: 14:15). और यशायाह फिर क्या कहते हैं? *'हर अन्याय का जुआ ढीला कर दो, उत्पीड़न के लेख फाड़ डालो, उत्पीड़ितों को आज़ाद कर दो, और हर अनुचित काम को फाड़ डालो। अपनी रोटी भूखे को तोड़कर खिलाओ, और बेघर और दरिद्रों को अपने घर में ले आओ; यदि कोई नंगा हो तो उसे अनदेखा न करना, और अपने ही भाई-बंधुओं को तुच्छ न समझना। तब तेरा प्रकाश भोर के समय उदय होगा, और तेरा चंगापन शीघ्र चमकेगा; तेरी धार्मिकता तेरे आगे-आगे चलेगी, और यहोवा की महिमा तेरे चारों ओर रहेगी*। और इसके बाद क्या होगा? – *"तब तुम पुकारोगे, और परमेश्वर तुम्हें उत्तर देगा; तुम अभी बोल ही रहे होगे, कि वह कहेगा: 'मैं यहाँ हूँ।' तब तेरा प्रकाश अँधेरे में चमकेगा, और तेरा घोर अँधेरा दोपहर के समान होगा; और तेरा परमेश्वर सदा तेरे संग रहेगा: और तेरी आत्मा की तृष्णा पूरी होगी"* (यशायाह 58:6–10)। क्या आप देखते हैं कि जब हम अन्याय के हर बंधन को समाप्त कर देते हैं, और अपनी पूरी आत्मा से अपने पड़ोसी के प्रति भलाई करने का मन बनाते हैं, तो हम ज्ञान के प्रकाश से परिधानित होंगे, दुष्टता की कामनाओं से मुक्त होंगे, हर सद्गुण से परिपूर्ण होंगे, परमेश्वर की महिमा के प्रकाश से प्रबुद्ध होंगे, और सभी अज्ञानता से मुक्त होंगे; – और जैसे ही हम मसीह से प्रार्थना करेंगे, हमें सुना जाएगा, और परमेश्वर हमेशा हमारे साथ रहेंगे और हम दैवीय इच्छाओं से परिपूर्ण होंगे।

४२. हम एक दूसरे से प्रेम करें, और परमेश्वर हमसे प्रेम करेंगे। हम एक दूसरे के प्रति धीरज रखें, और वह हमारे पापों के प्रति धीरज रखेंगे। हम बुराई का बदला बुराई से न लें, और वह हमारे पापों के अनुसार हमसे बदला नहीं लेगा। हम अपने भाइयों को क्षमा करने में अपने पापों की क्षमा पाएंगे; क्योंकि हमारे प्रति ईश्वर की दया हमारे पड़ोसियों के प्रति हमारी दया में छिपी है। इसीलिए प्रभु ने कहा: *'क्षमा करो, और तुम्हें क्षमा किया जाएगा'* (लूका 6:37)। और: *'क्योंकि यदि तुम मनुष्यों के अपराध क्षमा करोगे, तो तुम्हारा स्वर्गीय पिता भी तुम्हें क्षमा करेगा'* (मत्ती 6:14)। और फिर: *'धन्य हैं दयालु, क्योंकि उन्हें दया मिलेगी'* (मत्ती 5:7)। और: *'जिस नाप से तुम नापोगे, उसी से तुम्हारे लिये भी नापा जाएगा'* (मत्ती 7:2)। इस प्रकार प्रभु ने हमारे लिए उद्धार का मार्ग तैयार किया है, *'और हमें ईश्वर की संतान बनने का अधिकार दिया है'* (यूहन्ना 1:12)। इसके बाद, हमारा उद्धार पूरी तरह से हमारे अपने हाथों में है।

४३. अतःआओ हम स्वयं को पूरी तरह से प्रभु के हवाले कर दें, ताकि हम उन्हें पूरी तरह से प्राप्त कर सकें, और उनके द्वारा देवता बन सकें। क्योंकि इसी लिए वे स्वभाव से परमेश्वर और प्रभु होते हुए भी मनुष्य बने। आओ हम उन्हें पूरे हृदय से समर्पित हो जाएँ, और वे हमारे शत्रुओं को निरन्तर परास्त करेंगे। *'काश कि मेरी प्रजा ने मेरी सुनी होती,'* वह कहते हैं, *'हे इस्राएल, काश कि वे मेरी राहों पर चले होते, तो मैं उनके लिए उनके शत्रुओं को वश में कर देता; और मैं उन पर अपना हाथ रख देता जो उन्हें दबाते थे'* (भजन संहिता 80:14-15)। आओ हम अपनी सारी आशा केवल उसी पर रखें; आओ हम अपना सारा दुख उसी पर डाल दें – और वह हमें हर क्लेश से छुड़ाएगा और हमारे जीवन भर हमारा सहारा रहेगा। आइए हम हर व्यक्ति से अपने पूरे हृदय से प्रेम करें; फिर भी अपनी आशा किसी भी मनुष्य में न रखें। केवल तब तक ही हमारे मित्र हमारी सहायता करते हैं और हमारे शत्रु हमारे सामने कमज़ोर होते हैं, जब तक प्रभु हमारी रक्षा करते हैं। लेकिन जब प्रभु हमें त्याग देते हैं, तो हमारे मित्र भी हमें (बेबस छोड़कर) त्याग देते हैं, और हमारे शत्रु हम पर विजय प्राप्त कर लेते हैं। परन्तु जो अपने आप पर भरोसा रखता है वह अचम्भित करने वाले गिरावट में गिरेगा, जबकि जो यहोवा से डरता है वह ऊँचा किया जाएगा। इसीलिए दाऊद ने कहा: *'मैं अपने धनुष पर भरोसा नहीं करता, और न मेरी तलवार मुझे बचाएगी; क्योंकि तू ने हमें हमारे उत्पीड़कों से बचाया है, और तू ने हमारे घृणा करने वालों को लज्जित किया है'* (भजन संहिता 43:7–8)।

४४. हम ऐसे विचारों को मन में न लाएँ जो हमारे पापों को कम करके दिखाते हैं और हमें धोखा देकर यह आश्वासन देते हैं कि वे पहले ही क्षमा हो चुके हैं। हमें ऐसे विचारों से सावधान करने के लिए प्रभु ने कहा: *'झूठे भविष्यद्वक्ताओं से सावधान रहो, जो भेड़ों के वेश में तुम्हारे पास आते हैं, परन्तु भीतर से भयानक भेड़िये हैं'* (मत्ती ७:१५). जब तक हमारा मन पाप से परेशान है, जान लें कि हमें अभी तक पाप-क्षमा नहीं मिली है; क्योंकि हमने निश्चित रूप से अभी तक पश्चाताप के योग्य फल नहीं दिए हैं। पश्चाताप का फल आत्मा का निर्लिप्त भाव है; और निर्लिप्तता ही पाप का विनाश है। यदि कभी-कभी हम वासनाओं से परेशान होते हैं और कभी नहीं होते हैं, तो हममें अभी पूर्ण निर्लिप्तता नहीं है। अत; हमने पापों का पूर्ण क्षमादान प्राप्त नहीं किया है। हम पवित्र बपतिस्मा के द्वारा मूल पाप से मुक्त हुए; उन पापों से, जिन्हें हमने बपतिस्मा के बाद करने का साहस किया, हम केवल पश्चाताप के द्वारा ही मुक्त होते हैं।

४५. अतःहम ईमानदारी से पश्चाताप करें, ताकि अपने भावों से मुक्त होकर, हम पापों की क्षमा प्राप्त कर सकें। हम सांसारिक वस्तुओं को तुच्छ समझें, कहीं ऐसा न हो कि उन पर दूसरों से झगड़कर, हम प्रेम की आज्ञा को तोड़ दें और ईश्वर के प्रेम से दूर हो जाएँ। हम आत्मा के अनुसार चलें और शरीर की इच्छाओं को पूरा न करें (गलातियों ५:१६)। आओ हम स्वयं को जगाएँ और होश में आएँ, और लापरवाही की नींद को झटक दें; आओ हम उद्धारकर्ता के पवित्र तपस्वियों का अनुकरण करें, और उनके कर्मों का अनुकरण करें, जो पीछे है उसे भूलकर आगे की ओर बढ़ें। आओ हम उनके अथक उत्साह, उनकी प्रबल लगन, आत्म-संयम में उनकी दृढ़ता, ब्रह्मचर्य की पवित्रता का अनुकरण करें, धैर्य की दृढ़ता, अटूट शांति, करुणा की निष्ठा, अविचल नम्रता, उत्साह की ऊष्मा, सच्चा प्रेम, उच्च विनम्रता, सांसारिक वस्तुओं से पूर्ण निर्लिप्तता, साहस, परोपकार, और सौम्य व्यवहार। आइए हम सुख-भोग की अपनी प्रवृत्ति में न फँसें; आइए हम अपने विचारों को शिथिल न होने दें; आइए हम अपने विवेक को कलंकित न करें। आइए हम सभी के साथ शांति और पवित्रता में जीवन यापन करें, जिसके बिना कोई भी प्रभु को नहीं देखेगा (इब्रानियों 12:14)। सबसे बढ़कर, भाइयों, हम संसार और इस संसार के अधिपति से भागें। हम देह और जो कुछ भी देह संबंधी है, उसे त्याग दें। हम स्वर्ग में आरोहण करें और वहाँ अपना निवास करें, दिव्य प्रेरित का अनुकरण करते हुए, ताकि हम जीवन के राजकुमार तक पहुँच सकें और जीवन के झरने में से भाग ले सकें। आओ, हम स्वर्गदूतों और प्रधान स्वर्गदूतों के साथ मिलकर एक कोरस बनाएँ और हमारे प्रभु यीशु मसीह की स्तुति गाएँ, जिसे पिता और पवित्र आत्मा के साथ महिमा और सामर्थ्य मिले, अब और सदा और युगानुयुग। आमीन।

२. प्रेम पर चार सौ अध्याय

एलपिडियिस के लिए प्रस्तावना

मैं आपके सम्मान में, फादर एलपिडियिस, तपस्या जीवन पर एक ग्रंथ, और प्रेम पर चार सौ अध्यायों का एक ग्रंथ भेज रहा हूँ—जो चार सुसमाचारों के बराबर है—जो शायद आपकी अपेक्षाओं पर पूरी तरह से खरा न उतरे; फरि भी, हम इससे बेहतर कुछ नहीं कर सकते। तथापि, आपकी पवित्रता को सूचित कर दूँ कि यह भी मेरे अपने मन का फल नहीं है। बल्कि, पवित्र पिताओं के लेखन को पढ़ने के बाद, उनसे वह सब कुछ एकत्र करने के बाद जो मेरे विषय की ओर मन का ध्यान आकर्षित करता है, और सुलभ रटने तथा मानसिक पुनरीक्षण के लिए, कहावतों या अध्यायों के रूप में बहुत कुछ को थोड़े में संक्षेपित करने के बाद, – मैं यह आपकी विनम्रता को भेज रहा हूँ, आपसे निवेदन है कि इसे एक अच्छे इरादे से पढ़ें, केवल लाभ की तलाश करें, वाक्पटुता की कमी पर कोई ध्यान न दें, और मेरी इस अयोग्यता के लिए प्रार्थना करें, जो किसी भी आध्यात्मिक फल से रहित है। मैं यह भी निवेदन करता हूँ कि आप जो लिखा गया है उसे बोझ न मानें (जैसे कि मैं आपके विवेक पर भारी बोझ लाद रहा हूँ); क्योंकि मैं आज्ञाकारिता का आदेश पूरा कर रहा हूँ। मैं यह इसलिए कह रहा हूँ क्योंकि आज हम में से कई लोग उपदेशात्मक शब्दों से विवेक पर बोझ डालते हैं, जबकि बहुत कम लोग अपने कर्मों से सिखाते हैं, या उनसे सीखते हैं। प्रत्येक अध्याय का अधिक ध्यान से अध्ययन करने का कष्ट उठाएँ। क्योंकि मुझे नहीं लगता कि हर बात हर किसी के लिए आसानी से समझ में आ जाती है; बल्कि इसका बहुत कुछ भाग कई लोगों द्वारा गहन निरीक्षण की मांग करेगा, भले ही वह सतही तौर पर बहुत सरलता से व्यक्त किया गया हो। यह हो सकता है कि उनमें इस प्रकार प्रकट किया गया यह आत्मा के लिए लाभदायक सिद्ध हो। लेकिन ऐसा निश्चित रूप से परमेश्वर की कृपा से होगा, यदि कोई संशयपूर्ण भावना से नहीं, बल्कि परमेश्वर के भय और प्रेम से पढ़ता है। जहाँ तक किसी ऐसे व्यक्ति का सवाल है जो इस या किसी अन्य पुस्तक को आध्यात्मिक लाभ के लिए नहीं, बल्कि लेखक की निंदा करने के लिए वाक्य चुनने के लिए पढ़ता है, ताकि वह खुद को उससे अधिक जानकार दिखा सके, ऐसे व्यक्ति को कहीं भी, कभी भी, या किसी भी तरह से कुछ भी उपयोगी प्रकट नहीं होगा।

प्रेम पर प्रथम सेंटुरिया

1. प्रेम आत्मा का एक परोपकारी स्वभाव है, जिसके द्वारा वह अस्तित्व में मौजूद किसी भी चीज़ को ईश्वर के ज्ञान से श्रेष्ठ नहीं मानती। लेकिन जो कोई भी सांसारिक किसी भी चीज़ से लगाव रखता है, उसके लिए ऐसा प्रेमपूर्ण स्वभाव प्राप्त करना असंभव है।

2. प्रेम निर्लिप्तता से उत्पन्न होता है; निर्लिप्तता ईश्वर में विश्वास से; विश्वास धैर्य और उदारता से; ये सभी आत्म-संयम से; आत्म-संयम ईश्वर के भय से; और ईश्वर का भय प्रभु में विश्वास से।

3. जो प्रभु में विश्वास करता है, वह नरक की यातनाओं से डरता है। जो इन यातनाओं से डरता है, वह वासनाओं से दूर रहता है। जो वासनाओं से दूर रहता है, वह धैर्यपूर्वक कष्टों को सहन करता है। जो कष्टों को सहन करता है, वह अपनी आशा ईश्वर में रखता है। ईश्वर में आशा मन को हर सांसारिक लगाव से अलग करती है। इस प्रकार अलग हुआ मन ईश्वर से प्रेम करने लगेगा।

४. जो ईश्वर से प्रेम करता है, वह ईश्वर के ज्ञान को उसकी सभी सृष्टि से श्रेष्ठ मानता है, और उत्सुकता से उसकी निरंतर खोज करता है।

5. यदि जो कुछ भी अस्तित्व में है, वह ईश्वर के द्वारा और ईश्वर के लिए है; और ईश्वर को सबसे अच्छी तरह उसी से जाना जाता है जो उनके द्वारा उत्पन्न हुआ है: तो जो व्यक्ति ईश्वर से मुंह मोड़कर निम्न चीजों में स्वयं को व्यस्त रखता है, वह इस बात को दर्शाता है कि वह ईश्वर की अपेक्षा उन चीजों को अधिक पसंद करता है जो उनके द्वारा उत्पन्न हुई हैं।

6. जिसका मन प्रेम से ईश्वर से बँधा है, वह सभी दृश्यमान वस्तुओं को शून्य मानता है, यहाँ तक कि अपने शरीर को भी, जैसे कि वह उससे अपरिचित हो।

7. यदि आत्मा शरीर से श्रेष्ठ है, और उसे बनाने वाला ईश्वर संसार से अतुलनीय रूप से श्रेष्ठ है: तो जो व्यक्ति आत्मा की अपेक्षा शरीर को, और ईश्वर द्वारा रचित संसार की अपेक्षा स्वयं ईश्वर को प्राथमिकता देता है, वह मूर्तिपूजकों से कोई अलग नहीं है।

8. जिसने अपना मन ईश्वर के प्रति प्रेम से और उसकी उपस्थिति में रहने से हटा लिया है, और उसे किसी भी सांसारिक वस्तु से जोड़ दिया है, वह शरीर को आत्मा से, और सृष्टिकर्ता ईश्वर को उस सृष्टि से, जो उसी के द्वारा उत्पन्न हुई है, अधिक प्राथमिकता देता है।

९. यदि मन का जीवन ज्ञान का प्रबोधन है, और यह प्रकाश ईश्वर के प्रति प्रेम से उत्पन्न होता है, तो यह कहना सही है कि दिव्य प्रेम से ऊँचा कुछ भी नहीं है।

10. जब प्रेम से आकर्षित होकर, मन ईश्वर की ओर उड़ान भरता है, तो वह न तो स्वयं को और न ही अस्तित्व में मौजूद किसी अन्य चीज़ को देखता है। असीम दिव्य प्रकाश से प्रबुद्ध होकर, वह सारी सृष्टि के प्रति उदासीन हो जाता है, ठीक वैसे ही जैसे जब सूरज चमकता है तो भौतिक आँख तारों को नहीं देख पाती।

11. सभी सद्गुण ईश्वर से प्रेम करने में मन की सहायता करते हैं, लेकिन सबसे ऊपर शुद्ध प्रार्थना है। इसके द्वारा ईश्वर तक उठाया गया मन, जो कुछ भी अस्तित्व में है, उससे परे हो जाता है।

12. जब, प्रेम के द्वारा, मन दिव्य ज्ञान से मोहित हो जाता है और, सभी अस्तित्वमान चीजों से परे जाकर, दिव्य अनंतता को जान लेता है: तब, दिव्य यशायाह के उदाहरण का अनुसरण करते हुए, आश्चर्य के माध्यम से अपनी तुच्छता का एहसास कर, वह इस नबी के शब्दों को ईमानदारी से उद्घोषित करता है: *'हाय, मैं बर्बाद हो गया! क्योंकि मैं अशुद्ध होंठों वाला मनुष्य हूँ, और मैं अशुद्ध होंठों वाले लोगों के बीच रहता हूँ: फिर भी मैंने अपनी आँखों से सेनाओं के स्वामी राजा को देखा है'* (यशायाह 6:5)।

13. जो ईश्वर से प्रेम करता है, वह प्रत्येक मानव से स्वयं के समान प्रेम किए बिना नहीं रह सकता, यद्यपि वह उन लोगों के भावों को अनुमोदित नहीं करता जो अभी तक शुद्ध नहीं हुए हैं। अत; जब वह उनका धर्म-परिवर्तन और सुधार देखता है, तो वह असीम और अकथनीय आनंद के साथ हर्षित होता है।

14. एक अशुद्ध, भावुक आत्मा कामुक और घृणित विचारों से भरी होती है।

15. जो कोई भी अपने हृदय में किसी भी व्यक्ति के प्रति, किसी भी अपराध के लिए, घृणा का अंश महसूस करता है, वह परमेश्वर के प्रेम से पूरी तरह से अपरिचित है। क्योंकि परमेश्वर का प्रेम किसी व्यक्ति के प्रति घृणा को किसी भी तरह से सहन नहीं करता है।

१६. 'जो मुझ से प्रेम करता है,' प्रभु कहते हैं, 'वह मेरी आज्ञाओं को पालन करेगा' (यूहन्ना १४:१५)। 'और मेरी आज्ञा यह है, कि तुम एक दूसरे से प्रेम करो' (यूहन्ना १५:१२)। इसलिए, जो अपने पड़ोसी से प्रेम नहीं करता, वह आज्ञाओं का पालन नहीं करता; और जो आज्ञाओं का पालन नहीं करता, वह प्रभु से भी प्रेम नहीं कर सकता।

17. धन्य है वह व्यक्ति जो सभी से समान रूप से प्रेम कर सकता है।

18. धन्य है वह व्यक्ति जो किसी भी नश्वर या अस्थायी वस्तु से लगाव नहीं रखता।

19. धन्य है वह मन जो सभी प्राणियों से परे जाकर, दिव्य सौंदर्य में अनवरत आनंदित होता है।

20. जो कोई, कामुकता की हद तक शरीर की परवाह करते हुए, किसी भी क्षणिक बात पर अपने पड़ोसी से रंजिश रखता है, वह सृष्टिकर्ता के बजाय प्राणी की सेवा करता है।

21. जो अपनी देह को भोग-विलास और रोग से बचाता है, उसमें महान कल्याण की सेवा में एक सहकर्मचारी होता है।

22. जो सभी सांसारिक इच्छाओं से दूर भागता है, वह स्वयं को सभी सांसारिक दुखों से ऊपर रखता है।

23. जो ईश्वर से प्रेम करता है, वह निःसंदेह अपने पड़ोसी से भी प्रेम करता है। और ऐसा व्यक्ति अपने धन का संचय नहीं करता, बल्कि उसे ईश्वरीय तरीके से प्रबंधित करता है, और जो भी माँगता है उसे देता है।

24. जो परमेश्वर का अनुकरण करते हुए दान का अभ्यास करता है, वह शारीरिक आवश्यकताओं के मामलों में दुष्ट और धर्मात्मा, धर्मी और अधर्मी के बीच कोई भेदभाव नहीं करता है। लेकिन वह सभी को उनकी आवश्यकता के अनुपात में समान रूप से वितरित करता है; यद्यपि वह दुष्टों की तुलना में धर्मात्माओं को उनकी इच्छा की अच्छी प्रवृत्ति के कारण प्राथमिकता देता है।

25. जैसे परमेश्वर, जो स्वभाव से अच्छा और निर्लिप्त है, सभी को अपनी सृष्टि के रूप में समान रूप से प्रेम करता है, फिर भी वह सदाचारी को उनके चरित्र के कारण अपना समान मानकर गौरवान्वित करता है, जबकि दुष्टों पर अपनी दया के कारण दया दिखाता है, और, इस जीवन में उन्हें दंड देकर, उन्हें पश्चाताप की ओर लाता है: इसी प्रकार एक विवेकी और संवेग-रहित व्यक्ति भी सभी लोगों से समान रूप से प्रेम करता है – सदाचारी से स्वभावतःऔर उनकी इच्छा की भलाई के लिए, और दुष्टों से स्वभावतःऔर करुणा के कारण, उन पर दया दिखाते हुए जैसे कि वे मूर्ख हैं और अंधकार में चलते हैं।

26. प्रेम का भाव न केवल अपनी संपत्ति के वितिरण से, बल्कि उससे भी अधिक ईश्वर के वचन की शिक्षा और शारीरिक सेवा द्वारा प्रकट होता है।

27. जिसने सच्चे मन से सांसारिक चीज़ों का त्याग कर दिया है और बिना कपट के प्रेम से अपने पड़ोसी की सेवा करता है, वह हर तरह के जुनून से अधिक शीघ्रता से मुक्त हो जाता है और दिव्य प्रेम तथा दिव्य ज्ञान का सहभागी बन जाता है।

28. जिसने अपने भीतर दिव्य प्रेम प्राप्त कर लिया है, वह दिव्य यिर्मयाह की तरह, *'अपने प्रभु परमेश्वर का अनुसरण करने से नहीं थकता'* (यिर्म. 17:16); बल्कि वह हर परिश्रम, अपमान और निंदा को धैर्य से सहन करता है, और किसी के प्रति भी कोई द्वेष नहीं रखता।

29. जब कोई आपको अपमानित करता है, या किसी भी तरह से अपमानित करता है: क्रोध के विचारों से सावधान रहें, कहीं वे इस अपमान के कारण आपको प्रेम से अलग करके, आपको घृणा के क्षेत्र में न ले जाएँ।

30. जब आप अपमान या अनादर से व्यथित हों, तो जान लें कि आपको इससे बहुत लाभ हुआ है, क्योंकि इस अपमान के द्वारा, परमेश्वर की कृपा से आपकी व्यर्थता दूर हो गई है।

31. जैसे आग की याद शरीर को गर्म नहीं करती, वैसे ही प्रेम के बिना विश्वास आत्मा में ज्ञान का प्रकाश उत्पन्न नहीं करता।

32. जैसे सूर्य का प्रकाश स्वस्थ आँख को अपने आप की ओर आकर्षित करता है, वैसे ही ईश्वर का ज्ञान प्रेम के माध्यम से स्वच्छ मन को स्वाभाविक रूप से अपनी ओर आकर्षित करता है।

33. एक शुद्ध मन वह है जो अज्ञानता से उभरा है और दिव्य प्रकाश से प्रबुद्ध है।

34. एक शुद्ध आत्मा वह है जो वासनाओं से मुक्त हो चुकी है और दिव्य प्रेम से अनवरत रूप से आनंदित रहती है।

35. वासना निंदनीय है, क्योंकि यह आत्मा की एक अस्वाभाविक गति है।

36. निष्क्रियता आत्मा की एक शांतपूर्ण अवस्था है, जिसमें वह आसानी से बुराई की ओर नहीं झुकती।

37. जिसने भी अपनी लगन से प्रेम के फल प्राप्त कर लिए हैं, वह उससे मुंह नहीं मोड़ेगा, भले ही उसे हजारों बुराइयाँ सहनी पड़ें। मसीह के शिष्य स्टीफ़न, और उनके जैसे लोग, और स्वयं मसीह—जिन्होंने अपने हत्यारों के लिए पिता से प्रार्थना की और उनसे क्षमा करने के लिए कहा, क्योंकि वे अज्ञानता में ऐसा कर रहे थे (लूका 23:34)—इस बात की गवाही दें।

38. यदि प्रेम का स्वभाव धीरज और कृपालुता रखना है (1 कुरिन्थियों 13:4), तो यह स्पष्ट है कि जो क्रोधी और दुर्भावनापूर्ण है, वह प्रेम से अपरिचित है। लेकिन जो प्रेम से अपरिचित है, वह ईश्वर से अपरिचित है: क्योंकि *'ईश्वर प्रेम है'* (1 यूहन्ना 4:8)।

39. 'यह न कहो कि तुम परमेश्वर का मन्दिर हो,' दिव्य यिर्मयाह (7:4) कहते हैं। यह न कहो, 'केवल हमारे प्रभु यीशु मसीह में विश्वास ही मुझे बचा सकता है।' क्योंकि यह असंभव है जब तक कि तुम उनके प्रति प्रेम भी न प्राप्त करो, जो तुम्हारे कर्मों से प्रदर्शित हो। केवल विश्वास के विषय में: *'तो भी दुष्टात्माओं को विश्वास है, और कांपती हैं'* (याकूब 2:19)।

40. प्रेम के कार्यों में शामिल हैं: अपने पड़ोसी के प्रति उत्साही दयालुता, उदारता, धैर्य, और भौतिक वस्तुओं का विवेकपूर्ण उपयोग।

41. जो ईश्वर से प्रेम करता है वह किसी को दुखी नहीं करता, न ही अस्थायी बातों के लिए किसी से दुखी होता है; बल्कि, वह केवल उस उद्धारकारी दुख से दुखी होता है और दुखी होता है, जिससे धन्य पौलुस स्वयं दुखी हुए और उन्होंने कोरिन्थियों को दुखी किया (2 कुरिन्थियों 2:4)।

42. जो ईश्वर से प्रेम करता है, वह पृथ्वी पर एक दैवीय जीवन जीता है, उपवास और जागरण करता है, भजन गाता और प्रार्थना करता है, और हमेशा हर व्यक्ति के बारे में अच्छा सोचता है।

४३. यदि हर कोई अपनी इच्छानुसार कुछ प्राप्त करने का प्रयास करता है, फिर भी ईश्वर सभी अच्छी चीजों और सभी इच्छित वस्तुओं से अतुलनीय रूप से बेहतर और अधिक वांछनीय है—तो हमें उसे प्राप्त करने के लिए कितनी लगन दिखानी चाहिए, जो स्वभाव से ही अच्छा और वांछनीय है?

44. अपने शरीर को लज्जास्पद कर्मों से भ्रष्ट न करो; अपनी आत्मा को बुरे विचारों से कलंकित न करो: और परमेश्वर का शान्ति तुम पर अवतरित होगा, जो अपने साथ प्रेम लाएगा।

४५. उपवास और जागरण द्वारा अपने शरीर को थका दो; और भजन-गायन और प्रार्थना के अभ्यास में सुस्त न बनो; और पवित्रता का पवित्रकिरण तुम पर अवतरित होगा, जो अपने साथ प्रेम लाएगा।

46. जो दिव्य ज्ञान का पात्र समझा गया है और प्रेम के माध्यम से उसकी प्रबुद्धता प्राप्त कर चुका है, वह कभी भी व्यर्थता की भावना से घमंडी नहीं होता; लेकिन जो इसका पात्र नहीं समझा गया है, वह इससे बहुत आसानी से भटक जाता है। हालाँकि, यदि ऐसा व्यक्ति, जो कुछ भी करता है, अपनी आँखें ईश्वर पर टिकाए रखता है, और सभी कार्य उनके लिए करता है, तो ईश्वर की मदद से वह इस क्लेश से आसानी से बच जाएगा।

४७. जो व्यक्ति अभी तक प्रेम से प्रेरित दैवी ज्ञान को प्राप्त नहीं कर पाया है, वह ईश्वर के अनुसार जो कुछ भी करता है, उसके बारे में बहुत सोचता है; लेकिन जिसे हृदय से ऐसा ज्ञान प्राप्त करने के योग्य माना गया है, वह पुरखों के पिता अब्राहम के शब्दों को दोहराता है, जो उन्होंने तब कहे थे जब उन्हें ईश्वर के प्रकट होने का सम्मान मिला था: *'मैं तो मिट्टी और राख ही हूँ'* (उत्पत्ति 18:27)।

४८. जो प्रभु का भय मानता है, उसकी नम्रता स्थायी साथी है, और इसके स्मरण द्वारा वह परमेश्वर के प्रति प्रेम और कृतज्ञता की ओर लौटाया जाता है। दुनिया की भावना के अनुसार जिए गए अपने पूर्व जीवन, अपने विभिन्न अपराधों, अपने युवा दिनों में सामना की गई प्रलोभनों, और इस बात को याद करते हुए कि प्रभु ने उसे उन सभी से कैसे बचाया और उसे वासना के जीवन से ईश्वर के अनुसार जीवन जीने के लिए कैसे प्रेरित किया, वह भय और प्रेम दोनों को प्राप्त करता है; और अविराम रूप से, गहरी नम्रता के साथ, हमारे जीवन के दाता और शासक परमेश्वर का धन्यवाद करता है।

४९. अपने मन को वासना और क्रोध के विचारों को पालकर अपवित्र न करो, कहीं ऐसा न हो कि शुद्ध प्रार्थना से भटककर, तुम निराशा की भावना में पड़ जाओ।

50. जब मन दुष्ट और अशुद्ध विचारों के साथ मेलजोल करता है, तो वह परमेश्वर के सामने अपनी निर्भीकता खो देता है।

51. कामवासना से प्रेरित मूर्ख व्यक्ति, जब क्रोध से उत्तेजित होता है, तो वह बेचैन हो जाता है और बिना सोचे-समझे अपने भाइयों से दूर भाग जाता है; लेकिन जब वह कामवासना से भर जाता है, तो पश्चाताप करके लौट आता है और उनके साथ बातचीत करता है। हालाँकि, समझदार व्यक्ति दोनों ही मामलों में अलग तरह से काम करता है। क्रोधित होने पर, वह अपने उत्तेजना के कारणों को समाप्त कर देता है और अपने भाइयों के प्रति द्वेष से खुद को मुक्त कर लेता है; जब वासना से अभिभूत होता है, तो वह अनकही प्रवृत्तियों और व्यर्थ की बातों से बचता है।

५२. प्रलोभन के समय, अपने मठ को न छोड़ें; बल्कि विचारों के उथल-पुथल को, विशेषकर उन विचारों को जो दुख और निराशा पैदा करते हैं, धैर्यपूर्वक सहन करें: क्योंकि इस प्रकार, कष्टों द्वारा बुद्धिमानी से परखे जाने पर, आपको ईश्वर में दृढ़ आशा प्राप्त होगी। यदि, तथापि, आप इसे छोड़ देते हैं, तो आप स्वयं को न तो कुशल, न ही साहसी, और न ही दृढ़ साबित करेंगे।

५३. यदि आप परमेश्वर के प्रेम से दूर नहीं होना चाहते, तो अपने भाई के मन में आपके प्रति द्वेष रहते हुए उसे सोने न दें, और न ही आप स्वयं उसके प्रति द्वेष लिए हुए सोएं: *'परन्तु जा कर पहिले अपने भाई से मेल कर, और तब आकर'* (मत्ती 5:24) निर्मल अंतकरण से मसीह को प्रेम का दान सच्ची प्रार्थना में अर्पित करें।

54. यदि, दिव्य प्रेरित के शब्दों में, कोई व्यक्ति जिसके पास आत्मा की सभी प्रतिभाएँ हैं, पर प्रेम नहीं रखता, तो उसे उनसे कोई लाभ नहीं होता, तो हमें इसे प्राप्त करने के लिए कितनी सावधानी बरतनी चाहिए (1 कुरिन्थियों 13:3)?

55. यदि प्रेम *'एक ईमानदार व्यक्ति को कोई हानि नहीं पहुँचाता'* (रोमियों 13:10), तो क्या वह जो अपने भाई से ईर्ष्या करता है, उसकी अच्छी प्रतिष्ठा से दुखी होता है, उसकी बदनामी से उसका नाम कलंकित करता है, या दुर्भावना से उसका दुष्टतापूर्वक आरोप लगाता है, स्वयं को प्रेम का शत्रु और अनंतकाल की निंदा का पात्र नहीं बना लेता?

56. यदि प्रेम *'विधि की पूर्ति'* है (रोमियों 13:10), तो क्या वह जो अपने भाई से द्वेष रखता है, उसके विरुद्ध षड्यंत्र रचता है, उसे शाप देता है, और उसके पतन पर प्रसन्न होता है, विधि का उल्लंघन करने वाला नहीं है, और क्या वह अनंतकाल की यातना का पात्र नहीं है?

57. यदि *'जो कोई भाई का अपमान करता है या भाई को दोषी ठहराता है, वह व्यवस्था का अपमान करता है और व्यवस्था को दोषी ठहराता है'* (याकूब 4:11); और चूंकि मसीह की व्यवस्था प्रेम है (यूहन्ना 13:34): तो क्या अपमान करने वाला तब मसीह के प्रेम से भटक नहीं जाता, और क्या वह स्वयं को अनंतकालिक यातना का दोषी नहीं बना लेता?

58. बदनामी करने वाले की जीभ पर कान न लगाओ, और न ही अपनी जीभ को उस व्यक्ति के शब्दों को सुनने दो जो द्वेषपूर्ण बातों में आनंद लेता है, चाहे वह पड़ोसी के खिलाफ बोल रहा हो या सुन रहा हो: कहीं ऐसा न हो कि तुम परमेश्वर के प्रेम से भटक जाओ और खुद को अनंत जीवन से अलग पाओ।

59. अपने पिता के विरुद्ध अपमान सहन न करो, और न ही किसी ऐसे को प्रोत्साहित करो जो उनका अपमान करता है; कहीं ऐसा न हो कि यहोवा तुम्हारे कामों से क्रुद्ध हो जाए और तुम्हें जीवितों के देश से काट डाले।

60. अपवाद करने वाले के शब्दों को अपने कानों से दूर रखो, कहीं ऐसा न हो कि तुम उससे दोहरा पाप कर बैठो—एक तो स्वयं इस विनाशकारी जुनून के आदी हो जाने से, और दूसरे उसे अपने पड़ोसी की निंदा करने से रोकने में विफल रहने से।

61. *'परन्तु मैं तुम से कहता हूँ'* प्रभु कहते हैं, *'अपने शत्रुओं से प्रेम करो, जो तुम से बैर रखते हैं, उन पर भलाई करो, और जो तुम्हें सताते हैं, उनके लिये प्रार्थना करो'* (मत्ती 5:44)। उसने ऐसा आज्ञा क्यों दी? – ताकि वह आपको घृणा, दुख, क्रोध और द्वेष से मुक्त कर सके, और आपको पूर्ण प्रेम के परम खजाने को प्राप्त करने में सक्षम बना सके; जिसका स्वामित्व कोई भी व्यक्ति प्राप्त नहीं कर सकता जो सभी लोगों से समान रूप से प्रेम नहीं करता, ईश्वर के उदाहरण का अनुसरण करते हुए, जो सभी लोगों से समान रूप से प्रेम करते हैं, *'और जो चाहते हैं कि सभी लोग उद्धार पाएँ और सत्य के ज्ञान में आएँ'* (1 तीमु. 2:4)।

62. *'परन्तु मैं तुम से कहता हूँ, बुराई का विरोध न करो; परन्तु यदि कोई तुम्हें दाहिने गाल पर थप्पड़ मारे, तो दूसरा भी उसके पास फेर दो; और जो तुम्हारा मुकदमा करके तुम्हारी एक कमीज़ ले ले, उसे अपनी चोग़ा भी दे दो; और यदि कोई तुम्हें एक मील चलने के लिए जबरदस्ती ले जाए, तो उसके साथ दो मील चलो'* (मत्ती 5, 39–41)। क्यों? ताकि तुम भी क्रोध, चिंता और शोक से मुक्त रहो – और ताकि तुम्हारी द्वेषहीनता उसे सिखाए, और तुम दोनों प्रेम के जुए के अधीन हो जाओ, क्योंकि प्रभु भला है।

63. जिन भी चीज़ों से हम कभी जुड़े रहे हैं, हम उनके बारे में उत्कट कल्पनाएँ पालते हैं। इसीलिए जो व्यक्ति उत्कट कल्पनाओं पर विजय प्राप्त करता है, वह स्वाभाविक रूप से कल्पित वस्तुओं को भी तुच्छ समझता है। क्योंकि वस्तुओं की स्मृतियों के विरुद्ध संघर्ष उतना ही कठिन है जितना स्वयं वस्तुओं के विरुद्ध संघर्ष, क्योंकि कर्म की अपेक्षा विचार में पाप करना आसान है।

64. कुछ वासनाएँ शारीरिक होती हैं, तो कुछ मानसिक। शारीरिक वासनाएँ शरीर से प्रेरित होती हैं, जबकि मानसिक वासनाएँ बाहरी वस्तुओं से प्रेरित होती हैं। लेकिन दोनों को प्रेम और संयम द्वारा नियंत्रित किया जाता है: पहली को प्रेम द्वारा, दूसरी को संयम द्वारा।

65. कुछ भाव आत्मा की क्रोधक शक्ति से संबंधित हैं, जबकि अन्य उसकी कामना करने वाली शक्ति से। दोनों इंद्रियों द्वारा उत्तेजित होते हैं; वे तब उत्तेजित होते हैं जब आत्मा प्रेम और आत्म-संयम से रहित होती है।

66. आत्मा की कामनाशील शक्ति के भावों पर विजय प्राप्त करना, उसकी क्रोधशील शक्ति के भावों पर विजय प्राप्त करने से अधिक कठिन है: इसीलिए प्रभु ने उनके विरुद्ध सबसे शक्तिशाली उपाय प्रदान किया है - प्रेम की आज्ञा।

67. अन्य सभी भाव केवल आत्मा के या तो क्रोधित भाग, या इच्छुक भाग, या विचारशील भाग से संबंधित होते हैं, जैसे कि भूल और अज्ञानता; लेकिन निराशा, जो आत्मा की सभी शक्तियों को घेर लेती है, अचानक, एक ही साँस में, लगभग सभी भावों को गति में ला देती है, और यही कारण है कि यह अन्य सभी भावों से अधिक दुखद है। प्रभु, अपनी कृपा में, इसका एक उपाय प्रदान करते हुए कहते हैं: *'अपने धीरज से तुम अपनी आत्माओं को बचाओगे'* (लूका 21:19)।

६८. भाइयों में से किसी को भी कभी न मारें, विशेषकर बिना कारण के, कहीं ऐसा न हो कि वह दुख सहन न कर सके और पीछे हट जाए; और तब आप अपने विवेक की निंदा से कभी नहीं बचेंगे, जो प्रार्थना के समय हमेशा आपको दुख देगा और परमेश्वर के सामने निर्भयता से आपका मन हटा लेगा।

69. उन लोगों को सहन न करो जो तुम्हें किसी भी व्यक्ति के बारे में संदेह के प्रलोभन लाते हैं; क्योंकि जो लोग किसी भी तरह से घटनाओं द्वारा—चाहे जानबूझकर या अनजाने में—अपने आपको प्रलोभित होने देते हैं, वे *'शांति का मार्ग'* नहीं जानते (रोमियों 3:17), जो प्रेम के द्वारा, परमेश्वर से प्रेम करने वालों को उसकी पहचान तक पहुँचाता है।

70. वह व्यक्ति अभी तक पूर्ण प्रेम का अधिकारी नहीं है जो लोगों को उनके स्वभाव के अनुसार व्यवहार करता है, किसी एक से किसी न किसी कारण से प्रेम करता है और दूसरे से घृणा करता है, या कभी-कभी एक ही व्यक्ति से एक ही कारण से प्रेम करता है और कभी-कभी घृणा करता है।

71. पूर्ण प्रेम मनुष्यों की एकल प्रकृति को उनके विभिन्न स्वभावों के अनुसार विभाजित नहीं करता है; परन्तु, उस स्वभाव को हमेशा ध्यान में रखते हुए, सभी लोगों से समान रूप से प्रेम करती है: भले लोगों से मित्र के रूप

में और दुष्टों से शत्रु के रूप में प्रेम करती है, उनके भले के लिए काम करती है, धीरज रखती है, उनके द्वारा किए गए अन्याय को सहन करती है, किसी भी तरह से बुराई से बदला नहीं लेती, बल्कि परिस्थितियों की मांग पर उनके लिए पीड़ा भी सहन करती है, ताकि, यदि संभव हो, तो वे भी मित्र बन जाएँ; फिर भी, भले ही यह असंभव हो, वह उनसे अपना अनुग्रह वापस नहीं लेता, और हमेशा सभी लोगों को समान रूप से प्रेम के फल दिखाता है। इसी प्रकार हमारे प्रभु और परमेश्वर, यीशु मसीह ने, हमसे अपना प्रेम दिखाते हुए, समस्त मानव जाति के लिए दुख उठाया, और सभी को समान रूप से पुनरुत्थान की आशा प्रदान की, यद्यपि, बेशक, प्रत्येक व्यक्ति स्वयं को या तो महिमा या नरक की यातनाओं के योग्य बनाता है।

72. जो कोई महिमा और अपमान, धन और गरीबी, सुख और दुख को तुच्छ समझता है, उसने अभी तक पूर्ण प्रेम प्राप्त नहीं किया है। पूर्ण प्रेम न केवल इन सभी चीजों को तुच्छ समझता है, बल्कि इस क्षणिक जीवन और मृत्यु को भी तुच्छ समझता है।

73. सुनिए कि पूर्ण प्रेम प्राप्त करने वालों ने क्या कहा है: *'हमें परमेश्वर के प्रेम से कौन अलग कर सकता है? क्या संकट, या क्लेश, या उत्पीड़न, या अकाल, या नग्नता, या संकट, या तलवार? जैसा कि लिखा है: "तेरे ही कारण हम दिन भर मार डाले जाते हैं; हमें वध के लिए भेड़ों की नाईं गिना जाता है।" तथापि इन सब बातों में हम उस की दया से जीतने वाले से भी बढ़कर हैं, जिस ने हम से प्रेम किया। क्योंकि मैं जानता हूँ कि न तो मृत्यु, न जीवन, न स्वर्गदूत, न अधिकार, न सामर्थ्य, न वर्तमान, न भविष्य, न कोई भी सृष्टि, न तो ऊँचाई, न तो गहराई, और न ही कोई अन्य सृजित वस्तु, हमें परमेश्वर के उस प्रेम से अलग कर सकती है जो हमारे प्रभु यीशु मसीह में है'* (रोमियों 8:35-39)।

74. अपने पड़ोसी से प्रेम के बारे में वे जो कहते हैं उसे फिर से सुनें: *'मैं मसीह में सत्य कहता हूँ—मैं झूठ नहीं बोलता, जैसा कि मेरा विवेक पवित्र आत्मा में गवाही देता है—कि मुझे अपने हृदय में बहुत दुख और नित्य क्लेश है; क्योंकि मैं यही कामना करता कि मैं स्वयं अपने भाइयों, अर्थात् अपने नस्लीय कनानी भाइयों, जो इस्राएली हैं, के लिए मसीह से अलग हो जाऊँ'*—और इसी प्रकार। (रोमियों 9:1–4)। मूसा और अन्य संतों ने भी इसी प्रकार कहा।

७५. जो महत्वाकांक्षा और सुख-भोग के प्रेम को, तथा उनसे उत्पन्न और उन्हीं से पोषित धन के लोभ को कोई महत्व नहीं देता, वह क्रोधित चिड़चिड़ाहट के कारणों को समाप्त नहीं कर सकता; और जो उन्हें समाप्त नहीं करता, वह पूर्ण प्रेम प्राप्त नहीं कर सकता।

76. विनम्रता और आत्म-संयम (शारीरिक कष्ट) एक व्यक्ति को सभी पापों से मुक्त करते हैं; क्योंकि विनम्रता आत्मा की कामनाओं को नियंत्रित करती है, जबकि आत्म-संयम शरीर की कामनाओं को नियंत्रित करता है। यही धन्य दाऊद ने किया, जैसा कि ईश्वर से उनकी निम्नलिखित प्रार्थना से स्पष्ट है: *'मेरी नम्रता और मेरी परिश्रम को देखो, और मेरे सभी पापों को क्षमा करो'* (भजन संहिता 24:18)।

77. आज्ञाओं के द्वारा, प्रभु उनका पालन करने वालों को निर्लिप्त बनाता है; और दैवीय सिद्धांतों के द्वारा, वह उन्हें ज्ञान का प्रकाश प्रदान करता है।

78. सभी धर्मसिद्धान्त या तो ईश्वर के बारे में, या दृश्य और अदृश्य सृष्टियों के बारे में, या उनमें प्रकट हुई दिव्य व्यवस्था और न्याय के बारे में बात करते हैं।

79. दान आत्मा के चिड़चिड़े भाग को ठीक करता है; उपवास कामवासना को सुखा देता है; प्रार्थना मन को शुद्ध करती है और उसे वास्तविकता के चिंतन के लिए तैयार करती है। क्योंकि प्रभु ने हमें आत्मा की क्षमताओं के अनुसार आज्ञाएँ दी हैं।

80. *'मेरे से सीखो,'* प्रभु कहते हैं, *'क्योंकि मैं मन से कोमल और दीन हूँ'* (मत्ती 11:29)। कोमलता चिड़चिड़े मन को उत्तेजना से बचाती है, जबकि दीनता मन को अहंकार और घमंड से मुक्त करती है।

81. ईश्वर का भय दोहरा है। एक दंड की धमकी से उत्पन्न होता है, जिससे क्रमशः हमारे भीतर संयम, धैर्य, ईश्वर में आशा और निर्लिप्तता उत्पन्न होती है, जिसमें से प्रेम का जन्म होता है। दूसरा प्रेम स्वयं से जुड़ा है, जो आत्मा में श्रद्धा उत्पन्न करता है, कि कहीं वह प्रेम की निर्भीकता में ईश्वर के प्रति तिरस्कार में न पड़ जाए।

82. भय का पहला प्रकार पूर्ण प्रेम *द्वारा 'भगा दिया जाता है'* (1 यूहन्ना 4:18), जिसने इसे आत्मा से दूर कर दिया है, ताकि वह अब यातना से न डरे; जबकि दूसरा, जैसा कि कहा गया है, हमेशा इसके साथ रहता है। पवित्रशास्त्र के निम्नलिखित वचन पहले वाले पर लागू होते हैं: *'यहोवा के भय से मनुष्य बुराई से दूर रहता है'* (नीतिवचन 15:27); *'और: यहोवा का भय ज्ञान की शुरुआत है'* (नीतिवचन 1:7); और दूसरे के लिए: *'परमेश्वर का भय शुद्ध है, जो युगानुयुग रहता है'* (भजन संहिता 18:10); *'और: जो उसकी भक्ति करते हैं, उन्हें किसी वस्तु की कमी नहीं होती'* (भजन संहिता 33:10)।

83. *"इसलयि अपने सांसारकि अंगों को मार डालो: व्यभचिार, अशुद्धता, कामवासना, दुष्ट इच्छा और लोभ, और इसी तरह"* (कुलुस्सयिों 3:5)। यहाँ प्रेरति देहकि तर्क को 'पृथ्वी' के रूप में संदर्भति करते हैं; 'व्यभचिार' से अभप्रिेत है, कर्म में कयिा गया पाप; 'अशुद्धता' से, उसकी सहमत; 'वासना' से, एक कामुक वचिार; 'दुष्ट इच्छा' से, एक कामुक वचिार को केवल स्वीकार करना; 'लालच' से, वह पदार्थ जो वासना को जन्म देता है और उसे बनाए रखता है। दवि्य प्रेरति ने आज्ञा दी कि इन सभी को, देहधारी तर्क के तत्वों के रूप में, मार डाला जाए।

८४. सबसे पहले, स्मृत एिक साधारण वचिार को मन में लाती है; और यद विह वहीं ठहरती है, तो यह वासना को गत प्रिदान करती है; यद आिप उस वासना का उन्मूलन नहीं करते हैं, तो यह मन को सहमत की ओर झुकाती है; और जब यह भी हो जाता है, तो व्यक्त पिहले ही कर्म में पाप करने के बदिु पर पहुँच चुका होता है। इसीलए परम बुद्धमिान प्रेरति, मूर्तपिूजा से परविर्तति हुए ईसाइयों को लखिते हुए, पहले उन्हें कर्म में पाप करना बंद करने की आज्ञा देते हैं, और फरि, पछिले क्रम पर लौटते हुए, उसके मूल कारण तक पहुँचने के लए कहते हैं। जैसा क ऊिपर बताया गया है, वह कारण जो कामवासनाओं को जन्म देता है और उन्हें पुनःजगाता है, लालच है, जो मेरी राय में, यहाँ व्यभचिार की जननी और पोषक, यानी अतभिक्षण को दर्शाता है। क्योंक लिालच केवल धन के संबंध में ही नहीं, बल्क भिोजन के संबंध में भी एक बुराई है; ठीक उसी तरह जैसे संयम केवल भोजन के संबंध में ही नहीं, बल्क धिन के संबंध में भी एक अच्छाई है।

८५. जैसे पैर से बँधा हुआ पक्षी, ऊपर उड़ान भरना शुरू करते ही, रस्सी द्वारा वापस जमीन पर खींच लयिा जाता है: वैसे ही मन, जब तक नर्विकिल्पता को प्राप्त नहीं कर लेता, यद्यप विह दवि्य वस्तुओं के ज्ञान की ओर उड़ान भरता है, परन्तु अपनी कामनाओं द्वारा वापस जमीन पर खींच लयिा जाता है।

86. जब मन पूरी तरह से आसक्तयिों से मुक्त हो जाता है, तो वह अस्तत्वि के चतिन की ओर बनिा कसिी बाधा के बढ़ता है, और अपना मार्ग पवति्र त्रमिूर्त के ज्ञान की ओर नर्दिेशति करता है।

87. जब मन शुद्ध होता है, तो वह वस्तुओं की अवधारणाओं को समझते हुए उनकी आध्यात्मकि चतिन में प्रवृत्त होता है; लेकनि जब वह आलस्य के कारण अशुद्ध हो जाता है, तो वह केवल अन्य वस्तुओं के वचिारों को ही जन्म देता है, और जब वह कसिी मानवीय चीज़ को देखता है, तो उसे शर्मनाक और बुरे वचिारों में बदल देता है।

88. यद प्रिार्थना करते समय, कोई सांसारकि वचिार कभी आपके मन पर हावी नहीं होता है, तो जान लें क आिप नर्लिप्तिता के क्षेत्र से बाहर नहीं हैं।

८९. जब आत्मा स्वस्थ महसूस करना शुरू कर देती है, तो उसे शुद्ध और शांत सपने भी आने लगते हैं।

90. जैसे भौतकि आँख दृश्यमान चीजों की सुंदरता की ओर आकर्षति होती है, वैसे ही शुद्ध मन अदृश्य के ज्ञान की ओर आकर्षति होता है। 'अदृश्य' से मेरा तात्पर्य वह है जो अदेह है।

91. वस्तुओं से आसक्त नि रखना एक महान उपलब्ध हिै, लेकनि उनकी छवयिों के प्रत नर्लिप्ति रहना उससे भी कहीं अधकि है: क्योंक हिमारे वचिारों के माध्यम से ही दुष्ट आत्माएँ हम पर युद्ध छेड़ती हैं, एक ऐसा युद्ध जो स्वयं वस्तुओं द्वारा छेड़े गए युद्ध से कहीं अधकि भयंकर होता है।

92. जो सदाचार में उत्कृष्ट है और ज्ञान से समृद्ध है, जो वस्तुओं को उनकी वास्तवकि प्रकृत मिें देखता है, वह हमेशा ववि‌ेक के अनुसार ही कार्य और वाणी करता है, और उससे कभी वचिलति नहीं होता। क्योंक इिसी से हम यह नर्णिय करते हैं क हिम वस्तुओं का उपयोग बुद्धमिानी से करते हैं या मूर्खता से, और हम सदाचारी हैं या दुष्ट।

93. पूर्ण नर्लिप्तिता का लक्षण तब होता है, जब जागते और सोते समय, दोनों ही अवस्थाओं में, वस्तुओं की छवयिाँ हमेशा हृदय में अपने सबसे सरल रूप में उत्पन्न होती हैं।

94. आज्ञाओं के पालन से, मन वासनाओं से मुक्त होता है; दृश्यमान की आध्यात्मकि चतिन से, यह वस्तुओं के बारे में भावुक वचिारों से मुक्त होता है; अदृश्य के ज्ञान से, यह दृश्यमान वस्तुओं के चतिन से मुक्त होता है; और अंत में, पवति्र त्रमिूर्त के ज्ञान से, यह अदृश्य वस्तुओं के ज्ञान से भी मुक्त हो जाता है।

९५. जैसे सूर्य, उदय होकर और संसार को प्रकाशति करते हुए, स्वयं को और जनि वस्तुओं को वह प्रकाशति करता है, दोनों को प्रकट करता है: वैसे ही धार्मकिता का सूर्य, एक शुद्ध मन में प्रकाशति होकर, स्वयं को और उससे उत्पन्न हुई तथा जो कुछ भी उत्पन्न होने वाला है, उसकी सभी समझ को प्रकट करता है।

96. हम ईश्वर को उनके सार से नहीं, बल्क उिनकी रचनाओं की भव्यता और उन पर उनकी व्यवस्था से जानते हैं। उनमें, एक दर्पण की तरह, हम उनकी असीम भलाई, बुद्ध अिौर शक्त को देखते हैं।

97. एक शुद्ध मन या तो मानवीय मामलों से संबंधति सरल वचिारों में, या दृश्यमान की प्राकृतकि मनन में, या अदृश्य की मनन में, या पवति्र त्रमिूर्त के प्रकाश में नवािस करता है।

98. जब दृश्यमान वस्तुओं के चिंतन में लगा होता है, तो मन या तो उनकी प्राकृतिक गुणों की जांच करता है, या उनका क्या अर्थ है, या उनके वास्तविक कारण की खोज करता है।

99. जब अदृश्य चीजों के चिंतन में लगा होता है, तो यह उनकी स्वाभाविक गुणों, उनके अस्तित्व के कारण, इससे क्या परिणाम निकलता है, और उनके संबंध में ईश्वर की व्यवस्था और न्याय क्या है, यह समझने का प्रयास करता है।

100. हालाँकि, जब यह ईश्वर में होता है, तो यह पहले प्रबल प्रेम से, उनकी प्रकृति को समझने का प्रयास करता है; फिर भी इसे इस बात के ज्ञान से सांत्वना नहीं मिलती कि उनके भीतर क्या है—क्योंकि यह असंभव है और किसी भी सृजित प्रकृति की क्षमता से परे है—बल्कि इसे इस बात के ज्ञान से सांत्वना मिलती है कि उनके चारों ओर क्या है, जैसे: शाश्वतता, असीमता, अकथनीयता, सद्भाव, बुद्धिमत्ता और सर्वव्यापी शक्ति— —सर्व-प्रावधानकर्ता और सर्व-न्यायाधीश। और केवल उसी में यह सभी के लिए बोधगम्य है कि वह असीम है; और उसकी अबोधनीयता का ज्ञान ही वह ज्ञान है जो मन से परे है, जैसा कि धर्मशास्त्र के महान पुरुषों—ग्रेगरी और डायोनिसियस—ने कहा है।

प्रेम पर दूसरा सौना

1. जो ईश्वर से सच्चे मन से प्रेम करता है, वह बिना किसी विचलन के प्रार्थना करता है, ठीक उसी तरह जैसे जो बिना किसी विचलन के प्रार्थना करता है, वह ईश्वर से सच्चे मन से प्रेम करता है। लेकिन जिसका मन सांसारिक किसी भी चीज़ पर लगा हो, वह बिना विचलन के प्रार्थना नहीं कर सकता। और इसलिए, जिसका मन सांसारिक किसी भी चीज़ से लगा हो, वह ईश्वर से प्रेम नहीं करता।

2. एक मन जो किसी भी इंद्रिय-संबंधी वस्तु के विचारों में लंबे समय तक रमता है, उसमें अनिवार्य रूप से उसके प्रति एक जुनून पनपता है—चाहे वह वासना हो, विलाप हो, क्रोध हो या द्वेष—और जब तक वह उस वस्तु को कोई महत्व देता है, तब तक वह उस जुनून से खुद को मुक्त नहीं कर सकता।

3. भाव, मन पर अधिकार करके, उसे भौतिक वस्तुओं से बाँध देते हैं; और, उसे ईश्वर से अलग करके, उसे उन पर ही टिका रहने के लिए विवश कर देते हैं: इसके विपरीत, ईश्वर का प्रेम, उस पर हावी होकर, उसके बंधन ढीले कर देता है, और उसे न केवल इंद्रिय वस्तुओं पर, बल्कि क्षणिक जीवन पर भी अपना हृदय न लगाने के लिए प्रेरित करता है।

४. आज्ञाओं का उद्देश्य चीजों के बारे में विचारों को सरल बनाना है, जबकि पढ़ने और मनन का उद्देश्य मन को अवास्तविक और आकारहीन बनाना है। इसका परिणाम विचलन रहित प्रार्थना है।

5. मन को वासनाओं से पूरी तरह से मुक्त करने के लिए, ताकि वह बिना विचलित हुए प्रार्थना कर सके, केवल सक्रिय विधि पर्याप्त नहीं है जब तक कि उसके साथ विभिन्न आध्यात्मिक चिंतन न हों। पहली विधि मन को अनियंत्रितता और घृणा से मुक्त करती है; दूसरी उसे भूल और अज्ञानता से मुक्त करती है, और इस तरह यह उचित रूप से प्रार्थना करने की क्षमता प्राप्त करती है।

6. शुद्ध प्रार्थना की दो परम अवस्थाएँ हैं। एक सक्रिय जीवन जीने वालों में होती है, दूसरी चिंतनशील जीवन जीने वालों में। एक ईश्वर के भय और शुभ आशा से आत्मा में उत्पन्न होती है; दूसरी दिव्य प्रेम और परम पवित्रता से। पहली अवस्था का संकेत तब होता है जब कोई सभी सांसारिक विचारों से मन को हटाकर, बिना किसी विचलन या भ्रम के प्रार्थना करता है, और मानो ईश्वर स्वयं उसके सामने खड़े हों, जैसा कि वे वास्तव में होते भी हैं। दूसरे का लक्षण तब होता है, जब प्रार्थना के उसी क्षण, मन दिव्य और असीम प्रकाश से मंत्रमुग्ध हो जाता है, और न तो स्वयं को महसूस करता है और न ही किसी अन्य वस्तु को, सिवाय उस एक के, जो प्रेम के माध्यम से उसके भीतर ऐसा प्रकाश लाता है। इस अवस्था में, ईश्वर के बारे में शब्दों को समझने का प्रयास करते हुए, उसे ईश्वर का शुद्ध और प्रकाशमान ज्ञान प्राप्त होता है।

७. जो कोई किसी वस्तु से प्रेम करता है, वह उसे हर तरह से अपनाना चाहता है; और वह हर उस चीज़ को दूर कर देता है जो इसमें उसकी बाधा बने, ताकि वह उससे वंचित न रह जाए। इसी तरह, जो ईश्वर से प्रेम करता है, वह शुद्ध प्रार्थना में लगा रहता है, और अपने रास्ते में आने वाले हर वासना को अपने भीतर से निकाल फेंकता है।

8. जो कोई आत्म-प्रेम को, जो सभी आसक्तियों की जननी है, त्याग देता है, वह ईश्वर की सहायता से, अन्य सभी आसक्तियों जैसे क्रोध, दुख, द्वेष और इसी तरह की अन्य भावनाओं को भी आसानी से त्याग देगा। लेकिन जो कोई पहले वाली आसक्ति से ग्रस्त है, वह चाहे वह न भी चाहे, बाद वाली आसक्तियों से भी पीड़ित होगा। हालाँकि, आत्म-प्रेम शरीर के प्रति एक भावुक प्रेम है।

9. लोग निम्नलिखित पाँच कारणों से एक-दूसरे से प्रशंसनीय या निंदनीय तरीके से प्रेम करते हैं: या तो ईश्वर के लिए – जैसे सज्जन सभी से प्रेम करते हैं, और दुष्ट भी सज्जन से प्रेम करते हैं; या स्वभाव से – जैसे माता-पिता अपने बच्चों से प्यार करते हैं, और इसका उल्टा भी; या दंभ के कारण – जैसे जिसकी प्रशंसा की जाती है वह प्रशंसा करने वाले से प्यार करता है; या स्वार्थ के कारण – जैसे अमीर आदमी से उसकी संपत्ति के लिए प्यार किया जाता है; या कामुक आनंद के लिए – जैसे मजदूर अपने पेट के लिए काम करता है, और दावतें आयोजित करने वाला अपने पेट के नीचे की चीज़ों के लिए ऐसा करता है। इनमें से पहला प्रशंसनीय है, दूसरा पारस्परिक है, बाकी सभी जुनून से प्रेरित हैं।

10. यदि आप कुछ से नफरत करते हैं, जबकि दूसरों से न तो प्रेम करते हैं और न ही नफरत; यदि आप कुछ से केवल औपचारिक रूप से प्रेम करते हैं, जबकि आप दूसरों से बहुत गहराई से प्रेम करते हैं; तो इस असमानता से, यह पहचान लें कि आप अभी भी पूर्ण प्रेम से बहुत दूर हैं, जो व्यक्ति को हर व्यक्ति से समान रूप से प्रेम करने के लिए प्रेरित करता है।

11. *'बुराई से दूर हो जाओ और भलाई करो'* (भजन संहिता 36:27), अर्थात् अपनी इच्छाओं को वश में करने के लिए अपने शत्रुओं से लड़ो; फिर सतर्क रहो कि वे बढ़ न जाएँ; और सद्गुण प्राप्त करने के लिए फिर से लड़ो; और बाद में उन्हें बनाए रखने के लिए सतर्क रहो। और यही, वास्तव में, *'काम करना और बनाए रखना'* होगा (उत्पत्ति 2:15)।

12. ईश्वर की अनुमति से, जो हमें प्रलोभित करते हैं, वे या तो आत्मा की इच्छा करने वाली शक्ति को भड़काते हैं, या उसकी चिड़चिड़ी शक्ति को बेचैन करते हैं, या उसकी सोचने की शक्ति पर अंधकार छा देते हैं, या शरीर को दुखों से पीड़ित करते हैं, या उसे शारीरिक आवश्यकताओं से वंचित कर देते हैं।

13. राक्षस या तो स्वयं हमें प्रलोभित करते हैं, या प्रभु का भय न रखने वाले लोगों को हमारे विरुद्ध उकसाते हैं: वे स्वयं हमें तब प्रलोभित करते हैं जब हम लोगों से अलग रहते हैं, जैसे प्रभु को जंगल में प्रलोभित किया गया था; वे लोगों के माध्यम से हमें तब प्रलोभित करते हैं जब हम उनसे मेलजोल रखते हैं, जैसे प्रभु को फिर से फरीसियों के द्वारा प्रलोभित किया गया था। लेकिन हमारे उदाहरण—अर्थात् प्रभु—को देखकर, हम दोनों ही मामलों में उन्हें दूर भगा देंगे।

14. जब मन ईश्वर के प्रेम में प्रगति करने लगता है, तो निन्दा की आत्मा उसे प्रलोभित करना शुरू कर देती है, और उसमें ऐसे विचार डालती है जिन्हें कोई मनुष्य नहीं सोच सकता, बल्कि केवल शैतान, जो उनका पिता है। और वह यह ईश्वर के प्रेमी के प्रति ईर्ष्या के कारण करता है, ताकि ऐसे विचारों को धारण करके और निराशा में पड़कर, वह अब अपनी सामान्य प्रार्थना के द्वारा ईश्वर की ओर उड़ान भरने की हिम्मत न करे। लेकिन धोखेबाज़ को इससे अपने उद्देश्य के लिए कुछ भी हासिल नहीं होता; बल्कि, यह हमें और अधिक दृढ़ बनाता है। क्योंकि जब हम परख में डाले जाते हैं और उसके विरुद्ध संघर्ष करते हैं, तो हम परमेश्वर के प्रति अपने प्रेम में अधिक अनुभवी और सच्चे हो जाते हैं। *'उनकी तलवार उनके ही दिलों में घुस जाए, और उनके धनुष टूट जाएँ'* (भजन संहिता 36:15)।

१५. मन, दृश्यमान जगत की ओर मुड़कर, स्वाभाविक रूप से इंद्रियों के माध्यम से वस्तुओं को समझता है। न तो मन बुरा है, न ही चीजों की स्वाभाविक समझ, न ही स्वयं चीजें, और न ही इंद्रियाँ: क्योंकि ये सभी ईश्वर की रचनाएँ हैं। तो फिर, यहाँ बुराई क्या है? स्पष्ट रूप से, यह वह वासना है जो चीजों की स्वाभाविक समझ से चिपक जाती है। और जब चीजों की स्वाभाविक अवधारणाओं का उपयोग किया जाता है तो इसका उत्पन्न होना आवश्यक नहीं है, बशर्ते मन सतर्क रहे।

१६. जुनून आत्मा की एक अस्वाभाविक हलचल है, जो या तो बेतुकी मोहब्बत से, या किसी कामुक चीज़ के प्रति लापरवाह नफ़रत से, या किसी कामुक चीज़ की खातिर उत्पन्न होती है: बेतुकी मोहब्बत से, चाहे वह भोजन के लिए हो, या महिलाओं के लिए, या धन के लिए, या क्षणिक महिमा के लिए, या किसी अन्य कामुक चीज़ के लिए, या ऐसी चीज़ों की खातिर; – अतर्क्य घृणा से, जब, जैसा कि ऊपर कहा गया है, कोई बिना कारण के उपरोक्त में से किसी भी चीज़ से घृणा करता है, या उनके कारण किसी से घृणा करता है।

१७. या फिर – बुराई ज्ञात वस्तुओं के बारे में एक त्रुटिपूर्ण निर्णय है, जिसके साथ उनका अनुचित उपयोग भी होता है। इस प्रकार, ऐसे मामलों के संबंध में, यौन संबंध के बारे में एक सही निर्णय इसका उद्देश्य संतानोत्पत्ति को बनाता है; लेकिन जो कोई, ऐसा करते समय, केवल कामुकता के आनंद को ही मन में रखता है, वह बुराई को अच्छा समझकर निर्णय में चूक करता है। और ऐसा व्यक्ति, जब अपनी पत्नी के साथ संभोग करता है, तो उसका दुरुपयोग करता है। इसी तरह, अन्य वस्तुओं की समझ और उपयोग के संबंध में भी तर्क करना चाहिए।

18. जब राक्षस, आपकी पवित्रता से आपका मन हटाकर, उसे कामुक विचारों से घेर लेते हैं, तो प्रभु से आँसुओं के साथ पुकारो: *'जो मेरा पीछा करते हैं वे मुझ पर हावी हो गए हैं; हे मेरी खुशी, मुझे उन लोगों से बचा जो मुझ पर हावी हो गए हैं'* (भजन संहिता 16:11; 31:7)। और तुम बच जाओगे।

19. कामवासना का दानव एक भारी बोझ है और यह उन लोगों पर भारी दबाव डालता है जो इस जुनून के खिलाफ संघर्ष करते हैं, विशेष रूप से जब वे भोजन में संयम की उपेक्षा करते हैं, और जब वे महिलाओं से मिलते और बात-चीत करते हैं। पहले, यह अश्लील सुख की लालसा से मन को अनजाने में लुभाता है; फिर, स्मृति के द्वार से, यह शांत मन में प्रवेश करता है, और जैसे यह शरीर को प्रज्वलित करता है, वैसे ही यह मन में विभिन्न शर्मनाक छवियाँ प्रस्तुत करता है; और इस तरह यह मन को पाप करने के लिए राज़ी होने के लिए उकसाता है। यदि आप नहीं चाहते कि यह आपके भीतर बना रहे, तो उपवास, परिश्रम, जागरण और सदाचारपूर्ण मौन का अभ्यास करें, साथ ही लगन से प्रार्थना करें।

20. जो लोग हमारे प्राणों को अथक रूप से खोजते हैं, वे कामुक विचारों के माध्यम से उन्हें मानसिक या वास्तविक पाप में डुबोने का प्रयास करते हैं। लेकिन जब उन्हें कोई ऐसा मन मिलता है जो उन्हें अस्वीकार करता है, तो *वे 'लज्जित और कलंकित होंगे'*; जबकि जब उन्हें कोई मन आध्यात्मिक चिंतन में लगा हुआ मिलता है, तो वे पीछे हट जाएँगे और *'बहुत जल्द लज्जित होंगे'* (भजन संहिता 34:4; 6:11)।

21. *'डीकन' का* कार्य वह करता है जो मन को पवित्र कार्यों के लिए अभिषेक करता है और उससे वासनापूर्ण विचारों को दूर करता है; *'प्रेस्बिटर' का* कार्य वह करता है जो मन को वास्तविक ज्ञान से प्रकाशित करता है, और मिथ्या ज्ञान को नष्ट करता है; *'बिशप' का* कार्य उस व्यक्ति द्वारा पूरा किया जाता है जो पवित्र त्रिमूर्ति के पवित्र अभिषेक के माध्यम से अपनी पूर्णता प्राप्त करता है, जिसकी उपासना की जाती है।

२२. जब आज्ञाओं के पालन से हमारी वासनाएँ कम हो जाती हैं, तो राक्षस कमजोर हो जाते हैं; वे तब नष्ट हो जाते हैं, जब आत्मा के निर्विकार होने के कारण, वे उससे पूरी तरह से लुप्त हो जाते हैं, और उन्हें उसमें कुछ भी ऐसा नहीं मिलता जिससे वे उससे चिपके रहें या उसके विरुद्ध युद्ध करें। इसका तात्पर्य यह है: *'वे दुर्बल हो जाएंगे और तेरी उपस्थिति से नाश हो जाएंगे'* (भजन संहिता 9:4)।

२३. कुछ लोग मानवीय भय के कारण, कुछ अहंकार के कारण, और कुछ आत्म-अनुशासन के कारण वासनाओं से परहेज़ करते हैं; जबकि अन्य परमेश्वर की व्यवस्था द्वारा वासनाओं से मुक्त होते हैं।

24. प्रभु के सभी वचन निम्नलिखित चार तत्वों से मिलकर बने हैं: आज्ञाएँ, सिद्धांत, चेतावनियाँ, और प्रतिज्ञाएँ; और उनके लिए हम जीवन की हर कठोरता को सहते हैं, जैसे: उपवास, जागना, नंगे जमीन पर सोना, वंचित रहना और आज्ञाकारिता में परिश्रम, अपमान, अनादर, यातना, मृत्यु, और इसी तरह की अन्य बातें। *'तेरे वचनों के लिये,'* भविष्यवक्ता कहता है, *'मैंने क्लेश के मार्गों का पालन किया है'* (भजन संहिता 16:4)।

२५. संयम का पुरस्कार निर्लिप्तता है; विश्वास का ज्ञान है; निर्लिप्तता से विवेक उत्पन्न होता है, और ज्ञान से ईश्वर के प्रति प्रेम।

26. मन, जब वह उचित तरीके से एक सक्रिय जीवन जीता है, तो विवेक में श्रेष्ठता प्राप्त करता है; और जब वह उचित तरीके से एक चिंतनशील जीवन जीता है, तो ज्ञान में श्रेष्ठता प्राप्त करता है। पहला उसे करने वाले को सद्गुण और दुर्गुण में अंतर करना सिखाता है; दूसरा अपने सहभागी को अद्रव्य और द्रव्य प्राणियों के गुणों के ज्ञान में प्रवेश कराता है। हालाँकि, मन केवल तभी ईश्वर-ज्ञान ( ) के वरदान का पात्र बनता है, जब वह प्रेम के पंखों पर उड़ान भरकर ऊपर कही गई सभी बातों से परे पहुँचता है और ईश्वर में स्थिरता प्राप्त कर लेता है, और तब वह मानव मन के लिए यथासंभव, आत्मा से ही उसकी गुणधर्मों का चिंतन करता है।

27. यदि आप धर्मशास्त्रीय चिंतन में संलग्न होना चाहते हैं, तो ईश्वर में स्वयं जो है उसे न खोजें; क्योंकि यह न केवल मानव मन द्वारा, बल्कि ईश्वर के बाद अस्तित्व में रहने वाली किसी भी अन्य प्राणी के मन द्वारा भी नहीं पाया जा सकता। लेकिन, जहाँ तक संभव हो, उन गुणों पर विचार करो जो उसे आच्छादित करते हैं, जैसे: शाश्वत सार, असीमता, अकथनीयता, सद्गुण, ज्ञान, और वह शक्ति जो सभी चीजों को बनाती है, सर्वज्ञतापूर्वक सभी चीजों का शासन करती है, और जो कुछ भी अस्तित्व में है उसका न्याय करती है। क्योंकि मनुष्यों में, वह पहले से ही एक महान धर्मशास्त्री है जो, कुछ हद तक भी, ईश्वर के इन गुणों को प्रकट करता है।

28. वह मनुष्य बलवान है जिसने ज्ञान को कर्म के साथ जोड़ लिया है: क्योंकि तब वह उससे कामवासना को सूखा देता है और क्रोध को वश में कर लेता है; और उससे वह अपने मन को ऊपर उठाता है और ईश्वर के साथ निवास करता है।

29. जब प्रभु कहते हैं, *'मैं और पिता एक हैं'*, तो वे इससे स्वभाव की एकता का संकेत देते हैं; लेकिन जब वे फिर कहते हैं, *'मैं पिता में हूँ और पिता मुझ में हैं'*, तो वे हाइपोस्टेसिस (अस्तित्वों) की अविभाज्यता को प्रदर्शित करते हैं। और इस प्रकार त्रिविटिस (जो तीन देवताओं के सिद्धांत को मानते हैं), पुत्र को पिता से अलग करके, दोनों ओर से एक गर्त में गिर जाते हैं: या तो, पुत्र को पिता के समतत् मानते हुए भी, उसे पिता से अलग करके, वे यह कहने के लिए विवश हो जाते हैं कि वह पिता से जन्मा नहीं है, और इस प्रकार उस विधर्म में गिर जाते हैं जो तीन देवताओं और तीन सिद्धांतों को मानता है; या, जबकि वे पुत्र को पिता से उत्पन्न मानते हैं, परन्तु उन्हें उनसे अलग करते हैं, तो उन्हें अनिवार्य रूप से यह स्वीकार करना होगा कि वह पिता के समतत्त्व नहीं है, और इस प्रकार वे समय के स्वामी को स्वयं समय के अधीन कर देते हैं। महान ग्रेगरी की शिक्षा के अनुसार, एक ईश्वर को बनाए रखना और तीन हाइपोस्टासीस (अस्तित्वों) की घोषणा करना आवश्यक है, जिनमें से प्रत्येक की अपनी विशिष्ट प्रकृति है। क्योंकि, उनकी शिक्षा के अनुसार, त्रित्व विभाजित है, फिर भी अविभाज्य है; और एकजुट है, फिर भी पृथक है। क्या अद्भुत विभाजन और एकता है! लेकिन इसमें क्या अद्भुतता होगी यदि पिता और पुत्र उसी तरह एकजुट और विभाजित हों जैसे एक व्यक्ति दूसरे से एकजुट होता है और अलग होता है, और बस इतना ही?

30. जो प्रेम में सिद्ध है और निर्लिप्तता के शिखर पर पहुँच गया है, वह न तो अपने और पराए में, न तो विश्वासी और अविश्वासी में, न तो दास और स्वाधीन में, और न ही पुरुष और स्त्री में कोई भेद जानता है। परन्तु, भावों की अत्याचारीता से ऊपर उठकर, एक ही मानवीय स्वभाव को देखकर, वह सभी को समान रूप से देखता है और सभी के प्रति समान भाव रखता है। उसमें न तो कोई यहूदी है और न कोई यूनानी, न कोई नर है और न कोई नारी, न कोई दास है और न कोई स्वतंत्र, पर मसीह सब कुछ और सब में हैं (गलातियों 3:28)।

31. आत्मा के भीतर विद्यमान वासनाओं से, राक्षस हमारे भीतर वासनापूर्ण विचारों को भड़काने के बहाने निकालते हैं। फिर, इनसे मन को अभिभूत करके, वे उसे पाप के लिए राज़ी होने पर मजबूर करते हैं; इस पर विजय पाने के बाद, वे उसे मानसिक पाप में ले जाते हैं; और एक बार यह पूरा हो जाने पर, वे उसे एक कैदी की तरह, पाप के वास्तविक कृत्य तक ले जाते हैं। इसके बाद, इन विचारों के माध्यम से अंततःआत्मा को उजाड़ देने पर, वे इनके साथ ही चले जाते हैं। मन में केवल पाप की मूर्ति (मानसिक छवि) ही रह जाती है, जिसके बारे में प्रभु कहते हैं: *'जब तुम पवित्र स्थान में विरान करने वाली घृणित वस्तु को खड़ा हुआ देखो'* (मत्ती 24:15)। पाठक यह समझे कि पवित्र स्थान और परमेश्वर का मंदिर मानव मस्तिष्क है, जिसमें राक्षसों ने, कामुक विचारों से आत्मा को उजाड़कर, पाप की मूर्ति स्थापित कर दी है। मुझे नहीं लगता कि जोसेफस को पढ़ने वाले को इस बात में कोई संदेह है कि जो बात प्रभु ने कही थी, वह ऐतिहासिक रूप से घटित हुई है। हालाँकि, कुछ लोग कहते हैं कि वही काम विरोधी मसीह के समय में भी होगा।

32. तीन सिद्धांत हमें अच्छाई की ओर प्रेरित करते हैं: स्वभाव से (हमारे भीतर अच्छाई के बीज), पवित्र शक्तियाँ, और स्वतंत्र इच्छा। प्रकृति के बीज – उदाहरण के लिए, जब हम दूसरों के साथ वैसा ही व्यवहार करते हैं जैसा हम अपने लिए चाहते हैं; या जब हम किसी व्यक्ति को संकट और ज़रूरत में देखते हैं, और स्वाभाविक रूप से उस पर दया दिखाते हैं। पवित्र शक्तियाँ – जब, किसी अच्छे काम की ओर एक आवेग महसूस करते हुए, हम (अपने भीतर) एक अनुकूल प्रवृत्ति पाते हैं और सफल होते हैं। अंत में, सद्इच्छा, जब हम अच्छाई और बुराई में अंतर करते हुए, अच्छाई का चयन करते हैं।

33. इसी तरह, तीन सिद्धांत हैं जो हमें बुराई की ओर धकेलते हैं: वासनाएँ, राक्षस और दुष्ट इच्छा। वासनाएँ, जब हम लापरवाही से कुछ चाहते हैं; उदाहरण के लिए, या तो गलत समय पर और बिना ज़रूरत के भोजन, या संतान उत्पत्ति के इरादे के बिना और जो अवैध हो, ऐसी पत्नी; इसी तरह जब हम किसी ऐसे व्यक्ति पर गुस्सा करते हैं या परेशान होते हैं जिस पर हमें नहीं होना चाहिए, जैसे कि जिसने हमारा अपमान किया हो या हमें नुकसान पहुँचाया हो। राक्षस: जब हम कमजोर स्थिति में होते हैं, तो वे एक अनुकूल क्षण देखकर अचानक हम पर आक्रमण करते हैं और बड़ी ताकत से उपरोक्त और उनसे मिलते-जुलते जुनून को भड़काते हैं। अंत में, दुष्ट इच्छा: जब हम जानते हुए भी कि क्या अच्छा है, बुराई का चयन करते हैं।

34. सदाचार के कर्मों का पुरस्कार निर्लिप्तता और ज्ञान है। क्योंकि ये ही साधन हैं जिनसे हम स्वर्ग के राज्य को प्राप्त करते हैं, ठीक वैसे ही जैसे वासनाएँ और अज्ञानता शाश्वत यातना की ओर ले जाती हैं। और इसलिए, जो कोई भी इन्हें मानव महिमा के लिए खोजता है, न कि इसलिए कि वे अपने आप में अच्छे हैं, उसे धर्मग्रंथ से सुनना चाहिए: *'तुम मांगते हो और प्राप्त नहीं करते, क्योंकि तुम गलत इरादों से मांगते हो'* (याकूब 4:3)।

35. मानवीय कार्यों में से कई अपने आप में अच्छे होते हैं, लेकिन किसी कारण से वे बुरे हो सकते हैं। उदाहरण के लिए, उपवास और जागरण, प्रार्थना और भजन-गायन, दान और आतिथ्य अपने आप में अच्छे कर्म हैं; लेकिन जब इन्हें व्यर्थता के लिए किया जाता है, तो वे अब अच्छे नहीं रहते।

36. हमारे सभी कर्मों में, ईश्वर हमारे इरादे को देखते हैं: कि क्या हम उन्हें उनकी खातिर करते हैं या किसी अन्य कारण से।

37. जब आप धर्मग्रंथ के वचन सुनते हैं: *'वह हर एक को उसके कर्मों के अनुसार प्रतिफल देगा'* (रोमियों 2:6), तो याद रखें कि परमेश्वर सही इरादे के बिना किए गए काम के लिए, भले ही वह अच्छा लगे, अच्छा प्रतिफल नहीं देते; बल्कि ठीक उसी काम के लिए देते हैं जो सही इरादे से किया गया हो। क्योंकि परमेश्वर का न्याय केवल इस बात पर नहीं देखता कि क्या किया गया है, बल्कि उन इरादों पर भी देखता है जिनसे यह किया गया है।

38. अहंकार का दैत्य दोहरा छल करता है: या तो वह संन्यासी को अपने पुण्य कर्मों का श्रेय ईश्वर को देने के बजाय स्वयं को देने के लिए मनाता है, जो सभी अच्छाइयों के दाता और सदाचार में सहायक है; या, जब संन्यासी ऐसा करने से इनकार कर देता है, तो वह उसे अपने कम परिपूर्ण भाइयों का तिरस्कार करने के लिए उकसाता है। लेकिन उसे यह एहसास नहीं होता कि, इस तरह काम करते हुए भी, वह दानव उसे ईश्वर की मदद को अस्वीकार करने के लिए उकसा रहा है। क्योंकि उन लोगों को तुच्छ समझकर जिन्हें वह स्वयं जितना सदाचारी होने में अक्षम समझता था, वह स्वयं को अपनी ही शक्ति से कोई विशेष सदाचार प्रदर्शित करने वाला के रूप में प्रस्तुत करता है। यह असंभव है, जैसा कि प्रभु ने कहा है: *'मेरे बिना तुम कुछ भी नहीं कर सकते'* (यूहन्ना 15:5)। क्योंकि हमारी कमजोरी ऐसी है कि, जब हम भलाई की इच्छा करते भी हैं, तो हम सभी भलाई के दाता के बिना उसे पूरा नहीं कर सकते।

39. जिसने भी मानव स्वभाव की दुर्बलता को जाना है, उसने ईश्वर की सहायक शक्ति का अनुभवात्मक ज्ञान प्राप्त किया है। और ऐसा व्यक्ति, जो इस सहायता से पहले ही कुछ कार्यों को पूरा कर चुका है और अन्य कार्यों को पूरा करने का प्रयास कर रहा है, वह अपने किसी भी साथी मानव को कभी तुच्छ नहीं समझता। क्योंकि वह जानता है कि जिस प्रकार इसने उसे कई आसक्तियों और दुर्भाग्यों से मदद करके मुक्ति दिलाई है, उसी प्रकार यह जब चाहे तब सभी की मदद करने के लिए पर्याप्त शक्तिशाली है, और सबसे अधिक उन लोगों की जो उसके लिए प्रयास करते हैं; हालाँकि, कुछ कारणों से, वह सभी को एक साथ आसक्तियों से मुक्त नहीं करता, बल्कि, एक अच्छे और दयालु चिकित्सक के रूप में, वह उचित समय पर उसके पास आने वाले हर किसी को ठीक कर देता है।

40. जब वासनाएँ निष्क्रिय हो जाती हैं, तो अहंकार पनपता है, या तो जब उनके कारण छिपा दिए जाते हैं या जब राक्षस चालाकी से पीछे हट जाते हैं।

41. लगभग हर पाप आत्म-संतुष्टि के आनंद से उत्पन्न होता है, और इसलिए यह पश्चाताप के कार्य द्वारा, या हमारे लिए ईश्वर की दिव्य व्यवस्था द्वारा समझदारी से लाई गई किसी विपत्ति के माध्यम से—चाहे वह स्वेच्छा से हो या अनिच्छा से—दुख और शोक द्वारा समाप्त किया जाता है। *'क्योंकि यदि हम स्वयं का न्याय करते,'* धर्मग्रंथ कहता है, *'तो हम दण्डित नहीं किए जाएँगे; परन्तु जब हम प्रभु द्वारा न्याय किए जाते हैं, तो हमें अनुशासित किया जाता है, ताकि हम संसार के साथ दण्डित न हों'* (1 कुरिन्थियों 11:31–32)।

४२. यदि आप पर कोई अप्रत्याशित प्रलोभन आता है, तो उस पर दोष न लगाएँ जिसके माध्यम से वह आया है, बल्कि यह खोजें कि वह क्यों आया; और आपको सुधार मिलेगा। क्योंकि चाहे उसके द्वारा हो या किसी और के द्वारा, आपको परमेश्वर के न्याय के प्याले की कड़वाहट पीनी ही थी।

43. आप जितने अधिक दुष्ट हैं, आपको उतना ही कम पीड़ा से दूर रहना चाहिए, ताकि उससे विनम्र होकर, आप अपने अहंकार को दूर कर सकें।

४४. लोगों पर परीक्षाएँ आती हैं; कुछ सुख लाती हैं, कुछ दुख, और कुछ शारीरिक कष्ट। क्योंकि आत्माओं का वैद्य, अपनी आज्ञाओं के अनुसार, आत्मा के भीतर निहित वासनाओं के कारण को देखकर, औषधि देता है।

४५. कुछ लोगों को अतीत में किए गए पापों का प्रायश्चित करने के लिए परीक्षाएँ भेजी जाती हैं, दूसरों को वे पाप समाप्त करने के लिए जो वे वर्तमान में कर रहे हैं, और कुछ अन्य लोगों को उन पापों को रोकने के लिए जो वे भविष्य में कर सकते हैं; इसके अलावा वे परीक्षाएँ भी होती हैं जो किसी व्यक्ति की परीक्षा लेने के लिए आती हैं, जैसा कि योब के मामले में हुआ था।

४६. बुद्धिमान व्यक्ति, ईश्वर के विधानों के उपचारकारी स्वभाव पर मनन करते हुए, उन माध्यमों से आने वाली विपत्तियों को कृतज्ञतापूर्वक सहन करता है, और उनके लिए किसी और को दोषी नहीं ठहराता, सिवाय अपने ही पापों के; जबकि मूर्ख, जब वे पाप करते हैं और उसके लिए दंडित होते हैं, तो वे अपनी दुर्भाग्य का कारण या तो ईश्वर को या लोगों को मानते हैं, और इस मामले में ईश्वर की दिव्य योजना की बुद्धिमत्ता को समझने में विफल रहते हैं।

४७. ऐसे साधन हैं जो वासनाओं की गति को रोकते हैं और उन्हें बढ़ने से रोकते हैं; और ऐसे भी हैं जो उन्हें कम करते हैं और उनके विनाश की ओर ले जाते हैं। इस प्रकार, उपवास, परिश्रम और जागरण कामवासना को बढ़ने से

रोकते हैं; जबकि एकांत, मनन, प्रार्थना और ईश्वर के प्रति प्रेम इसे कम करते हैं और इसके विलुप्त होने की ओर ले जाते हैं। इसी प्रकार चिड़चिड़ापन के संबंध में भी: उदारता, क्षमा और नम्रता इसे रोकती हैं और इसके बढ़ने से रोकती हैं; जबकि प्रेम, दान, सद्भावना और अपने पड़ोसी के प्रति प्रेम इसे कम करते हैं।

४८. जिसका मन निरंतर ईश्वर की ओर निर्देशित रहता है, उस व्यक्ति में इच्छा ईश्वर के प्रति तीव्र लालसा में बदल जाती है, और सारी चिड़चिड़ाहट दिव्य प्रेम में परिवर्तित हो जाती है। क्योंकि दिव्य प्रकाश के साथ दीर्घकालिक संयोग के माध्यम से, मन, पूर्णतः प्रकाशमान हो कर, अपने भीतर के इच्छुक भाग को नियंत्रित और वश में कर लेता है, और उसे ईश्वर के लिए एक अनवरत, जैसा कि कहा जाता है, इच्छा और उनके प्रति अटूट प्रेम में बदल देता है – इसे पूरी तरह से सांसारिक से दिव्य में स्थानांतरित कर देता है।

४९. जो व्यक्ति ईर्ष्या, क्रोध और उन लोगों के प्रति द्वेष से मुक्त है जिन्होंने उसे आहत किया है, उसमें उनके प्रति प्रेम होना आवश्यक नहीं है: क्योंकि वे, प्रेम किए बिना भी, आज्ञा के अनुसार, बुराई का बदला बुराई से न लेने से बच सकते हैं; लेकिन बिना स्वयं को मजबूर किए बुरे का भला से प्रतिदिन करना इतना आसान नहीं है; क्योंकि जो लोग उससे घृणा करते हैं, उनके प्रति भी भलाई करने की प्रवृत्ति केवल पूर्ण आध्यात्मिक प्रेम की विशेषता है।

५०. जो किसी से प्रेम नहीं करता, वह ज़रूरी नहीं कि उससे घृणा भी करता हो; इसी तरह, जो किसी से घृणा नहीं करता, वह ज़रूरी नहीं कि उससे प्रेम करता हो। लेकिन वह उसके प्रति बीच की स्थिति में हो सकता है, यानी न तो प्रेम करता है और न ही घृणा। क्योंकि आत्मा में एक प्रेमपूर्ण स्वभाव आमतौर पर इस दूसरे सौ के अनुच्छेद 9 में बताई गई पाँच प्रेरणाओं से उत्पन्न होता है: एक प्रशंसनीय, एक पारस्परिक, और तीन निंदनीय।

51. जब आप देखें कि आपका मन सांसारिक चीजों में आनंदित होता है और उन पर मनन करने में सुख पाता है, तो जान लें कि आप ईश्वर से अधिक उन्हें प्रेम करते हैं। *'क्योंकि जहाँ तुम्हारा धन है, वहीं तुम्हारा हृदय भी होगा,'* प्रभु कहते हैं (मत्ती 6:21)।

५२. एक मन जो ईश्वर से जुड़ा रहता है, और प्रार्थना तथा प्रेम के माध्यम से उसमें निवास करता है, वह बुद्धिमान, अच्छा, मजबूत, परोपकारी, दयालु, उदार, और, सरल शब्दों में कहें तो, अपने भीतर लगभग सभी दिव्य गुणों का स्वामी बन जाता है। लेकिन जो उससे मुँह मोड़ लेता है और भौतिक चीजों में उलझ जाता है, तथा अपने आपको कामुक सुखों के हवाले कर देता है, वह या तो पशु-सदृश या क्रूर हो जाता है, और इसी कारण लोगों से युद्ध करता है।

53. धर्मग्रंथ सांसारिक चीज़ों को 'संसार' कहता है, और जो लोग अपने मन को उनमें लगाते हैं वे सांसारिक लोग हैं, जिनके बारे में, उनकी बड़ी लज्जा के लिए, कहा गया है: *'संसार से प्रेम मत करो, और न ही संसार की वस्तुओं से। क्योंकि जो कुछ संसार में है— मांस की वासना, आँखों की वासना, और जीवन का घमंड— वह पिता से नहीं है, बल्कि इस संसार का है'* (1 यूहन्ना 2:15–16)।

54. एक भिक्षु वह है जिसने अपने मन को इंद्रिय वस्तुओं से हटा लिया है, और संयम, प्रेम, भजन-गायन और प्रार्थना के माध्यम से, निरंतर ईश्वर के साथ वास करता है।

55. आध्यात्मिक दृष्टिकोण से, एक 'चरवाहा' एक सक्रिय व्यक्ति होता है, क्योंकि आध्यात्मिक जीवन में किए गए धार्मिक कार्य पशुओं को चराने के समान हैं। इसीलिए याकूब कहते हैं: *'चरवाहे तुम्हारे सेवक हैं'*। दूसरी ओर, भेड़ों का एक चरवाहा एक चिंतनशील व्यक्ति होता है, क्योंकि चिंतन के पहाड़ों पर मन द्वारा पोषित विचारों का महत्व भेड़ों के समान होता है। इसीलिए *'हर एक भेड़-चरवाहा मिस्रियों के लिये घृणित है'*, अर्थात्, विरोधी शक्तियों के लिए (उत्पत्ति 46:34)।

56. एक भ्रष्ट मन, जब शरीर इंद्रियों द्वारा अपनी स्वाभाविक कामनाओं और सुखों के लिए उत्तेजित हो जाता है, तो वह उनका अनुसरण करता है और उनकी कल्पनाओं और इच्छाओं के अनुरूप हो जाता है। लेकिन एक सदाचारी मन खुद को नियंत्रित करता है और जुनूनी कल्पनाओं और इच्छाओं से मुंह मोड़ लेता है, और, इसके अलावा, अपने आचरण को सुधारने का प्रयास करता है।

57. सद्गुणों में से कुछ शारीरिक होते हैं, जबकि अन्य आध्यात्मिक। शारीरिक सद्गुण हैं: उपवास, जागरण, नंगे फर्श पर सोना, सेवा, शारीरिक श्रम—ताकि दूसरों पर बोझ न बनें, या दान के लिए, और इसी तरह। और आध्यात्मिक सद्गुण हैं: प्रेम, उदारता, नम्रता, संयम, प्रार्थना आदि। और इसलिए, यदि ऐसा हो कि किसी आवश्यकता या शारीरिक स्थिति के कारण—उदाहरण के लिए, बीमारी या किसी अन्य समान कारण से—हम उपरोक्त वर्णित शारीरिक सद्गुणों का अभ्यास करने में असमर्थ हैं, तो हमें प्रभु की कृपापूर्ण क्षमा प्राप्त है, क्योंकि वह इसके कारणों को जानते हैं; लेकिन यदि हम आध्यात्मिक सद्गुणों का अभ्यास करने में विफल रहते हैं, तो हमारे पास कोई बहाना नहीं होगा, क्योंकि उन पर इस प्रकार की बाधाएँ लागू नहीं होती हैं।

५८. ईश्वर के प्रति प्रेम विश्वासी को सभी क्षणिक सुखों, सभी शारीरिक पीड़ा और दुख को तुच्छ समझने के लिए प्रेरित करता है। मसीह के लिए इतना अधिक कष्ट सहने वाले सभी संतों की गवाही इस बात की गवाह है।

५९. सभी बुराइयों की जननी, आत्म-प्रेम से सावधान रहें, जो शरीर का एक अतार्किक प्रेम है। क्योंकि इससे ही, आशीर्वाद के भेष में, पहले तीन मौलिक और आदिम जुनूनी और उन्मत्त विचार उत्पन्न होते हैं, अर्थात: अतृप्ति, लालच, और दंभ, जो शरीर की आवश्यक जरूरतों से अपने बहाने निकालते हैं; और इनसे ही सभी प्रकार की वासनाओं का समूह उत्पन्न होता है। इसीलिए, जैसा कि कहा गया है, आत्म-प्रेम से बहुत सावधान रहना चाहिए और बड़ी सतर्कता से इसका मुकाबला करना चाहिए। क्योंकि जब यह जड़ से उखाड़ दिया जाता है, तो इसके सभी उपज भी जड़ से समाप्त हो जाते हैं।

60. आत्म-स्नेह का जुनून संन्यासी को शरीर को क्षमा करने और स्वास्थ्य की रक्षा तथा शरीर पर विवेकपूर्ण नियंत्रण रखने के बहाने उसे भोजन में लिप्त करने के लिए प्रेरित करता है, ताकि धीरे-धीरे उसकी मांगों के आगे झुककर, वह कामुकता की खाई में गिर जाए; जबकि गृहस्थ, केवल गृहस्थ होने के नाते, *'वासना में शरीर की चिंता करने' के लिए* प्रेरित होता है (रोमियों 13:14)।

61. वे कहते हैं, प्रार्थना की सर्वोच्च अवस्था तब होती है, जब प्रार्थना के दौरान मन शरीर और संसार से परे, पूरी तरह से अमूर्त और अदृश्य हो जाता है। जो कोई भी ऐसी अवस्था को बिना टूटे बनाए रखता है, वह वास्तव में अविराम रूप से प्रार्थना करता है।

62. जैसे शरीर, मरते समय, सभी सांसारिक चीजों से पूरी तरह अलग हो जाता है, वैसे ही मन भी, सबसे पूर्ण प्रार्थना के कार्य में मरते समय, सभी सांसारिक विचारों से अलग हो जाता है। और यदि वह ऐसी मृत्यु नहीं मरता है, तो वह न तो ईश्वर के साथ हो सकता है और न ही उसके साथ रह सकता है।

63. हे विनम्र भिक्षु, कोई भी तुम्हें इस विचार से धोखा न दे कि तुम कामुक सुख और अहंकार में लिप्त होकर मोक्ष प्राप्त कर सकते हो।

64. जैसे शरीर अपने कर्मों द्वारा पाप करता है, और स्वयं को नियंत्रित रखने के लिए उसके पास शारीरिक सद्गुण होते हैं ताकि वह पवित्र बना रहे: वैसे ही मन कामुक विचारों द्वारा पाप करता है, और स्वयं को नियंत्रित रखने के लिए उसके पास आध्यात्मिक सद्गुण होते हैं ताकि चीज़ों को पवित्रता और निष्पक्षता से देखकर, वह पवित्र बना रहे।

65. जैसे दिन के बाद रातें और गर्मियों के बाद सर्दियाँ आती हैं, वैसे ही अहंकार और कामुकता के बाद दुख और पीड़ादायक कष्ट आते हैं, चाहे वह इस युग में हो या आने वाले युग में।

66. जिसने पाप किया है, उसके लिए आने वाले न्याय से बच निकलना असंभव है, जब तक कि वह इस जीवन में स्वेच्छा से दर्दनाक कष्ट सहन न करे, या अनैच्छिक दुर्भाग्यों को न झेले।

६७. कहा जाता है कि पाँच कारणों से ईश्वर हमें राक्षसों द्वारा आक्रमित होने की अनुमति देते हैं: पहला कारण यह है कि, आक्रमण झेलते और उसका विरोध करते हुए, हम पुण्य और पाप में अंतर करना सीख सकें; दूसरा यह है कि, संघर्ष और परिश्रम के माध्यम से पुण्य प्राप्त करने के बाद, हम उसे दृढ़ता से और अपरिवर्तित रूप से थामे रहें; तीसरा, ताकि सद्गुण में उत्कृष्ट होते हुए भी हम घमंडी न हो जाएँ, बल्कि विनम्रता सीखें; चौथा यह है कि, अपने कर्मों के माध्यम से पाप की बुराई का अनुभव करने के बाद, हम उससे पूर्ण घृणा करने लगें; अंत में, पाँचवाँ और सबसे महत्वपूर्ण कारण यह है कि, निर्लिप्त हो जाने के बाद, हम अपनी कमजोरी को, और उस की शक्ति को न भूलें जिसने हमारी मदद की है।

68. जैसे भूखे मन को रोटी की और प्यासे मन को पानी की लालसा होती है, वैसे ही खाने के शौकीन के मन को तरह-तरह की स्वादिष्ट चीजों की, कामुक के मन को स्त्रियों के मुख की, दंभी के मन को मान-सम्मान की और लालची के मन को लाभ की लालसा होती है; प्रतिशोधी मन—उससे बदला लेने के लिए जिसने उसे अन्याय किया हो; ईर्ष्यालु मन—उसके पतन के लिए जिससे वह ईर्ष्या करता है। अन्य भावों के बारे में भी यही सच है। क्योंकि भावों से घिरा हुआ मन, शरीर के जागते और सोते समय, दोनों ही अवस्थाओं में भावुक विचारों को पालता है।

६९. जब वासना बढ़ती है, तो मन सुख देने वाली चीजों का सपना देखता है; और जब यह परेशान होता है, तो वह भय पैदा करने वाली चीजों को देखता है; अशुद्ध आत्माएँ हमारी लापरवाही को अपना सहयोगी बनाकर और उसे भड़काकर, हमारे भावों को तीव्र करती हैं; जबकि पवित्र देवदूत उन्हें कम करते हैं, और हमें सदाचार का अभ्यास करने के लिए प्रेरित करते हैं।

70. आत्मा की कामुक इच्छाओं का बार-बार जागना आत्मा में सुखद गतिविधियों में लिप्त होने की एक अजेय आदत डाल देता है, जबकि चिड़चिड़ापन के बार-बार उभार से मन डरपोक हो जाता है और उससे साहस छिन जाता है।

पहले वाले का उपचार दीर्घकालिक उपवास, जागरण और प्रार्थना से होता है; दूसरे वाले का उपचार दान, परोपकार, प्रेम और करुणा से।

७१. दुष्ट आत्माएँ हमसे या तो भौतिक चीजों के माध्यम से या भौतिक चीजों के बारे में भावुक विचारों के माध्यम से युद्ध करती हैं: भौतिक चीजों के माध्यम से उन लोगों के खिलाफ जो उनमें फँसे हुए हैं, और विचारों के माध्यम से उन लोगों के खिलाफ जो भौतिक चीजों से अलग हो गए हैं।

७२. जैसे कर्म की अपेक्षा विचार में पाप करना आसान है, वैसे ही विचारों के माध्यम से लड़ी जाने वाली लड़ाई भौतिक चीजों के माध्यम से लड़ी जाने वाली लड़ाई से अधिक कठिन है।

73. वस्तुएँ मन के बाहर होती हैं, जबकि उनके बारे में विचार मन के भीतर होते हैं। अत; मन के लिए यह शक्ति है कि वह उनका उपयोग भलाई के लिए या बुराई के लिए करे। क्योंकि विचारों के दुरुपयोग के बाद वस्तुओं का दुरुपयोग होता है।

74. मन निम्नलिखित तीन तरीकों से कामुक विचार ग्रहण करता है: इंद्रियों के माध्यम से, शरीर की स्थिति के माध्यम से, और स्मृति के माध्यम से। इंद्रियों के माध्यम से – जब उन पर प्रभाव डालने वाली चीजें, जैसे कि जिनके प्रति हम जुनूनी हैं, मन में कामुक विचारों को जगाती हैं; शरीर की अवस्था के माध्यम से – जब आहार में संयम की कमी, या राक्षसों के प्रभाव, या किसी बीमारी के कारण, शरीर की परिवर्तित अवस्था इसे कामुक विचारों की ओर, या ईश्वर की इच्छा के विरुद्ध विद्रोह की ओर प्रेरित करती है; स्मरण के माध्यम से – जब स्मृति उन चीजों के विचारों को पुनर्जीवित करती है जिनसे हम जुड़े हुए हैं और इस प्रकार मन में कामुक विचारों को जगाती है।

७५. ईश्वर द्वारा हमारे उपयोग के लिए दी गई चीज़ों में से कुछ आत्मा में, कुछ शरीर में, और कुछ शरीर के परिवेश में पाई जाती हैं। आत्मा में उसकी शक्तियाँ होती हैं; शरीर में इंद्रियाँ और अन्य अंग होते हैं; शरीर के चारों ओर भोजन, संपत्ति, धन आदि होते हैं। हम इन चीजों और उनसे उत्पन्न होने वाली परिस्थितियों का अच्छा या बुरा उपयोग करते हैं, यह दर्शाता है कि हम सदाचारी हैं या दुष्ट।

76. उपर्युक्त अनिश्चितताओं में से, कुछ आत्मा से संबंधित हैं, कुछ शरीर से, और अन्य शरीर के आसपास की चीजों से: आत्मा में—ज्ञान और अज्ञानता, स्मरण और विस्मरण, प्रेम और घृणा, भय और साहस, आनंद और दुख, और इसी तरह; शरीर में: सुख और थकान, संवेदनशीलता और सुन्नता, स्वास्थ्य और बीमारी, जीवन और मृत्यु, और इसी तरह; शरीर के आसपास के वातावरण में: समृद्धि और विपत्ति, धन और गरीबी, सम्मान और अपमान, और इसी तरह। इनमें से कुछ को लोग अच्छा मानते हैं और कुछ को बुरा; जबकि, अपने आप में, इनमें से कोई भी चीज बुरी नहीं है, बल्कि यह इस बात पर निर्भर करता है कि उनका उपयोग कैसे किया जाता है, वह बुरी या अच्छी बन जाती है।

७७. ज्ञान अपने स्वभाव से ही एक शुभ वस्तु है, ठीक उसी प्रकार जैसे स्वास्थ्य। फिर भी, इसके विपरीत ने कई लोगों को कहीं अधिक लाभ पहुँचाया है, क्योंकि दुष्टों के लिए ज्ञान भलाई के लिए काम नहीं करता, भले ही, जैसा कि कहा गया है, यह अपने स्वभाव से ही एक शुभ वस्तु है। इसी तरह, स्वास्थ्य, धन और आनंद उनका भला करने के लिए काम नहीं करते, क्योंकि वे उनका उपयोग अपने लाभ के लिए नहीं करते; ऐसे लोगों के लिए, इसका विपरीत अधिक लाभदायक है: और परिणामस्वरूप, यह (यानी विपरीत) सख्त अर्थों में बुरा नहीं है, भले ही यह बुरा प्रतीत होता है।

७८. अपने विचारों का दुरुपयोग न करें, कहीं ऐसा न हो कि आप भौतिक चीजों का भी दुरुपयोग करने के लिए विवश हो जाएँ: क्योंकि यदि आप पहले विचारों में पाप नहीं करते, तो आप कर्म में कभी पाप नहीं करेंगे।

७९. *'पृथ्वी की प्रतिमा'* (आदम) में मुख्य दुर्गुण शामिल हैं, जैसे: मूर्खता, कायरता, अनियंत्रितता, और झूठ। *'स्वर्गीय प्रतिमा'* में मुख्य सद्गुण शामिल हैं, जैसे: विवेक, साहस, पवित्रता, और न्याय। *'पर जैसे हमने सांसारिक स्वरूप को धारण किया है, वैसे ही हम स्वर्गीय स्वरूप को भी धारण करेंगे'* (1 कुरिन्थियों 15:49)।

८०. यदि आप उस मार्ग को खोजना चाहते हैं जो जीवन की ओर ले जाता है, तो उसे उस मार्ग में खोजें जिसने कहा: *'मैं मार्ग और द्वार हूँ और सत्य और जीवन'* (यूहन्ना १४:६; १०:९); और वहाँ आपको वह मिलेगा। परन्तु बड़ी लगन से खोजो, क्योंकि *'जो लोग इसे पाते हैं, वे थोड़े हैं'* (मत्ती 7:14); कहीं ऐसा न हो कि इन थोड़ों से पीछे रहकर, तुम स्वयं को बहुतेरों में पाओ।

81. आत्मा निम्नलिखित पाँच कारणों से पाप से परहेज़ करती है: या तो दूसरों के डर से, या न्याय के डर से, या भविष्य के पुरस्कार के लिए, या ईश्वर के प्रेम से, या अंत में, अंतरात्मा की पीड़ा के कारण।

82. कुछ लोग कहते हैं कि प्राणियों में कोई बुराई नहीं होती, यदि कोई बाहरी शक्ति हमें उसकी ओर न खींचती। लेकिन यह शक्ति हमारे मन की स्वाभाविक गतिविधि की अपनी ही उपेक्षा के सिवा और कुछ नहीं है। क्योंकि जो लोग इस संबंध में परिश्रमी होते हैं, वे हमेशा अच्छा करते हैं और कभी बुरा नहीं करते। और इसलिए, यदि आप भी इसे

चाहते हैं, तो इस उपेक्षा को त्याग दें, और ऐसा करने पर आप बुराई को भी त्याग देंगे, जो विचारों का गलत उपयोग है, जिसके साथ दुर्व्यवहार और सांसारिक चीजें जुड़ी होती हैं।

८३. हमारे भीतर के तर्कशील भाग की स्वभाविक प्रकृति के अनुसार, उसे दिव्य वचन के प्रति आज्ञाकारिता में, हमारे भीतर के अतर्कशील भाग पर शासन करना चाहिए। सभी चीजों में इस व्यवस्था का पालन किया जाए—और प्राणियों में कोई बुराई नहीं होगी, न ही ऐसा कुछ मिलेगा जो उसकी ओर ले जाता हो।

८४. कुछ विचार सरल होते हैं, जबकि अन्य जटिल। सरल विचार निर्लिप्त होते हैं, जबकि जटिल विचार भावुक होते हैं, जो जुनून और विचार से मिलकर बने होते हैं। फिर भी, यह देखा जा सकता है कि जब वे विचारों में पाप की ओर बढ़ना शुरू करते हैं, तो कई सरल विचार जटिल विचारों के पीछे-पीछे चलते हैं। आइए सोने को उदाहरण के रूप में लें। किसी के मन में सोने के बारे में एक भावुक विचार आया, और उन्होंने उसे चुराने का मन बना लिया: और इस प्रकार, उनके मन में ही उन्होंने पहले ही एक पाप कर लिया था। सोने के विचार के बाद पर्स, संदूक, गोदाम आदि के विचार आए। यहाँ, सोने का विचार जटिल था, क्योंकि यह जुनून के साथ संयुक्त था; जबकि पर्स, संदूक आदि के विचार सरल थे, क्योंकि मन में उनके लिए कोई जुनून नहीं था। यही हर दूसरे विचार पर भी लागू होता है: एक व्यर्थ विचार, अपनी पत्नी के बारे में विचार, और इसी तरह। क्योंकि एक कामुक विचार के बाद आने वाले सभी विचार स्वयं कामुक नहीं होते हैं, जैसा कि उदाहरण में दिखाया गया है। इससे हम यह पहचान सकते हैं कि कौन से विचार कामुक हैं और कौन से नहीं।

८५. कुछ लोग कहते हैं कि राक्षस, जब हम सो रहे होते हैं, तो हमारे शरीर के गुप्तांगों को छूकर कामवासना की उत्तेजना करते हैं; फिर, एक बार उत्तेजित हो जाने पर, यह वासना, स्मृति के माध्यम से, मन में एक महिला की छवि लाती है। हालांकि, अन्य लोग मानते हैं कि राक्षस स्वयं ही मन में महिलाओं के रूप में प्रकट होते हैं; फिर, शरीर के गुप्तांगों को छूकर, वे महिलाओं के प्रति इच्छा जगाते हैं; और इस प्रकार के सपने आते हैं। फिर कुछ अन्य का मानना है कि पास आने वाले पिशाच में प्रचलित कामवासना व्यक्ति में भी वही कामवासना जगाती है, और इस प्रकार आत्मा ऐसे विचारों से प्रज्वलित हो जाती है और स्मृति के माध्यम से छवियों को उकेरती है। इसी तरह, अन्य कामुक सपनों के संबंध में, कुछ कहते हैं कि वे इस प्रकार होते हैं, जबकि अन्य कहते हैं कि यह इसके विपरीत होता है। हालाँकि, यदि आत्मा में प्रेम और संयम निहित हैं, तो उपरोक्त किसी भी साधन से पिशाच न तो शरीर के जागते समय और न ही सोते समय कोई वासना जगा सकते हैं।

८६. विधि के कुछ आज्ञाओं का पालन शारीरिक और आध्यात्मिक दोनों रूप से किया जाना चाहिए, जबकि अन्य का पालन केवल आध्यात्मिक रूप से किया जाता है। उदाहरण के लिए: *'तुम व्यभिचार न करना, तुम हत्या न करना, तुम चोरी न करना'*, और इसी तरह के आज्ञाओं का पालन शारीरिक और आध्यात्मिक दोनों रूप से किया जाना चाहिए; और आध्यात्मिक रूप से तीन तरीकों से। दूसरी ओर, खतना, सब्बाथ का पालन, मेमने की बलि चढ़ाना, कड़वी जड़ी-बूटियों के साथ बिना खमीर वाली रोटी खाना, और इसी तरह की आज्ञाओं का पालन केवल आध्यात्मिक रूप से किया जाना है।

87. संन्यासियों के बीच तीन प्रमुख नैतिक अवस्थाएँ हैं: पहली वह है जब कोई अपने कर्मों द्वारा किसी भी तरह से पाप नहीं करता है; दूसरी वह है जब कोई आत्मा में कामुक विचारों को ठहरने नहीं देता है; तीसरी वह है जब कोई अपने विचारों में, बिना कामुकता के, महिलाओं और अपमान करने वालों की छवियों को देखता है।

88. वह लोभ से मुक्त है जिसने सभी संपत्तियों का त्याग कर दिया है और जिसके पास पृथ्वी पर अपने शरीर के सिवा कुछ भी नहीं है; वास्तव में, उसने उससे भी सभी लगाव त्याग दिया है, और उसने अपनी सभी देखभाल ईश्वर और ईश्वर-भक्त लोगों को सौंप दी है।

८९. जो लोग धन प्राप्त करते हैं, उनमें से कुछ निर्लिप्त भाव से ऐसा करते हैं: इसीलिए, जब उनसे यह छिन जाता है, तो वे शोक नहीं करते, ठीक वैसे ही जैसे उन्होंने एक बार खुशी-खुशी अपने सामान की लूट को स्वीकार किया था (इब्रानियों १०:३४)। हालाँकि, अन्य लोग इसे जुनून के साथ प्राप्त करते हैं: इसीलिए, जब उन्हें अपनी संपत्ति खोने की संभावना का सामना करना पड़ता है, तो वे दुखी होते हैं, ठीक वैसे ही जैसे सुसमाचार में उल्लेखित धनी व्यक्ति, *जो 'दुखी होकर चला गया'* (मत्ती 19:22); और यदि वे वास्तव में उन्हें खो देते हैं, तो वे घोर शोक में डूब जाते हैं। इस प्रकार, संपत्ति का नुकसान निर्लिप्त या आसक्त संचयकर्ता के स्वभाव को प्रकट करता है।

९०. राक्षस उन पर हमला करते हैं जो प्रार्थना में लगे होते हैं, उनके मन में इंद्रिय वस्तुओं के बारे में साधारण विचार डालकर, और इस प्रकार उन्हें प्रार्थना से भटकाते हैं; वे उन पर हमला करते हैं जो सीखने में लगे होते हैं, उनमें यथासंभव लंबे समय तक कामुक विचार बनाए रखते हैं; और वे उन पर हमला करते हैं जो सक्रिय जीवन में लगे होते हैं,

उन्हें उनके कर्मों के माध्यम से पाप करने के लिए लुभाते हैं। – शापित हर तरह से हर किसी से लड़ते हैं, ताकि लोगों को ईश्वर से दूर कर सकें।

91. जो ईश्वर की कृपा से इस जीवन में धर्मपरायणता में प्रशिक्षित होते हैं, उन्हें निम्नलिखित तीन प्रलोभनों से परखा जाता है: या तो सुखद वस्तुओं की पेशकश द्वारा, जैसे अच्छी सेहत, सुंदरता, कई बच्चे, धन, प्रसिद्धि और इसी तरह की चीजें; या बच्चों, संपत्ति या प्रसिद्धि को खोने के दुख से; या उस चीज से जो शरीर को पीड़ा पहुँचाती है, जैसे बीमारी, यातना, और इसी तरह। पहले समूह से प्रभु कहते हैं: *'जो कोई अपने सारे धन-संपत्ति का त्याग नहीं करता, वह मेरा चेला नहीं हो सकता'* (लूका 14:33); दूसरे और तीसरे समूह से: *'अपने धीरज से तुम अपनी आत्माओं को बचाओगे'* (लूका 21:19)।

९२. कहा जाता है कि शरीर की अवस्था निम्नलिखित चार कारणों से बदल जाती है, और इसके द्वारा मन को काम-प्रेरक या निर्लिप्त विचार प्राप्त होते हैं: देवदूत, राक्षस, वायु और भोजन। कहा जाता है कि देवदूत अपने शब्दों के द्वारा; राक्षस अपने स्पर्श से; वायु अपने परिवर्तनों के द्वारा; और भोजन व पेय की प्रकृति तथा उनकी अधिकता या कमी के द्वारा शरीर की अवस्था को बदलते हैं। इनके अतिरिक्त, स्मृति, श्रवण और दृष्टि के द्वारा भी परिवर्तन होते हैं, जब आत्मा पहली बार दुखद या सुखद परिस्थितियों से प्रभावित होती है। उनसे प्रभावित होकर, आत्मा शरीर की स्थिति में परिवर्तन लाती है; और शरीर की परिवर्तित स्थिति, जैसा कि पहले बताया गया है, मन में अनुरूप विचारों को उत्पन्न करती है।

९३. मृत्यु, सार में, ईश्वर से अलगाव है; मृत्यु का डंक पाप है, जिसे आदम ने अपने भीतर ग्रहण करने पर, उसे तुरंत जीवन के वृक्ष, स्वर्ग, और ईश्वर से निकाल दिया गया, जिसके परिणामस्वरूप शारीरिक मृत्यु अनिवार्य रूप से हुई। तथापि, जीवन वास्तव में वही है जिसने कहा: *'मैं ही जीवन हूँ'* (यूहन्ना 14:6)। वह, मृत्यु में होकर, मृतकों को पुनर्जीवित कर उठा।

94. जब कुछ लिखा जाता है, तो वह या तो अपनी याद के लिए लिखा जाता है, या दूसरों के लाभ के लिए, या दोनों के लिए, या कुछ लोगों को नुकसान पहुँचाने के लिए, या दिखावे के लिए, या आवश्यकता से।

95. *'मृत्यु की छाया की घाटी'* (भजन संहिता 22:2) सक्रिय सद्गुण है; *'स्थिर जल'* सृष्टि का ज्ञान है।

96. *'मृत्यु की छाया'* मानव जीवन है। और जो परमेश्वर के साथ है, और जिसके साथ परमेश्वर है, वह निडर होकर कह सकता है: *'यद्य मैं मृत्यु की छाया की घाटी में से भी गुज़रूँ तो मैं किसी बुराई से न डरूँगा, क्योंकि तू मेरे साथ है'* (भजन संहिता 22:4)।

97. एक शुद्ध मन चीजों को सही ढंग से देखता है; अभ्यास से प्रशिक्षित जीभ जो कुछ भी वह महसूस करती है, उसे दूसरों की आँखों के सामने प्रस्तुत करती है; और एक खुला कान उसे ग्रहण करता है: लेकिन इन तीनों से वंचित व्यक्ति वक्ता को दोषी ठहराता है।

९८. वह ईश्वर के साथ है जो पवित्र त्रिमूर्ति, उसकी सृष्टि और उसकी दिव्य व्यवस्था को जानता है; और जो आत्मा के भावुक भाग को भावहीन रखता है।

९९. कहा जाता है कि *'लाठी'* ईश्वर के न्याय का प्रतीक है, और *'चौरा'*, उनकी दिव्य व्यवस्था का। जिसने भी इसे जान लिया है, वह कह सकता है: *'तेरी लाठी और तेरा चौरा, वे मुझे सांत्वना देते हैं'* (भजन संहिता २२:४)।

100. जब मन वासनाओं से रहित हो जाता है और जो है, उस पर चिंतन से प्रबुद्ध हो जाता है, तो वह ईश्वर में स्थित रह सकता है और जैसा उचित है, वैसे प्रार्थना कर सकता है।

प्रेम पर तीसरी शताब्दी

1. विचारों और चीजों का विवेकपूर्ण उपयोग पवित्रता, प्रेम और ज्ञान लाता है; जबकि अविवेकपूर्ण उपयोग अनियंत्रितता, घृणा और अज्ञानता लाता है।

2. *'तूने मेरे सामने एक मेज़ तैयार की है'*, आदि। यहाँ *'मेज़'* सक्रिय सद्गुण को दर्शाता है: क्योंकि यह हमारे विरोधियों के विरुद्ध यीशु मसीह द्वारा तैयार की गई है; *'तेल'* जो मन का अभिषेक करता है, सृष्टि के चिंतन को दर्शाता है; परमेश्वर का *'पात्र'* परमेश्वर के ज्ञान को दर्शाता है; उनकी *'कृपा'* उनका वचन और स्वयं परमेश्वर *है: क्योंकि* अपने अवतार के माध्यम से वह दिन-प्रतिदिन हमारा पीछा करते हैं, जब तक कि वह उन सभी तक नहीं पहुँच जाते जिन्हें बचाया जाना है, जैसे कि पितरस। *'घर'* उस राज्य को सूचित करता है जिसमें सभी संत निवास करेंगे; जबकि 'दिनों की लंबाई' शाश्वत जीवन को सूचित करती है (भजन संहिता 21:5–6)।

3. पाप हम पर आत्मा की शक्तियों, अर्थात् इच्छा, जुनून और तर्क की शक्तियों के अनुचित उपयोग से होते हैं। तर्क की शक्ति का अनुचित उपयोग अज्ञानता है; जुनून और इच्छा की शक्तियों का अनुचित उपयोग घृणा और

अनुशासनहीनता है। हालाँकि, इन शक्तियों का उचित उपयोग ज्ञान, विवेक, प्रेम और पवित्रता है। और यदि ऐसा है, तो परमेश्वर द्वारा रची गई और अस्तित्व में लाई गई कोई भी चीज़ बुरी नहीं है।

४. बुराई भोजन में नहीं है, बल्कि अतिभिक्षण में है; प्रजनन में नहीं, बल्कि व्यभिचार में है; धन में नहीं, बल्कि धन के प्रेम में है; महिमा में नहीं, बल्कि अहंकार में है: और यदि ऐसा है, तो अस्तित्व में दुरुपयोग के अलावा कुछ भी बुरा नहीं है, जो मन द्वारा प्रकृति (आत्मा की शक्तियों और उनके उचित निर्देशन) के संवर्धन की उपेक्षा से उत्पन्न होता है।

5. धन्य डायोनसियिस कहते हैं, राक्षसों में बुराई का यही कारण है: लापरवाह चिड़चिड़ापन, पागल वासना, और जल्दबाज़ कल्पना। लेकिन तर्कशील प्राणियों में लापरवाही, पागलपन और जल्दबाज़ी, विवेक, बुद्धि और समझदारी की कमी है; और ऐसी कमी किसी चीज़ के होने या उसके स्वामित्व से उत्पन्न होती है। परिणामस्वरूप, एक समय था जब उनके पास तर्क, बुद्धि और श्रद्धालु विवेक था। और यदि ऐसा है, तो राक्षस स्वभाव से बुरे नहीं हैं; बल्कि अपनी प्राकृतिक शक्तियों के दुरुपयोग के कारण वे बुरे हो गए हैं।

6. कुछ भाव अनियंत्रितता को जन्म देते हैं, कुछ घृणा को, और कुछ अनियंत्रितता और घृणा दोनों को।

७. पेटूता और स्वादिष्ट व्यंजनों का प्रेम कामुक दुराचार का कारण है; धन का प्रेम और अहंकार अपने पड़ोसी के प्रति घृणा का कारण हैं; इनकी जननी, आत्म-प्रेम, दोनों का कारण है।

8. आत्म-प्रेम शरीर के प्रति एक भावुक और लापरवाह प्रेम है। प्रेम और आत्म-संयम इसके विपरीत हैं। यह स्पष्ट है कि जिस व्यक्ति में आत्म-प्रेम होता है, उसमें सभी भाव होते हैं।

9. प्रेरित कहते हैं, *'क्योंकि कोई भी कभी अपनी देह से बैर नहीं करता'* (इफिसियों 5:29): फिर भी वह उसे *'मरता है'* और *'वश में करता है'* (1 कुरिन्थियों 9:27), उसे *'खाना-पीना और कपड़े'* (1 तीमुथियुस 6:8) के अलावा कुछ नहीं देता; और केवल यही चीजें, केवल इसलिए क्योंकि वे जीवन के लिए आवश्यक हैं। इस प्रकार वे इसे निस्वाभाविक रूप से प्रेम करते हैं, और, दिव्य के सेवक के रूप में, इसे केवल उसी चीज़ से *'पोषित और गर्म' करते हैं,* जो इसकी कमी को पूरा करती है।

10. जो कोई किसी से प्रेम करता है, वह हर तरह से उसे प्रसन्न करने का प्रयास करता है। और इस प्रकार, जो कोई ईश्वर से प्रेम करता है, वह स्वाभाविक रूप से वही करता है जो उन्हें प्रसन्न करे; परन्तु जो कोई देह से प्रेम करता है, वह वही करता है जो उसे तुष्ट करे।

11. प्रेम, पवित्रता, मनन और प्रार्थना परमेश्वर को प्रसन्न करते हैं; जबकि अतृप्त भक्षण, अनुशासनहीनता और जो कुछ भी इनकी ओर ले जाता है, वह शरीर को प्रसन्न करता है। इसीलिए *'जो शरीर के अनुसार* जीते हैं *वे परमेश्वर को प्रसन्न नहीं कर सकते'* (रोमियों 8:8); *'परन्तु जो मसीह के हैं, उन्होंने शरीर को उसकी इच्छाओं और अभिलाषाओं सहित सलीब पर चढ़ा दिया है'* (गलातियों 5:24)।

12. जब मन ईश्वर की ओर झुकता है, तो वह शरीर को एक सेवक के रूप में मानता है और उसे जीवन के लिए आवश्यक से अधिक कुछ नहीं देता; लेकिन जब यह शरीर की ओर झुकता है, तो यह इसके भावों का दास बन जाता है, और शरीर के प्रति इसकी चिंता हमेशा वासना का रूप ले लेती है (रोमियों 13:14)।

13. यदि आप बुरे विचारों से छुटकारा पाना चाहते हैं, तो अपनी वासनाओं को ठीक करें: और फिर आप उन्हें अपने मन से आसानी से भगा देंगे। विशेष रूप से, कामुकता के जुनून के संबंध में – उपवास करो, जागते रहो, परिश्रम करो और एकांत में रहो; क्रोध और दुख के संबंध में, सम्मान, अपमान या अन्य सांसारिक चीजों को कोई महत्व न दो; कड़वाहट के संबंध में, उस व्यक्ति के लिए प्रार्थना करो जिसने आपको ठेस पहुँचाई है – और आप मुक्त हो जाएँगे।

14. स्वयं को सबसे कमजोर लोगों के साथ न तोलो, बल्कि प्रेम की आज्ञा के अनुसार अपने क्षितिज का विस्तार करो। दूसरों के साथ स्वयं को तोलने से, तुम घमंड की खाई में गिर जाओगे; लेकिन प्रेम के अनुसार अपने क्षितिज का विस्तार करके, तुम नम्रता की ऊँचाइयों को प्राप्त करोगे।

१५. यदि आप वास्तव में अपने पड़ोसी से प्रेम करने की आज्ञा का पालन करते हैं, तो फिर आप उसके प्रति कटुता और द्वेष क्यों पालते हैं? क्या यह स्पष्ट नहीं है कि आप प्रेम के बजाय क्षणिक को प्राथमिकता देते हैं, और उसकी रक्षा करके, आप अपने भाई के विरुद्ध युद्ध छेड़ते हैं?

16. सोना लोगों के लिए आवश्यकता के कारण नहीं, बल्कि इसलिए इतना वांछनीय हो गया है, क्योंकि इसके माध्यम से कई लोग सुख की अपनी वासना को पूरा करते हैं।

17. धन के प्रेम के तीन कारण हैं: सुख का प्रेम, अहंकार और अविश्वास; और अविश्वास पहले दो से अधिक शक्तिशाली है।

18. सुखवादी चाँदी से इसलिए प्रेम करता है ताकि वह उसकी मदद से सुख भोग सके; घमंडी व्यक्ति, प्रसिद्धि पाने के लिए; और अविश्वासी, उसे छिपाने और जमा करने के लिए, भूख, या वृद्धावस्था, या बीमारी, या निर्वासन के डर से, और सभी प्राणियों, यहाँ तक कि सबसे छोटे और सबसे तुच्छ जानवरों के सृष्टिकर्ता और प्रदाता, ईश्वर की तुलना में उस पर अधिक भरोसा करता है।

19. धन इकट्ठा करने वाले चार प्रकार के लोग होते हैं: ऊपर बताए गए तीन, और चौथे गृहस्थ-स्वभाव वाले व्यक्ति; यह स्पष्ट है कि केवल अंतिम वाले ही इसे सही ढंग से इकट्ठा करते हैं, ताकि जब भी सभी की ज़रूरतों को पूरा करने की बात आए तो उनका हाथ कभी खाली न हो।

२०. सभी भावुक विचार या तो आत्मा की कामना करने वाली शक्ति को भड़काते हैं, या उसकी चिड़चिड़ी शक्ति को बेचैन करते हैं, या उसकी सोचने की शक्ति को धुंधला करते हैं: जिससे यह होता है कि मन आध्यात्मिक चिंतन और प्रार्थनापूर्ण आरोहण के प्रति अंधा हो जाता है। इसीलिए एक संन्यासी, विशेष रूप से जो मौन का अभ्यास करता है, को अपने विचारों पर बारीकी से ध्यान देना चाहिए, और उनके कारणों को पहचानकर उन्हें काट देना चाहिए। उसे उन्हें इस प्रकार पहचानना चाहिए: आत्मा की कामुक शक्ति महिलाओं की कामुक यादों से जागृत होती है, और इसका कारण भोजन और पेय में अनुशासनहीनता, और महिलाओं के साथ बार-बार अविवेकी मेलजोल में निहित है। इन्हें भूख, प्यास, जागरण और एकांत द्वारा काटा जाता है। – चिड़चिड़ी शक्ति उन लोगों की भावुक यादों से उत्तेजित होती है जिन्होंने हमें दुख पहुँचाया है; इसका कारण कामुकता, अहंकार और सुख का प्रेम है, जिसके कारण भावुक व्यक्ति दुखी होता है—या तो इसलिए कि वह उनसे वंचित रहा है, या इसलिए कि उसे वे नहीं मिले हैं। इन्हें इन चीज़ों को तुच्छ समझकर, ईश्वर के प्रेम के लिए इनका तिरस्कार और इनसे विनम्र होकर समाप्त किया जाता है।

21. ईश्वर स्वयं को जानते हैं और अपनी सृष्टि को जानते हैं, और पवित्र शक्तियाँ ईश्वर को और ईश्वर की सृष्टि को जानती हैं। लेकिन पवित्र शक्तियाँ ईश्वर और उसकी सृष्टि को उसी तरह से नहीं जानतीं जैसे ईश्वर स्वयं को और अपनी सृष्टि को जानते हैं।

22. ईश्वर अपनी धन्य प्रकृति के माध्यम से स्वयं को जानता है, और अपनी बुद्धि के माध्यम से अपनी सृष्टि को जानता है, जिससे और जिसमें उसने सभी चीजों को बनाया है; जबकि पवित्र शक्तियाँ ईश्वर को, जो सभी सहभागिता से परे है, सहभागिता (उसके ज्ञान में) के माध्यम से जानती हैं, और अपनी सृष्टि को उनके भीतर मौजूद बुद्धिमान चिंतन की धारणा के माध्यम से जानती हैं।

23. प्राणी मन के बाहर हैं; फिर भी मन उनका चिंतन अपने भीतर ग्रहण करता है। लेकिन ईश्वर के साथ ऐसा नहीं है, जो सर्वदा विद्यमान, असीम और अकथनीय हैं, जिन्होंने अपने आप से उत्पन्न हुई सभी चीजों को अस्तित्व, कल्याण और शाश्वत अस्तित्व प्रदान किया है।

२४. तर्कशील और बौद्धिक स्वभाव पवित्र ईश्वर में भाग लेता है—अर्थात्, उसकी सद्भावना और बुद्धि में—स्वयं अस्तित्व के माध्यम से, कल्याण की क्षमता के माध्यम से, और शाश्वत अस्तित्व की कृपा के माध्यम से। इस अनुग्रह से यह ईश्वर को जान पाता है; जबकि यह उसकी सृष्टि को, जैसा कि ऊपर कहा गया है, उनमें विद्यमान सर्व-नियंत्रक बुद्धिमत्ता की अनुभूति के माध्यम से जान पाता है—एक ऐसी बुद्धिमत्ता जो सूक्ष्म है और मन में बौद्धिक रूप से निर्मित होती है।

२५. ईश्वर ने, अपनी परम कृपा से तर्कशील और बुद्धिमान प्राणियों को सृजित करते हुए, इन प्राणियों को चार दिव्य गुण प्रदान किए जो उनका पालन-पोषण करते हैं, उनकी रक्षा करते हैं और उन्हें बचाते हैं: अस्तित्व, शाश्वत अस्तित्व, अच्छाई और बुद्धि। इनमें से, उसने पहले दो गुण सत्ता को प्रदान किए, और अंतिम दो नैतिक शक्तियों को: सत्ता को—अस्तित्व और शाश्वत अस्तित्व; और नैतिक शक्तियों को—सद्गुण और बुद्धि—ताकि प्राणी उस चीज़ का सहभागी बन सके जो वह स्वयं अपने सार से है। इसलिए कहा जाता है कि मनुष्य को ईश्वर की छवि और समानता में बनाया गया है: छवि में बनाया गया—अस्तित्वमान की छवि के रूप में—जो अस्तित्वमान है; शाश्वत अस्तित्वमान की छवि के रूप में—जो सदा अस्तित्वमान है—यद्यपि आरंभ के बिना नहीं, फिर भी अनंत रूप से; उसकी समानता में बनाया गया, जैसे एक अच्छा व्यक्ति अच्छा होता है, और जैसे सर्व-ज्ञानी सर्व-ज्ञानी होता है, इस प्रकार अनुग्रह से, वह वही है जो ईश्वर स्वभाव से है। हर तर्कशील प्राणी ईश्वर की छवि में बनाया गया है, जबकि केवल अच्छे और बुद्धिमान ही उसकी समानता में बनाए गए हैं।

26. सभी तर्कशील और बुद्धिमान प्राणी दो भागों में विभाजित हैं - अर्थात्, दैवीय और मानवीय स्वभाव में; और संपूर्ण दैवीय स्वभाव बदले में दो प्रमुख नैतिक संघों और समुदायों में विभाजित है: पवित्र और शापित, अर्थात्, पवित्र शक्तियाँ और दुष्ट राक्षस; और संपूर्ण मानव जाति केवल दो संघों में विभाजित है: धार्मिक और अधार्मिक।

27. ईश्वर, स्व-अस्तित्व, स्व-भलाई, स्व-प्रज्ञा के रूप में, या, अधिक सटीक रूप से कहें तो, उन सभी चीजों से परे मौजूद एक के रूप में, अपने स्वयं के विरुद्ध कुछ भी नहीं है। लेकिन प्राणी, जो केवल सहभागिता और अनुग्रह से अस्तित्व में हैं—और तर्कशील और बुद्धिमान प्राणी, इसके अलावा, अच्छाई और बुद्धि की क्षमता रखते हैं—उनके विपरीत गुण होते हैं, अर्थात्: अस्तित्व के विपरीत अस्तित्वहीनता, और अच्छाई और बुद्धि की क्षमता के विपरीत बुराई और अज्ञानता। वे मौजूद हों या न हों, यह उनके स्रष्टा की शक्ति में है, जबकि उसकी भलाई और बुद्धि में उनकी भागीदारी या अभागीदारी तर्कशील प्राणियों की इच्छा में है।

28. यूनानी, यह मानते हुए कि प्राणियों का स्वभाव सनातन काल से ईश्वर के साथ रहा है, और उन्होंने उससे केवल अपने गुण प्राप्त किए हैं, कहते हैं कि उनके स्वभाव का कुछ भी विरोधी नहीं है, बल्कि विरोध केवल उनके गुणों में निहित है। लेकिन हम यह मानते हैं कि एकमात्र दिव्य स्वभाव, जो शाश्वत, असीम है और सभी अन्य स्वभावों को शाश्वतता प्रदान करता है, उसका कोई विपरीत नहीं है; जबकि प्राणियों के स्वभाव का विपरीत अस्तित्वहीनता है, और उनका शाश्वत अस्तित्व या अस्तित्वहीनता स्वयं अस्तित्व की शक्ति में निहित है। लेकिन चूँकि उसकी देन अपरिवर्तनीय और अचल है, प्राणी, जैसा अब है, वैसा ही रहेगा, जो उसकी सर्वशक्तिमान शक्ति से पोषित है, भले ही उसमें, जैसा कि कहा गया है, उसका विपरीत अस्तित्वहीनता हो, जिसे अस्तित्वहीनता से अस्तित्व में लाया गया है और जो उसकी इच्छा में, होने या न होने की शक्ति रखता है।

29. जैसे बुराई अच्छाई की अनुपस्थिति है, और अज्ञानता ज्ञान की अनुपस्थिति है: उसी प्रकार अस्तित्वहीनता (अनस्तित्व) अस्तित्व की अनुपस्थिति है—उस चीज़ की नहीं जो वास्तव में अस्तित्वमान नहीं है, क्योंकि इसका कोई विपरीत नहीं है;—बल्कि उस चीज़ की जो वास्तव में अस्तित्वमान में सहभागिता द्वारा अस्तित्व में है। पहले दो की वंचितता प्राणी की इच्छा पर निर्भर करती है; लेकिन दूसरी की वंचितता स्रष्टा की इच्छा में निहित है, जो अपनी दयालुता में, हमेशा यह इच्छा करते हैं कि प्राणी मौजूद रहें, और वे हमेशा उनके द्वारा धन्य रहें।

30. सभी प्राणी या तो तर्कशील और बुद्धिमान जीव हैं जो अपने भीतर विरोधाभासों—अर्थात् सद्गुण और दुर्गुण, ज्ञान और अज्ञान—को धारण करने में सक्षम हैं, या विरोधाभासों से बने विभिन्न शरीर हैं, जैसे पृथ्वी, वायु, अग्नि और जल। कुछ पूरी तरह से अदेह और अद्रव्य हैं, हालांकि उनमें से कुछ देह से जुड़े होते हैं; अन्य, हालांकि, केवल पदार्थ और रूप से मिलकर बने होते हैं।

31. सभी शरीर स्वभाव से अचल हैं; उन्हें आत्मा द्वारा गति प्रदान की जाती है, कुछ को तर्कशील आत्मा द्वारा, कुछ को अतर्कशील आत्मा द्वारा, और कुछ को असंवेदनशील आत्मा द्वारा।

32. आत्मा की शक्तियों में से एक पोषक और शाकात्मक है, दूसरी कल्पनाशील और आवेगपूर्ण है, और तीसरी, अंत में, तर्कसंगत और बौद्धिक है। पौधे पहले में भाग लेते हैं; दूसरा, पहले के साथ, मूक जानवरों द्वारा साझा किया जाता है; और तीसरा, पहले दो के साथ, मनुष्यों द्वारा साझा किया जाता है। पहली दो शक्तियाँ नाशवान हैं, जबकि तीसरी को अविनाशी और अमर माना जाता है।

33. पवित्र शक्तियाँ, एक-दूसरे को ज्ञान प्रदान करते हुए, मानव स्वभाव को भी अपने भीतर निहित सद्गुण और ज्ञान दोनों प्रदान करती हैं: सद्गुण, अर्थात् ईश्वर-अनुकरणशील सद्भावना, जिसके द्वारा वे स्वयं पर, एक-दूसरे पर, और स्वयं से निम्नतर प्राणियों पर उपकार करती हैं, और उन्हें ईश्वर-सदृश बनाती हैं; – ज्ञान, मानो ईश्वर के संबंध में किसी सर्वोच्च चीज़ का; क्योंकि, जैसा कि पैगंबर कहते हैं, *'हे प्रभु, आप सदा के लिए सभी से ऊपर हैं'* (भजन संहिता 91:9); या भौतिक प्राणियों के संबंध में किसी अत्यंत गहरी चीज़ का, या अद्रव्य प्राणियों के संबंध में किसी अत्यंत सटीक चीज़ का, या दिव्य व्यवस्था के संबंध में किसी अत्यंत स्पष्ट चीज़ का, या न्याय के संबंध में किसी अत्यंत निश्चित चीज़ का।

34. मन की अशुद्धि, सबसे पहले, मिथ्या ज्ञान में होती है; दूसरे, किसी भी सार्वभौमिक चीज़ के अज्ञान में; मैं यह मानव मन के संबंध में कह रहा हूँ, क्योंकि एक देवदूत के लिए किसी विशेष चीज़ का भी अज्ञानी होना उचित नहीं है; तीसरे, भावुक विचारों में; चौथे, पाप करने की सहमति में।

35. आत्मा की अशुद्धि इस तथ्य में निहित है कि वह अपनी प्रकृति के अनुसार कार्य नहीं करती; क्योंकि इससे मन में वासनापूर्ण विचार उत्पन्न होते हैं। आत्मा अपनी प्रकृति के अनुसार तब कार्य करती है जब उसकी वासनापूर्ण शक्तियाँ—अर्थात् क्रोध और इच्छा—वस्तुओं और उनसे उत्पन्न विचारों के प्रभाव में रहते हुए भी निर्लिप्त रहती हैं।

36. शरीर की अशुद्धि कर्मों द्वारा किया गया पाप है।

37. जो सांसारिक चीजों के प्रति निष्पक्ष है, वह मौन से प्रेम करता है; जो मानव से प्रेम करता है, वह सभी लोगों से प्रेम करता है; और जिसके मन को कोई भी भटका नहीं पाता, न तो उनकी कमियों के कारण और न ही उनके बारे में उत्पन्न संदेह के विचारों के कारण, उसे ईश्वर और दिव्यता का ज्ञान है।

38. वस्तुओं के प्रति पक्षपातरहित रहना एक महान बात है, लेकिन उनके बारे में सोचते समय निर्लिप्त बने रहना और भी महान है।

39. प्रेम और आत्म-संयम मन को वस्तुओं और उनके बारे में विचारों, दोनों के प्रति निर्लिप्त रखते हैं।

40. ईश्वर-प्रेमी व्यक्ति का मन वस्तुओं या उनके बारे में विचारों के विरुद्ध नहीं, बल्कि इन विचारों से जुड़ी कामनाओं के विरुद्ध सशस्त्र होता है। अर्थात्, वह न तो किसी स्त्री के विरुद्ध उठता है, न ही उस व्यक्ति के विरुद्ध जिसने उससे अन्याय किया हो, और न ही उनके बारे में अपनी कल्पनाओं के विरुद्ध: बल्कि इन कल्पनाओं से जुड़ी कामनाओं के विरुद्ध।

41. संन्यासी का राक्षसों के विरुद्ध संपूर्ण संघर्ष, भावनाओं को विचारों से अलग करने में ही निहित है; क्योंकि अन्यथा उसके लिए वस्तुओं को निर्लिप्त भाव से देखना असंभव है।

४२. एक वस्तु एक चीज़ है, एक विचार दूसरी, और एक भाव तीसरी: उदाहरण के लिए, एक वस्तु पति, पत्नी, सोना, आदि है; एक विचार उपर्युक्त में से किसी की भी केवल स्मृति है; एक भाव उन चीज़ों में से किसी के प्रति या तो मौन प्रेम है या लापरवाह घृणा। – एक संन्यासी का संघर्ष ऐसे ही जुनून में निहित है।

४३. एक भावुक विचार वह विचार है जो भाव और विचार से मिलकर बना होता है। आइए हम विचार से भाव को अलग करें, और एक शुद्ध विचार शेष रह जाएगा। हम उन्हें, यदि हम चाहें, तो आध्यात्मिक प्रेम और आत्म-संयम के माध्यम से अलग करते हैं।

४४. सद्गुण मन को भावुकता से अलग करते हैं; आध्यात्मिक चिंतन इसे केवल विचारों से अलग करता है; और शुद्ध प्रार्थना इसे स्वयं ईश्वर के समक्ष प्रस्तुत करती है।

४५. सद्गुण प्राणियों के ज्ञान के लिए हैं; ज्ञान, जानने वाले के लिए; जानने वाला, अज्ञेय वस्तु के लिए; और वह एक जो ज्ञान से परे ले जाता है।

४६. ईश्वर, जो आत्म-संतुष्ट हैं, ने प्राणियों को अस्तित्व में लाया, न कि इसलिए कि उन्हें किसी चीज़ की ज़रूरत थी, बल्कि इसलिए कि वे अपनी क्षमता के अनुसार उनके आनंद में सहभागी हो सकें और उसमें आनंद पा सकें; जबकि वे स्वयं अपने कार्यों में प्रसन्न हुए, उन्हें आनंदित और अतृप्त रूप से संतुष्ट होते देख कर।

४७. संसार में ऐसे बहुत से लोग हैं जो आत्मा से दीन हैं, परन्तु सही अर्थ में नहीं; बहुत से ऐसे हैं जो रोते हैं, परन्तु या तो अपनी संपत्ति के नुकसान पर या अपने बच्चों के नुकसान पर; बहुत से ऐसे हैं जो नम्र हैं, परन्तु अशुद्ध वासनाओं के प्रति; बहुत से ऐसे हैं जिन्हें भूख और प्यास लगती है, परन्तु दूसरे की संपत्ति पर अन्यायपूर्ण कब्जा करने और धन इकट्ठा करने के लिए; कई दयालु हैं, लेकिन शरीर और शारीरिक मामलों के प्रति; और हृदय से शुद्ध हैं, लेकिन व्यर्थता के कारण; और शांतिदूत हैं, लेकिन जो अपनी आत्मा को शरीर के अधीन कर लेते हैं: कई लोग सताए जाते हैं, लेकिन अपनी ही दुष्टता के कारण; कई लोग अपमानित किए जाते हैं, लेकिन शर्मनाक पापों के कारण। परन्तु धन्य केवल वे हैं जो मसीह के लिए और मसीह के कारण कर्म करते और पीड़ा सहते हैं। क्यों? *'क्योंकि स्वर्ग का राज्य उन्हीं का है'*; और: *'क्योंकि वे परमेश्वर को देखेंगे'* (मत्ती 5:3, 8); और इसी तरह। वे इस प्रकार कार्य करने और दुख सहने के कारण धन्य नहीं हैं, क्योंकि उपरोक्त लोग भी ऐसा ही करते हैं; बल्कि इसलिए धन्य हैं क्योंकि वे मसीह के लिए और मसीह के विषय में कार्य करते और दुख सहते हैं।

४८. जैसा कि कई बार कहा जा चुका है, हम जो कुछ भी करते हैं, उसमें ईश्वर इरादे को देखते हैं: कि हम उसे उनके लिए करते हैं या किसी अन्य उद्देश्य के लिए। इसलिए, जब हम कुछ अच्छा करना चाहते हैं, तो हमारा उद्देश्य मनुष्यों को प्रसन्न करना नहीं, बल्कि परमेश्वर को प्रसन्न करना होना चाहिए, ताकि हर समय अपनी दृष्टि उसी पर टिकाए रखकर, हम सब कुछ उसी के लिए कर सकें; अन्यथा, हम व्यर्थ परिश्रम करेंगे और अपना इनाम खो देंगे।

४९. और प्रार्थना के दौरान, अपने मन से मानवीय मामलों के सरल विचारों और सारी सृष्टि पर चिंतन को भी दूर भगा दो: कहीं ऐसा न हो कि छोटी-छोटी चीजों में अटककर, तुम उससे भटक जाओ जो सभी अस्तित्व में मौजूद चीजों से अतुलनीय रूप से बेहतर है।

50. यदि हम परमेश्वर से सच्चा प्रेम करते हैं, तो इसी प्रेम से हम वासनाओं को दूर भगा देंगे। उससे प्रेम करना, उसे संसार से और आत्मा को शरीर से श्रेष्ठ मानना है – सभी सांसारिक चीजों से घृणा के साथ, उसकी प्रति निरंतर भक्ति के साथ – संयम, प्रेम, प्रार्थना और भजन-गायन आदि के माध्यम से।

५१. यदि लंबे समय तक ईश्वर पर ध्यान केंद्रित करते हुए, हम आत्मा के भावुक भाग का सावधानीपूर्वक ध्यान रखते हैं, तो हम अब अपने विचारों के प्रलोभनों से सही मार्ग से भटकेंगे नहीं; बल्कि उनके कारणों को अधिक सटीक रूप से समझकर और उन्हें काटकर, हम विवेकी बन जाएंगे, ताकि भविष्यवाणी का वचन हम में पूरा हो: *'मेरी आँख अपने शत्रुओं पर दृष्टि रखेगी, और मेरा कान उन पर जो मेरे विरुद्ध कपट से उठते हैं, सुनने पाएगा'* (भजन संहिता 91:12)।

५२. जब आप देखें कि आपका मन ईश्वर-भय और धार्मिकता से सांसारिक विचारों की ओर मुड़ रहा है, तो जान लें कि आपका शरीर भी शुद्ध और पापरहित रहता है। लेकिन जब आप देखें कि आपका मन विचारों में पापों में डूबा हुआ है, और आप इसे रोकते नहीं हैं, तो जान लें कि आपका शरीर भी उन्हें करने में अधिक समय नहीं लगायेगा।

53. जैसे वस्तुएँ शरीर के लिए संसार का काम करती हैं, वैसे ही विचार मन के लिए संसार का काम करते हैं; और जैसे शरीर किसी स्त्री के शरीर के साथ व्यभिचार करता है, वैसे ही मन भी अपने शरीर की कल्पना के माध्यम से स्त्रियों के विचारों के साथ व्यभिचार करता है: क्योंकि वह मानसिक रूप से अपने शरीर की प्रतिमा को एक स्त्री की प्रतिमा के साथ मैथुन करते हुए देखता है। इसी तरह, अपने विचारों में, वह अपने साथ अन्याय करने वाले की छवि पर अपने शरीर की छवि से बदला लेता है। यही बात अन्य पापों पर भी लागू होती है: क्योंकि शरीर वस्तुओं की दुनिया में जो करता है, मन विचारों की दुनिया में मानसिक रूप से वही करता है।

५४. क्या हमें इस विचार से भयभीत, कांपते और विक्षिप्त नहीं हो जाना चाहिए कि, जबकि ईश्वर *'पिता किसी का न्याय नहीं करते, बल्कि सारा न्याय पुत्र को सौंप दिया है'* (यूहन्ना ५:२२); – जबकि पुत्र पुकारता है: *'न्याय मत करो, ताकि तुम पर न्याय न किया जाए'* (मत्ती 7:1), *'दोषी मत ठहराओ, ताकि तुम दोषी न ठहराए जाओ'* (लूका 6:37); और इसी प्रकार प्रेरित: *'समय से पहले किसी बात का न्याय मत करो, जब तक कि प्रभु न आए'* (1 कुरिन्थियों 6:5): और फिर: *'क्योंकि जिब तुम दूसरे का न्याय करते हो, तो तुम अपना ही न्याय करते हो'* (रोमियों 2:1); जब, मैं कहता हूँ, ऐसा है; क्या लोगों ने, अपने ही पापों पर रोना बंद कर दिया है, पुत्र के हाथों से न्याय छीन लिया है, और क्या वे स्वयं, जैसे कि निर्दोष हों, एक-दूसरे का न्याय करते और दोषी ठहराते हैं? स्वर्ग इस पर स्तब्ध हो जाता है और पृथ्वी काँप उठती है; फिर भी वे, इतने असंवेदनशील होने के कारण, कोई लज्जा नहीं अनुभव करते!

५५. जो कोई दूसरों के पापों की टटोल करता है, या संदेह के आधार पर किसी भाई का न्याय करता है: ऐसा व्यक्ति अभी तक पश्चाताप की ओर पहला कदम भी नहीं उठाया है, न ही उसने अपने पापों को पहचानने का प्रयास किया है—जो वास्तव में एक बहु-प्यूड सीसे के भार जितने भारी हैं—और यह नहीं जानता कि कोई मनुष्य *'कठोर-हृदय, व्यर्थता से प्रेम करने वाला और मिथ्या की खोज करने वाला'* क्यों हो जाता है (भजन संहिता 4:3); और इसलिए, अंधकार में भटकते एक पागल की तरह, उसने अपने पापों को एक तरफ रख दिया है, और केवल संदेह के आधार पर दूसरों के पापों—चाहे वे वास्तविक हों या काल्पनिक—पर ही ध्यान केंद्रित करता है।

५६. आत्म-प्रेम, जैसा कि बार-बार कहा गया है, सभी भावुक विचारों का कारण है; क्योंकि इससे आत्मा के इच्छुक भाग के तीन प्रमुख विचार उत्पन्न होते हैं: काम, लोभ और अहंकार। फिर, अतृप्ति से कामुक विचार उत्पन्न होता है; लोभ से ईर्ष्यालु विचार; व्यर्थता से घमंडी विचार; जबकि अन्य सभी इन तीनों में से प्रत्येक से उत्पन्न होते हैं, जैसे: क्रोधित, दुखी, कुंठित, निराश, ईर्ष्यालु, बदनाम करने वाले विचार, और इसी तरह। ये भाव मन को भौतिक चीजों से बाँधते हैं और इसे पृथ्वी पर खींच लाते हैं, इसे सबसे भारी पत्थर की तरह नीचे दबाते हैं, जबकि स्वभाव से यह आग से भी हल्का और अधिक सूक्ष्म है।

57. सभी भावों की शुरुआत आत्म-प्रेम है, और अंत अहंकार है। आत्म-प्रेम शरीर का एक लापरवाह प्रेम है। जो इसे समाप्त करता है, वह इससे उत्पन्न होने वाले सभी भावों को समाप्त कर देता है।

५८. जैसे सांसारिक माता-पिता अपने ही बच्चों के प्रति पक्षपाती होते हैं, वैसे ही मन भी स्वाभाविक रूप से अपने ही विचारों से लगाव रखता है; और जैसे, सबसे अधिक पक्षपाती माता-पिता को, अपने ही बच्चे सबसे विनम्र और सभ्य लगते हैं, भले ही वे हर तरह से उपहास के सबसे अधिक पात्र हों: इसी तरह एक मूर्ख मन भी अपने विचारों को सबसे तर्कसंगत मानता है, भले ही वे सभी में सबसे बेतुके हों। किंतु बुद्धिमानों के लिए, उनके अपने विचार ऐसे नहीं लगते: बल्कि जब उन्हें यह प्रमाण मिल भी जाता है कि वे सत्य और अच्छे हैं, तब भी वे अपनी समझ पर कम भरोसा करते हैं, और अपने विचारों तथा तर्क के न्यायाधीश के रूप में अन्य बुद्धिमान पुरुषों को नियुक्त करते हैं, ताकि वे व्यर्थ में न दौड़ें या दौड़े हुए न हों (गलातियों 2:2); और उनसे पुष्टि स्वीकार करते हैं।

५९. जब आप किसी भी सबसे शर्मनाक वासना—जैसे अतिभिक्षण, व्यभिचार, क्रोध या लालच—पर विजय प्राप्त करते हैं, तो अहंकार का एक विचार तुरंत आपको घेर लेगा; और जब आप उस पर विजय प्राप्त करते हैं, तो गर्व का विचार आपको अपने वश में कर लेगा।

60. सभी अपमानजनक वासनाएँ, जब तक वे आत्मा पर हावी रहती हैं, उसमें अहंकार के विचार को दूर भगा देती हैं; लेकिन एक बार जब उन पर काबू पा लिया जाता है, तो वे उसके प्रवेश के लिए मार्ग खोल देती हैं।

61. दंभ से घमंड उत्पन्न होता है; कभी यह बाहर निकल जाता है, और कभी यह बना रहता है। लेकिन जब यह बाहर निकल जाता है, तो यह अहंकार की ओर ले जाता है; और जब यह बना रहता है, तो यह दंभ की ओर ले जाता है।

62. व्यर्थता गुप्त कर्मों से समाप्त होती है, जबकि अहंकार को उन कर्मों को ईश्वर को अर्पित करने से जीता जाता है, जिन्हें मनुष्य परिश्रम से करता है।

63. जिसने ईश्वर का ज्ञान प्राप्त किया है, और वास्तव में उसकी मिठास का स्वाद चखा है, वह इच्छाशक्ति से उत्पन्न होने वाले सभी सुखों से घृणा करता है।

64. जो सांसारिक इच्छाओं के वश में है, वह या तो भोजन, या शारीरिक प्रवृत्तियों की संतुष्टि, या मानवीय महिमा, या धन, या इनसे उत्पन्न किसी अन्य चीज़ की लालसा करता है; और यदि मन को अपनी इच्छा को मोड़ने के लिए इन चीज़ों से बेहतर कुछ भी नहीं मिलता है, तो वह अपने बाकी जीवन के लिए इनसे घृणा करने का संकल्प नहीं लेगा। हालाँकि, इनसे कहीं श्रेष्ठ ईश्वर और दिव्य चीज़ों का ज्ञान है।

65. जो लोग सुखों का तिरस्कार करते हैं, वे या तो भय से, या आशा से, या इसलिए कि वे उनके महत्वहीन होने को पहचानते हैं; या फिर ईश्वर के प्रति प्रेम से ऐसा करते हैं।

66. दिव्य वस्तुओं का ज्ञान, उनके प्रति आसक्ति के बिना, मन को भौतिक दुनिया से पूरी तरह से घृणा करने के लिए प्रेरित नहीं करता है, बल्कि यह किसी इंद्रिय वस्तु के केवल एक विचार के समान है। इसलिए, कोई ऐसे कई लोगों को पा सकता है जिनके पास बहुत ज्ञान है, फिर भी वे सूअरों की तरह कीचड़ में लोटते हुए, शारीरिक वासनाओं में लिप्त रहते हैं (2 पतरस 2:22)। क्योंकि, भले के प्रति उत्साही रहते हुए कुछ शुद्ध हो जाने और उसके बारे में एक निश्चित मात्रा का ज्ञान प्राप्त कर लेने के बाद, वे बाद में सुस्त हो गए और साउल जैसे हो गए, जिसे राजसी सिंहासन प्रदान किया गया था, लेकिन जिसने उस पर जीने के लिए अयोग्य हो कर, भयानक क्रोध के साथ उससे वंचित कर दिया गया।

67. जैसे मानव संबंधी मामलों का केवल एक विचार ही मन को दिव्यता का तिरस्कार करने पर मजबूर कर देता है, वैसे ही दिव्यता का केवल ज्ञान ही मन को मानवता का पूर्णतःतिरस्कार करने के लिए प्रेरित नहीं करता; क्योंकि यहाँ सत्य अभी भी छायाओं और अनुमानों में निवास करता है; और इसलिए पवित्र प्रेम के आनंदमय समर्पण की आवश्यकता होती है, जो मन को आध्यात्मिक चिंतन के साथ जोड़ता है और उसे भौतिक की अपेक्षा अमूर्त, इंद्रिय की अपेक्षा बौद्धिक और दिव्य को प्राथमिकता देने के लिए प्रेरित करता है।

68. हर कोई जिसने वासनाओं को त्याग दिया है और अपने विचारों को सरल बना लिया है, उसने अपने विचारों को दिव्यता की ओर नहीं मोड़ा है; बल्कि वे न तो मानवीय और न ही दिव्य से जुड़े हो सकते हैं, जो केवल उन सक्रिय लोगों के साथ होता है जिन्हें अभी तक ज्ञान नहीं मिला है, और जो या तो यातना के डर से या स्वर्ग के राज्य की आशा में वासनाओं से परहेज़ करते हैं।

69. *'हम विश्वास से चलते हैं, दृष्टि से नहीं',* और हमारा ज्ञान अभी भी दर्पण में और पहेलियों में जैसा है (2 कुरिन्थियों 2:7)। अतः हमें इसे लंबे समय तक अभ्यास करने की आवश्यकता है, ताकि उसमें दीर्घकालिक शिक्षा और परिश्रम के द्वारा, हम अनवरत मनन की एक अटूट आदत प्राप्त कर सकें।

70. यदि, अपने भावों के कारणों को अस्थायी रूप से अलग रखकर, हम आध्यात्मिक चिंतन में संलग्न होते हैं, लेकिन अपना सारा समय इसी में नहीं लगाते, और इसे अपना एकमात्र कार्य नहीं बनाते: हम आसानी से सांसारिक वासनाओं की ओर लौट आएँगे, और इससे हमें घमंड से मिली केवल ज्ञान की ही फसल हाथ लगेगी, जिसका अंत उस ज्ञान का धीरे-धीरे धुंधला पड़ना और मन का पूरी तरह से भौतिक वस्तुओं की ओर मुड़ जाना है।

71. प्रेम का वह जुनून, जो निंदनीय है, मन को भौतिक वस्तुओं में उलझा देता है; जबकि प्रेम का वह जुनून, जो प्रशंसनीय है, उसे दिव्यता से बाँधता है। क्योंकि मन, सामान्यतः उन वस्तुओं की ओर झुकता है जिन पर वह अपना ध्यान टिकाता है; और जिसकी ओर भी वह झुकता है, उसी की ओर अपनी इच्छा और प्रेम भी मोड़ता है—चाहे वह अपनी उपयुक्त दिव्य, अद्रव्य वस्तुओं की ओर हो, या कामुक चीजों और वासनाओं की ओर।

७२. ईश्वर ने अदृश्य और दृश्य दोनों जगतों की रचना की; और उन्होंने आत्मा और शरीर की भी रचना की। और यदि दृश्य जगत इतना सुंदर है, तो अदृश्य जगत कितना अधिक सुंदर होगा? यदि, इसके अलावा, अदृश्य दुनिया इस एक से बेहतर है, तो वह ईश्वर कितना अधिक श्रेष्ठ होगा जिसने उन्हें दोनों को बनाया? यदि सभी अच्छी चीजों का स्रष्टा उन सभी सृजित चीजों में सबसे अच्छे से भी बेहतर है, तो फिर मन ने सर्वश्रेष्ठ को क्यों त्याग दिया और इसके बजाय सबसे बुरे की ओर क्यों मुड़ गया—अर्थात्, शारीरिक वासनाओं की ओर? क्या यह स्पष्ट नहीं है कि वह

इससे परचिति हो गया है, क्योंकि वह जन्म से ही इसके संपर्क में रहा है, जबकि उसने अभी तक उस चीज़ का बिल्कुल भी अनुभव नहीं किया है जो बाकी सब से बेहतर और ऊँची है? इस प्रकार, यदि इंद्रिय सुखों से दीर्घकालिक संयम और दिव्य विषयों में शिक्षा के माध्यम से हम उसे धीरे-धीरे इस आदत से दूर कर दें; तो, जैसे-जैसे वह इसमें प्रगति करेगा, वह दिव्यता की ओर आकर्षित होगा और अपनी ही कीमत को पहचानने लगेगा, और अंततःअपना संपूर्ण भक्ति भाव ईश्वर को समर्पित कर देगा।

७३. जो भाई के पाप के बारे में निष्पक्ष होकर बोलता है, वह दो कारणों से ऐसा करता है: या तो उसे सुधारने के लिए, या किसी दूसरे को लाभ पहुँचाने के लिए। हालाँकि, यदि वह—चाहे स्वयं व्यक्ति से या किसी अन्य से—इन उद्देश्यों के बिना बोलता है, तो वह अपने भाई की निंदा करने या उसकी बदनामी करने के लिए बोलता है; और ऐसा व्यक्ति ईश्वर द्वारा त्याग दिए जाने से नहीं बच पाएगा, बल्कि अनिवार्य रूप से या तो उसी या किसी अन्य अपराध में पड़ जाएगा, और दूसरों द्वारा उजागर और फटकारे जाने पर, उसे लज्जित होना पड़ेगा।

74. जो लोग एक ही पाप करते हैं, उनका न्याय उसी कृत्य के आधार पर एक ही तरह से नहीं किया जाना चाहिए, बल्कि अलग तरह से किया जाना चाहिए (पाप के कारण के आधार पर): क्योंकि आदत से पाप करना एक बात है, और अचानक, अनियंत्रित आवेग से पाप करना दूसरी बात है। दूसरे मामले में, व्यक्ति ने पाप करने से पहले उसके बारे में नहीं सोचा था, और न ही बाद में उसका कोई झुकाव इसके प्रति होता है; इसके विपरीत, वह जो हुआ है, उस पर गहराई से दुखी होता है और उससे पीड़ित रहता है। जो लोग आदत से पाप करते हैं, उनके लिए यह बिल्कुल अलग है: क्योंकि पाप करने से पहले भी वे अपने विचारों में पाप करना बंद नहीं करते थे, और पाप करने के बाद भी वे उसी मानसिकता में बने रहते हैं।

75. जो कोई भी दंभ के लिए पुण्य का अभ्यास करता है, वह दंभ के लिए ही ज्ञान की भी खोज करता है। लेकिन ऐसा व्यक्ति अब शिक्षा के लिए कुछ भी नहीं करता और न ही कहता है, बल्कि हर काम में अपने कर्मों को देखने या अपने शब्दों को सुनने वालों से महिमा प्राप्त करने की कोशिश करता है। यह जुनून तब प्रकट होता है, जब ऐसे कुछ लोग यदि उसके शब्दों या कर्मों की आलोचना करने लगें, तो वह इससे बहुत दुखी हो जाता है—इसलिए नहीं कि वे शिक्षित नहीं हुए, क्योंकि उसका ऐसा कोई उद्देश्य नहीं था; बल्कि इसलिए कि वह उनसे अपमानित या तुच्छ महसूस करता है।

76. लोभ का भाव तब प्रकट होता है जब कोई व्यक्ति हमेशा खुशी से प्राप्त करता है लेकिन दुख से देता है। ऐसा व्यक्ति वास्तव में मितव्ययी नहीं हो सकता (देखें अनुच्छेद 19)।

77. एक व्यक्ति जो पीड़ा सहता है, वह निम्नलिखित कारणों से पीड़ा सहता है: – या तो ईश्वर के प्रति प्रेम से, या पुरस्कार की आशा में, या यातना के भय से, या मानव निर्णय के भय से, या प्राकृतिक सहनशीलता के कारण, या भविष्य के सुख के लिए, या स्वार्थ के कारण, या अहंकार के कारण, या आवश्यकता के कारण।

78. विचारों से छुटकारा पाना एक बात है, और वासनाओं से मुक्त होना एकदम दूसरी बात है। अक्सर विचारों से तब छुटकारा मिलता है जब वे वस्तुएँ जिनके प्रति वासना थी, दृष्टि से ओझल हो जाती हैं; फिर भी, इस बीच वासनाएँ आत्मा में छिपी रहती हैं, और जब वे वस्तुएँ फिर से सामने आती हैं तो प्रकट हो जाती हैं। और इसलिए, ऐसी चीज़ों की उपस्थिति में मन पर नज़र रखनी चाहिए, और यह पहचानना चाहिए कि वह किसके प्रति वासना पालता है।

७९. एक सच्चा मित्र वह है जो, जब कोई पड़ोसी परीक्षा में पड़ता है, तो उसके साथ—बिना किसी भ्रम या चिंता के—उस पर आने वाले दुख, कठिनाइयों, दुर्भाग्यों और विपत्तियों को सहन करता है, मानो वे उसकी अपनी हों।

80. अपने अंतर्मन का तिरस्कार न करो, जो तुम्हें सदा उत्तम परामर्श देता है; क्योंकि वह तुम्हें दिव्य और दैवीय परामर्श प्रदान करता है, हृदय के गुप्त कलंकों से तुम्हें मुक्त करता है, और इस संसार से प्रस्थान के समय, परमेश्वर के समक्ष तुम्हें धैर्य प्रदान करता है।

८१. यदि आप बुद्धिमान और साथ ही विनम्र बनना चाहते हैं, न कि आत्म-तुष्टि की भावना के दास, तो हमेशा चीजों में वह खोजें जो आपकी समझ से परे है; और, यह जानकर कि बहुत सी और विविध ज्ञान की बातें आपके लिए अज्ञात हैं, आप अपनी ही अज्ञानता पर आश्चर्यचकित होंगे और अपनी बुद्धि को विनम्र बनाएंगे। और अपनी तुच्छता को पहचानकर, आप कई महान और अद्भुत बातें जानने लगेंगे। लेकिन अपने ज्ञान का घमंड आपको सीखने में प्रगति करने से रोकता है।

82. जो व्यक्ति उपचार के उपायों का विरोध नहीं करता, वह सच्चे मन से मोक्ष की कामना करता है; और ये उपाय विभिन्न दुर्भाग्यों से उत्पन्न होने वाला शोक और दुख हैं। लेकिन जो व्यक्ति दुर्भाग्यों का विरोध करता है, वह न तो यह जानता है कि इस पृथ्वी पर क्या सौदा हो रहा है, और न ही यह कि जब वह यहाँ से जाएगा तो अपने साथ क्या लाभ ले जाएगा।

८३. अहंकार और धन का मोह एक-दूसरे को जन्म देते हैं। क्योंकि कुछ लोग अहंकार के कारण अमीर बनते हैं, जबकि अन्य, अमीर बन जाने के बाद, घमंडी हो जाते हैं। लेकिन दुनिया का यही चलन है। हालाँकि, एक भिक्षु तब और भी अधिक घमंडी हो जाता है— —जब वह संसार से परे होता है; लेकिन जब उसके पास चाँदी होती है, तो वह उसे छिपा देता है, इस बात पर शर्मिंदा होकर कि उसके पास उसकी नियति के अनुरूप नहीं कुछ है।

८४. एक भिक्षु की दंभशीलता यह है कि वह पुण्य और उसके परिणामों पर गर्व करता है; जबकि उसके अहंकार की विशेषता यह है कि वह अपनी सफलताओं पर गर्व करता है, दूसरों को तुच्छ समझता है, और इन चीजों को ईश्वर के बजाय स्वयं में निहित मानता है। एक गृहस्थ की व्यर्थता और अहंकार की विशेषता यह है कि वह सुंदरता, धन, शक्ति और सही निर्णय, या सांसारिक समझदारी पर घमंड करता है और गर्व महसूस करता है।

८५. गृहस्थों की सफलताएँ संन्यासियों के पतन का कारण बनती हैं, जबकि संन्यासियों की सफलताएँ गृहस्थों के पतन का कारण बनती हैं। गृहस्थों की सफलताएँ धन, कीर्ति, पद, भोग, शारीरिक सुख, अनेक संतान और इसी प्रकार की अन्य चीजों में निहित होती हैं; इनमें लिप्त होकर एक संन्यासी नष्ट हो जाता है। हालाँकि, एक भिक्षु की 'सफलताएँ' अनासक्ति, अपरिचय, शक्तिहीनता, संयम, दुख, अभाव और इसी तरह की चीजें हैं; जब अनजाने में इनका सामना करना पड़ता है, तो संसार का प्रेमी इन्हें एक बड़ी विपत्ति मानता है, और अक्सर अपनी गर्दन में फंदा डालने के खतरे के करीब आ जाता है—और वास्तव में कुछ ने ऐसा किया भी है।

86. भोजन दो उद्देश्यों के लिए बनाया गया है: पोषण और उपचार। अत; जो लोग इसे गलत इरादे से ग्रहण करते हैं, और जो इस ईश्वर-प्रदत्त उपहार का सही ढंग से उपयोग नहीं करते, उन्हें भोगवादी के रूप में निंदा किया जाता है। और सभी चीजों के संबंध में, उनका अनुचित उपयोग एक पाप है।

87. विनम्रता शुद्ध प्रार्थना से उत्पन्न होती है, जिसके साथ आँसू और दुख जुड़े होते हैं। क्योंकि, निरंतर ईश्वर से सहायता माँगने से, यह व्यक्ति को अपनी ही शक्ति और बुद्धि पर मूर्खतापूर्ण ढंग से भरोसा करने और दूसरों से स्वयं को श्रेष्ठ मानने से रोकती है – जो अहंकारपूर्ण जुनून की दो प्रबल व्याधियाँ हैं।

88. एक साधारण विचार के खिलाफ संघर्ष करना, ताकि वह जुनून को भड़काए नहीं; और एक भावुक विचार के खिलाफ संघर्ष करना, ताकि हम पाप की सहमति न दे दें, यह दोनों अलग बातें हैं। संघर्ष के ये दोनों रूप हमारे विचारों को हमारे भीतर ठहरने से रोकते हैं।

८९. शोक और प्रतिशोध की भावना एक-दूसरे से अलग नहीं होते। इस प्रकार, जब मन, दुख के साथ, अपने भीतर—एक दर्पण की तरह—उस भाई का चेहरा देखता है जिसने उसे ठेस पहुँचाई है, तो यह स्पष्ट है कि वह रंजिश पालता है। *'प्रतिशोधी के मार्ग में मृत्यु है'* (नीतिवचन 12:28); *'क्योंकि जो द्वेष रखता है वह अधर्म करता है'* (नीतिवचन 21:24)।

९०. यदि आप किसी के प्रति द्विवेष रखते हैं, तो उनके लिए प्रार्थना करें; और प्रार्थना द्वारा, उनके द्वारा आप पर किए गए अन्याय की स्मृति से दुख को अलग करके, आप उस जुनून के प्रवाह को रोक देंगे; और मैत्रीपूर्ण और दयालु बनकर, आप उस जुनून को अपनी आत्मा से पूरी तरह से दूर कर देंगे। जब कोई दूसरा आपके प्रति द्विवेष रखता है, तो उनके प्रति दयालु और विनम्र बनें, और उनके साथ शांति से रहें, और आप उन्हें उस जुनून से मुक्त कर देंगे।

९१. ईर्ष्यालु की पीड़ा को शांत करना कठिन है। क्योंकि वे उस बात को अपने लिए एक दुर्भाग्य मानते हैं, जिसकी वे आपसे ईर्ष्या करते हैं। और उन्हें शांत करने का कोई और तरीका नहीं है, सिवाय इसके कि आप उसे उनसे छिपाएं। लेकिन अगर यह कई लोगों के लिए फायदेमंद है, और साथ ही उन्हें दुख भी पहुँचाता है: तो किस पहलू को अनदेखा किया जाना चाहिए? एक को उस चीज़ का पक्ष लेना चाहिए जो कई लोगों के लिए फायदेमंद हो; फिर भी, जहाँ तक संभव हो, उसे भी अनदेखा नहीं करना चाहिए, न ही खुद को जुनून की बेईमानी से बहने देना चाहिए, और मदद खुद जुनून को नहीं बल्कि उससे पीड़ित व्यक्ति को देनी चाहिए; बल्कि, विनम्र बुद्धिमानी से, उसे अपने से श्रेष्ठ समझें, और हर समय, हर जगह और हर मामले में उसे खुद पर प्राथमिकता दें। आप अपनी ईर्ष्या को तब काबू कर सकते हैं जब आप जिस व्यक्ति से ईर्ष्या करते हैं उसकी खुशी में खुशी मनाएँ और जिस बात पर वह दुखी है, उस पर आप भी दुखी हों, इस प्रकार प्रेरित की आज्ञा का पालन करें: *'जो आनंदित हैं उनके साथ आनंदित हो, और जो शोक करते हैं उनके साथ शोक करो'* (रोमियों 12:15)।

92. हमारा मन दो सत्ताओं के बीच स्थित है, जिनमें से प्रत्येक अपनी विशेषता को स्थापित करती है: एक सद्गुण, दूसरी कुसद्गुण; अर्थात्, एक देवदूत और एक राक्षस के बीच। लेकिन मन में यह शक्ति और सामर्थ्य है कि वह अपनी पसंद के अनुसार किसी का भी अनुसरण करे या उसका विरोध करे।

93. पवित्र शक्तियाँ हमें भलाई की ओर मार्गदर्शन करती हैं; और भलाई के प्राकृतिक बीज और एक अच्छा इरादा हमारी सहायता करते हैं; जबकि राक्षसों के प्रलोभन जुनून और एक बुरे इरादे से भड़काए जाते हैं।

94. एक शुद्ध मन को कभी-कभी स्वयं ईश्वर द्वारा सिखाया जाता है, जो उस पर अवतरित होते हैं; अन्य समयों में, पवित्र शक्तियाँ उसे अच्छाई से प्रेरित करती हैं, और अन्य समयों में, वस्तुओं का स्वभाव जैसा कि मन द्वारा परिकल्पित किया जाता है।

95. ज्ञान के योग्य मन को चीजों के प्रति अपने विचारों को भावहीन, अपने चिंतन को त्रुटि से मुक्त, और अपनी प्रार्थना की अवस्था को शांत रखना चाहिए। फिर भी यह हमेशा ऐसा बनाए नहीं रख पाता, क्योंकि राक्षसों के उकसावे पर, कामुक आवेगों के हस्तक्षेप से यह—धुएँ की तरह—धुंधला हो जाता है।

96. हमें हर उस चीज़ पर गुस्सा नहीं आता जो हमें दुख देती है; क्योंकि दुख पैदा करने वाले अवसर, गुस्सा भड़काने वाले अवसरों से अधिक होते हैं। उदाहरण के लिए: कोई वस्तु टूट गई है, कोई खो गई है, कोई मर गया है। ऐसे मामलों में हम केवल शोक मनाते हैं, जबकि अन्य मामलों में हम शोक भी मनाते हैं और गुस्सा भी हो जाते हैं, क्योंकि हमारा मन विवेकपूर्ण नहीं होता।

९७. मन, जब वस्तुओं के बारे में विचार ग्रहण करता है, तो आमतौर पर प्रत्येक विचार के अनुसार अपना स्वरूप फिर से बदल जाता है; लेकिन जब उन्हें आध्यात्मिक रूप से मनन करता है, तो यह प्रत्येक मनन के अनुसार विभिन्न तरीकों से रूपांतरित हो जाता है। लेकिन जब यह ईश्वर में होता है, तो यह पूरी तरह से निराकार और अदृश्य हो जाता है। क्योंकि, एक रूप वाले की आराधना करते हुए, यह भी एक रूप का और पूरी तरह से दीप्तिमान हो जाता है।

98. पूर्ण आत्मा वह है जिसमें इच्छा की संपूर्ण शक्ति पूर्ण रूप से ईश्वर की ओर निर्देशित हो।

99. एक पूर्ण मन वह है जो, सच्चे विश्वास के द्वारा अगम्य को जानकर, उसकी सभी रचनाओं का संपूर्ण अवलोकन कर चुका है और ईश्वर से उनमें उसकी व्यवस्था और न्याय का सर्व-व्यापी ज्ञान प्राप्त कर चुका है, जहाँ तक यह मनुष्यों के लिए सुलभ है।

100. समय तीन भागों में विभाजित है: और विश्वास इन तीनों भागों तक फैला है; आशा एक भाग में, और प्रेम दो भागों में। विश्वास और आशा की एक सीमा है; लेकिन प्रेम, अनंत के साथ एक होकर और हमेशा बढ़ता रहने के कारण, हमेशा के लिए बना रहता है। और इसीलिए *'इन सब में प्रेम सबसे महान है'* (1 कुरिन्थियों 1:3, 13)।

प्रेम पर चौथा सौवां भाग 1. सबसे पहले, मन आश्चर्य से भर जाता है जब वह दिव्यता की असीमता पर मनन करता है—उस अगम्य और अत्यधिक-आकांक्षित गहराई पर; दूसरे

1. सबसे पहले, मन सभी चीजों में परमेश्वर की असीमता पर विचार करते समय आश्चर्य से भर जाता है—वह अगम्य और अत्यधिक वांछित गहराई; दूसरे, यह इस बात से चकित हो जाता है कि परमेश्वर ने जो कुछ भी अस्तित्व में है, उसे शून्य से कैसे उत्पन्न किया। परन्तु जैसे *'उसकी महानता का कोई अंत नहीं है'* (भजन संहिता 141:3), *'वैसे ही उसकी बुद्धि की कोई सीमा नहीं है'* (बराखूथ 3:18)।

2. क्योंकि वह उस अगम्य और अद्भुत भलाई के स्रोत को देखकर विस्मित हुए बिना कैसे रह सकता है? या वह इस बात पर विचार करके भयभीत हुए बिना कैसे रह सकता है कि वाचिक और तर्कशील स्वभाव, और वे चार तत्व जिनसे शरीर बनते हैं, कैसे और कहाँ से अस्तित्व में आए, जबकि उनकी सृष्टि से पहले कोई पदार्थ मौजूद नहीं था? यह कौन सी शक्ति है जिसने स्वयं को गति में डालकर, उन्हें अस्तित्व में लाया? परन्तु हेलेनियों के पुत्र यह स्वीकार नहीं करते, क्योंकि वे सर्वशक्तिमान भलाई और उसकी जीवन-दायक शक्ति, तथा मन से परे बुद्धि और तर्क से अनभिज्ञ हैं।

३. परमेश्वर, जो सृष्टिकर्ता के रूप में अनंत काल से विद्यमान हैं, अपनी असीम दया से, जब भी वे इच्छा करते हैं, अपने सारभूत वचन और आत्मा के द्वारा सृष्टि रचते हैं। यह न पूछो: 'तो फिर, सृष्टिकर्ता, जो सदा से अच्छा है, केवल अब ही क्यों प्रकट हुआ है?' क्योंकि मैं तुमसे यह भी कहता हूँ कि अनंत सत्ता की अगम्य बुद्धि मानवीय समझ से परे है।

४. सृष्टिकर्ता, जिन्होंने सनातन काल से अपने भीतर जो कुछ भी अस्तित्व में है, उसका ज्ञान धारण किया हुआ है, ने इस ज्ञान को फलित किया और जब भी उन्होंने चाहा, उसे क्रियान्वित किया। क्योंकि यह संदेह करना अनुचित है कि सर्वशक्तिमान परमेश्वर जब चाहें कुछ भी कर सकते हैं या नहीं।

5. उस उद्देश्य की जाँच करो जिसके लिए ईश्वर ने चीजों को बनाया; क्योंकि यह जाना जा सकता है; लेकिन यह जानने का प्रयास मत करो कि उन्होंने यह हाल ही में कैसे और क्यों किया: क्योंकि यह आपकी समझ से परे है।

क्योंकि दिव्य चीजों में से कुछ मनुष्य के लिए बोधगम्य हैं, जबकि अन्य नहीं हैं। विचार-विमर्श, यदि इसे अनियंत्रित छोड़ दिया जाए, तो यह किसी को भी गर्त में डाल सकता है, जैसा कि एक संत (ग्रेगरी द थियोलोजियन) ने कहा था।

6. कुछ लोग कहते हैं कि प्राणी परमेश्वर के साथ अनंत काल से सह-अस्तित्व में रहे हैं; लेकिन यह असंभव है। क्योंकि हर तरह से सीमित प्राणी अनंत के साथ अनंत काल से कैसे सह-अस्तित्व में रह सकते हैं, और यदि वे सृष्टिकर्ता के सह-शाश्वत हैं तो वे प्राणी कैसे हो सकते हैं? लेकिन यह यूनानियों का तर्क है, जो ईश्वर, सृष्टिकर्ता को किसी भी प्रकार की प्रकृति के रूप में नहीं, बल्कि केवल गुणों के एक समूह के रूप में मानते हैं। हम, हालांकि, ईश्वर को सर्वशक्तिमान मानते हुए, यह मानते हैं कि वह केवल गुणों का ही नहीं, बल्कि योग्य प्रकृतियों का भी सृष्टिकर्ता है। यदि ऐसा है, तो प्राणी ईश्वर के साथ सर्वकाल से सह-अस्तित्व में नहीं रहे हैं।

7. ईश्वरत्व और दिव्यता कुछ पहलुओं में ज्ञेय हैं, और अन्य पहलुओं में अज्ञेय। वे उनके चारों ओर जो कुछ भी है, उस पर चिंतन के माध्यम से ज्ञेय हैं; वे उस में अज्ञेय हैं जो वह स्वयं में है।

8. पवित्र त्रिमूर्ति की सरल और अनंत प्रकृति में किसी भी प्रवृत्ति या क्षमता की तलाश न करें, अन्यथा आप इसे सृजित प्राणियों की तरह जटिल बना देंगे: क्योंकि यह अतार्किक है और ईश्वर पर लागू नहीं किया जा सकता।

९. सरल, एकरूप, गुणरहित, शांत, अविचल, प्रशांत – एक ही स्वभाव, असीम, सर्वशक्तिमान और सर्व-धारणशील। हालाँकि, प्रत्येक प्राणी सार और आकस्मिकताओं से मिलकर बना है और हमेशा ईश्वर की दिव्य व्यवस्था की आवश्यकता में रहता है, क्योंकि वह उतार-चढ़ाव से मुक्त नहीं है।

10. प्रत्येक बौद्धिक और संवेदी स्वभाव को, जब अस्तित्व में लाया गया, तो ईश्वर से वस्तुओं से छाप प्राप्त करने की शक्ति मिली; बौद्धिक स्वभाव को सोचने की शक्ति मिली, संवेदी स्वभाव को महसूस करने की शक्ति मिली।

11. ईश्वर केवल प्रदान करते हैं, जबकि प्राणी प्राप्त भी करता है और प्रदान भी करता है: यह अस्तित्व और कल्याण प्राप्त करता है, जबकि यह केवल कल्याण प्रदान करता है; फिर भी, भौतिक स्वभाव ऐसा एक ही तरीके से करता है, और अद्रव्य स्वभाव दूसरे तरीके से।

12. एक अद्रव्य प्राणी बोलने, कर्म करने और चिंतन द्वारा कल्याण प्रदान करता है; जबकि एक द्रव्य प्राणी ऐसा केवल चिंतन द्वारा ही करता है।

13. तर्कशील और बौद्धिक प्राणियों का शाश्वत अस्तित्व या अस्तित्वहीनता सृष्टिकर्ता की इच्छा में निहित है, जिसने *'सभी चीज़ों को बहुत अच्छा' बनाया*; लेकिन वे अपनी पसंद से अच्छे या बुरे के रूप में मौजूद हों, यह इन प्राणियों की इच्छा में निहित है।

14. प्राणियों की प्रकृति में बुराई नहीं देखी जाती, बल्कि उनकी भटकती और अतार्किक गतिविधियों में देखी जाती है।

15. आत्मा बुद्धिमानी से चलती है जब उसकी इच्छा शक्ति आत्म-नियंत्रण से नियंत्रित होती है, उसकी भावुक शक्ति प्रेम के लिए उत्सुक होती है और घृणा से मुंह मोड़ती है, और उसकी बौद्धिक शक्ति प्रार्थना और आध्यात्मिक चिंतन के माध्यम से ईश्वर में निवास करती है।

16. जो व्यक्ति प्रलोभन के समय, दुखद परीक्षाओं का सामना करते हुए उदारता नहीं दिखाता, बल्कि अपने आध्यात्मिक भाइयों से अपना प्रेम तोड़ लेता है, उसके पास अभी तक पूर्ण प्रेम और न ही ईश्वर की व्यवस्था की गहरी समझ होती है।

१७. ईश्वर की व्यवस्था का उद्देश्य है कि जो लोग बुराई के द्वारा विभिन्न प्रकार से अलग हो गए हैं, उन्हें सच्चे विश्वास और आध्यात्मिक प्रेम के द्वारा पुनर्मिलन कराए। उद्धारकर्ता ने इसलिये दुख उठाया, *ताकि 'वह परमेश्वर की बिखरी हुई सन्तान को एक में इकट्ठा कर सके'* (यूहन्ना 11:52)। अत; जो कोई भी भारी परीक्षाओं को सहने, दुखद घटनाओं को सहन करने, या दर्दनाक अनुभवों से पीड़ित होने के लिए अनिच्छुक है, वह परमेश्वर के प्रेम और उसकी व्यवस्था के उद्देश्य के बाहर चलता है।

18. *'प्रेम धीरजवान और कृपालु है'* (1 कुरिन्थियों 13:4): क्या दुखद घटनाओं के सामने वह कायर व्यक्ति, जो उसे दुख पहुँचाने वालों के प्रति द्वेष रखता है और उनसे प्रेम करने से खुद को अलग कर लेता है, ईश्वर की व्यवस्था के उद्देश्य से भटक नहीं जाता?

19. इस पर विचार करो: क्या वह बुराई तुम्हारे भाई में नहीं, बल्कि तुम में ही नहीं है, जो तुम्हें उससे अलग करती है? और उससे मेल-मिलाप करने में जल्दी करो, कहीं ऐसा न हो कि तुम प्रेम की आज्ञा से भटक जाओ।

20. प्रेम की आज्ञा की उपेक्षा न करो; क्योंकि इसके द्वारा तुम परमेश्वर के पुत्र बनोगे, परन्तु इसे उल्लंघन करके, तुम स्वयं को गेहेन्ना का पुत्र साबित करोगे।

21. मित्रों के बीच प्रेम नष्ट हो जाता है: यदि आप ईर्ष्यालु हैं, या ईर्ष्या का विषय बन जाते हैं; यदि आप हानि पहुँचाते हैं या हानि सहते हैं; यदि आप अपमान करते हैं या अपमान सहते हैं; और अंत में, यदि आप अपने भाई के बारे में संदेहास्पद विचारों को पालते और थामे रहते हैं। तो, क्या आपने इस तरह का कुछ नहीं किया है, या सहा है, और क्या इसी वजह से आप दोस्तों के प्यार से मुँह मोड़ रहे हैं?

२२. यदि कोई भाई तुम्हें प्रलोभित कर दे, और तुम्हारी पीड़ा तुम्हें घृणा की ओर ले जाए, तो घृणा पर विजय न पाओ, बल्कि घृणा पर प्रेम से विजय प्राप्त करो। आप इस तरह इससे पार पा सकते हैं: उसके लिए ईश्वर से सच्चे मन से प्रार्थना करके, अपने भाई द्वारा दी गई माफी को स्वीकार करके, या उसकी माफी से खुद को ठीक करके, खुद को उस प्रलोभन का कारण मानकर और तूफ़ान के गुज़र जाने तक धैर्य रखने का संकल्प लेकर।

23. दीर्घ-सहिष्णु वह है जो परीक्षा के अंत तक प्रतीक्षा करता है और जो कुछ उसने सहन किया है, उसके लिए प्रशंसा प्राप्त करता है।

24. *'धीरजवान मनुष्य समझ में धनी होता है'* (नीतिवचन 14:29); क्योंकि वह जो कुछ भी होता है, उसे अंतिम लक्ष्य की ओर ले जाने वाला मानता है, और उसकी प्रत्याशा में सभी दुखों को सहन करता है। प्रेरित के अनुसार, *'अंत 'शाश्वत'* जीवन है (रोमियों 6:22)। *'जीवन तो यह है कि वे तुझे, केवल एक सच्चे परमेश्वर को, और उस यीशु मसीह को, जिसे तूने भेजा है, जानें'* (यूहन्ना 17:3)।

२५. आध्यात्मिक प्रेम को शीघ्रता से न त्यागें; क्योंकि मानवजाति के लिए मोक्ष का कोई अन्य मार्ग शेष नहीं है।

26. आज उस व्यक्ति को दुष्ट और बुरे के रूप में न देखें जिसे आप कल एक आध्यात्मिक भाई और एक सदाचारी व्यक्ति के रूप में बहुत सम्मान देते थे, उसके प्रति घृणा के कारण, जो आपके भीतर दुष्ट की उकसावे से उत्पन्न हुई है; बल्कि धैर्यपूर्ण प्रेम के साथ, कल की अच्छाई पर चिंतन करते हुए, आज की घृणा को अपनी आत्मा से बाहर निकालें।

27. जिसे तुमने कल अच्छा और सदाचारी कहकर प्रशंसा की, उसे अब भ्रष्ट और दुष्ट मत कहो, क्योंकि तुम्हारा प्रेम घृणा में बदल गया है, और तुम अपने भाई के खिलाफ बदनामी को उसके प्रति अपनी इस दुष्ट घृणा का बहाना बना रहे हो; परन्तु उसे वही स्तुति करते रहो, भले ही तुम अभी भी दुखी हो, और तुम शीघ्र ही उद्धार करने वाले प्रेम में लौट आओगे।

28. अपने भाई के प्रति अपने भीतर अब भी छिपी हुई नाराज़गी के कारण, अन्य भाइयों के साथ बातचीत में अपनी आदत के अनुसार उसकी प्रशंसा को इस तरह से मत बदलें कि आप अपने शब्दों में सूक्ष्म रूप से आलोचना मिला दें; बल्कि उसके बारे में बातचीत में हार्दिक प्रशंसा से बात करें और उसके लिए सच्चे मन से प्रार्थना करें, जैसे आप अपने लिए करते हैं – और आप जल्द ही उस विनाशकारी घृणा से मुक्त हो जाएँगे।

29. यह न कहो, 'मैं अपने भाई से घृणा नहीं करता,' जबकि तुम उसकी याद से मुँह मोड़ते हो, बल्कि उस बात पर ध्यान दो जो मूसा कहते हैं: *'तुम अपने भाई से मन में घृणा न करना; अपने पड़ोसी को उसकी भूल बता देना, और उसके पाप के कारण उससे बैर न रखना'* (लैव्यव्यवस्था 19:17)।

३०. भले ही कोई प्रलोभन देकर आपका भाई आपको लगातार बदनाम करे, तो भी प्रेमपूर्ण स्वभाव से न हटें, और उस दुष्ट आत्मा को अपने विचारों को विचलित न करने दें। और यदि, अपमानित और बदनाम किए जाने पर भी, आप उस पर आशीर्वाद दें और उसकी भलाई की कामना करें, तो आप उससे दूर नहीं होंगे। मसीह में यही बुद्धिमानी का मार्ग है, और जो कोई भी इस मार्ग पर चलता है वह उनसे एक हो जाएगा।

31. जो लोग आपके भाइयों के प्रति आपके मन में चिढ़ या वैमनस्य पैदा करने वाले शब्द कहते हैं, उन्हें भले इरादों वाला न समझें, भले ही वे सच बोलते प्रतीत हों; बल्कि ऐसे लोगों से ऐसे मुँह फेर लें जैसे वे घातक साँप हों, ताकि आप उनकी बदनामी को रोक सकें और अपनी आत्मा को कटुता से मुक्त कर सकें।

32. अपने भाई को इशारों से आहत न करो, कहीं ऐसा न हो कि तुम भी उससे वैसा ही पाओ, और इस प्रकार तुम दोनों से प्रेम की आत्मा को भगा दो; परन्तु प्रेमपूर्ण साहस से जाकर उसे डाँटो (मत्ती 18:15), ताकि दुःख के कारण दूर हो जाएँ, और तुम स्वयं को और उसे चिंता और क्लेश से छुड़ा सको।

33. अपने विवेक की अत्यंत सावधानी से परीक्षा करो कि क्या तुम्हारे भाई का तुमसे मेल न होना तुम्हारी ही गलती के कारण है, और उसकी फटकार को झूठे तर्क से खारिज न करो – क्योंकि वह तुम्हारे गूढ़ विचारों को जानता है और इस संसार से तुम्हारे प्रस्थान के समय तुम्हारी निंदा करेगा, और प्रार्थना के समय वह तुम्हारे लिए एक ठोकर का कारण बनेगा।

34. शांतिके समय, इस पर विचार न करें कि आपके भाई ने क्रोध के क्षण में क्या कहा था, चाहे आपके सामने कुछ अप्रिय कहा गया हो या आपकी अनुपस्थिति में आपके बारे में किसी और से कहा गया हो, और आपने बाद में इसके बारे में सुना हो; कहीं ऐसा न हो कि द्वेषपूर्ण विचारों को पालकर, आप एक बार फिर से अपने भाई के प्रति विनाशकारी घृणा में लौट आएं।

35. एक विवेकशील आत्मा जो दूसरे के प्रति घृणा रखती है, वह परमेश्वर के साथ शांति से नहीं रह सकती, जिसने हमें यह आज्ञा दी है: *'क्योंकि यदि तुम मनुष्यों के अपराध न क्षमा करोगे, तो तुम्हारा पिता भी तुम्हारे अपराध न क्षमा करेगा'* (मत्ती 6:15)। भले ही आपका भाई शांति नहीं चाहता, आप स्वयं को द्वेष से मुक्त रखें, उसके लिए ईमानदारी से प्रार्थना करें, और किसी के सामने उसकी बुराई न करें।

36. पवित्र स्वर्गदूतों का अकथनीय शान्ति इन दो भावों पर निर्भर करती है: ईश्वर के प्रति प्रेम और एक-दूसरे के प्रति प्रेम; इसी प्रकार, प्राचीन काल के सभी संतों की शान्ति भी। और इसलिए हमारे उद्धारकर्ता ने बहुत बुद्धिमानी से कहा है: *'इन दो आज्ञाओं पर सारा विधान और भविष्यवक्ताओं की बातें लटकी हुई हैं'* (मत्ती 22:40)।

37. आत्म-तुष्ट न बनो; तब तुम अपने भाई से घृणा नहीं करोगे। आत्म-प्रेमी न बनो; तब तुम परमेश्वर से प्रेम करोगे।

38. यदि आप अपने आध्यात्मिक भाइयों के साथ रहना चाहते हैं, तो उनके द्वार पर अपनी इच्छाओं का त्याग करें; क्योंकि किसी अन्य तरीके से आप न तो परमेश्वर के साथ और न ही उनके साथ जिनके साथ आप रहते हैं, शांति से रह सकते हैं।

39. जिसने पूर्ण प्रेम प्राप्त किया है और अपने पूरे जीवन को उसी के अनुसार व्यवस्थित किया है, वह *'पवित्र आत्मा'* द्वारा प्रभु *'यीशु' को* पुकारता है (1 कुरिन्थियों 12:3)। इसके विपरीत, इसका परिणाम भी विपरीत ही होता है।

40. ईश्वर के प्रति प्रेम हमेशा मन को ईश्वर और दिव्य विषयों पर संवाद के लिए खोलने का प्रयास करता है; दूसरी ओर, अपने पड़ोसी के प्रति प्रेम हमेशा उसे उसके बारे में अच्छा सोचने के लिए प्रेरित करता है।

41. जो व्यर्थ महिमा से प्रेम करता है, या किसी भी सांसारिक वस्तु से लगाव रखता है, उसके लिए यह स्वाभाविक है कि वह छोटी-छोटी बातों पर लोगों से नाराज़ हो जाए, या उनसे रंजिश रखे, या उनके प्रति घृणा पालें, या शर्मनाक विचारों का दास बन जाए; लेकिन यह सब उस आत्मा के लिए अपरिचित है जो ईश्वर से प्रेम करती है।

४२. जब आप अपने विचारों में कुछ भी शर्मनाक नहीं कहते या करते हैं, जब आप उन लोगों के प्रति रंजिश नहीं रखते जिन्होंने आपको नुकसान पहुँचाया है या आपकी बदनामी की है, और जब प्रार्थना के दौरान आपका मन लगातार भौतिक चीजों और कल्पनाओं से अलग रहता है: तो जान लें कि आपने निस्वाभाविकता और पूर्ण प्रेम का एक स्तर प्राप्त कर लिया है।

४३. अहंकार से मुक्त होना कोई छोटी उपलब्धि नहीं है; गुणों के गुप्त संचय और बार-बार प्रार्थना करने से ही इससे मुक्ति मिलिती है; और इस मुक्ति का संकेत यह है कि आपने आपके बारे में बदनामी करने वाले या कर रहे व्यक्ति के प्रति कोई द्वेष न रखा हो।

४४. यदि आप धार्मिक बनना चाहते हैं, तो अपने प्रत्येक भाग, अर्थात् आत्मा और शरीर के लिए उपयुक्त चीजें प्रदान करें: आत्मा के चिंतनशील भाग के लिए – पढ़ना, आध्यात्मिक मनन और प्रार्थना; क्रोधशील भाग के लिए – आध्यात्मिक प्रेम, जो घृणा का विपरीत है; इच्छुक भाग के लिए – ब्रह्मचर्य और संयम; और शरीर के लिए, भोजन और वस्त्र, जो अकेले ही आवश्यक हैं।

४५. मन अपनी प्रकृति के अनुसार कार्य करता है; जब यह वासनाओं को नियंत्रित रखता है, तो यह सभी अस्तित्व में रहने वाली चीजों के अर्थ पर मनन करता है और ईश्वर के साथ स्थित रहता है।

४६. जैसे एक जानवर के शरीर में स्वास्थ्य और बीमारी, और महासागर में प्रकाश और अंधकार देखा जाता है: वैसे ही आत्मा में सद्गुण और दुर्गुण, और मन में ज्ञान और अज्ञान होते हैं।

४७. एक ईसाई इन तीन मार्गों से ज्ञान प्राप्त करता है: आज्ञाएँ, धर्मसिद्धान्त, और विश्वास। आज्ञाएँ मन को वासनाओं से अलग करती हैं; धर्मसिद्धान्त इसे अस्तित्व के ज्ञान की ओर ले जाती हैं; और विश्वास पवित्र त्रिमूर्ति के ध्यान में।

48. कुछ तपस्वी केवल भावुक विचारों को दूर करते हैं, जबकि अन्य स्वयं भावुकता को ही समाप्त कर देते हैं। भावुक विचारों को या तो भजन-कीर्तन, या प्रार्थना, या ईश्वर के चिंतन, या किसी अन्य उपयुक्त कार्य द्वारा दूर किया जाता है; परन्तु भावुकता को उन वस्तुओं के प्रति तिरस्कार करके समाप्त किया जाता है जिनके प्रति कोई व्यक्ति भावुक होता है।

४९. हम स्त्रियों, धन, कीर्ति आदि के प्रति आसक्ति के प्रति प्रवृत्त होते हैं। यदि संसार का त्याग करने के बाद कोई व्यक्ति, जैसा कि उसे करना चाहिए, संयम के द्वारा शरीर को वश में करने का प्रयास करता है, तो वह स्त्रियों के प्रति उदासीनता और तिरस्कार प्राप्त कर सकता है; धन के प्रति, यदि कोई अपने मन को जो कुछ उसके पास है उससे संतुष्ट होने के लिए मना ले; कीर्ति के प्रति, यदि कोई केवल ईश्वर को समर्पित सद्गुणों के गुप्त संवर्धन से प्रेम करने लगे। यही अन्य आसक्तियों पर भी लागू होता है। जो कोई भी इन सभी चीजों को तुच्छ समझता है, वह कभी भी किसी भी प्रकार की शत्रुता को पालना नहीं करेगा।

५०. जिसने सांसारिक चीज़ों, जैसे पत्नी, संपत्ति आदि का त्याग किया है, उसने बाहरी मनुष्य को तो संन्यासी बना दिया है, परन्तु भीतरी मनुष्य को नहीं: जबकि जिसने कामुक विचारों का त्याग किया है, उसने भीतरी मनुष्य—अर्थात् मन—को भी संन्यासी बना दिया है। बाहरी मनुष्य को संन्यासी बनाना आसान है, यदि वह ऐसा चाहता हो; परन्तु भीतरी मनुष्य को संन्यासी बनाना कोई छोटी उपलब्धि नहीं है।

५१. तो फिर, इस क्रम में कौन पूर्ण रूप से भावुक विचारों से मुक्त हुआ है और जिसे शुद्ध तथा निस्वार्थ प्रार्थना प्राप्त करने के योग्य माना गया है—जो कि आंतरिक संन्यासी की वास्तविक पहचान है?

52. हमारी आत्माओं में कई वासनाएँ छिपी रहती हैं; फिर भी जब उनकी वस्तुएँ प्रकट होती हैं तो वे प्रकट हो जाती हैं।

53. हो सकता है कि कुछ लोग अपने विषयों के अभाव में, थोड़ी तटस्थता प्राप्त करके, कामनाओं से परेशान न हों; लेकिन जैसे ही विषय प्रकट होते हैं, कामनाएँ तुरंत ही मन को लुभाने लगती हैं।

५४. किसी वासना की वस्तु के अभाव में, अपने आप को पूर्ण वैराग्य का धनी न समझें। लेकिन जब कोई वस्तु प्रकट होती है, और आप न तो उससे और न ही उसकी स्मृति से अविचलित रहते हैं: तो जान लें कि आप निर्लिप्तता के क्षेत्र में प्रवेश कर गए हैं; फिर भी तब भी, आत्मसंतुष्ट न हों: क्योंकि यद्यपि दीर्घकालिक सदाचार वासनाओं को वश में कर लेता है, यदि आप इसकी उपेक्षा करते हैं, तो वे फिर से भड़क उठेंगी।

५५. जो मसीह से प्रेम करता है, वह निस्संदेह यथासंभव उनका अनुकरण करता है। मसीह ने, अपनी ओर से, लोगों पर कभी भलाई करना बंद नहीं किया; जब उनका अकृतज्ञता से सामना हुआ और उन पर अपमान किया गया, तो वे धैर्यवान रहे; जब उन्हें उन लोगों ने मारा और मार डाला, तो उन्होंने सब कुछ सहन किया, और किसी पर भी कोई बुराई नहीं मढ़ी। ये तीन कार्य अपने पड़ोसी के प्रति प्रेम के कार्य हैं; इनके बिना, जो कोई मसीह से प्रेम करने का दावा करता है, या यह कि वे उसकी संप्रभुता का वारिस बनेंगे, वह स्वयं को धोखा दे रहा है। क्योंकि प्रभु ने कहा: *'हर कोई जो मुझ से कहता है, "प्रभु, प्रभु," वह स्वर्ग के राज्य में प्रवेश नहीं करेगा, परन्तु केवल वही जो मेरे पिता की इच्छा के अनुसार चलता है'* (मत्ती 7:21)। और फिर: *'यदि तुम मुझ से प्रेम रखते हो, तो मेरी आज्ञाओं को मानना'* (यूहन्ना 14:15, 21), और इसी तरह।

५६. उद्धारकर्ता की आज्ञाओं का पूरा उद्देश्य मन को अनुशासनहीनता और घृणा से मुक्त करना, और उसे उनके और अपने पड़ोसी के प्रति प्रेम तक ऊँचा उठाना है, जिससे पवित्र, सक्रिय ज्ञान का प्रकाश उत्पन्न होता है।

57. ईश्वर द्वारा एक निश्चित ज्ञान प्राप्त करने के बाद, प्रेम और आत्म-नियंत्रण की उपेक्षा न करें: क्योंकि, वे आत्मा के भावुक भाग को शुद्ध करके, आपके लिए ज्ञान का एक सुगम मार्ग तैयार करते हैं।

58. ज्ञान का मार्ग निर्लिप्तता और विनम्रता है; *'इनके बिना, कोई भी प्रभु को नहीं देखेगा'* (इब्रानियों 12:14)।

59. चूंकि *'मन घमंड करता है, पर प्रेम निर्माण करता है'* (1 कुरिन्थियों 8:1), प्रेम को मन के साथ मिलाओ, और तुम घमंड से मुक्त हो जाओगे; तुम एक आध्यात्मिक व्यवस्थापक बनोगे, जो स्वयं को और अपने पास आने वाले सभी लोगों को सुदृढ़ बनाता है।

60. प्रेम इसलिए निर्माण करता है क्योंकि यह ईर्ष्या नहीं करता, न ही ईर्ष्या करने वालों से दुखी होता है, और न ही जो ईर्ष्या के योग्य है उसकी सार्वजनिक रूप से घोषणा करता है; यह स्वयं को पहले से ही पूर्ण प्राप्त नहीं मानता (फिलि. 3:12), और जो बात यह नहीं जानता, उसके लिए अपनी अज्ञानता स्वीकार करने में शर्म नहीं करता। इस प्रकार, यह मन को घमंड से बचाता है और हमेशा उसे ज्ञान में प्रगति के लिए प्रेरित करता है।

61. आमतौर पर, ज्ञान के साथ घमंड और ईर्ष्या जुड़ी होती है, खासकर शुरुआत में। घमंड केवल आंतरिक रूप से प्रकट होता है; लेकिन ईर्ष्या आंतरिक और बाहरी दोनों रूपों में प्रकट होती है: आंतरिक रूप से (मेरी ओर से) ज्ञान रखने वालों के प्रति, और बाहरी रूप से (मेरे प्रति) उन लोगों से जो इससे वंचित हैं। प्रेम इन तीन दोषों को दूर करता है: घमंड को, इस बात में कि *यह 'घमंडी नहीं है'*; आंतरिक ईर्ष्या, क्योंकि *'यह ईर्ष्या नहीं करती'*; बाहरी ईर्ष्या,

क्योंकि *'यह धैर्यवान और दयालु है'* (1 कुरिन्थियों 13:4)। – अत; जो ज्ञान रखता है उसे प्रेम भी प्राप्त करना चाहिए, ताकि वह सभी बातों में मन को अक्षुण्ण रख सके।

62. जिस व्यक्ति को ज्ञान का वरदान मिला है, लेकिन वह किसी अन्य के प्रति द्वेष, बुराई या घृणा रखता है, वह वैसा ही है जैसे कोई अपनी आँखों में काँटों और कँडों से छेद कर रहा हो। इस प्रकार, ज्ञान के लिए प्रेम अनिवार्य है।

63. शरीर की पूरी तरह से चिंता न करें, बल्कि उसकी शक्ति के अनुसार उसे एक कार्य सौंपकर, अपना पूरा मन आंतरिक जीवन की ओर मोड़ दें। क्योंकि *'शारीरिक प्रशिक्षण का मूल्य थोड़ा है, पर भक्ति का हर बात में मूल्य है'* (1 तीमुथियुस 4:8), और इसी तरह।

64. जो भीतर वास करता है—और निरंतर भीतरी जीवन में लगा रहता है—वह आत्म-नियंत्रण का अभ्यास करता है, धैर्यवान होता है, दयालु होता है, और विनम्र होता है; और केवल इतना ही नहीं, बल्कि वह मनन भी करता है, धर्मशास्त्र का अध्ययन करता है, और प्रार्थना करता है। यही बात है जिसका अर्थ प्रेरित तब लगाते हैं जब वे कहते हैं: *'आत्मा के अनुसार चलो'* (गलातियों 5:16), और इसी तरह।

65. जो आध्यात्मिक मार्ग पर चलने में असमर्थ है, वह कामुक विचारों पर ध्यान नहीं देता, बल्कि अपना सारा ध्यान शरीर को समर्पित कर देता है – और या तो वह भोग-विलास, व्यभिचार, क्लेश, क्रोध और द्वेष में लिप्त हो जाता है, जिससे उसका मन म्लान हो जाता है; या फिर वह अत्यधिक तपस्या में संलग्न हो जाता है, जिससे उसके विचार दब जाते हैं।

66. शास्त्र हमें ईश्वर द्वारा हमारे उपयोग के लिए दी गई किसी भी चीज़ से वंचित नहीं करता, बल्कि यह अनुशासनहीनता को नियंत्रित करता है और लापरवाही को सुधारता है। अर्थात्, यह हमें खाना खाने, संतान पैदा करने, या धन रखने और उसे बुद्धिमानी से खर्च करने से नहीं रोकती; लेकिन यह अतिभिक्षण, व्यभिचार और इसी तरह की चीजों को रोकती है। यह हमें ऐसी चीजों के बारे में सोचने से भी नहीं रोकती, क्योंकि मन इसी लिए बनाया गया है; लेकिन यह हमें उन पर जुनून के साथ सोचने से रोकती है।

67. हम परमेश्वर के लिए जो कुछ काम करते हैं, उनमें से कुछ आज्ञा के पालन में किए जाते हैं, जबकि अन्य आज्ञा के पालन में नहीं किए जाते हैं, बल्कि, कह सकते हैं, एक स्वैच्छिक भेंट के रूप में किए जाते हैं। आज्ञा के पालन में – जब हम परमेश्वर और अपने पड़ोसी से प्रेम करते हैं, अपने शत्रुओं से प्रेम करते हैं, व्यभिचार नहीं करते, हत्या नहीं करते, और इसी तरह: जिनका यदि हम उल्लंघन करते हैं, तो हम निंदा के अधीन होते हैं। आज्ञाओं पर आधारित न होने वाले कर्मों में अपनी कुँवारी अवस्था की रक्षा करना, ब्रह्मचर्य का जीवन जीना, सभी संपत्तियों का त्याग करना, संन्यासी के रूप में रहना, आदि शामिल हैं। इन कार्यों को उपहार माना जाता है, ताकि यदि हम कमजोरी के कारण किसी आज्ञा का पालन करने में विफल हो जाएँ, तो हम इन उपहारों के माध्यम से अपने कृपालु प्रभु को प्रसन्न कर सकें।

68. जिसने ब्रह्मचर्य या कुँवारीपन का जीवन चुना है, उसकी *'कमर कसी हुई'* और *उसका 'दीया जलता हुआ'* होना चाहिए (लूका 12:35): *उसकी 'कमर* संयम से *कसी हुई'*; और *उसका 'दीया* प्रार्थना, ईश्वर पर चिंतन और आध्यात्मिक प्रेम के द्वारा *जलता हुआ'*।

69. कुछ भाइयों का मानना है कि वे पवित्र आत्मा के वरदानों के स्वामी नहीं हो सकते: क्योंकि, आज्ञाओं की उपेक्षा के कारण, वे यह नहीं समझते कि जिसने मसीह में सच्चा विश्वास किया है, वह संक्षिप्त रूप में परमेश्वर के सभी वरदानों का स्वामी है। लेकिन चूँकि, हमारी आलस्यता के कारण, हम उससे सक्रिय प्रेम से बहुत दूर हैं—जो हमारे भीतर के दैवीय खजानों को प्रकट कर देता—इसलिए हम सही मायने में स्वयं को परमेश्वर के वरदानों का अजनबी मानते हैं।

70. यदि, दिव्य प्रेरित के शब्दों में, यीशु मसीह हमारे हृदयों में *'विश्वास के द्वारा'* (इफिसियों 3:17) वास करते हैं, *'और उसमें बुद्धि* और ज्ञान के *सब खजाने छिपे हुए हैं'* (कुलुस्सियों 2:3): तो ज्ञान और बुद्धि के सभी खजाने हमारे हृदयों में पाए जाते हैं। ये हृदय को तब प्रकट होते हैं जब प्रत्येक व्यक्ति आज्ञाओं द्वारा शुद्ध होता है।

71. *'यह खजाना है जो खेत में छिपा हुआ है'* (मत्ती 13:44) आपके हृदय के खेत में, जिसे आपने अभी तक अपनी सुस्ती के कारण नहीं पाया है। क्योंकि यदि आप उसे पा लेते, तो आप सब कुछ बेचकर वह खेत खरीद लेते। परन्तु आप, उस खेत को छोड़कर, उसके चारों ओर परिश्रम करते हैं, जहाँ काँटे और बेर की झाड़ियाँ के सिवा और कुछ नहीं है।

72. इसीलिए उद्धारकर्ता कहते हैं: *'हृदय से शुद्ध लोग धन्य हैं, क्योंकि वे परमेश्वर को देखेंगे'* (मत्ती 5:8)। वे उसे, और उसके भीतर पड़े खजानों को तब देखेंगे, जब वे प्रेम और आत्म-संयम के द्वारा स्वयं को शुद्ध कर लेंगे, और जितना अधिक शुद्ध होंगे, उतना ही अधिक वे देखेंगे।

73. इसीलिए वह यह भी कहते हैं: *'अपना सामान बेच दो और दान करो'* (लूका 12:33), *'और ये सब वस्तुएँ तुम्हारे लिए पवित्र हो जाएँगी'* (लूका 11:41), ऐसे लोगों के लिए जो अब शरीर से संबंधित मामलों में व्यस्त नहीं हैं, बल्कि जो अपने मन को—जिसे प्रभु *'हृदय'* कहते हैं (मत्ती 15:19)—द्वेष और असंयम से शुद्ध करने का प्रयास करते हैं। क्योंकि वह सब कुछ जो मन को कलंकित करता है, उसे पवित्र बपतिस्मा की कृपा के द्वारा मसीह को अपने भीतर जीवित देखने से रोकता है।

74. धर्मग्रंथ गुणों को 'मार्ग' कहता है; लेकिन प्रेम सभी गुणों में सबसे महान है; इसीलिए प्रेरित ने कहा: *'और मैं तुम्हें एक और भी* उत्तम *मार्ग दिखाऊँगा'* (1 कुरिन्थियों 12:31), एक ऐसा मार्ग जो व्यक्ति को सभी भौतिक चीजों को तुच्छ समझने और किसी भी क्षणिक चीज़ को शाश्वत से श्रेष्ठ न मानने के लिए प्रेरित करता है।

75. ईश्वर के प्रति प्रेम वासना का प्रतिकार करता है; क्योंकि यह मन को इंद्रिय सुखों से परहेज़ करने के लिए प्रेरित करता है; जबकि पड़ोसी के प्रति प्रेम क्रोध का प्रतिकार करता है, क्योंकि यह व्यक्ति को महिमा और धन-संपत्ति को तुच्छ समझने के लिए बाध्य करता है। और ये वे दो सिक्के हैं जो उद्धारकर्ता ने सरायकुल के मालिक को दिए (लूका 10:35), ताकि वह आपकी देखभाल कर सके। लेकिन डाकुओं में शामिल होकर कृतघ्न न बनें, कहीं ऐसा न हो कि आप फिर से घायल हो जाएँ, और अंत में केवल मुश्किल से जीवित ही नहीं, बल्कि मृत हो जाएँ।

76. अपने मन को क्रोध, द्वेष और लज्जास्पद विचारों से शुद्ध करो; और तब तुम अपने भीतर मसीह के वास को पहचान पाओगे।

77. पवित्र, एकसार और पूजित त्रिमूर्ति में विश्वास से किसने आपको प्रबुद्ध किया है? या पवित्र त्रिमूर्ति में से एक के अवतारित योजना को किसने आपको ज्ञात किया है? आपको अदेह, दृश्यमान संसार की उत्पत्ति और अंत, या मृतकों में से पुनरुत्थान और अनंत जीवन, या स्वर्ग के राज्य की महिमा और अंतिम न्याय के बारे में किसने सिखाया? क्या यह आपके भीतर निवास करने वाला मसीह का अनुग्रह नहीं है, जो पवित्र आत्मा की प्रतिज्ञा है? इस अनुग्रह से बड़ा क्या है? या ऐसी बुद्धि और ज्ञान से बेहतर क्या है? ऐसे वादों से ऊँचा क्या है? यदि, इन सब के बाद भी, हम निष्क्रिय और लापरवाह बने रहते हैं, और खुद को उन वासनाओं से शुद्ध करने में असफल रहते हैं जो हमारे मन को अंधा कर देती हैं और हमें ऐसे सच्चाइयों को स्वयं सूर्य से भी अधिक स्पष्ट रूप से देखने से रोकती हैं, तो हमें खुद को दोष देना चाहिए, और यह इनकार नहीं करना चाहिए कि अनुग्रह हमारे भीतर वास करता है।

78. परमेश्वर, जिन्होंने आपको अनंत आशीर्वाद का वचन दिया है और पवित्र आत्मा को आपके हृदय में एक प्रतिज्ञा के रूप में स्थापित किया है, ने आपको अपने जीवन का ध्यान रखने की आज्ञा दी है, ताकि भीतरी मनुष्य, वासनाओं से मुक्त होकर, इसी वर्तमान जीवन में भी उन आशीर्वादों का स्वाद लेना शुरू कर सके।

७९. चूँकि आपको उच्च दिव्य चिंतन के योग्य बनाया गया है, इसलिए प्रेम और संयम का अभ्यास करने का विशेष ध्यान रखें, ताकि अपनी आत्मा के भावुक भाग को शांत रखकर, आपकी आत्मा के भीतर अनंत प्रकाश बना रहे।

८०. प्रेम से आत्मा के चिड़चिड़े स्वभाव को काबू में रखें; संयम से इसके कामुक स्वभाव को वश में करें; और प्रार्थना के माध्यम से इसके चिंतनशील स्वभाव को ऊँचा उठाएँ: और आपके मन का प्रकाश आपके भीतर कभी मुरझाएगा नहीं।

८१. प्रेम को नष्ट करने वाले कारण निम्नलिखित हैं: अपमान, पहुँचाई गई हानि, किसी के विश्वास या जीवन-शैली के विरुद्ध बदनामी, पिटाई, प्रहार, घाव और इसी तरह की अन्य बातें; और इसके अलावा, जब यह स्वयं व्यक्ति पर या उनके किसी रिश्तेदार या दोस्त पर होता है। जो कोई भी इनमें से किसी भी कारण से प्रेम तोड़ता है, उसने अभी तक मसीह की आज्ञाओं के उद्देश्य को नहीं समझा है।

८२. आप हर व्यक्ति से प्रेम करने का यथासंभव प्रयास करें। यदि, तथापि, आप ऐसा करने में अभी सक्षम नहीं हैं, तो कम से कम किसी से भी घृणा न करें। परन्तु आप इतना भी तब तक नहीं कर पाएँगे जब तक आप सभी सांसारिक वस्तुओं को तुच्छ नहीं समझते।

८३. यदि किसी ने आपकी बदनामी की है: उससे नफरत न करें, बल्कि बदनामी से और उस दानव से नफरत करें जिसने उसे इसके लिए उकसाया। क्योंकि यदि आप उस व्यक्ति से नफरत करते हैं जिसने आपकी बदनामी की है, तो आप व्यक्ति से नफरत करने लगे हैं और आपने आज्ञा का उल्लंघन किया है; और जो उसने शब्दों से किया, आप कर्मों से कर रहे हैं। परन्तु यदि आप आज्ञा का पालन करते हैं, तो उस पर प्रेम का आचरण करें, और जहाँ तक हो सके उसकी सहायता करें, ताकि आप उसे बुराई से हटा सकें।

84. मसीह नहीं चाहते कि आप किसी के प्रति घृणा या द्वेष, न ही किसी के प्रति क्रोध या दुर्भावना, किसी भी रूप में और किसी भी अस्थायी कारण से, रखें। यही बात चारों सुसमाचार सभी को सिखाते हैं।

85. हम में से कई तो बातें करते हैं, पर कुछ ही काम करते हैं। फिर भी, किसी को भी अपनी लापरवाही के लिए ईश्वर के वचन को तोड़ना-मरोड़ना नहीं चाहिए; बल्कि उन्हें ईश्वर के सत्य को छिपाए बिना अपनी कमजोरी को स्वीकार करना चाहिए, कहीं ऐसा न हो कि आज्ञाओं का उल्लंघन करने के अलावा, वे ईश्वर के वचन की गलत व्याख्या के दोषी भी बन जाएँ।

86. प्रेम और संयम आत्मा को वासनाओं से मुक्त करते हैं; जबकि ईश्वर का अध्ययन और चिंतन मन को अज्ञानता से मुक्त करते हैं; और प्रार्थना में खड़ा होना प्रार्थी को स्वयं ईश्वर के समक्ष स्थापित करता है।

87. जब दुष्टात्माएं देखती हैं कि हम इस संसार की चीज़ों को तुच्छ समझते हैं, फिर भी उनके कारण लोगों से नफ़रत करना या प्रेम से दूर होना नहीं चाहते, तो वे हमारे विरुद्ध बदनामी फैलाती हैं, ताकि हम उस कष्ट को सहन न कर सकें और बदनामी करने वालों से नफ़रत करने लगें।

८८. आत्मा के लिए बदनामी से भारी कोई बोझ नहीं है; चाहे वह किसी के विश्वास के खिलाफ हो या उसके आचरण के खिलाफ: और कोई भी इसे तब तक नज़रअंदाज़ नहीं कर सकता जब तक कि वह सुसन्ना की तरह ईश्वर की ओर न देखे, जो एकमात्र शक्तिशाली हैं और दुर्भाग्य से बचा सकते हैं, ठीक वैसे ही जैसे उन्होंने उसे बचाया और लोगों के सामने सच्चाई को बिना किसी संदेह के प्रकट किया; ठीक वैसे ही जैसे उन्होंने उसके बारे में इसे प्रकट किया, और आत्मा को आशा से सांत्वना देते हैं।

८९. आप बदनाम करने वाले के लिए जिस प्रकार प्रार्थना करते हैं, उसी प्रकार ईश्वर निश्चित रूप से भटक गए लोगों के सामने आपके बारे में सत्य प्रकट करेंगे।

90. सार में, केवल एक ही ईश्वर है; फिर भी आत्मा की प्रवृत्ति में, केवल एक ही है जो ईश्वर का अनुकरण करता है: क्योंकि उसका मुख्य उद्देश्य दुष्टों को उस चीज़ के साथ एक करना है जो सार में अच्छी है, ताकि वे भी अच्छे बन सकें। इसी कारण, जब अपमानित किया जाता है, तो वह आशीष देता है; जब सताया जाता है, तो वह सहन करता है; जब बदनाम किया जाता है, तो वह सांत्वना देता है; जब मार डाला जाता है, तो वह अपने हत्यारों के लिए प्रार्थना करता है (1 कुरिन्थियों 4:12-13)। वह यह सब इसलिए करता है ताकि वह अपने प्राथमिक उद्देश्य—प्रेम—से भटक न जाए।

91. प्रभु की आज्ञाएँ हमें मध्य-स्वभाव वाली चीजों का धन्य उपयोग करना सिखाती हैं। मध्य-स्वभाव वाली चीजों का धन्य उपयोग आत्मा की अवस्था को शुद्ध करता है; आत्मा की शुद्ध अवस्था विवेक को जन्म देती है; और विवेक निर्लिप्तता को जन्म देता है, जिससे पूर्ण प्रेम उत्पन्न होता है।

92. जो, परीक्षा में पड़ने पर, किसी मित्र के अपराध को—चाहे वह वास्तव में किया गया हो या केवल ऐसा प्रतीत होता हो—अनदेखा नहीं कर सकता, उसने अभी तक निर्लिप्तता प्राप्त नहीं की है। क्योंकि ऐसे आत्मा में छिपी हुई वासनाएँ, जब भड़कती हैं, तो मन को अंधा कर देती हैं और सत्य की किरणों को ग्रहण करने तथा अच्छाई और बुराई में अंतर करने से रोकती हैं। क्या यह नहीं कहा जा सकता कि ऐसे व्यक्ति ने अभी तक पूर्ण प्रेम प्राप्त नहीं किया है, जो न्याय के भय को दूर कर देता है (1 यूहन्ना 4:18)?

९३. '*एक सच्चा मित्र विश्वासघाती नहीं* होता' (सिरैक 6:15): वह अपने मित्र की विपत्तियों को अपनी ही विपत्तियाँ मानता है और उसके साथ मिलकर उन्हें सहन करता है, यहाँ तक कि मृत्यु तक भी।

94. कई मित्र होते हैं, परन्तु केवल समृद्धि के समय; परीक्षा के समय, तथापि, आपको मुश्किल से एक भी मिलेगा।

95. एक को हर व्यक्ति से दिल से प्रेम करना चाहिए, लेकिन अपनी आशा केवल ईश्वर में रखनी चाहिए, और अपनी पूरी शक्ति से केवल उनकी ही सेवा करनी चाहिए। जब तक वह हमें बनाए रखता है, हमारे सभी मित्र हम पर अनुग्रह करते हैं, और हमारे कोई भी शत्रु हमें नुकसान नहीं पहुँचा सकते। लेकिन जब वह हमें त्याग देता है, तो हमारे सभी मित्र हमसे मुँह मोड़ लेते हैं, और हमारे सभी शत्रु हम पर हावी हो जाते हैं।

96. परमेश्वर के परित्याग के चार मुख्य प्रकार हैं: एक है दिव्य-प्रबंधात्मक परित्याग, जैसा कि स्वयं प्रभु के साथ हुआ था, ताकि इस स्पष्ट परित्याग के माध्यम से वह परित्यक्त लोगों को बचा सकें; दूसरा है परित्याग एक परीक्षा के रूप में, जैसा कि अय्यूब और यूसुफ के साथ हुआ था, ताकि एक धैर्य का स्तंभ और दूसरा पवित्रता का स्तंभ प्रकट हो सके। एक और है आध्यात्मिक संवर्धन के लिए परित्याग, जैसा कि प्रेरित पतरस के मामले में था, ताकि नम्रता के माध्यम से उसमें अनुग्रह की प्रचुरता बनी रहे। अंत में, अस्वीकृति के माध्यम से परित्याग है, जैसा कि यहूदियों के मामले में था, ताकि दंड के माध्यम से वे पश्चाताप की ओर मुड़ सकें। त्याग के ये सभी रूप उद्धारकारी हैं और मानव जाति के लिए ईश्वर की कृपा और प्रेम से परिपूर्ण हैं।

९७. आज्ञाओं के सच्चे पालक और जो परमेश्वर की इच्छा के रहस्यों में सचमुच दीक्षित हैं, वे उन मित्रों को नहीं छोड़ते जो परमेश्वर की अनुमति से परीक्षा में पड़ रहे हैं; परन्तु जो आज्ञाओं की निन्दा करते हैं और परमेश्वर की इच्छा के रहस्यों में दीक्षित नहीं हैं, वे एक मित्र के समृद्धि पाने पर उसके साथ आनन्द मनाते हैं; फिर भी जब परीक्षा में पड़ा हुआ मित्र कष्ट सहता है, तो वे उसे छोड़ देते हैं। कभी-कभी ऐसा होता है कि वे विरोधियों का पक्ष लेते हैं।

98. मसीह के मित्र सभी से सच्चे दिल से प्रेम करते हैं, परन्तु सभी उनसे प्रेम नहीं करते। दूसरी ओर, सांसारिक मित्र सभी से प्रेम नहीं करते, और न ही सभी उनसे प्रेम करते हैं। मसीह के मित्र प्रेम का बंधन अंत तक बनाए रखते हैं; जबकि सांसारिक मित्र ऐसा केवल तब तक करते हैं जब तक कि वे किसी सांसारिक बात पर एक-दूसरे के साथ संघर्ष में नहीं पड़ जाते।

99. *'एक मित्र विश्वासयोग्य होता है, और रिश्तेदारी मजबूत होती है'* (सिर. 6:14)। क्योंकि एक मित्र की समृद्धि में भी, वह एक अच्छा सलाहकार और एक समान विचारधारा वाला सहयोगी होता है; और विपत्ति में, वह सबसे सच्चा रक्षक और सबसे दयालु समर्थक होता है।

100. कई लोगों ने प्रेम के बारे में विस्तार से बात की है, फिर भी यदि आप इसे खोजें तो आपको यह केवल मसीह के कुछ शिष्यों में ही मिलेगा; क्योंकि केवल उन्हीं के पास प्रेम का शिक्षक के रूप में सच्चा प्रेम था, जिसके बारे में कहा गया है: *'यदि मेरे पास भविष्यवाणी करने का वरदान है और मैं सभी रहस्यों और सभी ज्ञान को समझता हूँ, परन्तु मेरे पास प्रेम नहीं है, तो मैं कुछ भी नहीं हूँ'* (1 कुरिन्थियों 13:2-3)। क्योंकि जिसने प्रेम प्राप्त किया, उसने स्वयं परमेश्वर को प्राप्त किया; *'क्योंकि परमेश्वर प्रेम है'* (1 यूहन्ना 4:8): उसकी महिमा युगानुयुग होती रहे। आमीन।

3. ग्रीक *डोब्रोतोलुबिये* के सात सौ अध्यायों में से चुने गए सैद्धांतिक और व्यावहारिक अध्याय

1. केवल एक ही ईश्वर है—जो आरंभहीन, अगम्य है, जिसमें (जैसा वह है) होने की पूर्ण शक्ति है, जो *'कब'* या *'कैसे'* वह अस्तित्व में है, इस विचार को पूरी तरह से खारिज करता है, जो सभी के लिए अगम्य है और अपनी प्रकृति में किसी भी प्राणी के लिए अज्ञेय है।

2. जो कुछ भी अस्तित्व में है, उसे कल्पनीय और ज्ञातव्य कहा जाता है – अर्थात्, ऐसा कि जिसके ज्ञान के लिए प्रदर्शनीय सिद्धांत मौजूद हैं। परन्तु परमेश्वर को अकल्पनीय कहा जाता है; फिर भी, कल्पनीय और ज्ञातव्य के आधार पर यह माना जाता है कि वह अस्तित्व में है।

3. सृजित वस्तुओं के ज्ञान के अपने प्रमाण हैं, प्राकृतिक साधनों से प्राप्त अपनी नींव है, जिनके द्वारा उन्हें स्वाभाविक रूप से परिभाषित किया जाता है। हालाँकि, ईश्वर के अस्तित्व में होने का विश्वास केवल इन चीज़ों में पाए जाने वाले आधारों के आधार पर ही किया जाता है, जो धर्मपरायण लोगों को उनके अस्तित्व की एक ऐसी स्वीकृति और विश्वास प्रदान करता है जो किसी भी प्रमाण से अधिक निश्चित है। आस्था ही सच्चा ज्ञान है, जिसमें अप्रमाणित सिद्धांत होते हैं, और यह उन चीज़ों की पुष्टि है जो मन और भाषा से परे हैं,

४. परमेश्वर जो कुछ भी अस्तित्व में है, उसकी आरंभ, मध्य और अंत है: आरंभ सृष्टिकर्ता के रूप में, मध्य पालनहार के रूप में, और अंत पूर्ण करने वाले के रूप में; क्योंकि, जैसा कि धर्मग्रंथ कहता है, *'उससे और उसके द्वारा और उसके लिए सब कुछ है'* (रोमियों 11:36)।

5. स्वभाव से तर्कशील आत्मा से अधिक सम्माननीय कोई आत्मा नहीं है। ईश्वर, अच्छा होने के कारण, प्रत्येक आत्मा को अपनी ही प्रतिमा में बनाता है और उसे स्व-प्रेरित (स्वतंत्र) के रूप में अस्तित्व में लाता है। – इसके बाद, प्रत्येक आत्मा अपनी इच्छा के अनुसार, या तो सम्मान चुनती है या अपने ही कर्मों के द्वारा, अपनी ही इच्छा से अपने ऊपर अपमान लाती है।

6. परमेश्वर, जैसा कि लिखा है, धार्मिकता का सूर्य है (मलाकी 4:2), जो अपनी भलाई की किरणों से सभी पर समान रूप से चमकता है। आत्मा, हालांकि, अपने स्वभाव के आधार पर, आमतौर पर या तो मोम की तरह होती है, जैसे कोई परमेश्वर से प्रेम करता है, या कीचड़ की तरह, जैसे कोई सांसारिक चीजों से प्रेम करता है। जैसे कीचड़ अपने स्वभाव से ही धूप से सूख जाता है, जबकि मोम स्वाभाविक रूप से उससे नरम हो जाता है: उसी प्रकार हर आत्मा जो सांसारिक वस्तुओं और संसार से प्रेम करती है, ईश्वर से ज्ञानवर्धक प्रेरणाएँ प्राप्त करते हुए भी, अपनी प्रकृति के अनुसार, उन्हें अस्वीकार कर देती है, कीचड़ की तरह कठोर हो जाती है और, फिरौन की तरह, अपने लिए विनाश लाती है; जबकि इस प्रक्रिया में हर ईश्वर-प्रेमी आत्मा मोम की तरह नरम हो जाती है, और दिव्य वस्तुओं की छवियों के छापों को ग्रहण करके, आत्मा में ईश्वर के लिए एक निवास स्थान बन जाती है।

7. जसिने दव्यि अंतर्दृष्टि से अपने मन को प्रबुद्ध कयिा है, अपने वाक्य को दव्यि गीतों द्वारा सृष्टकिर्ता का अनवरत सम्मान करने के लिए प्रशक्षिति कयिा है, और अपने इंद्रयिों को शुद्ध और नर्मिल धारणाओं से पवत्रि कयिा है—उसने, अस्तत्वि की स्वाभावकि अच्छाई के अनुसार, सद्भावना की स्वैच्छकि प्रवृत्ति के माध्यम से अपनी भलाई को ईश्वर के स्वरूप में गढ़ा है।

८. जो अपने मन को एक ईश्वर और उनके पूर्ण गुणों पर मनन करने के लिए प्रेरति करता है, जो वाणी को इन पूर्ण गुणों का सच्चा व्याख्याता और स्पष्टीकरणकर्ता बनाता है, और जसिने अपनी इंद्रयिों को दृश्यमान संसार और उसमें मौजूद सभी चीजों पर भक्तपूर्वक दृष्टि डालने और आत्मा को उसमें छपिी बुद्धि की महानता की घोषणा करने के लिए प्रशक्षिति कयिा है—वह अपनी आत्मा को नर्मिल रखता है।

९. ईश्वर ने हमें अत्याचारयिों—दैत्यों—की कड़वी दासता से मुक्त कर, हमें ईश्वर-भक्ति का दयालु जुआ प्रदान कयिा है: वनिम्रता, जसिसे शैतान की सारी शक्ति वश में हो जाती है, जबकि जो लोग इस जुए को स्वीकार करते हैं, उनमें हर अच्छाई को फलने-फूलने दयिा जाता है, और उसे चोरी होने से बचाया जाता है।

10. वश्विासी परमेश्वर से डरता है; जो परमेश्वर से डरता है वह स्वयं को नम्र बनाता है; जो स्वयं को नम्र बनाता है वह कोमल हो जाता है, क्योंकि उसने क्रोध और वासना की अस्वाभावकि प्रवृत्तयिों के प्रति अप्रभावति रहने वाला स्वभाव अपना लयिा है; कोमल लोग आज्ञाओं का पालन करते हैं; जो आज्ञाओं का पालन करता है वह शुद्ध हो जाता है; जो पवत्रि होता है वह प्रबुद्ध होता है; जो प्रबुद्ध होता है उसे रहस्यों के भांडार में वर - वचन - के साथ लेटने के योग्य माना जाता है।

11. जैसे एक कसिान, जो पेड़ लगाने के लिए उपयुक्त खेत का सर्वेक्षण कर रहा है, कभी-कभी अप्रत्याशति रूप से खजाने पर अटक जाता है: इसी प्रकार प्रत्येक तपस्वी, वनिम्र और सच्चा, और आत्मा में स्थरि, सांसारकि जुनून के झाड़यिों से मुक्त, सबसे धन्य जेम्स की तरह, जब उनके पति ने सफलता के मार्ग के बारे में पूछा: *'मेरे बेटे, यह तुमने इतनी जल्दी कैसे पा लयिा?'* तो उत्तर दे सकता है, कहकर: *'वह जो प्रभु तेरे परमेश्वर ने मुझे दयिा है'* (उत्पत्ति 27:20)। क्योंकि जब परमेश्वर, हमारी ओर से कसिी भी प्रयास के बनिा, हम पर—जन्होंने इसकी उम्मीद भी नहीं की थी—अपनी बुद्धि की गहरी अंतर्दृष्टि प्रदान करते हैं, तो हमें लगता है कि हमने अचानक एक आध्यात्मकि खजाना खोज लयिा है। एक कुशल और अनुभवी तपस्वी एक आध्यात्मकि कसिान है जो इंद्रयिों के माध्यम से दृश्यमान चीजों में—जैसे एक जंगली पेड़—जो कुछ भी ग्रहण करता है, उसे आध्यात्मकि क्षेत्र में रोपता है, और इस प्रकार एक खजाना खोजता है: सृजति चीजों में ईश्वर की बुद्धि के प्रकट होने का अनुग्रह-पूर्ण दर्शन।

12. जो दखिावे के लिए ज्ञान की खोज करता है, और उसे प्राप्त करने में असफल रहता है, उसे न तो अपने पड़ोसी से ईर्ष्या करनी चाहएि, न ही दुख से व्याकुल होना चाहएि; बल्कि उसे ज्ञान के लिए नर्धिारति प्रारंभकि श्रम—सक्रयि सद्गुण का श्रम—उपक्रम करना चाहएि। शरीर के माध्यम से इसे उत्साहपूर्वक अग्रमि रूप से करने पर, वह ज्ञान प्राप्त करने के लिए अपनी आत्मा को तैयार करेगा।

13. जो लोग, एक धार्मकि और पवत्रि इरादे से, दूसरों के सामने दखिावा करने के कसिी भी वचिार को मन में रखे बनिा, चीजों का ज्ञान चाहते हैं, उन्हें उन पर सबसे प्रकाशमान अंतर्दृष्टि प्राप्त होगी और वे स्वयं के सच्चे ज्ञान की ओर मार्गदर्शन पाएंगे। ऐसों से वधिान कहता है: प्रतज्ञिात देश में प्रवेश करने के बाद, तुम *'महान और उत्तम नगरों'* का वारसि बनोगे जन्हिें तुमने नहीं बनाया, *'हर अच्छी चीज़ से भरे घरों'* का जन्हिें तुमने नहीं बनाया, *'खोदी गई कुओं'* का जन्हिें तुमने नहीं खोदा, *'अंगूरों और जैतून के बागों'* का जन्हिें तुमने नहीं लगाया (व्यवस्थावविरण 6: 10–11)। क्योंकि जो अपने लिए नहीं बल्कि परमेश्वर के लिए जीता है, वह दव्यि वरदानों से परपिूर्ण होता है, जो जुनूनों के खतरनाक आक्रमण के कारण हमेशा स्पष्ट नहीं होते।

14. पाखंडी, जब वह सोचता है कि वह अनदेखा रह रहा है, तो वह शांत रहता है और चुप रहता है, उस महमिा से संतुष्ट रहता है जो उसे धर्मी प्रतीत होने से मलिती है; लेकनि जब वह बेनकाब हो जाता है, तो वह दूसरों को गाली देकर अपनी लज्जा छपिाने की सोचते हुए, कटु शब्द उगलता है। ऐसे व्यक्ति के लिए, धर्मग्रंथ का वचन—जो उसे एक दुष्ट, वषिैले साँप के बच्चे के समान बताता है—उसे पश्चाताप के योग्य फल उत्पन्न करने की आज्ञा देता है; अर्थात्, जैसा वह दखिावा करता है, उसी के अनुरूप अपने हृदय की गुप्त प्रवृत्ति को बदलने के लिए।

१५. जो अपना पड़ोसी को हानि पहुँचाने का उद्देश्य रखकर मत्रिता का दखिावा करता है, वह भेड़ के भेष में अपनी दुष्टता छपिाने वाला एक भेड़यि है। ऐसा व्यक्ति, जब कसिी सरल स्वभाव वाले व्यक्ति से, या ईसाई नष्ठिा से कही या की गई कसिी भी बात से मलिता है, तो वह उस पर झपट पड़ता है और उसे नगिल जाता है, और फरि उन लोगों पर जनिके शब्दों और आचरण पर वह हमला करता है, अनगनित अपमानों की बौछार कर देता है, *'जैसे कोई मसीह में भाइयों की स्वतंत्रता की जासूसी करता हो'* (गलातयिों 2:4)।

१६. जो दुष्ट इरादे से चुप रहने का नाटक करता है, वह अपने पड़ोसी के विरुद्ध षड्यंत्र रचता है; परन्तु इसमें असफल होकर, वह अपने ही जुनून की ओर मुड़ जाता है, और अपने हृदय पर यातना डालता है। परन्तु जो भलाई के लिए चुप रहता है, वह मित्रता को बढ़ावा देता है, और आनंदित होकर चला जाता है, जैसे किसी ने ज्ञान प्राप्त किया हो जिसने अंधकार को दूर कर दिया हो।

17. जो भाई-बहनों की सभा में, बातचीत के प्रवाह को जल्दबाजी में बाधित करता है, वह यह नहीं छिपाता (अर्थात्, प्रकट करता है) कि वह कीर्ति के प्रेम से पीड़ित है; इसमें फँसकर, वह चर्चा के विषय पर कई प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष विचार प्रस्तुत करता है, ताकि उसके प्रवाह को बाधित कर सके।

18. बुद्धिमान व्यक्ति, जो सिखाता भी है और सीखता भी है, केवल वही सीखना और सिखाना चाहता है जो उपयोगी हो; लेकिन कथित बुद्धिमान व्यक्ति, चाहे प्रश्न पूछ रहा हो या उससे पूछा जा रहा हो, केवल वही प्रस्तुत करता है जो जिज्ञासा को तृप्त करे।

19. परमेश्वर की कृपा से जो भी आशीषें किसी व्यक्ति को प्राप्त होती हैं, उन्हें उसे ईर्ष्या के बिना दूसरों को दे देना चाहिए, प्रभु के वचन के अनुसार: *'तुम्हें मुफ्त में मिला है; मुफ्त में दो'* (मत्ती 10:8)। जो वरदान को भूमि के नीचे छिपाता है, वह दाता पर यह आरोप लगाता है कि वह निर्दयी है (मत्ती 25:24), और देह को बचाने के लिए सद्गुण का त्याग करता है। परन्तु जो अपने शत्रुओं के सामने सत्य का द्रोह करता है, वह बाद में, निन्दित होकर और महिमा के प्रेमी होने के कारण अपमान सहन न कर सकने के कारण, अपने विनाश को प्राप्त करेगा।

२०. जो लोग अभी भी अपनी वासनाओं के विरुद्ध लड़ाई से डरते हैं और अदृश्य शत्रुओं के हमलों से भयभीत हैं, उन्हें चुप रहना चाहिए; अर्थात्, सद्गुण के लिए संघर्ष में किसी को संघर्ष का सहारा नहीं लेना चाहिए, बल्कि प्रार्थना की ओर मुड़ना चाहिए, और स्वयं तथा अपनी रक्षा की जिम्मेदारी ईश्वर को सौंप देनी चाहिए: जैसा कि निर्गमन की पुस्तक में लिखा है: *'यहोवा तुम्हारे लिये लड़ाई लड़ेगा; तुम्हें केवल चुपचाप रहना है'* (निर्गमन 14:14)। जहाँ तक उन लोगों का सवाल है, जो उनका पीछा करने वाले शत्रुओं की पराजय के बाद, कृतज्ञता की भावना में यह समझने का प्रयास करते हैं कि उन्हें सद्गुण का कौन सा मार्ग अपनाना चाहिए, उन्हें केवल अपने हृदय को खुला रखना चाहिए और यह सुनना चाहिए कि प्रभु क्या कहते हैं, जैसा कि इज़राइल को आज्ञा दी गई थी: *'हे इज़राइल, सुन'* (व्यवस्थाविवरण 6:4)! लेकिन जो लोग अपने हृदय को शुद्ध करके दिव्य मार्गदर्शन के लिए अनियंत्रित रूप से तरसते हैं, उनके लिए श्रद्धापूर्ण साहस दिखाना उचित है, जिसके परिणामस्वरूप उन्हें कहा जाता है: *'तुम मुझसे क्यों पुकारते हो?'* (निर्गमन 14:15)? इस प्रकार, जो लोग डर के मारे मौन रहने के लिए बुलाए जाते हैं, उनके लिए केवल ईश्वर की शरण लेना ही उचित है; जबकि सुनने का आदेश प्राप्त करने वालों के लिए, दैवी आज्ञाओं को सुनने और पूरा करने के लिए तैयार रहना उचित है; और जिन्होंने आध्यात्मिक समझ प्राप्त कर ली है, उनके लिए प्रार्थना में अनवरत पुकार लगाना उचित है, ताकि बुराइयों को दूर करने के लिए निवेदन किया जा सके और प्राप्त आशीर्वादों के लिए कृतज्ञता व्यक्त की जा सके।

२१. आत्मा परमेश्वर के ज्ञान तक कभी नहीं पहुँच सकती, जब तक कि परमेश्वर स्वयं, अपनी अनुग्रहपूर्ण कृपा से, उसे स्पर्श न करें और उसे अपने पास ऊपर न उठाएँ। और मानव मन कभी भी इतनी ऊँचाई तक नहीं पहुँच सकता था कि उसे कोई दिव्य प्रकाश प्राप्त हो, यदि ईश्वर स्वयं उसे प्रेरित न करते—जितनी हद तक मानव मन प्रेरित होने में सक्षम है—और उसे दिव्य तेज से प्रबुद्ध न करते।

22. सुसमाचार के अनुसार, केवल विश्वासी ही सक्रिय भलाई के जीवन द्वारा पाप के पर्वत (मत्ती 17:19) को हिला सकता है, और अपने भीतर से क्षणभंगुर तथा परिवर्तनशील इंद्रियजन्य वस्तुओं के प्रति अपनी पूर्व आसक्ति को जड़ से उखाड़ फेंकता है। जो कोई भी शिष्य बन गया है, जो वचन से रोटी के टूटे हुए टुकड़े ग्रहण करता है—जो आध्यात्मिक मार्गदर्शन का प्रतीक हैं—वह उनसे हजारों को खिलाएगा, अपने कर्मों के माध्यम से वचन की गुणगुणित करने वाली शक्ति को प्रदर्शित करते हुए (मत्ती 15:32 और बाद के)। और जो कोई प्रेरित बन पाया है, वह *'हर एक दुर्बलता और हर एक रोग को* चंगा करता है, *और दुष्टात्माओं को निकालता है'* (मत्ती 10:1): *'दुष्टात्माओं को निकालता है'* का अर्थ है कि वह वासनाओं के कार्यों को दूर भगाता है; *'रोगों को चंगा करता है'*, अर्थात्, आशा के द्वारा वह उन लोगों में एक धार्मिक स्वभाव को पुनर्स्थापित करता है जो उसे खो चुके हैं; वह दुर्बलताओं को ठीक करता है, अर्थात्, वह उन लोगों को जगाता और मजबूत करता है जो न्याय के वचन के विषय में आलस्य के कारण सुस्त पड़ गए हैं। लेकिन जिसने *"साँप और बिच्छू पर पैर रखने का अधिकार"* (लूका 10:19) प्राप्त किया है, वह पाप की शुरुआत और अंत दोनों को नष्ट करता है।

23. एक प्रेरित और एक चेला, बेशक, दोनों ही विश्वासी हैं; लेकिन एक चेला हमेशा प्रेरित नहीं होता, जबकि वह हमेशा एक विश्वासी होता है; फिर भी, केवल एक विश्वासी अब चेला या प्रेरित नहीं रहता। तथापि, जीवन और

चिंतन के द्वारा, यह संभव है कि तीसरा (विश्वासी) दूसरे (शिष्य) के पद और गरिमा तक उठे, और यह कि दूसरा पहले (प्रेरित) के पद और गरिमा तक उठे।

24. जो कुछ एक लौकिक क्रम के अनुसार समय में उत्पन्न होता है, वह पूर्णता प्राप्त करने पर रुक जाता है, क्योंकि तब उसकी स्वाभाविक वृद्धि समाप्त हो जाती है। लेकिन जिसे ईश्वर की कृपा एक सदाचारी जीवन के क्रम के माध्यम से उत्पन्न करती है, वह पूर्णता प्राप्त करने पर भी, एक बार फिर से वृद्धि की ओर प्रेरित होता है: क्योंकि यहाँ ऐसा है कि एक चीज़ का अंत दूसरी चीज़ की शुरुआत का काम करता है। जिसने सक्रिय सद्गुण द्वारा अपने भीतर निवास करने वाले भ्रष्ट भावों को समाप्त कर दिया है, उसने उसी समय *'महिमा से महिमा तक'* अन्य अत्यंत दिव्य परिवर्तनों को भी शुरू कर दिया है / (2 कुरिन्थियों 3:18): क्योंकि परमेश्वर, जो उसके भीतर कार्य करता है, भलाई करने से कभी नहीं रुकता, ठीक वैसे ही जैसे उसने कभी ऐसा करना शुरू नहीं किया; क्योंकि जैसे प्रकाश का स्वभाव चमकना है, वैसे ही परमेश्वर का स्वभाव भलाई करना है। क्योंकि, नियम के अनुसार—जो जन्मने और मरने वाली सांसारिक चीज़ों की अवस्था के अनुरूप है—सब्त का पालन काम बंद करके किया जाता है; जबकि सुसमाचार के अनुसार—जो आध्यात्मिक और बौद्धिक चीजों की प्रकृति के अनुरूप है—इसका उत्सव अच्छे कर्मों के प्रदर्शन द्वारा मनाया जाता है, यद्यपि जो यह नहीं समझते कि सब्त मनुष्य के लिए है, न कि मनुष्य सब्त के लिए—और यह कि मनुष्य का पुत्र सब्त का भी प्रभु है—वे इससे ठोकर खाते हैं (मरकुस 2:27-28)।

२५. आध्यात्मिक आनंद का अनुभव करने के लिए, आत्मा के लिए केवल वासनाओं को वश में करना ही पर्याप्त नहीं है, जब तक कि वह आज्ञाओं के पालन के माध्यम से सद्गुणों को भी प्राप्त न कर ले। प्रभु कहते हैं, *'इस पर आनन्द मत करो कि दुष्टात्माएँ तुम्हारे अधीन हैं'* - अर्थात्, वासनाओं की क्रियाएँ - *'बल्कि इस पर आनन्द करो कि तुम्हारे नाम स्वर्ग में लिखे हैं'*; अर्थात्, पुत्रत्व की कृपा से, सद्गुण के लिए, तुम्हें निर्लिप्तता के रजिस्टर में स्थानांतरित कर दिया गया है।

26. जब तक हम मन द्वारा, अपनी स्वाभाविक अवस्था और ईश्वर के अलावा मौजूद सभी चीज़ों से खुद को अलग नहीं कर लेते, तब तक हम यह नहीं मान सकते कि हमने सद्गुण की एक अटूट आदत प्राप्त कर ली है। क्योंकि केवल तभी जब प्रेम के माध्यम से हमारे भीतर ऐसा स्वभाव स्थापित हो जाता है, तब ही हम दिव्य वादे की शक्ति को जान पाएँगे; क्योंकि योग्य लोगों का पूर्ण अपरिवर्तनशील स्वरूप, जैसा कि हमें विश्वास करना चाहिए, ठीक वहीं स्थापित होता है जहाँ मन ने पहले अपनी प्रेम-शक्ति को जड़ें जमाई होती हैं। और जो कोई भी स्वयं से और हर उस चीज़ से पीछे नहीं हटा है जिसकी कल्पना किसी भी तरह से की जा सकती है, और जिसने स्वयं को एक ऐसी मौनता (मन की सभी हलचलों का शांत होना) में स्थापित नहीं किया है जो सभी विचारों से परे है, वह किसी भी तरह से परिवर्तनशीलता से मुक्त नहीं हो सकता।

27. महान मूसा, पहले ही अपना तम्बू छावनी के बाहर लगा चुकने के बाद – अर्थात्, अपने हृदय और मन को सब दृश्यमान चीजों से परे दृढ़ता से स्थापित कर चुकने के बाद – परमेश्वर की उपासना करना आरंभ करते हैं; और अंधकार में, अर्थात् ज्ञान के अदृश्य और अद्रव्य क्षेत्र में प्रवेश करके, वे वहाँ सबसे पवित्र रहस्यों का अनुष्ठान करते हुए वास करते हैं। (या उस उद्देश्य के लिए समर्पित है) (निर्ग. 33:7; 20:21)।

28. पवित्र शास्त्र में, देह और आत्मा के बीच अंतर किया जा सकता है, जैसे कि यह एक प्रकार का आध्यात्मिक व्यक्ति हो। और जो कोई यह कहे कि शास्त्र का अक्षर देह है, जबकि उसका अर्थ आत्मा या प्राण है, वह सत्य के विरुद्ध भूल नहीं करेगा। हालाँकि, यह स्पष्ट है कि वह बुद्धिमान है जो, देह को नश्वर वस्तु के रूप में त्यागकर, अमर वस्तु के रूप में आत्मा से पूरी तरह चिपका रहता है।

29. जो अपने जीवन और आचरण के द्वारा व्यवस्था को पूरा करता है, वह वासनाओं के कुछ कृत्यों से परहेज़ करता है, और मूक वासनाओं की क्रिया को बलिदान के रूप में परमेश्वर को अर्पित करता है। और यह उसकी आध्यात्मिक शैशवावस्था के अनुसार, उसके उद्धार के लिए पर्याप्त है।

30. भविष्यसूचक वचन द्वारा, जो वासनाओं के कार्यों को अस्वीकार करने के लिए पोषित किया गया है, वह आत्मा में उत्पन्न होने वाली उनके प्रति किसी भी सहानुभूति और उनसे किसी भी संबंध को दूर करने का भी प्रयास करता है, ताकि, जबकि वह अपने सबसे बुरे भाग—अर्थात्, देह—और अपने सबसे अच्छे भाग—अर्थात्, आत्मा—के साथ पाप से परहेज़ करते हुए स्वयं को दिखाए, वह अनियंत्रित वासनाओं के साथ गुप्त रूप से पाप न कर रहा हो।

31. सुसमाचार के जीवन-मार्ग को सच्चे मन से अपना लेने के बाद, वह अपने भीतर पाप की शुरुआत और अंत दोनों को समाप्त कर देता है, और कर्म तथा विचार दोनों में हर सद्गुण का अभ्यास करता है, और परमेश्वर को स्तुति और स्वीकारोक्ति का बलिदान अर्पित करता है, एक ऐसे व्यक्ति के रूप में जो वासनाओं के सक्रिय आक्रमण से

मुक्त है, और उनसे लड़ने के मानसिक संघर्ष से मुक्त है, और जिसके पास एक ही अतृप्त आनंद है, जो आत्मा को भविष्य के आशीर्वादों की आशा से पोषित करता है।

32. संवेदना, या इंद्रिय छापों की अनुभूति, *'सक्रिय' व्यक्ति के* साथ रहती है—जो सद्गुणों का अभ्यास करने के लिए परिश्रम करता है; जबकि असंवेदनशीलता, या इंद्रिय छापों के कारण होने वाले उतार-चढ़ाव की कमी, *'आत्मचिंतक' व्यक्ति* की विशेषता है, जो अपने मन को ईश्वर पर केंद्रित करता है, उसे शरीर और संसार से अलग करता है, जो व्यक्ति सत्-मार्ग के *'सक्रिय'* श्रम के माध्यम से, शरीर के प्रति सहानुभूति के स्वाभाविक बंधनों से आत्मा को मुक्त करने का प्रयास करता है, वह अक्सर थका हुआ महसूस करता है और अपने अच्छे स्वभाव को क्षीण होता हुआ पाता है; जबकि दूसरा, अभ्यास और चिंतन में स्थिर रहकर इस सहानुभूति की काँटों को उखाड़ फेंकने के बाद, अब किसी भी चीज़ से मोहित या रोका नहीं जा सकता, क्योंकि वह उस चीज़ से शुद्ध हो चुका है, जिससे उसे वश में करने की कोशिश करने वाले आमतौर पर घायल करते और उसे कैद कर लेते थे।

33. जैसे अवज्ञा का फल पाप है, वैसे ही आज्ञाकारिता का फल पुण्य है; और जैसे अवज्ञा के बाद आज्ञाओं का उल्लंघन और आज्ञाएँ देने वाले के साथ वाचा का टूटना होता है, वैसे ही आज्ञाकारिता के बाद आज्ञाओं का पालन और आज्ञा देने वाले के साथ सबसे घनिष्ठ मिलन होता है। क्योंकि जिसने आज्ञाकारिता के द्वारा आज्ञा का पालन किया है, उसने सत्य को पूरा किया है और आज्ञा देने वाले के साथ प्रेम की एकता को अटूट बनाए रखा है। परन्तु जिसने अवज्ञा के द्वारा आज्ञा का उल्लंघन किया है, उसने पाप किया है और आज्ञा देने वाले के साथ प्रेम की एकता से स्वयं को अलग कर लिया है।

३४. जो कोई भी, उल्लंघन के कारण हुए मिलन के टूटने के बाद, पुनर्मिलन की चाह रखता है, वह पहले वासनाओं से, फिर वासनापूर्ण विचारों से, फिर प्रकृति और सभी प्राकृतिक चीजों (अर्थात् भौतिक दुनिया से) मुड़ता है, फिर मानसिक अवधारणाओं और उनके ज्ञान से (यानी आध्यात्मिक दुनिया से), और अंत में, दैवीय योजनाओं की विविधता (घटनाओं के क्रम) को पार करके, किसी अज्ञात तरीके से स्वयं उस एक के समीप आता है: जिसमें, अपनी अपरिवर्तनीयता को निहारते हुए, वह *'अकथनीय आनंद से आनंदित होता है'* (1 पतरस 1:8), *'जैसे कोई उस परमेश्वर की शान्ति को पाकर आनन्दित होता है, जो सब समझ से परे है'* (फिलिप्पियों 4:7), और जो, उन लोगों के लिए जो उसकी समानता में बनाए गए हैं, उन्हें अनवरत रूप से गिरने से बचाता है।

३५. गेहेन्ना का भय इस मार्ग पर चलने वालों (नवसिखुओं) को पाप से बचने के लिए बाध्य करता है; आशीषों के पुरस्कार की इच्छा सद्गुणों के अभ्यास में प्रगति करने वालों में तत्परता उत्पन्न करती है; और प्रेम का रहस्य मन को सभी सृजित वस्तुओं से ऊपर उठा देता है, और उसे परमेश्वर के बाद की हर चीज़ के प्रति अंधा बना देता है। क्योंकि केवल उन्हीं को प्रभु प्रकाशित करते हैं जो परमेश्वर के बाद की सभी चीज़ों के प्रति अंधा हो गए हैं, और उन्हें परम दिव्य (भजन संहिता 145:8) का प्रकटीकरण करते हैं।

36. प्रभु पर, जैसे विश्वास की नींव पर, सद्गुणों की ऊँची इमारत का पुनर्निर्माण करते हुए, हमें (इस नींव पर) *'सोना, चाँदी और कीमती पत्थर'* रखना चाहिए, अर्थात् शुद्ध और अशुद्ध रहित धर्मशास्त्र, एक उज्ज्वल और गौरवशाली जीवन, दैवीय विचार, और मोती-जैसे मनन; और न *कि 'लकड़ी, भूसा और पुआल'* (1 कुरिन्थियों 3:12), अर्थात् मूर्तिपूजा या इंद्रिय सुखों का मोह नहीं, एक मूर्खतापूर्ण जीवन नहीं, न ही वे भावुक विचार जो पके अनाज के दाने की तरह, बुद्धिमानी की समझ से रहित हों।

37. जो कोई ज्ञान की खोज में स्वयं को समर्पित करता है, वह प्रभु के सामने अपनी आत्मा के कदम दृढ़ रखे, जैसे परमेश्वर ने मूसा से कहा: *'परन्तु तू मेरे साथ यहीं ठहरा रह'* (निर्गमन 33:2 आदि)। हालाँकि यह जानना उचित है कि प्रभु के सामने खड़े होने वालों में भी भेद हैं, यदि बुद्धिमान निम्नलिखित को ध्यान से पढ़ें: *'यहाँ कुछ लोग खड़े हैं जो तब तक मृत्यु का स्वाद नहीं चखेंगे जब तक कि वे परमेश्वर के राज्य को शक्ति के साथ आते हुए न देख लें'* (मरकुस 9:1)। क्योंकि प्रभु उन सभी के सामने महिमा में हमेशा प्रकट नहीं होते जो उनके सामने खड़े हैं; परन्तु जो लोग अभी-अभी उनके मार्ग पर चलने के लिए ले जाए जा रहे हैं (नवागंतुक), उनके पास वे एक सेवक के रूप में आते हैं, जबकि जो लोग उनके रूपांतरण के उच्च पर्वत पर चढ़ाई में उनका अनुसरण करने के लिए पर्याप्त मजबूत हैं, उनके सामने वे परमेश्वर के रूप में प्रकट होते हैं, जिसमें वे संसार के आरंभ से पहले थे। इसलिए यह संभव है कि एक ही प्रभु उन लोगों के सामने जो उनके पास आते हैं, अलग-अलग रूप में प्रकट हों—एक के सामने एक तरह से, और दूसरे के सामने दूसरी तरह से—दृष्टि प्रत्येक के विश्वास के अनुसार बदलती रहती है।

38. एक सक्रिय जीवन जीने वाले के बारे में कहा जाता है कि वह अस्थायी रूप से शरीर में निवास करता है, एक यात्री की तरह जिसका उद्देश्य सद्गुणों के अभ्यास के माध्यम से, अपने आत्मा से शरीर के प्रति किसी भी सहानुभूति को अलग करना और खुद को भौतिक सुखों से अलग करना है। जहाँ तक चिंतनशील जीवन जीने वालों का प्रश्न है,

कहा जाता है कि वे स्वयं सद्गुण के भीतर निवास करते हैं, जैसे कोई दर्पणों में और, मानो, पहेलियों में सत्य का चिंतन करता हो। क्योंकि उन्होंने अभी तक, मानो आमने-सामने, आशा की गई आशीर्वादों के वास्तविक रूपों को वास्तव में जैसा है वैसा नहीं देखा है। और हर संत, भविष्य के आशीर्वादों के संबंध में, *'सपने में चलता है'*, यह पुकारते हुए: *'मैं एक यात्री और एक अजनबी हूँ, जैसे मेरे सभी पूर्वज थे'* (भजन संहिता 38:7, 13)।

३९. यह हमेशा अच्छा है, कि हम सभी चीजों से अलग होकर परमेश्वर को खोजें, जैसा कि हमें आज्ञा दी गई है (भजन संहिता ४५:११; १०४:४)। क्योंकि यद्यपि इस वर्तमान जीवन की स्वाभाविक प्रकृति के अनुसार, उसे खोजते हुए हम परमेश्वर के रहस्य की गहराइयों तक नहीं पहुँच सकते, फिर भी शायद, उसकी गहराई का थोड़ा सा भी प्राप्त कर लेने पर, हम पवित्रतम में पवित्रतम और आध्यात्मिकतम में आध्यात्मिकतम को निहारेंगे। इसका प्रतीकात्मक चित्रण महापुजारी द्वारा भी किया गया है, जब वह पवित्र स्थान (तम्बू के पहले भाग) से, जो आँगन से अधिक पवित्र है, परम पवित्र स्थान में प्रवेश करता है, जो पवित्र स्थान से भी अधिक पवित्र है।

४०. यदि परमेश्वर का पुत्र और पिता, परमेश्वर का वचन, इसी कारण मनुष्य का पुत्र और एक मनुष्य बना—कि वह मनुष्यों को देवता और परमेश्वर के पुत्र बना सके—तो आइए हम विश्वास करें कि हम वहाँ होंगे जहाँ *'मसीह* स्वयं, *पूरे शरीर के सिर के रूप में'* (1 कुरिन्थियों 1:18), जो देह में पिता के पास हमारे *'पथप्रदर्शक'* बने। क्योंकि देवताओं की सभा में—अर्थात्, उद्धार पाए हुओं की—परमेश्वर बीच में खड़े होंगे, उस आनंद के पुरस्कार (प्रत्येक की योग्यता के अनुसार) बाँटते हुए, हालाँकि योग्य लोगों के बीच कोई स्थानिक अलगाव नहीं होगा।

४१. जो कोई भी अभी भी देह की कामनाओं में लिप्त रहता है, वह कल्दीयों के देश में एक दास और मूर्तिकार के रूप में रहता है। लेकिन जब, होश में आकर, वह अपनी प्रकृति के अनुरूप जीवन के मार्ग की कुछ समझ प्राप्त करता है (और उसे भाता है); तब, खलदीयियों के देश को छोड़कर, वह मेसोपोटामिया के हاران में जाता है (उत्पत्ति 11:28–31)—अर्थात्, एक ऐसे राज्य में जो सद्गुण और पाप की सीमा पर है, जो अभी तक इंद्रिय आकर्षण से शुद्ध नहीं हुआ है। और जब वह भलाई की इस मध्यवर्ती, इंद्रिय समझ की सीमाओं से परे चला जाता है; तब वह शुभता की भूमि में प्रवेश करता है, अर्थात् एक ऐसी अवस्था जो सभी पाप और अज्ञान से मुक्त है, जिसे सच्चा ईश्वर प्रकट करता है और अपने प्रेमियों को सद्गुण के पुरस्कार के रूप में प्रदान करने का वादा करता है।

४२. जो भक्ति की भावना से ज्ञान प्राप्त करने के लिए उत्सुक है, और जिसने अदृश्य शक्तियों के विरुद्ध संघर्ष आरंभ किया है, वह प्रार्थना करे कि उसके साथ प्राकृतिक विवेक (जो अच्छा और बुरा समझता है), जिसकी प्रकाश-शक्ति बहुत बड़ी नहीं है, और आत्मा की ज्ञानप्रद कृपा दोनों हों; जिसमें पहला तो सक्रिय सद्गुण की ओर देह का मार्गदर्शन करता है, जबकि दूसरा मन को सभी से ऊपर बुद्धिमत्ता के साथ सहभागिता (सोलोमन की बुद्धि 8:2) को प्राथमिकता देने के लिए प्रबुद्ध करता है, *'जिसके द्वारा बुराई के किले और हर वह ऊँचाई जो परमेश्वर के मन के विरुद्ध स्वयं को स्थापित करती है, नष्ट हो जाती हैं'* (2 कुरिन्थियों 10:4)। यह यहोशू द्वारा भी प्रदर्शित किया गया है, जो प्रार्थना करते हैं, *'हे गिबियोन, सूर्य ठहर जा'* – अर्थात्, ईश्वर के ज्ञान का अक्षय प्रकाश मानसिक चिंतन के पर्वत पर उनके भीतर संरक्षित रहे – *'और चंद्रमा मरुभूमि पर'* – (यहोशू 10:12)—अर्थात्, अच्छाई और बुराई के बीच का प्राकृतिक अंतर, जो शारीरिक कमजोरी से परे है, सद्गुण के संबंध में अपरिवर्तित बना रहे।

४३. *'गिबियोन'* उत्तम बुद्धि है; और *'मरुभूमि'* मृत्यु से नम्र किया हुआ शरीर है। *'सूर्य'* वचन है, जो बुद्धि को प्रकाशित करता है, उसे चिंतन करने की शक्ति देता है, और उसे सभी अज्ञानता से मुक्त करता है; जबकि *'चंद्रमा'* प्राकृतिक नियम है, जो देह को आज्ञाओं का जुआ स्वीकार करने के लिए आत्मा के प्रति विधिवत समर्पण करने के लिए बाध्य करता है। चंद्रमा को उसकी परिवर्तनशीलता के कारण प्रकृति के प्रतीक के रूप में लिया जाता है । हालाँकि, संतों में, प्रकृति अपरिवर्तित रहती है, क्योंकि उनमें सद्गुण की अपरिवर्तनीय आदत होती है।

४४. प्रभु की खोज उन्हें खोजने वालों के बाहर नहीं करनी चाहिए, बल्कि जो उन्हें खोजते हैं उन्हें विश्वास के द्वारा अपने भीतर ही उन्हें खोजना चाहिए, जैसा कि उनके कर्मों से प्रमाणित होता है: प्रेरित कहते हैं, *'वचन तुम्हारे निकट है'*; *'तेरे मुँह में और तेरे हृदय में—अर्थात् विश्वास का वचन'* (रोमियों 10:8); क्योंकि विश्वास के वचन की खोज स्वयं मसीह की खोज है।

४५. ईश्वर की असीमता की ऊँचाई पर अधिक विचार किए बिना, हमें मानव जाति के प्रति ईश्वर के प्रेम से निराश न हों, जैसे कि, इतनी ऊँचाई के कारण, वह हम तक नहीं पहुँच सकता; और न ही, पाप के माध्यम से हमारे पतन की अथाह गहराई को याद करते हुए, हमारे भीतर मारे गए गए सद्गुण के पुनरुत्थान की संभावना पर संदेह करें। ईश्वर के लिए दोनों ही संभव हैं—नीचे उतरकर हमारे मन को ज्ञान से प्रबुद्ध करना, और हमारे भीतर सद्गुण को एक बार फिर से बहाल करना, और धार्मिकता के कार्यों के द्वारा हमें स्वयं के साथ गौरवान्वित करना। प्रेरित कहते हैं, *'अपने*

हृदय में यह न कहो, "स्वर्ग में कौन चढ़ेगा?" अर्थात् मसीह को नीचे लाने के लिए; या "गहराई में कौन उतरेगा?" अर्थात् मसीह को मरे हुओं में से ऊपर लाने के लिए (रोमियों 10:6-7)।

४६. पशुओं की तरह, जो केवल अपनी इंद्रियों के लिए जीते हैं, वे अपनी वासनाओं को तृप्त करने के लिए ईश्वर की सृष्टि का दुरुपयोग करते हैं। ज्ञान के स्पष्ट वचन की परवाह न करते हुए—कि वे उसकी सृष्टि के माध्यम से परमेश्वर को जान और उसकी महिमा करें, और यह समझें कि हम कहाँ से आए हैं, हम क्या हैं, हमें किस उद्देश्य के लिए बनाया गया है, और दृश्यमान संसार के माध्यम से हमें किस ओर प्रयास करना है—वे अपने पूरे जीवन में अंधकार में भटकते हैं, और दोनों हाथों से परमेश्वर के प्रति अज्ञानता के सिवा कुछ नहीं पकड़ते।

४७. जो केवल पवित्र धर्मग्रंथ के अक्षर पर ध्यान देते हैं और, शरीर की सेवा के लिए नियम से बँधे हुए, आत्मा की गरिमा को मूक पशुओं की बलि के साथ जोड़ते हैं, वे सोचते हैं कि वे ऐसे बलिदानों के द्वारा ईश्वर को प्रसन्न कर सकते हैं। वे शरीर और उसकी बाहरी शुद्धताओं के प्रति बहुत चिंतित रहते हैं, फिर भी वे आत्मा की सुंदरता पर कोई ध्यान नहीं देते, जो वासनाओं के घावों से धूमिल हो गई है, जबकि आत्मा के ही लिए दृश्यमान सभी वस्तुओं की भीड़ बनाई गई और संपूर्ण विधान तथा परमेश्वर का संपूर्ण वचन प्रकट किया गया।

४८. यह तथ्य कि प्रभु *'इज़राइल में कई लोगों के गिरने और उठने के लिए नियुक्त हैं'* (लूका २:३४), यदि दोनों पहलुओं को सकारात्मक रूप में लिया जाए, तो इसका अर्थ होगा: प्रत्येक विश्वासी का वासनाओं और बुरे विचारों में गिरना, और सद्गुणों तथा हर ईश्वर-प्रेमी विचार का उठना।

४९. *'यहूदियों के डर से, वे दरवाज़े बंद करके एक ऊपरी कमरे में बैठे थे'* (यूहन्ना २०:१९) – यानी, दुर्भावना की आत्माओं के डर से; प्रकटियों के क्षेत्र में, दिव्य चिंतन की ऊँचाई पर खुद को दृढ़ता से स्थापित करके, उन्होंने अपनी इंद्रियों को, जैसे दरवाज़ों से, बंद कर दिया था, – उस ईश्वर-वचन को ग्रहण न करें जो उनके अज्ञान में आता है; वह जो उनके सामने इंद्रिय घटनाओं के रूप में प्रकट नहीं होता, बल्कि शांति के माध्यम से, और श्वास—पवित्र आत्मा के साथ सहभागिता—के माध्यम से आपको निर्लिप्तता प्रदान करता है, और दुष्ट आत्माओं पर अधिकार प्रदान करता है और अपनी संस्कारों के प्रतीकों को प्रकट करता है।

५०. *'कलदीयों का देश'* वासनाओं का जीवन है, जिसमें पापी मूर्तियाँ स्थापित की जाती हैं और उनकी पूजा की जाती है। *'मेसोपोटामिया'* एक ऐसा जीवन है जो एक चरम से दूसरे चरम पर जाता है। और *'प्रतिज्ञात देश'* एक ऐसी अवस्था (आत्मा की) है जो हर तरह के (आध्यात्मिक) आशीर्वादों से परिपूर्ण है। जो कोई भी, प्राचीन इस्राएल की तरह, इस कल्याण की अवस्था की परवाह नहीं करता, वह वासनाओं की दासता में वापस गिर जाता है और प्रदान की गई स्वतंत्रता से वंचित हो जाता है।

51. यह ध्यान देने योग्य है कि संतों में से कोई भी अपनी स्वेच्छा से बेबीलोन नहीं गया: क्योंकि ईश्वर से प्रेम करने वालों के लिए अच्छाई के बजाय बुराई का चयन करना अनुचित और मूर्खतापूर्ण है। यदि, तथापि, उनमें से कुछ लोगों को अनिच्छा से वहाँ ले जाया गया, तो हमारा तात्पर्य उन लोगों से है जो अपनी इच्छा से नहीं बल्कि विशिष्ट परिस्थितियों के कारण—मार्गदर्शन की आवश्यकता वाले लोगों को बचाने के लिए—ज्ञान के उच्च उपदेश को त्यागकर भावों पर शिक्षण की ओर मुड़ गए: जिस परिस्थिति के कारण महान प्रेरित ने देह में बने रहना—अर्थात् अपने शिष्यों को नैतिक शिक्षा देना जारी रखना—अधिक आवश्यक समझा, यद्यपि वह नैतिक शिक्षा को त्यागकर परम और सरल आध्यात्मिक चिंतन के द्वारा मसीह के साथ होने की पूरी इच्छा रखता था (फिलि. 1:29)।

५२. जैसे धन्य दाऊद ने वीणा बजाकर साऊल को, जो एक दुष्ट आत्मा से पीड़ित था, शान्ति दी (1 शमूएल 16:23), वैसे ही प्रत्येक आध्यात्मिक वचन, जो उसमें व्याप्त गहन चिंतनशील अंतर्दृष्टियों में मधुर होता है, मिर्गी से पीड़ित मन को शान्ति देता है, और उसे उस दुष्ट अंतकरण से मुक्त करता है जो उस पर अत्याचार करता है।

53. *'सुन्दर वर्ण का और दयालु आँखों वाला मनुष्य'*, महान दाऊद के समान (1 शमूएल 16:12), वह है जो ईश्वरानुसार जीवन जीने के तेज से, एक समान रूप से तेजस्वी ज्ञान का वचन धारण करता है। ऐसे लोगों में, अच्छे कर्म चिंतन के साथ संयुक्त होते हैं; पहला विभिन्न प्रकार के सद्गुणों से दमकता है, जबकि दूसरा दैवीय विचारों से दमकता है।

54. जो अपनी दैनिक रोटी प्राप्त करने के लिए प्रार्थना करता है, वह निश्चित रूप से उसे पूरी तरह से वैसा नहीं प्राप्त करता जैसा वह अपने आप में है, बल्कि जैसा प्राप्तकर्ता उसे ग्रहण करने में सक्षम होता है। जो भी माँगते हैं, उन्हें वह स्वयं जीवन की रोटी (योहन्ना 6:35) के रूप में देते हैं, एक ऐसे के रूप में जो मानवता से प्रेम करते हैं; फिर भी सभी को समान रूप से नहीं, बल्कि उन लोगों को अधिक जो धर्म के महान कार्यों को कर चुके हैं, और उन लोगों को कम जो ऐसे कार्यों में कमी रखते हैं: प्रत्येक को इसे ग्रहण करने की उनके मन की क्षमता (या प्रवृत्ति) के अनुसार।

55. जो सक्रयि जीवन जीता है, उसके लिए प्रभु सद्गुणों के माध्यम से उपस्थति रहते हैं, जबकि जो व्यक्ति सद्गुणों को कोई महत्व नहीं देता, उससे वे अनुपस्थति रहते हैं। फरि, एक चंतिनशील व्यक्ति के लिए वे वस्तुओं के सच्चे ज्ञान के माध्यम से उपस्थति रहते हैं; जो व्यक्ति इस संबंध में कसिी भी हद तक कमी करता है, उससे वे अनुपस्थति रहते हैं।

५६. लोगों को धर्म की शक्षिा देने की शुरुआत में, मामले आमतौर पर इस तरह आगे बढ़ते हैं मानो वे केवल शरीर से संबंधति हों। और धार्मकिता के शुरुआती चरणों में, हम आत्मा के अनुसार की तुलना में अक्षर के अनुसार अधकि बोलते हैं। फरि, धीरे-धीरे आत्मा के और नकिट आते हुए, और आध्यात्मकि चंतिन से अपने वचन की देहधारी प्रकृति को परष्किृत करते हुए, हम मसीह में पूर्ण रूप से आ जाते हैं, जतिना कि मनुष्यों के लिए संभव है; ताकि हम प्रेरति के शब्दों में कह सकें: *'यद्यपि हम पहले मसीह को शरीर के अनुसार जानते थे, तौभी अब हम उसे ऐसा नहीं जानते'* (2 कुरन्थियों 5:16)। यह मन के वचन के प्रति सिरल (या शुद्ध) दृष्टकिोण के कारण है, जसि पर कोई आवरण नहीं है, क्योंकि हम पहले ही वचन की देहगत समझ से *'पति के एकलौते पुत्र के रूप में उसकी महमिा'* (यूहन्ना 1:14) के दर्शन तक आगे बढ़ चुके हैं।

५७. जसिने मसीह में जीवन जीना आरंभ कर दयिा है, उसने व्यवस्था की धार्मकिता और प्राकृतकि धार्मकिता दोनों को पार कर लयिा है: जैसा कि दवि्य प्रेरति स्पष्ट करते हैं जब वे कहते हैं: *'मसीह यीशु में न तो खतना कुछ है और न ही अखतना'* (गलातयिों 6:15)—संक्षेप में, *'सन्नधिान' शब्द* का उपयोग व्यवस्था के अधीन धार्मकिता को दर्शाने के लिए, और *'असन्नधिान'* शब्द का उपयोग प्रकृति की व्यवस्था के अनुसार इसी प्रकार की धार्मकिता का संकेत करने के लिए कयिा गया है।

58. परमेश्वर का वचन ही मार्ग है (यूहन्ना 14: 6) उन लोगों के लिए, जो एक सक्रयि जीवन जीते हुए, सद्गुण के मार्ग पर वशि्वासपूर्वक और दृढ़ता से दौड़ते हैं, न तो व्यर्थता के कारण दाईं ओर मुड़ते हैं और न ही प्रवृत्तयिों की ओर झुकाव के कारण बाईं ओर – और अपने कदम ईश्वर के अनुसार नर्दिेशति करते हैं: जसि यहूदा का राजा आसा अंत तक पालन करने में वफिल रहा (1 राजा 15:23), अपनी वृद्धावस्था में, जैसा कि कहा जाता है, अपने पैरों से बीमार पड़ गया, क्योंकि वह कमजोर और परमेश्वर के अनुसार जीवन के मार्ग पर चलते रहने के लिए बहुत दुर्बल हो गया था।

59. *'मैं द्वार हूँ'* प्रभु ने कहा (यूहन्ना 10:9)। क्योंकि वह उन लोगों का नेतृत्व करते हैं जन्हिोंने अपने सक्रयि जीवन के नष्पिाप मार्ग में, सफलतापूर्वक संपूर्ण सद्गुणों का पथ पूरा कर लयिा है, ज्ञान के क्षेत्र में और, प्रकाश की तरह, उनके लिए ज्ञान के सबसे तेजस्वी खजाने प्रकट करते हैं। वह एक ही हैं: मार्ग, द्वार, कुंजी और राज्य—मार्ग, एक मार्गदर्शक के रूप में; कुंजी, योग्य लोगों के लिए दवि्य खजानों के प्रवेश द्वार को खोलने वाले के रूप में; द्वार, प्रवेश कराने वाले के रूप में; राज्य, उस वरिासत के रूप में जो प्राप्त की जाती है, और जो सभी में सहभागति के माध्यम से मौजूद है।

६०. प्रभु को *'प्रकाश, जीवन, पुनरुत्थान, सत्य: प्रकाश'* कहा जाता है: आत्माओं को प्रकाशति करने वाले के रूप में, अज्ञानता के अंधकार को दूर करने वाले के रूप में, उलझन भरी बातों को समझने के लिए मन को प्रबुद्ध करने वाले के रूप में, और केवल शुद्ध लोगों के लिए सुलभ रहस्यों को प्रकट करने वाले के रूप में; *'जीवन'*, उन आत्माओं को दवि्य चीजों के क्षेत्र में उपयुक्त गति प्रदान करने वाले के रूप में, जन्हिोंने उनसे प्रेम कयिा है; *'पुनरुत्थान'*, उस एक के रूप में जो मन को भौतकि चीजों के प्रति मृत आसक्ति से जगाता है और उसे सभी भ्रष्टता और नर्जिीवनता से शुद्ध करता है; *'सत्य'*, वह जो योग्य लोगों को अच्छे कर्मों के प्रति अटूट प्रवृत्ति प्रदान करता है।

६१. जो केवल शब्दों से ही ईश्वर का श्रद्धापूर्वक सम्मान करता है, वह अपने भीतर ईश्वर की महमिा नहीं करता, बल्कि वह जो ईश्वर के लिए और आज्ञाओं के लिए, धैर्यपूर्वक दुखों और कष्टों को सहन करता है। ऐसे व्यक्ति की बारी में ईश्वर द्वारा उस महमिा से महमिा की जाती है जो ईश्वर में है, सद्गुण के पुरस्कार के रूप में, जो संयोग के माध्यम से अपने भीतर नर्लिप्तिता की कृपा धारण करता है। क्योंकि जो कोई भी अपने सक्रयि जीवन में सद्गुण के लिए सहन कए गए दुखों के माध्यम से अपने भीतर ईश्वर की महमिा करता है, वह स्वयं ध्यान की अवस्था में दवि्य करिणों के नर्लिप्त प्रकाशन के द्वारा ईश्वर में महमिामय होता है। और प्रभु, अपनी स्वैच्छकि पीड़ा के बारे में बात करते हुए कहते हैं: *'अब मनुष्य का पुत्र महमिामय हुआ है, और ईश्वर उसमें महमिामय हुए हैं। यदि परमेश्वर में उसकी महमिा होती है, तो परमेश्वर उसकी अपनी महमिा करेंगे, और तुरंत उसकी महमिा करेंगे'* (यूहन्ना 13:31-32)। इससे यह स्पष्ट है कि सद्गुण के लिए कष्ट सहने के बाद अनुग्रह के दैवीय उपहार प्राप्त होंगे।

६२. जब तक आत्मा शक्ति से शक्ति और महमिा से महमिा तक का सफर तय करती है—अर्थात् एक सद्गुण से दूसरे महान सद्गुण की ओर और ज्ञान के एक स्तर से दूसरे उच्च स्तर पर चढ़ती है—तब तक वह परदेशी रहना

बंद नहीं करती, जैसा कि कहा गया है: *'मेरी आत्मा बहुत दूर भटक गई है'* (भजन संहिता 119:6)। क्योंकि दूरी बहुत बड़ी है, और उसे ज्ञान के कई चरणों से गुजरना होगा, इससे पहले कि *'तुम अद्भुत वास के स्थान में प्रवेश करो, परमेश्वर के भवन में, जयजयकार और स्तुति के शब्द, उत्सव मनाने वाली भीड़ के कोलाहल के बीच'* (भजन संहिता 41:5)—हमेशा आवाज़ों में एक आवाज़ जोड़ते हुए, आध्यात्मिक आवाज़ों में एक आध्यात्मिक आवाज़, जैसे-जैसे कोई आध्यात्मिक मनन में आगे बढ़ता है, स्पष्ट रूप से महसूस की गई चीज़ों में आनंद और उपयुक्त धन्यवाद के साथ हर्षित होता है। इस प्रकार के उत्सव उन सभी द्वारा मनाए जाते हैं, जिन्होंने *'उस आत्मा' की* कृपा प्राप्त की है, *जो उनके हृदयों में पुकारता है: "अब्बा, पिता!"* (गलातियों 4:6)।

६३. *'एक अद्भुत निवास-स्थान'* सद्गुणों के प्रति एक अविचल और अटूट प्रवृत्ति है, जिसके द्वारा वचन परमेश्वर, आकर, आत्मा को सद्गुणों की विभिन्न सुंदरताओं से एक तम्बू के रूप में सुशोभित करते हैं। ईश्वर का घर अनेक और विविध चिंतन से युक्त ज्ञान है, जिसके द्वारा ईश्वर, आत्मा में आकर, उसे ज्ञान की प्रचुरता से भर देते हैं। *'आनंद का स्वर'* गुणों की प्रचुरता को देखकर आत्मा का उल्लास है। प्रचारण, ज्ञान से प्राप्त गौरवपूर्ण संतुष्टि या पूर्ति के लिए कृतज्ञता है। *'ध्वनि'* वह अनवरत, रहस्यमयी स्तुति है जो दोनों, अर्थात् आनंद और प्रचारण के मिश्रण से उत्पन्न होती है।

64. शारीरिक वासनाओं पर वीरतापूर्वक विजय प्राप्त करके, और अशुद्ध आत्माओं पर पर्याप्त विजय प्राप्त करके, और उनके विचारों को अपनी आत्मा के क्षेत्र से निर्वासित करके, उसे प्रार्थना करनी चाहिए कि उसे एक शुद्ध हृदय प्रदान किया जाए और उसमें एक नया आत्मा का नवीनीकरण हो, अर्थात्, कि ईश्वर की कृपा से वह बुराई के विचारों से पूरी तरह शुद्ध हो जाए और दिव्य विचारों से भर जाए।

६५. जिसने अपना हृदय शुद्ध कर लिया है, वह न केवल परमेश्वर के बाद आने वाली गौण चीजों के अर्थ और महत्व को समझता है, बल्कि उन सभी से परे जाकर, मानो परमेश्वर को स्वयं निहारता है: इसमें ही सभी भलाई की अंतिम सीमा निहित है। जब ईश्वर ऐसे हृदय का दर्शन करते हैं, तो वे आत्मा के द्वारा उसे अपने वचनों को अंकित करने के योग्य समझते हैं, जैसे मूसा की पट्टियों पर अंकित किया गया था, इस हद तक कि उसने स्वयं को अच्छे कर्मों और मनन द्वारा संवारा हो, उस आज्ञा के अनुसार जो रहस्यमय रूप से यह आज्ञा देती है: *'फले-फूले और बढ़ो'* (उत्पत्ति 35:11)।

६६. मसीह का मन, जो संतों को प्राप्त होता है – जैसा कि कहा गया है: *'हमारे पास मसीह का मन है'* (१ कुरिन्थियों २:१६), – न तो यह हमें हमारी अपनी बौद्धिक शक्तियों से वंचित करके आता है, और न ही यह हमारे मन में (उसकी जगह) एक अलग और व्यक्तिगत सत्ता के रूप में प्रवेश करता है: बल्कि, अपनी ही प्रकृति से, यह हमारे मन की शक्ति को प्रबुद्ध करता है और उसकी गतिविधि को अपने साथ एकता में खींचता है। मेरी दृष्टि में, मसीह का मन उन लोगों के पास होता है जो सभी चीजों पर उनकी आत्मा में मनन करते हैं, और सभी चीजों के माध्यम से उनकी ओर सोचने के लिए प्रेरित होते हैं।

67. हमें प्रेरित के वचन के अनुसार मसीह की देह कहा जाता है: *'तुम मसीह की देह हो, और इसके अंग-अंग हो'* (1 कुरिन्थियों 12:27)—इसलिए नहीं कि मसीह की देह होने के कारण हम अपनी देह से वंचित हो जाते हैं, न ही इसलिए कि वह व्यक्तिगत रूप से हम में प्रवेश करते हैं या हमारे अंगों में विभाजित हो जाते हैं; बल्कि इसलिए कि मसीह के शरीर की तरह, हमारा अपना शरीर भी पापी क्षय से मुक्त हो जाता है। क्योंकि जैसे मसीह स्वभाव से, मनुष्य के रूप में, देह और आत्मा दोनों में पापरहित थे; वैसे ही हम भी, जो उन पर विश्वास करते हैं और आत्मा के द्वारा उनमें परिधानित हैं, अपनी स्वैच्छिक इच्छा से उनमें पापरहित हो सकते हैं।

६८. जब तक कोई भी इस जीवन में रहता है, चाहे वह अपनी वर्तमान स्थिति के अनुसार, कर्म और चिंतन में कितना भी परिपूर्ण क्यों न हो, वह ज्ञान और भविष्यवाणी और पवित्र आत्मा की प्रतिज्ञा दोनों को केवल आंशिक रूप से ही प्राप्त करता है, न कि उनकी पूर्णता में—क्योंकि उन्हें अभी उस पूर्ण अवस्था को प्राप्त करना है, जो योग्य लोगों को सत्य को स्वयं के स्वरूप में, आमने-सामने प्रकट करती है: ताकि वह केवल पूर्णता के एक अंश का ही स्वामी न रहे, बल्कि सहभागिता के द्वारा स्वयं पूर्णता को अपने भीतर धारण करे। क्योंकि प्रेरित कहते हैं कि तब सभी (अर्थात् जो उद्धार पाए हैं) *'मसीह की पूर्णता के मान को प्राप्त करेंगे'* (इफिसियों 4:13); *'जिसमें ज्ञान और बुद्धि के सभी खजाने छिपे हुए हैं'* (कुलुस्सियों 2:3); उस प्रकट होने पर *'जिन बातों को आंशिक रूप से समाप्त कर दिया जाएगा'* (1 कुरिन्थियों 13:10)।

६९. कुछ पूछते हैं: परमेश्वर के राज्य में पूर्णता प्राप्त करने वालों की अवस्था क्या होगी? क्या वहाँ प्रगति और उन्नति (अधिक से अधिक भलाई की ओर) होगी, या वहाँ एक ही, अपरिवर्तनीय अवस्था होगी? तो फिर, शरीरों और आत्माओं का क्या होगा, और हमें इसके बारे में कैसे सोचना चाहिए? इस पर विचार करने के बाद, कोई यह कह

सकता है कि जैसे भौतिक जीवन में, भोजन का एक दोहरा उद्देश्य होता है—कभी-कभी विकास को पोषित करने के लिए, तो कभी पोषित किए जा रहे लोगों को बनाए रखने के लिए—अर्थात्, – जब तक हम शारीरिक विकास के पूर्ण माप तक नहीं पहुँच जाते, तब तक हम विकास के लिए स्वयं को पोषित करते हैं, लेकिन जब शरीर आकार में बढ़ना बंद कर देता है, तो फिर उसे विकास के लिए नहीं बल्कि संरक्षण के लिए पोषित किया जाता है: इसी प्रकार, आत्मा के संबंध में भी, पोषण का दोहरा महत्व है। यह प्रगति करते समय गुणों और मनन से पोषित होता है, जब तक कि सभी अस्तित्वमान को पार करके, यह मसीह की पूर्णता के पूर्ण माप को प्राप्त नहीं कर लेता: लेकिन इसे प्राप्त करने के बाद, यह निर्धारित साधनों द्वारा प्रगति करना या स्वयं को बढ़ाना बंद कर देती है, और, अविनाशी भोजन से सीधे, समझ से परे तरीके से पोषित होकर—और, शायद, इसी कारण से, विकास के उच्चतम रूप द्वारा— अब यह केवल उस पर प्रदान किए गए दैवीपूर्ण पूर्णता को बनाए रखने और उस भोजन के असीम आनंद का अनुभव करने के लिए इसे प्राप्त करती है, जिसके माध्यम से, उसी प्रकार हमेशा उसे बनाए रखने वाली भलाई प्राप्त करके, यह दिव्य अनुग्रह का भाग लेकर एक देवता बन जाता है, स्वयं मन और इंद्रिय की सभी क्रियाओं को रोककर, और शरीर की स्वाभाविक क्रियाओं को भी—जो उससे उसकी पहुँच योग्य दिव्यता की हद तक एकीकृत हैं—रुकवाकर; ताकि आत्मा और शरीर के माध्यम से एकमात्र ईश्वर प्रकट हो, जो अपनी प्रचुर महिमा से उनकी स्वाभाविक विशेषताओं पर विजय प्राप्त करता है।

70. ईश्वर से प्रेम करने वालों में से कुछ शाश्वत निवासों और वादा किए गए उत्तरासों के बीच के अंतर की प्रकृति को समझने का प्रयास करते हैं—कि क्या यह अंतर स्थान द्वारा निर्धारित होगा, या प्रत्येक व्यक्ति की आध्यात्मिक सिद्धियों की मात्रा और गुणवत्ता द्वारा। कुछ लोग पहले दृष्टिकोण का समर्थन करते हैं, जबकि अन्य दूसरे का। जो कोई भी यह महसूस कर चुका है कि *'परमेश्वर का राज्य तुम्हारे भीतर है'* (लूका 17:21) और *'मेरे पिता के घर में बहुत से रहने के स्थान हैं'* (यूहन्ना 14:2), वह दूसरे दृष्टिकोण का समर्थन करेगा।

७१. परमेश्वर पिता का राज्य, उनकी सर्वशक्तिमानता के कारण, सभी विश्वासियों में मौजूद है; लेकिन अनुग्रह से, यह उन लोगों में मौजूद है जिन्होंने प्राकृतिक जीवन की हर प्रवृत्ति—आत्मा और शरीर दोनों की—को पूरी तरह से त्याग दिया है और आध्यात्मिक जीवन प्राप्त किया है; ताकि *वे* कह सकें: *'अब मैं नहीं, बल्कि मसीह मुझ में रहते हैं'* (गलातियों 2:20)।

72. जो, सद्गुणों के श्रम द्वारा, *'पृथ्वी पर स्थित अंगों को मार डालने में'* (कुलु. 3:5) सक्षम हुआ है और, वचन की आज्ञाओं को पूरा करके, अपने भीतर की दुनिया पर विजय प्राप्त करता है, उसे कोई भी शोक नहीं होगा, क्योंकि उसने पहले ही दुनिया को त्याग दिया है और भावों की दुनिया के विजेता तथा हर तरह की शांति के दाता, मसीह में निवास करना शुरू कर दिया है। क्योंकि जिसने भौतिक वस्तुओं से अपने लगाव का परित्याग नहीं किया है, वह निश्चित रूप से दुख का अनुभव करेगा, उसकी भावनाएँ स्वभाव से परिवर्तनशील चीज़ों के बदलाव के साथ उतार-चढ़ाव करती रहेंगी; लेकिन जिसने मसीह में वास करना शुरू कर दिया है, वह अब भौतिक वस्तुओं में, वे जो भी हों, किसी भी रूप में कोई परिवर्तन नहीं देखता। इसीलिए प्रभु कहते हैं: *'मैंने ये बातें तुमसे इसलिए कहीं हैं, ताकि मुझमें तुम्हें शान्ति मिले; संसार में तुम्हें क्लेश होगा, परन्तु हिम्मत रखो, क्योंकि मैं जगत पर जय प्राप्त कर चुका हूँ'* (यूहन्ना 16:33)। अर्थात्, मुझमें, वचन में, तुम्हें शांति मिलेगी, क्योंकि तुम सांसारिक चीजों के उतार-चढ़ाव और कोलाहल से मुक्त हो जाओगे; जबकि संसार में—अर्थात्, सांसारिक चीजों के प्रति तुम्हारे आसक्ति में—तुम्हें दुख होगा, क्योंकि उसमें एक अवस्था से दूसरी अवस्था में निरंतर परिवर्तन होता रहता है। दोनों को दुख का अनुभव होगा: एक, जो सदाचार से कार्य करता है, उसे उससे जुड़ी कठिनाइयों के कारण; और दूसरा, जो संसार से प्रेम करता है, उसे भौतिक वस्तुओं में होने वाले नुकसान और अभाव के कारण; लेकिन एक के लिए यह उद्धारकारी है, जबकि दूसरे के लिए यह विनाशकारी और विनाश-कारी है। दोनों के लिए प्रभु ही शांति का स्रोत हैं: पहले के लिए, क्योंकि पुण्य के श्रमों के बाद वह उसे समाधि की अवस्था में निर्लिप्तता की शांति प्रदान करते हैं; और दूसरे के लिए, क्योंकि पश्चाताप के माध्यम से वह उससे क्षणभंगुर चीजों के प्रति उसकी आदती आसक्ति को दूर करते हैं।

७३. हमें न केवल शारीरिक वासनाओं के वधकर्ता, बल्कि आत्मा के भावुक विचारों के विनाशक भी होना चाहिए, उस पवित्र एक की अनुकरण करते हुए जो कहते हैं: *'मैं भोर में पृथ्वी के सभी पापियों को काट डालूँगा, और प्रभु के नगर से सभी अधर्म करने वालों को नाश कर दूँगा'* (भजन संहिता १००:८); अर्थात्, शारीरिक वासनाएँ और आत्मा के अवैध विचार।

७४. जो कोई भी, धार्मिक और धर्मी विवेक के साथ, सदाचार के मार्ग को उसके विपरीत पक्ष की ओर भटकने से अछूता रखता है: वह व्यक्ति निर्लिप्तता के लिए अपने ऊपर आने वाली ईश्वर की परीक्षा को समझ

जाएगा, जैसा कविही पवित्र नबी हमें आश्वासन देते हुए कहते हैं: *'मैं निर्दोषों के मार्ग पर आकर गाऊँगा और समझूँगा'* (भजन संहिता 100:2)।

७५. जिसे भक्तिके मार्ग पर चलाया जा रहा है, उसका मार्गदर्शन केवल आज्ञाओं को पूरा करने की इच्छा से नहीं होना चाहिए, बल्कि उसे दिव्य न्याय के कठोर निर्णयों को याद करके, बार-बार पुण्य के कार्यों के लिए प्रेरित भी किया जाना चाहिए; ताकि, जैसे वह प्रेम के कारण दिव्य की इच्छा कर सकता है, वैसे ही वह भय के कारण बुराई से भी दूर रहे। इसीलिए कहा गया है: *'हे प्रभु, मैं तेरी दया और तेरे न्याय का भजन करूँगा'* (भजन संहिता 100:1), यह गवाही देते हुए कि जैसे प्रेम से मधुर होकर कोई ईश्वर से प्रार्थनापूर्वक संवाद करता है, वैसे ही भय से दृढ़ होकर कोई उनके प्रति एक गीत अर्पित करता है।

76. केवल एक ही शाश्वतपूर्व और सारपूर्व सत्त्ववान सत्त्व है, त्रित्वीय एकता, पिता, पुत्र और पवित्र आत्मा, जो मिलकर तीन अनंतों में से अनंत का निर्माण करते हैं; और उनकी सत्ता—वे कैसे हैं, वे क्या हैं और वे किस प्रकार हैं—यह सब सृजित मन की पहुँच से परे है। यह तर्क करने वालों की सारी समझ से परे है, यह इसमें किसी अंतर्निहित छिपाव के कारण कतई नहीं है, और इसका ज्ञान सभी ज्ञान से अतुलनीय रूप से श्रेष्ठ है।

७७. एक ईश्वर पिता, एकमात्र पुत्र के पिता, और एकमात्र पवित्र आत्मा का स्रोत; एक अविभाज्य एकता, और एक अविभाज्य त्रिमूर्ति; आदि-रहित मन, एकमात्र के एकमात्र पिता, स्वभावतः आदि-रहित वचन, और एकमात्र सदा-मौजूद जीवन, अर्थात् पवित्र आत्मा का स्रोत।

78. एक ईश्वर, जो आरंभ रहित और सह-शाश्वत है, जिसमें कोई अंश नहीं है और जो अविभाज्य है; वह एक ही एक और त्रिमूर्ति दोनों है।

७९. मसीह ईश्वर का जन्म हुआ, और, एक तर्कशील आत्मा से युक्त देह धारण करके, मनुष्य बने—उसी ने जो सत्ता के स्रोत से उत्पन्न सभी को अस्तित्व प्रदान किया, जिसे कुँवारी ने अलौकिक रूप से जन्म दिया, और उसने अपनी कुँवारीपन का कोई भी लक्षण नहीं खोया। क्योंकि जिस प्रकार उन्होंने अपनी प्रकृति को बदले बिना या अपनी शक्तियों को परिवर्तित किए बिना मानव का रूप धारण किया, उसी प्रकार वे अपनी माता के रूप में उन्हें जन्म देने वाली को कुंवारी के रूप में बनाते और संरक्षित करते हैं, एक चमत्कार के भीतर दूसरे की ओर संकेत करते हुए और प्रत्येक के माध्यम से दूसरे को ढकते हुए। ईश्वर स्वयं, अपने आप में और अपनी ही प्रकृति से— —हमेशा रहस्यमय रूप से छिपे रहते हैं; और यदि वे कभी अपनी स्वाभाविक छिपी हुई अवस्था से स्वयं को प्रकट करते हैं, तो वे ऐसा इस तरह से करते हैं कि प्रकट करने की उसी क्रिया से, वे उसे और भी अधिक छिपा देते हैं। इस प्रकार (और एक मनुष्य के रूप में अपने अवतार में) वह कुँवारी को प्रसव करने वाली माँ बनाते हैं, इस तरह से कि जन्म का वही कार्य कुँवारीपन के अटूट बंधन को गढ़ता है।

८०. आइए हम विश्वास के साथ दिव्य अवतार के रहस्य पर मनन करें, और बिना प्रश्न किए, उसको महिमा दें जो हमारे लिए ऐसा करने में प्रसन्न हुए। क्योंकि अपनी बुद्धि की शक्ति पर भरोसा करके, कौन यह समझा सकता है कि परमेश्वर का वचन कैसे गर्भ में धारण होता है? बिना बीज के उसके लिए मांस कैसे बनता है? वह बिना क्षय के कैसे जन्म लेते हैं? माता वह कैसे बनीं जो प्रसव के बाद भी कुँवारी रहीं? वह जो सभी पूर्णताओं से परे हैं, आयु में कैसे बढ़े (लूका 2:52)? उन्होंने, शुद्ध होते हुए, बपतिस्मा कैसे ग्रहण किया? उन्होंने, भूखे होते हुए, भूखों को कैसे तृप्त किया? स्वयं थके हुए होकर उन्होंने कैसे बल प्रदान किया? स्वयं पीड़ित होकर उन्होंने कैसे आरोग्य प्रदान किया? स्वयं मरते हुए उन्होंने कैसे जीवन दिया? और—अंत को पहले रखकर—ईश्वर मनुष्य कैसे बनते हैं, और—जो और भी अधिक रहस्यमय है—वचन, अपनी सारभूत सत्ता में, मांस में कैसे मौलिक रूप से उपस्थित हैं, जबकि अपनी प्रकृति में वे पिता के साथ सारभूत रूप से एक बने रहते हैं? वह स्वभाव से परमेश्वर और स्वाभाविक रूप से मनुष्य कैसे हैं, जिन्होंने किसी भी स्वभाव का परित्याग नहीं किया—न तो उस दिव्य स्वभाव का जिससे वह परमेश्वर हैं, और न ही हमारे मानवीय स्वभाव का जिससे वह मनुष्य बने? – ये सभी रहस्य एक ही विश्वास में समाहित हैं, जो उन बातों की गवाही देता है जो हैं, जो वचन और समझ से परे हैं (इब्रानियों 11:1)।

८१. आदम ने आज्ञा का उल्लंघन करके जाना कि हमारी प्रकृति का जन्म कामुक सुख से होता है। प्रभु ने, इसे प्रकृति से दूर करते हुए, स्वयं के लिए वीर्य से गर्भधारण करना उचित नहीं समझा। स्त्री ने आज्ञा का उल्लंघन करके दिखाया कि हमारी प्रकृति का जन्म प्रसव पीड़ा से होता है। प्रभु ने मानव स्वभाव से इन चीज़ों को हटाकर, माता को प्रसव के बाद क्षय सहने की अनुमति नहीं दी; ताकि वह मानव स्वभाव से स्वेच्छा से प्राप्त आनंद और उसके कारण होने वाले अनिच्छित दुख, दोनों को दूर कर सकें, और उस चीज़ का विनाशकर्ता बन सकें जिसका वह स्रष्टा नहीं थे – और ताकि वह यह सिखा सकें कि एक और जीवन रहस्यमय रूप से आत्मा में शुरू होना चाहिए, एक ऐसा जीवन जो शुरू हो सकता है दुख और बीमारी के साथ शुरू होकर, फिर भी हर तरह से दिव्य आनंद और अनंत आनंद

में समाप्त होती है। इस उद्देश्य के लिए, वे मनुष्य बनते हैं और एक मनुष्य के रूप में जन्म लेते हैं—वे जिन्होंने मनुष्य की रचना की—ताकि वे मनुष्य को बचा सकें; और कामनाओं को कामनाओं से ही चंगा करने के बाद, वे हमारी कामनाओं के संहारक के रूप में प्रकट होंगे, और अपनी ही देहिक वंचनाओं के द्वारा प्रेम से हमारे आध्यात्मिक स्वभाव को नवीनीकृत करेंगे।

82. सद्गुण के लिए दुखद परीक्षाओं के बीच कष्ट उठाना लाभदायक है; क्योंकि ऐसे मामलों में, यह उन लोगों के लिए पुरस्कार के रूप में आत्म-निष्ठा लाता है जो सभी चीजों को समान भाव से सहते हैं, जिससे आत्मा, प्रेम में ईश्वर के साथ एक होकर, स्वभाव से शरीर और संसार से मुंह मोड़ लेती है। शरीर की थकान आत्मा का सुदृढ़ीकरण है।

83. इंद्रिय सुख के मोह में बहकर, हमने सच्चे जीवन के बजाय मृत्यु को प्राथमिकता दी है। अतः हमें कृतज्ञतापूर्वक उस शारीरिक श्रम को सहन करना चाहिए जो इस सुख को मारता है, ताकि जब मृत्यु इसे और इससे उत्पन्न हुई मृत्यु को नष्ट कर दे, तो हमें वह जीवन प्राप्त हो जो हमें वापस लौटता है—एक ऐसा जीवन जो पहले सुख के लिए बेचा गया था, लेकिन अब शरीर के कुछ श्रमों के लिए वापस खरीद लिया गया है।

८४. यदि जब शरीर स्वस्थ और तृप्त होता है, तो पाप की शक्ति आमतौर पर बढ़ जाती है; तो यह स्पष्ट है कि जब वह अभाव में होता है, तो सद्गुण की शक्ति को फलना-फूलना चाहिए। इसलिए, आत्मा की अशुद्धियों के शोधक और हमारी भविष्य की महिमा के कारण, इस देह की थकान को हम धैर्यपूर्वक सहन करें। *'क्योंकि इस समय की कठिनाइयाँ उस महिमा के बराबर भी नहीं हैं जो हम पर प्रकट होने वाली है'* (रोमियों 8:18)।

८५. जैसे शरीर का इलाज करने वाले डॉक्टर सभी के लिए एक ही इलाज नहीं लिखते; वैसे ही ईश्वर भी, आत्मा की कमज़ोरियों को ठीक करते समय, सभी के लिए उपयुक्त एक ही उपचार नहीं जानते; बल्कि प्रत्येक आत्मा के लिए उपयुक्त प्रदान करके, वह उपचार करते हैं। इसलिए जब हम चंगा किए जा रहे हैं तो हमें उस का धन्यवाद करना चाहिए, भले ही हमारे साथ जो होता है उसमें दुख शामिल हो: क्योंकि परिणाम धन्य है।

86. थके हुए शरीर के विद्रोहों से अधिक स्पष्ट रूप से आत्मा का स्वभाव कुछ भी प्रकट नहीं करता: क्योंकि यदि वह उन पर झुक जाती है, तो यह दर्शाता है कि वह ईश्वर से अधिक शरीर से प्रेम करती है; लेकिन यदि वह ऐसी परीक्षाओं से अडिग रहती है, तो यह प्रकट होता है कि वह शरीर से अधिक सदाचार का सम्मान करती है; जिसके द्वारा यह परमेश्वर को अपना वासिन्दा प्राप्त करेगी, जो इसके लिए हमारी प्रकृति में दुख सहने के लिए प्रसन्न हुए, और जो, जैसा कि उन्होंने एक बार अपने शिष्यों से कहा था, पुकारते हैं: *'साहस रखो; मैं जगत पर विजय प्राप्त कर चुका हूँ'* (यूहन्ना 16:33)।

८७. यदि सभी संतों ने सुधारात्मक अनुशासन में भाग लिया है, तो आइए हम भी, उनके साथ मिलकर, अपनी शिक्षा के लिए अनुशासित किए जाने पर धन्यवाद दें, ताकि हम उनकी महिमा में सहभागी होने के योग्य माने जाएँ। *'प्रभु जिसे प्रेम करते हैं, उसे अनुशासित करते हैं, और हर उस पुत्र को दण्ड देते हैं जिसे वे स्वीकार करते हैं'* (नीतिवचन 3:12; इब्रानियों 12:6)।

८८. आदम ने पसली (अपनी पसली से ली गई अपनी पत्नी), जिसने उसे मिठास प्रदान की, को स्वीकार कर मानव जाति को स्वर्ग से बाहर निकाल दिया। परन्तु प्रभु, जो अपनी पार्श्व में भाले से भेदा जाने को तैयार थे, ने चोर को स्वर्ग में प्रवेश दिया। अतःआओ, हम भी देह के कष्टदायक संयम को प्रेम करें और उसकी सुख-सुविधाओं से घृणा करें: क्योंकि पहला हमें स्वर्ग में ले जाता है और हमें उसकी आशीषों का सहभागी बनाता है; जबकि दूसरा हमें उससे बाहर निकाल देता है और हमें उसकी आशीषों से वंचित कर देता है।

८९. यदि परमेश्वर मनुष्य बनकर देह में दुख सहते हैं; तो फिर कौन उस दुख में आनंदित नहीं होगा, जब परमेश्वर स्वयं उस दुख में सहभागी हों? क्योंकि उनके साथ दुख सहना राज्य का मार्ग है। यह वचन सत्य है: *'यदि हम उनके साथ दुख उठाते हैं, तो हम उनके साथ महिमा भी पाएंगे'* (रोमियों ८:१७)।

९०. यदि सुख की इच्छा के कारण, जिसे हमारे पूर्वज ने हमारी प्रकृति में मिला दिया है, दुख सहना बिल्कुल आवश्यक है, तो आइए हम इन क्षणिक कष्टों को वीरता से सहन करें, जो हमारे भीतर उस इच्छा के विष को सुन्न कर देते हैं और हमें उन अनंतकालीन यातनाओं से मुक्त करते हैं जो इससे उत्पन्न होंगी।

९१. सभी अच्छी चीजों का अंत प्रेम है, क्योंकि यह उन सभी का मार्गदर्शन करता है, उनका नेतृत्व करता है और उन्हें अपनी ओर खींचता है जो इसमें चलते हैं, परमेश्वर की ओर, जो परम अच्छाई और सभी अच्छाइयों का स्रोत है, जो सदा वफादार रहता है, कभी असफल नहीं होता और हमेशा अपरिवर्तनीय रहता है। विश्वास वह नींव है जिस पर आशा और प्रेम का निर्माण होता है, क्योंकि यह सत्य को दृढ़ता से स्थापित करता है। आशा एक कड़ी है—जिसके दोनों ओर प्रेम और विश्वास खड़े हैं—क्योंकि यह जिस पर विश्वास किया गया है उसकी निष्ठा और प्रियतम

की मनोहरता, दोनों को प्रदर्शति करता है, और उन्हें प्राप्त करने का मार्ग सखिाता है। प्रेम इनकी पूर्ता है, जो अंततःवांछनीय सभी को समाहति करता है और उसमें शांत प्रदान करता है; जो है, उस पर वश्विास और जो होगा, उसकी आशा के बजाय, यह इनकी वर्तमान वास्तवकिताओं के रूप में प्राप्त और इनका स्वाभावकि आनंद (अपने भीतर) लाता है।

९२. तीन बुराइयाँ हैं, जो सबसे बड़ी और सबसे हानकिारक हैं, और सरल शब्दों में, सभी बुराइयों की जननी हैं: अज्ञानता, स्व-प्रेम और घृणा, जो स्वाभावकि रूप से जुड़ी हुई हैं और एक-दूसरे को मजबूत करती हैं। क्योंक ईश्वर के प्रत अज्ञानता से स्व-प्रेम उत्पन्न होता है, और इससे अपने साथी मनुष्यों के प्रत घृणा उत्पन्न होती है। और इस बात पर कोई ववािद नहीं है क दुिष्ट उन्हें हमारे भीतर उत्पन्न और भड़काता है, हमें हमारी शक्तयों—तर्क, इच्छा और ऊर्जा—का दुरुपयोग करना सखिाता है।

९३. हमें अज्ञानता में बने रहने के बजाय, ज्ञान की खोज के माध्यम से—आत्म-प्रेम के जुनून से शुद्ध की गई इच्छा के माध्यम से, अपने मन को ईश्वर की ओर उठाना चाहिए, अपनी सारी इच्छा को केवल ईश्वर की ओर नर्दिेशति करने – और ऊर्जा को, घृणा से मुक्त करके, एकमात्र ईश्वर को प्राप्त करने का प्रयास करने और अपने भीतर वह दव्यि और धन्य प्रेम उत्पन्न करने का प्रयास करने के लिए जो हमें ईश्वर के साथ एक करता है और ईश्वर के प्रेमी को स्वयं ईश्वर के रूप में प्रकट करता है – एक प्रेम जो उनसे (अर्थात् ईश्वर के ज्ञान और ईश्वर की इच्छा से) उत्पन्न होता है और जसिके लिए वे अस्तत्वि में हैं।

९४. जब हम आत्म-प्रेम को त्याग देते हैं—जो, जैसा क मैंने कहा है, सभी बुराइयों की शुरुआत और जननी है—तो उसके साथ ही उससे उत्पन्न होने वाली हर चीज़ भी त्याग दी जाती है: क्योंक जिब यह चला जाता है, तो हमारे भीतर बुराई का कोई भी रूप या नशिान संभवतःनहीं रह सकता।

९५. हमें स्वयं और एक-दूसरे का सम्मान और प्रेम करना चाहिए, ठीक वैसे ही जैसे मसीह ने स्वयं पहले अपने उदाहरण से दखिाया, और हमारे लिए दुख सहने की कृपा की।

96. ईश्वर के प्रत पूर्ण प्रेम का प्रकटीकरण और प्रमाण अपने पड़ोसी के प्रत एक सच्चा और परोपकारी स्वभाव है। क्योंक '*यद कोई कहे, "मैं परमेश्वर से प्रेम करता हूँ" और फरि भी अपने भाई से बैर रखता हो, तो वह झूठा है;* क्योंक *जो अपने भाई से प्रेम नहीं करता, जसि उसने देखा है, वह परमेश्वर से प्रेम नहीं कर सकता, जसि उसने नहीं देखा है,'* दव्यि यूहन्ना कहते हैं (1 यूहन्ना 4:20)।

97. देखो वह द्वार जसिके द्वारा प्रवेश करने वाला पवत्रितम स्थान में प्रवेश करता है और पवत्रि और राजसी त्रमूर्त की अनुपम सुंदरता का द्रष्टा बनने के लिए योग्य माना जाता है।

९८. जब तक हम अपने जुनून के माध्यम से ईश्वर के वरिुद्ध वद्रिोह करते हैं और जानबूझकर आत्माओं के दुष्ट तानाशाह और वनिाशक, शैतान को श्रद्धांजल देते हैं, तब तक हमारे लिए ईश्वर के साथ एकता में रहना असंभव है, जब तक क हिम पहले इस दुष्ट के खलिाफ एक दृढ़ युद्ध न छेड़ें। जब तक हम स्वेच्छा से दुष्टता की वासनाओं के दास बनते रहते हैं, हम परमेश्वर के शत्रु और वरिोधी बने रहते हैं, भले ही हम खुद को वश्विासी कहें। और हमें संसार से कोई भी लाभ नहीं होगा, जब हमारी आत्मा, जो स्वभाव से भ्रष्ट है, अपने स्रष्टा के वरिुद्ध वद्रिोह करती है और उसके राजसी अधकिार के अधीन होने से इनकार करती है; जबक, साथ ही, वह स्वयं को अनगनित दुष्ट स्वामयिों को बेच देती है जो उसे पाप में डुबो देते हैं, और जो चापलूसी से उसे उद्धार के मार्ग के बजाय वनिाश के मार्ग को चुनना सखिाते हैं।

९९. ईश्वर ने हमें इसलिए बनाया है ताक हिम दव्यि स्वभाव के सहभागी (2 पतरस 1:4), और उसकी शाश्वत सत्ता के सहभागी बनें, और अनुग्रह-पूर्ण दव्यिताकरण के द्वारा उसकी समानता प्राप्त करें, जसिके लिए जो कुछ भी अस्तत्वि में है वह नयित है और बना रहता है, और जो अभी तक अस्तत्वि में नहीं है उसे अस्तत्वि में लाया जाता है और उत्पन्न कयिा जाता है।

100. यद हिम बुलाए जाने और परमेश्वर के स्वयं के होने की इच्छा रखते हैं, तो आइए हम अपने जुनून के लिए वचन का वश्विासघात न करने, जैसा क यिहूदा ने कयिा, और न ही उसका इनकार करने, जैसा क पितरस ने कयिा, का कार्यभार संभालें। तथाप, वचन का इनकार करना कसिी भय के कारण भलाई करने से इनकार करना है, जबक वश्विासघात कर्म में एक जानबूझकर कयिा गया पाप और पाप की ओर एक स्वैच्छकि प्रवृत्त है।

१०१. मानवीय आत्म-प्रेम और कामुक तर्क, लोगों को एक-दूसरे के वरिुद्ध करके और कानून की गलत व्याख्या करके, एक स्वभाव (एक ही स्वभाव वाले लोगों) को कई हस्सिों में वभिाजति कर दयिा है; और अब प्रचलति कठोरता को लागू करके, उन्होंने ऐसे स्वभाव के माध्यम से, प्रकृत को स्वयं अपने वरिुद्ध (अर्थात्, लोगों को एक-दूसरे के वरिुद्ध) कर दयिा है।. अत; जो कोई भी, सुदृढ़ ववििेक और उत्तम बुद्ध के द्वारा, प्रकृत के ऐसे स्वभाव को

नष्ट करने में सफल होता है, वह पहले स्वयं पर और फिर दूसरों पर दया दिखाता है, क्योंकि उसने प्रकृति की मांग के अनुसार अपने हृदय को सीधा कर लिया है; और, ऐसे स्वभाव के द्वारा, स्वाभाविक रूप से ईश्वर के निकट आता है और स्वयं में यह प्रदर्शित करता है कि उसकी प्रतिमा में बने होने का क्या अर्थ है, और कितनी भव्यता से ईश्वर ने, जिसने आरंभ में हमारी प्रकृति को अपनी समानता में बनाया और जो स्पष्ट रूप से अपने भीतर उसकी ही भलाई को प्रतिबिंबित करती है, उसे हर तरह से स्वयं के बराबर, अहिंसक, शांतिपूर्ण, अशांत न होने वाली, ईश्वर और स्वयं के साथ प्रेम में गहराई से बँधी हुई, – इस प्रकार कि इसके द्वारा हम लालसा के साथ ईश्वर को (*अर्थात् एक लालायित भलाई के रूप में*) और एक-दूसरे को करुणा के साथ (एक ही स्वभाव के प्राणी के रूप में) अपनाते हैं।

102. मानवता से प्रेम करने वाले ईश्वर मानव बने ताकि वे मानव स्वभाव (अर्थात् सभी लोगों) को अपनी ओर आकर्षित कर सकें, और उसे बुराई में गिरने से रोक सकें; जिसके द्वारा यह स्वयं के विरुद्ध विभाजित हो जाता है और स्वयं के विरुद्ध विद्रोह करता है, बिना किसी रोक-टोक के, दूसरों के प्रति अपने स्वभाव की चंचल अस्थिरता (बदलने की प्रवृत्ति) के कारण।

103. आइए हम अपनी पूरी क्षमता से इस जीवन के सुखों और इसके दुखों के भय का त्याग करें, और आइए हम निश्चित रूप से हर कामुक विचार और हर शैतानी चालाकी से खुद को मुक्त करें। क्योंकि सुख के लिए ही हम अपनी वासनाओं से प्रेम करते हैं, और दुख के कारण ही हम सदाचार से दूर भागते हैं।

104. पाप का आकर्षण और मिठास आमतौर पर उसी क्षण समाप्त हो जाती है, जब उसे करने के साधन अपनाए जाते हैं; यही कारण है कि एक व्यक्ति, स्वयं अनुभव के माध्यम से यह जान जाने के बाद कि हर पापी सुख के बाद अवश्य ही दुखद अप्रसन्नता आती है, सुख के लिए एक पूर्ण लालसा और अप्रसन्नता व दुख से पूर्ण घृणा रखने लगा है—पहले को अपनी पूरी ताकत से खोजता है, जबकि दूसरे को हर संभव तरीके से टालने का प्रयास करता है, यह मानते हुए—हालांकि, संयोग से, इस तरह एक-दूसरे से पूरी तरह अलग करना, और केवल सुख से ही अपने दुष्ट आत्म-प्रेम को संतुष्ट करना, बिना किसी दुख को सहन किए, यह पूरी तरह से असंभव है, यह भूलकर कि जैसे जुनून में अंधा होने पर होता है, पापी सुख कभी भी असंतोष की कड़वाहट के बिना नहीं होता। क्योंकि दुख की कड़वाहट स्वाभाविक रूप से पाप की मिठास में घुलमिल जाती है, हालाँकि जो लोग इसका अनुभव करते हैं वे इसे भूल जाते हैं क्योंकि कामवासना की मिठास उन पर हावी हो जाती है: क्योंकि जो कुछ भी किसी के पास होता है, वह हमेशा किसी का ध्यान इतना खींच लेता है कि वह उसकी इंद्रियों से यह पूरी तरह से छिपा देता है कि आगे क्या है। इस प्रकार, स्व-प्रेम से सुखों का अनुसरण करते हुए और, उसी कारण से, किसी भी कड़वाहट से बचने के लिए हर संभव प्रयास करते हुए, हम अपने भीतर अनगिनत भ्रष्ट करने वाले भावों को जन्म देते हैं।

105. कोई भी उस आनंद और कड़वाहट की अनुभूति नहीं कर सकता जैसा तब होता है, जब हर सांसारिक प्रवृत्ति से मुक्त होकर, वे ईश्वर के साथ एक हो जाते हैं—या यूँ कहें कि अपने मन से उनमें चिपक जाते हैं—, जो वास्तव में सबसे अधिक प्रेम करने योग्य, सबसे कीमती और सबसे उत्कृष्ट भलाई हैं।

106. जैसे कोई भी तब तक परमेश्वर की शुद्ध रूप से सेवा नहीं कर सकता जब तक कि उसने अपनी आत्मा को पूरी तरह से शुद्ध न कर लिया हो, वैसे ही वह शरीर को उसके अपने लिए संतुष्ट करते हुए भी उसकी सेवा नहीं कर सकता। शरीर की इस भ्रष्ट करने वाली सेवा में संलग्न होकर—और स्वभाव से ही सुख का प्रेमी होने के कारण—मनुष्य ने अपनी शक्ति और कार्यों में लगातार मिठास और कड़वाहट दोनों का अनुभव किया है, हमेशा अवज्ञा के वृक्ष से चखते हुए, जिसमें अच्छाई और बुराई का ज्ञान एक ही समय में घुलमिल जाता है, जैसा कि वास्तव में इंद्रियों द्वारा अनुभव किया जाता है।

107. जहाँ तर्क का शासन नहीं होता, वहाँ आमतौर पर इंद्रियों की शक्ति का प्रभुत्व होता है, जिसके साथ पाप की शक्ति अटूट रूप से जुड़ी होती है; सुख के माध्यम से, यह आत्मा को शरीर की इच्छाओं की ओर खींचती है, जो स्वभाव से ही उसकी समान हैं: जिसके परिणामस्वरूप, मांस के प्रति एक भावुक और सुख-प्रेमी देखभाल को—जैसे कि यह उसका स्वाभाविक कर्तव्य हो—अपने ऊपर ले लेकर, यह मनुष्य को उसके सच्चे प्राकृतिक जीवन से दूर ले जाती है और उसे स्वयं के लिए, बुराई का वास्तुकार बनने के लिए प्रेरित करती है, जिसका कोई स्वतंत्र अस्तित्व नहीं है।

108. तर्कशील आत्मा के लिए, बुराई उसकी प्राकृतिक वरदानों की उपेक्षा है, जो देह और संसार के प्रति जुनूनी आसक्ति से उत्पन्न होती है; जिसे मन, मार्गदर्शक बनकर, आध्यात्मिक आदेशों के अपने ज्ञान के अनुसार नष्ट कर देता है, और संसार तथा देह की उत्पत्ति और प्रकृति की सही व्याख्या करता है, और आत्मा को उसके अपने आध्यात्मिक क्षेत्र में ले जाकर, जहाँ पाप का नियम बिल्कुल भी हस्तक्षेप नहीं करता, ऐसी कोई अनुभूति नहीं होती जो उसे मन (या तर्कसंगत आध्यात्मिक क्षेत्र) तक पहुँचाने के लिए पुल का काम कर सके; क्योंकि इस

इंद्रयि और आत्मा के बीच का पूर्व संबंध पहले ही नष्ट हो चुका है और सभी इंद्रयि-भोग पीछे छूट गए हैं, ताकमिन, उनसे परे उठकर, अब उन्हें बल्किुल भी न तो महसूस करता है और न ही देखता है, क्योंकवि‍ह स्वभाव और प्रकृत‍ि दोनों से उनसे अपरचिति हो चुका है।

109. जैसे बुद्ध‍ि भावों को अपने नयिंत्रण में रखकर, इंद्रयिों को सदाचार के उपकरण बनाती है; वैसे ही भाव भी, जब वे बुद्ध‍ि को अपनी पकड़ में रखते हैं, तो इंद्रयिों को पाप की ओर झुकाते हैं। और मनुष्य को गंभीरता से देखना और चर्चा करनी चाहए‍ि कआ‍ित्मा को कैसे एक उपयुक्त और सदाचारी कार्य-पथ बनाए रखना चाहए‍ि, और पाप करने के लए‍ि जनि साधनों का उसने पहले उपयोग कयि‍ा था, उन्हीं का उपयोग अब सद्गुणों को उत्पन्न करने और स्थापति करने के लए‍ि करना चाहए‍ि।

110. पवत्रि सुसमाचार सांसारकि जीवन का त्याग और आध्यात्मकि जीवन को अपनाने का परचिय कराता है। मैं उन लोगों की बात कर रहा हूँ जो हमेशा शरीर के अनुसार मरते हैं (1 कुरन्थियिों 15:31)—अर्थात्, इस संसार में शरीर में मानवीय जीवन के अनुसार—फरि भी आत्मा के द्वारा केवल परमेश्वर के लए‍ि जीते हैं, जैसा कद‍िव्यि प्रेरति कहते हैं: वे अब अपना जीवन नहीं जीते, बल्कमि‍सीह उनमें जीवते हैं (गलातयिों 2:20). इसी प्रकार, जो इस संसार में महान दुख, यातना और उत्पीड़न सहते हैं, और जो खुशी-खुशी उत्पीड़न और हर प्रकार की परीक्षाओं को सहते हैं, उन्हें भी देह के लए‍ि मृत माना जाता है।

111. प्रत्येक वासना कसि‍ी संवेदी वस्तु के एक अनुभूत‍ि के साथ संयोजन से उत्पन्न होती है, जसि‍के साथ प्राकृतकि सक्रयि शक्तयिों—अर्थात् इंद्रयिों, या इच्छाओं, या बुद्ध‍ि—का उनके उचति प्राकृतकि संचालन के तरीके से वचिलन होता है। यद‍ि अब मन, इस त्रयी—अर्थात् इंद्रयि वस्तु, अनुभूत‍ि और इसमें संलग्न प्राकृतकि सक्रयि शक्त‍ि—के संयोजन के उद्देश्य को समझकर, अपने तर्क के द्वारा, इनमें से प्रत्येक को उसके उचति प्राकृतकि क्रम में पुनर्स्थापति करने में, और प्रत्येक पर स्वयं में और स्वयं के लए‍ि मनन करने में सक्षम हो, अर्थात्, इंद्रयि-वषिय को इंद्रयि से कसि‍ी भी संबंध के बनि‍ा, इंद्रयि को इंद्रयि-वषिय से कसि‍ी भी संबंध के बनि‍ा, और इसमें शामलि सक्रयि शक्त‍ि—उदाहरण के लए‍ि, इच्छा, या कोई अन्य ऐसी शक्त‍ि—इंद्रयि-वषिय या इंद्रयि की ओर कसि‍ी भी भावुक प्रवृत्त‍ि के बनि‍ा, और स्वयं उस भाव को अपने चंतिन का नर्दि‍ेशन करने की अनुमत‍ि दए‍ि बनि‍ा—यद‍ि, मैं कहूँ, मन ऐसा करने में सफल हो जाता है; तो यह उसे पीसकर उस बछड़े की तरह बखि‍ेर देगा जसि‍े प्राचीन इस्राएलयिों ने एक बार बनाया था (नर्गिमन 32:20), इस भावना के संयोग को, चाहे वह कसि‍ी भी रूप में हो, ज्ञान के जल पर बखि‍ेर देना, और उसे उत्पन्न करने वाली वस्तुओं को उनकी स्वाभावकि व्यवस्था में वापस लाकर, भावना के सूक्ष्म से सूक्ष्म वचिार को भी पूरी तरह से नष्ट कर देना।

112. देहगत वासनाओं से उत्पन्न कई पापों में गरिकर कलंकति जीवन *'एक अशुद्ध वस्त्र'* है (यहूदा 23)। क्योंक‍ि अपने जीवन के तरीके से, एक प्रकार के वस्त्र की तरह, प्रत्येक व्यक्त‍ि आमतौर पर यह प्रकट करता है कवि‍ह कसि प्रकार का व्यक्त‍ि है, चाहे धर्मी हो या अधर्मी: एक के पास एक साफ़ वस्त्र होता है, यानी एक सदाचारी जीवन, जबक‍ि दूसरे का जीवन पूरी तरह से दुष्ट कर्मों से दागदार होता है। – या यूँ कहें *क‍ि 'मांस से कलंकति वस्त्र'* एक आंतरकि प्रवृत्त‍ि और मानसकि स्थत‍ि को दर्शाते हैं जो आत्मा को उसका चरत्रि प्रदान करती है, जैसा कवि‍ह अंतरात्मा में (या अंतरात्मा के सामने) होती है, यह मांस से उत्पन्न होने वाली बुरी प्रवृत्तयिों और कार्यों की स्मृत‍ि के कारण होता है – और इन वस्त्रों को लगातार अपने ऊपर देखकर, यह (आत्मा) वासनाओं की बदबू से दंग रह जाती है। क्योंक‍ि जैसे आत्मा में, गुणों के पारस्परकि तर्कसंगत संयोजन के माध्यम से, अमर वस्त्र बनते हैं—और, इनसे स्वयं को आच्छादति कर, यह अच्छी और गौरवशाली प्रतीत होती है: इसी प्रकार, मांस से, वभिन्नि जुनूनों के आपसी मेल-जोल के माध्यम से, एक नश्चिति परधिान इसके लए‍ि उत्पन्न होता है—जो अशुद्ध और कलंकति है, जो आत्मा को जैसा है वैसा ही प्रकट करता है, और दव्यि के स्थान पर उस पर एक और प्रतमि‍ा और समानता थोपता है।

113. मानव स्वभाव के दव्यिीकरण की आशा की दृढ़ और नश्चिति नींव ईश्वर के अवतार में नहिति है, जो मनुष्य को उसी हद तक देवता बनाता है, जसि हद तक ईश्वर स्वयं मनुष्य बने। क्योंक‍ि यह स्पष्ट है कज‍ि‍ो पापरहत‍ि होकर मनुष्य बना, वह मानव स्वभाव को दव्यिता प्रदान कर सकता है, बनि‍ा उसे ईश्वरत्व में परवि‍र्तति कए‍ि, उसे उसी हद तक स्वयं के समान ऊँचा उठाकर, जतिना कउ‍िसने स्वयं मनुष्य के लए‍ि स्वयं को नम्र कयिा। – इस बात को रहस्यमय तरीके से सखि‍ाते हुए, महान प्रेरति कहते हैं क‍ि *'आने वाले युगों में परमेश्वर की कृपा की अतुलनीय संपत्त‍ि हमें प्रकट की जाएगी'* (इफसियिों 2:7)।

114. आत्मा, जो इंद्रयि सुखों की अशुद्धता से जैसे जंग की परत से ढकी होती है, वह पीड़ादायक श्रम द्वारा शुद्ध होती है, और जब अनुभव के माध्यम से वह ऐसी चीज़ों से प्रेम करने के नुकसान को पहचान लेती है, तो उससे

भौतिक वस्तुओं की ओर हर प्रवृत्ति पूरी तरह से मिट जाती है; इस कारण से ईश्वर, धर्मी न्याय के अनुसार, शैतान को लोगों को पीड़ादायक दुखों से पीड़ित करने की अनुमति देते हैं।

115. सुख और दुख, और उनके बाद आने वाली इच्छा और भय, मूल रूप से मानव स्वभाव के साथ नहीं बनाए गए थे: अन्यथा वे उस स्वभाव को परिभाषित करने वाले गुणों में गिने जाते; लेकिन, महान निकिसिया के ग्रेगरी की शिक्षा के अनुसार, इन्हें हमारी प्रकृति में निहित पूर्णता के नुकसान के बाद, हमारी प्रकृति के सबसे अतार्किक भाग पर आरोपित करके पेश किया गया था; और इनके माध्यम से, आज्ञा के उल्लंघन के तुरंत बाद, ईश्वर की धन्य छवि के बजाय, हमारी वाचालताहीन जानवरों से समानता स्पष्ट और प्रकट हो गई। क्योंकि यह उचित था कि विवेक की गरिमा के धूमिल होने के बाद, मानव स्वभाव को उसी चीज़ से न्यायसंगत रूप से दंड भुगतना चाहिए, जिसके माध्यम से उसने अतर्कशीलता के गुण प्राप्त किए थे। इस प्रकार ईश्वर ने बड़ी बुद्धिमानी से व्यवस्था की कि मनुष्य इसके द्वारा विवेक की श्रेष्ठता को महसूस कर सके।

116. जो लोग एक अच्छे और उद्धारकारी जीवन के लिए उत्सुक हैं, उनके हाथों में भाव भी अच्छे होते हैं, जब, उन्हें सांसारिक से बुद्धिमानीपूर्वक अलग करने के बाद, हम उनका उपयोग दिव्य को प्राप्त करने के लिए करते हैं; अर्थात्: जब हम इच्छा को दिव्य आशीर्वादों के लिए आध्यात्मिक लालसा की एक प्रबल गति में बदल देते हैं; सुख के प्रेम – को दिव्य उपहारों पर मन की आनंद-विभोरता से उत्पन्न जीवन-दायक आनंद में; भय – को इस सतर्कतापूर्ण चिंता में कि हम अपने अपराधों के लिए भविष्य में यातना के अधीन न हो जाएँ; शोक – को वर्तमान बुराई के सुधार की ओर निर्देशित पश्चाताप में; और, संक्षेप में, जब हम इन भावों का उपयोग वर्तमान या संभावित बुराई को नष्ट करने या रोकने के लिए, साथ ही सद्गुण और ज्ञान को प्राप्त करने और बनाए रखने के लिए करते हैं, ठीक वैसे ही जैसे बुद्धिमान चिकित्सक शरीर में विष के कारण पहले से मौजूद क्षति को नष्ट करते हैं या रोकते हैं, या उस क्षति को जो विषैले एकिडना के शरीर के माध्यम से प्रकट होने वाली है।

117. प्रथम वाचा का विधान, सक्रिय बुद्धिमत्ता के माध्यम से, हमारे स्वभाव को सभी अशुद्धियों से शुद्ध करता है; जबकि नवीन वाचा का विधान, चिंतनशील मार्गदर्शन के माध्यम से, मन को शारीरिक से मानसिक रूप से उन चीजों के आध्यात्मिक दृष्टिकोण तक ऊँचा उठाता है जो उससे मिलती-जुलती हैं।

118. पवित्र शास्त्र उन लोगों को, जो अभी अपनी यात्रा शुरू ही कर रहे हैं और अभी भी सद्गुणों के दैवीय दरबार के प्रवेश-कक्षों में खड़े हैं, *'भयभीत लोग'* (जो भय से निर्देशित हैं) कहता है; जबकि जो लोग सद्गुणों को समझने और उनका अभ्यास करने में समानुपाती कौशल प्राप्त कर चुके हैं, उन्हें आमतौर पर *'जो प्रगति कर रहे हैं'* कहा जाता है; और जो लोग, आध्यात्मिक समझ के माध्यम से, सद्गुणों के सच्चे ज्ञान के सर्वोच्च शिखर पर पहुँच चुके हैं, उन्हें *'परिपूर्ण'* कहा जाता है। इस प्रकार, जो व्यक्ति पुराने भावों के चक्र से मुँह मोड़ चुका है और, भय से प्रेरित होकर, अपनी संपूर्ण प्रवृत्ति को दैवी आज्ञाओं के प्रति समर्पित कर चुका है, वह शुरुआती लोगों के लिए उपयुक्त किसी भी आशीर्वाद से वंचित नहीं रहता, भले ही उसने अभी तक सद्गुणों में निपुणता प्राप्त न की हो और न ही *'पूर्ण लोगों के बीच बोली जाने वाली'* बुद्धि का सहभागी बना हो। (1 कुरिन्थियों 2:6)। इसी प्रकार, जो प्रगति कर रहा है, वह अपने चरण से संबंधित किसी भी आशीर्वाद से वंचित नहीं है, भले ही उसने दिव्य बातों का वही परम ज्ञान अभी तक प्राप्त नहीं किया है जो सिद्धों की विशेषता है। जहाँ तक सिद्ध लोगों का प्रश्न है, जिन्हें रहस्यमय रूप से चिंतनशील धर्मशास्त्र प्रदान किया जा चुका है और जिन्होंने अपने मन को सभी भौतिक कल्पनाओं से शुद्ध कर लिया है, वे वे हैं जिन्होंने दिव्य प्रेम को आत्मसात कर लिया है, और दिव्य सौंदर्य की छवि के पूर्ण और निर्दोष समानता को धारण करते हैं।

119. भय दो प्रकार का होता है: एक शुद्ध और दूसरा अशुद्ध। जो भय पापों से उत्पन्न होता है, और यातना की आशंका से प्रेरित होता है, वह अशुद्ध है; क्योंकि इसका कारण उस पाप में निहित है जिसे करने का व्यक्ति को एहसास होता है, और यह हमेशा के लिए नहीं रहता, क्योंकि पश्चाताप के माध्यम से पाप के दूर होने के साथ यह भी दूर हो जाता है। लेकिन वह भय जो पापों के इस चिंतित भय के बिना भी, हमेशा आत्मा में निवास करता है, वह शुद्ध है और कभी दूर नहीं होगा; क्योंकि यह किसी तरह से ईश्वर में अंतर्निहित है, प्राणियों की ओर से एक श्रद्धांजलि के रूप में, जो उनकी महिमा के सामने सभी की स्वाभाविक श्रद्धा को प्रकट करता है, जो हर राज्य और शक्ति से परे है।

120. पवित्र आत्मा सामान्य रूप से सभी लोगों में मौजूद है, एक ऐसे के रूप में जो सभी को अपनाता है, सभी का भरण-पोषण करता है, और सभी के भीतर (भलाई के) प्राकृतिक बीजों को सक्रिय करता है। लेकिन व्यवस्था के अधीन रहने वालों में, वह विशेष रूप से आज्ञाओं के विरुद्ध अपराधों को प्रकट करने वाले और मसीह के बारे में बताई गई प्रतिज्ञा को प्रकाशित करने वाले के रूप में मौजूद है। हालाँकि, मसीह में जो भी हैं, उनके लिए, कही गई बातों के

अलावा, वह पुत्रत्व का दाता, या गोद लेने का साधन भी हैं। और बुद्धि के दाता के रूप में, वह उपर्युक्त व्यक्तियों में से किसी में भी केवल या बिना शर्त मौजूद नहीं हैं, बल्कि केवल उन लोगों में हैं जिन्होंने इस बात को समझकर, अपने ईश्वर-सदृश जीवन के द्वारा स्वयं को उनके दिव्य वास के योग्य बनाया है। क्योंकि जो कोई परमेश्वर की इच्छा पर चलता नहीं है, भले ही वह विश्वासयोग्य हो, उसका हृदय मूर्खतापूर्ण है, जो दुष्ट विचारों के लिए एक प्रजनन स्थल है, और उसका शरीर पाप के अधीन है (अर्थात्, पाप का दोषी है), क्योंकि यह हमेशा अशुद्ध, कामुक इच्छाओं से भरा रहता है।

121. परमेश्वर, जो चाहता है कि सभी लोग बच जाएँ और जो उनके दिव्यीकरण के लिए लालायित है, उनके घमंड और व्यर्थता को एक शापित बाँझ अंजीर के पेड़ की तरह मुरझा देता है (मत्ती 21:19), ताकि, केवल धर्मी प्रतीत होने के बजाय सच्ची धार्मिकता को प्राथमिकता देने के बाद, और धर्मात्मा होने का पाखंडी मुखौटा उतारकर, दिव्य वचन की इच्छानुसार सच्चे मन से सद्गुण को अपना सकें, और अपने शेष जीवन को धार्मिकता से जी सकें, मनुष्यों के सामने पाखंड दिखाने के बजाय परमेश्वर के सामने आत्मा की अच्छी दशा बनाए रखने का सर्वोपरि प्रयास करते हुए।

122. शैतान परमेश्वर का शत्रु और प्रतिशोधकर्ता है। वह एक शत्रु है जब, परमेश्वर से घृणा के कारण, मनुष्यों के प्रति प्रेम का दिखावा करते हुए जो वास्तव में हानिकारक है, वह विभिन्न वासनाओं को भड़काता है और उनसे मिलने वाली मिठास की आशा से हमारी इच्छा को सांसारिक वस्तुओं को शाश्वत वस्तुओं पर प्राथमिकता देने के लिए लुभाता है; इस प्रकार, हमारी आत्मा की संपूर्ण प्रवृत्ति पर कब्जा करके, वह हमें परमेश्वर के प्रेम से पूरी तरह से हटा देता है और हमें उसी का जानबूझकर शत्रु बना देता है जिसने हमें बनाया है। प्रतिशोधकर्ता – जब वह हम पर अपनी सारी घृणा उंडेलता है, तो वह हमें दंड के रूप में मृत्युदंड की मांग करता है, क्योंकि पाप के द्वारा हम, एक तरह से, उसके अधीन हो गए हैं। क्योंकि शैतान के लिए किसी इंसान को मृत्युदंड देते देखना ( ) उससे अधिक प्रसन्न करने वाला कुछ भी नहीं है। और जब उसे इसकी अनुमति दी जाती है, तो वह उन लोगों पर एक तूफान की तरह टूट पड़ता है, जिन पर, ईश्वर की अनुमति से, उसने अधिकार प्राप्त कर लिया है, और उनके (उनके स्वैच्छिक जुनूनों के लिए) अनैच्छिक पीड़ाएँ पहुँचाने के लिए एक के बाद एक तरीके रचता है, ईश्वर की आज्ञा को पूरा करने के लिए नहीं, बल्कि हमसे अपनी उग्र घृणा को शांत करने की इच्छा से; ताकि आत्मा, दुखों और दुर्भाग्यों के बोझ तले दबी हुई, दिव्य सहायता की हर आशा को त्याग दे, और गंभीर दुर्भाग्यों का प्रहार, पश्चाताप की ओर ले जाने के बजाय, ईश्वर के अस्तित्व पर ही विश्वास खोने का कारण बन जाए।

123. ईश्वर की अनुमति के बिना, स्वयं राक्षस भी शैतान की सेवा करने के लिए कुछ नहीं कर सकते। क्योंकि ईश्वर जानते हैं कि उपयुक्त दया और सद्-प्रबंध के साथ, शैतान को अपने सेवकों के माध्यम से, हमारे द्वारा किए गए पापों के लिए विभिन्न दंड देने की अनुमति कैसे दें। पवित्र शास्त्र आय्यूब के वृत्तांत में इसे स्पष्ट रूप से दर्शाता है, जिसमें लिखा है कि दानव दिव्य अनुमति के बिना आय्यूब को कुछ भी नहीं कर सकता था।

124. ईश्वर, भला होने के कारण और हम में से बुराई के बीज—अर्थात् सुख की वह लालसा जो मन को दिव्य प्रेम से वंचित करती है—को पूरी तरह से जड़ से उखाड़ फेंकना चाहते हैं, शैतान को हमें कष्ट और पीड़ाएँ पहुँचाने की अनुमति देता है: ताकि, इन कष्टों के माध्यम से, आत्मा अतीत की वासनाओं के विष से शुद्ध हो जाए और वर्तमान वासनाओं के प्रति घृणा और पूर्ण अरुचि से भर जाए, जो केवल इंद्रिय-सुख को तुष्ट करती हैं, – क्योंकि उनकी पिछली तृप्ति ने पीड़ादायक परिणामों के अलावा कुछ भी लाभकारी नहीं दिया: और ताकि, इस तरह से, शत्रु की सबसे अधिक यातना देने वाली और मानव-विरोधी शक्ति ही उन लोगों के लिए सद्गुण पर लौटने का निकटतम कारण बन जाए, जिन्होंने जानबूझकर उसके विरुद्ध पाप किया है।

125. जो ईश्वर की कृपा को रौंदने के कारण दुख भोगता है, यदि वह उस दैवीय व्यवस्था के उद्देश्य को पहचान ले जो उसे चंगा कर रही है, तो वह उस दुर्भाग्य को जो उस पर पड़ा है, कृतज्ञता और आनंद के साथ स्वीकार करेगा, और उस पाप को स्वेच्छा से सुधार लेगा जिसके लिए उसे दंडित किया जा रहा है; लेकिन जो कोई भी ऐसे उपचारात्मक इरादों के प्रति असंवेदनशील बना रहता है, वह न्यायसंगत रूप से उसे प्रदान की गई कृपा से वंचित हो जाता है और उसे उसके जुनून के उथल-पुथल के हवाले कर दिया जाता है, और उसे उसी को पूरा करने के लिए छोड़ दिया जाता है जिसके प्रति वह अंतर्निहित रूप से इच्छुक और आकांक्षी था।

126. जो कोई, ईश्वर की अनुमति से, अनैच्छिक प्रलोभनों द्वारा उस पर लाई गई एक दुखद पीड़ा के माध्यम से सुधार की ओर ले जाया जाता है, फिर भी उसे कृतज्ञता के साथ स्वीकार नहीं करता है, और, अहंकार के कारण—जिसके द्वारा वह खुद को धर्मी मानता है—पश्चाताप करने में देरी नहीं करता; ऐसा व्यक्ति, जो धर्मी न्याय के दैवीय आदेशों का विरोध करता है और जानबूझकर दैवीय आज्ञा से बेबीलोन के राजा के जुए के अधीन होने से इनकार करता

है, को बंदी बना लयिा जाता है, वह बेड़ियों और बंधनों, अकाल, मृत्यु और तलवार का शकिार होता है, और उसे अपनी भूमि से पूरी तरह से भगा दयिा जाता है। यह सब और इसी तरह की बहुत सी बातें उस व्यक्ति द्वारा सहन की जाती हैं, जो अपनी ही भूमि से, सदाचार और ज्ञान की भावना में अपनी अच्छी प्रकृति और आदत के वपिरीत, अपनी ही अनचि्छा, अहंकार और अपने पापों के प्रायश्चति के बारे में स्वयं की व्यर्थ राय के कारण नकिाल दयिा गया है, जो दवि्य प्रेरति के अनुसार, स्वेच्छा से चुनता है, *'क्लेशों में, अभावों में और संकटों में'* (2 कुरन्थियिों 12:10; 6:4)। महान प्रेरति जानते थे कि कठनि शारीरकि परस्थितियिों के माध्यम से बाहरी अपमान में आत्मा में दवि्य खजाने को संरक्षति रखने की शक्ति होती है; यही कारण है कि उसने उन्हें स्वेच्छा से सहा, अपने लिए भी और उन लोगों के लिए भी, जनिके लिए उसे अपने आप में वशि्वास और सद्गुण का एक उदाहरण प्रकट करना था; ताकि भले ही वे अपनी ही गलती से कुछ भी सहन करते हों, उस व्यक्ति की तरह जसि प्रायश्चति के लिए दयिा गया था, कोरंथियिों (1 कुरन्थियिों 5:5) के पास एक ऐसा व्यक्ति हो सकता था जसिने नरि्दोष होकर दुख उठाया हो, जो उनके लिए सांत्वना का स्रोत और अनुकरण करने के लिए उसके धैर्य का एक उदाहरण हो।

127. दवि्य प्रेरति पवति्र आत्मा के वभिनि्न कार्यों को वभिनि्न वरदानों के रूप में संदर्भति करते हैं, जो सभी एक ही आत्मा द्वारा प्रदान कएि गए हैं (1 कुरन्थियिों 12:4)। आत्मा का ऐसा प्रकट होना प्रत्येक व्यक्ति में मौजूद वशि्वास के अनुपात में, कसिी वशिेष वरदान में भागीदारी के माध्यम से प्रदान कयिा जाता है; अर्थात्, प्रत्येक वशि्वासी, अपने वशि्वास और उनके भीतर की आध्यात्मकि प्रवृत्ति के अनुसार, आत्मा का एक समानुपाती कार्य प्राप्त करता है, जो उन्हें एक या दूसरे आज्ञापालन को पूरा करने के लिए पर्याप्त प्रवृत्ति और शक्ति प्रदान करता है।

128. जैसे एक को बुद्धि का वचन, दूसरे को ज्ञान का वचन, तीसरे को वशि्वास, और चौथे को महान प्रेरति द्वारा सूचीबद्ध कोई अन्य वरदान प्राप्त होता है (1 कुरन्थियिों 12:8-12): वैसे ही एक को आत्मा के द्वारा परमेश्वर के लिए पूर्ण, प्रत्यक्ष प्रेम का वरदान प्राप्त होता है, जो कसिी भी भौतकि तत्व से रहति है, और यह उसके वशि्वास के अनुपात में होता है; दूसरा, उसी आत्मा के द्वारा, अपने पड़ोसी के प्रति पूर्ण प्रेम का वरदान प्राप्त करता है; और कोई अन्य, जैसा कि मैंने कहा है, उसी आत्मा के द्वारा कोई अन्य वरदान प्राप्त करता है; क्योंकि प्रत्येक के भीतर उसका अपना वरदान कार्य कर रहा है। क्योंकि प्रेरति आज्ञा को पूरा करने में सक्रयि और शक्तशिाली हर प्रवृत्ति को आत्मा का वरदान कहता है।

129. वशि्वास एक शक्ति है जो भीतर की सभी चीज़ों को सद्भावना की अवस्था में बनाए रखती है, या स्वयं सद्भावना है, जो वशि्वासी को उस ईश्वर के साथ एक अलौकिक, प्रत्यक्ष और पूर्ण मलिन प्रदान करती है, जसि पर वह वशि्वास करता है।

130. चूंकि मनुष्य, जो आत्मा और शरीर से मलिकर बना है, दो नयिमों—अर्थात्, शरीर के नयिम और आत्मा के नयिम—के अधीन है, जनिमें से शरीर के नयिम का प्रभाव संवेदी है, जबकि आत्मा के नयिम का प्रभाव मानसकि या आध्यात्मकि है; जसिके द्वारा देह का नयिम, कामुक रूप से कार्य करते हुए, आमतौर पर कसिी को पदार्थ से बाँधता है, जबकि आत्मा का नयिम, मानसकि या आध्यात्मकि रूप से कार्य करते हुए, ईश्वर के साथ एक तत्काल मलिन लाता है: इसलिए यह पूरी तरह से स्वाभावकि है कि जो कोई भी *'अपने हृदय में मनन नहीं करता'* (लूका 11:23)—अर्थात्, वशि्वास के द्वारा स्थापति परमेश्वर के साथ प्रत्यक्ष एकता को नहीं तोड़ता; ऐसा व्यक्ति, जो नरि्लपि्त है, और वास्तव में वशि्वास के द्वारा परमेश्वर के साथ एकता के कारण दैवीय बन गया है, *'इस पहाड़ से कहेगा: "यहाँ से उठकर वहाँ जा" और वह उठ जाएगा'* (मत्ती 17:20): इस कथन से यह स्पष्ट रूप से इंगति होता है कि देह का तर्क और नयिम वास्तव में भारी और हलिाने में कठनि हैं; जबकि हमारी प्राकृतकि शक्तयिों के लिए, वे पूरी तरह से अचल और अडगि हैं।

131. इंद्रयिों के माध्यम से अतर्कसंगत आत्म-संरक्षण की शक्ति या पशुता, मानव स्वभाव में इतनी गहराई से जड़ जमा चुकी है कि कई लोग मनुष्य को केवल मांस ही मानते हैं, जो केवल इस वर्तमान जीवन का आनंद लेने में ही सक्षम है।

132. प्रभु ने कहा: *'पहले परमेश्वर के राज्य और उसकी धार्मकिता को खोजो'* (मत्ती 6:33)—अर्थात्, सबसे पहले सत्य का ज्ञान, और फरि सदाचार के आचरण का सक्रयि अनुसरण—स्पष्ट रूप से दखिाया कि वशि्वासयिों को एक ही दैवीय ज्ञान को खोजना चाहिए और, उसे अपने कर्मों से सुशोभति करके, सदाचार को प्राप्त करना चाहिए।

133. चूँकि परमेश्वर और सदाचार के ज्ञान को प्राप्त करने के लिए वशि्वासी कई चीजों को खोजते हैं—जैसे: वासनाओं से मुक्ति, प्रलोभनों का धैर्यपूर्वक सामना, सदाचारों की समझ और उनसे संबंधति कर्मों के प्रकार, आत्मा

की देह की ओर झुकाव का त्याग, इंद्रियों की कामुक प्रवृत्ति का परहेज, सभी सृजित वस्तुओं से मन का पूर्ण विमोचन – और, सामान्य रूप से कहें तो, पाप और अज्ञानता से मुंह मोड़ने और ज्ञान तथा सद्गुण प्राप्त करने के लिए अनगिनत चीजें आवश्यक हैं: यह वही है जो प्रभु ने कहा: *'प्रार्थना में तुम जो कुछ भी मांगोगे, वह तुम्हें मिलेगा, यदि तुम्हारा विश्वास है'* (मत्ती 21:22), इस प्रकार यह व्यक्त करते हुए कि, सामान्य रूप से, वह सब कुछ जो ईश्वर की ज्ञान और सद्गुण में योगदान देता है—और वास्तव में केवल यही—धर्मपरायण लोगों को तर्क और विश्वास के साथ खोजना और माँगना चाहिए: क्योंकि यह सब हमारे लिए उद्धारकारी है, और प्रभु हमेशा इसे उन लोगों को प्रदान करते हैं जो उनसे माँगते हैं।

134. *'जीवन से जीवन तक एक सुगंध'* (2 कुरिन्थियों 2:16) प्रेरित थे, एक ओर तो एक आदर्श के रूप में जो विश्वासियों को सद्गुणों की सुगंध प्राप्त करने के लिए सक्रिय रूप से प्रयास करने के लिए प्रेरित करते थे, और दूसरी ओर एक प्रचारक के रूप में जो अनुग्रह के वचन के प्रति आज्ञाकारी लोगों को इंद्रिय जीवन से एक आध्यात्मिक जीवन की ओर ले जाते थे; *'मृत्यु की ओर ले जाने वाली मृत्यु की दुर्गंध'* वह उन लोगों के लिए था, जो अज्ञानता की मृत्यु से कूदकर अविश्वास की मृत्यु में डूब गए थे, और उसने उन्हें उनकी प्रतीक्षा कर रही निंदा का एहसास कराया।

135. आत्मा के भीतर तीन शक्तियाँ हैं: तर्कशील, उत्साही (ऊर्जावान) और कामनाशील। तर्कशील शक्ति के माध्यम से, हम जानने का प्रयास करते हैं कि क्या अच्छा है; कामनाशील शक्ति के माध्यम से, हम उस अच्छे की इच्छा करते हैं जिसे हम जान चुके हैं; और उत्साही शक्ति के माध्यम से, हम इसके लिए प्रयास और संघर्ष करते हैं। जो ईश्वर से प्रेम करते हैं, ये शक्तियाँ दिव्य सद्गुण और ज्ञान की ओर लगाते हुए—पहली से प्रथम की खोज करते हुए, दूसरी से द्वितीय की इच्छा करते हुए, और तीसरी से इसके लिए प्रयास करते हुए—अक्षय पोषण और दिव्य वस्तुओं का ज्ञान प्राप्त करते हैं जो मन को समृद्ध करता है।

136. ईश्वर, जिसने मानव स्वभाव की रचना की, और अपनी इच्छा से उसे अस्तित्व का वरदान दिया, उसने उसे उचित रूप से कार्य करने की शक्ति भी प्रदान की; इस शक्ति से मेरा तात्पर्य सद्गुणों के अभ्यास की प्रवृत्ति (झुकाव) से है, जो हमारे स्वभाव में स्वाभाविक रूप से निहित है और जो इसे धारण करने वाले की इच्छा के अनुसार कार्य में सचेत रूप से प्रकट होती है।

137. यदि कोई व्यक्ति केवल वस्तुओं के सुखद या अप्रिय होने के अनुसार उनके संवेदी, शारीरिक भेद पर ही निर्भर करे; तो, दैवी आज्ञा का उल्लंघन करके, वह भलाई और बुराई के ज्ञान के वृक्ष का हिस्सा बनता है, अर्थात्, इंद्रियवादी मौनता, या अतर्कशीलता का, जो केवल उसी को अच्छी तरह से अलग कर पाता है जो शरीर की अखंडता को बनाए रखने में सहायक होता है, और परिणामस्वरूप सुखद को अच्छा मान लेता है, और अप्रिय से बुरे के रूप में बचता है। यदि, तथापि, वह पूरी तरह से तर्कसंगत तर्क पर अडिग रहता है, जो स्पष्ट रूप से क्षणिक को शाश्वत से अलग करता है, तो, दिव्य आज्ञा का पालन करते हुए, वह जीवन के वृक्ष का, अर्थात् मन में निर्मित बुद्धि का, सेवन करता है, यह स्पष्ट रूप से भेद करने में सक्षम होना कि क्या आत्मा के मोक्ष के लिए उपयोगी है, और परिणामस्वरूप शाश्वत आशीर्वादों की महिमा को अच्छा मानना, जबकि क्षणिक आशीर्वादों की क्षणभंगुरता को बुरा ठहराना।

138. मन के लिए अच्छा आध्यात्मिकता की ओर एक निर्लिप्त प्रवृत्ति है, जबकि बुराई इंद्रियों की ओर एक कामुक प्रवृत्ति है। हालाँकि, इंद्रियों के लिए अच्छा कामुक इच्छा की संतुष्टि से उत्पन्न शरीर की ओर एक तीव्र प्रवृत्ति है, जबकि बुराई उससे वंचित होने के परिणामस्वरूप एक अप्रिय स्थिति है।

139. अंगूर से शराब बनती है; शराब नशा कराती है; नशा विक्षिप्तता (जो बुरा है—बुद्धि का अस्थायी क्षय) की ओर ले जाता है। क्या सक्रिय मन के साथ भी ऐसा ही नहीं है—जिसे एक बेल, , से उपमित किया जा सकता है—कि जब इसे सद्गुणों द्वारा संवारा जाता है, तो यह ज्ञान को जन्म देता है, और ज्ञान एक अच्छी समाधि को जन्म देता है, जो मन को इंद्रियों के बंधनों से मुक्त करती है?

140. इंद्रिय वस्तुओं के विचारों के साथ, दुष्ट व्यक्ति चालाकी से उनके बाहरी रूपों और आकृतियों की कल्पनाएँ डालता है, जिनके माध्यम से उन वस्तुओं की कामुक इच्छाएँ आमतौर पर केवल उनके बाहरी रूप के आधार पर जागृत होती हैं, जब हमारी तर्कसंगत गतिविधि मानसिक और आध्यात्मिक की ओर अपनी यात्रा में रुक जाती है। (या माध्यम से) बीच में स्थित इंद्रिय के द्वारा। यहीं पर शत्रु आत्मा को भ्रष्ट करने में सफल हो जाता है, और उसे भावुक उथल-पुथल में डुबो देता है।

141. ईश्वर का वचन प्रकाश और अग्नि है, क्योंकि यह स्वाभाविक विचारों को प्रबुद्ध करता है और अस्वाभाविक विचारों को भस्म कर देता है; ठीक वैसे ही जैसे यह उन लोगों के लिए इंद्रिय जीवन के अंधकार को दूर करता है, जो आज्ञाओं के पालन के माध्यम से, आशा किए गए बेहतर जीवन के लिए प्रयास करते हैं, जबकि जो लोग

स्वेच्छा से, देह के प्रेम के कारण, (इंद्रयि) जीवन की इस अंधेरी रात से चपिके रहते हैं, उन्हें न्याय और नदिा की अग्नि द्वारा दंडति कयिा जाता है।

142. हमारे मन की शक्ति स्वभाव से ही देहधारी और अदेह प्राणयिों को जानने में सक्षम है; लेकनि पवत्रि त्रमिूर्ति के संबंध में, उसे ज्ञान केवल अनुग्रह से ही प्राप्त होता है, यह केवल यह मानकर कविह अस्तत्वि में है, लेकनि कसिी भी तरह से यह जानने की हम्मित नहीं करता कविह स्वभाव से क्या है, जैसा कदिैवीय मन करता है।

143. वश्विास की पवत्रि दृष्टि से भवषि्य के आशीर्वादों की महमिा को देखकर, कोई स्वेच्छा से अपना देश, अपना कुल और अपने पति का घर छोड़ने की आज्ञा का पालन करता है, और शरीर के प्रति सभी सहानुभूति और लगाव को त्याग देता है, संवेदना और जो कुछ भी इंद्रयि है; और यदि इस संसार से कोई प्रलोभन उत्पन्न होता है, तो वह मांस के ऊपर बना रहता है, उसने मांस के ऊपर अपने बुलावे के कारण को चुना है, ठीक वैसे ही जैसे महान अब्राहम ने इसहाक के ऊपर ईश्वर को चुना था (उत्पत्ति 22:1 आदि)।

144. जो कोई भी सदाचार का अभ्यास करने और दवि्य शास्त्रों का अध्ययन करने का प्रयास करता है, न तो महमिा के लिए, न लालच से, न चापलूसी या मनुष्यों को खुश करने की इच्छा से, न ही दखिावे के लिए (1 थस्सि. 2:3-5), बल्कि जो कुछ भी करता है, बोलता है और सोचता है वह सब ईश्वर के लिए करता है, ऐसा व्यक्ति समझदारी से सत्य के मार्ग पर चलता है।

145. जो कोई उपवास करता है और उन सभी खाद्य पदार्थों से परहेज़ करता है जो वासनाओं को भड़काते हैं, और आत्मा को पापी प्रवृत्तयिों से मुक्त करने में योगदान दे सकने वाली कई अन्य चीजें करता है, वह उस मार्ग की तैयारी करता है जसिके बारे में कहा गया है (लूका 3:4): *'प्रभु का मार्ग तैयार करो'*। लेकनि जो कोई भी अहंकार, या लालच, या चापलूसी और मनुष्यों को प्रसन्न करने की इच्छा, या परमेश्वर को प्रसन्न करने के अलावा कसिी अन्य कारण से इस तरह का जीवन अपनाता है, वह *'परमेश्वर के धर्मी मार्गों पर नहीं चलता*: वे मार्ग तैयार करने का श्रम तो करते हैं, फरि भी उन्हें इस योग्य नहीं समझा जाता कि परमेश्वर इस मार्ग पर चलें।

146. जो व्यक्ति सच्चे जीवन के लिए स्वयं को समर्पति कर देता है, यह जानते हुए कि हर क्लेश, चाहे वह स्वेच्छा से हो या अनच्छिा से, *'मृत्यु की माता— कामवासना' के लिए* मृत्यु है (याकूब 1:15), तीव्र, अनैच्छकि प्रलोभनों के हर सामना को आनंद और प्रसन्नता के साथ स्वीकार करता है, और धैर्यपूर्वक इन कष्टों को सहज और आसान मार्गों में बदल देता है – उच्च बुलावा (Phil. 3:14) के सम्मान के लिए, जो उसे त्रुटहीन रूप से मार्गदर्शन करती है जब वह भक्तिपूर्वक दैवीय मार्ग का अनुसरण करता है। क्योंकि मृत्यु की माता वासना है; और वासना की मृत्यु क्लेश है, चाहे वह स्वेच्छा से हो या अनच्छिा से।

147. जसिने भी संयम के द्वारा कामवासना को वश में कयिा है—जो अत्यंत टेढ़ी-मेढ़ी और जटलि है, और सभी इंद्रयिों के साथ गहराई से गुंथी हुई है—उस *ने 'टेढ़ी राहों को सीधी कर ली है'*; और रास्ते में आने वाली असहनीय और क्रूर पीड़ाओं को सहकर, ऊबड़-खाबड़ रास्तों को समतल कर दयिा है। क्योंकि सदाचार के पुरस्कार स्वरूप और उसके लिए कएि गए प्रयासों के फलस्वरूप—जन्हिें उसने सही और वैध रूप से कयिा, सदाचार की लालसा से कामवासना पर वजिय प्राप्त की, और सत्य के प्रेम से दुखों के दर्द को दबाया—और दोनों ही मामलों में दवि्य कार्यों को वीरतापूर्वक पूरा कयिा, *वह*, जैसा लखिा है, *'परमेश्वर का उद्धार देखेगा'* (यशायाह 40:5)।

148. आत्म-संयम के द्वारा स्वेच्छा से उत्पन्न होने वाले जुनूनों—अर्थात् कामवासना की प्रवृत्तयिों—के उतार-चढ़ाव को सीधा करके, और धैर्य के द्वारा अनैच्छकि प्रलोभनों—अर्थात् वभिन्नि प्रकार की पीड़ाओं—के तीव्र उतार-चढ़ाव को सहज बनाकर, और मार्गों को समतल करके, यह व्यक्ति वास्तव में *'ईश्वर का उद्धार* देखेगा' , हृदय से शुद्ध होकर; ऐसा व्यक्ति, सद्गुणों और भक्तिपूर्ण मनन के द्वारा, संघर्षों और परश्रिमों के अंत में ईश्वर को देखता है, प्रभु के वचन के अनुसार: *'धन्य हैं हृदय से शुद्ध, क्योंकि वे परमेश्वर को देखेंगे'* (मत्ती 5:3), और सदाचार के अभ्यास में अपनी मेहनत के इनाम के रूप में, नर्लिप्तिता की कृपा प्राप्त करते हैं, जसिके बनिा कोई भी परमेश्वर को नहीं देखेगा।

149. जब तक मन ईश्वर की जीवंत स्मृति बनाए रखता है, यह चतिन के माध्यम से प्रभु की खोज करता है (भजन संहति 26:4, 8), लेकनि केवल इस तरह नहीं, बल्कि *'प्रभु के भय में'* (2 इतहिास 26:5), अर्थात् आज्ञाओं का पालन करके। क्योंकि जो कोई इस पूर्ति के बनिा प्रभु की खोज करता है, वह उन्हें नहीं पाता, क्योंकि उसने प्रभु की खोज प्रभु के भय में नहीं की। *'और प्रभु उसे समृद्धि देगा'* (वही); क्योंकि प्रभु हर उस व्यक्ति को समृद्धि देता है जो समझदारी से सही काम करता है , उसे वभिन्नि सद्गुण सखिाता है और उसे सृजति वस्तुओं का सच्चा अर्थ प्रकट करता है।

150. विश्वास, आशा और प्रेम के बिना, जैसे हमारे भीतर कोई भी बुराई पूरी तरह से समाप्त नहीं होती, वैसे ही हमारे भीतर कोई भी अच्छाई पूरी तरह से स्थापित नहीं होती। विश्वास संघर्षरत मन को ईश्वर की ओर मुड़ने के लिए मनाता है और इस आश्वासन के माध्यम से उसे साहस के लिए प्रेरित करता है कि सभी आध्यात्मिक हथियार उसकी पहुँच में हैं; आशा दिव्य सहायता की एक अचूक गारंटी के रूप में कार्य करती है, जो विरोधी शक्तियों के विनाश का वादा करती है; और प्रेम मन को उसके दिव्य संबंध से अलगाव-रोधी—वास्तव में, पूरी तरह से अविभाज्य—बना देता है, यहाँ तक कि उसी संघर्ष के बीच में भी, और उसकी प्रवृत्ति की सारी शक्ति को दिव्य के प्रति लालसा से बाँध देता है।

151. विश्वास संघर्षरत मन को सांत्वना देता है, उसे सहायता की निश्चितता से प्रेरित करता है; आशा, आँखों के सामने सुनिश्चित सहायता प्रस्तुत करके, विरोधियों के हमलों को दूर भगाती है; और प्रेम, ईश्वर-प्रेमी मन के लिए शत्रुओं के हमलों को मृत (या निष्प्रभावी) बना देता है, और ईश्वर की ओर अपनी तीव्र आकांक्षा के माध्यम से उसे पूरी तरह से शक्तिहीन कर देता है।

१५२. स्वयं ईश्वर की ओर मुड़ना, दिव्य आशा की पूर्ण हार्दिक स्वीकृति का स्पष्ट प्रमाण है, जिसके बिना किसी में या किसी भी कारण से, ईश्वर के प्रति कभी कोई आकांक्षा नहीं होती: क्योंकि आशा का स्वभाव ही है कि वह भविष्य को वर्तमान के रूप में सामने रखती है और विरोधी की शक्ति से संघर्ष कर रहे लोगों को यह आश्वासन देती है कि जो ईश्वर उनकी रक्षा करते हैं, वे किसी भी तरह से उनसे दूर नहीं हो रहे हैं—जिनके लिए और जिनकी खातिर संत युद्ध में लगे रहते हैं। क्योंकि किसी अपेक्षा के बिना—चाहे वह कठिन हो या आसानी से पूरी होने वाली—कोई भी कभी भलाई की ओर नहीं मुड़ता।

१५३. प्रत्येक मन, जो दिव्य शक्ति से घिरा होता है, में, मानो, कुछ वृद्धजन और राजकुमार होते हैं: – *'विचार की शक्ति'*, जिसमें तर्कसंगत विश्वास उत्पन्न होता है, जो मनुष्य को हमेशा ईश्वर के अनुपम गुणों पर मनन करने और भविष्य की आशीर्वादों की आशा में आनंदित होने, मानो वे वर्तमान में हों, सिखाती है; – *'इच्छा शक्ति'*, जिसमें दिव्य प्रेम स्थापित होता है, जो इच्छा को परम दिव्यता की चाह से बाँधती है और उस इच्छा के विषय के प्रति झुकाव को दृढ़ता से थामे रखती है; – और *'प्रेरणा शक्ति'*, जिसमें दिव्य शांति दृढ़ता से स्थापित होती है, जो इच्छा की सभी गतिविधियों को दिव्यता के प्रति प्रेम की ओर निर्देशित करती है। प्रत्येक मन में ये शक्तियाँ बुराई के उन्मूलन और सद्गुणों के संवर्धन और संरक्षण में सहयोगी के रूप में विद्यमान हैं।

१५४. जिसने पहले स्वयं को वासनाओं से शुद्ध नहीं किया है, उसे प्राकृतिक वस्तुओं के चिंतन में नहीं लगना चाहिए, क्योंकि इंद्रिय वस्तुओं की छवियाँ मन को—जो वासनाओं से पूरी तरह मुक्त नहीं हुआ है—वासना में खींच सकती हैं। क्योंकि जो मन इंद्रियों में लिप्त रहने के कारण, लंबे समय तक अपनी कल्पनाओं में इंद्रिय वस्तुओं के आवरणों पर टिका रहता है, वह अशुद्ध भावों का स्रोत बन जाता है और उन मानसिक वस्तुओं की ओर मुड़ने की शक्ति से वंचित हो जाता है जिनसे उसका संबंध है।

१५५. जो व्यक्ति, वासनाओं के उदय के समय, साहसपूर्वक इंद्रियों को नियंत्रित करता है, दिन-दहाड़े की कल्पनाओं और इंद्रिय वस्तुओं की स्मृति को पूरी तरह से दूर करता है, और मन की उन प्राकृतिक प्रवृत्तियों को पूरी तरह से दबा देता है जो उससे परे की चीज़ों की जाँच करने के लिए होती हैं: वह व्यक्ति, दैवी कृपा की मदद से, अपने विरुद्ध उठे वासनाओं और शैतान की दुष्ट और अत्याचारी हिंसा को विजयपूर्वक लज्जित कर देगा।

156. जब मन विक्षिप्त हो जाता है, क्रोध अनियंत्रित हो जाता है, कामवासना पशुवत हो जाती है, और परिणामस्वरूप, अज्ञानता, हठ और शर्मनाक प्रवृत्तियाँ आत्मा पर हावी हो जाती हैं: तब पापी आदत विभिन्न कामुक सुखों से जुड़ी हुई, जोर-शोर से प्रकट होती है।

१५७. एक ऐसा मन जिसने बुद्धिमानी से अदृश्य लड़ाइयों या टकरावों (अदृश्य शत्रुओं से) से बचना सीख लिया है, उसे दुष्ट शक्तियों के हमले के दौरान न तो स्वाभाविक तर्क-वितर्क में लगना चाहिए और न ही कुछ और करना चाहिए, बल्कि केवल प्रार्थना करनी चाहिए, शरीर को परिश्रम से थकाना चाहिए, भौतिक कल्पनाओं को लगन से दबाना चाहिए, और शहर की दीवारों की रक्षा करें—अर्थात् आत्मा के प्रहरी सद्गुण, या सद्गुण को बनाए रखने के साधन, अर्थात् संयम और धैर्य; ताकि शत्रु किसी भी प्रकार से आत्मा को अपनी चालाकी से धोखा न दे और उसकी प्रवृत्ति को अपने पक्ष में न खींच ले, जिससे वह उसे *'धुंधली भ्रष्टता' से* पोषित करके ईश्वर से विमुख कर दे। (अवвакуम 2:15), और एक झूठे भले से, जो बेहतर की खोज करता है, उसे बुरे की ओर न ले जाए।

१५८. जिसने भी, विवेकी और सर्व-व्यापी संयम और धैर्य के द्वारा, वीरतापूर्वक इंद्रियों को वश में किया है, और आत्मा की शक्तियों के द्वारा मन में संवेदी प्रतिमाओं के प्रवेश को रोका है; ऐसा व्यक्ति शैतान की सभी दुष्ट

योजनाओं को प्रभावी ढंग से विफल कर देता है, और उसे *'जिस मार्ग से वह आया था उसी मार्ग से'* शर्मिंदा होकर वापस लौटने पर मजबूर कर देता है (2 राजा 19:33)।

१५९. जो कोई भी, प्रलोभनों के आक्रमण के दौरान, सांसारिक चीजों के विचारों से परहेज़ करता है, बल्कि अपने मन को सभी चीजों से हटाकर स्वयं और ईश्वर में केंद्रित करके प्रार्थना में स्वयं को समर्पित करता है, वह पापी प्रवृत्ति को मार डालता है, और इस प्रकार , उस शैतान को शर्म के साथ भागने पर मजबूर कर देता है, जो उक्त प्रवृत्ति को भड़काता है; यही वह आशा है जिसके साथ वह अपनी प्रथागत धृष्टता से आत्मा के पास आता है, गर्व के विचारों के साथ सत्य के विरुद्ध उठता है: क्योंकि महान दाऊद ने भी, बहुत कुछ जानने, सहने और पूरा करने के बाद, और सभी मानसिक युद्धों के क्रम से अनुभव द्वारा अच्छी तरह से परिचित होकर, कहा: *'जब दुष्ट मेरे विरुद्ध उठे, तो मैं मूक हो गया और लज्जित हो गया, और मैं अपनी आशीषों के विषय में चुप रहा'* (भजन संहिता 38, 2:3); और उनके बाद दिव्य यिर्मयाह, जिन्होंने लोगों से आज्ञा दी, *'मैदानों में न निकलना, और न ही सड़कों पर चलना, क्योंकि शत्रु की तलवार आस-पास मंडरा रही है'* (यिर्म. 6:25)।

१६०. स्वाभाविक इच्छाएँ और सुख उन लोगों पर कलंक नहीं लगाते जो उनका अनुभव करते हैं, क्योंकि वे हमारी प्रकृति की संरचना के आवश्यक परिणाम हैं। क्योंकि प्रकृति हमें सुख प्रदान करती है, यहाँ तक कि हमारी इच्छा के विरुद्ध भी—जैसे भोजन जो हाथ लग जाता है, जो पहले की भूख को शांत करता है, – और वह पेय जो प्यास की तड़प बुझाता है, – और वह नींद जो जागने से हुई कमज़ोरी को दूर करती है, – और हर वह चीज़ जो हमारी प्राकृतिक ज़रूरतों के अनुसार हमें प्राप्त होती है, जो हमारी प्रकृति की भलाई के लिए आवश्यक है, और सद्गुणों के उत्साही प्राप्तकर्ताओं के लिए गुणों की प्राप्ति में उपयोगी है। ऐसी सभी चीजें किसी भी ऐसे व्यक्ति के लिए उपयुक्त हैं जो पापी प्रवृत्तियों से बचता है, बशर्ते कि वे उचित सीमाओं के भीतर हों, जो हमें उन निंदनीय और अस्वाभाविक जुनूनों की दासता में पड़ने से रोकती हैं जो हमारे भीतर मनमाने ढंग से उत्पन्न होते हैं, जिनकी हमारे भीतर कोई अन्य उत्पत्ति नहीं है। सिवाय प्राकृतिक आवश्यकताओं और इच्छाओं से प्रेरित मन की अनियंत्रित गति के, जो हमें अमर और शाश्वत जीवन की ओर ले जाने के उद्देश्य से स्वाभाविक नहीं हैं।

161. परम शुभ का यह कार्य है कि उसने न केवल तर्कशील प्राणियों के दैवी और अदेह स्वभाव को अनुपम दैवी महिमा के प्रतिबिंब के रूप में बनाया है—जैसे प्राणी जो अपनी क्षमता के अनुसार, अगम्य सौंदर्य की सभी अकल्पनीय भव्यता को ग्रहण करने में सक्षम हैं— बल्कि इंद्रिय प्राणियों पर भी अपनी महानता के स्पष्ट निशान अंकित किए हैं—जो कई मायनों में बौद्धिक प्राणियों से पीछे हैं—ऐसे निशान जो मानव मन को, जब वह उनमें गहराई से उतरता है, सीधे ईश्वर तक ले जाने में सक्षम हैं, उसे सब कुछ दृश्यमान से ऊपर उठाते हुए, मानो उसे परम आनंद के क्षेत्र में प्रवेश करा रहे हों।

१६२. कर्ता की क्रियाशील बुद्धि उसे वासनाओं से ऊपर उठाती है, जबकि ज्ञानी की चिंतनशील बुद्धि उसे दृश्यमान सभी चीजों से ऊपर स्थापित करती है, और उसके मन को उससे मिलती-जुलती वस्तुओं की ओर उठाती है (४, १००)।

१६३. ज्ञान का कर्म के साथ मिलन, और कर्म का ज्ञान के साथ मिलन, ईश्वर का सिंहासन और उसके चरणों का पादपीठ बनता है: सिंहासन ज्ञान के द्वारा, पादपीठ कर्म के द्वारा। यदि, तब, कोई ऐसे मानवीय मन को 'स्वर्ग' कहे—जो भौतिक दुनिया के बारे में सभी कल्पनाओं से शुद्ध हो और हमेशा, या यूँ कहें कि, दिव्य के निस्स्वार्थ विचारों से सुशोभित हो—तो मुझे लगता है कि वे सत्य की सीमाओं से परे नहीं भटक रहे होंगे।

164. किसी भी वासना की गति का आरंभ बिंदु आमतौर पर उससे अंतर्निहित कोई इंद्रिय वस्तु होती है। क्योंकि ऐसी वस्तु के बिना, जो किसी इंद्रिय के माध्यम से आत्मा की शक्तियों को अपनी ओर आकर्षित करे, एक भावुक गति कभी उत्पन्न नहीं होगी; क्योंकि एक इंद्रिय वस्तु के बिना कोई वासना नहीं हो सकती। यदि पत्नी न होती, तो व्यभिचार न होता; यदि भोजन न होता, तो अतिभक्षण न होता; यदि सोना न होता, तो सोने के प्रति मोह न होता। इस प्रकार, हमारी स्वाभाविक शक्तियों की हर भावुक गति का स्रोत एक इंद्रिय वस्तु, या एक राक्षस है, जो इसके माध्यम से आत्मा को पाप करने के लिए उकसाता है।

165. ईश्वर और मनुष्य के बीच इंद्रिय वस्तुएँ और मन द्वारा चिंतित वस्तुएँ खड़ी हैं। मानव मन, ईश्वर तक पहुँचने की इच्छा रखते हुए, सक्रिय जीवन में इंद्रिय वस्तुओं का दास नहीं बनना चाहिए, और न ही ध्यान के जीवन में मानसिक वस्तुओं द्वारा किसी भी तरह से रोका जाना चाहिए।

१६६. ईश्वर का क्रोध एक पीड़ादायक अनुभूति है जो उपदेश प्राप्त करने वालों द्वारा अनुभव की जाती है; और यह पीड़ादायक अनुभूति जीवन में अनैच्छिक कठिनाइयों के आने से होती है, जिनके माध्यम से ईश्वर अक्सर उस मन को—जो सद्गुण और ज्ञान से घमंडी हो गया है—विनिम्रता और नम्रता की ओर ले जाते हैं, जिससे वह स्वयं को

जान सके और अपनी कमजोरी को पहचान सके; इस कमजोरी को महसूस करने के बाद, वह हृदय के व्यर्थ गर्व को त्याग देता है।

167. प्रभु का क्रोध दिव्य वरदानों को सीमति करना या रोकना है, जो (रोकना) हर उस मन के लाभ के लिए है जो अपने आप को बड़ा समझता है और उन आशीर्वादों पर घमंड करता है जो ईश्वर ने उस पर प्रदान किए हैं, मानो वे उसके अपने गुणों का फल हों।

168. घटनाओं के क्रम में दैवीय, वास्तव में, परमेश्वर की व्यवस्था की सीमा और नियम यह है कि वह इस तरह से दंड दे कि वह दुर्भाग्यों के माध्यम से उन लोगों को कृतज्ञता सिखाए, जो बेहतर स्थिति में रहते हुए कृतघ्न साबित हुए, और वर्तमान कष्टों की परीक्षा को उनकी पिछली समृद्धि में काम कर रही दैवीय शक्ति की पहचान का मार्ग बना दे: अन्यथा, यदि परमेश्वर हमें हमारे भीतर मौजूद अच्छाई पर बिना किसी बाधा के गर्व करने की अनुमति दे, तो हम निश्चित रूप से अधर्मी घमंड में पड़ जाएँगे, यह कल्पना करते हुए कि सद्गुण और ज्ञान की प्राप्ति हमारी अपनी प्राकृतिक शक्तियों से होती है, न कि अनुग्रह से।

१६९. जो कोई यह कल्पना करता है कि वह पहले ही सद्गुण के शिखर पर पहुँच चुका है, वह अब सभी भलाई के स्रोत की खोज नहीं करेगा, और भलाई में उत्कृष्टता प्राप्त करने की शक्ति को केवल स्वयं में ही मान लेगा, और इस प्रकार स्वयं को मोक्ष की पुष्टि और सुरक्षा - अर्थात् ईश्वर - से वंचित कर लेगा। लेकिन जो कोई अपने भीतर भलाई के लिए शक्ति की स्वाभाविक कमी महसूस करता है, वह अपनी कमी को पूरा करने के लिए सर्वशक्तिमान की ओर दौड़ना कभी बंद नहीं करता।

170. धार्मिक क्रोध उस मन पर आता है जो अपने बारे में अत्यधिक बुद्धिमान है—अर्थात्, जब उसे त्याग दिया जाता है, या उसे कर्म और विचार दोनों में राक्षसों के हमलों को सहने की अनुमति दी जाती है; ताकि इसके माध्यम से वह अपनी स्वाभाविक कमजोरी को महसूस कर सके और ईश्वर की शक्ति और अनुग्रह के प्रति सचेत हो सके, जो उसे घेरे हुए हैं और उसके भीतर सब कुछ अच्छा करते हैं, और उस कृत्रिम और पराई घमंड को अपने से दूर करके स्वयं को नम्र बना सके, अन्यथा उस पर एक और क्रोध आ पड़ेगा—पूर्व में प्रदान किए गए वरदानों को वापस लेने का क्रोध।

171. जो व्यक्ति क्रोध के प्रथम प्रकटीकरण—अर्थात् परित्याग—पर होश में नहीं आया और कृतज्ञता का अच्छा शिक्षक मानकर स्वयं को नम्र नहीं बनाया, वह एक अन्य क्रोध का सामना करता है जो उस पर आता है, जो उसके पूर्व के वरदानों का प्रभाव छीन लेता है और उसे उस शक्ति से वंचित कर देता है जिसने अब तक उसकी रक्षा की थी। क्योंकि अकृतज्ञ इस्राएल के विषय में परमेश्वर इस प्रकार कहते हैं, उसे एक बेल की नाति में प्रस्तुत करते हुए: *'मैं उसकी बाड़ हटा दूँगा, और वह लूट ली जाएगी; मैं उसकी दीवार तोड़ डालूँगा, और वह रौंदी जाएगी; और मैं अपनी दाख की बारी को छोड़ दूँगा; न तो उसकी छाँट होगी और न उसकी जोताई, और उसमें जंगली भूमि की तरह काँटे उगेंगे; और मैं बादलों को आज्ञा दूँगा कि उस पर वर्षा न करें'* (यशायाह 5:5-6)।

172. एक और मार्ग है जो दुष्टता की ओर ले जाता है: सद्गुण के ह्रास के प्रति उदासीनता। क्योंकि जो ईश्वर की अवज्ञा करने (उनके आज्ञाओं की अवहेलना करके) का आदी है, वह परिस्थितियाँ जब ऐसा करने के लिए मजबूर करें (आज्ञाओं के प्रति वफादारी पर मृत्यु की धमकी देकर) तब स्वयं ईश्वर का भी त्याग कर देगा: क्योंकि वह ईश्वर से अधिक सांसारिक जीवन को प्राथमिकता देता है और हृदय की भावनाओं में सांसारिक सुखों को सभी दैवी आज्ञाओं से श्रेष्ठ मानता है।

173. एक ईश्वर-प्रेमी और सदाचारी व्यक्ति, जैसे हिजकिय्याह, जिसने बुद्धिमानी से खुद को राक्षसों के विरुद्ध शक्ति से सुसज्जित किया है, यदि वह कभी खुद को दुष्ट आत्माओं से घिरा हुआ पाए जो उसके मन में एक अदृश्य लड़ाई लड़ रही हों, और यदि, प्रार्थना के द्वारा, उसे परमेश्वर से स्वर्ग से भेजा गया एक स्वर्गदूत—अर्थात्, महान बुद्धि का एक वचन—प्राप्त होता है, और इस पूरी शैतानी सेना को कुचलकर बिखेर देने के बाद भी, वह ऐसी विजय और उद्धार का कारण परमेश्वर को नहीं मानता, बल्कि केवल स्वयं को मानता है; – ऐसा व्यक्ति ईश्वर को उनका उचित स्थान नहीं देता (2 इतिहास 32:25), क्योंकि वह उद्धार की महानता को प्रचुर धन्यवाद के साथ मेल करने में, और परोपकारी की दया के साथ अपनी ओर से सद्भावना को तौलने में विफल रहता है।

174. आइए हम दिव्य अंतर्दृष्टि से मन को प्रबुद्ध करें, और इन अंतर्दृष्टियों के अनुरूप शिष्टाचार से शरीर को सुशोभित करें, और इसे, वासनाओं के त्याग के माध्यम से, सद्गुणों का एक तर्कसंगत पात्र बनाएं। क्योंकि शरीर में अंतर्निहित वासनाओं को, जब विवेक द्वारा नियंत्रित किया जाता है, तो उनकी निंदा नहीं की जानी चाहिए; लेकिन जब उनकी गति को इस नियंत्रण के बिना आगे बढ़ने दिया जाता है, तो वे निंदा का कारण बनती हैं। इसीलिए कहा जाता

है कि ऐसी वासनाओं को अस्वीकार कर देना चाहिए—ऐसी वासनाएँ जिनकी गति स्वाभाविक है, लेकिन जिनका प्रयोग अक्सर अस्वाभाविक होता है, क्योंकि वे विवेक द्वारा नियंत्रित नहीं होती हैं।

175. जो अपनी प्राप्त की हुई वरदानों के कारण मन में घमण्डी और अहंकारी हो गया है, *'जैसे कि उसने उन्हें प्राप्त ही न किया हो'* (1 कुरिन्थियों 4:7), वह उस क्रोध का न्यायसंगत रूप से अनुभव करता है जो उस पर निर्देशित है जब परमेश्वर शैतान को उसे अपने विचारों में उलझाने की अनुमति देता है, ताकि उसकी सद्गुण की सक्रिय सिद्धांतों को हिलाया जा सके और उसकी स्पष्ट मानसिक समझ पर धुंध छा जाए, ताकि, अपनी कमजोरी का एहसास करने के बाद, यह पहचान सके कि वह शक्ति कहाँ निहित है जो अकेले ही हमारे जुनून पर काबू पाती है, और, पश्चाताप करके और स्वयं को नम्र बनाकर, आत्म-दंभ के गर्व को त्याग सके, इस प्रकार परमेश्वर को प्रसन्न कर सके कि वह उससे वह क्रोध हटा ले जो आमतौर पर अविश्वासियों पर पड़ता है—एक ऐसा क्रोध जो उस अनुग्रह को वापस ले लेता है जो आत्मा की रक्षा करता है और कृतघ्न मन को खाली छोड़ देता है।

176. कोई भी तब तक ईश्वर को सच्चे अर्थ में धन्य नहीं कह सकता जब तक उसने शरीर को सद्गुणों से पवित्र और आत्मा को सच्चे ज्ञान से प्रकाशित न किया हो। सद्गुणों की ओर झुकाव चिंतनशील मन का वह मुख है, जो सच्चे ज्ञान की ऊँचाइयों तक उठाया गया हो।

177. धन्य है वह जिसने यह सच्चाई से जान लिया है कि ईश्वर, हमारे भीतर और हमारे अंगों के भीतर, हर कर्म और चिंतन, सद्गुण और ज्ञान, विजय और बुद्धिमत्ता, अच्छाई और सत्य को पूरा करता है, ताकि हम इसमें अपनी ओर से बिल्कुल भी योगदान न दें, सिवाय एकमात्र अच्छाई की इच्छा करने वाले स्वभाव के; जिसके होने पर, महान ज़ोरोबबेल ईश्वर से कहते हैं: *'धन्य हैं आप, जिन्होंने मुझे बुद्धि दी है; और आप, हे प्रभु ईश्वर, हमारे पूर्वजों के पिता, आपको हम धन्यवाद देते हैं। आपसे विजय आती है, और आपसे बुद्धि, और आपकी महिमा; और मैं आपका सेवक हूँ'* (2 एस्द्रास 4, 60–59). एक सच्चे कृतज्ञ सेवक के रूप में, उसने सभी चीजों के दाता, ईश्वर को ही सब कुछ श्रेय दिया; उनसे प्राप्त करके, उसके पास बुद्धि थी; और अपने स्वीकारोक्ति में उसने उन पर प्रदान की गई सभी आशीर्वादों की सारी शक्ति को उसी को श्रेय दिया, जो, जैसा कि कहा गया है, विजय और बुद्धि, सद्गुण और ज्ञान, कर्म और चिंतन, अच्छाई और सत्य का संयोजन हैं: क्योंकि, एक-दूसरे के साथ मिलकर, वे ईश्वर की एकमात्र महिमा और वैभव की किरणें बिखेरते हैं।

178. संतों के सभी पूर्ण गुण स्पष्ट रूप से ईश्वर की देन थे, ताकि कोई भी व्यक्ति उस अनुग्रह के अलावा कुछ भी न रखे, जिसे ईश्वर स्वयं, सभी के स्वामी के रूप में, प्राप्तकर्ता की कृतज्ञता और सद्भावना की डिग्री के अनुसार मापते हैं, जो केवल उसी का स्वामी बना रहता है जो ईश्वर को समर्पित है।

179. हम में से प्रत्येक, हम में निहित विश्वास के अनुपात में, आत्मा का प्रकट कार्य प्राप्त करता है: ताकि प्रत्येक व्यक्ति अपने लिए अनुग्रह का वितरक बन जाता है। यही कारण है कि कोई भी बुद्धिमान कभी भी किसी दूसरे से ईर्ष्या नहीं करेगा जो प्रचुर रूप से धन्य है, क्योंकि यह उन पर ही निर्भर है कि वे उस स्वभाव को प्राप्त करें जो दिव्य आशीर्वादों को ग्रहण करने का निर्धारण करता है।

180. दिव्य आशीर्वादों के प्रदान में अंतर का कारण प्रत्येक व्यक्ति के विश्वास की मात्रा में निहित है (रोमियों 12:6); और जैसा हम विश्वास करते हैं, उसी के अनुसार, हम में विश्वास की भावना से कार्य करने के लिए उत्साही तत्परता होती है। इस प्रकार, जो (विश्वास के आत्मा में) कार्य करता है, वह अपनी गतिविधि के माप से अपने विश्वास का माप प्रदर्शित करता है, और उस हद तक अनुग्रह प्राप्त करता है जिस हद तक उसने विश्वास किया है। जबकि जो इस प्रकार कार्य नहीं करता है, वह अपनी निष्क्रियता के माप से अपने अविश्वास का माप प्रदर्शित करता है, और उस हद तक अनुग्रह से वंचित रहता है जिस हद तक वह अविश्वास के आगे झुक गया है। तो फिर, ईर्ष्यालु व्यक्ति उन लोगों के प्रति बुरा व्यवहार क्यों करता है जो अच्छाई करते हैं, जबकि यह स्पष्ट रूप से उसके अपने हाथों में है—और दूसरों के हाथों में नहीं—कि विश्वास और कर्मों की वृद्धि होती है, और परिणामस्वरूप अनुग्रह की प्राप्ति होती है, जो विश्वास (और उसके अनुरूप कर्मों) के अनुपात में आता है?

181. यशायाह कहता है, *'और यहोवा का आत्मा उस पर चढ़ेगा, ज्ञान और समझ का आत्मा, परामर्श और सामर्थ्य का आत्मा, ज्ञान और यहोवा के भय का आत्मा: यहोवा के भय का आत्मा उसे भर देगा'* (यशायाह 11:3-4)। इन आध्यात्मिक वरदानों की विशेषताएँ इस प्रकार हैं: – *'भय'* – बुरे कर्मों से परहेज़; *'बल'* – अच्छे कर्म करना; *'सलाह'* – कर्तव्य के विपरीत क्या है, उसे समझना; *'धर्मपरायणता'* – जो सही है, उसकी एक त्रुटिहीन दृष्टि; *'ज्ञान'* – कर्म के माध्यम से सद्गुणों के भीतर छिपी तर्कसंगतता की समझ; *'बुद्धि'* – ज्ञात वस्तु के प्रति आत्मा की पूर्ण प्रवृत्ति (उसका स्वाद लेना); *'प्रज्ञा'* – ईश्वर के साथ अकथनीय एकता, जो संचार के माध्यम से, इसमें भाग लेने वाले को एक देवता बना देती है।

182. *'ईश्वर भय' की* आत्मा दुष्ट कर्मों से परहेज़ है; *'धैर्य की आत्मा'* आज्ञाओं के उत्साही पालन की ओर एक उत्साही प्रयास और गति है; *'परामर्श की आत्मा'* विवेक की आदत है (अच्छे और बुरे के बीच), जिससे हम बुद्धिमानी से आज्ञाओं का पालन करते हैं, बुरे को अच्छे से अलग करते हैं; *'भक्ति की आत्मा'* सद्गुणों के रूपों की अचूक धारणा है, जिनके अनुसार कार्य करके हम कभी भी सही निर्णय से भटकते नहीं हैं; *'ज्ञान की आत्मा'* आज्ञाओं और उनके तर्कसंगत आधारों की सही समझ है, जिन पर सद्गुणों के रूप आधारित हैं; *"तर्क की आत्मा"* सद्गुणों के रूपों और नींवों के साथ सामंजस्य (पहले को पूरा करने और बाद के अनुसार कार्य करने का संकल्प) है, या, बेहतर ढंग से कहें तो, (उनके अनुसार स्वयं का) रूपांतरण, जिसके द्वारा प्राकृतिक शक्तियाँ आज्ञाओं के रूपों और नींवों के साथ मिल जाती हैं; *"ज्ञान की आत्मा"* आज्ञाओं में निहित सबसे आध्यात्मिक समझ में मौजूद सभी के कारण की ओर एक उत्थान है, और उसके साथ एकता है, जिसके द्वारा, हमारे लिए अज्ञात तरीके से, मानवों के लिए जहाँ तक यह सुलभ है, ईश्वर में वस्तुओं के अस्तित्व की समझ में दीक्षा प्राप्त करके, हम इसे हृदय से प्रवाहित होने वाली वाणी के माध्यम से अन्य लोगों तक पहुँचाते हैं, जैसे कि किसी झरने से।

183. उस व्यक्ति का विश्वास अंधा है, जो उस विश्वास के कारण ईश्वर की आज्ञाओं का पालन नहीं करता है। क्योंकि यदि ईश्वर की आज्ञाएँ प्रकाश हैं (नीतिवचन 6:23), तो यह स्पष्ट है कि जो ईश्वर की आज्ञाओं का पालन नहीं करता है, वह दिव्य प्रकाश के बिना रहता है, और एक सच्चे दिव्य पदवी के बजाय केवल नाम मात्र का दिव्य पदवीधारी होता है।

184. कोई भी पापी, पाप के लिए बहाने के तौर पर देह की दुर्बलता का हवाला नहीं दे सकता। क्योंकि शपथ की पूर्ति के द्वारा, वचन परमेश्वर के साथ एकता ने संपूर्ण स्वभाव को शक्ति प्रदान कर दी है, इस प्रकार इच्छा की प्रवृत्ति को वासनाओं की ओर ले जाना हमारे लिए अक्षम्य हो जाता है। वचन की दिव्यता, जो उन पर अनुग्रह से विश्वास करती है, उनके लिए सदा उपस्थिति रहती है, और यह शरीर में पाप के नियम को जीती है (रोमियों 8:2)।

185. ज्ञान, जब ईश्वर के भय से नियंत्रित न हो, तो वह अहंकार को जन्म देता है, और इससे गर्वित हुए व्यक्ति को वह वस्तु अपनी मानने पर प्रेरित करता है जो उस पर अनुग्रह से प्रदान की गई है। लेकिन कर्म, जो दैवी प्रेम के साथ-साथ बढ़ता है, और जो उचित कार्य से परे ज्ञान प्राप्त नहीं करता, वह कर्ता को मन से विनम्र बनाता है।

186. दिव्य निवास एक अचल, सदाचारी स्वभाव है, और वह ज्ञान है जो मन को भ्रमित कर सकने वाली किसी भी त्रुटि से मुक्त हो।

१८७. निर्लिप्तता का पहला रूप दुष्ट कर्मों से पूर्ण परहेज़ है, जैसा कि उन लोगों में देखा जाता है जो अपनी आध्यात्मिक यात्रा की शुरुआत कर रहे हैं; दूसरा है मन में बुराई की साजिश रचने के विचारों का पूर्ण अस्वीकार, जो उन लोगों में पाया जाता है जो विवेक के साथ सदाचार के मार्ग का अनुसरण करते हैं; तीसरी है कामनाओं की पूर्ण समाप्ति, जो उन लोगों में होती है जो दृश्यमान वस्तुओं से मानसिक चिंतन तक पहुँचते हैं; निर्लिप्तता का चौथा रूप है साधारण और सबसे सरल दिवास्वप्नों से भी पूर्ण शुद्धिकरण, जो उन लोगों में उत्पन्न होता है जिन्होंने ज्ञान और चिंतन के माध्यम से अपने मन को ईश्वर का एक शुद्ध और स्पष्ट दर्पण बना लिया है। इस प्रकार, भावुक कर्मों से स्वयं को शुद्ध करके, उनसे मानसिक आसक्ति से मुक्त होकर, उनकी ओर किसी भी कामुक प्रवृत्ति को जड़ से ही समाप्त करके, और उनके बारे में सबसे सरल विचार से भी अपने मन को शुद्ध करके—इन चार प्रमुख निर्लिप्ति अवस्थाओं को धारण करके—व्यक्ति भौतिक प्राणियों के क्षेत्र से प्रस्थान करता है और बौद्धिक प्राणियों की श्रेणी में प्रवेश करता है, जो दिव्य और शांतिपूर्ण है।

188. निर्लिप्तता का पहला रूप इस प्रकार परिभाषित है कि शरीर की वास्तविक पाप करने की प्रवृत्ति को प्रभावी होने न दिया जाए (प्रवृत्ति मौजूद रहती है, लेकिन उस पर पूरी तरह से लगाम लगा दी जाती है); दूसरा है आत्मा के भावुक विचारों का पूर्ण अस्वीकार, जिससे निर्लिप्तता के पहले रूप द्वारा संभव हुई प्रवृत्ति दब जाती है, क्योंकि उसे क्रिया में उकसाने के लिए कोई भावुक विचार ही नहीं होते; तीसरा है वासनाओं की इच्छा की पूर्ण स्थिरता, जिसके लिए दूसरा भी संभव होता है, जो विचारों की शुद्धता में निहित है; निर्लिप्तता का चौथा रूप अपने विचारों में सभी कामुक कल्पनाओं को पूरी तरह से त्यागना है, जिसके माध्यम से तीसरा भी शुरू होता है, क्योंकि वासनाओं की तस्वीरें बनाने वाली कोई कामुक कल्पनाएं नहीं होती हैं।

189. प्रत्येक व्यक्ति के मोक्ष की शुरुआत और अंत ज्ञान है, जो पहले भय को जन्म देता है, और फिर अंत तक पूर्णता प्राप्त कर, प्रेम को जन्म देता है। या यूँ कहें कि, शुरुआत में यह स्वयं, विवेक के तौर पर, भय के रूप में होती है, ताकि यह अपने प्रेमी को बुराई से बचाए रखे; और फिर, अंत की ओर, यह स्वाभाविक रूप से अपने आप में

प्रेम बन जाती है, और उन लोगों को आध्यात्मकि आनंद से भर देती है जन्हिोंने इसके साथ एकता में जीकर सभी दृश्यमान वस्तुओं का त्याग कर दयिा है।

190. हर स्वीकारोक्तिआत्मा को वनिम्र बनाती है, कभी उसे यह स्वीकार करना सखिाती है कविह अनुग्रह से ही धर्मी ठहराई जाती है, और कभी उसे यह स्वीकार करने के लिए ववि‍श कर देती है कअिपने ही लापरवाही के कारण, उसके पापों का दोष स्वयं उसी पर है।

191. वषिय-वस्तु के अनुसार स्वीकारोक्तिके दो रूप होते हैं: एक में प्राप्त आशीर्वादों के लिए कृतज्ञता की भावनाएँ होती हैं; दूसरे में स्वयं की गलतयिों के लिए आत्म-नदिा और कएि गए बुरे कर्मों के प्रतजिागरूकता होती है। क्योंकपिाप-स्वीकृतिका तात्पर्य ईश्वर की गहराई से अनुभूत आशीर्वादों की कृतज्ञ स्मृतअिौर अपने बुरे कर्मों को स्वीकार करने वाले अपराधयिों द्वारा उनके स्पष्ट स्वीकारोक्त‍ि दोनों से है। दोनों प्रकार वनिम्रता को जन्म देते हैं। क्योंकजि‍ो व्यक्तप्रिाप्त आशीर्वादों के लिए धन्यवाद देता है और जो व्यक्तअिपने पापों के लिए स्वयं को डांटता है, दोनों ही आमतौर पर वनिम्र हो जाते हैं: पहला, स्वयं को प्राप्त आशीर्वादों के अयोग्य समझकर; और दूसरा, अपने पापों के लिए क्षमा याचना करके।

192. अहंकार की भावना अज्ञानता या अनभज्ञिता के दो रूपों से मलिकर बनती है, जो मलिकर एक हो जाते हैं और एक एकल, संयुक्त तर्क (घमंडी तर्क) उत्पन्न करते हैं। क्योंकघिमंडी वे लोग होते हैं जो न तो दैवीय सहायता को स्वीकार करते हैं और न ही मानवीय दुर्बलता को। इस प्रकार, अहंकार दैवीय और मानवीय दोनों ज्ञान की कमी है।

193. दंभ ईश्वर के अनुरूप लक्ष्य से मुंह मोड़कर ईश्वर के अनुरूप न होने वाले दूसरे लक्ष्य की ओर मुड़ना है। क्योंकदिंभी व्यक्तविह है जो ईश्वर की महमिा के लिए नहीं, बल्कअिपनी ही महमिा के लिए सद्गुण की खोज करता है, और जो अपने प्रयासों से केवल क्षणकि मानवीय प्रशंसा अर्जति करना चाहता है।

194. दूसरों को खुश करने वाला व्यक्तकिेवल एक ही बात की परवाह करता है: कउिसका बाहरी व्यवहार दखिावटी हो, और वह चापलूस से कोई मीठी बात सुन सके, जो पहले देखने वालों की दृष्टअिौर फरि सुनने वालों के कानों को मोहति करे, जो केवल देखने और सुनने से ही प्रसन्न या चकति होते हैं, और जो सदाचार को केवल उन्हीं चीजों से परभिाषति करते हैं जन्हिें इंद्रयिाँ महसूस कर सकती हैं। इसलए, चापलूसी लोगों के सामने और लोगों की खातरि अच्छे आचरण और शब्दों का प्रदर्शन है।

195. पाखंड मत्रिता का दखिावा करना है, या मत्रिता के भेष में छपिी घृणा है, या सद्भावना के मुखौटे में काम करने वाली शत्रुता है, या प्रेम के चरत्रि की नकल करने वाली ईर्ष्या है, या सच्चे सद्गुण के बजाय सद्गुण के झूठे दखिावे से सुसज्जति जीवन है, या धार्मकिता का ढोंग है, जो केवल ऐसा प्रतीत होता है जैसे कयिा सत्य के रूप में प्रकट होने वाली धोखाधड़ी; – ये सभी वे चीजें हैं जन्हिें नैतकि रूप से भ्रष्ट लोग, सांप की नकल करते हुए, गढ़ने में कामयाब होते हैं।

196. ईश्वर सभी प्राणयिों और उनमें पाए जाने वाले सभी अच्छे गुणों का कारण है। तो फरि, जो व्यक्तसिद्गुण या ज्ञान के द्वारा स्वयं को ऊँचा उठाता है—और अपने सद्गुण की सीमा तक, अर्थात् अनुग्रह की सहायता से उसमें उसकी प्रगतकिे अनुसार—फरि भी अपनी कमजोरी को स्वीकार करने में वफिल रहता है, वह स्पष्ट रूप से अहंकार की दुष्ट आत्मा से बचने में वफिल रहता है; जो अपनी ही महमिा के लिए अच्छा करता है, उसने स्वयं को ईश्वर से ऊपर स्थापति कर लयिा है, क्योंकविह घमंड की काँटी से छेदा गया है; जो केवल *'ताकमिनुष्य उसे देखें'* (मत्ती 23:5) *के लिए* ही सदाचार का अभ्यास करता है या उसकी बात करता है, उसने दवि्य अनुमोदन से ऊपर मानवीय अनुमोदन को स्थान दयिा है, जो मानवीय अनुमोदन की चाहत की भावना से ग्रस्त है; और जो केवल अपने आचरण को सद्गुण के बाहरी दखिावे से सजाता है, कपट से धोखा देने की कोशशि करता है, और जो भक्तकिे मुखौटे के पीछे हृदय की दुष्ट प्रवृत्तकिो छपिाता है, वह पाखंड की चालाकी से सद्गुण का व्यापार करता है। क्या यह स्पष्ट नहीं है कइिनमें से प्रत्येक ने अपना लक्ष्य सभी चीजों के कारण के अलावा कसिी और चीज़ की ओर नरि्देशति कयिा है?

197. राक्षस न तो पवत्रिता से घृणा करते हैं और न ही उपवास से, और न ही वे धन के वतिरण, आतथि्य, भजन-कीर्तन, पढ़ने में लगन, एकांत, उच्च चतिन, खुले में सोने, जागरण, या ईश्वर के अनुसार जएि गए जीवन की कसिी अन्य वशिषता से घृणा करते हैं, – बशर्ते कऐिसे कर्मों का उद्देश्य उनके लिए प्रयि हो।

198. जो राक्षस सदाचार के अभाव में युद्ध छेड़ते हैं, वे व्यभचिार और मद्यपान, लालच और ईर्ष्या सखिाते हैं; जबकजिो सदाचार के बीच युद्ध छेड़ते हैं, वे अहंकार, दंभ और घमंड सखिाते हैं, और इस प्रकार, एक सूक्ष्म छल के द्वारा, गुप्त रूप से हमारे भीतर कलह बोते हैं।

199. काश हम भी, जब इन दुष्ट आत्माओं का सामना करें—जो आध्यात्मकि मत्रिता के भेष में अदृश्य रूप से हमसे मलिते हैं, और पाप के माध्यम से 'हमारी *मृत्यु को लाने' के 'नेक'* इरादे से (रोमियों 7:3)—तो कहते: *'आओ, हम भी आपके साथ मलिकर बनाएं'* (2 एस्द्रस 5:65),—तो हम उत्तर दे सकें: *'यह तुम्हारे लिए भी नहीं है और न ही हमारे लिए है कि हम हमारे प्रभु परमेश्वर के लिए एक घर बनाएँ। हम अकेले ही इसे इस्राएल के प्रभु परमेश्वर के लिए बनाएँगे'* (2 एस्द्रास 5:68)। *'अकेले'* – क्योंकि, सद्गुण की कमी के कारण युद्ध करने वाली आत्माओं से मुक्त होकर, जिन्हें हम पहले ही टाल चुके हैं, हम आपसे फिर से प्रलोभित नहीं होना चाहते; सद्गुण की प्रचुरता के द्वारा उन पर विजय प्राप्त कर, और पहली बार से भी अधिक विनाशकारी पतन का शिकार हो जाएँ, क्योंकि पहले वाले में सुधार की आशा आसान थी, क्योंकि तब हम उन लोगों में गिने जाते थे जिन्हें कमजोरी के कारण कृपापूर्वक क्षमा किया गया था; जबकि इस मामले में, या तो ऐसी कोई कमजोरी ही नहीं है, या उसे प्राप्त करना बहुत कठिन है, क्योंकि हम अपने अहंकार के कारण घृणा के पात्र होंगे। – और हम *'अकेले नहीं* हैं', क्योंकि हमारे पास सद्गुणों में हमारी सहायता के लिए पवित्र स्वर्गदूत हैं, और उनसे भी बढ़कर स्वयं परमेश्वर हैं, जो हमें धार्मिकता के कार्यों के माध्यम से स्वयं को प्रकट करते हैं और हमें हर प्रकार की वासना से मुक्त एक पवित्र मंदिर के रूप में गढ़ते हैं।

२००. *'धर्मी जन की प्रार्थना शक्तिशाली और प्रभावशाली होती है'*, जैसा कि लिखा है (याकूब ५:१६)। यह दो तरीकों से प्रभावशाली है: पहली बात (जब प्रार्थना करने वाला स्वयं धर्मी हो), और आज्ञाओं के अनुसार कर्मों के साथ ईश्वर से प्रार्थना करता है—एक ऐसी प्रार्थना जो केवल शब्दों से नहीं बनती, न ही केवल आवाज़ की एक खोखली ध्वनि के रूप में उच्चारित होती है, और न ही यह निष्क्रिय और किसी ठोस आधार से रहित होती है, बल्कि यह आज्ञाओं के अनुसार कर्मों से प्रेरित होकर प्रभावी और जीवंत होती है। क्योंकि प्रार्थना की शक्ति और प्रभावशीलता सद्गुणों के विकास के माध्यम से आज्ञाओं के पालन पर निर्भर करती है; परिणामस्वरूप, धर्मी व्यक्ति की प्रार्थना आज्ञाओं द्वारा समर्थित, एक मजबूत और सर्वशक्तिमान प्रार्थना होती है। दूसरा, जब कोई धर्मात्मा से प्रार्थना माँगते हुए स्वयं प्रार्थना के कार्य करता है, सुधार का वादा करता है और वास्तव में अपने पूर्व जीवन को सुधारता है, और इस प्रकार, अपने अच्छे आचरण के माध्यम से, धर्मात्मा की प्रार्थना को शक्तिशाली और सर्वशक्तिमान बनाता है।

201. धर्मी की प्रार्थना का उस व्यक्ति को कोई लाभ नहीं होता जो उसका सहारा लेता है, जब वह व्यक्ति सद्गुणों की अपेक्षा पापपूर्ण कर्मों में अधिक आनंद लेता है। इस प्रकार, प्राचीन काल में, महान शमूएल भी साउल के पाप करने पर उसके लिए रोए, फिर भी वह उसकी ओर से परमेश्वर को प्रसन्न करने में असमर्थ रहे, क्योंकि उन्होंने अपने रोने के साथ पापी के उचित पश्चाताप को नहीं जोड़ा था। तो फिर, परमेश्वर अपने सेवक को व्यर्थ के रोने से रोकते हुए, उससे क्यों कहते हैं: *'तू सौल के लिए कब तक रोएगा? मैंने उसे अस्वीकार कर दिया है, ताकि वह फिर कभी इस्राएल पर राज्य न करे'* (1 शमूएल 16:1)?

202. फिर, अत्यंत दयालु यिर्मयाह, जो उन यहूदी लोगों के लिए प्रार्थना कर रहा था जो पागलपन की हद तक शैतानी भ्रम से चिपके हुए थे, उसकी नहीं सुनी गई, क्योंकि उसकी प्रार्थना इस भ्रम से अधर्मी यहूदियों के मन फिराने से समर्थित नहीं थी। इसलिए, उसे भी उसकी अनवरत और निष्फल विनतियों से रोकते हुए, परमेश्वर कहते हैं: *'इन लोगों के लिए प्रार्थना मत करना, न यह निवेदन करना कि उन्हें क्षमा किया जाए, और न ही उनके पक्ष में मेरी याचना करना, क्योंकि मैं तेरी नहीं सुनूँगा'* (यिर्म. 7:16)।

203. यह महान अज्ञानता, यहाँ तक कि पागलपन का संकेत है, कि कोई व्यक्ति जो अपने हृदय में हानिकारक कर्मों में आनंदित होता है, वह संतों की प्रार्थनाओं के माध्यम से मोक्ष की तलाश करे, और उसी बात के लिए क्षमा मांगे जिससे वह घमंड करते हुए वास्तव में विचार और भावना में स्वयं को कलंकित कर रहा है। जो धर्मी लोगों की प्रार्थनाओं की कामना करता है, उसे उन्हें निष्फल और निष्प्रभावी नहीं होने देना चाहिए, यदि वह वास्तव में बुराई से घृणा करता है; बल्कि, उन्हें अपने स्वयं के सद्गुणों से मजबूत करके, उसे उन्हें प्रभावी और शक्तिशाली बनाना चाहिए, ताकि वे पापों की क्षमा प्राप्त करने के लिए सर्वशक्तिमान के पास उठ सकें।

204. *'धर्मी की प्रार्थना शक्तिशाली होती है'* जब इसे या तो प्रार्थना करने वाले धर्मी व्यक्ति द्वारा, या उस व्यक्ति द्वारा समर्थित किया जाता है जो धर्मी व्यक्ति से इसे करने के लिए कहता है। धर्मी व्यक्ति की ओर से, यह इस तथ्य से समर्थित होता है कि यह उसे उस परमेश्वर के सामने साहस प्रदान करता है जो धर्मी लोगों की प्रार्थनाओं को पूरा करने में समर्थ है; और जो व्यक्ति धर्मी व्यक्ति से प्रार्थना करने का अनुरोध करता है, उसकी ओर से यह तब समर्थित होता है जब वह अपनी पूर्व दुष्टता को त्याग देता है और पूरे हृदय से सद्गुण की ओर मुड़ जाता है।

205. सत्य का वचन दो प्रकार के शोक को जानता है, जिनमें से पहला आत्मा के भीतर अदृश्य रूप से बनता है, जबकि दूसरा इंद्रिय जगत में स्पष्ट रूप से व्यवस्थित होता है: पहला आत्मा की गहराइयों को समाहित करता है, जो अंतरात्मा की पीड़ा से उत्पन्न होता है , जबकि दूसरा इंद्रियों पर बोझ डालता है, और उन्हें गंभीर दुर्भाग्यों के भार से उनकी स्वाभाविक अभिव्यक्ति से रोकता है।

206. जैसे सत्य का वचन दुख के दो प्रकारों को पहचानता है, वैसे ही यह प्रलोभन के भी दो प्रकारों को पहचानता है, जिनमें से कुछ दुष्ट इच्छाओं के प्रज्वलन के माध्यम से इच्छा के क्षेत्र के भीतर उत्पन्न होते हैं, जबकि अन्य बाहरी रूप से, इच्छा से परे, अनैच्छिक कष्टों, दुखों और दुर्भाग्यों के रूप में आते हैं। पहला मानसिक दुख का कारण है, जबकि दूसरा संवेदी दुख का कारण है (5, 90)।

207. इच्छा के क्षेत्र के भीतर उत्पन्न होने वाला प्रलोभन आत्मा को दुख पहुँचाता है, जबकि इंद्रियों को आनंद देता है; इसके विपरीत, एक अनैच्छिक प्रलोभन आत्मा (जो इसे तर्क से मिलती है) को सांत्वना देता है, जबकि शरीर पर दुख का बोझ डालता है।

208. मेरा मानना है कि जब प्रभु और हमारे ईश्वर ने अपने शिष्यों को प्रार्थना करना सिखाया, तो उन्होंने *'हमें परीक्षा में न ले जाओ'* (मत्ती 6:13) शब्दों के साथ, उन्हें इच्छा-क्षेत्र में उत्पन्न होने वाली परीक्षाओं से, अर्थात् कामवासना की उन प्रवृत्तियों से मुक्ति के लिए प्रार्थना करने के लिए प्रेरित किया, जो किसी के अच्छे स्वभाव और इरादों को हिला देती हैं; और महान याकूब, जिन्हें प्रभु का भाई कहा जाता है, ने सत्य के लिए प्रयास करने वालों को यह सिखाते हुए कि उन्हें आने वाली परीक्षाओं से आश्चर्यचकित नहीं होना चाहिए, अनैच्छिक परीक्षाओं को ध्यान में रखा था जब उन्होंने कहा: *'हे मेरे भाइयो, जब तुम विभिन्न परीक्षाओं में पड़ो तो इसे सब आनन्द समझो'* (याकूब 1:2), अर्थात् वे जो अनैच्छिक रूप से हम पर आते हैं, हमारे नियंत्रण से परे, और जो दुख और कठिनाई का कारण बनते हैं। – यह इन दोनों कथनों के बाद आने वाले शब्दों से स्पष्ट रूप से दिखाया गया है: क्योंकि वहाँ प्रभु जोड़ते हैं: *'परन्तु हमें बुराई से बचा'*; जबकि यहाँ महान याकूब कहते हैं: *'यह जानते हुए कि तुम्हारे विश्वास की परीक्षा धीरज उत्पन्न करती है; और धीरज को अपना पूरा काम करने दो, ताकि तुम सिद्ध और पूर्ण हो जाओ, और तुम्हें किसी बात की कमी न हो'* (याकूब 1:3–4)।

209. *परिपूर्ण* वह है जो स्वेच्छा से होने वाले प्रलोभनों का संयम से सामना करता है, और अनैच्छिक प्रलोभनों को धैर्य से सहन करता है; और *'पूर्ण'* वह है जो ज्ञान के साथ कर्म करता है, और चिंतन को निष्क्रिय नहीं छोड़ता।

210. मन और इंद्रियाँ, एक-दूसरे के विरोधी होने के कारण, अपने विषयों की अत्यधिक असमानता और भिन्नता के कारण, स्वाभाविक कार्यों को संपन्न करती हैं। मन के विषय मानसिक और अदेह सत्ताएँ हैं, जिन्हें यह अदेह रूप में ग्रहण करता है; जबकि इंद्रियों के विषय संवेदनशील और देहधारी स्वभाव हैं, जिन्हें वे संवेदनशील रूप में ग्रहण करती हैं।

211. जैसे ही बुद्धि इंद्रियों को अपनी स्वाभाविक शक्ति मानने लगती है, वह इंद्रियजन्य वस्तुओं के भ्रम में उलझ जाती है और कामुक सुखों की आविष्कारक बन जाती है, क्योंकि इंद्रियों की ओर उसके पक्षपातपूर्ण झुकाव के कारण उसमें दृश्यमान वस्तुओं की प्रकृति से ऊपर उठने की शक्ति नहीं होती।

212. उपकारी सुख सद्गुण से उत्पन्न आत्मा का आनंद है; और आत्मा-हितकारी दुख सद्गुण के लिए शरीर का कष्ट है। क्योंकि जो व्यक्ति इंद्रिय सुखों में पूरी तरह से डूब जाता है, वह अपनी आकांक्षाओं को उचित चीज़ों की ओर निर्देशित नहीं करता है; और जो व्यक्ति उन अनिश्चितताओं से दूर भागता है जो इन सुखों से वंचित होने का कारण बनती हैं, वह उससे भागता है जिससे भागना उचित नहीं है।

213. जैसे, सूर्य के प्रकाश के बिना, आँख संवेदनशील दुनिया को नहीं देख सकती, वैसे ही, आध्यात्मिक प्रकाश के बिना, मानव मन कभी भी आध्यात्मिक चिंतन तक नहीं पहुँच सकता। क्योंकि संवेदनशील प्रकाश स्वाभाविक रूप से इंद्रियों को संवेदनशील चीजों को देखने के लिए प्रबुद्ध करता है; जबकि आध्यात्मिक प्रकाश मन को परा-संवेदनशील की चिंतनशील समझ के लिए प्रबुद्ध करता है।

214. मनमाने कठिनाइयों का आविष्कार, और अनैच्छिक कठिनाइयों को थोपना, यद्यपि वे इच्छा की सक्रिय गति को रोककर उसे वश में कर सकते हैं, तथापि वे प्रजनन की शक्ति या क्षमता को नष्ट नहीं करते, जो हमारे स्वभाव में एक कानून के रूप में विद्यमान है। – क्योंकि सदाचारी आत्म-अनुशासन आमतौर पर इच्छा की उदासीनता उत्पन्न करता है, स्वभाव की नहीं: और इच्छा की इस उदासीनता के माध्यम से, मन दिव्य आनंद से विभूषित होता है।

215. यह असंभव है कि प्रभु—जो स्वभाव से बुद्धिमान, धर्मी और सर्वशक्तिमान हैं— – एक बुद्धिमान के रूप में, (पाप से पीड़ित हमारी प्रकृति के) उपचार का साधन नहीं जानते थे; एक धर्मी के रूप में, पाप के बोझ (और दोष)

के अधीन हो चुके व्यक्ति की इच्छा से, मनुष्य का उद्धार जबरदस्ती नहीं करना चाहते थे; एक सर्वशक्तिमान के रूप में, हमारे उपचार के लिए आवश्यक कार्य करने में असमर्थ थे।

216. परमेश्वर की बुद्धि इस तथ्य में प्रकट होती है कि वह वास्तव में और सारतः मनुष्य बना; उसकी धार्मिकता इस तथ्य में कि, अपने जन्म के माध्यम से, उसने हमारे समान दुख सहने में सक्षम स्वभाव को ग्रहण किया; उसकी सर्वशक्तिमित्ता इस तथ्य में कि, अपने दुखों और मृत्यु के माध्यम से, उसने हमारे स्वभाव के लिए अनंत जीवन और वासनाओं से अटूट स्वतंत्रता सुनिश्चित की।

217. ईश्वर और हम दोनों से ईर्ष्या करते हुए, शैतान ने मनुष्य को धोखा देकर यह सुझाव दिया कि ईश्वर उससे ईर्ष्या करते हैं, और इस प्रकार उसे आज्ञा का उल्लंघन करने के लिए प्रेरित किया। वह ईश्वर से ईर्ष्या करता है, कहीं ऐसा न हो कि उनकी वास्तव में सर्व-प्रशंसित शक्ति, जो मनुष्य को दिव्य बनाती है, प्रकट हो जाए; और मनुष्य से ईर्ष्या करता है, कहीं ऐसा न हो कि वह, सद्गुण के द्वारा, दृश्य रूप से दिव्य महिमा का सहभागी बन जाए। इस प्रकार, यह अत्यंत दुष्ट न केवल हमसे ईर्ष्या करता है—हमारे सद्गुणों के द्वारा परमेश्वर के साथ हमें प्राप्त महिमा के कारण—बल्कि स्वयं परमेश्वर से भी ईर्ष्या करता है—हमारे उद्धार में उनके सर्व-स्तुत्य प्रेम के प्रकट होने के कारण।

218. परमेश्वर, अपनी भलाई की एकल, असीम शक्तिशाली इच्छा से, सभी को—स्वर्गदूतों और मनुष्यों, अच्छे और बुरे सभी को—गले लगाते और बनाए रखते हैं। फिर भी वे सभी विभिन्न हद तक परमेश्वर में सहभागी होते हैं, क्योंकि वह उनकी प्रकृति के अनुसार, उन पर बिना किसी बाधा के प्रवाहित होते हैं।

219. हम मसीह में व्यक्तियों के भेद को नहीं मानते, क्योंकि त्रित्व, त्रित्व ही रहा, और वचन के देहधारी होने के बाद, इस अवतार के द्वारा पवित्र त्रित्व में कोई नया व्यक्ति नहीं जोड़ा गया। लेकिन हम उनमें स्वभावों के भेद को मानते हैं, ताकि यह न कहें कि शरीर स्वभाव से वचन के समान-तत्त्व है।

220. एक शपथ-भंग करने वाला वह है जो प्रभु के नाम पर झूठी शपथ खाता है: अर्थात्, वह जो ईश्वर से सदाचारी जीवन जीने का वादा करता है, लेकिन फिर अपना सारा ध्यान किसी और चीज़ पर लगा देता है, जो उसके अपने होठों से कही गई शपथ से परे है, और आज्ञाओं का पालन करने में विफल होकर, एक धार्मिक जीवन की गंभीर शपथ को तोड़ता है। संक्षेप में, कोई भी व्यक्ति जिसने ईश्वर के अनुसार जीवन चुना है, फिर भी इस वर्तमान जीवन के प्रति पूरी तरह से मृत नहीं हुआ है, वह एक झूठा और शपथ-भंग करने वाला है; ठीक वैसे ही जैसे कोई व्यक्ति जिसने ईश्वर से शपथ ली है—अर्थात्, जिसने ईश्वर को प्रसन्न करने वाले कर्मों द्वारा निष्कलंक रूप से चलने का वादा किया है—फिर भी वह उस वादे को पूरा करने में विफल रहा है।

२२१. जो कोई धन्य अय्यूब और पराक्रमी शहीदों की तरह, अटूट बुद्धि के साथ अनैच्छिक प्रलोभनों के आक्रमण को सहन करता है, वह एक महान दीपक है, और स्वयं प्रभु की शक्ति से प्राप्त, मोक्ष के अविनाशी प्रकाश को बनाए रखता है। परन्तु वह भी जो दुष्ट की युक्तियों को जानता है और अदृश्य संघर्षों में होने वाली लड़ाइयों (टकरावों, झड़पों) से परिचित है—वह भी, ज्ञान के प्रकाश से प्रबुद्ध होकर, दूसरों के लिए एक दीपक है, जो, महान प्रेरित की तरह, सही ढंग से कह सकता है: *'हम उसकी योजनाओं को नहीं समझते'* (2 कुरिन्थियों 2:11)।

222. जैसे एक दीपक तेल के बिना जलता नहीं रह सकता, वैसे ही आध्यात्मिक वरदानों का प्रकाश भी एक ऐसी प्रवृत्ति के बिना संरक्षित नहीं किया जा सकता जो स्वभाव का दूसरा नाम बन गई हो, जो इसके अनुरूप शब्दों, कर्मों और आचरण के साथ-साथ भावनाओं और विचारों से भी आंतरिक भलाई को पोषित करती हो। क्योंकि प्रत्येक आध्यात्मिक वरदान को, अपनी प्रकृति के अनुसार, एक ऐसे भाव (या मानसिक स्थिति) की आवश्यकता होती है जो तेल की तरह उसमें निरंतर एक निश्चित मानसिक पदार्थ डालता रहे, ताकि वह उसे प्राप्त करने वाले की सद्भावनापूर्ण स्थिति के द्वारा पूरी तरह से संरक्षित रह सके।

२२३. परमेश्वर को केवल उन लोगों का, जो सदाचारी चरित्र के द्वारा परमेश्वर से अपने आध्यात्मिक पुनर्जन्म की गवाही देते हैं, अनुग्रह से पिता कहा जाता है और वह पिता ही हैं। इन चरित्र लक्षणों में, कोई, मानो, आत्मा का चेहरा देखता है, जो अपनी सद्गुणों में उसे जन्म देने वाले ईश्वर की विशिष्ट विशेषताओं को प्रतिबिंबित करती है; और जिनके पास ये गुण होते हैं, वे उन्हें देखने वालों को ईश्वर की महिमा करने के लिए प्रेरित करते हैं, और अपने जीवन को अनुकरण के लिए सद्गुणों के एक आदर्श के रूप में प्रस्तुत करते हैं। क्योंकि ईश्वर की महिमा आमतौर पर केवल शब्दों से नहीं, बल्कि धार्मिकता के कार्यों से होती है, जो शब्दों की तुलना में कहीं अधिक प्रभावपूर्ण ढंग से उनकी दिव्य भव्यता की घोषणा करते हैं।

२२४. जो कोई अपने भीतर कर्म से निर्देशित ज्ञान और ज्ञान से प्रेरित कर्म का प्रदर्शन करता है, उसने हमारे भीतर सच्ची दैवी गतिविधि का सटीक मार्ग खोज लिया है। लेकिन जो कोई भी इनमें से किसी एक गुण को दूसरे

से अलग रखता है, उसने या तो ज्ञान को एक मात्र कल्पना (बिना पुष्टि और अनियंत्रित) तक सीमित कर दिया है, या कर्म को एक निर्जीव मूर्ति में बदल दिया है। क्योंकि कर्म रहित ज्ञान कल्पना के सपनों से अलग नहीं है, क्योंकि उसे पुष्ट करने के लिए कोई कर्म नहीं है; और अर्थ रहित कर्म एक मूर्ति के समान है, क्योंकि उसे जीवंत करने के लिए कोई ज्ञान नहीं है।

२२५. सचमुच, एक शापित जुनून अहंकार है, जो दो बुराइयों: घमंड और दंभ के संयोजन से बनता है; इनमें से, घमंड सद्गुण और प्रकृति के स्रष्टा से मुंह मोड़ लेता है, जबकि दंभ प्रकृति और स्वयं सद्गुण दोनों को विकृत कर देता है; क्योंकि घमंडी व्यक्ति में कुछ भी ईश्वर के अनुसार नहीं होता, जबकि व्यर्थ व्यक्ति में कुछ भी प्रकृति के अनुसार नहीं होता।

226. लिखित विधान, भय के माध्यम से बुराई से रोककर, मनुष्य को धार्मिकता की आदत डालता है; समय के साथ, यह आदत एक ऐसे स्वभाव को जन्म देती है जो धार्मिकता से प्रेम करता है, जिससे अच्छाई की ओर एक दृढ़ प्रवृत्ति उत्पन्न होती है, जो मनुष्य को अपने पूर्व के दुर्गुण को भूलने की ओर ले जाती है।

227. आध्यात्मिक दृष्टि से, खतना कामुक वासनाओं की ओर झुकाव का पूर्ण त्याग है।

228. सब्बाथ (विश्राम का दिन) है वासनाओं का शांत हो जाना, या उनकी पूर्ण निष्क्रियता।

२२९. ईश्वर ने आज्ञा दी कि सब्त, अमावास्या और पर्व मनाए जाएँ, इस लिए नहीं कि वह चाहता था कि ये दिन, केवल दिनों के रूप में, लोगों द्वारा सम्मानित किए जाएँ: क्योंकि इसका अर्थ होगा सृष्टिकर्ता के बजाय प्राणी की उपासना को वैध ठहराना (रोमियों 1:25), इस आधार पर कि दिन अपने आप में स्वाभाविक रूप से सम्मान के योग्य हैं और इसलिए पूजा के योग्य हैं। लेकिन इन दिनों को सम्मानित करने की आज्ञा देकर, उन्होंने प्रतीकात्मक रूप से यह आज्ञा दी कि स्वयं उनका सम्मान किया जाए। क्योंकि वे स्वयं सब्बाथ— —हैं, जो जीवन की कठिनाइयों और चिंताओं तथा धार्मिकता के श्रम से विश्राम हैं; वे ही पासोवर भी हैं, जो पाप के कड़वे श्रम में बंदी बनाए गए लोगों के मुक्तिदाता हैं; और वे ही पेंटेकोस्ट भी हैं, जो सभी चीजों की शुरुआत और अंत हैं।

230. हम आध्यात्मिक बलिदानों के रूप में न केवल वासनाओं के संयम को मानते हैं, जिन्हें *'आत्मा की तलवार, जो परमेश्वर का वचन है'* (इफिसियों 6:17) द्वारा वश में किया जाता है; बल्कि सभी प्राकृतिक शक्तियों को परमेश्वर को समर्पित करने और आत्मा की कृपा की आग के द्वारा उन्हें परमेश्वर को होमबलि के रूप में अर्पित करने को भी मानते हैं।

231. पाप की शक्ति, या देहगत तर्क, पवित्र बपतिस्मा की कृपा से नियंत्रित होती है, जबकि दैवी आज्ञाओं के प्रति सक्रिय आज्ञाकारिता आत्मा की तलवार द्वारा इसे पूरी तरह से मार डालती है।

232. अतिभिक्षण का जुनून, अपने कामुक विचारों के साथ, एक तलवार की तरह, कई सद्गुणों को नष्ट कर देता है: यह अनुशासनहीनता के माध्यम से ब्रह्मचर्य के बीजों को मारता है; यह कामुकता के माध्यम से न्याय की धार्मिकता को भ्रष्ट करता है; यह परोपकार के स्वाभाविक बंधनों को आत्म-प्रेम से काट देता है; और, संक्षेप में, अतिभिक्षण का जुनून सभी सद्गुणों के फलों का विनाशक है।

233. प्रत्येक उत्साही मोक्ष-साधक स्वयं को सदाचारी कर्मों और पवित्र विचारों में समर्पित करता है: क्योंकि सदाचार और ज्ञान के बिना, अब तक कोई भी मोक्ष प्राप्त करने में सफल नहीं हुआ है: सदाचार का कार्य है, सुदृढ़ तर्क के माध्यम से शारीरिक क्रियाओं को व्यवस्थित करना, और उन्हें अनुचित प्रवृत्तियों से, लगाम की तरह, कुशलतापूर्वक रोकना; जबकि ज्ञान का कार्य यह विचार करना और बुद्धिमानी से चर्चा करना है कि किसी को कैसे कार्य करना चाहिए, और फिर उसे करने के लिए स्वयं को तैयार करना है।

234. जिसने *'पृथ्वी पर स्थित अंगों को'* (कुलु. 3:5) मार डाला है, और अपनी सारी शारीरिक तर्कशीलता को बुझा दिया है, और उसके प्रति सारी सहानुभूति को समाप्त कर दिया है—ताकि वह धन्य प्रेरित पौलुस के साथ कह सके: *'मसीह के प्रेम से हमें कौन अलग कर सकता है'* (रोमियों 8:32)?—ऐसा व्यक्ति पिता-रहित, माता-रहित और वंशावली-रहित हो गया है, महान मेल्कीजेदक (इब्रानियों 7:3) के समान, जिसके भीतर आत्मा के साथ पूर्ण एकता के कारण उसका मांस और स्वभाव उसे पीछे नहीं खींच सकते।

235. मुझे नहीं लगता कि इस वर्तमान जीवन के अंत को 'मृत्यु' कहना सही है, बल्कि इसे मृत्यु से मुक्ति, क्षय के क्षेत्र से उद्धार, दासता से विमोचन, चिंताओं का विराम, विवाद का अंत, अंधकार से निकास, परिश्रम से विश्राम, उथल-पुथल का शमन, लज्जा से शरण, वासनाओं से मुक्ति, और, सामान्यतःकहें तो, सभी बुराइयों का अंत: जिससे संतों ने, स्वैच्छिक आत्म-त्याग के माध्यम से स्वयं को सुधारकर, इस जीवन में स्वयं को परदेशी और प्रवासी बना लिया है। क्योंकि, संसार, देह और उनसे उत्पन्न होने वाले विद्रोहों के विरुद्ध वीरता से संघर्ष करने, और इंद्रियों की

वासनाओं के प्रति सहानुभूति से उत्पन्न भ्रम को दबाने के बाद, उन्होंने अपने भीतर आत्मा की गरिमा को बनाए रखा, और दासता से मुक्त रहे।

236. संत अच्छे और परोपकारी, दयालु और दयावान थे, जिन्होंने संपूर्ण मानव जाति के प्रति समान प्रेमपूर्ण भावना दिखाई; जिसकी शक्ति से, अपने पूरे जीवन में, उन्होंने सभी गुणों में श्रेष्ठ—अर्थात्, विनम्रता—को निष्ठापूर्वक संरक्षित रखा। सभी अच्छाइयों के रक्षक और उसके विरोध में आने वाली बुराइयों के विनाशक के रूप में, वे हम पर आने वाली सभी प्रलोभनों के प्रति अडिग रहे—चाहे वे हमारी अपनी इच्छा से उत्पन्न हों या हमारे नियंत्रण से परे हों—उन्होंने पूर्व को आत्म-संयम के द्वारा दबाया और उत्तर को धैर्य के द्वारा दूर किया।

धन्य अबा फलासियस

उनका संक्षिप्त परिचय

हमारे पूजनीय पिता फलासियस सातवीं शताब्दी के पहले भाग में विख्यात थे और लीबिया के रेगिस्तानों में एक मठ के पुरोहित और मठाधीश थे। इस धन्य बाबा ने अपनी भक्ति के प्रेम को आध्यात्मिक ज्ञान के प्रेम के साथ जोड़ा और पवित्र धर्मग्रंथ के अध्ययन के लिए बहुत समय समर्पित किया। वे संत मैक्सिमस द कन्फेशर के समकालीन थे, जिनके साथ उन्होंने आध्यात्मिक संवाद बनाए रखा। संत मैक्सिमस के उनके नाम लिखे कई पत्र हैं; और एक पूरी पुस्तक, जिसमें पवित्र शास्त्र के कठिन अंशों की व्याख्या है, उन्हें समर्पित है। संत मैक्सिमस इस बाबा को बहुत मान-सम्मान देते थे, और एक पत्र में तो उन्हें अपना गुरु भी बताया है। इनका निधन संभवतः660 से पहले हो गया था। प्रेम, संयम और आध्यात्मिक जीवन पर उनकी यहाँ प्रस्तुत चार सौ उक्तियाँ, शिक्षाप्रद हैं। वे सभी मुख्य रूप से नैतिक और तपस्वी प्रकृति के हैं, लेकिन कुछ ऐसे भी हैं जिनमें धर्मशास्त्रीय विचार शामिल हैं, जिनका संत दमास्किन ने अपने विश्वास के विवेचन में उपयोग किया। यदि कोई मूल पांडुलिपि के अनुसार उक्तियों के केवल प्रारंभिक अक्षरों को क्रम से पढ़ता है, तो एक विशिष्ट विचार उभरता है - जिसे प्रत्येक सौ की शुरुआत में रखा गया है।

प्रेम, संयम और आध्यात्मिक जीवन पर अब्बा फलासियस, पुरोहित पॉल को

101वाँ

जिसका अक्रोस्टिक इस प्रकार है: *मेरे आध्यात्मिक भाई और प्रिय प्रभु फलासिया के पॉल को, जो देखने में मौन के पुरुष प्रतीत होते हैं, लेकिन वास्तव में एक व्यर्थ के दिखावटी हैं।*

1. प्रेम, जो पूर्णतःईश्वर की ओर निर्देशित है, प्रेम करने वालों को ईश्वर और एक-दूसरे के साथ जोड़ता है।

2. जिस मन ने आध्यात्मिक प्रेम प्राप्त कर लिया है, वह अपने पड़ोसी के बारे में ऐसा कुछ भी नहीं सोचता जो प्रेम के अनुरूप न हो।

3. जो अपने होठों से आशीर्वाद देता है, जबकि अपने हृदय में तिरस्कार करता है, वह प्रेम के भेष में पाखंड को छिपाता है।

४. जिसने प्रेम प्राप्त किया है, वह अपने शत्रुओं द्वारा उस पर डाले गए सभी दुख और कष्ट को समानभाव से सहन करता है।

5. केवल प्रेम ही सभी प्राणियों को ईश्वर के साथ और एक-दूसरे के साथ मन की एकता में जोड़ता है।

6. सच्चा प्रेम उस व्यक्ति में होता है जो अपने पड़ोसी के विरुद्ध न तो कोई संदेह रखता है और न ही कोई बुराई बोलता है।

7. वह ईश्वर और मनुष्यों के सामने सम्माननीय है जो प्रेम को बाधित करने वाला कुछ भी नहीं करता।

8. सच्चे प्रेम की विशेषता *'शुद्ध अंतकरण से'* (1 तीमुथियुस 1:5) *निकले* सच्चे वचन हैं।

९. जो कोई भी दूसरों से सुने हुए ताने-उलाहों को अपने भाई तक पहुँचाता है, वह सद्भावना के मुखौटे में ईर्ष्या को छिपाता है।

10. जैसे शारीरिक सद्गुण लोगों की प्रशंसा आकर्षित करते हैं, वैसे ही आध्यात्मिक सद्गुण परमेश्वर की प्रशंसा आकर्षित करते हैं।

11. प्रेम और आत्म-संयम आत्मा को शुद्ध करते हैं, जबकि शुद्ध प्रार्थना मन (आत्मा) को प्रबुद्ध करती है।

12. वह व्यक्ति शक्तिशाली है जो अपने कर्मों और मन से बुराई को दूर करता है।

13. जिसने वैराग्य और आध्यात्मिक समझ प्राप्त की है, उसे ईश्वर की कृपा प्राप्त हुई है।

14. यदि आप भावुक विचारों से मुक्त होना चाहते हैं, तो संयम का अभ्यास करें और अपने पड़ोसी से प्रेम करें।

15. अतियौवन और घृणा से अपना बचाव करो, और प्रार्थना के दौरान तुम्हें कोई बाधा नहीं आएगी।

16. जैसे कूड़े के ढेर में सुगंध नहीं मिलती, वैसे ही एक प्रतिशोधी आत्मा में प्रेम की सुगंध नहीं होती।

१७. साहसपूर्वक क्रोध और वासना पर नियंत्रण रखें, और आप जल्द ही बुरे विचारों से मुक्त हो जाएँगे।

18. दंभ पुण्यों की गोपनीयता को नष्ट कर देता है, जबकि अहंकार सभी विनम्रता को दूर भगा देता है।

19. पाखंड और झूठ घमंड के लक्षण हैं, जबकि अहंकार और ईर्ष्या गर्व के लक्षण हैं।

20. वह एक स्वामी है जिसने स्वयं पर विजय प्राप्त की है और आत्मा तथा शरीर दोनों को मन (आत्मा) के अधीन कर लिया है।

21. एक दोस्त की निष्ठा परीक्षा के समय में प्रकट होती है, जब वह हमारी ज़रूरत के समय में हमारे साथ खड़ा होता है।

22. मौन एकांत के माध्यम से अपनी भावनाओं को शांत करो, और अपने हृदय में उत्पन्न होने वाले विचारों को कठोर परीक्षण के अधीन रखो।

23. जो दुखद अपमान करते हैं, उनके प्रति रंजिश न पालें, लेकिन कामुक लोगों के प्रति शत्रुतापूर्ण व्यवहार करें।

24. मौन एकांत, प्रार्थना, प्रेम और आत्म-संयम – ये चार-घोड़ों वाला रथ है जो मन को स्वर्ग तक ले जाता है।

२५. उपवास और जागरण के द्वारा शरीर को थका दो, और तुम पीड़ा देने वाले, कामुक विचार को दूर भगा दोगे।

26. *'जैसे आग के सामने मोम पिघलता है'* (भजन संहिता 67:3), वैसे ही एक अशुद्ध विचार ईश्वर के भय से पिघल जाता है।

27. एक तर्कशील आत्मा के लिए लज्जास्पद वासनाओं में लंबे समय तक अटके रहना एक बड़ा पाप है।

28. दुखद और हृदय विदारक विपत्तियों के प्रहार को धैर्यपूर्वक सहो; क्योंकि ऐसी ही परीक्षाओं के माध्यम से ईश्वर की व्यवस्था तुम्हें शुद्ध करने का प्रयास करती है।

29. अपने धन-संपत्ति को त्यागकर और संसार का परित्याग करके, अंततः अपने बुरे विचारों का भी परित्याग करो।

30. मन के लिए ईश्वर के वचनों द्वारा निरंतर निर्देशित होना उचित है।

31. जैसे संसार पर शासन करना ईश्वर का कार्य है, वैसे ही आत्मा का कार्य शरीर पर शासन करना है।

32. हम किस आशा के साथ मसीह से मिलेंगे, हम जो आज भी शारीरिक सुखों के दास हैं?

33. वासना दुख और शोक से नष्ट होती है, चाहे वे हमारे द्वारा बनाए गए हों या ईश्वर की इच्छा से भेजे गए हों।

34. धन का प्रेम वासनाओं का भोजन है, क्योंकि यह सर्व-व्यापी, आत्म-संतुष्ट कामुकता को पोषित और बनाए रखता है।

35. दुख सुख (या इंद्रिय वासना की संतुष्टि) में कमी को जन्म देता है; सुख, तथापि, हर जुनून के साथ जुड़ा हुआ है।

36. तुम जिस नाप से अपने शरीर को नापोगे, उसी नाप से परमेश्वर भी तुम्हें नापेंगे (मत्ती 7:2)।

37. दिव्य न्याय के कार्य शरीर के माध्यम से किए गए कर्मों का प्रतिफल हैं।

38. पुण्य और ज्ञान अमरत्व को जन्म देते हैं; किन्तु उनका पतन मृत्यु की जननी बन गया है।

39. ईश्वर के लिए शोक कामवासना को दूर करता है; और कामवासना का दूर होना आत्मा का पुनरुत्थान है।

40. निष्क्रियता बुराई के सामने आत्मा की दृढ़ता है; फिर भी इसे मसीह की कृपा के बिना प्राप्त नहीं किया जा सकता।

41. मसीह आत्मा और शरीर के उद्धारकर्ता हैं, और जो कोई भी उनके पदचिन्हों पर चलता है, वह सभी बुराइयों से मुक्त हो जाता है।

४२. यदि आप मोक्ष प्राप्त करना चाहते हैं, तो देह के सुखों का त्याग करें, और संयम, प्रेम और प्रार्थना को अपनाएँ।

४३. सच्चा विवेक निर्लिप्तता की विशेषता है, जिससे सभी कार्य उचित मात्रा में होते हैं।

44. हमारे प्रभु और परमेश्वर यीशु मसीह हैं; और जो मन उनका अनुसरण करता है वह अंधकार में नहीं रहेगा।

४५. अपना मन इकट्ठा करो और अपने विचारों पर निगरानी रखो; और जिन विचारों को तुम उत्तेजक पाओ, उनसे लड़ो।

46. विचारों के उत्पन्न होने के तीन स्रोत हैं: इंद्रियाँ, स्मृति और शरीर की पूर्णता; लेकिन इनमें से सबसे कष्टप्रद वे हैं जो स्मृति से उत्पन्न होते हैं।

४७. जिसे बुद्धि प्रदान की जाती है, वह अद्रव्य की समझ का सहभागी बन जाता है, और वह संसार की शुरुआत और उसके अंत को जानता है।

48. उचित आचरण के मार्ग को न भूलो, और तुम्हारा मन प्रबुद्ध हो जाएगा; क्योंकि ऐसे लोगों से कहा गया है: *'मैं तुम्हारे लिए छिपे और अदृश्य खजाने खोल दूँगा'* (यशायाह 45:3)।

४९. जिसने अपने आपको वासनाओं से मुक्त कर लिया है, उसे ईश्वर की कृपा प्राप्त हुई है, और जिसे ज्ञान का योग्य समझा गया है, उसे महान दया प्रदान की गई है।

50. कामनाओं से मुक्त मन, सभी अस्तित्वमान चीजों के चिंतन से निरंतर प्रकाशित होकर, दीप्तिमान हो जाता है।

51. आत्मा का प्रकाश ज्ञान है; इससे वंचित, मूर्ख अंधकार में चलते हैं।

52. मूर्ख व्यक्ति अपना जीवन अंधकार में बिताता है; और अज्ञानता का अंधकार उन्हें घेरे रहता है।

53. जो यीशु से प्रेम करता है, वह बुराई से मुक्त हो जाएगा; और जो उनका अनुसरण करता है, वह सच्ची रोशनी को देखेगा।

54. वासनाओं से मुक्त मन सूक्ष्म विचारों को ग्रहण करता है, जब शरीर जागृत होता है और जब वह नींद में डूबता है।

55. एक मन जिसने पवित्रता की उच्चतम डिग्री प्राप्त कर ली है, सृष्टि के प्राणियों से बंधा हुआ महसूस करता है और सभी सृष्टि से परे होने की लालसा करता है।

56. धन्य है वह जिसने अनंतहीन अनंतता प्राप्त की है; और केवल वही जो सभी सीमित चीज़ों से परे है, इसे प्राप्त कर सकता है।

57. जो ईश्वर का सम्मान करता है, वह उनके वचनों पर मनन करता है; और जो उनसे प्रेम करता है, वह उनमें सत्य की खोज करता है।

58. धर्म के मार्गदर्शन में मन सत्य को पाता है; परन्तु जो किसी भी वासना के वश में है, वह उसे प्राप्त नहीं कर सकता।

59. जैसे ईश्वर अपने सार में अगोचर हैं, वैसे ही वे अपनी महानता में अकल्पनीय हैं।

60. जिसकी न कोई शुरुआत है और न कोई अंत, उसकी बुद्धि अथाह है।

61. प्रत्येक प्राणी की मुक्ति उसके सृष्टिकर्ता की सर्व-दयालु व्यवस्था में निहित है।

62. प्रभु अपनी दया से गिरने वालों को सहारा देते हैं, और नीची की गई आत्माओं को ऊँचा उठाते हैं।

63. मसीह जीवितों और मरे हुओं का न्यायी है, और हर एक काम का धर्मी प्रतिफलदाता है (प्रेरितों के काम 10:42; भजन संहिता 61:13)।

64. यदि आप अपनी आत्मा और शरीर पर शासन करना चाहते हैं, तो वासनाओं के कारणों को तुरंत काट डालें।

65. आत्मा की शक्तियों को सद्गुणों से बाँधो, और वासनाओं की हर प्रेरणा उनसे अलग हो जाएगी।

66. संयम के द्वारा कामवासना की प्रवृत्तियों को और आध्यात्मिक प्रेम के द्वारा क्रोध की प्रवृत्तियों को नियंत्रित करो।

67. मौन एकांत और प्रार्थना सद्गुण के सबसे शक्तिशाली साधन हैं; क्योंकि, मन को शुद्ध करके, वे उसे ग्रहणशील बनाते हैं।

68. केवल आध्यात्मिक संवाद ही लाभदायक है; अन्य सभी मामलों में मौन ही बेहतर है।

69. पाँच प्रकार की बातचीत में से तीन का अभ्यास करो; चौथे में अधिक बार संलग्न न हो; और पाँचवें से परहेज़ करो।

70. मौन उन लोगों को प्रयि है जन्हिें सांसारकि कसिी भी वस्तु से लगाव नहीं है; और जो मानव को प्रेम नहीं करते, उन्हें सभी लोग प्रयि होते हैं।

71. सच्चा शक्षिक मन की अंतरात्मा है; जो भी उसकी आज्ञा मानता है, वह नर्दिोष रहता है।

72. अंतरात्मा उन लोगों को छोड़कर कसिी को दोष नहीं देती, जो या तो पुण्य की चरम सीमा पर पहुँच चुके हों या बुराई की गहराइयों में डूब चुके हों।

73. पूर्ण वैराग्य शुद्ध वचिारों को जन्म देता है; और पूर्ण ज्ञान मनुष्य को असीम के साक्षात दर्शन कराता है।

74. जो कामनाओं की तृप्त निहीं पाता, वह प्रशंसा-योग्य नहीं, दुख करता है; परन्तु जो उन्हें त्याग देता है, वह नश्चिंति रहता है।

75. शोक, सामान्यत; इच्छति आनंद की प्राप्त सि वंचति होने को कहते हैं, चाहे वह परमेश्वर की ओर से आए या संसार की आत्मा की ओर से।

76. परमेश्वर का राज्य भलाई और बुद्ध हिै; जो कोई भी उन्हें प्राप्त करता है, वह स्वर्ग में नवािस करता है।

७७. उस मनुष्य के लिए वनिाश है, जसिके पास आत्मा और शरीर होते हुए भी, ईश्वर की अपेक्षा संसार के मार्गों को प्राथमकिता देता है।

78. जसिने सदाचार की आवश्यकताओं को आत्मा और शरीर दोनों के लिए कानून के रूप में स्थापति कयिा है, वही नेतृत्व का सही ढंग से प्रयोग कर सकता है। 79. जो व्यक्त सिदाचार में फलते-फूलते लोगों से ईर्ष्या नहीं करता, बल्क जिो लोग इसकी परवाह नहीं करते, उन पर दया करता है, उसने सभी के लिए समान प्रेम प्राप्त कयिा है।

७९. जसिने आत्मा और शरीर दोनों के लिए सदाचार की आवश्यकताओं को एक कानून के रूप में नर्धिारति कयिा है, उसे उचति रूप से शासन करना चाहिए।

80. एक अच्छा आध्यात्मकि व्यापारी वह है जसिने भवषि्य के लिए इस जीवन के सुखों और दुखों दोनों को समान रूप से त्याग दयिा है।

81. आत्मा प्रेम और संयम से दृढ़ होती है, जबक मिन (आत्मा) शुद्ध प्रार्थना और आध्यात्मकि चंतिन से दृढ़ होती है।

82. जब शक्षिाप्रद वचन सुनो, तो वक्ता का न्याय मत करो, कहीं ऐसा न हो क तिुम आत्मा को बचाने वाली शक्षिा से स्वयं वंचति हो जाओ।

83. एक दुष्ट हृदय में दुष्ट वचिार बसते हैं, और पड़ोसी के कर्मों की गलत व्याख्या करके, वह उनके गुणों को दोषों में बदल देता है।

84. उस वचिार पर भरोसा न करो जो तुम्हारे पड़ोसी की नदिा करता है, क्योंक जिो बुरा खज़ाना संजोए है, वह बुरे वचिारों को भी संजोए है।

85. एक अच्छा हृदय अच्छे वचिारों को जन्म देता है; क्योंक उिसके वचिार उसकी अंतरतम आत्मा के अनुरूप होते हैं।

86. अपने वचिारों की रक्षा करो और बुराई से दूर भागो, कहीं ऐसा न हो क तिुम्हारा मन कलंकति हो जाए और तुम चीज़ों को वकिृत दृष्ट सि देखने लगो।

87. यहूदयिों पर चंतिन करो और उनके कर्मों से स्वयं को बचाओ। ईर्ष्या से अंधे होकर, उन्होंने अपमानपूर्वक प्रभु और परमेश्वर को 'बीलज़बूब' कहा।

88. दुर्भावनापूर्ण संदेह मन को धुंधला कर देता है और उसे गलत को सही मानने पर मजबूर कर देता है।

८९. सभी सद्गुणों से ही जुनून उत्पन्न होते हैं; इसीलिए जुनूनी लोग सद्गुणों को ही जुनून समझ बैठते हैं।

९०. यद मिन लंबे समय तक आनंद या दुख में बना रहे, तो वह जल्द ही नराशा के जुनून में पड़ जाता है।

91. एक नर्मिल अंतरात्मा आत्मा को आनंदति करती है, जबक एिक अशुद्ध वचिार इसे नरक की गहराइयों में धकेल देता है।

92. जब जुनून उत्पन्न होते हैं, तो वे अहंकार को दूर कर देते हैं; लेकनि एक बार जब उन्हें दूर कर दयिा जाता है, तो अहंकार वापस आ जाता है।

93. यद आिप एक साथ सभी भावों से मुक्त होना चाहते हैं, तो संयम, प्रेम और प्रार्थना का अभ्यास करें।

94. मन, जब प्रार्थनापूर्वक ईश्वर में नवािस करता है, तो आत्मा के भावुक भाग को भी वासनाओं से मुक्त कर देता है।

९५. ईश्वर ने प्राणियों को अस्तित्व प्रदान करने के बाद, अपनी दिव्य व्यवस्था द्वारा उन सभी को एक साथ अपना लेते हैं।

96. यद्यपि वह सभी का प्रभु है, फिर भी वह दास बनने के लिए प्रसन्न हुआ, और इस प्रकार उसने सृष्टि के प्रति अपनी परम प्रबंधकता को प्रदर्शित किया (फिलि 2:7)।

97. वचन परमेश्वर, बिना परिवर्तन के मूर्तिमान होकर, देह के द्वारा सारी सृष्टि के साथ एक हो गए।

98. स्वर्ग और पृथ्वी पर यह एक अद्भुत चमत्कार है कि ईश्वर पृथ्वी पर हैं और मनुष्य स्वर्ग में है; ताकि, मानव जाति को स्वर्गदूतों के साथ एक करके, वह उन सभी पर दिव्यता प्रदान कर सकें।

99. स्वर्गदूतों और मनुष्यों का पवित्रिकरण और दिव्यता पवित्र और एकसार त्रिमूर्ति के ज्ञान में निहित है।

100. पापों की क्षमा, वासनाओं से मुक्ति है; जो कोई अनुग्रह द्वारा उनसे मुक्त नहीं हुआ है, उसे अभी तक क्षमा प्राप्त नहीं हुई है।

एक सौ दूसरा

एक्रोस्टिक इस प्रकार है: '' *मेरे लिए प्रार्थना करें, मेरे अति सम्माननीय भ्राता; क्योंकि मैं अपनी ही इच्छानुसार किए गए कर्मों के कारण, जैसा कि मैं इसके योग्य हूँ, महान विपत्तियों की आशा करता हूँ – आत्मा का दुख और शरीर की पीड़ा।*

1. क्या आप तुरंत अपनी वासनाओं से मुक्त होना चाहते हैं? – सभी वासनाओं की जननी, आत्म-प्रेम का त्याग करें।

2. आत्मा का स्वास्थ्य निर्लिप्तता और ज्ञान में निहित है, और इंद्रिय सुखों का दास व्यक्ति के लिए इसे प्राप्त करना असंभव है।

३. धैर्य के साथ किया गया संयम और उदारता से दिखाया गया प्रेम, शरीर या आत्मा की सभी कामनाओं को सूखा देता है।

4. आत्म-प्रेम आत्मा के सभी दुष्ट जुनूनों की जड़ है; और आत्म-प्रेम शरीर से प्रेम (या आत्म-दया) है।

5. विवेक की एक विशिष्ट विशेषता है मन के अधीन होना, जबकि साथ ही शरीर को वश में रखना और दास बनाना।

6. एक तर्कशील व्यक्ति के लिए अतर्कशीलता के आगे झुकना और केवल लज्जास्पद वासनाओं की तृप्ति में ही लगे रहना एक अपमान की बात है।

7. एक तर्कशील आत्मा के लिए अपने स्रष्टा को त्यागना और शरीर के आगे घुटने टेकना विनाशकारी है।

8. आपको शरीर को एक दास के रूप में मानने की आज्ञा दी गई है; इसके सुखों का दास बनना अस्वाभाविक है।

९. शरीर के साथ मेलजोल के बंधन तोड़ दो, और इस दास को केवल वही दो जो कड़ाई से आवश्यक हो।

10. अपनी इंद्रियों को मौन एकांत के किले में बंद कर दो, कहीं वे मन को अपनी वासनाओं की ओर भटका न दें।

11. धैर्यपूर्वक मौन का अभ्यास करने वाले के लिए सबसे शक्तिशाली हथियार आत्म-संयम, प्रेम, प्रार्थना और अध्ययन हैं।

12. मन कामनाओं की वस्तुओं पर तब तक विचार करना बंद नहीं करता, जब तक कि शरीर को वश में करके, वह चिंतन के लिए स्वयं को समर्पित नहीं कर देता।

13. हम वासनाओं से मुक्त होने के लिए आज्ञाओं का पालन करने का प्रयास करते हैं, और ज्ञान के योग्य माने जाने के लिए दिव्य सिद्धांतों को बनाए रखते हैं।

14. आत्मा की शांति निर्लिप्तता और ज्ञान से आती है, और कामुक सुखों का दास व्यक्ति के लिए इसे प्राप्त करना असंभव है।

१५. शरीर की कामुक इच्छाओं को काटकर उसे वश में करो, और तुम उसे उन इच्छाओं के भारी बंधन से मुक्त करोगे।

16. स्वतंत्र पैदा हुए, और स्वतंत्रता के लिए बुलाए गए, स्वयं को अशुद्ध वासनाओं का दास बनने न दें।

17. दुखों और सुखों, इच्छाओं और भयों के माध्यम से, राक्षस मन को इंद्रियों से बाँधते हैं।

18. ईश्वर का भय कामवासनाओं को नियंत्रित करता है, जबकि ईश्वर के लिए शोक कामुकता को दूर करता है।

19. ज्ञान की इच्छा भय का तिरस्कार करती है, जबकि ज्ञान की मिठास दुख को दूर करती है।

20. धर्मग्रंथ में निम्नलिखित चार तत्व होते हैं: आज्ञाएँ, सिद्धांत, चेतावनियाँ और वादे।

21. कामवासना संयम और परिश्रम से नियंत्रित होती है, और मौन एकांत तथा दिव्य प्रेम से सूख जाती है।

22. अपने भाई को रहस्यमयी, संदेहास्पद शब्दों से आहत न करो; क्योंकि यदि ऐसा हो, तो तुम स्वयं भी ऐसा व्यवहार सहन नहीं कर सकते।

23. क्रोध को उदारता और द्वेष की कमी से नियंत्रित किया जाता है, और प्रेम और करुणा (सहनशीलता) से नष्ट किया जाता है।

24. जिसे ज्ञान दिया जाता है, उसे समझ का प्रकाश भी दिया जाता है; परन्तु जो इसे प्राप्त करके भी इसका अपमान करता है, वह अंधकार देखेगा।

25. आज्ञाओं का पालन वैराग्य उत्पन्न करता है; और आत्मा का वैराग्य ज्ञान द्वारा संरक्षित होता है।

26. इंद्रिय-बोध को बौद्धिक चिंतन में परिवर्तित करें, और आप इंद्रियों को इंद्रियातीत बना देंगे।

27. एक महिला तपस्या में संलग्न आत्मा का प्रतीक है; उसके साथ मिलन से, मन सद्गुण को जन्म देता है।

28. जो लोग सत्य से, श्रद्धा से और उत्साह से परमेश्वर की खोज करते हैं, उनके मन को परमेश्वर के वचनों का अध्ययन परमेश्वर के ज्ञान से शिक्षित करता है।

29. जैसे दृष्टि रखने वालों और दृश्यमान के लिए प्रकाश है, वैसे ही विचार करने वालों और बोधगम्य के लिए ईश्वर है।

30. इंद्रिय आकाश विश्वास के आकाश का प्रतीक है, जिस पर, स्वर्गीय पिंडों की तरह, सभी संत चमकते हैं।

31. यरूशलेम स्वर्गीय है—अमूर्त का ज्ञान; क्योंकि उसमें संसार का दर्शन देखा जाता है।

32. सक्रिय सेवा के जीवन की उपेक्षा न करें; अन्यथा, आपका ज्ञान घट जाएगा; और फिर, परिणामस्वरूप उत्पन्न होने वाली अकाल के कारण, आप मिस्र चले जाएँगे (उत्पत्ति 26:1–2)।

33. आध्यात्मिक स्वतंत्रता, वासनाओं से मुक्ति है: जिसे कोई भी मसीह की कृपा के बिना प्राप्त नहीं करता।

34. प्रतिज्ञात भूमि स्वर्ग का राज्य है, जिसके लिए उदासीनता और ज्ञान हमें योग्य बनाते हैं।

35. आध्यात्मिक मिस्र वासनाओं का अंधकार है, जिसमें कोई भी तब तक नहीं उतरता जब तक कि वह पहले अकाल न झेले।

36. अपना कान आध्यात्मिक वचनों से भर लो, और तुम अपवित्र विचारों से अपना मन हटा लोगे।

37. केवल ईश्वर ही स्वभाव से भले और सर्वज्ञ हैं; परन्तु मन भी उनके साथ संचार के द्वारा ऐसा बन सकता है, यदि वह इसके लिए प्रयत्न करे।

38. अपने पेट, अपनी नींद, अपने क्रोध और अपनी जीभ को संयम में रखो; – *'और तुम्हारा पैर पत्थर पर न ठोकर खाए'* (भजन संहिता 90:12)।

39. प्रत्येक व्यक्ति से समान रूप से प्रेम करने का प्रयास करें, और आप एक ही बार में सभी वासनाओं को दूर भगा देंगे।

40. इंद्रिय-संवेदना मन और इंद्रियों दोनों में सामान्य है; लेकिन आध्यात्मिक ज्ञान केवल मन का है।

41. मन का आध्यात्मिक मामलों में संलग्न होना तब तक असंभव है, जब तक कि वह पहले इंद्रियों और भौतिक वस्तुओं की ओर अपनी प्रवृत्ति को न काट दे।

42. स्वाभाविक अनुभूति इंद्रिय-आकर्षण की ओर झुकाव रखती है, और उससे विचलित होकर, मन को भी विचलित करती है।

४३. इंद्रियों को मन की सेवा में लगाओ, और उन्हें मन को भटकाने का समय न दो।

44. जब मन संवेदनशील विषयों की ओर मुड़ जाए, तो इंद्रियों से उसका ध्यान हटाकर सामने जो कुछ भी हो, उसकी आध्यात्मिक समझ की ओर निर्देशित करें।

45. मन के आध्यात्मिक विषयों में समर्पित होने का एक संकेत है इंद्रियों को प्रसन्न करने वाली सभी चीज़ों की उपेक्षा।

४६. जब मन आध्यात्मिक वस्तुओं के चिंतन की ओर मुड़ता है, तो इससे उसे अविराम आनंद प्राप्त होता है।

४७. जब मन एक के ज्ञान से समृद्ध होता है, तो इंद्रियाँ भी निश्चित रूप से उसके अधीन हो जाती हैं।

४८. अपने मन को इंद्रिय वस्तुओं में मग्न रहने न दें, अन्यथा वह उन्हीं के विशिष्ट सुख-दुखों से भर जाएगा।

४९. जिनका मन सदा आध्यात्मिक विषयों में लगा रहता है, उनके लिए आत्मा का इच्छुक भाग एक दिव्य अस्त्र बन जाता है।

50. जब तक आत्मा के इच्छुक भाग को पहले उसके उपयुक्त गुणों से न सजाया जाए, तब तक मन का ज्ञान से भरना असंभव है।

५१. मन तब संसार से विरक्त हो जाता है, जब वह इंद्रिय सुखों की सभी अनुभूतियों को पूरी तरह से समाप्त कर देता है।

52. आत्मा के तर्कशील भाग की विशिष्ट विशेषता ईश्वर के ज्ञान की खोज होनी चाहिए, जबकि इच्छुक भाग की विशेषता प्रेम और आत्म-संयम होनी चाहिए।

53. यदि किसी विषय के प्रति झुकाव नहीं है, तो बुद्धि हमेशा किसी भी इन्द्रिय संबंधी विषय में व्यस्त नहीं रह सकती।

54. मन तब परिपूर्ण होता है जब वह ज्ञान से परिपूर्ण हो; आत्मा तब परिपूर्ण होती है जब वह सद्गुणों में स्थिर हो।

55. मन की इंद्रिय-आनंद की ओर झुकाव उसे शारीरिक सुखों का दास बना देता है।

56. मन भी अपने ज्ञान के स्थान से हट जाता है, जब इच्छुक भाग अपने सद्गुणों से मुंह मोड़ लेता है।

57. हमें *'ईश्वर की संतान बनने का अधिकार'* प्राप्त हुआ है (यूहन्ना 1:12), लेकिन हम तब तक ऐसे नहीं बनते जब तक हम अपनी वासनाओं को त्याग नहीं देते।

58. कोई यह न सोचे कि वह वास्तव में ईश्वर का पुत्र बन गया है, जब तक कि उसने अपने भीतर दिव्य गुण प्राप्त नहीं कर लिए हैं।

59. अच्छे या बुरे चरित्र लक्षणों को अपनाने से कोई व्यक्ति ईश्वर का या शैतान का पुत्र बन जाता है।

60. एक बुद्धिमान व्यक्ति वह है जो स्वयं पर ध्यान देता है और सभी अशुद्धियों से स्वयं को शुद्ध करने के लिए जल्दी करता है।

61. एक कठोर आत्मा कितना भी पिटा जाए, कुछ भी महसूस नहीं करती, और एक उपकारी के प्रति कृतज्ञता महसूस करने में असमर्थ होती है।

62. जो अशुद्ध वस्त्र पहने है, उसे परमेश्वर के विवाह-भवन से निकाल दिया जाता है और वह घोर अंधकार का भागीदार बन जाता है (मत्ती 22:12–13)।

63. जो परमेश्वर से डरता है वह अपनी आत्मा की परवाह करता है और स्वयं को एक बुरे भाग्य से बचाता है।

64. जिसने ईश्वर को त्याग दिया है और दासता से देहिक सुखों में लिप्त रहता है, उसके लिए ईश्वर की दया प्राप्त करना असंभव है।

65. यीशु मसीह वही वचन हैं जिन्होंने *कहा, 'कोई भी दो स्वामियों की सेवा नहीं कर सकता'* (मत्ती 6:24), भले ही हम इसे मानना नहीं चाहते।

66. एक कलंकित आत्मा अपनी वासनाओं से कठोर हो जाती है, और बिना चीर-फाड़ और दाह के, यह विश्वास करने में असमर्थ है।

67. जो लोग कठोर हो गए हैं, उन्हें कठोर परीक्षाओं की आवश्यकता होती है; क्योंकि तीव्र पीड़ा के बिना वे कोमल नहीं हो सकते।

68. एक बुद्धिमान व्यक्ति अपनी आत्मा की परवाह करता है, और स्वेच्छा से अपने ऊपर कष्ट सहकर, वह अनैच्छिक यातना से बचता है।

69. आत्मा की देखभाल आत्म-क्लेश (त्याग के कार्य) और विनम्रता में निहित है, जिसके लिए ईश्वर सभी पापों को क्षमा कर देता है।

70. जैसे वासना और क्रोध पापों को बढ़ाते हैं, वैसे ही संयम और विनम्रता उन्हें मिटा देते हैं।

71. ईश्वर के लिए शोक हृदय को तोड़ देता है; यह नरक की यातनाओं के भय से उत्पन्न होता है।

72. ईश्वर के लिए शोक हृदय को शुद्ध करता है और इसे अशुद्ध सुखों से दूर करता है।

73. धैर्य आत्मा का परिश्रम है (आत्मा को परिश्रम कराने की इच्छा); जहाँ ऐसा परिश्रम होता है, वहाँ सुख का प्रेम दूर हो जाता है।

74. हर पाप सुख के लिए किया जाता है; हालाँकि, हर क्षमा पीड़ा और दुख के माध्यम से मिलती है।

७५. जो अपनी इच्छा से पश्चाताप नहीं करते, वे परमेश्वर की व्यवस्था द्वारा अनैच्छिक पीड़ा को झेलते हैं।

76. मसीह सारी दुनिया के उद्धारकर्ता हैं; और उन्होंने लोगों को उद्धार के लिए पश्चाताप का वरदान दयिा है (मत्ती 4:17)।

77. पश्चाताप आज्ञाओं के पालन को जन्म देता है; और आज्ञाओं का पालन आत्मा को शुद्ध करता है।

78. आत्मा का शुद्धकिरण उसके भावों से मुक्ति है; और भावों से मुक्ति ईश्वर के प्रति प्रेम को जन्म देती है।

79. आत्मा शुद्ध होती है यदि वह ईश्वर से प्रेम करती है, और मन शुद्ध होता है यदि वह अज्ञानता से मुक्त हो जाता है।

80. मृत्यु तक परमेश्वर की आज्ञाओं का पालन करने का प्रयास करो; क्योंकि उनके द्वारा शुद्ध होकर, तुम जीवन में प्रवेश करोगे।

81. शरीर को आज्ञाओं के सेवक के रूप में उपयोग करें, इसे यथासंभव कामुकता और पीड़ा से मुक्त (स्वस्थ) रखें।

82. देह की विद्रोह प्रार्थना, आहार और मौन की उपेक्षा से उत्पन्न होती है।

83. अच्छे लोगों में अच्छी मौनता फल देती है: प्रेम, आत्म-नियंत्रण और शुद्ध प्रार्थना।

84. पठन और प्रार्थना मन को शुद्ध करते हैं; परन्तु प्रेम और संयम आत्मा के इच्छुक भाग को शुद्ध करते हैं।

85. हमेशा आत्म-संयम की एक ही मात्रा का पालन करें, कहीं ऐसा न हो कि असंगति के कारण आप इसके विपरीत पड़ जाएँ।

86. अपने लिए नियम बना लेने के बाद, उन्हें बाद में चालाकी से तोड़-मरोड़कर व्याख्या करके स्वयं के प्रति विश्वासघात न करें; क्योंकि जो कोई भी इस तरह से स्वयं को उनसे दूर ले जाता है, वह स्वयं को धोखा देता है (वह स्वयं अपना शैतान है)।

८७. भावुक आत्माएँ मानसिक सूर्यास्त होती हैं; क्योंकि उनमें सत्य का सूर्य अस्त हो गया है।

८८. वह ईश्वर का पुत्र है जो सद्गुण, ज्ञान, शक्ति और सत्य में ईश्वर के समान बन गया है।

89. आत्मा की बीमारी एक दुष्ट प्रवृत्ति है; परन्तु उसकी मृत्यु पाप है, जो मनुष्य के कर्मों द्वारा किया जाता है (रोमियों 5:12)।

90. आध्यात्मिक विरक्ति पूर्ण निर्लिप्तता है, जिसमें मन इस संसार की सभी वस्तुओं से अलग हो जाता है।

91. आत्मा के गुणों के अनुसार सभी चीजों का अवलोकन करो, क्योंकि इससे धर्म का फल उत्पन्न होता है।

92. मानसिक वस्तुओं का चिंतन, वे कहते हैं, अदेह है, जो पदार्थ और रूप से पूरी तरह से अलग है।

93. जैसे चारों तत्त्व पदार्थ और रूप से पराये नहीं हैं, वैसे ही उनसे बने शरीर भी उनसे पराये नहीं हैं।

94. वचन, मानवजाति के प्रति प्रेम से देहधारी बनकर (यूहन्ना 1:14), न तो अपनी स्वभाविक अवस्था को बदला, और न ही उस अवस्था को जिसमें वह प्रकट हुआ।

95. हम परमेश्वर—पुत्र जो देहधारी हुआ—के बारे में बात करते हैं, कि वह अपनी दिव्यता और मानवता में, और दिव्यता तथा मानवता दोनों में अस्तित्व में है, और दो स्वभावों वाला है, तथा दो स्वभावों में है।

96. हम मसीह में एक व्यक्ति की गवाही देते हैं, जिसमें दो स्वभाव अविभाज्य रूप से एकजुट हैं।

97. हम मसीह में एक, अविभाज्य व्यक्तित्व की महिमा करते हैं, और उनमें दो स्वभावों के अविमिश्रित मिलन की स्वीकारोक्ति करते हैं।

98. हम त्रैक्यमय, एकमात्र दिव्य स्वभाव की आराधना करते हैं, और हम एकसार पवित्र त्रिमूर्ति की महिमा करते हैं।

99. पितृत्व, पुत्रत्व और उत्पत्ति तीनों व्यक्तियों में से प्रत्येक के लिए विशिष्ट हैं; जबकि अस्तित्व, स्वभाव, दिव्यता और सद्भाव तीनों व्यक्तियों में सामान्य हैं।

संख्या एक सौ तीन

जिसका अक्रोस्टिक पढ़ा जाता है: '' *बुराई को ठीक से उस चीज़ के रूप में नहीं माना जाना चाहिए जो देह को बोझ देती है बल्कि आत्मा को शुद्ध करती है; बल्कि उस चीज़ के रूप में जो विवेक को ठेस पहुँचाती है जबकि देह को आनंदित करती है*।

1. उस पर अच्छा सोचो जो स्वभाव से अच्छा है; और हर व्यक्ति के बारे में अच्छा सोचो।

2. न्याय के दिन, हमें अपने शब्दों, कर्मों और विचारों का ईश्वर के समक्ष हिसाब देना होगा।

3. अच्छा या बुरा करने की हमारी आदत हमें अच्छा या बुरा सोचने, बोलने और कार्य करने के लिए मजबूर करती है।

४. वासनाओं से ग्रस्त मन अनुचित विचारों को पालता है; और ये विचार शब्दों और कर्मों के माध्यम से प्रकट होते हैं।

5. एक बुरे विचार से पहले एक वासना होती है; वासनाओं का कारण इंद्रियाँ हैं; और उनके दुरुपयोग का कारण, स्पष्ट रूप से, मन है।

6. अपनी भावनाओं को नियंत्रित करो, अपने विचारों को वश में करो, और अपने जुनून पर काबू पाने के लिए आज्ञाओं को हथियार के रूप में उपयोग करो।

7. बुराई गहरी जड़ें जमा चुकी है और उस पर काबू पाने के लिए निरंतर प्रयास की आवश्यकता होती है; क्योंकि एक गहराई से जमी हुई आदत आसानी से नहीं छूटती।

8. संयम और प्रेम का निरंतर प्रयास, धैर्य और मौन के साथ, उस जुनून को समाप्त कर देता है जो हावी हो चुका है।

९. प्रार्थना में अपने मन को अधिक बार उठाएँ, और आप अपने हृदय में घूमने वाले विचारों को दूर कर देंगे।

10. तपस्या के लिए धैर्य और साहस की आवश्यकता होती है; क्योंकि कामुकता केवल दीर्घकालिक और स्वेच्छा से की गई आत्म-अनुशासन द्वारा ही दूर होती है।

11. यदि आप हर चीज़ को संयम और नियम के अनुसार करते हैं, तो आप अपने तपस्या के प्रयासों को सफलतापूर्वक पूरा करेंगे।

12. अपने तपस्या के प्रयासों में हमेशा एक ही स्तर बनाए रखें, और जब तक बिल्कुल आवश्यक न हो, स्थापित नियम को न तोड़ें।

13. जैसे प्रेम और आत्म-संयम मनुष्य के विचारों को शुद्ध करते हैं, वैसे ही मनन और प्रार्थना भी करते हैं – *'हर विचार और हर योजना जो मसीह के अनुकूल नहीं है'* (2 कुरिन्थियों 10:5)।

14. तपस्या के कार्य—अर्थात् उपवास, जागरण, धैर्य और उदारता—अंतरात्मा को शुद्ध करते हैं।

15. जो कोई भी अनैच्छिक प्रलोभनों के प्रहारों को प्रसन्नचित्त होकर सहन करता है, वह विनम्र, कुशल (आध्यात्मिक मामलों में) और विश्वसनीय बन जाता है।

16. धैर्य आत्म-अनुशासन की आत्मा की इच्छा में निहित है; यह उत्पन्न होने वाली कठिनाइयों और अनैच्छिक प्रलोभनों को सहन करने में निहित है।

17. भयानक बदनामी को धैर्यपूर्वक सहना द्वेष की कमी को जन्म देता है; धैर्य, हालांकि, आत्मा से एक बार और हमेशा के लिए सभी बुराइयों को मिटा देता है।

18. घोर दुर्भाग्य के प्रहार हृदय को चीर देते हैं, और उनसे उत्पन्न दुख सुख के प्रति प्रेम को दूर भगा देता है।

19. चार प्रमुख जुनून हैं, जिन्हें परमेश्वर बुद्धिमानी से एक-दूसरे के विरुद्ध खड़ा करता है।

20. क्योंकि सुख के प्रेम को दुख उत्पन्न करने से नष्ट किया जाता है, जबकि नरकीय यातनाओं का भय कामवासना को मुरझा देता है।

21. एक विवेकी मन आत्मा को आध्यात्मिक साधनों में निर्देशित करता है, जबकि शरीर को हर प्रकार के शारीरिक प्रयास में प्रशिक्षित किया जाता है।

22. प्रयास करें कि संन्यासी न केवल अपना बाहरी स्वरूप, बल्कि अपने भावों को शुद्ध करके अपना आंतरिक स्वरूप भी प्रकट करें।

२३. पहला त्याग भोगों से मुक्ति है; दूसरा और तीसरा कामना और अज्ञान से मुक्ति है।

24. जो कोई भी चाहे वह आसानी से संपत्ति का त्याग कर सकता है; लेकिन उनसे आसक्ति का त्याग करना कोई आसान काम नहीं है।

25. जो कामवासना को वश में रखता है, वह क्रोध पर भी विजय प्राप्त कर लेता है; क्योंकि क्रोध की कटुता का कारण यहीं निहित है।

26. तो फिर, क्या हम कामुक विचारों से शुद्ध हो गए हैं और परिणामस्वरूप, शुद्ध और अमूर्त प्रार्थना का स्वाद चखा है, या अभी तक नहीं?

27. मन महान है यदि वह वासनाओं से मुक्त हो गया हो, सभी सृजित वस्तुओं का त्याग कर चुका हो, और ईश्वर में स्थित हो।

28. जो समृद्धि प्राप्त करता है, वह निम्नलिखित तीन बातों पर ध्यान लगाता है: आज्ञाओं का पालन, सिद्धांतों का ज्ञान, और पवित्र त्रिमूर्ति में विश्वास।

29. वासनाओं से मुक्त मन निम्नलिखित में लगा रहता है: सूक्ष्म विचार, सृजित वस्तुओं का चिंतन, और शाश्वत प्रकाश।

30. सबसे नीचे भाव हमारी आत्माओं के भीतर छिपे होते हैं; फिर भी जब उनके कर्म उजागर हो जाते हैं तो वे प्रकट हो जाते हैं।

31. कभी-कभी ऐसा होता है कि मन अविचलित रहता है और एक निश्चित स्तर की निर्लिप्तता प्राप्त कर लेता है; फिर भी, (सक्रिय अभ्यास के लिए वस्तुओं या विषियों की) अनुपस्थिति के कारण वह अपरिष्कृत ही रहता है।

32. निम्नलिखित तीन बातों से वासनाएँ उत्तेजित होती हैं: उनके विषियों की स्मृति से, शरीर की तृप्ति और विश्राम से, तथा इंद्रियों से, जैसा कि कहा गया है।

33. मन, इंद्रियों को अच्छे नियंत्रण में और शरीर को अनुशासित कर लेने के बाद, केवल एक ही लड़ाई लड़ता है – स्मृति के विरुद्ध लड़ाई।

34. जब आत्म-संयम और आध्यात्मिक प्रेम की कमी होती है, तो इंद्रियों के माध्यम से वासनाएँ सक्रिय हो जाती हैं।

35. मध्यम उपवास, जागरण और भजन-कीर्तन आमतौर पर शरीर की प्रकृति को नियंत्रित करते हैं।

36. निम्नलिखित तीन चीजें स्पष्ट रूप से शरीर की प्रकृति को बिगाड़ती हैं: अनियमित आहार, जलवायु में परिवर्तन, और राक्षसों का प्रभाव।

37. निम्नलिखित द्वारा कामुक विचारों को वश में किया जाता है: प्रार्थना, पठन, संयम और प्रेम।

38. पहले इंद्रियों को शांत करें, और फिर इन विचारों का सद्गुण के हथियारों से मुकाबला करें।

39. मन का पाप बुराई के लिए विचारों का दुरुपयोग है, जबकि सक्रिय पाप बुराई के लिए चीजों का दुरुपयोग है।

40. विचारों और वस्तुओं का दुरुपयोग अधार्मिक और अनुचित है; दोनों का बुराई के लिए उपयोग गलत है।

41. निंदनीय जुनून वे बंधन हैं जो मन को इंद्रियों का कैदी बनाते हैं।

42. वह पूर्ण वैराग्य का स्वामी है, जिसे न तो कर्मों और वस्तुओं से, और न ही उनके स्मरण से कोई आसक्ति है।

४३. एक अच्छी आत्मा अपने पड़ोसी के लिए अच्छा करती है, और, यदि उससे कृतघ्नता का सामना होता है, तो भी वह उदार रहती है, और उनके हाथों हुए किसी भी नुकसान को धैर्यपूर्वक सहन करती है।

44. बुरे विचार अपने आप में बुरे होते हैं, और जिसने स्वयं को उनसे शुद्ध नहीं किया है, वह सच्चा ज्ञान नहीं सीख पाएगा।

४५. जो मसीह को सुनता है, वह स्वयं को प्रबुद्ध करता है, और जो उनका अनुकरण करता है, वह स्वयं को सुधारता है।

46. रंजिश आत्मा का कोढ़ है; यह या तो अपमान, या हानि या संदेहास्पद विचारों से उत्पन्न होती है।

47. प्रभु ईर्ष्यालुओं की बुद्धि अंधी कर देता है क्योंकि वे अपने पड़ोसी के आशीर्वादों पर धर्मपूर्वक शोक नहीं करते।

४८. एक बदनाम करने वाली आत्मा की जीभ तीन-धारी होती है, क्योंकि यह स्वयं को, सुनने वाले को, और कभी-कभी तो जिस व्यक्ति की बदनामी की जा रही है, उसे भी घायल कर देती है।

49. जो अपने पर अत्याचार करने वाले के लिए सच्चे मन से प्रार्थना करता है, वह द्वेष से मुक्त हो जाता है; और जो उससे उपहार नहीं रोकता, वह कटुता से मुक्त हो जाता है।

50. अपने पड़ोसी से घृणा आत्मा की मृत्यु है; और यही वह है जो बदनाम करने वाले की आत्मा में होती है और वह स्वयं पर लाती है।

51. आलस्य आत्मा के भ्रष्ट होने से उत्पन्न होता है; परन्तु इन्द्रिय-भोगों से ग्रस्त आत्मा परिश्रमी नहीं होती।

52. जो प्रभु यीशु से प्रेम करता है, वह तपस्या के कार्यों में स्वयं को समर्पित करता है; और इन कार्यों में दृढ़ता सुस्ती को दूर करती है।

53. आत्मा तपस्या के श्रम से बलवान होती है – और सभी चीजों में संयम बरतकर, यह आलस्य को दूर भगाती है।

54. जो अपने पेट पर शासन करता है, वह वासना को सूखा देता है, और उसका मन अश्लील विचारों के आगे नहीं झुकता।

55. पवित्र व्यक्ति का मन पवित्र आत्मा का मंदिर है; परन्तु पेटू का मन कौवों का वासस्थान है (यशायाह 34:11)।

56. अतिभक्षण विभिन्न स्वादिष्ट व्यंजनों की लालसा उत्पन्न करता है, जबकि उपवास एक रोटी को भी मीठा बना देता है।

57. जो ईर्ष्यालु के साथ गुप्त रूप से आनन्द मनाता है, वह ईर्ष्या से मुक्त हो जाता है; और जो ईर्ष्या का कारण बन सकने वाली बात को छिपाता है, वह दूसरों को ईर्ष्या से मुक्त करता है।

58. लापरवाही से जीने वाले से दूर रहो, भले ही उसका नाम बहुतों की नजर में सम्मानित हो।

59. एक परिश्रमी व्यक्ति को अपना मित्र बनाओ, और तुम उसके पास अपने पापों का प्रायश्चित पाओगे।

60. लापरवाह व्यक्ति ने स्वयं को कई स्वामियों को बेच दिया है; और जैसा वे उसे ले जाते हैं, वैसा ही वह जीता है।

61. लापरवाही, एक मित्र की तरह, शांति के समय आपका पक्ष लेती है; लेकिन प्रलोभन के समय, एक शत्रु की तरह, वह आपके विरुद्ध उठ खड़ी होती है।

62. यह तुम्हारे लिए अपनी आत्मा त्याग देता है, इससे पहले कि वासनाएँ उत्पन्न हों; लेकिन जब वे उत्पन्न हो जाती हैं, तो यह अपनी आत्मा के लिए तुम्हारी आत्मा को छीन लेता है।

63. एक उपेक्षित खेत में कांटे उग आते हैं, और एक लापरवाह आत्मा अशुद्ध वासनाओं से भर जाती है।

64. एक बुद्धिमान मन अपनी आत्मा को नियंत्रित करता है, शरीर को थका देता है, और वासनाओं को अपने अधीन कर लेता है।

65. दृश्यमान कर्म अदृश्य आंतरिक कर्मों के संकेत होते हैं, जैसे फल से पता चलता है कि वह किस वृक्ष का है।

66. शब्द और कर्म पाखंडी को उजागर करते हैं, ठीक वैसे ही जैसे वे गुप्त झूठे पैगंबर को प्रकट करते हैं।

67. एक बुद्धिहीन मन अपनी आत्मा को उपदेश नहीं देता, बल्कि उसे प्रेम और संयम से दूर ले जाता है।

68. अशुद्ध विचारों का कारण एक भ्रष्ट चरित्र है, जो घमंड, अहंकार और दंभ से प्रेरित होता है।

69. इन जुनूनों से ग्रस्त लोग पाखंड और धोखे के साथ-साथ चालाकी, उपहास और सबसे घिनौनी झूठी बातों के लिए जाने जाते हैं।

70. ऐसे लोग ईर्ष्या और उत्साह, क्रोध और प्रचंड क्रोध, दुख और प्रतिशोधीपन के वश में भी होते हैं।

71. आलस्य में जीने वालों का यही मार्ग है, और मेरे भीतर छिपे खजाने भी ऐसे ही हैं।

७२. संयम (कठोर शारीरिक तपस्या) और विनम्रता आत्मा को बचाती है, और उसे उपरोक्त भावों से मुक्त करती है।

73. एक बुद्धिमान मन की निशानी एक उपयोगी शब्द है, जबकि एक अच्छी आत्मा की निशानी एक अच्छा कर्म है।

74. एक प्रबुद्ध मन ज्ञान के शब्द बोलता है, जबकि एक शुद्ध आत्मा दैवी विचारों को विकसित करती है।

७५. उत्साही लोगों के विचार ज्ञान सिखाते हैं, और उनके शब्द सुनने वालों को ज्ञान प्रदान करते हैं।

76. जब कोई आत्मा सद्गुणों से युक्त होती है, तो वह शुभ विचारों को विकसित करती है; लेकिन जब वह दुष्ट प्रवृत्तियों से युक्त होती है, तो वह अस्वस्थ विचारों को जन्म देती है।

77. एक भावुक आत्मा दुष्ट विचारों के लिए प्रजनन स्थल है, और अपने भंडार से वह बुराई निकालती है (मत्ती 12:35)।

78. एक अच्छा खज़ाना एक सदाचार है, और एक अच्छा मन उससे अच्छी बातें उत्पन्न करता है।

79. दिव्य प्रेम से प्रेरित मन ईश्वर के बारे में अच्छे विचारों को विकसित करता है, जबकि आत्म-प्रेम से प्रेरित मन इसके विपरीत को जन्म देता है।

80. जो मन अपने पड़ोसी से प्रेम से प्रेरित होता है, वह निरंतर उसके बारे में अच्छा सोचता है (1 कुरिन्थियों 13:5); लेकिन जो मन इसके विपरीत से प्रेरित होता है, वह उसके बारे में बुरा मान लेता है।

81. अच्छे विचारों का कारण सद्गुण है; सद्गुणों का कारण आज्ञाएँ हैं; और उनके पूरण होने का कारण सद्इच्छा है।

82. सद्गुण और दुर्गुण—चाहे वे आत्मा में मौजूद हों या उससे दूर हो रहे हों—आत्मा को भलाई या बुराई की ओर झुकाते हैं, और उसे एक-दूसरे के विरोधी विचारों को पालने के लिए प्रेरित करते हैं।

83. बुरे विचारों का कारण वासना है; वासनाओं का कारण उपदेशों के प्रति अवज्ञा है; अवज्ञा का कारण इंद्रियों का प्रपंच है; और प्रपंच का कारण इंद्रियों पर उचित नियंत्रण रखने में मन की लापरवाही है।

84. जो प्रगति कर रहे हैं, उनमें अच्छे स्वभाव अभी भी आसानी से उनके विपरीत में बदल सकते हैं; लेकिन जो पूर्ण हैं, उनमें ये स्वभाव अटूट होते हैं।

85. आत्मा की शक्ति सद्गुण की एक अटूट आदत है; जिसने इसे प्राप्त कर लिया है, उसने कहा: *'परमेश्वर के प्रेम से हमें कौन अलग कर सकता है?'* (रोमियों 8:35)।

८६. आत्म-प्रेम सभी भावों से पहले आता है; परन्तु घमण्ड उन सभी के बाद आता है।

87. तीन प्रमुख पापी जुनूनों की उत्पत्ति आत्म-प्रेम के जुनून से होती है।

88. ये तीन हैं: अतिसंयम, दंभ और लोभ, जिनसे अन्य सभी वासनाएँ उत्पन्न होती हैं।

८९. भोग-लिप्सा के बाद व्यभिचार, दंभ के बाद अहंकार, और बाकी के बाद ये तीनों ही आते हैं।

90. इन तीनों के बाद दुख, क्रोध, द्वेष, ईर्ष्या, आलस्य और अन्य आते हैं....

प्रार्थना

1. हे मसीह, सर्व के प्रभु! हमें इन सभी चीज़ों से बचाओ – विनाशकारी भावों से भी और उन विचारों से भी जो वे उत्पन्न करते हैं।

2. हमें तेरे ही निमित्त बनाया गया है, ताकि हम तुझमें परम आनंद पा सकें, और हमें उस एदेन के बगीचे में रखा गया है जिसे तूने लगाया था।

3. फिर भी हमने इस वर्तमान अपमान को स्वयं पर लाया है, क्योंकि हमने धन्य आनंद के बजाय विनाशकारी चीज़ों को प्राथमिकता दी है।

4. इसी कारण से हमने अपने भीतर अपना न्यायसंगत प्रतिफल प्राप्त किया है, शाश्वत जीवन के बजाय मृत्यु को विरासत में पाकर।

5. अब हे प्रभु, जैसे आप हमेशा हमारी देखभाल करते आए हैं, वैसे ही अंत तक हमारे रक्षक बने रहें - जैसे आपने हमारे लिए अवतार लेने की कृपा की, वैसे ही हम सभी को बचाएँ।

6. क्योंकि आप खोए हुए लोगों को बचाने आए थे; अतःहमें उद्धार पाए हुओं की संगति से वंचित न करें।

7. हमारी आत्माओं को जीवन की ओर उठाइए, और हमारे शरीरों को बचाइए, हमें हर अशुद्धि से शुद्ध करते हुए।

८. उन वासनाओं के बंधन तोड़ें जो हमें कैदी बनाए हुए हैं, जैसे आपने अशुद्ध दुष्टात्माओं के दल को तोड़ा था।

9. और हमें उनकी अत्याचारी सत्ता से बचाओ, ताकि हम केवल आपकी, शाश्वत प्रकाश की, सेवा कर सकें।

10. जब, मृतकों में से हमारे पुनरुत्थान पर, हम स्वर्गदूतों के साथ मिलकर, एक ही, धन्य और शाश्वत रूप से अविभाज्य गायन मंडली बनाएँगे।

सौ और चौथा

जिसका अक्रोस्टिक पढ़ा जाता है: '*' परन्तु हमारे परमेश्वर से विनती करें कि हम वास्तविक और काल्पनिक, और केवल ऐसे माने जाने वाले सभी बुराइयों से छुड़ाए जाएँ*'

1. जिसने भी जीवन-दायक आत्मा द्वारा, देह के प्रेम और लाड़-प्यार से अपने मन को अलग कर लिया है, उसने *'देह के कर्मों को मार डाला है'* (रोमियों 8:13)।

2. यदि आपका मन अभी भी शरीर के उपयुक्त बातों में व्यस्त है, तो शरीर की प्रवृत्ति का त्याग करने के बारे में न सोचें।

3. जैसे संवेदना और इंद्रिय संबंधी चीज़ें देह के लिए उपयुक्त हैं, वैसे ही मन और बौद्धिक चीज़ें आत्मा के लिए उपयुक्त हैं!

४. अपनी आत्मा को इंद्रियों और विषयों से हटा लो, और तुम्हारा मन ईश्वर में निवास करेगा और आध्यात्मिक बातों में व्यस्त रहेगा।

5. बौद्धिक प्राणी, जिन्हें केवल मन द्वारा जाना जाता है, दिव्यता के समान हैं; जबकि इंद्रियाँ और इंद्रिय वस्तुएँ मन की सेवा करने के लिए बनाई गई हैं।

6. इंद्रियों और विषयों को आध्यात्मिक चिंतन के लिए अपनी सेवा में लगाओ, न कि शरीर की वासनाओं की तृप्ति के लिए।

7. आपको *'मांस के कर्मों को मार डालने' की* आज्ञा दी गई है, ताकि कठिन प्रयासों के माध्यम से आप उस आत्मा को पुनर्जीवित कर सकें जिसे मांस के सुखों ने मृत कर दिया है।

8. ईश्वर के अधीन रहो, और अपनी इंद्रियों पर शासन करो; और, श्रेष्ठ होकर, अपने से नीच को अपने ऊपर हावी न होने दो।

९. ईश्वर शाश्वत, असीम और अनंत हैं, और उन्होंने उनका आज्ञापालन करने वालों को शाश्वत, असीम और अनुपम आशीर्वादों का वादा किया है।

10. मन का स्वभाव ईश्वर में निवास करना और उन पर, साथ ही उनकी दिव्य व्यवस्था और उनके भयानक न्याय पर चिंतन करना है।

11. आपके पास किसी एक या दूसरी ओर झुकने की शक्ति है, लेकिन बेहतर की ओर खड़े रहें, और आप बुरे को वश में कर लेंगे।

12. इंद्रियाँ और इंद्रिय-विषय अच्छे हैं, क्योंकि वे सदाचारी ईश्वर की सृष्टियाँ हैं; फिर भी वे किसी भी तरह से मन और बौद्धिकता की तुलना नहीं कर सकते।

13. ईश्वर ने तर्कशील और बौद्धिक स्वभाव की रचना की जो सभी चीजों और स्वयं ईश्वर को जानने में सक्षम है, जबकि उन्होंने इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए इंद्रियों और इंद्रिय जगत को उत्पन्न किया।

14. जिस प्रकार एक दास के लिए, जो बंधा नहीं है, एक दयालु स्वामी को वश में करना अनुचित है, उसी प्रकार तर्कशील मन के लिए नश्वर शरीर को वश में करना अनुचित है।

15. जो मन इंद्रियों पर शासन नहीं करता, वह उनके द्वारा पाप में पड़ जाता है: क्योंकि इंद्रिय सुखों से मोहित होकर, वह आमतौर पर व्यभिचार को जन्म देता है।

16. इंद्रियों को अपने वश में रखकर, अपनी स्मृति को सुरक्षित रूप से बंद कर दो; क्योंकि इंद्रियों के माध्यम से पहले प्राप्त छापें, और फिर स्मृति के माध्यम से याद की गई छापें, एक बार फिर वासनाओं को प्रवृत्त कर देती हैं।

१७. शरीर को थकाओ और अधिक प्रार्थना करो – और तुम जल्द ही पूर्वाग्रही विचारों से मुक्त हो जाओगे।

18. दिव्य वचनों का अनवरत अध्ययन करो; क्योंकि इस विषय में परिश्रमी अभ्यास वासनाओं का नाश कर देता है।

19. पठन, जागरण, प्रार्थना और भजन-पाठ इंद्रिय-विषयों के पीछे भटकने से मन को मुक्त करते हैं।

20. जैसे वसंत ऋतु पौधों में जीवन जगाती है, वैसे ही निर्लिप्तता मन को उस 'जो है' के ज्ञान की ओर प्रेरित करती है।

21. आज्ञाओं का पालन करो, और तुम्हें शांति मिलेगी; ईश्वर से प्रेम करो, और तुम ज्ञान प्राप्त करोगे।

२२. कठिन परिश्रम और अपने माथे के पसीने से, तुम्हें ज्ञान की रोटी खाने के लिए अभिशप्त किया गया है।

23. लापरवाही ने हमारे पूर्वज को पतन की ओर ले गई, और स्वर्ग के सांत्वनाओं के बजाय, उसे मृत्यु की सजा दी।

24. अपनी ही हव्वा को भी आज्ञा दो, कि वह साँप से सावधान रहे; कहीं ऐसा न हो कि उसके बहकावे में आकर, वह तुम्हें निषिद्ध फल दे दे।

25. जैसे आत्मा अपने स्वभाव से ही शरीर को जीवन देती है, वैसे ही सद्गुण और ज्ञान आत्मा को जीवन देते हैं।

26. जो मन स्वयं को बुद्धिमान समझता है, वह पानी रहित बादल है, जो अहंकार और घमंड की हवाओं से बहता है।

27. घमंड से बचते हुए, व्यभिचार से भी अपना बचाव करो, कहीं ऐसा न हो कि सम्मान से बचते हुए तुम अपमान में पड़ जाओ।

28. घमंड से बचते हुए, अपनी दृष्टि ईश्वर की ओर मोड़ो, अन्यथा तुम आत्म-तुष्टि या अनैतिकता में पड़ जाओगे।

29. दिखावे के लिए काम करना अहंकार का स्वभाव है; और दूसरों को छोटा समझना तथा क्रोध करना घमंड का स्वभाव है।

30. अत्यधिक खाने से बचते हुए, लोगों को खुश करने की कोशिश से और अपने चेहरे पर बनावटी संतुष्ट भाव लाने से भी बचो।

31. उपवास तब उत्तम होता है जब कोई थोड़ा खाने में आनंद लेता है और थोड़े से भोजन से संतुष्ट रहता है, साथ ही दूसरों को खुश करने की इच्छा से भी बचता है।

32. जब तक शाम तक उपवास करें, तब तक तृप्त होकर न खाएं, कहीं ऐसा न हो कि आप उसी को फिर से बना दें जिसे आपने अभी-अभी नष्ट किया है।

33. जब शराब से परहेज़ करें, तो बहुत अधिक पानी भी न पिएँ; क्योंकि अन्यथा आप फिर भी विलासिता के लिए ईंधन प्रदान करेंगे।

34. अहंकार मनुष्य को दैवीय सहायता से विमुख कर देता है, स्वयं पर निर्भर रहने के लिए प्रेरित करता है, और दूसरों से श्रेष्ठ मानने के लिए उकसाता है।

35. अहंकार के विरुद्ध दो उपचार हैं; यदि कोई उनका उपयोग करने में विफल रहता है, तो उसे अनिच्छा से ही सही, एक तीसरे का सामना करना पड़ेगा, जो सबसे कठोर है।

36. घमंड को आँसुओं के साथ प्रार्थना करने, किसी को तुच्छ न समझने, और अनिच्छित दुःखों द्वारा दूर किया जाता है।

37. परीक्षाओं के द्वारा अनुशासन एक आध्यात्मिक लाठी है, जो अपनी मूर्खता में घमंड करने वालों को नम्रता सिखाती है।

38. यह बुद्धिमानी है कि कोई भी उस व्यक्ति के विचारों के आगे न झुके जो गुप्त रूप से अपने पड़ोसी की निंदा करता है।

39. जैसे कोई माली जो खरपतवार को नहीं उखाड़ता, वह उन्हें सब्जियों को घुटने के लिए छोड़ देता है, वैसे ही एक मन जो अपने विचारों को शुद्ध नहीं करता, वह तपस्या के श्रम को बर्बाद कर देता है।

40. एक बुद्धिमान व्यक्ति वह है जो सलाह पर ध्यान देता है, विशेष रूप से जब वह सलाह एक आध्यात्मिक पिता द्वारा ईश्वर के अनुसार दी जाती है।

41. जो वासनाओं का दास है, वह परामर्श को समझ भी नहीं सकता, और न ही वह किसी भी तरह से आध्यात्मिक मार्गदर्शन के प्रति समर्पित होने में सक्षम है।

42. जो उपदेश नहीं मानता, वह सही मार्ग पर नहीं चलता, बल्कि हमेशा तेज धाराओं से बहा ले जाया जाता है और खाइयों में गिर जाता है।

४३. एक भिक्षु वह मन है जिसने इंद्रिय-सुखों का त्याग कर दिया है और जो अपने मन को कामुक विचारों को पालने भी नहीं देता।

44. एक उपचारक वह मन है जिसने स्वयं को ठीक कर लिया है, और जो दूसरों का उपचार उसी से करता है जिससे वह स्वयं ठीक हुआ था।

४५. सद्गुण की खोज करो, और फिर उसे खोने से बचने के लिए उत्सुक रहो, नहीं तो तुम लज्जा में जियोगे और बिना दया के मरोगे।

46. हमारे प्रभु यीशु मसीह ने सभी पर प्रकाश प्रदान किया है, लेकिन जो उन पर विश्वास नहीं करते वे स्वयं को अंधकार में रखते हैं।

४७. सदाचार के ह्रास को तुच्छ न समझो; इसी से मृत्यु संसार में आई।

48. आज्ञाओं का आज्ञाकारी पालन मृतकों का पुनरुत्थान है; क्योंकि जीवन सदाचार का स्वाभाविक परिणाम है।

49. आज्ञा के उल्लंघन के द्वारा मन की मृत्यु के अनिवार्य रूप से शरीर की मृत्यु होती है।

50. जैसे आदम आज्ञा का उल्लंघन करके मृत्यु में गिर गया, वैसे ही उद्धारकर्ता ने आज्ञाकारिता करके मृत्यु को मृत्यु पर विजय प्राप्त की।

51. पाप को मार डालो, कहीं ऐसा न हो कि तुम फिर से एक मृतक के रूप में उठो और छोटी मृत्यु से बड़ी मृत्यु में चले जाओ।

52. आदम के उल्लंघन के कारण, उद्धारकर्ता ने देह धारण किया, ताकि प्रतिज्ञा को पूरा करके, वह सभी को जीवन में उठा सके।

53. जिसने अपनी कामनाओं को मार डाला है और स्वयं को अज्ञान से मुक्त कर लिया है, वह इस जीवन से अनंत जीवन में प्रवेश करता है।

54. धर्मग्रंथों का अध्ययन करने से, आप आज्ञाओं को पाएँगे; और जो लिखा है उसे पूरा करने से, आप वासनाओं से मुक्त हो जाएँगे।

५५. आज्ञाओं का पालन आत्मा को शुद्ध करता है, और आत्मा का शुद्धिकरण उसे प्रकाश में भाग लेने में सक्षम बनाता है।

56. जीवन का वृक्ष परमेश्वर का ज्ञान है; उसमें भाग लेकर और शुद्ध होकर, कोई अमर रहता है।

57. सक्रिय जीवन की शुरुआत मसीह में विश्वास है, जबकि इसका अंत परमेश्वर के प्रति प्रेम है।

58. यीशु मसीह हमारे प्रभु और परमेश्वर हैं, जिन्होंने हमें उन पर विश्वास की अनुग्रह प्रदान की है ताकि हम अनंत जीवन प्राप्त कर सकें।

५९. वह हमारे पास प्रकट हुए, परमात्मा को आत्मा और शरीर के साथ एक करके, ताकि परमेश्वर के रूप में, वह आत्मा और शरीर दोनों को मृत्यु से मुक्त कर सकें।

60. हम प्रेम प्राप्त करने के लिए श्रद्धा का संवर्धन करते हैं, जिससे ज्ञान का प्रकाश उत्पन्न होता है।

61. श्रद्धा की प्राप्ति से निम्नलिखित परिणाम होंगे: ईश्वर का भय, इंद्रिय सुखों से परहेज़, कठिनाइयों का धैर्य, ईश्वर में आशा, वैराग्य और प्रेम।

62. सच्चे प्रेम से प्रकृति का ज्ञान उत्पन्न होता है; और उसके बाद परम इच्छाओं की पूर्ति होती है, अर्थात् धर्मशास्त्र की कृपा।

63. जो मन कामवासनाओं को नियंत्रित करता है, वह निश्चित रूप से उन्हें ईश्वर के भय की शक्ति से नियंत्रित करता है, ईश्वर में और जो उन्होंने धमकी दी है और जो उन्होंने वादा किया है, उस पर विश्वास करके।

64. जिन लोगों को विश्वास प्रदान किया जाता है, उनके लिए आत्म-संयम आवश्यक है; एक बार स्थापित हो जाने पर, यह धैर्य को जन्म देता है, जो परिश्रम की आदत को बनाए रखता है।

65. धैर्य का लक्षण परिश्रम से प्रेम है; इसी पर निर्भर होकर, मन इस आशा को अपनाता है कि वह जो वादा किया गया है उसे प्राप्त कर लेगा और जो धमकी दी गई है उससे बचेगा।

66. भविष्य की आशीर्वादों की प्रत्याशा मन को उस आशा से जोड़ती है; इस मिलन में रहते हुए, यह वर्तमान की आशीर्वादों को भूल जाता है।

67. जिसने आशा की गई वस्तु का स्वाद चखा है, वह वर्तमान को त्याग देता है; क्योंकि तब वह अपनी सारी इच्छा बाद वाली वस्तु के लिए समर्पित कर देता है।

68. भविष्य के आशीर्वाद स्वयं ईश्वर द्वारा वादा किए गए हैं, और एक विश्वासी वर्तमान की तरह ही भविष्य के लिए भी तरसता है।

69. इस बात का संकेत कि मन अपेक्षित आशीर्वादों में निवास कर रहा है, यह है: वह अपने भीतर सांसारिक चीजों की पूर्ण भूल स्थापित करने का प्रयास करता है और भविष्य के आशीर्वादों के ज्ञान में विस्तार पाता है।

70. सत्य शुभ है, जिसे सत्य का ईश्वर सिखाता है, और जो ईश्वर-प्रेमी आत्मा को हर ओर से इसकी पुष्टि करता है।

71. प्रतिज्ञा के वारिसों के लिए तैयार की गई आशीर्वादें शाश्वत हैं, सभी युगों से पहले से विद्यमान हैं, और मन तथा वचन दोनों से परे हैं।

72. आओ हम धार्मिकता के नियमों के अनुसार चलें, कहीं ऐसा न हो कि हम वासनाओं में भटक कर आशा से वंचित हो जाएँ।

73. यीशु मसीह पवित्र त्रिमूर्ति में से एक हैं, और वही हैं जिनके साथ आपको सह-वारिस बनना है।

74. ईश्वर द्वारा जो कुछ अस्तित्व में है, उसका ज्ञान सिखाए जाने के बाद, किसी को भी उन शास्त्रों पर विश्वास करने में कोई कठिनाई नहीं होगी, जिनमें भविष्यवाणी की गई है।

75. पवित्र आत्मा, मन को वासनाओं से रहित पाकर, उसी अनुपात में उसे गुप्त रूप से उस ज्ञान की ओर ले जाता है जिसकी आशा की जाती है।

76. मन के शुद्धिकरण के अनुसार, आत्मा को भी दिव्य वचनों के ज्ञान की ओर निर्देशित किया जाता है।

77. जो अपने शरीर को उचित अनुशासन में ला चुका है, और जो दिव्य ज्ञान का अभ्यास करता है, वह इसी ज्ञान द्वारा अधिक से अधिक शुद्ध होता है।

७८. मन, दिव्य विषयों पर मनन करना शुरू करते हुए, विश्वास से आरंभ करता है; और फिर, इन विषयों के बीच गति करते और प्रगति करते हुए, एक बार फिर विश्वास पर लौटता है, लेकिन इसके एक उच्चतर रूप पर।

79. यह देखा गया है कि इस चिंतन की शुरुआत में भय साथ आता है, जबकि इसके अंत में प्रेम पहले आता है।

80. मन, जब एक सचेत श्रद्धा (या जो यह समझती है कि क्या मानना है) से चिंतन करना शुरू करता है, तो वह धर्मशास्त्र में उस तक पहुँचता है जो सभी समझ की सीमाओं से परे है; इसे एक अविस्मरणीय श्रद्धा (जो हमेशा चेतना में मौजूद रहती है, और उसमें अडिग बनी रहती है) और गूढ़ विषय पर चिंतन द्वारा परिभाषित किया जाता है।

81. हमारे पवित्र और धन्य पिताओं द्वारा ईश्वर के बारे में कहे गए शब्दों को उनके अनुरूप (उनके सार और महिमा के अनुरूप) नहीं माना जाना चाहिए, बल्कि उनके बारे में (हमें उस हद तक उनका खुलासा करते हुए जहाँ तक हमारा मन समझ सकता है) माना जाना चाहिए।

82. सभी शब्द, चाहे सकारात्मक हों या नकारात्मक, निश्चित रूप से, उसी, अर्थात् ईश्वर, के लिए संदर्भित होते हैं, यह समझा जाता है।

83. इस प्रकार, 'अस्तित्व', 'दैवीत्व', 'कृपा' और इस तरह के अन्य शब्द सकारात्मक रूप में उपयोग किए जाते हैं; जबकि 'अनंत', 'असीम', 'अदृश्य' और इसी तरह के शब्द नकारात्मक रूप में उपयोग किए जाते हैं।

84. चूँकि एक ही स्वभाव है, जो सभी समझ और वाणी से परे है, और पवित्र त्रिमूर्ति का एक ही गुप्त ईश्वरत्व है; अत; इसके बारे में जो कुछ भी कहा और चिंतन किया जाता है, वह सामूहिक रूप से कहा और चिंतन किया जाता है।

85. जैसे पवित्र त्रिमूर्ति को एक दिव्यता माना जाता है, वैसे ही एक दिव्यता के तीन व्यक्तियों की भी स्वीकारोक्ति की जाती है।

86. ऊपर वर्णित सकारात्मक और नकारात्मक गुण सामान्यतःसंपूर्ण पवित्र और एकसार त्रिमूर्ति को ही प्रदान किए जाते हैं, व्यक्तिगत गुणों को छोड़कर, जिनमें से कुछ सकारात्मक और कुछ नकारात्मक होते हैं।

87. दैवीय हाइपोस्टेसिस के व्यक्तिगत गुण हैं—पितृत्व, पुत्रत्व, और प्रवाहन—और अन्य गुण जो व्यक्तियों के लिए विशिष्ट हैं।

88. एक हाइपोस्टेसिस को उसकी प्रकृति और उसके व्यक्तिगत गुणों के साथ परिभाषित किया जाता है; इस प्रकार, प्रत्येक हाइपोस्टेसिस में वह दोनों होते हैं जो संपूर्ण प्रकृति के लिए सामान्य है और जो स्वयं हाइपोस्टेसिस के लिए विशिष्ट है।

८९. संपूर्ण पवित्र त्रिमूर्ति में सामान्य गुणों में से, नकारात्मक गुणों को सबसे महत्वपूर्ण माना जाता है; लेकिन व्यक्तिगत गुणों के संबंध में ऐसा नहीं है। क्योंकि, जैसा कि पहले ही कहा जा चुका है, इनमें से कुछ सकारात्मक हैं, जबकि अन्य नकारात्मक हैं—जैसे, उदाहरण के लिए, अजन्मापन और जन्म, और इसी तरह। 'अजन्मापन' का अर्थ 'जन्मजातता' से भिन्न है: क्योंकि 'अजन्मापन' से तात्पर्य पिता से है, जबकि 'जन्मजातता' से तात्पर्य पुत्र से है।

९०. शब्द और पद, पवित्र त्रिमूर्ति की प्रकृति के बारे में जो चिंतन किया जाता है, उसे स्पष्ट करने के लिए उपयोग किए जाते हैं, जैसा कि पहले बताया गया है (अध्याय ८१ देखें); लेकिन उस प्रकृति के सार के बारे में नहीं: क्योंकि जो कुछ भी उससे संबंधित है वह मन के लिए अज्ञेय और शब्दों में अभिव्यक्त नहीं किया जा सकता, फिर भी वह एकमात्र त्रिमूर्ति को ज्ञात है।

91. जैसे परमेश्वरत्व की एक ही प्रकृति को त्रैतव्य कहा जाता है, वैसे ही पवित्र त्रिमूर्ति को एकसार माना जाता है।

92. परमपिता को एक ओर तो बिना आरंभ के और दूसरी ओर आरंभ के रूप में कल्पना किया जाता है—बिना आरंभ के, एक अजन्मे के रूप में, और आरंभ के रूप में, पुत्र के पिता और पवित्र आत्मा के स्रोत के रूप में, जो शाश्वत रूप से उनसे और उनमें हैं।

93. एक, त्रिमूर्ति की ओर बढ़ते हुए, एक ही बना रहता है; और त्रिमूर्ति, स्वयं को एक में बदलते हुए, त्रिमूर्ति ही बनी रहती है। यह वास्तव में अद्भुत है!

94. पुत्र और पवित्र आत्मा को बिना आरंभ के नहीं, फिर भी शाश्वत माना जाता है: बिना आरंभ के, इस अर्थ में कि वे पिता से आरंभ और स्रोत के रूप में संबंधित हैं; और शाश्वत, इस अर्थ में कि एक शाश्वत से उत्पन्न हुआ है और दूसरा शाश्वत से निकलता है, जो पिता के साथ विद्यमान है।

९५. त्रिमूर्ति की अविभाज्य, एकमात्र दिव्यता का हमेशा सही ढंग से चिंतन किया जाता है, और एक ही दिव्यता के तीन अलग-अलग हाइपोस्टासिस (अस्तित्वों) को हमेशा सही ढंग से स्वीकार किया जाता है।

96. व्यक्तिगत गुण हैं: पिता का, अजन्मापन; पुत्र का, जन्म; पवित्र आत्मा का, उत्पत्ति। पुत्र और पवित्र आत्मा की उत्पत्ति को कालातीत माना जाता है। क्योंकि, जैसे प्रकाश सूर्य से आता है और सूर्य में ही रहता है, वैसे ही उनका भी शाश्वत अस्तित्व शाश्वत एक से और शाश्वत एक में ही है।

97. हाइपोस्टेसिस (व्यक्तियों) के व्यक्तिगत गुणों को हमेशा अपरिवर्तनीय और अचल के रूप में माना जाता है, जबकि सामान्य स्वभाव या दिव्यता को अविभाज्य माना जाता है।

98. हम त्रिमूर्ति में एक को, और एक में त्रिमूर्ति को, अविभाज्य रूप से विभाजित और पृथक रूप से एकीकृत स्वीकार करते हैं।

९९. दिव्यता में एक ही सिद्धांत देखा जाता है—पिता—जो पुत्र और आत्मा का स्रोत हैं, उनके माता-पिता के रूप में; सह-शाश्वत का शाश्वत स्रोत, सह-असीम का असीम स्रोत; और ये तीनों एकसार और अविभाज्य हैं। सभी चीज़ों का सृष्टिकर्ता—प्रबंधक और न्यायी—त्रिमूर्ति परमेश्वर है: पिता, पुत्र के द्वारा पवित्र आत्मा में। क्योंकि कहा गया है कि उसी से, उसी के द्वारा, और उसी में सब कुछ है: उसी की महिमा युगानुयुग होती रहे। आमीन (रोमियों 11:36)।

100. हम यह स्वीकार करते हैं कि पुत्र और पवित्र आत्मा, पिता के सह-शाश्वत और सह-आरंभित हैं, क्योंकि, शाश्वत और आरंभ रहित होते हुए, वे अपना अस्तित्व—और अपनी उत्पत्ति—उन्हीं से और उन्हीं में प्राप्त करते हैं। वे अनंतकाल से पिता के साथ और पिता में हैं, और पिता अनंतकाल से उनके साथ हैं। ऐसा कभी एक क्षण भी नहीं था जब पिता उनके बिना थे, और न ही वे पिता के बिना थे। ईश्वर की प्रकृति ऐसी है, सार में एक और व्यक्तियों में त्रिमूर्ति – उन्हें सदा और सदा के लिए महिमा और शक्ति प्राप्त हो। आमीन।

संत थियोडोर, एडसा के बिशप

उनका संक्षिप्त परिचय

एडेसा के निवासी, प्रार्थनाशील और दूरदर्शी माता-पिता के पुत्र थियोडोर ने, जब अपनी पढ़ाई शुरू की तो सीखने में कोई रुचि नहीं दिखाई, लेकिन उसने अर्थ के प्रकटीकरण के लिए ईश्वर से प्रार्थना की। एक बार, जब धर्मविधि के दौरान पवित्र सहभाग का वितरण हो रहा था, तो वह छिप गया, और एक युवक ने उसे शराब की एक घूंट पिलाकर उसमें एकांत का प्रेम भर दिया। सेवा का संचालन कर रहे बिशप को जब यह पता चला, तो उन्होंने थियोडोर को एक रीडर (पाठक) के रूप में नियुक्त किया, और वह मठ में ही रहे, जहाँ उन्होंने अपने शिक्षक सोफ्रोनीयस के मार्गदर्शन में उस समय के विज्ञानों का अध्ययन आसानी और स्वतंत्रता से किया। 18 वर्ष की आयु में, अपने माता-पिता को खोने के बाद, उन्होंने अपनी संपत्ति बाँट दी, अपनी बहन के लिए केवल एक हिस्सा छोड़ दिया, और 20 वर्ष की आयु में वे यरूशलेम के पास सेंट सव्वास के मठ में चले गए, जहाँ उन्होंने 12 वर्ष सामुदायिक क्वार्टरों में और 24 वर्ष एकांत में बिताए। उन्हें एंटिओक और यरूशलेम के पैट्रिआर्क के आदेश से इस एकांत से बाहर बुलाया गया और एडसा ( ) के बिशप के रूप में नियुक्त किया गया, जिसके बाद वे वहाँ के लिए रवाना हो गए। एडेसा पहुँचने पर, उन्होंने अपनी सारी ऊर्जा चर्च और विश्वासियों के कल्याण के लिए समर्पित कर दी; लेकिन उनके प्रयासों का शहर के मुसलमान शासकों और वहाँ बसे विधर्मियों से कड़ा विरोध हुआ। जब उन्होंने देखा कि उनके प्रयास व्यर्थ जा रहे हैं और उनका जीवन खतरे में है, तो संत थियोडोर खलीफ़ा माविया की कृपा प्राप्त करने के लिए बगदाद के लिए रवाना हो गए। खलीफ़ा को उसकी बीमारी से ठीक करने के बाद, उन्होंने उसे सीलिसिया, सीरिया और मेसोपोटामिया के गवर्नरों को आदेश जारी करने के लिए मनाया कि वे एडसा की चर्च की संपत्ति उसे वापस कर दें, और लोगों को ऑर्थोडॉक्सी में परिवर्तित होने से न रोकें। एडेसा लौटने पर, उन्हें ऑर्थोडॉक्स मंडली ने खुशी-खुशी स्वीकार किया, जो बाद में विधर्मियों के धर्म परिवर्तन से बढ़ी, और इस उत्साही चरवाहे, जो दैवीय रूप से प्रेरित थे, द्वारा परोपकारी रूप से मार्गदर्शन किया गया। मृत्यु के निकट आने का पूर्वाभास पाकर, और अपनी पूर्व एकांत कुटिया में विश्राम करने की इच्छा से, संत थियोडोर फिलिस्तीन के लिए रवाना हुए, जहाँ, अपने तपस्या के श्रम के स्थल पर, वे जल्द ही 9 जुलाई को परलोक सिधार गए, जिस दिन उनकी स्मृति मनाई जाती है। उस समय, माइकल अपनी माँ थियोडोरा के साथ कॉन्स्टेंटिनोपल पर शासन कर रहे थे – 9वीं सदी। यहाँ प्रस्तुत एक सौ आत्मा-उद्धारक अध्याय मठ के बुज़ुर्गों के अनुरोध पर तब रचे गए थे जब वह अभी भी एकांत में थे। ग्रीक 'डोबरोतोलुबिए' के संकलनकर्ता उनके बारे में लिखते हैं: 'हम निश्चित रूप से नहीं कह सकते कि संत थियोडोर ने कोई अन्य लेखन छोड़ा है या नहीं। हालाँकि, हम इन सौ अध्यायों को, जिन्हें उन्होंने बड़ी मेहनत से संकलित किया था, संयम पर अन्य पैट्रिस्टिक लेखनों के बीच शामिल करते हैं; क्योंकि वे पवित्र संयम के विषय को सटीक रूप से दर्शाते हैं, और इसलिए जो लोग उन्हें उचित ध्यान से पढ़ते हैं, उन्हें प्रचुर आध्यात्मिक लाभ पहुँचा सकते हैं।"

हमारे पूजनीय पिता एडसा के थियोडोर द्वारा एक सौ सबसे लाभकारी अध्याय

1. चूँकि, दयालु ईश्वर की कृपा से, शैतान और उसके कर्मों का त्याग करके, हम मसीह के साथ एक हुए हैं—जैसे आरंभ में पुनर्जन्म के स्नान-कुंड में, वैसे ही अब फिर से अपने संन्यासी व्रतों में—तो आइए हम उनके आज्ञाओं का पालन करें। यह हमसे न केवल हमारे गंभीर संकल्प द्वारा, बल्कि हमारे प्राकृतिक कर्तव्य द्वारा भी अपेक्षित है; क्योंकि, ईश्वर द्वारा आरंभ से *'अत्यंत अच्छे'* बनाए जाने के कारण, हमें उसी प्रकार बने रहना चाहिए। यद्यपि पाप, जो हमारी लापरवाही से उत्पन्न हुआ है, ने हमारे भीतर वह ला दिया है जो हमारे लिए अस्वाभाविक है; फिर भी, हमारे महान ईश्वर की प्रचुर दया से, हमें एक नए सिरे से बुलाया गया है, निर्विकारी के कष्टों द्वारा नवीनीकृत किया गया है, और प्रभु मसीह के लहू द्वारा छुड़ाया गया है, इस प्रकार हमारे पूर्वजों के प्राचीन अपराध से मुक्ति मिली है। इसे देखते हुए, यदि हम धर्मी बनते हैं, तो इसमें कुछ भी आश्चर्यजनक नहीं होगा; लेकिन यदि हम धार्मिकता से भटक जाते हैं तो यह और भी अधिक दया और निंदा के योग्य होगा।

2. जैसे एक अच्छा काम, जब सच्चे विश्वास के बिना किया जाता है, तो वह पूरी तरह से मृत और निष्फल होता है; वैसे ही, केवल विश्वास, धार्मिक कर्मों के बिना, हमें अनंत आग से नहीं बचाता है। क्योंकि *'जो मुझ से प्रेम रखता है,'* प्रभु कहते हैं, *'वह मेरी आज्ञाओं को मानेगा'* (यूहन्ना 14:23)। इसलिए, यदि हम प्रभु से प्रेम करते हैं और उस पर विश्वास करते हैं, तो हम उसकी आज्ञाओं का पालन करके इसका प्रमाण देंगे, ताकि हमें अनंत जीवन प्राप्त हो सके। लेकिन यदि हम उसकी आज्ञाओं के पालन को तिरस्कार से देखते हैं—जिनके प्रति सारी सृष्टि आज्ञाकारी है—तो हम खुद को धर्मात्मा कैसे कह सकते हैं, हम जो किसी भी प्राणी से अधिक सम्मान में रखे गए हैं, फिर भी उनमें से एकमात्र हैं जो सृष्टिकर्ता की आज्ञाओं की अवज्ञा करते हैं और अपने उपकारी के प्रति कृतघ्न साबित होते हैं?

3. मसीह की आज्ञाओं का पालन करके हम उसे कुछ भी नहीं देते, जिसके पास कुछ भी कमी नहीं है और जो सभी अच्छी चीजों का दाता है, बल्कि हम स्वयं पर एहसान करते हैं, अपने लिए अनंत जीवन और अनुपम आशीर्वादों का आनंद अर्जित करते हैं।

४. जो कोई भी परमेश्वर की आज्ञाओं के पालन में हमारा विरोध करता है—चाहे वह पिता हो, माता हो, या कोई और—वह हमें घृणित और घृणनीय लगता है, कहीं ऐसा न हो कि हम यह सुनने के लिए बाध्य हों: *'जो कोई मुझ से अधिक पिता या माता, या मनुष्यों में से किसी और से प्रेम करता है, वह मुझ योग्य नहीं'* (मत्ती १०:३७)।

5. अतःआओ, हम पूरी शक्ति से प्रभु की आज्ञाओं के पालन के लिए स्वयं को बाँधें, कहीं ऐसा न हो कि हम दुष्ट इच्छाओं और कामुक सुखों के अटूट बंधनों में बँध जाएँ: जिस स्थिति में बाँझ अंजीर के पेड़ के विषय में न्याय हमारे ऊपर भी सुनाया जाएगा, यह घोषित करते हुए: *'इसे काट डालो; यह मिट्टी क्यों बरबाद करे?'* (लूका 13:7)? क्योंकि, जैसा लिखा है, 'जो कोई भी *अच्छा फल नहीं लाता, उसे काट डाला जाएगा और आग में फेंक दिया जाएगा'* (लूका 3:9)।

6. जो कामवासनाओं और सुखों से वशीभूत हो जाता है, और जो संसार की ओर मुड़ जाता है, वह जल्द ही पाप के फंदे में फँस जाएगा; और एक बार पाप हो जाने पर, वह सरकंडे के ढेर में आग की तरह, पहाड़ से लुढ़कते पत्थर की तरह, सहायक नदियों के मिलने पर उफनती नदी की तरह होता है। ऐसा ही है; और हर पाप उसे नष्ट कर देता है जो उसे करता है।

7. पाप के द्वारा, आत्मा अपनी प्राकृतिक व्यवस्था से विचलित हो जाती है, और, परिणामस्वरूप जंगली हो कर और पापी सुखों की काँटों से भर कर, यह भयानक जानवरों का निवास-स्थान बन जाती है, जैसा कि कहा गया है: *'वहाँ ओनोसेंटैव्रे विश्राम करते हैं; वहाँ काँटेदार सूअर अपना घोंसला बनाता है, और राक्षस ओनोसेंटैव्रे से मिलते हैं'* (यशायाह 34, 14–15)—जो विभिन्न पापी वासनाएँ हैं। लेकिन जब यह स्वयं को अपनी प्राकृतिक अवस्था में वापस बुलाता है (क्योंकि यदि यह चाहे तो, मांस में बँधे होने पर भी, ऐसा कर सकता है), तो यह कठोर आत्म-अनुशासन के माध्यम से स्वयं को वश में करेगा और परमेश्वर के विधान ( ) के अनुसार जीना शुरू कर देगा; तब जो पशु पहले उसके भीतर वास कर रहे थे, वे भाग जाएँगे, और स्वर्गदूत, जो हमारे जीवन के रक्षक हैं, आ जाएँगे, और उसके धर्म-परिवर्तन के दिन को आनंद और हर्ष का दिन बना देंगे; तब पवित्र आत्मा की कृपा उस पर आएगी, और उसे सिखाएगी कि न केवल भलाई में स्वयं को कैसे बनाए रखे, बल्कि उसमें और भी अधिक कैसे फल-फूलें।

8. चर्च के पिता प्रार्थना को एक आध्यात्मिक किला कहते हैं, जिसके बिना हम युद्ध में नहीं जा सकते, कहीं ऐसा न हो कि हम शत्रु की भालों से घायल हो जाएँ और उनके देश में ले जाएँ जाएँ। लेकिन कोई भी तब तक प्रभावी, शुद्ध प्रार्थना प्राप्त नहीं कर सकता जब तक कि वह एक धर्मी हृदय के साथ परमेश्वर के सामने न बैठे: क्योंकि परमेश्वर ही वह है जो प्रार्थना करने वाले को प्रार्थना देता है, और जो मनुष्य को बुद्धि में शिक्षित करता है।

९. यह कि वासनाएँ आत्मा को परेशान करती हैं और उस पर आक्रमण करती हैं, हमारे नियंत्रण से परे है; लेकिन यह कि कामुक विचार हमारे भीतर बने रहते हैं और वासनाओं को भड़काते हैं, यह हमारे नियंत्रण में है। पहला पापहीन है, क्योंकि यह हमारे नियंत्रण से परे है; लेकिन दूसरा, यदि हम साहसपूर्वक इसका विरोध करें और उस पर विजय प्राप्त करें, तो हमें मुकुट दिलाता है; जबकि यदि, झुककर, हम पराजित हो जाते हैं, तो यह हमें यातना में डाल देता है।

10. तीन प्रमुख जुनून हैं: सुख की लालसा, धन का प्रेम, और महिमा का प्रेम। इनके बाद द्वेष की अन्य पाँच आत्माएँ आती हैं; और इनसे, अंततः जुनून की एक बड़ी भीड़ और सभी प्रकार की विविध पापी प्रवृत्तियाँ उत्पन्न होती हैं। इसीलिए जो कोई भी पहले तीन प्रमुख जुनूनों और उनके नेताओं पर विजय प्राप्त करता है, वह इस प्रकार उनके बाद आने वाले पाँच जुनूनों को भी परास्त कर देता है, और बाद में सभी जुनूनों को वश में कर लेता है।

11. जो कुछ भी हमने जुनून में किया है, वही जुनूनी यादों के माध्यम से आत्मा को उत्तेजित करता है। लेकिन जब हृदय से भावुक स्मृतियाँ पूरी तरह से मिट जाती हैं, इस हद तक कि वे उसके पास भी नहीं आतीं, तो यह अतीत के पापों की क्षमा का संकेत है। जब तक आत्मा किसी भी पापी चीज़ से भावुक रूप से जुड़ी रहती है, तब तक यह स्वीकार करना चाहिए कि पाप का प्रभुत्व अभी भी उसमें निहित है।

12. शारीरिक और भौतिक वासनाएँ आमतौर पर शारीरिक कष्टों (स्वैच्छिक वंचना और शारीरिक तपस्या) से कम हो जाती हैं और सूख जाती हैं; जबकि आध्यात्मिक और अदृश्य वासनाएँ विनम्रता, नम्रता और प्रेम से नष्ट होती हैं।

13. कामुक वासना संयम और विनम्रता के संयोजन से वश में होती है; प्रचंड क्रोध प्रेम से वश में होता है; एक भटकता हुआ मन ईश्वर के स्मरण के साथ, लगन से की गई प्रार्थना द्वारा एकाग्र होता है। इस प्रकार आत्मा के तीनों भाग शुद्ध होते हैं। इन्हें सुधारने के उद्देश्य से ही दिव्य प्रेरित ने कहा: *'शांति और पवित्रता का अनुसरण करो, जिसके बिना कोई भी प्रभु को नहीं देखेगा'* (इब्रानियों 12:14)।

14. कुछ लोग इस बात को लेकर असमंजस में हैं कि क्या विचार ही भावनाओं को गति देते हैं, या भावनाएँ ही विचारों को गति देती हैं; क्योंकि कुछ लोग एक बात कहते हैं, जबकि अन्य दूसरी। हालाँकि, मैं यह मानता हूँ कि विचारों को भावनाओं द्वारा गति दी जाती है: क्योंकि यदि आत्मा में कोई भावनाएँ न होतीं, तो भावुक विचार उसे परेशान न करते।

१५. हमसे सदा युद्धरत राक्षसों की प्रथा है कि वे हमारी शक्ति के भीतर और आसानी से अभ्यास की जा सकने वाली सद्गुणों के मार्ग में बाधाएँ डालते हैं, जबकि उन सद्गुणों के लिए एक प्रबल इच्छा पैदा करते हैं जो हमारी पहुँच से परे और अनुचित हैं (जिनके लिए अभी हमारा समय नहीं आया है); अर्थात्: वे सामुदायिक आज्ञाकारिता में उत्कृष्टता प्राप्त करने वालों को मौनियों के कर्म करने के लिए मजबूर करते हैं; जबकि वे मौनियों और संन्यासियों में सामूहिक जीवन के नियमों का पालन करने की इच्छा पैदा करते हैं। इसी तरह, वे हर सद्गुण के संबंध में काम करते हैं। लेकिन आइए हम *'उनकी युक्तियों से अनभिज्ञ न रहें'* (2 कुरिन्थियों 2:11), यह जानते हुए कि समय पर और अपने माप में किया गया सब कुछ अच्छा है, जबकि सब कुछ अत्यधिक और अनुचित समय पर हानिकारक है।

16. जो लोग संसार में घूमते-फिरते हैं और वासनाओं की वस्तुओं का सामना करते हैं, उन पर राक्षस आक्रमण करते हैं, जो उन्हें वासनापूर्ण कर्मों में खींचते हैं; जबकि जो लोग निर्जन स्थान में रहते हैं, जहाँ ऐसी वस्तुएँ अनुपस्थित हैं, वे वासनापूर्ण विचारों से परेशान होते हैं। इस दूसरी प्रकार की लड़ाई में, पहले की तुलना में विजय प्राप्त करना कहीं अधिक कठिन है। वहाँ, कार्य के लिए समय, स्थान और अन्य सुविधाओं की आवश्यकता होती है; मन, हालाँकि, आसानी से प्रभावित हो जाता है और अपने विचारों में अनियंत्रित होता है। इस अदृश्य लड़ाई को लड़ने के लिए, हमें शुद्ध प्रार्थना दी गई है, जिसमें हमें अविराम रूप से लगे रहने की आज्ञा दी गई है। यह मन को लड़ाई में मजबूत और हमेशा इसके लिए तैयार बनाती है, क्योंकि इसे शरीर की भागीदारी के बिना किया जा सकता है।

17. कामनाओं के पूर्ण आत्मसंयम की ओर इशारा करते हुए, प्रेरित कहते हैं: *'जो मसीह के हैं, उन्होंने अपने शरीर को उसकी कामनाओं और इच्छाओं सहित सूली पर चढ़ा दिया है'* (गलातियों 5:24)। क्योंकि जब हम कामनाओं को मार डालते हैं, वासनाओं को नष्ट करते हैं, और शरीर की युक्ति को आत्मा के अधीन करते हैं; तभी हम अपना क्रूस उठाते हैं और मसीह का अनुसरण करते हैं। और संसार से अलग हो जाना, भावों को मार डालने और मसीह में छिपे जीवन के प्रकट होने के सिवाय और कुछ नहीं है।

18. जो इस नश्वर शरीर के विद्रोहों से पीड़ित हैं और इसके लगभग निरंतर युद्ध से थके हुए हैं, वे इसके लिए मांस को दोष न दें, बल्कि स्वयं को दें; क्योंकि यदि उन्होंने इसे शक्ति न दी होती, और अपनी देखभाल को वासना की हद तक न बढ़ाया होता, तो वे इससे इतना अधिक कष्ट न सहते। या क्या वे उन लोगों को नहीं देखते जिन्होंने अपने

शरीर को उसकी वासनाओं और कामनाओं सहति सूली पर चढ़ा दयिा है, और जो अपने नश्वर शरीर में यीशु की मृत्यु का स्वरूप धारण करते हैं , और जो उसे अपने सहायक के रूप में भलाई में रखते हैं—एक वरिोधी के रूप में नहीं, बल्कि एक ऐसे के रूप में जो आज्ञाकारी है और परमेश्वर के वचन के अधीन है? उन्हें भी ऐसा ही करना चाहिए, और तब वे भी ऐसी ही शांति का अनुभव करेंगे।

19. कसिी भी नषिदि्ध वासना के साथ वचिार का कोई भी संबंध, या कामुक आनंद की ओर कोई भी झुकाव, एक भक्षि्षु के लिए पाप है। क्योंकि पहले तो वह वचिार अपनी लालची प्रकृति से मन को मूर्छति करने लगता है; फरि आत्मा पापी आनंद की ओर खचिं जाती है, जो संघर्ष का सामना करने में असमर्थ होती है; और अंत में, एक मलिन होता है, जो, जैसा कि कहा गया है, पाप है। यदि यह बना रहता है, तो इससे एक तीव्र आकर्षण उत्पन्न होता है, जो धीरे-धीरे स्वयं पापपूर्ण कृत्य तक ले जाता है। इसी कारण से, भवषि्यवक्ता उन लोगों की प्रशंसा करते हैं जो बेबीलोन के शशिुओं को चट्टान पर पटकते हैं (भजन संहिता 136:9)। इसका अर्थ बुद्धिमान और समझदार लोगों के लिए स्पष्ट है।

20. स्वर्गदूत, प्रेम और शांति के सेवक होने के नाते, हमारे पश्चाताप और सद्गुण में प्रगति पर प्रसन्न होते हैं; इसीलिए वे हमें आध्यात्मिक चिंतन से भरने का प्रयास करते हैं और हर अच्छे काम में हमारी सहायता करते हैं। इसके वपिरीत, राक्षस, जो क्रोध और दुर्भावना के सेवक हैं, तब प्रसन्न होते हैं जब सद्गुण कम हो जाता है, और वे अपनी सारी कोशिशें हमारी आत्माओं को शर्मनाक कल्पनाओं में फँसाने के लिए लगा देते हैं।

21. श्रद्धा एक सद्गुण है जो एक स्वस्थ प्रवृत्ति को बढ़ावा देती है; यह हम में ईश्वर का भय उत्पन्न करती है; और ईश्वर का भय हमें आज्ञाओं का पालन करना, या एक अच्छा और सक्रयि जीवन जीना सिखाता है; एक सक्रयि जीवन से ही सच्चा वैराग्य उत्पन्न होता है; और वैराग्य का फल प्रेम है, जो सभी आज्ञाओं की पूर्ति है, जो सभी को एक साथ बांधती है और उन्हें दृढ़ता से थामे रखती है।

22. जैसे एक स्वस्थ शरीर उस बीमारी को महसूस करता है जो उस पर हावी हो जाती है; लेकिन जो इसे पहचान नहीं पाता वह संवेदनहीनता से पीड़ित होता है: उसी प्रकार मन भी, जब तक वह अपनी पूरी प्राकृतिक सक्रयिता बनाए रखता है, अपनी शक्तियों से अवगत रहता है, और देखता है कि अधिक अत्याचारी आवेग कहाँ से उस पर आक्रमण करते हैं, और उस भाग के वरिुद्ध अधिक प्रबल प्रतिरोध का निर्देशन करता है। लेकिन यदि यह अपने दिन असंवेदनशीलता में व्यतीत करता है, तो इसकी स्थिति गंभीर है, जैसे कोई व्यक्ति रात में दुश्मन से लड़ता हो, क्योंकि वह दुश्मन की योजनाओं को नहीं समझ पाता।

23. जब हमारी मानसिक शक्ति निरंतर गुणों के चिंतन में समर्पित रहती है, और जब इच्छा शक्ति केवल उन्हीं और उनके दाता, प्रभु मसीह की ओर निर्देशित होती है, जबकि क्रोध शक्ति राक्षसों के वरिुद्ध सशस्त्र होती है; तब हमारी शक्तियाँ अपने स्वभाव के अनुसार कार्य करती हैं।

24. सेंट ग्रेगरी द थियोलोजियन के अनुसार, तर्कशील आत्मा त्रि-भागी होती है; और उन्होंने बौद्धिक शक्ति के गुण को ववि‍ेक, ज्ञान और बुद्धि कहा; क्रोधशील शक्ति के गुण को साहस और धैर्य; और कामनाशील शक्ति के गुण को प्रेम, पवित्रता और संयम कहा; फरि भी सत्य का उन सभी में अपना हिस्सा है, जो हमें सदाचारी ढंग से कार्य करना सिखाता है। ववि‍ेक के माध्यम से, यह सद्गुणों की रक्षा करते हुए शत्रु स्वर्गदूतों के वरिुद्ध युद्ध करता है; पवित्रता के माध्यम से, यह चीजों को निर्लिप्त भाव से देखता है; प्रेम के माध्यम से, यह हमें सभी लोगों से स्वयं के समान प्रेम करने के लिए प्रेरित करता है; संयम के माध्यम से, यह सभी इंद्रयि सुखों को समाप्त कर देता है; साहस और धैर्य के माध्यम से, यह स्वयं को अदृश्य युद्धों के लिए सशस्त्र करता है। आत्मा के वाद्ययंत्र की यही मधुर संगति है।

२५. जो ब्रह्मचर्य के लिए प्रयास करता है और उस धन्य पवित्रता की लालसा करता है—जिसे कोई भी भूलवश निर्लिप्तता न कहे—वह निस्संकोच होकर शरीर को दंडित करे और वश में करे, एक विनम्र मन से दिव्य कृपा का आह्वान करे—और उसे वही प्राप्त होगा जिसकी वह इच्छा करता है। परन्तु जो भोजन और पेय में शरीर को बिना संयम के संतुष्ट करता है, वह व्यभिचार की आत्मा से पीड़ित होगा। क्योंकि जैसे अधिक मात्रा में पानी आग को बुझा देता है, वैसे ही भूख और प्यास—या वास्तव में आत्मा के विनम्रता के साथ मिला हुआ कोई भी संयम—शरीर की कामना और शर्मनाक कल्पनाओं को नष्ट कर देते हैं।

२६. अपने हृदय से द्वेष की भावना को पूरी तरह से दूर जाने दो; और अपने भीतर शत्रुता को किसी भी प्रकार से स्थान न दो। क्योंकि जैसे पुआल में आग छिपी होती है, वैसे ही द्वेष हृदय में छिपा रहता है। बल्कि, जिसने आपको ठेस पहुँचाई है, उसके लिए पूरी लगन से प्रार्थना करें और उसकी यथासंभव और जो भी संभव हो, सहायता करें, ताकि आप अपनी आत्मा को मृत्यु से बचा सकें और अपनी प्रार्थना के दौरान अहंकारी न बनें।

27. प्रभु नम्र लोगों की आत्मा में वास करते हैं, जबकि दुष्टता की भावनाएँ अहंकारी लोगों के हृदय में वास करती हैं: क्योंकि अहंकारी विचारों से अधिक कुछ भी हमें उनके विरुद्ध मजबूत नहीं करता; और, इसके विपरीत, धन्य नम्रता के अलावा कुछ भी आत्मा से इन पूर्व बुराइयों को इतनी प्रभावी ढंग से जड़ से नहीं उखाड़ता, जिसे सही मायने में भावनाओं का संहारक कहा जाता है।

28. आपकी आत्मा बुरी यादों से और अधिक शुद्ध हो, और सबसे सदाचारी विचारों से प्रबुद्ध हो, हमेशा यह ध्यान में रखते हुए कि—विदाई के समय, इंद्रिय सुखों को समर्पित हृदय एक जेल और एक बेड़ी है, जबकि एक परिश्रमी हृदय एक खुला दरवाज़ा है। क्योंकि सचमुच, जब शुद्ध आत्माएँ शरीर से प्रस्थान करती हैं, तो उनके साथ देवदूत होते हैं, जो उन्हें एक धन्य जीवन की ओर मार्गदर्शन करते हैं; लेकिन जो आत्माएँ कलंकित हुई हैं और पश्चाताप से शुद्ध नहीं हुई हैं, उन्हें राक्षस छीन लेते हैं—हाय मेरे लिए!

29. एक सिर जो कीमती मुकुट से सुसज्जित हो, भारतीय रत्नों और मोतियों से जगमगाता हो, वह सुंदर है; लेकिन उससे भी कहीं अधिक सुंदर वह आत्मा है, जो ईश्वर के ज्ञान में समृद्ध हो, दिव्य चिंतन से प्रकाशमान हो, और जिसमें सर्व-पवित्र आत्मा निवास करता हो। और ऐसी धन्य आत्मा का शब्दों में यथोचित वर्णन कौन कर सकता है!

30. अपने प्राण में क्रोध और उग्रता को जड़ जमाने न दें: क्योंकि *'क्रोध करने वाला मनुष्य प्रशंसनीय नहीं'* (नीतिवचन 11:25); *'परन्तु नम्र लोगों के हृदय में ज्ञान का वास होता है'* (नीतिवचन 14:33)। यदि क्रोध की उत्तेजना आपकी आत्मा पर हावी हो जाती है, तो संसार में रहने वाले भी आपसे बेहतर पाए जाएँगे, और आप स्वयं को एक अयोग्य संन्यासी साबित करके लज्जित होंगे।

31. हर परीक्षा और हर संघर्ष में, प्रार्थना आपका अजेय हथियार हो – और आप मसीह की कृपा से विजयी होंगे। लेकिन यह शुद्ध हो, जैसा कि हमारे परम बुद्धिमान शिक्षक हमें आज्ञा देते हैं, कहते हुए: *'मैं चाहता हूँ कि हर जगह पुरुष प्रार्थना करें, क्रोध या विवाद के बिना पवित्र हाथ उठाकर'* (1 तीमु. 2:8)। – जो कोई भी ऐसी प्रार्थना की उपेक्षा करता है, उसे प्रलोभनों और वासनाओं के हवाले कर दिया जाएगा।

32. लिखा है, *'मदिरा मनुष्य के हृदय को प्रसन्न करती है'* (भजन संहिता 103:15)। परन्तु तुम, जिन्होंने रोने और शोक करने का व्रत लिया है, ऐसे आनंद-उल्लास से दूर रहो – और तुम आध्यात्मिक वरदानों से आनन्दित होओगे। यदि, तथापि, तुम मदिरा में आनन्द लेते हो, तो तुम अपना जीवन लज्जाजनक विचारों की संगति में बिताओगे, और तुम बहुत दुख सहोगे।

33. अपने पर्व के दिनों को नशे में नहीं, बल्कि मन के नवीनीकरण और आत्मा की पवित्रता में बिताओ। क्योंकि दावत और शराब से अपना पेट भरकर, तुम उस एक के क्रोध को भड़काओगे, जिसके लिए यह पर्व समर्पित है।

34. हमें हर समय, और विशेष रूप से पर्व के दिनों में, भजनों, प्रार्थनाओं और पठन के द्वारा जागते रहने की आज्ञा दी गई है। जो संन्यासी जागते रहते हैं, वे अपने मन को आत्मा के लिए लाभकारी चिंतन के लिए शुद्ध करते हैं, जबकि अत्यधिक नींद मन को सुस्त कर देती है। लेकिन सावधान रहें कि जागते रहने के दौरान व्यर्थ की यादों और पापपूर्ण विचारों में न खोएँ: क्योंकि ऐसी व्यर्थताओं के लिए जागते रहने से तो सोना ही बेहतर है और अश्लील कृत्यों से स्वयं को अपवित्र करना।

३५. जो अपने सीने में एक साँप और अपने हृदय में एक दुष्ट विचार को पालता है, उसे दोनों को मार डाला जाएगा: पहला, शरीर में एक जहरीले डंक से मारा जाएगा; दूसरा, अपनी आत्मा में घातक विष (विचार का) डाल लेने के कारण। लेकिन जैसे हम साँपों के बच्चों को तुरंत मार डालते हैं, वैसे ही हम बुरे विचारों को अपने दिलों में जड़ जमाने नहीं देंगे, कहीं ऐसा न हो कि बाद में हमें उनसे बहुत कष्ट उठाना पड़े।

36. एक शुद्ध आत्मा—एक चुनी हुई पात्र—को सही रूप से *'एक सीलबंद बगीचा, एक सीलबंद कुआँ'* (प्रेम गीत 4:12) और *'मन का सिंहासन'* (नीतिवचन 12:23) भी कहा जा सकता है। लेकिन अशुद्ध वासनाओं से कलंकित आत्मा पाप की दुर्गंध से भरी होती है।

37. मैंने अनुभवी और सक्रिय बुजुर्गों से सुना है कि पापपूर्ण विचार आत्मा में अच्छे कपड़ों के प्रति प्रेम, भोजन में अत्यधिक लिप्तता और हानिकारक बातचीत से उत्पन्न होते हैं।

38. तपस्वियों की आत्मा में संपत्ति की लालसा को जड़ न जमाने दें। धन के लालची एक भिक्षु एक रिसने वाले जहाज़ के समान है, जो चिंता की लहरों से इधर-उधर उछाला जाता है और दुख की गहराइयों में डूब जाता है। धन के प्रेम की बीमारी, जो कई वासनाओं को जन्म देती है, सभी बुराइयों की जननी है और इसे सही ही सभी बुराइयों की जड़ कहा जाता है (1 तीमु. 6:10)।

३९. सांसारिक वस्तुओं से वैराग्य और मौन संन्यास जीवन के क्षेत्र में छिपा हुआ एक खजाना हैं। अतःजाओ, जो कुछ भी तुम्हारे पास है उसे बेच दो और गरीबों को दे दो; इस प्रकार तुम वह खेत खरीदोगे, जिसे खोदकर जब तुम खजाना पाओ, तो उसे चोरी से बचाने के लिए अपने भीतर सावधानी से रखो, ताकि तुम उस धन से धनी हो जाओ जिसे चुराया नहीं जा सकता।

४०. अपने आध्यात्मिक पिता के साथ रहने का आरंभ कर, और जो लाभ तुझे उससे प्राप्त हुआ है, उसका अनुभव कर, किसी को भी तुझे उससे प्रेम करने से या उसके साथ रहने से न हटाने दे; किसी भी प्रकार से उसकी निंदा न कर; उसकी बुराई न बोल, चाहे वह तुझे डांटे या तुझे मार भी दे; जब कोई और उस पर बदनामी करने लगे तो उसकी बात न सुनना; और जो लोग उसकी निंदा करते हैं, उनसे किसी भी तरह से मेलजोल न रखना, कहीं ऐसा न हो कि प्रभु तुम पर क्रोधित हो जाएँ और तुम्हें जीवन की पुस्तक से मिटा दें।

४१. आज्ञाकारिता का पराक्रम आत्म-त्याग और सभी चीजों के त्याग पर आधारित है, जैसा कि हमने सीखा है। जो इसे अपनाता है, वह स्वयं को तीन सुरक्षा-कवचों से सुसज्जित करे: विश्वास, आशा, और सर्व-पवित्र और दिव्य प्रेम, ताकि, इनसे सुरक्षित होकर, वह इस अच्छे प्रयास में सफलतापूर्वक संघर्ष कर सके और धार्मिकता का मुकुट प्राप्त कर सके।

४२. अपने पिता के कर्मों के न्यायाधीश न बनो, बल्कि उनके आज्ञाओं के पालनकर्ता बनो। दैत्य, जैसा कि उनकी आदत है, तुम्हें उसकी कमियाँ बताना शुरू कर देंगे, ताकि वे तुम्हारे कानों को उसकी शिक्षाओं के लिए बधिर कर दें, और इस प्रकार या तो तुम्हें युद्ध में एक कमजोर और डरपोक योद्धा बना दें, या केवल अविश्वास के विचारों से ही तुम्हें कमजोर कर दें और तुम्हें हर तरह के सद्गुण के प्रति सुस्त बना दें।

४३. जो अपने पिता की आज्ञाओं का पालन नहीं करता, वह स्वयं को अपने व्रत के सर्वोत्तम बिंदुओं का उल्लंघनकर्ता साबित करता है। लेकिन जिसने अपने भीतर आज्ञाकारिता का संचार किया है, और आज्ञाकारिता की तलवार से अपनी इच्छा को काट दिया है, उसने वह पूरा कर दिया है जो उससे अपेक्षित था—वह जो उसने प्रभु मसीह से कई गवाहों के सामने वादा किया था।

४४. संतों को देखते हुए, हमने स्पष्ट रूप से देखा और पुष्टि की है कि हमारे जीवन के शत्रु—दानव—आज्ञापालन में परिश्रम करने वाले पिताओं के प्रति महान द्वेष रखते हैं, वे उन पर दाँत पीसते हैं और उनके विरुद्ध हर प्रकार की दुर्भावनापूर्ण योजनाएँ बनाते हैं। और उन्हें उनके पिताओं की गोद से अलग करने के लिए वे क्या नहीं करते, क्या नहीं सुझाते? वे अवज्ञा के बहाने बनाते हैं, मानो वे धन्य हों; वे असंतोष पैदा करते हैं; वे पिता के प्रति वैमनस्य भड़काते हैं; वे उनकी आज्ञाओं को ताने के रूप में चित्रित करते हैं, और ये ताने, तीखे तीरों की तरह, हृदय को भेद देते हैं। वे कहते हैं, 'और क्यों, आज़ाद होकर, तुम एक दास बन गए हो—और वह भी एक निर्दयी तानाशाह का दास? 'तुम गुलामी का जुआ कब तक सहोगे, आज़ादी की रोशनी कब देखोगे?' – इसके बाद, वे सुझाव देते हैं: 'तुम्हारे लिए मेहमाननवाज़ी करना, बीमारों से मिलना, गरीबों की देखभाल करना बेहतर होगा।' फिर वे पूर्ण एकांत और मौन के गुणों का बखान करते हैं; और भक्तिमय तपस्वी के हृदय में तरह-तरह की बुरी जड़ियाँ बो दी जाती हैं, केवल इस लिए कि उसे उसके पिता की आध्यात्मिक झुंड से बाहर निकाल दिया जाए और, उसे उसके शांतिपूर्ण आश्रय से खींचकर, उसे समुद्र में फेंक दिया जाए, जहाँ वह आत्मा के उग्र तूफान से इधर-उधर उछाला जाता है। यदि, अंततः वे इसमें सफल हो जाते हैं, तो, उसे अपने नियंत्रण में ले लेने के बाद, वे उसे एक कैदी की तरह, अपनी दुष्ट इच्छाओं के अनुसार कार्य करने के लिए मजबूर करते हैं।

45. अतः अपने आध्यात्मिक पिता के प्रति आज्ञाकारी रहते हुए भी अपने शत्रुओं और विरोधियों की इस द्वेष-भावना को न भूलें, और परमेश्वर के सामने अपनी बुलावा के व्रत को न भूलें: गाली-गलौज पर विजय न पाए, न ही निंदा, अपमान या उपहास से डरें; पापी विचारों के प्रलोभनों से भटकें नहीं; पिता की कठोरता से भागें नहीं; न ही अभद्र आत्म-संतुष्टि और स्व-इच्छा के द्वारा नम्रता के धन्य जुए का अपमान करें; परन्तु, प्रभु के वचन को हृदय में रखकर: *'जो अन्त तक टिकेगा वह उद्धार पाएगा'* (मत्ती 10:22)। *'तुम अपने सामने रखी हुई दौड़ को धीरज से दौड़ो, यीशु पर दृष्टि लगाए हुए, जो हमारे विश्वास का कर्ता और सिद्धकर्ता है'* (इब्रानियों 12:1–2)।

४६. जैसे एक सोनार, क्रूसबिल में सोना डालकर उसे उसके शुद्धतम रूप में परिष्कृत करता है, वैसे ही एक नवसिखिया भिक्षु भी, अपने आचार्यों की इच्छा के प्रति समर्पण के श्रम को अपनाकर, और ईश्वर के अनुसार जिए गए जीवन के सभी दुखों से परिष्कृत होकर, परिश्रम और महान धैर्य के माध्यम से आज्ञाकारिता सीखकर, सभी बुरी आदतों से स्वयं को शुद्ध कर, विनम्रता से भर जाता है, पूरी तरह से दीप्तिमान और स्वर्गीय खजानों का योग्य हो जाता है, एक ऐसा जीवन जो दुख से मुक्त है और एक धन्य निवास, जहाँ से दुख और आहें भाग गई हैं और जहाँ अनंत आनंद और हर्ष रोपित हैं।

४७. सच्चा और गहराई से जड़ें जमा हुआ विश्वास ईश्वर के भय को जन्म देता है; और ईश्वर का भय हमें आज्ञाओं का पालन करना सिखाता है: क्योंकि, जैसा कि कहा गया है, जहाँ भय है, वहाँ आज्ञाओं का पालन होता है; और आज्ञाओं के पालन में सक्रिय सद्गुण निहित है, जो चिंतन की शुरुआत है; और इसका फल निर्लिप्तता है; निर्लिप्तता के द्वारा, प्रेम हमारे भीतर स्थापित होता है; और प्रेम के विषय में प्रिय शिष्य कहते हैं: *'ईश्वर प्रेम है, और जो प्रेम में बना रहता है, वह ईश्वर में बना रहता है, और ईश्वर उसमें बना रहता है'* (1 यूहन्ना 4:16)।

४८. मठवासी जीवन कितना सचमुच सुंदर और अच्छा है! यह कितना सचमुच सुंदर और अच्छा है जब यह अपने संस्थापकों और नेताओं द्वारा निर्धारित सीमाओं और नियमों के भीतर और उनके अनुसार प्रवाहित होता है, जिन्हें पवित्र आत्मा द्वारा निर्देशित किया गया था। क्योंकि मसीह के सिपाही को सांसारिक (कुछ भी न रखने वाला), किसी भी सांसारिक योजना या मामलों से परेशान न रहने वाला होना चाहिए, जैसा कि प्रेरित कहते हैं: *'कोई भी सिपाही नागरिक के मामलों में उलझता नहीं, बल्कि अपने सेनापति को प्रसन्न करने का यत्न करता है'* (2 तीमु. 2:4)।

४९. अतःएक भिक्षु के लिए सांसारिक-रहित, निर्लिप्त, हर पापी इच्छा से परे, न तो पेटू, न तो मद्यपान करने वाला, न तो कंजूस, न तो आलसी, न तो लोभी, न तो सुख का प्रेमी, न ही महिमा का प्रेमी होना उचित है: क्योंकि यदि कोई इन सभी बातों का परित्याग नहीं करता, तो वह इस दैवीय जीवन को ठीक से नहीं जी सकता; परन्तु जो ऐसा करते हैं, उनके लिए यह एक अच्छा जुआ और एक हल्का बोझ है, क्योंकि ऐसे में, दैवीय आशा उनके लिए सब कुछ आसान कर देती है। यह जीवन सुखद है, इसके कर्म आनंददायक हैं, और इसके आशीर्वाद एक अच्छा हिस्सा हैं जो इसे प्राप्त कर चुकी आत्मा से छीन नहीं लिया जाएगा।

५०. सांसारिक चिंताओं को त्यागकर और संन्यासी जीवन अपना लेने के बाद, गरीबों में बांटने के लिए धन की लालच न करो: क्योंकि यह भी दुष्ट की एक फंदा है, जो व्यर्थता की ओर ले जाता है, ताकि मन को अनेक कष्टप्रद चिंताओं में डुबो दे। आपके पास केवल रोटी और पानी ही क्यों न हो; इन्हीं से आप आतिथ्य का पुरस्कार अर्जित कर सकते हैं। भले ही आपके पास ये चीजें न हों, आप एक ही सद्भावनापूर्ण कार्य से किसी यात्री का स्वागत कर सकते हैं और उसे सांत्वना का एक शब्द दे सकते हैं, और इस तरह आप आतिथ्य का पुरस्कार अर्जित कर सकते हैं। इसका एक उदाहरण आपको उस गरीब विधवा में मिलता है, जिसके बारे में प्रभु ने सुसमाचार में गवाही दी कि अपने दो पैसा के दान से, सद्भावना के कारण, उसने धनी लोगों के दान से भी बढ़कर दान किया।

५१. यह उन लोगों के बारे में कहा गया है जो मौन में रहते हैं। जहाँ तक उन लोगों का सवाल है जो अपने पिता के अधिकार में हैं, उन्हें एक बात ध्यान में रखनी चाहिए: अपने पिता की आज्ञा से किसी भी तरह से कभी विचलित न हों; क्योंकि इसे ठीक से पूरा करके, वे वह सब कुछ पूरा करते हैं जो उनसे अपेक्षित है; इसके विपरीत, जो लोग इस कर्तव्य के सटीक पालन से भटकते हैं, वे हर तरह के सद्गुण और आध्यात्मिक जीवन में अकुशल बने रहेंगे।

५२. तो, हे मसीह के प्रेमी, यह मेरी तुझ पर और भी सलाह है: यात्री का जीवन प्रेम कर, अर्थात् यात्री के समान बन, अपने देश के मामलों से अपरिचित रह; माता-पिता की चिन्ताओं या स्वजन के स्नेह से मोहित न हो; नगर-जीवन से दूर रहो और धैर्यपूर्वक तथा अनवरत रूप से मरुस्थल में बैठो, और भविष्यवक्ता के साथ कहो: *'मैं भाग गया हूँ और मरुस्थल में शरण ली है'* (भजन संहिता 54:8)।

५३. संसार से दूर, एकांत के स्थान खोजो; और यदि वहाँ जीवन की आवश्यकताओं की कमी से तुम्हें क्लेश हो भी, तो भी मत डरना; भले ही दुश्मन मधुमक्खियों या जहरीले ततैयों की तरह तुम्हारे चारों ओर घेरा डाल लें, और हर तरह के युद्ध को तुम्हारे विरुद्ध छेड़ें और हर तरह के विचारों से तुम्हें परेशान करें, डरो मत, उन्हें अपनी इच्छा से सुनने के लिए अपना कान मत दो, और युद्ध के मैदान से भागो मत, बल्कि सब कुछ साहसपूर्वक सहो, अपने आप से गाते हुए और कहते हुए: *'मैंने प्रभु की प्रतीक्षा धैर्य से की है; उसने मेरी सुनी और मेरी प्रार्थना का उत्तर दिया'* (भजन संहिता 39:2)। और तुम परमेश्वर की महानता, उसकी मध्यस्थता, उसकी देखभाल, और तुम्हारे प्रति उसकी सारी उद्धारकारी व्यवस्था को देखोगे।

५४. तुम्हें ऐसे लोगों को अपना मित्र बनाना चाहिए जो तुम्हें उत्साहित करते हैं और जो तुम्हारे जीवन-मार्ग में सहभागी हैं; क्योंकि पवित्रशास्त्र कहता है, 'तुम्हारे मित्र वे हों जो शांति में हैं, तुम्हारे आध्यात्मिक भाई, पवित्र पिता, जिनके विषय में हमारे प्रभु ने भी कहा: *'मेरी माता और मेरे भाइयों वे हैं जो मेरे स्वर्गीय पिता की इच्छा पर चलते हैं'* (मत्ती 12:49)।

५५. विविध और महँगी स्वादिष्ट वस्तुओं के प्रति पक्षपाती न बनो, और न ही उन पर अतिशय भोज करो; क्योंकि, *जैसा कि* धर्मग्रंथ कहता है, *'जो अतिशय भोज करती है वह मृतक के समान है'* (१ तीमुथियुस ५:६)। वास्तव में, सस्ते भोजन के साथ भी, यदि संभव हो तो तृप्ति तक खाने से बचें। क्योंकि लिखा है: *'उदर के तृप्त होने से प्रलोभित न हो'* (नीतिवचन 24:15)।

56. यदि आपने मौन का जीवन चुना है, तो स्वयं को अपनी कोठरी से बाहर बहुत बार न जाने दें; क्योंकि यह बहुत हानिकारक है—यह आपको अनुग्रह से वंचित करता है, आपके विचारों को धुंधला करता है, और आपके उत्साह को कमजोर करता है। इसीलिए कहा गया है: *'कामवासना का धुआँ एक निष्पाप मन को भ्रष्ट कर देता है'* (सोलोमन की बुद्धि 4:12)। बाहरी दुनिया के साथ सभी संपर्क तोड़ दें, कहीं ऐसा न हो कि आपका मन भ्रमित हो जाए और आपके मौन के क्रम को भंग कर दे।

५७. अपनी कोठरी में बैठे-बैठे, बेमतलब इधर-उधर मत भटका करो, और अपनी समय को आलस्य में मत गँवाओ: क्योंकि, जैसा कि कहा जाता है, जो बिना उद्देश्य के यात्रा करता है, वह व्यर्थ में परिश्रम करता है। परन्तु अपने लिए अच्छे काम ढूँढ़ो, और अपने मन को एकत्र करो। हमेशा मृत्यु के समय को अपनी आँखों के सामने रखें; संसार की व्यर्थता को याद रखें, कि यह कितना छलपूर्ण है, और फिर भी कितना अस्थिर और तुच्छ है; अंतिम न्याय में होने वाले भयानक परीक्षण की परिस्थितियों पर मनन करें, कि कैसे हमारे कटु आरोपक तब हमारे द्वारा संचित किए गए कर्मों, वचनों और विचारों को स्पष्ट रूप से प्रस्तुत करेंगे, और जिन्हें हमने स्वीकार किया; अपने मन में नरक की यातनाओं को लाओ और देखो कि वहाँ आत्माएँ कैसे बंद होंगी; उस महान और भयानक दिन की भी कल्पना करो—अर्थात्, सर्वसाधारण पुनरुत्थान का दिन, परमेश्वर के सामने खड़ा होना, और अचूक न्यायाधीश का अंतिम न्याय; कल्पना करो कि पापियों की प्रतीक्षा में कौन सी यातनाएँ, लज्जा और अंतरात्मा की निंदा है, और कैसे उन्हें ईश्वर द्वारा निकालकर अनंत अग्नि में, उस कीड़े में जो कभी नहीं मरता, अथाह अंधकार में डाल दिया जाएगा, जहाँ रोना और दांत पीसना होगा; अन्य सभी यातनाओं का अवलोकन करते हुए, कराहते हुए, अपने चेहरे, अपने वस्त्रों और उस स्थान को जिस पर आप बैठे हैं, आँसुओं से भिगोना बंद न करना। ऐसे विचारों से, जैसा मैंने देखा है, कई लोगों ने अपने ऊपर आँसुओं की भरमार लाई है, और अपने आत्मा की सभी शक्तियों को अद्भुत ढंग से शुद्ध किया है।

५८. धर्मी लोगों के लिए सुरक्षित आशीर्वादों पर भी मनन करो, मसीह के दाहिने हाथ पर उनकी जगह, प्रभु—स्वामी—की आवाज़ जो उन्हें धन्य कहती है, स्वर्ग के राज्य का उत्तराधिकार, उन पर प्रदान किए गए वे उपहार जो मन से परे हैं, वह सबसे मधुर प्रकाश, अंतहीन आनंद, जो किसी भी दुख से अछूता है, वे स्वर्गीय निवास जहाँ स्वर्गदूत रहते हैं, और प्रभु का भय मानने वालों को दिए गए अन्य सभी वचन।

५९. ऐसे विचार भोजन के समय आपके साथ रहें, नींद में आपका साथ दें, और आपके साथ जागें। इन विचारों को कभी न भूलें, परन्तु आप जहाँ भी हों, इन्हें याद करने से अपना मन न हटाएँ, ताकि दुष्ट विचार आपसे दूर भागें और दैवीय सांत्वनाएँ आपकी आत्मा को भर दें। जो आत्मा इन विचारों से संरक्षित और सशस्त्र नहीं है, वह सच्ची मौनता बनाए नहीं रख सकती; क्योंकि जो कुआँ पानी नहीं रखता, वह व्यर्थ ही उस नाम को धारण करता है।

60. और मौन का अभ्यास करने वालों के लिए निर्धारित जीवन का यही मार्ग है: अपनी क्षमता के अनुसार उपवास, जागरण, नंगे फर्श पर सोना, और भविष्य के विश्राम के लिए हर तरह की अन्य स्वैच्छिक कठिनाइयाँ; क्योंकि, जैसा कि धर्मग्रंथ कहता है, *'इस समय की कठिनाइयाँ हमारे भीतर प्रकट होने वाली महिमा के योग्य नहीं हैं'* (रोमियों 8:18); और विशेष रूप से शुद्ध, अखंड और निर्बाध प्रार्थना: यह एक मजबूत दीवार है, एक सुखद शरण है, सद्गुणों की सुरक्षा है, वासनाओं का उन्मूलन है, आत्मा का उत्तम सुधार है, मन का शुद्धिकरण है, दुखी लोगों के लिए विश्राम है, और रोने वालों के लिए सांत्वना है; प्रार्थना ईश्वर के साथ संवाद है, अदृश्य बातों का मनन है, और जो अपने सत्य की पुष्टि के लिए तरसते हैं, उनके लिए स्वर्गदूतों के साथ सहभागिता, अच्छाई में प्रगति, और जिसकी आशा की जाती है उसकी पुष्टि है। हे तपस्वी, इस सद्गुणों की रानी को अपनाओ, और उसे अपने भीतर बनाए रखने के लिए अपनी पूरी शक्ति से प्रयास करो; दिन-रात, सुख-दुख में प्रार्थना करो; भय और कांपते हुए, एक सतर्क और संयमित मन से प्रार्थना करो, ताकि तुम्हारी प्रार्थना प्रभु को प्रिय लगे: क्योंकि धर्मग्रंथ कहता है: *'प्रभु की दृष्टि धार्मिकों पर है, और उनके प्रार्थना के लिए उसकी कान खुली है'* (भजन संहिता 33:16)।

61. प्राचीनों में से एक ने, बिल्कुल सही और सत्य के अनुरूप कहा है, कि हमारे विरोधी राक्षसों में से, जो युद्ध में सबसे पहले प्रवेश करते हैं, वे हैं जो अत्यधिक खाने-पीने की इच्छाओं के प्रभारी हैं, जो धन के प्रेम को स्थापित करते हैं और हमें व्यर्थता की ओर झुकाते हैं; जबकि अन्य सभी, उनके पीछे-पीछे चलते हुए, उनके द्वारा घायल लोगों को ले जाते हैं।

62. और वास्तव में, बारीकी से जांच करने पर, हमें यह एहसास हुआ है कि कोई भी व्यक्ति कभी भी किसी पाप या किसी वासना में नहीं पड़ता, जब तक कि वह पहले इनमें से किसी एक से घायल न हो जाए। इसीलिए शैतान ने तब उद्धारकर्ता को इन तीन विचारों से प्रलोभित किया; परन्तु प्रभु ने, स्वयं को उनके लिए अप्रवेश्य साबित करते हुए, शैतान को अपनी उपस्थिति से दूर हटने की आज्ञा दी, और इस प्रकार हमें उस पर विजय प्रदान की, एक ऐसे सदाचारी और परोपकारी प्रभु के रूप में, जिन्होंने पाप को छोड़कर हर तरह से हमारे समान शरीर धारण किया, और

हमें पापरहितता का सच्चा मार्ग दिखाया; इस मार्ग का अनुसरण करके, हम अपने भीतर नए मनुष्य का निर्माण करते हैं, *'उसे सृजनहार के स्वरूप में नया किया गया'* (कुलुस्सियों 3:10)।

63. दाऊद के वचन हमें राक्षसों से पूर्ण घृणा करने की शिक्षा देते हैं, क्योंकि वे हमारे उद्धार के शत्रु हैं। और यह सद्गुण की खोज में सबसे अधिक सहायक है। लेकिन फिर, उद्धार के शत्रुओं से पूर्ण घृणा करने वाला कौन होगा? वह जो केवल कर्म में ही नहीं बल्कि विचार में भी पाप करता है। क्योंकि जैसे ही उनके प्रेम के पात्र—अर्थात्, वासनाओं के कारण—हमारे भीतर होते हैं, तो उनके प्रति घृणा हमारे भीतर कैसे जड़ जमा सकती है? क्योंकि इंद्रिय सुख को समर्पित हृदय उनके प्रति घृणा को पालने में असमर्थ है।

६४. विवाह का वस्त्र तर्कशील आत्मा का सांसारिक भोगों से विरक्ति है, जिसने सांसारिक सुखों से मुंह मोड़ लिया है, सभी अनुचित कामनाओं का त्याग कर दिया है, और स्वयं को पूरी तरह से ईश्वर-प्रेमपूर्ण विचारों और सबसे शुद्ध चिंतन में समर्पित कर दिया है। लेकिन जैसे ही यह अशुद्धता के भावों में लिप्त हो जाता है और उनमें जकड़ लिया जाता है, यह पवित्रता के इस वस्त्र से वंचित हो जाता है और फटे-पुराने और अशुद्ध चीथड़ों में लिपटा दिया जाता है, जैसा कि सुसमाचारों में दिखाया गया है कि जिसे हाथ-पैर बाँधकर बाहरी अंधकार में फेंक दिया जाता है (मत्ती 22: 13), ऐसे विचारों और कर्मों से बुना हुआ एक वस्त्र था, जिसे प्रभु का वचन दिव्य और अमर वधू कक्ष के लिए अयोग्य समझा।

६५. आत्म-स्नेह के विषय में, जो सभी से द्वेष करता है, एक बुद्धिमान ने ठीक ही कहा है: आत्म-स्नेह का उग्र युद्ध, एक तानाशाह की तरह, उन सभी विचारों के सिर पर खड़ा रहता है जिनसे वे तीन और वे पाँच हमारे मन को मोहित करते हैं।

66. यह आश्चर्य की बात होगी यदि कोई, जो हमेशा स्वादिष्ट व्यंजनों से तृप्त रहता हो, निर्लिप्तता प्राप्त कर सके। हालाँकि, निर्लिप्तता से मेरा तात्पर्य कर्म में पाप से परहेज़ करना नहीं है—क्योंकि वह आत्म-संयम है—बल्कि तब होता है जब कोई हृदय से भावुक विचारों के उत्पन्न होने को ही पूरी तरह से समाप्त कर देता है—जिसे हृदय की पवित्रता भी कहा जाता है।

67. एक अशुद्ध आत्मा को शुद्ध करना, उस आत्मा को स्वस्थ करने की तुलना में आसान है जो एक बार शुद्ध हो जाने के बाद, फिर से वासनाओं से घायल हो गई है: क्योंकि जिन्होंने अभी-अभी सांसारिक बंधनों को त्यागा है, वे चाहे किसी भी पाप में क्यों न गिर जाएँ, उनके लिए वासना-त्याग प्राप्त करना आसान होता है; लेकिन उनके लिए जिन्होंने *'परमेश्वर के भले वचन का स्वाद चखा है'* (इब्रानियों 6:5) और जिन्होंने पहले ही मोक्ष के मार्ग पर कदम बढ़ा दिया है, परन्तु फिर से पाप में भटक गए हैं, उनके लिए निर्लिप्तता का मार्ग लगभग अतिक्रमणीय बाधाओं से अवरुद्ध हो जाता है। यह पाप की स्थापित आदत और पाप की ओर गहरी जड़ें जमाए हुए झुकाव के कारण है, और उतना ही इसलिए भी कि आदतन पाप का दैत्य, जो मन की आँखों के सामने मंडराता रहता है, उसे उस पाप की छवियाँ निरंतर दिखाता रहता है। तथापि, एक उत्साही और परिश्रमी आत्मा ईश्वर की कृपा की सहायता से इस सबसे कठिन कार्य को सहजता से पूरा कर लेगी—जो हमारे प्रति प्रेममयी और दीर्घ-सहिष्णु है, हमें पश्चाताप के लिए बुलाती है और उन लोगों को अकथनीय प्रचुरता से दया के साथ स्वीकार करती है जो लौटते हैं—जैसा कि हम सुसमाचारों में खोए हुए पुत्र की दृष्टान्त कथा से सीखते हैं।

६८. हम में से कोई भी, अपनी ही शक्ति से, दुष्ट की युक्तियों और छल से बच नहीं सकता, बल्कि केवल मसीह की अजेय शक्ति के द्वारा ही बच सकता है। अतः जो लोग अपने कर्मों और अपनी इच्छाशक्ति के बल पर पाप को समाप्त करने का सपना देखते हैं—जो केवल परमेश्वर की अनुग्रह से ही समाप्त होता है—वे खतरनाक रूप से भ्रमित हैं। इसी कारण, कलीसिया के महान संत जॉन क्राइसोस्टोम कहते हैं कि केवल मानवीय प्रयास अपर्याप्त है जब तक कि ऊपर से सहायता प्राप्त न हो; और फिर, ऊपर से सहायता का कोई उपयोग तब तक नहीं होगा जब तक कोई स्वयं प्रयास न करे। यहूदा और पतरस दोनों इसका उदाहरण हैं: पहले वाले ने अनुग्रह से इतना कुछ प्राप्त किया, पर उससे उसे कोई लाभ नहीं हुआ, क्योंकि उसने अपनी इच्छा का प्रयोग नहीं किया और न ही कोई प्रयास किया; जबकि पतरस, यद्यपि उसने उत्साही तत्परता दिखाई, गिर पड़ा क्योंकि उसे ऊपर से मदद नहीं मिली। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि सद्गुण दोनों से मिलकर बनता है। इसलिए मैं आपसे आग्रह करता हूँ: सभी कुछ ईश्वर को सौंपकर और स्वयं आत्मसंतुष्ट न होकर, उत्साहपूर्वक प्रयास करते हुए भी यह न सोचें कि आप केवल अपनी ही कोशिशों से सब कुछ ठीक कर सकते हैं।

६९. ईश्वर नहीं चाहते कि हम उन्हें निष्क्रिय देखें, इसीलिए वे स्वयं सब कुछ नहीं करते; न ही वे चाहते हैं कि हम अपने बारे में बहुत ऊँचा सोचें, इसीलिए उन्होंने सब कुछ हमारी इच्छा और हमारे प्रयासों को सौंप नहीं दिया है; बल्कि, दोनों पक्षों से हानिकारक चीज़ों को हटाकर, उन्होंने जो लाभकारी है उसे छोड़ दिया है। भजन संहिताकार हमें

यह भी अच्छी तरह सिखाते हैं, कहते हुए: *'जब तक यहोवा नगर का निर्माण नहीं करता, तब तक जो उसे बनाते हैं, वे व्यर्थ में परिश्रम करते हैं'* (भजन संहिता 126:1)। न ही यह संभव है *कि 'विषैले साँप और अजगर पर पैर रखा जाए, और शेर और साँप को रौंदा जाए'* (भजन संहिता 90:13), जब तक कोई पहले स्वयं को मानव शक्ति की अनुमति तक शुद्ध नहीं कर लेता, और ऐसा करने की शक्ति उसे प्राप्त नहीं हो जाती जिसने प्रेरितों से कहा था: *'मैं तुम्हें साँपों और बिच्छुओं पर, और शत्रु की सारी शक्ति पर पैर रखने का अधिकार देता हूँ'* (लूका 10:19)। इसीलिए हमें प्रार्थना में स्वर्गीय पिता से विनती करने की आज्ञा दी गई है: *'हमें परीक्षा में न ले जाओ, परन्तु हमें दुष्ट से बचाओ'* (मत्ती 6:13)। क्योंकि यदि मसीह की शक्ति और सहायता के बिना, हम स्वयं को दुष्ट की अग्नि-बाणों से नहीं बचाते और निर्लिप्तता को प्राप्त नहीं करते, तो हम व्यर्थ में परिश्रम करते हैं, यह आशा करते हुए कि हम अपनी ही शक्ति या उत्साह से चीज़ों को वैसा ही ठीक कर लेंगे जैसा उन्हें होना चाहिए। इसलिए, जो कोई भी शैतान की युक्तियों के विरुद्ध दृढ़ खड़ा होना चाहता है और उन्हें निष्फल करना चाहता है, और दिव्य महिमा का सहभागी बनना चाहता है, उसे आँसुओं और आहों के साथ, एक अतृप्त इच्छा और एक उत्कट आत्मा के साथ, दिन-रात ईश्वर की सहायता और दिव्य मध्यस्थता की खोज करनी चाहिए। लेकिन जो कोई भी इन बातों को प्राप्त करना चाहता है, उसे अपनी आत्मा को सभी सांसारिक कामुकता और सभी भावों और वासनाओं से शुद्ध करना चाहिए। क्योंकि ऐसे ही आत्माओं के बारे में परमेश्वर कहते हैं: *'मैं उन में वास करूँगा और उन में चलूँगा'* (2 कुरिन्थियों 6:16), और प्रभु ने अपने शिष्यों से कहा: *'जो मुझ से प्रेम करेगा, वह मेरी आज्ञाओं को पालन करेगा, और मेरा पिता भी उस से प्रेम करेगा, और हम उसके पास आकर उसके साथ अपना वास करेंगे'* (यूहन्ना 14:23)।

70. प्राचीनों में से एक ने विचारों के बारे में एक अत्यंत बुद्धिमानी भरा और लाभकारी वचन कहा, उन्होंने कहा: 'अपने विचारों की जांच हृदय के द्वार पर (जब वे प्रवेश करते हैं) करें, कि वे हमारे अपने हैं या विरोधी के हैं; और जो हमारे अपने और अच्छे हैं, उन्हें आत्मा के सबसे भीतरी कोष में लाएँ और उन्हें वहाँ एक अछूत कोष की तरह रखें, लेकिन जो शत्रुतापूर्ण हों, उन्हें सही तर्क की कोड़ों से दंडित करके तुरंत बाहर निकाल दो, और तुम्हारी आत्मा के आसपास भी उन्हें न तो विश्राम करने दो और न ही कोई स्थान दो; या इससे भी बेहतर, उन्हें प्रार्थना की तलवार और परम दिव्य शिक्षा से पूरी तरह मार डालो, ताकि इस तरह के विनाश के द्वारा, चोरों का भय उनके स्वयं के नेता पर ही आ पड़े। जान लो कि जो कोई भी अपने विचारों को इस प्रकार पूरी तरह शुद्ध करता है, वह आज्ञाओं का एक सच्चा उत्साही अनुयायी है।

७१. जो अपने विरुद्ध लड़ने और उसे विचलित करने वाले विचारों और प्रवृत्तियों को काटने का प्रयास करता है, उसे यथासंभव अधिक से अधिक सहयोगियों और सह-यत्न करने वालों को इकट्ठा करना चाहिए, और उन्हें एक संयुक्त संघर्ष के लिए अपने करीब लाना चाहिए; – ये हैं: आत्मा का विनम्रता, शारीरिक श्रम, और तपस्या के आत्म-त्याग का हर अन्य रूप, और विशेष रूप से पश्चाताप से भरे हृदय से बहते अनेक आँसुओं के साथ प्रार्थना, जैसा कि दाऊद गाते हैं: *'मेरी दीनता और मेरी मेहनत को देखो, और मेरे सभी पापों को क्षमा कर दो'* (भजन संहिता 24:18) और: *'हे प्रभु, मेरी आँसुओं की उपेक्षा न करो'* (भजन संहिता 38:13), और फिर: *'मेरे आँसू दिन-रात मेरा भोजन हो गए हैं'* (भजन संहिता 41:4)। फिर: *'मैंने अपना पान शोक के साथ मिलाया है'* (भजन संहिता 101:10)।

७२. शैतान, जो हमारे जीवन का विरोधी है, हमारे पापों को तुच्छ दिखाने के लिए विभिन्न विचारों का उपयोग करता है और अक्सर उन्हें भूल के आवरण से ढक देता है, ताकि हम अपने प्रयासों में सुस्त हो जाएँ और अपनी कमियों पर शोक करने का विचार भी न करें। परन्तु हम, भाइयों, अपनी कमियों को भूलने नहीं देंगे, भले ही ऐसा लगे कि हमारे पश्चाताप के कारण उन्हें पहले ही क्षमा कर दिया गया है; परन्तु हम हमेशा अपने पापों को याद रखेंगे और उनका शोक मनाना कभी बंद नहीं करेंगे, ताकि, आज्ञाकारी साथी के रूप में नम्रता प्राप्त करके, हम व्यर्थता और घमंड के जालों से बच सकें।

७३. कोई यह न सोचे कि वह अपनी ही शक्ति से परिश्रम सहन करके सद्गुण में सफल हो सकता है: क्योंकि हमारे लिए जो कुछ भी अच्छा है उसका स्रोत ईश्वर है, ठीक उसी तरह जैसे हमारे लिए जो कुछ भी बुरा है उसका स्रोत हमारी आत्माओं का धोखेबाज़—शैतान है। इसलिए, जब आप कुछ अच्छा करते हैं, तो इसके स्रोत का धन्यवाद करें; और जब आप पर कुछ बुरा आता है, तो इसे ऐसे मामलों के शासक को दें।

74. जो ज्ञान को उसके अनुरूप कर्म के साथ जोड़ता है, वह एक प्रशंसनीय आध्यात्मिक साधक है, जो इन दो सबसे आनंददायक स्रोतों से आत्मा के खेत को सींचता है। इस प्रकार, ज्ञान मन को श्रेष्ठतम की चिंतनशीलता से प्रेरित करता है, जबकि उससे संबंधित कर्म *'पृथ्वी पर स्थित अंगों: व्यभिचार, अशुद्धता, कामवासना और दुष्ट इच्छा' को* मार डालता है /(कुलुस्सियों 3:5)। जब इन्हें मार डाला जाता है, तो सद्गुणों के सुंदर फूल खिलते हैं, जो प्रचुर आध्यात्मिक फल देते हैं – *'प्रेम, आनन्द, शान्ति, धीरज, सौम्यता, भलाई, विश्वास, नम्रता, आत्मसंयम'* (गलातियों

5:22-23)। तब, अंत में, यह पवित्र सेवक, *"मांस को उसकी वासनाओं और इच्छाओं सहित"* सूली पर चढ़ाकर, ईश्वर-वाहक प्रचारक के साथ कहेगा: *"अब मैं नहीं जीता, बल्कि मसीह मुझ में जीवते हैं: और जो जीवन मैं अब शरीर में जीता हूँ: वह मैं परमेश्वर के पुत्र पर विश्वास करके जीता हूँ, जिसने मुझ से प्रेम किया और अपने आप को मेरे लिए दे दिया"* (गलातियों 2:20)।

75. और यहाँ एक और बात है जिसे मसीह के प्रेमी, आपसे छिपाया नहीं जाना चाहिए: कि एक ही जुनून, जब आपके भीतर जगह पा लेता है और आदत के स्तर तक जड़ जमा लेता है, तो वह उसी घर में अन्य जुनूनों को भी ला देता है; क्योंकि यद्यपि जुनून एक-दूसरे के विरुद्ध प्रतिस्पर्धा करते हैं, ठीक वैसे ही जैसे उनके उकसावे वाले, यानी दुष्टात्माएँ, वे सभी एक स्वर में हमारे विनाश की तलाश करते हैं।

76. देह का फूल, जो तपस्या के श्रमों से मुरझाया जाता है और जो देह की हर इच्छा को काट देता है—यही वह है जो *'अपने नश्वर शरीर पर प्रभु यीशु के चिन्ह उठाए फिरता है'* (गलातियों 6:17)।

७७. तपस्या के श्रम का अंत निर्लिप्तता की शांति है, जबकि शरीर के अनेक सुखों का अंत अपमानजनक वासनाएँ हैं।

७८. अपने मठवासी जीवन की लंबाई को एक योग्य उपलब्धि न समझें, और न ही रेगिस्तान में अपने लंबे प्रवास और वहां कठोर तपस्या के धैर्यपूर्ण उपक्रम के कारण आत्म-प्रशंसा में फँसें; बल्कि प्रभु के वचन को ध्यान में रखें, कि आप अभी भी एक दास हैं, और आपने अभी तक अपने स्वामी की आज्ञाओं का पालन नहीं किया है। वास्तव में, जब तक हम इस वर्तमान जीवन में हैं, हम अभी तक निर्वासन से वापस नहीं बुलाए गए हैं, बल्कि अभी भी बेबीलोन की नदियों के किनारे बैठे हैं, अभी भी मिस्र के दासत्व के बोझ तले पीड़ित हैं, और अभी तक प्रतिज्ञात भूमि को नहीं देखा है: क्योंकि हमने अभी तक पुराने मनुष्य को, जो लुभावनी कामनाओं से धधक रहा है, नहीं उतार दिया है; हमें अभी तक स्वर्गीय स्वरूप में नहीं पहनाया गया है, बल्कि हम अभी भी सांसारिक स्वरूप को ही धारण किए हुए हैं। इस प्रकार, हमारे लिए घमंड करने की कोई गुंजाइश नहीं है, बल्कि हमें रोना चाहिए, सर्वशक्तिमान से प्रार्थना करनी चाहिए कि वह हमें फिरौन के कड़वे बंधन से बचाए, हमें उसकी क्रूर अत्याचार से मुक्ति दे, और हमें प्रतिज्ञा की धन्य भूमि में ले जाए, ताकि हम अंततःपरमेश्वर के पवित्र स्थान में विश्राम पा सकें, और स्वर्गीय महिमा के दाहिने हाथ खड़े होने के योग्य ठहरें। फिर भी ये आशीषें, जो महानतम बुद्धिमानों से भी बढ़कर हैं, हमें हम जो धार्मिकता में करने में सफल होते हैं उन कर्मों से नहीं, बल्कि परमेश्वर की असीम दया से प्राप्त होती हैं। इसलिए हमें दिन-रात आँसू बहाना बंद नहीं करना चाहिए, उस एक की नकल करते हुए जिसने कहा: *'मैं अपनी आहों से थक गया हूँ: मैं हर रात अपने आँसुओं से अपना बिस्तर धोता हूँ: मैं अपने विलाप से अपना पलंग भीगता हूँ'* (भजन संहिता 6:7)। क्योंकि जो आँसुओं में बोते हैं, वे आनन्द में कटनी करेंगे (भजन संहिता 125:5)।

७९. अपने से वाचालता की आत्मा को दूर भगाओ, क्योंकि उसमें हर प्रकार के दुर्भावनापूर्ण भाव छिपे रहते हैं: उससे झूठ निकलता है, उससे अभद्रता निकलती है, उससे उपहास, अश्लीलता, व्यर्थ की बातें और भी बहुत कुछ निकलता है; ताकि उसके द्वारा यह कहावत सच साबित हो: *'बहुत बोलने से तुम पाप से नहीं बचोगे'* (नीतिवचन 10:19)। – *'जो थोड़ा बोलता है, वह बुद्धिमान है'* (नीतिवचन 12:23)। परन्तु प्रभु ने यह भी कहा कि हमें हर व्यर्थ वचन का हिसाब देना होगा (मत्ती 12:36)।

८०. हमें आज्ञा दी गई है कि हम उन लोगों के बुरे-बुरे शब्दों का उसी तरह प्रत्युत्तर न दें जो हम पर निन्दा करते और हम पर दोष लगाते हैं, या किसी भी अन्य तरीके से हम पर हमला करते हैं; अर्थात्, बदले में निन्दा न करें, न ही बदले में दोष लगाएँ, बल्कि इसके विपरीत, उनके बारे में दयालुता से बोलें और उन्हें आशीष दें। क्योंकि जब हम उन लोगों के साथ शांति से रहते हैं जो शांति में नहीं हैं, तो हम तब राक्षसों के साथ युद्ध या लड़ाई में होते हैं; लेकिन जब हम अपने भाइयों के साथ शत्रुता और युद्ध में होते हैं, तो हम तब राक्षसों के साथ शांति में होते हैं—जिन्हें हमसे पूर्ण घृणा करने और उनके विरुद्ध अनवरत युद्ध छेड़ने के लिए सिखाया गया है।

८१. अपने पड़ोसी को ठोकर खाने पर उकसाने के लिए छलपूर्ण शब्दों का उपयोग करने से बचें, कहीं ऐसा न हो कि आप स्वयं सर्व-छलकूट करने वाले शैतान द्वारा ठोकर खाएं। क्योंकि सुनिए कि भविष्यवक्ता क्या पुकारता है: *'यहोवा रक्तरंजित मनुष्य और चापलूस से घृणा करता है'* (भजन संहिता 5:7) और फिर: *'प्रभु चापलूसी करने वाले ओठों और झूठ बोलने वाली जीभ को नष्ट कर देगा'* (भजन संहिता 11:4)। इसी प्रकार, जब आपका भाई गिर जाए तो उसकी निंदा करने से बचें, कहीं ऐसा न हो कि आप दया और प्रेम से दूर हो जाएँ। क्योंकि जो अपने भाई के प्रति दया और प्रेम नहीं रखता, उसने परमेश्वर को नहीं जाना; क्योंकि परमेश्वर प्रेम है, जैसा कि गिरज के पुत्र यूहन्ना, मसीह के प्रिय शिष्य, घोषणा करते हैं (1 यूहन्ना 4:8)। – यदि मसीह, जो सभी के उद्धारकर्ता हैं, ने हमारे लिए अपना प्राण दे दिया, तो हमें भी अपने भाइयों के लिए अपना प्राण देना चाहिए (1 यूहन्ना 3:16)।

82. प्रेम को यथार्थ रूप से गुणों की माता, और व्यवस्था तथा भविष्यवक्ताओं का प्रमुख कहा जाता है। अतः हमें उस धन्य प्रेम को प्राप्त करने तक हर परिश्रिम करना चाहिए, और उसके द्वारा हम वासनाओं के अत्याचार से मुक्त हों, तथा गुणों के पंखों पर उड़ते हुए स्वर्ग तक आरोहण करें, और परमेश्वर को देखें, यथापि मानव स्वभाव के लिए यह संभव हो।

83. यदि ईश्वर प्रेम है, तो जिसके पास प्रेम है, उसके भीतर ईश्वर निवास करते हैं। हालाँकि, जब प्रेम अनुपस्थित होता है, तो हम किसी भी काम के नहीं होते, और यह कहना पूरी तरह से असंभव है कि हम ईश्वर से प्रेम करते हैं। क्योंकि संत यूहन्ना कहते हैं: *'यदि कोई कहे, "मैं ईश्वर से प्रेम करता हूँ" और अपने भाई से बैर रखे, तो वह झूठा है'* (1 यूहन्ना 4:20), और फिर: *'ईश्वर को किसी ने कभी नहीं देखा; परन्तु यदि हम एक दूसरे से प्रेम करते हैं, तो ईश्वर हम में वास करता है, और उसका प्रेम हम में सिद्ध हो जाता है'* (1 यूहन्ना 4:12): इससे यह स्पष्ट है कि प्रेम पवित्र धर्मग्रंथ में उल्लिखित सभी गुणों में सर्वोच्च है; – और मानव सद्गुणों में से एक भी ऐसा नहीं है जो हमें ईश्वर के साथ एकता और सामंजस्य में बाँधता हो और जो प्रेम से जुड़ा न हो तथा उससे उत्पन्न न होता हो, जिसे किसी अकथनीय तरीके से प्रेम ने अपनाया और संरक्षित किया हो।

84. जब हमारे पास आने वाले भाइयों का हम स्वागत करें, – तो हमें इससे बोझिल न होना चाहिए, न ही इसे मौन-भंग ही समझना चाहिए, कहीं ऐसा न हो कि हम प्रेम के नियम का उल्लंघन कर बैठें; और न ही हम उन्हें ऐसे आमंत्रित करें मानो हम उन पर कोई एहसान कर रहे हों, बल्कि इस तरह से कि हम स्वयं उनसे भलाई प्राप्त करते हैं, और उन्हें ऐसे स्वागत करें जैसे हम उनके ऋणी हों, '' की प्रार्थना और प्रसन्न मुख के साथ, जैसा कि पैट्रिआर्क अब्राहम ने हमें अपने उदाहरण से दिखाया। क्योंकि यही बात धर्मशास्त्री सिखाता है, यह कहते हुए: *'मेरे बच्चों, हम वचन और जीभ से नहीं, बल्कि कर्म और सत्य में प्रेम करें; और इसी से हम जान लेते हैं कि हम सत्य के हैं'* (1 यूहन्ना 3:18–19)।

८५. महाधर्माध्यक्ष ने, आतिथ्य को अपना स्थायी कार्य चुनकर, अपने तम्बू के सामने बैठकर राहगीरों को आमंत्रित किया और बिना किसी भेदभाव के सभी को भोजन परोसा—यहाँ तक कि अधर्मी और बर्बर लोगों को भी—बिना किसी हिचकिचाहट के। इस प्रकार, वे उस अद्भुत भोजन-संगीता के योग्य माने गए, क्योंकि उन्होंने स्वर्गदूतों और स्वयं प्रभु का स्वागत किया था। हम भी पूरी लगन और तत्परता के साथ आतिथ्य में स्वयं को समर्पित करें, ताकि हम न केवल स्वर्गदूतों को, बल्कि स्वयं परमेश्वर को भी प्राप्त कर सकें। क्योंकि प्रभु कहते हैं: *'जिस प्रकार तुमने मेरे इन सबसे छोटे भाइयों में से किसी एक के लिए किया, तुमने मेरे लिए किया'* (मत्ती 25:40)। सभी के प्रति भलाई करना अच्छा है, परन्तु सबसे बढ़कर उन लोगों के प्रति जो बदले में कुछ नहीं दे सकते (लूका 14:14)।

86. जिसका हृदय परमेश्वर की आज्ञाओं को तोड़ने, या लापरवाही करने, या शत्रुतापूर्ण विचारों को पालने में नहीं भटकता, वह हृदय से शुद्ध है और यह सुनने के योग्य है: *'धन्य हैं शुद्ध हृदय वाले, क्योंकि वे परमेश्वर को देखेंगे'* (मत्ती 5:8)।

87. आइए हम अपने इंद्रियों, विशेष रूप से दृष्टि, श्रवण और वाणी को बुद्धिमानी से नियंत्रित करना सीखें, और यह नियम बना लें कि हम किसी भी काम को भावना में आकर न करें, बल्कि हर काम अपनी आत्मा के लाभ के लिए करें। क्योंकि जब ये इंद्रियाँ विवेक द्वारा नियंत्रित नहीं होतीं, तो पाप की ओर इनसे अधिक प्रवृत्त कुछ भी नहीं; और इसके विपरीत, जब विवेक इन पर शासन करता है, इन्हें व्यवस्थित रखता है, और इन्हें वहाँ ले जाता है जहाँ इन्हें जाना चाहिए और जहाँ वह चाहे, तो इससे अधिक उद्धार के कार्य में सहायक कुछ भी नहीं। क्योंकि जब ये अनियंत्रित हो जाते हैं, तो घ्राणेंद्रिय भोग में लिप्त हो जाती है, और स्पर्शेंद्रिय अनुचित वस्तुओं की ओर उन्मुक्त रूप से बढ़ती है, और अनगिनत प्रकार के भाव उत्पन्न होते हैं; लेकिन जब इन्हें विवेक द्वारा अपने उचित क्रम में रखा जाता है, तो हमारे पूरे अस्तित्व में महान शांति और अविचलित प्रसन्नता प्रकट होती है।

88. जैसे कीमती लोहबान, यद्यपि एक पात्र में बंद हो, अपने सुगंध से निवास की हवा को भर देता है, और न केवल उसके पास वालों को बल्कि दूर खड़े लोगों को भी सुखद अनुभूति कराता है: इसी प्रकार एक पुण्यशील और ईश्वर-प्रेमी आत्मा की सुगंध, जो शरीर के सभी इंद्रियों से निकलती है, उसे देखने वालों के सामने उसके भीतर छिपी पुण्यशीलता को प्रकट करती है। क्योंकि जो कोई यह देखता है कि जीभ कुछ भी अनुचित या अश्लील नहीं बोलती, बल्कि केवल वही बोलती है जो सुनने वालों के लिए लाभदायक हो; कि आँखें नम्रता से देखती हैं; कि कान कोई अश्लील धुनें या बातें ग्रहण नहीं करते; कि पैर गरिमा के साथ चलते हैं; और कि चेहरा हँसी से विकृत नहीं होता, बल्कि आँसुओं और विलाप के बहे जाने का संकेत देता है— – यह सब देखकर कौन यह नहीं पहचान लेगा कि भीतर कितनी गुणों की प्रचुर सुगंध निहित है? इसीलिए उद्धारकर्ता कहते हैं: *'तुम्हारा प्रकाश मनुष्यों के साम्हने ऐसा चमके, कि वे तुम्हारे भले काम देखकर तुम्हारे पिता की महिमा करें जो स्वर्ग में है'* (मत्ती 5:16)।

८९. जसि मार्ग को हमारे प्रभु मसीह ने सुसमाचार में *'संकीर्ण और कष्टदायक'* कहा, उसी को उन्होंने बाद में *'एक अच्छा जुआ और एक हल्का बोझ'* कहा (मत्ती ७:१३-१४; ११:३०)। तो फरि, इन दो चीज़ों, जो वपिरीत प्रतीत होती हैं, को एक और समान कैसे देखा जा सकता है? – इस प्रकार: अपने स्वभाव से, यह मार्ग कठोर और कठनि है; लेकनि इसे अपनाने वालों की इच्छा और उनकी अच्छी आशाओं के कारण, यह वांछनीय, प्रयि, और भलाई से प्रेम करने वाले आत्माओं के लिए दुख से भी अधकि मधुर है। यही कारण है कआिप देखते हैं कजिन्होंने इस संकीर्ण और दुखद मार्ग को चुना है, वे इस पर वशिाल और चौड़े मार्ग की तुलना में अधकि तत्परता से चलते हैं। सुसमाचार-लेखक लूका क्या कहते हैं, उसे सुनें, ककिैसे, कोड़ों से पटिाई होने के बाद, वे परषिद से आनंदति होकर लौटे (प्रेरतिों के काम 5:40,41)। फरि भी, कोड़ों का स्वभाव ऐसा नहीं है; वे मठिास और आनंद नहीं लाते, बल्कि दुख और पीड़ा लाते हैं। तो, यदकिोड़े मसीह के लिए मीठे थे, तो इसमें आश्चर्य की क्या बात है क,ि उनके लिए, पीड़ा के अन्य रूप और शरीर की कष्टप्रद अवस्थाएँ भी मीठी हों?

९०. अपनी वासनाओं द्वारा पीड़ति और बंधक बने हुए, हम अक्सर हैरानी से खुद से पूछते हैं: हम यह क्यों सहते हैं? – हमें यह महसूस करना चाहिए कऐिसी बंधन हमें इस कारण होती है क्योंकहिम ईश्वर के चतिंन से मुंह मोड़ लेते हैं। लेकनि यदकिोई अपने मन से हमारे परमेश्वर और प्रभु से चपिका रहता है, तो—जैसा कपिरमेश्वर सच्चा है—उद्धारकर्ता स्वयं ऐसे आत्मा को हर दासता से मुक्त कर देगा, जैसा कभिविष्यिवक्ता कहते हैं: *'मैंने प्रभु को सदा अपने सामने रखा है; क्योंकविह मेरे दाहनिे हाथ में हैं, मैं डगमगाऊँगा नहीं'* (भजन संहिता 15:8)। प्रभु का हमेशा अपने दाहनिे हाथ पर होना, हमारी रक्षा और आवरण करना, और हमें डगमगाने से रोकना, इससे मीठी और क्या बात हो सकती है? लेकनि इसके योग्य माने जाने का नरि्णय हम पर नरि्भर करता है।

९१. संतों ने बहुत अच्छी और नस्िसंदेह सत्य बात कही जब उन्होंने कहा कएिक व्यक्तकिो तब तक कोई शांतनिहीं मलिेगी जब तक कउिसने अपने भीतर ऐसा आंतरकि भाव प्राप्त और स्थापति नहीं कर लयिा है कइिस संपूर्ण संसार में ईश्वर के सविा कुछ भी न रहे; कविे अपना मन कसिी और चीज़ पर न लगाएँ, बल्कि केवल उसी की इच्छा करें, और केवल उसी से जुड़े रहें। ऐसा व्यक्तविास्तव में वासनाओं के अत्याचार से शांतऔिर स्वतंत्रता पाएगा। भजन रचयतिा कहते हैं, *'मेरी आत्मा आप में चपिकी रहती है, और आपका दाहनिा हाथ मुझे थामे रखता है'* (भजन संहिता 62:9)।

९२. आत्म-प्रेम, सुख का प्रेम, और महमिा का प्रेम आत्मा से ईश्वर की स्मृतकिो दूर कर देते हैं; और जब ईश्वर की स्मृतसिमाप्त हो जाती है, तो वासनाओं का कोलाहल हमारे भीतर जड़ जमा लेता है।

९३. आत्म-स्नेह अनगनित वासनाओं की जननी है। इसलएि, जब कोई अपने हृदय से आत्म-स्नेह को जड़ से उखाड़ देता है, तो वह प्रभु की सहायता से, अन्य वासनाओं पर आसानी से वजिय प्राप्त कर लेता है। क्योंकइिससे ही आमतौर पर क्रोध, दुख, द्वेष, कामुकता और अनयिंत्रति धृष्टता उत्पन्न होती है; और जो कोई इससे वशीभूत होता है, वह अनविार्य रूप से अन्य भावों से भी वशीभूत हो जाता है। आत्म-प्रेम से हमारा तात्पर्य शरीर के प्रतएिक तीव्र झुकाव और प्रेम से है, जसिके साथ कामुक इच्छाओं की पूर्तभिी होती है।

९४. जो कोई भी कसिी वस्तु से प्रेम करता है, वह नरिंतर उसके साथ रहना चाहता है, और हर उस चीज़ से मुंह मोड़ लेता है जो उसे उस प्रयि वस्तु के साथ रहने और उसके साथ एकाकार होने से रोकती है। स्पष्ट रूप से, ऐसा इसलएि है क्योंकजिो कोई भी ईश्वर से प्रेम करता है, वह हमेशा उनके साथ रहने और उनसे वार्तालाप करने की लालसा रखता है। यह हमें शुद्ध प्रार्थना के माध्यम से प्राप्त होता है। यही वह है जसिके लिए हमें अपनी पूरी ताकत से प्रयास करना चाहिए; क्योंकयिह हमें हमारे प्रभु से एक करता है। ऐसे ही थे जन्होंने घोषणा की: *'हे ईश्वर, मेरे ईश्वर, मैं भोर में तेरा ही पुकार करता हूँ: मेरी आत्मा तुझी के लिए तरसती है'* (भजन संहिता 62:2)। क्योंकजिो अपना मन सभी बुराइयों से हटा लेता है और दवि्य प्रेम से नरिंतर व्याकुल रहता है, वह भोर में ईश्वर का पुकार करता है।

९५. जैसा कहिमने सीखा है, नरि्लपि्तता संयम और वनिम्रता से उत्पन्न होती है; और ज्ञान वशि्वास से; इनके माध्यम से, आत्मा वविेक और प्रेम में फलती-फूलती है। जो लोग अपने अंतरतम में दवि्य प्रेम को स्थापति कर लेते हैं, वे शुद्ध प्रार्थना के पंखों पर लगातार उसकी चरम ऊँचाई तक उड़ान भरते हैं, *'जब तक कविे परमेश्वर के पुत्र के पूर्ण ज्ञान, एक परपिूर्ण मनुष्य, और मसीह की पूर्णता के माप तक न पहुँच जाएँ'* (इफसियिों 4:13)।

९६. सक्रयि सद्गुण द्वारा, वासना वश में की जाती है और क्रोध नयिंत्रति होता है; जबकचिंतिन और ध्यान के माध्यम से, मन प्रेरति होता है, और सभी भौतकि चीजों से ऊपर उठकर, ईश्वर के साथ वास करता है, और उसी में सच्चा आनंद पाता है।

97. हमारा पहला प्रयास है, आवेगों को वश में करना और अपनी पूरी क्षमता से उन पर वजिय प्राप्त करना; हमारा दूसरा प्रयास है, सद्गुण प्राप्त करना और अपनी आत्मा को खाली और नष्क्रियि न छोड़ना; और हमारा

तीसरा है, अपने सद्गुणों और परिश्रम के फलों की विवेकपूर्ण रक्षा करना: क्योंकि हमें न केवल परिश्रम करने की आज्ञा दी गई है, बल्कि उन्हें चौकसी से रखने की भी।

98. *'अपनी कमर बँधे रहो और अपने दीपक जला रखो,'* प्रभु *कहते हैं* (लूका 12:35)। हमारी कमर का सही ढंग से बँधना, जिससे हम अच्छी तरह तैयार और कार्य के लिए तत्पर हो जाते हैं, वह है हृदय की नम्रता के साथ संयम; और संयम से मेरा तात्पर्य सभी वासनाओं को काटने से है। और आध्यात्मिक दीपक के लिए प्रकाश का स्रोत शुद्ध प्रार्थना और पूर्ण प्रेम है। इस प्रकार, जो वास्तव में सद्भावनापूर्ण हैं, वे उन लोगों के समान हैं जो अपने प्रभु की प्रतीक्षा करते हैं; जब वह आता है और खटखटाता है, तो वे तुरंत उसके लिए खोल देंगे, और वह, पिता और पवित्र आत्मा के साथ आकर, उनमें अपना वास करेगा। *'और वे दास धन्य हैं जिन्हें प्रभु, जब वह आएगा, ऐसा करते हुए पाएगा'* (लूका 12:36–37)।

९९. एक भिक्षु को, एक पुत्र के रूप में, परमेश्वर से अपने पूरे हृदय और अपने पूरे मन से प्रेम करना चाहिए; एक दास के रूप में, उनका सम्मान और आज्ञा माननी चाहिए, और भय और कांपते हुए उनके आज्ञाओं को पूरा करना चाहिए: उत्साह से जलना चाहिए, पवित्र आत्मा के पूरे कवच से लैस होना चाहिए, शाश्वत जीवन प्राप्त करने की आशा में विश्राम करना चाहिए, जो कुछ भी आज्ञा दी गई है उसे बिना चूके पूरा करना, संयम से जीवन जीना, अपने हृदय को बुरे विचारों से बचाना, अच्छे विचारों में परमेश्वर का पवित्र मनन निरंतर करना, अपने विचारों और कर्मों के बारे में प्रतिदिन स्वयं की जाँच करना, जो कमी रह गई है उसकी भरपाई करना, और जो किया है उससे घमंडी न होना, स्वयं को एक अयोग्य सेवक कहना जिसने अपना कर्तव्य वैसे नहीं निभाया जैसा निभाना चाहिए; हर बात के लिए सर्व-पवित्र ईश्वर का धन्यवाद करना और अपने जीवन में जो कुछ भी अच्छा है, उसका श्रेय उन्हें देना; व्यर्थता के लिए या मनुष्यों को खुश करने के लिए कुछ भी न करना, बल्कि सब कुछ गुप्त रूप से करना, केवल एक ईश्वर से प्रशंसा की आशा रखते हुए; लेकिन सबसे पहले और सबसे महत्वपूर्ण, सार्वभौमिक चर्च के सभी धर्मसिद्धान्तों में ऑर्थोडॉक्स विश्वास द्वारा अपनी आत्मा को दृढ़ करना, जो उसे प्रेरितों, परमेश्वर के प्रचारकों, और पवित्र पिताओं द्वारा विरासत में मिला है: क्योंकि जो इस प्रकार जीवन यापन करते हैं, उन्हें एक महान पुरस्कार प्राप्त होगा – अनंत जीवन और एक अविनाशी निवास-स्थान, पिता, पुत्र और पवित्र आत्मा, सह-तत्त्व और त्रिमूर्ति ईश्वर के साथ।

१००. *'मामले का सार यह है: परमेश्वर का भय मानो और उसकी आज्ञाओं का पालन करो, क्योंकि यही हर मनुष्य का कर्तव्य है,'* उपदेशक (– १२:१३) कहते हैं। वह कहता है, 'मैं तुम्हें थोड़े शब्दों में बताऊँगा कि परमेश्वर का मार्ग क्या है: परमेश्वर का भय मानो और उसकी आज्ञाओं का पालन करो।' यहाँ जिस भय का उल्लेख है, वह निश्चित रूप से केवल दंड का भय नहीं है, बल्कि एक पूर्ण भय है जो पूर्णता लाता है, जो हमें उन आज्ञाओं को देने वाले के प्रति प्रेम के कारण होना चाहिए। क्योंकि यदि हम दंड के भय से पाप से बचते हैं, तो यह स्पष्ट है कि, यदि इन भयानक परिणामों का सामना करने की संभावना न होती, तो हम—जो पाप की ओर झुकाव रखते हैं—निश्चित रूप से बिना किसी हिचकिचाहट के उन्हें कर डालते। हालाँकि, यदि हम पापों से दंड के भय से नहीं बल्कि स्वयं पापों से घृणा के कारण दूर रहते हैं, तो हम अपने प्रभु ईश्वर के प्रति प्रेम से ऐसा करते हैं, यह डरते हुए कि कहीं हम उन्हें क्रोधित न कर दें। जब हमें यह डर लगता है कि हम आज्ञा में से किसी बात की अवहेलना कर सकते हैं, तो ऐसा भय शुद्ध होता है, क्योंकि यह स्वयं भलाई से उत्पन्न होता है; और यह हमारे आत्मा को शुद्ध करता है, जो पूर्ण प्रेम के बराबर है। जो कोई भी इस भय को रखता है और इसके कारण आज्ञाओं का पालन करता है, वह एक सच्चा मानव है, अर्थात् एक ऐसा व्यक्ति जैसा उसे होना चाहिए। यह जानते हुए, आइए हम परमेश्वर का ऐसे भय से भय मानें और उसकी आज्ञाओं का पालन करें, *'ताकि हम सिद्ध और पूर्ण हों, और सद्गुण में कुछ भी कमी न रहे'* (याकूब 1:4), विनम्र मन और पश्चात्तापी हृदय के धनी, और महान संत आर्सेनियस की प्रार्थना को प्रभु के समक्ष अखंड रूप से अर्पित करते हुए: 'हे मेरे ईश्वर! मुझे न छोड़ो;

मैंने तेरे सामने कोई भी अच्छा काम नहीं किया है,

परन्तु अपनी कृपा से मुझे इसकी शुरुआत करने का अवसर प्रदान करें।" क्योंकि हमारा सारा उद्धार परमेश्वर की भलाई और मानव जाति के प्रति प्रेम में निहित है। महिमा, सामर्थ्य और आराधना पिता, पुत्र और पवित्र आत्मा को हो, अब और सदा और युगानुयुग। आमीन।

एडेसा के पूजनीय थियोडोर

उनका संक्षिप्त परिचय

यह वर्तमान चिंतनशील प्रबंध, हमारे आध्यात्मिक जीवन की आंतरिक घटनाओं की बुद्धिमानीपूर्ण व्याख्या और तपस्वी जीवन में लगे लोगों के लिए उनसे उपयुक्त सबक निकालने के कारण, अन्य तपस्या संबंधी लेखनों में एक स्थान का हकदार है। इस प्रबंध के लेखक अज्ञात हैं। शीर्षक में, उन्हें 'आदरणीय थियोडोर' के रूप में संदर्भित किया गया है। लेकिन वह कौन थे, यह स्पष्ट नहीं है। ग्रीक 'डोब्रोतोलुबिए' के संकलनकर्ताओं ने, इस ग्रंथ में एडसा के संत थियोडोर के सौ अध्यायों में निहित विचारों के समान विचारों को पहचानते हुए, इसे बाद वाले से ही जोड़ा और इसे उनके सौ अध्यायों के बाद रखा। हालांकि, चेर्निगोव के महामहिम फिलारेट लिखते हैं (ऑन द फादर्स, §277, नोट 10) कि इस ग्रंथ को केवल अनुमान के आधार पर ही एडसा के संत थियोडोरेट का माना जा सकता है। वास्तव में, ग्रंथ स्वयं इस संबंध में कोई निश्चित संकेत नहीं देता है। इसलिए, जबकि हम प्रत्येक व्यक्ति के विवेक पर इसे संत थियोडोरेट ऑफ़ एडेसा से जोड़ने या अस्वीकार करने का निर्णय छोड़ते हैं, और इसे पढ़ने से लाभ की तलाश करने वाले सभी के लिए लाभकारी मानते हैं, हम इसे, ग्रीक 'डोब्रोतोलुबिए' के उदाहरण का पालन करते हुए, संत थियोडोरेट ऑफ़ एडेसा के सौ अध्यायों के ठीक बाद रखते हैं।

हमारे पूजनीय पिता थियोडोर का अनुमानित प्रवचन

1. भौतिकवाद के इन दृढ़ बंधनों को तोड़ना, स्वयं को इसके जुए से मुक्त करना, और अच्छाई करने की आदत डालना कितनी बड़ी उपलब्धि है! वास्तव में, जो कुछ भी भौतिक है, उसे त्यागने के लिए एक बहादुर और साहसी आत्मा की आवश्यकता होती है।

२. तो फिर, इसके बाद मनुष्य को क्या खोजना चाहिए? यह केवल वासनाओं से शुद्धि नहीं है: क्योंकि यह अपने आप में अभी तक एक सद्गुण नहीं है, बल्कि सद्गुण के लिए केवल एक तैयारी है; फिर भी, अस्वास्थ्यकर आदतों की शुद्धि के साथ-साथ सद्गुणों की प्राप्ति भी होनी चाहिए।

3. आत्मा का शुद्धिकरण इस प्रकार है: *'बौद्धिक पहलू में'* – सांसारिक, आकर्षक आदतों का रूपांतरण और पूर्ण परित्याग, अर्थात्, दैनिक जीवन की चिंताएं और फिक्रें, बुरी प्रवृत्तियां, और अनुचित अटकलें और कल्पनाएं; *'इच्छाशक्ति के भाग में'* – किसी भी भौतिक वस्तु के लिए प्रयास न करना, न ही इंद्रियों द्वारा निर्देशित होना, बल्कि विवेक के प्रति समर्पित होना; *'क्रोधाशक्ति के भाग में'* – किसी भी घटना से विचलित न होना।

४. और ऐसी शुद्धि के बाद और उन सभी चीजों के उन्मूलन के बाद जो हमारी शक्तियों को अशुद्ध करती हैं, और उनके पुनर्गठन के बाद, आध्यात्मिक पूर्णता और दिव्यता की ओर आरोहण होता है: क्योंकि जिसने बुराई से मुंह मोड़ लिया है, उसे भलाई करनी चाहिए (भजन संहिता ३३:१५)। ऐसा करते समय, मनुष्य को सर्वप्रथम स्वयं का परित्याग करना चाहिए, और इस प्रकार, अपना सूली का दार उठाकर, प्रभु का अनुसरण करना चाहिए, ताकि दिव्यता की उच्चतम अवस्था प्राप्त की जा सके।

५. तो फिर, पूर्णता और दिव्यता की यह आरोहण क्या है? *'मन के संबंध* में', यह अस्तित्व और उस सत्ता का सबसे पूर्ण ज्ञान है जो सभी अस्तित्वों से परे है, जहाँ तक यह मानव स्वभाव के लिए सुलभ है; *'इच्छा के संबंध* में', यह परम शुभ की ओर एक सर्व-व्यापी और अथक इच्छा और प्रयत्न है; *'प्रेरणा की क्षमता के संबंध में'*, अपनी इच्छा की वस्तु की ओर सबसे प्रबल और सक्रिय गति, अथक और अडिग, जिसकी अग्रसरता किसी भी आने वाली विपत्ति से बाधित न हो; बल्कि बिना रुके, बिना पीछे मुड़े आगे बढ़ती रहे।

6. आत्मा की अच्छाई की ओर गति, बुराई की ओर उसकी गति से उतनी ही अधिक शक्तिशाली होनी चाहिए, जितनी बौद्धिक सुंदरता इंद्रिय सुंदरता से श्रेष्ठ है; इस प्रकार, शरीर की देखभाल केवल उसकी आवश्यकताओं को पूरा करने और जीवन को बनाए रखने के लिए आवश्यक सीमा तक ही अनुमत होनी चाहिए , अन्यथा हमारा पशु-जीव हिंसक अव्यवस्था की ओर धकेल दिया जाएगा। लेकिन यद्यपि इसे सैद्धांतिक रूप से पहचानना आसान है, इसे व्यवहार में लाना बहुत मुश्किल है; क्योंकि प्रयास के बिना आत्मा की गहरी जमी हुई आदतों को मिटाना संभव नहीं है।

7. जैसे किसी भी कला में महारत बिना पसीने के नहीं मिलती, वैसे ही धन्य स्वभाव—ईश्वर—के मामले में भी गहन चिंतन और ध्यान का विस्तार बहुत मेहनत और लंबे समय तक अभ्यास करने से ही प्राप्त होता है, जब तक कि इच्छा शक्ति ऐसी कोशिश के परिणामों की आदी नहीं हो जाती और उसके फलों का स्वाद नहीं चख लेती। इसमें, हमारे मन को कामुक स्वभाव का विरोध करना चाहिए, जो हमें सांसारिक की ओर खींचता है; अतःमृत्यु तक शरीर के विरुद्ध हमारी लड़ाई और अनवरत संघर्ष चलता रहता है: यद्यपि कभी-कभी यह क्रोध और वासना को वश में करने, और

इंद्रियों को मन के अंकुश के अधीन करने के परिणामस्वरूप कम प्रतीत हो सकता है, जो इस लड़ाई में प्राप्त अनुभवी ज्ञान और कौशल से समृद्ध होता है।

८. हालाँकि, यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि एक अज्ञानी आत्मा, जिसे आमतौर पर ईश्वर से सहायता नहीं मिलती, न तो वास्तव में शुद्ध हो सकती है और न ही दिव्य प्रकाश तक पहुँच सकती है, जैसा कि कहा गया है: क्योंकि जो कहा गया है, उसे विश्वासियों के संदर्भ में समझना चाहिए। इसे और स्पष्ट करने के लिए, हमारे ज्ञान के विभिन्न रूपों के बीच के अंतर को संक्षेप में समझाना आवश्यक है। ज्ञान के सांसारिक रूपों में से एक प्राकृतिक है, जबकि दूसरा अलौकिक है। यह दूसरा रूप क्या है, यह पहले वाले से स्पष्ट हो जाएगा।

९. हम उस ज्ञान को 'प्राकृतिक ज्ञान' कहते हैं जिसे आत्मा, प्राकृतिक तरीकों और शक्तियों का उपयोग करके, सृष्टि और स्रष्टा के बारे में अनुसंधान और पूछताछ के माध्यम से प्राप्त कर सकती है—स्वाभाविक रूप से, उस सीमा तक जो पदार्थ से बंधी आत्मा के लिए सुलभ है। क्योंकि मन की ऊर्जा शरीर के संपर्क और उसमें विलीन होने से कमजोर हो जाती है; और परिणामस्वरूप यह बौद्धिक वस्तुओं के सीधे संपर्क में नहीं रह सकता, बल्कि उसे उनकी कल्पना करने के लिए कल्पनाशक्ति की आवश्यकता होती है, जिसका स्वभाव विस्तारित और ठोस छवियों का निर्माण करना है। इस प्रकार, जिस हद तक मन देह में है, उसे चीजों का न्याय करने और उन्हें समझने के लिए उनके अनुरूप प्रतिमाओं की आवश्यकता होती है। जिस भी प्रकार का ज्ञान मन, जैसा कि वह है, इस प्राकृतिक साधन से प्राप्त करता है, उसे हम प्राकृतिक ज्ञान कहते हैं।

10. दूसरी ओर, अलौकिक ज्ञान वह है जो मन को ऐसे माध्यम से प्राप्त होता है जो उसकी प्राकृतिक पद्धतियों और शक्तियों से परे है, या जिसमें ज्ञान का विषय अपेक्षाकृत रूप से शरीर से बंधे मन से श्रेष्ठ होता है, इसलिए ऐसा ज्ञान स्पष्ट रूप से अदेह मन के लिए ही उपयुक्त है। यह एकमात्र ईश्वर से तब प्राप्त होता है जब वह मन को सभी भौतिक आसक्तियों से शुद्ध और दिव्य प्रेम से परिपूर्ण पाता है।

11. हालाँकि, केवल ज्ञान ही इस प्रकार विभाजित नहीं है, बल्कि सद्गुण भी है: क्योंकि कुछ सद्गुण ऐसे होते हैं जो प्रकृति से परे नहीं जाते और जिन्हें सही मायने में प्राकृतिक कहा जाता है; जबकि दूसरा हमें भलाई के प्रथम स्रोत से प्राप्त होता है, और चूँकि यह हमारी प्राकृतिक शक्तियों और स्थिति से परे है, इसलिए इसे उचित रूप से अलौकिक कहा जाना चाहिए।

12. इसे समझाने के बाद, हम यह मानते हैं कि अज्ञानी के पास भी प्राकृतिक ज्ञान और प्राकृतिक सद्गुण हो सकते हैं, लेकिन अलौकिक नहीं। क्योंकि वे यहाँ सक्रिय परम कारण में हिस्सेदारी के बिना उन्हें कैसे प्राप्त कर सकते हैं? हालाँकि, प्रबुद्ध व्यक्ति के पास दोनों हो सकते हैं।

१३. मैं यहाँ एक और अंतर जोड़ना चाहूँगा: प्राकृतिक सद्गुण को प्राप्त किए बिना अलौकिक सद्गुण प्राप्त नहीं किया जा सकता; जबकि प्राकृतिक ज्ञान के बिना भी अलौकिक ज्ञान का भागीदार बनने से कुछ भी नहीं रोकता। हालांकि, यह समझना चाहिए कि जिस प्रकार पशुओं में अनुभूति और कल्पना होती है, उसी प्रकार मनुष्य में भी होती है; केवल मनुष्य में ये शक्तियाँ कहीं अधिक श्रेष्ठ और उत्कृष्ट हैं: इसी प्रकार, प्राकृतिक सद्गुणों और ज्ञान के संबंध में, प्रबुद्ध और अप्रबुद्ध दोनों में ये होते हैं, लेकिन प्रबुद्ध लोगों में वे अप्रबुद्ध लोगों की तुलना में कहीं बेहतर और उच्चतर अवस्था में होते हैं।

14. मैं यह और जोड़ूँगा: प्राकृतिक के रूप में जाने जाने वाले ज्ञान के उन रूपों में, जो सद्गुणों और उनके विपरीत झुकावों से संबंधित हैं, वे भी दो प्रकार के होते हैं: एक तो सैद्धांतिक है, जब दार्शनिक, ऐसे स्वभावों पर चिंतन करते हुए, उन्हें व्यवहार में परख नहीं पाता है – ऐसा ज्ञान कभी-कभी संदेह के अधीन होता है; और दूसरा सक्रिय है, और, कह सकते हैं, हृदय से जुड़ा है, जब ज्ञान का परीक्षण व्यवहार में ऐसे स्वभावों को आज़माकर किया जाता है – ऐसा ज्ञान स्पष्ट और सत्य होता है, कभी डगमगाता नहीं है और इसमें कोई संदेह नहीं होता।

15. जब ऐसा है, तो हम सीखते हैं कि चार चीजें हैं जो सद्गुण की खोज में मन को बाधित करती हैं: '*पहली* सद्गुण के विपरीत आदतों की ओर प्रवृत्ति है, जो लंबे समय से चली आ रही आदत के कारण, व्यक्ति को सांसारिक मामलों की ओर झुकने के लिए प्रेरित करती है; '*दूसरा*', इंद्रियों का प्रभाव, जो इंद्रिय सुंदरताओं से बहककर, मन को अपने साथ खींच लेती हैं; '*तीसरा*', मन की ऊर्जा का क्षीण होना, जिसके अधीन यह शरीर के साथ अपने मिलन के कारण होता है। क्योंकि दृष्टि और दृश्य के बीच, और वास्तव में इंद्रियों और इंद्रिय-विषियों के बीच का संबंध, मन और बोधगम्य के बीच के संबंध के समान नहीं है। – मैं आत्मा के उस मन की बात कर रहा हूँ जब वह अभी भी शरीर में वास करता है। – क्योंकि अद्रव्य मन, दृश्यमान के साथ दृष्टि के संपर्क की तुलना में, बोधगम्य के साथ अधिक प्रभावी संपर्क में आते हैं। – लेकिन जैसे जब दृष्टि धुंधली हो जाती है—तो वह जिन वस्तुओं को देखती है, उनके रूपों को स्पष्ट रूप से, सटीक रूप से, और वास्तव में धुंधले अंदाज में ही प्रतिबिंबित करती है—वैसे ही हमारा मन भी, जबकि वह

बोधगम्य की जागरूकता रखता है, फिर भी प्रभावी रूप से बोधगम्य सुंदरताओं का अनुभव नहीं कर सकता; न ही, साथ ही, यह उनसे कुछ भी इच्छा कर सकता है, क्योंकि प्रवृत्ति की मात्रा ज्ञान की मात्रा के समानुपाती होती है – और यह तुरंत ही इंद्रिय सुंदरताओं की ओर खिंच जाता है, जो इसे अधिक स्पष्ट प्रतीत होती हैं; क्योंकि यह अनिवार्य रूप से उस ओर आकर्षित होता है जो इसके सामने अच्छा प्रतीत होता है, चाहे वह सत्य हो या नहीं। – इन सबके अलावा, एक और (*चौथा*) है – अमानवीय, अशुद्ध आत्माओं के हमले। और यह कहना असंभव है कि वे आत्माओं को फँसाने के लिए कितने और किस प्रकार के जाल बिछाती हैं, हाय! – हर जगह, रास्ते भर, अनगिनत और विविध रूपों में, इंद्रियों में, वाणी में, मन में, कह सकते हैं कि हर उस चीज़ में जो मौजूद है – जिनसे कोई भी आत्मा कभी बच नहीं पाती, यदि वह न होता जिसने खोए हुए भेड़ को अपने कंधों पर उठा लिया – वे जो अपनी दृष्टि उसी पर टिकाए रखते हैं – ने अपनी असीम देखभाल से उन्हें श्रेष्ठ नहीं बना दिया होता।

१६. इन सब से बचने के लिए, हमें निम्नलिखित तीन साधनों की आवश्यकता है, जिनमें '*पहला*' और सबसे बड़ा है, अपनी आँखें पूरे दिल से ईश्वर की ओर मोड़ना और उनकी मदद का हाथ खोजना, उन पर अपनी सारी आशा रखना, इस सच्ची मान्यता से कि यदि वे हस्तक्षेप नहीं करते हैं, तो हम अनिवार्य रूप से उन लोगों के कैदी बन जाएँगे जो हमें अपनी ओर खींचते हैं। '*दूसरी*', जो मुझे विश्वास है कि पहली का कारण है, वह ज्ञान के माध्यम से मन का अखंड पोषण है। इस ज्ञान से मेरा तात्पर्य है, सभी वस्तुओं का ज्ञान, जो इंद्रिय-ग्राह्य और बौद्धिक-ग्राह्य दोनों हैं, जैसी वे स्वयं हैं, और प्रथम कारण के साथ उनका क्या संबंध है, क्योंकि वे उस कारण से और उसी के लिए अस्तित्व में हैं – और उस सबके रचयिता का चिंतन, जो हमारे लिए सुलभ है, उस मार्गदर्शन से जो उससे प्राप्त होता है। क्योंकि सृजित वस्तुओं की प्रकृति की जाँच-पड़ताल मनुष्य को उनसे जुनूनी लगाव से शुद्ध करती है, उनसे धोखा खाने से मुक्त करती है, और उसे उनके स्रोत तक ऊँचा उठाती है, जिससे वह एक दर्पण की तरह, सुंदर, अद्भुत और महान के भीतर, सबसे सुंदर, सबसे अद्भुत और सबसे महान को देख पाता है—या यूँ कहें कि, जो सभी सुंदरता, अद्भुतता और महानता से परे है। ऐसे विचारों में हमेशा मग्न रहने पर, मन सच्ची भलाई की इच्छा कैसे न करे? क्योंकि यदि यह कभी-कभी अपने लिए अपरिचित चीज़ों की ओर मुड़ता है, तो क्या यह और भी अधिक अपने ही होने वाली चीज़ की ओर नहीं मुड़ेगा? एक बार जब आत्मा इस से मोहित हो जाती है, तो वह नीचे की चीज़ों में से किस से स्वयं को चिपकाने देगी, जबकि वे आमतौर पर उसे उस एक से भटकाती हैं जो उससे प्रेम करता है और जिससे वह प्रेम करती है? वास्तव में, वह शरीर में जीवन से भी असंतुष्ट हो जाएगी, क्योंकि वह उसे सच्ची अच्छाइयों को प्राप्त करने और उनका आनंद लेने में एक बाधा के रूप में देखेगी। क्योंकि, जैसा कि कहा गया है, यह स्पष्ट नहीं है कि मन भौतिक दुनिया में आत्मा की सुंदरता को कैसे निहारता है, फिर भी आध्यात्मिक आशीर्वाद इतने और इतने प्रचुर हैं कि उस सुंदरता के सागर से एक छोटी सी बूंद और उसकी किरणों की एक मद्धिम सी झलक भी मन को सभी भौतिक चीजों से परे उड़ान भरने के लिए प्रेरित कर सकती है, और केवल उन्हीं आशीर्वादों की ओर प्रयासरत रहने के लिए, स्वयं को किसी भी तरह से उसकी मिठास से मुंह मोड़ने न देने के लिए, भले ही इसके कारण उसे किसी कड़वाहट का सामना करना पड़े। और इस के साथ जो '*तीसरी*' चीज़ होनी चाहिए, वह है हमारे देहधारी जीवनसाथी का दमन; क्योंकि अन्यथा उन स्वर्गीय गुणों के उपर्युक्त प्रकटनों को स्पष्ट और सटीक रूप से समझना असंभव है। देह का दमन उपवास, जागरण, नंगे फर्श पर सोने, आवश्यक मोटे कपड़े पहनने, और कठिन परिश्रम के द्वारा होता है। इस प्रकार देह को मृत्यु दी जाती है, या यूँ कहें कि उसे मसीह के साथ सूली पर चढ़ाया जाता है। इस प्रकार परिष्कृत और शुद्ध होकर, प्रकाशमान और सुव्यवस्थित हो जाने पर, यह बिना किसी प्रतिरोध के मन की गतिविधियों का सहज ही अनुसरण करता है और उसके साथ मिलकर ऊँचाइयों पर चढ़ता है। – हालाँकि, इसके बिना, इस संबंध में हमारे सभी प्रयास व्यर्थ सिद्ध होते हैं।

१७. जब यह उत्कृष्ट त्रिमूर्ति अपने आप में सामंजस्य में होती है, तो यह आत्मा में धन्य गुणों की प्रतिमा को प्रकट करती है। और यह असंभव है कि इस त्रिमूर्ति से सुशोभित आत्मा में पाप का कोई अंश हो, या कोई सद्गुण अनुपस्थित हो। ऐसी आत्माओं में, मन न तो धन की प्राप्ति से—जिसे पहले ही त्याग दिया गया है—और न ही कीर्ति से—जिसे पहले ही ठुकरा दिया गया है—परेशान होता है, जिनसे आत्मा, जब तक उनसे जुड़ी रहती है, कई आसक्तियों से घायल हो जाती है। और जैसे मैं यह मानता हूँ कि धन और महिमा से जुड़ी आत्मा के लिए दुःख से ऊपर उठना असंभव है, वैसे ही मैं यह नहीं कहता कि उल्लेखित तीन आध्यात्मिक साधनों में काफी समय तक परिश्रम करने वाली—और जिनकी आदी हो चुकी—आत्मा का उनमें लिप्त होना संभव है। क्योंकि यदि, ऐसी मानसिक अवस्था में, वह परम-भलाई के सिवा किसी भी चीज़ को सच्ची भलाई नहीं मानती, और अन्य सभी भलाइयों में से उस चीज़ को सबसे अच्छा मानती है जो, जैसा कि वह आश्वस्त है, पहले वाली से सबसे अधिक मिलती-जुलती है; तो फिर वह सोने और चांदी, या

इस दुनिया की किसी अन्य चीज़ से प्रेम और अनुकूल स्वीकृति कैसे कर सकती है? – वैसा ही कीर्ति के बारे में भी कहा जा सकता है।

18. यहाँ तक कि यह सबसे अतृप्त चीज़—मेरा मतलब है, चिंता—तब मन पर विपरीत दिशा से हमला नहीं करती। – क्योंकि उसे किसि बात की चिंता होगी, जो इस दुनिया की किसी भी चीज़ से लगाव नहीं रखता और इसमें से किसी में भी संलग्न नहीं है ? चिंताओं का बादल मुख्य जुनूनों के वाष्प से बना है – सुख का प्रेम, धन का प्रेम और महिमा का प्रेम: इसलिए जो इनसे मुक्त है वह चिंता से भी मुक्त है।

19. ऐसे लोगों में—जो इन तीन आध्यात्मिक अभ्यासों के आदी हैं—विवेक की कोई कमी नहीं होती, जिसे बुद्धि का साथी माना जाता है, और जो दुख से बाहर निकालने वाले साधनों में सबसे शक्तिशाली है। क्योंकि सद्गुणों का अध्ययन इस बात की सटीक समझ शामिल करता है कि क्या अच्छा है और क्या इसके विपरीत है; और इसके लिए विवेक की आवश्यकता होती है। इसके मार्गदर्शन में, अनुभव और देह के विरुद्ध संघर्ष यह सिखाते हैं कि भलाई कैसे करें और बुराई का विरोध कैसे करें।

20. और उनमें भय स्वाभाविक है। क्योंकि जैसे-जैसे प्रेम बढ़ता है, वैसे-वैसे भय भी बढ़ता है; और जितनी अधिक भलाई प्राप्त करने की आशा होती है, उतना ही अधिक उसे प्राप्त न कर पाने का भय होता है। और यह प्रेम से घायल हुए लोगों की आत्मा को अनगिनत यातनाओं की धमकी से कहीं अधिक कुरेदता है; क्योंकि उसे प्राप्त करना परम आनंद है, जबकि उसे प्राप्त करने में असफल होना परम दुख है।

21. ताकि विचन हमें मार्ग पर मार्गदर्शन दे, और किसी अन्य प्रकार से मार्ग का नेतृत्व करे, हमें अंत से शुरू करना चाहिए: क्योंकि जो कुछ भी अस्तित्व में आता है, वह अपने अंत से ही अपने भागों के बीच अंतर और उनके उचित क्रम, दोनों को प्राप्त करता है। हमारे जीवन का अंत आनंद है, या, जो कि एक ही बात है, स्वर्ग का राज्य, या परमेश्वर का राज्य। और यह केवल परम राजसी त्रिमूर्ति का दर्शन ही नहीं है, बल्कि दिव्य आकर्षण का ग्रहण भी है, और, यूं कहें, दिव्यता का अनुभव भी है; और इस आकर्षण के माध्यम से, हम में जो कमी है उसकी पूर्ति और जो अपूर्ण है उसका पूर्णत्व। और ठीक यही है जो आध्यात्मिक प्राणियों के लिए पोषण का काम करता है—उस दिव्य आकर्षण के माध्यम से जो कुछ कमी है उसकी पूर्ति। यहाँ एक निश्चित अनंत चक्र पूरा होता है, जो उसी से शुरू होकर उसी पर समाप्त होता है। क्योंकि जितना अधिक कोई समझता है, उतनी ही अधिक इच्छा करता है; जितना अधिक कोई इच्छा करता है, उतना ही अधिक आनंद लेता है; जितना अधिक कोई आनंद लेता है, उतना ही अधिक वह एक बार फिर से गहरी समझ के लिए प्रेरित होता है; और तुरंत ही यह अपरिवर्तनीय गति—या, शायद, अपरिवर्तनीय स्थिरता—शुरू हो जाती है।

२२. इस प्रकार, जीवन का अंत—जहाँ तक इसे समझने की हमारी शक्ति है—ऐसा ही है। अब हमें यह विचार करना चाहिए कि किसी को इसकी ओर कैसे अग्रसर होना चाहिए। तर्कशील आत्माओं के लिए—जो बुद्धिमान प्राणी हैं और स्वर्गदूतों के मन से बहुत कम भिन्न हैं—यहाँ जीवन एक संघर्ष है, और देह में जीवन उन्हें एक परीक्षा के रूप में दिया गया है। इस प्रयास और संघर्ष का पुरस्कार उपरोक्त अवस्था है—एक ऐसा उपहार जो दैवीय दया और दैवीय न्याय दोनों के योग्य है: न्याय, क्योंकि ये आशीर्वाद किसी की अपनी मेहनत और पसीने के बिना प्राप्त नहीं होते; दिव्य दयालुता, क्योंकि यह उपहार किसी के भी अपने श्रम से असीम रूप से श्रेष्ठ है, और इसलिए भी क्योंकि अच्छा करने की क्षमता स्वयं ईश्वर का एक उपहार है।

23. तो फिर, यहाँ क्या चमत्कार है? – एक तर्कशील आत्मा एक पशु शरीर के साथ संयुक्त होती है, जो पृथ्वी का है, जिसका अस्तित्व है, और जो निम्न लोक की ओर आकर्षित होता है। यह इस शरीर के साथ इस प्रकार एकीकृत होता है कि इन दोनों – आत्मा और शरीर – जो एक-दूसरे के पूरी तरह से विरोधी हैं, से एक एकल सत्ता का अस्तित्व हुआ है, न कि इन भागों के किसी परिवर्तन या मिश्रण के माध्यम से – ईश्वर न करे! – बल्कि इस प्रकार कि इन दोनों में से, प्रत्येक अपनी स्वभाविक प्रकृति को बनाए रखते हुए, एक एकल व्यक्ति का अस्तित्व हुआ है, जिसमें दो पूर्ण प्रकृतियाँ समाहित हैं। इस प्रकार, यह संयुक्त सत्ता—मानव—एक द्वैध-स्वभाव वाली इकाई के रूप में, प्रत्येक स्वभाव की विशिष्ट विशेषताओं को अपने कर्मों में प्रकट करती है। – शरीर के लिए अपने समान—अर्थात् भौतिक—चीज़ों की इच्छा करना स्वाभाविक है। अपने समान की ऐसी इच्छा सभी प्राणियों के लिए स्वाभाविक है, क्योंकि उनका अस्तित्व ही अपने भीतर अपने समान की प्राप्ति पर निर्भर करता है। शरीर के लिए इंद्रियों के माध्यम से अपने समान में आनंद लेना भी स्वाभाविक है; इसके अलावा, जब वह थका होता है तो उसे विश्राम सुखद लगता है। यही हमारी पशु प्रकृति के लिए स्वाभाविक और वांछनीय है। – जहाँ तक तर्कशील आत्मा का प्रश्न है, एक तर्कशील स्वभाव होने के नाते, उसके लिए समान रूप से तर्कशील चीज़ों की खोज करना और उस मोड के लिए उचित चीज़ों में आनंद लेना स्वाभाविक और वांछनीय है। हालाँकि, सभी से बढ़कर, ईश्वर के प्रति प्रेम स्वाभाविक

रूप से उसमें निहिति है। और यह स्वाभावकि रूप से उसमें और अन्य बौद्धकि चीज़ों में आनंद लेना चाहती है, लेकनि ऐसा बनि कसिी बाधा के नहीं कर सकती।

२४. पहला मनुष्य बनि कसिी बाधा के, इंद्रयिों के माध्यम से मूर्त वस्तुओं और बुद्धकि माध्यम से अमूर्त वस्तुओं, दोनों का ग्रहण करने और उनमें आनंद लेने में सक्षम था। फरि भी, उसे मुख्य रूप से छोटे की नहीं, बल्कि बड़े की परवाह करनी चाहिए थी; यद्यपविह स्वयं में बुद्धकि माध्यम से अमूर्त वस्तुओं और इंद्रयिों के माध्यम से मूर्त वस्तुओं, दोनों के साथ संयोग में प्रवेश करने में सक्षम था। मैं यह नहीं कह रहा कआिदम को अपनी इंद्रयिों का उपयोग नहीं करना चाहिए था: क्योंकउिसे शरीर प्रदान करना व्यर्थ नहीं था; बल्कयिह कउिसे मुख्य रूप से और इंद्रयिों के लिए इंद्रयिात्मक चीजों में आनंद नहीं लेना चाहिए था; बल्कि संवेदी छापों के माध्यम से प्राणयिों की सुंदरता को महसूस करते हुए, उसे उस सुंदरता के रचयति की ओर मुड़ना चाहिए था और आश्चर्य के साथ उसी में आनंदति होना चाहिए था, और सृष्टकिर्ता की बौद्धकि सुंदरता की उपेक्षा करते हुए संवेदी सुंदरता से चपिके रहने और उसी पर आश्चर्यचकति होने के बजाय, सृष्टकिर्ता पर आश्चर्य करने का और भी अधकि कारण था। आदम को इस प्रकार कार्य करना चाहिए था।

25. परन्तु, अपनी इंद्रयिों का बुरा उपयोग करते हुए, वह संवेदी दुनिया की सुंदरता पर चकति होने लगा; और, एक ऐसा फल देखकर जो आँखों को भाता था और खाने में अच्छा था, उसने उसे चखा, बौद्धकि चीजों में मलिने वाले आनंद को त्यागकर; तब धर्मी न्यायी ने, उसे परमेश्वर और जो कुछ भी अस्तत्वि में है—उन चीज़ों का, जनिका उसने तरिस्कार कयिा था—के चंतिन के अयोग्य समझकर, उसे बाहर नकिाल दयिा, *'अंधकार को उसका नविास बना दयिा'* और उसे सभी अद्रव्य चीज़ों से अलग कर दयिा (भजन संहति 17:12)। क्योंकअिपवत्रि को पवत्रिता नहीं दी जानी चाहिए; परन्तु चूंकउिसने इसे प्रेम कयिा, परमेश्वर ने उसे इसमें आनंद लेने की अनुमतदिी, और उसे इंद्रयिों के द्वारा जीने के लिए छोड़ दयिा, जसिमें आध्यात्मकि जीवन के केवल मधुर अवशेष ही बचे थे।

26. इसीलिए बौद्धकि वस्तुओं के साथ एकता प्राप्त करने का प्रयास हमारे लिए सबसे कठनि हो गया है: क्योंकयिह हमारी शक्तमिें नहीं है कहिम मन से बौद्धकि वस्तुओं में उसी तरह आनंद लें जैसे हम इंद्रयिों से मूर्त वस्तुओं में आनंद लेते हैं, भले ही हमें बपतस्मिा के माध्यम से इसके लिए बहुत सहायता मलिती है, जो हमें शुद्ध और गौरवान्वति करता है। तथापजिहाँ तक यह हमारे लिए सुलभ है, हमें संवेदी के बजाय बौद्धकि में ही अभ्यास करना चाहिए; हमें बौद्धकि चीजों पर आश्चर्य करना चाहिए और उनकी इच्छा करनी चाहिए, जबकसिंवेदी चीजों में कसिी पर आश्चर्य नहीं करना चाहिए, और न ही कसिी चीज़ में अपने आप में आनंद लेने की इच्छा करनी चाहिए (जैसे कोई संवेदी वस्तु और इंद्रयिों की संतुष्टकि लिए): क्योंकसित्य में, संवेदी की बौद्धकि से कोई तुलना नहीं है। हम देखते हैं कसिार का सार और सुंदरता की सुंदरता दोनों अधकि अद्भुत हैं। लेकनि हमें उन्हें वैसा ही मानना चाहिए जैसा वे वास्तव में हैं। उस भव्य के बजाय लज्जास्पद से और सम्माननीय के बजाय नीच से प्रेम करने से बढ़कर कोई पागलपन हो सकता है? और यह तब भी है जब हम सृजति चीजों के साथ ऐसा करते हैं, चाहे वे बुद्धकिी हों या इंद्रयिों की। लेकनि क्या कहा जा सकता है यदहिम सर्वोच्च से इस तरह का व्यवहार करते हैं, जब हम उनसे उस पदार्थ को श्रेष्ठ मानते हैं जो रूपहीन और तुच्छ है?

२७. और तो अब हमारा यही कार्य है – कहिम स्वयं पर सावधानीपूर्वक नगिरानी रखें, ताकहिम हमेशा बोधगम्य में आनंदति हों, अपने मन और इच्छा दोनों को उसकी ओर नर्दिेशति करें, और कसिी भी तरह से स्वयं को इंद्रयि-वषियों द्वारा लूटा जाने न दें, जो केवल अपनी ही खातरि आश्चर्यजनक रूप से अनुभूतकि बहकावे में आकर ऐसा करते हैं। लेकनि यदइिंद्रयिों का उपयोग करना आवश्यक है, तो हमें ऐसा सृष्टकिर्ता को उसकी सृष्टकि माध्यम से पहचानने के लिए करना चाहिए, उन्हें उनमें वैसे ही देखना चाहिए जैसे हम जल में सूर्य को देखते हैं; क्योंकजिो कुछ भी अस्तत्वि में है, उसमें सभी चीजों का प्रथम कारण प्रतबिंबिति होता है, जहाँ तक यह उसके लिए बोधगम्य है।

28. हमारे सामने यह कार्य है: लेकनि इसे कैसे पूरा कयिा जाए, यह वचिारणीय वषिय है। क्योंकजिैसा ककिहा गया है, शरीर इंद्रयिों के माध्यम से अपनी उपयुक्त वस्तुओं में आनंद लेना चाहता है, और जतिना अधकि वह संतुष्ट होता है, उतनी ही अधकि वह इच्छा करता है। और यह आत्मा की आकांक्षा के वपिरीत है। अत; आत्मा की पहली चंतिा सभी इंद्रयिों को नयिंत्रति करने की होनी चाहिए, ताकजिैसा ककिहा गया है, वह कामुक चीजों में आनंद न ले। क्योंकशिरीर, जतिना अधकि शक्तशिाली होता जाता है, उतनी ही अधकि दृढ़ता से वह अपने लिए प्रयासरत रहता है; और जतिनी अधकि तीव्रता से यह इसके लिए प्रयास करता है, उतना ही अधकि काबू से बाहर हो जाता है; अत; आत्मा को उपवास, जागरण, प्रार्थना में खड़े रहने, खुले में सोने, और अन्य सभी प्रकार की तपस्याओं के माध्यम से शरीर को वश में करने के लिए गंभीरता से प्रयास करना चाहिए, ताकि अपनी शक्तसिमाप्त कर लेने पर, उसे अपने आध्यात्मकि प्रयासों में वनिम्र और आज्ञाकारी रखा जा सके: यह उसके सामने मुख्य कार्य है। लेकनि जबकइिसे

इच्छा करना आसान है, इसे पूरा करना कठिन है, और इस प्रक्रिया में आवश्यक बातों में से कई चीजें छूट जाती हैं, क्योंकि इंद्रियाँ मन को तब भी भटका देती हैं जब कोई पूरी तरह से सचेत होता है: इसलिए, बुद्धिमानी से सोचा गया तीसरा उपाय प्रार्थना और आँसू है। प्रार्थना प्राप्त आशीर्वादों के लिए धन्यवाद देती है, और पापों की क्षमा तथा आगे की प्रगति के लिए शक्ति प्रदान करने का निवेदन करती है; क्योंकि, जैसा कि पहले ही कहा जा चुका है, दैवीय सहायता के बिना आत्मा अकेले ठीक से कुछ भी नहीं कर सकती। इसके अलावा, यह उस परमात्मा के साथ एकता लाती है जिसकी आत्मा ने खोज की है, और उसमें आनंद, और अपनी इच्छाओं का पूर्ण रूप से उसकी ओर मुड़ जाना: क्योंकि सम्मान के योग्य जीवन में यह सबसे महत्वपूर्ण बात है - अर्थात्, इच्छाशक्ति का यह झुकाव कि वह यथासंभव प्रबल रूप से इसी की कामना करे। – और आँसुओं में बड़ी शक्ति होती है: वे हमारे पापों के लिए प्रभु को प्रसन्न करते हैं, इंद्रिय सुखों से उत्पन्न अशुद्धि को शुद्ध करते हैं, और स्वर्गीय चीजों की लालसा जगाते हैं।

२९. तो यह संपूर्ण मामला है: मुख्य बात मानसिक या आध्यात्मिक गुणों का चिंतन और उनके लिए पूर्ण हृदय से इच्छा करना है; इसके द्वारा, शरीर का वश में करना—जिसके अंग उपवास, ब्रह्मचर्य आदि हैं—सब परस्पर सहायक हैं; इसी उद्देश्य के लिए, और इसके साथ ही, प्रार्थना है। इनमें से प्रत्येक अभ्यास कई भागों में विभाजित है, फिर भी वे सभी परस्पर जुड़े हुए हैं, ताकि एक दूसरे की आवश्यकता हो, और एक दूसरे के बिना मौजूद नहीं रह सकता।

30. कोई यह न सोचे कि कीर्ति का प्रेम और धन का प्रेम कामुक वासनाओं में आते हैं। कामुक वासना केवल सुख का प्रेम है, जिसका उचित उपचार शरीर को कष्ट देने में मिलता है। हालाँकि, उल्लेख की गई ये दोनों वासनाएँ अज्ञानता के उत्पाद हैं। चूंकि आत्मा ने वास्तविक भलाइयों का, चाहे वे बौद्धिक हों या आध्यात्मिक, न तो अनुभव किया है और न ही उन्हें जाना है, इसलिए उसने धन के रूप में झूठी भलाइयों की कल्पना की है, यह सोचकर कि वह आध्यात्मिक भलाइयों में अपनी गरीबी के लिए खुद को सांत्वना दे सके; वह धन की परवाह इस कारण से भी करती है और आनंद के प्रेम तथा महिमा के प्रेम को संतुष्ट करने के लिए भी, और धन के अपने लिए भी, इसे एक प्रकार की भलाई मानते हुए। तो हम कह सकते हैं कि यह सब सच्ची अच्छाइयों के अज्ञान का उत्पाद है। कीर्ति का प्रेम शारीरिक आवश्यकताओं की कमी से उत्पन्न नहीं होता है: क्योंकि यह नहीं कि , कोई भी शारीरिक वस्तु इससे संतुष्ट होती है; बल्कि यह प्रथम शुभ और सच्ची कीर्ति के अनुभव में असफलता और ज्ञान की कमी से उत्पन्न होता है।

31. और यह केवल महिमा का प्रेम ही नहीं है, बल्कि, संक्षेप में कहें तो, अज्ञानता ही सभी बुराइयों की जड़ है। क्योंकि यह असंभव है कि कोई व्यक्ति जिसने चीजों की प्रकृति को ठीक से समझ लिया हो, और यह भी कि उनमें से प्रत्येक कहाँ से आता है और उसका क्या उद्देश्य है, वह बाद में अपने परम लक्ष्य को भूलकर सांसारिक मामलों की ओर अपना ध्यान मोड़ दे। आत्मा उस भलाई की इच्छा नहीं करेगी, जिसके बारे में वह निश्चित रूप से जानती है कि वह केवल भलाई का एक आभास है। भले ही कोई आदत उसे जबरदस्ती किसी चीज़ की ओर खींच ले, वह उस मामले के सटीक और स्पष्ट ज्ञान के बल पर, आदत पर ही काबू पा सकती है। लेकिन आदत के पक्के होने से पहले ही, वह अज्ञानता से मोहित हो चुकी थी। इसलिए, सबसे बढ़कर, और जल्द से जल्द अवसर पर, मनुष्य को जो कुछ भी अस्तित्व में है, उसका सच्चा ज्ञान प्राप्त करने का प्रयास करना चाहिए, और फिर, इसके अनुसार, अपनी इच्छा को प्रथम शुभ की लालसा से प्रेरित करना चाहिए। जिसने वास्तव में अपनी पूर्ण व्यर्थता को पहचाना है, उसके लिए सभी सांसारिक सुखों को तुच्छ समझना कठिन नहीं है।

आदरणीय अबा फिलेमोन

उनका संक्षिप्त परिचय

पैट्रिस्टिक लेखों ने हमें यह नहीं बताया है कि हमारे परम पूजनीय पिता फिलिमोन, जो हमारे दैवीय पिताओं में सबसे संयमी और अश्रुपूर्ण पश्चातापी थे, किस युग में रहते थे। लेकिन यह कि वह एक अत्यंत भक्तिपूर्ण और अनुभवी व्यक्ति थे, और महान आर्सेनियस के सबसे वफादार अनुयायी के रूप में, अन्य सभी बुजुर्गों की तुलना में मौन से अधिक प्रेम करते थे, यह उन लोगों के लिए स्पष्ट हो जाएगा जो वर्तमान विवरण से इसे देखना चाहते हैं। क्योंकि, जब वे अपने मरुस्थल की गुफा में दिन-रात प्रार्थना और विनती में धैर्यपूर्वक स्थित रहते थे, आँसुओं के अनवरत झरनों और परम मधुर विलाप से स्वयं को धोते थे, और ईश्वर के प्रति प्रेम में सभी इंद्रिय और मानसिक चीज़ों से ऊपर उठ चुके थे, वह हमेशा परमेश्वर के सामने एक बधिर और मूक व्यक्ति के रूप में खड़ा रहता था, और उसे उनके

दैवीय अनुग्रह के अद्भुत प्रबोधन का योग्य माना गया; जिससे, सूर्य के प्रकाश की तरह, यह सदा स्मरणीय व्यक्ति, अपनी पूर्ण मौनता और स्थिरता में, न केवल बोलने और तर्क करने, बल्कि अनुभूति करने और पूर्वानुमान लगाने का वरदान भी प्राप्त हुआ। इसका एक विश्वसनीय साक्षी यहाँ प्रस्तुत उनका वृत्तांत है, जिसमें पवित्र संयम पर उनकी सबसे विवेकपूर्ण शिक्षा प्रस्तुत की गई है, जो उनके अपने लंबे समय के अनुभव पर आधारित है और इसके सक्रिय तथा चिंतनशील दोनों पहलुओं को समाहित करती है। इस प्रकार, जो कोई भी वासनाओं के गंदे और घृणित वस्त्रों को उतारना चाहता है—या दूसरे शब्दों में, पुराने स्व को त्यागना चाहता है—और निर्लिप्तता और अनुग्रह के उज्ज्वल वस्त्र, या मसीह यीशु में नए स्व को धारण करना चाहता है, वह बड़ों की इस शिक्षा का बार-बार अध्ययन करके और इसे अपनी पूरी क्षमता से व्यवहार में लाकर, जो कुछ भी वह चाहता है, उसे सहज ही प्राप्त कर लेगा।

अब्बा फिलेमोन का एक अत्यंत शिक्षाप्रद वृत्तांत

1. अबा फिलेमोन तपस्वी के बारे में कहा जाता था कि उन्होंने खुद को लाव्रा, जिसे रोमएिवा के नाम से जाना जाता है, के पास एक गुफा में बंद कर लिया था, और खुद को तपस्या के कार्यों में लगा दिया था, और मन ही मन वही दोहराते रहते थे जो, जैसा कि बताया जाता है, महान आर्सेनियस अपने आप से कहते थे: 'फिलेमोन, तुम यहाँ क्यों आए हो?' वे इस गुफा में काफी समय तक रहे। उनका काम प्रार्थना की मालाएँ बनाना और टोकरियाँ बुनना था, जिन्हें वे व्यवस्थापक को दे देते थे; बदले में, उन्हें रोटी के छोटे-छोटे टुकड़े मिलते थे, जिन पर वे जीवन-यापन करते थे। वे रोटी और नमक के अलावा कुछ नहीं खाते थे, और वह भी हर दिन नहीं। ऐसा प्रतीत होता है कि वह अपने शरीर का बिल्कुल भी ध्यान नहीं रखता था, लेकिन, ध्यान का अभ्यास करते हुए, उसे दिव्य प्रबोधन की कृपा प्राप्त हुई, और, परम परमपिता से प्राप्त अकथनीय मार्गदर्शन का भागीदार बनकर, वह आध्यात्मिक आनंद में विभोर रहा। जब वह शनिवार और रविवार को चर्च जाता था, तो वह हमेशा गहरे विचारों में खोया हुआ अकेले ही चलता था, और किसी को भी अपने पास नहीं आने देता था, ताकि उसका मन अपनी भक्ति से भटक न जाए। हालाँकि, चर्च में, एक कोने में सिर झुकाए खड़े होकर, वह अखंड विलाप करते हुए आँसुओं की नदी बहाता था, जबकि उसका मन मृत्यु की स्मृति और पवित्र पिताओं, विशेष रूप से महान आर्सेनियस की छवि में तल्लीन रहता था, जिनके पदचिन्हों पर चलने का वह हर संभव प्रयास करता था।

2. जब अलेक्जेंड्रिया और उसके आसपास विधर्म फैला, तो वह वहाँ से हटकर निकिनोर के मठ में चला गया। उनके आगमन पर, सबसे ईश्वर-प्रेमी पावलिन ने उन्हें अपना एकांत स्थान दे दिया और उनके लिए पूर्ण मौन सुनिश्चित किया। पूरे एक वर्ष तक, उन्होंने किसी को भी उनसे मिलने नहीं दिया, और स्वयं भी उन्हें बिल्कुल परेशान नहीं किया, सिवाय उस समय के जब वह उन्हें आवश्यक रोटी लाकर देते थे। मसीह का पवित्र पुनरुत्थान आ गया। जब, एक मुलाकात के दौरान, उनके बीच बातचीत हुई और विषय तपस्वी के जीवन पर आया, तो फिलेमोन को एहसास हुआ कि यह सबसे धर्मनिष्ठ भाई, पावलिन, भी (एक तपस्वी के रूप में रहने का) नेक इरादा रखता था; इसलिए उन्होंने उसमें संयम के शब्द भरपूर मात्रा में डाले—पवित्र धर्मग्रंथों और पितरों के लेखों से— – यह दिखाते हुए कि पूर्ण एकांत के बिना ईश्वर को प्रसन्न करना असंभव है, ठीक वैसे ही जैसे ईश्वर-प्रकाशित पिता, मूसा भी सिखाते हैं – कि मौन तपस्या को जन्म देती है, और तपस्या विलाप को जन्म देती है, विलाप भय को जन्म देती है, भय – विनम्रता, विनम्रता – अंतर्दृष्टि, अंतर्दृष्टि – प्रेम, और प्रेम आत्मा को स्वस्थ और निर्लिप्त बनाता है, और फिर एक व्यक्ति को एहसास होता है कि वह ईश्वर से दूर नहीं है।

३. उसने (फिलेमोन) उससे कहा: 'तुम्हें मौन के माध्यम से अपने मन को पूरी तरह से शुद्ध करना चाहिए और उसे अनवरत आध्यात्मिक श्रम में लगाना चाहिए।' जिस प्रकार आँख, इंद्रिय जगत की ओर मुड़कर, दृश्यमान वस्तुओं को निहारती है, उसी प्रकार शुद्ध मन, बौद्धिक जगत की ओर मुड़कर, आध्यात्मिक रूप से चिंतित वस्तुओं में मग्न हो जाता है, इस प्रकार कि आप उसे उससे अलग नहीं कर सकते। और जिस सीमा तक, मौन के माध्यम से, वह वासनाओं से रहित और शुद्ध हो जाता है, उसी सीमा तक वह ज्ञान (उन आध्यात्मिक चीजों का) का पात्र बन जाता है। हालाँकि, मन तब परिपूर्ण होता है जब वह सच्चे ज्ञान के क्षेत्र में प्रवेश करता है और ईश्वर के साथ एक हो जाता है। तब, राजसी गरिमा से युक्त होकर, वह न तो गरीबी महसूस करता है और न ही झूठी इच्छाओं से बहकता है, भले ही आप उसे दुनिया के सभी राज्य दे दें। इसलिए, यदि आप ऐसे गुण प्राप्त करना चाहते हैं, तो संसार से शीघ्रता से भागें और संतों के मार्ग पर उत्साह के साथ दौड़ें; अपने बाहरी दिखावे की चिंता को त्याग दें, साधारण कपड़े पहनें और स्वयं को विनम्रता से सजाएँ। अपना आचरण सरल, अपनी वाणी साधारण, अपनी चाल बिना दिखावे की, और अपनी आवाज़ सच्ची रखें। गरीबी में रहने और सभी द्वारा अनदेखा किए जाने को प्रेम करना सीखें। सबसे बढ़कर, अपने मन की स्पष्टता और संयम बनाए रखने का ध्यान रखें; सभी परीक्षाओं में धैर्य रखें, और हर तरह से उन

आध्यात्मकि आशीर्वादों को सुरक्षति रखें जो आप पहले ही प्राप्त कर चुके हैं, उन्हें अक्षुण्ण और अपरविर्तति रखते हुए। अपना ध्यान रखें और चुपके से आने वाले कसिी भी सुख को स्वीकार न करें। क्योंक,ि यद्यपि मौन आत्मा की कामनाओं को वश में कर लेता है, यदि उन्हें भड़कने और तीव्र होने की अनुमतिदी जाए, तो वे आमतौर पर और भी ज़ोर से भड़कती हैं, और जो लोग इसकी अनुमतदिेते हैं उन्हें और भी अधकि बल के साथ पाप की ओर खींचती हैं। इसी तरह, शारीरकि घाव, जब रगड़े और फाड़े जाते हैं, तो वे लाइलाज हो जाते हैं। जब राक्षस दबाव डालते हैं और इंद्रयिाँ उनके साथ सहमत होती हैं, तो एक भी शब्द मन को ईश्वर की स्मृतसिे हटा सकता है। आत्मा की रक्षा करना एक महान कार्य और एक महान भय है। अत; आपको संसार से पूरी तरह से अलग हो जाना चाहिए और, अपनी आत्मा को शरीर के प्रतसिभी सहानुभूतसि अलग करके, नगर-रहति, घर-रहति हो जाना चाहिए, कोई संपत्तनि रखने वाला, बनिा धन के, बनिा लोभ के, बनिा चतिंाओं के, बनिा संगतकि के, मानव मामलों से अनभज्ञि, वनिम्र, दयालु, शुभ, नम्र, सौम्य स्वभाव का, और हृदय में दैवीय मार्गदर्शन से प्रबुद्ध छापों को ग्रहण करने के लिए तैयार। क्योंकि महान बेसलि हमें सखिाते हैं कि मोम पर पहले से अंकति अक्षरों को मटिे बनिा लखिना असंभव है। संतों का स्वरूप ऐसा था, जो सभी सांसारकि रीत-िरिवाजों से पूरी तरह अलग हो गए थे और अपने भीतर एक अटूट दवि्य ज्ञान को बनाए रखे हुए थे, जो दवि्य कानूनों से प्रबुद्ध थे और धर्मपरायण कर्मों और शब्दों से प्रकाशमान हुए, *'पृथ्वी पर जो अंग हैं उन्हें मार डाला है'* (कुलु. 3: 5) आत्म-नयिंत्रण, ईश्वर के भय और प्रेम के द्वारा। क्योंकि अवरिाम प्रार्थना और दवि्य धर्मग्रंथों के अध्ययन के द्वारा, हृदय की आध्यात्मकि आँखें खुल जाती हैं और शक्तयिों के राजा को देखती हैं—और महान आनंद होता है, और आत्मा के भीतर एक अनयिंत्रति दवि्य इच्छा प्रबल रूप से प्रज्वलति हो उठती है, जसिसे आत्मा की क्रयिा द्वारा देह भी वहाँ आकर्षति हो जाता है, और संपूर्ण व्यक्तआिध्यात्मकि हो जाता है। यही वह है जसिके योग्य वे माने जाते हैं जो धन्य मौन और सबसे कठोर तपस्या का अभ्यास करते हैं: वे जो सभी मानवीय सुख-सुवधिाओं से अलग हो कर, स्वर्ग में नवािस करने वाले एकमात्र प्रभु के साथ अकेले ही नरिंतर संवाद करते हैं!

४. यह सुनकर, वह ईश्वर-प्रेमी भाई, जसिका हृदय दवि्य प्रेम से भेद गया था, (अपनी जगह से नकिल गया) और, उसके (फलिमोन) साथ, उस स्केटा पहुँचा जहाँ महापुरुषों ने अपनी भक्तकिा मार्ग पूरा कयिा था। वे संत जॉन कोलोव की लावरा में बस गए, और चूँकि वे मौन में रहना चाहते थे, इसलिए उन्होंने अपना भरण-पोषण लावरा के व्यवस्थापक को सौंप दयिा। और वहाँ वे परमेश्वर की कृपा से पूर्ण मौन में रहे, शनविार और रववार को सामुदायकि चर्च सेवाओं में भाग लेते हुए, जबकअिन्य दनिों में अपनी कोठरयिों में ही रहे; प्रत्येक व्यक्तअिपने नजिी प्रार्थना और भक्त-िकार्य करता था।

५. पवत्रि एल्डर (फलिमोन) की आराधना का नम्निलखिति नयिम था: रात में वे संपूर्ण भजन संहतिा और भजन (भजन संहतिा में नहिति नौ भजन) को बनिा जल्दबाजी और बनिा बेचैनी के जपते थे; वे सुसमाचार से एक अंश पढ़ते, फरि बैठ जाते और बैठे रहते, अपने आप से कहते: 'प्रभु, दया करें!' अपनी पूरी एकाग्रता के साथ और काफी लंबे समय तक, जब तक कि वह इस आह्वान को और बोल न पाता; और अंत में वह स्वयं को सोने देता। फरि, भोर में, वह फरि से प्रथम घंटे का पाठ करता, और पूर्व की ओर मुख करके अपनी सीट पर बैठकर, वह बारी-बारी से (भजन) गाता और अपनी इच्छानुसार पत्रों और सुसमाचार से पढ़ता। इस प्रकार उन्होंने सारा दनि नरिंतर भजन गाते, प्रार्थना करते और स्वर्गीय बातों के चतिंन में आनंद लेते हुए बतिाया; उनका मन इतनी बार ध्यान में इतना मग्न हो जाता था कि उन्हें पता ही नहीं चलता था कि वे पृथ्वी पर हैं।

6. भाई ने, यह देखकर कि वह अपनी भक्तिमें इतनी लगन से लगा हुआ था और कभी-कभी दवि्य वचिारों में पूरी तरह से मग्न हो जाता था, उससे कहा: 'पताजी, इतनी वृद्धावस्था में, इस तरह अपने शरीर को दंडति करना और वश में करना आपके लिए कठनि नहीं है क्या? उन्होंने उत्तर दयिा: 'मेरी बात मानो, ईश्वर ने मेरी आत्मा में प्रार्थना की सेवा के लिए इतना उत्साह और इतना प्रेम भर दयिा है कि मैं उसकी लालसा को पूरी तरह से शांत नहीं कर पाता; फरि भी, ईश्वर के प्रतप्रिेम और भवषि्य के आशीर्वादों की आशा से मेरी शारीरकि कमजोरी पर काबू पाया जाता है।' इस प्रकार उसकी सारी इच्छा बुद्धमिानी से स्वर्ग की ओर उठाई गई थी, यहाँ तक कि भोजन करते समय भी, और केवल अन्य समयों में ही नहीं।

7. एक बार, उनके साथ रहने वाले एक भाई ने उनसे पूछा: 'चतिंन के रहस्य क्या हैं?' और उन्होंने, उसकी लगन और यह देखकर कि वह सच्चे मन से आध्यात्मकि उन्नतकिी खोज कर रहा था, उससे कहा: 'मैं तुमसे कहता हूँ, मेरे बच्चे, कि जसि व्यक्तकिा मन पूरी तरह से शुद्ध हो गया है, उसे परमेश्वर स्वर्गदूतों की सेवा करने वाली शक्तयिों और उनके पदों के दर्शन कराते हैं।'

8. उन्होंने उनसे यह भी पूछा: 'पताजी, आप पवत्रि शास्त्र के कसिी अन्य भाग की तुलना में भजन संहतिा में अधकि आनंद क्यों लेते हैं, और जब आप धीरे से गाते हैं, तो ऐसा क्यों लगता है मानो आप कसिी से बात कर रहे हों?' इस

पर उन्होंने उत्तर दिया: 'ईश्वर ने भजनों की शक्ति को मेरी आत्मा पर अंकित कर दिया है, ठीक वैसे ही जैसे उन्होंने स्वयं पैगंबर दाऊद पर किया था, और मैं उनके भीतर छिपे हुए अनेक चिंतन के आनंद से खुद को अलग नहीं कर सकता; क्योंकि वे संपूर्ण दैवीय धर्मग्रंथ को समाहित करते हैं।' उन्होंने यह बात पूछने वाले से बहुत विनम्रतापूर्वक, शिक्षा के उद्देश्य से, और बहुत अनुरोध करने पर स्वीकार की।

९. जॉन नामक एक भाई, तट से निकलकर, इस पवित्र और महान पिता फिलेमोन के पास आया, और उनके चरणों को पकड़कर उनसे कहा: 'पिताजी, मैं कैसे बचूँगा?' क्योंकि मेरा मन भटकता है और वहाँ-वहाँ उड़ जाता है, जहाँ उसे नहीं जाना चाहिए। और उसने, थोड़ी देर रुककर, कहा: 'यह (आध्यात्मिक) क्लेश उन लोगों का लक्षण है जो बाहरी चीज़ों में लगे रहते हैं, और यह उनमें बना रहता है। और यह आपके भीतर है, क्योंकि आप ने अभी तक ईश्वर के प्रति पूर्ण प्रेम प्राप्त नहीं किया है; प्रेम और उसके ज्ञान की ऊष्मा अभी तक आप पर नहीं आई है।' भाई ने उससे कहा: 'तो फिर मैं क्या करूँ, पिताजी?' उन्होंने उत्तर दिया: 'जाओ और इस रहस्यमय शिक्षा को अपने हृदय में ग्रहण करो, और यह तुम्हारे मन को इससे शुद्ध कर देगी।' भाई, इन शब्दों के अर्थ से अनभिज्ञ होकर, वृद्ध से पूछा: 'तो फिर यह रहस्यमय शिक्षा क्या है, पिताजी?' और उसने उससे कहा: 'जाओ और अपने हृदय में संयमी बनो, और अपने विचारों में संयम, भय और कांपते हुए कहो: "हे प्रभु यीशु मसीह, मुझ पर दया करो!"' इस प्रकार धन्य दियादोचुस भी नए सीखने वालों को सिखाते हैं।

10. वह भाई चला गया और, ईश्वर की कृपा और पिता की प्रार्थनाओं के द्वारा, उसे शांति मिली और इस शिक्षा में उसे कुछ आनंद भी हुआ। लेकिन बाद में यह आनंद उससे दूर हो गया, और वह अब इस अनुशासन का अभ्यास नहीं कर सकता था या शांत मन से प्रार्थना नहीं कर सकता था। इसलिए वह बूढ़े के पास वापस गया और उसे जो हुआ था, वह सब बताया। वरिष्ठ ने उससे कहा: 'अब तुमने मौन और बुद्धिमानी से आचरण करने का मार्ग सीख लिया है, और उससे मिलने वाली मिठास का स्वाद चख लिया है। 'इसे हमेशा अपने हृदय में रखो—चाहे तुम खा रहे हो, पी रहे हो, किसी से बात कर रहे हो, यात्रा कर रहे हो, या अपनी कोठरी में बैठे हो—एक संयत मन और एक एकाग्र आत्मा से प्रार्थना करना, भजन गाना और प्रार्थनाओं तथा भजनों से सीखना कभी बंद मत करो; यहाँ तक कि अपनी सबसे आवश्यक ज़रूरतों को पूरा करते समय भी, अपने मन को आलसी न रहने दें, बल्कि उसे गुप्त रूप से सीखने और प्रार्थना करने के लिए प्रेरित करें। इस प्रकार आप दिव्य शास्त्र की गहराइयों और उसमें छिपी शक्ति को समझ सकते हैं, और अपने मन को निरंतर व्यस्त रख सकते हैं, ताकि आप प्रेरितों के उस वचन को पूरा कर सकें जो आज्ञा देता है: *'बिना रुके प्रार्थना करो'* (1 थिस्स. 5:17)। तो, अपना बहुत ध्यान रखें, और अपने हृदय को बुरे विचारों, या किसी भी व्यर्थ और अस्वास्थ्यकर विचार को पालने से बचाएँ; लेकिन हमेशा—चाहे आप सो रहे हों, या जाग रहे हों, या खा रहे हों, या पी रहे हों, या बातचीत कर रहे हों—आपका हृदय, गुप्त रूप से और विचार में, या तो भजन-संग्रह का अध्ययन कर रहा हो या प्रार्थना कर रहा हो: *'हे प्रभु यीशु मसीह, हे परमेश्वर के पुत्र, मुझ पर दया कर!'* इसी प्रकार, जब आप भजन ज़ोर से गाते हैं, तो ध्यान रखें कि जब आपके विचार कहीं और भटक रहे हों तो अपने होठों से न बोलें।

११. भाई ने उससे फिर पूछा: 'मैं सोते समय बहुत से व्यर्थ सपने देखता हूँ।' वृद्ध ने उससे कहा: 'आलसी या हतोत्साहित न हो; बल्कि सोने से पहले, अपने हृदय में कई प्रार्थनाएँ करो और अपने विचारों से, शैतान के प्रलोभनों का विरोध करो कि वह तुम्हें अपनी इच्छा के अनुसार चलाए, ताकि परमेश्वर तुम्हें ग्रहण करें।' यह सुनिश्चित करने के लिए अपनी पूरी कोशिश करो कि तुम होंठों पर भजन और मन में बुद्धिमानी भरी शिक्षा के साथ सोओ, और किसी भी तरह से अपने मन को लापरवाही से विदेशी विचारों को स्वीकार करने न दो; बल्कि जिन विचारों के साथ तुमने प्रार्थना की है, उनसे सीखते हुए, अपने बिस्तर पर लेट जाओ, ताकि सोते समय भी, वे आपके भीतर बने रहें, और जब आप जागें, तो वे आपसे संवाद कर सकें। सोने से पहले ऑर्थोडॉक्स विश्वास के पवित्र प्रतीक का भी उच्चारण करें; क्योंकि ईश्वर में ऑर्थोडॉक्स विश्वास सभी अच्छी चीजों का स्रोत और संरक्षक है।

12. उसके भाई ने उससे फिर पूछा: 'पिताजी, प्रेमवश मुझे बताइए, आपका मन कैसे काम करता है? मुझे सिखाइए, ताकि मैं भी उद्धार पा सकूँ।' उसने उससे कहा: 'तुम यह जानने के लिए इतने उत्सुक क्यों हो?' छोटे भाई ने उठकर संत के पैरों को गले लगा लिया और उन्हें चूमते हुए उनसे यह बताने का आग्रह किया। कुछ समय बीत जाने के बाद, बड़े भाई ने कहा: 'तुम अभी इसे सहन करने में सक्षम नहीं हो।' सत्य की अनुग्रहों में रहने का आदी मनुष्य का स्वभाव ही होता है कि वह प्रत्येक इंद्रिय को उसका उचित कार्य सौंपे; और जो संसार के व्यर्थ विचारों से पूर्णतः शुद्ध नहीं हुआ है, उसके लिए इस वरदान का पात्र माना जाना असंभव है। अत; यदि आप वास्तव में इसकी इच्छा रखते हैं, तो इस गुप्त शिक्षा को एक शुद्ध हृदय में रखें। क्योंकि यदि प्रार्थना और धर्मग्रंथों की शिक्षा आपके भीतर अनवरत रूप से बनी रहती है, तो आपकी आत्मा की आँखें खुल जाएँगी, और उसमें महान आनंद होगा, और एक अकथनीय तथा तीव्र अनुभूति होगी, जैसे आत्मा और देह में गर्माहट आती है, जिससे पूरा व्यक्ति आध्यात्मिक हो

जाता है। इसलिए, चाहे रात हो या दिन, यदि ईश्वर आपको शुद्ध मन से बिना विचलित हुए प्रार्थना करने की कृपा प्रदान करते हैं, तो अपनी सामान्य प्रार्थना की दिनचर्या को अलग रख दें और अपनी पूरी ताकत से, पूरे दिल और दिमाग से ईश्वर से एकरूप होने का प्रयास करें। और वह आपके द्वारा आरंभ किए गए आध्यात्मिक प्रयास में आपके हृदय को प्रबुद्ध करेंगे। इसमें उन्होंने यह जोड़ा: एक बार एक वृद्ध मेरे पास आए, और जब मैंने उनसे उनके मन की अवस्था के बारे में पूछा, तो उन्होंने मुझसे कहा: 'मैं दो साल तक परमेश्वर के सामने प्रार्थना में रहा, और मैंने पूरे दिल से उनसे विनती की कि वे मुझे उस प्रार्थना का अनुग्रह दें जिसे उन्होंने अपने शिष्यों को सौंपा था, ताकि वह मेरे हृदय पर लगातार और बिना किसी विचलन के अंकित हो जाए; और उदार प्रभु ने, मेरी मेहनत और धैर्य को देखकर, मुझे वह दिया जिसकी मैंने मांग की थी।' और यहाँ वह और क्या कहता है: आत्मा में व्यर्थ की बातों के जो विचार उत्पन्न होते हैं, वे एक आलसी आत्मा का क्लेश हैं, जिसने खुद को लापरवाही के हवाले कर दिया है; इसीलिए, शास्त्र के अनुसार, हमें हर तरह की सतर्कता से अपने मन की रक्षा करनी चाहिए, बिना विचलित हुए समझदारी से भजन गाना चाहिए, और शुद्ध मन से प्रार्थना करनी चाहिए। इसलिए, हे भाई, परमेश्वर चाहते हैं कि हम उन्हें अपना उत्साह दिखाएँ, सबसे पहले अपने श्रम (तपस्या और अच्छे कार्यों) के द्वारा, फिर प्रेम और अविराम प्रार्थना के द्वारा – और वह हमें मोक्ष का मार्ग प्रदान करेंगे। तो यह स्पष्ट है, कि स्वर्ग की ओर जाने का कोई दूसरा मार्ग नहीं है, सिवाय सभी बुराइयों से पूर्ण रूप से मुंह मोड़ने, सभी अच्छाइयों को प्राप्त करने, ईश्वर के प्रति पूर्ण प्रेम करने, और भक्ति तथा धार्मिकता में उनके साथ निवास करने के; ताकि जो कोई भी इन गुणों का धनी होगा, वह शीघ्र ही स्वर्गीय सेना में शामिल हो जाएगा। लेकिन इसमें, ऊँचाइयों पर चढ़ने की इच्छा रखने वाले हर व्यक्ति के लिए यह अनिवार्य है कि वह पृथ्वी पर स्थित अपने अंगों को मार डाले। क्योंकि जब हमारी आत्मा सच्ची भलाई के चिंतन से प्रसन्न होती है, तो वह पाप की मिठास से उत्पन्न किसी भी वासना की ओर फिर नहीं लौटती; बल्कि, सभी शारीरिक कामनाओं से मुंह मोड़कर, वह एक शुद्ध और निर्मल मन से ईश्वर के दर्शन को प्राप्त करती है। इसलिए हमें महान आत्म-अनुशासन, बहुत शारीरिक श्रम और आत्मा के शुद्धिकरण की आवश्यकता है, ताकि हम अपने हृदयों में परमेश्वर के साथ वास कर सकें, ताकि हम पाप के बिना उनके दिव्य आज्ञाओं को पूरा कर सकें, और ताकि वह स्वयं हमें अपने नियमों का दृढ़ता से पालन करना सिखाएँ, और हमारे ऊपर सूर्य की किरणों की तरह, हमें प्रदान की गई आत्मा की कृपा के माध्यम से अपना प्रभाव डालें। कष्ट और परीक्षाओं के माध्यम से हमें उस प्रतिमा को शुद्ध करना चाहिए जिसमें हमें बनाया गया था—तर्कशील और सभी समझ को समझने में सक्षम, तथा ईश्वर के सदृश होने में समर्थ—हमारी इंद्रियों को परिष्कृत करके, उन्हें सभी अशुद्धियों से मुक्त करके, परीक्षाओं के बीच उनके रूपांतरण के द्वारा, और इस प्रकार राजसी गरिमा में रूपांतरित होकर। ईश्वर ने मानव स्वभाव को हर भलाई में सहभागी होने के लिए बनाया है, जो मन में महिमा के स्वर्गदूतों, अधिपतियों, शक्तियों, प्रधानताओं, अधिकारों, अगम्य ज्योति और सबसे तेजस्वी महिमा के आनंद का चिंतन करने में सक्षम है। लेकिन जब तुमने कोई सद्गुण विकसित कर लिया हो, तो ध्यान रखना कि तुम्हारे विचार अपने भाई से ऊपर न उठें, क्योंकि तुमने उसे विकसित किया है जबकि उसने उसकी उपेक्षा की है; क्योंकि यही अहंकार की शुरुआत है। जब आप किसी वासना से जूझ रहे हों, तो सावधान रहें कि हतोत्साहित न हों या कमजोर न पड़ें क्योंकि लड़ाई कठिन है; बल्कि उठ खड़े हों, परमेश्वर के सामने स्वयं को नम्र करें, और भविष्यवक्ता के साथ अपने हृदय की गहराई से कहें: *'हे प्रभु, जो मुझ पर अत्याचार करते हैं, उनका न्याय कर'* (भजन संहिता 34:1), क्योंकि मैं उनके विरुद्ध खड़े होने के लिए पर्याप्त मजबूत नहीं हूँ। और वह, आपकी विनम्रता को देखकर, जल्द ही आपको अपनी सहायता भेजेंगे। जब आप किसी के साथ यात्रा कर रहे हों, तो व्यर्थ की बातें न करें, बल्कि उस आध्यात्मिक अभ्यास पर अपना मन लगाएँ जिसका उन्होंने पालन किया था, ताकि यह अच्छी आदत और सांसारिक सुखों को भूलना आपके भीतर बना रहे, और आप निर्लिप्तता के बंदरगाह से भटक न जाएँ। इन और कई अन्य वचनों से भाई को उपदेश देकर, वरिष्ठ ने उसे विदा कर दिया।

१३. परन्तु कुछ ही समय बाद, वह फिर आया और बोलना आरम्भ करके पूछा: 'मैं क्या करूँ, पिता? मेरी रात की जागृति के समय, नींद मुझ पर हावी हो जाती है और मुझे स्पष्ट मन से प्रार्थना करने और अधिक समय तक पहरा देने से रोकती है; और मैं पाता हूँ कि जब मैं भजन गा रहा होता हूँ तो मैं कुछ काम करना चाहता हूँ।' इस पर वृद्ध ने उत्तर दिया: 'जब तुम स्पष्ट मन से प्रार्थना कर सकते हो, तो कोई शिल्प कार्य न करो; लेकिन जब नींद तुम पर हावी हो जाए, तो, उस विचार के विरुद्ध थोड़ा उठ खड़े होकर और उसका विरोध करते हुए, अपना शिल्प कार्य शुरू कर दो।' भाई ने फिर पूछा: 'क्या आप स्वयं, पिताजी, अपनी सेवा के दौरान नींद के बोझ से दबे हुए महसूस नहीं करते?' महान व्यक्ति ने कहा: 'यह इतना आसान नहीं है; फिर भी, जब कभी मुझे नींद आने लगती है, तो मैं खुद को थोड़ा झकझोरता हूँ; लेकिन मैं यूहन्ना की सुसमाचार की शुरुआत से पढ़ना शुरू कर देता हूँ, मन की आँख को परमेश्वर की ओर उठाकर, और यह तुरंत ही गायब हो जाती है।' मैं विचारों के संबंध में भी लगभग यही करता हूँ; अर्थात्, जब उनमें

से कोई एक उठता है, तो मैं उसे आँसुओं से आग की तरह बुझाता हूँ, और वह गायब हो जाता है। तुम, हालाँकि, अभी इस तरह से उनके विरुद्ध खुद को तैयार नहीं कर सकते; बल्कि, इस गुप्त शिक्षा को दृढ़ता से थामे रहो और पवित्र पिताओं द्वारा स्थापित सेवाओं को करने का प्रयास करो, जिसमें दैनिक प्रार्थनाएँ—जैसे कि तीसरी, छठी, नौवीं और संध्या की प्रार्थना का समय—और रात की सेवाएँ शामिल हैं। और अपनी पूरी शक्ति से, मनुष्यों को प्रसन्न करने के लिए कुछ भी न करने का प्रयास करो, और सावधान रहो कि किसी भी भाई से शत्रुता न रखो, कहीं ऐसा न हो कि तुम अपने परमेश्वर से दूर हो जाओ। अपने मन को विचलित न रहने देने का भी प्रयास करो, और उसे अपने आंतरिक विचारों पर ध्यानपूर्वक केंद्रित रखो। जब आप चर्च में हों और मसीह के पवित्र रहस्यों को ग्रहण करने का इरादा रखते हों, तो पूर्ण सहभागिता प्राप्त किए बिना वहाँ से न जाएँ। एक ही स्थान पर खड़े रहें, विदाई तक वहाँ से न हिलें; और अपने मन में यह विचार करें कि आप स्वर्ग में हैं, पवित्र स्वर्गदूतों के साथ परमेश्वर के सामने खड़े हैं, और उन्हें अपने हृदय में ग्रहण करने वाले हैं; इसके लिए भय और कम्प के साथ स्वयं को तैयार करो, कहीं ऐसा न हो कि तुम पवित्र दातों के एक अयोग्य सहभागी बन जाओ। इस प्रकार भाई को अच्छी तरह से सुसज्जित करके, और उसे प्रभु और उनके अनुग्रह के आत्मा के सुपुर्द करके, वृद्ध ने उसे विदा किया।

14. उसके साथ रहने वाला एक भाई ने भी निम्नलिखित बातें सुनाईं। एक दिन उनके पास बैठकर मैंने उनसे पूछा कि क्या उन्हें रेगिस्तान में रहते समय दैवीय बदनामी से परीक्षा हुई थी। उन्होंने उत्तर दिया: 'भाई, मुझे क्षमा करो – यदि ईश्वर शैतान की परीक्षाएँ तुम्हारे ऊपर आने दें, जैसी परीक्षाएँ मुझ पर आईं, तो मुझे नहीं लगता कि तुम उनकी कड़वाहट सहन कर पाओगे।' मैं सत्तर साल का हूँ, या शायद उससे थोड़ा ज़्यादा; मैंने विभिन्न रेगिस्तानों में पूर्ण मौन में रहते हुए कई प्रलोभनों को सहन किया है; जहाँ तक इन राक्षसों के हाथों मेरे साथ जो कुछ हुआ और मैंने जो कुछ सहा, उसका कड़वापन उन लोगों को बताना लाभदायक नहीं है जो अभी तक मौन की कसौटी पर नहीं परखे गए हैं। ऐसे प्रलोभनों में मैंने हमेशा ऐसा ही किया है: मैंने अपनी सारी आशा ईश्वर में रखी, जिनसे मैंने त्याग की प्रतिज्ञा की, और उन्होंने जल्द ही मुझे हर ज़रूरत से मुक्त कर दिया। इसीलिए, भाई, मैं अब अपनी भलाई की चिंता नहीं करता; बल्कि यह जानते हुए कि वह मेरा ध्यान रखते हैं, मैं उन प्रलोभनों को बड़ी सहजता से सहन करता हूँ जो मुझ पर आते हैं। और मैं अपनी ओर से उसे जो एकमात्र चीज़ अर्पित करता हूँ, वह है अखंड प्रार्थना करना। इसमें यह आशा रखना भी बहुत मदद करता है कि जितने बड़े दुख और विपत्तियाँ हम पर आती हैं, उतने ही बड़े मुकुट वे उनके लिए तैयार करते हैं जो उन्हें सहते हैं: क्योंकि धर्मी न्यायाधीश के सामने, दोनों एक-दूसरे को संतुलित कर देते हैं। यह जानते हुए, हे मेरे भाइयो, निराशा में न पड़ो। तुम लड़ने के लिए युद्ध के बीच में उतरे हो, और लड़ते रहो, और इस बात से भी उत्साहित रहो कि परमेश्वर के शत्रु से लड़ने वाले हमारे पक्ष में बहुत हैं—शत्रु के दल से भी अधिक। और वास्तव में, यदि परमेश्वर वचन के सामर्थी दाहिने हाथ ने हमें आलिंगन, रक्षा और आच्छादन न किया होता, तो हम अपनी जाति के ऐसे भयानक विरोधी के विरुद्ध खड़े होने की हिम्मत कैसे कर सकते थे? मानव स्वभाव उसकी बदनामी को कैसे सहन कर सकता था? क्योंकि, जैसा कि हीब कहता है, *'उसके वस्त्र का मुख कौन खोल सकता है? उसकी पोशाक की तहों में कौन प्रवेश कर सकता है? उसके मुँह से जलती मशालें निकलती हैं, और वे आग की चिंगारियों की तरह बिखर जाती हैं। उसकी नाक से अंगारों वाली भट्टी का धुआँ निकलता है। उसकी आत्मा कोयले के समान है, और उसके मुँह से ज्वालाएँ निकलती हैं। शक्ति उसके होठों पर वास करती है; विनाश उसके सामने से बहता है। उसका हृदय पत्थर की तरह कठोर है; वह एक हथौड़े की तरह अडिग खड़ा है। वह एक तांबे की भट्टी की तरह गहराई को उकसाता है; वह समुद्र को एक शराबखाने और गहराई की तलहटी को एक कैदी के रूप में देखता है। वह जो कुछ भी ऊँचा है, उसे देखता है, फिर भी वह स्वयं जल में रहने वालों पर राजा है'* (अय्यूब 41:4–25)। भाई! यही वह है जिसके विरुद्ध हम युद्ध लड़ते हैं। वचन ने इस अत्याचारी को, उसके पूरे स्वरूप और विशालता में, इस प्रकार चित्रित किया है! फिर भी, इन सब के बावजूद, उन पर विजय प्राप्त करना उन लोगों के लिए आसान है जो, जैसा कि उन्हें करना चाहिए, एकांत का जीवन जीते हैं, क्योंकि उनके भीतर ऐसा कुछ भी नहीं है जो उसका हो, क्योंकि उन्होंने संसार का त्याग किया है, क्योंकि उनके उच्च सद्गुण हैं, और क्योंकि हमारे पास वह है जो हमारे लिए लड़ता है। क्योंकि मुझे बताइए, प्रभु के समीप आकर और उनके भय को अपने मन में ग्रहण करके, ऐसा कौन है जो अपने स्वभाव में परिवर्तित और दिव्य नियमों और कर्मों से प्रबुद्ध न हुआ हो, और जिसने अपनी आत्मा को दिव्य अंतर्दृष्टि और विचारों से चमकने के योग्य उज्ज्वल न बनाया हो? वह इसे कभी भी निष्क्रिय रहने नहीं देता, क्योंकि इसके भीतर परमेश्वर वास करते हैं, जो मन को प्रकाश के लिए अतृप्त रूप से प्रयास करने के लिए प्रेरित करते हैं। और आत्मा पर इस प्रकार निरंतर प्रभाव पड़ने से, आत्मा उसे वासनाओं द्वारा भ्रष्ट होने नहीं देती; बल्कि एक राजा की तरह, जो भयानक क्रोध और दंड उगलता है, वह निर्दयता से उन्हें काट देती है। ऐसा व्यक्ति फिर कभी पीछे नहीं हटता, बल्कि सद्गुणों के अभ्यास द्वारा, स्वर्ग की ओर हाथ उठाकर और बुद्धिमानी से प्रार्थना करके, वह युद्ध में विजय प्राप्त करता है।

१५. उस भाई ने यह भी बताया कि, अपनी अन्य गुणों के अलावा, बाबा फिलेमोन में यह गुण भी था: वे व्यर्थ की बातें सुनना बर्दाश्त नहीं कर सकते थे, और अगर कोई, भूल के क्षण में, आत्मा के लाभ से संबंधित न होने वाली कोई बात कहता, तो वे उस पर बिल्कुल भी प्रतिक्रिया नहीं देते थे। इसी तरह, जब मैं किसी काम से बाहर जाता था, तो वह नहीं पूछते थे: 'तुम कहाँ जा रहे हो?' और जब मैं वापस आता था, तो वे यह नहीं कहते थे: 'तुम कहाँ गए थे?' या 'तुमने क्या किया और कैसे किया?' तो एक बार मैं एक ज़रूरी काम से अलेक्ज़ेंड्रिया गया, और वहाँ से, चर्च के एक मामले के सिलसिले में, मैं परमेश्वर के सेवक को बताए बिना कॉन्स्टेंटिनोपल के लिए रवाना हो गया; फिर, वहाँ कुछ समय तक रहने के बाद, वहाँ के धर्मपरायण भाइयों से मिलने के बाद, मैं अंततःस्केटा में उनके पास लौट आया। मुझे देखकर, वृद्ध अति प्रसन्न हुआ, और प्रथागत अभिवादन और प्रार्थना करने के बाद, वह बैठ गया; लेकिन उसने मुझसे बिल्कुल कुछ नहीं पूछा, और अपने सामान्य ध्यान-चिंतन में मग्न रहा।

१६. एक बार, उसे परखने की इच्छा से, मैंने कई दिनों तक उसे खाने के लिए कोई रोटी नहीं दी। फिर भी उसने रोटी नहीं माँगी और न ही इसके बारे में कुछ कहा। तब, झुककर मैंने पूछा: 'कृपया, पिताजी, कृपा करके मुझे बताइए, क्या आप इस बात से नाराज़ हुए कि मैं आपके लिए हमेशा की तरह भोजन नहीं लाया?' उन्होंने कहा: 'मुझे माफ करो, भाई! 'भले ही आप मुझसे बीस दिन तक रोटी रोक दें, मैं आपसे इसके लिए नहीं पूछूँगा; जब तक मेरी आत्मा जीवित है, तब तक मेरा शरीर भी जीवित है।' इस प्रकार वह सच्ची अच्छाई के चिंतन में मग्न था।

१७. उन्होंने कहा: 'जब से मैं इस तपस्थली में आया हूँ, मैंने अपने विचारों को अपनी कोठरी की दीवारों से बाहर भटकने नहीं दिया है; न ही मैंने ईश्वर के भय और आने वाले युग के न्याय के अलावा किसी अन्य विचार को अपने मन में प्रवेश करने दिया है, उस न्याय को ध्यान में रखते हुए जो पापियों को धमकी देता है, और शाश्वत अग्नि और घोर अंधकार, और पापियों और धर्मी की आत्माएं कैसे रहती हैं, और धर्मी के लिए क्या आशीर्वाद तैयार किए गए हैं, और कैसे प्रत्येक को अपनी मेहनत के अनुसार अपना इनाम मिलता है: एक तपस्या के श्रम के लिए, दूसरा दान और सच्चे प्रेम के लिए, एक और लोभ-रहितता और संसार का पूर्ण त्याग के लिए, एक विनम्रता और पूर्ण मौन के लिए, एक पूर्ण आज्ञाकारिता के लिए, और एक भ्रमण के लिए। इन सब बातों को ध्यान में रखते हुए, मैं किसी अन्य विचार को अपने मन पर हावी नहीं होने देता, और मैं अब लोगों के साथ नहीं रह सकता, न ही अपने मन को उनके बारे में लगा सकता हूँ, कहीं ऐसा न हो कि मैं दैवीय विचारों से भटक जाऊँ।

18. इस पर उन्होंने एक तपस्वी की कहानी जोड़ी, कहा कि वह पहले ही वैराग्य प्राप्त कर चुका था और अपने भरण-पोषण के लिए एक देवदूत के हाथ से रोटी प्राप्त करता था, लेकिन आलस्य (ध्यान की कमजोरी) के कारण वह इस सम्मान से वंचित हो गया। क्योंकि जब आत्मा मन की चौकस और तीव्र एकाग्रता को ढीला कर देती है, तो अंधकार उस आत्मा को घेर लेता है। जहाँ ईश्वर का प्रकाश नहीं होता, वहाँ सब कुछ उदासी में लिपट जाता है, जैसे अंधकार में; और तब आत्मा एकमात्र ईश्वर को निहार नहीं सकती या उनके वचनों से काँप नहीं सकती। '*"मैं समीप का परमेश्वर हूँ,"* यहोवा कहता है, *"और दूर का परमेश्वर नहीं। क्या कोई मनुष्य गुप्त स्थानों में छिप सकता है, जहाँ मैं उसे न देखूँ? क्या मैं आकाश और पृथ्वी को नहीं भरता?"'* (यिर्म. 23:23-24)। और उसने उन कई अन्य लोगों को याद किया जिन्होंने इसी तरह कष्ट उठाया था। उसने सुलैमान के पतन का भी उल्लेख किया, जिसके बारे में उसने कहा कि उसे इतनी बुद्धि मिली थी और सभी द्वारा उसकी बहुत प्रशंसा की गई थी—क्योंकि, भोर में उगते तड़का तारे की तरह, उसने अपनी बुद्धि के प्रकाश से सभी को प्रबुद्ध किया था—फिर भी उसने एक क्षणिक सुख के लिए इतनी महिमा खो दी। इसलिए आलस्य में लिप्त होना खतरनाक है; परन्तु हमें निरन्तर प्रार्थना करनी चाहिए कि कोई अन्य विचार, यदि उत्पन्न हो, तो हमें परमेश्वर से अलग न कर दे, और यह कि हमारे मन में कोई और उसकी जगह न ले। केवल एक शुद्ध हृदय, जो पवित्र आत्मा का वासस्थान बन गया हो, उसी में स्पष्ट रूप से, जैसे एक दर्पण में, स्वयं परमेश्वर को, जो सभी अस्तित्व का स्रोत है, निहारता है।

19. यह सुनकर, अब्बा फिलेमोन के साथ रहने वाले भाई ने कहा: 'उनके कर्मों को देखकर, मैंने यह महसूस किया कि देह के वासनाओं का उन पर अब कोई प्रभाव नहीं रह गया था, और वह सभी उत्तम चीज़ों के एक उत्साही प्रेमी थे, इसलिए उन्हें हमेशा दिव्य आत्मा द्वारा रूपांतरित देखा जाता था। (महिमा से महिमा तक) और अकथनीय आहें भरते हुए, अपने मन में चिंतन करते और स्वयं को तौलते (या एक तराजू की तरह स्वयं को संतुलित रखते), और हर संभव प्रयास करते कि कोई भी चीज़ उनके मन की पवित्रता को भंग न करे, न ही कोई अशुद्धि चुपके से उन पर चिपक जाए। वे कहते हैं, 'यह देखकर, और जीवन के ऐसे मार्ग के लिए उत्साह से प्रेरित होकर, मैं गंभीर प्रार्थना के साथ उनकी ओर मुड़ा, यह कहते हुए: "मैं भी आपके समान मन की पवित्रता कैसे प्राप्त कर सकता हूँ?" उन्होंने उत्तर दिया: "जाओ—मेहनत करो; क्योंकि इसके लिए परिश्रम और हृदय के वेदना की आवश्यकता है।" आध्यात्मिक आशीर्वाद, जो सच्ची खोज और परिश्रम के योग्य हैं, हमें तब तक नहीं मिलेंगे जब तक हम अपने

बस्तिरों पर लेटे-लेटे सोते रहेंगे। न ही सांसारकि आशीर्वाद कसिी को बनि परशि्रम के मलिते हैं। जो समृद्धि चाहता है, उसे सबसे पहले अपनी इच्छाओं का त्याग करना चाहिए और सांसारकि वस्तुओं से अवरािम शोक और वैराग्य का अभ्यास करना चाहिए, दूसरों के पापों पर नहीं बल्कि केवल अपने पापों पर ध्यान देना चाहिए, और केवल उन्हीं के लिए दनि-रात रोना चाहिए, और मानव जाति में से कसिी के साथ भी व्यर्थ की दोस्ती नहीं करनी चाहिए: क्योंकि आत्मा, अपनी दयनीय अवस्था पर शोक करते हुए और अतीत के पापों की स्मृति से आहत होकर, संसार के लिए मृत हो जाती है, ठीक वैसे ही जैसे संसार उसके लिए मर जाता है; अर्थात्, तब सांसारकि वासनाएँ शक्तिहीन हो जाती हैं, और मनुष्य इन वासनाओं के वरिुद्ध शक्तिहीन हो जाता है। इसके अलावा, जसिने संसार का त्याग कर मसीह के साथ एकता स्थापति की है, और जो मौन में रहता है, वह परमेश्वर से प्रेम करता है, उसकी प्रतमिा को संरक्षति रखता है और उसकी समानता से समृद्ध होता है; क्योंकि ऊपर से वह उसी से पवति्र आत्मा का वरदान प्राप्त करता है और परमेश्वर का, न कि दानवों का, नविास-स्थान बन जाता है, और परमेश्वर के सामने धर्मी कर्म प्रस्तुत करता है। इस प्रकार आत्मा, अपने जीवन-मार्ग में पवति्र होकर, शरीर के अशुद्धयिों से मुक्त और न तो कलंक और न ही दोष रखती हुई, अंततः धार्मकिता के मुकुट से वभिूषति होगी और सद्गुणों की शोभा से प्रकाशमान होगी। लेकनि जसिमें, त्याग की शुरुआत में, हृदय में कोई शोक जड़ नहीं पकड़ता—न तो आध्यात्मकि आँसू, न अनंत यातनाओं की स्मृति, न सच्ची मौनता, न अनवरत प्रार्थना, न भजनों का गायन और दवि्य धर्मग्रंथों की शकि्षा—जसिमें यह एक आदत नहीं बन गया है, ताकि इस पर उसके नरिंतर अडगि बने रहने के कारण, वह अनचि्छा से ही सही, परन्तु अपनी इच्छा से ऐसा करने के लिए ववशि हो जाए – और परमेश्वर का भय उसकी आत्मा में राज्य नहीं करता: ऐसा व्यक्ति अभी भी संसार के साथ मेलजोल में रहता है और प्रार्थना में शुद्ध मन नहीं रख सकता; क्योंकि केवल धार्मकिता और ईश्वर का भय ही आत्मा को वासनाओं से शुद्ध करते हैं और मन को मुक्त करके उसे उसके स्वाभावकि चतिंन में ले जाते हैं तथा उसे दैवीय भाग में सहभागी होने में सक्षम बनाते हैं, जसि वह धन्यत्व के रूप में प्राप्त करती है (*'धन्य हैं हृदय से शुद्ध, क्योंकि वे परमेश्वर को देखेंगे*), – जो, इस प्रकार बन रहे लोगों के लिए, पहले से ही (भवषि्य की) एक प्रतज्ञिा के रूप में कार्य करता है और (उनके आध्यात्मकि स्वभाव को) अडगि रखता है। अतःहमें (सद्गुणों और तपस्या के) व्यावहारकि अभ्यास में अपनी पूरी शक्ति से प्रयत्न करना चाहिए, जसिके द्वारा हम धर्मपरायणता अर्थात् मानसकि (आध्यात्मकि) पवति्रता को प्राप्त करते हैं, जसिका फल मन के लिए स्वाभावकि दैवीय चतिंन है। क्योंकि कर्म चतिंन की ओर एक आरोहण है, जैसा कि विवेकी और सबसे धर्मशास्त्रीय मन (ग्रेगरी द थयिोलोजयिन का) कहता है। क्योंकि यदि हम ऐसे कर्मों की उपेक्षा करते हैं, तो हम सभी ज्ञान से अपरचिति हो जाएँगे; क्योंकि भले ही कोई सदाचार के सर्वोच्च शखिर पर पहुँच जाए, तब भी उसे तपस्या के श्रम की आवश्यकता होगी, जो शरीर की अनयिंत्रति इच्छाओं को नयिंत्रति करती है, और अपने वचिारों की कठोर रक्षा की। और केवल इसी तरह हम मसीह के वास को प्राप्त कर सकते हैं। क्योंकि जतिना अधकि हमारी धार्मकिता बढ़ती है, उतनी ही हमारी आध्यात्मकि परपिक्वता बढ़ती है; और अंत में, मन, पूर्णता प्राप्त कर, पूरी तरह से परमेश्वर से जुड़ जाता है और दवि्य प्रकाश से प्रबुद्ध हो जाता है - और अगणनीय रहस्य इसके सामने प्रकट हो जाते हैं। तब वह वास्तव में जान पाता है कि बुद्धि कहाँ नहिति है, शक्ति कहाँ नहिति है, सभी चीजों के ज्ञान के लिए बुद्धि कहाँ नहिति है, दीर्घायु और जीवन कहाँ नहिति है, आँखों की रोशनी और शांति कहाँ नहिति है। क्योंकि जब तक वह वासनाओं के वरिुद्ध संघर्ष में लगा रहता है, तब तक उसे इन चीजों का आनंद लेने का कोई अवसर नहीं मलिता; क्योंकि सद्गुण और दुर्गुण दोनों ही मन को अंधा कर देते हैं: सद्गुण इसलिए कि वह अन्य सद्गुणों को न देख सके, और दुर्गुण इसलिए कि वह अन्य दुर्गुणों को न देख सके। लेकनि जब उसे संघर्ष से वशि्राम मलिता है और उसे आध्यात्मकि वरदानों से अलंकृत कयिा जाता है, तो, अनुग्रह से नरिंतर प्रभावति होकर, वह पूर्णतःप्रबुद्ध हो जाता है और आध्यात्मकि बातों के चतिंन में स्थरि रहता है। ऐसा व्यक्ति इस संसार की कसिी भी चीज़ से लगाव नहीं रखता; बल्कि मृत्यु से जीवन में प्रवेश कर चुका है। जो आदर्श जीवन अपनाता है और ईश्वर के समीप आने के लिए उत्सुक है, उसका हृदय नर्मिल और ओठ शुद्ध होने चाहिए, ताकि शुद्ध ओठों से नकिला हुआ वचन, ईश्वर की यथोचति रूप से स्तुति कर सके, क्योंकि आत्मा, ईश्वर से एकाकार होकर, नरिंतर उनसे संवाद करती है। तो आइए, भाइयों, हम भी ऐसे सद्गुणों की ऊँचाइयों को प्राप्त करने का प्रयास करें और अपनी वासनाओं से चपिके हुए, जमीन पर रेंगना बंद करें। जो प्रयास करता है और ईश्वर के समीप पहुँचा है, जसिने उसकी पवति्र ज्योति में भाग लयिा है और उसके प्रति प्रेम से भेदति हो गया है, वह प्रभु में एक नश्चिति और अनुपम आध्यात्मकि आनंद का अनुभव करता है, जैसा कि दवि्य भजन कहता है: *'प्रभु में आनंदति हो, और वह तुम्हारी हृदय की इच्छाएँ पूरी करेगा; वह तुम्हारी धार्मकिता को प्रकाश के समान चमकाएगा, और तुम्हारे न्याय को मध्याह्न के सूर्य के समान* (भजन संहति 36:4,6)। और वह प्रेम कसिका इतना प्रबल और अटूट हो सकता है, जतिना कि वह जो परमेश्वर से सभी बुराइयों से शुद्ध की गई आत्मा में बहता है? ऐसी आत्मा, हृदय की सच्ची

प्रवृत्ति से, कहती है: *'मैं प्रेम से घायल हूँ'* (प्रेरितों का गीत 2:5)। दिव्य सौंदर्य की शोभा अकथनीय और अभिव्यक्ति से परे है! कोई भी शब्द उनका वर्णन नहीं कर सकता, और न ही कान उन्हें ग्रहण कर सकता है। चाहे आप भोर की शोभा, चाँदनी की चमक, या सूर्य के प्रकाश की ओर इशारा करें, ये सभी उस महिमा की तुलना में फीके पड़ जाते हैं, और सच्चे प्रकाश के सामने इतने तुच्छ हैं, जितना कि सबसे गहरी रात या सबसे घोर अंधकार शुद्ध दोपहर के सामने होता है। इसी प्रकार हमारे अपने बेसिल, जो शिक्षकों में अद्भुत थे, ने भी अनुभव से यह जानकर और सीखकर ऐसा ही किया।

२०. यह और भी बहुत कुछ उस भाई ने सुनाया जो अबा के साथ रहता था। लेकिन उनकी महान विनम्रता के प्रमाण के रूप में निम्नलिखित बात पर कौन आश्चर्य नहीं करेगा? क्योंकि वे बहुत पहले ही एक पादरी के रूप में नियुक्त हो चुके थे, और अपने जीवन तथा मन दोनों से स्वर्गीय क्षेत्र को इतनी सच्चाई से छू चुके थे, कि वे हर तरह से दैवीय अनुष्ठान से इस तरह बचते थे जैसे कि यह कोई बोझ हो, इसलिए अपने तपस्वी जीवन के कई वर्षों के दौरान वे बहुत ही कम पवित्र भोज (दैवीय अनुष्ठान के लिए) की अध्यक्षता करने के लिए सहमत होते थे। फिर भी, निरंतर सतर्कता का ऐसा जीवन जीने के बावजूद, वह लोगों के साथ संगति और बातचीत करने पर भी दैवीय रहस्यों में भाग नहीं लेते थे; हालांकि ऐसा करते समय वह उनसे सांसारिक किसी भी बात पर नहीं बोलते थे, बल्कि केवल उस बात पर बोलते थे जो उनकी संगति की तलाश करने वालों के लिए आत्मा के हितकर थी। और जब वह दिव्य रहस्यों को ग्रहण करने का इरादा रखते थे, तो वे पहले लंबे समय तक प्रार्थना, भजन-कीर्तन और पश्चाताप से ईश्वर से विनती करते थे। वे डिकन की उस आवाज़ से भयभीत थे, जो इस क्षण यह घोषणा करता है: *'पवित्र वस्तुएँ पवित्र लोगों के लिए'*। क्योंकि उस क्षण, उन्होंने कहा, पूरी कलीसिया पवित्र स्वर्गदूतों से भर जाती है, और सामर्थ्यों का राजा स्वयं, रहस्यमय रूप से पवित्र अनुष्ठान संपन्न करके और रोटी तथा दाखरस को अपने ही शरीर और रक्त में परिवर्तित करके, पवित्र सहभागिता के माध्यम से हमारे हृदयों में प्रवेश करते हैं। इसलिए, उन्होंने आगे कहा, हमें मसीह के सबसे शुद्ध रहस्यों की पवित्र सहभागिता के पास केवल पवित्रता और शुद्धता के साथ, जैसे कि हम शरीर से परे हों, बिना किसी संदेह या हिचकिचाहट के आना चाहिए, ताकि हम उनसे प्राप्त होने वाले प्रबोधन में भाग ले सकें। कई पवित्र पिताओं ने पवित्र स्वर्गदूतों को देखा जिन्होंने उन्हें (सभी अनुचित बातों के विरुद्ध) चेतावनी दी; इसीलिए उन्होंने स्वयं को गहरी मौन में रखा, और किसी से बात नहीं की।

२१. और यहाँ एक और बात है जो (उस भाई ने) कही: जब भी उस वृद्ध को अपनी हस्तकला बेचने की आवश्यकता होती थी, ताकि कोई झूठ, कसम, अनावश्यक शब्द, या पाप का कोई अन्य रूप न उत्पन्न हो—अगर उसे बातचीत या मोल-भाव करना पड़ता—तो वह वहाँ एक पवित्र मूर्ख होने का नाटक करता; और जो कोई भी उसकी हस्तकला खरीदना चाहता, वह उसे उससे ले लेता और जो चाहे कीमत दे देता। वह छोटी टोकरीयाँ बुनता था; और यह बुद्धिमान व्यक्ति बिना एक शब्द कहे, कृतज्ञतापूर्वक जो कुछ भी दिया जाता था, उसे स्वीकार कर लेता था।

आदरणीय पिता थियोग्नोस्टस

उनका संक्षिप्त परिचय

क्या आदरणीय थियोग्नोस्टस, जो निम्नलिखित अध्यायों का विषय हैं, वही अलेक्जेंड्रियाई व्याख्याकार थे जिनका उल्लेख फोतियस ने 106वीं रीडिंग में किया है, या कोई और थे, और वह किस युग में रहते थे, हम निश्चित रूप से नहीं कह सकते। लेकिन, जैसे एक पेड़ अपने फल से जाना जाता है, वैसे ही वह उन लोगों में से थे जो *अपने 'कर्मों'* और *'मन' के द्वारा* अच्छे जीवन जीते थे, और जो अपने जीवन की पवित्रता के कारण पवित्र आत्मा को अपने भीतर वास करने के योग्य माने जाते थे; पवित्र आत्मा की प्रकाशनों से अपने मन में प्रबुद्ध और उसकी जीवन-दायक श्वास से प्रेरित होकर, उन्होंने एक प्रकार का पवित्र गीत गाया, ये वही अध्याय उच्चारित करते हुए, जो अपने भीतर छिपी कृपा और आध्यात्मिक चिंतन के कारण, पाठकों के कानों और मन दोनों को आनंदित करते हैं और उनमें उनके निर्देशानुसार जीने के लिए एक जीवंत उत्साह जगाते हैं; क्योंकि उनमें एक सक्रिय जीवन का सच्चा आदर्श प्रस्तुत किया गया है, और चिंतनशील जीवन का एक अचूक मार्ग इंगित किया गया है। इसके अलावा, जो कोई भी चाहे, वह उनसे यह जान सकता है कि पवित्र पद से सम्मानित एक पुरोहित को कैसा होना चाहिए और उसे कैसे आचरण करना चाहिए। और सामान्य रूप से, जो लोग इन्हें ध्यान से पढ़ते हैं, उन्हें ये समृद्ध नैतिक शिक्षा और उद्धारकारी संयम की ओर सच्चा मार्गदर्शन प्रदान करेंगे।

सक्रयि और चतिनशील जीवन, और पुरोहत्यि पर, अध्याय

जसिका एक्रॉस्टकि इस प्रकार है: *परम पूजनीय पतिओं, लाजरस और बरलाम को, थयिोग्नोस्टस की ओर से, जो हर तरह से गरीब और इस वर्तमान दुनयिा में रहने वाले सभी अन्य लोगों से अधकि अयोग्य है।*

१. जब आप पृथ्वी पर मौजूद सभी चीज़ों को पूरी तरह से नरिर्थक मानते हैं, और एक स्पष्ट अंतरात्मा के साथ, अपने हृदय में प्रभु के पास जाने की तत्परता को हमेशा बनाए रखते हैं, तो अपने आप को सच्चे सद्गुण का धनी समझें। हालाँक, यदि आप ईश्वर द्वारा जाना जाना चाहते हैं, तो लोगों के लिए यथासंभव अज्ञात रहें।

२. अत्यधकि शारीरकि सुखों से सावधान रहो, और उनसे परहेज़ करो, कहीं वे तुम्हारी मेहनत के मूल्य को कम न कर दें। इंद्रयि सुखों की कमी को हानि समझो, बल्कि इस तथ्य को समझो कि उनमें लप्ति होकर, तुम बेहतर चीज़ से वंचति रह जाते हो।

3. हर मायने में खुद को एक चींटी और एक कीड़ा समझो, ताकि तुम ईश्वर द्वारा बनाया गया मनुष्य बन सको: क्योंकि जिब तक पहला नहीं होता, दूसरा नहीं होगा। तुम अपने आत्म-बोध में जतिना अधकि वनिम्र बनोगे, वास्तव में उतना ही ऊँचा उठोगे। जब आप स्वयं को प्रभु के सामने कुछ भी नहीं मानते, जैसे भजन संहतिाकार (38:6), तो आप अपनी तुच्छता से गुप्त रूप से महान बन जाते हैं; और जब आप यह महसूस करते हैं कि आपके पास कुछ भी नहीं है और आप कुछ भी नहीं जानते, तो आप कर्म और मन दोनों में धनी हो जाते हैं, जो प्रभु के सामने प्रशंसनीय हैं।

४. पापी और दुष्टों की रीढ़ की हड्डी को मटा दो—अर्थात् कामुकता और कपट, जसिसे सभी बुराइयाँ उत्पन्न होती हैं; उन्हें संयम और वनिम्र सहनशीलता के द्वारा मटा दो: ताकि, यदि न्याय के समय आपके भीतर पाप की कठोरता से जाँच की जाए, तो आपके कर्मों में ऐसा कुछ भी न पाया जाए; क्योंकि पाप मटि जाते हैं जब, जनि कारणों से वे कएि गए थे, उनसे घृणा करने के बाद, हम उनका वरिोध करना शुरू करते हैं, और अंतमि वजिय से प्रारंभकि हार की भरपाई करते हैं।

५. शुद्ध प्रार्थना से बेहतर कुछ भी नहीं है, जसिसे एक झरने की तरह सभी सद्गुण प्रवाहति होते हैं—ववििेक और नम्रता, प्रेम और संयम, और आँसुओं के कारण स्वर्ग से अवतरति मध्यस्थता और सांत्वना। इसकी अच्छाई इस बात में नहिति है कि मिन जीभ से बोले गए और मन से सोचे गए शब्दों पर सचेत रहे, और ईश्वर के साथ मलिन की एक अतृप्त, नरिंतर लालसा में, जब मन, अस्तत्विमान का चिंतन करते हुए, अपने प्रभु के पदचन्हिों पर चलती है और, तीव्र प्रेम से, उत्सुकतापूर्वक अदृश्य को खोजने का प्रयास करती है; और जब वह उस अंधकार से मलिती है जो उन्हें ढकता है, तो वह एक बार फरि से स्वयं में लौट आती है, पूर्ण श्रद्धापूर्ण वनिम्रता के साथ, चिंतन के माध्यम से अपने लाभ के लिए जो अब प्रकट हुआ है उससे संतुष्ट होकर, और उसमें सांत्वना पाती है; फरि भी वह उस धन्य आशा में बना रहता है कि अंततःवह प्राप्त हो जाएगा जसिकी कामना की जाती है, जब वह दृष्टि '*आईने में, एक पहेली में*' समाप्त हो जाती है, और उसकी शुद्ध, अवरिाम '*सामना-सामना दृष्टि*' घटति होती है (1 कुरन्थियिों 13:12)।

6. यदि आप ने अभी तक परम नर्लिप्तिता प्राप्त नहीं की है तो उच्चतर चिंतन से बचें; उस का पीछा न करें जो प्राप्त नहीं कयिा जा सकता, और उस की खोज न करें जो आपकी शक्ति से परे है। यदि आप चाहते हैं, कोई कहता है, जीवन के मार्ग द्वारा एक धर्मशास्त्री और एक चिंतक बनना, तो इस स्तर पर आरोहण करें और, पवत्रिता के द्वारा, पवत्रिता प्राप्त करें (धर्मशास्त्र)। दैवीय-वदि्या का उल्लेख करने के बाद, मैं आपको याद दलिाता हूँ, – सावधान रहो कि खुद को उसकी ऊंचाइयों तक असीमति रूप से न फैलाओ, और जान लो कि हमारे लिए, जो अभी भी सद्गुण के दूध से पोषति हैं, वहां उड़ान भरने का प्रयास करना उचति नहीं है, कहीं ऐसा न हो कि हम व्यर्थ में अपने पंख गँवा दें, जैसा कि नवोदति पक्षयिों के साथ होता है, भले ही ज्ञान की मठिास हमारी इच्छा को प्रबल रूप से आकर्षति करती हो। लेकनि जब, पवत्रिता और आँसुओं से शुद्ध होकर, हम एलयिा या हबक्कूक की तरह पृथ्वी से ऊपर उठाए जाते हैं, जो बादलों पर होने वाले स्वर्गारोहण का पूर्वाभास कराता है, और चिंतनशील प्रार्थना—जो शुद्ध और अलौकिक है—के माध्यम से इंद्रयिों से ऊपर उठकर हम ईश्वर की खोज करते हैं, तब, शायद, हम कुछ हद तक धर्मशास्त्र को छू पाएँगे।

७. इसी प्रकार, यदि आप दैवी दृष्टि और मन के प्रबोधन के योग्य माने जाएँ चाहते हैं, तो पहले एक शांत और मौन जीवन से प्रेम करें; और, सभी चीजों से खुद को अलग करके, स्वयं और ईश्वर दोनों को जानें। यदि ऐसा होता है, तो आपके रास्ते में कुछ भी नहीं आएगा, ठीक वैसे ही जैसे एक हल्की हवा में (*शीतलता की आवाज़ सूक्ष्म होती है*), जब आपका आंतरकि स्वरूप शुद्ध हो और कसिी भी वासना से अप्रभावति हो, तब आप उस एक को बुद्धमिानी से देखेंगे जो सभी के लिए अदृश्य है, जो आपको उसके गहनतम ज्ञान के माध्यम से मोक्ष का उपदेश देता है।

८. जैसे बजिली चमकने के तुरंत बाद गरज की उम्मीद की जाती है, वैसे ही, जहाँ दवि्य शुद्धता प्रकट हुई है, वहाँ वासनाओं का तूफ़ान शांत हो जाता है। और जहाँ ऐसा होता है, वहाँ उस (भवषि्य के) आनंद का वादा उस व्यक्ति

के भीतर स्थापति हो जाता है जसिने उसे प्राप्त कयिा है। लेकनि उस आत्मा में न तो दैवीय दया की कोई भावना होती है और न ही नरि्लप्तिता की कोई आशा, जो अपने स्रष्टा से अधकि संसार से प्रेम करती है, जो दृश्यमान वस्तुओं से आसक्ति रखती है, और जो अपनी सारी इच्छाओं के साथ कामुक सुखों और आनंद की लालसा करती है।

९. अपने मन से यह न खोजो कि दवि्यता क्या है या वह कहाँ है; क्योंकि वह अलौककि है और सभी अस्तति्वमान चीजों से परे होने के कारण कसिी भी स्थान तक सीमति नहीं हो सकती। लेकनि अपने भीतर, एक दर्पण की तरह, यथासंभव केवल उस ईश्वर-वचन को प्रकट करो जसिका वर्णन (अवतार के माध्यम से) कयिा गया है, जो इस मामले में, अपनी दवि्य प्रकृति के माध्यम से प्रकाश की करिणें उत्सर्जति करते हुए, एक वशिष्टि स्थान पर मानसकि रूप से कल्पति कयिा जाता है, जबकि ईश्वर की अकथनीय प्रकृति के कारण सर्वव्यापी बना रहता है। इसके अलावा, आप स्वयं को जतिना शुद्ध करेंगे, उतने ही आप दवि्य प्रकाश के योग्य बनेंगे।

१०. सत्य ज्ञान और मोक्ष की नश्चिति गारंटी की इच्छा रखते हुए, पहले आत्मा के शरीर के साथ उसके भावुक बंधनों को तोड़ने का ध्यान रखें; और, सांसारकि चीजों से अपना लगाव त्यागकर, नम्रता की गहराई में उतर जाइए – और आपको मोक्ष का अनमोल मोती मलिेगा, जैसे कसिी सीप में, जो दवि्य ज्ञान के भीतर छपिा हुआ है, और जो आपके लएि परमेश्वर के राज्य की महमिा का पूर्वाभास देता है।

11. जसिने आत्मा के अधीन देह को वश में कर, आध्यात्मकि आज्ञाकारतिा का नष्ठिापूर्वक अभ्यास कयिा है, उसके लएि मानवीय आज्ञाकारतिा आवश्यक नहीं है; क्योंकि ऐसा व्यक्ति एक कृतज्ञ सेवक की भाँति परमेश्वर के वचन और व्यवस्था की आज्ञाकारतिा में नवािस करता है। लेकनि जनि लोगों में शरीर और आत्मा के बीच संघर्ष और युद्ध चलता है, उनके लएि एक नेता और शासक का होना और उसकी आज्ञा मानना आवश्यक है, जो उस मामले की जानकारी रखता हो, और जो हमारे जीवन की बागडोर संभालने तथा उचति समय पर हमें आवश्यक हथयिारों से लैस करने में सक्षम हो, कहीं ऐसा न हो कि हम अदृश्य वरिोधयिों द्वारा कैद कर लएि जाएँ, और हमारी वासनाएँ हमारी अनुभवहीनता के कारण हम पर हावी हो जाएँ।

12. जब कोई वासना आपको अब और परेशान नहीं करेगी, तो आपके हृदय में दवि्य इच्छा बढ़ेगी; जब, इसके अलावा, आप मृत्यु से नहीं डरते, इसे नींद मानते हैं, बल्कि शरीर से मुक्ति की लालसा करते हैं: तो आप, जैसा कि उचति है, मोक्ष का वचन प्राप्त करेंगे, और आप अपने भीतर स्वर्ग का राज्य धारण करेंगे, अकथनीय आनंद से आनंदति होकर।

पुरोहतित्व पर

1. दवि्य और सम्मानति पुरोहति्य के योग्य समझे जाने के बाद, आपको सबसे पहले और सबसे महत्वपूर्ण रूप से अपने भावों और सांसारकि सुखों को वश में करके हमेशा स्वयं को बलदिान के रूप में अर्पति करना चाहएि, और इस प्रकार जीवन-दायक और भयानक बलदिान के पास जाने का साहस करना चाहएि, जब तक कि आप कसिी आसानी से जलने वाली वस्तु की तरह दवि्य अग्नि में भस्म नहीं हो जाना चाहते। क्योंकि यदि सेराफ़ीम ने चमिटे के बनिा कोयले को छूने की हम्मित नहीं की (यशायाह 6:6), तो आप नरि्वैक्तकिता के बनिा उसे कैसे छू सकते हैं? इसके माध्यम से, आपकी जीभ पवति्र, आपके होंठ शुद्ध, और आपके शरीर के साथ आपकी आत्मा नरि्दोष होगी, और आपके हाथ भी कसिी भी सोने से अधकि चमकीले होंगे, जो अलौककि अग्नि और बलदिान के सेवक हैं।

२. इन शब्दों की शक्ति पर गहराई से मनन करो, क्योंकि तुम प्रतदिनि परमेश्वर के उस उद्धार करने वाले रहस्य को नहिारते हो, जसिे एक बार जब वृद्ध शमिोन ने देखा, तो वह चकति हो गया और मृत्यु की याचना करने लगा; और यदि आपको पवति्र आत्मा से यह प्रकटवाणी नहीं मलिी है कि आप परमेश्वर और मानवता के बीच एक अनुग्रहति मध्यस्थ हैं, जो स्वर्गदूतों के समान हैं, तो अपनी ही वनिाश के लएि, दवि्य रहस्यों के सर्व-पवति्र और भयानक अनुष्ठान को करने का दुस्साहस न करें, जसिके सामने स्वर्गदूत श्रद्धापूर्वक सरि झुकाते हैं और जसिसे कई संत श्रद्धापूर्वक परहेज़ करते थे, कहीं ऐसा न हो कि ज़िान की तरह, उन्हें सर्वोच्च के न्याय द्वारा जीवतिों के बीच से ले लयिा जाए।

3. *'अपने वषिय में सावधान रहो'*, जैसा कि प्रेरति ने कहा (1 तीमु. 7:16)। अपने वषिय में सावधान रहो और हमेशा अपने अतीत के पापों के लएि एक बलदिान चढ़ाओ, ताकि यदि तुममें कुछ भी था—या शायद अभी भी है—जो कमज़ोरी के कारण अशुद्ध है, तो वह दवि्य अग्नि से भस्म हो जाए। इस प्रकार आप, मानो एक चुने हुए, उपयोगी, शुद्ध पात्र और ऐसे बलदिान के योग्य होकर, स्वयं को चाँदी या सोने के पात्र में बदल सकेंगे, भले ही आप कभी लकड़ी या मटि्टी के बने हों, बशर्ते कि अपनी नडिर आशा के बल पर, आपने परमेश्वर को अपनी दया दखिाने के लएि प्रेरति कर लयिा हो। क्योंकि जहाँ ईश्वर सुनने के लएि तैयार है, वहाँ एक वस्तु के दूसरे में बदलने में कोई बाधा नहीं है।

४. विचार करो कि तुम्हें स्वर्गदूतों के समान कौन सा सम्मान प्रदान किया गया है, और हर सद्गुण और पवित्रता के साथ उस पद पर निर्दोष बने रहने का प्रयास करो जिस पर तुम्हें बुलाया गया है। देखो कि अपने अहंकार के कारण पतित लूसिफर का क्या हुआ। अपने लिए बड़ी-बड़ी बातों का सपना देखकर स्वयं उसी भाग्य को न भुगतें, बल्कि स्वयं को धूल, राख और लज्जा समझें; इस बात पर हमेशा रोएँ कि, इसके बावजूद, आपको दिव्य सहभागिता में भाग लेने और पवित्र रहस्यों के भव्य पवित्र अनुष्ठान को करने की अनुमति है, ईश्वर के मानवता के प्रति असीम प्रेम और उनकी अनुपम दया के कारण।

५. जिसने पुरोहितत्व प्राप्त किया है, उसे सभी वासनाओं से, विशेष रूप से व्यभिचार और द्वेष से शुद्ध होना चाहिए, जिनका वह थोड़ा सा भी विचार भी मन में नहीं लाना चाहिए; कहीं ऐसा न हो कि जब वह राजा के शरीर को छूने की हिम्मत करे, तो वह एक कोढ़ी या कोयले के धुएँ से अशुद्ध हुए व्यक्ति की तरह क्रोध और शाप का पात्र बन जाए।

६. आँसुओं की धाराओं से बर्फ से भी अधिक धुलकर, और पवित्रता से दमकते विवेक के साथ, एक संत की भाँति पवित्र रहस्यों में भाग लो, और अपने बाहरी, दैवीय मुखमंडल के माध्यम से आत्मा की आंतरिक सुंदरता को प्रकट करो। परन्तु सावधान रहो: दैवीय रहस्यों के उत्सव में, केवल मानवीय परंपराओं से ही संतुष्ट न रहो, बल्कि अनुग्रह तुम्हारे साथ हो, जो गुप्त और रहस्यमय रूप से तुम्हें उसमें निहित उच्चतर अर्थ को समझने में सक्षम बनाए।

7. अक्षयत्व और अमरत्व की लालसा करते हुए, भक्ति और श्रद्धा के साथ जीवन-दायक और अविनाशी रहस्यों का अनुष्ठान करो, और साथ ही विश्वास के द्वारा सिद्ध होकर इस संसार से प्रस्थान करने की इच्छा रखो। यदि, तथापि, आप मृत्यु से डरते हैं, तो आप अभी तक मसीह के प्रेम में एकीकृत नहीं हुए हैं, जिनका आप अपने हाथों से ग्रहण करने का सौभाग्य रखते हैं, और जिनके मांस से आप पोषित होते हैं। क्योंकि यदि ऐसा होता, तो आप उस स्थान पर जाने के लिए जल्दी करते जहाँ आपका प्रियतम है, न तो जीवन को और न ही मांस को कुछ समझते हुए।

8. पवित्र सहभागिता के माध्यम से एक याजक और एक सहभागी दोनों के रूप में परमेश्वर के शरीर के सहभागी बनकर, आप अनिवार्य रूप से उनके मृत्यु के स्वरूप के साथ एक हो जाते हैं, '*अब अपने लिए नहीं जीते*', बल्कि, जैसा कि प्रेरित कहते हैं, उनके लिए जो आपके लिए सलीब पर चढ़ाए गए और मरे (2 कुरिन्थियों 5:15)। परन्तु यदि आप शरीर और संसार के लिए उत्कटता से जीते हैं, तो आप मृत्यु के बाद शाश्वत यातना के लिए स्वयं को तैयार कर रहे हैं; जब तक कि आप अपनी मृत्यु से पहले, स्वेच्छा से इस निर्मल रक्तहीन बलिदान को अर्पित करना बंद न कर दें। कौन नहीं जानता कि दिव्य लिटर्जी का अयोग्य रूप से अनुष्ठान करने वालों में से कई को अचानक मृत्यु द्वारा यहाँ से उठा लिया गया है और सीधे परलोक की यातनाओं में भेज दिया गया है?

९. एक निश्चित पुरोहित, जो एक भिक्षु भी था, जो अपनी धार्मिकता के लिए प्रसिद्ध था और बाहरी रूप से कई लोगों द्वारा एक सम्मानित व्यक्ति के रूप में सम्मानित किया जाता था, फिर भी अंदर ही अंदर कामुकता को पालता था और स्वयं को अपवित्र करता था, जब वह दिव्य और पवित्र लिटर्जी का अनुष्ठान कर रहा था, तो वह चेरूबिक भजन पर पहुँचा और, पवित्र मेज़ के सामने हमेशा की तरह झुकते हुए, ने '*कोई भी योग्य नहीं*' का पाठ करना शुरू किया… वह अचानक मर गया, क्योंकि उस मुद्रा में रहते हुए ही उसकी आत्मा निकल चुकी थी।

10. स्वस्थ तर्क और ज्ञान से अधिक वांछनीय कुछ भी नहीं है। क्योंकि इनमें से ही ईश्वर का भय और ईश्वर के प्रति प्रेम उत्पन्न होते हैं: पहला श्रद्धा और आत्म-संयम के द्वारा शुद्ध करता है, जबकि दूसरा शांत स्वभाव और विवेक के द्वारा पूर्ण करता है, और मन को उच्च चिंतन और ऊँचाइयों पर आरोहण में स्वतंत्र रूप से उड़ान भरने में सक्षम बनाता है। लेकिन भय के बिना, ईश्वर प्रेम की ओर सीधे बढ़ना, या प्रेम को दरकिनार कर अपनी आशा के लक्ष्य तक ऊँची उड़ान भरना और उसमें विश्राम करना असंभव है।

11. अतः हे मोक्ष के इच्छुको, जाओ; उत्साह के साथ और बिना थकान के जानकर तब तक दौड़ो जब तक तुम अपने लक्ष्य तक न पहुँच जाओ – दृढ़ विश्वास और विनम्रता को सीढ़ी के शीर्ष पर एक ध्वज की तरह फहराकर, लगन से खोजो, अथक रूप से पूछो, धैर्यपूर्वक खटखटाओ जब तक तुम सफल न हो जाओ। जहाँ तक उन लोगों का सवाल है जिन्होंने वह प्राप्त किया है जिसकी वे इच्छा करते हैं, जब आप पापों की क्षमा प्राप्त करते हैं तो खुद को ऐसा प्राप्त नहीं मान लें, बल्कि तब मान लें जब आप सभी वासनाओं के उदय से डरना छोड़ देते हैं, और बिना भय और धैर्य के साथ, शरीर से अलग होने के लिए तैयार रहते हैं।

12. बहुत आँसुओं के साथ, अपने उद्धार की पुष्टि प्राप्त करने का प्रयास करो, परन्तु अपनी मृत्यु से पहले नहीं, यदि तुम नम्र और बुद्धिमान हो, कहीं ऐसा न हो कि बाद में, लापरवाह हो जाने पर, तुम उद्धार के विषय में उदासीन हो जाओ; परन्तु फिर, जब तुम अन्त के समीप पहुँचो, तो इसे प्राप्त करने के लिए प्रार्थना करो—जो कि,

इसके अलावा, निश्चिति है—कहीं ऐसा न हो कि अहंकारपूर्वक यह सोचकर कि यह तुम्हारे पास है, तुम स्वयं को धोखा दे बैठो, और जब वह बहुप्रतीक्षित समय आखिरकार आ जाए, तो तुम उस स्थान तक पहुँचने में असफल रह जाओ जिसकी तुमने आशा की थी। तो फिर, हे दुष्ट, पवित्र आत्मा द्वारा दिए गए प्रतिज्ञा और निश्चिति, उद्धारकारी आश्वासन के बिना तुम कहाँ जाओगे?!

१३. ईश्वर-प्रदत्त निर्लिप्तता को हृदय में धारण करके, पहले आज्ञाकारिता और विनम्रता द्वारा इस इच्छित अवस्था को प्राप्त करो, अन्यथा, उसकी ओर कोई अन्य मार्ग अपनाकर, तुम स्वयं को अनावश्यक कष्ट में डालोगे। हालाँकि जिन लोगों ने निर्लिप्तता प्राप्त कर ली है, उन्हें उस व्यक्ति को निर्लिप्त नहीं मानना चाहिए जो कभी-कभी वासनाओं से घिरा रहता है और कभी-कभी उनसे शांत और अप्रभावित रहता है, बल्कि उस व्यक्ति को मानना चाहिए जो लगातार निर्लिप्त रहता है; जो, जब वासनाओं के कारण मौजूद होते हैं, तब भी उनसे अडिग रहता है; और जो, जब उनके विचार उत्पन्न होते हैं, तो उनसे कोई कष्ट नहीं भोगता।

14. अपमान और निंदा के साथ, दुश्मन शरीर से अलग हुई आत्मा पर निडर होकर हमला करता है, जैसे कि वह उसकी कमियों का एक कड़वा और भयानक अभियोजक हो। लेकिन तब कोई देख सकता है कि ईश्वर-प्रेमी आत्मा, हालाँकि पहले कई पापों से अक्सर घायल हो चुकी थी, परन्तु उसके हमलों और धमकियों से जरा भी नहीं डगमगाती, बल्कि प्रभु में स्थिर होकर, पवित्र शक्तियों को अपने साथ देख कर आनंद और धैर्य से भर जाती है; और, विश्वास के प्रकाश से सुरक्षित होकर, बड़ी निडरता के साथ, दुष्टात्मा से पुकारती है: 'तुझे मुझसे क्या काम, हे स्वर्ग से भागे हुए और दुष्ट का दास? तुझमें हम पर कोई अधिकार नहीं है। हम पर अधिकार तो मसीह, परमेश्वर के पुत्र का है, जैसे सब वस्तुओं पर है। हम उसी के विरुद्ध पाप किए हैं, और उसी के सामने हम उत्तर देंगे, और उसी को हम अपनी दया का जमानतदार पाएँगे और उसी में उसके महिमामय क्रूस के द्वारा हमारे उद्धार का। 'लेकिन तुम, हे दुष्ट, हमसे भागो; तुम न तो हमारे लिए हो और न ही मसीह के सेवकों के लिए।' आत्मा के ऐसे साहसी शब्दों पर, शैतान अंततः चीखों से टूट पड़ता है, मसीह के नाम का सामना न कर पाता। इसके बाद, वायुमंडल के राजकुमारों के क्षेत्र से होकर गुजरने के बाद, आत्मा को दिव्य स्वर्गदूतों द्वारा उसकी प्रकृति के अनुसार, उसके लिए निर्धारित स्थान पर आनंदपूर्वक ले जाया जाता है।

१५. हे स्वर्ग के बुद्धिमान, क्षणभंगुर वस्तुओं का प्रेम तुम्हें पृथ्वी पर न खींचे। क्योंकि यदि सांसारिक वस्तुओं का कोई लगाव तुम्हें बाँधता है, तो तुम उस बाज़ की तरह हो जिसे पंजे में फँसी जाल ने पकड़ लिया हो, और जो ऊँचाई पर उड़ नहीं सकता। इसलिए, किसी बेहतर की आशा में सभी चीजों को *'कचरा'* (Phil. 3:8) समझो और उनका तिरस्कार करो; और, जब समय आएगा, तो देह को भी त्यागकर, आप स्वतंत्र रूप से उस दूत का अनुसरण करेंगे जो आपका मार्गदर्शन करता है।

16. जैसे शाही खजाने में शाही मुहर से रहित सिक्के को साधारण सिक्कों के साथ रखना असंभव है; वैसे ही, सच्चे ज्ञान और निर्लिप्तता के बिना, उस आनंद की प्रतिज्ञा प्राप्त करना, और यहाँ से उस आशा की ओर निडरता और विश्वास के साथ प्रस्थान करना, और चुने हुओं के साथ एक होना असंभव है। हालाँकि 'मार्गदर्शन' से मेरा तात्पर्य ज्ञान नहीं है, बल्कि ईश्वर और दिव्य चीज़ों का सच्चा ज्ञान है, जिसके द्वारा ईश्वर-प्रेमी व्यक्ति सांसारिक वासनाओं से विमुक्त होकर, पवित्र आत्मा की कृपा से दिव्यता प्राप्त करता है।

१७. भले ही आप सक्रिय जीवन से संबंधित सभी चीज़ों से गुज़र चुके हों, इस मामले में स्वयं पर भरोसा न करें, जैसे कि आपने पहले ही निर्लिप्तता प्राप्त कर ली हो और दुनिया में बेफ़िक्र होकर घूम सकते हों; कहीं ऐसा न हो कि इस तरह, भावुक प्रवृत्तियाँ अपनाकर, आप स्वयं में लौटने से पहले, इस में ऐसा कुछ सामना कर लें जो आपके जीवन के क्रम के अनुकूल न हो। परन्तु हमेशा, भय की सतर्क दृष्टि के अधीन, अपनी परिवर्तनशील और चंचल प्रकृति का बहुत ध्यान रखें, और विवेक से वासनाओं के कारणों से दूरी बनाए रखें। क्योंकि निर्लिप्तता, जो कि सर्वथा अपरिवर्तनीय है, केवल उन लोगों में पाई जाती है जिन्होंने पूर्ण प्रेम प्राप्त किया है और, अखंड मनन के माध्यम से, सभी इंद्रिय संबंधी चीजों से ऊपर उठे हुए हैं, और जिन्होंने विनम्रता की ऊँचाइयों को प्राप्त किया है—जिन पर वासनाओं की ज्वाला अब और नहीं छूती, क्योंकि यह प्रभु के वचन से बुझ जाती है, उनके (पूर्ण लोगों के) अक्षयत्व में रूपांतरण के लिए।

१८. समय से पहले निर्लिप्तता की इच्छा न करो, कहीं ऐसा न हो कि तुम्हें भी उसी प्रथम सृष्टि का परिणाम भोगना पड़े, जो अपरिपक्व होकर ज्ञान के वृक्ष का स्वाद चख गई; परन्तु सर्व-व्यापी आत्म-संयम और अविराम प्रार्थना में धैर्यपूर्वक परिश्रम करके, और आत्म-तिरस्कार तथा परम विनम्रता के साथ अपनी सक्रिय आदतों और अनुशासन को बनाए रखकर, आप बाद में, उपयुक्त समय पर, तूफ़ानों और क्लेशों के बाद, निर्लिप्तता की कृपा—

इस विश्राम का आश्रय—प्राप्त करेंगे। क्योंकि परमेश्वर प्रतिशोधी नहीं है, परन्तु जो धार्मिकता में चलते हैं उनके लिए उचित समय पर निर्लिप्तता का द्वार खोलेगा।

19. *'हे आलसी, चींटी के पास जा'* (नीतिवचन 6:6) – और उससे परिश्रम के प्रति प्रेम सीख। फिर भी यह न भूल कि परमेश्वर को हमारे अच्छे कर्मों की कोई आवश्यकता नहीं है, क्योंकि उसे किसी चीज़ की कमी नहीं है और वह सर्वस्व से परिपूर्ण है; परन्तु वह स्वयं अपने वरदानों को भरपूर और उदारता से प्रदान करता है, और अपनी कृपा से उन लोगों को बचाता है जो समझदार, अपनी इच्छा से उस पर विश्वासयोग्य और कृतज्ञ हैं; यद्यपि वह उनकी क्षमता के अनुसार उनके कार्यों को कृपापूर्वक स्वीकार करता है। इसलिए, यदि आप उन आशीर्वादों के लिए जिनका उसने पहले आपको प्रदान किया है, स्वयं को उसका ऋणी मानकर परिश्रम करते हैं, तो आप अच्छा करते हैं - और परमेश्वर की दया आपके समीप है; परन्तु यदि तुम यह सोचते हो कि तुमने जो भलाई की है, उसके लिए परमेश्वर तुम्हारे ऋणी हैं, जैसा कि प्रतीत होता है, तो तुम भटक गए हो, सीधी राह से भटक गए हो: क्योंकि कोई उपकारी कैसे ऋणी हो सकता है? – तथापि, एक भाड़े के मजदूर के रूप में परिश्रम करते रहो; और, धीरे-धीरे स्थिर प्रगति करते हुए, तुम परमेश्वर की दया से, वह प्राप्त कर लोगे जिसकी तुम खोज कर रहे हो।

२०. यदि आप चाहें, तो मैं आपको उद्धार का एक और मार्ग दिखाऊँगा, या यूँ कहें कि वासनाओं से मुक्ति का। प्रार्थना के द्वारा अपनी पूरी शक्ति से अपने स्रष्टा को सताएँ, ताकि आप अपने निर्धारित लक्ष्य से भटक न जाएँ, और हमेशा उनके सामने मध्यस्थों के रूप में स्वर्गीय सेनाओं और सभी संतों को, परमेश्वर की अति पवित्र माता के साथ प्रस्तुत करते रहें; और निर्लिप्तता की खोज मत करो, जैसे कि इस वरदान के अयोग्य हो, बल्कि उत्सुकता से मोक्ष की खोज करो, और उसके साथ ही तुम्हें निर्लिप्तता भी प्राप्त होगी; इनमें से एक चाँदी के समान है, और दूसरा शुद्ध सोने के समान है; और हे परमेश्वर के सेवक, सबसे बढ़कर, एक गुप्त कार्य रखो, और परमेश्वर के वचन के कुछ गुप्त रहस्य, जो तुम्हें महिमामय करते हैं, और जिनसे वह प्रसन्न और सम्मानित होता है।

२१. प्रयास करो कि मोक्ष की प्रतिज्ञा तुम्हारे भीतर, तुम्हारे हृदय में, एक निर्विवाद आश्वासन के रूप में प्राप्त हो; अन्यथा, प्रस्थान के समय, तुम्हें अप्रत्याशित रूप से भय और कम्पन का सामना करना पड़ेगा। जब आपका हृदय किसी भी पाप के प्रति अनुग्रह से नहीं देखता, और आपका अंतकरण आपके पापों के लिए आपको दोष नहीं देता; जब ईश्वर की कृपा से आपके भीतर पशु-सदृश वासनाओं का उग्र स्वरूप वश में आ गया हो; जब सांत्वना के आँसू अपने आप आपके नेत्रों से बहते हों, और आपका मन शुद्ध रूप से और बिना किसी काल्पनिक विचार के प्रार्थना करता हो; और जब, एक आनंदित और इच्छुक हृदय के साथ, आप मृत्यु की प्रतीक्षा करते हैं—जो कई लोगों के लिए भयानक है, और जिससे वे बचना चाहेंगे।

२२. *'जीवन के अनन्त वचन'*, जो, जैसा कि प्रेरित पतरस ने गवाही दी (यूहन्ना ६:६८), परमेश्वर के वचन के पास हैं, वे उन बातों के विषय में वचन हैं जो उनके द्वारा पूरी की गई हैं, जिनके द्वारा यहाँ से भी गुप्त रूप से उनकी ओर निर्देशित किए गए लोग अनन्त जीवन और पवित्र आत्मा की प्रतिज्ञा, और उद्धार की एक लज्जा रहित आशा प्राप्त करते हैं। परन्तु यह उन लोगों को नहीं दिया जाता जो आत्मा से अधिक देह को प्राथमिकता देते हैं, और जो सांसारिक वस्तुओं के पक्षपाती हैं और उनमें आनंद लेते हैं।

23. एक 'तर्कशील' (logikoz - समझदार) व्यक्ति वह नहीं है जिसके पास वाक्य-वचन है (स्पष्ट रूप से बोलने की क्षमता है): क्योंकि हर मानव ऐसा ही है; बल्कि वह है जो, तर्क की शक्ति से, यह खोजता और जाँचता है कि परमेश्वर को कैसे पाया जाए। हालाँकि, वह उस चीज़ को कभी नहीं पा सकता जो स्वभाव से ही अलौकिक है। यह किसी भी स्वभाव के लिए असंभव है; लेकिन जो कुछ भी अस्तित्व में है, उसके सबसे बुद्धिमानी भरे प्रबंध में, उस पर उसकी दिव्य व्यवस्था, उसके संरक्षण, मार्गदर्शन और शासन में, इस *'चतुर सृष्टिकर्ता'* और *'जनक' की 'सौंदर्यता' का,* मानो, चिंतन और अनुभव किया जाता है। (सोलोमन की बुद्धि 13:1, 4–5), ठीक उसी तरह जैसे एक मकान बनाने वाले को उसके हाथों के काम से पहचाना जाता है।

24. निर्लिप्तता, निर्विकार, प्रेम, ईश्वर-भय और शुद्ध प्रार्थना के बिना नहीं मिलती, और ये सभी विश्वास और निश्चिंत शांति के बिना नहीं मिलते, जिससे प्रेरित मन सांसारिक कल्पनाओं को त्यागकर दिव्य क्षेत्र में उड़ान भरता है और अपने प्रभु की खोज में उसका अवलोकन करता है।

२५. पवित्रता को अपनी आँख के तारे की तरह संजोएँ, ताकि आप ईश्वर का मंदिर और उनके लिए प्रिय निवास स्थान बन सकें: क्योंकि ब्रह्मचर्य के बिना ईश्वर के साथ एक होना असंभव है। इसके परिणामस्वरूप ईश्वर के प्रति प्रेम, संसार से वैराग्य और उससे परहेज़, साथ ही विनम्रता, आत्म-संयम, अखंड प्रार्थना, आध्यात्मिक चिंतन (ईश्वर पर ध्यान), आँसू और मनन की अच्छाई का संवर्धन होता है - जिसे आप निर्लिप्तता के बिना प्राप्त नहीं कर सकते।

26. कोई भी आपको यह सोचने के लिए गुमराह न करे कि प्रेरति के वचन (इब्रानियों 12:14) के वपिरीत, कोई *'पवित्रता'* (शुद्धता) के बिना परमेश्वर को देख सकता है। क्योंकि प्रभु, जो सर्व-सद्गुणी और सभी शुद्धताओं से परे हैं, अशुद्ध लोगों को अपने भीतर प्रकट होने में प्रसन्न नहीं होते। जिस प्रकार कोई व्यक्ति जो अपने पिता या माता, या अपनी बेटी या बेटे से, उससे अधिक प्रेम करता है, वह उसके प्रेम के अयोग्य है, उसी प्रकार वह व्यक्ति भी उसके प्रेम के अयोग्य है जो उसके प्रेम के लिए किसी अस्थायी और भौतिक चीज़ को प्राथमिकता देता है, और इस घृणति और घिनौने पाप को तो और भी अधिक। परमेश्वर उन लोगों से मुंह फेर लेते हैं जो इस अशुद्धि से मुंह नहीं मोड़ते, क्योंकि *'नश्वर अमरत्व को विरासत में पाएगा'* (1 कुरिन्थियों 15:50)।

२७. आपको ज्ञान के बिना दिव्य प्रेम, और विश्वास के बिना ज्ञान प्राप्त नहीं होगा; विश्वास से मेरा तात्पर्य केवल एक साधारण विश्वास नहीं है, बल्कि एक ऐसा विश्वास है जो सद्गुणों के अभ्यास से उत्पन्न हुआ हो। आपको सच्ची पश्चाताप तब प्राप्त होगी, जब संयम के द्वारा, सतर्कता, प्रार्थना और विनम्रता के द्वारा, आपने उस कामुक आनंद को सूखा दिया है जो आपके शरीर में जकड़ा हुआ था, आप प्रभु यीशु के साथ क्रूस पर चढ़ाए जाएंगे, और आप अब शरीर के अनुसार नहीं जिएंगे, बल्कि *'उच्च बुलावा और चुनाव'* (2 पतरस 1:10) की आशा के अनुरूप, आत्मा के द्वारा जीना शुरू कर देंगे।

28. *'इसमें मैं जानता हूँ कि तेरा अनुग्रह मुझ पर है,'* नबी परमेश्वर से पुकारता है, *'क्योंकि मेरा शत्रु मुझ पर आनन्दित नहीं होगा'* (भजन संहिता 40:12), जबकि वह अंत तक मेरी वासनाओं से मुझे पीड़ा पहुँचाता और अपमानित करता रहता है। परन्तु अन्त से पहिले, मुझे उसके हाथों से छुड़ा, और, मुझे ऐसा आध्यात्मिक जीवन जीने का वरदान देकर जो तुझको भाता है, कृपा करके, एक धन्य प्रस्थान के बाद, मुझे बचा हुआ अपने सिंहासन के सामने प्रस्तुत कर; और यहाँ से, अपनी दया द्वारा उद्धार का वचन और उसकी अटूट निश्चियता धारण करके; क्योंकि मैं इसे एक असहनीय विपत्ति मानता हूँ—मृत्यु और स्वयं नरक से भी अधिक कड़वी और भयानक—कि मैं अपने प्रस्थान के समय अतैयार और कांपता हुआ पाया जाऊँ।

29. विश्वास और आशा कोई सरल या बेतरतीब बातें नहीं हैं; पर विश्वास के लिए एक दृढ़ आत्मा, और आशा के लिए एक धर्मी चरित्र और हृदय की आवश्यकता है। इसके अलावा, अनुग्रह के बिना, कौन बिना देखे हुए में सहजता से विश्वास करेगा? और कौन एक अनिश्चित भविष्य के लिए आशा रखेगा, जब तक कि उसे प्रभु के उपहारों का कोई वास्तविक अनुभव न हो, जिससे वह भविष्य के बारे में वर्तमान की तरह ही आश्वासन प्राप्त कर सके? इन दोनों गुणों के लिए हमारी इच्छाशक्ति के साथ-साथ ईश्वर के मार्गदर्शन और सहायता की भी आवश्यकता होती है; इनके बिना, हमारा प्रयास व्यर्थ है।

30. सच्चा सद्गुण या तो ज्ञान से, या निर्लिप्तता से, या दोनों से मिलकर उत्पन्न होता है। क्योंकि यदि कोई हम में इसे व्यर्थ में खोजे, तो यह कहना सत्य होगा कि हमारा सद्गुण केवल एक दिखावटी सद्गुण है, न कि एक सच्चा सद्गुण। क्योंकि यदि ऐसा न होता, तो वह केवल पत्तों में ही नहीं, बल्कि फिल में भी भरपूर होता। इस प्रकार, जो कोई भी अच्छा करने के लिए प्रेरित होता है—चाहे दूसरों को खुश करने की इच्छा से, आत्म-तुष्टि के लिए, या ईश्वर को अप्रिय किसी अन्य उद्देश्य से—वह कपटी है और ईश्वर से प्रेम नहीं करता। लेकिन यदि हम प्रेरक कारण को सुधार लें, तो हम निःसंदेह सच्चे सद्गुण में पूर्णता प्राप्त करेंगे, जो उचित समय पर और उचित मात्रा में, हमारे सर्व-सत् परमेश्वर की कृपा से हमें ज्ञान और निर्लिप्तता दोनों प्रदान करेगा।

31. *'शैतान की युक्तियों को परखो'* (2 कुरिन्थियों 2:11) अनुग्रह के प्रबोधन द्वारा, और, आँसुओं के साथ परमेश्वर के सामने स्वयं को नम्र करके, अपनी दुर्बलता को मानो, स्वयं को शून्य समझो, यद्यपि हमारा छलकपट करने वाला हमें यह सोचने के लिए प्रेरित करता है कि हम कुछ हैं। यदि उपहार मोक्ष और विनम्रता की रक्षा में योगदान नहीं देते हैं तो उन उपहारों को स्वयं पर पाने का प्रयास न करें; बल्कि ईश्वर के ज्ञान की नींव के रूप में साधारण ज्ञान की खोज करें, ताकि आप अंत तक जुनूनों द्वारा एक तानाशाह की तरह प्रताड़ित न हों, और निर्लिप्तता के माध्यम से, या कम से कम, अपने अपराधों के लिए दुख के माध्यम से शरीर से मुक्त हो सकें।

32. जैसे पंखों के बिना कोई ऊँची उड़ान नहीं भर सकता, वैसे ही यहाँ रहते हुए किसी चीज़ के निश्चित आश्वासन के बिना उसकी प्राप्ति नहीं की जा सकती; और यह आश्वासन विनम्रता से, या उन लोगों में पवित्र आत्मा की कृपा से उत्पन्न होता है जिन्होंने परमेश्वर को पूरी तरह से प्रसन्न किया है, जिनमें भावहीनता निश्चित रूप से निहित है, या तो आंशिक रूप से या पूरी तरह से, यह इस बात पर निर्भर करता है कि उन्होंने परमेश्वर को कितनी प्रसन्नता दी है और उनका शुद्धिकरण कितना हुआ है। हालाँकि, जो लोग शरीर से एक अलग अवस्था में प्रस्थान करते हैं—जैसे 'वासनाओं की सर्दियों' में या 'सब्बाथ' पर (अर्थात्, सद्गुणों के कार्यों के बिना) (मत्ती 24:20)—वे हिसाब-किताब के समय न्याय और यातना के अधीन होते हैं।

33. हे तुम जो बचाए जा रहे हो, उद्धारकर्ता परमेश्वर का धन्यवाद करो। और यदि तुम उसे भेंट चढ़ाना चाहते हो, तो अपनी विधवा आत्मा से कृतज्ञतापूर्वक दो मिति चढ़ाओ—अर्थात् नम्रता और प्रेम। और वह उन्हें—जैसा कि मैं अच्छी तरह जानता हूँ—उस बहुत बड़े धन-संपत्ति से भी अधिक स्वीकार करेगा, जिसे कई लोग उद्धार के कोष में डालते हैं। लेकिन यदि, लाजरूस की तरह, आपको अपनी वासनाओं से मरकर पुनर्जीवन की आवश्यकता है, तो इन्हीं सद्गुणों को अपनी बहनों के रूप में उसकी मध्यस्थता के लिए भेजें – और जो आप माँगते हैं वह आपको निश्चित रूप से मिलेगा।

34. भले ही आप, जैसा कि आपको करना चाहिए, एक सदाचारी जीवन की सक्रिय पहरेदारी करें, केवल इसी से आप निर्लिप्तता के बंदरगाह तक नहीं पहुँच सकते, ताकि आप शुद्ध रूप से और बिना किसी विचलन के प्रार्थना कर सकें; जब तक कि, साथ ही साथ, आपका मन ज्ञान की प्रबुद्धता और वास्तविकता की समझ के आध्यात्मिक चिंतन से आलिंगित न हो, जिससे प्रेरित और प्रबुद्ध होकर, वह सच्ची प्रार्थना में तेजी से ऊपर की ओर उड़ान भरता है—जो पूरी तरह से प्रेम से परिपूर्ण हो—अपने समान उच्च, अद्रव्य आदेशों के प्रकाश की ओर, और उनसे, जहाँ तक संभव हो, महान प्रकाश की ओर, त्रिमूर्ति ईश्वरत्व की ओर, जो सभी का स्रोत है।

३५. हमें पाप करने के लिए आने वाले युग में दंडित नहीं किया जाएगा, न ही इस कारण से हमें दोषी ठहराया जाएगा कि हमें एक परिवर्तनशील और चंचल स्वभाव से नवाजा गया है; बल्कि हमें पाप करने और फिर भी पश्चाताप न करने के लिए, और पश्चाताप की शक्ति और समय प्रदान किए जाने के बाद भी, प्रभु की ओर बुराई के मार्ग से न मुड़ने के लिए दंडित किया जाएगा। ईश्वर पश्चाताप करने वालों के प्रति दयालु और कृपालु है, भले ही उसे धमकी देने वाला और क्रोधित बताया गया हो; फिर भी यह बुराई और पाप के विरुद्ध है, न कि हम जैसे लोगों के विरुद्ध, जिन्हें वह हमारे चेहरों पर पश्चाताप का एक आँसू देखते ही स्वीकार करने के लिए हमेशा तैयार रहता है। वास्तव में, वह हमसे हमारे कर्मों और प्रवृत्तियों के अनुसार व्यवहार करता है, और प्रत्येक व्यक्ति को उनके जीवन के मूल्य के अनुसार पुरस्कृत करता है।

36. जब आप अपने अच्छे आचरण में लड़खड़ा जाएँ, तो काँपें नहीं, बल्कि यथासंभव जल्दी से खुद को संभालकर, पश्चाताप की भावना से दुख, खेद, आत्म-निंदा और प्रचुर आँसुओं की वर्षा के माध्यम से अपनी पूर्व की भलाई की स्थिति में लौटने के लिए जल्दी करें; जिसके द्वारा, आप पर आई गिरावट से उठकर, आप उद्धारकारी आनंद की गोद में प्रवेश करेंगे, और अपने हृदय में दृढ़ रहने का संकल्प करेंगे, ताकि फिर से न्यायाधीश को क्रोधित किए बिना, आपको शुद्ध होने के लिए आँसुओं और पश्चाताप की आवश्यकता न पड़े: क्योंकि यदि ऐसा यहाँ नहीं होता है, तो हम निश्चित रूप से भविष्य में अपने योग्य यातनाओं से नहीं बचेंगे।

पुरोहितत्व पर

1. एक बार फिर हम सबसे सम्मानित पुरोहित्य की ओर मुड़ते हैं: यह किस दैवी स्वभाव और किस पवित्रता की मांग करता है; और इसे स्वीकार करने पर, पहले से भी अधिक दृढ़ता और पवित्रता की: क्योंकि यदि अशुद्ध को कुछ हद तक शुद्ध किया जाना चाहिए, तो शुद्ध को कलंकित होने की अनुमति कैसे दी जा सकती है? अन्यथा, यदि हम प्रकाश को मद्धिम होने दें, और सुगंधित तेल में कुछ अशुद्ध मिलाएँ, तो, हाय, हमें विधर्मी, जैसे अनानिया और सफ्फिरा की तरह, विनाश का ही वारिस बनना निश्चित है।

२. भले ही आपको ऐसा लगे कि आप विनाश और अयोग्यता के पात्र से, शुद्धता के एक निश्चित माप के कारण, प्रभु के अनुकूल चुनाव के पात्र बनकर, स्वर्गदूतों और दैवीय पुरोहित वर्ग में योग्य रूप से प्रवेश कर गए हैं, जैसा कि प्रेरित कहते हैं; फिर भी, उस निर्दोष सम्मान की रक्षा पूरे हृदय से करें जिससे आपको सम्मानित किया गया है। इस दिव्य वर को अपनी आँख के तारे की तरह संजोकर रखें, कहीं ऐसा न हो कि उचित सावधानी के बिना भाग लेने के कारण, आपको ऊँचे पद से एक ऐसे गर्त में गिरा दिया जाए जिससे बाहर निकलना आपके लिए कठिन हो।

३. एक समझदार व्यक्ति के रूप में, यह महसूस करो कि 'यदि *परमेश्वर हमारे पक्ष में है, तो हमारा विरोध कौन कर सकता है?'* (रोमियों ८:३४)। और यदि, बुलाए जाने के बाद, आप दिव्य पुरोहित वर्ग के धन्य और सम्मानित पद में प्रवेश कर गए हैं, तो आपको अपने अतीत के जीवन के बारे में चिंता करने की आवश्यकता नहीं है, भले ही आप कलंकित रहे हों, लेकिन आपको तुरंत, ईश्वर की मदद से, स्वयं को शुद्ध करना चाहिए और सुधार करना चाहिए। लेकिन इसके बाद, आपकी पहली चिंता—जो सतर्क और गंभीर हो—यह होनी चाहिए कि इस अनुग्रह को कलंकित न करें; ताकि यदि कोई आपके पूर्व कर्मों के कारण पादरी के पद पर आपके अभिषेक की मूर्खतापूर्वक निंदा करे, तो वह एक फटकार के रूप में यह दिव्य स्वर सुन सके जो पुकार रहा है: *'जिसे परमेश्वर ने शुद्ध ठहराया है, उसे तुम अशुद्ध न कहो'* (प्रेरितों के काम 10:15)।

४. पुरोहितत्व का पद प्रकाश है, और इसका जुआ एक आशीर्वाद है; लेकिन यह केवल उनके लिए सच है जो इसे स्वीकार करते हुए, उपयुक्त रूप से इसे सुधारना भी शुरू करते हैं, और बशर्ते कि पवित्र आत्मा की कृपा को खरीदकर प्राप्त करने का कोई प्रयास न किया गया हो। क्योंकि यदि जिसे मूल्य नहीं दिया जा सकता और जिसे बेचा नहीं जा सकता, उसे मानवीय प्रयास और एक नश्वर उपहार के माध्यम से खरीदा हुआ माना जाता है; तो, जैसे इस मामले में बुलावा ऊपर से नहीं आई, वैसे ही यह बोझ भी बहुत भारी होगा, क्योंकि यह अयोग्य रूप से और किसी की शक्ति से बढ़कर उठाया जाता है; और यह जुआ पीठ को कठोरता से घिस डालेगा और इसे उठाने वाले की शक्ति को कुचल डालेगा, जब तक कि यह उसे पूरी तरह से थका और घिस न डाले, जब तक कि वह इसे नीचे न रख दे।

५. याजकीय जुआँ निडरता से उठाकर, धार्मिकता के मार्गों पर चलो और धार्मिकता के साथ सत्य का वचन बोलो, और भय और कम्प के साथ उसी के द्वारा अपनी मुक्ति का कार्य करो। क्योंकि हमारा परमेश्वर भस्म करने वाली आग है: और यदि तुम उसके पास सोने या चाँदी की नाईं पहुँचोगे, तो आग से मत डरना, जैसे भट्टी में बेबीलोन के जवानों ने नहीं डरा; परन्तु यदि तुम घास और सरकण्डे के समान, आसानी से जलने वाली वस्तु, सांसारिक ज्ञान वाले व्यक्ति की तरह हो, तो इस बात से डरो कि तुम स्वर्गीय आग में भस्म हो जाओगे, जब तक कि तुम लूत की तरह क्रोध से न भागो, भयानक रहस्यों से परहेज़ करके, या पश्चाताप के आँसुओं में स्वयं को धोने की जल्दी न करो। केवल आँसुओं के जल से भीगने पर ही आप सत्य की अग्नि के प्रति अभेद्य और अजेय हो जाएँगे, ठीक वैसे ही जैसे झाड़ी का कभी कमजोर पौधा। उस स्थिति में, मुझे नहीं पता कि कोई ऐसा पाप है—जिसके प्रति हम अपनी कमजोरी में इतने प्रवृत्त हैं—जिसे पूर्ण पवित्रता से की गई उपासना द्वारा दिव्य अग्नि से, या प्रभावी शुद्धिकरण द्वारा मिटाया नहीं जा सकता।

6. चूँकि तुम पुरानी आदत के कारण अपनी प्रबल प्रवृत्तियों से खुद को अलग करने और शुद्ध करने में सफल नहीं हुए हो, तो तुम, हे दुर्भाग्यशाली, उस चीज़ को छूने की हिम्मत कैसे करते हो, जिसे तो देवदूत भी अछूत मानते हैं? इसलिए, या तो काँपो और दिव्य अनुष्ठान से परहेज़ करो, और इस प्रकार परमेश्वर के धार्मिक स्वभाव को प्रसन्न करो, या, एक कठोर और अक्लिय व्यक्ति की तरह, स्वयं को जीवते परमेश्वर के हाथों में गिरने दो, जो मानवता के प्रेम से तुम्हें नहीं बख्शेंगे, लेकिन वह मानवता के प्रति प्रेम से आपको क्षमा नहीं करेगा, बल्कि एक अपवित्र आत्मा और फटेहाल वस्त्रों में शाही विवाह भोज में आने की निर्लज्ज हिम्मित करने के लिए आप पर निर्दयता से दंड लगाएगा, जबकि आप शाही महल में प्रवेश करने के भी योग्य नहीं हैं, भोज में भाग लेने की तो बात ही छोड़ दें।

7. मैं एक ऐसे पवित्र व्यक्ति को जानता था जिसने अपने कामुक जुनून के कारण अयोग्य रूप से दिव्य रहस्य के पास जाने की हिम्मित की। इसके लिए वह एक गंभीर और लाइलाज बीमारी में पड़ गया और मृत्यु के कगार पर था। चूँकि उसने अपनी बीमारी को ठीक करने के लिए अपनी पूरी ताकत लगा दी थी, फिर भी उसे कुछ भी हासिल नहीं हुआ था, और बीमारी न केवल बनी रही बल्कि और भी बिगड़ गई; तब, होश में आकर और यह महसूस करके कि वह अनुचित तरीके से धर्मविधि का अनुष्ठान करने के कारण मर रहा था, उसने पवित्र सेवा में फिर कभी भाग न लेने का एक गंभीर संकल्प लिया। इन शब्दों के तुरंत बाद ही उसकी बीमारी ठीक हो गई, और उसका कोई निशान भी नहीं बचा।

8. पुरोहित्य का पद और पवित्र वस्त्र शोभायमान हैं, परन्तु केवल तभी जब अभिषिक्त पुरोहित के भीतर भी एक ऐसा आत्मा हो जो पवित्रता से दमकती हो। परन्तु जब वह लापरवाही से स्वयं को कलंकित कर लेता है, और उस लज्जा की गवाही देने वाले विवेक का तिरस्कार किया जाता है; तब प्रकाश अंधकार बन जाता है, जो शाश्वत उदासी और आग का कारण है, जब तक कि वह इस मार्ग—जो दोनों ओर से खतरनाक है—को त्यागकर, एक और मार्ग न चुने: विनम्रता में जिया गया एक सदाचारी जीवन, जो सुरक्षित रूप से परमेश्वर के राज्य की ओर ले जाता है।

९. निम्न पद पर भी सद्गुणों से मोक्ष प्राप्त होता है, न कि एक प्रतिष्ठित पुरोहित वर्ग से, जो स्वर्गदूतों के समान जीवन की मांग करता है। इसलिए, या तो एक देवदूत की तरह निर्लिप्त हो जाओ, मानो चिंतन के द्वारा संसार और शरीर से परे हो, और इस प्रकार इस स्वर्गीय सीढ़ी पर चढ़ो; या, अपनी कमजोरी को महसूस करते हुए, ऊँचाई से डर जाओ—जो अपरिपक्व लोगों के लिए एक बड़ी गिरावट का खतरा है—और जीवन से चिपके रहो जो अधिकांश लोगों द्वारा साझा किया जाता है, फिर भी वह उस विशिष जीवन से कम महत्वपूर्ण नहीं है जो ईश्वर की ओर ले जाता है और मनुष्य को उनके साथ एक कर देता है; क्योंकि इसमें, भले ही आप गिर भी जाएं, हमारे सर्व-दयालु ईश्वर की कृपा से, पश्चाताप के द्वारा फिर से उठना आपके लिए आसान है।

10. *'मांस और रक्त परमेश्वर के राज्य का विरासत में प्राप्त नहीं कर सकते'* (1 कुरिन्थियों 15:50)। लेकिन आप, परमेश्वर के शरीर और लहू में भाग लेकर, शरीर से उनके साथ एक हो गए हैं और उनके लहू में मिल गए हैं; तो फिर, स्वर्ग का राज्य पहले से ही आपके भीतर क्यों है: फिर ऐसा कैसे है कि आप शरीर और लहू की कामनाओं से घिरे हुए हैं? मुझे डर है कि परमेश्वर का आत्मा आप में नहीं रहेगा, जैसे *'मांसल' लोगों* में नहीं रहता था (उत्पत्ति 6:3), और

न्याय के समय आप दो टुकड़े हो जाएँगे: तब वे आपसे सबसे सम्मानित पुरोहित का पद छीन लेंगे, क्योंकि आप ऐसी कृपा के अयोग्य हैं, और आपको नरक में अनंतकालिक यातनाओं के लिए भेज देंगे।

11. ऐसा है मानो परमेश्वर का भय तुम्हारी आँखों के सामने न हो, क्योंकि तुम अयोग्य पुरोहितीय सेवा को एक तुच्छ बात मानते प्रतीत होते हो, आत्म-प्रेम से मोहित होकर, जो तुम्हें यह सुझाता है कि ईश्वर भला है। इसी पर दाफान और अबीरोन एक बार विश्राम करते थे, जब तक कि पृथ्वी ने उन्हें निगल नहीं लिया। – तुम्हें भी इससे भयभीत होना चाहिए, और उस भय का सच्चा भय मानना चाहिए, जहाँ भय है (भजन संहिता 13: 5), ध्यान में रखें कि दिव्य अनुष्ठान कितना बड़ा विषय है: और, चाहे आप योग्य और शुद्ध रूप से—यहाँ तक कि स्वर्गदूतों के बराबर—दिव्य पुरोहितत्व का अधिकार का प्रयोग करें, या एक विवेकशील व्यक्ति के रूप में इस भयानक सेवा से पीछे हट जाएँ; कहीं ऐसा न हो कि, इस मामले में अब लापरवाही करके और जब आपका अंतरात्मा आपको तर्क-वितर्क से दोषी ठहराए तो उसे धोखा देकर, आप एक दिन—जब सब कुछ सही से परखा और दोषी ठहराया जाएगा—एक कराह के साथ पुकार उठें: *'जिस भय से मैं डरता था, वह मुझ पर आ पड़ा है, और जिस आतंक से मैं डरता था, वह मुझ पर छा गया है'* (अय्यूब 3:25)!

12. गंभीरता से और गहरे दुख के साथ, सबसे पहले अपने शुद्धिकरण के लिए संसार-उद्धारक पवित्र बलिदान पश्चाताप और आँसुओं के साथ अर्पित करें: क्योंकि जब आप मरेंगे, तो आपकी तरह कौन आपके लिए शोक करेगा और आपके लिए बलिदान अर्पित करेगा? आने वाली घटनाओं की पूर्वदृष्टि रखते हुए, आपको स्वयं को पहले से ही दफ़न हुआ क्यों नहीं मानना चाहिए, और अपनी मुक्ति के लिए मध्यस्थता करते हुए मेज़ पर ईश्वर को ये पवित्र भेंटें अर्पित करनी चाहिए, यहाँ उनके स्वैच्छिक और दयालु बलिदान को याद करते हुए?

१३. यह कितना अकथनीय और अभिव्यक्ति से परे सांत्वना है जब आत्मा, अपनी मुक्ति में आश्वस्त होकर, शरीर से अलग हो जाती है, उसे एक वस्त्र की तरह अलग रख देती है! क्योंकि, मानो वह आशा की गई आशीर्वादों का पहले से ही स्वामी हो, यह शरीर को बिना किसी चिंता के छोड़ देता है, और शांति से उस दूत के पास जाता है जो आनंद और हर्ष के साथ उसका स्वागत करने के लिए स्वर्ग से उतरता है, और उसके साथ मिलकर बिना किसी बाधा के वायुमंडल से होकर गुजरता है, दुष्टात्माओं के किसी भी आक्रमण का सामना किए बिना, बल्कि साहस और धन्यवाद के उद्घोष के साथ आनंदपूर्वक आरोहण करती है, जब तक कि वह सृष्टिकर्ता की उपस्थिति में न पहुँच जाए, और वहाँ उसे स्वयं जैसे और सद्गुणों में समान लोगों के समूह में, सामान्य पुनरुत्थान तक, रखे जाने का आदेश प्राप्त होता है।

14. मैं तुम्हें एक भयानक बात बताऊँगा; परन्तु हैरान न होना। – भले ही तुम निर्लिप्तता प्राप्त न कर सको, शायद अत्याचारी प्रवृत्तियों के कारण, फिर भी यदि, अपने प्राण त्यागने के समय, तुम गहरी नम्रता की अवस्था में हो—उतनी ही, जितनी एक निर्लिप्त व्यक्ति होती है—तो तुम्हें बादलों पर ऊपर उठा लिया जाएगा। क्योंकि यद्यपि निर्लिप्तता का खजाना हर सद्गुण से मिलकर बना हो सकता है, फिर भी विनम्रता का अनमोल रत्न उन सभी से बढ़कर सम्माननीय और उत्तम है; और जो इसे प्राप्त करते हैं, उनके लिए यह न केवल ईश्वर के साथ मेल-मिलाप लाता है, बल्कि चुने हुओं के साथ, उनके राज्य के वधू-कक्ष में प्रवेश भी दिलाता है।

१५. ईश्वर से अपने पापों की क्षमा प्राप्त करके, उनकी महिमा करो, क्योंकि वह तुम्हारे बुरे कर्मों को याद नहीं रखता, न ही तुमसे उसका प्रतिशोध लेता है, और जान-बूझकर होने वाली गिरावटों से अपनी पूरी शक्ति से बचो। क्योंकि यद्यपि ऐसे मामलों में भी मृत्यु के क्षण तक हर दिन क्षमा प्राप्त करना संभव है, यदि तुम इतनी आसानी से और जानबूझकर पाप करते हो तो तुम स्वयं को कृतघ्न साबित करते हो। हालाँकि, यदि आप निराशा के कुत्ते को भगाने के लिए आशा की चट्टान का उपयोग करके, अविराम और धैर्यपूर्वक परमेश्वर की दया का आह्वान करते हैं, तो आपके कई पाप क्षमा कर दिए जाएँगे, ताकि आप भी आने वाले युग में सर्व-दयालु और परम धन्य को प्रेम कर सकें।

१६. जब, दैवीय अनुग्रह के कार्य से, आप प्रार्थना में आँसुओं के साथ परमेश्वर के सामने खड़े होते हैं, क्रूस के आकार में जमीन पर लोटकर प्रणाम करते हैं, और, अपना सिर पटककर, यहाँ क्षमा माँगते हैं, जो कि क्षय और प्रलोभनों से मुक्ति है; लेकिन अपनी इच्छानुसार प्रस्थान करने की इच्छा न करें, बल्कि तब, जब और जहाँ ईश्वर उचित समझे; वास्तव में, प्रेम के साथ, इन आँसुओं के साथ गहरी विनम्रता से प्रभु के पास प्रस्थान करने के लिए अपनी तत्परता दिखाएँ, ताकि अपनी इच्छा और लालसा की ज्वाला को बुझा सकें; परन्तु यदि परमेश्वर को कुछ बेहतर देना उचित लगे, तो फिलहाल विलंब सहन करने के लिए तैयार रहो। केवल एक ही बात की लगन और अटूटता से खोज करो—कि तुम परमेश्वर से दूर न हो जाओ—इसके लिए ऐसा कुछ भी करने, कहने, इरादा करने या हाथ में लेने से परहेज़ करो जो इस ओर ले जा सकता है।

१७. शरीर में रहते हुए, बौद्धिक और आध्यात्मिक को जैसा वे वास्तव में हैं, वैसे जाँचने का अनुमान न लगाओ, भले ही तुम्हारी आत्मा की बुद्धि जब शुद्ध होती है तो तुम्हें इसके प्रति झुकाव देती है। जब तक देह और रक्त के बंधन में बँधी अदेह आत्मा ने इस भारीपन को नहीं त्याग दिया है और बौद्धिक शक्तियों के साथ वास करने नहीं आई है, तब तक वह, जैसा कि उसे करना चाहिए, उन पर चिंतन या उनमें से अवगाह नहीं कर सकती। इसलिए, जब आप अपने भौतिक बंधनों से—एक दूसरे, अंधकारमय गर्भ से निकलने की तरह—उस अमाтериयल और प्रकाशमान अस्तित्व में प्रवेश करने की तैयारी करें, तो प्रसन्नचित्त रहें, अपने कल्याणकर्ता का धन्यवाद करें, जो हमें मृत्यु के पार उस बेहतर जीवन की ओर ले जाता है जिसकी हम लालसा करते हैं—निरंतर संयमी और सतर्क रहें, क्योंकि हमारे चारों ओर घूमने वाले अशुद्ध राक्षस, जो लगातार हमारी भलाई की निंदा करते हैं और हमारे जीवन के अंत तक—और आपके अंत तक भी—धोखे से हमारे हर कदम पर नजर रखते हैं, भविष्य की अनिश्चितता के कारण अपने लिए कांप उठो, क्योंकि तुम्हें एक मनमौजी और परिवर्तनशील सत्ता ने बनाया है जो अपनी इच्छा के अनुसार कार्य करती है।

18. फिर शत्रु हमारे सामने क्रूर और भयानक प्रलोभन रखता है जब वह महसूस करता है कि आत्मा ने सद्गुणों की उच्चतम श्रेणियों को प्राप्त कर लिया है। इसका प्रमाण प्रार्थना के शब्दों और मांस तथा इंद्रियों की भौतिक द्वैतता से ऊपर उसकी उन्नति है। और फिर मानवता का शत्रु हमें इतनी दुष्टता से प्रलोभित करता है कि हम जीवित रहते हुए भी निराशा में चले जाते हैं। लेकिन वह, अपनी व्यर्थता में, यह नहीं समझता कि वह हमारे लिए कितनी आशीर्वाद लाता है, हमें धैर्य के माध्यम से अधिक बुद्धिमान बनाता है और हमारे लिए प्रकाश के मुकुट बुनता है।

19. ब्रह्मचर्य और कुँवारीपन के समान कोई अन्य महान पराक्रम नहीं है। जो सम्मानपूर्वक ब्रह्मचर्य का पालन करता है, वह स्वर्गदूतों के लिए आश्चर्य का स्रोत है और उसे शहीदों से कम नहीं, बल्कि उन्हीं के समान मुकुट प्रदान किया जाता है। क्योंकि उस व्यक्ति से कितनी मेहनत और पसीने की मांग होती है, जो देह और रक्त से बंधा होने के बावजूद, शुद्धता के माध्यम से अदेह की अदेहता का अनुकरण करने का हमेशा प्रयास करता है? और सचमुच, यह प्रयास इतना महान और ऊँचा है कि यह अलौकिक हो जाता, यदि परमपिता परमेश्वर ने अपनी मध्यस्थता ( ) प्रकट न की होती, जो हमारी दुर्बल और नश्वर प्रकृति को मजबूत और सहारा देती है, और एक तरह से दिव्य प्रेम और वादे किए गए पुरस्कारों की आशा के माध्यम से इसे पृथ्वी से ऊपर उठाती है।

२०. भोजन और निद्रा में अतिशय लिप्तता से दुर्बल हुआ शरीर, ब्रह्मचर्य के मार्ग में एक बड़ी बाधा है। हालाँकि, सच्ची ब्रह्मचर्यता नींद के सपनों में भी अडिग रहती है। क्योंकि यदि सोते समय मन को उनमें आनंद आता है, तो यह इस बात का संकेत है कि वह इस वासना को अपने भीतर गहराई से पालता है। लेकिन यदि, ईश्वर की कृपा से, उसे नींद में ईश्वर से संवाद करने का सौभाग्य प्राप्त होता है, तो यह स्पष्ट है कि वह इस वासना से अप्रभावित रहती है; यही कारण है कि यह हर समय आत्मा और शरीर के एक सतर्क रक्षक के रूप में कार्य करता है, उन्हें एक-दूसरे के साथ शांतिपूर्ण सामंजस्य में रखता है, जैसे कोई कुत्ता घातक भेड़ियों से उनकी रक्षा के लिए पहरा देता है, और इस प्रकार शिकारी हमलावरों को दूर रखता है।

21. मैं तुम्हें एक अजीब बात बताऊँगा; पर हैरान मत होना। ईश्वर और आत्मा के बीच एक निश्चित छिपा हुआ रहस्य घटित होता है। यह उन लोगों के साथ होता है जो पूर्ण पवित्रता, प्रेम और विश्वास की उच्चतम श्रेणियों को प्राप्त करते हैं, जब कोई व्यक्ति, पूरी तरह से रूपांतरित होकर, अनवरत प्रार्थना और चिंतन के माध्यम से ईश्वर के साथ एक हो जाता है—जैसे कि वह उसी का अंश हो। इस चरण पर, एलिया बारिश के लिए आकाश को बंद कर देता है और स्वर्गीय अग्नि से बलिदान को भस्म कर देता है; मूसा समुद्र को विभाजित करता है और अपनी भुजा के इशारे से, अमालेकियों को भागने पर मजबूर कर देता है; योनह को व्हेल और समुद्र की गहराइयों से बचाया जाता है। क्योंकि परम परोपकारी ईश्वर के लिए इसमें एक निश्चित आवश्यकता है, यद्यपि केवल उसी सीमा तक जो उसकी इच्छा के अनुरूप हो। जो इस योग्य माना जाता है, वह भले ही देहधारी हो, उसने क्षय और मृत्यु की सीमाओं को पार कर लिया है, मृत्यु को वैसे ही स्वीकार किया है जैसे कोई सामान्य नींद को स्वीकार करता है, जो उसकी प्रसन्नता के लिए उसे उस चीज़ में ले जाती है जिसकी वह हमेशा से लालसा करता था।

पुरोहितत्व पर

1. प्रभु के दुखों का, हमारे लिए परमेश्वर के वचन के आत्म-त्याग का, तथा हमारे भीतर जीवन-दायक और दिव्य देह और रक्त के बलिदान और मिलन का आदर करते हुए—जिसके हम केवल संप्रभुता द्वारा ही नहीं बल्कि दिव्य अनुष्ठान के उत्सव द्वारा भी योग्य ठहराए गए हैं—अपने आप को वध के लिए ले जाए गए मेमने की तरह नम्र

बनाओ, सभी को अपने से वास्तव में श्रेष्ठ समझते हुए, और किसी के विवेक को आहत न करने का पूरा ध्यान रखना। पहले स्वयं को शुद्ध किए बिना पवित्र रहस्यों में भाग लेने का अनुमान भी न लगाना, कहीं ऐसा न हो कि तुम दिव्य अग्नि से भूसी की तरह भस्म हो जाओ, और मोम की तरह पिघलकर बह जाओ?

२. और सचमुच, यदि आप इस दिव्य, सबसे सम्मानित और भयानक पवित्र अनुष्ठान को जैसा करना चाहिए वैसा करते हैं, और आपका अंतरात्मा आपको किसी भी बात में दोष नहीं देता, तो आपको और कहीं भी उतनी निश्चित आशा नहीं मिलेगी जितनी इसमें मिलती है। क्योंकि इससे आपको किसी भी अन्य कर्म या चिंतन से अधिक लाभ होगा। – यदि, हालाँकि, ऐसा नहीं है, तो आप स्वयं देखें कि इसका क्या अर्थ है। – और निश्चित रूप से, अपनी कमजोरी को पहचानते हुए, पुरोहित के उच्च पद का त्याग करना, अपनी अयोग्यता और अशुद्धता को जानते हुए इसे स्वीकार करने और वहन करने से बेहतर है, और कई लोगों के लिए सम्मानित appearing होते हुए भी, वास्तव में, अपनी अयोग्यता के कारण, एक शव के समान, शोक के योग्य होना।

३. पवित्र पुरोहितत्व की सेवा, ईश्वर के प्रति उसकी प्रसन्नता, और उसके सामने सभी के लिए उसकी अनवरत मध्यस्थता, सभी भजन-गायन और प्रार्थना से कहीं बढ़कर है, जैसे सूर्य तारों से श्रेष्ठ है। क्योंकि हम स्वयं एकमात्र पुत्र को ही बलिदान के रूप में अर्पित करते हैं, – उन्हीं को, जिन्होंने मानवजाति के प्रेम के लिए, पापियों के लिए अपना जीवन त्याग दिया; हम उन्हें प्रार्थनापूर्वक परमेश्वर के समक्ष अर्पित करते हैं, न केवल पापों की क्षमा के लिए, बल्कि उन सभी वस्तुओं की प्राप्ति के लिए जिनकी हमें आवश्यकता है और जिनके लिए हम प्रार्थना करते हैं: और शरीर, दिव्यता के साथ एक होकर, एक जलते हुए कोयले के समान, हर अधर्म को भस्म कर देता है और विश्वास के साथ आने वालों के हृदयों को प्रकाशित करता है; इसी प्रकार, दिव्य और सर्व-सम्मानित रक्त, जो सभी हिसोप से श्रेष्ठ है, उन लोगों की हर अशुद्धि और कलंक को धोता और शुद्ध करता है जो हर संभव पश्चाताप और आशापूर्ण भक्ति के साथ पवित्र रहस्यों के पास आने की हिम्मत करते हैं। ऐसा और कहाँ मिल सकता है?!

४. परमेश्वर के वचन का शरीर, जो स्वर्ग में नहीं चढ़ा है—जैसा कि एक संत ने कहा है—स्वर्ग से उतरने के बाद नष्ट नहीं होता है, बल्कि स्वयं रोटी और स्वयं दाख का रस मसीह के शरीर और रक्त में बदल जाते हैं, जब यह विश्वास के साथ किया जाता है, पवित्र पुरोहितत्व से सम्मानित लोगों द्वारा दिव्य रहस्य के प्रति भय, प्रेम और श्रद्धा; इस रहस्य में, एक का दूसरे में यह रूपांतरण सर्व-पवित्र आत्मा की क्रिया और प्रेरणा द्वारा संपन्न होता है। तो उस पुरोहित से कितनी पवित्रता और शुद्धता की आवश्यकता है जो दिव्य देह को स्पर्श करता है, और कितनी धृष्टता की आवश्यकता है जब उसे ईश्वर और मानवता के बीच एक मध्यस्थ के रूप में कार्य करना होता है, जिसके मध्यस्थों में ईश्वर की परम पवित्र माता के साथ-साथ स्वर्ग के स्वर्गदूतों की पंक्तियाँ, और सभी युगों के सभी संत शामिल हैं? मुझे लगता है कि वे दैवीय, या महादूत-सदृश हैं: क्योंकि किसी के गुणों का उसके पद के अनुरूप होना चाहिए।

5. हे भाई, तुम्हें यह ध्यान देना चाहिए कि पवित्र दान, जिन्हें अभिषिक्त किया जाना है, विश्वास-प्रमाण के बाद बिना ढके रखे जाते हैं ताकि, एक प्रकार से कहें तो, वे उनकी प्रार्थना कर सकें जो उन्हें अर्पित करते हैं, और स्वर्ग में रहने वाले के प्रति अकथनीय स्वरों में पुकार सकें, ताकि वह उन्हें तुच्छ न समझे, बल्कि उन पर दृष्टि डाले, यह स्मरण करते हुए कि ईसा मसीह ने पापियों के लिए स्वेच्छा से स्वयं को थकाया, उनका अनुपम अवतरण और मानवता के प्रति प्रेम में उनका बलिदान; क्योंकि उन्होंने अपने दुःखों के द्वारा धर्मी लोगों को मुक्ति और उद्धार नहीं दिया, बल्कि हम पर, जो गिर गए थे, दया की और हमें उठा लिया, क्योंकि वह भला और निष्पाप है।

6. यद्यपि आप शुद्ध प्रार्थना के लिए प्रयत्न करते हैं, जो अदेह मन को अदेह रीति से परमेश्वर के साथ एक करती है, और आप उस बिंदु पर पहले ही पहुँच चुके हैं जहाँ, एक दर्पण की तरह, आप इस सांसारिक जीवन के अंत के बाद अपनी प्रतीक्षा कर रही नियति को देखते हैं—आत्मा की प्रतिज्ञा प्राप्त करके और हर इंद्रिय से तथा पूर्ण निश्चय के साथ अपने भीतर स्वर्ग के राज्य को प्राप्त करके; तथापि, मृत्यु की पूर्वज्ञान के बिना अपने आप को देह से मुक्त होने न देना, बल्कि इसके लिए विनम्रता से प्रार्थना करना और मन ही मन इस बात का निश्चय रखना कि यदि ईश्वर को प्रसन्न हो और यह तुम्हारे लिए लाभदायक हो, तो तुम अपने प्रस्थान से पहले इसे प्राप्त करोगे, – जिसके लिए आपको दिन-रात स्वयं को तैयार करना चाहिए, सभी भय को त्यागकर, मानो आपने वायुमंडलीय क्षेत्रों को पार कर लिया हो और दुष्टात्माओं से बच निकले हों, ताकि आप पहले से ही धैर्य और बिना भय के स्वर्गीय क्षेत्रों में हों, स्वर्गदूतों की पंक्तियों में रखे गए और पुराने समय से चुने गए धर्मी लोगों में गिने गए हों, और परमेश्वर को, जहाँ तक यह संभव है, निहारते हुए, या हर तरह से हमारे लिए उनके द्वारा तैयार की गई आशीषों को निहारते हुए, और वचन परमेश्वर पर मनन करते हुए, जो अपनी किरणों से स्वर्ग के ऊपर की सभी चीजों को प्रकाशित करते हैं, जिनकी

उपासना उनके परम पवित्र शरीर के साथ, पिता और पवित्र आत्मा के साथ, सभी स्वर्गीय शक्तियों और सभी संतों द्वारा एक ही उपासना के कार्य से की जाती है। आमीन।

सनाई के पूजनीय फिलोथेओस

उनका संक्षिप्त परिचय

हमारे पूजनीय पिता फिलोथियस सिनाई पर्वत पर मठवासी समुदाय के मठाध्यक्ष थे, और इस प्रकार उन्हें 'सिनाई के' के नाम से जाना जाने लगा। यह ज्ञात नहीं है कि वे कब जीवित थे या कब उनकी मृत्यु हुई। उनका वर्तमान कार्य, जो 40 अध्यायों में विभाजित है, बहुत ही सुंदरता से रचा गया है और इतनी महान आध्यात्मिक बुद्धिमत्ता और आत्मा-रक्षक अंतर्दृष्टि से ओत-प्रोत है कि इसे शब्दों में बयां करना असंभव है। इसलिए, इसे संयम पर अन्य पैट्रिस्टिक लेखनों के संग्रह से अलग करना अनुचित माना जाता है। – और यह अधिक ध्यान का पात्र है: क्योंकि यदि कोई इसे संयम, मन की रक्षा और हृदय की पवित्रता के लिए एक सटीक व्याख्या और एक सच्चा नियम कहे, तो वे सत्य से भटक नहीं रहे होंगे।

हमारे पवित्र पिता सिनाई के फिलोथियोस द्वारा संयम पर 40 अध्याय

1. हमारे भीतर एक मानसिक संघर्ष है, जो शारीरिक संघर्ष से कहीं अधिक कठिन है। धर्मपरायणता के खोजी को इसके लिए प्रयास करना चाहिए और अपने मन से इस लक्ष्य का अनुसरण करना चाहिए, ताकि मोती या कीमती रत्न की तरह, ईश्वर की स्मृति हृदय में पूरी तरह से संजोई जा सके। एकमात्र सच्चे ईश्वर को अपने हृदय में प्राप्त करने के लिए, मनुष्य को सब कुछ, यहाँ तक कि शरीर को भी, त्याग देना चाहिए और इसी जीवन को भी तुच्छ समझना चाहिए। क्योंकि संत क्रिसोस्टोम ने कहा है कि ईश्वर का एक ही बुद्धिमानी भरा दर्शन दुष्टों का नाश करने के लिए पर्याप्त है।

२. आध्यात्मिक युद्ध करने वालों को, सभी उत्साह के साथ, दिव्य शास्त्रों के अनुसार, आध्यात्मिक अभ्यासों को स्वयं के लिए चुनना चाहिए और उन्हें मन पर उपचारक पट्टी के रूप में लगाना चाहिए। इस प्रकार, एक व्यक्ति कहता है, सुबह से ही, मनुष्य को साहसपूर्वक और अडिग होकर हृदय के द्वार पर खड़ा होना चाहिए, ईश्वर की दृढ़ स्मृति और आत्मा में यीशु मसीह की अनवरत प्रार्थना के साथ, और इस मानसिक सतर्कता द्वारा पृथ्वी के सभी पापियों को मार डालना चाहिए, अर्थात्, ईश्वर के एक निष्ठावान, दृढ़ और आत्मा-उन्नत करने वाले स्मरण द्वारा, प्रभु के लिए, शक्तिशाली लोगों के सिरों और संघर्ष को भड़काने वाले विचारों की उत्पत्ति को काट डालना: क्योंकि, जैसा कि हम जानते हैं, मन के तपस्वी श्रमों में भी एक निश्चित दिव्य व्यवस्था और क्रियाओं का क्रम होता है। – इस प्रकार (राज्य के लिए) आत्म-संयम करते हुए परिश्रम करना चाहिए, जब तक भोजन का निर्धारित समय न आ जाए। इसके बाद, प्रभु का धन्यवाद करते हुए, मानवता के प्रति एक ही प्रेम से, जो हमें आध्यात्मिक और शारीरिक दोनों प्रकार के भोजन से पोषित करती है, मनुष्य को मृत्यु के स्मरण और चिंतन द्वारा आत्म-संयम करना चाहिए। और ठीक अगले दिन, हमें फिर से आत्म-अनुशासन के साथ अपने सुबह के कर्तव्यों को शुरू करना चाहिए। क्योंकि ऐसी दैनिक दिनचर्या के साथ भी, हम प्रभु में, अपने मन के शत्रु के जालों से मुश्किल से ही बच पाएँगे। हालाँकि, एक बार हमारे भीतर स्थापित हो जाने पर, यह अभ्यास निम्नलिखित तीन सद्गुणों को जन्म देता है: विश्वास, आशा और प्रेम, जिनमें से विश्वास हमें परमेश्वर के सच्चे भय के लिए तैयार करता है, जबकि आशा, दासता के भय पर विजय प्राप्त करके, एक व्यक्ति को परमेश्वर के प्रेम की ओर ले जाती है। यदि आशा हमें लज्जित नहीं करती, जो आमतौर पर एक द्वैध प्रेम को जन्म देती है जिस पर व्यवस्था और भविष्यवक्ताओं का आधार है; तो, अपनी ओर से, प्रेम कभी विफल नहीं होता, न तो इस युग में—क्योंकि यहाँ, अपने सहभागी में, यह दैवी आज्ञाओं की पूर्ति का कारण है—और न ही आने वाले युग में।

3. मन में मौन रहने वालों को पाना वास्तव में बहुत दुर्लभ है। यह केवल उन लोगों की पहचान है जो दैवीय अनुग्रह को अपनी ओर आकर्षित करने और उससे प्रवाहित होने वाले आध्यात्मिक सांत्वना से भर जाने के लिए हर संभव साधन का उपयोग करते हैं। – और इसलिए, यदि हम भी, उनके समान, मन की रक्षा और संयम में आध्यात्मिक अनुशासन—मसीह के इस दर्शन—का अभ्यास करना चाहते हैं, तो आइए इस मार्ग की शुरुआत कई प्रकार के भोजन से परहेज़ करके करें, और संकल्प लें कि हम भोजन और पेय यथासंभव कम मात्रा में ही ग्रहण करेंगे। संयम को सही मायने में एक मार्ग कहा जाता है, क्योंकि यह हमें राज्य की ओर ले जाता है—वह राज्य जो हमारे भीतर है और वह जो

भविष्य में है—और यह मन की एक कार्यशाला है, क्योंकि यह मन के स्वभाव को परिष्कृत और पॉलिश करता है, और भावुक को निर्लिप्ति में बदल देता है। यह प्रकाश की एक छोटी सी खिड़की की तरह भी है, जिसके माध्यम से ईश्वर, पास आकर, मन को स्वयं का दर्शन कराते हैं।

४. जहाँ विनम्रता, संयम और सावधानी के साथ ईश्वर का स्मरण, और शत्रुओं के विरुद्ध बारंबार प्रार्थना होती है—वहाँ ईश्वर का स्थान, या हृदय का स्वर्ग है, जिसमें राक्षसों का समूह खड़ा होने से डरता है, क्योंकि ईश्वर इसी स्थान में वास करते हैं।

5. बकबक से अधिक विनाशकारी और अनियंत्रित जीभ से अधिक हानिकारक कुछ भी नहीं है; और कुछ भी आत्मा की संपदा को इतना अधिक परेशान और नष्ट नहीं करता है। क्योंकि हम जो कुछ भी प्रतिदिन अपने भीतर बनाते हैं, बकबक उसे फिर से नष्ट कर देती है; और जिसे हम परिश्रम से इकट्ठा करते हैं, उसे आत्मा जीभ की दुष्टता के कारण फिर से बर्बाद कर देती है। इससे (अनियंत्रित जीभ) बदतर क्या है? यह एक अनियंत्रित बुराई है। हमें इसकी एक सीमा निर्धारित करनी चाहिए, इसे लगाम देनी चाहिए और इसे नियंत्रित करना चाहिए, और, कह सकते हैं, इसे केवल आवश्यकता की सेवा करने के लिए मजबूर करना चाहिए। – और (अनियंत्रित) जीभ से होने वाली आध्यात्मिक हानि की पूरी सीमा को कौन व्यक्त कर सकता है?

६. आध्यात्मिक यरूशलेम में, मन के ध्यान में प्रवेश करने वाला पहला द्वार, ओठों का विवेकी मौन है, भले ही मन अभी शांत न हो; दूसरा है भोजन और पेय में संयम (एक छोटे से माप द्वारा परिभाषित); तीसरा, जो मन और शरीर को शुद्ध करता है, मृत्यु का अखंड स्मरण और चिंतन है। एक बार इस अंतिम की सुंदरता को देखकर, और आँखों से नहीं बल्कि आत्मा से, इससे प्रभावित और प्रसन्न होकर, मैं इसे जीवन भर के लिए अपनी साथी बनाने की इच्छा रखने लगा, क्योंकि मैं इसकी अनुग्रह और वैभव से प्रेम कर बैठा था। वह कितनी विनम्र, कितनी आनंदपूर्वक दुखी, कितनी गंभीर है; वह आने वाले धर्मपरायण कष्ट से कितनी भयभीत है और (संयोगवश) जीवन के लंबा होने से कितनी डरती है! उसकी शारीरिक आँखों से आमतौर पर उपचारात्मक जीवन-जल बहता है, और उसकी मानसिक आँखों से – बुद्धिमानी भरे विचारों का एक प्रचुर स्रोत, जो बहते और कूदते हुए मन को प्रसन्न करता है। जैसा कि मैंने कहा, यह वही थी, आदम की बेटी—अर्थात् मृत्यु का स्मरण—जिसे मैं हमेशा अपना साथी बनाने, उसके साथ सोने, उससे बात करने और उसके साथ मिलकर यह पता लगाने की लालसा करता था कि इस शरीर को त्यागने के बाद मेरा क्या होगा; लेकिन अक्सर यह हानिकारक विस्मृति—शैतान की यह अंधकारमय बेटी—मुझे ऐसा करने से रोक देती थी।

7. एक ऐसा युद्ध है जिसमें दुर्भावना की आत्माएँ विचारों के माध्यम से गुप्त रूप से आत्मा पर युद्ध छेड़ती हैं। क्योंकि जैसे आत्मा अदृश्य है, वैसे ही वे दुष्ट शक्तियाँ, उसकी प्रकृति के अनुरूप, उस पर एक अदृश्य युद्ध से हमला करती हैं। और उन दोनों में, और उसमें, हथियार, रणनीतियाँ (सैनिकों की तैनाती और युद्ध का संचालन), धोखा देने वाली युक्तियाँ और भयानक हमले (डर पैदा करने के लिए एक तीव्र हमला), साथ ही आपसी हाथ-अभी-हाथ मुकाबला, दोनों पक्षों की जीत और हार देखी जा सकती है। हम जिस मानसिक युद्ध का वर्णन कर रहे हैं, उसमें एक भौतिक युद्ध की तुलना में केवल एक चीज की कमी है: युद्ध की घोषणा के लिए एक निश्चित समय। एक वास्तविक युद्ध में, आमतौर पर एक समय निर्धारित किया जाता है और प्रासंगिक नियमों का पालन किया जाता है; लेकिन यह (काल्पनिक) युद्ध अचानक, बिना किसी चेतावनी के, सीधे दिल की गहराइयों में हमला करता है, और पासा फेंकने के बाद (अपनी पसंद से; या यूँ कहें कि सुझाए गए विचारों के प्रति दिल की सहमति से हावी होने के बाद), यह पाप के माध्यम से आत्मा को मार डालता है। हमारे विरुद्ध यह लड़ाई और संघर्ष किस कारण से और किस उद्देश्य के लिए लड़ा जाता है? यह इसलिए है ताकि हम परमेश्वर की इच्छा को पूरा न कर सकें, जिसके लिए हम प्रार्थना करते हैं, *यह* कहते हुए: *'हम में तेरी इच्छा पूरी हो'* (लूका 11:2), अर्थात् परमेश्वर की आज्ञाएँ। और यदि कोई, अपना मन स्थिर करके और प्रभु में पूर्ण चित्तवृत्ति से, भटकना बंद कर दे, और अपने (अदृश्य शत्रुओं के) आक्रमणों (हृदय में) और उनकी उलझनों (सचेत मन के साथ टकराव) पर, जो कल्पना की कल्पनाओं में होती हैं, ध्यानपूर्वक निगाह रखना शुरू कर दे, तो वे इसे अनुभव से पहचान लेंगे। इसलिए, प्रभु ने दुष्ट दानवों के विरुद्ध अपना उद्देश्य निर्देशित किया है, और, जैसा कि परमेश्वर उनके षड्यंत्रों को पूर्व में जानता है, उसने उनके उद्देश्यों के विरोध में अपनी आज्ञाएँ स्थापित की हैं, और उनका उल्लंघन करने वालों को चेतावनी दी है।

8. एक बार जब हम आत्म-संयम और पाँच इंद्रियों से उत्पन्न होने वाले दृश्य दुष्टताओं से मुँह मोड़ने में कुछ कौशल प्राप्त कर लेंगे, तो हम यीशु के साथ अपने हृदयों की रक्षा करने में सक्षम होंगे और उनसे प्रबुद्ध होंगे, और, एक निश्चित भावनात्मक गर्माहट के साथ, अपने मन से उनकी भलाई का स्वाद लेंगे। क्योंकि हमने हृदय को शुद्ध करने के नियम को केवल इसीलिए अपनाया है कि जब बुराई के विचारों के बादल हृदय के वातावरण से भगा दिए जाएँ और अथक ध्यान से दूर हो जाएँ, तो हम, एक स्पष्ट वाले दिन की तरह, धार्मिकता के सूर्य – यीशु – को स्पष्ट रूप से

देख सकें और उनकी महमिा के वचनों से अपने मन में कुछ हद तक प्रबुद्ध हो सकें; क्योंकि ये आमतौर पर सभी को प्रकट नहीं होते, बल्कि केवल उन्हीं को जो अपने मन को शुद्ध करते हैं।

९. हमें इस मानसकि स्थतिकिो प्रतदिनि बनाए रखना चाहिए, जैसा कि परमेश्वर के साक्षात सामने खड़े होने वाले के लिए उचति है। क्योंकि भविष्यवक्ता होशे कहते हैं: *'दया और न्याय को बनाए रखो, और अपने परमेश्वर के नकिट आओ'* (होशे १२:६)। फरि, भविष्यवक्ता मलाकी परमेश्वर की ओर से कहते हैं: *'एक पुत्र अपने पति का सम्मान करता है, और एक सेवक अपने स्वामी से डरता है; परन्तु यदि मैं पिता हूँ, तो मेरा सम्मान कहाँ है? और यदि मैं स्वामी हूँ, तो मेरा भय कहाँ है?' सर्वशक्तिमान प्रभु कहते हैं* (1:6)। प्रेरति भी लिखते हैं: *"आओ हम शरीर और आत्मा दोनों की हर अशुद्धि से स्वयं को शुद्ध करें"* (2 कुरन्थियों 7:11)। और बुद्धि सिखाती है: *"अपने मन को पूरी सावधानी से रखो; क्योंकि उससे जीवन के स्रोत नकिलते हैं"* (नीतिवचन 4:23)। और प्रभु यीशु मसीह स्वयं आज्ञा देते हैं: *"पात्र के भीतर को साफ़ कर, ताकि बाहर को भी साफ़ हो जाए"* (मत्ती 23:26)।

10. अनुचित, व्यर्थ बातों का फल कभी-कभी सुनने वालों का हमारे प्रति द्वेष होता है; कभी-कभी निंदा और उपहास, जब वे हमारे शब्दों की मूर्खता को समझते हैं; कभी-कभी अंतरात्मा का कलंक; और कभी-कभी परमेश्वर की ओर से दंड और पवित्र आत्मा का दुखति होना: जो किसी भी अन्य चीज़ से अधिक भयानक है।

11. जो प्रभु के नाम पर अपने हृदय को शुद्ध करके और उसमें से पाप को जड़ से उखाड़कर, दैवीय ज्ञान प्राप्त करने का प्रयास करता है और अपने मन से वह देखने में सफल होता है जो कई लोगों के लिए अदृश्य है, उसे इस कारण से किसी के प्रति घमंड नहीं करना चाहिए। क्योंकि सृष्टि की प्राणियों में अद्रव्य से अधिक शुद्ध क्या है, और एक स्वर्गदूत से अधिक सर्वज्ञ क्या है? फरि भी वह, घमंडी हो जाने के कारण, बिजली की कड़ak की तरह स्वर्ग से गिरा दिया गया। परमेश्वर ने उसके घमंड को अशुद्धता माना। – यह सर्वविदित है कि सोने की खुदाई करने वाले कैसे काम करते हैं (अर्थात्, ज्ञान के सोने को प्राप्त करने के लिए, वे पृथ्वी के नीचे होने के समान, सभी चीजों के नीचे होते हैं)।

12. प्रेरति कहते हैं: *'जो कोई भी खेलों में भाग लेता है, वह हर बात में संयम रखता है'* (1 कुरन्थियों 9:25)। क्योंकि भोजन से भरे पेट के साथ, प्रधानताओं के विरुद्ध, अदृश्य शत्रु-सेनाओं के विरुद्ध, उन लोगों के विरुद्ध हथियार उठाना असंभव है, जो इस शरीर से बँधे हुए हैं, जो भारी है और आत्मा के विरुद्ध सदा कामवासना करता है। *'क्योंकि परमेश्वर का राज्य खाने-पीने का विषय नहीं है'* (रोमियों 14:17)। *'जो मन शरीर की ओर लगा रहता है, वह परमेश्वर से वैर रखता है; क्योंकि वह परमेश्वर की व्यवस्था के अधीन नहीं होता, और न ही हो सकता है'* (रोमियों 8:7)। यह स्पष्ट रूप से ऐसा नहीं कर सकता, क्योंकि, सांसारिक और शरीर के तरल पदार्थों, रक्त और बलगम से मिलकर बना होने के कारण, यह हमेशा सांसारिक चीज़ों की ओर झुकता है और इस वर्तमान युग के विनाशकारी सुखों में आनंद लेता है। *"क्योंकि जो देह के विषय में मन लगाता है, वह परमेश्वर के विरोधी है; क्योंकि वह परमेश्वर की व्यवस्था के अधीन नहीं हो सकता"* (रोमियों 8:8)।

१३. यदि हम सच्चे मन से अपने मन को प्रभु में बनाए रखने के लिए चिंतित हैं, तो हमें महान नम्रता की आवश्यकता है, सबसे पहले परमेश्वर के संबंध में, और (दूसरे) लोगों के संबंध में। हमें हमेशा और हर तरह से अपने हृदय को तोड़ना चाहिए, और उसे नम्र करने वाली हर उस बात को खोजकर उस पर अमल करना चाहिए। जैसा कि सर्वविदित है, संसार में हमारे पूर्व जीवन की स्मृति हृदय को तोड़ती और विनम्र करती है, यदि हम इसे जैसा कि हमें करना चाहिए, वैसे याद करें। इसी प्रकार, हमारे यौवन के सभी पापों की स्मृति, जब कोई उन्हें मन में एक-एक करके याद करता है, तो आमतौर पर हमें विनम्र भी करती है और आँसू भी लाती है, और हमें परमेश्वर की हार्दिक धन्यवाद-अर्पण के लिए प्रेरित करती है, ठीक वैसे ही जैसे मृत्यु की सदा-प्रभावी (हृदय-स्पंदनकारी) स्मृति करती है, जो एक ही समय में मिठास के साथ आनंदमय विलाप और मन को संयत करने का कारण बनती है। सबसे बढ़कर, हमारे प्रभु यीशु मसीह के दुख-क्लेश की स्मृति हमारे अहंकार को विनम्र बनाती है और हमें अपनी दृष्टि जमीन पर टिकाने के लिए प्रेरित करती है, जब कोई उन्हें अपनी स्मृति में याद करता है और उन्हें पूरी विस्तार से याद करता है। इससे आँसू भी निकलते हैं। इसके अलावा, ईश्वर का महान आशीर्वाद—जो विशेष रूप से हम पर प्रदान किया गया है—वास्तव में आत्मा को विनम्र बनाता है, जब कोई उन्हें विस्तार से गिनता है और उन पर मनन करता है: क्योंकि हम घमंडी (ईश्वर के प्रति कृतघ्न) राक्षसों के खिलाफ एक संघर्ष में लगे हुए हैं।

14. आत्म-महत्व के कारण, आत्मा के लिए इन उद्धारकारी उपायों से दूर न रहें, यदि आपको उनकी आवश्यकता है। क्योंकि अन्यथा आप न तो मसीह के शिष्य हैं, और न ही पौलुस के अनुयायी, जो अपने बारे में कहते हैं: *'मैं प्रेरति कहलाने के योग्य नहीं हूँ'* (1 कुरन्थियों 15:9); और दूसरी जगह यह स्वीकार करते हैं कि वे पहले एक ईश्वर-निन्दक, एक उत्पीड़क और एक हिंसक व्यक्ति थे (1 तीमुथियुस 1:13)। – हे घमंडी, क्या तू देखता है? यह एक

संत है, फिर भी उसने अपना पूर्व जीवन नहीं भूला है। वास्तव में, सृष्टि की शुरुआत से लेकर अब तक, सभी संतों ने स्वयं को ईश्वर के इस परम पवित्र वस्त्र (अर्थात् विनम्रता) में लपेटा है। हमारे प्रभु यीशु मसीह स्वयं, परमेश्वर होने के नाते—अनंत, अगोचर और अकथनीय—अपने संपूर्ण देहधारी जीवन में नम्रता का वस्त्र धारण किए हुए थे; इसलिए पवित्र नम्रता को सही मायने में एक दिव्य गुण, एक प्रभु की आज्ञा और एक वस्त्र कहा जाना चाहिए। इसी प्रकार, स्वर्गदूत और वे सभी दिव्य प्रकाशमान शक्तियाँ इस सद्गुण का अभ्यास करती हैं और इसे बनाए रखती हैं, यह जानते हुए कि घमंडी शैतान किस पतन से गिरा था, और वह इस बात का उदाहरण कैसे है कि किसी को गिरने से कैसे डरना चाहिए। (इस पाप में), दुष्ट गहराई में पड़ा है, जो अपने अहंकार के कारण परमेश्वर के सामने सभी प्राणियों में सबसे अधिक अपमानजनक के रूप में प्रकट हुआ है। हम यह भी जानते हैं कि आदम अहंकार के कारण कैसे गिरा। हमारे सामने इस सद्गुण के ऐसे उदाहरणों को देखते हुए, जो घमंड की ओर ले जाता है, हमें हमेशा हर तरह से, अपनी पूरी क्षमता से, स्वयं को नम्र बनाना चाहिए, और ऊपर बताई गई उपचारों का उपयोग करना चाहिए । आइए हम आत्मा और शरीर में, अपने तर्क में, अपनी इच्छाओं में, अपनी वाणी में, अपने विचारों में, अपने बाहरी स्वरूप में, बाहरी और आंतरिक दोनों रूप से स्वयं को नम्र बनाएँ। हमें विशेष रूप से इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि यीशु मसीह, परमेश्वर का पुत्र और स्वयं परमेश्वर, जो हमारी जगह पर खड़े हैं, हमारे विरुद्ध न हो जाएँ। *'क्योंकि यहोवा घमण्डी लोगों का विरोध करता है, पर नम्र लोगों पर अनुग्रह करता है'* (नीतिवचन 3:34)। *'जो घमण्डी है वह यहोवा के सामने निर्मल नहीं'* (नीतिवचन 16:5); *'परन्तु जो अपना आप नीचा करता है, वह ऊँचा किया जाएगा'* (लूका 18:14)। *'मेरे से सीखो, क्योंकि मैं मन में नम्र और दीन हूँ' उद्धारकर्ता कहते हैं* (मत्ती 11:29)। – इसलिए, हमें सावधान रहना चाहिए।

15. *'अपने विषय में सावधान रहो,'* प्रभु कहते हैं, *'कि कहीं ऐसा न हो कि तुम्हारे हृदय भोग-विलास और इसी प्रकार की अन्य बातों से भारी हो जाएँ'* (लूका 21:34)। प्रेरित के वचन के अनुसार, *'जो कोई प्रतियोगिता के लिए अभ्यास करता है, वह सब बातों से परहेज़ करता है'* (1 कुरिन्थियों 9:25)। पवित्र शास्त्रों में हमसे कही गई इन सभी बातों को जानकर, हमें संयम के साथ अपना जीवन यापन करना चाहिए। सबसे पहले, विभिन्न प्रकार के खाद्य पदार्थों का त्याग करके, हमें अपने शरीर को एक सदाचारी आदत और व्यवस्था का आदी बनाना चाहिए, और उन्हें संयम से भोजन प्रदान करना चाहिए। क्योंकि इस तरह वासना के उभार को आसानी से वश में किया जा सकता है और तर्क के नियंत्रण में लाया जा सकता है; और, सच्चाई कहें तो, क्रोध के उभार को भी। लेकिन इस तरह अन्य पापों से भी परहेज़ करना आसान हो जाता है, क्योंकि जो लोग अपने कर्मों द्वारा सदाचार का अभ्यास करते हैं और अनुभव रखते हैं, वे भी सर्व-पार परहेज़—अर्थात् हर तरह की बुराई से दूर रहना—को स्वयं में एक सद्गुण मानते हैं। इस प्रकार, पवित्रता का कारण—सभी अच्छाइयों के स्रोत और दाता, ईश्वर के बाद—अतिभिक्षण से संयम है, जिसका पालन हर दिन और मापा हुआ किया जाता है।

16. जैसे शैतान, परमेश्वर के विरोध में और परमेश्वर की इच्छा—अर्थात् आज्ञाओं—को पूरा होने से रोकने की अपनी इच्छा में, उसकी पूर्ति में बाधा डालने का प्रयास करके हमसे परमेश्वर के विरुद्ध युद्ध छेड़ता है: इसलिए फिर, परमेश्वर, यह चाहकर कि उसकी पवित्र इच्छा—अर्थात्, जैसा कि मैंने कहा, दिव्य और जीवन-दायक आज्ञाएँ—हमारे द्वारा पूरी हों, अपनी ही शक्ति से दुष्ट की विनाशकारी मंशा को विफल कर देता है। ईश्वर स्वयं, मानव दुर्बलता के माध्यम से लोगों को अपने आज्ञाओं का उल्लंघन करने के लिए लुभाकर, शत्रु की उस मूर्खतापूर्ण इच्छा को विफल कर देते हैं कि वे उनका विरोध करें। और विचार कीजिए: क्या यह इसी प्रकार नहीं होता? – सभी दैवी आज्ञाएँ आत्मा के त्रैगुण स्वभाव के लिए नियम निर्धारित करती हैं, और जो आज्ञाएँ वे देती हैं, उनके द्वारा इसे सुदृढ़ बनाती हैं। जो लोग उनका कड़ाई से पालन करते हैं, उनके लिए यह त्रिगुणित स्वभाव वास्तव में स्वस्थ हो जाता है। लेकिन शैतान दिन-रात आत्मा के इसी त्रिगुण स्वभाव के विरुद्ध युद्ध करता है। तो, यदि शैतान आत्मा के त्रिगुण स्वभाव के विरुद्ध युद्ध करता है, तो यह स्पष्ट है कि वह इसके द्वारा मसीह की आज्ञाओं के विरुद्ध युद्ध कर रहा है; क्योंकि मसीह, अपनी आज्ञाओं के द्वारा, आत्मा के त्रिगुण स्वभाव पर कानून थोपते हैं—अर्थात्, आत्मा की क्रोध करने वाली, इच्छा करने वाली और सोचने वाली शक्तियों पर। – और विचार करें: यह चेतावनी कि जो कोई बिना कारण अपने भाई पर क्रोध करता है, वह न्याय का पात्र होगा (मत्ती 5:22), और उसके बाद के उसकी आज्ञाएँ—ये सब क्रोधशील भाग के लिए उपचार हैं। शत्रु इस आज्ञा और इसके साथ दी गई अन्य आज्ञाओं को कलह, द्वेष और ईर्ष्या के विचारों के माध्यम से भीतर से तोड़ने का प्रयास करता है। यह विरोधी (हमारा और ईश्वर का) जानता है कि क्रोधशील भाग का शासक विचार की शक्ति है। इसीलिए वह पहले—जैसा कि मैं पहले ही कह चुका हूँ—संदेह, ईर्ष्या, कलह, झगड़ालूपन, चालाकी और अहंकार जैसे विचारों के माध्यम से अपने तीरों को इसी पर तानता है; और वह मानसिक शक्ति को उसके उचित अधिकार को त्यागने के लिए प्रेरित करता है, और, लगाम स्वयं क्रोधशील भाग को

सौंपकर, उसे बिना किसी नियंत्रण के छोड़ देता है। तब, अपने परिचारक को हटाकर, चिड़चिड़ाहट मुँह के द्वारा बिना रोक-टोक उन सभी बातों को शब्दों में बहा देती है जो पहले हृदय में जमा थीं—वे सभी बातें जो तब तक शत्रुतापूर्ण विचारों के माध्यम से वहाँ संजोई गई थीं, जब मन उपेक्षा की स्थिति में था। तब हृदय परमेश्वर की आत्मा से या दैवी विचारों से नहीं, बल्कि (अनियंत्रित) द्वेष से भर जाता है: क्योंकि, जैसा कि प्रभु कहते हैं, 'मनुष्य का मुँह उस पर से निकलता है जो उसका हृदय भरपूर होता है' (लूका 6:45)। जब, इस तरह, दुष्ट व्यक्ति किसी व्यक्ति को उस बिंदु पर ले जाता है जहाँ वे शब्दों में वह सब कुछ बकने लगते हैं जो पहले भीतर छिपा और साज़िश के तहत था, तो यह (शत्रु का) कैदी न *केवल* अपने भाई को *'कैंसर या पागल'* कहेगा, बल्कि सबसे अधिक कष्टप्रद शब्द बोलेगा, और यहाँ तक कि हत्या भी कर देगा। – बिना कारण क्रोध न करने की ईश्वर द्वारा दी गई आज्ञा के संबंध में दुष्ट द्वारा अपनाई जाने वाली यही चालाकियाँ हैं। – फिर भी, न केवल हानिकारक शब्दों से बल्कि उनसे होने वाली परिणतियों से भी बचना संभव है, यदि जैसे ही चिड़चिड़ाहट उत्पन्न होती है, प्रार्थना और अपने भीतर हो रही गतिविधि पर ध्यान देने के द्वारा, विचार (वे विचार जो आग में घी डालते हैं)। इस प्रकार, आत्माओं का विनाशक अपना दुष्ट उद्देश्य तभी प्राप्त करता है, जब उसे कोई ऐसा व्यक्ति मिल जाता है जो उसके द्वारा उनके हृदय में बोए गए विचारों के प्रभाव में, दैवी आज्ञा को तोड़ने के लिए तैयार हो।

१७. और दिव्य प्रभु की आज्ञा वासना के पहलू के संबंध में क्या निर्धारित करती है? *'जो कोई भी किसी स्त्री को वासना की दृष्टि से देखता है, वह अपने हृदय में उसके साथ व्यभिचार कर चुका है'* (मत्ती ५:२४)। – और यह देखते हुए कि ऐसा आज्ञा-विधान दिया गया है, दुष्ट मनुष्य इस आज्ञा के विरुद्ध अपने मन में किस प्रकार का जाल बुनता है? चूंकि कामोत्तेजक वस्तुएँ दूर होती हैं, वह अपने भीतर की ओर मुड़ता है, और वहाँ उक्त आज्ञा के विरुद्ध एक कामुक युद्ध छेड़ता है। – वह आत्मा पर अश्लील छवियों को चित्रित और अंकित करके ऐसा करता है; हो सकता है कि ऐसे शब्द भी सुने जाएँ जो कामवासना को जगाते हैं; और ऐसी कई अन्य बातें हैं जो मानसिक लड़ाइयों में परीक्षा झेल चुके लोगों को पता हैं।

18. अंत में, कौन सा आज्ञापत्र मन की शक्ति के लिए मार्गदर्शक सिद्धांत प्रदान करता है? *'परन्तु मैं तुम से कहता हूँ कि बिलकुल शपथ न खाओ। तुम्हारा 'हाँ' 'हाँ' और तुम्हारा 'नहीं' 'नहीं' रहे'* (मत्ती 5:34)। इसके अलावा: *'जो कोई अपनी सारी संपत्ति का परित्याग नहीं करता, वह मेरा चेला नहीं हो सकता'* (लूका 14:33)। और: *'संकीर्ण द्वार से प्रवेश करो'* (मत्ती 7:13)। क्या ये बौद्धिक क्षमता के लिए आज्ञाएँ हैं? – हमारा विरोधी, इस बौद्धिक क्षमता को भी—एक पराक्रमी सेनापति की तरह—अपने अधीन करना चाहता है, वह पहले इसे लालच और आलस्य के विचारों के माध्यम से सही निर्णय लेने की क्षमता से वंचित कर देता है; इस प्रकार अन्य शक्तियों पर इसके अंतर्निहित अधिकार से वंचित करके और एक नशे में धुत नेता का मज़ाक उड़ाने की तरह इसका मज़ाक उड़ाकर, वह इसे अपनी सुझावों और इच्छाओं को पूरा करने के लिए मजबूर करता है, और इस काम में चिड़चिड़ापन और वासना को अपना साथी बनाता है। ये शक्तियाँ—अर्थात् कामुक और चिड़चिड़ी—मानसिक शक्तियों के रूप में रह जाने पर, हमारे पाँचों इंद्रियों को आज्ञाकारी सेवकों की तरह, प्रकट पापों के उपकरणों में बदलने लगती हैं। और इससे कितने पाप और पतन होते हैं! जब मन भीतर से इंद्रियों को नियंत्रित और बाँधता नहीं है, तो आँखें जिज्ञासा के कारण इधर-उधर भटकती हैं, कान तुच्छ बातें सुनने में आनंद लेते हैं, घ्राण इंद्रिय विलासी हो जाती है, मुँह अनियंत्रित हो जाता है, और हाथ उस चीज़ को छूने के लिए बढ़ते हैं जिसे छूना उचित नहीं है। इसके बाद सत्य के स्थान पर असत्य, बुद्धिमत्ता के स्थान पर मूर्खता, ब्रह्मचर्य के स्थान पर व्यभिचार, और धैर्य के स्थान पर कायरता आ जाती है। और ये चार प्रमुख सद्गुण—अर्थात् सत्य, ज्ञान, ब्रह्मचर्य और धैर्य—ऐसे स्वभाव के हैं कि यदि वे आत्मा के भीतर दृढ़ और मजबूत हों, तो वे आत्मा के तीन भागों पर अच्छी तरह से शासन करते हैं; और एक सुशासित आत्मा इंद्रियों को हर अनुचित चीज़ से नियंत्रित रखती है। और फिर मन, जब अन्य शक्तियाँ ईश्वर की इच्छानुसार शासित होती हैं और उनका आज्ञापालन करती हैं, तो वह शांति में स्थित होकर, मन की लड़ाई में आसानी से विजयी हो जाता है। लेकिन जब, लापरवाही के कारण, वह अन्य शक्तियों को भ्रम में पड़ने देता है, तो, दुष्ट की चालाकी से पराजित होकर, वह दैवी आज्ञाओं का उल्लंघन करता है। क्योंकि आज्ञाओं का उल्लंघन अनिवार्य रूप से, किसी न किसी तरह, या तो उचित पश्चाताप या आने वाले युग में पीड़ा को जन्म देता है। और इसलिए मन का सदा संयम में रहना अत्यंत सदाचारी कार्य है; क्योंकि इससे, अपनी प्रकृति के अनुरूप स्थापित होकर, यह दिव्य आज्ञाओं का सच्चा रक्षक बन जाता है।

19. (पाप-प्रेमी) आत्मा, दुर्भावना की आत्माओं द्वारा एक दीवार की तरह घेर ली गई और बंद कर दी गई, अंधकार की जंजीरों से बँधी होती है – और इसे घेरे हुए इस अंधकार के कारण, यह वैसे प्रार्थना नहीं कर सकती जैसे इसे करनी चाहिए: क्योंकि यह इससे गुप्त रूप से (इसके सबसे भीतरी गहराइयों में, या यह जाने बिना भी कि कैसे) बँधी होती है, और उसकी आंतरिक आँखें अंधी हो जाती हैं। लेकिन जब वह (होश में आकर) प्रार्थना में ईश्वर की ओर

मुड़ना शुरू करती है और प्रार्थना में चैतन्य बने रहने का प्रयास करती है; तो, धीरे-धीरे, वह प्रार्थना की शक्ति से उस अंधकार से मुक्त होने लगती है: अन्यथा, इससे मुक्त होने की कोई संभावना नहीं है। इस समय वह महसूस करती है कि उसके हृदय के भीतर एक और संघर्ष, एक और छिपा हुआ द्वंद्व, विचारों का एक और युद्ध चल रहा है, जिसे द्वेष की आत्माएँ भड़काती हैं, जैसा कि पवित्र धर्मग्रंथ भी गवाही देता है जब वह कहता है: *'यदि शासक की आत्मा तुम्हारे विरुद्ध उठे, तो अपनी जगह न छोड़ना'* (सभोपदेशक 10:4)। हालाँकि, मन का स्थान सदाचार और संयम में उसका दृढ़ खड़ा होना है। – धार्मिक जीवन और पापी जीवन दोनों में एक दृढ़ खड़ाव होता है। क्योंकि धर्मग्रंथ कहता है: *'धन्य है वह मनुष्य जो दुष्टों की सलाह पर नहीं चलता, न पापियों के मार्ग पर खड़ा होता है'* (भजन संहिता 1:1)। और प्रेरित सिखाते हैं: *'सत्य से कमर कसकर खड़े रहो'* (इफिसियों 6:14)।

२०. आओ हम पूरी ताकत से मसीह को थामे रहें; क्योंकि ऐसे बहुत से लोग हैं जो हर तरह से हमें हमारे आत्माओं से उन्हें दूर करने का प्रयास करते हैं। और आओ हम *'आत्मा में निवास करने वाले'* विचारों की 'भीड़' द्वारा यीशु को भटकाने न दें (यूहन्ना ५:१३)। लेकिन पीड़ादायक आध्यात्मिक परिश्रम के बिना उससे चिपके रहना असंभव है। आइए हम उसके देह में जीवन के पदचिन्हों पर चलने का प्रयास करें, ताकि हम भी नम्रता से अपना जीवन जिएँ। आइए हम उसके दुखों को हृदय में धारण करें, ताकि, उसका अनुकरण करते हुए, हम सभी दुखों को धैर्यपूर्वक सह सकें। आइए हम हमारे प्रति उनकी अनुपम, सतर्क सहनशीलता का स्वाद चखें, ताकि हमारे आत्मा में इसका मीठा स्वाद चखकर, हम जान सकें कि प्रभु कितने भले हैं। इन सब के ऊपर, या यूँ कहें कि सबसे पहले, आइए हम उनके द्वारा कही गई हर बात पर बिना किसी संदेह के विश्वास करें, और आइए हम प्रतिदिन हमारे प्रति उनकी व्यवस्था की प्रतीक्षा करें; और जो कुछ भी हो जाए, या हमें जो कुछ भी सामना करना पड़े, आओ, हम इसे कृतज्ञता, प्रेम और आनंदित संतोष के साथ स्वीकार करें, और आओ, हम एकमात्र ईश्वर की ओर देखने का अभ्यास करें, जो अपनी बुद्धिमत्ता के दैवीय नियमों के अनुसार सभी चीजों को संचालित करते हैं। जब हम यह सब करते हैं, तो हम ईश्वर से दूर नहीं रहेंगे। (आइए यह भी समझें कि) धर्मपरायणता एक अंतहीन पूर्णता है, जैसा कि ईश्वर-धारी और आध्यात्मिक रूप से पूर्ण पुरुषों में से एक ने एक बार कहा था।

२१. जो अपने जीवन के समय का सदुपयोग करता है, मृत्यु के विचारों और स्मरण में निरंतर व्यस्त रहता है, और इस प्रकार सबसे बुद्धिमानी से अपने मन को वासनाओं से मुक्त करता है; ऐसा व्यक्ति आमतौर पर शैतान की चालाकियों के निरंतर प्रलोभनों को, मृत्यु की स्मृति के बिना जीने वाले व्यक्ति की तुलना में अधिक तीव्रता से महसूस करता है, जो केवल तर्क की क्रिया द्वारा हृदय को शुद्ध करने की आशा रखता है, बजाय इसके कि वह हमेशा एक दुखद और दुखद विचार को पालता रहे। ऐसा व्यक्ति, यह कल्पना करते हुए कि अपनी चतुराई से वह सभी हानिकारक वासनाओं पर काबू रखता है, जबकि यह महसूस किए बिना कि वह उनमें से सबसे बुरे—अहंकार—से बंधा हुआ है, ईश्वर के बिना (जैसे कोई भी व्यक्ति किसी भी चीज़ में सफल होने की उम्मीद करता है) अहंकार में पड़ जाता है। उसे पूरी तरह से होशियार रहना चाहिए, कहीं वह घमंड के कारण अपना विवेक न खो दे। क्योंकि, जैसा कि प्रेरित पौलुस कहते हैं (1 कुरिन्थियों 8:1), जो आत्माएँ इधर-उधर से ज्ञान इकट्ठा करती हैं, वे आमतौर पर उन लोगों के सामने घमण्ड करती हैं जिन्हें वे अपने से कम जानकार समझती हैं, मेरे विचार से, इसका कारण यह है कि उनमें निर्माणकारी प्रेम की कोई चिंगारी नहीं होती। लेकिन जो व्यक्ति मृत्यु का निरंतर ध्यान रखता है, वह उस व्यक्ति से अधिक सूक्ष्मदर्शी होता है जो ऐसा नहीं करता, वह राक्षसों की चालाकियों को पहचानता है, उन्हें प्रभावी ढंग से भगाता है और उन्हें पैरों तले रौंदता है।

२२. परमेश्वर की मधुर स्मृति, अर्थात्, यीशु, हार्दिक क्रोध और उद्धारकारी शोक के साथ, आमतौर पर विचारों, विभिन्न सुझावों, शब्दों, दिन-दहाड़े के सपनों, अंधकारमय कल्पनाओं, और संक्षेप में, हर उस चीज़ के सभी जादू तोड़ देते हैं, जिससे सर्व-विनाशकारी शत्रु स्वयं को लैस करता है और जिसके साथ वह हमारे आत्माओं को निगलने की कोशिश में निडर होकर आगे बढ़ता है। यीशु, जब पुकारे जाते हैं, तो ऐसी सभी चीज़ों को आसानी से नष्ट कर देते हैं। क्योंकि मसीह यीशु के सिवा हमारें लिए और किसी में उद्धार नहीं है। यह बात स्वयं उद्धारकर्ता ने भी तब कही थी जब उन्होंने घोषणा की: *'मेरे बिना तुम कुछ भी नहीं कर सकते'* (यूहन्ना 15:5)।

२३. और इस प्रकार, हर घड़ी और हर क्षण, हम अपने हृदयों की रक्षा पूरी सावधानी से उन विचारों से करें जो आत्मा के दर्पण को धुंधला करते हैं, जिसमें केवल यीशु मसीह—जो परमेश्वर पिता की बुद्धि और सामर्थ्य हैं—ही प्रकाश में अंकित और प्रतिबिंबित होना चाहिए। आइए हम अपने हृदयों में निरंतर स्वर्ग के राज्य की खोज करें; और निश्चय ही, एक रहस्यमय तरीके से, हम अपने भीतर अनाज, मोती, खमीर, और बाकी सब कुछ पाएँगे, यदि हम अपने मन की आँख को शुद्ध करें। इसी कारण हमारे प्रभु यीशु मसीह ने कहा, *'परमेश्वर का राज्य तुम्हारे भीतर है'* (लूका 17:21), जिसका तात्पर्य हृदय में निवास करने वाली दिव्यता से है।

२४. संयम, जो तेजस्विता की ओर ले जाता है, अंतरात्मा को शुद्ध करता है। और इस प्रकार शुद्ध हुई अंतरात्मा भीतर के सभी अंधकार को दूर कर देती है, ठीक वैसे ही जैसे उस पर से पर्दा हटाने पर प्रकाश अचानक प्रकट हो जाता है। और एक बार अंधकार दूर हो जाने पर, अंतरात्मा, अटूट सच्ची संयमशीलता के माध्यम से, फिर से उस चीज़ को प्रकट करती है जिसे भुला दिया गया था, या जो छिपी और अनजानी रह गई थी। साथ ही, इसी संयमशीलता के माध्यम से, यह मन में जाने-पहचाने शत्रुओं के खिलाफ अदृश्य संघर्ष और विचारों के भीतर के युद्ध को सिखाती है, – यह सिखाता है कि इस एकल संघर्ष में भाले कैसे फेंकने हैं, (शत्रुओं पर) शुभ विचारों के तीर कितनी कुशलता से चलाने हैं, उनके तीरों को मन को भेदने से कैसे रोकना है, और, एक तीर की तरह, उसे मसीह की शरण लेने के लिए निर्देशित करना है, जो हानिकारक अंधकार के स्थान पर वांछित प्रकाश हैं। जिसने भी इस प्रकाश का स्वाद चखा है, वह समझता है कि मैं किस बारे में बात कर रहा हूँ। इस प्रकाश का स्वाद उस आत्मा को एक ऐसी भूख से पीड़ित करता है जो कभी खत्म नहीं होती; जितना अधिक वह इसका स्वाद लेती है, उतनी ही अधिक इसकी लालसा करती है। यह प्रकाश, जो मन को अपनी ओर वैसे ही खींचता है जैसे सूर्य आँखों को खींचता है, अपने आप में एक अवर्णनीय प्रकाश है, फिर भी व्याख्या योग्य बना दिया गया है—शब्दों द्वारा नहीं, लेकिन उस अनुभव के माध्यम से जो इसके प्रभाव को ग्रहण करता है, या अधिक सटीक रूप से कहें तो, जो इससे भेदा जाता है – मुझे चुप रहने का आदेश देता है, हालांकि मन अभी भी इस विषय पर चर्चा में आनंद लेना चाहेगा जो अभी विचाराधीन है।

२५. *'सब मनुष्यों से मेल मिलाप और पवित्रता का अनुसरण करो, जिसके बिना कोई भी प्रभु को नहीं देखेगा'* (इब्रानियों १२:१४), प्रेम और पवित्रता प्राप्त करने के लिए: क्योंकि वे, वास्तव में, शांति और पवित्रता ही हैं। हालाँकि, हमें केवल उन राक्षसों के विरुद्ध क्रोध से स्वयं को लैस करना चाहिए, जो विचार और क्रोध में हमसे युद्ध करते हैं। लेकिन सुनो कि हमें हर क्षण हमारे भीतर चलने वाले युद्ध को कैसे लड़ना चाहिए, और उसी के अनुसार काम करना चाहिए: प्रार्थना को सतर्कता के साथ मिलाएँ – और सतर्कता प्रार्थना को मजबूत करेगी, और प्रार्थना सतर्कता को मजबूत करेगी। संयम, जो भीतर की हर चीज़ पर लगातार नज़र रखता है, यह देखता है कि दुश्मन कैसे वहाँ प्रवेश करने का प्रयास करते हैं, और अपनी पूरी क्षमता से उनके प्रवेश को रोकते हुए, साथ ही प्रभु यीशु मसीह से मदद के लिए पुकारता है, ताकि वे इन चालाक योद्धाओं को भगा दें। ऐसा करने पर, आपका ध्यान विरोध के माध्यम से उनके प्रवेश को रोक देता है; और जब यीशु को पुकारा जाता है, तो वे राक्षसों को उनके भ्रम के साथ बाहर निकाल देते हैं।

२६. अपने मन की रक्षा परम एकाग्रता से करो। जैसे ही तुम किसी (शत्रु) विचार को देखो, तुरंत उसका विरोध करो, लेकिन साथ ही प्रभु मसीह को तुम्हारा बदला लेने के लिए पुकारने में शीघ्रता करो। और मधुर यीशु, जब तुम अभी भी बोल रहे होगे, कहेंगे: 'मैं तुम्हारे साथ हूँ, तुम्हारे लिए मध्यस्थता करने को।' लेकिन इन सभी शत्रुओं के आपके प्रार्थना द्वारा वश में हो जाने के बाद भी, परिश्रम से अपने मन पर पहरा देते रहो। देखो, एक बार फिर विचारों की लहरें, पहले से कहीं अधिक, एक के बाद एक तुम पर टूट पड़ेंगी, जिससे तुम्हारी आत्मा किसी गहरी खाई में गिरती हुई प्रतीत होगी और विनष्ट होने को तैयार हो जाएगी। लेकिन एक बार फिर, यीशु—एक शिष्य के कहने पर—बुरी हवाओं (विचारों की) को शांत होने की आज्ञा देते हैं, और वे शांत हो जाती हैं। आप, एक घंटे या एक मिनट के लिए दुश्मन के हमलों से मुक्ति पाकर, उसको महिमा देते हैं जिसने आपको बचाया है, और मृत्यु के चिंतन में डूब जाते हैं।

२७. अपने पूरे हृदय के ध्यान और भक्ति की भावना से, हम अपना मार्ग चलें। ध्यान और प्रार्थना, जब दिन-प्रतिदिन एक साथ मिलते हैं, तो वे एलिया के अग्निमय रथ के समान कुछ उत्पन्न करते हैं, जो उनका भाग लेने वालों को स्वर्गीय ऊँचाइयों पर उठाते हैं। और मैं क्या कह रहा हूँ? जो लोग संयम में स्थापित हो गए हैं, या जो ऐसा करने का प्रयास करते हैं, उनके लिए एक शुद्ध हृदय एक मानसिक स्वर्ग बन जाता है, जिसमें अपना सूरज, चंद्रमा और तारे होते हैं, और यह एक रहस्यमय दृष्टि और परमानंद (मन की विजय) के माध्यम से अगोचर ईश्वर के लिए एक पात्र के रूप में कार्य करता है। जो कोई भी दैवीय सद्गुण से प्रेम करता है, वह हर क्षण प्रभु का नाम जपने का प्रयास करे और, पूरी लगन के साथ, शब्दों को कर्मों में बदलने का प्रयास करे। जो कोई भी, कुछ प्रयास से, अपने पाँचों इंद्रियों को नियंत्रित करता है—जिनसे आत्मा को आमतौर पर हानि पहुँचती है—वह हृदय के संघर्ष और लड़ाई को मन के लिए यथासंभव हल्का बना देता है। और इसलिए, सभी बाहरी प्रभावों (जो आत्मा के लिए हानिकारक हैं) से सावधान रहें, और उनसे उत्पन्न होने वाले विचारों का मुकाबला ईश्वर-प्रदत्त, आध्यात्मिक साधनों से करें, जो की कला द्वारा निर्देशित हैं: जागरण के श्रम द्वारा, कामुक सुखों की प्रवृत्तियों को नियंत्रित करें; खाने-पीने में संयम बरतें; और अपने शरीर को पर्याप्त रूप से दुबला करें ताकि समय रहते अपने लिए हृदय का संघर्ष आसान हो सके। इन सब से आप स्वयं पर एहसान करेंगे, न कि किसी और पर। अपने प्राण को मृत्यु के विचारों से पीड़ित करो, और मसीह

यीशु के स्मरण से अपने बखिरे हुए मन को एकत्र करो; वशिष रूप से रात में, जब मन आमतौर पर अधकि स्पष्ट और उज्ज्वल होता है, और ईश्वर तथा सभी दव्यि बातों पर स्पष्ट रूप से मनन करता है।

२८. हमें शारीरकि तपस्या के श्रम से भी न भागें: क्योंकि जैसे पृथ्वी से गेहूँ अंकुरति होता है, वैसे ही इन श्रमों से आध्यात्मकि आनंद और सद्गुणों का अनुभव उत्पन्न होता है। हम झूठे तर्क के द्वारा अंतरात्मा की मांगों को नज़रअंदाज़ करें, क्योंकि वह हमें उद्धारकारी और सक्रयि चीज़ों से प्रेरति करती है, और हमेशा यह घोषति करती है कि हमारा कर्तव्य क्या है और हम कसिके प्रतबिंधे हुए हैं, वशिष रूप से जब इसे मन की जीवंत, सक्रयि और सूक्ष्म संयमशीलता द्वारा शुद्ध कयिा जाता है। ऐसे मामलों में, अपनी शुद्धता के कारण, यह आमतौर पर एक स्पष्ट नरि्णय देती है (अपने सामने आने वाली सभी बातों पर—एक ऐसा नरि्णय जो न्यायसंगत और नरि्णायक होता है), जो कसिी भी हचिकचिाहट को बाहर करता है। इन सभी कारणों से, झूठे तर्क से भटकना नहीं चाहएि; क्योंकि यह हमारे भीतर ईश्वर को प्रसन्न करने वाले जीवन की घोषणा करता है, और, यदि आत्मा ने पापों से मन को कलंकति कयिा है तो वह कड़ाई से फटकार लगाते हुए, अपने अपराधों को सुधारने का रास्ता दखिाता है, गरि हुए दलि को पश्चाताप करने के लएि प्रेरति करता है और उसे मीठी मनाही के साथ एक उपाय बताता है।

29. जलाऊ लकड़ी से उठने वाला धुआँ अक्सर आँखों के लएि कड़वा होता है; फरि भी वह बाद में उन पर प्रकाश डालता है और उन लोगों को आराम पहुँचाता है जन्हिें उसने पहले परेशान कयिा था। और ध्यान, मन की आँखों को लगातार तनाव में रखकर, सरि को थकाता और बोझलि करता है। लेकनि यीशु, जब प्रार्थना में बुलाए जाते हैं, तो आते हैं और हृदय को प्रबुद्ध करते हैं। उसकी स्मृति हमारे अंतर्मन के प्रबोधन के साथ मलिकर, सर्वोच्च आशीर्वाद प्रदान करती है (अर्थात् स्वयं प्रभु)।

३०. शत्रु, हमारे मन को परेशान करने का आदी हो कर, हमें अपने साथ धूल चाटने (अर्थात् अपमानति होने) के लएि लुभाने का प्रयास करता है, और—यद्यपि हम परमेश्वर के स्वरूप में बनाए गए हैं—तथापि पेट के बल जीने के लएि। परन्तु परमेश्वर ने कहा: *'मैं तेरे और स्त्री के बीच बैर रखूँगा'* (उत्पत्ति ३:१५)। इसी कारण, हमें हमेशा ईश्वर से पुकारना चाहएि, ताकि इसके द्वारा हम शैतान के अग्नबिाणों से घायल हुए बनिा प्रत्येक दनि व्यतीत कर सकें। 'मैं उन लोगों को *ढाँक लूँगा,'* ईश्वर कहते हैं (भजनरचयति के माध्यम से), *'जो मेरे नाम को जानते हैं'* (भजन संहति 90:14)। और फरि: *'परन्तु जो उस से डरते हैं, उनके नकिट उसकी शांति है'* (भजन संहति 84:10)।

31. धन्य प्रेरति, चुने हुए पात्र, मसीह में बोलते हुए, जन्होंने हमारे भीतर होने वाले आंतरकि, अदृश्य, आध्यात्मकि संघर्ष का बहुत अनुभव कयिा था, ने एफसियिों को लखि अपने पत्र में कहा: *'क्योंकि हमारा संग्राम मांस और रक्त से नहीं, बल्कि अधपितियिों और अधकिारों और इस संसार की अंधकारमय शक्तयिों और स्वर्गीय क्षेत्रों में बुराई की आध्यात्मकि सेनाओं से है'* (इफसियिों 6:12)। प्रेरति पतरस भी कहते हैं: *"संभलकर जागते रहो, क्योंकि हमारा वरिोधी शैतान गरजने वाले सहि की नाईं इस खोज में रहता है, कि कसिको फाड़ खाए; उसके वरिोध करो, वश्विास में दृढ़ हो रहो"* (1 पतरस 5:8–9)। हमारे प्रभु यीशु मसीह ने स्वयं, सुसमाचार के वचनों को ग्रहण करने के वभिन्नि मनोभावों के वषिय में कहते हुए, कहा: *'तब शैतान आकर उनके हृदय से वचन छीन लेता है'* – यह एक चोरी है जो वह एक दुष्ट भूल पैदा करके करता है, *'ताकि जो वश्विास नहीं करते वे उद्धार न पाएँ'* (लूका 8:12)। – और फरि प्रेरति (पौलुस) कहते हैं: *'मैं अपने भीतरी मनुष्य में परमेश्वर के वचन से आनन्दति होता हूँ, परन्तु मैं अपने अंगों में एक और व्यवस्था देखता हूँ जो मेरे मन की व्यवस्था के वरिुद्ध लड़ती है और मुझे कैदी बनाती है'* (रोमयिों 7:22-23)। – उन्होंने यह सब हमें सखिाने और हमें वह बताने के लएि कहा जो हमसे छपिा था।

32. जब मन आत्म-नदिा और वनिम्रता खो देता है, तो वह आमतौर पर घमंडी हो जाता है, यह सोचते हुए कि वह कई लोगों से ऊपर है। अपनी ही कमजोरी का एहसास प्राप्त करने की इच्छा रखते हुए, आइए हम उसी प्रकार बुद्धमिान बनें जैसे उसने कहा: 'भाइयो, मैं यह नहीं समझता कि मैंने इसे प्राप्त कर लयिा है: *'पर मैं एक ही काम करता हूँ, जो पीछे है उसे भूलकर, जो आगे है उसकी ओर बढ़ता हुआ, मैं ईश्वर की ऊँची पुकार के पुरस्कार के लएि लक्ष्य की ओर दौड़ता हूँ'* (फलिि. 3:13–14)। फरि: *"मैं इसी तरह दौड़ता हूँ, जैसे कि मैं लक्ष्य पर पहुँच ही चुका हूँ, इसी तरह लड़ता हूँ, जैसे कि मैं वाकई वजिता बन चुका हूँ। पर मैं अपने शरीर को अनुशासति करता हूँ और उसे वश में रखता हूँ, कहीं ऐसा न हो कि मैं दूसरों को तो उपदेश दे चुका हूँ, पर स्वयं अयोग्य ठहर जाऊँ"* (1 कुरन्थियिों 9:26-27)। क्या आप देखते हैं कि नम्रता क्या है, और साथ ही, सद्गुण के लएि संघर्ष क्या है? क्या आप देखते हैं कि वनिम्रता कैसी होती है, यहाँ तक कि संत पौलुस में भी, जो इतने महान और कुलीन थे? (लेकनि सुनें कि वह और क्या कहते हैं।) – मसीह कहते हैं, *'मैं पापयिों को बचाने के लएि संसार में आया, जनिमें मैं सबसे मुख्य हूँ'* (1 तीमु. 1:15)। – और वास्तव में, हमारी प्रकृति की दुर्दशा को देखते हुए, हम नम्र होने में कैसे चूक सकते हैं? क्योंकि पृथ्वी की धूल से भी बदतर क्या है?

और हमें परमेश्वर को याद रखना चाहिए, क्योंकि हमें उसी के लिए बनाया गया है; और हमें आत्म-संयम के अनुशासन में खुद को प्रशिक्षित करना चाहिए, ताकि हमारे प्रभु के पदचिन्हों पर चलना आसान हो सके।

33. जो बुराई के विचारों के आगे झुक जाता है, उसके लिए अपने बाहरी आचरण में पाप से मुक्त होना असंभव है। जो लोग अपने दिल से बुरे विचारों को जड़ से नहीं उखाड़ते, वे अनिवार्य रूप से उन्हें संबंधित बुरे कर्मों में प्रकट करते हैं। कोई व्यक्ति कामुक दृष्टि से इसलिए देखता है क्योंकि उसकी आंतरिक आँख पहले ही अशुद्ध और धूमिल हो चुकी है। इसी तरह, शर्मनाक बातें सुनने की इच्छा का कारण आत्मा के कानों से उन सभी बातों को उत्सुकता से सुनना है, जो दुष्ट राक्षस हमारे विनाश के लिए हमारे भीतर फुसफुसाते हैं। हमें प्रभु में, आंतरिक और बाह्य रूप से, स्वयं को शुद्ध करना चाहिए; हम में से प्रत्येक को अपनी इंद्रियों की रक्षा करनी चाहिए और स्वयं को दैनिक रूप से वासनाओं के प्रभावों और अपराधों से शुद्ध करना चाहिए। जिस प्रकार हमारे भूतपूर्व मूर्खता के दिनों में, जब हम मन की सांसारिक व्यर्थता में फँसे हुए थे, हमने अपना पूरा मन और सभी इंद्रियों को पाप के प्रलोभन को समर्पित कर दिया था, उसी प्रकार अब, ईश्वर के अनुसार जीवन की ओर मुड़ने के बाद, हमें अपना पूरा मन और सभी इंद्रियों को जीवित और सच्चे ईश्वर, ईश्वर की सच्चाई और इच्छा को समर्पित करना चाहिए।

34. पहले *'प्रहार'* (προσβολή – एक टकराव, वह क्रिया जिससे कोई फेंकी गई वस्तु उस पर टकराती है जिस पर वह निशाना साधा गया हो); फिर *'संयोग'* (συνδυασμός – एक मिलन, मन का ध्यान वस्तु पर स्थिर हो जाता है, ताकि आत्मा और उस वस्तु के अलावा कुछ न रहे जिसने उसे मारा और उसका ध्यान खींचा); इसके आगे, *'संयोग'* (वह वस्तु जिसने ध्यान आकर्षित किया है और उसे बँधक बना लिया है, ने एक इच्छा को जगाया है – और आत्मा ने उसकी सहमति दे दी है – इस प्रकार एक संयोग बनता है); इसके बाद, *'बन्धन'* (वस्तु ने आत्मा को, जिसने इसकी इच्छा की है, बँधक बना लिया है, और, एक दास के रूप में बँधा हुआ, उसे कर्म की ओर ले जाता है); अंत में, *'वासना'* (πάθος - आत्मा की एक बीमारी), जो बार-बार दोहराने (एक ही इच्छा की संतुष्टि) और आदत (उन कार्यों की जिनसे वह संतुष्ट होती है) के माध्यम से, आत्मा में इस कदर रच-बस जाती है (और चरित्र का एक लक्षण बन जाती है)। हमारे भीतर चल रहे संघर्ष में विजय के लिए यही रणभूमि है! इसी प्रकार पवित्र पिताओं ने भी इसकी परिभाषा दी है।

35. और – जैसा कवि कहते हैं – 'संलग्नता' केवल एक विचार है, या किसी ऐसी चीज़ की एक छवि है जो अभी-अभी हृदय में उत्पन्न हुई है और मन के सामने प्रस्तुत हुई है; *'संयोग'* उस वस्तु या छवि के साथ एक संवाद है जो प्रस्तुत हुई है, चाहे वह भावुक हो या भावहीन; *'अवशोषण'* आत्मा का मन की आँखों से दिखाई देने वाली वस्तु की ओर झुकाव है, जिसमें आनंद शामिल है; 'मोह' हृदय का जबरदस्ती और अनैच्छिक रूप से (कैद में) मुड़ जाना, वहाँ उसका बना रहना, और एक तरह से उसे मोहित करने वाली वस्तु के साथ एक ही जीवन (sunousia) में मिल जाना है, जिससे हमारे भीतर की अच्छी अवस्था मिट जाती है (हमारी शांति खो जाती है); हालाँकि, कहा जाता है कि जुनून आत्मा में आमतौर पर किसी (वस्तु) के प्रति लंबे समय से चले आ रहे लगाव के माध्यम से जड़ जमाता है। इन सभी (कर्मों या अवस्थाओं) में से, *'पहला'* पाप रहित है, *'दूसरा*—पूरी तरह से नहीं; *'तीसरा'* तपस्वी की स्थिति पर निर्भर करता है (शायद प्रयास और संघर्ष के अनुपात में); जहाँ तक *'संघर्ष'* का सवाल है, यह या तो मुकुटों का कारण है (जब कोई दृढ़ रहता है) या यातनाओं का (जब कोई गिर जाता है)।

३६. प्रार्थना के समय *कैद* एक बात है, और प्रार्थना के अलावा एक बिल्कुल दूसरी बात। वासना निस्संदेह या तो एक समान (तुल्य) प्रायश्चित के अधीन है, या भविष्य के कष्ट के। जो कोई भी पहले—अर्थात् आसक्ति—के प्रति प्रतिरोध करता है, या निर्लिप्त रहता है, वह एक ही वार में सब कुछ लज्जास्पद समाप्त कर देता है। – ऐसा ही युद्ध दुष्ट राक्षसों द्वारा संन्यासियों और गृहस्थों दोनों के विरुद्ध लड़ा जाता है, जिसमें जैसा हमने कहा है, जीत और हार दोनों होती है। विजेताओं के लिए मुकुट प्रतीक्षा करते हैं, जबकि जो गिरते हैं और पश्चाताप नहीं करते, उनके लिए यातना प्रतीक्षा करती है। अतः हमें अपने मन में ही उनके विरुद्ध प्रयास करना चाहिए, ताकि हम उनके दुष्ट परामर्शों को दृश्यमान पापपूर्ण कर्मों में न निभाएँ। आइए हम अपने भीतर स्वर्गीय राज्य को खोजने का प्रयास करें, और अपने हृदय से हर पाप को काट दें। ऐसे उत्कृष्ट प्रयास के माध्यम से, हम परमेश्वर के समक्ष हृदय की पवित्रता और अखंड पश्चाताप को बनाए रखेंगे।

३७. कई भिक्षु उन भ्रमों से अनजान रहते हैं जो राक्षसों द्वारा मन पर डाले जाते हैं। वे अपने कर्तव्यों में लगन से लगे रहते हैं, मन की ओर कोई ध्यान नहीं देते, और सादगी और निश्छलता का जीवन जीते हैं। मेरा मानना है कि, हृदय की पवित्रता का स्वाद कभी न चखने के कारण, वे आंतरिक जुनून के अंधकार से पूरी तरह अनजान हैं। जो लोग उस संघर्ष को नहीं जानते जिसके बारे में सेंट पॉल बात करते हैं, हो सकता है कि उन्हें भलाई के अनुभव से परखा न गया हो, और वे केवल कर्म में किए गए पापों को ही गिरावट मानते हों, तथा उन मानसिक विजयों और उपलब्धियों को अनदेखा करते हों जिन्हें शारीरिक आँख नहीं देख सकती, क्योंकि वे छिपी हुई हैं और केवल ईश्वर को ही ज्ञात

हैं, जो परिश्रम का एकमात्र प्रतिफलदाता है, और उस व्यक्ति के विवेक को भी जो प्रयास करता है। ऐसा प्रतीत होता है कि धर्मग्रंथ के निम्नलिखित शब्द ऐसे ही लोगों के लिए कहे गए हैं: 'वे कहते हैं, *"शांति, शांति," परन्तु शांति नहीं है'* (यहे. 13:10)। हमें उन भाइयों के लिए प्रार्थना करनी चाहिए जो सादगी के कारण, स्वयं को ऐसी स्थिति में पाते हैं, और उन्हें यथासंभव शिक्षा देनी चाहिए, ताकि वे न केवल दिखाई देने वाले बुरे कर्मों से, बल्कि हृदय के भीतर काम करने वाली बुराई से भी मुँह मोड़ सकें। जहाँ तक उन लोगों का प्रश्न है, जिनमें आत्मा की आँख (अर्थात् आत्मा की दृष्टि ही) को शुद्ध करने की दिव्य इच्छा है, उनके लिए मसीह का एक अलग कार्य और एक अलग संस्कार है।

38. मृत्यु की गहरी जागरूकता वास्तव में कई गुणों को अपने भीतर समाहित करती है। यह आँसुओं की जननी है, सर्व-व्यापी संयम की मार्गदर्शक है, गेहेना की याद दिलाने वाली है, प्रार्थना और आँसुओं की जननी है, हृदय की संरक्षक है, आत्म-चिंतन और विवेक का स्रोत है; इनके माध्यम से, बच्चों का परमेश्वर का गहरा भय और हृदय का भावुक विचारों से शुद्धिकरण, प्रभु की कई आज्ञाओं को समाहित करता है। ऐसे हृदय में, मनुष्य एक संघर्ष और एक पराक्रम देखता है, जिसे अत्यंत कठिनाई से सहन किया जाता है। और यही बात मसीह के कई योद्धाओं की भी चिंता का विषय है।

39. कोई अप्रत्याशित दुर्भाग्य या विपत्ति आमतौर पर हमारे मानसिक ध्यान को भंग कर देती है, और मन को उसकी उद्धारकारी अवस्था से अलग करके—जो सर्वोत्तम की इच्छा को बुझा देती है—इसे पापी झगड़ों और कलह की ओर खींच ले जाती है। हमारे लिए इतनी विनाशकारी आपदा का कारण यह है कि हम प्रलोभनों के खिलाफ कोई सावधानी नहीं बरतते (जो किसी भी क्षण, कौन जाने किस दिशा से, हम पर हमला करने के लिए तैयार रहते हैं)।

४०. हम पर कभी भी आने वाली कोई भी विपत्ति हमें परेशान या दुखी नहीं करेगी, बशर्ते कि उनकी अपरिहार्यता को समझते हुए, हम हमेशा इसे ध्यान में रखें। इसीलिए दिव्य प्रेरित पौलुस कहते हैं: *'मैं दुर्बलताओं, कष्टों, आवश्यकताओं में आनंदित होता हूँ'* (2 कुरिन्थियों 12:10)। और फिर: *'जो कोई मसीह यीशु में भक्ति से जीवन व्यतीत करना चाहता है, वह सताया जाएगा'* (2 तीमुथियुस 3:12)। उसकी महिमा युगानुयुग होती रहे। आमीन।

एलियाह, पुरोहित और एक्ज़ार्क

उनका संक्षिप्त परिचय

यह ज्ञात नहीं है कि यह एल्डर एलिया, जिन्हें एकदिक के नाम से भी जाना जाता है, सेंट ग्रेगरी द थियोलोजियन के धर्मशास्त्रीय लेखों पर टिप्पणी करने वाले क्रीट के एलिया हैं, या कोई और व्यक्ति हैं। हालाँकि, आगे आने वाले अध्यायों से यह स्पष्ट है कि वह बाहरी बुद्धि और विशेष रूप से हमारी आध्यात्मिक बुद्धि, दोनों में परम बुद्धि के व्यक्ति थे; और उनके शब्द भावपूर्ण और शक्तिशाली हैं, भले ही कभी-कभी कुछ अस्पष्ट हों। इसलिए, हम इसे अतिशयोक्ति नहीं मानते कि इस लेखन संग्रह को—जैसा कि बुद्धिमान एलियाह के अध्यायों का शीर्षक है— एक प्रकार का आध्यात्मिक बगीचा, जो न केवल रंग-बिरंगी जड़ी-बूटियों से बल्कि फलदार पेड़ों से भी भरा हो, और हमें उन लोगों को इस स्वर्ग में आमंत्रित करने में संकोच न करना चाहिए जो आध्यात्मिक सांत्वना की तलाश में हैं, इस पूर्ण विश्वास के साथ कि उनकी सभी आध्यात्मिक इंद्रियाँ—दृष्टि, घ्राण और स्वाद—यहाँ भरपूर संतुष्टि पाएँगी (संक्षेप में – ग्रेच डोब्रोत. द्वारा लिखे प्रस्तावना से)। एल्डर एलिया के अध्यायों का शीर्षक - *एन्थोलोजियन*, जिसका अर्थ है 'फूलों का संग्रह' या 'फूलों का समूह' - यह सुझाव देता है कि वे पवित्र पिताओं को पढ़ते समय रचे गए थे, जिनके विचारों को ईश्वर के एल्डर ने हृदय में ग्रहण करके और उन्हें अपने लिए संरक्षित करने की इच्छा से, दर्ज किया, और उन्हें कभी-कभी पिताओं के अपने शब्दों में और कभी-कभी अपने शब्दों में व्यक्त किया। परिणामस्वरूप, पाठकों ने उनमें किसी एक या दूसरे पिता (फादर) के प्रभाव को देखा होगा, या यहाँ तक कि उन्हें उनमें से किसी एक का मान लिया होगा, जैसा कि वास्तव में पश्चिम में हुआ भी था। वहाँ, संत मैक्सिमस की कृतियों के वैटिकन कोडेक्स में, इन्हें इस पिता से संबंधित माना गया है; और पवित्र पिताओं की कृतियों के हालिया संपादक, मिग्ने ने, इन्हें संत मैक्सिमस की कृतियों में शामिल किया है, उनके सात सौ अध्यायों—अनुमान संबंधी और व्यावहारिक दोनों—के बाद, इस शीर्षक के अंतर्गत: 'संत मैक्सिमस के कार्यों के वैटिकन कोडेक्स से लिए गए अन्य अध्याय' (पैट्रोलॉजिया ग्रेके, खंड X)। हमारा मानना है कि ग्रीक डोब्रोतोलुबिए के संकलनकर्ताओं ने यह निर्धारित करना अधिक सुविधाजनक समझा कि इन अध्यायों को किसके नाम से जोड़ा जाए, और हम उनके अनुसरण करते हुए, इन अध्यायों को एक निश्चित एल्डर एलिया का कार्य मानते हैं। हम पाठक की जानकारी के लिए यह बताना चाहेंगे कि ग्रीक डोब्रोतोलुबिए में अध्यायों को दो भागों (109–140) में विभाजित किया गया है। मिग्ने के संस्करण में, अध्यायों को शुरू

से अंत तक लगातार क्रमांकति कयिा गया है। हम इस संबंध में बाद वाले का अनुसरण करते हैं। पाठक ध्यान देंगे कि हमारे अनुवाद में अध्यायों का क्रमांकन लगातार नहीं है, कुछ अध्याय छोड़े गए हैं। ये छूट यह इंगति करती हैं कि अस्पष्टता के कारण संबंधति अध्यायों को भी छोड़ दयिा गया है। हालाँकि, ऐसे उदाहरण बहुत कम हैं।

फूलों का एक संग्रह, सबसे कम उम्र के प्रेस्बटिर और एक्डकिस, एलयिाह द्वारा बड़ी बुद्धिमानी से संकलति

1. एक ईसाई जो परमेश्वर में सच्चे मन से वशि्वास करता है, उसे लापरवाह आत्मसंतोष में नहीं रहना चाहिए, बल्कि उसे हमेशा प्रलोभन की उम्मीद करनी चाहिए और उसका सामना करने के लिए तैयार रहना चाहिए, ताकि जब वह आए, तो वह चकति या वचिलति न हो, बल्कि धन्यवादपूर्वक दुख के भार को सहन करे, यह ध्यान में रखते हुए कि भजन संहिता में भवषि्यवक्ता के द्वारा क्या कहा गया है: *'हे प्रभु, मुझे परख और आज़मा'* (भजन संहिता 25:2) – और यह कि, एक अन्य भजन में, भवषि्यवक्ता ने *यह* नहीं कहा: *'तेरी अनुशासति* मुझे नष्ट कर देगी', बल्कि, *'अंत में मुझे सीधा कर देगी'* (भजन संहिता 17:36)।

२. भलाई की शुरुआत परमेश्वर का भय है, और अंत परमेश्वर के प्रति प्रेम है। सभी भलाई की शुरुआत एक सक्रयि मन और उद्देश्यपूर्ण कार्य है। क्योंकि न तो बिना कारण का कर्म अच्छा है, और न ही बिना कर्म के कारण फलदायी (प्रगतशिील) है।

3. शरीर का काम उपवास और जागरण है, जबकि होठों का काम भजन गाना है। फरि भी प्रार्थना भजन गाने से बेहतर है, और मौन शब्दों से अधिक कीमती है। हाथों का काम वह है जो वे बिना शिकायत के करते हैं; और पैरों का काम वह है जो वे पहली आज्ञा पर करते हैं। आत्मा का काम सादगी के साथ संयम है, और संयम के साथ सादगी का काम करना है; और मन का काम चिंतन में प्रार्थना है, और प्रार्थना में, ईश्वर का चिंतन है।

४. दया और सत्य सभी सद्गुणों पर शासन करते हैं; उनका फल वनिम्रता है, और इससे, पवित्र पिताओं के अनुसार, विवेक उत्पन्न होता है, जिसके बिना उपर्युक्त में से कोई भी सद्गुण अपनी पूर्ति नहीं देख सकता (या प्राप्त नहीं कर सकता)।

5. कर्म जो विवेक के अंकुश को तुच्छ समझता है, वह एक बछड़ी की तरह हो जाता है, जो व्यर्थ इधर-उधर भटकती है; और विवेक, कर्म के माननीय वस्त्र को त्यागकर, सम्मानजनक नहीं लगता, भले ही वह हर तरह से ऐसा दिखने का प्रयास करे।

6. एक साहसी आत्मा, दो जलते हुए दीयों—सक्रयि और चिंतनशील—को थामे हुए पत्नी के समान, जीवन भर अपना कर्तव्य पूरा करती है। सुखों में लाड़-प्यार से पली आत्मा के लिए इसका विपरीत सत्य है।

७. स्वेच्छा से लिया गया दुख आत्मा को पाप से पूर्ण मुक्ति दिलाने के लिए पर्याप्त नहीं है, जब तक कि इसके अतिरिक्त, उसे अनैच्छिक दुख की अग्नि भट्टी में परिष्कृत न किया जाए।

8. जब तक आत्मा, पाप से पूर्ण रूप से शुद्ध होने के लिए, एक तलवार की तरह आग और पानी—अर्थात् स्वैच्छिक और अनैच्छिक कष्टों और कठिनाइयों—से नहीं गुज़रती, तब तक वह अप्रिय दुर्भाग्यों का सामना करते समय अक्षुण्ण नहीं रह सकती।

9. जैसे स्वैच्छिक प्रलोभनों के तीन मुख्य कारण हैं—स्वास्थ्य, धन और प्रसिद्धि—वैसे ही अनैच्छिक प्रलोभनों के भी तीन कारण हैं: हानि, बीमारी और बदनामी। ये सभी चीजें कुछ लोगों को संवारती हैं, जबकि दूसरों को विनाश की ओर ले जाती हैं।

10. सच्चा सज्जन व्यक्ति भीतर से अच्छा होता है; जबकि दंभी व्यक्ति के लिए यह केवल उनके विचारों में ही होती है। सदाचार का शत्रु सतह पर बुराई को पालता है, जबकि आत्म-तुष्ट सुखवादी इसे अपने हृदय की गहराई में पालता है।

11. यह अक्सर नहीं होता, और न ही यह जानबूझकर होता है, कि बुराई से नफरत करने वाला व्यक्ति धार्मिक रूप से कार्य करने में विफल रहता है; फिर भी यह उन लोगों के साथ अक्सर और स्वेच्छा से होता है जो अभी भी बुराई के कारणों को अपने भीतर पालते हैं।

12. जो लोग अधिक बार पाप के लिए पश्चाताप करने के लिए इच्छुक नहीं होते हैं; जबकि जो लोग प्रवृत्ति से पाप नहीं करते हैं, उनके लिए पश्चाताप और भी आसानी से हो जाता है, और वास्तव में इसकी आवश्यकता शायद ही कभी पड़ती है।

13. बोले गए शब्द के साथ भावना और अंतरात्मा भी होनी चाहिए, ताकि दिव्य वचन, जिसने कहा, *'वह उनके बीच में होगा'* (मत्ती 18:20), बोले या किए गए किसी भी दुराचार या अवज्ञा से लज्जित न हो।

14. यह अभी तक यह नहीं कहा जा सकता कि जो अपने कर्मों से अपनी आत्मा को कलंकित नहीं करता, वह अपने शब्दों से उसे निर्दोष रखता है; न ही यह कहा जा सकता है कि जो अपने शब्दों से उसे शुद्ध रखता है, वह अपने विचारों से उसे कलंकित नहीं करता। क्योंकि पापी ऐसा तीन तरीकों से करता है (अर्थात् कर्म, वचन और विचार से)।

१५. जब तक आप पाप के दर्शन में आनंद लेते हैं, तब तक आप पुण्य के मुख को स्पष्ट रूप से नहीं देख सकते। फिर जब आप पुण्य का स्वाद चखना चाहेंगे, तो पाप आपको घृणित लगेगा, और आप ऐसे दृश्य से अपना मुख मोड़ लेंगे।

16. शुरुआत में, राक्षस कर्मों के बजाय विचारों के माध्यम से आत्मा पर हमला करते हैं; लेकिन, बेशक, उनका प्राथमिक लक्ष्य कर्म ही होता है। कर्मों का कारण सुनने और देखने में निहित है, जबकि विचारों का कारण आदत और राक्षसों में निहित है।

१७. आत्मा का पापी भाग त्रैधा है, जो कर्म, वचन और विचारों में प्रकट होता है। लेकिन पापरहितता का सद्गुण षट्-विध है: क्योंकि इसके लिए पाँचों इंद्रियों और कहे गए वचन को पाप में गिरने से बचाना आवश्यक है। *'यदि कोई वाणी में पाप नहीं करता, तो वह एक सिद्ध मनुष्य है, जो पूरे शरीर को वश में रख सकता है,'* संत जेम्स (3:2) कहते हैं। यही बात पाँचों इंद्रियों पर भी लागू होती है।

18. आत्मा का वह अवाक् भाग छह भागों में विभाजित है: पाँच इंद्रियाँ और वाणी, जो, जब निर्लिप्त होती हैं, तो अन्य सभी भागों को सचेत कर देती हैं, क्योंकि वे उनमें अविभाज्य रूप से व्याप्त होती हैं, लेकिन जब कामवासना से युक्त होती हैं, तो उन्हें सभी को कलंकित कर देती हैं।

19. न तो उपवास और प्रहरोपवास के बिना शरीर शुद्ध हो सकता है, न ही दया और सत्य के बिना आत्मा; और इसी तरह, ईश्वर के साथ चिंतन और संचार (अर्थात्, प्रार्थना के बिना) के बिना मन भी नहीं। इनमें से दोनों में, बाद वाला सबसे महत्वपूर्ण है।

20. उल्लिखित सद्गुणों के वृत्त में विचरते हुए, आत्मा अपने आश्रय—जो धैर्य है—को प्रलोभन के बाणों के लिए अभेद्य बना लेती है। प्रभु कहते हैं: *'अपने धैर्य से तुम अपनी आत्मा को बचाओगे,' '* (लूका 21:19)। हालाँकि, यदि यह खुद को एक अलग स्थिति में पाता है, तो, दीवारों के बिना एक शहर की तरह, दूर से सुनाई देने वाली टकराहट और हंगामे की आवाज़ से ही, यह डर के प्रहारों से बहुत हिल जाता है।

21. जो वाणी में बुद्धिमान हैं, वे सभी आध्यात्मिक मामलों में बुद्धिमान नहीं होते; लेकिन जो आध्यात्मिक मामलों में बुद्धिमान हैं, वे सभी सांसारिक मामलों में भी बुद्धिमान होते हैं। क्योंकि यह सांसारिक क्षेत्र (शरीर, इंद्रियाँ, व्यक्ति की परिस्थितियाँ), यद्यपि यह सभी को अपने वश में रखता है (– सभी से कर वसूल करता है), फिर भी यह सभी से एक समान कर नहीं वसूल करता; वास्तव में, कुछ तो इसे पूरी तरह से चुकाने से इनकार कर देते हैं।

२२. विवेक, जो स्वभाव से अविभाज्य है, फिर भी विभिन्न भागों में विभाजित है: क्योंकि एक को अधिक भाग दिया गया है, और दूसरे को कम; जब तक कि सक्रिय सद्गुण, सामान्य सद्गुणों की सहायता से गुणन और विस्तार करते हुए, उनमें से प्रत्येक में सभी संभावित अच्छाइयों को पूरा नहीं कर देता। क्योंकि यह हमेशा ऐसा ही होता है कि, सक्रिय जीवन की अपर्याप्तता के अनुपात में, तर्क का एक छोटा हिस्सा प्राप्त होता है।

23. समय और संयम विवेकी मौन के साथी हैं; परन्तु उसका भोजन सत्य है; जिसके कारण मिथ्या का जनक, भटकती आत्मा के पास आकर (जो सभी चीजों से अलग हो गई है), उसमें वह कुछ भी नहीं पाता जिसकी वह आमतौर पर तलाश करता है।

24. सच्चा दयालु वह नहीं है जो मनमाने ढंग से अतिरिक्त चीज़ें बांटता है, बल्कि वह है जो उन लोगों को आवश्यक चीज़ें स्वेच्छा से देता है जो उन्हें ले सकते हैं।

25. कुछ लोग भौतिक धन के माध्यम से, दान में अपनी स्थिरता द्वारा, अमूर्त को प्राप्त करते हैं; जबकि अन्य, अमूर्त के माध्यम से, एक अक्षय भलाई की अनुभूति (या स्वाद) में निवास करके, भौतिक से अपना संबंध तोड़ लेते हैं।

26. सभी के लिए आशीर्वादों में धनी होना सुखद है, लेकिन यह खेदजनक है यदि ईश्वर की कृपा से जिसने धन प्राप्त किया है, उसे उसे थोड़ी और देर तक भोगने की अनुमति नहीं दी जाती।

27. उस व्यक्ति से नाराज़ न हों जिसने आपकी मर्ज़ी के खिलाफ आपके ऊपर शल्यक्रिया की है (अर्थात्, फटकार लगाकर आपके भीतर छिपी बुराई को उजागर किया है); बल्कि, जो अशुद्धता बाहर फेंकी गई है, उसे देखकर स्वयं को डाँटें, और ईश्वर की स्तुति करें, जो आपके संबंध में ऐसी व्यवस्था का कारण थे।

28. जब आप अपनी (आध्यात्मकि) बीमारी की गंभीरता पर वचिार करें तो हतोत्साहति न हों; बल्कि इसके खलिाफ सबसे प्रभावी उपचारों—अर्थात्, कठनि आध्यात्मकि संघर्षों—का उपयोग करके इससे खुद को दूर करें, यदि आपकी अपनी आत्मा के स्वास्थ्य के लिए सच्ची चिंता है।

29. आप अपनी आध्यात्मकि बीमारयिों को जतिना तीव्र महसूस करते हैं, आपको उतना ही अधकि आभारी होना चाहिए उस व्यक्ति का जसिने आपको अपनी फटकारों के माध्यम से उनका एहसास कराया। क्योंकि इसके माध्यम से वे आपके पूर्ण शुद्धकिरण का साधन बने हैं, जसिके बनिा मन प्रार्थना के शुद्ध क्षेत्र में प्रवेश नहीं कर सकता।

30. जब आपको डाँटा जाए, तो आपको या तो चुप रहना चाहिए या यदि डाँट बदनाम करने वाली हो तो वनिम्रता से अपना बचाव करना चाहिए; यह अपनी बात साबति करने के लिए नहीं, बल्कि डाँटने वाले की गलती को सुधारने के लिए है, जो शायद उस मामले की अज्ञानता के कारण भटक गया हो।

31. जैसे अति-ज्ञानी अपनी ही कमयिों से अनजान होते हैं, वैसे ही वनिम्र लोग अपने ही गुणों से अनजान होते हैं: क्योंकि पहले वालों में, आत्म-ज्ञान आत्म-निंदा से छपिा रहता है, जबकि बाद वालों में, यह परमेश्वर को प्रसन्न करने वाली चीज़ों से छपिा रहता है।

32. निंदा आत्मा में उत्साह जगाती है, जबकि प्रशंसा उसे शथिलि कर देती है और भलाई करने में सुस्त बना देती है।

33. धन का आधार सोना है, और सद्गुण का आधार वनिम्रता है। और जैसे कोई व्यक्ति अपना सोना नहीं बढ़ा सकता तो वह गरीब ही रहता है, भले ही वह ऐसा दखिाई न दे: वैसे ही, वनिम्रता के बनिा, सदाचारी व्यक्ति कोई अच्छा फल नहीं देता।

34. जैसे कोई व्यापारी सोने के बनिा व्यापारी नहीं होता, चाहे वह व्यापार में कतिना भी सक्षम क्यों न हो; वैसे ही, जो व्यक्ति विनिम्रता के बनिा प्रयास करता है, वह सद्गुण के अच्छे फल नहीं देख पाएगा, चाहे वह अपनी सूझबूझ पर कतिना भी भरोसा क्यों न करे।

35. जैसे सभी आज्ञाओं के पालन में उत्कृष्टता प्राप्त करना आवश्यक है, वैसे ही ववािह भोज में बैठे लोगों के बीच एक अजनबी पाया जाने से डरने वाले व्यक्ति को भी वनिम्रता में और भी गहराई तक उतरना चाहिए।

36. संयम को सादगी के साथ मलिाएँ, और सत्य को वनिम्रता के साथ – और आप पाएँगे कि आप सत्य के सह-भोजी हैं, जसिकी संगति में हर अन्य सद्गुण, एक भोज की तरह, लाया जाना पसंद करता है।

37. एक अच्छा चरत्रि सद्गुण की सुंदरता की गवाही देता है, जबकि किसी के आचरण की उचतिता आत्मा के शांति की गवाही देती है।

38. प्रथम सद्गुण है कसिी भी प्रकार से पाप न करना; दूसरा है अपने पाप का इकरार करने में लज्जति न होना; फरि भी मनुष्य को इसके प्रति निर्लिज्ज नहीं होना चाहिए, बल्कि स्वयं को नम्र करना चाहिए, और जब डाँटा जाए, तो स्वयं को भी डाँटना चाहिए, और स्वेच्छा से प्रायश्चति स्वीकार करना चाहिए; क्योंकि यदि ऐसा नहीं होता है, तो ईश्वर को अर्पति की गई कोई भी वस्तु का कोई मूल्य नहीं है।

39. जब स्वेच्छा से कष्ट सहन कयिा जाता है (आत्म-संयम के कार्य), तो अनैच्छकि कष्टों को भी नम्रतापूर्वक स्वीकार करना चाहिए, जसिमें बदनामी, हानि और बीमारयिाँ शामलि हैं। जो इन बाद वालों को नम्रतापूर्वक स्वीकार नहीं करता, बल्कि उनसे असंतुष्ट रहता है और बड़बड़ाता है, वह ऐसे व्यक्ति के समान है जो हमेशा अपनी रोटी बनिा नमक के खाना चाहता है।

४०. यद्यपि वह एक स्वामी है, जो सेवक का रूप धारण करता है, वही है जो दवि्य वचनों से अपने पड़ोसी के (आत्मा के) मैले वस्त्र को धोता है और फटे हुए हस्सिों को पैबंद लगाकर ठीक करता है। हालाँकि, जो ऐसा करता है, उसे सावधान रहना चाहिए कि वह इसे व्यर्थ के घमंड से न करे, बल्कि इसलिए करे कि इस तरह के आचरण से, पुरस्कार के साथ-साथ, वह अपने हक की प्राधकिरण की गरमिा को न खो दे।

४१. *'प्रभु तुम्हारे आने-जाने की रक्षा करेगा'* (भजन संहति १२०:८) – भोजन और वाणी में संयम के द्वारा। क्योंकि जो कोई भोजन—जो शरीर में प्रवेश करता है—और वाणी—जो बाहर नकिलती है—में संयम का अभ्यास करता है, वह नेत्रों की वासना से बचता है और अववि‍ेकी क्रोध को वश में करता है; ये वे बातें हैं जनिकी तपस्वी को सबसे अधकि चिंता करनी चाहिए, कहीं ये प्रबल न हो जाएँ। इससे, सक्रयि जीवन को बल मलिता है, और चिंतन को दृढ़ता मलिती है।

४२. हालाँकि, अन्य लोग जो कुछ वे खाते हैं उस पर सावधानी से नगिरानी रखते हैं, लेकनि अपने मुँह से नकिलने वाले शब्दों पर कोई ध्यान नहीं देते हैं। ऐसे लोग, उपदेशक के अनुसार, यह नहीं जानते कि हृदय से क्रोध और शरीर से

कामुकता को कैसे जड़ से उखाड़ना है (उपदेशक ११:१०): जसिसे हृदय पवति्र आत्मा द्वारा शुद्ध होता है जो हमें नया बनाता है।

43. तुम्हारा पेट भोजन की कमी से जलता रहे, और तुम्हारा हृदय अपनी जीभ के संयम से बाँधा रहे; और तुम्हारी शक्तयिाँ—तुम्हारी इच्छा और तुम्हारी चड़िचड़िाहट दोनों—हमेशा तुम्हारी भलाई के लएि तुम्हारी सेवा में रहेंगी।

४४. जसिने प्रयास कयिा है, उसे यह जानना चाहएि कशिरीर को—एक शत्रु के रूप में—कब और कसि भोजन से पोषति कयिा जाए, और कब उसे एक थके हुए मति्र के रूप में सांत्वना और बल दयिा जाए: ऐसा न हो कवािह गलती से जब वह शत्रु हो तो उसे मैत्रीपूर्ण पोषण दे, और जब वह मति्र हो तो शत्रु का पोषण दे; और, दोनों से उसे भड़काने के बाद, परीक्षा के समय, उसे लड़ने वाले शत्रुओं के पक्ष में पाए।

४५. जब कोई भोजन करने वाला गले की तुष्टकिी अपेक्षा पोषण को अधकि महत्त्व देता है, तो उस पर अश्रुओं की कृपा आती है और वह उसे इतनी शक्तसि सांत्वना देने लगती है कवािह अन्य सभी सुखों को भूल जाता है, क्योंकवािह इन अश्रुओं की अतुलनीय मधुरता से पूर्णतःतृप्त हो जाता है।

४६. जो लोग अपना मार्ग चौड़ा करते हैं, उनके लएि आँसू सूख जाते हैं; लेकनि जो संकीर्ण मार्ग से प्रेम करते हैं, उनके लएि वे एक प्रबल धारा में बहते हैं।

४७. न तो पापी शोक रहति होता है और न ही धार्मकि; परन्तु पापी इस बात पर शोक करता है कवािह अभी तक पाप से पूरी तरह मुक्त नहीं हुआ है, जबकधिार्मकि इस बात पर शोक करता है कवािह अभी तक उस सबको प्राप्त नहीं कर पाया है जो अच्छा है।

४८. प्रार्थना और मौन उन सद्गुणों में से हैं जो हमारी शक्तकि भीतर हैं; जबकउिपवास और जागरण उन सद्गुणों में से हैं जो पूरी तरह से हमारी शक्तकि भीतर नहीं हैं, क्योंकवाि कसिी के शारीरकि स्वभाव पर भी नर्िभर करते हैं। अतःतपस्वी को वही चुनना चाहएि जो उसके लएि सबसे अधकि संभव और लाभकारी हो।

४९. प्रार्थना का घर धैर्य है: क्योंकइिससे ही यह कायम रहता है; और इसका पोषण वनिम्रता है: क्योंकि इससे ही यह पोषति होता है।

50. स्वयं को छोटी-छोटी बातों में न बाँधो, और तुम बड़ी बातों के दास नहीं बनोगे: क्योंकऐिसा कभी नहीं होता कएिक छोटे बुराई के सामने एक बड़ी बुराई उत्पन्न हो।

५१. जसिमें दया और सत्य का राज है, उसमें ईश्वर को प्रयि होने वाली सभी चीजें भी पाई जाती हैं; क्योंकि दया बनिा करुणा के कसिी का न्याय नहीं करती, जबकसित्य बनिा नष्पिक्षता के कसिी के प्रतपिक्षपात नहीं करता।

५२. जसिने सरलता द्वारा आत्म-संयम को वसिर्जति कर दयिा है, वह उस परम आनंद में भाग लेगा जो वहाँ प्रतीक्षा कर रहा है।

53. आप उन वासनाओं को समाप्त नहीं कर सकते जो आपसे लड़ती हैं, जब तक कआिप पहले उस मट्टिी को संवारना बंद न कर दें जसिसे वे अपना पोषण प्राप्त करती हैं।

54. कुछ लोग केवल शरीर को शुद्ध करना चाहते हैं, जबकअिन्य आत्मा को भी शुद्ध करना चाहते हैं: क्योंकि कुछ लोगों को केवल पापपूर्ण कर्मों से परहेज़ करने की शक्तप्रािप्त हुई है, जबकअिन्य लोगों को वासनाओं से भी परहेज़ करने की शक्तप्रािप्त हुई है; और जो लोग कामवासना से भी परहेज़ करने की शक्तप्रािप्त करते हैं, वे वास्तव में बहुत कम हैं।

55. एक व्यक्तकिामवासनाग्रस्त होता है यदपिाप की ओर उसका झुकाव उसके वचिार से अधकि प्रबल हो, भले ही उसने अभी तक पाप न कयिा हो; एक व्यक्तकिामुक होता है यदपिाप की क्रयिा (ऊर्जा) उसके वचिार से कमजोर हो, भले ही वह आंतरकि रूप से कामवासना से ग्रस्त हो; एक व्यक्तपिक्षपाती होता है यदवािह दोनों से स्वतंत्र रूप से, या यूँ कहें कदिासतापूर्वक, लगाव रखता हो; यदऐिसे ववििधि पापी वचिार और अवस्थाएँ उन्हें अज्ञात होतीं (यदवाि उनका अनुभव न करते), तो वे नर्लिप्ति होते।

५६. तपस्या और प्रार्थना से आत्मा से कामना का नाश होता है; जागरण और मौन से कामुकता का; मौन और एकाग्रता से पक्षपात का। परन्तु, नर्लिप्तिता ईश्वर की स्मृतसि स्थापति होती है।

५७. नर्लिप्ति के मुख से, मधुमक्खी के छत्ते की तरह, अनंत जीवन के वचन टपकते हैं। तो फरि, कौन योग्य माना जाएगा कवािह उन होठों को अपने होठों से छुए, उनकी छाती के बीच नवािस करे, और उनके वस्त्रों की मधुर सुगंध से सुगंधति हो? – अर्थात्, सदाचार के फलों में आनंदति होना, जसिकी सुगंध हमारी इंद्रयिों के माध्यम से जानी जाने वाली सभी सुगंधों से बढ़कर है (प्रेम-गीत 4:10-11)?!

५८. हर आत्मा को दृश्यमान से वंचति कर दयिा जाएगा; फरि भी, पाप के शरीर के संबंध में, इस सांसारकि जीवन के सुखों का आनंद लेने वालों में से बहुत से लोग ऐसा नहीं होंगे।

५९. जो जीवति हैं वे सब देह में मरे हुए हैं; परन्तु केवल वे जो पाप से अपने पूरे हृदय से घृणा करते हैं, पाप के लिए मरे हुए हैं।

60. तर्कशील आत्मा, इंद्रयि और बौद्धकि प्रकाश के संगम पर स्थति होने के कारण, एक के माध्यम से देखने और शारीरकि कर्म करने में, और दूसरे के माध्यम से आध्यात्मकि कर्म करने में सक्षम है। लेकनि चूँकि इसके भीतर बुद्धि का प्रकाश मद्धमि हो गया है, जबकि इंद्रयिों का प्रकाश अधकि स्पष्ट हो गया है, जो कि शुरू से ही स्थापति एक आदत के कारण है: यह पूरी तरह से दवि्य चीजों की ओर अपना ध्यान नहीं मोड़ सकती जब तक कि प्रार्थना के दौरान, यह पूरी तरह से बुद्धि के प्रकाश में डूब न जाए; लेकनि वह अनवािर्य रूप से अंधकार और प्रकाश के बीच की जगह में, (कामुक) अंधकार में रहने के लिए वविश है, जो आदत और प्रवृत्ति से भटकती रहती है, जबकि (बौद्धकि) प्रकाश में वह केवल कल्पना में ही वास करती है।

६१. प्रार्थना मन के साथ सूर्य की करिण की तरह स्थरि रहे; क्योंकि इसके बनिा, इन्द्रयि-सम्बन्धी चंताएँ, इधर-उधर भटकते पानी रहति बादलों की तरह, मन को उसकी स्वाभावकि चमक से वंचति कर देती हैं।

62. एक भावुक मन प्रार्थना के संकीर्ण द्वार में प्रवेश नहीं कर सकता जब तक कि वह पहले अपनी इंद्रयि-संबंधी व्यस्तताओं को त्याग न दे; लेकनि वह हमेशा व्यर्थ में ही पीड़ति होगा, उन व्यस्तताओं की छाया में चक्कर लगाते हुए।

63. जब तक मन इंद्रयि-भोगों की सभी अत्यधकि चंताओं को त्याग नहीं देता, तब तक वह आसानी से दुख से ऊपर नहीं उठ सकता; न ही वह अपनी स्थति को समझ सकता है।

64. प्रार्थना, आँसुओं से बल प्राप्त कर, आत्मा से सभी शत्रुतापूर्ण वचिारों को बाहर नकिाल देती है; लेकनि ये वचिार मन की भटकन से वापस आ जाते हैं, और व्यर्थ की बातों से और तीव्र हो जाते हैं, जो जब बाहर नकिाल दी जाती हैं, तो अहंकार (नज़र, वाणी और गति में संयम की कमी) के सर्व-वनिाशकारी पाप को भी बाहर नकिाल देती हैं।

६५. उपवास अपनी स्पष्ट प्रकृति के कारण दनि का प्रतबिंबि है, जबकि प्रार्थना अपनी अस्पष्टता और गोपनीयता के कारण रात का प्रतबिंबि है। जो कोई भी दोनों का यथावधि अभ्यास करता है, और प्रत्येक को दूसरे के साथ जोड़ता है, वह अपने उद्देश्य के नगर को प्राप्त कर लेगा, जसिसे *'बीमारी, दुख और आहें दूर हो जाएँगी'* (यशायाह 54:11)।

६६. आध्यात्मकि कार्य बनिा कसिी समान शारीरकि गतविधि के हो सकता है और टकि सकता है। और धन्य है वह जसिने भौतकि (अर्थात् शारीरकि) कार्य की अपेक्षा बेहतर, अवांछति (अर्थात् आध्यात्मकि) कार्य को प्राथमकिता दी है। जसिके पास यह है, वह दूसरों से छपि हुए, परन्तु परमेश्वर के सामने प्रकट, प्रार्थना के जीवन को जीकर बाहरी कर्म की अनुपस्थति की पूर्ति करता है।

67. प्रेरति हमें वश्विास के द्वारा धैर्य रखने, आशा में आनंदति होने, और प्रार्थना में स्थरि रहने के लिए आग्रह करते हैं, ताकि आनंद का आशीर्वाद हम में बना रहे। यदि ऐसा है, तो इससे यह नष्किर्ष नकिलता है कि जसिमें धीरज नहीं, उस में वश्विास नहीं; जो आनंदति नहीं होता, उस में आशा नहीं; क्योंकि उसिने आनंद के कारण – प्रार्थना – को ठुकरा दयिा है और उसमें स्थरि नहीं रहता (रोमयिों 12:12; कुलुस्सयिों 4:2; इब्रानयिों 12:1)।

68. जैसे पुराने दनिों में, अपने क्षेत्र से भटककर, मन अपनी महमिामय चमक को भूल गया: वैसे ही अब, यहाँ की सभी चीज़ों को भूलकर, उसे प्रार्थना के द्वारा वहाँ फरि से लौटना होगा।

69. जैसे एक बच्चे के लिए माँ की मुरझाई हुई छातयिाँ होती हैं, वैसे ही मन के लिए प्रार्थना होती है जब वह कोई सांत्वना नहीं देती। लेकनि जब प्रार्थना इसके वपिरीत होती है (अर्थात् जब वह मन को सांत्वना से भर देती है), तो मन उस बच्चे की तरह हो जाता है जो आनंद से अभभिूत होकर अपनी माँ की बाहों में सो जाता है।

70. कोई भी तब तक प्रार्थना के साथ एक नहीं हो सकता जब तक कि उसिने भोजन और वस्त्रों को छोड़कर सभी भौतकि चीजों का त्याग न कर दयिा हो (1 तीमुथयिुस 6:8)। यदि आप एकनष्ठि ध्यान के साथ प्रार्थना करना चाहते हैं तो बाकी सब कुछ से अपना लगाव तोड़ लें।

71. प्रार्थना में हर कसिी का उद्देश्य एक समान नहीं होता; कुछ का एक उद्देश्य होता है, जबकि दूसरों का दूसरा। एक प्रार्थना करता है कि, यदि संभव हो, तो उसका हृदय हमेशा प्रार्थना में लगा रहे, और वह इसमें और भी ऊँचा उठे; दूसरा, कि वह (आदत डाल ले) कि वचिलित करने वाले वचिारों से प्रार्थना में बाधति न हो; फरि भी सभी प्रार्थना करते हैं (आम तौर पर), या तो भलाई में बने रहने के लिए, या बुराई की ओर न भटकने के लिए।

72. यदि कोई भी प्रार्थना से वनिम्र हुए बनिा नहीं उठता—क्योंकि प्रार्थना करते समय हर कोई वनिम्र हो जाता है—तो यह स्पष्ट है कि जो कोई भी बाहरी रूप से घमंडी अभद्रता दखिाता है, वह वनिम्रता से प्रार्थना नहीं कर रहा है।

७३. यदि प्रार्थना करते समय, आप उस विधवा के बारे में सोचते हैं जिसने कठोर-दिल न्यायाधीश को अपना न्याय दिलाने के लिए मजबूर किया था; तो जब प्रार्थना से माँगी गई आशीषें मिलने में देर होगी तो *आप 'हतोत्साहित'* नहीं होंगे (लूका १८:३)।

74. प्रार्थना आपके साथ नहीं रहेगी यदि आप भीतर व्यर्थ के विचारों में और बाहर बेकार की बातचीत में लगे रहेंगे; लेकिन यह उस व्यक्ति के पास शीघ्रता से लौटती देखी जाती है जो इसके लिए, अपने भीतर बहुत कुछ काट डालता है।

75. यदि प्रार्थना के शब्द आत्मा की गहराइयों में प्रवेश नहीं करते, तो आँसू आत्मा के गालों को नहीं धो पाएँगे।

76. स्वर्ग के राज्य की कुंजी प्रार्थना है। जो इसे वैसे ही करता है जैसे उसे करना चाहिए, वह इसके मित्रों के लिए निर्धारित (वादा की गई) आशीषों को देखता है। लेकिन जो केवल वर्तमान को देखता है, उसे अभी तक प्रार्थना करने का साहस नहीं मिला है।

77. प्रार्थना के दौरान, मन परमेश्वर के सामने निडर होकर यह नहीं कह सकता: *'तूने मेरे बंधन खोल दिए हैं; मैं तुझे स्तुति का बलिदान चढ़ाऊँगा'* (भजन संहिता 115:7); जब तक कि वह बेहतर की लालसा से प्रेरित होकर, कायरता (मांस के बंधनों से अपने जीवन का भय), आलस्य, अत्यधिक नींद और भोजन में अतिशय लिप्तता, जिससे पतन आता है, को त्याग न दे।

७८. जो प्रार्थना के समय अपने विचारों में खोया रहता है, वह पहले पर्दे के बाहर (आँगन में मंडप के बाहर) खड़ा रहता है; इस पर्दे के पीछे, मंडप के अंदर (उसके सामने वाले हिस्से में, जिसे पवित्र स्थान कहा जाता है), वह है जो एकाग्र भक्ति से प्रार्थना करता है; और परम पवित्र स्थान में केवल वही व्यक्ति प्रवेश करता है, जिसने स्वाभाविक विचारों और हलचलों को शांत कर, सर्व-प्रकृति से परे वाले के साथ एकरूप हो, उससे आवश्यक प्रबोधन प्राप्त किया हो।

७९. जब आत्मा, बाहरी सभी चीज़ों से स्वयं को खाली कर, प्रार्थना के साथ एक हो जाती है, तो मानो एक विशेष ज्वाला उसे घेरे लेती है और उसके पूरे अस्तित्व को लोहे की तरह अग्नि से व्याप्त कर देती है। और तब आत्मा—यही आत्मा—लाल-गरम लोहे की तरह, सभी बाहरी चीज़ों के प्रति अभेद्य हो जाती है।

80. जो लोग सक्रिय जीवन को अच्छी तरह से जीते हैं, उनके लिए प्रार्थना कभी-कभी, उन पर छा जाने वाले बादल की तरह, उनके जला देने वाले विचारों को शांत करती है, और कभी-कभी, मानो उन्हें बारिश की बूंदों से सींचते हुए, उन्हें आध्यात्मिक चिंतन का ज्ञान देती है।

81. मन, ऊपर उठने का प्रयास करते हुए, तुरंत वहाँ नहीं पहुँचता, बल्कि केवल तभी पहुँचता है जब वह सभी सांसारिक चीजों को पूरी तरह से तुच्छ समझ लेता है और खुद को दिव्य कार्यों के लिए समर्पित कर देता है।

८२. जब आप अपने मन को शरीर, भोजन और धन के सभी लगाव से मुक्त कर लेते हैं, तो आप जो कुछ भी करते हैं, वह आपके द्वारा ईश्वर को दी गई एक शुद्ध भेंट के रूप में गिना जाएगा। और इसके लिए आपको आपके हृदय की आँखें खोलकर पुरस्कृत किया जाएगा, और आपको उसमें ईश्वर के नियमों के बारे में स्पष्ट रूप से निर्देश दिया जाएगा, जो आपके सूक्ष्मदर्शी स्वादेंद्रिय को आनंद प्रदान करने के कारण, शहद और शहद के छत्ते से भी अधिक मीठे लगेंगे।

83. आप अपने मन को शरीर, धन और भोजन की इच्छाओं से श्रेष्ठ नहीं बना सकते, जब तक कि आप इसे धर्मात्माओं की पवित्र भूमि में न ले जाएँ, जिसमें (या जिसके प्रभाव में), एक बार मृत्यु और ईश्वर की स्मृति आपके हृदय में गहरी हो जाने पर, यह उसमें सांसारिक इच्छाओं के हर विद्रोह को नष्ट कर देगी।

८४. मृत्यु के स्मरण से अधिक भयानक कुछ भी नहीं, और ईश्वर के स्मरण से अधिक अद्भुत कुछ भी नहीं; पहला उद्धारकारी शोक उत्पन्न करता है, जबकि दूसरा आध्यात्मिक आनंद से भर देता है। क्योंकि भविष्यवक्ता दाऊद गाते हैं: *'मैंने परमेश्वर को स्मरण किया और आनन्दित हुआ'* (भजन संहिता 76:4); और बुद्धिमान सिखाते हैं: *'अपने अन्त को स्मरण रख, और तू कभी पाप न कर'* (सिरैकस 7:39)।

८५. जब तक मन *'परमेश्वर की महिमा को साक्षात्'* (२ कुरिन्थियों ३:१८) नहीं देखता, तब तक आत्मा अपने हृदय में *यह* घोषणा नहीं कर सकती: *'मैं प्रभु में आनन्दित होऊँगा'* (भजन संहिता 103:34), *'मैं उसकी मुक्ति में आनंदित होऊँगा'* (भजन संहिता 19:6)। क्योंकि आत्म-प्रेम का पर्दा उसके हृदय पर पड़ा है, जिसे स्वैच्छिक और अनैच्छिक दुखों और वंचितताओं के बिना हटाया नहीं जा सकता; और जब तक यह उस पर बना रहता है, यह उसे यह देखने से रोकता है कि सभी चीजें कैसे हैं और घटित होती हैं।

८६. मिस्र से निकलने के बाद नहीं—अर्थात्, कर्म द्वारा पाप के दूर हो जाने के बाद नहीं—न ही समुद्र पार करने के बाद—अर्थात्, पाप के प्रति सहानुभूति और प्रवृत्ति के टूट जाने के बाद; परन्तु जंगल में उनके वास के बाद—अर्थात्, हर प्रकार की कठिनाइयों, अभावों और दुःखों को सहने के बाद—इज़राइल के नेता को प्रतिज्ञात देश, अर्थात्, निर्लिप्तता की एक झलक दी जाती है, जिसमें तीव्र बौद्धिक चिंतन होता है (व्यवस्थाविवरण 34:1)।

८७. जो लोग मरुभूमि से होकर यात्रा करते हैं—अर्थात्, जिनमें पाप सुप्त रहता है—वे उस धन्य भूमि के आशीर्वादों को केवल सुना-सुनाया ही जानते हैं; जो इसे अपनी आँखों से देखते हैं, वे इन आशीर्वादों को देखते हैं, अर्थात्, सद्गुण और आज्ञाकारिता के श्रम में लगे हुए लोग उन्हें आशा के साथ अपनाते हैं; जबकि जो इसे प्रवेश करने के योग्य माने जाते हैं, वे इनसे हर इंद्रिय से तृप्त होते हैं, जैसे शहद और दूध से।

88. जो अब भी स्वाभाविक, शारीरिक प्रवृत्तियों को पालता है, वह मसीह के साथ अभी तक क्रूस पर नहीं चढ़ाया गया है, और न ही जो शारीरिक विचारों और सहानुभूतियों को पालता है, वह उनके साथ دفन हुआ है: तो फिर, ऐसा कोई उनके साथ कैसे एक हो सकता है ताकि '*जीवन की नई चाल चले*' (रोमियों 6:4)?

८९. पुराने समय में, यह आज्ञा दी गई थी कि मंदिर में '*खलिहान और दाख की चक्की का पहिला हिस्सा*' लाया जाए (निर्गमन २२:२९)। अब, हालाँकि, हमें परमेश्वर को सक्रिय सदाचार के प्रथम फलों के रूप में संयम और सत्य, और चिंतनशील सदाचार के प्रथम फलों के रूप में प्रेम और प्रार्थना अर्पित करनी चाहिए: पहले का उपयोग कामुकता और क्रोध की इच्छाओं को काटने के लिए, और बाद वाले का उपयोग व्यर्थ विचारों और उनके द्वारा उत्पन्न पापों को काटने के लिए।

९०. सक्रिय सदाचार की शुरुआत संयम और विनम्रता, सत्य और पवित्रता है; हालाँकि, इसका अंत मन की शांति और शरीर की पवित्रता है।

९१. वास्तव में अच्छे कर्म के लिए न केवल यह आवश्यक है कि कोई अच्छे भाव से अच्छा करे, बल्कि यह भी कि वह सही ढंग से कार्य करे, अर्थात् कर्ता कर्म के संबंध में सही समय और सही मात्रा दोनों का पालन करे।

92. जैसे चिंतन के बिना कर्म दृढ़ नहीं होता, वैसे ही कर्म के बिना चिंतन भी सच्चा नहीं होता। कर्म चिंतन से युक्त होना चाहिए, जैसे कि चिंतन को कर्म द्वारा प्रमाणित किया जाना चाहिए: ताकि, एक ओर, बुराई पर विजय प्राप्त की जा सके, और दूसरी ओर, परोपकारी इरादों की पूर्ति में सद्गुण को शक्तिशाली रूप से प्रकट किया जा सके।

९३. सक्रिय जीवन का अंत वासनाओं पर विजय प्राप्त करना है, जबकि चिंतनशील जीवन का अंत गुणों के दर्शन करना है।

94. सक्रिय सद्गुण की खोज में, कई *लोग दौड़ते हैं, लेकिन केवल एक ही पुरस्कार प्राप्त करता है* (1 कुरिन्थियों 9:24) – अर्थात्, वह जो चिंतन की सहायता से इसकी पूर्ति तक पहुँचने का प्रयास करता है।

95. सक्रिय व्यक्ति लंबे समय तक ध्यान में नहीं रह सकता। क्योंकि, ध्यान के संबंध में, वह एक यात्री की तरह है जिसे किसी ने अपने घर में आश्रय दिया हो, लेकिन जिसे जल्द ही वहाँ से प्रस्थान करना होता है।

96. सक्रिय सेवा में लगे हुए लोग ईश्वर की आज्ञाओं के द्वार से प्रार्थना में प्रवेश करते हैं; जबकि चिंतन में लगे हुए लोग सद्गुणों के आँगन में रहते हैं, आध्यात्मिक भजन और गीत गाते हैं: पहले वाले अपने बंधनों से मुक्त होने के लिए धन्यवाद देते हैं; बाद वाले, युद्ध में उनके खिलाफ उठ खड़े हुए लोगों को बंदी बनाने के लिए।

97. विचारों को मन रूपी नाव के नौकर मानिए, और चप्पू को आत्मा की जीवन-दायक शक्तियाँ: उत्साह (ऊर्जा) और इच्छा, इच्छा-शक्ति और संकल्प (चुनाव, दृढ़ संकल्प)। सक्रिय व्यक्ति को इनकी हमेशा आवश्यकता होती है, जबकि चिंतनशील व्यक्ति को हमेशा नहीं।

९८. कर्मशील व्यक्ति के लिए, इंद्रिय वस्तुओं के अनेक प्रत्ययों के कारण, प्रार्थना के समय हृदय पर एक पर्दा पड़ा रहता है, जो जब तक उन के प्रति सहानुभूति बनी रहती है, उसे खुलने से रोकता है। केवल चिंतनशील व्यक्ति, जिसमें ऐसी सहानुभूति नहीं होती, ही खुले हृदय से कुछ हद तक ईश्वर की महिमा की झलक देख सकता है।

99. तर्कशील आत्मा का आँगन इंद्रियाँ हैं; मंदिर विवेक है; प्रधान पुरोहित बुद्धि है। और इस प्रकार, आँगन में बुद्धि अनुचित विचारों से स्वयं का मनोरंजन करती है; मंदिर में, यह समयोचित चिंतन में लगी रहती है; लेकिन जो दिव्य पवित्रस्थान में प्रवेश करने के योग्य माना जाता है, वह न तो एक से और न ही दूसरे से संबंधित होता है।

100. कर्मशील आत्मा के घर में '*रोना, शोक और दुख*' (यहे. 2:10) निवास करते हैं, श्रम के बोझ के कारण; जबकि चिंतनशील आत्मा में ज्ञान के आराम के कारण '*आनंद और प्रशंसा का स्वर*' (भजन 41:5) सुना जाता है।

101. आध्यात्मिक वस्तुओं का चिंतन ही स्वर्ग है। आध्यात्मिक व्यक्ति प्रार्थना के द्वारा इसमें प्रवेश करता है, जैसे किसी घर में; जबकि कर्मशील व्यक्ति, इसके संबंध में, एक राहगीर के समान है जो अंदर झाँकना चाहता है पर नहीं देख सकता, क्योंकि उस घर के चारों ओर की बाड़ उसकी आध्यात्मिक ऊँचाई से भी ऊँची है।

102. एक कर्मशील व्यक्ति तब तक पूर्ण नैतिक सुंदरता से स्वयं को नहीं सजा सकता, जब तक कि वह भी, कुलपति अब्राहम की तरह, *'अपने घर*—अर्थात्, प्राकृतिक कानून—*'और अपने कुल-परिवार*—उस आत्म-तुष्ट जीवन को, जो उसका पर्याय बन गया है, *'न छोड़ दे'*। क्योंकि केवल इसी तरह वह, एक मुहर की तरह, शारीरिक इच्छा का खतना प्राप्त करेगा (उत्पत्ति 17:11; रोमियों 4:11), जिसका कारण वह आवरण है जो जन्म से हम पर पड़ा हुआ है, और जो हमें पूर्ण स्वतंत्रता प्राप्त करने से रोकता है।

103. सक्रिय जीवन के लिए, उपवास और जागरण *'कमर कसना'* हैं; और चिंतनशील जीवन के लिए, मौन और प्रार्थना *'जलते दीपक'* हैं (लूका 12:35)।

104. एक अपूर्ण मन को प्रार्थना की फलदायी दाख की बारी में प्रवेश करने की अनुमति नहीं है; एक गरीब आदमी की तरह, उसे केवल *'अंगूर की फसल के बचे हुए दाने'* (व्यवस्थाविवरण 24:21) दिए जाते हैं—केवल भजन-गायन।

105. जैसे कि जो लोग राजा से बात करने के योग्य माने जाते हैं, उन सभी को उसकी मेज़ पर आमंत्रित नहीं किया जाता, वैसे ही जो लोग प्रार्थनापूर्ण बातचीत के लिए ईश्वर के पास आते हैं, उन सभी को प्रार्थनापूर्ण मनन की अवस्था में नहीं लाया जाता।

106. क्रोध का लगाम समय पर मौन है; वाणीहीन इच्छा के लिए मध्यम आहार; और एक अनियंत्रित विचार के लिए एक संक्षिप्त प्रार्थना।

107. न तो वह जो इंद्रियों के मोती को वहाँ से वापस लाने के लिए गहराई में उतरना चाहता है, और न ही वह जो आध्यात्मिक मोती को वहाँ खोजने के लिए ऊँचाइयों पर चढ़ना चाहता है, उसे वह प्राप्त होगा जिसकी वह इच्छा करता है और जिसकी वह खोज करता है, जब तक कि पहला अपने वस्त्रों को न उतार दे और दूसरा सभी कामुक चीजों को।

108. प्रार्थना के दौरान हृदय के भीतर केंद्रित मन, अपनी वधू से बात करने वाले वर के समान है; परन्तु जो अपने भीतर प्रवेश नहीं करता, वह विवाह कक्ष के बाहर खड़े उस व्यक्ति के समान है, जो कराहते हुए ' ' पुकार लगाता है और चिल्लाता है: *'मुझे शरण नगर में कौन ले जाएगा?'* (भजन संहिता 59:11)? या मेरा मार्गदर्शक कौन होगा, ताकि प्रार्थना के दौरान *मैं 'निष्फलता और मिथ्या मूर्खता पर दृष्टि न डालूँ'* (भजन संहिता 39:5)?

109. जैसे नमक के बिना भोजन गले के लिए होता है, वैसे ही पश्चाताप के बिना किया गया प्रार्थना मन के लिए होती है।

110. प्रार्थना की खोज में रहने वाली आत्मा प्रसव पीड़ा में एक स्त्री के समान है; परन्तु जिसने प्रार्थना पा ली है, वह आत्मा उस स्त्री के समान है जिसने जन्म दे दिया है, और जन्म के कारण आनन्द से भर जाती है (यूहन्ना 16:21)।

111. एक बार, पहाड़ पर रहने वाले अमोरीयों ने उन लोगों को मार गिराया जो *'पहाड़ की चोटी पर चढ़ने के लिए उत्साहित हुए'* (गिनती 14:44-45; व्यवस्थाविवरण 1:44)। परन्तु अब, दुष्ट भूल उन लोगों को दूर भगा देती है, जो हृदय की पवित्रता प्राप्त करने से पहले, शुद्ध प्रार्थना की सर्वोच्च चोटी पर चढ़ने का प्रयास करते हैं।

112. प्रार्थना, प्रार्थना के रूप में, उस रोटी के समान है जो नव-प्रवेशकों को सहारा देती है; प्रार्थना, जब किसी प्रकार के ध्यान के साथ संयुक्त होती है, तो वह अभिषेक तेल के समान है; और कल्पना रहित प्रार्थना सुगंधित मदिरा के समान है, जिससे जो लोग अतृप्त होकर पीते हैं, वे आनंद-विभोर हो जाते हैं (भजन संहिता 103:15)।

113. तपस्वी को अपने शरीर को एक प्रकार के भोजन तक सीमित रखना चाहिए, और अपने मन को एक-शब्दीय प्रार्थना तक। तब, वासनाओं द्वारा अब और रोके न जाकर, वह प्रार्थना के दौरान आनंद में प्रभु की ओर उड़ान भर सकेगा।

114. जो कुत्तों को लाठी दिखाकर डराता है, वह उन्हें अपने विरुद्ध भड़काता है; और जो शुद्धता के साथ प्रार्थना करने के लिए स्वयं को बाध्य करता है, वह राक्षसों को भड़काता है।

115. जब, प्रार्थना में अथक अभ्यास के द्वारा, भजन संहिताओं के वचन प्रार्थना करने वाले के हृदय पर अंकित हो जाते हैं; तब, अच्छी मिट्टी की तरह, वह स्वयं अपनी इच्छा से बारी-बारी से आध्यात्मिक क्षेत्र में चिंतन के गुलाब, भौतिक दुनिया की सुंदरता और सामंजस्य की समझ के लिली, और ईश्वर के अनेक, अगम्य निर्णयों में अंतर्दृष्टि के वायोलेट खिलाना शुरू कर देता है।

116. आत्मा, स्वयं का पूर्णतःपरित्याग करके और पूरी तरह से प्रार्थना में समर्पति हो जाने पर, उस क्षेत्र से उतरती है जहाँ वह सभी प्राणियों से ऊपर उड़ान भरती है, न तो जब वह चाहे, बल्कि तब जब वह, जो हमारे सभी मामलों को माप और तौल से निर्धारति करता है, इच्छा करता है।

117. एक योद्धा युद्ध समाप्त होने पर अपने हथियार रख देता है; और एक चिंतक, जब वह वैराग्य के साथ प्रभु में लीन हो जाता है, तो अपने विचारों को त्याग देता है।

118. एक सेनापति युद्ध में लूट न पाकर दुखी होता है; परन्तु जो सक्रिय जीवन व्यतीत करता है, वह तब दुखी होता है जब उसे प्रार्थना में आध्यात्मिक ध्यान की अनुग्रह नहीं मिलती।

119. एक हरिण सांसारिक जल के झरनों की ओर दौड़ता है (भजन संहिता 41:2), जैसे कोई जानवर उसे घायल कर गया हो; लेकिन आत्मा, प्रार्थना के सबसे मीठे तीर से भेदी हुई, आध्यात्मिक ज्ञान की लालसा करती है।

120. सूर्योदय पर तारे फीके पड़ जाते हैं; और जब मन अपनी ही दुनिया में लौट आता है तो विचार रुक जाते हैं।

121. और चिंतनशील मन, जब प्रकृति की आवश्यकताओं से आकर्षति होकर, स्वर्ग से पृथ्वी पर उतरता है, तो वह भी उसी प्रकार उद्घोष कर सकता है जिसने कहा था: क्या दिव्य सौंदर्य से अधिक अद्भुत कुछ है? और दिव्य वैभव के चिंतन से अधिक आनंददायक कौन सा विचार है? और प्रेम जैसी तीव्र और अनियंत्रित भावना और क्या है, जो ईश्वर ने सभी बुराइयों से शुद्ध आत्मा में प्रज्वलति की है, जो तब अपने हृदय की पूर्णता से कहती है: *'मैं प्रेम से घायल हूँ'* (प्रेम गीत 2:5; 5:8)?

122. *यह* कहना: *'मेरा हृदय मुझ में गरम हो गया है, और मेरी शिक्षा में आग जल उठी है'* (भजन संहिता 38:4), उस व्यक्ति के लिए उपयुक्त है जो प्रार्थना में परमेश्वर का अनुसरण करने से कभी नहीं थकता, और जिसने *'मानव का दिन'* (यिर्मयाह 17:16) देखने की इच्छा नहीं की।

123. उत्साही आत्मा भी गीतों के गीत में दुल्हन की तरह बोले, जब उसने अपने सभी दुर्गुणों, दुष्ट राक्षसों और दुष्ट विचारों को त्याग दिया है, और वे उसे *'व्यर्थताओं और झूठी सुख-आनंदों पर फिर से देखने' के लिए* मजबूर करना शुरू करते हैं (भजन संहिता 39:5): *'मैंने अपना वस्त्र उतार दिया है; मैं उसे फिर कैसे पहनूँ? मैंने अपने पाँव धो लिए हैं; मैं उन्हें फिर कैसे मैला करूँ?'* (प्रेम गीत 5:3)?

124. धन्य है तू, हे ईश्वर-प्रेमी आत्मा, यदि तू निडर होकर ईश्वर से पुकार सकती है: *'मुझसे कहो'*, हे अच्छे चरवाहे, *'तू* अपनी भेड़ों को *कहाँ चराता है'*, और 'अपनी मेमनों को *मध्याह्न में कहाँ विश्राम देता है'*, *'ताकि'*, उनका अनुसरण करते हुए, *मैं 'अपने पड़ोसियों के झुंडों में* न *भटक जाऊँ'* (प्रेम गीत 1:6)?

125. सक्रिय आत्मा, जो प्रार्थना के वचन को दृढ़ता से थामे रहने का प्रयास करती है परन्तु ऐसा करने में असमर्थ है, गीत में दुल्हन की तरह, पुकारती है: *'रात को अपने बिछौने पर, मैंने उसको ढूँढा जिसे मेरी आत्मा प्रेम करती है: मैंने उसे ढूँढा, परन्तु वह मुझे नहीं मिला; मैंने उसे पुकारा, परन्तु उसने मुझे उत्तर नहीं दिया।' 'मैं उठूँगी,' तब,* सबसे कठिन प्रार्थना के साथ, *'और नगर में घूमूँगी, सड़कों और चौकों में, और उसे ढूँढूँगी जिसे मेरी आत्मा प्रेम करती है'* (प्रेम गीत 3:1–2)। शायद मैं उसे सभी चीजों में और जो कुछ भी मौजूद है, उससे परे पा लूँगी; *'और जब उसकी महिमा प्रकट होगी तब मुझे तृप्ति मिलेगी'* (भजन संहिता 16:15)।

126. यदि कोई व्यक्ति अपने घर में राजा का स्वागत करके अत्यंत महिमामय हो जाता है, और अन्य सभी आनंदों से परे आनंद से भर जाता है: तो फिर आत्मा को क्या महसूस करना चाहिए, जब वह स्वयं को शुद्ध कर लेती है और उसके अटूट वादे (यूहन्ना 14:23) के अनुसार राजाओं के राजा का अपने भीतर स्वागत करती है? और क्या वह अपने भीतर कुछ ऐसा छोड़ेगी जिसे बाहर नहीं किया गया है—कुछ ऐसा जो उसकी सेवा करने वालों के लिए बाधा प्रतीत हो सकता है? या क्या वह अपने भीतर उस चीज़ को ग्रहण करने का ध्यान नहीं रखेगी जो स्पष्ट रूप से उसे प्रसन्न करती है?

127. जो कोई भोर में राजा के सामने बुलाए जाने की आशा रखता है—वह राजा को प्रसन्न करने वाले शब्दों को सोचने के अलावा और किसी चीज़ में अपना मन लगाएगा? – और जो भी आत्मा ईश्वर के संबंध में ऐसा करती है, वह वहाँ के न्याय के लिए अप्रस्तुत नहीं पाई जाएगी।

128. धन्य है वह आत्मा जो अपने प्रभु के किसी भी क्षण आने की प्रतीक्षा करते हुए, पूरे दिन—और वास्तव में रात—की सारी मेहनत को पूरी तरह से निरर्थक समझती है, यह सोचकर कि जैसे ही सुबह होगी, वह तुरंत उसके सामने प्रकट हो जाएगा।

129. ईश्वर सब कुछ देखता है; फिर भी केवल वे ही ईश्वर को देखते हैं जो प्रार्थना करते समय ईश्वर के सिवा कुछ भी नहीं देखते। और जो लोग इस प्रकार ईश्वर को देखते हैं, उनकी वह सुनते हैं; परन्तु जिनकी नहीं सुनी

जाती, वे उन्हें नहीं देखते। धन्य है वह जो विश्वास करता है कि जो कुछ देखा जाता है वह ईश्वर से आता है: क्योंकि ऐसा व्यक्ति उन्हें प्रसन्न करने के मार्ग से नहीं भटकेगा (भजन संहिता 15:8)।

130. हमारे भीतर निवास करने वाले राज्य के आशीर्वाद न तो किसी शांति-प्रिय नेत्र ने देखे हैं, न ही किसी महत्वाकांक्षी कान ने सुने हैं, और न ही ये पवित्र आत्मा से रहित हृदय में आए हैं; ये मसीह के भविष्य के राज्य में धर्मी लोगों पर प्रदान किए जाने वाले आशीर्वादों की प्रतिज्ञाएँ हैं। जो यहाँ आत्मा के इन फलों का आनंद नहीं लेता, उसे वहाँ भी उनका आनंद लेने के योग्य नहीं माना जा सकता।

131. सक्रिय लोगों के विचार हिरणों जैसे होते हैं। क्योंकि जैसे हिरण अब शिकारियों से डरते हुए पहाड़ों की चोटियों पर घूमते हैं, और अब वहाँ के आनंद का अनुभव करने की इच्छा से घाटियों में उतर आते हैं: इसी प्रकार ये पुरुष भी—वे अपनी अक्षमता के कारण निरंतर आध्यात्मिक चिंतन में नहीं रह सकते, और न ही वे हमेशा सांसारिक कार्यों में संलग्न रह सकते हैं, क्योंकि उन्हें उनसे विश्राम की आवश्यकता होती है, जो ऐसे कार्य प्रदान नहीं करते।

132. यह नदी के प्रवाह को नीचे की ओर जाने से रोकने का मामला उतना नहीं है, जितना कि मन की प्रवृत्ति को रोकने का है, ताकि वह दृश्यमान चीजों का दास न हो जाए, बल्कि प्रार्थना में ध्यान केंद्रित करते हुए उस की ओर ऊपर की ओर मुड़ जाए जो उससे मिलता-जुलता है; क्योंकि बाद वाला उसके लिए स्वाभाविक है, जबकि पहला नहीं।

133. लंबी कैद के बाद मुक्त हुआ एक कैदी उतनी तेजी से घर नहीं भागता जितनी तेजी से भौतिक आसक्तियों से मुक्त हुआ मन, जो प्रसन्न कदमों से उन स्वर्गीय चीजों की ओर बढ़ता है जो उसकी अपनी हैं।

134. जिस व्यक्ति की प्रार्थना ध्यान के बिना होती है, परन्तु प्रार्थना के दौरान उसका मन भटकता रहता है, उसके लिए भजन किसी विदेशी भाषा में लगता है, और वह स्वयं भजन के संबंध में, उस व्यक्ति के समान हो जाता है जो विदेशी भाषा बोलता है (1 कुरिन्थियों 14:17)। दुष्टात्मा ऐसी अवस्था का मज़ाक उड़ाती हैं।

135. उस व्यक्ति के लिए जो संसार को सूली पर चढ़ा चुका है, और उस व्यक्ति के लिए जो स्वयं को संसार पर सूली पर चढ़ाता है, यह एक समान बात नहीं है। क्योंकि कुछ लोगों के लिए, उपवास और जागरण कीलों का काम करते हैं, जबकि दूसरों के लिए, यह लालच का अभाव और आत्म-नम्रता है। इसके अलावा, बाद वाले के बिना, पहले वाले का श्रम व्यर्थ है।

136. जो व्यक्ति सौंदर्य और महत्वाकांक्षा के जुनून से ग्रस्त है, वह शुद्ध हृदय से प्रार्थना नहीं कर सकता। क्योंकि इन चीजों के प्रति लगाव और व्यर्थ विचार ऐसे व्यक्ति को रस्सियों की तरह उलझा देते हैं, और प्रार्थना के दौरान उसे नीचे खींचते हैं, ठीक वैसे ही जैसे एक बंधे हुए पक्षी के साथ होता है जब वह उड़ने का प्रयास करता है।

137. प्रार्थना में मन का शांत होना असंभव है जब तक कि वह पहले संयम और प्रेम के साथ सहभागिता का विकास न करे; जिसमें पहला आत्मा के विरुद्ध शरीर की शत्रुता को नष्ट करने का प्रयास करता है, और दूसरा परमेश्वर के लिए, अपने पड़ोसी के प्रति आत्मा की शत्रुता को समाप्त करता है: जिससे अंततः '*वह शान्ति जो सब समझ से परे है*' (फिलि. 4:7) आती है, और वह उस व्यक्ति में अपना वास करती है जो इस प्रकार शान्ति प्राप्त कर लेता है (यूहन्ना 14:23)।

138. परमेश्वर के राज्य में प्रवेश करने का प्रयास करने वाले की धार्मिकता का काम अच्छे कर्मों से भरपूर होना चाहिए: '*अपनी ही गरीबी में से*' दान देकर (मरकुस 12:44; लूका 21:4); और शांति के लिए आत्म-त्याग और धैर्य के साथ किए गए प्रयासों में, यह सब प्रभु की खातिर होता है।

139. कुछ वासनाएँ शारीरिक होती हैं और अन्य आध्यात्मिक। जो व्यक्ति शारीरिक वासनाओं का त्याग तो करता है, परन्तु आध्यात्मिक वासनाओं की ओर कोई ध्यान नहीं देता, वह उस मनुष्य के समान है जिसने जंगली जानवरों से अपनी रक्षा के लिए एक ऊँची और मजबूत बाड़ बना ली है, फिर भी स्वेच्छा से अपने मन के दाख की बारी के शानदार गुच्छों को चोंच मारने के लिए पक्षियों को अनुमति देता है।

140. कोई भी अपनी इंद्रियों को बंद नहीं रख सकता, जैसे कोई शहर के दरवाज़े को बंद नहीं रख सकता। लेकिन सावधानी बरतनी चाहिए कि जब उन्हें किसी योग्य उद्देश्य के लिए खोला जाए, तो उनके माध्यम से कुछ भी ऐसा प्रवेश न करे जो हमारे दुश्मनों को लाभ पहुँचाए, या कलह का कारण बने।

141. कई लोग आत्म-निर्वासित पीड़ा (स्वैच्छिक शारीरिक वंचितताओं) के क्रूस पर चढ़ते हैं; लेकिन कुछ ही इसके कीलों को स्वीकार करते हैं (खुद को हमेशा के लिए उस पर ठोकना)। कई लोग स्वैच्छिक आज्ञाकारिता के दास होते हैं; फिर भी केवल वही लोग जो महत्वाकांक्षा का त्याग कर चुके हैं, स्वेच्छा से अपमान सहते हैं।

142. जनि लोगों के हर काम से पहले ईश्वर का भय नहीं होता, उनके वचिार एक चरवाहे रहति भेड़ों की तरह भ्रम में रहते हैं; लेकनि उन लोगों पर, जनि पर यह उतरता है या उनसे पहले आता है, उनके वचिार एक अस्तबल में भेड़ों की तरह नम्रता और व्यवस्था में रहते हैं।

143. ईश्वर का भय वश्विास का पुत्र है; वह स्वयं आज्ञाओं के पालन का रक्षक है, जैसे एक चरवाहा जो अपने भेड़ों को हरे-भरे चरागाह में रखता है। जसिने अपनी माता (वश्विास) को प्राप्त नहीं कयिा है, उसे प्रभु के झुंड की भेड़ों में गनिा जाने योग्य नहीं माना जाएगा।

खंड IV

आदरणीय थयोिडोर द स्टुडाइट

की संन्यासयिों के लएि तपश्चर्या संबंधी शक्षिाएँ

भूमकिा

हमारे 'डोब्रोतोल्यूबयि' का चौथा खंड पूरी तरह से संतों थयोिडोर द स्टुडाइट द्वारा भक्षिुओं को दएि गए नर्िदेशों से बना है। प्रारंभ में, इस पवत्रि पति की मठवासी शक्षिाओं का सारांश केवल उनके पहले से ज्ञात 'लघु धर्मशक्षिा' से संकलति करने का इरादा था। लेकनि इस कार्य को शुरू करने से पहले, परमेश्वर ने माउंट अथोस पर रूसी पैंटेलमिोन मठ के बुजुर्गों को पैटमोस द्वीप पर, सेंट जॉन द थयोिलोजयिन के स्थानीय मठ में, तीन खंडों में उनके बड़े धर्मोपदेश (कैटेकज्मि) को खोजने और उसकी प्रतलिपि बिनाने का अवसर प्रदान कयिा। – तब हमें संत थयोिडोर के भक्षिुओं के लएि नर्िदेशों का एक अंश संकलति करने का वचिार आया, न केवल 'लघु धर्मशक्षिा' से बल्कि 'दीर्घ धर्मशक्षिा' से भी। यह अब पूरा हो गया है। इन मठवासी पाठों की संख्या ने हमारे *डोब्रोतोल्यूबयि* का एक पूरा खंड उनके लएि अलग रखने को आवश्यक बना दयिा: जो हमारे संग्रह के लएि हानकिारक नहीं है। क्योंकि यह मठवासी जीवन पर दएि गए पाठों में एक बड़ी कमी को पूरा करेगा, अर्थात् - इस बात पर मार्गदर्शन की कमी कि मठवासी जीवन की साधारण, दृश्यमान संरचना को मठवाद के प्राथमकि उद्देश्य को आगे बढ़ाने के साधन में कैसे बदलना है। सभी तपस्या संबंधी लेखन, पछिले तीन खंडों और इस पाँचवें और अंतमि खंड दोनों में, आंतरकि जीवन पर केंद्रति हैं - और इस पर उनमें हर पहलू से वचिार कयिा गया है। लेकनि मठवासी व्यवस्था को, मठवाद के उद्देश्यों के संबंध में, सेंट थयोिडोर द स्टुडाइट के अलावा कसिी ने भी ध्यान में नहीं रखा है। आंतरकि जीवन पर उनके उपदेश यहाँ भी मलिते हैं, लेकनि केवल मार्गदर्शक सद्धिांतों के रूप में। हालाँकि, उनका मुख्य ध्यान हमेशा मठवासी जीवन के कसिी पहलू पर होता है, और वशिेष रूप से इस दृष्टकिोण से कि इसका मठवाद के प्राथमकि उद्देश्य से कैसा संबंध होना चाहएि। वे आज्ञाकारिता के सबसे तुच्छ कार्य को भी परमेश्वर के सामने उच्चतम कार्य से कम मूल्यवान नहीं मानते, बशर्ते कि वह उचति भावना से कयिा गया हो। और वह लगातार सभी को इस आश्वासन से प्रेरति करते हैं कि उनका हर श्रम स्वर्ग के राज्य की ओर, शहीद के मुकुट की ओर एक कदम है। संन्यासी भाइयों के लएि, यह एक अनमोल पुस्तक है। लेकनि यहाँ सामान्य लोगों के लएि भी बहुत कुछ मूल्यवान है। संत थयोिडोर के लेखों में, ऐसा दुर्लभ ही होता है कि कोई शक्षिा मृत्यु, अंतमि न्याय, नरक और स्वर्ग के राज्य के वषिय में कसिी न कसिी प्रकार का उल्लेख कएि बनिा पूरी हो। ध्यान देने वाले पाठक के लएि, इन घटनाओं की तस्वीर मन पर अमटि रूप से अंकति हो जाएगी - और सभी के लएि यह पश्चाताप के लएि प्रोत्साहन और सदाचारी जीवन के लएि प्रेरणा का स्रोत बनेगी। – यही कारण है कि, जबकि *ग्रीक फलिैंथ्रोपी* में संत थयोिडोर का कुछ भी शामलि नहीं था, हम मठवासी भाईचारे के नर्िमाण के लएि उनके उपदेश प्रस्तुत करने के लएि बाध्य महसूस करते थे। उद्धरणों की संख्या खंड के अनुसार नहीं, बल्कि शुरू से अंत तक लगातार क्रम में दी गई है। जसि खंड से एक प्रवचन लयिा गया है, और उस खंड में उसका संख्यात्मक क्रम, चयनति प्रवचन की वषिय-सूची के अंत में दर्शाया गया है। 'लघु धर्मशास्त्र' के प्रवचनों को चौथे खंड के शीर्षक के अंतर्गत सूचीबद्ध कयिा गया है। संत थयोिडोर के प्रवचन हमेशा एक ही वषिय से संबंधति नहीं होते, बल्कि कई वषियों से संबंधति होते हैं, और कभी-कभी मठवासी जीवन की वर्तमान आवश्यकताओं के अनुसार संबंधति मामलों को भी छूते

हैं। इस बीच, पांडुलिपियों में प्रवचनों की विषय-सूचियाँ एक ही, अधिक प्रमुख विषय का संकेत देती हैं: परिणामस्वरूप, प्रवचनों की पूरी सामग्री विषय-सूचियों से पूरी तरह से स्पष्ट नहीं होती है। इसने नई, अधिक विस्तृत विषय-सूचियों के संकलन को आवश्यक बना दिया है, जिन्हें यहाँ प्रस्तुत किया गया है। हम माउंट अथोस पर सेंट पैंटेलमोन के रूसी मठ की पुस्तकालय में रखे सेंट थियोडोर के प्रवचनों के पांडुलिपियों, और उन पांडुलिपियों, जो आंशिक रूप से हमारे पास यहाँ रूस में हैं, पर एक संक्षिप्त टिप्पणी शामिल करना अनावश्यक नहीं समझते हैं। माउंट अथोस पर सेंट पैंटेलमोन के मठ में:

1. *एक बड़ा धर्मशास्त्र* (A *Large Catechism*), जिसे हाल ही में सादे कागज पर साधारण लिखावट में तीन खंडों में प्रतिलिपि किया गया है, जिसमें पहला खंड 87 प्रवचनों, दूसरा 124, और तीसरा 60 प्रवचनों का है। कुल 271 प्रवचन। इस संख्या में * * के वे प्रवचन भी शामिल हैं जो अब उपलब्ध नहीं हैं। जिस पांडुलिपि से यह प्रतिलिपि बनाई गई है, वह 11वीं सदी की है और पार्चमेंट पर लिखी गई है। प्रतिलिपि बनाने का कार्य पेलूसियम के पूर्व मेट्रोपॉलिटन, एम्फिलोचियस द्वारा किया गया था, जो अब सेवानिवृत्त हैं।

2. एक ही खंड में, पार्चमेंट पर 11वीं सदी की एक पांडुलिपि में *लघु धर्मशास्त्र*। इसमें 134 प्रवचन हैं। *ध्यान दें*

3. सेंट पीटर्सबर्ग थियोलॉजिकल अकादमी की लाइब्रेरी में पार्चमेंट पर लिखी 'स्मॉल कैटेकिज़्म' की एक पांडुलिपि है, जो 11वीं सदी से भी पहले, शायद 9वीं सदी की है। यह यरूशलेम के पास स्थित सेंट सावस मठ की ओर से एक उपहार थी, जिसे उस मठ के दिवंगत मठाधीश, आर्चिमांड्राइट जोआसाफ ने प्रस्तुत किया था।

4. मॉस्को सिनोडल पुस्तकालय में सेंट थियोडोर के प्रवचनों की तीन प्राचीन पार्चमेंट पांडुलिपियाँ हैं, जो 10वीं, 11वीं और 12वीं शताब्दी की हैं। पहली में 126 प्रवचन हैं; दूसरी में 123; और तीसरी में 76। जैसा कि उनकी सामग्री की तालिकाओं से देखा जा सकता है—जो परम पूजनीय सिनोडल सैक्रिस्टन, आर्चिमैंड्राइट व्लादिमीर द्वारा सौजन्यपूर्वक प्रदान की गई थीं—वे 'स्मॉल कैटेकिज़्म' से लिए गए हैं। इन धर्मशिक्षाओं से, मठों में धार्मिक उपयोग के लिए प्रवचनों का संकलन लंबे समय से किया जाता रहा है। सेंट पैंटेलमोन मठ में इस प्रकार के दो संकलन उपयोग में हैं:

5. एक *जिसमें 105 उपदेश शामिल हैं,* जो विशेष रूप से छोटे कैटेकिज़्म से लिए गए हैं।

6. दूसरे *में 95 उपदेश शामिल* हैं, जो लगभग समान रूप से बड़े धर्मशास्त्र के खंड 1 और 2 और छोटे धर्मशास्त्र से लिए गए हैं। केवल बाद वाले ही हमें ऑप्टिना हर्मिटेज द्वारा तैयार और प्रकाशित अनुवाद में उपलब्ध हैं। वे ग्रीकों के बीच केवल मुद्रित रूप में ही उपलब्ध हैं। पवित्र पिताओं के पश्चिमी संस्करणों में, पुराने संस्करणों और एबॉट मिग्ने के हालिया संस्करण दोनों में, केवल लघु धर्मशिक्षा शामिल है, और वह भी केवल लैटिन अनुवाद में। यह प्रश्न उठ सकता है: पूरी शिक्षाओं के बजाय शिक्षाओं के अंश ही क्यों दिए गए हैं? – हम उत्तर देते हैं कि हमारा उद्देश्य केवल एक पुस्तक तैयार करना नहीं है, अर्थात्, केवल पुस्तक के लिए पुस्तक प्रदान करना नहीं है, बल्कि उसमें निहित शिक्षाप्रद सामग्री को संप्रेषित करना है। एक अंश इस उद्देश्य की बेहतर सेवा करता है। हालाँकि, जैसा कि कोई भी आसानी से देख सकता है, ये अंश लगभग पूर्ण प्रवचन हैं, जिनमें मामूली संक्षिप्तता की गई है, कभी-कभी शुरुआत में, कभी-कभी अंत में, और कभी-कभी बीच में। लेकिन यहाँ प्रस्तुत की गई हर चीज़ पवित्र पिता के अपने शब्द हैं। इसके अलावा, कुछ प्रवचन पूरी तरह से संरक्षित नहीं हैं, कुछ बिल्कुल भी संरक्षित नहीं हैं, और अन्य का सामग्री अस्पष्ट है। ऐसे सभी अंशों को हटा दिया गया है। – इसलिए हमें तब तक इंतजार करना होगा जब तक कि कहीं से पूर्ण पांडुलिपियाँ न मिल जाएँ। केवल तभी इन प्रवचनों का एक साथ संपूर्ण अनुवाद करना संभव होगा। *एचटीएमएल संस्करण (2006) के संपादक का नोट*

***डोब्रोतोलीउबिये* के** दूसरे से पांचवें खंड के मुख्य पाठ को आधुनिक रूसी वर्तनी और उच्चारण के अनुरूप संपादित किया गया है। पवित्र शास्त्र से लिए गए उद्धरणों को जस का तस रखा गया है। जहां आवश्यक हो, उनके अर्थ को पुराने और नए नियम के नए रूसी संस्करण का संदर्भ लेकर स्पष्ट किया जा सकता है। शब्दों 'мiр' (समाज, या कभी-कभी संपूर्ण सृजित ब्रह्मांड), 'мир' (शांति, व्यवस्था, सामंजस्य) और 'μvpo' (पवित्र अभिषेक के लिए एक सुगंधित मिश्रण) की वर्तनी में अंतर को भी अपरिवर्तित रखा गया है।

संत थयिोडोर द स्टुडाइट के जीवन का एक संक्षप्ति ववरिण[81]

संत थयिोडोर, जो कुलीन और प्रतष्ठिति माता-पिता के पुत्र थे (उनके पति शाही करों को इकट्ठा करने के प्रभारी थे), का पालन-पोषण ईसाई धर्म में हुआ, उन्होंने यूनानियों की सारी बुद्धमित्ता सीखी, एक उत्कृष्ट वक्ता और एक सक्षम दार्शनकि बने, और साथ ही एक प्रबुद्ध धर्मशास्त्री भी बने। जब कॉन्स्टेंटाइन कॉप्रोनमिस के अधीन, प्रतमिा-भंजक उत्पीड़न वशिष रूप से तीव्र हो गए, तो उसके माता-पिता ने सांसारकि जीवन का त्याग कर दयिा और संन्यास की शपथ ली; जबकि सेंट थयिोडोर अपनी शक्षिा पूरी करने के लिए कॉन्स्टेंटनिोपल में ही रहे। कॉप्रोनमिस के बाद, उनके बेटे लयिो, जो एक वधिर्मी भी थे, ने शासन कयिा, और उनके बाद उनकी पत्नी आइरीन ने अपने बेटे कॉन्स्टेंटाइन के साथ शासन कयिा। आइरनि ने ऑर्थोडॉक्सी (सही आस्था) का समर्थन कयिा, और उनके पुत्र ने भी ऐसा ही कयिा; और सेंट पैट्रिआर्क तारासयिस के साथ मलिकर, उन्होंने पवत्रि पिताओं की परषिद, यानी सप्तम सार्वभौमकि परषिद, का आयोजन कयिा, जसिमें मूर्तभिंजन की वधिर्मिता की नदिा की गई और उस पर शाप लगाया गया। इस परषिद में प्लेटो भी उपस्थति थे, जो आदरणीय थयिोडोर के मामा थे, उन्होंने परषिद के समापन पर आदरणीय थयिोडोर और उनके भाइयों जोसेफ और यूथमियिस को, जन्हिोंने मठवासी संकल्प लेने का नश्चिय कयिा था, अपने साथ रेगिस्तान में ले गए, और उनके साथ सक्कुडयिन में बस गए, जो जंगल से घरिा और पानी से भरपूर एक सुंदर, ऊँचा स्थान था। यह स्थान सुनसान था, और यहाँ आने का एकमात्र रास्ता एक ही पगडंडी था। वे इस स्थान से बहुत प्रभावति हुए, और वहाँ उन्होंने संत जॉन द थयिोलोजयिन को समर्पति एक मठ और एक पवत्रि चर्च की स्थापना की। भाइयों ने उनके चारों ओर इकट्ठा होना शुरू कर दयिा, और बुद्धमिान प्लेटो के मार्गदर्शन में मठ जीवन सुव्यवस्थति रूप से चलने लगा।

संत थयिोडोर, जो ज्ञान और वरदानों में सभी से श्रेष्ठ थे, अपने सरि मुंडवाने के बाद तपस्या में सभी से आगे रहे, उन्होंने उपवास, जागरण और मठ के लिए सबसे छोटे और कठनि कार्यों के माध्यम से अपने शरीर को वश में कयिा : क्योंकि वह लकड़ी काटता था, पानी लाता था, बगीचे और सब्जी के खेत में मट्टिी खोदता और उसे खाद देता था, इस प्रकार वह वनिम्रता में स्वयं को प्रशक्षिति करता था। हालाँकि, सबसे बढ़कर, वह एक ऐसा चरत्रि बनाने में लगा रहा जो धार्मकि हो और ईश्वर को प्रसन्न करे। इस उद्देश्य के लिए, उसने यह नयिम बनाया कि वह हर दनि अपने वरष्ठि, प्लेटो के सामने अपने सभी वचिारों और अपने हृदय की प्रवृत्तयिों का इकबालयिा बयान देगा, और जो अनुमोदति था उसे परपिूर्ण बनाने का प्रयास करता, जबकि जो अनुमोदति नहीं था उसे सुधारता। हर दनि, वह ईश्वर के चंतिन और मानसकि प्रार्थना के लिए एक नश्चिति समय नकिालता था, ताकि एक शांत मन के साथ अकेले ईश्वर के सामने खड़ा होकर, वह उन्हें पूजा का एक गुप्त रूप अर्पति कर सके। उन्हें पुराने और नए नयिम के पवत्रि धर्मग्रंथों, और पवत्रि पिताओं, वशिष रूप से संत बेसलि द ग्रेट की रचनाएँ पढ़ना पसंद था; और इन्हीं से उन्होंने अपने मठवासी जीवन के नयिम और वधिान प्राप्त कएि, जन्हिें वे इतनी उच्च सम्मान की दृष्टि से देखते थे और इतना आवश्यक मानते थे कि जो कोई भी उनका पालन नहीं करता था, उसे वे भक्षिु के रूप में स्वीकार नहीं करते थे।

धन्य एल्डर प्लेटो ने, संत थयिोडोर के तपस्या में ऐसी प्रगति देखकर, उन्हें पुरोहति पद पर नयिुक्त करने का नश्चिय कयिा; और यह उनके अनुशंसानुसार और मध्यस्थता पर संत टारासयिस पैट्रिआर्क द्वारा कयिा गया। इस प्रकार, चुनाव से कम और आवश्यकता से अधकि पुरोहति पद प्राप्त करने के बाद, सेंट थयिोडोर ने न केवल अपने अनुशासन में कसिी भी तरह की ढील नहीं दी, बल्कि अपने तपस्या के प्रयासों में और भी अधकि लगन से लगे; वह सभी के लिए सदाचारी संन्यासी जीवन का एक उदाहरण थे, और उनके अपने मठ और अन्यत्र भी कई अनुयायी थे।

काफी समय बाद, धन्य वरष्ठि प्लेटो ने, यह महसूस करते हुए कि उनकी वृद्धावस्था की कमजोरयिाँ बढ़ रही थीं, अपने कर्तव्यों से हटकर अपने अंतमि वर्ष मौन में बताना चाहा, और उन्होंने संत थयिोडोर को अपना उत्तराधकिारी नयिुक्त कयिा। ऐसा हुआ कि वह बीमार पड़ गए, और भाइयों को बुलाकर उन्होंने उनसे कहा कि वह अस्वस्थ हैं और कोई नहीं जानता कि यह बीमारी कैसे समाप्त होगी; इसीलिए वह अपने लिए एक उत्तराधकिारी चुनना चाहता था – और उसने पूछा: वे कसिे पसंद करेंगे? उन्होंने सभी ने एक स्वर में उत्तर दयिा: 'थयिोडोर।' – धन्य प्लेटो ने उसे अधकिार और मठाधीश की सभी जम्मिेदारयिाँ सौंप दीं, जबकि वह स्वयं वश्रिाम के जीवन में चला गया।

इस पद पर अपने शुरुआती दनिों से ही, संत थयिोडोर ने न केवल अपने तपस्या के प्रयासों को दोगुना कर दयिा, बल्कि सभी से मठ के नयिमों का सख्ती से पालन करने की भी मांग की; वशिष रूप से, उन्होंने लापरवाही, केवल बाहरी

[81] यह जीवन संन्यासी माइकल द्वारा लखिा गया था। देखें *Patrologiae Graecae Migne*, खंड 99। – यहाँ का पाठ एक अंश है।

शष्टिाचार, और लालच के खलिाफ एक दृढ़ रुख अपनाया। कुछ भाइयों ने बड़बड़ाया, लेकनि धीरे-धीरे वे सुधर गए। और, सामान्य रूप से कहें तो, मठ में तपस्या को नया जीवन मलिा।

मठ के भीतर सेंट थयिोडोरेट के लएि सब कुछ बहुत अच्छी तरह से चल रहा था। बाहर, हालांक, दुख और कष्ट जल्द ही शुरू हो गए। इसका पहला कारण युवा ज़ार कॉन्स्टेंटनि का अवैध ववािह था, जसि सेंट थयिोडोर ने नरि्दयतापूर्वक नदिा की। उन्होंने दयालु फलिारेट की बेटी मारयाि से ववािह कयिा था। लेकनि फरि वह एक अन्य महलिा से प्यार करने लगा और उससे ववािह कर लयिा, अपनी पहली पत्नी को छोड़कर। यह ववािह चर्च के व्यवस्थापक, एक जोसेफ नामक व्यक्त नि, पैट्रआिर्क तारासयिस की इच्छा के वरिुद्ध संपन्न कराया था, जन्िहोंने इसके बाद हर संभव तरीके से इस ववािह को रद्द करने की कोशशि की, लेकनि वे सफल नहीं हुए; और, एक बड़े बुरे परणिाम के डर से—क्योंक ज़िार ने मूर्तभिंजन को भड़काने की धमकी दी थी—उन्होंने इस बारे में उसे परेशान करना बंद कर दयिा।

लेकनि धन्य थयिोडोर चुप नहीं रहे; खासकर इसलएि क्योंक कुिलीनों और गणमान्य व्यक्तयिों ने भी उनका अनुसरण करना शुरू कर दयिा था। इस डर से क ऐिसी अव्यवस्था कानून न बन जाए, संत थयिोडोर ने सभी भक्षिुओं को लखिा, और उन्हें नरि्देश दयिा क वि ज़ार को चर्च से बहष्िकृत समझें, या यह क उिसने अपने ही कर्मों से अपने ऊपर बहष्िकार की सज़ा ला दी है, इसलएि उसने खुद को बहष्िकृत कर लयिा है। यह बात सार्वजनकि हो गई और ज़ार के कानों तक पहुँच गई। शुरू में, ज़ार इस बात से दुखी हुआ, क्योंक उिसकी नई पत्नी, थयिोडोटा, माँ की ओर से धन्य थयिोडोर की रशि्तेदार थी। हालांक, चापलूसी के माध्यम से उसे अपने पक्ष में करने की उम्मीद में, उसने अपनी व्यभचािरणिी पत्नी को बहुत सारे उपहार भेजने का आदेश दयिा, साथ ही अपने और अपने परविार के लएि प्रार्थना करने का अनुरोध भी कयिा। लेकनि उस धन्य संत ने उपहारों को देखने से भी इनकार कर दयिा, और न ही उन्हें लाने वालों को देखा। – राजा ने स्वयं संत से मलिने और उनसे बात करने का कोई रास्ता खोजने का संकल्प लयिा। इस उद्देश्य के लएि, उन्होंने आधकिारकि काम से यात्रा कर रहे होने का दखिावा करते हुए, अपने मठ के पास से गुज़रने की व्यवस्था की, इस उम्मीद में क सिंत थयिोडोर अपने भाइयों के साथ उनका शाही अभवािदन करने और उन्हें मठ में आमंत्रति करने के लएि बाहर आएँगे।

लेकनि जब संत को इस बात का पता चला, तो उन्होंने द्वार बंद करने और चाहे वे कतिनी भी ज़ोर से दस्तक दें, उन्हें खोलने के लएि मना कर दयिा। वे बार-बार दस्तक देते रहे, लेकनि खाली हाथ लौट गए। इस पर, ज़ार का पूजनीय फादर पर गुस्सा फूट पड़ा और उसने उसे पीटने और नरि्वासन में भेजने का आदेश दयिा। 'वे आए, उन्होंने उसे इतनी बुरी तरह पीटा क घिावों से उसका मांस फाड़ दयिा गया, और ज़मीन खून से लथपथ हो गई,' और उसे थ्रेसलॉनीकी भेज दयिा। इसी समय, मठ के सभी वरष्िठ पादरयिों को, जनिकी संख्या ग्यारह थी, भी नरि्वासन में भेज दयिा गया। संत थयिोडोर ने यह सब धैर्यपूर्वक सहन कयिा; और उन्होंने अपने पीड़ति भाइयों को लखिा, उन्हें सांत्वना दी और उन्हें वनिम्रतापूर्वक उस दुख को सहने के लएि प्रोत्साहति कयिा जो उन पर आया था। 'यह ईश्वर की इच्छा है, और जो कुछ भी ईश्वर से आता है वह हमारे भले के लएि होता है, बशर्ते हम वनिम्रतापूर्वक उसके प्रत सिमर्पति हों।' उन्होंने पोप को भी लखिा, और उन्हें पोप से एक सांत्वनादायक उत्तर मलिा, जसिमें ईश्वर के प्रत उिनके उत्साह और अटूट साहस की प्रशंसा की गई थी।

इस बीच, ज़ार ने एक अनैतकि जीवन जयिा और राज्य पर और भी खराब तरीके से शासन कयिा। इसके लएि, उसे सहिंासन से हटा दयिा गया और जल्द ही उसकी मृत्यु हो गई। राज्य एक बार फरि उसकी माँ, इरनिा के हाथों में चला गया, जन्िहोंने प्रतमिाओं की पूजा को बहाल कयिा। उन्होंने तुरंत अपने बेटे द्वारा कैद कएि गए सभी लोगों को उनके पूर्व पदों पर बहाल कर दयिा। संत थयिोडोर ने एक बार फरि से अपने बखिरे हुए अनुयायियों को इकट्ठा कयिा; और उनके बीच मठवासी जीवन अच्छी व्यवस्था के साथ फरि से शुरू हो गया। लेकनि कुछ वर्षों बाद, ई , एक और वपित्त उिन पर आई—जो उतनी गंभीर नहीं थी जतिनी क कष्टप्रद थी: अगारयिन साम्राज्यीय शहर के करीब आ रहे थे। उनके हाथों से कसिी हान कि सामना न करने की इच्छा से, संत थयिोडोर अपने सक्कुडयनि को छोड़कर शाही शहर चले गए, जहाँ सम्राज्ञी और पवति्र पैट्रआिर्क ने उन्हें स्टुडयिन मठ प्रदान कयिा, जसि आइकनोक्लास्ट कोप्रोनमिस द्वारा भक्षिुओं से खाली करा दयिा गया था, जबक नए भक्षिुओं की भर्ती अभी तक नहीं की गई थी: उस समय वहाँ केवल लगभग बारह पुरुष ही थे।

इस मठ का प्रभार संभालने के बाद, संत थयिोडोर ने जो मरम्मत की जरूरत थी, उसे कयिा, जो गायब था उसे बनाया, और अपने भाइयों को वहाँ बसाया, और मठ का जीवन अपने सामान्य मार्ग पर लौट आया। समुदाय बढ़ा, और जल्द ही उसमें एक हजार की संख्या हो गई। सब कुछ व्यक्तगित रूप से देखरेख करने में असमर्थ, संत ने यह कार्य अन्य सबसे योग्य बुजुर्गों के साथ साझा कयिा, जन्िहें उन्होंने मठ के वभिन्नि कर्तव्यों के पहलुओं में उचति व्यवस्था

बनाए रखने का काम सौंपा, और उनमें से प्रत्येक के लिए उन्होंने उपयुक्त नियम बनाए। आदरणीय संत ने यह सुनिश्चित करने के लिए विशेष ध्यान रखा कि भाइयों को किसी भी कारण से शहर में जाने की आवश्यकता न पड़े। इस उद्देश्य के लिए, उन्होंने मठ के भीतर हर तरह की कार्यशालाएं स्थापित कीं: उनके पास अपने दर्जी, जूते बनाने वाले, बढ़ई, कांचकार, लोहार, राजमिस्त्री आदि थे। भाइयों को उनकी क्षमताओं और झुकावों के अनुसार इन व्यवसायों में नियुक्त किया गया था, जो एक विशेष प्रशासक और पर्यवेक्षक की देखरेख में थे। सब कुछ संसार की तरह किया जाता था, लेकिन सांसारिक तरीके से नहीं। हर जगह अनुशासन और श्रद्धा का राज था: हाथ काम में लगे रहते थे, जबकि होंठ हमेशा प्रभु की प्रार्थना और दाऊद के भजनों में व्यस्त रहते थे। – अनुशासन के हर उल्लंघन, चाहे वह बड़ा हो या छोटा, को एक विशिष्ट प्रायश्चित से दंडित किया जाता था। यह सुनिश्चित करने के लिए कि ऐसी सजा की आवश्यकता यथासंभव कम से कम उत्पन्न हो, रेवरेंड फादर अपने उपदेशों में—सामान्य ईसाई और संन्यासी कानूनों की व्याख्या करते हुए—उन नियमों पर भी प्रकाश डालते थे जो उनके मठ के जीवन-यापन के तरीके को नियंत्रित करते थे। इससे सभी की याददाश्त ताज़ा हो जाती थी कि क्या उचित है और प्रत्येक व्यक्ति में हर चीज़, यहाँ तक कि सबसे छोटी-छोटी बातों में भी, खुद को परिश्रमी साबित करने का जोश फिर से जागृत होता था। इस बीच, तानाशाह निकिफोरस ने रानी इरिना को सिंहासन से हटा दिया, और उसका पहला कार्य चर्च में तहलका मचाना था। उसने जोसेफ नामक एक दरबारी पुरोहित को पुनर्स्थापित किया, जिसने कॉन्स्टेंटाइन का थियोडोटा से विवाह कराया था और जिसके परिणामस्वरूप उसे पवित्र चर्च के नियमों का उल्लंघन करते हुए पदच्युत कर दिया गया था। पितृपक्षीय निकिफोरस, जो सेंट तारासिया के अनुसार एक अत्यंत योग्य व्यक्ति थे, ने इसका जितना हो सका विरोध किया; लेकिन बाद में, राजा के क्रोध को देखकर और उसके हाथों चर्च के लिए सबसे बुरे की आशंका से, उन्होंने जोसेफ को फिर से संप्रदाय में शामिल कर लिया। लेकिन संत थियोडोर नहीं माने; और उन्होंने खुले तौर पर राजा के अन्याय की निंदा की। इससे क्रोधित होकर, राजा ने संत थियोडोर को निर्वासित कर दिया। उन्होंने उनके भाई जोसेफ, एल्डर प्लेटो, और स्टूडियो के कई अन्य भिक्षुओं के साथ भी ऐसा ही किया।

उस समय, पड़ोसी बर्बर लोगों ने थ्रेस पर हमला किया; और राजा को उनके खिलाफ मार्च करना पड़ा। रवाना होने से पहले, उसने सेंट थियोडोर को बुलाया और उसे अपने पक्ष में लाने के लिए चापलूसी और धमकियों दोनों का इस्तेमाल किया। लेकिन सेंट थियोडोर ने, परमेश्वर की आत्मा से प्रेरित होकर, इस प्रकार उत्तर दिया: "हे राजा, तुम्हारे लिए यह अनिवार्य था, जब तुम युद्ध में गए, तो पश्चाताप करो और परमेश्वर की कलीसिया में जो तबाही मचाई है, उसकी भरपाई करो। लेकिन चूँकि आपने ऐसा नहीं किया, तो यह निश्चित रूप से जान लीजिए: आप युद्ध से जीवित वापस नहीं आएँगे। ईश्वर का यह आपका न्यायसंगत निर्णय है।" और वास्तव में, राजा युद्ध में मारा गया। उसके बाद उसका पुत्र स्टाव्रकियोस सिंहासन पर बैठा; लेकिन वह भी युद्ध में लगे एक घाव से जल्द ही मर गया। शासन करने के लिए माइकल काइरोपैलेट्स नामक एक व्यक्ति को चुना गया; जो वास्तव में राजसी अधिकार के योग्य, अच्छा और रूढ़िवादी था। – उसने सेंट थियोडोर को और उनके साथ कष्ट झेलने वालों को भी कैद से मुक्त किया; उसने उनका सम्मान किया और चर्च के भीतर मतभेद को समाप्त कर दिया। हालाँकि, जोसेफ को एक भ्रष्ट तत्व के रूप में एक बार फिर से चर्च से बहिष्कृत कर दिया गया। इस समय, पवित्र और सम्मानित एल्डर प्लेटो प्रभु के पास चले गए, और स्टुडियो मठ में स्वयं पैट्रिआर्क द्वारा सम्मान के साथ उनका अंतिम संस्कार किया गया। अपने आध्यात्मिक पिता प्लेटो के निधन के बाद, संत थियोडोर और उनके भाई केवल दो वर्षों तक ही शांति और सुकून से रहे। फिर प्रतिमा-भंग का तूफान एक बार फिर उठ खड़ा हुआ और उसने पूरी चर्च को उथल-पुथल में डाल दिया।

इसकी शुरुआत नए सम्राट, लियो द आर्मेनियन ने की थी। वह पूर्वी प्रांतों में एक सैन्य कमांडर था और उसने धर्मपरायण सम्राट माइकल के खिलाफ विद्रोह कर दिया था, जिन्होंने गृहयुद्ध से बचने के लिए स्वयं शाही पोशाक त्याग दी थी और संन्यासी का वेश धारण कर लिया था, तथा राज्य को उस विद्रोही तानाशाह के हवाले कर दिया था। शुरू में, इस लियो ने खुद को धार्मिक और विनम्र दिखाया; लेकिन एक बार जब उसने राज्य पर अपनी पकड़ मजबूत कर ली, तो उसने पवित्र प्रतिमाओं का अपमान करना और प्रतिमा पूजा की निंदा करना शुरू कर दिया। संत निकिफोरस, पैट्रिआर्क ने, ज़ार को प्रतिमा पूजा के सच्चे अर्थ की व्याख्या करते हुए, उनसे इस मामले में चर्च की शिक्षा का विरोध करके चर्च की शांति भंग न करने का आग्रह किया। लेकिन ज़ार ने कोई ध्यान नहीं दिया; इसके विपरीत, अपने शाही अधिकार का सहारा लेकर, उन्होंने सभी को अपनी ही तर्कसंगति के आगे झुकने के लिए मजबूर करने की कोशिश की। इस उद्देश्य के लिए, उन्होंने पवित्र पैट्रिआर्क और संत थियोडोरेट के साथ सभी प्रमुख पुरोहितों और भिक्षुओं को बुलाया, और सभी के सामने खुले तौर पर अपनी विधर्मिता का खुलासा किया, पवित्र प्रतिमाओं की पूजा न करने वालों की प्रशंसा की और ऐसा करने वालों को फटकार लगाई।

उन्होंने इस तर्क को मुख्य रूप से दूसरे आज्ञापत्र पर आधारित किया: *'तू अपने लिए कोई मूर्ति या किसी भी वस्तु का कोई प्रतिमा-चिह्न न बनाना,'* आदि। उन्होंने यह तर्क भी दिया कि कोई क , अकल्पनीय को कैसे चित्रित कर सकता है, या असीम को कोहनी के आकार की एक प्रतिमा में कैसे समाहित कर सकता है? कोई रंगों में चित्रित वस्तु को देवता कैसे कह सकता है? आध्यात्मिक पिताओं ने ज़ार को सम्मानपूर्वक समझाया कि पुराने नियम के कानून ईसाइयों पर पूर्ण रूप से बाध्यकारी नहीं थे; कि आइकन ईश्वर को अकथनीय और अकल्पनीय के रूप में नहीं दर्शाते हैं, बल्कि उस रूप में जैसा उन्होंने स्वयं को संतों के सामने प्रकट किया, और विशेष रूप से अवतार में जैसा उन्होंने स्वयं को प्रकट किया; और 'ईश्वर' से उनका तात्पर्य कैनवास और रंगों से नहीं, बल्कि स्वयं जो आइकनों में चित्रित हैं; और यह कि, उनकी छवि को निहारते हुए, वे अपने विचारों को उनकी ओर उठाते हैं। उन्होंने ऐसे विचारों को विभिन्न तरीकों से प्रस्तुत किया; लेकिन संत थियोडोर ने, मानो सभी के विचारों को एक में मिलाते हुए, राजा को शिक्षित करने के लिए एक लंबा भाषण दिया। हे राजा, यह बुरा इरादा आप पर कहाँ से आया है—कि पवित्र कलीसिया में एक विधर्मी आदेश लाया जाए और दिव्य अनुग्रह तथा प्रेरितों और पितरों की शिक्षा से बुने हुए उसके महिमामय वस्त्र को फाड़ा जाए?—क्या आप पुराने विधान से बुद्धि ग्रहण कर रहे हैं? तो बुद्धिमानी से बुद्धि ग्रहण करें।

पुरानी वाचा के उन सभी अंशों की जाँच करें जो मूर्तियों और प्रतिमाओं के निर्माण और उनकी पूजा को मना करते हैं – वे किस बारे में बात करते हैं? – कि किसी भी प्रतिमा या समानता को बनाने के बाद, किसी को भी उसे देवता के रूप में पूजना या उसे दिव्य पूजा अर्पित नहीं करनी चाहिए; न कि यह कि किसी को बिल्कुल भी प्रतिमाएँ और समानताएँ नहीं बनानी चाहिए, न रखना चाहिए, या उनका सम्मान नहीं करना चाहिए। हालाँकि, पवित्र चर्च मानव-निर्मित छवियों और रूपों को देवता नहीं बनाती है, बल्कि केवल उन्हें उस चीज़ के प्रतिनिधित्व के रूप में सम्मानित करती है जो सम्मान की पात्र है। परिणामस्वरूप, न तो दूसरा आज्ञापत्र और न ही पुराने नियम की उन कई समान आज्ञाओं में से कोई भी—जिनकी संख्या बहुत है—पवित्र चर्च के आइकन पर लागू होती है। इनमें, उदाहरण के लिए, परमेश्वर की आज्ञा शामिल है कि खिरूबिम की प्रतिमाएँ बनाई जाएँ और उन्हें वाचा के संदूक के ऊपर, सबसे सम्मानित स्थान पर रखा जाए, और एक साँप बनाने की आगे की आज्ञा, और साँप के विष से उद्धार के लिए उस पर श्रद्धापूर्वक दृष्टि डाली जाए, और इसी तरह की अन्य बातें शामिल हैं।

इस प्रकार, पुराना विधान आइकन (चित्र) बनाने या उनकी पूजा को अस्वीकार नहीं करता है, बशर्ते कि दोनों विवेक के साथ किए जाएं। लेकिन नए अनुग्रह में हम क्या देखते हैं? हमारे प्रभु और उद्धारकर्ता ने स्वयं को एक कपड़े पर चित्रित किया और इसे अबगार के पास भेजा, जो इसे छूने से चंगा हो गया; संत लूक ने ईश्वर की माता की एक प्रतिमा बनाई जिसमें उन्होंने अनंत काल से पूर्व के शिशु को अपनी बाहों में धारण किया था, और जब उन्होंने इसे उन्हें भेंट किया, तो उन्होंने उस पर अपने पुत्र और ईश्वर का आशीर्वाद प्रदान किया; तब से, ईश्वर की कलीसिया में पवित्र प्रतिमाओं का अस्तित्व कभी समाप्त नहीं हुआ, जिनमें से कई चमत्कारी साबित हुई हैं और आज तक चमत्कारी बनी हुई हैं। क्या यह सब, स्वयं सूर्य से भी अधिक स्पष्ट रूप से, यह नहीं दर्शाता है कि प्रतिमा-चित्रण और प्रतिमाओं की पूजा दिव्य, न कि मानवीय, उत्पत्ति की है? – और जहाँ तक आप यह कहते हैं: 'मैं नहीं चाहता कि अदृश्य और अकथनीय दिव्यता को रंगों में चित्रित किया जाए'; हम भी मानते हैं कि दिव्यता अदृश्य और अकथनीय है, फिर भी हम दिव्यता को प्रतिमाओं पर वैसे नहीं चित्रित करते जैसे वह स्वभाव से है, बल्कि वैसे जैसे उसने स्वयं को हमें प्रकट करने की कृपा की, विशेष रूप से अवतार में।

'जो उद्धारकर्ता मसीह की प्रतिमा की निंदा करता है, वह स्वयं प्रभु के अवतार की निंदा करता है।' यह सब सुनकर राजा क्रोधित हो गया और उसने पूजनीय थियोडोर से कहा: "मैं लंबे समय से जानता हूँ कि तुम कितने झगड़ालू और घमंडी हो, यह सोचकर कि तुमसे अधिक बुद्धिमान कोई नहीं है; और अब तुम मुझसे इतनी अभद्रता से बात कर रहे हो, जैसे कि मैं कोई साधारण व्यक्ति हूँ, कि तुम्हें तुरंत दंडित किया जाना चाहिए। लेकिन मैं तुम्हें तब तक क्षमा देता हूँ जब तक कि हमारे तर्क की सच्चाई और स्पष्ट रूप से प्रकट और स्वीकार नहीं हो जाती; और यदि तुम तब भी नहीं मानते, तो दया की उम्मीद मत करना।" इसके बाद, उस समय राजसी कक्ष में उपस्थित पादरियों ने और कुछ न कहने का निश्चय किया। ऐसे व्यक्ति से और क्या कहा जाए जो शिक्षा नहीं चाहता, बल्कि एक तानाशाह की तरह आस्था पर अपनी इच्छा थोपना चाहता है? लेकिन धन्य थियोडोर ने कहा: "समझो, हे राजा, और सुनो! पवित्र चर्च की आस्था के मामलों की जांच और विनियमन करना आपका काम नहीं है। आपका कर्तव्य है कि आप संसार की व्यवस्था बनाए रखें।

लेकिन विश्वास और पवित्र चर्च को उचित व्यवस्था में रखना चर्च के चरवाहों और शिक्षकों का कार्य है। प्रेरित की सुनें, जो कहते हैं: *'परमेश्वर ने चर्च में, पहले प्रेरितों, दूसरे भविष्यद्वक्ताओं, तीसरे शिक्षकों'* आदि को *नियुक्त किया है* (1 कुरिन्थियों 12:28)। क्या आप देखते हैं? – शिक्षक, राजा नहीं। – और धर्मग्रंथ के अन्य अंश

आज्ञा देते हैं कि कलीसिया के मामलों का संचालन कलीसिया के चरवाहों और शिक्षकों द्वारा किया जाए, न कि राजाओं द्वारा।" राजा ने कहा: 'तो क्या तुम मुझे चर्च से बाहर निकालोगे?' – संत ने उत्तर दिया: 'नहीं, मैं नहीं। यह दिव्य प्रेरितों और पवित्र पिताओं के नियम हैं जो लोगों को चर्च से बाहर निकालते हैं। उनका अनुसरण करते हुए, हम भी यह पुष्टि करते हैं कि यदि स्वर्ग का कोई स्वर्गदूत भी हमसे विश्वास के विपरीत कुछ उपदेश दे, तो वह शापित हो।'

इसलिए, यदि आप हमारे साथ मसीह की कलीसिया के भीतर रहना चाहते हैं, जो मसीह की प्रतिमा की पूजा करते हैं, तो हर बात में पैट्रिआर्क और उनके साथ मौजूद पवित्र सिनॉड का अनुसरण करें।" ये शब्द सुनते ही राजा क्रोध से आग-बबूला हो गया और उन्हें सब को अपने पास से भगा दिया। – इसके बाद, ग्रीक एपार्क द्वारा पूरे शहर में राजा का फरमान सुनाया जाने लगा, कि कोई भी विश्वास पर व्याख्या करने या उस पर विवाद खड़ा करने की हिम्मत न करे, बल्कि सभी राजा की इच्छा का पालन करें। यह बात संत थियोडोर के कानों में पड़ी। और उन्होंने यह संदेश लाने वालों से कहा: *'तुम स्वयं निर्णय करो कि क्या परमेश्वर की दृष्टि में परमेश्वर के बजाय तुम्हारी आज्ञा मानना सही है?'* (प्रेरितों के काम 4:19)? जब सत्य को तोड़ने-मरोड़ने का प्रयास किया जाता है, तो चुप रहने और सच्चे धर्म की रक्षा करने में विफल रहने की तुलना में अपनी जीभ कटवा लेना बेहतर है। – उस समय से, उन्होंने सभी को निडर होकर सिखाना और उन्हें पूर्वजों द्वारा दिए गए सच्चे धर्म पर दृढ़ रहने के लिए मनाना शुरू कर दिया: उन्होंने कुछ लोगों को अपने पास बुलाया, दूसरों के पास स्वयं गए , और दूसरों को पत्र लिखे; वह अक्सर पैट्रिआर्क से भी मिलने जाता था, ताकि अपने साझा विश्वास में सांत्वना पा सके और उन्हें आने वाले दुखों और उत्पीड़नों को धैर्यपूर्वक सहने के लिए प्रोत्साहित कर सके।

ये उत्पीड़न और कष्ट शीघ्र ही घटित हुए: पैट्रिआर्क को पदच्युत कर साम्राज्यिक नगर से निर्वासित कर दिया गया, और अन्य सभी ऑर्थोडॉक्स बिशपों को कारावास की सजा दी गई; इस बीच, आइकॉन्स का अपमान किया गया, उन्हें जमीन पर फेंका गया, पैरों तले रौंदा गया और आग के हवाले कर दिया गया; और पूरे नगर में व्यापक उथल-पुथल मच गई। यह देखकर, पूज्य थियोडोर अपने प्राणों में गहरे दुखित हुए; और, प्रतिमाओं के प्रति उनके खुले श्रद्धा-सम्मान को उनकी खुली अपवित्रता के तीव्र विरोधाभास के रूप में स्थापित करते हुए, उन्होंने आगामी आरोहण पर्व पर मठ के चारों ओर एक शोभायात्रा निकालने का निर्णय लिया, जिसमें भ्रातृगण प्रतिमाओं को लेकर उन्हें ऊँचा उठाए हुए, चलते-चलते गाते रहे: 'हे पुण्यमय, हम आपकी परम पवित्र प्रतिमा की पूजा करते हैं' और अन्य इसी प्रकार के भजन।

जब सम्राट को यह पता चला, तो उसने उन्हें एक सख्त चेतावनी भेजी कि, जब तक वे प्रतिमाओं की पूजा का बचाव करना बंद नहीं कर देते, तब तक उन्हें कैद, घाव और मृत्यु का सामना करना पड़ेगा। चूँकि संत न तो शब्द में और न ही लिखित रूप में ऐसा करना बंद कर सकते थे, उन्हें कैद की सज़ा सुनाई गई, एशिया या बिथिनिया में अपोलोनिया भेजा गया और मेटोपा नामक किले के भीतर एक कालकोठरी में बंद कर दिया गया। फिर भी, वहाँ से भी उन्होंने दूर-दूर तक संदेश भेजे, लोगों से चर्च द्वारा प्रचलित प्रतिमाओं की पूजा का सख्ती से पालन करने का आग्रह किया। उनके संदेश राजा तक भी पहुँचे; और उसने तुरंत अलेक्ज़ेव के पुत्र एक निश्चित निकिता को वहाँ से पूजनीय को वोनिटा नामक स्थान पर ले जाने और उन्हें वहाँ एक कालकोठरी में बंद करने के लिए भेजा, जिसमें आइकन की पूजा के बारे में बोलने या लिखने पर सख्त प्रतिबंध था! जब संदेशवाहक ने उन्हें ज़ार का आदेश सुनाया, तो उन्होंने जवाब दिया: 'मैं इस स्थान परिवर्तन को खुशी-खुशी स्वीकार करता हूँ, क्योंकि ईश्वर सर्वत्र है; लेकिन मैं बोलने या लिखने से खुद को रोक नहीं सकता'; और, एक अन्य स्थान पर स्थानांतरित होने के बाद, उन्होंने वास्तव में बोलना और लिखना जारी रखा। यह जानकर, राजा ने क्रोध में आकर उसी निकिता को एक बार फिर से पूजनीय के पास भेजा - ताकि उन्हें गंभीर घाव पहुँचाए।

जब संदेशवाहक ने संत थियोडोरेट को यह बताया, तो उन्होंने खुशी-खुशी स्वयं अपने चोगा उतार दिए और पीटे जाने के लिए अपना शरीर पेश कर दिया। लेकिन जब निकिता ने देखा कि पूजनीय संत का शरीर कितना दुबला-पतला था, तो वह उन्हें मारने का साहस नहीं कर सका। और इस प्रकार वह संत को छुए बिना ही लौट गया। हालाँकि संत, जहाँ थे वहीं रहे, उन्होंने एक बार फिर निडर होकर पवित्र प्रतिमाओं के बारे में सत्य का प्रचार किया, उनके पास आने वालों से लंबी बातचीत की और दूर-दूर तक पत्र लिखे। उन्होंने यरूशलेम, अलेक्जेंड्रिया, एंटिओक और रोम के पैट्रिआर्क को भी लिखा, जिसमें उन्होंने कॉन्स्टेंटिनोपल में हो रही घटनाओं का वर्णन किया और उनसे प्रार्थना और कर्म दोनों के माध्यम से ऑर्थोडॉक्सी की सहायता करने का अनुरोध किया। ऐसा हुआ कि एशिया की कलीसिया का एक निश्चित पुरोहित उनसे मिलने आया; संत के प्रवचनों को सुनने के बाद, उसने प्रतिमा-भंजक विधर्म को अस्वीकार कर दिया और ऑर्थोडॉक्सी धर्म अपना लिया – और अपने स्थान पर लौटने पर, उसने एक अन्य पुरोहित

को भी धर्मांतरित कर दिया। जब बिशप को यह पता चला, तो उसने पूजनीय संत के बारे में ज़ार से शिकायत की; और ज़ार ने एशिया के राज्यपाल को सेंट थियोडोर को गंभीर घाव पहुँचाने का आदेश दिया। राज्यपाल ने अपने एक आदमी को पूजनीय संत को पचास घाव पहुँचाने के लिए भेजा। लेकिन यह संदेशवाहक भी, पूज्यनीय संत के नग्न शरीर को देखकर, अपना हाथ उठाने की हिम्मत नहीं कर सका; और उन्हें प्रणाम करके, वह ज़ार के दुष्ट आदेश को पूरा किए बिना लौट गया। यह संदेशवाहक जैसे ही उसे भेजे वाले के पास लौटा, वैसे ही राजा का स्वयं का एक नया दूत, जिसका नाम अनास्तासियस था—एक क्रूर और निर्दयी व्यक्ति—संत थियोडोर के सामने प्रकट हुआ; उसने अपने हाथों से संत को पीटा, और उन पर सौ तक घाव किए; उसने उनके शिष्य निकोलस के साथ भी यही किया; और फिर उन दोनों को एक अंधेरी और तंग जगह में बंद कर दिया, और आदेश दिया कि उन्हें बहुत कठिन परिस्थितियों में रखा जाए – और वह चला गया।

इस क्रूर आदेश का अक्षरशःपालन किया गया: वह जगह अंधेरी, बदबूदार और नम थी; एक छोटी सी खिड़की से उन्हें रोटी का एक छोटा सा टुकड़ा फेंका जाता था, जो एक व्यक्ति के लिए भी पर्याप्त नहीं था, और पानी का एक मग दिया जाता था, कभी-कभी हर दूसरे दिन या उससे भी अधिक, मानो उनका इरादा उन्हें भूख से मार डालना था; उनके घावों का दर्द और नौकरों द्वारा किया गया कठोर व्यवहार उनकी पीड़ा को और बढ़ा देता था। इस तरह की तकलीफ में, संत थियोडोर ने अपने विश्वास से प्रेरित होकर, केवल प्रभु के परम पवित्र शरीर पर ही जीवित रहने का संकल्प लिया, जो उन्होंने अपने साथ लाए प्रावधानों से प्राप्त किया – फिर भी उन्होंने जो कुछ भी मिलता था, वह अपने शिष्य को दे दिया।

कुछ समय बाद, एक शाही कुलीन व्यक्ति उस क्षेत्र से गुजर रहा था; पादरी पिता और उनके शिष्य की दुर्दशा के बारे में जानने पर, उसने आदेश दिया कि उनके दुख को कम किया जाए, उन्हें अधिक भोजन और पानी दिया जाए, और उनके साथ अधिक दयालुता से व्यवहार किया जाए। इस प्रकार तीन साल से अधिक समय बीत गया। तब संत थियोडोर का एक पत्र राजा के हाथ लग गया, जिसमें राजा की अधर्मीता की निंदा की गई थी और उसे ऑर्थोडॉक्सी (सही आस्था) पर दृढ़ रहने तथा उसके लिए साहसपूर्वक उत्पीड़न और यातना सहने के लिए प्रोत्साहित किया गया था। राजा आग-बबूला हो गया और उसने एक जानवर-नुमा कुलीबान को रेवरेंड फादर को पत्र दिखाने के लिए भेजा; और यह पता चलने पर कि यह वास्तव में उनका ही पत्र था, उसे मौत के घाट उतारने तक पीटने का आदेश दिया। सम्माननीय पादरी ने पत्र को अपना स्वीकार कर लिया – और उन्हें बेरहमी से पीटा गया, वे मुश्किल से सांस ले रहे थे। उनके शिष्य का भी यही हश्र हुआ। अपनी कुटिलता को शांत करने के बाद, संदेशवाहक अपने स्वामी के पास लौट गया; जबकि पीड़ितों ने, सत्य के लिए अपने परीक्षणों को धैर्यपूर्वक सहन करते हुए, एक-दूसरे की देखभाल करना शुरू कर दिया।

संत थियोडोर हिल नहीं सकते थे और थके-हारे, मुश्किल से सांस लेते हुए पड़े थे, न तो उन्होंने कुछ खाया और न ही पिया। शिष्य कुछ हद तक मजबूत था, और अपने आपको भूलकर, उसने अपनी सारी देखभाल संत की की, उन्हें जड़ी-बूटियों के साथ मिले हुए जौ का शोरबा पिलाया। जब संत कुछ ठीक हो गए, तो उन्होंने अपने शिष्य की मदद की, विशेष रूप से उसके घावों की देखभाल में। उन्होंने एक-दूसरे के घावों को साफ़ किया और लटके हुए मांस के टुकड़ों को काटा, पीब को धोया और जख्मों पर यथासंभव मलहम लगाया। इस प्रकार उन्होंने नब्बे दिनों तक अपनी पीड़ा सहन की, और वे अभी पूरी तरह से ठीक भी नहीं हुए थे कि राजा—एक क्रूर और अमानवीय व्यक्ति—का एक और दूत आया, जिसे इन यातना-भोगियों को स्मर्ना ले जाने का आदेश मिला था। यह सब कठोर पहरे में, वंचितता, दुर्व्यवहार, कठिनाइयों और हर तरह की थकान के बीच किया गया।

केवल ईश्वर की विशेष मदद से ही शहीदों में अपनी मंज़िल तक पहुँचने की ताकत आई। वहाँ उन्हें एक बिशप—एक दुष्ट और विधर्म का शिक्षक—के हवाले कर दिया गया और एक नीची, तंग और अँधेरी झोपड़ी में बंद कर दिया गया, जहाँ उन्होंने हर तरह की तकलीफों और कठिनाइयों को सहा। कुछ ही समय बाद, राजा का पूर्व निर्दयी अधिकारी, अनास्तासियस, आया; उसने पूजनीय को सौ कोड़े मारने के बाद वापस लौट गया। हालाँकि, पूजनीय ने यह सब धैर्यपूर्वक सहन किया और ईश्वर का धन्यवाद किया। उस समय, स्मyrna प्रांत पर राजा के भतीजे और समान विचारधारा वाले सहयोगी का शासन था। वह बीमार पड़ गया और मृत्यु के करीब था। उसके एक सेवक, जो सच्चे धर्म का आदमी था, ने उसे संत थियोडोर के बारे में बताया, जिन्हें चंगा करने का वरदान प्राप्त था। उस बीमार व्यक्ति ने रेवरेंड फादर को एक संदेश भेजकर अपनी प्रार्थनाओं का अनुरोध किया। रेवरेंड फादर ने, ऑर्थोडॉक्स के खिलाफ अपने द्वारा की गई सभी अत्याचारों का वर्णन करते हुए, जिनके लिए उसे अनंतकाल तक यातना सहनी थी, उसे अंत समय में भी पश्चाताप करने के लिए प्रेरित किया। गवर्नर इस बात से भयभीत हो गया कि उसका क्या इंतज़ार कर रहा है और उसने रेवरेंड की ओर रुख किया, क्षमा मांगी और वादा किया कि अगर वह ठीक हो गया तो ऑर्थोडॉक्स

धर्म को अपना लेगा। सेंट थियोडोर ने उसे परम पवित्र ईश्वर की माता की एक प्रतिमा भेजी, और उसे आज्ञा दी कि वह अपने शेष जीवन में इसकी पूजा करे। प्रतिमा प्राप्त करते ही, राज्यपाल को तुरंत राहत महसूस हुई और वह ठीक होने लगा। उसका ठीक होना पहले ही समाप्त होने को था जब वह स्मर्ना के विधर्मी बिशप के बहकावे में आकर एक बार फिर अपनी पुरानी अंधविश्वास में लौट गया। फिर उस बीमार व्यक्ति ने इस बिशप से आशीर्वाद के रूप में पवित्र तेल प्राप्त किया। लेकिन जैसे ही उस पर अभिषेक किया गया, वह अपनी पुरानी बीमारी में वापस पड़ गया - और पीड़ा में अपनी अंतिम सांस ली। पूजनीय ने स्मर्ना में डेढ़ साल से अधिक समय तक कष्ट सहे।

और वह और अधिक समय तक पीड़ित रहता, लेकिन दुष्ट राजा मारा गया, और उसका उत्तराधिकारी माइकल (ट्रावलियस या वाल्वोस), विश्वास के प्रति उदासीन था और उसने सभी को अपनी इच्छानुसार विश्वास करने की अनुमति दी। उसके शासन के तहत, पिछले शासन के दौरान निर्वासन और कारावास में भेजे गए सभी लोगों को मुक्त कर दिया गया। संत थियोडोरस और उनके शिष्यों को भी रिहा करने का आदेश आया। (संत थियोडोरस ने लियो द आर्मेनियन के अधीन इन कारावासों में लगभग सात साल बिताए थे; और उससे पहले, कॉन्स्टेंटिन के अधीन, उन्होंने विवाह की अन्याय की निंदा करने के लिए पाँच साल बिताए थे।) तब उनके सभी शिष्य जो निर्वासन में थे, परम पूजनीय के पास इकट्ठा हो गए; और वे, उनके साथ, घर लौट आए, और हर जगह उनका आनंद और प्रेम से स्वागत किया गया; क्योंकि पूरी कलीसिया उनके लौटने पर आनंदित हुई। कालसीडोन पहुँचने पर, वे संत से मिले।

पितृपिता निकिफोरस से मिले; और उन्होंने विश्वास के एकमात्र धार्मिक कारण के लिए सह-पीड़ितों के रूप में एक-दूसरे को सांत्वना दी। उनके साथ, वे सम्राट के पास गए और उन्हें ऑर्थोडॉक्सी अपनाने के लिए मना लिया। लेकिन उन्होंने कहा: 'मैं प्रतिमाओं की पूजा नहीं करना चाहता, और न ही मैं चाहता हूँ कि वे कॉन्स्टेंटिनोपल में दिखाई दें; उन्हें जहाँ चाहें रखें, और जैसा आपको उचित लगे, उनका सम्मान करें।' वहाँ से, संत थियोडोर अपने शिष्यों के साथ क्रिसिन्शियस के क्षेत्र में गए, और वहाँ बस जाने के बाद, उन्हें आखिरकार शांति मिलने की उम्मीद थी। लेकिन एक थॉमस नामक व्यक्ति के नेतृत्व में एक विद्रोह के बाद, जो साम्राज्यीय सिंहासन पर कब्जा करना चाहता था, उसे विद्रोह की अवधि के लिए कॉन्स्टेंटिनोपल में शरण लेने के लिए मजबूर होना पड़ा; क्योंकि वह स्थायी रूप से एक ऐसे शहर में नहीं रहना चाहता था जो विधर्मी मूर्ति-विरोधीवाद में डूबा हुआ था। जब यह तूफ़ान थम गया, तो वह क्रिस्केन्टियस के क्षेत्रों में वापस नहीं गए, बल्कि अक्रिटि के हेरोनिसि में, सेंट ट्रायफोन के चर्च में चले गए, जहाँ उन्होंने अपने शिष्यों से घिरे होकर, तपस्या में अपना शेष जीवन व्यतीत किया। आखिरकार, उनके जीवन के 67वें वर्ष में, उनके परमधाम जाने का समय आ गया। जब यह खबर फैली, तो हर तरफ से, हर पद और वर्ग के, दूर-दूर से लोग परम पूजनीय के पास आने लगे। सभी उनके शब्द सुनना चाहते थे, और परम पूजनीय ने कहा; लेकिन वे थकान से इतने कमजोर हो गए थे कि पास खड़े लोग भी उन्हें मुश्किल से ही सुन पा रहे थे। इसलिए, लेखकों को बुलाया गया ताकि संत के वचन न सुन पाने वाले लोग शिक्षा से वंचित न रहें। जो कोई भी ऐसा करना चाहे, वह उन्हें रेवरेंड फादर के प्रवचनों के संग्रह में पढ़ सकता है। हालाँकि, उनकी बीमारी कुछ कम हो गई थी, और संत चल सकने में सक्षम थे; वे चर्च गए और, अगले रविवार को, उन्होंने दैवीय अनुष्ठान का अनुष्ठान किया, भाइयों को उपदेश दिया और उनके साथ भोजन किया। इसी प्रकार, अगले दिन, 6 नवंबर को, संत पॉल द कन्फेशर के पर्व पर, उन्होंने दैवीय अनुष्ठान का अनुष्ठान किया, भाइयों को उपदेश दिया, और उसी शाम वेस्पर्स (सायंकालीन प्रार्थना) में गायन के लिए उपस्थित थे। लेकिन अपनी कोठरी में लौटने पर, वह फिर से बिस्तर पर लेट गए और बीमार पड़ने लगे। वे चार दिन तक बीमार रहे, और पाँचवें दिन वे प्रभु के पास, कष्टमुक्त जीवन के लिए प्रस्थान कर गए।

जैसे-जैसे उनके निधन का समय निकट आता गया, भाई उनके चारों ओर इकट्ठा हो गए और अपने पिता और शिक्षक के लिए रोए। उन्हें देखकर, उन्होंने भी कुछ आँसू बहाए और कहा: 'देखो, पिताओं और भाइयों, मेरे जीवन का अंत आ गया है ! हम सभी को यह प्याला पीना है, कुछ को जल्दी, कुछ को बाद में, लेकिन कोई भी इससे बच नहीं सकता। मैं उस मार्ग पर चल रहा हूँ जिस पर हमारे पूर्वज चले थे; मैं उस स्थान को जा रहा हूँ जहाँ अनंत जीवन है, जहाँ ईश्वर और हमारे प्रभु हैं, जिन्हें मेरी आत्मा ने प्रेम किया है, जिन्हें मेरा हृदय ने चाहा है, जिन्हें मैंने अपना स्वामी कहा है, यद्यपि मैंने उनकी उतनी सेवा नहीं की जितनी मुझे करनी चाहिए थी। – हे मेरे प्रिय भाइयो और बच्चों, उन वचनों का पालन करो जो मैंने तुम्हें सौंपे हैं, और सच्चे विश्वास और ईश्वर-भक्ति के जीवन से दृढ़ता से चिपके रहो। तुम जानते हो कि मैंने कभी भी तुम्हें, न तो कलीसिया में और न ही निजी तौर पर, परमेश्वर का वचन प्रचार करना बंद नहीं किया है। अब, अत; मैं तुमसे विनम्रतापूर्वक निवेदन करता हूँ: इसे ध्यान में रखो और इससे दृढ़ता से चिपके रहो। मेरे हृदय में तुम्हारे कारण दुख है: क्योंकि मुझे तुम्हारे विषय में हिसाब देना है। इसलिये सावधान रहो, कि यहाँ से ऐसे जाओ कि प्रभु के साम्हने निर्दोष ठहरो।" यह कहकर और विदा लेकर, उसने अपने चेलों को आज्ञा दी कि वे मोमबत्तियाँ लें, उन्हें जलाएँ, और समापन भजन गाएँ। शिष्य, उसके चारों ओर खड़े होकर, गाने लगे: *'धन्य हैं*

निष्कलंक' (भजन संहिता 118); और जब, बारी-बारी से गाते हुए, उन्होंने गाया: *'मैं तेरे धर्म के कामों को कभी न भूलूंगा, क्योंकि उन से तूने मुझे जीवित किया है'* (पद 93), – इन शब्दों के साथ, पूजनीय ने अपनी आत्मा को परमेश्वर के सुपुर्द कर दिया (826)। उसे परमेश्वर के स्वर्गदूतों द्वारा ग्रहण किया गया और परमेश्वर के सिंहासन तक ले जाया गया, जैसा कि दिल्माटिया के पूजनीय हिलारियन ने, जिन्होंने इसे एक दर्शन में देखा था, सत्य के साथ गवाही दी।

उस दिन, 11 नवंबर को, संत मीना की स्मृति में, अपने बगीचे में अकेले टहलते और भजन गाते समय, उन्होंने कुछ अद्भुत आवाजें सुनीं और एक अकथनीय सुगंध को महसूस किया। ऐसा दृश्य देखकर, उन्होंने आकाश की ओर देखा और देखा कि ऊँचाई से, उज्ज्वल, प्रसन्न चेहरों वाले, सफेद वस्त्र पहने हुए लोगों का एक बड़ा समूह गीत गाते हुए किसी सम्मानित व्यक्ति से मिलने के लिए उतर रहा था। यह देखकर, धन्य व्यक्ति भय से जमीन पर गिर पड़ा, और उसने किसी को यह कहते सुना: 'यह स्टुडियो के मठाधीश थियोडोर की आत्मा है, जिसने प्रतिमाओं के लिए रक्तपात तक कष्ट सहे और अब निधन कर गया है; यह गंभीरता से पहाड़ पर चढ़ रही है, जबकि स्वर्गीय सेनाएँ इसे मिलने के लिए उतर रही हैं।' – धन्य हिलारियन ने यह दृष्टि अन्य पुण्यशील पिताओं को सुनाई: उन्होंने इस घटना के दिन और समय को नोट किया, और समय के हिसाब से यह जान लिया कि ठीक उसी समय स्टूडियो के प्रशंसनीय थियोडोर का निधन हुआ था। संत थियोडोर के निधन के समय कई चमत्कार हुए, और उनके निधन से पहले और बाद में भी ऐसे कई चमत्कार हुए – उनकी कफ़न और उनके पवित्र अवशेषों से।

1. मठवासी जीवन कितना उत्कृष्ट है

1. 1) मठवासी जीवन कितना उत्कृष्ट है। – 2) आज्ञाकारिता का प्रत्येक कार्य, जब ईश्वर की इच्छा के अनुसार किया जाता है, तो स्वर्ग की ओर ले जाता है, भले ही वह बहुत सरल क्यों न हो। – 3) उन सद्गुणों की एक सूची जो स्वर्ग की ओर ले जाती हैं। [1, 2][82]

1. ईश्वर ने हमें इस संसार में इसलिए भेजा है ताकि हम अपने अच्छे कर्मों द्वारा उन्हें प्रसन्न करके स्वर्ग के राज्य के वारिस बन सकें। हालाँकि, हम संन्यासियों को, इस संसार में हमारे प्रवेश पर, उन्होंने एक विशेष अनुग्रह प्रदान किया, जो इस तथ्य में निहित है कि, सभी लोगों में से हमें चुनकर, उन्होंने हमें अपने राज्य की सेवा करने के लिए अपने सामने स्थापित किया। अब प्रत्येक व्यक्ति स्वयं की सावधानीपूर्वक परीक्षा करे कि क्या वह उस बुलावे के अनुसार जी रहा है जिसके लिए उसे बुलाया गया है, और क्या वह ईश्वर को प्रसन्न करने के अलावा किसी और बात की परवाह नहीं कर रहा है।

2. अपने कर्तव्यों का पालन करते समय, हमें ऐसा व्यवहार करना चाहिए मानो हमें यह आज्ञा सीधे परमेश्वर से मिली हो। परमेश्वर जीवित लोगों से यह अपेक्षा करता है कि वे वही करें जो वे करने में सक्षम हैं। और हमें ऐसा ही करना चाहिए, और सबसे बढ़कर एक बात से बचने का पूरा ध्यान रखना चाहिए: कि हम दूसरों के सामने घमंड से या अपने आप को धोखा न दें, मानो हम कोई बहुत बड़ा काम कर रहे हों। प्रभु के पास हर मजदूर के लिए एक इनाम तैयार है: रसोइया पहले शहीद स्तेफन के साथ आनंदित होगा; बेकर स्वयं प्रभु के लिए शुद्ध रोटी होगा; सब्ज़ी-रखवाला स्वर्ग की नेमतों का आनंद लेगा, क्योंकि उसे वहाँ रहने का योग्य समझा जाएगा; और हर कोई अन्य व्यक्ति—अंगूर के बाग का रखवाला, बढ़ई, लिपिक, द्वारपाल, और वास्तव में, कोई भी जो कोई भी कर्तव्य निभाता है—यदि वे इसे प्रभु के लिए काम के रूप में करते हैं, तो उन्हें एक उपयुक्त पुरस्कार मिलेगा। प्रभु सब कुछ देखता है; उससे कुछ भी छिपा नहीं है; और वह सभी चीजों का दिव्य तरीके से प्रतिफल देगा।

3. *'विश्वास में दृढ़ रहो, साहसी बनो, स्थिर रहो: हर काम में प्रेम तुम्हारा मार्गदर्शक हो'* (1 कुरिन्थियों 16:13–14); प्रतिदिन मरो, ताकि तुम अनंतकाल तक जी सको; बुरे विचारों से वैसे ही भागो जैसे तुम बुरे कर्मों से भागते हो; बकबक को पापों की अधिकता, हँसी को व्यभिचार, लालच और तृप्ति को वासना की दासता समझो; अपने विचारों को नम्र रखो, अपनी आँखें झुकी हुई रखो; शरीर और आत्मा से शुद्ध रहो; आशा से प्रेरित रहो; पृथ्वी पर किसी भी चीज़ से आसक्त मत हो; एकमात्र परमेश्वर से डर रखो। यदि हम इस प्रकार आचरण करें, यदि हम ऐसा ही स्वभाव बनाए रखें, तो हम स्वर्गदूतों के साथ आनन्दित होंगे और सभी संतों के साथ युगानुयुग प्रसन्न रहेंगे।

---

[82] विषय-सूची के ऊपर दिया गया अंक उद्धृत शिक्षा का क्रमांक दर्शाता है, जबकि विषय-सूची के बाद कोष्ठकों [ ] के भीतर दिए गए अंक – पहला अंक खंड का, दूसरा अंक उस खंड में शिक्षा का – संकेत करते हैं। – विषय-सूची में दिए गए आइटम उनके बाद आने वाले अनुभागों से मेल खाते हैं, प्रत्येक आइटम के लिए एक अलग अनुभाग होता है।

2. अपने बारे में बहुत ऊँचा न सोचें

२. १) अपने बारे में बहुत ऊँचा न सोचें। – २) अपने सभी भाइयों के लिए जियो, जैसे शरीर का प्रत्येक अंग पूरे शरीर के लिए जीता है। – ३) हमारा आज्ञापालन बोझिल नहीं है, बल्कि अपनी इच्छा का त्याग करके हम शहादत के मुकुट के पात्र बनते हैं। [१, ३]

4. हे परमेश्वर द्वारा बुलाए गए मनुष्यों, तुमने संसार को पीछे छोड़कर और अपने हृदयों की दृष्टि परमेश्वर पर टिकाकर बुद्धिमानी से काम किया है। तब, परमेश्वर को भाने वाले तरीके से जीने का प्रयास करो, और इस प्रकार जीते हुए, *'अपने आप को उस से अधिक बड़ा न समझो जितना कि तुम हो'* (रोमियों 12:16), न तो आध्यात्मिक गुणों के कारण और न ही शारीरिक लाभों के कारण, कहीं ऐसा न हो कि तुम सुनो: *'तुम्हारे पास ऐसा क्या है जो तुमने प्राप्त नहीं किया?' और यदि तुमने इसे प्राप्त किया है, तो तुम घमंड क्यों करते हो, मानो तुमने इसे प्राप्त ही न किया हो?'* (1 कुरिन्थियों 4:7)। जो कोई भी बहुत कुछ करता है, वह मसीह की कृपा से करता है, क्योंकि उसने ऊपर से परमेश्वर से शक्ति प्राप्त की है, अपने लिए नहीं बल्कि अपने पड़ोसी के लिए।

५. तुम सब एक दूसरे के दास, एक दूसरे के सहायक हो, जैसे एक ही शरीर के जीवित अंग हो। यदि आँख हाथ का मार्गदर्शन न करे, यदि एक हाथ दूसरे का सहारा न दे, यदि पैर पूरे शरीर की भलाई के अनुसार न चले, यदि वास्तव में प्रत्येक अंग अपनी मर्जी से काम करने लगे; तो वे न केवल अपनी शक्ति को बनाए रखने में विफल रहेंगे, बल्कि खुद को अस्त-व्यस्त करके, वे पूरे शरीर को भी अस्त-व्यस्त कर देंगे। इसलिए, जब उन्हें दूसरों के लिए थोड़ी और मेहनत करनी पड़े, तो ठंड, बारिश और गर्मी को सहते हुए हर कोई आनंदित हो; लेकिन जो आलसी बैठता है, वह एक बेकार अंग की तरह रोए और पश्चाताप करे, जो शरीर में शरीर के लिए नहीं रहता और केवल काटे जाने के योग्य है।

६. इसे सुनकर तुम्हारे कान बोझिल न हों। इसके विपरीत, विचार करो कि स्वर्ग के राज्य को प्राप्त करने के लिए हमसे कितनी कम और कितनी थोड़ी मेहनत की अपेक्षा की जाती है। हम शहीदों की तरह खून नहीं बहाते; हमारे अंग नहीं काटे जाते, न ही हमारी हड्डियाँ टूटती हैं; लेकिन यदि हम अपने थोड़े और हल्के श्रमों में अपनी इच्छा का त्याग जोड़ते हैं, ईश्वर को प्रसन्न करने और प्रेम से अपने भाइयों की सेवा करने की इच्छा के साथ, तो इसके माध्यम से हम दीर्घ-सहिष्णु शहीदों के समान हो जाते हैं, और स्वयं प्रभु के समान भी, जिन्होंने हमारे लिए सूली पर चढ़ने और मृत्यु को सहन किया। इसलिए, अपने श्रम में हौसला रखो! शहीदों के मुकुट तुम्हारा इंतज़ार कर रहे हैं।

3. चौकस रहो: क्योंकि शत्रु सोता नहीं है – चरवाहे के लिए सांत्वना।

३. १) सतर्क रहो: क्योंकि शत्रु सोता नहीं है – चरवाहे के लिए सांत्वना। – २) अपने कार्यों में पीछे न रहो, क्योंकि प्रत्येक कार्य के लिए स्वर्ग में तुरंत एक पुरस्कार संचित हो जाता है। – ३) निर्देश: कैनोनार्क को; – ४) दीपक-वाहक को; – ५) अस्पताल के परिचारक को; – 6) बीमारों के लिए। [1, 4]

7. मुझे पवित्र पितरों से, और सबसे बढ़कर मेरे धर्मी बड़े भाई से पता है, कि शैतान हमारी आत्माओं को नष्ट करने के अपने प्रयासों में न तो कभी सोता है और न ही सुस्त पड़ता है; बल्कि वह हमेशा चौकस रहता है और *'जब मनुष्य सोते हैं'* (मत्ती 13:25) तब अपने खरपतवार बोने के लिए उत्सुक रहता है। इसलिए तुम भी, मेरे ईश्वर-आहूत बच्चों, पहरा दो और चौकस रहो, कहीं तुम में से कोई शैतान के फंदे में न फँस जाए। मुझे तुम में से प्रत्येक की प्रगति के बारे में सुनना अच्छा लगता है; एक की आज्ञाकारिता, दूसरे की नम्रता, और तीसरे की लगन से मुझे सांत्वना मिलती है। परन्तु मेरी आत्मा आज्ञा न मानने वाले पुत्र, गड़गड़ाहट करने वाले और घमण्डी, आलसी और सुस्त, फुसफुसाने वाले और बकबक करने वाले से घृणा करती है। – परन्तु मैं ऐसा क्यों कहता हूँ? – मैं तुम्हारा चरवाहा हूँ, यद्यपि अयोग्य; तुम मेरी भेड़ें हो, जिनके विषय में मैं उस प्रभु को उत्तर दूँगा जिसने उन्हें मुझे सौंपा है।

८. इसलिये, तुम सब, झुंड की रखवाली करो; इसकी अच्छी तरह से रखवाली करो; एक मन और एकता से इसकी रखवाली करो। कोई भी पीछे न छूट जाए। शत्रु पीछे छूट जाने वाले को भटका देगा और उसका नाश कर देगा; जैसे भेड़िया भटकने वाली भेड़ को झपटकर जंगल या पहाड़ों में ले जाता है। उद्धार का काम आसान नहीं है; इसका मार्ग अनेक और कठिन है, जिसमें कठोर परिश्रम, सतर्कता, थोड़े से में संतोष—थोड़ा भोजन, थोड़ा आराम, साधारण वस्त्र—और सबसे बढ़कर, अपनी इच्छा का त्याग आवश्यक है। प्रभु प्रत्येक व्यक्ति के श्रम के अनुपात में पुरस्कार प्रदान करते हैं; और जो भी परिश्रम करते हैं, उनमें से प्रत्येक के लिए प्रतिदिन मुकुट आरक्षित रखे जाते हैं।

९. हमें चर्च की सेवाओं को सभी उचित व्यवस्था, श्रद्धा और हृदय की आत्मीयता के साथ संपन्न करना चाहिए। और तुम, मेरे बच्चे, कैनोनार्क (समारोहों के प्रमुख), जो हमारे इस पहले और सबसे बड़े कर्तव्य की देखरेख के लिए नियुक्त हो, सतर्क रहो; गायन मंडली को व्यवस्थित रखो; प्रत्येक भजन के लिए निर्धारित समय का सटीक

पालन करो, और भजन-संग्रह तथा स्टिचेरा के संबंध में, अन्य सभी कर्तव्यों को निर्देशानुसार, अच्छी अंतरात्मा से पूरा करें। जो गाने में सक्षम हैं, उन्हें गाने दें; और जो पढ़ने के लिए अधिक उपयुक्त हैं, उन्हें पढ़ने के लिए नियुक्त करें। लापरवाह न बनो, बल्कि चौकस रहो, और प्रत्येक भाई को, न्यायसंगत तरीके से, यह सौंपो कि उन्हें एक दिन क्या पढ़ना या गाना है और दूसरे दिन क्या – कुछ को सामान्य दिनों में, दूसरों को पर्व के दिनों में – उनकी आवाज़, उच्चारण और पढ़ने की गति के आधार पर निर्णय लेते हुए, ताकि बाहरी लोग भी, यदि वे मौजूद हों, तो लाभान्वित हो सकें। सभी बातें सुव्यवस्थित और उचित रीति से हों (1 कुरिन्थियों 14:40), ताकि आप प्रभु से यह सुनने के योग्य ठहरें: *'शाबाश, हे भले और विश्वासयोग्य दास; तू कुछ बातों में विश्वासयोग्य रहा, मैं तुझे बहुतों पर रखूँगा'* (मत्ती 25:21), और स्वर्ग में संतों में गिने जाएँ।

10. और हे दीपक-जलाने वाले, तुझ पर सौंपी गई कर्तव्य-निष्पादन में परिश्रमी और सूक्ष्मदर्शी बन: क्योंकि यह परमेश्वर और दिव्य है। चर्च की रोशनी की रक्षा अपनी दोनों आँखों की तरह कर: क्योंकि यह परमेश्वर की उपस्थिति में किया जाता है। यदि राजा के सामने दीपक जलाने वाला उसकी दृष्टि में उसे प्रसन्न करने के लिए पूरी तरह से चौकस रहता है; तो हे मेरे बच्चे, तुम्हें राजाओं के राजा परमेश्वर के लिए, जिसके अधीन सारी सृष्टि है, और भी अधिक भय और प्रेम के साथ दीपक जलाना चाहिए, ठीक वैसे ही जैसे तुम्हें दीपकों को साफ़ करना, दीवानों की देखभाल करनी, और उचित प्रकाश बनाए रखना चाहिए। और चर्च की सफ़ाई का ध्यान रखें: सप्ताह में कम से कम दो बार झाड़ू लगाएँ, आइकॉन्स (चित्रों) से धूल हटाएँ ताकि वे खराब न हों, और बाकी सब कुछ व्यवस्थित और साफ़-सुथरा रखें, और चर्च की किसी भी चीज़ को नुकसान न पहुँचाने का पूरा ध्यान रखें।

11. हे मेरे बच्चे, अस्पताल के सेवक, तू मेरे विचारों में तीसरा है। जैसा तुझे आज्ञा दी गई है, वैसे ही चल। इस अत्यंत कठिन, अनवरत, शहीद-सदृश सेवा में तू छोटे मुकुटों का पात्र नहीं है—जो इसी कारण से गौरवान्वित और उच्चतम पुरस्कार का पात्र है। यहाँ आराम की प्रतीक्षा या तलाश न करें, ताकि उसे वहाँ प्राप्त कर सकें। यदि आप यहाँ अच्छी तरह परिश्रम करते हैं, तो निस्संदेह आपको वहाँ शांति मिलेगी। कुछ पढ़ते हैं, कुछ प्रार्थना करते हैं, कुछ मौन का अभ्यास करते हैं, और कुछ अन्य प्रशंसनीय कार्य करते हैं; लेकिन आप भी, उनके साथ तालमेल बनाए रखें – या उनसे भी आगे निकल जाएँ। – जैसे ही रोशनी हो, एक-एक करके बीमार के पास जाओ, प्रत्येक की बीमारी की स्थिति का पता लगाओ, और प्रत्येक के लिए आवश्यक और लाभकारी निर्धारित करो। यदि तुम ऐसे श्रमों में धैर्य रखोगे, तो तुम मुकुट पहनकर स्वर्ग के राज्य में प्रवेश करोगे।

१२. जहाँ तक आप, मेरे बीमार बच्चों का सवाल है, जो कुछ भी आप पर पड़े, उसे कृतज्ञतापूर्वक स्वीकार करें, और जो कुछ आपको दिया गया है, उससे संतुष्ट रहें। यदि, इसके अलावा, आप कुछ चाहते हैं, तो केवल उसका उल्लेख करें; और जो कुछ भी तब आपके लिए नियुक्त भाई आपके लिए करता है, उसके लिए प्रेम से आभारी रहें। शिकायत न करें: इतना ही काफी है कि आपका भाई ईश्वर के प्रेम से आपकी सेवा एक दास की तरह करे, और मठ की सामर्थ्य के अनुसार आप में से प्रत्येक के लिए उपयुक्त प्रदान करे। यदि, हालाँकि, आप इस तरह से आचरण नहीं करते हैं, तो आप महान यातनाओं के योग्य होंगे।

४. मृत्यु और न्याय के दिन को याद करो, और अपने व्रतों के प्रति उत्साही रहो

४. १) मृत्यु और न्याय के दिन को याद करो, और अपने व्रतों के प्रति उत्साही रहो। – २) अपनी जीभ की रक्षा करो। – ३) भाई ही मठाध्यक्ष के हाथ, आँखें और पैर हैं। – ४) यहाँ तक कि हमारी शारीरिक मेहनत भी आध्यात्मिक है; एक-दूसरे को प्रोत्साहित करते हुए मेहनत करो.... मसीह आपके साथ हो। – 5) रसोइए के लिए एक पाठ और प्रोत्साहन। [1, 5]

13. हम स्वर्ग की ऊँचाइयों और पृथ्वी की गहराइयों, और अपनी ही प्रकृति पर मनन करें, कि हम, मनुष्य होने के नाते, यहाँ से परे, इस दुनिया की सीमाओं से परे, परलोक के क्षेत्रों में ले जाए जाकर मर जाते हैं। बिना किसी दिखावे के, हम तब धर्मी न्यायाधीश के सामने अपने कर्मों का हिसाब देने के लिए खड़े होंगे; जिसके बाद हमें या तो स्वर्ग के राज्य में स्वीकार किया जाएगा, यदि हमने अच्छा काम किया है, या अविनाशी आग में, यदि हम पाप में बने रहे हैं। इसलिए, आइए हम उस ईश्वर-प्रसन्न जीवन के उत्साह को लगातार पुनःप्रज्वलित करें, जिसके साथ हम इस मठ में प्रवेश किए थे, उस समय कहे गए अपने शब्दों और किए गए अपने संकल्पों को याद करते हुए, और उन पर हमेशा सच्चे रहने के अपने कर्तव्य को ध्यान में रखते हुए: क्योंकि इन्हीं शब्दों से हमारा न्याय होगा।

14. अपने होठों को शुद्ध रखो, और हमेशा वही बोलो जो परमेश्वर को भाता है। न तो चापलूसी स्वीकार करो और न ही अन्यायपूर्ण निंदा। और *'तुम्हारे मुँह से कोई भ्रष्ट करने वाली बात न निकले'* (इफिसियों 4:29)।

15. तुम में से जो परिश्रमी हैं, वे मेरे हाथ हैं। तो, मेरे हाथों, परिश्रम करो, और जो सही है उसे करने के लिए आगे बढ़ते हुए थके नहीं: क्योंकि *'प्रभु की शक्ति तुम्हें सहारा देगी'* (भजन संहिता 88:22)। तुम मेरी आँखें हो, जो दूसरों की देखभाल के लिए रखी गई हैं। इसलिए सावधानी से निगरानी करो, गिरने के खतरे में पड़े लोगों को पहले से देखो और चेतावनी दो, ताकि तुम स्वयं दिव्य अनुग्रह के योग्य बन सको। मेरे पैर भी हैं। मेरे पैरों, ईश्वर की आज्ञाओं के सही मार्ग पर दृढ़ता से खड़े रहो। ये वे हैं जो बहादुरी और प्रसन्नता से अपने भाइयों के बोझ उठाते हैं; इसके लिए, यदि वे इस अच्छे स्वभाव में बने रहते हैं, तो उन्हें अनंत विश्राम तक पहुँचाया जाएगा। इन शब्दों के साथ मैं गिरे गए लोगों को उठाना चाहता हूँ, सुस्ती में पड़े लोगों में उत्साह जगाना चाहता हूँ, और निराशा में डूबे लोगों को साहस देना चाहता हूँ।

१६. आनंदित हो, सांत्वना प्राप्त करो, और उत्साह से प्रेरित हो। किसी भी चीज़ से पीछे न हटो—न तो आध्यात्मिक परिश्रम से और न ही शारीरिक परिश्रम से—क्योंकि हमारा भौतिक अस्तित्व, ईश्वर को समर्पित होने के कारण, आध्यात्मिक है। इसके अलावा, जो शारीरिक मामलों में परिश्रमी है, वह आध्यात्मिक मामलों में भी परिश्रमी है। प्रार्थना में, आज्ञाकारिता में और नम्रता में एक-दूसरे को प्रोत्साहित और उत्साहित करें। एक-दूसरे को हर अच्छे काम के लिए प्रेरित करें, और हर काम में शिष्टाचार और मर्यादा से काम करें। एक-दूसरे के उदाहरण का अनुसरण करें और एक-दूसरे की मदद करें; और इस तरह आप *'मसीह के बच्चे और आंशिक रूप से वारिस'* होंगे (1 कुरिन्थियों 12:27)। मैं दृढ़ता से विश्वास करता हूँ कि मसीह आपका सिर हैं। जब आपका सिर वही हैं, तो आप किससे डरेंगे? और उनके साथ आपको क्या नहीं मिलेगा? आप स्वर्ग और पृथ्वी के शासक होंगे, और जो कुछ भी वादा किया गया है, उसका आप वारिस बनेंगे।

१७. और तुझ से भी एक बात, हे मेरे पुत्र, हे रसोइये – जो प्रतिदिन आग में संघर्ष करता है, लकड़ी काटना, भोजन पकाना, पानी लाना, सफाई करना और सब्जियाँ धोना, अपना चेहरा काला करना, अपने कपड़े मैले करना, पसीना बहाना और खुद को झुलसाना, हर तरह से प्रयास करना कि भाइयों को उनकी ज़रूरत का भोजन परोसा जा सके – तुम संतों के सम्मान में भागीदार बनोगे, और अब्राहम की गरम छाती तुम्हें विश्राम देगी। बस धैर्य से सहन करो, अपना दिन आनंद में बिताओ, और अपने काम में इतने परिश्रमी और निष्ठावान बनो कि तुम्हारी सेवा तुम्हें सपनों में भी दिखाई दे। सुबह-सुबह ही, अपनी ड्यूटी निभाने के लिए एक लौ की तरह दौड़ो, और तुम अपना काम अच्छी तरह से पूरा करके विजयी बनकर उभरोगे।

5. परस्पर भलाई में प्रतिस्पर्धा करो, पर बुराई में नहीं।

5. 1) जो कुछ भी अच्छा है, उसमें एक-दूसरे से होड़ करो, पर जो बुरा है, उसमें नहीं। – 2) हम ऐसे जीते हैं जैसे समुद्र में नाव चला रहे हों; हमारी यात्रा के सभी उतार-चढ़ावों का आध्यात्मिक महत्व हम पर निर्भर करता है। – 3) आदर्श भाई भाईचारे के लिए आशीर्वाद का स्रोत है, जबकि दुष्ट भाई हानि का। – 4) पुरस्कार असीम है; हम व्यर्थ में यात्रा नहीं करते; आनंद मनाओ। [1, 6]

18. ये आशीष के दिन हैं, कर्म का समय है, ईश्वर की कृपा का मौसम है। तो फिर, हम न तो इस मौसम को, और न ही एक भी दिन को व्यर्थ जाने दें; हमें मोक्ष के लिए एक अदम्य उत्साह और चिंता, एक सकारात्मक पारस्परिक अनुकरण, और एक-दूसरे के सद्गुणों का अनुकरण करने की एक धार्मिक उत्सुकता हो। यदि हम किसी में कोई उत्कृष्ट गुण देखते हैं—उदाहरण के लिए, कोमलता, धार्मिकता, आज्ञाकारिता, नम्रता, या कोई अन्य प्रशंसनीय गुण—तो हममें इस गुण में उनके बराबर होने की एक उत्तम इच्छा जागृत हो। इससे हमारे बीच शांति का बंधन और प्रेम की भावना उत्पन्न होगी। हम अपनी प्रतिद्वंद्विता के कारण इसके विपरीत कुछ न सीखें – और, किसी लापरवाह को देखकर हम लापरवाह न बनें; किसी लालची को देखकर हम लालची न बनें; किसी बकवास करने वाले को देखकर हम बकवास करने वाले न बनें। परन्तु जैसे कि भीतर से परमेश्वर द्वारा सिखाए गए बुद्धिमान लोग, *'सब बातों की परीक्षा करो; जो अच्छा है उसे थामे रहो'* (1 थिस्स. 5:21)।

१९. आओ हम अपने विश्वास के लंगर को थामे रहें, आशा का पाल फहराएँ, और अपनी सारी ऊर्जा से इस सांसारिक जीवन के महान सागर को पार करें: क्योंकि, इस यात्रा के दौरान, हवाएँ अनिवार्य रूप से हम पर आक्रमण करेंगी – जिससे मेरा तात्पर्य है, शरीर के विद्रोह, – कामुक इच्छाओं का उभार, हृदय की गहराइयों से उठने वाले भँवर, दुष्ट विचार, और समुद्र में नौकायन के दौरान होने वाली अन्य कई चीजों के समान: समुद्री डाकू – दुष्ट दानव, मछलियों के झुंड – अज्ञानता की अंधाधुंध, पानी के नीचे की चट्टानें – हमारी आत्मा के विरुद्ध अनपेक्षित जाल; जहाज के तले में खतरनाक बाढ़ – पापों और पापपूर्ण विचारों की छुपावट, जिससे आत्मा नष्ट हो जाती है, ठीक वैसे ही जैसे वे नाविक नष्ट हो जाते हैं जो जहाज के तले में बाढ़ पर ध्यान नहीं देते, और जहाज के साथ-साथ नींद में डूबे हुए समुद्र की गहराई में डूब जाते हैं। किन्तु हम, हे अति आदरणीय भाइयों, ऐसी सभी बातों से अपना रक्षण करेंगे और

परमेश्वर के मार्ग में चौकसी से चलेंगे; सबसे बढ़कर, हम अपने हृदय में जो कुछ भी होता है, उसे उजागर करेंगे, कहीं ऐसा न हो कि दुष्ट विचारों की बाढ़ हमारी आत्माओं पर छा जाए और *'पूर्ण गहिराई हमें ढक ले'*, एक विशेष भविष्यवाणी के वचन के अनुसार (यूहन्ना 2:6)।

20. भाईचारे के भीतर, आध्यात्मिक प्रयासों और शारीरिक श्रम दोनों में, किसी भी कार्य के लिए सदैव तैयार, वह आकाश में एक तारे की तरह चमकता है और कई लोगों का मार्गदर्शन करता है। भक्ति के मामलों में परिश्रमी, सच्चा और स्वर्ग का योग्य, गंभीर और मौन, वह पृथ्वी पर एक देवदूत है, जो करूबों के सिंहासन के सामने की भाँति परमेश्वर और सारी सृष्टि के प्रभु की सेवा करता है। जो अपने गुणों से दूसरों को लाभ पहुँचाता है और उनमें आध्यात्मिक प्रयास के लिए उत्साह जगाता है, वह एक तेजस्वी सूर्य है, जो सोने से दमकता है और पूरे समुदाय को गर्माहट देता है। लेकिन वह कौन है जो उदास, अँधेरा और रात्रि-सा है, जो अपने नीचे वालों पर छाया डालता है और उन्हें अपना-सा बना देता है? वह कौन है, यदि वह नहीं जो अहंकार, कामुकता, उपहास, आलस्य, लज्जास्पद कर्म, निंदा, अभद्रता और अशुद्धि—दुष्ट विचारों के साथ मेलजोल करके—स्वर्ग से गिरे हुए शैतान जैसा दिखता है? हमें ऐसे लोगों के प्रभाव में नहीं आना चाहिए।

21. आपकी मेहनत लंबी नहीं है, पर इनाम शाश्वत है; पीड़ा क्षणिक है, पर आनंद अनंत है; कठिनाई अस्थायी है, पर विश्राम अनंतकाल तक है। वहाँ तुम आनंदित होगे, *'जहाँ सभी आनंदित लोगों का निवास है'* (भजन संहिता 86:7), जहाँ से *'बीमारी, शोक और कराह दूर हो जाएँगी'* (यशायाह 35:10), जहाँ कोई रोना नहीं, बल्कि केवल आनंद है। तो क्या तुम व्यर्थ में परिश्रम कर रहे हो? क्या आप व्यर्थ में परिश्रम कर रहे हैं? कतई नहीं! इसके विपरीत, यह बुद्धिमानी भरा, उत्तम, अद्भुत, धन्य, प्रेरितों जैसा, शहीद-सा, पितृवत्, दैवीय, स्वर्गीय, और ईश्वर को प्रसन्न करने वाला – आप (संसार से) प्रस्थान कर गए हैं, और (हमारे पास) आए हैं, और आध्यात्मिक जन्म के द्वारा हमसे उत्पन्न हुए हैं, और बड़े होकर योद्धा बन गए हैं, और आध्यात्मिक हथियारों से स्वयं को सुसज्जित किया है, और अमालेकियों, अमोरीयों, कनानीयों और वासनाओं के अन्य कबीलों को मार गिरा रहे हैं। आपने (त्याग कर) संसार के सागर को पीछे छोड़ दिया है, स्कीमा ग्रहण करने में प्रबुद्ध करने वाले और शुद्ध करने वाले दूसरे बपतिस्मा के द्वारा यॉर्डन को पार किया है (क्योंकि यह प्रभावी पश्चाताप है), और यहाँ से आप अपनी विरासत में प्रवेश करना शुरू करते हैं, उस भूमि में जिसे हमारे विश्वासयोग्य ईश्वर ने आपको अपने वादे के द्वारा दिखाई है—एक ऐसी भूमि जो अमरत्व के दूध और शहद से परिपूर्ण है और अनंत जीवन। इस पर आनन्दित हो, हर्षित हो और प्रसन्न रहो, मानवजाति के प्रति ईश्वर के ऐसे प्रेम को निहारते हुए। हमारे नेत्रों के सामने जीवन है, हमारे मुख के सामने आनन्द है, हमारे पादों तले परमानन्द है; द्वार आधा खुला है – *'दौड़ो, ताकि तुम प्राप्त कर सको'* (1 कुरिन्थियों 9:24)। तो फिर, कौन अनिर्णायक रह सकता है? कौन आगे नहीं भागेगा और लगातार बढ़ती लगन के साथ प्रयास नहीं करेगा, हमारे सामने पड़े खजाने को प्राप्त करने में दूसरों से आगे निकलने का प्रयत्न नहीं करेगा?

६. वासना के विरुद्ध; क्योंकि इसी आग से अनंतकाल की आग प्रज्वलित होती है; और मनुष्य को उसी समय मृत्यु आ सकती है

६. १) कामवासना के विरुद्ध; क्योंकि इसी आग से अनंतकाल की आग प्रज्वलित होती है; और कोई व्यक्ति इस कृत्य में मृत्यु का शिकार हो सकता है। – २) यदि आप ठोकर खाते हैं, तो उठें, पाप से घृणा करें और भलाई से प्रेम करें। – ३) छोटे पापों से बचें, विशेष रूप से व्यर्थ की बातों से; बातचीत के विषय निर्धारित हैं। [१, ७]

२२. धैर्यवान बनो और शैतान की युक्तियों के विरुद्ध बहादुरी से डटे रहो, यह जानते हुए कि हमारा संघर्ष मांस और रक्त के विरुद्ध नहीं, बल्कि हमारे अदृश्य और कठोर उत्पीड़क, शैतान, और उसके अधीन पतित शक्तियों के विरुद्ध है। इसलिए, यदि कोई कामुक विचार किसी पर आक्रमण करता है, तो उसे परेशान या निराश न होना चाहिए; बल्कि प्रार्थना, कराह और आँसू बहाकर, उसे पीछे हटा दें और दूर भगा दें, उस (शाश्वत) अग्नि को याद करते हुए, और यह कि जो अब हमारे भीतर जल रहा है, वह उस (शाश्वत) ज्वाला का कारण है। इसलिए, दिन में चाहे कितनी भी बार ऐसा विचार आपको सताए, उसे जड़ से उखाड़ फेंकें – और हम दण्डित नहीं होंगे। यदि, इस वासना के साथ, मन में अँधेरा भी छा जाए, और तपस्या के बोझ का एहसास भी हो, तो अपने हृदय की दृष्टि को दुःख में उठाएँ, और किसी भी क्षण मृत्यु की संभावना पर मनन करके शैतान के इस जाल को काट दें। जो कोई भी परिश्रम करता है, वह शाश्वत जीवन में विश्राम के विचार से बलवान हो।

२३. हमारे प्रभु का अनुग्रह आप पर हो, और वह आपको वर्तमान कठिनाइयों को सहने के लिए दृढ़ता प्रदान करें। संघर्ष और लड़ाई में यत्न करें, और बिना ठोकर खाए यात्रा पूरी करने के लिए अपनी पूरी कोशिश करें। यदि ऐसा कुछ हो जाए—जो मैं आपके लिए नहीं चाहता—तो तुरंत उठ खड़े हो जाएँ। जो दिखाई देता है उस पर विचार करो। जैसा

कि लिखा है, *'आकाश ऊँचा है, और पृथ्वी गहरी है'* (नीतिवचन 25:3)। और पाप से दबे हुए लोगों में से उन तक कौन चढ़ेगा? इसलिए, उनसे घृणा करो, उनसे द्वेष करो, उनसे मुंह फेर लो; परन्तु जो अच्छा है उसके लिए यत्न करो और जो परमेश्वर को भाता है, वही करो।

२४. मैं तुम से विनिती करता हूँ: जब हम घोर पापों से बचते हैं, तो तथाकथित छोटे पापों—अर्थात् व्यर्थ की बातों और हल्के-फुल्केपन—से भी बचें। – सभी के प्रति कोमल और नम्र रहो; और जब केवल ऊब दूर करने के लिए बातचीत करो, तो वह सार्थक हो। आपकी बातचीत या तो आपके आगामी कार्य के बारे में हो, या धर्मग्रंथ के किसी अंश के बारे में संदेह दूर करने के बारे में, या नियम के अनुसार पठन के बारे में, या किसी संत के जीवन के बारे में, या इस शरीर से हमारे प्रस्थान, हमारे पास स्वर्गदूतों के आने, और प्रभु और परमेश्वर के सामने हमारे संपूर्ण देहधारी जीवन के हिसाब के बारे में हो; कैसे संत अकथनीय आनंद में प्रस्थान करेंगे, जबकि पापी अवर्णनीय यातना में जाएंगे; और कैसे, एक-दूसरे से पूछें, हम इस जुनून (व्यर्थ की बात) से बच सकते हैं और इसके विपरीत गुण (बुद्धिमानी भरी वाणी) को प्राप्त कर सकते हैं; एक आँसू कैसे फूटता है और बहता है, और किससे वह सूख जाता है? और कैसे, सच्ची आज्ञाकारिता, विनम्रता और होठों के मौन के माध्यम से, आत्मा की कलियाँ संचित होती हैं और वे स्वर्ग के बीच में जीवन के वृक्ष की तरह खिलती हैं; लेकिन वाचालता, हँसी, अनुचित और अनुचित समय पर डाली गई नज़रों, बड़बड़ाहट, कठोर वाणी, ज़्यादा सोने, लालच और हर उस दूसरे जुनून से ये सूख जाते हैं, जिसे हम जानबूझकर अपनाते हैं।

7. एक उच्च आह्वान: अपने व्रतों को पूरा करके धन्यवाद देना

7. 1) एक ऊँचा आह्वान; व्रतों का पालन करके धन्यवाद देना। – 2) मुख्य बात ईश्वर को प्राप्त करना है। – 3) अपने आह्वान के प्रति निष्ठा मनुष्य को स्वर्ग का नागरिक बनाती है; इस निष्ठा के कर्म। – 4) एपिफेनी के पर्व पर ईश्वर को भेंट। – 5) प्रतिज्ञा की गई आशीर्वादों की महानता के विषय में धर्मग्रंथ के वचन। [1, 8]

२५. देखो, प्रभु हमारा परमेश्वर मानवजाति के प्रति अपनी भलाई प्रकट करते हैं, मानवता के लिए प्रेम की किरणों से प्रकाशमान होकर, ताकि सभी को अपनी ओर आकर्षित कर सकें; और उन्होंने एक विशेष तरीके से हम भिक्षुओं को अंधकार से प्रकाश में लाया है। तो फिर हम उस परमेश्वर को क्या धन्यवाद चढ़ाएँ, जिसने हमें चुना और बुलाया है? – यह: कि हम भक्ति में उत्कृष्टता प्राप्त करने के उद्देश्य से जिएँ, और वासना तथा कामुक सुख के जीवन को त्याग दें। – अतः हे भाइयों, हम अपने बुलावे के प्रति सचेत रहें; हम अपनी आँखों के सामने वह रखें जिसकी भिक्षु जीवन में माँग है, और वे व्रत जिन्हें हमने स्वर्गदूतों की उपस्थिति में लिया था; और हम इस प्रकार जिएँ कि जब भी ईश्वर हमें बुलाए, हम यहाँ से—एक प्रवास के समान—पूर्ण आनंद के साथ अपने निवास में जाने के लिए तैयार रहें।

26. क्या आप इस वर्तमान जीवन की तुच्छता को देखते हैं? क्या आप देखते हैं कि मानव जीवन कितना क्षणभंगुर और अल्पकालिक है? – केवल एक ही अच्छा भाग, एक ही धन्य जीवन और एक अतृप्त अनुग्रह है – ईश्वर की आज्ञाओं का पालन करके ईश्वर को प्राप्त करना। लेकिन इसके लिए परिश्रम और तीव्र आत्म-अनुशासन की आवश्यकता है।

27. आप यरूशलेम के नागरिक, स्वर्ग के निवासी, और पवित्र स्वर्गदूतों के गायन-मंडल के सहभागी हैं, बशर्ते कि आप अपनी बुलाहट में दृढ़ रहें, इसके प्रति विफादार रहें, इसे पूरे हृदय से प्रेम करें, इसके कार्यों के लिए स्वयं को प्रेरित करें, इसके विपरीत हर चीज़ से परहेज़ करें, और हर तरह से स्वयं को अनुशासित करें। तब प्रभु के भय में आनन्द मनाओ, और हर अशुद्ध प्रवृत्ति से स्वयं को शुद्ध करो; प्रकाश के बच्चों के रूप में दीप्तिमान बनो और चमक उठो; अपने बड़ों के प्रति सम्मान, आज्ञाकारिता और नम्रता दिखाओ; एक-दूसरे के प्रति तुम्हारा प्रेम तुम में भरपूर हो; और अपनी इच्छा और आत्म-तुष्टि की खोज तुम्हें घृणित लगे।

28. देखो, प्रकटोत्सव का दिन आ गया है! स्वर्ग से प्रभु आ रहे हैं: आइए हम उन्हें पवित्रता में मिलें। आइए हम पवित्र मनोभाव तैयार करें और, सर्व-पवित्र को सारी सृष्टि की ओर से एक उपहार के रूप में, एक नवीनीकृत जीवन, ईश्वरीय चिंतन और ईश्वर के प्रति प्रेम से जलता हुआ हृदय अर्पित करें; हम यह भी अर्पित करें—कुछ मौन के प्रति प्रेम, कुछ अटूट सतर्कता, कुछ बारंबार प्रार्थना, आत्म-संयम, नम्रता और धैर्य—ये सभी चीजें, ताकि आपको किसी भी चीज़ की कमी न हो।

29. अपने संतों के माध्यम से, ईश्वर उस महिमा का प्रकटीकरण करते हैं जो भविष्य में हमारी प्रतीक्षा कर रही है। संत पौलुस उद्घोष करते हैं: *'हम उस महिमा में सहभागी होने के अयोग्य हैं जो हमारे लिए प्रकट की जानी है'* (रोमियों 8:18); संत दाऊद गाते हैं: *'आपके प्रांगणों में एक दिन अन्यत्र हजार दिनों से बेहतर है'* (भजन संहिता 83:11), – और: *'जब मैं तेरी महिमा देखूंगा तब मैं तृप्त हो जाऊंगा'* (भजन संहिता 16:15); और अन्य भविष्यद्वक्ताओं में से,

एक चल्लिाता है कि वहां से *'बीमारी, शोक और आह दूर हो जाएंगी'* (यशायाह 35:10)। और खोजी को धर्मग्रंथ में ऐसी और कितनी गवाहियाँ मिल सकती हैं, जो हमें उस अथाह आनंद, असीम हर्ष और अकथनीय आशीर्वाद को दिखाती हैं, जो परमेश्वर ने उन लोगों से वादा किया है जो उसे प्रसन्न करते हैं। इसलिए आइए हम इस बात में दृढ़ रहें, बल पाएँ, सुदृढ़ हों और हमारे परमेश्वर मसीह में सिद्ध हों।

8. थके नहीं: परिश्रम थोड़ा है; प्रतिफल अतुलनीय है।

8. 1) थके नहीं: परिश्रम छोटा है; पुरस्कार अतुलनीय है। – 2) शरीर की लालसा में न पड़ें, यह कल्पना करते हुए कि आप पहले से ही मृत्यु के मार्ग पर चल रहे हैं। – 3) हर बलिदान आज्ञा के लिए चढ़ाएँ... किसी से न डरें। [1, 9]

30. परमेश्वर की सेवा में न रुकें और न ही आलस्य के आगे झुकें, और वर्तमान कठिनाइयों के बावजूद, आने वाले युग में प्रतीक्षा कर रही आनंद से खुद को वंचित न करें। परन्तु हर बात – चाहे वचन हों या कर्म – को आनन्दपूर्वक सहो, और अपना जीवन इस प्रकार व्यवस्थित करो कि तुम परमेश्वर के प्रेम में एक दूसरे को स्वीकार कर सको, और संकट के समय एक दूसरे की सहायता कर सको। भले ही आप तपस्या में एक पूरी शताब्दी बिता दें, वह शाश्वत अमरत्व की असीम पूर्णता के एक घंटे के बराबर नहीं हो सकती। इसके अलावा, थोड़ा दुख सहना, जैसे किसी सपने में, और बदले में अनंत आनंदमय जीवन प्राप्त करना, दोनों ही परमानंदमय और, मानवीय शब्दों में कहें तो, अत्यधिक लाभदायक है।

31. हम शरीर को संतुष्ट न करें, जिसे संतों ने एक शत्रु माना और संयम के द्वारा हर तरह से वश में किया, क्योंकि इसे संतुष्ट करना आध्यात्मिक जीवन के विपरीत है। बहुत जल्द, हम इस जीवन से विदा हो जाएँगे। हम अपने भाइयों में इसका उदाहरण देखते हैं, जिन्हें एक के बाद एक सुलाया जाता है। – और क्या हम, शायद, यहाँ रहेंगे? निश्चित रूप से नहीं। – परन्तु हे भाइयो! हे, यह मृत्यु का विषय कितना भयानक है! क्यों हमें, मानो स्वर्ग से प्रेरित होकर, निरन्तर चिन्तन की अवस्था में रहना चाहिए, यह सोचते हुए कि हम, मानो, पहले से ही मर रहे हैं – कि किसी भी क्षण आत्मा का शरीर से वियोग हो जाएगा, स्वर्गदूत आएँगे (मैं यह नहीं कहूँगा: राक्षस भी धावा बोलेंगे; क्योंकि यह उन लोगों के साथ होता है जो अपनी वासनाओं के दास हैं), और पुकार सुनाई देगी: 'समय आ गया है, हे आत्मा, बाहर आ!' तब इस मिलन के टूटने पर कितनी कठिनाई और कितनी पीड़ा होगी! – तब अच्छे कर्म और एक निर्मल अंतरात्मा, विदा होने वालों के लिए एक बड़ी सहायता, एक सांत्वना और एक मध्यस्थता होगी। तब आज्ञाकारिता साहस को प्रेरित करेगी, विनम्रता अनुग्रह प्राप्त करेगी, एक आँसू दया को प्रेरित करेगा, अच्छे कर्मों की प्रचुरता राक्षसों पर हावी हो जाएगी, धैर्य हर कर्म के लिए मध्यस्थता करेगा - और दुश्मन खाली हाथ लौट जाएँगे, जबकि आत्मा, स्वर्गदूतों के साथ, महान आनंद के साथ उद्धारकर्ता के पास जाएगी। तब भय का कारण है, यदि आत्मा, वासना की आदत में डूबी हुई, पाप की पकड़ में पाई जाए: क्योंकि तब राक्षस हावी हो जाएँगे, और उस बेचारी आत्मा को अपने साथ नरक की खाई में, अंधकार और यातना देने वाले टारटारस में फेंक देंगे। तो, उस आत्मा को (वासनाओं में लिप्त होने से) यही लाभ होता है!

३२. अतः जब हम यहाँ हैं, तब ही अपने आपको शुद्ध कर लें। आओ हम अपने संघर्षों में अपना रक्त बहाएँ, और ऐसा कुछ भी न हो जो हमें परमेश्वर की आज्ञा से विमुख कर दे: न परिश्रम, न बीमारी, न सुख, न विश्राम, न ही किसी प्रकार की संतुष्टि। भले ही हम हर दिन मरें, हम इसे आनंद के साथ सहन करेंगे, सांसारिक बुद्धि से ऊपर रहने का प्रयास करते हुए। हम ईश्वर, जो भयानक न्यायाधीश हैं, के सिवा किसी से नहीं डरेंगे: न मनुष्य से, न राक्षस से, न पशु से, न आग से, न तलवार से, न समुद्र से, और न ही किसी अन्य भयानक चीज़ से; क्योंकि ईश्वर की प्रतिमा में रचा गया मनुष्य, पृथ्वी के प्राणियों का स्वामी और प्रभु है।

९. आत्मा के खेत को साफ करना, बोना और पानी देना, ताकि वह आध्यात्मिक फल दे सके

९. १) आत्मा के खेत को साफ करना, बोना और पानी देना, ताकि वह आध्यात्मिक फल दे सके। – २) भोजन और नींद में संयम, और उनके फल। – ३) मामूली कपड़े और जूते सहना। – ४) भविष्य के लिए स्वेच्छा से कष्ट सहना। [१, १०]

33. पवित्र आत्मा की ईश्वर-प्रदत्त धाराओं से वर्षा द्वारा सींची गई अच्छी मिट्टी की तरह फल लाओ और जीवन से परिपूर्ण अनाज की बालियों की तरह सद्गुणों को उत्पन्न करो। जैसे तुम अपने खेतों को नया करते हो, वैसे ही ईश्वर के भय की आग और सत्य की तलवार से अपने आत्मा की मिट्टी को मन की कांटों से शुद्ध करो। तो, प्रेरित की आज्ञा के अनुसार बोओ, न कि शरीर में, कहीं ऐसा न हो कि तुम शरीर से नाश की कटनी करो; परन्तु आत्मा में

बोओ, ताकि तुम आत्मा से आत्मिक फल काट सको [गलातियों 6:8] – धैर्य, स्थिरता, उदारता, नम्रता और एक दूसरे से परस्पर प्रेम सीखते हुए, और ईर्ष्या, छल, बहकावे, बदनामी और निन्दा से घृणा करते हुए।

34. संयम का भी अभ्यास करें। संयम का अर्थ है शरीर को उसकी आवश्यकता के अनुसार भोजन देना, न तो उस पर अत्यधिक भार डालना और न ही उसे बहुत अधिक वंचित करना, ठीक वैसे ही जैसे कोई जहाज पर माल लादता है; क्योंकि जब वह बहुत भारी हो जाता है, तो वह डूब सकता है, और जब वह बहुत हल्का होता है, तो उसके पलटने का खतरा होता है। यही बात नींद पर भी लागू होती है: इसे उतना ही लेना चाहिए जितना लाभदायक हो। संतुलित आहार के बाद आरामदायक नींद आती है, और उसके बाद भजन-गायन के दौरान जागरूकता, पाठों को ध्यानपूर्वक सुनना, और दिव्य भजनों के प्रत्येक शब्द की स्पष्ट समझ आती है। जब आत्मा इस प्रकार इन सभी से प्रसन्न होती है, तो वह एक अच्छे मानसिक भाव में आ जाती है, ऊष्मा और प्रकाश से परिपूर्ण होकर, सभी चीजों में संयम के फलों का स्वाद लेती है। लेकिन अति-आनंद से भारी सपने आते हैं; इन दोनों से मन में धुंध छा जाती है, भजनों के शब्दों को समझने में असमर्थता होती है, होंठ सख्त हो जाते हैं, और आँखें, आत्मा और शरीर में अँधेरा छा जाता है: क्योंकि आंतरिक अवस्था बाहरी अवस्था के अनुरूप होती है। तब आत्मा का चोर, धावा बोलकर, जो कुछ भी चाहता है, चुरा लेता है। इसीलिए प्रभु ने कहा: *'जागरत रहो'* (मत्ती 26:41)।

३५. ईश्वर को हृदय से निकला हुआ वचन, नम्र उत्तर, एक प्रसन्न—न कि चिंतित—चेहरा, एक सौम्य स्वभाव, और विनम्र बातचीत प्रिय है। – जो कोई दूसरों की तुलना में अधिक धैर्यपूर्वक कष्ट सहता है, जो कोई आवश्यक कपड़े, जूते या सिर ढकने का अभाव होने पर भी धन्यवाद देता है – वह व्यक्ति परमेश्वर का सच्चा सेवक है, जो अस्थायी और तुच्छ चीजों को भविष्य की महान आशीर्वादों के लिए बदल देता है। मैं सभी की ज़रूरतों को पूरा करने का ध्यान रखता हूँ; मैं यह इसलिए कह रहा हूँ ताकि, यदि कोई ज़रूरी चीज़ की कमी हो, तो कोई भी दुखी, चिढ़ा या बड़बड़ा न करे। ऐसे भी हैं जो ईश्वर के प्रति प्रेम से जलते हुए, स्वेच्छा से अन्य चीजों से वंचित रहते हैं। लेकिन निश्चित रूप से, जो कोई भी कृतज्ञतापूर्वक जो कुछ भी दिया जाता है, उसे स्वीकार करता है, चाहे वह कभी भी और जो भी हो, वह अच्छा करता है।

36. स्वर्ग का राज्य हमारे सामने है, और जो परमेश्वर को प्रसन्न करते हैं, उनके लिए अनंत आनंद का पुरस्कार प्रतीक्षा कर रहा है। तो फिर, कौन इसके लिए आगे नहीं बढ़ेगा? कौन ऐसे दिए गए खजानों को पाने के लिए जल्दी नहीं करेगा? कौन ऐसे आशीर्वादों के लिए स्वेच्छा से कठिनाइयों को सहने, नग्न रहने, ठंड और पाले को झेलने, और तपस्या के कार्यों द्वारा स्वयं को दंडित करने का संकल्प नहीं करेगा? – फिर भी आप ऐसे श्रम और पराक्रमों से अछूते नहीं हैं; क्योंकि अपनी इच्छाओं को काटकर, सभी चीजों का त्याग करके, हर तरह के धीरज से, आप प्रतिदिन मरते हैं, जबकि आपका जीवन हमारे प्रभु मसीह यीशु में छिपा रहता है। जब हमारा जीवन, प्रभु मसीह, प्रकट होगा, तब तुम भी उसके साथ सदा के लिए आनन्दित होना आरम्भ करोगे (कुलुस्सियों 3:4)। इसलिए, यहाँ विश्राम की खोज मत करो, बल्कि अपनी वर्तमान पीड़ा को आने वाले उस अनंत विश्राम की गारंटी के रूप में मानो।

10. प्रभु आ रहे हैं—धैर्य धारण करो; और तुम्हारा सहारा क्या होगा?

10. 1) प्रभु आ रहे हैं – धैर्य रखो; – और जीविकोपार्जन खोजो। – 2) देखो – यही तुम्हारा अंत है, – और स्वर्ग: वहाँ हम अपनी सारी कठिनाइयों को भूल जाएँगे। – 3) वहाँ, प्रभु के महलों में, दुष्टों के लिए आनंद है: जो उन्हें स्वेच्छा से नहीं चुनेगा? – 4) खुशी मनाओ कि तुम कठिनाई और गरीबी में रहते हो: यही तो संन्यासी जीवन है। – 5) हर बात में एक दूसरे की मदद करो – और प्रभु निकट हैं। [1:11]

1. परमेश्वर के मार्ग पर चलो, प्रभु को प्रतिदिन अपने साथ रखते हुए, जैसा कि उन्होंने वादा किया है। क्योंकि उन्होंने स्वयं, अपने प्रेरितों के माध्यम से, उन सभी से कहा *जो 'उनके नियम और उनकी गवाही की खोज करते हैं'* (भजन संहिता 24:10) कि वह उनके साथ *'युग के अंत तक'* (मत्ती 28:20) रहेंगे।. उसके मार्ग और रास्ते अगम्य हैं। वह मन की आँखों के लिए अदृश्य रूप से उपस्थित है और शुद्ध हृदय वालों से मौन रूप से संवाद करता है। अपने धार्मिक मार्ग पर बने रहो, और ईर्ष्यालु शैतान के जालों से बचो। परमेश्वर के प्रेम के पंखों को अपना लो, ताकि तुम बादलों के बराबर, सभी सांसारिक जालों से ऊपर उड़ सको। अपने पैरों को आनंद और पवित्रता के तेल से अभिषेक करो, और प्रभु के दुखद मार्ग पर चलने से न डरना। यदि तुम हतोत्साह से प्यासे हो, तो धैर्य का जल पियो; यदि तुम आध्यात्मिक थकान से भूखे हो, तो उस रोटी का सेवन करो जो मानव हृदय को पोषण और बल देती है—ज्ञान का वचन, जो उत्तम शक्ति और साहस प्रदान करता है। आप अच्छी तरह से तैयार और सतर्क हैं; फिर भी, दुख को देखकर, अपने ऊपर ऐसे बोझ न लादें जिन्हें सहना कठिन हो: मेरा मतलब है दुश्मन की बुरी साजिशें। पृथ्वी से स्वर्ग

तक जाने वाले मार्ग पर चलने वाले के लिए इतना ही काफी है कि वह बिना हतोत्साहित हुए, बिना अपने ऊपर कोई बोझ डाले इस मार्ग पर चले।

२. आपने संसार को पीछे छोड़कर अच्छा निर्णय लिया और बुद्धिमानी से काम किया है; अब आप भक्तिपूर्वक परमेश्वर के घर का मार्ग तय कर रहे हैं, प्रभु के लिए परिश्रम कर रहे हैं और दिन-प्रतिदिन उनकी सेवा कर रहे हैं, और सभी अस्थायी चीजों—परिवार, मातृभूमि और शरीर की हर इच्छा—से मुंह मोड़ रहे हैं। हमारा कार्य स्वर्गदूतों का कार्य है। हम थोड़ा और सहेंगे, थोड़ा और कष्ट झेलेंगे। हमारे जीवन का अंत और सीमा पहले से ही निकट आ रही है; हमें पवित्र स्वर्गदूत उठा लेंगे, और हम सभी संतों के साथ वादे किए गए आशीर्वादों के वारिस बनकर, हमेशा के लिए आनंदित होना शुरू कर देंगे। और तब हमें किसी भी बात का कोई पछतावा नहीं होगा - न इस बात का कि हमने विजय प्राप्त की, न इस बात का कि हम अपने तपस्वी श्रम से थक गए, न इस बात का कि हमने उपवास किया, या खुद को नींद से वंचित रखा, या ठंड और पाले को सहन किया, या किसी अन्य तरीके से अपनी इच्छाओं की पूर्ति से खुद को वंचित रखा। इसके विपरीत, हम उस दिन और घड़ी का धन्यवाद और स्तुति करेंगे जब ईश्वर ने हमें संसार से भागने और संन्यास की वेशभूषा धारण करने की अनुमति दी। वहाँ, हम में से प्रत्येक को यहाँ सहन की गई हर पीड़ा का सौ गुना प्रतिफल मिलेगा, और दुख के बदले हमें वहाँ सर्वव्यापी और शाश्वत आनंद मिलेगा। हम में से कोई भी उस पर धैर्य न करे जो हम पर आता है; क्योंकि इसके बदले में हमें अनुत्तरणीय और शाश्वत आनंद प्राप्त होगा। काश हम में से कोई भी यह सुनने को कभी न पाए: *'याद करो कि तुमने अपने गर्भ में अपने भले कामों का फल पाया था'*; न ही: *'हमारे और तुम्हारे बीच एक बड़ा खाई बना दिया गया है'* (लूका 18:26)। यह एक भयानक आवाज है, जो पापी को धर्मी से अलग करती है; इसके बारे में सोचना भी भयानक है। इसे सुनना तो और भी भयानक होगा!

3. जैसे आकाश पृथ्वी से बहुत दूर है, वैसे ही पाप में जीने वाले हमारे प्रभु परमेश्वर से बहुत दूर होंगे। परन्तु उसके मित्र और उसके सच्चे सेवक उसके पास, उसकी स्वर्गीय राज्य में, स्वर्गीय यरूशलेम, उस महान नगर में प्रवेश करेंगे, जहाँ अगम्य खजाने, असीम महिमा और अनन्त आनंद है। वहाँ हम एक-दूसरे को देखेंगे और एक-दूसरे को पहचान लेंगे; और मुझे विश्वास है कि यदि हम हमेशा परमेश्वर की इच्छा करते हैं, तो हम वहाँ अनंत आनंद में एक साथ रहेंगे। यदि ऐसा है, तो क्या हम परिश्रम नहीं करेंगे, क्या हम स्वेच्छा से दुख नहीं सहेंगे? क्या हम उपहास और तिरस्कार को आनंदपूर्वक इस प्रकार नहीं पी जाएँगे, मानो वह दूध हो? क्या हम अंतिम स्थान और पदवी पर रहने, या यहाँ तक कि सभी से अधिक रौंदे जाने की इच्छा नहीं करेंगे? क्या हम मसीह के नम्र मेमनों की तरह, अपनी स्वेच्छा से प्रतिदिन मरना नहीं चुनेंगे? हाँ, मेरे भाइयो! हाँ, मेरे पितृजनो! संतों ने इसी प्रकार के भाव से परमेश्वर को प्रसन्न किया था।

४. हम यहाँ पूर्ण संतोष का जीवन न खोजें, जो हर कष्ट और कठिनाई से मुक्त हो। बल्कि, जब हम कष्ट सहते हैं तो हमें आनन्दित होना चाहिए और जब हम कठिन परिस्थितियों में होते हैं तो प्रसन्न होना चाहिए, जब हमारे साथ अन्याय होता है, हमें दबाया जाता है, या जीवन की आवश्यकताओं में कमी सहते हैं—हमारे रहने की जगह में, भोजन और पेय में, जूते और कपड़ों में, या किसी अन्य आवश्यकता में। यह हमारी गवाही है, और इसी के लिए संन्यासी धन्य है, जो निरंतर संघर्ष और तपस्या के प्रयास में लगा रहता है। यदि, हालाँकि, आप ऐसे नहीं हैं, तो यह स्पष्ट है कि आप संन्यासी पथ पर नहीं खड़े हैं, भले ही आप झूठे, दिखावटी और पाखंडी ढंग से स्वयं को उस नाम से पुकारते हों। हालाँकि, मैं तुम्हारे बारे में जानता हूँ कि तुम सच्चे मन से मठ के नियमों को मानते हो, कुशलता से उसके मार्ग पर चलते हो, और एक दैवीय जीवन जीते हो, तुम्हें सहारा देने के लिए ईश्वर का दयालु हाथ, तुम्हें मजबूत करने के लिए पवित्र आत्मा का सांत्वना, और तुम्हारी सहायता के लिए पवित्र स्वर्गदूत और सभी ईश्वर-धन्य शहीदों और पूजनीयों का साथ है।

5. *'परमेश्वर के पर्वत पर और उसके पवित्र भवन में चढ़ो,'* भविष्यवक्ताओं में सबसे वाक्पटु यशायाह के शब्दों में (भजन संहिता 2:3)। कोई भी पीछे न रहे, कोई भी निष्क्रिय न बैठे; एक-दूसरे की मदद करो, एक-दूसरे के प्रति दृढ़ प्रेम में बने रहो; एक-दूसरे को प्रोत्साहित करो; एक-दूसरे से प्रतिस्पर्धा करो; एक-दूसरे का अनुकरण करो। – आपके बीच न तो अश्लील हँसी हो, न ही ध्यान भटकाने वाली और कमजोर करने वाली बातें, न ही लंबी, व्यर्थ की बातचीत; और आपके बीच कलह और अवज्ञा का उल्लेख भी न हो। यह वांछनीय है कि आप गरिमा और ईमानदारी से बात करें, एक-दूसरे के प्रति स्नेहपूर्ण स्वभाव दिखाएँ, और एक-दूसरे से कोमलता और स्नेहपूर्वक बात करें। *'सब बातों की परीक्षा करो; जो अच्छा है उसी को थामे रहो; हर प्रकार के बुराई से दूर रहो'* (1 थिस्स. 5:21–22)। परमेश्वर शान्ति का प्रभु तुम्हारे प्राणों को सामर्थ्य और धैर्य दे, और वह स्वयं तुम्हारा रखवाला हो, *और 'तुम्हें शांत जल के पास ले जाए'* (भजन संहिता 22:2), आपको धार्मिकता के मार्ग पर वापस लाते हुए, आपको दुष्ट सांप की युक्तियों से

बचाते हुए, आपको उत्साहति करते हुए, आपको आनंदति करते हुए, आपको सांत्वना देते हुए, और आपको उसके स्वर्गीय राज्य के योग्य बनाते हुए।

11. शत्रु वासनाएँ भड़काता है; परन्तु उसका वरिोध करो और तुम उस पर जय पाओगे; प्रभु तुम्हारा सहायक है।

11. 1) शत्रु वासनाएँ भड़काता है; परन्तु उसका वरिोध करो और तुम जय पाओगे; प्रभु तुम्हारा सहायक है। – 2) अपने परिश्रम, चाहे अपने काम में हो या आराधना में, निर्दोषता से करो; उन्हें व्यर्थ मत गँवाओ। – 3) आओ हम परिश्रम करें और स्वयं को तैयार करें, ताकि मृत्यु के समय और उसके बाद हमें भयानकताएँ न झेलनी पड़ें; – परन्तु केवल आनन्द ही देखें। [1, 12]

6. आओ, हम सभी मलिकर ईश्वर की सेवा करने और उन्हें बार-बार प्रसन्न करने के लिए तत्परता और उत्साह को अपनाएँ। और कोई भी चीज़ हमारे रास्ते में बाधा न बने या हमें इससे पीछे न हटाए; परन्तु आओ हम संसार का और भी अधिक पूर्ण रूप से त्याग करें, देह पर जय प्राप्त करें, कुटुम्ब से अलग हो जाएँ, सुखों को तुच्छ समझें, परिश्रम को चुनें, और अन्य सभी सद्गुणों के कार्य करें, ताकि, अपने धर्मपथ में निष्कलंक सिद्ध होकर, हम स्वर्ग के राज्य के वारिस बनें। भयानक साँप, सर्व-दुष्ट शैतान, हमारे विनाश की कामना करते हुए, अथक रूप से घूमता रहता है; वह चुपके से अंदर आता है, हमारे हृदयों में प्रवेश करता है और हम में से प्रत्येक में बुराई के बीज बोता है: कुछ में, पाप की मिठास, ताकि इस सुख और क्षणिक आनंद के लिए वह उन्हें शाश्वत आशीर्वादों का स्वाद चखने से वंचित कर सके और उन्हें बुझने वाली आग में डाल सके; कुछ में, भाई की अच्छी प्रतिष्ठा के कारण हत्या जितनी घातक ईर्ष्या की भावना पैदा करता है, जो (ईर्ष्या के कारण) उसके मन पर छा जाती है और, रात के अंधकार में चलने वाले व्यक्ति की तरह, उसे परमेश्वर की महिमा देखने से रोकती है, ताकि उसमें एक नया, विनाशकारी काईन प्रकट हो सके; जो उसे अतिभिक्षण की ओर लुभाता है, ताकि, उसे सांसारिक सुखों से जीतकर, वह उसे ईश्वर से दूर कर सके; जिस पर वह निराशा डालता है; जिसमें वह उसके ध्येय, या उसके साथी संतों, या मठ के प्रति अरुचि पैदा करता है; जिसे वह भजन-गायन, अध्ययन और एकांत को बोझिल बना देता है – जबकि दूसरे के विरुद्ध वह भावुक विचारों और आवेगों का एक अकल्पनीय तूफान खड़ा कर देता है, ताकि उसे सही रास्ते से भटकाकर नष्ट कर सके। परन्तु *'साहसी हो, और हियाव बान्ध'* (भजन संहिता 30:25): क्योंकि हम प्रभु पर अपनी आशा रखते हैं, जिन्होंने मृत्यु की शक्ति को चूर कर दिया है, और *'हम को साँपों और बिच्छुओं पर और शत्रु की सारी शक्ति पर पैर रखने का अधिकार दिया है'* (लूका 10:19)। हमें इसका एक उदाहरण संत एंथनी महान में मलिता है, जिन्होंने शत्रु की शक्ति को इतना कुचला और नष्ट कर दिया कि वह उनके पवित्र होने की परछाईं भी सहन नहीं कर सका। वास्तव में, सभी ईश्वर-धारी पितिरों ने उस पर विजय प्राप्त की, और इस वर्तमान युग में जो भी पूरे हृदय से ईश्वर के लिए परिश्रम करते हैं, वे उस पर विजय प्राप्त करते हैं।

7. मैं देखता हूँ कि तुम परिश्रम करते हो, और अपने परिश्रम को परमेश्वर के लिए बलिदान के रूप में अर्पित करते हो। परन्तु तुम्हारा परिश्रम हर तरह से निर्दोष और पुरस्कार के योग्य हो। – यह कैसे? – चुपचाप और मौन में काम करो; तुम्हारे होंठों से कोई अनुचित बात न निकले; घमंड से दूर रहो; अहंकार से घृणा करो; स्वयं को नम्रता का वस्त्र पहनाओ; आज्ञाकारिता के प्रत्येक कार्य में स्वयं को अनुशासित करो। सावधान रहो कि किसी भी पाप के द्वारा अपने ऊपर मृत्यु न लाओ, और कामवासना के समय एक-दूसरे के पास न आओ; एक साथ अकेले रहने की हिम्मत न करो, क्योंकि वहाँ पाप की आग है; अपने किसी भी अंग को, चाहे वह कोई भी हो, स्पर्श न करो, विशेष रूप से एक को तो बिलकुल नहीं, क्योंकि उसमें क्रोध, आग और मृत्यु निहित है। पढ़ी जाने वाली बात पर ध्यान दो; भजनों को जोश के साथ गाओ; परमेश्वर के सामने खड़े होकर झपकी न लो, और तुम उससे एक उपहार प्राप्त करोगे, क्योंकि वह हमेशा उन लोगों पर उपकार करता है जो चौकस रहते हैं। यह एक दयनीय दृश्य है जब, राजा की उपस्थिति में, कुछ तो उपहार प्राप्त करके चले जाते हैं, जबकि अन्य खाली हाथ लौटा दिए जाते हैं। यद्यपि दोनों समूह एक ही श्रम में लगे हुए थे, कुछ ने आलस्य और सुस्ती से काम किया, जबकि अन्य ने पूरी लगन और उत्साह से काम किया; इस प्रकार उनकी नियति इतनी भिन्न हो गई।

८. जल्दी करो, यत्न करो, दौड़ो, अपने लक्ष्य को प्राप्त करो, कहीं ऐसा न हो कि द्वार हमारे लिए बंद हो जाए, कहीं हमारे जीवन का समय कम हो जाए, कहीं हम बिना तैयारी के कब्र में उतर जाएँ, कहीं हम पापियों के रूप में शरीर के साथ अपने मिलन से अलग हो जाएँ, कहीं आत्मा के प्रस्थान के समय, हम पवित्र स्वर्गदूतों को बिना साहस के न देखें, कहीं ऐसा न हो कि वह इथियोपियाई, जो आकाश जितना लंबा था, और जिसे महान एंथनी को दिखाया गया था, वह हमारे पापों के लिए हमें पकड़ ले; कहीं हम अराजकता, पाताल लोक, टार्टरस, अविराम दहाड़ती आग, या यातना के

अन्य स्थानों में निगिल लिए जाएँ, जहाँ रोना और दाँत पीसना है। परन्तु हमें वहाँ एक शान्तिपूर्ण और धन्य दीर्घ जीवन मिले; हम अपने प्रभु और परमेश्वर मसीह के समीप आएं, और उस अमापनीय सौन्दर्य, उस अथाह महिमा को निहारें, जो उनके मुखमंडल की है, जो पवित्र स्वर्गदूतों और सभी संतों के साथ वृत्त में नृत्य कर रही है, वहाँ आनन्द मनाते हुए, जहाँ से *'बीमारी, शोक और कराहट दूर हो जाएँगी'* (यशायाह 35:10)।

12. आइए हम यहाँ से प्रस्थान करें... अर्थात्, वासनाओं के क्षेत्र से, पेट, आँखों, जीभ, कानों, हाथों और पैरों के संयम के द्वारा।

12. 1) आइए हम यहाँ से चलें... अर्थात्, वासनाओं के क्षेत्र से, पेट, आँखों, जीभ, कानों, हाथों और पैरों के संयम के द्वारा। – 2) व्यवस्थापक, अधीक्षक, कोषाध्यक्ष, बागवानी करने वाले और माली, अस्तबल के मुखिया और चक्कीवाले के लिए निर्देश। [1, 13]

9. मैं तुम से यह घोषित करता हूँ, जैसे प्रभु ने एक बार अपने शिष्यों से कहा था: *'उठो, यहाँ से चलें'* (यूहन्ना 14:31)। मैं यह उस अर्थ में नहीं कह रहा हूँ कि हम स्वयं को शरीर से अलग कर लें, इससे पहले कि परमेश्वर—जिन्होंने हमारी सदाचार की परीक्षा के लिए हमें इससे बाँधा है—हमें बुलाएँ, बल्कि इसलिए कह रहा हूँ कि, शरीर में रहते हुए भी, हम उस पर चिंतन कर सकें जो शरीर से परे है और, जैसा कि दिव्य पौलुस ने अपने बारे में लिखा (गलातियों 6:14), – संसार के लिए स्वयं को सूली पर चढ़ाने के लिए; क्योंकि, जैसा कि उन्होंने स्वयं घोषणा की , *'जो मसीह के हैं, उन्होंने शरीर को उसकी कामनाओं और इच्छाओं सहित सूली पर चढ़ा दिया है'* (गलातियों 5:24)। अत; जो कुछ भी बोझिल और दुखद है, उसे धैर्यपूर्वक सहन करो, और हर बात में संयम रखो। क्योंकि यदि हमारे पूर्वज इस संबंध में दिव्य आज्ञा के प्रति आज्ञाकारी होते, तो वे अनुशासनहीनता के कारण जीवन के बजाय मृत्यु का स्वाद नहीं चखते। अतःउपवास करो, और यदि संभव हो तो पाप के कड़वे वृक्ष का स्वाद विचार में भी मत लो; बल्कि अपने कर्मों द्वारा हर तरह से इससे अपना बचाव करो। लालची आँखों से वासनापूर्ण दृष्टि न डालें, और न ही खुद को प्रलोभन के जाल में फँसने दें। मूर्खतापूर्ण बातों और व्यर्थ की बकवास से अपने कान बंद रखें। अपने होठों को केवल वही बोलने के लिए प्रशिक्षित करें जो परमेश्वर को भाता है, और व्यर्थ की बातों में न पड़ें। आपके हाथ, पैर, और आपके सभी अंग हर तरह की वासना से सुरक्षित रहें।

10. आप जिनके सुपुर्द *'प्रबंधकत्व'* का *कार्य* किया गया है, अपने भाइयों के बीच निर्दोष और दोष रहित होकर चलने का प्रयास करें, सभी मामलों का प्रबंधन विनम्र बुद्धिमानी से करें। आप, जिन्हें *'मैदानों में काम' की* देखरेख का कार्य सौंपा गया है, इस कार्य को अपनी बुद्धि और दृढ़ता के साथ करें, इसमें आवश्यक सभी कार्यों को निष्ठापूर्वक करें और सब कुछ व्यवस्थित रखें। जो थके हुए हैं, उनके प्रति सहनशील और दयालु बनें, विशेष रूप से नए शिष्यों के प्रति। *'तुम्हारा वचन हमेशा नमक से सीज़न किया हुआ हो, ताकि तुम जान सको कि सुनने वालों को अनुग्रह कैसे देना है'* (कुलु. 4:6; इफि. 4:29)। अपने कार्य में सम्माननीय, वाक्पटु, सांत्वना देने वाले, शिक्षाप्रद, सदाचारी और मार्गदर्शक बनो। *आप व्यवस्थापक* (संभवतःमठ के, या भरण-पोषण के प्रभारी) *हैं,* ईश्वर में विश्वास रखें और *'उसकी शक्ति और सामर्थ्य से बलवान बनें'* (इफिसियों 1:19)। भाइयों की देखभाल में अगुवाई करें। उनकी देखभाल करके, आप परमेश्वर की देखभाल करते हैं: क्योंकि आप लोगों को नहीं खिला रहे हैं, बल्कि, यदि आप चाहें, तो परमेश्वर के प्रेरितों को खिला रहे हैं। उन्हें भोजन और पेय तैयार करके दें – जो आपके पास है उसमें से सबसे अच्छा; लेकिन उसमें कोई मसाला, कोई मिठाई, या ऐसा कुछ भी न हो जिससे पेट के लिए जीने वाले अपना पेट भरें। यह धर्मनिष्ठों के लिए उपयुक्त नहीं है। परन्तु सब्जियाँ, रोटी और पानी—यही उनके लिए निर्धारित है। इसमें हमारे पूर्वजों को बहुत सांत्वना मिली। और तुम, मेरे बच्चे, *'अच्छे रसोइए'*, भाइयों की देखभाल करो, उन्हें सांत्वना के लिए भोजन तैयार करो, ताकि तुम स्वर्ग के राज्य में सूर्य के समान चमक सको। तुम, *'बाज़ार के माली और बगीचे के रखवाले'*, कड़ी मेहनत करो और भाइयों को हर तरह की सब्जियाँ प्रदान करके उन्हें संतुष्ट करने का प्रयास करो; क्योंकि उन्हें प्रसन्न करके, तुम ईश्वर को प्रसन्न करोगे, और तुम्हें अनंत विश्राम का आनंद लेने के योग्य माना जाएगा। तुम जो *'भंडारगृह में सेवा करते हो'*, पूरी लगन और सद्भावना के साथ, अपनी ऊर्जा अपने कार्य में लगाओ, यहाँ तक कि रिक्त बहाने की हद तक, और मुख्य भंडारपाल के साथ अच्छा व्यवहार करो, क्योंकि तुम उस पर निर्भर हो। तुम जो *'अस्तबल'* के मामलों का प्रबंधन करते हो, तुम ईश्वर और हम सभी को प्रसन्न करने वाली सेवा करते हो, और तुम दूसरों की तुलना में दो गुना अधिक भाईचारे की सेवा करते हो; इसलिए, तुम्हें दो मुकुटों से विभूषित किया जाएगा। तुम में से जो भी दूसरों की अधिक परवाह करता है, उनके लिए काम करता है और उनकी ओर से परिश्रम करता है, उसे निस्संदेह एक बड़ा इनाम मिलेगा। मेरे पास भी आओ, तुम *जो 'चक्कियों'* के लिए नियुक्त हो; और मैं तुमसे कहता हूँ, तुम्हें अपने कर्तव्यों का बहुत ध्यान रखना चाहिए; लेकिन जो निर्धारित है, उससे परे किसी भी

अनावश्यक चीज़ की अनुमतिमित दो, चाहे वह भोजन हो, पेय हो, या कुछ और। जहाँ तक इस बात का सवाल है कि आप नियम, भजन-गायन और अन्य सेवाओं में शामिल नहीं हो पा रहे हैं—और हम ऐसा नहीं चाहते—लेकिन अत्यधिक आवश्यकता के कारण, हमारे पास कोई और रास्ता नहीं है। फिर भी, हतोत्साहित न हों; हम आपके इस संबंध में जो कमी है, उसे पूरा करेंगे, भले ही हम भी पापी हैं। बस सतर्क और अपने प्रति सचेत रहें, परमेश्वर का भय मानो, और सांसारिक वार्तालाप से दूर रहो।

१३. उठना; मैटिन्स; पहला घंटा; काम

१३. १) उठना; मैटिन्स; पहला घंटा; काम। – २) बातचीत के विषय; प्रतिद्वंद्विता; आराम के प्रति अरुचि; ईश्वर के प्रति स्नेह और श्रम में धैर्य। – ३) हम धीरज रखें, जैसे प्रभु रखते हैं... और हमें उनकी दया प्राप्त होगी। – 4) स्वार्थी उद्देश्यों का पीछा करना और अपने भाइयों के प्रति प्रेम की कमी। – 5) जो मठाधीश की आज्ञाओं से संतुष्ट है वह सम्माननीय है; इन आज्ञाओं की आलोचना नहीं करनी चाहिए; प्रभु अव्यवस्थित लोगों को सीधा कर दें। [1, 14]

11. हम हमारे लिए निर्धारित नियमों और विनियमों के अनुसार जिएँ, और स्वयं को सभी बातों में, चाहे वे बड़ी हों या छोटी, परिश्रमी होने के लिए प्रेरित करें। जैसे ही घंटी बजे, आनंदपूर्वक चर्च में इकट्ठा होने के लिए जल्दी करो, मानो किसी स्वर्गदूत ने बुलाया हो, परमेश्वर के साथ संवाद करने और भजनों के माध्यम से उनकी सेवा करने के लिए, और बदले में क्षणिक या अस्थायी नहीं, बल्कि परमेश्वर से जीवन-दायक उपहार प्राप्त करने के लिए। चर्च में प्रवेश करते ही, एक स्वर में और एक साथ, प्रभु परमेश्वर की स्तुति करो; और फिर भजन-गायन को ध्यान से सुनो और पठन का उत्साहपूर्वक अनुसरण करो, ताकि दोनों से प्रबुद्ध होकर, आप दिव्य सेवा के दौरान फलदायी आनंद में बने रहें और शैतान को शर्मिंदा करें। लेकिन साथ ही, एक स्पष्ट मन से आंतरिक रूप से प्रार्थना करना न भूलें, ताकि शुद्ध और, इसके अलावा, अंधकारमय होने के बजाय प्रबुद्ध के रूप में देखे जाने के बाद, आप चर्च से बाहर निकल सकें। सेवा समाप्त हो गई है; प्रार्थना घर से चुपचाप और शांतिपूर्वक निकलें। फिर, आप में से प्रत्येक को अपने अध्ययन में लग जाना चाहिए, इस बात का ध्यान रखते हुए कि व्यर्थ की बातों द्वारा भजन-गायन से प्राप्त खजाने को बर्बाद न करें, बल्कि जो आप अब सीखते हैं, उससे उस भलाई में वृद्धि करें। कोई अन्य, यदि वह चाहे और आवश्यकता महसूस करे, तो अपने बिस्तर पर लेटकर आराम कर सकता है; लेकिन तब भी, क्रॉस का चिह्न बनाकर और ठीक से व्यवस्थित होकर, उसे किसी भजन को मन ही मन चिंतन के साथ दोहराना चाहिए, ताकि वह शत्रु, प्रलोभक के प्रलोभनों का शिकार न हो जाए। क्योंकि दानव इस बात से प्रेम करते हैं कि दिव्य सेवा के बाद, हमारे ध्यानपूर्ण और श्रद्धापूर्वक चर्च में उपस्थिति होने से उन पर हुई पराजय का बदला लेने के लिए, और चर्च के भजनों और पठनों से हमने जो कुछ भी अच्छी तरह से इकट्ठा किया है, उसे बर्बाद करने के लिए, वे हमारे आत्माओं को बुरे आवेगों से परेशान करें। इस उद्देश्य के लिए, वे हमारे विचारों को धुंधला करते हैं, शरीर को अव्यवस्थित कर देते हैं—भजनों के पाठ से हुई थकान के कारण—और अनुचित भावनाओं और कल्पनाओं को जन्म देते हैं। लेकिन, बेशक, उससे भी बेहतर वह है जो सोने से परहेज़ करता है और भजनों के गहन चिंतन या किसी अन्य काम में लग जाता है, बजाय इसके कि वह सीधे बिस्तर पर कूद पड़े, जब तक कि नींद उस पर जबरदस्ती हावी न हो जाए: क्योंकि ऐसे मामले में वह प्रलोभन से मुक्त रहता है। इस प्रकार समय व्यतीत करने के बाद, हम सभी को समय पर और एक-दूसरे के साथ मिलकर पहले घंटे की सेवा के लिए शीघ्रता करनी चाहिए: क्योंकि हम अपना इनाम क्यों गँवाएँ और अपनी अंतरात्मा पर बोझ क्यों लादें? इसके बाद, ईश्वर से प्रार्थना करते हुए, *'हमारे हाथों का काम स्थापित हो'* (भजन संहिता 89:17), और सारा दिन शुभ कार्यों में व्यतीत हो, तो अपने-अपने सौंपे गए कार्यों को आरंभ करो, चाहे प्रत्येक व्यक्ति अपने-अपने कार्य में, या आवश्यकता पड़ने पर सभी एक साथ एक ही कार्य में। आपका श्रम और कार्य भजन-गायन, प्रार्थना और अच्छे विचारों के साथ हो, चाहे वह खेत का काम हो, या दाख की बारी का, या रसोई का, या निर्धारित समय पर सामान्य दिनचर्या के अनुसार किया जाने वाला कोई अन्य कार्य; और यह सब भजन-गायन के साथ निष्ठापूर्वक किया जाए।

12. तुम्हारा वचन सदा उपयुक्त विषयों पर हो, चाहे वह शारीरिक जीवन से संबंधित हो या आध्यात्मिक मामलों से, जैसे कि एक ट्रॉपारियन या कोई अन्य कार्य। – भलाई करने में एक-दूसरे से होड़ करो। तुम में से प्रत्येक के अपने-अपने गुण हैं, लेकिन जो किसी के पास नहीं है, वह दूसरे के पास है: उसे दूसरे से उसे उधार ले लेना चाहिए, जैसे एक मेहनती मधुमक्खी फूलों से शहद इकट्ठा करती है। – आराम की लालसा हमसे दूर रहे, और आलस्य को दूर भगा दिया जाए। – हमें ईश्वर के प्रति स्नेहपूर्ण और अपने प्रयासों में दृढ़ रहना चाहिए; और हमारे और ईश्वर के प्रति हमारे

प्रेम के बीच कोई भी बाधा न आए: न उपवास, न जागरण, न ठंड, न गर्मी, न अपमान, न ही आवश्यक वस्तुओं की कमी; बल्कि बाकी सब कुछ गौण मानते हुए, हमें सभी से बढ़कर अपनी मुक्ति को प्राथमिकता देनी चाहिए।

१३. हम सभी बातों को प्रसन्नता से सहन करें, यह याद करते हुए कि प्रभु ने हमारे लिए कितनी भयानक पीड़ाएँ सहन कीं। – एक दास और उसके स्वामी के बीच क्या तुलना हो सकती है? – क्योंकि हम जो कुछ भी सहन कर सकते हैं, वह कुछ भी नहीं है। परन्तु, हे प्रभु, अपनी भलाई में आप हमारे छोटे-छोटे सद्भावना के कार्यों को भी स्वीकार करते हैं; आप उनके निकट हैं जो आपके लिए धीरज धरते हैं, जैसा कि लिखा है (भजन संहिता 144:18), और जो आपको खोजते हैं, वे आपको पाते हैं; यदि वह हमारे लिए स्वर्ग खोलता है – यदि हम धैर्य रखते हैं, तो वह हमें स्वीकार करेगा और हमें अपनी स्वर्गीय आनंद में और स्वर्ग के राज्य के हस्तनिर्मित न हुए वधू-कक्ष में ले जाएगा।

14. मैं तुम्हें पुकारता हूँ, स्वर्ग, पृथ्वी और पवित्र स्वर्गदूतों को गवाह बनाने के लिए: अपनी मुक्ति की उपेक्षा न करो; एक भी आज्ञा को तुच्छ न समझो; अघोषित विचारों के अंधकार में न चलो; गुप्त भोज से बचो, स्वादिष्ट व्यंजनों में लिप्त न हो, अपनी आत्माओं को तलवारों से न भेदो—अर्थात् उनमें अहंकार की आग न जलाओ, यहाँ तक कि अपने ही अंगों के प्रति भी नहीं, यह याद रखते हुए कि वे मसीह के हैं और इसलिए सम्माननीय हैं, एक दूसरे की बुराई न करें या एक दूसरे के प्रति क्रोध से जलें नहीं; अपने भीतर ईर्ष्या न पालें; बुराई का बदला बुराई से न चुकाएँ; अधिकार का प्रयोग करने की कोशिश न करें; समय से पहले पुरोहितीय पदों की लालसा न करें, न ही ऐसे विचारों में आनंद लें; परन्तु स्वेच्छा से सब कुछ (अपने आध्यात्मिक पिताओं के सामने) उजागर करके, उससे चंगा हो जाओ, और इसी से स्वस्थ रहो, और हृदय से सब बातों में आज्ञाकारी बनो। यही याजकीय पद है, पवित्र सेवा, और परमेश्वर की उपासना है!

१५. जो शुद्ध हृदय से, अपनी संपूर्णता को मेरी विनम्रता के समक्ष उजागर करता है; जो अपने आप को नीचा समझता है; जो स्वयं को सभी जीवित प्राणियों में सबसे नीच समझता है; और जो मेरी विनम्रता से प्राप्त किए गए से अधिक कुछ भी ऊँचा नहीं चाहता—देखो, मेरी दृष्टि में, एक कुलीन और सम्माननीय व्यक्ति है! परन्तु मेरी आज्ञाओं की जाँच-पड़ताल करना और उन पर अपनी रीति से चर्चा करना, या इस बात पर अटकलें लगाना कि मैंने एक व्यक्ति को ऐसा कर्तव्य और दूसरे को दूसरा क्यों दिया है—मैंने एक को पुरोहित वर्ग में क्यों स्वीकार किया और दूसरे को किसी अन्य पद पर क्यों नियुक्त किया—यह न तो आपके लिए लाभदायक है और न ही उचित। – हमारे प्रभु और परमेश्वर की महिमा हो, जो योग्य को अयोग्य से अलग करता है और *'गरीब को कीचड़ से उठाता है'* (भजन संहिता 112:7), जो नम्र लोगों को अनुग्रह और समझ प्रदान करता है और दुर्बल लोगों को शक्ति से सुसज्जित करता है (भजन संहिता 17:33), ईश्वर आपको सीधा मार्ग दिखाए, आपको शांति प्रदान करे, आपको अपनी भेड़शाला में स्वीकार करे, आपको एक अच्छा जीवन दे, और आपको हर बात में सद्धि कार्य के लिए, आज्ञाओं के पालन के लिए, ईश्वर को प्रसन्न करने के लिए, और स्वर्गदूतों की नकल करने के लिए बल दे, ताकि आप स्वर्ग के राज्य के वारिस बनें।

14. अपना हृदय ईश्वर में लगाओ, और बाकी सब कुछ शून्य समझो

14. 1) अपना हृदय ईश्वर में लगाओ, और किसी अन्य चीज़ को महत्वपूर्ण न समझो। – 2) जो कोई भी मठ में हर प्रकार के कार्य में परिश्रम करता है, वह स्वर्गीय नगर की ओर अच्छी तरह बढ़ता है ताकि उसकी आशीषों में भाग ले सके। – 3) तुम्हारी बाहरी आकृति अच्छी है; परन्तु सावधान रहो कि तुम्हारे आंतरिक क्रम में कोई यहूदा, हायसियिस या उनके समान न हो। – 4) कहना मत: 'मैं यह या वह करूँगा, और मैं ऐसा-वैसा प्राप्त करूँगा'; बल्कि परिश्रम करो, और जो कुछ भी इसके बाद होता है उसे प्रभु के भरोसे छोड़ दो। [1, 16]

१६. हे मेरे बच्चों, आओ, मेरी सुनो; मेरे वचन पर ध्यान दो और मेरी नम्र शिक्षाओं को हृदय में धारण करो! मैं सब को पुकारता हूँ; मैं सभी को प्रचार करता हूँ: परमेश्वर की ओर लौट आओ; अपनी कामनाओं का त्याग करो। इस प्रकार भविष्यद्वाणी का वचन तुम से पुकारता है: *'आओ, हम यहोवा के पर्वत पर चढ़ें, और याकूब के परमेश्वर के भवन में जाएँ'* (यशायाह 2:3) – निर्लिप्तता के भवन में, और हम अपनी आध्यात्मिक आँखों से हमारे लिए तैयार की गई आनन्द को, और स्वर्गीय आशीषों के प्रतिज्ञाओं को निहारें। उत्साह धारण करो, अपनी अग्निमयी पंखों को कबूतरों की तरह फैलाओ और उड़ जाओ, और यहाँ से उस स्थान तक ऊँची उड़ान भरो जहाँ सद्गुण निवास करते हैं; आनंद और ईश्वर की इच्छा के आध्यात्मिक प्रेम को अपना लो; उनके सबसे मीठे प्रेम का स्वाद चखो, और उसमें बाकी सब कुछ गौण समझो; व्यर्थ की महिमा, देहगत वासना, और उग्र क्रोध को त्याग दो; और यहाँ जो कुछ भी आरामदायक लगता है, वह आपको फँसा नहीं पाएगा; बल्कि अच्छी तरह से कमर कसने वालों की तरह, हम स्वर्ग के राज्य की ओर ले जाने वाले मार्ग पर चलते हुए हल्के, तीक्ष्ण-दृष्टि वाले और तेज होंगे।

१७. यह अपरहिार्य है कि यात्रियों को कष्ट सहना और कठनिाइयों को झेलना पड़े; हमारे साथ भी ऐसा ही है। क्योंकि, जैसा कि आप देख सकते हैं, हमारे काम में परिश्रिम, प्रयास और थकान की मांग होती है: आप मेहनत करते हैं, आप थक जाते हैं, आप पसीना बहाते हैं, आप भूख और प्यास सहते हैं – कुछ खेतों में, कुछ दाख की बारी में, कुछ जैतून के तेल के प्रेस पर, कुछ रसोई में, कुछ निर्माण स्थलों पर, कुछ तहखाने में, और बस हर कोई उस काम में जिसे उन्हें सौंपा गया है। ये सभी ईश्वर के मार्ग पर चल रहे हैं, महान नगर के समीप आ रहे हैं, और मृत्यु के द्वारा उन आशीर्वादों में भाग लेने के आनंद में ले जाएँगे जो ईश्वर से प्रेम करने वालों के लिए आरक्षित हैं।

18. इसमें: जबकि हम धार्मिकता में चलने वालों को स्पष्ट रूप से देखकर सांत्वना पाते हैं, हम अव्यवस्थित व्यवहार करने वालों को देखकर क्रोधित और दुखी होते हैं, और हम उन्हें जहाँ तक संभव हो सुधारते हैं; लेकिन जो कुछ आपके भीतर छिपा है वह केवल आपको और परमेश्वर को ही पता है। – परन्तु तुम में ऐसा कोई न हो जो गुप्त रूप से, जैसे अँधेरे में, कुछ भी अनुचित करे: क्योंकि सिर्व-दृष्टा की आँख से कुछ भी नहीं बचता, भले ही वह हमारी आँखों से बच जाए। मैं हमेशा आपके बारे में अच्छा ही सोचता हूँ। लेकिन कौन जाने—क्या आपके बीच, बारहों में, कोई यहूदा नहीं है? क्या अच्छे शिक्षक गिजियिस के साथ, कोई दुष्ट व्यक्ति नहीं है जो अपनी आत्मा में शाश्वत कोढ़ पाल रहा है? क्या तुम लोगों में ही याजक एलिया के बेटों जैसे लोग नहीं हैं, जो चोरी-छिपे खाते हैं और परमेश्वर को क्रोधित करते हैं, जिनका अत्यंत दुखद अंत मेरे लिए भी एक विपत्ति होगी, पापी एलिया से भी कहीं ज्यादा? – और हम भी किसी हानि से न पीड़ित हों – हे प्रभु, दया करें! – अननियिस और सप्फिरा जैसे कोई न हों, जिन्होंने प्रेरितों से झूठ बोलने की हिम्मत की और एक कड़वा पतन झेला: क्योंकि हो सकता है कि आप लोगों में भी ऐसे लोग हों जो अपने दिलों में झूठ पालते हैं, और किसी सवाल का जवाब देते समय या सामान्य बातचीत में सच नहीं बोलते। मुझे जादूगर शिमोन के पतन का भी भय है, जिसने प्रेरितों के मुखिया, संत पतरस के साथ रहते हुए, मानव सम्मान और महिमा की खोज की, जबकि वह दिखावे में उनका चेला होने का नाटक कर रहा था। तुम में से कोई भी पीछे मुड़कर न देखे, न ही अपने मूल संकल्प से भटक जाए!

१९. कोई यह न कहे: 'मैं ऐसा-वैसा करूँगा, और किसी-न-किसी समय तक मैं ऐसा-वैसा हासिल कर लूँगा।' तुम जो यह कहते हो, पर यह नहीं जानते कि तुम इसी दिन भी जीवित रहोगे या नहीं, क्या तुम्हें यह नहीं लगता कि तुम यह सुन सकते हो: *'मूर्ख! आज ही रात तेरी आत्मा तुझसे ले ली जाएगी, और जो कुछ तूने तैयार किया है, वह किसका होगा?'* (लूका 12:20)। आइए हम प्रेरितों की उनके शिक्षक और सभी के परमेश्वर के साथ अटूट एकता का अनुकरण करें, और, चूँकि हम हमेशा प्रभु की दृष्टि में हैं, आइए हम अपने उद्धार की ओर अपनी यात्रा को शीघ्र करें, जो कुछ भी आगे है उसे परमेश्वर के हाथों में सौंपते हुए, यहाँ थोड़ी कठिनाई और थोड़ा दुख स्वेच्छा से सहते हुए, ताकि हम हमेशा के लिए आनंदित हो सकें। ईश्वर हमें इसके लिए बुलाते हैं; पवित्र आत्मा इसमें हमारी सहायता करते हैं; और प्रभु यीशु मसीह हमें इसमें बल देते हैं। भय न करो! शैतान को नीचे फेंक दिया गया है; मसीह जी उठे हैं, और मृत्यु अब राज नहीं करती।

१५ तुम संसार से भाग गए हो; परन्तु तुम अपने शत्रुओं द्वारा भड़काए गए वासनाओं के कोलाहल से नहीं भागे हो: तुम्हें चौकस रहना चाहिए और दृढ़ खड़े रहना चाहिए

१५. १) तुम संसार से भाग गए हो; लेकिन तुम अपने शत्रुओं द्वारा भड़काए गए वासनाओं के उभार से नहीं भागे हो: तुम्हें सतर्क रहना चाहिए और उनका विरोध करना चाहिए। – 2) उन लोगों के उदाहरण जिन्होंने, विश्वास के द्वारा, आज्ञाकारिता के चमत्कार किए: डोसिथियिस, अनानियास, ज़कारियास और अन्य। – 3) आज्ञाओं के मार्ग पर चलो, बिना शिकायत के आज्ञाकारिता का भार उठाओ, और तुम बच जाओगे। [1, 17]

20. यद्यपि हम सभी सांसारिक चीजों से भागकर, मानो एक बंदरगाह में प्रवेश कर गए हों, अपनी पवित्र संन्यासी वेशभूषा धारण करके, फिर भी हम इस दुनिया में समुद्र में होने के समान ही रहते हैं, यह न जानते हुए कि शैतान की तूफानी हवा हमारे विरुद्ध कब उठेगी, जो हमारी आत्मा के जहाज को गहराई में डुबोने का प्रयास करेगी, – मन के समुद्री डाकू कहाँ और कैसे हमारे सामने आएँगे, – हम अनजाने में जुनून की किन छिपी हुई चट्टानों से टकरा जाएँगे, और कैसे, अपने पूरे जीवन में, हम बिना जहाज-दुर्घटना के पृथ्वी से स्वर्ग तक अपनी यात्रा पूरी करेंगे। इसलिए, मेरे बच्चों, तुम्हें ध्यान देना चाहिए और सतर्क रहना चाहिए, चौकस और सजग रहो, और शैतान की चालाकी के धोखे को समझो, कहीं ऐसा न हो कि तुम कामवासना की प्रवृत्तियों का विरोध करने, उसके हमले को रोकने, और हमारे विश्वास की पतवार को मजबूती से थामे हुए अपने सफर को सुरक्षित रूप से जारी रखने के लिए बिना तैयारी के पकड़े जाओ।

21. तपस्वी जीवन सीखने वाले संतों के अच्छे उदाहरणों से प्रबुद्ध होते हैं - और अटूट विश्वास से अपने कार्यों में दृढ़ होते हैं। – विश्वास के द्वारा, संत डोसथियिस ने बिना प्रश्न किए आज्ञाकारिता का अपना मार्ग पूरा किया, अपने मार्गदर्शक की हर आज्ञा को निष्ठापूर्वक पूरा करते हुए, और ऐसा करते हुए, कभी-कभी गाल पर प्रहार और कभी-कभी उपहास को नम्रतापूर्वक सहन किया। विश्वास के द्वारा, धन्य अबा किरि ने पंद्रह वर्षों तक साहस और युवा दृढ़ता के साथ पिटाई, ताने और उत्पीड़न को सहन किया, मानो इन कठिनाइयों से उन्हें कोई बोझ ही न हो; और न केवल उन्होंने कोई शिकायत नहीं की, बल्कि जब पवित्र पिता ने उनसे पूछताछ की तो उन्होंने अपने हमलावरों का दृढ़ता से बचाव किया और उन्हें सही ठहराया। विश्वास के द्वारा, पवित्र थियोडोर ने, प्रधानता के विचारों को पालने के लिए, महान पाचोमियिस द्वारा तीन वर्षों का बहिष्कार बिना किसी प्रतिरोध या शिकायत के सहन किया। विश्वास के द्वारा, उन्होंने आज्ञाकारिता का पका हुआ फल प्राप्त किया, क्योंकि उन्होंने तीन वर्षों तक धैर्य और उत्साह के साथ अपने पिता की छड़ी की देखभाल की थी। विश्वास के द्वारा, सदा-जीवित अकाकियोस के कभी-कभी आँखों के नीचे चोट के निशान होते थे, कभी-कभी गालों पर प्रहार के निशान, और कभी-कभी कोई एक अंग या दूसरा घायल होता था; फिर भी उन्होंने यह सब नम्रता से और बिना किसी शिकायत के सहन किया; और इसके लिए उन्हें अमरत्व का योग्य समझा गया। विश्वास के द्वारा, सदा-स्मरणीय ज़कारियाह, यद्यपि दिव्य आत्मा से परिपूर्ण थे, ने अपने घावों को धैर्यपूर्वक सहन किया, फिर भी वे कभी अपने पिता से विचलित नहीं हुए। विश्वास के द्वारा, एक विशेष अद्भुत पुरुष मगरमच्छ द्वारा बहाई जा रही नदी को तैरकर पार कर गया। और आदरणीय पितरों और सिद्ध पुरुषों में से प्रत्येक ने, विश्वास के हथियार से लैस होकर, दुष्ट की परीक्षाओं की आग और पानी से होकर गुज़रकर शाश्वत विश्राम के राज्य में प्रवेश किया।

२२. यदि तुम उद्धार पाना चाहते हो, तो इसके लिए कोई बाधा या अवरोध नहीं है। तुम्हारे सामने उन लोगों के सच्चे उदाहरण हैं जो उद्धार पा चुके हैं और जो उद्धार पा रहे हैं। मेरी ओर न देखो, बल्कि मेरे वचनों पर ध्यान दो: क्योंकि यद्यपि मैं एक पापी हूँ, मैं तुम से सत्य कहता हूँ और तुम्हें सीधा मार्ग दिखाता हूँ। तब, मेरे बच्चों, प्रयास करो, अवज्ञा को त्यागकर और अविश्वास को दूर करके। प्रभु की आज्ञाओं के मार्ग पर श्रद्धापूर्वक चलो। *'खोजो, तो तुम पाओगे; खटखटाओ, तो तुम्हारे लिये खोला जाएगा'* (मत्ती 7:7)। मैं यह सत्य जानता हूँ, और इससे पूरी तरह से आश्वस्त हूँ। अपनी जिम्मेदारियों को बिना शिकायत के निभाओ। तुम्हें जो आज्ञा दी गई है, उस पर आलस्य के बिना परिश्रम करो। अवज्ञाकारी न बनो, विरोध करने में जल्दबाज़ न बनो या बदला लेने की कोशिश न करो, और न ही अपने प्राणों पर विनाश और तबाही लाने में अहंकारी बनो। महिमा की खोज न करो, और तुम उसे न केवल आने वाले युग में, बल्कि यहाँ और अभी, अपनी सारी भव्यता में पाओगे। अपने कर्तव्यों के आवंटन—कुछ अधिक सम्मानजनक, कुछ कम—पर आपस में झगड़ें नहीं, और न ही एक-दूसरे को तीखे और अपमानजनक शब्दों से उकसाएं, और आप सबसे उत्तम के रूप में पहचाने जाएंगे और शाश्वत दिव्य निवासों में सबसे उत्तम स्थान प्राप्त करेंगे। परन्तु यदि हम इसके विपरीत आचरण करें, तो हमें इसका विपरीत ही मिलेगा – और क्रोध, प्रकोप और अपमान (रोमियों 2:8, 9) हर उस आत्मा पर आएगा जो बुराई करती है, न केवल अब, बल्कि भविष्य में भी। ईश्वर न करे कि ऐसा आप पर आए!

16. तुम्हारी उन्नति देखकर मैं आनन्दित होता हूँ; परन्तु यह डर मुझे है कि कहीं तुम स्थिर न हो जाओ, इसलिये मैं तुम से विनती करता हूँ: प्रवाह को मत रोकना, सब अनुचित बातों से दूर रहकर और जो कुछ भी उचित है उसके लिये उत्सुक रहकर

१६. १) आपकी प्रगति देखकर मुझे आनंद होता है; परन्तु, इस भय से कि आप स्थिर हो सकते हैं, मैं आपसे विनती करता हूँ: प्रवाह को बाधित न करें, जो कुछ भी अनुचित है उससे दूर रहें और जो कुछ भी सही है उसके लिए उत्साही बनें। – २) मृत्यु का सामना करते हुए, आइए हम अपने हृदय को सीधा करें; हमारे लिए महान शारीरिक करतब करना कठिन है; लेकिन यदि हम अपने हृदय में एक अच्छा स्वभाव बनाए रखें, तो नियम और मार्गदर्शन के अनुसार, सभी चीजों में संयम के साथ भी, हम महान पुरुषों से पीछे नहीं रहेंगे। – 3) सामुदायिक भाईचारा अपनी संरचना और अपने चमत्कारों दोनों में अद्भुत है: क्योंकि वासना पर हर विजय एक राक्षस का निष्कासन है। [1, 18]

२३. मेरी विनम्र आत्मा आपकी मुक्ति के लिए तीव्र आकांक्षा और उत्कट इच्छा से व्याकुल है, क्योंकि आप सत्य के मार्ग पर चल रहे हैं और प्रतिदिन प्रगति में आगे बढ़ रहे हैं। सभी चीजों का आपका त्याग और संसार से आपका निस्वार्थी परहेज़, अपने ही लोगों से आपका अटूट अलगाव, अपनी सारी संपत्ति का व्यर्थ खर्च और अपनी इच्छाशक्ति का सूली पर चढ़ाया जाना, और यह तथ्य कि आप सभी, एक मन और सामंजस्य के साथ, एक ही लक्ष्य की ओर प्रयास करते हैं – यह मुझे सांत्वना देता है। फिर भी मुझे यह डर भी सताता है कि आप में से कोई एक किसी तरह से उन आशीर्वादों से वंचित न हो जाए जिनकी आप आशा करते हैं। इसलिए मैं आपसे निवेदन और विनती करता

हूँ: अपनी प्रगति को न रोकें, बल्कि अपने और अपने पड़ोसी के निर्माण के लिए भलाई करने में और भी अधिक उत्साह से प्रयत्न करें, और स्वयं को प्रतिदिन परमेश्वर और भाईचारे के सामने निर्दोष और दोषरहित प्रस्तुत करें, और न तो ईर्ष्यालु उत्साह के आगे झुकते हुए, न ही हानिकारक बड़बड़ाहट के, न ही अधर्मी घमंड के, न ही दास-सदृश पक्षपात के, बल्कि आज्ञाकारी, शांत और शांतिपूर्ण ढंग से कार्य करते हुए, – बिना व्यर्थ गर्व या महत्वाकांक्षा के, बुद्धिमानी और ईमानदारी से, स्वयं भलाई के लिए, हमारे पवित्र समुदाय के लिए, ईश्वर की आज्ञा और हमारे मठाधीश की शिक्षा के लिए, और संक्षेप में, अपने स्वयं के उद्धार के लिए, दिन-प्रतिदिन उस एक चीज़ की खोज करते हुए जो ईश्वर को प्रसन्न करती है और केवल उसी के लिए प्रयास करते हुए, जब तक कि इस वर्तमान जीवन का अंत नहीं हो जाता।

२४. अंतिम घंटा अभी तक नहीं आया है, परन्तु वह तीव्रता से निकट आ रहा है, और कुछ के लिए तो वह पहले ही द्वार पर है। क्यों, मानो वह हमारी आँखों के सामने और हमारे पैरों तले खड़ा हो, क्या यह हम में भय उत्पन्न करता है, हमें विनम्र बनाता है, हमें शुद्ध करता है, और हमें किसी भी बुराई या सही मार्ग से भटकने के दोष से मुक्त करता है, हमें श्रद्धा, शांति और मन की सामंजस्यपूर्ण एकता के साथ एक सामुदायिक जीवन जीना सिखाता है, साथ ही दिव्य धर्मग्रंथों के अध्ययन, शुद्ध प्रार्थना और हमारी क्षमता के अनुसार परिश्रम में भी। और उपवास आध्यात्मिक जीवन का एक साधन है, भले ही यह एक शारीरिक अभ्यास है, बशर्ते कि इसे पवित्र विनम्रता द्वारा निर्देशित किया जाए। पवित्र पिताओं के महान कारनामों का प्रयास करना हमारी शक्ति से परे है—और वास्तव में, यह अविवेकी भी है। लेकिन आइए हम उस पर अमल करें जो ऊपर कहा गया है (अर्थात् प्रभु के दुख-क्लेश का स्मरण, श्रद्धा, शांति, मन की एकता, पवित्र शास्त्रों में शिक्षा, शुद्ध प्रार्थना, परिश्रम और अपनी क्षमता के अनुसार उपवास), और अपनी अधीनस्थ स्थिति में, कानून द्वारा निर्धारित मठवासी नियम का कड़ाई से पालन करते हुए, हमारे लिए जो उपयुक्त है उसे चुनें – भोजन और पेय में, – न केवल रोटी और सब्जियों का, बल्कि वाइन और तेल का भी, और कभी-कभी मछली और पनीर का भी, उचित संयम के साथ सेवन करना, फिर भी अपने विवेक के अनुसार नहीं: क्योंकि यह अनुचित है, बल्कि जैसा हमने स्थापित किया है, – और अन्य सभी मामलों में बुद्धिमानी और समझदारी से काम लेना, – चाहे हम सोएँ, विश्राम करें, चलें, बैठें, एकत्र हों और बातचीत करें, या उत्सव मनाएँ – ठीक वैसे ही जैसे हम रोपनी करते हैं, बीज बोते हैं, निर्माण करते हैं या बढ़ई का काम करते हैं – हम इसी प्रकार आचरण करेंगे, और, मैं आपको आश्वस्त करता हूँ, हम उन पूर्वजों की महानता में किसी भी तरह से कमी नहीं करेंगे।

२५. महान दृश्यों और आश्चर्यों में से एक है हमारे प्रभु यीशु मसीह के नाम पर, विभिन्न देशों और वंशों, विभिन्न आयु और जीवन-शैली के पुरुषों का एक ही शरीर में एकत्रित होना और एकता, जो सामंजस्यपूर्ण और संयुक्त कार्रवाई तथा संयुक्त सेवा की ओर निर्देशित है, ताकि आत्मा में अनेक होते हुए भी, कई हृदयों और कई मनों के साथ, एक ही मन और एक ही हृदय बना रहता है—किसी भी बुरे उद्देश्य के लिए नहीं, बल्कि परमेश्वर को प्रसन्न करने और परम पवित्र त्रिमूर्ति की महिमा के लिए काम करने के लिए। इस प्रकार हमारा यह समागम (बंधुत्व) अपने आप में महान और सम्माननीय है, जो महान चमत्कारों के समकक्ष है; परन्तु इसके भीतर, यदि हम वैसे ही जीते हैं जैसे हमें जीना चाहिए, तो वास्तव में चमत्कार होते हैं। क्योंकि क्या यहाँ भी दुष्टात्माएँ नहीं निकाली जातीं? – वे निकाली जाती हैं, और न तो किसी विशेष दिन, बल्कि हर दिन और यहाँ तक कि हर घंटे – वे निकाली जाती हैं और भस्म की जाती हैं। हम में से प्रत्येक, एक वासना पर विजय प्राप्त करके, उस वासना के दानव को भस्म कर देता है और बाहर निकाल देता है: जो व्यभिचार पर विजय प्राप्त करता है, वह व्यभिचार के दैत्य को निकाल फेंकता है; जो आलस्य पर विजय प्राप्त करता है, वह आलस्य के दैत्य को निकाल फेंकता है; जो क्रोध और द्वेष पर विजय प्राप्त करता है, वह क्रोध और द्वेष के दैत्य को निकाल फेंकता है; जो निंदा और बड़बड़ाहट पर विजय प्राप्त करता है, वह निंदा और बड़बड़ाहट के दैत्य को निकाल फेंकता है। इसी प्रकार हमें अन्य भावों पर विजय प्राप्त करने को भी समझना चाहिए। तो क्या आप, यदि आप चाहें, चमत्कार-कर्ता नहीं हैं? – और प्रभु आपके जीवन-यापन के तरीके को उन मरुभूमि के पिताओं और स्तंभ-निवासियों के कारनामों के रूप में स्वीकार करते हैं, जिन्होंने ऐसे अद्भुत चमत्कार किए।

१७. तुमने संसार क्यों त्यागा? शुद्ध होने के लिए; और धन्य है वह जो इस जीवन की आत्मा में रहता है, विशेष रूप से मठाधीश पर विश्वास में।

17. 1) तुमने संसार क्यों छोड़ा? शुद्ध होने के लिए; और धन्य है वह जो इस जीवन के आत्मा में रहता है, विशेष रूप से दृढ़ विश्वास में। – 2) लोग हमारे मठ में बचने के लिए आते हैं: तो उनके सामने मठवासी जीवन और मठवासी अनुशासन का एक उदाहरण प्रस्तुत करो। [1, 19]

26. हम अपने आप का ध्यान रखें, संयम से रहें, सतर्क रहें, और अपने विचारों को ईश्वर की ओर उठाएँ। हम महान आर्सेनियस की उस सदा स्मरणीय उपदेश की ओर अधिक बार मुड़ें: 'आर्सेनियस, तुम यहाँ क्यों आए?' क्योंकि हमने भी संसार को छोड़ दिया है। – तो फिर क्यों? – शरीर के आराम के लिए नहीं, सुखों का आनंद लेने के लिए नहीं, और न ही केवल पढ़ना-लिखना या सुलेख सीखने, या ज्ञान प्राप्त करने, या अच्छे पाठक बनने के लिए; और न ही, इसी तरह, स्वार्थी गतिविधियों में लिप्त होने, महिमा की तलाश करने, घमंड करने, खुद को दूसरों से ऊपर रखने, या दबदबा बनाए रखने के लिए, – ऐसी किसी भी चीज़ या इस तरह की किसी भी चीज़ के लिए नहीं; बल्कि किस लिए? – पापों से शुद्ध होने के लिए, परमेश्वर के भय से स्वयं को आच्छादित करने के लिए, मृत्यु तक स्वयं को नम्र करने के लिए, क्रूस की मृत्यु, अर्थात् अपनी इच्छाओं का परित्याग करने और शरीर की कामनाओं को मार डालने, अपने विरोधी, शैतान के विरुद्ध युद्ध करने, और *'अधिकारों, शक्तियों, इस संसार के अंधकार के हाकिमों' के विरुद्ध* लड़ने *तक,* (इफिसियों 6:12), ताकि हम देह की अनेक लालसाओं के आगे न झुकें, और अंततः अपने आध्यात्मिक पिता, इग्यूमेन, के मध्यस्थता में एक दृढ़ विश्वास प्राप्त करें, जिससे हम वास्तव में दुष्ट की सभी अग्निबाणों को बुझा सकें (इफिसियों 6:16)। अब मुझे बताओ, तुम्हारा हाल कैसा है? – जाँचो, विचार करो, और खोजबीन करो। और धन्य है तुम में से वह और तुम्हारे भीतर वह जो आज्ञाओं का पालन करता है, जिसने स्वयं को पाप के व्यापारियों के शिकार के रूप में नहीं सौंपा है, जो आज्ञाकारिता में दृढ़ है, जो पूर्ण पाप-स्वीकृति से प्रबुद्ध है, जो ईश्वर-प्रदत्त नम्रता और स्वर्णिम, मसीह-सदृश आज्ञाकारिता से प्रकाशित है, और जो, मानो बैंगनी चोगा पहने हुए, अपने आध्यात्मिक पिता, मठाधीश में अटूट विश्वास में लिपटा हुआ है, जो उसने दिए गए कार्यों में नहीं डगमगाता, अपने निर्णयों से पहले किसी भी बात का पूर्वाग्रह नहीं रखता, और पृथ्वी पर अपने लिए किसी भी चीज़ को उससे अधिक उद्धारक नहीं मानता——जितना कि मठाधीश उसके लिए मानते हैं। मुझे यह स्पष्ट कर देना चाहिए कि यहाँ मेरा मतलब स्वयं से नहीं, बल्कि उन लोगों से है जो ईश्वर की आज्ञाओं का कड़ाई से पालन करते हैं।

27. आत्माएँ हमारे पास, सचमुच ईश्वर द्वारा भेजी गई, हमारे मठ में उद्धार पाने के लिए आती हैं। इसीलिए आज्ञाओं का हमारा पालन सबसे पूर्ण और कठोर होना चाहिए। वे प्रबुद्ध होने आई हैं, न कि अंधकारमय होने। तब चमको, हे मेरे भाइयो, भले ही मैं अंधकारमय हूँ; अनुग्रह-पूर्ण सद्गुणों से परिपूर्ण हो जाओ, भले ही मैं भ्रष्टता से भरा हूँ। – आपकी प्रशंसा किसमें होनी चाहिए? अपने भाई को बात में वश में करने में, कभी उसका विरोध न करने में, किसी भी बात पर बड़बड़ाने से बचने में, बिना द्वेष के मेमने बने रहने में, काँटेदार नहीं, बल्कि हमारे प्रधान चरवाहे, मसीह के सामने नम्र रहना; अश्लील हँसी और लज्जास्पद बातचीत से बचना; भजन गाने में पहरा देना और प्रार्थना में होशियार रहना। तब, हे मेरे बच्चों, और भी अधिक लगन से अपने आपको शुद्ध करने, पवित्रता में जीने, स्वयं को सिद्ध करने और पवित्र होने का प्रयत्न करो, देवताओं के समान बनने का—यद्यपि यह एक साहसिक कथन प्रतीत हो सकता है—जैसा कि उद्धारकर्ता ने भजनकार के माध्यम से वादा किया था, कहते हुए: *'तुम देवता हो, और परमप्रभु के पुत्र हो'* (भजन संहिता 81:6; यूहन्ना 10:34)।

18. सामुदायिक जीवन अत्यधिक प्रशंसनीय है; और धन्य है वह जो इसके आत्मा में रहता है

18. 1) सामुदायिक जीवन अत्यधिक प्रशंसनीय है; और धन्य है वह जो इसके आत्मा में रहता है। – 2) मनुष्य को निरंतर उत्कृष्टता के लिए प्रयास करना चाहिए, और अपने दिनों को व्यर्थ में बर्बाद नहीं करना चाहिए। – 3) परमपितामहों को महिमा! उन्होंने, सत्य के वचन पर ध्यान देते हुए, अनुकरणीय मठवासी जीवन जिया: उनके उदाहरण का अनुसरण करो। [1, 20]

28. मैं तुमसे विनम्रतापूर्वक आग्रह करता हूँ – कि अपने सम्मानित आत्माओं के उद्धार के लिए उत्सुक रहो। क्योंकि मुझे नहीं लगता कि हमारे सम्मानित जीवन-शैली की याद दिलाने से अधिक लाभदायक कोई और बात हो सकती है। और इस बात से ऊब मत जाओ कि मैं हमेशा एक ही बात कहता हूँ। – तो फिर, हमें और किस विषय पर चर्चा करनी चाहिए? – क्या हमने अपना आरंभ किया हुआ जीवन-मार्ग बदल दिया है, ताकि हम अपनी बातचीत में अन्य विषयों की ओर मुड़ सकें? – नहीं; हमें एक ही बात को बार-बार, और एक ही विषय पर बार-बार बोलना बंद नहीं करना चाहिए; और हम कभी भी भलाई की प्रशंसा करना और बुराई की निंदा करना बंद नहीं करेंगे – यह घोषित करते हुए कि संसार से पूर्ण रूप से अलग होना और भाइयों का सामंजस्यपूर्ण सामुदायिक जीवन कितना अच्छा और धन्य है; और यह पुष्टि करते हुए कि वास्तव में *'अभिषेक का तेल' 'दाढ़ी पर, हारून की दाढ़ी पर, बह रहा है'* (भजन संहिता 132:2), यदि कोई, इस समुदाय में प्रवेश करने के बाद, ने स्वयं को नम्रता से परिधानित किया है, आज्ञाकारिता में लपेटा है और अपनी इच्छा को वश में करने का प्रयास किया है, ईश्वर के प्रति प्रेम की गहराई को अपनाया है, आत्मा में शक्ति से शक्ति तक बढ़ता है, सभी चीजों से प्रेम करता है और समुदाय के नियम द्वारा आवश्यक सभी बातों को

धैर्यपूर्वक पूरा करता है, किसी भी बात में कपट नहीं करता, और ऐसे कोई संदिग्ध विचार या योजनाएं मन में नहीं रखता जो नम्र नवसिखुआ को ईश्वर और मठाधीश से अलग कर सकती हैं। इसलिए, हे भाइयों, आइए हम समुदाय में मौजूद और घटित होने वाली सभी चीज़ों को प्रेमपूर्वक पवित्र और उद्धारदायक मानें, भले ही कुछ चीज़ें अप्रिय लगें: क्योंकि इसके द्वारा हमारे खुरदरेपन को दूर किया जाता है, और हम परिपूर्ण होते हैं, ताकि हम अपने लक्ष्य की ओर अधिक आसानी से बढ़ सकें।

२९. एक-दूसरे के लाभ के लिए प्रयासरत रहो और अपना हित न चाहो, बल्कि हर तरह से समुदाय के हित की चाह करो; और, जैसे-जैसे आप अपनी आत्मा में अधिक बलवान और परिष्कृत होते जाएँ, स्वयं को अटूट आज्ञाकारिता में रखें, प्रतिदिन स्वयं को नवीनीकृत करते हुए और, जैसे-जैसे दिन, महीने और साल बीतते जाएँ, लगातार बेहतर की ओर बढ़ते रहें, जब तक कि सद्गुणों में फलने-फूलने और बढ़ने का समय है। आलसी न बनो; नींद और लापरवाही के आगे न झुको; और इस जीवन के दिनों को व्यर्थ में बर्बाद न करो। जब हिसाब-किताब का समय आएगा, तो हम अपनी मेहनत के फल और अपनी लापरवाही की बंजरता को स्पष्ट रूप से देखेंगे; हम देखेंगे कि अपने और अपने काम पर ध्यान देने से, हमने फल दिए हैं, और यह कि इसे नज़रअंदाज़ करने से, हमने अपने ऊपर विनाश लाया है।

30. हमारे पवित्र और सम्माननीय, सत्य-निष्ठा और विवेकी पूर्वजों की धन्य आत्माओं की महिमा हो! उन्होंने सत्य के वचन को व्यर्थ में नहीं सुना; उन्होंने इसे एक ओर नहीं फेंका, और न ही इसे पैरों तले रौंदा: बल्कि उन्होंने अपने माथे के पसीने की मेहनत से जी-तोड़ परिश्रम किया, स्वयं को नम्र बनाया, अपनी इच्छा को वश में किया, अंतिम होने में आनंद लिया, सभी बातों में सादगी और गरीबी को प्रिय जाना, और संघर्ष से दूर रहे, और उन्होंने सभी बातों को धैर्यपूर्वक और प्रसन्नचित्त होकर सहा; उन्होंने स्वेच्छा से अपने पितरों की आज्ञाओं का पालन किया; वे विश्वास से जलते थे; वे मौन से प्रेम करते थे; उन्होंने दुर्बलों की दुर्बलताओं को सहा, और शहीदों की तरह उनके लिए अपना रक्त बहाने को भी तैयार थे। और क्या कहा जाए? आप स्वयं अपने पूर्वजों और नेताओं को जानते हैं; उनका अनुकरण करें, उनके पदचिन्हों पर चलें, और आप उनकी महिमा में भागीदार होने के योग्य माने जाएँ।

19. आप में से प्रत्येक अपने-अपने गुण में दिन-प्रतिदिन उत्तम होता जाए: आज्ञाकारी, आज्ञाकारिता में; विनम्र, नम्रता में; परिश्रमी, परिश्रम में

19. 1) आप में से प्रत्येक अपने-अपने गुण में और अधिक उत्तम बने: आज्ञाकारी, आज्ञाकारिता में; विनम्र, नम्रता में; परिश्रमी, परिश्रम में। – 2) आपको आज्ञाकारिता का जो भी कर्तव्य सौंपा गया है, उसमें लगन से रहें। – 3) यदि आप इस प्रकार आचरण करेंगे, तो प्रभु आपको यहाँ और आने वाले युग में दोनों में सांत्वना देंगे। [1, 21]

31. जैसे शुरू किया वैसे ही जारी रखो, और न केवल अच्छे कर्म करना बंद मत करो, बल्कि उन्हें और अधिक अभ्यास करो; तुम्हारी आत्मा और भी अधिक प्रज्वलित हो, और दिव्य जीवन की ऊँचाइयों की ओर अग्रसर हो। '*एक के आज्ञाकारी*—और अधिक आज्ञाकारी बनो, ताकि तुम आज्ञाकारिता का फल प्राप्त कर सको, न केवल अधिकार में रहने वालों के प्रति बल्कि साधारण लोगों के प्रति भी, बिना किसी हंगामा या प्रतिरोध के, जो कुछ भी वे आज्ञा दें। '*नम्र*—और अधिक नम्र बनो, हर बात में नम्र और हर चीज़ से सहमत रहो, स्वयं को नम्र दृष्टि से देखो, साधारण बाहरी दिखावा, कोमल आवाज़ और कम शब्दों के साथ, यह विचार मन में न पालो कि शायद कभी कोई कुलीन जन्म का था, या कि लंबे समय से मठवास की आदत में रहा है, या कि कोई उच्च पद धारण करता है और कई कर्तव्य निभाता है, – मैं इसमें यह जोड़ूँगा – केवल इसलिए अपनी आँखें ऊपर न उठाना, कठोर चेहरा न बनाना या कोई विशेष चाल-ढाल न अपनाना कि आप बुद्धिमान, प्रतिष्ठित, मधुर भाषी, सर्व-समर्थ या किसी अन्य प्रशंसनीय गुण के धनी हैं। 'उसे सौंपी गई आज्ञाकारिता को निभाने में *परिश्रमी* और लगनशील, प्रभु के लिए काम करते हुए, न कि मनुष्यों के लिए, वह स्वयं को दिन-ब-दिन लज्जा-रहित कार्यकर्ता साबित करता है, अपने ऊपर सबसे कठिन कार्यों को लेते हुए और अपने पड़ोसी के लिए स्वयं को अधिक काम में लगाकर प्रसन्न होता है, इस विश्वास के साथ कि इससे स्वर्ग में उसके लिए एक बड़ा इनाम संचित हो रहा है।

32. हम सभी—चाहे हम मद्यपाल, अस्पताल का परिचारक, सुलेखक, दाख की बारी का रखवाला, बाज़ार का माली, जुत्तासाज़, रसोइया, व्यवस्थापक, शिक्षक, पहरेदार, जगाने वाला, नियमपालक, दीपक जलाने वाला, बेकर, बढ़ई, या किसी भी कार्य के लिए नियुक्त कोई भी हों, चाहे बड़ा हो या छोटा—आओ, हम भविष्य की ओर एक अविराम प्रवाह में, शाश्वत आशीर्वादों की एक अदम्य लालसा के साथ, साहसपूर्वक अपने श्रम करें, सभी बातों को स्वेच्छा से सहन करें, परमेश्वर को प्रसन्न करने वाली सभी बातें करें, और एक-दूसरे के लिए स्वयं को बलिदान करके स्वयं को लाभ पहुँचाएँ, इस हद तक कि प्रत्येक व्यक्ति अपने भाई के लिए अपनी आत्मा तक को भी त्यागने के लिए तैयार हो।

33. यदि तुम इस प्रकार आचरण करोगे, तो परमेश्वर का एकलौता पुत्र तुम्हें सांत्वना देगा—वह, जिसने परमेश्वर पिता की आज्ञाकारिता के लिए, स्वयं को अत्यंत नम्रता की हद तक दीन किया, यहाँ तक कि वह एक दास बन गया, यद्यपि वह सभी का प्रभु है, और उसने मृत्यु का स्वाद चखा—क्रूस की मृत्यु— – न केवल यहाँ, जहाँ आपके कर्म देखने वाले सभी लोग आपकी प्रशंसा करते हैं, बल्कि मेरे लिए भी, जो एक पापी हूँ, और आपके लिए भी, जो आज्ञाओं का पालन करते हैं, वहाँ आनंद और अकथनीय हर्ष होगा, दुश्मन के खिलाफ आपके संघर्षों और उसके हमलों और युक्तियों को विफल करने के लिए, बल्कि आने वाले युग में भी, जब आप स्वर्गीय गायकों के साथ मसीह परमेश्वर की महिमा की उपस्थिति में आनंदित होंगे, वहाँ जहाँ *'सभी आनंदित लोगों का निवास'* है।

20. मैं तुम्हारी सफलताओं में आनंदित हूँ... कुछ में विनम्रता के कारण, दूसरों में

20.

1) मैं आपकी सफलताओं पर प्रसन्न हूँ... कुछ में, विनम्रता; दूसरों में... (भिक्षुणियों के गुणों की सूची देता है)। – 2) इसी तर्ज पर – विचार को और भी दूर और ऊँचा ले जाते हुए: हमारे सामने एक लंबा जीवन है... हमारे पास समय होगा। – 3) न तो स्वाभाविक प्रतिभाओं से और न ही अर्जित संपत्तियों से घमंड करो, क्योंकि ईश्वर और अधिक देगा; इसके विपरीत – हानि होगी। [1, 22]

1. एक किसान फलदार खेत देखकर प्रसन्न होता है; लेकिन मठाधीश अपनी देखरेख में सौंपी गई आत्माओं की आध्यात्मिक फलदायी होने पर और भी अधिक प्रसन्न होते हैं। तुम भी मुझे आनंद देते हो, मेरे बच्चों, मेरी रोपाई, परमेश्वर की अपनी फसल (1 कुरिन्थियों 3:6)। मैं प्रसन्न होता हूँ जब मैं उद्धार के लिए आवश्यक सभी बातों के प्रति आपकी लगन, उत्साह और जोश को देखता हूँ। मैं नम्रता दिखाने वालों से, अथक रहने वालों से, विनम्रता और आदर दिखाने वालों से, शत्रु की युक्तियों को दूर करने और उन पर विजय पाने वालों से, जो सौंपे गए कर्तव्यों को बिना शिकायत के पूरा करते हैं, जो शांति और सौम्य आत्मा दिखाते हैं, जो चरित्र की सादगी दिखाते हैं, प्रसन्न होता हूँ, जिनमें मेरी गरिमा के बजाय मेरी नम्रता पर विश्वास है, जिनमें निर्लिप्तता और अहिंसा-प्रिय स्वभाव है—और आप सभी में, आध्यात्मिक प्रगति और पूर्णता, और एक ही देह में प्रेमपूर्ण एकता, जो परमेश्वर के उच्च स्वर्ग से मार्गदर्शन और मेरे और आपके पिता की प्रार्थना से उत्पन्न हुई है। मैं इस पर आनन्दित हूँ, और मैं चकित हूँ, क्योंकि यह वास्तव में आश्चर्य का कारण है।

२. मुझे डर है कि मेरी लापरवाही और मेरे पापों पर मेरे गहरे शोक के कारण, प्रभु हमें अपनी अनुग्रहकारी दया से बढ़ाया हुआ अपना दाहिना हाथ फैलाकर स्वीकार न करें – और ऐसा कुछ हमारे बीच आ जाए जिसके बारे में न तो बोलना उचित है, और न ही सोचना – किसी भी आत्मा की सुस्ती और निराशा, या यहाँ तक कि एक पतन, चाहे वह छिपा हो या प्रकट। इसलिए, अपने विषय में सावधान रहो; उस मार्ग से भटकना मत जिससे तुमने चलने का निश्चय किया है, बल्कि उसमें दृढ़ बने रहो, और महिमा से महिमा और पवित्रता से पवित्रता तक रूपांतरित होते जाओ। स्थिर रहो, और उन कर्मों के वृत्त से भटकना मत, जिनका तुमने परमेश्वर और स्वर्गदूतों के सामने, और मेरी इस विनम्रता के सामने वचन दिया है; बल्कि परिश्रम पर परिश्रम जोड़ते जाओ। सावधान रहो कि दीर्घायु का विचार तुम्हें अस्थिर न कर दे, और यह संयम और आत्म-अनुशासन से जीने के तुम्हारे दृढ़ संकल्प को कमजोर न कर दे। यह विचार झूठा है: क्योंकि हमारा जीवन क्या है? एक सपना और एक छाया। यह विचार झूठा है, फिर भी यह भ्रामक है: क्योंकि नम्रता में नम्रता और आज्ञाकारिता में आज्ञाकारिता जोड़ने के बजाय, यह मनुष्य को एक के बाद एक रियायतें देने के लिए प्रेरित करता है, जो अक्सर ईश्वर को प्रसन्न करने वाले जीवन के पूर्ण विघटन का कारण बनता है।

३. सावधान रहो कि जो तुम्हें पूर्णता प्रतीत होती है, वह पाप की काँट न बन जाए, – न तो सब कुछ जल्दी सीखने की आपकी क्षमता, न आपका ज्ञान, न आध्यात्मिक जीवन में अनुभव की एक निश्चित डिग्री, न आपका कभी-कभार का अच्छा विवेक, न आपकी लगन, न शिल्प में आपकी कुशलता, न आपका सुरमय गायन, न आपकी मधुर आवाज़, न आपका गरिमामय आचरण, न इस तरह की कोई और चीज़। ये सभी परमेश्वर की ओर से उपहार हैं, जिनका उद्देश्य परमेश्वर, जो दाता है, के प्रति आपके भय और नम्रता को बढ़ाना होना चाहिए। इस दृष्टिकोण को अपनाकर, हम उस परमेश्वर को हमारे प्रति और भी अधिक दयालु और अपने उपहारों में और भी अधिक उदार बनाएंगे - और हम हर अच्छी चीज़ से समृद्ध होंगे और उपहार पर उपहार से सुसज्जित होकर परमेश्वर के लिए एक पवित्र मंदिर बन जाएंगे। दूसरी ओर, यदि हम परमेश्वर के सामने अपना सिर उठाते हैं और अपने भाइयों के सामने घमंडी हो जाते हैं—भौंहें चढ़ाते हुए, कंधे उचकाते हुए, घमंडी चाल अपनाते हुए, और यह सवाल करते हुए कि यह या वह क्यों किया गया है, इसे इस तरह क्यों किया गया और दूसरे तरह से नहीं, या मुझे किसी विशेष कार्य की देखरेख का जिम्मा क्यों नहीं सौंपा गया, और वह व्यक्ति ऐसा-वैसा कार्य क्यों कर रहा है, जबकि वह कार्य पूरी तरह से अनावश्यक है, केवल

मेहनत और समय की बर्बादी है – यदि हम इस तरह व्यवहार करते हैं, तो हम फलदायी समय को बंजरता के समय में बदल देंगे, लाभ के समय को हानि के समय में, सार्थक श्रम के समय को विनाशकारी निष्क्रियता और दुष्टता में बदल देंगे – और सद्गुणों के पर्वत पर चढ़ने के बजाय, हम पाप की खाई में और भी गहरे उतरते जाएँगे।

21. भले बनो – और शत्रु को अपने हृदय में प्रवेश न करने दो, कहीं ऐसा न हो कि वह चिल्ला उठे: 'सब बुरे हो गए हैं'

21. भले बनो – और शत्रु को अपने हृदय में प्रवेश न करने दो, कहीं ऐसा न हो कि वह पुकार उठे: 'सब बुरे हो गए हैं।' [1, 28] अपनी आत्मा की दृष्टि में आज्ञाओं के मार्ग को शुद्ध रखें, विनम्रता से हर ठोकर की पहचान करें और उसे सुधारें—चाहे वह निंदा के योग्य अवज्ञा का कोई रूप हो, या शर्म में लिपटा कोई विरोधाभास; सही मार्ग पर चलें, और आप अपनी आत्माओं के लिए शांति पाएंगे। हमारा शत्रु हमारे भ्रातृत्व में जबरदस्ती घुसने और उसे भड़काने के लिए हर बहाने का उपयोग करता है। उसे स्वीकार न करो; विश्वास के ढाल से अपनी रक्षा करो और परमेश्वर के वचन की तलवार से उसे पीछे हटा दो – और यह विनाशक तुम्हारे भीतर अपने लिए कभी कोई जगह नहीं पाएगा, और न ही वह यह घमंड करेगा कि उसने तुम्हें गिरा दिया है। अपने आपको परमेश्वर की सेना का एक दल दिखाओ, जो उसके लिए अभेद्य हो, और उसे घमंड करने के बजाय, संत मकरियस की तरह विलाप करने दो: 'सभी दुष्ट मेरे विरुद्ध हो गए हैं।' मसीह प्रभु आपके सेनापति हैं, और स्वर्गदूत आपके सहायक और रक्षक हैं। *'तुम्हारे पाँव ठोकर न खाएँ—क्योंकि जो इस्राएल की रखवाली करता है, वह न सोता है और न सुस्त होता है'* (भजन संहिता 120:3)।

२२. सब कुछ ईश्वर से आता है; फिर भी, जो हमारे पास है उसे बनाए रखने और आगे बढ़ने के लिए हमारे अपने प्रयास की भी आवश्यकता है

२२. १) सब कुछ ईश्वर से आता है; फिर भी, जो हमारे पास है उसे संरक्षित करने और आगे बढ़ने के लिए हमारे अपने प्रयासों की भी आवश्यकता है। – २) प्रभु ने अब तक आपको अच्छी तरह से संरक्षित रखा है – और आप सफल हुए हैं; इसी तरह जारी रखें – प्रार्थना, मौन आदि में। – ३) कष्ट और दुख को सहन करो; संपूर्ण जीवन केवल एक दिन ही है, फिर भी इसके माध्यम से कोई अनंत आनंद प्राप्त कर सकता है। [1, 24]

४. हमारे सभी सफलताओं के लिए प्रभु का धन्यवाद करें; क्योंकि लोगों में जो कुछ भी अच्छा है, वह सब उनकी उदार भलाई से आता है: क्योंकि *'उससे, उसके द्वारा, और उसके लिए सब कुछ है'* (रोमियों ११:३६)। और यदि कोई यह घमंड करने का दुस्साहस करे कि वह कुछ है, तो वह प्रेरित के ये वचन सुनेगा: *'तुम्हारे पास वह क्या है जो तुमने नहीं पाया? और यदि तुमने पाया भी है, तो तुम ऐसे क्यों घमंड करते हो जैसे कि तुमने नहीं पाया?'* (1 कुरिन्थियों 4:7)। – तथापि, इन सभी के लिए प्रयास, एक कठोर प्रयास और अथक परिश्रम, साथ ही विनम्रता की आवश्यकता होती है, ताकि हम अपने मन को एक ईश्वरीय और भक्तिपूर्ण जीवन में मजबूत, संरक्षित और केंद्रित कर सकें, ताकि हम अपने अच्छे कार्य से भटक न जाएँ, और न ही बाद की आलस्यपूर्णता से अपनी पिछली मेहनत पर शर्म लाएँ, और हम एक पुण्य जीवन से दुष्ट जीवन की ओर वापस न मुड़ें, बल्कि अच्छाई से रूपांतरित होकर, शुद्ध और प्रबुद्ध हों और दिन-प्रतिदिन पहाड़ों पर चढ़ें, उज्ज्वलों से भी अधिक उज्ज्वल बनकर, तारों से सूर्यों में बदलकर, और परम पराक्रमी शक्ति से परिधानित होकर। मैं आपसे विनती करता हूँ, सभी सांसारिक तर्कों और सदाचार के सबसे बड़े बाधक—सांसारिक महिमा—को त्याग दें, और आध्यात्मिक तलवार से शरीर के प्रत्येक भाव और प्रत्येक वासना को काट दें, ईश्वर से चिपके रहें और आध्यात्मिक सीढ़ी पर चढ़कर उनके पास पहुँचें, दिन-प्रतिदिन दैवी नींवों को बिछाते हुए और आध्यात्मिक नींवों को गहरा करते हुए, साथ ही इच्छाओं को काटकर कामुक अहंकार को दूर करते हुए, आँसुओं की बाढ़ से जुनून की लपटों को बुझाते हुए, और भविष्य के आशीर्वादों पर मनन करके भोजन और पेय की परेशान करने वाली लालसाओं, या किसी अन्य व्यर्थता को दूर करते हुए।

५. अब तक, मेरे और आपके पिता की प्रार्थनाओं के द्वारा, प्रभु ने आपको अच्छी तरह सुरक्षित रखा है; आप पवित्रता के राजसी मार्ग पर चलकर समृद्धि प्राप्त कर चुके हैं, आपने निर्लिप्तता की शोभा से स्वयं को सुसज्जित किया है, और यह देखा है कि अपनी कामनाओं से मुक्त होकर, उनसे ऊपर उठकर, सभी सांसारिक वस्तुओं पर राजसी रूप से शासन करने और, जैसे कि, ईश्वर के साथ शासन करने से बेहतर और अधिक आनंददायक कुछ भी नहीं है। इसे न भूलें, और न सुस्त पड़ें, उस जीवन-मार्ग को समाप्त करके जिसे आपको सौंपा गया था और जिस पर आपने इतनी अच्छी तरह से चलकर जीवन व्यतीत किया है; बल्कि और भी अधिक *'उसके द्वारों में धन्यवाद के साथ, और उसके प्रांगणों में स्तुति के साथ प्रवेश करो'* (भजन संहिता 99:4); अपने आज्ञाकारिता के फलों से समृद्ध हों और, उनमें, पश्चाताप की मदिरा पियें, जो आपके पवित्र हृदयों को प्रसन्न करती है; अपने अन्य धर्मपरायण कर्मों

से न रुकें; अपने होंठों को मौन रखें; किसी भी भोजन से झूठी और स्व-लादति परहेज़ का दिखावा करके अपने भाई के विवेक को आहत न करें; कठोर चेहरा न बनाएँ; लंबी-लंबी बातें न करें या व्यर्थ के शब्द न बोलें; अपने पड़ोसी की भलाई से पहले अपनी शांतिको न रखें; हमारे प्रभु मसीह यीशु में एक मन, एक हृदय और एक इच्छा के हो, और उसे अपना सिर मानो।

6. *'प्रभु में और उसकी सामर्थ्य की शक्ति में दृढ़ बनो'* (इफिसियों 6:10), और जो कुछ भी अप्रिय, दुखद और बोझिल हो, उसे वीरता से सहो, हमारे मृत्यु के रहस्य को अपने मन की आँखों के सामने रखो और हमारे जीवन के पूरे मार्ग को संक्षिप्त समझो। और, सेंट ग्रेगरी द थियोलोजियन के अनुसार, जो लोग अपने मुख्य कार्य, मोक्ष, में गंभीरता से लगे हुए हैं, उनके लिए संपूर्ण जीवन केवल एक दिन ही है। लेकिन इस दिन, इस क्षणभंगुर समय में जो एक सपने की तरह बीत जाता है, हम स्वर्ग के राज्य, अनंत आनंद और प्रसन्नता के क्षेत्र को प्राप्त कर सकते हैं।

23. उन भावों को भड़काने वाले शत्रु का विरोध करें

२३. १) उन वासनाओं को भड़काने वाले शत्रु का विरोध करो। – २) बड़े, छोटे लोगों की मदद करें। – ३) कितनी बार ऐसा हुआ है… कि एक वासना उत्पन्न होती है, लेकिन प्रार्थना से उसका विरोध करो और सब शांत हो जाएगा। – ४) तो हतोत्साहित न हो: प्रभु निकट हैं। [१, २५]

7. प्रयास करो, मेरे प्रिय बच्चों, प्रयास करो, मेरे प्रभुओं और स्वामियों, शैतान की युक्तियों के विरुद्ध, तुम पर निर्देशित उसके दैनिक हमलों के विरुद्ध, कामवासना की आग के विरुद्ध, निराशा की उदासी के विरुद्ध, एक स्थान से दूसरे स्थान तक विनाशकारी भटकन के विरुद्ध, ईर्ष्या के साँप के विरुद्ध, अनुचित समय पर बोलने और उपहास करने की अनियंत्रित प्रवृत्ति के विरुद्ध, हर उस वासना के विरुद्ध जो तुम्हारा विरोध करती है और तुमसे लड़ती है, संघर्ष करो।

8. अंतिमों में जो प्रथम हैं, दुर्बलों में जो सबल हैं, जो परीक्षा में पड़े हैं उनमें जो परीक्षा में पड़े हैं, जो आध्यात्मिक फल से धनी हैं उनमें जो निर्धन हैं, आरंभिकों में जो सफल हैं, नए लोगों में जो दीर्घकालीन हैं—एक दूसरे की सहायता करो, हाथ बँटाओ, शब्दों से शिक्षा दो, जो उत्तम है उसे बताओ, एक दूसरे को उपयोगी कार्य करने के लिए प्रेरित करो, ताकि हम सब उद्धार पा सकें।

९. याद करो कि तुम्हारे आध्यात्मिक संघर्ष के कितने वर्ष हुए हैं, और अब तक तुमने कितनी और किस प्रकार की परीक्षाओं का सामना किया है! प्रत्येक व्यक्ति याद करे कि वह कितनी बार प्रलोभन से हार गया, थक गया, और उसका हौसला पस्त हो गया; फिर अचानक उसे शक्ति, उत्साह, धैर्य, जीवन-दायक आत्मा और प्रेरणा मिली, चाहे वह किसी उपदेश के वचन से हो या किसी भाई की प्रार्थना से; फिर उसने एक बार फिर परिश्रम किया - और परमेश्वर की सामर्थी शक्ति से फिर से बल पाया। तो तुम्हारे तपस्यापूर्ण जीवन के आने वाले दिनों में भी ऐसा ही होगा, और इससे भी अधिक—*'हम आग और पानी से होकर गुजरेंगे और* निर्लिप्तता (Ps. 65:12) *के विश्राम में प्रवेश करेंगे'*।

१०. इसलिये, कोई भी हताश न हो, कोई भी हिम्मत न हारे! आइए हम एक दूसरे की मदद करें, एक दूसरे को सांत्वना दें, और एक दूसरे को प्रेम, धैर्य, और परमेश्वर की आज्ञाओं के पालन के लिए उत्साह के लिए प्रेरित करें। और हमारे प्रभु यीशु मसीह, हमारे सच्चे परमेश्वर, निराशों की आशा, गिरते हुए का सहारा, बीमारों के चंगा करने वाले, यात्रियों के तत्पर साथी और उनकी मेहनत का सहारा, और संक्षेप में, पृथ्वी के छोर के सभी लोगों और समुद्र में दूर तक गए हुए लोगों की आशा - वे आपका मार्ग सुगम और समतल करें, और वह आपको हर कर्म और हर कदम में सफलता प्रदान करे, जब आप सीधे पूर्ण मोक्ष और उसके वास के नगर की प्राप्ति की ओर यात्रा कर रहे हों।

२४. वासनाओं को भड़काने के विरुद्ध: परमेश्वर का वचन, इंद्रियों का रक्षण—विशेषकर दृष्टि का—और देह को विश्राम न देना: सावधान रहो; यद्यपि तुम बपतिस्मा के बाद गिर गए हो, फिर भी स्कीमा की प्रतिज्ञाएँ लेने के बाद दोबारा मत गिरो।

२४. वासनाओं को भड़काने के विरुद्ध: परमेश्वर का वचन, इंद्रियों पर—विशेषकर आँखों पर—नज़र रखना, और देह को उसकी इच्छाओं से वंचित रखना: सावधान रहो; तुम बपतिस्मा के बाद गिरे; स्कीमा के व्रत लेने के बाद फिर से मत गिरना। [1, 27] यहाँ की जलवायु गर्म और झुलसाने वाली है – मेरा मतलब प्राकृतिक आग से नहीं, बल्कि एक अदृश्य आग से है जो आत्मा को जलाती है, जो पाप की अंगारों से निकलती है, और शत्रु आत्माओं द्वारा हमारे हृदयों में डाली गई वासना की चिंगारियों से प्रज्वलित होती है। लेकिन आपके पास, दैवीय ओठों से, आत्मा (परमेश्वर का वचन) की वर्षा है जो एक नदी की तरह बहती है, उसे बुझाने के लिए, और आग के भट्ठी में तीन जवानों की तरह,

(इस) आग से अछूते और अप्रभावति रहने के लिए। इस संबंध में, मनुष्य को अपनी इंद्रयिों का रक्षक बनना चाहिए, और दृष्टि पर वशिष ध्यान देना चाहिए, जसिके माध्यम से—जब इसका अनुचति उपयोग कयिा जाता है—हमारा शत्रु आत्मा में वासना की आग डालने का सबसे अधकि आदी है। एक को शरीर से उत्पन्न होने वाले अन्य प्रलोभनों से भी खुद को बचाना चाहिए, जनिके लिए भोजन, , पेय, नींद और हर दूसरे प्रकार की शारीरकि वशि्राम में संयम की कमी एक अवसर प्रदान करती है। क्योंकि जसि प्रकार व्यापक संयम सद्गुण में दृढ़ता से बने रहने की शक्ति प्रदान करता है, उसी प्रकार इस संबंध में लापरवाही पाप के हर प्रकार के अत्याचार को जन्म देती है। इसलिए, सावधान रहो कि तुम उचति संकल्पों के साथ अपने वर्तमान धार्मकि-आह्वान में प्रवेश करके इस दासता से मुक्त हो जाने के बाद, फरि से इसमें न लौट आओ, और अपने सरि पर दोहरा कष्ट न लाओ – क्योंकि बपितस्मिा के बाद और स्कीमा ग्रहण करने के बाद गरिावट होती है।

25. जो अपने भावों पर वजिय प्राप्त करते हैं - उन्हें मुकुट मलिते हैं; जो उनके आगे झुक जाते हैं - उन्हें यातनाएँ मलिती हैं; यदि आप पहले समूह में हैं, तो यह अच्छी बात है; यदि दूसरे में, तो अपने मार्ग सुधारने में शीघ्रता करें।

२५. १) जो अपने जुनून पर वजिय प्राप्त करते हैं - उन्हें मुकुट मलिते हैं; जो उनके आगे झुक जाते हैं - उन्हें यातनाएं मलिती हैं; यदि आप पहले समूह में हैं, तो यह बहुत अच्छी बात है; यदि दूसरे में, तो सुधार के लिए जल्दी करें। 2) आज्ञाओं का पालन करने का प्रयास करो; कोई भी आलसी, दोहरे मन वाला या आत्म-धर्मी न हो। – 3) प्रत्येक व्यक्ति अपनी आज्ञाकारिता के द्वारा अपना योगदान दे; प्रभु उसे स्वीकार करेंगे, चाहे वह कतिना भी छोटा क्यों न हो। – 4) कठनिाइयों से हतोत्साहति न हो; एक-दूसरे की मदद करते हुए आगे बढ़ो। 5) बाहरी और आंतरकि कठनिाइयाँ क्षणकि हैं; धैर्य रखें, और राहत आएगी। – 6) परशि्रम के बनिा कसिने कभी मुकुट पहना है? – फरि भी मृत्यु नकिट है, और परशि्रम समाप्त हो जाएगा; आप संतों की पंक्तयिों में शामलि हो जाएँगे। [1, 28]

11. देखो, प्रतयिोगति का मैदान! देखो, संघर्ष! – जो वीरता से लड़ता है, अच्छी दौड़ लगाता है, और अपने मन को सभी कामुक और भावुक चीजों से अलग रखता है, वह सच्ची वजिय प्राप्त करता है, उसे अमर महमिा की माला पहनाई जाती है, उसे परमेश्वर का पुत्र घोषति कयिा जाता है, और यहाँ रहते हुए भी अनंत आशीर्वादों का वारसि बन जाता है। परन्तु जो कोई पाप के सुखों में बह जाता है और स्वयं को शैतान के जालों में फेंक देता है, वह वास्तवकि पराजय भोगता है, अपने पापों के कारण लज्जति हो जाता है, शैतान का पुत्र बन जाता है, और गेहेन्ना की आग तथा वभिन्नि अन्य अनंत यातनाओं का वारसि बन जाता है। अपना हसिाब लगाओ, अपने वशि्वास की परीक्षा करो, और समझो कि तुम्हारा स्थान और मार्ग क्या और कहाँ है। और यदि आप सही मार्ग पर हैं और राजसी मार्ग पर चल रहे हैं, तो यह और भी अच्छा है! – लेकनि यदि आपने अपनी यात्रा में पाप कयिा है और पाप की तेज धाराओं में बह गए हैं, तो इस सातवें युग के समाप्त होने और आठवें युग के आरंभ होने, जो अपने साथ न्याय और प्रतशिोध लाएगा, से पहले लौटने के लिए जल्दी करें।

12. परमेश्वर की आज्ञाओं का पालन करने का यत्न करो; अपने हृदयों में सद्गुणों के बीज बोओ, ताकि समय आने पर तुम धार्मकिता के फल काट सको। कोई भी आलसी न रहे, कहीं ऐसा न हो कि उन्हें स्रोत से सुनाई दे: *'हे आलसी, चींटी के पास जा, या परशि्रमी मधुमक्खी के पास जा'* (नीतविचन 6:6, 8)। कोई भी कपटी या दोहरा स्वभाव वाला न रहे, जो अपने दलि में एक बात रखता हो और दूसरी बात बोलता हो, कहीं ऐसा न हो कि वे भजनकार दाऊद के भयानक न्याय का शकिार हो जाएँ, जो कहते हैं: *'यहोवा चापलूसी करने वाले होठों और कपट से बोलने वाली जीभ को नाश कर देगा'* (भजन संहति 11:4)। कोई भी आलसी या सुस्त न रहे, कहीं ऐसा न हो कि वे संत पौलुस की नदिा के दायरे में आ जाएँ, जो कहते हैं: *'यदि कोई काम करने को तैयार नहीं है, तो उसे खाने भी न दयिा जाए'* (2 थसि्स. 3:10)। कोई भी अतबिुद्धमिान न बने, कहीं ऐसा न हो कि उन्हें उसी का अनुभव करना पड़े जसिकी चेतावनी संत याकूब देते हैं, कहते हुए: *'प्रभु घमण्डी लोगों का वरिोध करते हैं, परन्तु नम्र लोगों पर अनुग्रह करते हैं'* (याकूब 4:6)।

13. हम सभी प्रभु में प्रसन्नचति्त होकर चलें और उसकी आज्ञाओं का पालन करें, हम में से प्रत्येक अपने जीवन की संगति में, जैसे अपनी कोष में लाएँ (मरकुस 12, 43) जो कुछ भी उनकी शक्ति और उनके बस में है - कुछ लोग प्रबंधकत्व के माध्यम से, कुछ लोग सेवकाई के माध्यम से, कुछ लोग बीमारों की देखभाल के माध्यम से, कुछ लोग जप के माध्यम से, कुछ लोग पढ़ने के माध्यम से, कुछ लोग बागवानी के माध्यम से, कुछ लोग सुलेखन के माध्यम से - और सामान्य रूप से, कोई भी ऐसा न हो जो कुछ भी योगदान न दे, और न ही कोई प्रभु के सामने खाली हाथ आए। प्रभु न केवल बड़ी भेंटें, बल्कि छोटी से छोटी भेंटें भी स्वीकार करते हैं; वह तो उस व्यक्ति को भी स्वीकार कर लेते हैं जो मृत्यु की याद में एक श्लोक का पाठ करता है, यदि वह शायद कुछ और करने में असमर्थ हो, ठीक वैसे ही जैसे

उन्होंने विधवा के दो पैसा स्वीकार किए थे। ईश्वर कर्मों का मूल्य, करने वाले की इच्छा को देखकर निर्धारित करता है। चूंकि हमारे पास एक ऐसा ईश्वर है जो अच्छा और अत्यंत दयालु है, और जो हमारी मुक्ति की कामना हम स्वयं से भी अधिक करता है, आइए हम उसके धार्मिक मार्गों पर चलें, और हमें अपनी आत्मा के लिए शांति मिलेगी।

14. हमारे सुसमाचार के मार्ग पर आने वाली आकस्मिक कठिनाइयों में से कोई भी किसी की प्रगति में बाधा न बने; परन्तु भले ही मार्ग कठिन और दुस्साहसिक हो, हम आगे बढ़ते रहें, हम उत्साही रहें, हम साहसी रहें, हम पहाड़ से पहाड़, टीले से टीले तक पार करते रहें, जब तक कि हम प्रभु के पर्वत पर न चढ़ें और उसकी पवित्र शान्ति की जगह में न खड़े हो जाएँ। जो एक साथ यात्रा करते हैं, वे एक-दूसरे के लिए रास्ता आसान बनाते हैं। जैसा कि प्रेरित कहते हैं, *'एक-दूसरे के बोझ उठाओ', 'तुम भी'* (गलातियों 6:2)।

१५. ऐसा हमेशा होता है कि आज डरपोकता होती है, और कल साहस; अब एक उदास स्वभाव, और अचानक प्रेरणा का उछाल; इसी क्षण भावनाओं का विद्रोह, और अगले ही पल, ईश्वर की सहायता और उनका दमन; कल आप वैसे नहीं होंगे जैसे आप कल से पहले थे, और न ही आप हमेशा ऐसे ही रहेंगे, मेरे प्रिय; परन्तु परमेश्वर का अनुग्रह आप पर होगा, और प्रभु आप में विजय प्राप्त करेंगे। तब आप कहेंगे: 'हे प्रभु, आप अब तक कहाँ थे?' और वह आपसे उत्तर देंगे: 'मैं तुम्हारी जद्दोजहद को देख रहा था, और मैं प्रतीक्षा कर रहा था।' इसलिए हमें धैर्य रखना चाहिए, और थोड़ी उदारता दिखाना चाहिए; हमें खुद को संयमित करना चाहिए और अपने शरीर को वश में करना चाहिए, उन्हें दास बनाकर और अपनी वासनाओं को अपने से दूर फेंककर।

16. बिना प्रयास किए किसका ताज सजा है? बिना कष्ट उठाए किसने विश्राम पाया है? अपनी आत्मा में सद्गुणों को बोए और पोषित किए बिना जीवन का फल कौन काटता है? बोओ, कलम लगाओ, परिश्रम करो और पसीना बहाओ, मेरे बच्चों, हे ईश्वर के कर्मियों, हे स्वर्गदूतों के अनुकरक, हे अदेह प्राणियों के प्रतिस्पर्धियों! क्या आप इन संघर्षों का अंत नहीं देखते? क्या हमारे भाई अक्सर नहीं मरते? क्या हम हर दिन दिवंगतों के लिए शोक-गीत नहीं गाते? तो फिर, हे कमजोर-दिल, तुम अपने आपको दुख से क्यों सताते हो? मृत्यु तुम्हारे पास भी आएगी। आज नहीं - कल तुम मरोगे। कितनी असीम आनंद के साथ तुम इस संसार से प्रस्थान करोगे और स्वर्ग में, परमेश्वर के पास, अथाह प्रकाश में, अकथनीय आनंद में, अकल्पनीय महिमा में, स्वर्गदूतों के निवासों में, प्रभु के प्रांगणों में, प्रथमजात वालों की मंडली में, अब्राहम की गोद में आरोहण करोगे? और वहाँ आप किसे देखेंगे? प्रभु परमेश्वर, हमारे उद्धारकर्ता; परमेश्वर की माता, जगत की रानी; निराकार शक्तियाँ; करूब और सेराफ; और पवित्र प्रेरितों, भविष्यद्वक्ताओं, उच्च पदाधिकारियों, शहीदों, आदरणीय लोगों और सभी संतों की सभी पंक्तियाँ, जिनकी संख्या अनगिनत है। क्या यह आपको आश्चर्य से भरता, प्रेरित नहीं करता, और आपको सभी परिश्रम, सभी दुख और सभी विपत्तियों से ऊपर नहीं उठाता?

२६. मठवासी जीवन की ऊँचाइयों से दुनिया को निहारते हुए, आप घमंड के एक उफनते सागर को देखते हैं: तो आनंदित हों, कि आप इससे मुक्त हो गए हैं।

26. 1) संन्यास जीवन की ऊँचाइयों से दुनिया को निहारते हुए, आप घमंड का एक उफनता हुआ सागर देखते हैं; तो आनंदित होइए, कि आप इससे मुक्त हो गए हैं। – 2) फिर, अपनी दृष्टि स्वयं पर केंद्रित करते हुए, आप वही चीजें (माता-पिता, रिश्तेदार, संपत्ति आदि) देखते हैं, लेकिन एक दिव्य और आनंदमय रूप में; इसलिए अच्छी तरह दौड़ो, ताकि तुम इसे प्राप्त कर सको। – 3) उन सद्गुणों की एक सूची जो ऊपर की ओर ले जाती हैं और उन दुर्गुणों की जो नीचे की ओर ले जाती हैं। – 4) मठवासी कमियों के बारे में एक विलाप। [1, 29]

१७. मैं अब आपको प्रेरितों की इस आज्ञा के साथ अपना उपदेश देना आरंभ करूँगा: *'प्रभु में सदा आनन्दित रहो'* (फिलि. ४:४)। और आप आनंदित और हर्षित होकर कैसे नहीं चल सकते, जब परमेश्वर, जो अपनी सारी बुद्धि से सभी चीजों को निर्धारित करता है, की पूर्वज्ञान और पूर्वनिर्धारित बुलावा से, आपको इस सुसमाचार के जीवन-मार्ग में स्वीकार किए जाने के योग्य समझा गया है और अब आप एक उच्च निवास के एक ऊँचे दृष्टिकोण पर विराजमान हैं, आप मानव जीवन की तुच्छ और नीच व्यर्थताओं को नीचे से देखते हैं, जो समुद्र की तरह उछाली जाती हैं और चीजों की लगातार बदलती गति से इधर-उधर ले जाई जाती हैं। जैसा कि आप देख सकते हैं, वहाँ कुछ भी स्थिर नहीं है; कुछ भी एक ही स्थिति में नहीं रहता; लेकिन राजा बदलते हैं, राजकुमार गिरते हैं, और पृथ्वी के शासक, अन्य मनुष्यों की तरह, मर जाते हैं; जो विवाह करते हैं वे जल्द ही तलाक ले लेते हैं, छोड़ जाते हैं और पीछे छूट जाते हैं; सौंदर्य फीका पड़ जाता है, जवानी तेज़ी से बीत जाती है, सुख जल्द ही समाप्त हो जाता है, सभी सांसारिक संपत्तियाँ एक छाया और एक सपने की तरह गायब हो जाती हैं; मृतकों से बिछड़ने पर रोना और छाती पीटना, प्रियजनों से अलगाव पर निराशा और हताशा, अपनी इच्छाओं की पूर्ति के प्रयास में असफलताओं पर असहनीय पीड़ा—चाहे वह विवाह हो,

पद, धन-संपत्ति या सुख-आनंद; ईर्ष्या और जलन की पीड़ा, आकस्मिक अपमान और कलंक—और इसी तरह बहुत कुछ।

18. तो फिर, तुम्हें किसलिए बुलाया गया है, और, प्रभु के पर्वत पर चढ़ने के बाद, तुम क्या देखते हो? – यह तुम्हारे सामने है: पृथ्वी के बदले स्वर्ग; माता-पिता के बदले ईश्वर, सच्चे और परम पिता; रिश्तेदारों के बदले समान विचारधारा वाले साथी और भाई; मित्रों के बदले अदेह और दैवीय स्वर्गदूत; खज़ानों के स्थान पर – सद्गुणों का धन; उच्च पदों के स्थान पर – स्वर्ग का अकथनीय महान और अनंत राज्य; व्यभिचार के सुखों के स्थान पर – मधुर और अतृप्त वैराग्य; सभी सांसारिक संतुष्टि के स्थान पर – अगम्य और अकथनीय आशीर्वाद। यह जानते हुए, एक जीवित परमेश्वर से डरें; आध्यात्मिक रूप से स्वयं को मजबूत करें; आज्ञाओं के कवच और पूर्ण उपकरण को धारण करें; आध्यात्मिक तलवार, जो परमेश्वर का वचन है, उठा लें; और इस युग के अंधकार के अधिपतियों और दुष्टात्माओं को नीचे फेंक दें, ताकि आप दिव्य पौलुस के साथ पुकार सकें: *'मैंने अच्छा संघर्ष किया है, मैंने दौड़ पूरी कर ली है, मैंने विश्वास बनाए रखा है: अब मेरे लिए धार्मिकता का मुकुट रखा गया है, जिसे प्रभु, वह धर्मी न्यायी, उस दिन हम सभी को प्रदान करेंगे'* (2 तीमुथियुस 4:7)।

19. संत दाऊद गाते हैं, *'वे स्वर्गों में आरोहण करते हैं और गहराइयों में उतरते हैं।'* इसे आध्यात्मिक रूप से लेते हुए, हम यह पाठ सीखते हैं: जो कोई भी, धीरे-धीरे, जो उचित रूप से किया जाना चाहिए उसे ठीक करता है, वह सद्गुण के उच्चतम स्तरों पर आरोहण करता है; लेकिन जो कोई भी लापरवाही को अपनाता है, वह विनाश की खाई में उतर जाता है। अब हम विचार करें कि कौन सी चीज़ हमें ऊपर उठाती है और कौन सी हमें नीचे लाती है। निम्नलिखित हमें ऊपर उठाते हैं: मसीह-सदृश आज्ञाकारिता; ईश्वर से जुड़ी नम्रता; आत्म-बढ़ावा, सभी दिखावों, प्रधानता के प्रेम से विमुखता, प्रदर्शन की इच्छा से, चालाकी से, दूसरों के दुख में सुख मानने से, महत्वाकांक्षा से, उपहास और ताने से, अपने अतीत के किसी भी काम पर घमंड करने से (जैसा तब होता है जब कोई कहता है: 'मैं अमुक था, मेरे पास यह और वह था, मैंने अमुक कर्म किए।' – ओह, क्या अपमान की बात है! जो छिपाया जाना चाहिए, वह वह इसका ढिंढोरा पीटता है, अपनी दिव्य पुकार को भूलकर)। मैं और जोड़ना चाहूँगा: संयम, भाईचारे के साथ मिलनसारिता, माफी मांगने की तत्परता, सिर और गर्दन झुकाना, जमीन की ओर आँखें और पलकें झुकाना, हाथों और पैरों की नम्र मुद्रा, अपने कपड़ों या पहनावे की परवाह न करना, और सबसे बढ़कर – आत्मा की हर गतिविधि का स्पष्ट स्वीकारोक्ति – और, इस विषय पर और अधिक न टिकाने के लिए, – हर दूसरी अच्छी भावना, स्वभाव और कर्म जो उपरोक्त का समान है। – लेकिन निम्नलिखित को नीचा दिखाया जाता है: परमेश्वर का भय; जहाँ परमेश्वर का भय नहीं है, वहाँ हर प्रकार का दुख, क्रोध और ईश्वरनिंदा है (इफिसियों 4:31), प्रेरित के अनुसार, और उनके परिणाम: घमंडी तर्क, घमंडी चेहरा, टेढ़ी निगाह (या ऊपर उठाई हुई निगाह), फूली हुई नाक की नथनी, सिकुड़ी हुई पलकें, और खड़े हुए बाल।

20. अपने पापों के कारण, मैं भाईचारे में कुछ ऐसे लोगों को देखता हूँ जो भटक गए हैं और परमेश्वर के साथ अपनी वाचाओं और अपने गंभीर वचनों को भूल गए हैं—और इस तथ्य को भी कि भविष्य में हमें भयानक न्याय-सिंहासन के सामने खड़ा होना है। हे मूर्ख और हृदय में सुस्त (लूका 24:25), आओ हम उस बात को याद रखें जिस पर हम बिल्कुल शुरुआत में सहमत हुए थे और संकल्प लिया था! क्या हमने यह प्रतिज्ञा नहीं की थी कि हम तड़पेंगे, भूखे रहेंगे, खुद को तैयार करेंगे, उपहास, अपमान, घाव और यहाँ तक कि मृत्यु को भी सहेंगे? लेकिन अब हमारे बीच ऐसे लोग कहाँ हैं, जब किसी को भी थोड़ी सी अप्रिय घटना हो जाती है, और वे पूरी तरह से निराश हो जाते हैं? – तो चलिए, हम सभी अपने बारे में विचार करें, और ईश्वर के भय को हृदय में धारण करें। हम में से कोई भी उस चीज़ पर लौटने की हिम्मत न करे जिसे हमने त्याग दिया है। आइए ऐसा न होने दें कि हम उनके भटक जाने पर आम लोगों पर तरस खाते रहें, और वे स्वयं हमारी पापी प्रकृति के कारण इस जीवन में और आने वाले युग में, दोनों में, हम पर कड़वाहट से शोक करें। इससे क्या फर्क पड़ता है अगर वे आपको 'पवित्र पिता' कहें?! जब हम स्वयं जंगली जानवरों की तरह धन्य-विहीन और असंयमी बने रहें, तो लोगों का हमारे आशीर्वाद की मांग करना क्या मायने रखता है?! – ईश्वर और हमारे प्रभु यीशु मसीह के पिता उन लोगों की रक्षा करें जो उनके मार्ग पर चलते हैं, और जो उनके आज्ञाओं के मार्ग से भटक गए हैं, उन्हें वह वापस सही मार्ग पर ले आएं!

27. दैनिक चर्च सेवाएँ, सीमित साधन-संसाधन, सामुदायिक जीवन के नियमों का पालन, जुर्माने और प्रायश्चित्तों के लिए बहुत परिश्रम और धैर्य की आवश्यकता होती है; लेकिन चूँकि यह उद्धार की ओर ले जाता है, और इसके लिए मुकुट जीते जाने हैं, इसलिए हौसला रखो

27. 1) दैनिक चर्च सेवाएँ, सीमित साधन, सामुदायिक जीवन के नियमों का पालन, जुर्माने और प्रायश्चित्त में बहुत परिश्रम और धैर्य की आवश्यकता होती है; लेकिन चूँकि यह उद्धार की ओर ले जाता है, और इसके लिए मुकुट

जीते जाने हैं, हौसला बढ़ाओ। – 2) जो अच्छा है उसमें बुद्धिमान और जो बुरा है उसमें सरल-चित्त होने का प्रयत्न करो; सबसे बढ़कर, तुम्हारा वचन सुव्यवस्थित हो। [1:31]

21. प्रार्थना करो और प्रभु से निवेदन करो कि वह मुझे अपने विनम्र होठों से बोलने के लिए शब्द प्रदान करे, ताकि तुम्हारी आत्माओं को सांत्वना और प्रोत्साहन मिल सके: क्योंकि मैं देखता हूँ, हे मेरे भाइयो, कि तुम दिन-प्रतिदिन कितनी बड़ी परिश्रम सहते हो – जागते रहकर और प्रार्थना के नियम का पालन करते हुए, इस उद्देश्य के लिए आधी रात को और आधी रात से पहले उठते हुए, और फिर नियत समय पर, दिन में सात बार प्रभु के धार्मिकता के मार्गों के विषय में उसकी स्वीकारोक्ति करने के लिए उसके पास आते हो, घुटने टेककर और अनेक प्रणाम करके, साथ ही बुरे विचारों को दूर करते हुए और उन्हें अपने पुरखों के सामने प्रकट करते हुए, इससे उत्पन्न लज्जा को सहते हुए, और उसके लिए प्रायश्चित करते हुए, जिससे दुष्ट के अग्नि-बाण परास्त होते हैं; मैं इसमें जोड़ूँगा जागने पर विजय प्राप्त करना, भोजन और पेय, विश्राम और सैर की इच्छा को काटकर संयम रखना, जिनकी देह बड़ी उत्सुकता से लालसा करती है, भाइयों के साथ संगति, नम्रता से कपड़े पहनना, जो कभी-कभी अशुद्ध, अव्यवस्थित, फटे-पुराने और छेददार होते हैं; और इसके अलावा: इसकी बात मत करो, उस पर मत देखो, उसे मत छूओ, वहाँ मत जाओ, इसमें खुद को रोको, उस में हतोत्साहित मत होओ, उसके लिए हमेशा तैयार रहो, उससे मुँह मत मोड़ो... यह सब और इसी तरह की चीजें कठिन, बोझिल और कड़वी हैं। लेकिन चूँकि यह सब हमारे आत्माओं के उद्धार की ओर निर्देशित है, इसलिए यह हमारे लिए मीठा, आसान और आरामदायक होना चाहिए, ताकि हम प्रेरित के साथ अपने बारे में कह सकें: *'इन सब बातों में हम उस ने हमें प्रेम* किया'—प्रभु और परमेश्वर (रोमियों 8:37)—*के द्वारा विजेता से भी बढ़कर हैं*। हमारे लिए तैयार किया गया स्वर्गीय मुकुट शहादत का मुकुट, और अकथनीय आनंद, और शाश्वत आशीर्वादों का आनंद है। *'तब धैर्य धारण करो, और हे प्रभु में आशा रखने वालों, तुम्हारे हृदय दृढ़ हों'* (भजन संहिता 30:35)।

२२. अपने तपस्वी और धन्य जीवन-पथ का बार-बार अभ्यास करो, ताकि उसमें लंबे समय तक बने रहने से तुम सद्गुणों का भंडार प्राप्त कर सको और जैसे-जैसे तुम शरीर में बढ़ते हो, वैसे-वैसे आध्यात्मिक परिपक्वता में भी प्रगति करो, और नम्रता, आज्ञाकारिता और अपनी इच्छा को वश में करने में बुद्धिमान और कुशल बनो, परंतु घमंड, विवाद और छल में मूर्ख और बेवकूफ न बनो: *'क्योंकि छल करने वाले काटे जाएंगे, परन्तु जो यहोवा की प्रतीक्षा करते हैं वे पृथ्वी के अधिकारी होंगे'* (भजन संहिता 36:9)। अपनी मनमानी सेवा के कार्यों द्वारा एक-दूसरे के लिए ठोकर का कारण न बनें, बल्कि हमेशा उस बात को चुनने और करने का प्रयास करें जो आपके पड़ोसी के लिए हानिरहित हो। *'तुम्हारा वचन'*, मेरे बच्चों, *'हमेशा नमक की तरह अनुग्रह से परिपूर्ण हो'* (कुलु. 4:5)—न दिखावटी, न असभ्य, न अहंकारी, न बोझिल, न हानिकारक, न द्वेष या अहंकार की भावना से भरा, न लज्जास्पद, न विरोधाभासी, न विवादास्पद, न बकबक करने वाला, न हास्यास्पद, न लापरवाह और न आलसी; परन्तु सम्मानजनक, सौम्य, , सौम्य, ईमानदार, शांतिपूर्ण, अनुनयशील, पश्चातापी और विनम्र चिंतन से परिपूर्ण, आज्ञाकारी, शांत, संयमित और व्यवस्थित हो, ताकि इसके द्वारा हम एक दूसरे के उद्धार और पारस्परिक निर्माण के लिए सेवा कर सकें। – शैतानी वासनाओं के प्रकोप को दबाओ, और शत्रुतापूर्ण विचारों के झुंड को भगा दो; क्योंकि इससे हमारी आध्यात्मिक स्वास्थ्य और भलाई, हमारी समृद्धि और हमारे जीवन का शुभ क्रम, और हर अच्छी बात के लिए हमारी तत्परता और योग्यता आती है।

28. आप अच्छी मिट्टी की तरह हैं, जो सद्गुण का फल देती है, चाहे वह यह हो या वह

28. 1) आप उपजाऊ मिट्टी की तरह हैं, आप में से प्रत्येक अपने-अपने तरीके से सद्गुण का फल उत्पन्न कर रहा है। – मुझे इससे सांत्वना मिलती है; फिर भी मैं इस बात पर आश्चर्यचकित हूँ कि आप में से कुछ लोग, ऐश्वर्य और प्रतिष्ठा से परिपूर्ण जीवन के बाद, हमारे इस मामूली और गुमनाम अस्तित्व को स्वीकार कर चुके हैं, और यह भी कि आप सभी ने पारिवारिक बंधनों और अन्य आसक्तियों के अत्याचार को त्याग दिया है: वास्तव में, यही शहादत है। – 2) पुरस्कार महान है; इसी खातिर हमारे जीवन की कठिनाइयाँ, जो खून बहाने के कगार पर हैं, सहनीय हो जाती हैं। [1, 32]

२३. तुम, उपजाऊ और अच्छी भूमि की तरह, मेरी विनम्रता के वचन को ग्रहण करते हुए, हमेशा अच्छे फल देते और उत्पन्न करते हो, जैसे कि सद्गुणों की विविध सुंदरताओं से सुसज्जित एक स्वर्ग। क्योंकि मैं देखता और पहचानता हूँ कि आपके भीतर क्या हो रहा है और आप किसके लिए उत्सुक हैं, और मैं एक के चरित्र की नम्रता, दूसरे के उत्साह की गर्माहट, एक की मौनता, दूसरे की काव्य-कला, एक और की लगन, और एक और की सतर्कता से सांत्वना पाता हूँ, और अन्य गुणों से भी; फिर भी आप सभी हमारे सामुदायिक जीवन के नियमों का पालन करने में एक अजेय, अटूट और अडिग दृढ़ता के कारण – और मैं इस बात पर आश्चर्यचकित हूँ कि आप में से जो कभी सुख-सुविधा

में रहते थे, उन्होंने प्रभु के लिए जीना शुरू कर दिया है, धीरे-धीरे वह सब कुछ भूल गए हैं, और, पूरी तरह से अलग इंसान बनकर, वर्तमान कठिनाइयों और अभावों को साहसपूर्वक सहन करते हैं, और इस प्रकार अपने पिछले पापों का प्रायश्चित और सुधार करते हैं। परन्तु सचमुच, मसीह का प्रेम सब कुछ कर सकता है, जो घमण्डी लोगों को नम्रता की ओर झुकाता और खींचता है, ऐश्वर्य के जीवन के आदी लोगों को थोड़े में संतुष्ट होने के लिए, और लालची लोगों को गरीब और संयमी बनने के लिए। और केवल ये ही नहीं हैं जो मुझे चकित करते हैं, बल्कि वे सभी जो प्रभु के सुसमाचार के लिए सब कुछ त्याग चुके हैं: माता-पिता, भाई, पत्नियाँ, रिश्तेदार, अपनी मातृभूमि, घर और रीति-रिवाज। प्रत्येक ने अपने लिए प्रिय कुछ न कुछ छोड़ा है; और यह कोई असामान्य बात नहीं है कि कोई ऐसा व्यक्ति, जिसने सतही तौर पर बहुत कम बलिदान किया हो—और जिसे महान लोगों में से किसी एक से तुलना नहीं की जा सकती—वह सबसे बड़ी और सबसे भारी कठिनाइयों को सहन करने वाला निकले; क्योंकि अगर और कुछ नहीं तो, केवल यह तथ्य कि उसने पारिवारिक बंधनों के प्रभुत्व से, या किसी भी मनमाने जुनून से खुद को मुक्त कर लिया है, उसके लिए शहादत का श्रेय देने और उसे प्रेरितों में प्रमुख की तरह, प्रभु मसीह को पुकारने का साहस देने के लिए पर्याप्त है: *'हमने सब कुछ छोड़कर आपका अनुसरण किया है: तो फिर हमारा क्या होगा?'* और उत्तर में यह सुनने के सम्मान के योग्य ठहराया जाए: *'पुनरुत्थान में... तुम भी बारह सिंहासन पर बैठोगे, और इस्राएल के बारह कुल का न्याय करोगे'* (मत्ती 19:27-28)।

24. जब हमारे लिए इतने सारे पुरस्कार रखे गए हैं, तो हम सभी कैसे स्वयं को ईश्वरीय कार्यों का अभ्यास और पालन करने के लिए और अधिक प्रेरित नहीं कर सकते? हम प्रभु के लिए जीवन में सभी दुखद और बोझिल बातों को सहने में कैसे असफल हो सकते हैं? आत्म-त्याग, प्रहर, आत्म-निंदा, आज्ञाकारिता, शिक्षा, पाप-स्वीकृति और अन्य सभी परिश्रमों के कारण, जिनके कारण वह भविष्यद्वाणी का वचन हम पर लागू होता है: *'तेरे निमित्त हम दिन भर मार डाले जाते हैं; हम वध के लिए भेड़ों के समान गिने जाते हैं'* (भजन संहिता 43:23)। और सच में, आप इससे बहुत दूर नहीं हैं। क्या आप अपनी ही इच्छाओं को काटकर, फटकार के घावों से, और अपने जीवन-मार्ग में एक-दूसरे के प्रति अपनी पारस्परिक आज्ञाकारिता से मारे नहीं जाते; और क्या ऐसे अवसरों पर रक्त—भले ही शारीरिक रूप से नहीं, पर आध्यात्मिक रूप से—आपके हृदयों से नहीं बहता? परन्तु आनन्दित हो; क्योंकि तुम व्यर्थ में दुख नहीं सहते, बल्कि इसके द्वारा अपने लिए *'एक न मुरझाने वाला महिमा का मुकुट'* तैयार करते हो, जैसा कि प्रेरित कहते हैं (1 पतरस 5:4)। सच्चे ज्ञान का प्रकाश आप में चमके, साथ ही परमेश्वर के प्रति प्रेम जो आपको संसार से अलग करता है, और अनंत जीवन की लालसा जो शरीर की इच्छाओं को मार डालती है। परमेश्वर आपका मार्गदर्शन करे और आपको सभी को हृदय की शक्ति और मन की अटूट दृढ़ता के साथ, हमारी धार्मिकता के लक्ष्य तक, उच्चतम पद पर पहुंचाए।

29. बहुत जल्द, और हम यहाँ से प्रस्थान करेंगे; लेकिन हमारी विदाई एक अच्छे विदाई संस्कार के साथ हो

29. 1) बहुत जल्द हम यहाँ से प्रस्थान करेंगे; लेकिन हमारी विदाई एक अच्छे विदाई संदेश के साथ हो। – 2) आप आज्ञाकारिता के श्रम और प्रार्थना में पूरा दिन बिताते हैं, लेकिन थकें नहीं, क्योंकि इसमें ही आपका उद्धार है। – 3) संघर्षों के बीच मठ में धैर्यपूर्वक जीवन जियो, अपनी इच्छाओं और आकांक्षाओं के दमन में, अपमान और अन्य प्रकार के मूर्त दुख में… यही शहादत है। – 4) तुम्हें अंत तक धीरज रखना होगा, सभी संतों के आनंद में सहभागी होने की आशा में, और परमेश्वर की परम पवित्र माता और स्वयं प्रभु को देखने की आशा में। [1, 33]

२५. न तो, मुझे लगता है, मैं अपनी नम्रता का वचन तुम्हें प्रचार करके व्यर्थ परिश्रम कर रहा हूँ, और न ही तुम इसे सुनकर अपना समय व्यर्थ गँवा रहे हो। – परन्तु सब कुछ यहाँ नहीं है; क्योंकि पूर्ण मौन का समय निश्चय ही आएगा। हम हमेशा नहीं जिएंगे, बल्कि थोड़ी ही देर में—चाहे ईश्वर ने इसे कितना भी छोटा क्यों न ठहराया हो—या तो मैं या आप इस जीवन से चले जाएंगे। लेकिन हमारा उद्देश्य यह है कि यहाँ से हमारा प्रस्थान अच्छे विदाई शब्दों के साथ, आज्ञाओं के पालन के साथ, और हमारे प्रभु यीशु मसीह की कृपा के साथ हो।

२६. मैं देखता हूँ कि आप हमेशा की तरह अपने कर्तव्यों को निभाने में कितने परिश्रमी हैं: कुछ लोग रोटी तैयार करने और पकाने में, कुछ दाख की बारी की देखभाल में, कुछ काम-काज पर, कुछ अपने शिल्पों में - सिलाई, लिखाई, धोने, पकाने, खाना बनाने, भोजन तैयार करने, लोहारखाने में, भंडार में, औषधालय में, – जबकि साथ ही आप कभी भी सभी चर्च सेवाओं में शामिल होने से चूकते नहीं हैं: घंटियाँ – पहली, तीसरी, छठी और नौवीं, वेस्पर्स और कॉम्प्लाइन; और जब आप इकट्ठा होते हैं, तो आप विनम्रता से खड़े होते हैं, गाते हैं और प्रार्थना करते हैं – और यह सब आलस्य या लापरवाही के बिना। मैं हमेशा आपके सभी श्रम, इस कठिनाई और इस बोझ को ध्यान में रखता हूँ; लेकिन निराशा में न पड़ें: क्योंकि प्रेरित कहते हैं, *'इन सब बातों में हम विजेता से भी अधिक हैं, उस द्वारा* जिसने *हमें प्रेम* किया'

(रोमियों 8:37): ताकि, यद्यपि यह परिश्रम बहुत बड़ा है, फिर भी, चूँकि इसके द्वारा हमारे लिए अनंत उद्धार और असीम आनंद प्रकाशित होते हैं, हमें इसमें आनंदित और हर्षित होना चाहिए, और स्वयं को और भी महान कार्यों के लिए समर्पित करना चाहिए, और सामुदायिक नियम के अनुसार हमारे शहीद-सदृश जीवन के संघर्ष में दृढ़ता से खड़े रहने के लिए, किसी भी बोझ के नीचे कभी न झुकने, कभी पीछे न हटने, और किसी भी दुखद या कठिन चीज़ के सामने कभी पीछे न हटने के लिए।

27. मैं तुम से विनती करता हूँ: दृढ़ खड़े रहो, हर एक भले काम और हर एक सद्गुण के लिए यत्न करो, और प्रभु के वचन के अनुसार, अपने धीरज से अपनी आत्माओं को बचाओ। जैसे-जैसे आप मृत्यु के घड़ी की ओर देखते हैं, स्वयं को प्रतिदिन नया करें; बाकी सब को गौण मानते हुए, स्वयं को संयम और आध्यात्मिक प्रेम में व्यवस्थित रखें, और हर तरह से हानिकारक अहंकार से बचें, ताकि आप एक-दूसरे के प्रति आज्ञाकारी रहें, बिना शिकायत, बिना प्रतिद्वंद्विता, बिना ईर्ष्या, बिना घमंड के, हर पड़ोसी की भलाई को अपनी भलाई समझना, कभी-कभी किसी अवसर पर अपने भाई की आपसे की गई लापरवाही को सहन करना, अपने ऊपर आने वाली निंदाओं और अपमानों को आध्यात्मिक उपचार के रूप में बुद्धिमानी से स्वीकार करना, और सभी बातों में हमारे सदा-जीवित प्रभु की उपस्थिति में नम्रता और ईमानदारी से, खुले तौर पर, बिना किसी कपट या भ्रम के, काम करना और आचरण करना। तो, यह हमारा शहीदी बलिदान है! – और यही कारण है कि कुछ उत्साही आत्माएँ अक्सर बाहरी यातना देने वालों के हाथों मसीह के लिए पीड़ा सहने की कोशिश करती हैं। – यहाँ (अर्थात्, किनोविया में) साहस और धार्मिकता के साथ परीक्षाओं, पराक्रमो और स्वीकारोक्तियों को सहन करो, बaal के सामने घुटने न टेकते हुए, अपनी आत्मा को वासनाओं के हवाले न करते हुए, अपने वचन से मुकर न होते हुए, उस मार्ग से न हटते हुए जिस पर तुम दौड़ रहे हो, और न ही उस स्थान से जहाँ तुम खड़े हो: और आप भी उन लोगों के बराबर सम्मानित होंगे जिन्होंने शहादत में अपना रक्त बहाया, जैसा कि पवित्र पिता गवाही देते हैं।

28. यह मत समझो कि जिसने कुछ केवल एक बार, या कुछ बार सहन किया है, वह पहले से ही बच गया है; बल्कि जो कोई भी जो कुछ भी हो सकता है उसे समान भाव से सहन करता है, और अंत तक ऐसा करना जारी रखेगा, वही व्यक्ति बच जाएगा। परन्तु यदि कोई, यात्रा के बीच में या अन्त के समीप, कमज़ोर पड़ जाता है और धन्य आज्ञाकारिता का परित्याग कर देता है, तो वह व्यक्ति अत्यन्त दुखद पतन का शिकार होगा, जिसके साथ शोक और विलाप होगा; न केवल इसलिए कि वह इससे अपने सभी पूर्व के श्रम को नष्ट कर देगा, बल्कि विशेष रूप से इसलिए कि वह परमेश्वर के धर्मी न्याय के दिन अनिवार्य रूप से दण्ड के अधीन होगा। इसलिए, परमेश्वर की महिमा के लिए, अपनी आत्माओं के उद्धार के लिए, और स्वर्ग में हमारे पितरों के साथ एक धन्य विरासत के लिए, अपने जीवन के सभी दिनों में हर बात में स्वयं को शुद्ध और निर्दोष बनाए रखें; ताकि हम वहाँ आनन्दित और प्रसन्न होने के योग्य ठहरें, जहाँ महान एंथनी, वह प्रकाशमान व्यक्ति, चमके; जहाँ ईश्वर-वाहक यूथिमीयस और मसीह-वाहक पाकोमियस हैं; जहाँ अत्यधिक-स्तुत्य सावास, सर्व-धन्य थियोडोसियस, और ईश्वर-प्रकाशित डोरोथियस हैं; जहाँ स्वर्गदूतों-समान डोमेटियन, सर्व-पवित्र अकाकियोस, और ईश्वर-प्रसन्न डोसिफियस, जहाँ सदा-जीवित बेसिल—मेरा तात्पर्य ईobedient[83] से है—आत्मा से परिपूर्ण जकरियाह, और ईश्वर के सेवक अफ्रे, और अन्य लोगों के बारे में तो क्या कहा जाए? – जहाँ बारह प्रेरितों में अग्रगण्य पतरस और पौलुस हैं, जहाँ महाधर्माध्यक्षों, पुरोहितों और पवित्र शहीदों के निवास हैं? क्योंकि भले ही हम उनके बगल में खड़े होने का सौभाग्य न पाएं, हम उनकी दृष्टि, उनके संवाद और उनकी मध्यस्थता से वंचित नहीं होंगे। तो, हम आशा करते हैं कि हम स्वयं माता, हमारी सर्व-शासक और स्वामिनी, परमेश्वर की माता की उपस्थिति को देखेंगे और उनके चरणों में गिरेंगे। लेकिन हम यह भी आशा करते हैं कि हम स्वयं प्रभु, सभी के शासक और हमारे प्रभु को देखेंगे, भले ही यह अहंकारपूर्ण लगे। क्योंकि दैवीय पौलुस ने कहा है कि प्रभु से मिलने के लिए बादलों पर हमारे उठाए जाने के बाद, हम हमेशा उनके साथ रहेंगे (1 थिस्स. 4:17)। तो, जब ऐसी महिमाएँ, ऐसी खुशियाँ और ऐसा जीवन हमारे सामने हों, तो कौन प्रसन्न नहीं होगा, कौन उत्साह से भर नहीं जाएगा, कौन ईश्वर के प्रेम से प्रज्वलित और प्रेरित नहीं होगा, और कौन वह सब कुछ करने के लिए प्रेरित नहीं होगा जो उचित है, चाहे उसकी क्या भी कीमत चुकानी पड़े?

[83] देखें थियोडोसियस महान का जीवन, 11 जनवरी, और लेंटन कैनन, रविवार, ओड 2।

30. चंचलता से बचने के लिए, हमें समुदाय के नियम के अधीन होना चाहिए, जो भाईचारे के भीतर सभी अलगाव को बाहर करता है, सभी को उनके कर्तव्यों में समान दर्जे पर रखता है, और इस प्रकार हमें गिरने से बचाता है

३०.

1) असंगति से बचने के लिए, सामुदायिक जीवन के नियमों का पालन करें, जो भाइयों के बीच किसी भी अलगाव को रोकते हैं, सभी को उनके कर्तव्यों में समान दर्जा देते हैं, और इस प्रकार चूकों से बचाते हैं। – 2) तुम पहले भी प्रलोभनों का सामना कर चुके हो, लेकिन प्रभु ने तुम्हारी मदद की: तुम उन पर काबू पा गए; अब भी हार मत मानना, और वे चले जाएँगे। – 3) जैसे प्रभु के सामने मुकदमे में खड़े हों, वैसे ही मठ के गुणों में आचरण करो, और उनमें दिन-ब-दिन उत्तम बनो। [1, 341]

१. आपकी प्रगति देखकर, मैं ईश्वर की महिमा करता हूँ और प्रभु में आनंदित होता हूँ; परन्तु मुझे इच्छा-शक्ति की दुर्बलता और विचारहीनता से उत्पन्न होने वाली मानव संकल्प की चंचलता और अस्थिरता से भय लगता है। क्योंकि केवल वही धन्य नहीं है जो एक अच्छा काम शुरू करता है, बल्कि वही है जो उसे परिपूर्ण करता है, उसमें अभ्यस्त हो जाता है और उसमें उत्कृष्टता प्राप्त कर लेता है। लेकिन हमेशा एक ही मानसिकता में बने रहना और सर्व-दुष्ट पाप की मनमानी पर काबू पाना कितना कठिन है; इसलिए मैं आपसे निवेदन और विनती करता हूँ: आइए हम परमेश्वर के सच्चे मार्ग, राजसी मार्ग - मध्यम मार्ग - पर चलें, न तो दाहिने और न ही बाएँ मुड़ते हुए, बल्कि सामुदायिक जीवन के नियमों, आज्ञाओं और कानून के अनुसार, आइए हम जीवन के हर क्षण में जो हमसे अपेक्षित है, उसे हमेशा करें। हालाँकि, सामुदायिक जीवन के लिए यह आवश्यक है कि हर कोई हर चीज़ को एक ही तरह से देखे, और हर कोई हर चीज़ की इच्छा एक ही तरह से करे: इसमें कोई निजी इच्छाएँ या व्यक्तिगत आकांक्षाएँ नहीं होतीं; न कोई आत्म-महत्व या चयनात्मक पक्षपात; न कोई गुप्त योजनाएँ या कपट; न कोई जिज्ञासु उत्सुकता या हर बात में दखलअंदाजी; न कई चीजों का मोह या कई लक्ष्यों के पीछे भागना, जो थकान और अपनी शक्ति की हानि का कारण बनता है; यह संयम, प्रार्थना, पश्चाताप, नंगे फर्श पर सोने, और अन्य प्रथाओं से प्रेम करता है; फिर भी सभी बातों में यह धन्य आज्ञाकारिता के एक ही नियम का पालन करता है, और उसी के माध्यम से सभी चीजों को अपनाता है और हर बात में उसी से निर्देशित होता है, जैसा कि धर्मपिता आदेश देते हैं।

२. मैं तुमसे विनती करता हूँ, विश्वास की चट्टान पर दृढ़ खड़े रहो और सद्गुण के मार्ग पर निर्दोष होकर चलो; और हो सके तो मेरी आँखें तुम में से किसी को भी किसी पाप के कारण शैतान का शिकार न देखें, चाहे वह देह की वासना हो, या आत्म-इच्छा की बीमारी, या गर्व का अहंकार, या दंभ, या कोई अन्य जुनून। तुमने परिश्रम किया है और अपने आत्माओं के कोष में सद्गुणों का भंडार एकत्र किया है। आप में से प्रत्येक को मठ-जीवन में प्रवेश करने के बाद से सामना की गई प्रलोभनों की प्रकृति और संख्या याद है, कि कैसे आप थक गए, आपका हौसला पस्त हो गया, और आप जीवित रहने की आशा खो बैठे, शैतानी विचारों से घिरे और घायल हो गए, या सामुदायिक जीवन की कठिनाइयों और परेशानियों से; और कैसे हमारे कृपालु ईश्वर ने, एक के बाद एक परीक्षाओं की श्रृंखला के माध्यम से, आपको इन सब से पार लगाया, आपको उस विनाश से बचाया जो आपको धमकी दे रहा था, और आपको आपके धैर्य के अनुरूप पुरस्कार प्रदान किया। जब हम इन कारनामों - और जो कुछ भी सहा और प्राप्त किया गया है - पर मनन करते हैं, तो हमें अपनी दृष्टि को उस पर भी केंद्रित करना न भूलना चाहिए जो वर्तमान में हमारे सामने है और जिसकी भविष्य में आशा है; और ईश्वर करे कि कोई भी दुखद विपत्ति, चाहे वह मनुष्यों से हो या चालाक राक्षसों से, हमें हमारे अच्छे इरादों से भटका न सके।

३. मैं आपसे विनती करता हूँ, कि आप हमेशा ईश्वर की ओर देखें और अपनी अंतिम साँस लेते समय की कल्पना करें, जब आप स्वर्गदूतों की सेना को देख रहे हों, सर्व-न्यायी न्यायाधीश के समक्ष अपना हिसाब दे रहे हों और अपने अच्छे और बुरे कर्मों का उचित प्रतिफल प्राप्त कर रहे हों, भलाई करने का प्रयास करें, प्रलोभनों पर विजय प्राप्त करें, अपने मार्ग से हर ठोकर और बाधा को दूर करें, और आनंदपूर्वक दिव्य जीवन के पर्वत पर चढ़ें, जब तक कि वह प्रतीक्षित दिन न आ जाए। ईमानदारी, विनम्रता, पारस्परिक सम्मान, मानसिक एकता, और सेवा, शारीरिक श्रम, भजन-गायन, प्रार्थना सभा, और सभी अच्छे और धार्मिक कार्यों के प्रति उत्साह को विकसित करें। ये बातें आपके पास पहले से ही हैं, परन्तु मैं इनके विषय में इसलिए बोलता हूँ कि आप इनसे और भी अधिक धनी होने के लिए अधिक लगन से यत्न करें; आपने उन्हें पहले ही प्राप्त कर लिया है, परन्तु मैं आपको इसका स्मरण दिलाता हूँ कि आप उन्हें हमारे प्रभु यीशु मसीह में और भी अधिक परिमाण में प्राप्त करने के लिए अधिक लगन से यत्न करें।

31. हम यहाँ जो कुछ भी सहते हैं, उसका एक अकथनीय पुरस्कार होगा; अतःहमें अपने कठिन मार्ग पर आलस्य के बिना दृढ़ता से आगे बढ़ना चाहिए, उन संतों के पदचिन्हों पर चलते हुए जो हमसे पहले चले गए हैं, जो हमारे ही जैसे लोग थे।

31. 1) जो कुछ भी हम यहाँ सहते हैं, उसका अकथनीय प्रतिफल वहाँ मिलेगा; अतःहमें अपनी कठिन यात्रा में सुस्त न होना चाहिए, उन संतों के पदचिन्हों पर चलते हुए जो हमसे पहले चले गए हैं, जो हमारे ही जैसे लोग थे। – 2) वे मठ के भीतर विभिन्न कर्तव्य निभाने वालों की पूरी सूची विस्तार से देते हैं, और उन सभी को यह आज्ञा देते हैं: अपने कार्यों को जैसे ईश्वर के सामने, जैसे वे ईश्वर के अपने कार्य हों, ईश्वर की महिमा के लिए करें। [1, 35]

4. चूँकि आप मेरे विनम्र शब्दों को इतनी लगन और ध्यान से सुनते हैं, इसलिए मैं भी आपको उपदेश देने के लिए उत्साहित हूँ, और मैं, मानो, आपके पवित्र आत्माओं में मेरे विनम्र होठों के शब्दों को बोने में अतृप्त हूँ। वर्तमान में, हम दोनों यह श्रम कर रहे हैं—मैं बोलकर, आप सुनकर—और इसे व्यवहार में लाकर तथा , बोले और सुने हुए को पूरा कर रहे हैं; लेकिन जब फसल काटने और फलों को इकट्ठा करने का समय आएगा; तब, आनंद और हर्ष के साथ, हम उसी में आनंदित होंगे जिसके लिए हमने परिश्रम किया, आहें भरीं, कठिनाइयाँ झेलीं, थक गए, दुखी हुए, जिसे विश्राम नहीं मिला, सिर झुकाया, हतोत्साहित हो गए, यह न जानते हुए—जैसा कि मैं और कहूँगा— – हम भूखे रहे, हम प्यासे रहे, हमने अपने माता-पिता, मित्रों, भाइयों, रिश्तेदारों, अपने देश, और इस दुनिया की हर सांसारिक आशीर्वाद को छोड़ दिया – हम आनंदित होंगे, हमारे धर्मी प्रतिफलदाता – परमेश्वर से अपना प्रतिफल प्राप्त करते हुए – हमेशा और हमेशा के लिए। – और क्या पुरस्कार?! – महिमा और सम्मान जो कभी फीके नहीं पड़ते और शाश्वत हैं, आनंद और प्रसन्नता और जीवन जो अकथनीय और अक्षय हैं, संतुष्टि जो कभी तृप्त नहीं हो सकती, और इन आशीर्वादों में आनंद पर आनंद, अदृश्य, अकथनीय और अनुपम, स्वर्ग का राज्य, हमारे प्रभु यीशु मसीह, जो युगों के सच्चे परमेश्वर और राजा हैं, की संतान होने और विरासत पाने का अधिकार। इसे देखते हुए, हम सुस्त न हों या हतोत्साहित न हों, चाहे हमारे प्रयासों और परिश्रम में हमें (यहाँ) कितने भी दुख क्यों न झेलने पड़ें, जब हमें एक या दूसरी चीज़ करने के लिए मजबूर होना पड़ता है, और जब, आज्ञाकारिता और समर्पण में, हमें अपने दिलों में काँटों को सहना पड़ता है; परन्तु, प्रेरित के वचन के अनुसार, *'जो पीछे है उसे भूलकर और जो आगे है उसकी ओर बढ़ते हुए'*, हम *'परमेश्वर के ऊँचे बुलावे के पुरस्कार के लिए लक्ष्य की ओर बढ़ते रहें'* (फिलि. 3:13), और उन संतों के साथ दिव्य प्रेम में प्रतिस्पर्धा करें जो या तो शहादत के द्वारा या पवित्रता के जीवन के द्वारा सिद्ध किए गए हैं। तो फिर क्या? क्या वे हमारे ही जैसे मनुष्य नहीं थे, और उन्हीं वासनाओं के अधीन नहीं थे जो हम हैं? फिर भी, क्योंकि उन्होंने इसे चाहा और इसे अपने पूरे हृदय से प्रेम किया, इसलिए हम भी, यदि हम चाहें, तो ईश्वर के निकट आ सकते हैं और एक उत्कृष्ट जीवन जी सकते हैं।

५. मैं तुम्हें आग्रह करता हूँ कि तुम अपने कर्तव्यों पर पूरा ध्यान दो और उन पर लगन से परिश्रम करो: लिपिक, साफ-सुथरे और सुसंगत अक्षरों में, प्रेम और धैर्य के साथ लिखें; भंडार के प्रबंधन में एक प्रबंधक के रूप में, शारीरिक आवश्यकताओं को अथक रूप से प्रदान करने में, बिना किसी झंझट के देने और लेने में, जब आवश्यक हो तो उचित नम्रता, शिष्टाचार और क्षमा-याचना के साथ; खानदार, दाख की बारी की जुताई में; और जो कोई भी कुछ भी करे—चाहे वह खेती करना हो, भारी बोझ उठाना हो, और इसी तरह की अन्य चीजें—बिना शिकायत किए, भजनों (भजन संहिता का एक भजन दोहराना) का पाठ करना न भूलते हुए, मौन रहते हुए और बेकार की बातों से बचते हुए। माली और बाज़ार-माली बगीचे और बाज़ार-बगीचे की देखभाल में, और भाईचारे को भरपूर सब्जियां और फल उपलब्ध कराने में परिश्रम करेंगे; रसोइया भोजन की तैयारी में, बिना किसी शिकायत के आग की गर्मी और अपने काम की सारी मेहनत सहन करेगा; चिकित्सालय का परिचारक अस्वस्थ भाइयों की आराम के लिए अत्यधिक देखभाल में स्वयं को समर्पित करेगा, कुछ को अधिक उपयुक्त भोजन प्रदान करेगा, और दूसरों को आध्यात्मिक और शारीरिक दोनों तरह की बीमारियों के उपचार के लिए सांत्वना और दिलासा के शब्द देगा; कंठकर्त्ता सुव्यवस्थित और उचित गायन और स्पष्ट पाठ का आयोजन और सुनिश्चित करेगा। इसी तरह, दीपक जलाने वाला, चर्मपत्र बनाने वाला, बेकर, बर्तन बनाने वाला, भोजनशाला का परिचारक, सुनार, तांबे का कारीगर, छत बनाने वाला, दर्जी, साथ ही द्वारपाल, जगाने वाले, पहरेदार, न्यासी, शिक्षक - और अंत में व्यवस्थापक और व्यवस्थापक का सहायक - आप सभी अपने कर्तव्यों का निर्वहन ईश्वर के समक्ष, ईश्वर के कार्यों के रूप में, ईश्वर की महिमा के लिए करें।

32. राजसी मार्ग है कि सब कुछ नियम के अनुसार किया जाए; जो नियम से भटकता है वह या तो अतिशयोक्ति में या कमी में भटक जाता है; नियम से विचलन अनुमत है, लेकिन केवल मठाधीश की जानकारी से, जिसके बिना इसका अंत अच्छा नहीं होता

32. 1) राजसी मार्ग है कि सब कुछ नियम के अनुसार किया जाए; जो कोई भी भटकता है, वह या तो अतिशयोक्ति में या कमी में भटक जाता है; विचलन अनुमत है, लेकिन केवल मठाधीश की जानकारी से, जिसके बिना इसका अंत अच्छा नहीं होता। – 2) एक नवसिखुआ का कमाल है आत्मा और शरीर की चीजों से खुद को अलग करना, और खुद को आध्यात्मिक चीजों का आदी बनाना; लेकिन जब कोई आध्यात्मिक मिठास का स्वाद चख लेता है, तो राक्षसों से अन्य कठिनाइयाँ उत्पन्न होती हैं, जो सबसे दुखद होती हैं; जो कोई भी मठाधीश के मार्गदर्शन के अधीन होता है, वह यहाँ भी सुरक्षित रहता है। [1, 36]

6. जैसे किसी भी यात्रा में, शुरुआत में इस तरह की मेहनत से अपरिचित होने के कारण यात्रा कठिन और मुश्किल हो जाती है; लेकिन जैसे-जैसे यह जारी रहती है, जब मांसपेशियाँ ढीली हो जाती हैं और शरीर अधिक लचीला हो जाता है, तो यह कम कठिन और मुश्किल, और अधिक तेज़ हो जाती है: वैसे ही तब होता है जब हम प्रभु के मार्ग पर चलते हैं। ईश्वर ने हमें परीक्षाओं और प्रलोभनों के माध्यम से पहले ही यह जानने और देखने का वरदान दिया है कि कौन सा मार्ग सीधा है और कौन सा भटका हुआ है, और इसके अंत तक धीरे-धीरे कैसे पहुँचा जाए। अतः आइए हम राजसी मार्ग पर चलें, जैसा कि संतों ने सिखाया है, वैसे ही इसके वर्स्ट (माइलों) को नापते हुए, और दोनों ओर के जालों से बचते हुए, अर्थात्, दोनों तरह की कमियाँ और अधिकताएँ, जो तब होती हैं जब कोई स्थापित नियम या निर्धारित आज्ञा के विपरीत कार्य करना शुरू कर देता है, खाने-पीने, जागने, जप, स्मरण से पाठ (भजन और प्रार्थनाएँ), प्रार्थना, मौन और हृदय की गुप्त क्रियाओं में। इन सभी मामलों में सामान्य व्यवस्था से विचलन अनुमत है, लेकिन यह आवश्यक है कि यह परामर्श और मेरी जानकारी से किया जाए। और मैं तुमसे यह कहूँगा: यद्यपि मैं एक पापी हूँ, परन्तु मेरी जानकारी से किया गया हर काम और जो कुछ भी मुझ पर प्रकट किया गया है, वह प्रकाश है; परन्तु जो मुझ से अपना आप छिपाता है, वह अँधेरे में चलता है और नहीं देखता कि वह विनाश के गर्त में सिर झुकाकर जा रहा है, और ईश्वर को प्रसन्न करने का सोचकर, उनके क्रोध को भड़काता है, और दूसरों के लिए भी एक ठोकर का कारण बनता है। इसलिए, मेरे बच्चों, उस मार्ग का अनुसरण करो जिस पर आज्ञाकारिता का नियम तुम्हें चलने के लिए बुलाता है; जो तुम्हारे समझने में कठिन है, उसे समझने का प्रयास मत करो, और आज्ञाकारिता तथा मेरे विभिन्न मठाध्यक्षीय आदेशों के मामलों की जांच-पड़ताल मत करो जो जांच से परे हैं।

७. नवसिखिए के लिए महान कार्य है सांसारिक रीति-रिवाजों और शिष्टाचारों को त्याग देना और अतीत में बने हृदय की इच्छाओं को छोड़ देना; और, मानो एक तूफान और उथल-पुथल से, अस्थिर चिंताओं और जुनूनी प्रयासों से, परमेश्वर के प्रेम और निश्चिंतता के बंदरगाह में प्रवेश करना। लेकिन एक और करतब है जो उससे कम महान नहीं है—या बल्कि कहीं अधिक महान और कठिन—जो यह है: सांसारिक कलह से पलायन करके शांति का स्वाद चखने के बाद, स्वयं को अक्षुण्ण रखना; क्योंकि यहाँ कुछ विचार हमारे भीतर उठते हैं, जबकि अन्य इस जीवन के समुद्र में समुद्री डाकुओं की तरह हम पर हमला करते हैं – राक्षस जो हमारी आत्मा के जहाज को उस सभी अच्छाई के साथ डुबोना चाहते हैं जो वह अपने साथ लिए हुए है। लेकिन यदि हम नम्रता की अनुकूल हवाओं का परिश्रमपूर्वक उपयोग करें और स्वेच्छा से (अपने जहाज के लिए एक अलग मार्ग अपनाकर) अपने नाविक की गरिमा को कमजोर न करें, तो हम निस्संदेह स्वर्ग के राज्य के बंदरगाह तक पहुँच जाएँगे। अतः हे मेरे बच्चों, *हम 'साँपों की तरह चतुर और कबूतरों की तरह मासूम'* बनें (मत्ती 10:16), भलाई और धार्मिक कार्य करते हुए, और हम में से प्रत्येक अपने-अपने काम में लगन से लगे रहे। धन्य हैं वे जो धीरज धरते हैं और स्वयं को नम्र बनाते हैं, बजाय उन लोगों के जो बादलों की तरह इधर-उधर भटकते हैं, घंटा-दर-घंटा और दिन-प्रतिदिन व्यर्थ में समय बिताते हैं, क्योंकि ऐसे लोग न तो हमें और न ही प्रभु को प्रसन्न करते हैं।

३३. जब जीवन जीने के लिए परमेश्वर के वचन से मार्गदर्शन प्राप्त करना हो, तो मनुष्य को संतों के जीवन को याद करना चाहिए, जिन्होंने इसे व्यवहार में लाया – परमेश्वर के भय से आरंभ करके और गहरी नम्रता पर समाप्त करके।

33. 1) जब जीवन जीने के लिए परमेश्वर के वचन से मार्गदर्शन मांगते हैं, तो हमें संतों के जीवन को याद करना चाहिए, जिन्होंने इसे व्यवहार में लाया – परमेश्वर के भय से आरंभ करके और गहरी नम्रता पर समाप्त करते हुए। – 2) किसी को स्वाभाविक प्रतिभाओं – जैसे अपनी आवाज़, गायन और इसी तरह की अन्य प्रतिभाओं – का घमंड नहीं करना चाहिए, बल्कि सभी बातों में विनम्र बुद्धि से स्वयं को सुसज्जित करना चाहिए, जिससे सभी अच्छी चीजें

प्रवाहति होती हैं, और जसिके लिए अनुग्रह की सभी देनयिाँ प्रदान की जाती हैं। – 3) वनिम्रता का अभ्यास करके, सभी सद्गुणों में उत्कृष्टता प्राप्त करें; वशिेष रूप से वासना के खलिाफ संघर्ष में, पहली प्रलोभनों को दूर करते हुए और उनसे भी स्वयं की रक्षा करते हुए। [1, 37]

8. जो शब्द मैं अपनी वनिम्रता में आपसे कहता हूँ, वे, मेरा वशि्वास है, न तो वधिायी हैं, न ही अधकिारपूर्ण, और न ही खोखली वाक्य-वन्यिास हैं, बल्कि प्रोत्साहक और सांत्वना देने वाले हैं, जो आपको हमारे दैवीय पताओं की शक्षिा और जीवन की याद दलिाते हैं। दव्यि अनुग्रह ने हमें पहले ही प्रकट कर दयिा है कि क्रिया धर्मपरायण, धर्मी और ईश्वरीय है; और आप ठीक जानते हैं कि स्वर्ग के राज्य को प्राप्त करने के लिए आपको अपना सफर कहाँ और कैसे नर्दिेशति करना चाहिए। तब याद करो, और दनि-प्रतदिनि याद रखो कि परमेश्वर का उद्धार कसिमें नहिति है, और पवत्रि पुरखों के धर्म के काम क्या थे; और, उनके उदाहरण का अनुसरण करते हुए, अपने आत्माओं को भक्ति के रंगों से जीवंत रूप से चत्रिति करो, और अपने भीतर उनके जीवन की नकल की कल्पना करो। उनके तपस्या का आरंभ और अंत प्रभु का गहरा भय था। इससे उनमें एक ऐसी वनिम्रता प्रकट हुई जो परमेश्वर के सामने उत्तम है, जसिकी शक्ति से उन्होंने न केवल शैतान के सभी जालों को कुछ भी नहीं समझा, बल्कि स्वयं उसके जाल बुनने वाले को बाँधकर, उसे अपने पैरों तले कुचलने और उपहास करने के लिए अपने पैरों में डाल दयिा, जैसा कि सुसमाचार में कहा गया है (लूका 10:19)। कई संतों में से, मैं आपको उस एक को उदाहरण के रूप में दूँगा, जसिके बारे में कल सुबह का पाठ था। वह पाठ आदरणीय सल्विानस के बारे में था, और आपके कानों ने इन शब्दों को सुना था। आप जानते हैं कि अपनी प्रारंभकि प्रतज्ञिाओं के बाद उन्होंने स्वयं को कतिनी शानदार ढंग से साबति कयिा, और कैसे उन्होंने नम्रता के हथयिार से शैतान को मार गरिाया और उसे आँसुओं के सागर में डुबो दयिा; और, हमारे परम धन्य नवािस की ऊँचाइयों पर आरोहण करने के बाद, उन्होंने अकेले ही अपने भीतर हमारे महान पता पाकोमयिस की पूर्ण छवि का प्रदर्शन कयिा। जबकि वह अधकि समय तक जीवति नहीं रहे, फरि भी धन्य थयिोडोरेट, त्रि-धन्य पेट्रोनयिस, बहु-प्रशंसति ऑर्ससियिस और संपूर्ण पवत्रि भ्रातृत्व द्वारा उन्हें इतनी उच्च सम्मान में क्यों रखा गया, क्योंकि उन्हें स्वर्गदूतों के भजनों के बीच यहाँ से स्वर्ग ले जाया गया था?

९. वनिम्रता का दैवीय वरदान कतिना महान है! और ऐसा कोई संत नहीं है जसिने इस गुण के बनिा ईश्वर को प्रसन्न कयिा हो। आप भी इसे धारण करें; और मधुर ध्वनयिों, रागों, सुखद पठन, और अन्य प्राकृतकि उपहारों और क्षमताओं से अपना ध्यान हटाकर, आइए हम अपना सारा प्रयास इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए लगाएँ। मेरा यह कहना नहीं है कि हमें उपरोक्त अच्छे गुणों को पूरी तरह से त्याग देना चाहिए, बल्कि यह कि हमें उन्हें गौण मानना चाहिए, और उन्हें इस तरह से रखना चाहिए कि वे गुणों की स्वामनिी के पीछे-पीछे चलें। क्योंकि यदि, इन अच्छे गुणों के कारण, हम खराब आवाज़ वालों के सामने घमंड करते हैं, या अनपढ़ों के सामने गर्व करते हैं, या खराब पढ़ने वालों या बनिा सीखे वालों के सामने खुद को बड़ा समझते हैं, या बेआवाज़ और खराब गाने वालों पर भौंहें चढ़ाते हैं; तो हमारा सारा श्रम व्यर्थ हो जाता है; हम अपने तीरों को नशिाने पर नहीं, बल्कि अपने ही ऊपर चलाते हैं, और ऐसी लापरवाही से हम खुद को गर्त के दानव, शैतान, का शकिार बना देते हैं। ऐसा नहीं, मेरे बच्चों, ऐसा नहीं; बल्कि आइए हम वनिम्रता से बातचीत करें, वनिम्रता से काम करें, वनिम्रता से पढ़ें, वनिम्रता से गाएं, वनिम्रता से चलें, वनिम्रता से भोजन करें, और वनिम्रता से उत्तर दें – और सब कुछ वनिम्रता से; और हम देखेंगे कि इस सद्गुण का फल कतिना मीठा, कतिना आनंददायक, कतिना तेजस्वी है, जो हमें ईश्वर का अनुकरण करने वाला बनाता है, जो कहते हैं: *'मेरे से सीखो, क्योंकि मैं मन से कोमल और नम्र हूँ: और तुम अपने आत्माओं को वश्रिाम पाओगे'* (मत्ती 11:29)। क्योंकि उसमें—सचमुच—शांति नविास करती है; उसके लिए हमारे आत्माओं में अनुग्रह की लहरें उठती हैं; उसके द्वारा, हृदय की पवत्रिता प्रकट होती है; उससे आँसुओं की प्रचुर वर्षा होती है, उससे पश्चाताप का झरना फूटता है; उसमें ज्ञान, समझ, श्रद्धा, संयम, मौन और हर दूसरी अच्छाई नहिति है—यह पाया जाता है, यह देखा जाता है, और इसकी महमिा की जाती है।

10. नम्रता के इस पूजनीय गुण पर यही मेरा वचन है। हे परमेश्वर के बच्चों और मेरी नम्रता के बच्चों, तुम इसे एक बीज के रूप में ग्रहण करके, अच्छी भूमि की तरह फल लाओ—कुछ तीसगुना, कुछ साठगुना, कुछ सौगुना—परमेश्वर के वरदानों के अनुरूप अच्छे कर्मों में, और हर बुराई और दुष्टता से अपना बचाव करो, अहंकार से दूर रहो, भाईचारे की प्रेम की खोज करो, बुरी योजनाओं से मुंह मोड़कर, एक नश्चिति जीवन से प्रेम करो; क्योंकि कहा गया है: *'मैंने सत्यनष्ठिा और धार्मकिता को थामा है'* (भजन संहति 24:21)। कोई भी कसिी एक व्यक्ति से दूसरों की तुलना में अधकि प्रेम न करे; बनिा दाढ़ी वाले, दाढ़ी वालों के साथ अभद्रता से पेश न आएं; वे छपि हुए, अदेखे स्थानों में न रहें। परन्तु तुम सब शैतान की युक्तयिों के वरिुद्ध दृढ़ और अवजियी बने रहो, और दैवीय प्रार्थनाओं और वनितयिों से वासनाओं की आग को बुझाओ। यह सामान्य बात है कि कामनाएँ उत्पन्न होती हैं; परन्तु यह हमारा कर्तव्य है कि

जैसे ही वे प्रकट हों, उन्हें दूर भगा दें। शत्रु आ गया, वार किया, और भाग गया। जब प्रलोभी कोई अश्लील कल्पना उत्पन्न करे तो अपनी आत्मा की आँखें बंद कर लो। जब पाप का कड़वा शिकारी अपने जाल को तुम्हारे हृदय में डालता है तो मिठास के उस कांटे को दूर फेंक दो। अपने कान बंद कर लो जब वह जो हव्वा के कानों में मृत्यु का फुसफुसाहट भरता था, तुम्हारी ओर चापलूसी भरे शब्द बढ़ाने लगे। *'छूना भी नहीं, चखना भी नहीं, भाग लेना भी नहीं'* (कुलुस्सियों 2:21), जब पापपूर्ण सुखों का तैयार करने वाला और परोसने वाला तुम्हारे पास आए, चाहे तुम बैठे हो या चल रहे हो (चाहे तुम घर पर हो या रास्ते में)। उसे स्वीकार मत करो; खुद को हर तरफ से अलग कर लो; एक किलेबंदी किया हुआ नगर बनो; काँसे की दीवार और एक अटल चट्टान बनो, ताकि चाहे हवाएँ तुम्हारे विरुद्ध कितनी भी प्रचंडता से गरजती रहें, तुम अडिग बने रहो। बहादुरी से दुष्टात्माओं को खदेड़ो, ताकि तुम प्रभु के एक अच्छे सिपाही, मसीह के घावों के वाहक, अनुग्रह के एक शहीद के रूप में स्वयं को साबित कर सको, और तुम्हारे में प्रेरित के साथ यह कहने का साहस हो: *'मैंने अच्छा संघर्ष किया है, मैंने दौड़ पूरी कर ली है, मैंने विश्वास बनाए रखा है: अब मेरे लिए धार्मिकता का मुकुट रखा गया है'* (2 तीमुथियुस 4:8)।

34. स्थापित व्यवस्था के विरुद्ध व्यवधानों को रोकने के लिए, जब भी कोई किसी साज़िश या हड़ताल को देखे तो उसे तुरंत अधिष्ठाता को सूचित करना चाहिए

34. 1) स्थापित व्यवस्था के विरुद्ध व्यवधानों को रोकने के लिए, जब भी कोई किसी साजिश या हड़ताल को देखे तो उसे तुरंत मठाधीश को सूचित करना चाहिए। – 2) हालाँकि, एक नियम के रूप में, हर कोई अपने-अपने काम में लगा रहे, और वासनाओं तथा कामनाओं के विरुद्ध संघर्ष करते हुए उन्हें सहन करे। [1, 38]

11. हम उन कार्यों में बने रहें जिनके लिए हमें नियुक्त किया गया है; हम अपनी क्षमता से बढ़कर कुछ भी योजना न बनाएँ, और यदि ऐसा कुछ हो भी जाए, तो हम उस पर अड़े न रहें। हे मेरे बच्चे! यदि आप बार-बार सभाएं और गुट देखें, तो उनसे मुंह मोड़ लें; और यदि कोई आपके पास ऐसी कोई बात लेकर आता है, तो उससे दूर रहें, और उसे सुनने के लिए भी सहमत न हों। जब भी आप कोई ऐसा शब्द सुनें जो आपके आध्यात्मिक पिता में आपके विश्वास को हिला सकता है और उनके प्रति आपके प्रेम को कमजोर कर सकता है, तो उससे आग की तरह भागें। क्योंकि इससे होने वाली हानि, जो धीरे-धीरे हृदय में प्रवेश करती है, उद्धार की नींव तक पहुँच जाएगी। यदि तुम मेरे सच्चे शिष्य बनना चाहते हो, तो मुझसे सिवा कोई विश्वासपात्र या गुप्त सलाहकार न रखो, और दुष्ट बातों को तुच्छ समझकर न टालो, यह कहते हुए: 'क्या यह या वह सच में चिंता करने लायक है?' नहीं, मेरे बच्चों, नहीं; बल्कि जब कोई भी सभी के हानि के लिए अविश्वास की ओर भटक जाए, तो मेरे पास आओ और मुझे सब कुछ बताओ। शायद कुछ लोग अज्ञानता और मूर्खता के कारण आपत्ति जिताएँगे: 'लेकिन फिर भाई मुझे निंदा करेंगे और मुझसे नफरत करेंगे!' – फिर भी ऐसा नहीं है: क्योंकि अगर वे मेरे सच्चे बच्चे नहीं हैं, तो उनकी प्रशंसा का आपके लिए क्या मतलब है? परन्तु सच्चे लोग निश्चय ही आपका अनुसरण करेंगे और आपकी प्रशंसा करेंगे। संक्षेप में, मैं आपसे विनिती करता हूँ और आपको याद दिलाता हूँ: हर बात में पूरी तरह मुझ पर भरोसा रखें; और कोई भी मुझसे कुछ भी छिपाए या छुपाए न रखे: अन्यथा यह एक गंभीर घाव बन जाएगा।

12. अपने पूर्व के भले कामों में लगे रहो, एक मन होकर परिश्रम करो और प्रभु में अपना मार्ग पूर्ण करो; और सब कुछ धैर्य से सहो—अपमान, परिश्रम, क्लेश, शरीर की कामनाएँ, विचारों का अन्धकार, और आलस्य तथा निराशा के आक्रमण को, और बाकी सब कुछ जो आम तौर पर हम पर आता है, सभी चीजों में मदद का एक ही स्रोत रखते हुए: ईश्वर में एक निस्संकोच आशा और प्रभु की आज्ञाओं का कठोर पालन, साथ ही मृत्यु की स्मृति को सदैव जीवित रखते हुए और अपनी इच्छाओं को काटते हुए। इस प्रकार आप शहीद के मुकुट के योग्य माने जाएँगे और स्वर्ग के राज्य में स्वर्गदूतों के साथ आनंदित होंगे।

35. हमारे भीतर परमेश्वर की आत्मा और धोखे की आत्मा के कार्यों की अभिव्यक्तियाँ, जिन्हें इस प्रकार प्रस्तुत किया गया है कि, इसे जानकर, हम पहले के प्रति उत्साही हों और दूसरे से मुँह मोड़ लें।

35. हमारे भीतर परमेश्वर की आत्मा और परीक्षा की आत्मा के कार्यों की अभिव्यक्तियाँ, जो इस प्रकार बताई गई हैं कि, इसे जानकर, हम पहले के लिए उत्साही हों और दूसरे से मुँह मोड़ें। [1, 39] शत्रु हमेशा हम पर क्रोध के साथ टूट पड़ता है; परन्तु उसे हमेशा दिव्य शक्तियों और मेरे पिता और तुम्हारे पिता की प्रार्थनाओं द्वारा पीछे हटा दिया जाता है; और वह अपना शिकार तभी पाता है जब कोई उसे पैर जमाने की जगह दे देता है, परमेश्वर की आत्मा को भगाकर और एक पराई आत्मा को आश्रय देकर, जो उसे अपनी इच्छा के अनुसार करने और कहने की शिक्षा देती है। इन दो प्रभावों में अंतर करना सीखने में हमारी मदद करने के लिए, मैं आपको प्रत्येक की विशिष्ट

विशेषताएँ बताऊँगा। जिस पर पवित्र आत्मा है, वह आनंद, शांति, धीरज और प्रेम प्रकट करता है – और मधु और मधुमक्खी के छत्ते से भी मीठे वचन बोलता है; क्योंकि, जैसा प्रभु ने कहा, वे हृदय की भरमार से निकलते हैं, और उन्हें ग्रहण करने वालों को ज्ञान और सांत्वना देते हैं। कोई लगातार उन्हें यह कहते हुए सुनता है: 'मुझे क्षमा करो, या मुझे आशीष दो, हे पिता; मैं मूर्ख हूँ, एक साधारण पापी हूँ, भाइयों में गिना जाने के योग्य नहीं हूँ, किसी भी प्राणी से भी नीच हूँ।' इस तरह बोलना और महसूस करना इस बात का संकेत है कि हम पवित्र आत्मा के अधिकारी हैं। क्या आप सुनना चाहेंगे कि दुष्ट आत्मा के लक्षण क्या हैं? वे ये हैं: जिसके पास यह आत्मा है, उसका हृदय क्रोध, रोष, निंदा, बदनामी, अविश्वास, घृणा, द्वेष, अनाड़ीपन, अवज्ञा, विरोध और हठीपन को उगलता है। ऐसे आत्मा से प्रकाश, पवित्रता और धार्मिकता भाग गई हैं; विनम्रता, पश्चाताप और धैर्य पीछे हट गए हैं; आँसू, रोना और हृदय का दर्द सूख गए हैं; स्वर्गीय चिंतन, मृत्यु का स्मरण और मृत्यु के बाद साथ देने वाले स्वर्गदूतों का स्मरण; और विस्मृति के अंधकार में छिपे हुए हैं मसीह की भयानक न्यायपीठ के सामने सार्वभौमिक रूप से खड़े होने के विचार, भयानक न्याय के विचार, और जन्म के क्षण से ही सोचे, बोले और किए गए हर कार्य के लिए अपनी स्वयं की जवाबदेही, न कि केवल संन्यास जीवन में प्रवेश करने के समय से। मैं यह सब आपके सामने इसलिए रखता हूँ ताकि आप देख सकें कि आपको किस बात को दृढ़ता से थामे रहना चाहिए और किससे बचना चाहिए। क्योंकि मेरी एक ही इच्छा और एक ही प्रार्थना है: कि आप सभी प्रकाश और दिन के पुत्र, परमेश्वर के वारिस और मसीह के सह-वारिस, चुने हुए और पवित्र किए हुए पात्र बनें, एक ही आत्मा द्वारा एक में एकजुट हों, ताकि आप अपने कर्मों के द्वारा और अपने हृदयों में अनुभव के माध्यम से जान सकें कि संत दाऊद ने क्या कहा: *'देखो, भाइयों का* एकता में *एक साथ रहना कितना भला और* सुखद *है!'* (भजन संहिता 132:1)।

36. अच्छे कर्म आवश्यक हैं; लेकिन चूँकि हर कर्म का अपना इनाम होता है, वे बुद्धिमानों को फलने-फूलने से नहीं रोकते

36. 1) वीरता के कारनामे आवश्यक हैं; लेकिन चूँकि हर काम का अपना इनाम होता है, वे बुद्धिमानों को फलने-फूलने से नहीं रोकते। – 2) मेरी मार्गदर्शन के साथ-साथ, आप स्वयं यह विवेक करें कि क्या अच्छा है और एक-दूसरे को प्रोत्साहित करें: क्योंकि हमारा एक ही उद्देश्य है। – 3) जो अच्छा है उसमें बने रहें; अपने उत्साह को बनाए रखें; अपनी जीभ पर काबू रखें; अपने औजारों और सामान का ध्यान रखें, और प्रार्थना करें। [1:40]

13. हमें परिश्रम, आध्यात्मिक प्रयास, ईश्वरीय प्रयत्न, धार्मिक उत्साह और आध्यात्मिक प्रगति की आवश्यकता है, ताकि, प्रतिस्पर्धा के मैदान में प्रवेश करने के बाद, हम अच्छी तरह से इसके अंत तक पहुँच सकें और, एक ईश्वरीय मृत्यु के बाद, विजय की मालाओं से विभूषित हों। आप स्वयं जानते हैं कि परिश्रम से विश्राम मिलता है, दुखों का प्रतिफल आनंद होता है, आहें आध्यात्मिक सांत्वनाओं से शांत होती हैं, और संकीर्णता से विशालता मिलती है; भूख और उपवास अमर आनंद को विकसित करते हैं, जबकि प्यास और गले का सूखना उस *'जल'* को उत्पन्न करते हैं *जो 'जीवन-दायक झरने में बहता है'*, जिसके बारे में प्रभु ने कहा था (यूहन्ना 4:14) – और सामान्यत: *'जो आँसुओं में बोते हैं, वे आनंद में कटनी करेंगे'* (भजन संहिता 125:5), जैसा कि भजन संहिताकार, संत दाऊद, हमें आश्वासन देते हैं। *'तुम ये बातें जानते हो'*, लेकिन *'धन्य हो तुम यदि तुम उन्हें करते हो'*, जैसा कि लिखा है (यूहन्ना 3:17)। *'एक मूर्ख मनुष्य उन्हें नहीं पहचानता, और न ही थोड़ी समझ वाला मनुष्य उन्हें समझता है'* (भजन संहिता 91:7)। आप, हालांकि, बुद्धिमान, दयालु, समझदार, चौकस और सूक्ष्मदर्शी हैं। आपने कुछ सद्गुण क्यों प्राप्त कर लिए हैं, जबकि अन्य के लिए अभी भी प्रयास कर रहे हैं? मैं यह जोड़ूँगा कि आप और अधिक के लिए प्रयास करना जारी रखेंगे: क्योंकि आज्ञा का कोई अंत नहीं है; लेकिन कोई भी परमेश्वर को जितना अधिक जानता है, उतना ही अधिक वह महसूस करता है कि वह आज्ञा को पूरा करने से कितना दूर है।

14. मैं तुम्हें नियम देता हूँ और तुम्हारा मार्गदर्शन करता हूँ, एक ओर तुम्हें रोकता हूँ, दूसरी ओर तुम्हारा समर्थन करता हूँ, और तुम्हें आगे का रास्ता दिखाता हूँ। तुम हर बात में मुझ पर भरोसा करते हो और, लोहार के हाथ में लोहे की तरह, मेरी हर आज्ञा का पालन करते हो। – इस प्रकार तुम्हारी यात्रा निश्चिंत है और तुम्हारा जीवन सुरक्षित है। लेकिन आप स्वयं, अपने बीच, यह समझते हुए कि क्या अच्छा और लाभकारी है, वही करें और एक-दूसरे को याद दिलाएं। क्योंकि हम सभी के मन में एक ही बात है: वह जो सभी के लिए लाभकारी है, जैसे कि हम समुद्र में चलने वाले जहाज पर हों, जहाँ नाविक और जहाज के मज़दूर दोनों एक सामान्य कार्य में लगे हों। इस संबंध में, हम एक-दूसरे के संबंध में हैं: मैं और आप। मेरा काम है कि मैं पतवार अपने हाथों में थामूँ और पूरी ताकत से जहाज को चलाऊँ, अपनी निगाहें आसमान पर टिकाकर रखूँ, सत्य के तारों को देखूँ और उन्हीं से अपने मार्ग का निर्देशन कराऊँ। लेकिन आपको भी सतर्क रहना होगा, प्रत्येक व्यक्ति अपना-अपना कर्तव्य निभाए, और हर दिशा में नज़र रखे ताकि जहाज

किसी भी ऐसी चीज़ से टकराकर डूब न जाए—चाहे वह उथला पानी हो या पानी के नीचे की चट्टान—और रस्सियों की व्यवस्था ( ) को अच्छी स्थिति में रखे, जहाँ ज़रूरत हो वहाँ कसकर और जहाँ ज़रूरत हो वहाँ ढीली करके, और वह सब कुछ करें जो आवश्यक हो ताकि हमारा जहाज हमारी आत्माओं के उद्धार के बंदरगाह तक सुरक्षित रूप से पहुँच सके। इसके लिए ही हमने संसार, उसकी प्रथाओं और उसके सभी शारीरिक सुखों और आनंद को छोड़ दिया है।

१५. हे भाइयो, हम अपने परिश्रम में दृढ़ रहें, और धैर्यपूर्वक जो उचित है उसे आचरण करें; और मुझे विश्वास है कि हम अपना मुकुट प्राप्त करेंगे, स्वर्ग के नागरिक बनेंगे, और वहाँ आनंद पाएंगे, जहाँ से *'सारी बीमारी, शोक और आह दूर हो जाएँगी'* (यशायाह ३५:१०)। स्थिर रहो, हौसला रखो – और तुम्हारे उत्साह का दीपक निरंतर परिश्रम के तेल से जलता रहे, कहीं वह बुझ न जाए, और कहीं हमें मूर्ख कुंवारियों का अवांछित भाग्य न भुगतना पड़े। अति सम्माननीय पिताओं, मौन प्राप्त करो; मेरा यह मतलब नहीं है कि आप बिल्कुल कुछ भी न कहें, क्योंकि यह हमारे जीवन-शैली के अनुकूल नहीं है, बल्कि यह कि आप अनुचित बातों के बारे में न बोलें और न ही उससे हँसी उड़ाएँ: क्योंकि *'बहुत बोलने से पाप से नहीं बच सकते'*, जैसा कि बुद्धिमानी हमें आश्वस्त करती है: *'जो अपना मुँह रोके, वह बुद्धिमान है'* (नीतिवचन 10:19)। अपने कर्तव्यों के पालन में लगन दिखाओ, और लापरवाही से आवश्यक वस्तुओं—जैसे कि गाड़ियाँ, हल, कुल्हाड़ियाँ, कटोरे और बर्तन, या कुछ और—को नुकसान न पहुँचाओ, क्योंकि इससे देरी होगी, और जो समय आध्यात्मिक साधना में लगाया जा सकता था, वह तुच्छ बातों पर बर्बाद हो जाएगा। हमारे प्रभु मसीह यीशु में, अदृश्य और दृश्य शत्रुओं के विरुद्ध स्वर्ग से आपकी सहायता के लिए हमेशा प्रार्थना भी करें।

37. मुझ पर विश्वास और प्रेम के साथ, परिश्रमी बनो; जो काम के प्रभारी हैं, वे उसे बुद्धिमानी से प्रबंधित करें, और जो आपके अधीन हैं, वे उसे निष्ठापूर्वक पूरा करें।

37. 1) अपने विश्वास और मुझसे प्रेम में लगनशील रहो; जिनके हाथ में काम है, वे उसे बुद्धिमानी से संभालें, और जो तुम्हारे अधीन हैं, वे उसे निष्ठापूर्वक पूरा करें। – 2) उपहास और आपसी शिकायत से दूर रहो; एक दूसरे के प्रति दयालु और सम्मानजनक रहो, और हर उस बात से भागो जो निंदनीय और मोहक हो। [1, 41]

16. मैं परमेश्वर से प्रार्थना करता हूँ कि तुम्हारा विश्वास कमजोर न हो और एक दीन मनुष्य, मुझ पर तुम्हारा आध्यात्मिक प्रेम ठंडा न हो; बल्कि हम सब एक ही समझ (1 कुरिन्थियों 1:10) में और हमारे प्रभु यीशु मसीह की आज्ञाओं को रखने के लिए एक ही उत्साह में स्थापित हों। मैं जानता हूँ कि आप कठिनाइयों को सहते हैं, अभावों को झेलते हैं, भारी परिश्रम करते हैं, और अपना पसीना बहाते हैं। परन्तु मैं आपसे विनती करता हूँ, प्रभु के प्रेम के लिए थके न हों, और भले कामों में धीरज से लगे रहें, ताकि स्वर्ग में आनन्द का मुकुट प्राप्त करें। मैं भी आपके साथ मिलकर परिश्रम करना चाहता, यदि मेरे पैरों की बीमारी न होती; मैं भी आपके साथ काम करने और परिश्रम द्वारा अपने शरीर को वश में करने के लिए निकलना चाहता। क्योंकि अपनी सामर्थ्य भर भाइयों के साथ मिलकर परिश्रम करना एक आशीष है, और उनके खेत के काम में भाग लेना प्रशंसनीय है। ऐसे श्रमों के द्वारा आप अपने शरीरों को पवित्र करते हैं और अपनी आत्माओं को अत्यंत निर्लिप्त बनाते हैं, प्रभु के सच्चे मजदूरों के रूप में, बशर्ते कि आप जो आज्ञा दी जाती है उसे उचित विवेक से पालन करें - अर्थात्, यदि वरिष्ठ और प्रशासक परमेश्वर के भय और भाइयों के प्रति करुणा के साथ निर्देश देते हैं, जबकि अधीनस्थ अपने वरिष्ठों के प्रति समर्पण और आज्ञाकारिता बनाए रखते हैं। – अत; हे प्रशासकों, सावधान रहो: एक परिश्रम के ऊपर दूसरा परिश्रम मत थोपो, और बिना दया या लापरवाही से शासन मत करो, बल्कि धार्मिकता, उदारता, भाईचारे के प्रेम और विवेक से शासन करो; क्योंकि सभी भाई चरित्र, आयु और शक्ति में समान नहीं हैं। केवल इसी शर्त पर आपको भाइयों पर अधिकार सौंपा गया है। और धन्य हैं आप यदि आप इस प्रकार कार्य करते हैं; क्योंकि महान उपहार और आशीर्वाद आपके लिए अनंत काल तक होंगे। ध्यान दो, हे आज्ञाकारियों: अपने वरिष्ठों के निर्देशों को नम्रतापूर्वक स्वीकार करो और हृदय से स्वेच्छा से आज्ञाकारिता करो।

17. तुम में कोई ऐसी उपहास न हो जिससे प्रभु को दुख पहुँचे; कोई ऐसी व्यर्थ बात न हो जिससे पवित्र आत्मा उदास हो जाए; तुम में एक दूसरे के प्रति शत्रुता से उत्पन्न कोई कटुता न हो। क्योंकि प्रेरित ने कहा: *'तुम से सब कटुता, क्रोध, और रोष, और सब प्रकार का दुष्टता-भाव दूर हो जाए'* (इफिसियों 4:31); और फिर: *'तुम्हारे मुँह से कोई भ्रष्ट बात न निकले, बल्कि केवल वही जो निर्माण के लिए अच्छी हो, ताकि वह सुनने वालों को अनुग्रह प्रदान करे'* (इफिसियों 4:29)। *'एक दूसरे के प्रति दयालु बनो'* (इफिसियों 4:32), कोमल, एक दूसरे के प्रति प्रेमपूर्ण, *'प्रेम में एक दूसरे के प्रति सहनशील'* (इफिसियों 4:2), *"एक दूसरे के बोझ उठाना"* (गलातियों 6:2), सहिष्णु, क्षमाशील, एक दूसरे का सम्मान करना और एक दूसरे के प्रति निम्र होना, परमेश्वर के भय और आदर में। यदि आप इसी प्रकार चलते हैं, और यदि आप ऐसा जीवन जीते हैं, तो आप मेरे संत हैं, और उससे भी बढ़कर, स्वयं परमेश्वर के हैं; आप पृथ्वी

पर उसके स्वर्गदूत, उसकी शक्ति के आराधक और उसकी महिमा के सेवक, स्वर्ग के राज्य के वारिस, संतों के साथी और स्वर्ग के निवासी हैं, जिन्हें उनके लिए आरक्षित अथाह आशीषों का आनंद लेने का सौभाग्य प्राप्त है। इसीलिए मैं प्रार्थना करता हूँ, विनती करता हूँ और निवेदन करता हूँ, कि आपके कदम हमेशा ईश्वर के मार्गदर्शन में रहें, कि आप उनकी शक्ति से दृढ़ हों, कि आपके बीच कोई प्रलोभन या ठोकर न हो, न घातक अवज्ञा, न विनाशकारी बड़बड़ाहट, न घातक अशिष्टता, न बुराई की कोई निंदनीय इच्छा, न ही कुछ और जो निषिद्ध और अपराधपूर्ण हो। ईश्वर की बुद्धि का प्रकाश आपके प्रत्येक कार्य और गतिविधि में आपके आगे हो; शांति का आत्मा आपका मार्गदर्शन करे; और भ्रातृत्व प्रेम की शांति आपके भीतर राज करे। – हे प्रभु परमेश्वर , आप पर शांति के स्वर्गदूत को नियुक्त करें, जो आपकी आत्माओं और शरीरों का एक विश्वसनीय मार्गदर्शक और रक्षक हो, जो दिन-रात आपसे दुष्ट दुष्टात्माओं को दूर भगाए, और आपको एक सदाचारी जीवन में अग्रसर करे!

38. आज्ञाकारिता में जीवन का मार्ग सभी से श्रेष्ठ है: यह वही है जिसे प्रभु ने चुना है

38. 1) आज्ञाकारिता का जीवन सभी से श्रेष्ठ है: यही वह है जिसे प्रभु ने चुना है। – 2) अत; इस मार्ग पर अच्छी तरह चलो, सहन करो और कभी थको मत: क्योंकि देखो, मृत्यु निकट है, और सभी चीजें समाप्त हो जाती हैं; फिर भी इस प्रक्रिया में अन्य सद्गुणों, विशेषकर प्रेम को न भूलो। [1, 42]

18. मैं तुमसे विनती और प्रार्थना करता हूँ: दृढ़ खड़े रहो, धैर्यपूर्वक साहस करो, उत्साहित रहो, और धैर्य धारण करो, उस महिमा पर मनन करते हुए जिसके लिए त्रि-धन्य और पवित्र संन्यासी नियत हैं। निस्संदेह, जिसने भी किसी भी जीवन-पथ पर ईश्वर को प्रसन्न किया है, उसे उसी के अनुसार आने वाले युग में अपना प्रतिफल प्राप्त होगा। लेकिन कौन सा जीवन-पथ बेहतर है? – सावधान रहो! – धन्य हैं वे जो *'पहाड़ों में, गुफाओं में और पृथ्वी की गहराइयों में'* (इब्रानियों 11:38) परमेश्वर की सेवा करते हैं, तपस्वी, स्तंभवासी, एकांतवासी, और अन्य सभी जो जिस भी तरीके से जीते हैं, परमेश्वर की महिमा करते हैं। लेकिन, जैसा कि आप जानते हैं, हमारे प्रभु यीशु मसीह, जो अथाह आशीषों के दाता हैं, पृथ्वी पर आकर, न तो किसी तपस्वी, स्तंभवासी, या किसी अन्य ऐसे जीवन का मार्ग चुने, बल्कि आज्ञाकारिता में जीना उनके लिए प्रसन्न था। क्योंकि उन्होंने स्वयं अपने विषय में कहा: *'मैं स्वर्ग से इसलिये नहीं आया कि अपनी इच्छा करूँ, परन्तु उस पिता की इच्छा जो मुझे भेजता है'* (यूहन्ना 6:38)। और फिर: *'जो मैं तुम से कहता हूँ, वह मैं अपने आप से नहीं कहता; परन्तु जो पिता मुझे भेजता है, उसी ने मुझे आज्ञा दी है कि मैं क्या कहूँ और क्या बोलूँ'* (यूहन्ना 14:10; 12:49)। उन्होंने स्वयं को तौलिये से कमरबंद भी किया और, दास का रूप धारण करके, शिष्यों के पैर धोए, उन्हें तौलिये से पोंछा, और इस बारे में कहीं और कहा: *'जैसा कि मैं तुम्हारी सेवा करता हूँ, वैसा ही तुम भी करो'* (लूका 22:27)। यदि, जैसा कि आप देखते हैं, वह—सभी का प्रभु—किसी और से अधिक प्रसन्न हुए, हमारे मठवासी जीवन को अपनाने के लिए, तो आप कैसे आनंदित नहीं हो सकते, आप कैसे हर्षित नहीं हो सकते, आप इस तथ्य से कैसे आनंद से भर नहीं सकते कि आप—ठीक प्रभु की तरह—जीते हैं? यह कहने के बाद, क्या आपके लिए कोई ऐसी और चीज़ है जो आनंद के योग्य हो? और क्या आपका अन्य जीवन-मार्गों की ओर अधिक झुकाव हो सकता है? इसलिए, अपने जीवन-मार्ग से बेहतर किसी अन्य जीवन-मार्ग को न मानें, बशर्ते आप उसे अच्छी तरह से जिएं। इसीलिए, गेरोन्डिका में, या तीन श्रमिकों के बीच पवित्र बुजुर्गों के वृत्तांतों में, एक मठवासी नवसिखिए को दिव्य प्रकटिकरण के माध्यम से एक तपस्वी या एक बीमार व्यक्ति से अधिक गौरवशाली बताया गया, जो अपनी बीमारी को धैर्य और कृतज्ञता के साथ सहन करता है। निस्संदेह, मैं तुमसे कहता हूँ, हमारा जीवन-मार्ग महान और सर्व-पवित्र है; और तुम, अपना जीवन अच्छी तरह जीकर, अब्राहम के साथ महिमामय होओगे, शहीदों के साथ आनंदित होओगे, और धर्मी लोगों के साथ निवास करोगे।

१९. अतःअच्छी तरह दौड़ो, रुकना मत, और शैतान की ईर्ष्यालु दृष्टि तुम्हें भटकाए नहीं। अपने पैरों पर धैर्य के तेल का लेप लगाओ, ताकि अपनी आत्मा की तड़प से गर्म होकर, तुम अपनी यात्रा पूरी करने में संतुष्ट रहो। धर्म और आनंद के वस्त्र धारण करो; पवित्रता और ब्रह्मचर्य का जल पियो; और यह न कहो, 'कितना समय?' क्योंकि यह आलसी लोगों की बात है। हमें हज़ार साल जीना नहीं है: मृत्यु आज है और कल भी। इसे अपने मन की आँखों के सामने रोज़ रखते हुए, हम अपने पूर्वजों के नियम के अनुसार चलकर अच्छा काम करते हैं। हमारे पूर्वजों ने इस जीवन के कुछ ही दिनों में इस नियम का पालन किया। अतःमेरे पिता की पवित्र प्रार्थना के द्वारा, आप में दया, शांति, प्रेम, ईर्ष्या का अभाव, द्वेष का अभाव, संयम, अच्छी आज्ञाकारिता, दयालु शब्द, सहयोग, पारस्परिक सहानुभूति और विनम्रता हो। इसी प्रकार जियो और इसी प्रकार आचरण करो!

३९. प्रभु को अपनी आँखों के सामने रखो, कहीं तुम किसी बुराई में न फँस जाओ; न्याय के दिन को याद करते हुए भलाई के लिए यत्न करो, और उससे भी अधिक उस भयानक न्याय और उसके निर्णय को याद करो। इसी प्रकार जियो, और इसी प्रकार आचरण करो!

39. प्रभु को अपनी आँखों के सामने रखो, ताकि तुम किसी भी बुराई में न फँसो; न्याय के दिन को याद रखते हुए, जो कुछ भी अच्छा है उसके लिए प्रयासरत रहो, और विशेष रूप से भयानक न्याय और उसके फैसले को याद करो। [1, 43] आपस में प्रेम को शांति के बंधन में बनाए रखो, और प्रभु को अपना दाहिना हाथ बनाए रखें, ताकि आप कामवासना, या क्रोध, या ईर्ष्या, या उपहास, या व्यर्थ की बातों, या किसी ऐसी चीज़ में न फँस जाएँ जिसके द्वारा आप नरकीय दासता के किसी भी जाल में, चाहे वह कितना भी छोटा क्यों न हो, फँस सकते हैं, ताकि आप नरक की शक्ति में बने रहें। याद करो कि संत डोरोथियस क्या कहते हैं?! वे कहते हैं कि भले ही एक चील पूरी तरह से स्वतंत्र हो, लेकिन अगर उसका एक पंजा भी किसी जाल में फँस जाए, तो वह फिर भी फँसी हुई है, और शिकारी उसे आसानी से या तो पकड़ सकता है या गोली मारकर गिरा सकता है। इसलिए, सावधान रहो, और स्वयं को अनुशासित करो; क्योंकि स्वर्ग का राज्य उन लोगों का है जो स्वयं को अनुशासित करते हैं। – हमारे जीवन के अंत में हमें कितना भय और कम्पन झेलना पड़ेगा यदि हम अपने जीवन की लापरवाही से जीते हैं, विशेषकर उस भयानक दिन पर जब महादूत की तुरही सभी लोगों को—हर राष्ट्र, हर जनजाति और हर भाषा को—जागृत कर देगी?! तब क्या होगा, इस पर विचार करें: आकाश फाड़ दिया जाएगा; तत्व आग से भस्म हो जाएंगे; सारी सृष्टि रूपांतरित हो जाएगी। सभी का न्यायी न्याय के सिंहासन पर अपना स्थान ग्रहण करेगा, और पवित्र स्वर्गदूतों के अनगिनत दल उसके चारों ओर खड़े होंगे, फिर, सभी के सामने, प्रत्येक व्यक्ति के कर्मों, वचनों और विचारों को उनके प्रकार, व्यक्ति, स्थान, समय और करने के तरीके के अनुसार उजागर करेंगे – और यह सब एक ही क्षण में; अंत में, जैसा कि धर्मग्रंथ कहता है, जिन्होंने भलाई की है वे अनंत जीवन में जाएँगे, जबकि जिन्होंने बुराई की है वे अनंत यातना में जाएँगे, जहाँ रोना और दाँत पीसना, न बुझने वाली आग और एक न खत्म होने वाला कीड़ा है, और भयानक, , घृणित और पूरी तरह से दुष्ट राक्षसों का संगत है। 'तो फिर, हम कहाँ जाएँगे?' 'शाश्वत जीवन में, प्रभु के साथ सदा रहने, यदि हम अपने जीवन के अंत तक परमेश्वर का भय और परमेश्वर से प्रेम बनाए रखें—ऐसा कि हमारे हृदय पुकार उठें: *"हमें परमेश्वर के प्रेम से कौन अलग कर सकता है?"* (रोमियों 8:35)।

४०. परमेश्वर का भय हमारे शत्रु की तलवारों को दूर करता है

४०. १) परमेश्वर का भय हमारे शत्रु की तलवारों को हटा देता है। – २) अपमान सहन करो। – ३) बाहरी लाभों का घमंड न करो, बल्कि नम्र और आज्ञाकारी बनो। – ४) इसके लिए तुम्हें शहीदों में गिना जाएगा। [१, ४४]

1. लंबे अनुभव के माध्यम से आप मठवास में ईश्वर-प्रसन्न जीवन के मार्ग को पूरी तरह से जान गए हैं। इसलिए, किसी भी तरह से विचलित न हों, न ही अपने सही निर्णय से भटकें। जो आज्ञा आपको दी गई है, उससे प्रेम करें और हर बात में उसका पालन करें; मुझसे प्रेम में भी बने रहें, जैसे मैं दुनिया में किसी भी अन्य चीज़ से अधिक आपसे प्रेम करता हूँ। लेकिन शत्रु के पास कई चालाकियाँ हैं, और वह हमारे बीच और हमारे भीतर आसानी से बुराई बो देता है। और केवल वही लोग जो ईश्वर के भय से परिपूर्ण हैं, उसकी तलवारों को—जो पूरी तरह से कमजोर हो गई हैं—अपने ऊपर से हटा देते हैं, जैसा कि पवित्र दाऊद ने कहा (भजन संहिता 75:4; 88:44), वे धर्म के कार्यों में पूरी लगन से संलग्न रहते हैं और स्वर्गीय चिंतन और कार्यों में अपना सम्पूर्ण मन लगाते हैं।

2. देखो, मानो मैं तुम्हारे साथ ही हूँ, मैं देखता और सुनता हूँ कि भाइयों में से किसी के विरुद्ध एक कठोर वचन बोला गया है—एक फटकार, एक अपमान, या कुछ और। परन्तु तुम, हे मेरे भाइयो, ऐसा अपमान पाकर, क्रूर जानवर न बनो, और न ही हियाव खोओ; स्थिर और अटूट रहो। क्योंकि निंदा और लज्जा तो उसे ही होती है जो उन्हें बोलता है, जबकि विजय उस पर होती है जो उन्हें समान भाव से स्वीकार करता है; वह ईश्वर का पुरुष है, जबकि दूसरा एक अविचलित दास है, जो उसी क्षण अपना नाश कर लेता है।

३. मैं तुमसे विनम्रतापूर्वक आग्रह करता हूँ: झगड़ा मत करो, एक-दूसरे का अपमान मत करो, तिरस्कार से भौंहें मत चढ़ाओ, घमंड से बात मत करो, और यह घमंड मत करो कि तुम बेहतर गायक, अधिक मेहनती, अधिक धार्मिक, या कभी-कभी, दुनिया की नज़रों में अधिक कुलीन, या दिखावे में अधिक सुंदर हो। ऐसी बातों को कहने की कोई आवश्यकता नहीं है। परन्तु हर बात में नम्रता से आच्छादित रहो, और आज्ञाकारिता और वश में रहने के द्वारा प्रभु के साम्हने और मठ के अधिष्ठाताओं के साम्हने अपने आपको दीन बनाओ।

४. इसी मार्ग पर चलो, और तुम्हारी मेहनत व्यर्थ नहीं होगी, और न ही तुम्हारे प्रयास निष्फल होंगे। मैं यह घोषणा प्रभु हमारे परमेश्वर, उनके पवित्र स्वर्गदूतों और सारी सृष्टि की उपस्थिति में आप लोगों को करता हूँ: कि,

अपना मार्ग अच्छी तरह दौड़कर, आप शहीदों के साथ आनन्दति होंगे; अब्राहम की गोद आपको युगानुयुग संजोएगी, और धर्मी लोगों का समूह आपको अपने बीच में ग्रहण करेगा।

४१. प्रबंधक को एक स्वतंत्र प्राधकिरण मानकर, आप दोहरा प्राधकिरण और वभिाजन लाते हैं; और जहाँ प्राधकिरण वभिाजति है, वहाँ राज्य नहीं टकि सकता।

41. 1) प्रबंधक को एक स्वतंत्र प्राधकिरण मानकर, आप दोहरा प्राधकिरण और वभिाजन पेश करते हैं; और जहाँ प्राधकिरण वभिाजति होता है, वहाँ राज्य कायम नहीं रहेगा। – 2) मैं पूरी तरह से भाईचारे का हूँ; और कुछ भी आवश्यक नहीं है। 3) प्रभु, जो अकेले शासन करते हैं, ने इच्छा व्यक्त की है कि मानव समाजों में भी एक ही प्राधकिरण हो। [1, 45]

5. मुझे नहीं पता कि अज्ञानता, लापरवाही या दुर्भावना से, आप मेरे अपमान के लिए प्रबंधक की प्रशंसा करते हैं, और मेरी शर्मिंदगी पर उसका चेहरा दखिाते हैं, अक्सर कहते हुए: 'अगर प्रबंधक यहाँ होता, तो ऐसा-वैसा मामला इस तरह से नहीं, बल्कि बहुत बेहतर तरीके से नपिटाया जाता।' 'और यह कारिंदा कहाँ है? वह इस पर क्या सोचता?' – और यह सब सीधे मेरे कानों में कहा जाता है। हालाँकि, दूसरे लोग जोड़ते हैं: 'रुको, रुको! कारिंदा आकर यह सब सुलझा देगा और सब कुछ ठीक कर देगा।' – लेकनि क्या चीजें ऐसी ही होनी चाहिए? और क्या यह उसके, मेरे और आपके लिए अच्छा है? तुमने खुद को अवज्ञा की संतति के रूप में दखिाया है; उसे – अपनी पदवी और अधकिार की सीमाओं को लांघने में सक्षम के रूप में; और मुझे – एक ऐसे के रूप में जसिने परमेश्वर की इच्छा के अनुसार नहीं, बल्कि शारीरिक प्रवृत्ति के अनुसार, अर्थात् एक भाई के प्रति पक्षपात और अनुचति कृपा से काम कयिा है। क्या आप यह नहीं देखते कि इस तरह आप दो स्वामियों, दो शासकों, दो सद्धिांतों को ला रहे हैं? फरि भी हमारे प्रभु यीशु मसीह की वाणी ने घोषणा की है कि *'जो राज्य अपने ही वरिुद्ध बँटा हुआ है, वह स्थरि नहीं रह सकता'* (मत्ती 12:25)। द्वैध अधकिार पहले से ही बहु-अधकिार का एक रूप है; और बहु-अधकिार गुटों को जन्म देता है; और गुट वभिाजन और क्षय का कारण हैं। तो फरि, आप अपने उपयुक्त दायरे और पद में बने रहने में वफिल होकर, अपने ऊपर आपदा क्यों लाते हैं, और इस प्रकार दूसरों को भी सही मार्ग से भटकाते हैं?

6. मैं पापी और अयोग्य हूँ, फरि भी, सभी चीजों का त्याग करके और स्वयं को नग्न कर के, मैं नडिर होकर इस पवित्र स्थान में रहता हूँ—अपनी मूर्खता में मैं ऐसा कहने की हिम्मत करता हूँ—सच्चाई से कसिी भी तरह भटकता नहीं, न कसिी भाई के लिए, न चाचा के लिए, न पति या माता के लिए, न ही रिश्तेदारी के लिए, और न ही वास्तव में कसिी भी सांसारिक चीज़ के लिए, परन्तु यदि मुझे अपना शरीर सौंपने या अपना लहू बहाने के लिए भी कहा जाए, तो मैं ईश्वर की सहायता और अपने पिता की प्रार्थना से, तब तक इसे अस्वीकार नहीं करूँगा, जब तक मैं तुम्हारे या अपने लिए कुछ भी हानिकारक न करूँ।

7. एक प्रभु और व्यवस्था देने वाला है, जैसा कि लिखा है: सभी पर एक अधकिार और एक दवि्य सद्धिांत। अधकिार के इस एकमात्र स्रोत, सभी ज्ञान, अच्छाई और व्यवस्था के स्रोत ने, जो उन सभी प्राणियों तक फैला हुआ है जनिकी उत्पत्ति ईश्वर की अच्छाई से हुई है, एक ही मनुष्य को—उनकी अपनी इच्छा के बनिा—ईश्वर की छवि में, अपनी ववििेक से, अपने जीवन को व्यवस्थति करने की शक्ति प्रदान की है। क्योंकि दवि्य मूसा, संसार की सृष्टि के अपने वृत्तांत में, परमेश्वर के मुख से नकिले वचनों का हवाला देते हैं: *'आओ हम मनुष्य को अपनी प्रतिमा में, अपनी समानता के अनुसार बनाएँ'* (उत्पत्ति 1:26)। अतःमनुष्यों के बीच हर प्रकार के अधकिार और शक्ति की स्थापना, वशिेष रूप से परमेश्वर की कलीसियाओं के भीतर: पितृसत्ता में एक पितृप्रधान, मेट्रोपोलसि में एक मेट्रोपॉलटिन, धर्मप्रांत में एक बशिप, मठ में एक मठाधीश; और सांसारिक जीवन में, यदि आप इसे गौर करें, तो एक राजा, एक सेनापति, एक जहाज पर एक कप्तान। और यदि इन सब में एक व्यक्ति की इच्छा सब कुछ नयिंत्रति न करती, तो कसिी भी चीज़ में कोई व्यवस्था या अनुशासन नहीं होता, और यह भलाई के लिए नहीं होता: क्योंकि कलह सब कुछ नष्ट कर देती है।

४२. लेंट केवल शरीर के लिए नहीं, बल्कि आत्मा के लिए भी संयम की मांग करता है

४२. १) लेंट केवल शरीर के लिए ही नहीं, बल्कि आत्मा के लिए भी संयम की मांग करता है। – २) समुदाय के लिए उपवास का मापदंड मध्यम है – प्रतदिनि थोड़ा-थोड़ा। – ३) हम ईश्वर, भयानक न्यायाधीश से डरें; और मृत्यु हमें अनतैयार न पाए। – ४) मैं मृत्यु और उससे जुड़ी सभी चीज़ों से बहुत डरता हूँ। – 5) आइए हम उठें और स्वयं को ईश्वर को प्रयि लगने वाले कार्यों में समर्पति करें। [1, 46]

8. ईश्वर, जो अपनी बुद्धि से सभी चीजों का शासन करते हैं, और जो मौसमों और वर्षों को अत्यंत उत्कृष्ट और बुद्धिमानी से व्यवस्थित करते हैं, ने हमारे लिए पूरे वर्ष में उपवास के कुछ दिन निर्धारित किए हैं जो आत्मा के लिए उद्धारकारी और लाभकारी हैं, ताकि हम उन्हें विशेष रूप से उन्हीं को समर्पित कर सकें और अपने ऊपर आने वाले पापी अशुद्धियों से खुद को शुद्ध कर सकें। और उन पर धन्यवाद हो जिन्होंने ऐसे दिन स्थापित किए हैं और हमें उन्हें देखने के लिए जीवन दिया है। हमें हमेशा पवित्र और निर्दोष जीवन जीना चाहिए और परमेश्वर की हर आज्ञा का पालन करना चाहिए; यह विशेष रूप से अब हम पर अनिवार्य है। अब शुद्धिकरण का समय है; अतःआइए हम स्वयं को शुद्ध करें; अब संयम का समय है; अतःआइए हम संयम का अभ्यास करें – और केवल खाने-पीने में ही नहीं: क्योंकि यह पर्याप्त नहीं है, बल्कि आइए हम हृदय में कामुकता से, शर्मनाक विचारों से, भाई की अच्छी प्रतिष्ठा से ईर्ष्या करने से, अपने पड़ोसी के प्रति क्रोध और असंतोष से भी संयम रखें, एक असंयमी जीभ से बचो, उसे बेकाबू न होने दो, बल्कि उसके लिए एक सीमा, एक समय और एक माप निर्धारित करो कि वह केवल उपयुक्त बातें ही बोले, आँखों की कामुक नज़रों से, और उन शब्दों को सुनने से बचो जो अनुग्रहहीन और परमेश्वर को अप्रिय हों। हाँ, मेरे बच्चों, हाँ; – मैं तुमसे विनती करता हूँ, स्वयं को पवित्र आत्मा के एक ऑर्गन और एक मधुर सारंगी की तरह सुर में लाओ; अपने हाथों को मूर्खतापूर्ण हरकतों और कामुक स्पर्शों से बचाओ, कहीं तुम अनियंत्रित न हो जाओ, और एक दूसरे के साथ शांति से रहो।

९. सबसे पवित्र लेंट (महाप्रायश्चित्त) शरीर के लिए बहुत बोझिल न हो, परन्तु इस कारण से हतोत्साहित न हो; थोड़ा और सहन करो, और एक बार जब तुम इसकी आदत डाल लोगे, तो तुम इस बोझ को महसूस करना बंद कर दोगे, विशेषकर पहले सप्ताह के बीत जाने के बाद; क्योंकि हमारे लिए, रोटी और पानी, और अपना जीवन धारण करने के लिए कुछ और, पर्याप्त हैं। हमारे परम धन्य पिता, जैसा कि आप जानते हैं, लगभग पूरी तरह से बिना भोजन के रहते थे: कुछ पूरे लेंट के लिए, कुछ एक सप्ताह के लिए, कुछ तीन दिनों के लिए उपवास करते थे, और अन्य हर दिन थोड़ा-थोड़ा खाते थे। हम हर दिन अपना भोजन लेते हैं, और यह विधि होता है, लेकिन *'हमारी विनम्रता में, प्रभु हमें याद करें'* (भजन संहिता 135:23), और हे प्रभु, इस छोटी सी भेंट को महान एंथनी के कार्य के रूप में स्वीकार करें। क्योंकि हम समुदाय में रहते हैं और राजसी मार्ग पर चलते हैं, जिसे हमारे पूर्वजों ने सभी से बढ़कर पसंद किया था। बस अपने आप को आत्मा के सबसे भीतरी मंदिर में हमेशा शुद्ध रखें और अपनी आत्मा के लिए कुछ भी हानिकारक करने की अनुमति न दें।

10. हम परमेश्वर का भय मानें, जो *'अंधकार की छिपी हुई बातों को प्रकाश में लाएगा और हृदय की योजनाओं को प्रकट करेगा'* (2 कुरिन्थियों 4:5), और *'प्रत्येक मनुष्य को उसके कर्मों के अनुसार* ही नहीं, बल्कि उसके वचनों और विचारों के अनुसार भी *प्रतिफल देगा'* (रोमियों 2:6), और यहाँ तक कि—जो और भी अधिक भयानक है—अज्ञानता में किए गए पापों के अनुसार भी। और उसकी क्रोध की आग के सामने कौन टिक सकता है? उसकी उपस्थिति में निर्दोष ठहरने के लिए कौन संतुष्ट है? – तो फिर, कौन अब से धार्मिकता के मार्ग पर चलने के लिए पूरी लगन से प्रयास नहीं करेगा? कौन अपनी लापरवाही और सुस्ती को दूर करने का प्रयास नहीं करेगा? – हे शोक करने वालों, उठो; रात बीत चुकी है, और भविष्य के प्रतिफल का दिन पहले ही आ गया है। मरणा हमें अनमना न पाए, और न ही वह हम पर कोई असाध्य और शाश्वत घाव छोड़े।

11. मैं गरीब हूँ, और किसी भी मनुष्य से अधिक; या यूँ कहें कि मैं ही हर यातना का सबसे अधिक पात्र हूँ। मैं इस देह से अलग होने, मेरे प्राण के लिए पवित्र स्वर्गदूतों के आने, और इस बात के विचार से कि मैं वायुमंडल से होकर कैसे गुज़रूँगा और संसार के शासक से कैसे बोलूँगा, भयभीत और स्तब्ध हूँ, जैसा कि संत एंथनी के जीवन में लिखा है? हे मेरी दुर्बलता! मेरा क्या इंतज़ार कर रहा है? और मैं अपने दिनों को कैसे बर्बाद करता हूँ, अपने पापों में डूबा हुआ, नींद और सुस्ती में लिप्त रहता हूँ? सर्व के न्यायाधीश और प्रभु परमेश्वर के सामने मेरा रूप कैसा होगा! मैं किस दृष्टि से उस पर नज़र डालूँगा, जिसकी दृष्टि गिरत को सूखा देती है और जिसका भयानक वचन पहाड़ों को चूर-चूर कर देता है? वहाँ मैं अपनी पैरवी में क्या कहूँगा? मुझे कौन रक्षक मिलेगा? अब मैं उस दयालु प्रभु से कैसे विनती करूँ जो कभी नहीं छोड़ता ? मैं उन दयालु प्रभु की दया के लिए कितनी कड़वी आँसुओं, कितने सामंजस्यपूर्ण शब्दों और हार्दिक आहों के साथ विनती करूँ, जो वास्तव में अगम्य हैं?! – हाय मेरे भाइयो, हाय मेरे भाइयो! मैं यहाँ से ही अपनी नियति देख सकता हूँ। मुझे केवल एक ही आशा है – हमारे पवित्र पिता की प्रार्थनाएँ और आपकी धन्य मध्यस्थता।

12. तथापि, हम बार-बार उठ खड़े हों और स्वयं को हर प्रकार के ईश्वर-प्रसन्न करने वाले कार्यों के लिए विवश करें, वर्तमान को साहस के साथ सहन करें और भविष्य की आशाओं में सांत्वना पाएं। हम शरीर को तुच्छ समझें; हम न तो परिश्रमों को देखें, न दुखों को, न अपमानों को, न भूख को, और न ही अपने कार्य के सिवा किसी अन्य चीज़

को। – यदि हम इसी प्रकार जिएँ, तो निस्संदेह हम उद्धार पाएँगे, और स्वर्ग में हम संतों में गिने जाएँगे, ताकि हम उन सभी संतों के साथ आनंद मनाएँ जो प्राचीन काल से प्रभु मसीह को प्रसन्न कर चुके हैं।

४३. धन्य हैं वे जो समुदाय में परिश्रम करते हैं: आनन्दित हो!

४३. १) धन्य हैं वे जो सामुदायिक जीवन में परिश्रम करते हैं: आनन्दित हो! – 2) हम तंग हालात में रहते हैं; लेकिन पुराने समय के तपस्वी इसी तरह रहते थे, और आज के समय के भी: तो हतोत्साहित न हो। – 3) आज्ञाओं और नियमों का पालन करो, एक दूसरे की मदद करो, पठन पर ध्यान दो, भय के साथ अपनी मुक्ति का प्रयत्न करो; स्त्रियों से बातचीत से बचो। [1, 47]

13. परमेश्वर धन्य हो, जिन्होंने मानवजाति के प्रति अपने दयालु प्रेम की प्रचुरता में, अपनी पूर्व-ज्ञात योजना के अनुसार, हमें इस पवित्र मठवासी जीवन में एक पवित्र बुलावा दी है, ताकि हम स्वयं को पूरी तरह से उनके हवाले कर सकें और स्वयं को उनके तथा स्वर्गदूतों की नकल करने वाली स्वर्गदूतों जैसी स्तुति की सबसे निकटतम और सबसे सच्ची सेवा के लिए पूरी तरह से समर्पित कर सकें, – और जिन्होंने हमारे हृदयों को इस प्रकार प्रेरित किया है कि हम अपने माता-पिता, अपने संबंधियों, अपने स्वदेश और ऐसी सभी वस्तुओं को त्याग दें, और स्वयं पर उनका शुभ और उद्धारकारी जुआ उठा लें, – और जिन्होंने हमें, हमारी नम्रता में, आप लोगों के साथ सामुदायिक जीवन और संगति में शामिल होने के योग्य समझा है, बेशक, यह आपको मार्गदर्शन और चराने के लिए नहीं है, यह एक ऐसा विचार है जिसे मैं सोचने की हिम्मत भी नहीं कर सकता, यद्यपि ऐसा हो गया है। प्रिय बच्चों, प्रभु में सदा आनन्द मनाओ; आनन्द मनाओ, स्वर्ग के नागरिकों और पृथ्वी पर निर्वासितों, स्वर्गीय यरूशलेम के निवासियों और यहाँ के यात्रियों, स्वर्ग के राज्य के वारिसों और सांसारिक आशीषों से वंचितों। प्रसन्न हो, हे तुम जो परमेश्वर की आज्ञा के लिए निर्वास और भटकने की कठिनाइयों के मार्ग पर शीघ्रता से यात्रा करते हो। प्रसन्न हो, हे तुम जो संसार की दृष्टि में अंतिम हो, फिर भी ज्ञान से भी बड़े खजाने के स्वामी हो। हे अच्छे और ईश्वर-एकत्रित समुदाय, आनंद मनाओ, जो मन और हृदय से एकजुट है, एक ऐसी परिषद जो पिता से प्रेम करती है और भाई से प्रेम करती है, पृथ्वी पर एक दूसरा दैवीय दल, हमारे अति पूजनीय पूर्वजों के प्राचीन निवास-स्थान के नवीनीकरणकर्ता। हे परमेश्वर के सेवको, आनन्द मनाओ, हे श्रमिको जो दिन-रात अपने हाथों से परिश्रम करते हो, ताकि किसी पर भार न बनो, और न केवल अपने लिए बल्कि अपने भाइयों में सबसे कमजोरों और बाहरी संसार के जरूरतमंदों के लिए भी प्रदान करो। हे अटूट और अनुकरणीय सखा-भाव, हे ईश्वर द्वारा स्थापित समुदाय, जो न तो राजा की धमकियों से, न राजकुमारों के भय से, और न ही मृत्यु की संभावना से डगमगाया। हे आप लोगों, जो एक-दूसरे की खुशी में सहभागी हैं, जिनमें से प्रत्येक अपने भाई के लिए जो कुछ भी अच्छा है, उसे सम्मानजनक मानता है, और जिनके बीच न तो ईर्ष्या है, न ही उत्साह, न ही प्रतिद्विंद्विता, बल्कि जहाँ शांति, प्रेम और एकता का राज है, आनंद मनाओ। मैं यह इसलिए नहीं कह रहा हूँ कि हम परीक्षाओं का सामना नहीं करते: क्योंकि अदम्य और संघर्षशील व्यक्ति के सिवा और किसी के सिर पर मुकुट नहीं सजाया जाता, जो तीरों का सामना करता है और उन्हें चलाने वाले को घायल करता है – बल्कि इसलिए कि हम शैतान के प्रहारों से नहीं गिरते। सचमुच, हे ईश्वर द्वारा एकत्रित मेरे बच्चों! तुम पवित्र आत्मा के वरदान से पोषित होते हो; तुम प्रभु द्वारा दिया गया जल पीते हो, और जो कोई भी इसे ग्रहण करता है, वह *'फिर कभी प्यासा नहीं होगा'*, बल्कि यह उसके लिए *'जीवन के लिए फूटने वाला जल का एक सोता'* होगा (यूहन्ना 4:14-15)।

14. सर्दी आ गई है, और हमारे पास रहने के लिए बहुत कम जगहें हैं, और वे भी गरीब और तंग हैं। लेकिन हतोत्साहित न हो; क्योंकि इसके बावजूद, आप सद्गुण में विशाल हैं और इस मामले में प्रशंसनीय हैं, आप उस बात को कोई महत्व नहीं देते जो दुखद है, भले ही वह दुखद हो, और केवल इस बात की परवाह करते हैं कि आप हमेशा वही करें जो परमेश्वर को भाता है। इसके अलावा, यदि हम प्राचीन पवित्र पिताओं को याद करें, या आज भी विश्वास में परिश्रम करने वालों को देखें, तो हमें पता चलेगा कि हम महलों में रहते हैं। क्या आप यह नहीं देखते कि अभी भी परमेश्वर के कुछ सेवक खुले में रहते हैं, कुछ खुद को गुफाओं और कब्रों में बंद कर लेते हैं, और कुछ अन्य बेड़ियाँ पहनते हैं और बहुत कम खाते हैं, केवल रोटी से ही संतुष्ट रहते हैं—या उससे भी परहेज़ करते हैं—और हर दूसरे दिन पेड़ों के फलों से इस ज़रूरत को पूरा करते हैं? वास्तव में, आज भी ऐसा ही है। लेकिन निराश न हों; क्योंकि आप किसी भी तरह से उनसे पीछे नहीं रहेंगे, बल्कि उन्हें अपना समकक्ष, या उनसे भी श्रेष्ठ माने जाएँगे, जैसा कि संत हमें आश्वासन देते हैं—बशर्ते आप हर काम में हमेशा परिश्रमी और इच्छुक रहें। बार-बार उत्साह से भरें; हिम्मत रखें और दिन-ब-दिन अधिक साहसी बनें। शत्रु को नीचे गिरा दो, उसे अपनी नम्रता के पैरों तले, पाप-स्वीकृति की तलवार से, और आज्ञाकारिता की छुरी से कुचल दो। हे प्रभु, धर्म का सूर्य सदैव आपके हृदयों में चमके, जो वासनाओं के अंधकार को दूर कर दे; क्योंकि जब वह उदय होगा, *तो* जंगली जानवर अपनी बिलों में लौट जाएँगे *और अपनी गुफाओं*

में लेट जाएँगे: इन वचनों को आध्यात्मिक रूप से समझें। जहाँ तक हमारी बात है, हम जीवन की भोर से लेकर मृत्यु की संध्या तक प्रभु का कार्य करने निकलेंगे, अपना कार्य पूरा करते हुए (भजन संहिता 103:22-23)। थोड़ी और देर, और हम विजयी होंगे।

१५. नियमों, आज्ञाओं और विधानों का पालन करो। जो गिर गए हैं उन्हें उठाओ; जो कमज़ोर हो गए हैं उन्हें मज़बूत करो; और हर बात में एक-दूसरे की मदद करो, ताकि बुद्धिमान का वचन तुम में पूरा हो जाए: *'भाइयो, एक-दूसरे की मदद करो, क्योंकि एक नगर मज़बूत और ऊँचा होता है'* (नीतिवचन १८:१९)। पठन पर ध्यान दो, और उन वचनों पर ध्यान दो जो तुम में से प्रत्येक के लिए सबसे अधिक लाभदायक हैं। प्रत्येक व्यक्ति अपने काम को लगन से करे, जैसे कि यह परमेश्वर का काम हो; और तुम सब, *'भय और कम्पना के साथ अपनी मुक्ति का काम करो'* (फिलि. 2:12)। अपने ही हृदय में तलवार न घोंपो, और न ही आत्मा के मामलों की उपेक्षा करो। हे भाइयों, मुझे कुछ भाइयों द्वारा यह प्रकट किया गया है कि आप कुछ मामलों में स्वयं का ठीक से आचरण नहीं करते हैं: क्योंकि आप महिलाओं को लालच से देखते हैं और उनसे बातचीत करते हैं, वे जिन्होंने हमें स्वर्ग से बाहर निकाल दिया। या क्या आपने नहीं सुना कि हव्वा ने आदम के साथ क्या किया? तो, महान मार्टिनियन की तरह उनसे भागो; यदि शरीर से नहीं, तो हर तरह से आत्मा में। – और यह कैसी बात है: 'अमुक व्यक्ति पुनरुत्थान पर यहाँ क्यों नहीं आया?! लेकिन वे अगली बार तो ज़रूर आएँगे।' – मैं आपसे निवेदन करता हूँ, मुझे हमेशा आपके आचरण के बारे में अच्छी खबर सुनने को मिले! हमारे प्रभु यीशु मसीह के परमेश्वर पिता, जो प्रतिदिन मुझे अपनी सामर्थ्य की शक्ति से, मेरे पवित्र पिता की मध्यस्थता और आपकी प्रार्थनाओं के द्वारा, पाप की गहराई से बचाते हैं, वे आपको भी यह अनुग्रह दें *कि* आप *'बुद्धिमान बनें और उसी नियम के अनुसार जिएँ'* (फिलि. 3:16), और आप में एक आत्मा, एक मन और एक उद्देश्य हो; और आप, एक धार्मिक और धर्मी जीवन जीकर, उन सभी संतों के साथ वादा किए गए आशीर्वाद प्राप्त करने के योग्य ठहरें, जिन्होंने प्राचीन काल से परमेश्वर को प्रसन्न किया है!

४४. महाधर्माध्यक्ष पद के संबंध में स्वयं के लिए भय

४४. १) मठाध्यक्षता के संबंध में स्वयं से डरना। – २) हमें सभी चीजों से वैराग्य में उत्कृष्टता प्राप्त करनी चाहिए, न्याय को ध्यान में रखते हुए; हमें स्वयं को अच्छा करने के लिए प्रेरित करना चाहिए – और यह आसान हो जाएगा। – ३) लोगों के चेहरों को देखने, और दूसरों तथा अपने ही अंगों के साथ कामुक संपर्क से बचो। [१, ४८]

16. मैं तुमसे बात करने और यथासंभव सत्य के वचनों से तुम्हें मजबूत करने से नहीं थकता, कहीं ऐसा न हो कि तुम में से कोई अज्ञानता या लापरवाही के कारण मृत्यु के डंक—अर्थात् पाप—से डंकित हो जाए— आज्ञा का उल्लंघन करके और अनुचित कार्य करके – यदि, और जब मैं ऐसा करता हूँ, तो मुझे पता चलता है कि धूर्त शैतान आप में से कुछ को प्रभावित करने में सफल हो जाता है, जिनके लिए मुझे बहुत रोना और भारी दुख है। क्योंकि तुमने किसी भी प्रकार से जो भी पाप किए हों, मैं, जो अयोग्य हूँ, धर्मी न्याय के दिन और प्रभु परमेश्वर के सामने मनुष्यों के सभी कर्मों के प्रकट होने के दिन हिसाब-किताब के लिए बुलाया जाऊँगा, यदि मैं तुम्हें पहले से चेतावनी न दूँ, यदि मैं तुम्हें पहले से बल न दूँ और तुम्हें शिक्षा न दूँ। *'हाय, यदि मैं तुम्हें सुसमाचार न प्रचार करूँ'* (1 कुरिन्थियों 9:16)। परन्तु मैं और भी अधिक शोक करता हूँ क्योंकि, यद्यपि मैं भेड़ कहलाने के भी योग्य नहीं हूँ, फिर भी मैं एक चरवाहे का पद धारण करता हूँ! मेरे पास दूसरों को ज्ञान देने का क्या औचित्य है, क्या बहाना, जबकि मैं स्वयं अंधकार हूँ, और उन लोगों को चंगा करने का जो वासनाओं से कमजोर हो गए हैं, जबकि मैं स्वयं उन वासनाओं से भटक गया हूँ और उनमें बहक गया हूँ?! फिर भी, आपसे प्रेम के कारण और मेरे पिता की आज्ञा के पालन में, मैं आपको हानि पहुँचाने के बजाय गेहना की आग का ईंधन बनना पसंद करूँगा। हर दिन मैं इस पर मनन और विचार करता हूँ कि परमेश्वर का न्याय कैसा है, और परमेश्वर हर व्यक्ति से कितनी सख्ती से मांग करता है कि वे हर बात में सिद्ध और हर गुण से परिपूर्ण हों, विशेषकर यदि वे वचन के सेवक हैं। तो फिर, मैं क्या करूँ? किसकी ओर मुड़ूँ? मैं अपने साथियों के रूप में किसे चुनूँ? अब केवल एक ही बात बची है—आपकी प्रार्थनाओं और मेरे पिता की प्रार्थनाओं पर भरोसा करना, ताकि उनके द्वारा बल प्राप्त करके, मैं आपको अच्छी तरह से मार्गदर्शन कर सकूँ और अपने ही जुनून से लड़ सकूँ, और हर बात में प्रभु की इच्छा के अनुसार चल सकूँ।

17. स्वर्ग का राज्य हमारे सामने है। आइए दिव्य आज्ञाओं का पालन करके इसे प्राप्त करें। आइए हम इंद्रिय सुखों में लिप्त न हों, आइए हम आलसी न बनें; आइए हम संसार और संसार में जो कुछ भी है उससे अपनी वैराग्य भावना को और अधिक तीव्र करें, और छल की आत्माओं पर विजय प्राप्त करें, जब तक कि हम शाश्वत जीवन के अटूट आश्रय में उद्धारकारी शरण न पा लें। लापरवाहों के लिए कितनी कड़वी यातना प्रतीक्षा कर रही है! *'हर उस मानव आत्मा के विरुद्ध क्रोध और प्रचंड क्रोध जो बुराई करती है*—हर मसीही की आत्मा के विरुद्ध, और एक

भक्षि की तो और भी अधकि! (रोमयिों 2:8-9)। क्योंक जितिना अधकि हमें सम्मानति कयिा जाता है, उतनी ही अधकि जीवन की पवत्रिता हमसे अपेक्षति होती है। आत्म-अनुशासन से उत्पन्न दुख क्षणकि है, लेकनि इससे मलिने वाली आनंदति प्रसन्नता शाश्वत है, यद इिस संक्षप्ति आत्म-अनुशासन के माध्यम से हम हर अच्छे कार्य के प्रत एिक स्थरि सद्भावना प्राप्त करते हैं: यह भोजन, नींद, चड़िचड़ापन, बुरे वचिारों और बाकी सब चीजों पर लागू होता है। – क्योंक यिद हिम भलाई से प्रेम करते हैं और उसके लिए प्रयत्न करते हैं, तो ईश्वर हमें उसे करने की शक्त प्रिदान करेंगे; और तब सद्गुण का मार्ग हमारे लिए आसान और सुगम हो जाएगा। पाप, हालाँक, जिो लोग स्वयं को इसके हवाले कर देते हैं, उनके लिए कठनिाइयों, तेज बहावों, दुखों, अंधकार, घृणास्पद चीजों और वनिाश से भरा है। तो आओ, मेरे बच्चों, हम ईश्वर के मार्ग पर चलें, जो दुखद होते हुए भी आनंद से भरा है, संकरा होते हुए भी वशिाल है। अपनी जागरणों में, एक दृढ़ और प्रसन्नचत्ति स्वभाव बनाए रखें; अच्छी तरह गाओ, अच्छी तरह प्रार्थना करो, और अपने भाइयों और बहनों के प्रत प्रिेम दखिाओ, साथ ही एक वशिेष वनिम्र सम्मान भी।

18. हर बात में लापरवाही एक बड़ी बुराई है, और एक घातक चीज़ है; और धूर्त शैतान, यद कोई सतर्क नहीं रहता है, तो वह इससे तेज़ी से हमला करता है, एक चोर की तरह चुपके से आता है और अपनी दुर्भावना के तीर से हमारी आत्मा को घायल कर देता है, हमारी आँखों को जवानों के सुंदर चेहरों की ओर खींचता है, और दोनों में मीठी मुस्कान से वासना की आग भड़काता है। जब वह कसिी एक व्यक्त को बहकाने और उसे अशुद्ध प्रेम की ओर झुकाने में सफल हो जाता है, तो वह उस व्यक्त के जुनून के केंद्र को मोहति करने और उसे कामुक रूप से अपनी ओर आकर्षति करने का प्रयास करता है; फरि परस्पर नज़रों का आदान-प्रदान, आत्मा का प्रवाह, और कामुक उत्साह होगा; और अंत में, जब तक ईश्वर की वशिेष सहायता, पति की सुरक्षा, और इस प्रलोभन में पड़े लोगों की ओर से जागरूकता न हो, तब तक वनिाश ही है - सोडोम का दहन और गोमोरा का नाश। लेकनि आइए हम सभी इससे भागें! मैं, स्वयं प्रलोभति हो चुका हूँ, प्रलोभति हो रहे आप लोगों की ओर पहला हाथ बढ़ाता हूँ। इसके वरिुद्ध ताकत और सुरक्षा का एक बड़ा स्रोत अपनी आँखों की रक्षा करना और सच्चा इकरार करना है। – फरि भी, अपने ही मामले में भी, हमें ऐसी लापरवाह हमि्मत नहीं करनी चाहिए: क्योंक यिहाँ भी मृत्यु घात लगाए हुए है – एक ऐसी बात जसिे अनभज्ञि लोगों से छपिाए रखना ही बेहतर है। जन्होंने इसका अनुभव कयिा है, वे जानते हैं क मिैं कसि बारे में बात कर रहा हूँ; फरि भी, हर कसिी के लिए सतर्क रहना उचति है। उसको न छूओ, न उस पर बैठो—और अपनी नग्नता को न देखो, कहीं ऐसा न हो कि तुम कनानी अभशिाप के अधीन हो जाओ। क्योंक उिस रेगस्तिान के स्तंभ का पतन, जसिके बारे में महान एंथनी ने कहा था, कसिी और कारण से नहीं बल्क इिसी कारण से हुआ था, यद्यप सिबसे बुद्धमिान पति ने इसे व्यक्त नहीं कयिा। इसलिए, सावधान रहो क तिुम कतिनी खतरनाक राह पर चल रहे हो, कहीं मृत्यु तुम्हें घेर न ले। हे दीन मनुष्य! आप जानते हैं क प्रिेरति क्या कहते हैं: *'मुझे इस मृत्यु के शरीर से कौन छुड़ाएगा?'* (रोमयिों 7:24)। आप इस शरीर के साथ एक जंगली जानवर, एक शेर के साथ जैसे रहते हैं, वैसे ही रहते हैं। जब तक आप इस पर अपनी तलवार नहीं चलाते, यह आपको झपटकर, कुचलकर और मार डालेगा।

४५ राक्षस हमारी वासनाओं को भड़काकर हमें लुभाते हैं, और वे हमें नष्ट कर देते हैं: हमें लड़ना चाहिए

४५. १) राक्षस वासनाओं को भड़काकर बहकाते हैं, और वे नष्ट कर देते हैं: हमें लड़ना चाहिए। – २) क्या आप गरि गए हैं? शोक और पश्चाताप करने के बाद उठें: प्रभु आपको चंगा करेंगे। – ३) आइए हम उनकी आवाज़ पर ध्यान दें; आइए हम हतोत्साहति न हों, बल्क आइए हम खुद को सशस्त्र करें। – 4) सामुदायकि जीवन में जो कुछ भी नदिंनीय है उससे भागो, और जो कुछ भी आवश्यक है उसमें उत्कृष्ट बनो। [1, 49]

19. हम अपने मार्ग को कैसे सुधारें? कैसे, परमेश्वर के वचन और उसकी धार्मकिता के वधिानों (भजन संहति 118:9) को बनाए रखने के अलावा। लेकनि इसके अलावा, हम वास्तव में इस युग के अंधकार के अधपितियों के साथ एक अनवरत युद्ध में लगे हुए हैं; और हमारे प्रत उिनकी कटुता महान और अथक है, जैसा क 'लैडर' (सीढ़ी) में लखिा है (पवत्रि 4, 35; 26, 126): वे हमला करते हैं, उकसाते हैं, वासनाओं से पीड़ा देते हैं, सांसारकि इच्छाओं को भड़काते हैं, कामवासना की आग में घी डालते हैं, बुराई को बढ़ाते और वविधि रूप देते हैं – और उनके प्रलोभन घातक हैं। एक गरीब व्यक्त इिन चीजों में से कसिी एक के जाल में फँस जाता है यद वह अपना ध्यान नहीं रखता: चाहे वह ईर्ष्या से हो—जो हत्या के बराबर है—या व्यर्थता से, या गुप्त भोग-वलिास से, या दुष्ट इरादों वालों की संगत सि; क्योंक केिवल इसी एक बात के लिए भी, इस तरह पीड़ति आत्मा नरक में जा सकती है। लेकनि उपरोक्त में से जसि भी चीज़ में कोई व्यक्ति फँस जाता है, उसके पास न तो परमेश्वर होता है, और न ही स्वर्ग का राज्य; वे अनंत जीवन से वंचति हो जाते हैं, अनंत आनंद खो देते हैं, और उन्हें न बुझने वाली आग, एक ऐसा कीड़ा जो कभी नहीं सोता, घोर अंधकार, और दुष्टात्माओं का संग प्राप्त होता है। – और जहाँ तक हमारी बात है, हे भातयिो, हम ऐसी कसिी भी चीज़ से पीड़ति न हों; आओ हम

शत्रु के फंदों से बचने का प्रयास करें, आओ हम वीरता से लड़ें, आओ हम वासना की आग को सहन करें – और यह निश्चित रूप से बुझ जाएगी। क्योंकि परमेश्वर की सर्वशक्तिमान व्यवस्था हमें इस आग में भस्म होने नहीं देती यदि हम लड़ें – और हम पवित्रता की ओस की ठंडक में निकल आते हैं, और पवित्र जवानों के साथ परमेश्वर की महिमा करते हैं। हम पर ईर्ष्या का आक्रमण हो, परन्तु हम इस जुनून के विरुद्ध खुद को सशस्त्र करें, और यह, थोड़ी देर ठहरने के बाद, बीत जाएगा; यह एक घंटे या तीन, या शायद पूरे दिन तक रह सकता है, परन्तु हमारे बिस्तर पर यह मिट जाता है; और तुम, इस तरह संघर्ष करने के बाद, मसीह के योद्धाओं में गिने जाओगे, जिन्हें यातनाएँ नहीं बल्कि मुकुट प्राप्त होंगे।

20. तुम घायल हुए हो, फिर भी तुमने दूसरों को भी घायल किया है; तुम गिर गए हो—हालाँकि ऐसा कभी न हो—तुरंत उठ खड़े हो जाओ; क्या तुम्हें शब्दों द्वारा अश्लीलता की ओर बहकाया गया है, क्या तुम्हारी आँखों के सामने दिखने वाली चीज़ों ने तुम्हें लुभाया है, क्या तुम्हारे मन की आलस्यपूर्णता से दिन-दहाड़े के सपनों में फँस गए हो, या ठहाके लगाकर हँस पड़े हो? एक बार फिर से सही मार्ग पर लौट आओ, स्वयं को अपनी उचित स्थिति में स्थापित करो, एक पश्चातापी बनो, परमेश्वर की महिमा करो, अपना पाप स्वीकार करो, अपनी आत्मा की गहराई से गर्म आँसू बहाओ, अपने हृदय की गहराई से आहें उठने दो, कराह उठो, अपना सिर झुकाओ, पश्चातापी बनो, और नम्रता का अभ्यास करो। आत्मा का उपचार ऐसा ही है! क्योंकि लिखा है: *'जब तुम लौटोगे और आहें भरोगे, तब तुम बच जाओगे और तुम्हें पता चलेगा कि तुम कहाँ रहे हो'* (यशायाह 30:15); और: *'जब तुम अभी भी बोल ही रहे होगे, तब वह तुमसे कहेगा, "मैं यहाँ हूँ"'* (यशायाह 58:9); और फिर: *'वह पीड़ित होकर चल दिया, और मैंने उसके मार्गों को चंगा किया'* (यशायाह 57:17)। देखो, हमारे पास कितना अनुग्रहकारी परमेश्वर है, कितना दयालु, कितना सांत्वना देने वाला, कितना शीघ्र सुनने वाला! *'क्योंकि वह हमारे पापों का प्रायश्चित है'* (1 यूहन्ना 2:2); हमारे लिए वह गरीब हो गया, हमारे उद्धार के लिए उसने स्वयं को थका दिया, उसने घाव, अपमान, गाली-गलौज और उपहास सहन किया, और अपना सर्व-पवित्र रक्त बहाया – और *'उसके घावों से हमें चंगा किया गया है'*, जैसा कि लिखा है (यशायाह 53:5)। तो आओ, हम निकट आएँ और *"उसके सामने घुटने टेकें, और उसके सामने रोएँ, क्योंकि वह हमारा परमेश्वर है, और हम उसकी चरागाह के लोग, और उसके हाथ की भेड़ें हैं"* (भजन संहिता 94:7)।

21. आज हम उसकी आज्ञा मानें, और उसे और अधिक दुखी न करें; हम अविश्वास के कारण बड़बड़ाने के लिए प्रलोभित न हों, जैसा कि प्राचीन लोग (मरुभूमि में इस्राएली) हुए थे; और हम बिना देरी के प्रतिज्ञात देश की यात्रा करें, जहाँ एक संकीर्ण और दुखद मार्ग से पहुँचा जाता है। यदि उस समय के लोगों ने अपने नेता यहोशू और येफुन्ने के पुत्र कालेब की बात मानी होती, तो वे परमेश्वर द्वारा प्रतिज्ञा की गई भूमि के वारिस होते। परन्तु जब वे उस कठिन मार्ग को लेने के विचार से ही थक गए और हताश हो गए, और परमेश्वर की अजेय शक्ति की सहायता के बावजूद, जिन राष्ट्रों से वे मिले, उनके प्रतिरोध से डर गए, तो उन्हें विनाश के हवाले कर दिया गया – और उनकी स्मृति एक बड़े शोर के साथ मिट गई। अब हमारे साथ भी यही होगा। क्योंकि यदि आप हमारी आज्ञा का पालन करते हैं, जो कि हम इसके अयोग्य हैं, और दृढ़ नहीं रहते, बल्कि इंद्रिय सुख के बड़े-बड़े बर्तनों पर बैठ जाते हैं, मिस्र की दासता और इस संसार की वासनाओं की दासता के बारे में सोचते हैं—जिससे आप परमेश्वर की कृपा और अनुग्रह से मुक्त हुए हैं— परन्तु हमारे साथ हौसला बढ़ाओ और जोश से उठो, उत्साह से जलते हृदयों के साथ, अपने पाँवों में शान्ति के सुसमाचार की घोषणा करने की तत्परता का जूता पहनकर, अटूट विश्वास का कवच धारण करके, और आत्मा में हर समय हर प्रकार की प्रार्थना और विनती करते हुए (इफिसियों 6, 14–18): तब, आपके साथ मिलकर, हम आध्यात्मिक यात्रा को सफलतापूर्वक पूरा करेंगे, हम जिन विदेशी और बर्बर वासनाओं का सामना करते हैं, उन्हें कुचलते और उन पर विजय प्राप्त करते हुए, और हम आँसुओं के माध्यम से अपने मन में यॉर्डन को पार करेंगे, और उस भूमि का वारिस बनेंगे जहाँ अमर जीवन फलता-फूलता है और मन अपार आशीर्वादों का फल देता है।

२२. मैं अब, हमेशा की तरह, आपके आत्मिक निर्माण के लिए, आपके बीच इन कुछ और अयोग्य वचनों को बो रहा हूँ। तथापि, इस तुच्छ भेंट को भी स्वीकार करें, और अपने पुण्य कार्यों द्वारा इन कुछ ही शब्दों को तीसगुणा, साठगुणा और सौगुणा कर दें। इसके साथ ही, मैं आपसे विनती करता हूँ कि आप अपने जीवन की कठिनाइयों को धैर्यपूर्वक सहन करें, और आपको सौंपे गए कर्तव्यों को पूरे हृदय से पूरा करें। आप सभी आनंद मनाएँ और मेरी खुशी में भागीदार बनें, और आप सभी की उन्नति हो। कोई भी बड़बड़ाए नहीं; कोई भी दूसरे की (कर्तव्य) पर लालच न करे; कोई भी अपने पड़ोसी के सामने घमंड न करे—क्योंकि ऐसा व्यवहार प्रभु और लोगों के लिए एक घृणास्पद बात है—कोई भी आत्मा या शरीर से शर्मनाक कार्य न करे; कोई भी चोरी-छिपे भोजन न करे; कोई भी झूठ न बोले; कोई भी निंदा न करे; कोई किसी की निंदा न करे; कोई आलसी न हो; कोई पाप के लिए बहाने न बनाए; कोई दोमुंहा, फुसफुसाने वाला, घमंडी, बकवास करने वाला, पाखंडी, भाई-द्वेषी, सुस्त या हठी न हो; इसके विपरीत, तुम सब परमेश्वर के मार्ग

में अनुग्रहकारी और सदाचारी, नम्र (अपने ऊपर ध्यान आकर्षति न करो), संयमी, अथक, उसके सामने नम्र, आज्ञाकारक, मलिनसार, अभद्र नर्भीकता से घृणा करने वाले, एक-दूसरे से प्रेम करने वाले और नष्किपट बनो; ताकि, इस प्रकार जीने और आचरण करने से, हम अपने सामने रखे गए कार्य को सफलतापूर्वक पूरा कर सकें, और, परमेश्वर को प्रसन्न करके, प्रतज्ञिा की गई आशीषें प्राप्त कर सकें।

46. हमें एक उत्कृष्ट जीवन के लिए बुलाया गया है: लेकनि क्या हम वैसे ही जीते हैं जैसा हमने स्वयं चाहा था, और जैसा दूसरे अपेक्षा करते हैं?

४६. १) हमें एक उत्कृष्ट जीवन जीने के लिए बुलाया गया है: लेकनि क्या हम वैसे ही जीते हैं जैसा हमने स्वयं चाहा था, और जैसा दूसरे हमसे उम्मीद करते हैं? – २) आइए हम अच्छाई में दृढ़ रहें और अपनी भावनाओं के बहकावे में न आएं, न केवल अपने कार्यों में बल्कि अपने सपनों में भी। – ३) हमने संसार क्यों छोड़ा? वंचति जीवन जीने के लिए – आशा में। [1, 50]

23. *'ईश्वर की कृपा प्रकट हुई है'*, अद्भुत पौलुस के शब्दों में, *'जो सभी के लिए उद्धार लाती है, ताकि सांसारकि इच्छाओं को त्यागकर'*, वशिष रूप से हम जन्होंने मठवासी जीवन चुना है, *'पवत्रिता से'*, धर्मपरायणता से और *"धर्मनिष्ठा से, धन्य आशा और हमारे महान ईश्वर और उद्धारकर्ता यीशु मसीह के महमिा के प्रकट होने की प्रतीक्षा करते हुए"* (तीतुस 2, 11–12), जो कुछ लोगों को, *'उनके भले कामों में उनकी स्थरिता के अनुसार'*, स्वर्ग का राज्य प्रदान करेंगे, और दूसरों को, *'उनके उत्साह के अनुसार'* और शरीर की इच्छाओं के अनुसार, जो अच्छे इरादों और कर्मों को त्याग चुके हैं, – *'क्रोध'* और अनंत आग में अटूट यातना देंगे (रोमियों 2:7–8)। – तो वचिार करो, क्या हम इसी प्रकार जी रहे हैं? क्या हम उसी उद्देश्य के अनुसार जी रहे हैं जो हमने आरंभ में रखा था? अब, यह नाम और उपाधि प्राप्त करने के बाद: संतों, तपस्वयिों – आइए हम अपने बाद के कर्मों से अपनी मूल पुकार पर शर्म न लाएं, न ही धूप की तरह बनें, जो पहले तो मीठी सुगंध देती है लेकनि अंत में अपने धुएं से नाक को चुभन देती है, और न ही उस दीपक की तरह बनें जो पहले तो तेज़ी से जलता है, घर में सभी को रोशन करता है, लेकनि फरि एक बर्तन के नीचे रख दयिा जाता है या बुझने दयिा जाता है।

२४. सच्चे सदाचार की पहचान हर समय अपने चरत्रि को बनाए रखना है; और यहीं में हमारी मेहनत नहिति है। क्योंकि मनुष्य बहुत आसानी से बहक जाते हैं और अनुचति व्यवहार के प्रति प्रवृत्त होते हैं, जैसा कि दैवीय वाणी ने कहीं और घोषति कयिा है: *'मनुष्य का हृदय जवानी से ही दुष्ट होता है'* (उत्पत्ति 8:21)। संसार का त्याग करने के बाद, आइए हम फरि से इसके सहयोगी और वासना के दास न बनें; अपने सम्मान को पुनःप्राप्त करने के बाद, आइए हम इसे द्वेष के कारण फरि से न खोएं; यहाँ यह स्वीकार करने के बाद कि हमने स्वयं को सभी चीजों से वंचति कर लयिा है, आइए हम उन इच्छाओं और आशीर्वादों पर वापस न लौटें जो हमारे लिए अपरचिति हैं। देवदूतों और मनुष्यों की उपस्थति में कयिा गया अपना व्रत भूलकर, हम कुछ प्रमुखता, कुछ शक्षिण पद, कुछ शांतक्रियिों चाहते हैं? और अन्य लोग अत्यधकि असंतोष दखिाते हैं यदि, कसिी भी मामले में, उनके प्रति कुछ उपेक्षा दखिाई जाए, या उन्हें सबसे पूजनीय पुरुषों के रूप में सम्मानति न कयिा जाए, क्योंकि वे अपने सामने न तो मृत्यु को देखते हैं, न ही अपने वचिारों और कर्मों के भयानक न्याय और नदिा को, और न ही पापों के उस बोझ को जो उन पर भारी है, बल्कि उस चीज़ की ओर जो हृदय को आकर्षति करती है और जसिकी वह इच्छा करता है, और जो एक वकिृत मन द्वारा रची जाती है, जो अपने सपनों में एक को पादरी वर्ग में ले जाता है, दूसरे को मठाधीश के पद पर स्थापति करता है, एक को ज्ञान के वचन से सुसज्जति करता है, और दूसरे को मठ की आवश्यकताओं के प्रबंधन और देखभाल का कार्य सौंपता है। क्या यह एक शैतानी भ्रम और धोखा नहीं है?! हम इस बात के लिए सभी को दोष नहीं देते, लेकनि कुछ लोग ऐसे हैं जो ऐसे ही होते हैं; फरि भी हमारे शब्द सभी के लिए हैं, ताकि उन्हें अच्छे वचिारों और भावनाओं में मजबूत कयिा जा सके।

२५. सभी सम्मानों को गौण मानकर और सभी सांसारकि चीजों को अलवदिा कहकर, अब हम स्वयं को उस कार्य के लिए समर्पति करेंगे जसि हमने उनके स्थान पर अपनाया है। तो फरि, हमने संसार क्यों छोड़ा? – हम भखिारी की तरह जीने, रोने, भूखे रहने, प्यासे रहने, हृदय से शुद्ध और शांतदिूत बनने, अपमानति होने, सताए जाने, और यदि ऐसा हो तो बदनाम कएि जाने – संसार की कचरा बनने के लिए आए हैं; और अंत में, यदि सतावट का समय आ जाए, तो उस के लिए जो हमसे पहले मरे, अपने आपको मृत्यु के हवाले करने के लिए: क्योंकि जन्होंने इस पर दृढ़ संकल्प कयिा है और इसके लिए सदैव तैयार रहते हैं, वे उन लोगों में से हैं जन्होंने वास्तव में इस प्रकार दुख उठाया है, और उनके साथ मलिकर महमिामय होंगे; और वे हमारे एक ईश्वर और सार्वभौमकि राजा, मसीह के साथ राज्य करेंगे।

४७. आपने जिस जीवन को चुना है, उसमें दृढ़ रहें, और अपने सामने आने वाली खुशियों से खुद को वंचित न करें।

४७. १) आपने जिस जीवन को चुना है, उसमें दृढ़ रहें, और अपने सामने आने वाली खुशियों से खुद को वंचित न करें। – २) आप ऐसी कौन सी पीड़ा सहन कर सकते हैं जो प्रभु ने पहले आपके लिए, आपके पक्ष में न सहा हो? – ३) मठ से भाग जाने वाले के लिए शोक, और बुजुर्गों के लिए एक उपदेश। – ४) भगोड़े के लिए प्रार्थना करने का निमंत्रण। [1, 51]

26. मैं तुमसे विनती करता हूँ, हमारे प्रभु यीशु मसीह के प्रेम में, जिन्होंने हमारे पापों के लिए स्वयं को दे दिया, कि प्रभु की पवित्र और जीवन-दायक आज्ञाओं का विश्वासयोग्य पालन करने में दृढ़ और अटूट रहो। कोई भी सुस्त न हो, कहीं ऐसा न हो कि वह पाप में फँस जाए; कोई भी उस शैतान के प्रलोभन के आगे न झुके जो हमें लुभाता है; कोई भी चालाकी से पाप को हमसे छिपाए नहीं, जो हमसे एक बात कहता है और परमेश्वर के सामने, जो मनुष्यों के मार्गों पर दृष्टि रखता है और हृदय के गूढ़ स्थानों को देखता है, दूसरी ही शक्ल में प्रकट होता है। आप स्वयं को उस अनंत जीवन के आनंद से वंचित न करें जो आपके सामने है; इस विद्रोही और भ्रष्ट पीढ़ी से बचें; संसार और संसार की चीज़ों से, सभी वासनाओं, मीठी सुख-सुविधाओं, अपनी इच्छाओं और आत्म-संतुष्टि से घृणा करें। हमने संसार से अपना नाता तोड़ लिया है; हमने परमेश्वर के भय के मार्ग पर चलना आरंभ किया है। हम पाप से मर चुके हैं, और हमें उस सब को वापस आने की अनुमति नहीं देनी चाहिए जिसे हमने अस्वीकार कर दिया है, न ही उसके पीछे फिर से चलना चाहिए, और न ही उसे स्वीकार करना चाहिए। आप यहाँ आए हैं, दुनिया और सांसारिक चीजों से भागकर – आज्ञाकारिता के दास बनने का, और मसीह के लिए, रक्त तक भी, सभी बातों को स्वेच्छा से सहन करने का अच्छा और अद्भुत निर्णय लें। आपने यह अपने त्याग में ही, परमेश्वर और उनके स्वर्गदूतों के सामने, पहले ही वादा कर लिया है। यह आप पर सच्चा है या नहीं, यह आप सबसे अच्छी तरह जानते हैं। लेकिन सावधान, हे मनुष्य: *'परमेश्वर का मज़ाक नहीं उड़ाया जाता'* (गलातियों 6:7)। *'जो कोई मूसा की व्यवस्था को अस्वीकार करता है, वह दो या तीन गवाहों की गवाही पर बिना दया के मर जाता है। आप सोचते हैं कि उन लोगों के लिए कितनी बुरी सज़ा रखी जाएगी जिन्होंने अपने व्रत तोड़कर और वाचा के लहू को अशुद्ध मानकर परमेश्वर के पुत्र को पाँव तले रौंदा है'* (इब्रानियों 10:28-29)।

27. प्रभु ने हमारे लिए दुख उठाया; तुम, एक सेवक, अपने प्रभु जितना दुख कैसे उठा सकते हो? तो फिर, प्रिय, तुम क्यों क्रोधित होते हो? तुम अपना आपा क्यों खो देते हो? तुम क्यों आक्रोशित होते हो? क्यों? – क्या उन्होंने तुम्हारा अपमान किया? तुम्हारे प्रभु ने यह भी सहन किया। क्या उन्होंने तुम्हारे गाल पर थप्पड़ मारा है? क्या उन्होंने अपने मुँह को उस पर नहीं फेरा जिसने उन्हें मारा था? क्या उन्होंने तुम्हारी उपहास उड़ाई है? तुम्हारे प्रभु के साथ भी ऐसा ही हुआ: क्योंकि उन्होंने भविष्यवक्ता के द्वारा कहा: *'जो तुझे निन्दा करते हैं, उनकी निन्दा मुझ पर पड़ी है'* (भजन संहिता 68:10); और फिर: *'उन्होंने मेरे हाथ और मेरे पैर भेद डाले हैं; मेरी सारी हड्डियाँ बाहर निकल आई हैं'* (भजन संहिता 21:17, 18)। प्रभु मसीह के जीवन-दायक दुखों और हमारे लिए उनकी मृत्यु पर मनन करके कौन सा पत्थर का दिल नरम नहीं हो जाएगा! लेकिन क्या आपने स्वयं को दिन-प्रतिदिन अपनी स्वेच्छा से उसके लिए बलिदान के रूप में अर्पित करने का संकल्प नहीं लिया है? वास्तव में, ऐसा ही है, और मुझे विश्वास है कि आप जो कहा गया है, उसके प्रति उदासीन नहीं हैं, बल्कि उद्धारकर्ता का अनुकरण करते हैं और उसके साथ पीड़ा सहने का प्रयास करते हैं, ताकि आप स्वर्ग के राज्य में उसके साथ महिमामय हो सकें। बेशक, आप में से एक दूसरे से बेहतर है और अपने अंतर्निहित सद्गुण के अनुसार उससे श्रेष्ठ है। परन्तु प्रभु परमेश्वर आप सभी को यह सामर्थ्य और धैर्य दे कि आप उचित समय पर मसीह की पूर्णता को प्राप्त करें!

28. जब मैं किसी बात से आनन्दित होता हूँ, तो मैं चाहता हूँ कि तुम भी आनन्दित होओ; और जब मैं दुखी होता हूँ, तो मैं चाहता हूँ कि तुम भी मेरे साथ दुखी होओ। – मैं अब अपने भाई ओरसिसीयस के कारण बहुत दुख में हूँ। वह कल हमारी दृष्टि से ओझल हो गया। और इसका कारण कोई और नहीं बल्कि मेरे अपने पाप हैं, एक गरीब चरवाहे की तरह जो देख नहीं सका, चेतावनी नहीं दे सका, या दुर्बल की देखभाल नहीं कर सका। हाय मेरी दुर्दशा! मैं न्याय और निंदा के योग्य हूँ, और यातना और पीड़ा के हवाले किए जाने का भी। मुझ पर दया करो; परन्तु अपनी भी सावधानी करो, कहीं ऐसा न हो कि तुम पर मेरा अधिकार मेरे अनंत विनाश का कारण बन जाए। तुम में से प्रत्येक अपने-अपने उचित नियमों पर दृढ़ता से कायम रहे; और निश्चय करना कि तुम सब कुछ मुझे पाप-स्वीकार में बता दो। प्रत्येक व्यक्ति उसी बुलावे में बना रहे जिसमें उसे बुलाया गया है। हे बुजुर्गों, जो दूसरों से पहले संसार को त्याग चुके हैं, सावधान रहो, कि कहीं आपके विवेक की कमी के कारण ऐसा ही कुछ फिर से न हो जाए, क्योंकि आप , स्वयं को उचित सीमाओं से आगे बढ़ने की अनुमति देते हैं और हर बात में व्यवस्था बनाए रखने में विफल रहते हैं, जैसा मैं चाहता हूँ और मेरी इच्छा है, जो हर अधीनस्थ पर लागू होना चाहिए। क्योंकि मुझे सुना है कि आप शारीरिक दंड का सहारा ले रहे हैं; फिर भी मैंने

इसका आदेश नहीं दिया है, क्योंकि यह दैवीय शास्त्रों द्वारा निषिद्ध है, यद्यपि पवित्र पिताओं द्वारा कुछ मामलों में और कुछ व्यक्तियों के लिए आवश्यकता के कारण इसकी अनुमति दी गई थी—हालांकि बिना ढिंढोरा पीटे और किसी और के हाथ से, न कि वासनाओं को शांत करने के लिए; आप अपमानजनक भाषा का उपयोग कर रहे हैं, और वास्तव में अश्लील तरीके से; क्योंकि कुछ लोगों के लिए, यह एक आदत बन गई है। – हमें अपने भाइयों को सही मार्ग पर मनाने, कोमलता और सद्गुणों के प्रदर्शन से ले जाना चाहिए: क्योंकि हमारा अधिकार तानाशाही नहीं है, बल्कि वह है जो स्वतंत्रता का सम्मान करता है और स्वेच्छा से आज्ञाकारिता प्राप्त करता है। जहाँ तक अपमानजनक भाषा का सवाल है, जैसे: 'मूर्ख गलातियों', 'मूर्ख', 'साँप की संतान' और इसी तरह के शब्द, ऐसे शब्द हमारे बीच न सुने जाएँ; हालाँकि एक कठोर शब्द, जो शर्मिंदगी या जुनून से नहीं बल्कि करुणा और प्रेम से कहा गया हो, एक बचाने वाला उपाय हो सकता है। क्योंकि एक डॉक्टर भी एक लैंसेट और cautery का उपयोग करता है जब वे मौजूदा बीमारी के इलाज के लिए उपयुक्त हों। और हमारे पास भी हमारे अपने लेज़ेट और काउटरज़िर हैं, अर्थात् प्रायश्चित और फटकार के शब्द: हमें इनका उपयोग करना चाहिए, एक बात को ध्यान में रखते हुए—कि गिरे हुए फिर से उठ सकें और अपने सही रास्ते पर लौट सकें, साथ ही हमारी उदारता की गहराई को दिखाते हुए, विशेष रूप से अपूर्ण लोगों के प्रति। ना तो सोने, ना खाने, ना आराम और इसी तरह की अन्य बातों में, जो इन चीजों के आदी हैं, उन्हें उन लोगों के बराबर नहीं समझना चाहिए जो आदी नहीं हैं। इसीलिए मैं चाहता हूँ कि नए लोगों को तब तक रियायत दी जाए जब तक वे आदी नहीं हो जाते और अपने आप उत्साहपूर्वक सब कुछ करने लगते हैं। क्या हमारे पास भाई केवल श्रम, दाख की बगानों और जैतून के बागों के लिए हैं? कतई नहीं; बल्कि उन्हें अपना उद्धार स्वयं करने में सक्षम बनाने के लिए। बुजुर्गों को इस पर प्राथमिक ध्यान देना चाहिए, और केवल दूसरे स्थान पर भौतिक मामलों पर। सुसमाचार के अनुसार, हर नम्र और पश्चातापी आत्मा अपने हृदय के भले भंडार से भले वचन निकालता है, और ऐसे आत्मा की फटकार और डाँट उन्हें स्वीकार करने वालों के लिए मीठे पेय की मिठास से भी अधिक मीठी होती है; जबकि घमंडी के हृदय से फल निकलता है—गाली-गलौज, कड़वी और कठोर बातें, जो तीखी निगाहों, फूली हुई नाक, और चेहरे के क्रूर हाव-भावों के साथ होती हैं। तो फिर, पाप करने वाले भाई का इससे कैसे उपचार होता है?

29. प्रार्थना करो कि प्रभु प्रसन्न हों और हमें बताएं कि हमारा भाई कहाँ है; क्योंकि इसने मुझे गहरा दुख पहुँचाया है और मेरे नेत्रों में कड़वे आँसू भर दिए हैं। यह मत सोचो कि ओरससीयस का भाग जाना कोई तुच्छ बात है, केवल इसलिए कि वह सबसे छोटे में से एक है। परन्तु मेरे लिए यह एक बड़ी बात है; क्योंकि मसीह ने उसके लिए अपना प्राण दिया।

48. मृत्यु निकट है: अपने भावों को शुद्ध करके स्वयं को तैयार करो

४८. १) मृत्यु निकट है: अपने भावों को शुद्ध करके स्वयं को तैयार करो। – २) तुम्हें प्रगति करनी चाहिए। ३) व्यर्थ की बातों और हँसी से दूर रहो; इसके बजाय मौन से प्रेम करो; और यदि बोलो, तो अपने लिए उपयोगी बात बोलो। [१, ५२]

30. दिन-प्रतिदिन तेज़ी से बीतता जाता है, एक ऐसे नदी की तरह बहता है जो तेजी से आगे बढ़ती है और कभी ठहरती नहीं। और मृत्यु वहीं पड़ी है। और *'वह मनुष्य कौन है जो जीवित रहेगा और मृत्यु को न देखे?'* (भजन संहिता 88:49)। *'मनुष्य खेत के फूल के समान है; उसकी आयु छाया की नाईं बीत जाती है'* (भजन संहिता 101:12; 102:15)। जब पवित्र स्वर्गदूत हमें लेने आएँ, तो हम स्वयं को तैयार न दिखकर हास्यास्पद न बनाएं; परन्तु, मानो हमें इस जीवन से किसी भी क्षण ले जाया जाना हो, आइए हम हर कर्म, हर गति और हर शब्द के प्रति और भी अधिक चौकस रहें – और आइए हम तैयार रहें, सभी के प्रभु परमेश्वर से इस जीवन को छोड़ने का संकेत मिलने की उत्सुकता से प्रतीक्षा करें। यदि हम इस प्रकार आचरण करें, तो कोई बुराई हम पर हावी नहीं होगी, और न ही भूल हमें परमेश्वर के न्याय से बचा पाएगी; हम अब एक-दूसरे से नहीं लड़ेंगे और न ही झगड़े भड़काएंगे; हम एक-दूसरे के सामने बड़ा सम्मान नहीं चाहेंगे, न ही इस बात से दुखी होंगे कि हमने यह या वह नहीं सीखा है, यह या वह याद नहीं किया है, या हम इसमें या उसमें सफल नहीं हुए हैं। परन्तु 'इन सब *बातों को हानि'* (Phil. 3:8) *मानकर,* हम केवल एक ही बात की खोज करेंगे—कि हम अपने प्राणों को वासनाओं से शुद्ध कर लें और परमेश्वर के हो जाएँ। – मैं यह आपसे सीखने से रोकने के लिए नहीं कह रहा हूँ: क्योंकि मैं यह भी आवश्यक मानता हूँ, और मैंने स्वयं आपको विस्तार से नियम दिए हैं कि क्या और कैसे सीखना है; बल्कि यह दिखाने के लिए कि एक बात पहले आनी चाहिए, और यह बाद में; और उस एक बात को मुख्य कार्य माना जाना चाहिए, और इसे एक सहायक कार्य के रूप में। प्रभु हमारा परमेश्वर, जो दुर्बल को बल देता है, *जो 'गरीब को कीचड़ में से उठाता है'* (भजन संहिता 12:7) और जो, दिन-प्रतिदिन, हमें, जो भक्ति में नवजात हैं, *'पूर्णता*

के पुरुषों में बदलते हैं, वह हमें इस प्रकार के आह्वान के योग्य शक्ति से भरें और हमें हमारी योग्यता से भी अधिक पूर्ण दिखाएँ।

31. प्रेरित हमें और भी अधिक पूर्णता की खोज करने की शिक्षा देते हैं (कुलुस्सियों 3:1)। तो फिर, हम जो अभी भी हम में कमी है, उसे खोजना बंद न करें, बल्कि अधिक से अधिक प्रगति करने और हर प्रकार की भलाई से समृद्ध होने का ध्यान रखें। यदि आप एक तारा हैं, तो सूर्य बनने का प्रयास करें; यदि आप पहले से ही परमेश्वर के प्रांगण में हैं और उद्धार पाने वालों में गिने जाते हैं, तो पाँच या दस शहरों पर नियुक्त होने की स्थिति प्राप्त करने का प्रयास करें। अपनी प्रतिभा को बढ़ाएँ ताकि आप बहुतों से ऊपर खड़े हो सकें; बहुत प्रेम करें, और आपको बहुत कुछ दिया जाएगा; प्रभु के एक वफादार सेवक बनें, और आप घर में सभी से श्रेष्ठ ठहरेंगे। ऐसी हैं दिव्य आवाज़ें, जो भय-प्रद हैं – और जब आप उन्हें सुनते हैं, और जब आप उन पर मनन करते हैं – तो वे हमें महिमा पर महिमा की भविष्यवाणी करती हैं।

32. शैतान के विरुद्ध दृढ़ खड़े रहो और उस पर आक्रमणों को दूर भगाओ। मैंने सुना है कि आप में से कई लोग व्यर्थ की बातों में लिप्त रहते हैं, और शाम की सभाओं में बिना किसी दूसरे विचार के मज़ाक-मस्ती में लग जाते हैं; फिर भी यह करने वाले और इसमें भाग लेने वालों दोनों के लिए हानिकारक है। यदि आप में से कोई मज़ाक करता है, तो वह बेवकूफ़ी भरी हँसी तुरंत एक से सब तक फैल जाती है। और शैतान प्रसन्न होता है: क्योंकि वह यहाँ का शासक है, और इससे उसे आनंद मिलता है; जबकि प्रभु, अपने पवित्र स्वर्गदूतों के साथ, आपके इस दुष्टतापूर्ण आचरण पर लज्जित होते हैं। ईश्वर का भय मानो और समझदार बनो। यदि यह सत्य नहीं है, तो मुझे साबित करो कि मैं झूठ बोल रहा हूँ, और मैं चुप हो जाऊँगा; परन्तु यदि यह सत्य है, तो इससे अपने आप को बचाना आरंभ करो। आप अपनी वाचालता पर काबू क्यों नहीं लगाते और जब तक आपसे पूछा न जाए, तब तक चुप क्यों नहीं रहते? निश्चय ही आप मौन की मिठास को नहीं जानते, जो मौन रहने वाले की आत्मा को किसी भी अन्य आनंद से बढ़कर आनंद से भर देती है: क्योंकि ऐसे व्यक्ति का साथी पवित्र आत्मा होता है। आप सोचते हैं कि यह कोई तुच्छ बात है, और आपको यह एहसास नहीं है कि इसमें हर तरह की बुराई निहित है। क्योंकि, जैसा कि दिव्य जेम्स ने कहा, जीभ *'एक अनियंत्रित बुराई है, जो घातक विष से भरी है'*, और जो इसे नियंत्रित करता है *वह एक 'परिपूर्ण मनुष्य' है* (याकूब 3:2, 8)। तो, मुझसे दुखी न हों, भले ही मैं आपको दुखी करूँ। मैं आपके लिए एक पिता हूँ, और मैं आपसे संत पौलुस के शब्दों में कहूँगा: *'ऐसा कौन है जो मुझे आनन्द दे, और साथ ही मेरे कारण दुख भी उठाए?'* (2 कुरिन्थियों 2:2)। क्या आपने बोलने का भार अपने ऊपर ले लिया है? – बहुत अच्छा; लेकिन ट्रोपारिया और स्टिचेरा के बारे में बात करो, पवित्र कहानियाँ सुनाओ, उपयोगी मामलों और आपके सामने आने वाले कार्यों पर चर्चा करो। लेकिन किसी खेत या सब्जी के बगीचे, किसी बैल या अस्तबल, या किसी ऐसी चीज़ के बारे में बात करना जिसका आपसे कोई लेना-देना नहीं है? ऐसी चीज़ों के बारे में पूछने की ज़रूरत किसे है, और उन्हें सही जवाब कौन दे सकता है? – फिर भी एक ने अचानक पूछा, दूसरे ने सवाल दोहराया – और वे चले गए, दुनिया की परवाह किए बिना बकबक करते हुए। तुम्हारे लिए बेहतर होगा कि तुम अपनी कोठरी में बैठो और चुप रहो। मैं फिर से कहता हूँ: जो मौन रहता है, उसके साथी के रूप में परमेश्वर का आत्मा होता है, जबकि इसके विपरीत स्पष्ट रूप से सच है।

४९. हमारे उद्धारकर्ता का हमारे लिए दुख सहने का दृश्य: महिमा और धन्यवाद उन्हें हो!

४९. १) हमारे लिए उद्धारकर्ता के दुख-कष्ट का दृश्य: महिमा और धन्यवाद उन्हें हो! – २) कर्तव्यों में बदलाव के अवसर पर, उन लोगों के लिए एक शब्द जो इसके बारे में बड़बड़ाते हैं और अवज्ञाकारी हैं। – ३) शब्दों में, हर कोई सब कुछ करने के लिए तैयार है, लेकिन कर्म में हर कोई नहीं है: – एक फटकार। [१, ५३]

33. एक बार फिर हम मसीह के दुख-क्लेश के सक्रिय स्मरण के इस पवित्र और गौरवशाली सप्ताह में प्रवेश करते हैं, और एक बार फिर हम सीखते हैं कि महिमा के प्रभु, हमारे ईश्वर और सृष्टिकर्ता, ने हमारे लिए कितनी, कितना कुछ और किस उद्देश्य से दुख सहने की कृपा की। और कौन सा हृदय, चाहे वह कितना भी कठोर क्यों न हो, इस विचार से द्रवित और कांप नहीं उठेगा कि कैसे प्रभु को उनके ही शिष्यों ने धोखा दिया, उन्हें कानूनविहीनों के हाथों सौंप दिया गया, सैनिकों के हाथों बांधा गया, अदालत के सामने लाया गया, उन पर आरोप लगाया गया जबकि वे स्वयं सत्य थे, और उन्हें चापलूस और दुष्ट कहा गया। सभी का उद्धारकर्ता—उन्हें गाल पर थप्पड़ मारा जाता है और वे उसे सहन करते हैं, उन पर थूक दिया जाता है और वे कोई विरोध नहीं करते, उन्हें अत्यधिक पीड़ा में काँटों का मुकुट पहनाया जाता है और वे अशिष्टों को फटकारते नहीं हैं, उन्हें एक राजा की तरह बैंगनी वस्त्र पहनाया जाता है और, एक अपराधी की तरह, उन्हें बेंत से मारा जाता है; अंत में, उन्हें सूली पर चढ़ाया जाता है, भाले से भेदा जाता है, और वे सभी के जीवन के लिए मृत्यु का स्वाद चखते हैं; परन्तु शीघ्र ही बाद में वे पुनर्जीवित हो उठते हैं, हमें भी हमारी

पतन से उठाते हैं और हमें अनंत अमरत्व में स्थापित करते हैं। हे प्रभु, हमारे परमेश्वर और सृष्टिकर्ता! हम, जो केवल धूल और राख हैं, बदले में आपको क्या अर्पित कर सकते हैं?! अपनी असीम समृद्ध दया में, आपने अपनी नाशवान सृष्टि को तुच्छ नहीं समझा, बल्कि परम और अकथनीय नम्रता के उदाहरण द्वारा हमें बचाने के लिए कृपा करके आए। और अब, आप से प्राप्त उद्धार और शक्ति की भावना में, पापी और अयोग्य होंठों से हम आपको स्तुति और धन्यवाद अर्पित करते हैं, जो हमें पूर्णतः भर देता है।

34. हमारे कार्यों में एक बदलाव हुआ है: एक को एक अलग कार्य पर, और दूसरे को एक और कार्य पर स्थानांतरित किया गया है, दोनों उनके लिए नए हैं। यह हमारे पूर्वजों द्वारा दिए गए नियम के अनुसार किया गया है: क्योंकि इस तरह भाईचारा, हृदय की एकता और मन की एकता सबसे अच्छी तरह से संरक्षित और मजबूत होती है। – फिर भी आप में से कुछ ने इसे बिना किसी कठिनाई के स्वीकार कर लिया है, जबकि अन्य को यह बोझिल लगा है; क्योंकि पहले वाले अपनी इच्छा को त्यागने के आदी थे, जबकि बाद वाले इसके लिए तैयार नहीं थे – पहले वाले किसी विशेष कर्तव्य से जुड़े नहीं थे और उन्हें इस बात की परवाह नहीं थी कि उन्हें कहाँ नियुक्त किया गया है, जबकि बाद वाले एक कर्तव्य को दूसरे पर तरजीह देते हैं और एक को सम्मानजनक तथा दूसरे को अपमानजनक मानते हैं। हालाँकि, बाद वालों में से कुछ ने थोड़े दुख के बाद खुद पर काबू पा लिया और अपने नए कार्य से समझौता कर लिया, जबकि अन्य अभी भी डटे हुए हैं और नए आदेश के आगे झुकने के लिए अपनी अनिच्छा पर अडिग हैं। तुम सभी के लिए, मेरा यह विनम्र वचन है! जो लोग हमारे आदेश को ईश्वर का आदेश मानकर स्वीकार कर चुके हैं, और अपनी इच्छा को त्यागकर, स्वेच्छा से उन्हें सौंपा गया कार्य करने में जुट गए हैं, वे धन्य हैं, हमें और प्रभु दोनों को प्रिय हैं, और वास्तव में—केवल नाम मात्र के लिए नहीं—शहीदों के समान हैं। जो लोग, शुरू में इसे अप्रसन्नता और दुख के साथ स्वीकार करने के बाद, जल्द ही बाद में विनम्रता से बेहतर मार्ग पर लौट आए, और जिन्होंने ईश्वर को रक्त का बलिदान अर्पित करके स्वयं को अच्छे योद्धा साबित किया है। जहाँ तक तीसरे समूह का प्रश्न है, जो अभी भी अवज्ञा में बने हुए हैं और अपने लिए बहाने गढ़ते हैं— —अपने जुनून से प्रेरित, वे धर्मत्यागी हैं, जिनके बारे में यह सही कहा गया है कि वे न तो हम में से हैं और न ही कभी थे।

35. प्रभु ने कहा: *'जो मुझ से कहते हैं, 'प्रभु, प्रभु', वे सब स्वर्ग के राज्य में प्रवेश नहीं करेंगे, परन्तु केवल वही जो मेरे स्वर्गीय पिता की इच्छा पर चलते हैं'* (मत्ती 7:21)। और फिर: *'यदि तुम मुझ से प्रेम रखते हो, तो मेरी आज्ञाओं को मानो'* (यूहन्ना 14:15)। इस संबंध में, मैं आपसे यह भी कहता हूँ कि जो मुझसे 'पिता, पिता' कहता है, वह मेरा शिष्य नहीं है, और जो मेरे आज्ञाओं का पालन करता है, वही मुझे प्रेम करता है। हम शब्दों में बुद्धिमान न बनें, बल्कि जब कर्म की बात आए, तो अपने कहे हुए से स्वयं को अपरिचित साबित न करें। मैंने आपसे कितनी बार यह कहते सुना है: 'हम अपना खून बहा देंगे, हम तुम्हारे लिए मरेंगे; अगर तुम चाहो, तो हम खुद को समुद्र में फेंक देंगे; अगर तुम चाहो, तो हम नंगे घूमेंगे; अगर तुम चाहो, तो हम पत्थर खा लेंगे; अगर तुम चाहो, तो हम अपने अंग कटवा लेंगे।' यह सुनकर, मैं प्रसन्न होता और परमेश्वर का धन्यवाद करता था; परन्तु जब मैं आकर यह देखता हूँ कि तुम अपने वचन के अनुसार नहीं जीते, तो मैं रोया और विलाप करता हूँ, यह कहते हुए: 'ये लोग अपने होठों से तो मुझे आशीष देते हैं, पर उनका हृदय मुझ से दूर है।' मैं आप सब के बारे में ऐसा नहीं कहता: क्योंकि मुझे कई ऐसे मिले हैं जो परमेश्वर के स्वर्गदूतों के समान नम्र हैं; परन्तु मैं उन दूसरे लोगों के विषय में कहता हूँ—यद्यपि वे सब ऐसे नहीं हैं, और न ही वे हमेशा ऐसे ही रहते हैं। मैं सामान्य रूप से कहता हूँ, ताकि हम सब हर बात में निर्दोष ठहरें। तब हमारे पूर्वजों के मार्गों को खोजो, जिनके प्रति हमारे पिता परमेश्वर के सामने हमेशा विश्वासयोग्य रहे। उनके उदाहरण का अनुसरण करो। यदि तुम इस प्रकार नहीं करते हो, तो अपने प्रस्थान के समय तुम पवित्र स्वर्गदूतों की संगति के योग्य नहीं ठहरेगा, और न ही तुम अपने पिता के बीच ग्रहण किए जाओगे; क्योंकि जैसा कोई यहाँ है, वैसा ही वह वहाँ होगा। मैं जानता हूँ कि आप सभी उद्धार चाहते हैं और उद्धार पाने वालों में गिने जाते हैं। अतः हम सतर्क रहें, और जब प्रलोभन में पड़ें, तो स्वयं को गिरने न दें; और यदि हम ठोकर खाएँ, तो जल्दी उठ खड़े हों, और यदि हम झपकी ले लें, तो जाग उठें। मैं आपको दोषी नहीं ठहराता; बल्कि मैं आपको परमेश्वर के सेवक मानता हूँ और आपको अपने हृदय में प्रिय मानता हूँ।

५०. मृतकों को देखकर एक शिक्षा: शरीर की नहीं, बल्कि स्वर्ग की चिंता करो

५०. मृतक के दर्शन से एक शिक्षा: शरीर की नहीं, बल्कि स्वर्ग की चिंता करें। [१, ५४] हमारे बारे में यह रहस्य क्या है? हम सभी का क्या निवास प्रतीक्षा कर रहा है? तीन शेरस्टनिस लंबी एक ताबूत। धरती से उठाए गए, हम धरती पर ही लौटेंगे: शरीर यहीं रहता है, जबकि आत्मा ऊपर उड़ जाती है। आज्ञा के उल्लंघन से पहले हम क्या थे, और अब हम क्या बन गए हैं? इसने मृत्यु को जन्म दिया, और इसके कारण हम नश्वर हो गए हैं। हम भी खुद को उसी रोशनी में देखेंगे; क्योंकि हम भी मरेंगे। हमारा क्या इंतज़ार कर रहा है? हम कहाँ जाएँगे? हमें क्या मिलेगा? – तो

फरि, हम इस देह को इतना अधकि क्यों पालते हैं – जो हमारी है और हमारी नहीं, हमारी संगनिी और हमारी दुश्मन, हमारी बदनाम करने वाली और हमारी रक्षक, हमारी तबाही और हमारा उद्धार? हम इसे चाहे जतिना भी पालें, चाहे जतिना भी आराम दें, चाहे जतिना भी सुख-सुवधिा दें – क्या यह फरि भी कीड़ों और बदबूदार कीचड़ में नहीं बदल जाएगी? राख की परवाह करने और धूल के लिए संघर्ष करने से मुझे क्या लाभ? धर्मग्रंथ कहता है, *'मांस और रक्त परमेश्वर के राज्य के वारसि नहीं हो सकते'* (1 कुरन्थियों 15:50)। इसी कारण, आइए हम अपना अच्छी तरह से ध्यान रखें और खुद को जानवरों की तरह जीने न दें। अववि़ेकी जानवरों का स्वभाव है कि वे देह से प्रेम करें, अपने पेट भरें, कामुक इच्छाओं में लप्ति रहें, खून की प्यास से प्रेरति हों, अपने शरीर को बेकाबू होने दें, और अपनी सभी इंद्रयिों को तृप्त करें; लेकनि एक मनुष्य के लिए, जसिे वास्तव में परमेश्वर के स्वरूप में सम्मानति कयिा गया है और जो वैसे ही जीना चाहता है जैसे उसे बनाया गया था, यह सब उचति नहीं है। उसका आह्वान दैवीय है – दव्यि आशीर्वादों पर मनन करना, सृष्टि के दृश्यों का अवलोकन करना, सच्चे ईश्वर के लिए प्रेम से जलना, राक्षसों से घृणा करना, और शरीर की बहुत कम परवाह करना, उसे केवल संयम और मतिव्ययता से बुनियादी आवश्यकताएं प्रदान करना। इसलिए, मैं आपसे वनिती करता हूँ, आइए हम सच्ची बुद्धमिानी से कार्य करें, और हम जान जाएँगे कि ऐसा करने में हमने पाप नहीं कयिा है, आने वाले युग में, जब सभी को उनके कर्मों और कार्यों के अनुसार पुरस्कृत कयिा जाएगा—धर्मी को अनंत जीवन से, और पापयिों को न बुझने वाली आग से।

51. मठ में हर कोई काम करता है, और सामान्य भलाई में अपना योगदान देता है; मठ द्वारा उत्पादति हर चीज़ प्रत्येक व्यक्ति की संपत्ति क्यों मानी जाती है

51. 1) मठ में हर कोई काम करता है, और सामान्य भलाई में अपना योगदान देता है; फरि मठ द्वारा उत्पादति वस्तुएँ हर कोई क्यों अपना लेता है? – 2) भोजन, पेय और शराब सभी को दी जाती हैं; लेकनि हर कोई परहेज़ करने के लिए स्वतंत्र है। – 3) भ्राताओं की संख्या बढ़ाना कसि अर्थ में अच्छा है; मठाधीश को उन्हें कनि इरादों से स्वीकार करना चाहिए; और इसमें भ्राताओं की क्या भूमकिा है; वृद्धों और दुर्बल लोगों को आश्रय देना एक कर्तव्य है। [1, 55]

1. प्रेरति के शब्दों में, *'अपने शरीरों को परमेश्वर के लिए धार्मकिता के दास के रूप में प्रस्तुत करो'* (रोमयिों 6:19)। दव्यि ज्ञान को और भी अधकि प्रचुरता से अपनाओ, और अपने सम्मानजनक जीवन-यापन की दैवीय गरमिा को सच्चे अर्थ में पहचानो। वास्तव में, आप यह पहले ही जान चुके हैं और वनिम्रता में स्वयं को पूरी तरह से परमेश्वर के हवाले कर चुके हैं, और आप अपने आध्यात्मकि तथा शारीरकि दोनों प्रयासों में अपने दैनकि श्रम को प्रसन्नतापूर्वक करते हैं: क्योंकि दोनों ही समान रूप से लाभकारी हैं और एक-दूसरे के पूरक हैं। एक पढ़ने में लगा है, दूसरा प्रार्थना में; एक घर पर सुई का काम करती है, दूसरा कहीं खुले में काम करती है; एक दाख की बारी खोदता है, दूसरा क्यारयिाँ तैयार करता है; एक काम-काज में खुद को व्यस्त रखता है, दूसरा बढ़ई का काम करता है; और कोई भी आलसी नहीं है, कोई भी हाथ पर हाथ धरे नहीं बैठता, बल्कि सभी अपनी सामर्थ्य के अनुसार श्रम का योगदान करते हैं। मेरी राय में, न तो प्रवेश द्वार की रखवाली करने वाले को, जो अंदर आने वालों पर नजर रखता है, और न ही माली को, जो पक्षयिों को भगाता है, तुच्छ समझना चाहिए: क्योंकि उनमें से प्रत्येक पूरे शरीर में योगदान देता है, पैर या उंगली की वनिम्र जगह पर रहकर। – हम सभी एक आत्मा, एक इच्छा हैं। तो आइए हम हमेशा इसी तरह आचरण करें; और कोई भी स्वयं को भाईचारे के सहयोग और साझा पीड़ा से अलग न करे। आपके हाथ पवत्रि हैं; आपकी मेहनत ईश्वर को एक भेंट और बलदिान है। और क्या मैं यह कहते हुए सही नहीं हूँ? क्या आप बड़ों को खाना नहीं खलिाते? क्या आप यात्रयिों को रोटी, सब्ज़ी, *'ठंडे पानी'* या शराब का एक प्याला, और मठ में उपलब्ध अन्य सभी चीजें नहीं देते हैं? क्या आप आने वाले दोस्तों की मेजबानी नहीं करते? क्या आप अपने लिए नहीं करते? क्या आप हमारे लिए भी नहीं करते? – यह सब क्या है, अगर ईश्वर को एक भेंट नहीं है? क्योंकि लिखा है: *'मैं दया चाहता हूँ, बलदिान नहीं'* (मत्ती 9:13)। जब मठ से कुछ दयिा जाता है, तो यह आप ही हैं जो दया दखिाते हैं। क्योंकि जब ऐसा कयिा जाता है, तो मैं अकेला दाता नहीं होता, बल्कि हम सभी देते हैं, चाहे वह पैसा हो, कपड़े हों, या कुछ और। तुम मेरे बच्चे और मेरे साथी हो, जो कुछ भी मेरा है, उसमें तुम सब के सहभागी हो, आध्यात्मकि और भौतकि दोनों रूप में। मेरा हृदय तुम्हारे लिए तरसता है, और *'तुम मेरे हृदय में बँधे* नहीं *हो'* (2 कुरन्थियों 6:12)। मैं तुम में से प्रत्येक को आध्यात्मकि प्रेम से गले लगाता हूँ, मैं तुम में से प्रत्येक के प्रति करुणा रखता हूँ, और मैं तुम में से प्रत्येक को आत्मीयता और सांत्वना देने का प्रयास करता हूँ। यह जान लो: यदि कोई कसिी के वरिुद्ध है, तो वे मेरे वरिुद्ध हैं; क्योंकि वे मुझ ही में से हैं। इसलिए, तुम में शांति, और आध्यात्मकि प्रेम, और आपसी सम्मान, और आपसी सहायता हो। सबसे छोटे का सम्मान सबसे

बड़े और प्रमुख के समान करो, जैसे तुम मेरा सम्मान करोगे, और उन सब बातों में श्रद्धा और प्रेम से उनकी आज्ञा मानो; क्योंकि जो आज्ञा नहीं मानता, वह मेरा पुत्र नहीं है।

२. पहले से ही आध्यात्मिक पोषण से स्वयं को मजबूत करें, निर्धारित सेवाओं और पवित्र प्रार्थनाओं को संयम और उत्साह के साथ करें; और बाद में, काम की कठिनाई के कारण, शारीरिक पोषण से—ब्रेड, पकी हुई सब्जियां और निर्धारित मात्रा में शराब। यह उन लोगों के लिए है जो अच्छे स्वास्थ्य में नहीं हैं। जहाँ तक उन लोगों का सवाल है जो परहेज़ करना चाहते हैं – प्रभु का धन्यवाद हो! – उन्हें परहेज़ करने दें। परन्तु न तो पीने वाले को इस बात पर लज्जित होना चाहिए, मानो वह कमज़ोर पड़ रहा हो; और न ही न पीने वाले को घमण्ड करना चाहिए, मानो वह कोई बड़ी बात कर रहा हो: क्योंकि '*भोजन हमें परमेश्वर के सामने नहीं लाता*' (1 कुरिन्थियों 8:8), विशेषकर यदि हम इसके बारे में घमण्ड करें। इस बात पर कौन विवाद करेगा कि युवाओं के लिए शराब पीना उपयुक्त नहीं है? फिर भी, सभी के लिए, विशेष रूप से जो शारीरिक रूप से मजबूत हैं, शराब से परहेज़ करना फायदेमंद है। मैं, हालांकि, जानबूझकर कुछ लोगों को नियम के अनुसार शराब पीने की अनुमति देता हूँ, ताकि वे अपने मन को नम्र कर सकें - स्थायी रूप से नहीं, बल्कि कुछ समय के लिए।

3. तुम जानते हो कि लगभग हर दिन लोग हमारे यहाँ हमारे मठ में प्रवेश करने की इच्छा से आते हैं। लेकिन मैं सभी को स्वीकार नहीं करता: क्योंकि मैं इस बात की परवाह नहीं करता कि अन्य मठों की तुलना में यहाँ तुम अधिक हो, और न ही मैं इस पर घमंड करना चाहता हूँ, यद्यपि मैं घमंडी हूँ। हम चाहते हैं कि तुम संख्या में बढ़ो, लेकिन ऐसा परमेश्वर की महिमा के लिए और उसकी इच्छा के अनुसार हो। जो बहुतों को एक में एकत्र करते हैं, वे निस्संदेह परमेश्वर की अधिक स्तुति करते हैं, लेकिन केवल तभी जब वे उन्हें उसके नाम पर एकत्र करते हैं। यह मुझसे छिपा नहीं है कि यदि परमेश्वर एक पश्चातापी पापी पर आनन्दित होता है, तो क्या वह ऐसे कई लोगों पर और भी अधिक आनन्दित नहीं होता? और यदि वह दो या तीन के नाम पर एकत्रित होने में उपस्थित रहता है (मत्ती 18:20), तो क्या वह उन लोगों की भीड़ में और भी अधिक नहीं वास करता? परन्तु, अपनी ही दुर्बलता और अनेक वासनाओं से अवगत होकर, मैं बहुतों का अध्यक्ष होने का साहस नहीं करता, जब मैं स्वयं का भी प्रबंध नहीं कर सकता। और केवल उस आज्ञा के लिए जो आज्ञा देती है कि जो कोई आता है उसे न लौटाया जाए (यूहन्ना 6:37) – और दूसरी: '*छोटे बच्चों को मेरे पास आने दो, क्योंकि परमेश्वर का राज्य ऐसा ही है*' (लूका 18:16)—मैं स्वयं को नम्र करता हूँ और छोटे बच्चों, युवकों, बुजुर्गों, विवाहितों, अविवाहितों, स्वस्थ लोगों, विकलांगों, एक भुजा वाले और लंगड़ों का स्वागत करता हूँ। मैं यह अपने आप से नहीं करता, जैसे कोई महान कार्य कर रहा हो, बल्कि एक ऐसे सेवक के रूप में जो ऐसा करने के लिए बाध्य है, दिव्य पिताओं के अनुसार; ताकि, यदि मैं ऐसा नहीं करता, तो मैं आज्ञा को तोड़ने का दोषी पाया जाऊँ। आप क्या कहते हैं? क्या आप मुझसे सहमत हैं, और क्या आप स्वयं इसमें भाग लेने के लिए तैयार हैं? – हाँ, या नहीं? – आप में से प्रत्येक मुझे उत्तर दे, ताकि मैं इस मामले में और भी अधिक उत्साही हो सकूँ: क्योंकि आपकी मेहनत का फल ही वह है जिससे वे पोषित और संपोषित होते हैं; या यूँ कहें कि, यह परमेश्वर का एक उपहार है, '*जो हर दयालुता के काम को पूरा करता है*' (भजन संहिता 144:17), '*जो मवेशियों और उन काले कौवों के बच्चों के लिए भोजन प्रदान करता है जो उससे पुकारते हैं*' (भजन संहिता 146:9), और जिन्होंने कहा: '*आकाश के पक्षियों को देखो: वे न बोते हैं और न काटते हैं, फिर भी तुम्हारा स्वर्गीय पिता उन्हें खिलाता है*' (मत्ती 6:26)। हालाँकि, मुझे आपकी सद्भावना पर भरोसा है; मुझे उम्मीद है कि हम मिलकर हमेशा सभी आज्ञाओं को लगन से पूरा करेंगे और किसी भी मामले में निंदा के योग्य नहीं पाए जाएँगे। क्योंकि यदि मैं वृद्धों का स्वागत नहीं करता या विकलांगों को विश्राम नहीं देता, तो मैं कानून तोड़ने का दोषी पाया जाऊँगा—केवल एक आज्ञा के संबंध में नहीं; क्योंकि आज्ञाएँ एक अटूट श्रृंखला बनाती हैं, प्रत्येक अगली पर निर्भर करती है, और यह उनके पालन और उल्लंघन दोनों पर समान रूप से लागू होता है। क्योंकि यदि हम एक भी आज्ञा तोड़ते हैं, तो हमें स्वर्ग के राज्य में 'सबसे छोटा' कहा जाएगा (मत्ती 5:19); और सेंट क्रिसोस्टोम के अनुसार, 'सबसे छोटा' कहा जाना, अनंतकालिक यातना में पड़ने के अलावा और कुछ नहीं है। – अतः हम बच्चों, वृद्धों और विकलांगों का स्वागत करें; और दयालु ईश्वर हमें तुच्छ नहीं समझेंगे, बल्कि हमारी आत्मा और शरीर दोनों के लिए हमें वह सब कुछ प्रदान करेंगे, जिसकी हमें आवश्यकता है, ठीक वैसे ही जैसे हमने पहले दिन से अब तक उनसे प्राप्त किया है।

52. भ्रातृत्व का प्रेम बना रहे; आप सभी स्वयं को शुद्ध करके उद्धार पाएँ; व्यर्थ की बातों और हँसी से दूर रहें; यह सुनकर मुझे दुख होता है कि आपके बीच सब कुछ ठीक नहीं है।

52. 1) भाईचारे का प्रेम बना रहे; आप सभी स्वयं को शुद्ध करके उद्धार पाएँ; व्यर्थ की बातों और हँसी से दूर रहें; यह सुनकर मुझे दुख होता है कि आपके बीच सब कुछ ठीक नहीं है। – 2) बड़ों की अनुमति के बिना एक-दूसरे

को भोजन न दें; यह एक प्रलोभन है: जो आज्ञा का पालन नहीं करेगा, उसे दंड मिलेगा, क्रोध से नहीं, बल्कि प्रेम से। – 3) क्या आप हर समय हर बात में निर्दोष होना चाहते हैं? मृत्यु को याद रखें। [1, 56]

४. एक-दूसरे के साथ बुरा व्यवहार करने की अनुमति न दें, बल्कि एक-दूसरे को स्वस्थ प्रतिस्पर्धा और उचित भाईचारे का प्रेम दिखाएँ। मैं यह इस आशा में कहता हूँ कि हम सभी बच सकें। क्योंकि हमारे प्रभु यीशु मसीह कहते हैं: *'मेरे स्वर्गीय पिता की इच्छा यह नहीं है कि कोई भी नाश हो जाए'* (मत्ती 18:14)। अत; तुम सब बच जाओ; इस उद्देश्य के लिए, हर कोई प्रयास करे और प्रतिस्पर्धा करे कि वे स्वयं को परमेश्वर के सामने पवित्र प्रस्तुत करें, ठीक वैसे ही जैसे वे आरंभ में बनाए गए थे, दिव्य प्रतिमा के स्वरूप को धारण करते हुए। झगड़ालू न बनें, और तुच्छ बातों में लिप्त न रहें; जब आप शाम को इकट्ठा हों, तो हँसी में न खो जाएँ, और जब आप एक साथ काम करें, तो ऐसा न करें कि एक-दूसरे को पाप में ले जाएँ। *'मेरा पेट मेरे भीतर मुरझाता है, और मेरे हृदय की भावनाएँ* अनियंत्रित उथल-पुथल में हैं, यह कहते हैं अत्यंत वाक्पटु यिर्मयाह (4:19) अपने ईश्वरीय वचनों में। तो, मैं, जो अशुद्ध और दीन हूँ, तुम्हें पुकारता हूँ: एक घातक बीमारी मुझ पर हावी हो जाती है, और विचारों के तीर मुझे घायल कर देते हैं, जब मैं सुनता हूँ कि तुम बुरा व्यवहार कर रहे हो। हे मेरे बच्चों, भयानक परमेश्वर से डरो, और किसी भी लापरवाही से अपने लंबे संघर्ष और धन्य परिश्रम को बर्बाद मत करो। हमने एक महान यात्रा पूरी कर ली है: क्या अब हम उसी बंदरगाह पर जहाज-दुर्घटना का शिकार होंगे? हमने एक लंबा सफर तय किया है: क्या अब हम दिव्य निवासों के द्वार पर ही सो जाएँगे? जो मैं कह रहा हूँ उसे समझो: क्योंकि परमेश्वर ने तुम्हें समझ दी है। *'साहसी बनो, और तुम्हारा हृदय दृढ़ हो'* (भजन संहिता 30:25)। कड़ी मेहनत करो – और नम्रता का वस्त्र धारण करो। अपनी इच्छा में मत डूबो, और इस प्रकार मेरी आज्ञाओं को आनंदपूर्वक पूरा करने में चूकना मत। क्योंकि यदि कोई अपनी इच्छा को मार डालता है, तो चाहे उस पर कितना भी भारी बोझ क्यों न डाला जाए, वह न तो उसे अस्वीकार करता है, न ही उसकी उपेक्षा करता है, और न ही उसे बोझ मानता है, बल्कि स्वेच्छा से समर्पण और आज्ञाकारिता करता है, सहमत होता है और विरोध नहीं करता, ठीक वैसे ही जैसे एक विचारहीन जानवर अपने स्वामी के अधीन हो जाता है, शास्त्र के वचन (भजन संहिता 72:22) के अनुसार। तुम में से हर एक अपने आपको परखो कि आज्ञाकारिता के संबंध में तुम कहाँ खड़े हो। इसके अलावा, मैं भी बाहरी आचरण से यह जान सकता हूँ कि भीतर क्या है। संत डोरोथेयस के अनुसार, जो व्यक्ति अपनी कोई इच्छा नहीं रखता, वह मठ में जो कुछ भी किया जाता है, उसे अपना कार्य मानता है – और ऐसा व्यक्ति हमेशा शांति में रहता है। लेकिन जो ऐसा नहीं है, वह अपनी इच्छाओं द्वारा इधर-उधर खींचा जाता है, एक या दूसरी चीज़ से बहकाया जाता है, और एक या दूसरे रूप धारण करता है, वह थका हुआ और परेशान दिखाई देता है। हममें ऐसा कोई एक भी व्यक्ति न हो; बल्कि हम सब एक शुद्ध हृदय से, एक ही आत्मा में परमेश्वर की सेवा करें। क्योंकि यदि मैं एक हूँ और तुम दूसरे, तो कलह और फूट है। परन्तु यदि मैं जो तुमसे कहता हूँ वह अच्छा है, तो तुम मेरे विरुद्ध क्यों लड़ते हो? तुम मुझे कष्ट और चिंता क्यों देते हो?

5. हे मेरे भाइयो, मुझे तुम्हें एक बात याद दिलानी है—कि तुम मेरे एक आज्ञापालन को क्यों नहीं पूरा करते, जैसे अन्य करते हैं? यद्यपि यह एक छोटी सी बात लग सकती है, परन्तु इसका उल्लंघन तुम्हारे सभी महान गुणों को नष्ट कर देता है। और हम क्यों कहें: 'यह छोटी आज्ञा महान है'? ईश्वर की प्रत्येक आज्ञा का पालन करना चाहिए, और अवज्ञा के प्रत्येक कृत्य को उचित दंड मिलता है। मैंने कई बार सख्त चेतावनी के साथ कहा है कि आप में से किसी के लिए भी किसी को कुछ भी, चाहे वह भोजन हो या पेय, देना अनुमत नहीं है। यह विशेषाधिकार केवल मेरा, व्यवस्थापक, उप-व्यवस्थापक, कोषाध्यक्ष, या अन्य वरिष्ठ अधिकारियों का है, जिन्हें मैंने इस मामले में निर्देश दिए हैं और देना जारी रखा है। अतःमैं पुनःपुष्टि करता हूँ कि, आज से, किसी को भी ऐसा नहीं करना है: यह किसी भी प्रकार के प्रायश्चित के दायरे में आता है, ठीक वैसे ही जैसे चोरी-छिपे खाने पर आता है। अतःसावधान रहो, कि लापरवाही से इस पाप में न पड़ो। तुम एक-दूसरे को व्यर्थ ही लज्जित करते हो और वहाँ डरते हो जहाँ डरने की कोई बात नहीं है। तुम कहते हो कि तुम एक भाई को दुखी नहीं करना चाहते, परन्तु इस बीच तुम परमेश्वर और मुझ जैसे अयोग्य व्यक्ति को दुखी करते हो। हाय, तुम्हारी ऐसी 'चेतना' के लिए! यह एक तुच्छ मन, परमेश्वर के प्रति प्रेम की कमी, आत्म-धार्मिकता और शारीरिक संगति का संकेत है। मैं तो यह कहने की हिम्मत करता हूँ कि, भले ही कोई स्वर्गदूत ही क्यों न हो, उससे कुछ भी स्वीकार न करो। आखिरकार, तुम अक्सर सब्जियाँ आशीर्वाद स्वरूप प्राप्त करते हो: हर कोई उन्हें खाए; लेकिन अगर कोई उन्हें नहीं खा सकता, तो वह उन्हें व्यवस्थापक को वापस कर दे, या, अगर वह उन्हें किसी और को देना चाहता है, तो वह व्यवस्थापक को इसके बारे में बता दे। जो कोई भी इस तरह का व्यवहार करता है, वह निंदा के योग्य नहीं है। या क्या आप नहीं जानते कि इससे अनुचित दोस्ती पैदा होती है? या शायद आप उन्हें उन लोगों को दे रहे हैं जिनके प्रति आपके मन में अशुद्ध भावनाएँ हैं। लेकिन भले ही ऐसा कुछ न हो, क्या यह कार्य स्वयं ही प्रलोभनकारी नहीं है? और जब एक व्यक्ति उन्हें प्राप्त करता है जबकि दूसरा केवल देखता

रहता है, तो क्या इससे फुसफुसाहट और नाराज़गी पैदा नहीं होती? हर तरह से, दूसरा यह सोचने लग सकता है कि उससे प्यार नहीं किया जाता। हालाँकि, यदि आप कहते हैं कि आप दूसरे व्यक्ति की गैर-मौजूदगी में देते हैं, तो आपको इसके लिए एक विशेष समय और स्थान खोजना चाहिए; और इस तरह आप गुप्त गठजोड़ और परामर्श को बढ़ावा दे रहे हैं। – लेकिन संत बेसिल द ग्रेट क्या कहते हैं? – कि एक-दूसरे की ओर देखना और किसी के कान में फुसफुसाना, पड़ोसी को यह सोचने का कारण देता है कि कोई बुरा इरादा चल रहा है।[84] इसलिए, इस मामले की देखरेख के लिए नियुक्त लोगों की जानकारी के बिना आपको ऐसा करने (यानी दूसरों को भोजन पहुँचाने) की किसी भी तरह से अनुमति नहीं है। जो कोई भी इसमें दोषी पाया जाएगा, उसे प्रायश्चित करना होगा। हालाँकि, यह न सोचें कि यह गुस्से या चिड़चिड़ाहट के कारण होगा। नहीं, मैंने यह किया है और आपके प्रति अपने प्रेम से प्रेरित होकर इसे जारी रखूँगा। इसमें मैं प्रभु का अनुकरण करना चाहता हूँ, जिनके बारे में प्रेरित गवाही देते हैं: *'प्रभु जिनसे प्रेम करते हैं, उन्हें अनुशासित करते हैं, और हर पुत्र को जिसे वे स्वीकार करते हैं, दंडित करते हैं।'* (इब्रानियों 12:6), – और इसी प्रेरित को, जो अपने विषय में कहता है: *'मुझे कौन प्रसन्न करता है, सिवाय इसके कि मैं उससे दुख उठाऊँ?' (2* कुरिन्थियों 2:2)।

6. क्या तुम हमेशा और हर बात में निर्दोष बनना चाहते हो? – मृत्यु को याद करो, आत्मा का शरीर से वियोग, स्वर्गदूतों की उपस्थिति (मृत्यु के समय), उस लंबी यात्रा और प्रवास (परलोक के कष्टों के माध्यम से), प्रभु परमेश्वर और हमारे उद्धारकर्ता यीशु मसीह से भेंट की, हमारे सभी कर्मों का भयानक हिसाब-किताब, शाश्वत यातनाओं, स्वर्ग के राज्य और उसमें वादा की गई अनुपम आशीषों की।

५३. मैं विदा ले रहा हूँ, परन्तु अपनी आत्मा तुम्हारे संग छोड़ जाता हूँ: जैसे तुम मेरे संग थे, वैसे ही मेरे बिना भी रहो।

53. 1) मैं विदा ले रहा हूँ, परन्तु मैं अपनी आत्मा तुम्हारे पास छोड़ जाता हूँ: मेरी अनुपस्थिति में भी वैसे ही चलते रहो, जैसे मैं तुम्हारे साथ रहते समय था। – 2) व्यवस्थापक को निर्देश। – 3) इस अवसर पर भाइयों के लिए शिक्षाएँ। [1, 57]

7. जब मैं कुछ समय के लिए आपसे विदा लेता हूँ, तो मैं अपनी आत्मा आपको सौंपता हूँ, और आपको अपने और आपके पिता की प्रार्थनाओं के भरोसे पर छोड़ता हूँ, जो आपको हमेशा के लिए दृढ़ और अटूट बनाए रखने में सक्षम हैं। आपके पास प्रभु और हमारे परमेश्वर की आज्ञाएँ, हमारे पवित्र पूर्वजों की परंपराएँ, और मेरे विनम्र निर्देश और उपदेश हैं। *'इसलिये, ध्यान दो कि तुम कैसी चाल चलते हो, न कि बुद्धिमियों की तरह, बल्कि मूर्खों की तरह'* (इफिसियों 5:45), ताकि ऐसा लगे कि मैं तुमसे दूर नहीं हूँ, बल्कि तुम्हारे साथ हूँ। एक शिक्षक की अनुपस्थिति झूठे शिष्यों के लिए आनंद लाती है, लेकिन सच्चे शिष्यों के लिए दुख। आप, जो ईश्वर के योग्य हैं, एक धार्मिक और धर्मी जीवन जिएँ; और ऐसा ही करते रहें। प्रभु सुसमाचार में स्पष्ट रूप से कहते हैं: *'धन्य है वह दास जिसे उसका स्वामी, जब वह आएगा, ऐसा करते हुए पाएगा'*, जैसा उसे आज्ञा दी गई थी (मत्ती 24:46)। हम आपके लिए ऐसे शब्द कहने के अयोग्य हैं; फिर भी, आपको एक अच्छे जीवन में मजबूत करने के लिए, हम कुछ ऐसा जोड़ने के लिए विवश महसूस करते हैं जो हमारी अपनी समझ से परे है। काश जब मैं लौटूँ, तो मैं आपको अभी भी ईश्वर की खोज करते हुए, और सामंजस्य, समान विचारधारा और हृदय की एकता में एकजुट पाया।

8. तुम जानते हो कि शैतान के कई प्रलोभन हैं, और अब वसंत का समय है, जब दिन सुखद होते हैं। सावधान रहो कि पाप का तीर तुम में से किसी को भी न लगे। और सबसे पहले, तुम, मेरे बच्चे, जिन्होंने मेरी जगह भाइयों का नेतृत्व संभाला है, उन सब बातों में उनकी सेवा करो, उन पर दया दिखाओ, मेरी जगह उनकी आध्यात्मिक आवश्यकताओं को पूरा करो, भजन-गायन और प्रार्थनाओं के नियमों का सख्ती से पालन करो, जब संभव हो तो एक बात की अनुमति दो, और जब आवश्यक हो तो दूसरी बात को मना करो; ना तो बहुत ढीले-ढाले रहो और ना ही अत्यधिक कठोर, बल्कि सभी बातों में दोनों को मिलाकर अच्छाई के लिए उनका उपयोग करो; बीमारों के प्रति सहानुभूति रखो, दुखी लोगों के दुख में सहभागी बनो, और परिश्रमी लोगों की सहायता करो। क्या आप सुनते हैं कि ब्रह्मांड के महान शिक्षक पौलुस क्या कहते हैं: *'कोई दुर्बल है, और मैं दुर्बल नहीं हूँ? कोई भटक गया है, और मुझे क्रोध नहीं आता?'* (2 कुरिन्थियों 11:29)। क्या आप समझते हैं कि मैं क्या कह रहा हूँ? प्रभु आपको हर बात में बुद्धि प्रदान करें। परन्तु आपका भी एक सामान्य पिता है; हर बात में उसकी पवित्र सलाह और आज्ञाओं का पालन करें। प्रभु अपने दिव्य वचन में कहते हैं, *'जो अयोग्य है उसमें से योग्य को निकालो, जैसा मेरा मुँह बोलेगा।'* जो एक महान भाईचारे का अध्यक्ष है, वह स्वर्ग में महान कहा जाएगा, यदि वह अपने अधिकार के अधीन लोगों पर योग्य रीति से शासन करता है। प्रभु

[84] भाग 5. तपस्या पर अध्याय 3, पृ. 82.

पवित्र और महान पतरस से क्या कहते हैं? *'यदि तू मुझ से इन से अधिक प्रेम करता है, तो मेरी भेड़ों को चरा'* (यूहन्ना 21:15 और 9)।

९. हे मेरे बच्चों और भाइयो, तुम मसीह की भेडें हो। मैं तुम्हें हमारे प्रभु यीशु मसीह के नाम पर विनती करता हूँ, जिन्होंने हमारे पापों के लिए अपना बलिदान दिया, कि तुम अपने ऊपर नियुक्त वृद्ध के अधीन रहो; उसकी आज्ञाओं का कोई भी विरोध न करे: क्योंकि जो उसका विरोध करता है, वह परमेश्वर की आज्ञा का विरोध करता है। उसका एक सहायक होगा; उसकी भी आज्ञा मानो, और कोई भी उसकी जवानी के कारण उसे तुच्छ न जाने; क्योंकि दिव्य शास्त्र कहता है, वृद्धावस्था वर्ष की संख्या में नहीं होती (ज्ञान 4:8)। परन्तु जिसने वृद्धावस्था का ज्ञान प्राप्त किया है, वह वास्तव में एक वृद्ध है। तो, सभी बुद्धिमान बनें; सभी समझ में वृद्ध बनें; कोई भी ज्ञान में बच्चा न बने, बल्कि *'समझो कि परमेश्वर की इच्छा क्या है—क्या अच्छा, मनभावन और सिद्ध है'* (रोमियों 12:2), और उसी के मार्गदर्शन के अनुसार जियो।

54. परमेश्वर को प्रसन्न करो; एक-दूसरे का ध्यान रखो, न कि अपनी तुष्टि की चाह करो; अपनी दृष्टि में बुद्धिमान न बनो; एकमत रहो

54. 1) परमेश्वर को प्रसन्न करने का यत्न करो; एक-दूसरे की परवाह करो, न कि अपनी; अपने आप को बड़ा न समझो; एकमत रहो। – 2) संन्यासी जीवन में परिश्रम की आवश्यकता होती है, विशेषकर नम्रता की; भविष्य में विश्राम है, लेकिन यहाँ भी परिश्रम का फल है; और सभी मठ परिश्रम से ही चलते हैं; जहाँ भी जाओ, शांति से रहो, और विनम्रतापूर्वक इस पर अडिग रहो। – 3) भाई पाचोमियस का निधन हो गया है; उनके गुणों को याद करो: उनकी विनम्रता, उनका संयम, उनका हँसना जो मुश्किल से एक मुस्कान तक पहुँचता था—और वह भी कभी-कभार... उनकी गंभीरता... और उनका अनुकरण करो। मैं परमेश्वर का धन्यवाद करता हूँ, जो हमारे बीच योग्य लोगों को उत्पन्न करते हैं। [1, 59]

10. आप जानते हैं कि परमेश्वर हमसे यही चाहता है: कि हम उसके अनुकूल जीवन जिएँ, इस वर्तमान युग में सदाचार और संयम के साथ स्वयं को वश में रखें, इस आशा में कि हमें अनंत जीवन प्राप्त हो। इसलिए उस से डरें जो अपने न्याय में भयानक है, और एक दूसरे के प्रति भलाई से बर्ताव करें; अपनी देह की इच्छाओं को सब कुछ से ऊपर न रखें, और एक दूसरे को अपनी वासनाओं में न खींचें। – मुझे पता चला है कि तुम आपस में अपनी चर्चाओं में झगड़ालू हो, सभी के लिए लाभदायक बातों पर तर्क नहीं करते या उन्हें नहीं खोजते, बल्कि प्रत्येक व्यक्ति की प्रवृत्ति उन्हें अपनी ही खुशी के लिए जो करने को प्रेरित करती है, उसी का अनुसरण करते हो। और इस में तुम एक ही शरीर के अंगों के रूप में एक-दूसरे की देखभाल करने की प्रेरितों की आज्ञा (1 कुरिन्थियों 12, 25–26)। यदि आप सभी इस बात पर सहमत हैं कि क्या अच्छा है, तो आपका कारण अनुकूल है; लेकिन यदि आप अपनी सोच में विभाजित हैं, और परिणामस्वरूप स्व-केंद्रित और अपनी ही दृष्टि में बुद्धिमान हैं, तो आप भविष्यवाणी के *'हाय!'* के अधीन आते हैं। क्योंकि सबसे वाक्पटु यशायाह कहते हैं: *'हाय उन लोगों के जो अपनी ही दृष्टि में बुद्धिमान और अपनी ही समझ में चतुर हैं'* (यशायाह 5:21)। वह व्यक्ति अच्छी तरह से जीता है जो किसी भी बात में जिद्दी नहीं है, और जो अपनी विशेष समझ या निर्णय के अनुसार नहीं बोलता या कार्य नहीं करता, बल्कि वर्तमान आवश्यकता के अनुसार कार्य करता है। यदि आप ऐसे हैं, तो आप एक-दूसरे के विरुद्ध नहीं लड़ेंगे, न ही आप अपने बीच कोई टकराव, अहंकार या उपहास होने देंगे। शुरुआत में यरूशलेम में कितने विश्वासी थे; फिर भी, जैसा कि लिखा है, वे एक ही हृदय और मन के थे, और किसी के पास अपना कुछ भी नहीं था, न तो इच्छाएँ और न ही संपत्ति।

11. मेरे बच्चों! एक भिक्षु का जीवन बहुआयामी और कठिन होता है; इसमें पसीना और धैर्य की, लेकिन सबसे बढ़कर, विनम्रता की आवश्यकता होती है। पवित्र पिताओं के अनुसार, जो इस गुण से विभूषित है, वह गिरने से सुरक्षित रहता है, और, शुद्ध सोने की तरह, हर कार्य के लिए उपयुक्त, अत्यधिक मूल्यवान होता है। मैं जानता हूँ कि आप अपने कर्तव्यों में थकने तक परिश्रम करते हैं। प्रभु आपको अनुग्रह और एक अच्छा जीवन प्रदान करें, जब आप यहाँ अपना जीवन जी चुकेंगे, आने वाले जीवन में। लेकिन यहाँ भी हमें अपने परिश्रम का फल मिलता है, जो हमारे शरीरों को आराम और विश्राम देता है। इसके अलावा, निश्चिंत रहें कि केवल हम ही नहीं हैं जो अपने श्रम से जीवन के लिए आवश्यक चीजें प्राप्त करते हैं; बल्कि हर मठ भी अपने जीवन का निर्वाह श्रम और पसीने से करता है। क्या हम अपने सच्चे ईश्वर के वचन को झूठा साबित कर सकते हैं, जिन्होंने हमारे पूर्वज से कहा था: *'अपनी नाक के पसीने से तू अपना भोजन खाएगा'* (उत्पत्ति 3:19)? कदापि नहीं। जो इस जीवन के नियम के प्रति विनम्रता से समर्पित होता है, वह ईश्वर के मार्ग पर अच्छी तरह चलता है। तुम्हारे सांत्वना और बल के लिए तुम्हारे पास हमारे पिता का आशीर्वाद है। तुम्हारे पास मेरी विनम्र प्रार्थना भी है, जिसके द्वारा, यद्यपि मैं इसके लायक नहीं हूँ, मैं

दयालु ईश्वर से प्रतदिनि वनिती करता हूँ कि आप आपसी शांति, सहनशीलता, दया और एक-दूसरे के प्रति प्रेम में सुरक्षित रहें, ताकि जब आप में से प्रत्येक के लिए इस शरीर से प्रस्थान का समय आए, तो आप एक निर्मल अंतःकरण और अच्छी आशा के साथ, इस जीवन से अगले जीवन में प्रवेश करें और वहाँ अपना अनंत और धन्य प्रतिफल प्राप्त करें।

12. कल हमारे भाई पाचोमियिस का निधन हो गया। इस व्यक्ति के गुणों को याद करो, कि वह कितना विनम्र था, और उसने संयम का कितना अभ्यास किया: क्योंकि हमारे पिता कहा करते थे कि जब वह माली थे, तो भोजन में परोसे जाने के अलावा, वह स्वयं को सबसे तुच्छ फल को भी छूने की अनुमति नहीं देते थे; और जैसा कि मैंने दूसरों से सुना है, वह बगीचे में भी वह नहीं खाते थे जो भोजन के समय के अलावा खाने के लिए अलग रखा जाता था, कहीं कोई उन्हें लालची न समझ ले। हम सभी यह भी जानते हैं कि वह कभी नहीं हँसते थे और मुस्कान से आगे कभी नहीं बढ़ते थे, हमेशा कठोर आत्म-अनुशासन और गंभीर स्वभाव बनाए रखते थे। और वह वास्तव में ईश्वर के एक अथक सेवक थे, जो जैसा कि आप जानते हैं, दिन-रात परिश्रम करते थे - वह आनंद में परलोक सिधार गए। उन्हें परम श्रद्धा से सम्मानित करना बंद न करें। लेकिन उनके गुणों का अनुकरण करने का भी प्रयास करें, ताकि आप में से प्रत्येक, जब यहाँ से विदा ले, तो पीछे अच्छी यादें और पूरे भाईचारे के लिए एक प्रेरणादायक उदाहरण छोड़ जाए; क्योंकि यह आपके वश में है कि आप अपने निधन के बाद कैसे याद किए जाना चाहते हैं। चाहे कोई धन्य, संत, आदरणीय, या किसी अन्य नाम से सम्मानित होना चाहे, यह उनके लिए तब संभव है जब वे यहाँ रहते हुए ही खुद को तदनुसार तैयार करें; और इसके लिए कोई अतिक्रमणीय बाधा नहीं है, कोई असंभवता नहीं है, जैसा कि उन लोगों के उदाहरणों से प्रदर्शित होता है जिन्होंने इसकी इच्छा की और खुद को ऐसा साबित किया। आप भी धन्य, देवदूत सदृश और ईश्वर को प्रिय कहलाना चाहेंगे; और यह हमारे लिए संभव होगा यदि हम अपनी इच्छाओं से परहेज़ करें, यदि हम स्वयं को हर अच्छे कार्य के लिए प्रेरित करने में आनंद लें, और यदि हम सभी बातों में विनम्र रहने का चुनाव करें। मुझे यकीन है कि आप ऐसे ही हैं और ऐसे ही रहेंगे - और आप में से कई लोगों को हमारे मठ में ईश्वर को सम्माननीय अर्पण के रूप में समर्पित किया गया है। मैं इस तथ्य से प्रशंसा और हर तरह के सांत्वना से भर गया हूँ कि ईश्वर ने, मेरी महान अयोग्यता के बावजूद, मुझे ऐसे भाई प्रदान किए हैं, – मैं कहने की हिम्मत करता हूँ – जो किसी भी बात में प्राचीनों से कम नहीं हैं, बल्कि जिन्होंने उतनी ही मात्रा में संसार का त्याग किया है, आज्ञाकारिता के लिए स्वयं को समर्पित किया है, और मृत्यु तक ईश्वर के नाम के लिए स्वयं को अर्पित किया है। ईश्वर का धन्यवाद हो, जिसने इन अंतिम दिनों में अपने ऐसे चुने हुए लोगों को बुलाया और प्रकट किया है! क्योंकि हर जगह और सारी पृथ्वी पर ऐसे बहुत से लोग हैं जो उसे प्रसन्न करते हैं। *'प्रभु की सेवा भय के साथ करो, और काँपते हुए उसके सामने आनन्द मनाओ'* (भजन संहिता 2:11)। उसे खोजो, और तुम उसे पाओगे—वह जो तुम्हें स्वर्ग का राज्य प्रदान करता है।

५५ वह उत्साही श्रमिकों के प्रति अपनी कृपा व्यक्त करते हैं और उनसे आध्यात्मिक प्रयासों और मठवासी कर्तव्यों दोनों में उत्साही होने का आग्रह करते हैं।

५५. १) वह उत्साही श्रमिकों के प्रति अपनी कृपा व्यक्त करते हैं और उन्हें आध्यात्मिक प्रयासों और मठवासी कर्तव्यों दोनों में उत्साही होने के लिए प्रोत्साहित करते हैं। – २) अपने कर्तव्यों के लिए तत्पर रहो, एक-दूसरे को प्रोत्साहित करते हुए और आगे की पुकार का इंतजार किए बिना; अपने जुनून पर काबू पाओ, और भले ही तुम उनसे घायल हो जाओ, तुम्हें अच्छे योद्धाओं के इनाम से वंचित नहीं किया जाएगा। – 3) न केवल लोगों पर, बल्कि जानवरों पर भी दया करो। – 4) अपने सामान का ध्यान रखें – यहाँ तक कि फटे कपड़े और लकड़ी के टुकड़ों का भी। – 5) हमेशा मृत्यु के लिए तैयार रहें; पानी का रिसाव न हो, यह सुनिश्चित करते हुए चौकसी करते हुए प्रस्थान करें... यह इंद्रियों के माध्यम से परीक्षा है। [1, 63]

13. संत बेसिल द ग्रेट ने कहा: सर्व-सत्कार्य ईश्वर ने हमें वाणी का वरदान दिया ताकि हम एक-दूसरे को अपने हृदय की सलाह और विचारों को प्रकट कर सकें। और इस प्रकार मैं आपको अपनी विनम्रता के हृदय में जो है वह प्रकट करता हूँ—कि यद्यपि मैं स्वयं अपने अनेक पापों के कारण दीन हूँ, फिर भी अपनी दुर्बलता और अपनी स्थिति के संकट को एक ओर रखकर, मैं अपनी सारी चिंता आप पर केंद्रित करता हूँ; मैं आपके लिए भयभीत और काँपता हूँ, और हर बात में आपके लिए परिश्रम करता हूँ। क्योंकि तुम में से जो कोई भी सबसे बढ़कर अपनी मुक्ति की परवाह करता है, वह मेरा पुत्र नहीं, बल्कि मेरा प्रभु, मेरा स्वामी और मेरा पिता है – और मैं आत्मा में उसके चरणों में सिर झुकाता हूँ; जो कोई भी अपने काम को करने में उत्साही और परिश्रमी है, वह मेरी शक्ति और मेरा किला है; जो कोई भी शांत, विनम्र और बुद्धिमान है, और परमेश्वर के वचन से काँपता है, वह मेरी आत्मा, मेरा हृदय, मेरा मन है। लेकिन मैं उन लोगों से चिढ़ता हूँ जो कुछ भी नहीं करते, जो दिव्य पौलुस के अनुसार (2 थिस्स. 3:10) *'खाने* के योग्य भी

नहीं हैं; इसी प्रकार सुस्त, आलसी, बड़बड़ाने वालों, नींद में डूबे रहने वालों, और काम करते समय झपकी लेने वालों से भी। इसलिए मैं आपसे विनिती करता हूँ, कि आप उठ खड़े हों – मेरे बच्चों और भाइयों, स्वर्ग की ओर ले जाने वाले मार्ग पर मेरे साथी यात्रियों और साथियों। और सबसे पहले, स्वयं को आध्यात्मिक साधनाओं के प्रति उत्साहपूर्वक और दृढ़ता से समर्पित करें, आग की तरह उत्साह से जलते हुए और रात के भजन-गायन तथा दिन के प्रार्थनाओं के लिए शीघ्रता करते हुए; और फिर अपने ध्यान को हाथ में आने वाले शारीरिक कार्यों की ओर मोड़ें, यथासंभव जल्दी उठें और यह सुनिश्चित करें कि सूर्य किसी को भी बिस्तर पर न पाए, जैसा कि संत बेसिल द ग्रेट ने आज्ञा दी थी; दिन के सबसे गर्म घंटों के दौरान, आप झपकी ले सकते हैं, लेकिन एक घंटा पर्याप्त है, और यथासंभव जल्द ही फिर से उठ जाएँ। – आप दिव्य सुसमाचारों में लिखा हुआ सुनते हैं: *'सुबह-सुबह स्त्रियाँ कब्र पर आईं'* (लूका 24:1); *'बहुत भोर में पतरस और यूहन्ना बाहर गए'* (यूहन्ना 20:24); *'आधी रात को'* पौलुस और सिलास प्रार्थना करने उठे (प्रेरितों के काम 16:25), यह अनुकरण करते हुए जो भजन (118:62) में गाया गया है? और पौलुस अपने बारे में और क्या कहते हैं? – *"दिन-रात मेहनत करते रहे, ताकि हम आप में से किसी पर भी बोझ न बनें"* (1 थिस्स. 2:9)। क्या आप देखते हैं? – यहाँ प्रेरित हैं, सुसमाचार का प्रचारक, 'मनुष्यों का मछुआरा', जिन्होंने वचन के द्वारा ऐसी सेवा के बाद, शारीरिक श्रम की ओर रुख किया, और हमें परमेश्वर के अनुसार जिए गए जीवन का एक उदाहरण दिया।

14. *'भुला देने वाले वचन के सुनने वाले'* (याकूब 1:25) न बनो, बल्कि व्यवस्था के करने वाले और उस बात के पूरा करने वाले बनो जो हमें दैवीय परामर्श द्वारा घोषित की गई है। – एक दूसरे से प्रतिस्पर्धा करो, और एक दूसरे को प्रोत्साहित करो। आज्ञा मानने में दूसरों से कौन अधिक त्वरित है? वह जो आज्ञा देने वाले से दूसरे वचन की प्रतीक्षा नहीं करता। नम्रता में कौन महान है? वह जो, पहले ही वचन पर, क्षमा मांगते हुए, प्रणाम कर लेता है, और हर बदनामी को सहन करता है। यदि आप ऐसे हैं, तो मैं अच्छी तरह जानता हूँ कि आप आनंदित और प्रसन्न होते हैं, कि आप वैराग्य की आशाओं से ऊँचे उठते हैं, और आप स्वर्गीय आनंद की अपेक्षाओं के साथ ऊँची उड़ान भरते हैं, आत्मा में शुद्ध, ईर्ष्या से मुक्त और वासनाओं के प्रति अडिग रहते हैं: क्योंकि यद्यपि आप वासनाओं की चुभन और खुरदरापन सहते हैं, फिर भी ऐसे आध्यात्मिक सद्गुणों से सुसज्जित होकर, आप उन राक्षसों को खदेड़ देते हैं जो आप पर आक्रमण करते हैं। इसके अलावा, युद्ध करने वालों में से कौन है जो घाव नहीं खाता, भले ही वह विजय प्राप्त कर ले? और स्वर्ग का राजा ऐसे व्यक्ति को मुकुट क्यों नहीं देगा, भले ही वह घावों से ढका हो, बशर्ते कि उसे पाप द्वारा नहीं मारा गया हो?

१५. *'दयालु बनो, जैसे तुम्हारा स्वर्गीय पिता दयालु है'* (मत्ती ६:३६)। *'दुष्टों के गर्भ,'* जैसा लिखा है, *'दयालु नहीं होते: परन्तु धर्मी अपने पशुओं की आत्माओं पर दया दिखाते हैं'* (नीतिवचन १२:१०)। पहले एक-दूसरे पर दया दिखाओ, और फिर जानवरों पर; उन्हें भूखा या प्यासा न छोड़ो, बल्कि उचित समय पर उन्हें उनका चारा दो और उन्हें पानी तक ले जाओ। यह इस बात का सबसे स्पष्ट संकेत है कि खींचने वाले जानवर संन्यासियों के हैं: जब वे अच्छी तरह से खिलाए-पिलाए और मजबूत हों; लेकिन यदि वे ऐसे नहीं हैं, तो वे मठ के नहीं, बल्कि गृहस्थों के हैं—चाहे वे दुष्ट हों या मूर्ख।

१६. अपने जीवन-पथ के नियमों का, छोटी से छोटी बात तक, कड़ाई से पालन करने वाले स्वयं को प्रदर्शित करो। और जैसे तुम अन्य मामलों में इन नियमों के प्रति विफादार रहने में उत्सुक हो, वैसे ही भौतिक चीजों के संबंध में भी उनका पालन करो: सब्जियों को बेतरतीब ढंग से मत फेंको, न ही फलों को बर्बाद होने दो; भले ही पुराने फटे-पुराने कपड़ों या एक पयादीन से भी छोटे टुकड़ों से नाक मत सिकोड़ें, कपड़ों की तो बात ही छोड़ दें; क्योंकि, जैसा कि जेरोंडिका में लिखा है, एक भिक्षु को ऐसे कपड़े पहनने हैं—[85] —जिन्हें कोई तीन दिनों तक द्वार के बाहर छोड़ दिए जाने पर भी नहीं उठाएगा, तो फिर जब कोई कपड़ा कंधों पर ही है तो और किस कपड़े से कोई नाक सिकोड़ सकता है? और मैं केवल इसी के बारे में ही नहीं कह रहा हूँ, बल्कि किसी भी लकड़ी के टुकड़े की उपेक्षा न करें, न ही उसे व्यर्थ में जलाएं, न ही किसी तख्ते के टुकड़े को जो अभी भी किसी काम का हो सकता है; न ही शराब गिराएं, न ही तेल बहाएं। हाय! यह किस तरह का व्यवहार है?

17. इस शरीर से अपनी रिहाई के लिए प्रतिदिन प्रतीक्षा करो। – तब हम प्रभु का भयानक मुख देखेंगे। – इस कारण, *'दिन-रात आँसू तुम्हारा भोजन हों'* (भजन संहिता 41:4), और, इसे याद रखते हुए, अपना मन उसके सामने खोल दो। और मुझे विश्वास है कि आप *'आनंद के जयकारों के बीच, आश्चर्यजनक निवास के स्थान में, परमेश्वर के भवन तक प्रवेश करेंगे', स्वर्ग में उत्सव मनाने वालों की* आध्यात्मिक *'गूँज'* में (भजन संहिता 41:5)। इसलिए, दुख में न डूबें या अपनी वासनाओं से परेशान न हों, भले ही वे आपको बहुत बेचैन कर दें; बल्कि, अपनी आत्मा की पाल

---

[85] पवित्र कथाएँ, 1846, पृ. 272.

फहराकर, प्रसन्न हृदय से अपनी यात्रा जारी रखें और हमारे पिता की प्रार्थनाओं के मार्गदर्शन में, इस जीवन के विशाल और तूफानी सागर को पार करने का प्रयास करें। यदि इस प्रक्रिया में, बुरा पानी अपना रास्ता बना ले—चाहे वह छोटी-छोटी दरारों के माध्यम से हो, इंद्रियों के माध्यम से हो, दृष्टि के माध्यम से जब आप जुनून के साथ देखते हैं, भले ही अनजाने में, या श्रवण के माध्यम से जब वह सुखद भाषण या धुन ग्रहण करता है, या गंध की इंद्रिय के माध्यम से, चाहे वह किसी अभिषिक्त शरीर की सुगंध से हो या किसी सुगंधित मलहम से, – या स्वाद की इंद्रिय के माध्यम से, जब कोई कोई स्वादिष्ट व्यंजन चखता है, या स्पर्श की इंद्रिय के माध्यम से, जो किसी को बंदी बना लेती है, जब कोई अपने शरीर या पड़ोसी के शरीर को छूता है, चाहे जानबूझकर या संयोग से – यदि ऐसा कुछ हो, तो उसे जल्द से जल्द पाप-स्वीकार और आँसुओं के द्वारा बाहर निकालो। यदि वासना बहुत प्रबल हो जाए, तो आपको पाल नीचे करना चाहिए, अर्थात् सच्ची विनम्रता को अपनाना चाहिए; यदि रस्सी टूट जाए—अर्थात् धैर्य की शक्ति—तो मन की शक्ति को पुनर्स्थापित करके इसे जल्द से जल्द सुधारें। इस प्रकार करने से, आप सद्गुणों से परिपूर्ण होकर, तूफान-मुक्त शाश्वत जीवन के बंदरगाह में सुरक्षित प्रवेश करेंगे।

56. नवसिखियों को पापी प्रवृत्तियों और आदतों के अवशेषों के कारण, प्रबल प्रलोभनों का सामना करना पड़ता है

56. 1) नवसिखियों को पापी प्रवृत्तियों और आदतों के अवशेषों के कारण, प्रबल प्रलोभनों का सामना करना पड़ता है। – 2) सांसारिक जीवन की तुलना में, हमारे जीवन का मार्ग उत्कृष्ट है, न केवल हमारे वर्तमान के कारण, बल्कि हमारे भविष्य की आशाओं के कारण भी। – 3) जब प्रलोभन बाहर से, या शरीर और वासनाओं से उत्पन्न हों, तो दृढ़ खड़े रहो और तब तक लड़ो जब तक तुम विजयी न हो जाओ। – 4) दाहिनी और बाईं ओर के विचारों को सूचीबद्ध किया गया है, और सुझाव दिया गया है कि बाद वाले का विरोध किया जाए और पहले वाले से चिपका रहा जाए। [1, 64]

18. यदि तुम में से कुछ लोग फिसल जाएँ, और अन्य लोग हमसे पूरी तरह अलग हो जाएँ, तो आश्चर्यचकित न हो, विशेषकर वे जो अभी अपनी परीक्षा अवधि से गुजर रहे हैं और हाल ही में मठ में प्रवेश किए हैं। वे मसीह का कोमल जुआ सहन नहीं कर सकते क्योंकि उनके भीतर बची बुरी प्रवृत्तियाँ और झुकाव—आलस्य, सांसारिकता और पापपूर्ण आदतें—उनके कारण वे पीछे मुड़ जाते हैं, जैसे *'अपने ही उल्टी पर लौटने वाले कुत्ते'* (1 पतरस 2:22)। प्रभु का वचन झूठा नहीं है: कि जिस झुंड के प्रति उनके पिता का अनुग्रह है, वह छोटा है (लूका 12:32)—कि संकीर्ण द्वार और कठिन मार्ग से स्वर्ग के राज्य में प्रवेश करने वाले थोड़े हैं (मत्ती 7:13–14), कि... *'यदि कोई अपने पिता और माता, पत्नी और बच्चों, भाइयों और बहनों—हाँ, यहाँ तक कि अपनी जान से भी बैर नहीं रखता है—तो वह मेरा चेला नहीं हो सकता'* (लूका 14:25)।

19. हमारे दैवीय जीवन का स्वरूप महान और उत्कृष्ट है; धन्य है वह जिसे प्रभु ने संसार की तुच्छ नश्वरता से इसके लिए चुना है, और जो प्रभु के बुलावे पर दौड़ता हुआ आकर, मन की एकाग्रता द्वारा स्वर्ग के राज्य को देखने की आशा में, जीवन के इस सर्वोच्च क्रम को प्राप्त कर चुका है। क्योंकि निम्न संसार में अंधकार और निराशा है; और जो कोई भी शाश्वत और अविनाशी, अकथनीय और अकल्पनीय आशीर्वादों के बजाय व्यर्थ, नश्वर, क्षणभंगुर और केवल इस सांसारिक जीवन में आनंद देने वाली चीज़ों को चुनता है, वह रात की लड़ाई में एक व्यक्ति के समान है: वह न तो जानता है और न ही देखता है कि प्रहार कहाँ से और कैसे आते हैं, न ही यह कि प्रतिकूल परिस्थितियाँ कहाँ से और कैसे लहरों की तरह उस पर टूटती हैं। जो कोई भी, इसे देखकर और समझकर, शैतान के जालों में फँसे इस भीड़ से मुक्त हो जाता है, एक पक्षी की तरह ऊँची उड़ान भरता है और एक धर्मपरायण जीवन के मानसिक पर्वत पर चढ़ता है, अपने नीचे शिकारी—शैतान—को उपहास और पैरों तले कुचले हुए छोड़ देता है, प्रभु के वचन के अनुसार, जिन्होंने कहा: *'मैं तुम्हें साँपों और बिच्छुओं पर और शत्रु की सारी शक्ति पर पैर रखने का अधिकार देता हूँ'* (लूका 10:19)। तब उस पर पैर पटकना, और उसके अनेक सिरों तथा उसकी सारी घमंडी, लड़ाकू शक्ति को रौंद डालना, संपूर्ण तपस्वी जीवन के कवच को धारण करके। यही पवित्र आत्मा के द्वारा तुम्हारी पुत्रत्व की गवाही देता है और यही तुम्हें परमेश्वर के पुत्र बनाता है।

20. जो कुछ भी तुम पर आए, उससे थोड़े भी विचलित न हो, क्योंकि यह तुम्हारे धार्मिक स्वभाव की परीक्षा है। जब भी विवाद उठे, चाहे वह आंतरिक हो या बाहरी, तो निराश न हो, बल्कि रक्तपात तक अपने स्थान पर दृढ़ रहो, इस अटूट आशा में कि अपने धीरज के द्वारा तुम मुकुटों के योग्य ठहरोगे। उस धूर्त साँप का सामना करते समय साहसी बनो जो तुम पर युद्ध छेड़े हुए है। आप शरीर के विद्रोहों को जानते हैं; आप पवित्र मंदिर, अर्थात् अपने सदाचारी आत्मा के विरुद्ध इन आंतरिक विद्रोहों को जानते हैं; आप इन अरब के भेड़ियों द्वारा उत्पन्न भयों को जानते हैं, जो

बाहरी रूप से भेड़ के वस्त्रों में दिखाई देते हैं, परन्तु भीतर से सभी के दुष्ट विनाशक हैं: पवित्र सुसमाचार के अनुसार उनके फलों से उन्हें पहचानें, और अपने संकल्प में दृढ़ रहें।

21. जब आपके भीतर ईश्वर के प्रति प्रेम, पवित्रता, श्रद्धा, पश्चाताप, धैर्य, मृत्यु का स्मरण, इस जीवन से प्रस्थान, स्वर्गदूतों से भेंट, प्रभु के समक्ष खड़े होने, और उनके न्याय में देनी वाली हिसाब-किताब के विचार उत्पन्न हों, – मैं इसमें यह जोडूँगा, कि सबसे पहले वाले को सबसे अंत में रखूँगा – और आज्ञाकारिता, विनम्रता, अपनी इच्छा को वश में करने, उपहास सहने और इसी तरह के विचारों के बारे में, तो जान लो कि ये दाहिने हाथ के विचार हैं, स्वर्ग के राज्य के विचार हैं, जो उसकी ओर आरोहण का मार्ग प्रशस्त करते हैं और साथ चलते हैं। हालाँकि, इनके विपरीत विचार हैं – सांसारिकता, पाप से प्रेम, कामुकता, अशिष्टता, व्यर्थ की बातें, अत्यधिक नींद, व्यर्थता, अवज्ञा, अविश्वास, स्वार्थी सेवा – और मैं इन प्रत्येक जुनूनों का वर्णन क्यों करूँ? – *'यदि मैं उन्हें गिनूँ, तो वे रेत से भी अधिक होंगे'* (भजन संहिता 138:18)। इसलिए, यह जानते हुए कि क्या दाहिनी ओर का है और क्या बाईं ओर का, बाद वाले से और दूर भागो और उसे भगा दो, जैसा कि संत याकूब प्रेरित सिखाते हैं: *'शैतान का विरोध करो, और वह तुमसे दूर भागेगा'* (याकूब 4:7); परन्तु पहले वाले के साथ एक हो जाओ, उसके साथ सामंजस्य में रहो, और उसके साथ एकता में जियो, और तुम वही प्राप्त करोगे जो उसी प्रेरित ने वादा किया है: *'परमेश्वर के समीप आओ, और वह तुम्हारे समीप आएगा'* (याकूब 4:8)। किसी भी तरह से घमंड, आत्म-धार्मिकता या स्वच्छंदता को न पनपने दें, क्योंकि पिता का वचन ऐसी सभी चीजों को नवसिखुआ के लिए हर तरह के धोखे के स्रोत के रूप में मानता है। इसके विपरीत, हमेशा भाईचारे के प्रेम, सरलता, ईमानदारी, संसार से निर्लिप्तता, सहनशीलता, आज्ञाकारिता, ईश्वरीय बुद्धि, धार्मिकता और परमेश्वर के प्रति पूर्ण भक्ति से चिपके रहो।

57. हम युद्ध में लगे हुए हैं: मैं, आपके सेनापति के रूप में, आपको इन शब्दों के साथ आग्रह करता हूँ: दृढ़ खड़े रहो

57. 1) हम युद्ध में लगे हुए हैं: मैं, आपके सेनापति के रूप में, आपको इन शब्दों के साथ प्रोत्साहित करता हूँ: दृढ़ खड़े रहो। – 2) हमारे पराक्रम कोई मामूली बात नहीं हैं; परन्तु जो दिखाई देता है उस पर नहीं, बल्कि जो दिखाई नहीं देता उस पर दृष्टि रखो, और आनन्दित होओ: क्योंकि प्रतिफल महान है। – 3) प्रभु ने हमारे लिए अपना आप दे दिया; हम भी उसके लिए अपना आप दे दें, और अपनी कतारों में स्थिर रहें। [1, 65]

22. हम युद्ध में लगे हुए हैं, और वह भी एक कठिन युद्ध में, जो आसानी से जीता नहीं जाता। क्योंकि दिव्य प्रेरित क्या कहते हैं? *'क्योंकि हमारा संग्राम शरीर और रक्त से नहीं, बल्कि प्रधानताओं, शक्तियों, इस युग के अन्धकार के हाकिमों, स्वर्गीय क्षेत्रों में बुराई की आध्यात्मिक सेनाओं से है'* (इफिसियों 6:12)। जैसे एक सैन्य टुकड़ी का कमांडर, दुश्मन से लड़ने से पहले, अपने शब्दों से अपने अधीन सैनिकों को प्रेरित करता है और उन्हें दुश्मन को हराने के लिए बहादुरी से आगे बढ़ने के लिए प्रोत्साहित करता है: इसी प्रकार मैं भी, स्वयं कमजोर होते हुए भी, आपको, प्रभु की सेना को, केवल एक बार ही नहीं, बल्कि हमेशा, दैवीय झुंडों और दुष्टता की अनेक वासनाओं को पीछे हटाने के लिए, उत्साहित और प्रोत्साहित करने के लिए बाध्य और इच्छुक हूँ।

23. आपके आध्यात्मिक संघर्षों में काफी परिश्रम और पसीना शामिल है, फिर भी वे अत्यंत तीव्र, सैन्य-सदृश, संघर्षपूर्ण, अद्भुत और अलौकिक हैं। क्योंकि आप दिन-प्रतिदिन, जैसे रक्त बहाते हुए, अपनी इच्छाओं को नियंत्रित करते हैं; – गहरे घावों, निंदाओं और अपमानों को; – आज्ञाकारिता की आज्ञा को, प्रतिस्पर्धी अभ्यासों के रूप में। और आप में से किसी को भी उस सीमा से आगे जाने की अनुमति नहीं है जो उचित और आज्ञा-प्रद है; परन्तु तुम सब मिलकर संघर्ष में प्रवेश करते हो और थकान के बिंदु तक कठिनाइयों को सहते हो, और हर तरह से स्वयं को प्रेरित करते और बाध्य करते हो कि तुम उन सब बातों को करो जो विश्वास में परिश्रम करने वालों के लिए उचित हैं, भूख और प्यास में, सर्दी और नंगेपन में, सम्मान और अपमान में, और उन सभी अन्य बातों में जिनका प्रेरित ने घमंड किया (2 कुरिन्थियों 6:4–8; 11:27). परन्तु आनन्दित हो, मेरे बच्चों, आनंदित हो, अपनी आँखें दृश्यमान पर नहीं, बल्कि अदृश्य पर टिकाए रखो, क्योंकि दृश्यमान अस्थायी है, लेकिन अदृश्य शाश्वत है (2 कुरिन्थियों 4:18), और यह याद रखते हुए कि *'तुम्हारा जीवन मसीह के साथ परमेश्वर में छिपा हुआ है'* और यह कि *'जब मसीह, जो तुम्हारा जीवन है, प्रकट होगा'* पुनरुत्थान में, *'तब तुम भी प्रकट होओगे'* (कुलु. 3:4), जैसे आप हैं वैसे ही – और आप सदा के लिए आनन्दित होंगे; क्योंकि आपके प्रभु, जो आपके परिश्रम का प्रतिफलदाता है, आपको शरीर में आपके परिश्रम के लिए अनन्त और असीम पुरस्कारों से पुरस्कृत करेगा।

२४. हे मेरे प्रभुओं और स्वामियों, परमेश्वर के प्रेम में बने रहो! और जैसे उसने हमसे प्रेम किया और हमें मृत्यु की निंदा के लिए—क्रूस पर मृत्यु—अपने आप को सौंप दिया, वैसे ही हम भी उसके लिए अपने आप को सौंपकर,

उस परोपकारी प्रभु का धन्यवाद करें कि उसने हमें यह अनुग्रह दिया है: कि हम उसके नाम पर सभी सांसारिक मामलों और कार्यों को त्याग सकें, सभी शारीरिक भोगों, और इस संसार की हर चीज़ को त्याग दें। तो फिर, हम परमेश्वर को बदले में क्या चढ़ाएंगे, जिसने हमें इसके लिए बल दिया है? इससे और क्या हो सकता है: कि हम लापरवाही या उदासीनता के कारण, जो पहले ही पूरा हो चुका है उसे नष्ट न कर दें ; कि हम वर्तमान के सामने हतोत्साहित न हों, न ही भविष्य से थोड़ा भी डरें; बल्कि यदि हमारा रक्त बहाना आवश्यक हो, तो यह हमारे लिए प्रिय और अत्यंत वांछनीय हो। तो, दृढ़ रहो, और स्वयं को और अधिक, और भी अधिक मज़बूत करो, अधिक उत्साह, अधिक जोश के साथ, ईश्वर के अधिक समान और एक-दूसरे के प्रति अधिक प्रेम के साथ, अब से समय के अंत तक कार्य करते हुए।

58. मैं मृत्यु और उस समय होने वाली सभी घटनाओं के बारे में सोचता हूँ और मैं प्रार्थना करता हूँ कि मुझे शुद्धिकरण की कृपा प्राप्त हो और मुझे आग सहनी न पड़े; लेकिन तुम, अपने पुरस्कार की प्रतीक्षा में आनंदित रहो, भले ही तुम्हारी वर्तमान परिस्थितियाँ दुखद हों

58. 1) मैं मृत्यु और उस समय होने वाली सभी घटनाओं पर मनन करता हूँ, और प्रार्थना करता हूँ कि मुझे शुद्ध होने की कृपा मिले और अग्नि को सहना न पड़े; परन्तु तुम, अपने पुरस्कार की आशा में आनन्दित होओ, भले ही तुम्हारी वर्तमान परिस्थितियाँ दुख से भरी हों। – 2) यह लेंट का समय है: आइए हम इसे आनंद के साथ स्वागत करें, शुद्धिकरण और मन की शांति के समय के रूप में; इसके अलावा, आइए हम यह न भूलें कि यह आध्यात्मिक बोआई का भी समय है, और आइए हम इस फलदायी बोआई में संलग्न हों; फिर भी, सभी चीजों में संयम के राजसी मार्ग पर चलते हुए, आइए हम नम्रता में प्रगति के प्रति अधिक चिंतित रहें। [1, 66]

२५. हमारे एक सम्मानित भ्राता की मृत्यु का स्मरण करते हुए, मैं कराह उठा और मेरा प्राण शोक से भर गया, यह सोचते हुए कि यह निधन कैसा होगा, और आत्मा तथा शरीर का यह वियोग और अलगाव, हमारे एक सम्मानित भाई की मृत्यु को याद करके, मैं कराह उठा और मेरी आत्मा दुख से भर गई, जब मैं इस बात पर विचार कर रहा था कि आत्मा और शरीर का यह पार हो जाना, यह अलगाव और वियोग कैसा होगा, ईश्वर हमें यहाँ से स्वर्ग ले जाने के लिए किस प्रकार के सेवकों को भेजेगा? और क्या यह प्रतिनिधिमंडल दुष्ट स्वर्गदूतों का नहीं हो सकता? आइए हम ऐसी संभावना से डरें! ईश्वर के किन सेवकों को हमें यहाँ से स्वर्ग ले जाने के लिए भेजा जाएगा? और क्या यह प्रतिनिधिमंडल दुष्ट स्वर्गदूतों का नहीं हो सकता? आइए हम ऐसी संभावना से डरें! हमारे पास कौन आएगा और हमें उस देश तक साथ ले जाएगा? और हम कहाँ प्रवेश करेंगे—विश्राम के देश में, *'एक अद्भुत निवास-स्थान में, यहाँ तक कि परमेश्वर के भवन में, जयजयकार और स्तुति के उद्घोष, और उत्सव मनाने वालों के शोर के बीच?'* (भजन संहिता 41:5)। या, इसके विपरीत, आग में, अंधकार में, कीड़ों में, और अन्य अनगिनत यातनाओं में? इस पर चिंतन करते हुए, मैं चकित, भयभीत और कांप रहा हूँ, और मैं प्रार्थना करता हूँ कि मुझे यहाँ अपने अनगिनत पापों को आँसुओं से धोने और उस सर्व-भक्षी और अनंत अग्नि का अनुभव करने से पहले, स्वयं को थोड़ा शुद्ध करने की अनुमति मिले। और आप, चूँकि आप सद्गुण के लिए संघर्ष में लगे हुए हैं, और इसे सुनकर और इस पर मनन करके, आनंदित हों, प्रसन्न रहें, फलें-फूलें – और प्रभु में जीवें। यद्यपि आपकी परिस्थितियाँ कष्टप्रद हैं, तो भी शाश्वत पुरस्कार की ओर देखें और आलस्य या हतोत्साह के बिना अपने मार्ग को उसके अंत तक पहुँचाने का प्रयास करें।

26. यहाँ आता है पवित्र लेंट, ज्ञान और शुद्धिकरण का समय, पवित्र दिनों का समय! कोई भी भयभीत न हो, कोई भी आलसी न बने। इस समय भक्ति, पवित्र विचारों का मनन, स्वर्गीय चिंतन का दर्शन, हृदय और शरीर की पवित्रता, वासनाओं की अशुद्धि से मुक्ति और परमेश्वर के समक्ष पश्चाताप में अश्रुपूर्ण स्नान वास्तव में मधुर हैं। तो आइए हम इन दिनों को शरीर और आत्मा दोनों के लिए विश्राम और सांत्वना के समय के रूप में प्राप्त करने के लिए तैयार हों, और शरीर से अधिक आत्मा के लिए। – यह बोने का भी समय है। मनुष्य शरीर में जितना कुछ बोता है, वह सब सड़न में बदल जाता है; और इससे, यदि कुछ बचता भी है, तो केवल वासनाओं की आग, जो एक पशु की तरह और मूक रूप से रक्त को उकसाती है। और हम मनुष्य कैसे भूल करते हैं, क्षणिक चीज़ों में व्यस्त और अस्थायी चीज़ों से चिपके रहकर! लेकिन आत्मा के बोने में, जो कुछ भी प्राप्त होता है वह खोया नहीं जाता, कुछ भी व्यर्थ में बर्बाद नहीं होता, कुछ भी नष्ट नहीं होता, बल्कि सब कुछ सुरक्षित रूप से संरक्षित रहता है और आपके महान आत्माओं को उस भोजन से पोषित करता है जो वास्तव में अमर है: इसमें आनंद, शांति, विश्वास, आशा, प्रेम, ज्ञानोदय, शुद्धिकरण, पवित्रता और अंततः दिव्यता निहित है। हालाँकि, हम स्वयं को शरीर संबंधी अतिवादों में लिप्त न होने दें या स्थापित प्रथाओं से विचलित न हों, जब हम राजसी मार्ग पर चल रहे हों—चाहे वह हमारे खाने-पीने में हो, हमारी जाग-तपस्या में, हमारे एकांत में, खुले में सोने में, या अन्य मामलों में। इसलिए, आइए हम दैवीय विनम्रता से स्वयं को और अधिक नम्र बनाने का प्रयास करें, और इस उद्देश्य के लिए, आइए हम कपट के बिना आज्ञाकारिता करें और

अपनी कपटी इच्छा को जड़ से ही काट दें, ठीक वैसे ही जैसे आप स्वयं करते हैं। इस प्रकार आचरण करके, आप कोमलता और प्रेम में, और पवित्र आत्मा के मार्गदर्शन से, मसीह के पवित्र पुनरुत्थान के उज्ज्वल दनिों में प्रवेश करेंगे। एक ऋणी के रूप में, मैंने आपको यह याद दलिाया है और ऐसा करते रहूँगा। अत; इस आज्ञा और मेरे वनिम्र शब्दों को पूरा करें; – और पवित्र आत्मा आपको अपनी मुहर से सील करे!

५९. संसार की व्यर्थता के बीच रहकर, मैंने परमेश्वर का धन्यवाद कयिा कहिम वहाँ से भाग नकिले हैं

59. 1) संसार की व्यर्थता के बीच रहकर, मैंने परमेश्वर का धन्यवाद कयिा कहिम दोनों वहाँ से भाग नकिले हैं। – 2) हमारी वर्तमान अवस्था से अधकि धन्य कुछ भी नहीं है, क्योंकयिह परम लक्ष्य है और तुरंत प्रदान की जाती है। – 3) आइए हम परमेश्वर से प्रेम करें: क्योंकप्रिेम के लिए कौन अधकि योग्य है? और इस प्रेम से अधकि धन्य और क्या है? आपने इस मार्ग पर चलना शुरू कर दयिा है, लेकनि अंत अभी भी बहुत दूर है। – 4) शरीर को, वशिेष रूप से उसकी कामवासनाओं को, मृत्यु के घाट उतारना चाहिए, और ऐसा करने के लिए उन सभी चीजों से बचना चाहिए जो उन्हें उत्तेजति कर सकती हैं। [1, 67]

27. परसों, हमारे स्वामी के आदेश पर, मैं मठ से नकिला, पैट्रिआर्केट गया, और वहाँ से शाही पूजा के लिए गया। मैंने वहाँ पूरा दनि बताया, और जब मैं यह सब देख रहा था, तो मैंने दृश्य और चेहरे देखे, सांसारकि मामलों का चक्र और लोगों को इधर-उधर दौड़ाती भाग-दौड़, उनकी बक-बक, उनकी कई चतिाएँ और उनकी सांसारकि साजशिें देखीं: और यह सब लेंट के पवित्र दनिों के दौरान हो रहा था। इसने मुझे मेरे सामान्य मानसकि अवस्था से दूर कर दयिा; मेरे कान अजीब-गरीब बकवास से भर गए थे और मेरी आँखें कई तरह की कल्पनाओं से वचिलति हो गई थीं। और अब भी मैं यह अपने भीतर महसूस करता हूँ; और मैं इस अनुकूल क्षण का लाभ उठाकर यह आपको बता रहा हूँ। ठीक वैसे ही जैसे घने होते बादल से बारशि की बूँदें गरिती हैं; तो, भारी मन से, मेरी आँखों से आँसू टपकने लगे, और मैंने, अपने हृदय की गहराई से एक आह भरकर और अपने वचिारों के उथल-पुथल को शांत करके, प्रार्थनामय शोक के साथ प्रभु का धन्यवाद कयिा और आप लोगों की प्रशंसा की कआिप ऐसे लोगों के बीच से हट गए और उनसे अलग हो गए, और संसार की अशुद्धता के साथ सबसे मामूली संपर्क को भी त्याग दयिा है, आज्ञाकारता के पथ पर बने हुए हैं, धैर्य की परीक्षाओं से प्रतदिनि जूझ रहे हैं, और ईश्वर-प्रसन्न स्वभाव तथा धर्मी आचरण के द्वारा आत्मा में सद्गुणों की ऊँचाइयों पर आरोहण कर रहे हैं।

28. तुम्हारी स्थतिऔिर अवस्था से अधकि धन्य, अधकि वांछनीय, या अधकि गौरवशाली और क्या हो सकता है? – तुम वास्तव में मसीह की संतान, परमेश्वर पति के सेवक हो, जनि्होंने देह और लहू का परत्याग कयिा है। दुनयिादार लोगों के उद्देश्य सांसारकि चीजों में होते हैं; आपके उद्देश्य स्वर्गीय चीजों में हैं; उनके लिए, दुनयिा सर्वोपरहिै; आपके लिए, स्वर्ग सर्वोपरहिै। यह उनकी प्रकृतहिै कवि सच्ची प्रसन्नता के बनिा इस दुनयिा में आनंद मनाएं, धन की भावना के बनिा इस दुनयिा में अमीर बनें, और इस दुनयिा में सुख की अपनी भूख को कभी संतुष्ट कए बनिा सुख का आनंद लें। मैं उनके बारे में और कुछ नहीं कह सकता। – परन्तु तुम्हारे पास आशा से उत्पन्न आनन्द है – आने वाले युग में प्रतज्ञिा की गई बातों में हर्षति होना – और, यद्यपइिस वर्तमान जीवन में तुम गरीब हो, परन्तु अनन्तकाल में धनी हो; यद्यपतिुम दुखपूर्ण आत्म-त्याग का अभ्यास करते हो, तुम अनुपम मठिास के आध्यात्मकि आशीर्वादों में भाग लेते हो। – अतःहम कसिी अन्य आनंद की खोज न करें, अपनी आँखें और ध्यान कसिी और ओर न मोड़ें, और दव्यि व्यवस्था द्वारा हमें जो प्रदान कयिा गया है और जसिसे पवित्र आत्मा ने हमें धन्य कयिा है, उसके अलावा कसिी और चीज़ की इच्छा न करें।

29. आओ, हम उसको महमिा दें जसिने हमें बुलाया है। आओ, हम उससे प्रेम करें जसिने हमसे इतना प्रेम कयिा है। आओ, हम उसकी सेवा दासों के रूप में करें, ताकहिम सभी चीजों पर प्रभुत्व के योग्य ठहरें। आओ, हम उससे भयभीत हों, ताकसिंसार हमसे भयभीत हो, और स्वर्गदूतों का समुदाय हमसे प्रेम करे। आओ, हम स्वयं को दुष्ट कर्मों और वचिारों से शुद्ध करें, ताकवहि, जो प्रकाश है और वास्तव में अगम्य है, हमें आत्मा की बजिली में स्नान कराए और हमें दव्यि नविास के ऊँचे पर्वत पर उठाए, और हमें लोगों के सामने एक दव्यि नगर के रूप में प्रकट करे। क्या आपने सुना है कपिवित्र पतिाओं में से एक गेरोन्डकि में क्या कहते हैं: 'यदहिम एक को सम्मानति करते हैं, अर्थात् ईश्वर को, तो सभी हमें सम्मानति करेंगे; लेकनि यदहिम अपने पापों से उनका अपमान करते हैं, तो क्या हमें वपिरीत का सामना नहीं करना पड़ेगा?' – और प्रभु से कौन प्रेम नहीं करेगा? कौन इस महान और अनंत प्रकाश से नहीं चपिकेगा? इस महान पुरस्कार दाता और मुकुट प्रदान करने वाले की ओर कौन नहीं दौड़ेगा? इस राजाओं के राजा के साथ हमेशा के लिए राज करने की लालसा कसिको नहीं होगी? सब कुछ से बढ़कर, उस द्वारा पुत्र के रूप में अपनाए जाने को कौन प्राथमकिता नहीं देगा, जसिसे स्वर्ग और पृथ्वी पर हर पतिृत्व उत्पन्न होता है—जो अनुग्रहों

का पति और सभी का प्रभु है? कौन इस लालसा में नहीं रहेगा कि वह हमारे प्रभु यीशु मसीह के साथ पति की संगति में सहभागी बने, एक ऐसी संगति जो शब्दों में अभिव्यक्ति से परे, कानों द्वारा समझ से परे, और मन की पहुँच से परे है? आपने इसे चुना है और इसे प्रेम किया है; आपने पुकार पर ध्यान दिया है और आ गए हैं; आपने इसे पूरा करना शुरू कर दिया है और इसे जारी रखे हुए हैं। लेकिन कारनामे (अखाड़े में प्रतियोगिताएँ) अभी समाप्त नहीं हुए हैं; दौड़ अभी खत्म नहीं हुई है; हमें अभी भी प्रयास करना है और अपनी पूरी ताकत से प्रयास करना है; प्रतियोगिताओं का समय अभी समाप्त नहीं हुआ है, जैसा कि आत्मा के उन महान और स्वर्णिम होठों ने घोषित किया है। क्या हम यह नहीं सुनते कि पौलुस, यह जगत का प्रकाश, सार्वभौमिक प्रेरित *कहते हैं: 'इस प्रकार मैं दौड़ता हूँ, परन्तु व्यर्थ नहीं; इस प्रकार मैं लड़ता हूँ, परन्तु हवा से लड़ने वाले की नाईं नहीं; बल्कि मैं अपने शरीर को दण्ड देता हूँ, और उसे वश में करता हूँ; कहीं ऐसा न हो कि मैं दूसरों को उपदेश देकर स्वयं अयोग्य ठहर जाऊँ'* (1 कुरिन्थियों 9:26-27)?

30. क्या आप देखते हैं कि परमेश्वर के मनुष्य ने क्या कहा है? हमें इस देह के अटूट घोड़े को मारना और दृढ़ता से वश में करना चाहिए। अतःहमें इसे रोकना और लगाम लगाना चाहिए। मैं, जो उत्कट और पापी हूँ, आपसे विनती करता हूँ कि यह सुनिश्चित करें कि यह लगाम न चबाए, अपने सवार—मन—को न उछाल फेंके, और हमें हमारे शत्रुओं के लिए उपहास का पात्र न बनाए। आइए हम खड़ी और खतरनाक जगहों से बचें, ताकि हमारी यात्रा सुरक्षित हो सके। – आप बेशक समझते हैं कि मैं किस बारे में बात कर रहा हूँ। – धिक्कार है धोखे भरी निगाह पर, क्योंकि वह पाप के विष को आत्मा में डाल देती है! धिक्कार है शापित दुस्साहस पर, क्योंकि वह शीघ्रता से सद्गुणों के घर को जला देता है! दाढ़ी वाले और बिना दाढ़ी वाले युवकों दोनों के बीच आदान-प्रदान की गई युवा मुस्कानों पर धिक्कार है, क्योंकि वे एक पल में हमें वासना के सबसे निचले क्षेत्रों में धकेल देती हैं! पेट की तृप्ति और अत्यधिक नींद पर धिक्कार है, क्योंकि वे कामुकता के बुरे बीजों को जन्म देती हैं और उन्हें बढ़ाती हैं! धिक्कार है उन पर जो जोड़ों में मिलते हैं, गुप्त सभाएँ और वार्तालाप आयोजित करते हैं, और विशेष रूप से उन पर जो ऐसा करते हुए एक-दूसरे के सामने शर्मनाक विचारों को प्रकट करने की हिम्मत करते हैं, मानो पारस्परिक लाभ और आनंद के लिए, क्योंकि उनके बीच मसीह नहीं, बल्कि शैतान है! परन्तु परमेश्वर के भय से अपना रक्षण करो, और अपनी स्वर्गीय उन्नति में सदैव ऊँचा उठो।

60. उठो और सभी के चंगा करने वाले प्रभु से चंगाई की खोज करो

60. 1) उठो और सभी के चंगा करने वाले प्रभु से चंगाई की खोज करो। – 2) हमारा जीवन उत्तम—स्वर्गीय—है, फिर भी हम शारीरिक और सांसारिक हैं; इसलिए, जीवन में सफल होने के लिए, हमसे एक महान कार्य की अपेक्षा की जाती है। [1,69]

1. उठो और, स्वयं को सीधा कर, अपने मार्ग पर अच्छी तरह चलो। जो आलस्य में सोया है, वह परिश्रम के लिए जाग उठे। जिसके हाथ लटक गए हैं और जिसके पैर दोनों ओर लड़खड़ाते हैं, वह प्रभु की आज्ञाओं के मार्गों पर सीधे चलना शुरू करे। जो वासनापूर्ण विचारों से अंधा हो गया है, अपने दृष्टि के नेत्रों को आँसुओं के स्रोत में धो, और निर्लिप्तता के माध्यम से दृष्टि प्राप्त कर, प्रभु की महिमा कर। जो कोढ़ी के समान, पाप के पपड़ियों से ढका हुआ है, उत्साह के साथ प्रभु के समीप आओ, और तुम सुनोगे: *'मैं चाहता हूँ; शुद्ध हो जाओ'* (मत्ती 8:3), और शुद्ध हो जाने पर, सावधान रहो कि इस कोढ़ में फिर से न पड़ो। जो आत्मा में बहरा और मन में अंधा है, सुनने और बोलने का प्रयास करो—और तुम पाओगे: क्योंकि दिव्य वचन में उन सभी को चंगा करने की शक्ति है जो भीतर से पीड़ित हैं। मैं ये बातें तुम में से कमज़ोर लोगों के लिए कहता हूँ: क्योंकि *'चिकित्सक की आवश्यकता स्वस्थ लोगों को नहीं, बल्कि बीमारों को है'* (मत्ती 9:12)।

२. हमारे जीवन का मार्ग, जो महान और गौरवशाली है, संयोग से पूर्णता तक नहीं पहुँचता, बल्कि बहुत परिश्रम और प्रयास से पहुँचता है; लेकिन यह जितना ऊँचा है—स्वभाव से दिव्य और दैवीय—उतनी ही अधिक मेहनत और प्रयास की मांग करता है; क्योंकि, देहधारी होने के नाते, हम अदेह के समान बनना चाहते हैं, और इस संसार में रहते हुए, हम स्वर्ग के समान जीवन जीने का प्रयास करते हैं, खुद को देह और रक्त से बंधे होने पर भी अदेह और निर्रक्त रूप से रहने के लिए विवश करते हैं: क्योंकि, जैसा कि प्रेरित कहते हैं, *'मांस और रक्त परमेश्वर के राज्य के वारिस नहीं हो सकते, और न ही नाशवान अमरत्व का वारिस होता है'* (1 कुरिन्थियों 15:50)। इसलिए, हमारे पास महान दृढ़ता, बड़ी सावधानी और तीव्र लगन होनी चाहिए: *'क्योंकि शरीर आत्मा के विरुद्ध काम करता है, और आत्मा शरीर के विरुद्ध; और ये एक दूसरे के विरोधी हैं'*, जैसा कि प्रेरित कहते हैं (गलातियों 5:17)। अतःसावधान रहो, कि हम अपने बेहतर हिस्से को बदतर के अधीन न होने दें, और न ही उस चीज़ को जो हमारे भीतर सर्वोच्च शासन करनी चाहिए, उसे

शरीर की दास-भावनाओं का गुलाम बनने दें, कहीं ऐसा न हो कि हम खुद को सिर के बल चलते हुए पाएँ, और हमारे पैर ऊपर की ओर हों।

६१. महा-प्रायश्चित्त का मध्य बिंदु: हमने परिश्रम किया है, और हम फल देखते हैं: ईश्वर की दया; धन्यवाद अर्पित कर, हम आगे बढ़ें

६१. १) महा-प्रायश्चित्त का मध्य बिंदु: हमने परिश्रम किया है, और हम फल देखते हैं: ईश्वर की दया; धन्यवाद अर्पित कर, हम आगे बढ़ें। – २) ईश्वर और स्वर्गदूत और सभी संत हमारे मार्ग को देख रहे हैं; हम बाधाओं को पार करते हुए और कठिनाइयों को सहते हुए प्रयास करें। [१, ६९]

3. पवित्र आत्मा की कृपा ने हमें पर्याप्त शक्ति और वीरता के साथ पवित्र लेंट के मध्य तक सुरक्षित रूप से पहुँचाया है। मुझे विश्वास है कि यह आगे भी हमारे साथ बनी रहेगी और हमें पापों की क्षमा तथा आपकी अत्यधिक प्रशंसनीय प्रगति में और सुधार लाते हुए, जीवन-दायक और प्रकाश-प्रदान करने वाले पुनरुत्थान के दिन तक ले जाएगी। पीछे मुड़कर देखें कि आपकी स्थिति कभी कैसी थी, और अब वह कितनी ऊँची उठ गई है। आत्मा, एक बार जब वह मोक्ष की उत्सुकता से भर जाती है, तो इस प्रयास में अनजाने ही आगे बढ़ती है और सद्गुणों की ऊँचाइयों पर चढ़ती हुई स्वर्ग की ओर उड़ान भरती है। इसी प्रकार, भाइयों, उत्साह के साथ इन दिनों में प्रवेश करके और सभी कठिनाइयों और बाधाओं को दूर करके, हम अब तक अच्छी तरह और धार्मिकता से चले हैं और बदल गए हैं, क्योंकि हम ने धर्मपरायणता और आज्ञाओं के विश्वासपूर्वक पालन से प्रेम करना सीख लिया है; हमने जो पहले प्राप्त किया था, उसमें से हमने कुछ भी नहीं खोया है, बल्कि हमें नई-नई बातों से समृद्धि मिली है; और मेरा हृदय आनंदित हुआ है, और मेरी आत्मा उल्लासित हुई है, कि तुम्हारी दिव्य परिश्रम के फल बढ़ गए हैं और तुम्हारे पवित्र उत्साह को उत्तम भाग मिला है। यह सब, प्रेरित के शब्दों में कहें तो, *'न तो इच्छा करने वाले की, और न दौड़ने वाले की, परन्तु दया करने वाले परमेश्वर की ओर से है'* (रोमियों 9:16)। उनके द्वारा कमजोर मजबूत हो जाते हैं, और शक्तिहीन *'शक्ति से सुसज्जित हो जाते हैं'* (भजन संहिता 17:33)। फिर भी, आइए हम केवल पहले से प्राप्त उपलब्धियों से ही संतुष्ट न रहें, बल्कि युवा जोश के साथ आगे बढ़ें, *'ताकि हमारी जवानी गरुड़ के समान नयी हो जाए'* (भजन संहिता 102:5); आइए हम हमेशा आगे बढ़ते रहें और फलते-फूलते रहें, और हमने जो अच्छाई हासिल की है या जिस पड़ाव पर हम पहुँचे हैं, उसे पर्याप्त न समझें, जब तक कि हम क्षणिक से शाश्वत में मृत्यु के द्वार से न गुजर जाएँ। और हम सचमुच धन्य होंगे, भाइयों, और धन्य स्वर्गदूतों का भाग प्राप्त करेंगे।

४. यह कितनी महिमा और सम्मान की बात है जब हम, जैसा कि हमें करना चाहिए, अपने जीवन-मार्ग के अनुसार जीते हैं। जब सर्व के प्रभु हमें देखते हैं, तो वे आनंदित होते हैं; और सभी संत आनंदित होते हैं और प्रसन्न होते हैं। जैसे हम अपनी भौतिक आँखों से अखाड़े में दौड़ने वालों को देखते हैं, वैसे ही ईश्वर और स्वर्गदूतों का पूरा दल और सभी संतों की सभा हम पर दृष्टि रखती है और हमारे कर्मों के मूल्य का निर्णय करती है। इसलिए, हे मेरे भाइयो, पृथ्वी से स्वर्ग तक के इस मार्ग पर इस महान दौड़ में धैर्यपूर्वक चलते रहें; अपने विरोधी पर विजय प्राप्त करें, जब वह हमसे भिड़ने का प्रयास करे तो उसे पटक दें, और हमारे विरुद्ध उसके प्रति अपने वीर उत्साह से उसे दूर फेंक दें। वह एक कायर, शक्तिहीन और तुच्छ है; इसीलिए परमेश्वर के भाई, याकूब, पुकार कर कहते हैं: *'शैतान का विरोध करो, और वह तुम से दूर भागेगा; परमेश्वर के समीप आओ, और वह तुम के समीप आएगा'* (याकूब 4:7–8)। आइए हम किसी भी रूप में पीछे मुड़ने न दें; क्योंकि यह उन लोगों के लिए अनुचित है जो पूरी ताकत से दौड़ते हैं। आइए हम सुस्ती से आगे न बढ़ें; क्योंकि यह उन लोगों के लिए अनुचित है जो विजय की ओर तेज़ी से बढ़ रहे हैं। परन्तु जब हम अपने कर्मों और अपनी इच्छाओं दोनों को त्यागकर स्वर्ग की ओर अपनी दृष्टि उठा लें, तो इसी प्रकार अपना मार्ग पूरा करें, ताकि हम भी पौलुस के साथ कह सकें: *'मैंने अच्छा संघर्ष किया है, मैंने दौड़ पूरी कर ली है, मैंने विश्वास की रक्षा की है: अब मेरे लिए धार्मिकता का मुकुट रखा गया है'* (2 तीमुथियुस 4:7)।

६२. आपका क्रम सुव्यवस्थित है: इसे बनाए रखें

62. 1) आपका आदेश अच्छी तरह से स्थापित है: इसे बनाए रखें। – 2) प्रत्येक व्यक्ति अपना कर्तव्य निभाए – सबसे ऊपर आप, प्रबंधक, और फिर आपके सभी अनुयायी: उच्च अधिकारी मामलों का अच्छी तरह से प्रबंधन करें, और अधीनस्थ स्वेच्छा से आज्ञापालन करें। – 3) तपस्या और कर्तव्यों में बदलाव से प्रेम करें। संत थियोडोर की अनुमतियों के संबंध में उपदेश। [1, 70]

5. प्रभु की महिमा और धन्यवाद हो, जिसने हमें एक साथ इकट्ठा किया है और मन और इच्छा की एकता में स्थापित किया है। मैं यह कहने की हिम्मत क्यों करता हूँ कि हमारा सिर मसीह है, जिसके पास, हमारे प्रधान सेनापति

के रूप में, हम सभी बातों का संदर्भ देंगे और सभी बातों को उसकी महिमा के लिए मोड़ देंगे? और यदि आप अंत तक ऐसे ही अच्छे स्वभाव से विचलित न हों तो आपसे अधिक धन्य और कौन है? – प्रभु करें कि आप हमेशा एक-दूसरे के साथ मेल-मिलाप में रहें, अधिक से अधिक शुद्ध और प्रबुद्ध हों, और छोटे-छोटे सद्कर्मों के द्वारा भी अथक आगे बढ़ते रहें। आपका क्रम सुव्यवस्थित है: इसे बनाए रखें।

6. प्रत्येक व्यक्ति आज्ञा के अनुसार अपने कर्तव्यों का पालन करे। प्रत्येक व्यक्ति अपना काम देखे और दूसरे से स्वयं को बड़ा न माने, हर मामले में व्यवस्था बनाए रखे। – हे व्यवस्थापक के पुत्र, तुझ पर जो जिम्मेदारी है उस पर विशेष ध्यान दे, *'जो तेरा विरोध करते हैं उन्हें कोमलता से डांटे'* (अर्थात् अवज्ञाकारियों को) (2 तीमुथियुस 2:25), और पक्षपात या क्रोध से कुछ भी न करें। प्रेरित कहते हैं, *'समय और असमय में'* (2 तीमुथियुस 4:2) स्थिर रहें। *'असमय'* का अर्थ समझें: हर समय; हर समय दृढ़ और सतर्क रहें। – किसी भी हाल में, जैसा तुम मुझे देखते हो वैसा ही बनो, यद्यपि मैं हर मामले में कमी-पूरी हूँ। जो कुछ मैं अनुमति देता हूँ, तुम भी अनुमति दो; और जो कुछ मैं त्यागता हूँ, तुम भी त्यागो: यदि मैं प्रहार करता हूँ, तो तुम भी प्रहार करो; यदि मैं क्षमा करता हूँ, तो तुम भी क्षमा करो; यदि मैं दया दिखाता हूँ, तो तुम भी दया दिखाओ; यदि मैं क्षमा करता हूँ, तो तुम भी क्षमा करो; यदि मैं प्रेम करता हूँ, तो प्रेम करो – ताकि तुम सुन सको: *'शाबाश, हे भले और विश्वासयोग्य दास, शाबाश! तू थोड़ी सी बात में विश्वासयोग्य रहा, मैं तुझे बहुत में लगाऊँगा; अपने प्रभु के आनन्द में प्रवेश कर'* (मत्ती 25:21)। जो तेरा अनुसरण करते हैं, वे भी इसी प्रकार करें – और, बदले में, जो उनका अनुसरण करते हैं। यहाँ एक अद्भुत नियम है: कि अधिकार के अधीन रहने वालों को अधिकार में रहने वालों द्वारा आकार दिया जाना चाहिए, और जैसे अधिकार में रहने वाले सभी के प्रति बुद्धिमानी भरी देखभाल में प्रचुर हैं, वैसे ही अधिकार के अधीन रहने वालों को नम्रता, असहमति न करना, विनम्र आज्ञाकारिता और आज्ञा का त्वरित पालन करने में प्रचुर होना चाहिए।

7. दंडों और कर्तव्यों तथा कार्यों में परिवर्तनों से प्रेम करो, इस निश्चय के साथ कि जो इन्हें व्यवस्थित करते हैं वे आपके भले के लिए ऐसा करते हैं। – लेकिन जब आप मेरी लापरवाही और मेरे अपने पापों के कारण अपराधों में पड़ें, तो मुझसे समय से पहले अनुमति न माँगें; क्योंकि मैं—यद्यपि एक पापी हूँ—प्रभु के साम्हने इन बन्धनों का रक्षक हूँ, जिन्होंने महान और सर्वोच्च प्रेरित पतरस के रूप में मुझसे कहा: *'पृथ्वी पर जो कुछ भी तुम बान्धोगे वह स्वर्ग में बान्धा हुआ रहेगा; और पृथ्वी पर जो कुछ भी तुम खोलोगे वह स्वर्ग में खोला हुआ रहेगा'* (मत्ती 16:19)। तो फिर—मेरे बच्चों, मुझ पर दया करो—मैं कैसे लापरवाही से उसको क्षमा कर सकता हूँ जिसे क्षमा नहीं किया जा सकता, और उसको तोड़ सकता हूँ जिसे बाँधा गया है? क्या आप नहीं देखते कि मुझे यह किस भय के साथ करना चाहिए, ताकि ऐसे बंधनों और क्षमाओं में हमेशा दिव्य औचित्य मेरी सहायता करे? तो फिर, हमें वह विवेक की रोशनी कहाँ मिलेगी, ताकि हमारे द्वारा लगाया गया प्रायश्चित और हमारा न्याय, एक तरह से, ईश्वर के साथ एकता में किया जा सके? यद्यपि ऐसा कहना अहंकारपूर्ण लग सकता है; फिर भी, सार में, वास्तव में ऐसा ही होना चाहिए और ऐसा ही है। इस प्रकार बोलते हुए मैं भय से काँप रहा हूँ और लज्जा से भर गया हूँ, और मैं प्रार्थना करता हूँ कि धरती फटकर मुझे निगल न ले, या पहाड़ खिसककर मुझे ढक न लें। हाय मेरी दुर्दशा! हाय मेरी दुर्दशा! मुझे कितना बड़ा काम सौंपा गया है! यह जानते हुए, मुझ पर दबाव न डालें: क्योंकि ऐसा हो सकता है कि मैं अनुमति दे दूँ, जबकि ईश्वर न दें, मेरी प्रार्थना को अस्वीकार कर दें, क्योंकि परम पवित्र स्वभाव मेरे मूर्खतापूर्ण आवेगों और निर्णयों की पूर्ति नहीं करेगा, बल्कि मेरे कार्य की निंदा करेगा और मुझे जीवितों के बीच से भी उठा ले जाएगा, जैसा उसने एलियाह के साथ किया था। हे मेरे भाइयों, परमेश्वर तुम्हारे साक्षी हों कि मैं यह इस इच्छा से नहीं कहता कि मैं तुम्हें दुखी करूँ, न तुम्हें दबाऊँ या जबरदस्ती करूँ, या *'बाध्यता और संकट से मसीह के झुंड की चरवाई करूँ'* (1 पतरस 5:2)। हे प्रभु, ऐसा मुझ पर न हो! उससे मुझे क्या लाभ होगा? मेरी एकमात्र चिंता आपको, मसीह के मेमनों और परमेश्वर की भेड़ों को, हर संभव साधन से बचाना है। क्योंकि प्रभु ने दिव्य पतरस से अपने प्रश्नों में (यूहन्ना 21:15 और आगे) उनके प्रति प्रेम का पहला और सबसे बड़ा संकेत यही स्थापित किया। जैसे ही आप इन वचनों को अपने हृदयों में संजोएँ और उन्हें अपने जीवन में विश्वासपूर्वक लागू करें, हमारे प्रभु मसीह यीशु में आनंदित होते हुए, धार्मिकता के मार्ग पर चलें।

63. ईस्टर मनाने के बाद, आइए हम लेंट की भावना में जारी रखें, ताकि हम इस मौसम के दौरान जो हासिल किया है उसे बर्बाद न करें, बल्कि उसे गुणा करें

63. 1) ईस्टर मनाने के बाद, आइए हम लेंट की भावना में आगे बढ़ें, ताकि हम इस मौसम के दौरान जो प्राप्त किया है उसे बर्बाद न करें, बल्कि उसे बढ़ाएँ। – 2) यह ध्यान में रखते हुए कि हम किस ओर जा रहे हैं और हम क्या प्राप्त करेंगे, आइए हम कामुक सुखों में लिप्त न हों, न ही शारीरिक सुंदरता से चिपके रहें। – 3) हमें ईस्टर और उससे

पहले इतना कुछ प्राप्त हुआ है: अब इसके वपिरीत में कूद जाना मूर्खता होगी। – 4) हमारे भाई एक-एक करके जा रहे हैं; आइए हम भी पीछे न रहें: अतःआइए हम अपने कार्य पर ध्यान दें। [1, 71]

8. हमने अब दनिों की रानी, पवति्र ईस्टर का पर्व मनाया है; हम दवि्य संस्कारों से प्रबुद्ध हुए हैं और शांति तथा आध्यात्मकि प्रेम के बंधन में आत्मा का पवति्रकिरण प्राप्त कयिा है। अब हम वर्ष के शेष दनिों की शुरुआत का चहि्नन करते हैं। इसलएि आइए हम इन दनिों में बेहतर के लएि परववि्रतति हों, पहले से भी बेहतर बनें, और आइए हम कसिी भी तरह से पीछे न लौटने दें, जसिसे पछिले लेंट के मौसम के तपस्यापूर्ण प्रयासों और आध्यात्मकि परश्रिम का अपमान न हो; बल्कि आइए हम अपने पछिले गुणों पर नर्िमाण करें और नए गुण जोड़ें; और जो कुछ भी हमने सही तरीके से अर्जति और प्राप्त कयिा है—चाहे वह श्रद्धा में हो या मौन में, पवति्रता में हो या हृदय की सत्यनष्ठिा में, उपवास में हो या भक्ति के कसिी अन्य रूप में—इस प्रकार, दनि-प्रतदिनि, हम न केवल अक्षुण्ण बने रहेंगे, बल्कि अच्छे गुणों से स्वयं को गुणगुणति और परपिूर्ण बनाएंगे।

९. हम ईश्वर की ओर प्रवाहति हो रहे हैं, स्वर्ग के राज्य की ओर, प्रकाश की ओर, जीवन की ओर, अकथनीय आनंद की ओर, उस मीठे और आनंदमय स्वर्ग की ओर, शाश्वत नविासों की ओर, महमिा के अद्भुत स्थानों की ओर, स्वर्गदूतों के गायन मंडली की ओर, संतों के आनंदोत्सव की ओर, उस वरिासत की ओर जो हमारा इंतजार कर रही है। तो आइए, हम अपने सामने रखे लक्ष्य को भूलने न दें; आइए हम रास्ते में अपने प्रयासों को ढीला न होने दें, और न ही अनुचति वचिारों से बहकें। आइए हम इंद्रयि सुखों, सांसारकि इच्छाओं, और शारीरकि वासनाओं में न फँसें, और न ही कसिी चेहरे, आकृति या मुस्कान की सुंदरता से मोहति हों। आइए हम अपने भीतर झाँकें, जैसा कि धर्मशास्त्री ग्रेगरी आग्रह करते हैं। क्या आप देखते हैं कि हव्वा ने पापी फल की सुंदरता से मोहति होकर कैसे कष्ट उठाया? ईश्वर न करे कि हम कभी ऐसा कोई कष्ट झेलें! – और वास्तव में, अपनी वासनाओं और तीव्र इच्छाओं में लप्ति होने से हमें क्या मलिता है? अगर इससे कुछ भी न होता तो एक बात थी; लेकनि वास्तव में, आंतरकि कलह के अलावा, ईश्वर और मनुष्यों के सामने शर्म और अपमान भी होता है।

10. ईश्वर ने आपको, लेंट के महान दनिों के बाद, अपने पवति्र शरीर और रक्त की संचारति द्वारा जीवति करते हुए, पवति्र पास्का में प्रवेश कराया है: तो फरि, हे दुर्भाग्यशाली, आप प्रभु को कुछ वपिरीत अर्पति करने की हम्मित कैसे करते हैं? आप स्वयं को अयोग्य कर्मों की ओर मुड़ने की अनुमति कैसे देते हैं? क्या ईश्वर ने आपको मन नहीं दयिा है? क्या उन्होंने आपको तर्कशील नहीं बनाया? क्या तुम्हारे पास मन की आँखें नहीं हैं? तो फरि तुम मौन क्यों रहते हो? तुम प्रभु की अकल्पनीय सुंदरता को दाहनिी ओर क्यों नहीं देखते और अपनी आत्मा को उसकी ओर क्यों नहीं मोड़ते, बल्कि इसके बजाय अपनी दृष्टि नीच चीजों, पाप की लज्जा, घृणति वासनाओं की गंदगी की ओर क्यों मोड़ते हो? इसलएि हम संयमी बनें; हम अपने मन को उस चीज़ में लगाएँ जो शाश्वत आनंद की ओर ले जाती है, और अपने इरादों और परश्रिम को उसी की ओर नर्िदेशति करें।

11. मैं नरिन्तर तुम से इसलयि नहीं बोलता कि तुम्हें खुश करूँ, न केवल उपदेश देने का कर्तव्य पूरा करने के लएि, और न ही प्रशंसा का शोर सुनने के लएि; बल्कि इसलयि कि अपनी जमि्मेदारी के वचिार से भयभीत होकर, मैं तुम्हारे उद्धार के लएि काँपता हूँ। हम जीवति परमेश्वर के लएि परश्रिम करते हैं, और हमारे लएि एक नष्पिक्ष तथा अवनिाशी न्याय प्रतीक्षा कर रहा है, साथ ही एक अनंत पुरस्कार भी: क्योंकि *'वहाँ आग कभी बुझती नहीं, और कीड़ा नहीं मरता'* (मरकुस 9:44)। इसीलएि मैं आपसे पुकार कर कहता हूँ, और, मानो आपकी कराहों से चपिक कर, आपसे वनिती करता हूँ—आओ, हम अंतमि घड़ी को हमें अकारण न पाए, और न ही हमारे जीवन के अंत को लापरवाही से चहि्नति होने दें। हम लगातार मृत्यु के रहस्य को कार्यरत देखते हैं, और ठीक हमारी आँखों के सामने, जैसा कि आप देखते हैं, हमारे भाई-बहन परलोक सधिार जाते हैं। यह देखकर, अपने मन में अपने आप से कहो: 'और हमारा क्या? क्या हमारे साथ भी ऐसा ही नहीं होगा? क्या हम और अधकि समय यहाँ रहेंगे? और यदि हम रहते भी हैं, तो हम कतिने समय तक जीवति रहेंगे? क्या कब्र हमें भी नहीं बुलाती? क्या हम अपनी ताबूत—अपना अंतमि बस्तिर और वश्रिाम-स्थल, जो कीड़ों और असहनीय बदबू से भरा है—को पहले से नहीं देख सकते?" क्योंकि *"वह मनुष्य कौन है जो जीवति रहेगा और मृत्यु को न देखे?"* (भजन संहति 88:49)।

64. हमें एक उत्कृष्ट बुलावा मलिी है; आइए हम आनंद मनाएँ, धन्यवाद दें, और कार्य करें, इसके लएि हर परश्रिम करें, और सभी बातों को सहन करें

64. 1) हमें एक उत्कृष्ट बुलावा मलिी है; आइए हम आनंद मनाएँ, धन्यवाद दें, और कार्य करें, इसके लएि हर परश्रिम करें, और सभी बातों को सहन करें। – 2) चाहे कतिनी भी कठनिाइयाँ हों; परन्तु अनंत जीवन और स्वर्ग का राज्य हमारे सामने है: अतःआइए हम इन कठनिाइयों से प्रेम करें, और उन्हें उत्साह के साथ सहन करें। – 3) हमारे

मार्गदर्शक रहे पवित्र पिताओं के उदाहरणों को देखें। – 4) उन लोगों के उदाहरणों को देखें जिन्हें उनकी आज्ञाकारिता के लिए महिमामंद किया गया है। – 5) और उनका अनुकरण करें, ताकि हम उनकी महिमा में हिस्सेदारी के योग्य माने जाएँ। [1, 72]

12. हमें इस बात की प्रसन्नता मनानी चाहिए कि हमें ईश्वर द्वारा ऐसे पवित्र जीवन के लिए बुलाया और चुना गया है - और इतनी प्रसन्नता मनानी चाहिए कि हम तपस्या के श्रम को भूल जाएँ और भविष्य के आनंद की प्रत्याशा में, सदाचारी जीवन के पथ पर आने वाले सभी दुखों को हल्का समझें। हमने कोई सैन्य पद, कोई नागरिक पद, कोई सैन्य कमांडर की गरिमा, या कई लोगों द्वारा इतनी चाहने वाली राजसी संप्रभुता प्राप्त नहीं की है, न ही हमारे पास है; बल्कि इन सभी से कहीं अधिक कुछ, और एक उच्च स्वर्गीय निवास प्राप्त किया है – जो शब्दों में नहीं, बल्कि कर्मों में सत्य है। क्योंकि '*यदि हम उसके साथ कष्ट उठाते हैं, तो हम उसके साथ राज्य भी करेंगे*', प्रेरित कहते हैं (रोमियों 8:14; 2 तीमुथियुस 2:12)। परमेश्वर से यह लाभ इस प्रकार प्राप्त करके—और इसे अपनी कोशिशों से नहीं, बल्कि एक उपहार के रूप में प्राप्त करके—हमें कितनी अधिक आनन्दित और प्रसन्न होना चाहिए, धन्यवाद देना और प्रार्थना करनी चाहिए, और इसे बनाए रखने तथा अधोलोक के अधिपति द्वारा हम पर किए जाने वाले अनेक अपमानों से सुरक्षित रखने के लिए सब कुछ आवश्यक करना और कहना चाहिए? इसलिए, हे मेरे भाइयो, हर दुख को हमारे लिए स्वागतयोग्य, और हर परिश्रम को मीठा और वांछनीय समझो, जब हम अपने ऊपर पड़े हुए कर्तव्य को पूरा करते हैं; और इसी कारण, हर तपस्या संबंधी वंचना को आनंद के रूप में स्वीकार करें, – संसार से विरक्ति को ईश्वर के समीप आने के रूप में, – सुखों से वैराग्य को दिव्य आशीर्वादों में भाग लेने के रूप में, – संयम के कठोर अनुशासन को प्रचुर पोषण के रूप में।

१३. हम पानी पीएँ और सूखी रोटी खाएँ, हम अपने हाथों से कड़ी मेहनत करें, हम अपने विचारों में थक जाएँ, हम शरीर के प्रलोभनों से झुलस जाएँ, इच्छाओं से चीर-फाड़ हो जाएँ, अभावों से पीड़ित हों, और हम यह जीवन बिना मित्रों या साथियों, बिना रिश्तेदारों, बिना पिता या माता के जिएँ: इससे क्या फर्क पड़ता है? हमारे सामने अनंत जीवन पड़ा है, स्वर्ग का राज्य हमारे लिए तैयार है, अनगिनत अथाह आशीर्वादों का आनंद, सर्व-धन्य अमरत्व, महिमा और सम्मान की संपदा, और अन्य कई महान आशीर्वादों की भीड़, जिन्हें मानव भाषा वर्णन नहीं कर सकती। इसलिए हमें उत्साह और दृढ़ संकल्प के साथ प्रयास करना चाहिए; हमें आत्म-बलिदान के कार्यों और सद्गुणों के श्रम से प्रेम करना चाहिए, ताकि हम मुकुट जीत सकें और ऐसे खजाने प्राप्त कर सकें जिन्हें किसी ने न देखा हो, जिन्हें किसी ने न सुना हो, और जो मानव हृदय में भी प्रवेश नहीं किए हों (1 कुरिन्थियों 2:9)।

14. हमें अपने प्राचीन पूर्वजों के जीवन से प्रेरणा लेनी चाहिए, उनके सद्गुणों के पदचिन्हों पर चलना चाहिए, उनके कार्यों से प्रेम करना चाहिए, और अपने भीतर उनके जीवन की प्रतिमा को प्रतिबिंबित करना चाहिए। ऐसे थे हमारे महान अग्रदूत, महान एंथनी, जो हमारे विरोधी पर विजय पाने वाले पहले थे और हमारे लिए तपस्या की विजयों का मार्ग प्रशस्त करने वाले थे। ऐसे हैं धन्य और देवदूत-सदृश आर्सेनियस, जिन्होंने तपस्या के गुणों की उच्चतम श्रेणियों को प्राप्त किया और अब हमारे लिए महिमा के एक आदर्श के रूप में खड़े हैं। ऐसे हैं पवित्र और दिव्य पाकोमियस, जिन्हें हमारे पूर्वज कहा जाता है। ऐसे हैं परम दिव्य हिलारियन, जो प्रत्येक सुबह उगने वाली भोर की तरह गुणों से प्रकाशित हुए। ऐसे हैं धन्य और सर्व-पवित्र यूथिमीयस, जिनके नाम का अर्थ 'आशीर्वाद' है, और उनके साथ परम पूजनीय पवित्र सावास, परम पवित्र और देवदूत सदृश थियोडोसियस, और ब्रह्मांड के अन्य सबसे तेजस्वी प्रकाश स्तंभ।

१५. परन्तु अब हम अपना ध्यान उन पर लगाएँ जिन्होंने आज्ञाकारिता के सबसे उत्तम उदाहरण स्थापित किए हैं; क्योंकि उपर्युक्त लोग आज्ञाकारिता की कृपा से पहले से तैयार होकर महिमामय हुए। प्रकाश के पुत्र डोसिफियस, हमारे ईश्वर-प्रदत्त पिता, हमें निश्चित आज्ञाकारिता के लिए प्रोत्साहित करते हैं; डोमेटियन[86] , हमारे ईश्वर-प्रकाशित पिता, हमारे आध्यात्मिक पिताओं के प्रति हमारे प्रेम को मजबूत करते हैं; अबा किर[87] , हमारे ईश्वर-चुने हुए पिता, हमें अपमान और अन्याय सहने में स्थिर करते हैं; ज़कारियाह[88] , हमारे सबसे सम्मानित पिता, हमें विनम्र बुद्धिमत्ता की ओर प्रेरित करते हैं; सिलवान[89] , हमारे बहुत रोने वाले और सबसे विनम्र पिता, हमें बेहतर बनाने के लिए बदलते हैं; योना[90] , जो मेहनती हैं और प्रभु की आज्ञाओं के पालन का आदर्श हैं, मैनुअल श्रम के लिए

[86] संत सावस के एक शिष्य। लेंट के शनिवार पर सेवा।
[87] मिस्र के पवित्र पिता, 6वीं शताब्दी। पनीर-उपवास शनिवार।
[88] मिस्र के पवित्र पिता, 5 दिसंबर।
[89] फ़िलिस्तीनी संत, लेंट की शनिवार।
[90] संभवतःथियोडोरा और थियोफानेस के पिता। 22 सितंबर को स्मरण किया जाता है।

हमारी लगन को जगाते हैं। हम धन्य पेट्रोनियस[91] की भक्ति, दैवी अफ्रे[92] और संत मार्क[93] की आज्ञाकारिता, पॉल[94] की सादगी, सर्व-सम्माननीय, और समान गुणों वाले उन सभी विनम्र लोगों को, बिना उनकी नकल करने की प्रेरणा के, कैसे याद कर सकते हैं?

16. फिर भी, उन्हें सभी को सूचीबद्ध करने के लिए एक घंटा भी पर्याप्त नहीं होगा। ये अकेले ही हमें उनका अनुकरण करने और उनके पदचिन्हों पर चलने का प्रयास करने के लिए प्रेरित करने हेतु पर्याप्त हैं। इसलिए आइए हम भी वैसा ही करें, जैसे उन्होंने किया, और ऐसा परिश्रम करें मानो हम उनके साथ हों और वे हमारा साथ दे रहे हों। और इस प्रकार, हम भी भक्तिपूर्ण और धार्मिक कार्यों द्वारा धन्य हो जाएँगे, जैसे वे धन्य थे; और तब हम हमारे प्रभु यीशु मसीह के स्वर्गीय राज्य में उनकी महिमा और मुकुटों में सहभागी होने के योग्य समझे जाएँगे।

65. इस पर चिंतन करते हुए कि भविष्यवक्ताओं, प्रेरितों और अन्य संतों ने स्वर्ग के राज्य के लिए क्या-क्या सहन किया, हम उत्साह से भर जाएँ

65. 1) जब हम इस बात पर मनन करते हैं कि स्वर्ग के राज्य के लिए भविष्यवक्ताओं, प्रेरितों और अन्य संतों ने क्या-क्या सहन किया, तो हमें उत्साही बनें। – 2) भौतिक प्रेम के लिए कोई भी क्या नहीं सहन कर सकता? क्या हमें प्रभु के लिए सब कुछ सहन नहीं करना चाहिए? [1, 73]

17. यह मत सोचो कि स्वर्ग के राज्य को प्राप्त करना कोई बड़ी बात नहीं है। इसके लिए, जैसा कि लिखा है, सभी संतों *ने 'बकरियों और भेड़ों की खाल पहनकर, दरिद्र, कष्टित, दुर्व्यवहारित, जंगलों और पहाड़ों में, गुफाओं और पृथ्वी की खोहों में भटकते हुए चले'* (इब्रानियों 11:37–38), *जिनके योग्य संसार नहीं था*: यशायाह को आरी से चीर दिया गया; यिर्मयाह को कीचड़ के गड्ढे में फेंक दिया गया; योनह को समुद्र में फेंका गया और एक व्हेल मछली ने उसे निगल लिया; दानियेल को चीजों द्वारा फाड़ डाला जाने के लिए सिंहों के पास फेंक दिया गया; तीन जवानों को आग की भट्टी में फेंका गया; जॉन बपतिस्मा दाता के पिता जकरिया तलवार से मारे गए; जॉन बपतिस्मा दाता स्वयं भी तलवार से सिर कलम किए गए। और मेरे पास दिव्य पौलुस की कहानी सुनाने के लिए पर्याप्त समय नहीं होगा, जिसने अपने बारे में कहा कि वह भूख और प्यास, सर्दी और नग्नता, परिश्रम और संघर्ष में रहा है, (2 कुरिन्थियों 11, 27) और अनगिनत अन्य कठिनाइयों में—संत स्तेफन के, जिन्हें पत्थर मारकर मार डाला गया था—परमेश्वर के भाई याकूब के, जिन्हें मंदिर में मार डाला गया था। और मैं अन्य प्रेरितों के दुखों, पवित्र शहीदों की कष्टों और सम्मानित पिताओं के कारनामों की सूची कहाँ से शुरू करूँ? वे अनगिनत हैं। इस प्रकार उन्हें अनंतकाल के लिए प्रतिज्ञा की गई, अकथनीय आशीर्वादों को प्राप्त करने के योग्य ठहराया गया! आइए हम भी, अपनी नम्रता में, उसी प्रकार प्रयास करें। क्योंकि, जैसा कि महान संत बेसिल महान सिखाते हैं, वे सम्मान, परिश्रम और मुकुट विजेताओं की विरासत हैं। आइए हम योद्धा बने रहें, आइए हम स्वयं को तैयार करें, प्रतियोगिता के लिए सदैव तैयार रहें, और आइए हम विरोधी का विरोध करें; हम कठिनाइयों के सामने पीछे न हटें, हम प्रहारों के आगे न झुकें, न ही पीछे मुड़ें; हमारे हृदयों में अग्नि-सदृश उत्साह जलता रहे, और हमारी दृष्टि के सामने कुछ भी दृढ़ न रहे, यहाँ तक कि दुष्टात्माएँ भी भाग जाएँगी: क्योंकि, जैसा लिखा है, वे इस आध्यात्मिक अग्नि के सामने मोम की तरह पिघल जाते हैं (भजन संहिता 67:3); लोग भी डरेंगे, या कम से कम, लज्जित महसूस करेंगे; और हम, सभी चीजों पर विजय प्राप्त करके, उस स्थान पर आरोहण करेंगे जहाँ हमारा जीवन और हमारा अनुपम विश्राम निहित है।

18. हम अक्सर देखते हैं कि कैसे एक व्यक्ति, कामुक प्रेम से ग्रस्त होकर, सब कुछ सहन करता है और हर तरह की मेहनत करता है, और उसके मन में केवल एक ही बात होती है: उस व्यक्ति के मुख के समीप जाना जिसकी वह दुष्टतापूर्वक कामना करता है; भोजन से उसकी तृप्ति नहीं होती, न ही पेय से संतोष मिलता है, न ही नींद से आराम आता है, और वह सुखद या आरामदायक किसी और चीज़ की इच्छा नहीं करता, बल्कि वह बेचारा आत्मा हर तरह की अन्य मेहनतों और कष्टों के लिए तैयार रहता है, यहाँ तक कि खून बहाने की हद तक भी, अगर ऐसा करने की नौबत आ जाए – यह सब क्या पाने और जमा करने के लिए? – अनंत आग की गेहेन्ना में अपनी आत्मा को नष्ट करने के लिए। क्या हमें, भले, सुंदर, अकथनीय और महिमामय मसीह के प्रति अपने गर्मजोश प्रेम के लिए, हमारे ईश्वर, इस धन्य और पवित्र आज्ञाकारिता के जुए के नीचे विनम्रता से वृद्धावस्था तक बने रहें, हर दुख और हर तीर को सहते हुए—चाहे वह विचार या वासना का हो, चाहे अपमान या हमले हों, चाहे प्रलोभन या अभाव हों, चाहे गाली-गलौज या

---

[91] संत एंथनी महान के शिष्य। पनीर-उपवास शनिवार।
[92] निट्रिया के पूजनीय। शनिवार, लेंट का।
[93] मिस्र का, 5 मार्च।
[94] 4 अक्टूबर।

तरिस्कार हो, चाहे अपमान या बदनामी हो, या इस तरह की कोई भी अन्य चीज़? – हम, तर्कशील प्राणी होने के नाते, मूर्ख जानवरों के समान नहीं ठहराए जाने चाहिए, न ही उनके जैसे बनना चाहिए। परन्तु जैसे हमने आरंभ किया है और, अब तक सफलतापूर्वक प्रगति करते हुए, एक निश्चित स्तर पर पहुँच गए हैं, वैसे ही हम उत्साह के साथ प्रयास करते रहें, ताकि हम प्रभु में अपनी यात्रा को सफलतापूर्वक पूरा कर सकें।

66. परमेश्वर ने आपको मुझे सौंपा है; इसीलिए मैं आपको सिखाने के लिए उत्सुक हूँ

66. 1) आपको परमेश्वर ने मुझे सौंपा है; इसीलिए मैं आपको सिखाने के लिए इतना उत्सुक हूँ। – 2) मैं आपसे विनती करता हूँ: अपना उद्धार करें, और, अपना उद्धार करके, मेरा भी उद्धार करें। [1, 74]

19. मेरे लिए, एक पापी के रूप में, आप, मेरी भेड़, मेरा हिस्सा, मेरी विरासत की देखभाल करने से अधिक महत्वपूर्ण और क्या काम हो सकता है? क्योंकि यदि एक ऐसे व्यक्ति को, जिसे एक नश्वर राजा लोगों के शासन या सेना की कमान सौंपता है, वह दिन-प्रतिदिन इस मामले पर अपनी सारी सावधानी लगाता है, ताकि राजा को अप्रिय लगने वाली कोई भी बात होने देने पर उस पर कोई दंड या सजा न लगे: तो फिर मैं, एक दीन प्राणी, जिस पर आप पर—जो वास्तव में मसीह के सैनिक हैं—अधिकार सौंपा गया है, कैसे लापरवाही कर सकता हूँ, एक साल या एक महीने के लिए नहीं, बल्कि एक दिन या एक घंटे के लिए भी, और वचन और कर्म दोनों में आप पर अपनी पूरी देखभाल नहीं दिखा सकता, हालाँकि मैं दोनों में ही कमी हूँ? इसीलिए मैं, यद्यपि अयोग्य और दुर्बल हूँ, तुम्हें—जो मेरा हृदय, मेरा प्रकाश, मेरी महिमा हो—याद दिलाता हूँ, प्रचार करता हूँ, प्रोत्साहित करता हूँ, आग्रह करता हूँ, और विनती करता हूँ कि तुम अपनी बुलाहट के योग्य जीवन जियो।

20. जैसे ही मैं आप सभी के उद्धार और उसके लिए मेरे इंतज़ार कर रहे महान इनाम के बारे में सोचता हूँ तो मुझे बहुत आनंद होता है, वैसे ही जब मैं इस बात पर विचार करता हूँ कि मुझे प्रत्येक व्यक्ति के लिए परमेश्वर के सामने क्या उत्तर देना होगा, तो मैं बड़े भय और कम्पन से भर जाता हूँ। तब, हे मेरे बच्चों, मेरी सहायता करो, और अपने नेता की दुर्बलता और अंधापन के बावजूद, स्वयं को बचाओ, ताकि तुम स्वयं के साथ-साथ मुझे, एक दीन मनुष्य को भी बचा सको – जो कुछ भी तुमसे आज्ञा दी गई है और जो तुम पर निर्भर है, उसे उत्साहपूर्वक पूरा करके स्वयं को बचाओ: निःसंदेह आज्ञाकारिता बनाए रखो, ईश्वरीय नम्रता, दृढ़ विश्वास, ज्ञानवर्धक प्रकटवाक्य, अपने कर्तव्यों में स्थिर परिश्रम, भजन-गायन के दौरान श्रद्धापूर्ण ध्यान, बिना बोझ के आत्म-संयम, वस्त्रों में सादगी, नम्रता, हँसी और विवादों से परहेज़, दिखावा से अरुचि और आपसी प्रेम।

67. क्योंकि मैं तुमसे प्रेम करता हूँ, मैं तुम्हारी समृद्धि पर आनन्दित होता हूँ, और जब मैं तुम्हारी आत्मा की अवस्था देखता हूँ तो मुझे दुख होता है

67. 1) क्योंकि मैं तुमसे प्रेम करता हूँ, मैं तुम्हारी सफलता पर प्रसन्न होता हूँ, और जब मैं तुम्हारी मानसिक स्थिति देखता हूँ तो मुझे दुख होता है। – 2) आपको एक महान आह्वान के लिए योग्य समझा गया है और आपने उसके लिए सब कुछ त्याग दिया है; इस कारण, आप में से प्रत्येक को यह सुनना चाहिए: आनंद में प्रवेश करें। – 3) कितने ऐसे हैं जो आप जैसे बनना चाहते हैं, पर बन नहीं सकते: तो फिर, परमेश्वर की महिमा करो, और धर्मी बनो। [1, 75]

21. एक दिन मुझे पूर्ण मौन में चुप हो जाना पड़ेगा। लेकिन जब तक मेरी नाक में साँस है, मैं आपको जो उचित है, उसकी याद दिलाना बंद नहीं करूँगा, जैसा कि मेरा कर्तव्य है, फिर भी आपके प्रति गर्मजोशी भरे प्रेम के साथ। तुम परमेश्वर की इच्छा और अनुग्रह से मेरे बच्चे हो। तो फिर, जब मैं तुम्हारी धार्मिकता और सदाचार, और तुम्हारे मोक्ष के जीवन को देखता हूँ, तो मेरा हृदय इतनी बड़ी खुशी से क्यों भर जाता है? तब मैं अच्छी आशाओं से भर जाता हूँ और एक राजा की तरह चलता हूँ, परमेश्वर की महिमा करता हूँ, और तब मुझे और कुछ भी प्रसन्न नहीं करता। लेकिन जब मैं तुममें कोई अव्यवस्था देखता हूँ, तो ऐसा लगता है मानो कोई पहाड़ मेरे आत्मा पर सवार हो गया हो, और मैं सिर झुकाए, उदास, और तुम्हारे प्रति अपनी खराब मार्गदर्शन के लिए खुद को कोसते हुए, जैसे बेसुध हो कर चलता हूँ, और अपने आप से कहता हूँ: 'क्या ऐसे चरवाहे से कुछ अच्छा निकल सकता है?', जैसा कि एक बार नासरत के बारे में कहा गया था। तो, मेरे बच्चों, मुझ पर दया करो, और मुझे हमेशा तुम पर, तुम्हारी प्रगति और तुम्हारी धन्य नियति पर आनंद मनाने और परमेश्वर की महिमा करने दो।

२२. सचमुच, तुमने एक पवित्र बुलावा ग्रहण किया है, धार्मिकता के जीवन से स्वयं को सुसज्जित किया है, और स्वर्गदूतों के दल में गिने गए हो, उस दिव्य स्वर को सुनकर और उसका अनुसरण करके: *'यदि तुम सिद्ध होना चाहते हो, तो जाओ, अपनी संपत्ति बेचकर गरीबों को दे दो... और मेरा अनुसरण करो'* (मत्ती 19, 21). इस प्रकार तुम संसार के लिए क्रूस पर चढ़ाए गए हो और अब *'संसार के' नहीं हो। क्योंकि यदि तुम संसार के होते, तो संसार* तुम्हें *प्रेम*

करता; परन्तु चूंकि तुम संसार के नहीं हो, *इस कारण,* शायद, *'संसार तुम से बैर रखता है',* प्रभु के वचन के अनुसार (यूहन्ना 15:19)। उस दिन आप पवित्र प्रेरितों के साथ *यह* कहते हुए प्रभु से घमंड कर सकेंगे: *'हमने सब कुछ छोड़ दिया और आपका अनुसरण किया'* (मत्ती 19:27); और वास्तव में आपने न तो पिता को, न माता को, न भाइयों को, न बहनों को आपसे अधिक प्रेम किया, *'बल्कि सब कुछ हानि समझा'* (फिलि. 3:8), केवल आपके प्राप्ति को ही सबसे बड़ा खजाना मानते हुए। – क्या मैं झूठ बोल रहा हूँ? क्या मैं सत्य नहीं कह रहा हूँ? क्या वास्तव में आपने यही नहीं किया है? – इस कारण से आप यह सुनेंगे: *'आओ, हे मेरे पिता द्वारा धन्य किए हुए; उस राज्य का उत्तराधिकार ग्रहण करो जो संसार की नींव डाले से तुम्हारे लिए तैयार किया गया है'* (मत्ती 25:34); या: *'अच्छा, हे भले और विश्वासयोग्य दास, तू कुछ बातों में विश्वासयोग्य रहा, मैं तुझे बहुतों पर रखूंगा; अपने प्रभु के आनन्द में प्रवेश कर'* (मत्ती 25:21), या कुछ इसी प्रकार का।

२३. इतने बड़े आशीर्वाद के योग्य ठहराए जाने और इतने अद्भुत और परलोकिक जीवन में प्रवेश करने के बाद, क्या आप आनंदित नहीं होते? क्या आप हर्षित नहीं होते? क्या आप दाऊद के साथ यह गीत नहीं गाते: *'प्रभु ने मुझ पर जो कुछ भी किया है, उसके लिए मैं प्रभु को क्या दूँगा?'* (भजन संहिता ११६:१२)। – हाँ; लेकिन निम्नलिखित जोड़ें: *'मैं उद्धार का प्याला लूंगा'* (वही); और इसका अर्थ है जब आवश्यकता हो तो एक शहीद के रूप में अपना रक्त बहाने के लिए तैयार रहना। – सचमुच, सचमुच, ऐसे बहुत से हैं जो वह देखने, वह सुनने और वह प्राप्त करने के लिए तरसते हैं जो आप देखते हैं, जो आप सुनते हैं और जो आपने प्राप्त किया है; लेकिन चाहे विवाह के लिए हो, या बच्चों के लिए, या कामुक संगति के लिए, या सांसारिक महिमा के लिए, या धन के लिए, या सांसारिक रीति-रिवाजों के लिए, या बाहरी जीवन के विभिन्न अन्य स्थापित तरीकों के लिए, उनमें सांसारिक चीज़ों से अलग होने और स्वर्गीय के लिए प्रयास करने की शक्ति नहीं है – और इस प्रकार वे बने रहते हैं, बाहरी रूप से तो वे प्रसन्न दिखाई देते हैं, परन्तु मन ही मन वे अनेक दुखों के बोझ तले दबे होते हैं। अतःहम परमेश्वर की महिमा करें और हमेशा भले में भला जोड़ने का, और जो परमेश्वर को भाता है उसमें और भी भाता जोड़ने का प्रयत्न करें, ताकि इस प्रकार फलते-फूलते और स्वयं को सिद्ध करते हुए, हम आपसी शान्ति और एकता में निवास करें, हर बात में, सबसे छोटे शब्द, सबसे छोटी हरकत, एक नज़र या एक इशारे तक, अच्छी व्यवस्था में रहें, और हम हमेशा मृत्यु के द्वार से होकर स्वर्ग में अपनी धन्य विरासत में प्रवेश के लिए तैयार रहें।

68. व्यर्थ और तुच्छ प्रयासों में शांति; लेकिन हमारे लक्ष्य ऊँचे हैं, और हमारे प्रयास फलदायी हैं

68. 1) तुच्छ और व्यर्थ के कार्यों में शांति; परन्तु हमारे उद्देश्य ऊँचे हैं, और हमारे प्रयास फलदायी हैं। – 2) किसने हमें संसार को त्यागने की शक्ति दी है? परमेश्वर ने, जिन्होंने हमारी इच्छा को आशीष दी है। अतःहम जिस मार्ग को चुन चुके हैं, उसमें निष्ठावान बने रहें। [1, 77]

24. महिमा हो परमेश्वर की, जिसने हमें हमारी माँ के गर्भ से ही इस पवित्र बुलावे के लिए चुना और हमें मठवासी जीवन की अद्भुत और धन्य ऊँचाइयों पर बुलाया। हमारे लिए—भले ही ऐसा कहना साहसिक लगे, फिर भी यह संन्यास के उद्देश्यों के विपरीत नहीं है—वास्तव में यह अनुग्रह मिला है कि हम संसार में रहने वालों की तुलना में स्वर्ग के राज्य के रहस्यों को अधिक पूर्ण रूप से समझें, जिनमें से कई, देखते हुए भी नहीं देखते, क्योंकि वे सांसारिक मामलों से मन में अंधा हो जाते हैं जो उन्हें मोहित कर लेते हैं। क्योंकि उनके पास क्या है? वे धन-दौलत और क्षणिक महिमा में आनंदित होते हैं, सुख-भोगों में प्रसन्न होते हैं, इत्रों और सुगंधों में रमते हैं, शराब, बढ़िया कपड़े, सुंदर घोड़े, नौकरों की भीड़, शानदार घर, कीमती पत्थरों का वैभव और अन्य विभिन्न व्यर्थ की चीजें; वे बकरियों और मादा बकरियों की तरह हँसते, नाचते और उछलते-कूदते हैं, तृप्त और मोटे होते जाते हैं, मानो उन्हें वध के लिए तैयार किया जा रहा हो। मैं उनके कई अन्य पापी रीति-रिवाजों पर, न ही उनसे उत्पन्न होने वाली या जिनकी ओर वे ले जाने वाली बातों पर विस्तार से नहीं कहूँगा; हमारे शब्द यहीं समाप्त हों। उनके लिए, यह घमंड, अहंकार और आनंद का स्रोत है; लेकिन उन लोगों के लिए नहीं जिन्होंने अपने शरीर को उसकी वासनाओं और इच्छाओं के साथ सूली पर चढ़ा दिया है—जैसे कि हम, *'जो मसीह के हैं',* जैसा कि प्रेरित कहते हैं (गलातियों 5:24), हमारे प्रभु यीशु मसीह के सेवक और बच्चे। हमारी इच्छाएँ और अन्य चीजों के प्रति हमारा झुकाव अलग है। हम उस सांत्वना और आनंद की खोज करते हैं जो मूल रूप से स्वर्ग में मनुष्य के लिए था, जिससे हमें प्राचीन काल में लापरवाही के कारण वंचित कर दिया गया था; और इस उद्देश्य के लिए हम प्राचीन पवित्र पिताओं के जीवन के मार्ग को अपनाएंगे, *'जो भेड़ों और बकरियों की खाल पहनकर चलते थे, जिनके योग्य यह संसार नहीं था'* (इब्रानियों 11:37), इस मोहक संसार से मुंह मोड़ें और परमेश्वर के समीप आएँ, ऊपर की ओर दृष्टि करके उसी की ओर बढ़ने का प्रयत्न करें। परन्तु सभी चीज़ों से मुंह मोड़कर, हम सभी का स्वामी बन जाते हैं। हमारी बुलाहट की महिमा ऐसी है!

२५. तो फरि, कसिने हमें मांस और रक्त से, माता-पिता, रशि्तेदारों और परचिितों से, हमारे स्वदेश, नगरों और गांवों से, और हर उस चीज़ से अलग कर दयिा है जसिसे हम बचपन से परचिति रहे हैं? कसिने हमें अपने आध्यात्मकि पिताओं और मठाधीशों के दास बनने के लिए प्रेरति कयिा है, और संयम, जागरण और खुले में सोने जैसे तपस्वी कार्यों को करने के लिए, जनि्हें दनि-प्रतदिनि अभ्यास कयिा जाता है? कसिने हमें ज्ञान दयिा और हमें यह सखिाया कि सोने-चांदी, वैभव और भव्यता—यहाँ तक कि शाही मुकुट और बैंगनी चोगा भी—को कुछ भी नहीं समझना चाहिए, और यह कि चिमकदार वस्त्रों के बजाय इन फटे-पुराने और पैबंद लगे कपड़ों को पहनना अधकि योग्य और सम्मानजनक है? कसिने हमें वह शक्ति दी है कि हम सभी कामुक और भौतकिवादी चीजों का त्याग करें, ब्रह्मचर्य के माध्यम से दवि्य गुणों के अनुरूप बनें, और स्वर्गदूतों की तरह शुद्ध और निष्कलंक रहें? ईश्वर ने हमें यह सब इसलिए प्रदान कयिा है क्योंकि हमने केवल उसी से प्रेम कयिा है और भवषि्य के आशीर्वाद, शाश्वत महमिा, अकथनीय आनंद, अनंत हर्ष, अक्षय धन-संपत्ति और वह सब कुछ चाहा है जो प्राचीन काल से हमारे धन्य पूर्वजों से वादा कयिा गया है और उन सभी के लिए तैयार कयिा गया है जो एकमात्र ईश्वर को प्रसन्न करने के लिए उत्सुकता से प्रयास करते हैं। लेकनि यदि हमने इसका संकल्प लयिा है, इसे चुना है, और अपना मन इस पर लगाया है, तो हमें हर संभव सावधानी बरतनी चाहिए कि हम इसमें दृढ़ बने रहें, और अपने ऊपर कड़ी नगिरानी रखें, कहीं ऐसा न हो कि हम कसिी भी तरह पीछे मुड़ जाएँ और नयित दनि, स्वयं को सामान्य जन से पीछे पाएं। आओ हम सावधान रहें कि शुद्ध बने रहें, ब्रह्मचर्य में और भी दृढ़ता से स्थापति हों, और स्वयं को भ्रष्ट न होने दें—न मन से, न दृष्टि से, न हृदय से, न शरीर से।

69. हमें अपने रास्ते में आने वाली सभी अप्रयि बातों को सहन करना चाहिए; और हमें कष्ट-भोगियों की कतार में शामलि होने के योग्य बनें।

६९. १) हमें हमारे मार्ग में आने वाली सभी अप्रयि बातों को सहन करना चाहिए; और हम उत्कट-धारकों की कतार में शामलि होने के योग्य हों। – २) पृथ्वी पर एक वनिम्र स्थिति से संतुष्ट होकर ईश्वर की खोज करो, जैसे उद्धारकर्ता ने कयिा। [१, ७८]

26. मुझे तुम्हारी आत्माओं की देखभाल करनी है, दनि-रात तुम्हारी परवाह करनी है, वचन और कर्म दोनों में तुम्हें संवारना है, ताकि मैं तुम्हें पूर्णता के उचति स्तर तक ले जा सकूँ। लेकनि तुम स्वयं हतोत्साहति न होना: क्योंकि यदि मैं, जो तुम्हारा शक्षिक कहलाने के योग्य भी नहीं हूँ, तुम्हारे लिए कुछ भी सहन करता हूँ, तो तुम्हें भी मेरे लिए और एक-दूसरे के लिए सहन करना चाहिए; तुम्हें एक-दूसरे के दुख में सहभागी होना चाहिए और एक-दूसरे के साथ खड़ा रहना चाहिए, इसे अपने लिए कोई पराई चीज़ न समझना चाहिए, न डरना चाहिए, न भागना चाहिए, और न ही तुम्हें आने वाली परीक्षाओं के सामने हताश होना चाहिए। हमने *'पाप का वरिोध रक्त बहाए जाने तक नहीं कयिा है'* (इब्रानियों 12:4), *'अग्नि और जल से होकर नहीं गुज़रे हैं'* (भजन संहति 65:12), जैसा कि पवित्र शहीदों ने कयिा; हम अभी तक घायल नहीं हुए हैं या परीक्षा में नहीं डाले गए हैं, जैसा कि प्रत्येक आदरणीय और धर्मी व्यक्ति हुआ है। तो फरि, हम आने वाले युग में यह घमंड कैसे कर सकते हैं कि हमने भी मसीह के लिए दुख उठाया, जबकि हम अपने रास्ते में आने वाली छोटी-छोटी वपित्तियों को भी साहस और धैर्य के साथ नहीं सहते: कोई भी फटकार, अपमान, लज्जा, अनादर, तरिस्कार – और मैं इसमें जोड़ना चाहूँगा – अल्प भोजन, थोड़ा पानी, फटे-पुराने कपड़े, आज्ञाकारति का श्रम, सेवा के लिए जल्दी उठना, भजन-गायन के दौरान खड़े रहना, और थोपी गई तपस्या का पालन करना। – आओ, मेरे बच्चों, हम जो कुछ भी कठनि और अप्रयि है, उसे प्रसन्नचति्त होकर सहन करें, ताकि हम वास्तव में दाऊद के साथ गा सकें: *'मैंने प्रभु की प्रतीक्षा धैर्यपूर्वक की है'*, और इस प्रकार, परमेश्वर की दया से, योग्य ठहरें: *'उसने मेरी ओर ध्यान दयिा और मेरी प्रार्थना सुनी'* (भजन संहति 39:2)। आने वाले युग में, अन्य लोग वभिनि्न प्रकार की भेंटें प्रस्तुत करेंगे: त्रि-धन्य शहीदों – अपना रक्त; सम्माननीय पिताओं – अपने महानतम कर्म और सद्गुण; और हम – उपरोक्त बातों को सहन करने का अपना वनिम्र धैर्य। और मुझे नश्चिति रूप से पता है कि हमें इनमें से कसिी हसि्से से वंचति नहीं कयिा जाएगा, जैसा कि दैवीय एंथनी गवाही देते हैं।

27. 'सबसे बढ़कर *परमेश्वर की खोज करो, और तुम्हारी आत्मा जीवति रहेगी'* (भजन संहति 68:33)। *'उसका मुख लालसा से खोजो,'* कि वह तुम्हारे शुद्ध हृदयों में प्रतबिंबिति हो (भजन संहति 104:4)। *'उसके अद्भुत कामों को याद करो, जो उसने कएि हैं'* (भजन संहति 104:5) पछिले वर्षों में हम में और अब भी करते रहते हैं, हमारी भ्रातृत्व को बढ़ाते हुए, हमें सहारा देते हुए और इस वर्तमान जीवन में हमें हमारी कसिी भी आवश्यकता से वंचति नहीं करते। और हमारे लिए जो कुछ भी वह करते हैं, उसके लिए हमें उन्हें उचति सम्मान देना चाहिए। क्या वह हमसे और कुछ चाहता है, सवािय इसके कि हम उससे डरें और उसे अपने पूरे हृदय और अपनी पूरी बुद्धि से प्रेम करें, और अपनी पूरी क्षमता से, उसके अवतारति जीवन का अनुकरण करें? स्वर्ग से उतरकर, वह पृथ्वी पर एक अजनबी था, ताकि हम भी अपनी

इच्छाओं से अपने विचारों को हटा सकें। उन्होंने पति की आज्ञा मानी, ताकि आप भी मेरी, जो कि अयोग्य हूँ, आज्ञा बिना किसी शिकायत के मानें। उन्होंने स्वयं को मृत्यु तक नम्र बनाया, ताकि आप भी ऐसा ही करना सीखें, स्वयं को नम्र बनाकर और अपने विचारों, शब्दों, कर्मों और हरकतों में विनम्र होकर। – सच्चा और दिव्य गौरव क्या है, यदि ईश्वर के लिए मनुष्यों के बीच अपमानित होना नहीं? एक संन्यासी का सम्मान और सुयश क्या है, यदि ईश्वर के लिए अपमानित होना और अपमानित लोगों में गिनना नहीं? और हमारे उद्धारकर्ता और परमेश्वर, ने देह धारण करके, वह चुना जो नम्र और दीन है, ताकि मनुष्यों में जो गौरवशाली और धनी हैं, उन्हें लज्जित कर सकें। इसी कारण से उनका जन्म एक अस्तबल में हुआ, उन्हें एक खलिहान में लिटाया गया, उन्हें एक बढ़ई का पुत्र कहा गया, नासरी के रूप में जाना गया, उन्होंने एक साधारण चोगा पहना, पैदल चलते हैं, मेहनत करता है, यहूदियों द्वारा पत्थर मारने की धमकी दिया जाता है, उस पर अपमान किया जाता है, उसे गिरफ्तार किया जाता है, उसे सूली पर चढ़ाया जाता है, भाले से भेदा जाता है, एक कब्र में रखा जाता है – और फिर से जी उठता है – ताकि वह हमें अपने स्वर्गदूतों की उपस्थिति में उससे मिलने वाली सभी बातों को सहने के लिए प्रेरित कर सके, और फिर हमें स्वर्ग के राज्य में मुकुट पहना सके।

70. परमेश्वर आपसे क्या चाहता है? अपनी इच्छा का त्याग और मठाधीश की एकमात्र इच्छा के प्रति समर्पण; इसलिए, किसी भी बात में, यहाँ तक कि भलाई करने में भी, स्वयं को दूसरों से अलग करने का अनुमान न लगाएँ।

70. परमेश्वर आपसे क्या चाहता है? अपनी इच्छा का त्याग और मठाध्यक्ष की एकमात्र इच्छा के प्रति समर्पण; इसलिए, किसी भी बात में, यहाँ तक कि भलाई करने में भी, स्वयं को दूसरों से अलग करने का अनुमान न लगाएँ। [1, 79] मैं क्या चाहता हूँ, या यूँ कहें कि सर्व के प्रभु और हमारे ईश्वर आपसे क्या चाहते और माँगते हैं? केवल इतना कि आप अच्छी तरह से समर्पण करें और रक्त तक निःसंदेह आज्ञाकारिता दिखाएँ, और जिस बात का आपने पवित्र स्वर्गदूतों के साम्हने जीने और कार्य करने का वचन दिया और संकल्प लिया था, उससे किसी भी तरह भटकें नहीं। आप स्वयं जानते हैं कि आपके होठों ने क्या कहा और आपने क्या-क्या व्रत लिए थे, जब मैंने आप में से प्रत्येक का मुंडन किया और आपको आनंद और हर्ष के वस्त्र पहनाए, आपके शेष अघोषित पापों को क्षमा कर दिया था, इस अटूट आशा में कि पृथ्वी पर मेरी इस विनम्र क्षमा के द्वारा, स्वर्ग में परमेश्वर उन्हें क्षमा कर देंगे। तो फिर, ये निरर्थक विचार, लापरवाह निर्णय, अर्थहीन शब्द और हमारे प्रभु यीशु मसीह के नाम पर, मेरे और आपके पिता के माध्यम से, आपके पूर्वजों की सहमति से जो आज्ञा दी गई है और स्थापित किया गया है, उसके अलावा किसी भी चीज़ की अनुचित इच्छाएँ, आपको कहाँ से आती हैं? – कोई अपनी मर्जी से उपवास करना चाहता है, कोई अपनी इच्छानुसार मौन रहना चाहता है, कोई अपनी पसंद की पढ़ाई करना चाहता है, कोई वह पद संभालना चाहता है जिसे वह चाहता है – तो ये स्व-इच्छित योजनाएँ हैं, इसके अलावा ये व्यक्तिगत उपक्रम हैं – और इसलिए यह सामान्य पतन? क्या इसी के लिए तुम एकत्र हुए थे? – *'क्या मसीह में कोई फूट पड़ा? या क्या पौलुस के नाम से तुम्हारा बपतिस्मा हुआ?'* (1 कुरिन्थियों 1:13)। – ये शब्द उन लोगों पर अच्छी तरह से लागू होते हैं, जो अपनी निजी इच्छाओं में बहकर, उस एक बात पर न तो नज़र डालते हैं और न ही कोई ध्यान देते हैं जो मेरी विनम्रता और इस मामले पर गहन विचार से स्पष्ट होती है। परमेश्वर आपसे कुछ भी बड़ा या अद्भुत नहीं चाहता या कामना नहीं करता, परन्तु केवल यह कि आप उस संगति का पालन करें जिसके लिए उसने आपको बुलाया है – मैं यह कहने का साहस नहीं करता, अपनी अयोग्यता और महान पापशीलता को देखते हुए – और यह कि आप उसकी ओर से दिए गए चरवाहे की इच्छा और मार्गदर्शन के अनुसार जिएं और कार्य करें, उस नाम की महिमा के लिए जिसकी आराधना की जाती है। यहाँ आपके विशिष्ट महानता और चमत्कार के प्रकटीकरण का क्षेत्र है – या यूँ कहें, आपके सम्मानित आत्माओं की शहीद की वीरता का! – यदि आपको प्रलोभन दिया जाता है, तो उसमें इतना अद्भुत क्या है? लेकिन किसी भी तरह से इसे अपने ऊपर हावी न होने दें, जिससे शैतान को प्रसन्नता हो, और अपने तथा ईश्वर के इस शत्रु की चालाक और दुष्ट प्रेरणाओं पर ध्यान न दें, बल्कि केवल इस पर ध्यान केंद्रित करें: अंत तक सब कुछ सहना, नम्रता से संपन्न होना और प्रेम में फलना-फूलना, दिखावा न करना, भौंहें न चढ़ाना, श्रेष्ठता न खोजना, कठोर न बनो, न झगड़े या विवाद भड़काओ, जो सुनते हैं उनके विनाश के लिए। *'इसलिए, सत्य का कमरबंद बाँधकर, धार्मिकता का कवच पहनकर और अपने पैरों में शांति के सुसमाचार की तैयारी के जूते जूतों में डालकर खड़े रहो'* (इफिसियों 6:14-15)। – और प्रभु परमेश्वर आपको सफलता और उद्धार प्रदान करें!

71. पाप के कारण अहंकार और अवज्ञा हैं; और उनसे हर प्रकार का दुख आता है: जबकि नम्रता और आज्ञाकारिता से

71. 1) पाप के कारण घमंड और अवज्ञा हैं; और उनसे हर प्रकार का दुख आता है: इसके विपरीत, नम्रता और आज्ञाकारिता से हर प्रकार का आशीर्वाद आता है। – 2) तुम जो कुलीनों और धनी लोगों में से हमारे पास आए हो, दूसरों को नीचा न समझो, बल्कि स्वयं को नम्र बनाओ; प्रभु का अनुकरण करो, जिन्होंने हमारे लिए स्वयं को नम्र किया। – 3) आइए हम एक ऐसे जीवन के लिए प्रयास करें जो ईश्वर का अनुकरण करे। [1, 80]

1. आइए हम सावधान रहें कि हम अपने आत्मा में बीमार न पड़ें, इन बीमारियों को जन्म देने वाले कारणों से खुद को दूर करके और इस प्रकार उनके साथ आने वाले बुराई से बचकर। आध्यात्मिक बीमारी का पहला कारण अहंकार है, जिसके कारण भोर में चमकने वाला प्रभात तारा गिर गया; दूसरा अवज्ञा है, जिसके कारण पहले मनुष्य को आनंद के स्वर्ग से निकाल दिया गया; और इन दोनों से ही घृणित पापों के विभिन्न प्रकार और रूपों का अंधकार उत्पन्न हुआ। तो क्या कोई समृद्धि का आनंद लेना चाहता है? अहंकार से दूर रहो और निःसंदेह आज्ञाकारिता के साथ विनम्रता का वस्त्र धारण करो; और आनंद और प्रसन्नता तुम्हारे सिर पर बनी रहेगी। क्योंकि यह धन्य वस्त्र कितनी आशीर्वादों को आकर्षित करेगा? – शांति, कोमलता, सम्मान, विश्वास, निःसंदेह आज्ञाकारिता – और वह सब कुछ जो अच्छा, सुखद और वांछनीय है, जो एक सच्चे परमेश्वर के मनुष्य की विशेषता है।

२. हे तुम जो घमंड के जीवन से हमारे पास आए हो, अपने मन को ऊँची-ऊँची बातों में न लगाओ; परमेश्वर के अनुसार जीवन में नम्र होकर, इस बात का घमंड न करो कि तुम किसी कुलीन वंश से आए हो, और न ही पहले से जो कुछ तुम्हारे पास था, उसका घमंड करो: क्योंकि शायद तुम गरीब हो और दिव्य अनुग्रह से वंचित हो। परन्तु, मसीह, हमारे प्रभु और परमेश्वर, जो सभी का सच्चा धनी प्रभु है, की ओर देखकर, अपने विचारों और भावनाओं में नम्रता से मार्गदर्शन प्राप्त करो (रोमियों 12:16), और उनके कार्यों के तरीके का अनुकरण करो: वे दिखावे में गरीब थे, अपने माता-पिता की आज्ञा मानते थे, पैदल चलते थे, अक्सर थक जाते थे, *'जब उन पर अपमान किया गया, तो उन्होंने बदले में अपमान नहीं किया; जब उन्हें पीड़ा दी गई, तो उन्होंने विरोध नहीं किया'* (1 पतरस 2:23), गाल पर प्रहार सहन किए, अपने वस्त्रों से स्वयं को अलग नहीं किया, एक ही चोगा और एक ओढ़नी से संतुष्ट रहे, घास पर या नंगे जमीन पर सोए, और एक ही रोटी तथा बहता पानी उनके भोजन की आवश्यकता को पूरा कर देता था। यदि अब, इन सभी से कहीं अधिक होते हुए भी, हम बोझिल और थके हुए हैं, तो हम प्रभु के किस प्रकार के अनुकरणकर्ता हैं?

3. मैं आपसे विनती करता हूँ: हम साहसपूर्वक एक ऐसे जीवन के लिए प्रयास करें जो परमेश्वर का अनुकरण करे। जहाँ तक हम (दुनियावी दृष्टि से) नम्र और अमीर नहीं, बल्कि साधारण पृष्ठभूमि से आते हैं, हमारे लिए भोजन, वस्त्र या अन्य आवश्यकताओं को लेकर बोझिल और परेशान होने का क्या बहाना हो सकता है, जब हमें इन सभी चीजों में उतनी ही सुविधाएँ मिलती हैं जितनी दूसरों को मिलती हैं? – ऐसे प्रत्येक व्यक्ति को इस पर विचार करना चाहिए कि वे पहले क्या थे और अब क्या बन गए हैं। – यह सब कहने के बाद भी, मैं पहले और बाद वालों के बीच विभाजन या भेदभाव करना नहीं चाहता: क्योंकि आप सभी सार में एक हैं। लेकिन मैं यह इसलिए कह रहा हूँ ताकि आप सभी आज्ञा का पालन स्वेच्छा से करें, और मेरी आज्ञाओं के बारे में अनुमान न लगाएँ—कि यह या वह कैसे, क्यों और किस उद्देश्य से किया जाता है।

72. प्रायश्चित और अन्य सुधारात्मक उपाय कैसे मोक्षदायक हैं? वे स्वर्ग का मार्ग हैं

72. 1) प्रायश्चित और सुधार के अन्य उपाय कैसे उद्धारकारी हैं? वे स्वर्ग का मार्ग हैं। – 2) वास्तव में, समुदाय में आज्ञाकारिता का हमारा जीवन किसी भी अन्य चीज़ से अधिक उद्धारकारी है। [1, 81]

४. हमारे लिए यहाँ थोड़ा शोक मनाना और वहाँ आनंदित होना, यहाँ दण्ड सहना और वहाँ आनंद पाना, यहाँ बन्धन में रहना और वहाँ विशालता में रहना कितना बेहतर है?! हमें दंड को स्वेच्छा से स्वीकार करना चाहिए और जो हमें सुधारते हैं, उनसे प्रेम करना चाहिए: क्योंकि जब हम ईश्वर के मार्ग से भटकते हैं, तो क्या हमें अपने किए हुए नुकसान के लिए उपचारक उपायों को स्वीकार नहीं करना चाहिए? इसी कारण से, मुझे लगता है कि हमारे पवित्र और दयालु पूर्वजों ने, दैवीय करुणा से प्रेरित होकर, अपने अधीनस्थों के उद्धार के लिए विभिन्न कठोर उपाय अपनाए: उन्होंने प्रायश्चित, चर्च से बहिष्कार और यहां तक कि शारीरिक दंड भी लगाया – किस उद्देश्य से? न केवल उन लोगों का उद्धार जिन्हें यह सहना पड़ा, बल्कि उन लोगों का भी जिन्होंने इसका साक्षात्कार किया, समकालीन और बाद में आने वाले दोनों का; क्योंकि कई लोग, यहाँ तक कि मानवीय भय से भी, सही मार्ग पर लौट आते हैं। क्योंकि, यदि आप मेरी कठोरता को सहन करते हैं, तो मैं आपको जीवित ईश्वर के सामने आश्वासन देता हूँ कि आप स्वर्ग के राज्य में उद्धार पाएँगे, जहाँ से बीमारी, दुख और आह दूर हो जाएँगी; यदि आप आज्ञाकारिता का जुआ उठाते हैं, तो

आप पापी वासनाओं से मुक्त हो जाएंगे और ईश्वर की संतानत्व की स्थिति तिक पहुंचेंगे – आप कामवासना की ज्वाला को बुझा देंगे और शाश्वत झरने से ताज़गी देने वाला और जीवन-दायक जल पीने के योग्य माने जाएंगे – आप आज्ञाकारिता के मार्ग पर अच्छी तरह चलेंगे और महान राजा से विजय की मालाएं प्राप्त करेंगे।

५. हमारा सामुदायकि जीवन कतिना महान और गौरवशाली है। इसका जुआ भारी भी है और हल्का भी, ठीक वैसे ही जैसे मसीह का जुआ है, जो उनके वचन के अनुसार एक ही है। इसकी वास्तवकिता स्वयं इसकी गवाही देती है; सत्य स्वयं इसे प्रकट करता है। और कोई भी एक सच्चे आज्ञाकारी को न तो स्तंभवासी, न तपस्वी, और न ही संन्यासी कहे या समझकर खुश करे। मैंने 'सच्चा' कहा है, क्योंकि एक सच्चा आज्ञाकारी भिक्षु वही है जिसने अपनी आत्मा को मठाध्यक्ष और को समर्पति कर दयिा है और रक्त तक भी उनकी इच्छा में नविास करता है। ऐसी आशीष प्राप्त करने पर, हमें आनंदति और उत्सव मनाना चाहिए; क्योंकि यिह वास्तव में अद्भुत है। – जहाँ तक उस व्यक्ति का सवाल है जो अलग रहता है, उसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं है, भले ही वह निर्दोष जीवन जिए। इसलिए, आइए हम अपने जीवन-पथ का सम्मान करें और मृत्यु तक सच्ची आज्ञाकारिता बनाए रखें। हम इस बात पर ध्यान नहीं देंगे कि दूसरे हमारी प्रशंसा करते हैं या हम पर निंदा करते हैं। यदहिम ईश्वर से डरते हैं, तो हम मनुष्यों से नहीं डरेंगे, और न ही हम उनके हमलों से पराजति होंगे। अपने उच्च लक्ष्य को ध्यान में रखते हुए, आइए हम प्रभु के मार्ग पर चलकर इसके लिए प्रयास करें, और वह हमारे मार्गदर्शक होंगे।

73. मार्ग कठनि और दुखद है; परन्तु बदले में, असीम सांत्वना हमारी प्रतीक्षा कर रही है: आइए हम धैर्य रखें

73. 1) मार्ग कठनि और दुखद है; फरि भी असीम सांत्वना हमारी प्रतीक्षा कर रही है: आइए हम धैर्य रखें। – 2) इस प्रकार सभी संतों ने सहन कयिा; और अब वे इसे भूलकर आराम पाते हैं: आइए हम उनका अनुकरण करें। – 3) क्या आपने कोई कठोर वचन सुना है? उसे सहन करें; और जैसे प्रभु ने इसे सहन कयिा, स्वयं को सबसे नीचे स्थान पर लाते हुए, वैसे ही आप भी इस और हर दूसरी पीड़ा को सहन करेंगे। [1, 82]

६. संघर्ष में दृढ़ रहो, समर्पण के अपने प्रयास में और शहीद-सदृश आज्ञाकारिता में; और जैसे-जैसे तुम्हारे सांसारकि जीवन के दनि बीतते जाएँ, स्वर्ग के राज्य की गारंटी के रूप में अपने आत्मा को सद्गुणों से समृद्ध करो, और हमारे लिए वादा की गई अनुपम आशीर्वादों को अपने लिए संचति करो। ईश्वर का मार्ग संकरा और दुखपूर्ण है; परन्तु जो वश्रिाम हमारा इंतज़ार कर रहा है, वह चौड़ा और वशिाल है। राक्षसों के अग्नि-बाण एक के बाद एक हमारे आत्मा के नविास पर गरिते हैं, परन्तु पवित्र आत्मा की ओस, उन्हें बुझाते हुए, हमारे ऊपर वह जल बरसाती है जो अनन्त जीवन में बहता है। संकीर्णता और दुख, निराशा और हतोत्साह, परश्रिम और पसीना, थकान और क्लान्ति और इनके साथ ही, अक्सर, अपमान और फटकारें। – यही हमारी नियिति है; फरि भी, इन सबके बावजूद, हमारे लिए एक अकथनीय आनंद और अनंत हर्ष संजोया गया है। – तो फरि, आइए हम इन कुछ दनिों के संघर्ष को साहस के साथ सहन करें, और धार्मकिता के मुकुट से वभिूषति हों।

7. हमारे परम धन्य पूर्वजों ने कतिनी कठनि परश्रिम की, अपने दनि उपवास, जाग-प्रहर, आँसुओं, प्रार्थनाओं और हर तरह के दुख में बताए? और अब उन्हें अतीत के लिए कोई शोक नहीं है: उन्होंने अनुपम आनंद और परम धन्य वश्रिाम प्राप्त कयिा है। इसी प्रकार हम उन दुखों को भी बुद्धमिानी से देखेंगे जो कभी-कभी हम पर आते हैं, उन्हें तुच्छ समझेंगे, या यूँ कहें कि एक सपने या छाया की तरह क्षणकि समझेंगे; और हम उनसे निराश नहीं होंगे, बल्कि उन्हें ध्यान में लाए बनिा, युवा जोश के साथ प्रभु की आज्ञाओं को पूरा करेंगे। गाली आपको दुखी न करे, न ही फटकार आपको लज्जति करे, न डाँट आपको परेशान करे, न ही दुख आपको कुचल दे, न ही घमंड आपको फुला दे; बल्कि झुकी हुई दृष्टि और स्वर्ग में स्थिर आत्मा के साथ, एक दूसरे के प्रति दयालु, सौम्य, धैर्यवान और अनुनयशील बने रहें।

8. मान लो किसी ने कोई कठोर बात कही - तो क्या हुआ? तुम्हें इस अपमान से क्यों पीड़ति होना चाहिए? मसीह, हमारे परमेश्वर ने, यह वचन सुना: *'तुम्हारे भीतर एक दानव है'* (यूहन्ना 7:20) – और चुप रहे; उन पर *'बेलज़ेबूब के द्वारा दानव निकालने'* का आरोप लगाया गया (मत्ती 12:24) – और वे विचलति नहीं हुए। फरि भी हम, जो स्वभाव से तुच्छ हैं और अपने जीवन में हर निंदा के पात्र हैं, किसी भी अपमानजनक शब्द पर काँटों की तरह खड़े हो जाते हैं। हम नम्रता की मठिास का और अधकि आनंद क्यों नहीं लेते? हम अनुभव से आज्ञाकारिता के सद्गुण को क्यों नहीं सीखते? हम इस मामले में सच्चे संतों के हथयिार क्यों नहीं उठाते? ये हथयिार, हालांकि सुडौल लखिाई, न मीठी गायन कला, न सुन्दर वर्ण, न लम्बा कद, न भड़कीला परधिान, न नपुंसकता, न अहंकारी, सांसारकि आचरण, न ढोंगी वाक्पटुता, न साहसी भाषण और पलटवार, और न ही इस तरह की कोई और चीज़ है; बल्कि स्वयं को सभी से नीच

समझना और सभी को स्वयं से श्रेष्ठ मानना; जल्दी से, विशेषकर कठोरता से, न बोलना; तुच्छ न होना, बल्कि विवेकी होना; उस का अनुसरण करना जो नम्र है, जैसा कि कहा जाता है, और जो नम्र है, उसका अनुसरण करें, मिलनसार, प्रेमपूर्ण और सबसे बढ़कर, ईर्ष्या से मुक्त रहें। – परन्तु तुम ये सब जानते हो, क्योंकि तुम परमेश्वर से सिखाए गए हो, और तुम हमेशा वही करते हो जो परमेश्वर को भाता है। अतःजैसे हो वैसे ही बने रहो; सब बातों में संतुष्ट रहो; हमेशा हमारे बुलावे की एक ही आशा से प्रेरित होकर, सच्चे मन से आनंदित रहो।

74. जब राजा अपने मेहमानों को रात्रिभोज के लिए बुलाता है, तो हर कोई जल्दी करता है। स्वर्ग के राजा ने हमें बुलाया है; तो हम सब कुछ सहते हुए जल्दी क्यों न करें? हम हतोत्साहित न हों, बल्कि हर चीज़ का साहसपूर्वक सामना करें।

74. 1) जब कोई राजा अपने मेहमानों को भोज के लिए बुलाता है, तो सभी लोग जल्दी करते हैं। स्वर्ग के राजा ने हमें बुलाया है; तो हम सभी बातों को सहते हुए कैसे जल्दी न करें? हम हतोत्साहित न हों, बल्कि सभी चीजों के विरुद्ध साहसपूर्वक लड़ें। – 2) पृथ्वी पर अपने जीवन के दौरान प्रभु ने जो कुछ भी सहा, उसे याद करो; और यदि तुम्हें भी कुछ ऐसा सहना पड़े तो आनंदित होओ। [1, 83]

9. यदि लोग, एक राजा द्वारा महिमा, समृद्धि, धन, आराम और आनंद के लिए बुलाए जाने पर, इन चीजों के लिए लगन से, पूरे मन से और आनंदपूर्वक प्रयास करते हैं: तो क्या हमें और भी अधिक नहीं करना चाहिए, क्योंकि हम सभी के राजा, परमेश्वर द्वारा, इन क्षणभंगुर और तुच्छ चीजों के लिए नहीं, बल्कि बिल्कि स्वर्ग के राज्य, अनंत प्रकाश, अनंत जीवन, अनुपम आनंद, पुत्रों के रूप में दत्तक ग्रहण और शाश्वत आशीर्वादों की विरासत की ओर बुलाए गए हम, आनंद और अथक उत्साह के साथ, दिन-प्रतिदिन और घड़ी-घड़ी, इस आह्वान पर ध्यान नहीं देंगे और जैसा यह निर्देश देता है, सभी बाधाओं को पार करने का प्रयास नहीं करेंगे, किसी से न डरते हुए और किसी भी चीज़ से न रुकते हुए—न दुख से, न कठिनाइयों से, न भूख से, न प्यास से, न प्राणघातक खतरों से और न ही तलवार से—बल्कि संन्यास के मार्ग पर साहस, सतर्कता और पूरे मन से आगे बढ़ते हुए, सभी चीज़ों को हल्का समझते हुए, उस सर्व-धन्य आशा के लिए जो हमारे सामने है। यह इसलिए है कि आत्मा सो गई है कि कोई तपस्या के कार्यों के सामने निराश और हतोत्साहित हो जाता है। इसलिए, मैं आपसे विनती करता हूँ, अपने कार्य की पूर्ति की ओर देखते हुए, हौसला रखें और धैर्यपूर्वक अपने विनम्र, परिश्रम-भरे पद को सहन करें, और उसके गुणों का प्रदर्शन करें: अपने ही इच्छाओं का त्याग, शीघ्र कर्म, बड़े भाईचारे के भीतर दुखद संघर्षों का मौन सहन, और कभी-कभी अधीनस्थों की फटकार और वरिष्ठों की डांट—ताकि प्रेरित के वचन सचमुच आप पर लागू हों: *'अभी तक हम भूखे और प्यासे रहते हैं, फटेहाल* हैं, संकट में हैं, और खतरों में हैं'; *'फिर भी इन सब बातों में हम उस की दया से विजेता से भी अधिक हैं जिस ने हम से प्रेम किया'* (1 कुरिन्थियों 4:11; तुलना करें रोमियों 8:34)।

10. *'इसलिये प्रभु में और उसकी सामर्थ्य की शक्ति में बल प्राप्त करो'* (इफिसियों 6:10), और अपनी अतीत की उपलब्धियों और परीक्षाओं के सहन में वर्तमान और भविष्य की उपलब्धियों को जोड़ें, इसे एक बड़ी खुशी के रूप में मानते हुए कि आपको मसीहा यीशु के लिए स्वेच्छा से ये बातें सहने और उनके दुखों का अनुकरण करने के योग्य समझा गया है: केवल इसी में, जो लोग इस बात को समझते हैं उन्हें अपने लिए सबसे बड़ा इनाम दिखाई देना चाहिए। क्या आपको याद है कि उन्होंने हमारे लिए कितना दुख सहे? क्या वे देह में बालक के रूप में नहीं रहे? क्या वे हेरोद की हत्यारी चालाकी से नहीं भागे? क्या उन्होंने अपने माता-पिता की आज्ञा नहीं मानी? बारह वर्ष की आयु में, क्या उन्होंने मंदिर में इकट्ठे लोगों को फटकार नहीं लगाई, यद्यपि उन्हें अभी तक शिक्षा नहीं दी गई थी? – उन्होंने यह उन लोगों के लिए किया जिन्हें अभी तक शिक्षा नहीं मिली थी, ताकि वे शोक न करें। क्या वह पैदल नहीं चला, क्या वह थका नहीं, क्या उसने अंजीर के पेड़ से भोजन नहीं माँगा? क्या यहूदियों ने उसकी निंदा नहीं की? क्या उसने यह नहीं सुना: *'तुममें राक्षस है,'* और: *'हे बीलज़ेबूब, राक्षसों के राजा, वह राक्षसों को निकालता है'*? क्या उन्होंने उसे पत्थर मारने की कोशिश नहीं की, और क्या उसने उनसे शरण नहीं ली? और उससे पहले, चालीस दिन के उपवास के दौरान, क्या शैतान ने उन्हें एक मनुष्य के रूप में प्रलोभित नहीं किया था? और बाद में—क्या उन्होंने एक सेवक की तरह अपने शिष्यों के पैर नहीं धोए? क्या एक विश्वासघाती ने उनके साथ विश्वासघात नहीं किया था? क्या यहूदियों ने उन्हें गिरफ्तार नहीं किया था? क्या अन्नास और कैफा ने उनका मज़ाक नहीं उड़ाया था? क्या उसे एक सेवक के हाथ से गाल पर नहीं थप्पड़ मारा गया? क्या उसे उन्हीं हाथों से कोड़ा नहीं मारा गया जिन्हें उसने बनाया था? क्या उपहास के लिए उसे काँटों का मुकुट नहीं पहनाया गया? क्या वह क्रूस पर नहीं चढ़ा? क्या उसके पवित्र हाथ और पैर उसमें ठोक दिए गए थे? क्या उसने क्रूस पर रहते हुए अपमानजनक शब्द नहीं सुने? क्या उसकी पसलियाँ भाले से नहीं भेदी गईं? क्या उसे उसकी प्यास बुझाने के लिए पित्त नहीं पिलाया गया? क्या उसे दफनाया नहीं गया, और, परमेश्वर के

रूप में, क्या वह तीसरे दिन फिर से नहीं जी उठा? – क्या हम, अपनी ओर से, कह सकते हैं कि हमने ऐसा कुछ भी सहा है? भाई, मुझे दिखाओ, क्या तुम्हारी रीढ़ पर तुम्हारे मसीह की तरह कोड़ों की मार पड़ी है? क्या तुम्हारे गालों पर प्रहार के निशान दिखाई देते हैं? क्या तुम्हारे कान अनगिनत तानों, अपमानों और गाली-गलौज से ध्वस्त हुए हैं? क्या तुम्हारे सभी अंगों को पीड़ा से पवित्र किया गया है? – बेशक, तुम्हारे पास इनमें से कुछ भी नहीं है। तो, कम से कम, उन छोटी-छोटी पीड़ाओं को जो आपके पास खुशी और प्रेम के साथ आती हैं, स्वीकार करें, और प्रभु, जो मानवता से प्रेम करते हैं, अपनी असीम दया में, आने वाले जीवन में आपको इसके लिए महिमामय बनाएंगे। यह अपने संन्यासी व्रत के लिए करें: क्योंकि संन्यासी व्रत प्रभु के लिए क्रूस और मृत्यु को सहने की प्रतिज्ञा के अलावा और कुछ नहीं है।

75. हमारे मार्ग के अनुसार एक अच्छे जीवन के फल देखकर, उस पर और भी दृढ़ता से कायम रहें: और आप त्रिमूर्ति परमेश्वर का निवास स्थान बन जाएँगे

75. 1) हमारे नियम के अनुसार एक अच्छे जीवन के फल देखकर, उसे और भी कड़ाई से थामे रहो: और तुम त्रिमूर्ति परमेश्वर का निवास स्थान बन जाओगे। – 2) धर्मग्रंथ के वचन द्वारा निर्देशित होकर, हर बात में निर्दोष और परमेश्वर को प्रसन्न करने वाले बनो, और हर निंदनीय बात से दूर रहो। [1. 84]

11. उस स्थिति को देखो जिसमें तुम्हारी मन और हृदय की एकता ने तुम्हें पहुँचाया है, और इस तथ्य को कि तुमने धीरे-धीरे हर पुण्य कार्य करने के लिए स्वयं को अनुशासित किया है? और इसने आपके लिए कौन से फल नहीं दिए हैं? – इससे शांति और प्रसन्नता आती है; इससे सच्चा पारस्परिक विश्वास और अटूट एकता; इससे हितकर शोक और लाभदायक स्वीकारोक्ति; इससे गहरी पश्चाताप और उसके अनुरूप विनम्रता; इससे भाईचारा और पितृवत् स्वभाव। अपोस्तल के शब्दों का हवाला देते हुए, *'हर बात में,'* जैसा कि उपयुक्त है, *'तुमने स्वयं को शुद्ध दिखाया है'* (2 कुरिन्थियों 7:11)। *"धन्य है प्रभु, क्योंकि उसने अपने लोगों का ध्यान रखा है और उनका उद्धार किया है"* (लूका 1:68): *"क्योंकि तुम उसके लोग, उसके चुने हुए हो; – और उसने तुम्हारे लिए उद्धार का सींग उठाया है"* (लूका 1:69), तुम्हारे नव-प्राप्त अच्छे स्वभाव के द्वारा। यही आपकी आनन्द और प्रसन्नता, सम्मान और अच्छी ख्याति, ज्ञान, समझ और पूर्ण ज्ञान है, ताकि आप परमेश्वर के सामने एक प्रशंसनीय और पवित्र जीवन जी सकें: जिसके बारे में बाहरी लोग (क्योंकि उनके निर्णय कभी-कभी हमारे जीवन-शैली पर लागू होते हैं) बात नहीं करते: 'मैं उस व्यक्ति को बुद्धिमान कहता हूँ जो एक निर्दोष और निष्कलंक जीवन जीता है, भले ही वह निरक्षर हो और उन मामलों पर तर्क करने में असमर्थ हो जिनके साथ यूनानी स्वयं को व्यस्त रखना पसंद करते हैं।' – यदि उन लोगों को भी जिनकी एकमात्र चिंता केवल बोलना और सुनना है, ऐसा ही लगता है, तो क्या हमें संतों द्वारा स्थापित की गई किसी चीज़ के अलावा कुछ और गढ़ना चाहिए? इसलिए, प्रभु परमेश्वर के सामने डरना और काँपना सीखो और उसकी आज्ञाओं का पालन करो; और अनुग्रह तुम्हें *'उसके द्वारा चुने हुए पात्र, जो हर भले काम के लिए तैयार किए गए हैं' के रूप में* प्रकट करेगा (2 तीमु. 2:21)। क्योंकि जहाँ पिता, पुत्र और पवित्र आत्मा का वास होता है, वहाँ आत्मा की पवित्रता के लिए, कौन सी भलाई की कमी है, कौन सी बुद्धि, कौन सा आत्मा का उत्साह, कौन सी शिक्षा, निर्माण और मार्गदर्शन? परन्तु जहाँ यह अनुपस्थिति है, वहाँ केवल ठंडे शब्द, महज दिखावा और आत्म-बड़बोलापन होता है, और अक्सर भ्रम और भूल, और हमेशा निरर्थकता होती है।

12. पढ़ने पर पूरा ध्यान दो, और धर्मशास्त्र का वचन तुम से खोया न जाए (इसे भूलो नहीं)। अपनी जीभ को बुराई से बचाओ, विशेषकर तुम, सबसे छोटे, जो इस जीभ को रोकने के आदी नहीं हो—जो चंचल और घातक विष से भरी है, और जिसके द्वारा हम में से बहुत से लोग लगातार पाप में गिरते हैं। तुम्हारे बीच कोई कपटी मेलजोल न हो; तुम्हारे में से दो-दो करके कपटी और यहूदी-सी चाल से षड्यंत्र न रचें; अननियस और सप्फिरा के समान तुम्हारे बीच कोई झूठ या छल-कपट न हो; फरीसियों और सदूकियों के समान तुम्हारे बीच कोई गुप्त मनसूबे या बुरी साजिशें न हों; तुम्हारे बीच 'मेरा' और 'तुम्हारा' का कोई भाव न हो, जो अनगिनत बुराइयों से भरा है, जैसा कि संत क्रिसोस्टोम पुकार कर कहते हैं: *'पुराना बीत गया; देखो, सब कुछ नया हो गया है'* (2 कुरिन्थियों 5:17)। हम अपने भीतर अतीत (अपने पूर्व जीवन) को केवल उन्हीं वासनाओं से बचने के लिए क्यों याद करें, और एक-दूसरे में दुष्ट विचारों की आग प्रज्वलित न करें? *'मुझे आशा है कि तुम भी इससे बेहतर हो और मुक्ति के लिए दृढ़ता से पकड़े हुए हो'* (इब्रानियों 6:9)। शायद इसीलिए हम पहले की उस स्थिति में पड़े—ताकि, जैसे गहरे गड्ढे और तूफान, और कई क्लेशों से, हम अपने शांतिपूर्ण और शांत बंदरगाह में दौड़ सकें, और फिर लहरों के बीच एक खतरनाक यात्रा पर निकलना न चाहें, बल्कि हमारे प्रभु मसीह यीशु के इस नम्र बंदरगाह में शांत और मौन बने रहने के लिए।

76. जो पवित्र जीवन जीते हैं, उनके लिए हर दिन एक उत्सव है। क्या आप इसकी इच्छा रखते हैं? परमेश्वर को प्रसन्न करने के लिए उत्सुक रहें, और उनके लिए सभी बातों को सहन करें।

76. 1) जो कोई पवित्र जीवन जीता है, उसके लिए हमेशा उत्सव होता है। क्या आप इसकी इच्छा रखते हैं? परमेश्वर को प्रसन्न करने के लिए उत्सुक रहें, और उनके लिए सब कुछ सहन करें। – 2) याद रखें कि हमने संसार को क्यों छोड़ा है, और यही आपका लक्ष्य हो; सबसे बढ़कर, अपनी पवित्रता की रक्षा करें, और उन लोगों की संगति से दूर रहें जो इसके विरुद्ध पाप करते हैं। [1, 85]

13. जो पवित्र जीवन जीते हैं, उनके लिए हर दिन एक उत्सव है; वे लगातार प्रबुद्ध, शुद्ध और ऊँचा उठाए जाते हुए, अपना जीवन उत्सव के रूप में बिताना कभी बंद नहीं करते, और हमेशा ईश्वर-वाहक और दिव्य होते हैं। यदि आप ऐसे लोग बनना चाहते हैं, तो मैं आपसे विनती और प्रार्थना करता हूँ: हर अच्छे काम और हर ईश्वर को प्रसन्न करने वाले कार्य के लिए स्व-प्रेरित, इच्छुक और उत्सुक बनें, अपनी आँखें उठाकर शाश्वत आशीर्वादों पर मनन करें; और इस उद्देश्य के लिए, जो आपको स्वीकार करना है उसे स्वीकार करें, जो आपको सहना है उसे सहें, और जो कुछ भी आपका सामना करे उसे सहन करें: दुख, कठिनाइयाँ, हिंसा, अभाव, क्लेश, बदनामी, परिश्रम, मेहनत, और इसी प्रकार की अन्य सभी चीजें, ताकि हम उसको प्राप्त कर सकें जिसकी हम कामना करते हैं और उसको हासिल कर सकें जिसके लिए हम इस संसार से विदा हुए हैं। हे, मेरे पूर्वजों, धार्मिकता, बुद्धिमानी और विश्वास के साथ जीना कितना धन्य है! और कितना धार्मिक है कि हम अपने दिनों को पश्चाताप, नम्रता और श्रद्धा में बिताएँ, अपने प्रस्थान, सभी के भीषण न्यायाधीश, परमेश्वर से भेंट, और उनके सामने अपने हिसाब-किताब की तैयारी के लिए!

14. 'आर्सेनियस, तुमने इस संसार को किस उद्देश्य से छोड़ा है?' यह आदरणीय व्यक्ति अक्सर अपने आप से एक उपयुक्त अनुस्मारक के रूप में कहते थे। हमें भी यह जानने की कृपा मिले कि हमने संसार क्यों छोड़ा है, और हम इसके लिए अपनी पूरी शक्ति से प्रयत्न करें, अपने जीवन को सद्गुणों की शोभा से सजाते हुए, और अपनी आत्माओं को प्रभु—ईश्वर—के लिए वधू के समान तैयार करते हुए—अत्यंत पवित्र ब्रह्मचर्य की भव्यता का पालन करके, और स्वयं को शुद्ध, निर्मल और निष्कलंक बनाए रखकर: क्योंकि हमें परमेश्वर के मंदिर कहा जाता है; और *'यदि कोई परमेश्वर के मंदिर को नाश करे, तो परमेश्वर उसे नाश कर देगा,'* धर्मग्रंथ कहता है (1 कुरिन्थियों 3:17)। इसी कारण से मैं कुछ लोगों पर रोता और विलाप करता हूँ, क्योंकि चूँकि उन्होंने *'अपनी समझ में परमेश्वर को मानने की भी परवाह नहीं की'*, उद्धारकर्ता, इसलिए उन्होंने *'उन्हें एक भ्रष्ट मन के हवाले कर दिया, ताकि वे अनुचित काम करें'* (रोमियों 1:28)। मैं यह भी कहने की हिम्मत करता हूँ कि *'तुम घमंडी हो गए, और तुमने शोक नहीं मनाया, ताकि जो यह काम किया है वह तुम्हारे बीच से हटा दिया जाए'* (1 कुरिन्थियों 5:2)। इसी से लापरवाही उत्पन्न होती है, और बाद में उदासीनता: क्योंकि आप उससे वैसा परहेज़ नहीं करते जैसा आपको करना चाहिए। आप उससे मेलजोल रखते हैं और साथ में हँसते हैं, उस व्यक्ति के समान बन जाते हैं जिसके विषय में भविष्यवक्ता उपहासपूर्वक कहता है: *'यदि तुम किसी चोर को देखते, तो उसके साथ दौड़ पड़ते, और व्यभिचारी के साथ अपना हिस्सा बाँट लेते'* (भजन संहिता 49:18)। तथापि, इस डाँट के लिए मुझ पर क्रोधित न हो: क्योंकि यदि मैं तुम्हें डाँटूँ नहीं और धर्मी आचरण के पक्ष में तुम्हारे सामने न खड़ा होऊँ तो मेरी विपत्ति होगी; और तुम्हारे लिए भी विपत्ति होगी, यदि तुम दुष्टता से जीने वालों से अपना फासला न रखो।

७७. जीवन उथल-पुथल से भरा है; परन्तु सबसे पहले, प्रार्थना करो कि तुम्हारा नाविक चौकस और बुद्धिमान हो; फिर एक सुखद अंत तक पहुँचने की आशा में सांत्वना लो

77. 1) जीवन उथल-पुथल से भरा है; लेकिन सबसे पहले, प्रार्थना करो कि तुम्हारा नाविक सतर्क और बुद्धिमान हो; फिर एक अच्छे अंत तक पहुँचने की आशा में सांत्वना लो। – 2) मैं सुनता हूँ कि तुम्हारे बीच तुच्छ बातों पर बहुत झगड़ा होता है – विनम्रता की कमी के कारण। – 3) संत डोरोथियस, डोसिफेस, अकाकियोस और अन्य ने सब कुछ मौन और विनम्रता से स्वीकार किया, और शांति बनाए रखी। – 4) हम अपनी ही इच्छाओं से परेशान हैं, और उनकी पूर्ति न होने से हम परेशान होते हैं: क्योंकि हम उन्हें त्यागने के पुरस्कार को भूल गए हैं। – 5) हम में से कई लोग बीमार पड़ते हैं: बीमारों के प्रति धैर्य रखें, और उनकी देखभाल करने वालों को नम्रता से परिश्रम करना चाहिए। जब डॉक्टर को बुलाया जाए तो यह सुनिश्चित करें कि कोई अव्यवस्था न हो। और ठीक होने पर, आलसी न रहें – न ही लापरवाही से काम करें। [1, 86]

१५. बार-बार, सौम्य बने रहो, धैर्य रखो, और साहस करो, जो भी अदृश्य और दृश्य परीक्षाएँ तुम पर आती हैं, चाहे वे राक्षसों से हों या लोगों से, उन्हें सहो। कौन नहीं देखता कि तुम्हारा जीवन संघर्षों से कितना भरा है? कौन इस बात की गवाही नहीं देगा कि तुम्हारा मार्ग कितना दुखद है? अत; प्रतिदिन, तुम्हारे विरुद्ध परीक्षाएँ उत्पन्न

होती हैं, और वहाँ से, पीड़ादायक विपत्तियाँ आपको घेर लेती हैं: कभी अपने भाइयों से टकराव, तो कभी अपने कर्तव्यों को पूरा करने पर परेशानियाँ और अनवरत झटके; हर ओर से दबाव, मानो हम गहराई में उछाले जा रहे हों, इस विशाल और विपत्तिपूर्ण संसार के सागर को पार कर रहे हों, आशा की पाल फहराकर स्वर्ग की ओर प्रस्थान कर रहे हों। किन्तु सबसे पहले और सबसे महत्वपूर्ण, प्रार्थना करो कि तुम्हारा नाविक, दैवीय शक्ति और पिता की प्रार्थनाओं द्वारा, हमेशा अपने मन की आँखें खुली रखें, और देखते हुए, देखें, और निहारते हुए, निहारें, ताकि वह आपकी नौका को अच्छी तरह से चला सके और उसे विश्वास द्वारा जीवन के बंदरगाह तक ले जा सके; तब आनंदित और प्रसन्न हो जाओ कि, इस जीवन के समुद्र में इतनी कठिनाई से नौकायन करने के बाद, आप अनंत जीवन का वारिस बनोगे। किसी भी परिस्थिति में आपको स्वयं को डगमगाने, रुकने या किसी भी चीज़ से पीछे हटने की अनुमति नहीं देनी चाहिए, बल्कि एक प्रसन्नचित्त भाव से, उत्साह और लगन के साथ आगे बढ़ें, आगे बढ़ते रहें और वह सब कुछ अपनाएँ जिससे आप प्राचीन सर्प—शैतान—को कुचल सकें और प्रभु की आज्ञाओं को पूरा कर सकें। क्या आप युवा हैं और अपनी आध्यात्मिक यात्रा अभी शुरू कर रहे हैं? नम्रता और आज्ञाकारिता को अपनाओ और उन पर दृढ़ता से कायम रहो, ताकि एक अच्छी शुरुआत करने के बाद, तुम धीरे-धीरे पूर्णता तक पहुँच सको। क्या तुमने लंबे समय तक मठवासियों का वेश धारण किया है? अपने सद्गुणों की उत्कृष्टता से स्वयं को ऐसा पहचाने जाने दो, न कि वर्षों की संख्या से।

16. मैं आपसे यह इसलिए कह रहा हूँ क्योंकि मुझे सुना है कि आपके बीच व्यर्थ की बातें और झगड़े हैं, साथ ही भ्रम, चिड़चिड़ाहट और क्रोध के उद्रेक, अपमान, गाली-गलौज और कलह भी है, यद्यपि आप सभी के बीच नहीं। मैं आपसे पूछता हूँ, भाइयों, यह कहाँ से आता है? इसके कारण क्या हैं? मुझे लगता है कि यह नम्रता की कमी के अलावा और किसी चीज़ से उत्पन्न नहीं होता है। इसलिए मैं आपको प्रेरित के शब्दों में विनती करता हूँ: *'अपने विचारों में बच्चे न बनो, पर बुराई में शिशु बनो'* (1 कुरिन्थियों 14:20); बिना किसी लाभ के व्यर्थ की बातों में न उलझो, और, अपनी मनमानी करने की इच्छा में, वाक्पटुता या व्यर्थ की बातों का सहारा न लो, इस और उस बात में खुद को थकाते हुए, और विभिन्न कारण प्रस्तुत करते हुए। *'कौन,'* भविष्यवक्ता पूछते हैं, *'वह मनुष्य है जो जीवन की इच्छा रखता है और भले दिन देखना पसंद करता है?'* और वे स्वयं उत्तर देते हैं: *'अपनी जीभ को बुराई से बचाओ, और अपने होंठों को चापलूसी करने से रोको; बुराई से दूर हो जाओ और भलाई करो; शांति की खोज करो और उसका पीछा करो'* (भजन संहिता 33:13-15)।

17. संत डोरोथियस ने शुभ दिन क्यों देखे और शांतिपूर्ण जीवन क्यों जिया? अद्भुत डोसिफियस, सदा-स्मरणीय अक्काकियस, और ऐसे संतों की पूरी मंडली ने भी ऐसा ही आनंद क्यों लिया? या—आशा है कि इसे अहंकार न समझा जाए—हमारे अपने ही संप्रदाय के कुछ लोगों ने, जो अभी जीवित हैं और जो चल बसे हैं, यहाँ आनंदपूर्वक, कलह और चिंता से मुक्त जीवन क्यों जिया? लेकिन क्या ऐसा इसलिए था? क्या यह इसलिए नहीं था क्योंकि उनमें से प्रत्येक ने स्वयं को कुछ भी नहीं समझा, और हर किसी के अधीन होने तथा हर मामले में आज्ञाकारिता के लिए तैयार रहा?

18. जहाँ तक मेरा सवाल है – 'आप' नहीं कहूँगा – घमंड, हठ और सुख-भोग की चाह मुझे शांति से जीने, दूसरों के साथ शांति बनाए रखने, या इस जीवन के कुछ ही दिनों को सादगी और द्वेष-रहित होकर बिताने से रोकती है। इसलिए, जो कोई भी परेशान और बोझिल है, वह अपने पड़ोसी को दोष न दे, बल्कि स्वयं को दोष दे। जो कोई भी धार्मिकता से चलना और शांति में जीना चाहता है, वह अपनी इच्छाओं पर जोर न दे – और – दुख समाप्त हो जाएंगे, विवाद शांत हो जाएंगे, और यॉब की पुस्तक की तरह, जंगली जानवर भी उनके साथ शांति से रहेंगे। इसके अलावा, जानो और विश्वास करो कि जिन कपड़ों को हम पहनना नहीं चाहते, मरम्मत किए हुए जूतों के लिए, एक अवांछित चोगा, आज्ञाकारिता में बदलाव, अपमान सहने के लिए, बदनामी सहने के लिए—इन सभी छोटी-छोटी बातों के लिए—स्वर्ग का राज्य आपका इंतजार कर रहा है। तो आइए हम पूरी ताकत से प्रभु को प्रसन्न करने का प्रयास करें! और धन्य है वह जो अपनी सेवा इस प्रकार बनाए रखता, करता और पूरा करता है मानो परमेश्वर उस पर नज़र रख रहे हों।

19. ये हमारे लिए परेशान करने वाले समय हैं, और कई भाई बीमार पड़ गए हैं। हे बीमारों, हियाव धारण करो; तुम्हारे काम का समय आ गया है; बीमारों की शांति के लिए स्वर्ण और कीमती रत्नों से भी अधिक कीमती पुरस्कार प्राप्त करने के अवसर को न चूकना। और तुम जो बीमार हो, धैर्य का फल काटो; जो दिया गया है उससे अधिक की मांग मत करो, कहीं ऐसा न हो कि तुम आत्मा और शरीर दोनों से बीमार पड़ जाओ। – और आप अभी भी इतने असभ्य क्यों हैं कि, जब डॉक्टर आते हैं, तो आप सब उनकी ओर दौड़ पड़ते हैं, सवाल करते हैं, उन्हें अपने अंग दिखाते हैं, और अपनी बीमारियों के नाम बताते हैं? – क्या आपको किसी आम व्यक्ति के सामने शर्म नहीं आती? शायद अगली बार, वह यहाँ बिल्कुल भी नहीं आएँगे। यही कारण है कि मैं आपको यह बात बताने और आपको सही करने के लिए मजबूर महसूस कर रहा हूँ। तुम व्यवस्था क्यों नहीं बनाए रखते? तुम सभी बारी-बारी से अपने और अपनी बीमारियों के बारे में

बता सकते हो; अगर जरूरत पड़ी, तो तुम अपना संदेश अस्पताल के परिचारक या उसके सहायक के माध्यम से भेज सकते हो। लेकिन यह अव्यवस्था कुछ भी नहीं बल्कि बुराई है। यह सही नहीं है, मेरे बच्चों; और भविष्य में ऐसा दोबारा न हो। – इसके अलावा, अपनी बीमारी को आलस्य का बहाना न बनाओ, और जब तुम ठीक हो जाओ, तो बेमतलब इधर-उधर मत घूमो; न ही असंयमी बनो, कहीं तुम फिर से बीमार न पड़ जाओ, और इस तरह स्वस्थ लोगों पर बोझ न बन जाओ। परन्तु तुम भी, जो स्वस्थ हो, प्रभु के प्रेम और भाईचारे के लिए, धीरज से सेवा करो और दुर्बल लोगों की दुर्बलताओं को सहो।

78. जैसे, जब अरब लोग नज़दीक आते हैं, तो हम उनके हाथों में पड़ने से बचने के लिए हर सावधानी बरतते हैं, वैसे ही हमें आध्यात्मिक कवच पहनकर अपने आध्यात्मिक शत्रुओं से सावधान रहना चाहिए

७८. १) जैसे, जब अरब पास आते हैं, तो हम उनके हाथों में न पड़ने के लिए हर सावधानी बरतते हैं, वैसे ही हमें अपने आध्यात्मिक शत्रुओं से सावधान रहना चाहिए, परमेश्वर का कवच पहनकर। – २) हमें हार नहीं माननी चाहिए, बल्कि साहसपूर्वक लड़ना चाहिए, और हम वैराग्य की शांति प्राप्त करेंगे। [१, ८७]

20. वर्तमान समय में, अरब हमारे दिलों में डर पैदा करते हैं – वे अचानक हमला करते हैं और न केवल हमारी संपत्ति लूटते हैं, बल्कि लोगों को बंदी भी बनाते हैं; और जिन्हें वे साथ नहीं ले जाते, उन्हें निर्दयता से समाप्त कर देते हैं, पुरुषों और महिलाओं, बूढ़ों और जवानों, सभी को मार डालते हैं। लेकिन अगर हम बारीकी से देखें, तो हम पाएँगे कि हम भी कम भयानक हमलों और अत्याचारों के अधीन नहीं हैं, बस यह लोगों से नहीं, बल्कि राक्षसों से हो रहा है। वे हम पर एक अनवरत और प्रचंड युद्ध छेड़ते हैं, जिसे न तो कोई विश्राम पता है और न ही कोई निश्चित अवधि: एक को पाप के तीर से भेदा जाता है, दूसरे को वासना के जालों में बाँधकर मानसिक मिस्र में बंदी बना लिया जाता है; एक में, आत्मा और शरीर का हर अंग पापी इच्छाओं के विष से भर जाता है; दूसरे में, वे परमेश्वर के उद्धारकारी वचन के बीज को चुरा लेते हैं और उसे भूख से पीड़ित करते हैं; और ये शिकारी और अत्याचारी हम पर हर तरह की अपमान और यातनाएँ थोपते हैं। – आप में से धन्य है मसीह का वह योद्धा जो, विश्वास की आत्मिक तलवार से स्वयं को सशस्त्र करके, प्रहार करता है परन्तु उस पर प्रहार नहीं होता, घाव पहुँचाता है परन्तु उसे घाव नहीं लगता, विजय प्राप्त करता है परन्तु बंदी नहीं बनाया जाता। परन्तु हम सब हियाव रखें, और अपनी लड़ाई के हथियार—जो कि शारीरिक नहीं, बल्कि आत्मिक हैं—उठाकर, हम उन पर जय प्राप्त करें जो हमसे लड़ते हैं, अपनी कतारें बनाए रखें और एक दूसरे की सहायता करें। कोई भी कवच के बिना न रहे, जो प्रेरित के अनुसार सच्चा विश्वास है; कोई भी ढाल के बिना न रहे, जो नम्रता है; कोई भी दिव्य प्रार्थना रूपी तलवार के बिना न रहे; कोई भी आज्ञाकारिता रूपी कवच के बिना न रहे; कोई भी हर अच्छे काम के लिए जीवंत तत्परता रूपी आत्मा के घोड़े के बिना न रहे; और आंतरिक मन की रक्षा करने वाले शेष कवच के बिना कोई न रहे। आइए हम अपने दुश्मनों को हमें घायल करने, हमें हराने, या हमें अपने पैरों तले कुचलने न दें। प्रभु, जो युद्ध में शक्तिशाली हैं, जिन्होंने क्रूस के हथियार से इस युग के शासक के प्रधानताओं और शक्तियों को धराशायी कर दिया, *'ने हमें साँपों और बिच्छुओं पर और शत्रु की सारी शक्ति पर पैर रखने का अधिकार दिया है'* (लूका 10:19)।

२१. इसलिये सावधान रहो, कि तुम अहंकार से कुछ न करो; क्योंकि जो लोग अहंकार में पड़ते हैं, वे भाले से भेदे जाने के समान गिरा दिए जाते हैं - और मर जाते हैं। सावधान रहो कि अपने वासनाओं के अनुसार कार्य न करो, क्योंकि जो अपनी वासनाओं के अनुसार कार्य करते हैं वे अनंत मृत्यु को प्राप्त करते हैं। और अपने मन में दुष्ट विचारों को स्थान न दो, क्योंकि ऐसे लोग कैद में पड़ जाते हैं; अवज्ञा में न पड़ो, क्योंकि अवज्ञाकारी स्वयं को शत्रु के तीरों के सामने उजागर कर देते हैं; घमंडी न बनो, क्योंकि घमंड के कारण तुम पाप की तलवार के नीचे आ जाते हो; आलसी न बनो, और भजन-गाने और शारीरिक परिश्रम की उपेक्षा न करो, क्योंकि ऐसा करके तुम स्वयं को शैतान के हाथों में सौंप देते हो; यह विशेष रूप से सच है यदि तुम गुप्त रूप से बुराई करते हो, जबकि बाहरी रूप से अपने आप को वह दिखाते हो जो तुम भीतर से नहीं हो। प्रेरित इन सभी के विषय में कहते हैं: *'और यह ध्यान रखो कि तुम कैसी चाल चलते हो; मूर्खों की नाईं, परन्तु समझदारों की नाईं, समय का पूरा लाभ उठाते हुए, क्योंकि दिन बुरे हैं'* (इफसियों 5:16)। चूँकि हम अब जवान नहीं रहे, इसलिए हमारे पास पर्याप्त सैन्य अनुभव भी होना चाहिए; और जिसने लड़ना सीख लिया है, वह अपने शत्रुओं से नहीं डरता। इसलिए मैं आपसे विनती और प्रार्थना करता हूँ, हे प्रभु की सम्मानित सेना, उसकी पवित्र प्रजा, उसके चुने हुए योद्धाओं: हम डरपोक न बनें या हार न मानें। परन्तु यदि हमें घाव लगे हैं, तो उन्हें पश्चाताप द्वारा चंगा करें; यदि हम मारे जाएँ, तो आँसुओं और तपस्या द्वारा पुनर्जीवित हों; यदि हमें आध्यात्मिक बबेल में बंदी बनाकर ले जाया जाए, तो हमारे प्रभु यीशु मसीह के पवित्र शरीर के पवित्र भोज द्वारा मुक्त हों। यदि हम इस प्रकार संघर्ष में धैर्यपूर्वक दृढ़ता बनाए रखें, तो लड़ाई धीरे-धीरे शांत हो जाएगी, दुश्मन भाग जाएँगे,

नरि्लपि्तता का शांत-िसमाधान हमारे भीतर चमकेगा, और हमें परमेश्वर के पुत्र कहा जाएगा: क्योंकि कहा गया है, *'धन्य हैं शांति बनाने वाले, क्योंकि उन्हें परमेश्वर के पुत्र कहा जाएगा'* (मत्ती 5:9)।

७९. समय समाप्त हो रहा है: हमें सतर्क रहना चाहिए, जैसा कि आप कर रहे हैं, नम्रता और विनम्रता को विकसित करने का विशेष ध्यान रखते हुए, मसीह का अनुकरण करते हुए

७९. १) समय बीत रहा है: हमें सतर्क रहना चाहिए, जैसा कि आप हैं, विनम्रता और नम्रता को विकसित करने का विशेष ध्यान रखते हुए, मसीह का अनुकरण करते हुए। – २) स्वर्गदूत और संत देख रहे हैं; जैसा हमें होना चाहिए वैसा न जीना शर्म की बात है: क्योंकि यद्यपि यह कठिन है, '' एक बड़ा इनाम इंतजार कर रहा है। – ३) हमारे सामने स्वर्ग और नरक दोनों पड़े हैं: जो कोई भी चुनता है, उसे वही मिलेगा। – 4) जो कोई भी अपनी इच्छाओं के अनुसार काम करता है, उसका काम केवल लकड़ी और पुआल है; वे अनंत काल तक जलेंगे बिना नष्ट हुए। [2, 1]

२२. समय उड़कर इस वर्तमान जीवन के अंत की ओर ले जाता है। लेकिन कौन इतना बुद्धिमान है कि इस बात को समझकर उसका अनुसरण करे – ताकि जीवन में समय बर्बाद न हो, और शैतान की चालाकी से मोक्ष की बात को लेकर उदासीन न रहे? जो अपनी आत्मा की सुनता हुआ चलता है, लापरवाही को नहीं अपनाता, बल्कि मृत्यु की प्रतिदिन तैयारी में रहता है, और अपने हर कर्म—आध्यात्मिक और शारीरिक—को सर्वशक्तिमान ईश्वर के समक्ष प्रस्तुत करता है? जो, अपनी आत्मा के पर्वत की दृष्टि स्वर्ग की ओर उठाकर और वहाँ के दर्शनों की सुंदरता को निहारकर, अपना सारा प्रेम उस लोक की लालसा में बदल देता है, स्वर्गीय शक्तियों के साथ उड़ान भरता है, और हर प्रकार की भारी कष्टों को कुछ नहीं समझता, बल्कि प्रसन्नचित्त होकर निन्दा, अपमान और पीड़ा—भूख और प्यास, ठंड और गर्मी को सहते हुए, और जैसा लिखा है, रत्नों के समान भ्रातृत्व में विचरते हैं? – परन्तु तुम में मैं केवल एक या दो ही नहीं, बल्कि कई ऐसे लोगों को देखता हूँ जो सच्चे विश्वास और उत्साह के साथ, योग्य वस्तुओं की खोज करते हैं, और जो इसके अलावा, मार्गदर्शन के प्रति चौकस, आज्ञाकारी, धीरजवान, उदार-हृदय, भरोसेमंद और विश्वासी हैं, इस तथ्य के बावजूद कि उन्होंने कोई औपचारिक शिक्षा प्राप्त नहीं की है, न ही उन्होंने व्यापक पठन, चिंतन या रटने के द्वारा इस कमी की पूर्ति की है; उनके पास केवल एक चीज़ है, जो सबसे आवश्यक है और जिसके द्वारा वे खुद को मसीह के समान मानते हैं, अर्थात्, नम्रता और विनम्रता – प्रभु के वचनों का पालन करते हुए: *'मेरे से सीखो, क्योंकि मैं मन से कोमल और नम्र हूँ'* (मत्ती 11:29)। तो, अपना ध्यान प्रकाश और सत्य, धार्मिकता और नम्रता, विनम्रता और भलाई की ओर मोड़ें। मैं आपसे विनती करता हूँ कि आप हर तरह की चिड़चिड़ाहट और आक्रोश से खुद को रोकें। संत दाऊद पुकारते हैं, *'हे मनुष्यों के बेटों, हे कठोर-हृदय वालों, कितनी देर तक?' तुम व्यर्थता से प्रेम क्यों करते हो और झूठ की खोज क्यों करते हो?"* (भजन संहिता 4:3)। *"शत्रु कब तक उपहास करेगा, और विरोधी उत्तेजित करता रहेगा?"* (भजन संहिता 73:10)।

२३. मुझे क्षमा करें; मैं पवित्र स्वर्गदूतों के सामने लज्जित हूँ, क्योंकि वे हमारे संरक्षक के रूप में हमारी देखभाल करते हैं; मैं पवित्र और सम्मानित पिताओं के सामने लज्जित हूँ, जिनका जीवन-मार्ग हमने अपनाया है और जिनका अनुसरण हम करते हैं। अतः हे भातियो, हम जो धर्मपरायण है उसे धर्मपरायणता से और जो पवित्र है उसे पवित्रता से पूरा करें। मैं आपसे विनती करता हूँ, कठोर-हृदय, अवज्ञाकारी या झगड़ालू न बनें; अपनी बातों में कठोर, क्रोध-प्रवण या घमंडी न बनें; उपहास करने वाले, बदनाम करने वाले या गाली-गलौज करने वाले न बनें; बकबक करने वाले, हास्यास्पद या अभद्र न बनें। ईश्वर-प्रेमी बनो, कामुक नहीं; मौन रहो, वाणी में सुस्त नहीं; साधारण वस्त्रों से संतुष्ट रहो, और दिखावा करना पसंद मत करो; अपनी दृष्टि नीची रखो, परन्तु अपना मन ऊँची बातों पर लगाओ; अपने चारों ओर देखो, कहीं पाप का तीर तुम्हारी लापरवाही से तुम्हें न भेद दे। और अंत में इसका क्या परिणाम होगा? – परिश्रम के बजाय विश्राम तैयार किया जाएगा; पराक्रम के बजाय मुकुट; अपमान के बजाय सम्मान और महिमा; अपमान के बजाय – प्रशंसा; भेदी घावों के बजाय – हर्षोल्लासपूर्ण अभिवादन; दासता के बजाय – दस नगरों पर अधिकार; माता-पिता और परिजनों से अलगाव के बजाय – हमारे प्रभु यीशु मसीह का वारिस और संयुक्त वारिस; अपनी इच्छा का त्याग करने के लिए – प्रथम शहीद स्तेफन के बगल में एक स्थान; और वह अस्थायी, क्षणिक और एक छाया की तरह क्षणभंगुर है, जबकि यह शाश्वत, अमर और अनंत है।

24. यदि आप स्वर्ग के राज्य को प्राप्त करना चाहते हैं, यदि आप अनंत जीवन का स्वाद चखना चाहते हैं, यदि आप पुत्रत्व की स्थिति प्राप्त करना चाहते हैं, यदि आप स्वर्ग के निवासी बनना चाहते हैं, यदि आप अब्राहम की गोद में विश्राम करना चाहते हैं, यदि आप बिना हाथों से बने वधू-कक्ष में प्रवेश पाना चाहते हैं, या इसी प्रकार की कोई अन्य वस्तु प्राप्त करना चाहते हैं, तो यह सब आपके लिए संभव, सुलभ, पहुँच में और तैयार है। – परन्तु यदि आप इन सब के विपरीत की इच्छा रखते हैं – न बुझने वाली आग, एक कीड़ा जो कभी नहीं सोता, गेहेना की ज्वालाएँ,

दाँत पीसना, बकरियों का भाग, दुष्टों का भाग्य – तो आप इन सबका सामना करेंगे; ईश्वर न करे कि ऐसा कभी आपको होवे! लेकिन ऐसा नहीं होगा, जब तक हम अच्छा जीवन न जिएँ, जब तक हम एक अच्छा स्वभाव न अपनाएँ, और अपने बुलावे में दृढ़ न रहें। जो कोई ऐसा व्यक्ति है वह अपनी आत्मा को बचाता है, अपने भाइयों को बचाता है, और मुझे, एक दीन आत्मा को, बचाता है। जो कोई भलाई करता है और परमेश्वर के भय में चलता है, वह प्रभु के सामने धर्मी है; उसका वचन और उसका चेहरा धर्मी है; वह धन्य है, और वह एक धन्य स्मृति पीछे छोड़ जाएगा।

25. कठोर हृदय वालों को कठोर हृदय होने से, अवज्ञाकारियों को अवज्ञा करने से, आज्ञा न मानने वालों को आज्ञा न मानने से, और घमण्डी लोगों को घमण्ड करने से क्या लाभ होता है? क्या वह क्रोध के दिन और परमेश्वर के धर्मी न्याय के प्रकट होने के दिन अपने लिए क्रोध संचित नहीं कर रहा है? और क्या उसका काम लकड़ी, भूसे और पुआल के समान नहीं है, और क्या यह उस पर नहीं होगा: *'उसका काम जलकर नष्ट हो जाएगा; वह स्वयं तो बच जाएगा, पर आग से होकर'* (1 कुरिन्थियों 3:12, 15)? अर्थात्, आने वाले युग में वह अपने शरीर में नरक की आग से झुलस जाएगा; जबकि उसकी आत्मा को अतुलनीय और अनंत यातनाएँ दी जाएँगी, और उसका हृदय टुकड़े-टुकड़े हो जाएगा, क्योंकि वह संतों की महिमा को देखेगा, उसकी लालसा करेगा, परन्तु स्वयं को सदैव के लिए उससे वंचित पाएगा। आप में से किसी पर भी ऐसा भाग्य या अवस्था न आए! अत; जब तक हम यहाँ हैं, आइए हम परमेश्वर के भय की अग्नि से स्वयं को शुद्ध करें, कहीं ऐसा न हो कि हमें भविष्य की उस ज्वाला का अनुभव करना पड़े।

८०. मैं तुम्हारी आज्ञाकारिता की प्रशंसा करता हूँ: इसी प्रकार जारी रखो; और जो लोग कर्तव्य सौंपते हैं और जो उन्हें पूरा करते हैं—और जो उन्हें प्राप्त करते हैं—वे सभी परमेश्वर के प्रति भय-सहित आचरण करें

८०. १) मैं आपकी आज्ञाकारिता की प्रशंसा करता हूँ: इसी प्रकार जारी रखें; और जो कार्य और निर्देश देते हैं, और जो उन्हें प्राप्त करते हैं, दोनों ही परमेश्वर के प्रति श्रद्धा के साथ कार्य करें। – २) दया के कार्यों में प्रचुरता से बढ़ें, परमेश्वर का अनुकरण करें, यदि हम अपने कार्यों में सफल हों तो घमंड न करें, और यदि हम सफल न हों तो निराश न हों। [२, २]

1. देखो कि तुम कैसे बढ़ रहे हो, कैसे प्रतिष्ठा में बढ़ रहे हो, कैसे स्वयं को परिपूर्ण कर रहे हो, परमेश्वर और हमारे लिए क्या फल दे रहे हो, और कैसे, एक अच्छा जीवन जीकर, आज्ञाकारिता के द्वारा अपनी आत्माओं को जीत रहे हो। आपने अपनी नम्रता में अपने जीवन की सींग को ऊँचा किया है; अपनी आज्ञाकारिता में आपने अपने विवेक की गवाही दी है, कि आप अपने कर्तव्यों को कपट या पाखंड के बिना पूरा करते हैं। और आप हमेशा ऐसे ही रहें। – उदाहरण के लिए, जब किसी को एक काम और किसी अन्य को दूसरे काम के लिए सौंपा जाता है, तो यह काम, मैं आपसे विनती करता हूँ, न तो पक्षपात से, न शत्रुता से, और न ही लापरवाही से किया जाए; परन्तु सर्व-द्रष्टा परमेश्वर की उपस्थिति में, एक व्यक्ति काम सौंपे, और दूसरा उसे समझदारी, निष्ठा और प्रशंसनीय ढंग से स्वीकार करे, ताकि उस दिन वे यह सुन सकें: *'शाबाश, हे भले और विश्वासयोग्य दास; तू थोड़ी सी बात में विश्वासयोग्य रहा, मैं तुझे बहुत में लगाऊँगा: अपने प्रभु के आनन्द में प्रवेश कर'* (मत्ती 25:21)। मुझे क्षमा करें, परन्तु जो परमेश्वर का भय न मानकर पक्षपात से काम करते हैं—चाहे भाइयों को उनकी आवश्यकता की वस्तुएँ—कपड़े, जूते—प्रदान करने में, या कर्तव्य सौंपने में—वे ऐसी आवाज़ के अयोग्य हैं; बल्कि वे यह सुनेंगे: *'शापित है वह जो परमेश्वर का काम आलस्य से करता है'* (यिर्म. 48:10)। यह कितनी बुराइयों को जन्म देता है? एक ओर, दासता; दूसरी ओर, शिकायत और शांतिपूर्ण संबंधों में व्यवधान। मैं यह इसलिए नहीं कह रहा हूँ कि जो प्राप्त करते हैं वे बाँटने वालों के विरुद्ध उठ खड़े हों, बल्कि इसलिए कह रहा हूँ कि आप, जो बाँटने वाले हैं, जो आपके सुपुर्द किया गया है, उसके प्रशासन में परमेश्वर के भय और भाईचारे के प्रेम से, सर्वोत्तम संभव तरीके से कार्य करें। यदि आप इस प्रकार कार्य करेंगे, तो व्यवस्था, शांति और सुकून और भी मज़बूत होंगे और हमारे सबसे प्रिय भाईचारे में और भी गहरी जड़ें जमा लेंगे।

२. मैं आपसे निवेदन और विनती करता हूँ: अपने हृदयों को हर प्रकार के सद्प्रयास से भर लें; एक दूसरे के प्रति परस्पर प्रेम में स्वयं को समर्पित करें; एक दूसरे की सफलता में आनन्दित हों और अपने पड़ोसी के ठोकर खाने पर दुखी हों। प्रेरित कहते हैं, *'जैसा मिट्टी का मनुष्य है, वैसे ही मिट्टी की वस्तुएँ हैं; और जैसा स्वर्गीय मनुष्य है, वैसे ही स्वर्गीय वस्तुएँ हैं'* (1 कुरिन्थियों 15:48)। लेकिन स्वर्गीय परमेश्वर *"दया और न्याय से प्रेम करता है"* (भजन संहिता 32:5), और *"सम्पूर्ण पृथ्वी उसकी दया से परिपूर्ण है"* (118:64), जैसा कि संत दाऊद गाते हैं। आइए हम भी उनका अनुकरण करें, और आइए हम यह अभी करें; कल हम किसी और चीज़ के लिए प्रयास करेंगे, और इस बीच न तो असफलता के कारण हतोत्साहित होंगे और न ही सफलता पर घमंड करेंगे। परन्तु बाद वाले के लिए हम प्रभु का धन्यवाद देंगे: क्योंकि यह *'न तो इच्छा करने वाले की, और न दौड़ने वाले की, बल्कि उस परमेश्वर की कृपा की है जो*

दया दिखाता है (रोमियों 9:16); जहाँ तक पहले वाले का सवाल है, आइए हम धैर्य रखें, और यह हमारा होगा: क्योंकि प्रभु हमें आश्वासन देते हैं कि '*जो कोई खोजता है वह पाता है, और जो लोग खटखटाते हैं, उनके लिए दरवाज़ा खोला जाएगा*' (मत्ती 7:8)। इस प्रकार, दिन-प्रतिदिन आप अपनी आत्माओं का उद्धार साधेंगे, और लगातार ऊँचाई पर चढ़ते जाएँगे। अब सच्ची, अक्षय प्राप्ति का समय है – एक दौड़ (प्रतियोगिता) का समय, लेकिन एक आध्यात्मिक दौड़ – समृद्धि का समय, लेकिन शाश्वत आशीर्वादों के साथ। धन्य है जो दौड़ता है; तीन गुना धन्य है जो सहन करता है; परम धन्य है जो अपने भीतर प्रतिदिन ईश्वर की लालसा और उनके प्रति प्रेम की अग्नि प्रज्वलित करता है।

८१. हम वासना के उदय से सावधान रहें, जो तलवार से भी अधिक भयानक है, स्वयं को आज्ञाओं से ढालकर और पाप से घृणा से लैस होकर। – २) आज

८१. १) हमें यह ध्यान रखना चाहिए कि वासनाओं का उदय तलवार से भी अधिक भयानक होता है, इसलिए हम आज्ञाओं से अपनी रक्षा करें और पाप से घृणा को अपना हथियार बनाएँ। – २) आज एक राक्षस उठता है, कल दूसरा: हमें उन्हें सभी को प्रभु के नाम पर और स्वयं को अच्छा करने के लिए मजबूर करके दूर करना चाहिए; और जब प्रायश्चित लगाया जाए तो हतोत्साहित न हों। [2, 4]

3. वे मुझ पर अपनी तलवारें तेज करें, वे मुझे घाव करें, वे मुझे निकाल फेंकें, वे मुझे मृत्यु की धमकी दें; मैं इन चीज़ों से उतना नहीं डरता जितना मैं अपने विनम्र आत्मा के भीतर उठने वाले शैतान के हमले से डरता हूँ, जब पाप, मेरे शरीर में राज करते हुए, किसी सशस्त्र सेना की तरह, सद्गुण के विरुद्ध उन्मत्त वासनाओं की भीड़ को भेजता है। तब मैं पापी आनंद के तीर से डरता हूँ, जो मांस को नहीं बल्कि हृदय को घायल करता है; तब मुझे उस रक्त का भय है जो पृथ्वी पर नहीं, बल्कि एक अदृश्य तलवार द्वारा आत्मा पर बहाया जाता है। यही है जिससे मैं भयभीत हूँ, और यही है जो मुझे काँपने पर मजबूर करता है। अतः हे मेरे भाइयो, हम चौकस रहें, और सावधान रहें कि कोई बदनाम करने वाला, या घमंडी विचार, या पाप की मिठास, – एक शिकारी, या विद्रोही अवज्ञा, या विनाशकारी आत्म-इच्छा, या पश्चाताप रहित कठोरता, या अडिग हठधर्मी, या अविश्वसनीय आत्म-न्याय, या कुछ और जो आत्मा को विचलित कर सकता है। परन्तु हम दैवी आज्ञाओं से ऐसे ढालें बना लें जैसे कि वे किलेबंदी हों; और हम हमेशा अखंड और सुरक्षित रहेंगे। यदि, तथापि, कभी ऐसा हो कि कोई ऐसा शिकारी प्रवेश कर जाए, तो जैसे ही हम उसे देखें, उसे तुरंत पकड़ लें, बाँध दें, और अपने से बहुत दूर फेंक दें। आइए हम सबसे बढ़कर वासनाओं के विरुद्ध खुद को इस प्रकार सशस्त्र करें कि हम एक अभेद्य हृदय और एक दृढ़ आत्मा का विकास करें, ताकि जब हम पर आक्रमण किया जाए, तो हम गिर न जाएँ, बल्कि उन अदृश्य शत्रुओं को खदेड़ दें और उनसे दूर भगा दें जो हमारे विरुद्ध उठते हैं।

4. आज एक ऐसा राक्षस हमसे लड़ रहा है, कल दूसरा हमला करेगा, और उसके बाद एक और – उदाहरण के लिए व्यभिचार, लालच, अहंकार, घमंड, अभद्रता, स्वार्थ और अनगिनत अन्य वासनाएँ। हमें उन सभी के विरुद्ध खड़ा होना चाहिए, उन सभी से युद्ध करना चाहिए और उन सभी को परास्त करना चाहिए, हमारे प्रभु यीशु मसीह के नाम पर, जो न्याय के दिन हमें विजय की माला से सजाएंगे। धन्य हो तुम, मेरे भाइयो, जो इन वचनों को सुनते हो, इन्हें समझते हो और इन्हें मानते हो; मैं यह भी जोड़ना चाहूँगा, कि जो मन के युद्ध में प्रतिदिन परिश्रम करते हो। क्योंकि उद्धार का काम आवश्यक है, और स्वर्ग का राज्य केवल उन्हीं का है जो इसके लिए प्रयास करते हैं। इसलिए, जब आप परीक्षा में पड़ें तो आश्चर्यचकित न हों; क्योंकि यह आपको परखने और युद्ध के लिए प्रशिक्षित करने के लिए आता है। जब आपको डाँटा जाए, फटकारा जाए, प्रायश्चित दिया जाए, या, यदि आवश्यक हो, चर्च से बहिष्कृत किया जाए तो हतोत्साहित न हों; बल्कि प्रसन्न रहें, सतर्क रहें, और बड़े उत्साह के साथ कार्य में लग जाएँ; क्योंकि इसी में आपका उद्धार है, इसी में आपकी सफलता है, इसी में आपका बलिदान है, और इसी के लिए मुकुट हैं।

८२. भाई ने छोड़ दिया है। क्यों? उसने स्वयं पर ध्यान नहीं दिया और मोहक विचारों के आगे झुक गया; यदि उसने स्वयं पर ध्यान दिया होता, तो भजन संहिता की सलाह उसे सही मार्ग पर ले आती; और उसकी इच्छा दृढ़ नहीं थी

८२. १) भाई चला गया। क्यों? उसने स्वयं पर ध्यान नहीं दिया और मोहक विचारों के आगे झुक गया; यदि वह स्वयं पर ध्यान देता, तो भजन संहिता की सलाह उसे सही मार्ग पर ले आती; और उसकी इच्छा दृढ़ नहीं थी। – 2) सांसारिक राजा के सैनिक सांसारिक लाभ के लिए उससे वफादार रहते हैं: क्या हमें स्वर्गीय राज्य के लिए स्वर्गीय राजा से वफादार नहीं रहना चाहिए? इसलिए आइए हम भी ऐसा ही करें, अपने पूर्वजों के उदाहरण का अनुसरण करते हुए। [2, 5]

5. मैंने आपको शत्रु की बदनामी से सावधान रहने के लिए कहा है। अब मैं स्वयं के प्रति लापरवाह होने के दुष्ट परिणाम को बताऊँगा: हमारा दीन भाई अबकूम हमसे भाग गया है। निश्चय ही ऐसा इसलिए हुआ क्योंकि उसने स्वयं पर ध्यान नहीं दिया और उसमें आत्म-सतर्कता की कमी थी। उसने ऐसे विचारों को पनाह दी जो न तो ईश्वर के प्रति विश्वासयोग्य थे और न ही धार्मिक—ऐसे विचार जो उसकी रक्षा कर सकते थे—बल्कि मोहक विचार, जिन्होंने उसके आत्मा से ईश्वर और उसके सत्य को छिपा दिया; और इसीलिए उसे वह कष्ट झेलना पड़ा: उसने खुद को हमारे बीच से बहिष्कृत कर लिया और शैतान के पदचिन्हों पर चल पड़ा। और अब वह कहाँ भटक रहा है, जैसे जंगली जानवरों द्वारा नोचे गए भेड़ के बच्चे की तरह, बिना किसी मार्गदर्शन या चरवाहे के? – वह अब परमेश्वर की स्तुति कैसे कर सकता है, जिससे वह अपने व्रत तोड़कर दूर हो गया है? ऐसा मार्ग अपनाने के बाद वह कैसे गा सकता है: *'धन्य है वह मनुष्य जो दुष्टों की सलाह पर नहीं चलता'* (भजन संहिता 131:14)? या वह यह कैसे कह सकता है: *'यह मेरी सदा-सदा के लिए विश्राम-स्थली है; मैं यहाँ निवास करूँगा, क्योंकि मैंने इसे चुना है'* (भजन संहिता 131:14)? और ये वचन: *'मैंने धीरज से यहोवा की प्रतीक्षा की है; उसने मेरी ओर अपना कान लगाया और मेरी विनती सुनी है'* (भजन संहिता 39:2) उससे कोसों दूर हैं। वह भजन संहिता के निम्नलिखित शब्दों को अपने लिए अधिक उपयुक्त पाएगा: *'तेरी आज्ञाओं से मुंह फेरने वाले श्रापित हैं'* (भजन संहिता 118:21)। वह शापित है, और वह ऐसा ही रहेगा, जब तक कि प्रभु परमेश्वर, मेरे और आपके पिता की प्रार्थनाओं के द्वारा, और आपकी सहायता से, उसे पश्चाताप की ओर न ले आए। लेकिन ऐसा हमारे साथ क्यों होता है? शैतान हमें अपनी दया पर क्यों पाता है और हमें उठा ले जाता है? हम खुद को ईश्वर के भय से दृढ़ता से बँधे रहने और हमारे ईश्वर मसीह के प्रेम के कवच को धारण करने से क्यों रोकते हैं? हम खुद को अपनी ही वासनाओं से पराजित होने क्यों देते हैं और इस प्रकार ठंडे, व्यभिचारी, अस्थिर और, सीधे शब्दों में कहें तो, निष्फल क्यों हो जाते हैं? हमारे पूर्वजों में हमारी आस्था कहाँ है? हमारे भाइयों के प्रति हमारा प्रेम कहाँ है? और आप कामुक और मानसिक प्रलोभनों से खुद को कैसे बचाएंगे, जब आपको थोड़ा सा भी दुख छू लेता है, तो आप पूरी तरह से हार जाते हैं और, मुकाबले के मैदान में प्रवेश किए बिना ही, पीछे हट जाते हैं?

6. क्या तुम पृथ्वी के राजा के सिपाहियों को देखते हो – कैसे वे उसकी वफ़ादारी करते हैं, उसके लिए लड़ते हैं और अपना खून बहाते हैं? और किस कारण से? – कुछ सम्मान या पद प्राप्त करने के लिए। हमारे कर्म ऐसे नहीं हैं। वे सभी के एक शाश्वत और अदृश्य राजा, परमेश्वर की खातिर हैं – और किसी सांसारिक चीज़ के लिए नहीं, बल्कि स्वर्ग के राज्य को प्राप्त करने के लिए, प्रभु मसीह के सह-वारिस बनने के लिए, उस में भाग लेने के लिए जिसे न तो किसी आँख ने देखा है, न किसी कान ने सुना है, और जो मानव हृदय में भी प्रवेश नहीं किया है। और फिर भी हम सभी, न ही हम हमेशा, उस के प्रति विफादार रहते हैं; हम बहकाए, फुसलाए और बहकावे में ले जाए जा सकते हैं। लेकिन क्या हमें होशियार नहीं रहना चाहिए? क्या हमें खुद को मजबूत नहीं करना चाहिए? क्या हमें लहू बहाए जाने तक भी दृढ़ नहीं रहना चाहिए? क्या हमारा जन्म ऊपर से नहीं है? क्या हम प्रकाश के पुत्र नहीं हैं? तो फिर हम आज्ञाकारिता के बच्चे होने का प्रदर्शन करने में कैसे चूक सकते हैं? हम यह दिखाने में कैसे चूक सकते हैं कि हम एक पवित्र बीज हैं? हम हर विचार को मसीह की आज्ञाकारिता के अधीन लाने में कैसे विफल हो सकते हैं? हम सांसारिक बुद्धि से ऊपर उठने में कैसे विफल हो सकते हैं? हम मसीह के लिए मरने में कैसे विफल हो सकते हैं, जबकि हमें दिन में कम से कम एक बार तो उसके लिए मरना ही चाहिए? – आओ अब, मेरे बच्चों! आइए हम सामर्थ्य के पुत्र, मसीह के योद्धा, वास्तव में परमेश्वर के लोग, स्वर्गदूतों का एक गायन-मंडली, एक अविचल सेना बनें, जो हमारे पवित्र पिताओं और उन धन्य लोगों के उदाहरण का अनुसरण करें जो उनके मार्गदर्शन में रहे, ताकि हम शैतान को अपने पैरों तले रौंद सकें और उसे तुच्छ समझें, ठीक वैसे ही जैसे संत सलिवानस, आदरणीय डोसथियिस, सदा-स्मरणीय ज़कारियास, और आदरणीय लोगों के सभी शिष्यों के समान बनें। क्योंकि केवल डोसथियिस, न केवल सल्विानस, न ही केवल ज़कारियास ही महिमामंडित हैं, बल्कि उनके सभी विश्वासयोग्य शिष्य और अनुयायी भी उनकी महिमा में सहभागी हैं। मैं आपसे विनती करता हूँ, कि हम भी उनके समान बनें। हम शत्रु की बदनामी से खुद को पराजित न होने दें; हम उनके धमकियों से न डरें; हम पापपूर्ण जीवन द्वारा खुद को मृत्यु के घाट उतारे जाने न दें; बल्कि हम अपने जीवन के शेष सभी दिनों और घंटों को अपने प्रभु परमेश्वर को प्रसन्न करते हुए जिएँ।

83. कुछ भी हमें परमेश्वर के प्रेम से अलग न करे; परन्तु हम अपने परिश्रम और सद्गुणों में तब तक लगे रहें जब तक हम मसीह के स्तर को प्राप्त न कर लें।

83. 1) हमें परमेश्वर के प्रेम से कुछ भी अलग न करे; बल्कि हम अपने श्रम और सद्गुणों में तब तक दृढ़ रहें जब तक कि हम मसीह के स्तर को प्राप्त न कर लें। – 2) संसार को त्यागकर, हमने एक महान कार्य पूरा किया है;

तो आइए, हम लापरवाही और आत्म-संतुष्टि के कारण इस प्रयास पर कलंक न लगाएँ, बल्कि हम संतों के उदाहरण का अनुसरण करें। [2, 6]

7. जब लोगों पर कोई विपत्ति आती है, और सभी उथल-पुथल में होते हैं, तो हमें दिन-रात परमेश्वर के सामने गिरना चाहिए, आँसुओं और आहों के साथ प्रार्थना करते हुए कि वह अपना क्रोध दया में बदल दे, और दुनिया में शांति बहाल करे, क्योंकि ऐसी घटनाओं के माध्यम से उनकी अगम्य बुद्धि प्रकट होती है—फिर भी इस प्रक्रिया में अपने आध्यात्मिक कर्तव्यों की उपेक्षा किए बिना, बल्कि हम पर आने वाली सामान्य विपत्ति को भी उनके लाभ में बदल देते हैं। क्योंकि, जैसा कि प्रेरित ने कहा है, *'जो लोग परमेश्वर से प्रेम करते हैं, उनके भले के लिए सब कुछ मिलकर काम करता है'* (रोमियों 8:28); ताकि न तो वर्तमान विपत्ति, न ही कोई और अधिक भयानक विपत्ति, या, प्रेरित के शब्दों में कहें तो, *'न मृत्यु, न जीवन, न स्वर्गदूत, न प्रधानताएँ, न शक्तियाँ, न वर्तमान की, न भविष्य की कोई बात, न ऊँचाई, न गहराई, और न कोई अन्य प्राणी, हमें परमेश्वर के प्रेम से, जो हमारे प्रभु यीशु मसीह में है, अलग कर सकेगा'* (रोमियों 8:38-39)। इसलिए, जब हम अपना हृदय परमेश्वर की ओर उठाते हैं और वहाँ संचित आशीषों को निहारते हैं, आओ हम अपने सामने रखे गए कार्य को आनंद, दृढ़ता और उत्साह के साथ करें, न तो निराशा से सुस्त पड़ें, न उपवास से कमजोर हों, न जागने से थकें, न प्रार्थना से ऊबें, न अन्य आज्ञाओं को पूरा करने के श्रम से सुन्न हो जाएँ; परन्तु इन सब की ओर, किसी भोज और आनन्द की ओर, या यूँ कहें कि प्रकाश की ओर, स्वयं परमेश्वर की ओर, यत्न और शीघ्रता से बढ़ते हुए; और इस प्रकार हम आज्ञाओं के पालन में शक्ति से शक्ति तक, और गुणों से स्वयं को सजाने में महिमा से महिमा तक आरोहण करेंगे, दिव्य सिद्धियों में दिन-प्रतिदिन अधिक समृद्ध होते हुए, *'जब तक हम सब विश्वास की एकता में, मसीह की पूर्णता के माप तक न पहुँच जाएँ'* (इफिसियों 4:13), जिनके लिए हम संसार के प्रति और संसार हमसे प्रति सूली पर चढ़ाए गए हैं (गलातियों 6:14), जिनके लिए हम ने सब कुछ त्याग दिया और उन्हें हानि समझा, ताकि हम केवल उन्हीं को प्राप्त कर सकें (फिलिप्पियों 3:8)।

8. देखो, मेरे बच्चों, हमने संसार से भागकर और सभी सांसारिक चीजों, अपने रिश्तेदारों और मातृभूमि, अपने माता-पिता, भाइयों और बहनों, अपने नगरों और घरों, और वास्तव में हर उस चीज़ को त्यागकर जो देह और रक्त को आराम देती है, क्या एक बड़ा और महत्वपूर्ण कार्य पूरा किया है? – आओ, हम आलस्य, लापरवाही और असावधानी के द्वारा अपने ऐसे कार्य पर शर्म न लाएँ; और ऐसा तब होगा जब हम देह की इच्छाओं को पूरा करना शुरू कर देंगे और आत्मा के भावों के अनुसार काम करेंगे। हमारे पवित्र और सम्माननीय पूर्वज ऐसे नहीं थे, जिन्होंने हमें ईश्वर-सदृश विनम्रता, निस्संदेह आज्ञाकारिता, सच्ची आस्था, संसार से वैराग्य, ईश्वर के प्रति प्रेम, अद्भुत कारनामों और धार्मिक कार्यों के उदाहरण दिए। आइए, हम भी उनका अनुकरण करें, उनके पदचिन्हों पर चलने का प्रयास करें, ताकि हम उनकी आशीर्वादों में हिस्सेदार बनने के योग्य माने जाएँ।

84. ऐसे दुष्ट लोग कौन हैं? सभी जो दुष्टता से रहते हैं; विशेष रूप से वे जो अपने संकल्पों के विपरीत, मठ की मामूली व्यवस्थाओं से असंतुष्ट हैं

८४. १) ऐसी दुष्टता का दोषी कौन नहीं है? वे सभी जो दुष्टता से जीवन यापन करते हैं; विशेष रूप से वे जो अपने संकल्पों के विपरीत, मठ की मामूली व्यवस्थाओं से असंतुष्ट हैं। – २) भोजन में जो कुछ भी परोसा जाता है, उससे संतुष्ट रहना चाहिए, और किसी भी सांसारिक आराम को शाश्वत आराम में कमी मानना चाहिए, जैसा कि मैं स्वयं हमेशा महसूस करता हूँ। – 3) हमारा भोजन खराब नहीं है; और औषधालय में, भोजन और बाकी सब कुछ बहुत अच्छा है। – 4) मैं यह जोड़ूँगा: तुम स्वयं मठ में कुछ भी नहीं लाए, फिर भी तुम यह-वह माँगते हो; इस बीच, तुम लगभग कुछ भी करने में सक्षम नहीं हो, जबकि तुमसे बेहतर अन्य लोग हर तरह से परिश्रम करते हैं और सहन करते हैं। परमेश्वर का धर्मी क्रोध तुम पर है। [2, 7]

9. *'नश्वर भोजन के लिए परिश्रम न करो,'* प्रभु कहते हैं, *'परन्तु उस भोजन के लिए जो अनन्त जीवन तक रहता है'* (यूहन्ना 6:27), अर्थात् आज्ञाओं का पालन करो, *'दिन-रात प्रभु की व्यवस्था का अध्ययन करो'*, ताकि तुम दिव्य दाऊद के शब्दों में *'पानी की धाराओं के किनारे लगाए गए वृक्ष'* की तरह हो जाओ; और तुम्हारा *'फल'* *'अपने समय पर दिया जाए'*, और तुम्हारे उद्धार की *'शाखा'* आने वाले युग में *'न मुरझाए'*। *'दुष्टों के समान नहीं, उनके समान नहीं, बल्कि उस धूल के समान जो हवा पृथ्वी के मुख से उड़ा ले जाती है'* (भजन संहिता 1:3-4)। आओ हम *'दुष्ट'* न केवल उन लोगों को मानें जो गलत विश्वास करते हैं, बल्कि उन सभी को भी जो प्रभु की आज्ञाओं का उल्लंघन करते हैं; और जहाँ तक हमारे वर्ग का संबंध है, इनमें अवज्ञाकारी, अहंकारी, चिकनी-चुपड़ी बातें करने वाले, व्यर्थ के लोग, अभद्र लोग, साथ ही वे भी शामिल हैं जो चोरी-छिपे खाते हैं, शिकायत करने वाले, जो अपना दिखावा करना पसंद करते हैं, जिज्ञासु (हमेशा जानकारी के लिए ताक-झाँक करने वाले), आलसी, लापरवाह, फुसफुसाने वाले, अवज्ञाकारी,

बदनाम करने वाले, और सबसे बढ़कर कृतघ्न और जो उचति से अधकि की माँग करते हैं? – वे ईश्वर द्वारा दिए गए उपहारों (अर्थात् मठ में सभी को जो कुछ भी दयिा जाता है) से संतुष्ट नहीं हैं, बल्कि अपनी आत्मा की देखभाल और ईश्वर के प्रतिश्रद्धा की उपेक्षा करके और अपने शरीर के सुखों में लिप्त होकर, वे ऐसे भोजन और पेय की खोज और मांग करते हैं जिनके वे हकदार नहीं हैं, और उन पर अपने शरीर की बनावट, आदतों और कमजोरियों को बहाना बनाकर झगड़ते हैं। और यह एक अच्छी बात होती अगर वे सचमुच बीमार पड़ जाते; शायद इससे वे सभी बीमारियों में सबसे बड़ी बीमारी – कृतघ्नता से मुक्त हो जाते। – मानो उन दुरात्माओं ने भूल ही गए हों कि जब वे हमसे जुड़े थे तो उन्होंने ईश्वर से क्या वादा किया था, और क्या उन्होंने अदृश्य और दृश्य दोनों तरह के कई गवाहों के सामने कबूल नहीं किया था! क्या उन्होंने भूख और प्यास सहने, हर तरह के दुख और कठिनाई, अकाल, उत्पीड़न, यातना और मृत्यु को झेलने का वादा नहीं किया था? और अब वे शराब और भोजन के लिए युद्ध कर रहे हैं! – पर जैसे उन्होंने अपने व्रत का तिरस्कार किया है, वैसे ही उनका भी तिरस्कार किया जाएगा; और जैसे वे यह याद रखने में असफल रहे कि ईश्वर उनके वचनों के साक्षी और सुनने वाले थे, वैसे ही मुझे डर है कि '*वह उन्हें एक भ्रष्ट मन के हवाले कर दे, ताकि वे अनुचित काम करें*' और हानिकारक (रोमियों 1:28)।

10. अत; हे जो कोई भी हो, होश में आओ; सबसे बढ़कर, अपनी आत्माओं को सुस्ती से, दिव्यता की उपेक्षा से, सांसारिकता से, 'न तो गर्म और न ही ठंडा' होने की अवस्था से जगाओ। दिव्य प्रेम और भय से प्रज्वलित हो जाओ। अनुशासन को स्वीकार करो और धार्मिकता के कवच से स्वयं को सुसज्जित करो। काँपो और डरो, और मेज़ पर जो परोसा जाता है उस पर झगड़ा न करो। मैं उस समय की बात नहीं कर रहा जब शोरबा, मछली और पनीर हो, बल्कि जब केवल तेल वाली सब्ज़ियों के साथ रोटी, ज़्यादा पके हुए सेम, या कुछ इसी तरह का परोसा जाता है, तब भी इसे एक बड़ी सांत्वना समझो। और विनम्र-चित्त लोगों में से कौन इस बात से नहीं डरेगा, यह सोचकर कि कैसे ऐसी सुख-सुविधा भी उन्हें शाश्वत आशीर्वादों से वंचित कर सकती है? जहाँ तक मेरी बात है, मैं हर भोजन और पेय को नरक की यात्रा के लिए राशन मानता हूँ, विशेषकर उस भोजन को जो मुझे मेरी बीमारी के दौरान दिया गया था। मेरी बात मानिए, भले ही मैं पागलपन में बोल रहा हूँ, कि अगर मुझे हमारे साझा पिता की अवज्ञा करने के महान भय ने न पकड़ा होता, और अगर आपके विवेकपूर्ण शब्दों ने मुझे न मनाया होता, तो क्या मैं अपनी मृत्यु तक अपने खाने के सामान्य हिस्से को किसी भी तरह से नहीं बदलता? मैंने केवल इसी कारण से विभिन्न चीजें खाईं और पीं: लेकिन, मैं कहूँगा—और फिर से पागलपन में—मैंने ऐसा भारी मन से, कराह और दुख के साथ किया, एक ओर मेरी अयोग्यता के कारण, और दूसरी ओर आप जैसे अस्वस्थ लोगों की चिंता के कारण और मठ में कमी के कारण।

11. हालाँकि, हमारे प्रभु मसीह की कृपा से, हमारे पास जो कुछ भी चाहिए वह है: हे कृतघ्नो, परमेश्वर की महिमा करो! हम शराब पीते हैं, और तेल और मछली खाते हैं, और विश्राम करते हैं और चिकित्सालय में हमारा इलाज होता है – और यह सिर्फ एक या दो बार नहीं, बल्कि हर दिन होता है। – एक चुना हुआ भाई, जिसने बीमारियों के इलाज में अनुभव प्राप्त किया है, हमारा मुख्य परिचारक है; उसके तीन, चार या पाँच सहायक हैं; एक समर्पित रसोइया, एक समर्पित भंडारी, और एक समर्पित मरहम, पट्टी, पट्टा और ड्रेसिंग तैयार करने वाला; और वहाँ का काम एक पल के लिए भी नहीं रुकता। और खर्च भी काफी हैं: हर दिन मछली दी जाती है, जो या तो मौत की सजा पाए कैदियों—तीन या चार मछुआरे—से या बाज़ार से प्राप्त की जाती है; बहुत सारी शराब—और वह भी किस किस्म की—पहले भी और अब भी पी जाती रही है; साथ ही जैतून, शहद, अच्छी रोटी, और भी बहुत कुछ। – हम, कृतघ्न होते हुए भी, इन सब के लिए धन्यवाद दिए बिना कैसे रह सकते हैं? हम ईश्वर की महिमा किए बिना कैसे रह सकते हैं? हम उसकी स्तुति किए बिना कैसे रह सकते हैं?

12. मैं यह जोड़ना चाहूँगा: हमने स्वयं मठ में कुछ भी नहीं लाया है, और हमारी मेहनत से कोई लाभ नहीं होता; फिर भी हमसे लगातार यह-वह लाने के लिए कहा जाता है। – और फिर भी हम किसी भी काम के नहीं हैं, न तो द्वार पर खड़े होने के लिए और न ही भोजनशाला में सेवा करने के लिए। फिर भी, हम इतने असंवेदनशील और मूर्ख हैं कि हमें यह एहसास भी नहीं है कि हम शायद इस संप्रदाय के आखिरी लोग हैं, और यह कि दूसरे—हमसे अधिक सम्मानित—हमारे भाई और पिता, कुछ मठ के बाहर और कुछ अंदर, अब ठंड और हवा में, अब गर्मी और तपती धूप में—बस दासों की तरह—खुदाई करते हैं, हल चलाते हैं, बेलों की छँटाई करते हैं, धोते हैं, सिलते हैं, लोहे का काम करते हैं, और पैदल ही शहर में, खेतों में और पहाड़ों पर काम के लिए जाते हैं – वे खुद को थका-हार कर काम करते हैं; फिर भी वे यह सब धैर्यपूर्वक सहन करते हैं। – सचमुच, स्वर्ग का राज्य ऐसे ही लोगों का है! परन्तु हे अंधा, हे कठोर-हृदय, हे कपटी, हे निराश! सावधान रह, कहीं ऐसा न हो कि उस दिन तू यह सुन ले: *'उसके हाथ-पाँव बाँधकर उसे बाहर की अँधेरी में फेंक दो'* (मत्ती 22:13)। तेरी विपत्ति हो! तुम परमेश्वर के क्रोध की परवाह नहीं करते, यह देखते हुए कि वह तुम्हें तुरंत दंड नहीं देता। सचमुच, तुम्हारे विषय में कहा गया है: *'मूर्ख अपने मन में कहता है, 'परमेश्वर नहीं है''* (भजन संहिता

52:2)। क्यों? क्योंकि तुम *'अपने कामों में भ्रष्ट और घृणित हो गए हो, और तुम भलाई नहीं करते। परन्तु प्रभु* दिन-प्रतिदिन *'स्वर्ग से नीचे देखता है'* (भजन संहिता 13:1,2), *और 'देखता है कि कौन समझता है और उसकी खोज करता है'*, और वह ऐसे लोगों का नाम जीवन की पुस्तक में अंकित करता है, जबकि बाकी लोगों को अनदेखा कर देता है। मुझे डर है कि यदि संत दाऊद न आए होते, तो वे आपके बारे में न गाते – और भजन के वचन आपके विषय में न पूरे होते: *'मैंने उन्हें उनकी माताओं के गर्भ में विभाजित किया है'* (भजन संहिता 16:14)। किन्हें? – इन दुष्टों को, धार्मिकता में चलने वालों से। – परन्तु *'हे परमेश्वर को भुलाने वालों, यह समझो: तुम्हें छीन लेने वाला कोई नहीं है, और तुम्हें छुड़ाने वाला कोई नहीं होगा'* (भजन संहिता 49:22)। और मुझे क्षमा करना, हे मेरे प्रिय बच्चों, क्योंकि मैंने मूर्खता में, प्रेम और आँसुओं के साथ, यह तुमसे कहा है, यह सोचकर कि मेरे लिए अब शब्दों से तुम्हें अनुशासित करना बेहतर है, बजाय इसके कि बाद में अनंतकाल की यातनाओं के अधीन होना पड़े, जिनसे हम सभी हमारे प्रभु यीशु मसीह की कृपा से छुड़ाए जाएँ।

85. यह दुखद है कि दो और चले गए हैं

85. 1) यह कड़वा है कि दो और चले गए। – 2) किसी को इस तरह स्वयं पर या दूसरों पर भरोसा नहीं करना चाहिए। – 3) हम बहुत कम करते हैं, फिर भी हम अपने आप में इतने भर जाते हैं कि हमें पता ही नहीं चलता कि हम कितनी ऊँचाई पर पहुँच गए हैं – और इसीलिए हम गिर जाते हैं। – 4) तो, अपना ध्यान रखो; और उनके लिए प्रार्थना करो। [2, 8]

13. एक बार फिर प्रलोभन, एक बार फिर बहकावा; एक बार फिर मैं, बेचारा, आँसुओं और विलाप में हूँ, कि मेरे प्रियजन मुँह मोड़ गए (दो भाई भाग गए), कि जो ऊँचे स्थान पर रहते थे वे नीचे गिरा दिए गए, कि वे *'जो स्वयं को बुद्धिमान समझते थे'* अंधकार में डाल दिए गए हैं, कि जो धार्मिकता में एक महान और लंबे संघर्ष और परिश्रम को सहन कर चुके थे, उन्होंने एक ही क्षण में सब कुछ खो दिया है, और मेरे लिए अंगूरों के बजाय काँटे, आनंद के बजाय दुख, और उस खुशी के बजाय दुर्भाग्य बन गए हैं जिसकी मैंने आशा की थी। और मुझे नहीं पता कि हमारे भाइयों के पतन और विनाश के बारे में क्या कहूँ या कैसे बोलूँ; सिवाय इसके कि बैठकर रोऊँ, यह कहते हुए: यदि ऐसा है, तो हे प्रभु, *'कौन बच सकता है'*।

14. इस प्रकार, किसी मनुष्य की प्रशंसा उसके जीवन के अंतिम क्षण तक नहीं करनी चाहिए। इस प्रकार, हमारे उद्धार का मार्ग पूरा करना इतना कठिन है। और शैतान के इतने सारे जालों से कौन बच पाएगा? और कौन अपने जीवन के अंतिम क्षण तक अपने ही बारे में व्यस्त नहीं रहेगा? उस पवित्र पिता ने, यह अच्छी तरह जानते हुए, मृत्यु के द्वार पर खड़े होकर भी, जब शैतान ने उनसे कहा, 'तुम मेरे चंगुल से बच गए हो', तो उत्तर दिया, 'मुझे नहीं पता।' वे अपने लिए इतने भयभीत थे कि उस अंतिम घड़ी में भी, ऐसा प्रतीत होता है, उन्होंने अपनी धार्मिक कष्टों के महान कार्यों के बावजूद, अपनी ही मुक्ति पर दृढ़ विश्वास करने की हिम्मत नहीं की।

१५. जहाँ तक हमारी बात है, यदि हम पाँच या दस वर्ष किसी मठ में बिताते हैं और मठीय नियम के आदी हो जाते हैं, या धर्मग्रंथ के कुछ अंश कंठस्थ कर लेते हैं, या इतने सारे प्रणाम करते हैं, या अधिक समय तक प्रार्थना करते और उपवास करते हैं, तो हम खुद को सब कुछ पूरा कर लेने वाला मान लेते हैं और घमंडी हो जाते हैं। इसी कारण से, *हम 'पत्तों की तरह गिर जाते हैं'* (नीतिवचन 11:14); हमारी *'हड्डियाँ नरक में कुचल जाती हैं'* (भजन संहिता 140:7), और हम *'खुशी मनाने से पहले ही मुरझा जाते हैं'* (भजन संहिता 128:6)। हम खुद को बुद्धिमान समझते हैं, हालांकि हम अनपढ़ हैं; वाक्पटु समझते हैं, हालांकि हम मौन हैं: हम खुद को शिक्षक, धर्मपरायणता के उत्साही और इसके वफादार प्रतिनिधियों के रूप में नियुक्त करते हैं; और हम दावा करते हैं कि सत्य केवल हममें ही निहित है। यही कारण है कि हम पर ऐसा भाग्य पड़ा है; यही कारण है कि हम अँधेरे को प्रकाश समझते हैं; यही कारण है कि, मानो स्वर्ग से, हम मसीह के दरबार और उनकी भेड़ों के झुंड से निर्वासित हो गए हैं।

16. हे मेरे भाइयो, मैं तुम से विनती करता हूँ, अपना ध्यान रखो, और अपनी सदाचार और विश्वास को धीरे-धीरे कम न होने दो, कहीं ऐसा न हो कि तुम बिलकुल ही निर्बल हो जाओ और विनाश के चंगुल में पड़ जाओ। और जो भटक गए हैं, उनके लिए हम प्रार्थना करें कि प्रभु उन्हें होश में लाए और हमें फिर से मिलाए।

86. मैं आपकी दृढ़ता और धैर्य से सांत्वना पाता हूँ; आगे बढ़ते रहो और और भी अधिक प्रयास करो – और परमेश्वर का आशीर्वाद तुम पर होगा; परन्तु जो ऐसे नहीं हैं वे परमेश्वर के नहीं हैं।

86. 1) मैं आपकी दृढ़ता और धैर्य से सांत्वना पाता हूँ; आगे बढ़ते रहें और और भी अधिक प्रयास करें – और ईश्वर का आशीर्वाद आप पर रहेगा; लेकिन जो ऐसे नहीं हैं, वे ईश्वर के नहीं हैं। – 2) हम बपतिस्मा, पश्चाताप और

अपने व्रत के द्वारा पूरी तरह से रूपांतरित और नए बनाए गए हैं: तो फिर हम उसको पुनर्निर्माण न करें जिसे हमने नष्ट किया है, और न ही उस संसार में लौटें जिससे हम आए हैं, जैसे इस्राएलियों ने मिस्र छोड़ने के बाद उसकी लालसा की; हो सकता है कि मेरे वचन आपको इसके लिए प्रेरित करें, और प्रभु आपकी सहायता करें। [2, 9]

17. मैं प्रतिदिन अपने पिता परमेश्वर का धन्यवाद करता हूँ, जो आपको अपने तपस्वी आज्ञाकारिता में दृढ़ रहने के लिए शक्ति और धैर्य देते हैं, और मैं विनम्रतापूर्वक प्रार्थना करता हूँ कि प्रभु आपकी आत्मिक आँखें और भी अधिक खोलें, ताकि आप उसकी सारी राहें देख सकें, उसके प्रति दिव्य प्रेम की लालसा को जान सकें, हर सांसारिक इच्छा को दबा सकें, और वासनाओं की शक्ति से ऊपर उठ सकें, ताकि आप *'हर भले काम में सिद्ध और पूर्ण हो सकें'* (कुलु. 4:12)। – और यह, जैसा कि आप जानते हैं, न तो कठोर प्रयास के बिना होता है, न ही पीड़ा के बिना, और न ही एक ही बार में; बल्कि इस शर्त पर कि, महान परिश्रम और आत्म-क्लेश के साथ, दिन-रात, हम अपनी प्रकृति को वश में करें और उस पर विजय प्राप्त करें, और हमारे सामुदायिक जीवन में हमें जो भी कष्ट मिलें, चाहे वे लोगों से हों या राक्षसों से, उन्हें सहन करें। क्योंकि जो कोई इस बोझ के नीचे नहीं घबराता, बल्कि ईश्वर की मदद से इन सबके बीच में सहन करता है और डटा रहता है: वह व्यक्ति *'प्रभु का आशीर्वाद और अपने उद्धारकर्ता ईश्वर की दया प्राप्त करेगा'* (भजन संहिता 23:5), और स्वर्ग के राज्य का योग्य समझा जाएगा। इसलिए, ऐसी पीड़ाओं को सहना, मसीह के कष्टों का वाहक बनना, और सांसारिक चीजों में लिप्त होकर—अर्थात् क्रोध और झगड़े के आगे झुककर—ऐसे कष्टों से मुंह न मोड़ना, अच्छा और धन्य है। अभद्रता और अहंकार, कलह और शत्रुता, अवज्ञा और झगड़ा, क्लेश और दुर्व्यवहार, बदनामी, झूठ और उपहास। ऐसे लोगों को मसीही कैसे कहा जा सकता है? क्या वे विद्रोह के पुत्र, क्रोध की संतान, और अनंत आशीर्वादों के नहीं बल्कि अनंत यातनाओं के वारिस नहीं हैं?

18. हे भाइयों, क्या तुम्हारा पद दूतों का नहीं है? क्या तुम्हारा जीवन पवित्र नहीं है? क्या तुम्हारा मार्ग परमेश्वर द्वारा चुना हुआ नहीं है? – परन्तु प्रेरित क्या कहता है? – *'क्योंकि यदि मैं इसे गिरा दूँ, तो मैं इसे फिर से बनाता हूँ: मैं अपने लिए अपराधी बनता हूँ'* (गलातियों 2:18)। हमने उस पुराने मनुष्य को त्याग दिया है, जो साँप के अनेक छल-कपट के परिणामस्वरूप सड़ रहा था; हमने उस चीज़ को त्याग दिया है जो पहले कड़वे अनुभव और निर्वासन-योग्य अवज्ञा का फल थी, और जिसके द्वारा मृत्यु, जो बहुत दुख का स्रोत है, संसार में प्रवेश किया; हमने अपने जन्म के पाप को त्याग दिया है, पहले जल और आत्मा के बपतिस्मा में, फिर, मानवजाति के प्रति परमेश्वर के महान प्रेम के द्वारा, पश्चाताप और संसार के त्याग के दूसरे बपतिस्मा में; और परमेश्वर के प्रति आपके व्रत पवित्र स्वर्गदूतों की उपस्थिति में दर्ज हैं; वे मेरे पास, एक दीन मनुष्य के पास भी दर्ज हैं। – इस प्रकार तुम धोए गए, पवित्र किए गए, पाप के बंधनों से मुक्त हुए, और नए मनुष्य के वस्त्र पहनाए गए, जो धार्मिकता और सत्य में परमेश्वर के स्वरूप में बनाया गया है: फिर तुम पीछे क्यों लौट रहे हो? तुम फिर से अपनी ही उल्टी पर क्यों लौट रहे हो? तुम स्वर्ग के राज्य के लिए खुद को अयोग्य क्यों ठहराते हो, जबकि प्रभु के वचन के अनुसार, हल को हाथ लगाने के बाद, तुम पीछे मुड़ते हो? (लूका 9:62)। – प्रभु मेरे गवाह हैं कि मैं यह बात आपसे प्रेम और दया के कारण कह रहा हूँ, और मैं स्वयं गहरे दुख में हूँ। पुराने नियम में धर्मग्रंथ इस्राएलियों के बारे में क्या कहता है? कि उन्होंने अपने दिल मिस्र की ओर फेर लिए, क्योंकि उन्हें मिस्र के प्याज, मांस और मिस्र के पॉट्स, और वहाँ का अपना दुखद जीवन याद आया (निर्गमन 16:3). इसी प्रकार हम भी संसार और संसार की वस्तुओं की ओर मुड़ गए हैं, और जो हम वहाँ किया करते थे, वही अब यहाँ करते हैं। – हाय मुझ पर! यह कैसे है कि हम, जिन्हें स्वर्गदूतों के समान होना चाहिए, भक्तिमान सामान्य लोगों के समान भी नहीं हैं, जब हम, लापरवाही के कारण, धीरे-धीरे ऐसे वास्तविक पतन तक भी उतर रहे हैं? – हे भाइयों, मैं आपसे विनती करता हूँ कि मेरी यह नम्र शिक्षा आपके लिए उन लोगों की पुष्टि बने जो नहीं गिरे हैं, गिरे हुओं के लिए एक औषधि, लापरवाहों के लिए एक चेतावनी, उत्साही लोगों के लिए एक प्रोत्साहन, निराश लोगों के लिए एक प्रेरणा, संघर्ष कर रहे लोगों के लिए एक सहायता, और सामान्यतः– *'मैं सब के लिए सब कुछ बन गया, ताकि मैं कुछ लोगों को बचा सकूँ'* (1 कुरिन्थियों 9:22). क्योंकि मैं तुम्हारे ही लिए बोलता और साँस लेता हूँ; क्योंकि अपने आप में मैं न तो वाक्पटु हूँ और न ही कोई आदमी हूँ। परमेश्वर, हमारे प्रभु यीशु मसीह का पिता, हम में जो कुछ बिगड़ा हुआ है उसे सुधार करे, जो कुछ ठोस है उसे मज़बूत करे, और जो कुछ कमी है उसे पूरा करे; और जैसे उसने हमें सांसारिक मिस्र से बाहर निकाला और पापपूर्ण जंगल से होकर हमारा मार्गदर्शन किया, वैसे ही वह हमें भी वासनाओं के धोखेबाज़ समुद्र से पार कराए, उसे चीरकर और सूखाकर, और हमारे लिए सद्गुण के मार्ग को पार करने योग्य बनाकर; और जैसे उसने हमें बुलाया है, वैसे ही वह हमें अपनी *'चुनी हुई जाति'* और *'पवित्र राष्ट्र'* (1 पतरस 2:9) कहता रहे; और वह हमें सद्गुणों की अच्छी भूमि में बसाए, और विशेष रूप से, मृत्यु के द्वारा, नम्र लोगों की भूमि में।

८७. संसार का त्याग करके भी उस पर फरि से दृष्टि डालना—तुम मूर्खतापूर्ण और वनिाशकारी दोनों तरह से व्यवहार कर रहे हो: होश में आओ, मैं वनिती करता हूँ

८७. संसार का त्याग करने के बाद, फरि भी उसकी ओर मुड़कर देखना – आप मूर्खतापूर्ण और वनिाशकारी दोनों तरह से काम कर रहे हैं: होश में आओ, मैं आपसे वनिती करता हूँ। [2:10] हे सुबुद्धि लोगों, परमेश्वर के लिए सब कुछ त्यागकर—अपने स्वजन और भाइयों, संसार और उसमें जो कुछ भी है—और मसीह का हल्का बोझ अपने ऊपर उठाकर, तुम नराश, सांसारकि क्यों हो जाते हो, और वास्तव में, अपने ही कर्मों से, शैतान की ओर क्यों मुड़ जाते हो? *'जो कोई मूसा की व्यवस्था को अस्वीकार करता है, वह दो या तीन गवाहों की गवाही पर बनिा दया के मर जाता है। तुम्हें क्या लगता है कि तुम कितनी अधिक कठोर सज़ा के पात्र बनोगे'* (इब्रानियों 10, 28–29), आप, जो सेंट बेसलि के अनुसार, अपनी आज्ञाकारिता को तोड़कर आत्मा की वाचा को फाड़ चुके हैं, और *उस "वाचा के लहू को अशुद्ध समझ चुके हैं"* जिससे आपको शत्रु और संसार का परित्याग करने और मसीह के साथ एक होने के दिन अभिषिक्त किया गया था? क्या यह उचति है? क्या आप इस जीवन के एक घंटे के लिए भी (– जो अनंत युगों की तुलना में केवल एक क्षण है –) प्रभु के साथ जाग नहीं सकते? क्या ये आपके वे व्रत हैं, जो परमेश्वर को साक्षी रखकर, पवित्र स्वर्गदूतों की उपस्थिति में लिए गए थे? क्या आपके हाथों द्वारा मुझे दी गई छोटी कैंची का यही अर्थ था, मानो वह प्रभु के हाथ से मलिी हो? क्या वे—उस समय आपको प्राप्त हुए प्रेरणाओं के प्रभाव में—आपके अश्रुपूर्ण, वनिम्र और आत्म-नम्रता से भरे इशारे और नज़रें थीं? ओ, मेरे बच्चों, मेरे बच्चों! तुमने स्वयं को कैसे भुला दिया और अपने पूर्व संकल्पों से कैसे भटक गए? लेकनि मैं तुमसे वनिती और प्रार्थना करता हूँ, मेरे बच्चों, मेरे अपने शरीर और रक्त, मेरे अपने अंगों: तुम सब होश में आओ; तुम सब आत्मा में नए हो जाओ; एक मन, एक आशा, एक हृदय में एकजुट हो जाओ—तुम मुझमें, मैं तुममें—प्रभु के साम्हने; और हम इस प्रकार जिएँ और चलें कि स्वर्ग के राज्य को प्राप्त कर सकें।

88. मुझे इस बात की प्रसन्नता है कि आप अच्छी तरह से बस गए हैं; परन्तु यह मेरे किए हुए का नहीं, बल्कि परमेश्वर का वरदान है; मैं प्रसन्न हूँ, क्योंकि हम आपके साथ एक हैं: परमेश्वर आपको बनाए रखे, और आपको फलने-फूलने में सहायता करे

८८. १) मुझे प्रसन्नता है कि आप अच्छी तरह से बस गए हैं; पर यह मेरे किए से नहीं, बल्कि परमेश्वर की ओर से एक वरदान है; मैं प्रसन्न हूँ, क्योंकि हम आपके साथ एक हैं: परमेश्वर आपको सुरक्षित रखे और आपको फलने-फूलने में मदद करे। – 2) हमने बुरे और निकम्मा होने के बजाय बेहतर और अधिक कीमती को चुना है: तो हमें हतोत्साहित न हों। – 3) शहादत के ताज आगे पड़े हैं: आइए हम साहसी बनें; आइए हम आज्ञाकारिता का जुआ और शरीर की थकान उठाएँ, अपनी उत्कृष्ट बुलाहट के सम्मान को देखते हुए। [2, 11]

19. परमेश्वर के आशीर्वादों को छिपाना अच्छा नहीं है, बल्कि जब समय की मांग हो तो उनका प्रचार करना चाहिए, ताकि इसके द्वारा हम अपने काम में और भी अधिक उत्साही हो सकें। मैं आप पर ऐसा आशीर्वाद देखता हूँ। क्योंकि, मसीह की कृपा से, उन्हीं बातों और हमारे उसी काम के संबंध में बार-बार की जाने वाली शिक्षाओं और अनुस्मारकों के द्वारा, और, कह सकते हैं, दैनिक प्रोत्साहनों के द्वारा, आप एक अच्छे स्वभाव और ईश्वर-प्रेमपूर्ण उत्साह के साथ, आध्यात्मिक प्रगति के मार्ग पर चल पड़े हैं। कि मैं सत्य बोलता हूँ, यह आपकी अपनी गवाही से प्रमाणित होता है; मैं भी इसकी गवाही देता हूँ, क्योंकि मुझे आपके द्वारा अपनी तकलीफ़देह बीमारियों से राहत मिली है, और, कई चिंताओं के बाद, मैं एक शांत बंदरगाह में प्रवेश करने के समान, आपके धर्मपरायण जीवन की शांति में प्रवेश कर गया हूँ, और इस पर अपने हृदय में आनंदित हूँ। सचमुच, यह कहावत झूठी नहीं है कि *'कोई अनुशासन उसी समय सुखद नहीं लगता, बल्कि दुखद होता है; फरि भी बाद में यह* उन लोगों के लिए *धार्मिकता का शांतिदायक फल देता है* जो ऐसे प्रशिक्षण के अधीन रहे हैं' (इब्रानियों 12:11)। परन्तु यह फल मेरे अपने प्रयासों का, न ही मेरी अपनी देखभाल और परिश्रम का परिणाम है, बल्कि आपके उत्साह और पितृत्वपूर्ण सहायता के द्वारा ईश्वर का एक उपहार है। और फरि, मैं, एक अयोग्य व्यक्ति, दूसरों के श्रम में आनंद और प्रसन्नता क्यों मना रहा हूँ? इसका कारण यह है कि हम पूरी तरह से एक हैं: आप मुझ में हैं, और मैं आप में हूँ, और प्रत्येक के व्यक्तिगत कार्य दोनों के श्रेय में गिने जाते हैं। प्रभु, जो सामर्थ्य में भयानक और शक्ति में पराक्रमी हैं, अब से और सदा के लिए, यह अनुग्रह करें कि मैं भी पवित्र आज्ञाओं के योग्य अध्ययन, अनुसंधान और व्याख्या में उत्साही और शक्तिशाली होऊं, और वह आपको अटूट समर्पण, सच्ची आज्ञाकारिता और अडिग विश्वास में बनाए रखे, आपको सदैव अधिक सदाचारी, अधिक उत्साही और साहस तथा उत्साह के साथ, हर आध्यात्मिक प्रयास के लिए तैयार बनाए – दुःख और कठिनाइयों को सहने के लिए, भूख और प्यास, हर परिश्रम करने और हर बोझिल और दुखद बात को सहने के लिए, ताकि, स्वयं को अजेय साबित करके, आप धर्मी न्यायाधीश के न्याय के दिन धैर्य के मुकुट प्राप्त करें।

२०. सचमुच, तुम्हारी खरीद अच्छी है, क्योंकि निश्वर को पीछे छोड़कर, तुमने अमरत्व प्राप्त किया है; अपने माता-पिता से अलग होकर, तुमने प्रभु को अपना पति पाया है; अपने भाइयों से अलग होकर, तुमने संतों को अपने सहवासियों के रूप में पाया है; तुम *'एक चुनी हुई जाति, एक राजसी याजकीय वर्ग'* (१ पतरस २:९) हो; जिस मातृभूमि ने आपको जन्म दिया और पाला-पोसा, उसके स्थान पर स्वर्गीय नगर आपका मातृभूमि बन गया है, जिसका *'ईश्वर वास्तुकार और निर्माता है'* (इब्रानियों 11:10); एक क्षणभंगुर और विनाश के अधीन घर के स्थान पर – अब आपके पास धर्मी और पवित्र लोगों के निवास हैं; व्यर्थ महिमा और क्षयशील सम्मान के स्थान पर – आपके पास दिव्य और दैवीय गरिमा है; भौतिक संतोष और सुख के बजाय – शाश्वत आशीर्वादों का आनंद; अधीनता और आपकी इच्छाओं पर अंकुश लगाने के बजाय – शहीदों के साथ आनंद मनाना; एकांत और जड़हीन भटकन के बजाय – सभी संतों के साथ सबसे करीबी रिश्ता। तो फिर हमें हतोत्साहित क्यों होना चाहिए? हमें निराश और दुखी क्यों होना चाहिए? प्रत्येक व्यक्ति दिव्य दाऊद के साथ पुकारे: *'हे मेरी आत्मा, तू क्यों उदास है, और तू मुझे क्यों व्याकुल करती है? परमेश्वर पर भरोसा रख, क्योंकि हम उसी से अपना हाल कहेंगे'* (भजन संहिता 41:12)। *'क्योंकि यदि हम* संयम में *उसके साथ दुख सहते हैं, तो हम उसके साथ राज्य भी करेंगे'* (रोमियों 8:17; 2 तीमुथियुस 2:12)।

21. यहाँ शहादत के मुकुट भी जीते जाते हैं; और मठवासी जीवन के मार्ग को सही मायने में संघर्ष का क्षेत्र कहा जाता है। तो, आज्ञाकारी कितना धन्य है? अपने बारे में सब कुछ प्रकट करने वाला (कन्फैसर) कितना अद्भुत है? धैर्यवान कितना सम्माननीय है? आज्ञाओं का पालन करने में विश्वासयोग्य और स्थिर व्यक्ति परमेश्वर द्वारा कितना धन्य है? हमने जो शुरू किया है, उससे हम पीछे क्यों न हटें या भटकें, स्थापित व्यवस्था से हम निराश क्यों न हों, हम खुद को पीछे मुड़ने या रुकने क्यों न दें, हम अपने दुश्मनों के सामने अपनी रीढ़ की हड्डी क्यों न झुका दें, हे सह-विश्वासियों, हे सह-यात्रियों, हे सह-योद्धाओं! हम शरीर की परवाह न करें: समय कम है, जीवन क्षणभंगुर है; भले ही जीवन सत्तर या अस्सी साल तक फैला हो, यह अनंत युगों की तुलना में कुछ भी नहीं है। आओ हम एक भेड़ छोड़ दें, और हमें सोने के ढेर मिलेंगे; आओ हम समय का एक क्षण त्याग दें, और हमें अनंत युग प्राप्त होंगे; आओ हम एक घंटे की मेहनत सहन करें, और हमें अनंत विश्राम मिलेगा; आओ हम रोएँ, ताकि हम धन्य आनंद के साथ हमेशा के लिए आनंदित हो सकें; आओ हम मसीह के प्रेम के लिए रोएँ, ताकि हम अनंत आनंद में हर्षित हो सकें। इसलिए, अपनी आँखें स्वर्गीय बुलावे के सम्मान पर टिकाए हुए, अच्छे कार्यों में आनंदपूर्वक परिश्रम करो, जब तक कि तुम्हारे प्रस्थान का समय न आ जाए, और तुम इस जीवन से अनंतकाल में प्रवेश न कर जाओ, हमारे प्रभु यीशु मसीह के द्वारा।

89. परमेश्वर की पुकार पर ध्यान देते हुए, अब्राहम की तरह, आपने सब कुछ पीछे छोड़ दिया है: शोक न करें, बल्कि आशा से प्रेरित होकर, सभी बातों को सहन करें: मुकुट आपका इंतजार कर रहे हैं।

८९. १) परमेश्वर के आह्वान पर ध्यान देते हुए, अब्राहम की तरह, आपने सब कुछ पीछे छोड़ दिया है: शोक न करें, बल्कि आशा से प्रेरित होकर, सभी बातों को सहन करें: मुकुट आपका इंतजार कर रहे हैं। – 2) कुछ भी अश्लील न करें – और चोरी न करें: क्योंकि ऐसी बातें हर उस चीज़ के अनुकूल नहीं हैं जो सही है, और बिना दंड के नहीं रहेंगी। – 3) लेंट के उपवास के दौरान: अपने पेट को अपना देवता न बनाएं, बल्कि स्वयं को सद्गुणों से भरें। [2, 12]

२२. हे परमेश्वर के बच्चों, जो सुसमाचार के वचन की आज्ञा मानते हो और संपूर्ण संसार को त्याग दिया है, और आज्ञाकारिता के इस महान, धन्य और गौरवशाली कार्य को अपने ऊपर ले लिया है, मेरे कौन से वचन आपके योग्य हैं? – हे परमेश्वर, जो दीनों को सांत्वना देते हैं, वे पवित्र आत्मा की उपस्थिति से आपको भी सांत्वना दें, वे आपको अपने आज्ञाओं के मार्ग पर विश्वासपूर्वक मार्गदर्शन करें, और वे आपको अपने राज्य का वारिस बनाएं। हे मेरे भाइयो! आपने क्या उत्तम कर्म किया, क्या बुद्धिमानी भरा निर्णय लिया, जब ईश्वर ने आपको बुलाया, तब आप पूर्वज अब्राहम के उदाहरण का अनुसरण करते हुए अपनी भूमि, अपने स्वजन, अपने पिता के घर से निकल पड़े और इस तपस्या स्थल पर आए, जिसे प्रभु स्वयं ने आपको दिखाया और जहाँ तक पहुँचने के लिए आपका मार्गदर्शन किया? आपने सांसारिक विचारों पर विजय प्राप्त की है और उनसे ऊपर उठ गए हैं। ईश्वर के लिए, आपने न तो अपने परिजनों के प्रेम को अपने पीछे रोकने दिया, न ही अपने जीवन के आदी तरीकों को आपको रोकने दिया, न ही अपनी पैतृक विरासत को आपको बाँधने दिया, और न ही किसी और चीज़ को आपके रास्ते में आने दिया। इसलिए, आप धन्य हैं और परम धन्य हैं। तो, हतोत्साहित न हों, दुखी न हों, और हिम्मत न हारें। लेकिन, आपके लिए आरक्षित आशीर्वादों की आशा के द्वारा अपनी वर्तमान दुखों और अपने तपस्वी जीवन की कठिनाइयों से ऊपर उठते हुए, आनंदित और प्रसन्न होकर, अपने मार्ग पर चलते रहो; और धीरज, साहस और उत्साह के साथ, दिन-प्रतिदिन, सप्ताह-दर-

सप्ताह, महीने-दर-महीने और साल-दर-साल सहते रहो। – और फिर, अंत में क्या? – जब प्रभु अपने लोगों का न्याय करने के लिए स्वर्ग और पृथ्वी को बुलाएंगे, तब आपको अमर महिमा के मुकुट से विभूषित किया जाएगा।

२३. आलस्य में न पड़ो, सुस्ती न करो, उष्णता न रखो, झगड़ा न करो, वाद-विवाद न करो, बदनामी न करो, व्यर्थ की बातों में न पड़ो, अतृप्ति में न पड़ो – मैं कुछ ऐसा जोड़ूँगा जो सुनने के योग्य नहीं है, और यह केवल कुछ लोगों पर ही लागू होता है – चोरी न करो। – जो अखरोट चुराकर शुरुआत करता है, वह और बड़ी चीज़ों तक जाएगा, और जो कलम की नोकें (लेखन के लिए पंख) चुराने का आदी है, वह अंततःकपड़ों पर नज़र गड़ाएगा। – हमारे बीच इस तरह की चोरी होती है – कपड़ों, बेल्टों, जूतों और इसी तरह की अन्य चीज़ों की। क्या यह सही है? क्या ये मसीह के सेवक हैं? क्या ये वे हैं जो संसार से अलग हैं? क्या ये वे हैं जो सांसारिक नहीं बल्कि स्वर्गीय विरासत की तलाश करते हैं? क्या ये वे हैं जिन्हें संत और धन्य कहा जाता है, और जो लोगों से सम्मानजनक नमन प्राप्त करते हैं? क्या यह आपकी लगन, आपकी सफलता, आपका पूर्णत्व है? – यह, हालांकि, किसी भी तरह से एक व्यापक पाप नहीं है; और अगर मैं प्रशंसा से फटकार पर आ जाऊं तो आश्चर्यचकित न हों: एक ही बात कुछ लोगों से एक तरह से कही जाती है, और दूसरों से दूसरी तरह से। – और यदि ऐसा हुआ भी है, तो अब ऐसा न हो – मैं निवेदन करता हूँ, मैं विनती करता हूँ, मैं आज्ञा देता हूँ, मैं चेतावनी देता हूँ। यदि कोई, इस अनुशासनात्मक चेतावनी के बाद, ऐसा कुछ करता है, तो उसे मसीह की कलीसिया से अलग कर दिया जाए, जब तक कि वह पश्चाताप और स्वीकारोक्ति के द्वारा परमेश्वर को प्रसन्न न कर ले। लेकिन इससे पहले भी, जिसने चोरी की है, वह केवल अपने पाप को स्वीकार करने और प्रकट करने से ही चंगा हो सकता है। जैसे एक बार कुछ वस्तुओं की चोरी और उन्हें छिपाने के कारण अकर को पत्थर मारकर मार डाला गया था (यहोशू 7:21, 25), वैसे ही इस वासना के वशीभूत जो लोग पाप का इकरार नहीं करते, वे अदृश्य पत्थरों से मार डाले जाएँगे; इसलिए, जो गिरे हैं वे उठें और प्रभु के लिए जिएँ।

24. तो, यह है मांस का उपवास। इसलिए, अपने विचारों को उस चीज़ की ओर न मोड़ें जिसमें आप कभी-कभी लिप्त रहे हैं, और उन लोगों जैसे न बनें जो स्वयं को इस प्रकार तृप्त करते हैं मानो बलिदान का दिन हो। क्योंकि जो कोई पेट का दास है, उसके लिए *'पेट उसका देवता है, और उसकी लज्जा ही उसकी महिमा है'* (फिलि. 3:19)। ऐसे किसी एक व्यक्ति को ले लो और देखो कि वे हृदय और शरीर से कैसे हैं। – क्या यह वांछनीय है, मुझे बताओ? क्या यह अनुकरण के योग्य है? – निश्चित रूप से नहीं; इसके विपरीत, यह हर तरह की घृणा और तिरस्कार के योग्य है। जहाँ तक आपकी बात है, बिना मांस या शराब के, अपनी पोषण संबंधी जरूरतों की साधारण संतुष्टि से ही संतुष्ट रहें। शरीर को भरने की चिंता न करें, बल्कि पवित्र आत्मा के फलों - शांति, प्रेम, आशा, विश्वास, प्रार्थना, से आत्मा को भरने की चिंता करें, भजन-गायन, श्लोकों का पाठ, आज्ञाकारिता, विनम्रता, सतर्कता, जल्दी उठना, कोमलता, सादगी, शुद्ध विचार, पश्चाताप, और शुद्ध करने वाले आँसू – और यही आपका निरंतर उपवास हो।"

90. जैसे कि मेरा कर्तव्य है कि मैं आपको हमेशा लड़ने के लिए प्रोत्साहित करूँ, वैसे ही आपका कर्तव्य है कि आप हमेशा पूर्ण आध्यात्मिक कवच पहनकर तैयार रहें और लड़ें

90. 1) जैसे कि मेरा कर्तव्य है कि मैं आपको हमेशा युद्ध के लिए प्रेरित करूँ, वैसे ही आपका कर्तव्य है कि आप हमेशा पूर्ण आध्यात्मिक कवच पहनकर तैयार रहें और लड़ें। – 2) यह उचित नहीं है कि आप शिकायत करें कि संघर्ष लंबा खिंच रहा है; योद्धाओं के उदाहरण दिए गए हैं और आपको साहस बनाए रखने की सलाह दी गई है। – 3) भूतों से मत डरो: निर्भयता और प्रार्थना उनके खिलाफ सबसे अच्छे उपाय हैं। [2, 13]

1. यह अतिशय आवश्यक है कि मैं आपको, जो परमेश्वर के कार्य में और अपनी धन्य तथा कठिन सेवा में थकान के बिंदु तक परिश्रम करते हैं, हमेशा सांत्वना और प्रोत्साहन के शब्द प्रदान करूँ। यदि आपका प्रयास और शत्रु की चालाकियों के विरुद्ध आपका संघर्ष किसी विशिष्ट समय पर समाप्त हो जाता, तो आपके प्रति मेरी सांत्वना और प्रोत्साहन भी समाप्त हो जाता। लेकिन चूँकि ये कभी समाप्त नहीं होतीं और आपको दिन-रात कोई राहत नहीं देतीं, इसलिए, निष्पक्षता से कहूँ तो, यह मेरा भी कर्तव्य है कि मैं इसके अनुपात में आपके आत्माओं में आराम, प्रोत्साहन और आशा भरूँ, और आपको आपके विरुद्ध खड़ी अदृश्य शक्तियों को नष्ट करने के लिए शक्ति, ऊर्जा और उत्साह प्रदान करूँ। एक योद्धा को, जैसा कि आप जानते हैं, हमेशा योद्धा की तरह ही कार्य करना चाहिए, और इस प्रकार की सभी आवश्यकताओं का कड़ाई से पालन करना चाहिए। इसीलिए आप, मसीह के सच्चे सिपाहियों के रूप में, हमेशा यह सुनिश्चित करें कि आपका कवच व्यवस्थित हो: कि आप में से प्रत्येक के पास आज्ञाकारिता की तलवार, विश्वास का कवच, , उद्धार की आशा का हेलमेट, नम्रता का ढाल, प्रार्थना का धनुष, और हमारे आध्यात्मिक युद्ध के लिए आवश्यक अन्य सभी चीजें हों। एक सांसारिक योद्धा को पूर्ण कवच में देखना उतना आश्चर्यजनक या अद्भुत नहीं है, जितना कि मसीह के एक योद्धा को वह सब कुछ धारण किए हुए देखना है जो बताया

गया है। इसलिए, मेरे बच्चों, स्वयं को सुसज्जित करो, स्वयं की रक्षा करो, स्वयं को तैयार करो, लड़ो, और उस शैतान पर विजय प्राप्त करो जो तुमसे लड़ता है; और जो कुछ भी तुम पर आता है, उससे आश्चर्यचकित न हो, न तो तुम्हें मलिने वाले प्रहारों और तीरों से, और न ही इस तथ्य से कि तुम फिसलकर गिर जाते हो; बल्कि जल्दी से उठ जाओ।

2. कुछ लोग चढ़ि जाते हैं, हैरान रह जाते हैं, या निराशा में भी पड़ जाते हैं क्योंकि वे शर्मनाक वासना, या क्रोध, या ईश्वर-निंदा, या ईर्ष्या, या चंचलता, या इस तरह की किसी भी अन्य चीज़ से पीड़ित होते हैं। मैं, दूसरी ओर, उनसे हैरान हूँ। मुझसे कहो, भाई, क्या तुम बिना परिश्रम या कठिनाई, बिना संघर्ष या विजय के अपने मुकुट प्राप्त करने की उम्मीद करते हो? – लेकिन वह कहता है: 'मैं तो पहले से ही इतने-इतने साल का हूँ; मैंने कितनी बार उपवास किया है, पाप-स्वीकार किया है और पवित्र सहभागिता प्राप्त की है, यह-वह दिखाया है, आँसुओं और आहों से भर गया हूँ, और अपनी कमज़ोरियों में मेरे साथ रहने वाले अपने भाइयों की सेवा की है।' हाय, यह क्या बुद्धिमानी है?! बताओ, तुमने इस संघर्ष में कितने साल बिताए हैं? तीन, पाँच, दस? लेकिन धन्य अम्मा सारा ने चालीस वर्षों तक व्यभिचार के राक्षस के खिलाफ बहादुरी से लड़ाई लड़ी, और इसे धैर्यपूर्वक सहन किया। मैं अबा पाचोमियस का उल्लेख करने की हिम्मत करता हूँ, और कैसे उन्होंने चर्च में खुद को नग्न कर लिया था, और एक और जिसे अबा अपोलोस ने मजबूत किया। और मैं उन अनगिनत उदाहरणों का हवाला क्यों दूँ जिनमें सच्चे योद्धाओं ने विभिन्न तरीकों से विजय प्राप्त की— एक ने इस तरह, दूसरे ने उस तरह—फिर भी कहीं भी निराशा नहीं थी, कहीं भी कायरता नहीं थी, कहीं भी साहस की कमी नहीं थी, जब तक कि उन्होंने अपनी कमजोरी में, ऊपर से मिले एक संकेत द्वारा दुश्मन के हमलों को पीछे नहीं कर दिया और विजय प्राप्त नहीं कर ली। हम, हालाँकि, हतोत्साहित होकर, हतोत्साहित, लापरवाह और अनप्रशिक्षित तरीके से बोलते और काम करते हैं। – मैं आपको यह याद दिलाता हूँ ताकि हम अपनी निराशा से उठें और सतर्क और दृढ़ हो जाएँ, ईश्वर पर भरोसा करें, और हर कोई अपने आप से कहे: *'भले ही सेना मुझे घेरे, मेरा हृदय भयभीत नहीं होगा; भले ही युद्ध मेरे विरुद्ध खड़ा हो, मैं उसी पर भरोसा रखूँगा'* (भजन संहिता 26:3)।

3. उन भयावह दृश्यों और प्रेतों से मत डरिए जिन्हें शैतान कभी-कभी रात में आपके सपनों में दिखाता है, यह या वह दिखाकर, अपनी मर्जी से अपना रूप बदलते हुए; हो सकता है कि वह कोई आवाज निकाले, आपको नाम से पुकारे, या शेर का रूप धारण कर ले। लेकिन अपनी निडरता से उसे साहसपूर्वक मारिए, और आप देखेंगे कि वह धूल की तरह बिखर जाएगा। यदि वह आपको छत जितना लंबा और विशाल दिखाई दे, तो प्रार्थना की ओर मुड़ें और, महान एंथनी की तरह, आप उसे गायब होते हुए देखेंगे। भले ही वह आपको घेरने और पर हमला करने के लिए आगे बढ़ता हुआ दिखाई दे, या आपके निवास को हिलाकर आपके ऊपर ढहा दे, डरो मत, और सब कुछ एक साधारण सपने की तरह बीत जाएगा। यह उन लोगों के साथ होता है जो इसके अधीन होते हैं क्योंकि वे वहाँ भय से डरते हैं जहाँ कोई भय नहीं है (भजन संहिता 13:5)। अतः सावधान रहो, और उस चीज़ से भयभीत न हो जो बिल्कुल भी भयानक नहीं है। जो भय पैदा करता है, वह तुम्हारे सामने काँपे, ईश्वर में तुम्हारी आशा और उनसे तुम्हारी प्रार्थना की शक्ति से।

९१. वसंत आ गया है: सावधान रहो; मैं तुम्हें शराब से परहेज़ करने, तृप्त होकर न खाने, शहर में जाते समय सतर्क रहने, और वहाँ से सांसारिक चीज़ें मठ में वापस न लाने की सलाह देता हूँ।

९१. १) वसंत आ गया है: सावधान रहो; मैं तुम्हें शराब से परहेज़ करने, तृप्त होकर न खाने, शहर में जाते समय सतर्क रहने, और वहाँ से सांसारिक मामलों को मठ में वापस न लाने की सलाह देता हूँ। – २) संयोग से, उन लोगों का उल्लेख किया गया है जो सब्जी के बगीचे में जाते हैं और नियम के विरुद्ध सब्जियों की मांग करते हैं। [२, १४]

४. परमेश्वर में अपनी आशा में दृढ़ और अटूट रहो, और शैतान की जटिल युक्तियों को समझकर, अपने जुनून से ऊपर उठो, शरीर के सुखों और वासनाओं को पैरों तले कुचलते हुए, साथ ही अपनी आत्मा और शरीर दोनों में अपनी पवित्रता और शुद्धता की रक्षा करो। आप देखिए, अब वसंत का समय है, जब हर जीवित प्राणी नए जीवन की ओर प्रेरित होता है। इसके अनुरूप, हमें अपनी नींद और अपने भोजन को नियंत्रित करना चाहिए। प्रेरित कहते हैं, *'यह अच्छा है कि मांस न खाया जाए या शराब न पी जाए, और न ही ऐसा कुछ किया जाए जिससे आपका भाई ठोकर खाए'* (रोमियों 14:21)। हे मेरे भाइयो, मैं भी तुम्हारे सीधे-सादे आत्माओं के हित में, आज्ञा के स्वर में नहीं, परन्तु परामर्श के भाव में बात करता हूँ—और यह उन लोगों के लिए नहीं जो बीमार हैं, परन्तु उन के लिए जो स्वस्थ हैं: दाखरस न पीना अच्छा है, विशेषकर तुम जवानों के लिए; क्योंकि यह वासनाओं को भड़काता है। हमारे भीतर पहले से ही हमारी प्रकृति में निहित सुखों से उत्पन्न उथल-पुथल मौजूद है; तो फिर हम अपने भीतर दाखरस के और उत्तेजक पदार्थ क्यों डालें? चखकर देखो कि मदिरा से परहेज़ करना कितना अच्छा है। जो इससे परहेज़ करता है, वह पाएगा कि वह अपने विचारों से बह नहीं जाता, उसकी आत्मा में आग नहीं लगती, बल्कि वह ईश्वर के प्रति अपने प्रेम में हमेशा होशियार रहता है और उन सभी चीजों के प्रति उत्साही रहता है जो अच्छी और मोक्ष के लिए सहायक हैं। जो मदिरा से परहेज़ करता

है, उसमें पवित्र आत्मा वास करता है; जो पानी पीता है, वह नम्रता का वस्त्र धारण करता है। – और भोजन के विषय में भी, मैं तुम्हें सलाह देता हूँ, मेरे बच्चों। बेमतलब की लालच और निरंतर अतिशय भोग से भागो, जिनसे व्यभिचार और सदोम के बीज उत्पन्न होते हैं; लेकिन भोजन और पेय का सेवन—अन्य सभी सावधानियों का पालन करते हुए—इस तरह करो कि तुम आनंद पर शासन करो, न कि वे तुम पर शासन करें, कि तुम शरीर पर शासन करो, न कि उसके अधीन रहो। आत्मा () और शरीर के बीच संबंध में सबसे अच्छा क्रम यह है कि निम्न, उच्च का उल्लंघन न करे। जहाँ तक मठ छोड़ने की बात है, नियम का सख्ती से पालन करें: मठ में सांसारिक बातचीत न लाएँ जो भाइयों को भ्रमित कर सकती है।

५. मुझे पता चला है कि तुम में से कुछ लोग, सब्जी के बगीचे में प्रवेश करने पर, माली से सब्जियाँ माँगते हैं, और, नियम के अनुसार उन्हें न मिलने पर, उससे झगड़ते हैं। यह एक शैतानी कर्म है और ऐसा नहीं होना चाहिए। ऐसे व्यक्तियों को प्रायश्चित का सामना करना पड़ेगा। क्या जो दिया जाता है वह पर्याप्त नहीं है? तो फिर तुम उस वासना पर कैसे काबू पाओगे जब एक सब्जी तुम पर हावी हो जाती है? हे मेरे विनम्र भ्राता, यदि आप संयम के द्वारा विचारों में स्वयं को मजबूत नहीं करते हैं, तो आप पंख के समान हल्के हो जाएँगे। मुझे विश्वास है कि जिस प्रकार अतितीक्ष्ण स्वभाव वाले संयमी बने हैं और बनते जा रहे हैं, और भावुक लोग निर्विकार बने हैं, उसी प्रकार हम भी बनेंगे, यदि हम स्वयं को हर बात में कड़ाई से रखने में आलसी न हों। प्रभु आपको बल दें और स्थापित करें।

९२. अपनी इच्छा पर काबू पाना हमारा सर्वोपरि गुण है

९२. १) अपनी इच्छा का दमन हमारा सर्वोपरि गुण है। – २) समय बीत रहा है; मृत्यु निकट है, और उससे परे न्याय है, जिसमें केवल शुभ कर्मों वाले ही स्वीकृत होंगे: अतःहमें भी ऐसा ही बनना चाहिए, और सभी बुराइयों से दूर रहना चाहिए। – ३) इस बात पर शिकायत करने की मूर्खता कि बच्चों को मठ में पाला जाता है। [2,15]

6. स्वर्ग के राज्य के कई मार्ग हैं, और फिर भी एक ही मार्ग है: एक, क्योंकि सद्गुण, सार में एक होकर, विभिन्न अच्छे कर्मों के माध्यम से पूरा होता है और परिपूर्णता प्राप्त करता है। आइए हम इस एक, सर्वशक्तिमान सद्गुण को अपनाएं: कोई ईश्वर-अनुकरण करने वाली आज्ञाकारिता के मार्ग पर चले – एक ऐसा मार्ग जो निर्बाध और अखंड है; दूसरा – मसीह-धारण करने वाले विनम्रता के मार्ग पर, – एक ऐसा मार्ग जो सुगम और सबसे छोटा है; ये दोनों ही अपनी इच्छा का त्याग निर्दोष बलिदान के रूप में अर्पित करें। *'वह मनुष्य कौन है जो जीवन की इच्छा रखता है, जो शुभ दिन देखना पसंद करता है?'* मैं भी भविष्यवक्ता के साथ पूछूँगा, – और मैं उत्तर दूँगा: वही जो सचमुच अपनी इच्छा का त्याग करता है। *'यही वह है जो जीवित रहेगा और मृत्यु को नहीं देखेगा'* (भजन संहिता 88:49)—पतन—अपने प्राण को अधोलोक के हाथ से छुड़ाते हुए। यह प्रकाश का पुत्र है, जिसके पास सभी जुनून से शुद्ध आत्मा है: क्योंकि वह हर जुनून को उसकी जड़ से ही उखाड़ फेंकता है। हमारे दुःख, परेशानियाँ, झगड़े, विवाद और ईर्ष्या कहाँ से आते हैं? क्या यह इसलिए नहीं है क्योंकि हम अपनी ही बात मनवाने और अपने फैसलों और इच्छाओं का बचाव करने पर जोर देते हैं? हाँ, वास्तव में ऐसा ही है। और अपनी इच्छा को वश में करने के अलावा हमें शैतान की चालाकियों से बचाने का कोई और रास्ता नहीं है।

७. दिन-प्रतिदिन बीतता जाता है; एक नदी की धारा की तरह, हमारा जीवन आगे बढ़ता है और मृत्यु के और करीब आता है। धन्य हैं आप, क्योंकि तुच्छ और अस्थायी चीज़ों का त्याग करके, आप शाश्वत और स्वर्गीय चीज़ प्राप्त करते हैं। और वह दिन आएगा जब परमेश्वर अपनी महिमा के सिंहासन पर विराजमान होंगे, और पवित्र स्वर्गदूत उनके सामने खड़े होंगे; वह तुम्हें बुलाएंगे और तुम्हें धर्मी लोगों के निवास स्थान में स्थापित करेंगे। – लेकिन कौन से? आज्ञाकारी, आज्ञापालन करने वाले, श्रद्धावान, परोपकारी, हृदय से शुद्ध, पश्चातापी, अश्रुपूर्ण, परिश्रमी, जो अपने पिता से प्रेम करते हैं, जो अपने भाइयों से प्रेम करते हैं, जो मौन से प्रेम करते हैं, जो प्रार्थना से प्रेम करते हैं – और सभी जो अन्य सभी दैवीय कार्यों का लगन से अभ्यास करते हैं। तुम में से कुछ ऐसे हैं जो एक नहीं, बल्कि कई सद्गुणों से सुशोभित हैं; और ऐसे लोग अपनी भलाई में मनुष्यों के बेटों से अधिक सुंदर होते हैं, जो आत्मा के कई अनुग्रहकारी उपहारों से प्रकाशमान होते हैं। तो फिर, हम स्वयं को पाप की भयानक और भ्रष्ट करने वाली लज्जा के समीप न आने दें; बल्कि हम विनाशकारी अशिष्टता, एक-दूसरे की दुर्भावनापूर्ण जाँच, बेरोकटोक उपहास, शैतानी बड़बड़ाहट, और द्वेषपूर्ण शिकायतों से भागें – हर चीज़ को एक अच्छे दिल से स्वीकार करते हुए: भोजन, पेय, वस्त्र, और आज्ञाकारिता – वे जो भी हों। यह आपके लिए अच्छा काम है; यह आपकी ईमानदारी का प्रमाण है; यह आध्यात्मिक युद्ध में आपकी सफलता है; और यह, अंत में, आपकी सर्वोच्च महिमा है।

8. मैं सुनता हूँ कि कुछ मूर्ख लोग, यहाँ बच्चों को लाया जा रहा देखकर कहते हैं: 'यही कारण है कि हमारा विनाश निश्चित है! यही कारण है कि मठों को नष्ट किया जा रहा है!' – यह कैसी पागलपन है? यह स्वयं प्रभु की निंदा

करने के सिवा और कुछ नहीं है, जो कहते हैं: *'छोटे बच्चों को मेरे पास आने दो: क्योंकि परमेश्वर का राज्य ऐसे ही लोगों का है'* (मरकुस 10:14)। क्या मसीह एक शिशु नहीं थे? क्या उनका पालन-पोषण दूध से नहीं हुआ? क्या वे एक बच्चा नहीं थे? क्या वे *'बारह वर्ष के'* (लूका 2:42) एक किशोर नहीं थे? क्या वे एक परिपूर्ण पुरुष *'लगभग तीस वर्ष के'* नहीं थे *जब* उन्होंने चमत्कार करना *शुरू किया*? (लूका 3:23)। तो फिर, यह आदमी चुप क्यों रहता है, और वह अपनी ही हालत पर शोक क्यों नहीं मनाता, जबकि उसका विनाश स्वयं उसके भीतर से आता है? – ऐसे लोग—जो मठाधीश से भी अधिक बुद्धिमान और सूक्ष्मदर्शी होते हैं—एक ऐसे मार्ग पर चलते हैं जो सही से भी अधिक सही है, और स्थापित नियमों से परे भटकते हुए, ईश्वर से आवश्यक से अधिक प्रेम करने का दावा करते हैं। – मैं यह भी जोड़ूँगा: यदि ऐसा कोई नहीं है जिसने इस प्रकार कहा हो, तो ये शब्द हवा के झोंके की तरह चले जाएँ, और मैं किसी पर दोष नहीं लगाऊँगा; लेकिन यदि कोई है, तो उसे अपने रास्ते सुधार लेने चाहिए, कहीं वह शैतान के जाल में न फँस जाए। उस पवित्र वृद्ध ने क्या कहा था? 'जो कुछ भी कोई शिष्य मुझसे आज्ञा करता है, मैं उसे वैसे ही मानूँगा जैसे मेरे प्रभु के पुत्र ने आज्ञा की हो।' – या क्या तुम नहीं समझते कि तुम क्या पढ़ रहे हो?! –

९३. तुम हर बात में भलाई करने का यत्न कर रहे हो; परिश्रम तो बहुत है, पर फल उससे भी बड़ा है; इसलिये और भी आगे बढ़ते चलो।

९३. १) सभी चीजों में अच्छाई के लिए प्रयास करें; मेहनत बड़ी है, लेकिन इनाम उससे भी बड़ा है; इसलिए और भी अधिक आगे बढ़ते रहें। – २) आप कई प्रलोभनों का सामना करते हैं; लेकिन हतोत्साहित न हों: प्रभु निकट हैं। आगे आने वाली विश्राम की अवस्था को भी ध्यान में रखें, और आप कभी भी अपना साहस नहीं खोएंगे। [२:१६]

9. जैसा कि प्रभु कहते हैं: *'अपने धीरज से तुम अपनी आत्माओं को बचाओगे'* (लूका 21:19); अपने तपस्वी जीवन की कठिनाइयों और ताप को बिना हतोत्साहित हुए सहो, और *'दिन-रात प्रभु की व्यवस्था में शिक्षित होओ'*, ताकि तुम *'पानी की धाराओं के किनारे लगाए गए वृक्ष की तरह'* हो जाओ (भजन संहिता 1:3)। तुम्हारी बहुत सी कठिनाइयाँ हैं, परन्तु परमेश्वर के वरदान महान हैं; बहुत पसीना बहाते हो, परन्तु तुम्हारा प्रतिफल अनन्त है। मैं जानता हूँ कि तुम परिश्रम करते हो, कि तुम हर तरह से अपने आपको मराते हो, कि तुम शहीदी जीवन जीते हो, कि तुम भाले से भेदे गए हो, कि तुम अपनी इच्छाओं के मराने द्वारा सूली पर चढ़ाए गए हो; परन्तु आनन्दित हो, क्योंकि स्वर्ग का राज्य तुम्हारे लिए तैयार है—धन्य अमरत्व, पुत्रों के रूप में गोद लिया जाना, मसीह के सह-वारिस, भलाई, आनंद, हर्ष और अनंत शांति का जीवन। जब इतने और इतने महान आशीर्वाद संग्रहीत हों, तो कौन हतोत्साहित हो सकता है? मौत के पार उस आशा की वस्तु तक पहुँचने तक, कोई भी परिश्रम या प्रयास करने से पहले कौन हिचकिचा सकता है? – यह जानते हुए कि *'वर्तमान समय की कठिनाइयाँ हमारे लिए प्रकट होने वाली महिमा के योग्य नहीं हैं'* (रोमियों 8:18), क्या आपने भी न सहन किया है – वासना की तपिश, निराशा का बोझ, परिश्रम की थकान, आत्म-त्याग की भूख, और अन्य सभी बातों में, कठिनाई और अभाव; ताकि आप प्रेरित के साथ कह सकें: *'तुम्हारे ही कारण हम दिन-भर मार डाले जाते हैं; हम वध के लिए भेड़ों के समान गिने जाते हैं'* (रोमियों 8:36)? आप दैवीय भ्रमों या वासना के विद्रोहों से नहीं डरते, बल्कि सद्गुणों की ऊँचाइयों तक बढ़ते और उठते हैं। – फिर भी ये शब्द न केवल उन लोगों के लिए आवश्यक हैं जो सुस्त, डगमगाते और भटकते हैं, बल्कि आपके लिए भी हैं, ताकि आप दृढ़ और अभिषिक्त हों, और आप अपनी धार्मिकता के मार्ग को भलीभांति पूरा कर सकें। तो आओ, तुम सब; हम भय में भय जोड़ें, और हम दयालु, कोमल, प्रेम करने वाले, आज्ञाकारी, अतिथि-सत्कार करने वाले, ईर्ष्यालु न होने वाले, माँग करने वाले न होने वाले, घमण्डी न होने वाले, घमण्ड करने वाले न होने वाले, विक्षेपक न होने वाले, एक दूसरे से बड़बड़ाने वाले न होने वाले बनें, और अपने भले जीवन की नींव के रूप में धीरज रखें।

10. आप दिन-प्रतिदिन कई दुःखों का सामना करते हैं—मैं इसे नकारता नहीं—लेकिन क्या यह आपके उद्धार, और शाश्वत आशीर्वादों के उत्तराधिकार के लिए नहीं है? यदि, तब, इस उद्देश्य के लिए परिश्रम और थकान, प्रयास और संघर्ष, पसीना और भूख, कठिनाई और कराह, विचारों का उथल-पुथल और प्रलोभन की लहरें हैं, जो इस जीवन के सागर पर अदृश्य शत्रुओं द्वारा हम पर लादी जाती हैं; तो हम किसी भी तरह से हतोत्साहित होने, या भयभीत होने, या निराशा में पड़ने की अनुमति स्वयं को नहीं देंगे। मसीह हमारे साथ हैं; वे अपना हाथ बढ़ाएंगे और इस समुद्र से कहेंगे: *'शांत हो, स्तब्ध हो जा'* (मरकुस 4:39), और एक बड़ी शांति छा जाएगी। हमें भी बार-बार धैर्य बनाए रखने, आगे बढ़ने और आगे बढ़ते रहने का प्रयास करना चाहिए। और मुझे दृढ़ विश्वास है कि हम अपनी यात्रा को सफलतापूर्वक पूरा करेंगे, विपत्ति से बचेंगे, और स्वर्ग के राज्य के बंदरगाह में सुरक्षित प्रवेश करेंगे। और वहाँ, *'बीमारी, शोक और आह दूर हो जाएँगी'* (यशायाह 35:10)। – ऐसे कार्य और ऐसी मेहनत से अधिक धन्य और क्या हो सकता है, जिससे प्रकाश, जीवन, आनंद, शांति, सांत्वना और अनंत विश्राम की किरणें चमकती हैं? जो कोई भी ऐसे विश्वास और ऐसी

आशा के साथ सद्गुण के मार्ग पर चलता है, वह कभी थकता नहीं, कभी रुकता नहीं, और कभी पीछे मुड़कर नहीं देखता, न तो पहले से उठाए गए भारों और दुखों के कारण, और न ही आने वाले दुखों के कारण—भले ही वे मृत्यु, पसलियों का भेदन, और रक्तपात ही क्यों न हों। इसीलिए शहीदों ने यातनाएँ सहन कीं और हर तरह की यातनाएँ झेलीं; इसीलिए संतों ने पवित्रता की खोज की और हर तरह के तपस्या के कार्य किए; और इसीलिए मैं भी आपको इस संघर्ष को अपनाने के लिए आमंत्रित और प्रेरित करता हूँ, ताकि आप अपनी धन्य आज्ञाकारिता और शहीद-सदृश आज्ञापालन के लिए मुकुटित हों। मैं आपसे विनती करता हूँ, आइए हम स्वयं को उन अनुपम और अकल्पनीय आशीर्वादों से वंचित न होने दें: स्वर्ग के राज्य के पुत्रों और वारिसों का दर्जा, मसीह की वधू का आनंद, और उनके दाहिने हाथ की जगह, जहाँ सभी संत, असीम आनंद में, उत्साहपूर्वक आनंद मनाते हुए, उन अकथनीय दैवीय आशीर्वादों में रमते हुए।

94. आप जानते हैं कि हम मठ में क्यों आए हैं: तो फिर, इसके विपरीत किसी भी चीज़ को न होने दें

94. 1) आप जानते हैं कि हम मठ में क्यों आए हैं: इसलिए, इसके विपरीत किसी भी चीज़ को न होने दें। आप ठीक वही कर रहे हैं; लेकिन अपनी मेहनत को व्यर्थ न जाने दें। – 2) मैं आपकी परवाह करता हूँ और आपको बेहतर मार्ग दिखाता हूँ: तो फिर, आप अपने लिए मनमाने ढंग से तपस्या के करतब क्यों गढ़ते हैं – बेड़ियाँ, रेगिस्तान? यह भलाई के लिए नहीं है। हमारा सामुदायिक जीवन स्वयं तपस्या के लिए सबसे उपयुक्त है। – 3) जो कोई दूसरों से ऊपर होना चाहता है, उसे भौतिक और आध्यात्मिक, दोनों तरह के तपस्या के गुणों में सभी से आगे निकलने का प्रयास करना चाहिए, जिसमें समुदाय के भीतर जैसा उत्कृष्ट होना कहीं और उतना आसान नहीं है। – 4) उन सद्गुणों की एक सूची दी गई है जिनमें मठवासी निपुण हैं; और उत्साही लोगों को उनका अनुकरण करने के लिए आमंत्रित किया जाता है। [2, 17]

11. हम यहाँ क्यों आए हैं, संसार को पीछे छोड़कर और अपने माता-पिता, रिश्तेदारों और सांसारिक दोस्तों, अपने कस्बों, अपने वतन, अपने गांवों और अपने घरों से संबंध तोड़कर? क्या यह अपनी आत्मा को बचाने के लिए नहीं है? क्या यह अतीत में किए गए पापों की क्षमा के योग्य माने जाने के लिए नहीं है? क्या यह ईश्वर को प्रसन्न करने के लिए नहीं है? क्या यह शाश्वत आशीर्वाद प्राप्त करने के लिए नहीं है? क्या यह हमारे पवित्र और त्रि-धन्य पिताओं के अदेह मन का अनुकरण करते हुए, एक दैवी जीवन जीने के लिए नहीं है? – तो फिर, हम इसके विपरीत कैसे कर सकते हैं? रोने के बजाय हँसना, पश्चाताप करने के बजाय प्रसन्न होना, भक्ति करने के बजाय ईश्वर की निंदा करना, प्रार्थना करने के बजाय झगड़ालू होना, शांति के बजाय बेचैन होना, चुप रहने के बजाय शोर मचाना, शुद्धिकरण के बजाय, स्वयं को कलंकित करने; कोमलता के बजाय, अभद्र होने; उपवास के बजाय, अनुशासनहीनता में लिप्त होने; भजन गाने के बजाय, व्यर्थ की बातें करने; आज्ञाकारिता के बजाय, मनमानी करने; नम्रता के बजाय, स्वयं को बड़ा दिखाने? इस प्रकार, हमारा विरोधी आमतौर पर उन लोगों को उनके संकल्पों को भूलने के लिए लुभाता है और उन्हें ऐसे कार्यों में लगा देता है जो उन संकल्पों के अनुकूल नहीं हैं। लेकिन आप अच्छी तरह से जानते हैं कि आप यहाँ क्यों इकट्ठा हुए हैं, और आप अपने लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए उत्सुक हैं: आप अपने पापों से अपना शुद्धिकरण कर रहे हैं और पवित्र बन रहे हैं। इसलिए मैं आपसे विनती करता हूँ, मेरे बच्चों, और आपसे प्रार्थना करता हूँ, कि आपकी मेहनत व्यर्थ न जाए। – आप कितनी और किन-किन तरीकों से सहन करते हैं? आपने कितना उपवास किया है और आप कितना उपवास करते हैं? आपने जागते रहने के लिए कितनी लगन से प्रयास किया है, और क्या आप अभी भी प्रयास कर रहे हैं? आपने कितना अपमान, तिरस्कार और वंचना सहन की है, और क्या आप अभी भी सहन कर रहे हैं? और सामान्य रूप से, आपने अपने जीवन के सुधार में कितना पहले ही हासिल कर लिया है, और आप अभी भी हासिल कर रहे हैं? – उदासीनता या किसी क्षणिक सुख को अपने इन फलदायी और अत्यधिक वांछित कर्मों को बर्बाद न करने दें; बल्कि अपने पूर्व कर्मों में नए कर्म जोड़ें, ताकि इस संक्षिप्त जीवन को अच्छी तरह जीकर, आप आत्मविश्वास के साथ शाश्वत जीवन के शांतिपूर्ण बंदरगाह में प्रवेश कर सकें।

12. प्रभु जानते हैं कि मैं आप में से प्रत्येक के मन की शांति का कितना ध्यान रखता हूँ, और मैं अपना हृदय आपकी अवस्था के अनुसार ढालता हूँ: मैं दुखी लोगों के साथ दुखी होता हूँ; मैं कमजोर लोगों के साथ कमजोर महसूस करता हूँ; मैं हतोत्साहित लोगों के साथ हतोत्साहित होता हूँ; मैं लड़ने वालों के साथ अच्छा संघर्ष करता हूँ; मैं कष्ट सहने वालों के साथ कष्ट सहता हूँ; मैं उन लोगों के लिए उत्साह से भर जाता हूँ जो प्रलोभन में पड़ रहे हैं। यदि ऐसा है, तो फिर आप इसमें मेरा विघ्न क्यों डालते हैं और जो आज्ञा आपको दी गई है, उसे मानने में असफल क्यों रहते हैं, बल्कि विरोध करते हैं और अपनी इच्छाएँ थोपते हैं—या यूँ कहें कि, अपनी दुष्ट वासनाएँ और अपनी घमंडी इच्छाएँ—आज्ञापालन के नियम और जीवन के सामुदायिक क्रम के विपरीत, अपनी ही मनमर्जी के अनुसार, अपने कुछ नए नियम गढ़ते हैं, और यह दावा करते हैं कि ये सबसे पवित्र और सबसे दैवीय हैं—जबकि वास्तव में वे दुष्टता और

अव्यवस्था हैं? कुछ लोग, अपनी हठधर्मिता से, या यूँ कहें कि शैतान के हुक्म पर, चोरी-छिपे, मेरी जानकारी के बिना, अपने ऊपर बेड़ियाँ डाल लेते हैं और दूसरों को भी ऐसा करने के लिए उकसाते हैं, इस पाप में शैतान की सहायता से; अन्य लोग तपस्वी जीवन की प्रशंसा करते हैं, उस शैतान के आगे समर्पण करते हुए जो उन्हें खोखला कर देना चाहता है; फिर कुछ अन्य लोग, निश्चित रूप से हमारी आत्मा को नष्ट करने वाले विरोधी के प्रभाव में, तरह-तरह की बातें गढ़ते और प्रस्तावित करते हैं – जिसका मैं खुलासा नहीं करना चाहता। ऐसा क्यों किया जाता है, जबकि अपने वर्तमान जीवन-यापन, जो विवेकपूर्ण, ईश्वर-प्रसन्न और मोक्षदायक है, पर कोई ध्यान नहीं दिया जाता? – किस पूजनीय पिता ने इस प्रकार आचरण किया? और यदि किसी ने ऐसा किया भी, तो उन्होंने यह किसी ऊँचे पद से मिली शिक्षा के परिणामस्वरूप, या अपने आध्यात्मिक पिता के आशीर्वाद से करने का निश्चय किया होगा। तुम, हालाँकि, चूँकि अभी तक अपने अतीत के पापों से शुद्ध नहीं हुए हो—या यदि शुद्ध हो भी गए हो, फिर भी न तो आंतरिक शांति पाई है और न ही चीज़ों को परखने की मिठास का स्वाद चखा है—लापरवाही और स्व-इच्छा से अंधे होकर, साँप के प्रलोभन से प्रेरित होकर, एक गेंद की तरह तेज बहाव में नीचे की ओर सरकते हुए इसमें सिर झोंक रहे हो। ऐसा नहीं, मेरे बच्चों; किसी भी तरह ऐसा नहीं होना चाहिए। परन्तु विश्वास करो कि तुम में बुद्धिमानों में सबसे बुद्धिमान, पवित्रों में सबसे पवित्र, और लाभदायक कर्मों में सबसे लाभदायक कर्म वह है कि तुम उसी बुलावे में बने रहो जिसमें प्रभु ने तुम्हें बुलाया है: एक सामुदायिक जीवन में, एक पिता के मार्गदर्शन में, अपने भाइयों के साथ संगति में, इस ईश्वर-पोषित आध्यात्मिक पालन-पोषण केंद्र में। जो इससे विमुख होता है, उसे दानव पकड़ लेता है; परन्तु जो इसमें स्थिर रहता है, वह इसके विशिष्ट गुणों को अपना लेता है – एकमत, समान विचारधारा, संगति, सहयोग, साझा दुख, और परमेश्वर का महिमामंडन। और तुम ऐसा कुछ भी योजनाबद्ध न करना जिससे तुम स्वयं को दूसरों से अलग कर लो।

१३. जो कोई सद्गुणों में दूसरों से श्रेष्ठ होना चाहता है, उसे अपने मन में स्वयं को सभी से नीच समझना चाहिए; उसे किसी का विरोध नहीं करना चाहिए, और उसके होठों पर न तो चापलूसी होनी चाहिए और न ही बड़बड़ाहट; उसे *'क्रोध में धीमा'*, आज्ञा मानने में शीघ्र, और वाणी में हठीलापन मिलने पर *'मुझे क्षमा करें'* कहने में और भी शीघ्र होना चाहिए; उसका मुखमंडल उसके आंतरिक शुभ स्वभाव और ईश्वर की ओर प्रार्थनापूर्वक मुड़ने के कारण प्रफुल्लित और आनंदित हो, उसकी दृष्टि झुकी हुई हो जबकि उसका मन ईश्वर की ओर लगा हो; उसे हमेशा हँसी से बचने वाला हो, और केवल एक सौम्य मुस्कान तक ही सीमित रहे; उसे अपनी वाणी में संयम रखने वाला हो, और एक भी अपवित्र शब्द न बोले, न ही कोई ऐसा शब्द बोले जो निर्माणकारी न हो; उसे सामूहिक भोजन में परोसी गई चीज़ों से ही संतुष्ट रहे, और तृप्ति तक न खाए; वह निश्चित मात्रा की नींद से संतुष्ट रहे, और वह सेवा में होश और सतर्कता से खड़ा रहे, सावधान रहे कि एक भी श्लोक न छूट जाए; वह एक दैनिक सीमा निर्धारित करे, और वह अपने जीवन की सीमा को शाम तक भी न बढ़ाए, अपनी आत्मा के शरीर से प्रस्थान के लिए सदैव तैयार रहे; उसे प्रतिदिन आँसुओं की नदी बहानी चाहिए, और विशेष रूप से शाम को उसे अपने गालों को रो-रो कर भीगना चाहिए, जब वह अपनी की हुई गलतियों पर और मृत्यु के समय आत्मा के शरीर से वियोग पर विचार करे—कि कैसे फरिश्ते उसे उठाकर ले जाएँगे, कैसे वह शैतानी यातनाओं से गुजरेगी, और कैसे वह जीवन में किए गए सभी कर्मों का हिसाब देगी, संक्षेप में, कर्म और विचार में—जहाँ तब यह निर्धारित किया जाएगा कि उस बेचारे आत्मा का स्थान कहाँ होगा: चाहे दाहिने हाथ पर खड़ा होना हो, अब्राहम की गोद में विश्राम करना हो और मसीह के वधू-कक्ष में आनंद पाना हो, या बकरियों के पास जाना हो और उनके साथ यह सुनना हो: *'मेरे पास से चले जाओ, हे श्रापित लोग, उस अनंत आग में जो शैतान और उसके स्वर्गदूतों के लिए तैयार की गई है'* (मत्ती 25:41). – यही वह है जिसके लिए आप में से प्रत्येक को दूसरों से आगे निकलने के लिए लगन से प्रयास करना चाहिए। लेकिन आप इसमें उस तरह से सफल नहीं हो सकते जैसे आप सामुदायिक जीवन में हो सकते हैं, जो सेंट बेसिल द ग्रेट के अनुसार, सभी सद्गुणों का पालना है।

14. मैं आप में से कुछ के गुणों के बारे में, उनके नाम लिए बिना, बात करना चाहता हूँ, ताकि जो वैसे नहीं जीते जैसे उन्हें जीना चाहिए, उनके बीच अनुकरण की भावना जागृत हो सके। आप में से कुछ ऐसे हैं जो, कुछ विशेष दिनों पर, ईश्वर के प्रति सच्ची आस्था और तीव्र प्रेम के कारण, बिल्कुल भी नहीं सोते; ऐसे भी हैं जो इतना रोते हैं कि एक भी दिन उनकी प्रचंड आँसुओं के बिना नहीं बीतता; ऐसे भी हैं जो पवित्र Communion के पास तब तक नहीं आते जब तक कि वे पहले अपनी आँखों को प्रचुर मात्रा में आँसुओं से धो नहीं लेते; ऐसे भी हैं जो पवित्रता के प्रति इतने समर्पित हैं कि वे लोगों के चेहरों को बिल्कुल भी नहीं देखते, ताकि वे भटक न जाएँ; ऐसे भी हैं जो बैठे-बैठे ही अपनी नींद की आवश्यकता पूरी कर लेते हैं; ऐसे हैं जो भोजन के समय के अलावा कुछ भी नहीं पीते या खाते; ऐसे हैं जिन्होंने मुझसे कभी कपड़े, जूते या इस तरह की कोई भी चीज़ माँगी हो, बल्कि केवल उद्धार के लिए उनके लिए निर्धारित उपवास, जागरण या किसी अन्य प्रकार की आत्म-तपस्या का एक हिस्सा पाने के लिए ही मुझसे संपर्क किया है। – ये हृदय से धर्मी हैं; ये वे हैं जो सच्चे मन से स्वर्गीय चीज़ों की खोज करते हैं; ये वे हैं जो अपने उद्धार के लिए और अपने पड़ोसियों

को कोई हानि पहुँचाने के लिए उत्सुकता से ध्यान रखते हैं; और केवल इतना ही नहीं, बल्कि हर तरह से उनका लाभ करने के लिए भी, अपने कर्मों के द्वारा ही उन्हें सही बात की याद दिलाते हैं, और इस प्रकार सुस्त लोगों को परिश्रम के लिए और गिरे हुए लोगों को फिर से उठने के लिए प्रेरित करते हैं। जो ऐसा करना चाहते हैं, वे ऐसे लोगों का अनुकरण करें। यदि, हालाँकि, आप में ऐसी कोई इच्छा नहीं है, तो सामान्य रूप से स्वीकृत अच्छे कर्मों से ही संतुष्ट रहें: क्योंकि संयम उद्धारक है, और जो लोग इसे विवेकपूर्वक अपनाते हैं, उन्हें निस्संदेह दयालु और उदार ईश्वर से अपने मुकुट प्राप्त होंगे।

95. हम मसीह की सेना हैं: देखो कि तुम्हारा पूरा कवच तैयार रहे; क्योंकि शत्रु सोता नहीं है – और लड़ो

95. 1) हम मसीह की सेना हैं: देखो कि आपका पूरा कवच तैयार हो; क्योंकि शत्रु सोता नहीं है – और लड़ो। – 2) हर आज्ञा का पालन करो; हमारा जीवन क्षण भर का है, फिर भी इस क्षण में हम अनंत आनंद प्राप्त कर सकते हैं। अतःपरिश्रम करो, और आलसी न बनो। [2, 18]

15. हम, मसीह की सेना—सारी दुनिया से प्रभु के लिए चुनी गई एक भेंट, परमेश्वर को समर्पित एक बलिदान—मांस और लहू के शत्रुओं से युद्ध नहीं करते, बल्कि प्रधानताओं, शक्तियों और इस युग के अंधकार के हाकिमों से, बुराई की आध्यात्मिक शक्तियों से लड़ते हैं (इफिसियों 6:12)। तो फिर, हमारे लिए एक साथ एकत्र होना, परामर्श करना और विचार-विमर्श करना—साल में एक बार, दो बार, या तीन बार नहीं, बल्कि अनवरत रूप से—क्यों आवश्यक है, क्योंकि हमारे शत्रुओं के विरुद्ध हमारा संघर्ष अनवरत है और हम लगातार प्रलोभनों के अधीन रहते हैं? तब, हे मसीह के सिपाहियों, सावधान रहो: क्या तुम्हारी आत्माओं की खाइयाँ मजबूत हैं? क्या तुममें विश्वास का कवच है? क्या तुम्हारे पास नम्रता का ढाल है? क्या तुम आज्ञाकारिता की भाल को तैयार रखे हुए हो? क्या तुम्हें उद्धार की आशा का हेलमेट ढँकता है? क्या तुम्हारे हाथों में धैर्य की तलवार है? और, सबसे बढ़कर, क्या तुम्हारा सम्माननीय शरीर सुसज्जित और आज्ञाकारी है, क्या यह अच्छी तरह प्रशिक्षित और काबू में है, कहीं ऐसा न हो कि लिगाम चबाकर यह अपने सवार—मन—को दुश्मनों के सामने फेंक दे?—हाँ, आपके पास ये सभी चीजें हैं; मैं स्वयं इसकी गारंटी दूँगा। लेकिन और अधिक प्राप्त करो, क्योंकि '*ऊँचे से* हम पर *चढ़ाई करने वाले बहुत हैं*' (भजन संहिता 55:3), क्योंकि अधर्म के तीर जल रहे हैं; इसके अलावा, वह एक क्षण के लिए भी सुस्त नहीं होता, न खाता है, न पीता है, न सोता है, बल्कि दिन-रात युद्ध करता रहता है, जैसा कि उसने स्वयं एक बार पवित्र पिताओं में से एक से कहा था। यही उसका निर्जीव अस्तित्व और उसकी हानिकारक गतिविधि है: '*गरीबों और दरिद्रों पर अत्याचार करना, और जो सीधा-सादा दिल रखते हैं, उन्हें मार डालना*' (भजन संहिता 36:14)। परन्तु 'उसकी *तलवार* उसका ही *हृदय भेद डाले*' और 'उसकी *धनुषियाँ टूट जाएँ*' (भजन संहिता 36:15). कैसे? उपरोक्त हथियारों से उसे पीछे हटाकर। इस सर्वनाशक ने स्वयं स्वीकार किया है कि वह विनम्रता से कुचला जाता है, आज्ञाकारिता से पराजित होता है, प्रार्थना से भाग जाता है, उपवास से भूखा रहता है, और भाईचारे के प्रेम तथा अन्य सभी सद्गुणों के अभ्यास से उखाड़ फेंका जाता है।

१६. मैं तुम से विनती करता हूँ, जो पाप का कैदी हूँ, कि हम उस बुलावे के योग्य चाल चलें, जिसके लिए हमें बुलाया गया है। धैर्य से दृढ़ बने रहो, और हर काम अपने हाथों से करो: खेत जोतने में, क्यारियाँ खोदने में, वस्त्र बनाने में, पुस्तकें नकल करने में, बढ़ईगीरी में, रोटी बनाने में, और हर दूसरे शिल्प और सेवा में। क्योंकि इन सब के लिए, स्वर्ग में तुम्हारे लिए एक बड़ा इनाम तैयार है। देखो, हमारा जीवन एक तीव्र यात्री की भाँति चलता है और पक्षियों की उड़ान की तरह उड़ जाता है। फिर भी, भाइयों, हम अभी भी एक अच्छा सौदा कर सकते हैं। एक ही क्षण में हम सभी युगों की आनंद की विरासत के वारिस बन सकते हैं। क्योंकि सचमुच, हमारी संपूर्ण जीवनकाल अनंत शाश्वतता की तुलना में केवल एक क्षण मात्र है। धन्य हैं वे जिन्होंने जीवन के लिए आवश्यक सात बातों में बुद्धि प्राप्त की है; तीन बार धन्य हैं वे जिन्होंने संसार से घृणा की है; सर्व-धन्य हैं वे जिन्होंने, प्रभु के लिए, अपने माता-पिता, रिश्तेदारों, दोस्तों, भाइयों और संसार में जो कुछ भी है, उसे त्याग दिया है। – तो फिर तुम महिमामय कैसे नहीं हो सकते, जब तुमने यह किया है? क्योंकि प्रभु स्वयं ने कहा: '*जो मुझे महिमामय करते हैं, मैं उन्हें महिमामय करूँगा, और जो मुझे तुच्छ समझते हैं, वे लज्जित होंगे।*' – तुम सचमुच अपने अंगों में परमेश्वर की महिमा करते हो, और मसीह के अंग पवित्र हैं; स्वयं को बलिदान स्वरूप अर्पित करो और अपनी आज्ञाकारिता से अनवरत फल लाओ। इसलिए, कोई भी अपने उस अच्छे मार्ग में बाधा न डाले जिस पर वह चल रहा है; कोई भी निराशा में न डूबे या सुस्त न हो जाए; कोई भी झपकी न ले या नींद में न खो जाए। सभी सहयात्री बनें, सभी प्रेम के बंधन से बँधे रहें, सभी एक मन और एक हृदय के हों; ईश्वर में अच्छे यात्री बनें, उत्साही और सदा सक्रिय रहें।

96. आइए हम याद करें कि हम पहले क्या थे, हमें कैसे बुलाया गया, और हम अब क्या हैं; – और आइए हम ईश्वर को न केवल वचन में, बल्कि उससे भी बढ़कर, अपने जीवन की धार्मिकता के द्वारा धन्यवाद दें।

96. 1) आइए हम याद करें कि पहले हम क्या थे, हमें कैसे बुलाया गया, और अब हम क्या हैं; – और आइए हम परमेश्वर का धन्यवाद करें, न केवल वचन में बल्कि उससे भी बढ़कर, अपने जीवन की धार्मिकता के द्वारा। – 2) संसार के 'मिस्र' से निकलकर, आइए हम धैर्यपूर्वक इस जीवन के मरुभूमि से यात्रा करें, ईश्वर की सुरक्षा और मार्गदर्शन में, यह आशा करते हुए कि हम प्रतिज्ञात देश में प्रवेश कर सकें। [2, 19]

17. हमारे भीतर प्रभु के प्रति प्रेम और अनंत आशीषों की लालसा से जलने वाला एक दीपक होने के कारण, हमें लगातार अभिषेक के तेल को डालते रहना चाहिए, कहीं ऐसा न हो कि यह दीपक बुझ जाए और हमें अंधकार में छोड़ जाए, और हम, परिणामस्वरूप, अंधकार में इधर-उधर भटकते हुए, वासनाओं के विनाशकारी गड्ढे में गिर पड़ें। लेकिन यह तेल क्या है? यह अतीत, वर्तमान और भविष्य के बारे में स्मरण, चिंतन और मनन है। – तो आइए, हम अपने उन युवा दिनों को याद करें, जब हम या तो अज्ञानता में, जैसे अंधकार में, चलते थे, या व्यर्थ के कार्यों की धारा से बहाए जाते थे, जैसे समुद्र की लहरों से, या कामुक सुखों में डूब जाते थे, जैसे किसी जलमय गर्त में; फिर हमें याद करें कि कैसे दयालु ईश्वर ने हमें उस अवस्था से बाहर बुलाया, और अपना हाथ बढ़ाकर हमें बचाया, और हमें शांति का मार्ग दिखाया, तथा हमें इस उज्ज्वल और पवित्र जीवन-पथ की आकांक्षा करने के लिए प्रेरित किया; यह भी जोड़ें कि, जबकि हमारे कई रिश्तेदार, परिचित, मित्र और साथी उसी कड़वी अवस्था में बने हुए हैं, हम अकेले ही, जैसे मिस्र की दासता से, इससे मुक्त होकर इस निवास के ऊँचे पर्वत पर उठाए गए हैं; और यहाँ से नीचे देखते हुए, हम देखते हैं कैसे लोग, किसी गहरी खाई में घूमते हुए, व्यर्थ में इधर-उधर दौड़ते हैं, एक-दूसरे से धक्का-मुक्की करते हैं, एक-दूसरे को गिरा देते हैं, किसी बड़ी चीज़—अस्थिर, क्षणिक और नश्वर सांसारिक आशीर्वादों—के लिए माथे पर पसीना बहाकर मेहनत करते हैं—और, जो और भी अधिक दुखद है, इसके पुरस्कार में उन्हें अनंत यातना के लिए नरक में एक स्थान मिलता है। केवल इसी मुक्ति के लिए, हमें अपने अनुग्रह दाता परमेश्वर को कितनी कृतज्ञता और धन्यवाद अर्पित करना चाहिए? – अतःहम परमेश्वर की स्तुति निरन्तर करते रहें, जो इस्राएल के गीत से भी ऊँची हो, यह गाते हुए: *'हम यहोवा का गीत गाएं, क्योंकि वह महिमा से ऊँचा उठाया गया है; उसने घोड़े और उसके सवार को समुद्र में फेंक दिया है'* (निर्गमन 15:1)। लेकिन ऐसी कृतज्ञता अधूरी होगी यदि हम इस आशीर्वाद का उचित उपयोग नहीं करते हैं, अर्थात् दुनिया से पूरी तरह अलग रहकर, अपने ही लोगों से अलग रहकर, सांसारिक वस्तुओं को कुछ भी न समझकर, और हमारे जीवन के नियमों के आनंदमय पालन में।

१८. संसार, उसके मोह और उसकी कामनाओं से स्वयं को मुक्त करके, हमें इस जीवन के मरुस्थल से अच्छी तरह यात्रा करनी चाहिए – नम्र, आज्ञाकारी, धैर्यवान, उदार, पवित्रता और प्रभु की आज्ञाओं के प्रेमी बनकर, परन्तु किसी भी तरह से उस प्राचीन लोगों की नाईं कुड़कुड़ानेवाले न बनो; न हठी, न कामवासना से भरपूर, न सुख-भोग के खोजी, न अभिमानी, न झगड़ालू, और न ही स्वयं विधि-दाता के विरुद्ध विद्रोह करनेवाले, जब कि हम मिस्र के उन कड़ाहियों को याद करते हैं, जिनसे हम परमेश्वर की कृपा से मुंह मोड़कर अलग हो गए हैं और जिन्हें हम त्याग चुके हैं। मैं आपसे विनती करता हूँ कि ऐसा न हो। बल्कि, परमेश्वर के पवित्र लोगों के रूप में, हम आज्ञाकारी बनें, और जहाँ और जब भी स्वर्गीय हाथ हमें निर्देश दे, वहाँ जाने के लिए तैयार रहें, हमेशा परमेश्वर की इच्छा के अनुसार चलते रहें, और यात्रा की कठिनाइयों - भोजन की कमी, पानी की कमी, और ऐसी ही सभी चीजों को - प्रसन्नचित्त होकर सहन करें। यदि हम इतने आज्ञाकारी हैं, तो परमेश्वर का दूत हमारे आगे-आगे जाएगा, और प्रभु हमारे लिए अन्यजातियों के लिए जैसे किया, वैसे ही हमारे लिए भी कामों को वश में करेगा, और हम अमोरीयों के देश में प्रवेश नहीं करेंगे, कनानी, परिज्जी और यबूसी लोगों के देश में नहीं, बल्कि नम्र और धर्मी लोगों के देश में, एक ऐसे देश में जो दूध और पवित्र दूध से बहता है, और हम सभी वादा किए गए आशीर्वादों का वारिस बनेंगे, हमारे प्रभु मसीह के साथ राज्य करते हुए। हे भाइयों, देखो, हमारे सामने जो पुरस्कार रखे हैं; हमारे लिए तैयार की गई सांत्वनाओं को जानो, साथ ही उनके विपरीत दंड और यातनाओं को भी, जो उन लोगों की प्रतीक्षा में हैं जो लापरवाही से जीवन यापन करते हैं। इसलिए, आइए हम अपने सामने पगडंडी पर पूरी प्रसन्नता, पूरी लगन और अटूट धैर्य के साथ चलें, हम में से प्रत्येक अपने-अपने ऊपर पड़े कर्तव्य को एक पवित्र कार्य के रूप में लगन से पूरा करे, ठीक वैसे ही जैसे कोहत और मेरारी के पुत्रों (गिनती 4:15) ने एक बार पवित्र पात्र स्थापित किए थे। कोई अवज्ञाकारी न बने, कोई बड़बड़ाने वाला न बने, कोई अभिमानी न बने, कोई झूठा न हो, कोई उपहास करने वाला न हो, कोई ईर्ष्यालु न हो, कोई बदनाम करने वाला न हो, कोई लापरवाह न हो, कोई आलसी न हो, कोई किसी भी तरह से हमारे पवित्र निवास को लज्जित न करे; बल्कि हम सभी पूरी शक्ति से उस काम को करने का प्रयास करें जो परमेश्वर को भाता है, ताकि, अपने अच्छे काम को अच्छी तरह से पूरा करने के बाद, हम अंत में हमारे प्रभु मसीह यीशु में धार्मिकता का मुकुट प्राप्त कर सकें।

97. आप निस्संदेह संसार का त्याग करने, शहीद-सदृश आज्ञाकारिता और वासनाओं तथा अदृश्य शत्रुओं के विरुद्ध संघर्ष करने के लिए अनंतकालिक आनंद का वारिस बनेंगे: अतःदृढ़ खड़े रहो।

९७. आप निस्संदेह संसार का त्याग, शहीद-सदृश आज्ञाकारिता और वासनाओं तथा अदृश्य शत्रुओं के विरुद्ध अपने संघर्ष के लिए अनंत आनंद का उत्तराधिकार पाएँगे: अतःदृढ़ खड़े रहो। [2, 20] मृत्यु का द्वार आप सभी के लिए स्वर्गीय और परम-स्वर्गीय क्षेत्रों में उड़ान भरने का साधन बने—उस स्थान के लिए जहाँ से *'बीमारी, दुख और आहें दूर हो जाएँगी'* (भजन संहिता 35:10)। इस प्रकार मैं, यद्यपि मैं इसके अयोग्य हूँ, आशा करता हूँ कि आप वहाँ जाएँगे और उस स्थान में स्वयं को पाएँगे जहाँ सभी आनंदित लोगों का निवास है, जहाँ आनंदित लोगों के चेहरे और उत्सव मनाने वालों की आवाज़ें हैं, और आप उन सभी संतों को दिया गया वचन प्राप्त करेंगे जिन्होंने प्राचीन काल से मसीह को प्रसन्न किया है, अपने अच्छे आचरण, अपने प्रशंसनीय और धन्य जीवन, और संसार से अपनी उड़ान के लिए, मांसल संबंधों से आपके विमुख होने के लिए, अपनी इच्छाओं को त्यागने के लिए, संघर्ष में आपके दैनिक दृढ़ता और शहीद-सदृश आज्ञाकारिता में आपके धैर्य के लिए, जिसमें आप वास्तव में प्रभु की गवाही देते हैं और दुष्ट मन वाले शैतान का परित्याग करते हैं, और मानसिक तथा शारीरिक रूप से, निरंतर आप पर पड़ने वाले प्रहारों को सहते और उन्हें टालते हैं—चाहे वे कामुक वासनाओं से हों, या दैवीय बदनामियों से, या भाइयों के साथ संघर्षों से, या व्यवस्थापकों की फटकारों और डांट-फटकार से, कार्यशाला के फोरमैन, और हर तरह के अन्य कर्तव्यों में पर्यवेक्षक – और प्रभु के सामने कभी भी किसी भी तरह से अपने व्रत को नहीं तोड़ते हुए, बल्कि साहस और धैर्य के साथ उद्धार के मार्ग पर चलते हुए, अपने विरुद्ध खड़ी शैतानी सेनाओं को लज्जित और पीछे धकेलते हुए। ऐसा है आपका पराक्रम – और आप प्रेरित के साथ पुकार सकते हैं: *'हमें परमेश्वर के प्रेम से कौन अलग कर सकता है? क्या संकट, या क्लेश, या उत्पीड़न, या अकाल, या नग्नता, या संकट, या तलवार? जैसा कि लिखा है: "तेरे ही कारण हम दिन भर मारे जाते हैं; हम वध के लिए भेड़ों के समान गिने जाते हैं"'* (रोमियों 8:35-36)। निश्चय ही धन्य हैं आप, और तीन बार धन्य—फिर भी यह न भूलें—यदि आप अंत तक परमेश्वर के सामने ऐसे पराक्रम को अटूट रूप से बनाए रखते हैं: क्योंकि आप प्रतिदिन एक संघर्ष का सामना करते हैं, और साथ ही साथ प्रतिदिन अपने मुकुट प्राप्त करते हैं।

98. हम गरीब हैं; फिर भी ईश्वर हमारी ज़रूरतों का ध्यान रखते हैं; उनकी स्तुति हो; फिर भी हमें आलसी नहीं रहना चाहिए; बल्कि हर एक को अपनी-अपनी बुलाहट के अनुसार काम करना चाहिए: तब ईश्वर हमारे थोड़े से सामान को बढ़ा देंगे

98. 1) हम गरीब हैं; लेकिन ईश्वर हमारी ज़रूरतों का ध्यान रखते हैं; उनकी कृपा हो; फिर भी हमें आलसी नहीं होना चाहिए; बल्कि हर किसी को अपनी-अपनी बुलाहट के अनुसार काम करना चाहिए: तब ईश्वर हमारे थोड़े से सामान को बढ़ा देंगे। – 2) हम सब कुछ साझा करते हैं; और एक के श्रम से सभी को लाभ होता है, और इसके विपरीत; और सभी अपनी मेहनत और लगन के अनुसार ईश्वर से अपने पुरस्कार की उम्मीद कर सकते हैं; और जो बाहरी और शारीरिक रूप से श्रम करते हैं उन्हें भी उतना ही मिलेगा जितना कि जो आंतरिक और आध्यात्मिक रूप से श्रम करते हैं। – जहाँ तक बीमारों का सवाल है, उन्हें उनके सौम्य धैर्य के लिए पुरस्कृत किया जाएगा। [2, 21]

19. मेरी चिंताओं और प्रार्थनाओं का मुख्य केंद्र यह है कि कि तुम अपने पवित्र और सदाचारी जीवन-यापन में शुद्ध, परिश्रमी और निर्दोष बने रहो, ताकि कोई भी शैतान की निन्दा से भटक न जाए, बल्कि तुम सब धन्य आज्ञाकारिता के योग्य और सम्मानजनक कर्मों को करने में सतर्क और चौकस रहो। क्योंकि जब यह सब ठीक रहता है, तो मुझे किसी अन्य बात का दुख नहीं होता, यद्यपि मैं आमतौर पर दुखी रहता हूँ – मेरा मतलब है देहिक जीवन की बाधाएँ, जैसा कि अब तक जिया गया है, हालाँकि मैं इन बाधाओं को विशालता, गरीबी को धन-संपत्ति, कमी को प्रचुरता के रूप में, इस आशा से निर्देशित होकर कि प्रभु धर्मी आत्माओं को भूखा नहीं रहने देंगे, और न ही अपने पवित्र लोगों को—जैसे कि आप मसीह की कृपा से हैं—त्यागेंगे, जो उनकी दिव्य व्यवस्था से न केवल आत्मा में बल्कि शरीर में भी पोषित, तृप्त, वस्त्र-युक्त और ऊबड़-खाबड़ हैं। और फिर, ईश्वर की सहायक कृपा के बिना, ऐसा विशाल जनसमूह—जिसमें अधिकांश गरीब हैं, जिनके पास कोई मानवीय सहारा नहीं है—को ठीक से भोजन कौन दे सकता है, और उनकी सभी आवश्यकताओं को पूरा कौन कर सकता है? – अपनी आँखें उठाओ और देखो – हम में से कितने इस राजसी नगर में प्रवेश कर चुके हैं, और हम में से कितने वृद्ध, दुर्बल, बीमार, युवक और बच्चे हैं – और प्रभु उनकी सभी आवश्यकताओं को पूरा करते हैं: क्या यह अद्भुत नहीं है? क्या यह प्रशंसा के योग्य नहीं है? वास्तव में, मेरे भाइयों और बच्चों। – तथापि, हमें भी हाथ पर हाथ धरे नहीं बैठना चाहिए, बल्कि भाईचारे की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए श्रम और पसीना बहाकर अपना योगदान देना चाहिए। क्योंकि जब परमेश्वर देखते हैं कि सभी

पारस्परकि भाईचारे में उनके आज्ञाओं का पालन कर रहे हैं, तो वे दयालु हो जाते हैं – और अदृश्य स्रोतों से वे जीवकिोपार्जन के साधन भेजते हैं। इसलिए, मैं आपसे विनिती और याद दिलाता हूँ: हर कोई, जो भी कार्य उन्हें सौंपा गया हो, पूरी ताकत से काम करे और आध्यात्मिक तथा शारीरिक रूप से बहुत फल दे; क्योंकि यहाँ एक दूसरे को पहचानता है, और जो शरीर के मामलों में परिश्रमी है, वह आत्मा के मामलों में भी ऐसा ही होता है; इसके विपरीत, जो आध्यात्मिक रूप से बाँझ है, वह शरीर के मामलों में भी लापरवाह होता है।

20. हम सब कुछ एक-दूसरे के साथ साझा करते हैं, केवल शारीरिक और संवेदी ही नहीं, बल्कि आध्यात्मिक और बौद्धिक भी – और जैसे कुछ लोगों के गुण और अच्छे कर्म बाकी सभी के बीच साझा होते हैं, और इसके विपरीत भी, वैसे ही हमारे श्रम भी हैं; जैसा कि शरीर के उदाहरण से देखा जा सकता है, जैसा कि संत पौलुस प्रेरित बताते हैं: *'क्योंकि जैसे शरीर एक है और उसके कई अंग हैं, और शरीर के सब अंग, यद्यपि कई हैं, परन्तु एक ही शरीर हैं, वैसे ही मसीह भी हैं। क्योंकि यदि एक अंग पीड़ित होता है, तो सब अंग उसके साथ पीड़ित होते हैं; यदि एक अंग का आदर होता है, तो सब अंग उसके साथ आनन्दित होते हैं'* (1 कुरिन्थियों 12:12, 27)। और जैसे शरीर में, सिर से पैर तक, दाहिने और बाएं, हर अंग में एक प्रबल आवश्यकता महसूस होती है और उसकी पूर्ति होती है: वैसे ही, आत्मा के संबंध में भी इसे समझो। मेरे पिता और आपके पिता प्रथम सदस्य हैं, मैं दूसरा, फिर—क्रम से—अंतिम तक सभी; मिलकर, हिसाब-किताब के दिन, हम सभी को या तो प्रशंसा मिलेगी या निंदा। मेरे बच्चों, यह जानते हुए, हम सभी प्रयास करें, हम सभी परिश्रम करें; प्रत्येक व्यक्ति सामान्य उद्देश्य के लिए अपना हिस्सा योगदान करे, और कोई भी दूसरों के सामने अपनी सेवा में और अपनी शक्ति के माप के अनुसार इस मामले में तुच्छ न समझा जाए। लेकिन बेशक आप जानते हैं कि उस दिन ईश्वर पदक्रम उसी तरह से निर्धारित नहीं करेंगे जैसे हम यहाँ करते हैं: क्योंकि एक ईश्वरीय न्याय है और एक मानवीय न्याय। शायद वह तीन सौवें को तीसरे या चौथे स्थान पर रखेंगे, दसवें को मध्य में पदावनत करेंगे, और आखिरी को पहले स्थान पर पहुंचा देंगे—प्रत्येक को उसकी लगन और सद्गुण के अनुसार। और यद्यपि यह एक भयानक विचार है, यह संभव है कि वह कुछ लोगों को हमारी कतारों से पूरी तरह से बाहर भी कर दे और उन्हें नरक भेज दे—निश्चित रूप से वे जो, यहाँ भी, एक अलग भावना, अलग मानसिकता और स्वभाव के थे। लेकिन मैं आपको यह आश्वासन देने की हिम्मत करता हूँ कि हमारे किसी भी कार्यकर्ता की मेहनत व्यर्थ नहीं जाती, – न तो हल जोतने वाला व्यर्थ में जोतता है, न ही क्यारी तैयार करने वाला व्यर्थ में जुताई करता है, न ही रसोइया व्यर्थ में खाना बनाता है, न ही बेकर व्यर्थ में रोटी बनाता है, न ही तहखाने का रखवाला गोदाम का प्रबंधन व्यर्थ में करता है, और इसी तरह आगे भी। और ये सभी, जो भजन-गायन और कविता के एकांत अभ्यास में दूसरों की तुलना में कम लगे हुए हैं, उन्हें भी उतना ही इनाम मिलेगा जितना उन लोगों को जो अपनी कोठरियों में अपने कामों में लगे रहते हैं, बशर्ते कि वे उतने ही उत्साह से काम करें, और वह भी प्रभु के लिए। कोई भी व्यक्ति जितना अपने श्रम और उत्साह को भाईचारे के लिए समर्पित करता है, उतना ही उसे लौटकर मिलेगा। यह जानते हुए, आप जो भीतर परिश्रम करते हैं, वे जो बाहर परिश्रम करते हैं, उन्हें तुच्छ न समझें; और आप जो बाहर परिश्रम करते हैं, वे इस प्रकार हतोत्साहित न हों मानो आप तुच्छ हों। प्रत्येक के लिए मापदंड परिश्रम और उत्साह है। लेकिन कोई पूछ सकता है: बीमार के लिए क्या मापदंड है? क्योंकि वह काम नहीं कर सकता। उसका मापदंड कृतज्ञता, नम्रता और धैर्य है।

99. शिक्षाएँ व्यर्थ नहीं हैं: वे सोने वालों को जगाती हैं, और जागते हुए लोगों को मजबूत और मार्गदर्शन करती हैं

९९. १) उपदेश व्यर्थ नहीं हैं: वे सो रहे लोगों को जगाते हैं, जबकि जागते हुए लोगों को मजबूत और मार्गदर्शन करते हैं। इस प्रकार हम सभी धीरे-धीरे आगे बढ़ते हैं। – २) इसमें हम ईश्वर की दया को स्वीकार करते हैं: हमारे बीच जो बुरा है वह कम हो जाता है, जबकि जो अच्छा है वह मजबूत होता है। कुछ लोग गिरते हैं; लेकिन वे फिर से उठते हैं और अपने तरीकों को सुधारते हैं। इसलिए, अपने अच्छे मनोभाव और उत्साह को बनाए रखें। [2, 22]

21. कुछ लोग कहेंगे: इन शिक्षाओं का क्या उपयोग यदि हम उनकी बातों को व्यवहार में नहीं लाते? क्योंकि यद्यपि हम अक्सर सुनते हैं कि हमें हँसना नहीं चाहिए, फिर भी हम इस संबंध में अपने तरीकों को नहीं सुधारते; यद्यपि हमें अक्सर सिखाया जाता है कि हमें व्यर्थ की बातें नहीं करनी चाहिए, फिर भी हम ऐसा करते हैं; हालाँकि हमें बार-बार याद दिलाया जाता है कि हमें अपने पड़ोसी से ईर्ष्या नहीं करनी चाहिए, फिर भी हम इस भावना के वश में हो जाते हैं; हालाँकि हमें बार-बार याद दिलाया जाता है कि हमें दिन-रात भजन-पाठ और प्रार्थनाओं के दौरान लापरवाही से या सुस्त होकर नहीं खड़ा होना चाहिए, फिर भी हमारा मन भटकता है और हम उन दौरान झपकी ले लेते हैं - संक्षेप में: हम लगभग किसी भी चीज़ में सुधार नहीं करते। – लेकिन जो लोग ऐसा कहते हैं वे अन्यायपूर्ण ढंग से कहते हैं। सबसे पहले, यह नहीं हो सकता कि कोई भी किसी भी चीज़ में सुधार न करे, और यह असंभव है कि हर कोई एक ही समय में

हर चीज़ में सुधार करे; लेकिन आज एक व्यक्ति कल कोई और, अपने आप पर अपना काम शुरू करता है और जारी रखता है; दूसरी बात, जैसे सीढ़ियाँ चढ़ते समय कोई अचानक पहले सीढ़ी से सीधे आखिरी पर नहीं कूद सकता, बल्कि एक-एक करके सीढ़ियाँ चढ़कर ही हम ऊपर पहुँचते हैं: वैसे ही सद्गुणों की प्राप्ति में भी, धीरे-धीरे प्रगति करते हुए, हम उनके शिखर पर पहुँचते हैं। इन दोनों ही मामलों में, धर्मोपदेशात्मक शिक्षा बहुत फायदेमंद है, जो सफलता के लिए उत्साह को जगाती और बनाए रखती है, उस उद्देश्य के लिए तरीके और तकनीकें प्रदान करती है, और इस प्रकार आपकी ईमानदार आत्माओं को थोड़ा-थोड़ा करके एक से दूसरी शक्ति की ओर और पृथ्वी से स्वर्ग की ओर बढ़ने में मदद करती है। और यहाँ विचार करने के लिए एक और बात है: यदि, जब ईश्वर की महिमा के लिए, जो होना चाहिए और जो सुधारना चाहिए, उसके बारे में इतना कुछ कहा और सुना जाता है, फिर भी वासनाओं पर कोई संयम स्पष्ट नहीं होता; तो क्या होगा, और हम कितने बुरे हालात में होंगे, यदि हमारे बीच मौन छाया रहे, और जो सही है उसे न तो बताया जाए और न ही ठीक से समझाया जाए? मैंने, अपनी ओर से, संत-पुरखों से यह सीखा है कि शब्द कर्मों का मार्ग हैं—अच्छे शब्द अच्छे कर्मों की ओर, और बुरे शब्द बुरे कर्मों की ओर ले जाते हैं। और मैं यह अच्छी तरह जानता हूँ कि यह सच है—कि जीवन के एक बेहतर तरीके के बारे में बात करने से हमेशा बेहतर की ओर झुकाव होता है; मैं तुम लोगों, मेरे बच्चों, के लिए गवाह हूँ कि ईश्वर-प्रेरित धर्मग्रंथों को पढ़कर, और कुछ हद तक मेरी विनम्र शिक्षाओं को सुनकर, तुम सभी उठ रहे हो और आगे बढ़ रहे हो: जो उत्साही हैं, वे अपनी नींद से जाग उठते हैं और स्वयं में सुधार करने लगते हैं, जबकि जो पहले से ही अच्छा कर रहे हैं, वे और भी बड़ी सफलता के लिए प्रेरित होते हैं।

22. हम इसमें परमेश्वर की कृपा का प्रचार करते हैं और उनकी दया को नहीं छिपाते। क्योंकि देखो, हमारे यहाँ लगभग कोई झगड़े नहीं होते, न बदनामी, न निंदा, न गाली-गलौज, न अवज्ञा, न ही चोरी-छिपे भोजन; और यदि ऐसी कोई घटनाएँ घटित होती हैं – चूंकि हम बुराई के प्रति प्रवृत्त शरीर धारण करते हैं – तो पाप करने वाले तुरंत स्वीकार करते हैं, पश्चाताप करते हैं और निर्धारित प्रायश्चित्तों के द्वारा सुधार करते हैं; भोजन से वंचित करना, उपवास, खड़े रहना और प्रणाम करना, यह इस बात पर निर्भर करता है कि उत्पन्न हुई दुर्बलता के उपचार के लिए क्या उपयुक्त है। इसलिए, कोई यह न कहे कि इन शिक्षाओं से कोई लाभ नहीं होता। हम वास्तव में इनसे लाभान्वित होते हैं और मसीह की अनुग्रह और मेरे तथा आपके पिता की प्रार्थनाओं के मध्यस्थता द्वारा इनके माध्यम से समृद्धि प्राप्त करते हैं; और, ऊपर चढ़ते हुए, हम सदाचार के पगों से सद्गुणों के पर्वत पर चढ़ते हैं, प्रबुद्ध, पवित्र और दिव्य बनते हुए—जो, हालाँकि महान परिश्रम और पसीने से प्राप्त होता है। इसलिए मैं आपसे विनती और प्रार्थना करता हूँ: आइए हम अपने अच्छे संकल्प और अच्छे स्वभाव में दृढ़ रहें; आइए हम दोहरे मन को समाप्त करें और कायरता को हमेशा के लिए दूर भगा दें; और आइए हम स्वयं को अच्छी आशाओं और भविष्य के पुरस्कारों और शाश्वत आशीर्वादों की अपेक्षा से प्रेरित करें, – जब तक हमारी नाक में सांसें हैं, ताकि इन वर्तमान दुखों और कठिनाइयों के बाद, मृत्यु के पश्चात्, हम हमारे प्रभु मसीह यीशु में स्वर्ग के राज्य के वारिस बनने के योग्य ठहरें।

100. शासन करना कठिन है; परन्तु प्रभु के प्रेम के लिए, हमारे हित के लिए—उसने जो क्रूस पर मृत्यु तक दुख उठाया—मैं सहन करता हूँ; तुम्हें भी सहन करना चाहिए।

100. 1) शासन करना कठिन है; परन्तु प्रभु के निमित्त, उस के निमित्त जिसने हमारे लिए क्रूस पर मृत्यु तक दुख उठाया, मैं सहन करता हूँ; तुम्हें भी सहन करना चाहिए। – 2) अपने मन में विचार करो कि प्राचीन लोग कैसे सहन करते थे। 3) इसलिये हम भी उनका अनुकरण करें। [2, 23]

1. यदि मैं अपनी शारीरिक आँखों से उन दुखद परीक्षाओं को देखता जो लगभग हर दिन हम पर आती हैं, तो मैं बहुत पहले ही थक कर नेतृत्व की बागडोर किसी और को सौंप चुका होता; परन्तु जैसे मेरा विनम्र मन इस विषय में परमेश्वर की ओर देखता है, जिनके निमित्त तुम यहाँ बुलाए गए हो, और जिनके हाथ में मैंने अपना जीवन सौंप दिया है, मैं न तो हार मानता हूँ और न ही हतोत्साहित होता हूँ, और मैं सब कुछ सहने के लिए तैयार हूँ, क्योंकि मैं प्रभु मसीह द्वारा, मेरे और तुम्हारे पिता की प्रार्थना से, तुम्हारे लिए, मेरे प्रिय, और मेरे प्रभु और स्वामी के निमित्त बलवान हुआ हूँ। क्योंकि यदि वह, जिसने सभी चीज़ों की रचना की, मेरे लिए, अवतार के रहस्य के द्वारा, प्रलोभित, अपमानित, नीचा दिखाया, उपहास किया, सूली पर चढ़ाया, भाले से भेदा और دفن किया जाना स्वीकार करने को प्रसन्न हुआ; तो फिर ऐसा क्या है जिसे मैं सहन नहीं कर सकता? या यूँ कहें, ऐसा क्या है जिसे हम, आपके साथ मिलकर, स्वेच्छा से न सहें? हम पर दुख, कठिनाइयाँ, घाव, अभाव और यहाँ तक कि मृत्यु भी आ जाएँ। क्योंकि ये सभी बातें क्या हैं, जब हमें यह अटूट विश्वास है कि यदि हम सत् कर्म के लिए संघर्ष करें, यदि हम दृढ़ रहें और बहादुरी से विरोध करें, तो हमें अपने इनाम के रूप में अनंत आशीर्वाद प्राप्त होंगे? जब हमारा दुर्बल शरीर लड़खड़ाने लगे, तो हमें खुद को याद

दलिाना चाहिए कि इसे तुष्ट करके, हम क्रोध के दिन और परमेश्वर के धर्मी न्याय के प्रकट होने के दिन अपने लिए क्रोध इकट्ठा कर रहे हैं, और हमें उत्साही साहस के साथ उठ खड़े होना चाहिए।

२. ओह, वे प्राचीन पवित्र आत्मा अब कहाँ हैं! जो उत्साह कभी उन्हें प्रेरति करता था, वह अब कतिना क्षीण हो गया है! उनके लिए, शारीरिक पीड़ा आनंद और प्रसन्नता थी; महिमा और महानता पूर्ण अपमान थी। वे प्रभु के प्रतजिलते हुए प्रेम से परिपूर्ण थे; वे एक अतृप्त लालसा से व्याप्त थे—अपनी इच्छा न करने के लिए, बल्कि उसे पूरी तरह से त्यागने के लिए; उन्होंने शासन करना नहीं चाहा, बल्कि वृद्धावस्था तक आज्ञाकारी और वश में रहना चाहा। वह धन्य वृद्ध मठाधीश कहाँ है, जो भोजन के अंत तक नम्रता से खड़ी रहीं? वह आज्ञाकारिता का वह रत्न कहाँ है, जिसे तीस वर्षों के दौरान अनेक परीक्षाओं में परखा गया? यह कहाँ है, वह कहाँ है? – क्योंकि देखो, तारों के एक समूह की तरह, संतों की संपूर्ण पवित्र सभा, हर तरह के सद्गुणों से दमकती हुई, मेरे मन के सामने खड़ी है। – आइए हम विचारों में उनके पवित्र निवासों से गुज़रें। देखो, महान पाचोमियिस की नींव। – वहाँ हम सदा-स्मरणीय योना, गौरवशाली पेट्रोनियिस, और पवित्र थियोडोर को निहारें। फिर हम महान थियोडोसियिस के मठ की ओर बढ़ें, और वहाँ भी सदा-जीवित बेसलि, अद्भुत एटयिस, – और अन्य कई लोगों को देखें। यहाँ से हम धन्य थियोकटस्टिस, महान यूथमीयस और पवित्र सावस के श्रम के पवित्र स्थानों की ओर बढ़ें; और, संक्षेप में कहूँ तो: आइए हम मानसिक रूप से उन सभी घटनाओं का सर्वेक्षण करें जो प्राचीन, मध्ययुगीन और बाद के मठों में हुईं, और यह भी कि प्रत्येक ने उनमें सद्गुणों का जीवन जीने के लिए कैसे और किस हद तक प्रयास किया।

३. उसी प्रकार हमें भी चलना चाहिए, यदि हम सच्चा जीवन और प्रकाश पाना चाहते हैं, सभी बातों को सहते हुए, सभी बातों को सहन करते हुए, *किसी भी बात में ठोकर का कोई कारण न देते हुए, 'ताकि* हमारी *सेवा निर्दोष हो'* (२ कुरिन्थियों ६:३); *'और इन सब के ऊपर विश्वास की ढाल उठाए रहो, जिससे तुम उस दुष्ट के सभी जलते हुए तीरों को बुझा सको'* (इफिसियों 6:16), अजेय बने रहो, आनन्दित रहो और सद्भावना में एक दूसरे के आनन्द में सहभागी बनो, पवित्र आत्मा की एक ही साँस से एक होकर, मसीह की एक देह के रूप में।

101. हमें परिश्रम, वंचितिताओं और कष्टों के द्वारा अपने पापों से शुद्ध होने के लिए बुलाया गया है

101. हमें परिश्रम, अभाव और कष्टों के द्वारा अपने पापों से शुद्ध होने के लिए बुलाया गया है। यह कठिन है; लेकिन इसके बदले में, एक अनंतकाल तक धन्य जीवन का वादा किया गया है। अतःहमें ऐसी सभी बातों में आनन्दित होना चाहिए। [2, 24] मैं आपको संक्षेप में उस तपस्वी जीवन की याद दिलाना चाहता हूँ जिसके लिए हमें बुलाया गया है, जिसके द्वारा हम अपने अतीत के पापों से स्वयं को शुद्ध करते हैं और जिसके लिए हम प्रतिदिन पीड़ा सहते हैं। क्योंकि प्रभु के वचन के अनुसार, हमारा मार्ग वास्तव में संकरा और दुखद है; परन्तु चूँकि इसमें अनन्त जीवन का वचन है, आओ हम आनन्दित हों और इसे सफलतापूर्वक चलने के लिए पूरी लगन से प्रयास करें, धार्मिक उत्साह में एक-दूसरे से होड़ करते हुए, एक दौड़ की तरह दौड़ते हुए, और अपने विरोधी पर विजय प्राप्त करते हुए, ताकि हम न्याय के दिन धार्मिकता का मुकुट प्राप्त कर सकें। इसी कारण, हमें बोझिल को हल्का, प्रतिकूल को अनुकूल, दुखद को आनंददायक, अभावपूर्ण को लाभदायक, अपमान को सम्मान, निंदा को प्रशंसा, आवश्यक वस्तुओं की कमी को संतोष, पानी पीने को शराब पीना, और देर से खाने को जल्दी खाना मानना चाहिए। यहीं में हमारे जीवन का शहीद-सा चरित्र निहित है, और इसी पर भविष्य के आशीर्वादों की हमारी अपेक्षा और आशा की नींव टिकी है। मैं आपसे विनती करता हूँ, हम न तो रोएँ और न ही हतोत्साहित हों, यह देखकर कि हमारा जीवन दुख लाता है और हृदय को व्यथित करता है; बल्कि—यह देखकर कि इसमें हमारे लिए पुत्रत्व का दर्जा, स्वर्ग का राज्य और धन्य अमरत्व संजोया हुआ है, – आइए हम इसे और अधिक उत्साह के साथ अपनाएँ और इसमें लगातार नवीनीकृत हों, श्रम में श्रम जोड़ते हुए, कारनामों में कारनामे, लगन में लगन, आज्ञाकारिता में आज्ञाकारिता, अपनी इच्छा पर काबू पाने में अपनी इच्छा पर काबू पाने, प्रार्थनाओं में प्रार्थनाएँ, प्रहरों में प्रहरे, ईश्वर के चिंतन को ईश्वर के चिंतन में, आँसुओं को आँसुओं में, प्रेम को प्रेम में बदलते हुए। ऐसा ही हमारा जीवन है, जो क्षणभंगुर संसार से अलग और उससे श्रेष्ठ है, जो कुछ हद तक सांसारिक बुद्धिमानों के लिए अजीब और अपरिचित है, जिन्हें देह शासित करता है और जो वर्तमान को भविष्य पर ترجیح देते हैं। ऐसे हैं आप जिन्होंने संसार और उसमें जो कुछ भी है, उसे त्याग दिया है: माता-पिता, भाई, बच्चे और सभी सांसारिक चीजें, और जो प्रभु के प्रेम के लिए, कठिनाइयों को सहने, पीड़ा सहने, अपमानित होने, यातना सहने और मृत्युदंड पाने के लिए सदैव तैयार रहते हैं। इसी कारण, स्वर्ग में आपके लिए एक महान प्रतिफल संचित है: आप इस संसार से परमेश्वर के पास ले जाएँगे, और, इस अस्थायी जीवन को पीछे छोड़कर, आप अनंत जीवन में प्रवेश करेंगे, बशर्ते कि आप अंत तक विश्वासयोग्य आज्ञाकारिता का प्रदर्शन करते रहें।

102. मैं आपको समुदाय के जीवन के प्रति आपकी सच्ची और सफल प्रतिबद्धता के लिए आशीर्वाद देता हूँ

102. 1) मैं सामुदायिक जीवन के श्रम के प्रति आपकी सच्ची और सफल प्रतिबद्धता के लिए आपको आशीर्वाद देता हूँ। – 2) उन लोगों पर विश्वास न करें जो यह सुझाव देते हैं कि हर जगह ऐसे बहुत से लोग हैं। – 3) हमारा सर्वोपरि हथियार हमारे विचारों का प्रकटीकरण है। – 4) यह हमारे सभी तपस्या प्रयासों को समृद्ध करता है। [2, 25]

4. मैं आपको आशीर्वाद देता हूँ क्योंकि, इस पीढ़ी में और इन दिनों में, आप प्रभु की गंभीरता से खोज करते हैं, अपने हृदयों पर नजर रखते हैं, और विश्वास करते हैं कि आपकी आत्मा परमेश्वर के साथ है; मैं तुम्हें इस बात के लिए भी सराहता हूँ कि तुम सच्चाई और बिना दिखावे के अपना जीवन यापन करते हो, तुमने सचमुच संसार का त्याग किया है और केवल उससे अलग होने का दिखावा नहीं किया है, और वास्तव में वही हो जो तुम बुलाए गए हो: क्योंकि तुमने सचमुच सभी चीजों से खुद को अलग कर लिया है, एक ही परमेश्वर के साथ निवास करते हो और अपने सुंदर निवास में केवल उसी की सेवा करते हो। इसलिए आपका सामुदायिक जीवन-यापन, जिसके द्वारा आपके बीच कुछ भी किसी की निजी संपत्ति नहीं कहा जाता; इसलिए आपके माता-पिता और शरीर के संबंधियों से आपका अटूट अलगाव; इसलिए मेरी नम्रता में सच्चा विश्वास, जो मुझे आपके हृदयों की गूढ़ इच्छाओं के द्वारा प्रकट हुआ है; यही कारण है कि आप कैद में भी विशाल मन वाले हैं, दरिद्रता में संतुष्ट हैं, और शारीरिक आवश्यकताओं की कमी में भी आराम और आनंदित हैं; और और क्या कहूँ? – यही आपके जीवन की महिमा है और यही कारण है कि आप हर किसी की जुबान पर हैं।

5. मैं यह आपको खुश करने के लिए नहीं कह रहा हूँ, बल्कि मैं आपको यह याद दिला रहा हूँ ताकि आप दृढ़ और मजबूत बने रहें, और ऐसी ऊँचाई से न गिरने का पूरा ध्यान रखना, और न ही अपनी इच्छा के सद्संकल्प में कमजोर पड़ना, अपने संन्यासी संघर्षों को त्यागकर या भ्रष्ट तर्कों और मनुष्यों की कलह से भटककर, जो प्रभावशाली ढंग से यह सुझाव देते हैं कि यहाँ और हर जगह ऐसे बहुत से लोग हैं जो परमेश्वर का भय मानते हैं और उसकी सेवा हमसे भी बेहतर ढंग से करते हैं। 'ऐसी ही परीक्षाएँ होती हैं' – और किस उद्देश्य के लिए? ताकि तुम्हारी सामर्थ्य प्रकट हो (1 कुरिन्थियों 11:19)। इसलिए, अपनी इच्छा के शुभ संकल्प को दृढ़ता से थामे रहो, प्रभु से प्रेम करना न भूलो, इसे अच्छे कर्मों के द्वारा प्रदर्शित करो, और हमारे उद्धार के लिए आवश्यक चीज़ों की खोज करो; क्योंकि हमसे बहुत कुछ छिपा है, और हम यह जाने बिना ही ठोकर खाते हैं कि कैसे, या इसे जाने बिना ही, जैसा कि दाऊद के वचन हमें आश्वस्त करते हैं: *'अपनी त्रुटियों को कौन पहचान सकता है?'* (भजन संहिता 18:13)।

6. अतः मैं चाहता हूँ कि आप यह जान लें कि उद्धार के लिए अपने विचारों के प्रकटीकरण से अधिक प्रभावी कोई उपाय नहीं है: यह एक ऐसी बात है जिसका अनुभव आप स्वयं करते हैं। – तो फिर, आप में से कुछ लोग, जब प्रभु ने यह वरदान आपको दिया है, जब ऐसा उपचार आपके हाथ में है, तो इकरार और प्रकटीकरण के लिए आने में देरी क्यों करते हैं, और चुप्पी से खुद को घुटते क्यों हैं, और बिना कहे रह जाने वाले विचारों से, जैसे कीड़ों से भरकर, बहक क्यों जाते हैं? मैं तुम पर तरस खाता हूँ, तुम जो भी हो, और मैं तुम्हारी दुर्बलता पर शोक करता हूँ। जब तुम्हारे पास चंगा होने, प्रबुद्ध होने और उत्साहित होने का साधन है, तो तुम स्वयं को इसके विपरीत क्यों करते हो? ईश्वर सब कुछ देखता है; क्योंकि *'कोई भी प्राणी un ऐसा नहीं है जो उससे छिपा हो; परन्तु सब कुछ उसकी दृष्टि के सामने नंगा और खुला हुआ है'* (इब्रानियों 4:13)। – इसके अलावा, मुझे तुम्हें प्रकट करना होगा; क्योंकि मुझे अपने बच्चों की स्पष्टवादिता की आवश्यकता है, ताकि मैं उन्हें जान सकूँ, और वे मुझे जान सकें।

7. और यही, वास्तव में, सच्चा आध्यात्मिक संबंध है: निष्कपट आज्ञाकारिता, एक निश्चिंत यात्रा, मीठी प्रार्थना, अनवरत प्रगति और पूर्णता की ओर आरोहण। पश्चाताप के आँसू जो आँखों से बहते हैं, वे अच्छे हैं; शुद्ध प्रार्थना अच्छी है, चाहे दिन हो या रात; कष्टों में धैर्य रखना अच्छा है; सुई का काम करना अच्छा है; पठन-पाठन को ध्यान से सुनना अच्छा है; जल्दी बोलना अच्छा नहीं है और बिना हँसी के बातचीत करना अच्छा है; संयम अच्छा है; मृत्यु और संतों के जीवन को याद रखना और जहाँ तक संभव हो उनकी नकल करना अच्छा है; जुनूनी साहसिकता से भागना और दैवीय नम्रता का पालन करना अच्छा है; परन्तु इन सबसे उत्तम है निस्संदेह आत्म-परीक्षा और अपने विचारों का अंगीकार। – *'सब बातों की परीक्षा करो; जो अच्छा है उसे थामे रहो'* (1 थिस्सलुनीकियों 5:21)।

103. उस दुनिया में विचार और भावनाएँ, शब्द और कर्म हमारे अपने से बिलकुल अलग हैं: हम इसे सब कुछ ऐसे अनुभव करते हैं जैसे हम स्वर्ग में हों

103. 1) दुनिया में विचार और भावनाएँ, शब्द और कर्म हमारे अपने से बिलकुल अलग हैं: हम इसे सब कुछ ऐसे अनुभव करते हैं जैसे हम स्वर्ग में हों। – 2) ईश्वर ने ही हमें वह सब कुछ दिया है जो हमारे पास है; भीतर और

बाहर, सब कुछ इस संसार की चीज़ों से अलग है। – 3) तथापि, हमें सावधान रहना चाहिए कि हम सामान्य लोगों से भी बदतर न बन जाएँ। [2, 26]

8. महिमा हो परमेश्वर की, जिसने हमें हमारी माँ के गर्भ से ही इस पवित्र आह्वान के लिए चुना! धन्यवाद हो प्रभु का, जिसने हमें मठवासी जीवन के धन्य और अद्भुत मार्ग पर बुलाया है! – हमें – भले ही ऐसा कहना साहसिक लगे, फिर भी यह सत्य से बहुत दूर नहीं है – वास्तव में स्वर्ग के राज्य के रहस्यों को दुनिया वालों की तुलना में अधिक समझने का वरदान मिला है, जिनमें से कई, देखते हुए भी नहीं देखते कि चीजें वास्तव में कैसी हैं। क्योंकि विचार करो कि उनके विचार और आकांक्षाएँ क्या हैं: वे धन-संपत्ति और क्षणिक महिमा का आदर करते हैं, सुख-आनंदों में आनंदित होते हैं, सुगंधित इत्रों, कोमल वस्त्रों, कीमती पत्थरों, सुंदर आवासों, बगीचों, बगुलघों और हर तरह की अन्य व्यर्थताओं से मोहित हो जाते हैं; वे हँसते हैं, नाचते हैं, और कसाई के लिए मोटा किए जा रहे जानवरों की तरह मोटे हो जाते हैं, और कई अन्य ऐसे काम करते हैं जिनके बारे में बात न करना ही बेहतर है, ठीक वैसे ही जैसे इस से उत्पन्न होने वाले परिणामों के बारे में बात न करना ही बेहतर है - ऐसे परिणाम जो अच्छे नहीं हैं, फिर भी उनकी प्रशंसा करते हैं। यही वह है जिसकी वे प्रशंसा करते हैं, जिस पर वे घमंड करते हैं, और जिसमें वे आनंदित होते हैं! – परन्तु यह सब उन लोगों की दृष्टि में तुच्छ और घृणित है जिन्होंने *'मांस को उसकी कामनाओं और इच्छाओं सहित सलीब पर चढ़ा दिया है'* (गलातियों 5:24); – जैसे कि आप स्वयं प्रभु यीशु मसीह में हैं, पवित्र प्रेरित के अनुसार, मांस को सलीब पर चढ़ाकर। हमारी एक अलग लालसा और अन्य चीजों के प्रति एक अलग प्रवृत्ति है। हम उस कल्याण की अवस्था की खोज और प्रयास करते हैं जो आनंद के स्वर्ग में मौजूद थी, जहाँ से हमें निकाल दिया गया था: इस उद्देश्य के लिए हम मूल जीवन शैली के करीब एक जीवन शैली अपनाते हैं, मोहक दुनिया से मुंह मोड़कर परमेश्वर के पास आते हैं, इस जीवन के अंधकार को त्यागकर आत्मा के प्रकाश से परिधानित होते हैं, और सभी चीजों का परित्याग करके, हम सभी का स्वामी बन जाते हैं।

९. हे, क्या अद्भुत और उत्कृष्ट आह्वान है! जिसने हमें मांस और रक्त, हमारे माता-पिता, रिश्तेदारों, मातृभूमि, इस जीवन की प्रथाओं और सांसारिक सभी चीजों से अलग किया है? किसने हमें मठाध्यक्षों और आध्यात्मिक पिताओं के दास बनने के लिए, और संयम, जागरण तथा खुले में सोने के तपस्वी कार्य को अपनाने के लिए राज़ी किया है? किसने हमें चीज़ों को बिना भटकाव या आसक्ति के देखने, और सोने को मूल्यवान न समझने के लिए ज्ञान दिया है, चांदी, सुंदरता, सांसारिक वैभव, या स्वयं शाही मुकुट और बैंगनी वस्त्रों को भी; बल्कि इन फटे-पुराने और पैबंद लगे कपड़ों को पहनना अधिक सम्मानजनक और महान मानना और उन पर गर्व करना, बजाय चमचमाते वस्त्रों के? किसने हमें उन सभी भौतिक और सांसारिक चीजों से भागने और जीवन के उच्च क्रम के साथ खुद को जोड़ने की शक्ति दी है, और स्वर्गदूतों की तरह, ब्रह्मचर्य के माध्यम से शुद्ध और अछूत बने रहने की शक्ति दी है? ऐसी हैं हमारी स्तुतियाँ! ईश्वर ने ये वरदान हमें दिए हैं, जिन्होंने उनसे प्रेम किया है और आने वाले आशीर्वादों के लिए तरसते रहे हैं – अगम्य प्रकाश, शाश्वत महिमा, अकथनीय आनंद, अनंत हर्ष, शाश्वत विरासत, स्वर्ग का राज्य, अक्षय धन-संपत्ति, और स्वर्गदूतों और पितरों के द्वारा कहे गए सभी वचन।

10. चूँकि ऐसा है, तो आइए हम जागते और सावधान रहें, कहीं हम विपरीत मार्ग पर न लौट जाएँ और बाद में खुद को दुनिया के तरीकों के अनुसार जीने वालों से पीछे पाएं। इसलिए, आइए हम खुद को बार-बार शुद्ध करें, और बार-बार खुद को पवित्रता में दृढ़ करें – और आइए हम मन और हृदय से सावधान रहें, कि शैतान को थोड़ा भी अवसर न दें। एक शब्द से दूसरा शब्द उत्पन्न होता है, एक दृष्टि से दूसरी दृष्टि आकर्षित होती है, और लापरवाही से लापरवाही को बढ़ावा मिलता है; और धीरे-धीरे, जब हम इससे परिचित हो जाते हैं और इसमें सहज हो जाते हैं, तो हम खुद को रात के कौवों की स्थिति में पाते हैं, और पापी मृत्यु को आमंत्रित करते हैं। ऐसा नहीं, मेरे बच्चों, ऐसा नहीं; मैं तुमसे विनती और प्रार्थना करता हूँ। एक-दूसरे से सावधान रहो, क्योंकि जीवन और मृत्यु तुम्हारे पड़ोसी के हाथ में है। थोड़ी सी लापरवाही, अनजाने में की गई लापरवाही, मनुष्य को पाप की खाई में धकेल देती है। ध्यान दो और सावधान रहो, जवान और बूढ़े, जो आगे हैं और जो पीछे हैं, जो अधिकार में हैं और जो अधिकार के अधीन हैं। ऊपर हम धन्य थे; यहाँ हम अपमानित हैं; ऊपर हमें स्वर्गदूतों की तरह जीने वाला बताया गया था , यहाँ हम शैतान के समान ठहराए गए हैं। किसी के बारे में कहा गया है कि उसके लिए कभी पैदा ही न होना बेहतर होता (मत्ती 26:24)। यही इस व्यक्ति के बारे में भी कहा जा सकता है। – लेकिन बस इतना ही। – और मैंने ये बातें आपको दुखी करने के लिए नहीं, बल्कि आपको पहले से आगाह करके आने वाली पाप की तलवार से बचाने के लिए कही हैं।

104. बोलना मेरा कर्तव्य है, और सुनना आपका।

104. 1) बोलना मेरा कर्तव्य है, और सुनना आपका। – 2) आप अपने होठों से मेरा सम्मान करते हैं, फिर भी आपके हृदय इससे दूर हैं: जब मैंने आपको हमारी आर्थिक तंगी के बारे में बताया और उसके कारण समझाए, तो आप हमारी स्थिति को स्वीकार कर लिया; लेकिन फिर आप बड़बड़ाने लगे, खासकर इस बारे में कि इतने सारे लोगों को क्यों प्रवेश दिया जा रहा है। – 3) मैं आपको यह समझाऊंगा: ईश्वर हमारे पालनहार हैं और हमारी मदद करेंगे। – 4) शिकायत न करो: अन्यथा, उन इस्राएलियों की तरह, जिन्होंने जंगल में शिकायत की और इस कारण से प्रतिज्ञात देश में प्रवेश नहीं कर सके, तुम भी परमेश्वर के राज्य में प्रवेश नहीं करोगे। – 5) हमारे पूर्वजों के साथ ऐसा कभी हुआ था? इसके विपरीत, उन्होंने सभी कठिनाइयों को सहन किया, फिर भी उन्होंने दूसरों को उनकी ज़रूरत की चीजें देने से इनकार नहीं किया। – 6) आप स्वयं यहाँ कुछ भी लाए बिना आए थे, फिर भी यहाँ आपको सहारा मिला: तो अब आप दूसरों पर दया करने से क्यों कतरा रहे हैं? भूख से मर रहे कुत्तों को तो भगाया नहीं जाता, फिर आप उन लोगों को भगाना चाहते हैं जिनके लिए मसीह मरे। – 7) क्या आप सभी ने मुझसे साथ दुख सहने का वादा नहीं किया था; और अब क्या? या क्या आप भूल गए हैं कि दुख-तकलीफ हमारा भाग है? – 8) पश्चाताप करो; जहाँ तक मेरी बात है, मैं बदलूँगा नहीं; इसके अलावा, आप भी इन मामलों में भागीदार हैं: क्योंकि हम एक हैं। – 9) याद करो कि परमेश्वर ने हमें कितनी बार ज़रूरत से बचाया है: तो फिर हमें आज्ञाओं के अनुसार काम करने से क्यों डरना चाहिए? [2:30]

11. मेरा काम और मेरा अनवरत प्रयास यह है कि मैं हमेशा आपके पास वचन लाऊँ, आपको सही बात की याद दिलाऊँ, और आपको अपने ईश्वरीय जीवन-मार्ग पर दृढ़ रहने के लिए प्रोत्साहित करूँ। क्योंकि यदि मूक झुंड के चरवाहे, आवश्यकता के कारण, अपने ऊपर निद्रारहित चौकसी और उन भेड़ों की देखभाल का श्रम लेते हैं, जिन्हें उन्हें सौंपा गया है, उन्हें चरागाह में ले जाकर उनका मार्गदर्शन करते हैं: तो फिर, मेरी—एक पापी, जिसने मसीह के भेड़ों, आप लोगों पर अनुचित रूप से अधिकार प्राप्त किया है—के लिए आपकी आत्माओं पर चौकस नजर रखने की, और वचन के प्रचार के माध्यम से, जैसे बांसुरी से, आप लोगों से बात करने की, सही और लाभदायक बातों की ओर आपका ध्यान आकर्षित करने और गलत और हानिकारक बातों के प्रति आपको चेतावनी देने की आवश्यकता कितनी अधिक है। लेकिन चूँकि यह कर्तव्य मुझ पर है, इसलिए आपके लिए भी यह उचित नहीं है कि आप मेरे शब्दों को हल्के में लें, बल्कि आपको मेरी चरवाहे की आवाज़ को ध्यान से सुनना चाहिए /प्रभु कहते हैं, *'मेरी भेड़ें मेरी आवाज़ सुनती हैं, और वे मेरा अनुसरण करती हैं।' वे किसी अजनबी का अनुसरण नहीं करते, बल्कि उससे भाग जाते हैं, क्योंकि वे अजनबी की आवाज़ को नहीं पहचानते* (यूहन्ना 10:27, 5)। यह मुझ पर और आप पर लागू होता है।

12. लेकिन मैंने आपको यह प्रस्तावना क्यों दी है? – मैं शुरुआत में ही यह कहूँगा – ताकि ये शब्द आपके लिए बोझिल न हो जाएँ – कि आप में से कुछ लोग होंठों से मेरा सम्मान करते हैं, जबकि आपके हृदय मुझसे दूर हैं। अब मैं समझाऊँगा – क्यों? – पिछले वर्षों में खराब फसल होने के कारण, साथ ही दुनिया की गहराइयों से हमारे मठ के आश्रय में मोक्ष के लिए भेजे गए लोगों के आगमन के कारण, और चूंकि हम इस शाही शहर में स्थित हैं, इसलिए सरायों और अन्य आश्रयों की संख्या में वृद्धि के कारण भी, हमें अपनी भौतिक जरूरतों को पूरा करने में कठिनाइयों का सामना करना पड़ रहा है। मैंने यह सभी को बता दिया है, और, वर्तमान वर्ष की हमारी ज़रूरतों को पूरा करने के संबंध में अपनी गहरी चिंता और उस बोझ को व्यक्त करते हुए जो मुझ पर भारी है, मैंने आपसे विनती और निवेदन किया है कि आप हमारे हस्तशिल्प को बढ़ाने के लिए उत्साह से प्रेरित हों, हमारे बीच प्रचलित रीति-रिवाजों से परे, साथ ही उन्हें यह याद दिलाते हुए कि हमारे लिए, जो स्वर्ग के राज्य की खोज करते हैं, हर तरह से संकीर्ण और दुखद मार्ग पर चलना पूरी तरह से उपयुक्त है, जिस पर हम दुख और कठिनाइयों का सामना करते हैं, भूख और प्यास, परिश्रम और पसीना, नग्नता और गरीबी, और इसी तरह की अन्य चीजें; और यह जोड़ते हुए कि ईश्वर अक्सर हमें छोटी-छोटी परीक्षाओं से गुज़रने देते हैं, यह परखने के लिए कि उनके प्रति हमारे प्रेम की गहराई क्या है, और क्या हम उनकी खातिर आने वाली तकलीफों को स्वेच्छा से सहन करते हैं। – तब तुमने वैसा ही प्रदर्शन किया जैसा तुम्हें करना चाहिए था और मेरी अपेक्षाओं पर खरे उतरे। लेकिन चूँकि आपका हृदय वास्तव में ईश्वर की ओर मुड़ा हुआ नहीं था और आपने केवल अपने होठों से ही उनकी प्रशंसा की, आप कुछ ही समय बाद, जो हुआ था उससे बोझिल होकर, बड़बड़ाने लगे और विद्रोह कर बैठे—किसी मूसा के खिलाफ नहीं, बल्कि मुझ पापी के खिलाफ—यह कहते हुए: 'वह इतने सारे लोगों को क्यों इकट्ठा करता है जबकि वह उनका भरण-पोषण नहीं कर सकता? और इसकी क्या आवश्यकता है?' और उसे इतनी बड़ी भीड़ इकट्ठा करने के लिए कौन मजबूर कर रहा है?

13. इन्हीं शब्दों को मैं संबोधित करना और परमेश्वर का सत्य प्रचारित करना, और ऐसे लोगों पर आने वाली परमेश्वर की तलवार की ओर इशारा करना है, ऐसा न हो कि उनके विनाश का लहू मेरे पापी हाथों पर आ पड़े। – और सबसे पहले, उन्होंने, जैसे कि वे मेरे सच्चे पुत्र ही न हों, मुझसे एक स्वर में यह नहीं कहा: 'हम उन्हें क्यों अपना रहे

हैं?' परन्तु, परदेशियों और दुष्ट बच्चों की तरह, उन्होंने कहा: 'वह उन्हें क्यों स्वीकार करता है?' – और इस प्रकार उन्होंने स्वयं को मुझसे संगति से बाहर कर लिया। – इसके अलावा, यद्यपि उन्होंने ऐसा कहा, तथापि वे दोषी और निन्दा के पात्र हैं, क्योंकि, जैसा कि भजन में गाया गया है, *'उन्होंने परमेश्वर की निन्दा की और कहा, "क्या परमेश्वर सचमुच इन लोगों के लिए भोजन तैयार कर सकता है?"'* (भजन संहिता 77:19-20)—ऐसी भीड़ के लिए? क्या मैं भोजन का प्रबंधक हूँ, या मैं फल देता हूँ, या अनाज के घरों को भरता हूँ? और फिर, क्या मैं अपनी इच्छा से और अपने अधिकार से आने वालों का स्वागत करता हूँ और भाईचारे को बढ़ाता हूँ? – क्या संसार का पोषण करने वाले स्वयं प्रभु और परमेश्वर नहीं हैं, *'जो अपना हाथ खोलते हैं और अपनी कृपा से हर जीवित प्राणी को तृप्त करते हैं?'* (भजन संहिता 144:16)। क्या वही स्वयं नहीं कहते: *'पहले परमेश्वर के राज्य और उसकी धार्मिकता की खोज करो, और ये सब बातें तुम्हें अतिरिक्त रूप से दी जाएँगी?'* (मत्ती 6:33)। क्या वही स्वयं नहीं हैं जिन्होंने कमजोर दिल वालों को यह कहकर प्रोत्साहित किया: *'आकाश के पक्षियों को देखो: वे न बोते हैं, न काटते हैं और न भण्डारों में इकट्ठा करते हैं, और फिर भी तुम्हारा स्वर्गीय पिता उन्हें खिलाता है; तुम कितने अधिक माने जाओगे, हे अल्पविश्वासी?'* (मत्ती 6:26; लूका 12:28). इसके अलावा, एक विशेष बुद्धिमान व्यक्ति के माध्यम से, क्या यह वही नहीं हैं जो प्रेरित करते हैं: *'प्रभु पर भरोसा रखने वाला कौन कभी लज्जित हुआ है? या उसकी रक्षा खोजने वाला किसको त्यागा गया है? या जिसने उसकी पुकार की, उसे किसने तुच्छ जाना है?'* (सीराख 2:10). और फिर, क्या यह वही नहीं हैं जो सुसमाचार के माध्यम से वादा करते हैं: *'जो कोई मेरे पास आता है, मैं उसे कभी बाहर नहीं निकालूंगा'* (यूहन्ना 6:37)? और क्या यह वही नहीं हैं जो आज्ञा देते हैं: *'छोटे बच्चों को मेरे पास आने दो, और उन्हें रोकना नहीं; क्योंकि ऐसे लोगों का परमेश्वर का राज्य है'* (लूका 13:16)? पवित्रशास्त्र में और भी कई अंश हैं जो इस बात से सहमत हैं। तो फिर, तुम एक गरीब आदमी के खिलाफ क्यों उठते हो, और अपनी जीभ-बाँधी क्रोध में बकवास क्यों करते हो?

14. ऐसा प्रतीत होता है कि आप इस्राएली लोगों में से एक हैं, जो अदृश्य फिरौन के हाथ से, वासनाओं की दासता के कड़वे श्रम से, और सांसारिक व्यर्थता के अंधकारमय मिस्र से मुक्त हुए हैं, – जो बाद में, तपस्वी और दुखपूर्ण जीवन के मरुभूमि को पार करते समय, जब गंभीर कष्टों का सामना हुआ, तो न तो उन्होंने ईश्वर का धन्यवाद किया और न ही उसे महिमा दी, ताकि इस अनुकूल मनोभाव के कारण ईश्वर की व्यवस्था से जो आवश्यक था वह हो सके; बल्कि उन्होंने ईश्वर के विरुद्ध कुड़कुड़ाहट की, जैसे कह रहे हों: 'मिस्र में मर जाना हमारे लिए बेहतर होता', मिस्र के कलशों को याद करते हुए, और प्रत्येक व्यक्ति इस बात को उस चीज़ के रूप में समझता था जिसने उन्हें संसार में सबसे बड़ी प्रसन्नता दी थी। – लेकिन आप जानते हैं कि जो लोग कुड़कुड़ाए, उनके साथ क्या हुआ: उनमें से एक को भी प्रतिज्ञात देश में प्रवेश करने की अनुमति नहीं मिली, और उनके सभी हड्डी-पंजर मरुभूमि में ही गिर गए। हे मेरे बच्चों, मुझे डर है कि यदि हमने भी उनके समान ही किया, तो हम पर भी वही भाग्य आ पड़ेगा। परन्तु तब तम्बू और व्यवस्था का बाल्यकाल था; अब तो अनुग्रह की पूर्णता और मसीह की सच्चाई का समय है। और यह काम साधारण मनुष्यों ने नहीं, बल्कि हम में से कुछ ऐसे लोगों ने किया है जो दैवीय जीवन की ऊँचाइयों पर चढ़ गए हैं।

१५. हमारे पूजनीय पूर्वजों के बीच ऐसी शिकायत कभी सुनी गई? या क्या उन्होंने भौतिक साधनों की कमी के कारण अपने मठों में मोक्ष की तलाश करने वाले किसी को स्वीकार करने से कभी इनकार किया? क्या उनका द्वार हमेशा खुला नहीं रहता था—न केवल संसार को त्यागने की इच्छा रखने वालों के लिए, बल्कि हर जरूरतमंद गरीब के लिए? क्या उन्होंने अपनी मृत्यु पर इस मामले के संबंध में विशिष्ट वसीयतें नहीं छोड़ीं? आप जानते हैं कि हमारे महान प्रकाशमान यूथमीयस ने इस संबंध में क्या प्रबंध किए; आपने पढ़ा है कि हमारे सदा-स्मरणीय पिता सावास और महान थियोडोसियस, तथा परम धन्य पाचोमियस के साथ कैसा था। क्या उन्हें कभी अभाव झेलना पड़ा? – एक बार भी नहीं, और निश्चित रूप से थोड़े से स्तर पर तो नहीं। उदाहरण के लिए, उनमें से एक के पास ईस्टर पर धर्मविधि (Liturgy) करने के लिए आवश्यक चीजें भी नहीं थीं; दूसरों ने भी विभिन्न तरीकों से इसी तरह की कठिनाइयों का अनुभव किया। इस प्रकार, वे कभी-कभी कई और विविध तरीकों से ऐश्वर्य का आनंद लेते थे, और अन्य समय में अभाव झेलते थे; लेकिन दोनों ही स्थितियों में उन्होंने ईश्वर का धन्यवाद किया और इसे धैर्यपूर्वक सहन किया। उनके सच्चे बच्चों ने उनके दुखों में, आनंद और हर्ष में साथ दिया। लेकिन जो उनके जैसे नहीं हैं—न तब और न अब—वे शाप के अधीन आते हैं और नष्ट हो जाते हैं। इसीलिए, मेरे बच्चों और भाइयों, तुम्हें सावधान रहना चाहिए।

१६. और तुम जो कराह रहे हो, याद करो कि तुम्हारा निर्वाह तुम्हारी अपनी मेहनत से नहीं होता, और जब तुम यहाँ आए, तो तुम अपने साथ कुछ भी नहीं लाए थे। उस समय, क्योंकि तुम्हें पीछे नहीं लौटना पड़ा, तुमने परमेश्वर और हम लोगों का धन्यवाद किया और स्तुति की। तो फिर, हे मूर्खों, यह कैसे है कि तुम अब दूसरों को वह दिखाने के लिए अनिच्छुक हो जो तुमने स्वयं उस समय प्राप्त किया था, और दूसरों को वह उपहार देने में हिचकिचा रहे हो जो तुम्हें मिला है? असभ्य, निर्दयी, दयाहीन! यदि हम भूख से मर रहे मूक कुत्तों को भी आश्रय देते, तो भी हम प्रशंसा के

पात्र होते। क्योंकि लिखा है, *'धर्मी अपने पशुओं की जान की परवाह करता है'* (नीतिवचन 12:10)। तो क्या हमें उन बुद्धिमान मनुष्यों को—हमारे साथी प्राणियों, हमारे भाइयों को—शरण नहीं देनी चाहिए, जो अपनी नाव के डूबने के बाद हमसे अपने यहाँ लाने और उन लोगों को अत्यन्त आवश्यकता से बचाने की विनती करते हैं, जिनके लिए मसीह मरे? लेकिन ऐसे विचार मूर्खों के मन में नहीं आते।

17. क्या तुमने प्रभु के लिए मेरे साथ मरने का वादा नहीं किया था? फिर भी अब, परिश्रम और अभाव में थोड़ी सी कठिनाई पर, तुम मेरा इनकार करते हो और मुँह फेर लेते हो। तुम मुझे और अधिक प्रोत्साहित क्यों नहीं करते ताकि यह सुनिश्चित हो सके कि यहाँ आने वाला कोई भी गरीब व्यक्ति भूखा-प्यासा न जाए, और न ही उसे वह सहायता मिले जो वह चाहता है? परन्तु तुम तो केवल अपना पेट भरना ही जानते हो, और वह भी अतिशय भोग-विलास में: मछली खाना, दाखरस पीना—केवल दो या तीन गिलास ही नहीं, बल्कि उससे भी अधिक, जो पवित्र पितरों द्वारा निषिद्ध है। और यह कहावत तुम पर सच्ची उतरती है: 'कोई भी दो स्वामियों की सेवा नहीं कर सकता'—मेरा मतलब है, पेटपूजा और परमेश्वर के प्रेम की। लेकिन, हे मूर्ख और कठोर हृदय वालों, यह समझो कि – पवित्र पिताओं द्वारा दिए गए सभी आज्ञाओं के अनुसार, और जिनकी मैं, एक पापी, तुम्हें निरंतर याद दिलाता हूँ – हमारे लिए दुख सहना और, कई क्लेशों के माध्यम से, स्वर्ग के राज्य में प्रवेश करना उचित है।

18. इसलिये, पश्चाताप करो, क्योंकि तुमने प्रभु के साम्हने बहुत और अतिशय पाप किया है। – जहाँ तक मेरी बात है, मैं न तो इनकार करूँगा और न ही हिचकिचाऊँगा; परन्तु जैसे मैंने आरम्भ किया है, वैसे ही मैं जारी रखूँगा, और जो कोई भी आता है, उसे पूरी गर्मजोशी और उत्कट हृदय से ग्रहण करूँगा; क्योंकि यह केवल मैं ही नहीं, बल्कि परमेश्वर ने यह आज्ञा दी है, और फिर तुम स्वयं भी मेरे साथ: क्योंकि हम सब एक हैं। जो कुछ भी तुम मेरे लिए करते हो, वह तुम मेरे लिए करते हो: जब मैं नंगों को वस्त्र पहनाता हूँ, ठंड में काँप रहे को गरमी दो, नंगे पैर को पहिराओ, बेघर को अपने घर में पनाह दो, भूखे को भोजन दो, और प्यासे को पिलाओ – और यह सब हमारे सच्चे परमेश्वर, यीशु मसीह के नाम पर, जिन्होंने हमारे पापों के लिए स्वयं को छुड़ौती के रूप में दे दिया, यह मानते हुए कि उनके वचन की सच्चाई यह है कि *'वह धर्मी आत्मा को भूखा नहीं रहने देगा'* (नीतिवचन 10:3): ऐसी हैं तुम्हारी आत्माएँ, जिन्होंने शिकायत नहीं की—क्योंकि मैं सभी पर दोष नहीं लगाता—जो परमेश्वर की आज्ञाओं के पूरा होने और भाईचारे के विकास में आनंदित हैं, परमेश्वर की परीक्षाओं में धैर्यवान हैं, जिन्होंने सभी चीजों का त्याग कर दिया है और यहाँ तक कि मृत्यु तक परमेश्वर के काम में दृढ़ रहने के लिए तैयार हैं।

१९. इस पर विचार करो – मैं फिर से तुम से कहता हूँ, जो दण्ड से बचे हुए हो – क्या परमेश्वर ने हमें एक से अधिक बार अत्यन्त अभाव से नहीं बचाया है? और मेरे पिता और तुम्हारे पिता की प्रार्थनाओं के द्वारा उसने हम पर क्या-क्या आशीषें नहीं डाली हैं? – क्या उसने अकाल के समय हमें अनाज और दाखमधु नहीं दिया? क्या उसने दयालु लोगों के हृदय को हम पर कृपा करने के लिए नहीं प्रेरित किया? क्या हमें गांवों, द्वीपों और नगरों से—बिशपों, मजिस्ट्रेटों और यहां तक कि बैंगनी वस्त्र धारण करने वालों से भी—शहद, जैतून, पनीर, कंबल, वस्त्र और सोना अभी भी नहीं भेजा जा रहा है? – प्रभु आपको क्षमा करें और आने वाले दिनों में आपको और अधिक बलवान बनाएं, ताकि आप अपने भाइयों के साथ धैर्य और दृढ़ता से सहन करके, उनके साथ मिलकर धार्मिकता के मुकुट को प्राप्त करने के योग्य ठहरें।

105. अब मौसम अनुकूल है (वसंत); अपने शरीर को नियंत्रण में रखें

105. 1) अब मौसम आकर्षक है (वसंत); अपने शरीर को नियंत्रण में रखें। – 2) पीने और खाने में संयम। – 3) क्योंकि संयम के लिए स्वर्गीय आशीर्वाद प्रतीक्षा कर रहे हैं, जिनके सामने सांसारिक आशीर्वाद कुछ भी नहीं हैं। – 4) अपने चारों ओर मौजूद सद्गुणों की संगति को देखो; स्वर्ग को निहारो: और सब कुछ सहनीय होगा। [2, 31]

20. सद्गुण प्राप्त करना कठिन है, लेकिन लापरवाह व्यक्ति से यह आसानी से चुरा लिया जाता है; और जो लंबे समय में अर्जित किया गया है, वह एक पल की लापरवाही से खो सकता है। अत; वसंत के इस वर्तमान समय में अपने प्रति विशेष ध्यान दें, जब शरीर चुस्त होता है और मांस, पृथ्वी का होने के कारण, सांसारिक इच्छाओं के अनुसार कार्य करने का प्रयास करता है। जब पृथ्वी को उर्वरित और पोषित किया जाता है, तो वह अपने स्वभाव के अनुसार उपज देती है; इसी प्रकार शरीर भी, विभिन्न प्रकार के भोजन और पेय से पोषित होकर, स्वाभाविक रूप से अपने भीतर छिपे जुनून से भर उठता है। इसलिए, इसे वश में करो और इसे नियंत्रित करो; और, जैसा कि प्रेरित कहते हैं, *'इसे वासना में न डुबोओ'* (रोमियों 13:14), बल्कि, इसे उचित मात्रा में आवश्यक चीजें प्रदान करके, आत्मा में जियो।

21. भोजन और शराब दोनों में संयम बरतना चाहिए। आराम के लिए शराब थोड़ी मात्रा में लेनी चाहिए, और वह भी केवल पर्व के दिनों में, अत्यधिक थका देने वाले श्रम के दौरान, बीमारी के समय, और जब आगे की यात्रा लंबी हो;

हालाँकि, अन्य समयों में, एक कप या अधिकतम दो कप से ही संतोष करना चाहिए: क्योंकि आप जानते हैं कि इस बारे में जेरोंडिकॉन में क्या कहा गया है। जहाँ तक भोजन का सवाल है, मैं आपको प्रेरित के निम्नलिखित वचन उद्धृत करता हूँ: 'भोजन *रद्द कर दिए जाएँ'* (1 कुरिन्थियों 16:13)। मैं यह आपको उनसे पूरी तरह से दूर करने के लिए नहीं कह रहा हूँ, बल्कि यह चाहकर कह रहा हूँ कि आप आत्मा के उद्धार और शरीर को बल देने के लिए, उचित और ईश्वरीय तरीके से खाएं और पीएं, ताकि आप अपने से अपेक्षित कार्यों को पूरा कर सकें।

22. क्या तुम नहीं जानते कि इस प्रकार के संयम और सांसारिक सुखों—मांस खाने, शराब पीने, स्नान करने, गर्म झरनों में जाने और इसी तरह की चीजों—से त्याग करके तुम्हारे लिए एक दिव्य स्वर्ग तैयार किया जा रहा है, जिसमें जीवन का वृक्ष और अमरत्व का जल, आत्मा का आनंद और शाश्वत आशीर्वादों की अनुपम सुंदरता है? वहाँ आपके लिए विश्राम और हर सुख-सुविधा संजो कर रखी गई है। बहुत जल्द आप मृत्यु के द्वार से होकर वहाँ पहुँचेंगे और उसे अतृप्त और अनंत रूप से प्राप्त करना शुरू कर देंगे। यहाँ, हालाँकि, भले ही हम शाही महलों में पाई जाने वाली आशीर्वादों को लें, वे आनंद (τρυφη) नहीं बल्कि कीड़ों के लिए भोजन (τροφη) हैं; उनका भोग करना कल्याण का जीवन नहीं बल्कि निर्जीवनता है; वे जो सुख लाते हैं वह आनंद नहीं बल्कि दुख है, – उनका आनंद प्राप्त करना स्वामित्व नहीं बल्कि वंचना है; – उनकी विरासत वास्तव में व्यर्थ की व्यर्थता है, जैसा कि सबसे बुद्धिमान सुलैमान ने, दुनिया के सुखों का पूरा स्वाद चखने के बाद, घोषित किया था।

२३. तुम्हारे पास अपनी सहेलियों में आत्म-संयम, अपनी पत्नी में आज्ञाकारिता, अपनी बेटियों में पवित्रता, कुँवारीपन और परोपकार, और अपनी पवित्र कन्याओं में पश्चाताप और नम्रता है। पहाड़ों के आकाश को निहारो और तुम देखोगे कि हमारा निवास कहाँ है, जहाँ हमारा मुखिया और हम सभी का पिता—प्रभु मसीह—है, जहाँ हमारा नगर है—स्वर्गीय यरूशलेम। सचमुच, यदि तुम सभी बातों में धीरज धरोगे, तो तुम विजयी होओगे; यदि तुम सभी बातों में संतुष्ट रहोगे, तो तुम्हें मुकुट पहनाया जाएगा; यदि तुम इसी प्रकार इस जीवन से प्रस्थान करोगे, तो स्वर्ग के राज्य के द्वार तुम्हारे लिए खोले जाएँगे।

106. आइए हम शाश्वत आनंद की आशा में सभी बातों को सहें, संत पौलुस के वचनों और उदाहरण का अनुसरण करते हुए

106. 1) आइए हम सभी शाश्वत आनंद की आशा में, संत पौलुस के वचनों और उदाहरण का अनुसरण करते हुए, सभी बातों को सहन करें। – 2) क्योंकि हम भी, उनकी तरह, हर पल सहन करने के लिए परीक्षाओं का सामना करते हैं। 3) यदि हम इन्हें सहन करते हैं, तो ईश्वर की कृपा हम पर बनी रहेगी। [2, 32]

24. परिश्रम करो और यत्न करो, और मसीह के लिए अपने जीवन में जो क्लेश तुम झेलते हो, उसे कोई पराई वस्तु – कोई अजीब और अप्रत्याशित घटना जो तुम पर आ पड़ी हो – ऐसा मत समझो। क्या तुमने संसार से यहाँ आकर, परमेश्वर और उनके चुने हुए स्वर्गदूतों के सामने यह स्वीकार नहीं किया था कि तुम स्वर्ग के राज्य के लिए स्वेच्छा से हर दुख और कठिनाई को सहन करोगे – भूख और प्यास में, ठंड और नग्नता में, अपमान और गालियों में, और अन्य तपस्या के परीक्षणों में? इन बातों पर बिल्कुल भी विचार न करना ही बेहतर है, बल्कि केवल सहते रहने और सहते रहने को ही उचित है, और अपनी आँखें इन सबके धन्य अंत पर टिकाए रखना चाहिए। और यह अंत क्या है? – स्वर्ग के राज्य का उत्तराधिकार, अनंत आशीषों का आनंद, अमरत्व का स्वाद, अखंड जीवन का परमानंद, पुत्रत्व, स्वर्ग की मिठास, और हर दूसरी सांत्वना। सचमुच, महान प्रेरित ने इसके बारे में यथोचित और धार्मिक रूप से कहा, यह कहते हुए कि *'इस समय की कठिनाइयाँ उस महिमा के बराबर भी नहीं हैं जो हम में प्रकट होने वाली है'* (रोमियों 8:18)। फिर वह संसार भर में घूमा, मानो सिंहों और बाघों के बीच में, अविश्वासियों द्वारा घसीटा और फाड़ा गया, भूख और प्यास में और दिन-रात परिश्रम में, अपने हाथों से काम करते हुए, ताकि किसी पर बोझ न बने, बल्कि अपनी और अपने साथियों की आवश्यकताओं के लिए अपनी मेहनत से ही साधन जुटाए।

25. यदि हम जिन परिस्थितियों में हैं, उनमें सब कुछ कृतज्ञता और धैर्य के साथ सहन करते हैं – तो धन्य हैं हम – हमें इसमें से किसी भाग से वंचित नहीं किया जाएगा। परन्तु यदि हम डरपोक, असंतुष्ट और शिकायत करने वाले साबित होते हैं, तो हमारा उन लोगों से क्या मेल हो सकता है जिन्होंने अपना लहू बहाने तक पाप के विरुद्ध संघर्ष किया? और क्या हम उस दिन, हर तरह की लज्जा के योग्य नहीं पाए जाएँगे, जब हम सबसे छोटे से काम को भी शांति से और जैसा करना चाहिए, वैसा नहीं कर पाते? – मेरा मतलब है, निरंतर आज्ञाकारिता, बिना शिकायत के काम, विनम्र सेवा, समय पर मौन, समझदारी भरी बात, एक काम से दूसरे काम पर सहजता से जाना, कार्य के अनुरूप ध्यान और प्रयास, अपनी इच्छा का दमन, लगाए गए प्रायश्चित को कृतज्ञतापूर्वक स्वीकार करना, दिन-रात भजन-गायन और प्रार्थना में अटूट धैर्य, और दिन के लिए निर्धारित भजनों का धैर्यपूर्वक पाठ करना।

२६. यह सब और भी बहुत कुछ, जिनकी गिनती भी नहीं की जा सकती, यदि हम इसे नम्रतापूर्वक, प्रसन्नतापूर्वक और स्वेच्छा से स्वीकार करते हैं, सहन करते हैं और पूरा करते हैं, तो हमारा जीवन उत्कृष्ट होगा, और ईश्वर, इससे प्रसन्न होकर, हम पर अनुग्रह की दृष्टि डालेंगे और हमें आशीष देंगे। – आइए हम स्वयं को इस प्रकार के जीवन पथ से भटकने न दें; और यदि इसके परिणामस्वरूप हम हर दिन मर भी जाएँ, तो भी इसे आनन्दपूर्वक स्वीकार करें, *'किसी भी बात में दोष न लगाते हुए, ताकि हमारी सेवा निर्दोष हो'* (2 कुरिन्थियों 6:3)।

107. अब लेंट का समय है: आप में से प्रत्येक स्वयं को इसकी आवश्यकता के अनुसार तैयार करें

107. 1) अब लेंट का समय है: हम में से प्रत्येक व्यक्ति स्वयं को इसकी आवश्यकता के अनुसार तैयार करे। – 2) केवल देह की बाहरी तपस्या और शारीरिक संयम ही आवश्यक नहीं हैं, बल्कि सभी बुराइयों और अपनी इच्छा का त्याग करना आवश्यक है – विनम्रता और आज्ञाकारिता। [2, 33]

27. जैसा कि आप जानते हैं, अब लेंट का पवित्र मौसम है, जो हमसे सामान्य समय की तुलना में कहीं अधिक आध्यात्मिक प्रयासों की मांग करता है, अर्थात्: सभी अच्छे कार्यों के लिए सबसे उत्साही तत्परता, प्रसन्नचित्तता, साहस, परिश्रम, धैर्य, स्वर्गीय प्रार्थना, अश्रुपूर्ण पश्चाताप, हृदय-विदारक विनम्रता, और न केवल भोजन और पेय से, बल्कि ईर्ष्या, घृणा, क्रोध, आवेग, बड़बड़ाहट, अहंकार और सबसे घृणित वासनाओं से भी उचित संयम। अपने आप की अधिक सावधानी से जाँच करें, ऊपर कही गई बातों के अनुसार स्वयं को शुद्ध करें, और स्वयं को चुने हुए पात्रों के रूप में, पवित्र आत्मा से प्रेरित होकर ईश्वर की बात करने वाले साधनों के रूप में तैयार करें। समय इसकी माँग करता है; वास्तव में, उपवास का यही सार है।

28. कोई मुझसे यह न कहे: 'मैं बहुत भजन गाता और पढ़ता हूँ, मैं बहुत प्रार्थना करता हूँ, मैं बहुत कम खाता हूँ, मैं कम पीता हूँ, बैठते समय मैं केवल थोड़ा ही सोता हूँ, मैं इतने सारे प्रणाम करता हूँ, मैं कई घंटों तक स्वर्ग की ओर अपने हाथ उठाए रखता हूँ।' बेशक, यह सब प्रशंसनीय है। लेकिन मुझे यह बताइए: क्या आपका तर्कशील मन नम्र हुआ है, क्या आपकी आत्मा टूटी हुई है, क्या आपकी अपनी इच्छाशक्ति समाप्त हो गई है, ताकि आप हमेशा आज्ञाकारी रहें, कभी विरोध न करें, किसी भी तरह से बड़बड़ाएँ नहीं, बिल्कुल भी बहस न करें, अपने भाई से ईर्ष्या न करें, विचार या वाणी में व्यर्थ के गर्व में न रहें, यह पूछते हुए कि 'यह क्यों? वह क्यों?' एक व्यक्ति ऐसी स्थिति में क्यों है, और दूसरा वैसी में? – और इससे, हृदय में क्लेश उत्पन्न होता है, मुख पर कठोरता छा जाती है, और—अच्छे खजाने से नहीं, बल्कि अपने हृदय के बुरे खजाने से—अविश्वास, अवज्ञा और अव्यवस्था के शब्द निकलते हैं, जो न केवल स्वयं को बल्कि सुनने वालों को भी विनाश की खाई में धकेल सकते हैं। ये उपवास के कार्य नहीं हैं, और न ही संयम का यही अभ्यास है। लेकिन यदि कोई अपने भीतर विनम्रता और आज्ञाकारिता की आत्मा रखता है, तो इन दो सद्गुणों से, दो पंखों की तरह, वह स्वर्ग की ओर उड़ान भरता है और ईश्वर का साथी बन जाता है।

108. हम स्वयं को सुस्त न होने दें, यह याद रखते हुए कि हम ईश्वर के लिए परिश्रम करते हैं, जो हमें हमारे उत्साह और लगन के अनुसार पुरस्कृत करेंगे।

108. 1) हमें आलसी होने न दें, यह याद रखते हुए कि हम ईश्वर के लिए परिश्रम करते हैं, जो हमें हमारे उत्साह और लगन के अनुसार पुरस्कृत करेंगे। – 2) साथ ही, हमें आंतरिक और बाहरी दोनों रूप से, जीवन के पूरे क्रम का पूर्णता के साथ पालन करना चाहिए। – 3) हौसला रखो: ईश्वर हमारे सहायक हैं, और ईश्वर की अति पवित्र माता, और ईश्वर के संत, विशेष रूप से हमारे अपने – संत यूहन्ना अग्रदूत और संत यूहन्ना धर्मविज्ञानी, जिनके नाम पर यह मठ समर्पित है। – 4) हम अनुचित बातचीत से बचें और केवल उसी के बारे में बात करें जो आत्मा के लिए लाभदायक हो। [2, 84]

29. सावधान रहो, कि हमारे हृदय निराशा, सुस्ती और अनुचित विचारों से बोझिल न हो जाएँ, कहीं ऐसा न हो कि यह आत्मा के भीतर पतन की आंतरिक विपत्ति को जन्म दे। परन्तु युवा जोश और उत्साह के साथ, आइए हम अपने क्षणभंगुर और निरंतर घटते जीवन के शेष भाग को एक साथ जीने का प्रयास करें, ताकि, अच्छे कर्म, पवित्र आचरण और सम्मानजनक सद्गुणों का अभ्यास करके, और इस जीवन से आने वाले युग में प्रवेश करके, हम परमेश्वर, प्रतिफलदाता, से धार्मिकता का अक्षय मुकुट प्राप्त करने के योग्य ठहरें। इसलिए हर कोई इस बात पर विचार करे कि वह अपनी सेवा कैसे करता है, और वृद्धावस्था तक ऐसा ही करता रहे, मानो स्वयं प्रभु की सेवा कर रहा हो—न लापरवाही से, न उदासीनता से, न आलस्य से, न कपट से—यह जानते हुए कि ऐसा करने से वे मनुष्य को नहीं, बल्कि परमेश्वर को ठेस पहुँचाते हैं, जिनके लिए यह सेवा समर्पित है। क्योंकि हम यहाँ क्या हैं, यदि केवल सह-दास नहीं हैं, जो दूसरों को प्रभु की आज्ञाओं की याद दिलाते हैं? – ताकि जो उन्हें पूरा करते हैं और जो उन्हें तोड़ते हैं, वे हमारे

सामने पाप न करें, और न ही वे हमें प्रसन्न करने का प्रयास करें, बल्कि उन भले प्रभु और परमेश्वर को प्रसन्न करें जिन्होंने आज्ञाएँ दी हैं। इसलिए, चाहे कोई किताबें नकल कर रहा हो, सेवा कर रहा हो, हल जोत रहा हो, खालियाँ खोद रहा हो, या कुछ और कर रहा हो, हर कोई अपना काम मनुष्यों के सामने नहीं, बल्कि परमेश्वर के सामने करे; और उसका काम शुद्ध होगा, और हृदयों की परीक्षा करने वाले परमेश्वर द्वारा, उसमें लगाई गई मेहनत और लगन के अनुसार उसका न्याय किया जाएगा।

३०. मनुष्य को अपनी जीभ को व्यर्थ की बातों से, अपनी आँखों को अश्लील दृश्यों से, अपने हृदय को अशुद्ध विचारों से बचाना चाहिए, और अपनी सभी इंद्रियों को ईश्वर के भय से संयमित रखना चाहिए; एक-दूसरे के प्रति विनम्र बुद्धिमानी से व्यवहार करना चाहिए, एक-दूसरे को सरल प्रेम से संबोधित करना चाहिए, और उचित बातचीत में संलग्न होना चाहिए, जो उपयोगी है उसे देखो, जो उचित है उसे सुनो, विनम्रता से संबंध रखो, और दिव्य बातों पर मनन करो; ताकि आनंदित और प्रसन्न होकर, हम ईश्वर की आज्ञाओं का पालन कर सकें और पृथ्वी पर अपने दिनों को आत्मा-मोक्षकारी निष्कर्ष पर पहुँचा सकें।

31. हौसला बढ़ाओ: इस जीवन की यात्रा में ईश्वर हमारे सहायक और मध्यस्थ हैं, और एक मजबूत ढाल के रूप में ईश्वर की परम पवित्र माता और हमारे प्रभुओं, महान संतों यूहन्ना बपतिस्मादाता और यूहन्ना द थियोलोजियन की प्रार्थनाएँ हैं, जिनके नाम हमारे मठों पर हैं। लेकिन *'यदि ईश्वर हमारे पक्ष में हैं, तो हमारा विरोध कौन कर सकता है?'* (रोमियों 8:31)। *'यदि प्रभु हमारे जीवन का रक्षक है, तो हम किससे डरेंगे?'* (भजन संहिता 26:1)। यदि हमें परमेश्वर की माता और संतों की सहायता प्राप्त है, तो हम पर कौन विजय प्राप्त कर सकता है? कोई भी, कभी नहीं। लेकिन दुष्टात्माएँ हमसे दूर रहेंगी, और लोग हमारी प्रशंसा करेंगे; हमारे शत्रु चकित हो जाएँगे, और कोई भी हमारे विरुद्ध नहीं खड़ा होगा। यदि, हालाँकि, हम ऐसे नहीं हैं, तो हमारे लिए सब कुछ अलग तरह से होगा।

32. तो फिर, हमें उचित आचरण क्यों करना चाहिए, विशेषकर जब हम ऐसे शहर में रहते हों? आइए हम अपने लिए अप्रासंगिक मामलों पर चर्चा करने से बचें। राजाओं के बारे में बात करना, शासकों के बारे में बोलना, या इस-उस मामले में झाँकना भी हमारे लिए अप्रासंगिक है। *'तुम्हें जो आज्ञाएँ दी गई हैं, उन्हें समझो'* (सिरैकस 3:22), बुद्धिमान कहते हैं। हमारी चिंताएँ अलग हैं, और हमारी बातचीत भी अलग है। सांसारिक लोग सांसारिक बातों की चर्चा करते हैं, और जो दैनिक जीवन से जुड़े हैं, वे दैनिक जीवन की बात करते हैं: परन्तु हम हमारे उद्धारकर्ता परमेश्वर की, और आत्मा के लाभदायक विषयों की बात करते हैं: जैसे कि सद्गुणों की, हमारे पूजनीय पूर्वजों के जीवन की, मृत्यु की, इस जीवन से प्रस्थान की, पवित्र स्वर्गदूतों से भेंट की, मसीह के सिंहासन के सामने न्याय की, धर्मी प्रतिफल की, और स्वर्ग के राज्य की। इस प्रकार संवाद करके, हम स्वर्गदूतों के समान प्रबुद्ध होते हैं और यदि कोई सामान्य जन उपस्थित हों तो उन्हें भी प्रबुद्ध करते हैं; लेकिन यदि हम व्यर्थ की बातचीत में पड़ जाते हैं, तो हम स्वयं को नुकसान पहुँचाते हैं और स्वयं को दूसरों के उपहास और निंदा के लिए उजागर करते हैं। – अतः आज से ही सावधान रहो, और अपने होठों को अनुचित बातों से बचाओ; बल्कि हमारे अच्छे कर्मों का प्रचार करो, जिससे परमेश्वर के प्रेम के लिए और भी अधिक उत्कट उत्साह जागृत हो, और यहाँ तक कि उनके सत्य के लिए मरना भी चुनो। और परमेश्वर, तुम्हारे ऐसे निर्णयों को कर्म मानकर, उस दिन तुम्हें शहीदों के मुकुटों से सजाएगा।

109. पूरी लगन और अपनी पूरी ताकत से उस चीज़ की खोज करो जो इस संसार की नहीं है: ईश्वर तुम्हें आशीर्वाद देगा

109. 1) उस चीज़ को पूरी लगन और अपनी पूरी शक्ति से खोजो जो इस संसार की नहीं है: ईश्वर तुम्हें आशीर्वाद देगा। यदि तुम इसी तरह धैर्य रखोगे, तो तुम सफल होगे; क्योंकि सभी पूर्वज इसी प्रकार जीए थे। – 2) एक बार फिर, सांसारिक वस्तुओं के लालची लोगों के लिए एक फटकार। [2, 35]

[95]**33.** कुछ लोग अपने प्रयास के विषय के रूप में एक चीज़ चुनते हैं, तो कुछ दूसरी: कोई प्रभुत्व चाहता है, कोई बाहरी पदों पर रहने से महिमा चाहता है, तो कोई घरों, नौकरों और खेतों में संतोष और धन चाहता है: सांसारिक इच्छाएँ अनेक हैं। परन्तु तुम, इन सब को पीछे छोड़कर और अपनी आत्मा को दूसरी दुनिया में स्थानांतरित करके, इस संसार से परे और स्वर्गीय वस्तुओं की इच्छा और खोज करो, और अपने हृदय से उसी में निवास करो; तुम्हारी सारी चिंता और परिश्रम इसी एक बात के लिए समर्पित हैं। आपको न तो कुछ भी परेशान करता है और न ही आपका मन किसी और चीज़ में लगता है, सिवाय भावों के पूर्ण शुद्धिकरण और एक पश्चात्तापी तथा विनम्र हृदय की प्राप्ति, अखंड प्रार्थना, अथक परिश्रम, अश्रुपूर्ण पश्चात्ताप, और पूर्ण वैराग्य के—न केवल मित्रों और परिचितों से, बल्कि

[95] यह उपदेश उनकी स्मृति दिवस पर दिया गया था।

अपने माता-पिता और सभी सांसारकि व्यर्थताओं से भी। – वास्तव में, ईश्वर की कृपा आप पर ऐसी ही है! और मैं देखता हूँ कि आप में से प्रत्येक कैसे दृढ़ता से बना रहता है, प्रयास करता है और स्वयं को उस वासना से मुक्त करने के लिए प्रेरित करता है जो आपको पीड़ित करती है और एकमात्र ईश्वर के साथ एकता में बने रहने के लिए। इसलिए, यदि आप ऐसे शहीद के संघर्ष में दृढ़ रहते हैं, तो मसीह हमारे ईश्वर आपको वह शक्ति और धैर्य प्रदान करेंगे जिससे आप अपने विरुद्ध हर कामुक और शैतानी विरोध को दूर कर सकें और आपके सामने जो त्रि-धन्य कार्य है, उसे सफलतापूर्वक पूरा कर सकें, ठीक वैसे ही जैसे आपके पूर्व के पवित्र पुरुषों और ईश्वर-धारी पिताओं ने किया था। क्या उन्होंने, यद्यपि देहधारी और हमारी ही प्रकृति के अधीन होते हुए भी, जीवन को बिना परिश्रम या संघर्ष के पार किया? कदापि नहीं; बल्कि उन्होंने आज्ञाकारिता और नम्रता के साथ-साथ आत्म-संयम और अन्य सभी सद्गुणों के द्वारा, अनेक और विविध परीक्षणों को सहन करके और उन पर विजय प्राप्त करके, शरीर को आत्मा के अधीन कर दिया, और वे पवित्र जीवन की ऊँचाइयों पर पहुँचे और उसको प्राप्त किया जिसे उन्होंने प्राप्त किया और जिसके लिए उन्हें महिमा दी गई। आइए हम अपनी आत्मा के निर्माण के लिए हमारे परम पूजनीय पिता सावा के सद्गुणों को याद करें। एक नवसिखुआ के रूप में, जैसा कि आप जानते हैं, वह अत्यंत आज्ञाकारी, नम्र और मददगार था; और जब उसे सबसे छोटे-मोटे काम दिए जाते थे, तो वह इस तरह प्रसन्न होता था मानो कुछ शानदार कर रहा हो; दिन-रात वह पानी और लकड़ी ढोकर मेहनत करता था, भजन-गायन के लिए सबसे पहले आता और सबसे बाद में जाता था। उनके बारे में और भी बहुत कुछ लिखा गया है, जिसे गिनाने का अब समय नहीं है। आइए, हम भी, बच्चों, उनके उदाहरण का पालन करें; क्योंकि यह असंभव नहीं है: कोई एक काम में, कोई दूसरे काम में, एक-दूसरे की मदद करते हुए, एक-दूसरे से प्रतिस्पर्धा करते हुए, लेकिन सबसे बढ़कर यह ध्यान रखते हुए कि उचित परामर्श के बिना, अपने मन से कुछ भी न करें, भले ही वह अच्छा ही क्यों न लगे।

34. मैं एक मामले पर चुप नहीं रह सकता; दूसरा, मुझे नहीं पता कैसे, कुछ अज्ञानी लोगों द्वारा आपके बीच किया जा रहा है, जो सभी व्यवस्थाओं का तिरस्कार करते हैं, हालांकि यह अत्यंत निंदनीय है – मेरा मतलब है, हमारे बीच होने वाले बार-बार गायब होने, या यूँ कहें, चोरी की घटनाएँ। उदाहरण के लिए, जब कोई थोड़ी देर के लिए बाहर जाते समय या किसी काम से लंबी अवधि के लिए अपनी कोठरी में चप्पलें, कलम या अन्य हस्तशिल्प के औजार छोड़ देता है, तो जब वह लौटता है तो पाता है कि जो कुछ उसने पीछे छोड़ा था वह गायब है। यह एक पूरी तरह से शैतानी मामला है, जो भाईचारे के भीतर कष्टप्रद और कलंकित करने वाला है: और संदेह, बदनामी, दुख और यहाँ तक कि शत्रुता भी पैदा होगी, जो शायद दोषियों की तुलना में निर्दोषों पर अधिक केंद्रित होगी। 'सुनो, हे चोरों, धन्य प्रेरित पौलुस की कठोर चेतावनी को: *"चोर... और जबरदस्ती करने वाले"* – *"परमेश्वर के राज्य के वारिस नहीं होंगे"* (1 कुरिन्थियों 6:10)। *'जबरदस्ती करने वालों'* कहने के बाद, उन्होंने यह निर्दिष्ट नहीं किया कि वह चाँदी या सोने की, या कीमती वस्त्रों की जबरदस्ती हो, बल्कि उन्होंने एक सामान्य घोषणा की; – जबरदस्ती की वस्तु चाहे जो भी हो, यहाँ तक कि सबसे छोटी सी चीज़ भी, जबरदस्ती करने वाला परमेश्वर के राज्य का वारिस नहीं होगा। हे चोरों और लूटमार करने वालों, क्या तुम यह सुनते हो? – और मैं तुमसे विनती करता हूँ, चोरी और लूटपाट बंद करो – धागे, सुइयाँ, सूइयाँ, कलमें, छोटे घड़े, कटोरे, छोटे चाकू, बेल्ट – और इसी तरह की चीजें: क्योंकि मैं तुमसे दोहराता हूँ, जो कोई भी ऐसे काम करता है वह परमेश्वर के राज्य का वारिस नहीं होगा। – या क्या आप प्रेरितों के न्याय से नहीं डरते? क्या मैं, एक गरीब आदमी, ऐसी धमकी दे रहा हूँ? – इसलिए मैं आपसे एक बार फिर विनती करता हूँ: हम उस बुलावे के योग्य तरीके से चलें जिसके लिए हमें बुलाया गया है, पवित्रता, संतों जैसी पवित्रता और धार्मिकता में, उल्लेखित बुराई से मुंह मोड़ते हुए, ताकि हम अनंत आशीर्वादों के वारिस बन सकें।

110. आपकी संगति के द्वारा, प्रत्येक का भला सभी के साथ साझा होता है, और सभी का भला प्रत्येक के साथ साझा होता है

110. 1) आपके सान्निध्य के माध्यम से, प्रत्येक का भला सभी में पहुँचता है, और सभी का भला प्रत्येक में। – 2) अतः हम न तो सुस्त रहें और न ही अपनी मर्जी से काम करें; बल्कि, एक सामुदायिक जीवन जीते हुए, हम बुराई से दूर रहने और प्रशंसनीय बातों के लिए उत्साही होने का प्रयास करें। – 3) हम जो करते हैं और अनुभव करते हैं, वह आता-जाता है - और अब महसूस नहीं होता; फिर भी यह भीतर बना रहता है, और न्याय के दिन यह प्रकाश में आएगा, या तो औचित्य के लिए या निंदा के लिए। [2, 87]

1. हम में से प्रत्येक के पास अपना-अपना वरदान है, जैसा लिखा है: एक के पास यह है, दूसरे के पास वह। परन्तु हे भाइयो और बहनो, प्रेम के बंधन से बँधे हुए, इस प्रेम के द्वारा, एक-दूसरे की सेवाओं और गुणों को अपना बना लो। उदाहरण के लिए, आप अपमान को धैर्यपूर्वक सहते हैं; कोई परिश्रम से विशिष्ट है; कोई मौन में श्रेष्ठ है;

और कोई नम्रता में; और सहभागिता के माध्यम से, आप में से प्रत्येक के पास न केवल अपना बल्कि दूसरों के पास जो है वह भी होता है: आपकी अच्छाई परस्पर एक से सभी में और फिर वापस जाती है। इसलिए, आनन्दित हो और एक-दूसरे के आनन्द में सहभागी बनो; और जिसके पास भी कोई वरदान है, वह उसी में उत्तम बने, व्यर्थ की शोहरत से बचते हुए और अपने भाई के गुण को श्रेष्ठ समझते हुए। तो, यदि हम ऐसे हैं, और एक दूसरे के साथ इस प्रकार एकजुट हैं और प्रेम के बंधन से बँधे हैं, तो हमें उत्कृष्टता प्राप्त करने के लिए और अधिक प्रयास करना चाहिए, और हमारे काम में परमेश्वर की महिमा होगी, और हमारे जीवन का तरीका दुनिया के अधिकांश हिस्सों में जाना जाएगा।

2. परन्तु कोई भी हठी या विचित्र न हो। *'हाय उन लोगों पर जो अपने ही दृष्टि में बुद्धिमान और अपनी ही समझ में चतुर हैं'* (यशायाह 5:21)। कोई भी लापरवाह या आलसी न बने, कहीं ऐसा न हो कि वे सुन लें: *'हे आलसी, चींटी के पास जा'* (नीतिवचन 6:6)। और न ही कोई अपने निर्णयों में दो-मन का हो, कहीं ऐसा न हो कि वे भी सुन लें: *'जो मन से दो-दो भाग करता है, वह अपने सब मार्गों में अस्थिर है'* (याकूब 1:8)। परन्तु आज्ञाओं को पूरा करने में हमेशा सक्रिय और तत्पर रहो, सच्चे और निर्दोष रहो क्योंकि तुमने अपने मन की गहरी बातों को कबूल कर लिया है, घमंड से रहित और अपनी वासनाओं के वश में न रहो। क्योंकि ऐसा व्यक्ति *'समुद्र की लहर के समान है जिसे हवा उड़ाती और इधर-उधर फेंकती है'* (याकूब 1:6), उस व्यक्ति की तरह जो अस्थिर है और जिसके हृदय में कोई नींव नहीं है। परन्तु ये सब बातें तुम सब से दूर रहें; *जहाँ तक 'जो कुछ भी सम्माननीय और प्रशंसनीय है'* की बात है, उसे प्राप्त करने, उससे समृद्ध होने, और उसे अपनी आत्माओं के खजानों में संजोने का प्रयास करो, ताकि तुम स्वर्ग के राज्य को प्राप्त कर सको।

3. तुम में से जो कुछ भी कोई प्रतिदिन करता है, चाहे वह प्रशंसनीय हो या निंदनीय, वह सब एक जलधारा की तरह बह जाता है, ताकि तुम्हारी चेतना में कल से आज तक लगभग कुछ भी न बचे। जो कोई आज्ञा के लिए दुख सहता है, परिश्रम करता है, रोता है, सहन करता है, पसीना बहाता है, जिसका हृदय व्यथित होता है, जो उत्पीड़ित होता है, थक जाता है, अपमान सहता है – या किसी अन्य प्रकार से दुख भोगता है – वह उसे उसी क्षण महसूस करता है, और वह तुरंत बीत जाता है; लेकिन जिसने इसका अनुभव किया है, उसके लिए सब कुछ बना रहता है और हमेशा के लिए सुरक्षित रहता है ताकि उसे अपना इनाम मिल सके। दूसरी ओर, जो कोई व्यर्थ की बातें करता है, हँसता है, आनंद लेता है, उत्पात मचाता है, खेलता है, आलस्य में डूब जाता है, सभी की अवज्ञा करता है, लापरवाही से काम करता है, ईर्ष्यालु है, गुस्सा होता है, उग्र हो जाता है, षड्यंत्र रचता है, अहंकार से काम करता है, और इसी तरह की हरकतें करता है – ऐसा व्यक्ति न केवल इससे अभी कोई लाभ नहीं उठाता है, बल्कि प्रतिफल के दिन और परमेश्वर के धर्मी न्याय के दिन के लिए अपने लिए एक अक्षम्य निंदा भी संचित कर लेता है। हे मेरे भाइयो, आइए हम इस पर मनन करें, और सदाचार के लिए प्रयत्न करें, तथा हर प्रकार से पाप से बचने का यत्न करें, जो एक विनाशकारी और सर्व-विनाशकारी बुराई है, ताकि हम अपने दिनों को परमेश्वर की प्रसन्नता के अनुसार समाप्त कर सकें और उन सभी के साथ वाचा-बद्धा आशीषों के योग्य ठहरें जिन्होंने परमेश्वर को प्रसन्न किया है।

111. उपदेश इसलिये दिये जाते हैं कि, उन्हें सुनकर, आप सुधर सकें, फिर भी आप सभी वैसे ही बने रहते हैं जैसे आप हैं: तो इतनी लापरवाह और निष्क्रिय होना बंद करें

111. उपदेश इस लिए दिए जाते हैं कि, उन्हें सुनकर, आप सुधर जाएँ, फिर भी आप वैसे ही बने रहते हैं जैसे आप थे: तो इतने असावधान होना बंद करो, और सक्रिय बनो। [2, 38] मैं आपसे पूछता हूँ, उपदेश किस उद्देश्य से दिया जाता है? क्या यह केवल इसलिए है कि इसे एक निर्धारित समय पर पढ़ा जाए और आपके कानों को भाए, या ताकि आप मेरी प्रशंसा करें, या बस बिना किसी विशेष उद्देश्य के? इन कारणों में से किसी के लिए नहीं; बल्कि इसलिए कि आप कही गई बातों पर मनन करें, पूरे मन से वचन की शक्ति को अपनाएँ, और मसीह की कृपा से फल दें, मेरे और आपके पिता की प्रार्थनाओं की सहायता से। – यही मेरा इरादा और कर्तव्य है; लेकिन मैं क्या देखता हूँ? – मैं देखता हूँ कि जैसे ही प्रवचन समाप्त होता है, सब कुछ तुरंत आपकी स्मृति से मिट जाता है, कोई निशान नहीं छोड़ता, मानो कुछ कहा ही न गया हो। इसीलिए, जैसे ही हम सेवा के बाद बाहर कदम रखते हैं, हम तुरंत ही अपनी पुरानी गलतियों में वापस गिर पड़ते हैं। एक बेवक्त बोलने लगता है, दूसरा बड़बड़ाता है, कोई अफवाहें उड़ाता है, कोई कोने में जागने के लिए छिप जाता है और सिलाई का पाठ चूक जाता है; और जब वह लौटता है, तो उसके *'हाथ कमजोर और घुटने ढीले'* होते हैं (सिरिक 25:26)। मैं इस मामले पर और कुछ नहीं कहूँगा। मेरे बच्चों, ऐसा नहीं होना चाहिए, ऐसा नहीं होना चाहिए; कहीं ऐसा न हो कि तुम अपने बारे में यह सुनो: 'ये लोग अपने होठों से तो मुझे आशीष देते हैं, पर उनका हृदय मुझसे दूर है।' परन्तु जब तुम उद्धार का वचन सुनो, चाहे वह मेरी शिक्षा से हो या पढ़ी गई पवित्र शास्त्रों से—चाहे वह कभी भी

हो—तो परमेश्वर का भय तुम्हारे हृदयों में प्रज्वलति हो, उसके प्रतिप्रेम की एक चिंगारी, समृद्धकिी इच्छा, और उसके पवित्र आज्ञाओं का वफादारी से पालन करने का संकल्प, ताकहिम उसके राज्य के योग्य ठहर सकें।

112. हम एक आध्यात्मकि दौड़ में लगे हुए हैं: दर्शक कौन हैं? दौड़ने वालों को कसि पर ध्यान केंद्रति करना चाहएि? कौन आदर्श तरीके से दौड़ता है?

112. 1) हम एक आध्यात्मकि दौड़ में लगे हुए हैं: दर्शक कौन हैं? धावकों का ध्यान कसि पर केंद्रति होना चाहएि? कौन आदर्श तरीके से दौड़ता है? – 2) कसिी को मठ के भीतर प्रचलति भेदों से ईर्ष्या नहीं करनी चाहएि; ऐसी स्थतियिों में असंतुष्ट जो कुछ भी कहते हैं वह अववि‍ेकी है: उन्हें अपने रास्ते सुधारने चाहएि, क्योंकयिही तरीका है। [2, 39]

४. तुम प्रभु परमेश्वर के तेज-पैरों वाले धावक हो, और तुम्हारी दौड़ पृथ्वी पर नहीं, बल्कपिृथ्वी से स्वर्ग तक है; दर्शक लोग नहीं, बल्कस्विर्गदूतों और संतों का समूह है; मुकुट प्रदान करने वाले स्वयं प्रभु हैं, और मुकुट न मुरझाने वाले हैं। धन्य हो तुम जो मठवासी व्रत लेकर इस प्रतयिोगति‍ा के मैदान में प्रवेश कर चुके हो। लेकनि यहाँ आपने अभी शुरुआत ही की है; मुकुट, तथापि केवल उन्हीं को दएि जाते हैं जन्हिोंने दौड़ पूरी कर ली है। अतःतुम में से प्रत्येक सावधानी से देखे कविह कैसे दौड़ता है; तुम दौड़ के मैदान में लगे नशिानों पर ध्यान दो जो दौड़ की सफलता, अर्थात् सद्गुणों में प्रगति निर्धारति करते हैं; उसे बाधाओं पर चौकस नज़र रखनी चाहएि - और उन पर काबू पाने का प्रयास करना चाहएि - अर्थात्, शरीर, संसार और शैतान के प्रलोभन, इसके लएि पवित्र आत्मा से शक्तप्रिाप्त करते हुए; कोई भी इधर-उधर न देखे, बल्कि अपनी दृष्टकिो उस एक बिंदु पर केंद्रति करे जहाँ फनिशि लाइन है, और अपनी सारी शक्तउिसी की ओर नर्दिेशति करे। दौड़ अभी खत्म नहीं हुई है। तुम अब तक अच्छी दौड़ लगा चुके हो; यहाँ से भी उतने ही उत्साह और प्रयास के साथ दौड़ते रहो, एक-दूसरे से प्रतस्पिर्धा करते हुए और एक-दूसरे की मदद करते हुए। दूसरों से कौन आगे नकिल सकता है? जो सबसे नम्र है। कौन आदर्श तरीके से दौड़ता है? कौन सबसे आज्ञाकारी, सबसे श्रद्धालु, सबसे अधकि शकिायत रहति है, सबसे अधकि भजन-परायण, सबसे मौन, सबसे परश्रिमी, सबसे अधकि प्रार्थनाशील, सबसे सच्चे, सबसे वनिम्र, द्वेष से सबसे अधकि मुक्त, ईर्ष्या से सबसे अधकि मुक्त, सबसे नष्ठिावान, पति‍ा के प्रतसिबसे अधकि प्रेमपूर्ण, और हर उस अन्य तरीके से जसिमें पूर्ण सद्गुण का कार्य आत्मा और शरीर दोनों में प्रकट होता है। तुम्हारा यही जीवन-मार्ग हो, और इसी प्रकार हम एक से बढ़कर दूसरे बल में, और इस संसार से स्वर्ग तक आरोहण करें।

५. प्रेम तुम्हारी वशिष्टि पहचान हो, जो तुम्हें प्रभु के शष्यिों के रूप में चरत्रिति करे। प्रेम में नविास करते हुए, भाइयों के बीच हर मतभेद, उनकी पसंद और मंत्रालयों, शलि्पों, पदों और रैंकों में पदोन्नतकिो प्रेम से स्वीकार करो। ईर्ष्या, जलन और क्रोध को स्थान न दो। तुम में से प्रत्येक व्यक्तअिपने भाइयों के लएि जो अनुकूल हो, उसे अपने लएि भी अनुकूल समझो, और उनकी सफलताओं में आनंदति होओ। इस प्रकार ईश्वर प्रसन्न होते हैं, और सभी चीजों पर पूर्ण वजिय प्राप्त होती है। प्रेम गुणों का मुकुट है। लेकनि इस बात से नराश होना ककिसिी वशिेष मामले में या कसिी वशिेष सेवकाई में कसिी और को प्राथमकिता दी गई है, एक सड़ी हुई और हानकिारक बात है, और यह वरिोधी पक्ष का संकेत है। ऐसा नहीं, मेरे बच्चों, ऐसा नहीं। यह कहना अन्याय है: 'मुझे अमुक व्यक्तसि‍े अधकि सम्मान मलिना चाहएि,' या: 'मैं अमुक व्यक्तसि‍े बड़ा हूँ - इसलएि मुझे सर्वोच्च स्थान मलिना चाहएि।' मैं आपसे वनिती करता हूँ, ऐसे शैतानी जालों से भागो। पर जो कुछ भी भला है, जो कुछ भी आदरणीय है, जो कुछ भी पवित्र लोगों के योग्य है—जो कुछ भी भ्रातृत्वपूर्ण है, जो कुछ भी वनिम्र और बुद्धमिानी भरा है, जो कुछ भी सर्वोच्च है—इन बातों पर वचिार करो, इनका अनुसरण करो, इन्हें प्राप्त करने का प्रयास करो, और सभी बातों में बालकों जैसी सरलता से, बनिा द्वेष के, और ईमानदारी से कार्य करो, प्रभु के चुने हुए लोगों के रूप में, आज्ञा के अलावा कसिी और बात को स्वीकार न करो। यदि तथापि कोई चूक हो जाए, तो उसे सुधारने के लएि शीघ्रता करो और प्रायश्चति करके उसकी भरपाई करो, ताकन्यिाय के दनि तुम उस उत्कृष्ट स्वर को सुन सको: *'आओ, हे मेरे पति‍ा द्वारा धन्य कएि हुए; संसार की नींव के समय से तुम्हारे लएि तैयार कएि गए अपने उत्तराधकिार, राज्य को ग्रहण करो'* (मत्ती 25:34)।

113. आपने अपने इरादे सही रखे हैं; लेकनि इससे आप शत्रु के प्रलोभनों से बचे नहीं रहते, जन्हिें आप वास्तव में अनुभव कर रहे हैं

113. 1) आपने भलाई करने का संकल्प लयिा है; लेकनि इससे आप शत्रु के प्रलोभनों से बचे नहीं रहते, जन्हिें आप वास्तव में अनुभव कर रहे हैं। पर अपने व्रत में सत्यनष्ठि बने रहें, और ईश्वर आपको दृढ़ खड़े रहने में सहायता करेंगे। – 2) अतःअंधकार के कार्यों को त्यागो और प्रकाश के कार्यों में फल-फूलो: क्योंकपिहले वाले परमेश्वर के

क्रोध को आमंत्रति करते हैं, जबकि बाद वाले पर उनका आशीर्वाद आता है। – 3) इस समय हमारे बीच कई बीमार हैं: जो स्वस्थ हैं वे बीमारों की सेवा करें; और बीमार धैर्यवान रहें और सभी बातों में संतुष्ट रहें। हमारे कोई दास नहीं हैं: भाई प्रेम और आज्ञाकारिता से सेवा करते हैं। हे परिश्रमी, हियाव धारण करो: परमेश्वर सब कुछ देखता है। [2, 40]

6. परमेश्वर की कृपा से, आप सभी उन लोगों में गिने गए हैं जिन्हें बचाया जाना है; आप सभी ने मोक्ष के मार्ग पर चलना शुरू कर दिया है, और आप में से किसी का भी कोई और लक्ष्य नहीं है सिवाय मोक्ष प्राप्त करने के; लेकिन जैसे शैतान मौजूद है, जो हर अच्छी चीज़ का दुश्मन है, हम में से कई लोग उसकी अवांछित प्रलोभनों के अधीन हैं: कुछ को वह कामुक सुखों से प्रज्वलित करता है, युवावस्था की कामनाओं का अपने फायदे के लिए उपयोग करता है, – दूसरों को वह स्वच्छंदता के द्वारा नीचे गिराता है, वही कारण जिससे वह स्वयं स्वर्ग से गिरा था; और कुछ अन्य लोगों को वह लापरवाही के द्वारा आत्मसंतोष में सुला देता है, निराशा से बाँध देता है, और अपनी इच्छा से और जहाँ चाहे वहाँ ले जाता है; वह हमें अविश्वास के द्वारा अस्थिर कर देता है और, हमें आत्म-संतुष्टि में फँसाकर, हमें अनुचित कर्म करना सिखाता है। और हम उन सभी तरीकों को एक-एक करके क्यों गिनें, जिनसे वह दिन-प्रतिदिन हमें भेदने का प्रयास करता है, जबकि वह पास ही खड़ा रहता है और केवल उस क्षण का इंतजार करता है जब हम ढीले पड़ जाते हैं और दुराचार के आगे झुक जाते हैं? परन्तु प्रभु परमेश्वर, जिसने समुद्र से कहा, *'शांत हो, स्थिर हो'* (मरकुस 4:39), उसे ऐसा करने से रोके, और उसे हमसे दूर किसी दूरस्थ स्थान पर भगा दे। ऐसा तब होता है जब हम अपने आप पर ध्यान केंद्रित करते हैं और मठ में प्रवेश करने के अपने प्राथमिक उद्देश्य को लगातार मन में रखते हैं: क्योंकि हमने, ईश्वर को अपनी गवाह मानकर, हर दुख और कठिनाई को, यहाँ तक कि मृत्यु तक, सहने का वादा किया है।

7. अत; मोक्ष की खोज के विपरीत सब कुछ त्याग दो: कायरों की कायरता; दबंगों का दबंगपन; सुस्त लोगों की सुस्ती; सुख-भोगियों का सुख-भोग; घमंडी लोगों का घमंड; दंभी लोगों की दंभ; अभद्र लोगों की अभद्रता; अधर्मी, उनका अधर्म; बकवास करने वाले, उनकी बकवास; शांति-प्रिय, उनकी शांति-प्रेम; कामुक, उनकी कामुकता; दुखी, उनका निरर्थक दुख; जो ईर्ष्यालु हैं, उनकी ईर्ष्या; जो झगड़ालू हैं, उनका झगड़ालूपन; जो विवादास्पद हैं, उनका विवाद; जो आलस्य से प्रेम करते हैं, उनका आलस्य-प्रेम। ऐसे हैं अंधकार के कार्य और बुराई के रूप – दुष्ट की रचनाएँ और सुझाव! लेकिन ये सदाचारी ईश्वर को प्रिय हैं: शांति, नम्रता, विनम्रता, आज्ञाकारिता, ईर्ष्या से मुक्ति, परिश्रम, देखभाल, सतर्कता, प्रेम, आशा, धार्मिकता, और प्रार्थना। ऐसे हैं प्रकाश के कार्य, ऐसे हैं धार्मिकता के हथियार और संतों का पराक्रम! मैं आपसे विनती करता हूँ, प्रभु के प्रति अपने प्रेम के लिए, जाग उठो, तुम जो वासनाओं से सुलाए गए हो; चौकस हो जाओ, तुम जो शत्रु के मोह-जाल में सो रहे हो। यदि हम एक अच्छा जीवन जीना चाहते हैं और यदि हम शुभ दिन देखना चाहते हैं, तो हम उस की सुनें जो कहता है: *'बुराई से मुंह फेर लो और भलाई करो; शांति की खोज करो और उसका पीछा करो'* (भजन संहिता 33:15)। प्रभु की अनुग्रहकारी दृष्टि कहाँ है? *'प्रभु की दृष्टि धर्मी लोगों और उनके भयभीत लोगों पर है'* (भजन संहिता 32:18)। और प्रभु का क्रोध *किस पर होता है? 'प्रभु का मुख—' उन पर है जो बुराई करते हैं, ताकि वह उनकी स्मृति को पृथ्वी से मिटा दे'* (भजन संहिता 33:14)। और यदि हम इन पर मनन करें, तो इस भजन संहिता के निम्नलिखित सभी शब्द अद्भुत अंतर्दृष्टि प्रदान करते हैं।

8. इन दिनों हमारे कई बीमार भाई हैं: हम जिस अस्वस्थ समय में रहते हैं, वह ऐसा ही है। हम में से जो स्वस्थ हैं, वे बीमारों की मदद करें। जहाँ तक बीमारों का सवाल है, हमें प्रभु से मिली इस अनुशासनात्मक शिक्षा को उद्धार का एक साधन मानकर स्वीकार करना चाहिए, और अपनी बीमारी को धैर्यपूर्वक सहते हुए, हमें जो कुछ भी दिया गया है, उसके लिए आभारी रहना चाहिए। और जब हम अपनी बीमारी से मुक्त हो जाएँ, तो हमें इधर-उधर बेमतलब इधर-उधर नहीं भागना चाहिए, बल्कि हमें अपने कर्तव्यों पर लौटना चाहिए। क्योंकि हमारे पास ऐसे किराए के दास नहीं हैं, जिन्हें केवल सेवा करने के लिए नियुक्त किया गया हो – जैसा कि सांसारिक लोगों के मामले में होता है; बल्कि हम एक-दूसरे के लिए सेवक और स्वामी दोनों हैं, सेवा करते हैं और सेवा प्राप्त करते हैं – और प्रत्येक को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि वह समय से पहले सेवा प्राप्त करने से अधिक सेवा करे। ईश्वर आप में से प्रत्येक व्यक्ति और आपके कर्मों, और आपकी सेवा को देखता है; वह देखता है कि आप पहले क्या थे और अब क्या बन गए हैं, आपने संसार में कैसे जीवन यापन किया और मठ में कैसे रहते हैं, आप स्वयं पर कैसे अनुशासन रखते हैं और सभी चीजों को सहन करते हैं, आप क्या पहनते हैं और अपने पैरों में क्या धारण करते हैं, और आप अपने कर्तव्यों को निभाने में क्या श्रम करते हैं; – और उचित समय पर वह प्रत्येक व्यक्ति को उनके कर्मों के अनुसार पुरस्कृत करेगा। इसलिए, कोई भी हतोत्साहित न हो। हम परमेश्वर के परिचित हैं, और हम उनके भयानक न्याय-आसन के सामने खड़े होंगे, जब हमने जो जीवन जिया है, उसका हिसाब दे चुकने के बाद, हमें हमारा उचित प्रतिफल मिलेगा।

114. आओ हम अपनी आत्मा को संवारें, आध्यात्मकि दृष्टि से वह सब कुछ करते हुए जो एक कसिान अपने खेत की जुताई करते समय करता है

114. 1) आओ हम अपनी आत्मा को संवारें, आध्यात्मकि दृष्टि से वह सब कुछ करते हुए जो एक कसिान अपने खेत की जुताई करते समय करता है। – 2) जैसे सैनकि आचरण करते हैं और युद्ध लड़ते हैं, वैसे ही हमें भी युद्ध लड़ना और आचरण करना चाहिए; जैसे युद्ध में सैनकि पुरस्कार की आशा में सभी बातों को सहन करते हैं, वैसे ही हमें भी स्वर्ग के राज्य के लिए अपनी आज्ञाकारिता में सभी बातों को सहन करना चाहिए। [2, 41]

९. एक कसिान, जब अपनी खेत जोतता है, तो श्रम की कठिनाई की परवाह नहीं करता, कहीं ऐसा न हो कि उसके हाथ सुस्त पड़ जाएँ या वह आलसी हो जाए, बल्कि वह भविष्य के लाभों को ध्यान में रखता है और उनके लिए स्वयं को कड़ी मेहनत, पसीने और थका देने वाली तकलीफों के अधीन कर लेता है। हम में से प्रत्येक ने, एक खेत की तरह, इस जीवन में अपनी आत्मा को संवारने के लिए प्राप्त किया है; इसलिए, हमें भी इसके भीतर आध्यात्मकि कर्मों को विकसित करना चाहिए; और न्याय के दिन, परमेश्वर, जिसने हमें बनाया है, हमें इसके लिए जवाब तलब करेंगे। इसलिए, मैं आपसे निवेदन और विनिती करता हूँ: आइए हम सभी मिलकर अपने आत्मा के खेतों की लगन से खेती करें, उन्हें धर्मपरायणता के नियमों के अनुसार नवीनीकृत करें, ताकि हम अपने जुनून की काँटों में बोआई न करें; बल्कि पहले अपने खेतों को पाप की सभी खरपतवारों से साफ़ करके, आइए हम उनमें बीज बोएँ, फिर उन्हें ईश्वर के समक्ष बहाए गए आँसुओं की आध्यात्मकि वर्षा से सींचें, उन्हें ईश्वर के भय की मजबूत बाड़ से घेरें, ताकि मन के जानवरों द्वारा अंकुरों को न खा लिया जाए, और प्रेम की सूर्यकिरणों से उन्हें प्रकाशित और ऊष्मा प्रदान करें, ताकि हम तब अपने कुशल हाथों को फसल की मणियों से भर सकें और मसीह की आज्ञाओं के अनुसार पवित्र कर्मों की बहुत सी गेहूँ की फसल काट सकें। इस उद्देश्य के लिए प्रभु परमेश्वर ने हर आत्मा को इस जीवन में बुलाया है, और हमें विशेष रूप से स्वर्गदूतों के समान जीवन जीने के लिए बुलाया है। मैं प्रार्थना करता हूँ कि आप में से प्रत्येक अपने अच्छे आचरण से यह प्रदर्शित करे कि आपके खेत फल-फूल रहे हैं, फलदायी हैं, और प्रभु को प्रसन्न करने वाली सुगंध बिखेर रहे हैं; यह सांसारिक प्रवृत्तियों और संबंधों के पूर्ण परिवर्तन के द्वारा, और यह नम्र आज्ञाकारिता और मसीह-सदृश विनम्रता के द्वारा हो, दिन-प्रतिदिन स्वयं को परिपूर्ण बनाते हुए और महिमा से महिमा तक रूपांतरित होते हुए, शुभ कर्मों के तेजस्वी वस्त्र से परिधानित होकर, सभी अवज्ञा को त्यागकर और मन के हर विचार को मसीह की आज्ञाकारिता में बंदी बनाकर, भाईचारे के सामान्य नियम के अनुरूप होकर, हमेशा आत्म-निंदा को अपनाते हुए, जिससे हम गर्व और स्व-इच्छा के बहु-शीर्ष वाले अजगर को आसानी से पैरों तले कुचलकर मार सकें।

10. हे भाइयो, हमें विशेष रूप से किस काम के लिए बुलाया गया है? युद्ध और लड़ाई के लिए—सिर्फ तुच्छ शत्रुओं के खिलाफ कोई आसान लड़ाई नहीं, बल्कि अदृश्य आत्माओं की भयानक शक्तियों के खिलाफ एक भीषण लड़ाई, जैसा कि दिव्य प्रेरित कहते हैं: *'क्योंकि हमारा संग्राम मांस और रक्त से नहीं, बल्कि हाकिमों और अधिकारियों और इस अंधेरी दुनिया की शक्तियों और स्वर्गीय क्षेत्रों में बुराई की आत्मकि सेनाओं से है'* (इफिसियों 6:12)।इसलिए, कोई भी युद्ध के लिए तैयार न रहे; कोई भी बिना हथियार के बाहर न निकले; और युद्ध के प्रतीकों से न भागें; फिर भी जब आपको घाव और चोटें लगें, या जब आप संघर्षों का सामना करें तो आश्चर्यचकित न हों। ऐसी सभी बातें युद्ध करने वालों से अविभाज्य हैं। परन्तु जो एक बार घायल हुआ है या एक प्रहार के नीचे गिर गया है, वह नष्ट नहीं होता, और न ही वह जिस पर यह कई बार या अनगिनत बार हुआ हो, बल्कि वह जो स्वेच्छा से अपने आप को अपने दुश्मनों के हवाले कर देता है ताकि उसका वध किया जा सके। इसलिए, भाइयों और पितरों, आइए हम ध्यान दें और मसीह के सिपाहियों के रूप में, युद्ध में दृढ़ खड़े रहें। जैसा कि आप जानते हैं, हर सैनकि, जब वह किसी अभियान पर निकलता है, तो उसे कई कठिनाइयों, परिश्रमों और परेशानियों का सामना करना पड़ता है—चाहे वह तपती धूप से हो, या बारिश से, या ठंड से भी—वहाँ वह कोई आरामदायक जीवन नहीं जीता; कई बार वह एक रोटी का टुकड़ा खाने या एक गिलास ठंडा पानी पीने की इच्छा करता है, फिर भी उसे वह भी नसीब नहीं होता; दिन भर, या रात भर भी, वह चलता रहता है, एक जगह से दूसरी जगह, धूल और कीचड़ में, थकान और थकन में - और किसलिए? उस कमांडर को खुश करने के लिए जिसने उसे सेना में भर्ती किया था, भगोड़ों की सूची में शामिल होने से बचने के लिए, और ताकि जब इनाम बांटे जाएँ , तो उसे निस्संदेह उनके लायक माना जाए। – यह हमारे बीच भी होता है; बस एक अलग तरीके से: उनके पुरस्कार अस्थायी और क्षणकि हैं, जबकि हमारे शाश्वत और अविनाशी हैं, और सर्व-नियंता परमेश्वर द्वारा प्रदान किए जाते हैं। – अत; हम बार-बार सहन करें; हम प्रयास करते रहें, प्रत्येक अपनी सौंपी गई सेवा के अनुसार, प्रभु के लिए शुद्ध और निर्दोष रूप से कार्य करते हुए: जो प्रभारी हैं, वे बुद्धिमानी और विवेक से प्रबंधन करें; और जो सेवा कर रहे हैं, वे बिना शिकायत के और उत्साह के साथ ऐसा करें। आइए हम भूख और प्यास, अपमान और तिरस्कार, टकराव और अपमान के समय को भी सहन करें; विशेष रूप से रात में भजन-गायन और प्रार्थना के दौरान

थकान और सुस्ती, और हर तरह की परेशानियाँ, जो दिखाई देने वाली और न दिखाई देने वाली हैं, जो हम पर आक्रमण करती हैं और हमें कुचल देती हैं, जब हम शारीरिक श्रम और अन्य कर्तव्यों की पूर्ति में लगे होते हैं; ताकि हमारे पिता की प्रार्थनाओं के द्वारा, शुभ कर्मों में परिश्रम करके और दौड़ पूरी करके, हम उस दिन हमारे प्रभु मसीह यीशु के द्वारा धार्मिकता का मुकुट प्राप्त करने के योग्य ठहरें।

115. सभी वासना और क्रोध को त्यागकर, आइए हम प्रभु से चिपके रहें, और अपने मठवासी जीवन के कर्तव्यों में उनका निष्ठापूर्वक सेवा करें।

115. सभी कामना और क्रोध को त्यागकर, हम प्रभु से चिपके रहें, और अपने मठवासी जीवन के कर्तव्यों में उनकी निष्ठापूर्वक सेवा करें। [2, 42] ध्यानपूर्वक सुनो, और समझो कि पवित्र पिता हमसे क्या कहते हैं और क्या आज्ञा देते हैं। क्योंकि यही वह है जो मैं, यद्यपि अयोग्य हूँ, अपनी शिक्षाओं में तुम्हें प्रदान करता हूँ। जहाँ तक कि वे वास्तव में क्या कहते हैं और हमारे आत्माओं में क्या स्थापित करते हैं, मैं अब इसे परमेश्वर के वचन के निम्नलिखित दो अंशों में प्रस्तुत करूँगा: एक चेतावनी देता है: *'यह न सोचो कि तुम धोखेबाज़ी कर सकते हो: न तो व्यभिचारी, न मूर्तिपूजक, न परस्त्रीगामी, न कामुक, न समलैंगिक, न चोर, न लोभी, न शराबी, न अपमान करने वाले, न ही ठग परमेश्वर के राज्य के वारिस होंगे'* (1 कुरिन्थियों 6:9), – और फिर कहीं और: *"तुम्हारे बीच से कड़वाहट, क्रोध, रोष, कलह और निंदा, और साथ ही सब दुष्टता दूर हो जाए; और एक दूसरे के प्रति दयालु और कोमल बनो, और एक दूसरे को क्षमा करो, जैसे परमेश्वर ने मसीह में तुम्हें क्षमा किया है"* (इफिसियों 4:31, 32); एक और पुकारता है: *"आओ, हम उसकी उपासना करें और उसके सामने दण्डवत करें, और हमें बनाने वाले यहोवा के सामने रोएं"* (भजन संहिता 94:6), – और फिर: *"उसके द्वारों में धन्यवाद करते हुए और उसके आंगनों में स्तुति करते हुए प्रवेश करो"* (भजन संहिता 99:4)। अत; इन चेतावनियों से बल पाकर और इन उपदेशों को हृदय में ग्रहण करके, हम सब आराधना में एक साथ आएं; हम प्रभु की आराधना करें और हमारे द्वारा जिए गए जीवन के लिए, हमारे दैनिक अपराधों के लिए—चाहे वे जानबूझकर या अनजाने में, हमारे कर्मों में, शब्दों और विचारों में, और हम गीतों और स्तुतियों के साथ उसके प्रांगणों में प्रवेश करें, परन्तु अपवित्र भाषा, उग्र उफान, अवज्ञा या घमंड के साथ नहीं। जो कोई भी बड़बड़ाता है, वह पाप का दोषी है: इसलिए हम न तो बड़बड़ाएँ, न क्रोधित हों, न अपनी मनमानी करें, न व्यर्थ में बुद्धिमान बनें, क्योंकि हम मिट्टी और राख हैं, धूल और धूल हैं, विशेष रूप से वे जो, अपनी मूर्खता में, अपने शारीरिक या आध्यात्मिक कर्मों के कारण स्वयं को गौरवशाली समझते हैं। मैं देखता हूँ कि *'इस संसार का रूप* हमारे लिए *बीत चुका है'* (1 कुरिन्थियों 7:31); क्योंकि हम सामान्य लोगों से अलग हैं, किसी प्रकार के अजीब वस्त्र से परिधानित हैं, और एक अजीब तरीके से जीते हैं: अविवाहित, नामहीन, बिना विरासत के, रहस्यमयी, और उससे भी अधिक, अदेह हैं; क्योंकि *'जो देह में हैं, वे परमेश्वर को प्रसन्न नहीं कर सकते'* (रोमियों 8:8) – हम संसार के लिए क्रूस पर चढ़ा दिए गए हैं। चूंकि यह वही जीवन है जिसे हमने स्वयं पर लिया है, हमें अपने ऊपर इसके स्पष्ट निशान धारण करने चाहिए, ताकि हम वास्तव में, और केवल नाम मात्र के लिए नहीं, वही बन सकें जिन्हें हमने स्वयं कहा है। इसलिए हमें आज्ञाकारी, तत्पर, ईश्वर-भयभीत, अच्छे, श्रद्धापूर्ण, एक-दूसरे से प्रेम करने वाले, मेहनती, धैर्यवान और हमें जो कुछ भी दिया गया है उसके लिए कृतज्ञ बनें; ताकि अच्छा जीवन जीकर, हम स्वर्ग के राज्य के वारिस बन सकें, जिसकी हम इतनी इच्छा करते और जिसकी खोज करते हैं।

116. कुछ लोगों के भाग जाने के अवसर पर: दृढ़ खड़े रहो और पूर्णता के लिए प्रयासरत रहो, यह अत्यंत सावधानी बरतते हुए कि तुम अपनी इच्छा से कार्य न करो, भले ही तुम्हारे इरादे अच्छे हों।

116. कुछ व्यक्तियों के भाग जाने के अवसर पर: दृढ़ खड़े रहो और पवित्रता में बढ़ो, बहुत सावधान रहो कि अपनी इच्छा से कुछ भी न करो, भले ही अच्छा ही क्यों न कर रहे हो। [2, 43] (कुछ व्यक्ति मठ से भाग गए हैं: इस पर अपनी निराशा व्यक्त करते हुए, परमधर्मपिता जोड़ते हैं...) परन्तु, आप उनके उदाहरण से सावधान हो जाइए और यह मान लीजिए कि प्रभु ने आप पर अपनी कृपा दिखाई है कि आप शैतान की चालाकी से भटक नहीं गए, बल्कि अपने विश्वास की दृढ़ता से स्थिर रहे और आपको सौंपी गई आज्ञाकारिता की पवित्र आज्ञा से विचलित नहीं हुए। इसलिए मैं आपसे विनती करता हूँ, उनके समान न बनें; और प्रकाश के पुत्रों के रूप में, अँधेरे और अवज्ञा के पुत्र न बनें, और न ही अपनी अनेक धन्य परिश्रमों को व्यर्थ में बर्बाद करें, जिससे आप अपनी आत्माओं को भी शाश्वत दण्ड में डाल दें। क्योंकि लिखा है: *'जो कोई मूसा की व्यवस्था को ठुकराता है, वह दो या तीन गवाहों की गवाही पर बिना दया के मर जाता है; तो तुम क्या सोचते हो, जो लोग इसके ऊपर (व्यवस्था) का अपमान करते हैं, वे कितनी अधिक कठोर दण्ड के योग्य होंगे?'* (इब्रानियों 10, 28–29) – जिन्होंने हमारे पवित्र बुलावे की शपथों, स्वीकारोक्तियों और वाचाओं

को पैरों तले रौंदा है, और जिन्होंने हमारे पूर्णत्व के संस्कार का मज़ाक उड़ाया है। इसलिए, मैं आपसे विनती करता हूँ कि आप अपना ध्यान रखें और परमेश्वर के मार्ग में सीधे चलें, यह प्रार्थना करते हुए कि वे भी उठ खड़े हों और शैतान के आत्मा-विनाशकारी और घातक भ्रम से लौट आएं। हालाँकि, यह सर्वविदित है कि आप में से प्रत्येक अपनी आंतरिक प्रवृत्ति से प्रकट करता है कि वह क्या बनेगा: चाहे एक चुना हुआ पात्र हो या विनाश का पात्र। क्योंकि जब, सामान्य नियम के अनुसार नहीं, न ही सामान्य भलाई के लिए, न ही मठाधीश की आज्ञा से, आपके बीच कुछ होता है—चाहे वह पठन में हो, भजन-गायन में, संयम में, जागरण में, या किसी अन्य मामले में जो अच्छा और उचित लगे—बल्कि किसी की अपनी इच्छा से किया जाता है, – इसीलिए पूरे भाईचारे में आमतौर पर भ्रम उत्पन्न होता है: – यह स्पष्ट है कि ऐसा व्यक्ति दुष्ट शत्रु का एक उपकरण है, जो समर्पण और आज्ञाकारिता के बंधन को तोड़ता है और अपनी कामुक इच्छाओं के पीछे अंधकार में चलता है। फिर, यह ध्यान में रखना चाहिए कि धर्मी न्याय द्वारा अधर्मी को धार्मिक से, झूठे को सच्चे से, कपटी को सच्चे मन वाले से, धोखेबाज़ को सच्चे भक्त से, और दुष्ट को सदाचारी से अलग किया जाता है। क्योंकि '*प्रकाश का अंधकार के साथ क्या मेल है?' मसीह का बलिआल से क्या मेल?*' (2 कुरिन्थियों 6:14–15)। – इसलिए जब हम, सहनशीलता से और उनके सुधार की आशा में, उन्हें अलग नहीं करते, तो वे स्वयं भागकर खुद को अलग कर लेते हैं। यदि कोई चाहे, तो वे गेरोंडिका में लिखा हुआ याद करें, कि 'वह स्थान स्वयं उन लोगों को बाहर निकाल देता है जो उस स्थान के कार्य नहीं करते'।

117. जो फिर से भाग गए। – ऐसे पतन से कैसे बचा जाए? हमें शत्रु के सुझावों या उन लोगों के शब्दों पर ध्यान नहीं देना चाहिए जिन्हें उसने भटका दिया है। – 2) कुछ लोग कारण बन रहे हैं

117. 1) जो फिर से भाग गए हैं। – ऐसी गिरावट से कैसे बचा जा सकता है? किसी को भी दुश्मन के सुझावों या उन लोगों के शब्दों पर ध्यान नहीं देना चाहिए जिन्हें उसने बहकाया है। – 2) कुछ लोग, शाम को, रोटी और शराब की मांग करते हुए हंगामा करते हैं: मैं इस संबंध में एक सामान्य आदेश जारी करूँगा; अपना बिगड़ैल व्यवहार बंद करो। – 3) कुछ लोग मनमानी से आज्ञाकारिता के एक रूप से दूसरे रूप में बदल जाते हैं: ऐसा न होने दें; अपनी इच्छा ही विनाश है। [2, 44]

11. (भाग गए लोगों के विषय में पुनः)। ऐसे पतन से कैसे बचा जाए? – सांप की सलाह न मानें, न ही अपने हृदय में सांप को आश्रय दें, बल्कि उसे जल्द से जल्द बेनकाब करें – और वह आग से भागने की तरह भाग जाएगा। यदि हमारे भगोड़े इन नियमों का पालन करते, तो वे हानि पहुँचने की स्थिति तक नहीं पहुँचते। परन्तु हे मेरे बच्चों, सावधान रहो और इस बात का पालन करो। मसीह के झुंड के भेड़ों की नाईं, अपना आप इच्छा से शैतान के हाथ में शिकार न बन जाने दो। मसीह की आज्ञाओं के स्वर्ग में पहुँचाए जाने के बाद, दुष्ट साँप की चालाकियों से किसी भी तरह से धोखा न खाओ, कहीं ऐसा न हो कि तुम पाप के घोर अंधकार में गिर जाओ। स्वर्गदूतों की तरह जीते हुए, स्वयं की इच्छा से भागने के अंधकार में खुद को लिप्त न होने दो; बल्कि धैर्य से सहो, और आज्ञाओं को पूरा करो। कोई भी कपटी लोगों की संगति न करे, और न दुष्टों के साथ बैठे (भजन संहिता 25:5)। दुष्ट और कपटी वह है जो दूसरों के साथ मिलकर भागने की साजिश रचता है, या किसी अन्य वासना को पूरा करने की, जो स्वयं के और उसके पीछे चलने वाले किसी भी व्यक्ति के विनाश का कारण बनती है। इसलिए, जब ऐसा व्यक्ति आपको दूसरों से अलग करता है और अपनी जीभ से आपके भीतर बुराई का विष डालना शुरू करता है, तो मुँह फेर लें और उससे दूर हो जाएँ; अपने कान ढाँप लें, ताकि आप स्वयं और उसे दोनों को बचा सकें। यहाँ तक कि जब वह तुम्हें उस परीक्षा से दुखी देखता है जो तुम पर आई है, तो जब तुम धर्मपूर्वक शोक और क्रोधित हो, तब भी उसे चालाकी से एक बार फिर से पास आते हुए स्वीकार मत करना: क्योंकि यह वही साँप है, जो तुम्हें अपनी ओर खींचने की साजिश रच रहा है। जब वह आपके स्वर्ग—अर्थात् समुदाय—की निंदा करना शुरू करे या आपके साथ रहने वालों, जो आपके भाई हैं, पर यह कहते हुए आरोप लगाना शुरू करे, 'फलाना-ढिकाना ऐसा है, और अमुक वैसा है,' या 'यह हमारे बीच सही नहीं है, और वह बुरा है,' तो उसे दूर धकेल दें और जैसा उचित हो, उसे फटकारें, ताकि आप उसे काबू में रख सकें और खुद को बचा सकें। – लेकिन ऐसे लोग क्या कहते हैं? – "चलो यहाँ के लोगों से अलग हो जाते हैं: मठाधीश एक बोझ है; कार्यशालाओं का प्रमुख निर्दयी है; सुलेखक लापरवाह है; काम बहुत है, लेकिन वेतन बहुत कम है; हर कोई आदेश देता है, हर कोई हुक्म चलाता है; हम में मेहनत का बोझ उठाने की ताकत नहीं है, और यहाँ खुद को बचाने का कोई रास्ता नहीं है। चलो यहाँ से भाग चलते हैं। – कहाँ? 'जहाँ भी हमारी आँखें ले जाएँ; जब तक हम बस निकल सकें।' – और अगर कोई भी समझदार व्यक्ति ऐसे लोगों को उनके दिलों में जैसा वे सच में हैं, वैसा देख सके, तो वह उन्हें उदास, भयानक, दानव-सदृश देखेगा, जिनमें कुछ भी ठोस नहीं है – न इच्छाशक्ति, न ही मन – जो खोए हुए भेड़ों की तरह इधर-उधर भटक रहे हैं। – और यह मत सोचो कि मैं यह केवल उन्हें शर्मिंदा करने के लिए कह रहा हूँ। नहीं, नहीं: इसके विपरीत, उनमें इससे कहीं अधिक बुराई है – इतनी कि उसका

वर्णन नहीं किया जा सकता। हालाँकि, प्रार्थना करें, पूरे मन से प्रार्थना करें, कि वे मिल जाएँ और लौट आएँ, चाहे अपनी मर्जी से या हमारे प्रयासों से। – जहाँ तक हमारे अपने कर्तव्य की बात है, – आप दृढ़ रहें, ऐसे पतन के कारणों से बचें, स्वर्गीय पुरस्कार के लिए अच्छे कर्मों में लगे रहें। – लेकिन मेरे ध्यान में यह बात आई है कि आप में से कुछ लोग लापरवाही से उन लोगों का बचाव कर रहे हैं जो रास्ते से भटक गए हैं, जबकि वे न केवल बचाव के, बल्कि उल्लेख किए जाने के भी योग्य नहीं हैं। आपके लिए केवल पछतावे के साथ उनका नाम लेना ही उचित है। क्योंकि प्रेरित भी अब विश्वासघाती को प्रेरित नहीं कहते, बल्कि केवल यहूदा, विश्वासघाती, धोखेबाज़ कहते हैं।

12. मैंने सुना है कि शाम के समय तुम लोगों में फिर से अव्यवस्थाएँ हो रही हैं: कुछ रोटी की माँग करते हैं, कुछ शराब की – और यह सब लेंट (महाप्रायश्चित्त) के दिनों में। आप जानते हैं कि, इस नगर में प्रवेश करने के बाद, हमने पहले ही अपने जीवन-यापन के तरीके को, जैसा कि यह इसके बाहर था, उससे कुछ हद तक बदल दिया है; मैं लेंट के दिनों पर तेल, शराब और पके हुए भोजन के सेवन के बारे में बात कर रहा हूँ, साथ ही बुधवार और शुक्रवार को भी। – और इतना ही काफी है। – लेकिन चूँकि मुझे आप लोगों पर दया है, अपनी खुद की दुर्बलता और शहर में संयम की कठिनाई, दोनों के कारण, मैं यह आदेश देता हूँ कि अब से, उपरोक्त दिनों में, शाम को, जो कोई भी चाहे, वह एक प्याला शराब और एक टुकड़ा रोटी प्राप्त कर सकता है। और अंत में, बिल्कुल कोई गड़बड़ी, कोई झगड़ा न हो – और न ही इस तरह की मूर्खतापूर्ण बातें जैसे: 'मुझे इतना-इतना मिलना चाहिए था: मैंने दूसरों से ज़्यादा मेहनत की है।' जो नियम तोड़ेंगे, वे उचित दंड और बहिष्कार से नहीं बचेंगे। और तुम भी, व्यापारों के निरीक्षकों, व्यवस्था के रक्षकों, मकान बनाने वालों और विभिन्न विभागों के अन्य प्रमुखों, सावधानी बरतो ताकि ऐसा दोबारा न हो।

१३. मैं एक और बात का भी उल्लेख करूँगा। – कुछ लोग उन कर्तव्यों में नहीं रहते जिनके लिए उन्हें नियुक्त किया गया है, बल्कि बिना किसी अच्छे कारण के, केवल तुच्छता और चंचलता के कारण एक से दूसरे में चले जाते हैं; इस प्रकार वे न केवल अपने लिए बल्कि व्यवस्था बनाए रखने वालों के लिए भी परेशानी का कारण बनते हैं; और वे कार्यशालाओं और शिल्प कक्षों के पर्यवेक्षकों को भी अनावश्यक परेशानी और श्रम देते हैं। – भविष्य में ऐसा न हो। – लेकिन हर कोई जिस कार्य के लिए नियुक्त किया गया है, उसके प्रति धैर्य रखे, और जैसा निर्धारित किया गया है, वैसा ही काम करे। क्योंकि अपने लिए स्वयं कार्य गढ़ना और अपनी ही इच्छाओं को पूरा करने का प्रयास करना अव्यवस्था, अज्ञानता और अवज्ञा का संकेत है। अब जब इस तरह की बुराई को इंगित कर दिया गया है और मना किया गया है, तो अब कोई भी इस तरह व्यवहार न करे, अन्यथा वे अव्यवस्थित आचरण के लिए प्रायश्चित का सामना करेंगे। क्या आप नहीं जानते कि संत डोरोथियस क्या कहते हैं? कि जिसने अपनी इच्छा को त्याग दिया है, उसने आंतरिक शांति का पूर्ण माप प्राप्त कर लिया है। अत; जो कोई भी आंतरिक शांति का आनंद लेना चाहता है, उसे इसे प्राप्त करने के लिए इसी मार्ग का अनुसरण करना चाहिए, अर्थात् अपनी इच्छा का त्याग करना; और उसे यहाँ अपने समय के दौरान और भविष्य में अनंत काल तक शांति प्राप्त होगी। – परमेश्वर, हमारे प्रभु यीशु मसीह के पिता, आपको एक मन होने और हर बात में सहमत होने की सारी बुद्धि दें, ताकि आप शाश्वत जीवन और स्वर्ग के राज्य की विरासत की तैयारी के लिए हर तपस्या के संघर्ष को धैर्यपूर्वक सहन कर सकें।

118. संघर्ष अल्पकालिक हैं, लेकिन उनके पुरस्कार शाश्वत हैं; पाप के सुख क्षणिक हैं, लेकिन उनके लिए यातनाएँ अनंत हैं: लापरवाह उनसे बच नहीं सकते।

118. पराक्रम क्षणिक हैं, परन्तु उनके पुरस्कार शाश्वत हैं; पाप के सुख क्षणभंगुर हैं, परन्तु उनके कष्ट अनंत हैं: लापरवाह उनसे बच नहीं सकते। [2, 45] यह वर्तमान जीवन पराक्रमों का समय है, दुखों और परिश्रम का समय है – ऐसे पराक्रम, दुख और परिश्रम नहीं जिन्हें क्षणिक या अल्पकालिक कहा जा सके, बल्कि वे जो दिन-रात चलते रहते हैं, दीर्घकालिक हैं, और जीवन के अंत तक समाप्त नहीं होते। लेकिन हमें यह न भूलें कि हमारा यह संघर्ष किसी तुच्छ, सांसारिक, या केवल मानवीय उद्देश्यों के लिए नहीं है, बल्कि दिव्य और स्वर्गीय आशीर्वादों के लिए है। क्योंकि यदि, निरंतर धैर्य और पवित्र आज्ञाओं का सबसे लगन से पालन करके, हम इस संघर्ष में सफल हो जाते हैं, तो हमें स्वर्ग का राज्य, अनंत आनंद, और उन शाश्वत आशीर्वादों का आनंद प्राप्त होगा जो अकथनीय, अकल्पनीय और समझ से परे हैं। लेकिन यदि, ईश्वर न करे, लापरवाही और सुस्ती के कारण, इस युग के भ्रष्ट करने वाले सुखों के प्रति आसक्ति और प्रेम के कारण, हम इसमें सफल नहीं होते हैं, तो हमें अनंतकाल का कष्ट, अमाप लज्जा प्राप्त होगी, और हम उस भयानक आवाज़ को सुनकर भयभीत हो उठेंगे: *'मेरे पास से चले जाओ, हे श्रापित, उस अनन्त आग में जो शैतान और उसके दूतों के लिए तैयार की गई है'* (मत्ती 25:41)। परन्तु हम उस भयानक स्वर को कभी न सुनें और न ही संतों और धर्मी लोगों से उस अत्यंत दुखद वियोग का अनुभव करें—जब उन्हें अकथनीय आनंद में, अकथनीय प्रकाश में, अतृप्त आनंद में ले जाया जाएगा, जबकि हम राक्षसों के साथ अनंत आग में, उस कीड़े

में फेंके जाएँगे जो कभी नहीं मरता, दाँत पीसने की पीड़ा में, सबसे अंधेरे तारतारस में, अटूट बंधनों में – और यह थोड़े समय के लिए नहीं, कुछ वर्षों के लिए नहीं, सैकड़ों, हजारों या अनगिनित वर्षों के लिए नहीं, बल्कि हमेशा के लिए – प्रभु के विधान के अनुसार, सर्वकाल के लिए और हमेशा एक ही प्रकार की पीड़ा में। तो फिर, जैसा कि संतों का कहना है, वह भाई, या पिता, या माता कहाँ है, जो बचाए और रक्षा करे? – परन्तु *'भाई बचाएगा नहीं: क्या मनुष्य छुड़ा सकता है? मनुष्य अपने लिए फिरौती नहीं देगा, न अपनी आत्मा के छुटकारे का मूल्य देगा'* (भजन संहिता 48:8)। मैं, हालाँकि, एक दूसरे तरीके से पूछना चाहूँगा: तो फिर लापरवाहों की लापरवाही और उदासीनों की उदासीनता कहाँ है? तो फिर विरोधाभासियों का विरोधाभास, अवज्ञाचारियों की अवज्ञा कहाँ है? तो फिर घमंडी लोगों का घमंड और अविवेकी लोगों की अशिष्टता कहाँ है? भोगी की लालच, झूठे के बहाने, परमेश्वर के सामने किए गए अपने व्रतों को त्यागने वालों का त्याग कहाँ है? – वे जिन्होंने परमेश्वर के पुत्र को पैरों तले रौंदा है और वाचा के लहू को तुच्छ समझा है, यह सोचकर कि न तो मृत्यु है और न ही पुनरुत्थान, – न तो न्याय, न ही प्रतिशोध; जिन्होंने स्वयं को पवित्र आत्मा की संगति से अलग कर लिया है, स्वयं पवित्र आत्मा से वंचित हो गए हैं, और अपनी कामुक इच्छाओं की तेज धाराओं और गहराइयों में इधर-उधर भटकते हैं।

119. हम संसार से बाहर आ गए हैं: तो क्या आश्चर्य है कि हम संसार में दुख सहते हैं? फिर भी यह हमारे हानि के लिए नहीं, बल्कि लाभ के लिए है।

119. हम संसार से बाहर आ गए हैं: तो क्या यह आश्चर्य की बात है कि हम संसार में कष्ट सहते हैं? फिर भी यह हमारे लिए कोई बाधा नहीं, बल्कि एक सहायता है। इसलिए हमें धीरज रखना चाहिए; समय तेज़ी से बहता है, और जल्द ही सब कुछ समाप्त हो जाएगा; प्रभु सब कुछ देखता है, और सभी को उनका प्रतिफल देगा। [2, 46] मांस में, आप बेगाने और बिना किसी नगर के हो गए हैं। आपका एक ही पिता है, सभी का ईश्वर; आपका एक ही नगर है—स्वर्गीय यरूशलेम—और आपके सह-नागरिक सभी पुराने संत हैं। तो फिर इस तथ्य में क्या आश्चर्य की बात है कि यहाँ हम तपस्या की कष्टों और कठिनाइयों के माध्यम से बुराई सहते हैं, कभी-कभी अपमानित और निंदा किए जाते हैं? निराश न हों; क्योंकि यह बाधा नहीं डालता, बल्कि हमारे भीतर सत्य और शांति, प्रकाश, जीवन, अकथनीय आनंद और दैवीय हर्षोल्लास को चमकाने में मदद करता है। इसलिए मैं आपसे विनती और प्रार्थना करता हूँ: अपने आत्मा को धैर्य में मज़बूत करें, अपने विचारों को प्रभु में स्थिर रखें, और एक अच्छे भाव के साथ सभी बातों को सहन और झेलते रहें, उस महान आशीर्वाद की आशा में जिनकी आप प्रतीक्षा कर रहे हैं। समय तेज़ी से बीतता है, और हम मृत्यु के समीप पहुँच रहे हैं—या यूँ कहें कि मृत्यु के नहीं, बल्कि एक ऐसे जीवन के समीप जो कभी बूढ़ा नहीं होता: क्योंकि जब आप संसार का त्याग करके अपनी इच्छा से पहले ही मर चुके होंगे, तो मृत्यु का आप पर कोई अधिकार नहीं रहेगा। इसलिए आइए हम पूरी लगन से अपने काम में जुट जाएँ, और प्रत्येक व्यक्ति अपने ऊपर पड़े कर्तव्य को शुद्ध और श्रद्धापूर्वक पूरा करने का प्रयास करे, और उसे एक निर्मल अंतरात्मा के साथ पुरस्कारदाता परमेश्वर के समक्ष प्रस्तुत करे। क्योंकि प्रभु सभी को, उनके कर्म, उनके उत्साह या उनकी आलस्य और टालमटोल को देखता है; वह सभी बातों का अवलोकन करता है और स्वर्ग के राज्य में, प्रत्येक को उनके कर्मों के अनुसार पुरस्कृत करेगा।

120. अपने आध्यात्मिक जीवन में, आइए हम पृथ्वी पर देह में प्रभु के जीवन की विशेषताओं को प्रतिबिंबित करें

120. हमारे आध्यात्मिक जीवन में, हमें प्रभु के पृथ्वी पर देह में जीवन की विशेषताओं को प्रतिबिंबित करना चाहिए। [2, 47] हम *'प्रभु को उनके द्वारा* हमारे लिए *किए गए सभी कार्यों का प्रतिदान'* (भजन संहिता 115:3) *कैसे दे सकते हैं*, सिवाय इसके कि हम इसे याद करें और धन्यवाद दें? क्योंकि विचार करें: क्या हुआ? हमारे लिए उसने स्वयं को किन ऊँचाइयों से, और अपमान की किस हद तक, नीचे उतारा? यद्यपि वह सभी का ईश्वर और प्रभु था, फिर भी उसने एक सेवक का रूप धारण किया; उसे परमेश्वर की अतिपवित्र माता के गर्भ में धारण किया गया; और जब उसका जन्म हुआ, तो उसे एक शिशु की तरह कपड़ों में लपेटकर एक त␣ में रखा गया; उन्हें एक बच्चे की तरह दूध छुड़ाया गया, धीरे-धीरे बढ़े, और एक बच्चे से लड़के, फिर युवक, और फिर एक पूर्ण पुरुष बने, जब उन्होंने बपतिस्मा ग्रहण करने की कृपा की, जिससे हमें पुनर्जन्म का स्नान मिला; अंत में, उन्होंने अपना मंत्रालय पूरा किया, विश्वासघात, जीवन-दायक पीड़ा, सूली पर चढ़ाए जाने, मृत्यु, और तीसरे दिन पुनरुत्थान को सहन किया। यह सब हमारे लिए किया गया था, ताकि हम भी आध्यात्मिक रूप से उसी मार्ग पर चल सकें। चूँकि वह, जो युगों से पहले पिता से एक देहहीन रूप में जन्मे थे, बाद में हमारे लिए परम पवित्र कुँवारी के गर्भ से देह में जन्मे; उसी प्रकार हम भी, जो पहले देह में जन्मे थे, बाद में आध्यात्मिक रूप से जन्मे हैं, सभी पवित्र बपतिस्मा में एक साथ, और विशेष रूप से—और ऐसा कैसे हो

सकता है कि ऐसा न हो?—हम में से वे जिन्होंने पवित्र स्कीमा ग्रहण की है? हमें शिशुओं की तरह क्यों व्यवहार करना चाहिए, विशेष रूप से उन लोगों को जिन्होंने हाल ही में स्कीमा ग्रहण किया है, और बच्चों की सादगी का अनुकरण क्यों करना चाहिए, ताकि जब कोई हमें अपमानित या ठेस पहुँचाए, तो हम जंगली जानवरों की तरह क्रोधित न हों, बल्कि बच्चों की तरह उस पर ध्यान न दें। प्रभु मसीह ने अपने माता-पिता की हर बात में आज्ञा मानी, और हमें भी अपने आध्यात्मिक माता-पिता – अपने पिताओं की आज्ञा माननी चाहिए। जब प्रभु मसीह अपना कार्य करने निकले, तो उन्हें अपमानित और निंदा किया गया, उन्मादी धर्मशास्त्रियों और फरीसियों से सुनकर: *'तुम्हारे भीतर एक दुष्टात्मा है'* (यूहन्ना 8:48), *'तुम बीलज़ेबूब की शक्ति से* दुष्टात्मा *निकालते हो'* (मत्ती 9:34), *'क्या यह बढ़ई का पुत्र नहीं है?'* (मत्ती 13:55), और इस तरह की अन्य निंदाएँ; बाद में उन्होंने थूक, थप्पड़ और कोड़ों की पिटाई भी सहन की। और उन्होंने विरोध में एक भी शब्द नहीं कहा, बल्कि केवल धन्यवाद दिया और प्रार्थना की: *'पिता, उन्हें क्षमा करो, क्योंकि वे नहीं जानते कि वे क्या कर रहे हैं'* (लूका 23:34)। जो लोग उद्धार पाना चाहते हैं और संतों के सह-वारिस बनना चाहते हैं, वे उनके उदाहरण का पालन करें। तो, तुम सब, पहले से लेकर आखिरी तक, ध्यान दो; तुम्हारे भीतर उत्साह, स्वैच्छिकता या अवज्ञा से उत्पन्न कुछ भी न हो; बल्कि हर बात में, अपने कर्तव्यों का पालन ईश्वर-भक्ति और प्रेमपूर्वक करो, ताकि मसीह प्रसन्न हों और महिमा प्राप्त करें। प्रभु तुम्हें और अधिक शुद्ध, परिपूर्ण और प्रबुद्ध होने के लिए शक्ति और धैर्य प्रदान करें, ताकि तुम संसार में प्रकाश की तरह चमक सको।

121. कोई भी स्वयं को अलग न करे, और अपने पिता पर विश्वास न खोए: न ही शत्रु की सुनें, जो बुराई का कुशल आविष्कारक है

121. 1) कोई भी स्वयं को अलग न करे, न ही अपने पिता पर से विश्वास खोए; और न ही शत्रु की सुने, जो बुराई का कुशल आविष्कारक है। – 2) आप इसे अपने मन खोलकर प्राप्त करेंगे – जिसके लिए मैं आपके उद्धार के लिए आपसे विनती करता हूँ। [2, 49]

1. मैं आपकी प्रगति देखकर प्रसन्न और आनंदित हूँ; लेकिन जितना मैं प्रसन्न हूँ, उतना ही मैं भय और आशंका से भी ग्रस्त हूँ, कि कहीं कोई अव्यवस्था उत्पन्न न हो जाए और आपके बहुत परिश्रम और पसीने से अर्जित सब कुछ पलट न दे। इसीलिए मैं आप सभी से ये बातें कहता हूँ: सतर्क रहें, चौकस रहें और प्रार्थना करें! कोई भी खुद को अलग करने या अपनी ताकत पर भरोसा करने की कोशिश न करे; कोई भी अपने आध्यात्मिक पिता में विश्वास की दृढ़ चट्टान से अपने पैर न हटाए; अपने तपस्या के कार्यों में सुस्ती न करें, और किसी भी अन्य तरीके से कई सिर वाले साँप को अपने दिलों में प्रवेश करने न दें, जो लोगों को पाप में फँसाने में अत्यंत कपटी और चालाक है – इस या उस तरीके से, इस या उस साधन द्वारा, इस या उस विश्वसनीय बहाने के तहत। वह पाप का एक कुशल आविष्कारक, बुराई का बीजारोपी है, जिसे स्वर्ग से पृथ्वी पर गिरा दिया गया, बिजली की तरह गिरता हुआ; वह एक चोर की तरह स्वर्ग में रेंग गया और हमारे पूर्वज आदम को बहका दिया, और तब से अब तक वह लोगों को हर तरह की दुष्टता और पाप सिखाता आ रहा है। उसने ईसाई लोगों को भी विधर्म और दुष्ट कर्मों में ले जाया है, और हमारे पाप के तीरों से हमें घायल करने और हमें मार डालने का प्रयास करता है।

२. इसलिये मैं तुम्हें आग्रह और विनती करता हूँ: परमेश्वर का पूरा कवच पहनकर अपने मार्ग पर दृढ़ता से चलो, और उसे कोई प्रवेश न करने दो, और न ही उसे अपने पास आने दो। जैसा कि मैंने कहा है, आप यह पिता में सच्चे विश्वास, उनके प्रति अटूट स्वीकारोक्ति और अपने अंतरतम विचारों के पूर्ण प्रकटीकरण के माध्यम से प्राप्त करेंगे, जिसके बाद विनम्रता, सच्ची आज्ञाकारिता और धैर्यपूर्ण सहनशीलता आएगी। इसलिए, भाइयों, मैं तुम से विनती और प्रार्थना करता हूँ, परमेश्वर के वास्ते, पुरस्कार के वास्ते, अनंत जीवन और उसकी आनन्द के वास्ते, और इसके विपरीत—अनन्त अग्नि और अन्य अतुलनीय यातनाओं के भय से—कि हम परिश्रम करते रहें और उत्साह के साथ आगे बढ़ते रहें, सही मार्ग पर चलते हुए, इस जीवन के महान सागर को सुरक्षित रूप से पार करने के लिए यत्न करते और अपनी पूरी कोशिश करते हुए, ताकि मृत्यु के बाद हमें धार्मिकता और धन्य अमरत्व के मुकुट प्राप्त हों।

122. यात्री, अपनी यात्रा के अंत की ओर देखते हुए, रास्ते में आने वाली सभी कठिनाइयों को स्वेच्छा से सहन करते हैं: ठीक उसी प्रकार हमें भी स्वर्ग के राज्य के लिए सब कुछ सहन करना चाहिए।

122. 1) यात्री, अपनी यात्रा के अंत की ओर देखते हुए, रास्ते में आने वाली सभी कठिनाइयों को स्वेच्छा से सहन करते हैं: ठीक उसी तरह हमें भी स्वर्ग के राज्य के लिए सब कुछ सहन करना चाहिए। – 2) और सभी महिमामय संतों ने सहन किया: क्योंकि कोई और रास्ता नहीं है। [2, 50]

3. जैसे एक लंबी यात्रा पर निकले यात्री एक स्थान से दूसरे स्थान को जाते हैं, कभी एक समतल और सुगम रास्ते पर, और कभी खाइयों से भरे या बारिश से कीचड़ भरे रास्ते पर: वैसे ही, जब हम इस वर्तमान जीवन को जीते हैं, हम दिन-प्रतिदिन, वर्ष-दर-वर्ष आगे बढ़ते हैं, कभी अप्रिय और बोझिल चीजों का सामना करते हैं, और कभी सुखद और आनंददायक चीजों का। और जैसे वे यात्रा की लंबाई से नहीं डरते, न ही वे रास्ते में आने वाली कठिनाइयों के कारण रुकते हैं, बल्कि अपनी दृष्टि केवल यात्रा के अंत पर केंद्रित रखते हैं: इसी प्रकार हमें भी, जो एक मठवासी और तपस्वी जीवन के पुण्य प्रयास में लगे हुए हैं, और स्वर्ग के राज्य की ओर ले जाने वाले शुभ मार्ग पर चल रहे हैं, न तो हतोत्साहित होना चाहिए, न पीछे मुड़ना चाहिए, और न ही हमें मिलने वाली परेशानियों, बाधाओं और दुखों से थकना चाहिए, जो हमारे लाभ के लिए ईश्वर की दिव्य व्यवस्था द्वारा अनुमत हैं। क्योंकि यदि वे, इस वर्तमान जीवन के छोटे और तुच्छ लाभों के लिए, अपने सामने आने वाली यात्रा की कठिनाइयों के सामने नहीं रुकते; क्या यह हमारे लिए और भी अधिक उपयुक्त नहीं है, शाश्वत और असीम रूप से महान आशीर्वादों के लिए, सभी चीजों को सहन करना, सब कुछ प्रसन्नतापूर्वक स्वीकार करना और सहना, ताकि हम उस चीज़ को प्राप्त करने के योग्य माने जाएँ जिसकी हम आशा करते हैं? तो फिर, मेरे भाइयों और बच्चों, आइए हम जो कुछ भी हम पर आता है और जो कुछ भी हमारे जीवन के तरीके से अविभाज्य रूप से जुड़ा है, उसे महानतम वीरता और प्रसन्नता के साथ सहन करें: श्रम, कठिनाइयाँ, उपवास, प्रार्थना-जागरण, घुटने टेकना, नंगे फर्श पर सोना, गर्मी और ठंड, भूख और प्यास, कपड़ों और जूतों की गरीबी, श्रम के कारण एक प्रकार की अव्यवस्था, आज्ञाकारिता और प्रार्थना की तत्परता, और हमारे तपस्वी जीवन में इससे जुड़ी हर दूसरी चीज़। धन्य हैं आप, और परम धन्य, जब आप अपने आध्यात्मिक संघर्षों में परिश्रम करते हैं और प्रेमपूर्वक उत्पन्न होने वाले मानसिक और इंद्रिय प्रलोभनों का सामना करते हैं।

4. वास्तव में, क्या युगों-युगों से चमकते आए संतों में से कोई ऐसा है जिसने परिश्रम और मेहनत, प्रलोभनों और दुखों के बिना एक सच्चा जीवन जिया हो? उदाहरण के लिए, कुलपतियों में सबसे महान अब्राहम को लें, और उनके बाद आए कुलपतियों, नबियों और शिक्षकों को; या प्रेरितों, पौलुस और अन्य प्रेरितों को; या उन पितृपुरुषों को जिन्हें बाद में महिमामंडित किया गया – प्रथम शहीद स्टीफन और अन्य सभी जिन्हें उनके साथ और उनके बाद मसीह के लिए शहीद किया गया; – महान एंथनी और सभी पवित्र पिता जिन्होंने उनके साथ और उनके बाद परिश्रम किया; उन सभी में हमें अपार परिश्रम, पसीना, संघर्ष, थकान, दुख, उत्पीड़न, हमले, बदनामी और हर तरह के प्रलोभन मिलते हैं। संत पौलुस कहते हैं, *'वे भेड़ की खाल और बकरी की खाल पहने हुए, दरिद्र, कष्टित, प्रताड़ित होकर घूमते थे—जिनके लिए संसार योग्य नहीं था—मरुभूमियों और पहाड़ों, गुफाओं और पृथ्वी की खोहों में भटकते थे'* (इब्रानियों 11:37-38). और वे सभी ऐसे ही थे। ईश्वर को प्रसन्न करने का कोई और तरीका नहीं है; परिश्रम के बिना उद्धार का मार्ग पूरा नहीं किया जा सकता, न ही वीरता के कारनामों के बिना वांछित विजय प्राप्त की जा सकती है। तो फिर, हम—उनके द्वारा किए गए समान कार्य को अपनाते हुए—उसमें उसी जीवन-शैली को जीने के अलावा किसी और तरीके से कैसे सफल हो सकते हैं, जिससे उन्होंने अपना क्षणिक जीवन जिया और व्यतीत किया?

123. हमें किन मामलों में एक-दूसरे से प्रतिस्पर्धा करनी चाहिए, किन मामलों में हमें एक-दूसरे से बेहतर बनने का प्रयास करना चाहिए, और किन मामलों में हमें एक-दूसरे से सहमत होना चाहिए

123. किन मामलों में हमें एक-दूसरे से प्रतिस्पर्धा करनी चाहिए, किन मामलों में हमें एक-दूसरे से आगे निकलने का प्रयास करना चाहिए, और किन मामलों में हमें एक-दूसरे से सहमत होना चाहिए। [2, 51] आओ, हम निराशा और सुस्ती को त्याग दें, और प्रभु की सभी आज्ञाओं को पूरा करने में लगन और उत्साह को अपनाएं। आओ, हम एक-दूसरे से आगे निकलने का प्रयास करें – शब्दों से नहीं, बल्कि कर्मों से; अपनी बात पर जोर देकर नहीं – क्योंकि यह हमारे विरोधी पक्ष की विशेषता है – बल्कि झुककर, अपमान, गाली-गलौज और उपहास को सहन करके। – आओ, हम एक-दूसरे से प्रतिस्पर्धा करें – न तो किसी को ठेस पहुँचाने में और न ही ठेस उठने में, न ही अपने से नीचे वालों पर भौंहें चढ़ाने में, या अपने से ऊपर वालों की ओर गर्व से सिर झुकाने में: क्योंकि ऐसा ही गर्व है जो सर्वशक्तिमान परमेश्वर के विरुद्ध उठ खड़ा हुआ, जिसे स्वर्ग की ऊँचाइयों से नीचे पृथ्वी पर गिरा दिया गया; – बल्कि ताकि हम शांतिपूर्ण हों और शांति स्थापित करें, विनम्र हों और सबको वश में करें, नम्र और दीन लोगों की बुद्धि के धनी हों: क्योंकि परमेश्वर का पुत्र भी ऐसा ही है, जो आज्ञाकारिता और नम्रता के द्वारा मसीह बनकर आया, और क्रूस और मृत्यु के द्वारा मानवजाति को बचाया। आओ, हम एक-दूसरे की नकल करें, आलस्य करने और दैवीय दैनिक सेवाओं और रात्रिकालीन भजन-गायन की उपेक्षा करने में नहीं: क्योंकि यह आलसी और अपरिपक्व लोगों का लक्षण है, – बल्कि ईश्वर के कार्य के लिए उत्सुक होने में, भजन-गायन शुरू होने से पहले, दूसरों से पहले ईश्वर के मंदिर में पहुँचने में: क्योंकि ऐसे ही धर्मपरायण और सदाचार के उत्साही होते हैं। परन्तु, सब कुछ एक-एक करके

सूचीबद्ध न करने के लिए, मैं संक्षेप में कहूँगा: हम सभी भलाई में एक-दूसरे का अनुकरण करें; हम नम्र प्रेम, शांतपूर्ण स्वभाव और सदाचारी विनम्रता में एक हों; हम धोखे और आपसी संदेह से बचें; आध्यात्मिक संगति के माध्यम से हम आपसी विश्वास में अपनी आत्मा को मजबूत करें; कोई भी यहूदा की तरह विश्वासघाती न हो, न ही दुश्चरित्र और चंचल, न ही असंयमी और कामुक, न ही कठोर और क्रूर; कोई भी किसी भी तरह से ऐसा व्यवहार न करे, बल्कि हर कोई एक धार्मिक, धर्मात्मा और परमेश्वर को भाने वाले जीवन में उत्तम हो, और दिन-प्रतिदिन अपने प्राण त्यागने के समय की प्रतीक्षा करे और हमारे प्रभु यीशु मसीह के प्रकट होने के दिन की आशा करे, जिस दिन सभी वस्तुएँ परिवर्तित और नवीनीकृत हो जाएँगी, और हम सभी स्वर्गदूतों के अमूर्त पदवियों की उपस्थिति में, न्यायाधीश के भयानक सिंहासन के सामने खड़े होंगे, अपने सभी कर्मों, वचनों और विचारों का हिसाब देने के लिए।

124. हर बात में निर्दोष रहो, भीतर और बाहर दोनों में

124. 1) हर बात में निर्दोष रहो, भीतर और बाहर दोनों में। – 2) मठ में न केवल नगरवासियों को बल्कि ग्रामीणों को भी स्वागत करो। [2, 52]

5. (कैद में रहते हुए लिखा गया)। मसीह प्रभु के सच्चे सेवकों और दूतों के रूप में आनंद मनाओ। उसने आपके लिए एक मुकुट और अपना राज्य तैयार किया है, बशर्ते कि आप भी हृदय का अच्छा भाव बनाए रखें और उसी प्रकार का जीवन जीते रहें, दुनिया में रहते हुए स्थापित नियमों का पालन करें, निर्दोष और शुद्ध, नम्र और विनम्र बने रहें, शारीरिक श्रम में लगे रहें, भजन-गायन, श्लोकों का पाठ, अपने विचारों को व्यक्त करना, और आपसे जो कुछ भी अपेक्षित है, उसे पूरा करना।

6. जहाँ तक नए भाइयों को स्वीकार करने की बात है, मैं चाहता हूँ कि हमारी बंधुता न केवल शहरवासियों से, बल्कि गाँव के लोगों से भी भरे, जो हमारे बीच स्थापित श्रम और कार्यों के लिए अधिक उपयुक्त और अभ्यस्त हैं। मुझे विश्वास है कि शहरवासियों की संख्या में वृद्धि हमारे लिए शारीरिक या आध्यात्मिक रूप से स्वस्थ या लाभकारी नहीं होगी।

125. ईश्वर की आज्ञाओं और हमारे नियमों का पालन करो, पूर्वजों के उदाहरण का अनुसरण करते हुए – सभी एक मनुष्य की तरह एकजुट रहो

125. ईश्वर की आज्ञाओं और हमारे नियमों का पालन करो, हमारे पूर्वजों के उदाहरण का अनुसरण करते हुए – सभी एक मनुष्य की तरह। [2, 53] (साथ ही)। ईश्वर आपको, मेरे अति सम्मानित भाइयों, आपके हाथों के कामों और आपकी आत्माओं के श्रम में बलवान बनाए, और वह आपको हर बात में निष्कलंक और अक्षुण्ण रखे, तथा पवित्र आत्मा की शक्ति द्वारा आपको उसके सभी आज्ञाओं को पूरा करने और हर प्रकार से आज्ञाकार होने की तत्परता प्रदान करे, हमारे सामने रखी गई आशीर्वादों पर अपनी दृष्टि स्थिर रखते हुए, जो प्रभु के आगमन से प्रेम करने वालों के लिए सुरक्षित रखी गई हैं, और इस संसार की सभी चीजों—महिमा, सुख, आनंद और शरीर के आराम—को कुछ भी नहीं समझते हुए; बल्कि संसार के लिए स्वयं को सलीब पर चढ़ा कर अपने मन को स्वर्गीय बातों के चिंतन में स्थिर किया है। इस प्रकार हमारे सभी प्राचीन पूर्वज जीते थे, जिन्होंने संसार और संसार में जो कुछ भी है, उसे त्याग दिया था, और हमारे पवित्र और दैवीय क्रम में प्रभु की सेवा करते थे। तब, हे मेरे बच्चों, परंपराओं को दृढ़ता से थामे रहो, जैसा कि तुमने उन्हें प्राप्त किया है; संयम और पवित्रता की ओस से वासनाओं की ज्वाला को बुझा दो; आज्ञाकारिता की तलवार से अपनी इच्छाओं की प्रवृत्तियों को काट दो; और अपने अधिष्ठाता के निर्देशानुसार, प्रभु की आज्ञाओं और अपने हाथों के कार्यों, दोनों को करने में निपुण बनो। – तुम्हारा संपूर्ण भाईचारा, एक आत्मा के रूप में और मानो एक व्यक्ति हो, अपनी सभी गतिविधियाँ—आध्यात्मिक और शारीरिक दोनों—जोश, सद्भावना और एकमत से, मानो प्रभु की उपस्थिति में, करे।

126. सांसारिक चीज़ों को एक ओर रखकर, स्वर्गीय चीज़ों के लिए प्रयासरत रहो, विशेष रूप से क्रोध और वासना के विरुद्ध लड़ते हुए

126. 1) सांसारिक चीज़ों को अलग रखकर, अपने दिलों को स्वर्गीय चीज़ों पर लगाओ, विशेष रूप से क्रोध और वासना के विरुद्ध संघर्ष करते हुए। – 2) अधीनस्थों और वरिष्ठों के लिए निर्देश। [2, 54]

7. (वही) तुम संसार के लिए क्रूस पर चढ़ाए गए हो, और तुम्हारे साथ शान्ति हो: तो फिर, जो कुछ भी सांसारिक है उसे त्याग दो और स्वर्गीय निवास के लिए उठो, और अन्य सभी बातों से मरकर केवल एक परमेश्वर के लिए जियो। जहाँ तुम्हारा विश्वास है, वहीं अपनी आँखें लगाओ; जहाँ तुम मोहित हो, वहीं तुम्हारा हृदय चौकस रहे, जैसा प्रभु ने

कहा: *'क्योंकि जहाँ तुम्हारा खज़ाना है, वहाँ तुम्हारा हृदय भी होगा'* (मत्ती 6:21)। क्या तुम देखते हो कि तुम्हें क्या-क्या आशीषें दी गई हैं, और किस निवास का तुम योग्य ठहराया गया हो? एक दैवीय निवास। स्वर्गदूतों की तरह चलो, संयोग के प्रभाव के आगे न झुको: क्रोध का विरोध नम्रता से करो; वासना का विरोध पवित्रता से करो। आप उस तुच्छ सुख से अभिभूत न हों जो आपको हर दिन और हर घंटे परेशान करता है। इसके विरुद्ध हथियार उस व्यक्ति ने बताया जिसने कहा: *'मैंने धीरज से प्रभु की प्रतीक्षा की; उसने मेरी ओर झुककर मेरी प्रार्थना सुनी'* (भजन संहिता 39:2), और मुझे उस जुनून से मुक्त किया, भले ही काफी समय के बाद।

8. आप जो अधिकार के अधीन हैं, वे आज्ञाकारिता के नियम जानते हैं; और आप जो अधिकार में हैं, वे नेतृत्व के नियम जानते हैं, अर्थात् अपनी स्वेच्छा से सबसे आखिरी बनना—क्योंकि आप सबसे पहले हैं—और इस कार्य को करुणा और प्रेम के साथ करना। एक को उदार, फिर भी दृढ़ होना चाहिए; बोलना चाहिए, फिर भी मौन रहना चाहिए; आध्यात्मिक सांत्वना देने के लिए प्रसन्नता और स्नेह से मुस्कुराना चाहिए, और फिर एक कठोर भाव अपनाना चाहिए, दोनों ओर से अतिशयोक्ति से समझदारी से बचना चाहिए। आपकी आँखें नियमों को बनाए रखने में चौकस हों, और आपके उत्तरों में मैत्रीपूर्ण हों; आपकी नाक क्रोध से न फूले, आपका भौंहें गर्व से न चढ़ें, आपकी जीभ अहंकार में न मुड़े; हर भावना विनम्रता में नियंत्रित हो, और हर अंग संयम में रहे; आपके होंठ भजन-गायन का साधन हों; आपका मन केवल दिव्य चीजों में निवास करे, और आपके हाथ केवल धर्म और प्रेम के कार्य करें। कोई अवज्ञाकारी न बने, कोई पथभ्रष्ट न हो, कोई कठोर हृदय वाला न हो; एकता में एक साथ आओ, बिना घमंड के एक-दूसरे से प्रेम करो, और अपने ईश्वर-रक्षित जीवन के लिए एक-दूसरे की ओर अपना दाहिना हाथ बढ़ाओ।

127. मुझे आनंद है कि आप अपने बिखर जाने के बाद फिर से एकत्रित हुए हैं और जैसा उचित है, वैसे ही व्यवस्थित हो गए हैं

127. 1) मुझे खुशी है कि आप बिखर जाने के बाद फिर से एक साथ इकट्ठा हो गए हैं और जैसा उचित है, वैसे व्यवस्थित हो गए हैं। इसलिए, अपने क्रम में आंतरिक और बाहरी रूप से दोनों ही तरह से वफादार बने रहें। – 2) सोफ्रोनीयस, विकर को निर्देश – विशेष रूप से; और सभी अन्य अधिपतियों और अधीनस्थों को – सामान्य रूप से। [2, 55]

९. (वही) यहाँ आए प्रबंधक ने मुझे सूचित किया कि आप सभी—वरिष्ठ और कनिष्ठ दोनों—एक बार फिर से इकट्ठा हो गए हैं और आपने अपनी सामान्य व्यवस्था बहाल कर दी है: वरिष्ठों ने जैसा कि उन्हें करना चाहिए, शासन करना शुरू कर दिया है और प्रत्येक को उसकी उचित आज्ञाकारिता सौंप रहे हैं, जबकि अधीनस्थों ने इसे नम्रता और विनम्रता से स्वीकार कर लिया है और काम में जुट गए हैं; और यह कि इन सब में आप प्रेम से एकजुट हैं, मसीह में भाईचारे के प्रेम से एक-दूसरे से प्रेम करते हुए, ताकि आप सभी एक शांतिपूर्ण और सुव्यवस्थित जीवन के माध्यम से एक ही आत्मा, एक ही मन और एक ही इच्छा रखते हैं। मेरी विनम्र आत्मा इस पर कितनी प्रसन्न हुई, और उसने प्रभु का कितना धन्यवाद किया, यह शब्दों से परे है। क्योंकि स्वर्ग के नीचे मेरे लिए इससे अधिक प्रसन्नता और सांत्वना देने वाली कोई बात नहीं है कि आप सभी अच्छी तरह से जिएं, ईश्वर की आज्ञाओं का पालन करें और अपने दैवीय संघ के विधानों के प्रति वफादार रहें। चूँकि अब आपके बीच यह सब बहाल हो गया है, मैं निवेदन और प्रार्थना करता हूँ कि आप में से प्रत्येक सदाचारी धैर्य में स्थिर रहे, और दिन-प्रतिदिन इस प्रकार जिए कि सच्ची आज्ञाकारिता के द्वारा आत्मा का उद्धार हो। तुम्हारे बीच न तो कोई कलह हो, न ही स्वार्थ-पसंद, न ही मनमानी, न ही अपनी इच्छा की पूजा; न कोई बड़बड़ाहट, न कोई फुसफुसाहट, न ही झगड़ा; न कोई नपुंसकता, न ही अभद्रता, न ही उपहास; न आलस्य, न ही कायरता, न ही अहंकार; न ही कुछ और जो प्रभु को अप्रिय लगे। क्योंकि इसी लिए हमने संसार और संसार में जो कुछ भी है, उसे त्याग दिया है: माता-पिता, भाई, मित्र, परिचित, गाँव, नगर, बाज़ार, तमाशे और अन्य सभी चीजें जो वासनाओं को भड़काती हैं और सुख-भोग में लिप्त करती हैं—ताकि हम मसीह को प्राप्त कर सकें और स्वर्ग में रहने के समान रह सकें, ताकि हम वासनाओं को जड़ से उखाड़ सकें और सद्गुणों से संपन्न हो सकें, ताकि, इस वर्तमान युग में हमारे पूजनीय पूर्वजों के उदाहरण का अनुसरण करते हुए एक धार्मिक और धर्मी जीवन जीने के बाद, हमें हमें वादा किए गए आशीर्वाद प्राप्त करने के योग्य समझा जाए। चूँकि हमारी पुकार और आशा ऐसी है, इसलिए तुम्हारा आचरण, ढंग और व्यवहार भी ऐसा ही हो; तुम्हारा नाम और तुम्हारा जीवन-मार्ग शुभ कर्मों द्वारा प्रकाशमान हो, जो तुम्हारे अपने दर्जे के लोगों पर और सामान्य जन पर अनुग्रह प्रदान करे, ताकि हमारे पिता का नाम जो स्वर्ग में है, ताकि हम भी, एक नम्र लोगों के रूप में, इसे देखकर या इसके बारे में जानकर आनंदित हों।

10. हे मेरे पुत्र सोफ्रोनीयस! अनेक लोगों में से मैंने तुम्हें भाइयों का नेतृत्व करने के लिए अपना स्थान संभालने के लिए चुना है। ध्यान रखना कि अकुशल न दिखो, जिससे मुझ पर लज्जा और अपमान न आए; बल्कि अपने सद्गुणों

का प्रकाश इतना तेज चमके कि तुम्हारा नाम न केवल भाइयों में, बल्कि उनसे परे भी महिमामय हो। क्योंकि जो कोई भी ईश्वर के पवित्र आज्ञाओं के पालन द्वारा अपने भीतर ईश्वर को धारण करता है, वह स्वर्ग और पृथ्वी दोनों में प्रसिद्ध हो जाता है। भाइयों के प्रति चौकस, दयालु और उपदेशात्मक बनें; उन्हें बुद्धिमानी से सही बातों की याद दिलाएँ; जो अनुचित व्यवहार करते हैं, उन्हें कोमलता से फटकारें; जो पाप करते हैं, उन पर धर्मपरायणता से प्रायश्चित लगाएँ; बीमारों की एक पिता की देखभाल के साथ सेवा करें; अज्ञानों को शिक्षा दें; और सब कुछ भाईचारे की भलाई के लिए करें: क्योंकि इस उद्देश्य के लिए ही मैंने आपको वह अधिकार दिया है जो मैंने स्वयं, अपनी विनम्रता में, ईश्वर से, उनकी दिव्य व्यवस्था के माध्यम से प्राप्त किया है। – और बाकी सभी – चाहे वरिष्ठ हों या उनकी देखरेख में रहने वाले – ईश्वर के भय में, निष्ठापूर्वक अपने कर्तव्य निभाएँ, ताकि ईश्वर सभी पवित्र स्वर्गदूतों के साथ आप में आनंदित हों। परिश्रम से काम करो, नम्रता से चलो, और एक-दूसरे के साथ सादगी से पेश आओ; अपने अंतरतम विचारों और इच्छाओं के प्रकटीकरण को न रोकें: क्योंकि इसमें ही आत्मा का उद्धार और वासनाओं से मुक्ति निहित है; जैसा कि उचित है, भजनों का गायन, वचनों का पाठ, जागरण और पठन का पालन करें – सब कुछ नियम के अनुसार; इसी प्रकार, अपने आध्यात्मिक पितरों के निर्देशानुसार भजनों और ट्रॉपारिया का स्मरण करें। – और अंत में, मेरी दीनता के लिए प्रार्थना करें, कि प्रभु मुझे आगे आने वाली कष्टों को सहने के लिए सांत्वना और शक्ति प्रदान करें।

128. आप अच्छा जीवन जी रहे हैं; और आप में से कोई भी बुरे चरित्र का न हो

128. आप अच्छा जीवन जी रहे हैं; और आप में एक भी व्यक्ति दुष्ट चरित्र का न हो। दाख की बारी के मजदूरों की तरह परिश्रम करें, ताकि आप घर के स्वामी से अपना वेतन प्राप्त कर सकें; सैनिकों की तरह लड़ें, ताकि आप पुरस्कार देने वाले से मुकुट प्राप्त करने के योग्य ठहरें। [2, 56] (उपरोक्त)। तुम सब प्रभु के लिए जीते हो और अपने लिए उद्धार के भरपूर फल इकट्ठा कर रहे हो, और हर तरह की धोखाधड़ी और दुष्टता के हर प्रलोभन से दूर रहते हो। – और तुम में कोई भी दुष्टता से अहंकारी, लापरवाह, सुख-भोगी, पापी, स्वच्छंद, आत्मा में लज्जाजनक, घृणित, एक चोर—यहाँ तक कि तुच्छ चीजों का भी—ईर्ष्यालु, झगड़ालू, क्रोधी, बड़बड़ाने वाला, सुस्त, आलसी, अवज्ञाकारी, अहंकारी, असम्मानजनक, बदनाम करने वाला, झगड़ा खड़ा करने वाला, कलह का प्रेमी, अफवाह फैलाने वाला, सुस्त, शरीर और संसार का दास, एक यहूदा, जो अपनी ही आत्मा के विश्वासघात और किसी भी भाई को भाईचारे से बाहर करने की साजिश रचता है। ऐसे वे हैं जो स्वयं को परमेश्वर से वंचित करते हैं, उससे भागते हैं और पाप के पथभ्रष्ट मार्गों पर भटकते हैं। वे दिन भर की मेहनत सहन नहीं करना चाहते; इसलिए, उन्हें दाख की बारी के रखवाले से कोई इनाम नहीं मिलता। या वे सर्वशक्तिमान परमेश्वर के सिपाहियों के रूप में, युद्ध के कष्टों को सहने के लिए अनिच्छुक होते हैं, ताकि वे बहादुरी से लड़कर प्रभु को प्रसन्न कर सकें; इसलिए उन्हें कोई इनाम नहीं मिलता, बल्कि उन्हें भगोड़ों की सूची में दर्ज कर दिया जाता है, और जब वे पकड़े जाते हैं तो उनके बदले में दंड भुगतना पड़ता है। – इसलिए, हे अच्छे सिपाहियों, हथियारबंद साथियों, सह-प्रयत्नशील साथियों, सह-यात्रियों! आओ हम दौड़ें, आओ हम आगे बढ़ें, आओ हम परिश्रम करें और सब कुछ सहन करें। प्रभु हमारे सिर पर मुकुट सजाने के लिए निकट हैं। वे स्वयं स्वर्ग से प्रत्येक धावक पर दृष्टि रखते हैं और जो अंत तक टिकते हैं, उनके लिए मुकुट बुनते हैं। इसलिए, हर कोई स्वीकारोक्ति के द्वारा शुद्ध, विनम्रता से शांत, और कार्य के प्रति प्रेम से उत्साही हो। हे नेता, एक नेता के रूप में, प्रत्येक सदस्य की आवश्यकता देखें, और यह निर्धारित करने के बाद कि प्रत्येक को क्या करना है, सब कुछ और सभी को गति में लाएं।

129. वह सभी को जेल से छुड़ाए जाने के लिए परमेश्वर का धन्यवाद करने के लिए आमंत्रित करते हैं

129. 1) वह सभी को जेल से मुक्त होने के लिए ईश्वर का धन्यवाद करने के लिए आमंत्रित करता है। – 2) वह कहता है, हमारी परीक्षा ने सच्चे भाइयों को झूठे भाइयों से अलग कर दिया है। – 3) वह बाद वालों पर दया करता है और उनके सुधार की आशा में उनके लिए प्रार्थना करता है; जबकि वह पहले वालों को दृढ़ रहने के लिए प्रोत्साहित करता है, जो उन्होंने हासिल किया है उसके लिए परमेश्वर का धन्यवाद करते हुए और जो कुछ अधूरा है उसमें सफल होने का प्रयास करते हुए। [2, 57]

11. (उपरोक्त) हमारे सर्व-दयालु ईश्वर, जो दया दिखाने में शीघ्र और अनुग्रह में समृद्ध हैं, हमारी माता, ईश्वर की माता, और हमारे संरक्षकों, संत जॉन बपतिस्मादाता और संत जॉन द थियोलोजियन, के साथ-साथ आपकी प्रार्थनाओं के मध्यस्थता से प्रेरित होकर, इस परीक्षा को दूर कर दिया है और हमें हमारी कैद से मुक्त कर दिया है। इसलिए हम सभी मिलकर अनुग्रह के दाता, परमेश्वर के लिए धन्यवाद का गीत गाएँ, जिन्होंने दुख को आनंद में बदल दिया है और हमारे विरुद्ध निर्देशित दुष्ट की युक्तियों को विफल कर दिया है। हालाँकि, मैंने जो भी पीड़ा सहन

की है, वह मैंने अपने पापों के कारण ही सहन की है, और किसी अन्य कारण से नहीं: इस विचार से मुझे सांत्वना मिलती है, यह विश्वास करते हुए कि मैंने जो कुछ भी सहा है, वह मेरे पापों के शुद्धिकरण का काम करेगा।

12. हमारी परीक्षा में, हम सभी पहले ही एक कड़ाही में सोने की तरह परखे जा चुके हैं, और विशेष रूप से यहाँ मौजूद लोग। क्योंकि जो लोग पहले पवित्र आत्मा में और अटूट विश्वास के साथ रहते थे, वे जरा भी बदले बिना, वैसे ही बने रहे हैं; इसके विपरीत, उन पर आई विपत्ति से वे और भी अधिक दृढ़ और स्थापित हुए हैं। लेकिन जो ठंडे दिल, दो मन वाले, देह-प्रेमी और लापरवाह रहे—जैसे ही बुराई का प्रहार उन पर पड़ा, वे पत्तों की तरह झड़ गए, और, छलनी से निकले भूसे की तरह, वे अपनी मर्जी से मठ से कूद गए, ताकि यह प्रकट हो सके कि शुद्ध गेहूँ जैसे कौन थे। इसे समझते हुए, दिव्य दाऊद *ने* भजन में कहा: *'उन्हें गर्भ में ही विभाजित कर'* (भजन संहिता 16:14), अर्थात् पापियों और लापरवाहों को सदाचारी और धर्मात्माओं से। लेकिन—हाय, क्या पतन!—अपनी ही लापरवाही के कारण*, 'उनकी हड्डियाँ* विनाश के *कब्र में बिखिर गई हैं'* (भजन संहिता 140:7)।

१३. तथापि, मैं उनके लिए शोक करता हूँ और रोता हूँ, और जब तक मुझ में प्राण है, मैं उनके लौटने के लिए पुकारना नहीं छोड़ूँगा। शायद उनमें से कुछ, ईश्वर के ज्ञान की एक छोटी सी चिंगारी से प्रज्वलित होकर और पश्चाताप की ओर मुड़कर, पाप के बंधनों से मुक्त हो जाएँगे, और, भटक गई भेड़ों की तरह, दुष्टों के मार्ग से लौट आएँगे। जहाँ तक आपकी बात है, उनके पतन से निराश न हों, बल्कि धार्मिकता के संघर्ष में, तपस्या में, शारीरिक परिश्रम में, आध्यात्मिक युद्धों की कठिनाइयों में, और हम पर आने वाली दैनिक कष्टों और प्रलोभनों का साहसपूर्वक सामना करने में और भी अधिक धैर्य से खड़े रहें—यहाँ तक कि रक्तपात और मृत्यु तक: क्योंकि जैसा कि आप जानते हैं, हमने पवित्र स्कीमा ग्रहण करते समय यही प्रतिज्ञा की थी। अब प्रत्येक व्यक्ति स्वयं की परीक्षा करे और विचार करे कि उसने जो प्रतिज्ञाएँ की थीं, उनमें से कौन-सी पूरी हुई हैं और कौन-सी अभी तक पूरी नहीं हुई हैं। और जो पूरी हो चुकी हैं, उनके लिए वह उसी का धन्यवाद करे जिसने उन्हें यह सब पूरा करने की शक्ति दी; जहाँ तक दूसरे का सवाल है, उन्हें जो कमी है उसे पूरा करने के लिए अपने प्रयासों को उसी के अनुसार निर्देशित करना चाहिए: ताकि इस प्रकार आप शहादत के मुकुट से योग्य रूप से सुसज्जित हो सकें; क्योंकि प्रभु कहते हैं: *'हर कोई जो मुझसे कहता है, "प्रभु, प्रभु," वह स्वर्ग के राज्य में प्रवेश नहीं करेगा, परन्तु केवल वही जो स्वर्ग में मेरे पिता की इच्छा करता है'* (मत्ती 7:21; लूका 6:46)।

130. अतःहमने परमेश्वर को प्रसन्न करने के लिए सब कुछ त्याग दिया है

130. 1) अतःहमने परमेश्वर को प्रसन्न करने के लिए सब कुछ त्याग दिया है। हम संतजनों का अनुकरण करते हुए और राजसी मार्ग का अनुसरण करते हुए ऐसा करना जारी रखेंगे, जिस पर सभी सद्गुणों की प्रचुरता होती है जबकि सभी वासनाएँ दूर हो जाती हैं। – 2) यदि आप ऐसे हैं, तो परमेश्वर आपके भीतर है, और उनके साथ हर आशीर्वाद, हर सहायता और हर सुरक्षा है। [2, 58]

1. (उपरोक्त) प्रभु में नमस्कार; प्रभु की आज्ञाओं को पूरा करते हुए और उनकी धार्मिकता में चलते हुए, अपने अच्छे जीवन को सामान्य तरीके से जारी रखें, और अपने मन में कुछ और न रखें और कुछ और चाहें भी नहीं, सिवाय इसके कि संवेदनाओं को वश में करके और सद्गुणों का पालन करके परमेश्वर को प्रसन्न करें। इसी कारण से हमने संसार को त्याग दिया है और मठ में प्रवेश किया है, पीछे छोड़ आए हैं सारी सांसारिक व्यर्थता, हर आसक्ति, हर मित्रता और प्रेम—माता-पिता का, भाई-बहन का, संतान का, रिश्तेदारी का—साथ ही हर शारीरिक सुख, सांसारिक महिमा और वह सब कुछ जो क्षणभंगुर और व्यर्थ है। चूँकि हमने इस प्रकार संकल्प लिया है और इस प्रकार जीने की इच्छा की है, इसलिए हमें इस उद्देश्य और इस इच्छा के अनुसार कार्य करना चाहिए, संतों के जीवन के पदचिन्हों पर चलते हुए, उनके निर्देशों पर ध्यान देते हुए और उनके उदाहरणों के अनुरूप होते हुए, इधर-उधर नहीं देखते हुए, बल्कि राजसी पथ पर चलते हुए, जो निःसंदेह आज्ञाकारिता से विशिष्ता रखता है, ईश्वर-अनुकरण करने वाली विनम्रता, दिव्य निष्पक्षता, दैवीय पवित्रता, दैवीय निर्लिप्तता, नम्रता, धार्मिकता, प्रेम, शांति, उत्साह, धैर्य, परिश्रम और हर अन्य ईश्वर-प्रसन्न करने वाला स्वभाव और कर्म; जबकि अवज्ञा, बड़बड़ाहट, अहंकार, दंभ, आलस्य, अभद्रता, पक्षपात, वासना और अन्य दुष्ट कर्म उन सद्गुणों के विपरीत हैं।

२. सद्गुण ईश्वर से उत्पन्न होते हैं, जबकि वासनाएँ और पाप शैतान से उत्पन्न होते हैं: और प्रकाश और अंधकार के बीच कोई संगति नहीं है, न ही मसीह और बलिआल के बीच कोई सामंजस्य है। तो, परमेश्वर की संतान बनो, नम्रता और आज्ञाकारिता की संतान, न कि क्रोध, विद्रोह और विनाश की संतान। – कोई भी अपनी इच्छाओं और विचारों में दूसरों से अलग न रहे; कोई भी आलस्य से प्रेम न करे; कोई भी बड़बड़ाए न; कोई भी पाखंडी न बने; परन्तु आप सब भलाई करने में शीघ्र, कृतज्ञ, दयालु-हृदय, नम्र, मिलनसार, आनन्दित, मैत्रीपूर्ण, ईर्ष्या से रहित

और प्रतद्विंद्वता से रहति हो; ताकि यहोवा तुम्हारे बीच में होने के लिए जाना जाए: क्योंकि यदि दो या तीन उसके नाम में इकट्ठे हों (मत्ती 18:23); वह आप सब के बीच कैसे नहीं हो सकता, जो इतने सारे हैं, यदि आप कभी भी उसकी आज्ञाओं को रखने के लिए उत्सुक रहते हैं? परन्तु यदि परमेश्वर आप में है, तो आपको क्या दुःखित कर सकता है, या दबा सकता है, या निराश कर सकता है? कुछ भी नहीं; परन्तु सब कुछ सहनीय होगा, भले ही कठिन हो, चाहे वह आत्मा का हो या शरीर का: क्योंकि *'यदि परमेश्वर हमारे पक्ष में है, तो हमारा विरोध कौन कर सकता है?'* (रोमियों 8:31)? – और यदि उसने *'अपने ही पुत्र को भी हम सब के लिए न बख्शा, बल्कि उसे हम सब के लिए सौंप दिया: तो क्या वह हमारे साथ सब कुछ उदारता से न देगा?'* (रोमियों 8:32)? अत; इस निश्चय में अडिग और अटल रहो कि यदि तुम अपना अच्छा जीवन बिना बदले बनाए रखोगे, तो तुम निस्संदेह स्वर्ग के राज्य के वारिस बनोगे। – हे मेरे बच्चों, मैं तुमसे विनम्रतापूर्वक निवेदन और विनती करता हूँ: अपने भीतर दिव्य प्रेम की अग्नि प्रज्वलित करो; उत्साह से भर जाओ; साहस से स्वयं को मजबूत करो; पवित्रता और निर्दोषता में स्वयं को स्थापित करो; प्रार्थनाओं, विनतियों, भजन-गायन, जागरण, पश्चाताप, पाप-स्वीकार, आँसुओं और आहों से स्वयं को प्रकाशित करो।

131. मठ के रास्ते में, अपने लिए प्रार्थना करें, और उनसे अपने श्रम में ईश्वर की सहायता के लिए प्रार्थना करने को कहें: क्योंकि फसल

131. 1) मठ के रास्ते में, अपने लिए प्रार्थना करें, और उनके श्रम में उनके लिए ईश्वर की सहायता माँगें: फसल के लिए। – 2) वह अथानासियस और एफ्रेम को भाइयों का अच्छी तरह से शासन करने के लिए याद दिलाते हैं, प्रत्येक के चरित्र और कमजोरियों को ध्यान में रखते हुए। 3) वह सभी को अपने लक्ष्य का निष्ठापूर्वक अनुसरण करने के लिए प्रेरित करता है। – 4) आइए हम अपने पूर्वजों की आज्ञाओं का पालन करें, और न्याय तथा मृत्यु के भय से स्वयं को ऐसा करने के लिए प्रेरित करें: यहाँ वह बताता है कि कैसे एक निश्चित लोगोथेते की मृत्यु हो गई, और इस वृत्तांत से शिक्षाप्रद सबक निकालता है। [2, 59]

३. (इसी प्रकार)। जैसे ही हम मठ की ओर तेज़ी से बढ़ रहे हैं, हम सबसे पहले आपके लिए प्रार्थना करते हैं, कि प्रभु हमें ज़मीन और समुद्र दोनों में एक सुरक्षित यात्रा प्रदान करें, और कि वह हमें आत्मा और शरीर दोनों में स्वयं को उसकी दृष्टि में प्रसन्न करने में मदद करें; दूसरे, हम आपको याद दिलाते हैं कि हम आपके प्रति लापरवाह या आपकी परिस्थितियों के प्रति उदासीन नहीं रहे हैं, बल्कि हमने हमेशा आपके लिए शुभकामनाओं के साथ आपको अपने विनम्र हृदय में बसाए रखा है, विशेष रूप से अब, जब फसल कटने के समय, आप बड़ी कठिनाइयों और परिश्रमों का सामना कर रहे हैं। प्रभु परमेश्वर आपको भीतर और बाहर से बलवान बनाए, और आपको बाहरी तथा आंतरिक कठिनाइयों को धैर्यपूर्वक सहन करने की शक्ति दे। इसके अलावा, शैतान की चालाकियों, उसके फंदों और प्रलोभनों को कौन समझ सकता है?

४. ध्यान से सुनो, मेरे बच्चों, अथानासियस और एफ्राइम, और परमेश्वर को भाने वाले तरीके से भ्रातृत्व का संचालन करो, प्रत्येक को उसकी आवश्यकता के अनुसार प्रदान करो - आध्यात्मिक और शारीरिक दोनों रूप से; और उनके साथ अपने व्यवहार में, प्रत्येक के चरित्र और स्वभाव के अनुसार ढलो: क्योंकि सभी को एक जैसी चीज़ की आवश्यकता नहीं होती: एक को कोड़ा चाहिए, दूसरे को लगाम, एक को प्रायश्चित, दूसरे को क्षमा, तीसरे को फटकार और चेतावनी; प्रत्येक की अपनी प्रवृत्ति, अपनी आदतें हैं: उपचार के तरीके उन्हें अनुकूलित किए जाने चाहिए।

५. फिर भी, हे मेरे भाइयो और बहनो, तुम परमेश्वर की संतान हो। उसके लिए आपने संसार को छोड़कर यहाँ आये हैं; उसके लिए आपने मांस और रक्त के सभी संबंध तोड़ दिए हैं; उसके लिए आपने अपना क्रूस अपने कंधों पर उठा लिया है; उसके प्रति प्रेम के कारण आपने सभी चीजों को बकवास समझा है, और आने वाले युग में उसने जो आशीर्वाद का वादा किया है, उसके सामने इस संसार की किसी भी चीज़ को प्राथमिकता नहीं दी है। यात्रियों और परदेशियों के रूप में, आप इस मठ में आए हैं और मठवासी जीवन शैली को अपनाया है। धन्य है आपका चुनाव, और पवित्र है आपका निर्णय। पर, हे भाइयों, मैं तुमसे विनती और प्रार्थना करता हूँ कि इस महान बुलावे के योग्य जीवन जियो, ताकि, यद्यपि तुम संसार के बाहर हो, परन्तु संसार के अनुसार आचरण न करो; और ताकि, देह से भागकर, तुम देह के अनुसार न जियो, जैसा कि वास्तव में होता है—और तुम यह जानते हो, भले ही मैं यह न कहूँ। क्योंकि यदि हम कामुक सुखों में लिप्त हो जाएँ, यदि हम वासना से प्रेरित हों, यदि हम अपनी इच्छाओं पर जोर दें, यदि हम श्रेष्ठता की चाह करें, यदि हम चोगा और अन्य वस्त्रों, खड़े होने की जगह, कलम और अन्य तुच्छ मामलों पर झगड़ें – तो क्या हम तब शारीरिक नहीं हैं? क्या हमारा संघर्ष सांसारिक नहीं है? भाइयों, किसी भी परिस्थिति में हमें अपनी सबसे पवित्र पुकार को हास्यास्पद, बचकाने झगड़ों तक सीमित नहीं होने देना चाहिए। एक संन्यासी का गौरव यह है कि वह ईश्वर

के लिए अपमानित, निंदा और बदनाम किया जाए, जबकि ऐसा कुछ भी न करे जो निंदा या अपमान के योग्य हो। एक संन्यासी का श्रृंगार सबसे भद्दे वस्त्रों को पहनना है। मैं इस विषय पर और कुछ नहीं कहूँगा।

६. संतों के आज्ञाओं का पालन करो; संतों के वचनों को नज़रअंदाज़ न करो; और क्षणिक सुख के लिए, शाश्वत आनंद का तिरस्कार न करो। वह जो सभी का न्याय करने वाला है, आएगा—अंततः वह आएगा, और वह विलंब नहीं करेगा; और शायद, उनके आने से पहले ही, वह भयानक दूत जो आत्मा को शरीर से अलग करेगा, आ जाएगा – वह समय थकान और अंतिम सांस का आ जाएगा। यह भी इतना भयानक और भारी होता है कि इसे सहन न कर पाकर हम मर जाते हैं। तो फिर, आत्मा के चले जाने के बाद क्या होगा, जब देवदूत उसे लेने आएंगे? कौन सा लोक हावी होगा और हमें ले जाएगा? – इसका उत्तर देने के लिए, मैं आपको एक छोटी सी घटना सुनाऊंगा जो, यद्यपि इसमें हमारे दर्जे का कोई व्यक्ति शामिल नहीं था, फिर भी बहुत शिक्षाप्रद है। कहा जाता है कि जब उस प्रसिद्ध लोगोथेते स्टैव्रकियोस की मृत्यु का समय आया, तो जैसे ही वह पसीना बहाते, कांपते और दांत पीसते हुए अपनी अंतिम सांसें ले रहे थे, वह ऊँचे स्वर में चिल्लाए: 'हे प्रभु, मेरी मदद करो, मुझे बचाओ, दया करो! समुद्र से काले और भयानक राक्षसों का कितना बड़ा झुंड निकल रहा है और मेरी ओर आ रहा है।' – वह समुद्र तट पर रहता था। – यद्यपि वहाँ मौजूद किसी ने कुछ भी नहीं देखा, उस लोगोथेते ने – जो कई लोगों के प्रति निर्दयी रहा था – इसे देखा और कड़ुवाहट से विलाप किया। – और इस प्रकार, हमारी मृत्यु के समय, कौन विजयी होगा, स्वर्गदूतों का दल या दानवों का? जिन्हें हमने यहाँ प्रेम किया था, वे हमें तुरंत गले लगा लेंगे। यदि हमने पवित्रता, आज्ञाकारिता, नम्रता और अन्य सद्गुणों से प्रेम किया है, तो स्वर्गदूत; लेकिन यदि हमने व्यर्थता, अवज्ञा, कलह, विलासिता, हँसी और तमाशों से प्रेम किया है, तो राक्षस। क्योंकि वासनाएँ राक्षस हैं, ठीक वैसे ही जैसे सद्गुण स्वर्गदूत हैं। तो फिर, कौन विजयी होगा? मेरी आत्मा को कौन ले जाएगा? – मुझ पर दया करो, मुझ पर दया करो, हे मेरे भाइयो! – परन्तु आइए हम सब मिलकर सद्गुणों से प्रेम करें, ताकि स्वर्गदूत विजयी हों और हमें ले जाएँ; और वासनाएँ नहीं, कहीं ऐसा न हो कि दुष्टात्माएँ विजयी हों और हमें ले जाएँ। और हाय! तब तो हमारा कभी जन्म ही न लेना बेहतर होता। क्योंकि '*मजबूतों की भीषण परीक्षा होगी*' (सिरिह 6:6), और विशेष रूप से हम में से वे जो स्कीमा (धर्मोपवेश) पहनते हैं, पुरोहित, मठाधीश और हमारे अन्य नेता। इन शब्दों के लिए मुझे दोष न दें: क्योंकि मैं उन्हें आप लोगों को अन्यायपूर्वक डराने के लिए नहीं कह रहा हूँ; बल्कि, अपना कर्तव्य पूरा करते हुए, आप लोगों से प्रेम करते हुए और आपकी भलाई की कामना करते हुए, मैं जो सही है उसकी घोषणा करता हूँ।

१३२. वे सोफ्रोनीयस को आग्रह करते हैं कि वे यह सुनिश्चित करें कि पितिरों द्वारा निर्धारित नियमों का पालन किया जाए: क्योंकि इससे हर अच्छाई आती है, और इसके विपरीत, हर बुराई आती है

132. 1) वह सोफ्रोनीयस को पैट्रिस्टिक (पिता-परंपरागत) विधानों के पालन को सुनिश्चित करने के लिए प्रोत्साहित करते हैं: क्योंकि इससे सभी अच्छाइयाँ आती हैं, और इसके विपरीत से, सभी बुराइयाँ। – 2) मानसिक और शारीरिक श्रम के माप में संतुलन बनाए रखना। – 3) किसी भी दुराचार को दंड दिए बिना न छोड़ें। – 4) ऐसी कठोरता क्रोध का नहीं, बल्कि प्रेम का कार्य है। [2, 60]

7. (वही) हे मेरे पुत्र और भ्राता, सोफ्रोनीउस! अपनी सेवा को लापरवाही से नहीं, बल्कि पूरी लगन और प्रयास के साथ संभालो। – मुझे हमेशा इसी विषय पर तुम्हें लिखना आवश्यक लगता है, ताकि तुम्हारे उत्साह को जगाया जा सके। – इसलिए, ध्यान से सुनो, और अपने भाइयों का हर बात में मार्गदर्शन करो, आबा अक्काकियोस को अपना सहायक और सलाहकार बनाकर, मेरे बेटे। प्रत्येक व्यक्ति के आचरण पर ध्यान दो और उसकी देखभाल करो—वे कैसे व्यवहार करते हैं, कैसे काम करते हैं, कैसे जीते हैं—ताकि तुममें से सब कुछ परमेश्वर की महिमा के लिए हो, और तुम्हारा जीवन हमारे पवित्र पूर्वजों की सीमाओं और विधानों के भीतर, और मेरी विनम्रता की आज्ञाओं के अनुसार स्थापित हो। क्योंकि जहाँ लोग इस प्रकार जीते और काम करते हैं, वहाँ परमेश्वर प्रसन्न होता है; वहाँ प्रकाश चमकता है; वहाँ शांति का राज होता है; वहाँ शैतान के लिए कोई जगह नहीं है; और वासनाएँ दूर रहती हैं। लेकिन जहाँ वे इसकी परवाह नहीं करते और इस भावना से कार्य नहीं करते, वहाँ इसके विपरीत सब कुछ जड़ जमा लेता है – अच्छाई के स्थान पर बुराई, प्रकाश के स्थान पर अंधकार, मसीह के स्थान पर बेलियिल। इसलिए, चौकस और सचेत रहो, बंधुओं के हृदयों की जाँच-पड़ताल करो और उन्हें हर अच्छे काम की ओर मार्गदर्शन करो।

८. मध्यम मार्ग पर चलें: जैसे आपको मौन, प्रार्थना और पठन को अपने सांसारिक जीवन के मामलों में बाधा डालने की अनुमति नहीं देनी चाहिए, वैसे ही आपको इस बाद वाले क्षेत्र में अत्यधिक परिश्रम को ईश्वर की स्मृति और दिव्य बातों के चिंतन से मन को भटकाने और उसे भौतिक दुनिया में डुबाने की अनुमति नहीं देनी चाहिए। सच्ची भक्ति का यही नियम है। और यदि आप स्वयं इस प्रकार जिएँ, तो भाई भी, आपके उदाहरण का अनुसरण करते हुए,

वैसे ही इसे अपनाएँगे और इसका अभ्यास करना शुरू कर देंगे। क्योंकि हम यहाँ शांति से खाने, पीने और वस्त्र धारण करने के लिए संसार को नहीं छोड़ आए थे;—या क्या हमारा उद्धार इसी में है?—न ही हमने यह संन्यासी वेश धारण किया था कि बिना भोजन और वस्त्र के, निष्क्रिय और निष्प्रभावी बैठे रहें। परन्तु ताकि हम दोनों को, प्रत्येक को उसके समय पर, बुद्धिमानी से, प्रेरित के वचन के अनुसार कर सकें: *'सब कुछ सभ्यता और क्रम से हो'* (1 कुरिन्थियों 14:40)। इसके अलावा, यह महान प्रेरित अपने बारे में कहते हैं कि उन्होंने कभी आलस्य में अपनी रोटी नहीं खाई, बल्कि उनके पवित्र हाथों की मेहनत से जो कमाया गया था, वह उनकी और उनके साथ रहने वालों की आवश्यकताओं के लिए पर्याप्त था (2 थिस्स. 3:8; प्रेरितों के काम 20:34)। इन बातों को करो और उन पर स्थिर रहो। *'कोई भी तुम्हारी जवानी को तुच्छ न जाने'* (1 तीमु. 4:12)।

९. जिस सुधार की आवश्यकता है, उसे नज़रअंदाज़ न करें, कहीं ऐसा न हो कि ऐसी प्रतीत होने वाली दयालुता के कारण, कोई छोटी सी चूक, अगर अनियंत्रित रह जाए, तो भाइयों को बड़ी अवज्ञाओं में ले जाए। क्या कोई गुप्त रूप से खा रहा है? उसे प्रायश्चित करना होगा। क्या उसके पास बिना आशीर्वाद के कोई चीज़ निजी तौर पर है, भले ही वह सबसे तुच्छ चीज़ ही क्यों न हो? उसे प्रायश्चित में डाल दिया जाए। क्या वह बिना अनुमति के किसी दूसरे को भोजन देता है, किसी से कोई वस्तु बदलता है, या ऐसा ही कुछ करता है? उसे प्रायश्चित में डाल दिया जाए। क्या वह बड़बड़ाता है? इसी प्रकार। क्या उसने अवज्ञा की है? उसे प्रायश्चित में डाल दिया जाए। क्या वह काम करने से इनकार करता है? *'उसे नम्रता से खाने दो'* (2 कुरिन्थियों 3:10)। क्या वह गबन करता है या चोरी करता है? उसे बहिष्कृत कर दो। और इसी तरह… जैसा कि प्रायश्चित के संबंध में हमारी प्रथा है।

10. हे मेरे बच्चों और भाइयो, यह सुनकर, मेरी बातों को कठोर न समझो, और न यह सोचो कि यह सब निर्दयता से स्थापित किया गया है। इसके विपरीत, यह एक पिता के प्रेम से किया जाता है, क्योंकि मैं आपकी आत्माओं के लिए गहराई से चिंतित हूँ, जिनके लिए हमें हिसाब देना होगा; और यदि हम आपको सही बात सिखाते नहीं हैं, आपको बुराई से दूर नहीं करते हैं, और आपको अच्छाई में मजबूत नहीं करते हैं, तो हमारे सिर पर एक भारी न्याय पड़ेगा। इसके अलावा, एक अच्छे पिता का यह कर्तव्य है कि वह अपने बच्चों को दंड दिए बिना न छोड़े, बल्कि कोमल चेतावनियों और छोटी-छोटी सज़ाओं के माध्यम से उनके लिए अनंत जीवन प्राप्त करने का मार्ग प्रशस्त करे। एली, जो अपने बेटों द्वारा कानून तोड़ने पर उन्हें डांटने और सज़ा देने में विफल रहने के कारण निंदा और फटकार के योग्य पिता थे, केवल इसी कारण से उन्हीं बेटों के साथ अपना जीवन खो बैठे।

133. हमारे श्रम महान नहीं हैं, लेकिन पुरस्कार असीम हैं

133. हमारे श्रम महान नहीं हैं, लेकिन हमारा पुरस्कार असीम है। अतःहमें उत्साही बनें, और मृत्यु की स्मृति तथा उसके साथ आने वाली सभी बातों से स्वयं को प्रेरित करें। [2, 61] (उपरोक्त)। धन्य हैं हम, मेरे बच्चों, क्योंकि अच्छा कर्म करके और अच्छा जीवन जीकर, हम मठवास के जीवन में अपने छोटे और तुच्छ दुखों के माध्यम से स्वर्ग के राज्य के सांत्वनादायक सुखों को सुनिश्चित करते हैं; क्योंकि, जैसा कि धर्मपिता कहते हैं, सभी मठवासी श्रम हल्का है, और अनंत धन्य आनंद की तुलना में इसका उल्लेख करना भी उचित नहीं है। यदि आप अब इस परिश्रम को धैर्य से सहन करते हैं, तो आनंदित हों, क्योंकि स्वर्ग में आपका प्रतिफल महान है। लेकिन हमें सतर्क रहना चाहिए और इस पर लगातार मनन करना चाहिए कि हम कहाँ हैं और हमें कहाँ जाना है, और इस संसार से हमारा प्रस्थान, स्वर्गदूतों से भेंट, परमेश्वर के सामने हमारी उपस्थिति, न्यायाधीश का न्याय, और परिणामस्वरूप हमें दाहिनी या बाईं ओर भेजा जाना कैसा होगा। यही वह है जिस पर आपको सुबह ध्यान लगाना चाहिए, यही वह है जिस पर आपको मनन करना चाहिए, यही वह है जिससे आपको अपने आप को व्यस्त रखना चाहिए। मैं परमेश्वर और उनके चुने हुए स्वर्गदूतों के सामने तुम्हारी गवाही देता हूँ, कि तुम अपनी बुलावा के योग्य चाल चलते हुए, न तो बाईं ओर भटक जाओ, न पाप में बहक जाओ, और न ही अहंकार के फंदे में फँसो। मैं इसी के लिए पुकारता हूँ, और मैं पुकारना बंद नहीं करूँगा। तो अपने कान खोलो; तुम्हारे हृदय को उत्तेजित हो, और जो मैं कहता हूँ उसे समझो; स्वयं को निर्दोष रखो, ताकि परमेश्वर की दाख की बारी के मजदूरों के रूप में, तुम एक महान और असीम पुरस्कार प्राप्त कर सको।

134. हर बात में निर्दोष रहो, ताकि तुम उनके लिए एक अच्छा खमीर बन सको जो तुम्हारे बाद मठ में प्रवेश करेंगे; परमेश्वर को अपनी आँखों के सामने रखो, साथ ही मृत्यु और परमेश्वर के न्याय को भी: चाहे तुम प्रस्थान करो या आओ

134. सभी बातों में आदर्श बनो, ताकि तुम उनके लिए एक अच्छा खमीर बन सको जो तुम्हारे बाद मठ में प्रवेश करेंगे; परमेश्वर को अपनी आँखों के सामने रखो, साथ ही मृत्यु और परमेश्वर के न्याय को भी: चाहे तुम प्रस्थान करो

या आगमन करो। इसके सामने, बाकी सब कुछ कुछ भी नहीं है। [2, 64] (उपरोक्त)। मेरे उपदेशों का पालन करने में सख्त रहो, जो तुमने मठ-जीवन में प्रवेश करते समय मुझसे प्राप्त किए थे, इस शपथ के साथ कि तुम उन्हें जीवन भर पालन करोगे, और मठाध्यक्ष के मार्गदर्शन में स्वयं को सुधारने का हर संभव प्रयास करो, ताकि स्वयं को सुधारने के बाद, तुम उन भाइयों के लिए एक अच्छा खमीर बन सको जो तुमसे जुड़ने वाले हैं, अपने आप और अपने जीवन-यापन के तरीके से उनमें खमीर मिलाकर, प्रेम की अग्नि से उन्हें पकाकर, और उन्हें स्वर्गीय भोज के लिए परमेश्वर को भाने वाली रोटी के रूप में प्रस्तुत करें। शारीरिक विश्राम या अपनी इच्छाओं की पूर्ति पर समय बर्बाद न करें, बल्कि स्वर्गीय सांत्वना और मन की शांति की तलाश करें, जिसके बाद मध्यम शारीरिक आराम का आनंद लेना उचित है: क्योंकि जब ऐसे आराम से पहले आध्यात्मिक सांत्वना होती है, तो वह निर्दोष होता है। भक्ति और धार्मिकता में चलो, एक दूसरे के साथ शांति से जियो, हमेशा परमेश्वर को अपनी आँखों के सामने रखो, निरंतर मृत्यु को याद करो, देह के वस्त्र को उतारना, इस संसार से प्रस्थान, परमेश्वर के सामने खड़ा होना, और उनके अंतिम न्याय को सुनना जो तुम्हारे सामने है, जो निश्चित रूप से दो में से एक होगा: या तो: *'मेरे पास से चले जाओ, हे श्रापित, उस अनंत आग में जो शैतान और उसके स्वर्गदूतों के लिए तैयार की गई है'*; या: *'आओ, हे मेरे पिता के धन्यजन, संसार की नींव पड़ने से पहले तुम्हारे लिए तैयार किए गए राज्य का वारिस बनो'* (मत्ती, अध्याय 25)। इसके मुकाबले, संसार कुछ भी नहीं है; सांसारिक वस्तुएँ कुछ भी नहीं हैं; मानवीय महिमा, सुंदर वस्त्र, इत्रों की खुशबू, दावतें, धूमधाम, सुख और इस तरह की सभी चीजें कुछ भी नहीं हैं। – परन्तु तुम, परमेश्वर और दिव्य बातों से परिपूर्ण हो जाओ; पवित्र आत्मा की कृपा से मत्त हो जाओ; धर्मशास्त्र के वचनों में आनंदित हो, जो शहद और छत्ते के शहद से भी मीठे हैं; स्वयं को पवित्रता से सुसज्जित करो, धर्म और आत्म-नियंत्रण से परिपूर्ण हो जाओ; शुभ कर्मों में धनी बनो; अपनी विनम्रता के लिए प्रसिद्ध हो जाओ; निर्लिप्तता के माध्यम से स्वर्ग में आरोहण करो; स्वर्गदूतों के साथ परमेश्वर की महिमा करो; परमेश्वर के भय और अपनी पवित्र प्रार्थना से शत्रु को परास्त करो। और अधिक प्रकाशित होइए, और अधिक पवित्र होइए, और अधिक स्वर्गीय बन जाइए, ताकि आपके विषय में यह कहा जा सके, मानो प्रभु के अपने वचनों से: *'तुम इस संसार के नहीं हो'* (यूहन्ना 15:19)।

135. प्रयासरत रहें, न्याय के दिन और अंतिम न्याय को ध्यान में रखते हुए: इस संदर्भ में, सदाचारी कर्मों की रूपरेखा दी गई है, और विशेष रूप से यह बताया गया है कि सांसारिक वासना से लड़ने के लिए क्या आवश्यक है

135. प्रस्थान और न्याय को ध्यान में रखते हुए प्रयास करें: इस संदर्भ में, सदाचारी कर्म बताए गए हैं, और विशेष रूप से, कामुक वासना से लड़ने के लिए क्या आवश्यक है। [2, 65] (उपरोक्त)। प्रयास करो, मेरे बच्चों, और आध्यात्मिक मार्ग पर चलो, अपने मन की आँखों को ऊँचा उठाकर, स्वर्गीय को निहारते हुए, शाश्वत की ओर देखते हुए और यह जानने का प्रयास करते हुए कि कब और कैसे – सर्दियों में या फसल काटने के समय, दिन में या रात में, अब या वृद्धावस्था में, इस साल या अगले साल, इस दिन या इस घड़ी, – मेरी अंतिम साँस आएगी: क्योंकि मृत्यु निश्चित रूप से आएगी; आत्मा का न्याय करने वाले आएँगे, विरोधी – शत्रु – आएगा; और सभी चीजों की विजय या हार निर्धारित हो जाएगी। ऐसे विचारों से स्वयं को प्रेरित करके, आप पाप करने में जल्दबाज़ी नहीं करेंगे, न ही आप बुराई की खाई में गिरेंगे, बल्कि आप अंततः स्वर्गीय यरूशलेम के आशीर्वादों को देखेंगे और अपने अनंत जीवन के सभी दिनों में उन पर निहारेंगे (भजन संहिता 127:6)। अपने शारीरिक कर्तव्यों का भी पालन करो; इन दोनों का ध्यान रखो; अपने होठों से परमेश्वर की स्तुति करो; अपनी जीभ से सत्य बोलो; अपनी सामर्थ्य के अनुसार अपने हाथों से काम करो; और अपने पैरों से शांति के मार्ग पर चलो। तुम्हारा सारा शरीर पवित्र है, और तुम्हारे सब अंग मसीह के अंग हैं। प्रेरित कहते हैं, *'तो क्या मैं मसीह के अंग लेकर एक वेश्या के अंग बनाऊँ? ईश्वर न करे!'* (1 कुरिन्थियों 6:15)। अभद्रता से भागो; कोई किसी को आहत न करे; कोई किसी के बारे में बुराई न बोले। परमेश्वर से कुछ भी छिपा नहीं सकता: क्योंकि *'प्रभु की आँखें सूर्य से भी अधिक तेज हैं, वे अँधेरे को भेदती हैं, सभी मानव मार्गों की जाँच करती हैं और गुप्त स्थानों में जो कुछ भी किया जाता है उसे देखती हैं'* (सिरैक 23:27-28)। अश्लीलता से न हँसें। जब आप बात कर रहे हों तो एक-दूसरे के बहुत करीब न बैठें। अपने पेट को अधिक भरकर अपने रक्त को उत्तेजित न करें। शराब न पियें – मैं यह स्वस्थ लोगों को एक अच्छी सलाह के रूप में देता हूँ। हमारे भीतर पहले से ही काफी कलह, काफी स्वाभाविक आग है; लेकिन यदि आप उसमें शराब की आग भी मिला देंगे, तो आप एक विनाशकारी आग भड़का देंगे: शरीर इसे सहन नहीं कर पाएगा, यह उबल उठेगा और अपना हक मांगेगा। मैं आपको इसके बारे में चेतावनी देता हूँ, और इसके विनाशकारी परिणामों की पूर्व चेतावनी देता हूँ: परमेश्वर ने एक न्याय का दिन नियुक्त किया है, और जो ऐसा करते हैं उन्हें वह दानवों के साथ अकल्पनीय यातनाओं में डालकर दंडित करेगा। शैतान द्वारा डाली गई प्रलोभनों को प्रकट करते हुए,

प्रभु के सामने अपना पाप कबूल करके पहले पहल करें। सभी कार्य उचित तरीके से करो; संयम से सोओ और, जागते ही यथाशीघ्र, निर्धारित जागरण करो। और यदि प्रभु तुम्हें ऐसा करते हुए पाएँ तो तुम धन्य होओगे।

136. यह पूछकर कि क्या वे अपना उचित आचरण बनाए हुए हैं और क्या कोई अनुचित व्यवहार की ओर भटक रहा है, उन्हें जीवन के दायित्वपूर्ण मार्ग की संपूर्ण संरचना की याद दिलाएँ

136. 1) यह पूछकर कि उनके लिए उचित क्या है और क्या कोई अनुचित व्यवहार की ओर बढ़ रहा है, उन्हें कर्तव्यपूर्ण जीवन की संपूर्ण संरचना की याद दिलाएँ। – 2) तब वह उन्हें प्रोत्साहित करते हैं: तुमने परिश्रम किया है - परिश्रम करते रहो; तुमने यत्न किया है - यत्न करते रहो; अपनी मेहनत व्यर्थ न जाने दो, उन्हें एक फलदायी परिणाम और न्याय के दिन परमेश्वर की स्वीकृति के वादे से प्रेरित करते हुए। [2, 66]

11. (वही) मैं आपको फिर से लिखित में नमस्कार करता हूँ – और पूछता हूँ: आपके कामकाज कैसे चल रहे हैं? परमेश्वर की शान्ति आपको कैसे सुरक्षित रखती है? प्रभु का भय आपको कैसे शुद्ध करता है? उसकी धार्मिकताएँ आपके हृदयों को कैसे प्रसन्न करती हैं? भक्ति की सुव्यवस्था आपको कैसे एक करती है? सच्चा विश्वास आपको कैसे मजबूत करता है? आज्ञाकारिता की दृढ़ प्रतिज्ञा आपको कैसे एक साथ बाँधती है? ईमानदार आज्ञाकारिता आपको कैसे ऊँचा उठाती है? आपकी मसीह-सी नम्रता की क्या स्थिति है? आपके आने-जाने (यात्राओं) का क्या हाल है? और आपके अंतरतम विचारों का कबूलनामा कैसा चल रहा है? – इसके अलावा, आपके हाथों के काम कैसे आगे बढ़ रहे हैं? क्या फसल कटनी शुरू हो गई है?... हमें ये बातें और बाकी सब कुछ बताएं, और हमें खुशी का कारण दें। – हम आप में अपनी आशा रखते हैं, फिर भी हम डरते भी हैं; और कभी-कभी हम इस बात से चिंतित होते हैं, यह सोचकर कि क्या आप में से कोई लापरवाही से तो नहीं काम कर रहा है? क्या कोई बड़बड़ा रहा है? क्या कोई सांसारिक सुखों में लिप्त है? क्या कोई अशिष्टता के आगे झुक रहा है? क्या ऐसे कुछ नहीं हैं जो शैतान के साथ मिलकर साज़िश कर रहे हैं, ठीक वैसे ही जैसे वे लोग जो प्रभु और उनके मसीह के विरुद्ध इकट्ठा हुए हैं, यह कहते हुए: *'आओ हम उनके बंधन तोड़ दें और अपना जुआ अपने ऊपर से हटा दें।' परन्तु जो स्वर्ग में रहता है वह उन पर हंसेगा, और प्रभु उनका मज़ाक उड़ाएगा। तब वह अपने क्रोध में उनसे बात करेगा और अपनी जलन में उन्हें कुचल डालेगा'* (भजन संहिता 2)। क्योंकि मैं तुम्हारी स्वैच्छिक सहमति से तुम्हारे ऊपर नियुक्त किया गया हूँ, और तुम स्वयं स्वेच्छा से मेरे अधिकार के अधीन हो गए हो। इसीलिए मैं तुमसे इस प्रकार बोलता हूँ, और तुम्हें प्रभु की आज्ञा सुनाता हूँ।

12. तुमने परिश्रम किया है और अभी भी करते हो; तुमने यत्न किया है और अभी भी करते हो, अपने तपस्या-जीवन में, अपनी आज्ञाकारिता में, अपनी इच्छाओं को वश में करने में, अपनी कामनाओं को दबाने में प्रभु को सहते हुए। तो, जो आपने पहले हासिल किया है, उसे नष्ट न करें। पर जैसे आपने आँसुओं, आहों और हर तरह की कठिनाइयों के बीच बोया है और बोते रहते हैं, वैसे ही आप आनंद के साथ काट-फसल काटें, जब सभी पुरस्कारों का न्यायी प्रत्येक व्यक्ति को उनके कर्मों के अनुसार पुरस्कृत करेगा। *'हे आकाश, सुन, और हे पृथ्वी, ध्यान दे, क्योंकि प्रभु ने कहा है'* – हे भाइयों, काश यह वचन हम पर लागू न हो: *'मैंने पुत्रों को जन्म दिया और उन्हें पाला-पोसा, पर उन्होंने मुझे ठुकरा दिया। गधा अपने स्वामी को और बछड़ा अपने मालिक के खुरे को जानता है; पर इज़राइल मुझे नहीं जानता, और मेरी प्रजा समझती नहीं!'* (यशायाह 1:2–3)। परन्तु ऐसा हो: *'तेरे पुत्र तेरी मेज़ के चारों ओर जैतून की कलियों के समान होंगे'* – जिसे आध्यात्मिक रूप में समझना चाहिए / *'ऐसा मनुष्य धन्य होगा जो यहोवा का भय मानता है'* (भजन संहिता 127:4–5)। – सुनो, मैं तुमसे विनती करता हूँ। इस मामले में बुद्धिमान बनो, और सभी एकमत रहो, अपने एबट के मार्गदर्शन का पालन करो। ऐसे जियो मानो तुम हर दिन मर रहे हो; भोजन और पेय पर चिंता मत करो, अत्यधिक व्यथित मत हो, और शिकायत मत करो। प्रेरित क्या कहते हैं? – *'यदि रोटी से मेरा भाई ठोकर खाता है, तो मैं फिर कभी मांस नहीं खाऊँगा, कहीं ऐसा न हो कि मैं अपने भाई को ठोकर खिला दूँ'* (1 कुरिन्थियों 8:13)। तो, विद्रोह के पुत्र, न व्यभिचार के पुत्र, न क्रोध और पाप के बच्चे बनो, जो शर्मनाक कर्मों से परमेश्वर को क्रोधित करते हैं। – हाय तुम्हारे हृदयों पर! हाय तुम्हारी बुद्धि की आँखों पर! – *"परमेश्वर प्रतिशोध का परमेश्वर है!"* (भजन संहिता 93:1)। *'कोई भी प्राणी उसकी दृष्टि से छिपा नहीं है, परन्तु सब कुछ उसके सामने नंगा और खुला हुआ है'* (इब्रानियों 4:13)। कौन भय से न भर जाएगा? कौन न काँपेगा? कौन स्वयं को परमेश्वर को प्रसन्न करने के लिए *'यहाँ तक कि रक्त बहाए जाने तक'* समर्पित नहीं करेगा?

137. फसल काटने के समय अपने करतव्यों का पालन करने, भोजन से अपना पोषण करने और वशि्राम करने, रात कैसे बतिाने, और सामान्य रूप से अपने आचरण के बारे में नरि्देश

137. फसल काटने के दौरान अनुष्ठान करने, भोजन से अपना पोषण करने और वशि्राम करने, रात कैसे बतिाने, तथा सामान्य रूप से आचरण करने के नरि्देश। [2, 67] (उपरोक्त)। मुझे अच्छी तरह पता है कि आप अब कड़ी मेहनत कर रहे हैं – धूप की तपशि से झुलसे हुए और पसीने से लथपथ, फसल कटाई और अंगूर तोड़ने के कारण। इसलिए मैंने यह उचति समझा कि मैं वशिष रूप से आप लोगों को इन परशि्रमों के बारे में बताऊँ। – हे मेरे बच्चों, प्रभु का आशीर्वाद तुम पर हो, और प्रभु, तुम्हारा परमेश्वर, अपनी पवति्र ऊँचाइयों से तुम्हें आशीष दे, तुम्हें जीवति करे और तुम्हारी आत्मा और शरीर को बलवान बनाए, ताकि तुममें आध्यात्मकि सेवा और शारीरकि श्रम दोनों के लिए पर्याप्त शक्ति हो, और तुम दोनों को अत्यधकि थकान के बनिा कर सको। मैं जानता हूँ कि फसल काटने के समय की गर्मियाँ कतिनी झुलसा देने वाली होती हैं, और वे कतिनी थकान पैदा करती हैं; इतना कि, यदि उन्हें शक्ति देने वाले मजदूरों का वशिष उत्साह न हो, तो शायद ही कोई उन्हें सहन कर पाए। इसलिए मैं आपसे मसीह के प्रेम के लिए वनिती करता हूँ कि आप इन दोनों प्रयासों में धैर्य बनाए रखें। सुबह-सुबह गरमिामय और प्रसन्नचति्त होकर अपना प्रथागत भजन-गायन और ईश्वर से प्रार्थना करने के बाद, अपने सामने के कार्य में लग जाएँ और तीसरा घंटा आने तक मन ही मन भजन का पाठ करते हुए काम करें। इस समय, अपना काम बंद कर दें और भक्तिपूर्वक प्रभु के लिए तृतीय घंटा का भजन गाएँ, अपने हाथ स्वर्ग की ओर उठाकर अपनी आत्मा और शरीर को बल देने के लिए पवति्र आत्मा की कृपा की याचना करें; फरि, ध्यानपूर्वक प्रार्थना के साथ तीन या चार, या अधकि प्रणाम करने के बाद, उस भोजन का सेवन करें जो प्रभु ने भेजा है, सिवाय बुधवार और शुक्रवार के, जैसा कि हमारी प्रथा है। – परन्तु ध्यान रहे कि इन भोजन के समय कोई शोर-शराबा या हलचल न हो। – और फसल काटने के काम के दौरान न तो झगड़ा होना चाहिए और न ही अपनी मनमानी, जसिसे कलह और चल्लिाहट होती है, और न ही बातचीत, न हँसी, न ही बक-बक – तुम्हारे बीच इस तरह की या इसके जैसी कोई भी बात न हो। परन्तु तुम्हारा काम धन्य हो, क्योंकि यह परमेश्वर की दृष्टि में कयिा जाता है। और तुम्हें एक दूसरे की मदद करनी चाहिए। जब तुम्हारे पास का कोई साथी काम में पीछे रह जाए, चाहे वह थकान के कारण हो या कसिी कठनिाई के कारण, तो रुककर उसकी मदद करो, ताकि फसल की कटाई सुचारू रूप से चलती रहे और हर कोई एक ही स्तर का प्रयास बनाए रखे। जब, काम की देखरेख करने वालों के नरि्देशों पर, आप दोपहर को वशि्राम करते हैं, या रात को पेड़ों के नीचे या कसिी आश्रय के नीचे सोते हैं, तो ध्यान रखें कि आपके शरीर एक-दूसरे के बहुत करीब न हों, और नश्चिति रूप से एक-दूसरे को न छूएं, और आप में से कोई भी दो व्यक्ति दूसरों से अलग होकर कसिी सुनसान जगह पर न जाएं। अधीक्षकों को इस पर नगिरानी रखनी चाहिए। यहाँ पर कड़वी जड़ें बोने वाला अदृश्य है; कहीं ऐसा न हो कि वह चुपके से आकर कसिी में अपना घातक वषि डाल दे, और हम उससे हमारे प्रभु परमेश्वर का क्रोध भड़का दें। इसी कारण, चौकस रहो। सेवा के दौरान, चूँकि गाने के लिए बहुत से भजन नहीं हैं, इसलिए इस बात का ध्यान रखा जाना चाहिए कि इन्हें भी जल्दबाजी में या लापरवाही से न गाया जाए, बल्कि ध्यान से गाया जाए, ताकि हम हर अच्छे काम के लिए सही मानसकिता में रह सकें। हर कोई सेवा में उपस्थति रहे, ताकि कोई अनुपस्थति न हो। जो कोई भी अनुपस्थति रहता है, भले ही वह बाद में दस गुना मेहनत कर ले, वह उस दनि के भोजन का अधिकारी नहीं है। मैं यह आपकी मुक्ति की चिंता के कारण कह रहा हूँ और आपको यह याद दलिाने के लिए कि कोई भी परमेश्वर के मार्ग से भटकना नहीं चाहिए। यदि किसी को कोई दुख है, तो वह उसे छपिाए नहीं, बल्कि बुज़ुर्गों के सामने लाए: वे न्याय करेंगे और जसि चंगा करने की आवश्यकता है, उसे चंगा करेंगे। कोई भी आलसी नहीं रहना चाहिए: ऐसे व्यक्ति का भाइयों के साथ कोई हस्सिा नहीं है और उसे प्रभु की खोज करने वालों में नहीं गनिा जाता है। – हे भाई, क्या तुम लकड़ी नहीं काट सकते, या तुम्हें तरीका नहीं आता? तो कुल्हाड़ी का दंड उठाओ; क्या तुम कुल्हाड़ी का दंड भी नहीं उठा सकते? तो अंगूर इकट्ठे करो, पानी उठाओ, या जो कुछ भी ज़रूरी हो, वह करो, चाहे बाहर हो या घर के अंदर। और परमेश्वर तुम्हारी लगन के अनुसार इसे वधिवा के दो पैसा के समान स्वीकार करेगा।

138. भाइयों के बारे में अच्छी खबर सुनकर, वह आनंदति होता है और उन्हें और भी अधकि प्रयास करने के लिए प्रोत्साहति करता है, यह बताते हुए कि अधिकार में रहने वालों को कैसे व्यवहार करना चाहिए और सभी भाइयों को कैसा होना चाहिए

138. भाइयों के बारे में अच्छी खबर सुनकर, वह आनंदति होता है और उन्हें और भी बड़ी सफलता के लिए प्रयास करने के लिए प्रोत्साहति करता है, यह उदाहरण देते हुए कि जो लोग प्रभारी हैं उन्हें कैसे व्यवहार करना चाहिए; और सभी भाइयों को कैसा होना चाहिए। [2, 68] (उपरोक्त)। भाइयों आए और उन्होंने मुझे बताया कि आप सब के साथ कैसा चल रहा है, और इसने मुझे अकथनीय आनंद दयिा। क्योंकि यह सुनकर मुझे बहुत आनंद होता है कि आप

सब मसीह की कृपा से उद्धार पा रहे हैं, अपनी अच्छी मनोवृत्ति बनाए हुए हैं और दिव्य आज्ञाओं को पूरा कर रहे हैं, जिनके द्वारा, प्रबुद्ध होकर, आप ज्योति के पुत्र और स्वर्ग के राज्य के वारिस बन जाते हैं। हे मेरे बच्चों! इसलिए बुद्धिमान बनो, स्वयं की रक्षा करो, दिन-प्रतिदिन इस प्रकार व्यतीत करो, दिव्य प्रेम से ऊबते हुए और तुम में निवास करने वाले पवित्र आत्मा से नवीनीकृत होते हुए, भ्रष्ट शरीर की हर अनुभूति और हर वासना को मार डालो, और उनकी जगह पर, परमेश्वर के बगीचे की तरह, शाश्वत सद्गुणों को रोपो और विकसित करो, सभी बातों को ढकते हुए, आज्ञाकारिता, पालन-पोषण, दया, प्रेम और करुणा में सभी बातों को सहते हुए, एक-दूसरे के प्रति दियालु बनो, एक-दूसरे में आनन्दित हो, और एक-दूसरे के बोझ उठाओ। और सबसे बढ़कर, हे मेरे बच्चे, वर्सानूफ़ियस, तुझ पर सौंपी गई सेवा को बिना किसी दोष के निभा, उस परमेश्वर की उपस्थिति में जो सभी को जीवन देता है, न तो पक्षपात से, न अहंकार से, न क्रोध से, न मूर्खतापूर्ण आत्म-अपमान से, न ही विक्षिप्त मन से कार्य करते हुए, बल्कि उतनी ही बुद्धिमानी और दया से जैसे एक स्तनपान कराने वाली माँ अपने बच्चों का पालन-पोषण करती है; और अपने भाइयों और मेरे बच्चों के लिए अपनी आत्मा तक बलिदान करने को तैयार रहो। मसीह के झुंड की रखवाली करना एक महान कार्य है। प्रभु ने प्रेरित पतरस से क्या कहा? 'यदि तुम मुझ से प्रेम करते हो, तो मेरी भेड़ों को चराओ।' इसी प्रकार, हे मेरे बच्चे, यदि तुम प्रभु मसीह और मुझ पापी से प्रेम करते हो, तो मेरी भेड़ों की अच्छी तरह रखवाली करो—या यूँ कहो, मसीह के मेमनों की। यदि, हालाँकि, उनमें से कुछ बकरियों के बच्चों की तरह उछल-कूद करते हैं – क्योंकि मैं ऐसी बातें भी सुनता हूँ – तो उनकी इस जल्दबाज़ी पर लगाम लगाओ, और उन्हें समझाओ कि यदि वे बकरियों के बच्चों की तरह ही रहे, तो न्याय के दिन उन्हें प्रभु मसीह के बाएँ हाथ पर, विनिष्ट होने वालों की ओर, शैतान के साथ रखा जाएगा; इससे उनके हृदय में भय उत्पन्न करो और इस गंभीर चेतावनी से उन्हें डराओ, ताकि वे भी मेमनों जैसे बन जाएँ: क्योंकि मेमने नम्र, भले स्वभाव वाले, विनम्र, आज्ञाकारी और शांत होते हैं, जबकि बकरियाँ चपल, बेकाबू, लापरवाह और चिड़चिड़ी होती हैं। ऐसे लोगों के लिए विनाश है; क्योंकि उनका अनंतकालिक अग्नि में दंड उन्हें प्रतीक्षा कर रहा है। मेरे बच्चों में से कोई भी ऐसा न हो; मैं तुमसे विनती करता हूँ, कोई भी नहीं; क्योंकि अन्यथा चरवाहा या तो उन्हें भूखा मारने या उन्हें अपने झुंड से निकाल देने के लिए विवश हो जाएगा। परन्तु जो मैं कहता हूँ उसे समझो, और परमेश्वर की इच्छा करो। – हे मेरे पुत्र दानियेल, तुम भी ध्यान दो कि तुम्हें अपने भाइयों के बीच अपना आचरण कैसा रखना चाहिए: उन्हें उपदेश दो, उन्हें ज्ञान से सुसज्जित करो, और उन्हें सीधा करो; अव्यवस्था, नवाचारों, या उपद्रवी व्यवहार को सहन मत करो; उन लोगों से प्रेम करो जो अच्छे चरित्र वाले, आचरण में श्रद्धालु, अभिमानी न होने वाले, ईश्वर-भयभीत, गरिमामय, मेहनती, आज्ञाकारी, विनम्र, बड़बड़ाने वाले या उपहास करने वाले न हों; लेकिन जो उनके विपरीत हैं, उन्हें बिना घृणा के सहन करो, और जो बेहतर है उसका उदाहरण प्रस्तुत करके उन्हें सुधारो; तुम में से कोई भी ईश्वर से पराये या उसे अप्रसन्न करने वाले न हों। एक अधर्मी व्यक्ति, एक फुसफुसाने वाला, एक बड़बड़ाने वाला, एक उपहास करने वाला, और एक गुप्त पापी ईश्वर से पराये और उसे अप्रसन्न करने वाले होते हैं। तुम में ऐसा कोई न पाया जाए; बल्कि तुम सब ईश्वर-भयभीत, ईश्वर-प्रेमी और ईश्वर-अन्वेषी बनो। हे मेरे बच्चों, प्रभु तुम्हारी रक्षा करे!

139. ईश्वर का भय और प्रेम उत्साह जगाते हैं और मनुष्य को सही मार्ग पर रखते हैं; लेकिन जिनमें ये गुण नहीं होते, वे लापरवाही बरतते हैं और गिर पड़ते हैं

139. 1) ईश्वर का भय और प्रेम उत्साह जगाते हैं और मनुष्य को सही मार्ग पर रखते हैं; परन्तु जिनमें ये गुण नहीं होते, वे लापरवाही में पड़ जाते हैं और गिर जाते हैं। – 2) हमें ऐसे लोगों को सही मार्ग पर वापस लाने और उनके लिए प्रार्थना करने का ध्यान रखना चाहिए, और साथ ही अपने ऊपर और भी कड़ी निगरानी रखनी चाहिए। [2, 69]

13. (वही) अनुग्रह और शान्ति तुम्हारे साथ हो, तुम्हारे सुव्यवस्थित जीवन में, आज्ञाकारिता, नम्रता, आदर, दयालुता में, और तुम्हारे दिन-रात के भजन और स्तोत्रों में। ध्यान रखना कि यह सब तुममें बिना चूके दृढ़ बना रहे। यह तभी संभव है जब तुममें ईश्वर का भय हो और उसके प्रेम की अग्नि तुम्हारे हृदयों में बुझने न पाए। क्योंकि जब यह किसी भी आत्मा में बुझ जाती है, तो कायरता और सुस्ती, और वासनाओं की अन्य काँटें और झाड़ियाँ, शारीरिक शिथिलता और कामुकता, आलस्य और निराशा, अत्यधिक नींद, अतृप्त भोजन, और पाप का हर दूसरा रूप, विशेष रूप से प्रज्वलित कामुकता, अंधकारमय विचार, प्रवृत्तियाँ और विनाशकारी जीवन के कर्म। हालांकि, इस बात का संकेत कि यह पवित्र और अदेह अग्नि बुझ नहीं गई है, यह है कि आत्मा सदैव भलाई के लिए उत्सुक रहती है और बिना हिचकिचाए या हतोत्साहित हुए, सभी आवश्यक कार्यों को लगन से करती है: आज्ञाकारिता, कर्म, भजन-गायन, पाप-स्वीकृति, हस्तशिल्प, प्रार्थना, निर्धारित संयम, और अन्य सभी कर्म जो धन्य आज्ञाकारिता के अंतर्गत आते हैं। धन्य है ऐसा व्यक्ति, जो ईश्वर को प्रसन्न करने वाला और सभी का प्रिय हो, जो अपने हृदय के शुभ खजाने

से, फूलों की तरह, दैवीय अनुग्रहों को प्रकट करता है, जो उसके दैवीय मुखमंडल और उसके सभी हाव-भाव और शब्दों में परिलक्षित होते हैं। हालाँकि, जो लोग अनुचित विचारों से ग्रस्त होते हैं, वे धीरे-धीरे सही से भटक जाते हैं, और फिर अपने संकल्प (वचन) से पूरी तरह से अलग हो जाते हैं और शैतान के शिकार बन जाते हैं।

14. परन्तु हम प्रार्थना करें कि वह, जो प्रतिदिन सीधे मार्ग से भटक गए सभी को वापस बुलाता है, उन्हें अपनी भेड़शाला में पुनर्स्थापित करे, कहीं ऐसा न हो कि पाप उन्हें पूरी तरह से नष्ट कर दे; फिर भी, आप स्वयं खोए हुए की उचित खोज में लापरवाही न करें। क्योंकि यदि कोई भी मूर्ख पशु खो जाए तो उसके मालिक को यह हानि सहनी आसान नहीं होती; उन बुद्धिमान भेड़ों की देखभाल सौंपे गए लोग उनमें से जो नाश हो रहे हैं, उन्हें खोजने के लिए अपनी पूरी ताकत से कितना अधिक प्रयास करें? – चूंकि ये गिर गए हैं, अन्य लोग और भी दृढ़ता से खड़े रहें और जो सही है उसे दृढ़ता से थामे रहें; क्योंकि लिखा है: *'जब दुष्ट गिरते हैं, तो धर्मी भयभीत हो जाते हैं'* (नीतिवचन 29:16)। अतः सावधान रहो, और अधिक सावधानी से चलते रहो; क्योंकि दानव तुम्हारे लिए दोनों ओर जाल बिछा रहा है। इसलिए, कोई भी अपने मन में अनकहे विचारों को न पालें और न ही अपनी इच्छा के अनुसार काम करें। कोई भी कामवासना में डूबा या स्वार्थी न बने; क्योंकि जो लोग इन दुष्ट स्वभावों से ग्रस्त होकर विनाश के गड्ढे में फिसल गए और भाग गए; और अब, दुख की अवस्था में, खोए हुए भेड़ों की तरह इधर-उधर भटकते हैं। उनसे प्रार्थना विदा हो गई है: क्योंकि परमेश्वर से भाग जाने के बाद वे किसकी ओर अपना हाथ उठाएँगे? भजन और स्तुति-गीत उनके होठों पर मौन हो गए हैं। वे किसके लिए गाएँगे, *'मैंने प्रभु की प्रतीक्षा धैर्य से की है'*, जबकि उन्होंने अपनी हीनभावना के कारण स्वयं को नष्ट कर लिया है? इसलिए, उनके लौटने के लिए प्रार्थना करें; लेकिन साथ ही अपनी दृढ़ता के लिए भी प्रार्थना करें, यह कहते हुए: *'यद्य युद्ध मेरे विरुद्ध खड़ा हो, तौभी मैं उसी पर भरोसा रखूँगा'* (भजन संहिता 26:3)। *'जवानी से ही बहुतों ने मुझ पर चढ़ाई की है, परन्तु वे मुझ पर हावी नहीं हुए'* (भजन संहिता 128:2)। *'यह मेरा विश्राम-स्थान है युगानुयुग; मैं इसी में निवास करूँगा, क्योंकि मैंने इसे चुन लिया है'* (भजन संहिता 131:14)—ताकि मसीह के सिपाहियों के रूप में, लड़ते तो हैं पर पराजित नहीं होते, आप अपने धीरज के लिए धार्मिकता का मुकुट प्राप्त करने के योग्य ठहरे।

१४०. वह उन लोगों पर शोक मनाता है जो अपने व्रत तोड़कर मठ छोड़ देते हैं, और हर तरह से उन्हें सही मार्ग पर लौटने और मठवासी जीवन में दृढ़ रहने के लिए प्रेरित करता है।

140. वह उन लोगों के लिए दुखी होता है जो अपने व्रत तोड़कर मठ छोड़ देते हैं, और उन्हें सही मार्ग पर लौटने तथा मठजीवन में दृढ़ रहने के लिए मनाने की पूरी कोशिश करता है। [2, 70] अब जब मुझे आपके बीच हो रही घटनाओं का पता चला है, तो मैं प्रसन्न भी हुआ हूँ और दुखी भी: मैं आपके उप-मठाधीशों के स्वास्थ्य और कल्याण पर, और उन भाइयों पर प्रसन्न हूँ जो सही मार्ग पर चलते हैं और जो अतीत में ऐसा कर चुके हैं, धर्मपरायण विनम्रता, अच्छे धैर्य और ईश्वर को प्रसन्न करने वाले जीवन में; मैं उन लोगों के लिए दुखी हुआ जो रास्ते से भटक गए और भाग गए, भले ही उन्हें वापस बुलाया गया हो। प्रभु आपको दिन-प्रतिदिन और अधिक सुरक्षित रखें, और आपके सच्चे जीवन के मार्ग के पूर्ण होने तक आपको और अधिक बल दें; जहाँ तक मार्ग से भटक गए लोगों का प्रश्न है, मैं उनसे नबी के निम्नलिखित शब्दों के साथ बात करूँगा: *'हे मनुष्य के पुत्र! तू व्यर्थता से प्रेम क्यों करता है और मिथ्या की खोज क्यों करता है?'* (भजन संहिता 4:3), – अपनी वासनाओं द्वारा प्रेरित होकर, अपनी इच्छाओं को पूरा करने का प्रयास करते हुए, अपनी आँखों के सामने न तो परमेश्वर के भय को, न बुझने वाले न्याय को, न न बुझने वाली आग को, न घोर अंधकार को, न दाँत पीसने और अकल्पनीय भयानक तारतारस को रखते हुए, बल्कि इतनी निडरता और निर्लज्जता से, इतनी कपटपूर्ण और तुच्छतापूर्वक अपने भटकने वाले कार्यों में परमेश्वर के विषय में निर्णय लगाते हुए। तुम उसकी आज्ञाओं को और कितनी देर तक भूलोगे? तुम पश्चाताप के ज्ञान को और कितनी देर तक प्राप्त नहीं करोगे? तुम अपनी आत्माओं में दुष्ट युक्तियों को और कितनी देर तक पालोगे, अपने पापों के लिए बहाने बनाते और व्यर्थ आशाओं में लिप्त रहते? – आखिरकार, अपने पतन से उठो; अपने चारों ओर के अंधकार को दूर करो; अपनी पागल महत्वाकांक्षाओं को समाप्त करो। तुम किससे भाग रहे हो? तुम किससे मुंह मोड़ रहे हो? क्या यह पवित्र आत्मा से नहीं है, जिसे तुमने अपनी मुक्ति के दिन प्राप्त किया था? – लेकिन अभी के लिए इतना ही काफी है। – इसमें बने न रहो; शैतान को तुम पर और आनंद मनाने का कारण मत दो; अपने विरोधी को प्रसन्न करना बंद करो। उस प्रभु से प्रेम करो जिसने हमसे प्रेम किया है; धन्य प्रभु को अपने हृदयों में ग्रहण करो; और वह, सर्वदयालु होकर, तुम्हारी नम्रता के लिए अतीत को क्षमा कर देगा। इसलिए, मैं आपसे विनती और प्रार्थना करता हूँ, अपने आत्मा की कमियों को सुधारें, अपने हृदयों की नींव को मजबूत करें, और अपने बिखरे हुए विचारों को एकत्रित करें। अपने व्रतों को याद करें। उन्हें करने के बाद, भले ही आग और तलवार ने आपको धमकाया हो, भले ही यातनाएँ और अत्याचार आपके सामने पड़े हों, आपको किसी भी तरह से उनसे भटकना नहीं चाहिए था; फिर भी, एक तुच्छ बात—अपनी ही बुरी इच्छा—

के लिए, दिव्य वाचा और अपने पवित्र संकल्पों को एक ओर रखकर, तुम काँटे लगने पर बछड़ों की तरह उछल पड़े और पानी रहित तथा अतिकठिन स्थानों में दौड़ पड़े; तुम एक गाँव में बस गए, सांसारिक पत्नियों और पतियों के साथ मेलजोल करने लगे, और जैसे किसी दावत में हो, वैसे खाने-पीने लगे। – ऐसे बीजों से किस प्रकार का फल हो सकता है?! हाय, मैं दुखी! काश कि धरती मुझे निगल लेती। – अब समय है कि मैं नबी के साथ कहूँ: *'पहाड़ मुझ पर गिर पड़ो, और पहाड़ियाँ मुझे ढक लो'*, हे अधर्मी और पापी (होशे 10:8)। क्योंकि जिन्हें मैंने जन्म दिया है, उन्होंने परमेश्वर की व्यवस्थाओं को त्याग दिया है, अपने शरीरों को अशुद्ध किया है, अपनी कुँवारी अवस्था का विश्वासघात किया है, आज्ञा मानने से इनकार कर दिया है, और राक्षसों का उपहास बन गए हैं। क्या शैतान अपने आज्ञाकारियों को इधर-उधर नहीं ले जाता, और क्या वह फिर उन्हें पाप के मुँह से नहीं निगल जाता? – परन्तु आओ, हम कम से कम यहाँ आकर होश में आएं, होश संभालें, अपना हिसाब-किताब करें, शत्रु की युक्तियों और अपनी लापरवाही की जाँच करें, स्वयं को डाँटें, स्वयं को नम्र करें, पश्चाताप करें, पाप का अंगीकार करते हुए गिर पड़ें, और धीरे-धीरे अपने पूर्व के सुन्दर जीवन-मार्ग पर फिर से चल पड़ें। अब आओ! मैं तुम सब से विनती करता हूँ जो प्रभु के भवन में, हमारे परमेश्वर के आँगनों में खड़े हो! बहादुरी से खड़े रहो, दृढ़ता से आगे बढ़ो, और अपने अध्यक्ष और अपने बीच के अन्य अगुवों के अधीन रहो। जो उन्हें अस्वीकार करता है, वह मुझे अस्वीकार करता है, और जो उन्हें स्वीकार करता है, वह मुझे स्वीकार करता है—या यूँ कहें, मुझे नहीं, बल्कि परमेश्वर को, जिसके लिए मैं जो कुछ भी हूँ, वह हूँ, और आप जो कुछ भी हैं, वह हैं।

141. किसी को अपनी तर्कशक्ति और इच्छा को अलग रखने और मार्गदर्शन पर विश्वास के साथ भरोसा करने के लिए प्रेरित करता है, ताकि वह जीवन में स्थायी सफलता प्राप्त कर सके जिसे उसे जीना चाहिए

141. वह हमें अपनी तर्कशक्ति और अपनी इच्छा को एक ओर रखने और जीवन में स्थायी सफलता के लिए विश्वासपूर्वक उसकी मार्गदर्शन के प्रति स्वयं को समर्पित करने का आग्रह करते हैं। [2, 71] हम पर हर ओर से हो रहे हमलों को देखते हुए, मैं प्रेरित के शब्दों में कह सकता हूँ: 'सचमुच, हमें *'मांस में एक काँटा', 'शैतान का एक दूत' दिया गया है, ताकि हम घमंडी न हो जाएँ'*, बल्कि ताकि हम स्वयं को नम्र कर सकें, अनुशासित हो सकें, और परमेश्वर के सामर्थी हाथ के नीचे शरण ले सकें, जैसे कि अन्यथा हमारा कोई उद्धार नहीं हो सकता। जब हम, पूरी लगन के साथ, अपने विद्रोही तर्क को वश में करते हैं और स्वयं को पूरी तरह से दीन जानते हैं, यह मानते हैं कि हम अपने मार्गदर्शक के माध्यम से, चाहे वह कोई भी हो, परमेश्वर की सहायता के बिना जैसा हमें करना चाहिए वैसा कुछ भी करने में असमर्थ हैं: तब एक दूत हमारे वासनाओं के गर्त में उतरेगा, जैसा पहले कभी बाबेल के गर्त में नहीं उतरा, हमारे हृदयों से वासना की ज्वाला को फाड़कर निकाल देगा और हमारी आत्माओं में - ओस भरी हवा की तरह - पवित्रता का वरदान लाएगा। इसलिए, हम स्वयं को नम्र बनाएँ; हमारी तर्कशक्ति धूल चटा, हमारी दृष्टि धूल चटा; हमारा मन नमन करे; और देखो, मानवता से प्रेम करने वाले परमेश्वर की दया निकट है। – कोई भी अविश्वासी न हो, कोई भी कपटी न हो, कोई भी कपोकपटी न हो, जो अपने होठों से तो आशीष दे पर उसका हृदय दूर हो, जैसा कि उन लोगों का होता है जो केवल अपने स्वभाव और अपनी ही बुद्धि का अनुसरण करते हैं। *'कोई भी अपना भला न चाहे, बल्कि अपने पड़ोसी का भला चाहे'* (1 कुरिन्थियों 10:24)। पूर्णतः प्रकाशमय, पूर्णतः निष्ठावान, पूर्णतः सत्यनिष्ठ पुत्र बनें; हम बच्चों, भाइयों, सह-वारिसों के रूप में चलें; हम एक-दूसरे को नुकसान पहुँचाने वाली किसी भी चीज़ को स्वीकार न करें, और हम किसी भी नए उल्लंघन की अनुमति न दें।

142. वह हमें इस बात पर आनंदित होने के लिए आमंत्रित करते हैं कि हम संसार की सभी चीज़ों का त्याग करके, तपस्या के श्रम के माध्यम से, अभावों और दुखों से भरा गरीबी का जीवन जीते हैं; क्योंकि यह स्वर्ग के राज्य की विरासत का निश्चित मार्ग है।

142. वह हमें इस बात पर आनंदित होने के लिए आमंत्रित करते हैं कि हम संसार की सभी चीज़ों को त्यागकर, तपस्या के श्रम के माध्यम से, अभावों और दुखों से भरा गरीबी का जीवन जीते हैं; क्योंकि यह स्वर्ग के राज्य की विरासत का निश्चित मार्ग है। [2, 72] भले ही यह कुछ साहसिक लगे, मैं आपको प्रेरित के शब्दों में कहूँगा: *'प्रभु में सदा आनन्दित रहो; और मैं फिर कहता हूँ, आनन्दित रहो'* (फिलि. 4:4)। क्यों? क्योंकि आप ईश्वर का कार्य कर रहे हैं, क्योंकि आपने मठवासी व्रत ग्रहण किया है, क्योंकि आप आज्ञाकारिता के नियम के अधीन हैं और दिन-प्रतिदिन उसका पालन करते हैं, कष्ट सहते हुए, कठिनाइयों को झेलते हुए, गरीबी में रहते हुए, और शोक मनाते हुए—चाहे उपवास में, जागरणों, नंगे जमीन पर सोने, परिश्रम और थकान में, अपनी आज्ञाकारिता के कर्तव्यों में, अपनी इच्छा को काबू करने में, आज्ञाओं की अनिश्चितता में, शरीर को न धोने में, फटे-पुराने कपड़े और जूते पहनने में; मैं और

जोड़ना चाहूँगा – प्रायश्चित और बहिष्कार में, और उससे भी अधिक, – अनवरत यातनाओं में, धक्का-मुक्की, चुभन, मानो डंक और तीर, जो राक्षसों द्वारा हम पर प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से चलते हैं – चाहे वे व्यभिचार, आलस्य, लालच, विचारों और इच्छाओं की चंचलता, या अन्य अनगिनित जुनून के राक्षस हों। – तो फिर, आप स्वयं निर्णय करें, कि क्या मैंने सही कहा जब मैंने कहा: *'हमेशा आनन्द मनाओ'*। वास्तव में, मेरे भाइयों! धन्य हैं आप, और तीन बार धन्य हैं, जो परमेश्वर के लिए यह सब सहते हैं, इसको चुनकर और इसे अपनाकर। और इससे क्या निष्कर्ष निकलता है? – आने वाले युग में, सत्य और शांति, जीवन, आनंद और अनंत विश्राम की प्रचुरता, पुत्रों के रूप में दत्तक ग्रहण और स्वर्ग के राज्य का उत्तराधिकार आपके हृदयों में प्रकाशित होगा: क्योंकि आपने इन चीज़ों को इतनी बुद्धिमानी से, इतनी प्रशंसनीय और इतनी दैवीय रूप से खोजा है और खोजना जारी रखा है – संसार और संसार में जो कुछ भी है उसे त्यागकर, माता-पिता से मुंह मोड़कर, भाइयों, रिश्तेदारों, मित्रों और परिचितों को, अपने नगरों, गांवों, खेतों, घरों और अपनी जन्मभूमि को पीछे छोड़कर, और एकमात्र परमेश्वर, महिमा के प्रभु और राजा, भले और परम धन्य स्वामी से चिपके रहकर, उनके लिए परिश्रम करते हुए, उनके सामने खड़े होकर, उनकी सेवा करते हुए, उसकी स्तुति में अनवरत गीत गाते हुए; और आपके मन में न तो पिता-माता का विचार है, न पत्नी-बच्चों की चिंता, न पुरुष और महिला सेवकों की परवाह, न धन-संपत्ति को लेकर कोई फिक्र, न पद-प्रतिष्ठा और भेदभाव को लेकर कोई विवाद, न भव्य दावतों और चमचमाती मदिरा में कोई मग्नता, और न ही किसी अन्य सांसारिक सुख में कोई रुचि – न तो किसी सांसारिक और क्षणिक चीज़ के लिए, बल्कि केवल परमेश्वर को भाने वाले जीवन और स्वर्ग में प्रतिज्ञा की गई अनंत आशीषों की विरासत के लिए। तो क्या यह उचित नहीं है कि परमेश्वर आपसे प्रेम करे? क्या यह उचित नहीं है कि वह आपको अपना संतान कहे? क्या यह उचित नहीं है कि उस दिन वह आपसे कहे: *'आओ, हे मेरे पिता के धन्य लोगों, संसार की नींव पड़ने से पहले से तुम्हारे लिए तैयार की गई विरासत प्राप्त करो'*? ऐसे हैं आपके कर्म, ऐसी हैं आपकी आकांक्षाएँ, ऐसी हैं आपकी आशाएँ! – इसलिए मैं फिर से कहता हूँ: *'सदा आनन्दित रहो'*।

143. वे तपस्वी जीवन की तुलना अखाड़े में एक दौड़ से करते हैं, और इस दौड़ को सफलतापूर्वक पूरा करने और पुरस्कार प्राप्त करने के लिए विस्तृत निर्देश देते हैं

143. वे तपस्वी जीवन की तुलना स्टेडियम में एक दौड़ से करते हैं, और इस दौड़ को सफलतापूर्वक पूरा करने और पुरस्कार प्राप्त करने के लिए विस्तृत निर्देश देते हैं। [2, 76] हमारा आध्यात्मिक संघर्ष अखाड़े में एक दौड़ की तरह है, जैसा कि संत पौलुस ने इंगित किया (1 कुरिन्थियों 9:24)। लेकिन उस संदर्भ में, दौड़ एक छोटी सी जगह और थोड़े समय के लिए सीमित है। हालाँकि, हमारे आध्यात्मिक संघर्ष में, रास्ता पृथ्वी से स्वर्ग तक फैला हुआ है, और समय की अवधि एक पूरा जीवनकाल है, जिसके अंत में विजेताओं को मुकुट प्रदान किए जाते हैं। हमारी प्रतियोगिता को हजारों और अनगिनित पवित्र स्वर्गदूत देखते हैं – सभी के प्रभु, अपनी महिमा के अगम्य सिंहासन पर विराजमान, इस प्रतियोगिता के आयोजक के रूप में – और हमारे प्रतिद्वंद्वी दुष्ट राक्षस हैं, जो हर संभव तरीके से हमारे मार्ग में बाधाएँ डालने, हमें गिराने और हमें नष्ट करने का प्रयास करते हैं। – इसे देखते हुए, आप स्वयं देख सकते हैं कि हमें कितना सतर्क और सावधान, परिश्रमी और अथक होना चाहिए, ताकि हम न केवल दौड़ की अच्छी शुरुआत करें, बल्कि उसे पूरा भी कर सकें। केवल शुरुआत करने से हमें कोई लाभ नहीं होगा जब तक कि हम युवा जोश और पुरुषार्थी दृढ़ता के साथ आगे न बढ़ें; फिर भी, इसका यह मतलब अभी भी नहीं है कि हम विजयी होंगे, जब तक कि हम उसी उत्साह और दृढ़ संकल्प के साथ मृत्यु तक डटे न रहें, भले ही हमारा जीवन बहुत लंबा क्यों न हो जाए। इसलिए, हे भाइयो और पितृजनो, हम बार-बार धैर्य रखें; हम ऊपर से, मानवता से प्रेम करने वाले परमेश्वर से सहायता और शक्ति की खोज करते हुए, और भी आगे बढ़ने का प्रयास करें, ताकि हम अच्छी तरह से धैर्य रखकर निर्धारित रेखा या लक्ष्य तक सफलतापूर्वक पहुँच सकें। परमेश्वर के वचन ने हमारे सामने सबसे भयंकर कृत्यों में से एक रखा है, जो अच्छी दौड़ लगाने और विजयी होने वालों को अकथनीय आनंद और महिमा का वादा करता है, जबकि लापरवाह और असावधान लोगों के लिए सबसे विनाशकारी और भयानक भाग्य की धमकी देता है, जो या तो अपनी जगह से हिलते ही नहीं, या बाधाओं के सामने रुक जाते हैं और जानबूझकर रास्ते से भटक जाते हैं। – *'जिसके सुनने के कान हैं, वह सुने,'* प्रभु कहते हैं। तो फिर, मेरे बच्चों, इसे सुनो और ध्यान दो: जोश के साथ दौड़ो, और चौकस रहो, यह जानते हुए कि धूर्त दुष्टात्माएँ हमेशा हमारे रास्ते में खड़ी होने और हमारे सामने एक ठोकर का पत्थर रखने के लिए तैयार रहती हैं। जान लो कि कोई भी तब तक अच्छी सेवा नहीं कर सकता जब तक वह स्वयं को उन सभी चीजों से मुक्त नहीं कर लेता जो उसे बोझिल करती हैं, और केवल विश्वास का कवच धारण नहीं कर लेता – जिससे मेरा तात्पर्य केवल सभी बाहरी संपत्तियों का त्याग ही नहीं, बल्कि सांसारिक विचारों और इच्छाओं की आंतरिक विविधता को भी दूर करना है। हमारे संघर्ष में, कोई भी तब तक सफल नहीं हो सकता जब तक कि वह अपने शरीर को थोड़े भोजन और पानी से संतुष्ट रहने

का प्रशिक्षण न दे; जब तक कि वह तेल के बजाय, दृढ़ता और अथक धैर्य से स्वयं को न लेप करे; जब तक कि वह, जैसे कि यह शारीरिक प्रशिक्षण का एक कोर्स हो, स्कीमा लेने से पहले आवश्यक परीक्षणों और अभ्यासों से न गुज़रे। हालांकि, इस यात्रा के दौरान, किसी को भी अपने साथी तपस्वियों को बाधित नहीं करना चाहिए, न ही उनसे ईर्ष्या करनी चाहिए, न ही उनकी बदनामी करनी चाहिए; बल्कि मन और आँखें 'कैसे पाठ्यक्रम के अंत तक सफलतापूर्वक पहुँचा जाए' इस पर टिकी रहनी चाहिए, प्रयास में प्रयास और उत्साह में उत्साह जोड़ते हुए, और प्रेरणा में प्रेरणा जोड़ते हुए, न तो दाईं ओर और न ही बाईं ओर देखते हुए, प्रशंसा की परवाह किए बिना, और न ही घमंड में बहकर, न ही थकान, बाधाओं और असफलताओं के सामने हतोत्साहित हों, न ही ठोकरों से निराश हों, ताकि इस प्रकार ईश्वरीय, विनम्र, भाईचारे और सच्चाई के साथ सभी बातों को पूरा करने पर, इस मार्ग को सफलतापूर्वक पूरा करने के बाद हम अपने प्रभु से वादा किए गए पुरस्कार को प्राप्त करने के योग्य माने जाएँ।

144. हम हर सद्गुण के लिए उत्साही हों, और हर बुराई से सावधान रहें, विशेष रूप से उस बुराई से जो अच्छी प्रतीत होती है

144. 1) हम प्रत्येक सद्गुण के लिए उत्साही हों, और सभी बुराइयों से सावधान रहें, विशेषकर उस बुराई से जो अच्छी प्रतीत होती है। – 2) शत्रु के कई जाल हैं। उन्हें पहचानने का सबसे अच्छा साधन अपने विचारों की जांच करना है। – 3) हर जुनून के खिलाफ खुद को उसके विपरीत से लड़कर लैस करना चाहिए। ईर्ष्या से लड़ने की विधि को एक उदाहरण के रूप में प्रस्तुत किया गया है। – 4) हमें सभी चीजों में उचित व्यवहार करने के लिए प्रेरित किया जाता है। [2, 77]

1. आओ, सभी के सामान्य कल्याण की इच्छा से प्रेरित होकर; आइए हम मोक्ष के लिए सबसे उत्कट उत्साह अपनाएं; आइए हम सभी उपयुक्त कार्य करें, जो सही है उसकी इच्छा करें, और जो लाभदायक है उसकी खोज करें— युवा और बूढ़े, नौसिखिए और बुजुर्ग समान रूप से; आओ हम स्वयं को देह और आत्मा की हर अशुद्धि से शुद्ध करें, आओ हम स्वयं को चुनाव के पात्र बनाएं, आत्मा में पवित्रता का निर्माण करें, पाप के अवसरों से बचें, अहंकार, अवज्ञा, इंद्रिय-काम, को अनुमति न दें, कामुकता, और स्वयं को गुणों – विनम्रता, आज्ञाकारिता, पवित्रता, और भाईचारे के प्रेम – से समृद्ध करने का प्रयास करें; आओ हम अपने हृदयों से देह संबंधी और कामुक प्रवृत्तियों को दूर फेंक दें, और उन्हें बढ़ावा देने वाले किसी भी संबंध को समाप्त कर दें, न केवल अपने बाहर वालों के साथ बल्कि अपने भीतर भी - मेरा मतलब यह है कि हमें एक भाई से दूसरे भाई से अधिक प्रेम नहीं करना चाहिए: क्योंकि ऐसा प्रेम कपटपूर्ण और परमेश्वर के लिए घृणित है; बाहरी रूप से यह भाईचारे जैसा दिखता है, लेकिन वास्तव में यह शैतानी है।

२. आप जानते हैं कि शैतान के कितने जाल हैं और उसके जाल कितने जटिल हैं – और यह कि कोई भी उन से तब तक मुक्त नहीं हो सकता जब तक कि वह अपने आध्यात्मिक पिता के प्रति विश्वास, विनम्रता और आज्ञाकारिता के साथ, अपने विचारों और इच्छाओं का इक़रार न करे। जो इस मार्ग पर नहीं चलते हैं, वे गिर जाते हैं, और गिर चुके हैं, जैसा कि हम पढ़ते हैं; लेकिन जो इस नियम का पालन करते हैं, वे संसार में चमकते दीपक बन गए हैं, पाप और शैतान के अंधकार से बच निकले हैं, और अपनी इच्छाओं को वश में करके विजय प्राप्त की है।

३. इसलिये मैं तुम्हें हमारे प्रभु यीशु मसीह के प्रेम के वश में आकर विनती करता हूँ, कि तुम अपने उद्धार के लिये बुद्धिमान हो। जो कोई भी किसी जुनून से पीड़ित है, उसे उसके विरुद्ध संघर्ष करना चाहिए—उदाहरण के लिए, ईर्ष्या के विरुद्ध संघर्ष—अर्थात्, इस संसार की क्षणिक महिमा से घृणा—क्योंकि यह जुनून किसी तरह से अपने पड़ोसी से श्रेष्ठ दिखने की इच्छा से उत्पन्न होता है: चाहे वह मन की प्रफुल्लता में हो, या मधुर भजन-गायन में, या सुखद पठन में, या किसी अन्य क्षमता में, चाहे वह आध्यात्मिक हो या शारीरिक; और एक बार प्रज्वलित हो जाने पर, यह धीमी आग की तरह जलता है, जो हमें थका देता है और नष्ट कर देता है। लेकिन चूँकि हम एक-दूसरे के अंग हैं—क्योंकि हम सभी एक ही शरीर हैं—तो हम एक-दूसरे के साथ आनन्द मनाएँ, और उन सभी बातों को अपना मानें जो दूसरों को विशिष्ट बनाती हैं; क्योंकि जब एक व्यक्ति एक बात से विशिष्ट होता है, दूसरा दूसरी बात से, और तीसरा किसी और बात से, फिर भी वे सभी भाईचारे का एक ही शरीर हैं, तो इन सभी बातों के द्वारा भाईचारा विशिष्ट और सर्व-परिपूर्ण हो जाता है, जिसका सम्मान प्रत्येक तक फैलता है: एक मधुर स्वर में गाता है, जबकि आप ऊँचे स्वर में गाते हैं; एक स्पष्ट रूप से पढ़ता है, जबकि आप जो पढ़ा जाता है उसे जल्दी समझ लेते हैं; एक अधिक चतुर है, जबकि आप मामलों को संभालने में अधिक सक्षम हैं; एक अन्य कार्यों को व्यवस्थित करने में और भी अधिक उपयोगी है, जबकि आप आज्ञा मानने के लिए अधिक इच्छुक हैं; और बाद वाला पहले वाले से कहीं बेहतर है, क्योंकि जो वास्तव में कुछ होने से पहले कुछ प्रतीत होता है, वह कुछ भी नहीं है। धन्य और अति सुन्दर विनम्रता और आज्ञाकारिता, दया और सरलता की तुलना में स्वर-ताल, या पठन, या गति, या सुलेख, या संगीत, या क्या चीज़ है, नम्रता और सौम्यता

से पहले, दया और धैर्य से पहले, ईश्वर के प्रति प्रेम और सक्रिय प्रार्थना से पहले, और अन्य गुणों से पहले, जिनकी प्राप्ति इच्छा और प्रयास की बात है—भले ही कोई निःशब्द हो, गाने में असमर्थ हो, एक खराब पाठक हो, हकला हो, टेढ़ी आँखों वाला हो, चेहरे से बदसूरत हो, या लंगड़ा हो। इस प्रकार हमारे कृपालु ईश्वर ने सद्गुण के भले को हम सभी के लिए आसानी से प्राप्त करने योग्य और सुलभ बना दिया है, इसे शारीरिक लाभों पर नहीं बल्कि आत्मा की प्रवृत्तियों पर निर्भर करते हुए, जिसमें यह बोया जाता है, बढ़ता है और पूर्णता प्राप्त करता है।

४. जो कुछ हमारे पास है, उससे हम संतुष्ट रहें, और हमारे प्रत्येक भाई के पास जो कुछ भी है, उसमें भी हम आनंदित हों, एक-दूसरे के साथ मिलकर रहें और हर प्रकार के अनुशासन के साथ परमेश्वर के अनुसार जीवन जिएँ। भाइयों, आप देखते हैं कि हमारी संख्या बढ़ रही है; और यह आवश्यक है कि हमारे बीच सब कुछ सुव्यवस्थित रहे: क्योंकि यदि सबसे छोटी सी चीज़ भी अपनी उचित व्यवस्था से भटक जाए, तो भाईचारे का पूरा शरीर हिल जाता है और अस्थिर हो जाता है, और अपनी सद्गुण की सुंदरता खो देता है, जैसा कि और हर दूसरी समुदाय में होता है। हमारे लिए, जो हमारे प्रभु यीशु मसीह के नाम में एकता में एकत्रित हुए हैं और स्वर्गदूतों के वास के क्रम में जीते हैं, सभी बातों में पूर्ण व्यवस्था एक तात्कालिक आवश्यकता है – जिससे मेरा तात्पर्य यह है कि हमें गाना और प्रार्थना करना चाहिए, खड़ा होना और स्थान बदलना चाहिए, बैठना और उठना चाहिए, सोना और जागना, उतरना और चढ़ना, चुप रहना और बोलना, खाना और पीना, प्रवेश करना और निकलना, पूछना और उत्तर देना, इकट्ठा होना और बिखरना, खोजना और देना, सेवा करना और सेवा पाना, रखना और थामना, कपड़े पहनना और उतारना, अपने जूते पहनना और उतारना—यह सब हर दिन हमारे बीच स्पष्ट रूप से होता है। जब इन सब में व्यवस्था बनी रहती है, तो हमारा संपूर्ण भाईचारा एक शांत सागर की तरह प्रतीत होता है, जो गतिमान तो है, परन्तु उसकी लहरें कोमल हैं, मानो पवित्र आत्मा द्वारा तरंगित हों। लेकिन जब, लापरवाही के कारण, कुछ अव्यवस्था पैदा हो जाती है, तो यह, मानो, तेज हवाओं और तूफानों से उथल-पुथल हो जाता है, और लहरें उछलती और उफनती हैं। क्या यह वही नहीं है जो हम तब देखते हैं जब आपके बीच शोर, चिल्लाहट, हँसी और बकबक होती है - जैसा कि हाल ही में पवित्र अगियास्मा के वितरण के दौरान और भोजनशाला से निकलते समय हुआ, जब चारों डीन बड़ी मुश्किल से आपके बीच उचित व्यवस्था बहाल कर पाए? - ऐसा नहीं, मेरे बच्चों और भाइयों, ऐसा नहीं। आप जानते हैं कि परमेश्वर की इच्छा के बारे में क्या कहा गया है: कि वह केवल *'अच्छी'* ही नहीं, बल्कि *'परिपूर्ण'* और *'मनभावन'* भी है (रोमियों 12:2), जो बहुतों के भले के लिए है। – मैंने यह बात, हालाँकि, आपको फटकार लगाने के लिए नहीं, बल्कि पहले हुई घटनाओं की याद दिलाने के लिए कही है, ताकि भविष्य में ऐसी घटनाओं से बचा जा सके। शान्ति के प्रभु और सब प्रकार के आराम के परमेश्वर, जो स्वर्ग और पृथ्वी पर सभ वस्तुओं को पूर्ण व्यवस्था में धारण किए हुए है, तुम्हें हर एक भले काम और यत्न के लिए, हर एक मन की शान्ति और एकता के लिए, हर एक व्यवस्था और शान्ति के लिए, एक दूसरे के प्रति सच्चे प्रेम में, सामर्थ्य और बल प्रदान करे, ताकि उसकी प्रकट होने के दिन हम संतों की संगति और पवित्र लोगों की सेना में पाए जाएँ, उन सभी संतों के साथ जिन्होंने प्राचीन काल से उसे प्रसन्न किया है।

145. सामुदायिक आज्ञाकारिता में धैर्य का जीवन; यही सच्ची शहादत है

145. सामुदायिक संन्यास जीवन में धैर्य का जीवन; यही सच्ची शहादत है। [2, 78] दुष्ट मिलीभगत, अहंकारी स्व-इच्छा और मठ के विधान के हानिकारक उल्लंघन से स्वयं की रक्षा करें, और सभी बातों में पवित्र पिताओं द्वारा हमें सौंपे गए नियम के अनुरूप बने रहें; क्योंकि जो हमारे लिए स्थापित किया गया है, वह बेतरतीब ढंग से नहीं, बल्कि युगों-युगों से, बहुत परिश्रम और पसीने के साथ, सभी चीजों का परीक्षण करने के बाद स्थापित किया गया है; और जो स्थापित किया गया है, उसे हमारे दैवीय जीवन के आवश्यकताओं और सार के अनुसार, और उन लोगों का खंडन करने के लिए स्थापित किया गया है जो प्रभु की आज्ञाओं की अलग तरह से व्याख्या करते हैं। तब, अपने अच्छे काम में लगे रहो और प्रभु के मार्ग पर अंत तक चलो, स्वयं को नम्रता और धैर्य के तेल से अभिषिक्त करते हुए, और हर प्रकार के तपस्या के कष्टों को सहते हुए, जिसके लिए अनंत आशीर्वादों का विशाल आनंद तैयार किया गया है। तो, ये कठिनाइयाँ क्या हैं? वे ही जिनका आप वास्तव में हर दिन सामना करते हैं: प्रहरों में जागना और भजन-गायन, शारीरिक श्रम, संयम से भोजन-पान, एक के बाद दूसरे कर्तव्य का क्रमबद्ध पालन, चर्च में खड़े होने और जुलूस के क्रम में शिष्टाचार, चाल-ढाल में, वस्त्रों में, जूते-चप्पलों में, सिर पर पहनने वाले आवरण में – अभावों से उत्पन्न दुख, अनदेखा किए जाने से, तिरस्कार से और इस प्रकार की सभी चीजों से। और कई पवित्र पिताओं ने सही ही इसकी गवाही दी है—विशेष रूप से संत बेसिल द ग्रेट गवाही देते हैं—कि आज्ञाकारिता की अवस्था ही सच्ची शहादत है। – लेकिन विचार करें, इससे हमें क्या लाभ होता है? और इसके लिए हमें क्या इनाम मिलता है? – धार्मिकता के न मुरझाने वाले मुकुट, स्वर्ग के राज्य का उत्तराधिकार, पुत्रों के रूप में गोद लेना, अक्षयत्व, अमरत्व, और कल्पना से परे हर अन्य

आनंद। ऐसे वादों को पाकर, मेरे भाइयो, अपने सामने पड़े तपस्या के श्रम को बार-बार सहन करो, न तो कभी-कभार कुछ लोगों के ठोकर खाने से हतोत्साहति होओ, और न ही उन कठनिाइयों और दुखों से हताश होओ जनिका तुम सामना करते हो, परमेश्वर के अनुसार हमारे जीवन के लएि: क्योंकि यदि हम यहाँ शोक नहीं करते, तो उस दनि हम आनन्दति नहीं होंगे; यदि हम यहाँ कष्ट और वलिाप नहीं सहते, तो आने वाले युग में हमें वशिालता और आनन्द नहीं मलिेगा। लेकनि हम यहाँ जतिना अधकि शोक और वलिाप करते हैं, जतिना अधकि हम वजिय प्राप्त करते हैं और पीड़ति होते हैं, उतना ही बड़ा सांत्वना हमें वहाँ मलिेगी: दुख के बदले हमें आनंद मलिेगा, गरीबी के बदले, धन-संपत्ति; सीमति सांसारकि संपत्ति के बजाय – स्वर्ग में अनगनित खजाने; शारीरकि बीमारयिों के बजाय, आध्यात्मकि कल्याण; दुनयि‍ा को पीछे छोड़ने के बजाय, प्रभु का स्वयं को बुलावा: क्योंकि हमारे लएि यह कैसा होगा, और हमारी खुशी कतिनी बड़ी होगी, जब हम उस धन्य आवाज़ को पुकारते और कहते हुए सुनेंगे: *'आओ, हे मेरे पतिा के धन्य जन, और अपनी वह वरिासत ग्रहण करो जो संसार की नींव डाले से तुम्हारे लएि तैयार की गई है'* (मत्ती 25:25)। क्यों, यदि मसीह के प्रेम के लएि प्रतदिनि मरना हमसे अपेक्षति होता, तो क्या हम इसे प्राथमकिता नहीं देते और स्वयं को पीटे जाने, जलाए जाने, टुकड़े-टुकड़े कएि जाने, और हर प्रकार की यातनाओं को सहने के लएि प्रस्तुत नहीं करते, ठीक वैसे ही जैसे पवत्रि शहीदों ने सहे? क्योंकि ऐसा नहीं था कि उन्हें एक चीज़ से प्रेम करने और उसे संजोने के लएि बुलाया गया था, और दूसरी चीज़ हमसे; फरि भी हमारा एक ही प्रयास और एक ही आकांक्षा है, क्योंकि स्वभाव से हम एक हैं—ईश्वर की सृष्टि, जन्हिें एक ही उद्देश्य के लएि इस संसार में भेजा गया है: उसके पवत्रि आज्ञाओं के पालन द्वारा ईश्वर की महमिा करना; जबकि अंग-भंग, रक्तपात, और अत्याचारयिों के यातनाएँ हमेशा और हर जगह नहीं हुई हैं। हमें आज्ञाकारति‍ा में एक उत्कृष्ट जीवन के इस सच्चे पराक्रम को आरंभ करने के योग्य समझा गया है, और हम शहादत को एक अलग तरीके से अपनाते हैं: अंगों के कटने के बजाय, हम अपनी इच्छा को काटते हैं; रक्तपात के बजाय, हम पापपूर्ण वचिारों और इच्छाओं को बाहर नकिालते हैं; अत्याचारी यातनाओं के बजाय, हम राक्षसों के हमलों और संसार की शत्रुता को सहते हैं; यही कारण है कि हम व्यर्थ की आशा के साथ नहीं, बल्कि इस आशा के साथ कि हम भवषि्य के युग में पवत्रि शहीदों के साथ भाग लेंगे।

146. भूकंप के अवसर पर, आप हमें अंतमि दनि स्वर्ग और पृथ्वी के कांपने की याद दलिाते हैं और इसके अनुरूप नर्दिेश देते हैं

146. भूकंप के अवसर पर, आप हमें अंतमि दनि पर स्वर्ग और पृथ्वी के कांपने की याद दलिाते हैं और इसके अनुरूप नर्दिेश देते हैं। [2, 79] कल हमने जो भूकंप अनुभव कयिा, उसके बाद हमारे लएि इस घटना पर चर्चा करने से अधकि उपयुक्त कुछ भी नहीं है, अर्थात्: इसका कारण क्या है और यह कसि उद्देश्य से होता है? ग्रीकों में, कुछ एक बात कहते हैं, तो कुछ दूसरी; परन्तु दवि्य दाऊद हमें यह समझाते हैं जब वे परमेश्वर के वषिय में कहते हैं: *'वह पृथ्वी पर दृष्टि डालता है और उसे काँपा देता है; वह पर्वतों को छूता है और वे धुआँ देते हैं'* (भजन संहति‍ा 103:32)। जैसे ही कोई स्वामी एक दास पर क्रोधति दृष्टि डालता है, तो दास काँप उठता है: वैसे ही सर्व का सच्चा प्रभु और सृष्टकिर्ता, जनिके सामने सभी प्राणी दास और दासयिों के रूप में खड़े हैं, जब वे हमारे पापों के लएि हम पर अपना धार्मकि क्रोध दखिाना चाहते हैं, अपनी सर्व-दर्ष्टा शक्ति की दृष्टि से वह अपनी सृष्टि पर भयभीत करने वाली दृष्टि डालता है और *'उन्हें काँपाने लगता है'*, ताकि हम, स्वयं पर क्रोध लाने वाले सेवकों की तरह भय और कम्पन से भरकर, स्वयं को शुद्ध रखें और उसकी आज्ञाओं के पालन की ओर मुड़ें। – हे मेरे भातयिो, देखो, उसकी शक्ति कतिनी भयानक है! यही है उसकी प्रचंड क्रोध की अभव्यिक्ति, और उसके प्रकोप का प्रचंड क्रोध! और यदि वर्तमान इतना और इतना महान है, तो सभी चीजों के अंत में भवषि्य कैसा होगा? क्योंकि वह स्वयं एक धमकी के साथ कहते हैं: *'मैं फरि से आकाश और पृथ्वी को हलिा दूँगा'* (हग्गै 2:7), जो उस घटना की असाधारण प्रकृति को दर्शाता है। कैसा भय देखा जाएगा, और कैसी कम्पन होगी, जब पृथ्वी समय की शुरुआत से मरे हुए सभी को उगल देगी, जब आकाश एक पट्टी की तरह लपेटा जाएगा, तारे गरिेंगे, स्वर्गीय पंडि रूपांतरति हो जाएंगे, और महादूत की तुरही की ध्वनि पृथ्वी पर रहने वालों सभी पर गूँजेगी, जब हमारे परमेश्वर स्वयं महमिा में आएँगे, हजारों-हजारों और अनगनित स्वर्गदूतों, महादूतों और स्वर्गीय शक्तयिों के उनके सामने मार्च करते हुए, जब सहिांसन स्थापति कएि जाएँगे, न्याय का सहिांसन स्थापति कयिा जाएगा, और अक्षय न्यायाधीश और प्रभु सब कुछ उजागर कर देंगे जो छपिा हुआ है, जो हमने अनुभव कयिा है। जब, पलक झपकते ही इन सब के पूरा होने पर, महान और भयानक न्याय की घोषणा की जाती है, जो धर्मी लोगों को स्वर्ग के राज्य और अनंत जीवन में बुलाता है, जबकि दुष्टों को अनंत आग में, घोर अंधकार में, नरक की भयानक खाई में भेजता है, उदास तारतारस में, कभी न सोने वाले कीड़ों के पास, दांत पीसने और अन्य सभी भयानक यातनाओं के पास? हे भाइयों, यह सब कौन सहन कर सकता है? कौन ऐसे भय और भयावहता को सहन कर

सकता है! इस प्रचंड और चेतना-समाप्त कर देने वाली घटना के सामने कौन दृढ़ खड़ा रह सकता है! आकाश को फाटते, पृथ्वी को काँपते, स्वर्गदूतों की भीड़ और स्वयं प्रभु, परमेश्वर को, पूरी पृथ्वी का न्याय करने के लिए बादलों पर आते देखना!!! – फिर भी यह लंबे समय से प्रतीक्षित घटना दूर नहीं, बल्कि निकट है: न्यायी द्वार पर खड़े हैं! – देखो, वर आ रहे हैं! उनके स्वागत के लिए निकल पड़ो! – परन्तु यदि हमारे पास पवित्रता के उज्ज्वल दीपक और दया व प्रेम के पर्याप्त तेल हों, तो हम धन्य हैं; हम वर से आनन्दपूर्वक मिलेंगे और उनके महल में प्रवेश करेंगे। लेकिन यदि ऐसा नहीं है, तो हमें उन दरवाजों से दूर कर दिया जाएगा, जो हमारे खटखटाने पर हमारे लिए नहीं खुलेंगे, क्योंकि हमने दुष्टता की है, झपकी ली है और सो गए हैं, और खुद को तैयार न साबित किया है। – इसलिए, ऐसा न हो कि यह हम पर आए, हम जो सो रहे हैं, लापरवाही की नींद से जागें; हम जो सुस्त हैं, निराशा से उठें; आओ हम लज्जास्पद विचारों से मदहोश लोगों को होश में लाएँ, आओ हम अपनी आत्मा को शुद्ध करें, जो हमारी अपनी अनुचित इच्छाओं से कलंकित हो गई है, और आओ हम अपने हृदयों को दृढ़ विश्वास से मजबूत करें, क्योंकि वे हृदय द्वचित्तिता, चंचलता और वासना से हिल गए हैं। तो, हम जो पहले से ही अच्छे हैं, और भी बेहतर बनें; हम जो पहले से ही प्रबुद्ध हैं, और भी अधिक प्रबुद्ध बनें; हम जो पहले से ही शुद्ध हैं, और भी अधिक शुद्ध बनें; हम जो पहले से ही उत्साही हैं, और भी अधिक उत्साही बनें; हम जो पहले से ही सदाचारी हैं, भलाई करने से और भी अधिक प्रेम करें; हम जो पहले से ही विनम्र बुद्धिमान हैं, और भी अधिक विनम्र और बुद्धिमान बनें; हम जो पहले से ही आज्ञाकारी हैं, और भी अधिक आज्ञाकारी बनें; हम सब कुछ भला करेंगे और हर आज्ञा का पालन करेंगे, ताकि हम अपनी आत्माओं के वधू-वर के महल में अनंत आनंद के लिए प्रवेश करने के योग्य सिद्ध हो सकें।

147. हम हर सद्गुण में और अधिक प्रगति करेंगे, पूरी लगन से प्रयास करते हुए और सभी बुराइयों से दूर रहते हुए, और स्वदूतों के जीवन के कर्मों से स्वयं को सजाते हुए, पवित्र पिताओं के उदाहरण का अनुसरण करते हुए और महान वादों की आशा में

147. हम हर सद्गुण में और अधिक प्रगति करेंगे, उत्साही बनेंगे और सभी बुराइयों से दूर रहेंगे, और स्वर्गदूतों के समुदाय के कर्मों से स्वयं को सजाएंगे, पवित्र पिताओं के उदाहरण का अनुसरण करते हुए और महान वादों की आशा में। [2, 80] हम अपने वर्तमान कार्यों से उन कर्मों पर शर्म न लाएं जिन्हें हमने पहले ही पूरा कर लिया है; जैसे कि हमने अभी-अभी ही शुरुआत की हो, आइए हम उत्साहपूर्वक हर कर्तव्य का पालन करें और हर सद्गुण का अभ्यास करें, प्रकाश पर प्रकाश प्राप्त करते हुए और महिमा से महिमा तक बढ़ते हुए: यह सभी बातों में आपके अच्छे आचरण से प्राप्त होता है, जब आप नम्रता के वस्त्र पहनते हैं, आज्ञाकारिता से सुसज्जित होते हैं, सक्रिय प्रेम और कोमलता का प्रदर्शन करते हैं, स्व-इच्छा और आत्म-संतुष्टि से बचते हुए—जिनसे मृत्यु, धोखा, अहंकार और महिमा का प्रेम ( ) उत्पन्न होता है—जिसमें शीघ्र विनाश निहित है, और जिससे वे सभी गिरे हैं जो अनादिकाल से लेकर आज तक आज्ञाकारिता के इस क्षेत्र में गिरे हैं। अब, सभी काँटों, बेर और खरपतवारों से पहले ही शुद्ध हो चुके होकर, फलदायी बनो और एक नया जीवन प्रदर्शित करो, उसमें उन लोगों की अटकलों से कुछ भी शामिल न करो जो ठोकर खा चुके हैं, कहीं तुम भी उसी भाग्य को न भुगतो। सभी बातों में सच्चे और शुद्ध रहो; अपमान, तिरस्कार और गाली-गलौज को प्रसन्न मन से सहो; आप सभी भलाई के लिए संघर्ष में दृढ़ता, आत्म-संयम और धैर्य दिखाएँ: क्योंकि इसमें आज्ञाकारिता में जिए गए जीवन की शहादत निहित है; और जो कोई भी इसे सहन करता है, उसे धार्मिकता का मुकुट प्राप्त होगा। मसीह के लिए प्रेम से जलते हुए और परीक्षाओं और कष्टों द्वारा परखे गए, धैर्य के साथ वह सब कुछ सहन करें जो जो दिन-प्रतिदिन आप पर आते हैं, और हमारे पूर्वजों के वास्तव में स्वर्णिम जीवन का अनुसरण करें, जिसमें हमें कोई अवज्ञा, घमंड, विरोध, अभद्रता, अपमान या कलह नहीं मिलेगा, बल्कि जहाँ पवित्र आत्मा की श्वास के अधीन, शांतिपूर्ण, दैवीय अवस्था का राज है। आप जानते हैं कि जो मैं कह रहा हूँ वह वास्तव में अच्छा है; यदि यह अच्छा है, तो यह वांछनीय भी है; यदि यह वांछनीय है, तो हम इसे क्यों न प्रेम करें, इसकी कामना करें, और इसे प्राप्त करने का प्रयास करें?

148. हमारे भीतर अच्छाई का संचार करना कठिन है, जबकि बुराई को अधिक आसानी से स्वीकार कर लिया जाता है

148. 1) हमारे भीतर अच्छाई का संचार करना कठिन है, जबकि बुराई को अधिक आसानी से स्वीकार कर लिया जाता है। – 2) अच्छाई का मार्ग पहाड़ पर चढ़ने जैसा है, जबकि पाप का मार्ग पहाड़ से उतरने जैसा है। – 3) हमें ऊपर की ओर देखना चाहिए और सांसारिक विचारों में नहीं उतरना चाहिए। – 4) हमारे पास विभिन्न वरदान और विभिन्न विचार हैं; लेकिन हमें अपने उत्साह और परिश्रम के अनुसार अपना इनाम मिलेगा। – 5) आइए हम हर तरह की कष्टों,

असुविधाओं, कठिनाइयों और दुखों को समान भाव से सहन करें; क्योंकि यही करने के लिए हम निकले हैं। लेकिन यह मोक्ष का निश्चित मार्ग है। [2, 31]

५. आमतौर पर ऐसा होता है कि जब कोई पाप की बात करता है, तो एक या दो बार कहने के बाद ही, वे अपने श्रोताओं को बुराई की ओर झुका देते हैं। लेकिन जहाँ तक अच्छाई का सवाल है, उद्धार के बारे में कई बार कहने के बाद भी, मुश्किल से ही किसी का ध्यान या रुचि इसकी ओर आकर्षित होती है। मानव स्वभाव में अच्छाई भरना इतना कठिन है; इसके विपरीत, बुराई को यह बहुत आसानी से स्वीकार कर लेता है।

6. सद्गुण के मार्ग पर चलना पहाड़ चढ़ने जैसा है: इसमें कितनी मेहनत, असुविधा और परेशानी शामिल होती है? इसके विपरीत, पाप का मार्ग पहाड़ से उतरने जैसा है: यह आसान है, और अपनी प्रगति की गति के कारण बाधाएँ दिखाई नहीं देती हैं। इसलिए, सद्गुण के मार्ग पर विशेष देखभाल, मार्गदर्शन और सावधानी की आवश्यकता होती है।

7. यहाँ, यदि हम उतरने के बजाय चढ़ना चाहते हैं, तो मन में सांसारिक या क्षणिक कुछ भी नहीं होना चाहिए, बल्कि केवल वह होना चाहिए जो स्वर्गीय और शाश्वत है। क्योंकि जिस प्रकार कोई ऊँचाई पर चढ़ने वाला, यदि वह नीचे देखे, तो उसे एक प्रकार का अंधकार अनुभव होता है: उसी प्रकार, जो सद्गुण के पथ पर चढ़ते हुए सांसारिक सुखों पर अपना ध्यान केंद्रित करता है, उसकी आत्मा की दृष्टि अंधकारमय हो जाती है। हमें ऊपर देखना चाहिए, क्योंकि वहाँ हमारा सिर – प्रभु मसीह हैं; वहाँ हमारा धन और अनंत जीवन है। चढ़ाई पर चढ़ते हुए हम थकें नहीं, और चढ़ाई की ऊँचाई को देखकर हमारा हौसला न टूटे। हम अपनी शक्ति से अंत तक नहीं पहुँच सकते, लेकिन ईश्वर की सहायता और उनकी मध्यस्थता हमारे समीप हैं।

8. हम इस पथ पर चले हैं और फल-फूल रहे हैं, और हम में से प्रत्येक, अपनी लगन और परिश्रम के अनुसार, अब सद्गुण के किसी न किसी स्तर पर खड़ा है। और हम अपनी शारीरिक बनावट की तुलना में अपनी आध्यात्मिक प्रवृत्तियों में एक-दूसरे से अधिक भिन्न हैं: क्योंकि कोई नम्रता और आज्ञाकारिता को अधिक उत्साह से प्रेम करता है, जबकि कोई कम; या कोई अपने पड़ोसी के प्रति प्रेम के वरदान के लिए विख्यात है, जबकि कोई अन्य कई लोगों की उत्साही देखभाल के लिए, चाहे वह हाथ के काम के माध्यम से हो, या खेतों और घर में काम के माध्यम से हो, या लोगों की जरूरतों को पूरा करने के माध्यम से हो—जैसे, उदाहरण के लिए, व्यवस्थापक, कोषाध्यक्ष, भोजनशाला का परिचारक, जुत्ता बनाने वाला, दर्जी, और अन्य। हम में से प्रत्येक प्रभु के मार्ग पर चलता है, और यह मार्ग हम में से प्रत्येक को अक्षय मुकुटों तक ले जाता है।

९. हम केवल धैर्य और नम्रता से अपने काम की मेहनत, परिश्रम और कठिनाइयों, जागना और उपवास, भजन गाना, साथ ही ठंड, हमारे कपड़ों और जूतों की खराब गुणवत्ता, और अन्य असुविधाओं को सहन करें। ईश्वर मेरी गवाही है कि मैं इस पर उदासीनता से नहीं देखता; मुझे आप पर तरस आता है, मैं आपसे सहानुभूति रखता हूँ, और अपनी पूरी क्षमता से, मैं आप सभी के लिए शांति लाने का प्रयास करता हूँ। लेकिन आप स्वयं देख सकते हैं कि इतने सारे लोगों को कपड़े, जूते और आराम देना कोई छोटा काम नहीं है। – हालाँकि, हम ठीक इसी उद्देश्य से निकले हैं: मसीह के प्रेम के लिए भूखे रहना, प्यासे रहना, नग्न रहना, और गरीबी में जीना, जिसके द्वारा दिव्य प्रेरित स्वयं भूख और प्यास, ठंड और नग्नता, और अन्य अभावों में जीए (2 कुरिन्थियों 11:27); और केवल वही नहीं, बल्कि सभी संतों *ने 'भेड़-बकरियों की खाल पहनकर, दरिद्र, कष्ट-ग्रस्त, दुर्व्यवहारित होकर... जंगलों और पहाड़ों में, गुफाओं और धरती की खोहों में भटकते हुए' जीवन यापन किया* (इब्रानियों 11:37–38)। यदि यही उनकी नियति थी, तो हम, अलग तरह से जीते हुए, उनके समान सम्मान के योग्य कैसे माने जा सकते हैं? हम नहीं मान सकते। लेकिन यदि कोई खुद को सूचीबद्ध कठिनाइयों में से किसी को सहते हुए पाता है, तो उन्हें इस बात की खुशी मनानी चाहिए कि उन्हें संतों के जीवन में एक हिस्सा प्राप्त हुआ है। इसी तरह हर किसी को हर चीज़ को देखना चाहिए और सभी चीज़ों को कृतज्ञता के साथ स्वीकार करना चाहिए, ईश्वर के प्रबंधकों के माध्यम से प्रदान किए गए ईश्वर के उपहारों के रूप में, बिना किसी बड़बड़ाहट या शिकायत के। यदि हम इस प्रकार आचरण करते हैं, तो हे भाइयो, हम धन्य होंगे, क्योंकि इसके द्वारा हमें ऐसी जगह विश्राम मिलेगा जहाँ न तो कोई बीमारी, न परिश्रम, न अभाव और न ही कोई दुख होगा।

149. वह उन लोगों को फटकारता है जो शत्रु के प्रलोभनों के आगे झुक जाते हैं और जो गिर पड़ते हैं, और उन्हें विरोध करने के लिए प्रोत्साहित करता है, और प्रभु की सहायता में आशा देता है।

149. वह उन लोगों को फटकारता है जो शत्रु के सुझावों के आगे झुककर पाप में गिर जाते हैं, और उन्हें ऐसे प्रलोभनों का विरोध करने के लिए प्रोत्साहित करता है, उन्हें प्रभु की सहायता में आशा देता है। [2, 82] एक बार जब लापरवाही जड़ जमा लेती है, तो यह धीरे-धीरे उन लोगों को विनाश की खाई में खींच ले जाती है जो इस पर ध्यान नहीं

देते। जब कोई व्यक्ति अपने कर्तव्यों के कार्यभार को उठाने में कठिनाई महसूस करने लगता है, आज्ञाकारिता के आह्वान का विरोध करता है और उन्हें पूरा करने से कतराता है – तब शत्रु उन्हें दुष्ट कर्म करने के लिए सुझाव और उकसावे देता है, और वे, इसके आगे झुककर, न केवल स्वयं गिरते हैं, बल्कि दूसरों को भी उसी मार्ग पर भटका देते हैं। हाय! क्या हो रहा है? – शैतान कैसे विजय प्राप्त करता है? हम अपने रक्षकों, पवित्र स्वर्गदूतों को शर्मिंदा कैसे करते हैं? हम स्वयं को विरोधी के पक्ष में कैसे डालते हैं, जिससे हमारे महान ईश्वर, अच्छे चरवाहे, जिन्हें हमने क्रूस और मृत्यु के द्वारा प्रायश्चित के लिए स्वयं अर्पित किया, उनकी निन्दा होती है? हम उसकी ओर कैसे देखेंगे? हम उसके क्रोध को कैसे सहेंगे? हमारी दुष्टता के अनुरूप कोई यातना नहीं है। – अन्य स्वर्ग के राज्य को प्राप्त करते हैं, जबकि हम आत्मा के विनाशक द्वारा उठा लिए जाते हैं। अन्य शहीदों का दृढ़ धैर्य प्रदर्शित करते हैं, जबकि हम बहिष्कृतों के पतन के अधीन हैं। अन्य स्वर्गों में ऊँचा उठाए जाते हैं, जबकि हम पृथ्वी की गहराइयों में फेंके जाते हैं। अन्य सद्गुणों की सीढ़ियाँ चढ़ने का मन बनाते हैं, जबकि हम अपने लिए विनाश की सीढ़ियों पर अवरोहण की व्यवस्था करते हैं। क्या हम कभी होश में नहीं आएँगे? क्या हम कभी जागेंगे नहीं? मैं आपसे विनती करता हूँ, आइए हम इस कार्य में शीघ्रता करें, आइए हम अपने श्रम में लग जाएँ, आइए हम परमेश्वर के मार्ग पर चलें, पतन के कारणों से बचते हुए और जो कुछ भी दैवी और धार्मिक है, उसे करते हुए: निःसंदेह आज्ञाकारिता, शारीरिक श्रम में अथक परिश्रम, एक विनम्र और बुद्धिमानी भरा विश्वास, ताकि सब कुछ—चाहे किया गया हो या सोचा गया हो—स्वीकारोक्ति में उजागर हो जाए; अशुद्ध विचारों को तुरंत खारिज करना; और, शैतान के पहले ही हमले पर, यह कहना: 'मेरी दृष्टि से दूर हो जा, शैतान'—चाहे वह किसी को कामवासना के सुखों की ओर लुभाए, या धर्मत्याग के लिए उकसाए, या किसी को आलस्य की ओर झुकाए, या अधीरता पैदा करे, या विश्वास के विरुद्ध विरोध भड़काए। क्योंकि वह हमेशा और हर जगह घात लगाता है, जाल बिछाता है, और गड्ढे खोदता है; वह कभी नहीं सोता, न ही कभी निष्क्रिय रहता है; वह न तो भोजन, न पेय, और न ही कुछ और चाहता है; दिन हो या रात, उसका एक ही काम है - हमारी आत्माओं को नष्ट करना। हालाँकि, उसके खिलाफ हमारा पहला और सबसे बड़ा हथियार ईश्वर की मदद और मध्यस्थता से विचारों का विवेक है। इसलिए, हम सुस्त न हों और खुद को गिरावट के लिए उजागर न करें। चाहे वह पाप की शक्ति में महान हो, चाहे वह हमें बुराई की ओर लुभाने के अपने तरीकों में चालाक हो, चाहे वह स्वभाव से दुर्भावनापूर्ण हो और हमारे विनाश का एकमात्र आविष्कारक और कर्ता हो - फिर भी हमें उससे नहीं डरना चाहिए: क्योंकि मसीह हमारे परमेश्वर के हमारे शरीर को धारण करने और मनुष्य बनने के बाद, वह शक्तिहीन हो गया, और हम गाते हैं: *'शत्रु के हथियार पूरी तरह से समाप्त हो गए हैं'* (भजन संहिता 9:7), क्योंकि जिस प्रभु ने उस पर विजय प्राप्त की है, उसने हमें उसके सिर पर पैर रखने की शक्ति दी है। विश्वास से दृढ़ होकर, हम उसे एक शक्तिहीन गौरैया, या किसी तुच्छ रेंगने वाले जीव से अधिक कुछ न समझें, जिसे पैरों तले रौंदा गया हो।

150. यह निर्धारित करके कि हम कौन हैं, हम यहाँ क्यों हैं, हम कहाँ हैं, और हम कहाँ जाएँगे, यह अंतिम न्याय के निर्णय और दाहिने तथा बाएँ खड़े लोगों की नियति को दर्शाता है, और एक शिक्षाप्रद सबक सिखाता है

150. यह निर्धारित करके कि हम कौन हैं, हमारा अस्तित्व क्यों है, हम कहाँ हैं, और हम कहाँ जाएँगे, यह अंतिम न्याय के निर्णय और दाहिने तथा बाएँ वालों की नियति को दर्शाता है, और एक शिक्षाप्रद सबक सिखाता है। [2, 83] मैं आपको याद दिलाता हूँ: आइए हम विचार करें, तर्क करें और मनन करें – हम कौन हैं, हमारा अस्तित्व क्यों है, हम कहाँ हैं, और हम कहाँ जाएँगे? – हम ईश्वर की सृष्टि हैं, उनके हाथों का काम, उनकी प्रतिमा और समानता में बनाए गए हैं, जिन्हें स्वर्ग के अधीन सभी चीजों पर अधिकार दिया गया है; क्योंकि जैसा लिखा है, उन्होंने *'सभी चीजों को हमारे पैरों के नीचे रख दिया है'* (भजन संहिता 8:7)। हम स्वर्गदूतों से दूसरे स्थान पर हैं, ठीक वैसे ही जैसे वे स्वभाव से पहले स्थान पर हैं। – हम क्यों मौजूद हैं? – स्वर्गदूतों की तरह, सभी आज्ञाओं का विश्वासपूर्वक पालन करके, उसकी शक्ति की महिमा के लिए, और किसी भी कारण से नहीं – क्योंकि हम *'स्वर्गदूतों से थोड़े ही कम हैं'* (भजन संहिता 8:6), और जब हम क्षय को उतारकर अक्षयत्व धारण करेंगे तो हम उनसे भी कम होंगे। – हम कहाँ हैं? निर्वासन की एक जगह पर, हमारे पूर्वज की लापरवाही, अवज्ञा और सुख-भोग के प्रेम के कारण, जो हम, उनके वंशजों तक पहुँचा है: जिसके लिए हमें रोना और विलाप करना चाहिए, शोक मनाना चाहिए, इस पर चिंतन करते हुए कि हमें किस महिमामय निवास से, किस दैवीय आवास से, किस आनंदमय, स्वर्गीय सांत्वना से निष्कासित कर दिया गया है। 'हम कहाँ जाएँगे?' – परलोक की ओर, स्वर्गदूतों के त्रि-धन्य निवास में, प्रकाश की भूमि में, उस जीवन में जो कभी समाप्त नहीं होता; क्योंकि भयानक अंतिम न्याय के दिन, सर्व के न्यायाधीश और परमेश्वर, महिमा के सिंहासन पर विराजमान, पलक झपकते ही सभी चीजों का न्याय करेंगे और प्रत्येक व्यक्ति को उनके कर्मों के अनुसार पुरस्कृत करेंगे: जो लोग उसकी आज्ञाओं का पालन करते हैं, उन्हें वह अपने दाहिने हाथ की जगह, अनुत्तरणीय आनंद, शाश्वत

आशीर्वादों का आनंद, और स्वर्ग का राज्य प्रदान करेगा; लेकिन जो लोग उसकी अवज्ञा करते हैं और, लापरवाही या वासना के कारण, बुराई करते हैं—व्यभिचार, परस्त्रीगमन, चोरी, ईर्ष्या, हत्या, व्यभिचार, अशुद्धता, धर्मत्याग, अहंकार, दंभ और अन्य सभी प्रकार के बुरे कर्मों – उन्हें अनंतकालिक यातनाओं को सौंप देगा: नरक की आग, विषैला कीड़ा, अंधा कर देने वाला अंधकार, अगम गड्ढा – प्रत्येक को उसके अपने पापों के अनुसार। जो कोई भी, बुद्धिमानी से, अपनी प्रकृति को सही ढंग से वश में करके, सभी प्रकार के कष्टों ( ) को धैर्य से सहन करता है, और यदि आवश्यक हो, तो अच्छाई के लिए मर भी जाता है, – वह व्यक्ति उस दिन सूर्य के समान चमकेगा, संतों में से एक होगा, स्वर्गदूतों की संगति में, शहीदों के आनंद में, और भविष्यवक्ताओं और प्रेरितों के हर्ष में शामिल होगा। किन्तु उस पर विनाश आए जिसने क्षणिक कामुक सुख, शांति-प्रिय स्वभाव, या क्षणभंगुर और तुच्छ आनंद के लिए, स्वयं को राज्य के उस दयनीय भाग में पाया, जो निर्दयी अस्वीकृति और अनंत यातनाओं में अनिवार्य निर्वासन के अधीन है, अटूट बंधनों में, जहाँ केवल यही सुना जाता है—हाय और विनाश!—'न तो परमेश्वर की ओर से, न स्वर्गदूतों की ओर से, न ही संतों की ओर से, कभी भी कोई मुक्ति नहीं, कोई परिवर्तन नहीं, कोई दया नहीं, युगों-युगों तक!' मेरे बच्चों, सभी इस पर मनन करें: जो अच्छी तरह दौड़ते हैं और जो ठोकर खाते हैं, आत्मा में मज़बूत और कमज़ोर दिल वाले, पहले और दूसरे, सुस्त और ठंडे, जो धर्मात्मा में धनी हैं और जो गरीब हैं, और वास्तव में हर व्यक्ति, हर कबीला और हर ज़बान। हम भी इसे हृदय में ग्रहण करें, अच्छे संकल्प लें, और जोश तथा दृढ़ संकल्प के साथ ईश्वर के मार्ग पर चलें, हर वासना को एक महामारी के रूप में अस्वीकार करते हुए; आइए हम उद्धारकर्ता ईश्वर की ओर अपने हाथ उठाएँ, और दिन-प्रतिदिन शहादत सहने की अपनी तत्परता की घोषणा करें: रक्त का बहाना, अंगों का कटना, शरीर की कोड़ा-पिटाई, हड्डियों का चूर-चूर होना—और न कि केवल किसी भी भोजन, या मीठी पेय, बढ़िया कपड़ों, अच्छी बनी जूतों, उच्च पद का सम्मान, और ऐसी कई अन्य चीजों से वंचित होना, जिनका उल्लेख करना भी हास्यास्पद है; ताकि, यहाँ अपने धर्म के बुलावे के अनुसार, नम्रता और आज्ञाकारिता में भली भांति जीवन जीकर, और अपने व्रतों को निष्ठापूर्वक निभाकर, हम इस सांसारिक जेल से आनंद के साथ विदा हो सकें, और निडर होकर परमेश्वर के सामने खड़े हो सकें, इस धन्य आशा में कि हमें उन लोगों के लिए वादा की गई आशीषें प्राप्त होंगी जो उसकी महिमा के लिए जीते हैं।

151. सांसारिक तमाशों में प्रतियोगियों की तैयारी के तरीके से आध्यात्मिक, अदृश्य संघर्ष में लगे लोगों के लिए सबक लेना

151. जिस प्रकार प्रतियोगी सांसारिक प्रदर्शनों में प्रतियोगिताओं की तैयारी करते हैं, उसी से हम अदृश्य आध्यात्मिक संघर्ष में लगे लोगों के लिए सबक सीख सकते हैं। [2, 84] आइए हम विचार करें कि सांसारिक प्रदर्शनों में प्रतियोगी कैसे तैयारी करते हैं – क्या हम उनके उदाहरण से अपने प्रयासों के लिए कुछ नहीं सीख सकते? जब किसी सार्वजनिक तमाशे का समय नज़दीक आता है—और, ज़्यादातर मामलों में, उससे बहुत पहले ही—जिन लोगों को प्रतिस्पर्धा करनी होती है, वे समय बर्बाद नहीं करते, बल्कि पहले से ही अभ्यास करते हैं कि उन्हें तमाशे में क्या करना है और कैसे करना है; वे आगे आने वाली हर चीज़ का पूर्वाभ्यास करते हैं, और इसके लिए उपयुक्त आहार का पालन करते हैं, उन खाद्य पदार्थों से बचते हैं जो उनकी सफलता में बाधा डाल सकते हैं, और इस समय उनकी बातचीत पूरी तरह से आगामी प्रतियोगिताओं के इर्द-गिर्द ही घूमती है: अखाड़े में कैसे प्रवेश करें और पहला कदम कैसे उठाएं, आगे कहाँ बढ़ना है, और किसे किस पर हमला करना चाहिए। उनके पास इतने सारे काम और चिंताएं हैं: किस उद्देश्य के लिए? विजय की नश्वर मालाएं जीतने और निर्धारित पुरस्कार प्राप्त करने के लिए; और, साथ ही, दर्शकों और मित्रों को प्रसन्न करने के लिए, जबकि पराजितों को लज्जित करने के लिए। यदि वे इतनी बड़ी हद तक जाते हैं और पहले से इतनी चर्चा करते हैं, तो आपको क्या लगता है कि हमें किस प्रकार का प्रयास, कितनी लगन और विवेक, और किसी न किसी बात के लिए कितनी अथक चिंता रखनी चाहिए? क्योंकि हमारा शत्रु, हमारा विरोधी और दुश्मन, न तो अनुभवहीन है, न अज्ञानी, और न ही लापरवाह; बल्कि हमारे सामने खड़ा होकर, ऐसा लगता है कि वह भी इस बात पर खूब विचार करता है कि हमारे विरुद्ध कौन से जाल बिछाए जाएँ, कैसे पास आए, कैसे हमला किया जाए, कैसे पीछे हटाया जाए, कैसे मारा जाए और उस बेचारे भिक्षु को गिराया जाए? तो क्या हमारे सामने जो संघर्ष है, वह महान नहीं है? तो क्या हमें बहुत सावधानी और लगन से काम नहीं करना चाहिए? क्या हमें अपने हाथ उठाकर, दुख में पुकारना नहीं चाहिए: *'हे प्रभु, अपने पवित्र निवास से नीचे देखो'* (भजन संहिता 32:14)। *'अपनी सामर्थ्य बढ़ा'*, या *'हे प्रभु, हमारे उद्धार के लिए आओ'* (भजन संहिता 79:3)? सचमुच ऐसा ही है; और यह विनम्रता और पश्चात्तापी हृदय के साथ, आशा और साहस के साथ, सच्चे विश्वास और सिद्ध आज्ञाकारिता के साथ। प्रभु सदाचारी तपस्वी को नहीं छोड़ेंगे यदि वह सहायता के लिए उनसे पुकारे, यह कहते हुए: *'मेरा हृदय उन पर भरोसा करता है, और वे मेरी सहायता*

करेंगे; और मेरा प्राण फल-फूल उठेगा' (भजन संहिता 27:7)। और जब वह मदद करता है, तो उसके वरिुद्ध कौन टकि सकता है? उसे उखाड़ फेंकने के लिए कौन पर्याप्त शक्तिशाली है? कोई नहीं। चाहे दुश्मन हजारों और अनगनित ही क्यों न हों; वह उनसे नहीं डरेगा। वह प्रभु के नाम से उनका प्रतकिार करेगा और उन्हें तितिर-बतिर कर देगा। *'इसलिए, हम्मित रखो'*।

१५२. कसिान, तैराक, व्यापारी और यात्री के उदाहरण द्वारा, वह आध्यात्मकि आशीर्वादों की प्राप्ती के लिए उत्साह जगाते हैं

152. कसिान, तैराक, व्यापारी और यात्री के उदाहरण हमें आध्यात्मकि आशीर्वादों के लिए प्रयास करने की प्रेरणा देते हैं; और, शत्रु द्वारा उत्पन्न बाधाओं को याद दलिाते हुए, वे हमें प्रभु उद्धारकर्ता की सहायता से सफलता की आशा देते हैं, जन्हिोंने हमारे उद्धार के लिए सभी चीजों की व्यवस्था की है और करते रहते हैं, बशर्ते हम स्वयं को उनकी सहायता के योग्य साबति करें। [2, 85] कसिान, तैराक, व्यापारी, यात्री—सभी दनि-रात परश्रिम करते हैं, थकते-हारते हुए, अपने लक्ष्य तक पहुँचने की तीव्र इच्छा के साथ—और वे वहाँ पहुँच भी जाते हैं। लेकनि हमारी खेती, हमारा नौकायन, हमारा व्यापार, हमारी यात्रा इनसे उतनी ही दूर है जतिना पूर्व पश्चमि से, या यूँ कहें कि स्वर्ग पृथ्वी से। तो फरि, हमारे श्रम, हमारे प्रयास और हमारी कोशशिें उनकी तुलना में कतिनी अधकि श्रेष्ठ, अधकि उत्साही और अधकि अथक होनी चाहएि? – इसी कारण से, संत डेवडि आश्चर्य से पुकारते हैं: *'प्रभु के पर्वत पर कौन चढ़ेगा, और उसकी पवत्रि जगह पर कौन खड़ा होगा?'* (भजन संहिता 23:3)। और फरि: *'काश मुझे कबूतर जैसी पंखयिाँ मलि जातीं, तो मैं उड़कर चली जाती और वश्रिाम करती'* (भजन संहिता 54:7)। हम परश्रिम करते हैं, संयम से खाते हैं, कम सोते हैं, प्रार्थना सभाओं में शामलि होते हैं और, अपनी कोठरयिों में, प्रार्थना करते हैं, पढ़ते हैं, सुनते हैं, गाते हैं, सलिाई का काम करते हैं, स्वयं को नम्र बनाते हैं, आज्ञापालन करते हैं और सब कुछ सहन करते हैं। लेकनि फरि, हम वह प्राप्त क्यों नहीं करते जसिकी हम इच्छा करते हैं और हमें कोई सफलता क्यों नहीं दखिाई देती? – यह हमारे वरिोधी, शैतान द्वारा हमारे उद्धार के मार्ग में डाली गई बाधाओं के सवािय और कसिी कारण से नहीं है। इस युग की शुरुआत से अब तक, वह हमारे वंश के वरिुद्ध उठता रहा है ताकि हमें स्वर्ग में प्रवेश करने से रोक सके, जहाँ से उसे अपने घमंड के कारण फेंक दयिा गया था। हालाँकि, भाइयों, हम अपने जीवन की कठनिाइयों से हतोत्साहति या नराशि न हों। – क्योंकि हमारे सहायक और मध्यस्थ के रूप में हमारे पास परमेश्वर हैं, वह परमेश्वर *जो 'गरीब को कीचड़ से उठाता है और दरद्रि को राख के ढेर से ऊपर उठाता है'* (भजन संहिता 112:7), *जो* हमारी प्रकृति की दुर्बलता को *'शक्ति से कमरबंद करता है'* (भजन संहिता 17:33) और जो हमारे शत्रु, प्रलोभक पर वजिय प्राप्त करता है। इसलिए, जब हम देखते हैं कि हम अपनी कोशशिों से कतिना कम हासलि कर सकते हैं, तो हमें हतोत्साहति न हों। कोई दूला भी अपनी दुल्हन से इतना प्यार नहीं करता, और न ही माता-पिता अपने बच्चों की इतनी परवाह करते हैं, जतिना कि सर्व का स्वामी, परमेश्वर, हमसे प्यार करता है और हमारी परवाह करता है। वह हमारी मुक्ति की परवाह करता है, हमारे अच्छे आचरण से प्रसन्न होता है, हमारे मन की आँखें खोलता है, उसे अपनी तेजस्वी सुंदरता और अपनी प्रतीक्षति वैभवता का दर्शन कराता है, और, स्वर्गदूतों द्वारा नर्दिेशति होकर, उसे स्वर्ग और स्वर्ग में जो कुछ भी है, उसके चंतिन के लिए ऊपर उठाता है, और उसे अपनी दव्यि व्यवस्था के पंखों की शरण में अदृश्य शत्रुओं से बचाता है। और क्या कहा जाए? – हम पापयिों के प्रति उनका प्रेम इतना है कि वह, पिता की गोद को छोड़े बनिा, प्रसन्न हुए कि उन्होंने स्वर्ग को झुकाया, और वनिम्रता से हम तक उतर आए, और सर्व के प्रभु होते हुए भी, मनुष्य बन गए। वचन में सभी को समाहति करते हुए, अतिमहिमामय और उत्तम प्रभु, एक वनिम्र माता से एक शशिु के रूप में पैदा हुए, और सभी चीजों को समृद्ध कयिा। इस रहस्य की चरम महमिा यह है कि अपनी भयानक पीड़ाओं के बाद, उन्होंने हमारे लिए क्रूस पर मृत्यु को सहन कयिा, और तीसरे दनि पुनरुत्थति हुए, हमें साँप की पकड़ से मुक्त कयिा और हमें उसे रेंगते कीड़े की तरह पैरों तले कुचलने की शक्ति प्रदान की। कसि पिता ने अपने पुत्र से, या माँ ने अपनी बेटी से, या पति ने अपनी पत्नी से, या दोस्तों ने एक-दूसरे से इतना प्रेम कयिा है, जतिना कि उन्होंने हमसे कयिा है, जन्हिोंने हमसे इतना कुछ सहकर और भुगतकर प्रेम कयिा है? फरि भी, हमारे प्रति उनका असीम प्रेम और दया शब्दों में व्यक्त नहीं की जा सकती और न ही मन उसे समझ सकता है। हमें इतनी गहराई से प्रेम करने और हमारे लिए इतना दुख सहने के बाद, वह हर दनि और हर घड़ी हमारा सहायक कैसे नहीं हो सकता? हमारा मध्यस्थ और शरणस्थान, बशर्ते कि हम स्वयं अपनी ही वासनाओं के बहकावे में आकर उससे मुंह न मोड़ें? यह जानते हुए, आइए हम प्रभु के प्रति वश्विासयोग्य बने रहने का ध्यान रखें, हर संभव प्रयास करें, साहसपूर्वक सभी दुखों को सहन करें और जो कुछ भी उन्होंने आज्ञा दी है, उसे पूरा करें; – और वह हमें शत्रु के वरिुद्ध संघर्ष में वजियी बनाएगा और हमें बनिा कसिी बाधा के उस अंत तक पहुँचने में सक्षम बनाएगा जसिकी हम कामना करते हैं।

१५३. यह समझाता है कि प्रभु के लिए परिश्रम करना कितना धन्य है; और, यह याद दिलाते हुए कि भाइयों ने भी इसी उद्देश्य के लिए सब कुछ पीछे छोड़कर मठ में प्रवेश किया था, यह उन्हें प्रभु के वचनों से प्रेरित करता है: 'खोजो, और तुम पाओगे'

१५३. यह दर्शाता है कि प्रभु के लिए परिश्रम करना कितना धन्य है; और, यह याद दिलाते हुए कि भाइयों ने भी इसी उद्देश्य के लिए सब कुछ पीछे छोड़कर मठ में प्रवेश किया था, यह उन्हें प्रभु के वचनों से प्रेरित करता है: 'खोजो, और तुम पाओगे'... मठ के कर्तव्यों में विनम्रतापूर्वक परिश्रम करते हुए, जो रूप में तो केवल सांसारिक प्रतीत होते हैं, परन्तु आत्मा में आध्यात्मिक हैं। [2, 85] भक्ति और धार्मिकता में जीवित परमेश्वर की सेवा करने, आत्मा और शरीर को शुद्ध करने, हर पाप से स्वयं की रक्षा करने, भविष्य के आशीर्वादों की लालसा से आकर्षित होने, दुनिया से निरंतर स्वर्गीय राज्य में ले जाए जाने, और किसी भी जुनून में फँसी नहीं आत्मा रखने से अधिक सुंदर और धन्य और क्या हो सकता है, जो शैतान के सभी जालों से परे उड़ने वाले पक्षी की तरह हो और उच्चतम क्षेत्रों में उड़ान भरे। जो कोई भी ऐसा है, वह हमेशा प्रसन्न और आनंदित रहता है, आनंद पाता है और आश्चर्य से भर जाता है, तथा यहाँ से ही भविष्य के परमानंद के प्रथम फलों का स्वाद चखना आरंभ कर देता है। – क्योंकि इसी के लिए तुमने भी संसार त्यागा है और यहाँ आए हो; इसी के लिए तुमने संसार और संसार की सभी वस्तुओं का त्याग किया है; इसी के लिए तुम यात्री और परदेशी बन गए हो, अपने स्वदेश, अपने स्वजन और अपने रिश्तेदारों से अलग हो गए हो; इसी के लिए तुम रूप और जीवन-शैली में अलग हो गए हो, और सभी सांसारिक चिंताओं और फिक्रों को अलविदा कह दिया है: इसलिए, इस प्रयास को आनंदपूर्वक अपनाकर, खोजो और तुम पाओगे, प्रयत्न करो और तुम वह प्राप्त करोगे जिसकी तुम्हारी आत्मा इच्छा करती है। क्योंकि प्रभु कहते हैं, *'जो खोजते हैं वे पायेंगे, और जो द्वार पर खटखटाते हैं, उनके लिये द्वार खोल दिया जाएगा'* (मत्ती 7:8)। खोजो, और अपने मन को किसी और बात में न लगाओ और न ही किसी अन्य काम में व्यस्त रहो। यद्यपि आप आज्ञाकारिता के अपने सामान्य कर्तव्यों में लगे हुए हैं, ये आपके लिए सांसारिक या सांसारिक प्रकृति के कार्य नहीं हैं, क्योंकि आप उनमें जुनून, अपनी इच्छा से, या शरीर को प्रसन्न करने के लिए नहीं लगे हैं, बल्कि पवित्र आध्यात्मिक संगति के लिए, आज्ञाकारिता से और आज्ञाओं के अनुसार, और सबसे बढ़कर परमेश्वर को प्रसन्न करने के लिए लगे हैं। ईश्वर आपके इस श्रम को एक बलिदान और होमबलि के रूप में स्वीकार करते हैं। और हे भाइयों, धन्य हैं आप, क्योंकि आपने जीवन के इस दैवीय मार्ग को चुना है, जो स्वर्गीय यरूशलेम की ओर ले जाता है, जिसका सह-निर्माता और रचयिता ईश्वर हैं। तब, अनुग्रह से बल प्राप्त करके और सद्गुणों से सुसज्जित होकर, भलाई में चलो: पश्चाताप, आज्ञाकारिता, नम्रता, हर कार्य के लिए तत्परता, धैर्य, सतर्कता, संयम और प्रार्थना।

१५४. यह याद करते हुए कि एक मठाध्यक्ष के रूप में उनके पद का बोझ उन पर कितना भारी है, विशेष रूप से प्रत्येक व्यक्ति के लिए उत्तरदायी होने के विचार पर, वे मदद मांगते हैं। किस तरह से? मठवासी जीवन में सफलता के माध्यम से

154. 1) इस पर चिंतन करने के बाद कि मठाध्यक्ष के रूप में उनके पद का बोझ उन पर कितना भारी है, विशेष रूप से प्रत्येक व्यक्ति के लिए उत्तरदायी होने के विचार पर, वे मदद मांगते हैं। किस तरह से? संन्यास जीवन में सफलता के माध्यम से। – 2) फिर वह परिभाषित करता है कि सफलता को क्या माना जाना चाहिए। – 3) अंत में, वह उन्हें यह विचार करने के लिए आमंत्रित करता है कि क्या वे सफल हो रहे हैं, और सफल होने वालों तथा न होने वालों के लक्षणों की ओर इशारा करता है। [2, 87]

1. आपके विचार में, मेरी विनम्र आत्मा आपके अधिष्ठाता के रूप में अपनी भूमिका को कैसे देखती है? शायद आपको ऐसा लगता है कि मुझे आप पर अपने साधारण उपदेशों पर गर्व है, और केवल इसी से मैं एक अधिष्ठाता के रूप में अपना पूरा कर्तव्य निभाने की आशा करता हूँ। बिल्कुल नहीं। लेकिन मैं आपसे सच कहूँगा: मैं अपने जीवन के इन दिनों को अत्यंत पीड़ादायक और कष्टप्रद चिंता में बिताता हूँ, केवल आपको सम्मानजनक जीवन के बारे में बताने में सांत्वना न पाकर, बल्कि आप में जीवन के सार को देखने की इच्छा रखकर। इसलिए, जब मैं आपके बीच होता हूँ, तो मैं दिन-प्रतिदिन आपके व्यवहार का अवलोकन करता हूँ: आप एक-दूसरे के साथ कैसा व्यवहार करते हैं, आप स्वयं को कैसे संचालित करते हैं, आप कैसे प्रश्न पूछते हैं और उत्तर देते हैं; और इन सब से, साथ ही आपकी आँखों में देखने और आपके चेहरों पर के भाव से, मैं प्रत्येक व्यक्ति की आत्मा की स्थिति का पता लगाता हूँ: जिन लोगों में मैं इसे सीधा पाता हूँ, मैं उन पर प्रसन्न होता हूँ और सांत्वना पाता हूँ, और आशा से प्रेरित होता हूँ; लेकिन जिन लोगों में मैं इसके विपरीत पाता हूँ, मैं दुखी होता हूँ, शोक करता हूँ और आहें भरता हूँ, यह निश्चित होते हुए कि यहाँ जुनून हावी हो

गया है। और मैं कुछ और नहीं कर सकता। क्योंकि क्या मुझे आप में से प्रत्येक का हिसाब नहीं देना है? – इस विचार मात्र से, कौन उदासीन रह सकता है? कौन नहीं रोएगा, भय से भर जाएगा, और कांपेगा? – यह एक मनुष्य के लिए कितना महान और भयानक है कि वह परमेश्वर, जो निष्पक्ष न्यायी हैं, के सामने खड़ा हो और पूरे झुंड का हिसाब दे: कि क्या इसे पवित्रता और निर्दोषता में रखा गया है, और क्या यह परमेश्वर की सभी आज्ञाओं में, जो कुछ भी सही है, उसमें विश्वास के साथ चला है, परमेश्वर और अपने पड़ोसी दोनों के संबंध में? – क्या मैंने आपको यह इसलिए बताया है कि मेरी आत्मा के कष्ट के बारे में जानकर, आप मुझ पर दया करें और मेरी मदद करें? तो, कैसे? – अपने जीवन में उत्कृष्टता प्राप्त करने के लिए और भी अधिक लगन से प्रयास करके, जो स्वर्गदूतों के जीवन के समान है।

२. हमें केवल सामान्य लोगों से अलग होने में ही संतुष्ट नहीं रहना चाहिए, बल्कि हमें अपने जीवन में पूर्णता के लिए संतों के पदचिन्हों पर चलना चाहिए; और न ही हमें केवल अपने ही दर्जे के कुछ लोगों से आगे निकलने में ही संतुष्ट होना चाहिए, बल्कि हमें सबसे पूर्ण लोगों के बराबर होने का प्रयास करना चाहिए। क्योंकि *'बहुत से बुलाए गए, परन्तु थोड़े चुने गए'* (मत्ती 22:14)। और हमें अपनी प्रगति को समय की लंबाई से मापना भी नहीं चाहिए, यह सोचकर कि 'हम इतने वर्षों से मठाधीश हैं'; बल्कि हमें यह विचार करना चाहिए कि क्या हमारे सद्गुणों की संख्या और श्रेणी समय की लंबाई के अनुरूप है। – न ही हमें इस तथ्य पर ध्यान केंद्रित करना चाहिए कि एक और दिन बीत गया है, बल्कि इस बात पर ध्यान देना चाहिए कि इस दिन भी, आने वाले जीवन में आत्मा के पोषण के लिए स्वर्गीय खजाने में कोई अच्छा काम जमा किया गया है, और क्या आत्मा के शुद्धिकरण और हमें सताने वाले जुनून पर काबू पाने की दिशा में सबसे छोटा योगदान भी दिया गया है। इस प्रकार एक भिक्षु, नाम और कर्म से, भिक्षु बनता है, जो अपने आपको वासनाओं के अंधकार और दुष्ट आदतों के बंधनों से मुक्त करता है, और इस प्रकार अपनी आत्मा और मन को प्रभु की ओर स्वतंत्र रूप से प्रयास करने, केवल उसी की ओर प्रेम में ऊँचा उठने, और केवल उसी के साथ मिलन की लालसा करने की अनुमति देता है।

३. अतः तुम में से प्रत्येक अपने आपको परखो, यह देखने के लिए कि क्या तुम में यह वांछित गुण है, या क्या तुम अभी भी वासनाओं के दास, पापों के कैदी, विचारों के बंदी बने हुए हो, – जिसके परिणामस्वरूप वह अपने शब्दों, कर्मों और विचारों में शांति से नहीं रहता, और यह अवज्ञा, अहंकार, बड़बड़ाहट, झगड़ालूपन, आत्म-न्याय, स्वच्छंदता और, सभी बुराइयों में सबसे बड़ी, अविश्वास के माध्यम से प्रकट होता है। फिर भी, जब कोई व्यक्ति वांछित लक्ष्य की ओर प्रयास करता है और अपने जुनून के खिलाफ संघर्ष में सफल होता है, तो उसमें हर अच्छी गुणवत्ता और हर उत्तम उपहार प्रकट होता है: नम्रता, शांति, प्रेम, करुणा, धैर्य, विनम्रता, ईर्ष्या का अभाव, कृतज्ञता, सहनशीलता, प्रार्थना, भजन-गायन, जागरण, पश्चाताप, रोना, और हर दूसरी प्रशंसनीय क्रिया और प्रवृत्ति; वह श्रेष्ठता की खोज नहीं करता, बल्कि उससे दूर भागता है – वह ऐसा काम नहीं चाहता जो उसे भाता हो, बल्कि वह काम करता है जो उसके पिता उसे सौंपते हैं, अपनी इच्छा को त्यागकर, चाहे वह काम रसोई में हो, बगीचे में हो, खेतों में हो, या किसी अन्य ऐसी जगह पर, – वह कपड़ों, जूतों, भोजन या पेय पर झगड़ा नहीं करता, बल्कि सब कुछ धैर्यपूर्वक सहन करता है, भले ही वह फटेहाल कपड़े पहने हो, कांप रहा हो और भूखा हो, अपनी दृष्टि केवल एक ही चीज़ पर केंद्रित रखता है – परलोक में उस विश्राम की प्राप्ति।

१५५ जैसे एक वीर नागरिक राजा द्वारा पुरस्कार प्राप्त करने के लिए बुलाए जाने पर प्रसन्न होता है, वैसे ही हमारे भाई चैरटिन भी प्रसन्न हैं, जिन्हें प्रभु द्वारा यहाँ से बुलाया गया है, और अब वे मठ में अपने द्वारा किए गए पराक्रमो और परिश्रमों के लिए अकथनीय स्वर्गीय आशीर्वादों का आनंद ले रहे हैं।

155. 1) जैसे एक वीर नागरिक राजा द्वारा पुरस्कार प्राप्त करने के लिए बुलाए जाने पर प्रसन्न होता है, वैसे ही हमारे भाई कैरटिँ भी प्रसन्न हैं, जिन्हें प्रभु ने यहाँ से बुला लिया है, और अब वे मठ में अपने द्वारा किए गए पराक्रमी कार्यों और परिश्रमों के लिए अकथनीय स्वर्गीय आशीर्वादों का आनंद ले रहे हैं । – 2) इस पर चिंतन करते हुए, हम में से कौन ऐसा नहीं होगा जो इसी प्रकार करने के लिए प्रेरित न हो, और शैतान की परवाह न करे, जो आमतौर पर, अपनी प्रेरणाओं के माध्यम से, या तो हमें अच्छे कार्यों से हटा देता है या हमारे द्वारा किए गए अच्छे कार्यों को अस्वास्थ्यकर विचारों और भावनाओं से कलंकित कर देता है, हम चाहे किसी भी प्रकार का आज्ञापालन कर रहे हों। – 3) आइए, यह भी न भूलें कि सदाचार का पुरस्कार इसी जीवन में भी मिलता है, कभी-कभी प्रत्यक्ष रूप से, और हमेशा अप्रत्यक्ष रूप से, जो भविष्य की महिमा और आनंद का एक पूर्वाभास और पूर्वानुमान है। [2, 88]

4. जैसे, दैनिक जीवन में, गंभीर अपराधों का आरोपित और मृत्युदंड प्राप्त व्यक्ति जब यह सुनता है: 'समय आ गया है; बाहर आओ'—तो वह भय और आतंक से भर जाता है; वैसे ही, पापी के लिए, इस जीवन से अगले जीवन में

संक्रमण की खबर आमतौर पर भय और आतंक का स्रोत होती है। इसके विपरीत, जिस प्रकार कोई व्यक्ति जो अपने किए गए वीर कर्मों के लिए राजा से पुरस्कार और मुकुट की प्रतीक्षा कर रहा है, उन्हें प्राप्त करने के लिए बुलाने वाली आवाज़ सुनकर आनंदित होता है, उसी प्रकार धर्मी व्यक्ति भी प्रसन्न होता है जब मृत्यु का दूत उसे इस जीवन से प्रस्थान की घोषणा करता है, इस निश्चितता के साथ कि वह अपने धन्य पुरस्कार प्राप्त करने के लिए जा रहा है। – यह हम अब अपने भाई चैरटिन के बारे में कहने का साहस करते हैं, कि वह, अपने नाम के अनुरूप, आनंद और प्रसन्नता के साथ अपने शरीर से विदा हो गए और अपने विश्राम स्थल पर चले गए। – भाइयों, इसी प्रकार प्रयास करना चाहिए; इसी प्रकार अपने स्वभाव को फलदायी रूप से वश में करना चाहिए; संयम के साथ तपस्वी जीवन का पालन करना कितना लाभदायक है; और अपनी अंतिम साँस तक आज्ञाकारिता में संघर्ष करना कितना धन्य है। क्योंकि केवल कुछ ही वर्षों में—या यूँ कहें कि लगभग एक ही दिन में (क्योंकि अनंत की तुलना में यह सांसारिक जीवन और क्या है?)—इसने हमारे भाई को अकथनीय धन-संपत्ति, अगम्य महिमा, अतुलनीय आनंद और एक शाश्वत राज्य प्रदान किया है। और अब वह आनंदित और गौरवान्वित है, ऐसे आशीर्वाद के लिए यहाँ किए गए अपने श्रम के लिए कोई भी शोक महसूस किए बिना, बल्कि पवित्र लोगों के गायन-मंडलों में, धर्मी लोगों के तंबुओं में, शहीदों के प्रांगणों में, स्वर्गीय यरूशलेम में, जो सभी संतों की माता है, अपना स्थान ग्रहण करके, वह अकथनीय और अनुपम आशीर्वादों को निहारता है: वह अविराम प्रकाश, अमर जीवन, और अनुपम आनंद।

५. इस पर चिंतन करते हुए, हम जो अभी भी प्रतियोगिता के मैदान में हैं, प्रेरित हुए बिना कैसे रह सकते हैं, साहसी आशा से प्रेरित न हों, उत्साह से परिपूर्ण न हों, हमारे हृदय आग से जल उठें, हमारे मन ऊँची उड़ान न भरें, अपनी प्रवृत्तियों को संसार से हटाकर स्वर्गीय की ओर न मोड़ें, और प्रभु के प्रेम के लिए सभी कार्य करने और सभी कष्ट सहने का संकल्प न लें? केवल उपवास और जागरण नहीं, केवल खुले में सोना नहीं, केवल ठंड और गर्मी नहीं, केवल परिश्रम और थकान नहीं, केवल अपमान और अनादर नहीं; बल्कि यदि आवश्यकता पड़ी, तो रक्त का बहाना, अंगों का कट जाना, चमड़ी का उधेड़ना, हड्डियों का कुचल जाना – यह सब उस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए जो हम चाहते हैं। – वास्तव में, भाइयों, इस प्रकार बुद्धिमानी से सोचना, और इस प्रकार बुद्धिमानी से कार्य करने के लिए तत्पर रहना अच्छा है। शैतान एक शिकारी है, जो हमेशा पास में ही घात लगाए रहता है, हमारे मन से उन उत्तम विचारों को छीनने और उन्हें व्यर्थ, सांसारिक विचारों में खींचने का प्रयास करता है। लेकिन आइए हम उसे हमें धोखा देने न दें; इसके विपरीत, ईश्वर के दैवीय वादों को ध्यान में रखते हुए—जिन्हें प्रतिदिन खोजा जाता है, भजनों में प्रशंसित किया जाता है और प्रार्थनाओं में चित्रित किया जाता है—आइए हम दिन-प्रतिदिन, सप्ताह-दर-सप्ताह, महीने-दर-महीने, वर्ष-दर-वर्ष, हर संभव प्रयास करते रहें कि हम अपने कर्मों को ईश्वर के समक्ष शुद्ध रूप में प्रस्तुत करें, सभी शांत, सभी प्रेमपूर्ण, अहंकार, व्यर्थता या मनुष्यों को प्रसन्न करने की इच्छा से रहित। चाहे हम हल चलाएँ, खोदें, खाना पकाएँ, बढ़ई का काम करें, पहरा दें, भंडारों की देखभाल करना, बगीचों की देखभाल करना, ग्रंथों की प्रतिलिपि बनाना, या किसी भी शिल्प में संलग्न होना - चाहे वह सिलाई करना हो, टोकरी बुनना हो, या हम जो कुछ भी करें - आइए हम ऐसा करने का प्रयास करें कि हमारा कार्य स्वयं ईश्वर द्वारा उत्तम माना जाए और एक शाश्वत पुरस्कार प्राप्त करने के लिए स्वर्गीय कोष में रखा जाए। शिकायत, अशिष्टता, अहंकार, भ्रम और कलह के माध्यम से अपने कर्मों को बर्बाद करना एक मूर्खतापूर्ण और यहाँ तक कि अमानवीय कृत्य है; अर्थात्, यह एक सच्चे मानव के अनुरूप नहीं है। क्योंकि एक सच्चा मनुष्य, सदा स्मरणीय अय्यूब की तरह, एक महान प्राणी है; वह *'सीधा और निष्पाप है, और हर बुराई से दूर रहता है'* (अय्यूब 1:8)।

6. हर किसी को यह भी ध्यान देना चाहिए कि एक परिश्रमी और सदाचारी व्यक्ति से कैसे सभी प्रेम करते हैं, सभी उसका सम्मान और प्रशंसा करते हैं, न केवल अपने भाइयों में, बल्कि उनके घेरे के बाहर भी जो उसके बारे में सुनते हैं। क्योंकि सद्गुण, भले ही वह एक गुमनाम व्यक्ति द्वारा छिपा हुआ और अभ्यास किया गया हो, अपनी प्रकृति से ही ऐसा होता है कि वह अनिवार्य रूप से प्रकाश में आएगा, और उसकी ख्याति दूर-दूर तक सुनी और प्रचारित होगी, प्रभु के वचन के अनुसार, जो कहते हैं: *'पहाड़ पर स्थित नगर छिपा नहीं रह सकता'* (मत्ती 5:14)। यदि हम अच्छे कर्मों में थोड़ा और धैर्य रखते हैं, और थोड़ा और प्रयास करते हैं, तो विश्राम का समय आएगा, न केवल मृत्यु के समय, बल्कि उससे पहले भी, उस समय जब हमारे भीतर निर्लिप्तता स्थापित हो जाती है। क्योंकि जिस आत्मा ने प्रभु से अपने पूरे हृदय से प्रेम किया है और आज्ञाकारिता के द्वारा अपनी इच्छाओं को मार डाला है, पवित्र पिताओं के वचनों के अनुसार, उसने विश्राम प्राप्त कर लिया है, और इसी संसार से भविष्य के आनंद का स्वाद चखना शुरू कर देती है।

१५६. डल्मार्टियाई मठ के लिए एक नए मठाधीश का चुनाव केवल उनकी विनम्रता के कारण हुआ। विनम्रता का यही मूल्य है; यह हर सद्गुण को समाहित करती और संरक्षित रखती है; और, यद्यपि यह कोई प्रसिद्धि नहीं चाहती, फिर भी यह जानी जाती है।

156. डल्मार्टियाई मठ में एक नए मठाधीश का चुनाव किया गया, और वह भी केवल विनम्रता के कारण। विनम्रता का यही मूल्य है; यह हर अच्छाई को समाहित करती है और उसकी रक्षा करती है; और बिना प्रसिद्धि की चाह के, यह अपने आप ही प्रसिद्ध और प्रतिष्ठित हो जाती है। [2, 89] मुझे लगता है कि अब आपके साथ कल की घटना के बारे में बात करना मेरे लिए अच्छा होगा। हमारे प्रभु की आज्ञा से, मुझे उसके लिए एक नए मठाधीश के चुनाव हेतु डल्मार्टियाई मठ जाना था। वहाँ मुझे यह पूछना था कि मठ के भाई और वहाँ इकट्ठा हुए मठाधीश किसकी इच्छा रखते थे। और वे सभी एकमत होकर, एक स्वर में, अब्बा हिलारियन की ओर इशारा करने लगे। ऐसा क्यों था? उनके विशिष्ट गुण क्या थे? इसलिए नहीं कि वह विद्वान है, इसलिए नहीं कि वह वाक्पटु है, इसलिए नहीं कि वह अपने जीवन-यापन के तरीके के लिए प्रसिद्ध है; बल्कि केवल इसलिए कि वह विनम्र और बुद्धिमान है, ईश्वर-प्रेमी है और मानवीय महिमा की तलाश नहीं करता, और आज्ञाकारिता के माध्यम से अपने गुणों को छिपाए रखता है। हालाँकि वहाँ एक और व्यक्ति था जो उससे अधिक विद्वान और अधिक उम्र का था, परन्तु चूँकि वह उपर्युक्त सद्गुणों में कमज़ोर था, इसलिए बाबा हिलारियन को परमेश्वर को अधिक प्रिय और भाइयों का बुद्धिमानी से मार्गदर्शन करने में सक्षम माना गया। – हे भाइयों, क्या आप देखते हैं कि विनम्रता का वरदान कितना कीमती है? यह एक सर्व-व्यापी सद्गुण है, जिससे सभी आंतरिक घमंड का नाश हो जाता है, अहंकार दूर हो जाता है, कीर्ति का प्रेम पैरों तले कुचल दिया जाता है, स्वार्थिता को परास्त किया जाता है, और सुख-भोग के प्रेम को मार डाला जाता है - और इन सबके स्थान पर नम्रता, शांति, प्रेम, करुणा, धैर्य और बुद्धि का प्रवेश होता है; – और, सरल शब्दों में कहें तो, यह गुणों का स्रोत है, जो हर भलाई से परिपूर्ण है, या यूँ कहें कि ईश्वर द्वारा लगाया गया एक स्वर्ग है, जो अमरत्व का प्रचुर फल देता है। लेकिन प्रभु के शब्दों में, *'पहाड़ पर बसा नगर छिप नहीं सकता'* (मत्ती 5:14): इसलिए जिसने यह सद्गुण प्राप्त कर लिया है, वह हमेशा के लिए छिपा नहीं रह सकता, भले ही वह सामान्य परिस्थितियों में सबसे अंतिम हो, भले ही वह भूमिगत रूप से छिपा हो, भले ही कुछ लोगों ने ईर्ष्या के कारण उस पर बदनामी की हो: क्योंकि यहाँ उसे और भी अधिक पहचाना जाता है, जैसे पहाड़ी पर चमकती रोशनी जो देखने वालों की सभी निगाहों को अपनी ओर खींचती है। ठीक यही इस वर्तमान चुने हुए व्यक्ति के साथ हुआ है, क्योंकि कई लोगों ने, यहाँ तक कि भाईचारे के बाहर के लोगों ने भी, उसके चुनाव की अपनी स्वीकृति व्यक्त की है।

157. लेंट आ गया है; और इसने बाहरी और आंतरिक दोनों में व्यवस्था ला दी है

१५७. १) लेंट आ गया है; और इसने बाहरी और आंतरिक दोनों में व्यवस्था ला दी है। यह देखकर, मैं आपसे यह कहने से खुद को रोक नहीं सकता: इस जीवन शैली को एक स्थायी आदत बना लें; क्योंकि अन्यथा, बचने का कोई तरीका नहीं है। – २) शत्रु हमें नष्ट करने की लगातार साजिश रचता रहता है; और हमें लगातार उसका विरोध करना चाहिए, क्योंकि प्रभु ने हमें ऐसा करने की शक्ति प्रदान की है। – 3) शत्रु पर विजय पाने का सबसे अच्छा तरीका प्रभु का अनुकरण करना है, जैसा कि वे हमें बुलाते हैं: 'क्योंकि मैं मन से कोमल और दीन हूँ'। उनका संपूर्ण पृथ्वी पर जीवन हमारे लिए उनकी विनम्रता का प्रमाण है। [2, 90]

7. संयम कितना सुंदर है, और दिव्य आज्ञाओं के अनुसार कार्य करने में यह जो सुव्यवस्था प्रकट करता है। हम इन महा-तपस्या के पवित्र दिनों में इस प्रकार प्रवेश कर चुके हैं जैसे एक शांत बंदरगाह में, पिछले दिनों के कोलाहल से बचकर, और अब हम शांति, मौन और प्रसन्नता में रहते हैं; हम चर्च में सख्त अनुशासन का पालन करते हैं, भक्तिपूर्वक भजन-संगीत गाते हैं, प्रार्थना में संयम बनाए रखते हैं; भोजन की मेज पर हम विभिन्न व्यंजनों और उनमें अतिशय से परहेज़ करते हैं, और हम अपनी आत्माओं के उद्धार के लिए बाकी सब कुछ करते हैं: अब कोई सांसारिक व्यक्ति हमारे बीच प्रवेश नहीं करता, और न ही हम उनके पास जाते हैं। – यहाँ मैं इस इच्छा को रोक नहीं सकता कि आप, जो कुछ अच्छा है उसकी अपनी सुदृढ़ समझ से प्रेरणा लेकर, तुम लोग इस जीवन-पद्धति को एक स्थायी आदत बना लो, ताकि इसके बाद भी तुम पाप की ओर ले जाने वाले सभी मार्गों से दूर रहो, और इस तरह से जीवन न जियो कि तुम पाँच या दस दिनों के लिए एक अच्छा जीवन जीओ, और फिर, अच्छाई से ऊबकर, खुद को फिर से वही नष्ट करते हुए पाओ जो तुमने पहले बनाया था, जैसा कि प्रेरित कहते हैं (गलातियों 2:18)। – हे भाइयो, तुम ऐसा न बनना; हम प्रलोभक की बदनामी से इतनी आसानी से प्रभावित न हों; बल्कि हम उन सद्गुणों में बने रहने का प्रयास करें जो हमने अर्जित किए हैं, और अपने धार्मिक आचरण में सदाचार के लिए और भी अधिक प्रयास करें, यह जानते

हुए कि उद्धार प्राप्त करने के लिए थोड़े समय तक धार्मिक रूप से जीना ही पर्याप्त नहीं है, बल्कि हमें अपने पूरे जीवन भर उद्धार के कार्य को दृढ़ता से थामे रहना चाहिए।

8. वास्तव में, ऐसा ही है प्रलोभक, जो दिन हो या रात, हमें अपने हमलों और हमारे विनाश के लिए घातक जालों से मुक्त नहीं छोड़ता; वह अपने जाल दूर-दूर तक फैलाता है, और हमारी आत्मा पर अनगिनित तीर चलाता है: कामुक सुख की खुजली, वासना की जलन, विचारों और इच्छाओं का कोलाहल और विपरीत हवाएँ—वह हमारे मन के समुद्र को किसी तूफानी सागर की तरह उथल-पुथल कर देता है, ताकि हर कोई यह स्वीकार करने के लिए विवश हो जाए: *'यदि प्रभु मेरी सहायता न करते, तो मेरा प्राण शीघ्र ही नरक में चला जाता'* (भजन संहिता 93:17); तब वह कुछ समय के लिए शांत हो जाता है, वासना के कष्ट को छिपा देता है और घमंड के विष को भीतर आने देता है; या, एक ओर हमारे उत्साह को कमजोर करने के बाद, दूसरी ओर हमें ईर्ष्या के तीर से मारता है; अन्य समयों में, वह हर तरफ से हमारी विनम्रता के विरुद्ध धूल उड़ाता है: क्योंकि उसे हमें नष्ट करने की एक अतृप्त इच्छा है। वह हमारे प्रभु परमेश्वर के विरुद्ध क्रोधित होता है और हमें स्वर्गीय ऊँचाइयों पर चढ़ते हुए देखकर भड़क जाता है, जहाँ से वह स्वयं अपने घमंड के कारण गिर गया था। – कितनी बड़ी सावधानी और धैर्य, कितनी लगन और कितनी कड़ी मेहनत की आवश्यकता है, ऐसे शक्तिशाली साँप को हराने के लिए? – *'परन्तु हिम्मत रखो,'* प्रभु कहते हैं, *'क्योंकि मैं जगत पर जय प्राप्त कर चुका हूँ'* (यूहन्ना 16:33); और उनकी विजय के अनुसरण में, हम, पवित्र अवतार के कारण, शत्रु पर अधिकार प्राप्त कर चुके हैं, जैसा कि प्रभु फिर से घोषणा करते हैं: *'मैं तुम्हें साँपों और बिच्छुओं पर, और शत्रु की सारी शक्ति पर पैर रखने का अधिकार देता हूँ'* (लूका 10:19): ताकि हम उसके हमारे विरुद्ध सभी हमलों, पाप के सभी विविध प्रलोभनों को पैरों तले कुचल सकें।

९. यह कैसे संभव है? उस एक की नकल करके जिसने उस पर विजय प्राप्त की। हम स्वयं को उसका अनुकरण करने वाला तब साबित करेंगे जब हम स्वयं को नम्रता और विनम्रता से आच्छादित करेंगे, जैसा कि वह स्वयं कहते हैं: *'मेरे से सीखो, क्योंकि मैं मन से कोमल और नम्र हूँ'* (मत्ती ११:२९)। यदि वे, जो सभी के राजा और प्रभु हैं, स्वभाव से ही अति महिमामय और सर्व-सद्गुणी हैं, ने नम्रता धारण की, *'पिता परमेश्वर के प्रति मृत्यु तक, यहाँ तक कि क्रूस पर मृत्यु तक आज्ञाकारी रहे'* (फिलि. 2:8); तो हम क्या कह सकते हैं? या हम, जो स्वभाव से ही दीन और तुच्छ हैं, स्वयं को नम्र बनाकर किस हद तक उनके समान बन सकते हैं? यदि उन्होंने अपना स्वर्गीय जीवन त्यागकर पृथ्वी पर आकर, हम कितनी हद तक अपना सब कुछ त्यागें, ताकि कम से कम उनका अनुकरण करने का कोई आभास तो हो सके? यदि वह एक शिशु बन गया और दूध पीकर पोषित हुआ, और जैसा लिखा है, अपने माता-पिता की आज्ञा मानकर, जो कुछ भी वैध था उसे पूरा किया, तो हमें अपने क्रोध में कितने शिशु-सदृश व्यवहार करना चाहिए, और अपने आध्यात्मिक गुरुओं की आज्ञा माननी चाहिए, ताकि हम, थोड़े से भी, उसके समान दिखाई दें? यदि उन्हें भूख और प्यास लगी, पैदल चले और थके, तो हमें भी ऐसा कितना कुछ सहना चाहिए, ताकि यह सोचा जा सके कि हम उनके समान ही कुछ अनुभव कर रहे हैं? और अंत में, यदि उन्होंने अपमान, तिरस्कार, उपहास और दुर्व्यवहार, विश्वासघात और मुकदमे का सामना किया, कोड़ों की मार और सूली पर चढ़ाए जाने, ईश्वर निंदा और उनके पार्श्व को भेद दिए जाने को सहा, तो यह कहने के लिए कि हम उनका अनुकरण कर रहे हैं, हमें कैसा और कितना कुछ सहना होगा? भाइयों, हमें हमेशा यह बात ध्यान में रखनी चाहिए, और, उस पर दृष्टि टिकाए हुए, स्वयं को असीम रूप से नम्र बनाना चाहिए; और यदि हमें ऐसा कुछ मिले जिसमें हम यह दिखा सकें कि हम उसकी नकल कर रहे हैं, तो हमें उसे कृतज्ञतापूर्वक स्वीकार करना चाहिए; यदि हमें ऐसा कुछ न मिले, तो हमें उसे ढूंढना चाहिए—अर्थात्, भूख, प्यास, उपहास, अपमान, अपमानित होना, कठिनाई, वस्त्रों, जूतों और अन्य सभी चीजों में गरीबी: ताकि इस प्रकार, धीरे-धीरे आगे बढ़ते और ऊँचा उठते हुए, स्वयं को संवारते और एक-दूसरे का निर्माण करते हुए, उठते और गौरवान्वित होते हुए, *हम 'मसीह की पूर्ण कद-काठी के माप तक पहुँच* सकें'।

158. संतों की प्रशंसा करते हुए कहा कि संसार का त्याग करके उन्होंने मांस-भक्षण (Flesh-Fasting) काल की सुख-सुविधाओं से मुंह मोड़ लिया था, और उन्हें भक्ति और धार्मिकता में ईश्वर की सेवा के लिए बुलाया गया था, जिसमें सच्ची खुशी और एक अनंत भोज निहित है।

158. 1) उन्होंने संन्यासियों की प्रशंसा की, कहते हुए कि संसार का त्याग करके उन्होंने देह-सुखों से मिलती-जुलती सुख-सुविधाओं से मुंह मोड़ लिया था और उन्हें भक्ति और धार्मिकता में ईश्वर की सेवा के लिए बुलाया गया था, जिसमें सच्ची खुशी और एक अनंत उत्सव निहित है। – 2) वह उन्हें आग्रह करते हैं कि वे विचार या इच्छा में उन मिस्र के बर्तनों की ओर न लौटें, और उन्हें आश्वासन देते हैं कि हमारी नियति सभी से अधिक धन्य है। – 3) जिसमें

एक बात को छोड़कर और कुछ भी इच्छनीय नहीं है: कि ईश्वर हमें हमारे जीवन के सभी दुखों और कठिनाइयों को समान भाव से सहने की कृपा प्रदान करें, [2, 91]

10. अब देह-उपवास का समय है, सांसारिक दावत और शराब पीने, धूम-धाम, खेल और हर तरह के आनंद-उल्लास का समय। तो फिर क्या? क्या हमें इन चीजों के न होने के लिए खुद को कोसना चाहिए? नहीं; बल्कि हमें प्रभु का धन्यवाद करना चाहिए कि उन्होंने हमें ऐसे जीवन से, जैसे कीचड़ और गहरे पानी से, बचाया है, और हमें हमारे वर्तमान पवित्र बुलावे में लाया है, – ताकि हम भक्ति और धार्मिकता में उसकी सेवा करें; और हम उन पर हँसें, या यूँ कहें कि उनके लिए रोएँ, जो इन तुच्छ सुखों के बहकावे में आकर स्वर्ग के अनुपम आनंद से स्वयं को वंचित कर लेते हैं। – *"आओ,"* तो हे भाइयो, *"हम प्रभु में आनन्द मनाएँ: हम अपने उद्धारकर्ता परमेश्वर के लिए जयजयकार करें: हम अंगीकार करके उसके साम्हने आएँ, और भजनों के साथ उसके लिए जयजयकार करें"* (भजन संहिता 94:1–2)। देखो, एक अच्छा भोज, देखो, प्रशंसनीय आनंद, देखो, एक आनंदमय उत्सव! और हम इस प्रकार परमेश्वर के घर में न केवल एक या दो बार, बल्कि हमेशा उत्सव मना सकते हैं और आनंदित हो सकते हैं। ऐसा आनंद उस परम धन्य नियति का अग्रदूत और शुभंकर है जो वहाँ हमारा इंतजार कर रही है। *"परन्तु मैं,"* दिव्य दाऊद कहता है, *"धर्म में तेरे साम्हने खड़ा रहूँगा; मैं तेरी महिमा देखकर तृप्त हो जाऊँगा"* (भजन संहिता 16:15)।

11. मैं आपसे विनती करता हूँ, कि हम अपना हृदय किसी मिस्र की ओर, सांसारिक जीवन की प्रथाओं की ओर वापस न मोड़ें, और न ही उस स्थान के मांस और बर्तनो को याद करें; बल्कि हम अपनी दृष्टि अपने ऊपर, उस सुंदर जीवन पर केंद्रित करें जिसे हम जी रहे हैं और पूरा कर रहे हैं: क्योंकि यहाँ, सबसे बढ़कर, *'प्रभु ने आशीष और जीवन की आज्ञा दी है'* (भजन संहिता 132:3), सच्चा आनंद, अटूट आशा, और एक उद्धारकारी उत्सव। और यदि प्रश्न समृद्धि का है, तो हम और भी अधिक समृद्धि प्राप्त करते हैं; यदि प्रश्न भाग्य का है, तो हमने बेहतर हिस्सा चुना है; यदि प्रश्न आनंद का है, तो हमें धन्य बनाया गया है। दुनिया और दुनिया की सभी चीज़ों से भागकर, सभी लज्जास्पद और व्यर्थ सुखों को अस्वीकार करके, विवाह, संतानोत्पत्ति और सांसारिक संपत्ति का त्याग करके, हमने कुँवारीपन, गरीबी और अपनी इच्छा के त्याग को अपनाया है, जिसमें हम परिश्रम करते हैं, दिन-प्रतिदिन अपने शरीर को सूली पर चढ़ाते हुए और स्वयं को संसार तथा संसार की सभी वस्तुओं के लिए सूली पर चढ़ाते हुए। तो फिर, हम प्रेरित के इन शब्दों को अपने ऊपर सही क्यों नहीं ठहरा सकते: *'जो मसीह के हैं, उन्होंने अपने शरीर को उसकी कामनाओं और इच्छाओं सहित सूली पर चढ़ा दिया है'* (गला. 5:24)।

12. तो फिर, अब हमसे अधिक धन्य कौन है? या जीवन में हमें और क्या ऐसा खोजना चाहिए जो इससे अधिक सुखद और अधिक आरामदायक हो? कुछ भी नहीं, सिवाय इस एक बात के: कि यहाँ हमारे प्रवास के शेष सभी दिनों में, हम धैर्य और साहस से सभी कठिनाइयों और अप्रियताओं को सहन करें, और, दृश्य और अदृश्य प्रलोभनों का सामना करते हुए खुद को गिरने से बचाकर, हम आत्मविश्वास के साथ हमारे लिए निर्धारित वादों को प्राप्त करें। इसी कारण से, साहस करो, बलवान बनो, दृढ़ खड़े रहो, और सभी कार्यों को उचित और व्यवस्थित तरीके से करें, हमारे मठवासी जीवन के रहस्य की प्रकृति और सीमा को समझते हुए और यह जानते हुए कि यह किस प्रकार का जीवन मांगता है, और हमारे सदैव स्मरणीय पवित्र पिता इसे कैसे जिए; उनके उदाहरणों को अपना मार्गदर्शक बनाएं, और उनके अनुसार स्वयं को ढालें और बदलें, ताकि आप सही मायने में उनके पुत्र कहला सकें और उनके भविष्य के आनंद में सहभागी बन सकें।

१५९. अपनी रक्षा करो; क्योंकि शत्रु अचानक आक्रमण कर सकता है और तुम्हें नष्ट कर सकता है

१५९. १) अपने ऊपर चौकस रहो; क्योंकि शत्रु अचानक आक्रमण कर सकता है और तुम्हें नष्ट कर सकता है। – २) और तुम में से कुछ लोग अनियमित जीवन जी रहे हैं। – ३) ऐसा भविष्य में न हो। शिक्षकों, इसे स्थापित करो... अन्यथा तुम मार्गदर्शक के बजाय भ्रष्टकर्ता बन जाओगे। [२, ९२]

13. प्रत्येक व्यक्ति देखे और अवलोकन करे, कि क्या आप विश्वास की चट्टान पर दृढ़ और अडिग खड़े हैं, अपने व्रत के पालन में, सामुदायिक जीवन के शहीद पथ पर, न तो दाईं ओर और न ही बाईं ओर मुड़ते हुए, बल्कि शाही मार्ग पर चलते हुए, अपनी आत्मा को सतर्क रखते हुए, कहीं आपका पैर ठोकर के पत्थर पर न पड़ जाए, और स्व-आनंद या पक्षपात से कुछ भी न करते हुए। मैं तुम्हें देखता हूँ, लेकिन हमेशा और हर जगह नहीं: क्योंकि यह केवल एकमात्र ईश्वर का विशेषाधिकार है। और मुझे नहीं पता कि, शायद, तुम में से कोई, अपनी इच्छा से गुप्त रूप से—या यूँ कहें कि जुनून में—पाप की खाई में कूद गया है, अपनी आत्मा के विनाश के लिए। इससे भय और आतंक मानो, और जब तुम अनुकूल हवा के साथ नौकायन कर रहे हो, तो कहावत के अनुसार, जहाज-दुर्घटना को याद करो। क्योंकि एक ही क्षण में यह हो सकता है – हवा, तूफ़ान, आँधी, आपदा, विनाश, मृत्यु। कभी-कभी, ऐसा लगता है कि शांति और

स्थिरिता का राज है, लेकिन अचानक - खतरा, संघर्ष, युद्ध, शरीर का नहीं बल्कि आत्मा का संहार, जो सबसे कड़वा है। दुष्ट कुछ समय के लिए शांत रहता है ताकि हमें लापरवाही में सुला सके, और फिर, अप्रत्याशित रूप से प्रहार करके, हमारे विचारों को भटका सके और हमारा विनाश कर सके। हमारे पास लापरवाही के लिए कोई जगह नहीं है, आराम के लिए कोई समय नहीं है। कई जो मोक्ष के बंदरगाह तक पहुँच चुके थे, उन्हें धूर्त शत्रु ने गहराई में फेंक दिया। कुछ जो स्वर्ग के गुंबद तक पहुँच चुके थे, उन्हें सतर्कता में थोड़ी सी चूक के कारण उसने पाप की धरती पर ला दिया। उसने सद्गुणों के कई कोष लूट लिए हैं, कई आध्यात्मिक उपलब्धियाँ चुरा ली हैं, और उन्हें करने वालों को दरिद्र छोड़ दिया है। यह जानते हुए, सतर्क रहो और अपने मन की आँखों को सोने मत दो।

14. परन्तु मैं सुनता हूँ कि तुम में से कुछ लोग, अहंकार के कारण, लापरवाही से व्यवहार करते हैं: तुम निर्लज्जता से एक-दूसरे को घूरते हो, व्यर्थ की बातें करते और हँसते हो; जबकि अन्य एक-दूसरे का हाथ थामते हैं, और होंठों को होंठों से तथा गालों को गालों से लगाते हैं। यह रोने का कारण है। *'यदि कोई आग अपने वक्ष में रखे, तो क्या उसके कपड़े न जल जाएँगे? या यदि कोई जलते हुए कोयलों पर चले, तो क्या उसके पैर न जल जाएँगे?'* (नीतिवचन 6:27)। इसी तरह, जो लोग ऐसे काम करते हैं वे गिरावट से नहीं बचेंगे। यह भी गलत है कि कुछ लोग अपने चेहरे को सजाते हैं, दिखावा करते हैं, अपनी पलकों और भौंहों पर रंग लगाते हैं, और वेश्याओं की तरह कपड़े पहनते हैं; वे कढ़ाई वाले पट्टे पहनते हैं, अपने कपड़ों को सुंदरता से सजाते हैं, अपने चलने में फैशनेबल अंदाज़ अपनाते हैं, और बनावटी अंदाज़ में बात करते हैं।

15. मैं ऐसे सभी लोगों से कहता हूँ: भविष्य में ऐसा मत करो; अन्यथा, 'वह *उनके जबड़ों पर लगाम और लगाम की* लगाम *लगा देगा'* (भजन संहिता 31:9): क्योंकि परमेश्वर ने हमें इन लोगों को नष्ट करने के लिए नहीं, बल्कि बनाने के लिए नियुक्त किया है। इसलिए, नियमों का पालन करो। शिक्षकों, जिन लोगों को आप पढ़ाते हैं उनमें सही बातें भरें और उन्हें सुधारें। मैं यह इसलिए नहीं कह रहा हूँ क्योंकि मुझे आप में से किसी पर भी उपचारक के बजाय ज़हर देने वाला, प्रकाश देने वाले के बजाय अँधेरा करने वाला, मार्गदर्शक के बजाय सही रास्ते से भटकाने वाला, या उद्धारकर्ता के बजाय विनाशक होने का संदेह है। क्योंकि शिक्षक अपने शिष्यों के सामने भक्ति के आदर्श, मोक्ष का उदाहरण, और हर अच्छे कार्य की प्रतिमूर्ति के रूप में खड़े होते हैं। शिष्यों को विशेष रूप से इसलिए उनके हवाले किया जाता है ताकि वे अपने शिक्षकों के अच्छे उदाहरण से सीख सकें। यदि, हालाँकि, इसके विपरीत होता है, तो ऐसे लोगों को फटकार लगाई जाए और हटा दिया जाए, कहीं वे अपने भ्रष्टाचार को स्वस्थ लोगों तक न फैला दें। – मैं इन सबके बारे में बात नहीं करना चाहूँगा, लेकिन आवश्यकता मुझे विविश कर रही है। – मैं एक ही बात की कामना करता हूँ: कि हम सभी सही मार्ग पर चलें, ताकि ईश्वर भी हमारे अच्छे जीवन से प्रसन्न हों।

१६०. 'भाइयों की सुव्यवस्था और इस तथ्य में आनंद मनाना कि सब कुछ नियम के अनुसार चलता है और हर कोई मठ के भंडार से संतुष्ट है,' वे आगे कहते हैं: 'लेकिन यह प्राथमिक चिंता नहीं है; मुख्य बात यह है कि इस तरह जिया जाए कि मृत्यु के बाद, कोई ईश्वर की विश्राम-स्थिति में प्रवेश कर सके: जिसके प्रति सब कुछ निर्देशित होना चाहिए।'

160. भाइयों की सुव्यवस्था और इस तथ्य पर कि सब कुछ नियम के अनुसार संचालित होता है और हर कोई मठ के भंडार से संतुष्ट है, वह कहता है: लेकिन यह सबसे महत्वपूर्ण बात नहीं है; मुख्य बात यह है कि इस तरह जिया जाए कि मृत्यु के बाद कोई परमेश्वर के विश्राम में प्रवेश कर सके: और इस उद्देश्य के लिए, सब कुछ निर्देशित किया जाना चाहिए। [2, 93] जैसे एक किसान, अपनी खेत को हरा-भरा होते देख—जिसे उसने अपनी मेहनत से जोता और बोया है—प्रसन्न और हर्षित होता है: इसी प्रकार मैं भी, यद्यपि अपने परिश्रम के फल के संबंध में नहीं, तुम्हारी आत्मिक फलदायिता में आनन्दित और प्रसन्न होता हूँ, क्योंकि मुझे सत्य की गवाही देना उचित लगता है, यह देखकर कि परमेश्वर की कृपा से तुम अधिक से अधिक फल-फूल रहे हो और बेहतर लोग बन रहे हो। आप स्वयं इसकी गवाही दे सकते हैं। क्या आप नहीं देखते कि हमारे यहाँ कैसा अनुशासन, कैसा शांति और सुकून है? क्या आप सभी दृढ़ विश्वास और अटूट बंधन द्वारा एक आत्मा और एक हृदय की तरह एकजुट नहीं हैं? क्या आप सभी मसीह के जीवन-दायक आज्ञाओं की अधिक से अधिक पूर्ति के लिए प्रयास नहीं करते? तुम्हारे बीच कोई ऐसा नहीं है जो निजी संबंधों के द्वारा, शत्रु शैतान की प्रसन्नता के लिए, एक भाईचारे को विभाजित और खंडित करे; न ही तुम में कोई आत्म-तुष्टि या स्व-इच्छा है, जिससे प्रत्येक अपनी मनमर्जी से जी और काम करे; इसके विपरीत, ईश्वर के साथ सामंजस्यपूर्ण जीवन सर्वोपरि है; न ही ऐसी स्थिति है जहाँ हर कोई उदासीनता से इधर-उधर भटकता हो, जिससे भाईचारे के पूरे शरीर का विनाश और विघटन हो; बल्कि, परमेश्वर की कृपा से, सभी चीजों में सब कुछ इस नियम के अनुसार होता है: खाने-पीने में, जागने और सोने में, काम और आराम में, आने-जाने में, बातचीत और मौन में, पढ़ने और भजन गाने में, प्रार्थना

और स्थरिता में, कपड़ों और जूतों में। बेशक, सब कुछ सभी में समान रूप से वतिरति नहीं कयिा जाता है, क्योंकि सभी उम्र, पालन-पोषण, परस्थितियिों, क्षमताओं, गुणों और स्वास्थ्य की स्थति में समान नहीं हैं; लेकनि प्रत्येक पर उचति ध्यान दयिा जाता है, और उनकी ज़रूरतों को पूरा कयिा जाता है: क्योंकि आप सभी एक ही शरीर के अंग हैं, हालांकि सभी को एक ही सम्मान प्राप्त नहीं है (1 कुरन्थियिों 12, 23–24)। फरि भी यह सब प्राथमकि चिंता नहीं है; मुख्य बात जो हम चाहते हैं वह यह है कि अपना कर्तव्य अच्छी तरह नभािने के बाद, हम मृत्यु के द्वारा, इस सांसारकि जीवन की कठनिाइयों और परश्रिमों के बाद, परमेश्वर के वश्रिाम में प्रवेश करें, और अकथनीय आनंद और अतुलनीय आशीषों में सहभागी हों। इस आशा के साथ, आइए हम उत्कृष्टता प्राप्त करने, अपने आप का ध्यान रखने, संयमी होने, और चौकस रहने के लिए और भी अधकि लगन से प्रयास करें, ताकि हम इन दनिों में ठीक से चल सकें, आशा में आनंदति हो सकें, कष्टों को सह सकें, हर अच्छे काम के लिए स्वयं को प्रेरति करें, शरीर को आत्मा के अधीन करें, मसीह के लिए अपमान को सम्मान मानें, सबसे पीछे रहने को एक वशिेषाधकिार समझें, और प्रभु के लिए अपमान में आनन्दति हों; ताकि इस प्रकार अपनी यात्रा पूरी करके, हम शहीदों के साथ नविास करें और पवति्र लोगों के साथ अनंत काल तक आनन्दति होने के योग्य ठहरें।

१६१. हम गाते हैं: 'मैं उद्धार का प्याला लूंगा'। यह प्याला शहादत की स्वीकृति है, जो हमारे लिए हमारे जुनून के खलिाफ एक दर्दनाक संघर्ष में नहिति है

161. हम गाते हैं: 'मैं उद्धार का प्याला लूंगा'। यह प्याला शहादत की स्वीकृति है, जो हमारे लिए हमारे जुनून के खलिाफ एक दर्दनाक संघर्ष है। हम इस मार्ग पर खड़े हैं। – तो फरि, अच्छा संघर्ष लड़ें, ताकि हम भी ऐसे मुकुटों के योग्य माने जाएँ। [2, 94] *'प्रभु ने हमें जो कुछ भी दयिा है, उसके बदले में हम प्रभु को क्या चढ़ाएंगे?'* दाऊद का एक भजन, जो सच्चे संकल्प के साथ गाया गया हो, और उसमें गाए गए वचन के अनुसार: *'हम उद्धार का प्याला उठाएंगे, और प्रभु के नाम का आह्वान करेंगे'* (भजन संहति 115:3, 4)। यह प्याला शहादत को स्वीकार करना है। लेकनि हमारी शहादत रक्त बहाने में नहीं, बल्कि एक आंतरकि, ववि‍ेकपूर्ण संघर्ष में है, जब, उदाहरण के लिए, हम बाळ के सामने घुटने नहीं टेकते—अर्थात्, हम शारीरकि वासना के आगे नहीं झुकते—और हम सभी प्रलोभनों पर वजिय प्राप्त करते हैं, वचिारों का उथल-पुथल, वासनाओं और इच्छाओं की ज्वाला, वंचनाओं, दुर्भाग्यों और अपमानों का दुख। देखो, ये हैं शुभ शहीद! देखो, ये हैं मसीह के सपािही! देखो, ये हैं ज़रूरतमंद और स्वर्ग के राज्य के वारसि! आनंद मनाओ, प्रसन्न रहो, हम्मित रखो, दौड़ अच्छी तरह से दो, शक्ति से शक्ति तक बढ़ो, सद्गुणों की ऊँचाइयों तक पहुँचो, उच्चतम चिंतन में ऊँचा उड़ो, और ऐसा अपने जीवन के अंत तक बनिा रुके करो, जब तक कि वह तुम्हें दुनयिा की नींव से तुम्हारे लिए तैयार की गई आनंद और प्रसन्नता तक न ले जाए। धन्य और परम धन्य है वह, जो इसे ध्यान से सुनकर और अपने जीवन में उतारकर, अपने हृदय में अग्नि पर अग्नि प्रज्वलति करता है, और अपने भीतर दवि्य प्रेम की वह ज्वाला प्रज्वलति करता है जो स्वर्ग तक पहुँचती है। परन्तु उस पर हाय-हाय हो जो अपने कान बंद कर लेता है, व्यर्थता से प्रेम करता है और क्षणकि सांसारकि सुखों की खोज करता है। तथापि कोई भी *केवल 'अपना ही न खोजे'* - *'ये'* - बल्कि *'अपने पड़ोसयिों का भी ध्यान रखे'*, उन्हें अपना ही समझकर: क्योंकि हम एक-दूसरे के संबंध में अंग हैं। इस प्रकार, हर कोई प्रभु को प्रसन्न करता है और खुद को बेहतर और अधकि परपूिर्ण बनाता है।

162. दविंगत की आकृति का वर्णन करने और कब्र में जो देखा जाता है उसका उल्लेख करने के बाद; और दविंगत के पुण्य जीवन का संक्षपि्त ववरिण शामलि करने के बाद – वह शरीर और आत्मा की पवति्रता को बनाए रखने का एक पाठ सखिाता है, ताकि मसीह के योग्य एक वधू बन सकें।

162. 1) मृतक के रूप-रंग का वर्णन करने और कब्र में जो देखा जा सकता है उसका उल्लेख करने के बाद; और 2) मृतक के पुण्य जीवन का संक्षपि्त ववरिण देने के बाद, – 3) वह शरीर और आत्मा की पवति्रता बनाए रखने का पाठ पढ़ाते हैं, ताकि मसीह की योग्य वधू बन सकें। [2, 95]

1. मृत्यु का स्मरण हमेशा उद्धारकारी प्रभाव डालता है, और यह और भी अधकि तब होता है जब हम कसिी दविंगत भाई के सामने खड़े होते हैं, जैसा कि इस मामले में है। यहाँ फरि से हम अपने सामने एक अद्भुत रहस्य को नहिारते हैं! एक क्षण पहले वह हमारे साथ था, फरि भी अब उसकी आत्मा हमारे साथ नहीं है; जसिने अपने ही होठों से हमसे बात की, वह पूर्ण मौन में डूब गया है, जबकि उसकी आवाज़ की गूँज अभी भी हमारे कानों में गूँज रही है। यह कतिना आश्चर्यजनक दृश्य है! हम उसे देखते हैं और फरि भी नहीं देखते: उसका शरीर यहाँ दखिाई देता है, लेकनि उसकी आत्मा हमसे चली गई है। वह अचल और नरि्जीव पड़ा है, श्वास, दृष्टि या वाणी के बनिा; उसकी सभी इंद्रयिाँ

तो दिखाई दे रही हैं - फिर भी उनमें से किसी में भी जीवन का कोई संकेत नहीं है; वह पत्थर, या किसी अन्य निर्जीव वस्तु के समान है। – आइए हम उनसे पहले चल चुके लोगों के विश्राम-स्थल को देखें: वहाँ हमें क्या दिखाई देगा, हे भाइयों? देखो और सीखो। क्या यह धूल और राख नहीं है? क्या ये सड़ी हुई लाशें नहीं हैं? क्या ये सूखी खोपड़ियाँ नहीं हैं? क्या ये खाली हड्डियाँ नहीं हैं? – और यह सब एक घृणित दृश्य है, एक दयनीय और घिनौना ढेर है। – क्या यहाँ कोई एक भाई को दूसरे से, सुंदर को कुरूप से, जवान को बूढ़े से अलग पहचान सकता है? बिल्कुल नहीं: सब सड़ गया है, सब अपना रूप खो चुका है। अब कोई भी चाहे तो जाँच करे कि यहाँ कामुक आनंद कहाँ है, दावतों का आनंद कहाँ है, नींद में विश्राम कहाँ है, और वह सब कुछ कहाँ है जो देह को प्रसन्न करने के लिए किया जाता है? – हाथ मिलाना, गले मिलना, चूमना कहाँ है? – यहाँ से सब कुछ चला गया है और उसे उस व्यक्ति द्वारा ले जाया गया है, जिसने एक व्यर्थ धनी व्यक्ति की तरह, अपने लिए एक न बुझने वाली आग प्रज्वलित करने हेतु इसे नरक में भेज दिया।

२. हमारे किसी भी भाई को हानि न हो! और विशेष रूप से वह जो अब भक्ति में प्रस्थान कर गया है और अनंत जीवन में प्रवेश कर गया है, जिसने यहाँ अपना जीवन निष्कलंक आज्ञाकारिता और समर्पण में अच्छी तरह से जिया—वय में जवान परन्तु ज्ञान में सफेद-बाल—कद में छोटा, फिर भी आत्मा में महान, जिसकी आंतरिक प्रवृत्ति मुझे ज्ञात है, जबकि उसका बाहरी आचरण आप सभी को ज्ञात है—जिसमें हर सद्गुण है और जो सर्व प्रशंसा का पात्र है—राफाएल—दयालु और सच्चे रूप से कुलीन, जिसने ईश्वर की प्रतिमा को संरक्षित रखा है और, मैं कहने की हिम्मत करता हूँ, प्रमुख स्वर्गदूतों में से एक के समान ही नाम धारण करने का योग्य है। – मुझे अपने इस पुत्र पर इतना भरोसा है; आपको भी होना चाहिए, क्योंकि वह इसके योग्य है। – लेकिन आइए हम अपने विषय पर वापस लौटें।

3. इसी प्रकार हम भी, थोड़ी ही देर में, यहाँ से चल देंगे: हम मरेंगे, हमें शय्या पर लिटाया जाएगा, हमारे लिए अंतिम संस्कार किया जाएगा, और हमें दफनाया जाएगा। – चूँकि ऐसा है, और *कोई ऐसा 'मनुष्य* नहीं *जो जीवित रहे और मृत्यु को न देखे'* (भजन संहिता 88:49); मैं अतः आपसे निवेदन और विनती करता हूँ: आइए हम धार्मिकता और निर्दोषता से जिएँ, और अपना आचरण निर्दोष और निष्कलंक रखें, न केवल शरीर को बल्कि आत्मा को भी शुद्ध रखें: पहले को आत्मा के अधीन करके, ताकि वह कामुक प्रवृत्तियों के कारण उन्मत्त न हो या विद्रोह न करे, और उसे परमेश्वर के भय से नियंत्रित करके, ताकि वह नियम और विशेष आज्ञा द्वारा निर्धारित भोजन, पेय, नींद और विश्राम की मात्रा से नम्रता और विनम्रता से संतुष्ट रहे; और बाद वाली (आत्मा) पर निगरानी रखना, ताकि वह अशुद्ध विचारों और आवेगों से कलंकित न हो, बल्कि पूरी तरह से ईश्वर की ओर उड़ान भरते हुए, केवल उनकी सुंदरता का चिंतन कर सके, क्योंकि केवल वही सच्चे अर्थ में सुंदर और प्रेम करने योग्य हैं, जबकि सुंदरता के अन्य सभी रूप केवल एक भ्रम और कुछ भी नहीं हैं; और प्रार्थना तथा भजन-गायन से उसकी रक्षा करते हुए, ताकि इन दोनों के द्वारा वह हमारे ईश्वर मसीह, वर के अनुग्रहकारी वधू के समान प्रस्तुत हो सके। यदि हम अपना सफर इसी प्रकार तय करें, तो हम धन्य हैं: हम मरेंगे नहीं, बल्कि जीवित रहेंगे, और हमारे साथ विदाई का सांत्वनादायक गीत रहेगा: *'धन्य है वह मार्ग जिस पर तुम आज चल रहे हो; क्योंकि तुम्हारे लिए विश्राम का स्थान तैयार किया गया है'*।

163. हमारा संघर्ष दुष्टात्माओं के विरुद्ध है, जिनका नेता शैतान है

163. 1) हमारा संघर्ष दुष्टात्माओं के विरुद्ध है, जिनका नेता शैतान है। – 2) वे हमारे विनाश के लिए निरंतर योजनाएँ बनाते हैं: हमें भी बिना थके अपनी रखवाली करनी चाहिए और उनका विरोध करना चाहिए, जिससे प्रभु और उनके स्वर्गदूतों को आनंद हो। – 3) यदि हम निर्लिप्तता प्राप्त करना चाहते हैं और इस संघर्ष के माध्यम से, शहीद का मुकुट जीतना चाहते हैं तो इस प्रकार कार्य करना आवश्यक है। – 4) इसमें सफल होने के लिए, हमें विनम्रता के साथ आज्ञाकारिता, अखंड प्रार्थना, आत्म-परीक्षा, आत्म-त्याग के सभी कार्यों, और अपने विचारों की परीक्षा की आवश्यकता है। [2, 96]

४. *'क्योंकि हमारा संग्राम मांस और रक्त से नहीं, बल्कि प्रधानताओं, शक्तियों, इस युग के अन्धकार के हाकिम से है'* (इफसियों 6:12), – और हमारे दुष्ट विरोधी, शैतान के विरुद्ध, जो संसार की शुरुआत में ही स्वर्ग में घुस गया था, हमारे पूर्वज को निषिद्ध फल का स्वाद चखने के पापपूर्ण कार्य में बहका दिया था, और इस प्रकार उसे स्वर्ग की मिठास से इस पृथ्वी पर निष्कासित करवा दिया। तब से लेकर अब तक, पीढ़ी दर पीढ़ी, उसने मानव जाति का उत्पीड़न किया है, और उसे हर प्रकार की बुराई सिखाई है। यहाँ तक कि अब भी वह हर तरह से हमारी बदनामी करता है, फुफकारते हुए घूमता है, और अधिक आसानी से धोखा देने के लिए अपनी पूँछ हिलाकर चापलूसी करता है; वह एक चोर की तरह आता-जाता है, और उन आत्माओं को फँसा लेता है जो दृढ़ नहीं हैं और उसकी बात पर ध्यान नहीं देतीं। इसीलिए हमें उससे लड़ने में बड़ी संयमशीलता, बड़ी सतर्कता, बड़ी समझदारी और सावधानी की आवश्यकता है, ताकि वह हम पर हमला न कर सके या हमें विनाश की ओर न ले जा सके।

५. उसकी युक्तियों और चालाकियों को जानते हुए, हमें हर तरह से खुद को सशस्त्र कर लेना चाहिए और उसके खिलाफ लड़ने और उसे खदेड़ने के लिए खड़ा होना चाहिए, न तो खुद के प्रति और न ही उसके प्रति कोई ढील दिखाते हुए; जैसे वह पीछे नहीं हटता और न ही कोई ढील दिखाता है, और हमारे विनाश की तलाश में रहता है। भले ही वह दिन में कई बार हम पर हमला करे और पीछे हट जाए, वह अडिग रहता है; ऐसा लगता है मानो उसने संघर्ष अभी शुरू ही नहीं किया हो, और वह और भी अधिक क्रूरता के साथ फिर से हमला करता है, अपने साथ अन्य दुर्भावनापूर्ण आत्माओं को लाता है। इसलिए हमें भी हम पर होने वाले ऐसे दैनिक और घंटों के हमलों के सामने पीछे नहीं हटना चाहिए या अपने संकल्प को कमजोर नहीं करना चाहिए। भले ही हमने पहले ही बहुत ध्यान और कठोर प्रयास दिखाया हो, और सफल हुए हों, तो भी हम इससे विचलित न हों; बल्कि हम हमेशा उसी उत्साह, जोश और प्रतिरोध को बनाए रखें, ताकि शत्रु के प्रति हमारे दृढ़ विरोध को देखकर, ईश्वर हमसे प्रसन्न हों और हमें देखकर आनंदित हों, और उनके पवित्र स्वर्गदूत भी, जो उनके संकेत और आज्ञा पर हमारी सहायता करते हैं।

6. क्योंकि हम अभी तक वैराग्य की उस अवस्था को प्राप्त नहीं कर पाए हैं, और उसके साथ ही विवाद से मुक्ति भी नहीं मिली है, जिसके कारण हमारा मन अपने भीतर शांत रह सके, आंतरिक संघर्ष से मुक्त। यह अवस्था थके-बिना लगे रहने वाले उत्साही लोगों द्वारा बहुत परिश्रम, पसीने और प्रयासों से प्राप्त की गई है, और प्राप्त होती रहती है। जहाँ तक हमारी बात है, जो अभी भी कामनाओं से बँधे हुए हैं, हमें अपने संघर्ष और अनवरत परिश्रम में लगे रहना चाहिए, बिना हतोत्साहित हुए या हार माने, अपनी ही चंचलता और शत्रु की बदलती चालों के सामने, जिसका अर्थ है कि हर दिन और हर घंटे हमें, मानो, एक नई शुरुआत करनी चाहिए। ईमानदारी से प्रयास करने वालों का यही भाग्य है: तो फिर, इसके लिए ताज क्या है? – निर्लिप्तता की ऊँचाइयों को प्राप्त करना पवित्र है; लेकिन युद्ध में पराजित न होना, और हमेशा दृढ़ खड़े रहना, धीरे-धीरे उस ऊँचाई की ओर बढ़ना और स्वयं को परिपूर्ण बनाना भी एक आशीर्वाद है। ऐसे व्यक्ति को शहीद का मुकुट भी प्राप्त होगा, ठीक वैसे ही जैसे कोई योद्धा, जो युद्ध के मैदान से लौटकर राजा को अपने घाव और जख्म दिखाता है, उसे तिरस्कृत या निंदा नहीं किया जाता, बल्कि इसके विपरीत उसकी प्रशंसा की जाती है, उपहार और सम्मान दिए जाते हैं।

7. अतः हम मसीह के सिपाहियों के रूप में प्रयास करें, और अपने समय को अपने शत्रुओं के विरुद्ध युद्ध के समय के सिवा और कुछ न मानें, जब केवल तीरों की फुफकार और तलवारों की खनखनाहट ही सुनाई दे: क्योंकि *'ऊँचे से* हम पर *आक्रमण करने वाले बहुत हैं'* (भजन संहिता 55:3), जैसा कि लिखा है, जो दिन भर हम पर हमला करते और युद्ध छेड़ते हैं, जाल बिछाते हैं, गड्ढे खोदते हैं, घात लगाते हैं और हर तरह की अन्य चालाकियाँ रचते हैं। तो फिर, उनसे कौन बचेगा, उनसे कौन शरण लेगा, कौन उनके जालों में फँसकर नहीं गिरेगा? वह कौन हो सकता है, सिवाय उस व्यक्ति के जिसके पास आज्ञाकारिता के साथ विनम्रता, अखंड प्रार्थना, कार्य के प्रति उत्साह, निरंतर समर्पण, बिना शिकायत के परिश्रम, लज्जास्पद विचारों को दूर रखने और सार्थक चिंतन को अपनाने में सतर्कता, चौकसी, भजन-गायन, प्रणाम, और इन सभी से बढ़कर, या इन सभी के साथ, अपने अंतरतम विचारों का इकरार, अहंकार से बचना, और वाणी में संयम? इन सभी और इन जैसे अन्य साधनों से, हमारा आंतरिक मन एक किले की तरह सुदृढ़ होता है, और शत्रु, उसके विरुद्ध कार्य करने की शक्ति न पाकर, पीछे हट जाता है।

१६४. एक ईश्वर-पुरुष, एक सच्चे भिक्षु के बाहरी स्वरूप का वर्णन

164. ईश्वर के एक पुरुष, एक सच्चे भिक्षु के बाहरी स्वरूप का वर्णन। [2, 97] भाइयों, हम अपने प्रति सचेत रहें, और अपने दिनों और अपने समय को व्यर्थ में बर्बाद न करें। देखो, यह दिन तो पहले ही बीत गया है, और हम इसे फिर कभी नहीं देखेंगे; परन्तु जब तक यह रहा, तब तक हमने जो कर्म किए हैं, वे दर्ज हो गए हैं। यदि वे अच्छे हैं, तो हमारे लिए शुभ है; परन्तु यदि नहीं, तो हाय! आइए हम अपनी इंद्रियों को लूटने से बचाएँ, और अधिकतर समय अपना सिर झुकाए रखें: हमारी आँखें चौकस और एकाग्र हों, इधर-उधर न भटकें; क्योंकि जो कुछ आँख में देखा जाता है, वही आत्मा में भी देखा जाता है, क्योंकि बाहरी मनुष्य उसे उसकी ओर प्रतिबिंबित करता है; चेहरा न तो उदास हो और न ही विचलित, बल्कि गरिमामय और सौम्य हो, और अधिकतर समय विषण्ण हो तथा पश्चाताप के आँसुओं से सना हो; चाल नम्र, साधारण, और गर्वपूर्ण न हो, जिसमें कंधे उठाना, भौंहें चढ़ाना, ज़ोर से कदम रखना या पूरे शरीर को हिलाना शामिल न हो; उसकी वाणी भी मधुर होनी चाहिए, न तो बहुत ऊँची और न ही बहुत धीमी, उसकी आँखों और चेहरे के अन्य भावों में संयम हो, बिना फुलाए हुए नथनों, हाथों को लहराने या मुँह फेरने के। क्योंकि परमेश्वर का मनुष्य सब बातों में सुव्यवस्थित होता है, वह आत्मा का साधन होता है जो उसमें वास करता है, और वह उसे वचन में, चाल-ढाल में, खाने-पीने में मार्गदर्शन करता है। और हमें हर बात में शिष्टाचार और मर्यादा के साथ आचरण करना चाहिए: अपने

वस्त्रों और जूतों में, यह ध्यान में रखते हुए कि हमारे प्रभु परमेश्वर हर परस्थिति में और हमारे सभी कर्मों में हमारे साथ सदैव उपस्थित हैं।

165. प्रेरित के शब्दों का उद्धरण देते हुए: 'अब अनुकूल समय है', वे कहते हैं कि इससे प्रेरित हमारे उद्धार के कार्य के लिए हमारी लगन को जगाते हैं

165. 1) प्रेरित के शब्दों का उद्धरण देते हुए: 'अब अनुकूल समय है', वह समझाते हैं कि इससे प्रेरित हमारे मोक्ष के लिए कार्य करने के उत्साह को जगाते हैं। – 2) फिर वह जोड़ते हैं: 'तुम ठीक यही कर रहे हो; शाबाश।' [2, 98]

8. संत पौलुस हमें क्या सिखाते हैं और उनमें क्या प्रेरणा जगाते हैं जब वे कहते हैं: *'अब अनुकूल समय है, अब उद्धार का दिन है'* (2 कुरिन्थियों 6:2)? *'इसलिये हम अँधेरे के कामों को त्याग कर प्रकाश के हथियार पहन लें'* (रोमियों 13:12)। – वह, एक अच्छे पिता और शिक्षक के रूप में, हमें सुस्ती से जगाता है और हमारे मन की आँखों से आत्मा की नींद को दूर भगाता है, परमेश्वर के अनुसार हमारे कदमों को सही मार्ग पर ले जाता है और उन्हें सद्गुण के पथ पर ले आता है। आओ हम उसकी दिव्य शिक्षा पर ध्यान दें; आओ हम उत्साह के साथ उठें, होश में आएं, और और भी अधिक लगन से आगे बढ़ें, क्योंकि हमारे प्रत्येक जीवन का दिन पहले ही समाप्त होने को आ रहा है। अतःआओ हम स्वयं को तैयार करने का प्रयास करें, ताकि हम धन्य हों और अनंत काल तक अनिर्वचनीय आनंद का अनुभव करते हुए जीवित रहें। क्योंकि यदि हमारे जीवन का अंत हमें अतैयार और आत्मिक रूप से सुव्यवस्थित न पाए – हाय! हाय! सचमुच। और आत्मा-विनाशकारी सर्प के हाथों से हमारा उद्धार कौन करेगा? – या हम उस उपेक्षा के लिए, जिससे हमने अपनी सांसारिक जीवन को दुष्टता में जिया है, पीड़ित होने पर क्या राहत पाएँगे? क्यों—जो हमें त्यागते हैं, वे हमें त्यागें, और अधर्मी अपनी अधर्म में बने रहें—मैं उन लोगों के बारे में बात कर रहा हूँ जो हमसे भटक गए हैं। या यूँ कहें कि, हम उनके लिए प्रार्थना करें और उन्हें वापस बुलाने का प्रयास करें: क्योंकि परमेश्वर पापी की मृत्यु नहीं चाहता, बल्कि यह चाहता है कि वह लौट आए और जीवित रहे (यहे. 33:11)।

९. परन्तु तुम, जो मसीह की कृपा से आज्ञाकारिता के काम में स्थिर रहते हो और परमेश्वर तथा मनुष्यों के साम्हने अपने वचनों को विश्वासयोग्यता से पूरा करते हो, आनन्दित और हर्षित होओ: क्योंकि स्वर्ग में तुम्हारे लिए एक बड़ा प्रतिफल संचित है, यदि तुम अंत तक चौकस रहो और हमारे प्रभु मसीह यीशु के विषय में जो कुछ भी तुम्हें आज्ञा दी गई है, उसे विश्वासयोग्यता से पूरा करो, उसकी सेना के सिपाही होकर, जिन्हें उसने भरती किया है: क्योंकि तुम उसकी सेवा में भरती हुए हो और दिन-रात उसकी सेवा करते हो, उसके वचन को याद करते हुए: 'जो मुझ से यह नहीं कहता, 'हे प्रभु, हे प्रभु', परन्तु जो मेरे स्वर्गीय पिता की इच्छा करता है, वही मेरा है' – और प्रेरित की यह आज्ञा: 'क्या तुम अधिकारीयों से नहीं डरना चाहते? जो ठीक है, वही करो, और तुम उससे प्रशंसा पाओगे' (रोमियों 13:3)।

१६६. जीवन में दृढ़ रहो और सभी बातों को सहो: क्योंकि जब तुम्हें उस अनंत आनंद का वरदान दिया जाएगा, तब भी तुम्हें इस बात का पछतावा होगा कि तुम और अधिक क्यों नहीं सह सके

166. 1) जीवन में दृढ़ रहो और सभी बातों को सहो: क्योंकि जब आपको उस शाश्वत आनंद का पात्र समझा जाएगा, तब भी आपको और अधिक सहन न कर पाने का पछतावा होगा। – 2) न्याय और प्रतिशोध के दिन को याद रखो और मन में रखो; – और तुम कभी आलस्य या शिकायत में नहीं पड़ोगे। – 3) जो कोई भी इसके विपरीत व्यवहार करता है, वह वासनाओं का दास है और एक जानवर के समान है; लेकिन जो कोई भी ऐसा है वह एक देवदूत है। [2, 99]

10. अब तुम्हें वैसे बात करने की आवश्यकता नहीं है जैसे प्राचीन भविष्यद्वक्ताओं ने कहा था: 'तुम अपने कानों से सुनोगे पर समझोगे नहीं; तुम अपनी आँखों से देखोगे पर देखोगे नहीं'; क्योंकि इन लोगों का हृदय कठोर हो गया है, उनके कान सुनने के लिए बहरे हो गए हैं, और उन्होंने अपनी आँखें बंद कर ली हैं (यशायाह 6:9, 10)। क्योंकि तुम स्वयं को सचेत और जाग्रत रखते हो, और बिना आवरण के चेहरों से प्रभु की महिमा को निहारते हो (2 कुरिन्थियों 3:18), अपने आज्ञाकारी और पवित्र जीवन-यापन के द्वारा अपनी आत्माओं की आँखों से सांसारिक आसक्ति की कीचड़ को झाड़कर, और चीज़ों को स्पष्ट रूप से देखने लगे हो, अर्थात् इस जीवन की व्यर्थता और मानव मामलों का विभिन्न दिशाओं में अनवरत क्लेश; और आप यह महसूस करने लगे हैं कि एक ही दृढ़, सबसे वांछनीय और परम अच्छाई है—ईश्वर—और मनुष्य को एक सदाचारी जीवन के माध्यम से उसी की ओर प्रयासरत रहना चाहिए। धन्य है हमारे पूर्वजों का प्रभु और परमेश्वर, जिसने हमें इस अनुग्रह में सहभागी होने और ऐसा बुद्धिमानी भरा जीवन जीने के योग्य समझा है। इसलिए आइए हम अपनी दृष्टि ऊँची रखें, जहाँ हमारा मुखिया—मसीह—है, और केवल नश्वर तथा क्षणिक चीज़ों पर नहीं, बल्कि स्वर्गीय और परम-स्वर्गीय सौंदर्यों पर मनन करें, और वहाँ की अकथनीय और

अनुपम आशीषों का स्वाद चखें और उनका सांत्वना प्राप्त करें, जिनकी किसी मन ने कभी कल्पना नहीं की, किसी कान ने कभी नहीं सुनी, और न ही किसी हृदय ने कभी सपना देखा, उनकी अथाह उत्कृष्टता के कारण; और मैं आपको विश्वास दिला सकता हूँ कि आप भी उन्हें प्राप्त करेंगे, यदि प्रभु आपको आपके सामने आने वाले संघर्ष को अंत तक धैर्यपूर्वक सहने की शक्ति प्रदान करें, और आप उस स्थान पर विश्राम पाएँगे जहाँ न कोई बीमारी है, न कोई दुख, न कोई आह। तब आप उस प्रभु का ऊँचे स्वर में धन्यवाद करेंगे जिसने आपको इस पवित्र जीवन के मार्ग पर बुलाया है; आपने जो दुख सहे हैं, उनकी न केवल कोई स्मृति रहेगी, बल्कि इसके विपरीत, आपको इस बात का खेद होगा कि आपको आपसे कहीं अधिक बड़े परीक्षणों, दुखों और कठिनाइयों को सहने का अवसर नहीं मिला।

11. और हम हमारे प्रभु यीशु मसीह के प्रगट होने के उस भयानक दिन पर क्या देखेंगे, जब वह अनगिनित स्वर्गदूतों और प्रधान स्वर्गदूतों के साथ खुले तौर पर आकर भयानक न्याय के सिंहासन पर विराजमान होगा, और पृथ्वी के चारों कोनों से सब जातियों और हर एक जीवित प्राणी को इकट्ठा करेगा, अंधकार के कामों को उजागर करते और हृदय की युक्तियों को प्रकट करते हुए, जिसके परिणामस्वरूप कुछ लोग प्रभु के दाहिने हाथ पर आनन्द की ओर ले जाएँगे, जबकि अन्य शर्मिंदगी के साथ बाईं ओर चले जाएँगे; और जिन्हें प्रकाशमान निवासों में, आनंद के स्वर्ग में, स्वर्ग के राज्य में, जबकि इनके लिए अविनाशी अग्नि में फेंका जाएगा, जहाँ वे कीड़ों द्वारा खाए जाएँगे, दाँत पीसते हुए, घोर अंधकार में, टार्टरस की गहराइयों में, अटूट बंधनों और हर प्रकार की यातनाओं में, प्रत्येक के पापों के अनुसार। तब वे सूर्य के समान चमकेंगे, और अपने पूरे हृदय से आनन्दित और प्रसन्न होना शुरू कर देंगे, और अनवरत गीतों से प्रभु की महिमा करेंगे, यह जानकर कि उन्होंने प्रभु के लिए कितना अच्छा और उत्तम कार्य किया है। – ये वे शहीद हैं जिन्होंने उनके (प्रभु के) स्वीकारोक्ति के लिए अपना रक्त बहाया, अर्थात् प्रेरित, भविष्यवक्ताओं, स्वीकार करने वालों, पवित्र और धर्मी; उनके अनुयायी, जिन्होंने आध्यात्मिक शहादत दिखाई—बिशप, पुरोहित, भिक्षु और सामान्य लोग—सभी जिन्होंने अच्छे कर्मों, प्रयासों और महान कार्यों का जीवन जिया। और ये विलाप और रोना शुरू कर देंगे, हाय! — हाय! — वे अपनी ही दोष-भार को बढ़ाते हुए, अपनी ही अधर्म पर एक के बाद एक शाप बुलाते हुए, शापित आत्माओं द्वारा बंधे, पीटे और अपमानित होते हैं, और इसके अलावा स्वयं को दोषी ठहराते और कलंकित करते हैं, और निराशा से पीड़ित होते हैं, क्योंकि उन्हें अनंत काल के लिए निर्धारित अविश्वसनीय यातनाओं का कोई अंत दिखाई नहीं देता, जैसा कि उनके सुनने में कहा गया है: 'ये अनन्त दण्ड में और धर्मी अनन्त जीवन में जाएँगे' (मत्ती 25:46)। इन सब बातों को हृदय में रखते हुए, क्या हम में अपने श्रम और परिश्रम में ढिलाई कर सकते हैं? क्या हम अपने वर्तमान जीवन की कठिनाइयों के कारण हतोत्साहित हो सकते हैं? क्या हमें इसके बजाय अपने हृदय में प्रेरित नहीं होना चाहिए और आग से भी अधिक तीव्र उत्साह से जलना नहीं चाहिए – चाहे हमें इसकी कोई भी कीमत चुकानी पड़े, अपने बलिदानकारी मठवासी जीवन के नियमों के प्रति अंत तक वफादार बने रहने के लिए?

१२. तो आइए, हम इन सब बातों को हृदय में ग्रहण करें और इनका पालन करें, और जो कुछ भी यह हमसे करने के लिए कहता है, उसे लगन से करें। क्योंकि जो कोई भी इस बात के प्रति उदासीन है, वह निश्चय ही वासनाओं के जाल में फँसा हुआ है, लापरवाही में सो रहा है, कठोर हृदय है, कामुक सुखों में लिप्त है, ईर्ष्यालु, तुच्छ और आलसी है, अपने पंजे में दबी भालू की तरह दफ़न है, जो केवल खाने-पीने की ही तलाश में रहता है; जब उसकी बुरी इच्छाएं अधूरी रहती हैं तो शेर की तरह दहाड़ता है; एक तेंदुआ की तरह एक सुख से दूसरे सुख पर कूदता है; जो चाहता है उसे पाने के लिए लोमड़ी की तरह योजनाएं बनाता है; एक ऊंट की तरह गुस्से में आता है, किसी आकस्मिक अन्याय के लिए अपने पड़ोसी से बदला लेते समय घोड़े की तरह हिनहिनाता है, मानव और पशु दोनों के शरीरों के साथ अश्लील कृत्य करता है, और अपनी ही आत्मा और अपने भाइयों की आत्मा को विनाश की ओर ले जाने की अपनी दुस्साहस में शर्मनाक ढंग से भेड़िये की तरह व्यवहार करता है। और उन विभिन्न जुनूनों के बारे में क्या कहा जाए, जिनके द्वारा कुछ न केवल जानवरों से मिलते-जुलते हैं, बल्कि अपनी पशु प्रकृति में उनसे कहीं आगे भी हैं। – परन्तु जो शुभ विचारों की ओर रहता है, जो एक स्वर्गदूत की तरह चमकदार, एक चेरब की तरह तेज, और एक सेराफिम की तरह बहुनेत्र है, ताकि यदि कोई अवसर मिले, तो आत्मा-विनाशक अजगर उस पर झपट न सके, वह एक योद्धा की तरह पराक्रमी है, पाप के विरुद्ध भेदने वाले विचार की अग्निमयी तलवार घुमाते हुए, और शुभ विचारों की गर्मी से राक्षसों को झुलसाते हुए; एक सदैव बहने वाले झरने की तरह, वह पश्चाताप के शुद्ध आँसुओं की धाराएँ बहाता है; ईश्वर के मंदिर के समान, वह सद्गुणों के स्वर्णिम पत्थरों से बना है; एक नम्र मेमने की तरह, अपने प्रभु के उदाहरण का अनुसरण करते हुए, न तो विरोध करता है और न ही पुकारता है, बल्कि, भले ही मृत्यु आगे क्यों न हो, अपने पिता और अपने भाइयों की आज्ञा मानते हुए, आगे बढ़ता रहता है। परन्तु यहाँ तुम्हारे सामने जीवन और मृत्यु रखे गए हैं; प्रत्येक व्यक्ति अपने लिए चुने कि वह क्या करेगा।

167. हमारा संघर्ष दुष्ट आत्माओं के विरुद्ध है

167. 1) हमारा संघर्ष दुष्ट आत्माओं के विरुद्ध है। प्रेरित द्वारा उल्लिखित सद्गुणों के पूर्ण कवच को धारण करने के बाद भी हमें सतर्क क्यों रहना चाहिए, जिनमें अपने शत्रुओं को पीछे धकेलने और उन्हें परास्त करने की शक्ति है? – 2) यह युद्ध मानसिक है और यह प्रभु से प्रार्थना के साथ आने वाले विरोधी विचारों के माध्यम से लड़ा जाता है। – 3) यह अचानक उत्पन्न होता है और हमारी आंतरिक अवस्था को हवा की अवस्था की तरह परिवर्तनशील बना देता है; लेकिन यह उन लोगों के लिए डर का कारण नहीं है जो अपने प्रति सचेत हैं और ईश्वर में विश्वास रखते हुए, सद्गुणों से स्वयं को सुशोभित करते हैं। [2, 100]

13. हमारा संघर्ष मांस और रक्त के विरुद्ध नहीं, बल्कि प्रधानताओं और शक्तियों तथा इस युग के अन्धकार के हाकिमों के विरुद्ध है, प्रेरित के अनुसार (इफिसियों 6:12)। इसलिए, हमें संयम, सतर्कता, सावधानीपूर्वक परिश्रम, तीव्र प्रयास बनाए रखना चाहिए, और आध्यात्मिक हथियारों से खुद को लैस करना चाहिए—अर्थात्: अटूट विश्वास को कवच के रूप में, सच्ची आज्ञाकारिता और वास्तविक नम्रता को ढाल के रूप में, और हर दूसरी सद्गुण को, जो सभी, जब उचित रूप से लागू किए जाते हैं, तो हमारे धोखेबाजों के खिलाफ हथियारों के रूप में काम कर सकते हैं और हमारे अदृश्य विरोधियों को दूर करने की शक्ति रखते हैं।

14. यह महान और भयानक युद्ध, जैसा कि आप जानते हैं, हमेशा चलता रहता है, प्रार्थना और पवित्र सहभागिता के दौरान भी नहीं रुकता; यह ऐसे विचारों को भड़काता है और कभी-कभी उन्हें इस हद तक बढ़ा देता है कि उनके बारे में बात करना भी उचित नहीं है। परंतु एक विनम्र आत्मा, ऐसे विचारों से घिरी हुई, उन्हें घृणा से दूर करती है, पवित्र विचारों से उनका मुकाबला करती है और साथ ही प्रार्थना में प्रभु की ओर मुड़ती है। प्रभु की सहायता तुरंत आती है, और ऊपर से सूर्य की किरणें गिरकर उस अजगर को भगा देती हैं। तो फिर, हमें ऐसे हमलों के सामने हतोत्साहित क्यों होना चाहिए या हार क्यों मान लेनी चाहिए? क्योंकि जब हृदय निडर होता है, तो मन ऐसे हमलों के नुकसान से अछूता रहता है, न केवल संप्रभुता के समय, बल्कि अन्य सभी समयों में भी।

१५. हमारे शत्रु हर समय, और जब हमें इसकी सबसे कम उम्मीद होती है, तब हम पर आक्रमण करते हैं; लेकिन जब हम मन से अच्छे और शांतिपूर्ण होते हैं—चाहे वह हमें हुई पश्चाताप से हो, या सच्ची प्रार्थना से, या पढ़ने से, या किसी अन्य प्रकार के पवित्र प्रवचन से—तो वह हमला करता है, हृदय को अशांत और बेचैन कर देता है, जैसे हमें बंदरगाह से निकालकर लहरों में फेंक रहा हो, या हमारे विचारों में दिन की रोशनी से रात के अंधेरे में ले जा रहा हो। इस संबंध में, हमारे साथ जो होता है वह दिन भर के वातावरण की स्थिति के समान ही है: कभी-कभी यह धूप में साफ होता है, कभी-कभी बादलों के आने पर उदास होता है, फिर यह फिर से साफ हो जाता है, और हवा में विभिन्न परिवर्तनों के कारण एक बार फिर से बादलों से ढक जाता है। क्या हमारे साथ भी ऐसा ही नहीं होता? कभी हम अच्छे विचारों से, एक साफ़ दिन की तरह, चमकते हैं; तो कभी हम बुरे विचारों से अँधेरे में डूब जाते हैं; और फिर हम प्रार्थना या किसी अन्य पुण्य कार्य को समर्पित होकर प्रकाश के क्षेत्र में लौट आते हैं। और यह एक दिन में एक बार से भी ज़्यादा होता है। लेकिन वायुमंडल में परिवर्तन हमारे भीतर होने वाले परिवर्तनों से अलग तरह से होते हैं: वहाँ वे सभी चीजों के स्रष्टा, ईश्वर की बुद्धिमत्ता द्वारा निर्धारित, स्वाभाविक रूप से होते हैं; जबकि हम में वे स्वैच्छिक होते हैं, और आंशिक रूप से हमारी अपनी स्वतंत्र इच्छा का परिणाम होते हैं। क्योंकि यद्यपि शैतान प्रलोभनों के माध्यम से हमें एक अच्छी अवस्था के प्रकाश से वंचित करने का प्रयास करता है, हमारे पास उसे पीछे हटाने की शक्ति है, और हमेशा धार्मिकता का सूर्य हमारे मन को प्रकाशित करता रहे, जैसा कि संतों ने किया, और जैसा कि सभी जो धार्मिकता से जीते हैं, करते हैं। क्योंकि अभी भी कई संत हैं जो, कीमती रत्नों की तरह, पृथ्वी पर चलते हैं, जो चमत्कारों और अद्भुत कार्यों के करने से नहीं, बल्कि अपनी पवित्रता से विशिष्ट हैं—क्योंकि पवित्रता केवल इसी में नहीं निहित है— परन्तु सच्चे विश्वास के संरक्षण और परमेश्वर की आज्ञाओं के सटीक पालन में, ईर्ष्या से रहित अपने भाइयों के प्रति सच्चे प्रेम में, अपने पड़ोसी की समृद्धि में आनंद मनाने में, मानवीय महिमा से ऊपर उठने में, और हर दूसरी सद्गुण में। इस प्रकार पवित्रता हर व्यक्ति में प्रकट होती है। परन्तु तुम, जो संसार से अलग हो गए हो और उसके लिए क्रूस पर चढ़ाए गए हो, तुम्हें इसके अतिरिक्त, लालच-रहितता और पवित्रता, अपनी इच्छा का त्याग, और हमारे जीवन-मार्ग से अविभाज्य सभी वंचनाओं और दुखों को सौम्य सहनशीलता से सहन करने के लिए भी विशिष्ट होना चाहिए। इस प्रकार जीने पर, आप पवित्र हो जाएँगे और संतों में गिने जाएँगे, और धर्मी लोगों का समूह आपको अपने बीच स्वागत करेगा – और आप शहीदों के निवासों में हमेशा के लिए आनंदित होंगे।

१६८. जैसे-जैसे हम अपने मार्ग पर चलते हैं, हमें सांसारिक और क्षणिक चीजों पर अपनी नज़रें न टिकानी चाहिए; बल्कि हमें स्वर्गीय और शाश्वत चीजों पर अपनी दृष्टि केंद्रित करनी चाहिए: क्योंकि पहली हमें कमजोर करती है, जबकि दूसरी हमें साहस से भर देती है

168. 1) जैसे-जैसे हम अपने मार्ग पर यात्रा करते हैं, हमें सांसारिक और क्षणिक चीजों पर अपनी नज़र न टिकानी चाहिए; बल्कि हमें स्वर्गीय और शाश्वत चीजों पर अपनी दृष्टि केंद्रित करनी चाहिए: क्योंकि पहली हमें कमजोर करती है, जबकि दूसरी हमें साहस से भर देती है। – 2) इस प्रकार सभी धर्मपिता चले; हमें भी उसी प्रकार चलना चाहिए, हर सद्गुण से स्वयं को सजाते हुए, सभी बुराइयों से दूर हटते हुए और स्वयं को शुद्ध करते हुए। हमारा जीवन हमारे नाम के अनुरूप हो। [2, 102]

१६. हमारा जीवन एक यात्रा है, और वह ऐसी नहीं है जो एक, दो, या कई दिनों में पूरी हो जाए, बल्कि यह हमारे पूरे जीवन भर फैली हुई है, जब तक कि हम इस दुनिया से परलोक में न चले जाएँ। कितनी कोशिश, कितनी ताकत, कितनी एकाग्रता और लगन की आवश्यकता है, ताकि जब हम इसकी महान दूरी पर विचार करें, तो हम हतोत्साहित न हों या इस मार्ग पर चलना न छोड़ दें, जबकि साथ ही हमें एक ऐसे दुश्मन का भी सामना करना पड़ता है जो परमेश्वर की ओर हमारे कदमों के रास्ते में हर तरह की बाधाएँ और ठोकरें लगाता है? लेकिन कोई बात नहीं; क्योंकि दूसरी ओर हमारे प्रयासों में हमारे पास एक मध्यस्थ और मार्गदर्शक, और इस मार्ग पर एक साथी है—कोई साधारण साथी नहीं, बल्कि सभी का प्रभु और शासक, और पवित्र स्वर्गदूत हमारे रक्षक और संरक्षक के रूप में हैं। *'जो इस्राएल की रखवाली करता है, न तो ऊँघता है और न सोता है'* (भजन संहिता 120:4)। तो फिर, हम इतनी लगन, इतनी उत्सुकता, इतनी तीव्र इच्छा के साथ अपने मार्ग पर क्यों नहीं चलते, नीचे नहीं देखते, बल्कि अपनी आँखें ऊँचाइयों पर क्यों टिकाते हैं: क्योंकि यदि हम नीचे देखें, तो हम निश्चित रूप से आलस्य, हतोत्साह और ढिलाई का शिकार हो जाएँगे, क्योंकि हमारे विचार इधर-उधर भटकते हैं, और हमारे हृदय इस जीवन की व्यर्थताओं और सुखों से चिपके रहते हैं: व्यभिचार, परस्फिोट, लोभ, तमाशे, भोज, आभूषण, कल्पनाएँ और अन्य सभी ऐसी चीज़ों पर जो क्षणभंगुर और नश्वर हैं। परन्तु जब हम अपनी दृष्टि स्वर्गीय और शाश्वत वस्तुओं पर टिकाते हैं; तब, यद्यपि हमारा वर्तमान जीवन दुखपूर्ण और पीड़ादायक हो, यद्यपि यहाँ परिश्रम और थकान हो, भले ही उपवास और जागरण, इच्छा-शक्ति पर अंकुश और अभाव हों—जो हमारे तपस्वी जीवन और तपस्वी आज्ञाकारिता की प्रकृति में अपरिहार्य हैं—हम हतोत्साहित नहीं होंगे, हम कायर नहीं होंगे, हम अपने वर्तमान दुखों के बोझ तले नहीं दबेंगे, और न ही हम अपने बढ़ते जुनून के आगे झुकेंगे; परन्तु धैर्यपूर्ण बुद्धि और उत्साही संकल्प के साथ, हम आगे बढ़ते ही रहेंगे, स्वर्ग की ओर दृष्टि बनाए हुए, अपनी दृष्टि परमेश्वर पर टिकाए हुए, स्वर्ग के राज्य के लिए, स्वर्गीय सांत्वना के लिए, उसकी अक्षय महिमा की मधुरता के लिए, उस प्रकाश के लिए जो कभी अस्त नहीं होता, स्वर्गदूतों के आनंद के लिए प्रयत्नशील रहेंगे।

१७. इस प्रकार सभी पूर्वज चले, और, विजय प्राप्त करते हुए, उन्होंने जय प्राप्त की: शहीद, सम्माननीय, धर्मी, धर्मपरायण, ईश्वर-प्रेमी, भिक्षु, गृहस्थ, पुरुष, महिलाएं, युवा और वृद्ध, अपने यहाँ के समय को एक प्रकार के प्रशिक्षण के रूप में मानते हुए। इसी प्रकार, यदि हम उनकी महिमा और आनंद की कामना करते हैं, तो हमें भी इस ईश्वर-प्रसन्न जीवन-पथ पर स्वेच्छा से दुख सहना होगा। इसलिए, भाइयो, आइए हम इसे प्रेम करें; आइए हम साहसी बुद्धि और अटूट उत्साह के साथ सभी बातों को सहन करने और झेलने का संकल्प लें, अपनी आँखें ऊपर की ओर टिकाए रखें, जैसा कि सर्व-प्रज्ञावान आज्ञा देते हैं (उपदेशक 2:14), और उन्हें जमीन की ओर न झुकाएँ। क्योंकि जो स्वर्गीय बातों के विषय में सोचते और उन्हीं में लगे रहते हैं, उनकी आँखें सचमुच उनके सिर पर होती हैं, जबकि जो व्यर्थता के आगे सिर झुकाते और उसी में मग्न रहते हैं, वे अपनी आँखें अपने पैरों की ओर नीचे गिरा देते हैं। क्या यह दयनीय और भयानक नहीं होगा यदि किसी मनुष्य के पैर ऊपर हों और उसका सिर नीचे? फिर भी, अपनी आत्मा में ऐसा भोगना कहीं अधिक दयनीय और अमानवीय है। इसलिए हमें बुद्धिमत्ता के अनुसार चलना चाहिए, अपनी आँखें अपने सिर पर टिकाए हुए, ईश्वर और दिव्य बातों पर ध्यान लगाते और उसी के अनुसार कार्य करते हुए। सिर में आँखें विश्वास, आशा और प्रेम हैं; उनसे दृढ़ धैर्य, पवित्रता, भाईचारा, शांति, कोमलता, विनम्रता, साहस, समृद्धि, आत्म-नियंत्रण, हर अच्छा काम, और हर सद्गुण का खिलना और फलना उत्पन्न होता है; जबकि जो लोग उपरोक्त के विपरीत सोचते और कार्य करते हैं, उनके साथ इसका विपरीत होता है: अविश्वास, निराशा, घृणा, जिनसे अधीरता, कायरता, व्यभिचार और परस्त्रीगमन, अशिष्टता, कामुकता, लालच, तुच्छता, आत्म-सज्जा, उपहास, झगड़ा, ईर्ष्या, हत्या और हर अन्य शैतानी कर्म और का कार्य उत्पन्न होता है। हम जो परमेश्वर के हैं, हम परमेश्वर के होने का अनुसरण करें; शुद्ध लोग पवित्रता का अनुसरण करें; निर्दोष लोग पवित्रता का अनुसरण करें; धार्मिक लोग श्रद्धा का अनुसरण करें; शांति-प्रिय लोग भाईचारे का अनुसरण करें; विनम्र लोग स्वर्गीय चीज़ों का अनुसरण करें;

जन्होंने संसार को त्यागा है, वे परम का अनुसरण करें। व्यवस्था अव्यवस्था में न बदल जाए, कहीं ऐसा न हो कि हम, जो प्रकाश के हैं, अँधेरे का पीछा करें; हम, जो पवित्रता के हैं, अनैतिकता का; हम, जो भक्ति के हैं, अव्यवस्था का; और हम, जो विनम्रता के हैं, व्यर्थता का; क्योंकि यह दयनीय है, यह कपटी है, यह अधर्मी है, यह निरर्थक है, यह नरक की आग के लिए ईंधन है। अतःहमें ईश्वर की खोज करनी चाहिए, ईश्वर के अपने लोगों के रूप में, जैसा कि हमारी पुकार हमें बुलाती है। हमें भिक्षु, तीर्थयात्री, संन्यासी, कुंवारी, परमेश्वर और स्वर्गदूतों के सेवक कहा जाता है; और हर कोई समझता है कि वास्तव में हम यही हैं। हम में से कोई भी अपवित्र, संसार से लगाव रखने वाला, या अशुद्ध न हो; कोई भी कर्कश, व्यभिचारी, झगड़ालू, निराश, या कायर न हो: क्योंकि परमेश्वर का महान क्रोध निकट है – और वह प्रतिशोध लेगा। ईश्वर उन लोगों से उतना क्रोधित नहीं है—हालाँकि वह क्रोधित तो है—जो संसार में रहते हुए हृदय से दुष्ट हैं, जितना कि हमसे, जो पूरी तरह से उसी के होने चाहिए; ठीक वैसे ही जैसे एक स्वामी उन नौकरों से अधिक क्रोधित होता है जो उसकी ही उपस्थिति में पाप करते हैं, बजाय उन लोगों के जो उससे दूर रहकर ऐसा करते हैं। हालाँकि, ईश्वर का क्रोध हम सभी पर समान रूप से नहीं पड़ता, बल्कि यह विभिन्न तरीकों से प्रकट होता है: उन लोगों के प्रति अलग तरह से जो बुराई पर बने रहते हैं, और उन लोगों के प्रति अलग तरह से जो कभी-कभी अपने रास्ते सुधारते हैं और कभी-कभी फिर से गिर जाते हैं; उन लोगों पर अलग तरह से जो अभी-अभी योजना में आए हैं, और उन लोगों पर अलग तरह से जो योजना में लंबे समय से स्थापित हैं: क्योंकि कोई जितना अधिक समय योजना में रहता है, उसके जीवन का अंतर उतना ही अधिक स्पष्ट होना चाहिए; इसीलिए, यदि वृद्धावस्था कोई लाभ नहीं देती है, तो यह निंदा का कारण और उपहास का पात्र बन जाती है: ठीक वैसे ही जैसे किसी सफेद बालों वाले आदमी को बच्चों के साथ स्कूल में पढ़ते देखना हास्यास्पद होता है।

169. आप मसीह के सिपाही हैं; और आपको लगातार पूरी तरह से सशस्त्र रहना चाहिए – इस प्रकार

169. 1) आप मसीह के सिपाही हैं; और आपको लगातार पूरी तरह से सशस्त्र रहना चाहिए – इस प्रकार। – 2) सभी बुराइयों की जड़ अहंकार है; लेकिन मनुष्य को उस चीज़ के खिलाफ लड़ना चाहिए जो वर्तमान में उसके भीतर युद्ध कर रही है: क्योंकि यह हर किसी के लिए हमेशा एक जैसी नहीं होती। – 3–16) आध्यात्मिक संघर्ष पर विभिन्न विचार। [2, 103]

18. तुम मसीह के सिपाही हो; और एक सिपाही को यह विचार करना चाहिए कि युद्ध के लिए क्या आवश्यक है, और अपने पूरे कवच को व्यवस्थित रखना चाहिए, ताकि वह हर समय दुश्मन से लड़ने के लिए तैयार रहे। – तो, देखो, कि क्या तुम तैयार हो, और तुम्हारे आध्यात्मिक हथियार किस स्थिति में हैं – क्या वे तेज, साफ़ और पॉलिश किए हुए हैं? – अर्थात्, आज्ञाकारिता की तलवार, विश्वास का कवच, उद्धार की आशा का हेलमेट, नम्रता का ढाल, अच्छे विचारों का तरसाल, और अंत में रथ, यानी आपका सम्माननीय शरीर, जो घोड़ा भी है, और जिसे सभी बातों में अच्छी तरह प्रशिक्षित किया जाना चाहिए, – और न तो बहुत मोटा होना चाहिए, कि दौड़ने के लिए अयोग्य हो जाए, और न ही बहुत दुबला, कि आवश्यक गति के लिए बहुत कमजोर हो जाए; जब लगाम लगाई जाए तो उसे परमेश्वर के भय की लगाम को अच्छी तरह से सहन करना चाहिए, ताकि वह रास्ते के सही मार्ग से भटक न जाए और न ही सवार—मन—को अपनी बेकाबू तेज़ दौड़ से गिरा दे। ईश्वर का वचन आपको हमेशा ऐसा ही देखना चाहता है; – क्योंकि आपका युद्ध अनवरत है, आपकी लड़ाइयाँ हर क्षण होती हैं, आपकी गोलीबारी हर पल होती है।

१९. तो, तुम में से कौन वीर है, कौन बलवान है, कौन योद्धा है—जो विरोधी विचारों को हज़ारों और करोड़ों की संख्या में काट गिराता है, पहले गर्वीले मन को परास्त करके, ठीक वैसे ही जैसे दिव्य दाऊद ने एक बार गोलियाथ को परास्त किया था?—क्योंकि इससे क्या होता है? – दुर्भावना की आत्माओं का पलायन, अर्थात्, अनगिनत और विविध पापी वासनाएँ। मन का अहंकार बुराइयों में पहला और अंतिम है। इसके द्वारा, वह अजगर—जो अब हम सभी को प्रलोभित करता है—स्वर्गीय ऊँचाइयों और दैवीय तेज से गिर गया; और इससे, किसी जड़ की तरह, अनगिनत पापी बेलें निकल आई हैं। लेकिन हमें उस चीज़ के खिलाफ संघर्ष और लड़ाई करनी चाहिए जो अब हम पर हमला करती है: क्योंकि हर घंटे कोई एक वासना से घिरा होता है, जबकि कोई दूसरा किसी दूसरी वासना से घिरा होता है: एक व्यभिचार के जुनून से पीड़ित है, तो दूसरा अतिभिक्षण से; एक आलस्य से, तो दूसरा ईर्ष्या से; एक क्रोध से, तो दूसरा अविश्वास से; एक विद्रोह से, तो दूसरा गर्व से; एक निष्क्रियता से, तो दूसरा उन्माद से। फिर भी यह सब एक ही शैतानी आत्मा द्वारा रचा जाता है।

20. हमारा संघर्ष महान और विविध है: हमें हर जगह अपनी आँखें खुली रखनी चाहिए, हर तरफ से निगरानी रखनी चाहिए, और चारों ओर एक सुरक्षात्मक बाधा बनाए रखनी चाहिए—ताकि दुश्मन घुस न सके, हमें घायल न कर सके या हमें कैद न कर सके, ताकि वह हम पर हाथ न उठा सके, हमें मार न सके या हमें मार डाल सके।

21. हमें पूर्वानुमान भी लगाना चाहिए; और अपनी ओर से, संघर्ष शुरू करना चाहिए और पलटवार करना चाहिए। ऐसा हो सकता है कि हमें एक प्रहार मिले और हम दस गुना प्रहार कर दें - कि हमें एक मामूली चोट लगे और हम उसे घातक पराजय से चुका दें।

22. जिसका शरीर घायल होता है, वह उपचार खोजता है; उसी प्रकार, जिसका आत्मा घायल है, उसे आत्मा के लिए एक उपयुक्त उपचार खोजना चाहिए। यह उपचार प्रायश्चित के साथ पाप-स्वीकार है। ऐसा करने के बाद, मनुष्य को एक बार फिर से युद्ध के लिए निकलना चाहिए।

23. जो भौतिक युद्ध में विजय प्राप्त करता है, उसे एक ही पुरस्कार मिलता है; लेकिन जो आध्यात्मिक युद्ध में विजय प्राप्त करता है, उसे अनेक मुकुट मिलते हैं: ताकि हर दिन युद्ध हो, हर दिन मुकुट हों, हर दिन पुरस्कार हों।

24. और धन्य हो तुम यदि तुम विजयी हो और हार न मानो, यदि तुम दृढ़ खड़े रहो और हतोत्साहित न हो, जब तक कि इस युद्ध का अंत इस संसार से तुम्हारे प्रस्थान के साथ न हो जाए।

२५. अत; मेरे प्रिय बच्चों और भाइयों, हौसला रखो; हौसला रखो, क्योंकि ईश्वर तुम्हारा सहायक है, एक देवदूत तुम्हारे जीवन का रक्षक है, संत—जिनके नाम तुम पुकारते हो—तुम्हारे मध्यस्थ हैं, और मसीह के क्रूस का चिह्न तुम्हारा अजेय हथियार है।

26. हम उन अदृश्य शत्रुओं से न डरें जो बुरे विचारों के द्वारा चारों ओर से हम पर आक्रमण करते हैं; हम देहिक सुखों के बाल के सामने घुटने न टेकें; हम अपनी पवित्रता, जिसे मसीह ने पवित्रस्थान में स्वयं से सगाई की है, अपने शत्रुओं के हाथ न सौंपें; हम अपने अंगों को व्यभिचार के उपकरण और अशुद्धता के पात्र न बनाएं, क्योंकि वे मसीह के अंग हैं, जो सबसे शुद्ध और अमर वर हैं।

27. हम साँप को अपना परामर्शदाता न बनाएँ, जो हमें हमारे स्वर्गीय बगीचे से बाहर निकालने की साजिश रचता है; हम चोरों—दैत्यों—के लिए दरवाज़े न खोलें, और न ही उन्हें अपनी आत्मा के खजाने को चुराने दें।

28. हमारे लिए उस नगर में वास करना कितना धन्य है जिसे प्रभु हमारे परमेश्वर ने विभिन्न प्रकार के सद्गुणों से हमारे लिए बनाया है! हमारे लिए अपनी आत्मा की गरिमा को बनाए रखना कितना धन्य है, जो पाप की दास नहीं है! वासनाओं द्वारा दास न बनाई गई आत्मा पूर्णतःस्वतंत्र, पूर्णतःईश्वर-सदृश, पूर्णतःस्वाम्य, पूर्णतःदीप्तिमान, पूर्णतःसंस्कारित, ईश्वर द्वारा संकलित, ईश्वर द्वारा सृजित, और दिव्य है।

29. परन्तु ऐसा नहीं है उस आत्मा का हाल जो वासनाओं—उन अत्याचारियों—की दास और वश में है। उसे अत्यधिक और भयानक रूप से पीड़ित देखा जाता है, जो प्रत्येक वासना और प्रत्येक निन्दनीय कर्म के कार्य द्वारा इधर-उधर घसीटी जाती है। राक्षस से अपना आचरण ग्रहण करते हुए, वह बिना प्रश्न के वैसा ही करती है जैसा उसे आज्ञा दी जाती है। इस पर कामुक वासना के दैत्य, ईर्ष्या के दैत्य, घृणा के दैत्य, झगड़ालूपन के दैत्य, लालच के दैत्य, आलस्य के दैत्य, अविश्वास के दैत्य, ईश्वरनिंदा के दैत्य, क्रोध के दैत्य, अहंकार के दैत्य, मिथ्याभास के दैत्य, चोरी के दैत्य, और अन्य सभी वासनाओं के दैत्यों का शासन होता है—जिनके नाम कोई गिन सकता है?

30. जिस व्यक्ति को जिस-जिस राक्षस द्वारा बहकाया जाता है, वह उन्हीं का दास बन जाता है। उसकी बेचारी आत्मा उनके जुए के नीचे कराहती है; उसका जीवन दयनीय है। वह पूरी तरह से दरिद्र, पूरी तरह से मैली, उदास, प्रकाश रहित, ईश्वर रहित, भयानक और सभी सच्चे विचारों वाले लोगों की दृष्टि में घृणित है।

31. हे मेरे बच्चों, हम अपनी गरिमा को नीच न करें; हम अपनी स्वतंत्रता को न बेचें। स्वामी बनकर, हम दास न बनें (1 कुरिन्थियों 7:22-23)। हम अपनी रोशनी को अँधेरे में, न ही अपनी सुंदरता को कुरूपता में बदलें; हम परमेश्वर से अपना मुँह फेरकर पाप की लज्जास्पद प्रतिमा की ओर न मोड़ें; हम सदाचार के उज्ज्वल वस्त्रों को उतारकर अत्याचार के उदास फटेहाल कपड़ों को न पहनें; परमेश्वर के पुत्र होकर, हम स्वयं को शैतान की संतान में न बदलें।

32. कौन, होश में रहते हुए, स्वामी होते हुए भी खुद को दास बनाने की हिम्मत करेगा? – कौन, परमेश्वर के बच्चे के रूप में गोद लिए जाने के बाद, खुद को शैतान की संतान कहलाने के लिए सहमत होगा? कौन, सदाचार की अनुपम गरिमा को त्यागकर, खुद को नीच और वासनापूर्ण जीवन जीने वालों में गिनवाना चुनेगा? आत्मिक धन-संपत्ति होते हुए, कौन गरीबी और आत्मिक दरिद्रता में जाने का चुनाव करेगा? स्वर्ग के राज्य को खोकर आग और अंधकार, और अन्य भयानक अनंत यातनाएँ प्राप्त करना कौन चाहेगा? यह होश-हवास वालों का काम नहीं है, न ही उन लोगों का कदम है जिनकी अक्ल ठिकाने है, बल्कि कुछ पागलों और असंवेदनशील लोगों का है – ताकि वे, जो परमेश्वर के स्वरूप और समानता में बनाए गए हैं और शाश्वत आशीर्वादों को विरासत में पाने वाले हैं, अपनी ही इच्छा से, बेतुकी वासना के कारण, नरक की गहराइयों में शाश्वत निंदा के लिए उतर जाएँ।

३३. आइए हम जो सुस्त पड़े हैं, जागें; आइए हम जो अपनी आँखें बंद किए हुए हैं, उन्हें खोलें; आइए हम जो नहीं सुनते, सुनें; आइए हम जो कमज़ोर हैं, अपनी ताक़त जुटाएँ; आइए हम साहस से उठें; आइए हम प्रेरित हों और उद्धार

के मार्ग पर चल पड़ें। आओ हम प्रभु से पुकार लगाएँ—और वह कार्य करेंगे। क्योंकि *'प्रभु उन सब के निकट है जो सच्चाई से उसकी ओर पुकारते हैं, और वह उन दीनों को बचाएगा जो आत्मिक रूप में दीन हैं'* (भजन संहिता 144:18; 33:19)।

170. आत्मा की देखभाल की तुलना दाख की बारी की देखभाल से करता है

170. 1) वह आत्मा की देखभाल की तुलना एक दाख की बारी की देखभाल से करता है। – 2) वह हमें ऐसी देखभाल के लिए, हमारे प्रभु, दाख की बागवानी करने वाले, के आनंद के लिए आमंत्रित करते हैं। – 3) वह इस तथ्य की प्रशंसा करते हैं कि हमने इस संबंध में पहले ही पर्याप्त परिश्रम कर लिया है; लेकिन वह कहते हैं, 'हम और भी अधिक परिश्रम करेंगे, मठ के नियमों में निष्कलंक और तपस्या के कार्यों में चलते हुए।' [2, 104]

1. कल, अंगूर इकट्ठा करते समय, आपने उन बेलों को धन्य कहा जिन्होंने बहुत फल दिए और उन पर दुख व्यक्त किया जिन पर कोई गुच्छा नहीं था। इसका क्या अर्थ है? – इसका अर्थ है कि आप भी, प्रभु की अंगूर की बेल बनकर, जब आध्यात्मिक फल देते हैं और मानो गुच्छों से लदे होते हैं, तो आप हमारी आत्माओं के संवर्धक की दृष्टि में प्रशंसा के पात्र बन जाते हैं; लेकिन जब आप ऐसा नहीं करते, तो आप निंदा और छांट दिए जाने के पात्र बन जाते हैं: *'क्योंकि,'* जैसा कि प्रभु कहते हैं , *'हर वह डाली जो फल नहीं देती है, उसे काटकर आग में डाल दिया जाता है'* (यूहन्ना 15:6)। आप देखते हैं कि एक बेल संयोग से फल नहीं देती है; बल्कि पहले उसे बहुत मेहनत से लगाया जाता है, वह बढ़ती है, परिपक्वता तक पहुँचती है, और तभी वह फल देना शुरू करती है; और जब यह फल देती है, तो इसकी छँटाई की जाती है, उसके चारों ओर खोदाई की जाती है, उसकी बाड़ लगाई जाती है, सूखी टहनियों को हटाया जाता है और उसे हर उस चीज़ से शुद्ध किया जाता है जो फल देने में बाधा डाल सकती है, जैसा कि अंगूर उगाने वाले अनुभव से जानते हैं – और इस तरह यह एक बार फिर फल देती है। – क्या हम अपने आप में भी यही सच नहीं देख सकते? क्योंकि ऐसा कौन होगा जो इस तरह की प्रक्रिया से गुज़रे बिना कभी फल देगा, यानी, रोपे और पोषित किए बिना, और मसीह में पूर्ण आध्यात्मिक परिपक्वता तक पहुँचे बिना, और उस उद्देश्य के लिए मसीह की आज्ञाओं द्वारा ढँका, छाँटा और संरक्षित किए बिना? – जो कोई भी इन सब से नहीं गुजरता, वह हमेशा अपरिपक्व और बाँझ बना रहता है; और उसे मार्ग पर से गुजरने वाले सर्व-विनाशकारी राक्षस चट-चट कर खाते रहते हैं।

२. आइए, मैं प्रार्थना करता हूँ, कि हम आत्मा की खेती करने और उसकी देखभाल करने लगें; अर्थात्, तपस्वी जीवन के तपश्चर्या संबंधी आचरण और प्रथागत अनुशासन: संयम का भार, जागरण की कठिनाई, आंतरिक कमियों का इकरार करने की लज्जा, प्रायश्चित के घाव, अपने होठों की रक्षा, दिवास्वप्नों से मुक्त हृदय, अटूट विश्वास, और अपने विचारों का अविचल स्थिर भाव। जो कोई भी यह सब नहीं करता है वह फल नहीं दे सकता; और ऐसे व्यक्ति को मसीह की डाली नहीं कहा जाना चाहिए। – हे भाइयों, हम यहाँ क्यों आए हैं? क्या यह बहुत फल देने और अपनी आत्मिक फलदायिता से प्रभु को पोषण देने के लिए नहीं है? महाप्रभु हमारे उद्धार के लिए लालायित हैं, और यदि वे हमें उद्धार पाते हुए पाते हैं, तो वे इस फल का स्वाद लेकर आनंदित होते हैं; परन्तु यदि नहीं, तो वे हमें एक बाँझ अंजीर के वृक्ष की तरह दोषी ठहराते हैं। वे प्रतिदिन यहाँ आते हैं और यह देखते हैं कि हम किस प्रकार के लोग हैं। इसलिए, हमें चाहिए: उत्साह, परिश्रम, एक उत्कट आत्मा, सावधानी, नम्रता, आज्ञाकारिता, चौकसी, भजन-गायन, कोमलता, समझदारी, काम से प्रेम, भाईचारा, धैर्य, दृढ़ता, और आशा—ताकि हम स्वयं को चुने हुए पात्रों के रूप में तैयार कर सकें, जो पवित्र आत्मा में सिद्ध हों।

3. तुमने कड़ी मेहनत की है—मैं इसकी गवाही देता हूँ—तुमने अतीत में विजय प्राप्त की है, बहुत कुछ सहन किया है, काफी दूरी तय की है, दुष्ट को लज्जित किया है, आक्रमणों को विफल किया है, अपनी कामनाओं का त्याग किया है, स्वयं को संसार से अलग कर लिया है, अपनी इच्छाओं को सूली पर चढ़ाया, आज्ञाओं का पालन किया, अपने पूर्वजों के विश्वास को बनाए रखा, मानवीय भयों से नहीं घबराए, और प्रभु के प्रेम के लिए हृदय से मृत्यु के लिए स्वयं को तैयार किया है; जो कुछ भी आपने किया है वह परमेश्वर को भाता है और प्रशंसनीय है, सब कुछ पवित्र और स्वर्गीय है। – परन्तु थोड़ा और समय, थोड़ा और समय, हम सहन करें, मैं आपसे विनती करता हूँ, अति सम्मानित भाइयो; हम विश्वास में दृढ़ रहें, अदृश्य और दृश्य प्रलोभनों का निडर होकर सामना करें, हम महान शत्रु के दैनिक संघर्ष में उससे हार न मानें, क्योंकि: *'यहोवा मेरा सहायक है; मैं अपने शत्रुओं को देखूँगा'* (भजन संहिता 117:7)। *"यहोवा मेरे जीवन का रक्षक है; मैं किससे डरूँ? जब जो मुझे मारना चाहते हैं, मेरे पास आते हैं, मेरे शरीर को नष्ट करने के लिए—जो मेरा और मेरे शत्रुओं का अपमान करते हैं—वे लज्जित होंगे और गिरेंगे"* (भजन संहिता 26:1–2)। *"परन्तु हम उठे हैं और स्थिर खड़े हैं"* (भजन संहिता 19:9)। तो आओ हम अपने हृदय में गाएँ, आओ हम आत्मा में धैर्यवान हों; आओ हम अपने कर्तव्यों का परिश्रमपूर्वक पालन करें, हर बात में धर्मपरायणता का पालन करें, कोई

भी ऐसे शब्द न बोलें जो भ्रष्ट, बड़बड़ाहट भरे, अपमानजनक, निर्णयात्मक, विद्रोही या अभद्र हों; आओ हम स्वेच्छा से काम, प्रहरों और भजन-गाने के लिए इकट्ठा हों, हम एक-दूसरे के साथ नम्रता और विनम्रता में, सद्भावना में, संसार से वैराग्य में, स्वर्ग की खोज में, संक्षिप्त वाणी में, संयम में, और जब हम सुनते हैं: 'मुझे क्षमा कर' तो आत्मसमर्पण के द्वारा विजय प्राप्त करके, दया और शांति में एकता बनाए रखें – जो शैतान के खिलाफ एक महान हथियार है।

171. हमें सतर्क रहना चाहिए ताकि हम आज्ञाओं के मार्ग से भटक न जाएँ, जिससे दुश्मन हमें हर तरह से हटाने की कोशिश करता है; और इसमें सफल होने के लिए, आइए हम अपनी इंद्रियों की रक्षा करें

171. 1) हमें सतर्क रहना चाहिए ताकि हम आज्ञाओं के मार्ग से भटक न जाएँ, जिससे दुश्मन हमें हटाने के लिए हर संभव प्रयास करता है; और इसमें सफल होने के लिए, हम अपने इंद्रियों की रक्षा करेंगे। – 2) यदि हम इस प्रकार अपना रक्षण करते हैं, तो शत्रु पराजित होकर पीछे हट जाएगा और पीड़ित होगा, जबकि हमारी आत्मा आनंदित होगी; अन्यथा, विपरीत ही होगा। – 3) परन्तु ऐसा हम पर न आए; और यदि ऐसा हो जाए, तो हमें पश्चाताप के द्वारा शीघ्र ही स्वयं को चंगा करना चाहिए, और तत्पश्चात गिरने से बचने का ध्यान रखना चाहिए। [2, 105]

४. हमें हमेशा अपने प्रति सचेत रहना चाहिए, और हर परिस्थिति में स्वयं को ईश्वर के विधान के भीतर रखना चाहिए, आज्ञाओं से न तो दाहिनी ओर और न ही बाईं ओर भटकना चाहिए, बल्कि राजसी मध्य मार्ग पर चलना चाहिए, जहाँ मोक्ष, दृढ़ता और समृद्धि प्राप्त होती है। इसे ध्यान में रखना चाहिए, मानना चाहिए और समझना चाहिए; क्योंकि चालाक साँप, आत्माओं का चोर, शैतान, हमेशा चौकस होकर निगरानी कर रहा है, हमें इस मार्ग से भटकाने और किसी जुनून की तेज धारा में फेंककर, हमें अपना सबसे दयनीय शिकार बनाने की कोशिश कर रहा है। हम, हालाँकि, उस पर विजय प्राप्त करेंगे और सही मार्ग पर बने रहेंगे यदि हम सतर्क और संयमी रहें, और अपने इंद्रियों की रक्षा करें: अपनी आँखों को उस चीज़ को देखने से बचाएँ जिसे देखना उचित नहीं है; अपने कानों को ड्रैगन के प्रलोभनकारी शब्दों और फुसफुसाहटों को ग्रहण करने से बचाएँ; हमारे हाथों को स्पर्श करने से, चाहे वे हमारे अपने अंग हों या दूसरों के, जुनून या कामुक आवेग के कारण; हमारे पैरों को दुष्ट रास्तों पर चलने और गुप्त स्थानों में प्रवेश करने से, विचारों और कर्मों दोनों में।

5. यदि हम इस प्रकार आचरण करें और उपयुक्त पाप-स्वीकार, आवश्यक विनम्रता और उचित मनोभाव के साथ अपनी रक्षा करें; तो अजगर परास्त हो जाएगा, दुष्ट हृदय से निष्कासित हो जाएगा; और वह दूर खड़ा होकर दाँत पीसेगा, क्योंकि वह सर्व-दुष्ट कभी नहीं रुकता, चाहे उसे कितनी भी बार हराया और भगाया जाए। हालाँकि, आत्मा आनंदित होती है और साहस जुटाती है, और प्रकाश में, उच्चतम और सबसे उत्कृष्ट चिंतन में निवास करते हुए, दिव्य और स्वर्गीय बनकर, ईश्वर की ओर और भी अधिक आरोहण करती है। यदि, तथापि, यह कहे गए के विपरीत व्यवहार करता है, तो यह विपरीत परिणाम भुगतता है; अर्थात्, यह उसी वासना द्वारा अधिग्रहित और दास बना लिया जाता है, जिससे यह पराजित हुआ है, और, दुष्ट विचारों से घिरकर, दुष्टता के एक निश्चित गर्त में उतर जाता है, पीड़ित और कष्टग्रस्त होकर, उसे कहीं भी या किसी भी चीज़ में कोई आराम नहीं मिलता, और यहाँ तक कि यहाँ भी वह आने वाले युग में उसकी प्रतीक्षा कर रहे दुख के फल का स्वाद चखती है।

6. परन्तु ईश्वर न करे कि हमें ऐसा कुछ भी सहना पड़े। आओ हम स्वयं को पाप के प्रलोभनों के बहकावे में न आने दें, और यदि ऐसा हो जाए, तो उसे तुरंत काटकर फेंक दें, जैसे कोई तीर जिसने घाव किया हो, और साथ ही पश्चाताप की औषधि से उस घाव को भर दें, चाहे वह आँख हो, कान हो या हाथ; और इसके बाद आओ हम स्वयं की सावधानीपूर्वक रक्षा करें। क्योंकि मूर्ख पशु भी, किसी एक जगह पर एक या दो बार फिसल जाने के बाद, उसी से बचते हैं या सावधानी से उससे परिक्रमा करके निकलते हैं, ताकि वे उसी दुर्भाग्य में फिर से न पड़ें। परन्तु हम, जो परमेश्वर के स्वरूप से सम्मानित और ज्ञान के वचन से शिक्षित हैं, क्या हम स्वयं को अतर्कशील प्राणियों से भी बदतर साबित होने देंगे, उस ही वासना से प्रेम करते हुए जिससे पाप उत्पन्न हुआ और उसी खतरनाक चट्टान और उसी गहरी खाई की खोज करते हुए जहाँ गिरावट हुई? यह भयानक और विनाशकारी होगा। नहीं, बल्कि बुद्धिमान लोगों के रूप में, हम बुद्धिमानी से चलें; पवित्र लोगों के रूप में, हम पवित्रता में जीवन यापन करें, ताकि हम बाहरी प्रलोभनों के विरुद्ध भी अधिक मजबूत और दृढ़ साबित हों। एक आत्मा जो हर तरह से अपनी रक्षा करती है और इस प्रकार वासनाओं के आक्रमण के खिलाफ अजेय बनी रहती है, वह न तो आग से डरती है, न तलवार से, न जानवर से, न राजाओं से, न अधिकारियों से, न दुख से, न कठिनाई से, न उत्पीड़न से, बल्कि हमेशा यह पुकारने के लिए तैयार रहती है: *'मैं डरूँगा नहीं, चाहे पृथ्वी हिल जाए और पहाड़ समुद्र के बीच में पहुँच जाएँ'* (भजन संहिता 45:3)। आइए हम आंतरिक प्रलोभनों से सावधान रहें, और हम बाहरी प्रलोभनों से नहीं डरेंगे।

172. हमारी दैनकि रोटी हमारे स्वर्गीय पिता की इच्छा को करना होना चाहिए, तपस्या और आज्ञाकारिता के मठवासी क्रम के नियिमों के अनुसार जीते हुए

172. 1) हमारा कर्तव्य दिव्य पिता की इच्छा को पूरा करना होना चाहिए, संयम और आज्ञाकारिता के मठवासी क्रम के नियिमों के अनुसार जीते हुए। – 2) शत्रु तब परेशान होता है जब वह आपकी सत्यनिष्ठा और शांति को देखता है, और आपके पास पहुँचने का कोई रास्ता नहीं पाता। – 3) अतःशत्रु का विरोध करने में धैर्य धारण करो, और उसकी फुसफुसाहटों को मत सुनो; बल्कि अपने रक्षक स्वर्गदूत पर और भी अधिक ध्यान दो। [2, 107]

7. प्रभु कहते हैं: *'मेरा भोजन उस पिता की इच्छा करना है जिसने मुझे भेजा है, और उसका काम पूरा करना है'* (यूहन्ना 4:34)। हे भाइयो! उसने हमें भी ईश्वर को अपना पिता कहने का सौभाग्य प्रदान किया है। अत; हमारे स्वर्गीय पिता की इच्छा करना भी हमारा भोजन होना चाहिए। तो फिर, हमें वास्तव में क्या करना है? और हमें कैसे कार्य करना है? – आपने पहले ही अपने पिछले जीवन के द्वारा, अपने द्वारा किए गए व्रत के अनुसार जीकर, इसे प्रदर्शित किया है; और मैं आपको उत्तर दे सकता हूँ: जैसा तुम जीते आ रहे हो, वैसे ही जीते रहो; आत्म-त्याग के श्रम, आज्ञाकारिता के बोझ, प्रार्थना की थकान, विचारों के अदृश्य तीरों, कामवासना की आग, निराशा की उदासी, ईर्ष्या के घावों और बाकी उन सभी को प्रसन्नतापूर्वक धैर्य के साथ सहते रहो, जिनके द्वारा हमारा आत्मा विनाशक, शैतान, हमें नरक की गहराई में धकेलने का प्रयास करता है।

८. हियाँ बान्धो: क्योंकि यद्यपि वह आक्रमण करता है, परन्तु वह तुम्हारे भीतर परमेश्वर की शक्ति से परास्त हो जाता है, और तुम पर जय नहीं पाता; वह यह देखकर दाँत पीसता है कि आप कितना शांतिपूर्ण और दृढ़ जीवन जीते हैं, फिर भी वह आपको नुकसान पहुँचाने में विफल रहता है; वह आप पर आक्रमण करने और आपकी आत्मा को विनाश की ओर ले जाने का प्रयास करता है, लेकिन उसे प्रवेश करने के लिए कोई जगह नहीं मिलती, यह देखकर कि आप प्रभु की व्यवस्था द्वारा एक दीवार की तरह सुरक्षित हैं; वह जाल बिछाता है और फंदे लगाता है, आपको उनमें फँसाने की कोशिश करता है, लेकिन ऐसा करने में विफल होकर, वह दुर्भावनापूर्ण क्लेश से विक्षिप्त हो जाता है, यह देखकर कि आप कैसे पाप-स्वीकार के माध्यम से उसकी सभी चालाकियों को विफल कर देते हैं। निश्चय ही, उसका कोई स्थान नहीं है जहाँ परमेश्वर का भय प्रबल हो, जहाँ आज्ञाओं का पालन किया जाता हो, जहाँ हमारे जीवन के सभी प्रथागत नियम लागू हों, और जहाँ प्रायश्चित्त स्वेच्छा से स्वीकार और पूरा किया जाता हो।

९. इसलिये, आनन्दित रहो और उत्साहित बने रहो; प्रसन्न रहो और हिम्मत रखो; बलवान बनो और बल में वृद्धि करो, उस उन्मत्त दैत्य को कोई भी आधार न दो, और किसी भी तरह इस चालाक साँप को अपनी आत्मा के कान में फुसफुसाने न दो; और यदि वह पास आवे, तो उसे दूर भगा दो और उसका प्रतिकार करो। आप जानते हैं कि उसने पहले मनुष्य को कैसे बहकाया था, और कैसे वह आज भी उन लोगों को बहकाने में सफल रहता है जो अभी भी उसके छल-कपट के आगे झुक जाते हैं। वह केवल बुराई ही पैदा करता है, चाहे वह किसी भी भ्रामक रूप में क्यों न आए—सिवाय उसके जो या तो घमंड, या ईर्ष्या, या कामुक वासना, या अनुशासनहीनता, और आत्मा को कलंकित करने वाली सभी चीजों की ओर ले जाती है। परन्तु जीवन के रक्षक जो आपको उचित रीति से स्मरण दिलाते हैं, उन्हें और भी अधिक सुनो, जो आपके मन में पवित्र, साहसी और अनुकरणीय विचारों को भरते हैं—मृत्यु पर, अगले जीवन में प्रवेश पर, भविष्य के अनन्त आशीर्वादों पर, तथा इनके विपरीत अनंत यातनाओं पर चिन्तन, और यह कि पहले वाले कैसे और किस प्रकार प्राप्त किए जा सकते हैं, और बाद वाले से कैसे बचें, ताकि इस में निरंतर लगे रहने से, आप सदाचार में और अधिक दृढ़ हो सकें और हमारे प्रभु परमेश्वर के मार्ग पर अधिक उत्साह से चल सकें, जब तक कि हमारे लिए निर्धारित जीवन का अंत न आ जाए; और प्रभु, हमसे प्रसन्न होकर, हमें यहाँ से शाश्वत विश्राम की ओर ले जाएँगे।

173. आत्मा का संस्कार भूमि के संस्कार के विपरीत, किसी विशेष समय या तैयारी की मांग नहीं करता है: यह किसी भी समय उपयुक्त है, और यहाँ सारी तैयारी बुराई को दबाने और अच्छाई को बढ़ावा देने की इच्छा और संकल्प में निहित है।

173. 1) आत्मा का संस्कार करने के लिए किसी विशेष समय या तैयारी की आवश्यकता नहीं होती, जैसा कि भूमि के संस्कार के लिए होती है: यह किसी भी समय किया जा सकता है, और इसके लिए केवल बुराई को दबाने और अच्छाई को बढ़ावा देने की इच्छा और संकल्प की आवश्यकता होती है। – 2) अतःहम भी इस कार्य को आरंभ करें, पूर्वजों के अनुकरण से, जिन्होंने खोजा और पाया, जिन्होंने खटखटाया और उनके लिए द्वार खोल दिया गया। [2, 110]

10. आत्मा की खेती के लिए कोई भी समय उपयुक्त है, भूमि की खेती के विपरीत। यहाँ न तो बैल, न हल और न ही अन्य कृषि उपकरणों की आवश्यकता है; जो कुछ भी आवश्यक है वह इच्छाशक्ति का एक एकल कार्य और एक पूर्ण हृदय की इच्छा है, जिससे और जिसमें अच्छे बीज बोए जाते हैं, और शाश्वत आनंद और विश्राम के लिए अच्छे फल काटे जाते हैं; और यह न केवल दिन में, बल्कि रात में, सुबह और दोपहर में, खाते-पीते समय, बैठते और खड़े होते समय, बोलते और चुप रहते समय, चलते और ठहरे हुए समय, काम करते और आराम करते समय भी सच है, बशर्ते हम उतनी ही चेतना और सतर्कता बनाए रखें जितनी कि हमसे अपेक्षा की जाती है। इसके लिए यह आवश्यक है कि हम अपने ही विचारों में भटकें नहीं या भटकाए न जाएँ, और अपने मन—या यहाँ तक कि अपने शरीर—को इधर-उधर बहने न दें; कि हम अपनी शारीरिक इच्छाओं को पूरा करने का प्रयास न करें; कि हम ऐसे मामलों पर एक-दूसरे के साथ विवाद और झगड़ों में न पड़ें; और यह कि हम अवज्ञा और बड़बड़ाहट में न पड़ें, व्यर्थता और अहंकार में, या परिणामों की परवाह किए बिना अपनी ही चलने और हावी होने के प्रलोभन में न पड़ें। क्योंकि ये सभी चीजें हमारे मन को प्रभु के साथ बने रहने, उचित बातों पर मनन करने, नम्र और पश्चात्तापी होने, और सभी दुखद बातों को धैर्य और आनंद के साथ स्वीकार करने से रोकती हैं।

11. अत; हे भाइयों, हम अपने उद्धार के दिनों को आलस्य, सुस्ती और उपेक्षा में व्यर्थ न जाने दें, और न ही अपने जीवन के समय को व्यर्थ में बिताएँ; बल्कि हम सद्गुणों के अनुसरण में लग जाएँ, और स्वर्गीय आशीर्वादों का धन प्राप्त करें, हमारे पवित्र पूर्वजों की भाँति ज्ञान प्राप्त करें, जिन्होंने न तो एक दिन और न ही एक घंटा व्यर्थ गंवाया, बल्कि आत्मा की शुद्धि, वासनाओं के त्याग और सद्गुणों के विकास के लिए दृढ़ता और लगन से प्रयास किया, और जिन्होंने न तो परिश्रम से और न ही पसीने से परहेज़ करते हुए, पूरे हृदय से एकमात्र ईश्वर की खोज की। उन्होंने खोजा और पाया; उन्होंने खटखटाया और उनके लिए दरवाजे खुल गए: प्रेम के द्वार, धार्मिकता के द्वार, और निर्लिप्तता के माध्यम से मसीह तक पहुँचने का मार्ग उनके लिए खुल गया; वे प्रवेश हुए और उन्होंने वह आनंद और हर्ष पाया जो अक्षय और शाश्वत है। – तो फिर, हे तुम जो उद्धार पाएँगे, आओ हम अपने पूर्वजों के पदचिन्हों पर चलें; हम उनके आज्ञाओं का पालन करें, और अपने हृदयों को शुद्ध और निर्दोष रखें। *"हम धोखेबाजों से ईर्ष्या न करें, न ही अधर्म करने वालों से जलन रखें; क्योंकि वे घास के समान मुरझा जाएँगे, और मैदान के फूल की तरह वे शीघ्र ही झड़ जाएँगे"* (भजन संहिता 36:1-2)। हम उन लोगों को न देखें जो संख्या में तो बहुत हैं पर फिर भी लापरवाही से जीते हैं, बल्कि उन लोगों को देखें जो संख्या में तो कम हैं पर फिर भी उत्साहपूर्वक मोक्ष और परमेश्वर की प्रसन्नता के लिए प्रयासरत हैं। आइए हम ऐसे लोगों का अनुकरण करें, उनके सद्गुणों के पदचिन्हों पर चलें, सभी चीजों को उनकी आँखों से देखें, सभी चीजों के बारे में उनके मन से विचार करें, उनकी जीभ से बोलें - और हमें उनके भाग का योग्य ठहराया जाए, जो धन्य और आनंद से भरपूर है।

174. संसार का त्याग करने और संन्यास ग्रहण कर मठ में प्रवेश करने के उद्देश्य से, ईश्वर को प्रसन्न करने वाला जीवन जीने की शक्ति प्राप्त करने पर, उस प्रभु का धन्यवाद करो जिसने तुम्हें इसके लिए बुलाया है, शब्दों में नहीं बल्कि उस जीवन के कर्मों में जिसे तुमने चुना है: इसमें ही संसार पर विजय निहित है

174. 1) संसार का त्याग करने और संन्यास की शपथ लेकर मठ में प्रवेश करने के उद्देश्य से, ईश्वर को प्रसन्न करने वाला जीवन जीने की शक्ति प्राप्त करने के लिए, उस प्रभु का धन्यवाद करें जिसने आपको इस जीवन के लिए बुलाया है, शब्दों में नहीं बल्कि आपके चुने हुए जीवन के कर्मों में: इसमें ही संसार पर विजय निहित है। – 2) प्रभु ने अपने दुख-क्लेश, क्रूस और मृत्यु के द्वारा विजय प्राप्त की, और हमें पूर्ण विजय का मार्ग दिखाया: उनके पदचिन्हों पर चलते हुए, प्रेरितों ने, फिर शहीदों ने, और फिर पवित्र पिताओं ने इसी प्रकार संसार पर विजय प्राप्त की। – 3) ईश्वर तक जाने का यही मार्ग है; और कोई भी ऐसा नहीं है जो इस पर न चले। – 4) आपको कष्टों का सामना करने पर आश्चर्य क्यों होना चाहिए? इसके बजाय, आनंदित हों और साहस रखें। [2, 111]

12. मेरे लिए यह सुनने और देखने से अधिक वांछनीय या आनंददायक कुछ भी नहीं है कि आप धार्मिकता में चलते हैं और ईश्वर भय से आचरण करते हैं, प्रभु की सभी आज्ञाओं का पालन करते हैं और साधु जीवन का ईमानदारी से पालन करते हैं, जिसमें आप आत्मा में पुनर्जन्म पाए हैं और जिसके द्वारा आप अपने पूर्व पापों से मुक्त हो गए हैं; और केवल इतना ही नहीं, बल्कि आपको दृश्य और अदृश्य शत्रुओं के विरुद्ध शक्ति का आत्मा भी प्राप्त हुआ है, और जीवित परमेश्वर की सेवा करते और उसकी पवित्र आज्ञाओं को मानते हुए, जो कुछ भी आए उसे निडर होकर सामना करने का आत्मा भी मिला है। उस प्रभु का धन्यवाद करो, उसकी महिमा करो और उसकी स्तुति करो जिसने तुम्हें बुलाया है, और अपने तपस्या के प्रयासों में धैर्यपूर्वक दृढ़ता के सिवा और कुछ भी उसे वापस न दो, और यह सुनिश्चित करो कि जैसे तुम अब तक अच्छी तरह से परिश्रम करते आए हो, वैसे ही तुम इसमें और भी अधिक दृढ़ रहो,

परमेश्वर के प्रेम से जलते हुए। प्रभु की ओर से भी आपके लिए प्रतदिनि मुकुट बुने जाते हैं, यदि आप अपनी शुभ इच्छा से, हमें जो आज्ञा दी गई है उसमें से किसी भी बात को बदलने के बजाय, सभी बातों को सहन करने के दृढ़ संकल्प पर दृढ़ रहते हैं। क्योंकि प्रभु की आज्ञा अनन्त जीवन है, और उसकी अवज्ञा मृत्यु है; अतः हमें सत्य का प्रचार करना चाहिए और जो इसके विरोधी हैं, उनसे समझौता नहीं करना चाहिए, और इसके लिए सभी सांसारिक लाभों, राजाओं, बिशपों और अन्य लोगों से मिलने वाले गौरव और सम्मान को बलिदान कर देना चाहिए। क्योंकि जैसा लिखा है, *'उसका क्या लाभ, यदि कोई सारे संसार को प्राप्त कर ले, परन्तु अपनी आत्मा को खो दे?'* (मत्ती 16:26)। यही हमारे दृढ़ता और हमारे कर्मों का उद्देश्य है।

13. परन्तु *'हिम्मित रखो,'* प्रभु कहते हैं, *'क्योंकि मैं जगत पर जय प्राप्त कर चुका हूँ'* (यूहन्ना 16:33)। उसने विजय प्राप्त की ताकि हम भी, उसके पदचिन्हों पर चलकर, इस पर विजय प्राप्त कर सकें। परमेश्वर के रूप में, वह हमेशा संसार का विजेता है; लेकिन अब वह विशेष रूप से कहता है कि उसने एक मनुष्य के रूप में विजय प्राप्त की है। और उसके तुरंत बाद, प्रेरितों ने संसार पर विजय प्राप्त की; उनके बाद, शहीदों ने; फिर पवित्र पिताओं ने; और सभी ने जो धार्मिकता से और परमेश्वर के स्वरूप में जीए। लेकिन यह विजय, स्वयं प्रभु और उनके संतों द्वारा, कैसे प्राप्त की गई? – बिना संघर्ष के? बिना पीड़ा के? बिना रक्तपात के? बिना निर्वासन के? – नहीं; न केवल यह इन चीजों के बिना नहीं थी, बल्कि इसे क्रूस और मृत्यु के माध्यम से प्राप्त किया गया था। आप प्रभु के प्रति की गई अपमानजनक बातों, उनकी निंदा और उपहास के बारे में जानते हैं—कि उन्हें धोखा दिया गया, दोषी ठहराया गया, कोड़ा मारा गया, उन पर थूक दिया गया, और उन्हें सूली पर चढ़ाया गया—फिर भी, जी उठने के बाद, उन्होंने दुनिया को बचाया। इसी तरह, प्रेरितों ने भी कष्ट सहे। और कौन शहीदों के दुखों और यातनाओं का वर्णन कर सकता है? या संतों के पराक्रम और कष्टों का?

14. परमेश्वर का वचन कहता है, *'जो कोई धार्मिक जीवन जीना चाहता है, उसे सताया जाएगा, परन्तु दुष्ट लोग और भी अधिक दुष्ट होते जाएँगे, धोखा देते और धोखा खाते हुए'* (2 तीमुथियुस 3:12)। परमेश्वर के राज्य की ओर जाने का मार्ग संकरा और कठिन है; विनाश का मार्ग चौड़ा और सुगम है (मत्ती 7:14)। दूसरे मार्ग पर सांसारिक आनंद, देहगत सुख और आनंद, परमेश्वर के नियमों का तिरस्कार, मृत्यु के प्रति लापरवाही, और मानवीय भय पड़े हैं; जबकि पहले मार्ग पर संसार की कष्ट-क्लेश, स्वेच्छा से किए गए श्रम और हर प्रकार की कठिनाइयाँ हैं, जैसा कि प्रेरित उन लोगों के बारे में कहते हैं जो इसमें चलते हैं: *'जो सताए गए, पीड़ित हुए और यातनाएं भोगी, जंगलों और पहाड़ों और गुफाओं और पृथ्वी की खोहों में भटकते रहे'* (इब्रानियों 11:37)। और एक भी संत ऐसा नहीं है जिसने दुख सहने के बिना इस पर चलना नहीं पड़ा हो।

१५. इसलिए, जब तुम कष्टों का सामना करो तो आश्चर्यचकित न हो; बल्कि इस बात पर आनन्दित हो कि वे तुमसे परे नहीं गए, और परमेश्वर के प्रति तुम्हारा प्रेम और भी प्रबल हो, ताकि इसके द्वारा तुम अपनी कामनाओं को वश में कर सको और दुष्टात्माओं को भगा सको। क्योंकि जो एक से प्रेम करता है, वह अन्य सभी को पीछे छोड़ देता है; और जो एक से डरता है, वह किसी और से नहीं डर सकता। जिसके पास ईश्वर है, वह सभी से श्रेष्ठ है। बुद्धिमान बनो, धर्मपरायणता के मार्ग पर चलो, और सभी के लिए प्रार्थना और विनती करो। मसीह आपके बीच में हैं: क्योंकि यदि दो या तीन जहाँ इकट्ठे हैं, वहाँ वह उपस्थित हैं, तो वह आप लोगों के बीच कैसे नहीं हो सकते जो उनके आज्ञाओं का पालन करते हैं, जबकि आप इतने सारे हैं?

175. जब अस्थायी रूप से अनुपस्थित होते समय, वह अपने वरिष्ठों और अधीनस्थों से नियमों के अनुसार कार्य करने और जीने के लिए कहता है, यह स्पष्ट रूप से बताते हुए कि कैसे करना है

175. 1) जब कुछ समय के लिए अनुपस्थित हों, तो वे अपने वरिष्ठों और अधीनस्थों से नियमों के अनुसार कार्य करने और जीवन जीने के लिए कहते हैं, यह स्पष्ट रूप से बताते हुए कि कैसे। – 2) इसे प्रोत्साहित करने के लिए, वे विशेष रूप से इस बात पर जोर देते हैं कि ईश्वर सब कुछ देखता है और हर किसी को हर बात का हिसाब देना होगा। [2, 112]

16. चूँकि मैं कुछ समय के लिए दूर हूँ, मैं आपसे हमारे प्रभु यीशु मसीह के प्रेम में अनुरोध करता हूँ कि मेरी अनुपस्थिति के कुछ दिनों के दौरान आज्ञाकारिता और नम्रता से, सामुदायिक जीवन के सामान्य नियमों का पालन करें: वरिष्ठों, मनमाने, अहंकारी, व्यापारिक तरीके से, या किसी अन्य मानवीय तरीके से शासन न करें, बल्कि ईश्वरीय और लाभकारी तरीके से करें, उपकारी, जैसे कि जो परमेश्वर द्वारा देखे और परखे जाते हैं, और जिन्हें अपनी हर बात और हर काम का हिसाब उन्हें देना है; अधीनस्थ और नवसिखुए, जो कुछ तुम्हें करने की आज्ञा दी जाती है, उसे नम्रता और बिना शिकायत के पूरा करो, चाहे वह मेरे प्रतिनिधि की ओर से हो या अन्य वरिष्ठों की ओर से। तुम

परमेश्वर की संतान हो; प्रकाश की संतान के रूप में चलो। तुम मसीह के मेमने हो; उसके मेमनों की तरह, कोमलता और नम्रता से पोषण लो। कोई भी उत्पात न मचाए या बकरे के बच्चे की तरह उछलकूद न करे, जो वासनाओं की काँटों पर चरता हो; कोई भी यहूदा की तरह व्यवहार न करे, जो भाइयों में एक भाई होने का दखिावा करता हो, जबकि गुप्त रूप से अपने ही आत्मा के विनाश के लिए विश्वासघात की साजशि रच रहा हो; कोई भी एसाव की तरह न हो, जो अपनी मुक्ति को तुच्छ समझता है और इसके लाभों को कुछ चुराए हुए भोजन और पेय के लिए बेच देता है । कोई भी आलसी न रहे, इधर-उधर मटरगश्ती न करे, और न ही दिन को व्यर्थ में गँवाए, जबकि अन्य भाई कड़ी मेहनत कर रहे हों, दिन की तपिश और रात की ठंड को सह रहे हों, चाहे वे द्वार पर पहरा दे रहे हों, औषधालय में सेवा कर रहे हों, जूते बनाने वाले की कार्यशाला में, बढ़ई की कार्यशाला में, या किसी अन्य प्रकार की सेवा में लगे हों। यह एक गंभीर अपराध है, जैसा कि प्रेरित कहते हैं, कि ऐसे लोग *'खाने के भी योग्य नहीं हैं'* (2 थिस्सलुनीकियों 3:10)।

१७. हर बात में परमेश्वर के मार्गों के अनुसार चलो; अपने पैरों को दुष्ट परामर्श और व्यर्थ योजनाओं के लिए गुप्त स्थानों में न चलने दो; क्योंकि *'प्रभु की आँखें, जो अँधेरे में सूर्य से भी अधिक तेज हैं,* तुम्हारे *सभी मार्गों को देखती हैं'; 'और वे गुप्त स्थानों में जाँच करते हैं'* (सिरैकस २३:२७)। इसलिए, भले ही आप किसी एकांत स्थान पर हों, वह सर्वदा चौकस रहने वाली आँख आपको वहाँ देखती है: आप किसके साथ खड़े हैं, आप किस बारे में बात करते हैं, और आप क्या करते हैं। इसलिए, सावधान रहो, कहीं ऐसा न हो कि वह तुम्हें शैतान के साथ बात करते, दुष्ट कर्मों की साजशि रचते या कुछ भी शर्मनाक करते हुए देखे। और यद्यपि प्रभु उसी क्षण तुम्हें उचित दंड नहीं देंगे, फिर भी वह हर तरह से आज्ञा देंगे कि तुम्हारे पाप का लेखा लिखा जाए और तुम्हारे पतन का चिन्ह लगाया जाए—तुम्हें बिना बोले और बिना देखे यह घोषित करते हुए: *'यह तूने किया, और मैं चुप रहा; तूने अधर्म किया, और मैं ने कहा, "मैं तेरे समान होऊँगा": मैं तुझे डाँटूँगा और तेरे पाप तेरे साम्हने रखूँगा* (भजन संहिता 49:21)। यह न्याय के दिन होगा। – तो फिर हम सर्वशक्तिमान के हाथों से कहाँ भागेंगे? क्या हम कोई ऐसा बुरा काम कर सकते हैं जो अनदेखा रह जाए? ऐसे विचारों को मन में भी न लाओ; बल्कि हर बात में उस रीति से आचरण करो जो उद्धारदायक और परमेश्वर को भाए, ताकि तुम्हें देखकर प्रभु आनन्दित हों और प्रसन्न हों, और तुम्हारे शुभ कर्मों को जीवन की पुस्तक में अंकित करें, और सभी बातों के प्रकट होने के दिन तुम्हारे सिर पर धार्मिकता का अक्षय और अनंत मुकुट धारण करें।

१७६. धैर्यपूर्वक दृढ़ता से खड़े रहो, ऊपर की ओर दृष्टि बनाए रखो, और दैवीय चिंतन को तीरों की तरह उपयोग करके मोक्ष के शत्रुओं को भगा दो

176. 1) धैर्यपूर्वक दृढ़ता से खड़े रहो, ऊपर की ओर दृष्टि रखो, और दिव्य चिंतन—जैसे तीर—से मोक्ष के शत्रुओं को दूर भगाओ। – 2) यदि आप वासना से परेशान हों, तो उसके आगे न झुकें, बल्कि उस लज्जा पर चिंतन करें जो आपको झुकने पर होगी, और इस तथ्य पर कि यह शत्रु ही है जो आपको बुराई को अच्छा बनाकर धोखा दे रहा है। – 3) और सामान्य रूप से, अपनी आंतरिक हलचलों से यह पहचान करें कि कौन सा आत्मा आपके समीप है—अच्छा या बुरा—और एक को सुनें, जबकि दूसरे को दूर भगा दें। [2, 114]

18. दृढ़ खड़े रहो, *'अपनी कमर सच्चाई से कसी हुई और अपने पाँवों में शांति के सुसमाचार की घोषणा करने की तैयारी के जूते जूते हुए'* (इफिसियों 6, 14–15), ऊपर की ओर देखते हुए, ऊपर की बातों के लिए यत्न करते हुए, स्वर्गीय बातों की खोज में लगे रहो, अपना मन स्वर्गीय बातों पर टिका रखो, शरीर से अपने प्रस्थान और न्यायाधीश से भेंट तथा उसके सामने अपने हिसाब की परवाह करो – दिव्य धर्मग्रंथों और संतों के जीवन का अध्ययन करो, और जो कुछ भी तुम पाओ जो आत्मा के लिए लाभदायक और उद्धारदायक हो, उसे शत्रु के विरुद्ध तीरों के रूप में प्रयोग करो।

19. जो कोई भी वासना से परेशान है, वह हतोत्साहित न हो या उसके आगे न झुके: क्योंकि *'जो कोई भी प्रभु को पुकारता है, वह उसके समीप है'* (भजन संहिता 144:18), और जो आत्मा उसे खोजती है, वह उसे पा लेगी (देखें सिराख 6:16); बस दृढ़ खड़ी रहे, हाय-हाय करे और कराहे, स्वर्ग की ओर हाथ उठाकर आँसू बहाए, छाती पीटे, उस लज्जा पर मनन करे जिससे एक पापपूर्ण कर्म ढका रहता है—न केवल परमेश्वर के भयानक सिंहासन के सामने, बल्कि स्वयं अपने सामने और मनुष्यों के सामने भी—और इस प्रकार पाप से मुँह मोड़कर भलाई में स्थिर हो जाए। क्योंकि लिखा है: *'हे मेरे पुत्र, यहोवा की अनुशासित बात को तुच्छ न जाने, और जब वह डांटे तब हियाव न खो; क्योंकि यहोवा जिसे प्रेम करता है, उसे अनुशासित करता है, और जिस पुत्र को वह स्वीकार करता है, उसे दण्ड देता है'* (नीतिवचन 3:11,12)। और फिर दूसरे अंश में? *'परीक्षा के समय में हियाव न खो'* (सिरिक 2:2)। यह प्रभु ही हैं जो हमारे प्रेम की परीक्षा लेते हैं, यह देखने के लिए कि क्या हम उसमें स्थिर हैं, और क्या हम उनके प्रेम को एक लज्जास्पद आनंद—जो विनाशकारी और घातक है, स्वाद में मीठा पर निगलने पर भयानक रूप से कड़वा है—पर तरजीह नहीं देते,

बजाय उस चीज़ के जो हमारी आत्मा का विनाशक प्रस्तुत करता है: वह प्रकाश होने का दिखावा करता है, फिर भी वह अंधकार है; आध्यात्मिक प्रेम को, सभी दिखावों में, वह छिपाता है, फिर भी यह सबसे घृणित घृणा है। परन्तु हे मसीह के सिपाही, उसकी युक्तियों और उसकी दुष्ट योजनाओं से अनभिज्ञ न रहो। यदि तुम जीवन चाहते हो, तो प्रकाश को खोजो, क्योंकि परमेश्वर और उसकी आज्ञा प्रकाश है।

२०. अपनी आत्मा की अवस्था से पहचानो कि तुम्हारे पास कौन आया है—हमारा कोई, या विरोधी? यदि आपकी आत्मा शांत, अडिग रहती है, दिव्य चिंतन को नहीं छोड़ती, और हमारे लिए आरक्षित आशीर्वादों की लालसा से भरी रहती है, तो हर तरह से, अपने हृदय के द्वार उसके लिए खोलें, उसका स्वागत करें और उसके साथ भोजन करें, ताकि वह आपको परमेश्वर और दिव्य वस्तुओं के प्रति अधिक प्रेम की ओर और भी अधिक पोषित कर सके। लेकिन यदि उसकी उपस्थिति आपकी आत्मा को बेचैन करती है, उसे अनगिनत विचारों से भर देती है, आपकी दृष्टि को देह और रक्त की ओर, सांसारिक बंधनों और जुनून की ओर, और तत्काल सुख की ओर मोड़ देती है, आपकी आत्मा को उन्माद में उकसाती है और, मानो, कामुक आनंद की गर्मी से उसे उबाल ही देती है: हाय! – पीछे हटें और इस राक्षस को भगा दें। यह एक ही क्षण में आपके वर्षों की मेहनत, आपके तपस्या के प्रयासों, आपके अनेक आँसुओं को नष्ट करने आया है, प्रार्थनाओं और बहादुर संघर्षों और दुश्मनों पर विजयों; वह तुम्हें, मसीह के योद्धा को, वासना के क्षणिक आनंद का शिकार बनाने आया है; वह ऐसे बहादुर मनुष्य को पापपूर्ण आनंद के विष से सराबोर प्याले का पान कराकर हमेशा के लिए मार डालने आया है। – मैं यह एक निर्लिप्त व्यक्ति की तरह नहीं लिख रहा हूँ, बल्कि एक ऐसे व्यक्ति की तरह लिख रहा हूँ जो परीक्षा में पड़ा है, और वास्तव में एक गहरे जुनून वाले व्यक्ति की तरह लिख रहा हूँ; कुछ बातें मैंने अपनी पढ़ाई से सीखी हैं, कुछ अपने पिता की शिक्षाओं से और कुछ मैंने कई अन्य लोगों से सुनी हैं।

177. शत्रु की करतूतों के कारण हम पर कई वासनाएँ आक्रमण करती हैं। हमें ईश्वर के पूर्ण कवच को धारण करके उनसे लड़ना चाहिए।

177. 1) शत्रु की प्रेरणा से अनेक वासनाएँ हम पर आक्रमण करती हैं। हमें इनसे तब लड़ना चाहिए जब हम स्वयं को परमेश्वर के पूर्ण कवच से सुसज्जित रखें। 2) इन हथियारों में, दैवीय सत्यों का ज्ञान—जो शिक्षाओं को सुनकर प्राप्त होता है, जिनका, अफसोस, हम बहुत कम उपयोग करते हैं—कदापि सबसे कम नहीं है। 3) इसके कारण, हम पथभ्रष्ट हो जाते हैं और बुराई से चिपक जाते हैं, जबकि हमें केवल इसकी इच्छा करनी होती है, और हम पूरे दिन एक सार्थक कार्य करके बिता सकते हैं। 4) तो इस तरह से कार्य करना शुरू करें। [2, 115]

21. अपने कठिन जीवन में वीरता से खड़े रहो, दिन की तपिश और रात की ठंड दोनों को, मानसिक और शारीरिक रूप से सहो; परन्तु अधिक मानसिक रूप से, क्योंकि कामवासना की आग हम में अंतर्निहित है, जिसे अदृश्य नबूकदनेसर ने खल्दीय भट्टी से भी अधिक प्रचंडता से भड़काया है; अन्य जुनून भी हम पर आक्रमण करते हैं, प्रत्येक एक दूसरे से उस बेचारे आत्मा को दूर खींचता है: क्रोध, उग्रता, प्रतिशोधी भावना, अहंकार, सुस्ती, ढिलाई, पक्षपात, आत्म-प्रेम, और सभी बुराइयों में सबसे बड़ी, अविश्वास। हमें बहुत साहस और उदारता, बहुत अटूट दृढ़ता और शक्ति, धैर्य, अच्छा हास्य-बोध, संयम और सतर्कता, ताकि हम अपने विरुद्ध उठाए गए शैतान के प्रलोभनों और छल-कपट को दूर भगा सकें, ताकि हम वासना के बाअल के सामने घुटने न टेकें, ताकि हम भावुकता की मूर्ति की पूजा न करें, ताकि हम उस सब को नष्ट न कर दें जो हमने भलाई में इकट्ठा किया है, ताकि हम उस सब को बर्बाद न कर दें जिसे हमने ईश्वर की मदद से बनाया है। हम इन वासनाओं से और कैसे बच सकते हैं, यदि हम स्वयं को पूरी तरह से प्रभु के हवाले न करें और हमारे विरोधी शक्तियों को हराने के लिए संपूर्ण आध्यात्मिक कवच न धारण करें?

२२. ये आध्यात्मिक हथियार हैं: प्रार्थना और आशा, विनम्रता और आज्ञाकारिता, प्रेम और विश्वास, निष्पक्षता और सभी सांसारिक चीजों से मन का पूर्ण रूप से मुड़ जाना, मोक्ष पर निरंतर शिक्षा और उपदेश, सभी चीजों का ऐसा दृष्टिकोण और श्रवण जो न तो उदासीन हो और न ही भेदभावपूर्ण, साथ ही अपने होठों और हाथों का उपयोग, ईश्वर के भय और ईश्वर पर ध्यान के माध्यम से स्वयं की निरंतर रक्षा, और भविष्य की आशीर्वादों के लिए एक अदम्य लालसा: क्योंकि यदि यह हम में नहीं है, तो हम पाप के नाश में गिरने से कैसे बच सकते हैं? हम अपने से नफरत करने वाले दुश्मनों के हाथों में पड़ने से कैसे बच सकते हैं? – हाय! हम कितना सुनते हैं? धर्मग्रंथ हम में कितना भरते हैं? धर्मपरायण पिताओं ने हमें कितना सिखाया है? फिर भी हम यह सब भूल जाते हैं और इसकी परवाह तक नहीं करते। जैसे एक किसान द्वारा धरती की सतह पर बोया गया बीज, हल द्वारा मिट्टी में दबाए जाने से पहले, पक्षियों द्वारा छीन लिया जाता है: वैसे ही शत्रु के चालाक पक्षी दिव्य वचन को हमसे, मानो हमारे ही होठों से, छीन लेते हैं; और आध्यात्मिक बीज हमारे भीतर निष्क्रिय रह जाते हैं, जबकि हम भी निष्फल बने रहते हैं, और सद्गुण का कोई फल नहीं देते। जब धर्मपिता हमें ब्रह्मचर्य, साहस, सत्य या किसी अन्य सद्गुण पर उपदेश देते हैं, तो इसके

तुरंत बाद सुनने के बाद भी—जैसे हमने कुछ सुना ही न हो—हम खुद को इसके बल्कुिल वपिरीत करते हुए पाते हैं, तो कोई और क्या सोच सकता है? वे हमें न्याय और आँसुओं के बारे में बताते हैं, फरि भी जैसे ही हम वहाँ से नकिलते हैं, हम हँसने और ठहाके लगाने लगते हैं। वे शुद्धता के बारे में कठोर शब्दों से हमारी आत्मा को काबू में करते हैं, फरि भी उन्हें सुनने के तुरंत बाद, हम वासना के आगे झुक जाते हैं, एक-दूसरे पर कामुक नज़रें डालते हैं, और सबसे घोर शब्द बोलते और स्वीकार करते हैं। वे हमें वनिम्रता और नम्रता का उपदेश देते हैं, फरि भी ऐसे प्रवचन के ठीक बाद हम घमंडी हो जाते हैं, उग्र व्यवहार करते हैं और अवज्ञा दखिाते हैं। वे हमें संयम का उपदेश देते हैं, फरि भी हम अतभिक्षण में लप्ति हो जाते हैं; सतर्क रहने का उपदेश देते हैं, फरि भी हम तुरंत नींद के हवाले हो जाते हैं; सौम्यता का उपदेश देते हैं, फरि भी हम तुरंत क्रोधति हो उठते हैं; मौन रहने के लए़ि कहा जाता है, फरि भी हम नरि‌र्थक बातें करते हैं; अधकि परश्रिम करने के लए़ि कहा जाता है, फरि भी हम अपने कर्तव्यों से कतराते हैं; और, सरल शब्दों में कहें तो, ऐसा है मानो हम जानबूझकर उस मार्ग के वपिरीत चल रहे हों जसि हमें नर्दिेश में बताया गया था। और मैं केवल नवसखिुओं की ही नहीं, बल्कउिन लोगों की भी बात कर रहा हूँ जो अपने आपको कुछ समझते हैं, और जो कसिी भी क्षमता में नेतृत्व के लए़ि बुलाए गए हैं, और जो मंत्री के रूप में नयिुक्त कएि गए हैं। – हाय! हम धोखेबाज़ शैतान के हाथों कतिनी पीड़ा सहते हैं?

२३. हम जीवति परमेश्वर से, उस अथाह दव्यि सुंदरता से अपना मुँह क्यों मोड़ लेते हैं, और व्यर्थ और क्षणभंगुर चीज़ों की ओर क्यों मुड़ जाते हैं? हम कड़वी और क्षणभंगुर चीज़ों से प्रेम और लगाव क्यों करते हैं, जबक‌ि सबसे मीठी और शाश्वत चीज़ को क्यों त्याग देते हैं? सचमुच, हमारी आत्मा की आँखें और कान शुद्ध नहीं हैं, इसलएि हम सच्ची भलाई को देखने में असफल रहते हैं और स्वयं को इसके आनंद से वंचति कर लेते हैं। तो फरि, आइए हम एक बार फरि काम पर लगें, भले ही हम पहले ही काफी कमजोर हो चुके हैं; आइए हम फरि से जीवति हो उठें, भले ही हम पहले ही काफी हद तक मर चुके हैं; आइए हम एक बार फरि जागें, भले ही हम लगभग पूरी तरह से सो चुके हैं। हमें बस यही इच्छा करनी है—और सब कुछ पूरा हो जाएगा। जसि दनि हम एक अच्छे और दृढ़ संकल्प पर अपना मन लगाएँगे, उसी दनि हम मोक्ष की मात्रा प्राप्त कर लेंगे। क्योंकहिम दैनकि जीवन के मामलों से बँधे हुए नहीं हैं, ताक‌ि हमारे लएि अच्छा करना मुश्कलि हो जाए। लेकनि यदहिम चाहें, तो हमारे लएि पूरे दनि को मोक्ष के कार्यों के लएि समर्पति करना सुवधािजनक है: सुबह में, दाऊद के उस भजन को बुद्धमिानी से गाना: *'सुबह-सुबह मेरी पुकार सुन; सुबह-सुबह मैं तेरे सामने उपस्थति होऊँगा, और तू मुझे देखेगा'* (भजन संहति 5:6); तीसरे घंटे पर: *'अपना पवति्र आत्मा मुझ से न ले'* (भजन संहति 50:13); छठे घंटे पर: *'दोपहर के दानव के आक्रमण से और दनि में उड़ने वाले तीरों से मुझे बचा'* (भजन संहति 90:5); नौवें घंटे पर: *'हे प्रभु, अपना कान लगाकर मुझे सुन'* (भजन संहति 85:1); शाम को: *'हे मेरी आत्मा, यहोवा का धन्यवाद कर...'* और जो इसके बाद आते हैं (भजन संहति 103:1)। यदहिम हर दनि इस प्रकार कार्य करें, एक-दूसरे को प्रोत्साहति करें और अच्छे शब्दों और कर्मों से एक-दूसरे को ज्ञान दें, न कलिापरवाह उदासीनता और खाली बातों से आत्मा को सुस्त और अंधकारमय करें; तो इस प्रकार हम बच सकते हैं, क्योंकहिम सुबह से शाम तक एक पुण्य कार्य कर सकते हैं। बेशक, भटकना असंभव नहीं है—चाहे वह एक पल की लापरवाही से हो, एक अवचिारति शब्द से, एक अनुचति इच्छा से, या कसिी अन्य भावुक आवेग से; लेकनि हर बार जब ऐसा होता है, तो ईश्वर से हृदय से की गई प्रार्थना के द्वारा उसका प्रायश्चति कयिा जाता है। इस प्रकार, जैसे-जैसे दनि बीतते हैं, आइए हम ईश्वर के मार्ग पर चलें, शरीर से मुक्तकि‌े समय की प्रतीक्षा करते हुए, जसिके बाद प्रभु के लएि परश्रिम करने और स्वयं को संयमति करने वाले सभी के लएि मुकुट, आनंद और हर्ष की प्रतीक्षा है।

२४. अत; अपनी मेहनत, अपने प्रयासों और अपने संघर्षों पर ध्यान दो, लापरवाही को त्यागकर उत्साही लगन को अपनाओ, इस नश्चितिता के साथ कजिो कोई भी इसे चाहता है, उसके लएि एक अच्छा जीवन जीना, पूर्णता तक पहुँचना और हर सद्गुण से सुसज्जति होना संभव है। यदपिरमेश्वर प्रकाश, जीवन और सत्य हैं, तो हम उनकी ओर प्रयासरत होने, उनके साथ जीवति मेलजोल की खोज करने और उसे प्राप्त करने के लएि क्यों न तरसें? और यद‌ि शैतान वास्तव में मृत्यु, मथ्यिा और वनिाश है, तो उसकी प्रलोभनों के आगे झुकना मृत्यु, अंधकार और वनिाश के सवि‌ा और क्या हो सकता है? इस प्रकार, जीवन और मृत्यु हम में से प्रत्येक के सामने हैं। आइए हम जीवन से चपिके रहें, आइए हम प्रकाश से चपिके रहें, आइए हम अमरत्व से चपिके रहें; और आइए हम अंधकार, नराशा और वनिाश से मुँह मोड़ें, ताकहिम हमारे प्रभु मसीह यीशु में स्वर्ग के राज्य के योग्य बन सकें।

178. आपने अब सफलतापूर्वक पवित्र लेंट का पालन किया है और आध्यात्मिक फलों से समृद्ध हुए हैं... इसलिए, उन्हें संजोएं, और साथ ही अपने ऊपर कड़ी नज़र रखें

178. 1) आपने अब सफलतापूर्वक पवित्र लेंट का पालन किया है और आध्यात्मिक फलों से समृद्ध हुए हैं। 2) अत; उन्हें संजोकर रखें, और स्वयं पर कड़ी नजर रखें, विशेषकर ईस्टर के दिनों में, जब नियमों के अनुसार कुछ सुख-सुविधाओं की अनुमति होती है। [2, 116]

25. आपने पूरे पवित्र लेंट के दौरान अच्छे कर्मों से प्रयास किया है: आपने अपनी क्षमता से और उससे भी अधिक उपवास किया, आपने यथोचित रूप से जागरण किया, आपने संयम के साथ अध्ययन किया, आपने बिना आलस्य के काम किया, आपने अपने मन को शुद्ध रखा, आपने अपनी जीभ को निंदा से, अपने होठों को व्यर्थ की बातों से, और अपने सभी अंगों को हर पाप से बचाया, उन्हें धार्मिकता के उपकरण, एक सदाचारी और ईश्वर-प्रसन्न जीवन के अंग बनाकर। आपने अब लेंट का अनुपालन इतनी अच्छी तरह और इतने अनुकूल रूप से किया है, जैसा कि प्रतीत होता है, पहले कभी नहीं। ऐसा क्यों है? यह आप पर स्वयं और अपने जीवन के मामलों पर आपके कड़े ध्यान के कारण है, और उससे भी अधिक, ईश्वर की उस विशेष कृपा के कारण जो इस प्रकार आप पर प्रदान की गई है, जिनसे *'हर एक अच्छा वरदान और हर एक उत्तम उपहार'* आता है, जैसा कि लिखा है (याकूब 1:17)। इस प्रकार आप जीवन में समृद्ध हुए हैं और आध्यात्मिक फलों से संपन्न हुए हैं।

26. तब आपकी संपत्ति सुरक्षित रहे, और आध्यात्मिक आशीर्वादों के आपके भंडार शत्रु के शिकारी बदनामियों की पहुँच से परे रहें। तुम्हारे ऊपर अनुग्रह पर अनुग्रह और धन पर धन, तुम्हारे जीवन के अंत तक प्रदान किया जाए। – और ऐसा ही होगा – लेकिन कैसे? – यदि तुम अपनी चौकसी की कठोरता में ढील नहीं देते और आने वाले दिनों में सुस्ती या लापरवाही नहीं होने देते, विशेषकर जब पवित्र ईस्टर आता है, जब नियम के अनुसार भजन-गायन निलंबित कर दिया जाता है, नियमित प्रार्थना के समय, घुटनों के बल प्रार्थना, और तीव्र रात्रि जागरण को अलग रखा जाता है, और भोजन में शराब, तेल, पका हुआ भोजन और इसी तरह की चीजों की अनुमति दी जाती है, साथ ही दोपहर की झपकी, दिन में दो बार भोजन, टहलना और अन्य इसी तरह की चीजें: ताकि यदि मन संयम में न रहे और सब कुछ उचित क्रम में पूरी सावधानी से न करे, तो वह जो उसने सही ढंग से अर्जित किया है, उसे बर्बाद करने के खतरे में पड़ जाए, एक धनी व्यक्ति को गरीब बना दे, और उसे महिमा की ऊँचाइयों से अपमानजनक पतन की गहराई में फेंक दे। इसीलिए मैं आपसे निवेदन और विनती करता हूँ: जब तक हम यहाँ के शत्रुओं और विश्वासघाती विपत्तियों से मुक्त नहीं हो जाते, तब तक स्वयं को कड़ाई से नियंत्रित रखें, मानो ताले और चाबी के नीचे बंद हो।

179. हम शत्रु के प्रलोभनों पर ध्यान न दें: हमारे पूर्वज ने उन पर ध्यान दिया और उन्हें स्वर्ग से निकाल दिया गया था।

179. 1) हम शत्रु के प्रलोभनों पर ध्यान न दें: हमारे पूर्वज ने उन पर ध्यान दिया और उन्हें स्वर्ग से निकाल दिया गया। – 2) शत्रु हर अवसर पर हमें अपने प्रलोभन भी देता है: आइए हम हमेशा उन्हें अस्वीकार करने के लिए तैयार रहें। [2, 117]

27. *'शांत हो जाओ, और जानो कि मैं परमेश्वर हूँ'* (भजन संहिता 45:11)। अतःहमें सभी चीज़ों से अपना लगाव तोड़ने और केवल आवश्यक बातों के लिए स्वयं को समर्पित करने की आवश्यकता है। अपने जीवन के दौरान, हमें इनकी आवश्यकता होती है: सद्गुणों के लिए एक अतृप्त इच्छा, अटूट संयम, दृढ़ धैर्य, और हमारे शत्रुओं तथा विरोधियों के प्रति अथक प्रतिरोध; क्योंकि ये मानसिक दानव, हमारी आत्माओं के अपहरणकर्ता, वे राक्षस जो पापों, अधर्म और हर प्रकार की दुराचारिता को जन्म देते हैं, सदैव हमारे समीप रहते हैं। इसलिए, कोई भी लापरवाही से अपने श्रम में सुस्ती न बरते; कोई भी कामुकता और आत्म-प्रेम से प्रेरित होकर मनमानी से इधर-उधर न भटके, बल्कि हर बात में वे प्रभु की आज्ञाओं के अधीन रहें, और बाहरी प्रेरणाओं के नहीं। क्योंकि प्रभु स्वयं कहते हैं: *'मेरी भेड़ें मेरी आवाज़ सुनती हैं। वे किसी अजनबी का अनुसरण नहीं करते, क्योंकि वे अजनबी की आवाज़ को नहीं पहचानते'* (यूहन्ना 10:27, 5)। जहाँ मसीह हैं, वहाँ शैतान की कोई जगह नहीं है। जहाँ उनकी आवाज़ भेड़ों को बुलाती है, वहाँ साँप की फुफकार नहीं सुनी जाती। और हमारे पूर्वज आदम, जब तक उन्होंने अपनी आत्मा के कानों को अछूता रखा, तब तक वे दिव्य वाणी को सुनते हुए स्वर्ग में रहे और उन्होंने उच्च चिंतन प्राप्त किया। लेकिन जब उन्होंने साँप की फुसफुसाहटों पर ध्यान दिया और पाप के वृक्ष का स्वाद चखा, तो उन्हें तुरंत अपनी नग्नता का शर्म महसूस हुआ और वे परमेश्वर से छिप गए। जब उनसे पूछा गया, 'तुम कहाँ हो? उसने कहा, 'मैंने तुम्हारी आवाज़ सुनी, और मैं छिप गया, क्योंकि मैं नग्न हूँ।' तो, हे आदम, यह भय तुम्हारे भीतर किसने डाला? और किसने यह बताया कि तुम नग्न

थे? – एक धोखेबाज़ कान और ईश्वर की आज्ञा से मुंह मोड़ना। इसके बाद उस धन्य स्थान से उसका निष्कासन हुआ और इस जीवन में परिश्रम, दुख और वंचित होने की सजा मिली। – अतःआइए, हम अब से साँप की सलाह से दूर रहें।

28. हम वासनाओं के प्रलोभनों के आगे न झुकें, जिन्हें उसने अपनी दुष्टता से तैयार किया है। विभिन्न प्रकार के जादू की शीशियों को तैयार करके, यह सभी अव्यवस्थाओं का घृणित उकसाऊ, जैसा कि एक संत (संत मकारियस महान) ने देखा था, घूमता रहता है, और यह देखकर कि हम में से प्रत्येक किस जुनून के प्रति सबसे अधिक प्रवृत्त है, प्रत्येक व्यक्ति को उसी अनुरूप की शीशी पेश करता है और उन्हें उसे पिला देता है; एक बार चख लेने पर, यह उन्हें जुनून से भर देता है: एक को व्यभिचार का, दूसरे को ईर्ष्या का, तीसरे को परिपूर्णता का, एक और को आत्म-इच्छा का, और एक अन्य को ब्रह्मचर्य का; संक्षेप में, एक को यह, दूसरे को वह, और प्रत्येक को उसकी अपनी। इसलिए भाइयों, हमें सतर्क रहना चाहिए, और अपने क्रूर शत्रु के ऐसे हमलों को रोकने के लिए हमेशा तैयार रहना चाहिए; और इस उद्देश्य के लिए, हमें आध्यात्मिक रूप से निरंतर सशस्त्र रहना चाहिए, विश्वास का कवच, नम्रता का ढाल, आज्ञाकारिता का हेलमेट, और अन्य सभी सद्गुणों का पूर्ण कवच पहनना चाहिए। प्रत्येक व्यक्ति अपनी स्थिति को जानते हुए, एक स्पष्ट अंतरात्मा के साथ उसके अनुसार कार्य करे। आओ हम एक-दूसरे से आत्मा में प्रेम करें, न कि शरीर में। दृष्टि नीची, मन ऊँचा।

180. उपवास परमेश्वर को तब प्रसन्न होता है जब हम आत्मा और शरीर दोनों में संयम बरतते हैं; लेकिन यदि यह केवल शरीर में हो, तो यह उन्हें अप्रसन्न करता है।

180. उपवास परमेश्वर को तब प्रसन्न होता है जब हम आत्मा और शरीर दोनों में संयम का अभ्यास करते हैं; लेकिन यदि यह केवल शारीरिक है, तो यह उन्हें प्रसन्न नहीं करता। इस मामले में परिश्रमी होने का प्रयास करें। [2, 120] उपवास का समय समाप्त होने को है: अतःस्वयं की परीक्षा करो, कि तुमने वह सब कुछ पूरा किया है जो उचित और सही है: क्या हमने, तुम्हारे साथ मिलकर, निःसंदेह आज्ञाकारिता, सच्ची नम्रता, पश्चातापी श्रद्धा प्राप्त की है, अनवरत प्रार्थना, ईश्वर को प्रिय लगने वाला विलाप, गहरा शोक, अटूट विश्वास, ऐसी आशा जो कभी लज्जित न करे, सौम्य धैर्य, और सर्व-व्यापी संयम – विरोध के शब्दों से, अपमानजनक भाषण से, अवज्ञा से, झगड़े से और स्वार्थ-सिद्धि से। – आत्म-संयम के लिए यह सब आवश्यक है, और इन मामलों में आत्म-संयम का अभ्यास करके, हम वास्तव में धार्मिकता के मार्ग पर चलते हैं और शाश्वत, अनुपम आशीर्वादों की आशा में अच्छे कर्मों के माध्यम से प्रयास करते हैं। लेकिन यदि इसके विपरीत कुछ भी है—अवज्ञा, अहंकार, शिकायत, पर-निंदा, हठ, कामुकता, झगड़ालूपन, कठोर हृदय, घृणा, क्रोध और भ्रष्टता के अन्य घृणित जुनून—तो, भले ही हम शारीरिक रूप से उपवास करते हों, हम ईश्वर को ऐसा उपवास नहीं अर्पित करते जो उन्हें प्रसन्न करने वाला हो, परन्तु एक अपवित्र उपवास—जो परमेश्वर को प्रसन्न नहीं करता और जिसे वह अस्वीकार कर देते हैं। इसे पहचानकर, प्रभु की सभी आज्ञाओं का निर्दोषता से पालन करने का प्रयत्न करो; जो कुछ भी निन्दनीय, लज्जास्पद और अपमानजनक है, उसे अस्वीकार करो, और हर काम को उचित और व्यवस्थित तरीके से करो: क्योंकि जो अच्छा है भी, यदि उसे अनुचित ढंग से कहा या किया जाए तो अच्छा नहीं होता। *'मूर्ख न बनो, पर यह समझो कि परमेश्वर की इच्छा क्या है'* (इफिसियों 5:17) – *'जो भली, ग्रहणयोग्य और उत्तम है'* (रोमियों 12:2)।

181. ईश्वर की आज्ञाओं और सामुदायिक जीवन के व्रतों को पूरा करने का प्रयत्न करो, और तुम प्रभु से अवर्णनीय आनंद से भर जाओगे

181. 1) ईश्वर की आज्ञाओं और सामुदायिक जीवन के संकल्पों को पूरा करने का प्रयास करें, और आप प्रभु से अकथनीय आनंद से परिपूर्ण हो जाएंगे। – 2) हमारी पुकार और उसमें निहित आशाओं का सार यही है: अत; हमें अपने कर्तव्यों की पूर्ति की उपेक्षा नहीं करनी चाहिए। – 3) आज्ञा पालन के ये कार्य व्यर्थ नहीं हैं; और हम में से कोई मनुष्यों की नहीं, बल्कि परमेश्वर की सेवा करता है, जो इन्हें स्वीकार करता है – और इन्हें पुरस्कृत भी करेगा: अतःइसी भावना से प्रयत्न करो, और अपने बुलावे के कार्य को पूर्णता तक पूरा करो। – 4) इस प्रकार हम पवित्र पुरखों और स्वयं प्रभु के अनुकरण करने वाले बनेंगे। – 5) प्रभु आपको इसमें दृढ़ बनाए और आपको सुरक्षित रखे। [2, 123]

1. मैं आपसे विनती और प्रार्थना करता हूँ: उस पवित्र बुलावे में दृढ़ खड़े रहो जिसके लिए तुम्हें बुलाया गया है, अटूट और स्थिर रहो, परमेश्वर की आज्ञाओं और उसकी धार्मिकता को पूरा करो; प्रभु के प्रति अत्यंत उत्साही और उत्कट प्रेम में सदा बने रहो, और अपने हृदयों से हर विदेशी वासना को दूर करो; अपने तपस्या के धैर्य में और अधिक दृढ़ बनो, प्रत्येक दिन को और अधिक परिश्रम और संयम के साथ, जागते और भजन गाते हुए, आज्ञाकारिता

और नम्रता में, सेवा और श्रद्धा में, और अन्य सभी बातों में व्यतीत करो, इस धैर्य को, परिश्रम और संघर्ष में, और आपके इस कठिन जीवन को, अपने उद्धार के लिए किए गए प्रयास में अपनी सफलता के प्रमाण के रूप में मानें। हौसला रखें: अंततः आपके वर्तमान कष्टों के स्थान पर आपके लिए शाश्वत शांति और आपके वर्तमान दुखों के स्थान पर अनंत आनंद प्रकाशित होगा। इस प्रकार प्रेरित हमें प्रोत्साहित करते हैं, हमें आज्ञा देते हुए कि हम वर्तमान पर न देखें, क्योंकि यह अस्थायी और क्षणिक है, बल्कि भविष्य पर देखें, क्योंकि यह शाश्वत और धन्य है (2 कुरिन्थियों 4:18)।

२. अब, चूँकि हमें दैवीय पदवी के इस वरदान के योग्य समझा गया है, चूँकि हमने अनन्त जीवन और अक्षय मुकुटों की कामना की है, चूँकि हमने पुत्रों के रूप में दत्तक ग्रहण और स्वर्ग के राज्य से परम प्रेम किया है; देखो, आपके पास समय और मैदान दोनों उपलब्ध हैं। – हम हतोत्साहित न हों, न ही अपने प्रयासों में कमी करें; बल्कि सोने-चांदी, कीमती पत्थरों और अन्य नश्वर खजानों की तलाश करने वालों से भी अधिक, हम पूरे दिल और उत्साह के साथ स्वर्ग के राज्य और स्वर्गीय आशीर्वादों को प्राप्त करने के लिए प्रयासरत हों। इसमें सफलता तभी मिलेगी जब हम लगातार अपने आप पर नज़र रखें और, दिव्य से लगातार सीखते हुए, हम पर डाले गए कर्तव्य को सर्वोत्तम तरीके से पूरा करने का ध्यान रखें; क्योंकि यह न तो सांसारिक है और न ही मानवीय, बल्कि पवित्र और उद्धारकारी है, यदि इसे उत्कृष्टता के साथ किया जाए।

3. क्योंकि हम में से कोई भी मांस और रक्त की सेवा नहीं करता, बल्कि प्रभु परमेश्वर की करता है, जो इसे एक प्रसन्नतादायक बलिदान के रूप में स्वीकार करते हैं और आने वाले युग में एक योग्य पुरस्कार प्रदान करने का वादा करते हैं। किसी को यह न सोचे कि वे किसी मनुष्य की सेवा कर रहे हैं, भले ही उन्हें सबसे छोटे-मोटे कार्य सौंपे गए हों, बल्कि प्रभु स्वयं की, जो इसे अपने भाइयों के द्वारा ग्रहण करते हैं। इसलिए, अपने कर्तव्यों का पालन भय और कम्प के साथ करो, और प्रभु स्वयं को अपना निरीक्षक मानो, *'जो अँधेरे में छिपी हुई बातों को देखता है और तुम्हारे हृदय की योजनाओं को प्रकाश में लाता है'* (1 कुरिन्थियों 4:5)। यदि हम में से प्रत्येक इसी प्रकार सोचता - जैसा कि वास्तव में है भी - और एक-दूसरे की सेवा को एक दिव्य मंत्रालय के रूप में करता, तो हम अपनी बुलाहट के पूरे कार्य को पूरी तरह से पूरा कर लेते।

४. इससे, सभी सद्गुणों की किरणें हमारे भीतर प्रकाशित होंगी—प्रेम, शान्ति, नम्रता, सौम्यता और विनम्रता—और तब हमें एहसास होगा कि हम वास्तव में अपने पूजनीय पूर्वजों के पदचिन्हों पर चल रहे हैं, उनके जीवन-शैली का अनुकरण कर रहे हैं। तब उन धन्य जीवनों को याद करो, आज्ञाकारिता और समर्पण के मार्ग पर उनकी यात्रा, उनकी विनम्रता और समर्पण की असाधारण उत्कृष्टता – और कैसे उन्होंने प्रभु के लिए उत्साहपूर्वक प्रयास किया, जिन्होंने स्वयं कहा: *'मेरे से सीखो, क्योंकि मैं मन से कोमल और नम्र हूँ'* (मत्ती 11:29), यद्यपि, जैसा कि प्रेरित कहते हैं, *'उसने परमेश्वर के बराबर होने को पकड़ने योग्य वस्तु नहीं समझा, बल्कि उसने स्वयं को खाली किया, दास का रूप धारण किया, मानव समानता में जन्म लिया; और मानव रूप में पाया जाकर, उसने स्वयं को नम्र किया और मृत्यु तक—यहाँ तक कि क्रूस पर मृत्यु तक—आज्ञाकारी बना रहा'* (फिलि. 2:6, 8)। और विचार करें: उद्धार पाए हुओं, या धन्य लोगों में से कौन है? केवल वही जो उनका अनुकरण करने वाले हैं, जिन्होंने स्वयं को नम्र बनाया है, जो आज्ञाकारी और वश में रहे हैं, जिन्होंने हर प्रकार की पीड़ा, अपमान, तिरस्कार, उपहास, या यहाँ तक कि पिटाई, निर्वासन और कारावास को सहन किया है – जैसा कि आप में से कुछ ने किया है, या वास्तव में आप सभी ने, क्योंकि एक सदस्य में पूरे शरीर को या तो महिमामंडित किया जाता है या अपमानित किया जाता है।

5. हे प्रभु, आप हमें और भी अधिक सुरक्षित रखें, जैसे कि अपने पराक्रमी योद्धाओं को, जैसे कि अपने विश्वासयोग्य सेवकों को, जैसे कि इच्छाओं के पुरुषों को, जैसे कि एक चुने हुए लोगों को, जैसे कि एक पवित्र मंडली को, ताकि, इस युग में, जो वास्तव में व्यभिचारी और पापी है, निर्लज्ज होकर परमेश्वर की आज्ञाओं के पालनकर्ता के रूप में प्रकट हों, ताकि आप स्वर्ग के राज्य में प्रभु मसीह के सह-वारिस होने के योग्य ठहरें।

182. आप न तो मेरी शिक्षाओं पर ध्यान देते हैं, न ही मेरे पितृवत् उपदेशों पर, और न ही परमेश्वर के वचन पर, और आप पश्चाताप नहीं करते: इसका कारण आपके शरीर की कामनाओं में लिप्तता और मोक्ष के प्रति आपकी उदासीनता है।

182. 1) आप न तो मेरी शिक्षाओं पर ध्यान देते हैं, न ही मेरे पितृवत् उपदेशों पर, और न ही परमेश्वर के वचन पर, और आप पश्चातापहीन बने रहते हैं: इसका कारण आपके शरीर की कामनाओं में लिप्तता और मोक्ष के प्रति आपकी उदासीनता है। – 2) हमें हर अच्छी बात के लिए उत्साही होना चाहिए, फिर भी हम कैसे हैं? – 3) तो फिर हम इतने लापरवाह क्यों हैं और इतनी नीचता में क्यों गिर गए हैं? आइए हम कम से कम अब से सुधार करें। [2, 124]

6. कोई किसान और किसलिए बोता है, यदि बाद में कटनी करने के लिए नहीं? कोई व्यापारी और किसलिए परिश्रम करता है, यदि लाभ कमाने के लिए नहीं? इसी प्रकार, शिक्षा के वचन को पहुँचाने का भार जिस पर है, वह और किस उद्देश्य से ऐसा करता है, यदि सुनने वालों की सफलता और सुधार की आशा में नहीं? – परन्तु जहाँ तक तुम्हारा सवाल है, मेरी पापों के कारण, मेरे वचन पूरी तरह से निष्फल रह जाते हैं। मैं भरपूर बोता हूँ और कड़ी मेहनत करता हूँ, फिर भी मुझे कोई फल नहीं दिखता। मैं बोलता हूँ, मैं प्रचार करता हूँ, मैं तुम्हें याद दिलाता हूँ – और कभी-कभी, एक पल के लिए, मेरे वचनों की शक्ति तुम्हारी आत्मा के भीतरी कान तक पहुँच जाती है, लेकिन तुम तुरंत ही यह सब फिर से भूल जाते हो और उन्हीं पापों में पड़े रहते हो। मैं इस पर रोता हूँ और मेरा हृदय फटा हुआ है, क्योंकि आपके इस अव्यवस्था को रोकने की मुझमें कोई शक्ति नहीं है। बेशक, यह व्यर्थता मेरे विनम्र शब्दों की शक्तिहीनता से उत्पन्न होती है। हालाँकि, इसका दोष मुझ पर ही डाल दो। लेकिन क्या तुम दिव्य शास्त्रों के वचन नहीं सुनते? क्या वे प्रतिदिन तुम्हारे कानों में उद्धार करने वाले सिद्धांतों का उद्घोष नहीं करते? – और, पवित्र पिता क्या पुकारते हैं? वे क्या उद्घोष करते हैं? वे किस बात की गवाही देते हैं? वे किस बात की धमकी देते हैं? – क्या वे आपके सामने उस भयानक और अपरिहार्य न्याय को, ईश्वर के उस पृथ्वी-कंपकंपाने वाले अंतिम आदेश को, उस चौंका देने वाले अस्वीकृति और अनंत यातनाओं को, अविनाशी अग्नि को, वह विषैला कीड़ा जो कभी नहीं मरता, घोर अंधकार को, पाताल लोक के तारतारस को, और इस संबंध में जो कुछ भी कल्पना की जा सकती है, प्रस्तुत नहीं करते? – क्या वे, इसके विपरीत, आपको स्वर्ग का राज्य नहीं दिखाते हैं – शाश्वत जीवन, अनुपम महिमा, अकथनीय प्रकाश, स्वर्ग की अकल्पनीय सुंदरता, अब्राहम की गोद, संतों का निवास, धर्मी लोगों के प्रांगण, स्वर्गदूतों की पंक्तियाँ, और अकथनीय आनंद? – और फिर भी, इन सब के बावजूद, आप में सुधार का कोई संकेत नहीं दिखता, यहाँ तक कि पश्चाताप भी नहीं। – परन्तु, हम किन शब्दों पर ध्यान दें, जब हम जो कुछ भी चाहते हैं वह केवल अपनी कामुक इच्छाओं और प्रवृत्तियों को संतुष्ट करना है, जब हम इतने नीचले स्तर पर पहुँच चुके हैं सिवाय इसके कि हमारे मन में केवल यही विचार हों कि क्या खाएं और पिएं, अपनी और सुनने वाले की आत्मा के विनाश के लिए कौन सी ठट्ठा करें, अपने अपराध को छिपाने या उसे किसी और पर थोपने के लिए क्या गढ़ें – और, सीधे शब्दों में कहें तो, जब हमने अपनी आत्मा को भक्ति और सत्य का ठिकाना नहीं, बल्कि हर तरह के अन्याय और अत्याचार का ठिकाना बना लिया है?

7. हमें दुख के साथ देखना चाहिए, स्वर्गीय ज्ञान की खोज करनी चाहिए, ऊपर की वस्तुओं को खोजना और देखना चाहिए, इस पर विचार करना चाहिए कि हमने कौन सा पद और दर्जा प्राप्त किया है, किसके और किस तरह से हम उससे बँध गए हैं, कितने और हमारे पूर्व जीवन के किन पापों के लिए हमें उससे क्षमा मिली है, और योजना अपनाने के बाद, लापरवाही की किन कमियों के लिए हमें मुक्ति का पात्र समझा गया है? – हमें कांपना चाहिए, विलाप करना चाहिए, स्वयं को नम्र करना चाहिए और पश्चाताप करना चाहिए, भारी मन और झुकी हुई दृष्टि के साथ चलना चाहिए, मृत्यु के प्रति सचेत रहना चाहिए, जो सदैव निकट है; शरीर त्यागने पर न्यायाधीश के समक्ष हमारे उपस्थिति होने और भयानक स्वर्गदूतों से हमारी मुलाकात के प्रति सचेत रहना चाहिए। – हमें अपने पवित्र पिताओं का अनुकरण करना चाहिए, जो हर मामले में, एक-एक छोटे से शब्द तक, अपने आप पर अत्यंत कठोर थे, और सभी बातों में सावधान, ईमानदार, सुव्यवस्थित, द्वेष से रहित थे, नम्र, शांतिप्रिय, झगड़ालू न होने वाले, कामुक न होने वाले, सांसारिक न होने वाले, मौन रहने वाले, भजन गाने वाले, कृतज्ञ, आज्ञाकारी, ज्ञान में विनम्र, सच्चे अर्थों में चुने हुए पात्र, हर अच्छे काम के लिए तैयार – जिनके भीतर पवित्र आत्मा वास करते थे।

8. तो फिर हम, हे दीन-दुर्बलों, इतने लापरवाह क्यों हैं? हम इतने आलसी क्यों हैं? हम इतने नीच क्यों हो गए हैं? परमेश्वर का वचन हमारी आत्मा को क्यों नहीं छूता? हम आँसू क्यों नहीं बहाते? हम अपने कठोर हृदयों को क्यों नहीं नरम करते? हम एक पूर्ण परिवर्तन से क्यों नहीं बदलते हैं? हम बेहतर बनने के लिए प्रतिदिन क्यों प्रयास नहीं करते, ताकि यह देखा जा सके कि हम संसार से भाग गए हैं और सभी साधारण मानवीय बुद्धि से ऊपर उठ गए हैं? – हमारे प्रस्थान का वह भयानक और डरावना दिन और घड़ी आएगी, और वह आने में देर नहीं लगेगी। तब हम कड़वाहट से, दर्द से और सांत्वनाहीन होकर कराहेंगे, और हमारे पास यह कहने का साहस भी नहीं होगा: *'हे परमेश्वर, मेरा हृदय तैयार है, मेरा हृदय तैयार है'* (यशायाह 107:2)। लेकिन आओ, यदि तुम मेरी बात मानो, तो हम स्वयं हमारे राजा मसीह के सामने आराधना करें और साष्टांग दण्डवत करें; आओ हम अपने पूरे हृदय से उनके सामने कराहें और विलाप करें – और वह जो उन सब के निकट है जो सचमुच उसकी पुकार करते हैं, हमें पापपूर्ण आदतों को त्यागने और बिना किसी बलिदान के सदाचार के जीवन में प्रवेश करने के लिए सहायता और शक्ति प्रदान करेगा। मैं यह नहीं कह रहा: न खाओ, न पियो; मैं यह नहीं कह रहा: आराम करने के लिए न लेटो; मैं यह नहीं कह रहा हूँ: आराम की तलाश न करें या बातचीत के लिए भाइयों के साथ न जुटें; लेकिन मैं यह मांग करता हूँ कि यह सब एक उचित तरीके से, संयम से, उपयुक्त

समय पर और एक उपयुक्त स्थान पर किया जाए, ताकि गुण में गुण और प्रगति में प्रगति जोड़कर, हम एक ऐसा जीवन जी सकें जो शांतिपूर्ण और दैवीय हो।

१८३. तुम में से कई वैसे ही हैं जैसे तुम्हें होना चाहिए: तो फिर, तुम सब ऐसे क्यों नहीं हो?

183. आप में से कई वैसे ही हैं जैसे परमेश्वर का वचन चाहता है; परन्तु वे अधिकांश नहीं हैं। तो फिर हम सब क्यों नहीं वैसे ही हैं? परन्तु आओ, जब तक समय है, हम सब उठ खड़े हो जाएँ। [3 *1, 2]*[96] *आप में से कुछ वैसे ही हैं जैसे परमेश्वर का वचन चाहता है; परन्तु वे बहुमत नहीं हैं। तो फिर हम सब क्यों न उठें और लापरवाही की गहरी निद्रा से जागकर ज्ञान के प्रकाश की ओर प्रयत्न करें और शाश्वत आनंद की लालसा करें? हम 'पृथ्वी पर स्थित अंगों को मार डालें—व्यभिचार, अशुद्धता, हर प्रकार की वासना और बुरी इच्छा'* (कुलुस्सियों 3:5) *क्यों न करें,* ताकि हम ईश्वर के मंदिर बन सकें, जिसमें पिता, पुत्र और पवित्र आत्मा प्रसन्न होकर वास करें? शब्द और कर्म में, अत्यधिक कठोरता के साथ, मठवासी नियम का पालन क्यों न करें, ताकि हम किसी भी तरह से उपहास, धोखा, बड़बड़ाहट, अपने पड़ोसी के प्रति घमंड, या घमंडी बातों में संलग्न होने का साहस न करें, जिससे कोई कहे: 'मैं अमुक और अमुक था और such- था; मेरे पास यह और वह था'? – व्यर्थ की बातों का दानव हम पर कब तक अपना अधिकार रखेगा? हम अवज्ञा की चापलूसी करने वाली आत्मा के उपकरण कब तक बने रहेंगे? हमारे हृदय कब तक छोटी-छोटी और तुच्छ बातों पर घमण्ड करेंगे और अपने भाइयों को ऐसी बातों की कमी के लिए फटकारते रहेंगे? – परन्तु आओ, मेरे बच्चों, मेरी सुनो: हम प्रभु का भय ग्रहण करें और अपने उद्धार के लिए मिलकर काम करने हेतु एक-दूसरे के साथ हाथ मिलाएँ। जबकि हम अभी भी देह में हैं, जबकि यहाँ हमारे प्रवास का समय अभी भी जारी है, जबकि प्रार्थनाएँ और विनती, आँसू और पश्चाताप अभी भी उचित हैं, आइए हम इसे प्राप्त करने के लिए शीघ्रता करें: कि सारी दुनिया को तुच्छ समझकर और सारी सांसारिक बुद्धि को त्यागकर, और सभी सांसारिक इच्छाओं को समाप्त करके, हम अपने सारे स्नेह को पवित्र, शुभ और दिव्य चीज़ों की ओर निर्देशित कर सकें।

184. सामुदायिक नवोदित जीवन में तपस्या का मार्ग अन्य सभी से श्रेष्ठ है: यह मसीह-सदृश है

184. सामुदायिक संन्यासी जीवन में तपस्या का स्वरूप अन्य सभी से श्रेष्ठ है: यह मसीह-सदृश है। तो फिर, इस मार्ग को अच्छी तरह से चलें। [31, 9] दृढ़ खड़े रहें, साहसी बनें, और अपने जीवन के दौरान सभी बातों को सहन करें। अपने विचारों को ऊँचाइयों पर ले जाएँ और एक दैवी मन से स्वर्गीय बातों पर मनन करें। वहाँ, यशायाह के साथ, तुम प्रभु को एक ऊँचे और उत्कृष्ट सिंहासन पर विराजमान देखोगे, जिसके चारों ओर उनके सामने खड़े हुए करूब और सेराफिम तथा स्वर्गदूतों की सारी सेनाएँ होंगी। इस प्रकार हम उन्हें उनके दूसरे आगमन के भयानक दिन पर देखेंगे। – तब जो लोग अपने सामने रखे गए कार्य को निष्ठापूर्वक पूरा कर चुके हैं—शारीरिक सुखों का त्याग करके और इस युग के सुखों को अपने ऊपर हावी न होने देकर—वे उसकी परम धन्य वाणी को सुनेंगे। तब धर्मी लोग, अतुलनीय आनंद में, सूर्य के समान प्रकाशित होंगे, जब हमारे प्रभु और परमेश्वर, जो पुरस्कार देने वाले हैं, प्रत्येक व्यक्ति को योग्यता के अनुसार उपहार वितरित करेंगे। ओह, मेरे भाइयों, सभी संत कितनी आनंदमय अनुभूति करेंगे, उस राज्य का आशीर्वाद उसी अनुपात में प्राप्त करते हुए, जिस अनुपात में उन्होंने यहाँ उसे प्रसन्न किया था! वह लोग वाकई महान हैं, जिन्होंने ईश्वर के लिए पृथ्वी के पहाड़ों, गुफाओं और दरारों में शरण ली – जैसे कि स्टाइलाइट्स, गुफा-निवासी और संन्यासी। – (मेरा इरादा यहाँ उच्चतम रैंकों - पवित्र प्रेरितों, ब्रह्मांड के न्यायाधीशों, न ही सर्व-धन्य शहीदों, दैवीय भविष्यवक्ताओं, या कुछ अन्य प्रकार के धर्मी लोगों के बारे में बात करने का नहीं है)। फिर भी हमारी श्रेणी किसी भी तरह से उनसे कम नहीं है। – आप जानते हैं कि वरदानों के दाता स्वयं, पृथ्वी पर उतरकर, न तो अपने लिए मरुस्थल का जीवन चुना, न ही स्तंभवासी का, न ही ऐसा कोई अन्य जीवन, बल्कि आज्ञाकारिता में जीना उन्हें प्रसन्न था, जैसा कि वे स्वयं सुसमाचार में कहते हैं: *'मैं स्वर्ग से इसलिए नहीं आया कि अपनी इच्छा करूँ, बल्कि उस पिता की इच्छा करूँ जिसने मुझे भेजा'* (यूहन्ना 6:38)। और फिर: *'जो वचन मैं बोलता हूँ, वह मैं अपने आप से नहीं बोलता; परन्तु पिता, जो मुझे भेजता है, उसी ने मुझे आज्ञा दी है कि मैं क्या कहूँ और क्या बोलूँ'* (यूहन्ना 14:10; 12:49)। फिर, अंतिम भोज में, एक लिनेन का वस्त्र कमर में बाँधकर और एक सेवक का रूप धारण करके, उन्होंने चेलों के पाँव धोए, और थोड़ी देर बाद कहा: *'मैं तुम्हारे बीच उस के समान हूँ जो सेवा करता है'* (लूका 22:28)। इस प्रकार प्रभु, देहधारी होकर, हमारे आज्ञाकारिता के जीवन को ही अपनाने में प्रसन्न हुए। क्या यह हमारे लिए सांत्वना और आनंद का स्रोत नहीं है कि हम अपना जीवन उनकी नकल करते हुए बिताते हैं? तो क्या यह हमारे लिए उचित है कि हम अपने

[96] प्रवचनों के तीसरे खंड में दो भाग हैं, प्रत्येक में प्रवचनों के लिए अपनी स्वयं की क्रमांकन प्रणाली है। उद्धरणों में '31' पहले भाग को संदर्भित करता है, जबकि '32' दूसरे भाग को। इसके बाद आने वाला अंक प्रवचन का क्रमांक दर्शाता है।

जीवन के बजाय तपस्या के अन्य रूपों को प्राथमकिता दें? वास्तव में, यदि आप इस जीवन को जैसा कि आपको करना चाहिए, वैसे जिएं, तो आप स्वयं भी किसी अन्य को प्राथमकिता देना नहीं चाहेंगे। इसीलिए गेरोन्टिकॉन में एक कहावत है जिसमें, तीन तपस्वियों में से, प्रकटवाक्य के अनुसार आज्ञाकारिता में जीवन व्यतीत करने वाले को तपस्वी और उस रोगी पर तरजीह दी गई है जो अपनी बीमारी को आनंद के साथ सहन करता है। वास्तव में, मेरे भाइयों, हमारा जीवन सचमुच महान है, और जो इसे जीते हैं, वे निस्संदेह अब्राहम, शहीदों और धर्मी लोगों के साथ महिमामय होंगे। तो, अच्छी तरह प्रयास करो। शैतान, जो तुमसे ईर्ष्या करता है, तुम्हें पीछे न रोके, और आलस्य के कारण स्वयं को पीछे न रोको। अपने पैरों पर धैर्य के तेल का लेप लगाओ, आनंद की पोशाक पहनो, और पवित्रता और ब्रह्मचर्य का जल पियो। कोई यह न कहे: 'कब तक?'—क्योंकि यह आलसी लोगों का वचन है।

185. फलदायी बेलों जैसी बनने का प्रयास करने वालों की तुलना करके, वह सद्गुणों का फल देने के लिए उत्साह जगाते हैं, और निष्कर्ष निकालते हैं। – 2) मैं कुछ लोगों को आनंद देना चाहूँगा और दूसरों को परमेश्वर की ओर लाना चाहूँगा।

185. 1) जो लोग प्रयास करते हैं, उनकी तुलना फलदार बेलों से करके, यह सद्गुण के फल के लिए उत्साह जगाता है, और निष्कर्ष निकालता है। – 2) मैं चाहूँगा कि इससे कुछ लोगों को आनंद मिले, और दूसरों को होश में लाया जाए। [31, 13]

9. जब दाख की बेल को फलते-फूलते देखता है तो अंगूर उगाने वाला आनंदित होता है। मैं भी तब आनंदित होता हूँ जब मैं तुम में से किसी को भी आध्यात्मिक फल देते हुए देखता हूँ। धन्य है वह टहनी जो आध्यात्मिक गुच्छों से समृद्ध है, जो पश्चाताप का मदिरा प्रदान करती है और ईश्वर तथा लोगों को आनंदित करती है। परन्तु हम में से किसी के विषय में यह न कहा जाए कि भविष्यवक्ता मूसा ने परमेश्वर की ओर से कुछ लोगों के विषय में कहा था: *'उनकी दाख की लता गोमोर्राह से है; उनकी गुच्छी पित्त की गुच्छी, कड़वाहट की गुच्छी है'* (व्यवस्थाविवरण 32:32)। क्योंकि सुसमाचार में एक भयानक चेतावनी दी गई है कि जो कोई भी डाल अच्छी फल नहीं देती, उसे काटकर आग में डाल दिया जाता है, जो कि बेशक, बुझाए न बुझने वाली आग है। मसीह के अनुग्रह से, हमारे परमेश्वर द्वारा लगाई गई दाख की बारी में विभिन्न डालें हैं। उदाहरण के लिए, एक ऐसा है, जिसके कर्म तो मीठे हैं, पर उसके शब्द भी पवित्र आत्मा के नमक से रसे हुए हैं; दूसरा गहरी नम्रता से सुसज्जित है। फिर एक और है, जो बहुत फल देते हुए अनेक शाखाओं में फैलता है। इससे समझो कि वह कौन है जो आध्यात्मिक रूप से मजबूत होता और परिपक्व होता जाता है, और एक आध्यात्मिक प्रयास के बाद दूसरा प्रयास जोड़ता जाता है। एक और ने पृथ्वी में अपनी जड़ों को गहराई तक फैलाया है; वह प्रचुर, ऊँची-शाखों वाली और हरी-भरी है, ताकि उससे अन्य बेलों के लिए कटिंग्स तैयार की जा सकें। ऐसा वह है जो, अच्छी राहों में दृढ़ता से स्थापित रहते हुए, अन्य भाइयों को भी लाभ पहुँचाता है जब वह किसी को गिरते हुए, या शत्रु के हमलों से दुखी होते हुए देखता है। पर अंगूर की बेल की डालियाँ, जिनमें कोई भावना नहीं होती, एक-दूसरे से प्रतिस्पर्धा नहीं करतीं; परन्तु तुम, जो जीवित और परमेश्वर द्वारा रोपे गए हो, एक-दूसरे से प्रतिस्पर्धा करो, साथ मिलकर बढ़ो और साथ मिलकर फल दो, ताकि तुम में से कोई भी बाँझ न रहे, बल्कि सभी दिव्य खेती के फलों से भर जाएँ और तुम पर आध्यात्मिक गुच्छों—अर्थात् सद्गुणों—की बहुतायत के कारण प्रसन्न करने वाले बनो।

10. ऐसी दृष्टान्तों के साथ मैं कुछ लोगों को आनन्दित करना चाहूँगा और दूसरों को होश में लाना चाहूँगा। आप सभी के लिए, मैं अपनी विनम्र बातों से पृथ्वी से स्वर्ग तक एक सीढ़ी खड़ी करना चाहूँगा, ताकि आप उच्चतम चिंतन तक चढ़ सकें, और हृदय की गहराइयों में उतरकर मानव जीवन की अस्थिरता और क्षणभंगुरता, तथा मानवीय मामलों की व्यर्थता और नाजुकता को समझ सकें। संक्षेप में, मैं आपको उस दुनिया में ले जाना चाहूँगा और आपको उसकी अनुपम और अनगिनत आशीर्वाद दिखाना चाहूँगा। मैं आपको जीवित परमेश्वर, सभी चीजों के सृष्टिकर्ता और प्रभु के साक्षात सामने प्रस्तुत करना चाहूँगा, – और आपको यह समझने में मदद करना चाहूँगा कि वह लोक कैसा है – वहाँ शाश्वत विश्राम कैसा है, अकथनीय आनंद कैसा है, अनंत आनंद, स्वर्गदूतों और सभी संतों के साथ सर्व-धन्य सहवास—ताकि, इससे मोहित और प्रबुद्ध होकर, आप व्यर्थ की सभी चीजों से मुंह मोड़ लें, केवल आपके लिए आरक्षित उस शाश्वत भलाई को ही सत्य मानें, जबकि यहां जो कुछ भी प्राप्त होता है और अगले ही क्षण नष्ट हो जाता है, उसे कुछ भी न मानें।

186. ध्यान में रखते हुए कि हमने संसार क्यों छोड़ा और मठ में प्रवेश क्यों किया, आइए हम अनुभव द्वारा इंगित ठोकरों से बचते हुए, इसे प्राप्त करने के लिए पूरी लगन से प्रयास करें।

186. इस बात को ध्यान में रखते हुए कि हमने संसार क्यों छोड़ा और इस मठ में प्रवेश किया, आइए हम अनुभव द्वारा बताई गई ठोकरों से बचते हुए, उस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए पूरी लगन से प्रयास करें। [31, 15] अब मैं धन्य आर्सेनियस के वचन घोषित करता हूँ: 'आर्सेनियस, तुम यहाँ क्यों आए?' और मैं आपको आमंत्रित करता हूँ कि आप मुझसे साथ मिलकर खुद से पूछें, कि हमने संसार क्यों छोड़ा और यहाँ क्यों आए? – मैं सभी का उत्तर दूँगा: निश्चय ही ईश्वर को प्राप्त करने के लिए, ताकि ईश्वर के पुत्र बनकर, हम स्वर्ग के राज्य के वारिस बनें, और ताकि हम *'मांस और रक्त, जो ईश्वर के राज्य के वारिस नहीं बन सकते'* बने रहने से बच सकें / (1 कुरिन्थियों 15:50)। प्रभु ने हमें पवित्र बुलावे के द्वारा इसके लिए बुलाया है। अतःमसीह का सलीब उठाओ, और कपट रहित होकर उनके पदचिन्हों पर चलो, स्वयं को उनके और संसार के बीच न बाँटकर, बल्कि स्वयं को पूर्णतःऔर सर्वथा केवल उन्हीं के प्रति समर्पित और पवित्र करो। सद्-युद्ध में परिश्रम करो; परिश्रम करो और अपना मार्ग पूरा करो, आने वाली हर कठिनाई और दुख को साहसपूर्वक सहते हुए, प्रतिज्ञा की गई आशीषों के उत्तराधिकार की आशा से सांत्वना प्राप्त करते हुए। बुरी आत्माओं की एक भीड़ हम पर भीतर और बाहर दोनों ओर से हमला करती है। प्रभु कहते हैं, *'क्योंकि भीतर से,* अर्थात् *हृदय से, दुष्ट विचार, व्यभिचार, वेश्यावृत्ति, हत्या, चोरी* आदि *निकलते हैं'* (मरकुस 7:21)। इन आत्माओं की प्रचंड हवा के विरुद्ध, आइए हम अपनी आत्माओं की पालें फहराएँ, ताकि हम सावधानी से अपनी राह चल सकें, कहीं हम तुरंत उथले पानी में फँसकर या चट्टान से टकराकर मुसीबत में न पड़ जाएँ - जो हैं: अज्ञानता, और विशेष रूप से अपने विचारों को व्यक्त न कर पाना और अपने सच्चे स्वरूप को छिपाना। हमें अनुभव द्वारा बताई गई खतरनाक जगहों से अपनी पूरी ताकत से बचना चाहिए, कहीं हम उनका सामना करके नष्ट न हो जाएँ। किसी को दाईं या बाईं ओर मुड़ना नहीं चाहिए, बल्कि राजसी मध्य मार्ग का पालन करना चाहिए। अत; हम अच्छे कार्य करने में सुस्त न हों, जैसे कि लकवाग्रस्त हों, और न ही क्षणिक आवेग में अति उत्तेजित हों, मध्य मार्ग से इतनी दूर भटककर जैसे कि दाईं ओर से भी आगे निकल जाएँ। क्या होता है जब हम अहंकार से भरकर, दूसरों से बेहतर दिखने के लिए लालायित रहते हैं, और इस प्रकार उस भविष्यसूचक विलाप को विरासत में पाते हैं: 'हाय! विनाश!' – *'क्योंकि वे कहते हैं, "हम बुद्धिमान हैं," और "हम में समझ है"'* (यशायाह 5:21)।

187. आइए हम सभी सामंजस्य से चलें, प्रत्येक अपने-अपने सद्गुण में उत्कृष्ट हो, फिर भी अपने स्वार्थ की खोज न करें, और किसी भी परिश्रम से न डरें, इस निश्चितता के साथ कि इसके लिए हमें निस्संदेह स्वर्ग का राज्य प्राप्त होगा।

187. आइए हम सभी सामंजस्य से चलें, प्रत्येक अपने-अपने सद्गुण में उत्कृष्ट हो, फिर भी अपने स्वार्थ की खोज न करें, और किसी भी परिश्रम से न हटें, इस निश्चय के साथ कि इसके लिए हमें निस्संदेह स्वर्ग का राज्य प्राप्त होगा [31, 15]. आओ, हम साथ-साथ चलें; आइए हम इस प्रकार चलें: कुछ आज्ञाकारी समर्पण द्वारा, कुछ अटूट धैर्य द्वारा, कुछ मसीह-सदृश विनम्रता द्वारा, कुछ अपने विचारों की रक्षा करके, कुछ पीड़ादायक पश्चाताप द्वारा, कुछ शुद्ध करने वाले आँसुओं द्वारा, कुछ ईर्ष्या से रहित भ्रातृ प्रेम द्वारा ( ), कुछ परमेश्वर की अनुग्रह की देन द्वारा, शिक्षाप्रद वचनों या उत्थानकारी भजन-गायन द्वारा, या यह दिखाकर कि कार्य कैसे किए जाने चाहिए। हर कोई अपनी क्षमता के अनुसार करे: जो सीख सकते हैं, वे सीखें; जो श्लोकों का पाठ कर सकते हैं, वे उनका पाठ करें; जो प्रार्थना कर सकते हैं, वे प्रार्थना करें; जो झुक सकते हैं, वे झुकें; लेकिन सब कुछ श्रद्धा और धैर्य के साथ किया जाए। कोई भी अपने स्वार्थ की तलाश न करे या केवल अपनी इच्छाओं का अनुसरण न करे; क्योंकि इस तरह वह स्वयं को सर्वोत्तम आज्ञाकारिता से अलग कर लेगा। हम में से कोई भी यह न कहे: 'मैं नहीं कर सकता', 'यह मुझे पसंद नहीं है', 'मैं ठीक नहीं हूँ', भले ही कोई वास्तव में ऐसा कह सकता हो। मैं आपको अदृश्य ईश्वर और उनके चुने हुए स्वर्गदूतों के सामने अपना पक्का वचन देता हूँ, कि प्रयास करने से—प्रभु के वचनों के अनुसार कि *'ईश्वर का राज्य बलपूर्वक लिया जाता है'*— – हर बात में स्वयं को परिश्रम देकर और अपने ऊपर कठिनाई लादकर, ठीक वैसे ही जैसे आप अपने मार्ग की संकीर्णता और दुख के कारण अपने ऊपर कठिनाई लादते हैं, आप मृत्यु से जीवन में, क्षय से अक्षय में, अंधकार से प्रकाश में, दासत्व से परमेश्वर के पुत्रों के रूप में गोद लिए जाने तक, आँसुओं की घाटी से स्वर्गीय राज्य में, जो अत्यंत तेजस्वी और आनंद से परिपूर्ण है, प्रवेश करेंगे।

188. जैसे शत्रु ने हमारे पूर्वज को धोखा दिया, वैसे ही वह हमें भी धोखा देता है, बुराई को झूठमूठ अच्छा बताकर। हमारे पूर्वज धोखा खा गए जब उन्होंने उसकी बात सुनी; हम भी धोखा खाएँगे यदि हम उसकी बात सुनेंगे।

188. जैसे शत्रु ने हमारे पूर्वज को धोखा दिया, वैसे ही वह हमें भी धोखा देता है, बुराई को झूठमूठ अच्छा बताकर। हमारे पूर्वज धोखा खा गए क्योंकि उन्होंने उसकी बात सुनी; यदि हम भी उसकी बात सुनेंगे तो हम भी धोखा खा जाएँगे। अत; हम उसकी बात न सुनें, बल्कि उसकी हर बात के लिए अपने कान बंद कर लें। [31, 16] चाहे हम स्वर्ग में अपने पहले निवास और उससे हमारे निष्कासन को याद करें, या आने वाले युग में सभी चीजों की पुनःस्थापना को: दोनों ही हमारे लिए समझने के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण मामले हैं। हमारे पूर्वज आदम को कैसे निष्कासित किया गया था, यह आपके लिए अज्ञात नहीं है। लेकिन इसका कारण क्या था? ईश्वर के प्रति गर्व और अनाड़ी अवज्ञा, जिसने उसे अस्तित्व और जीवन प्रदान किया था। वह उस आज्ञा के प्रति वफादार नहीं रहा जो उसे दी गई थी, क्योंकि वह अपनी आँखों द्वारा, जो इंद्रिय सुख की लालसा करती थीं, हृदय में भटक गया और केवल यह सोचने लगा कि वह फल खाने में स्वादिष्ट और देखने में सुंदर था; अपनी पत्नी के उकसावे पर, और साँप के प्रलोभन से तो और भी अधिक, उसने निषिद्ध फल का स्वाद चखा और इस प्रकार प्रकाश से अंधकार में गिर गया। इस प्रकार, जो आज्ञा-उल्लंघन मीठा प्रतीत हुआ था, उसका कड़वा स्वाद उसे स्वर्ग से बाहर निकाल ले गया और उसे परिश्रम और दुख से भरे जीवन में धकेल दिया। लेकिन आइए हम इस चेतावनी पर ध्यान देकर उस पीड़ा से बचें, जो उसने झेली, कहीं हम भी उन्हीं जालों में न फँस जाएँ। – आइए हम खुद को उस आकर्षण और सुंदरता से बहने न दें जो हमें कामुक सुख की ओर खींचती है, चाहे वह आंतरिक मानसिक कल्पनाओं के माध्यम से हो या शरीर और इंद्रियों पर बाहरी, आकस्मिक प्रभावों से। क्योंकि यद्यपि जो हम देखते हैं वह कभी-कभी सुंदर और अच्छा लग सकता है, वास्तव में ऐसा नहीं है; और यदि हम इसका सेवन करते हैं, तो यह हम में वही लाता है जो इसने आदम में लाया था—मृत्यु, क्षय और दंड। उसने उस सर्प पर विश्वास किया जिसने उससे फुसफुसाकर कहा: *'जिस दिन तुम भलाई और बुराई के ज्ञान के वृक्ष का फल खाओगे, उसी दिन तुम्हारी आँखें खुल जाएँगी और तुम परमेश्वर के समान हो जाओगे'* (उत्पत्ति 3:5)। इसी प्रकार अजगर हमसे भी फुसफुसाता है – कि यदि हम किसी विशेष इच्छा को पूरा करें, तो हमें असीम आनंद और उन सभी बंधनों से पूर्ण स्वतंत्रता प्राप्त होगी जो हमें दबाते हैं। लेकिन जिसने उसकी बात मानी, वह न केवल अपनी अपेक्षाओं में धोखा खा गया, बल्कि उसने जो कुछ भी था वह भी पूरी तरह से खो दिया, क्योंकि वह परमेश्वर से एक अत्यंत दुखद तरीके से दूर हो गया। और हम? क्या हमें सचमुच उसकी सुननी चाहिए? – या *क्या हम 'उसकी युक्तियों को नहीं समझते'* (2 कुरिन्थियों 2:11) और उसके धोखे भरे प्रलोभनों को? क्योंकि वह हमें चाहे जितना भी लुभाए, चाहे जितना भी पुकारे, चाहे जितना भी हमारी आत्माओं को भड़काए, उसे हमसे बहुत दूर फेंक दिया जाए। क्योंकि वह हमसे हमारी दिव्य और परम धन्य कुँवारीपन छीनना चाहता है, हमें प्रभु की आज्ञाओं के स्वर्ग से बाहर निकालना चाहता है, और हमें परमेश्वर द्वारा प्रदान की गई स्वर्गीय आत्मा से वंचित करना चाहता है, ताकि वह हमें पृथ्वी की गहराइयों में फेंक सके। इसलिए आइए हम अपने विचारों के द्वार बंद कर दें, उनके दरवाज़े बंद कर दें, और उनसे बातचीत करने से इनकार कर दें। लेकिन *'जब पापी शैतान* हमारे *विरुद्ध उठता है*', 'तो *हम शांत रहेंगे और स्वयं को नम्र बनाएँगे*' (भजन संहिता 38:2)। 3) परमेश्वर के सामने; और यह महसूस किए बिना भी कि शत्रु पास आ गया है, आइए हम स्वयं को क्रूस के अजेय हथियार से लैस करें, और परमेश्वर-प्रेरित धर्मग्रंथों के वचनों से अपने उद्धार के कार्य में स्वयं को मजबूत करें। आइए हम दिन-प्रतिदिन प्रगति करने का प्रयास करें, भलाई करने और तपस्या करने से कभी न थकें, जो हमने हासिल किया है उससे संतुष्ट न रहें, इसे किसी भी तरह से महत्वपूर्ण न समझें, और यह न सोचें कि हम किसी विशेष व्यक्ति से किसी भी बात में बेहतर हैं; बल्कि आइए हम परमेश्वर की सभी आज्ञाओं को हर तरह से पूरी तरह से पूरा करने का प्रयास करें। यह हमारा उत्कृष्ट प्रयास है। यह हमारा धन्य आरोहण है, हमारा प्रशंसनीय अधिग्रहण, हमारा अक्षय खजाना, शाश्वत आशीर्वादों की हमारी भविष्य की विरासत का प्रतिज्ञापत्र।

189. यदि आत्म-संतुष्टि की इच्छाओं में लिप्त होने के दुष्ट परिणामों के अनुभव से हमें इससे परहेज़ करना नहीं सिखाता है

189. 1) यदि आत्म-संतुष्टि की इच्छाओं में लिप्त होने के दुष्ट परिणामों का अनुभव हमें इससे परहेज़ करना नहीं सिखाता है। – 2) तो फिर मृत्यु की स्मृति, जो सदैव समीप है, हमें सिखाए: क्योंकि इसने शहीदों को प्रेरित किया और पवित्र पिताओं को आत्म-संयम के कठोर तपस्या में मजबूत किया। [31, 17]

11. आनन्दित और हर्षित रहो; दौड़ अच्छी तरह से दौड़ो, और संसार के छलकपट भरे प्रलोभनों से ऊपर उठो, अपने विचार स्वर्ग पर और उस अनुपम महिमा पर स्थिर रखो जो वहाँ तुम्हारा इंतजार कर रही है। आप अच्छी

तरह जानते हैं कि तपस्या में हमारा सारा श्रम स्वर्ग के राज्य के सामने कुछ भी नहीं है, और यह कि शाश्वत विश्राम के सामने इस जीवन के दुख और कठिनाइयाँ एक अप्रिय सपने के समान हैं। हमने अच्छी तरह से निर्णय लिया है, और अच्छा किया है, कि हम उस की शक्ति से इस संसार से चले गए हैं जिसने हमें अपने स्वर्गीय राज्य में बुलाया है। परन्तु हमें भली रीति से भी जीना चाहिए, और भले कामों में धीरे-धीरे बढ़ते जाना चाहिए, और अपने अनुभवों से यह सीखना चाहिए कि हम व्यर्थ की बातों पर न आएं। 'हम कितनी बार सुख-भोग में डूबे हैं?' – और उसका कुछ भी बचा है? 'हमने कितनी बार अपने पेट भरे हैं?' – फिर भी हमने अपनी शारीरिक इच्छाओं को संतुष्ट किया, और उस तृप्ति से शरीर की भारीपन के सिवा कुछ भी नहीं बची,। यदि हम शर्मनाक विचारों में डूबे, तो बाद में हमने खुद को कोसा, और आनंद के बजाय दुख काटे; यदि हम नींद में डूबे, तो बाद में हमने खुद को डांटा मानो हम बेवकूफ हों; यदि हमने बदसुलूकी की, तो बाद में हमने खुद को डांटा; यदि हम हँसी-मज़ाक में डूबे, तो बाद में हमने उस पर पछतावा किया; और सामान्य तौर पर, इंद्रिय सुखों से किसी व्यक्ति को कोई अच्छा नहीं मिलता। यदि हम हमेशा आराम और आनंद का अनुभव करना चाहते हैं, तो हम आज्ञाओं का पालन करें: यह हमारे लिए एक अक्षय आनंद होगा, जो हमारे अंतरात्मा की गवाही के साथ धार्मिकता का भरपूर फल देगा।

12. हे भाइयो, सुनो—हम नींद और आलस्य के आगे न झुकें, और अपना समय व्यर्थ में न गँवाएँ। हमारे प्रस्थान का समय निकट आ रहा है; या क्या वह पहले ही नहीं आ गया है?—और परमेश्वर के द्वारा हमारे लिए एक स्वर्गदूत भेजा जाता है, जो तुरंत हमारी आत्मा को लेकर चला जाएगा।—लेकिन कहाँ?—क्या हमें यह सुनकर भय नहीं लगता? क्या हम इस पर विचार करके कांप नहीं उठते? इसे ध्यान में रखते हुए, पवित्र शहीदों ने आनंदपूर्वक अपने शरीरों को यातनाओं, अंग-विच्छेद और हड्डियों के कुचल जाने के लिए सौंप दिया, वास्तव में *'दुनिया के लिए, स्वर्गदूतों और मनुष्यों के लिए एक तमाशा'* (1 कुरिन्थियों 4:9); परन्तु इसके लिए उन्हें बाद में मुकुट पहनाया गया। जहाँ तक हमारे पूजनीय पिताओं, पवित्र संतों का प्रश्न है, उन्होंने इस प्रकार प्रयास किया मानो शरीर उनका शत्रु हो—उन्हें भूख में आनंद आता था; ठंड सहते हुए, उन्हें गर्मी का अनुभव होता था; अभावों को सहते हुए, वे ऐसा मानते थे मानो उनके पास सब कुछ प्रचुर मात्रा में हो; वे अपने माता-पिता के प्रेम से बंधे नहीं थे; उनके बच्चों का स्नेह उन्हें उनके उद्देश्य से विचलित नहीं करता था; उनके भाइयों की सद्भावना उन्हें भटका नहीं पाती थी; न तो उन्होंने सोने-चांदी की लालसा की, न ही सुंदर वस्त्रों की, न ही ऐसे भोजन की जो शरीर को उत्तेजित करे; फिर भी उन्होंने केवल जीवित रहने के लिए खाया और कपड़े पहने, और हर तरह की तकलीफों को इस तरह सहन किया जैसे वे निराकार हों। आइए, हम भी उनका अनुकरण करने का प्रयास करें; आइए हम हर प्रकार की कठिनाइयों को सहें, भूख, ठंड, अपमान, उपहास और हर दूसरी पीड़ा को सहन करें, जब तक कि हम स्वर्ग के राज्य को न खो दें।

१९०. यह हमारे लिए कठिन है: शत्रु हमें धोखा देने के लिए हर जगह योजनाएँ बनाता है; लेकिन यह जानते हुए, आइए हम सतर्क रहें और उसका विरोध करें

190. 1) हमारे लिए यह कठिन है: शत्रु हर ओर हमें भटकाने की साजिशें रच रहा है; परन्तु यह जानकर, हम सतर्क रहें और विरोध करें। – 2) इस तथ्य से हौसला लेकर कि केवल थोड़ा समय ही शेष है – और हम विश्राम में प्रवेश करेंगे। – 3) और परमेश्वर के वचन तथा पितृसभों के लेखों से बुद्धि ग्रहण करें। [31, 19]

1. हमारा संघर्ष महान है, हमारे शत्रु पर विजय पाना कठिन है, हमारे प्रति उसकी दुष्टता प्रबल है; वह न तो रात में सोता है और न ही दिन में निद्रालु रहता है, और न ही वह किसी सांसारिक चिंता से विचलित होता है, बल्कि वह परमेश्वर द्वारा इकट्ठी की गई हमारी भेड़ों की झुंड के चारों ओर लगातार मंडराता रहता है, किसी लापरवाह और अस्थिर आत्मा को झपटकर निगलने की तलाश में। आप उसकी युक्तियों से परिचित हैं; अतःसावधान रहें। – वह पाप का उकसाने वाला है: वह मिठास के चारे के भेष में एक विचार को मछली पकड़ने की रस्सी की तरह फेंकता है। हालाँकि, मूर्ख न बनें – प्रेरित के शब्दों में कहें तो, *'उसकी युक्तियों को न समझकर'* (2 कुरिन्थियों 2:11); बाहरी दिखावे से धोखा न खाएँ, बल्कि उसकी चालाकी का पर्दाफाश करके, उसे भगा दें; और वह, असफल होकर, कटुता से अपने पास लौट जाएगा। ऐसे ही हैं उसके प्रलोभनकारी सुझाव: एक में वह ईर्ष्या भरता है, दूसरे में सुस्ती; एक में कहीं और जाने की इच्छा, दूसरे में गर्व, या एक ही व्यक्ति में दोनों, और इस प्रकार उन्हें हर तरह से मृत्यु के जाल में फँसाता है। अतःहम चौकस रहें, और—हमारे प्राण के दाहिने हाथ पर प्रभु, उस एक प्रिय और इच्छित को रखकर—उसके जाल से बचें। क्रोध—जो केवल शत्रु, साँप के विरुद्ध हो—आप पर हावी न हो; और कामवासना की आग आपके हृदयों को लज्जास्पद और अनुचित कार्यों की ओर प्रज्वलित करने के लिए स्वतंत्र न हो; बल्कि नम्रता से सुसज्जित और सुंदर वैराग्य के वस्त्र पहनकर, एक दूसरे से प्रेम करें।

२. थोड़ा और सहन करो, और तुम धन्य कहलाओगे; थोड़ा और प्रयास करो—बस थोड़ा और—और तुम जल्द ही उस स्वर्गीय नगर में पहुँच जाओगे, जो तेजस्वी और अतिसुंदर है, जहाँ कुँवारी आत्माओं का अकथनीय कक्ष है, जहाँ अब्राहम की गोद है, दिव्य स्वर्ग, परमेश्वर का राज्य है। इस नगर को अपने विचारों में बनाए रखें; आइए हम एक-दूसरे को इसके मार्ग पर शीघ्रता से आगे बढ़ने के लिए प्रेरित करें, और परिश्रम तथा थकान की परवाह न करें।

3. सुसमाचारों, प्रेरितों, भविष्यद्वक्ताओं और धर्मपितामहों की आत्मा-रक्षक रचनाओं के ईश्वर-प्रेरित वचनों पर ध्यान दो, और अपनी आत्माओं को उनसे पोषित और तृप्त करो। जहाँ तक हमारे लिए दिए गए कार्यों और परिश्रमों— —की बात है, आइए हम उन्हें धैर्य, भाईचारे के प्रेम, पारस्परिक सहायता और करुणा के साथ प्रसन्नचित्त होकर पूरा करें, ताकि हमारे परमेश्वर का नाम हर बात में और सभी लोगों द्वारा महिमामय हो; क्योंकि हम उसी की सेवा और आराधना करते हैं।

191. धैर्य के द्वारा हम शत्रु पर विजय प्राप्त करेंगे और उन अनुपम आशीर्वादों के योग्य ठहरेंगे, जिनके लिए शहीदों ने स्वयं को यातनाओं के अधीन किया, और संतों ने आत्म-संयम के प्रत्येक कठोर अनुशासन को सहन किया।

191. 1) धैर्य के द्वारा हम शत्रु पर विजय प्राप्त करेंगे और उन अनुपम आशीर्वादों के पात्र बनेंगे, जिनके लिए शहीदों ने स्वयं को यातनाओं का शिकार बनाया, और संतों ने आत्म-संयम के प्रत्येक कठोर अनुशासन को सहन किया। – 2) आइए हम उनका अनुकरण करें, सभी बुराइयों से मुंह मोड़कर और सभी अच्छाइयों के लिए उत्साही होकर, और इस प्रकार पूर्णता की ओर बढ़ें। [31, 24]

४. अनवरत संघर्ष में, आप आज्ञाकारिता के अखाड़े में खड़े हैं, कष्टों में प्रहारों और दुख की पीड़ा में कोड़ों को सहते हुए, अपनी इच्छा के दमन में रक्त बहाते हुए। – परन्तु हियाव रखो, क्योंकि इसके द्वारा तुम अपने लिए एक धर्मी विजय के मुकुट, सम्मान और पुरस्कार तैयार कर रहे हो। *'शैतान का विरोध करो, और वह तुम से दूर भागेगा; परमेश्वर के समीप जाओ, और वह तुम्हारे समीप आएगा'* (याकूब 4:7–8); जैसा कि ब्रह्मांड के महान शिक्षक, पौलुस, आज्ञा देते हैं, 'पवित्र आत्मा *का सम्पूर्ण हथियार पहन लो, ताकि तुम शैतान की युक्तियों के विरुद्ध* दृढ़ता से *खड़े हो सको'* (इफिसियों 6:11)। आपके धैर्य के द्वारा वह परास्त हो जाता है, वशीभूत हो जाता है, और शक्तिहीन होकर आपके पैरों तले कुचल दिया जाता है: ताकि आप में यह वादा पूरा हो: *'साँप और बिच्छू पर, और शत्रु की सारी शक्ति पर पैर रखने का'*। हे मेरे बच्चों! यदि हम थोड़ी और कोशिश करें, तो हमें कितनी आशीषें प्राप्त होंगी, कितना गौरव, कितनी खुशी? – शब्द इसे व्यक्त नहीं कर सकते, न ही मन इसे समझ सकता है। इसी कारण, शहीदों ने भेड़ों की तरह स्वयं को बलिदान के लिए सौंप दिया; इसी कारण, संतों ने सबसे कठोर तपस्या अपनाई और उनका पालन किया।

५. हम भी उनका अनुकरण करें, एक दूसरे को इस में प्रोत्साहित करते हुए और एक दूसरे की सहायता करते हुए। मैं विनम्रतापूर्वक आपसे प्रार्थना करता हूँ कि हमारे बीच उस अवज्ञा के लिए कोई स्थान न हो जिसने आदम को स्वर्ग से बाहर निकाल दिया, न ही सर्वशक्तिमान परमेश्वर के सामने उस घमंड के लिए जिसके कारण प्रभात का तारा स्वर्ग से गिर गया, न ही उस लालच के लिए जिसने एसाव को अपना जन्मसिद्ध अधिकार बेचने के लिए मजबूर कर दिया, न ही वासना के लिए जो, धूर्त दलीला के माध्यम से, अजेय शिमशोन को विदेशियों के सामने उपहास का पात्र बना गई, न ही वह ईर्ष्या जिसने काइनान को भ्रातृहत्यारू बना दिया। इसलिए आओ हम और भी अधिक सद्गुणों को अपनाएँ, एक से नम्रता; दूसरे से उत्साह; एक से धैर्य; दूसरे से अजेयता; एक और से भ्रातृत्व प्रेम; दूसरे से विनम्रता, आज्ञाकारिता और ईश्वर के प्रति प्रेम, ताकि तुम प्रकाश और दिन के पुत्र बनो, और उन लोगों के सह-वारिस बनो जिनके जीवन का तुमने अनुकरण किया है। आरोहण करो, मेरे भाइयों, सद्गुणों के ऊँचे पर्वत पर चढ़ो; अपने हृदयों में पवित्र आत्मा के आरोहण को स्थापित करो, स्वर्गीय सीढ़ियाँ बनो; लेबनान के देवदारों की तरह ऊँचाइयों की खोज में उठो, स्वर्गीय बातों पर मनन करो और अपने मन को वहीं लगाओ, ताकि इस तरह की मानसिक स्थिति में पाकर, इस सांसारिक जीवन का अंत तुम्हें सीधे शाश्वत जीवन के धन्य स्वर्ग में ले जाए।

192. हम पुकारें, और प्रभु हमें पाप की दासता और हमारे शत्रुओं से छुड़ाएगा

192. 1) हम पुकारें, और प्रभु हमें पाप की दासता और हमारे शत्रुओं से छुड़ाएगा। – 2) लेकिन छुड़ाए जाने के बाद, दृढ़ बने रहो; – अन्यथा तुम फिर से दासता में पड़ जाओगे: इससे बचने के लिए, ईश्वर का भय और प्रभु के प्रति प्रेम रखो, और ईश्वर के अद्भुत कार्यों, उसकी सृष्टि, उसकी व्यवस्था और उद्धार पर मनन करके उन्हें बनाए रखो। – 3) यदि आप यह बात अच्छी तरह से याद रखें कि प्रभु ने हमारे लिए दुख उठाया, तो कोई भी दुख या कठिनाई आपको हिला नहीं पाएगी और न ही आपको परमेश्वर के मार्ग से भटका पाएगी। [31, 25]

6. बार-बार, *'आओ हम परमेश्वर को खोजें, और हमारी आत्माएं जीवित रहेंगी'* (यशायाह 68:33)। आओ हम उससे विनम्रता से प्रार्थना करें, और वह हम पर उसी प्रकार दृष्टि डालेगा जैसे उसने प्राचीन इस्राएल पर डाली थी, और हमारी दुखी आत्माओं की पुकार और कराह को सुनेगा। और यद्यपि वह मूसा को नहीं भेजेगा, फिर भी वह स्वयं निश्चय ही हमें हमारे मन के फिरौन के हाथों से और उसकी वासनाओं के कड़वे श्रम से छुड़ाएगा। जब तक हम पापी मिस्र के अधीन रहेंगे, तब तक उसकी सेवा करने वाले विचार अनिवार्य रूप से हमें भगाते और सताते रहेंगे। परन्तु जब दयालु परमेश्वर हमारे धीरज को, हमारे भीतर अपनी उपस्थिति के चिन्हों और आश्चर्यों के साथ देखेंगे, तो वे हमें उन दस विपत्तियों से छुड़ा देंगे जो हमें पीड़ित करती हैं, और हमें निर्लिप्तता की भूमि में ले आएंगे; और तब हम, सर्व-संतोषजनक आनंद में, अपनी मुक्ति पर उन्हें विजय का गीत गाएंगे।

७. पर यह भी जानो कि यदि कोई व्यक्ति अपने धर्म-परिवर्तन के समय और बाद में अपने भीतर विद्यमान प्रारंभिक सद्गुणों में स्थिर रहने में विफल रहता है और फिर से पाप करता है, तो वह फिर से अपने शत्रुओं के हाथ में पड़ सकता है: ईश्वर करे कि ऐसा आप में से किसी के साथ न हो। – बेहतर के लिए आंतरिक परिवर्तन और उसमें दृढ़ता की शुरुआत और स्रोत हृदय में ईश्वर का भय स्थापित करना है, जो ईश्वर के अद्भुत कार्यों और विधानों के ज्ञान और चिंतन से उत्पन्न होता है – अर्थात्, कि कैसे उन्होंने सभी चीजों को शून्य से अस्तित्व में लाया, और वह भी एक ही वचन से; कैसे उन्होंने प्रकाश को स्थापित किया; कैसे उन्होंने आकाशों को फैलाया, एक गुंबद के रूप में, कैसे *उन्होंने 'समुद्रों के जल को एक चमड़े में इकट्ठा किया'*, जैसा कि लिखा है (भजन संहिता 32:7), कैसे उन्होंने सभी जीवित प्राणियों के सांस लेने के लिए हवा फैलाई, कैसे उन्होंने आकाश के गुंबद में सूर्य और चंद्रमा को स्थापित किया—अनेक विविध सितारों के साथ दो चमकती आँखों की तरह , कैसे उन्होंने पृथ्वी से हर फलदार पेड़ को उत्पन्न किया, हर प्रकार की घास और फूल, कैसे उन्होंने सभी जानवरों को धरती से निकलने का आदेश दिया, और सभी मछलियों और पक्षियों को समुद्र से, कैसे उन्होंने हमारे पूर्वज आदम को अपने हाथों से गढ़ा और उसे आनंद के स्वर्ग में बसाया, कैसे उन्होंने सूर्य को उदय और अस्त होने का विधान बनाया, – जिससे हमें दिन और रात मिलते हैं, जिसके द्वारा हमारे जीवन का क्रम मापा जाता है – विशेष रूप से उसकी महानता और उसकी बुद्धि की गहराई पर मनन करने से! हम केवल उसी से डरें और केवल उसी के सामने कांपें। लेकिन हमें इस तथ्य के लिए भी उससे प्रेम करना चाहिए कि, हमारे लिए, वह मनुष्य बना और हर तरह से हमारे जैसे हुए, पाप को छोड़कर; हमारे लिए उनके साथ विश्वासघात किया गया और उन्हें मुकदमे के लिए ले जाया गया; हमारे लिए उन्होंने कोड़ों की मार, थूक, उपहास, चाबुक की पिटाई और अंत में सूली पर चढ़ाए जाने और मृत्यु को सहा। उन्होंने एक मनुष्य के रूप में यह सब सहन किया, फिर भी उन्होंने आत्माओं के विनाशक, शैतान को परास्त कर, एक ईश्वर के रूप में पुनरुत्थान किया और अपनी प्रिय सृष्टि को बचाया।

8. इसके बाद, यह सोचकर कि परमेश्वर का अपमान किया गया, कौन हर अपमान को न केवल बिना दुख के, बल्कि आनंद के साथ भी स्वीकार नहीं करेगा? कौन, यह याद करके कि प्रभु का कैसे अपमान और बदनामी की गई, हर तरह की बदनामी को स्वेच्छा से सहन नहीं करेगा? कौन, प्रभु को गाल पर थप्पड़ खाते देखकर, आनंद के साथ वही सहन करने की इच्छा नहीं करेगा, और दाहिने गाल पर प्रहार पाकर, बायां गाल भी नहीं फेर देगा? कौन, अपने मन में ईश्वर को सूली पर चढ़ाए जाने, भाले से भेदे जाने, पित्त और सिरका चखने की कल्पना करके, किसी भी प्रकार की मृत्यु के लिए स्वयं को तैयार नहीं रखेगा? – आओ अब, मेरे बच्चों! आओ अब, मैं तुमसे विनती करता हूँ, हम स्वयं को संसार और अपनी वासनाओं के लिए सूली पर चढ़ा दें; और यदि आवश्यकता पड़े, तो हम स्वयं को प्रहारों के लिए भी समर्पित कर दें; और यदि नहीं, तो हम नम्रतापूर्वक कम से कम घावों को सहन करें—निन्दा और बदनामी से होने वाले वाक्य-भेदन, और अपनी इच्छाओं के त्याग से होने वाले रक्तपात को; और हम मसीह के समान हों, जो मानवता के प्रति अपने प्रेम के लिए दुख सहते हैं। हम सभी अपने कर्तव्यों के निस्वार्थ पूर्ति के लिए प्रेरित हों; हम प्रार्थना के लिए प्रेरित हों, जो आत्मा की आग से, आँसुओं की वर्षा से, और विनम्रता की कराहों से प्रज्वलित हो।

193. यह ध्यान में रखते हुए कि हमारा जीवन कैसे समाप्त होगा, आइए हम अपने पूर्वजों के उदाहरण का अनुसरण करते हुए, ईश्वर को प्रसन्न करने के लिए उत्सुक रहें

193. 1) यह ध्यान में रखते हुए कि हमारा जीवन कैसे समाप्त होगा, हमें अपने पूर्वजों का अनुकरण करते हुए ईश्वर को प्रसन्न करने के लिए उत्सुक रहना चाहिए। – 2) यद्यपि व्यवहार में यह किसी में भी शायद ही कभी देखा जाता है; फिर भी, सामान्य परामर्श और पारस्परिक सहयोग से, हम उनसे पीछे नहीं रहेंगे, भले ही पूरी तरह से नहीं। – 3) इसके लिए, यदि आप चाहें, तो कोई भी अतिक्रमणीय बाधाएँ नहीं हैं, क्योंकि यह हमारी अपनी इच्छा पर निर्भर करता है। [3 *1, 28]*

९. हे मेरे बच्चों, आओ हम पहचानें कि हमारा जीवन क्या है, हम इस शरीर में किसकी सेवा करते हैं, और शरीर के साथ हमारे मिलन का रहस्य हमें किस ओर ले जाता है। इसे ध्यान में रखते हुए, आओ हम परमेश्वर की आज्ञाओं को पूरा करने में लगनशील रहें, और अपनी मुक्ति के लिए परिश्रम करने में अथक रहें। आओ, हम इस बेपरवाह युग में परमेश्वर को भाने वाले जीवन के लिए उत्सुकता दिखाएँ, जैसे प्राचीन काल में हमारे पूर्वज, जो यहाँ खेत के कमल की तरह और परमेश्वर द्वारा लगाई गई स्वर्गिक बगीचे की तरह फलते-फूलते थे, आत्मा के जल से सिंचित होकर, हर सद्गुण का फल देते थे और प्रभु के मित्र कहलाने के योग्य समझे गए। उन्होंने परमेश्वर को प्रसन्न किया, और जीवन में पवित्र रहते हुए तथा उच्च चिंतन से पोषित होकर, उन्होंने स्वर्ग प्राप्त किया; और, पृथ्वी पर अपने प्रवास का बुद्धिमानी से उपयोग करते हुए, उन्होंने स्वर्गदूतों के साथ एक ही मंडली बनाई और परमेश्वर के साथ निवास किया। २) अब कौन इस मार्ग पर चलता है? जैसा कि लिखा है, *'प्रभु के पर्वत पर कौन चढ़ेगा'*? (भजन संहिता २३:३)। कौन, *'कबूतर के पंखों को* ग्रहण *करके*', आत्मा द्वारा *उड़ता है* और पूर्णता के पर्वत पर *'विश्राम' करता है*? (भजन संहिता ५४:७)। कौन है जिसके *'दिनों में उसकी धार्मिकता प्रकाशित होती है?'* (भजन संहिता 71:7)। – परन्तु हम, सामान्य परामर्श और पारस्परिक प्रोत्साहन द्वारा, इस कार्य को हाथ में लेंगे और उनसे पीछे नहीं रहेंगे। हम स्वयं को *'एक विद्रोही और कटु पीढ़ी'* कहलाने की अनुमति नहीं देंगे (भजन संहिता 77:8), एक ऐसा लोग जिसने अपने हृदयों को काबू में नहीं रखा है; बल्कि *'धर्मी लोगों के धन्य लोगों'* (भजन संहिता 101:2) के रूप में। आइए हम अपने भीतर पुरस्कार के योग्य सद्गुण प्रदर्शित करें; आइए हम अपने पूर्वजों के पवित्र मार्गों पर चलें, उनके पदचिन्हों पर चलते हुए, उनके यात्रा के पड़ावों को मापते हुए और उनके जीवन की जाँच करते हुए, उनके कर्मों का अनुकरण करने और उनके आचरण की नकल करने का प्रयास करते हुए—यद्यपि कमजोर और अपूर्ण रूप से, फिर भी उतनी सीमा तक जितनी एक शिष्य के लिए अपने गुरु का अनुकरण करने के अभ्यास को प्रदर्शित करने के लिए पर्याप्त हो। वे ईश्वर-सदृश छवि के चित्रकार, सद्गुण के कलाकार हैं; जहाँ तक हमारी बात है, आइए हम कम से कम उनकी परछाईं ही प्रतिबिंबित करें; वे तीर्थयात्री हैं; आइए हम भी तीर्थयात्री बनें; उनका स्वदेश स्वर्ग है – काश स्वर्गीय यरूशलेम हमारा भी स्वदेश हो; उनके खजाने प्रभु की आज्ञाएँ हैं; आइए हम भी इन्हें खोजें; वे मांस और रक्त (रिश्तेदारी) के प्रेम से बँधे नहीं थे, और न ही उन्होंने इस युग के सुखों में आनंद लिया; आइए हम भी यही इच्छा करें। उन्होंने प्रयास किया और ऐसे बन गए; आइए हम भी परिश्रम करें, और हम भी ऐसे ही बन जाएँ; ताकि जैसे प्राचीन काल में उनके अद्भुत जीवन के कारण उनके कर्म दूर-दूर तक प्रचारित हुए, और यह समाचार हम तक पहुँचा, जिससे हमें भी ऐसा करने के लिए प्रेरणा मिली, वैसे ही हमारा नाम भी आने वाली पीढ़ियों में सद्भावनापूर्ण अनुकरण को बढ़ावा देने के लिए प्रसिद्ध हो। और इससे अधिक धन्य या अधिक सांत्वनादायक और क्या हो सकता है?

10. और यदि आप चाहें, तो इसमें कोई बाधा नहीं है। उस समय का परमेश्वर वही है जो अब है: सुसमाचार अप्रचलित नहीं हो गया है, आज्ञाएँ नहीं बदली हैं, और समय परिवर्तित नहीं हुआ है। जिसने तब हमारी देखभाल की, और , आज भी हम सभी की देखभाल करता है। क्या रात और दिन, बोना और काटना, अब भी एक जैसे नहीं हैं? – हमारा यह ईश्वर अपरिवर्तनीय और अचल है; आरंभ से ही सदा एक समान, वह अब अपनी सृष्टि की रक्षा करता है, सभी लोगों को प्रेम की एक जैसी किरणों से प्रकाशित करता है और पापी की मृत्यु की कभी कामना नहीं करता। – फिर भी, हमारी स्वतंत्र इच्छा का निर्धारण एकरूपता या परिवर्तनशीलता से नहीं होता; अर्थात्, यह हम पर निर्भर करता है – और यह अच्छाई और बुराई दोनों के लिए लागू होता है। क्योंकि हमारे पूर्वजों का अनुकरण करने के उत्साह से प्रेरित होकर, उनके कर्मों को अपनाने और उनके जीवन-पथ से प्रकाशमान होने से हमें क्या रोकता है? हम भी, समुदाय में रहते हुए, इसी प्रकार चमक सकते हैं, यदि हम दूसरों के साथ मिलकर अपने जीवन को संतों के जीवन का प्रतिबिंब बनाएं। और यह तब होगा जब हम, सबसे बढ़कर, हर संभव तरीके से खुद को मजबूर करें कि हम प्रभु की आज्ञाओं से थोड़ी सी भी विचलता से अपने हृदय की रक्षा करें।

194. आप एक अच्छे बगीचे के समान हैं, जो सद्गुणों के विभिन्न फल देता है: अतःसावधान रहें कि आप मुरझा न जाएँ

194. 1) तुम एक अच्छे बगीचे के समान हो, जो सद्गुणों के विभिन्न फल देता है: अतःसावधान रहो, कि तुम स्वयं को मुरझाने न दो। – 2) ये पवित्र दिन (लेंट) हैं, और हर चीज़ आपके आध्यात्मिक नवीनीकरण में योगदान करती है: संयम, पूजा, पठन और आध्यात्मिक प्रतिस्पर्धा। – 3) हर चीज़ का अधिकतम लाभ उठाएँ; सबसे बढ़कर, शांति बनाए रखें। [31:29]

11. वर्षा द्वारा समय पर सिंचाई अच्छी मिट्टी के लिए सबसे फायदेमंद होती है, जो जीवित प्राणियों के पोषण के लिए आवश्यक प्रचुर फल देने में मदद करती है। जब भी हमारी साप्ताहिक शिक्षाएँ मेरे विनम्र होठों से निकलती

हैं; वे भी उन गुणों के विकास और नवीनीकरण के लिए उतने ही लाभदायक हों, जिन्हें आपकी सम्मानित आत्माएँ संजोती हैं, जितना कि बारिश पोषक फलों के विकास के लिए होती है। वास्तव में, आप मुझे विविध वनस्पतियों से भरे एक स्वर्ग के समान प्रतीत होते हैं: एक विनम्रता और आज्ञाकारिता से मुझे प्रसन्न करता है, दूसरा अपने श्रम में लगन से मुझे पोषित करता है; एक में धार्मिक प्रवृत्ति झलकती है, तो दूसरा मुझे उत्कृष्ट गुणों से आनंदित करता है, जैसे कोई देवदार का पेड़ अपनी शाखाओं को पहाड़ों की ऊँचाइयों तक उठाता है; संक्षेप में, आप में से प्रत्येक किसी न किसी गुण के लिए विशिष्ट है, जो उसके अनुरूप कर्म करता है। तब, हे मेरे बच्चों, सावधान रहो: कोई भी फलहीन न रहे; अपने आपको वासना की आग में न जलाओ, और न ही गर्व से निष्फल बनो, जो हर फल को खा जाता है। आइए हम एक-दूसरे को प्रोत्साहित करें और एक-दूसरे के दिलों को गर्म करें; एक ही मन से, आइए हम अपने लिए पृथ्वी से स्वर्ग तक पहुँचने वाला एक स्तंभ बनाएं, या ऐसा सद्गुण प्राप्त करें जो स्वर्ग तक पहुँचता हो।

12. अब पवित्र दिन हैं – और तुम पवित्र हो रहे हो; उपवास और संयम – और तुम आत्मा और शरीर दोनों से शुद्ध हो रहे हो; सामंजस्यपूर्ण भजन-गायन और पठन – और तुम आत्मा द्वारा बजाई जाने वाली एक मधुर लीर बन जाते हो; तुम सेवाओं के लिए शीघ्रता से इकट्ठा होते हो – और एक स्वर्गदूतों का गायन-मंडली बनाते हो; आप एक-दूसरे को प्रेम से गले लगाते हैं, ईर्ष्या को दूर करते हैं, और एक ही इच्छा से प्रेरित होते हैं: कि आप सभी एक साथ स्वर्ग में अंकित हों; एक-दूसरे से न झगड़कर और अपने बीच सच्ची शांति से जीकर, आप अदेह प्राणियों की मानसिक एकता का अनुकरण करते हैं; आपकी एक ही चिंता है, और इसमें आप दूसरों के साथ मिलकर आज्ञा को यथासंभव पूरा करने का प्रयास करते हैं - और इस प्रकार स्वाभाविक रूप से आज्ञाकारिता के पुत्र हैं; आप भौतिक वस्तुओं के संचय से अमीर नहीं होते, सब कुछ होते हुए भी कुछ नहीं रखते, क्योंकि आप दुनिया के स्वामी और स्वर्ग के राज्य के वारिस हैं।

13. सबसे बढ़कर, आप अपने कर्मों में इस भविष्यद्वाणी की बात की सच्चाई को प्रदर्शित करते हैं: *'क्या अच्छा है, या क्या मनोहर है, परन्तु यह कि भाई एक साथ रहें?'* इसीलिए मैं तुम्हें *'एक* सुगंधित *भेंट'* कहता हूँ, *'जो हारून की दाढ़ी पर और हर्मोन की ओस पर, जो सिय्योन के पहाड़ों पर उतरती है'* (भजन संहिता 132:1, 2, 3)। देखो कि कौन से नाम तुम्हें सुशोभित करते हैं और कौन सी प्रशंसाएँ तुम्हें मुकुट पहनाती हैं। तब, सावधान रहो, और दिखाओ कि तुम ऐसे नाम नहीं धारण करते जो तुम्हारे नहीं हैं, और यह कि तुम ऐसी प्रशंसा के अनयोग्य रीति से नहीं जीते। और अब तुम यह मुझसे शब्दों में ग्रहण करते हो, परन्तु तब—आने वाले युग में—तुम धर्मी न्यायी और सर्व-उदार प्रतिफलदाता से कर्म में एक धर्मी प्रतिफल प्राप्त करोगे।

195. आपको अपने आध्यात्मिक पिताओं के नामों से जाना जाना चाहिए, और स्थापित नियमों के अनुसार एक ही मठवासी भावना में जीना चाहिए

195. 1) तुम्हें तुम्हारे आध्यात्मिक पिताओं के नामों से जाना जाना है, और स्थापित नियमों के अनुसार एक ही साधु-संन्यासी भावना में रहना है। – 2) अपने मुंडन के समय लिए गए संकल्पों को याद रखो; और बाहरी तथा आंतरिक रूप से ऐसे ही बनो: और यह एकता सामान्य लोगों से तुम्हारी विशिष्ट पहचान हो। – 3) इसके लिए, ईश्वर आपको अपनी अद्भुत वासस्थलों में विश्राम प्रदान करेंगे। [31, 30]

14. अपने माता-पिता, भाइयों, रिश्तेदारों और पूरी दुनिया को छोड़कर, आप यहाँ आए हैं और ईश्वर को प्रिय लगने वाले जीवन के द्वारा स्वयं को बदलकर मेरे आध्यात्मिक बच्चे बन गए हैं। तो फिर, आपको अब उन नामों से क्यों नहीं बुलाया जाना चाहिए, जिन्होंने आपको देह में जन्म दिया, बल्कि हमारे आध्यात्मिक पिताओं और पूर्वजों के नामों से बुलाया जाना चाहिए, जिससे यह प्रकट होता है कि आपने स्वयं को प्राकृतिक व्यवस्था से पूरी तरह अलग कर लिया है और अपनी स्वैच्छिक इच्छा से एक अलग जन्म - एक आध्यात्मिक जन्म - लिया है। इसके अलावा, यहाँ किसी की अपनी इच्छा नहीं है या कोई अपनी ही समझ से काम नहीं करता, बल्कि हम सभी एक मन से सोचते हैं, सभी एकमत होकर ईश्वर की ओर प्रयासरत हैं। और प्रेरितों के कामों में जो वर्णित है, वह अब हम में पूरा हो रहा है, *अर्थात् कि 'विश्वासियों के हृदय और आत्मा एक थे: और किसी ने यह दावा नहीं किया कि उसकी कोई संपत्ति उसकी अपनी थी, बल्कि उनके पास सब कुछ साझा था'* (प्रेरितों के काम 4:32)। क्या आप समझ रहे हैं कि आप क्या सुन रहे हैं? – तो, स्वयं की जाँच करो, *'कि तुम स्थिर और अटल हो'* (1 कुरिन्थियों 15:58)। मैं यह इस बात पर ज़ोर देने के लिए कह रहा हूँ कि तुम्हें मठ के नियमों से किसी भी तरह से भटकने का विचार भी मन में नहीं लाना चाहिए: यह शत्रु की फुसफुसाहट है। मैं आपको एक और बात याद दिलाता हूँ: *'यदि कोई प्रतिस्पर्धा करता है, तो जब तक वह नियमानुसार प्रतिस्पर्धा नहीं करता, तब तक उसे मुकुट नहीं दिया जाता'* (2 तीमु. 2:5)। और न ही कोई भिक्षु सिद्धता प्राप्त करेगा या मुकुट प्राप्त करेगा यदि वह स्थापित नियमों के विपरीत तपस्या के कार्य करता है।

१५. आप जानते हैं और आपने अक्सर सुना है कि जब भाई स्कीमा ग्रहण करते हैं तो उन्हें कैसे निर्देश दिया जाता है। इसका सार यह है कि यहाँ ईश्वर और मनुष्य के बीच एक व्रत लिया जाता है और एक वाचा स्थापित होती है – भूख और प्यास सहने, बिना किसी सुविधा के रहने, बदनामी, अपमान और गाली-गलौज सहने, और, यदि आवश्यक हो, तो मसीह के लिए अपना रक्त बहाने की। इसलिए, जब आपको ऐसी बातें सहनी हों तो पीछे न हटें, क्योंकि आप केवल उस बात का सामना कर रहे हैं जिसे आप सहने की शपथ ले चुके हैं। क्या तब जो कहा गया था, वह महज़ बच्चों की बातें थीं? ऐसा कतई नहीं। वे पवित्र शब्द हैं, जिनकी गवाही स्वयं ईश्वर और उनके चुने हुए स्वर्गदूत देते हैं। इसके विपरीत, जब हमें ऐसी परीक्षाओं का सामना करना पड़े, तो हमें इस बात की प्रसन्नता होनी चाहिए कि हमारे द्वारा किए गए वादे का एक छोटा सा हिस्सा पूरा करने का अवसर मिला है। जिस प्रकार प्रशंसा, सुख और संतोष संसार के लिए आकर्षक हैं, उसी प्रकार हमारे लिए इसका विपरीत ही वांछनीय और आनंददायक है। यही बात संन्यासी का वेश हमें दिखाता है। वे सांसारिक चीजों में आनंदित होते हैं, जबकि हम दिव्य चीजों में; वे देहकि चीजों में, जबकि हम आध्यात्मिक चीजों में; वे सुखों में, जबकि हम संयम में आनंदित होते हैं। कौन सी चीज़ हमें उनसे अलग और विशिष्ट करती है? क्या आप सचमुच सोचते हैं कि एक काला चोगा और लंबी दाढ़ी किसी को भिक्षु बना देती है? – बिल्कुल नहीं। – लेकिन एक सच्चा भिक्षु वह है: जिसकी आंतरिक प्रवृत्ति और मानसिक स्थिति उसके बाहरी स्वरूप के अनुरूप हो, ताकि वह कह सके: 'मैं बिल्कुल वैसा ही हूँ, और मैं बदलूँगा नहीं।' अब मैं आपसे विनती करता हूँ, इस प्रकार बुद्धिमान बनें – और संयम, मौन, श्लोकों का पाठ, पारस्परिक सम्मान, पाप-स्वीकृति, लगन और हर दूसरी प्रशंसनीय गुण को अपनाएँ। आइए हम इन गुणों को अपने भीतर विकसित करें – और हम अच्छे फल देंगे। हर कोई अपने भाई के साथ भलाई में प्रतिस्पर्धा करे और उससे ईर्ष्या के बिना अनुकरण करे। और—'जैसा मैं जीवित हूँ,' प्रभु कहते हैं—'जो मेरा महिमामंडन करते हैं, मैं उनका महिमामंडन करूँगा, और मैं उनके लिए विश्राम का स्थान, जीवितों की भूमि, *"अद्भुत निवास-स्थान"* तैयार करूँगा' (भजन संहिता 41:5)। आप इसे सुनें और संसार की रोशनी देखें, और धार्मिकता के सूर्य को निहारें, और उसकी अनुपम आनंद में आनंदित हों: क्योंकि वह ही सारी मिठास और इच्छा है। तो आइए हम प्रार्थना करें, और अपने उत्साह में उत्साह जोड़ें, कि हम उस उज्ज्वल दिन को अपनी प्रसन्नता के लिए प्राप्त कर सकें। धन्य है वह आत्मा जिसने अपने अच्छे जीवन के द्वारा प्रभु को प्राप्त किया है और उसमें एक कृपाशील उपकारी पाया है, क्योंकि वह उसे अपने शाश्वत निवासों में ग्रहण करेगा।

196. उपदेश सबसे महत्वपूर्ण विषय - आत्मा के उद्धार - के बारे में बात करते हैं; इसलिए, उन्हें पूरी लगन और उत्सुकता से सुनना चाहिए

196. 1) उपदेश सबसे महत्वपूर्ण विषय – आत्मा के उद्धार – के बारे में बात करते हैं; इसलिए, उन्हें पूरी ध्यान और उत्सुकता से सुना जाना चाहिए। – 2) अन्यथा, उनकी शिक्षाओं का आत्मा पर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा; और यदि पड़े भी, तो वह केवल थोड़े समय के लिए होगा; बाद में, वे पूरी तरह से गायब हो जाएँगी। – 3) अतःआइए हम सुनें, उनका पालन करें और उन्हें अपने जीवन में उतारें; और हम यहाँ भी और आने वाले युग में तो और भी अधिक, अच्छे फल पाएँगे। [3 *1, 32]*

16. जब परमेश्वर का प्रचारित वचन किसी ऐसे आत्मा में प्रवेश करता है जो होशियार और अपनी मुक्ति के लिए चौकस है, तो वह तुरंत उसे गर्माहट देता है और आज्ञाओं का पालन करने में अधिक और अधिक पूर्ण लगन के लिए उसे प्रेरित करता है; परन्तु यदि यह किसी ऐसे प्राण में प्रवेश करे, जैसा कि मेरे साथ हुआ, जो सोया हुआ और दुष्टता में लापरवाही से रहता है, तो वह निष्फल रह जाता है, और व्यर्थ ही हवा में बिखर जाता है। मैं आपसे विनती करता हूँ, मुझे तुच्छ न समझें, बल्कि कलीसिया की शिक्षा की महत्वता को देखें, क्योंकि यह सार्वभौमिक लाभ की याद दिलाती है, किसी तुच्छ बात के बारे में नहीं, बल्कि सबसे महत्वपूर्ण बात के बारे में - हमारे उद्धार की बात: हम कैसे बच सकते हैं? हम परमेश्वर के मार्ग पर कैसे चल सकते हैं? हम शत्रु के फंदों से कैसे बचें? हम अपने भावों से स्वयं को कैसे शुद्ध करें? हम सद्गुणों में कैसे उत्कृष्टता प्राप्त करें, ताकि इसके माध्यम से हम पूर्णता की ऊँचाइयों तक पहुँच सकें? स्वर्ग के राज्य को प्राप्त करने के लिए हमें कितने और कौन से अच्छे कर्म करने चाहिए? – ऐसे विषयों को देखते हुए, हमारा उपदेश आपके लिए वांछनीय और आपके द्वारा सम्मानित होना चाहिए।

17. इसके अलावा, यदि आप उसे इस तरह मानते हैं, तो आप हमारी ऐसी बातचीतों में वह लाभ मुश्किल से ही पा सकेंगे जिसकी आप तलाश करते हैं, उसे प्राप्त करना तो दूर की बात है। क्योंकि एक विरोधी है जो हर बात में हमारा विरोध करता है और हमें सही से भटकाता है, जब तक कि हम भलाई के लिए उसकी बुरी बातों पर ध्यान न दें। परिणामस्वरूप, जब हमारी प्रकृति अस्वास्थ्यकर चीजों से भटक जाती है, तो वह समान मनोभाव या सम्मान के साथ शिक्षाओं को बनाए रखने में विफल रहती है। लेकिन कोई शिक्षाप्रद प्रवचन सुनने के बाद, या मृत्यु के द्वारों से

होकर इस जीवन से अगले जीवन में जाने पर, या न्याय-पीठ के सामने खड़े होने पर, या अपने पूरे जीवन के प्रतिफल के रूप में अपनी शाश्वत नियति के बारे में अंतिम निर्णय सुनने पर चिंतन करने के बाद, वह तुरंत पश्चाताप से भर जाता है, आहें भरता है, रोता है और कराहता है; फिर भी, जैसे ही थोड़ा समय बीत जाता है, सब कुछ एक बार फिर से भूल जाता है, और पश्चाताप के बजाय वह कठोर हो जाता है; आँसू बहाने के बजाय, वह हँसी में डूब जाता है; कराहने के बजाय, वह अपने विचारों को इधर-उधर बिखेरता है, अपना चेहरा और आँखें इधर-उधर घुमाता है। और जो कुछ बचता है, वह केवल प्रेरित के साथ पुकारना है: *'हे मैं दुष्ट मनुष्य! मुझे इस मृत्यु के शरीर से कौन छुड़ाएगा?'* (रोमियों 7:24)।

18. ओह, नहीं, मेरे भाइयो, नहीं। परन्तु हम सुनेंगे, और पश्चातापी होंगे, और उत्तम वस्तु के लिए यत्न करेंगे, और आग पर आग जलाकर, अपनी आत्माओं को परमेश्वर और एक दूसरे के प्रति प्रेम से प्रज्वलित करेंगे, परस्पर एक दूसरे को उत्साहित करते हुए और आज्ञाकारिता, नम्रता, परिश्रम, और हमारे स्वर्गीय निवास के योग्य हर अन्य भले काम के लिए एक दूसरे को प्रोत्साहित करेंगे। वर्तमान में हम केवल बोआई कर रहे हैं, और परिणामस्वरूप हम परिश्रम करते हैं, थक जाते हैं और रोते हैं; लेकिन थोड़ी ही देर में हम आनंदित होंगे, क्योंकि हम आँसुओं से बोई गई फसल को आनंद के साथ काटेंगे, और हम सभी के प्रभु और परमेश्वर के साथ राज्य करना शुरू कर देंगे, बशर्ते कि हम अपने बलिदानी आज्ञाकारिता में गंभीरता से दृढ़ रहें। – मैं तुम्हें पुकारना क्यों बंद करूँ? जब तक समय है, हम प्रयास करें; हम थोड़ा और परिश्रम करें, हम तब तक सहन करें जब तक हम कर सकते हैं, जब तक यह जीवन, जो एक सपने के समान है, समाप्त नहीं हो जाता। और मैं ईश्वर के नाम पर आपको यह विश्वास दिलाने का साहस करता हूँ कि आपको मुकुट पहनाया जाएगा, आप स्वर्गीय सेनाओं के गायकों के समूह में शामिल हो जाएँगे, और वहाँ आप सदा-सदा के लिए आनन्दित और प्रसन्न होना शुरू कर देंगे।

197. युद्ध के समय, सैनिकों को लड़ते समय कोई शांति नहीं मिलती; उन्हें तब ही आराम मिलता है जब वे घर लौट आते हैं

197. 1) युद्ध के दौरान, सैनिकों को लड़ते समय कोई आराम नहीं मिलता; और उन्हें शांति केवल तब मिलती है जब वे घर लौट आते हैं। और हम एक आध्यात्मिक युद्ध में लगे हुए हैं, एक ऐसा युद्ध जो जीवन भर चलता है: इससे आराम आने वाला जीवन ही परलोक है। – 2) इसलिए हमें पूरी ताकत से लड़ना चाहिए, दुश्मन को कुछ भी नहीं देना चाहिए, और उसके छलकपट भरे धमकियों से नहीं डरना चाहिए। [31, 33]

19. जो लोग लगातार युद्ध में लगे रहते हैं, जब युद्ध चल रहा होता है, उनके लिए बड़े और छोटे दुश्मनों के साथ मुठभेड़ के अलावा लगभग कोई आराम नहीं होता: वे या तो लड़ाई के लिए अपने हथियार तैयार कर रहे होते हैं, या पहरा दे रहे होते हैं, या टोही अभियानों पर निकल रहे होते हैं; और इस बीच वे कम सोते हैं, कम खाते हैं, हमेशा सतर्क रहते हैं, और हमेशा अचानक हमले के डर में रहते हैं। केवल युद्ध के अंत में घर लौटने पर ही उनके लिए शांति, सुकून और आनंद का समय आता है; तभी सैन्य वीरता के लिए उनका पुरस्कार और राजा के उपहार वितरित किए जाते हैं। हम यहाँ भी यही देख सकते हैं: क्या हम निरंतर युद्ध की स्थिति में नहीं हैं, और क्या हम सैन्य अनुशासन बनाए नहीं रखते? – वास्तव में, मैं तुमसे कहता हूँ, और उनसे भी अधिक; क्योंकि हममें सब कुछ विशिष्ट है: हमारे हथियार भी विशिष्ट हैं – *'जो शरीर के नहीं, पर किले ढाने के लिए परमेश्वर की ओर से सामर्थी हैं'* (2 कुरिन्थियों 10:4); और एक विशेष शत्रु – पतित आत्मा, शैतान, जिसके दल में वे सभी शामिल हैं जो उसके साथ और उसके द्वारा पतित हुए हैं, और स्वर्ग से गिराई गई शक्तियाँ। इसलिए, हमारा वर्तमान समय शांति और निश्चिंत आत्मसंतोष का नहीं, बल्कि संघर्ष का समय है। इसलिए हमें परमेश्वर के पूरे हथियारबंद जौहर से स्वयं को लैस करना चाहिए, और, आध्यात्मिक तलवार उठाकर, युद्ध करना चाहिए। जब संघर्ष की एक निश्चित अवधि—कम या अधिक सफल—बीत जाएगी, तो हमारे सृष्टिकर्ता और परमेश्वर युद्ध को समाप्त कर देंगे और हमें यहाँ से हमारे अस्थायी निवास और तीर्थयात्रा से हमारे सच्चे निवास और स्वदेश में बुला लेंगे। इसी के बारे में व्यवस्था, भविष्यद्वक्ताओं, प्रेरितों और शिक्षकों ने लिखा और वर्णन किया है।

20. हे भाइयो, अब तुम रणभूमि को जानते हो; तुम युद्ध को भी जानते हो। इसलिये हम दृढ़ खड़े हो कर बहादुरी से लड़ें। हम सभी प्रकार की दुष्टता से युद्ध में हैं—और इसमें हमारी अपनी दुष्टता भी शामिल है: निराशा के विरुद्ध युद्ध, लालच के विरुद्ध युद्ध, अत्यधिक नींद के विरुद्ध युद्ध, अशुद्ध कामवासना के विरुद्ध युद्ध, व्यर्थ की बातों, तुच्छता, हँसी, अशिष्टता और हर दूसरे अशुद्ध जुनून के विरुद्ध युद्ध। जो कोई दृढ़ता से लड़ता और प्रतिरोध करता है—चिंतन, अनवरत प्रार्थना और प्रकटवाक्य के द्वारा—और अंत में शत्रु पर विजय प्राप्त करता है—उस व्यक्ति को, प्रभु के योद्धा के रूप में, स्वर्ग के राज्य में अक्षय महिमा का मुकुट प्रदान किया जाएगा। इसलिए हे भाइयो, हे मेरे आत्मिक कुटुम्बियो, मैं तुम से विनती करता हूँ: हम हियाव न छोड़ें, हम धोखा न खाएँ, हम शत्रु को परास्त करते

समय थकान न जानें, और हम उसके शक्तिहीन डरावने पुतलों और भूत-प्रेतों से न डरें। वह कभी-कभी कुछ बड़ा और भयानक करने की तैयारी कर रहा प्रतीत होता है, लेकिन जो लोग ध्यान देते हैं, उनके लिए ये केवल भूत-प्रेत और परछाइयाँ हैं। क्या वह जो एक बार महान एंथनी के विरुद्ध खड़ा हुआ था—कभी साँप की तरह रेंगता, कभी शेर या भेड़िये, या किसी अन्य खतरनाक जानवर की तरह—बस ऐसा ही एक प्राणी नहीं था? इस साहसी युवक के सामने, वह अँधेरा और धोखा ही साबित हुआ, और अपनी प्रार्थनाओं द्वारा उसे दूर फेंक दिया गया। इसलिए, जब दुश्मन हमारे खिलाफ ऐसा ही कुछ भेजता है, विचारों के पहाड़ खड़े करता है और जुनून की तेज धाराएँ प्रस्तुत करता है, तो हमें डरना नहीं चाहिए; बल्कि हमें शांतिपूर्वक जीवन-दायक क्रॉस का चिह्न बनाना चाहिए, और वह भाग जाएगा। भाइयो, वर्तमान में, जैसा कि कहा गया है, धैर्य की आवश्यकता है; अतःहम धैर्यवान बनें और प्रयास करें। आप में से प्रत्येक यह देखे कि आप अपने कदम कहाँ और कैसे रखते हैं: यदि आप मेरे ई , विनिम्र आज्ञा के अनुसार, या समुदाय के नियमों के अनुसार कार्य करते हैं, और इसके अलावा अपनी इच्छा को त्याग देते हैं, तो बहुत अच्छा; वह बिना चखे खाता है, बिना नशे के पीता है, बिना आराम के सोता है; संसार में रहते हुए भी वह संसार से ऊपर है, और नगर में ऐसे रहता है जैसे मरुस्थल में हो। लेकिन इतना ही काफी है।

198. हम रंगभूमि में एक प्रतियोगिता में हैं: हमें अधिक प्रयास करना चाहिए; अन्यथा हमें कुछ भी प्राप्त नहीं होगा

198. 1) हम मैदान में एक प्रतियोगिता में हैं: हमें प्रयास करना चाहिए; अन्यथा हमें कुछ भी प्राप्त नहीं होगा। – 2) सुस्त न हो: देखो, एक के बाद एक वे प्रस्थान कर रहे हैं; उस जीवन के लिए आवश्यक चीज़ों को तैयार करने में शीघ्रता करो। – 3) तुम एक महान प्रयास की खोज कर रहे हो: ईश्वर के साथ एकता में रहना; और तुम उसे पाओगे। कैसे? अपने व्रतों के प्रति विफादार रहकर। – 4) जंगल में यह आसान था: अब तुम शहर में आ गए हो, और तुम्हारे सामने एक परीक्षा है। अपने ऊपर शर्म न लाओ। – 5) मैं तुम्हें यह बता रहा हूँ: कि तुम्हें अपना आचरण कैसा रखना चाहिए। [31, 34]

21. यह जानते हुए कि हमारे लिए एक अनमोल इनाम इंतज़ार कर रहा है – स्वर्ग के राज्य का उत्तराधिकार और अनंत जीवन – हम लापरवाह न रहें, इस युग में रहते हुए हम आलस्य की नींद में न डूबें। अखाड़ा खुला है; पथ साफ और चिह्नित कर दिए गए हैं; पुरस्कार रखे हुए हैं, और न्यायाधीश अपनी-अपनी जगह पर हैं। 'आओ, पहलवानों, प्रतिस्पर्धा करो।' उत्साही, जो जोश से भरपूर है, विजयी होता है और उसे मुकुट मिलता है। लेकिन आलसी न केवल मुकुट खो देता है, बल्कि अपनी अनमोल आत्मा को भी नष्ट कर देता है और इस जीवन से खाली हाथ जाते हुए, उसे अनंतकालिक यातनाओं में डाल दिया जाता है।

२२. क्या तुम नहीं देखते, और क्या तुम्हें ध्यान नहीं आता, कि कैसे दिन-प्रतिदिन एक के बाद एक यहाँ से चला जाता है और, इस जीवन में सेवा करके, अपने प्रभु के पास चला जाता है: – बूढ़े और जवान, – राजा और दास, – आर्चबिशप और पुरोहित, – मठाधीश और नवसिखुआ? जो कोई यहाँ खोजता है, उसे वहाँ मिलता है; जो कोई यहाँ से खजाने पहले भेजता है, वह उन्हें वहाँ मिलता है; जिसने यहाँ की सभी चीज़ों का त्याग किया है, उसे वहाँ प्रचुरता मिलती है। – आपको दुनिया से भागने और ईश्वर के साथ अकेले रहने की कृपा दी गई है।

२३. आपके सामने ईश्वर के प्रति निकटता और आनंद और प्रसन्नता के साथ उनकी सबसे सच्ची सेवा करने का अवसर है। हालाँकि, आपका कार्य और आपका प्रयास अपने संकल्प के प्रति विफादार बने रहना है। इसलिए, आप जो भी पद धारण करते हैं और जिस भी सद्गुण का आप संवर्धन कर रहे हैं, उनमें दृढ़ रहें, और अधिक से अधिक झुके बिना, अपनी आत्माओं को प्रभु और सर्वशक्तिमान ईश्वर के मंदिर के रूप में अर्पित करें।

२४. मैं यह निष्कर्ष निकालता हूँ कि ईश्वर आपके अच्छे स्वभाव को स्वीकार करते हैं, इस तथ्य से कि आप (पहाड़ों के) सबसे शांत स्थानों से (कॉन्स्टेंटिनोपल के) शोरगुल और भीड़-भाड़ वाले स्थानों पर, और रेगिस्तान से शहर में आने के बाद भी, वैसे ही बने रहते हैं। वास्तव में, सद्गुण, जब ईश्वर को बलिदान के रूप में अर्पित किया जाता है, तो सोने की तरह हर जगह सम्मानित होता है - और उससे और उसके लिए महिमा ईश्वर तक पहुँचती है। यह यहाँ से भी ऊपर उठा है। - कुछ लोगों ने - चाहे वे शुभचिंतक हों या दुर्भावनापूर्ण - वही बात कही: 'खैर, देखते हैं कि वे अपने संकल्प पर कायम रहते हैं या नहीं।' – लेकिन मुझे उम्मीद है कि आप दृढ़ रहेंगे और इस पर अडिग रहेंगे – और, शहर में रहते हुए, आप ऐसा व्यवहार करेंगे जैसे आप रेगिस्तान में हों, और शहर के कोलाहल के बीच अपने आत्मा में शांति और प्रसन्नता बनाए रखेंगे। और यहीं पर आपकी सच्ची परीक्षा है; और यदि आप इसे सहन करते हैं तो आप वास्तव में प्रशंसा के योग्य होंगे। संत जॉन द थियोलोजियन कहीं कहते हैं: सर्दियों की ठंड और सूरज की किरणों में अद्भुत क्या है? वे यह अनैच्छिक रूप से करते हैं। हमारे साथ भी ऐसा ही है: रेगिस्तान में चुप रहने या एकांत में शांति बनाए रखने

में बहुत कम प्रशंसा होती है। लेकिन शहर में रहते हुए एकांत की तरह जीना, और शोरगुल भरी भीड़ के बीच, जैसे रेगिस्तान में हों, ऐसा होना एक बिल्कुल अलग बात है। ईश्वर का धन्यवाद हो, मेरे पिता और आपके पिता की प्रार्थनाओं के द्वारा, जो आपको अक्षुण्ण और आपके ध्येय में दृढ़ रखते हैं।

२५. तुम्हारा गौरव और प्रशंसा तुममें ही निहित है। – चूँकि ऐसा है, इसलिए मठ के कार्यों को करते समय, उन्हें एक श्रद्धेय भावना से करने का पूरा प्रयास करो, अपने चलने-फिरने, अपने आचरण, अपनी दृष्टि, अपने व्यवहार, अपनी वाणी और हर चीज़ में ईश्वर-भक्ति दिखाओ। अब आओ, मेरे बच्चों, अब आओ, मैं तुमसे विनती करता हूँ। किसी को भी अपने बारे में बुरा बोलने की अनुमति न दो। हमारी ओर बहुत सी आँखें टिकी हैं, बहुत से मुँह हमसे और हमारे खिलाफ बोलते हैं। *'क्या वे सचमुच कहेंगे, "उनका परमेश्वर कहाँ है?"'* (भजन संहिता 78:10) उनका सद्गुण कहाँ है? और उन्हें वहाँ कौन ले जा रहा है? – वे कितनी निर्लज्जता से व्यवहार करते हैं, अपनी आँखें इधर-उधर घुमाते और ठहाके लगाकर हँसते हैं, मानो वे कोई वेश्या हों?" सावधान रहो कि तुम सारी भाईचारे पर मुसीबत न लाओ; अमर ईश्वर से डरो! परन्तु हर एक बात ऐसे कहो मानो प्रभु स्वयं सुन रहे हों, और हर एक काम ऐसे करो मानो तुम उसे उनकी आँखों के सामने कर रहे हो, जैसे कि वह तुम्हें देख रहे हों। इस प्रकार, तुम्हारी अवस्था पर्याप्त होगी; और तुम स्वयं, ज्योतियों के समान, राजसी नगर के बीच में होगे।

199. इन कथनों में मठवासी जीवन के सद्गुणों और तपस्वी कर्मों को प्रस्तुत किया गया है, साथ ही उनमें उत्कृष्टता प्राप्त करने के लिए प्रोत्साहन भी दिया गया है।

199. उक्तियाँ मठवासी गुणों और कर्मों को उजागर करती हैं, और उनमें उत्कृष्टता प्राप्त करने के लिए प्रोत्साहित करती हैं। [31, 35] संयम एक मठवासी का सबसे बड़ा हथियार है: यह प्रत्येक अन्य गुण का द्वार है। लेकिन जिसने आज्ञाकारिता प्राप्त कर ली है, वह मसीह का अनुयायी है; विनम्र-चित्त वाले स्वर्गदूतों के समान हैं; जो अपने आध्यात्मिक पिता को सब कुछ प्रकट करता है, वह सूर्य के समान शुद्ध है। अतः कोई भी रहस्यवादी न बने, अन्यथा वह असाध्य हो जाएगा। तब जो लाभदायक हो और जो तुम्हें विनम्रता की ओर प्रवृत्त करे, उसे खोजो। इसके विपरीत किसी भी बात को अनुमति न दो। तुम जानते हो कि हम कहाँ हैं और शीघ्र ही कहाँ जाएँगे, और शरीर से अलग होने के बाद हमारा क्या होगा। इसलिए, हम सतर्क और संयमी रहें; हमारा मन हमेशा ईश्वर की ओर मुड़ता रहे और वहाँ उन अनंत आशीर्वादों और उन लोगों के आनंदमय सुख का चिंतन करे जिन्हें वे प्राप्त करने योग्य माने गए हैं, साथ ही उन लोगों की दुर्भाग्यपूर्ण नियति की कड़वाहट का भी, जो नरक में गिर गए हैं, जहाँ भयानक और असीम यातनाएँ हैं। जिस प्रकार प्रभु जीवित हैं और ईश्वर धन्य हैं, हमें कभी भी इस पवित्र संन्यासी जीवन को अपनाने, सभी सांसारिक चीजों का त्याग करने और एक तलवार की भाँति सभी कामुक चीजों को काट डालने पर पछताना न पड़े; क्योंकि यदि हम अपने इस पुण्य प्रयास में दृढ़ रहते हैं, तो हम सदा-सदा के लिए आनंदित होंगे। यह संघर्ष उपवास, जागरण और तपस्वी जीवन की सभी माँगों के लिए साहसी तत्परता से मिलकर बनता है; इसमें मैं ईश्वर के प्रेम के लिए सभी कष्टों और बदनामियों—अपमान, फटकार, निर्वासन और विश्वासघात—को सौम्य सहनशीलता से सहने को जोड़ना चाहूँगा। आप सभी, चाहे बड़े हों या छोटे, नए हों या पुराने, प्रयास करें; दौड़ अच्छी तरह से दौड़ें; हमेशा स्वेच्छा से प्रार्थना सभाओं, आज्ञाकारिता के कार्यों और काम के लिए तत्पर रहें। काश कि सुस्ती, क्रोध, जल्दबाज़ी, ईर्ष्या, कलह, संदेह और अन्य सभी वासनाएँ आपसे दूर हो जाएँ। एक-दूसरे के प्रति परस्पर प्रेम में और भी अधिक उत्कृष्टता प्राप्त करें, *'उत्साह से जलते हुए, प्रभु की सेवा करते हुए: आशा में आनंदित होते हुए, क्लेश में धीरज रखते हुए, प्रार्थना में स्थिर रहते हुए'* (रोमियों 12:11–12)।

200. भाइयों की उनके कठोर मठवासी जीवन के लिए प्रशंसा करने और उसमें शहादत के लक्षणों को इंगित करने के बाद, वह उन्हें इसी तरह जारी रखने के लिए प्रोत्साहित करते हैं, यह आश्वासन देते हुए कि भविष्य में उन्हें शहीदों में गिना जाएगा

200. 1) भाइयों की कठोर मठवासी जीवनशैली की प्रशंसा करने और उसमें शहादत के गुणों को इंगित करने के बाद, वह उन्हें इसी मार्ग पर आगे बढ़ने के लिए प्रोत्साहित करते हैं, यह आशा देते हुए कि भविष्य में वे शहीदों के साथ एकत्रित होंगे। – 2) उन्हें आश्वस्त करते हुए कि भविष्य में हम यहाँ से जो कुछ भी स्वेच्छा से त्यागते हैं, वह हमें अपने सबसे पूर्ण रूप में प्राप्त होगा, वह उन्हें अपनी सभी कठिनाइयों में आनंदित होने और अपने मार्ग पर दृढ़ रहने के लिए प्रेरित करते हैं। – 3) मरने की बात करने के बाद, वह उन्हें मृत्यु के लिए तैयार होने का आमंत्रण देते हैं; और मृतक भाई के लिए प्रार्थना करने का आग्रह करते हैं, जिसने अपने अंतरात्मा को लालच से पवित्र नहीं किया था (क्योंकि उसकी कोठरी में दो चांदी के सिक्के पाए गए थे), – प्रणाम करने का आदेश देते हुए। [31, 36]

1. मैं तुम लोगों का धन्यवाद करता हूँ, मेरे बच्चों, कि परमेश्वर के प्रति अपनी गहरी भक्ति के कारण, तुम दिन-प्रतिदिन प्रभु को प्रसन्न करने में प्रगति कर रहे हो, अथक श्रद्धा, सद्भावना और लगन दिखा रहे हो, संयम का अभ्यास कर रहे हो, और जो दिया गया है उससे संतुष्ट हो रहे हो, संयम से रोटी और थोड़ी सी शराब लेते हैं, जबकि श्रम करने, नियम का पालन करने, जल्दी उठने और सभा में भाग लेने, सेवा के अंत तक धैर्यपूर्वक खड़े रहने में दूसरों से पीछे नहीं रहते, – नम्रता, सौम्यता और शिकायत रहित भाव दिखाते हैं: क्योंकि यदि कोई बड़बड़ाता है, तो यह उसके लिए एक पाप है। अपनी इच्छा को वश में रखने में संन्यासी जीवन जीने वालों के ये हैं कारनामे: उनके शहीद होने पर, आग के बजाय, तारकोल के भगोने, तीर, पंजे, तलवारें और क्रॉस, उपरोक्त और निम्नलिखित कारनामे उनके उपकरणों के रूप में काम करते हैं: अपमान, अनादर, सूखी रोटी का भोजन, संयम के माध्यम से शरीर का दमन, आत्म-त्याग, और वस्त्र, जूते, आश्रय, और जीवन के लिए आवश्यक हर दूसरी चीज़ में हर चीज़ की कमी को सहना। चूँकि कष्टों और पीड़ाओं को सहने के लिए हमारे लिए मुकुट प्रतीक्षा कर रहे हैं, तो आइए हम अपने प्रभु यीशु मसीह के नाम पर बहादुरी से अपना शहीदी जीवन जिएँ, ताकि वहाँ हम स्वयं को पवित्र शहीदों के समान पा सकें, जहाँ इस जीवन के दुखों, अभावों और विलापों के बजाय, हमें इनाम के रूप में मिलेगा: शाश्वत जीवन, अकथनीय आनंद और अतुलनीय हर्ष।

२. हमारा यहाँ कोई नगर नहीं है, क्योंकि हमने अपने स्वदेश को भी त्याग दिया है, परन्तु वहाँ हम स्वर्गीय यरूशलेम के नागरिक होंगे; हमें देह के अनुसार किसी को 'पिता' नहीं कहना चाहिए, परन्तु उस युग में हम परमेश्वर में एक पिता पाएँगे; हम पृथ्वी पर विरासत से वंचित हैं, लेकिन वहाँ हमें मसीह के साथ एक विरासत दी जाएगी; हम स्वयं को देह के सुख-सुविधाओं—भोजन, पेय और अन्य सभी इंद्रिय सुखों—से वंचित करते हैं—लेकिन आप जानते हैं कि वहाँ आप उस आनंद का अनुभव करेंगे जिसे न किसी ने देखा है, न किसी ने सुना है, और जो मानव हृदय में प्रवेश नहीं किया है। इसलिए आनंदित हो, और, इन बातों को देखकर, हियाव न खोओ, सुस्त न हो जाओ, न तो वर्तमान और न ही भविष्य की कठिनाइयों से डरो, चाहे वे कितनी भी भारी क्यों न हों। – पर मैं क्या कह रहा हूँ? चाहे आग हो, तलवार हो, या मृत्यु, इन सभी को कुछ भी न समझकर, अपने मार्ग पर दृढ़ रहो।

३. हमारे भाइयों के निधन से, आप देख सकते हैं कि हम हर घंटे मृत्यु के और करीब आ रहे हैं: कल एक चला गया, कुछ दिन पहले दूसरा – और पहले से ही कोई और द्वार पर है; और अगला कौन होगा? – 'शायद मैं,' हर कोई कहे – और तैयारी शुरू कर दे। – मैं आप लोगों के साथ भाई वासिली, जो अब नहीं रहे, के बारे में अपनी आत्मा के दुख को साझा करना चाहता हूँ, क्योंकि वे अपने अंतरात्मा को शुद्ध किए बिना चले गए, क्योंकि उनके पास दो चाँदी के टुकड़े पाए गए थे। हाय! क्या अंधापन है! शैतान ने उसे कैसे फँसाया? उसने दो चाँदी के टुकड़ों को स्वर्ग के राज्य से भी अधिक मूल्यवान समझा। मैंने उससे एक से अधिक बार कहा कि चाहे वह रस्सी हो, या सुई, या कलम, या कोई और ऐसी चीज़ जिसे कोई उठाकर छिपा ले, केवल इसी से वे उस पूरे स्थान को पाप से भर देते हैं। आपने निश्चित रूप से यह स्वयं पर सेंट कैसियन के लेखों में देखा होगा, जो कहते हैं कि, सेंट मार्क के अनुसार, एक ही पाप ग्यारह के स्थान को भर देता है (बारह से पाप की परिपूर्णता को मापते हुए)। किसी चीज़ को अपना मानकर और उस पर अधिकार करके, उसने अपनी आत्मा और हृदय को उसमें लगा दिया है: क्योंकि जहाँ किसी का खजाना है, वहाँ उसकी आत्मा भी है। तो फिर, त्याग कहाँ है? – आइए हम उसके लिए प्रार्थना करें, और एक सप्ताह तक हर दिन उसके लिए तीन प्रणाम करें और तीस प्रार्थनाएँ करें, ताकि प्रभु उसके अपराध को क्षमा करें।

201. भाइयों को सभी संन्यासी प्रयासों में सिद्ध चित्रित करने के बाद, वह जोड़ते हैं: आइए हम हमेशा ऐसे ही रहें, प्रत्येक व्यक्ति अपने समय पर अपना काम करता रहे

201. भाइयों को सभी संन्यासी प्रयासों में सिद्ध चित्रित करने के बाद, वह जोड़ता है: 'हम हमेशा ऐसे ही रहें, प्रत्येक अपने समय में अपना काम करता रहे।' [3 *1, 37] ईश्वर आपकी रोपाई पर कृपा दृष्टि रखें, और वही, जिसने आपके इस सच्चे दाख के बगीचे को लगाया है, आपको पवित्र आत्मा के जल से सींचे, और आपको हर सच्चे फलदाय के लिए पूर्णता के मापदंड तक पहुँचाए। जहाँ तक मेरा सवाल है, यह काम मेरे बस की बात नहीं है; इसे करने का प्रयास भी मेरी कमज़ोरी से परे है। और 'हे प्रभु, मैं कौन हूँ?'* यह कहना मेरे लिए उचित है, और *'मेरे पिता का घर*—कि आपने मुझे, एक दीन-हीन और अशुद्ध को, झुंड में गिनने के भी योग्य नहीं समझा? – फिर भी वह मुझे स्वीकार करता है और मुझ पर धीरज रखता है, मेरे मन के परिवर्तन और सुधार की खोज में और प्रतीक्षा में रहता है। क्योंकि उसके सामने कौन खड़ा हो सकता है और पापों का प्रायश्चित कर सकता है? उसकी भेड़ों का झुंड सुरक्षित रूप से कौन चरा सकता है? कौन परमेश्वर के इतना निकट है कि दूसरों को उसके पास ला सके? – मैं इससे उतना ही दूर हूँ जितना आकाश पृथ्वी से। – फिर भी मैं आनंदित हूँ कि आप सही मार्ग पर चल रहे हैं, और परमेश्वर की आज्ञाओं के अनुसार आगे बढ़ रहे हैं, और, एक-दूसरे के अनुकरण में भलाई करते हुए, आप सब मिलकर पूर्णता की ओर बढ़ रहे हैं। निश्चय ही,

परमेश्वर आपके भीतर वास करता है, आपके द्वारा धन्य और आराधति है, और पवित्र आत्मा आपकी सभा पर वरिाजमान है। आपका गायन स्वर्गदूतों का गायन है, तुम्हारा भजन-गायन अमूर्त प्राणयिों का गायन है, और तुम्हारा सारा आचरण वास्तव में स्वर्गीय है, जसिमें न तो मांस और रक्त की कोई छाया है, न ही स्वच्छंद इच्छा, न नाशमानों की चिंता, न व्यर्थ चिंता, न बहष्कृितों के लिए सांत्वना, न कोई मोहक वस्तु, न ही कोई मोहति हो रहा है; परन्तु सब कुछ शान्तिऔर स्थरिता से भरपूर है; आपकी केवल एक ही इच्छा, एक ही संकल्प, एक ही आत्मा और हृदय, एक ही मार्ग, एक ही आकांक्षा है—ईश्वर को प्राप्त करना; एक ही जीवन; सचमुच, आप ईश्वर द्वारा बुलाया गया, स्वर्गदूतों जैसा एक भाईचारा हैं, जो देह में रहते हुए भी देह से ऊपर है, और संसार में रहते हुए भी, नर्लिप्तिता के द्वारा, संसार से परे है। आपने एक ठोस संतुलन प्राप्त कर लयिा है और, राजसी मध्य मार्ग पर चलकर, दोनों ओर की तेज धाराओं से बचते हैं। आपके कर्म और आपका संयम, आपकी नींद और जागना, आपका मौन और वाणी, आपकी मेहनत और आराम, आपकी प्रार्थनाएँ और वनितीएँ ईश्वर को प्रयि हैं। यदकिभी हम अपनी ही दुर्बलता के प्रति थोड़ी अधकि संयम और सहनशीलता से काम लेते हैं, तो हम शीघ्र ही कठोरता पर लौट आते हैं; यदविर्तमान क्षण हमें कुछ वचिलति करता है, तो अगला सब कुछ फरि से ठीक कर देगा: मैटन्सि शुरू होता है, फरि लटिर्जी, कसिी संत के जीवन का पाठ, प्रवचन, और जो लोग अपने अनुशासन से कुछ भटक गए हैं वे उसमें लौट आते हैं। और हम एक-दूसरे की मदद और एक-दूसरे के लिए एक सुरक्षा कवच हैं; और हमारे बीच शैतान के लिए कोई जगह नहीं है, ईश्वर की मदद और हमारे पिता की प्रार्थनाओं से। तो फरि, आइए हम में से हर कोई अपना-अपना काम संभाले; कोई भी प्रभु का काम लापरवाही से न करे, और आलसी और बड़बड़ाने वालों पर घोषति दंड से डरे। प्रत्येक व्यक्तनियिम का पालन करते हुए अपना-अपना कार्य करे। जब काम करने का समय हो, तो काम करो; और जब वश्रिाम करने का समय हो, तो वश्रिाम करो; जब सोने का समय हो, तो सोएं; जब प्रार्थना का समय हो, तो शुद्धता के साथ प्रार्थना करें, रोएं और आँसू बहाएं, क्योंकहिमें रोने के लिए बुलाया गया है; और जब भोजन करने का समय हो, तो जो परोसा जाता है उसे कृतज्ञता से खाएं; जब बोलने का समय हो, तो बुद्धमिानी से बोलें: क्योंकपिरमेश्वर के वचन के अनुसार, हर बात का एक समय होता है। जो अपना समय इसी प्रकार व्यतीत करता है, वह सही मार्ग पर चलता है। प्रभु हमारा ईश्वर आपको ऐसे कर्मों और मनोभावों में स्थापति करे, मजबूत बनाए और बनाए रखे, उसके पवित्र नाम की महमिा के लिए।

२०२. अपनी इच्छा का त्याग करके, स्वयं को ईश्वर को बलदािन के रूप में अर्पति करें: सभी बातों में सदैव ऐसे ही रहें, और ईश्वर की दया आप पर बनी रहेगी।

२०२. १) अपनी इच्छा का त्याग करके, स्वयं को ईश्वर को बलदािन के रूप में अर्पति करें: सभी बातों में सदैव ऐसे ही रहें, और ईश्वर की दया नश्चिति रूप से आपके साथ होगी। – 2) केवल सब कुछ शुद्ध रूप से, वनिम्रता से और ईश्वर के भय से करें। – 3) सद्गुणों में धनी बनें, प्रत्येक व्यक्तअिपनी-अपनी प्रतभिा के अनुसार: क्योंकसिब कुछ सभी को नहीं दयिा गया है, लेकनि हम सभी सभी चीजों के फलों में सहभागी होते हैं, क्योंकहिम सभी एक ही शरीर हैं। [31, 38]

४. मैं प्रार्थना करता हूँ कआिप उन आशीषों को प्राप्त करें जनिकी आप आशा करते हैं, और अपनी आज्ञाकारति के द्वारा परमेश्वर के लिए एक फलदायी और मनभावन बलदािन बनें: क्योंक,ि अपनी इच्छा को मारेकर, आप लगातार स्वयं को बलदािन के रूप में अर्पति करते हैं और इसे प्रभु परमेश्वर के लिए एक सुगंधति भेंट के रूप में आध्यात्मकि वेदी पर चढ़ाते हैं। मैं दैवीय उत्साह से क्यों जलता हूँ? आपकी भेंट और सेवा नर्दिोष, दोषरहति और परमेश्वर की अनुग्रहकारी कृपा से वंचति न हो। – यह तब होगा जब आप उत्साही, धैर्यवान और प्रार्थना, नम्रता, , पश्चाताप, धर्मपरायणता, आत्म-संयम में, वरिोधयिों के खलिाफ संघर्ष में और उन पर वजिय प्राप्त करने में दृढ़ रहेंगे। – मैं आपसे वनिती करता हूँ, अतःऐसे बने रहें, और धीरज रखें, सदाचार के मार्ग पर दौड़ें और चलें, लड़ें और वजिय प्राप्त करें – और आप स्वर्गीय मुकुट प्राप्त करेंगे।

५. व्यर्थ में न दौड़ो और न व्यर्थ में परश्रिम करो, परन्तु सावधान रहो ककिहीं तुम ठोकर न खाओ, और लापरवाही या छोटी-छोटी चूकों में थोड़ी सी भी लप्तिता तुम्हारी ऊँची आशा को व्यर्थ न करे, और अंततःतुम्हारे गुणों के आत्मकि घर को नष्ट न करे। इसलिए, जैसे आप शुद्ध हैं, सभी कार्य शुद्ध प्रभु के लिए शुद्धता से करें; सभी चीज़ों को नम्रता से प्रभु को अर्पति करें, जो घमण्डी लोगों का वरिोध करते हैं; जो कुछ भी नर्दिोष और नष्कििलंक है, उसे वधू-वर मसीह को समर्पति करें। *"'तुम्हारा वचन हमेशा नमक से मसालेदार कृपा सहति हो, ताकतिुम जान सको कतिुम्हें हर एक को कैसे उत्तर देना चाहिए'* (कुलुस्सयिों 4:6); तुम्हारा चरत्रि दया से सुसज्जति हो, ताकयिह नकिट आने वालों के लिए आशीष बन सके; तुम्हारी चाल-ढाल, तुम्हारा आचरण और तुम्हारी बातचीत, मानो परमेश्वर द्वारा

निर्देशित हों, तुम्हें देखने वालों के लिए शिक्षाप्रद हों। मैं कामना करता हूँ कि आप सभी, मेरे जैसे नहीं—क्योंकि मैं अशुद्ध और मूर्ख हूँ—बल्कि हमारे पवित्र पिताओं जैसे हों: जैसे अक्काकियोस, जैसे डोसिथिओस, जैसे अबा किरि, जैसे एंटिओकस, जैसे पेट्रोनियस, और फिर, जैसे यूथिमीयस और सव्वस—मैं जोड़ूँगा—और जैसे महान एंथनी।

6. इसलिए, सद्गुणों से स्वयं को समृद्ध करो; तुम्हें दिए गए अनुग्रह से अपनी कोष-गृह को आँसुओं, पश्चाताप, दीर्घ-सहनशीलता, परिश्रम और दुख से भर लो: क्योंकि एक व्यक्ति के पास एक चीज़ होती है, दूसरे के पास दूसरी, स्वभाव से और ईश्वर की देन से। और यदि आप एक क्षेत्र में उत्कृष्ट हैं, जबकि दूसरे में अपने पड़ोसी से पीछे हैं, तो शोक या ईर्ष्या न करें: *'क्योंकि परमेश्वर ने प्रत्येक को विश्वास का एक-एक भाग दिया है'*, और ऐसा ही है। इसके अलावा, कोई भी किसी चीज़ से वंचित नहीं है: क्योंकि आप सभी संख्या में कई होने पर भी एक ही शरीर हैं, और आपके सद्गुण ईश्वर की असीम दया से एक से दूसरे में और वापस जाते हैं, जो हम में से प्रत्येक को सभी के रूप में और सभी को प्रत्येक के रूप में देखता है।

203. मैं तुम्हारी प्रशंसा करता हूँ कि तुमने सब कुछ पीछे छोड़ दिया और स्वेच्छा से संकीर्ण मार्ग का अनुसरण किया

203. 1) मैं तुम्हें सब कुछ पीछे छोड़कर स्वेच्छा से संकीर्ण मार्ग पर चलने के लिए बधाई देता हूँ। – 2) इसमें आनंदित हो; क्योंकि पुरस्कार महान है। – 3) यह जानते हुए, हमारे जीवन के नियमों के अनुसार, जो कुछ भी सहना आवश्यक हो, उसे विनम्रता से सहन करने का साहस करो। [31, 39]

7. मैं तुम्हारी हमारे नियमों के प्रति निष्ठा और हमारे प्राचीन पितरों के पदचिन्हों पर धैर्यपूर्वक चलने के लिए परमेश्वर और मनुष्यों के सामने प्रशंसा करता हूँ। ईश्वर की शक्ति से और हमारे पिता की प्रार्थनाओं के मध्यस्थता द्वारा, आप जीवन के सर्वोत्तम को अपनाने में सक्षम हुए हैं; और, एक होकर, आप सभी और हर चीज़ से अलग एक जीवन जीते हैं, आपने देह और रक्त का परित्याग किया है और ईश्वर द्वारा ऊपर से नए सिरे से जन्म लिया है। – इस प्रकार, जीवित रहते हुए भी आप आत्मा में मर चुके हैं; और देह में निवास करते हुए भी, आप देह से परे की बातों के लिए प्रयत्न करते हैं। अपने माता-पिता के प्रति प्रेम ने आपको पीछे नहीं रोका, और न ही अब रोकता है; घर और मातृभूमि अब आपकी चिंता का विषय नहीं रहे, और प्रेरित के वचन आप में पूरे हुए हैं: *'हमारी नागरिकता स्वर्ग में है'* (फिलि. 3:20)। इसके अलावा, आप दुख सहते हैं, दिन-रात कष्ट झेलते हैं, उपवास करते हैं, जागते हैं, स्वयं को शुद्ध रखते हैं, शरीर को वश में करते हैं, और अपनी इच्छाओं को काबू करने के लिए संघर्ष करते हैं। यह संकीर्ण मार्ग है जो जीवन की ओर ले जाता है, जिस पर कुछ ही चलते हैं, जबकि बहुत से लोग चौड़े और विशाल मार्ग पर दौड़ते हैं जो विनाश की ओर ले जाता है।

८. इसलिए आनन्दित हो, आनन्दित और हर्षित रहो, क्योंकि स्वर्ग में तुम्हारे लिए एक बड़ा प्रतिफल संचित है। क्योंकि यदि, अन्त तक आज्ञाकारिता में स्थिर रहकर, तुम उस अनुपम प्रकाश को प्राप्त करते हो, तो इससे अधिक इच्छनीय और क्या हो सकता है? यदि आपको स्वर्गदूतों के साथ निवास करने के लिए योग्य ठहराया जाता है, तो इससे अधिक धन्य और क्या हो सकता है? यदि आप स्वर्ग के निवासी बन जाते हैं, जहाँ अक्षयता और अनंत आशीर्वादों की प्रचुरता है, जहाँ पानी अनंत जीवन में बहता है—तो इससे अधिक अद्भुत और चमत्कारिक और क्या हो सकता है? यदि आप सभी धर्मी लोगों के साथ, सूर्य के समान दीप्तिमान होकर, मसीह के सह-वारिस के रूप में प्रकट होते हैं, तो इससे अधिक भव्य और क्या हो सकता है? यदि, हमारे परमेश्वर मसीह के भयानक सिंहासन के सामने सारी सृष्टि के एकत्र होने पर, जब वह अनगिनत स्वर्गदूतों के दल के साथ महिमा में खुले तौर पर आते हैं, और जब कुछ लोग सुनते हैं: *'आओ, हे धन्य लोग,'* जबकि अन्य सुनते हैं: *'दूर हो जाओ, हे श्रापित'*, और आप पहले वालों में पाए जाते हैं – उस क्षण आपकी आनंद और परमानंद की तुलना क्या हो सकती है?

९. इसी कारण मैं आप से विनती करता हूँ: आइए हम वर्तमान सभी कष्टों को वीरता से सहें; आइए हम साहसपूर्वक देह के युद्धों का सामना करें, और जब हमारे अंगों में वासना की आग भड़क उठे तो उसे बुझा दें; आओ हम धैर्यपूर्वक जागरण, उपवास, आज्ञाकारिता और शारीरिक श्रम के कष्टों को सहन करें; आओ हम स्वेच्छा से अपनी इच्छाओं को वश में करें, और नम्रतापूर्वक अपने भाइयों के अपमान को सहन करें; आओ हम भजन-गायन और प्रार्थना के दौरान कलीसिया की सभाओं में श्रद्धापूर्वक दृढ़ता से खड़े रहें; आओ हम एक भिखारी के वस्त्रों और जूतों से संतुष्ट रहें; आओ हम मानवीय महिमा से प्रेम न करें; हम अपने क्रोध को शांत करेंगे, निराशा और सुस्ती को दूर भगाएंगे, आत्मा की प्रवृत्तियों को नियंत्रित करेंगे, और अपनी बकबक करने वाली जीभों को चुप कराएंगे, उन्हें केवल आवश्यक और उपयोगी बातें बोलने का प्रशिक्षण देंगे - और सर्व-द्रष्टा ईश्वर की उपस्थिति में एक व्यक्ति के लिए जैसा उचित है, वैसा ही सब कुछ करेंगे। – इन सबके ऊपर, हमारे प्रभु , हमारे परमेश्वर, जो सामर्थी और

शक्तिशाली हैं, और अपने पवित्रों में अद्भुत हैं, हमारे पिता की प्रार्थनाओं के द्वारा, हमें एक ही आत्मा और एक ही हृदय दें, और एक ही आत्मा के द्वारा हमें अपने साम्हने निर्दोष बनाए रखें।

204. हर उस चीज़ से दूर रहें जो अशुद्ध इच्छा को जगा सकती है, और सभी अप्रिय बातों को सहन करें: क्योंकि इसका पुरस्कार महान है

२०४. १) हर उस चीज़ से दूर रहो जो अशुद्ध इच्छा को जगा सकती है, और जो कुछ भी अप्रिय हो उसे सहन करो: क्योंकि पुरस्कार महान है। – २) सांसारिक लोग अहंकार की सेवा करते हुए कितना कुछ सहन करते हैं? हम, हालाँकि, राज्य के लिए परमेश्वर की सेवा करते हैं: तो फिर हम इस मार्ग पर हम पर आने वाली हर चीज़ को सहन करने में कैसे चूक सकते हैं? [३२, १]

10. मैं आप में से प्रत्येक को व्यक्तिगत रूप से देखना चाहूँगा, और यदि संभव हो तो आप में से प्रत्येक से बात करना चाहूँगा, क्योंकि मैं आपकी मुक्ति के लिए चिंतित हूँ। लेकिन चूँकि वर्तमान में हो रहे उत्पीड़न के कारण मुझे ऐसा करने की अनुमति नहीं है, मैं आप सभी से लिखित रूप में अनुरोध करता हूँ – जो यहाँ हैं और जो विशेष रूप से बिखरे हुए हैं, उन दोनों से – कि आप अधिक संयम का अभ्यास करें, और स्वयं को केवल वही करने की अनुमति दें जो आज्ञा दी गई है, विशेष रूप से एक-दूसरे के साथ अपने व्यवहार में अभद्रता; बच्चों के साथ व्यर्थ की बातों में न उलझो, और महिलाओं के साथ तो और भी कम; परन्तु यदि उन्हें देखने या उनसे बात करने की आवश्यकता हो, तो अत्यन्त सावधानी से ऐसा करो: अपना मन अपने काम पर लगाओ, और अपनी दृष्टि नीची रखो। क्योंकि धर्मशास्त्र कहता है: *'कुमारियों पर दृष्टि नि डालो; जो गाते हैं, उनके संग न मिलो'* (सीर. 9:5, 4)। लेकिन, यह ध्यान में रखते हुए कि ईश्वर सर्वव्यापी है और आपके हर हरकत और कार्य—शारीरिक और आध्यात्मिक दोनों—पर नज़र रखता है, आप जहाँ भी जाएँ, उसी के अनुसार आचरण करें, उत्पीड़न से उत्पन्न होने वाली सभी कठिनाइयों को आपके धैर्य के लिए आरक्षित इनाम की आशा में कृतज्ञता के साथ सहन करें। *'क्योंकि परमेश्वर अनुग्रह-विहीन नहीं है; वह आपके काम और उस प्रेम की मेहनत को नहीं भूलेगा जो आपने उसके नाम के लिए दिखाई है'* (इब्रानियों 6:10), आपके त्याग के पहले दिन से ही, जब आपने संसार और सभी सांसारिक चीजों को छोड़ दिया: माता-पिता, बच्चे और भाई, रिश्तेदार और मातृभूमि, और यहाँ तक कि अपने शरीर को भी आज्ञाकारिता के बोझ के अधीन कर दिया। – आपकी पुकार कितनी महान है! उससे भी कितनी अधिक महान वह पुरस्कार है जो आपका इंतजार कर रहा है!

11. क्या तुम संसार में रहने वालों को नहीं देखते, कि वे कैसे कुचले जाते हैं और कष्ट सहते हैं: कुछ, कृषि में लगे हुए और सार्वजनिक करों और मांगों के अधीन, ताकि उनके पास स्वयं जीवन-यापन के लिए मुश्किल से ही कुछ बचता है; अन्य, भूमि पर या समुद्र में सैन्य सेवा में प्रवेश करते हैं, जहाँ वे हमला करते हैं और उन पर हमला किया जाता है, प्रहार करते हैं और उन पर प्रहार किया जाता है। परन्तु हम, इन सब से मुक्त होकर, एक जीवते और सच्चे परमेश्वर की सेवा करने का सौभाग्य प्राप्त करते हैं। क्या यह हमारे लिए सांत्वना, कृतज्ञता और आनंद के स्रोत के रूप में पर्याप्त नहीं है? – क्योंकि यदि हम सावधानी से जिएँ, सभी चीजों को ठीक से और उचित क्रम में करें, उन शारीरिक इच्छाओं से परहेज़ करें जो आत्मा के विरुद्ध युद्ध करती हैं, उनके हमलों को तुरंत खारिज करें और आत्मा की पवित्रता को बनाए रखें, तो निस्संदेह हमें शाश्वत आशीर्वादों के योग्य माना जाएगा।

२०५. मीटफेयर सप्ताह के दौरान, हमें अनुशासनहीनता के आगे नहीं झुकना चाहिए, बल्कि हम जो सुसमाचार पढ़ रहे हैं, उसमें और गहराई से उतरना चाहिए, और तदनुसार अधिक पवित्र जीवन जीने का संकल्प लेना चाहिए, ताकि हम स्वर्ग के राज्य के वारिस बन सकें।

205. मीटफेयर सप्ताह के दौरान, किसी को भी अतिशय में नहीं पड़ना चाहिए, बल्कि पढ़ी जाने वाली सुसमाचार में और गहराई से उतरना चाहिए, और उसी के अनुसार अधिक पवित्र जीवन जीने का संकल्प लेना चाहिए, ताकि हम स्वर्ग के राज्य के वारिस बन सकें। [32, 2] विश्वासियों के बीच यह एक आम प्रथा है कि, इस दिन (मीटफेयर संडे) को, आम लोगों को मांस से अपना उपवास शुरू करना चाहिए। लेकिन हम क्या देखते हैं? हम देखते हैं कि वे अब बेरोकटोक मांस खाने और शराब पीने में लिप्त हो जाते हैं, साथ ही वे विभिन्न खेलों और मनोरंजन में भी शामिल होते हैं जिनके बारे में *'बोलना या लिखना भी उचित नहीं है'*। उन्हें जो परोसा जाता है, उसे संयम से ग्रहण करना चाहिए, प्रभु का धन्यवाद करते हुए, और साथ ही आगे आने वाली सभी चीजों में कठोर संयम के लिए तैयारी करनी चाहिए; फिर भी वे, शैतान के प्रलोभनों का पालन करते हुए, बिल्कुल विपरीत करते हैं। – मैं आपको बताऊँगा, कि हम संन्यासियों को मन में भी वहाँ नहीं जाना चाहिए, न ही वे जो लालच करते हैं, उसकी लालसा करनी चाहिए, क्योंकि ऐसी इच्छाएँ हमारे योग्य नहीं हैं, बल्कि हर प्रकार की निंदा और घृणा की पात्र हैं। – इसके विपरीत, आइए हम स्वयं को और भी अधिक

ध्यान और चिंतन के लिए समर्पित करें, जो अभी पढ़ी जा रही सुसमाचार पर है, हमारे प्रभु यीशु मसीह के दूसरे आगमन के महान और भयानक दिन के बारे में, जब वह, सबसे धर्मी न्यायाधीश के रूप में, भेड़ों को अपने दाहिने हाथ पर और बकरियों को अपने बाएं हाथ पर रखेंगे; और अपने दाहिने हाथ वालों के लिए वह उस धन्य और प्रतीक्षित आह्वान की घोषणा करेंगे: *'आओ, हे मेरे पिता द्वारा धन्य किए हुए: संसार की नींव के समय से तुम्हारे लिए तैयार किए गए राज्य को अपना उत्तराधिकार के रूप में प्राप्त करो'*; जबकि बाईं ओर खड़े लोगों के लिए वह वह कड़वी और विनाशकारी न्याय घोषणा करेंगे: *'मेरे से दूर हो जाओ, तुम शापित लोग, उस अनंत आग में जो शैतान और उसके स्वर्गदूतों के लिए तैयार की गई है'* (मत्ती 25:34, 41)। इस न्याय पर मनन करते हुए, जो हमें भय, कांपना और आतंक से भर देता है, यह हमारा और उनका भी दायित्व है कि हम आँसुओं के साथ गिर पड़ें और दयालु परमेश्वर से विनती करें, इससे पहले कि वह घड़ी आ जाए जब हमें वास्तविकता में वह अनुभव करना होगा जो हमने सुना है। – जबकि वे लोग अपनी मनमर्जी से अपना जीवन जीते हैं, हमें, जो सुसमाचार के उपदेशों को सुनकर होश में आ गए हैं, अपने हृदय में बड़े भय और कंपकंपी के साथ अपने प्रभु की सेवा करने का संकल्प लेना चाहिए, अपनी आत्मा से हर बुराई को दूर करके और उसकी जगह एक स्वभाव से भरना चाहिए उदारता, दया, नम्रता, सौम्यता, धैर्य और हर दूसरी अच्छी और प्रशंसनीय गुणों का खजाना, ताकि मसीह के सुसमाचार के योग्य जीवन जीकर, हम हमारे प्रभु मसीह यीशु में स्वर्ग के राज्य का वारिस होने के योग्य ठहरे।

206. यद्यपि हम हमेशा उपवास की अवस्था में रहते हैं, फिर भी हर किसी को आने वाले उपवास के दौरान कुछ अतिरिक्त प्रयास करना चाहिए।

206. यद्यपि हम हमेशा उपवास की अवस्था में रहते हैं, फिर भी आने वाले उपवास के दौरान प्रत्येक व्यक्ति कुछ अतिरिक्त प्रयास करे। सबसे बढ़कर, विश्वास का ढाल और उद्धार का टोप पहन लो। [32:3] हम अपने पश्चाताप को दिन-प्रतिदिन टालते न रहें, जैसा कि शत्रु हमें सिखाता है: *'न जाने आने वाला दिन क्या लाएगा'* (नीतिवचन 3:28)। – पवित्र लेंट के सबसे प्रतीक्षित दिन पहले ही आ चुके हैं, जो अपने साथ उपवास का उपहार लाते हैं। – हमारे प्रभु ने ठीक इसी अवधि तक उपवास किया, और इस प्रकार उन प्रलोभक को परास्त किया जिसने इन हथियारों से उन्हें भटकाने का प्रयास किया था। हम, हालांकि, ऐसे नहीं हैं; बल्कि हम अपने जीवन का हर दिन उपवास में बिताते हैं: क्योंकि हमारे पास कोई भव्य मांस व्यंजन नहीं हैं; हम सुबह-सुबह शराब पीने के लिए नहीं भागते; हम यह खोजने नहीं निकलते कि भोज कहाँ आयोजित किए जाते हैं; हम हाथीदांत के बिस्तरों पर नहीं सोते; हम अपनी माताओं का दूध पीने वाले बकरियों के बच्चों का मांस नहीं खाते; हम स्पार्कलिंग वाइन नहीं पीते – ये वे चीजें हैं जिन्हें वाक्पटु यशायाह दुनिया की नजर में बुद्धिमान लोगों से जोड़ते हैं। ऐसी सभी चीजें धर्मनिष्ठ लोगों से बहुत दूर हैं, और हमारी ईमानदार सामुदायिक संन्यासी जीवन-शैली से तो और भी अधिक। हमारे पास बस कुछ ही साधारण व्यंजन हैं, और आत्मा को पागलपन की हद तक परेशान करने वाली कोई और चीज़ नहीं है: केवल रोटी, और वह भी संयम से, और कुछ शाकाहारी व्यंजन, और उनमें से भी केवल थोड़े से। इसलिए हम सबसे पवित्र लेंट से निराश नहीं होंगे, क्योंकि इसका भोजन हमारे अन्य दिनों के भोजन के लगभग समान ही है। फिर भी, हम में से प्रत्येक अपने लेंट के एक या दूसरे सद्गुण में थोड़ा और जोड़ें: भक्ति में, सिलाई करते समय एकांत; आज्ञाकारिता में, अडिगता; मौन में, सहनशीलता; भजन-गायन में, शांत सामंजस्य। एक व्यक्ति अधिक उत्साह के साथ कार्य में संलग्न हो; दूसरा समयोचित कार्यों से अपनी मौनता को सुशोभित करे; तीसरा दुखी भाइयों के लिए आनंद और सांत्वना का स्रोत बने: क्योंकि यदि कोई वक्ता अपने भाई के दिल के दर्द को शांत करता है तो उसकी बहुत प्रशंसा होती है; कोई और अपनी प्रार्थनाओं, या अपनी सेवा, या अपनी आवश्यक व्यवस्थाओं को बढ़ाए; और सामान्य रूप से, कोई भी आलसी या बेकाम न रहे। यदि कोई थोड़ा ही योगदान दे, तो भी यदि वह उत्साह से किया जाए तो वह परमेश्वर को प्रसन्न करेगा, जैसा कि विधवा के दो पैसा ने दिखाया; प्रहरियों में, भजन गाने में, और हर प्रकार की भक्ति में भी यत्न करो। इन सब के ऊपर विश्वास का ढाल उठा लो, ताकि तुम शैतान की युक्तियों के विरुद्ध दृढ़ता से खड़े रह सको और दुष्ट के सभी अग्निबाण बुझा सको – और हमारे प्रभु यीशु मसीह में स्थिर होकर, अपने सिर पर उद्धार का कवच पहन लो।

207. एक व्यक्ति नियम के अनुसार एक बात का पालन करता है, दूसरा दूसरी बात का; परन्तु यह सभी के लिए समान हो: अपनी इच्छा से कुछ भी न करना, और इस बात का ध्यान रखना कि शत्रु अपने विचारों के द्वारा प्रवेश न कर पाए, और हर अच्छे काम में बिना किसी बाधा के तरक्की करना

207. एक नियम के अनुसार एक काम करता है, दूसरा दूसरा काम करता है; परन्तु यह सभी के लिए समान हो: अपनी इच्छा से कुछ भी न करना, और चौकस रहना, ताकि शत्रु अपने विचारों के द्वारा प्रवेश न कर पाए, और हर

भले काम में बिना किसी बाधा के फलें-फूलें। [32, 4] हमारे कृपालु ईश्वर, जो हमें जीवन देते हैं और वर्ष-दर-वर्ष इस जीवन के मार्ग पर हमारा मार्गदर्शन करते हैं, ने मानवजाति के प्रति अपने प्रेम में, हमें उपवास के इस वर्तमान मौसम में लाया है, जिसके दौरान प्रत्येक उत्साही, जैसा कि कहा गया है, अपनी इच्छा से अपने तपस्या के प्रयासों को बढ़ाता है: संयम के प्रति उत्साही दो या तीन दिनों तक उपवास करते हैं; जो जागरण के लिए उत्सुक हैं, वे इतनी और इतनी देर तक जागरण करते हैं; जो प्रणाम का अभ्यास करते हैं, वे अब उन्हें बड़ी संख्या में करते हैं; अन्य लोग अन्य तपस्या संबंधी अभ्यासों के साथ भी ऐसा ही करते हैं; और, सरल शब्दों में कहें तो, इन दिनों हर किसी में उनके तपस्या संबंधी प्रयासों में महान उत्साह और लगन देखी जा सकती है। लेकिन सच्चा संन्यासी, जो हमेशा आज्ञाकारिता के नियम के अनुसार कार्य करता है, तपस्या की उसी पद्धति को केवल कुछ समय के लिए ही नहीं, बल्कि हर समय बनाए रखता है। यह क्या है? यह अपनी इच्छा के अनुसार चलना नहीं है, बल्कि अपने कार्यों में अपने आध्यात्मिक पिता के निर्देशन में चलना है: यह सभी धर्मपरायण प्रथाओं में सबसे ऊँच है, और यह शहीद की मुकुट-माला लाता है। इस प्रकार उत्साही लोग करते हैं। इसके अलावा, कौन नहीं जानता कि, प्राचीन परंपरा के अनुसार, इस उपवास के नियमों में सभी के लिए आहार में परिवर्तन, प्रणामों में वृद्धि, और भजनों की अधिक संख्या शामिल है? अत; मैं आपसे विनती करता हूँ, आइए हम उपवास के उपहार को आनंदपूर्वक स्वीकार करें, और इसे भौंहें चढ़ाकर नहीं बल्कि प्रसन्न मुख से, सौम्यता से, बिना निंदा के, बिना क्रोध के, बिना कपट के, बिना ईर्ष्या के, और सबसे बढ़कर एक-दूसरे के प्रति शांति और प्रेम में, नम्रता में, आज्ञाकारिता में, और दया तथा पुण्य कार्यों के संवर्धन के साथ पालन करें। सबसे बढ़कर, हमें अपने विचारों की गतिविधियों पर एक चौकस नज़र रखनी चाहिए, ताकि हम वासनाओं के लिए दरवाज़ा न खोलें और शैतान को अंदर न आने दें, जैसा कि धर्मग्रंथ सिखाता है, यह कहते हुए: *'यदि शासक की आत्मा तुम्हारे विरुद्ध उठे, तो अपनी जगह न छोड़ना'* (सभोपदेशक 10:4): क्योंकि शत्रु में विचार उत्पन्न करने की शक्ति तो है, परन्तु प्रवेश करने की शक्ति नहीं है। हम अपने आप के स्वामी हैं; यदि हम द्वार न खोलें, तो वह प्रवेश नहीं कर सकता। इसलिए आओ, हम अपने आत्मा की, जो मसीह की वधू है, रक्षा करें और इसे विचारों के तीरों से अक्षुण्ण रखें; क्योंकि इसी द्वारा हम पवित्र आत्मा का निवासस्थान बन सकते हैं, और यह सुनने के योग्य ठहरें: *'धन्य हैं शुद्ध हृदय वाले, क्योंकि वे परमेश्वर को देखेंगे'* (मत्ती 5:8)। और सामान्य रूप से, *'जो कुछ भी सत्य है, जो कुछ भी सम्माननीय है, जो कुछ भी न्यायसंगत है, जो कुछ भी पवित्र है, जो कुछ भी मनोहर है, जो कुछ भी प्रशंसनीय है—यदि कोई सद्गुण है, और यदि कोई प्रशंसा है'*, – मैं प्रेरित के शब्दों में कहता हूँ – *"इन बातों पर विचार करो और इन्हें अभ्यास करो, और शान्ति का परमेश्वर तुम्हारे साथ रहेगा"* (फिलि. 4:8–9)।

208. लेंट के प्रयास अभ्यास, धैर्य और दृढ़ता से आसान हो जाते हैं; लेकिन सबसे बढ़कर चिंतन से, जिसके द्वारा ऐसे चिंतन के विषय प्रकट होते हैं

208. लेंट की कठिनाइयाँ आदत, धैर्य और दृढ़ता से आसान हो जाती हैं; लेकिन सबसे बढ़कर ईश्वर के चिंतन से, जिसके द्वारा ऐसी कठिनाइयों के उद्देश्य प्रकट होते हैं। [32, 5] जैसे हर शुरुआत कठिन होती है, वैसे ही उपवास की शुरुआत भी, आहार और हमारी गतिविधियों के उद्देश्यों में बदलाव के कारण, एक निश्चित असुविधा और कठिनाई का सामना करती है; लेकिन इसे बनाए रखने में धैर्य और दृढ़ता के माध्यम से, ये कम और शांत हो जाते हैं, जैसा कि लिखा है: *'कोई अनुशासन* (प्रशिक्षण) *उस समय आनंद का कारण नहीं लगता, बल्कि दुख का; फिर भी बाद में यह उन लोगों को धार्मिकता का शांतिपूर्ण फल देता है जिन्हें इससे प्रशिक्षित किया गया है'* (इब्रानियों 12:11)। इसलिए, उपवास का एक सप्ताह करने के योग्य समझे जाने और उसमें पहले ही कुछ अनुभव प्राप्त कर लेने के बाद, हमें इसे जारी रखने में और भी अधिक उत्साही होना चाहिए, यह जानते हुए कि यह उत्साह आत्मा और शरीर दोनों को मजबूत करता है, जबकि इसके विपरीत, आलस्य हल्के को भारी और आसान को कठिन बना देता है। हालाँकि, हमें अपने प्रयासों में अतिशय परिश्रम नहीं करना चाहिए, ताकि हम अपनी आध्यात्मिक भलाई और शारीरिक स्वास्थ्य दोनों को सफलतापूर्वक बनाए रख सकें। क्योंकि शुरुआत में तेज़ी से आगे बढ़ने का क्या फायदा, अगर बाद में पूरी तरह से कमजोर होकर रुक जाना पड़े? यात्रा के अंत तक शेष दूरी को ध्यान में रखते हुए, विवेक और संयम के साथ प्रयास करना बेहतर है। क्योंकि श्रम और एकाग्रता में पूरे दिन का प्रयास आमतौर पर कुछ आराम की आवश्यकता को जन्म देता है; आइए हम (अपने काम के दौरान और उसके समापन पर दोनों ही समय) आत्मा को ईश्वरीय विचारों और आध्यात्मिक चिंतन से पोषित करें, सांसारिक और व्यर्थ चीजों पर ध्यान न लगाकर—जो कष्टप्रद और कड़वी हैं—बल्कि स्वर्गीय चीजों पर, जो मीठी और आनंददायक हैं। *जैसा कि* भजन संहिता में गाया गया है, *'मैंने परमेश्वर को स्मरण किया, और मैं आनन्दित हुआ'* (भजन संहिता 76:4)। क्योंकि हमारे मन ईश्वर की ओर, स्वर्गीय चिंतन की ओर, स्वर्ग की सुंदरताओं की ओर, शाश्वत निवासों की ओर, स्वर्गदूतों की सभाओं की ओर, और वहाँ हमारी प्रवासन

की ओर—उस स्थान की ओर जहाँ अब धर्मी और पापी आत्माएँ निवास करती हैं—मुड़े हुए हैं, जब हमारे प्रभु यीशु मसीह का प्रकट होना होगा, जब, ईश्वर के वचन के अनुसार, आकाश लुप्त हो जाएँगे, तत्त्व विघटित हो जाते हैं, और पृथ्वी और उस पर जो कुछ भी है, वह जलकर भस्म हो जाता है – आत्मा फिर से अपने शरीर को कैसे धारण करेगी – आदम से लेकर युग के अंत तक लोगों का वह समागम कैसा होगा; प्रभु मसीह का मुख कैसा होगा, जो सूर्य से भी अधिक तेजस्वी, रूपांतरित और भव्य होगा; – हम उनकी कौन सी आवाज़ सुनेंगे, – और अंत में, अंतिम न्याय कैसा होगा, जो धर्मी लोगों को स्वर्ग के राज्य में बुलाएगा, जबकि दुष्टों को अनंत यातना में डाल देगा। – यही वह है जिस पर हमें मनन करना चाहिए और चिंतित होना चाहिए, और जिस पर हमें अपना मन केंद्रित करना चाहिए, एक ऐसे व्यक्ति के रूप में जो संसार से परे है और जिनका मांस के अनुसार जीने वालों से कोई लेना-देना नहीं है – और इन चिंतन-मनन से पश्चाताप और आँसुओं तक पहुँचना है, और प्रबुद्ध होना है, यह सीखते हुए कि भविष्य के अनंत आशीर्वादों के योग्य समझे जाने की आशा में यहाँ अपना जीवन शांति और प्रसन्नता से जिएँ।

209. सबसे पहले और सबसे महत्वपूर्ण, हमें ईश्वर का धन्यवाद करना चाहिए – हमारे अस्तित्व के लिए, पवित्र बपतिस्मा के माध्यम से ईश्वर की संतान के रूप में हमारे गोद लिए जाने के लिए, मठवासी जीवन के लिए, और मूर्तिभंजकों के सामने हमारे साक्ष्य के लिए

209. 1) सबसे पहले और सबसे महत्वपूर्ण, ईश्वर का धन्यवाद करना चाहिए – अस्तित्व के लिए, पवित्र बपतिस्मा के माध्यम से ईश्वर के बच्चे के रूप में गोद लिए जाने के लिए, मठवासी जीवन के लिए, प्रतिमा-भंजकों के सामने गवाही देने के लिए। – 2) और विश्वास के लिए, जिससे सभी चीजें उत्पन्न होती हैं, और जो विभिन्न स्तरों पर प्रकट होता है, फिर भी गरीबी और अज्ञानता के बावजूद सभी के लिए सुलभ है। [32, 6]

12. परमेश्वर ने हमें कई ऐसे गुण दिखाए हैं जो उद्धार के कार्य में हमारी सहायता करते हैं; उनमें से एक प्रमुख है धन्यवाद। प्रेरित पौलुस कहते हैं: *'सबसे पहले, मैं तुम सब के लिए यीशु मसीह के द्वारा अपने परमेश्वर का धन्यवाद करता हूँ, क्योंकि तुम्हारा विश्वास सारी दुनिया में प्रचारित हो गया है'* (रोमियों 1:8)। और हर जगह उन्हें हर बात के लिए परमेश्वर का धन्यवाद करते हुए देखा जाता है। पर जैसे उन्होंने स्वयं हर बात के लिए धन्यवाद दिया, वैसे ही उन्होंने सभी को आज्ञा दी: *'हर परिस्थिति में धन्यवाद करो'*; और कहीं ऐसा न सोचे कि यह केवल उनकी अपनी अच्छी सलाह थी, इसलिए उन्होंने यह भी जोड़ दिया: *'क्योंकि मसीह यीशु में परमेश्वर की यही इच्छा है'* (1 थिस्स. 5:18)। *द लैडर* में यह भी कहा गया है कि प्रार्थना में हर चीज़ से पहले धन्यवाद होना चाहिए: वह कहते हैं, 'सबसे पहले, आइए हम अपनी प्रार्थना के पटरे पर ईश्वर को हार्दिक धन्यवाद अंकित करें।' प्रार्थना में इसके बाद क्या आना चाहिए, यह बताने के बाद, संत जॉन क्लाइमक्स निष्कर्ष निकालते हैं: 'प्रार्थना का यह रूप प्रभु के स्वर्गदूत द्वारा भाइयों में से एक को दिखाया गया था' (सीढ़ी 28, अध्याय 7)। अतः हम परमेश्वर का धन्यवाद करें, सबसे पहले हमें अस्तित्व में लाने के लिए, *'हमें भले कामों के लिए बनाया जो उसने पहले से तैयार किए थे, ताकि हम उनमें चलें'* (इफिसियों 2:10)। आइए हम उन्हें धन्यवाद दें कि उन्होंने हमें पवित्र बपतिस्मा के द्वारा पुत्रों के रूप में गोद लिया है, जैसा कि सुसमाचार में कहा गया है: *'पर जितनों ने उसे ग्रहण किया, उन सब को परमेश्वर की संतान बनने का अधिकार दिया, अर्थात् उन लोगों को जो उसके नाम में विश्वास करते हैं, जो न तो लहू से उत्पन्न हुए, न शरीर की इच्छा से, न मनुष्य की इच्छा से, बल्कि परमेश्वर से उत्पन्न हुए'* (यूहन्ना 1:12-13)। आइए हम इस बात के लिए भी धन्यवाद दें कि उन्होंने हमें सबसे उत्तम मठवासी जीवन में प्रवेश दिया है, जिसकी उन्होंने अपने वचन में एक युवक से पहले ही भविष्यवाणी की थी: *'यदि तुम सिद्ध होना चाहते हो, तो जाओ, अपनी संपत्ति बेचकर गरीबों को दे दो; और आओ, अपना क्रूस उठाकर मेरा अनुसरण करो'* (मत्ती 19:21; मरकुस 10:21)। आइए हम इस बात के लिए भी धन्यवाद दें कि उन्होंने हमें आने वाले शहीदत्व (प्रतिमा-भंजन के संदर्भ में) में प्रवेश कराया है, हमें भटकने और विधर्मी भ्रांति में गिरने से रोका है: क्योंकि हम जानते और स्वीकार करते थे कि परमेश्वर का एकलौता पुत्र, देह धारण करके, देह के अनुसार चित्रित होता है, और उसका एक रूप है, और इसी रूप में उसकी उपासना होती है। कितने लोग सुसमाचार के बाहर, भ्रांति और अविश्वास में हैं? सुसमाचार को स्वीकार करने वालों में से कितने अन्य लोग हैं जो अपने विश्वास में भटक गए हैं और बर्बादी का शिकार हो गए हैं, ठीक उसी तरह जैसे मूर्ति-भंजक, जो यह स्वीकार नहीं करते कि मसीह को देह में चित्रित किया गया है और उसकी एक प्रतिमा है, और कि उसकी प्रतिमा की उपासना की जानी चाहिए, और इस प्रकार वे स्वयं को उसके अवतार के रहस्य के उद्धार से वंचित कर लेते हैं? – इस पर चिंतन करते हुए, हमारे पास प्रभु का हार्दिक धन्यवाद करने, पश्चाताप के साथ उनके सामने आने, पश्चाताप में आँसू बहाने, अपने आँसुओं के द्वारा प्रबुद्ध होने, और इस प्रबोधन के माध्यम से, अपने उद्धार के कार्य में फलने-फूलने का कारण है।

13. हम विश्वास के लिए, और हमारे पास मौजूद विश्वास की मात्रा के लिए परमेश्वर का धन्यवाद करें। क्योंकि विश्वास अपने आप में एक है, लेकिन, यह इस बात पर निर्भर करता है कि हम इसे किस हद तक अपनाते हैं, यह कभी-कभी महान और कभी-कभी छोटा होता है। इस प्रकार प्रभु पतरस से कहते हैं: *'हे अल्पविश्वासी, तू क्यों संदेह किया?'* (मत्ती 14:31)। अन्यत्र: *'हे स्त्री, तेरा विश्वास बड़ा है; जैसा तू चाहती है, वैसा ही तुझ पर हो'* (मत्ती 15:28)। और फिर: *'मुझे इस्राएल में भी ऐसा विश्वास नहीं मिला'* (मत्ती 8:10)। इस प्रकार, विश्वास कभी महान और कभी छोटा होता है। लेकिन कोई यह न कहे: 'मैं एक साधारण मनुष्य हूँ; मैं विश्वास को कैसे समझ सकता हूँ?' सर्व-सत्पुरुष ईश्वर अपनी कृपा की किरणें सभी तक पहुँचाता है। – प्रेरित क्या कहते हैं? *'भाइयो, अपनी बुलावा पर विचार करो: मनुष्य की दृष्टि में बहुत से बुद्धिमान, बहुत से शक्तिशाली, बहुत से कुलीन नहीं हैं; परन्तु परमेश्वर ने जगत की मूर्खता को चुन लिया है, ताकि वह बुद्धिमानों को लज्जित करे; और परमेश्वर ने जगत की दुर्बलता को चुन लिया है, ताकि वह सबल लोगों को लज्जित करे; और परमेश्वर ने जगत की नीचता और तुच्छ वस्तुओं को— और जो कुछ नहीं हैं— चुन लिया है, ताकि जो कुछ हैं, उन्हें शून्य कर दे'* (1 कुरिन्थियों 1:27, 28)। क्या आप नहीं देखते कि ये शब्द आप पर भी कैसे लागू होते हैं? क्या आपको हमारे धन्य भाई थदेयस याद नहीं आते, दूसरों का तो कहना ही क्या? क्या वह एक स्कैथियन नहीं था? क्या उसने लोगों का दास बनकर सेवा नहीं की? और क्या उसने दासत्व से मुक्त होने के बाद ही संन्यास जीवन में प्रवेश नहीं किया? – और फिर भी, उसने अपने पूर्व और वर्तमान दोनों साक्ष्यों में खुद को कैसे साबित किया? – चूँकि उसने अपने विश्वास को अपनाया और उसे भी उसने अपनाया, और उसे वैसे ही अपनाने के बाद जैसे उसे अपनाना चाहिए था, उसने खुद को एक सिद्ध मनुष्य साबित किया, और उसे शहीद होने के मुकुट से विभूषित होने के योग्य समझा गया, और अपने कष्टों के तीन दिन बाद इस जीवन से अगले जीवन में चला गया। – हम भी ऐसे ही बनें; हम अपनी अज्ञानता को बहाना न बनाएं, बल्कि अपने विश्वास को समझने और मजबूत करने का प्रयास करें। और ऐसा तब होगा जब हमारे विश्वास के साथ एक अच्छा जीवन भी होगा। क्योंकि प्रेम से युक्त विश्वास हमारे उद्धार का कारण बनता है। ये दोनों आत्मा के उद्धार का कारण बनते हैं; न तो केवल विश्वास बचाता है और न ही केवल प्रेम, बल्कि दोनों मिलकर, जब उनका पालन किया जाता है और उन्हें एक साथ रखा जाता है। काश हम भी ऐसे ही हों कि हम मसीह की पूर्णता तक पहुँच सकें, और सभी संतों के साथ, प्रतिज्ञा की गई शाश्वत आशीर्वादों के योग्य माने जाएँ।

210. निम्नलिखित उपवास का भार उठाने के लिए एक प्रेरणा के रूप में काम करें: इसके लाभकारी प्रभाव - हालाँकि, एक शांतिपूर्ण और प्रेमपूर्ण स्वभाव बनाए रखते हुए; और उन लोगों को दिए गए महान वादे जो इसके कठोर कार्यों को अपनाते हैं

210. उपवास का भार उठाने के लिए प्रेरणा के रूप में निम्नलिखित को लें: इसके लाभकारी प्रभाव – हालाँकि, एक शांतिपूर्ण और प्रेमपूर्ण स्वभाव बनाए रखते हुए; और उन लोगों के लिए महान वादे जो इसके श्रम को अपनाते हैं। [32, 7] उपवास अच्छा है यदि इसे करने के दौरान, कोई व्यक्ति एक शांतिपूर्ण, सौम्य, परोपकारी, आज्ञाकारी, विनम्र, दयालु मानसिकता और हर दूसरी अच्छी प्रवृत्ति बनाए रखता है। लेकिन शैतान उन लोगों में इसके विपरीत गुण डालने के लिए हर संभव उपाय रचता है, जो उपवास कर रहे हैं, ताकि वे अभद्र, क्रोधित, उग्र और घमंडी प्रतीत हों, और यह सुनिश्चित करे कि उपवास उनके लिए भलाई की बजाय अधिक हानि लाए... परन्तु हम, *'उसकी युक्तियों को न समझते हुए'* (2 कुरिन्थियों 2:11), शान्ति से, चुपचाप, नम्रता से और सुव्यवस्थित रूप से अपना आचरण करेंगे, *'प्रेम में एक दूसरे के प्रति सहनशील होकर'* (इफिसियों 4:2), यह जानते हुए कि यह परमेश्वर को भाता है। यदि, हालाँकि, आप में ऐसी प्रवृत्तियाँ नहीं हैं, तो भले ही आप अपनी लगाम को धनुष में बदल दें, बोरी का वस्त्र पहन लें और अपने सिर पर राख छिड़क लें, आप उसे प्रसन्न नहीं करेंगे। उपवास निश्चित रूप से शरीर को कष्ट देता है और मुरझाता है; लेकिन यह आत्मा को विकसित करता है और पोषित करता है; *'इसलिये हम हिम्मत नहीं हारते; यद्यपि हमारा बाहरी शरीर क्षीण हो रहा है, परन्तु हमारा भीतरी मन दिन-दिन नया होता जाता है। क्योंकि हमारी हल्की और क्षणिक क्लेश हमें महिमा का एक अनन्त भार प्रदान कर रही है, जो हर तुलना से परे है'* (2 कुरिन्थियों 4:16–17): ताकि, पुरस्कार की आशा में, हम सद्गुणों की कठिनाइयों को प्रसन्नतापूर्वक सहन कर सकें, *"और उस परमेश्वर पिता का धन्यवाद करें, जिसने हमें प्रकाश में संतों के भाग में भाग लेने के लिए बुलाया है: जिसने हमें अंधकार के अधिकार से छुड़ाकर अपने प्रेम के पुत्र के राज्य में पहुंचा दिया है"* (कुलुस्सियों 1:12-13)। – क्या हम बार-बार उनके परम पवित्र शरीर और लहू को ग्रहण नहीं करते हैं? और इससे अधिक प्रसन्नतादायक और रस भरा क्या हो सकता है, जब इसमें उन लोगों के लिए अनंत जीवन निहित है जो निर्मल अंतरात्मा के साथ इसे ग्रहण करते हैं? क्या हम दैनिक पाठों को सुनकर दिव्य दाऊद और अन्य पवित्र पितरों से संवाद नहीं करते हैं; और आत्मा के लिए इससे अधिक

सांत्वनादायक और क्या हो सकता है? क्या हमने संसार और अपने देह के संबंधियों के साथ सभी संबंध नहीं तोड़ दिए हैं; और फिर, इससे अधिक धन्य और गौरवान्वित और क्या हो सकता है? *'क्योंकि हमारा देश स्वर्ग में है, और हम वहीं से एक उद्धारकर्ता, प्रभु यीशु मसीह की प्रतीक्षा करते हैं, जो अपनी उस सामर्थ्य से, जिससे वह सब वस्तुओं को अपने वश में कर लेता है, हमारे नीच शरीर को अपने महिमामय शरीर के समान बदल देगा'* (फिलि. 3:20–21)। इसलिए, सभी सांसारिक सुखों को तुच्छ समझते हुए, हम आनन्दित और प्रसन्न हों: *'क्योंकि सब मांस घास के समान है, और मनुष्य की सारी महिमा घास के फूल के समान है; घास सूख जाती है और उसका फूल झड़ जाता है;* परन्तु धार्मिकता का *काम* सदा तक रहता है।' *'क्या तुम में कोई दुखित है? वह प्रार्थना करे,'* जैसा कि परमेश्वर का भाई कहता है: *'क्या कोई प्रसन्न है? वह भजन गाए'* (याकूब 5:13)। क्या कोई दुष्ट वासना से परीक्षा में पड़ता है? – (क्योंकि परीक्षा करने वाला हमें परीक्षा में डालना कभी बंद नहीं करता –) वह धीरज धारे, उस की सुनते हुए जो कहता है: *'धन्य है वह मनुष्य जो परीक्षा में स्थिर रहता है; क्योंकि जब वह परखा जाएगा, तो उसे जीवन का मुकुट मिलेगा, जो परमेश्वर ने अपने प्रेम करने वालों से वचन दिया है'* (याकूब 1:12)। *'यदि तुम ये बातें जानते हो, तो धन्य हो यदि तुम उन्हें करते हो'* (यूहन्ना 13:17)।

211. शांति और सद्भाव पर एक उपदेश; परमेश्वर के प्रति उत्कट प्रेम पर; अपनी मुक्ति के लिए उत्साही परिश्रम पर; और, सामान्य रूप से, उचित मठवासी जीवन पर

211. शांति और सद्भाव पर एक उपदेश; ईश्वर के प्रति उत्कट प्रेम पर; मोक्ष की दिशा में उत्साही परिश्रम पर; और सामान्यतःउचित मठवासी जीवन पर। [32, 8] मैं तुम में आनन्दित हूँ, कि तुम एक मन होकर चलते हो, शान्ति में रहते हो, और उपवास के समय को धैर्यपूर्वक सहते हो। यह तुम्हारे उद्धार और तुम्हारी आशा को दृढ़ करने के लिए है। भाईचारे के भीतर मन की शांति और एकता कितनी बड़ी कृपा है? – ऐसे लोग, अव्यवस्था और चंचलता, विरोध और निंदा, अवज्ञा और अहंकार, और धोखे के हर दूसरे रूप के बुराइयों को दूर करके, पहले स्वयं को लाभ पहुँचाते हैं, और फिर दूसरों को, सद्गुण का उदाहरण प्रस्तुत करते हुए, और इस प्रकार और भी अधिक प्राप्त करते हैं: क्योंकि जैसे जो लोग ठोकर पहुँचाते हैं, वे 'हाय' के वारिस होते हैं, वैसे ही जो लोग सद्गुणों को प्रेरित करते हैं, वे आशीष के वारिस होते हैं। और हम कभी भी ऐसी अच्छी प्रवृत्ति और ऐसे प्रशंसनीय आचरण से न भटकें, और न ही परमेश्वर से प्रेम करना बंद करें। क्योंकि लिखा है: *'अपने प्रभु परमेश्वर से अपने पूरे हृदय, और अपनी पूरी आत्मा, और अपनी सारी शक्ति, और अपने पूरे मन से प्रेम कर'* (लूका 10:27)। जो इस प्रकार प्रेम करता है, वह न तो तृप्ति, न ही थकान, न ही क्लान्ति जानता है; बल्कि वह आग में आग मिलाता है, उत्साह में उत्साह जगाता है, और अपने हृदय को एक सद्गुण से दूसरे सद्गुण पर चढ़ने, और एक आध्यात्मिक शक्ति से दूसरी आध्यात्मिक शक्ति में बढ़ने के लिए लगाता है—और यह अनवरत रूप से करता है। क्या आप उन लोगों को नहीं देखते जो देह में परिश्रम करते हैं, कि वे क्षणभंगुर और नश्वर चीज़ों के लिए कितनी मेहनत करते हैं? क्या आप यहाँ, अपनी आँखों के सामने, जहाज़ बनाने वालों को नहीं देखते, कि वे इसमें पूरे दिन बिताते हैं, और खुद को एक पल का आराम भी नहीं देते? किस कारण से? थोड़े से पैसे कमाने और अपने परिवारों की ज़रूरतों को पूरा करने के लिए। जहाँ तक हमारी बात है, जो दिव्य चीज़ों से समृद्ध होने, स्वर्ग के राज्य को प्राप्त करने, शाश्वत आशीर्वादों का आनंद लेने और शाश्वत यातना से बचने की खोज में हैं - क्या हम यह सब तत्परता और उत्साह के साथ करने के लिए लालायित नहीं हैं, और यदि प्रभु के लिए अपना रक्त बहाना आवश्यक हो तो उसे भी स्वेच्छा से बलिदान करने के लिए? तो फिर, हे मेरे भाइयो, आओ हम दृढ़ खड़े हो, *'आशा में आनन्दित, क्लेश में धीरजवान, प्रार्थना में विश्वासयोग्य'*, अपने आत्मिक अभ्यासों, भजन-गायन, वचन-पठन और पाठों पर अपना ध्यान केंद्रित करें, और ऐसे कार्यों के द्वारा अपने मन को व्यर्थ की बातों के पीछे भटकने से रोकें: क्योंकि आलस्य बुराई की जननी है, जबकि कर्म मन का रक्षक है। आइए हम अपने अच्छे स्वभाव से भटकने न दें, आज्ञाकारिता, सुव्यवस्था, अपने पड़ोसी की शांति, और हर उस चीज़ को प्राथमिकता दें जो हमारे उद्धार में योगदान करती है, और यहाँ रहने वाले अपने भाइयों और विभिन्न स्थानों पर बिखरे हुए लोगों के लिए हमेशा प्रार्थना करें: क्योंकि मेरा हृदय उनके लिए भी पीड़ा से भर जाता है, जब मैं अपनी आँखों से यह नहीं देख पाता कि उनमें से प्रत्येक कैसे बचाया जा रहा है।

212. मैं अपना कर्तव्य समझकर उपदेश देता हूँ; परन्तु यह कि वे फलदायी हों, उपदेशों के प्रति आपकी प्रगति के द्वारा मेरी सहायता करें। – आपकी सफलता मेरी है, क्योंकि हम एक हैं। – आपने

212. मैं कर्तव्यबोध से उपदेश देता हूँ; लेकिन यह कि वे फलदायी हों, इन उपदेशों की सहायता से अपनी प्रगति करके मेरी मदद करें। – आपकी प्रगति मेरी भी है: क्योंकि हम एक हैं। – आपने यह बात प्रतिमा-भंजकों के सामने

अपने स्वीकारोक्ति और उनके यातनाओं को सहन करके प्रदर्शित की है। अत; अपने इस पराक्रम पर कलंक न लगाएँ। [32, 9] आपको देह में बनाए रखने के लिए एक चीज़ की आवश्यकता है, और आत्मा में बनाए रखने के लिए दूसरी: पहली चीज़ व्यवस्थापक द्वारा प्रदान की जाती है और इसमें भोजन, पेय और वस्त्र शामिल हैं, जबकि दूसरी मैं, पूरी नम्रता से, प्रदान करता हूँ, और इसमें वचन और शिक्षा शामिल हैं। और जैसे वह मेरी अपनी इच्छा से नहीं दिया जाता, वैसे ही यह एक कर्तव्य के रूप में पूरा किया जाता है: इसलिए मैं आपको ये संक्षिप्त और मामूली शिक्षाएँ देते हुए कुछ भी महान नहीं कर रहा हूँ; इसके विपरीत, मैं डरता और कांपता हूँ, क्योंकि मुझे तुम्हारी आत्माओं का हिसाब देना है—न किसी राजा को, न किसी राज्यपाल को, न किसी शासक को, बल्कि सभी का न्यायी परमेश्वर को, जिसके सामने स्वर्ग में, पृथ्वी पर और पाताल में हर घुटना झुक जाएगा और हर जीभ यह स्वीकार करेगी कि यीशु मसीह प्रभु हैं। लेकिन कृपया, मैं आपसे विनती करता हूँ, स्वयं और मुझ दोनों की मदद करें, एक-दूसरे से प्रेम करने वाले भाइयों के रूप में: हर सद्गुण में उत्कृष्टता प्राप्त करके अपनी मदद करें, और अपनी प्रार्थनाओं के द्वारा मेरी मदद करें। आखिरकार, आपकी सफलता मेरी सफलता है, और इसके विपरीत भी: क्योंकि *'हम सब एक शरीर हैं, और प्रत्येक इसका एक अंग है'* (1 कुरिन्थियों 12:27); और *'यदि एक अंग पीड़ित होता है, तो सभी अंग उसके साथ पीड़ित होते हैं; और यदि एक अंग का सम्मान होता है, तो सभी अंग उसके साथ आनंदित होते हैं'* (1 कुरिन्थियों 12:26)। और जैसे मैं आपकी परवाह करता हूँ, वैसे ही आपको मेरी परवाह करनी चाहिए: क्योंकि मैं आप में हूँ, और आप मुझ में हैं, हमारे पारस्परिक प्रेम के कारण। सच्ची भाईचारे की स्थापना का यही नियम है। मेरे प्रति अपनी अच्छी आज्ञाकारिता बनाए रखो—न कि कोई झूठी या कपटी आज्ञाकारिता—जिसमें तुम इस नए जीवन में उत्पन्न हुए, बढ़े, सिद्ध हुए, और परिपक्वता प्राप्त की, मसीह की कृपा से, उनके प्रति अपने अंगीकार के मापदंड के अनुसार। (– यह मूर्तिभंजन के संबंध में है)। आप राजाओं से नहीं डरे, आप शासकों से नहीं घबराए, आप कष्ट, घाव, निर्वासन, कालकोठरियों या मृत्यु से नहीं सिहर उठे, और इसके द्वारा आप प्रसिद्ध हो गए हैं, जैसा कि सभी जानते हैं। इसलिए, अपने सद्गुण को मत धोखा दो, अपनी प्रशंसा पर कलंक मत लगाओ, और अपने अच्छे नाम को बदनाम मत होने दो; बल्कि अपनी पूर्व प्रशंसा पर और अधिक प्रशंसा जोड़ो, हमेशा अपने आप को भीतर और बाहर दोनों तरह से सुरक्षित रखो, आज्ञाओं का पालन करके अपनी रक्षा करो, हर प्रलोभन पर विजय प्राप्त करो, और हर दुख को धैर्यपूर्वक सहो। यह भी जानो कि हम अभी भी संघर्ष और उत्पीड़न के बीच में हैं, और नहीं जानते कि आने वाला दिन क्या लाएगा। फिर भी, *'यदि परमेश्वर हमारे पक्ष में है, तो हमारा विरोधी कौन हो सकता है? जिसने अपने पुत्र को भी हम सब के लिए नहीं बख्शा, वह उसके साथ-साथ और सब कुछ हमें अनुग्रह से क्यों नहीं प्रदान करेगा?'* (रोमियों 8:31–32)। अतःआशा रखो, निश्चिंत रहो; और इस आशा और इस निश्चय में जीते हुए, मैं तुम्हें विश्वास दिलाता हूँ, कि तुम सभी संतों के साथ एक विरासत और एक हिस्सा प्राप्त करोगे।

213. मृत्यु निकट है: हमें स्वयं को तैयार करना चाहिए। कैसे? ईश्वर की महिमा के लिए सब कुछ करके

213. मृत्यु निकट है: हमें तैयारी करनी चाहिए। कैसे? ईश्वर की महिमा के लिए सब कुछ करके; एकमत होकर और आपसी सम्मान दिखाकर; अपनी भावनाओं को नियंत्रित करके; अपने विचारों को नियंत्रित करके; सभी अच्छी चीजों के लिए उत्साही होकर, जबकि निर्लिप्तता के लिए प्रयास करते हुए। [32, 10] दिन-प्रतिदिन हमारा जीवन छोटा होता जाता है, और हम मृत्यु के और करीब आते जाते हैं। हम इस संसार से प्रस्थान करने और अपने भाइयों और पितरों से मिलने वाले हैं; इसलिए, हमसे बड़ी संयमशीलता, चौकसी और हार्दिक तैयारी की अपेक्षा की जाती है। हम बाइबल में वर्णित महाप्रलय की कथा सुनते हैं, और कैसे प्रभु उस समय हुई घटना को अपनी दूसरी आगमनी की परिस्थितियों पर लागू करते हैं, कहते हुए: *'जैसे नूह के दिनों में वे खा रहे थे, पी रहे थे, विवाह कर रहे थे और विवाह में दे रहे थे, खरीद रहे थे और बेच रहे थे—और अचानक महाप्रलय आ गया: वैसे ही मनुष्य के पुत्र के आने पर होगा'* (मत्ती 24, 37–39; लूका 17:26–28)। हम इस बात पर हैरान हैं कि उस समय के लोगों ने आने वाली बाढ़ को भय और कांपने के बजाय इतनी उदासीनता और लापरवाही से क्यों लिया। लेकिन आइए हम करीब से देखें: क्या हम स्वयं उसी लापरवाही की स्थिति में नहीं हैं जिसके लिए हम उनकी निंदा करते हैं? हम एक ऐसा जहाज़ नहीं बना रहे हैं जिसे बनाने में सौ साल लगे थे; फिर भी हर दिन हम एक कब्र को भरते हुए देखते हैं, जिसमें हमें भी रखा जाएगा; लगभग हर दिन मृत्यु हमारे किसी भाई को छीन लेती है, और वह चला जाता है। फिर भी, जो हमारे साथ अब हो रहा है वह उस समय (प्रलय के समय) जो हुआ था, उससे कहीं अधिक भयानक है। इसीलिए हमें चौकस रहना चाहिए। और मैं यह नहीं कह रहा हूँ: न खाओ, न पियो, न कपड़े पहनो – मैं यह नहीं कह रहा हूँ, बल्कि मैं यह कह रहा हूँ, *'चाहे तुम खाओ, या पियो, या जो कुछ भी करो, सब कुछ परमेश्वर की महिमा के लिए करो; ताकि तुम यहूदियों और यूनानियों और परमेश्वर की कलीसिया के सामने निर्दोष ठहरो'*, जैसा कि प्रेरित सिखाते हैं (1 कुरिन्थियों 10:31-32)। अब आओ, भाइयो और बहनो – मैं तुम्हें

आग्रह और विनती करता हूँ, *'मेरी खुशी पूरी करो'*, जैसा कि धन्य पौलुस फिर कहते हैं, *'एक ही मन के हो, एक ही प्रेम में रहो, एकमत और एक मन के रहो; कुछ भी ईर्ष्या या घमंड से न करो, बल्कि निम्रता से एक दूसरे को अपने से बढ़कर समझो'* (फिलि. 2:2,3)। आइए हम अपनी इंद्रियों—देखने, सुनने, सूंघने, चखने और छूने—की रक्षा करें, जिनके द्वारा मृत्यु प्रवेश करती है; आइए हम मन को काबू में रखें, कहीं वह वहाँ न भटके जहाँ उसे नहीं जाना चाहिए, अनुचित बातों में प्रवेश न करे, अपने भीतर बुरी कल्पनाएँ न जगाए, या पापी इच्छाओं को जन्म न दे जिनसे न तो कोई लाभ है और न ही आनंद। इसके विपरीत, हमें और भी अधिक गंभीर और पश्चात्तापी बनें, एक बात को ध्यान में रखकर और उसी में ही सांत्वना और आनंद पाकर, ताकि हम अपनी आत्मा को शुद्ध कर सकें और निर्लिप्तता में फल-फूल सकें। निर्लिप्तता का स्वाद चखने और उसे प्राप्त करने के आनंद की आशा रखते हुए, हम हतोत्साहित न हों; बल्कि हम शीघ्रता करें, हम उसे अपनी पूरी ताकत और बिना रुके उसका पीछा करें; क्योंकि उत्साह उस कमी को सुधारता है और पूरी करता है, और ईश्वर उसका सहायक है। *'प्रभु उनके समीप है जो उसे पुकारते हैं, और जो आत्मा उसे खोजती है वह उसे पा लेगी।'* – इस प्रकार जीते हुए, हम निस्संदेह स्वर्ग के राज्य को प्राप्त करेंगे।

214. जैसे आप ईश्वर को याद करते हैं, वैसे ही मृत्यु को भी याद करें

214. जैसे आप ईश्वर को याद करते हैं, वैसे ही मृत्यु को भी याद करें। – इस जीवन से, न ही इसमें मूल्यवान किसी भी चीज़ से आसक्त हों। यह हम में से उन लोगों के लिए सबसे अधिक आवश्यक है जिन्होंने संसार का त्याग किया है। [32, 11] यह एक लाभकारी शिक्षा है, एक हितकर अनुस्मारक है जो हमें अपने ऊपर अवलंबित कर्तव्यों ( ) का पालन करते समय संयम और सतर्क रहने के लिए प्रेरित करता है, और ऐसा करने से कभी न रुकने, न ईश्वर के विचारों से भटकने, न उनके प्रति प्रेम से, और न ही शरीर से हमारे अलगाव की स्मृति से। क्योंकि बहुत जल्द हम इससे अलग हो जाएँगे और हमारे सभी पूर्वजों की तरह मर जाएँगे, और एक अन्य दुनिया में प्रवेश करेंगे, एक ऐसे अन्य जीवन में प्रवेश करेंगे जिसका कोई अंत नहीं है। यह वर्तमान जीवन एक छाया और एक सपने के समान है, और कुछ वर्षों तक ही सीमित है। मेरा तात्पर्य संसार की सृष्टि से लेकर युग के अंत तक के समय से नहीं है, बल्कि प्रत्येक व्यक्ति के जीवन से है, जो आजकल शायद ही कभी दाऊद की आयु तक पहुँचता है, और उससे भी कम ही बार यह असाधारण रूप से उससे आगे बढ़ता है:सभी संतों ने अपने जीवन भर इस पर ध्यान लगाया। जैसा कि प्रेरित गवाही देते हैं, *'वे विश्वास में मरे', 'परमेश्वर के प्रतिज्ञाओं को प्राप्त न करके, बल्कि उन्हें दूर से देखकर, और उन्हें अपनाकर, और यह स्वीकार करके कि वे पृथ्वी पर परदेशी और अस्थायी यात्री हैं।' क्योंकि जो इस प्रकार बोलते हैं, वे यह स्पष्ट करते हैं कि वे एक स्वदेश की खोज में हैं। और यदि वे उस देश के विषय में सोच रहे होते, जिससे वे निकले थे, तो उन्हें लौटने का अवसर मिल जाता; परन्तु अब वे एक उत्तम देश, अर्थात् स्वर्गीय देश की लालसा करते हैं। इसलिये परमेश्वर उनके परमेश्वर कहलाने में लज्जित नहीं है, क्योंकि उसने उनके लिये एक नगर तैयार किया है"* (इब्रानियों 11:13-16)। देखो, यह हमारा नगर है! निहारो, यह हमारा स्वदेश है! इसमें हमारे पिता और भाई हैं, शरीर में और आत्मा में दोनों। तो फिर, हम इस क्षणिक जीवन को यहाँ सम्माननीय क्यों मानते हैं? हम इसकी प्रथाओं से क्यों चिपके रहते हैं? हम इससे निकलने के मार्ग को अप्रिय क्यों मानते हैं? – यह मूर्खता है कि कोई परदेश से अपने देश लौटने की, या युद्ध से शांति की ओर मुड़ने की इच्छा न करे। परन्तु हम, हे प्रिय भाइयो, समझदार मनुष्य होकर, संसार और संसार में जो कुछ भी है, उसे त्यागकर और उनसे भागकर, अपने जीवन भर मृत्यु के विचार को अपने मन में रखेंगे, और इसी विचार से हर एक इच्छा को दूर करेंगे, हर सुस्ती, हर ढिलाई, हर निराशा, हर बुराई; ताकि, इस प्रकार प्रभु की प्रसन्नता के अनुसार कार्य करके, हम स्वर्गीय आशीर्वादों के वारिस बन सकें।

215. प्रभु ने हमें शांति दी है, जो हमें बाहरी रूप से सभी के साथ शांति बनाए रखने के लिए बाध्य करती है, जबकि आंतरिक रूप से हम अपने भीतर की वासनाओं और अंतरात्मा के वेदनाओं से शांति बनाए रखें।

215. प्रभु ने हमें शांति प्रदान की है, जो हमें बाहरी रूप से सभी के साथ शांति से रहने के लिए बाध्य करती है, जबकि आंतरिक रूप से हम अपने भीतर की वासनाओं और अंतरात्मा के वेदनाओं से शांति पाते हैं। [32 12] रविवार शांति का दिन है; क्योंकि उस दिन, शत्रु को परास्त करने के बाद, प्रभु ने अपने शिष्यों से कहा: *'तुम्हें शांति मिले।'* (यूहन्ना 20:20)। यह कहने के बाद, उन्होंने केवल उन्हीं पर, और वह भी केवल एक दिन के लिए, शांति को विरासत में नहीं दिया; बल्कि वह सभी को वही शांति प्रदान करते हैं, ठीक वैसे ही जैसे वह हम विनम्र लोगों को करते हैं। इसलिए, हमारे भीतर शांति बनी रहे, और हम अपने भीतर शांति से जीवन जिएँ। – जहाँ तक हमारे बाहरी स्व का संबंध है, हम अपने किसी भी भाई के प्रति द्वेष न पालें, बल्कि हम हर बात में प्रेमपूर्ण रहें: क्योंकि प्रभु कहते हैं: *'इस से सब जन जान लेंगे कि तुम मेरे चेले हो, यदि तुम एक दूसरे से प्रेम रखोगे'* (यूहन्ना 13:35); जहाँ तक हमारे भीतरी मनुष्य का संबंध है,

हमें विनाशकारी वासनाओं से शांति और प्रसन्नता बनाए रखनी चाहिए। तब हम भी प्रेरित के साथ कह सकेंगे: *'हमारे प्रभु यीशु मसीह के द्वारा परमेश्वर के साथ हमारा मेल है। उनके द्वारा हम अनुग्रह से इस अनुग्रह में प्रवेश पाए हैं, जिसमें हम खड़े हैं; और हम परमेश्वर की महिमा की आशा में घमंड करते हैं'* (रोमियों 5: 1: 2)। फिर भी, चूंकि हमारी प्रकृति परिवर्तनशील है, ऐसा होता है कि हम विनाशकारी और दुखद उतार-चढ़ाव और अशांति के अधीन हो जाते हैं। तब आइए हम तुरंत अपने पूर्व राज्य, अर्थात् परमेश्वर के साथ शांति की अवस्था में लौटने के लिए शीघ्रता करें: *"क्योंकि वही हमारी शान्ति है, जिसने दोनों को एक किया है, और वैरभाव की बीच की दीवार गिरा दी है, और अपने शरीर में आज्ञाओं में समाहित आज्ञाओं की व्यवस्था का विधान समाप्त कर दिया है, ताकि वह स्वयं में एक नया मनुष्य बना सके, इस प्रकार शान्ति स्थापित कर सके, और दोनों को एक शरीर में क्रूस के द्वारा परमेश्वर से मिला सके, और उसी पर वैरभाव को मार डाल सके"* (इफिसियों 2:14–15)। प्रेरित यही कहते हैं। और यह वही कार्य है जिसे प्रभु ने पूरा किया, जैसा कि वे अपने पिता से कहते हैं: *'मैंने वह काम पूरा कर लिया है जो तूने मुझे करने के लिए दिया था'* (यूहन्ना 17:4)। अर्थात्, मैंने सांसारिक और स्वर्गीय को एक-दूसरे के साथ मिला दिया है, और हमें भी शांति और प्रेम का पुत्र बना दिया है। यदि कोई कहे: 'यह कैसे हो सकता है? क्या हम निरंतर युद्ध की स्थिति में नहीं हैं?' जैसा कि प्रेरित कहते हैं: *'क्योंकि हमारा संग्राम मांस और रक्त से नहीं, बल्कि प्रधानताओं, और अधिकारों, और इस संसार की अंधकारमय शक्तियों, और स्वर्गीय क्षेत्रों में बुराई की आध्यात्मिक सेनाओं से है'* (इफिसियों 6:12)। ऐसे व्यक्ति से हमें कहना चाहिए कि ये शब्द संघर्ष की प्रकृति और सीमा की ओर इशारा करते हैं, न कि इस तथ्य की ओर कि हम इसे लड़ रहे हैं; क्योंकि वह स्वयं कहीं और कहते हैं: *'क्योंकि हमारे युद्ध के हथियार परमेश्वर के द्वारा सामर्थ्यवान हैं कि हम किलों को ढाँप दें, और तर्क और हर एक ऊँची चीज़ को जो परमेश्वर के ज्ञान के विरुद्ध अपने आप को बड़ा बनाती है, गिरा दें, और हर एक विचार को मसीह की आज्ञाकारिता में बंदी बनाकर ले आएं, और हर एक अवज्ञा का प्रतिशोध लेने के लिए तैयार रहें'* (2 कुरिन्थियों 10:4–5)। उसी मानसिकता में, उसने स्पष्ट रूप से कलह को समाप्त कर दिया है और शांति स्थापित की है।

216. मनुष्य को शिक्षाओं को सुनना चाहिए और, उन पर विश्वास करने के बाद, जो वे प्रेरित करती हैं उसे करना चाहिए

216. हमें शिक्षाओं को सुनना चाहिए और, उन पर विश्वास करके, जो वे प्रेरित करती हैं उसे करना चाहिए। [32:13] अब मैं आपके सामने, जैसा कि मेरा कर्तव्य है, वचन का एक संक्षिप्त और मामूली अंश प्रस्तुत करता हूँ, फिर भी एक ऐसा अंश जिसे स्थगित नहीं किया जा सकता, ताकि मैं अपनी चुप्पी के लिए दोषी न ठहराया जाऊँ, और आप किसी भी निर्माण से वंचित न रहें। क्योंकि यद्यपि आप अधिकांशतः पवित्र पिताओं के पठन से सुसज्जित होते हैं, तथापि आपको मेरी नम्र शिक्षा की आवश्यकता है—मैं तो यह कहने का साहस करता हूँ कि आपको इसकी आवश्यकता पूर्ववर्ती से भी अधिक है: क्योंकि वहाँ सामान्य उपदेश होते हैं, जबकि यहाँ कुछ ऐसा कहा जाता है जो सीधे व्यक्ति से संबंधित है, कुछ ऐसा जो फटकारता और सुधारता है। *'मैं तुम्हें डाँटूंगा,' यह* कहा जाता है, *'और तुम्हारे पाप तुम्हारे सामने रखूंगा'* (भजन संहिता 49:21)। और प्रभु ने *कहा: 'यदि मैं आकर उनसे बात न करता, तो उन पर पाप न होता; परन्तु अब उनके पाप का कोई बहाना नहीं है'* (यूहन्ना 15:22) क्या ऐसा न हो कि यह आप पर भी लागू हो: क्योंकि मैं आपसे अवज्ञाकारियों और पाप के दोषी लोगों की तरह नहीं, बल्कि आज्ञाकारिता के पुत्रों, प्रिय बच्चों, समान-विचारधारा वाले सहकर्मियों और सह-योद्धाओं की तरह बात करता हूँ—आप आनंदित रहें, आप समृद्धि प्राप्त करें, *"ताकि तुम मसीह के दिन शुद्ध और निर्दोष रहो, और यीशु मसीह के द्वारा धार्मिकता के फलों से परिपूर्ण हो, परमेश्वर की महिमा और स्तुति के लिए"* (फिलि. 1:10-11)। और मेरे वचन तुम्हारे लिए हैं। मुझे विश्वास है कि जिसने प्राचीन काल में इस्राएल के लिए चट्टान से पानी निकाला, वह मेरे कठोर हृदय से भी एक संक्षिप्त वचन निकालेगा, जिससे, हमें सिंचित होते हुए, हम उस प्रभु का धन्यवाद कर सकें जो पोषण करता है, हमारी प्यास बुझाता है और इस वर्तमान प्रवास में, जैसे जंगल में, हमारे जीवन का मार्गदर्शन करता है। लेकिन जब यह प्राचीन कहानी मन में आई है, तो आइए एक पल के लिए रुकें और विचार करें कि तब अवज्ञाकारियों के साथ क्या हुआ, जिनके बारे में प्रेरित कहते हैं: *'परन्तु परमेश्वर उन में से अधिकांश से प्रसन्न नहीं हुआ; क्योंकि वे जंगल में मार गिराए गए। अब ये बातें हमारे लिए उदाहरण के रूप में घटीं, ताकि हम, जैसे उन्होंने बुराइयों की लालसा की, वैसे न करें। न ही मूर्तिपूजक बनो, जैसा कि उनके में से कुछ हुए; जैसा लिखा है: 'लोग खाने और पीने के लिए बैठ गए, और खेलने के लिए उठ खड़े हुए।' न ही व्यभिचार करो, जैसा कि उनके में से कुछ ने किया, और तेईस हजार एक ही दिन में नाश हो गए। न ही हम मसीह की परीक्षा करें, जैसा कि उनमें से कुछ ने किया, और वे साँपों से नष्ट हो गए। और न ही हम शिकायत करें, जैसा कि उनमें से कुछ ने किया, और वे नाशकर्ता से नष्ट हो गए"* (1 कुरिन्थियों 10:5–10)। भाइयो, इस पर मनन करते हुए, हम

परमेश्वर के क्रोध के कारणों से भागें; हम बुरी इच्छाओं से भागें; हम बड़बड़ाहट से भागें; हम सावधान रहें कि मसीह को परीक्षा में न डालें। – लेकिन कोई उसकी परीक्षा कैसे ले सकता है? – अविश्वास के विचारों में पड़कर और कहकर: 'क्या हमारी ज़रूरतों के लिए हमारे पास पर्याप्त होगा?' – 'क्या हम शत्रु के आक्रमण का सामना कर पाएँगे?' 'क्या हम इसे या उसे सहन कर पाएँगे?' – नहीं, मेरे भाइयो, नहीं। ये अविश्वास और संदेह के शब्द हैं, जिन्हें कोई स्थान नहीं दिया जाना चाहिए। क्योंकि दृढ़ विश्वास से हम सब कुछ सहन कर सकते हैं। इस प्रकार नूह ने विश्वास किया, और जलप्रलय के विनाश से बच निकला; इस प्रकार अब्राहम कई राष्ट्रों का पिता बना; इस प्रकार मूसा लाल सागर को सूखी भूमि की तरह पार कर गए; इस प्रकार तीन युवक और नबी दानियेल सुरक्षित रहे; और, संक्षेप में कहें तो, इस प्रकार सभी संतों को न्याय मिला। इसी प्रकार, विश्वास करके, हम सभी चीजों को सहन करेंगे और मसीह के साथ हम विजय प्राप्त करेंगे, और हमें धार्मिकता के मुकुटों के योग्य माना जाएगा।

217. सांसारिक, धर्मनिरपेक्ष और पापी जीवन के बंधनों से मुक्त हो जाने के बाद, आइए हम खुद को उनमें वापस लौटने न दें।

217. 1) सांसारिक, धर्मनिरपेक्ष और पापी जीवन के बंधनों से मुक्त हो जाने के बाद, हमें स्वयं को फिर से उनमें लौटने की अनुमति न दें। – 2) और कोई भी ईश्वर की सेवा को पाप और वासनाओं की दासता के साथ मिलाने का विचार न करे। [31, 14]

1. अपनी सुस्ती को त्यागकर और अपने उत्साह को जगाकर, प्रेरित ने कहा: *'प्रभु निकट हैं; किसी भी बात की चिंता मत करो, परन्तु हर बात में प्रार्थना और विनती द्वारा, धन्यवाद सहित, अपनी याचनाएँ परमेश्वर के सामने पेश करो'* (फिलि. 4:5–6)। इसलिए, हम सुस्त न हों, बल्कि हम बल प्राप्त करें और उस कार्य को करने के लिए साहस जुटाएँ जिसके लिए प्रभु ने हमें बुलाया है। क्योंकि वही हैं जिन्होंने हमें लोगों के सामान्य जीवन से मठवासी जीवन के लिए बुलाया है; वही हैं जिन्होंने हमें उद्धार के वस्त्र से परिधानित किया है और हमें आनंद के वस्त्र पहनाए हैं; वही हैं जिन्होंने हमें विधिवत शपथों से छुड़ाया है, स्वयं हमारे लिए एक शपथ बनकर। *'मसीह ने हमें स्वतंत्र किया है; अतः दृढ़ रहो, और फिर से दासत्व के जूए के अधीन न हो जाओ'* (गलातियों 5:1)। आइए हम खुद को फिर से अपनी वासनाओं का स्वैच्छिक दास बनने न दें। एक दास, जिसे सोने से छुड़ाया गया हो, वह कभी भी दासत्व में लौटने के लिए सहमत नहीं होगा; परन्तु, अपनी दासता के स्थान से बहुत दूर जाकर, वह इस बात पर आनन्दित होता है कि उसे दासता के अत्याचार से स्वतंत्रता प्रदान की गई है; भले ही दासता अब कोई विशेष रूप से बुरी बात नहीं रही। क्योंकि प्रेरित कहते हैं: *'क्या तुम दास होते हुए बुलाए गए? व्यथित न हो; परन्तु यदि तुम स्वतंत्र हो सकते हो, तो अपनी स्वतंत्रता का पूरा लाभ उठाओ। क्योंकि प्रभु में बुलाया गया दास प्रभु का मुक्त दास है; इसी प्रकार, बुलाया गया मुक्त दास मसीह का दास है'* (1 कुरिन्थियों 7:21–22)। और फिर भी यह निश्चित रूप से सच है कि जिसने आज़ादी पा ली है, उसके लिए फिर से दासता के जुए के नीचे जीना वांछनीय नहीं है। – तो फिर, पाप से मुक्त हो जाने के बाद, हमें उससे यथासंभव दूर रहना और भी अधिक क्यों नहीं चाहिए? या क्या हम नहीं जानते कि उसने हमारे साथ क्या किया है? क्या पाप ही नहीं था जिसने हमें स्वर्ग से बाहर निकाला? क्या उसने हमें अमर के बजाय नश्वर नहीं बना दिया? क्या उसने हमें इस दुखों भरी जिंदगी में नहीं लाया? क्या पाप के कारण ही सभी बुराइयाँ नहीं आईं और आती नहीं रहतीं? इसलिए हमें इसे अपने सबसे बड़े दुश्मन के रूप में त्यागना चाहिए; हमें इससे वैसा ही घृणा करनी चाहिए जैसा किसी घृणित वस्तु से करते हैं। हमें सदाचार से और भी अधिक प्रेम करना चाहिए, क्योंकि यह मनुष्यों को देवदूतों में बदल देता है, और उससे भी बढ़कर—देवताओं में, जैसा लिखा है: *'मैंने कहा, "तुम देवता हो, और तुम सब परमप्रभु के पुत्र हो"'* (भजन संहिता 81:6)।

२. परन्तु धर्म का सार क्या है? – यह संसार से मुँह मोड़कर परमेश्वर से चिपके रहने में है। प्रभु कहते हैं, *'कोई भी... दो स्वामियों की सेवा नहीं कर सकता... तुम परमेश्वर और धन-दौलत दोनों की सेवा नहीं कर सकते'* (मत्ती 6:24)। हम एक ही समय में सदाचार और पाप दोनों से नहीं चिपक सकते: क्योंकि *'प्रकाश का अंधकार के साथ क्या मेल है?'* (2 कुरिन्थियों 6:14)। इसके अलावा, मसीह की आज्ञाएँ प्रकाश और राहत हैं; जबकि पाप भारी और एक बोझ हैं। यह और भी दुखद है कि हम विरोधाभासों को सुलझाने के लिए संघर्ष करते हैं और यह संभव मानते हैं कि शारीरिक इच्छाओं में लिप्त होना और आध्यात्मिक कार्यों में सफलतापूर्वक संलग्न होना दोनों हो सकते हैं। लेकिन आइए हम अपने भीतर झाँकें: यदि हमने पूर्णता का कुछ स्तर प्राप्त कर लिया है, तो परमेश्वर का धन्यवाद हो, जिनसे *'हर अच्छी देन और हर उत्तम देन'* आती है; और सावधान रहें कि दृढ़ बने रहें, परमेश्वर के भय से अपनी रक्षा करें ताकि हम अपने सबसे सदाचारी स्वभाव में अपरिवर्तित और अडिग रहें; लेकिन यदि ऐसा नहीं है, और हम कई मामलों में कमी रखते हैं, तो जब तक कर्म करने का समय है, तब तक हम शीघ्रता करें और पूर्णता प्राप्त करने का प्रयास

करें, – विश्वास से बल पाकर, आशा से प्रेरित होकर, प्रेम से एक होकर, विनम्रता से सुसज्जित होकर, आज्ञाकारिता में आनंदित होकर, धैर्य से परखे जाकर, स्वीकारोक्ति से प्रबुद्ध होकर, और हमारे अन्य सभी कार्यों के माध्यम से गवाही देते हुए कि हम मसीह में प्रभु के सच्चे भिक्षु, सच्चे नवसिखुए, और कुशल सेवक हैं।

218. मनुष्य को ईश्वर के वचन को ध्यानपूर्वक सुनना चाहिए: क्योंकि इससे ही सभी आध्यात्मिक प्रवृत्तियाँ उत्पन्न होती हैं।

218. 1) हमें परमेश्वर के वचन को ध्यान से सुनना चाहिए: क्योंकि इससे ही सभी आध्यात्मिक गुण उत्पन्न होते हैं। – 2) यही सभी संतों ने किया, और उन्होंने इसके शुभ फलों की गवाही दी। – 3) आइए हम भी ऐसा ही करें, यह याद करते हुए कि प्रभु ने हमें कैसे आशीष दी है। [32, 15]

3. सभी लोगों के पास आँखें और कान दोनों होते हैं, लेकिन सभी सुनते और देखते नहीं हैं; केवल वे ही सुनते और देखते हैं जिनके पास सुनने वाला कान और देखने वाली आँख होती है। इसीलिए प्रभु ने कहा: *'जिसके सुनने के कान हैं, वह सुने'* (मत्ती 11:15)। नबी उन लोगों के बारे में भी बात करते हैं जो सुनने में कठोर हैं: *'ईश्वर ने उन्हें सुस्ती की आत्मा, ऐसी आँखें दी हैं जो देख नहीं सकतीं और ऐसे कान जो सुन नहीं सकते'* (यशायाह 6:9; रोमियों 11:8)। इसलिए, हमें जो पढ़ा जाता है, उसे ध्यान से सुनें—और केवल लापरवाही से नहीं—ताकि हम धमकी के अधीन न हों, बल्कि यह कह सकें: *'प्रभु की ताड़ना मेरे कान खोलती है'* (यशायाह 50:5)। इस प्रकार, श्रोता ध्यान देता है, विनम्र होता है, शुद्ध होता है, प्रबुद्ध होता है, और आनंदित होता है; वह सभी सांसारिक चीजों को छायाओं और सभी भ्रमों के रूप में देखता है, ताकि जब वह मसीह को अपने शिष्यों से कहते हुए सुने: *'मैं तुम्हें अनाथ नहीं छोड़ूँगा; मैं तुम्हारे पास आऊँगा'* (यूहन्ना 14:18), तो वह मसीह के पास आ सके। और फिर: *'यदि तुम मेरी आज्ञा का पालन करते हो तो तुम मेरे मित्र हो'* (यूहन्ना 15:14)। और फिर: *'थोड़ी देर और, और संसार मुझे फिर नहीं देखेगा, परन्तु तुम मुझे देखोगे; क्योंकि मैं जीवता हूँ, और तुम भी जीवोगे'* (यूहन्ना 14:19)। और फिर: *"तुम मेरी परीक्षाओं में मेरे साथ खड़े रहे; और मैं तुम्हें वैसा ही पद देता हूँ, जैसा मेरे पिता ने मुझे दिया है, कि तुम मेरे राज्य में मेरी मेज़ पर खाओ और पियो"* (लूका 22:28–30)। ऐसी बातें सुनकर, ईश्वर का एक प्रेमी हर दिन मसीह के लिए स्वेच्छा से मरने के लिए तैयार रहता है।

४. इस प्रकार सभी संत जीए, और ऐसे दृढ़ संकल्प के साथ उन्होंने प्रभु के प्रति अपने प्रेम की गंभीर घोषणा की। यिर्मयाह कहते हैं: *'मैं तुम्हारा अनुसरण करने से न तो थका हूँ, और न ही मैंने मनुष्य का जीवन चाहा है'* (यिर्म. १७:१६)। संत दाऊद कहते हैं: *'मैं प्रभु को उसके सब अनुग्रह के बदले में क्या दूँगा?'* (भजन संहिता 115:3)। प्रेरित कहते हैं: *'क्योंकि मसीह के कारण तुम्हें न केवल उस पर विश्वास करने का, बल्कि उसके लिए दुख सहने का भी अनुग्रह मिला है'* (फिलिप्पियों 1:29)। इसी तरह, सभी प्रेरितों ने आनंद मनाया, क्योंकि *'वे प्रभु यीशु के नाम के लिए अपमान सहने के योग्य ठहरे'*, जैसा कि प्रेरितों के काम में लिखा है (प्रेरितों के काम 5:41)। संक्षेप में, प्रत्येक संत ने ऐसे उद्गारों के माध्यम से प्रभु मसीह के प्रति अपने सच्चे प्रेम को व्यक्त किया।

5. अतः हे भातनों, जो पढ़ा जा रहा है उसे ध्यान से सुनें, और आइए हम अपने प्रिय परमेश्वर से अपने पूरे हृदय से प्रेम करें, और उन सभी आशीर्वादों के लिए हमेशा उनका धन्यवाद करें जो उन्होंने हम पर प्रदान किए हैं—कि उन्होंने हमें आरंभ से ही हमारे वर्तमान बुलावे की पवित्रता में उद्धार के लिए चुना—कि उन्होंने हमें ऑर्थोडॉक्स विश्वास में उनकी सेवा करने का सौभाग्य प्रदान किया है—कि संतों की शिक्षा हमें एक भरपूर दावत के रूप में सौंपी गई है। तब यह उचित है कि हम प्रेरितों के शब्दों में कहें: *'यदि परमेश्वर हमारे पक्ष में है, तो हमारा विरोध कौन कर सकता है? जिसने अपने पुत्र को भी हमारे लिए नहीं बख्शा, बल्कि उसे हम सब के लिए सौंप दिया—तो क्या वह उसके साथ हमें सब कुछ मुक्त रूप से नहीं देगा? परमेश्वर के चुने हुओं पर दोष लगावेगा कौन? परमेश्वर है जो धर्मी ठहराता है; दोषी ठहरावेगा कौन? मसीह यीशु, जो मरे—और उससे भी बढ़कर, जिन्हें जिलाया गया—जो परमेश्वर के दाहिने हैं, और जो हमारे लिए मध्यस्थता करते हैं'* (रोमियों 8:31-34)। वह परमेश्वर पिता के सामने मध्यस्थता करते हैं, जो हमें अनंत राज्य प्रदान करते हैं।

219. हम स्मरणोत्सव मनाएँ, केवल बाहरी रूप से नहीं, बल्कि आध्यात्मिक रूप से भी; – यह ध्यान में रखते हुए कि हम भी प्रस्थान करेंगे; और – इससे प्रेरित होकर अपने प्रस्थान की तैयारी करें

219. 1) हम स्मरणोत्सव मनाएँ, केवल बाहरी रूप से नहीं, बल्कि आध्यात्मिक रूप से भी; – 2) यह ध्यान में रखते हुए कि हम भी प्रस्थान करेंगे; और – 3) इससे प्रेरित होकर अपने प्रस्थान की तैयारी करें। [32, 16]

6. कल हमने अपने पिता का स्मरण किया, और हमने ऐसा उचित रूप से किया; क्योंकि आध्यात्मिक बच्चों को अपने पिता का सम्मान करना चाहिए। हालाँकि, किसी को यह नहीं सोचना चाहिए कि स्मरण के मामले में, केवल स्मृति-

सेवाएँ करना और फरि देह में सांत्वना खोजना ही पर्याप्त है; बल्कि किसी को भी आध्यात्मकि सांत्वना प्राप्त करनी चाहिए। शारीरकि सांत्वना, थोड़े समय के लिए भावनाओं को जगाने के बाद, भाग जाती है, जबकि आध्यात्मकि सांत्वना अतृप्त और स्थायी है। यदि आप में से कोई रोया, यदि कोई करुणा से प्रेरति हुआ, यदि कोई हृदय से टूट गया, तो आप अपने पिता या भाई की स्मृति का सम्मान करने में सफल रहे हैं। पुरानी बातों को याद करो, जब हमारे पिता हमारे साथ थे, हमारे साथ बातें करते और अपने विचार साझा करते थे; फरि कल्पना करो कि वह अब कहाँ हैं, किसके साथ रहते हैं और किसके साथ अपने विचार साझा करते हैं - वह और हमारे दिवंगत भाई-बंधु। क्या यह नहीं है - जो हम चिंतन करते हैं और जो हम सुनते हैं - जो हमेशा आत्मा को आनंद से भर देता है?

7. तो फरि हम अपने विचारों को स्वयं पर केंद्रति करें, और विचार करें: क्या हम थोड़ी ही देर में यहाँ से स्वयं नहीं चले जाएँगे, और दूसरे हमें वैसे ही याद रखेंगे जैसे हम अब अपने पूर्वजों को याद करते हैं? वास्तव में, ऐसा ही है। हमारी यही नियति है: हम नश्वर मनुष्य हैं, जो नहीं जानते कि कल क्या होगा। क्योंकि हमारा जीवन क्या है? – एक वाष्प जो क्षण भर के लिए प्रकट होती है और फरि लुप्त हो जाती है; एक वसंत का फूल जो सुबह खलिता है लेकिन शाम तक मुरझा जाता है। *'मनुष्य घास के समान है; उसकी आयु मैदान के फूल के समान है, जो खलिता है'* (भजन संहिता 102:15)। *'मनुष्य एक साँस के समान है; उसके दनि छाया के समान बीत जाते हैं'* (भजन संहिता 143:4)। *'सारा शरीर भूसी के समान है, और मनुष्य की सारी शोभा मैदान के फूल के समान है'* (यशायाह 40:6); *'सूरज अपनी गर्मी से चमकता है और घास को सुखा देता है; उसका फूल झड़ जाता है, और उसकी सुंदरता का रूप नष्ट हो जाता है'* (याकूब 1:11)। इस प्रकार हम भी मुरझा जाएँगे, इस प्रकार हम यहाँ से चले जाएँगे, जैसा कि संतों ने कहा है। ये उनकी दृष्टान्त कथाएँ हैं, जो इससे पहले कही गई हैं।

8. *"परन्तु धन्य है वह मनुष्य जो समझता है; धन्य है वह जो परमेश्वर को खोजता है"* (भजन संहिता 13:2)। धन्य है वह जो प्रतदिनि आज्ञाकारिता के श्रम और परिश्रम में स्वयं को थकाता है—विवाद नहीं करने वाला, शिकायत नहीं करने वाला, नम्र, अपने कर्मों में शीघ्र, सेवा में लापरवाह नहीं, हृदय से पश्चात्तापी, और अपने प्रस्थान के लिए सदा तैयार रहने वाला। क्योंकि अंत आएगा, वह अवश्य आएगा, और वह विलंबित नहीं होगा। मृत्यु का वह भयानक दनि आएगा; स्वर्ग से उतरकर राजसी दूत भी आएगा – और आत्मा से कहेगा: 'अब आओ, सर्व के राजा और परमेश्वर तुम्हें बुला रहे हैं।' परन्तु हम, अपने पिता की प्रार्थनाओं के द्वारा, उस घड़ी पर स्वयं को तैयार पाएँ और, बिना भय के, यहाँ से प्रस्थान करके अनंत जीवन में प्रवेश करें।

220. लेंट का अंत हमें ईस्टर के सामने ला खड़ा करता है; लेकिन हमारा पूरा जीवन भी ईस्टर के सामने खड़ा है—एक अस्थायी नहीं, बल्कि एक शाश्वत, अतुलनीय रूप से बेहतर जीवन

220. 1) लेंट का अंत हमें ईस्टर के आमने-सामने लाता है; लेकिन हमारा पूरा जीवन भी ईस्टर के आमने-सामने खड़ा है—एक अस्थायी नहीं, बल्कि एक शाश्वत, जो अपार रूप से बेहतर है। – 2) इस पर दृष्टि डालें, यह याद करते हुए कि प्रभु ने इसके बारे में क्या कहा है, और संतों का अनुकरण करते हुए तपस्या के कार्यों को करने के लिए प्रेरति हों। – 3) उस धूर्त साँप पर ध्यान न दें, जो छल से हमें उस ओर लुभाने का प्रयास करता है जो शरीर के लिए आकर्षक और मीठा है। [32, 17]

1. लेंट समाप्त होने को है, और आत्मा ईस्टर के आगमन पर आनंदति होती है, जो विश्राम का समय है और किए गए श्रम के फल का स्वाद चखने का समय है। लेकिन मैंने ये बातें क्यों कहीं हैं? – आपको यह याद दिलाने के लिए कि हमारा पूरा जीवन शाश्वत पास्का की ओर उन्मुख है और उसके आगमन की प्रतीक्षा कर रहा है। यह सांसारिक पास्का, यद्यपि महान और सम्माननीय है, जैसा कि हमारे पूर्वज सिखाते हैं, उस पास्का का केवल एक पूर्वाभास है। यह सांसारिक पास्का केवल एक दनि का होता है – और फरि बीत जाता है; लेकिन वह अनंत पासोवा वह है जहाँ से बीमारी, दुःख और आहें भाग गई हैं, जहाँ आनंद, हर्ष और शाश्वत सांत्वना है, जहाँ उत्सव मनाने वालों की आवाज़ें और आनंदति चेहरों का दृश्य है, और शाश्वत प्रकाश का दर्शन है, जहाँ मसीह का धन्य भोज है, एक मेज़ जो शाश्वत आशीर्वादों से भरी है और वह नया पेय जिसके बारे में मसीह ने कहा था: *'मैं तुम से कहता हूँ कि मैं अब से दाख की इस फल में से नहीं पीऊँगा, जब तक कि उस दनि तुम संग अपने पिता के राज्य में नया न पीऊँ'* (मत्ती 26:29)।

2. इस राज्य के विषय में, जब वह स्वर्ग में उठाए जाने वाले थे, तो उन्होंने अपने चेलों से कहा: *'मैं तुम्हारे लिए जगह तैयार करने जा रहा हूँ; और यदि मैं जाकर तुम्हारे लिए जगह तैयार कर लूँ, तो मैं फरि आकर तुम्हें अपने पास ले लूँगा, ताकि जहाँ मैं हूँ, वहाँ तुम भी हो।' 'जहाँ मैं जा रहा हूँ, उस मार्ग को तुम जानते हो'* (यूहन्ना 14:2-4)। और एक अन्य अंश में वह फरि कहते हैं: *'उस दनि तुम जानोगे कि मैं अपने पिता में हूँ, और तुम मुझ में हो, और मैं तुम में हूँ'* (यूहन्ना 14:20)। और फरि एक अन्य अंश में: *'हे पिता, मैं चाहता हूँ कि जिन्हें आपने मुझे दिया है, वे भी मेरे साथ वहीं*

हों जहाँ मैं हूँ, ताकि वे मेरी महिमा देखें, जो आपने मुझे दी है, क्योंकि आपने संसार की नींव से पहले ही मुझसे प्रेम किया' (यूहन्ना 17:24)। और यह स्पष्ट करने के लिए कि ये शब्द केवल प्रेरितों के बारे में नहीं, बल्कि सभी विश्वासियों के बारे में बोले गए थे, उन्होंने फिर कहा: *'मैं न केवल इनके लिए प्रार्थना करता हूँ, बल्कि उनके लिए भी जो उनके वचन के द्वारा मुझ पर विश्वास करेंगे, कि वे सब एक हों; जैसे कि आप, हे पिता, मुझ में हैं, और मैं आप में हूँ, वैसे ही वे भी हम में एक हों'* (यूहन्ना 17:20-21)। इन शब्दों से अधिक सांत्वना देने वाला और क्या हो सकता है? और क्या अधिक प्रभावशाली हो सकता है? कौन सी आत्मा को ये शब्द नरम करने में विफल रहेंगे? किस हृदय को ये तोड़ने में विफल रहेंगे? ऐसे हृदय को मानव कहने के बजाय, सही मायने में पत्थर का कहा जा सकता है। – इस पर चिंतन करते हुए, संतों ने जो कुछ भी सहा, उसे समान भाव से सहन किया, दुख को आनंद, बंदी को विशालता, कष्टों को आनंद, तपस्या के श्रम को सांत्वना, और मृत्यु को जीवन माना। इसलिए, चूँकि हम भी उनके समान ही लक्ष्य के लिए प्रयासरत हैं और पास्का के समान ही की खोज करते हैं, तो आइए हम जो कुछ भी अप्रिय है, उसे धैर्यपूर्वक सहें, न तो इसके भार के आगे झुकें और न ही हतोत्साहित हों, बल्कि इससे और भी अधिक तीव्र उत्साह के लिए प्रेरित हों।

3. जहाँ तक उस चालाक साँप का प्रश्न है, जो हमारी कामनाओं के द्वारा हमारे विरुद्ध विभिन्न योजनाएँ बनाता है, स्वयं को प्रकाश के स्वर्गदूत के रूप में बदल लेता है और चीज़ों को वैसा दिखाता है जो वे नहीं हैं, अँधेरे को प्रकाश और कड़वाहट को मिठास के रूप में प्रस्तुत करता है—उस पर ध्यान न दें। इस प्रकार उसने हमारे प्रथम माता-पिता को धोखा दिया, उनकी आँखों को मोहित करके और जो सुंदर नहीं है उसे सुंदर के रूप में प्रस्तुत करके, और फिर खाने के कार्य द्वारा, उन्हें स्वर्ग से बाहर निकाल दिया। परन्तु हम, यह अनुभव से जानते हुए कि वह एक चापलूस धोखेबाज़ है, स्वयं को आज्ञाओं के स्वर्ग से बाहर निकलने नहीं देंगे; और जब वह हमें कोई सुंदर दिखने वाला फल दिखाएगा, तो हम अपनी आत्मा और शरीर की आँखों को उस पर टिकाने नहीं देंगे, बल्कि हर तरह से उसे देखने से बचेंगे, कहीं हम धोखा न खा जाएँ। तो, यह ऐसा कौन सा फल है जो इतना आकर्षक प्रतीत होता है? कामुक प्रेम, वह दुष्ट वासना जो हर हानिकारक जुनून की जड़ है; इससे बचकर, हम उद्धार पाएँगे और सभी संतों के साथ शाश्वत पासओवर मनाने के योग्य माने जाएँगे।

221. जैसे सर्दियों के बाद वनस्पति जगत खिलता है और फल देता है, वैसे ही आत्मा भी, वंचितताओं, दुखों और कठिनाइयों के बाद, आध्यात्मिक रूप से खिलती है और आध्यात्मिक फल देती है, जिससे प्रभु प्रसन्न और पोषित होते हैं।

२२१. १) जैसे सर्दियों के बाद वनस्पति जगत खिलता है और फल देता है, वैसे ही आत्मा भी, तंगहाली, दुख और कठिनाइयों के बाद, आध्यात्मिक रूप से खिलती है और आध्यात्मिक फल देती है, जिससे प्रभु प्रसन्न होते हैं और पोषित होते हैं। – 2) अतःहमें अपने तपस्वी जीवन के सभी दुखों और कठिनाइयों को सहना चाहिए, ताकि हम फल दे सकें, प्रभु को उससे प्रसन्न कर सकें और उनका पोषण कर सकें: क्योंकि इससे अधिक आनंददायक कुछ भी नहीं हो सकता। – 3) और यह कि वास्तव में ऐसा ही है, इस बात की पुष्टि स्वयं प्रभु ने की है: तो फिर हम अपने जीवन के हर दुख को पूरी आनन्द के साथ क्यों न सहें [32, 18]

४. सर्दी बीत गई है; वसंत आ गया है, और हम ईश्वर की सृष्टि को जीवंत होते देख रहे हैं: पौधे खिल रहे हैं, पृथ्वी हरियाली से ढक गई है, पक्षी गा रहे हैं, बाकी सब कुछ नवीनीकृत हो रहा है - और हम इसमें आनंद लेते हैं और सभी चीजों के सर्व-ज्ञानी कलाकार - ईश्वर की महिमा करते हैं, जो, मानो, हर गर्मी में अपनी सृष्टि को पुनःबनाता और रूपांतरित करता है, और इस प्रकार स्पष्ट रूप से पुष्टि करता है कि *'उसकी अदृश्य गुणधर्म, अर्थात् उसकी अनंत शक्ति और दिव्य स्वभाव, संसार की सृष्टि के समय से ही, बनाई गई वस्तुओं में स्पष्ट रूप से समझी गई हैं'* (रोमियों 1:20)। हालाँकि, हमें यहीं पर नहीं रुकना चाहिए, बल्कि अपनी मानसिक दृष्टि को और आगे बढ़ाना चाहिए, और अपने भीतर उस प्रतिबिंब को देखना चाहिए जो सृष्टि में हो रहा है। – कैसे? निम्नलिखित तुलना के माध्यम से: जैसे इस दृश्यमान सृष्टि का नवीनीकरण सर्दियों से होता है, जिसके दौरान पृथ्वी और उस पर जो कुछ भी है, वह बर्फ, बारिश और तूफानों के कठोर प्रभावों के अधीन होता है; आत्मा के साथ भी ऐसा ही है; क्योंकि यदि वह पहले दुख, अभाव और विपत्तियों की सर्दी को नहीं सहती है, तो वह न तो फूल लाएगी और न ही फल; लेकिन यदि वह ऐसी सभी चीजों को सहन करती है, तो वह अपेक्षित फल लाती है और बदले में परमेश्वर का आशीर्वाद प्राप्त करती है, जैसा कि लिखा है: *'जो भूमि उस पर पड़ने वाले भरपूर वर्षा को पीती है, और जिसके द्वारा वह खेती के काम के लिए उपयुक्त अच्छा फल उगाती है, वह परमेश्वर का आशीर्वाद पाती है'* (इब्रानियों 6:7)।

5. तो आइए, हम इस लेंट के मौसम के दौरान हम पर आने वाले हर दुख, हर वंचितता और हर परीक्षा को सहन करें, चाहे वह दृश्यमान हो या अदृश्य—भूख और प्यास में, और अन्य सभी कष्टों में—ताकि हम फलदायी सिद्ध हों

और परमेश्वर का आशीर्वाद प्राप्त करें; और न केवल इतना, बल्कि यह भी कि हम प्रभु यीशु को पोषण दें और उनका स्वागत करें: क्योंकि जैसे हम सृष्टि को हरा-भरा होते, खिलते और फल देते देख कर आनंदित होते हैं, वैसे ही वह भी हमारी आत्माओं को आध्यात्मिक रूप से खिलते और फल देते देख कर आनंदित होते हैं। – तो, ये फल क्या हैं? *'प्रेम, आनन्द, शान्ति, धीरज, सौम्यता, भलाई, विश्वास, नम्रता, आत्म-संयम'* (गलातियों 5:22-23)। यही वह है जिससे वह पोषण पाता है, जिससे उसे आनन्द होता है। और धन्य है वह जो इस प्रकार उसे पोषण देता है, क्योंकि बदले में वह भी उससे अनन्त आशीषों से पोषित होगा। धन्य है वह जो इस प्रकार उसका स्वागत करता है, क्योंकि उसका भी स्वर्ग के राज्य में स्वागत किया जाएगा। यदि कोई सांसारिक राजा का अपने घर में स्वागत करे, तो कितनी खुशी और आनंद होगा? – क्या यह उससे भी कहीं ज़्यादा नहीं होगा जो राजाओं के राजा और प्रभुओं के प्रभु का स्वागत करता है?

6. और यह कि उसे वास्तव में ग्रहण किया जाता है, यह स्वयं उनके द्वारा कहे गए शब्दों से स्पष्ट है: *'यदि कोई मुझ से प्रेम करता है, तो वह मेरी आज्ञा का पालन करेगा; और मेरा पिता उस से प्रेम करेगा, और हम उसके पास आकर उसके साथ अपना निवास करेंगे'* (यूहन्ना 14:23)। और फिर: *'जिसके पास मेरी आज्ञाएँ हैं और वह उन्हें मानता है, वही मुझ से प्रेम करता है; और जो मुझ से प्रेम करता है, उससे मेरा पिता प्रेम करेगा, और मैं उससे प्रेम करूँगा और स्वयं को उस पर प्रगट करूँगा'* (यूहन्ना 14:21)। – यदि ऐसे वादे हैं, तो आइए हम न केवल सभी बातों को सहन करें, बल्कि प्रेरित के इन वचनों को सुनते हुए आनंद के साथ ऐसा करें: *'अब मैं तुम्हारे लिए अपने दुखों में आनंदित हूँ, और अपने शरीर में मैं मसीह की पीड़ाओं में से जो कमी रह गई है, उसे उसकी कलीसिया के लिए, जो उसका शरीर है, पूरा कर रहा हूँ'* (कुलु. 1:24); और जैसा कि संत याकूब कहते हैं: *'हे मेरे भाइयो, जब भी तुम विभिन्न परीक्षाओं का सामना करो, तो इसे शुद्ध आनन्द समझो, यह जानते हुए कि तुम्हारे विश्वास की परीक्षा धीरज उत्पन्न करती है; और धीरज को अपना पूरा काम करने दो, ताकि तुम परिपक्व और पूर्ण हो जाओ, और तुम्हें किसी भी बात की कमी न हो'* (याकूब 1:2-4)। क्या आप देखते हैं कि परीक्षाओं में आनंद और दुखों में प्रसन्नता है? – इस प्रकार संतों ने जीवन जिया; आइए हम भी स्वयं को इस प्रकार जीने के लिए प्रेरित करें, ताकि उनके पदचिन्हों पर चलने का प्रयास करके, हम उनके साथ स्वर्ग के राज्य के वारिस बनें।

222. उन तपस्या के गुणों को सूचीबद्ध करने के बाद, जिनमें कोई व्यक्ति विशेष रूप से लेंट के दौरान उत्कृष्ट रहा है, वह जोड़ता है: 'इस प्रकार सदा के लिए बने रहो, समय के साथ बदलने के बिना'

222. उन तपस्वी गुणों को सूचीबद्ध करने के बाद, जिनमें कुछ लोग विशेष रूप से लेंट के दौरान उत्कृष्ट थे, वह जोड़ते हैं: 'इस प्रकार सदा के लिए बने रहो, समय के साथ बदलने के बिना।' [3 *2, 19] अब हम लेंट के बिल्कुल अंतिम दिनों में पहुँच गए हैं: क्योंकि, जैसा कि आप देख सकते हैं, यह समाप्त होने को है। प्राचीन काल से हमें प्राप्त लिखित विवरण इस बात की पुष्टि करते हैं कि इस समय धन्य पिता, जिन्होंने पवित्र नगर यरूशलेम की सीमाओं के भीतर रेगिस्तान में लेंट के चालीस दिन बिताए थे, मरुभूमियों में पवित्र लेंट बिताने के बाद, और अब उन उच्च गुणों को प्रथम फलों के रूप में उदार प्रभु और ईश्वर को अर्पित कर रहे थे, जिनमें से प्रत्येक ने विशेष रूप से इन तपस्या के कार्यों में उत्कृष्टता हासिल की थी। आप भी, प्रत्येक अपनी-अपनी शक्ति के अनुसार, कुछ ऐसा अर्पित करें जो तुच्छ या अयोग्य न हो: एक सभी गुणों की रानी—प्रेम अर्पित करता है; दूसरा, ईश्वर-प्रकाशित विनम्रता; एक, मसीह-सदृश आज्ञाकारिता; दूसरा, प्रार्थना और भजन-गायन के दौरान जागरण में अथक सतर्कता; फिर कोई, शारीरिक श्रम करने में विशेष उत्साह; न ही निम्नलिखित प्रशंसा के योग्य हैं: ध्यान भटकाने वाली चीज़ों पर अंकुश, अनुचित नज़रों पर संयम, आचरण में विनम्रता, उत्तरों और पारस्परिक व्यवहार में विवेक; मैं अभद्रता पर रोक लगाने, बकवास से बचने, भोजन में संयम, अत्यधिक नींद से परहेज़, छंदों पर ध्यान देने, और अंत में, उस बात के बारे में नहीं बोलूँगा जिसे सबसे पहले और सबसे महत्वपूर्ण स्थान दिया जाना चाहिए: अपनी इच्छा का धन्य और शहीद-सा त्याग, जो एकमात्र सच्ची बलिदान के रूप में, प्रभु हमसे सबसे बढ़कर मांगते हैं। सूचीबद्ध प्रत्येक गुण एक अच्छा और धार्मिक अनुदान है; और मैं कहने की हिम्मत करता हूँ कि आप में से कोई भी परमेश्वर के सामने खाली हाथ नहीं आएगा, बल्कि प्रत्येक अपनी-अपनी अच्छी कर्मों को लेकर आएगा। इस प्रकार, आपने अपने तपस्या के प्रयासों के द्वारा, 'सोना, चाँदी और कीमती पत्थर' संचित कर लिए हैं*– ऐसे कर्म जो आने वाली परीक्षा की आग में नष्ट नहीं होंगे, और न कि वे जिन्हें प्रेरित *'भूसा, लकड़ी और पुआल' से* उपमा देते हैं। (1 कुरिन्थियों 3:12), जैसे कि पाप से प्रेम, वासनाओं की दासता, अश्लील भाषण, अशुद्ध विचार, गुप्त भोग, झूठ, कलह का प्रेम, और इसी तरह की अन्य सभी चीजें। चूंकि आप, उपवास के इन कुछ दिनों के दौरान, ऐसे आध्यात्मिक खजाने के स्वामी बन गए हैं, आइए हम उन्हें बर्बाद न करें; आइए हम, परिवर्तन के द्वारा या बदलते समय के कारण, विरोधी और हमारे शत्रु के आगे न झुकें।

समय बदलने दें और नए दिन उगने दें; फिर भी, परमेश्वर की इच्छा के प्रति अपनी आज्ञाकारिता और उनके प्रति अपने प्रेम में दृढ़ बने रहें। या, यदि आपको बदलना ही है, तो बदलें—लेकिन केवल बेहतर के लिए, छोटे पूर्णत्व को बड़े से बदलें, एक चिंगारी से जलते दीपक में, एक तारे से चंद्रमा में, और चंद्रमा से सूर्य में बदलें। बस स्थिर न रहें, न ही दुनिया की सुख-सुविधाओं की ओर लौटें, जो एक सपने की तरह क्षणभंगुर हैं, फिर भी मनुष्य को आग में शाश्वत दहन के अधीन करती हैं। इसलिए मैं प्रार्थना करता हूँ कि, जैसे आप अब तक एक ईश्वरीय और प्रसन्नचित्त स्वभाव में बने रहे हैं, वैसे ही हम वै की महोत्सव मनाएँ, और हम मठ के द्वार खोलें, प्रवेश करना चाहने वालों का स्वागत करें, और अपनी सभाओं और वार्तालापों को इस प्रकार आयोजित करें कि वे सभी ईश्वर की महिमा के लिए हों, और जो आपको देखें वे कह सकें कि ईश्वर आप में हैं, जैसे अपने ही मंदिर में, दिव्य प्रेरित (1 कुरिन्थियों 3:16) के अनुसार। – इस प्रकार कार्य करके, हम पवित्र और महान पास्का का उत्सव भी परमेश्वर को प्रसन्न करने वाले तरीके से, मसीह के दुख-क्लेश के अनुरूप और पुनरुत्थान के प्रकाश से प्रबुद्ध होकर मनाएंगे।

२२३. यह एक निश्चित घटना की याद दिलाता है, जो सभी के लिए एक परीक्षा थी, जिसे सभी ने अच्छी तरह से सहन किया।

223. 1) यह एक निश्चित घटना—सभी के लिए एक परीक्षा—की याद दिलाता है, जिसे हर किसी ने सफलतापूर्वक झेला है। – 2) यह समझाता है कि पाप करने का प्रलोभन कैसे उत्पन्न होता है, और तदनुसार पाप का विरोध कैसे करना चाहिए: शरीर की प्रवृत्तियों को दूर करके आदि। – 3) यह सुनिश्चित करने के लिए कि कोई प्रलोभन न हो, मनुष्य को अपने पुराने तरीकों पर वापस नहीं लौटना चाहिए, यहाँ तक कि विचारों में भी नहीं, बल्कि बाहरी रूप से अच्छे आचरण के नियमों का कड़ाई से पालन करना चाहिए। – 4) सबसे बढ़कर, सावधान रहें कि मठ न छोड़ें। – 5) सामान्य रूप से, आप सब में सब कुछ व्यवस्थित और उचित समय पर हो – सब कुछ प्रभु की उपस्थिति में कीजिए। – 6) लेंट समाप्त हो गया है; आइए हम प्रभु का धन्यवाद करें; लेकिन आइए हम स्वयं को सुधारना बंद न करें।

7. प्रभु ने सुसमाचार में कहा: *'हे शमौन, हे शमौन, देख, शैतान ने तुम्हें गेहूँ की तरह पसिने के लिए माँगा है; परन्तु मैं ने तेरे विश्वास के लिए प्रार्थना की है, कि तेरा विश्वास कमजोर न हो'* (लूका 22:31–32)। हम दीनों के साथ भी कुछ ऐसा ही हुआ है। लेकिन सर्व-दयालु परमेश्वर ने हमें हमारी सहनशीलता से अधिक दुखी होने के लिए नहीं छोड़ा है, बल्कि *'परीक्षा के साथ निकलने का मार्ग भी प्रदान किया है, ताकि हम इसे सहन कर सकें'* (1 कुरिन्थियों 10:13)। आप जानते हैं कि मैं क किस बारे में बात कर रहा हूँ। मैंने आपके भाई के दुख को परमेश्वर को प्रसन्न करने वाला माना है, स्वास्थ्यप्रद और प्रशंसनीय है, प्रेरित के वचनों के अनुसार: *'क्योंकि यह किस बात का दुख है जो परमेश्वर ने तुम्हें दिया, और वह भी इतना कि तुमने उसे जान-बूझकर नहीं किया? परन्तु पश्चाताप, और क्रोध, और भय, और लालसा, और उत्साह, और प्रतिशोध; इन सब बातों में तुमने इस मामले में अपना निर्दोष होना दिखाया है'* (2 कुरिन्थियों 7:11)। आपका यही रवैया, जो वास्तव में भाईचारे जैसा है, सत्य के वचन की माँग के अनुसार है; क्योंकि यह कहता है: *'यदि एक अंग पीड़ित होता है, तो सभी अंग उसके साथ पीड़ित होते हैं; यदि एक अंग का सम्मान होता है, तो सभी अंग उसके साथ आनंदित होते हैं'* (1 कुरिन्थियों 12:26)।

8. पर मेरे लिए विचार करो कि शैतान कितना परिश्रमी और चालाक है; कैसे वह *'एक गरजते हुए सिंह की तरह इस-उस पर झपटने के लिए इधर-उधर घूमता है'* (1 पतरस 5:8), किसी को शिकार की तरह, आंशिक रूप से या पूरी तरह से, पकड़ने की तलाश में रहता है। क्योंकि जब वह किसी को आंशिक रूप से पकड़ लेता है, तो वह उससे संतुष्ट नहीं होता, बल्कि हमेशा बुरे के लिए प्रयासरत रहता है, जब तक कि वह पाप में मृत्यु नहीं ला देता – अर्थात्: पहले वह हमें एक प्रलोभन स्वीकार करने के लिए प्रेरित करता है, फिर हमारे हृदयों में कुछ बुरा उत्पन्न करने का प्रयास करता है; और इस प्रकार आत्मा को कलंकित और भ्रष्ट करने के बाद, वह उसे प्रकृति की सीमाओं से आगे बढ़ने के लिए प्रलोभित करता है, और उसे पागल, मूक और अंधा बना देता है, जो अयोग्य चीज़ों के लिए प्रयासरत है: प्रकाश के बजाय अंधकार की ओर, मिठास के बजाय दुख की ओर, जीवन के बजाय मृत्यु की ओर। प्रलोभी द्वारा की गई विपत्ति ऐसी है। – हे भाइयों, हम अपनी आत्मा की हर चतुराई से रक्षा करें, शैतान को कोई स्थान न दें, बल्कि उस विचार को तुरंत दूर भगा दें; यदि हम इसमें विफल हो जाएँ, तो कम से कम सहानुभूति दिखाकर स्वयं को कलंकित न करें; और यदि हम इसमें भी असफल हो जाएँ, तो अपने आप को उस मानसिकता में अधिक समय तक न रहने दें, कहीं ऐसा न हो कि हम पाप में पड़ जाएँ।

९. ऐसा हमारे साथ अतीत की वासनाओं और यादों के कारण होता है। लेकिन आइए हम वासनाओं से भागें; आइए हम अपनी जवानी की यादों से भागें: क्योंकि वहाँ भटकना और अपनी कल्पना में वहाँ बसना, हृदय का मिस्र को लौटना ही है, जिससे हमें अपने भीतरी मनुष्य के द्वारा बचना चाहिए; जहाँ तक बाहरी मनुष्य का प्रश्न है, आइए हम जैसा

प्रेरति सखिाते हैं, वैसा ही करें: *'तुम्हारे मुँह से कोई भ्रष्ट बात न नकिले, बल्कि केवल वही जो नर्िमाण के लिए अच्छी हो, ताकि वह सुनने वालों को अनुग्रह प्रदान करे। और परमेश्वर के पवति्र आत्मा को दुखी न करो, जसिके द्वारा तुम छुटकारा के दनि के लिए मुहरबंद कएि गए हो। सभी कटुता, क्रोध, रोष, हंगामा और बदनामी आप से दूर हो जाएँ, साथ ही हर प्रकार की दुष्टता भी। एक दूसरे के प्रति दयालु और कोमल हृदय वाले बनें, और एक दूसरे को क्षमा करें, जैसे परमेश्वर ने मसीह में आपको क्षमा कयिा है'* (इफसियिों 4:29-32)।

10. साथ ही, मठ छोड़ने से बचें, क्योंकि यिह भटकने का एक कारण है। हाय! क्या आपके भाई आंगन के भीतर हैं, जबकि आप बाहर हैं? क्या आपके भाई मौन में हैं, जबकि आप व्यर्थ की बातों में लगे हैं? क्या आपके भाई वश्रिाम में हैं, जबकि आप इधर-उधर भटक रहे हैं? इसी से प्रलोभन आते हैं; इसी से गरिावटें आती हैं। झुंड से भटक गए भेड़ के साथ क्या होता है? क्या वह जंगली जानवरों का शकिार नहीं हो जाता? उसी प्रकार वह भी जो भ्रातृत्व से भाग जाता है। परन्तु ऐसा न हो, भाइयो; कसिी भी तरह ऐसा न हो।

11. तथापि तुम में सब कुछ उचति और व्यवस्थति रीति से हो; सब कुछ सावधानी और सतर्कता से हो; सब कुछ प्रभु की उपस्थिति में कयिा जाए, जो हमारे गुप्त और खुले कर्मों, दनि-रात हमारे कार्यों, और हमारे शरीर व मन की हर गति में होने वाली हर बात को देखता है; इस प्रकार हम यहूदयिों, यूनानयिों, या परमेश्वर की कलीसयिा को कोई आपत्ति का कारण न दें। – और इस वषिय में इतना ही काफी है।

12. अब जब कि लेंट समाप्त होने को है, तो हम परमेश्वर की महमिा करें, जन्होंने हमें इसे पूरा करने में सक्षम बनाया है और इसके पूरे समय के दौरान सामान्य तपस्या के कार्यों को करने की शक्ति दी है। मेहनत खत्म हो गई है, लेकनि इनाम बाकी है; शरीर परषि्कृत हो गया है, लेकनि आत्मा मजबूत हो गई है। और अधकि मजबूत और पवति्र बनो, और *'तुम्हारी आत्मा, प्राण और शरीर हमारा प्रभु यीशु मसीह के आने तक नर्दिोष रहे'* (1 थस्सि. 5:23)।

२२४. हम प्रभु के कष्ट और पुनरुत्थान को याद करना कभी बंद न करें, कहीं हम अपनी वासनाओं के जाल में न फँस जाएँ।

224. 1) हम प्रभु के कष्ट और पुनरुत्थान को याद करना कभी बंद न करें, कहीं हम अपनी वासनाओं के जाल में न फँस जाएँ। – 2) अब वसंत का मौसम है, जो सभी सांसारकि चीज़ों को पुनर्जीवति करता है: अतः हमें शरीर के प्रति सतर्क और सख्त रहना चाहिए। – 3) हमने लेंट के दौरान परश्रिम कयिा है; लेकनि अब जब लेंट समाप्त हो गया है, तो हमारा परश्रिम समाप्त नहीं हुआ है: हमें अपने पूरे जीवन भर अपने ऊपर परश्रिम करना चाहिए। – 4) आइए हम ऐसा ही करें। [4, 1]

13. पवति्र पास्का मनाने की मसीह की कृपा प्राप्त करके, आइए हम अपने कर्तव्यों पर लौटें, फरि भी इस तरह से कि जब हम परश्रिम करें, तो हम अपने उद्धारकर्ता यीशु मसीह के जीवन-दायक दुखों और उनके गौरवशाली पुनरुत्थान को भी याद रखें: क्योंकि हमें कसिी भी तरह से इन बातों की स्मृति को पास्का के बीत जाने के साथ फीका नहीं पड़ने देना चाहिए। परन्तु हम प्रभु के उद्धार करने वाले दुखों, उनके क्रूस पर चढ़ाए जाने, दफ़नाए जाने और पुनरुत्थान को हमेशा स्मरण रखें, ताकि, ऐसे वषियों में नरिंतर अपने मन को लगाकर, हम वासनाओं के प्रति अडगि रह सकें। यदि, तथापि, कसिी भी समय, असावधानी के कारण, हम फँस जाएँ, तो आइए हम शीघ्रता से सूली पर चढ़ाए गए यीशु, महमिा के प्रभु, को नहिारें, और हमारे आत्माओं पर तुरंत चंगाई का प्रकाश चमकेगा। इसी प्रकार प्राचीन इस्राएल ने भी, जब साँपों ने काटा, तो काँसे के साँप को नहिारा, और तुरंत चंगा हो गया (गनिती 21, 11–19)। आप अच्छी तरह जानते हैं कि बुरे वचिार साँपों की तरह काटते हैं, आत्मा में वषि भर देते हैं, जसिे जतिनी जल्दी हो सके अत्यंत सावधानी से नकिाल दयिा जाना चाहिए, अन्यथा देरी से घाव ठीक करना मुश्कलि हो जाएगा।

14. देखो, अब वसंत का समय है। यह रक्त की माता है (और रक्त शरीर की माता है)। *'क्योंकि शरीर आत्मा के वरि्द्ध और आत्मा शरीर के वरि्द्ध लालसा करता है'* (गलातयिों 5:17); इस प्रकार शरीर का बल आत्मा को दुर्बल करता है, और आत्मा का बल शरीर को दुर्बल करता है। – अतः हम समझदार बनें और भोजन, पेय, नींद और अन्य सभी चीज़ों के सेवन में पूर्ण संयम का पालन करें, कहीं ऐसा न हो कि शरीर आत्मा पर हावी हो जाए, बल्कि आत्मा शरीर पर वजिय प्राप्त करे।

१५. दौड़ में एक धावक को केवल एक या दो पड़ाव दौड़ने के बाद वजिेता नहीं घोषति कयिा जाता, बल्कि तब घोषति कयिा जाता है जब वह पूरा मार्ग दौड़ चुका हो (और नर्धिारति रेखा पर सबसे पहले पहुँचा हो)। हमारे साथ भी ऐसा ही है: हम केवल लेंट या पेंटेकोस्ट का उचति रूप से पालन करने से ही वजिेता नहीं बन जाते; बल्कि, मैं आपसे कहता हूँ, जब तक हम अपने पूरे जीवन में सतर्क नहीं रहते, हम शैतान के जालों से नहीं बच पाएंगे और न ही वजिेता का इनाम प्राप्त करेंगे।

16. तो फरि, हम बार-बार अच्छे कामों में क्यों प्रयास करें, बार-बार सद्गुण प्राप्त करने के लिए पसीना क्यों बहाएँ, बार-बार शरीर को क्यों दंडति करें, बार-बार शरीर को वश में क्यों करें, और बार-बार वासनाओं को क्यों दूर करें, हमेशा *'अपने शरीर में प्रभु यीशु की मृत्यु को क्यों धारण करें'* (2 कुरन्थियों 4:10), *'हमारे शरीर में हमेशा प्रभु यीशु की मृत्यु का दण्ड लिए हुए'* (2 कुरन्थियों 3:7)। क्योंक‍ि, निस्सन्देह, हम भी मरेंगे जैसे हमारे पिता और भाइयों ने मरे, और इस जीवन से विदा लेंगे – और अजनबी स्थानों में जाएँगे, और ऐसी दृश्य देखेंगे जो हमने कभी नहीं देखे। यह विचार भयानक है और स्वस्थ मन वालों को आनंद की अवस्था में पहुँचा देता है। – अत; भय और कम्प में रहते हुए, हम अपनी इंद्रियों को कड़ी पाबंदी में रखें, और व्यर्थ सुनने, हानिकारक दृश्यों, मदहोश कर देने वाली सुगंधों, और हर खतरनाक कदम से हर तरह से अपना बचाव करें, और स्वयं को पूरी तरह से पवित्र परमेश्वर को अर्पति कर दें, ताकि उन्हें प्रसन्न करके, हम अनन्त आशीर्वादों के वारिस बन सकें।

२२५ ईस्टर बीत गया है, और कष्टकाल बीत गया है; फरि भी ईस्टर का आनंद और प्रभु के कष्टकाल की स्मृत‍ि हमारे भीतर जीवति रहनी चाहिए; ताकि, जब तक हम जीवति हैं, हम अपने लिए न जिएँ, बल्क‍ि उस प्रभु के लिए जिएँ जो हमारे लिए मरे और फरि जी उठे

२२५. १) ईस्टर बीत गया है, और कष्ट-सप्ताह बीत गया है; परन्तु ईस्टर का आनन्द और प्रभु के कष्ट-सप्ताह की स्मृत‍ि हमारे भीतर जीवति रहनी चाहिए; ताकि, जब तक हम जीवति हैं, हम अपने लिए न जिएँ, बल्क‍ि उस प्रभु के लिए जिएँ जो हमारे लिए मरा और फरि जी उठा। – २) इसलिए, ईस्टर के बाद भी, हमें आध्यात्मकि प्रयासों में दृढ़ रहना चाहिए, और उनसे भटकने के लिए कोई बहाना नहीं बनाना चाहिए। – 3) वह उन्हें डाँटते हुए कहते हैं कि उन्होंने उन्हें गुप्त स्थानों पर निजी तौर पर मिलने के लिए नहीं कहा था, फरि भी कुछ लोग ऐसा कर रहे थे; और वह उन्हें यह निर्देश देते हैं कि जब वे बातचीत के लिए खुले तौर पर एक साथ इकट्ठा हों तो उन्हें अपना आचरण कैसे रखना चाहिए, और अन्य सभी समय में उनका व्यवहार कैसा होना चाहिए। – 4) वह उनसे उन अच्छे भाइयों को याद करने का आग्रह करते हैं जो स्वर्ग सधिार गए हैं और उनके अनुकरण करने के लिए कहते हैं, तथा भाई डोमेटयिन को एक उदाहरण के रूप में प्रस्तुत करते हैं [4, 2]

१७. ईस्टर बीत गया है, और पर्व समाप्त हो गया है; परन्तु आनंद—या यद‍ि आप चाहें तो उत्सव—बीता नहीं है: क्योंक‍ि आध्यात्मकि रूप से हमें हमेशा आनन्दति और उत्सव मनाना चाहिए, प्रेरति के वचनों के अनुसार: *'प्रभु में सदा आनन्दति रहो; मैं फरि कहता हूँ, आनन्दति रहो'* (फलिि. ४:४)। और पवित्र सप्ताह बीत गया है, परन्तु हमारे उद्धारकर्ता मसीह के दुखों की स्मृत‍ि हम में सदा ताज़ा और जीवति रहे—यह स्मृत‍ि कि महिमा के प्रभु हमारे लिए क्रूस पर चढ़ाया गया, उसे ܢनाया गया, और तीसरे दिन पुनरुत्थति हुआ, हमें अपने साथ जिला उठाया और अपने साथ जीवन दिया, *'ताक‍ि हम जो जीते हैं, अब अपने लिए न जीएं, बल्क‍ि उसके लिए जीएं जो हमारे लिए मर गया और फरि जी उठा'* (2 कुरन्थियों 5:15), ताक‍ि हम प्रेरति के शब्दों में निडर होकर कह सकें: *'अब मैं जीवति नहीं हूँ, बल्क‍ि मसीह मुझ में जीवति है; और जो जीवन मैं अब शरीर में जीता हूँ, वह मैं परमेश्वर के पुत्र पर विश्वास करके जीता हूँ, जिन्होंने मुझ से प्रेम किया और अपने आप को मेरे लिए दे दिया'* (गलातियों 2:20-21)। और इस संस्कार से यही निष्कर्ष निकाला जाता है: हमें संसार के लिए मरे हुए होना चाहिए और एकमात्र परमेश्वर के लिए जीना चाहिए।

18. अत; ईस्टर के बाद भी, हमें संयमी और सतर्क रहना चाहिए, प्रार्थना और पश्चाताप करना चाहिए, आँसू बहाना चाहिए और प्रबुद्ध होना चाहिए, प्रभु यीशु की मृत्यु को हमेशा अपने शरीर में धारण करना चाहिए, अपनी इच्छा से प्रतदिनि मरना चाहिए, और शरीर की इच्छाओं से मुँह फेरकर, विचारों में लगातार स्वयं को शरीर से अलग करके प्रभु की ओर मुड़ना चाहिए। – यह न कहें: 'अब लेंट नहीं है'; क्योंक‍ि संयमी लोगों के लिए, यह हमेशा लेंट ही है। यह न कहें: 'मैं अब बहुत समय से प्रयास कर रहा हूँ, और मुझे आराम की जरूरत है': इस पृथ्वी पर कोई आराम नहीं है। यह न कहें: 'मैं सद्गुण में निपुण हूँ, और मैं नहीं डरता': परिवर्तन और गिरने का भय कभी नहीं छूटना चाहिए, क्योंकि शैतान ने सद्गुण में निपुण कई लोगों को पलक झपकते ही पाप की खाई में फेंक दिया है; इसलिए *'जो समझता है कि वह खड़ा है, सावधान रहे, कहीं वह गरि न जाए'* (1 कुरन्थियों 10:12), और जो यह सोचता है कि वह सुरक्षति है, सावधान रहे, कहीं वह पूरी तरह से असुरक्षति न रह जाए। इसलिए आइए हम हमेशा सतर्क और चौकस रहें, नींद, भोजन, पेय और अन्य सभी चीजों में सख्त आत्म-नियंत्रण का अभ्यास करें, ताक‍ि शरीर हमेशा क ण्ट्रोल और अधीनता में रखा जा सके; अन्यथा, एक जवान घोड़े के बच्चे की तरह, यह उछल सकता है और हमें पाप की बाढ़ में फेंक सकता है।

19. हाल ही में एक उपदेश में मैंने तुम्हें समझाया था कि तुम स्वयं को अलग-थलग न करो या एकांत स्थानों में अकेले न रहो, फरि भी तुम में से कुछ लोग वहाँ फरि से गए हो। *'तुम क्या चाहते हो? क्या मैं तुम्हारे पास लाठी लेकर आऊँ, या प्रेम और कोमल आत्मा लेकर?'* (1 कुरन्थियों 4:21)। मैंने आपसे हर संभव तरीके से कहा है, फरि भी आपने

नहीं सुना; आपने अपनी आँखों से देखा है कि आपके भाई ने इसके लिए प्रायश्चित किया, फिर भी आपने खुद को नहीं रोका। सावधान रहो कि कोई भी उसी प्रकार के पाप में न पड़े। ये उपदेश व्यर्थ में नहीं, और न ही हर जगह दिए जाते हैं। *'क्योंकि परमेश्वर अव्यवस्था का नहीं, बल्कि शान्ति का परमेश्वर है'* (1 कुरिन्थियों 14:33)। *'सब कुछ सभ्य और व्यवस्थित रीति से हो'* (1 कुरिन्थियों 14:40), ताकि हर बात में प्रभु का महिमा हम से हो। भाइयो, जो इधर-उधर से आते हैं, इस बात का ध्यान रखो कि तुम कहाँ और कैसे बैठते हो, और अपने आचरण को कैसे संभालते हो—ऐसे नहीं कि तुम्हें जो मन चाहे करने की आज़ादी मिली हो, बल्कि ऐसे जैसे कि आत्मा से बँधे हुए हो; ऐसे नहीं कि कोई तुम्हें नहीं देखता, बल्कि ऐसे जैसे कि प्रभु तुम्हें देख रहे हों, जो तुम्हारी हर हरकत और हर काम को देखते हैं; भटकते न फिरो, जैसे कि तुम्हें इधर-उधर धकेला जा रहा हो, बल्कि ऐसे बनो जैसे अपनी भटकन में विश्राम कर रहे हों; अपने हस्तशिल्प, अपनी प्रार्थनाओं और अपने भजन-गाने पर ध्यान दो; चाँदी की लालच में यहाँ अपने लिए कुछ भी संचित न करो, बल्कि जो तुम्हारे पास है उससे संतुष्ट रहो। क्योंकि प्रभु ने स्वयं कहा है: *'मैं तुम्हें कभी न छोड़ूँगा और न तुझ से कभी मुँह मोड़ूँगा'* (यहोशू 1:5); ताकि हम में से प्रत्येक यह कह सके: *'प्रभु मेरा सहायक है; मैं मनुष्य से डरूँगा नहीं'* (भजन संहिता 117:6)।

२०. अपने भाइयों को याद करो, *'उनके अंत को देखकर, उनके विश्वास का अनुकरण करो'* (इब्रानियों १३:७)। ऐसे ही धन्य डोमेटियन थे, जिनकी हमने प्रशंसा की है, और जिनकी स्मृति संतों के साथ है। उन्होंने क्या कीमत चुकाई? उन्होंने कैसा जीवन जिया? – उसने किन परिश्रमों और कर्मों से अपनी शाश्वत विरासत प्राप्त की? वह देह में एक गरीब और नम्र मनुष्य था; लेकिन चूँकि उसने सदाचार को चुना और परमेश्वर से प्रेम किया, परमेश्वर ने उसे ऊँचा किया, धर्मग्रंथ के वचन के अनुसार: *'जो मुझे महिमा देंगे, मैं उन्हें महिमा दूँगा, परन्तु जो मुझे तुच्छ जानेंगे, वे लज्जित होंगे'* (1 शमूएल 2:30)। हमें ऐसे भाइयों के लिए आनन्दित और हर्षित होना चाहिए। लेकिन इसका क्या लाभ यदि हम इसमें अपना कुछ योगदान न दें? अपनी सामर्थ्य के अनुसार योगदान देकर, हम हमारे प्रभु मसीह यीशु में, संतों के भाग में सहभागी होंगे।

226. संसार में रहते हुए, हमें स्वयं को इस प्रकार आचरण करना चाहिए कि जो हमारे जीवन-पथ की निंदा करने के लिए उत्सुक हैं, वे मौन हो जाएँ

226. 1) संसार में रहते हुए, हमें इस तरह आचरण करना चाहिए कि जो लोग हमारे जीवन-पथ की निंदा करने के लिए उत्सुक हैं, वे मौन हो जाएँ। – 2) इसके लिए हमारी प्रेरणा प्रभु के प्रति प्रेम हो, जिसने सभी संतों को प्रेरित किया। – 3) यदि हम कभी-कभी अपनी इच्छाओं के आगे झुक जाते हैं, तो यह प्रभु के प्रति हमारे प्रेम की सुस्ती के कारण है, जिसे हमें इसलिए नवीनीकृत और मजबूत करना चाहिए। [4, 3]

21. हम, दीन लोग, आपको हर साल यहाँ आते हुए देखकर आनंदित होते हैं, और हम आपके आगमन का उत्सव इस प्रकार मनाते हैं जैसे यह एक दूसरा ईस्टर हो। लेकिन जैसे आप हमारे लिए सांसारिक उपहार लाते हैं—प्रत्येक व्यक्ति अपने हाथ से जो कुछ भी पाता है, उसके अनुसार—वैसे ही, एक प्रकार के आदान-प्रदान में, हम आपको आध्यात्मिक उपहार अर्पित करेंगे। – अतः मैं हमारे प्रभु यीशु मसीह के नाम पर आपसे विनती करता हूँ: मठवासी बुलावे के योग्य, हमारे द्वारा स्वीकार किए गए विश्वास के योग्य, और प्रभु के लिए हम पर हुए अत्याचार के योग्य आचरण करें, *'ताकि* संसार में *तुम्हारा चाल-चलन अच्छा हो', इसलिये कि 'जो तुम्हारे विषय में बुरा-भला कहते हैं' वे* तुम्हारा अच्छा चाल-चलन देखकर लज्जित हों (1 पतरस 2:12)। आइए हम, अपने और सत्य के विरोधी लोगों के हित के लिए, यह प्रयास करें कि हम अपना जीवन सुव्यवस्थित और दृढ़ता से जिएँ, एक-दूसरे के साथ अपने व्यवहार में अच्छा आचरण बनाए रखें और अपने अच्छे प्रयासों में उत्तम सिद्धांतों से निर्देशित हों। चाहे हम चर्च में इकट्ठा हों, आइए हम प्रेरितों के नियम का पालन करें। प्रेरित कहते हैं, *'तुम में से हर एक के पास भजन हो, शिक्षा हो, अन्यभाषा हो... परन्तु सब कुछ उन्नति के लिये हो'* (1 कुरिन्थियों 14:26); या यदि हम आवश्यकता से कहीं जा रहे हों, तो हमें श्रद्धापूर्वक चलना चाहिए, ताकि एक विशेष अनुग्रह, मानो, हमारे चेहरों पर चमक उठे, जो हमें देखने वालों के निर्माण के लिए हो; या यदि हम किसी महिला से बात करें, तो हमें उससे पूरी एकाग्रता से बात करनी चाहिए, विनम्रतापूर्वक अपनी दृष्टि हटा लेनी चाहिए, कहीं ऐसा न हो कि हमारे हृदयों में काँटे और तीर लग जाएँ।

22. संक्षेप में, *'हर बात' 'उस परमेश्वर की महिमा के लिए की जानी* चाहिए, *जिसने हमसे प्रेम किया और अपने आप को हमारे लिए दे दिया'* (गल. 2:20)। किसी का प्रेम प्रेमी को परमानंद की स्थिति में पहुँचा देता है, और उसे अपना होने नहीं देता, बल्कि केवल उसी का होने देता है जिससे वह प्रेम करता है: एक ऐसी अवस्था जो उन लोगों में भी देखी जा सकती है जो भावनात्मक या शारीरिक रूप से स्वयं से प्रेम करते हैं। – जब कोई पति अपनी पत्नी से प्रेम करता है, तो वह अपना सर्वस्व अपनी प्रियतमा को दे देता है, मानो केवल उसके लिए ही सांस लेता है, और निरंतर उसका ही

स्वप्न देखता है। भले ही आप उसके सामने सूर्य को दिखाएँ, वह उसे देखने की इच्छा नहीं करेगा, बल्कि केवल अपनी प्रियतमा को ही देखेगा; भले ही आप उसे भोजन परोसें, वह उसे खाने की इच्छा नहीं करेगा, क्योंकि वह अपनी एकमात्र प्रियतमा के साथ रहना चाहता है। – लेकिन हमारे प्रभु मसीह से अधिक सुंदर क्या है? उनके आनंदमय प्रेम से अधिक मधुर क्या है? क्या वह *'मनुष्यों के पुत्रों से भलाई में अधिक सुन्दर'* नहीं है? (भजन संहिता 44:3)। क्या वह *'मधुरता और सारी इच्छा'* नहीं है? (प्रेम गीत 5:16)। इसे प्रदर्शित करते हुए—अर्थात् उनके लिए उनके प्रेम के उत्साह को—संत चिल्ला उठते हैं: कुछ, *'जैसे हरिण धाराओं के लिए तरसता है, वैसे ही हे परमेश्वर, मेरी आत्मा तेरे लिए तरसती है'* (भजन संहिता 41:2); दूसरों ने फिर कहा: *"परमेश्वर का प्रेम हम पर छा गया है, जिन्हें इस सेवा का भार सौंपा गया है: क्योंकि यदि एक के लिए सब मरे, तो सब मर गए; पर मसीह सब के लिए मरा, ताकि जो जीवित हैं, वे अब अपने लिए नहीं, बल्कि उनके लिए जीएं, जिन्होंने उनके लिए मरकर फिर जी उठे"* (2 कुरिन्थियों 5:14-15)। देखो परमेश्वर ने जगत से कैसा प्रेम किया! और देखो कि संतों ने स्वयं परमेश्वर से कितना प्रबल और अजेय प्रेम किया!

23. जहाँ तक हमारी बात है, चूँकि हम उससे उत्कट प्रेम नहीं करते, हम दुष्ट विचारों और सांसारिक इच्छाओं के कैदी हैं, और परिणामस्वरूप आनंद के बजाय दुःख, मिठास के बजाय कड़वाहट, और शांति के बजाय चिंता का सामना करते हैं। – लेकिन भाइयों, हमें जागना चाहिए और होश में आना चाहिए, और अपनी आत्मा को ऐसी हानिकारक इच्छाओं से शुद्ध करना चाहिए, ताकि मसीह हम में वास कर सकें: क्योंकि जहाँ पवित्रता है, वहाँ मसीह हैं। ऐसा ही धन्य और प्रतीक्षित जीवन है; और इस प्रकार जीते हुए, हम हमारे प्रभु यीशु मसीह के द्वारा स्वर्ग के राज्य के वारिस बनेंगे।

२२७. उपवास के द्वारा आपने आध्यात्मिक आशीर्वाद प्राप्त किए हैं; अब उन्हें बनाए रखने का प्रयास करें

227. 1) उपवास के द्वारा आपने आध्यात्मिक आशीर्वाद प्राप्त किए हैं; अब उन्हें बनाए रखने का यत्न करें। – 2) इस उद्देश्य के लिए, लापरवाही न करें, बल्कि स्वयं पर कड़ी नजर रखें और सतर्क सावधानी से कार्य करें। – 3) पाप को उकसाने वाले अवसरों से बचें, अपनी भावनाओं की रक्षा करें और, सबसे बढ़कर, अपने विचारों को शुद्ध करें। – 4) यदि आप ऐसा नहीं करते हैं, तो आप पाप में गिर जाएँगे; और पाप ने हम पर कितना नुकसान किया है, और करना जारी रखता है? [4, 4]

२४. उत्सव के बाद, समय हमें हमारी चर्चाओं और नियमित शिक्षाओं की ओर वापस बुलाता है; और मैं इसे उत्साह के साथ आरंभ करता हूँ, यह जानते हुए कि मुझे इसी के लिए नियुक्त किया गया है, और यदि मैं अपनी पूरी शक्ति से आपके लिए सत्य के वचन का प्रचार नहीं करता तो मेरे लिए विनाश है। – तो, इस समय मैं आपसे क्या कहूँ? मैं कहूँगा कि, ठीक पहले की तरह, पवित्र लेंट के दौरान, आप में से प्रत्येक ने, जैसे किसी सुरक्षित बंदरगाह में आध्यात्मिक धन इकट्ठा किया हो, पवित्र ईस्टर में प्रवेश किया, अपने साथ कई और अच्छे सद्गुणों की उपलब्धियाँ लाए, जैसे: उपवास, जागरण, प्रार्थना, लगन और अन्य ऐसे धार्मिक प्रयास: इसलिए अब आपकी देखभाल और चिंता का विषय—केवल इनमें से कुछ ही नहीं, बल्कि ये सभी—उस सबको संरक्षित करना होना चाहिए।

२५. क्योंकि यह मान लेना उचित नहीं है कि जो कुछ एक दृश्यमान, भौतिक बंदरगाह में होता है, वह एक आध्यात्मिक बंदरगाह में भी वैसा ही होता है। वहाँ, जैसे ही कोई बंदरगाह में प्रवेश करता है और बस जाता है, वे आलस्य और बेफिक्री में डूब जाते हैं, और समुद्र के उथल-पुथल तथा अन्य विनाशकारी दुर्घटनाओं की परवाह नहीं करते: यहाँ, इसके विपरीत, शरीर की विश्राम-स्थिति के कारण वासनाएँ और भी प्रबल रूप से उग्र हो उठती हैं, और दुर्भावना की आत्माएँ तूफानों की तरह और भी अनियंत्रित रूप से हमला करती हैं: व्यभिचार की आत्मा, परिश्रमी खाने की आत्मा, लोभ की आत्मा, आलस्य की आत्मा, दुःख की आत्मा, घमंड की आत्मा। और इस स्थिति में, यह डरना बिल्कुल उचित है कि कोई बंदरगाह में होते हुए भी डूब सकता है। एक बार सेंट डेविड ने उरिय्याह की पत्नी पर लापरवाही से एक नज़र डाली, और पाठक जानते हैं कि परिणामस्वरूप उन्होंने क्या कष्ट उठाया (2 शमूएल 11:1 और 4); *'याकूब ने खाया और तृप्त हो गया, और उसने अपनी प्रियतमा को ठुकरा दिया'*, धर्मग्रंथ कहता है (व्यवस्थाविवरण 32:15); किसी ने लापरवाही से काम किया, कामवासना में डूब गया, और अन्याय को जन्म दिया।

26. यह सुनकर, सावधान रहो; पाप को भड़काने के लिहाज़ से खतरनाक जगहों और दृश्यों से बचो; अपने नियमों से अपनी आँखों, कानों, घ्राण, स्वाद और स्पर्श की इंद्रियों, साथ ही अपने खाने, पीने और सोने को नियंत्रित करो, कहीं कि वासना की लहरें तुम पर हावी न हो जाएँ। आपको यह भी समझना चाहिए कि जो इंद्रियों के समुद्र में नौकायन करता है, वह अनिवार्य रूप से तूफानों और उथल-पुथल के संपर्क में आता है; लेकिन जो मन के समुद्र को पार करता है, वह तूफानों और शांत दोनों का स्वामी है। क्योंकि यदि वह साहसपूर्वक अनुचित विचारों को दूर भगाता है, तो वह पवित्र आत्मा को अपने सहयात्री के रूप में पाकर, शांति से भर जाता है, जैसा कि संत आर्सेनियस के बारे में वर्णित

है। लेकिन जो कोई भी अपनी इंद्रियों को बेकाबू होने देता है, और जो अपने भीतर उठने वाली कामनाओं को लहरों की तरह बढ़ने से नहीं रोकता, वह अपने लिए सबसे भयंकर तूफान खड़ा कर लेता है; और यदि वे अपने विक्षिप्त विचारों को जल्दी से वश में नहीं करते हैं, तो वे उस बिंदु पर पहुँच जाएँगे जहाँ वे विलाप करते हुए आवाज़ में पुकारेंगे: *'मुझे समुद्र की गहराई में फेंक दो, और तूफान मुझे डुबो दे'* (भजन संहिता 64:3)। मेरा तात्पर्य यह है: अच्छे विचारों को हावी होने दो, और बेहतर को बदतर से परास्त न होने दो; आत्मा को शासन करने दो और उसे सर्वोत्तम की ओर निर्देशित होने दो।

27. या क्या तुम नहीं जानते कि पाप ने क्या किया है? क्या उसने संसार में मृत्यु नहीं लाई? क्या उसने पृथ्वी को भ्रष्ट नहीं किया? क्या उसने संसार की शुरुआत से अब तक, ब्रह्मांड को कब्रों से नहीं भर दिया? – क्योंकि मनुष्य आज्ञा का उल्लंघन करने तक अक्षय था? और जब तक प्रथम-निर्मित अपनी दी गई आज्ञा के प्रति दृढ़ता से वफादार रहा, तब तक इनमें से कोई भी बात घटित नहीं हुई थी। वही अनंत यातनाओं का कारण है; वही गेहेना की न बुझने वाली आग का आगजनी करने वाला है; वही अनंत कीड़े का आहार है; उसने मनुष्य को, जो कभी सम्माननीय था, मूर्ख जानवरों जैसा बना दिया है। चूँकि वह इतना विनाशकारी और घातक है, हमें उससे अपनी पूरी ताकत से भागना चाहिए; और सदाचार को चुनना चाहिए, जो मनुष्यों को स्वर्गदूतों जैसा बनाता है, राक्षसों का विरोध करता है, सभी वासनाओं को दूर करता है, और अंत में पुरस्कार के रूप में स्वर्ग का राज्य प्राप्त करता है—हम सभी को हमारे प्रभु की कृपा और प्रेम से इसकी प्राप्ति हो।

२२८. लापरवाही में न पड़ें: क्योंकि मृत्यु हमेशा पास है; और मृत्यु के बाद न्याय और प्रतिफल आता है।

२२८. १) लापरवाही में न पड़ें: क्योंकि मृत्यु हमेशा पास है; और मृत्यु के बाद न्याय और प्रतिफल आता है। – २) यदि पृथ्वी के राजा की सेवा करने वाले भय से सब कुछ, चाहे वह बड़ा हो या छोटा, करने का प्रयास करते हैं, तो क्या स्वर्गीय राजा की सेवा करने वालों को ऐसा और भी अधिक नहीं करना चाहिए? – 3) अतःआइए हम सब कुछ, अपनी उपासना और आज्ञाकारिता दोनों में, लगन से करें; सबसे बढ़कर, आइए हम एक-दूसरे के साथ शांति से रहें, और ऐसा ईमानदारी से करें। [4, 5]

28. इस वर्तमान जीवन की क्षणिकता को हमारे भीतर ऊब, आलस्य या उदासीनता को जन्म नहीं देना चाहिए, बल्कि ईश्वर को प्रसन्न करने के लिए उत्साह और सबसे गंभीर प्रयास को जन्म देना चाहिए, क्योंकि हम हमेशा मृत्यु के करीब हैं। कोई दास, जब अपने स्वामी के पास जाता है, न ही कोई दूत जो भेजने वाले को रिपोर्ट देने जाता है, वह लापरवाही नहीं बरतता, बल्कि इतना व्यस्त रहता है कि वह लगभग विक्षिप्त सा प्रतीत होता है। – क्या हम कुछ अलग हैं? हम भी अपने प्रभु के समीप जा रहे हैं—या यूँ कहें कि प्रभु हमारे समीप आ रहे हैं—और उनके भयानक न्याय के समीप, जिसके सामने हम सब नंगे और बेनकाब खड़े होंगे, अपने जीवन का हिसाब देंगे, और या तो अनंत राज्य प्राप्त करेंगे या अनंत यातना। जब हम इस पर मनन करते हैं, तो कौन लापरवाह रहने का जोखिम उठा सकता है? और क्या हर कोई अपने प्रभु की इच्छा पूरी करने के लिए आग से भी अधिक तीव्र उत्साह से भर नहीं जाएगा, कहीं ऐसा न हो कि वे उस दास की तरह समाप्त हो जाएं जिसे हाथ-पैरों में बंधकर विवाह-भवन से बाहर फेंक दिया गया था? (मत्ती 22:13)।

29. यदि ये उदाहरण हमें डराते नहीं हैं, तो आइए वर्तमान में होने वाली घटनाओं की तुलना करके भविष्य की कल्पना और भी स्पष्ट रूप से करने का प्रयास करें। क्या हम यह नहीं देखते हैं कि कैसे राजा के दुश्मनों को कालकोठरियों में यातना दी जाती है, दूसरों को कोड़ा मारा जाता है, कुछ को निर्वासित किया जाता है, दूसरों की आँखें फोड़ दी जाती हैं, और फिर भी अन्य लोग अपनी जान गंवाने के खतरे में हैं? – परन्तु जो लोग कोई अपराध भी नहीं किए हैं—वे भी कितने भय और कांपते हुए उसके सामने खड़े होते और उसकी सेवा करते हैं, जिन्हें युद्ध और अन्य कठिन कार्यों के लिए इधर-उधर भेजा जाता है? और कोई भी ऐसा नहीं है जो उसका विरोध करे, कोई भी ऐसा नहीं है जो उसकी अवज्ञा करे। यदि एक नश्वर राजा के साथ ऐसा है, तो क्या यह अमर और राजाओं के राजा और प्रभुओं के प्रभु के साथ और भी अधिक नहीं है, कि यह भय और कांपते हुए किया जाना चाहिए, और जो आज्ञा दी गई है, उसके अलावा कुछ भी नहीं किया जाना चाहिए? क्या आप सुनते हैं कि परमेश्वर का वचन क्या कहता है? – *'या क्या तुम उसकी भलाई, और उसकी सहनशीलता और धीरज को तुच्छ जानते हो, यह न समझते हुए कि परमेश्वर की भलाई तुम्हें पश्चाताप के लिए प्रेरित करती है?' परन्तु तुम्हारी कठोर और अनुत्तरदायी हृदय के कारण, तुम क्रोध के दिन और परमेश्वर के धर्मी न्याय के प्रकट होने के दिन के लिए अपने लिए क्रोध इकट्ठा कर रहे हो, जो हर एक को उसके कर्मों के अनुसार बदले में देगा'* (रोमियों 2:4-6)।

30. यह हमारे लिए एक चेतावनी हो; और हमें हर दिन पूरी एकाग्रता और सतर्क आत्म-अनुशासन के साथ बिताना चाहिए, सुबह-सुबह संकेत मिलते ही तुरंत और चुस्ती के साथ उठना, नींद को दूर भगाना, और कोठरी में तथा सामूहिक सभा में गंभीर प्रार्थना के बाद, प्रत्येक व्यक्ति को अपना-अपना कार्य संभालना—कोठरी का परिचारक कोठरी में, रसोइया रसोई में, और अन्य सभी, प्रत्येक अपनी-अपनी जगह पर: कहीं भी कोई बड़बड़ाहट, अवज्ञा, शोर-शराबा या संघर्ष नहीं होगा - न ही कोई द्वेष, जो गुप्त रूप से पाला गया हो, ताकि बाहर से शांतिपूर्ण दिखते हुए भीतर से रोष को पालकर, और जैसे ही अवसर मिले, सांप की तरह डसने या बदला लेने वाले ऊँट की तरह बदला लेने के लिए तैयार रहे। – एक अपराध किया गया और वह बीत चुका है। लेकिन क्या सच्ची पश्चाताप या क्षमा थी? अपने विचारों को फिर से भड़कने न दें, और *'बुराई का बदला बुराई से, या कष्ट का बदला कष्ट से'* लेने के प्रलोभन में न पड़ें; *इसके विपरीत, आशीर्वाद दें, यह जानते हुए कि आपको इसी के लिए बुलाया गया है, ताकि आप एक आशीर्वाद के वारिस बन सकें। क्योंकि जो कोई जीवन से प्रेम करना और शुभ दिन देखना चाहता है, उसे अपनी जीभ को बुराई से और अपने होठों को कपट बोलने से रोकना चाहिए। वह बुराई से दूर रहे और भलाई करे; वह शांति की खोज करे और उसका पीछा करे। क्योंकि प्रभु की दृष्टि धर्मियों पर है, और उनके प्रार्थना के लिए उसकी कान खुली है; परन्तु प्रभु का मुंह उन पर है जो बुराई करते हैं'* (1 पतरस 3:9-12)।

229. सारी सृष्टि फूलों से सजी और मधुर सुगंध बिखेरती हुई मसीह के पुनरुत्थान का उत्सव मनाती है: और हमें भी इस उत्सवों के उत्सव को मनाना चाहिए, हर सद्गुण के संयोजन के माध्यम से अपने भीतर इसे तैयार करके, अपने आप से एक आध्यात्मिक सुगंध बिखेरते हुए

229. 1) सारी सृष्टि फूलों से सजी और मधुर सुगंध बिखेरती हुई मसीह के पुनरुत्थान का उत्सव मनाती है: और हमें भी इस उत्सवों के उत्सव का जश्न मनाना चाहिए, हर सद्गुण के संयोजन के माध्यम से अपने भीतर इसे तैयार करके, और अपने भीतर से एक आध्यात्मिक सुगंध बिखेरते हुए। – 2) परन्तु इन दिनों हमें आइकॉनोक्लाज़्म (मूर्तिभंजन) के मद्देनज़र ऑर्थोडॉक्सी (सही आस्था) की सुगंध और भी अधिक बिखेरनी चाहिए, जिसे स्वयं प्रभु लज्जित करते हैं। – 3) अतःआइए हम सच्ची आस्था पर दृढ़ रहें और एक सदाचारी जीवन की सुगंध बिखेरें। [4, 6]

31. मसीह के पुनरुत्थान के पर्व पर, सारी सृष्टि, मानो एक प्रकार की निर्जीवता—उस उदास सर्दियों के आवरण—को त्यागकर, फिर से खिल उठती है और, यों कहें, जीवंत हो उठती है: पृथ्वी हरियाली से ढक जाती है, पेड़ पत्तियों से भर जाते हैं, जानवर खेल-कूद में उछलते-कूदते हैं, समुद्र शांत हो जाता है, और सब कुछ एक बेहतर अवस्था में बदल जाता है। – लेकिन यह बात मन में क्यों आई? – इसका कारण यह है: यदि निर्जीव और निःशब्द प्राणी भी सबसे गौरवशाली पुनरुत्थान पर इतनी प्रसन्नता से आनंदित होते हैं और इतने उत्सवपूर्ण स्वरूप को धारण करते हैं, तो क्या हमें—जो तर्क और ईश्वर की छवि ( ) के सम्मान से सम्मानित हैं—एक अच्छे जीवन से स्वयं को सजाना और एक सुगंधित आत्मा का प्रसार नहीं करना चाहिए? – क्योंकि वास्तव में, मसीह की सुगंध वह है जो सद्गुणों से सुसज्जित है, जैसा कि प्रेरित गवाही देते हैं, कहते हुए: *'क्योंकि हम उद्धार पाने वालों के बीच और नाश होने वालों के बीच परमेश्वर के लिए मसीह की सुगंध हैं: एक के लिए मृत्यु की ओर ले जाने वाली सुगंध; दूसरे के लिए जीवन की ओर ले जाने वाली सुगंध'* (2 कुरिन्थियों 2: 15:16)। इस संबंध में यह कहना भी उचित है कि आदम, आज्ञा का उल्लंघन करने से पहले, परमेश्वर के लिए एक सुगंध थे, जो अमरत्व और अक्षयत्व से सुसज्जित थे और स्वर्गीय चिंतन में डूबे हुए थे। क्योंकि, किसी भी ऐसे पेड़ की तरह जो वास्तव में फूलदार और सुगंधित हो, उन्हें स्वर्ग में लगाया गया था, जो सद्गुणों को बिखेर रहे थे। हम यहाँ यह भी याद कर सकते हैं कि कुलपिता इसहाक ने, अपने पुत्र याकूब से एक सुखद सुगंध महसूस करते हुए, ठीक यही कहा: *'यह मेरी पुत्र की सुगंध है, जैसे उस खेत की सुगंध जिसे प्रभु ने आशीष दी है'* (उत्पत्ति 27:24), निस्संदेह इस सुगंध को आध्यात्मिक अर्थ में समझते हुए। – तो आइए, भाइयों, हम भी एक आध्यात्मिक सुगंध बिखेरें, जिसे हम एक कुशल इत्रसाज़ की तरह सभी सद्गुणों के संयोजन से अपने भीतर तैयार करेंगे। ऐसी ही मूर्र धन्य है; ऐसी ही मूर्र ईश्वर को प्रिय है; ऐसी ही मूर्र स्वर्गदूतों को आकर्षित करती है और दुष्टात्माओं को दूर भगाती है; इस मूर्र से आकर्षित होकर शुद्ध आत्माएँ प्रभु मसीह के पदचिन्हों पर चलीं, जैसा कि गीतों के गीत (1:2, 3) में गाया गया है। तो यह हमेशा ऐसा ही होना चाहिए।

32. लेकिन वर्तमान समय में, हमें मूर्तिभंजन की अधर्मीता के सामने, सबसे बढ़कर ऑर्थोडॉक्सी (सही आस्था) को प्रकट करना चाहिए। मूर्तिभंजक चिल्लाते हैं: 'ईश्वर निर्विकार है; उसका चित्रण करना असंभव है।' – और वे यह समझे बिना कि वे क्या कह रहे हैं, सोचते हैं कि वे महान ज्ञान के शब्द बोल रहे हैं। – हे मूर्खों! क्या तुम प्रभु यीशु को परमेश्वर के रूप में स्वीकार करते हो? मुझे लगता है कि तुम कहोगे: हाँ। – तो फिर सुनो कि वह स्वयं क्या कहते हैं: जब वह अपने पुनरुत्थान के बाद पवित्र प्रेरितों के सामने प्रकट हुए और, अपनी अगणनीय विनम्रता

से, उन्हें उद्धार करने वाले विश्वास के सबसे गुप्त और अद्भुत रहस्यों में दीक्षा दी, तो उन्होंने भोजन को छुआ, अपने पुनरुत्थान की सच्चाई की पुष्टि करने के लिए, यद्यपि पुनरुत्थान के बाद उनके पवित्र शरीर को इसकी कोई आवश्यकता नहीं थी – उन्होंने खाया और पिया, और वे छूने में ठोस थे; और उन लोगों से जिन्होंने सोचा कि वे एक आत्मा हैं, उन्होंने कहा: *'मेरे हाथों और पैरों को देखो; यह मैं ही हूँ। मुझे छूकर देखो; एक आत्मा के पास मांस और हड्डियाँ नहीं होतीं, जैसा कि तुम देखते हो कि मुझमें हैं'* (लूका 24:39)। – एक मूर्तिभंजक मसीह-विरोधी इस पर क्या कहेगा? – क्या प्रभु के पास मांस और हड्डियाँ हैं? और क्या इसलिए उसे एक प्रतिमा में चित्रित किया जा सकता है? – यदि उत्तरार्ध संभव नहीं है, तो पूर्वार्ध कभी संभव नहीं था। लेकिन यह कहकर कि उसमें मांस है, वह स्वयं—चाहे मौन रूप से या निहितार्थ रूप से—गवाही देते हैं कि उसे एक प्रतिमा में चित्रित किया जा सकता है: क्योंकि ये दोनों विशेषताएँ एक-दूसरे की पूर्वापेक्षा करती हैं। ये मूर्तिभंजक, मनिखियों की तरह, *'पीड़ा और अनंत विनाश'* क्यों *झेलेंगे*, जैसा कि लिखा है (2 थिस्स. 1:9)?

33. हम, हालांकि, भाइयों, ईसाई धर्म की सही शिक्षा में, यह विश्वास करते हुए कि हम एक प्रतिमा में अपने प्रभु यीशु मसीह को देख सकते हैं और उसी में उनकी उपासना कर सकते हैं, और इस पर शांति से सहमत हैं, हम अपना सारा उत्साह अपने विश्वास के योग्य जीवन—पवित्र, निष्पाप और निर्दोष—जीने के लिए लगाएंगे, ताकि हम किसी भी पक्ष पर न ठोकर खाएं, बल्कि दोनों पर कुशलता से चलकर, स्वर्ग के राज्य को प्राप्त कर सकें।

230. इस पर चिंतन करते हुए कि आरोही प्रभु ने हमारी प्रकृति को कितना ऊँचा किया है, आइए हम इसे एक अयोग्य जीवन से कलंकित न होने दें

230. इस पर चिंतन करते हुए कि जो प्रभु स्वर्गारोहण कर चुके हैं, उन्होंने हमारे स्वभाव को कितना ऊँचा किया है, आइए हम इसे एक अयोग्य जीवन द्वारा कलंकित न होने दें। [4, 7] हमारे लिए उत्सवों का उत्सव, और हमारे उद्धारकर्ता, यीशु मसीह का स्वर्गारोहण, जो अब निकट है, एक महान और अलौकिक रहस्य है: क्योंकि हमारी प्रकृति दृश्यमान स्वर्गों की सीमाओं से परे उठाई गई है, जैसा लिखा है: *'ईश्वर, जो दया में धनी है... ने हमें, जो अपने अपराधों में मरे हुए थे, मसीह के साथ जीवित कर दिया है... और हमें उसके साथ जिलाया है, और हमें मसीह यीशु में स्वर्गीय स्थानों में बिठा दिया है''* (इफिसियों 2:4-6), *'स्वर्गीय क्षेत्रों में उनके दाहिने हाथ पर विराजमान, हर एक प्रधानता, अधिकार और शक्ति से, और हर एक नाम से जो इस युग में और आने वाले युग में नामित किया गया है, बहुत ऊपर: और उन्होंने सब कुछ उनके चरणों के नीचे कर दिया है; और उन्होंने उन्हें सब कुछ में सिर ठहराया है, जो मसीह की कलीसिया है, जो उनका शरीर है, और सब में सब की परिपूर्णता है'* (इफिसियों 1:20-23)। क्या आप देखते हैं कि मानव स्वभाव को महिमा की कितनी ऊँचाइयों पर उठाया गया है? क्या यह पृथ्वी से स्वर्ग तक नहीं है? क्या यह क्षय से अक्षय तक नहीं है? कितने लोग एक सांसारिक और नश्वर राजा के मित्र बनने के लिए परिश्रम करते हैं? परन्तु हम, जो *'एक समय में अपने बुरे कर्मों के कारण मन में पराये और शत्रु थे'* (कुलु. 1:21), हम न केवल हमारे प्रभु यीशु मसीह के द्वारा परमेश्वर पिता के साथ मेल किए गए हैं, बल्कि हमें पुत्रत्व की स्थिति तक भी उन्नत किया गया है। और अब हमारा स्वभाव स्वर्ग में है, जिसकी आराधना हर दृश्य और अदृश्य प्राणी करता है। हमारे अनुग्रहकारी परमेश्वर का मानवजाति के प्रति अकथनीय प्रेम इतना महान है! इस पर मनन करते हुए, और यह जानते हुए कि यह हमारे मन की समझ से परे है, धन्य पौलुस प्रार्थना करते हैं, *'कि हमारे प्रभु यीशु मसीह का परमेश्वर विश्वासियों को उस के ज्ञान में बुद्धि का आत्मा दे.... ताकि वह हमें यह बता सके कि उसकी बुलाहट की आशा क्या है, और पवित्र लोगों में उसकी विरासत की महिमा की संपत्ति क्या है, और उन लोगों के प्रति उसकी सामर्थ्य की अतिश्रेष्ठ महानता क्या है जो विश्वास करते हैं, उस सामर्थ्य के अनुसार जो उसने मसीह में प्रकट की'* (इफिसियों 1:17-21)। – लेकिन ठीक यही हुआ! – सर्व-धन्य, , हमारे पास कुँवारी के गर्भ से आए; उन्होंने स्वयं को प्रकृति के नियमों के अधीन किया; उन्होंने क्रूस पर चढ़ाई, *'हमारे कर्जों की हस्तलिखित व्यवस्था को उस पर ठोक दिया'* (कुलु. 2:14), पृथ्वी की गहराइयों में उतरे, सांसारिक दुर्बलताओं को चंगा किया, स्वयं में मानव स्वभाव को बहाल कर पुनर्जीवित हुए, और अंत में महिमा में स्वर्गारोहण कर गए, और परमेश्वर पिता के सामने हमारे वकील के रूप में स्वयं को प्रकट किया – संक्षेप में, इस पवित्र पर्व का यही अर्थ है! – जब हम इस पर मनन करते हैं और यह महसूस करते हैं कि हम मसीह की देह हैं, तो आइए हम इस उपहार का श्रद्धापूर्वक सम्मान करें; आइए हम अपनी कुलीनता को बनाए रखें; आइए हम अनुग्रह का विश्वासघात न करें, *"न ही मसीह के अंगों को व्यभिचार के अंगों में बदलें"* (1 कुरिन्थियों 6:15), बल्कि हम विचार और कर्म दोनों में स्वयं को और अधिक शुद्ध करेंगे; हम आत्मा के विरुद्ध युद्ध करने वाली शारीरिक वासनाओं को और अधिक त्यागेंगे, और *'अपने जीवन के खजाने' को* अपने भीतर सुरक्षित रखेंगे (1 पतरस 2:12)—एक ऐसा जीवन जो शांतिपूर्ण, नम्र, आज्ञाकारी, विनम्र और सुव्यवस्थित हो—क्योंकि ऐसा जीवन वास्तव

में एक धन्य जीवन है। जहाँ तक सुख-भोग और मनोरंजन, हँसी और अनुशासनहीनता का प्रश्न है, इनको तो मांस के प्रेमियों और जीवन के प्रेमियों के लिए छोड़ दें, जो देखते हुए भी नहीं देखते, और सुनते हुए भी नहीं सुनते, क्योंकि उनके हृदय कठोर और कान सुन्न हो गए हैं, इसलिए वे भले और बुरे, प्रकाश और अंधकार, जीवन और मृत्यु में अंतर नहीं कर सकते। जहाँ तक हमारा संबंध है, हे भाइयों, हम उस स्वीकारोक्ति से दृढ़ता से चिपके रहें *'जिसमें हम खड़े हैं, और जिसमें हम परमेश्वर की महिमा की आशा पर घमंड करते हैं'* (रोमियों 5:2); हम उन तपस्वी परिश्रमों से प्रेरणा लें जिनमें संतों ने परिश्रम किया—उनमें धन्य पाचोमियस भी हैं, जिनके बारे में हम अब गाते हैं—और आइए हम अच्छी तरह से देखें, अच्छी तरह से सुनें, अच्छी तरह से महसूस करें, और अपने सभी अंगों का अच्छी तरह से उपयोग करें, ताकि हम, वादे के अनुसार, अनंत जीवन के वारिस बन सकें।

231. प्रभु के स्वर्गारोहण में, हमारी स्वभाविक प्रकृति को गौरवान्वित किया गया है: आइए हम इस वरदान की महानता का सम्मान करें, और स्वयं को हर सद्गुण से सुसज्जित करें

231. 1) प्रभु के स्वर्गारोहण में, हमारी प्रकृति को गौरवान्वित किया गया है: आइए हम इस उपहार की महानता का सम्मान करें, और स्वयं को हर सद्गुण से सजाएँ। – 2) जो ऐसा नहीं है, वह मसीह का अंग नहीं है: इसलिए, जो कोई भी किसी वासना का दास है, वह पश्चाताप करे और उसकी तरह बने; जो कभी-कभी वासनाओं के उभार के अधीन होता है, उसे हर समय अपनी आध्यात्मिक शांति को बहाल करने के लिए तत्पर रहना चाहिए। – 3) जल्दी करो; क्योंकि मृत्यु सदा निकट है, और मृत्यु के बाद उन लोगों के लिए निन्दा आती है जिन्होंने पश्चाताप नहीं किया है। [4, 8]

1. हम प्रभु की स्वर्गारोहण का उत्सव मनाते हैं, जो हमारे प्रभु यीशु मसीह के अवतारित कार्य का चरमोत्कर्ष है। पिता की इच्छा के अनुसार सब कुछ पूरा करने के बाद, वह महिमा में स्वर्गारोहण हुए, और हमें भी अपने साथ उठाकर, हमें अपने पवित्र शरीर में स्वर्गों में बिठा दिया। *उसकी महिमा की* क्या *धनाढ्यता, और उसकी सामर्थ्य की क्या अतुलनीय महानता* है, जिसने हमारी दीन और तुच्छ प्रकृति को दिव्य राजसी सिंहासन तक ऊँचा उठा दिया है, और हर स्वर्गीय शक्ति उसकी आराधना करती है। जब हम इस पर मनन करते हैं, तो आइए हम विस्मय और श्रद्धा से भर जाएँ, आइए हम इस वरदान की महानता का श्रद्धापूर्वक सम्मान करें, और आइए हम अपने सिर के योग्य, मसीह के अंगों के रूप में, और उनके सह-वारिसों के रूप में जिएँ, *'पवित्रता में, ज्ञान में, धीरज में, दया में, पवित्र आत्मा में, सच्चे प्रेम में, सत्य के वचन में, परमेश्वर की सामर्थ्य में'* (2 कुरि. 6: 6:7), पूर्ण आज्ञाकारिता और नम्रता के साथ, पूर्ण लगन और सावधानी के साथ, अनुचित कुछ भी न बोलते हुए, और आज्ञा के विरुद्ध कुछ भी न करते हुए।

२. इसलिए, जो अपना शरीर कलंकित करता है, वह अब मसीह का अंग नहीं है; जो द्वेष पालता है, वह अब मसीह का अंग नहीं है; और जो किसी अन्य वासना के वश में है, वह अब मसीह का अंग नहीं है; और इसलिए वह पवित्र रहस्यों में भाग लेने के लिए अयोग्य है। क्योंकि प्रेरित कहते *हैं: 'मनुष्य अपने आपको परखे, और तब वह रोटी खाए और प्याला पिए; क्योंकि जो कोई अयोग्य होकर खाता और पीता है, वह प्रभु के शरीर और रक्त का अपराध करता है। इस कारण तुम में बहुत लोग दुर्बल और बीमार हैं, और कई सो गए हैं। क्योंकि यदि हम स्वयं का न्याय करें, तो हम दण्डित नहीं किए जाएँगे; परन्तु जब हम प्रभु द्वारा दण्डित होते हैं, तो अनुशासित किए जाते हैं, ताकि हम संसार के साथ दण्डित न हों'* (1 कुरिन्थियों 11:28–32)। अत; आइए हम स्वयं को योग्य बनाएँ और स्वयं को शुद्ध करें, ताकि हम यीशु मसीह के सही मायने में अंग कहला सकें, और पवित्र रहस्यों में योग्य रूप से भाग ले सकें। – यदि, तथापि, असावधानी के कारण हम बुरी इच्छा, या क्रोध, या ईर्ष्या, या घृणा, या परमेश्वर को घृणित किसी अन्य बात से वशीभूत हो जाएँ, तो हमें आश्चर्यचकित न होना चाहिए। परन्तु आओ, हम शीघ्रता से अपने मन की पूर्व अच्छी अवस्था में लौट आएं, होश में आएं, और इस बुराई में न टिकें; क्योंकि इस मामले में जानबूझकर देरी करना अक्षम्य दण्ड लाता है।

3. इसके अलावा, क्या मृत्यु अप्रत्याशित रूप से नहीं आ सकती? – कल ही हम एक बीमार बिशप से मिलने गए थे और उन्हें बहुत दुख में पाया, बुखार से पूरी तरह से दुबले-पतले, उनकी दृष्टि इधर-उधर भटक रही थी, उन्हें कहीं कोई मदद नहीं मिल रही थी। क्या हम किसी भी क्षण उसी नियति को नहीं भुगत सकते? – और आने वाली यातनाओं की तुलना में ये यातनाएँ क्या हैं? एक सपना और एक छाया। वह आग कभी बुझती नहीं, वह कीड़ा कभी मरता नहीं, अंधकार कभी छंटता नहीं, बंधन कभी ढीले नहीं होते, दांत पीसना कभी बंद नहीं होता, और अन्य सभी यातनाएँ शाश्वत हैं। भाइयों, यदि हम इस पर गंभीरता से विचार करें, तो हम कामवासना, ईर्ष्या, क्रोध, निर्णय करने वाले, और बदनाम करने वाले होने से बच जाएँगे, और हम कोई अन्य बुराई नहीं करेंगे; बल्कि हम शांतिपूर्ण बनें, एक अच्छा

स्वभाव बनाए रखें, पश्चातापी बनें, परोपकार का अभ्यास करें, परस्पर प्रेम करें जैसा परमेश्वर आज्ञा देता है, और जो कुछ भी आज्ञा दी गई है उसे उत्साह और तत्परता से पूरा करें, ताकि हम शाश्वत यातनाओं से बच सकें और शाश्वत जीवन प्राप्त कर सकें।

232. प्रभु ने एक और सांत्वनादाता भेजने का वादा किया था: यह पेंटेकोस्ट पर पूरा हुआ; यह एक महान बात है

२३२. १) प्रभु ने एक और सांत्वनादाता भेजने का वादा किया था: यह पेंटेकोस्ट के दिन पूरा हुआ; यह एक महान बात है। – २) तो फिर, हम कैसे प्रतिक्रिया देंगे? आओ हम राजा की महिमा का अंगीकार करें: आओ हम हर अच्छा काम करने के लिए प्रेरित हों, और उन सभी बातों का विरोध करें जो भावुक और सांसारिक हैं; जिनमें केवल कड़वाहट है, जबकि सारी सांत्वना केवल परमेश्वर में ही मिलती है। – 3) अतःआओ हम उन सभी बातों से दूर भागें जो उनसे भिन्न हैं। [4, 9]

४. हम पेंटेकोस्ट और पवित्र आत्मा के अवतरण का उत्सव मनाते हैं, जिनके विषय में प्रभु कहते हैं: *'यह तुम्हारे पास है, क्योंकि मैं जा रहा हूँ: क्योंकि यदि मैं न जाऊँ, तो सांत्वना देने वाला तुम्हारे पास नहीं आएगा, परन्तु यदि मैं जाऊँ, तो मैं उसे तुम्हारे पास भेजूँगा। और जब वह आएगा, तो वह तुम्हें सारी सच्चाई में मार्गदर्शन करेगा'* (यूहन्ना 16:7, 13)। यह कितना बड़ा वादा है! हम पर कितना बड़ा सम्मान है! उन्होंने एक स्वर्गदूत या मनुष्य को भेजने का वादा नहीं किया, बल्कि स्वयं के समान स्वभाव वाले पवित्र आत्मा को भेजने का वादा किया। इस प्रकार परमेश्वर के एकलौते पुत्र, अपने पिता का काम पूरा करने के बाद, स्वर्ग में आरोहण करते हैं, जबकि पवित्र आत्मा अवतरित होते हैं—न कि कोई दूसरा ईश्वर—यह उनसे कोसों दूर है!—बल्कि एक अन्य सांत्वनादाता, जैसा कि लिखा है। और—हे मानवजाति के लिए अकथनीय प्रेम! ईश्वर स्वयं हमारे सांत्वनादाता हैं। और वह दुखी और पीड़ित आत्मा को सांत्वना देते हैं, और कठिन परिस्थितियों में उसके हौसले को गिरने से रोकते हैं, जैसा कि पवित्र प्रेरित गवाही देते हैं, कहते हुए: *'बाहरी रूप से हम संघर्ष में हैं, आंतरिक रूप से भय में: परन्तु ईश्वर, जो दीनों को सांत्वना देते हैं, हमें सांत्वना देते हैं.... (2* कुरिन्थियों 7:5)। वह शैतानी भयों से भयभीत हृदय को सांत्वना देता है, उसे साहसी आशा के माध्यम से अजेय साहस तक उठाता है, जैसा कि संत दाऊद गवाही देते हैं: *'हे प्रभु, तू ने मेरी सहायता की और मुझे सांत्वना दी'* (भजन संहिता 85:17)। – वह परेशान मन को प्रेरित करके सांत्वना देता है, यह आश्वासन देकर कि उसे परमेश्वर के साथ शांति और प्रसन्नता प्रदान की गई है, जैसा कि प्रेरित गवाही देते हैं, कहते हुए: *'हम मसीह की ओर से विनती करते हैं, मानो परमेश्वर हमसे कह रहे हों: हम मसीह की ओर से विनती करते हैं, परमेश्वर से मेल करो'* (2 कुरिन्थियों 5:20)। – क्या आप इस अथाह दया को देखते हैं? क्या आप इस अतुलनीय वरदान को देखते हैं? एकलौते पुत्र पिता के सामने हमारे लिए मध्यस्थता करते हैं, जैसा कि लिखा है: *'जो परमेश्वर के दाहिने हैं, और जो हमारे लिए मध्यस्थता भी करते हैं'* (रोमियों 8:34)। यहाँ पृथ्वी पर, पवित्र आत्मा हमें कई तरीकों से सांत्वना देते हैं।

5. तो फिर, हम इसके लिए प्रभु को क्या देंगे? – हमारे लिए बस इतना ही बचा है कि भजनकार का गीत अपनाएँ और पुकारें: *'मेरी सारी हड्डियाँ कहती हैं: 'हे प्रभु, हे प्रभु, तेरे सदृश कौन है? जो दीन को उसके उत्पीड़क के हाथ से और दरिद्रों और अभावग्रस्तों को लूटने वालों के हाथ से छुड़ाता है''* (भजन संहिता 34:10)। और फिर: *'मेरी सहायता यहोवा से आती है, जिसने आकाश और पृथ्वी को बनाया'* (भजन संहिता 123:8)। और आगे: *'यदि यहोवा ने मेरी सहायता न की होती, तो मेरी आत्मा शीघ्र ही कब्र में चली गई होती'* (भजन संहिता 93:7)। और: *"प्रभु मेरा सहायक है: मैं मनुष्य से जो कुछ भी हो सकता है, उससे नहीं डरूँगा"* (भजन संहिता 117:6)। तो, ऐसे सांत्वना देने वाले, पवित्र आत्मा, एक अजेय शक्ति, महान रक्षक—ईश्वर—और एक सह-योद्धा को पाकर, हम शत्रु के आतंक से न डरें और न ही विरोधी शक्तियों से निराश हों, परन्तु, उसे हमारे सहायक और साथी-सैनिक के रूप में पाकर, हम साहसपूर्वक और दृढ़ता से तपस्या और испо‌शाह के संघर्षों में शीघ्रता से आगे बढ़ेंगे, उन्हें दिन-प्रतिदिन सहते हुए, साँप के प्रलोभनों से धोखा न खाते हुए, न ही उसकी अनवरत आक्रमणों से थकते हुए; हम सांसारिक प्रेम को बुझा देंगे, जो हमारी आत्मा के घर को आग से भर देता है। मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि यह आनंद नहीं, बल्कि एक खतरनाक बीमारी है; मिठास नहीं, बल्कि मन का उन्माद और एक दुष्ट अंधकार है। जो लोग शरीर के उन्माद को वश में कर चुके हैं, उसकी अशुद्धियों को धोकर दूर कर चुके हैं, और पूरे हृदय से एकमात्र ईश्वर से—जो सभी में सबसे मधुर और सबसे वांछनीय है—लिपट चुके हैं, वे यह जानते हैं। – जिसने भी इसे प्राप्त किया है, वह देह में रहते हुए भी देह से ऊपर, संसार में रहते हुए भी संसार से ऊपर बसता है; वे यहाँ रहते हैं और दृश्यमान से परे जीते हैं; उनमें, पवित्र आत्मा की कोमल बयार से उत्तेजित अनुग्रह की लहरें, आत्मा को यथासंभव शांति से भर देती हैं।

6. तो फिर, हम सुख के प्रेम को, हम पर विजय पाने के बाद, हमें इतनी हद तक भ्रष्ट क्यों करने देते हैं और इतनी गहराई से बदल क्यों देते हैं कि पृथ्वी, देह और रक्त के प्रति नतमस्तक होकर, हम अपने सर्व-सत्पुरुष ईश्वर से पूरी तरह से अलग हो जाते हैं? – अतःहम हर एक वासना से भागें: हम विश्वासघात के स्रोत, धन के प्रेम से भागें; हम अविश्वास से भागें, जो हमें प्रभु के साथ सहभागिता से अलग करता है; हम हर दूसरे जुनून से भागें, चाहे वह हमारे आत्माओं में किसी भी रूप में हो—क्रोध, ईर्ष्या, घृणा, गर्व, आत्म-महत्व, और अलगाव: कहीं ऐसा न हो कि मृत्यु हमें अतैयार पाए और हमें परमेश्वर से अलग कर दे; और ईश्वर से अलगाव स्वर्ग के राज्य से अलगाव है। जो कोई भी ईश्वर को प्रसन्न करने वाला कार्य नहीं करता, वह इससे बच नहीं सकता। अतःहम आने वाले क्रोध से बचने में सक्षम हों, जो उनके लिए आरक्षित है जो उसकी अवज्ञा करते हैं; आइए हम निरंतर ईश्वर को प्रसन्न करना शुरू करें, स्वयं को शुद्ध करें और अपनी आत्मा को नवीनीकृत करें। हौसला रखो! प्रभु उन सभी के निकट है जो उससे प्रार्थना करते हैं।

233. सभी संतों का पर्व। – वे कौन हैं? सभी शहीद: कुछ रक्त के शहीद, और अन्य आत्म-त्याग के शहीद

233. 1) सभी संतों का पर्व। – वे कौन हैं? सभी शहीद: कुछ ने रक्तपात से शहादत पाई, अन्य ने आत्म-त्याग के कार्यों द्वारा। – 2) हम भी उनमें गिने जाते हैं: हमारे अत्याचारी (– जुनून, जुनूनी लोग और राक्षस –) मांग करते हैं कि हम ईश्वर से मुंह मोड़ लें और उनके पक्ष में चले जाएं; चूंकि हम मना कर देते हैं, हम बाहरी वंचितताओं और आंतरिक संघर्षों के दुखों को सहते हैं। – 3) लेकिन आइए हम अंत तक दृढ़ रहें; और हमें शहीदों के भाग में हिस्सेदारी के लिए योग्य माना जाएगा। [4, 10]

7. हमें उत्सवों का उत्सव, पवित्र पेंटेकोस्ट मनाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है; अब सभी संतों का पर्व हमारे सामने है। – आज कितने और किस प्रकार के संत स्मरण किए जाते हैं? कौन स्वर्ग के तारों या समुद्र तट की रेत को गिन सकता है? – ईश्वर के संत, ईश्वर की सच्चाई के गवाह और शहीद इतने अनगिनत हैं, जिन्होंने उस सच्चाई के विरोधी अत्याचारियों की शत्रुतापूर्ण शक्ति का निष्ठापूर्वक विरोध किया और हर तरह की यातनाओं को साहस और आनंद के साथ सहन किया – आग, तलवारें, जंगली जानवर, पहिये, लोहे के पंजे और हर वह चीज़ जो दुष्टता रच सकती थी, अपने कष्टों को सांत्वना और अपने रक्त के बहाने को आनंद मानते हुए – और, इस दृढ़ विश्वास में, जलते हुए अंगारों पर चलते हुए, जलती चिताओं को अपने रक्त से बुझाते हुए, और अपनी मानवीय प्रकृति में ऐसी कई चीजें करते हुए जो मानवीय प्रकृति से परे थीं, इस प्रकार तानाशाहों और राजाओं के हृदय में भय पैदा करते हुए – किस बात की गवाही के रूप में? – कि यीशु मसीह परमेश्वर का पुत्र है, और कि अनंत जीवन उनके नाम के द्वारा दिया जाता है, जैसा कि लिखा है। लेकिन क्या जो अपना रक्त बहाते हैं, वे ही सत्य के एकमात्र साक्षी हैं? – नहीं; उसी प्रकार वे सभी भी जिन्होंने दिव्य जीवन जिया है, जिनके बारे में पवित्र प्रेरित कहते हैं कि वे *'भेड़-बकरियों के चमड़े पहने हुए, दरिद्र, कष्ट-ग्रस्त, अत्याचार-ग्रस्त होकर घूमते थे—जिनके योग्य संसार नहीं था—मरुभूमियों और पहाड़ों में, गुफाओं और धरती की खोहों में भटकते थे'*। और थोड़ा आगे: *'चूंकि हम गवाहों के इतने बड़े बादल से घिरे हुए हैं, तो आओ हम हर प्रकार की बुराई और उस पाप को उतार फेंकें जो हमें इतनी आसानी से फँसा लेता है, और धीरज के साथ उस दौड़ को दौड़ें जो हमारे सामने रखी गई है, और अपने विश्वास के कर्ता और सिद्ध करने वाले, यीशु की ओर देखें'* (इब्रानियों 11:37–38; 12:1–2)। क्या आप देखते हैं कि वह उन सभी को जो भक्तिपूर्ण जीवन से प्रेम करते हैं—जो धैर्यपूर्वक स्वैच्छिक कठिनाइयों का जीवन सहते हैं—शहीद कहता है?

8. इस प्रकार, हे भाइयों, हम भी शहीदों के समूह में गिने गए हैं: क्योंकि क्रूस उठाए हुए जीवन के दुखद मार्ग से प्रेम करके और धैर्यपूर्वक उस पर चलकर, तथा पवित्रता की प्रतिज्ञा को बनाए रखकर और हमारे सामने रखी गई आज्ञाकारिता के अनेक संघर्षों से इनकार न करके, हम गवाही देते हैं कि यीशु मसीह हैं, परमेश्वर के पुत्र, हम गवाही देते हैं कि एक न्याय और एक प्रतिफल है; हम गवाही देते हैं कि हमें मसीह की भयानक न्याय-पीठ के सामने हिसाब देना होगा कि हमने कैसे जीवन यापन किया है, शैतान, मसीह के शत्रु, के विरुद्ध दृढ़ खड़े होकर, जो हमें बुरे विचारों और घातक वासनाओं के प्रलोभनों से पीड़ित करता और कोड़े मारता है, और हमें ईश्वर का परित्याग करने के लिए मजबूर करता है। और सचमुच, जो लोग अपने अन्यायपूर्ण विचारों और भावनाओं से भ्रष्ट होकर विरोधी की आज्ञा मानते और उसका अनुसरण करते हैं, वे अपने ही कर्मों और अपने ही स्वभाव से यह घोषित करते हैं कि उनके लिए कोई परमेश्वर नहीं है, जैसा कि संत दाऊद ने कहा: *'मूर्ख अपने मन में कहता है, "परमेश्वर नहीं है"'* (भजन संहिता 52:2)। क्योंकि जब तक शत्रु पहले लोगों की आत्माओं में ईश्वर को भूलने की भावना—और, मानो, उसकी अवहेलना—न भर दे, तब तक वह मन को शरीर की कामनाओं, पाप करने की स्वतंत्रता, मद्यपान, व्यभिचार, भोज-विलास, लालच, मूर्तिपूजा, और अन्य सभी प्रकार के अनुचित कार्यों की ओर नहीं झुका सकता; परन्तु इसमें सफल

हो जाने पर, वह आत्मा पर अधिकार कर लेता है, और उसे परमेश्वर से छीनकर, अपने साथ अनंतकाल की पीड़ा के लिए न बुझने वाली आग में डाल देता है। ऐसी धोखाधड़ी कितनी विनाशकारी है, और यह कितना भयानक अंत लाती है!

9. परन्तु हम, मसीह के गवाहों के रूप में, फिर भी अच्छा गवाह देंगे; हम फिर भी सच्चे विश्वास का प्रचार करते रहेंगे, और सभी संतों के साथ इस बात पर आनन्द मनाएँगे कि हमें मसीह की गवाही देने के योग्य समझा गया है, बिना बाल के सामने घुटना टेके—अर्थात्, शरीर की वासनाओं और अन्य पापी सुखों के आगे झुके बिना; हम शत्रु पर विश्वास नहीं करेंगे जब वह हममें आज्ञाकारिता का परित्याग करने के विचार डालना चाहता है, बल्कि हम बहादुरी से उसका विरोध करेंगे, मारे तो जाएँगे पर पराजित नहीं होंगे। – ऐसी शहादत का क्या फल मिलता है? यह जानो: मसीह के गवाह, जिन्होंने सभी के सामने उनकी गवाही दी और अपनी सच्ची गवाही के लिए अकल्पनीय यातनाएँ सहन कीं, उन्हें आने वाले युग में उनका सह-वारिस घोषित किया जाएगा, जैसा कि प्रेरित कहते हैं: *'जब मसीह, जो हमारा जीवन है, प्रकट होगा, तब तुम भी उसके साथ महिमा में प्रकट होगे'* (कुलुस्सियों 3:4)। उनके साथ ही, हम भी, अपने जीवन के अंत तक अपनी गवाही देते हुए, शाश्वत पुरस्कार प्राप्त करने और मसीह के साथ आनंद और हर्ष में अनंतकाल तक वास करने के योग्य ठहरें।

234. रविवार को, प्रभु द्वारा अपने पुनरुत्थान के माध्यम से हम पर प्रदान की गई आशीर्वादों की स्मृति हमारे लिए एक सबक के रूप में काम करे

234. 1) रविवार को, प्रभु द्वारा अपने पुनरुत्थान के माध्यम से हम पर प्रदान की गई आशीर्वादों की स्मृति हमारे लिए एक सबक के रूप में हो। – 2) उनका स्मरण करने के बाद, हम अपने प्रभु से प्रेम करने के लिए प्रेरित हुए बिना नहीं रह सकते, जिन्होंने हमसे इतना गहरा प्रेम किया है, उनके आज्ञाओं का पालन करके और उन सभी बातों से दूर हो कर जो उन्हें अप्रिय हैं। – 3) इस प्रेरणा को मजबूत करने के लिए, आइए हम नश्वरता पर मनन करें; हमारे भाई यूडोकिमस की मृत्यु अब हमें इसके लिए एक अवसर प्रदान करती है। [4, 12]

10. स्वयं पुनरुत्थान का दिन, जिसे हम अब मनाते हैं, यदि हम ध्यान दें, तो हमें पर्याप्त शिक्षा (Κατηχησις) प्रदान करता है। क्योंकि इसी दिन हमारे प्रभु यीशु मसीह ने हमें, जो पाप से पतित हो गए थे, उठाया; इसी दिन उन्होंने हमें जीवन दिया, जो हमारे अपराधों और हमारे शरीर की अखतता ( ) के कारण मृत्यु दंडित हो गए थे; इसी दिन, उन्होंने एक बार फिर हमारे लिए स्वर्ग का द्वार खोल दिया है, ताकि हम जीवन के वृक्ष में भाग ले सकें, जो उनका जीवन-दायक शरीर और रक्त है; इसी दिन, मृतकों में से जी उठे होने के कारण, हम भविष्यद्वाणी के वचन के साथ पुकार सकें: *'हे मृत्यु, तेरा डंक कहाँ? हे पाताल, तेरी विजय कहाँ?'* (1 कुरिन्थियों 15:55)। तुम्हें उस ने परास्त किया है जिसने कहा: *'साहस रखो; मैं संसार पर विजय पा चुका हूँ'* (यूहन्ना 16:33); इस दिन, प्रेरित के शब्दों के माध्यम से बोलते हुए, परमेश्वर पिता *ने हमें मसीह यीशु में उसके साथ जिलाया और हमें स्वर्गीय स्थानों में बिठा दिया, ताकि आने वाले युगों में मसीह यीशु में हम पर अपनी कृपा के प्रति अपनी दयालुता के द्वारा अपनी अनुग्रह की अकथनीय धनाढ्यता को दिखा सकें* (इफिसियों 2:6-7)। हे अकथनीय वरदान! उसने हमें किससे और किसके लिए निकाला है? मृत्यु से जीवन में, अंधकार से प्रकाश में, दासत्व से स्वतंत्रता में, शत्रुता से सच्ची संगति में; और उसने अपनी दया इतनी दूर तक बढ़ाई है कि हमें *'अपने पुत्र के स्वरूप के अनुरूप'* बना दिया है (रोमियों 8:29)। यह कितनी अगोचर कृपा है! हमारे प्रति उनके प्रेम की कितनी असीम महानता है! कि उन्होंने हम सभी के लिए अपना एकलौता पुत्र फिरौती के रूप में दे दिया। और हम इस पर कैसे न चिल्लाएँ: *'प्रभु के महान कर्मों का वर्णन कौन कर सकता है? उसकी सारी स्तुति कौन सुना सकता है?'* (भजन संहिता 105:2)।

11. अतःहम उसी से प्रेम करें जिसने हमसे इतना प्रेम किया है, और उसी के लिए मरें जिसने हमारे लिए प्राण दिया, न कि मांस और रक्त की ओर लौटें, न सर्प की चालाकी से धोखा खाएँ, न इस जीवन के सुखों से बहकें, और न ही स्वयं को पाप का फल चखने दें, जिससे मृत्यु आती है; क्योंकि लिखा है: *'क्योंकि जो लोग सत्य का ज्ञान पा जाने के बाद जान-बूझकर पाप करते हैं, उनके लिए पापों का कोई और बलिदान नहीं रहा; बल्कि न्याय की एक भयानक आशा और उस आग का प्रकोप है जो विरोध करने वालों को भस्म कर देगी'* (इब्रानियों 10:26–27)। इसलिए, आइए हम प्रभु की सेवा सावधानी और श्रद्धा के साथ करें; आइए हम अपने जीवन को बुद्धि और सुव्यवस्था के साथ जिएँ; आइए हम हमें सौंपे गए कर्तव्यों को समझदारी और धैर्य के साथ पूरा करें, जो आज्ञा दी गई है, उसका सटीक पालन करते हुए, न केवल आध्यात्मिक मामलों में बल्कि शारीरिक कार्यों में भी, यहाँ तक कि लकड़ी जलाने और पानी खींचने तक में भी।

12. सबसे बढ़कर, हमें यह याद रखना चाहिए कि मृत्यु अनिवार्य रूप से हमारे सामने है। – इसी समय, हमारे भाई यूदोकिम प्रभु के पास चले गए हैं। – यदि एक भाई की मृत्यु हमें होश में नहीं लाती, तो फिर, अंततःहमें कौन सी

चीज़ सीधा करेगी? यदि मृत्यु का रहस्य हमें आश्वस्त नहीं करता, तो और क्या हमें विनाशकारी वासनाओं से बचा सकता है? क्या यह सर्वविदित नहीं है कि जब हम इस या उस पर बात कर रहे होते हैं और विचार-विमर्श कर रहे होते हैं, तब भी मृत्यु का भयानक क्षण अचानक हम पर आ सकता है? – पाप के वश में रहने वालों के लिए, जिनकी कमियाँ पश्चाताप से शुद्ध नहीं हुई हैं, जो अव्यवस्था में जीते हैं, जो कानून तोड़ने वाले और लापरवाह हैं - उनके लिए यह एक भयानक और असहनीय घड़ी है; परन्तु परमेश्वर से प्रेम करने वालों, धार्मिक और सदाचारी, नम्र और विनम्र लोगों के लिए यह एक मीठी और प्रतीक्षित घड़ी है। इसलिए, हे भाइयों, मैं तुम से विनती और स्मरण कराता हूँ, कि इन विचारों को हृदय में धारण करके, हम यथाशक्ति अपनी कामनाओं से मुँह फेर लें, और प्रेम से मसीह को अपनाकर, हम सदाचार में उत्तम हों, ताकि इस प्रकार अपना सम्पूर्ण जीवन जीकर, हम हमारे प्रभु मसीह यीशु में स्वर्ग के राज्य के वारिस बनें।

235. यह याद करते हुए कि कैसे एक व्यक्ति, मरते समय, चिल्लाया: 'मुझे आश्चर्य हुआ है', और अपने शब्द पूरे करने से पहले ही उसकी मृत्यु हो गई – वह यह शिक्षा देता है: इस तरह जियो कि मृत्यु के लिए हमेशा तैयार रहो

235. 1) यह याद करते हुए कि कैसे एक व्यक्ति, मरते समय, चिल्लाया: 'मुझ पर अचानक आक्रमण हुआ है', और अपनी बात पूरी करने से पहले ही उसकी मृत्यु हो गई – वह यह शिक्षा देता है: इस तरह जियो कि मृत्यु के लिए हमेशा तैयार रहो। – 2) फिर, यह संकेत देते हुए कि यह सामुदायिक जीवन में सबसे आसानी से हासिल होता है, वह अकेले रहने वालों के प्रति सहानुभूति व्यक्त करते हैं, और जोड़ों या तीनों में रहने वालों की प्रशंसा करते हैं, लेकिन उससे भी अधिक उन लोगों की जो एक समुदाय में रहते हैं। [4, 13]

१३. आज रविवार है; और मुझे आपको मृत्यु के बारे में बात करनी है। आप देखते हैं कि हमारे भाई और पिता, एक के बाद एक, हमसे कितनी बार विदा हो जाते हैं। हमारे लिए, यह इस बात की याद दिलाने से अधिक कुछ नहीं है कि हम भी जल्द ही यहाँ से चले जाएँगे; हम किसी सांसारिक और क्षणिक स्थान पर नहीं जाएँगे, बल्कि अद्रव्य और शाश्वत निवासों में जाएँगे, जहाँ से एक बार प्रवेश करने के बाद किसी का भी लौटना नहीं होता। – सचमुच, मृत्यु सुनने में भयानक होती है; लेकिन यह अतुलनीय रूप से अधिक भयानक तब होती है जब कोई इसे अपनी आँखों से देखता है, जैसा कि हमने छह दिन पहले चाल्किडिस के मठाध्यक्ष की मृत्यु पर अनुभव किया था। हम उनके साथ थे जब उन्होंने अपना अंतिम साँस लिया, और जो हुआ उससे हम चकित थे: कि कैसे वह एक क्षण पहले हमारे साथ थे और अगले ही क्षण, मृत्यु के आगे हार मानकर, हमसे विदा हो गए। वास्तव में एक भयानक दृश्य और एक डरावना तमाशा! साँस लेते हुए, उस धन्य व्यक्ति ने ये शब्द कहे: 'मुझे अचानक ले जाया गया है'; और इन शब्दों के साथ, अपना सिर और हाथ थोड़ा हिलाकर, वह चुप हो गया, इससे पहले कि वह बता पाता कि क्या हुआ था। – लेकिन हमें एहसास हो गया था कि इस आश्चर्यजनक घटना का क्या मतलब था। मैंने आपको यह इसलिए नहीं बताया है कि दिवंगत आत्मा पर कोई आँच आए; ईश्वर न करे! – परन्तु स्वयं को चेतावनी देने और आपको प्रोत्साहित करने के लिए – यह सुनिश्चित करने के लिए कि अंतिम घंटा हमें आश्चर्यचकित न करे, और हमारे निधन के क्षण में हमारी गर्दन से ऐसा कोई पुकार न निकले; बल्कि हम उस घड़ी के लिए हमेशा तैयार रहें, और बिना किसी भ्रम के उसका सामना करें। क्योंकि लिखा है: *'मैंने स्वयं को तैयार किया है और निराश नहीं हुआ'* (भजन संहिता 118:60)। परन्तु हम तब तक इसे प्राप्त नहीं कर पाएंगे जब तक हम स्वयं के प्रति सतर्क न रहें, और जब तक हम अपने किए हुए भले कामों को दृढ़ता से बनाए न रखें, और पश्चाताप द्वारा अपने किए हुए पापों को सुधारें, और हमेशा अपने जीवन को इस प्रकार व्यवस्थित करें जैसे कि हमें तुरंत स्वर्ग में उठा लिया जाएगा । – क्योंकि हमें वहाँ किसके सामने उपस्थित होना है? क्या यह सभी का न्यायी और परमेश्वर के सामने नहीं है, *'जिसके सामने स्वर्ग में और पृथ्वी पर और पृथ्वी के नीचे हर घुटना झुकेगा, और हर जी कहेगा'* (फिलि. 2:10)? और हमें क्या हिसाब देना होगा? क्या यह जीवन में हमारे द्वारा किए गए हर काम का नहीं है—कर्म, वचन और विचार में?

14. जब भी यह बात मन में आती है, तो यह मुझे भय से भर देती है और लगभग होश ही उड़ा देती है। लेकिन आप बिना भय के इस पर मनन कर सकते हैं—हाँ, आप, जिनके आज्ञाकारी हैं और जिन्होंने अपना सारा भरोसा आज्ञाकारिता की शक्ति में रखा है: क्योंकि सच्ची आज्ञाकारिता में जीवन वास्तव में ऐसा ही होता है। परन्तु वे जो आज्ञाकारिता से मुँह फेर लेते हैं और अकेलेपन में रहते हैं, इधर-उधर भटकते हैं और खड़े होने के लिए कोई ठोस आधार नहीं पाते, वे मसीह के भयानक सिंहासन के सामने अपने लिए क्या बचाव तैयार करेंगे? हाय, क्या दुख है! बुराई कितनी लुभावनी है! मठवासियों के जीवन के मार्ग पर सही चल रहे लोग कैसे पीछे मुड़ गए? *'क्योंकि उनके लिये यह अधिक अच्छा था कि वे धार्मिकता के मार्ग को कभी न जानते, बजाय इसके कि जानते होने पर उन पर सौंपे गए पवित्र*

आज्ञाओं से फिर जाएँ। क्योंकि वे एक सच्ची कहावत बन गए हैं: 'कुकुर अपनी उलटी पर लौट आता है, और सूअर, नहाने के बाद, कीचड़ में लोटने को लौट आता है' (2 पतरस 2:21-22)। यह क्या है, मेरे मित्र, यह क्या है? क्या तुम एक दास का जुआ उठा रहे हो?! अकेले रहने के लिए मठ छोड़ने वाले इसी तरह अपना पक्ष रखते हैं, यह कहते हुए कि मठ दासता का एक रूप है। तुम, जिन्होंने संसार का जुआ उतार फेंका है, उससे भाग गए हो, और खुद को सभी सांसारिक रीति-रिवाजों से मुक्त कर लिया है? क्या तुम पत्नी भी नहीं लेने वाले हो!! क्योंकि ये दोनों चीजें अविभाज्य हैं: संसार की चकाचौंध और जो कुछ संसार का है। – लेकिन जो लोग क्रूस का जीवन जीते हैं, उनके लिए ये दोनों अपरिचित हैं। – फिर भी इसका कारण, हमेशा की तरह, पाप है। चूँकि हम कामवासना और लोभ से ग्रस्त हैं, इसलिए स्वाभाविक रूप से महिलाओं के प्रति प्रेम उत्पन्न होता है। ताकि जो कुछ गुप्त रूप से होता है, उसका कोई गवाह या अभियोजक न हो, हम एक भाई को सह-निवासी के रूप में नहीं चाहते, बल्कि एकांत को चुनते हैं—या, इसे और स्पष्ट रूप से कहें तो, लालच की दासता को—जैसे कि हमने पहले ही खुद को पूरी तरह से पाप को बेच दिया हो और शरीर और रक्त के दास बन गए हों। इसी से हमारे आंतरिक व्यवस्था का क्षय होता है; इसी से प्रलोभन आते हैं; इसी से गिरावटें होती हैं। मेरे लिए, यह विलाप और शोक का कारण है। मैं निन्दा करता हूँ और मना करता हूँ; फिर भी वे नहीं सुनते। परन्तु, ऐसे लोग प्रभु का यह वचन मानें: *'यदि मैं न आया होता और उनसे न बोलता, तो उन पर पाप न होता; परन्तु अब अपने पाप के विषय में उनका कोई बहाना नहीं है'* (यूहन्ना 15:22)। मैं ऐसे लोगों के लहू से निर्दोष हूँ। *'(तुम्हारे लिये एक अविश्वासी के समान हो)'* आज्ञा के अनुसार, उन्हें हमारे समुदाय से पूरी तरह से अलग करना संभव होगा; लेकिन, चूँकि अब सतावट है, मैं इसे टाल देता हूँ; *'कहीं ऐसा न हो कि शैतान के फंदे से छूटने के बाद, वे फिर से उसके द्वारा पकड़े जाएँ और उसकी इच्छा के अधीन कैदी बना लिए जाएँ'* (2 तीमुथियुस 2:26)। तुम, परन्तु, प्रभु से धन्य हो—जो जोड़ों या तीन-तीन करके एक साथ रहते हो, और, जो और भी प्रशंसनीय है, मठ के नियम के अनुसार जीते हो, घर पर रहते हो और अनावश्यक बाहर निकलने से परहेज़ करते हो, सिवाय जहाँ बिल्कुल आवश्यक हो, विशेष रूप से बाज़ारों और त्योहारों के लिए, एक दूसरे की सेवा करते हो, और इस प्रकार संसार पर राज्य करते हो, सभी बातें ईश्वर-भक्ति और व्यवस्था से करते हुए—तुम्हारे ऊपर अनुग्रह और शान्ति की वृद्धि हो, और तुम हमारे प्रभु मसीह यीशु में, स्वर्गीय यरूशलेम के आशीर्वादों को देखो।

236. आइए हम चौकस रहें, इस चौकसी को परमेश्वर के वचन और प्रभु के अचानक आने की आशा से बनाए रखें, जब जो चौकस हैं उन्हें उनसे मिलने के लिए उठा लिया जाएगा

236. 1) आइए हम सतर्क रहें, इस सतर्कता को परमेश्वर के वचन और प्रभु के अचानक आगमन की आशा से पोषित करते हुए, जब सतर्क रहने वाले उसे मिलने के लिए उठा लिए जाएँगे। – 2) ये कौन हैं? वे जो प्रभु के धन्यवचन पर उपदेश में बताई गई सद्गुणों से सुसज्जित हैं। इसलिए, आने वाले उत्पीड़न के किसी भी रूप से भयभीत हुए बिना, हमें इसी प्रकार परिश्रम करके अपना उद्धार पूरा करना चाहिए। [4, 14]

१५. हमें बोलना चाहिए, और किसी भी तरह से लंबे समय तक चुप नहीं रहना चाहिए। क्योंकि मौन आत्मा को सुला देता है, और ऐसी नींद मृत्यु का कारण है; इससे मुक्ति के लिए प्रार्थना करते हुए, संत दाऊद कहते हैं: *'मेरी आँखों को जगा, कहीं मैं मृत्यु की नींद न सो जाऊँ'* (भजन संहिता १२)। हृदय के भीतर विचरता हुआ वचन अनंत जीवन तक उमड़ता जल का एक स्रोत है: इससे अधिक लाभदायक और क्या हो सकता है? और यह जानते हुए, धन्य प्रेरित ने कहा: *'मसीह का वचन तुम में भरपूर रहे, और एक दूसरे को सब प्रकार की बुद्धि से सिखाओ और समझाओ'* (कुलुस्सियों 3:16)। क्या आप देखते हैं कि वह हमें एक-दूसरे को सिखाने और समझाने की आज्ञा कैसे देता है, और केवल अपनी ही याद-दिलावनियों से संतुष्ट न रहने के लिए कहता है? मैं विनम्रतापूर्वक स्वीकार करता हूँ कि हर बार जब मैं आपसे बात करता हूँ, तो मुझे इससे बहुत लाभ होता है: मैं इस जीवन के कोलाहल से खुद को पीछे खींचता हूँ, अधिक गंभीर हो जाता हूँ, और अपने स्वयं के अपराधों को महसूस करने लगता हूँ। क्योंकि सचमुच, यहाँ का जीवन क्लेश से भरा है; हर दिन, बुरे-बुरे शब्द और व्यर्थ की अफवाहें हमारे कानों में डाली जाती हैं; इसके अलावा, शैतान हमें भलाई के विपरीत विचारों से आक्रमण करता है। इन सबको वचन द्वारा दूर किया जाना चाहिए, और हमें अपने विवेक को शुद्ध रखना चाहिए, उस बात पर ध्यान देते हुए जिसके लिए हमें बुलाया गया है। तो फिर, हमें किसलिए बुलाया गया है? – *'जीवित और सच्चे परमेश्वर की सेवा करने के लिए'* (इब्रानियों 9:14), *'और स्वर्ग से उनके पुत्र की प्रतीक्षा करने के लिए, जिसे उन्होंने मरे हुओं में से जिलाया, अर्थात् यीशु, जो हमें आने वाले क्रोध से बचाता है'*, जैसा कि लिखा है (1 थिस्सलुनीकियों 1:10)। परन्तु कोई दास अपने स्वामी की प्रतीक्षा करते समय, जिसके प्रति वह उत्तरदायी है, न तो झपकी लेता है, न विश्राम करता है, न सोता है, बल्कि होश में और चौकस रहता है, और उससे मिलने के लिए उत्सुक रहता है——जिसके विषय में प्रेरित फिर से स्पष्ट रूप से कहते हैं: *"क्योंकि प्रभु स्वयं आज्ञा*

के साथ, महादूत की आवाज़ और परमेश्वर की तुरही के साथ, स्वर्ग से उतर आएँगे, और जो मसीह में मरे हैं वे पहले जी उठेंगे; फिर हम जो जीवित और बचे रहेंगे, उनके साथ बादलों में उठा लिए जाएँगे, ताकि हवा में प्रभु से मिलें, और इस प्रकार हम सदा के लिए प्रभु के साथ रहेंगे' (1 थिस्स. 4:16–17)।

16. पर ये कौन हैं? आत्मा से दीन, शोक करने वाले, हृदय से शुद्ध, नम्र, मेल कराने वाले, दयालु, जिन्होंने आज्ञाकारिता का जुआ उठाया है, और जिन्होंने अपनी गवाही अटूट रखी है—ये उसके साथ होंगे; परन्तु जिन्होंने दुष्ट कर्म किए हैं, अवज्ञाकारी, विद्रोही, जो विश्वास से भटक गए हैं, आज्ञा मानने से इनकार करते हैं, और हर प्रकार के अन्य बुरे कामों के कर्ता – ये न तो बादलों में उठाए जाएंगे और न ही प्रभु के साथ होंगे, बल्कि – और यह सबसे विनाशकारी है – *'वे पीड़ा भोगेंगे, प्रभु की उपस्थिति से और उसकी शक्ति की महिमा से दूर अनंत नाश'* (2 थिस्स. 1:9): ईश्वर करे कि ऐसा कभी हमारे विषय में सोचा या कहा न जाए! – तो फिर, हमें अपनी मुक्ति सुनिश्चित करने के लिए हर संभव सावधानी क्यों बरतनी चाहिए, यह जानते हुए कि हमारे सामने उत्पीड़न है और परीक्षाएँ निकट आ रही हैं? फिर भी, हम पर आने वाली परीक्षाओं से भयभीत या हतोत्साहित न हों। *'यदि परमेश्वर हमारे पक्ष में है, तो हमारा विरोध कौन कर सकता है?'* (रोमियों 8:31)। यदि वह अतीत के उत्पीड़नों में हमारे साथ थे, तो वह वर्तमान उत्पीड़नों में भी हम दीनों के साथ क्यों नहीं होंगे, हमें अपने वचन के अनुसार हर बात के लिए शक्ति और सामर्थ्य प्रदान करते हुए? और हमारे विरोधी हमसे क्या कर सकते हैं? – क्या वे हमें फिर से निर्वासित कर देंगे? लेकिन *'पृथ्वी यहोवा की है, और जो कुछ उस में है वह सब उसी का है'* (भजन संहिता 23:1)। क्या वे हमें फिर से कैद करेंगे? लेकिन जब कोई मसीह के लिए जेल में हो तो जेल से बढ़कर मीठी कोई चीज़ नहीं है। क्या वे हमें फिर से कोड़े मारेंगे? लेकिन वे हमारे सिर पर और भी अधिक मुकुट रखेंगे। अगर वे हमें मौत भी दे दें तो क्या होगा? क्योंकि हमारे प्रभु स्वयं को भी मृत्यु दी गई थी। इसीलिए प्रेरित कहते हैं: *'यदि हम उसके साथ मरे हैं, तो हम उसके साथ जीवेंगे भी; यदि हम धीरज धरते हैं, तो हम उसके साथ राज्य भी करेंगे'* (2 तीमु. 2:11-12)। ऐसे थे धन्य थियोडोर, मसीह के महानतम साक्षी, जिनकी स्मृति हम अब मनाते हैं। उन्होंने मसीह के लिए सब कुछ आनन्दपूर्वक सहन किया। उसी विश्वास से, हम भी, अपनी नम्रता में, प्रभु की सेवा करते रहेंगे; उसी आशा से, हम हर दुख और अपनी वर्तमान कष्टों की कठिनाइयों को सहन करेंगे, ताकि, हमारी आज्ञाकारिता और हमारे अंगीकार, दोनों के लिए, हम स्वर्ग के राज्य के वारिस होने के योग्य ठहरें, मसीह यीशु, हमारे प्रभु में।

237. बिखरे हुए। हमें इसमें आनन्दित होने के लिए प्रोत्साहित करता है

237. 1) बिखराव। यह हमें इसमें आनन्दित होने के लिए प्रेरित करता है। – 2) यह मूर्तिभंजन संबंधी निर्णयों की बेतुकीपन को उजागर करता है। – 3) यह उनके विरुद्ध कही गई बातों को सही ठहराता है। – 4) और यह हमें केवल वचन में ही नहीं बल्कि कर्म में भी, या उसके योग्य जीवन जीकर, सत्य की सेवा करने के लिए आमंत्रित करता है। [4, 15]

17. कल हमने प्रभु के अग्रदूत संत योहन का पर्व मनाया, और उस अवसर पर हमने अपने मठवासी जीवन पर चिंतन किया। लेकिन तब हम सब एक साथ थे, *'और परमेश्वर के भवन में हम एकमत से चलते थे'* (भजन संहिता 54:5)। परन्तु अब, हम बिखर गए हैं—प्रत्येक अपनी-अपनी जगह पर—विभिन्न स्थानों और बस्तियों में। तथापि, चूँकि यह बिखराव परमेश्वर के लिए है, हमें दिए गए आज्ञा के अनुसार आनन्दित होना चाहिए; क्योंकि प्रभु ने कहा: *'आनन्दित और प्रसन्न रहो, क्योंकि स्वर्ग में तुम्हारा बड़ा इनाम है'* (मत्ती 5:12)। इसके अलावा, इसके द्वारा हम प्रभु के समान हो जाते हैं, जिन्होंने कहा: *'यदि उन्होंने मुझे निकाल दिया है, तो वे तुम्हें भी निकाल देंगे; यदि उन्होंने मेरा वचन माना है, तो वे तुम्हारा भी मानेंगे। पर ये सब कुछ वे तुम्हारे साथ मेरे नाम के कारण करेंगे, क्योंकि वे उसको नहीं जानते जिसने मुझे भेजा है'* (यूहन्ना 15:20-21)।

18. और सचमुच, जैसे यहूदियों ने पुत्र को ग्रहण न करके यह दिखाया कि वे पिता को नहीं जानते थे; वैसे ही प्रतिमा-भंजक भी मसीह की प्रतिमा को ग्रहण न करके यह दिखाते हैं कि वे मसीह को नहीं जानते। सत्य स्पष्ट है; फिर भी हज़ारों में से केवल एक ही इसे जानता है। देखो कि उनकी दुष्ट तर्कशीलता दोमुंही है: एक क्षण वे कहते हैं कि मसीह की प्रतिमा स्थापित करना पूरी तरह से निषिद्ध है; तो दूसरे क्षण, कि यह अनुमेय है—लेकिन केवल युद्ध और शिकार में उपयोग किए जाने वाले प्रतीकों के बराबर; फिर भी वे कहते हैं कि उनकी पूजा नहीं करनी चाहिए, ठीक उसी तरह जैसे कोई घोड़े, बैल, शेर, बाघ, सांप, मछली या पक्षी की मूर्ति के सामने सिर नहीं झुकाता। यह सुनकर, कौन कराह नहीं उठेगा, कौन आँसू नहीं बहाएगा, कि वे मसीह के प्रतिमा को—जिसके सामने स्वर्गदूत श्रद्धा करते हैं और दुष्टात्माएँ काँपती हैं—चार-पाँव वाले जानवरों, सरीसृपों, मछलियों और पक्षियों की मूर्तियों के बराबर मानने से नहीं शर्माते, और, उनके समान, इसे सम्मानित करना अपना कर्तव्य नहीं समझते। 'क्या भयानक मनगढ़ंत बात है,

और इससे भी भयानक दुस्साहस! – और क्या? – एक आदमी की तस्वीर को आदमी कहा जाता है, एक बैल को बैल, एक ऊँट को ऊँट; और आम तौर पर तस्वीर का नाम उसमें चित्रित व्यक्ति के नाम पर रखा जाता है – फिर भी प्रभु मसीह की प्रतिमा, ईश्वर की माता, या किसी संत की प्रतिमा को उनके नाम से बुलाने की वे कतई अनुमति नहीं देते, यहां तक कि रूपक रूप में भी नहीं, बल्कि बस कहते हैं: 'प्रतिमा', यह बताए बिना कि किसकी है, ताकि, जैसा वे सोचते हैं, वे पाप न करें। वे ऐसी मूर्खता और ऐसी ईश्वर-निंदा से भरे हैं! लेकिन हे भाइयों, हमारे पवित्र पिताओं द्वारा कही गई बात पर ध्यान दो और जान लो कि यदि वे स्थान जहाँ मसीह का जन्म हुआ पवित्र और पूजनीय हैं और उन्हीं नामों से जाने जाते हैं, और कोई भी वहाँ से एक रेत का कण या एक पत्थर भी प्राप्त करता है तो वह उसे एक पवित्र खजाने के रूप में स्वीकार करता है, संरक्षित करता है और सम्मानित करता है; क्या मसीह की प्रतिमा सम्मान और पूजा के लिए और भी अधिक योग्य नहीं है, जिसमें वह स्पष्ट रूप से, एक दर्पण की तरह दिखाई देते हैं, और ऐसी भावनाएँ जगाती है जो उनके योग्य हैं, जैसे कि वह स्वयं उपस्थित हों? क्योंकि एक प्रतिमा का स्वभाव ही ऐसा है कि वह चित्रित व्यक्ति का प्रतिनिधित्व करती है।

19. तो, मैं, एक दीन प्राणी, मूर्ति-भंजन के भ्रम पर अपने हृदय में शोक करते हुए और अपनी चुप्पी के लिए दंड का भय मानते हुए, आवश्यकता से प्रेरित होकर ही यह थोड़ा और संक्षेप में कहता हूँ। यदि दूसरे धर्म के लोग, निजी और सार्वजनिक रूप से, लिखित और मौखिक रूप में, मसीह के विरुद्ध अपनी अपमानजनक जीभ का प्रयोग करना बंद नहीं करते; तो हम घर पर बैठकर, वर्तमान परिस्थितियों में जो उचित है, उसके बारे में आपस में बातचीत क्यों न करें? – और यदि हम इसके विपरीत करते हैं तो हम प्रभु के क्रोध को कैसे सहेंगे? और हम अपने पूर्वजों के किस प्रकार के अनुयायी होंगे, जिन्होंने सही कहा था कि ऐसे मामले में मौन और छिपना सत्य के प्रति विश्वासघात है?

२०. अत; हमें वचन और कर्म दोनों में सत्य की सेवा करते हुए बोलना और सुनना चाहिए। क्योंकि पवित्र प्रेरितों ने न केवल अपनी दिव्य उपदेश द्वारा, बल्कि अपने निर्दोष जीवन द्वारा भी संसार को वश में किया, अंधकार में पड़े लोगों को प्रकाश दिया और संसार से थके हुए लोगों को ज्ञान के नमक से सींचा, और वे अपने साथ केवल एक रोटी और एक लाठी ही रखते थे। भाइयों, उनका अनुकरण करके हम भी अनुमोदन प्राप्त करेंगे, जो कुछ हमारे पास है उससे संतुष्ट रहकर, चाँदी की लालसा न करके, स्वयं को लालची न दिखाकर, अनुचित समय पर प्रस्थान न करके, और स्त्रियों के साथ मेलजोल न करके, जिनसे मृत्यु आती है। यदि हम इस प्रकार आचरण करें, तो परमेश्वर हम में महिमित पाएगा, हमारा अंगीकार ऊँचा किया जाएगा, और हमारे विरोधी, भले ही थोड़ा ही क्यों न हो, लज्जित होंगे और परिवर्तित होने की ओर झुकेंगे। हालाँकि, यदि हम ऐसा नहीं करते हैं, तो इस बात का खतरा है कि आशीष प्राप्त करने के बजाय, हम अनंतकाल की निंदा में पड़ सकते हैं। परमेश्वर स्वयं, जो शांति का परमेश्वर है, जो सभी चीजों को बदलकर उन्हें सर्वोत्तम बना देता है, अपनी कलीसिया में शांति लाए; वह हमें सत्य के प्रति विश्वासयोग्य बनाए रखे, और हमें अपने स्वर्गीय राज्य में ले जाए।

238. अब फसल काटने का समय है। हमारी आध्यात्मिक फसल भी कुछ इसी प्रकार की है।

238. 1) अब फसल काटने का समय है। हमारी आध्यात्मिक फसल भी कुछ इसी प्रकार की है। – 2) हमारे फल सद्गुण हैं। – 3) अनाज का घर नम्रता है। – 4) समय हमारा पूरा जीवन है। – 5) साधन हमारे सभी श्रम और आज्ञाकारिता के कार्य हैं। [4, 16]

21. वर्तमान समय फसल काटने का समय है, परिश्रम और पसीने का समय है, जब भजन के वचन पूरे होते हैं: *'मनुष्य अपने काम और अपनी मेहनत के लिए शाम तक निकल जाता है'* (भजन संहिता 103:23), जब तक वह फसल काट नहीं लेता, कटे हुए अनाज को नहीं फेंट लेता, और काटी हुई फसल को अनाजघर में नहीं पहुंचा देता, तब तक वह स्वयं को विश्राम नहीं देता। – इस पर क्या कहा जा सकता है? – यदि सांसारिक लाभ के लिए ऐसी मेहनत आवश्यक है, तो क्या आध्यात्मिक लाभ के लिए यह और भी अधिक आवश्यक नहीं है? हमारे सामने भी एक फसल है, जैसा कि प्रेरित कहते हैं: *'जो अल्प बोता है, वह अल्प ही काटेंगे, और जो उदारता से बोता है, वह उदारता से ही काटेगा'* (2 कुरिन्थियों 9:6)। फिर, प्रभु ने अपने चेलों से कहा: *'क्या तुम यह नहीं कहते, "फसल आने में अभी चार महीने बाकी हैं"? – मैं तुम से कहता हूँ, अपनी आँखें उठाओ और खेतों को देखो, क्योंकि वे पहले ही कटनी के लिए पक चुके हैं। कटाई करने वाला मजदूरी पाता है और अनन्त जीवन के लिए फल इकट्ठा करता है; इस प्रकार बोने वाला और कटाई करने वाला दोनों मिलकर आनन्द मनाते हैं'* (यूहन्ना 4:35-36)। तो, यह है वह फसल जो हमारे सामने रखी गई है।

22. आओ हम अतः सम्पूर्ण हृदय से फसल काटने निकलें, ऐसे फल इकट्ठा करें जो न तो सांसारिक और क्षणिक हों, बल्कि आध्यात्मिक और अनन्त जीवन के लिए स्थायी हों: पवित्रता और शान्ति, प्रेम और आनन्द,

दया और धैर्य, कृपा और सौम्यता, और अन्य सभी सद्गुण। ये वे आध्यात्मिक फल हैं जिन्हें विवेक से इकट्ठा किया जाना चाहिए – ताकि कुछ भी बुरा अच्छे के साथ न मिल जाए; अर्थात्, पक्षपात के बिना प्रेम करना; ईर्ष्या के बिना भलाई के लिए प्रयास करना; अपने भाई के बारे में शत्रुता के बिना बोलना; और, सामान्य रूप से, ईमानदारी से *'परमेश्वर की इच्छा को करना, जो अच्छी, भाँति की और सिद्ध है'* (रोमियों 12:2)।

23. जहाँ तक फलों को कोठरी में लाने की बात है, इसका हमारे लिए अर्थ होगा विनम्रता के कोष में उनका सुरक्षित भंडारण, जैसा कि प्रभु स्वयं ने निर्देश दिया, कहते हुए: *'जब तुम से जो कुछ आज्ञा दी गई है, वह सब कर चुको, तो कहो, "हम अयोग्य दास हैं; हमने तो केवल अपना कर्तव्य ही किया है"'* (लूका 17:10); और जैसा कि प्रेरित भी हमें इस संबंध में निर्देश देते हैं, कहते हुए: *'तुम्हारे पास ऐसा क्या है जो तुमने नहीं पाया? और यदि तुमने पाया भी है, तो तुम ऐसे क्यों घमण्ड करते हो जैसे कि तुमने नहीं पाया?'* (1 कुरिन्थियों 4:7)।

24. ऐसी है हमारी फसल, और ऐसा है हमारा श्रम—जो दो-तीन महीने तक का नहीं, बल्कि हमारे जीवन के अंत तक फैला हुआ है; फिर भी, आने वाले युग की तुलना में, इसे एक ही दिन के रूप में गिना जाएगा: क्योंकि वहाँ कोई अंत नहीं है; वहाँ, हर कोई हमेशा के लिए अपने श्रम के फलों का भक्षण करेगा, और इस पर अनंत काल तक आनन्दित होगा।

25. अतः *हम 'अपने स्वभाव के सांसारिक अंगों को मार डालें: व्यभिचार, अशुद्धता, कामवासना, दुष्टता, और लोभ'* (कुलु. 3:5); केवल तभी हम आज्ञाकारिता का जुआ नम्रता से उठा सकते हैं, एक-दूसरे का सहारा बनकर, और *'एक-दूसरे के बोझ उठाकर, और इस प्रकार मसीह की व्यवस्था को पूरा करके'*, जैसा कि लिखा है (गलातियों 6:2)। और धन्य है वह जो सभी के प्रति श्रद्धापूर्वक अपना सिर झुकाता है; धन्य है वह जिसने सबसे अधिक परिश्रम किया है: क्योंकि जितना बड़ा परिश्रम, उतना बड़ा पुरस्कार; और जो अंतिम सेवा अपने ऊपर लेता है, वह पहले स्थान का सम्मान प्राप्त करेगा, जैसे प्रभु कहते हैं: *'तुम में से जो सबसे बड़ा बनना चाहता है, उसे सभी में सबसे छोटा और सभी का सेवक बनना चाहिए।' क्योंकि मनुष्य का पुत्र भी सेवा करवाने नहीं, बल्कि सेवा करने और बहुतों के लिए अपना प्राण फिरौती के रूप में देने आया है'* (मरकुस 9:35; 10:44–45). भाइयो, आइए हम इस पर मनन करें और उसी के अनुसार कार्य करने का प्रयास करें, ताकि हम उस आवाज़ को सुनने के योग्य बन सकें: *'शाबाश, हे भले और विश्वासयोग्य दास, शाबाश! तुम कुछ बातों में विश्वासयोग्य रहे हो, मैं तुम्हें बहुत बातों पर रखूँगा; अपने प्रभु के आनन्द में प्रवेश करो'* (मत्ती 25:21)।

२३९. फसल। हर कोई बिना थके परिश्रम करता है: हमें भी ऐसा ही करना चाहिए—प्रत्येक व्यक्ति अपने-अपने कार्य में परिश्रम करते हुए

२३९. १) फसल कटाई का समय। हर कोई बिना थके परिश्रम करता है: हमें भी ऐसा ही करना चाहिए—प्रत्येक व्यक्ति अपने-अपने काम में परिश्रम करे। – २) वे अपनी कमजोरियों का हवाला दे सकते हैं, लेकिन हमें नहीं देना चाहिए; क्योंकि इसके लिए केवल यही आवश्यक है: इच्छा करना और खोजना। – ३) यही काम पूर्वजों ने किया था, और अब वे उसका फल काट रहे हैं। [४, १७]

26. जैसा कि आप देख सकते हैं, फसल काटने का समय है, और हर किसान अनाज इकट्ठा करने निकल पड़ता है। न तो कठिन परिश्रम और न ही तपती धूप मजदूर को थकाती है; बल्कि वह सुबह से शाम तक मेहनत करता है, कभी झुकता, कभी सीधा होता रहता है, जब तक कि वह अपने सामने रखा काम पूरा नहीं कर लेता। – और हम, जो स्वयं को मसीह के सेवक कहते हैं और संन्यासी जीवन जीते हैं, क्या हमारा भी कोई फसल है? – हाँ, है – और ऐसी फसल जैसी हमारे प्रभु यीशु मसीह ने अपने शिष्यों को बताई, कहते हुए: *'क्या तुम कहते हो, "फसल आने तक अभी चार महीने बाकी हैं"? मैं तुमसे कहता हूँ, अपनी आँखें उठाओ और खेतों को देखो, क्योंकि वे कटनी के लिए पहले से ही पके हुए हैं। कटनी करने वाला अपना मजदूरी पाता है और अनंत जीवन के लिए फल इकट्ठा करता है; इस प्रकार बोने वाला और कटनी करने वाला दोनों मिलकर आनंद मनाते हैं'* (यूहन्ना 4:35-36)। तो यह स्पष्ट है कि हमें बोने और काटने दोनों का काम है, और इसके अलावा, ये किसी निश्चित अवधि के लिए नहीं हैं, बल्कि हमारे सामने अनवरत और हमेशा के लिए हैं। इसलिए, हे भाइयो, हम भी लगन से कटनी करें: शिक्षक शिक्षा में, निरीक्षक सभी की देखभाल में, व्यवस्थापक अपने प्रबंध में, सेवक अपनी सेवा में, नौसिखिया आज्ञाकारिता में, जो मौन रहता है, मौन में, जो प्रार्थना करता है, प्रार्थना में धैर्यपूर्वक—सब कुछ में, अपनी पूरी क्षमता से। यह पूरी तरह से असंगत होगा यदि, जबकि शारीरिक श्रम में लगे लोग अपने कार्यों में इतनी लगन से लगे रहते हैं, हम अपने आध्यात्मिक प्रयासों को आलस्य और लापरवाही से करें; जबकि वे, पसीने में भीगे होने पर भी, अपने श्रम से पीछे नहीं हटते, हम तपस्या के प्रयासों से घृणा महसूस करें। क्या हमारे सामने स्वर्ग का राज्य नहीं है? क्या वह अनंत जीवन नहीं है? क्या वह अनुपम आनंद

नहीं है? – और क्या आलस्य में पड़कर कोई महान और वांछनीय वस्तु प्राप्त करना संभव भी है? कतई नहीं। इसलिए हमें आलस्य और सुस्ती की नींद से जागना चाहिए, और अपने काम को पूरी लगन से शुरू करना चाहिए: क्योंकि हम नश्वर और क्षणिक चीज़ की नहीं, बल्कि अमर और शाश्वत चीज़ की खोज कर रहे हैं; ताकि हमारे बारे में कहा जा सके: *'तुम अपने हाथों के परिश्रम का फल काटोगे; धन्य हो तुम, और तुम्हें भलाई मिलेगी'* (भजन संहिता 127:2)।

27. कोई यह न कहे: 'मैं कमज़ोर हूँ; मैं परिश्रम नहीं कर सकता।' जो शरीर से कमज़ोर है वह शारीरिक परिश्रम नहीं कर सकता; लेकिन आध्यात्मिक प्रयास में, अपना हृदय उस पर लगाओ, और तुम भलाई करने के लिए मज़बूत हो जाओगे: तुम्हारे पास आँसू हैं, तुम्हारे पास पश्चाताप है, तुम्हारे पास एक स्वस्थ मन है, तुम्हारे पास शांति और पवित्रता है, जो परमेश्वर को सबसे अधिक प्रसन्न होती हैं (इब्रानियों 12:14)। कोई यह न कहे: 'मैं अपने गिरावट से कुचल गया हूँ; मैं उठ नहीं सकता और न ही सीधा चल सकता हूँ।' तुम्हें बस इसकी इच्छा करनी है और उसे खोजना है – और वह तुम्हें उठा लेगा, *'जो गरीब को धूल से उठाता है और ज़रूरतमंद को राख के ढेर से ऊपर उठाता है'* (भजन संहिता 112:7)। *'क्या जो गिर गया है वह फिर नहीं उठता? या जो मुँह फेर गया है वह फिर नहीं लौटता?'* (यर. 8:4)। *'जिसकी मैं जीवित हूँ, यहोवा की यही इच्छा नहीं कि कोई पापी मरे, परन्तु यह कि वह अपने मार्ग से फिरकर जीवित रहे'* (यहे. 33:11)। तो फिर, हमारे पास वह कौन सा धन्य बहाना हो सकता है, कौन सा विश्वसनीय बहाना, कि हम आज्ञाओं के पालन में अपनी पूरी लगन से न लगें, ताकि इस प्रकार वादा किए गए आशीर्वाद प्राप्त कर सकें?

28. देखो, पवित्र पुरखों ने कैसे परिश्रम किया, बोया, काटा और अपने कोठारों में इकट्ठा किया, और अब वे अंतिम दिन के आने की प्रतीक्षा में आनंदित हैं, जिस दिन वे सूर्य के समान चमकेंगे। तो, हे भाइयों, हम स्वयं को उन धन्य लोगों से अलग न होने दें, और न ही हम अपनी मुक्ति को कुछ तुच्छ और क्षणिक सुखों के लिए बेच दें, केवल इस लिए कि बदले में हमें अनंतकाल तक यातना सहनी पड़े; परन्तु, अपनी सारी शक्ति से, हम उनके पदचिन्हों पर चलने का यत्न करें, सब कुछ सहते और सब कुछ झेलते हुए, ताकि हम हमारे प्रभु मसीह यीशु में स्वर्ग का राज्य विरासत में पा सकें।

240. गृहस्थ, जब मरते हैं, तो वसीयत छोड़ जाते हैं; और भिक्षु भी, कभी-कभी वसीयत छोड़ जाते हैं; किस प्रकार की?

240. 1) गृहस्थ, जब मरते हैं, तो वसीयत छोड़ते हैं; और संन्यासी भी, वसीयत छोड़ते हैं; किस प्रकार की? – कि हम यहाँ परदेशी और अतिथि हैं, और हमें इस संसार की चीज़ों की खोज नहीं करनी चाहिए। – 2) आइए हम इस वसीयत पर ध्यान दें और इसे पूरा करने में लग जाएँ, – 3) संतों के उदाहरण का अनुसरण करते हुए, जिन्होंने सभी ने इसी प्रकार काम किया। [4, 18]

1. फसल काटने का समय शरीर को कमजोर कर देता है, रात्रि जागरण को कठिन बना देता है, और कभी-कभी तो शिक्षा सुनने में भी आलसी बना देता है। लेकिन चूंकि प्रेरित की शिक्षा के अनुसार, हमें ऐसा होना चाहिए जैसे हम हर दिन मर रहे हों; और एक मरने वाला व्यक्ति आमतौर पर अपने अंतिम शब्द बोलता है—मौत की घड़ी में और जाते समय कहे गए शब्द—जिससे उसके श्रोता ध्यानपूर्वक सुनते हैं; तो हमें सुनने में भी आलसी न हों, बल्कि हमें इस बात पर ध्यान दें कि क्या कहा जा रहा है, जैसे कि हम वसीयत पढ़े जाने पर उपस्थित हों। – शरीर के अनुसार जीने वालों की वसीयत, जैसे कि, सांसारिक होती है और सांसारिक बातों के बारे में बताती है, अर्थात्, पत्नी, बच्चों, भाइयों, रिश्तेदारों के लिए क्या विरासत छोड़ी गई है, और अन्य व्यवस्थाएँ क्या की गई हैं, जैसा कि आमतौर पर होता है। हालाँकि, हमारे अपने जीवन के तरीके में, एक वसीयत ऐसा कोई घोषणा नहीं करती है; लेकिन वह क्या घोषित करती है? – कि हम पृथ्वी पर परदेशी और यात्री हैं, और कि, जैसे *'हम इस संसार में कुछ भी नहीं लाए, वैसे ही यह स्पष्ट है कि हम कुछ भी नहीं ले जा सकते'* (1 तीमुथियुस 6:7), क्षय से अक्षय की ओर, अपमान से महिमा की ओर, नश्वरता से अमरत्व की ओर बढ़ना; इसलिए ऐसा 'वसीयत-पत्र' सुसमाचार कहना गलत नहीं होगा: क्योंकि प्रेरित स्वयं ने स्वीकार किया कि *'मसीह के साथ होना कहीं अधिक उत्तम है'* (फिलि. 1:23)। और फिर एक अन्य अंश में: *'मैं पहले ही एक पेय-बलि की तरह ढाला जा रहा हूँ, और मेरा प्रस्थान का समय आ गया है: मैंने अच्छा संघर्ष किया है, मैंने दौड़ पूरी कर ली है, मैंने विश्वास बनाए रखा है; अब मेरे लिए धार्मिकता का मुकुट रखा हुआ है, जिसे प्रभु, वह धर्मी न्यायी, उस दिन मुझे देंगे—और केवल मुझे ही नहीं, बल्कि उन सभी को भी जिन्होंने उनके प्रकट होने से प्रेम किया है'* (2 तीमुथियुस 4:6-8)।

2. आप देखते हैं कि वह इस जीवन से हमारे प्रस्थान के बारे में बात कर रहे हैं, जैसे कि सुसमाचार का प्रचार कर रहे हों। अब, चूँकि हमारा वसीयतनामा सुसमाचार है, तो आइए हम उसमें और उसके द्वारा कही गई बातों को आनंदपूर्वक सुनें, और आइए हम धार्मिकता के कार्यों के लिए उत्साहपूर्वक प्रयासरत रहें, और इस संसार की किसी

भी चीज़ की ओर न तो अपना ध्यान और न ही अपना हृदय मोड़ें, न माता-पिता की ओर, न भाइयों की ओर, न ही अपने संबंधियों को, न ही किसी भी सृजित वस्तु को, एक ऐसे पवित्र पिता का अनुकरण करते हुए, जो अपनी कोठरी से बाहर निकलते समय सूर्य की किरणों को न देखने के लिए अपने सिर पर एक आवरण डाल लेते थे, और जिनसे जब इसका कारण पूछा गया, तो उन्होंने उत्तर दिया: 'मैं इस क्षणिक प्रकाश को देखने की इच्छा क्यों करूँ?' यह ईश्वर-प्रेमी व्यक्ति, सभी सृष्टि की सीमाओं से परे बढ़कर, ईश्वर के प्रति एकमात्र प्रेम और दिव्य वस्तुओं के चिंतन में मग्न हो जाता है। वह आकाश के नीचे की सृष्टियों का मनन करता है, परम कलाकार—ईश्वर की महिमा और स्तुति करता है; लेकिन जल्द ही, सभी इंद्रिय संबंधी चीजों को पीछे छोड़कर, वह अदृश्य चीजों के मनन में डूब जाता है, और इससे परम सूक्ष्म आध्यात्मिक आनंद और प्रसन्नता प्राप्त करता है।

3. ऐसे ही थे पुरखों के पिता अब्राहम भी, क्योंकि लिखा है: *'विश्वास के द्वारा अब्राहम ने प्रतिज्ञा-भूमि में एक परदेशी की नाईं आकर उस इसहाक और याकूब के साथ डेरे में वास किया, जो उसी प्रतिज्ञा के वारिस थे; क्योंकि वह उस नगर की प्रतीक्षा करता था, जिसकी बुनियादें हैं, जिसका शिल्पी और निर्माता परमेश्वर है'* (इब्रानियों 11:9-10)। ऐसे ही महान मूसा भी थे, जिन्होंने *'विश्वास से मिस्र छोड़ दिया, राजा के क्रोध से न डरते हुए; क्योंकि उन्होंने उसको देखकर धीरज धरा जो अदृश्य है'* (इब्रानियों 11:27)। ऐसे ही सभी संत थे, जिन्होंने दृश्यमान पर नहीं बल्कि अदृश्य पर दृष्टि रखी, और जिन्होंने अस्थायी को नहीं बल्कि शाश्वत को चाहा, और इस प्रकार उन्होंने जहाँ तक संभव है, दिव्य अनुकरण में स्वयं को ढाला। – आइए, हम भी इस आकांक्षा को अपनाएँ, और कभी भी स्वयं को इस युग के वैभवों की लालसा करने या देह के अनुसार जीने वालों पर आश्चर्य करने न दें; बल्कि उनके लिए शोक मनाएँ कि, प्रतिज्ञा की गई आशीषों के उत्तराधिकार की शुभ-सूचना प्राप्त करने के बाद भी, वे सोने-चाँदी के अर्जन और नश्वर सुखों में व्यस्त हैं। परन्तु हम, हे भाइयो, प्रेरित के वचन में कहें, *'प्रभु की महिमा को बिना आवरण के मुख से देखकर'* (2 कुरिन्थियों 3:18), हम ऊपर की वस्तुओं की खोज करेंगे और अपने मन ऊपर की वस्तुओं पर लगाएंगे, *'जहाँ मसीह परमेश्वर के दाहिने बैठा है'* (कुलुस्सियों 3: 1:2), ताकि हमारे विषय में भी कहा जाए: *'तुम इस संसार के नहीं हो'* (यूहन्ना 15:19), *'और तुम्हारी नागरिकता स्वर्ग में है'* (फिलिप्पियों 3:20), जहाँ हम परमेश्वर के धर्मी न्याय के दिन, मसीह के भयानक सिंहासन के सामने, दोषमुक्त खड़े हो सकें, और उस प्रिय स्वर को सुन सकें जो हमें स्वर्ग के राज्य की विरासत के लिए बुलाता है।

२४१. धैर्य सबसे बड़ी सद्गुण है; यह संतों का मार्ग है; हम भी इसमें उत्कृष्टता प्राप्त करें।

241. 1) धैर्य सबसे बड़ा गुण है; यह संतों का मार्ग है; हम भी इसमें उत्कृष्टता प्राप्त करें। – 2) क्या आप उत्कृष्टता प्राप्त करना चाहते हैं? – अपनी इच्छा को वश में करें, – और आप सब कुछ आसानी से सहन करेंगे; और इसके अलावा, – धैर्य में उत्साही बनें; क्योंकि आप जितना अधिक सहन करेंगे, आप उतने ही बेहतर और महान बनेंगे। – 3) वह हमें सूचित करते हैं कि, यद्यपि वे निर्वासन में हैं, वे एक मठवासी जीवन जीते हैं और उन लोगों को स्वीकार करते हैं जो उनके साथ शामिल होना चाहते हैं; – और वह जोड़ते हैं: बुजुर्ग और उच्च पद वाले सभी बातों में युवा लोगों के लिए एक उदाहरण प्रस्तुत करें। [4, 19]

४. आओ हम ईश्वर के लिए, पुरस्कार की आशा में, सभी कठिनाइयों और दुखों को आनंदपूर्वक सहन करें। जैसा कि प्रेरित कहते हैं: *'क्योंकि जिस आशा को देखा जाता है, वह आशा नहीं है,' 'क्योंकि मनुष्य अपनी देखने वाली वस्तु की आशा कैसे करता है? परन्तु जिस वस्तु को हम नहीं देखते, उसकी आशा करके हम धीरज से प्रतीक्षा करते हैं'* (रोमियों ८:२४-२५)। इस प्रकार, धैर्य सभी गुणों में सबसे महान है; उनके धैर्य के लिए, शहीदों को स्वर्गीय मुकुटों से सजाया जाता है; धैर्य के माध्यम से, संतों ने धार्मिकता के मुकुट अर्जित किए हैं। आओ हम भी आज्ञाकारिता में, नम्रता में, सहनशीलता में, अपने कर्तव्यों के पालन में, हर उस चीज़ में जहाँ धैर्य की आवश्यकता होती है, धैर्य दिखाएँ; और हम भी उनके समान पुरस्कार प्राप्त करेंगे।

5. मैं आज्ञाकारिता के जुए को जानता हूँ; मैं अपनी इच्छा पर अंकुश लगने के दर्द को जानता हूँ; फिर भी मैं ऐसे जीवन की मिठास को भी जानता हूँ। क्योंकि जब अपनी इच्छा पर अंकुश लगता है, तो मार्ग आसान हो जाता है और मुक्ति निकट आ जाती है; इसलिए जैसे ही अपनी इच्छा पर अंकुश लगता है, उसी समय एक शांतिपूर्ण और धन्य जीवन प्रकट होता है। सामुदायिक जीवन में परिश्रम तो हैं, परन्तु सांत्वनाएँ भी हैं। अपना भाई उससे अधिक परिश्रम क्यों न करे – फिर भी वह उससे बड़ा इनाम पाएगा। प्रेरित कहते हैं, *'प्रत्येक व्यक्ति अपनी-अपनी मेहनत के अनुसार अपना-अपना इनाम पाएगा* (1 कुरिन्थियों 3:8)। प्रेम से कौन किसी दूसरे के अधीन होता है? फिर भी, उसे भी उचित समय पर श्रेष्ठता का सम्मान मिलेगा। क्योंकि प्रभु ने कहा: *'तुम में जो पहिला होना चाहता है, वह तुम्हारा दास बने'* (मत्ती 20:27)। क्या कोई बहुत भारी कार्यों को करने में असमर्थ है? तो उन्हें उन कार्यों की उपेक्षा न करें जो

उनकी शक्ति के भीतर हैं; ताकि परमेश्वर हर बात में महिमा प्राप्त करे, और कोई भी भाईचारे के लिए उपयोगी किसी भी कार्य के लिए अयोग्य न रहे। यद्यपि यह अक्सर कहा गया है, फिर भी आज हमें इसे याद दिलाना उचित है: क्योंकि हमारे सामने का कार्य कोई छोटा नहीं है। *'देखो, मैं ने तुम्हारे साम्हने जीवन और मृत्यु दोनों रखे हैं,'* धर्मशास्त्र कहता है (व्यवस्थाविवरण 30:19)। ताकि हम जीवन से चिपके रहें और अनन्त मृत्यु से बचें, इसी उद्देश्य के लिए हमारे वचन और हमारा सांत्वना, हमारा उपदेश और हमारा आग्रह है। और मैं जानता हूँ और मुझे विश्वास है कि जो कहा गया है वह व्यर्थ नहीं है, न मेरे, इस दीन जन के लिए, और न ही तुम्हारे लिए जो इसे सुनते हो।

6. मैं नहीं चाहता कि आप इस बात से अनभिज्ञ रहें कि, यद्यपि हम परमेश्वर के वचन के कारण निर्वासन में हैं, हम एक मठ में रहने के समान रहते हैं: हम उन लोगों को नहीं ठुकराते जो संसार को त्यागने की इच्छा से आते हैं। हम यह अपने दूर-दूर तक फैले भाइयों के माध्यम से पूरा करते हैं, जिन्हें आज्ञा दी गई है कि वे ऐसे लोगों को, जहाँ तक संभव हो, स्वीकार करें और उन्हें भाईचारे में शामिल करें। यह सच है कि कई लोग हमसे अलग हो गए हैं, लेकिन कई लोग हमसे जुड़ भी गए हैं: और हमारा भाईचारा बढ़ रहा है। ईश्वर हम में महिमा पाता है; वह अपने वचन के अनुसार हमें स्वयं में भी महिमा देगा। परन्तु जैसे नेता होते हैं, वैसे ही उनके अधीनस्थ भी होते हैं – इसलिये मैं आपसे, जो दूसरों के लिए एक उदाहरण के रूप में शीर्ष पर हैं, अनुरोध करता हूँ कि आप भक्तिपूर्वक, धार्मिकता से और ईश्वर-भय से जिएँ, और अपने जीवन, वचन और कर्म दोनों से दूसरों को धार्मिकता की ओर मार्गदर्शन करें। हमारे बीच कोई अनुचित शोर-शराबा या विवादपूर्ण बात न हो; और *'तुम्हारे मुँह से कोई भ्रष्ट करने वाली बात न निकले, बल्कि केवल वही बात निकले जो संवारने के लिए हो, जैसा कि अवसर हो'* (इफिसियों 4:29), ताकि उनके बीच आपका कार्य उससे कलंकित न हो, बल्कि यह कि, हर बात में हमारे भले परमेश्वर को प्रसन्न करके, हम प्रतिज्ञा की गई आशीषें प्राप्त करने के योग्य ठहरें।

242. रूपांतरण – आने वाले युग की एक पूर्व-झाँकी... हम ऐसी तेज और सुंदरता के लिए नियत हैं, जैसे हम मूल रूप से बनाए गए थे

242. 1) रूपांतरण आने वाले युग की एक पूर्वछाया है। हम ऐसी तेजस्विता और सुंदरता के लिए नियत हैं, जैसे हम मूल रूप से बनाए गए थे। – 2) चूंकि ऐसा है, आइए हम इस तेजस्विता और सुंदरता से प्रेम करें, और सब कुछ कुरूप, भावुक और अशुद्ध से मुंह मोड़ लें। – 3) यदि, तथापि, ऐसा कुछ हो, तो हमें स्वयं को शुद्ध करने के लिए शीघ्रता करें; – और कोई यह न कहे 'मैं नहीं कर सकता': क्योंकि परमेश्वर ने उन लोगों के लिए ऐसा करने का वादा किया है जो उसे खोजते हैं; और हमारे पास कई उदाहरण हैं। – 4) इसलिए, यदि कोई इससे अपरिचित रहता है, तो यह केवल जानबूझकर की गई उदासीनता और लापरवाही के कारण है। [4, 20]

7. चूँकि हमें अब दिव्य रूपांतरण की पूर्व संध्या मनाने का सौभाग्य प्राप्त है, हमने बिना लंबी व्याख्या के, इससे एक शिक्षा ग्रहण की है, और अपना कर्तव्य पूरा किया है। प्रभु के सभी पर्व हमारे उद्धारकर्ता यीशु मसीह के अवतार के रहस्यों की याद दिलाते हैं, अर्थात्, कि उनका जन्म हुआ, उनका बपतिस्मा हुआ, उन्हें सूली पर चढ़ाया गया, उन्हें دفناया गया, वे तीसरे दिन फिर जी उठे, और वे महिमा में स्वर्ग पर आरोहण हुए; जबकि रूपांतरण का पर्व आने वाले युग की स्थिति को दर्शाता है। क्योंकि जैसे, रूप-परिवर्तन के समय, प्रभु का मुख सूर्य के समान चमका, और उनके वस्त्र प्रकाश के समान सफेद हो गए, वैसे ही वह फिर से स्वर्ग से बिजली के समान, बड़ी शक्ति और महिमा में, सबका न्याय करने आएंगे; और जैसे संत पतरस, याकूब और यूहन्ना पहाड़ पर उनके साथ थे; इसी प्रकार चुने हुए भी स्वर्ग के राज्य में उनके साथ रहेंगे, अकथनीय दैवीय प्रकट होने और अतुलनीय आनंद में आनंदित होंगे। – और ऐसी शक्ति के लिए कौन योग्य है? उस आनंद में भाग लेने के लिए कौन योग्य है? वह व्यक्ति के सिवा और कौन जो एक शुद्ध और निर्दोष जीवन का धनी है? क्योंकि हमारा परमेश्वर सबसे तेजस्वी प्रकाश के समान शुद्ध है, और केवल शुद्ध लोगों को ही अपने पास स्वीकार करता है; और हमारे भीतर एक शुद्ध आत्मा को स्थापित करके, वह उसे हमसे शुद्धता में ही वापस मांगेगा। क्योंकि यदि यह ईश्वर की प्रतिमा और समानता में बनाया गया है, तो यह स्पष्ट है कि, दिव्य सुंदरता के प्रतिबिंब होने के नाते, यह भी इस सुंदरता में सहभागी है। और यह जानते हुए, भजनकार कहते हैं: *'हे प्रभु, अपनी इच्छा से मेरी भलाई को बल प्रदान करें'* (भजन संहिता 29:8), अर्थात् आत्मा की सुंदरता को, ताकि, अन्यथा घृणित पापी वासनाओं की ओर आकर्षित होकर और स्वयं घृणित बनकर, वह परमेश्वर से दूर न हो जाए और न ही दिव्य पुरस्कारों से वंचित रहे।

८. चूँकि यह स्वीकार किया जाता है कि हमारे पास ऐसी आत्मा है—सुंदर और अच्छी—और हमें इसे पुनरुत्थान के अंतिम दिन ईश्वर के समक्ष एक प्रतिज्ञा के रूप में प्रस्तुत करना है; इसलिए मैं आपसे विनती और प्रार्थना करता हूँ: आइए हम इसकी इस सुंदरता से प्रेम करें, और इसकी इस अच्छाई को बनाए रखें, न तो अपना ध्यान और न

ही अपना हृदय इस युग की सुंदरताओं की ओर मोड़ें, और न ही शरीर और रक्त के सुखों की ओर; क्योंकि ये सच्ची सुंदरताएँ नहीं हैं, बल्कि सुंदरता की केवल मूर्तियाँ हैं; वास्तव में, ये कुछ भी नहीं बल्कि क्षय और धूल हैं। हम यह अपने सामने घटित होने वाली घटनाओं में भी देखते हैं: क्योंकि आज की सबसे उत्तम और सुंदर कल ताबूत में पड़ी होगी, जिससे बदबू उठ रही होगी और जो सभी को अपने से दूर भगा रही होगी। इस प्रकार यहाँ कुछ भी अच्छा या मनभावन नहीं है, सिवाय उस एक अद्भुत सद्गुण के, जिसके लिए हमें सबसे बढ़कर प्रयास करना चाहिए।

९. परन्तु, जैसा कि अक्सर होता है, यदि एक अस्थिर आत्मा अधर्मी विचारों से कलंकित हो जाती है—क्योंकि *'कौन कह सकता है कि उसका हृदय शुद्ध है?'* (नीतिवचन 20:9)—तो इसे यथाशीघ्र शुद्ध किया जाना चाहिए और इसकी पूर्व की अच्छी अवस्था में पुनर्स्थापित किया जाना चाहिए; कहीं ऐसा न हो कि बुराई में बने रहने से यह मृत्यु को आमंत्रित कर दे। – और कोई यह न कहे: 'मैं कई पापों के बोझ तले दबे होने के कारण शुद्ध नहीं हो सकता,' यह सुनने के बाद कि प्रभु क्या कहते हैं: *'यदि तुम्हारे पाप सुर्ख़ी के समान भी हों, तो वे हिम के समान सफ़ेद हो जाएँगे; और यदि वे रक्तवर्ण के समान लाल हों, तो वे ऊन के समान श्वेत हो जाएँगे'* (यशायाह 1:18)। क्या तुम मानवजाति के प्रति परमेश्वर के अकथनीय प्रेम को देखते हो, जिसके द्वारा वह न केवल पश्चातापी लोगों को शुद्ध करने का वादा करता है, बल्कि उन्हें उत्कृष्ट सौंदर्य की ऊँचाइयों पर भी उठाता है? – और इसके उदाहरण हमारे सामने हैं। नबी दाऊद एक मनुष्य थे, फिर भी वे व्यभिचार और हत्या के पाप में गिर गए; तथापि, उन्होंने निराशा नहीं की, बल्कि शीघ्र ही पश्चाताप करके, एक बार फिर से भविष्यवाणी का वरदान प्राप्त किया। – राजा मनश्शेह ने पचास-पाँच वर्षों तक इस्राएल को सच्चे परमेश्वर से भटकाया; फिर भी उन्होंने पश्चाताप किया – और उद्धार प्राप्त किया। प्रधान प्रेरितों ने प्रभु का परित्याग कर दिया था, फिर भी उन्होंने आँसुओं की चंगा करने वाली शक्ति का उपयोग किया और एक बार फिर प्रेरितत्व का भार उठाया। मिस्र की मरियम – मैं कई अन्य अनगिनत उदाहरणों को चुपचाप छोड़ता हूँ – उन्होंने देहिक अशुद्धता की गहराइयों को छू लिया था, फिर भी उन्होंने जैसा होना चाहिए वैसा ही पश्चाताप किया, और बाद में सद्गुण की ऊँचाइयों तक पहुँच गईं।

10. इस प्रकार, शक्तिहीनता या असंभवता का सहारा लेने का कोई भी बहाना नहीं है, बशर्ते कि कोई सच्चे मन से बचने की इच्छा रखता हो और इस कार्य को लगन से आरंभ करता हो। यह केवल उन लोगों के लिए असंभव है जो पूरी तरह से असंवेदनशील हैं और जानबूझकर स्वयं को मृत्यु के हाथों सौंप देते हैं। – हम यह क्यों सुनते हैं: *'हे इस्राएल के घराने, तुम सब क्यों मरते हो?' प्रभु कहते हैं* (यहेजकेल 18:31)। जब हमारे सामने अमर जीवन पड़ा है, तो हम शाश्वत मृत्यु को क्यों चुनते हैं? हमारे भले प्रभु प्रतिदिन पुकारते हैं: *'मेरे पास आओ, हे सब जो परिश्रमित और बोझिल हो, और मैं तुम्हें विश्राम दूँगा'* (मत्ती 11:28)। फिर भी हम अपने पापों के बोझ को त्यागने से इनकार करते हैं। वह पुकारता है: *'मैं जगत की रौशनी हूँ: जो कोई मेरा अनुसरण करेगा, वह अँधेरे में नहीं चलेगा, बल्कि उसे जीवन की रौशनी मिलेगी'* (यूहन्ना 8:12)। लेकिन हम विपरीत दिशा में मुड़ जाते हैं, हमारे अपने कर्म ही ईश्वर-निन्दा करने वाले शब्द उगलते हैं: *'हमसे दूर हो जाओ; हम तेरे मार्गों को देखना नहीं चाहते'* (अय्यूब 21:14)। – इसके बाद, हमारे लिए केवल निन्दा और अस्वीकृति का निर्णय सुनना ही शेष है: *'अपनी आग के प्रकाश में और उस ज्वाला में चलो जिसे तुमने प्रज्वलित किया है'* (यशायाह 50:11)। हालाँकि, यह जान लें कि जैसे प्रेरित कहते हैं, *'जो ऐसे काम करते हैं वे परमेश्वर के राज्य के वारिस नहीं होंगे'* (गलातियों 5:21)। – परन्तु ऐसा न हो कि यह बात हम पर न्यायसंगत रूप से कही जा सके। – प्रभु कहते हैं, *'यदि तुम मेरी आज्ञा का पालन करते हो तो तुम मेरे मित्र हो'* (यूहन्ना 15:14)। अतः आइए हम वह सब कुछ करें जिसकी आज्ञा दी गई है, ताकि हम प्रभु के मित्र बनने और स्वर्ग के राज्य का उत्तराधिकारी बनने के योग्य ठहरें।

२४३. सिनादा के मेट्रोपोलिटन, धन्य माइकल, का निधन हो गया है: आइए हम उनकी स्मृति का सम्मान करें, क्योंकि वह अभी भी हमारे लिए मध्यस्थ बने हुए हैं

२४३. १) धन्य माइकल, सिनाडा के मेट्रोपॉलिटन, का निधन हो गया है: आइए हम उनकी स्मृति का सम्मान करें, क्योंकि वह अभी भी हमारे लिए मध्यस्थता कर रहे हैं। – २) परन्तु हम उनके निधन से यह भी सीख लें – कि हम अपने प्रस्थान के समय के लिए हमेशा स्वयं को तैयार रखें; क्योंकि मृत्यु अचानक आ सकती है, जैसा कि हम अनगिनत उदाहरणों से देखते हैं। – 3) कोई यह न कहे: 'मैं नहीं कर सकता'; क्योंकि यह हमारे वश में है। [4, 21]

11. हमारे आध्यात्मिक पिता, सिनादा के मेट्रोपॉलिटन, परम पावन माइकल, प्रभु के पास चले गए हैं। उनका जीवन प्रशंसनीय था, और उनका वचन शक्तिशाली था; और हम विश्वास करते हैं कि आने वाले न्याय में, अन्य पिताओं और स्वीकारकर्ताओं के साथ, हम उन्हें प्रभु के समक्ष अपना मध्यस्थ पाएँगे। इसलिए, कुख्यात मूर्तिभंजक यह कहकर अपना बड़बोलापन न दिखाएँ कि मसीह के स्वीकारकर्ता (संत माइकल की मृत्यु से) दुखी हैं; बल्कि उन्हें यह

पहचानना चाहिए कि ऐसे व्यक्तियों का निधन परमेश्वर की कलीसिया के लिए एक अटूट किला है, हमारे लिए जो सत्य की पुष्टि करते हैं, और उनकी भ्रामक विधर्म का खंडन है।

12. परन्तु चूँकि *'प्रेम में प्रकट होने वाली आस्था'* ही मनुष्य को बचाती है (गलातियों 5:6), मैं आपसे अब, हमेशा की तरह, ईश्वर की आज्ञाओं को निष्ठापूर्वक पूरा करने और घर लौटने की यात्रा के लिए स्वयं को सदा तैयार रखने का आग्रह करता हूँ, क्योंकि मृत्यु का समय अज्ञात है। क्योंकि आप जानते हैं कि हमारे पिता, जिनका उल्लेख पहले किया गया था, अचानक तीव्र पीड़ा और तेज ज्वर से ग्रस्त हो गए, और अगले ही दिन मौन हो गए, और तीसरे दिन उन्होंने अपनी आत्मा प्रभु को सौंप दी। लेकिन उनसे भी पहले, पावलो-पेत्रोव्स्की के प्रसिद्ध मठाधीश अथेनासियस, एक दिन के लिए भी बीमार नहीं पड़े, बल्कि लगभग तुरंत ही मनुष्यों के बीच से उठा लिए गए। हम सुनते हैं कि कुछ लोग, बिजली गिरने से मर जाते हैं; कुछ अन्य समुद्र में डूब जाते हैं; और, संक्षेप में, कई अप्रत्याशित दुर्घटनाएँ होती हैं, जिनके कारण हमें सतर्क और भयभीत रहना चाहिए, कहीं शैतान, मृत्यु की भूल के साथ हमें दिन-प्रतिदिन धोखा देकर, अचानक हमें हमारे अंतिम क्षण में पूर्ण आश्चर्य में न ले आए, जिस पर हम पश्चाताप के मामले में कुछ भी करने में असमर्थ होंगे। – क्या ये उदाहरण हमारे हृदय में भय नहीं भरते? क्या यह हमें भयभीत नहीं कर देता जब हम यह सोचते हैं कि उस घड़ी हमारी जीभ जकड़ जाएगी और हम एक भी शब्द नहीं बोल पाएंगे? और आत्मा, शरीर से अलग होकर, कैसे प्रस्थान करेगी, जबकि कई उपस्थिति और विलाप करते हुए हो सकते हैं, फिर भी एक अच्छी अंतरात्मा के सिवा कोई मदद करने वाला नहीं होगा? मैं आपसे विनती और प्रार्थना करता हूँ, आइए हम हमेशा सावधान रहें कि हम पाप-स्वीकार, आँसुओं, प्रार्थना, आज्ञाकारिता, नम्रता, परिश्रमपूर्वक आज्ञाकारिता और हर अच्छे काम में बने रहें, ताकि अंतिम घड़ी में, यदि हम लापरवाही और असावधानी से इसके लिए अनजान पकड़े जाएँ, ताकि हम 'शाश्वत *मृत्यु में सो न जाएँ*', जिससे संत दाऊद मुक्ति के लिए प्रार्थना करते हैं (भजन संहिता 12:4)।

१३. परन्तु शायद कोई कहेगा: 'मैं चाहता तो हूँ, परन्तु मैं नहीं कर सकता।' – यह कैसी बात है? – यदि मामला किसी ऐसी चीज़ से संबंधित है जो प्राकृतिक व्यवस्था के विरुद्ध है, तो मैं सहमत हूँ कि यह असंभव है, उदाहरण के लिए, हमारे लिए हवा में उड़ना या समुद्र पर चलना; न ही नाक से बोलना या जीभ से सूंघना संभव है; ऐसी सभी चीजें असंभव और अस्वाभाविक हैं। लेकिन अगर मामला किसी ऐसी चीज़ से संबंधित है जो स्वाभाविक है और इच्छा पर निर्भर करती है, तो ऐसा कथन झूठा है; क्योंकि जैसे हम लापरवाही से व्यवहार कर सकते हैं और हँस सकते हैं, वैसे ही हम गरिमावान हो सकते हैं और आँसू बहा सकते हैं; जैसे हम पापी इच्छाओं और अनुचित विचारों के उलझे जाल से खुद को कलंकित कर सकते हैं, वैसे ही हम खुद को दोषरहित और वासनाओं से शुद्ध रख सकते हैं; और जैसे हम कटु हो सकते हैं और बुराई पर अड़े रह सकते हैं, वैसे ही हम करुणा से प्रेरित हो सकते हैं और पश्चाताप कर सकते हैं। चाहे बुरी वासना, हमारे भीतर एक आदत बनकर, हमें भलाई करने में शक्तिहीन और बुराई में प्रबल कर दे; फिर भी हमें निराश नहीं होना चाहिए—ईश्वर न करे—बल्कि हमें स्वेच्छा से एक बार फिर से काम में लग जाना चाहिए, और हर संभव प्रयास करना चाहिए कि हम एक क्षण भी, एक घंटा तो दूर, लापरवाही में न बिताएँ, बल्कि हमेशा संयमी और सतर्क रहें, निर्दोष और शुद्ध रहें, और ईश्वर से जुड़े रहें, ताकि हम भी कह सकें: *'मेरी आत्मा तुझ से चिपकी रहती है; तेरा दाहिना हाथ मुझे सम्हाले रहता है'* (भजन संहिता 62:9); और इस प्रकार, यहाँ अपना जीवन अच्छी तरह जीकर, अच्छी आशा के साथ इस संसार से विदा लेकर, वहाँ स्वर्ग के राज्य को प्राप्त करें।

२४४. १) काल्सेडॉन के संत जॉन के अंतिम संस्कार से लौटने पर, वह भाइयों की प्रशंसा करते हैं कि वे अपने सामान्य अच्छे अनुशासन में मिले, और अपनी इच्छा व्यक्त करते हैं कि वे हमेशा ऐसे ही रहें। – २) फिर वह कुछ व्याख्याओं की मूर्खता का खंडन करते हैं जो उन्होंने सुनी हैं। पहली अफवाह: संत विश्वास और जीवन दोनों में पवित्र थे, तो वे इस तरह (दस्त से) कैसे मर सकते हैं? दूसरी अफवाह यह है कि, पुनरुत्थान के बाद, हम एक-दूसरे को नहीं पहचान पाएंगे: क्योंकि ये शरीर क्षय हो जाते हैं और कहां बिखर जाते हैं, यह कोई नहीं जानता। – 3) अंत में, एक उपदेश जोड़ा गया है: विश्वास में बने रहो, क्योंकि तुम देखते हो कि कितनी विचलताएँ हैं; – और इसी प्रकार पवित्र जीवन जियो, क्योंकि तुम जानते हो कि शत्रु कितनी और किन-किन हवाओं से हम पर फूँक मारता है। [4, 22]

14. हाल ही में थोड़े समय के लिए आपसे दूर रहने के बाद, और अब एक बार फिर लौटकर, मैंने पाया कि आप एक-दूसरे के साथ मेल-मिलाप से और उत्साहपूर्वक जीवन यापन कर रहे हैं, और मैंने आपके सुव्यवस्थित जीवन के लिए प्रभु का धन्यवाद किया, – जो प्रभु के कुशल और दृढ़ शिष्यों का लक्षण है; आप हमारे प्रभु यीशु मसीह की कृपा से इस समय और बार-बार बलवान बने रहें, ताकि मेरी साधारण उपस्थिति में और मेरी अनुपस्थिति में भी, आप हमेशा कुशल और अक्षुण्ण रहें। मेरी अनुपस्थिति का कारण, जैसा कि आप जानते हैं, काल्सेडन के धन्य मेट्रोपोलिटन जॉन का निधन था, जिन्होंने भले कामों में परिश्रम करके, अपना मार्ग पूरा करके, और विश्वास बनाए

रखकर, प्रभु के पास प्रस्थान किया, ताकि वे पवित्र पूर्वजों और हमारे उन भाइयों के साथ शहीदी का मुकुट प्राप्त कर सकें जो उनसे पहले चले गए थे।

१५. परन्तु चूंकि वह दस्त के एक दुर्बल करने वाले दौरे से मर गया, कुछ लोग, इस पर चकित होकर कहते हैं: 'यदि वह एक अच्छा आदमी था, तो वह इतनी बुरी तरह क्यों मरा?' – ऐसे लोग इस मामले में अपनी अज्ञानता के कारण परेशान होते हैं: क्योंकि मृत्यु का अच्छा या बुरा होना इस बात से निर्धारित नहीं होता कि कोई कैसे मरा, बल्कि इस बात से होता है कि क्या उसने ऑर्थोडॉक्स विश्वास बनाए रखा और एक निर्दोष जीवन जिया; और मृतक व्यक्ति ठीक ऐसा ही व्यक्ति था। चाहे कोई सूजन से मरे, या दस्त से, या किसी अन्य विनाशकारी बीमारी से - ज़मीन पर या समुद्र में - इसमें दोष देने वाली कोई बात नहीं है: क्योंकि यह हम पर निर्भर नहीं है, बल्कि ईश्वर की गूढ़ योजनाओं में निहित है। ईश्वर जानता है कि प्रत्येक व्यक्ति के लिए क्या सबसे अच्छा है, और उसी के अनुसार मामलों की व्यवस्था करता है, चाहे वह जीवन का विस्तार हो या उसका अंत। हालाँकि, अन्य लोग तो कुछ और भी कहने तक चले जाते हैं, जो उन्हें सुनने वालों के विनाश के लिए है – अर्थात्, कि आने वाले जीवन में, जब परमेश्वर का पुत्र सभी का न्याय करने आएगा, तो हम एक-दूसरे को नहीं पहचान पाएँगे; क्योंकि, वे कहते हैं, यह कैसे संभव है जब हम, जो इतने नश्वर हैं, अक्षय और अमर हो जाएँगे, और जब न तो कोई यूनानी, यहूदी, बर्बर, स्कुथाई, दास, स्वतंत्र, नर या नारी रहेगा, बल्कि सभी देवदूतों जैसे हो जाएँगे? – मैं, हालांकि, यह मानता हूँ कि हमारे लिए एक-दूसरे को पहचानना संभव होगा; और सबसे पहले, यह याद करें कि *'जो मनुष्य के लिए असंभव है, वह परमेश्वर के लिए संभव है'* (लूका 18:27); क्योंकि हम स्वयं पुनरुत्थान की शिक्षा देते हैं, न कि अपने विश्वास को मानवीय तर्क पर आधारित करते हैं। क्योंकि मानवीय तर्क के लिए यह पूरी तरह से अकल्पनीय है कि एक शरीर जो सड़ गया है और दूर-दूर तक बिखर गया है—जंगली जानवरों द्वारा खाया गया, पक्षियों द्वारा चोंच से नोचा गया, या मछलियों द्वारा निगल लिया गया—वह कैसे संभवतः एक साथ इकट्ठा होकर अंतिम दिन में फिर से उठ सकता है; और फिर भी, ईश्वर की अकथनीय शक्ति से, हर शरीर एक साथ इकट्ठा किया जाएगा और फिर से उठेगा, और हर आत्मा अपने उस शरीर को पहचान लेगी, जिसके साथ वह पृथ्वी पर रहती थी; और यदि वह अपने शरीर को पहचानती है, तो इसमें कोई संदेह नहीं कि वह अपने भाई के शरीर को भी पहचान लेगी। इसके अलावा, इस प्रकार का तर्क भविष्य के न्याय के इनकार की ओर ले जाता है: क्योंकि न्याय उन पर किया जाता है जिन्हें जाना जाता है; कोई भी अदालत के सामने उन लोगों को नहीं लाता जो खुद को नहीं जानते और जिन्हें जाना नहीं जाता, बल्कि केवल उन लोगों को लाया जाता है जिन्हें जाना जाता है, जैसा कि लिखा है: *'मैं तुम्हारी निंदा करूँगा और तुम्हारे पाप तुम्हारे सामने रखूँगा'* (भजन संहिता 49:21)। इसलिए, यदि हम एक-दूसरे को नहीं पहचानते, तो हमारा न्याय नहीं होगा; और यदि हमारा न्याय नहीं होता है, तो हमें अपने कर्मों का उचित प्रतिफल नहीं मिलेगा। इसके अलावा, प्रभु का प्रेरितों से कहा गया यह वचन कैसे पूरा होगा: *'तुम बारह सिंहासन पर बैठोगे, और इस्राएल के बारह कुल का न्याय करोगे'* (मत्ती 19:28), यदि वे उन लोगों को नहीं जानते जिनका उन्हें न्याय करना है? इस प्रकार, हर दृष्टिकोण से यह स्पष्ट है कि ऐसा अनुमान कितना अनुचित है, और यह ओरिजिन की कथा जितना ही अधार्मिक है। हम, हालांकि, भाइयों, यह विश्वास करना जारी रखेंगे कि हम फिर से उठेंगे, और हम एक-दूसरे को क्षय की प्रकृति में नहीं पहचानेंगे, जैसा कि हम अब हैं, परन्तु अक्षयत्व के वैभव में, परमेश्वर की अगोचर इच्छा के अनुसार, ठीक वैसे ही जैसे हमारे आदि माता-पिता स्वर्ग में पतन से पहले एक-दूसरे को जानते थे, जब वे अक्षय थे, और पतन के बाद, क्षय के अधीन होकर भी, एक-दूसरे को पहचानते थे। हमें यह क्यों मानना चाहिए कि आने वाले युग में एक भाई भाई को, एक पिता अपने बच्चे को, एक पत्नी अपने पति को, और एक-दूसरे को—मैं और जोड़ना चाहूँगा, – एक तपस्वी एक तपस्वी को, एक कन्फेशर एक कन्फेशर को, एक शहीद अपने सह-पीड़ित को, एक प्रेरित एक सह-प्रेरित को पहचान लेगा – सभी सभी को पहचान लेंगे, ताकि जो आनंदित हैं, उनका निवास स्थान परमेश्वर में हो, जो अन्य सभी आशीर्वाद और एक-दूसरे की पहचान प्रदान करता है।

16. मैं तुम्हें आग्रह करता हूँ: हम पवित्र विश्वास पर दृढ़ बने रहें; क्योंकि तुम देखते हो कि इससे कितनी भटकनें हैं, और हमें परमेश्वर का कितना धन्यवाद करना चाहिए कि हम किसी भी भूल में नहीं पड़े, बल्कि हमने ऑर्थोडॉक्स विश्वास को ग्रहण किया है और उस पर दृढ़ बने हुए हैं। इसी प्रकार, हम एक निष्कलंक जीवन जिएँ: क्योंकि आप जानते हैं कि शैतान दिन-रात हम पर कौन-सी आँधियाँ फेंकता है; फिर भी वह हमें कोई हानि नहीं पहुँचा सकता, क्योंकि हम हमेशा हमारे प्रभु मसीह के प्रति विश्वास और प्रेम से सुरक्षित रहते हैं। हम और अधिक देर तक क्यों ठहरे रहें? यह अजगर हमसे भाग जाएगा; आइए हम रोएँ और वासना के अग्निबाणों को बुझा दें; आइए हम परमेश्वर के सामर्थी हाथ के नीचे स्वयं को नम्र करें, और वह हमें ऊँचा उठाएगा; आइए हम पूर्ण धीरज में बने रहें, और शैतान गायब हो जाएगा, जबकि हम, बच निकलकर, स्वर्ग के राज्य में प्रवेश करेंगे।

244. काल्सेडोन के संत जॉन के अंतिम संस्कार से लौटने पर, वह भाइयों की प्रशंसा करता है कि वे अपने सामान्य अच्छे अनुशासन में मिलें, और कामना करता है कि वे हमेशा ऐसे ही बने रहें

245. एक भोज साधारण और आध्यात्मिक दोनों है; एक खरीद साधारण और आध्यात्मिक दोनों है

245. 1) एक भोज साधारण और आध्यात्मिक दोनों होता है; एक खरीद साधारण और आध्यात्मिक दोनों होती है। – 2) और हम व्यापारी हैं; हमारे लिए, मोती गुण हैं; अनमोल मोती प्रभु मसीह हैं। तो, हम में से प्रत्येक एक बुद्धिमान व्यापारी बने। – 3) हमारा बाज़ार आज्ञाकारिता के कार्यों से बना है, जो एक ही समय में मोती, खरीद और कीमत हैं। [4, 23]

17. यहाँ-वहाँ, समय-समय पर, त्योहार आयोजित किए जाते हैं, जैसा कि अब निकोमेडिया में हो रहा है। लोग इन त्योहारों में खरीदने और बेचने के लिए उमड़ पड़ते हैं। लेकिन यह अधिक समय तक नहीं चलता; क्योंकि जल्द ही हर कोई बिखर जाता है। लेकिन एक ही आध्यात्मिक उत्सव है, जो अविनाशी है और प्रत्येक व्यक्ति के पूरे जीवन में फैला रहता है, जिसमें खरीदने और बेचने की वस्तुएँ न तो सोना हैं, न चाँदी, न वस्त्र, न ही कोई अन्य क्षणिक और नाशवान चीजें, बल्कि आत्मा का उद्धार है, शाश्वत जीवन, स्वर्ग का राज्य—ऐसी चीज़ें जिनके लिए लोगों को हर संभव प्रयास करना चाहिए, फिर भी बहुत कम, और उनमें से भी केवल मुट्ठी भर ही, उनका ध्यान रखते हैं, जबकि वे अपना सारा ध्यान और सारे प्रयास व्यर्थ और नश्वर चीज़ों की ओर लगा देते हैं।

18. परन्तु हम, हे भाइयो, अपने मुख्य उद्देश्य से, और न ही इस अच्छे सौदे से भटकने देंगे; परन्तु प्रभु का यह वचन सुनकर, *कि 'परमेश्वर का राज्य तुम्हारे भीतर है'* (लूका 17:21), हम हर दिन पूरे हृदय से इसे प्राप्त करने का प्रयास करेंगे, सोना या चांदी नहीं बल्कि सच्चा विश्वास और निर्दोष जीवन, आज्ञाकारिता, धैर्य, नम्रता, उदारता, और *'प्रेम, जो पूर्णता का बंधन है'* का भंडार संजोएँगे। (कुलुस्सियों 3:14)। यही वह है जो प्रभु ने सुसमाचार में भी दिखाया, कहते हुए: *'स्वर्ग का राज्य एक ऐसे व्यापारी के समान है जो उत्तम मोती खोजता है; जिसने एक अनमोल मोती पाकर, जाकर अपनी सब कुछ बेच दी, और उसे खरीद लिया'* (मत्ती 13: 45–46). आप अच्छे व्यापारी हैं, जिन्होंने सब कुछ पीछे छोड़ दिया है और, सभी चीजों के बदले में, उस अच्छे, सबसे उत्तम और सबसे कीमती मोती—मसीह—को खरीदा है, जब आपने अपना क्रूस उठाकर पवित्रता और धार्मिकता में उनका अनुसरण करने का संकल्प लिया। – पर जैसे एक भोज आनंद और चौकस पहरेदारी का समय होता है, वैसे ही हम भी आनंदित और सतर्क रहें, और पृथ्वी पर इस भोज में अपनी मुक्ति खरीदें। विक्रेता उत्तम है जो सभी बातों में श्रद्धापूर्ण सावधानी से काम करता है और कभी अपना आपा नहीं खोता; क्रेता उत्तम है जो अपमानों को आनन्दपूर्वक स्वीकार करता है; मुद्रा-विनिमयकर्ता उत्तम है जो अपना रक्त देता है और आत्मा प्राप्त करता है—उस धैर्य के द्वारा जिससे वह अपना कर्तव्य पूरा करता है।

19. परन्तु चूंकि हमारी बात आज्ञाकारिता पर आ गई है, तो हम रसोई में अपने कर्तव्य निभाने वालों का सम्मान करें, जो एक-दूसरे के बोझ उठाकर और इस प्रकार प्रेम के द्वारा मसीह की व्यवस्था को पूरा करते हुए, अधिक कठिन परिश्रम करते हैं; हम भाइयों की आवश्यक आवश्यकताओं को पूरा करने वालों का भी सम्मान करें, जो प्रभु के अच्छे और अनुभवी व्यवस्थापक हैं; आइए हम उन लोगों का भी सम्मान करें जो भजन-सेवाओं में आनंद और श्रद्धा के साथ गाते हैं, उन्हें अधिक बड़े पुरस्कार के योग्य समझकर। और विचार करो कि हमारा जीवन कैसा है, हमारे कर्म क्या हैं, और हमारे पवित्र पिताओं ने पूर्ण उत्साह से कितनी धन्य खरीदारी की; जिसे भलीभांति पूरा करके और सफल समापन तक पहुँचाकर, हम भी आनंद के साथ घर लौटेंगे, जैसा कि पवित्र दाऊद ने कहा: *'हे मेरी आत्मा, अपने विश्राम में लौट आ, क्योंकि यहोवा ने तेरे साथ बड़ा भला किया है'* (भजन संहिता 114:7)। और मृत्यु के समय हम सभी को यह अनुग्रह मिले कि हम अंतिम प्रार्थना के रूप में ऐसा पुकार लगाएँ, और इस प्रकार हमारे प्रभु मसीह यीशु में अनंत जीवन प्राप्त करें।

२४६. परमेश्वर ने अपने एकलौते पुत्र को संसार में हमारी सभी आध्यात्मिक और शारीरिक दुर्बलताओं के उपचारकर्ता और सभी आशीर्वादों के दाता के रूप में भेजा: जो कुछ उन्होंने पृथ्वी पर रहते हुए किया, वह अब भी करते रहते हैं, जैसा कि हर कोई स्वयं जानता है

246. 1) परमेश्वर ने अपने एकलौते पुत्र को संसार में हमारी सभी आध्यात्मिक और शारीरिक दुर्बलताओं के चिकित्सक और सभी आशीर्वादों के दाता के रूप में भेजा: जो उन्होंने पृथ्वी पर रहते हुए किया, वह अब भी करते रहते हैं, जैसा कि हर कोई स्वयं जानता है। – 2) कोई भी ऐसे उपकारी से अपने पूरे हृदय से कैसे प्रेम न करे; और कोई भी हमारे शत्रु, दुष्ट और विनाशकर्ता से कैसे द्वेष न करे? [4, 24]

20. एक नए ग्रीष्मकाल की शुरुआत आ चुकी है, जब इस दिनि सुसमाचार से निम्निलखिति वचन पढ़े जाते हैं: *'परमेश्वर का आत्मा मुझ पर है: क्योंकि उसने मुझे गरीबों को सुसमाचार प्रचार करने के लिए अभिषेक किया है; उसने मुझे टूटे हुए दिलि वालों को चंगा करने, बंदियों को स्वतंत्रता और अंधों को दृष्टि देने की घोषणा करने, मजलूमों को आज़ाद करने और प्रभु का स्वीकार्य वर्ष प्रचारित करने के लिए भेजा है'* (लूका 4:18-19)। इसलिए, चूँकि परमेश्वर के एकमात्र पुत्र को पिता द्वारा संसार में एक चंगा करने वाले के रूप में भेजा गया था, आइए हम उनसे अंधों के समान अपनी आँखें खुलवाने, बंदियों के समान मुक्ति और टूटे दिलि वालों के समान सांत्वना मानें। – परन्तु कौन अंधा है? कौन वासना से अंधा हो गया है? कौन कैदी है? किसको अनुचित विचारों ने भटका दिया है? किसका हृदय टूटा हुआ है? कौन पापों के बोझ तले दबा हुआ है? – प्रभु ऐसे सभी लोगों को चंगा करता है: क्योंकि वह केवल शरीरों का ही नहीं, बल्कि आत्माओं का भी चिकित्सिक है; वह केवल पूर्व के समय में ही देह में उपस्थिति नहीं था, बल्कि अब सभी के लिए अदृश्य रूप में उपस्थिति है, सुसमाचार का प्रचार करना जारी रखता है, संसार का पाप उठा लेता है, और हर प्रकार की बीमारी तथा हर दुर्बलता को चंगा करता है। इसलिए, कोई भी अज्ञानी या अस्वस्थ न रहे; बल्कि वे विश्वास के साथ आएँ, *और 'प्रभु से आशीष, और अपने उद्धारकर्ता परमेश्वर से दया' प्राप्त करें* (भजन संहिता 23:5)। हे, मानव जाति के प्रति अकथनीय प्रेम! उसने हमें शून्य से सृजित किया, हमारे पतन के बाद हमें फिरि से उठाया, और हम पर तीसरी कृपा - मठवासी पूर्णता - प्रदान की। लेकिनि भले ही हम अभी भी पाप करते हैं, वह हमसे मुंह नहीं मोड़ता, बल्कि जो उसके निकिट आते हैं उनका स्वागत करता है: जब हम पश्चातापी होते हैं, तो वह सांत्वना देता है; जब हम रोते हैं, तो वह हमें तसल्ली देता है; जब से हम रक्तस्राव करते हैं, तो वह हमें अभिषेक करता है; जब हम बेहोश होते हैं, तो वह हमें बल देता है; जब हम घायल होते हैं, तो वह हमें चंगा करता है; और जब हम नरक की गहराइयों में डूबने को तैयार होते हैं, तो वह अपना हाथ बढ़ाता है और, मानवता के प्रति अपने प्रेम में, हमें ऐसी संकट से बचाता है; ताकि पूरी निष्पिक्षता से, यह कहना सभी के लिए उचित हो: *'यदि प्रभु मेरी सहायता न करता, तो मेरी आत्मा शीघ्र ही नरक में निवास करती'* (भजन संहिता 93:17)। *'मैं भटकी हुई भेड़ की तरह हो गया था, परन्तु यहोवा ने मुझे स्वीकार किया'* (भजन संहिता 117:13)। और हर कोई जानता है कि वे किनि प्रलोभनों में पड़े हैं, और कैसे उन्होंने अपनी कष्टों में तुरंत परमेश्वर को अपना सहायक पाया। इसके अलावा, वह हमें जो भूखे हैं, पोषण देते हैं—शारीरिकि रूप से अपनी उदारता के वार्षिकि फलों से और आध्यात्मिकि रूप से सबसे पवित्र रहस्यों से—एक माँ या दुधमाँ से भी अधिकि, हमें प्रेमपूर्वक चाहकर और अपनाकर। एक माँ अपने बच्चे को कुछ समय के लिए दूध से पोषण देती है; लेकिनि हमारे सच्चे प्रभु और पिता हमें अपना ही शरीर भोजन और पेय के रूप में देते हैं, और यह हमेशा के लिए है—हे, अथाह उदारता! हे, अतुलनीय उपहार!

21. कोई ऐसे उपकारी से प्रेम करने में कैसे चूक सकता है? कोई उसकी लालसा करने में कैसे चूक सकता है? और कोई उससे तब तक कैसे चिपिका नहीं रह सकता जब तक हम अविभाज्य न हो जाएँ? – और सचमुच, यदि हम उसके प्रति ऐसे नहीं हैं, तो स्वर्ग पुकारेगा और पृथ्वी हम पर कराह उठेगी, और पत्थर भी हमारी संवेदनहीनता का आरोप लगाएंगे। इसलिए, ऐसा न हो, इसके लिए हमें उसके प्रेम से दृढ़ता से चिपिके रहना चाहिए, शैतान से पूरे मन से घृणा करनी चाहिए और उससे मुंह मोड़ लेना चाहिए। क्योंकि जैसे एक उपकारी को उसकी दयालुता के कार्यों के अनुपात में प्रेम किया जाना चाहिए और उसकी लालसा की जानी चाहिए, वैसे ही, उसकी दुष्टता के कर्मों के अनुपात में, हमें दुष्ट से घृणा करनी चाहिए और उससे मुंह मोड़ लेना चाहिए। क्योंकि वह हमारे जीवन का विनाशक है; वह प्रभु के वचन (यूहन्ना 8:44) के अनुसार *'आरम्भ से हत्यारा'* है; उसने अपनी योजनाओं के अनुसार हमारी जाति को अनगिनित संप्रदायों में विभाजित किया है, उसे पाप के कई तीरों से घायल करता है, और उसे पूरी तरह से निगिलने का प्रयास करता है। यदि हम उससे घृणा नहीं करते, तो हमारे लिए कोई ऐसी यातना नहीं होगी, जो हमें इसके लिए सताए—कि हम अपने शत्रु, आत्माओं के विनाशक के आगे झुक गए। परन्तु हे भातियो, हम उससे भागें, हम अपनी पूरी शक्ति से भागें। तो, यह पलायन क्या है? यह दुष्ट कर्मों और विचारों से परहेज़ करना, साथ ही परमेश्वर से चिपिके रहना और स्वयं को अच्छे कार्यों के लिए समर्पित करना है। हम भलाई के लिए क्यों प्रयास करते हैं, प्रभु की सेवा सभी नम्रता, कोमलता और आज्ञाकारिता के साथ करते हैं, इस निश्चितिता के साथ कि कोई भी भलाई जो नम्रता से सुदृढ़ नहीं है , अपरिपक्व और अस्थिरि है। यदि, तथापि कोई ऐसे हैं जो अपने विषय में घमण्डी धारणा रखते हैं, तो हमें परमेश्वर के सामर्थी हाथ के नीचे स्वयं को नम्र करना चाहिए, ताकि हम व्यर्थ में न दौड़ें, बल्कि स्वर्ग के राज्य की विरासत के योग्य ठहरें।

247. अब अंगूर की कटाई का समय है: इससे हम एक सबक सीखते हैं, क्योंकि हम भी अंगूर हैं

247. 1) अब अंगूर की तुड़ाई का समय है: इससे हम एक सबक सीखते हैं, क्योंकि हम भी अंगूर हैं। – परमेश्वर की अंगूरों के रूप में, हमें गुणों की गुच्छियाँ धारण करनी चाहिए, और स्वयं को पूरी तरह से प्रभु को समर्पित करना

चाहिए। – 2) हम पीछे न मुड़ें, और न ही दो रास्ते पर चलें। – 3) जब शत्रु हमें लुभाना शुरू करे, तो हम संघर्ष में उतरें और उस पर विजय प्राप्त करें। [4, 25]

22. अब हम अपना ध्यान उस पर लगाएँ जो हमारी आँखों के सामने है। वह क्या है? अंगूर की फसल आ गई है; और हम देखते हैं कि जहाँ लताएँ अंगूरों की गुच्छों से लदी हैं, वहाँ आनंद और आशीष है, जबकि जहाँ वे कम हैं, वहाँ दुख और शोक है। 'लेकिन इसका हमसे क्या लेना-देना है?' सुनने वालों में से कुछ कह सकते हैं। – वास्तव में, बहुत कुछ, क्योंकि रूपक रूप में कहें तो हमें भी प्रभु की दाख की बारी कहा जाता है। या क्या आप नहीं जानते कि मठवासियों के मुंडन संस्कार के दौरान कौन सा भजन गाया जाता है? और क्या हम सब मिलकर उसे नहीं गाते? – *'हे प्रभु, हे प्रभु! स्वर्ग से नीचे देखो और देखो, और इस दाख की बारी का भ्रमण करो, जिसे तुम्हारे दाहिने हाथ ने लगाया है'* (भजन संहिता 79:15-16)। और क्या प्रभु सुसमाचार में नहीं कहते: *'मैं दाख की बेल हूँ, तुम डालियाँ हो; जो मुझ में बना रहता है और मैं उसमें, वह बहुत फल देता है; क्योंकि मुझ से अलग होकर तुम कुछ भी नहीं कर सकते'* (यूहन्ना 15:5)। इसलिए, आइए हम अपने परमेश्वर में, उनके द्वारा लगाई गई बेलों के समान, उनके लिए सद्गुणों की कलियों को फलें, ताकि हम उनके आशीर्वाद के योग्य ठहरें। और हो सकता है कि हम, अपनी वासनाओं के काँटों और झाड़ियों के आगे झुककर, ऐसे निंदनीय निर्णय के अधीन न आ जाएँ: *'हर वह पेड़ जो अच्छा फल नहीं देता, उसे काटकर आग में फेंक दिया जाता है'* (लूका 3:9)। हमारे लिए, इसका अर्थ होगा मृत्यु द्वारा *'काट दिया जाना'*, और *'आग में फेंक दिया जाना'*— स्वाभाविक रूप से, अनंतकाल की आग में—जिसमें वे सभी डाले जाएँगे जो दुष्ट कर्म करते हैं, जो विश्वास से मुँह मोड़ते हैं, और जो अपने शरीर को दुराचारों से भ्रष्ट करते हैं: *'पानी रहित बादल, जिन्हें हवा द्वारा इधर-उधर उड़ाया जाता है; पतझड़ के वृक्ष, जो निष्फल हैं, दो बार मरे हुए, उखाड़े हुए; समुद्र की उग्र लहरें, जो अपना लज्जा भरा झाग उगलती हैं; और भटकी हुई तारे, जिनके लिए सदा के लिए घोर अंधकार में स्थान रखा गया है'* (यहूदा 12–13)। प्रेरित पौलुस क्यों पुकारते हैं: *'यौन अनैतिकता से भागो; क्योंकि मनुष्य जो अन्य कोई पाप करता है, वह शरीर के बाहर है, परन्तु जो व्यभिचारी है, वह अपने ही शरीर के विरुद्ध पाप करता है। या क्या तुम नहीं जानते कि तुम्हारे शरीर पवित्र आत्मा का मन्दिर है जो तुम में वास करता है, जिसे तुम ने परमेश्वर से प्राप्त किया है, और यह कि तुम अपने नहीं हो? क्योंकि तुम्हें एक मूल्य पर मोल लिया गया है'* (1 कुरिन्थियों 6:18–20)।

23. तो फिर हम, जिन्हें मसीह के बहुमूल्य लहू से मोल लिया गया है, कैसे स्वर्ग और पृथ्वी के सामने वापस मुड़ने में लज्जित नहीं हो सकते? हम अपने ही सामने कैसे लज्जित नहीं हो सकते, जो बाहर से तो पवित्र दिखाई देते हैं, पर भीतर से हर प्रकार की अशुद्धता से भरे हैं? हम दोनों पैरों से लंगड़ाते हुए कब तक चलेंगे? हम अंततःएक ही मार्ग पर कब चलेंगे? क्योंकि, जैसा कि बुद्धिमान कहता है: *'उस पापी के लिए हाय जो दो मार्गों पर चलता है'* (सिर. 2:12)— अर्थात् पाप और पुण्य; क्योंकि उनमें कुछ भी समान नहीं है। एक घर का नौकर जो कभी अपने स्वामी की, तो कभी अपने शत्रु की सेवा करता है, उसे समझदार नहीं कहा जा सकता। हमें स्वयं को पूरी तरह से ईश्वर को समर्पित कर देना चाहिए: क्योंकि केवल इसी तरह हम ईश्वर के अनुरूप जीवन में सहभागी हो सकते हैं। हम मूक पशुओं की तरह कामुकता में क्यों न टिकें, बल्कि इसके बजाय, आत्मा की शक्तियों से, दिव्य चिंतन तक आरोहण करें, अपनी इंद्रियों को नश्वर से अमर की ओर, क्षणिक से स्थायी की ओर मोड़ें?

२४. और हम अपने दुष्ट विचारों के विष से अपने हृदयों को भ्रष्ट करने के लिए, बुराई के तर्क-वितर्क करने वाले बुनकर को अनुमति नहीं देंगे; परन्तु जैसे ही वह वासना की मिठास, या कोई अन्य बुराई बोता है, हमें उस धूर्त चापलूस को अपने से दूर भगाने में शीघ्रता करनी चाहिए। कैसे? प्रार्थनाओं और विनतियों, आँसुओं और आहों, और हार्दिक पश्चाताप के द्वारा। यही हमारी अदृश्य लड़ाई है, यही हमारा अप्रसिद्ध संघर्ष और पराक्रम है। तो आइए, हम सांसारिक योद्धाओं का अनुकरण करते हुए और उत्साह से जलते हुए, अपने अदृश्य शत्रुओं को भगा दें - और जैसे वे पुरस्कार की आशा में घाव खाकर भी पीछे नहीं हटते, वैसे ही हम भी, चाहे अनगिनत घावों से ढके हों, पीछे नहीं हटेंगे, बल्कि दृढ़ खड़े रहेंगे और दृढ़ खड़े रहेंगे, लड़ते रहेंगे और लड़ते रहेंगे, ईश्वर की सहायता से बल प्राप्त करते हुए। मैं इस मामले में आपसे विनती करता हूँ: क्योंकि मैं इसी लिए परिश्रम करता हूँ, और आपको ये संक्षिप्त निर्देश दे रहा हूँ। – और इस प्रकार मैं उन पर आनन्दित होता हूँ जो धार्मिकता में चलते हैं और उन पर आह भरता हूँ जो ठोकर खाते हैं। परन्तु हम सब सीधा-सादा चलें, भलाई करते रहें, सब कुछ नम्रता से सहते रहें, भजन गाने में, प्रार्थनाओं में, आराधना में, आज्ञाकारिता में, नम्रता में: और शान्ति का परमेश्वर हम संगे रहेगा।

248. पवित्रता का वरदान प्राप्त करके, आइए हम इसे बनाए रखें, सबसे बढ़कर शारीरिक वासना से भागकर: क्योंकि यह अनुग्रह की अवस्था के विपरीत है: यह हमें दासता में डाल देती है: यह हमें भय से भर देती है

248. पवित्रता का वरदान प्राप्त करके, हम इसे बनाए रखें, और सबसे बढ़कर सांसारिक वासनाओं से भागें: क्योंकि वे अनुग्रह की अवस्था के विपरीत हैं; वे हमें दासता में डाल देती हैं; वे हमें भय से भर देती हैं। हालाँकि, इन वासनाओं का दमन इसके ठीक विपरीत परिणाम लाता है। [4, 26]

२५. जब भी प्रभु का कोई पर्व आता है, तो हम आनंदित होते हैं। और यह उचित भी है: क्योंकि ऐसे अवसरों पर हम प्रबुद्ध होते हैं, उस रहस्य के चिंतन में प्रवेश करते हैं जिसके लिए यह पर्व स्थापित किया गया था। ऐसा ही अब, सम्माननीय और जीवन-दायक क्रूस के उत्थान के दिन है। किस आनंद और किस हर्ष की बात है, कि वह वृक्ष—जिस पर हमारे प्रभु यीशु मसीह के पावों ने ठहराव किया, जिस पर उन्हें सूली पर चढ़ाकर उनका जीवन-दायक रक्त बहाया गया—हम इसे देखने ही नहीं, बल्कि चूमने और गले लगाने के भी योग्य ठहराए गए हैं? कितने लोग अपने लिए यथासंभव अधिक से अधिक नाशवान सोना जमा करने का प्रयास करते हैं? लेकिन हमारे लिए, यह उपहार तत्काल है: क्योंकि जैसे ही हमने क्रूस को चूमा, हमें प्रबोधन, पवित्रता और मुक्ति प्राप्त हुई। अनुग्रह की गति ऐसी है, और इस उपहार की सहजता भी ऐसी ही है! – लेकिन ऐसी कृपा को बनाए रखने के लिए, प्रार्थना और सतर्क ध्यान का श्रम अत्यंत आवश्यक है, विशेष रूप से इसलिए क्योंकि जो आसानी से प्राप्त होता है, उसे आमतौर पर हल्के में लिया जाता है और उसकी सही सराहना नहीं की जाती। इसीलिए मैं आपसे आग्रह करता हूँ: आइए हम ऐसी गलती से बचें, और आइए हम इस उपहार की सावधानीपूर्वक रक्षा करें। आइए हम अपने पवित्र होठों को झूठे शब्दों और व्यर्थ की बातों से अपवित्र न करें; आइए हम अपनी पवित्र आँखों को अश्लील दृष्टि से अंधा न करें; आइए हम अपने शुद्ध हृदयों को अशुद्ध यादों से कलंकित न करें। और प्रेरित पुकारते हैं, *'पाप तुम्हारे मरणासन्न शरीर में राज्य न करे, कि तुम उसकी कामनाओं के अधीन हो जाओ; और न अपने अंगों को अधर्म के साधन बनाकर पाप के लिए प्रस्तुत करो; परन्तु अपने आप को परमेश्वर के लिए ऐसा प्रस्तुत करो, जैसे जो मरे हुओं में से जी उठे हों, और अपने अंगों को परमेश्वर के लिए धार्मिकता के साधन बनाकर प्रस्तुत करो। पाप पर तुम्हारा प्रभुत्व न रहे: क्योंकि तुम व्यवस्था के अधीन नहीं, पर अनुग्रह के अधीन हो'* (रोमियों 6:12-14)। क्या तुम देखते हो कि व्यवस्था के अधीन पाप का राज्य था, परन्तु अनुग्रह में धार्मिकता, राज्य करने आकर, हमें हर पाप से मुक्ति देती है? – जैसा लिखा है: *'परन्तु तुम धोए गए, पवित्र हुए, और हमारे प्रभु यीशु मसीह के नाम से और हमारे परमेश्वर की आत्मा द्वारा धर्मी ठहरे'* (1 कुरिन्थियों 6:11)। मैं प्रार्थना करता हूँ, आइए हम इस शुद्धिकरण का सम्मान करें और इस पवित्रता को बनाए रखें। हम सम्मानित हो जाने के बाद, अपने ऊपर अपमान क्यों लाते हैं? हम उस शरीर की इतनी अत्यधिक देखभाल क्यों करते हैं, जिसे हम जल्द ही कब्र में छोड़ देंगे? हम वासना के सुख को आनंददायक क्यों मानते हैं, जबकि यह वास्तव में एक घातक बीमारी है? वासना का सुख शैतान का जाल है; यह एक अविनाशी आग को भड़काता है; और फिर भी हम, मनुष्यों के रूप में, इसके प्रति ऐसे आकर्षित होते हैं जैसे दास जो स्वयं को कैद में सौंप चुके हों। मैंने इस जुनून से ग्रस्त एक व्यक्ति को यह कहते सुना है कि इस पाप के सामने घुटने टेकने से तो गर्दन में फंदा लगाना बेहतर है; क्योंकि यह, एक क्रूर तानाशाह की तरह, अपने दास को कुछ और भी बुरा करने का आदेश देता है, अर्थात्: 'अपमानजनक बात बोलो,' – और वह बोलता है; 'बुराई करो,' – और वह करता है; 'ऐसा-वैसा करो' – और वह कर देता है; इसी तरह, यह पाप अपने अधीनस्थ से कुछ और भी बुरा करने का आदेश देता है, अर्थात्: 'लज्जास्पद बात बोलो' – और वह बोल देता है; 'बुराई करो' – और वह कर देता है। आमतौर पर, काईन की तरह, ऐसा व्यक्ति कराहता और कांपता है: चाहे वह समुद्र में यात्रा कर रहा हो, उसे जहाज के दुर्घटनाग्रस्त होने का डर लगता है; यदि वह रेगिस्तान से गुजरता है, तो उसे डर लगता है कि वह डाकुओं के हाथ लग जाएगा; जब गरज होती है, तो उसे लगता है कि यह विशेष रूप से उसके लिए ही हुआ है; जब बिजली चमकती है, तो उसे डर लगता है कि यह उसे झुलसा देगी; वह देखता है पर देखता नहीं, और सुनता है पर सुनता नहीं, क्योंकि उसके इंद्रियाँ विक्षिप्त हो जाती हैं। ऐसी ज़िंदगी से ज़्यादा भयानक और क्या हो सकता है? मुझे लगता है कि विनाशकारी जुनूनों द्वारा निगल लिए जाने से तो जंगली जानवरों द्वारा निगल लिए जाना बेहतर है, क्योंकि वहाँ केवल शरीर ही नष्ट होता है, जबकि यहाँ आत्मा और शरीर दोनों नष्ट होते हैं। लेकिन सज्जनों के लिए यह बिल्कुल अलग है। पाप से मुक्त होकर (मैं केवल वासना की मिठास की ही नहीं, बल्कि हर दूसरे जुनून की भी बात कर रहा हूँ), वह आनंदित होता है और अपने भीतर ही आनंद पाता है: वह धार्मिकता में राज करता है; वह न तो समुद्र से डरता है और न ही जमीन से: क्योंकि परमेश्वर उसके भीतर वास करते हैं, जिनसे वह संकट के समय पुकारता है: *'मैं बुराई से नहीं डरूँगा, क्योंकि आप मेरे साथ हैं'* (भजन संहिता 22:4); *'मैं उन लोगों से नहीं डरूँगा जो हर ओर से मुझ पर चढ़ाई करते हैं'* (भजन संहिता 3:7); *'जब पृथ्वी हिलती है और पहाड़ समुद्र के बीच में उलट दिए जाते हैं, तब मैं न डरूँगा*

(भजन संहिता 45:3)। क्या आप देखते हैं कि एक अच्छा जीवन क्या होता है? यही जीवन सच्चा धन्य जीवन है। हमें भी ईश्वर की कृपा से यह प्राप्त हुआ है; अब यह हमारी सभी देखभाल और चिंता का विषय है। इसलिए, आइए हम इसमें उत्कृष्टता प्राप्त करने के लिए और अधिक प्रयास करें, हर चीज़ को श्रद्धापूर्वक स्वीकार करें, और अपने कर्मों में हर प्रकार की आज्ञाकारिता, हर प्रकार की नम्रता, और हर प्रकार की आत्मा की पवित्रता का प्रदर्शन करें।

249. यह देखते हुए कि खेतों में कैसे बोआई होती है, आइए हम स्वयं में आध्यात्मिक गुणों के बीजों को बोना सीखें

249. 1) जब हम देखते हैं कि खेतों में बीज बोए जा रहे हैं, तो आइए हम भी अपने भीतर आध्यात्मिक प्रवृत्तियों के बीज बोना सीखें। – 2) रातें लंबी हो गई हैं: बहुत अधिक सोने से बचें, जैसे आपको अन्य शारीरिक आवश्यकताओं में किसी भी अत्यधिक लिप्तता से बचना चाहिए। – 3) राजा अपनी मुहिम से लौट आए हैं; लेकिन हतोत्साहित न हों: आइए अपना दुख प्रभु पर डाल दें। [4, 27]

26. अब हमारे लिए भौतिक बीज - गेहूं और इसी तरह के अन्य - बोने का समय है; और हम देखते हैं कि कैसे लोग सुबह-सुबह इस काम में लग जाते हैं और रात तक अथक परिश्रम करते हैं, अच्छी तरह से बोने और अपनी वार्षिक शारीरिक आवश्यकताओं के लिए पर्याप्त फसल सुनिश्चित करने, दोनों के लिए अपनी पूरी कोशिश करते हैं। लेकिन हम, आध्यात्मिक बीज बोने वालों का क्या, जो सोते रहते हैं और वैसे नहीं बोए जाते जैसे हमें होना चाहिए? और तब हम अनंतकालीन भूख को कैसे सहेंगे? और हम अपनी निष्क्रियता के लिए क्या बहाना पेश करेंगे? – इसके बजाय, आइए हम अपनी नींद से जागें और उन लोगों से भी अधिक लगन से काम करना शुरू करें जो भौतिक बीज बोते हैं। *'क्योंकि जो थोड़ा बोता है, वह थोड़ा ही काटेगा, और जो उदारता से बोता है, वह उदारता से ही काटेगा'* (2 कुरिन्थियों 9:3)। – लेकिन हमें क्या बोना चाहिए? – प्रार्थनाएँ, विनती, निवेदन, धन्यवाद, विश्वास, आशा, प्रेम। ये भक्ति के बीज हैं; यही आत्मा का पोषण करते हैं। लेकिन भौतिक बोआई में, किसान धैर्यवान होता है, वह बारिश का इंतजार करता है, चाहे वह सुबह हो या शाम। हालाँकि, हमारी आध्यात्मिक बोआई में, हम स्वयं बारिश लाने और मिट्टी को पानी देने के स्वामी हैं—अर्थात्, जब हम चाहें और जितना चाहें, रोने और विलाप करने के। यदि, तब, यह मामला इस प्रकार हमारी शक्ति में है, तो मैं आपसे विनती करता हूँ, आइए हम यथासंभव अधिक बोएँ और अधिक प्रचुरता से पानी दें, और अपने धार्मिकता के फलों को बढ़ाएँ, ताकि जब आध्यात्मिक फसल आए, तो हम अपने दोनों हाथों और अपने वक्षस्थलों को आध्यात्मिक फसल से भर सकें, और सुनने के योग्य ठहरें: *'यहोवा का आशीर्वाद तुम पर हो'* (भजन संहिता 128:8)। *'हम ने तुम्हें यहोवा के भवन से आशीष दी है'* (भजन संहिता 117:26)। *'अपने हाथों के परिश्रम का फल काट; धन्य है तू, और तेरा भला होगा'* (भजन संहिता 127:2)। – और इस विषय में यही हमारा संदेश है।

27. परन्तु हे भाइयो, मैं तुम्हें यह याद दिलाना चाहता हूँ कि जैसे-जैसे दिन छोटे होते जा रहे हैं, वैसे-वैसे रातें लम्बी होती जा रही हैं। तुम अच्छी तरह जानते हो कि जैसे जागते रहने से शरीर थक जाता है, वैसे ही बहुत सोने से देह मोटी हो जाती है; और जैसे देह मोटी होती है, वैसे ही वासनाएँ भी बढ़ती हैं। – इस अवसर पर, मुझे तुमसे कुछ कहना है। तो फिर क्या? *'तुम में से हर एक के पास भजन हो, शिक्षा हो, प्रार्थना हो*: सब कुछ संयम से किया जाए, *'ताकि सब* आत्मा के *निर्माण'* (1 कुरिन्थियों 14:26) *में योगदान दें*, आत्मा के सुव्यवस्थित होने के लिए, *'कहीं ऐसा न हो कि तुम्हारी आत्मसंयम की कमी के कारण शैतान तुम्हें परीक्षा में डाल दे'* (1 कुरिन्थियों 7:5)। मैं यह केवल नींद के संबंध में ही नहीं कहता; बल्कि भोजन और पेय, और बाकी सब कुछ के संबंध में भी कहता हूँ: क्योंकि संयम से किया गया हर काम उत्तम है, क्योंकि यह हमें एक ओर या दूसरी ओर भटकने और ठोकर खाने से बचाता है।

28. अब इस पर एक बात: चूँकि सर्वोच्च शासक (राजा) अपनी मुहिम से लौट आए हैं, शायद आपके हृदयों में यह विचार उठ रहे होंगे कि अब से कलीसिया के—और विशेष रूप से हमारे—मामले कैसे आगे बढ़ेंगे। – इस पर हमें पवित्रशास्त्र में मार्गदर्शन मिलता है: *'अपनी चिंताएँ प्रभु पर डाल दो'* (भजन संहिता 54:23), और वह निकलने का कोई न कोई मार्ग देगा; और *'यदि परमेश्वर हमारे पक्ष में है, तो हमारा विरोध कौन कर सकता है?'* (रोमियों 8:31)। जैसे पिछले वर्षों में उसने हमें विभिन्न प्रलोभनों और दुखों से बचाते हुए हमारे जीवन की रक्षा की है, वैसे ही, हमें विश्वास है, वह अब से भी हमारी रक्षा करता रहेगा। इसलिए, हमें सुसमाचार के योग्य जीवन जिएँ, जिसका हमारा सच्चा जीवन स्वर्ग में है, और हम पृथ्वी पर प्रवासी और अजनबी हैं। क्योंकि उनमें से कौन, जो आदिकाल से इस जीवन में आए हैं, हमेशा के लिए इसमें रहा है? क्या यहाँ आए सभी लोग, एक परदेस की तरह, फिर से नहीं चले गए? इस प्रकार, यहाँ हमारा प्रवास केवल एक अस्थायी ठहराव है; हमारा सच्चा निवास और विरासत आने वाले जीवन में है—जिसमें, पार करने के बाद, हम सभी पवित्र वारिसों के साथ स्वर्ग के राज्य को विरासत में पाने के योग्य माने जाएँ।

250. यह दर्शाता है कि मसीह यीशु में हमें कितना बड़ा आशीर्वाद प्राप्त है

250. 1) यह दर्शाता है कि मसीह यीशु में हमारे पास कितना बड़ा आशीर्वाद है – जीवन का नवीनीकरण। – 2) आत्मा की तीन शक्तियों का उद्देश्य क्या है, और उनके पतन ने उन्हें कैसे विकृत कर दिया है। – 3) यह हमसे आग्रह करता है कि हम अपनी सभी शक्तियों से सही काम करें और उस कुलीनता को बनाए रखें जिससे हमें प्रभु में कुलीन बनाया गया है। – 4) निष्कर्ष में: इस प्रकार पूर्वजों ने काम किया; इस प्रकार हम भी काम करेंगे। [4, 30]

1. हमारे प्रभु यीशु मसीह का हम पर प्रेम महान और अकथनीय है, क्योंकि उन्होंने न केवल *'हम से जो दूर थे और जो निकट थे, उन दोनों को शान्ति का सुसमाचार प्रचार करने के लिए आना'* (जैसा कि लिखा है, इफिसियों 2:17); बल्कि स्वर्ग में आरोहण करने के बाद, उन्होंने पवित्र प्रेरितों को हम पर वही सुसमाचार प्रचार करने के लिए छोड़ दिया – जैसा कि धन्य पौलुस लिखते हैं: *'क्योंकि हम मसीह के दूत हैं, मानो परमेश्वर हमसे यह विनती कर रहा हो: हम मसीह की ओर से तुम्हें बिनती करते हैं, कि परमेश्वर से मेल मिलाप करो; क्योंकि उसने उसको जो पाप नहीं जानता था, हमारे लिए पाप करार दिया, ताकि हम उसी में परमेश्वर की धार्मिकता बन जाएँ'* (2 कुरिन्थियों 5:20-21)। हमारे लिए कितनी असीम परवाह! मानव जाति के लिए कितना अकथनीय प्रेम! *'जिसने पाप को नहीं जाना, वह हमारे लिए पाप बन गया'*' कैसे और किस प्रकार? – वह पाप के बारे में एक न्यायसंगत रूप से निंदित, कानूनहीन कृत्य के रूप में नहीं बोल रहे हैं। ईश्वर से यह कोसों दूर है! – क्योंकि 'उसने *कोई पाप नहीं किया, और न ही उसके मुँह में कोई छल पाया गया'* (1 पतरस 2:22)। परन्तु वह इस तथ्य के बारे में बात कर रहे हैं कि उन्होंने स्वयं पर हमारी पाप से भ्रष्ट प्रकृति को धारण किया, कि *'उन्होंने हमारी दुर्बलताओं को उठा लिया और हमारी बीमारियों को उठा लिया'* (मत्ती 8:17), कि उन्हें हमारे लिए क्रूस पर चढ़ाया गया और उन्होंने सबसे अपमानजनक मृत्यु को भुगता। इसका ही अर्थ है: *'उन्होंने हमारे लिए पाप कर दिया!'* किस उद्देश्य के लिए? *'ताकि हम उसी में परमेश्वर की धार्मिकता बन सकें।'* कैसे? पाप से मुक्ति पाकर, उस दंड से मुक्त होकर, जिसके हम पात्र हैं, और उसमें जीकर और चलकर। इसीलिए वह हमसे आग्रह करते हैं, कहते हुए: *'हम भी, सहकर्मियों के रूप में, आपसे विनती करते हैं: परमेश्वर की कृपा को व्यर्थ में न खोएं'* (2 कुरिन्थियों 6:1)। क्या आप देखते हैं कि *वह हमसे* कैसे विनती और *हमें* कैसे मनाते हैं? – इसका क्या मतलब है: *'परमेश्वर की कृपा को व्यर्थ में न खोएं?'* इसका अर्थ है कि हमें पीछे नहीं हटना चाहिए, हमें उन्हीं वासनाओं के आगे नहीं झुकना चाहिए जिनका हमने त्याग किया है, और हमें परमेश्वर और पवित्र स्वर्गदूतों के सामने किए गए अपने व्रतों को नहीं तोड़ना चाहिए। – लेकिन क्या? लेकिन *'ताकि हम जीवन की नूतनता में चलें'* (रोमियों 6:4) – एक ऐसा जीवन जो शुद्ध और निर्दोष, सदाचारी और स्वर्गीय हो।

2. इस बिंदु पर पहुँचकर, मैं आपको वचन की एक अत्यंत गूढ़ शक्ति दिखाना चाहता हूँ। यह वास्तव में क्या है? – मानव आत्मा में तीन शक्तियाँ होती हैं: विचार की शक्ति, भावना की शक्ति, और इच्छा की शक्ति। विचार करने वाली शक्ति का कार्य पवित्र त्रिमूर्ति में विश्वास करना है; क्रोध करने वाली शक्ति का कार्य साँप, जो प्रलोभनकर्ता है, उससे क्रोध करना और उसे किसी भी तरह से हमारे पास न आने देना है; इच्छा करने वाली शक्ति का कार्य उस ईश्वर की लालसा करना और उससे प्रेम करना है, जिसने हमें बनाया है। लेकिन शैतान ने, आत्मा की इन शक्तियों को भ्रष्ट और विकृत करने के बाद, उनके माध्यम से हमारा विनाश करना शुरू कर दिया। कैसे? – हमारे पूर्वज आदम में इच्छाशक्ति को निषिद्ध फल का स्वाद चखने के लिए प्रलोभित करके; काईन में क्रोधशक्ति को उसके भाई हेबल की हत्या करने के लिए भड़काकर; और मानवता को मूर्तिपूजा की ओर ले जाने के लिए तर्कशक्ति का उपयोग करके। हमारे ईर्ष्यालु शत्रु की कार्यप्रणाली ऐसी ही है!

३. जहाँ तक हमारी बात है, हम उसी में बने रहेंगे जिसके लिए हमें बनाया गया था: तीनों शक्तियों के माध्यम से अच्छाई में स्वयं को मजबूत करके, और पवित्र आत्मा से सुसज्जित होकर, हम स्वयं को उस गरिमा को नष्ट करने की अनुमति नहीं देंगे जिससे प्रभु ने हमें परमेश्वर पिता के बच्चे बनाकर सम्मानित किया है। सुसमाचार कहता है, *'परन्तु जितनों ने उसे ग्रहण किया, उन्हें परमेश्वर की संतान बनने का अधिकार दिया गया'* (यूहन्ना 1:12)। चूंकि, इस प्रकार, हम परमेश्वर की संतान बन गए हैं, हम स्वयं को क्रोध की संतान बनने की अनुमति नहीं देंगे; चूंकि हमें परमेश्वर के वारिस कहा जाता है, हम स्वयं को बुझ न सकने वाली आग के वारिस बनने की अनुमति नहीं देंगे; चूंकि हमें मसीह के अंगों के रूप में पहचाना जाता है, आइए हम स्वयं को एक वेश्या के अंग न बनाएं; हम अपनी दृष्टि संसार या संसार की वस्तुओं पर न रखें; हम अपनी आँखें इस सांसारिक जीवन के मोहक आकर्षणों की ओर न मोड़ें, जो व्यर्थ और क्षणिक हैं। मान लीजिए, मैं काल्पनिक रूप से कहता हूँ, कि हम शरीर और रक्त की वासनाओं को पूरा कर लें: *'रक्त में क्या लाभ है, जब हमें धूल में लौटना है?'*(भजन संहिता 29:10)। आइए हम कब्रों में झाँकें, और हम देखेंगे कि वासना की मिठास कैसे समाप्त होती है। आइए हम धन-संपत्ति और धन से लदे रहें; तो क्या हुआ? क्या हम इस दुनिया में नग्न नहीं आए थे? – नग्न ही हम इससे प्रस्थान करेंगे, अपने साथ अपने धार्मिक या अधार्मिक कर्मों के सिवा

कुछ भी नहीं ले जा रहे होंगे। इसीलिए संत दाऊद पुकार लगाते हैं: *'मैं प्रभु से एक बात माँगता हूँ, यही मैं खोजता हूँ: कि मैं अपने जीवन के सभी दिनों में प्रभु के घर में वास करूँ, प्रभु की शोभा को निहारूँ और उसके पवित्र मन्दिर का दर्शन करूँ'* (भजन संहिता 26:4)।

४. देखो, एक धन्य जीवन! देखो, हमारे पवित्र पूर्वजों द्वारा चुना गया अच्छा भाग, जैसे कि संत पॉल, धन्य कन्फेशर, जिनका हम अब स्मरण करते हैं—जिनके संघर्ष और कारनामे जिसके बारे में हमने बहुत कम सुना है; और, उसका अनुकरण करते हुए, हम उत्साहपूर्वक अपने तपस्या के श्रम को जारी रखेंगे, और उस उत्पीड़न के बोझ को उठाएंगे जिसके हम अधीन हुए हैं, अपने प्रथागत कर्मों से विचलित हुए बिना; आओ हम अपने मार्ग पर अथक आगे बढ़ते चलें; और यदि हम ठोकर खाएँ, तो हमें फिर से उठने के लिए तत्पर रहना चाहिए, अपने विरोधी, शैतान पर विजय प्राप्त करते हुए, ताकि हम भी हमारे प्रभु मसीह यीशु में, सभी संतों के साथ धार्मिकता का मुकुट प्राप्त कर सकें।

251. अपनी बीमारी से– वह अपने विचार मृत्यु की ओर मोड़ता है, और अपनी बीमारी के कष्ट से– अनंतकालिक यातना की ओर

251. 1) अपनी बीमारी से वह मृत्यु के विचारों की ओर मुड़ता है, और अपनी बीमारी के दुखों से अनंत यातना की ओर। – 2) वह बताता है कि उस समय के उत्पीड़न के दौरान कुछ को महिमामय बनाया गया, जबकि अन्य लज्जित होकर पूरी तरह खो गए। – 3) बाद वालों को वह पश्चाताप, फटकार और परिणामों की चेतावनी के शब्द संबोधित करता है। [4, 31]

5. मैं बीमार था, और तुम्हारी प्रार्थनाओं के द्वारा मैं फिर से स्वस्थ हो गया। परन्तु हम इस प्रकार कब तक स्वस्थ होते रहेंगे? – मृत्यु का समय निश्चय ही आएगा, जब ऐसा चंगा होना फिर संभव नहीं होगा; वह आएगा और मुझे तुमसे दूर ले जाएगा, और मुझे यहाँ से किसी अन्य स्थान पर भेज देगा। हालाँकि, इसलिए आपको अनाथ हो जाने के विचार में नहीं रहना चाहिए: क्योंकि जिसने कहा, *'मैं तुम्हें अनाथ नहीं छोड़ूँगा'* (यूहन्ना 14:18), उसने सत्य कहा – और: *'मैं युग के अन्त तक सदा तुम्हारे संग हूँ'* (मत्ती 28:20)। इसके अलावा, हम उस दिन एक-दूसरे से मिलेंगे; परन्तु—काश कोई कह सके: अवर्णनीय आनन्द और अनन्त जीवन में!—जहाँ तक मेरी बीमारी के दौरान मैंने जो कुछ सहा, वह आप जानते हैं; कैसे, ठंड लगने से मैं असहनीय काँपने का शिकार हुआ, और कैसे उसके तुरंत बाद पूरे एक दिन तक मुझे भयंकर बुखार ने घेर लिया। – इस प्रकार पीड़ित होकर, मैंने उस समय अपने मन में सोचा: 'क्या ऐसा नहीं है कि आने वाले युग में, लोगों को टार्टरस की यातनाओं से आग की गेहन्ना में स्थानांतरित कर दिया जाएगा, ताकि बेचारा आत्मा दो, या उससे भी अधिक, यातनाओं का शिकार हो?' लेकिन वहाँ चाहे एक या दो यातनाएँ दी जाएँ; यहाँ के दुखों से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि पापियों के प्रति ईश्वर का क्रोध कितना असहनीय है, और इससे भय और कम्पन से ग्रस्त होकर, यह संकल्प किया जा सकता है कि हर संभव सावधानी बरती जाए ताकि उन असहनीय यातनाओं में न पड़ें।

6. इस प्रकार, *'कुछ लोगों के लिए'* वर्तमान उत्पीड़न सद्गुण के प्रकटीकरण के लिए एक अवसर के रूप में काम किया है, और वे *'दुनिया में प्रकाश के समान चमके हैं, जीवन के वचन को थामे हुए, मेरी प्रशंसा के लिए'*, जैसा कि कहा जाता है, *'मसीह के दिन'* (फिलि. 2:15–16)। उन्होंने कितना भला किया? और उन्होंने क्या पूर्णता प्राप्त की? न केवल उन्होंने स्वयं को बचाया है और बचाते रहते हैं, उन्होंने जिन परीक्षाओं को सहा है उनसे अनुभव प्राप्त किया है और दुखों तथा कष्टों की अग्नि में तपकर, भट्टी में सोने की तरह शुद्ध हुए हैं—बल्कि वे दूसरों को भी उसी मार्ग पर खींचते हैं, इस प्रकार अपने और पराये, कई लोगों के उद्धारकर्ता बन जाते हैं। जहाँ तक *'दूसरों'* का सवाल है—हालाँकि वे वास्तव में बहुत कम हैं—उन्हें सताने का बहाना उनके बुरे कामों के लिए पर्याप्त था, क्योंकि उनका जीवन आत्म-तुष्टि से भरा था, आज्ञाकारिता के नियम से रहित था, और इसने उन्हें अपने शर्मनाक कृत्य करने के लिए स्वतंत्र छोड़ दिया था। तो फिर, उनके बारे में धर्मग्रंथ के शब्दों में बात करना सबसे उपयुक्त क्यों है: *'उनका चेहरा कोयले से भी अधिक काला हो गया है'* (विलापगीत 4:8)?

7. ऐसे ही लोगों से मैं भी पुकार कर कहूँगा: हे अधर्मी पुत्रों, तुमने प्रभु को त्याग दिया है, तुमने मठवासियों के जीवन के नियमों का उल्लंघन किया है; तुम सीधा चलना नहीं जानते, बल्कि लंगड़ों की तरह इधर-उधर लड़खड़ाते हो; तुम अपने साथियों से पीछे रह गए हो और कामुक हो गए हो; तुम में से कुछ अकेले रहते हैं; अन्य पैसे के लालच से प्रेरित होकर नौकर रखते हैं, और यहाँ तक कि व्यापार में भी लिप्त हैं। न तो भविष्यवक्ता की सज़ा, न ही प्रेरित की धमकी, और न ही मेरी विनम्र उपदेश-बातें तुम पर कोई भय उत्पन्न करती हैं। तुम में से एक, सुंदरता के मोह में, चोरी करने और यहाँ तक कि ईश्वर का त्याग करने तक उतर आया है। 'हे विनाश के दुष्ट पुत्र, तुम क्या कर रहे हो?' 'तुमने कितनी बार गाया है: *"मैं तेरी आत्मा से कहाँ जाऊँ, और तेरे साम्हने से कहाँ भागूँ?"* (भजन संहिता 138:7)। या, पूरी तरह

से बहक कर, क्या तुम उस साँप से दोस्ती करना चाहते हो जिसने हव्वा को बहकाया और उसके साथ मिलकर हमारे पूर्वज आदम को स्वर्ग से बाहर निकाल दिया? क्या तुम अभी भी मसीह का त्याग करने का इरादा नहीं रखते, जिसके साथ तुम ब्रह्मचर्य के व्रत द्वारा एकीकृत हुए थे, और स्वयं को पाप के साथ जोड़ना चाहते हो, जिसके द्वारा मृत्यु संसार में आई? क्या तुम उन लोगों के विषय में सुसमाचार की यह पुकार नहीं सुनते: *'उनका कीड़ा नहीं मरता और आग नहीं बुझती'* (मरकुस 9:44)? क्या तुम इस बात पर ध्यान नहीं देते कि प्रेरित क्या कहते हैं: *'परमेश्वर व्यभिचारी और वेश्याओं का न्याय करता है'* (इब्रानियों 13:4)? पाप करके आपको क्या मिलता है? क्या यह अंधकार और तलवार से भेदा गया हृदय नहीं है? क्या यह निराशा की गहराइयों में पतन नहीं है? क्या यह स्वयं शैतान नहीं है, जिसने आपको धोखा दिया है, और जो अब आपको फाँसी का फंदा थामने के लिए मजबूर कर रहा है, जैसा उसने एक बार यहूदा के साथ किया था? हे अंधकार में रहने वालों, होश में आओ; हे नाश होने वालों, मृत्यु के फंदे से भागो; स्वयं को नरक के फंदे में फँसने न दो, कहीं ऐसा न हो कि तुम यहाँ काइन का जीवन जियो, कराहते, कांपते और हर परिचित चेहरे से भागते हुए, और आने वाले युग में आग की गेहन्ना में दंडित हो जाओ; जब प्रभु *'अपने पवित्र लोगों में महिमा पाने, और सब में आदर पाने आएँगे'* (2 थिस्स. 1:10), उन पर जो उसकी आज्ञाओं के अनुसार विश्वासपूर्वक चले हैं—उन्हें योग्य पुरस्कार प्रदान करते हुए, जबकि उनके विरोधियों को उनके लिए तैयार की गई अनंत यातनाओं में भेजते हुए।

252. एपिफिनी प्रभु के देह में पृथ्वी पर आने से प्राप्त आशीषों की महानता को स्मरण कराती है

252. 1) एपिफिनी प्रभु के देह में पृथ्वी पर आने से प्राप्त आशीर्वादों की महानता को याद दिलाती है। – 2) हम बदले में क्या अर्पित करें? – हम अपने श्रम में क्रूस-वाहक जीवन और मूर्तिभंजकों के सामने अपनी वर्तमान गवाही को अर्पित करते हैं: आइए हम दोनों में दृढ़ता से खड़े रहें। [4, 32]

8. एपिफिनी का पर्व निकट आ रहा है – और आनंद का एक दिन द्वार पर है, एक ऐसा आनंद जो वास्तव में महान है, जैसा अनादि काल से नहीं देखा गया। क्योंकि परमेश्वर का पुत्र हमसे भविष्यवाणियों और प्रतीकों में नहीं, जैसा कि हम देखते हैं कि वह पुराने नियम के पितरों के पास प्रकट हुआ था, आ रहा है; बल्कि कुँवारी से जन्म लेकर, उतरकर और व्यक्तिगत रूप से हम पर प्रकट होकर—युगों-युगों में कुछ भी अधिक धन्य नहीं हुआ है, और उन सभी आश्चर्यों में से, जो परमेश्वर ने आदि काल से किए हैं, कुछ भी अधिक अद्भुत नहीं है। इसलिए, स्वर्गदूत उस रहस्य की घोषणा करते हैं जो पूरा हो गया है; तारा यह संकेत देता है कि स्वर्ग से एक पृथ्वी पर जन्म ले चुका है; चरवाहे उनकी ओर शीघ्रता से बढ़ते हैं, जिसे उन्हें सूचित किया गया था, उसे देखने के लिए; मगस्विर शाही उपहार लाते हैं, और परमेश्वर के अत्यंत नवीन कार्य के बारे में एक अत्यंत नया गीत गाया जाता है, जिसके द्वारा स्वर्ग में परमेश्वर की महिमा होती है, जबकि पृथ्वी पर शांति स्थापित होती है, जैसा कि प्रेरित भी गवाही देते हैं, कहते हुए: *'क्योंकि वही हमारी शान्ति है, जिसने दोनों को एक किया है, और वैमनस्य की बीच की दीवार गिरा दी है, और अपने शरीर में आज्ञाओं में प्रगट हुए आज्ञा-विधान को रद्द कर दिया है, ताकि वह दोनों से आप में एक नया मनुष्य उत्पन्न करे और शान्ति स्थापित करे, और दोनों को एक शरीर में क्रूस के द्वारा परमेश्वर से मिलाए, और इस प्रकार वैमनस्य को मार डाले'* (इफिसियों 2, 14–16)। यही वह है जिसे भविष्यवक्ताओं और धर्मी लोगों ने प्राचीन काल से देखने की लालसा की थी, परन्तु उन्होंने इसे केवल विश्वास द्वारा ही देखा। परन्तु हम, जैसा कि लिखा है, *'उसको देखकर अपने हाथों से छू लिया है'* – *'हमने देखा है और* इस *जीवन के वचन* के विषय में *गवाही देते हैं, और यह जीवन प्रगट हुआ है,'* और हमें पुत्रत्व का पद प्राप्त हुआ है (1 यूहन्ना 1:1, 2)।

9. परन्तु *हम 'प्रभु के लिए क्या अर्पण करेंगे, जो कुछ उसने हमें दिया है?'* इसके उत्तर में, संत दाऊद पहले ही घोषणा कर चुके थे: *'मैं उद्धार का पात्र उठाऊँगा और प्रभु के नाम का आह्वान करूँगा'* (भजन संहिता 115:3)। परन्तु हे भाइयो, हम आनन्द मनाएं कि हमें भी उन सब बातों के लिए प्रभु का धन्यवाद करने के योग्य समझा गया है जो उन्होंने हमें प्रदान की हैं। – तो फिर, यह धन्यवाद-भेंट क्या है? वह क्रूस-वाहक जीवन जिसे हमने अपनाया है, और *'वह अभिमान जो हम परमेश्वर की महिमा की आशा में करते हैं'* (रोमियों 5:2). – और यह हमें केवल एक दिन के लिए नहीं, बल्कि अपने पूरे जीवन भर मनाना चाहिए। जो लोग शरीर के अधीन हैं और अपनी वासनाओं के कैदी हैं, वे न तो जश्न मना सकते हैं—भले ही वे जश्न मनाते हुए प्रतीत हों—और न ही स्वतंत्र हो सकते हैं, क्योंकि वे अपनी वासनाओं के दास हैं और पाप में बेच दिए गए हैं, जैसा कि लिखा है: *'जो कोई भी पाप करता है, वह पाप का दास है।' 'दास सदा घर में नहीं रहता; पुत्र सदा रहता है'* (यूहन्ना 8:34)। चूँकि हमें भी अनुग्रह से पुत्र कहलाने के योग्य ठहराया गया है, हम सदा के लिए घर में रहेंगे, *'यदि हम अपने विश्वास की आरम्भिक दृढ़ता को अन्त तक थामे रहें'* (इब्रानियों 3:14)। इसलिए, पवित्र आत्मा से बल प्राप्त करके, हम अपने मठवासी जीवन-पथ पर दृढ़ता से खड़े रहें *और "प्रेम और भले कामों में एक दूसरे को प्रोत्साहित करें"* (इब्रानियों 10:24)—आज्ञाकारिता, नम्रता, कोमलता और अन्य

सभी उत्तम प्रयासों में, अपने अच्छे संकल्प में अडिग रहते हुए, बल्कि प्रयास पर प्रयास जोड़ते हुए, और भी अधिक क्योंकि हम प्रभु के दिन को निकट आते देखते हैं। क्योंकि वह महान और गौरवशाली दिन निकट आ रहा है, जिस दिन सभी का न्यायी खुले रूप में प्रकट होगा, और उसी महिमा में देखा जाएगा जिसमें उसे प्रेरितों ने दिव्य रूपान्तरण के समय देखा था – और वह प्रत्येक व्यक्ति को उनके कर्मों के अनुसार पुरस्कृत करेगा। – हे परमेश्वर, हम भी सभी संतों के साथ, उसी को देखें, जिसका अनुग्रहपूर्ण मुख हम पर है और जो हमें अपने स्वर्गीय राज्य में ग्रहण करता है।

253. मरुभूमि में भटकते समय इस्राएलियों को विश्राम का वादा किया गया था; लेकिन वे सभी उसमें प्रवेश नहीं कर पाए।

253. 1) मरुभूमि में भटकते समय इस्राएलियों को विश्राम का वादा किया गया था; लेकिन वे सभी उसमें प्रवेश नहीं कर पाए। हमें भी विश्राम का वादा किया गया है; और हम में से सभी इसमें प्रवेश नहीं कर पाएंगे। – 2) हम यह कैसे सुनिश्चित कर सकते हैं कि हम इसमें प्रवेश करें? – हमें वैसा नहीं करना चाहिए जैसा उन्होंने किया था। [4, 34]

10. इस प्रकार हम वर्ष-दर-वर्ष, एक मौसम से दूसरे मौसम में, एक पर्व से अगले पर्व में गुज़रते हैं, और इस पूरे जीवन में कोई विश्राम नहीं है। – फिर भी हमें किसी भी हाल में इसके अंत तक पहुँचना है और अपनी विश्राम में प्रवेश करना है। *'क्योंकि जो कोई उसकी विश्राम में प्रवेश कर चुका है, वह भी अपने कामों से विश्राम कर चुका है, जैसे परमेश्वर ने अपने कामों से विश्राम किया था'*, जैसा लिखा है (इब्रानियों 4:10)। तो, यह विश्राम क्या है? – स्वर्ग का राज्य, जिसके प्रति प्रेरित हमें आग्रह करते हैं, कहते हुए: *'इसलिये हम उस विश्राम में प्रवेश करने का यत्न करें, कहीं ऐसा न हो कि कोई आज्ञा-भंग के उसी उदाहरण में पड़ जाए'* (इब्रानियों 4:11)। – इसका क्या मतलब है? कि जैसे परमेश्वर ने इस्राएलियों से वादा किया था कि वह उन्हें प्रतिज्ञात देश में ले जाएगा; – फिर भी क्योंकि वे बाद में अवज्ञाकारी साबित हुए और उन्हें दुखी किया, उन्हें प्रवेश करने की अनुमति नहीं दी गई: – वैसे ही, यदि हम उसकी आज्ञाओं के प्रति अवज्ञाकारी हैं, तो हम किसी भी तरह से स्वर्ग के राज्य में प्रवेश नहीं करेंगे। *'चालीस वर्ष तक,'* प्रभु कहते हैं, *'मैं उन पर क्रोधित रहा और मैंने कहा: "वे अपने हृदय में हमेशा भटकते रहते हैं; उन्होंने मेरे मार्गों को नहीं जाना है।" इसलिए मैंने अपने क्रोध में शपथ ली, "वे मेरी विश्राम-भूमि में प्रवेश नहीं करेंगे"'* (भजन संहिता 94:10-11)। उनके साथ ऐसा ही हुआ; परन्तु हमसे, चालीस वर्षों का नहीं, बल्कि पूरे जीवन भर आज्ञाकारिता की अपेक्षा की जाती है। क्योंकि यदि हम परमेश्वर की सभी आज्ञाओं को पूरा करने का प्रयत्न नहीं करते हैं, तो वह हमसे भी कहेगा: 'वे मेरी विश्राम-स्थली में प्रवेश नहीं करेंगे।' परन्तु जो प्रवेश नहीं कर सके, उनकी हड्डियाँ जंगल में गिर पड़ीं; और यदि हम प्रवेश नहीं करते हैं, तो हमारे शरीर और हमारी आत्मा दोनों को आग की गेहन्ना में डाल दिया जाएगा; और यह दण्ड पहले वाले से अतुलनीय रूप से अधिक कठोर है, क्योंकि लिखा है: *'जो मूसा की व्यवस्था को अस्वीकार करता है: दो-तीन गवाहों की गवाही पर बिना दया के मर जाएगा; उन लोगों के लिए कितनी बुरी सज़ा होगी जिन्होंने परमेश्वर के पुत्र को पैरों तले रौंदा है, और उस वाचा के लहू को अशुद्ध समझा है जिससे उन्हें पवित्र किया गया था, और अनुग्रह की आत्मा का अपमान किया है'* (इब्रानियों 10:28–29)।

11. तो फिर, वह क्या कारण था जिसने उनका प्रवेश रोक दिया? अविश्वास, कुड़कुड़ाहट, ईश्वरनिंदा, विद्रोह, कठोर हृदयता, घमंड, और कामुक दुराचार। यही बात थी जिसने उनका विनाश किया। – इसलिए हम इन वासनाओं से आग के मुख से भागें, परमेश्वर के वचनों पर संदेह न करें, बल्कि विश्वास करें कि वह जो प्रतिज्ञा करता है, उसे पूरा कर सकता है; और हम न बड़बड़ाएं (1 कुरिन्थियों 10:10), न कुफ्र करें, न अपने हृदय को कठोर करें, न विद्रोह करें; *'इसलिये हम एक दूसरे पर दयालु और करुणामय हों, और एक दूसरे को क्षमा करें, जैसे मसीह में परमेश्वर ने हमें क्षमा किया है'* (इफिसियों 4:32), *"हमेशा प्रभु यीशु की मृत्यु को अपने शरीर में धारण करते हुए"* (2 कुरिन्थियों 4:10), मसीह के लिए मरने के लिए हमेशा तैयार रहते हुए, हमेशा प्रार्थनाओं, विनतियों, आँसुओं और स्वर्गीय दर्शनों के चिन्तन द्वारा नए होते हुए। इस प्रकार जीते हुए, हम उस भूमि में प्रवेश करेंगे जो दूध और मधु से बहती हो, जैसा कि प्राचीनों ने किया था, नहीं, बल्कि निम्रों की भूमि में, जहाँ जीवन और अमरत्व का स्रोत मिलता है, जहाँ स्वर्गीय यरूशलेम की शोभा है, जहाँ आनंद और हर्ष है, जहाँ धन्य और जीवन-दायक त्रिमूर्ति का तेज चमकता है!

२५४. कुँवारी अवस्था वैवाहिक जीवन से श्रेष्ठ है

254. 1) कुँवारीपन वैवाहिक जीवन से श्रेष्ठ है। – 2) हमें इस बुलावे के योग्य समझने के लिए ईश्वर का धन्यवाद करते हुए, हमें सतर्क रहना चाहिए कि हम गिर न जाएँ। – 3) इस उद्देश्य का साधन क्या है? संघर्ष और निम्न को उच्च से जीतना, जिसके प्रति हमारी सभी प्रयत्नों का निर्देशन है। – 4) मैं एक और बात जोड़ूँगा: भाई

मेमनोन लौट आए हैं: उन्हें भाइयों के प्रेम से स्वीकार करो, जैसे दृष्टांत में पिता ने अपने भटक गए पुत्र को स्वीकार किया था। [4, 35]

12. जो लोग रंगभूमि में दौड़ में भाग लेते हैं, वे साल में एक बार ऐसा करते हैं - और वह भी बहुत कम समय के लिए; उसके बाद, प्रतियोगिता समाप्त हो जाती है: विजेता, पराजित और दर्शक सभी अपने-अपने रास्ते चले जाते हैं। लेकिन जो पवित्रता की दौड़ लगाते हैं, वे एक दिन के लिए नहीं बल्कि अपने पूरे जीवन के लिए ऐसा करते हैं; और उनका मार्ग, और उस पर उनकी प्रगति, अदृश्य हैं, ठीक वैसे ही जैसे अदृश्य शत्रुओं के विरुद्ध उनका युद्ध अदृश्य है। ब्रह्मचर्य सबसे बड़ा गुण है, जो स्वर्ग की ऊँचाइयों तक पहुँचता है। – लोगों को उनके जीवन के तरीके के अनुसार दो समूहों में विभाजित किया गया है: कुछ विवाह में रहते हैं, जबकि अन्य ब्रह्मचर्य में रहते हैं। जो विवाह में रहते हैं वे निम्न लोक का निर्माण करते हैं, और ब्रह्मचारी उच्च लोक को आबाद करते हैं। पहले वाले क्षय के अधीन हैं, जबकि बाद वाले अक्षुण्णता से चमकने के योग्य माने जाते हैं। और जैसे यदि कोई पंखों वाला आदमी देखे, तो वह यह देखकर सही ही चकित होगा कि वह कभी मनुष्य और कभी देवदूत के रूप में कैसे दिखाई देता है: उसी प्रकार तपस्या द्वारा पवित्रता की रक्षा करने वाला भी देवदूतों और मनुष्यों दोनों के लिए एक अद्भुत दृश्य प्रस्तुत करता है: शरीर में, फिर भी शरीर से ऊपर; संसार में, फिर भी संसार से ऊपर; इसीलिए, जब कोई संसार का त्याग करता है, तो कहा जाता है कि उसने उत्कृष्टता का जीवन चुना है: और प्रभु ने सुसमाचार में कहा: *'कुछ जन्मजात नपुंसक हैं; और कुछ ऐसे हैं जिन्हें मनुष्यों ने नपुंसक बनाया है; और कुछ ऐसे हैं जिन्होंने स्वर्ग के राज्य के लिए स्वयं को नपुंसक बनाया है,'* उन्होंने आगे कहा: *'जो कोई इसे ग्रहण कर सकता है, वह ग्रहण करे'* (मत्ती 19:12)। आप देखते हैं कि कई लोगों के लिए यह वरदान उनकी क्षमता से परे है, और यह केवल उन लोगों के लिए आरक्षित है जो अपने जीवन-यापन के तरीके से स्वयं को सूली पर चढ़ाते हैं।

13. इसलिये हम एक दूसरे के लिये आनन्दित और हर्षित हों – हम धन्यवाद, असीम धन्यवाद दें, कि मनुष्यों के प्रति परमेश्वर के प्रेम के कारण, हमें ऐसी योग्य बुलाहट मिली है, जिससे परमेश्वर की महिमा होती है और जिस पर लोग चकित होते हैं। और केवल इतना ही नहीं, बल्कि हमें अपने जीवन को भी यथासंभव सावधानी से जीना चाहिए, क्योंकि अतीत में और अब भी, कई लोग ऐसी ऊँचाइयों से गिर गए हैं: कुछ घमंड से फूलकर; अन्य लापरवाही और असावधानी से गिर पड़े, ये दोनों ही आत्मा का नाश करते हैं।

14. तो, इससे छुटकारा पाने का साधन क्या है? – उड़ान भरते हुए एक पक्षी के पास खतरे से बचने का एक साधन होता है; क्योंकि जब उसे किसी शिकारी की निकटता का आभास होता है, तो वह अपने पंख फैलाता है, किसी दूसरे स्थान पर उड़ जाता है – और पकड़े जाने से बच जाता है। इसी प्रकार, जब शैतान, जो हमारी आत्माओं का शिकारी है, पास आता है, तो आत्मा की उड़ान भरते हुए, ऊँचाइयों के चिंतन में मग्न होकर, *'आओ हम ऊँची चीज़ों की खोज करें और अपने मन को ऊँची चीज़ों पर लगाएँ'* (कुलुस्सियों 3:1-2)। क्या वह वासना की मिठास पेश करता है? हम आत्मा की गरिमा की भावना को जगाएंगे। क्या वह पाप के कार्य को सामने रखता है? हम अपने सभी विचारों के साथ न्याय की कठोरता को अपनाएंगे। इस प्रकार, एक चीज़ को दूसरी चीज़ के विरुद्ध रखकर, और विचारों को विचारों से ही खारिज करके, हम सभी का विनाशक से बच जाएंगे। तो, इन संघर्षों का परिणाम क्या है? जो लोग शरीर के लिए लड़ते हैं, उनके लिए एक नश्वर मुकुट है; हमारे लिए एक अक्षय मुकुट; उनके लिए अस्थायी आनंद; हमारे लिए शाश्वत आनंद। और हम धन्य हैं, *'यदि हम अंत तक हमारे विश्वास और हमारी आशा के घमंड को दृढ़ता से थामे रहें'* (इब्रानियों 3:6)। इसलिए, मैं आपसे आग्रह करता हूँ, आइए हम प्रार्थना और विनती, पश्चाताप और आँसुओं, नम्रता, आज्ञाकारिता, पाप-स्वीकृति और अन्य तपस्वी प्रयासों में दृढ़ता से लगे रहें, और ईश्वर की मदद से शत्रु पर विजय प्राप्त करें। लेकिन इस पर बस इतना ही।

१५. अब भाई मेमनोन के विषय में। चूँकि वह किसी प्रकार होश में आ गया है और लौट आया है, हमें उसे स्वीकार करना चाहिए, *'ताकि ऐसा कोई अत्यधिक शोक से न खाया जाए'* (२ कुरिन्थियों २:७)। – हालाँकि, मुझे इस बिंदु पर आपको यह बताना होगा कि प्रभु के वचन के अनुसार, *'जो कोई पाप करता है वह न केवल पाप का दास है'* (यूहन्ना 8:34), बल्कि सदाचार के प्रेमियों के लिए एक घृणास्पद वस्तु भी है; और शायद कुछ लोग उसे गले लगाने से शर्मिंदा होंगे, कहीं ऐसा न हो कि वे उसके पाप से अशुद्ध हो जाएँ। लेकिन चूँकि हमारे प्रभु यीशु मसीह ने उस अय्याश पुत्र को—जिसने अपनी सारी संपत्ति वेश्याओं पर उड़ा दी थी—जब वह लौटा तो उसे अस्वीकार नहीं किया, वैसे ही हम भी उसे दूर नहीं करेंगे, बल्कि इस भाई का दयालुता से स्वागत करेंगे, और उसकी वापसी पर कृतज्ञता के साथ आनन्द मनाएँगे, और उसकी मुक्ति के लिए प्रार्थना करेंगे। – इस प्रकार, हमारे प्रभु और उद्धारकर्ता के शिष्यों के रूप में इस आज्ञा को पूरा करके, हम स्वर्ग के राज्य के वारिस बनने के योग्य बनेंगे।

२५५. हमारे कतिने भाइयों ने प्रतमिाओं की पूजा के लएि और यातनाओं के परणिामस्वरूप नर्िवासन में मृत्यु पाई है? वे ऑर्थोडॉक्सी की सच्चाई के साक्षी हैं। वधिर्मी ऐसा कुछ भी प्रस्तुत नहीं करते: क्योंक

255. 1) हमारे कतिने भाइयों ने प्रतमिाओं की पूजा और यातनाओं के कारण नर्िवासन में मृत्यु पाई है? वे ऑर्थोडॉक्सी की सच्चाई के साक्षी हैं। वधिर्मी ऐसा कुछ भी प्रस्तुत नहीं करते: क्योंक वि महसूस करते हैं क उनकी नींव कतिनी अस्थरि है। परन्तु हम तो प्रेरतिों और भवष्यिद्वक्ताओं की नींव पर बनाए गए हैं। – 2) हमारे उद्धार के लएि, हमारे लएि जो कुछ बचा है, वह यह है क हिम इस नींव पर सोने, चाँदी और कीमती पत्थरों से नर्िमाण करें, अर्थात् एक पवत्रि और नर्दिोष जीवन, और जब भी हम कसिी भी तरह से पाप करें तो पश्चाताप के द्वारा उसे शुद्ध करें। [4, 36]

१६. हमारे भाई थयिोडोर सो गए हैं – जो सबसे उत्तमों में से एक थे, आज्ञाकारति में कुशल और वश्विास की घोषणा में दृढ़ थे, जन्हिोंने मसीह के लएि घाव उठाए और अपना जीवन जेल तथा नर्िवासन में समाप्त कयिा। इससे अधकि आनंददायक और क्या हो सकता है? हमारे इतने सारे भाइयों (उनकी संख्या सौ से अधकि है) को ऐसे स्थानों में डाल दयिा गया था; वहाँ, वे तारों की तरह चमकते हुए, अपने पवत्रि शरीरों को ऑर्थोडॉक्सी की गवाही के रूप में अब जीवति लोगों और आने वाली पीढ़यिों के लएि छोड़ गए। मैं केवल अपने ही भ्रातृत्व की ही नहीं, बल्क अिन्य मठों के उन भाइयों की भी बात कर रहा हूँ, जन्हिोंने नर्िवासन में अपना जीवन समाप्त कयिा। यह परमेश्वर की कलीसयिा की सबसे बड़ी पुष्ट हिै! हमारे प्रभु यीशु मसीह, परमेश्वर की अत पिवत्रि माता, और उनके सभी संतों की प्रतमिाओं की आराधना के संबंध में उसके पास गवाहों का ऐसा ही एक दल है: ताक िभले ही हमारे हाथों में और कुछ भी न हो, यह अकेले ही समझदार लोगों के लएि सच्चाई के प्रमाण के रूप में पर्याप्त होगा। ऑर्थोडॉक्स के वरिोधयिों को लज्जति होना चाहएि! क्योंक उिनमें से कसिने, अपने वश्विास के लएि लड़ते हुए, कभी ऐसी पीड़ाएँ सहन की हैं? कभी कसिी ने नहीं; पर वे, रात्र कि पशुओं की तरह, अपनी वधिर्म की अँधेरी में घूमते और नर्भिीक हो जाते हैं; परन्तु जब दनि का प्रकाश दखिाई देता है और ऑर्थोडॉक्सी भोर के तारे की तरह चमक उठती है, तो वे अपनी चालाक योजनाओं के बलिों में छपि जाते हैं। – और वे अपनी ही आग की रोशनी से भटक जाएँ, जसि उन्होंने स्वयं प्रज्वलति कयिा है। जहाँ तक हमारी बात है, हम प्रभु द्वारा प्रेरतिों और भवष्यिद्वक्ताओं और हमारे ईश्वर-धारी पतिाओं की नींव पर नयिुक्त कएि गए हैं, हम आने वाले समय के लएि दृढ़ता से जमे रहेंगे, और मानवीय धमकयिों से तनकि भी नहीं डगमगाएँगे।

17. मोक्ष प्राप्त करने के लएि, प्रेरतिों की आज्ञा के अनुसार, हमारे लएि जो कुछ कयिा जाना बाकी है, वह है हमारे सच्चे वश्विास की नींव पर सोने, चाँदी और कीमती पत्थरों से नर्िमाण करना, न क लिकड़ी, पुआल और भूसे से (1 कुरन्थियिों 3:12) – जो आग का ईंधन है। जो कोई इस प्रकार स्थरि है, उसे प्रभु में अपने वश्विास से कुछ भी हलिा नहीं सकता। जैसा क लिखिा है, *'मसीह ने हमें व्यवस्था के शाप से छुड़ा लयिा है, क्योंक वह हमारे लएि शाप बन गए'* (गलातयिों 3:13)। अत; हम स्वयं को फरि से शाप के अधीन न आने दें। मसीह ने हमें अपने लहू से, पुनर्जन्म के स्नान और पवत्रि आत्मा के नवीनीकरण के द्वारा शुद्ध कयिा है; अतःहम कसिी भी प्रकार से उन लज्जास्पद कर्मों पर वापस लौटने की अनुमत सि्वयं को न दें, जनिसे हम मुंह मोड़ चुके हैं। यद ितथाप ि हम ऐसा नहीं करते हैं, तो, उनके प्रकट होने के दनि, वे हमसे कह सकते हैं: 'मैंने तुम्हें अपनी स्तंभ बनाया, फरि भी तुमने मेरे अंगों को एक वेश्या के अंगों में बदल दयिा है; मैंने तुम्हें तुम्हारे पापों से धोया है, ताक तिुम *"दाग या दोष, या इस तरह की कोई भी बात से रहति" हो सको'* (इफसियिों 5:27)—फरि भी तुमने एक बार फरि अपने आपको वासनाओं की बदबू से घेर लयिा है और पापों की गंदगी से खुद को अशुद्ध कर लयिा है; मैंने पवत्रि आत्मा के द्वारा तुम्हें ज्ञान के प्रकाश से भरपूर कयिा है, फरि भी तुमने अपने मन को उन्मत्त वासनाओं का नवािस-स्थान बना लयिा है; मैंने तुम्हें अनंत आशीर्वादों का सह-वारसि बनाया है, फरि भी तुमने मेरे वरिोधी के सह-वारसि होने को चुना है: *'मेरे पास से चले जाओ, हे श्रापति लोग, उस अनंत आग में जो शैतान और उसके स्वर्गदूतों के लएि तैयार की गई है'* (मत्ती 25:41)। परन्तु हम कभी ऐसा भयानक शब्द न सुनें और न ही ऐसा असहनीय क्रोध अनुभव करें। तो फरि हम पवत्रिता, आँसुओं और एक पश्चात्तापी हृदय को प्राप्त करने के लएि अपनी पूरी लगन से क्यों प्रयास करते हैं, बनिा कसिी शकिायत के अपने कर्तव्यों को पूरा करते हुए, दनि-रात परमेश्वर के काम में पहरा क्यों देते हैं, कहीं ऐसा न हो क दिुश्मन चुपके से आकर एक लापरवाह आत्मा को नगिल जाए? काश क हिम पहरा देते समय भी साँप की चालाकयिों से बच सकें! लेकनि हम झपकी लेते हुए यह कैसे हासलि कर सकते हैं? लेकनि कोई कहेगा: हमारी प्रकृत किमजोर है और पाप की ओर झुकती है। मैं इससे भी सहमत हूँ, क्योंक मिैं स्वयं भी उसी स्वभाव का हूँ। लेकनि मैं यह पूछता हूँ: जैसे ही ऐसा कुछ होता है, तुरंत पश्चाताप, स्वीकारोक्त, िहृदय का खेद, और अपनी पूर्व की अच्छी अवस्था को बहाल करने की तीव्र इच्छा होनी चाहएि। दनि-प्रतदिनि इस प्रकार आचरण करने से, हम वह प्राप्त कर लेंगे जसिकी हम खोज कर रहे हैं; और उसे प्राप्त करने

के बाद, हमें उस प्रतीक्षित आह्वान को सुनने के योग्य समझा जाएगा: *'आओ'*, और हम स्वर्ग के राज्य के वारिस बन जाएँगे।

२५६. हमें उत्सव के दिनों को आध्यात्मिक शांति के साथ मनाना चाहिए

२५६. १) हमें उत्सव के दिनों को आध्यात्मिक शांति के साथ मनाना चाहिए। – २) उत्सव के दिन बीत जाते हैं, और पूरा जीवन बीत जाएगा: हमें यह न भूलें, और हमें हमेशा अपने प्रस्थान के लिए तैयार रहें। – ३) अपने जीवन को तदनुसार व्यवस्थित करके, हमारे बाहरी आचरण में और, उससे भी अधिक, हमारे आंतरिक स्वरूप में। – ४) और हमें इसके लिए आवश्यक किसी भी चीज़ से विचलित न हों। [4, 37]

18. पर्व बीत गए हैं, क्रिसमस और एपिफिनी दोनों, जिन्हें हम अपने प्रभु परमेश्वर के सम्मान में मनाने के योग्य समझे गए, यहाँ तक कि अपनी वर्तमान परिस्थितियों में भी। हालाँकि, हम इस पर शोक नहीं करते, बल्कि इस बात पर बहुत आनन्दित होते हैं कि, उस के लिए जिसने *'अपने आपको नीचा किया और दास का रूप धारण किया'* (फिलि. 2:7), हम निर्वासन सहते हैं और एक परदेस में रहते हैं। और उत्सव मनाने का और क्या अर्थ है, यदि यह नहीं कि सांसारिक चीज़ों से अलग होकर और संसार तथा सांसारिकता से उदासीन होकर ईश्वर से जुड़ा जाए? क्योंकि हम पृथ्वी के रेगिस्तानों, पहाड़ों और घाटियों में रहने वालों के बारे में क्या कहेंगे? 'क्या वे उत्सव नहीं मनाते?' 'निश्चय ही, वे अपनी मौन में दूसरों से भी बेहतर उत्सव मनाते हैं—उन लोगों से कहीं अधिक उत्कृष्ट और अधिक धार्मिक, जिन्हें अपने पर्व के दिनों को धूमधाम, भोज-मेलों और मद्यपान में बिताने का अवसर मिलता है, यह भूलकर कि वे स्वयं को धोखा दे रहे हैं—जिन्हें धर्मग्रंथ इसलिए निन्दित करता है, यह कहते हुए: *'तुमने पृथ्वी पर भोज किया और मस्ती की; तुमने अपने दिलों को जैसे वध के दिन के लिए मोटा किया है'* (याकूब 5:5): क्योंकि ऐसे लोग वध के लिए तैयार सूअरों के समान हैं; *'जिनका देवता उनका पेट है, और जिनका गौरव उनकी लज्जा में है'* (फिलिप्पियों 3:19); इसलिए हम अपने पर्वों का उत्सव बेहतर ढंग से मनाते हैं यदि हम स्वयं पर संयम रखें और अपने बुलावे तथा मसीह की गवाही के योग्य जीवन जिएँ।

19. तथापि, इस तथ्य को न भूलें कि हमारे दिन घोड़ों पर सवार की भाँति उड़ जाते हैं, और समय, एक घूमते हुए चक्के की तरह, यह जन्म के द्वारा कुछ को जीवन में लाता है, और मृत्यु के द्वारा दूसरों को उससे ले जाता है—हालाँकि, एक ही उम्र में या एक ही समय पर नहीं, बल्कि कभी-कभी बड़ों को जवानों से पहले, और जवानों को बड़ों से पहले; पिता अपने बच्चों से पहले, और बच्चे अपने पिता से पहले; और कभी-कभी हर उम्र के कई लोग एक साथ। इस प्रकार ईश्वर ने यह उचित समझा है कि, क्योंकि हमारी मृत्यु का समय अज्ञात है, हमें हर क्षण अपने प्रस्थान के लिए तैयार रहना चाहिए। अतः हम संयमी और चौकस रहें, कहीं ऐसा न हो कि मृत्यु अचानक आकर हमें अपरिचित पाए; क्योंकि तब हम पश्चाताप करेंगे, परन्तु व्यर्थ और निष्फल। क्या आप नहीं जानते कि कुछ दिन पहले मैं अचानक बीमार पड़ गया था? और मेरी आत्मा लगभग नरक में उतर गई थी? और यद्यपि मैं अब ठीक हो गया हूँ, यह निश्चित रूप से हमेशा के लिए नहीं है। अब जब मैं बूढ़ा हो रहा हूँ, तो निश्चित रूप से मेरी भी बारी आएगी, कि मैं अंततः आपको छोड़कर अपने पूर्वजों और भाइयों के पास चला जाऊँ: बस प्रार्थना करें कि यह तब हो जब मैं मसीह में पूरी तरह से सचेत होऊँ, और मेरा विवेक मेरे जीवन में हुई सभी बातों से पूरी तरह से निर्मल हो। उस समय, अपनी बीमारी के कष्टों से पीड़ित होकर, मैंने मनन किया और अपने आप से कहा: यदि यह यातना ऐसी है, तो आने वाले युग में यह कैसी होगी? यदि हम इन तीन या चार दिनों के कष्टों को सहन नहीं कर सकते, तो हम अनंत यातनाओं को कैसे सहेंगे?

२०. मैं आपको भी सलाह देता हूँ कि आप इस पर मनन करें, और, इसे हमेशा ध्यान में रखते हुए, अपने बाहरी आचरण में सभी श्रद्धा और विनम्रता, लगन और धैर्य के साथ सावधानी से जिएँ; और अपने आंतरिक जीवन में, – अपने हृदयों की पूरी सावधानी के साथ, महान, चालाक और दुष्ट साँप को हमसे फुसफुसाने या हम पर हमला करने न देते हुए, और परमेश्वर के मंदिर को वासनाओं का निवास-स्थान न बनाते हुए, बल्कि हर तरह से प्रभु के सामने स्वयं को शुद्ध प्रस्तुत करने का प्रयास करते हुए, और यहाँ तक कि यहाँ, आने वाले युग से पहले, एक धन्य जीवन जीना शुरू करते हुए। क्योंकि एक शुद्ध हृदय के साथ परमेश्वर के साथ शांति में जीने से अधिक धन्य और क्या हो सकता है? फिर भी यह तब तक असंभव है जब तक कि इसके पहले परिश्रम, प्रार्थना, आँसू, पश्चाताप, उत्साह और आत्मा का जोश न हो; यद्यपि इनके साथ भी, शत्रु हम पर हमला करना और हमारे भीतर एक युद्ध भड़काना बंद नहीं करता—जो अप्रकाशित, अप्रत्याशित और अदृश्य है। वह ऐसा इसलिए करता है क्योंकि वह देखता है कि हम स्वर्ग में आरोहण करने और वहाँ अकथनीय आनंद के योग्य बनने का प्रयास करते हैं। – लेकिन जैसा कि वास्तव में यह सच है कि *'इन वर्तमान समय के दुख उस महिमा के योग्य नहीं हैं जो हम में प्रकट होने वाली है'* (रोमियों 8:18); आओ हम भी अपनी पूरी ताकत, अपने विश्वास और आशा की सारी शक्ति के साथ इस युद्ध को इस तरह लड़ें कि शैतान की

सभी चालों को वफिल कर सकें, और उन लोगों का अनुकरण करें जो मैदान में प्रतस्पिर्धा करते हैं, जो दौड़ में इतनी प्रचंड मेहनत करते हैं कि दौड़ के अंत में वे हांफ जाते हैं और बेहोश होने की कगार पर होते हैं। लेकिन उनकी दौड़ केवल एक घंटे की होती है और उनका मुकुट नश्वर है; जबकि हमारा संघर्ष जीवन भर का है, इसीलिए हमारा मुकुट अक्षय है, और हमारे अन्य सभी पुरस्कार शाश्वत हैं—काश कि हमें ये हमारे प्रभु यीशु मसीह की कृपा और प्रेम द्वारा प्राप्त हों।

२५७. मनुष्य को पवित्र पिताओं का अनुकरण करना चाहिए; परन्तु उन लोगों का अनुकरण करो जो तुम्हारे समान जीवन व्यतीत करते हैं: अन्यथा, इससे हानि होगी।

257. 1) हमें पवित्र पितरों का अनुकरण करना चाहिए; लेकिन उन लोगों का अनुकरण करें जो आपके जीवन-पथ को साझा करते हैं: अन्यथा, हानि होगी। – 2) यहाँ कुछ उदाहरण दिए गए हैं… जिनका हवाला दिया गया है। – 3) जो आपका नहीं है, उसे न अपनाएँ: क्या आप एक किनोवाइट हैं? – किनोवाइट्स का अनुकरण करें… विशिष्ट व्यक्तियों का संकेत दिया गया है। – 4) रेगिस्तान संन्यासियों के लिए है; लेकिन आपको सामुदायिक जीवन की कठिनाइयों को सहना होगा, ठीक वैसे ही जैसे मैं सहता हूँ। [4, 38]

21. जब हम अपने पूर्वजों के जीवन को पढ़ते और उन पर मनन करते हैं, तो हम उनके प्रति आश्चर्य से भर जाते हैं। और यह सही भी है। क्योंकि सचमुच हमारे पूर्वज अद्भुत हैं, क्योंकि वे इस देह में रहते हुए भी, पूर्ण वैराग्य के साथ स्वर्गदूतों के समान, प्रभु को प्रसन्न करते थे। लेकिन हमें केवल उन पर आश्चर्य ही नहीं करना चाहिए, बल्कि यथासंभव उनका अनुकरण भी करना चाहिए; और विवेक के साथ उनका अनुकरण करना चाहिए, अर्थात्, एक समुदायवासी भिक्षु का अनुकरण एक समुदायवासी भिक्षु करे, एक मौन-निवासी का अनुकरण एक मौन-निवासी करे, एक तपस्वी का अनुकरण एक तपस्वी करे, और एक मठाधीश का अनुकरण एक मठाधीश करे। क्योंकि हमारे अपने जीवन से भिन्न प्रकार के जीवन का अनुकरण करने में क्या लाभ है, बजाय कि हम उसी प्रकार के जीवन का अनुकरण करें? इससे न केवल हमें कोई लाभ नहीं होगा, बल्कि हमें स्पष्ट हानि भी होगी। कई लोगों ने, ईश्वर के प्रति प्रेम के कारण, अपने जीवन-मार्ग को त्यागकर दूसरे पर दृष्टि गड़ाई, और इस प्रकार वे अपना मार्ग खो बैठे और जिस मार्ग को वे चाहते थे, उसे प्राप्त करने में भी असफल रहे।

22. इसके प्रमाण के रूप में, इस मामले पर प्राचीन वृत्तांतों को एक तरफ रखकर, आइए हम याद करें कि हमारे अपने लोगों के बीच क्या हुआ है। तथाकथित भजनकार को स्तंभ पर चढ़ने से क्या लाभ हुआ? क्या उसे उन्माद की स्थिति में उससे नीचे नहीं उतारा गया था? – और अब वह न तो किनोविट है और न ही स्तंभ-तपस्वी। उसी स्तंभ से एक सप्रिथ नामक व्यक्ति को क्या लाभ हुआ? क्या वह ऑर्थोडॉक्सी (सही आस्था) के लिए उससे नहीं उतरा, केवल बाद में विधर्म में पड़कर एक गद्दार नहीं बन गया, और क्या वह अब उत्पीड़क लोगों में सबसे निर्दयी नहीं है? – लेकिन आइए हम अपने ही भाईचारे को भी देखें: क्या हमारा पीटर, जो एक नौसिखिया के रूप में कई साल बिता चुका था और उस जीवन में उत्कृष्ट रहा था, भक्ति से प्रेरित होकर रेगिस्तान में नहीं गया? परन्तु वह वहाँ से कैसे लौटा, और उसका क्या हुआ, यह आप जानते हैं, क्योंकि आपने इसे अपनी आँखों से देखा है। इसी प्रकार, अम्फिलोखियस, जो आज भी जीवित है—क्या वह पहले एक स्तंभ-तपस्वी नहीं बना, फिर एक संन्यासी, और अब वह इधर-उधर लड़खड़ाता हुआ अपने लिए लज्जा लाता है?

23. यह सब शैतान के प्रलोभन से हुआ है और होता भी रहता है, जो अपना नहीं होने की चीज़ की लालसा जगाता है, ताकि मनुष्य को अपना होने वाला भी खोना पड़े। इसी कारण प्रेरित पुकार कर कहते हैं: *'हे भाइयों, जो किसि अवस्था में बुलाए गए थे, उसी में परमेश्वर के सामने स्थिर रहो'* (1 कुरिन्थियों 7:24)। क्या आपको एक मौन भिक्षु बनने के लिए बुलाया गया है? – आपको सामुदायिक जीवन के बारे में सोचने की आवश्यकता नहीं है; क्या आपको एक काइनोवाइट बनने के लिए बुलाया गया है? आपको मौन के बारे में आश्चर्य करने की आवश्यकता नहीं है। प्रत्येक अपनी-अपनी स्थिति में प्रभु को प्रसन्न करे। प्रत्येक अपनी-अपनी स्थिति में ऐसे उदाहरण रखता है जिनके द्वारा उसे अपना जीवन व्यवस्थित करना चाहिए। भिक्षु समुदाय में जो लोग चमक उठे हैं, उनके उदाहरण का पालन करें। वे कौन हैं? केवल पुराने संत ही नहीं, बल्कि वे भी जो हमारे भाईचारे में हमारे बीच रहे हैं और अभी भी हैं। धन्य डोमिटियन का अनुकरण करने का प्रयास करें, जिनका विश्वास अग्निमय है। धन्य ज़ोसिमस का अनुकरण करने का प्रयास करें, जिनकी आज्ञाकारिता सच्ची है। धन्य मार्क का अनुकरण करने का प्रयास करें, जिन्होंने अपमान और तिरस्कार को एक उत्कृष्ट सम्मान मानकर, अपने संकल्प को अटूट बनाए रखना जाना था। टेरेन्टियस को अपना आदर्श बनाओ, जिसने कई वर्षों तक रसोई में बीमारों की सेवा की, और कभी भी निराशा को नहीं अपनाया और न ही अपने श्रम से पलायन किया; वास्तव में, जब उसे दूसरे कार्य में स्थानांतरित करने की पेशकश की गई, तो भी उसने इनकार

कर दिया, और अपने सामान्य कार्य में कठिनाइयों को सहन करना पसंद किया। दूसरे भाइयों से भी प्रेरणा लो, जिनमें से कई ने अपने कर्तव्यों में खुद को विशिष्ट बनाया, जिनके नाम जीवन की पुस्तक में दर्ज हैं। आपको इन्हीं का अनुकरण करना चाहिए, न कि किसी संन्यासी का।

२४. मरुभूमि और पहाड़ अब्बा इओआनसियिस और उनके जैसे लोगों के लिए हों; और तुम आज्ञाकारिता और अपनी इच्छा को वश में रखने के प्रेम करो। वह इस समय सतावट नहीं झेल रहे हैं, परन्तु तुम सच्चाई के लिए सताए जा रहे हो। वह कैद नहीं है, जबकि आप प्रभु के लिए जेल में हैं। उसे पीटा नहीं जाता, जबकि आपने मसीह के लिए प्रहार सहन किए हैं। आपने जो कुछ भी सहन किया है, वह रेगिस्तान में शांतिपूर्ण जीवन से कहीं अधिक महान है। – मैं भी, अपनी विनम्रता में, अपने बारे में कुछ शब्द कहूँगा। – चूँकि मुझे अयोग्य होते हुए भी आपके मुखिया के पद पर स्थापित किया गया है, तो क्या मुझे अपना पद त्याग देना चाहिए और मरुभूमि में चला जाना चाहिए, या कोई और जीवन-पथ अपना लेना चाहिए, जो भी मेरे सामने आए? परन्तु इस प्रकार का आचरण करना न तो किसी अगुवे के लिए और न ही किसी चरवाहे के लिए उचित है, जिसे अपनी भेड़ों के लिए अपनी जान देनी पड़ती है। और आपके लिए भी यह उचित नहीं है कि आप जो अभी कर रहे हैं, उसके अलावा कुछ भी सोचें या करें। क्योंकि इससे आने वाले जीवन की बाँझपन और अव्यवस्था उत्पन्न होती है, जबकि मठवासी जीवन की स्थापित व्यवस्था के भीतर धैर्यपूर्वक बने रहने से हर आध्यात्मिक फलदायता आती है। अत; प्रत्येक व्यक्ति, जैसा परमेश्वर ने उस पर दया दिखाई है और जैसा प्रभु ने उसे बुलाया है, उसी मार्ग पर चले, उसी प्रकार जिए, और उसी प्रकार प्रभु को प्रसन्न करे, ताकि वह सुनने के योग्य समझा जाए: *'अच्छा, हे भले और विश्वासयोग्य दास, तू थोड़ी-सी बातों में विश्वासयोग्य रहा, मैं तुझे बहुत-सी बातों पर रखूँगा; अपने प्रभु के आनन्द में प्रवेश कर'* (मत्ती 25:21)।

258. एक भिक्षु क्या है, यह समझाने के बाद, वह आगे बताते हैं कि आज के भिक्षु अपने पूर्वजों से किन-किन तरीकों से पीछे रह गए हैं

258. 1) एक भिक्षु क्या होता है, यह समझाने के बाद, – 2) वह यह दर्शाता है कि वर्तमान भिक्षु अपने पूर्वजों से किन-किन तरीकों से पीछे रह गए हैं, – 3) वह हमें याद दिलाता है कि यह परमेश्वर के वचन के विरुद्ध है, और – 4) इस मामले में कोई स्वयं को सही तरीके से कैसे आचरण कर सकता है, – इस उद्देश्य के लिए प्रोत्साहन के साथ। [4, 39]

25. हमारे जीवन से अधिक धन्य कुछ भी नहीं है, हमारे जीवन-मार्ग से अधिक उत्कृष्ट कुछ भी नहीं है; बशर्ते कि हम वैसे ही जिएँ जैसे हमें बुलाया गया है, और हमारा जीवन-मार्ग हमारे नाम के अनुरूप हो। एक भिक्षु वह है जो केवल ईश्वर की ओर देखता है, केवल ईश्वर की कामना करता है, केवल ईश्वर से लगा रहता है, केवल ईश्वर को प्रसन्न करने का प्रयास करता है, ईश्वर के साथ शांति में रहता है, और दूसरों के बीच शांति का स्रोत है। लेकिन जिस व्यक्ति में ये गुण नहीं हैं, और इसके बजाय वह उत्साह, ईर्ष्या और विभाजन को पालता है, वह *'अंधा और अक्खड़'* (अपनी आँखें बंद कर लेने वाला), *'अपने पूर्व पापों की शुद्धि को भूल जाने वाला'* है, जैसा कि लिखा है (2 पतरस 1:9)।

26. तुम जो दोषी हो, वे अच्छी तरह जानते हैं कि मैंने यह क्यों कहा है। और मैं यह कहता हूँ कि मैंने यह तुम्हें फिर से दुखी करने के लिए नहीं किया, बल्कि तुम्हें इसलिये मज़बूत करने के लिए किया है, ताकि भविष्य में तुम उन्हीं गलतियों में न पड़ो। हमारे पूर्वजों के दिनों में, बदनामी को बर्दाश्त नहीं किया जाता था; लेकिन जो कोई भी बदनामी सुनता था, वह या तो अपने कान बंद कर लेता था या बदनामी का उपयोग भलाई के लिए करता था। परन्तु आजकल, हम निन्दक की बातें बड़ी सहजता से सुनते हैं और उसे इतनी उत्सुकता से सुनते हैं, जितनी हमने कभी चर्च में पढ़ी जाने वाली पवित्र पुस्तकों के लिए नहीं दिखाई। हमारे पूर्वजों के दिनों में, किसी भी बात को अश्लील तरीके से नहीं कहा जाता था, बल्कि हमेशा शांत और शिष्टता से कहा जाता था; परन्तु आजकल, लोग क्रोध में, चिल्लाते हुए और भद्दे चेहरे बनाकर बात करते हैं: इससे अधिक लज्जास्पद और क्या हो सकता है? हमारे पूर्वजों के दिनों में कोई बड़बड़ाहट नहीं होती थी; बल्कि, हर कोई जो कुछ भी दिया जाता था, उसे कृतज्ञता से स्वीकार करता था, और इस प्रकार कड़वा मीठा और अप्रिय सुखद हो जाता था; लेकिन अब हम बड़बड़ाते हैं, इस-उस की निंदा करते हैं, न केवल अपने आप से बल्कि सभी के सामने, ताकि और अधिक बड़बड़ाने वाले पैदा हों और ईश्वर को और भी अधिक दुख पहुँचाया जा सके।

27. हे मेरे भाइयो, ऐसा न हो, ऐसा न हो। यह संन्यासी-सा व्यवहार नहीं है, और न ही यह कोई छोटा पाप है; यह निन्दा और क्लेश का पाप है: क्योंकि लिखा है, *'क्लेश करने वाले परमेश्वर के राज्य के वारिस नहीं होंगे'* (1 कुरिन्थियों 6:9)। परन्तु बड़बड़ाना भी कोई छोटा पाप नहीं है – जैसा लिखा है: *'जैसा कि उन में से कुछ ने बड़बड़ाया, और नाश करने वाले से नाश हो गए, वैसे तुम बड़बड़ाओ नहीं'* (मरुभूमि में इस्राएलियों ने) (1 कुरिन्थियों 10:10)। और अपमानजनक भाषा कोई छोटी बुराई नहीं है; क्योंकि लिखा है: *'तुम्हारे मुँह से कोई भ्रष्ट करने वाली बात न निकले,*

पर केवल वही जो संवारने के लिए हो, जैसा कि अवसर हो, ताकि जो सुनते हैं उन्हें अनुग्रह मिले; और परमेश्वर के पवित्र आत्मा को दुखी न करो, जिसके द्वारा तुम छुटकारा के दिन के लिए मुहर किए गए हो' (इफसियों 4:29-30)। क्या आप नहीं देखते कि प्रेरित हमें किस बात से आगाह करते हैं? – कि व्यर्थ बातें करके, हम पवित्र आत्मा को क्रोधित करते हैं। या क्या हमें यह डर नहीं है कि न्याय के दिन हमें हर व्यर्थ बात का हिसाब देना होगा, जैसा कि प्रभु स्वयं ने कहा?

28. तो फिर, हम इसे हृदय पर क्यों नहीं लेते? हम अपने ऊपर आने वाली घटनाओं के सामने अच्छी स्थिति में रहने के लिए स्वयं को क्यों नहीं तैयार करते? क्या आपको डाँटा गया है? उस कष्ट को उदारतापूर्वक सहें, अपनी पीड़ा को अपने भीतर ही दबाएँ – जैसा कि संत दाऊद ने किया था: वे कहते हैं, *'मैं लज्जित हुआ,* और *मैंने कुछ नहीं कहा'* (भजन संहिता 76:5)। इस प्रकार अपमान बीत जाएगा, लेकिन आपका सद्गुण हमेशा के लिए बना रहेगा। क्या परोसा गया भोजन आपको पसंद नहीं है? – जो परोसा गया है, उसके लिए धन्यवाद दें; क्योंकि जिसे आप अस्वास्थ्यकर मानकर निंदा करते हैं, उसे तो दूसरे चखने के लिए भी प्रसन्न होंगे। इसके अलावा, यदि हम कभी ऐसी चीजों का सामना ही न करें, तो हम अपनी आज्ञाकारिता का प्रमाण कैसे देंगे? उसमें घमंड करने जैसा क्या है? क्योंकि न तो उपवास से, न निराहार से, न खुले में सोने से, और न ही किसी अन्य करतब से हम जीवन के मार्ग में अपनी इच्छा को वश में करने जितनी कुशलता साबित कर सकते हैं—यह शहादत, जो संन्यासी जीवन से अविभाज्य है। *'इसलिए, सभी द्वेष, सभी कपट, पाखंड, ईर्ष्या और सभी बदनामी को त्याग दो'*, जैसा कि संत प्रेरित पतरस ने आज्ञा दी, *'नवजात शिशुओं के समान, शुद्ध आध्यात्मिक दूध से प्रेम करें, ताकि उसके द्वारा हम उद्धार तक बढ़ सकें'* (1 पतरस 2:1–3), यदि हमने यह चखा है कि प्रभु मसीह भले हैं, यदि हम अनन्त जीवन की इच्छा रखते हैं, यदि हम अच्छी सलाह मानने से इनकार नहीं करते, यदि हम थकते या हताश नहीं होते, बल्कि हमेशा अपने पापों और कमियों से मुंह मोड़ते हैं। क्योंकि इस प्रकार सुसज्जित होकर, हम निस्संदेह मसीह यीशु में अनंत जीवन के योग्य ठहराए जाएँगे।

259. अवतार के माध्यम से हमें जो कुछ प्रदान किया गया है, उसे ध्यान में रखते हुए, आइए हम उसकी आत्मा के अनुसार एक नया जीवन जिएँ, और जीवन के पुराने तरीके से दूर भागें

२५९. 1) अवतार के माध्यम से हमें जो प्रदान किया गया है, उसे ध्यान में रखते हुए, – 2) आइए हम उसके आत्मा के अनुसार एक नवीनीकृत जीवन जिएं, – 3) पुरानी प्रकृति से भागते हुए, अर्थात् वासना और ईर्ष्या के आनंद से, जिससे सभी बुराइयाँ उत्पन्न होती हैं, – और – 4) हर भलाई के लिए उत्साही, उसे प्रेम करते हुए और उसके लिए शोक करते हुए। [4, 40]

29. जैसे प्यासे को पीने और भूखे को खाने की लालसा होती है, वैसे ही हमें परमेश्वर का वचन सुनने की लालसा करनी चाहिए। क्योंकि इसे सुनकर, हम बहुत कुछ प्राप्त करते हैं: लापरवाह होने से हम उत्साही बन जाते हैं, और उत्साही होने से हम और भी अधिक उत्साही बन जाते हैं। तो, आज हम जो वचन सुनते हैं वह क्या है? – *यह* कहता है, *'क्योंकि परमेश्वर ने जगत से ऐसा प्रेम किया कि उसने अपना एकलौता पुत्र दे दिया, ताकि जो कोई उस पर विश्वास करे वह नाश न हो, बल्कि अनंत जीवन पाए'* (यूहन्ना 3:16)। और केवल *'दिया'* ही नहीं, बल्कि *'मृत्यु तक, क्रूस पर मृत्यु तक'* (फिलिप्पियों 2:8)। ऐसा कैसे? आदम की अवज्ञा के द्वारा हम शैतान के दास बन गए थे, मृत्यु के अधीन थे, पाप में बेच दिए गए थे, और क्षय के लिए बँधे हुए थे। परमेश्वर का एकलौता पुत्र आए, और उन्होंने स्वयं को सभी के लिए एक फिरौती के रूप में दे दिया, और न केवल हमें मृत्यु की शक्ति से मुक्त किया, बल्कि, अपने लहू से हमारे पापों को धोकर (प्रकाशितवाक्य 1:5), हमें अपने राज्य का वारिस बना दिया, जैसा कि लिखा है। क्या आप उनके अटूट और सामर्थी प्रेम को देखते हैं? क्या आप मानवजाति के लिए उनके प्रेम की असीम दया को देखते हैं? उनकी दयाएँ कितनी अगम हैं, और उनकी उदारताएँ कितनी अक्षय हैं, जिन्हें उन्होंने हमारे उद्धारकर्ता यीशु मसीह के द्वारा हम पर भरपूर ढार दिया है!

30. तो, हम दीन आत्माएँ इस पर क्या कहें, और क्या सोचें? क्या हम पाप की ओर लौटें? क्या हम दासता के लिए तरसें? क्या हम अपमान, भ्रष्टाचार और दण्ड को चुनें? – ईश्वर न करे। – *'क्योंकि यदि हम पाप के प्रति मरे हैं, तो हम उसमें कैसे जीवित रह सकते हैं?' या क्या आप यह नहीं जानते कि हम सब जितने मसीह यीशु में बपतिस्मा ले चुके हैं, हम सब उसकी मृत्यु में बपतिस्मा ले चुके हैं? क्योंकि बपतिस्मा के द्वारा हम उसकी मृत्यु में उसके साथ दफ़नाए गए, ताकि जैसे पिता की महिमा से मसीह मरे हुओं में से जी उठा, वैसे ही हम भी नए जीवन में चलें'* (रोमियों 6:2-4)। – अतः हे भातरो, हम इस नए जीवन में चलें, जैसे हमने स्कीमा ग्रहण करते समय फिर से प्रतिज्ञा की थी; हम *'धर्म और भक्ति में जिएँ, जैसा कि संतों के योग्य है'* (इफसियों 5:3), शांति और सद्भाव में, ईमानदारी, कुलीनता और

श्रद्धा में, पवित्रता और आत्म-नियंत्रण में, *'उन इच्छाओं से* बहकते हुए नहीं *जो हमारे अज्ञान में हममें थीं'* (1 पतरस 1:14), परन्तु अपने विश्वास की चट्टान पर स्थिर होकर, अपनी पहिले की वासनाओं से आग से भागते हुए।

31. नवीनीकरण यही है! तो, पतन क्या है? – वह पापी प्रलोभन जिसके द्वारा हमारे पूर्वज आदम फंस गए, स्वर्ग से निर्वासित हो गए, और हमारे वर्तमान, अत्यंत दुखद जीवन के बोझ तले दब गए; – ईर्ष्या, जिसके कारण, अपने अहंकार में, काईन ने अपने भाई एबेल की हत्या कर दी क्योंकि उसकी बलिदानों को प्राथमिकता दी गई थी, जिसके बाद उसने अपना पूरा जीवन कराहते और कांपते हुए बिताया। इन दो आसक्तियों से, अनगिनित बुराइयाँ संसार में प्रवेश कर गईं: यहीं से महाप्रलय आया, जिसने पृथ्वी पर सभी जीवित प्राणियों को नष्ट कर दिया; यहीं से सदोम और गमोरा का कड़वा भाग्य आया, जिन्हें उनकी दुष्टता की चेतावनी के रूप में आग और गंधक से राख में बदल दिया गया। क्या तुम देखते हो कि पाप और नेत्रों की लालसा, सांसारिक गर्व के साथ मिलकर, क्या कर डाला है?

32. परन्तु जैसा कि पहले ही कहा जा चुका है, परमेश्वर की कृपा से हम बुलाए गए हैं, स्वतंत्रता प्राप्त की है, और पुत्रत्व की स्थिति तक उठाए गए हैं। अतःहम उस स्वतंत्रता में दृढ़ रहें, जिसमें मसीह ने हमें स्वतंत्र किया है, और उस महिमा में जिसमें उसने हमें गौरवान्वित किया है; हम स्वयं को व्यर्थ की सभी बातों से दूर रखकर सुरक्षित रखें, और मसीह के लिए किसी भी बात को महत्वहीन समझें, – अपमान को सम्मान, दुख को आनंद, घावों को हर्ष, उत्पीड़न को परमानंद, और मृत्यु को जीवन मानते हुए, ठीक वैसे ही जैसे हमारे पवित्र पिता और भाइयों ने, जिनकी आज स्मृति मनाई जा रही है, माना था—जिनके नाम जीवन की पुस्तक में लिखे हैं— । इस प्रकार जीते हुए, हम भी *'दुनिया में प्रकाश की नाईं चमकाएंगे, जीवन के वचन को थामे हुए'* (फिलि. 2:15), और आने वाले युग में हम परमेश्वर के राज्य के वारिस होने के योग्य ठहराए जाएँगे।

260. यह दिखाने के बाद कि पवित्र पुरखों के जीवन पर मनन हमारे भीतर की सभी अच्छाइयों को कैसे पुनर्जीवित करता है और हमें सभी बुराइयों से दूर करता है, वह सभी को, उनकी अपनी पुकार के अनुसार, उनका अनुकरण करने के लिए आमंत्रित करते हैं

260. 1) यह दिखाने के बाद कि पवित्र पुरखों के जीवन पर मनन हमारे भीतर की सभी अच्छाइयों को कैसे पुनर्जीवित करता है और हमें सभी बुराइयों से अलग करता है, – 2) वह सभी को उनकी आज्ञाकारिता की प्रकृति के अनुसार उनका अनुकरण करने के लिए आमंत्रित करता है, – 3) हमारे बीच कोई अवज्ञा, आलस्य या शिकायत न हो। [4, 41]

1. इन दिनों, जब हमारे पवित्र पुरखों के जीवन पढ़े जाते हैं, तो यह व्यक्त करना असंभव है कि हमें इससे कितना बड़ा लाभ मिलता है, और हमें कितना आनंद होता है। क्योंकि मुझसे कहो, उनके अमर कार्यों, चमत्कारों और राक्षसों पर उनकी विजय पर मनन करने से अधिक मीठा और क्या हो सकता है! मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि पत्थर भी इस लाभ को महसूस करते हैं, न कि केवल तर्कशील मनुष्य ही। इससे, मानव मन प्रबुद्ध होता है, और देह की अंधकारमय कल्पनाओं को त्याग देता है; इससे, आत्मा प्रेरित होती है, और दिव्य प्रेम की ओर उड़ान भरती है। यह सचमुच कहा जा सकता है कि यह (यानी संतों का समागम) ईश्वर का एडेन का बगीचा है, जो सांसारिक पौधों से नहीं बल्कि विभिन्न प्रकार के आध्यात्मिक फलों से भरा और सुसज्जित है, जहाँ जीवन की श्वास सुगंधित है, जहाँ साँप घायल नहीं करता बल्कि घायल होता है, वह बाहर नहीं निकालता बल्कि बाहर निकाला जाता है, जैसा कि उचित है। और यदि परमेश्वर का राज्य हमारे भीतर है, तो मुझे लगता है कि कोई भी संतों को स्वर्ग का राज्य कहने में गलती नहीं करेगा, जिन पर सर्व-सत्पुरुष परमेश्वर, एक उदार राजा की तरह, अपने सेवकों पर उपहार प्रदान करते हैं। इस राज्य के बाद सांसारिक चीजें मेरे लिए क्या मायने रखती हैं? व्यर्थ की महिमा और एक नाशवान पेट का क्या? सोना-चाँदी, और बढ़िया वस्त्र, और हर दूसरी व्यर्थता क्या हैं? – और ये सभी चीजें तुलना के भी योग्य नहीं हैं, जैसे कोई प्रकाश की तुलना अंधकार से, जीवन की मृत्यु से, या सत्य की नींद से नहीं कर सकता।

2. यदि ऐसा सब कुछ है, तो हम *'अकथनीय और महिमामय आनंद के साथ आनंद मनाएँ'* (1 पतरस 1:8), कि हमें बेहतर हिस्सा प्राप्त हुआ है और हम स्वर्गीय कुलीनता से दमकते हुए, चुने हुए वंश के हो गए हैं; और हमें न केवल इस पर आनन्दित होना चाहिए, बल्कि अपने सामर्थ्य के अनुसार उनके गुणों का अनुकरण करने का भी प्रयास करना चाहिए, ताकि यह स्पष्ट हो जाए कि हम *केवल* दिखावटी *धर्मपरायणता का* नाम नहीं धारण करते, *'जिसका स्वरूप तो धर्म का है, परन्तु जिसकी शक्ति से इनकार करते हैं'* (2 तीमु. 3:5)। जैसे जब कोई औषधि विक्रेता के पास जाता है, तो प्रत्येक व्यक्ति अपनी बीमारी के अनुसार एक उपाय चुनता है; उसी तरह, हम, संतों का अच्छी तरह से अनुकरण करने की इच्छा रखते हुए, प्रत्येक व्यक्ति के जीवन-शैली के अनुकूल उदाहरण चुनेंगे और इस प्रकार उनके जीवन से अपने लिए लाभ उठाएंगे। मैं, जो अयोग्य हूँ, उन पर दृष्टि रखूँगा जिन्होंने योग्य रूप से अगुवाई की है; व्यवस्थापक

– उन पर जो विश्वासपूर्वक और बुद्धिमानी से प्रबंध करते थे; तहखानेदार – वे जिन्होंने तहखाने का प्रबंधन विवेकपूर्ण और निष्ठापूर्वक किया है। क्यारा, मेज़बान, रसोइया, भोजनशाला का परिचारक और अन्य सभी भी ऐसा ही सोचें, चाहे उन्हें कोई भी कर्तव्य सौंपा गया हो। यदि हम उन्हें देखने और उनका अनुकरण करने के इच्छुक हों, तो सभी के लिए अच्छे उदाहरण मिल सकते हैं।

३. किसी की भी अवज्ञा न हो। जैसे ही आपको बुलाया जाए, तुरंत उपस्थित हो जाइए। यह कहना, 'एक क्षण रुकिए, मैं आता हूँ'—विशेषकर व्यवस्थापक से—एक पाप है और निंदा के योग्य है। न ही किसी को अपना कर्तव्य निभाने से इनकार करना चाहिए, बल्कि उसे नम्रता से, मृत्यु तक भी, पूरा करना चाहिए: यही सच्ची मठवासियों की पूर्णता होगी। और कोई भी इस या उस चीज़ की कमी के लिए हमारे समुदाय की आलोचना करते हुए शिकायत न करे। ऐसा व्यक्ति उस दंड का भागी है जो उस जंगल में शिकायत करने वालों को दिया गया था, जिनका विनाश आश्चर्यजनक है (गिनती, अध्याय 16)। – लेकिन ये लोग कौन हैं? – अज्ञानी, अधीर, और मानसिक रूप से शिशु सदृश लोग – जो इतनी सारी सांत्वनाएँ प्राप्त करने की तो दूर, हवा में सांस लेने के भी अयोग्य हैं। – तथापि, हमारे सर्व-सद्गुणी ईश्वर अज्ञानी को समझ दें, बुद्धिमानों की बुद्धि में वृद्धि करें, और उन्हें सभी को हमारे प्रभु मसीह यीशु के द्वारा अपने राज्य में बचाएँ।

261. संसार की आत्मा के अनुसार जो कुछ भी चाहा जाता है वह क्षणिक है; केवल सदाचार ही शाश्वत आनंद लाता है

261. 1) जो कुछ भी संसार की आत्मा के अनुसार चाहा जाता है वह क्षणभंगुर है; केवल सदाचार ही शाश्वत रूप से धन्य है। – 2) यह यहाँ भी आनंद लाता है, जैसा कि हम चर्च में संतों के दैनिक स्मरणोत्सव से देखते हैं। – 3) तो वहाँ यह कैसा होगा? वहाँ संत सूर्य के समान होंगे, और मसीह के साथ रहेंगे। – 4) आइए हम इसके योग्य ठहराए जाने का प्रयत्न करें, और इसके विपरीत से बचें। [4, 42]

४. लोगों में, कुछ को धन में, दूसरों को शक्ति में, कुछ को सफलता में और दूसरों को सुख-भोग में आनंद मिलता है। फिर भी इनमें से कोई भी आनंद के योग्य नहीं है, क्योंकि कुछ भी हमेशा के लिए नहीं रहता, बल्कि इस वर्तमान युग के साथ नष्ट हो जाता है। हालाँकि, यहाँ भी, यह लंबे समय तक कई लोगों को सांत्वना नहीं देता; यह केवल एक सपने की तरह प्रकट होता है और तुरंत गायब हो जाता है। केवल सद्गुण ही आनंद का योग्य है, एक शाश्वत संपत्ति के रूप में जो अपने स्वामियों को धन्य बनाती है। – आइए याद करें कि युगों-युगों में कितने शासक और सांत्वना देने वाले हुए हैं – और उनमें से एक का भी स्मरण प्रशंसा के साथ नहीं किया जाता; जबकि सदाचारियों की महिमा अक्षय है।

5. और यह हमारे कार्यों से स्पष्ट है। कल हमने संत क्रिसोस्टोम को सम्मानित किया; आज हम सदा-स्मरणीय एफ्रेम को सम्मानित करते हैं; कल हम किसी अन्य संत को सम्मानित करेंगे। इस प्रकार, स्वर्गीय पिंडों की तरह, वे वर्ष भर चर्च के आकाश में एक के बाद एक चमकते हैं; उनकी स्मृति में, हमारे होंठ उनकी महिमा करने के लिए खुलते हैं, और जब हम ईश्वर में चलते हैं तो वे हमारे पगों को प्रकाशित करते हैं। अत; निस्संदेह यह पवित्र वचन सत्य है: *'क्योंकि जिन्हें उसने पहले से जान लिया, उन्हें पूर्वनिर्धारित भी किया कि वे उसके पुत्र के स्वरूप के समान हों, ताकि वह बहुत भाइयों में पहलौठा हो; और जिन्हें उसने पूर्वनिर्धारित किया, उन्हें उसने बुलाया भी; और जिन्हें उसने बुलाया, उन्हें उसने धर्मी भी ठहराया; और जिन्हें उसने धर्मी ठहराया, उन्हें उसने महिमा भी दी'* (रोमियों 8:29-30)। इसके विषय में हम क्या कहेंगे? क्या हम ऐसी बुलाहट और महिमा के सहभागी नहीं हैं? बेशक हम हैं। और हम दीनों के लिए, न तो क्रूस का जीवन अपरिचित है और न ही धन्यत्व का पुरस्कार; क्योंकि हमने एक अच्छी गवाही के पिछले श्रमों के अतिरिक्त, इसी घड़ी तक उत्पीड़न सहन किया है। और ओह, सदाचार की शक्ति कितनी अद्भुत है! और यह उन पर क्या-क्या प्रदान करती है जो इसका कड़ाई से पालन करते हैं!

6. लेकिन वह तो यहाँ है; तो आने वाले युग का क्या होगा? ओह, कौन उस आनंद और उस महिमा का वर्णन कर सकता है! प्रभु इसके बारे में कहते हैं: *'तब धर्मी सूर्य के समान चमकेंगे'* (मत्ती 13:43)। चूंकि वह स्वयं धर्म का सूर्य हैं, उन्होंने वादा किया है कि धर्मी, उनके साथ सामंजस्य में रहकर, सूर्य की तरह चमकेंगे, जैसा कि प्रेरित पुष्टि करते हैं: *'क्योंकि यदि हम उसके साथ दुख उठाते हैं, तो हम उसके साथ महिमामय भी होंगे'* (रोमियों 8:17)। और जैसे प्रभु स्वयं ने पिता से प्रार्थना की: *"हे पिता, जिन्हें तू ने मुझे दिया है, मैं चाहता हूँ कि जहाँ मैं हूँ, वहाँ वे भी मेरे साथ हों; ताकि वे मेरी महिमा देखें, जो तू ने मुझे दी है, क्योंकि तू ने संसार की रचना से पहले मुझ से प्रेम किया"* (यूहन्ना 17:24)। क्या आप देखते हैं कि हम कहाँ जाएँगे? – *'जहाँ मसीह परमेश्वर के दाहिने हाथ पर विराजमान हैं'* (कुलु. 3:1), जहाँ आनंद और हर्ष है, जहाँ स्वर्गदूतों का समूह वास करता है, और पहलौठों की कलीसिया है जिनके नाम स्वर्ग में लिखें हुए हैं – जहाँ हमारे भाई और पिता, जो हमारे ही दर्जे के हैं, उपस्थित हैं; वहाँ हम शीघ्र ही जाएँगे, और वहाँ *"हम उसके*

साथ आनन्दति होना आरम्भ करेंगे, जो अपने प्रभुत्व से युगों पर राज्य करता है, जैसा कि धन्य दाऊद गाते हैं (भजन संहिता 65:7)—न तो हजार या दस हजार वर्षों के युग पर, बल्कि एक ऐसे युग पर जो न तो बूढ़ा होता है और न ही समाप्त होता है।

7. और कौन इससे संतुष्ट है? – वह जो इतना उत्साही है कि वह दिन भर और हर घड़ी होश में और चौकस रहता है, कहीं उसका आत्मा सो न जाए: क्योंकि, जब हम इस प्रकार सुस्त पड़ते हैं, तो वासनाएँ, जानवरों की तरह, हम पर हमला करती हैं और आत्मा पर कब्जा कर लेती हैं। लेकिन जब तक हम चौकस रहते हैं और अपनी रखवाली करते हैं, तब तक शिकारी हमसे चोरी नहीं करेगा, और न ही साँप हमें उठा ले जाएगा। – इसलिए, हमें सतर्क रहना चाहिए और अपने मन में उपरोक्त बातों पर तथा इसके विपरीत पर भी विचार करना चाहिए – उन यातनाओं पर जो परमेश्वर की इच्छा का विरोध करने वालों को धमकी देती हैं: अविनाशी आग, घोर अंधकार, कभी न सोने वाला कीड़ा, और बाकी सब कुछ; ताकि, ऐसे विचारों से परिपूर्ण और आविष्ट होकर, हम शत्रु के फंदों से बचें, यहाँ से निर्दोष होकर गुज़रें, और स्वर्ग के राज्य को प्राप्त करें।

262. हमें रेगिस्तान से यहाँ तक की हमारी यात्रा के दौरान प्रभु से कई आशीर्वाद प्राप्त हुए हैं: हमें न केवल शब्दों में, बल्कि कर्मों में भी धन्यवाद देना चाहिए।

262. 1) हमें रेगिस्तान से इस स्थान तक की हमारी यात्रा के दौरान प्रभु से कई आशीर्वाद मिले हैं: हमें न केवल शब्दों में, बल्कि कर्मों में भी धन्यवाद देना चाहिए। – 2) तो फिर, हम उसका बदला कैसे चुकाएँगे? – हम परमेश्वर की महिमा के लिए जिएँ; हम मसीह की सुगंध बनें; हम पहाड़ पर चढ़ें, ताकि सब देख सकें। – 3) इस उद्देश्य के लिए, हम इस संसार की चीज़ों को पीछे छोड़ दें और स्वर्गीय चीज़ों से स्वयं को सजाएँ। – 4) क्योंकि यह हमसे दूर नहीं है; क्योंकि यह हमारे भीतर है। [4, 43]

8. परमेश्वर के आशीर्वादों में हमेशा आनंदित होकर, हमें हमेशा एक उदार हृदय से उत्कट प्रार्थना में उसे धन्यवाद देना चाहिए। क्योंकि विचार करो कि हमारे पास अभी भी कितना आशीर्वाद है! जब हमें एगारीयनों से डरकर भागने के लिए मजबूर होना पड़ा, तो क्या उसने हमें उस स्थान में, जहाँ हमें फेंक दिया गया था, मरुभूमि की तरह बनाए नहीं रखा; और वह भी लगातार कई दिनों तक? क्या उसने तब हमारे लिए यहाँ विश्राम का द्वार नहीं खोला, जहाँ एक सुंदर मंदिर और उपयुक्त आवास हैं; वही जिसने हमारा स्वागत किया - हमारा एकचित्त भाई? – ईश्वर की हम पर कितनी बड़ी कृपा है! क्या ऐसा कुछ है जो उन्हें करना चाहिए था और उन्होंने नहीं किया? – हमारी पूरी पलायन यात्रा के दौरान, उन्होंने हमें रोटी, शराब, मछली और अन्य आवश्यक चीजें प्रदान कीं, जितनी ज़रूरत थी उतनी ही नहीं, बल्कि उससे भी अधिक, ताकि जो लोग इसका साक्षी बने वे चकित रह गए। इन सब के लिए, हम दीन आत्माओं को न केवल धन्यवाद देना चाहिए, बल्कि अपना सर्वस्व अर्पित कर देना चाहिए। अत; मैं आपसे विनती करता हूँ, आइए हम अपने भीतर उसके प्रति सबसे प्रबल प्रेम जगाएँ, पूरे हृदय से उसी से लिपट जाएँ, और उसे परम कृपापूर्ण धन्यवाद अर्पित करें।

9. तो फिर हम उसकी प्रतिपूर्ति कैसे करें? – आओ, हम भी उसके नाम की महिमा के लिए यहाँ जिएँ, जिसकी हम उपासना करते हैं, ताकि जो उसने कहा वह हम में पूरा हो: *'अपनी रोशनी मनुष्यों के सामने इस प्रकार चमके कि वे तुम्हारे अच्छे कामों को देखकर स्वर्ग में तुम्हारे पिता की महिमा करें'* (मत्ती 5:16)। अन्यत्र, प्रेरित कहते हैं: *'परमेश्वर का धन्यवाद हो, जो हमें मसीह यीशु में सदा जय में ले चलता है, और हमारे द्वारा हर जगह उस के ज्ञान की सुगंध फैलाता है। क्योंकि हम उद्धार पाने वालों में और नाश होने वालों में परमेश्वर के लिए मसीह की सुगंध हैं।'* (2 कुरिन्थियों 2:14-15)। क्या आप देखते हैं कि सदाचारी व्यक्ति मसीह की सुगंध है, चाहे वह कहीं भी रहे? सदाचार, अपनी प्रकृति से ही, ऐसा नहीं है कि उसे छिपाया जा सके; परन्तु जो कोई भी इसे अभ्यास करता है, वह सबके लिए प्रकट हो जाता है: क्योंकि लिखा है: *'पहाड़ पर बसा हुआ नगर छिप नहीं सकता'* (मत्ती 5:14)। यह नगर मानव आत्मा है; पर्वत सद्गुणों की ऊँचाई है, जिस पर चढ़ जाने वाले *'दुनिया में दीयों के समान चमकते हैं, जीवन के वचन को थामे हुए, ताकि वे मसीह के दिन* अपना *सम्मान बढ़ाएँ'* (फिलि. 2:15)। अतःहे भाइयों, हम भी इस पवित्र पर्वत पर चढ़ें।

10. परन्तु हम तब तक वहाँ चढ़ नहीं सकते जब तक हम पहले इस संसार की वस्तुओं को पीछे न छोड़ दें—अर्थात्, शरीर की इच्छाओं और मन के विचारों को, और इस जीवन के विनाशकारी सुखों को, जिनसे मुँह फेरना ही सदाचार की ओर चढ़ाई है। अतःहृदय को अशुद्ध विचारों से शुद्ध किया जाए; नेत्र पवित्र हों, सीधे आगे देखते हुए, कान बुरी बातों के लिए बंद हों – जीभ को व्यर्थ बातें करने से रोका जाए, हाथ को अनुचित स्पर्श से रोका जाए, पैर को शांति के मार्ग की ओर निर्देशित किया जाए, सभी अंगों को संबंधित भलाई में प्रशिक्षित किया जाए और मसीह की सुंदरता से पवित्र किया जाए। पार्थिव राजा भौतिक रूप से सुंदर और सुसज्जित लोगों का अनुग्रहपूर्वक स्वागत करता

है; लेकिन स्वर्गीय राजा आत्मा से सुसज्जित लोगों को तरजीह देता है, भले ही वे बाहरी रूप से गरीब, अंधे, लंगड़े हों, या उनमें अन्य ऐसी स्पष्ट खामियाँ हों जिन्हें लोग तुच्छ समझते हैं। इस अर्थ में, नीच लोग कुलीन बन जाते हैं, अपमानित लोग महिमामय बन जाते हैं, और गरीब अमीर बन जाते हैं; इसी कारण, धन्य प्रेरित, जो मछुआरे थे, पृथ्वी भर में नेता बने; अतः संत एंथनी, यद्यपि अनपढ़ थे, बुद्धिमानों से भी अधिक बुद्धिमान थे; इसलिए—एक और उदाहरण लेने के लिए—हमारे थैडयिस, जो एक स्कैथियन और एक दास थे, जैसा कि आप जानते हैं, मसीह की गवाही देने की ऊँचाइयों तक पहुँचे और संपूर्ण विश्व में प्रसिद्ध हुए।

11. और ओह, हमारे कृपालु ईश्वर द्वारा हम पर प्रकट किया गया मानव जाति के प्रति अकथनीय प्रेम! उन्होंने हमारे सामने आने का कितना सुगम मार्ग प्रदान किया है! क्योंकि इसके लिए न तो किसी मध्यस्थ की, न धन की, और न ही किसी अनुकूल अवसर की प्रतीक्षा की आवश्यकता है; बस इसे चाहना है - और सब कुछ हो जाता है। – तो, क्या आप स्वर्ग में महान बनना चाहते हैं? पृथ्वी पर सबसे छोटे होने का चुनाव करें। क्या आप परमेश्वर का पुत्र कहा जाना चाहते हैं? अपने आत्मा को उसके वासनाओं से शांत करें। क्या आप परमेश्वर की दृष्टि में देखे जाना चाहते हैं? सत्य के लिए खड़े हों। – लेकिन इन बातों से कौन संतुष्ट है? – वह जो स्वेच्छा से शिक्षा को स्वीकार करता है, जो सही काम करने से प्रेम करता है, जो स्वर्गीय आशीर्वादों से समृद्ध होने का प्रयास करता है। – हे प्रभु, हमारे प्रभु मसीह यीशु में, हम भी ऐसे ही जीवन-दायक आज्ञाओं को इसी भावना से पूरा करके, सभी संतों के साथ स्वर्ग के राज्य को प्राप्त करें।

263. प्रत्येक व्यक्ति अपने कर्तव्यों का पालन पूरे मन से करे, जैसे परमेश्वर के सामने

263. 1) प्रत्येक व्यक्ति अपना कर्तव्य पूरी लगन से निभाए, जैसे ईश्वर की उपस्थिति में हो। – 2) मैं अपना, तुम अपना: और हम एक-दूसरे की मदद करें, सामान्य भलाई के लिए मिलकर काम करें। [4, 44]

12. जो अपने कर्तव्य निभाते हैं और जो उनका निरीक्षण करते हैं, दोनों को चाहिए कि वे पूरी सावधानी और लगन के साथ, – तपस्वी भक्ति के साथ – अपने कर्तव्यों का पालन करना – चाहे वह व्यवस्थापक हो, उप-व्यवस्थापक हो, कोषाध्यक्ष हो, रसोइया हो, भोजनशाला का परिचारक हो, या कोई और जो कोई भी कार्य कर रहा हो – ताकि हम उस भयानक श्राप के अधीन न आएं जो घोषणा करता है: *'धिक्कार है उस मनुष्य पर जो प्रभु का काम लापरवाही से करता है'* (यिर्म. 48:10); बल्कि, ताकि वे प्रभु की कृपा के सबसे योग्य बन सकें, जिन्होंने कहा: *'तो वह भरोसेमंद और समझदार दास कौन है, जिसे उसका स्वामी अपने घर का प्रबंधक बनाएगा? धन्य है वह दास जिसे उसका स्वामी, जब वह आएगा, ऐसा करते हुए पाएगा। 'आमीन, मैं तुम से कहता हूँ, वह उसे अपनी सारी संपत्ति का प्रबंधक नियुक्त करेगा'* (मत्ती 24:45–47)। क्या तुम देखते हो कि वह अच्छी सेवा करने वालों पर कितना सम्मान और कितनी बड़ी प्रतिपूर्ति प्रदान करता है? तो यह स्पष्ट है कि जो अच्छी सेवा नहीं करते हैं, उन्हें विपरीत भाग्य का सामना करना पड़ेगा। इसलिए, मैं आपसे आग्रह करता हूँ: प्रत्येक व्यक्ति अपना सौंपा गया कर्तव्य निष्ठापूर्वक निभाए, जिससे वह परमेश्वर की महिमा करे और अपना उद्धार सुनिश्चित करे। हे व्यवस्थापक, समुदाय की भौतिक आवश्यकताओं को विवेक से पूरा करो, प्रत्येक व्यक्ति को उसका हक दो—न तो पक्षपात या अनुग्रह से, बल्कि हमेशा सद्भावना और भ्रातृत्वपूर्ण प्रेम के साथ। परिचारक, देखभाल करना कि भाइयों को भोजन मिले, अपने कर्तव्यों को केवल उन्हें सांत्वना देने की इच्छा से निष्ठापूर्वक निभाना, और भंडारगृह में कुछ भी खराब न होने देना। रसोइए, भोजन तैयार करने और मसाला डालने में शुद्ध अंतःकरण रखना, जैसे कि तुम स्वयं परमेश्वर की सेवा कर रहे हो। भोजनशाला के परिचारक, भोजनशाला और वहाँ आवश्यक सभी पात्रों को स्वच्छ रखो, और भाइयों की सेवा ऐसे करो जैसे तुम प्रभु की सेवा कर रहे हो। अन्य लोग भी अपने-अपने कर्तव्यों में इसी प्रकार आचरण करें।

13. मैं यह आप में से कुछ को दूसरों के विरुद्ध खड़ा करने के लिए नहीं कह रहा हूँ, बल्कि इसलिए कह रहा हूँ कि प्रत्येक व्यक्ति, जिसे जिस भी भूमिका के लिए बुलाया गया है, वह परमेश्वर को अपनी दृष्टि के सामने रखकर दूसरों की सेवा करने के अपने कर्तव्य को पूरा करने का प्रयास करे, क्योंकि उसी से सभी पुरस्कारों की अपेक्षा की जाती है। – 'और क्या मुझे, एक नम्र मनुष्य को, अपने ही घर को संवारने का कार्य सौंपा नहीं गया है?' – 'हाँ, और वास्तव में यह सबसे बड़ा कार्य है।' – 'इसलिए, जैसे यह मेरा दायित्व है कि मैं आपकी आत्माओं की देखभाल और रक्षा करूँ, प्रत्येक से विनती और उपदेश दूँ, और आप सभी को निजी तौर पर और सार्वजनिक रूप से, परमेश्वर की सच्चाई और आने वाली तलवार की घोषणा करूँ: वैसे ही आपको भी अपने कर्तव्यों को आलस्य के बिना पूरा करना चाहिए। – और इस प्रकार हम एक शरीर और एक आत्मा हों, जैसा कि हमें हमारे बुलावे की एक ही आशा में बुलाया गया है – एक दूसरे के संबंध में अंगों के रूप में एक दूसरे से प्रेम करते हुए, एक दूसरे के प्रति सहिष्णु होते हुए, एक दूसरे की परवाह करते हुए, एक दूसरे के बोझ उठाते हुए; ताकि हमारे प्रस्थान के समय हमें बाद में लापरवाही में बर्बाद

किए गए समय पर पछताना न पड़े; परन्तु हम इस प्रस्थान के लिए सदा अच्छी तरह से तैयार रहें, और इस बात के सच्चे विश्वास के साथ भरोसेमंद हों कि यहाँ से निर्मल अंतरात्मा के साथ प्रस्थान करके, हम स्वर्ग के राज्य को प्राप्त कर सकें।

264. वे आपस में भिड़ गए: यह उजागर करता है

264. 1) वे आपस में भिड़ गए: यह उन्हें बेनकाब करता है। – 2) यह गर्व को कारण के रूप में इंगित करता है, जो पहले यह विचार उत्पन्न करता है: 'चल, उसे छू; मैं उसे दिखाता हूँ – और फिर कर्म में प्रकट होता है। – 3) इसका उपाय हृदय में अच्छे इरादों को जड़ जमाना है। [4, 45]

14. मैं केवल थोड़ी देर के लिए आपसे दूर था; परन्तु मेरी वापसी पर, मैंने आपके बीच अव्यवस्था पाई, जिसे मैं सभी को बताना आवश्यक समझता हूँ, और ऐसी अव्यवस्था कि कुछ लोगों ने एक-दूसरे को हाथ बढ़ाकर, गुस्से और चिल्लाहट के साथ, उतावलेपन से पकड़ लिया। – जहाँ तक उनमें से एक की बात है, यह पूरी तरह से आश्चर्य की बात नहीं है, क्योंकि वह अभी भी एक सामान्य व्यक्ति है और उसे भाईचारे में स्वीकार नहीं किया गया है; लेकिन दूसरे के लिए, यह बहुत आश्चर्यजनक है, क्योंकि उसने यह तब किया जब वह पहले से ही एक भिक्षु था, जिसे दुनिया को सूली पर चढ़ा देना चाहिए था और अपने शरीर को क्रूस पर ठोक देना चाहिए था। तो फिर, भाई, ऐसा कैसे हुआ कि तुम कीलों से मुक्त होकर, क्रूस से उतर आए और यहूदी रीति के अनुसार मसीह यीशु पर अपने हाथ रख दिए? क्योंकि उसी ने कहा है: *'जो कुछ तुम ने मेरे इन सबसे छोटे भाइयों में से किसी एक के लिए किया, वह तुम ने मेरे लिए किया'* (मत्ती 25:40)। और क्या तुम उस से नहीं डरे जिसने ये वचन कहे? क्या तुम्हें अपने जीवन के रक्षक, स्वर्गदूत के सामने शर्म नहीं आई? क्या तुम उन भाइयों और दर्शकों से नहीं डर गए जो तुम्हें देख रहे थे? प्रभु ने आज्ञा दी, *'अपनी रोशनी इस प्रकार लोगों के सामने चमकने दो, कि वे तुम्हारे अच्छे कामों को देखकर स्वर्ग में स्थित तुम्हारे पिता की महिमा करें'* (मत्ती 5:16)। फिर भी तुम्हारे अपने दुष्ट कर्म ने तुम पर इतना अंधकार छा दिया है कि तुम्हारे द्वारा परमेश्वर के नाम का अपमान हुआ है। हाय, मैं पापी हूँ! हमें जीवन की कितनी ऊँचाइयों के लिए बुलाया गया है, और हम कितनी गहराइयों में गिर गए हैं, और दुष्ट सामान्य लोगों की तरह अपने आप पर शर्म लाई है। तुम कहते हो कि उसने ही लड़ाई शुरू की थी; पर क्या तुमने यह नहीं सुना कि प्रभु ने उस सेवक से, जिसने उन्हें गाल पर मारा था, कितनी कोमलता से कहा: *'यदि मैंने कुछ गलत कहा है, तो उस गलती की गवाही दो; पर यदि मैंने सही कहा है, तो तुम मुझे क्यों मारते हो?'* (यूहन्ना 18:23)। और फिर सूली पर: *'पिता, इन्हें क्षमा कर, क्योंकि ये नहीं जानते कि ये क्या कर रहे हैं'* (लूका 23:34)। यह जानते हुए, तुम्हें उन लोगों को आशीष देनी चाहिए थी जो तुम्हारी निंदा करते हैं, उन लोगों के लिए प्रार्थना करनी चाहिए थी जो तुम्हें मारते हैं, और अपमानित किए जाने पर मौन रहना चाहिए था (1 कुरिन्थियों 4:12-13)। परन्तु तुम, भले का अनुकरण करने में असफल, तुम किसका अनुकरण करने वाले बन गए हो? – प्रेरित द्वारा दिए गए आज्ञा-वचन को देखो: *'तुम्हारे बीच से सब कटुता, क्रोध, रोष, हंगामा और बदनामी तथा सब प्रकार की दुष्टता दूर हो जाए'* (इफिसियों 4:31); फिर भी तुम एक-दूसरे से मारपीट करने, एक-दूसरे के बाल खींचने और एक-दूसरे का गला घोंटने तक पहुँच गए हो? – इस प्रकार परमेश्वर के वचन का तिरस्कार किया गया है। जैसा कि भविष्यद्वाणी का वचन कहता है, *'लोहार व्यर्थ में चाँदी को गढ़ता है'* (यिर्म. 6:29)। व्यर्थ ही मैं भी थकान के बिंदु तक नम्रता से परिश्रम करता हूँ। तथापि, फिर भी, मैं अपना कर्तव्य करने से नहीं रुकूँगा, और भी अधिक क्योंकि कभी-कभी मेरे कई चौकस श्रोता होते हैं।

15. परन्तु, तब, ऐसी दुष्टता का कारण कहाँ है? क्योंकि मनुष्य को केवल पाप की निन्दा ही नहीं करनी चाहिए, बल्कि उपाय भी बताना चाहिए। एक दुष्ट विवेक ने यह दुष्ट नवाचार रचा है: एक घमंडी आत्म-दावा, एक दुष्ट हृदय की योजना। 'अगर उसने मुझसे ऐसा-वैसा कहा,' उत्तेजित व्यक्ति अपने मन में कहता है, 'तो मैं ऐसा जवाब दूँगा; अगर उसने मेरे साथ ऐसा-वैसा व्यवहार किया, तो मैं भी उसके साथ वैसा ही करूँगा।' – फिर, जब किसी भी कारण से चिड़चिड़ाहट पैदा होती है, तो हम उस बात को सामने लाते हैं जिस पर हम गुप्त रूप से विचार कर रहे थे। क्योंकि यह कहा गया है: 'मनुष्य *अपने हृदय के भर से मुँह बोलता है। भला मनुष्य भले भण्डार से भलाई निकालता है, और दुष्ट मनुष्य दुष्ट भण्डार से बुराई निकालता है'* (मत्ती 12:34–35)।

16. तो आओ, हम अपने हृदयों को शुभ इरादों का खज़ाना बनाएं। तब हम न केवल द्वेष नहीं रखेंगे और लड़ाई से बचेंगे; बल्कि यदि कोई तुम्हें दाहिने गाल पर थप्पड़ मारे, तो हम दूसरा भी उसके पास फेर देंगे (मत्ती 5:39), और जो कुछ भी हो जाए, हम सुसमाचार की आज्ञा के अनुसार काम करेंगे। – *'हे इस्राएल के घराने, तुम क्यों नाश होते हो?'* (यहे. 33:11)। यहाँ हमारे लिए भी यही प्रश्न अपने आप से पूछना उचित है। हम दिन-प्रतिदिन व्यर्थ और आलस्य में अपना जीवन क्यों व्यतीत करते हैं, भोजन-पेय के पारखी तो बनते हैं, परन्तु परमेश्वर की आज्ञाओं का पालन करने

में अज्ञानी बने रहते हैं? क्या यह हमारे लिए बेहतर नहीं होगा कि हम अब से खुद को तैयार कर लें: न तो परेशान होने के लिए, न गुस्सा होने के लिए, न भड़कने के लिए, और न चिल्लाने के लिए, जिससे, तीरों की तरह, अपमानजनक शब्द निकलते हैं, और शायद उससे भी कुछ बदतर। – यह *मैं* तुम्हें *'ईश्वर, जो सभी चीज़ों को जीवन देता है, और मसीह यीशु, जिन्होंने पोंतियस पिलातुस के सामने सुसमाचार की गवाही दी, के सामने' 'विरासत में देता हूँ' कि* तुम' *'आज्ञा को निर्दोष और निष्कलंक बनाए रखो'* (1 तीमु. 6, 13–14), कहीं ऐसा न हो कि मुझे आपको सबसे कठोर तपस्याओं के अधीन करना पड़े, बल्कि यह कि, हमेशा और हर बात में स्वयं को उचित और व्यवस्थित तरीके से संचालित करके, आप मुझे, एक पापी को, परमेश्वर को प्रसन्न करके शांति प्रदान करें, और शाश्वत आशीर्वादों के योग्य माने जाएँ।

265. वह उन लोगों को और फटकारता है जिन्होंने झगड़ा किया है; और – सभी को शांति के लिए आमंत्रित करता है, इसके लिए प्रेरणा पवित्र सहभागिता से लेता है

265. 1) वह उन लोगों को और फटकारता है जिन्होंने झगड़ा किया है; और – 2) सभी को शांति के लिए आमंत्रित करता है, इसके लिए प्रेरणा पवित्र सहभागिता से लेता है। – 3) इसके लिए वह सूक्ष्म रूप से कुँवारीपन पर एक शब्द जोड़ते हैं, जिसकी वह प्रशंसा करते हैं, और – 4) जिसके लिए वह साधन के रूप में ईश्वर के भय की अग्नि में पश्चाताप और आँसुओं में आत्म-बलिदान निर्धारित करते हैं। [4, 46]

17. न तो मुझे इस उद्धारकारी प्रवचन से तृप्ति मिलनी चाहिए, और न ही तुम्हें इस शिक्षाप्रद श्रवण से। बल्कि हम दोनों में इन दोनों के लिए एक अतृप्त लालसा होनी चाहिए, जैसे पानी खींचने के लिए प्यासे लोग। और यही प्रगति का संकेत, मोक्ष की स्थिति और मोक्ष का कार्य है। क्योंकि शब्द कर्मों की ओर ले जाते हैं—अच्छे शब्द अच्छे कर्मों की ओर और विपरीत शब्द विपरीत कर्मों की ओर। चूँकि हम अच्छा करना चाहते हैं, इसलिए हमें अच्छी शिक्षाओं और हितकर वार्तालापों का उपयोग करना चाहिए, कहीं ऐसा न हो कि हम उससे चूक जाएँ जिसकी हमसे अपेक्षा की जाती है। इसी बात को सिखाते हुए, प्रेरित कहते हैं: *'तुम्हारे मुँह से कोई भी भ्रष्ट बात न निकले, बल्कि केवल वही निकले जो विश्वास को दृढ़ करने के लिए लाभदायक हो, ताकि सुनने वालों को अनुग्रह मिले। और परमेश्वर के पवित्र आत्मा को दुखी न करो, जिसके द्वारा तुम छुटकारा के दिन के लिए मुहरबंद किए गए हो।'* और आगे: *'तुम्हारे मुँह से कोई भी कड़वाहट, क्रोध, गुस्सा, हंगामा और बदनामी न निकले, बल्कि केवल वही निकले जो भलाई के लिए हो, जिससे सुनने वालों को आशीष मिले। और परमेश्वर के पवित्र आत्मा को दुखी न करो, जिसके द्वारा तुम छुटकारा के दिन के लिए मुहरबंद किए गए हो।'* (इफिसियों 4:29-32)। क्या आप देखते हैं कि वह क्या आज्ञा देते हैं? इस आज्ञा की परिभाषा कितनी सटीक है? – यहाँ वह कहीं और और भी सख्ती से कहते हैं: *'जो मसीह के हैं, उन्होंने अपने शरीर को उसकी कामनाओं और इच्छाओं सहित सलीब पर चढ़ा दिया है'* (गलातियों 5:24), यानी, वे पापपूर्ण कार्यों से, मानो, अप्रभावित रहते हैं। यदि ऐसा है, तो विचार करो कि हमारे झगड़ालू भाइयों के लिए क्या निंदा उचित है? उन्होंने न केवल झगड़ा किया, बल्कि एक-दूसरे पर हाथ भी उठाया। और तुम, जो अभी भी एक सामान्य व्यक्ति हो, जो केवल हमारे बीच गिने जाते हो, क्या तुम एक भिक्षु पर हाथ उठाते हो? – और तुम, एक भिक्षु, क्या आज्ञाकारिता के व्रत के लिए तैयारी कर रहे व्यक्ति पर लाठी से वार करने की हिम्मत करते हो? – नहीं; तुम अब भिक्षु नहीं, बल्कि एक ग्लैडिएटर (तलवारबाज) हो; तपस्वी नहीं, बल्कि एक डाकू; शांति के पुत्र नहीं, बल्कि क्रोध का पुत्र। क्या कठोर शब्दों के बाद प्रहार नहीं हुए, और क्या प्रहार कभी हत्या तक नहीं ले जाते? – जिन्होंने ऐसा किया है, उन्हें एक उचित प्रायश्चित क्यों नहीं दिया जाना चाहिए, कहीं वे इससे भी बदतर न हो जाएँ?

18. परन्तु हे प्रिय, कोमल और शान्तिप्रिय प्रभु के शिष्यों, तुम आपस में कोमलता और शान्ति से जियो – *'सब मनुष्यों के संग मेल मिलाप और पवित्रता का अनुसरण करो, जिसके बिना कोई भी प्रभु को नहीं देखेगा'* (इब्रानियों 12:14)। प्रभु के शरीर और लहू का ध्यान रखो, जिन्हें ग्रहण करने के हम योग्य ठहराए गए हैं। जो आत्मा इन सबसे पवित्र उपहारों को ग्रहण करती है, उसमें भ्रम, उन्माद या अनुचित इच्छाएँ नहीं होनी चाहिए। मुँह, जो अमर झरने से जल ग्रहण करता है, उसे अशुद्ध और घृणित शब्द नहीं बोलने चाहिए। आँखें, जो बहुमूल्य रक्त से पवित्र की गई हैं, उन्हें पशुवत इरादे से नहीं देखना चाहिए और न ही उन्हें अश्लील चित्रों को अंकित होने देना चाहिए। वह हाथ जिसने दिव्य खजाना ग्रहण किया है, उसे किसी भी अश्लील वस्तु को नहीं छूना चाहिए।

19. परन्तु मसीह के अंगों के नाते, सभी अंगों को पवित्रता में रखा और संरक्षित किया जाना चाहिए। निश्चित रूप से, हर सद्गुण महान और वांछनीय है, लेकिन ब्रह्मचर्य जितना नहीं। ब्रह्मचर्य सबसे पहले स्वर्ग में चमका, इससे पहले कि सांप ने अपनी चालाकी से हमारे प्रथम माता-पिता को धोखा दिया; – ब्रह्मचर्य को मसीह की माता बनने के योग्य माना गया; ब्रह्मचर्य मनुष्यों को देवदूत बनाता है; ब्रह्मचर्य दुनिया को अक्षयत्व तक उठाता है।

20. इस बिंदु पर, कोई पूछ सकता है: तो फिर, हम इसे कैसे प्राप्त करें? – अनगिनत परिश्रम और पसीने के अलावा और कैसे? – क्योंकि जहाँ एक बड़ा कार्य सामने होता है, वहाँ बड़ी लगन और काफी मेहनत भी होनी चाहिए। जैसे एक तीखी तलवार हमलावरों को प्रभावी ढंग से काट देती है, वैसे ही आत्मा को भी, ईश्वर के भय में—जैसे आग में तपी और आँसुओं के जल में पकी हो—दैवीय विचारों को काट देना चाहिए, और उन्हें अपना शिकार बना लेना चाहिए। यदि यह कुंद हो जाए, तो इसे फिर से तेज किया जाना चाहिए, ताकि यह हज़ारों को नहीं, बल्कि भीड़ को मार सके, जैसा कि दाऊद के बारे में गाया गया है; क्योंकि *'ऊँचे से हम पर चढ़ाई करने वाले बहुत हैं'* (भजन संहिता 55:3), और हमारे विरुद्ध युद्ध करने वाली दुष्टात्माएँ अनगिनत हैं; अंत तक उनका विरोध करना मसीह के सच्चे योद्धा को प्रकट करता है और उसे मुकुट-धारक बनाता है। ईश्वर की कृपा पाप करने वालों को क्षमा प्रदान करे, और आप जो सही मार्ग पर चल रहे हैं, उनकी उत्साह को वह प्रबल बनाए, ताकि आप ईश्वर की प्रत्येक आज्ञा का बार-बार पालन करें और इस प्रकार स्वर्ग के राज्य को प्राप्त करें।

266. उत्साही व्यक्ति न केवल दुष्ट कर्मों से, बल्कि दुष्ट विचारों से भी परहेज़ करता है: इस प्रकार वह परमेश्वर की शान्ति प्राप्त करता है, जिसमें वह दिव्य चिंतन के माध्यम से आनंदित होता है।

266. 1) उत्साही व्यक्ति न केवल बुरे कर्मों से बल्कि बुरे विचारों से भी परहेज़ करता है: इस प्रकार वह परमेश्वर की शांति प्राप्त करता है, जिसमें वह दिव्य चिंतन द्वारा आनंदित होता है। – 2) अतः हमें अपने प्रति सचेत रहना चाहिए, और अपने आत्मा में विचारों को ठहरने न देना चाहिए – विशेष रूप से कामुक और क्रोधित विचारों को। [4, 47]

21. लापरवाह और धनी लोग अन्याय करने के कार्य को ही पाप मानते हैं, जैसे: व्यभिचार, वेश्यावृत्ति, समलैंगिकता, अशुद्धता और हर दूसरा बुरा काम, जिसके खिलाफ कानून सख्त है। लेकिन उत्साही व्यक्ति, जो हर विवरण में आज्ञाओं का पालन करना चाहता है, अश्लील मानसिक कल्पनाओं को भी निर्दोष नहीं मानता, जिनसे अश्लील शारीरिक हरकतें उत्पन्न होती हैं, और हर तरह से अपने भीतर इन सब को नष्ट करने और हानिकारक जुनून से मुक्त रहने का प्रयास करता है: जो हमारे प्रभु यीशु मसीह के द्वारा परमेश्वर के साथ मेल रखना है, जैसा कि प्रेरित कहते हैं (रोमियों 5: 1), जिसमें, अपना विश्राम पाकर, आत्मा महान आनंद के साथ हर्षित होती है और एक अतृप्त मधुरता से आनंदित होती है, ईश्वर के विचारों में निवास करना और उनकी अनुपम महिमाओं के चिंतन में गहराई तक उतरना पसंद करती है, यहाँ तक कि वह स्वयं को भूल जाती है। परन्तु जब ऐसा होता है कि आत्मा इस अवस्था से बाहर निकलती है और अनकही इच्छाओं से विचलित हो जाती है, तो वह तूफानी समुद्र में संकटग्रस्त जहाज की तरह इधर-उधर उछलती और बेचैन हो जाती है; और जब तक प्रभु उसकी सहायता के लिए नहीं आते, वह जहाज-दुर्घटना का शिकार होने के खतरे में रहती है।

२२. इसलिए हमें चौकस रहना चाहिए, और दुष्ट विचारों को हमारे भीतर ठहरने न देकर उन्हें तुरंत जड़ से उखाड़ देना चाहिए। क्योंकि यदि साँप भीतर प्रवेश करने का कोई रास्ता खोज ले, और धीरे-धीरे अपना रास्ता बना ले, तो वह तब तक नहीं जाएगा जब तक कि वह मृत्यु को जन्म न दे दे। शास्त्र यह क्यों कहता है कि सर्प मनुष्य के पैर के तले—अर्थात् उसके कर्म के अंत में—घात करेगा, जबकि मनुष्य सर्प के सिर पर—अर्थात् आत्मा में एक पापपूर्ण विचार के पहले प्रवेश पर—घात करेगा (उत्पत्ति 3:15)? इसलिए, हमें विचारों के आक्रमण के विरुद्ध वीरता से खड़ा होना चाहिए, और उन विचारों से उत्पन्न होने वाली वासना को जड़ पकड़ने से पहले ही उन्हें नष्ट कर देना चाहिए, और इस प्रकार पाप की बाढ़ को रोकना चाहिए, ताकि हम भी संत दाऊद के साथ कह सकें: *'हम आग और पानी से गुज़रे हैं, फिर भी आपने हमें विश्राम के स्थान पर पहुँचाया है'* (भजन संहिता 65:12)। – हालाँकि, यह केवल एक ही जुनून (यानी वासना) नहीं है जो आत्मा को परेशान और भ्रष्ट करता है; बल्कि उससे भी अधिक क्रोध; क्योंकि कहा गया है: *'मेरी आँखें क्रोध से व्याकुल हैं'* (भजन संहिता 6:8), और फिर: *'उनका क्रोध साँप के समान है'* (भजन संहिता 57:5); और फिर: *'मूर्खों के हृदय में क्रोध रहता है'* (सभो. 7:10); और अंत में: *'क्रोध की जल्दबाज़ी उसका विनाश कर देती है'* (सीर. 1:22)। तो फिर, ऐसा जुनून किससे उत्पन्न होता है? एक ऐसी मानसिकता से जो अपने आप पर गर्व करती है और दूसरों को तुच्छ समझती है, जो अपने आप को कुछ समझती है (गलातियों 6:3), और अपने से नीचे वालों पर तुच्छ दृष्टि डालती है। क्योंकि जो हृदय से नम्र है, प्रभु का अनुकरण करता है, वह कोमल और शांत स्वभाव का होता है, झगड़ालू या उपद्रवी नहीं; और यदि ऐसा हो भी जाए, तो वह किसी को आहत करने के बजाय अपमान सहने की अधिक संभावना रखता है – वह एक प्रहार स्वीकार करता है, पर बदला नहीं लेता।

267. आज्ञाकारिता के कार्य परस्पर जुड़े हुए हैं; यही कारण है कि हमें एक-दूसरे की मदद करनी चाहिए, और हमेशा, बिना इनकार या देरी के, आज्ञाकारिता के कार्यों के माध्यम से अधिकार में रहने वालों की आज्ञा माननी चाहिए।

267. 1) आज्ञाकारिता के कार्य परस्पर जुड़े हुए हैं; इसीलिए हमें एक-दूसरे की मदद करनी चाहिए, और हमेशा, बिना इनकार या देरी के, आज्ञाकारिता के कार्यों के माध्यम से अधिकार में रहने वालों की आज्ञा माननी चाहिए। – 2) परेशान करने वाले विचारों के आगे न झुकें: क्योंकि वे दुष्ट से आते हैं। – 3) इस उद्देश्य के लिए, धैर्य का अभ्यास करें, जो सभी चीजों में आवश्यक है। [4, 48]

२३. आज हम किस विषय पर चर्चा करें? मैं हमारे जीवन के बाहरी स्वरूप, या नियम के अनुसार जीवन के बारे में बोलूँगा: क्योंकि यद्यपि हम निर्वासन में हैं, हम एक मठ में रहने की तरह रहते हैं, केवल हम में से एक या दो ही नहीं, बल्कि कई लोग एक साथ। और यद्यपि हम मठ के आराम का आनंद नहीं लेते, फिर भी हम कठिनाई से आवश्यक वस्तुएँ प्राप्त कर लेते हैं – और केवल अपने लिए ही नहीं, बल्कि दूसरों के लिए भी। क्योंकि भाई और पिता, साथ ही यात्री और गरीब, निरंतर हमारे पास आते रहते हैं। सभी का स्वागत करने और सभी की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए बहुत साहस और बहुत परिश्रम की आवश्यकता होती है। इसीलिए व्यवस्थापक को, परमेश्वर के व्यवस्थापक के रूप में, विवेकी और चौकस होना चाहिए। लेकिन यह तब तक कोई काम नहीं आएगा जब तक व्यवस्थापक के पास एक ऐसा सहायक व्यवस्थापक न हो जो उससे मेल खाता हो और उतना ही चौकस हो। न ही सहायक व्यवस्थापक किसी भी काम में सफल होगा यदि उसके पास एक ऐसा भंडारी न हो जो हर बात में उसका अनुसरण करे। न ही व्यवस्थापक के कार्य इच्छानुसार चलेंगे जब तक कि उसके पास रसोइए के रूप में एक सक्षम सहायक न हो। न ही रसोइए के कार्य—और विस्तार से कहें तो अन्य लोगों के, और उनके माध्यम से बाकी सभी के—सुचारू रूप से चलेंगे जब तक कि उनमें से प्रत्येक के पास उन्हें समर्थन देने के लिए साथी कार्यकर्ता न हों। ठीक वैसे ही जैसे एक ही शरीर में कई अंग होते हैं; फिर भी अंग एक-दूसरे की परवाह करते हैं, ताकि यदि एक अंग पीड़ित होता है, तो सभी अंग उसके साथ पीड़ित होते हैं, और यदि एक अंग का सम्मान होता है, तो सभी अंग उसके साथ आनंदित होते हैं: इसी प्रकार भाईचारे में भी, यदि यही व्यवस्था नहीं अपनाई जाती है, तो कोई सामुदायिक जीवन, कोई शांति और कोई मानसिक एकता नहीं होगी, बल्कि बहिष्कृत, विभाजन और क्षय होगा। – यदि वास्तव में ऐसा है, तो कोई भी अपनी निजी इच्छाओं के अनुसार कार्य करने की हिम्मत कैसे कर सकता है, या, जब अपने निजी मामलों या शिल्प-कौशल पर ध्यान देने की आवश्यकता हो, तो सामान्य और लाभकारी कार्य में संलग्न होने में विफल रहता है? या कोई भी, जब किसी कार्य के लिए बुलाया जाए, तो अपने ऊपर अधिकार रखने वालों को मना करने और उनकी अवज्ञा करने की हिम्मत कैसे कर सकता है? ऐसा व्यक्ति अब शिष्य नहीं बल्कि एक विद्रोही है, अब भाई नहीं बल्कि एक अजनबी है। लेकिन यदि ऐसी बातें हुई हैं, तो अब से सावधान रहो, कहीं ऐसा न हो कि ऐसी गलती में फँसा कोई व्यक्ति ऐसे दुराचार के लिए निर्धारित प्रायश्चित का भार उठाने के लिए बाध्य हो। – क्या तुम नहीं सुनते कि प्रेरित क्या आज्ञा देते हैं? *'एक दूसरे के प्रति दयालु और करुणामय बनो, और एक दूसरे को क्षमा करो, जैसे परमेश्वर ने मसीह में तुम्हें क्षमा किया है'* (इफिसियों 4:32)। हम भी एक दूसरे के प्रति ऐसे ही बनें, एक दूसरे के बोझ उठाकर और इस प्रकार मसीह के विधान को पूरा करें, जैसा लिखा है (गलातियों 6:2)।

24. मैंने आपसे पहले भी कहा है, और अब भी कहता हूँ: हम अपने विचारों के बोझ तले दबे न रहें, बल्कि पवित्र आत्मा के आनन्द से हमारे सामने जो संघर्ष है, उसे करते चलें, और अपने विश्वास के कर्ता और सिद्ध करने वाले, यीशु की ओर दृष्टि बनाए रखें, जो प्रार्थना करने वाले को प्रार्थना का उत्तर देता है और जय प्राप्त करने की इच्छा रखने वाले को विजय देता है। क्या आपको याद नहीं कि कैसे, कुछ समय पहले ही, अचानक एक तूफ़ान आया था, और फिर तुरंत ही मौसम साफ़ हो गया था? विचारों के साथ भी ऐसा ही होता है: वे थोड़ी देर के लिए हमें परेशान करते हैं, और फिर चले जाते हैं। हे, काश कि वे हमें बिल्कुल भी परेशान न करते! और हमारे प्राणों में हमेशा शांति क्यों न हो? लेकिन यह असंभव है, क्योंकि हम चंचल हैं, और हम एक दिन के लिए भी एक जैसे नहीं रहते; तो फिर, हमेशा ऐसा कैसे हो सकता है। लेकिन देखो, मेरे मित्र, शैतान की अथक दुष्टता को: जब उसे भगाया भी जाता है, तो वह लौट आता है; और यद्यपि वह अंधकार है, फिर भी वह स्वर्गदूत की उपस्थिति में स्वयं को प्रकाश में बदल लेता है, और छल से हमें फँसाने का प्रयास करता है। परन्तु काश सर्प हमसे दूर हो जाए, और हम सदैव यह घोषणा करें: 'हम तुझे, हे मसीह, न त्यागेंगे, न अपना अंगीकार झूठा करेंगे।' या क्या आप नहीं जानते कि हम किस अवस्था से किस अवस्था में आ गए हैं? क्या हम अदृश्य से दृश्य में नहीं आ गए हैं? अज्ञानता से ज्ञान में? अपमान से सम्मान में? और हमारे पास वचन, ज्ञान और स्तुति है; और आप पुत्र हैं, सचमुच सम्माननीय, अपने स्वर्ण आज्ञाकारिता के अनुसार सोने से भूषित।

२५. तो फिर, अभी क्या कमी है? – धैर्य; *क्योंकि* प्रेरित कहते हैं, *'तुम्हें धैर्य की आवश्यकता है, ताकि परमेश्वर की इच्छा पूरी करके तुम प्रतिज्ञा प्राप्त कर सको'* (इब्रानियों १०:३६)। तो, यह वादा क्या है? – प्रभु स्वयं ने कहा: *'मैं तुम्हारे लिए जगह तैयार करने जाता हूँ। और यदि मैं तुम्हारे लिए जगह तैयार करूँ, तो मैं फिर आकर तुम्हें अपने पास ले लूँगा; ताकि जहाँ मैं हूँ, वहाँ तुम भी होओ। और तुम जानते हो कि मैं कहाँ जाता हूँ, और तुम मार्ग भी जानते हो'* (यूहन्ना 14:2-4)। *'और कोई भी तुम्हारी खुशी तुमसे नहीं छीन सकता'* (यूहन्ना 16:22)। इस पर मनन करते हुए, और उस महिमा को निहारते हुए—जो अकथनीय और अकल्पनीय है—जो संतों में प्रकट होने वाली है, आइए हम उदारतापूर्वक सभी बातों को सहें: अगर हमें भूखे रहना है, तो हम भूखे रहेंगे; यदि हमें हर चीज़ से भरपूर मिलना है, तो हम संतुष्ट रहेंगे; यदि हमें मरना है, तो हम मरेंगे, ताकि हम हमारे प्रभु मसीह यीशु में अनंत जीवन का वारिस हों।

268. श्रोवेटाइड के दौरान, इंद्रिय सुखों में लिप्त होना ईसाई धर्म की भावना के विरुद्ध है

268. 1) श्रोवेटाइड के दौरान, इंद्रिय सुखों में लिप्त होना ईसाई धर्म की भावना के विपरीत है। – 2) आइए हम प्रभु का धन्यवाद करें कि उन्होंने हमें संसार से निकालकर हमारे शांत जीवन में लाया है, जिससे इतने सारे संत चमक उठे हैं, जिनका हम भी अनुकरण करने का प्रयास करते हैं। – 3) इसलिए आइए हम उनके प्रति विश्वासयोग्य बने रहें, और अपने विश्वास की आने वाली परीक्षाओं के लिए स्वयं को तैयार करें। [4, 49]

26. आने वाले दिनों (श्रोवेटाइड) को लोग आमतौर पर किसी तरह के त्योहार के रूप में मानते हैं, क्योंकि इस समय भोज और धूमधाम होती है, यह जाने बिना कि ये दिन मांस से परहेज़ के माध्यम से सामान्य आत्म-नियंत्रण का संकेत देते हैं, न कि अतिभक्षण और मद्यपान का। क्योंकि ये तो एक हेलेनिक त्योहार की विशेषताएँ हैं। जहाँ तक ईसाइयों का सवाल है, यद्यपि वे हर चीज़ का संयम से सेवन कर सकते हैं, फिर भी उन्हें देह की वासना में लिप्त नहीं होना चाहिए, जैसा कि प्रेरित सिखाते हैं (रोमियों 13:14)। हालाँकि, बुराई, जब दैनिक जीवन के नियमों में घुस आती है, तो वह दुनिया को जहाँ चाहे ले जाती है। परन्तु हम, उन वस्तुओं में भी अतिव्यसन से बचेंगे जिनका हमें सेवन करने की अनुमति है, यह जानते हुए कि अतिव्यसन पाप की जननी है। इस प्रकार हमारे पूर्वज आदम, जब उन्होंने निषिद्ध वस्तु का स्वाद लेने से परहेज़ किया, तो वे स्वर्गलोक में दिव्य अंतर्दृष्टि और प्रेरणाओं से परिपूर्ण होकर आनंदित और प्रसन्न थे। लेकिन जब उन्होंने अपनी संयम-बाधा को तोड़ा और अवज्ञा के वृक्ष का स्वाद चखा, तो उन्हें तुरंत आनंद के स्वर्गलोक से निकाल दिया गया। और अनुशासनहीनता उनके लिए मृत्यु की जननी बन गई। इसी प्रकार सदोमी भी, रोटी से तृप्त होते हुए भी शर्मनाक वासनाओं में डूबे हुए, अपने ऊपर परमेश्वर का क्रोध लाए और आग और गंधक से भस्म हो गए। इसी प्रकार घृणित एसाव ने भी, अपनी लालची आँखों के बहकावे में आकर, एक ही भोजन के लिए अपना जन्मसिद्ध अधिकार त्याग दिया। परमेश्वर के लोगों के साथ भी ऐसा ही हुआ: *'लोग खाने और पीने के लिए बैठ गए, और खेलने के लिए उठ खड़े हुए'* (निर्गमन 32:6)। आजकल के दिनों में भी यही देखा जाता है: दावतें और शराबखोरी, चीख-पुकार और शैतानी नृत्य, न केवल दिन में बल्कि देर रात तक। अनुशासनहीनता का यही दुष्ट प्रभाव है; इसके द्वारा मृत्यु संसार में आई।

27. हमें, हालाँकि, परमेश्वर का धन्यवाद करना चाहिए कि उन्होंने हमें ऐसी व्यर्थताओं से बचाया है और हमें एक धन्य जीवन में पहुँचाया है, जहाँ अनुत्साह नहीं बल्कि संयम है, नशा नहीं बल्कि चैतन्यता है, उपद्रव नहीं बल्कि शांति है, कोलाहल नहीं बल्कि मौन है, अश्लीलता नहीं बल्कि धन्यवाद है, अश्लीलता नहीं बल्कि पवित्रता है, पवित्रता और ब्रह्मचर्य। इसी जीवन से हमारे सभी पवित्र पूर्वज चमक उठे; उन्होंने, ईश्वर की सहायता से, अपने भावों को वश में किया, दुष्ट आत्माओं को भगाया, स्वर्गदूतों के समान बन गए, चमत्कार किए, दिव्य महिमा प्राप्त की, और संसार में आश्चर्य का स्रोत बने – जिनमें धन्य एंथनी भी थे, जिनका जीवन हमने अभी पढ़ा और देखा कि कैसे परमेश्वर ने उन्हें स्वर्ग में महिमामय किया – इतना कि सांसारिक राजाओं के लिए उन्हें पत्र लिखना और उनके लिखे शब्दों को पढ़ना एक बड़ी सम्मान की बात मानी जाती थी। हम भी, अपनी विनम्रता में, इन धन्य लोगों के पदचिन्हों पर चलते हैं; और यह कि हम भी कर्म में उनका अनुकरण करने का प्रयास करते हैं, इसकी गवाही हमारे संतों की पूर्णता, उनके द्वारा संसार का त्याग, अपने देश, अपने परिजनों और सभी परिचितों से उनका अलगाव, उनकी नम्रता और आज्ञाकारिता देती है - यह वह स्वीकारोक्ति है, जिसके लिए हम भी उत्पीड़न सहते हैं।

28. अतः हम आनन्द मनाएँ और एक दूसरे के आनन्द में सहभागी हों, कि परमेश्वर ने हमें ये सब बातें दी हैं, और यह कि हम एक आध्यात्मिक जीवन जीते हैं, जिसमें, यदि हम चाहें, तो हम हर दिन उत्सव मना सकते हैं और अक्षय आनन्द के साथ आनन्दित हो सकते हैं। इसलिए मैं आपसे आग्रह करता हूँ कि हम अपने संघर्ष और हमारे सामने जो स्वीकारोक्ति है, उसे और भी दृढ़ता से थामे रहें: क्योंकि यह अफवाह पहले ही फैल चुकी है कि शासक हमारे मामले पर विचार कर रहे हैं, और राजा का दूत किसी भी क्षण आ सकता है। लेकिन हम ऐसी बातों से हतोत्साहित न

हों: *'यदि परमेश्वर हमारे पक्ष में है, तो हमारा विरोधी कौन हो सकता है?'* (रोमियों 8:31)। यदि उन्होंने अतीत में हमारी सहायता की है, तो वे निश्चित रूप से भविष्य में भी हमारी सहायता करेंगे: हम केवल दृढ़ रहें, केवल अपने आप पर ध्यान दें, और वह हमें हर बात में शक्ति देंगे, ताकि हम अंत तक उसी के प्रसन्न होने के अनुसार जीएं और स्वर्ग के राज्य को प्राप्त करें।

269. द्वार पर उत्पीड़न: आइए हम इसे धैर्यपूर्वक सामना करें, ईश्वर की मदद पर भरोसा करें और उत्पीड़न सहने के लिए - विश्वास के लिए - दिए गए वादों से हौसला लें।

269. 1) द्वार पर उत्पीड़न: आइए हम इसे धैर्यपूर्वक सामना करें, ईश्वर की मदद पर भरोसा करें और विश्वास के लिए उत्पीड़न सहने के वादों से हौसला लें। – 2) हमें विधर्मी लोगों के साथ मेलजोल नहीं करना चाहिए, और विशेष रूप से उन लोगों से बचना चाहिए जो वचन में तो विश्वासयोग्य हैं परन्तु मन में विधर्मी हैं। – 3) मूर्तिभंजन परमेश्वर के वचन के अवतार के सिद्धांत और परमेश्वर का सम्मान करने तथा उसकी उपासना करने की आज्ञा के विरुद्ध युद्ध छेड़ता है। [4, 51]

29. अब हमें संयम के बारे में बात करनी चाहिए, क्योंकि पवित्र लेंट बस आने ही वाला है। लेकिन दूर-दूर तक फैल रही अफवाहें हमें ऐसा करने से रोकती हैं, और हमारे विचारों तथा शब्दों दोनों को अन्य विषयों की ओर मोड़ देती हैं। मैंने आपसे पहले ही कहा है कि शासक हमारे मामले की जांच कर रहा है; और अब, जैसा कि कहते हैं, वह निकोमेडिया के राज्यपाल के माध्यम से धमकियाँ दे रहा है – जिनका, यदि हम ईश्वर-प्रसन्न ढंग से उत्तर दें, वह बर्दाश्त नहीं करेगा और जो उसने योजना बनाई है, उसे शीघ्रता से अंजाम देगा। इसके जवाब में कहने के लिए कुछ भी नहीं है, लेकिन हमें खुद को एक नए उत्पीड़न के लिए तैयार करना चाहिए, इस बात का भरोसा रखते हुए कि जहाँ कष्ट बहुत हैं, वहाँ पवित्र आत्मा के सांत्वना भी बहुत हैं, जैसा कि प्रेरित कहते हैं: *'क्योंकि जैसे मसीह के दुख हम में बहुत हैं, वैसे ही मसीह के द्वारा हमारा सांत्वना भी बहुत है। तो फिर, चाहे हम आपके आराम और उद्धार के लिए दुखित हों— जो उन्हीं कष्टों के सहन करने से होता है जिन्हें हम स्वयं सहते हैं— या आपके आराम और उद्धार से हम स्वयं को सांत्वना देते हों, यह जानते हुए कि जैसे आप हमारे दुखों में सहभागी हैं, वैसे ही आप हमारे आराम में भी सहभागी हैं'* (2 कुरिन्थियों 1:5-7)। इन शब्दों में, प्रेरित ने हमें दिखाया है कि हम एक-दूसरे के साथ दुखों और सांत्वनाओं में सहभागी हैं, जैसे कि हम एक ही शरीर और एक ही आत्मा हों, *'जिस प्रकार'* हमें 'हमारे *बुलावे की एक ही आशा' के लिए* बुलाया गया है (इफिसियों 4:4)। इसलिए, हम हतोत्साहित न हों, बल्कि मसीह के अच्छे सिपाहियों के रूप में परमेश्वर के कार्य के लिए एक साथ दृढ़ रहने का संकल्प लें, अपने हथियार उठाए हुए, *"जो शरीर के नहीं, बल्कि किलों को ढा देने के लिए परमेश्वर की ओर से सामर्थी हैं"* (2 कुरिन्थियों 10:4), अर्थात् विवेक, धैर्य, पवित्रता और सत्य – और इस प्रकार प्रभु के वचन को पूरा करते हुए: *'जब वे तुम्हें एक नगर में सताएँ, तो दूसरे नगर को भाग जाओ'* (मत्ती 10:23) – और जब हम वहाँ जाएँ, तो हमें *इस बात की 'चिन्ता* न करना *कि हम क्या खाएँगे, या क्या पिएँगे, या क्या पहिनेंगे'* (मत्ती 6:31)। क्योंकि उसने स्वयं कहा है: *'मैं तुम्हें न छोड़ूँगा और न त्यागूँगा'* (यहोशू 1:5): इस प्रकार वह वहाँ भी हमारे लिए अपनी दया के द्वार खोलेगा, और हर बात में हमारा सहायक होगा। तो फिर ऐसे वचनों के होते हुए भी हम कैसे न आनंदित हों? हम यह जानकर कैसे प्रसन्न न हों कि हम प्रभु के शिष्य हैं? इसी प्रकार पवित्र प्रेरितों को भी सताया गया, जिनसे प्रभु ने कहा: *'धन्य हो तुम जब वे तुम्हारा अपमान करेंगे और तुम्हें सताएंगे और मेरी खातिर झूठ-मूठ सब प्रकार की बुराई बोलेंगे। आनंदित और प्रसन्न रहो, क्योंकि स्वर्ग में तुम्हारा बड़ा प्रतिफल है'* (मत्ती 5:11-12)। इस प्रकार, वर्तमान समय आनंद और हर्ष का समय है: क्योंकि यह हमें अकथनीय आनंद, अनंत जीवन और एक शाश्वत राज्य प्रदान करता है।

30. *"ग़ैर-यहूदियों के रास्तों पर न जाओ, और सामरीयों के किसी नगर में प्रवेश न करो"* (मत्ती 10:5)। हमें इसे विधर्मियों के संबंध में समझना चाहिए: इसलिए, हम न तो उनके गिरिजाघरों में प्रवेश करेंगे, और न ही उनके घरों में। लेकिन जहाँ कहीं शांति का पुत्र, भक्ति का बीज हो, वहाँ हम ठहरेंगे, और वहाँ हम अपना भोजन करेंगे, जैसे पिछले वर्षों में करते आए हैं। आइए हम उन लोगों से सावधान रहें जो सत्य को धारण करने का दिखावा करते हैं, जो धर्मी नेता होने का दावा करते हैं लेकिन ऐसे नहीं हैं, बल्कि भटक गए हैं, *'धोखा देते और धोखा खाते हुए'* (2 तीमुथियुस 3:13), *'जिनका न्याय धर्मी है'* (रोमियों 3:8)। आइए हम एक अटूट विश्वास और एक निर्दोष जीवन बनाए रखें, न तो एक-दूसरे को कम करते हुए और न ही ठेस पहुँचाते हुए, बल्कि दोनों में ही पूर्ण और परिपूर्ण बने रहें।

31. वर्तमान स्वीकारोक्ति का विषय हमारे प्रभु यीशु मसीह के अवतार के बारे में धर्मसिद्धान्त है। जो कोई यह स्वीकार नहीं करता कि हमारे प्रभु यीशु मसीह को एक चित्र में दर्शाया जा सकता है, वह यह स्वीकार नहीं करता कि वह देह में दिखाई देने योग्य थे: क्योंकि देह में दिखाई देने योग्य होना और प्रतिमा-चित्रण के लिए एक उपयुक्त

वषिय होना, एक ही बात है। इसके अलावा, जो कोई भी प्रभु की पवत्रि प्रतमिा का सम्मान नहीं करता है, वह स्वयं प्रभु का सम्मान नहीं करता है। क्योंकि जो कुछ प्रतमिा पर अंकति है, वह मूल रूप है, और जो कोई भी प्रतमिा को देखता है, वह अपने सामने मूल रूप को देखता है। इसलिए, चाहे कोई प्रतमिा का सम्मान करे या अपमान, या मूर्ति की पूजा करे या न करे, यह समान रूप से मूल पर और, यदि प्रतमिा में प्रभु का चत्रिण है, तो प्रभु के पवत्रि प्रतरिूप ( ) पर भी लागू होता है। इस प्रकार, जो कोई प्रभु के प्रतमिाक को सम्मानति करता है और उनकी प्रतमिा की पूजा करता है, वह प्रभु का सम्मान करता है और उनकी पूजा करता है; लेकनि जो कोई इस प्रतमिाक का सम्मान नहीं करता और प्रतमिा के सामने नहीं झुकता, वह प्रभु का सम्मान नहीं करता और उनकी पूजा नहीं करता। – यद्यपि प्रतमिा-भंजक प्रभु की पूजा करने का दावा करते हैं, वे झूठ बोल रहे हैं। पवत्रि शास्त्र के शब्द उन पर लागू होते हैं: *'वे परमेश्वर को जानने का दावा तो करते हैं, पर अपने कामों से उसे नकारते हैं'* (1 तीमुथयिुस 1:16)। हम, हालाँकि, मसीह और उनकी प्रतमिा की उपासना करते हैं – हम परमेश्वर की माता और उनकी प्रतमिा की उपासना करते हैं – संतों और उनकी प्रतमिाओं की। और यही प्रेरतिों की शक्षिा है जो हमें हमारे पवत्रि पताओं से प्राप्त हुई है। इस वश्विास की इसी प्रतज्ञिा को मैं आप लोगों से, मेरे बच्चों और भाइयों, आग्रह करता हूँ कि आप इसे पूरे और अक्षुण्ण रूप में बनाए रखें, उस पवत्रि आत्मा के द्वारा जो हम में वास करता है। – अत; हमारे लिए प्रार्थना करें, जो दीन हैं, कि प्रभु हमें *'अपना मुँह खोलने के लिए' 'वचन'* प्रदान करें (इफसियिों 6:19), ताकि हम सत्य को नर्भियता से बोल सकें, और हमारी आशा लज्जति न हो, और हम आपके साथ मलिकर हमारे सामने रखा गया कार्य नर्दिोषता से पूरा कर सकें, और हम सभी स्वर्ग के राज्य को प्राप्त कर सकें।

270. एक बार फरि, जैतून के पर्व के अतविाद और सामान्य रूप से सांसारकि जीवन के वरिुद्ध एक फटकार, और इस बात के लिए धन्यवाद कि परमेश्वर ने मठाधीशों को इससे बचाया है

270. 1) एक बार फरि, जैतून के पर्व के अतविादों और सामान्य रूप से सांसारकि जीवन की नदिा, और इस बात के लिए धन्यवाद कि ईश्वर ने मठाधीशों को इससे बचा लयिा है। – 2) हमें उन सामान्य लोगों के लिए शोक करना चाहिए जो दुनयिा की भावना के अनुसार जीते हैं, प्रेरतिों, भवष्यिवक्ताओं और सभी संतों का अनुकरण करते हुए। [4, 52]

1. मैं अक्सर आपके जीवन की प्रशंसा करता हूँ; लेकनि मैं ऐसा चापलूसी के लिए नहीं, बल्कि सचमुच में करता हूँ, उन लोगों के प्रति अपनी सहानुभूति व्यक्त करने के लिए जो संसार के अनुसार जीते हैं, और साथ ही आपको और भी अधकि उत्साही बनाने का प्रयास करते हुए। आप स्वयं जानते हैं कि वहाँ अब क्या हो रहा है: भोज और मद्यपान, गीत और नृत्य, और संसार में शत्रु के कार्यों की इस प्रकार की अन्य सभी रचनाएँ – *'जसिका न्याय न्यायसंगत है'*, जैसा कि लिखा है। लेकनि हमारा जीवन-मार्ग ऐसा नहीं है: हम दनि-रात प्रभु की स्तुति करते हैं, पवत्रि पतिरों द्वारा हमें सौंपे गए वधिान के अनुसार; भजन के बाद भजन, पाठ के बाद पाठ, प्रार्थना के बाद प्रार्थना; फरि—हमारे वचिारों में, वचिारों पर जागरूकता; हमारे हृदयों में, दव्यि वचनों की शक्षिा; साथ ही समय पर मौन और उपयुक्त संवाद; इसके अलावा, हम एक-दूसरे की सेवा करते हैं; सब कुछ नाप-तौल से व्यवस्थति होता है, यद्यपि पर्व के दनिों में आमतौर पर कुछ जलपान दयिा जाता है। क्योंकि सुनो, प्रभु यहूदा से क्या कहते हैं: *'जो तू करने वाला है, उसे जल्दी कर।' फरि भी, मेज पर लेटे हुए उन में से कसिी ने यह नहीं समझा कि उन्होंने यह उससे क्यों कहा। कुछ लोग हैरान थे, क्योंकि यहूदा कोषाध्यक्ष था, जैसा कि यीशु ने उससे कहा था: 'उत्सव के लिए हमें जो चाहिए, वह खरीद ला; या गरीबों को कुछ दे दे।'* क्या आप देखते हैं कि वे उत्सव और गरीबों दोनों के बारे में चंतिति थे? जसि हम भी, जैसा कि आप देख सकते हैं, नम्रता से पूरा करने का प्रयास करते हैं। परन्तु परमेश्वर धन्य हो, जसिने हमें ऐसे जीवन में सहभागी होने के लिए सक्षम बनाया है; *'न तो उन धार्मकि कामों के कारण जो हम ने कएि हैं'* – क्योंकि हमने पृथ्वी पर कोई भलाई नहीं की है – *'बल्कि अपनी दया के अनुसार'* (तीतुस 3:5), उसने हमें इसके लिए बुलाया है। इसीलिए हम में से प्रत्येक को, एक पश्चात्तापी हृदय के साथ, हमेशा कहना चाहिए: *'हे प्रभु, हे प्रभु, मैं क्या हूँ और मेरे पिता का घर क्या है, कि आपने मुझ से इतना प्रेम कयिा?'*

२. और हमारी बुलावा ऐसी है; फरि भी संसार में आपको इस प्रकार की कोई वस्तु वरिले ही मलिेगी। क्योंकि वहाँ, इस युग की चन्तिाओं और कार्यों के बीच, धन के आत्म-वञ्चन और अन्य कष्टों में रात के बाद दनि आता है; इस प्रकार कि मनुष्य को साँस लेने का भी समय नहीं मलिता: अब वे एक-दूसरे के साथ षड्यंत्र रचते हैं, अब वे शत्रुता में टकराते हैं; *'शपथ और झूठ, हत्या, चोरी और व्यभचिार देश भर में फैले हुए हैं'*, जैसा कि भवष्यिवाणी का वचन कहता है (होशे 4:2), और इसके अलावा और भी बहुत कुछ, जन्हिें गनिाना आसान नहीं है। यह सब याद करने के बाद, धन्य क्रसिोस्टोम ने कहा कि इस संसार से शायद ही कोई एक आत्मा भी बच पाएगी। एक भयानक कथन, फरि भी एक सच्चा कथन। और एक अच्छी अंतरात्मा वाला व्यक्ति इस पर दुख और शोक करने से खुद को रोक नहीं सकता।

क्योंकि क्या हम सब एक-दूसरे के भाई नहीं हैं? क्या हम सभी एक ही रक्त के नहीं हैं? क्या हम सभी एक ही धूल से नहीं बने हैं? – यदि कोई किसी जानवर को अपनी तबाही की ओर किसी खाई में गिरते हुए देखकर दया महसूस किए बिना नहीं रह सकता, तो क्या हमारे भाइयों और साथी विश्वासियों के विनाश को देखना और भी अधिक दयनीय नहीं है? इसी कारण, धन्य प्रेरित ने मसीह के क्रूस के शत्रुओं के लिए रोया, और उनके लिए हृदय की अनवरत पीड़ा के साथ प्रार्थना की (रोमियों 9:2-3)। भविष्यवक्ता यिर्मयाह ने इस्राएल के लिए रोया, और उसकी विलाप का वर्णन पवित्रशास्त्र में विस्तार से किया गया है। महान मूसा ने परमेश्वर से पुकारा: *'और अब, यदि आप उनके पाप को क्षमा करें—परन्तु यदि नहीं, तो मुझे अपनी पुस्तक से मिटा दें'* (निर्गमन 32:32); और संतों में से प्रत्येक, समान रूप से करुणा से भरकर, उन लोगों के लिए प्रार्थना करना कभी नहीं भूले जिन्होंने खुद को इसी तरह की स्थिति में पाया। – इसी प्रकार, यदि हम उनके पदचिन्हों पर चलना चाहते हैं, *तो 'तुम में से हर एक न केवल अपनी-अपनी बातों पर, बल्कि दूसरों की बातों पर भी ध्यान दे'* (फिलि. 2:4), बल्कि संसार के लिए भी प्रार्थना करें, उन लोगों के लिए अपने हृदय में दया और शोक महसूस करते हुए जो व्यभिचारी जीवन जी रहे हैं, जो विधर्म के वश में हैं, जो मूर्तिपूजा से अंधे हो गए हैं, और संक्षेप में: *'सभी लोगों के लिए विनती और प्रार्थना करो'*, जैसा कि प्रेरित ने हमसे कहा है (1 तीमु. 2:1)। इस प्रकार करने से, हम किसी और से पहले, खुद को लाभ पहुँचाएंगे, पश्चाताप करके और खुद को कामुक आदतों से शुद्ध करके; इनसे मुक्त होकर, हम हमारे प्रभु मसीह यीशु में अनंत जीवन प्राप्त करने के योग्य समझे जाएंगे।

271. लेंट ने कोलाहल और अफवाहों को समाप्त कर दिया है, और सामान्य लोगों को धर्मपरायणता के जीवन के लिए बुलाया है।

271. 1) लेंट ने कोलाहल और अफवाहों को समाप्त कर दिया है, और सामान्य लोगों को धर्मपरायणता के जीवन के लिए बुलाया है। – 2) उपवास आत्मा को नवीनीकृत करता है और इसे ईश्वर का निवास स्थान बनाता है; हमें इसे आनंद के साथ स्वागत करना चाहिए और इसका पालन करना चाहिए। – 3) लेकिन शारीरिक उपवास के साथ-साथ, हमें आध्यात्मिक रूप से भी उपवास करना चाहिए, और वासनाओं तथा कामनाओं से दूर रहना चाहिए, जिन्हें शत्रु आकर्षक दिखाता है, जबकि वास्तव में वे दोनों घृणित और कड़वी हैं। – 4) इसके अलावा, हमें चर्च के भीतर और बाहर, उपवास के नियमों का पालन करने में लगनशील होना चाहिए। [4, 54]

3. लेंट का मौसम, साल के बाकी समय की तुलना में, एक शांत बंदरगाह की तरह है जहाँ, एक साथ इकट्ठा होकर, सभी लोग आध्यात्मिक शांति पाते हैं। क्योंकि यह समय न केवल संन्यासियों के लिए, बल्कि सामान्य लोगों, युवा और वृद्धों, अधीनस्थों और अधीनस्थों, राजाओं और पुरोहितों, हर तरह के व्यक्ति और हर उम्र के लिए उद्धारकारी है। शहर और गाँव शोर और हंगामे से शांत हो जाते हैं; इसके बजाय, भजन-गायन और स्तुति-गीत, प्रार्थनाएँ और विनती सर्वत्र घोषित की जाती हैं, जिनके द्वारा हमारे दयालु ईश्वर, प्रसन्न होकर, हमारी आत्मा को शांति देते हैं, यदि हम उनके सामने एक सच्चे दिल से, भय और कांपते हुए, रोते हुए और भविष्य में सुधार और उन्नति का वादा करते हुए, प्रणाम करें। – परन्तु कलीसिया के अगुवे सामान्य जन को सम्बोधित करें; और मैं, जो आप सबसे सम्मानित लोगों का प्रधान नियुक्त किया गया हूँ, आपको संक्षेप में वह कहना चाहूँगा जो उचित है।

४. उपवास आत्मा का नवीनीकरण है; क्योंकि प्रेरित कहते हैं: जैसे *'हमारी बाहरी मनुष्यता क्षीण हो रही है'*, वैसे ही *'हमारी भीतरी मनुष्यता दिन-प्रतिदिन नवीनीकृत हो रही है'* (२ कुरिन्थियों ४:१६)। यदि यह नवीनीकृत होती है, तो यह मूल सौंदर्य की प्रतिमा में सुशोभित हो उठती है; और, सुंदर बनकर, यह प्रेमपूर्वक उस एक को अपनी ओर खींचती है जिसने कहा: 'मैं और पिता *आकर उसके साथ अपना निवास करेंगे'* (यूहन्ना 14:23)। यदि उपवास का नियमित रूप से लाभकारी प्रभाव इतना है कि यह हमें परमेश्वर का निवास स्थान बना देता है; तो हमें इसे भोजन की सादगी और मितव्ययिता से बोझिल हुए बिना, आनंद के साथ अपनाना चाहिए: क्योंकि हम देखते हैं कि प्रभु, जो विभिन्न और प्रचुर भोजन प्रदान करने में सक्षम हैं, ने रेगिस्तान में केवल रोटी और पानी से हजारों लोगों को खिलाया; इसके अलावा, जब उत्साह से ओतप्रोत हो, तो ऐसे भोजन की अपरिचितता अप्रिय नहीं रहेगी।

5. हालाँकि, उपवास केवल अल्प भोजन तक ही सीमित नहीं है, बल्कि इसमें सभी प्रकार के बुरे कार्यों से परहेज़ करना भी आवश्यक है, जैसा कि हमारे पवित्र पिताओं ने सिखाया है। अतः हम निराशा, लापरवाही, सुस्ती, ईर्ष्या, कट्टरता, क्रोध, आत्म-संतुष्टि और स्वार्थी इच्छा से परहेज़ करें; हम कामुक वासना से भी परहेज़ करें, क्योंकि यह बहुआयामी सर्प उन पर भी हमला करता है जो उपवास करते हैं। 'वह देखने में सुन्दर और खाने में स्वादिष्ट था, उस फल ने मुझे मार डाला,' जैसा कि हम धर्मग्रंथों में सुनते हैं। लेकिन ध्यान दें कि उसे दिखावे में 'लाल' कहा जाता है, स्वभाव में नहीं। जैसे कोई व्यक्ति, बाहर से आकर्षक लाल रंग का अनार लेकर, उसे अंदर से सड़ा हुआ पाए, वैसे ही कामवासना की मिठास भी है: यह झूठी तरह से अज्ञात मिठास का वादा करता है, लेकिन एक बार तृप्त हो जाने

पर, यह सबसे कड़वी पत्ति साबति होती है—एक दोधारी तलवार से भी तेज, जो फँसी हुई आत्मा को नगिल जाती है: इस प्रकार हमारे पूर्वज आदम, साँप के छल से, पीड़ति हुए, क्योंकि निषिद्धि फल को छूने के कारण, उन्हें जीवन के बजाय मृत्यु मलिी। उसी भाग्य ने उन सभी को घेरा है, जो उस समय से अब तक उसी तरह से बहकाए गए हैं। क्योंकि जैसे वह स्वयं, अंधकार होते हुए भी, स्वयं को प्रकाश के स्वर्गदूत के रूप में बदल लेता है, वैसे ही वह बुराई को अच्छाई में, कड़वे को मीठे में, कुरूप को सुंदर में, घातक को जीवन-दायक में बदलने में भी सक्षम है - और इस प्रकार, हमेशा दुष्ट, वह लगातार दुनिया को धोखा देता रहता है। जहाँ तक हमारी बात है, हम उसके ऐसे जालों से धोखा नहीं खाएंगे, और न ही हम उन पक्षियों जैसी नयिति को भुगतेंगे जो लालच में आकर दखिाई देने वाले भोजन पर झपटते हैं और शकिारी के जाल में फँस जाते हैं; बल्कि हम, तर्क के माध्यम से, बुराई के आकर्षक आवरण को हटा देंगे, उसे जैसा है वैसा ही नग्न देखेंगे, और इस प्रकार आसानी से उससे बचेंगे।

6. इसके अलावा, भजनों के गायन के दौरान हम सतर्क रहें, अपने भजनोपदेशों में उत्साही रहें, और पठन में ध्यान दें; हम प्रत्येक घंटे के नर्धारित समय पर घुटने टेकें और अपने हाथों से परिश्रम करें, क्योंकि काम करना अच्छा है, और जो काम नहीं करता उसे भोजन का भागीदार होने के अयोग्य समझा जाता है; हम एक-दूसरे के बोझ उठाएँ, और सबसे बढ़कर हम *'एक-दूसरे के प्रति दयालु, करुणामय, विनम्र, सौम्य, धैर्य और अच्छे कामों से भरे'* होने का प्रयास करें (इफसियों 4:32; याकूब 3:17)। *'और परमेश्वर की शान्ति, जो सब समझ से परे है, मसीह यीशु में तुम्हारे हृदयों और मन की रक्षा करेगी'* (फलिि. 4:7); और यहाँ तुम प्रभु के पुनरुत्थान के उज्ज्वल दनि तक नर्दोष होकर पहुँचने के योग्य ठहरो, और आने वाले युग में, मरे हुओं के पुनरुत्थान के बाद, स्वर्ग के राज्य को प्राप्त करो।

272. आत्मा के घर को सांसारिक घर से अधिक सावधानी से बनाया जाना चाहिए

272. 1) आत्मा के घर को सांसारिक घर की तुलना में अधिक सावधानी से बनाया जाना चाहिए। – 2) आत्मा के घर की निर्माण सामग्री सद्गुण हैं – ईश्वर और दूसरों का भय, जिनमें संयम का बहुत महत्व है। – 3) दैनिक उपवास दो या तीन दिनों के उपवास से बेहतर है, जैसा कि दैवी आज्ञाएँ और पूर्वजों के उदाहरण दोनों प्रमाणित करते हैं। [4, 55]

7. सांसारिक मनुष्य, जब वे अपने लिए एक महँगा घर बनाते हैं, तो वे दिन-रात आराम नहीं करते, काम करते हैं, सोचते हैं, और चीजों का ध्यान रखते हैं, जब तक कि वे अपनी इच्छित परियोजना पूरी नहीं कर लेते; और इस काम के प्रति उनका उत्साह इतना अधिक होता है कि उनका पूरा मन वहीं (निर्माण कार्य में) लगा रहता है, और वे छत और छत के ऊपर के हिस्से को बेहतर बनाने, विभिन्न प्रकार के संगमरमर से फर्श को सजाने, और बाकी सब चीजों को एक उपयुक्त भव्यता देने के हर संभव तरीके सोचते रहते हैं, ताकि सब कुछ ऐसी चीजों के प्रेमियों को एक सुखद दृश्य प्रस्तुत कर सके; और यदि कोई उन्हें इस तरह के श्रम और प्रयासों से भटकाने की कोशिश करे, तो वे उससे नाराज़गी से पेश आएँगे, मानो यह कोई बड़ी ग़लती हो। – फिर भी हम, जो नश्वर बल्कि अमर पदार्थ का एक आवास बना रहे हैं, जो पत्थर और लकड़ी से नहीं बल्कि आध्यात्मिक गुणों और अनुग्रहों से कुशलतापूर्वक बुना गया है—क्या हम वास्तव में आत्मसंतुष्ट हो जाएँगे और इस कार्य के प्रति अपने उत्साह में, उनसे बहुत पीछे रह जाएँगे? क्या यह सभी अन्यायों में सबसे बड़ा नहीं होगा? वह भवन, जिसमें इतने सारे और इतने कामवासना-ग्रस्त लोग आकर रहे हैं, और जिसमें इतने सारे स्वामी आकर गए हैं, अंततः परित्यक्त हो जाएगा, जर्जर हो जाएगा और नष्ट हो जाएगा; फिर भी यह पवित्र आत्मा को ग्रहण करती है, क्योंकि, जैसा कि दिव्य प्रेरित कहते हैं, *'हम जीवते परमेश्वर का मन्दिर हैं, और परमेश्वर का आत्मा हम में वास करता है'* (1 कुरिन्थियों 3:16; 2 कुरिन्थियों 6:16); और जब ये लोग, जो पवित्र आत्मा के अधिकारी हैं, यहाँ से चले जाते हैं, तो वह उन पर उतरता है और अनन्तकाल के लिए अविभाज्य रूप से उनके साथ वास करता है।

8. परन्तु ऐसी इमारत किस पदार्थ से बनी है? – हृदय में ग्रहण की गई और स्थापित की गई सद्गुणों से। – सबसे पहले, परमेश्वर के भय को लो, और उसे एक नींव के रूप में रखो, क्योंकि *'प्रभु का भय ज्ञान का आरम्भ है'* (भजन संहिता 110:10); फिर विवेक, धैर्य, पवित्रता और सत्य, जो एक दूसरे से दृढ़ता से जुड़कर और प्रेम से एक होकर, *'गठित और परिपूर्ण होते हैं'* (इफसियों 4:16) *और 'प्रभु में पवित्र मंडली बनते और बढ़ते हैं'* (इफसियों 2:21), जैसा कि लिखा है। भाइयो, हम अपने भीतर हमेशा ऐसा ही एक मंदिर बनाएं, और उसे सद्गुणों की हर सुंदरता से सजाना कभी बंद न करें, ताकि हम पवित्र आत्मा को इसका निवासी बनाने के योग्य ठहरें, और अपने जीवन की आकर्षक सुंदरता के द्वारा स्वर्गदूतों और संतों की दृष्टि अपने ऊपर खींचें। – परन्तु चूँकि संयम भी एक गुण है, और हम अब इसे अन्य गुणों से अधिक अभ्यास कर रहे हैं, तो हम परमेश्वर की महिमा करें कि हमने दौड़ के इस एक चरण को पहले ही पूरा कर लिया है। हमारे चेहरे पहले जैसे नहीं रहे; फिर भी यह एक अच्छा परिवर्तन है, जो संयम की पीलापन से

दमक रहा है। हमारे मुँह विलंब से खाने के कारण पित्त से कड़वे हों; फिर भी हमारी आत्मा आशा से ऊँचा उठाकर प्रचुर रूप से मीठी हो जाती है। अतःहम आनन्द मनाएँ, क्योंकि हमने उत्तम मार्ग चुना है और अपना हृदय उसी पर स्थिर किया है।

९. शायद कोई कहे कि प्रतिदिन भोजन करने से उपवास की पूर्णता में कमी आती है। – बिल्कुल नहीं; क्योंकि अगर ऐसा होता, तो प्रभु हमें अपनी रोज़ी के लिए रोज़ाना माँगने की आज्ञा नहीं देते; न ही भविष्यवक्ता एलिया को रेगिस्तान में एक काग़ द्वारा रोज़ाना भोजन मिलता; न ही संत पॉल, जिन्होंने दिव्य एंथनी से पहले रेगिस्तान में रहना शुरू किया था, को स्वर्ग से अपनी रोज़ी मिलती; और न ही स्वयं महान संत एंथनी ने एक दिन या एक सप्ताह से अधिक के उपवास की तुलना में दैनिक भोजन को प्राथमिकता दी होती। और मुझे लगता है कि यही कारण है। – चूँकि हमारा शरीर, पूरे दिन परिश्रम करने के बाद, थक और क्लान्त हो जाता है, और उसे आराम और पोषण की आवश्यकता होती है; इसलिए सृष्टिकर्ता ने इसे इस तरह से बनाया है कि यह दैनिक भोजन से पोषण पाकर फिर से आगे की मेहनत करने में सक्षम हो सके – बजाय इसके कि यह थककर कमजोर हो जाए, जैसा कि उन लोगों के साथ होता है जो दो, तीन, या उससे अधिक दिनों तक बिना भोजन के रहते हैं, – जिसके परिणामस्वरूप वे दूसरों के साथ झुकने में, न ही उतनी जोर से गाने में, जितना उन्हें करना चाहिए, और न ही आज्ञाकारिता के अन्य कार्य करने में सक्षम होते हैं। इस प्रकार, दैनिक भोजन का सेवन केवल दुर्बल लोगों के लिए ही नहीं, बल्कि हमारे पूर्वजों द्वारा हमें सौंपे गए नियम के अनुसार सिद्ध लोगों को भी प्रदान किया जाता है। अब आप देख सकते हैं कि हमारे बीच सब कुछ हमारे पूर्वजों की परंपरा के अनुसार स्थापित है। और हमें बार-बार शरीर का स्वास्थ्य और आत्मा की शक्ति प्रदान की जाए, ताकि हम अंतिम दिन की प्रतीक्षा करते हुए जीवित और सच्चे परमेश्वर की सेवा कर सकें, जिस दिन आप सभी संतों के साथ, सूर्य की तरह चमकें और स्वर्ग के राज्य को विरासत में प्राप्त करें।

273. उपवास का सप्ताह समाप्त हो गया है। शरीर को वश में कर, हमने आत्मा को सद्गुणों से परिपूर्ण किया है, ताकि वह वधू-वर मसीह को प्रसन्न हो सके।

273. 1) उपवास का सप्ताह बीत गया है। शरीर को वश में कर, हमने आत्मा को सद्गुणों से परिपूर्ण किया है, ताकि वह वधू-वर मसीह को प्रसन्न कर सके। – 2) आत्मा मसीह की वधू है: अतःहमें उसे उसके वधू-वर के लिए पवित्र रखना चाहिए। – 3) और इस उद्देश्य के लिए, हमें शरीर को वश में करना होगा। – 4) यह एक दुखद कार्य है, लेकिन इसका पुरस्कार महान है। [4, 57]

10. पहले सप्ताह उपवास करने के बाद, अब हम एक-दूसरे को पहले की तुलना में कुछ अलग दिखते हैं; हमारा वजन कम हो गया है और हम पीले पड़ गए हैं। लेकिन जैसा कि प्रेरित कहते हैं, *'यद्यपि हमारा बाहरी मनुष्य क्षीण हो जाता है, तौभी हमारा भीतरी मनुष्य दिन-दिन नया होता जाता है'* (2 कुरिन्थियों 4:16)। क्योंकि जैसे शरीर, जब अच्छी तरह से पोषित होता है, तो आमतौर पर फलता-फूलता और भरा हुआ दिखाई देता है, वैसे ही आत्मा भी संयम के माध्यम से आध्यात्मिक रूप से नवीनीकृत होती है, ताकि शरीर को वश में करके, हमने आत्मा पर सौंदर्य प्रदान किया है— वही सौंदर्य जिसके लिए संत दाऊद ने प्रार्थना की थी: *'हे प्रभु, अपनी इच्छा से, मेरे भले काम के लिए मुझे शक्ति दे'* (भजन संहिता 29:8)। इसी सुंदरता के कारण धन्य पौलुस पुष्टि करते हैं कि उन्होंने हमें मसीह के लिए सगाई कर दी है: *'क्योंकि मैं तुम्हें एक पति के लिए सगाई कर चुका हूँ कि तुम्हें मसीह के लिए एक पवित्र कुँवारी के रूप में प्रस्तुत करूँ। परन्तु मुझे डर है, कहीं ऐसा न हो कि जिस प्रकार साँप ने अपनी चालाकी से हव्वा को धोखा दिया, उसी प्रकार तुम्हारा मन मसीह के प्रति भक्ति की सरलता और पवित्रता से भटक जाए,'* (2 कुरिन्थियों 11:2–3)। क्या आप इस उपहार की महानता देखते हैं, कि हमें मसीह को अपना वरा बनाने के लिए योग्य समझा गया है? क्या आप देखते हैं कि जो हमें सगाई करता है, वह हमारी दृढ़ता के लिए कैसे भयभीत है?

11. इस प्रकार, हमारी आत्मा एक सगाई हुई कन्या के समान है। जैसे एक ऐसी कन्या विवाह के समय के आने तक स्वयं को शुद्ध रखने के लिए हर संभव प्रयास करते हुए पुरुषों से मिलने से परहेज़ करती है: इसी प्रकार आत्मा को भी, पूरी लगन के साथ, पाप की भ्रष्ट करने वाली वासनाओं से स्वयं को अंत तक शुद्ध रखना चाहिए, जब, अपने शरीर के वधू-कक्ष से प्रस्थान करके, यदि वह सुन्दर, पुण्यों से दमकती हुई हो, तो वह पवित्र स्वर्गदूतों को प्रसन्न करेगी; परन्तु यदि पापों से विकृत पाया गया, तो यह मसीह का अपमान करते हुए दुष्टात्माओं को प्रसन्न करेगा – यह एक विचार और शोक का विषय है।

12. इसी कारण हम अपने शरीर को दंडित करते हैं और उसके साथ क्रूरता के कगार पर पहुँचने वाली कठोरता से पेश आते हैं, इस प्रकार, लगाम की तरह, मांस की प्रवृत्तियों को रोकते हैं, कहीं ऐसा न हो कि वह नाविक—मन— को पानी में फेंक दे, न केवल इस मौजूदा उपवास के समय में, बल्कि हमारे पूरे जीवन भर। क्योंकि तपस्या का जीवन,

यदि आवेगों पर अंकुश न लगाना, विचारों पर विजय न प्राप्त करना, और अदृश्य शत्रुओं के विरुद्ध निरंतर संघर्ष न करना हो, तो और क्या है?

13. यह शरीर के लिए कष्टदायक है; परन्तु *'क्योंकि हमारी हल्की क्लेश, जो क्षणिक है, हमारे लिए एक बहुत बड़ी और अनन्त महिमा का भार उत्पन्न करती है, जब हम दिखाई देने वाली वस्तुओं पर नहीं, बल्कि दिखाई न देने वाली वस्तुओं पर दृष्टि बनाए रखते हैं'* (2 कुरिन्थियों 4:17-18)। इसलिए, इन अदृश्य आशीषों के लिए, *'जिनमें स्वर्गदूत झाँकने के लिए लालायित हैं'* (1 पतरस 1:12), वर-कन्या के वधू मसीह के लिए, जिनके साथ हमारा सगाई का रिश्ता है, मैं विनती और प्रार्थना करता हूँ कि हम अपने आत्मा को बुरे कर्मों और उन अशुद्ध विचारों से शुद्ध रखें जो हमें कलंकित करते हैं, जैसा कि प्रभु ने कहा है, किसी भी बुरे काम के बारे में बिल्कुल भी न सोचें: क्योंकि आग की तरह, कामुकता विचारों से ही भड़कती है। परन्तु आइए, अब से हम अपने आपको वासनाओं से मुक्त रखें, और उनके आकर्षण की पहली ही हलचल पर प्रलोभक को दूर भगाएँ, और आइए हम अपने आत्मा को अच्छे कर्मों से प्रकाशित करें, और अपने सामने रखी गई संयमशीलता के लिए अपना सम्पूर्ण हृदय अर्पित करें, ताकि, यहाँ से पवित्रता के साथ प्रस्थान करके, हम अनकही आनंद के साथ स्वर्ग में आरोहण करें और वहाँ मसीह के स्वर्गीय कक्ष के आनंद का अनुभव करने के योग्य समझे जाएँ।

274. प्रतिमा- भंजकों का आक्रमण हुआ। वे डटे रहे

274. 1) प्रतिमा-भंजकों का आक्रमण हुआ। हम डटे रहे। वह हमें प्रोत्साहित करते हैं, यह आश्वासन देते हुए कि ईश्वर सभी बातों को सहन करने की इस तत्परता को स्वयं कर्म के रूप में स्वीकार करेंगे। – 2) उपवास पर। हम स्वेच्छा से जारी रखेंगे, लेकिन अपनी मर्जी से नहीं। – 3) वह उपवास के श्रम की प्रशंसा करते हैं, और – 4) हमें हर काम को उसके समय पर करने के लिए आमंत्रित करते हैं। [4, 61]

14. कल उथल-पुथल थी, आज शांति है; कल हलचल थी, आज शांति है। परन्तु परमेश्वर धन्य हो, जिसने प्रलोभन को दूर कर दिया और हमें दृढ़ बने रहने के लिए शक्ति दी, यहाँ तक कि हमारे विरुद्ध जो धमकी दी गई थी, उसकी प्रतीक्षा करते हुए भी। ऐसे ही सच्चे मसीही हैं! ऐसे ही सच्चे भिक्षु हैं! वे सदाचार के लिए प्रतिकूलता का सामना करने के लिए हमेशा तैयार रहते हैं और ईश्वर की आज्ञाओं से ऊपर कुछ भी नहीं मानते। वे (शत्रु और उत्पीड़क), आकर, जो कहना था कह गए – और चले गए, हमें भयभीत करने के बजाय, बल्कि अपने ही आचरण से स्वयं लज्जित होकर। परन्तु प्रभु तुम्हें, उनके निमित्त सताए जाने का चुनाव करने के लिए, पूर्ण प्रतिफल प्रदान करेंगे। क्योंकि, दया में धनी होने के कारण, वह आमतौर पर उन लोगों को मुकुट पहनाते हैं जो अच्छा चुनते हैं, यहाँ तक कि एक ही दृढ़ संकल्प के लिए भी। यह प्रलोभन अभी दूर नहीं हुआ है, बल्कि अभी भी मंडरा रहा है; क्योंकि हर जगह अधिकारियों के आदेश हैं कि कोई भी विधर्मी विचारों में शामिल हुए बिना न रहे। इसलिए, आइए हम उस बात पर ध्यान दें जो प्रेरित कहते हैं: *'बाहर वालों के प्रति समझदारी से चलो, और समय का पूरा लाभ उठाओ। तुम्हारा वचन सदा अनुग्रह से परिपूर्ण और नमक से स्वादित हो, जिससे तुम जान सको कि तुम्हें हर एक के उत्तर में क्या कहना है'* (कुलुस्सियों 4:5-6)। यहाँ वह हमें निर्देश देते हैं कि हम लापरवाही से स्वयं को परीक्षा में न डालें, और न ही परमेश्वर के वचन के विषय में चुप रहें; क्योंकि प्रभु कहते हैं, *'यदि कोई पीछे हटता है, तो मेरी आत्मा उससे प्रसन्न नहीं होती'* (इब्रानियों 10:38)। लेकिन इतना ही काफी है।

15. उपवास पहले ही काफी आगे बढ़ चुका है, और हमें और भी अधिक उत्साह के साथ आगे बढ़ने के लिए प्रेरित करता है, जैसा कि प्रत्येक व्यक्ति चुनता है, *'चाहे दुख से हो या आवश्यकता से, क्योंकि परमेश्वर प्रसन्न मन वाले* दाता *से प्रेम करता है'* (2 कुरिन्थियों 9:7)। हालाँकि, सामूहिक जीवन का नियम सभी को अपनी मनमर्जी करने की अनुमति नहीं देता; परन्तु आज्ञाकारियों के लिए आत्म-संयम की सामान्य सीमा यह है: अपनी इच्छा को वश में करना।

16. उपवास अच्छा है, क्योंकि यह वासनाओं को वश में करता है और शरीर को आत्मा के अधीन करता है; आँसू अच्छे हैं, क्योंकि वे हृदय को पापों से शुद्ध करते हैं और इसे परमेश्वर के सामने पवित्र प्रस्तुत करते हैं; प्रार्थना अच्छी है, क्योंकि यह मन को ऊँचा उठाती है और इसे परमेश्वर का साथी बनाती है; प्रेम अच्छा है, क्योंकि यह सार्वभौमिक रूप से अपने स्वार्थ को त्यागकर पड़ोसी के प्रति प्रेम को प्राथमिकता देता है; उत्साह अच्छा है, क्योंकि यह हमारे श्रमों को हल्का करता है और आत्मा को युवा बनाता है, और वृद्धों को युवा-सी चपलता से कार्य करने में सक्षम बनाता है।

१७. अत; हम प्रसन्नचित्त और उत्साही रहें: जब भजन-गाने का समय हो, तो हम उत्साह के साथ उसमें शीघ्रता करें; जब काम का समय हो, तो हम परिश्रम से काम करें; जब मौन का समय हो, तो हम बुद्धिमानी से मौन

रहें; जब बातचीत का समय हो, तो हम संयम से बोलें; संक्षेप में, हमें सब कुछ उचित और व्यवस्थित तरीके से करना चाहिए, जैसा कि हमें आज्ञा दी गई है, और हर तरह के भ्रम और जल्दबाज़ी से बचना चाहिए। जितनी प्रथा है उतनी प्रणाम हों, और जब हमारी शक्ति अनुमति दे, तब हमारी शारीरिक सेहत को बनाए रखते हुए, सामान्य स्तुति की जाए। – और शान्ति का परमेश्वर आपको दिनों की रानी, मसीह के महिमामय पुनरुत्थान तक ले जाए, और आपको स्वर्ग का राज्य प्रदान करे, जहाँ *'न खाने-पीने का, परन्तु धार्मिकता और पवित्र आत्मा में शान्ति और आनन्द' है* (रोमियों 14:17), जिससे परमेश्वर हमें हमारे प्रभु यीशु मसीह के द्वारा समृद्ध करे।

275. किसी को भी विधर्मीयों के साथ मेलजोल नहीं करना चाहिए

275. 1) हमें विधर्मियों के साथ मेलजोल नहीं करना चाहिए। यद्यपि इसके लिए हम सताए जाते हैं, फिर भी हम ईश्वर की सहायता से इसे सहन करते हैं। – 2) धन्य हैं वे जो मसीह के दुखों में सहभागी होते हैं। – 3) अतः हमें हौसला रखना चाहिए। [4, 62]

18. मठ के बाहर, हमने यथासंभव और परिस्थितियों के अनुकूल यहाँ बस गए। अब, हालाँकि, जब हमारे उत्पीड़क मसीह के लिए हमारा पीछा नहीं करते हैं, तो हमें भविष्यद्वाणी के शब्दों पर ध्यान देना चाहिए: *'उनके बीच से निकल जाओ और अलग हो जाओ, प्रभु कहते हैं'* (यशायाह 52:11; 2 कुरिन्थियों 6:17)। यदि अन्य इस संबंध में अलग व्यवहार करते हैं, तो वे स्वयं न्याय के दिन प्रभु के सामने अपना हिसाब देंगे। हालाँकि, मुझे ऐसा लगता है कि उनके साथ चलना विधर्मी लोगों के साथ हमारे संबंधों में उदासीन होने के बराबर है। देखिए कि उनका अनुसरण न करना हमें संसार से कैसे दूर करता है, और साथ ही दुख, कठिनाई, भूख, जेल और मृत्यु की ओर ले जाता है। *'पर इन सब बातों में हम उस की दया से जीते हैं जिस ने हम से प्रेम किया'* (रोमियों 8:37), जो, जब वह अपनी आत्मा के लिए प्यासी किसी आत्मा को देखता है, तो उसे अपने लिए दुख सहने की शक्ति प्रदान करता है, जैसा कि चालीस शहीदों, जिनकी स्मृति हम अब मनाते हैं, अन्य लोगों के साथ गवाही देते हैं; क्योंकि हम यह नहीं कह सकते कि वे हमसे अलग स्वभाव के थे; परन्तु चूंकि उन्होंने परमेश्वर से सच्चे हृदय से प्रेम किया, इसलिए उन्हें अपनी दुर्बल देह में, अदृश्य शत्रु पर विजय प्राप्त करने और ऐसा कारनामा करने की शक्ति प्रदान की गई, जिसकी सभी मसीही प्रशंसा करते हैं।

19. और धन्य है वह जो थोड़े से भी अंश में मसीह के दुखों में सहभागी होने के योग्य समझा गया है: सताया गया, जैसे वह सताया गया; पीटा गया, जैसे वह पीटा गया; कोड़ों से प्रहार सहन किया, जैसे उसने सहन किया; अपमानित किया गया, जैसे वह अपमानित किया गया; कैद किया गया, जैसे वह कैद किया गया। अब इस पर विचार करें कि यह क्यों लिखा गया है: *'यदि हम उसके साथ मरते हैं, तो हम उसके साथ जीवेंगे भी; यदि हम धीरज धरते हैं, तो हम उसके साथ राज्य भी करेंगे; यदि हम उसे नकारते हैं, तो वह भी हमें नकार देगा; यदि हम अविश्वासी होते हैं, तो वह विश्वासयोग्य बना रहता है, क्योंकि वह स्वयं को नकार नहीं सकता'* (2 तीमु. 2:11–13)। आप देख सकते हैं कि इन वादों और चेतावनियों का स्वभाव और विस्तार क्या है।

20. तो फिर, हम हियाव करें और आगे बढ़ें—कहीं ऐसा न हो कि हम मसीह की कृपा से पहले ही झेली गई पीड़ाओं: निर्वासन, कैद, कोड़ों की मार; और क्या कहने की ज़रूरत है? क्या हम सभी जेल में नहीं रहे हैं? लेकिन जीवन का ऐसा साझा करना दुख का भी साझा करना है। क्योंकि *'यदि एक अंग पीड़ित होता है, तो सभी अंग उसके साथ पीड़ित होते हैं; यदि एक अंग का सम्मान होता है, तो सभी अंग उसके साथ आनंदित होते हैं'* (1 कुरिन्थियों 12:26)। इसलिए हम *'एक ही देह और एक ही आत्मा'* बनें और हमेशा ऐसे ही रहें, *'जिस एक ही आशा के लिए हमें बुलाया गया है'* (इफिसियों 4:4), मसीह को अपना सिर मानते हुए, ताकि हम परमेश्वर को प्रसन्न कर सकें और स्वर्ग के राज्य को प्राप्त कर सकें।

276. यह कहानी बताती है कि कैसे, बुल्गारिया में, धर्मनिष्ठ ईसाई पवित्र उपवास के दौरान मांस खाने की तुलना में मृत्यु को सहन करने के लिए अधिक तैयार थे; और इससे वह एक सबक सीखते हैं – मृत्यु तक प्रतिमा-भंजन के खिलाफ दृढ़ खड़े रहना।

276. एक कथा कही जाती है कि कैसे बुल्गारिया में, धर्मनिष्ठ ईसाइयों ने पवित्र लेंट के दौरान मांस खाने के बजाय मृत्यु को सहन करने को अधिक प्राथमिकता दी; और इससे हम एक सबक सीखते हैं – मृत्यु तक मूर्तभिंजन के विरुद्ध दृढ़ खड़े रहने का। [4, 63] इस उपदेश में, मैं आपको एक विशेष कथा के माध्यम से कुछ सांत्वना देना चाहता हूँ। यह कथा इस प्रकार है। बुल्गारिया में, जैसा कि इस मामले को अच्छी तरह जानने वाले बताते हैं, वहाँ के शासक ने एक दुष्ट फरमान जारी किया, जिसमें आदेश दिया गया कि ईसाइयों और हमारे बंधक भाइयों को पवित्र लेंट के मौसम के दौरान मांस खाना चाहिए; इसके अलावा, जो इस फरमान का पालन करते थे उन्हें क्षमा कर दिया जाना था, जबकि

जो अवज्ञा करते थे उन्हें मृत्युदंड दिया जाना था। उस दुष्ट व्यक्ति का फरमान लागू हो गया; लोग अपनी पत्नियों और बच्चों के साथ इकट्ठा हुए; बहुत रोना-धोना और विलाप हुआ: कुछ ईसाई धर्म की रक्षा के लिए, तो कुछ शारीरिक मृत्यु के डर से; अंत में - हाय! क्या दयनीय समाचार! - वे हार गए, और उस दुष्ट फरमान के आगे झुक गए। लेकिन उनमें से चौदह ने भीड़ से अलग होकर उनके सामने खड़े हो गए और उन्हें न झुकने और न ही आत्मसमर्पण करने के लिए मनाने लगे – और ईसाई कानून के विपरीत, मांस खाने के लिए सहमत न होने को कहा। यह सुनकर, लोगों में से कुछ ने आवश्यकता के आगे झुकने और फिर पश्चाताप के माध्यम से इस पाप का प्रायश्चित करने की पुकार लगाई, लेकिन खुद को इतनी आसानी से मृत्यु के हवाले न करने के लिए कहा। लेकिन इससे उन पर जरा भी प्रभाव नहीं पड़ा और न ही वे नरम पड़े: वे डटे रहे, अपनी दृष्टि ईश्वर और प्रतिज्ञात आनंद पर टिकाए हुए। स्कैथियन ने, इन लोगों के अटूट संकल्प को देखकर, यह ठान लिया कि उनमें से एक का उपयोग करके बाकियों को अस्थिर कर देगा और उन्हें अपने पक्ष में कर लेगा। और उनमें से एक को मारने के बाद, उसने अपनी पत्नी और बच्चों को गुलामी में स्कैथियनों को बेच दिया, इस उम्मीद में कि बाकी लोग यह देखकर हिचकिचा जाएँगे और हार मान लेंगे... लेकिन वे और भी अडिग हो गए, और चिल्लाकर कहने लगे: 'हम ईसाई हैं और अपने दिवंगत भाई के साथ खड़े हैं।' इस स्वीकारोक्ति पर, वे सभी मारे गए, और वे प्रभु में मर गए। क्या आप देखते हैं कि कैसे, आज भी, परमेश्वर के राज्य का सुसमाचार शक्तिशाली बना हुआ है? – प्रभु कहते हैं, *'जो कोई पिता या माता से मुझसे अधिक प्रेम करता है, वह मुझ योग्य नहीं है; और जो कोई अपना क्रूस उठाकर मेरे पीछे नहीं चलता, वह मुझ योग्य नहीं है...'* और फिर: *'जो देह को तो मारते हैं पर आत्मा को नहीं मार सकते, उनसे मत डरो; बल्कि उससे डरो जो आत्मा और देह दोनों को गेहन्ना में नाश कर सकता है'* (मत्ती 10:37, 38, 28)। उन्होंने सुसमाचार की आज्ञाओं का पालन किया, प्रभु के प्रति आज्ञाकारी बने रहे, और पवित्र मक्काबीयों के उदाहरण का अनुसरण करते हुए शहादत का मुकुट प्राप्त किया, और उनके विरोधी उनकी संख्या से दोगुने थे, क्योंकि उनमें से सात थे और इनमें से चौदह थे; और वे सूअर का मांस खाने से इनकार करने के कारण कष्ट सहते थे, जबकि ये उपवास के दौरान किसी भी प्रकार का मांस खाने से इनकार करने के कारण कष्ट सहते थे, जो ईसाई कानून के विरुद्ध था। – हे धन्य पुरुषो! हे धन्य सौदा! एक ही क्षण में शाश्वत विश्राम प्राप्त करना! वे लोग इस पर क्या कहेंगे जो ईश-विरोधी लोगों के साथ संगति को धर्म-त्याग नहीं मानते? यदि लोगों द्वारा लेंट के दौरान साधारण मांस खाने की सहमति देने के कारण धर्मत्याग हुआ था, तो यहाँ तो और भी अधिक है, जहाँ अवैध रूप से अर्पित बलिदान में सहभागिता है। वे लोग कहाँ हैं जो कहते हैं कि मसीह की प्रतिमा के लिए पीड़ा सहना शहादत नहीं है? यदि वहाँ, मसीह की कलीसिया के कानून का उल्लंघन करने से इनकार करने के लिए पीड़ा सहने वालों ने एक शहीद का कार्य किया; क्या यहाँ शहादत का एक और भी उज्ज्वल कार्य नहीं किया जा रहा है, जब हम स्वयं मसीह को उनकी प्रतिमा में त्यागने से इनकार करते हैं? – लेकिन ऐसे शब्द अज्ञानी लोगों के हैं, जिनके मन उनकी विधर्मी कल्पनाओं से धुंधले हो गए हैं, जो अपनी ही गिरावट के कारण, दूसरों को ऑर्थोडॉक्स विश्वास और धर्मी जीवन से रोकने का प्रयास करते हैं। – हम, हालाँकि, अपने धन्य परमेश्वर की महिमा करेंगे, जो उनकी महिमा करते हैं, और जो इस पीढ़ी में भी शहीदों को उत्पन्न करते हैं – यह ध्यान में रखते हुए कि यदि लोग जो बाहरी रूप से गरीब, अनपढ़, और जिनकी पत्नियाँ और बच्चे हैं, उन्होंने मसीह के प्रेम में सब कुछ त्याग दिया है, तो क्या हमें—अविवाहित होकर और संसार को त्यागकर—और भी अधिक बाध्य नहीं होना चाहिए, जब समय आए, तो खुद को विश्वास और धार्मिकता के इन पवित्र रक्षकों के योग्य साबित करें? लेकिन यह उचित समय पर होगा, जब मसीह ऐसा चाहेंगे। अभी के लिए, चलिए हम उस शहादत में दृढ़ खड़े रहें जो हमारे अंतरात्मा में निरंतर होती रहती है; चलिए हम बाअल के सामने घुटने न टेकें; विचारों के आक्रमण पर हम न झुकें, बल्कि हम दुष्ट के अग्निबाणों को आँसुओं, प्रार्थनाओं, पश्चाताप और शरीर की उचित संयम-साधना से बुझाएँ, ताकि हम भी प्रेरित के साथ कह सकें: *'मैं प्रतिदिन मरता हूँ: यह मेरा घमंड है, हे भाइयो, जो मुझे हमारे प्रभु मसीह यीशु में है'* (1 कुरिन्थियों 15:31); और संत दाऊद के साथ: *'तेरे ही निमित्त हम दिन भर मार डाले जाते हैं; हम वध के लिए भेड़ों के समान गिने जाते हैं'* (भजन संहिता 43:22), जिनके साथ हमें स्वर्ग के राज्य के उत्तराधिकारी होने का योग्य ठहराया जाए।

277. अवतार की व्यवस्था की शुरुआत, घोषणा हमें इसे आध्यात्मिक रूप से मनाने के लिए बाध्य करती है

277. 1) अवतार की व्यवस्था की शुरुआत, घोषणा हमें इसे आध्यात्मिक रूप से मनाने के लिए बाध्य करती है; – 2) और ऐसा करते हुए, उन लोगों के लिए प्रार्थना और शोक करने के लिए जो इसे स्वीकार नहीं करते या इसका उपयोग नहीं करते; – 3) संत पौलुस प्रेरित और नबी मूसा का अनुकरण करते हुए। [4, 64]

21. शुभ-समाचार आ गया है – प्रभु के पर्वों की शुरुआत; और हमें इसे केवल वैसे ही नहीं मनाना चाहिए, जैसे कई लोग मनाते हैं, बल्कि उस रहस्य की समझ के साथ मनाना चाहिए, जिसके लिए हम इसका उत्सव मनाते हैं और

इसकी आराधना करते हैं। यह रहस्य क्या है? – यह कि परमेश्वर का पुत्र, परम पवित्र कन्या को इसके लिए मध्यस्थ चुनकर, उनके गर्भ में वास करके और उनसे अपने लिए एक मंदिर बनाकर, पूर्ण रूप से मानव बन जाता है। – किस उद्देश्य के लिए? *'ताकि वह व्यवस्था के अधीन रहने वालों को छुड़ा ले, और हम पुत्रों का दर्जा प्राप्त करें'* (गलातियों 4:5), जैसा कि लिखा है; ताकि हम अब दास न रहें, बल्कि स्वतंत्र हों; ताकि हम अब अपनी इच्छाओं के अधीन न रहें, बल्कि निर्लिप्त हों; ताकि हम अब संसार के प्रेमी न रहें, बल्कि परमेश्वर के प्रेमी हों; ताकि हम अब शरीर के अनुसार न चलें, बल्कि आत्मा के अनुसार चलें। *'क्योंकि जो शरीर के अनुसार चलते हैं, वे शरीर की बातों में मन लगाते हैं, पर जो आत्मा के अनुसार चलते हैं, वे आत्मा की बातों में मन लगाते हैं। क्योंकि जो मन शरीर की ओर झुका है, वह मृत्यु है, पर जो मन आत्मा की ओर झुका है, वह जीवन और शान्ति है। क्योंकि जो मन शरीर की ओर झुका है, वह परमेश्वर के विरोधी होता है; क्योंकि वह परमेश्वर के वचन के अधीन नहीं होता, और न ही हो सकता है: जो देह में हैं, वे परमेश्वर को प्रसन्न नहीं कर सकते'* (रोमियों 8:5–8)। संक्षेप में, यही संस्कार की शक्ति है! और इसलिए हमें इसके सम्मान में आध्यात्मिक तरीके से उत्सव मनाना चाहिए, और इसके अनुवर्तन में आध्यात्मिक रूप से आचरण करना चाहिए—सत्य और भक्ति में, प्रेम में, नम्रता में, शांति में, धीरज में, दया में, पवित्र आत्मा में—ताकि हमारे प्रभु का मसीही परिवार हमारे संबंध में निष्फल और निष्क्रिय न सिद्ध हो।

२२. और केवल इतना ही नहीं; बल्कि हमें संसार के लिए भी प्रार्थना और शोक करना चाहिए। क्यों? क्योंकि परमेश्वर का पुत्र संसार को बचाने आया, फिर भी संसार उसे अस्वीकार करता है: जातियाँ और राष्ट्र उसे अस्वीकार करते हैं; बर्बर लोग उसे अस्वीकार करते हैं; यहाँ तक कि जो लोग उसके पवित्र नाम का आह्वान करते हैं, वे भी उसे अस्वीकार करते हैं—कुछ अपने विश्वास की अधर्मीता के कारण, अन्य अपने जीवन की दुष्टता के कारण। – उसने वह क्या करना था जो उसने नहीं किया? – यह ईश्वर मनुष्य बना; उसने स्वयं को नम्र किया, मृत्यु तक, यहाँ तक कि क्रूस पर मृत्यु तक आज्ञाकारी रहा; उसने हमें अपना शरीर ग्रहण करने और अपना लहू पीने दिया; उन्होंने हमें अपना पिता, भाई, मुखिया, शिक्षक, वधू-वर, सह-वारिस कहने के लिए योग्य समझा है, और कई अन्य कार्य भी किए हैं, जिनका यहाँ विस्तार से उल्लेख करने की आवश्यकता नहीं है। – और फिर भी उन्हें अस्वीकार किया जाता है; उन्हें अस्वीकार किया जाता है, और फिर भी वह इसे सहन करते हैं: *'मैं,'* वह कहते हैं, *'दुनिया का न्याय करने नहीं आया हूँ, बल्कि दुनिया को बचाने आया हूँ'* (यूहन्ना 12:47)। – तो फिर, इस संबंध में हमें क्या कहना चाहिए? कि सच्चे शिष्य अपने साथी शिष्यों के इनकार पर दुख मनाते हैं, और इस प्रकार वे अपने शिक्षक और अपने साथी शिष्यों दोनों के प्रति अपना प्रेम दिखाते हैं: इसी तरह, सच्चे दास अपने साथी दासों की अविश्वासपूर्णता पर अपने हृदय में पीड़ित होते हैं।

२३. इसलिए, महान प्रेरित हमें आज्ञा देते हैं *कि 'सभी लोगों, राजा के लिए, और सब अधिकार वालों के लिए विनती, प्रार्थना, मध्यस्थता और धन्यवाद किया करो'* (१ तीमु. २:१-२)। वे स्वयं कहीं और अपने बारे में निम्नलिखित कहते हैं: *'मैं मसीह में सच कहता हूँ—मैं झूठ नहीं बोलता—जैसा कि पवित्र आत्मा के द्वारा मेरा अंतःकरण गवाही देता है: मेरे हृदय में बहुत दुख और नित्य क्लेश है; क्योंकि मैं यही चाहूँगा कि मैं अपने भाइयों, अर्थात् अपने मांस-रक्त के बन्धुओं के कारण, मसीह से अलग हो जाऊँ'* (रोमियों 9:1-3)। क्या आप प्रेम की शक्ति देखते हैं? क्या आप मानवता के लिए प्रेम की ऊँचाई देखते हैं? – मूसा ने भी परमेश्वर से यही कहा: *'यदि आप उनके पाप को क्षमा कर दें—और यदि नहीं, तो मुझे उस पुस्तक से मिटा दें जिसमें आपने मेरा नाम लिखा है'* (निर्गमन 32:32)। – इसी प्रकार हमें भी, सच्चे और न कि झूठे शिष्यों के रूप में, न केवल अपनी परवाह करनी चाहिए, बल्कि अपने भाइयों और पूरी दुनिया की भी, उनके लिए दुख करते हुए और उनके लिए प्रार्थना करते हुए। क्योंकि इस प्रकार प्रभु को प्रसन्न करने वाला काम करके, हम अनंत जीवन के वारिस बनेंगे।

278. घोषणा के पर्व पर, वह कुँवारीपन की प्रशंसा करते हैं

278. 1) घोषणा के पर्व पर, वह कुँवारीपन की प्रशंसा करते हैं और – 2) यह याद दिलाते हुए कि शत्रु इसके विरुद्ध कैसे युद्ध करता है, वह हमें इसे उत्साहपूर्वक संरक्षित करने के लिए प्रेरित करते हैं। [4, 65]

२४. घोषणा के पर्व पर, मैं आप लोगों से घोषणा के विषय में कुछ शब्द कहने का प्रयास करूँगा – अर्थात्, यह दिखाने के लिए कि कुँवारीपन का व्रत कितना महान है, जिसे करने के लिए हमें योग्य समझा गया है। क्योंकि महादूत गब्रियल ने किससे कहा: *'हे अनुग्रह से परिपूर्ण, आनंदित हो, प्रभु तुझ में हैं?'* (लूका १:२८)। 'क्या यह परम पवित्र कुँवारी मरियम को नहीं था?' और किसके द्वारा स्वयं ईश्वर और वचन ने देह धारण किया और मानव रूप लिया? 'क्या यह इसी धन्य कुँवारी के द्वारा नहीं था?' इस प्रकार, इस कुँवारी ने सभी का जीवन जन्म दिया है। यह कुँवारीपन गुणों की रानी है। यह कुँवारीपन मसीह की वधू और वधू-मार्गदर्शिका है। और यदि आप चाहें, तो आइए सुनते हैं कि धन्य

पौलुस क्या कहते हैं: *'अवविाहति पुरुष प्रभु के मामलों में लगा रहता है, कि वह प्रभु को कैसे प्रसन्न करे; परन्तु ववािहति पुरुष संसार के मामलों में लगा रहता है, कि वह अपनी पत्नी को कैसे प्रसन्न करे। ववािहति स्त्री और कुंवारी में अंतर समझें: जो ववािहति नहीं है वह प्रभु के मामलों की चनि्ता करती है, कि वह प्रभु को कैसे प्रसन्न करे, ताकि वह शरीर और आत्मा दोनों में पवति्र हो; परन्तु जो ववािहति है वह संसार के मामलों की चनि्ता करती है, कि वह अपने पति को कैसे प्रसन्न करे।'* (1 कुरनि्थयिों 7:32–34)। क्या आप वचन की शक्ति देखते हैं—कि विवाह प्रभु को प्रसन्न करने की चिंता के लिए कोई समय नहीं छोड़ता, बल्कि केवल सांसारकि मामलों के लिए?—इस प्रकार, कुँवारी अवस्था को, एक वरिासत के रूप में, बेहतर हसि्सा सौंपा गया है। – परन्तु स्वर्ग के राज्य में भी, कुँवारी अवस्था को प्राथमकिता दी गई है। क्योंकि संत जॉन की प्रकटवाणी में लखिा है: *'ये वे हैं जनि्होंने स्त्रयिों के साथ अपना शरीर कलंकति नहीं कयिा, क्योंकि ये कुँवारे हैं; ये मेम्ने का अनुसरण करेंगे जहाँ कहीं वह जाएगा'* (प्रकाशतिवाक्य 14:4)।

२५. यह उन लोगों को प्रदान कयिा गया वशिेषाधकिार है जनि्होंने अपनी कुँवारी अवस्था को चुना और उसे बनाए रखा है! – वे मसीह का अनुसरण करेंगे और उनके साथ आनन्दति होंगे। – लेकनि हमें यह न भूलें कि यह मामला जतिना ऊँचा और अधकि अलौककि है, हमारे जीवन का वनिाशक, शैतान, हमें गरिाने के लिए उतनी ही अधकि कोशशि करता है, और वह अन्य जुनूनों की तुलना में अपने ही वपिरीत एक जुनून का उपयोग करता है। और कौन गनि सकता है कि उसने समय की शुरुआत से कतिनों को पहले ही गरिा दयिा है? – और इससे अधकि दयनीय और क्या हो सकता है? – हम, हालाँकि, अपनी आत्मा की रक्षा अपनी आँख के तारे की तरह करेंगे, उन्हें वधू-वर मसीह के लिए शुद्ध रखेंगे, और हमें सौंपी गई कुँवारीपन की धन-संपत्ति को धोखा दिए बनिा, और हम खुद को उस मछली की तरह पीड़ति होने नहीं देंगे, जो चारे से धोखा खाकर, काँटा नगिल लेती है और अपनी मृत्यु को प्राप्त कर लेती है। क्योंकि देह के सुख पोषण करने के बजाय भ्रष्ट करने वाला एक काँटा हैं, – जीवन-दायक के बजाय घातक; ईश्वर की शक्ति से हम इससे मुक्त हों, और जब तक हमारी नाक में सांस है, तब तक हम आने वाले समय के लिए शुद्ध और नर्दिोष बने रहें, ताकि यहाँ से वजिय प्राप्त कर, हम हमारे प्रभु मसीह यीशु में स्वर्ग के राज्य को प्राप्त कर सकें।

279. पासोवर एक बहुप्रतीक्षति पर्व है; लेकनि आध्यात्मकि पासोवर

279. 1) पासोवा एक अत्यधकि प्रतीक्षति पर्व है; लेकनि आध्यात्मकि पासोवा—पापों और वासनाओं से शुद्धकिरण—और भी अधकि वांछनीय है। – 2) जसिके पास यह नहीं है, वह पासोवा का उत्सव भी नहीं मना सकता। – 3) लेकनि आप ऐसे नहीं हैं; हमारे पास वे अच्छे कर्म हैं जो परमेश्वर की ओर ले जाते हैं। – 4) अतः आइए हम आध्यात्मकि पासओवर के लिए पूरी लगन से प्रयास करें, ताकि हम आने वाले युग में इसके योग्य समझे जाएँ। [4, 67]

26. ईश्वर की सहायता से लेंट के मध्य बंदि को पार करने के बाद, हम ईस्टर को नकिट आते हुए देखते हैं। – लेकनि हम इस ईस्टर, जो आता और चला जाता है, तक पहुँचने के लिए इतनी तीव्र लालसा क्यों करते हैं? क्या हम यह पहले से ही कई वर्षों से नहीं कर रहे हैं? यह वर्तमान पासओवर भी बीत जाएगा। क्योंकि इस युग में कुछ भी अपरवि्रतति नहीं रहता; पर हमारे दनि एक छाया की तरह बीत जाते हैं (अय्यूब 8:9) *'और हमारा जीवन एक तेज धावक से भी अधकि तीव्रता से भागता है'* (अय्यूब 9:25), जब तक कि यह अपने अंत तक नहीं पहुँच जाता। तब आप पूछ सकते हैं, क्या ईस्टर की लालसा नहीं की जानी चाहिए? बेशक, इसकी लालसा की जानी चाहिए—और बहुत अधकि; और यह अन्यथा कैसे हो सकता है? लेकनि जसि ईस्टर का प्रतदिनि उत्सव मनाया जा सकता है, उसकी लालसा और भी अधकि की जानी चाहिए। तो वह क्या है? पापों का शुद्धकिरण, एक पश्चात्तापी हृदय, पश्चात्ताप के आँसू, एक नर्मिल अंतरात्मा, व्यभचिार, अशुद्धता, वासना, दुष्ट कामना और कर्म में कएि गए हर पाप के लिए सांसारकि अंगों का दमन। जसि ऐसा स्वभाव प्राप्त होता है, वह प्रभु का पासका—उस बहु-आकांक्षति उत्सव—का पालन वर्ष में एक बार नहीं, बल्कि हर दनि करता है।

27. परन्तु ये गुणों से रहति और वासनाओं से ग्रस्त कौन पासोवा मना सकता है? वह कैसे मना सकता है जसिके देवता उसका पेट हो, या जो देहकि वासना से ग्रस्त हो, या ईर्ष्या से खाया जा रहा हो, या धन के प्रेम में डूबा हो, या व्यर्थता का दास हो, या अन्य वासनाओं की चपेट में हो? क्या कोई यह दावा करेगा कि आग में जलता हुआ आदमी शांति से आराम कर रहा है - या कि जहाज-दुर्घटनाग्रस्त आदमी सुरक्षति रूप से नौकायन कर रहा है? ऐसी बात अकल्पनीय है। क्योंकि जैसे अंधकार में रहने वाला प्रकाश में नहीं है, वैसे ही जो पापपूर्ण कर्मों में लगा रहता है, वह ईस्टर का उत्सव नहीं मनाता है।

28. *'परन्तु हे प्रयि, हम नशि्चय हैं कि तुम उत्तम दशा में हो और तुम्हारा उद्धार स्थरि है'* (इब्रानयिों 6:9)। क्योंकि हमारा जीवन उत्सव के लिए तैयारी के सवाि और कुछ नहीं है; क्योंकि विचार करो कि हमारे बीच क्या हो रहा है? – भजन के बाद भजन, पाठ के बाद पाठ, शक्षिा के बाद शक्षिा, प्रार्थना के बाद प्रार्थना, एक वृत्त की तरह

जो हमें परमेश्वर तक ले जाता है और हमें उनके साथ एक कर देता है। जीवन का ऐसा मार्ग कितना अच्छा है! ऐसा जीवन कितना धन्य और त्रिगुणित धन्य है!

29. अत; चूँकि वह फसह जिसका हम बेसब्री से इंतजार करते हैं, अब हमारे सामने आ गया है, आइए हम उसकी ओर प्रयत्न करें, और अपनी पूरी क्षमता से, उसे प्रतिदिन मनाने का यत्न करें—अर्थात्, प्रभु के अनुकरण में, वासनाओं का दमन और सद्गुणों का पुनरुत्थान; क्योंकि *'उन्होंने स्वयं हमारे लिए दुख उठाया, हमारे लिए एक उदाहरण छोड़ गए, ताकि हम उनके पदचिन्हों पर चलें'* (1 पतरस 2:21)। मैं यह इस रूप में नहीं कहता कि मैं दूसरों का न्यायाधीश हूँ: *'क्योंकि हर कोई अपना बोझ उठाएगा'* (गलातियों 6:5); बल्कि, परमेश्वर द्वारा हमें दी गई कृपा को पहचानने वालों के रूप में, हम दाता को धन्यवाद दें, और उपकारी की महिमा करें, जो न केवल वर्तमान में आवश्यक सभी चीजों का प्रावधान करते हैं, बल्कि जो अंत तक उनके लिए परिश्रम करने वालों को सभी वादे किए गए आशीर्वाद भी प्रदान करेंगे, स्वर्ग में उस अनंत पासओवर के लिए, जो वह हमारे प्रभु यीशु मसीह की अनुग्रह और प्रेम से हम सभी को प्रदान करें।

280. धन्य हैं वे जो मसीह के साथ दुख उठाते हैं; अतःहमें हौसला बढ़ाना चाहिए और दुख सहने के लिए स्वयं को तैयार करना चाहिए

280. धन्य हैं वे जो मसीह के साथ दुख सहते हैं; अतःहमें हौसला रखना चाहिए और दुख के लिए स्वयं को तैयार करना चाहिए। [4, 70] अब लेंट समाप्त होने को है; और इसके गौरवशाली मुकुट के रूप में, मसीह के जीवन-दायक दुख-क्लेश का स्मरण निकट आ रहा है, जिससे हम महान सांत्वना प्राप्त कर सकते हैं। क्योंकि यदि हमारे प्रभु और परमेश्वर को हमारे पापों के लिए कोड़ों से पीटा गया, तो क्या यह कोई बहुत बड़ी बात है यदि हम, उनके अयोग्य सेवक, भी उनके लिए कोड़ों से पीटे जाएँ? यदि उन्हें बाँधा गया, बेड़ियों में जकड़कर ले जाया गया और कैद किया गया, तो इसमें आश्चर्य की क्या बात है यदि हम भी प्रभु और स्वामी के लिए दुख सहें? लेकिन यदि हमें कोड़े भी मारे जाएँ, तो हम कोड़ों को सह लेंगे; यदि हमारे कान काटे जाएँ, तो हम उसे भी सह लेंगे; यदि हम पर थूक दिया जाए, तो हम थूक सह लेंगे; अंत में, यदि हमें मृत्यु भी आ जाए, तो हम स्वयं को ऐसी सदा-धन्य मृत्यु के हवाले कर देंगे। और धन्य है वह जो मसीह के इन कष्टों में से किसी में भी सहभागी होने के योग्य समझा जाता है! यही आनंद है! यही अमरत्व है! क्या हम यह नहीं सुनते कि प्रेरित क्या कहते हैं: *'अब कोई मुझे और कष्ट न दे, क्योंकि मैं अपने शरीर पर प्रभु यीशु के घावों के निशान लिए फिरता हूँ'* (गलातियों 6:17)—जैसे कि यह कहने के लिए: कोई मुझे तुच्छ न समझे, क्योंकि मैं अपने शरीर पर राजाओं के राजा मसीह की शोभा धारण किए हुए हूँ। ऐसे थे संत इग्नेशियस, जिन्होंने स्वयं को 'ईश्वर का वाहक' कहा, क्योंकि उन्होंने मसीह के दुखों को स्वयं पर वहन किया। ऐसे थे संत यूस्ट्रैटियस, जिन्होंने अपने दुखों के चरम क्षण में पुकारा: 'अब मैं जानता हूँ कि मसीह मुझ में जीवित हैं।' हे धन्य उद्गार! हे त्रि-धन्य आत्माओं! – किसकी स्मृति में हम स्मरणोत्सव मनाते हैं? किसके जन्मदिन और निधन के दिन हम मनाते हैं? किसके सम्मान में हम पवित्र चर्चों का निर्माण करते हैं? हम किसके अवशेषों का सम्मान करते हैं? – क्या वे शहीद नहीं हैं? क्या वे कन्फेशर्स नहीं हैं? क्या वे पूजनीय नहीं हैं? – और यदि यहाँ उन्हें प्रभु से ऐसी महिमा के योग्य समझा गया है, तो वे आने वाले युग में कितनी शानदार महिमा प्राप्त करेंगे? यह समझ से परे और अभिव्यक्ति से परे है। – देखो, एक अच्छा सौदा! देखो, एक धन्य आदान-प्रदान! – छोटे-छोटे श्रम और कर्मों के माध्यम से शाश्वत और अनंत आशीर्वाद प्राप्त करना। आइए, हम भी उनका अनुकरण करें; आइए, हम अपना रक्त प्रभु के परम पवित्र रक्त के साथ मिलाएँ। क्योंकि यह अभी भी संभव है, क्योंकि न तो प्रकृति बदली है और न ही उसने जो कहा: *'मैं यहोवा तुम्हारा परमेश्वर हूँ, और मैं नहीं बदलता'* (मला. 3:6)। वह सभी से समान रूप से प्रेम करता है, सभी के लिए मरा, सभी का एक अक्षय मिठास के रूप में प्रतीक्षा करता है, सभी के उद्धार की कामना करता है – और यह उसके लिए धन है: क्योंकि जैसा कि प्रेरित कहते हैं, वह *'उन सभी के प्रति धनी है जो उस से प्रार्थना करते हैं'* (रोमियों 10:12)। इसलिए आइए हम इन वर्तमान परिस्थितियों में उस से प्रार्थना करें, और वह हमारी आत्माओं को शक्ति और धैर्य प्रदान करेगा; आइए हम उसे अपना लें, और वह हमारे दृश्य और अदृश्य शत्रुओं को शून्य में परिणित कर देगा; आओ हम उस पर भरोसा करें, और वह मृतकों के पुनरुत्थान के दिन, अपनी महिमा में प्रकट होने के दिन हमें मुकुट प्रदान करेगा, जिस दिन हम भी बिना किसी दण्ड के उसके सिंहासन के सामने खड़े होने के योग्य ठहरें, और एक अच्छा उत्तर देकर स्वर्ग का राज्य प्राप्त करें!

281. प्रभु के दुखों पर मनन करते हुए, आइए हम उनके दुखों में सहभागी होने के लिए प्रेरेति हों

281. 1) प्रभु के दुखों पर मनन करके, हमें उनके दुखों में सहभागी होने के लिए प्रेरेति होना चाहिए। – 2) आपने पहले ही उनके दुखों में सहभागिता की है, लेकिन ऐसा करते रहें, और अन्य सभी सद्गुणों में भी धैर्य बनाए रखें। – 3) इस आशा से प्रेरेति होकर कि हम भी उनके साथ महिमामय होंगे: क्योंकि तब उनके दुखों में सहभागी होने वालों के लिए कितनी आनंद की बात होगी, और इस से मुंह मोड़ने वालों के लिए कितनी शोक की बात होगी?! – 4) इस पर मनन करते हुए, आइए हम स्वयं को शुद्ध रखें और हर अच्छे काम में उत्कृष्टता प्राप्त करें। [4, 72]

1. यह दिन (पैशन बुधवार) पवित्र है, और हम इसकी उपासना करते हैं: क्योंकि इसी दिन प्रभु हमारे लिए क्रूस के दुखों को सहना आरंभ करते हैं, जैसा कि दाऊद ने कहा: *'जाति जाति क्यों क्रोधित होती है, और लोग व्यर्थ क्यों षड्यंत्र करते हैं? पृथ्वी के राजा खड़े हो गए हैं, और हाकिम प्रभु और उसके मसीह के विरुद्ध इकट्ठे हुए हैं'* (भजन संहिता 2:1,2)। वे अपने प्रभु के विरुद्ध बुराई की साजिश रचने के लिए इकट्ठे हुए, जिनके प्रति विश्वासघाती यहूदा ने अपने शिक्षक का इनकार किया और उन्हें धोखा दिया। इसके बाद विश्वासघाती चुंबन, बंधना और सभी के प्रभु को उनके शत्रुओं के हवाले न्याय के लिए करना हुआ; जब उन्हें उनके सामने लाया गया, तो सभी के न्यायाधीश से पूछताछ की गई और उन्होंने उत्तर दिया, और उत्तर देने के बाद—हे, सुनने में कितना भयानक!—एक सेवक ने उनकी गाल पर थप्पड़ मारा और उन्होंने इसे बड़ी सहनशीलता से सहन किया, कहते हुए: *'यदि मैंने कुछ गलत कहा है, तो उस गलती की गवाही दो; परन्तु यदि मैंने सही कहा है, तो तुम मुझे क्यों मारते हो?'* (यूहन्ना 18:23); फिर उस पर झूठी निन्दा की जाती है और उसे दोषी ठहराया जाता है; फिर वह अपमान, उपहास, ताने, थूक, कान काटना, बेंत से सिर पर वार, कोड़ों की पिटाई और क्रूस पर कीलों से ठोक दिए जाने को सहन करता है, जिस पर चढ़ने के बाद वह अपने हत्यारों के लिए प्रार्थना करता है: *'पिता, उन्हें क्षमा कर; क्योंकि वे नहीं जानते कि वे क्या कर रहे हैं'* (लूका 23:34); अंत में, उन्हें पीने के लिए सिरके में मिला हुआ पित्त दिया जाता है, और अमर प्रभु अपनी आत्मा को परमपिता परमेश्वर के सुपुर्द करते हुए मर जाते हैं, और उनकी मृत्यु के बाद, उनकी पसली में भेजा जाता है। संक्षेप में, प्रभु के ये ही दुख हैं! – और जो कोई भी इन घटनाओं के सुसमाचार विवरणों को बुद्धिमानी से सुनता है, वह न तो क्रोधित होगा, न दुखी, न उन्मत्त, न घमंडी होगा, न अपने भाई को तुच्छ समझेगा, न ईर्ष्यालु होगा, न महिमा की खोज करेगा; बल्कि हर तरह से स्वयं को नम्र करने, पश्चातापी होने, स्वयं को धूल और राख समझने, मसीह के दुखों में सहभागी होने की इच्छा रखने, और उनकी मृत्यु के अनुरूप होने का प्रयत्न करेंगे, ताकि वे उनके पुनरुत्थान के गौरव में भी सहभागी हो सकें।

2. हौसला रखो, मैं तुम से कहता हूँ, और तुम भी; क्योंकि तुम प्रभु के दुखों में पहले ही सहभागी हो चुके हो और उसी के साथ इस सहभागिता में बने रहते हो। विचार करो कि तुम कहाँ हो: क्या तुम उसके वचन और उसकी गवाही के कारण निर्वासित और सताए नहीं गए हो? परन्तु इससे भी पहले, क्या तुमने कैद का अनुभव नहीं किया? क्या तुमने अपमान और निन्दा के बीच अपना लहू नहीं बहाया? क्या हमारे कुछ भाइयों ने अपने दुखों के बीच बहादुरी से प्राण नहीं छोड़े? – यही हमारे प्रभु में स्तुति है! और यही हमारा वरदान है! – परन्तु चूँकि हमारी दृढ़ता हमारी चंचलता के कारण अनिश्चित है, और हम निश्चित रूप से नहीं कह सकते कि आने वाला दिन क्या लाएगा; इसलिए मैं तुम्हें आग्रह करता हूँ कि प्रभु के लिए दृढ़ खड़े रहो, अटल और अडिग रहो, सुसमाचार के विश्वास के लिए एक मन और एक प्राण होकर परिश्रम करो, *'किसी भी विरोध के सामने न डगमगाओ'* (फिलि. 1:28), *'और किसी भी बात में ठोकर का कारण न दो'* (2 कुरिन्थियों 6:3), *"पर हर बात में परमेश्वर के सेवक के रूप में"* (2 कुरिन्थियों 6:4) आज्ञाकारिता में, नम्रता में, कोमलता में, उदारता में, *"बड़ी सहनशीलता के साथ; क्योंकि तुम्हें धीरज की आवश्यकता है, ताकि परमेश्वर की इच्छा पूरी करके वचन प्राप्त करो। क्योंकि थोड़ी ही देर और रह गई है, और जो आने वाला है वह आएगा और विलम्ब नहीं करेगा"* (इब्रानियों 10:36-37)।

3. परन्तु यदि वह आकर विलम्ब न करे, तो प्रभु के लिये प्रतिदिन मरने के लिये तैयार रहने के बजाय, हम *'क्लेशों से हताश'* क्यों हों? (इफिसियों 3:13) – क्योंकि लिखा है: *'यदि हम उसके साथ मरते हैं, तो हम उसके साथ जीवेंगे भी; यदि हम धीरज धरते हैं, तो हम उसके साथ राज्य भी करेंगे; यदि हम उसे नकारते हैं, तो वह भी हमें नकार देगा; यदि हम अविश्वासी होते हैं, तो वह विश्वासयोग्य बना रहता है—क्योंकि तुम अपने आपको नकार नहीं सकते'* (2 तीमु. 2:11-13)। पवित्र जन कितनी आनंदित होंगे जब वे प्रभु को स्वर्ग से अपने सामर्थ्य के स्वर्गदूतों के साथ आते हुए देखेंगे, जो उन्हें अकथनीय आनंद के लिए बुलाएंगे, उन्हें मुकुट पहनाएंगे और युगानुयुग उनके साथ राज्य करेंगे? और दूसरी ओर, , उन लोगों को कितनी यातना का अनुभव होगा जिन्होंने सुसमाचार पर विश्वास नहीं किया और उसकी आज्ञाओं का उल्लंघन किया—वे जो, जैसा लिखा है, *'उसकी उपस्थिति से और उसकी सामर्थ्य की महिमा से दूर,*

अनन्त विनाश की सज़ा भोगेंगे, जब वह अपने पवित्र लोगों में महिमा पाने और उन सभी में आश्चर्य का विषय बनने आएगा जिन्होंने विश्वास किया है' (2 थिस्स. 1:9–10)।

4. इसे अपने मन में विचारते और इस पर मनन करते हुए, *'आओ हम शरीर और आत्मा की हर अशुद्धि से स्वयं को शुद्ध करें, परमेश्वर के भय में पवित्रता को सिद्ध करते हुए'* (2 कुरिन्थियों 7:1), सर्वोत्तम के लिए प्रयासरत हों और पूर्णता की ओर अग्रसर हों (इब्रानियों 11:16; 6:1), *'बुराई से घृणा करो और भलाई से चिपके रहो; एक दूसरे से प्रेम करो; एक दूसरे को अपने से बढ़कर मानो; अपने उत्साह में सुस्त न हो, पर आत्मा में प्रज्वलित रहो, प्रभु की सेवा करो; आशा में आनंदित रहो, क्लेश में धीरज धरो, और प्रार्थना में स्थिर रहो'* (रोमियों 12:9-12); ताकि, ऐसी पवित्रता में सच्चे मन से बने रहते हुए, हम आने वाले पास्का को योग्य रीति से मना सकें, और सदा के लिए स्वर्गीय आशीषों में भाग लेने के योग्य ठहरें।

282. क्या यह अद्भुत नहीं है कि प्रभु—जैसे वे हैं—इतना दुख सहें?

282. 1) क्या यह अद्भुत नहीं है कि प्रभु—जो कुछ भी वे हैं—ने इतना दुख सहे? – 2) सारी सृष्टि काँप उठी है; क्या हम उदासीन बने रहेंगे? – 3) हम पर दिखाए गए इतने महान प्रेम के लिए, आइए हम उन्हें प्रेम और सभी बातों को सहन करने की तत्परता से चुकाएँ, हमारे जीवन के सामान्य क्रम में और उत्पीड़न में भी। [4, 73]

5. और हमारे प्रभु यीशु मसीह के दुखों की स्मृति हमेशा आत्मा को पश्चाताप और कोमलता से भर देती है, विशेष रूप से इन दिनों (पवित्र सप्ताह – शुक्रवार) में, जब इन घटनाओं में से प्रत्येक घटित हुई थी। तो फिर, ये कष्ट क्या थे? – प्रभु के विरुद्ध हत्या की साजिश, यहूदियों द्वारा उनकी गिरफ्तारी, उन्हें मृत्युदंड के लिए ले जाया जाना, पिलातुस की अदालत में उनका उपस्थित होना, उनका मुकदमा, पूछताछ, उनके कानों पर थप्पड़ मारना, उन पर थूकना, उन पर अपमान करना, उनका उपहास उड़ाना, उन्हें क्रूस पर चढ़ाया जाना, उनके हाथों और पैरों में कीलें ठोकना, पित्त का स्वाद चखना, उसके पार्श्व का भेदन, और इन सबके बीच हुई अन्य सभी घटनाएँ—ऐसी घटनाएँ जिन्हें संसार समाहित नहीं कर सकता, और न ही इन्हें मानव भाषा से ही नहीं बल्कि स्वर्गदूतों की सभी भाषाओं से भी यथोचित रूप से वर्णित किया जा सकता है। क्योंकि आइए कल्पना करें कि यह रहस्य कितना महान और अवर्णनीय है! – प्रभु, जो हृदय के सबसे भीतरी विचारों को देखता है और प्रत्येक मानवीय विचार का मार्गदर्शन करता है, – वही स्वयं उस परिषद में ले जाया जाता है जहाँ उसे मृत्युदंड सुनाया जाता है; वही जो *'अपने सामर्थ्य के वचन से सब कुछ धारण करता है'* (इब्रानियों 1:3), वह स्वयं पापी मनुष्यों के हाथों में सौंप दिया जाता है; वह जो बादलों में जल को बाँधता है और उचित समय पर पृथ्वी को सींचता है, वह स्वयं बंधनों में ले जाया जाता है; *'वह जिसने एक कोहनी से आकाश को, और एक मुट्ठी से सारी पृथ्वी को नापा, और पहाड़ों को एक माप से ठहराया'* (यशायाह 40:12), – वह स्वयं एक सेवक के हाथ से मारा जाता है; जिसने पृथ्वी को विभिन्न प्रकार के फूलों से सजाया, उसी को लज्जा के प्रतीक के रूप में काँटों का मुकुट पहनाया गया; जिसने स्वर्ग के मध्य में जीवन का वृक्ष लगाया – उसी को उपहास के प्रतीक के रूप में उस वृक्ष पर कीलें ठोंकी गईं। हे, ये दृश्य कितने भयानक और अलौकिक हैं।

6. सूर्य ने यह देखकर अपना प्रकाश खो दिया; चंद्रमा ने यह देखकर ग्रहण लगा लिया; पृथ्वी ने यह महसूस किया और काँप उठी; पत्थरों ने यह महसूस किया और चूर-चूर हो गए; सारी सृष्टि प्रभु की अपमानित दशा को देखकर सिहर उठी। – इस प्रकार निर्जीव और असंवेदनशील तत्व, मानो जीवंत और संवेदनशील होकर, परमेश्वर के भय से और इन दृश्यों को देखकर, अपनी प्राकृतिक व्यवस्था से अलग हो गए और रूपांतरित हो गए: क्या हम, जो विवेक से संपन्न हैं, जिनके लिए मसीह मरे, इन दिनों में कुचले नहीं जाएँगे और रोएँगे नहीं? और क्या हम, इसके बाद, निःशब्दों से भी अधिक निःशब्द, और पत्थरों से भी अधिक निर्विकार नहीं हो जाएँगे? ऐसा हमसे न हो, ऐसा न हो; बल्कि, ईश्वरीय आश्चर्य से परिपूर्ण होकर और एक शुभ परिवर्तन से रूपांतरित होकर, हम आँसू बहाएँ, हम अपनी कामनाओं को बलिदान के रूप में अर्पित करें, हम प्रभु की फटकारों का बदला फटकारों की सहनशीलता से चुकाएँ, हम उनके घावों के लिए घाव सहें—कुछ आज्ञाकारिता के कार्य में, और अन्य आने वाले अंगीकार में।

7. क्या हम इन सब में दैवी प्रेम के लिए अनगिनित प्रोत्साहन नहीं देखते? इसके लिए किसको कभी कैद किया गया है? अपने प्रियजन के लिए वधित होने हेतु स्वयं को कौन कभी समर्पित किया है? फिर भी हमारे सर्व-दयालु ईश्वर ने हम दण्डितों के लिए एक नहीं, दो नहीं, बल्कि अनगिनित कष्ट सहे हैं। अतः धार्मिक रूप से, धन्य प्रेरित ने, इस पर मनन करते हुए और ईश्वर के प्रति गहरे प्रेम से परिपूर्ण होकर, कहा: *'क्योंकि मैं यह ठान लेता हूँ कि न मृत्यु, न जीवन, न स्वर्गदूत, न प्रधानताएँ, न सामर्थ्य, न वर्तमान की, न भविष्य की कोई बात, न ऊँचाई, न गहराई, और न कोई अन्य सृजित वस्तु, हमें उस प्रेम से अलग कर सकती है जो हमारे प्रभु मसीह यीशु में परमेश्वर के प्रति है'* (रोमियों 8:38-39)। क्योंकि परमेश्वर ने हम से ऐसा प्रेम किया *कि 'उसने अपना एकलौता पुत्र दे दिया, ताकि जो कोई*

उस पर विश्वास करे वह नाश न हो, बल्कि अनंत जीवन पाए' (यूहन्ना 3:16–17)। अपने कर्मों से ऐसे प्रेम के बदले में देने के लिए कुछ भी योग्य न होने के कारण, संतों ने स्वयं को, अपने शरीरों और अपने रक्त को अर्पित किया; और अपने तपस्या के श्रम और अपने दुखों में, उन्होंने धन्य दाऊद के साथ यह गीत गाया: *'मैं प्रभु का उन सब के बदले में क्या प्रतिदिन करूँगा जो उन्होंने मुझ पर किए हैं?'* (भजन संहिता 115:12)। – ऐसी ही आवाज़ से हम भी प्रभु से सदा पुकार करें, उनके लिए अथक परिश्रम करते हुए, उनकी अतृप्त लालसा के साथ, और जो उत्तम है उसके लिए निरन्तर अधिक प्रयत्न करते रहें, ताकि हम सभी संतों के साथ अनन्त आशीषों के वारिस बनें।

283. मैं आपके सद्गुणों में प्रगति पर प्रसन्न हूँ

283. 1) मैं तुम्हारी भलाई में हुई प्रगति पर आनन्दित हूँ। – 2) परन्तु यहीं नहीं रुकना; संतों का अनुकरण करते हुए और प्रतिज्ञाओं से प्रेरित होकर आगे बढ़ते चलो। [4, 81]

8. मैं अपनी इच्छा से तुमसे बात करता हूँ, न कि जबरदस्ती से, यद्यपि तुमसे बात करना मेरा कर्तव्य है। क्योंकि मैं परमेश्वर के भक्तिपूर्ण उत्साह से तुममें उत्साही हूँ, यद्यपि मैं एक पापी हूँ, और मैं तुम्हारी प्रगति पर बहुत आनन्दित हूँ। यद्यपि मुझे कभी-कभी आपको डाँटना पड़ता है, जैसा कि मैंने हाल ही में किया था, यह इसलिए है ताकि आप मेरे आपके प्रति प्रचुर प्रेम को पहचान सकें, [क्योंकि एक प्रेम करने वाला माता-पिता, अपने बच्चों का ध्यानपूर्वक पालन-पोषण करते हुए, उन्हें अनुशासित करने में लापरवाही नहीं करते। *'क्योंकि ऐसा कौन सा पुत्र है जिसे उसका पिता अनुशासित नहीं करता?'* (इब्रानियों 12:7)], – *'ताकि तुम सिद्ध और पूर्ण हो जाओ, और तुम्हें किसी बात की कमी न हो'* (याकूब 1:4)। क्योंकि मैं यह स्वीकार करता हूँ कि तुम आज्ञाकारी और वश में हो, और तुम अपने पिता की आज्ञाओं को सख्ती से पूरा करते हो, जैसा कि शायद इस संन्यासी जीवन के क्रम में कोई और नहीं करता। मैं यह बिना चापलूसी के कहता हूँ, बल्कि जैसा कि वास्तव में है। और पिता के साथ इतने एकमत और प्रभु की आज्ञाओं के अनुसार सभी बातों में मठाधीश का इतना अनुयायी और कौन है, जितने आप हैं, जो दोनों में निपुण हैं? इसका प्रमाण उत्पीड़न, निष्कासन, जेलें, शत्रुता, और *'पाप के विरुद्ध'* संघर्ष में *'रक्तपात तक दृढ़ खड़े रहने'* से मिलता है। (इब्रानियों 12:4)। – और यह आप में नहीं, बल्कि परमेश्वर का वरदान है, जिसकी स्तुति हो। दूसरों के पास धन-संपत्ति, मठ और सुरक्षा के अन्य साधन हों; मेरे लिए तो मेरी अच्छी प्रतिष्ठा के लिए केवल आपका होना और आप से सुसज्जित होना ही पर्याप्त है: क्योंकि आप ही मेरी खुशी और मेरे गौरव का मुकुट हैं, मेरा जीवन और हर दूसरी भलाई हैं।

९. मैं केवल यही प्रार्थना करता हूँ कि आप अपने अच्छे संकल्प से न डिगें, कि आप भलाई और पूर्णता की सीढ़ियों पर अपनी उन्नति को कोई सीमा न दें; पर जैसे भौतिक संपत्ति के पीछे दौड़ने वालों को धन में वृद्धि से कोई संतोष नहीं मिलता, वैसे ही आप, आध्यात्मिक उत्कृष्टता में, अपनी अंतिम साँस तक आगे बढ़ने से न रुकें। *'क्योंकि इस समय की कठिनाइयाँ उस महिमा के योग्य नहीं हैं जो हम में प्रकट होने वाली है'* (रोमियों 8:8)। क्या आप संतों के जीवन में नहीं देखते कि उन्होंने कितनी मेहनत और पसीने से अपने जीवन की यात्रा पूरी की? क्या आप नहीं देखते कि पवित्र शहीदों ने कितने रक्तपात और किन-किन कष्टों के बीच अपना जीवन समाप्त किया? क्यों? ताकि वे मसीह के साथ एक हो सकें। *'क्योंकि जो कुछ देखा जाता है वह अस्थायी है, परन्तु जो कुछ नहीं देखा जाता वह अनन्त है'* (2 कुरिन्थियों 4:18)। क्या सूरज अच्छा नहीं है? फिर भी वह भी अंततः फीका पड़ जाएगा। क्या चाँद अच्छा नहीं है? फिर भी वह भी प्रकाश देना बंद कर देगा। क्या तारे अच्छे नहीं हैं? फिर भी वे भी गिर जाएँगे। क्या आकाश मनोहर नहीं है? फिर भी वे एक वस्त्र के समान घिस जाएँगे, और सभी चीजें बदल जाएँगी - और जैसा लिखा है, एक नया आकाश और एक नई पृथ्वी होगी - और मसीह में और मसीह के साथ एक अनुपम धन्य जीवन शुरू होगा। हमें दिए गए वादे ऐसे हैं। और ऐसी याद दिलाने से हम एक-दूसरे की मदद करेंगे कि इंद्रिय-संबंधी को अति-इंद्रिय-संबंधी से जीतें, सांसारिक प्रेम को दिव्य प्रेम से वश में करें, और, जैसा कि प्रेरित सिखाते हैं, *'ऊपर की बातों की खोज करें, जहाँ मसीह परमेश्वर के दाहिने हाथ बैठे हैं, और अपना मन ऊपर की बातों पर लगाएँ, न कि सांसारिक बातों पर'* (कुलुस्सियों 3:1), न तो वासनाओं की कीचड़ में लोटते हुए, न ही जुनून की कीचड़ में डूबते हुए, *'जिनका अंत विनाश है। क्योंकि हमारा जीवन स्वर्ग में है, जहाँ से हम भी अपने उद्धारकर्ता प्रभु यीशु मसीह की प्रतीक्षा कर रहे हैं'* (फिलिप्पियों 3:19-20)।

284. घाव लगने पर, मैंने उपचार की तलाश की, और—देखो, मैं तुमसे बात कर रहा हूँ

284. 1) घाव लगने पर, मैंने उपचार खोजा, और—यहाँ मैं आपसे बात कर रहा हूँ। – मैं इससे एक सीख लेता हूँ: जैसे ही कोई पाप का घाव पाता है, पश्चाताप के उपचार के लिए शीघ्रता करो। – 2) विलंब न करो; क्योंकि मृत्यु तुम्हें

आ सकती है, और बिना शुद्ध हुए मरना और इस अवस्था में न्याय-सिंहासन के सामने उपस्थित होना भयानक है। – 3) अपना ध्यान रखो, और उस शत्रु की न सुनो जो टालमटोल सिखाता है। [4, 82]

10. मेरी टांग के घाव से तुम्हें दुख हुआ है, और यह स्वाभाविक भी है। क्योंकि तुम सुख और दुख दोनों में मेरा साथ देते हो, जैसे कोई अपने भाइयों और अपने पिता से प्रेम करता है। मैं, अपनी ओर से, इससे आपके लिए सिखाने के लिए एक सबक लेता हूँ। तो, किस तरह से? जब मुझे मेरे पापों के कारण एक घाव लगा, तो तत्काल चिकित्सा उपचार और उचित आराम की आवश्यकता थी; इसीलिए, तीन दिनों तक मैं आपसे बात नहीं कर सका। अब, हालाँकि, ईश्वर की कृपा से, बीमारी ठीक हो गई है, और मैं एक बार फिर आपके साथ हूँ - और यहाँ मैं, आपसे बात कर रहा हूँ। – यही बात आत्मा के घावों पर भी लागू होती है। – क्या किसी का हृदय देखने या सुनने की बात से आहत हुआ है? या क्या वे एक दैवीय विचार से भटक गए हैं और दुष्ट वासना, क्रोध, रोष, घृणा, ईर्ष्या, कलह, अवज्ञा, या किसी अन्य विनाशकारी जुनून से ग्रस्त हो गए हैं? – उन्हें तुरंत उपचार शुरू करना चाहिए, यानी पश्चाताप, हृदय की व्यथा, रोना, आहें भरना और हृदय का दर्द, और पश्चाताप के अन्य उपचार; और, ठीक हो जाने के बाद, एक बार फिर से अपनी पूर्व की भलाई की स्थिति में लौट आना चाहिए। हालाँकि, यदि ऐसा नहीं किया गया, तो पाप के ऊपर पाप और घाव के ऊपर घाव चढ़ता जाएगा; यह जुनून असाध्य हो जाएगा, और हम अपने पाप में ही मर जाएँगे।

11. परन्तु हे मेरे भाइयो, हम पर ऐसा न हो। सबसे पहले, हमें पाप करने से बचना चाहिए: क्योंकि एक शुद्ध आत्मा और वासनाओं से अछूते मन से बढ़कर और क्या मीठा या अधिक आनंददायक हो सकता है? और यदि हम अपनी प्रकृति की प्रवृत्तियों के कारण पाप कर बैठें, तो हमें यथाशीघ्र प्रायश्चित करना चाहिए, और अपने भीतर किसी भी चीज़ को बिना ठीक किए नहीं छोड़ना चाहिए, यहाँ तक कि एक घंटे के लिए भी नहीं: क्योंकि मृत्यु एक चोर है, और आप नहीं जानते कि यह चोर किस घंटे आएगा, चाहे आधी रात को या मुर्गी की बाँग सुनने पर; अनतैयार होकर शरीर से विदा होना एक बड़ी दुर्भाग्य की बात है, और इस प्रकार मसीह के न्याय-सिंहासन के सामने खड़ा होना अत्यंत भयानक है। क्योंकि, जैसा कि प्रेरित कहते हैं, *'परमेश्वर का वचन जीवित और सक्रिय है, किसी भी दोधारी तलवार से भी अधिक तीक्ष्ण, जो आत्मा और मन, जोड़ों और मज्जा तक को चीरता है, और हृदय के विचारों और इरादों का परखने वाला है; और उसकी दृष्टि से कोई भी प्राणी छिपा नहीं है, बल्कि सब कुछ उसके सामने नंगा और खुला हुआ है: और हमें उसी के सामने अपना हिसाब देना होगा'* (इब्रानियों 4:12–13)। *"और यदि धर्मी बड़ी कठिनाई से बचेंगे, तो दुष्ट और पापी कहाँ ठहरेंगे?"* (1 पतरस 4:18)। यदि भविष्यवक्ता दानियेल, एक दर्शन में परमेश्वर के न्याय को देखकर, भय और विस्मय से भर गए, तो हमारा क्या होगा जब हम वास्तव में इस न्याय-सिंहासन के सामने खड़े होंगे? *'एक आग की नदी,'* यह कहता है, *'उसके सामने से बह रही थी: हजारों-हजारों उसकी सेवा करते थे, और करोड़ों उसके सामने खड़े थे: न्याय-सिंहासन लगा दिया गया, और पुस्तकें खोल दी गईं* (दानिय्येल 7:10)। जब ऐसा होगा, तो कौन दृढ़ खड़ा रहेगा, और कौन अपना साहस बनाए रखेगा? कोई नहीं, सिवाय उन लोगों के जिनके पास सच्चा विश्वास और अच्छे कर्म हैं, और जिन्होंने साहस, धार्मिकता और पवित्रता प्राप्त की है—आज्ञाकारिता के पुत्र।

12. इसलिए, हमें अत्यंत सावधानी से सतर्क रहना चाहिए, और हर घड़ी भय के साथ परिणाम की प्रतीक्षा करनी चाहिए। न ही हमारा हत्यारा शत्रु, जो हमसे चोरी करता है, छिप पाएगा; वही जो हमें हमेशा वर्तमान समय को लापरवाही और आलस्य में बिताने के लिए प्रलोभित करता है, जबकि आज्ञाओं के प्रति आज्ञाकारिता को भविष्य तक के लिए टाल देता है। ऐसा ही यह साँप है, जो हमें पाप के मोहक दिखावों से बहकाता है। परन्तु हमें हमेशा उसे परमेश्वर की शक्ति से दूर भगाना चाहिए और उसे पीछे मोड़ देना चाहिए। इसी कारण, मैं नम्रता से, इस क्षण में आपसे ये शब्द कह रहा हूँ, ताकि मेरे मुख से पाँच शब्द भी सुनकर, आप प्रदान किए गए इस अनुस्मारक से सांत्वना पा सकें और एक-दूसरे को प्रोत्साहित कर सकें। क्योंकि एक अनुस्मारक एक आशीर्वाद है क्योंकि यह हमेशा आत्मा को नवीनीकृत करता है। और ऐसा करते हुए, हमारे पूर्वजों के उदाहरण का अनुसरण करते हुए, मुझे विश्वास है कि हम अपनी मुक्ति को साकार करने, ईश्वर को प्रसन्न करने, और उनके राज्य के योग्य माने जाने में सफल होंगे।

285. वह हमें परमेश्वर का धन्यवाद करने के लिए आमंत्रित करते हैं, जो, भले ही वे एक विदेशी भूमि में हों, उनके लिए हर प्रकार के भरण-पोषण का प्रबंध करते हैं

285. 1) वह हमें ईश्वर का धन्यवाद करने के लिए प्रेरित करते हैं कि, एक विदेशी भूमि में होने पर भी, वह उन पर हर प्रकार की व्यवस्था प्रदान करते हैं। – 2) और ऐसा न हो कि हम ऐसी कृपा खो दें, वह हमें ईश्वर को प्रसन्न करने के अपने उत्साह, और अपने विश्वास और आशा में डगमगाने के लिए प्रेरित करते हैं। [4, 83]

13. हमें प्रभु की उन आशीषों के लिए धन्यवाद देना चाहिए जो वह हम पर करते हैं, विशेष रूप से जब हम किसी परदेस में हों, कि निर्वासन में भी हम एक मठ में रहने के समान जीवन व्यतीत करते हैं, और न केवल अपनी आवश्यकताओं को पूरा करते हैं बल्कि हमारे पास आने वालों के लिए भी प्रदान करते हैं। क्या आप नहीं देखते कि हमारे कितने भाई-बहन यहाँ-वहाँ से निरंतर हमसे मिलने आते हैं? – वे ईश्वर और हमारी विनम्रता के अलावा और किसकी ओर रुख कर सकते हैं? क्या आप यह भी नहीं देखते कि कितने अन्य भटकते हुए पिता और भाई-बहन हमसे सहायता मांगते हैं, जो हर तरह से गरीबी और अभाव में पीड़ित हैं? – शायद ही कोई ऐसा दिन बीतता है जब हम किसी को आश्रय न देते हों; फिर भी, इन सब के बावजूद, हमें कभी आवश्यक वस्तुओं की कमी नहीं हुई; इसके विपरीत, हमारे पास सब कुछ प्रचुर मात्रा में रहा है। इस संबंध में, हम और क्या कह सकते हैं सिवाय इसके कि जिसने वादा किया है वह सचमुच झूठ नहीं बोल रहा है: *'पहले परमेश्वर के राज्य और उसकी धार्मिकता की खोज करो, और ये सब बातें तुम्हें अतिरिक्त रूप से दी जाएँगी'?* (मत्ती 6:33)। – और वास्तव में, हमें *'गेहूँ का फल, दाखमधु और तेल'* (भजन संहिता 4:8) और अन्य आवश्यक वस्तुएँ प्रदान की गई हैं – ये सभी हमारी अपेक्षाओं से परे हैं; इतना कि हम ईश्वर की भलाई के लिए धन्यवाद देने योग्य स्वर उठाने की शक्ति भी नहीं रखते। भले ही हम इस तरह की व्यवस्थाओं से कुछ हद तक प्रतिबंधित और बोझिल हों, तो सोचिए कि इसका पुरस्कार क्या है - और इसके लिए किस प्रकार की स्तुति परमेश्वर को प्राप्त होती है? यहाँ तक कि मठों के मठाधीश स्वयं इस बात पर आश्चर्य करते हैं कि जो काम करने की शक्ति उनके पास नहीं थी, उसे करने में परमेश्वर ने हमें सक्षम बनाया है। ऐसा क्यों है? ताकि हमारे विश्वास और आशा के द्वारा परमेश्वर की सामर्थ्य प्रकट हो। और मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि जो कुछ अब हमारे बीच हो रहा है, वह इस्राएल के जंगल में रहने के समय जो हुआ था, उससे बहुत मिलता-जुलता है। अब चौथा वर्ष हो गया है जब हमने न बोया है और न काटा है, और इस पूरे समय में परमेश्वर ने हमें ऐसा भोजन प्रदान किया है जो कभी कम नहीं पड़ा है। उसने स्वर्ग से हमारे ऊपर मन्ना की वर्षा नहीं की, बल्कि भूखों को खिलाने के लिए उन लोगों के अनाज के घर खोल दिए जिनके पास भरपूर था। उसने चट्टान से पानी नहीं निकाला, बल्कि भक्तों के पात्रों से उनके ही हाथों द्वारा दाखरस बहाया। और उसने हम पर कई अन्य आशीर्वाद भी दिए हैं, जिनके बारे में अभी बात करना उचित नहीं है। क्या यह अद्भुत नहीं है, क्या यह आश्चर्यजनक नहीं है, क्या यह प्रशंसनीय नहीं है? – मैं प्रेरित के शब्दों में कुछ और कहूँगा: कि हम, *'गरीब होते हुए भी कई लोगों को धनी बनाते हैं: कुछ भी न होते हुए भी, सब कुछ के मालिक हैं'* (2 कुरिन्थियों 6:10)।

14. हमारे अनुग्रहकारी परमेश्वर के वर ऐसे ही हैं, और उनकी आशीषें भी ऐसी ही हैं! और यह भय का कारण है कि, इस बात को समझने में हमारी विफलता के कारण कि उन्होंने हमें इस प्रकार सम्मानित किया है, हम अपने उपकारी को दुख पहुँचा सकते हैं – परन्तु भाइयो, सावधान रहो, – सभी मिलकर: यहाँ मौजूद और अनुपस्थित दोनों – आइए हम प्रभु की आज्ञाओं को पूरी लगन से पूरा करें, *'और आइए हम प्रेम और भले कामों में एक दूसरे को प्रोत्साहित करें'* (इब्रानियों 10:24), न तो हम लापरवाही से जिएँ, न शरीर की इच्छाओं और अपने ही विचारों के आगे झुकें, न पुराने जमाने के कुड़कुड़ाने वालों की तरह कुड़कुड़ाएँ, न उन परीक्षा करने वालों की तरह प्रभु को परीक्षा में डालें – कि क्या वह भविष्य में हमारे लिए यह या वह कर सकते हैं। *'जो विश्वास करता है उसके लिए सब कुछ संभव है'* (मरकुस 9:22), जैसा कि लिखा है। क्योंकि यदि हम सच्चे मन से विश्वास करते हैं, तो प्रभु हमारी प्रार्थना पर, हमारे उद्धार और हमारे शारीरिक जीवन दोनों के लिए आवश्यक सभी चीजें हमें प्रदान करेंगे। और हम इस जीवन के मरुस्थल को सत्य के प्रकाश से प्रबुद्ध होकर सफलतापूर्वक पार करेंगे; हम शक्तिशाली आध्यात्मिक हथियारों से लैस होकर अदृश्य अमालेक को भगा देंगे; और हम प्रतिज्ञात देश में नहीं—क्योंकि हम अस्थायी और क्षणिक की खोज नहीं करते—बल्कि स्वर्ग के राज्य में प्रवेश करेंगे; क्योंकि जिसने वादा किया है उसने सत्य कहा: *'धन्य हैं वे जो धार्मिकता के कारण सताए जाते हैं, क्योंकि स्वर्ग का राज्य उन्हीं का है'* (मत्ती 5:10)।

286. मानवीय प्रलोभन बाहरी और आसान होते हैं

286. 1) बाहरी प्रलोभन स्वभाव से मानवीय हैं, और वे हल्के हैं। – 2) दैवीय प्रलोभन अधिक गंभीर हैं; लेकिन हम प्रभु की मदद से इन पर भी काबू पा लेंगे, बशर्ते हम उनका विरोध करने के अपने उत्साह में डगमगाएँ नहीं। – 3) यह एक अनवरत संघर्ष और शहादत है। [4, 84]

15. हम पर आई विपत्तियों के सामने, प्रेरित के साथ यह कहना हमारे लिए उचित है: *'हम पर कोई ऐसी परीक्षा नहीं आई है जो मनुष्यों के लिए सामान्य न हो'* (1 कुरिन्थियों 10:13)। हम यह बात थियोक्टीस्ट, उस अच्छे वृद्ध अगुवे के लिए कहते हैं, जो हर तरह से हमें प्रिय है। तो, यह परीक्षा क्या है? कि वह चाल्कडिस नामक एक द्वीप पर कैद है, जबकि उसके वरिष्ठ, जिन पर उनके अधीनस्थों द्वारा यह बदनामी की गई कि वह सत्ता में बैठे लोगों के लिए

प्रार्थना नहीं करते थे, को सबसे कठोर पिटाई का शिकार होना पड़ा। प्रलोभन भड़क रहे हैं; और हम, ज़्यादातर, ऐसे प्रलोभनों के लिए ज़िम्मेदार ठहराए जाते हैं: क्योंकि हम मठ के शासन का जिम्मा सौंपे गए व्यक्ति को अपनी मर्ज़ी से सत्ताधारियों के लिए प्रार्थना न करने कैसे दे सकते हैं? या हम भाइयों और पिताओं को, जो कैद से बच निकले हैं, शहर में रहने और विधर्मियों को परेशान न करने कैसे दे सकते हैं? – *"उनके बीच से निकल आओ और अलग हो जाओ, यहोवा का वचन है, और अशुद्ध वस्तुओं को न छूओ"* (2 कुरिन्थियों 6:17)। जो इसके विपरीत कार्य करते हैं, वे गंभीर कष्टों को झेलते हैं। इसीलिए हम, विनम्रता से, शहर के भीतर रहने वालों से अलग हो गए हैं और इसके बाहरी इलाके में रहते हैं, ताकि *'उन लोगों को कोई कारण न दें जो कारण ढूँढ़ते हैं'* (2 कुरिन्थियों 11:12); और प्रभु ने हमें अब तक सुरक्षित रखा है। लेकिन वह हमें तब तक सुरक्षित रखेगा, जब तक हम अपना ध्यान रखते हैं, इस-उस विषय पर बेतुकी बातें नहीं करते, और व्यर्थ और निंदनीय बातों को सुनने के लिए अपने कान नहीं देते। जैसा कि प्रेरित कहते हैं: *'तुम्हारा वचन हमेशा अनुग्रह से परिपूर्ण और नमक से स्वादित हो, ताकि तुम जान सको कि तुम्हें हर एक को कैसे उत्तर देना चाहिए'* (कुलुस्सियों 4:6)। – और परमेश्वर के भाई फिर क्या कहते हैं: *'इस प्रकार बोलो और ऐसा करो, जैसे कि तुम उस व्यवस्था से स्वतंत्र हो, जिस पर तुम्हारा न्याय होगा?'* (याकूब 2:12)। इसलिए हम निश्चिंत हो सकते हैं कि हम गलत समय पर परीक्षा में नहीं पड़ेंगे, बल्कि इन बुराइयों से एक फंदे से निकलने की तरह खुद को मुक्त कर लेंगे।

१६. और यही तो मानवीय परीक्षा है—अर्थात्, एक हल्की परीक्षा। परन्तु दैवीय परीक्षा—ओह!—बहुत भारी और कपटी होती है। शत्रु हमें परीक्षा में डालने के लिए हर दिन, हर घड़ी और हर पल घात लगाकर बैठता है, और ऐसा करके उसे रोकना बहुत कठिन और विजय प्राप्त करना मुश्किल बना देता है। लेकिन चूँकि लगन और उत्साह सभी आवश्यक और अपेक्षित कार्यों को पूरा करने में सफल होते हैं, तो आइए हम मसीह की मदद से उत्साहपूर्वक विरोध करें और विजय प्राप्त करें: क्योंकि वह हमारे साथ परीक्षाओं को सहते हैं; इसीलिए उन्होंने कहा: *'मेरे बिना तुम कुछ भी नहीं कर सकते'* (यूहन्ना 15:5)। इसलिए, आइए हम इस प्रलोभन में न पड़ने और शैतान की दया पर न रहने का प्रयास करें। इस द्वीप पर यह कैद, और वह भी थोड़े समय के लिए, वास्तव में कोई सच्ची कैद नहीं है। सच्ची कैद तो परमेश्वर से बहिष्कृत हो जाना और घोर अंधकार में डाल दिए जाना है। इसी तरह, यहाँ इतनी और इतनी कोड़ों की मार क्या है? – सच्ची कोड़ों की मार वह है जहाँ कोड़े अनगिनत हों और उनसे उत्पन्न पीड़ा अनंत हो। और *'जिन्होंने भलाई की है,'* प्रभु कहते हैं, *'वे जीवन के पुनरुत्थान के लिए निकलेंगे; पर जिन्होंने बुराई की है, वे न्याय के पुनरुत्थान के लिए'* (यूहन्ना 5:29)। अतः हम इस से डरें और काँपें, और हमारे भीतर वास करने वाले आत्मा की शक्ति में अपनी सारी सामर्थ्य से यत्न करें, *'तर्कों को ध्वस्त करते हुए'*, जैसा लिखा है, *'और परमेश्वर के ज्ञान के विरुद्ध उठाई गई हर एक ऊँची वस्तु को, और हर एक विचार को मसीह की आज्ञाकारिता में बंदी बनाकर लाते हुए; और हर अवज्ञा के काम को दंडित करने के लिए तैयार रहना'* (2 कुरिन्थियों 10:4-6); और यह अनवरत रूप से।

१७. देखो, एक अनवरत युद्ध! देखो, एक पीड़ा से भरा शहीदी जीवन! क्योंकि जो कोई, विचारों से निरन्तर घिरने पर भी, उन पर विजय प्राप्त करता है और बाअल के सामने घुटने नहीं टेकता, बल्कि कामवासना, क्रोध, रोष, भय जैसी वासनाओं का विरोध करता है और उन पर काबू पाता है—वह प्रतिदिन यातना सहता है और प्रेरित के साथ कह सकता है : *'मैं प्रतिदिन मरता हूँ; यह मेरा घमंड है, जो मुझे हमारे प्रभु मसीह यीशु में है'* (1 कुरिन्थियों 15:31); और अपने संघर्षों के अंत में, साहसपूर्वक यह जोड़ने के लिए: *"मैंने अच्छा संघर्ष किया है, मैंने दौड़ पूरी कर ली है, मैंने विश्वास बनाए रखा है; अब मेरे लिए धार्मिकता का मुकुट रखा हुआ है, जिसे प्रभु, वह धर्मी न्यायी, उस दिन मुझे प्रदान करेंगे"* (2 तीमु. 4:7–8)। – तो, आओ हम धर्मी बनें और एक दूसरे से इस प्रकार बात करें, और फिर, अपने कर्मों के द्वारा, धार्मिकता के मुकुट से सुसज्जित होकर स्वर्ग के राज्य में प्रवेश करें।

287. हमारा स्वभाव सुस्त और आलसी है। प्रतिज्ञाओं के वचन इसे जगाते हैं

287. 1) हमारी प्रकृति सुस्त और आलसी है। वादों के बारे में एक शब्द इसे जगाता है। – 2) संतों और शहीदों ने इसे व्यवहार में दिखाया है। – 3) लेकिन हम अभी भी सोए क्यों हैं? आइए हम उठें और वासना और जुनून से मुक्ति की ओर बढ़ें – 4) और स्वर्ग के आनंद और सुखों का स्वाद चखें। [4, 85]

18. प्रेरित यह दिखाते हैं कि एक शिक्षक को अपने शिष्यों के प्रति कैसी लगन रखनी चाहिए, जब वे तिमोथियुस से कहते हैं: *'समय और असमय प्रचार कर; फटकार लगा, डाँट और सब धीरज और शिक्षा के साथ समझा; क्योंकि वह समय आएगा जब वे सच्ची शिक्षा को न सहन करेंगे'* (2 तीमु. 4:2-3)। क्योंकि हमारी प्रकृति धूमिल, सांसारिक-चित्त और शिक्षा को भूलने वाली है, इसलिए इसे हमेशा एक तीखे चुभन की तरह, वचन के डंक से, उत्तेजित करने की आवश्यकता होती है, ताकि, जैसे नींद से जागकर, यह अपने सामने रखी गई आनंद को देख सके। क्योंकि यह

क्या है? क्या यह हमें वादा किया गया स्वर्ग का राज्य नहीं है? क्या यह अमर जीवन नहीं है? क्या यह अकथनीय आनंद नहीं है? क्या यह स्वर्ग की मिठास नहीं है? क्या यह स्वर्गदूतों के समान सम्मान नहीं है? क्या यह शाश्वत विश्राम नहीं है?

19. बंधन और कालकोठरियाँ किस उद्देश्य से हैं? निर्वासन और उत्पीड़न किस उद्देश्य से हैं? यातनाएँ और मृत्यु किस उद्देश्य से हैं? क्या यह इसलिए नहीं है ताकि हम प्रतिज्ञा की गई आशीर्वादों के योग्य माने जाएँ और भयानक यातनाओं से बच सकें? देखो, शहीदों ने कितनी खुशी से अपना रक्त बहाया, कितनी तत्परता से वे तलवार, आग, जानवरों और हर तरह की अन्य यातनाओं का सामना करने गए। यह भी देखिए कि धर्मीजन कितनी प्रसन्नता से अपने शरीर को वश में करते और दमन करते हैं, और सद्गुण से बढ़कर कुछ भी वांछनीय नहीं समझते।

20. और फिर भी, हम क्यों सो रहे हैं? हम क्यों विनाशकारी और भ्रष्ट करने वाले भावों में लिप्त रहते हैं, जो दिल में घोंपने वाले तीरों की नुकीली नोकों के समान हैं? *'उनके बीच से निकल आओ और अलग हो जाओ, प्रभु कहते हैं'* (2 कुरिन्थियों 6:17)। इसलिए हम उनसे दूर हो जाएँ, जैसे सदोम और गमोरा से, जो आग और गंधक से भस्म हो गए थे; हम शरीर के तर्क को त्याग दें, जो आत्मा के विरुद्ध विरोध और युद्ध करता है; हम स्वयं को परिश्रम उत्पन्न करने वाली कामनाओं से मुक्त करें – और हमें अपनी आत्मा के लिए विश्राम मिलेगा। कामनाओं से अछूती और परमेश्वर के साथ शांति में रहने वाली आत्मा से अधिक शांतिपूर्ण और क्या हो सकता है?

21. तो क्या यही आनंद और हर्ष है? क्या यही धन्य सांत्वना और मिठास है? क्या हम इस मिठास का स्वाद चखना चाहते हैं? – आइए हम देह के सुखों से भागें, जो क्षय और मृत्यु लाते हैं। क्योंकि प्रेरित कहते हैं, *'जो अपने देह के लिए बोता है, वह देह से नाश की कटनी काटेगा; पर जो आत्मा के लिए बोता है, वह आत्मा से अनंत जीवन की कटनी काटेगा'* (गलातियों 6:8)। क्या हम महिमामय बनना चाहते हैं? – आइए हम व्यर्थ मानवीय महिमा को तुच्छ समझें, नम्रता का वेश धारण करें और हर अच्छे काम से सुसज्जित हों। इस प्रकार, हम इस जीवन को अच्छी तरह जिएंगे और हमारे प्रभु यीशु मसीह की अनुग्रह और प्रेम द्वारा, भविष्य के आशीर्वादों के योग्य समझे जाएंगे।

288. वर्तमान उत्पीड़न हल्का है; फिर भी हमें इसे सहन करना चाहिए; और वर्तमान पीढ़ी की इस लिए प्रशंसा की जानी चाहिए।

288. 1) आज हम जिस उत्पीड़न का सामना करते हैं, वह कम गंभीर है; फिर भी हमें इसे सहन करना चाहिए; और वर्तमान पीढ़ी की इस लिए प्रशंसा की जाती है। – 2) तथापि, हमें हमेशा बिना भय के ऑर्थोडॉक्स धर्म पर होने वाले हमलों का सामना करने के लिए तैयार रहना चाहिए। – 3) जहाँ तक हमारे अदृश्य उत्पीड़क की बात है, हमें उससे अनवरत रूप से लड़ना चाहिए। – 4) हम परमेश्वर में अपनी आशा में दृढ़ रहें, और वह हमें शक्ति प्रदान करेगा। [4, 26]

22. इन तीन वर्षों से हम एक नए प्रकार का जीवन जी रहे हैं: हम पूरी तरह से सताए नहीं जाते, फिर भी यह नहीं कहा जा सकता कि हम सताए नहीं जाते; हम एक-दूसरे को देखते हैं और एक-दूसरे के घरों में जाते हैं। और यह मानव जाति के प्रति परमेश्वर के प्रेम की बात है। क्योंकि उन्होंने देखा कि हम अतीत के लंबे समय तक चले उत्पीड़न से थक चुके थे; इसलिए अब उन्होंने जेलें बंद कर दी हैं, फिर भी उन्होंने अपनी अगम्य योजनाओं के अनुसार, ऑर्थोडॉक्सी के लिए उत्पीड़न बंद नहीं किया है। – और ऐसा ही है। – हालाँकि, समग्र रूप से इस मामले को देखते हुए, मुझे लगता है कि प्रभु के लिए सताए जाने वाले बहुत कम हैं। और यह देखते हुए कि हमारे कितने भाई हर दिन यहाँ आते हैं, मुझे अपने दिल में एक तरह की राहत महसूस होती है कि बहुत से ऐसे हैं जिन्होंने बाल के सामने घुटने नहीं टेके हैं, बल्कि प्रभु के लिए, उसके प्रभुत्व के हर स्थान पर, चमकीले तारों की तरह खुद को बनाए रखा है। – इस प्रकार यह पीढ़ी अपने अनुयायियों के लिए प्रशंसा का स्रोत है; क्योंकि परमेश्वर सचमुच हमारे भीतर हैं, और कलीसिया ने प्रभु के अटूट वचन के अनुसार अपनी शक्ति नहीं खोई है। जो भी अनादि काल से उस पर हमला करते आए हैं, वे समुद्र के झाग की तरह बिखर गए हैं, जबकि वह, एक अटूट चट्टान की तरह, उसी विश्वास और उसी अंगीकार में दृढ़ बनी हुई है।

२३. हमें इस पर आनन्दित और हर्षित होना चाहिए; फिर भी, साथ ही हमें संयम और सतर्क रहना चाहिए, और तैयार रहना चाहिए, कहीं ऐसा न हो कि प्रलोभन अचानक फिर से उत्पन्न हो जाए: क्योंकि केवल एक, दो, या यहाँ तक कि कई परीक्षणों के सामने अपने धर्मोपदेश को बनाए रखना ही काफी नहीं है, बल्कि हमें अपने पूरे जीवन भर, इसके अंत तक ऐसा करना चाहिए – बुरे अफवाहों से निराश हुए बिना, न ही उन प्रताड़नाओं से भयभीत होकर जो शरीर को फाड़ने के लिए तैयार प्रतीत होती हैं, न ही उन काल-कोठरियों से जो मांस को कुचल देती हैं, और न ही किसी अन्य मानवीय हमले से; परन्तु एकमात्र परमेश्वर का सच्चे मन से आदर करते हुए, जिनकी इच्छा से सभी वस्तुएँ चलती हैं,

और केवल अनन्त यातनाओं से डरते हुए, जिनका अनुभव अकथनीय रूप से पीड़ादायक है; क्योंकि सभी वर्तमान चीजें—चाहे सुखद हों या दुखद—जल्द ही सपनों की तरह बीत जाती हैं; इसीलिए लिखा है: *'उनके तीर एक बच्चे के लिए फोड़े के समान थे'* (भजन संहिता 63:8)।

२४. तथापि, हमें फिर भी उनसे लड़ना है, और सबसे बढ़कर अपने अदृश्य उत्पीड़क से, जो प्रतिदिन हम पर आक्रमण करता है—जो बिना रुके हमें मूर्त कोड़ों से नहीं बल्कि अदृश्य विचारों से प्रहार करता है, और हमें भौतिक आग से नहीं बल्कि दुष्ट इच्छाओं से जलाता है, और हमारी आत्माओं को हर प्रकार के अन्य जुनूनों से प्रलोभित और घेरता है। – *"इसलिये सच्चाई का कमरबंध बाँधो, और धार्मिकता का कवच पहिन लो, और अपने पाँवों में शान्ति के सुसमाचार की तैयारी के जूते पहिन लो; और इन सब के ऊपर विश्वास की ढाल उठा लो, जिससे तुम उस दुष्ट के सब जलते हुए तीरों को बुझा सकोगे; और उद्धार का टोप और आत्मा की तलवार, जो परमेश्वर का वचन है, ले लो"* (इफिसियों 6:14-17)। ये हैं प्रेरितों की आज्ञाएँ! हम भी, अपनी नम्रता में, इन्हें प्रचार करते हैं, और हम प्रार्थना करते हैं कि आप क्लेशों में हतोत्साहित न हों और परीक्षाओं में थके न हों, यह जानते हुए कि आप जितनी अधिक परीक्षाएँ सहन करेंगे, आपके मुकुट उतने ही बड़े होंगे।

२५. परमेश्वर हमें शक्ति प्रदान करें: क्योंकि वह अपने वचन को पूरा करने में समर्थ है; वह हमें न केवल घावों को सहने के लिए, बल्कि आग, तलवार, जंगली जानवरों और ऐसी सभी चीजों के लिए भी बल देने में समर्थ है। इस बात से आश्वस्त होकर, प्रेरित कहते हैं: *'इन सब बातों में हम उस की दया से जीतने वाले से भी बढ़कर हैं, जिस ने हम से प्रेम किया।' क्योंकि मैं जानता हूँ कि न तो मृत्यु और न जीवन, न स्वर्गदूत और न अधिकार, न सामर्थ्य और न वर्तमान और न आने वाली वस्तुएँ, न ऊँचाई और न गहराई, और न कोई अन्य सृजित वस्तु, हमें परमेश्वर के उस प्रेम से अलग कर सकती है जो हमारे प्रभु यीशु मसीह में है'* (रोमियों 8:37–39)। यदि हम इस प्रकार कार्य करने का मन बना लें, तो हम शहादत के एक अनवरत कार्य में संलग्न रहेंगे - और हमारा भाग शहीदों के साथ होगा।

289. उत्पीड़न एक वरदान है: मनुष्य को उत्पीड़न में इस वरदान के योग्य ढंग से जीवन जीना चाहिए; यह ठीक-ठीक समझाया गया है कि कैसे

289. 1) उत्पीड़न एक वरदान है: व्यक्ति को उत्पीड़न के बीच इस वरदान के योग्य तरीके से जीना चाहिए; यह ठीक-ठीक समझाया गया है कि कैसे। – 2) इसके विपरीत, अलगाव में रहना विशेष रूप से निंदनीय है, क्योंकि इसके हानिकारक परिणाम होते हैं - आत्म-तुष्टि, लापरवाही और नैतिक चूकें। – 3) सभी को संयमित और विवेकपूर्ण जीवन जीने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है। [4, 87]

26. परमेश्वर ने हमें इस उत्पीड़न में सबसे बड़ा वरदान दिया है, जैसा कि उन्होंने स्वयं सुसमाचार में कहा है: *'धन्य हैं वे जो धार्मिकता के कारण सताए जाते हैं, क्योंकि स्वर्ग का राज्य उन्हीं का है'* (मत्ती 5:10)। अतः हम सावधान रहें कि ऐसे आशीर्वाद के अनयोग्य जीवन जीकर, हम इस उत्पीड़न को अपने लिए एक निंदा में न बदल दें। सबसे पहले, जो सताया जाता है उसे एकाकी जीवन नहीं जीना चाहिए, बल्कि अन्य भाइयों के साथ मिलकर रहना चाहिए। क्योंकि प्रभु कहते हैं: *'जहाँ दो या तीन मेरे नाम पर इकट्ठे होते हैं, वहाँ मैं उनके बीच में होता हूँ'* (मत्ती 18:20)। इसके अलावा, उसे केवल तभी बाहर जाना चाहिए जब अत्यंत आवश्यक हो, लेकिन उसे एक यात्री की तरह वहाँ रहना चाहिए जहाँ उसका स्वागत किया जाता है, और उसे प्रार्थना, विनती, पठन, भजन-गायन, शिल्प और हमारे बीच प्रचलित अन्य अच्छे कार्यों में स्वयं को समर्पित करना चाहिए; उसे स्त्रियों के दर्शन से बचना चाहिए, *'किसी भी ऐसे भाई से अलग रहो जो अव्यवस्थित जीवन जीता है'* (2 थिस्स. 3:11), उसे सौम्य, कृतज्ञ, आशावादी, जो कुछ उसके पास है उससे संतुष्ट, और मसीह के लिए दुख सहने को तैयार रहना चाहिए: क्योंकि जहाँ उत्पीड़न होता है, वहाँ आमतौर पर दुख भी होता है।

27. जो अकेले रहते हैं, उनके भाग में दुख होता है: क्योंकि बुद्धिमान कहता है, *'उस अकेले के लिए हाय!'* क्योंकि *'यदि वह गिर जाए, तो उसे उठाने वाला कोई नहीं है'* (सभोपदेशक 4:10); उनमें से जो नौकर रखते हैं वे मठ की स्वतंत्रता को नष्ट कर देते हैं; जो खेत, दाख की बारी, बैल और खच्चर खरीदते हैं वे अपने ऊपर गेहाज़ी का कोढ़ लाते हैं। इसी से धन का प्रेम, लालच, चंचलता, भाइयों के साथ रहने की अनिच्छा, एक अजीब तरह से और अपनी इच्छा के अनुसार व्यवहार करने की आदत, *और 'जैसा लिखा है, अन्यजातियों में* हमारे द्वारा *परमेश्वर के नाम के विरुद्ध अपमान'* उत्पन्न होता है /(रोमियों 2:24), और आध्यात्मिक पतन: क्योंकि जो लापरवाही से रहता है, वह गिरने से कैसे बच सकता है? प्रेरित कहते हैं, *'क्या तुम नहीं जानते कि तुम परमेश्वर का मन्दिर हो, और परमेश्वर का आत्मा तुम में वास करता है? यदि कोई परमेश्वर के मन्दिर को नाश करेगा, तो परमेश्वर उसे नाश कर देगा'* (1 कुरिन्थियों 3:16–17)। और फिर वह कहते हैं: *'यह न सोचो कि परमेश्वर के मंदिर में वेश्या, मूर्तिपूजक, व्यभिचारी, स्त्रीलिङ्ग,*

समलैंगिक, चोर, लोभी, मदमस्त, अपमान करने वाले और ठग होंगे; परमेश्वर का राज्य इनका नहीं है' (1 कुरिन्थियों 6, 9–10). क्या हम खुद को उन लोगों में गिनने की अनुमति दे सकते हैं जिनके बारे में कहा गया है: *'जो मसीह के हैं, उन्होंने शरीर को उसकी कामनाओं और इच्छाओं सहित सलीब पर चढ़ा दिया है'* (गलातियों 5:24); और फिर: *'तुम जगत के नहीं हो'* (यूहन्ना 15:19); और आगे: *'हमारी नागरिकता स्वर्ग में है'?* (Phil. 3: 20).

28. तो फिर, हम अपनी आनंदमयता को क्यों बर्बाद कर रहे हैं? हम अपनी पुकार की गरिमा को इतना नीचा क्यों कर रहे हैं? हम अपने उन भाइयों के अनुकरण क्यों नहीं करते जो धार्मिकता से जीते हैं, जिनका जीवन परमेश्वर और मनुष्यों के सामने महिमामय और प्रशंसनीय है? क्या यह समय नहीं है कि हम अंततःहोश में आएं? क्या यह समय नहीं है कि हम स्वयं को अनुशासित करें? क्या यह समय नहीं है कि हम अपने उद्धार के लिए चिंतित हों, अपनी अंतिम नियति और इस बात को अपनी आँखों के सामने रखते हुए कि हम मसीह की न्याय-सिंहासन के सामने कैसे उपस्थित होंगे? चूंकि हमें हर व्यर्थ वचन का हिसाब देना है, तो हम बड़े और गंभीर पापों के लिए क्या उत्तर देंगे? – परन्तु आओ, हम होश में आएं, भले ही यह हमारे जीवन के संध्याकाल में ही क्यों न हो; आओ, हम अपनी वासनाओं को त्याग दें, *'अंधकार के कामों को उतार डालो और प्रकाश के हथियार पहिन लो'* (रोमियों 13:12), हर प्रकार से अपने हृदयों की रक्षा करें, और हर प्रकार से प्रभु को प्रसन्न करने का यत्न करें, ताकि इस प्रकार उद्धार पाकर, हम अनंत आशीषों के वारिस बन सकें।

290. वह आदमी जिसे मैंने देखा था, चल बसा है, और हमारे साथ भी ऐसा ही होगा; तो फिर हम देह का पोषण क्यों करते हैं?

290. 1) वह मनुष्य जिसे मैंने देखा था, चल बसा है, और हमारे साथ भी ऐसा ही होगा; तो फिर हम देह का पोषण क्यों करते हैं? – 2) वह अपनी मृत्युशय्या पर कष्ट में था: क्योंकि ऐसे समय में मनुष्य जिन विचारों को पालता है, वे उस पर आक्रमण करते हैं – शुभ विचार सांत्वना देते हैं, जबकि दुष्ट विचार पीड़ा देते हैं। – 3) तो, आओ हम स्वयं को न तो वासनाओं से और न ही वासनापूर्ण विचारों से फँसाएँ। [4, 88]

1. आत्मा के लिए मृत्यु के स्मरण से अधिक लाभदायक और उद्धारकारी और क्या हो सकता है? इसी विषय पर मैं अब आपसे बात करने के लिए प्रेरित हुआ हूँ, एनेया के बिशप की मृत्यु के अवसर पर, जिन्हें आपने मरते हुए नहीं देखा, जबकि हमने देखा, और हमें इससे बहुत लाभ हुआ; हमारे हृदय उस बात को पहचानकर भावुक हो गए जो हमारे भीतर भी मौजूद थी और उनमें भी मौजूद थी। – इस प्रकार वह चल दिया और परलोक सिधार गया, और इस जीवन में कभी वापस नहीं आएगा। उसे अब न तो स्वर्ग, न धरती, न समुद्र, न सूर्य, न चंद्रमा और न ही तारों की आवश्यकता है; उसे अब इस हवा में सांस लेने, अपनी कंठ से कोई ध्वनि निकालने, अपनी आँखों से देखने, अपने कानों से सुनने, अपनी नाक से सूंघने, अपने हाथों से छूने, अपने पैरों से चलने, या इस जीवन की किसी भी अन्य विशिष्ट चीज़ को करने, चाहे वह बड़ी हो या छोटी, की कोई आवश्यकता नहीं है; इसके द्वार उसके लिए हमेशा के लिए बंद हो गए हैं, और अब वह न्याय और प्रतिफल की प्रतीक्षा कर रहा है। पुरस्कार अभी भी संचित है, जैसा कि लिखा है: *'और ये सब, यद्यपि इनका विश्वास था, फिर भी उन्होंने प्रतिज्ञा प्राप्त नहीं की, क्योंकि परमेश्वर ने हमारे लिए कुछ बेहतर तैयार किया था, ताकि वे हमारे बिना पूर्ण न हों'* (इब्रानियों 11:39-40)। – तो फिर हमारा क्या होगा? – और कुछ नहीं। क्या हम भी उसी नियति का सामना नहीं करेंगे? क्या हम भी उसी मिट्टी में वापस नहीं लौटेंगे जिससे हमें उठाया गया था? क्या हम भी उसी तरह नहीं मरेंगे, और धूल और राख नहीं बन जाएंगे? आइए ताबूतों में झाँककर देखें कि हमारा वर्तमान जीवित रूप कैसे समाप्त होता है। – तो फिर, हम इस दयनीय शरीर को इतना अधिक क्यों पालते हैं, जिसे हम जल्द ही मिट्टी और कीड़ों के हवाले कर देंगे? हम उन वासनाओं का बोझ अपने ऊपर क्यों लादते हैं जिनका हमें हमारे प्रस्थान के समय सामना करना पड़ेगा?

२. मरते हुए व्यक्ति ने, जब वह अभी भी साँस ले रहा था, कहा कि दो आकृतियाँ—एक महिला और एक पुरुष—उसके सामने प्रकट हुई थीं और वे निर्दयता से उसकी निंदा कर रहे थे, जिससे वह कराहने, मदद के लिए पुकारने और अपने शरीर को छोड़ने की संभावना से भयभीत होकर कांपने लगा। क्या आप देखते हैं कि मृत्यु का निर्णय क्या है? – राक्षस हमारे अभियोजक और न्यायाधीश के रूप में कार्य करते हैं। और यह इस प्रकार है कि जिन विचारों को हम खुशी से स्वीकार करते हैं और व्यवहार में लाते हैं, उन्हीं विचारों को हम अपनी मृत्यु के समय देखेंगे: यदि *'मैं प्रभु को सदा अपने सामने रखता हूँ'* (भजन संहिता 15:8), यदि हम अपने जीवन के रक्षक, स्वर्गदूत को अपने निकट मानते हैं, यदि हम ऐसे और ऐसे संतों की कल्पना करते हैं, तो हम उन्हें अपनी अंतिम साँस पर देखेंगे; लेकिन यदि, इसके विपरीत, हम अपने भीतर पापी छवियों को उभारते हैं और शैतानी विचारों को पालते हैं, तो हम उस समय उनका सामना करेंगे, जो दयनीय और विनाशकारी दोनों है।

3. तो फिर, हम यह सुनिश्चित करने का प्रयास क्यों करते हैं कि हमारे प्रस्थान के समय हम ऐसे मूर्तियों से पराजित न हों, बल्कि उस समय शुद्ध हृदय के साथ पाए जाएँ, ताकि हम भी निडर होकर कह सकें: *'मैं शांति में सोऊँगा और विश्राम करूँगा'* (भजन संहिता 4:9)। क्योंकि सदाचारियों के लिए मृत्यु निद्रा है, जैसा कि प्रभु ने कहा: *'हमारा मित्र लाजरूस सो गया है; परन्तु मैं उसे जगाने के लिए जाता हूँ'* (यूहन्ना 11:11)। तो यदि यह निद्रा है, तो यह स्पष्ट है कि यह उसके लिए विश्राम का कारण और अनन्त जीवन की शुरुआत दोनों है, जैसा कि पवित्र प्रेरित कहते हैं: *'परन्तु अब मसीह मरे हुओं में से जी उठे हैं, और सो जाने वालों में पहिले फल हैं'*; और फिर थोड़ा आगे: *'मृत्यु पर विजय प्राप्त हो गई है। हे मृत्यु, तेरा डंक कहाँ है? हे अधोलोक, तेरी विजय कहाँ है? – मृत्यु का डंक पाप है; पाप की शक्ति व्यवस्था है। परन्तु परमेश्वर का धन्यवाद हो, जो हमें हमारे प्रभु यीशु मसीह के द्वारा जय प्रदान करता है'* (1 कुरिन्थियों 15:20, 54–57)। – देखो, मृत्यु निगल ली गई है! देखो, विजय प्रदान की गई है! क्योंकि प्रभु कहते हैं: *'जो जय प्राप्त करेगा, उसे मैं परमेश्वर के स्वर्ग के बीच में जीवन के वृक्ष का फल खाने का अधिकार दूँगा'* (प्रकाशितवाक्य 2:7)। क्या स्वर्ग के राज्य का मार्ग अब खुल गया है? देखो, त्रि-धन्य संघर्ष हमारे सामने है! विजेता को एक मुकुट और अनंत जीवन का स्वाद। आइए हम भी शैतान पर विजय प्राप्त करने, अपनी वासनाओं को वश में करने, स्वयं को सभी बुराइयों से पूरी तरह शुद्ध करने, और सद्गुणों को प्राप्त करने का प्रयास करें, ताकि हम स्वर्ग के निवासी बन सकें और जीवन के वृक्ष में भाग लेने के योग्य माने जाएँ।

291. हमें अपने उद्धार के लिए अथक और उत्सुक उत्साह के साथ प्रयास करना चाहिए

291. 1) हमें उद्धार के लिए अथक और उत्सुक उत्साह के साथ प्रयास करना चाहिए। – 2) सैनिक सांसारिक लाभ के लिए सांसारिक राजा की सेवा करने का प्रयास करते हैं; तो क्या हमें स्वर्गीय लाभ के लिए स्वर्गीय राजा के लिए काम करने में आलसी होना चाहिए? – 3) संतों को देखो: उनके बीच किस प्रकार के लोग नहीं मिलते, फिर भी एक भी आलसी या लापरवाह नहीं है। उनमें से कुछ ऐसे हैं जो गिर गए हैं, लेकिन वे वे हैं जिन्होंने पश्चाताप करने के बाद, उत्साह और लगन से परमेश्वर को प्रसन्न करने का प्रयास किया। – 4) तो, हे आलसी, उठो, प्रेरित की बात मानो और उत्साही बनो। [4, 89]

४. *'स्वर्ग के नीचे हर बात का एक समय होता है,'* बुद्धिमान कहते हैं (उपदेशक ३:१)। और हमारे उद्धार को साकार करने का समय हमेशा और हर जगह है। क्योंकि प्रेरित कहते हैं: *'सदैव आनन्दित रहो, निरन्तर प्रार्थना करो, हर परिस्थिति में धन्यवाद दो'* (१ कुरिन्थियों ५:१६)। हमारे मोक्ष की परिभाषा इन तीन गुणों से होती है: क्योंकि आनंद सभी धार्मिकता की पूर्ति का संकेत है; अखंड प्रार्थना शैतान को हम पर हमला करने का कोई अवसर नहीं देगी; कृतज्ञता का वरदान ईश्वर के प्रति हमारे प्रेम की गवाही है। इस प्रकार इन कर्मों से हर ओर से स्वयं को सुदृढ़ करके, हम उत्साहपूर्वक ईश्वर को प्रसन्न करें, किसी भी परिस्थिति में हतोत्साहित न हों, और लापरवाही से कभी सुस्ती न करें—न अपने कर्तव्यों के पालन में, न अपने भजन-गाने में, न ही अपने हाथ के कामों में—बल्कि सभी कार्यों को एक इच्छुक आत्मा से करें, *'अच्छे निर्माताओं की तरह, परमेश्वर के विभिन्न वरदानों का उपयोग करते हुए'* (1 पतरस 4:1)।

5. क्या हम यह नहीं देखते कि सैनिक कितनी लगन से अपने राजा के साथ अपने कार्य के लिए दौड़ते हैं? और किस कार्य के लिए?! युद्ध के लिए, कत्लेआम के लिए, मृत्यु के लिए। और फिर भी, क्षणिक महिमा और क्षणभंगुर धन के लिए, वे खुशी-खुशी हर चीज़ में खुद को झोंक देते हैं। लेकिन हम, जिन्हें स्वर्ग के राज्य, अकथनीय आनंद, और अनंत जीवन के लिए बुलाया गया है—क्या हम मसीह के अच्छे सिपाही के रूप में सारी लगन और उत्साह के बजाय सुस्ती और लापरवाही से अपना आप प्रस्तुत करेंगे?

6. मेरे हाथों में जो पुस्तक है उसे पढ़ें – और आप उसमें चित्रित पवित्र पिताओं की वीरता को देखेंगे और जान जाएँगे। उनका उत्साह कितना महान है! आत्मा की कितनी प्रबल ज्वाला! क्या वीरता के कारनामे! और सर्व-सत्पुरुष ईश्वर ने उन्हें कितनी महिमा दी है, उन्हें उनके द्वारा किए गए चिन्हों और चमत्कारों के माध्यम से, मानो, देवताओं के रूप में प्रकट करते हुए। यहाँ, केवल वे ही नहीं चमके जो आरंभ से ही अच्छे थे और जिन्होंने कभी पाप को नहीं जाना, बल्कि वे भी जिन्होंने सही रास्ते से भटककर गंभीर पापों में गिर गए थे, फिर भी अत्यंत सच्ची पश्चाताप से सुधर गए, ताकि उद्धार के संबंध में किसी के पास भी लापरवाही या उपेक्षा का कोई बहाना न रहे; यह उनके अकठोर और कठोर हो चुके हृदय के सिवाय और किसी चीज़ से नहीं उपजा है, जो उनके पश्चाताप रहित जीवन-यापन ने स्वयं उनके भीतर पैदा किया है।

7. ऐसे व्यक्ति के लिए प्रेरित पुकारते हैं: *'हे सोए हुए, जाग! मरे हुओं में से उठ! और मसीह तुझे प्रकाश देगा'* (इफिसियों 5:14)। *'या क्या तुम उसकी धनाढ्यता, उसकी भलाई, उसकी कोमलता और उसकी दीर्घक्षमा को तुच्छ*

जानते हो, यह न जानते हुए कि परमेश्वर की भलाई तुम्हें पश्चाताप के लिए प्रेरित करती है?' परन्तु अपनी दुष्टता और अविश्वासी मन से, तुम क्रोध के दिन और परमेश्वर के न्याय के प्रकट होने के लिए अपने लिए क्रोध इकट्ठा कर रहे हो: वह जो हर एक को उसके कर्मों के अनुसार बदलेगा" (रोमियों 2:4-6)। हे लापरवाह, इसे देखो; इस धमकी से डर, और लापरवाही की नींद से जाग! – इस प्रकार पूजनीय भाई कैंडिड चल दिए; उनसे पहले, एक और के साथ ऐसा हुआ, और उनके बाद, एक और आएगा। और कोई भी यहाँ हमेशा के लिए नहीं रहेगा। हम सभी गुजर जाएँगे। लेकिन धन्य है वह जिसने अच्छा जीवन जिया, क्योंकि उसने सफलतापूर्वक अपनी खरीदारी पूरी कर ली है और उत्साह और लगन से सर्वोत्तम प्राप्त करके, उसे एक अनंत पुरस्कार मिलेगा। लेकिन चूँकि बाज़ार अभी भी खुला है, और स्वर्ग के राज्य के लिए लेन-देन अभी बाकी है; आओ, मैं आपसे विनती करता हूँ, भाइयों और पिताओं, हम सभी चौकस रहें, हम सभी संयमी रहें, हम सभी दिव्य और अमर आशीर्वादों को खरीदने में शीघ्रता करें, ताकि अपने सभी भाइयों के साथ, हम स्वर्ग के राज्य के वारिस बन सकें।

292. मैं सभी को उद्धार के लिए अथक प्रयास करने की आज्ञा देता हूँ

292. 1) मैं सभी को बिना चूक के मोक्ष के लिए उत्सुक रहने की आज्ञा देता हूँ। – 2) इसके अलावा, किसी को भी बाहरी दिखावे से दूसरों का न्याय करने से बचना चाहिए: क्योंकि सबसे महत्वपूर्ण बात किसी की आंतरिक स्थिति है। – 3) तो, हर किसी को इस आंतरिक जीवन के लिए उत्सुक होना चाहिए, बुरे विचारों को अस्वीकार करना चाहिए और वासनाओं के उभार को पालना नहीं चाहिए, क्योंकि यह भीतर की हर चीज़ को अस्त-व्यस्त कर देता है। [4, 90]

8. मैं उद्धार के लिए उत्सुक लोगों से आग्रह करता हूँ कि वे और भी अधिक उत्सुक बनें; और मैं लापरवाहों से विनती करता हूँ कि वे अपनी लापरवाही और असावधानी से उठ खड़े हों। क्योंकि '*अब अनुकूल समय है, अब उद्धार का दिन है*' (2 कुरिन्थियों 6:2) – जिसे, यदि हम खो दें, तो हमें फिर कभी नहीं मिलेगा। हमारे लिए एक भी दिन आलस्य और लापरवाही में न बीते, बल्कि जब तक यह चल रहा है, हमें हर सावधानी बरतनी चाहिए कि हम अनंत खजानों में से कुछ संचित कर लें: प्रार्थना, विनती, निवेदन, धन्यवाद, आँसू, पश्चाताप, मन की प्रबुद्धता, और स्वर्गीय चिंतन।

९. इसके अलावा, हम अपने भाइयों के भीतर जो है, उसे अपने भीतर जो है, उसके आधार पर न आंकें; बल्कि यह सोचें कि प्रत्येक व्यक्ति अपने भीतर गुप्त रूप से अपनी मुक्ति का कार्य कर रहा है, भले ही वह बाहर से कुछ और ही दिखाई दे। क्या हमारे पूर्वजों के समय में ऐसा नहीं था कि कई जो कुछ भी नहीं लगते थे, वे उन लोगों की तुलना में अतुलनीय रूप से अधिक चमके जो कुछ लगते थे? और हमारे भाईचारे में अक्सर ऐसा हुआ है कि जो नम्र और गुमनाम पृष्ठभूमि से थे, वे दूसरों की तुलना में अधिक चमके, विशेषकर शहादत के समय में। – और ऐसा क्यों है? मुझे लगता है कि यह उतनी बाहरी लगन और उत्साह के कारण नहीं है जितना कि बाहर से दिखाई देता है, बल्कि यह किसी के भीतरी स्वभाव के कारण है। क्योंकि जहाँ शांतिपूर्ण स्वभाव और हृदय की पवित्रता, नम्रता और मौन होता है, वहाँ सदाचार का राज्य होता है; और प्रभु वहीं देखते हैं, जैसा लिखा है: *'मैं किस पर दृष्टि करूँगा, परन्तु नम्र और शांत लोगों पर, और जो मेरे वचन से काँपते हैं?'* (यशायाह 66:2)?

10. इसलिये हर कोई प्रयास करे कि वह एक निर्मल अंतकरण के साथ प्रभु के सामने उपस्थित हो, पापपूर्ण विचारों को पालकर शैतान को द्वार न खोले। क्योंकि जब हम उन्हें पालते हैं, तो आप जानते हैं कि हम कैसे दुखित होते हैं, कैसे हम उन्मत्त हो जाते हैं, कैसे हम बदल जाते हैं, सुख के बहाने हम कितनी कड़वाहट इकट्ठा कर लेते हैं; लेकिन जब हम होश में आते हैं और सही की ओर लौटते हैं, तो हम फिर से कैसी शांति का अनुभव करते हैं, और कैसी सबसे मीठी, मधुर शांति, मानो तूफान के बाद किसी बंदरगाह में शरण ले ली हो। इसलिए यह आश्चर्य की बात है कि जब सदाचार इतना मीठा, इतना मनोहर और इतना वांछनीय है, और पाप इतना कड़वा, इतना विनाशकारी और इतना घृणित है, तो हम सदाचार से और अधिक चिपके रहने के बजाय पाप के मोह में कैसे पड़ जाते हैं। अधिकतर, यह हमारी प्रकृति की कमजोरी के कारण है, और इस तथ्य के कारण कि '*मनुष्य का मन बचपन से ही दुष्ट है*' (उत्पत्ति 8:21)। फिर भी, आइए हम स्वयं को सही रास्ते पर वापस लाने में देरी न करें, न ही कोई प्रयास बचाएं; और प्रभु, हमारी मेहनत देखकर, हमारा बदला चुकाएंगे, और हमारे कठिन प्रयासों के लिए हमें अनंत पुरस्कारों से पुरस्कृत करेंगे, और इन कष्टों में हमारे धैर्य के लिए हमें धार्मिकता का मुकुट पहनाएंगे, हमें संतों के बीच स्थापित करेंगे, और हमें अपने राज्य में हिस्सा देंगे।

293. हम सतर्क रहें और जोश के साथ लड़ें: क्योंकि हमारे दुश्मन बहुत हैं और वे हमेशा चौकस रहते हैं

293. 1) हम सतर्क रहें और जोश के साथ लड़ें: क्योंकि हमारे दुश्मन बहुत हैं और वे सतर्क नहीं हैं। – लेकिन उन्हें डरने की कोई जरूरत नहीं है: क्योंकि हमारे पास शक्तिशाली सहायक और विजय के हथियार हैं। – 2) दृश्यमान युद्ध में विजय के लिए मुकुट होते हैं; लेकिन हमारे अदृश्य संघर्ष में, जो कोई भी दुश्मन के आगे नहीं झुकता, वह पहले से ही विजेता है और उसे मुकुट प्राप्त होते हैं। – 3) अतःआइए हम संघर्ष में वीरता दिखाएँ, और हम धन्य होंगे। [4, 91]

11. हम स्वयं पर तीव्र और अविराम निगरानी रखें: क्योंकि दिन-रात, हम पर युद्ध करने वाले नहीं थकते। तो, वे कौन हैं? दुष्टात्माएँ, इस युग के अंधकार के अधिपति, जिनकी संख्या असीम है और जिनका हम पर क्रोध अकथनीय है। – फिर भी, हम उनसे न डरें, न ही उनसे भयभीत हों। हमारे भी एक सह-योद्धा और मध्यस्थ हैं, पवित्र आत्मा और हमारे प्रभु यीशु मसीह, जिन्होंने *'हमारी दुर्बलताएँ उठा लीं और हमारी बीमारियाँ उठा लीं'* (मत्ती 8:17), जो *'स्वयं परीक्षा में पड़कर पीड़ित हुए, इसलिए परीक्षा में पड़ने वालों की सहायता करने में समर्थ हैं'* (इब्रानियों 2:18), जिनसे हम निडर होकर पुकारते हैं: *'हे प्रभु, मेरे न्याय का निर्णय कर जो मुझे अन्याय करते हैं; जो मुझ से लड़ते हैं, उन्हें परास्त कर। भाला और ढाल उठा और मेरी सहायता के लिए उठ; तलवार खींच और जो मेरा पीछा करते हैं, उनके विरुद्ध उसे थाम'* (भजन संहिता 34:1–3)। – क्योंकि सचमुच हमारे शत्रु हमारा पीछा करते हैं और हमारा नाश चाहते हैं, वे हमारे मार्ग में फंदे लगाते हैं और हर तरह से हमें पाप की खाई में गिराने का प्रयास करते हैं। परन्तु हम भी, योद्धाओं के रूप में, उनके विरुद्ध खड़े हैं, *'विश्वास और प्रेम के कवच को पहने हुए, और मुक्ति की आशा का टोप पहने हुए'* (1 थिस्स. 5:8): क्योंकि इन हथियारों से शत्रु भाग जाता है।

12. और यहाँ जो अद्भुत है वह यह है: कि हमारे लिए, स्वयं युद्ध ही मुकुट है। सार्वजनिक प्रदर्शनों में शारीरिक कुश्ती में, यदि पहलवान अपने प्रतिद्वंद्वी को हरा नहीं पाता है, तो उसे मुकुट नहीं दिया जाता। यहाँ, हालाँकि, यदि जिस पर लड़ा जा रहा है, उसे उसके प्रतिद्वंद्वी द्वारा हराया नहीं जाता है, तो वह पहले ही विजयी हो जाता है। यह हमारे एक पवित्र पिता को एक ऐसे शिष्य के बारे में प्रकट हुए वचन से स्पष्ट है, जिसे बड़ों की अनुमति के बिना विश्राम करने के लिए सात बार प्रलोभन दिया गया, और उसने सात बार इस प्रलोभन पर विजय प्राप्त की; और ऐसी सहनशीलता के लिए उसे सात मुकुट प्राप्त हुए। – अत; यदि संघर्ष में ही मुकुट जीते जाने हैं, तो मैं आपसे विनती करता हूँ, आइए हम अपने विरोधियों के विरुद्ध दृढ़ खड़े रहें, और संघर्ष की लंबाई से थकें नहीं। क्या संत सारा चालीस वर्षों तक व्यभिचार के दानव से बुरी तरह पीड़ित नहीं हुईं? और फिर भी वह न तो थकीं और न ही उनका हौसला पस्त हुआ। क्या यह भी ज्ञात नहीं है कि कैसे एक निश्चित नवसिखुआ, इसी तरह संघर्ष कर रहा था, जब उसके मठाधीश ने उससे पूछा, 'क्या आप चाहेंगे कि मैं इस संघर्ष के अंत के लिए प्रार्थना करूँ?', तो उसने इनकार कर दिया, यह समझते हुए कि ऐसे संघर्षों को सहने वालों के लिए विजयी मुकुट तैयार किए जाते हैं?

१३. फिर भी इस संघर्ष को पार करने में प्रार्थना, आँसुओं और एक पश्चात्तापी हृदय से अधिक शक्तिशाली कुछ भी नहीं है। इसलिए, जब शत्रु हमला करता है, या हमें चोट पहुँचाता है—हमारी ही लापरवाही से, हमारे हृदय में वासना के तीर को प्रवेश करने की अनुमति देकर—तो हमें तुरंत उसके विरुद्ध प्रार्थना करनी चाहिए, और वह बिना किसी देरी के भाग जाएगा; हम आँसू बहाएँगे, और मोहक आनंद की अंगीठी बुझ जाएगी; हम स्वयं को नम्र बनाएँगे, और प्रभु हमें ऊँचा उठाएगा। – और धन्य है वह जो परमेश्वर के काम में निरंतर परिश्रम करता है, आज्ञाकारिता के दुखों को सहता है और अपनी पवित्रता को निर्दोष रखता है। अपने परिश्रम के अंत तक पहुँचकर, पूर्ण आनंद और अनुपम हर्ष के साथ, वह यहाँ से प्रस्थान करेगा, और *'बुराई की रिपोर्ट से नहीं डरेगा'*, जैसा कि संत दाऊद गाते हैं (भजन संहिता 111:7)। क्या हम यह नहीं देखते कि कैसे योद्धा, युद्ध में अपना पराक्रम दिखाने के बाद, संघर्ष और विजय के निशान लिए हुए, विजय और आनंद के साथ घर लौटते हैं? – इसी प्रकार हम उन लोगों के बारे में भी सोचते हैं जिन्होंने अदृश्य युद्ध में अपना पराक्रम दिखाया है और अच्छे कर्मों से उसमें परिश्रम किया है – कि उन्हें उस महानगर में महिमामय सम्मान प्राप्त होगा, जिसका परमेश्वर स्वयं वास्तुकार और निर्माता है, और स्वर्गदूतों द्वारा उनकी प्रशंसा की जाएगी, प्रभु द्वारा उन्हें मुकुट पहनाया जाएगा, और वे अनंत सांत्वनाओं का वारिस बनेंगे। हम भी हमारे प्रभु यीशु मसीह की अनुग्रह से इन बातों को प्राप्त करने के योग्य ठहरें।

294. ईश्वर दुख और उत्पीड़न को एक परीक्षा के रूप में भेजता है; लेकिन एक बार परीक्षा समाप्त हो जाने पर, वह उन्हें समाप्त कर देता है

294. ईश्वर दुख और उत्पीड़न को एक परीक्षा के रूप में भेजता है; लेकिन एक बार परीक्षा समाप्त हो जाने पर, वह उन्हें समाप्त कर देता है। हमारा उत्पीड़न जारी है क्योंकि हम अभी तक शरण के सामने दृढ़ नहीं हुए हैं। [4,

92] हमारे हृदय की इच्छा और परमेश्वर से हमारी प्रार्थना परमेश्वर की कलीसयिा की शांत कि लिए है। क्योंकि शांत सि अधकि लाभदायक और क्या हो सकता है, ताक हिम अपने मठों में एक शांत और शांतपूर्ण जीवन जी सकें? – फरि भी, उत्पीड़न का लंबा होना इस बात में लाभहीन नहीं हो सकता क यिह वश्विास में स्वयं को सबसे कुशल साबति करने का अवसर प्रदान करता है। प्रेरति क्यों कहते हैं: *'मैं दुर्बलताओं में, क्लेशों में, कठनिाइयों में, उत्पीड़नों में, तंगयिों में मसीह के लिए आनन्दति होता हूँ: क्योंक जिब मैं दुर्बल होता हूँ, तब मैं बलवान होता हूँ'* (2 कुरन्थियों 12:10)। इसलएि, 'कतिने समय तक, और कसि उद्देश्य के लिए?' इस तरह के प्रश्नों को एक तरफ रखकर, आइए हम इस संबंध में अपना सारा दुख उस परमेश्वर को सौंप दें, जो भलाई के लिए इन या उन परस्थितियिों की अवध कि वयवस्थति करना जानता है। सुनें, पवत्रिशास्त्र क्या कहता है: *'परमेश्वर ने अब्राहम को परखा'* (उत्पत्त 22:1)। आप कह सकते हैं: 'उसने उसकी परीक्षा ली, लेकनि केवल थोड़ी सी?' नहीं, इसके वपिरीत: कई वर्षों तक, और कई परीक्षाओं के साथ; और जब उन्होंने देखा क विह वश्विास में सद्धि हो गया है, तो उन्होंने उससे कहा: *'अब मैं जानता हूँ क तिुम परमेश्वर का भय मानते हो, और तुमने मुझे अपना प्रयि पुत्र भी नहीं रोका'* (उत्पत्त 22:12)। उन्होंने अय्यूब को भी और भी बड़े परीक्षणों से, और कई वर्षों तक आज़माया। और जब उन्होंने देखा क विह धैर्य में सद्धि हो गया है, तो उससे कहा: *'क्या तूने सोचा था क मिैंने तुझे धर्मी ठहरने के सविाय कसिी अन्य उद्देश्य के लिए बनाया है?'* (अय्यूब 40:3)। इसी तरह, उन्होंने अन्य भवष्यिद्वक्ताओं, पवत्रि प्रेरतिों, धन्य शहीदों, और सभी आदरणीय और धर्मी लोगों को भी कई दुखों के माध्यम से और कई वर्षों तक परखा; उन्होंने उन्हें परखा, उनकी गवाही दी, और उन्हें स्वीकार कयिा। हमारे संबंध में भी यही मानना चाहएि। *'पाप से लड़ने तक हम* अभी *मसीह के लहू तक नहीं पहुँचे'* (इब्रानयिों 12:4); हम अभी तक कष्टों की आग में पर्याप्त रूप से परखे नहीं गए हैं; हमने अभी तक परीक्षाओं के माध्यम से अपने वश्विास की ईमानदारी को पर्याप्त रूप से प्रदर्शति नहीं कयिा है। – इसीलिए उत्पीड़न अभी भी जारी है!

295. कोई भी व्यक्त कितिना भी पापी क्यों न हो, वह पश्चाताप कर सकता है: उदाहरण

295. 1) कोई भी व्यक्त कितिना भी पापी क्यों न हो, वह पश्चाताप कर सकता है: उदाहरण – डाकू दाऊद, मस्रि की मरयिम और अन्य। – 2) यह न सोचें क उिन्होंने अब यहाँ पाप का आनंद लयिा है, और भवष्यि में स्वर्ग के आशीर्वादों का स्वाद चखेंगे। पापयिों के लिए कोई आनंद नहीं है: केवल सद्गुण ही आनंद लाता है। [4, 93]

14. जो लोग सच्चे मन से मोक्ष की इच्छा रखते हैं, उनके लिए मोक्ष में कोई अजेय बाधा नहीं है; और न ही पश्चाताप करके ईश्वर की ओर लौटना असंभव है, यहाँ तक क उिन लोगों के लिए भी जो बुराई की गहराइयों तक पहुँच चुके हैं। और इस कथन के सत्य होने के पर्याप्त प्रमाण हैं। ऐसी कई गवाहयिों में से एक डाकूओं के सरगना दाऊद का पश्चाताप है, जसिका वृत्तांत हाल ही में चर्च की पाठ्य-सूची में पढ़ा गया था। यहाँ हम देखते हैं क यिह हत्यारा, जो कभी हर प्रकार के दुष्टता से भरा था, कैसा था, और कैसे, पश्चाताप करके और ईश्वर की ओर मुड़कर, उसने इतनी पूर्णता प्राप्त की क विह तो भूत-प्रेत ग्रस्त लोगों को भी चंगा कर देता था। क्योंक स्विर्गदूत ने उससे कहा:

इसमें हम मानवता के प्रत ईिश्वर के असीम प्रेम को देखते हैं, क्योंक उिन्होंने न केवल उसके हत्या के पापों को क्षमा कयिा, बल्क उिसे चमत्कार करने वाला भी बना दयिा। – क्या आप एक और गवाही देखना चाहेंगे? मानasseh को देखो, जसिने पचास-दो वर्षों तक इस्राएल को परमेश्वर से भटकाया और उन्हें नर्जिीव मूर्तयिों की पूजा करने के लिए मजबूर कयिा; फरि भी वह भी, सच्चे मन से पश्चाताप करने पर, उद्धार पाया, और आध्यात्मकि आनंद में परमेश्वर के लिए एक भजन गाया, जसि परमेश्वर की कलीसयिा आज भी गाती है। – जहाँ तक उन लोगों का सवाल है जो सांसारकि प्रेम में लप्ति हुए और बाद में पश्चाताप कयिा, वे इतने अधकि हैं क उिनकी गनिती नहीं की जा सकती। उनमें दैवी दाऊद हैं, जन्हिोंने व्यभचिार और हत्या करने के बाद, एक बार फरि भवष्यिवाणी का वरदान प्राप्त कयिा; फरि मस्रि की मरयिम, जन्हिोंने इस प्रकार अतृप्त रूप से पाप करने के बाद, दैवी समानता को प्राप्त कयिा और उन्हें दूरदर्शता का वरदान मलिा, और इसी तरह और भी बहुत से हैं। इसलएि अब कसिी के पास भी यह सोचने या कहने का कोई कारण नहीं है क पिाप करने वालों में से कोई भी पश्चाताप के द्वारा मोक्ष प्राप्त नहीं कर सकता।

15. ऐसे उदाहरणों को ध्यान में रखते हुए, आइए हम भी उद्धार के लिए और अधकि उत्साह और इसे प्राप्त करने की अधकि आशा रखें, यह वश्विास करते हुए क यिद परमेश्वर ने अपनी अगणति दया से, उन लोगों को बुलाया और बचाया जो बुराई की ऐसी गहराइयों में गरि गए थे, तो वह हम लोगों को और भी अधकि बचाएगा जो दनि-रात उसकी सेवा करते हैं। – जब आप कसिी पापी के धर्म-परवि‍र्तन के बारे में सुनें, तो कोई यह न कहे:

? – जो पाप का दास है, वह न तो इस संसार के सुखों का स्वाद चखता है और न ही परलोक के। मुझे बताइए, व्यभचिार, परपिूर्णता, लालच, चोरी और अन्य वासनाओं का दास होने में क्या आनंद है? क्या ऐसे कामुक लोग आग

में जलते हुए नहीं हैं, जैसे बुखार से पीड़ति लोग? इसलिए यह कहना अधकि सटीक होगा कि ऐसे लोग यहाँ पहले से ही दंड झेल रहे हैं, और आने वाले युग में इस जीवन के हानिकारक और भ्रष्ट करने वाले सुखों के लिए उन्हें अनंतकालकि यातनाओं में डाल दिया जाएगा। मठिास का स्वाद चखने के बजाय विलाप करना और अपने कपड़े फाड़ना - यही पापियों और भ्रष्ट लोगों का भाग्य है। लेकिन जो लोग सदाचार से प्रेम करते हैं और सदाचारी जीवन जीते हैं, वे सदैव इन आशीर्वादों और अन्य अनुग्रहों के धनी रहते हैं, तथा निर्लिप्तता की अनुपम मठिास का आनंद लेते हैं, ठीक वैसे ही जैसे सभी संत, जो सदैव प्रभु में आनंदति रहते हैं और ईश्वर के प्रेम की तुलना में अन्य सभी बातों को गौण मानते हैं। – उनका अनुकरण करके, हम भी आनंदति होंगे और एक-दूसरे के आनंद में सहभागी होंगे, अपनी मुक्ति के लिए उत्सुक रहकर, और उस उद्देश्य के लिए आध्यात्मकि संघर्षों में स्वयं को लगाकर: धैर्य, आज्ञाकारिता, अपनी इच्छा को वश में करना, और आत्म-अनुशासन के अन्य रूप; और, इनमें सद्धि हो जाने पर, हम अनंत जीवन के वारसि बनेंगे।

296. इस संसार के लोग तुच्छ लाभों के लिए बहुत कुछ सहते हैं: क्या हमें शाश्वत आशीर्वादों के लिए सहन नहीं करना चाहिए?

296. 1) कई सांसारिक लोग तुच्छ लाभों के लिए बहुत कुछ सहते हैं: क्या हमें शाश्वत आशीर्वादों के लिए सहन नहीं करना चाहिए? – 2) इसके अलावा, हमारे दुख क्या हैं?! और क्या अपेक्षा की जा सकती है?! – 3) इसलिए हमें सभी चीजों को अटूट आशा के साथ, प्रसन्नचित्त होकर सहन करना चाहिए। [4, 94]

16. कि संन्यासी जीवन संकुचति और दुखद है, यह प्रभु के वचन से स्पष्ट है: *'यदि कोई मेरे पीछे आना चाहता है, तो वह स्वयं का इनकार करे, और अपना क्रूस उठाए, और मेरे पीछे चले'* (मत्ती 16:24)। और यह कि सांसारिक जीवन भी पीड़ादायक है, इस बात की स्पष्ट गवाही हमें उसमें देखने को मलिती है। परन्तु संसारियों को उनके दुखों से निपटने के लिए छोड़ दें; आइए हम, जैसा कि हमें करना चाहिए, अपने दुखों पर ध्यान दें। – हमारे दुख के साथ पवित्र आत्मा का आनन्द भी रहता है, ताकि स्वर्ग में हमारे लिए संचति आशा के द्वारा, जो हमें दुखजनक लगता है वह भी आनन्द में सहभागी हो। तो क्या यह हमारे लिए शर्म की बात नहीं है कि जब दूसरे किसी तुच्छ महिमा या पुरस्कार के लिए इतना कुछ सहते हैं, तब हम इतनी बड़ी स्वर्गीय आशीर्वादों के लिए हमें मलिने वाले तुच्छ दुखों को प्रसन्नता से नहीं सहते?

17. और हमारे दुख किस प्रकार के हैं? – हमारी इच्छा के विरुद्ध दिया गया कोई काम, हमें पसंद न आने वाला कोई आदेश, हमारे भोजन, पेय, कपड़ों, जूतों में कुछ अप्रिय, हमारी सेवा के स्थान या तरीके में, और ऐसी ही अन्य चीजें जो हम पर बोझ बनती हैं। लेकिन ऐसी सभी बातें, भले ही वे कष्टदायक हों, हमें सही से भटकाने वाली नहीं हैं: क्योंकि *'इस समय की कठिनाइयाँ उस महिमा के बराबर भी नहीं हैं जो हम पर प्रकट होने वाली है'* (रोमियों 8:18), जिसके लिए, भले ही हमें हर दिन सूली पर जलाया जाए, हमें हर चीज़ को सहना चाहिए, और न कि केवल ऐसी हल्की और सहनीय परीक्षाओं को। मैं यह दुख जगाने के लिए नहीं कह रहा हूँ, बल्कि इसलिए कह रहा हूँ कि हम उस प्रेम को जान सकें, जिससे हमारे भले ईश्वर ने हमसे प्रेम किया है, जिन्होंने हमें इस सांसारिक जीवन से निकालकर इस पवित्र और स्वर्गीय बुलावे पर पहुँचाया है; वही, जो हमसे जो कुछ भी माँगते हैं, वह अपने लिए नहीं माँगते; क्योंकि उस में कुछ भी कमी नहीं है, वह हर चीज़ में धनी है, परन्तु वह हमसे जो चाहता है, वह अपने लिए नहीं चाहता;

18. इसलिए, हर प्रकार के द्वविधाभाव को त्यागकर, हम अपने धीरज के द्वारा अपनी आत्माओं को जीतें, हर उस परीक्षा से ऊपर बने रहें जो उत्पन्न हो सकती है और किसी भी विचार को हम पर हावी न होने दें, जब, हमें परखने और सिखाने के लिए, यह अनुमति दी जाती है कि कोई दुखद घटना हम पर आए और हमारे जीवन पर छाया डाल दे; ताकि हम भी प्रेरति के साथ यह कहने का साहस कर सकें: *'हम हर तरह से कष्टति हैं, पर कुचले हुए नहीं; परेशान हैं, पर निराश नहीं; सताए जाते हैं, पर परित्यक्त नहीं; गिराए जाते हैं, पर नाश नहीं होते; और प्रभु यीशु की मृत्यु को सदा अपने शरीर में फिरते फिरते रखते हैं'* (2 कुरन्थियों 4:8–10); और यह कि, ऐसे अच्छे स्वभाव और इतने सुव्यवस्थति जीवन द्वारा परमेश्वर को प्रसन्न करके, हम हमारे प्रभु मसीह यीशु में स्वर्ग के राज्य के वारसि बन जाएँ।

297. यात्री विश्राम की आशा में सब कुछ सहते हैं: हम भी शाश्वत विश्राम की आशा में सब कुछ सहें, ताकि परमेश्वर हम में महिमामय हो सकें।

297. 1) सभी यात्री विश्राम की आशा में कठिनाइयों को सहते हैं: आइए हम सभी शाश्वत विश्राम की आशा में सहें, ताकि परमेश्वर हमसे महिमा प्राप्त करें। – 2) लेकिन परमेश्वर हमसे कब महिमा प्राप्त करते हैं? – जब हमारे अच्छे काम देखे जाते हैं। – और आइए हम ऐसे ही बनें। – 3) और इस उद्देश्य के लिए, आइए हम पवित्र पिताओं, प्रेरितों और स्वयं प्रभु का अनुकरण करें। – 4) प्रभु ने हमारे लिए सब कुछ सहन किया: आइए हम भी सहन करें;

अन्यथा हमारे लिए कोई उद्धार नहीं है। – 5) मैंने सहन किया है: तुम भी परमेश्वर के सामर्थी हाथ के नीचे स्वयं को नम्र करो। [4, 95]

19. जो कोई भी एक लंबा और कठिन सफर तय करता है, वह यात्रा की विभिन्न कठिनाइयों का सामना करते हुए परिश्रम करता है और सहन करता है; फिर भी, एक शांतिपूर्ण विश्राम-स्थल की आशा में, वे अपने दुखों को सहते हैं और कठिनाइयों पर विजय प्राप्त करते हैं, और अपने पूरे उत्साह और प्रयास के साथ निरंतर आगे बढ़ते रहते हैं। – और यह दृष्टांत हमें क्या सिखाता है? कि हम भी इस जीवन में एक मार्ग पर चल रहे हैं, एक ऐसा मार्ग जो संकीर्ण और दुखद, लंबा और कठिन है। और यह मार्ग अन्यथा नहीं हो सकता, क्योंकि अपने पूरे जीवन में हमें कुँवारी अवस्था और ब्रह्मचर्य को बनाए रखना चाहिए, और समर्पण और आज्ञाकारिता का पालन करना चाहिए; और साथ ही *'परमेश्वर के ज्ञान के विरुद्ध उठने वाले हर तर्क और हर घमंड को ध्वस्त कर दो, और हर विचार को मसीह की आज्ञाकारिता का कैदी बना लो'* (2 कुरिन्थियों 10: 4–5), और मठवासी जीवन के नियमों के अनुसार, इससे अनिवार्य रूप से जुड़ी हुई अन्य सभी बातों को करना। फिर भी यहाँ भी एक धन्य अंत है। वह क्या है? अनंत जीवन, जिसका सच्चे ईश्वर ने उन लोगों से वादा किया है जो उनके को सहते हैं। इसलिए, इस अनंत जीवन के लिए, हमें इस वर्तमान जीवन के सभी दुखों को कृतज्ञता और धैर्य के साथ सहना चाहिए, और अपने शरीरों तथा अपनी आत्माओं दोनों में परमेश्वर की महिमा करनी चाहिए।

२०. जहाँ तक इस बात का प्रश्न है कि हम परमेश्वर की महिमा कैसे करते हैं, मैं एक ही उदाहरण देकर समझाऊँगा। दो दिन पहले, कुछ गृहस्थ लोग हमें देखने के लिए यहाँ आए थे, और यह देखकर कि हम मन की एकता में कैसे रहते हैं—अपने हाथों से आज्ञाकारिता का श्रम करते हुए और अपने होठों से दाऊद की भजन-संग्रहों को दोहराते हुए—उन्होंने परमेश्वर की महिमा की और धन्यवाद दिया, क्योंकि वे आत्मिक रूप से सुसज्जित हुए थे। – इस प्रकार हमारे भीतर वह पूरा हुआ है जो प्रभु ने कहा था: *'अपनी रोशनी लोगों के सामने इस प्रकार चमके, कि वे तुम्हारे अच्छे काम देखकर तुम्हारे स्वर्गीय पिता की महिमा करें'* (मत्ती 5:16)। – और इस प्रकार इस अवसर पर आपने शरीर और आत्मा से परमेश्वर की महिमा की है। लेकिन हमेशा, हर परिस्थिति में, उसकी महिमा करने का भी प्रयास करें, ईश्वरीय रीति से आचरण करते हुए और जो अनुचित है उससे दूर रहते हुए, जैसा कि संत दाऊद प्रोत्साहित करते हैं: *'दुष्टों से ईर्ष्या मत करो, और जो अन्याय करते हैं उनसे जलन मत करो; क्योंकि वे घास की तरह सूख जाएँगे, और खेत की हरियाली की तरह झड़ जाएँगे'* (भजन संहिता 36:1–2)। परन्तु धर्मी और भलाई करने वालों के लिए उत्साही बनो।

21. दैनिक जीवन में, जो लोग किसी भी कला के लिए खुद को समर्पित करते हैं, वे अपनी चुनी हुई कला के सिद्धांत सबसे बुरे से नहीं, बल्कि सबसे बेहतरीन गुरुओं से सीखने का प्रयास करते हैं: एक बढ़ई कुशल बढ़ई से, एक चित्रकार सबसे निपुण चित्रकार से सीखता है; और सामान्यतः कोई भी अकुशल या अज्ञानी का किसी भी चीज़ में अनुकरण नहीं करेगा, लेकिन यदि वे अनुकरण करने का प्रयास करते भी हैं, तो वे सबसे निपुण और विशेषज्ञों का ही अनुकरण करेंगे। यदि भौतिक और क्षणिक चीजों के संबंध में यही नियम और कानून है, तो क्या हमें कलाओं की कला और विज्ञानों के विज्ञान में, उनके विपरीत लोगों से मार्गदर्शन प्राप्त करने के बजाय, अपने जीवन को पवित्र पुरुषों के उदाहरणों के अनुसार व्यवस्थित नहीं करना चाहिए? अतःआइए हम उन लोगों का अनुकरण करें जो, युवावस्था से वृद्धावस्था तक, आज्ञाकारी रहे—केवल प्राचीन संतों का ही नहीं, बल्कि हमारे भाईचारे के भीतर चमक उठे लोगों का भी; आइए हम उन लोगों का अनुकरण करें जिन्होंने, अपनी सादगी के द्वारा, शैतान की सभी चालाकियों को विफल कर दिया; आओ हम उन लोगों का अनुकरण करें, जिन्होंने निःसंदेह आज्ञाकारिता के माध्यम से, अपने तपस्वी मार्ग का अच्छी तरह से मार्गदर्शन किया; या, यदि आप चाहें, तो आओ हम उस एक का अनुकरण करें जिसने आज्ञा दी: *'मेरा अनुकरण करो, जैसे मैं मसीह का अनुकरण करता हूँ'* (1 कुरिन्थियों 11:1); और दूसरी जगह: *'इसलिए हे प्रिय बच्चों, परमेश्वर के अनुकरण करो, और प्रेम में चलो, जैसे मसीह ने भी हम से प्रेम किया और हमारे लिए एक सुगंधित बलिदान और अर्पण के रूप में अपने आप को दे दिया'* (इफिसियों 5:1-2)।

२२. इस प्रकार मसीह ने हमारे लिए स्वयं को परमेश्वर के पास एक बलिदान और भेंट के रूप में अर्पित किया; तो क्या हमें उनके लिए धन्यवाद के साथ थोड़ा सा दुख सहना चाहिए? मसीह ने हर तरह की निन्दा सहन की, जैसा कि कहा गया है: *'जो तुझे निन्दा करते हैं, उनकी निन्दा मुझ पर पड़ी है'* (भजन संहिता ६८:१०); क्या हम कुछ अपमानजनक और निन्दापूर्ण शब्द नहीं सहेंगे? फिर हम भविष्य में संतों के साथ कैसे रहेंगे, यदि हम उनके पदचिन्हों पर नहीं चलते? हम मसीह के साथ कैसे राज्य करेंगे, यदि हम उसकी मृत्यु के अनुरूप नहीं बनते और उसके सबसे पवित्र दुखों में सहभागी नहीं होते? – *'और यदि धर्मी बड़ी कठिनाई से बचेंगे, तो अधर्मी और पापी कहाँ ठहरेंगे?'* (1 पतरस 4:18)। – देखिए कि यह कितनी स्पष्टता से कहा गया है कि *'धर्मी बड़ी कठिनाई से बचेंगे'*। और जो अधीर, असहिष्णु है, और

पुरानी अपमानों को संजोए रखता है—और इस प्रकार क्रोधित और उत्तेजित रहता है, और परमेश्वर के साथ उसका कोई शांति नहीं है—उसे धर्मी भी नहीं कहा जा सकता। – तो फिर, वह कहाँ बचाया जा सकता है? – क्या हम, इसलिए, अनिवार्य रूप से काइनोवाइट्स की संगति से अलग नहीं हो गए हैं, चूँकि हम इस प्रकार का व्यवहार करते हैं? और, यहाँ से प्रस्थान करने पर, क्या हम अनिवार्य रूप से अनंतकालिक दंड के अधीन नहीं पड़ जाएँगे?

२३. मैं अपने पागलपन में कहता हूँ: क्या मैं भी एक नवसिखिया नहीं था? क्या मेरे पास एक मठाधीश, एक कोषाध्यक्ष, एक आध्यात्मिक और एक सांसारिक पिता नहीं थे? क्या मेरे पास आध्यात्मिक और सांसारिक भाई नहीं थे? मैं उनके बीच आग में जैसे घिरा हुआ, इधर-उधर उछाला जाता रहा और दो विरोधी जीवन-पद्धतियों के साथ संघर्ष में फँसा रहा। लेकिन मुझे धैर्य, उचित पाप-स्वीकार और सारी दोषारोपण स्वयं पर करने के अलावा बचने का कोई और रास्ता नहीं मिला: क्योंकि अन्यथा दुखों के बीच एक शांत आत्मा रखना असंभव है। 'इसलिये *परमेश्वर के हाथ के नीचे दीनता से रहो*' (1 पतरस 5:6); और तुमको विश्राम और शान्ति मिलेगी। यह लिखा है: '*अब ग्रहण करने का समय है; अब उद्धार का दिन है*' (2 कुरिन्थियों 6:2)। इसलिए आओ हम अपने आत्मा से सब छल-कपट को दूर करें, भलाई करना सीखें, और उस परमेश्वर के सामने स्वयं को शुद्ध प्रस्तुत करें जिसने हमें आशीष दी है, इससे पहले कि वह भयानक दिन आ जाए जब हमें हर व्यर्थ वचन का हिसाब देना होगा, ताकि यथासंभव निर्मल अंतरात्मा के साथ इस जीवन से विदा होकर, हम अनंत जीवन की विरासत के योग्य सिद्ध हों।

298. मैं चाहे जितना भी समझाऊँ, आप में से कुछ लोगों में फिर भी बेचैनी उभर आती है

298. 1) मैं चाहे जितना भी समझाऊँ, कुछ लोगों में फिर भी बेचैनी उभर आती है। – 2) यह प्रेम की कमी के कारण है; और इसके बिना, हम मसीह के किस प्रकार के शिष्य हैं? – 3) अतःआइए हम शांति की खोज करें, और जो अच्छा है उसके प्रति उत्साही प्रेम को अपनाएँ। [4, 96]

24. ऐसा प्रतीत होता है कि, चूँकि मैं अक्सर आपसे बात करता हूँ, अब आपको और अधिक निर्देश देने की कोई आवश्यकता नहीं है, बशर्ते कि आप उचित आचरण की ओर पर्याप्त रूप से झुके हुए हैं और आपको इस बात की याद दिलाने की आवश्यकता नहीं है कि ईश्वर की आज्ञाओं का पालन करना चाहिए। तथापि, अब मैं देखता हूँ कि यह अत्यंत आवश्यक है; क्योंकि, तुम्हें बार-बार प्रोत्साहित करने के बावजूद, तुम में से कुछ लोगों में बेचैनी और हठीलापन बना हुआ है। और मैं इस बात पर हैरान हूँ कि जो लोग, समय के साथ, शिक्षक बन जाने चाहिए थे, वे अभी भी शिशुओं की तरह व्यवहार कर रहे हैं, बिना किसी कारण के मूर्खतापूर्ण और बेवकूफी भरा काम कर रहे हैं।

25. इसका कारण प्रेम की कमी है। क्योंकि, जैसा कि प्रेरित कहते हैं, '*प्रेम धीरजवान है, प्रेम दयालु है; ईर्ष्या नहीं करता, घमंड नहीं करता, अहंकार नहीं करता, अभद्र नहीं है, अपना हित नहीं खोजता, जल्दी क्रोधित नहीं होता, अन्याय का हिसाब नहीं रखता, अधर्म में आनंदित नहीं होता, परन्तु सत्य में आनंदित होता है, सब कुछ सहती है, सब कुछ विश्वास करती है, सब कुछ आशा करती है, सब कुछ सहन करती है*' (1 कुरिन्थियों 13:4–7): तो यह स्पष्ट है कि जब प्रेम अनुपस्थित होता है, तो इसका विपरीत हमारे भीतर हावी हो जाता है – अविश्वास, निराशा, अधीरता, कलह और अभद्रता। – लेकिन, इस तरह की मानसिकता में, हम खुद को प्रभु का चेला होने का सच्चा दावा कैसे कर सकते हैं, जबकि वह स्वयं अपने निर्णायक वचन में कहते हैं: '*इस से सब लोग जान लेंगे कि तुम मेरे चेले हो, यदि तुम एक दूसरे से प्रेम रखोगे*' (यूहन्ना 13:35); और फिर एक अन्य अंश में: '*यदि तुम मेरे वचन में बने रहोगे, तो तुम सचमुच मेरे चेलों में हो। और तुम सत्य को जानोगे, और सत्य तुम्हें स्वतंत्र करेगा*' (यूहन्ना 8:31–32)। इसलिए, यदि हम में सच्चा प्रेम नहीं है, बल्कि शत्रुता, कलह और असहमति को पालते हैं, तो हम मसीह के चेले नहीं, बल्कि मसीह के शत्रु हैं, चाहे यह सुनने में कितना भी कठोर क्यों न लगे। यह कहने के बाद, हम दुखी प्राणियों को जीने की क्या आवश्यकता है? हमें यह हवा क्यों लेनी चाहिए, यदि हम वह नहीं करते जो प्रभु को भाता है?

26. "*जो कोई तुम्हें भटकाता है, वह अपने पाप का भार उठाएगा, चाहे वह कोई भी हो*" (गलातियों 5:10)। मैं आपसे विनती करता हूँ, कि आप "*सबके साथ मेल-मिलाप*" *और* "*पवित्रता*" की खोज करें, "*जिसके बिना कोई भी प्रभु को नहीं देखेगा*"*। ध्यान दो कि कोई भी परमेश्वर की कृपा से वंचित न रहे: जब तक वह जीवित है, तब तक कड़वाहट की कोई जड़ न उगे, जो भ्रष्ट करे और उससे बहुतों को अशुद्ध करे*" (इब्रानियों 12:14-15)। तो, यह क्या है? – यह एक अच्छा उत्साह है जो आपको कपटी लोगों के साथ अपने व्यवहार में यह दिखाने के लिए प्रेरित करेगा कि आप बुराई से घृणा करते हैं और उससे मुंह मोड़ लेते हैं, जबकि उन्हें '*शत्रु नहीं, बल्कि भाइयों की नाईं समझकर समझा-बुझाकर सीख देते हैं*' (2 थिस्स. 3:15), ताकि आप प्रेरित की स्वीकृति के योग्य बन सकें, जिसे कहीं और इस प्रकार व्यक्त किया गया है: '*हर बात में स्वयं को निर्दोष दिखाओ*' (2 कुरि. 7:11)। – मैं यह बात आपसे प्रेम और आपकी चिंता के कारण कहता हूँ, और एलियाह के भाग्य के भय से भी। यदि, तथापि, आप इस प्रकार तर्क नहीं करते हैं, तो,

शीघ्र ही वे दनि आएँगे जब यह जीभ आपसे छीन ली जाएगी, और तब आपको एहसास होगा कि जो कुछ मैंने, अपनी नम्रता में, आपसे कहा है, वह वास्तव में सत्य था। – शान्ति का परमेश्वर, जो चाहता है कि सब के सब बच जाएँ, हम सबको अपने आज्ञाओं के मार्ग पर शान्ति में सुरक्षित रखे और हमें अपने अनन्त राज्य में ले जाए।

299. संत थियोडोर ने उन लोगों द्वारा मठ में भेजी गई वस्तुओं को स्वीकार नहीं किया, जिन्होंने मूर्तिभंजन संबंधी विधर्म से पश्चाताप किया था, लेकिन बाद में फिर से भटक गए थे

299. संत थियोडोर ने उन लोगों द्वारा मठ में भेजी गई वस्तुओं को स्वीकार करने से इनकार कर दिया, जिन्होंने अपनी मूर्तिभंजन की कुसंप्रदाय से तौबा की थी, लेकिन बाद में फिर से भटक गए थे। कुछ ऑर्थोडॉक्स ने उन पर दोष मढ़ा, यह कहते हुए कि ऐसा करके वह ऑर्थोडॉक्स के प्रति शत्रुता और उत्पीड़न को भड़का रहे थे। संत थियोडोर अपने आचरण का औचित्य प्रस्तुत करते हैं। [4, 97] एक बार फिर, वे कहते हैं, एक युद्ध छिड़ गया है - एक मूर्तिभंजन युद्ध, एक गृहयुद्ध; जब ईसाई एक-दूसरे का सफाया करते हैं तो उससे अधिक विनाशकारी और क्या हो सकता है? लेकिन हमें हमेशा परमेश्वर से प्रार्थना करनी चाहिए कि वह हमारे सह-नागरिकों के बीच, सांसारिक मामलों और विश्वास के मामलों दोनों में, शांति लाए। इसी कारण से हम यहाँ विनम्रता से बैठे हैं। फिर भी, बैठते हुए, हमें केवल निष्क्रिय रूप से नहीं बैठना चाहिए, बल्कि अपने उद्देश्य के प्रति बड़ी सावधानी और निष्ठा के साथ, कहीं ऐसा न हो कि दूसरों को कुछ और उपदेश देते हुए, हम स्वयं अयोग्य सिद्ध हो जाएँ (1 कुरिन्थियों 9:27)। हम यह उन लोगों को ध्यान में रखकर कह रहे हैं, जिन्होंने प्रायश्चित करने के बाद, एक बार फिर से विधर्मियों का पक्ष ले लिया है। हाल ही में हमने उनके द्वारा भेजी गई वस्तु को स्वीकार करने से इनकार कर दिया, क्योंकि हम इसे आत्मा के लिए हानिकारक और खतरनाक मानते थे; यह जानकर, हमारे बीच के कुछ धर्मगुरुओं को बुरा लगा, मानो इससे कोई हलचल मच गई हो। हम, तथापि, किसी तरह का कलह खड़ा करने के इरादे से इनकार करते हैं; फिर भी हम, कलह में पड़े लोगों की खातिर, सत्य को किसी भी तरह से कम नहीं कर सकते या मसीह की स्वीकारोक्ति को कलंकित नहीं कर सकते – विश्वास में उदासीनता के पाप से डरते हुए, जिसकी एक भविष्यवक्ता इस प्रकार निंदा करता है: *'उन्होंने पवित्र को अपवित्र से अलग नहीं किया है, और न ही उन्होंने अशुद्ध और शुद्ध के बीच अंतर किया है'* (यहे. 22:26)। इसी के अनुसार, पवित्र प्रेरित कहते हैं: *'धर्म का अधर्म से क्या मेल? प्रकाश का अंधकार से क्या सहभाग? मसीह का बेलियैल से क्या समझौता? या विश्वासी का अविश्वासी से क्या हिस्सा? या परमेश्वर की मंडली का मूरतों से क्या समझौता?'* (2 कुरिन्थियों 6:14–16)। और फिर: *'हम आपको हमारे प्रभु यीशु मसीह के नाम पर आज्ञा देते हैं कि आप किसी भी ऐसे भाई से दूर रहें जो अव्यवस्थित जीवन व्यतीत कर रहा है, और उस रीति के अनुसार नहीं चलता जो आपने हमसे प्राप्त की है'* (2 थिस्स. 3:6)। और फिर: *"यदि कोई भाई व्यभिचारी, या लोभी, या मूर्तिपूजक, या बदनाम करने वाला, या मद्यपान करने वाला, या ठग पाया जाता है, तो ऐसे के साथ भोजन भी न करना"* (1 थिस्स. 5:11)। यह सब हमारे हृदयों में भय और क्लेश भर देता है, और इसी कारण हमने अपनी निष्ठा और उद्धार को धोखा देने के बजाय हर दुख और कठिनाई को सहने का संकल्प लिया है। परन्तु जैसा लिखा है: *'यदि एक अंग पीड़ित होता है, तो सब अंग उसके साथ पीड़ित होते हैं; यदि एक अंग का सम्मान होता है, तो सब अंग उसके साथ आनन्दित होते हैं'* (1 कुरिन्थियों 12:26)—और आप हमारे सच्चे अंग हैं और हमारे हृदयों के सबसे भीतरी भाग हैं—हम ने यह आवश्यक समझा कि आपको जो हो रहा है उसकी सूचना दें, ताकि आप जान सकें, और जानकर, यहाँ जो हुआ है उस पर मनन करते हुए हमारे दुख में सहभागी हों। आप स्वयं निर्णय करें कि जो कहा जा रहा है वह क्या है: क्या यह सही है कि सत्य के लिए अपने ही मठों से निकाले गए लोगों को और सत्य के साथ विश्वासघात करके मठों पर कब्ज़ा करने वालों को समान माना जाए, और दोनों ही समूहों के साथ समान रूप से संगति की जाए? – तो, क्या जिन लोगों को निकाला गया था, उन्होंने अपना निष्कासन व्यर्थ ही सहा?! क्या हम भी अतीत में सत्य के लिए व्यर्थ में परिश्रम करते रहे?! इसके अलावा, हमें धोखेबाज़ पाया जाता है, जो कुछ लोगों से एक बात कहते हैं और दूसरों से कुछ और। जो लोग विश्वास के बयानों को निष्ठापूर्वक मानते हैं, वे हमारे खिलाफ सही मायने में शोक मनाएंगे यदि वे देखें कि हम उन लोगों के साथ मेलजोल रखते हैं जिन्होंने परमेश्वर की कलीसिया को भटका दिया है। लेकिन हमें उनके द्वारा भटकाया न जाए और उनके साथ मिलकर हम अपने ऊपर विनाश न लाएँ। अतीत में हम समय की माँग के अनुसार दृढ़ रहे; और अब हमें भी उसी प्रकार दृढ़ रहना चाहिए, बिना डगमगाए; क्योंकि प्रेरित कहते हैं: *'यदि धर्मी भटक जाए, तो मुझे उसमें कोई आनंद नहीं होता।' 'क्योंकि हमें डरपोकता का नहीं, बल्कि सामर्थ्य, प्रेम और आत्मसंयम का आत्मा मिला है'* (इब्रानियों 10:38, 39)। क्या आप देखते हैं कि उसने डरपोकता को 'विनाश' क्यों कहा? – अन्यथा वह दूसरी जगह क्यों कहता है: *'मैं किसी के भी लहू से निर्दोष हूँ; क्योंकि मैं परमेश्वर की सारी इच्छा तुम्हें बताने में संकोच नहीं किया'* (प्रेरितों के काम 20: 26–27). इसी प्रकार, प्रेरितों की शिक्षा और हमारे पवित्र पिताओं की शिक्षा, जो प्रेरितों की शिक्षा के अनुरूप है, के आधार पर

हम विधर्मी लोगों और उनके द्वारा भटकाए गए लोगों के साथ संगति से परहेज़ करते हैं, और हम सच्चे विश्वास की रक्षा करते हैं, *'जिसमें हम परमेश्वर की महिमा की आशा में स्थिर रहते हैं और घमंड करते हैं'* (रोमियों 5:2), धार्मिकता से चलने और अन्य सभी सद्गुणों का अभ्यास करने का प्रयत्न करते हुए, *'ताकि हम सिद्ध और पूर्ण हों, जिसमें कुछ भी कमी न हो'* (याकूब 1:4), *"और परमेश्वर का शान्ति, जो सब समझ से परे है, मसीह यीशु में हमारे हृदयों और हमारे मन की रक्षा करेगी"* (फिलि. 4:7)।

300. हम सभी कष्टों को, बाहरी और आंतरिक दोनों को, सहन करें, इस उद्देश्य के लिए हमारे लिए प्रथागत साधनों का उपयोग करते हुए, सबसे बढ़कर अटूट विश्वास के साथ प्रार्थना।

300. 1) आइए हम सभी कष्टों को सहन करें, बाहरी और आंतरिक दोनों, इस उद्देश्य के लिए हमारे लिए प्रथागत साधनों का उपयोग करते हुए, सबसे बढ़कर अटूट विश्वास के साथ प्रार्थना। – 2) हमारे पास भोजन-सामान समाप्त हो गया था; लेकिन प्रभु जल्द ही हमारी सहायता के लिए आए। आइए हम आशा करें कि वह हमें मदद करना जारी रखेंगे, जैसा उन्होंने याकूब, एलिया और अन्य लोगों की मदद की। [4, 98]

1. कोई भी कष्ट सहने के बिना शहीद नहीं होता, और कोई भी तब तक मुकुट का अधिकारी नहीं होता जब तक कि उसने सही तरीके से संघर्ष को सफलतापूर्वक सहन न किया हो (2 तीमु. 2:5)। तो, हम थकें नहीं, बल्कि सभी बातों को धैर्यपूर्वक सहें: फटकारों और अपमानों को, जैसे कोड़े की चोट; हमारी इच्छाओं को काबू करना, जैसे रक्त का बहाव; और विचारों के आक्रमणों को, जैसे शैतान द्वारा प्रज्वलित आग। आग पर पानी डालकर उसे बुझाया जाता है, और वासना की ज्वाला को आँसुओं से। परिश्रम से हुई थकान बिस्तर पर शांतिपूर्वक विश्राम करने से दूर हो जाती है; और विचारों से मन पर पड़ा बोझ उन पर भरोसा करने से हल हो जाता है। ये ही उद्धार करने वाले उपाय हैं। इनका बुद्धिमानी से उपयोग करके, आप प्रभु में दिन-प्रतिदिन अधिक से अधिक चंगे हों। *'यदि तुम में किसी के पास बुद्धि की कमी हो, तो वह परमेश्वर से मांगे, जो बिना दोष दिए सभी को उदारता से देता है, और उसे दी जाएगी। वह बिना किसी संदेह के, विश्वास से मांगे; क्योंकि जो संदेह करता है वह समुद्र की लहर के समान है, जिसे हवा से उड़ाया और हिलाया जाता है। ऐसे व्यक्ति को यह न सोचे कि वह परमेश्वर से कुछ पाएगा। दो मन वाला मनुष्य अपने सब मार्गों में अस्थिर होता है'* (याकूब 1:5-8)। तो फिर, हम दो मन वाले न हों, और न ही संदेहों को अपनी प्रार्थनाओं को डगमगाने दें। परन्तु हमारी याचनाएँ धन्यवाद और सच्चे विश्वास के साथ परमेश्वर के पास की जाएँ (फिलि. 4:6), और हम निश्चय ही वह प्राप्त करेंगे जिसकी हम याचना करते हैं: विदेशी आग बुझ जाएगी; उन्मत्त विचार दूर हो जाएँगे, और परमेश्वर की सहायता से हम अपने सामने रखे आज्ञाकारिता के कार्य को सफलतापूर्वक पूरा करेंगे।

2. मैं चाहता हूँ कि आप यह जान लें कि हमारे खज़ाने में बहुत कम बचे हैं (यूहन्ना 12:6); इस बीच, हमारे खर्च बढ़ रहे हैं, जबकि हमारी आय नहीं बढ़ रही है; और अब हमारे पास शराब खत्म हो गई है, एक ऐसा मामला जो स्वाभाविक रूप से हम में से सबसे कमजोर लोगों को बहुत दुख पहुँचाता है। पर हौसला रखो: प्रभु ने जल्द ही गेहूँ और दाखरस की फसल और अन्य आवश्यक चीज़ों से प्रदान किया है, और फिर से प्रदान करेंगे, यदि हम अपनी पूरी आशा उन पर रखें और उन पर अपने विश्वास में डगमगाए बिना, हमेशा वही करें जो उन्हें भाता है। क्योंकि उन्होंने स्वयं कहा है: *'मैं तुम्हें कभी न छोड़ूँगा और न त्यागूँगा'* (यहोशू 1:5); और फिर: *'पहले परमेश्वर के राज्य और उसकी धार्मिकता की खोज करो, और ये सब बातें तुम्हें मिलेंगी'* (मत्ती 6:33)। और भले ही हम कभी-कभी चूक जाएँ, तो इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं: यह सद्गुण की एक परीक्षा और परख है। क्या कुलपति याकूब धर्मी नहीं थे? और फिर भी, भूख से तंग आकर, उन्होंने हमारे पूर्वजों को गेहूँ खरीदने के लिए मिस्र भेज दिया। क्या नबी एलिया धर्मी नहीं थे? फिर भी, सिदोन के ज़रेफ़ाथ में आकर, उन्होंने एक विधवा से पुकार कर कहा: *'मुझे अब थोड़ा पानी ला दो, कि मैं पी लूँ, और एक निवाला रोटी ला दो, कि मैं खा लूँ'* (1 राजा 17, 10–11)। उसने केवल सबसे बुनियादी और आवश्यक भोजन माँगा। और यह कौन है? एलियाह, जिसने अपने शब्दों से आकाश को सील कर दिया ताकि कोई बारिश न हो, और जिसने फिर से, प्रार्थना के द्वारा, इस अकाल को समाप्त कर दिया। – जहाँ तक हमारी बात है, जो अपने बाहरी हालात और अपने आंतरिक स्वभाव दोनों में तुच्छ हैं, भले ही हमें ऐसा कुछ सहना पड़े, इसमें कुछ भी अनुचित नहीं होगा; और हमें इससे बोझिल नहीं होना चाहिए, बल्कि हमेशा कृतज्ञ रहना चाहिए, चाहे प्रचुरता का समय हो और चाहे अभाव का समय हो; क्योंकि यही मसीह के शिष्यों की निशानी है, और इस दृष्टिकोण को अपनाकर, हम न केवल इस वर्तमान जीवन के दुखों को सहजता से सहन करेंगे, बल्कि भविष्य के आशीर्वादों के योग्य भी माने जाएँगे।

301. दुश्मन हमें घेर लेते हैं और अप्रत्याशति रूप से, हमेशा और हर जगह हम पर हमला करते हैं: हमें अपनी रक्षा करनी चाहिए

301. 1) दुश्मन हमें घेर लेते हैं और अप्रत्याशति रूप से, हर समय और हर जगह हम पर हमला करते हैं: हमें अपनी रक्षा करनी चाहिए। – 2) कैसे? ईश्वर के भय और उन पर वश्विास के द्वारा, आँसुओं और ईश्वर के वचन में शक्षिा के द्वारा; मन की रक्षा करके और बुरे वचिारों का खंडन करके। – 3) कल तुमने अव्यवस्थति ढंग से गाया। यह पवत्रि आत्मा को ठेस पहुँचाता है, और लाभकारी होने के बजाय, यह आत्मा को हानपिहुँचाता है। अब से, उचति ढंग से गाओ। [4, 99]

3. हाल ही में एगारीयनों के हमलों के दौरान, हम सभी भय से भर गए थे, यह डरते हुए कहिम इन अधर्मी लोगों के हत्यारे हाथों में पड़ सकते हैं। और यह डर बेवजह नहीं था। लेकनि जहाँ तक राक्षसों द्वारा हम पर हमलों की बात है, हम न तो उनके बारे में सोचते हैं और न ही इस बात से डरते हैं कहिमारी लापरवाही के कारण हम दुर्भावना की आत्माओं के कैदी बन सकते हैं; हालाँकहिम जानते हैं कदिखिाई देने वाले दुश्मनों के हमले एक वशिष्टि समय पर होते हैं, और उनके बारे में खबरें, पहले से ही आकर, जो स्वतंत्रता चाहते हैं उन्हें कहीं और भाग जाने का मौका देती हैं; जबकअदृश्य शत्रुओं के संबंध में ऐसा कुछ भी संभव नहीं है, क्योंकदिनि-रात, और हर घड़ी, वे हम पर हमला करने के अलावा और कुछ नहीं करते, और हमें मुश्कलि से ही एक पल का आराम देते हैं; इसलिए यहाँ अधकि भय है, और इसलिए अधकि आत्म-रक्षा की आवश्यकता है, कहीं हम इन शत्रुओं का शकिार न बन जाएँ और उनकी आत्मा-वनिाशकारी बदनामयिों से बच न सकें।

४. तो फरि, हम कहाँ भागेंगे? नश्चिय ही परमेश्वर के पास, जैसा कसिंत दाऊद गाते हैं: *'परमेश्वर हमारा शरणस्थान और बल हैं, संकट के समय में हमें अतसिहायक हैं'* (भजन संहति ४५:२); और: *'प्रभु का दूत उनके चारों ओर डेरा डालता है जो उससे डरते हैं, और उन्हें बचाता है'* (भजन संहति 33:8); और फरि: *'जो प्रभु पर भरोसा रखते हैं वे सयिोन पर्वत के समान हैं: वह कभी हलिने वाला नहीं, परन्तु सदा यरूशलेम में बना रहेगा'* (भजन संहति 124:1)। इसलिए, यदहिम में परमेश्वर का भय और उस पर वश्विास है, तो हम अपने शत्रुओं से नहीं डरेंगे। परन्तु हमें यह ध्यान रखना चाहिए ककिलि अधकितर शत्रुओं द्वारा रोटी और पानी की कमी के कारण ही जीते जाते हैं। तो, हमारे पास क्या है? – आँसू और परमेश्वर का वचन, जनिके द्वारा और जनिमें आत्मा पोषति और बचाई जाती है, जबकि उनकी कमी से यह भ्रष्ट हो जाती है और कैद में दे दी जाती है। जैसा कलिखिा है, *'परमेश्वर का वचन हम में भरपूर वास करे'* (कुलु. 3:16), और हमारी आँखें कभी सूखी न हों। हालांकि, एक 'आंतरकि वश्विासघात' भी होता है। और यह क्या है? – हमारे भीतर रहने वाली वासनाएँ और, शरीर की चालाकी से भड़काए गए, वे वचिार जो वश्विासघात से शत्रुतापूर्ण दुष्टात्माओं के लिए दरवाजा खोलते हैं। उन्हें तुरंत बाहर नकिाल दयिा जाना चाहिए, और हमें हर सावधानी से अपनी रक्षा करनी चाहिए, कहीं हमारा शहर—अर्थात् हमारी आत्मा—कब्ज़ा न कर लयिा जाए, और हम पाप द्वारा भटक न जाएँ, और वनिाशकारी जुनून के कैदी न बन जाएँ; बल्कि, हम उसी सद्गुण में बने रहें जसिमें हमें बनाया गया है, हमें बनाने वाले की महमिा के लिए, और एक पापी के रूप में मेरी प्रशंसा के लिए।

५. कल तुमने अपने भजन-गाने से मुझे क्रोधति कयिा। इसलिए मैं तुमसे नविेदन और वनिती करता हूँ कतिुम ठीक प्रकार से और उचति क्रम में गाओ, और बेतरतीब या उलझन भरे ढंग से नहीं, ताकतिुम मुझे, एक पापी को, नहीं बल्कपिवत्रि आत्मा को ठेस न पहुँचाओ: क्योंकयिह उनकी आज्ञा है: *'समझ-बूझ से गाओ'* (भजन संहति ४६:८)। जब तक नम्निलखिति क्रम का पालन नहीं कयिा जाता, तब तक कोई समझदारी से गा नहीं सकता: पछिले पद के गाने समाप्त होने से पहले एक साथ मलिकर नए पद की शुरुआत न करें; चाहे भजन जोर से गाया जाए या धीरे, लंबा हो या तेज़, सबसे बढ़कर, व्यवस्था बनाए रखनी चाहिए; क्योंकयिदहिर मामले में क्रम का पालन करना सर्वोत्तम गुण है, तो ईश्वर के साथ संवाद में यह और भी अधकि आवश्यक नहीं है? – क्योंकअिव्यवस्था बेतुकी कल्पनाओं और मन के वचिलन को जन्म देती है, जबकक्रिम ध्यान, संयम और उस मठिास को बनाए रखता है जसिकी गवाही संत दाऊद देते हैं, कहते हुए: *'तेरे वचन मेरे गले के लिए कतिने मीठे हैं, मेरे मुँह के लिए मधु से भी अधकि मीठे'* (भजन संहति 118:103)। इसलिए मैं नविेदन और वनिती करता हूँ कहिम इस गुण का अभ्यास अत्यंत सावधानी से करें, एक-दूसरे को समझाते और अपने गायन में एक-दूसरे को सुधारते रहें। इस समझदारी से गाने से, हम अपनी आत्माओं के लिए शांति पाएँगे, एक-दूसरे के लिए एक अच्छा उदाहरण स्थापति करेंगे, और—हर दूसरी चीज़ की तरह इसमें भी परमेश्वर को प्रसन्न करके—स्वर्ग के राज्य के योग्य वारसि बनेंगे।

302. मन आलसी हो जाए और पापी विचारों में फँस जाए, इससे बचने के लिए इसे ईश्वर के चिंतन में लगाकर रखना चाहिए—ईश्वर के गुणों और कार्यों, स्वर्गदूतों के आदेशों, संतों के निवासों और इस दृश्यमान संसार पर मनन करते हुए: इस प्रकार आत्मा की सुंदरता संरक्षित रहती है

302. 1) मन सुस्त न हो जाए और पापी विचारों में फँस न जाए, इसके लिए इसे ईश्वर के चिंतन में रखना चाहिए – ईश्वर के गुणों और कार्यों, दैवीय आदेशों, संतों के निवासों और इस दृश्यमान दुनिया पर मनन करके: इस प्रकार आत्मा की सुंदरता संरक्षित रहती है। – 2) आत्मा की वह सुंदरता, जिसके साथ इसे बनाया गया था, और जो पतन में खो गई थी, बपतिस्मा, पश्चाताप और तपस्या के जीवन के माध्यम से पुनर्स्थापित होती है। [4, 100]

६. मन को हमेशा यहीं रहना चाहिए, हृदय को यहीं वास करना चाहिए! – ईश्वर के कार्यों पर सतर्क ध्यान में, तपस्या के मार्ग पर, और किसी भी तरह से स्वयं को एक कैदी की तरह इधर-उधर खींचने न देना। क्या समुद्र का पानी कभी सूख जाता है, या सांस लेने वालों के लिए हवा? – तो फिर हमारे भीतर अच्छे विचार कभी सूखने नहीं चाहिए, जब हमारी बुद्धि की आँखें ईश्वर के अद्भुत कार्यों के अनंत समुद्र को निहारती हैं; जैसे-जैसे हम उनमें गहराई तक उतरते हैं, मन के पास सांसारिक मामलों से विचलित होने या बुरे विचारों में फँसने का समय नहीं होगा। क्योंकि, हमेशा गतिमान रहने के कारण, यह विश्राम नहीं कर सकती, बल्कि जहाँ भी हम इसे निर्देशित करते हैं, वहाँ यह अनियंत्रित रूप से दौड़ पड़ती है, चाहे दाईं ओर हो या बाईं ओर: और यदि दाईं ओर, तो इसे दाऊद के साथ पुकारना चाहिए: *'हे प्रभु, अपनी इच्छा से मेरी भलाई के लिए शक्ति प्रदान कर'* (भजन संहिता 29:8); लेकिन यदि बाईं ओर, तो फिर जो श्लोक आता है: *'परन्तु यदि तू अपना मुंह फेर ले, तो मैं व्याकुल हो जाता हूँ'* (श्लोक 9)। परमेश्वर का मुंह फेरना तब होता है जब मन व्यर्थताओं में व्यस्त होता है, जबकि आत्मा का विनाशकारी भ्रम तब उत्पन्न होता है जब वह पापी योजनाओं में लिप्त हो जाता है। इसलिए हमें हमेशा इसे सही मार्ग पर ले जाने का प्रयास करना चाहिए, और इसे शुभ दृश्य देखने देना चाहिए। ये क्या हैं? – स्वर्गीय दैवीय शक्तियाँ, वहाँ की अनुपम आशीर्वादें, पवित्र प्रेरितों, भविष्यद्वक्ताओं, शहीदों और सभी धर्मात्माओं के तेजस्वी धाम; साथ ही यह दिव्य गगनमंडल, चमकता हुआ सूरज, उज्ज्वल चंद्रमा, तारों के झुंड, और इंद्रियों से ज्ञात होने वाली अन्य सभी चीजें—इसलिए नहीं कि वह उन पर मनन करे, बल्कि इसलिए कि, उनके माध्यम से, वह सभी चीजों के स्रष्टा, ईश्वर की ओर उठाया जाए, और अपनी सुंदरता को निर्दोष बनाए रखे।

७. क्योंकि परमेश्वर ने हमें सौंदर्य से अलंकृत किया है, और सबसे पहले हमें अपनी समानता और प्रतिमा में बनाया; और यद्यपि हमने अवज्ञा द्वारा स्वयं को कलंकित और अपमानित किया है, फिर भी वह अनुग्रह द्वारा हमें एक बार फिर से सौंदर्य से परिपूर्ण करता है, *'पुनर्जन्म का स्नान और पवित्र आत्मा का नवीनीकरण, जिसे उसने हमारे उद्धारकर्ता यीशु मसीह के द्वारा हम पर प्रचुर मात्रा में उंडेल दिया है'* (तीतुस 3:5); और जब हम यहाँ भी अयोग्य सिद्ध हुए, तो उन्होंने हमें पवित्रता के व्रत में पश्चाताप के द्वारा अपनी सुंदरता को फिर से प्राप्त करने का तीसरा साधन प्रदान किया, *'हमारे सब अपराध क्षमा करके, हमारे विरुद्ध लिखित दस्तावेज़ को मिटाकर'* (कुलुस्सियों 2: 13–14) क्रूस के जीवन के द्वारा, ठीक वैसे ही जैसे बपतिस्मा में। – इसलिए हमारी आत्मा अपनी शोभा में बनी रहे, ताकि हम यह सुनने के योग्य ठहरें: *'तुम सब सुन्दर हो, हे मेरी प्रिय, और तुम में कोई दोष नहीं'* (प्रेम गीत 4:7)। और यदि ऐसा फिर से हो कि यह पाप से अशुद्ध हो जाए [क्योंकि हम चंचल हैं, और *'कोई भी अशुद्धि से पवित्र नहीं'* (अय्यूब 14:4), *'कोई भी यह दावा नहीं कर सकता कि उसका हृदय शुद्ध है'* (नीतिवचन 20:9)], तो आइए हम पश्चाताप के आँसुओं से स्वयं को शुद्ध करने के लिए शीघ्रता करें। *'मुझे धो, और मैं हिम से भी अधिक श्वेत हो जाऊँगा,'* संत दाऊद प्रार्थना करते हैं (भजन संहिता 50:9); *'अपने आपको धोओ, और शुद्ध हो जाओ; अपनी आत्मा से दुष्टता को दूर करो,'* परमेश्वर यशायाह भविष्यवक्ता के माध्यम से आग्रह करते हैं (1:16)। और धन्य है वह आत्मा जो इस प्रकार निरंतर स्वयं को शुद्ध करती है, हर बुराई के प्रवृत्ति का त्याग करके, एकमात्र ईश्वर से प्रेम और उसकी लालसा करते हुए, और प्रतिदिन आनंद के साथ मृत्यु की प्रतीक्षा करते हुए। – मृत्यु निश्चित रूप से हम पर भी आएगी; हमें भी यह सभी का सामान्य ऋण चुकाना होगा। – परन्तु ओह, काश कि, एक धार्मिक और धर्मी जीवन जीने के बाद, हम इस योग्य ठहरें कि जब हम में से प्रत्येक की देह अंतिम संस्कार की विदाई में भाइयों के अंतिम चुम्बन के लिए रखी जाए, तो हमारी आत्मा परमेश्वर के स्वर्गदूतों द्वारा उठा ली जाए और शाश्वत आनंद के लिए स्वर्ग ले जाई जाए।

303. जिन्होंने मठ छोड़ दिया, बाद में विधर्म में पड़कर भ्रष्ट हो गए, उनका उल्लेख करने के बाद

303. 1) मठ छोड़ने वालों का उल्लेख करने के बाद, जो बाद में विधर्म में पड़ गए और भ्रष्ट हो गए। – 2) वह सतर्क रहने का आग्रह करते हैं, यह बताते हुए कि शत्रु किसी भिक्षु को भटकाने और उसे नष्ट करने से अधिक कुछ नहीं चाहता। [4, 101]

8. अब कई भाइयों के चले जाने के कारण, सुनने वाले बहुत कम हैं; परन्तु यदि एक ही श्रोता हो, तब भी उपदेश को उपेक्षित नहीं करना चाहिए; क्योंकि प्रभु कहते हैं: *'सावधान रहो कि तुम इन छोटे-छोटे में से किसी एक की भी तुच्छता न करो: क्योंकि मैं तुम से कहता हूँ कि उनके स्वर्गदूत स्वर्ग में मेरे स्वर्गीय पिता का मुखाड़ा निरिन्तर देखते हैं। क्योंकि मनुष्य का पुत्र खोए हुए की खोज करने और उसे बचाने आया है'* (मत्ती 18:10–11)। हे, मानवजाति के लिए परमेश्वर का प्रेम कितना अगोचर है! प्रभु एक भागे हुए दास के पास एक दास के वेश में आए, उसे शैतान के बंधन से मुक्त करने के लिए। सच्चा प्रकाश खोए हुए द्रक्मा को खोजने, उसे पाप के अंधकार से बाहर निकालने आया। तो क्या यह आवश्यक नहीं है कि हम भी, विनम्रता से, सर्व-सद्गुणी प्रभु का अनुकरण करते हुए, आप में से प्रत्येक के लिए शोक करें, आप से बात करें, और उसके लिए अपनी आत्मा तक भी अर्पण कर दें? हे, काश मेरे पंख होते, कि मैं उड़कर हर भाईचारे में विश्राम कर पाता—उन पर दृष्टि डालने और उन्हें उचित बातें कहने के लिए—और न केवल उन पर, बल्कि उन पर भी जो *'कैन के मार्ग पर चल पड़े हैं, और बिलाम की मजदूरी के भ्रम में सिर पटक दिए हैं'* (यहूदा 11)। तो, मैं ऐसे किसे कहता हूँ? – लियोन्टियस, इरमियाह और नेक्टारीयस, जो हमसे और विश्वास से दोनों ही तरह से भटक गए हैं; और जिन्हें, अपने धर्मत्याग के पुरस्कार स्वरूप, नेतृत्व प्रदान किया गया है – जिनके बारे में, यदि मैं, अपनी नम्रता में, उन्हें देखूँ और उनसे बात करूँ, तो, भले ही मैं और कुछ न करूँ, मैं उनके लिए अपनी आत्मा तक न्योछावर कर दूँगा। मैं उन लोगों को भी देखना चाहूँगा, जिन्होंने मेरे पापों के कारण, पवित्र मठवासी वेश को त्याग दिया है और खुद को अधर्म और पाप के वस्त्रों से आच्छादित कर लिया है, ताकि मैं उनके लिए एक बार फिर रो सकूँ: जिनमें से एक, कि पिगासियस, जैसा कि वे कहते हैं, दुष्टता में इतना गिर गया कि, शाही नियुक्ति से, वह लोगों का नेता बन गया, एक विद्रोह खड़ा किया, हत्याएं कीं, और युद्ध में अपनी जान गंवा बैठा। क्या दुर्भाग्य है! यह दीन-हीन मनुष्य किस गहरे गर्त में गिर पड़ा! पहले तो वह भ्रातृत्व से मुंह मोड़ गया, फिर उसने अपनी वासनाओं का अनुसरण किया, एक के बाद दूसरे में भ्रष्ट होकर, एक मूक पशु की तरह; फिर उसने अपने संन्यासी व्रतों को त्याग दिया, और अंत में हमें जैसा सुना है, वैसा ही दुखद अंत हुआ।

९. यह याद करके, मैं आपसे उनके लिए प्रार्थना करने का आग्रह करता हूँ, और अपने लिए अपने मार्ग पर दृढ़ बने रहने का, अपनी तपस्या की दृढ़ता को थोड़े भी कम किए बिना; क्योंकि छोटी-छोटी अनुवृत्तियों और सुस्ती के द्वारा आत्मा विनाश की ओर ले जाई जाती है। इसीलिए मैं उन लोगों पर तरस खाता हूँ जो एकांत में रहते हैं और उनके लिए शोक मनाता हूँ, मानो वे शैतान के शिकार के लिए तैयार और प्रतीक्षा कर रहे हों; क्योंकि अगर कोई भेड़िया झुंड से एक भेड़ को उठा ले जाता है, तो क्या उसके लिए झुंड के बाहर मिलने वाली भेड़ को निगलना और भी आसान नहीं हो जाता? – क्या तुम नहीं जानते कि शैतान हम पर कितनी प्रचंडता से फूँकता है? वह हर व्यक्ति पर हमला करता है, सिर्फ विनम्र संतों पर नहीं; वह कई लोगों के विनाश पर प्रसन्न होता है, लेकिन उसे इससे अधिक आनंद तब नहीं होता जब वह एक ही संत को गिराने में सफल हो जाता है। वह अथक प्रयास क्यों करता है, घात लगाकर बैठता है और, मानो, संघर्ष करता है, आज्ञाकारी को आज्ञाकारिता से, मौन रहने वाले को मौन से, स्तंभवासी को उसके स्तंभ से, तपस्वी को उसकी कुटिया से अलग करने के लिए, ताकि, ऐसी गड़बड़ी के बाद, वह उन्हें अपनी इच्छा के अनुसार ले जा सके: क्योंकि जो लोग अपने अनुशासन और अपने स्थान पर दृढ़ रहते हैं, सदाचार का अभ्यास करते हैं, वे शैतान की पहुँच से परे हैं, और उसके जालों से ऊपर उठा लिए जाते हैं। इसलिए, हमें शैतान के विरुद्ध दी गई शक्ति का उपयोग करते हुए, उसे पीछे हटा दें, स्वयं को परमेश्वर के भय से ढकते हुए और स्वर्गीय विचारों से उसे नीचे गिराते हुए, उसे हमारे विचारों पर हावी न होने दें, ताकि, इस प्रकार उस पर विजय प्राप्त करने के बाद, हम हमारे प्रभु मसीह, जो शुभ कर्मों के दाता हैं, से धार्मिकता के मुकुट के योग्य माने जाएँ।

304. उत्पीड़न के सामने हम विशेष रूप से सतर्क रहें: क्योंकि तभी शत्रु सबसे प्रबल रूप से हमला करता है

304. 1) हम सतर्क रहें, विशेष रूप से उत्पीड़न के समय: क्योंकि यहाँ दुश्मन और भी ज़ोरदार हमला करता है। उसने संसार की शुरुआत से अब तक कितनों को नष्ट कर दिया है? और वह अब भी ऐसा करना जारी रखता है। – 2) हम उसके जालों से कैसे बच सकते हैं? नम्रता और आज्ञाओं के प्रति आज्ञाकारिता के द्वारा। यहाँ जीवन के उचित तरीके को दर्शाया गया है – बाहरी और आंतरिक दोनों रूप से – पुरस्कार के संदर्भ के साथ, एक प्रोत्साहन के रूप में। [4, 102]

10. हम मसीह के लिए *'सभी धर्मपरायणता और पवित्रता में'* (1 तीमु. 2:2), *'आज्ञा के बच्चों के रूप में, अपनी पूर्व अज्ञानता की इच्छाओं के अनुसार नहीं चलकर'* (1 पतरस 1:14), और अपने तपस्या के प्रयासों की तीव्रता में सुस्ती किए बिना उत्पीड़न के योग्य जीवन जिएँ। क्योंकि, *जैसा कि* आप देखते हैं, *'शैतान गरजने वाले सिंह की तरह इस इरादे से इधर-उधर घूमता है कि किसी को निगल जाए'* (1 पतरस 5:8); और अब जब वह हमें उत्पीड़न से जर्जर देखता है, तो वह और भी ज़ोरदार होकर हमला करता है, इस उम्मीद में कि अब हमारी आत्माओं को छीनना आसान हो गया है। परन्तु हम हर समय और हर स्थान में, दैवी आज्ञाओं द्वारा संरक्षित, संयमी और चौकस रहेंगे। और वह, हम में कोई आधार न पाकर, अपमानित होकर चला जाएगा। यदि, तथापि, उसे कोई आधार मिल जाए, तो वह अपने हमले को और भी अधिक तीव्र कर देगा; और जब तक वह हमें प्रहार करके नष्ट नहीं कर देता, तब तक वह पीछे नहीं हटेगा। या क्या हम यह नहीं जानते कि संसार की सृष्टि के समय से उसने कितनों को पहले ही नष्ट कर दिया है: क्या उसने पहले मनुष्य को पाप की मिठास में फँसाकर स्वर्ग से निष्कासन तक नहीं पहुँचाया? क्या उसने काईन को भाइघात के लिए उकसाया नहीं? क्या उसने यहूदा को प्रेरितों की संगति से बाहर नहीं निकाला, उसे सभी के जीवन का विश्वासघाती बनाकर? क्या उसने अनगिनत अन्य लोगों को भी मृत्युदंड नहीं दिया? – यहाँ तक कि अब भी वह हमें धोखा देता है, उकसाता है और हर तरह के बुरे काम करने के लिए मजबूर करता है, और लगभग पूरे ब्रह्मांड को निगल जाता है; और उससे बचना बहुत मुश्किल है और इसके लिए अत्यधिक सतर्कता की आवश्यकता है: क्योंकि वह न केवल एक अनैतिक और नीच जीवन के माध्यम से, बल्कि तीव्र तपस्या के माध्यम से भी, हमें सही मार्ग से भटकाने और विपरीत दिशा की ओर खींचने का प्रयास करता है, स्वयं को विभिन्न रूपों में बदलते हुए, हर तरह के जाल और धोखे की रचना करते हुए, हमारे फँसाने के लिए पृथ्वी पर दूर-दूर तक कई जाल बिछा रहा है, जैसा कि धन्य एंथनी ने एक दर्शन में देखा था और जिससे उन्हें परमपिता से यह निर्देश मिला कि केवल विनम्रता ही हमें उनसे बचने में मदद कर सकती है।

11. इसलिए, विनम्रता का वेश धारण करके, आइए हम सही मार्ग से भटकने और उससे हट जाने से बचें, राजसी मार्ग पर चलें और न तो दाईं ओर और न ही बाईं ओर मुड़ें, बल्कि हमें सौंपी गई पवित्र आज्ञा के नियमों का सटीक पालन करें और उन पवित्र पिताओं के पदचिन्हों पर चलें जो हमसे पहले गए, जिनका निवास स्वर्ग में है। हमारे मन बुरे विचारों से दूर रहें, हमारे हृदय दिव्य वचनों से शिक्षित हों, हमारे होंठ केवल ईश्वर की महिमा करने के लिए खुलें, हमारी आँखें सही का दर्शन करें, हमारे कान व्यर्थ की बातें न सुनें, हमारे हाथ अपने श्रम के लिए आगे बढ़ें, हमारे पैर व्यवस्थित रूप से चलें, हमारा भोजन और पेय मध्यम हो, हमारी नींद एक निश्चित समय-सारणी द्वारा नियंत्रित हो, नियम से केवल आवश्यक मामलों के अलावा कोई विचलन न हो, हमारे भीतर मृत्यु लाने वाली अहंकार—या कोई अन्य अनुचित व्यवहार—के लिए कोई जगह न हो, बल्कि सब कुछ ईश्वर-भय और बुद्धिमानी से किया जाए। ऐसा मार्ग लंबा नहीं है, और हमारे प्रयासों का लक्ष्य निकट है। लेकिन हमारे परिश्रम का पुरस्कार क्या है? – स्वर्ग का राज्य; जिसके लिए हम बार-बार प्रयास और संघर्ष करेंगे; यदि हम ठोकर खाते हैं, तो हम उठने के लिए जल्दी करेंगे; यदि हम झपकी लेते हैं, तो हम जागेंगे और फिर से सतर्क रहेंगे, अपनी प्रकृति को वश में करेंगे, पृथ्वी पर स्थित अपने अंगों को मार डालेंगे, और सद्गुण प्राप्त करेंगे। मैं यह सब स्वयं से भी कहता हूँ, क्योंकि मैं भी तुम्हारे समान ही स्वभाव का हूँ और कमज़ोरियों से घिरा हुआ हूँ। ईश्वर करे कि हम सभी, पूरी लगन से परिश्रम करके और निष्कलंक जीवन जीकर, यहाँ से आशा के साथ चलें और धन्य अनंत जीवन के योग्य ठहरें।

305. व्यवस्था और सुसमाचार की आज्ञाओं को, उनके बीच के अंतर के साथ, प्रस्तुत करने के बाद, और यह बताने के बाद कि जो इन दोनों में से किसी एक को भी पूरा नहीं करते, वे परमेश्वर के राज्य के वारिस नहीं बन सकते

305. 1) व्यवस्था और सुसमाचार की आज्ञाओं को, उनके बीच के अंतर के साथ, प्रस्तुत करने के बाद, और यह बताने के बाद कि जो इनमें से किसी एक को भी पूरा नहीं करते, वे परमेश्वर के राज्य का उत्तराधिकारी नहीं बन सकते। – 2) वह उन्हें मृत्यु में, न्याय के दिन और दंडित होने पर उनकी भयानक नियति की याद दिलाते हैं, और – 3) फिर वह उन्हें पश्चाताप करके प्रभु की ओर मुड़ने का निमंत्रण देते हैं, जब तक कि उनकी दया के द्वार खुले हुए हैं। [4, 103]

12. परमेश्वर, जिसने हमें बनाया और हमें शून्य से अस्तित्व में लाया, ने हमें, मानो, इस जीवन में एक स्कूल की तरह प्रवेश दिलाया है, ताकि हम उसके राज्य की सुसमाचार आज्ञाओं को सीख सकें। यही कारण है कि, जब उन्होंने अपने शिष्यों को प्रचार करने के लिए भेजा, तो उन्होंने उनसे आज्ञा दी, कहते हुए: *'इसलिये जाओ और सब जातियों के लोगों को चेला बनाओ, और उन्हें पिता, पुत्र और पवित्र आत्मा के नाम से बपतिस्मा दिलाओ, और उन्हें यह सब मानना सिखाओ जो मैंने तुमसे आज्ञा दी है'* (मत्ती 28:19-20)। तो फिर, ये आज्ञाएँ कौन सी हैं जो उसने हमें

दी हैं? – पुराने नियम के अनुसार, आज्ञा दी गई थी: *'तुम हत्या न करना, तुम व्यभिचार न करना, तुम चोरी न करना, तुम झूठी गवाही न देना'* (निर्गमन, अध्याय 20; व्यवस्थाविवरण 5); लेकिन नए नियम में, उन्होंने इनसे भी ऊँचे और अधिक पूर्ण आज्ञाएँ दीं; क्योंकि वे कहते हैं: *'प्राचीनों से कहा गया था: "हत्या न करना"; क्योंकि जो कोई हत्या करता है वह न्याय के अधीन है। परन्तु मैं तुम से कहता हूँ कि जो कोई बिना कारण अपने भाई से क्रोध करता है, वह न्याय-दण्ड का दोषी है; क्योंकि जो अपने भाई से कहता है, 'रका', वह महासभा के न्याय का दोषी है।"* – फिर: *'पुरनियों से कहा गया था: "तुम व्यभिचार न करना।" परन्तु मैं तुम से कहता हूँ: जो कोई किसी स्त्री को वासना की दृष्टि से देखता है, वह मन ही में उसके साथ व्यभिचार कर चुका है।'* फिर: *'पुरनियों से कहा गया था: "तुम मिथ्या शपथ न खाना, परन्तु यहोवा के प्रति अपनी शपथ पूरी करना।" परन्तु मैं तुम से कहता हूँ: बिलकुल भी शपथ न खाओ।"* फिर: *"यह कहा गया है: 'अपने पड़ोसी से प्रेम कर और अपने बैरी से बैर रख।' परन्तु मैं तुम से कहता हूँ: अपने बैरियों से प्रेम करो, जो तुम्हें कोसते हैं, उनके लिए आशीर्वाद मांगो, जो तुम्हारा घृणा करते हैं, उनके लिए भलाई करो"* (मत्ती 5:21–44)। क्या आप दोनों वाचाओं के बीच का अंतर देखते हैं? एक कर्मों को मना करती है, जबकि दूसरी उन हृदय की प्रवृत्तियों को ही मना करती है जिनसे वे कर्म उत्पन्न होते हैं, ताकि पाप यहाँ जड़ न जमा सके? – अब, यदि हम खुद को न तो व्यवस्था के अनुसार और न ही सुसमाचार के अनुसार जीते हुए पाते हैं, बल्कि—मैं इसे कैसे कहूँ?—एक मूर्तिपूजक तरीके से, तो हम उस दिन क्या अनुभव करेंगे? – *'धोखा न खाओ,'* प्रेरित कहते हैं, *'न तो व्यभिचारी, न मूर्तिपूजक, न व्यभिचार करने वाले, न कामुक, न सोडोमवासी, न पुरुष-संग-संभोग करने वाले, न शोषक, न चोर, न मद्यपान करने वाले, न अपमान करने वाले, न ठग, परमेश्वर के राज्य के वारिस होंगे'* (1 कुरिन्थियों 6:9–10)।

13. जैसा कि मैं तुमसे पहले भी कई बार कह चुका हूँ, वैसे ही अब मैं पूरी निश्चितता के साथ घोषणा करता हूँ: कोई भी अपनी इच्छा के अनुसार न जिए; कोई भी मोक्ष के मामले में उदासीन न रहे; कोई भी सोना जमा न करे, दास न बनाए, घोड़े और बैल न पाले, या स्वयं को किसी अन्य सांसारिक संपत्ति के बोझ तले न दबाए, क्योंकि इन्हीं से सबसे बड़े और सबसे विनाशकारी पाप उत्पन्न होते हैं। और फिर भी, तुम में से कुछ ऐसे हैं जो अपनी हठधर्मिता पर अड़े रहते हैं और सत्य का विरोध करते हैं। परन्तु मैं, यद्यपि मैं नम्र हूँ, तुम्हारे लहू से निर्दोष हूँ; क्योंकि मैं तुम्हें परमेश्वर का सत्य प्रचार करने से कभी नहीं रुका, और विद्रोहियों के पुत्रों पर आने वाली तलवार के विषय में निरन्तर चेतावनी देता रहा हूँ। *'या क्या हम प्रभु को क्रोधित करते हैं? क्या हम उसकी सबसे कठिन परीक्षा हैं?'* (1 कुरिन्थियों 10:22)। *'क्योंकि कुल्हाड़ी पेड़ की जड़ पर ही रखी जा चुकी है: इसलिये जो कोई पेड़ अच्छा फल नहीं फलता, वह काटा जाकर आग में फेंका जाता है'* (मत्ती 3:10)। क्या आप इस उदाहरण से नहीं डरते? क्या आप इस धमकी से नहीं कांपते? क्या आप मृत्यु से भी नहीं डरते, जिसके अधीन हम थोड़ी ही देर में अनिवार्य रूप से होंगे? हम उन भयानक स्वर्गदूतों का सामना कैसे करेंगे जो आमतौर पर हमें हमारे शरीरों से ले जाने के लिए आते हैं? हम आवश्यक सामान प्राप्त किए बिना उस लंबी यात्रा को कैसे तय करेंगे? अपराध-बोध से ग्रस्त अंतरात्मा के साथ हम मसीह की न्याय-सिंहासन के सामने कैसे खड़े होंगे, जिसके सामने हर घुटना झुकेगा और हर जीभ कबूल करेगी? यदि हम वहाँ ऐसी ही अवस्था में पाए गए, तो हमें अनिवार्य रूप से उस स्थान पर भेज दिया जाएगा जहाँ न बुझने वाली आग और न मरने वाला कीड़ा है, जहाँ रोना और दाँत पीसना होगा।

14. परन्तु ऐसा न हो कि यह हम पर पड़े, आओ हम आराधना करें, और दण्डवत करें, और अपने भले परमेश्वर के साम्हने रोएँ; और अपने आप को उसके साम्हने अंगीकार, विनती, पश्चाताप, आँसुओं, प्रार्थना, उपवास, पवित्रता और धर्मी जीवन के साथ प्रस्तुत करें। क्योंकि वह हमारे पापों का प्रायश्चित है; और उसने अभी तक हमारे विरुद्ध अपनी दया का द्वार बंद नहीं किया है; जो उसके पास आते हैं उन्हें वह नज़रअंदाज़ नहीं करता, बल्कि वेश्या, चोर और व्यर्थ उड़ाई करने वाले पुत्र की तरह उन पर अनुग्रह करता है। आओ, मैं तुमसे विनती करता हूँ, हम उठें, हम जागें, हम अपना मन इस पर लगाएँ, ताकि जैसे वे बच्चे जो अच्छी तरह सीख चुके होते हैं, स्कूल से छुट्टी पाकर प्रसन्नता से अपने घरों को लौटते हैं, वैसे ही हम भी, सुसमाचार के सच्चे शिष्यों के रूप में, इस जीवन को त्यागकर, आनंदपूर्वक अनंत जीवन में प्रवेश करें।

306. आज्ञाकारिता को सबसे फलदायी प्रयास के रूप में प्रशंसा करना और आज्ञाकारिता में न जीने वालों को फटकारना

306. 1) आज्ञाकारिता को सबसे अधिक फलदायी कर्म के रूप में प्रशंसित करने और उन लोगों को फटकारने के बाद जो आज्ञाकारिता में नहीं जीते। – 2) वह अपने अनुयायियों को आज्ञाकारिता में और अधिक उत्कृष्टता प्राप्त करने के लिए प्रोत्साहित करते हैं, उन्हें याद दिलाते हुए कि जो आने वाले हैं वे जल्द ही आ जाएंगे और प्रत्येक व्यक्ति को उनके कर्मों के अनुसार पुरस्कृत करेंगे। [4, 104]

१५. सर्व-सत्पुरुष ईश्वर की कृपा से, आप विश्वास करते हैं और मेरी विनम्रता के प्रति समर्पित हैं, और वही करते हैं जो आपको आज्ञा दी गई है: इसमें न केवल मेरे लिए, बल्कि आपके लिए भी आनंद और मुकुट निहित है, जिन्होंने मेरे से भी पहले अपने जीवन का लक्ष्य सद्गुण को बनाया है। क्योंकि एक नवागंतुक के लिए आज्ञाओं के अनुसार जीने और अपनी इच्छा से कुछ भी न करने से अधिक मीठा, अधिक वांछनीय या अधिक आनंददायक और क्या हो सकता है? इसमें ही सच्ची आज्ञाकारिता निहित है; यही धन्य जीवन है; यह एक ऐसा श्रम है जो दुख से भरा भी है और चिंता से मुक्त भी: दुख से भरा, जब तक कोई अपनी इच्छाओं का दास है; निश्चिंत तब होता है जब वह अपनी इच्छा को पूरी तरह से तोड़ने में सफल हो जाता है, और इसलिए उसमें प्रेरितों के शब्दों में कहने का साहस होता है: *'अब मैं नहीं जीता, बल्कि मसीह मुझ में रहते हैं'* (गलातियों 2:20)। क्योंकि, अपनी इच्छा के अनुसार अब और नहीं जीता, वह मठाधीश के माध्यम से परमेश्वर के अनुसार जीता है, और *'निर्मल मुख से प्रभु की महिमा को निहारते हुए, उसी महिमा के अनुसार, प्रभु के आत्मा द्वारा, उसी प्रतिमा में रूपांतरित हो रहा है'* (2 कुरिन्थियों 3:18)। ऐसा व्यक्ति संसार की परवाह नहीं करता, मृत्यु से नहीं डरता, और कुछ भी बोझ न मानते हुए एक निश्चिंत जीवन जीता है, क्योंकि उसने स्वयं को पूरी तरह से ईश्वर के हवाले कर दिया है। लेकिन जो कोई अपनी इच्छाओं पर भरोसा करता है और आज्ञाकारिता के नियमों को पृष्ठभूमि में धकेल देता है, अपनी इच्छा और आत्म-संतुष्टि के आगे झुक जाता है, वह यातना का जीवन जीता है, *'शैतान द्वारा अपनी इच्छा पूरी करने के लिए बंदी बना लिया गया'* (2 तीमु. 2:26)—और यद्यपि कभी-कभी ऐसा व्यक्ति उपवास करते, या जागते, या कोई अन्य अच्छा काम करते हुए दिखाई दे सकता है, यह सब निंदनीय है: क्योंकि *'जो कुछ विश्वास से नहीं है, वह पाप है'* (रोमियों 14:23); और जो कुछ भी सामान्य नियम के अनुसार नहीं किया जाता है, वह करने वाले का अपना मामला है और ईश्वर-प्रसन्न भक्ति से अपरिचित है।

16. इसलिए, मैं ऐसे लोगों की उचित रूप से निंदा करता हूँ, जबकि मैं आपकी प्रशंसा करता हूँ और आपको सर्वोत्तम आज्ञाकारिता, धैर्य, अपनी इच्छा पर काबू पाने, विश्वास, आशा और प्रेम, और अपने उद्धार के लिए तथा पूरे भाईचारे के लिए एक अच्छे उदाहरण के रूप में अन्य सभी मठवासी प्रयासों में और अधिक दृढ़ता से बने रहने के लिए प्रोत्साहित करता हूँ। मैं आपसे विनती करता हूँ: क्योंकि *'थोड़ी देर और, थोड़ी देर और, और जो आने वाला है वह आएगा और विलम्ब नहीं करेगा'* (इब्रानियों 10:37); वह अंतिम दिन आएगा, जिस दिन *'अंधकार के काम प्रकट हो जाएँगे और हृदय की मनसाएँ प्रकाश में आ जाएँगी'* (1 कुरिन्थियों 4:5)। भयानक और सच्चा न्यायी आएगा, जो नवसिखुआ को नवसिखुआ के सामने, मठाधीश को मठाधीश के सामने, बिशप को बिशप के सामने, कुलीन व्यक्ति को कुलीन व्यक्ति के सामने, राजा को राजा के सामने लाएगा, और एक-दूसरे के द्वारा उन्हें दोषी ठहराएगा या बरी करेगा, और *'प्रत्येक व्यक्ति को उनके कर्मों के अनुसार प्रतिफल देगा: जो लोग भलाई करने में स्थिरता के साथ महिमा, सम्मान और अमरत्व की खोज करते हैं, उन्हें वह अनंत जीवन देगा; लेकिन जो लोग अपने जोश में सत्य का विरोध करते हैं और अधर्म का पालन करते हैं, उन्हें वह क्रोध और प्रचंड क्रोध देगा। हर उस मनुष्य की आत्मा के लिए जो बुरा करता है, शोक और संकट होगा'* (रोमियों 2:7-9)। हमें इसका बहुत भय मानना चाहिए और यह सुनिश्चित करने के लिए हर सावधानी बरतनी चाहिए कि मृत्यु का समय हमें अच्छे कर्मों से रिक्त न पाए, बल्कि हमें अच्छे कार्यों के फलों से समृद्ध पाए। शत्रु हमारे अच्छे कामों में हमारा विरोध करे [—ऐसी ही उसकी प्रकृति है; *'क्योंकि वह आरम्भ से ही हत्यारा रहा है, और सत्य में स्थिर नहीं रहता, क्योंकि उसमें सत्य नहीं है'*, जैसा कि प्रभु ने कहा (यूहन्ना 8:44)]; परन्तु हम उसके विरुद्ध धैर्य और उदारता का प्रयोग करें, उसे परिश्रम, पसीने, प्रार्थनाओं, विनतियों और आँसुओं से विरोध करें – और वह हमारे विरुद्ध किसी भी बात में सफल नहीं होगा, हमारे संघर्षों की सहायता और हमारे दुर्बलता के लिए प्रभु की मध्यस्थता के द्वारा, जो हमें अनन्त विजय प्रदान करते हैं।

307. शिक्षाओं की फलदायी होने के बारे में कहने के बाद, वह सभी को परमेश्वर के घर में एक-दूसरे के जीवन को बनाने के लिए आमंत्रित करते हैं

307. 1) शिक्षाओं की फलदायी होने के बारे में बात करने के बाद, वह सभी को परमेश्वर के घर के निर्माण में एक साथ काम करने के लिए आमंत्रित करता है। – 2) फिर वह हमसे आग्रह करता है कि परमेश्वर का मंदिर बनने के बाद, हम इसे अपने भीतर भ्रष्ट न होने दें; इस उद्देश्य के साधन भी बताए गए हैं। [4, 105]

17. कोई यह न कहे कि हमारी शिक्षाएँ समय की बर्बादी हैं। नहीं, हम उनसे बहुत लाभ उठाते हैं: क्योंकि जैसे हल पृथ्वी के लिए, और पानी प्यासे के लिए, वैसे ही हमारा उपदेशात्मक वचन उन लोगों के लिए है जो इसे खुले दिल से सुनते हैं। आमतौर पर आत्मा का भ्रष्ट हो जाना किस कारण से होता है? भाईचारे के भीतर कलह, झगड़े और विभाजन क्या पैदा करते हैं? क्या यह इसलिए नहीं है क्योंकि शिक्षा और उपदेश की कमी है? जहाँ शिक्षा और उपदेश है, वहाँ शांति और व्यवस्था है; और जहाँ शांति और व्यवस्था है, वहाँ पवित्र आत्मा वास करता है: इसीलिए मैं, विनम्रता,

भय और प्रेम के साथ, आपसे बात करने, उपदेश देने, सांत्वना देने और आपको याद दलिाने का प्रयास करता हूँ, ताकि मैं स्वयं और आप दोनों को शैतान के अनेक प्रलोभनों से बचने में मदद कर सकूँ। – मैं यह स्वीकार करता हूँ कि आप स्वयं मेरी बहुत मदद करते हैं, वशिषकर भाइयों में अग्रणी; आप सभी भलाई के लिए मेरे सहकर्मी हैं। *'मैंने,'* संत पौलुस कहते हैं, *'बोया, अपोलो ने सींचा, परन्तु परमेश्वर ने बढ़ाया'* (1 कुरन्थियों 3:6): इसलिए यह अच्छा काम केवल मेरा नहीं, बल्कि आपका भी है; वास्तव में, यह ईश्वर का है, जनिसे लोगों में जो कुछ भी अच्छा है, वह सब उत्पन्न होता है। अतःमैं आपसे अनुरोध करता हूँ, कि आप सभी को प्रदान की गई आज्ञाकारिता के अनुसार, सभी बातों को सामान्य भलाई की ओर निर्देशित करें और आत्मा के द्वारा एक-दूसरे को ईश्वर के निवास-स्थान में स्थापित करें। क्योंकि प्रेरित कहते हैं: *'कोई भी उस नींव के सिवा दूसरी नींव नहीं रख सकता जो पहले से ही रखी जा चुकी है, जो कि यीशु मसीह है। यदि कोई इस नींव पर सोने, चाँदी, कीमती पत्थरों, लकड़ी, पुआल या तिनके का उपयोग करके निर्माण करता है, तो प्रत्येक व्यक्ति का काम प्रकट हो जाएगा, क्योंकि वह दिन उसे प्रकाश में लाएगा, क्योंकि वह आग से प्रकट किया जाएगा; और आग प्रत्येक व्यक्ति के काम की परीक्षा करेगी कि वह क्या है'* (1 कुरन्थियों 3:11-13)। क्या आप देखते हैं कि वह कैसे सद्गुण को सोने, चांदी और कीमती पत्थरों के समान, और दुर्गुण को लकड़ी, भूसे और पुआल के समान मानता है; जिनमें से, जब न्याय की अग्नि की कसौटी पर परखे जाएँगे, तो कुछ—नश्वर—जलकर नष्ट हो जाएँगे, जबकि अन्य—स्थायी—अछूते रहेंगे।

18. इसके साथ ही वह और भी गंभीर भाषा का प्रयोग करते हुए कहते हैं: *'क्या तुम नहीं जानते कि तुम परमेश्वर का मंदिर हो, और परमेश्वर का आत्मा तुम में वास करता है? यदि कोई परमेश्वर के मंदिर को नाश करता है, तो परमेश्वर उसे नाश कर देगा; क्योंकि परमेश्वर का मंदिर पवित्र है, और तुम वही मंदिर हो'* (1 कुरन्थियों 3:16-17)यह कितना बड़ा उपहार है कि हमें ईश्वर का मंदिर कहलाने और होने के लिए योग्य समझा गया है! लेकिन यह कितनी बड़ी धमकी है कि, यदि हम ईश्वर के मंदिर को नष्ट करते हैं, तो ईश्वर हमें नष्ट कर देंगे! अत; आइए हम अपने भीतर ईश्वर के मंदिर को नष्ट न करें; और चूँकि हमें पवित्र आत्मा को अपने भीतर वास करने का वरदान मिला है, आइए हम खुद को वासनाओं का निवास स्थान बनने न दें; जैसे पाप से मुक्त हो जाने के बाद, हमें स्वयं को फिर से शैतान का दास बनने की अनुमति नहीं देनी चाहिए। बल्कि *'हम शुद्ध और निर्दोष बने रहें, और यीशु मसीह के द्वारा धार्मिकता का फल लाएँ, जो परमेश्वर की महिमा और स्तुति के लिए हो'* (फिलि. 1:10-11)। इसलिए, हमारे हृदय सतर्क रहें, परमेश्वर के भय से परिपूर्ण और मृत्यु के निरंतर विचारों से पोषित रहें: क्योंकि जहाँ ऐसा भय और ऐसे विचार हैं, वहाँ पाप के प्रवेश की कोई गुंजाइश नहीं है। परन्तु जब हृदय इस बात के प्रति असंवेदनशील और कठोर हो जाता है, तो वासना हमारे भीतर आसानी से जड़ जमा लेती है, हमें भड़काती और परेशान करती है, और तब तक हमें नहीं छोड़ती जब तक हम अपनी पूर्व शांति की अवस्था में वापस नहीं लौट आते। तो, आइए हम परिश्रम करें ताकि भलाई में उत्कृष्टता प्राप्त करने के लिए कड़ी मेहनत करने के बाद, हम बाद में अनंत शांति पा सकें; आइए हम रोएँ ताकि हमें प्रभु में आनंद मिल सके; आइए हम इस जीवन के संकीर्ण और दुखद मार्ग को सहन करें, ताकि हम उससे उत्पन्न होने वाले ताज़गी भरे जीवन को पा सकें। – और यहाँ सबसे बड़ी सौदेबाजी है। यहाँ सभी आशीर्वादों में सबसे उत्तम आशीर्वाद है: सद्गुण की खोज में कुछ प्रयासों और मेहनत के माध्यम से, असीम और शाश्वत आशीर्वाद प्राप्त करना – काश हम सभी उन्हें प्राप्त करने के योग्य माने जाएँ।

308. हमारा जीवन समुद्र पार की एक यात्रा के समान है

308. 1) हमारा जीवन समुद्र पार की यात्रा के समान है। – 2) मन को नाविक की भाँति जीवन-नाव को डूबने से बचाने के लिए कैसे चलाना चाहिए? – 3) ये पाठ केवल नन्हे बच्चों के लिए ही नहीं, बल्कि बुज़ुर्गों के लिए भी हैं: क्योंकि खतरा उनसे भी दूर नहीं है। – 4) अतःहम सावधान रहें, कहीं हम अपनी लंबी मेहनत से जो कुछ भी जुटाया है, उसे बर्बाद न कर दें। [4, 106]

19. मानव जीवन एक और तरह का समुद्र है, जिसके पार हम, इस शरीर में जैसे किसी जहाज में प्रवेश करके, अपने मन से नौकायन करते हैं; और हम केवल समय-समय पर नौकायन नहीं करते, जैसे वे लोग जो साधारण जहाजों में समुद्र पार करते हैं, जो कभी नौकायन करते हैं और कभी बंदरगाहों में शरण लेते हैं, बल्कि हम अविराम रूप से, दिन-रात, नौकायन करते हैं, खराब मौसम और तूफानों में; और यह समुद्र खतरनाक है, और केवल खतरनाक ही नहीं, बल्कि हमारे जीवन की अवधि के बराबर लंबा भी है; और इसमें दुर्भावना की आत्माओं द्वारा उकसाई गई कई भयानक, तूफानी लहरें उठती हैं, कई समुद्री डाकू—दैत्य—हम पर हमला करते हैं, हमें डुबोने की कोशिश करते हैं, कि इसका वर्णन करना असंभव है। तो फिर, संत दाऊद, यह देखकर, प्रार्थना में क्यों पुकारते हैं: *'मैं उन से बचा लिया जाऊँ जो मुझ से बैर रखते हैं, और गहिरे जल से; तूफ़ानी जल मुझ पर न छाए, और गहिराई मुझे न निगले, और गहराई मुझ पर*

अपना मुँह न डाले (भजन संहिता 68:15–16)। – यदि दाऊद जैसे महान और शक्तिशाली व्यक्ति को भी डर लगा और उसने प्रार्थना की कि वह डूब न जाए – यद्यपि, एक बार सो जाने पर, वह वास्तव में कष्ट सह चुका था – तो हम, जो दीन हैं, क्या कहेंगे, और हमें कितनी अधिक भयभीत होकर प्रार्थना करनी चाहिए, कहीं हम भी उसी नियति का शिकार न हो जाएँ?

20. और हमारा मन, एक नाविक की तरह, जब चौकस और सतर्क होता है, तो वह वासनाओं के तूफानों को दूर भगाता है, और उस पर आक्रमणकारी विचारों की फुहार मुश्किल से ही छिटकती है; परन्तु जब यह आलस्य और लापरवाही के अधीन हो जाता है, तो यह वासना के आगे झुक जाता है, जो एक उग्र प्रवाह के साथ प्रहार करती है; और, उससे अभिभूत होकर, यह अंततः एक महान और पापी जहाज-दुर्घटना का शिकार हो जाता है, जिसके बारे में सुनना भी दयनीय है, और अनुभव करना तो और भी दयनीय है। हमारे जीवन की यात्रा इतनी भयानक और इतनी खतरनाक है; और इसलिए हमें इसके पतवार को ध्यानपूर्वक और सतर्कता से थामना चाहिए, और वासनाओं को दूर रखना चाहिए तथा किसी भी घुसपैठ करने वाले, अनुचित विचार को तुरंत बाहर निकाल देना चाहिए, कहीं ऐसा न हो कि उन पर टिकने से वे हमें डुबा दें।

21. मैं यह बात न केवल बहुत युवा लोगों को, बल्कि उन वृद्धों को भी ध्यान में रखकर कह रहा हूँ जो लंबे समय से तपस्या में लगे हुए हैं; क्योंकि शैतान उन्हें भी अछूता नहीं छोड़ता, और अक्सर उन्हें एक दयनीय पतन तक ले आता है – जैसा कि महान और धर्मनिष्ठ बेसिल एक स्थान पर कहते हैं: 'सचमुच, यह सबसे दयनीय दृश्य है – उपवास के बाद, कठोर जीवन के बाद, लंबे समय तक प्रार्थना करने के बाद, भरपूर आँसू बहाने के बाद, बीस या तीस साल तक संयम बरतने के बाद, अचानक आत्मा की लापरवाही और असावधानी के कारण सब कुछ से वंचित हो जाना!' (खंड 4, पृ. 222, – रूसी अनुवाद में)। – यह मैं, अपनी विनम्रता में, हूँ जिसने इसे सुना और देखा है, और रोया हूँ और रोता रहता हूँ, यह सोचते हुए कि कैसे इतने वर्षों में इकट्ठा किया गया सद्गुणों का इतना बड़ा धन, चालाक शैतान द्वारा एक ही क्षण में लूट लिया जाता है, जो धर्मनिष्ठ तपस्वी को खाली और बेकार छोड़ देता है। – हमारे उद्धार का रहस्य इतना महान है, और शैतान का हम पर इतना क्रोध है, कि वह हमें स्वर्ग की ओर बढ़ते हुए नहीं देख सकता, जहाँ से वह स्वयं गिरा था।

२२. परन्तु वह जैसा है वैसा ही रहे, और चाहे वह हम पर जितनी भी क्रूरता से सशस्त्र हो जाए; हम, जवान और बूढ़े, जूनियर और सीनियर सभी, ईश्वर की सहायता से, सर्वसम्मति से यह संकल्प लेंगे कि हम उन चीज़ों की उपेक्षा करके खुद को विनाश की ओर ले जाने नहीं देंगे जिन्हें हमने बहुत सी कठिनाइयों और कर्मों से अर्जित किया है—अर्थात्: संसार का त्याग, आज्ञाकारिता, पवित्रता, आँसू, और सबसे पहले और अंत में पाप-स्वीकृति; परन्तु हम सदा सतर्क भी रहेंगे, अपनी आशा का पाल ऊँचा रखकर, और पवित्र आत्मा की हवाओं से निर्देशित होकर, ताकि जब हम अपने जीवन के अंत में पहुँचें और अमरत्व के बंदरगाह में प्रवेश करें, तो हम अपने सद्गुणों के धन के द्वारा स्वर्ग के राज्य को प्राप्त कर सकें।

309. राजा का एक दूत कल आया; और हम सभी घबरा गए, यह जानते हुए कि राजा हमसे अनुकूल नहीं है

309. 1) कल राजा का दूत आया; और हम सभी घबरा गए, यह जानते हुए कि राजा का हमसे अच्छा व्यवहार नहीं है। अगर हमें पता होता कि उसका व्यवहार अच्छा है, तो तुमने दूत का स्वागत अलग तरह से किया होता। इस प्रकार आत्मा मृत्यु के दूत से मिलेगी: यदि वह ईश्वर की कृपा में आश्वस्त है तो आनंदपूर्वक, और यदि नहीं है तो भय के साथ। – 2) अतः आइए हम ईश्वर से मेल करें और स्वर्गदूतों को अपना मित्र बनाएँ। इस उद्देश्य के लिए, आइए हम पश्चाताप के आँसू, आत्म-परीक्षा, पारस्परिक प्रार्थनाएँ, और सबसे बढ़कर, पवित्र रहस्यों को ग्रहण करें। – 3) यहाँ यह समझाया गया है कि किसी को पवित्र रहस्यों के पास कैसे जाना चाहिए, यह कितना उद्धारकारी है, और यह कितना खेदजनक है कि लोग शायद ही कभी संस्कार ग्रहण करते हैं, तथा आगे से अधिक बार संस्कार ग्रहण करने का निर्देश दिया गया है। [4, 107]

२३. कल, जैसे ही ज़ार का दूत यहाँ पहुँचा, हम तुरंत ही उसके आगमन की अप्रत्याशितता से घबरा उठे। जब हमें बाद में पता चला कि वह हमारे लिए नहीं आया है, तो हमने अपना डर और भी जल्दी दूर कर लिया। अब मैं पूछता हूँ: हम इतने डरे हुए क्यों थे? क्या यह इसलिए नहीं था क्योंकि हमें एहसास हुआ कि राजा हमसे केवल नाराज़ ही नहीं है, बल्कि हमें नफरत भी करता है और तुच्छ समझता है? इसके विपरीत, यदि हम राजा की कृपा में होते और उसके करीब लोगों में गिने जाते, तो क्या हम उसके भेजे हुए दूत के आगमन पर प्रसन्न नहीं होते, यह जानते हुए कि वह हमेशा हम पर अनुकूल दृष्टि रखता है? – लेकिन मैं इस विषय को क्यों छेड़ रहा हूँ? – इसका उत्तर यह है: उसी प्रकार, एक आत्मा जिसने एक अच्छे जीवन के द्वारा ईश्वर की कृपा अर्जित की है, शरीर से प्रस्थान के समय, जब सभी के राजा

द्वारा उसे लेने के लिए एक देवदूत भेजा जाता है, तो वह डरेगी नहीं, बल्कि आनंद के साथ उसकी ओर देखेगी और प्रसन्नतापूर्वक अपने प्रभु के पास जाएगी। यदि, हालाँकि, वह आत्मा ऐसी नहीं है, तो उसे भ्रम और आतंक सताएगा, उसमें आंतरिक दृढ़ता की कमी होगी और उसे कहीं से भी कोई मदद या सांत्वना की उम्मीद नहीं होगी। क्योंकि यहाँ, एक भाई और एक दोस्त दोनों आत्मा को सांत्वना दे सकते हैं और उसके डर को दूर कर सकते हैं; लेकिन वहाँ, ऐसा कुछ भी संभव नहीं है, और देवदूत उस बेचारी आत्मा को निर्दयता और क्रूरता से ले जाएगा। – ये शब्द सुनकर, क्या हमारी आत्मा में भय की एक लहर नहीं उठती? यदि केवल इसके बारे में सुनने से ही भय होता है, तो जब हम वास्तव में ऐसी स्थिति में होंगे तो हमें क्या सहना पड़ेगा? – और तब आत्मा मसीह की न्याय-सिंहासन के सामने कैसे उपस्थित होगी? – भविष्यवक्ता दानियेल के अनुसार, *'उसके सामने आग का एक नदी बहा करता है; हजारों-हजारों उसकी सेवा करते हैं, और बहुत से लोग उसके सामने खड़े हैं'* (दानियेल 7:10), – और न्यायाधीश भयानक और निर्दयी है, और हर एक शब्द, यहाँ तक कि एक व्यर्थ शब्द का भी हिसाब लिया जाएगा, जैसा कि सुसमाचार में कहा गया है (मत्ती 12:36)। तो फिर आत्मा यह सब कैसे सहन कर सकती है? – सचमुच, *'जीवित परमेश्वर के हाथों में पड़ना एक भयानक बात है'* (इब्रानियों 10:31)। और यह और भी भयानक हो जाता है जब वह सबसे न्यायी न्याय सुनती है, जो उसे अनंत यातना में दंडित करता है।

२४. इसी कारण मैं तुम से विनती और प्रार्थना करता हूँ: मृत्यु से पहले हम परमेश्वर से मेल कर लें, और उनकी कृपा प्राप्त करें; हम उन स्वर्गदूतों को अपना मित्र बना लें जो हमारे लिए आने वाले हैं – हम अपनी अंतरात्मा की आँख चौकस और अपने मन को अजेय रखें, और वासनाओं के प्रलोभनों के आगे न झुकें; यदि हम कभी फिसल जाएँ, तो यथाशीघ्र फिर से उठ खड़े हों; बहुत से आँसुओं से हम दुष्ट के अग्निबाणों को बुझा दें और इसके बजाय मसीह के लिए अपना प्रेम बढ़ाएँ। – *'धर्मी व्यक्ति की प्रार्थना शक्तिशाली और प्रभावशाली होती है,'* यह कहा गया है (याकूब 5:16); इसीलिए हमें एक-दूसरे के लिए प्रार्थना करने और अपनी प्रार्थनाओं में एक-दूसरे को याद करने की आवश्यकता है। आँसू और पश्चाताप भी बहुत कुछ कर सकते हैं, और सबसे बढ़कर पवित्र रहस्यों का ग्रहण – जिसे आप, किसी कारणवश, उपेक्षा से करते हुए देखकर, मैं बहुत आश्चर्यचकित हूँ। रविवारों को अभी भी कुछ लोग संस्कारों के लिए आते हैं; लेकिन जब पूजा किसी अन्य दिन होती है, तो कोई आगे नहीं आता। यहाँ तक कि मठ में भी, पहले ऐसा था कि जो लोग चाहते थे वे हर दिन संस्कार ग्रहण करते थे; लेकिन अब ऐसा बहुत कम होता है, और वास्तव में कहीं भी यह शायद ही कभी देखा जाता है।

25. यह कहते हुए, मैं कतई नहीं चाहता कि आप संस्कारों को लापरवाही से ग्रहण करें, जैसे कि इसका कोई महत्व ही न हो। क्योंकि लिखा है: *'मनुष्य अपने आपको परखे, और तब वह रोटी खाए और प्याला पिए। क्योंकि जो कोई अयोग्य होकर खाता-पीता है, वह प्रभु की देह और रक्त का अपराध करता है'* (1 कुरिन्थियों 11:28–29)। नहीं—मैं यह नहीं चाहता; ऐसा कभी न हो! परन्तु हम, यथासंभव पूर्ण रूप से भाग लेने की इच्छा से जलते हुए, स्वयं को शुद्ध करें, और इस प्रकार इस वरदान के योग्य बनें। क्योंकि हमारे सामने रखा गया रोटी जीवन की सहभागिता है, जैसा कि प्रभु कहते हैं: *'मैं जीवन की रोटी हूँ, जो स्वर्ग से उतरी है; जो कोई इस रोटी को खाएगा वह अनन्तकाल तक जीवित रहेगा। और जो रोटी मैं दूँगा, वह मेरा शरीर है, जो मैं संसार के जीवन के लिए दूँगा'* (यूहन्ना 6:51); और फिर: *'जो मेरा शरीर खाता है और मेरा लहू पीता है, वह मुझ में वास करता है, और मैं उसमें'* (यूहन्ना 6:56)। क्या आप इस अकथनीय और असीम उपहार को देखते हैं? प्रभु न केवल हमारे लिए मरे, बल्कि उन्होंने स्वयं को हमारे भोजन के रूप में भी अर्पित किया। हमारे प्रति उनके महान प्रेम को और क्या बेहतर ढंग से प्रकट कर सकता है? और हमारी आत्माओं के लिए इससे अधिक उद्धारकारी और क्या हो सकता है? – यदि कोई अब अपने दैनिक भोजन से खुद को वंचित नहीं करता, और उसे चखे बिना, बहुत दुखी हो जाता है; तो यह कैसे उचित है – जब जो सभी को परोसा जाता है वह साधारण रोटी नहीं बल्कि जीवन की रोटी है, और एक साधारण प्याला नहीं बल्कि अमरत्व का प्याला है – इस बात के प्रति उदासीन रहना कि क्या किसी ने उन्हें चखा है, और इस मामले को आवश्यक नहीं मानना? यह कितनी मूर्खता और निरर्थकता को दर्शाता है! यदि अब तक ऐसा हुआ है, तो अब, मैं आपसे विनती करता हूँ, आइए हम ईश्वर के इस वरदान की शक्ति को जानते हुए, अब और अधिक ऐसा होने से रोकने का संकल्प लें; परन्तु हमेशा, अपनी पूरी क्षमता से, स्वयं को शुद्ध करते हुए, हम पवित्र और पवित्र करने वाले रहस्यों के समीप जाएँ और उन्हें ग्रहण करें। – और यह, मेरा मानना है, और जैसा कि यह वास्तव में है, हमारे खुद को शुद्ध रखने में बहुत मदद करेगा, जिसे हम प्रभु यीशु मसीह की कृपा और प्रेम के द्वारा प्राप्त करने के योग्य ठहराए जाएँ। हालाँकि, जहाँ परमप्रसाद के प्रति उदासीनता होती है, वहाँ हमारे भावों को हमें फँसाने के लिए अधिक स्वतंत्रता और अवसर मिल जाता है। – यह भी हमारे लिए अनंत जीवन की ओर एक स्थायी मार्गदर्शक के रूप में काम करे, जिसे प्राप्त करने के लिए हम सभी हमारे प्रभु यीशु मसीह की अनुग्रह और प्रेम द्वारा योग्य ठहराए जाएँ।

310. आगे – आगे – सद्गुण के पथ पर

310. 1) आगे – आगे – सद्गुण के मार्ग पर। – 2) कैसे? हर दिन सही काम करके: जिसके लिए एक आदर्श कार्यक्रम प्रदान किया गया है। – 3) प्रेरणाएँ: सद्गुण की सुंदरता और मिठास, और पाप की विनाशकारी प्रकृति। – 4) सफलता में क्या बाधा डालता है? इच्छा की कपटपूर्णता। [4, 108]

1. सद्गुण एक निरंतर विकसित होने वाला प्रयास है, जो भविष्य की ओर अपनी प्रगति में कभी नहीं रुकता, बल्कि हमेशा इसमें भाग लेने वालों को पूर्णता की ओर खींचता है। इसे स्पष्ट करते हुए, प्रेरित कहते हैं: *'यह नहीं कि मैं इसे प्राप्त कर चुका हूँ, या सिद्ध हो चुका हूँ: परन्तु मैं इस बात के लिए यत्न करता हूँ, कि मैं उसको पकड़ लूँ जिसके लिए मसीह यीशु ने मुझे पकड़ा है'*; – और आगे: *'जो पीछे है उसे भूलकर और जो आगे है उसकी ओर बढ़ते हुए, मैं ईसा मसीह में परमेश्वर की स्वर्गीय बुलावा का इनाम पाने के लिए लक्ष्य की ओर दौड़ता रहता हूँ'* (फिलि. 3:12-14)। इस प्रकार, सद्गुण की खोज में कोई रुकावट नहीं होनी चाहिए: क्योंकि यहाँ एक रुकावट ही बुराई की ओर मुड़ने की शुरुआत है। तो, आइए हम सद्गुण के मार्ग पर स्थिर न रहें, बल्कि आइए हम हमेशा उत्साही रहें और, निरंतर नवीनीकृत होकर, शक्ति से शक्ति तक बढ़ें, *'जब तक हम सभी परिपक्वता तक न पहुँच जाएँ, और मसीह की पूर्णता के माप को प्राप्त न कर लें'* (इफिसियों 4:13)।

२. तो, यह कैसे प्राप्त किया जाए? हर दिन उत्साहपूर्वक सही काम करके। आइए, हम इसका एक उदाहरण लें: सोने से उठते ही, हम प्रार्थना के लिए जल्दी करें; वहाँ से लौटने के बाद, हम लगन से काम पर लग जाएँ – अपने हाथों से परिश्रम करते हुए, अपने हृदय में प्रभु के लिए गीत गाते और संगीत बनाते हुए। क्या दिन बीत गया? धन्यवाद और पश्चाताप के साथ, हम सोने के लिए जाएँ; और इन कर्मों की इस निरंतरता के द्वारा, हम में संत दाऊद के वचन पूरे हों: *'दिन-प्रतिदिन प्रकाश होता है, और रात-प्रतिरात ज्ञान का संचार होता है'* (भजन संहिता 18:3)। हमारे लिए एक भी दिन अपने कर्तव्यों के प्रति उदासीनता में और अपने विचारों तथा हृदयों की कैद में न बीते—और न ही एक भी रात शरीर की इच्छाओं को पूरा करने और शर्मनाक कृत्यों में बीते—मैं कर्मों की बात नहीं कर रहा हूँ: ऐसा न हो!—बल्कि विचारों में भी नहीं: क्योंकि सत्य का वचन यह मांग करता है कि न केवल हमारे शरीर, बल्कि हमारी आत्माएँ भी पवित्र हों।

3. यदि हम कुछ भी इच्छा करना चाहते हैं, तो वह गुणों की हो जिनकी हम लालसा करते हैं, जिनका स्वाद मीठा और अतृप्त है। यदि हमें सुंदरता में आनंद लेना पसंद है, तो प्रभु से अधिक सुंदर क्या है, जिसकी सुंदरता से सभी चीजें सुशोभित हैं? हालाँकि, बुरी इच्छाएँ आत्मा को पागलपन की ओर ले जाती हैं और किसी भी जानवर से भी अधिक क्रूरता से उसे निगल लेती हैं: ताकि वे आनंद नहीं, बल्कि यातनाओं का जीवन लाती हैं। प्रेरित कहते हैं, *'मांस और रक्त परमेश्वर के राज्य के वारिस नहीं हो सकते, और न ही नाशवान अविनाशी का वारिस होगा'* (1 कुरिन्थियों 15:50)। और मुझे बताइए, पाप ने जिसे बंदी बनाया, उसे लज्जित, अपमानित और मृत्यु के हवाले नहीं किया? और जिसे सद्गुण ने प्रकट किया, उसे संसार में गौरवान्वित और अद्भुत नहीं बनाया? कई में से दो का उदाहरण लें – अम्नोन और यूसुफ। क्या व्यभिचार ने एक को घातक अपमान तक नहीं पहुँचाया, जबकि दूसरे द्वारा मिस्री स्त्री के सामने अपनी पवित्रता की रक्षा करने से वह राजा नहीं बना? – इस प्रकार सदाचार इतना प्रेम करने योग्य, इतना वांछनीय, इतना उद्धार करने वाला है! लेकिन पाप घृणित, घिनौना और विनाशकारी है! और फिर भी हम मनुष्य एक बड़े भ्रम से भटक जाते हैं, जीवन के बजाय मृत्यु को चुनते हैं, प्रकाश के बजाय अंधकार को अपनाते हैं , और अक्षयत्व के बजाय क्षय को प्रेम करते हैं। इससे अधिक पछतावे के योग्य और क्या हो सकता है?

४. तो फिर, हम, जबकि भलाई के प्रेमी बनने की इच्छा रखते हैं, ऐसा क्यों नहीं बन पाते? – क्योंकि हम इसे सच्ची इच्छा से नहीं, बल्कि एक दिखावटी इच्छा से चाहते हैं: क्योंकि, स्वच्छंद होने के कारण, हम हर मामले में वही चुनते हैं जिसकी हम इच्छा करते हैं; परिणामस्वरूप, यदि हम वास्तव में भलाई की इच्छा रखते, तो हम भलाई को चुनते। – यह सच है कि जवानी से ही बुराई का जीवन हमें गहरी आदतें सिखा देता है जिन्हें छोड़ा नहीं जा सकता; लेकिन प्रेरित क्या कहते हैं? – *'मैं तुम्हारे शरीर की दुर्बलता के कारण मनुष्य की रीति पर कहता हूँ: जैसे तुम ने अपने अंगों को पहले अशुद्धता और अन्याय के दास करके अन्याय को बढ़ाया, वैसे ही अब अपने अंगों को धार्मिकता के दास बनाकर पवित्रता बढ़ाओ'* (रोमियों 6:19)। अर्थात्, पाप की ओर हमारी प्रवृत्ति के विपरीत, हमें सद्गुण के लिए उत्साह दिखाना चाहिए। अतः हम अपने प्रयासों में दृढ़ रहें, और सर्व-दयालु ईश्वर निश्चय ही हमारे लिए द्वार खोलेंगे, हमारे भीतर वह कार्य करेंगे जो उन्हें प्रसन्न करता है, और हमें अनंत जीवन प्रदान करेंगे।

311. एक व्यक्ति का सर्वव्यापी प्रशंसा के साथ निधन हो गया है: उसे अनुकरण करने का एक पाठ दिया गया है

311. 1) एक व्यक्ति का सर्वत्र प्रशंसा के साथ निधन हुआ: उसे अनुकरण करने का एक पाठ दिया गया है। – 2) हम अंतिम क्षणों को याद करके अपने उत्साह को फिर से जगाने के लिए प्रेरित होते हैं, जैसा कि सभी संतों ने किया। – 3) धन्य है वह जो ऐसा करता है, और इसके बाद प्रोत्साहन दिया गया है: आइए हम भी ऐसे ही बनें। [4, 109]

5. अब हमें पूरी तरह से विश्वास हो गया है कि हमारे भाई थियोसोस्ट का निधन हो गया है; और उनके बारे में कुछ शब्द कहे जाने चाहिए, क्योंकि वह महान भक्ति के पुरुष थे, जिनकी बहुत से लोगों ने, भिक्षुओं और गृहस्थों दोनों ने, अत्यधिक प्रशंसा की, जो दूसरों की सलाह मानते भी थे और दूसरों को अपनी बात मानने के लिए प्रेरित भी करते थे; और अपनी पीड़ाओं के माध्यम से परखे जाने के बाद, वह, प्रेरितों के शब्दों में कहें तो, उन लोगों के लिए मदद का स्रोत बन सके जो परखे जा रहे हैं। इस प्रकार प्रभु में अपने लिए कई अच्छे शिष्य बना लेने के बाद, उन्होंने बाद में सत्य के लिए दुख और कठिनाइयों, सतावटों और परीक्षणों—जो काफी और आसान नहीं थे—को सहा, जिनसे गुजरकर वे प्रभु के पास चले गए। – लेकिन मैं यह सब क्यों कह रहा हूँ? – ताकि, हमारे इस भाई में, हम अपना भविष्य देख सकें: अर्थात्, यदि हम अच्छा और धर्मपरायण जीवन जीते हैं, तो हम भी, उनकी तरह, मृत्यु के बाद दूसरों द्वारा प्रशंसित होंगे, और हमारे अनुयायियों में एक स्वस्थ उत्साह जगाने के लिए एक उदाहरण के रूप में काम करेंगे; लेकिन यदि हम अच्छा जीवन नहीं जीते हैं, तो न केवल हमारी प्रशंसा नहीं की जाएगी, बल्कि हम उचित रूप से अनंतकालिक यातनाओं के अधीन भी होंगे: एक ऐसा विचार जो कहने में भी बहुत भयानक है, सोचना तो दूर की बात है।

6. परन्तु हे मित्र, इस पर विचार कर: कि हम यहाँ से एक-एक करके कैसे जाते हैं, और हम कहाँ जाते हैं, और हमारे लिए यहाँ कुछ ही दिनों के लिए किस प्रकार का जीवन तैयार किया गया है—केवल उतने समय तक जीने के लिए जितना कि हमारे चरित्र की परीक्षा और प्रमाणन के लिए आवश्यक है, और फिर उस स्थान पर जाने के लिए जहाँ हम अनंतकाल तक वास करेंगे। इस पर मनन करना ही विवेकी का कार्य है; और जो कोई भी इस पर मनन करता है, वह हमेशा भय और कंपन से भर जाता है, स्वेच्छा से प्रतिदिन मरता है, प्रतिदिन अपने शरीर से मुक्ति की प्रतीक्षा करता है, और इस प्रकार अपने भीतर आने वाले कार्यों के लिए उत्साह जगाता है, उन्हें सौंपी गई आज्ञाकारिता के अनुसार, और निरंतर परिश्रम पर परिश्रम जोड़ता रहता है। क्योंकि संतों के स्वाभाविक पराक्रम और कहाँ से आते हैं? मृत्यु तक उनकी आज्ञाकारिता कहाँ से? – शहीदों का अजेय धैर्य कहाँ से, जब उनके अंग काट दिए जा रहे हों और उनका रक्त बहाया जा रहा हो? – क्या यह इसी से नहीं है – क्या यह जीवन की क्षणभंगुरता और अचानक मृत्यु के विचार से नहीं है – भयानक न्याय-पीठ के सामने खड़े होने और शाश्वत यातनाओं की अनंतता से नहीं है? – इसी से उनमें सब कुछ आता है; इसी से वे सबसे क्रूर पीड़ाओं को सहन करते हैं, मानो वे किसी पराए शरीर में हों।

7. और धन्य है वह आत्मा जो दिन-रात इस पर मनन करती है, अपना क्षणिक जीवन एक यात्री की भाँति बिताती है, यहाँ प्रवास करती है और उस धन्य और अनंत जीवन की प्रतीक्षा करती है जिसके बारे में प्रेरित कहते हैं: *'क्योंकि सृष्टि स्वयं उत्सुकता से परमेश्वर के पुत्रों के प्रकट होने की प्रतीक्षा कर रही है। क्योंकि सृष्टि व्यर्थता के अधीन हो गई, अपनी इच्छा से नहीं, बल्कि उस की इच्छा से जिसने इसे अधीन किया, इस आशा में कि सृष्टि स्वयं क्षय की दासता से मुक्त होकर परमेश्वर के पुत्रों की महिमा की स्वतंत्रता प्राप्त करेगी'* (रोमियों 8:19-21)। क्या आप देखते हैं कि क्या वादा किया गया है? कि सभी चीजें अक्षयत्व में बदल दी जाएँगी, और सृष्टि दासता से स्वतंत्रता में बदल दी जाएगी? – तो फिर, उस दिन का स्वभाव कैसा होगा जिसके बारे में संत दाऊद कहते हैं: *'तेरे द्वारों में एक दिन हजारों से उत्तम है'* (भजन संहिता 83:11); और संत प्रेरित पतरस: *'एक दिन... एक हजार वर्ष के समान है'* (2 पतरस 3:8)। वहाँ ही हम अपने मन और हृदय को लगाएँगे; वहाँ ही हम अपनी लालसाओं को मोड़ेंगे; वहाँ ही हम अपने विचारों और इच्छाओं को स्थापित करेंगे, ताकि, ऐसे कार्यों में संलग्न होकर, हम इस संसार के राजकुमार से शरण प्राप्त करें, जिसके पास हमें प्रलोभित करने की शक्ति तो है, परन्तु जब हम अपने तपस्या के कवच से सुरक्षित हों, तो हमें उखाड़ फेंकने की शक्ति नहीं है, – जिसे मैं, अपनी विनम्रता में, आपसे न केवल टालने बल्कि परास्त करने और हमारे प्रभु मसीह यीशु से धार्मिकता का मुकुट प्राप्त करने की कामना करता हूँ।

312. केवल सच्चे संन्यासी ही आनंदित हो सकते हैं, क्योंकि वे सांसारिक चिंताओं से मुक्त होते हैं, केवल ईश्वर को प्रसन्न करने में लगे रहते हैं, और अपनी ब्रह्मचर्य की रक्षा करते हैं

312. 1) केवल सच्चे संन्यासी ही आनंदित हो सकते हैं, क्योंकि वे सांसारिक चिंताओं से मुक्त होते हैं, केवल ईश्वर को प्रसन्न करने और अपनी ब्रह्मचर्य की रक्षा के लिए ही चिंतित रहते हैं। – 2) न ही उनके पास दुख करने के लिए कुछ है: उनके पाप क्षमा कर दिए गए हैं; विचारों और वासनाओं द्वारा दिए गए घाव उस संघर्ष द्वारा काट

दिए जाते हैं जो उन्हें उनके मुकुटों के लिए तैयार करता है; उन्हें केवल बहादुरी से लड़ने और दुश्मन को हराने की आवश्यकता है। – 3) हम हौसला रखें; जल्द ही आने वाले आ जाएँगे। [4, 110]

8. प्रेरित सभी को आज्ञा देते हैं *कि वे 'प्रभु में हमेशा आनन्दित रहें'* (फिलि. 4:4)। और आमतौर पर केवल सच्चे संन्यासी ही आनंदित होते हैं, क्योंकि वे पत्नियों, बच्चों, नौकरों, धन, संपत्ति या किसी अन्य ऐसी चीज़ की परवाह नहीं करते जो देह-प्रेमियों को व्यस्त रखती है। उनकी एक ही चिंता होती है: प्रभु को कैसे प्रसन्न किया जाए; इसी में लगे रहना ही प्रभु में सदा आनंदित होना है। क्योंकि जहाँ विवाह है, दास हैं और इनसे उत्पन्न होने वाली सभी चिन्ताएँ हैं—यह आत्मा का क्लेश है जो परमेश्वर ने मनुष्यों के बेटों को दिया है, ताकि वे इससे पीड़ित हों, जैसा कि सुलैमान ने कहा (उपदेशक, अध्याय 1–2): जब उपरोक्त बातें मन को ईश्वर की श्रद्धालु स्मृति से विचलित करती हैं, जिसमें ही आनंदित होना संभव है, तो प्रभु में आनंदित होना कठिन हो जाता है। चूँकि हम, तो, प्रभु में आनन्दित होने वालों में से हैं, आइए हम आनन्दित हों और हमेशा एक दूसरे के आनन्द में सहभागी हों, हमारे पवित्रता और लालच न करने के लिए प्रतिफलदाता परमेश्वर से पुरस्कार की आशा करते हुए; जिसने एक ठंढा प्याला देने के लिए भी पुरस्कार देने का वादा किया है, और केवल ऐसे महान और अलौकिक कार्यों के लिए ही नहीं। क्योंकि वास्तव में पवित्रता का कार्य महान और अलौकिक है: यह दैवीय क्षेत्र को छूता है और एक व्यक्ति को उस मूल स्थिति में बहाल करता है जो स्वर्ग में मौजूद थी, जब न तो विवाह था और न ही दासता, बल्कि जीवन बिना किसी कमी और चिंता के आराम की स्थिति में प्रवाहित होता था।

९. यदि कोई कहता है कि वे आनंदित नहीं होते बल्कि दुखी होते हैं, तो मैं पूछता हूँ: इस दुख का कारण क्या है? – क्या यह इसलिए है कि उन्होंने अतीत में कई पाप किए हैं? – लेकिन वे तो पहले ही पाप-स्वीकार, संसार का त्याग और आज्ञाकारिता के जुए को स्वीकार करने के द्वारा क्षमा कर दिए गए हैं। – 'क्या यह है कि आप अपने विचारों से प्रतिदिन घायल होते हैं?' – लेकिन यदि आप उन्हें त्याग देते हैं, तो उसमें आपके मुकुट का पूर्वाभास निहित है। क्योंकि वे कभी भी उस पर मुकुट नहीं पहनाते जो युद्ध में नहीं उतरा, बल्कि योद्धा पर; और न ही वे उस पर उपहार प्रदान करते हैं जिसने लड़ाई नहीं की, बल्कि उस पर जो बहादुरी से लड़ा और विजयी हुआ। क्या आप देखते हैं कि जिस भी चीज़ को हम दुख का कारण बता सकते हैं, वह वास्तव में हमारे लिए आनंद का स्रोत है? अतः आइए हम आध्यात्मिक आनंद से आनन्दित हों, उठ खड़े हों और शैतान की युक्तियों का बहादुरी से विरोध करें, प्रार्थनाओं और विनतियों से उसके हमलों को पीछे हटाएँ, नम्रता और आज्ञाकारिता से उसकी फंदों को तोड़ें, आँसुओं और पश्चाताप से, फिरौन की तरह, उसे डुबाते हुए; आत्म-निंदा और स्वीकारोक्ति द्वारा उसे हमसे दूर भगाते हुए; और, ईश्वर की सहायता से, अन्य सभी अच्छे कर्मों द्वारा उसे नीचा दिखाते हुए। इस प्रकार, चाहे वह अपनी युक्तियों में विविध हो; चाहे वह अपनी दुष्टता में चालाक हो; चाहे वह यह जाने कि हम पर हमला करने का सबसे उपयुक्त समय कब है, ताकि वह हमें नष्ट करने का प्रयास कर सके; चाहे वह हार का नाटक करने में सक्षम हो, ताकि फिर अप्रत्याशित रूप से एक ऐसी आत्मा पर हमला कर सके जो इसके लिए तैयार नहीं है, और उसके साथ अपनी इच्छा के अनुसार व्यवहार कर सके। लेकिन हम, अपने कर्तव्य-स्थल पर खड़े होकर, संयमी और सतर्क रहेंगे, अपने मन की दृष्टि को सदैव चौकस रखेंगे और अपने हृदय को ईश्वर के प्रति प्रेम से प्रज्वलित रखेंगे, और इस प्रकार अजेय और अडिग बने रहेंगे।

10. हे प्रभु, प्रार्थना है कि हम युद्ध में हतोत्साहित न हों, और शत्रु के विरुद्ध संघर्ष में न डगमगाएँ; क्योंकि हमारे संघर्षों और कर्मों का अंत निकट है; उस समय के आने में अब बहुत थोड़ा समय शेष है—चाहे वह प्रत्येक व्यक्ति की मृत्यु के समय हो, या युग के अंत में, जब वे स्वर्ग से शक्ति के स्वर्गदूतों के साथ प्रज्वलित अग्नि में, और अकथनीय महिमा में प्रकट होंगे, और *'हर आँख उन्हें देखेगी*', और *जिन्होंने 'उसे भेदा है, वे उसके लिए रोएँगे, और पृथ्वी के सब कुल शोक करेंगे*' (प्रकाशितवाक्य 1:7)। वह दृश्य कितना भयानक और अकथनीय है! – तब जो लोग अच्छे कर्मों में लगे रहे, जो परीक्षाओं में दृढ़ रहे, भक्ति के प्रेमी, आज्ञाकारिता में सिद्ध, और जो हर तरह से प्रभु को प्रसन्न करने वाले हैं, वे आनन्दित होंगे। परन्तु हम भी उनके साथ गिने जाएँ, और हमारे प्रभु मसीह यीशु में उनके साथ मिलकर अनन्त आशीषों का आनंद लें।

313. सांसारिक जीवन अस्थिर है, जो अवज्ञा के पहले ही कार्य से ऐसा हो गया है

313. 1) सांसारिक जीवन चंचल है, जो अवज्ञा के पहले ही कार्य से ऐसा हो गया है। – 2) जगत का त्याग करके और आज्ञाकारिता के लिए स्वयं को समर्पित करके, हम ऐसी परिवर्तनशीलता से मुक्त हो जाते हैं: लेकिन इसके लिए हमारे प्रयासों में धैर्यपूर्ण दृढ़ता की आवश्यकता होती है। – 3) अतः हम संयमी और सतर्क रहें, स्वयं को शुद्ध रखें; और यदि हम पाप करें, तो हम पश्चाताप करें और सुधार करें। [4, 111]

11. आओ सुनते हैं कि प्रेरित क्या कहते हैं: *'मैं यह इसलिये कहता हूँ कि समय कम है; अब से जिनकी स्त्रियाँ हैं, वे ऐसे हों जैसे कि उनकी कोई नहीं; जो शोक करते हैं, वे ऐसे जैसे कि शोक नहीं करते; जो आनन्दित होते हैं, वे ऐसे जैसे कि आनन्दित नहीं होते; जो वस्तुएँ खरीदते हैं, वे ऐसे जैसे कि उनका स्वामित्व नहीं है; और जो इस संसार की वस्तुओं की खोज करते हैं, वे ऐसे जैसे कि वे उनकी खोज नहीं करते। क्योंकि इस संसार का वर्तमान स्वरूप बीत रहा है'* (1 कुरिन्थियों 7:29–31)। *'इस संसार का वर्तमान स्वरूप बीत रहा है' का* क्या अर्थ है? इसका अर्थ है कि यह बीत जाता है, भाग जाता है, और एक दिन के लिए भी स्थिर नहीं रहता: कल मौसम साफ था, आज बादल छाए हुए हैं; कल मौसम अच्छा था, आज मौसम खराब है; एक व्यक्ति ऊँचाइयों पर पहुँचता है, जबकि दूसरा अपनी गरिमा की ऊँचाइयों से गिर जाता है; जो अमीर था वह गरीब हो जाता है, जबकि जो गरीब था वह अमीर हो जाता है; और हमारा यह दयनीय जीवन अनगिनत परिवर्तनों और उतार-चढ़ावों के अधीन है, और कभी भी किसी भी चीज़ में स्थिर नहीं रहता। – तो फिर, ऐसा क्यों हुआ? हमारी प्राचीन लापरवाही के कारण: क्योंकि हमने स्वर्ग में हमें दिए गए पवित्र आज्ञा को कोई महत्व नहीं दिया, साँप की मीठी चापलूसी से धोखा खाकर, हमें न्यायसंगत रूप से इस दीर्घकालीन कष्ट और परिवर्तनशील जीवन के हवाले कर दिया गया है, – यही कारण है कि हमारे प्रभु यीशु मसीह का अवतार हुआ, जिसने हमें हमारी मूल स्थिति में बहाल किया और उस दुःखरहित और चिंतामुक्त निवास को पुनःस्थापित किया। क्योंकि परिवर्तन के बीच स्थिर रहना, और उतार-चढ़ाव के बीच अडिग रहना एक बुद्धिमानी और समझदारी भरा काम है। तो यह किस पर लागू होता है? – उन लोगों पर और कोई नहीं, जिन्होंने संसार के लिए स्वयं को सूली पर चढ़ाया है और प्रभु के पदचिन्हों पर चले हैं।

12. परन्तु मसीह की कृपा से हम ऐसे ही हैं, जिन्होंने एक उत्तम त्याग द्वारा संसार का परित्याग किया है और स्वयं को पूर्ण आज्ञाकारिता में समर्पित कर दिया है, जिसके द्वारा हमारी पूर्व अवस्था में आरोहण पूर्ण होता है। क्योंकि, जैसे आज्ञा-उल्लंघन और विद्रोह के कारण हमें स्वर्ग से निकाल दिया गया था, वैसे ही हमारे सर्व-सत्कार्य परमेश्वर ने यह उचित समझा है कि हम आज्ञाकारिता और नम्रता के द्वारा उसे पुनःप्राप्त करें। अतःहम इस बात पर आनन्द मनाएँ कि हम आज्ञाकारिता में बने रहें, क्योंकि यह हमें अनन्त जीवन में ले जाती है। लेकिन इसके लिए हमारे प्रयासों में दृढ़ता और हमारी पीड़ाओं में धैर्य की आवश्यकता है। क्योंकि यदि शरीर पर विजय बहुत परिश्रम और पसीने से प्राप्त होती है, तो हमारे जैसे जीवन का मार्ग साहसी और वीर लोगों के अलावा कोई और कैसे विजयी रूप से पार कर सकता है?

१३. अतःमैं तुम से विनती करता हूँ, हम दृढ़ रहें, निरन्तर चतुर और चौकस रहें, अपनी लालसा केवल परमेश्वर की ओर लगाएँ और अपने मन को निरन्तर उसी के चिन्तन में लगाए रखें, आँसुओं और पश्चाताप से स्नान करें, प्रार्थनाओं और विनतियों से प्रकाशित हों, और इस प्रकार पवित्र आत्मा की कृपा को आमंत्रित करें। क्योंकि किसी भी चीज़ से ईश्वर को उतनी प्रसन्नता नहीं होती जितनी कि वासनाओं से शुद्ध आत्मा से; और कोई भी बहुरंगी घास का मैदान सद्गुणों से सुगंधित आत्मा जैसी सुगंध नहीं बिखेरता। यदि, तथापि, हम सो जाएँ, तो हमें तुरंत जागना चाहिए; भले ही हम दिन में सात बार पाप करें, हमें सात बार पश्चाताप करना चाहिए - और हमें स्वीकार कर लिया जाएगा; भले ही हमें सत्तर बार सात तक कष्ट सहना पड़े, हमें उतनी ही बार पश्चाताप करना चाहिए, और हमें दया की आशा से वंचित नहीं किया जाएगा, दिव्य वादे के अनुसार: बस, मैं आपसे विनती करता हूँ, हमें दृढ़ रहना चाहिए और अपने गिरावटों से उठने में सुस्त नहीं होना चाहिए। हमारे संघर्षों का अंत पहले ही निकट आ गया है; आनंद और प्रसन्नता पहले ही निकट आ गए हैं, जैसे कि धार्मिकता के मुकुट भी – हे प्रभु यीशु मसीह की अनुग्रह और प्रेम के द्वारा हम सभी उन्हें प्राप्त करने के योग्य ठहरें।

314. एक भाई का आकस्मिक निधन हो गया है: अतःयह हार्दिक आग्रह है कि हम अपने प्रस्थान के लिए तैयार रहें, और, इसे हमेशा ध्यान में रखते हुए, परमेश्वर को भाने वाले कार्यों में लगे रहें

314. एक भाई का अचानक निधन हो गया है: अतःयह हार्दिक आग्रह है कि हम अपने प्रस्थान के लिए तैयार रहें, और, इसे हमेशा ध्यान में रखते हुए, स्वयं को परमेश्वर को भाने वाले कार्यों में समर्पित करें। [4, 112] आओ, हम अंतिम दिन के विषय में एक उद्धार का वाचा बनाएँ; आओ, मृत्यु के उस तात्कालिक समय के आने से पहले हम परमेश्वर से मेल-मिलाप कर लें: क्योंकि कहा गया है: *'मृत्यु में तेरा स्मरण नहीं रहता; अधोलोक में तेरा धन्यवाद कौन करेगा?'* (भजन संहिता 6:6)। क्या हम यह नहीं देखते कि हमारे भाई हर दिन हमसे छीन लिए जाते हैं? क्या हम यह नहीं देखते कि हम, कसाई के लिए नियत भेड़ों की तरह, आज जीवित हैं, पर कल नहीं रहेंगे? भाई लिबेरियस को भी ले जाया गया है, और उनके निधन की खबर ने मेरी दीन आत्मा को कुचल दिया है: क्योंकि, जैसा कि कहते हैं, उन्हें उनकी कोठरी में अचानक मृत पाया गया, वे एक तरफ लेटे हुए थे मानो सो रहे हों। – ऐसा ही उनका अंत हुआ! – हम नहीं जानते

कि हमारा क्या होगा, और न ही हम जानते हैं कि हम किस प्रकार की मृत्यु से मरेंगे: क्या यह अचानक आएगी, या किसी पूर्व चेतावनी के साथ? ज़मीन पर या समुद्र में? – हम कब अकेले होंगे, या अपने भाइयों से घिरे होंगे? प्रभु के मन को कौन समझ सकता है, और उसका परामर्शदाता कौन रहा है, जो हमारे प्रस्थान के दिन और घड़ी, स्थान और तरीके को जान सके? – सचमुच, मृत्यु की निश्चितता भयानक है, और जीवित परमेश्वर के हाथों में पड़ना भयानक है। इसलिए, मैं आपसे विनती करता हूँ: हम हमेशा उत्साही, हमेशा सतर्क, हमेशा परमेश्वर को भाने वाले कार्यों में लगे रहें। कोई कहता है, एक ने उच्च पद प्राप्त कर लिया है; कोई अमीर हो गया है; तो कोई राजा भी बन गया है। – और इन सब का क्या? – सब एक सपने की तरह बीत जाता है – *'वे अपनी नींद में सो गए, और मनुष्यों ने उनके हाथों में उनकी कोई संपत्ति नहीं पाई'* (भजन संहिता 74:6)। *'मनुष्य की सारी महिमा मैदान के फूल के समान है'* (यशायाह 40:6)। लेकिन परमेश्वर के चुने हुओं ने एक अद्भुत सौदा किया है – और ऐसे पद प्राप्त किए हैं जिन्हें छीना नहीं जा सकता। और वे क्या हैं? – कुछ प्रेरितों के, कुछ भविष्यद्वक्ताओं के, कुछ शहीदों के, कुछ मठाधीशों के; और यद्यपि इनमें से कुछ सबसे नीचले हैं, फिर भी वे उद्धारदायक हैं। उनके नाम जीवन की पुस्तक में लिखे हैं; उनकी महिमा न कभी फीकी पड़ने वाली है, उनकी आनन्द अकथनीय है। आइए, हम भी उनके अनुकरण करें, और हम निश्चित रूप से इन पदों में से एक प्राप्त करेंगे: क्योंकि अनुग्रह पर ईर्ष्या नहीं की जाती, और जो कोई भी इसे चाहता है, उसे अपना अच्छा उपहार मिलता है—छोटे और बड़े, बुद्धिमान और मूर्ख, बूढ़े और जवान, सभी के लिए। लेकिन यदि हम उनके उदाहरण का पालन नहीं करते हैं, तो घर के स्वामी हमें स्वर्गीय वधू-कक्ष में प्रवेश नहीं देंगे, और हमारे सामने इसके द्वार बंद कर देंगे। प्रभु कहते हैं, *'उस मनुष्य के लिए हाय, जिसके द्वारा मनुष्य का पुत्र पकड़वाया जाता है: उसके लिए तो यही अच्छा होता कि वह कभी उत्पन्न ही न हुआ होता'* (मत्ती 26:24)। यह सभी के लिए स्पष्ट है कि ये शब्द विश्वासघाती के लिए हैं; लेकिन इन्हें न्यायसंगत रूप से किसी भी ऐसे व्यक्ति पर लागू किया जा सकता है जो अपनी ही मुक्ति के साथ विश्वासघात करता है। क्या हम अपने महान परमेश्वर और उद्धारकर्ता, यीशु मसीह के आगमन के बारे में नहीं सोचते? क्या हम उस भयानक न्याय पर मनन नहीं करते जिसे अक्षय न्यायाधीश बाईं ओर खड़े सभी लोगों के विरुद्ध सुनाएगा? क्या हम उस न बुझने वाली आग और अनंतकाल के अकल्पनीय यातनाओं की कल्पना नहीं करते? इसे कौन समझ सकता है? वह कौन सा बुद्धिमान नाविक है जो स्वयं को सही मार्ग पर चलाएगा और दुष्टात्माओं द्वारा अभिभूत होने से अपनी आत्मा को बचाएगा? जहाँ तक हमारी बात है, चूँकि हमने मसीह की कृपा से एक शांत और शांतिपूर्ण जीवन चुना है, हम अपने मार्ग पर अच्छी तरह से आगे बढ़ते रहेंगे, जो कुछ भी हमारा सामना करे उसे समान भाव से सहते हुए, और परमेश्वर के भय से अपने आप के हर हिस्से की रक्षा करते हुए। आँख को जिज्ञासा से देखने से रोको; कान व्यर्थ की बातें न सुने; जीभ को दोष लगाने की अनुमति न दो: क्योंकि *'जो अपने भाई पर दोष लगाता है,'* परमेश्वर का भाई कहता है, *'या अपने भाई को दोषी ठहराता है, वह व्यवस्था पर दोष लगाता है और व्यवस्था को दोषी ठहराता है'* (याकूब 4:11); हाथ परिश्रम करे, क्योंकि *'यदि कोई काम करने को तैयार नहीं है, तो उसे खाने भी न दिया जाए'*, जैसा कि प्रेरित ने आज्ञा दी है (2 थिस्स. 3:10); पैर शांति के मार्ग पर सीधे चलें; दिल *'छल के वचनों की ओर न मुड़े, और न ही पापों के दोष को बहाने से बचे'* (भजन संहिता 140:4); बल्कि *'सब कुछ सभ्यता और व्यवस्था के साथ किया जाए'* (1 कुरिन्थियों 14:40), ताकि, अच्छी तरह जीने के बाद, हम अनंत आशीर्वादों के योग्य ठहरें।

315. विश्वास को बनाए रखते हुए, हमें एक अच्छे जीवन में भी उत्कृष्टता प्राप्त करनी चाहिए; विशेष रूप से पवित्रता में, जिसके विरुद्ध शत्रु हम में सबसे अधिक युद्ध करता है

315. 1) विश्वास को बनाए रखते हुए, हमें एक सदाचारी जीवन में भी उत्कृष्टता प्राप्त करनी चाहिए; विशेष रूप से ब्रह्मचर्य में, जिसके विरुद्ध शत्रु हममें सबसे अधिक प्रबल रूप से युद्ध करता है। – 2) वह शर्मनाक विचारों से शुरू करता है; फिर, वासना को प्रज्वलित करके, वह व्यक्ति को कार्य करने के लिए प्रेरित करता है; और इससे भी आगे, वह कामुक व्यक्ति को खुजली से पीड़ित व्यक्ति के समान बना देता है। – 3) हम इससे कैसे बच सकते हैं? – इन विचारों के पहली बार उभरते ही प्रार्थना की ओर मुड़कर उनका विरोध करें। – 4) इस विचार से प्रेरित होकर विरोध करें कि, अनुग्रह में बच्चों के रूप में दत्तक ग्रहण करने के बाद, इस पाप के द्वारा आप शैतान के दास बन जाते हैं – और इस वासना तथा अन्य सभी वासनाओं का विरोध करें। [4, 113]

14. दो गुण हैं जो एक व्यक्ति के उद्धार को सुनिश्चित करते हैं: विश्वास और प्रेम। यदि मैं देखूँ कि आप विश्वास के किसी भी मामले में भटक रहे हैं, तो मैं आपसे इस बारे में बात करूँगा, और हर संभव तरीके से आपको ऑर्थोडॉक्स (सही) सोच की ओर मार्गदर्शन करने का प्रयास करूँगा। – *'क्योंकि बिना विश्वास के परमेश्वर को प्रसन्न करना असंभव है: क्योंकि जो परमेश्वर के पास आता है, उसे यह विश्वास करना चाहिए कि वह है, और यह कि वह उन लोगों को पुरस्कृत करता है जो उसे भक्ति से खोजते हैं'* (इब्रानियों 11:6)। चूँकि मसीह की कृपा से आपका

विश्वास दृढ़ है, मैं एक क्षण के लिए विश्वास के विषय को अलग रखकर आपको सक्रिय सेवा के जीवन के बारे में संक्षेप में बताऊँगा, जिसकी प्रेरक शक्ति प्रेम होनी चाहिए। – इसलिए मैं आपसे निवेदन करता हूँ, जैसा कि मैं हमेशा से करता आया हूँ और करता रहूँगा, कि आप तपस्या को न छोड़ें, न तो अपने विचारों पर प्रभुत्व के विषय में, न ही पवित्रता के उस अनमोल खजाने के विषय में, जो हमें परमेश्वर की दया से अनुग्रहपूर्वक प्राप्त हुआ है, और जिसके विरुद्ध शत्रु अपनी युक्तियों को अत्यधिक उत्साह के साथ निर्देशित करता है, यह खोजते हुए कि उसे चुराकर, वह हमारा उद्धार चुरा ले। क्योंकि वह जानता है कि इस सद्गुण से हम ईश्वर के समान बन जाते हैं, जबकि इसके विपरीत, इसे खोने पर हम मूर्ख पशुओं के समान हो जाते हैं, जैसा कि लिखा है: *'एक समझहीन सम्मानित पुरुष मूर्ख पशुओं के समान है, और उनके समान हो जाता है'* (भजन संहिता 48:13)।

१५. हे, अनादि काल से हमारे छलकपट करने वाले ने कितनों को ही कामुक वासना के जाल में फँसाया है! फिर भी, आज भी वह न केवल जवानों को, बल्कि बूढ़ों को भी बहकाने से नहीं चूकता; न केवल लापरवाहों को, बल्कि सबसे परिश्रमी लोगों को भी; और वह लगभग हर आत्मा के विरुद्ध इस हथियार का प्रयोग करता है। वह अनुचित विचारों को भरकर इस विष को तैयार करना शुरू करता है; फिर, शरीर और रक्त की वासनाओं से हृदय को प्रज्वलित करके, वह उसे कुछ निषिद्ध बोलने के लिए प्रेरित करता है, और फिर उस अंग को छूने की हिम्मत भरता है; क्योंकि इससे मृत्यु होती है: क्योंकि, जैसा कि प्रेरित कहते हैं, *'जब वासना गर्भ धारण करती है, तो वह पाप को जन्म देती है; और जब पाप पूर्ण रूप से विकसित हो जाता है, तो वह मृत्यु को जन्म देता है'* (याकूब 1:15)। अतःहम इस मृत्यु से – शाश्वत मृत्यु से – बचें; हम इस आत्मा-विनाशकारी रोग से बचें। मुझे ऐसा लगता है कि यह रोग खुजली के समान है। जैसे खुजली से पीड़ित व्यक्ति, जब अपने नाखूनों से खुजली खुजलाता है, तो ऐसा लगता है कि वह आनंद ले रहा है, लेकिन वास्तव में उसे आनंद नहीं बल्कि पीड़ादायक घाव मिलते हैं—और जितना अधिक वह खुजलाता है, उतनी ही बुरी स्थिति हो जाती है—वैसे ही कामुक जुनून में डूबा व्यक्ति आनंद नहीं बल्कि यातना, संतुष्टि नहीं बल्कि शून्यता, तृप्ति नहीं बल्कि सुन्नता प्राप्त करता है। ऐसे व्यक्ति पर तरस आता है: वह निराशावादी, भयभीत, भविष्य के न्याय की तो छोड़िए, अपनी ही परछाईं से भी डरता है।

16. तो फिर, कोई इस बुराई से कैसे बच सकता है? पहली बात यह है कि जब भी यह वासना उत्पन्न हो, तो उसे पूरी ताकत से और बिना चूके इन प्रलोभनों का विरोध करना चाहिए। इसका उत्पन्न होना कोई आश्चर्य की बात नहीं है; लेकिन यह अपनी शक्ति या तो मन की लापरवाही से प्राप्त करती है, जो अच्छे विचारों में व्यस्त नहीं होता, या शत्रु की ईर्ष्या से। लेकिन यह चाहे किसी भी तरह से हो, अपनी गिरावट से जल्द से जल्द उठो, प्रार्थना करो, आहें भरो, आँसू बहाओ, और दृढ़ निश्चय के साथ इस वासना को अस्वीकार करो; और यह वासना जल्द ही शांत हो जाएगी, जबकि तुम्हें प्रभु में शांति मिलेगी। तब तुम्हें एहसास होगा कि आत्मा के लिए वासनाओं से घिरे और दास बने बिना रहना उससे भी अधिक कड़वा है।

17. क्या तुमने यह नहीं सुना कि प्रभु क्या कहते हैं? *'जो कोई पाप करता है, वह पाप का दास है; पर दास सदा घर में नहीं रहता; पुत्र सदा रहता है'* (यूहन्ना 8:34)। पाप से मुक्त होकर और पुत्रत्व का दर्जा प्राप्त करने के बाद, क्या हम फिर से खुद को पाप का दास बना लेंगे? परमेश्वर के प्रबल हाथ के अधीन आकर, क्या हम शैतान के अधीन हो जाएँगे? ऐसा हमसे दूर रहे। प्रेरित कहीं और कहते हैं, *'क्योंकि यदि मैं जो मैं ने बनाया है उसे ध्वस्त कर दूँ, तो मैं स्वयं को अपराधी ठहराता हूँ'* (गलातियों 2:18)। तो आइए, हम स्वयं को परमेश्वर की आज्ञाओं का उल्लंघन करने वाले न बनने दें, और पहले ही उससे मुक्त हो चुकने के बाद, एक बार फिर से शैतान के दास न बन जाएँ, *'इस प्रकार क्रोध के दिन और परमेश्वर के न्याय के प्रकट होने के दिन अपने लिए क्रोध इकट्ठा करें'* (रोमियों 2:5)। क्योंकि ऐसे लोगों के विषय में लिखा है: *'उनका कीड़ा नहीं मरता और आग नहीं बुझती'* (मरकुस 9:44)। *'क्योंकि मसीह ने हमें स्वतंत्र किया है; इसलिये हम दृढ़ रहें'* (गलातियों 5:1), सांप के घृणित भ्रमों से घृणा करते हुए, प्रतिदिन न केवल इस वासना बल्कि अन्य सभी के विरुद्ध प्रतिरोध करते और युद्ध छेड़ते हुए, ईर्ष्या को दबाते, धोखे को वश में करते, भाई से बैर को और द्वेष के हर अन्य रूप को कुचलते हुए, ताकि अनंतकालिक यातना से बच सकें और स्वर्ग के राज्य को प्राप्त कर सकें।

316. वह भिक्षुओं की स्तुति करते हैं, उन्हें एक चुनी हुई जाति और मसीह की सेना कहकर संबोधित करते हैं

316. 1) वह भिक्षुओं की प्रशंसा करते हैं, उन्हें एक चुनी हुई जाति और मसीह की सेना कहते हैं। – 2) अतीत में और अब, विधर्मी लोगों द्वारा सभी उत्पीड़नों में, कौन धर्म की रक्षा करता है? – सभी भिक्षु। – 3) लेकिन ऐसे होते हुए, आइए हम खुद को शुद्ध रखें और सभी भावों से ऊपर उठें। – 4) इस बात से निराश न हों कि मठ खंडहर में बदल रहे हैं; और न ही इस बात से कि हम उन्हें उतनी अच्छी तरह से बहाल नहीं कर पा रहे हैं जितनी आवश्यकता है।

आइए हम विश्वास की रक्षा करने का ध्यान रखें, और बाकी सब कुछ हमारे लिए अपने आप ठीक हो जाएगा। [4, 114]

18. भाइयो और पितृवर! – मैं आपको इन सम्माननीय उपाधियों 'भाइयो' और 'पितृवर' से संबोधित करना बंद नहीं करूंगा, यह जानते हुए कि आपके मामले में ऐसी उपाधि वास्तव में उपयुक्त है, और ऐसा नाम झूठा नहीं है। क्योंकि सच्चे पिता और भाई वे हैं, जिन्होंने ईश्वर से अपने माता-पिता, अपने भाइयों, अपने ही संबंधियों, अपनी ही मातृभूमि और जो कुछ भी दिखाई देता है, उससे भी अधिक प्रेम किया, और एक ऐसे समुदायिक जीवन को अपनाया जिसमें एक ही हृदय और एक ही आत्मा, एक ही पिता—ईश्वर—और एक ही मातृभूमि—स्वर्गीय यरूशलेम—हो। प्रभु में मेरे प्रिय भाइयो, तुम भी ऐसे ही हो। मैं तुम्हें धर्मग्रंथ के वचनों के अनुसार यह भी कहूँगा: *'एक चुनी हुई जाति, एक राजसी याजकीय पद, एक पवित्र राष्ट्र, उसकी निजी संपत्ति का एक जनसमूह, ताकि तुम उस की उत्तमताओं का प्रचार करो जिसने तुम्हें अंधकार से निकालकर अपनी अद्भुत रोशनी में बुलाया'* (1 पतरस 2:9)। क्योंकि वास्तव में मठवासी जीवन का प्रकाश अद्भुत है, जिसके लिए हमें बुलाया गया है और जिसमें हम उस की स्तुति करते हैं जो अपने सद्गुण से स्वर्गों को ढाँकता है। यहाँ बुद्धि, पवित्रता, धैर्य और सत्य निवास करते हैं; यहाँ मसीह यीशु में दुष्ट पर विजय की ट्रॉफियाँ हैं। *'क्योंकि यद्यपि हम शरीर में चलने वाले हैं, तौभी हम शरीर के अनुसार युद्ध नहीं करते; क्योंकि हमारे युद्ध के हथियार शरीरिक नहीं, पर परमेश्वर के द्वारा किलों को ढाँकने के लिए सामर्थी हैं; और हम ज्ञान के विरोध में उठाई गई हर एक ऊँची वस्तु को गिरा देते हैं, और हर एक विचार को मसीह की आज्ञाकारिता में बंदी बना लेते हैं'* (2 कुरिन्थियों 10: 3–5)।

19. यदि हम दृश्यमान शत्रुओं पर विचार करें, तो हम देखेंगे कि परमेश्वर की कलीसिया के विरुद्ध कितने और किस प्रकार के उत्पीड़न किए गए हैं! – और सबसे अधिक सताए, पीटे और मारे गए कौन हैं, यदि वे नहीं जिन्होंने स्वयं को संसार के लिए सूली पर चढ़ाया है? मैं दूर के अतीत को छोड़ देता हूँ; वर्तमान युग में, और उस मसीही-विरोधी शक्ति के बीच जो आज भी जारी है, कौन *'रक्त बहाने तक दृढ़ खड़ा रहा, पाप से संघर्ष करते हुए?'* (इब्रानियों 12:4)। क्या हमारे पिता और भाई—चाहे वे हमारे मठ के हों या अन्यत्र के—धन्य नहीं हैं? और सचमुच, ऐसे कार्य और पराक्रम सर्वोपरि संन्यासियों का विशेषाधिकार हैं; संन्यासी ही चर्च की नसें और स्तंभ हैं। ईश्वर की कृपा से हमें प्रदान की गई गरिमा का स्वभाव और विस्तार ऐसा ही है।

20. परन्तु जहाँ खजाना है, वहाँ चोर भी घात लगाए रहते हैं, – और चूँकि आत्मा का खजाना सद्गुण हैं – मैं आपको याद दिलाता हूँ और आग्रह करता हूँ: आइए हम सतर्क और चौकस रहें, ताकि हम पाप की मिठास से बह न जाएँ, न ही क्रोध से क्रूरता की ओर धकेले जाएँ, न ही अविश्वास से अंधे हो जाएँ, न ही पाप स्वीकार न करने से कठोर हो जाएँ, न ही किसी अन्य जुनून के प्रभुत्व के आगे झुकें; परन्तु, इन विनाशकारी वासनाओं से ऊपर उठकर, हम जीवन के अन्त तक लक्ष्य की ओर लगन से प्रयत्न करें।

21. शायद कुछ लोग इस खबर से दुखी हों कि हमारे मठ प्रभु के शत्रुओं द्वारा लूटे जा रहे हैं। लेकिन हमें इस पर दुख क्यों करना चाहिए? क्योंकि हम स्वयं मठ और परमेश्वर का मंदिर हैं, जिसके विषय में कहा गया है: *'यदि कोई परमेश्वर के मंदिर को नाश करे, तो परमेश्वर उसे नाश कर देगा'* (1 कुरिन्थियों 3:17)। यह तथ्य कि इन चर्चों को अक्सर हमारे उत्पीड़क‌ों द्वारा नष्ट किया गया है, वास्तव में पछतावे और दुख का कारण है; फिर भी, अधिकांशतः उन्हें ईश्वर की व्यवस्था द्वारा फिर से बहाल किया गया है। शायद कुछ लोगों को इस बात से परेशानी होती है कि हम उन मठों की भरपाई के लिए जितने मठों की आवश्यकता है, उतने मठों को बहाल और नवीनीकृत करने में असमर्थ हैं। लेकिन चूँकि वर्तमान उत्पीड़न विश्वास को कमजोर कर रहा है, हमारा संपूर्ण प्रयास इसे बचाने और इसे मज़बूत करने के लिए निर्देशित होना चाहिए – और जब तक ऐसा नहीं हो जाता, जब तक हमारे परमेश्वर के नाम का अपमान हो रहा है और पवित्र पिताओं को शापित किया जा रहा है, तब तक उनका पुनर्स्थापन करने का क्या मतलब है? – अखाड़े में मुकाबले में, आधा रास्ता ही चलने वाले को कभी विजेता का पुरस्कार मिला है? – क्योंकि कहा गया है: *'जो नियम के अनुसार मुकाबला नहीं करता, उसे मुकुट नहीं मिलता'* (2 तीमु. 2:5)। तो फिर, हमें ऐसे विचारों को क्यों त्यागना चाहिए और हृदय और वचन दोनों में अपने विश्वास के बयानी पर दृढ़ रहना चाहिए, इस अटूट वादे पर भरोसा करते हुए: *'पहले परमेश्वर के राज्य और उसकी धार्मिकता की खोज करो, और ये सब बातें तुम्हें मिल जाएँगी'* (मत्ती 6:33)। हमारे प्रभु यीशु मसीह की कृपा और प्रेम द्वारा हम इसके योग्य बनाए जाएँ।

317. एक भाई मर गया है; दूसरा मृत्युशय्या पर है। तो क्या हम अमर हैं? – अतःहमें इस घड़ी को याद रखना चाहिए।

317. एक भाई मर गया है; दूसरा मृत्युशय्या पर है। तो क्या हम अमर हैं? – अतःहम इस घड़ी को याद रखें। जहाँ मृत्यु की स्मृति है, वहाँ सब कुछ पवित्र है; पर जहाँ वह अनुपस्थित है, वहाँ केवल वासनाएँ हैं। – फिर भी हम कामवासना से पराजित हो जाते हैं। अब समय है; इसे कल के लिए टालो मत; अभी पश्चाताप करो। अपने वासनाओं के विरुद्ध खड़े हो जाओ और प्रार्थना करो, जैसे मूसा ने अमालेक के विरुद्ध किया था। [4, 115] देखो, हमारे दो भाई, जेम्स और वासियन – एक पहले ही प्रभु के पास जा चुके हैं, दूसरा मृत्यु के द्वार पर खड़ा है। – तो क्या हम अमर हैं? – क्या हम उन लोगों के समान ही प्याला नहीं पीएंगे जो हमसे पहले चले गए हैं? धन्य है वह जो अपने मन को इस विषय में लगाता है, और मृत्यु के स्मरण को अपने जीवन का सार बनाता है। क्योंकि जहाँ मृत्यु का स्मरण होता है, वहाँ पश्चाताप, खेद, आँसू, सांसारिक सभी चीजों के प्रति हृदय का ठंडा पड़ना, स्वर्गीय चीजों में आनंद, ज्ञान की प्राप्ति, और जो बेहतर और स्वर्गीय है उसकी लालसा होती है। जहाँ यह सब कुछ नहीं है, वहाँ बुरे विचार उत्पन्न होते हैं, जिन्हें प्रभु ने सुसमाचार में (मत्ती 15:19) निन्दित किया है, जिनके द्वारा जीवन से प्रेम करने वाले फँस जाते हैं और कैद हो जाते हैं। हमें, हालाँकि, हमेशा और हर चीज़ में मृत्यु को याद रखना चाहिए, और यह सुनिश्चित करने के लिए हर सावधानी बरतनी चाहिए कि *हम 'अपने शेष समय में शरीर में न जिएँ, जैसा कि शरीर की अभिलाषाएँ चाहती हैं, परन्तु परमेश्वर की इच्छा के अनुसार जिएँ। क्योंकि हमारे लिए इतना ही काफी है* कि *'हमने अतीत में अपनी आयु शरीर की इच्छाओं और मन की कल्पनाओं के अनुसार व्यतीत की'* (1 पतरस 4:2-3); हम शैतान द्वारा रची गई धोखाधड़ियों से प्रलोभित होते हैं, जो हमें अच्छे स्वभाव और कार्यों से हटा देता है, और हमें बुरे विचारों से परेशान करता है, जिनसे हमें कभी कोई लाभ नहीं हुआ, बल्कि केवल कष्ट और अपमान ही मिला है। *'अब अनुग्रह का समय है; अब उद्धार का दिन है'* (2 कुरिन्थियों 6:2)। *पवित्र आत्मा पुकारता है, 'आज, यदि तुम उसकी वाणी सुनो, तो अपने हृदय कठोर न करो'* (इब्रानियों 3:7)। चूँकि उसने हमारे स्वभाव की पाप की ओर झुकाव को देखा—जो एक दिन के लिए भी अस्थिर रहता है—उसने दयालुतापूर्वक *'आज और आज'* को *ही* पश्चाताप का समय निर्धारित किया, ताकि किसी के पास भी इससे मुंह मोड़ने का कोई बहाना न रहे; परन्तु ऐसा हो कि हर कोई—चाहे उसने बहुत पाप किया हो या थोड़ा, चाहे वह लंबे समय से पाप कर रहा हो या अभी-अभी शुरू कर रहा हो—इस उद्धारकारी पुकार को सुनकर, पूरी लगन के साथ प्रतिदिन पश्चाताप के द्वारा स्वयं को नवीनीकृत और शुद्ध कर ले। देखो हमारे अनुग्रहकारी परमेश्वर का प्रेम, जो हमें पाप से शीघ्र और आसान चंगाई प्रदान करता है। शारीरिक घाव भी भर जाते हैं, लेकिन इसके लिए उपचार की अधिक या कम अवधि की आवश्यकता होती है ताकि घायल व्यक्ति फिर से अपने दुश्मनों के खिलाफ मोर्चे पर लौट सके। लेकिन हमारे साथ, जैसे ही कोई घाव लगता है, वह तुरंत भर सकता है, यदि हम बिना किसी देरी के एक बार फिर से अपने दुश्मनों के खिलाफ हो जाना चाहते हैं। तो आइए, हम प्रतिदिन पश्चाताप करने और आत्मा में नवीनीकृत होने में चूकें नहीं, और आइए हम किसी भी गिरावट—चाहे वह मन, वचन या कर्म की हो—को सुस्ती और निराशा का कारण न बनने दें; बल्कि हम कितनी भी बार गिरें, उतनी ही बार हम फिर से उठेंगे, और, परमेश्वर के न्याय से डरते हुए, अपने जुनून के खिलाफ अपनी पूरी ताकत से फिर से खुद को लैस करेंगे। जब परमेश्वर के सेवक मूसा पहाड़ पर स्वर्ग की ओर फैले हाथों से प्रार्थना कर रहे थे, तो अमालेक पराजित हो रहा था; लेकिन जब उन्होंने उन्हें नीचे कर दिया, तो अमालेक हावी हो गया। इसी तरह, जब हमारा मन, वासनाओं से घिरा, प्रार्थना के पर्वत पर चढ़ता है और, हाथों की तरह, अपने विचारों को ईश्वर की ओर फैलाता है, तो यह अदृश्य अमालेक को परास्त कर देता है; लेकिन जब यह ऐसा करने में विफल रहता है, तो यह स्वयं परास्त हो जाता है। – क्या अब आप समझते हैं कि हमें क्या करना चाहिए? दुश्मनों के हमले के समय, मृत्यु से बचाने में समर्थ परमेश्वर की ओर अपना मन और हाथ उठाने के सिवा और कुछ नहीं। केवल इसी से दुश्मन भाग जाएँगे, और हम विजय का मुकुट पाएँगे और स्वर्ग के राज्य के वारिस बनेंगे।

318. विश्वास के लिए नए आने वाले उत्पीड़नों की अफवाहें सुनकर, वह सब कुछ सहन करने के लिए एक प्रेरित तत्परता व्यक्त करता है

318. 1) धर्म के लिए नए आने वाले उत्पीड़न की खबर सुनकर, वह सब कुछ सहन करने के लिए उत्साही तत्परता व्यक्त करता है। – 2) फिर वह आंतरिक संघर्ष की ओर मुड़ता है, और हमसे बहादुरी से लड़ने का आह्वान करता है, धार्मिकता का कवच पहनकर, उस मदद से प्रेरित होकर जो ऊपर से तैयार है। [4, 116]

22. मुझे लगता है कि एक बार फिर हमें परीक्षाओं और दुखों का सामना करना पड़ेगा। परन्तु, प्रेरित के वचन उद्धृत करना उचित होगा, जो यहाँ स्मरण करने योग्य हैं: *'मैं अपनी जान की परवाह नहीं करता, और न ही उसे अपने लिए किसी मूल्य का मानता हूँ, ताकि मैं आनन्द के साथ अपना मार्ग पूरा करूँ और वह सेवकाई भी जो मैंने प्रभु यीशु*

से पाई है, कि मैं परमेश्वर की कृपा के सुसमाचार की गवाही दूँ (प्रेरितों के काम 20:24)। इसी प्रकार हम भी, हमें दिए गए विश्वास के मापदंड के अनुसार, बुद्धिमानी से काम करेंगे और बोलेंगे, मसीह के लिए अपने दुखों में आनंदित होंगे, और उनके लिए और भी अधिक दुख सहने के लिए तैयार रहेंगे, न कि एक बार फिर से उत्पीड़न सहने से इनकार करेंगे, क्योंकि हम पहले ही कई बार उत्पीड़ित हो चुके हैं। यह सुनकर कि *'परमेश्वर के राज्य में प्रवेश करने के लिए हमें बहुत कष्टों से होकर गुजरना होगा'* (प्रेरितों के काम 14:22), आइए हम अधिक से अधिक कष्ट सहने और अधिक से अधिक धैर्य रखने की इच्छा करें, ताकि हम उस धन्य प्रवेश को प्राप्त करने के बारे में अधिक निश्चिंत हो सकें। शायद, परमेश्वर की कृपा से, हम पर कोई अवांछनीय घटना न पड़े; परन्तु यह अच्छा है कि दुख आने से पहले, हम दुख के योग्य बातों के लिए स्वयं को तैयार कर लें, ताकि जब वह आए, तो हम उसका सामना यथोचित रूप से कर सकें। क्योंकि जो आत्मा तैयार नहीं है, वह आसानी से पराजित हो जाती है यदि सही मानसिकता में स्वयं को स्थापित किए बिना, वह अचानक संघर्ष में फेंक दी जाए।

23. पर मैं संघर्षों के बारे में ऐसा क्यों बोल रहा हूँ मानो वे कोई आकस्मिक चीज़ हों? हम एक दैनिक संघर्ष, एक दैनिक युद्ध का सामना करते हैं—जो दिखाई देने वाला नहीं, बल्कि अदृश्य है; एक ऐसा जो शरीर पर नहीं बल्कि आत्मा पर घाव करता है, और उसे नष्ट करने का प्रयास करता है। इसलिए, अपने मन के कमर कसकर, और मसीह के सिपाहियों के रूप में, धार्मिकता का कवच पहनकर, हम पूरी लगन और जागते हुए लड़ें। क्योंकि कोई भी सोते हुए पुरस्कार का अधिकारी नहीं होता, और न ही लेटे-लेटे कोई भरपूर फसल काटता है; बल्कि दोनों ही मामलों में बहुत परिश्रम और पसीने की आवश्यकता होती है। यदि ऐसा है, तो क्या हमारा संघर्ष और भी अधिक अनिवार्य नहीं हो जाता, जिसमें तीर—बिजली की तरह—घुस आते हैं: इस ओर से, दुष्ट वासना घेराबंदी करती है; उस ओर से, महिमा का जुनून; किसी और ओर से, ईर्ष्या; और फिर किसी और ओर से, ईश्वरनिंदा? शैतान के और भी कई छल हैं, जो हर तरह से आत्मा को अस्थिर करने का प्रयास करता है और, मानो, उसे निगल जाना चाहता है; इसलिए यह उचित है कि हर कोई, विस्मय में, पुकार उठे: *'यदि प्रभु मेरी सहायता न करते, तो मेरी आत्मा शीघ्र ही कब्र में चली गई होती'* (भजन संहिता 93:17)। *'पर इन सब बातों में हम उस ने हमें प्रेम किया, उसके द्वारा अधिकृत हैं* (रोमियों 8:37); और, दाऊद के शब्दों में: *'परमेश्वर के द्वारा हम बल पाएंगे, और वह हमारे शत्रुओं को नीचे गिराएगा'* (भजन संहिता 107:14). *'क्योंकि वही हमारी शांति है, जिसने दोनों को एक किया है, और वैरभाव की बीच की दीवार गिरा दी है'* (इफिसियों 2:14); अर्थात्, वही जिसने शैतान पर विजय प्राप्त की और उसे वश में किया, और जो हमें बदले में अनंत जीवन के वचन के साथ उस पर विजय प्राप्त करने की शक्ति प्रदान करता है, जिसे हम सब हमारे प्रभु मसीह यीशु में प्राप्त कर सकें।

319. बिथुनिया में दो तेंदुए प्रकट हुए हैं और वे लोगों का अपहरण कर रहे हैं। यह मुझे उन अदृश्य जानवरों की याद दिलाने का कारण देता है जो हर जगह मंडरा रहे हैं, हमें निगलने की तलाश में।

319. 1) बिथुनिया में दो तेंदुए प्रकट हुए हैं और वे लोगों का अपहरण कर रहे हैं। यह मुझे उन अदृश्य जानवरों की याद दिलाने का कारण देता है जो हर जगह मंडरा रहे हैं, हमें निगलने की तलाश में। – 2) तो फिर, हमें क्या करना चाहिए? परमेश्वर की शरण में जाने के लिए, और भीतर छिपने के लिए, अपनी इंद्रियों को सतर्क रखते हुए। – 3) देखो, मेम्नोन का अपहरण कर लिया गया है; मैं उसके लिए शोक मनाता हूँ जैसे वह मर गया हो। ऐसा क्यों हुआ? क्योंकि वह अकेला रहता था, खुद को सभी से अलग कर लिया था: एक ऐसी प्रथा जिसके खिलाफ मैं कभी भी पुकारना बंद नहीं करूँगा। – 4) वह भाइयों को फटकारता है कि उन्होंने वह बात उजागर कर दी जो उसने कुछ समय पहले (संभवतः विधर्म और उत्पीड़न के बारे में) कही थी। [4, 117]

२४. मेरी यह दृढ़ इच्छा है कि मैं आपको हमेशा सांत्वना और शिक्षाप्रद वचन पहुँचाऊँ, और ऐसा करने के लिए हर अवसर का लाभ उठाऊँ। और अब, यह सुनकर कि बिथुनिया में कुछ असाधारण हुआ है, मैं इसी को आप लोगों को अपना संदेश देने का विषय बनाऊँगा। तो फिर, क्या हुआ है? कहा जाता है कि वहाँ एक नहीं, बल्कि दो या तीन तेंदुआ अचानक प्रकट हो गए हैं, और वे बैलों, भेड़ों या अन्य जानवरों का शिकार नहीं कर रहे हैं, बल्कि केवल लोगों का: इस कदर कि स्थानीय निवासी, भयभीत होकर, भोर होने तक सारी रात अपने घरों में खुद को बंद कर लेते हैं। ऐसी विपत्ति ईश्वर के क्रोध का स्पष्ट प्रमाण है। – लेकिन मैं आपको बताऊंगा कि इस खबर ने विशेष रूप से मेरा ध्यान क्यों आकर्षित किया है। क्योंकि हमारे भी पास कई जानवर हैं, क्रूर जानवर – मेरा मतलब है, दुर्भावना की आत्माएँ: बुरा जानवर क्रोध है; एक दुष्ट दानव वासना है; एक दुष्ट दानव ईर्ष्या है; एक दुष्ट दानव व्यर्थता है; दुष्ट दानव अन्य सभी जुनून हैं, जो न केवल रात में बल्कि दिन में भी निडर होकर हमला करते हैं, आत्मा को अपना शिकार बनाने के लिए झपटते हैं। धन्य प्रेरित पतरस आज्ञा क्यों देते हैं: *'संयमी और चौकस रहो; क्योंकि तुम्हारा विरोधी शैतान गरजने वाले सिंह की नाईं इस खोज में रहता है, कि किसि को फाड़ खाए'* (1 पतरस 5:8); और संत दाऊद प्रार्थना क्यों

करते हैं: *'कहीं ऐसा न हो कि वह किसी सिंह की तरह कभी मेरी आत्मा को छीन ले, जब कोई उसे छुड़ाने या बचाने वाला न हो'* (भजन संहिता 7:3)।

२५. तो फिर, ऐसी स्थिति में हमें क्या करना चाहिए? – और क्या, सिवाय इसके कि *'स्वर्ग के परमेश्वर की छाया में वास करें'* (भजन संहिता ९०:१), और अपने मन को इंद्रियों की भटकन से विचलित हुए बिना, आंतरिक रूप से केंद्रित रखें। क्योंकि जब आँख इधर-उधर भटकती है, कान भ्रष्ट करने वाली अफवाहें ग्रहण करते हैं, मुँह अनुचित शब्द बोलता है, और मन अनुचित विचारों में लिप्त हो जाता है – तब आत्मा सुनसान स्थानों में भटकती है, और आसानी से जंगली जानवरों का शिकार हो जाती है।

26. यही अब बेचारे मेम्नोन पर पड़ा है, जो शैतान के जाल में फँस गया है; मैं उसके खून से सने वस्त्र नहीं देखता, जैसे एक बार पैट्रिआर्क याकूब ने अपने पुत्र यूसुफ के वस्त्र देखे थे, बल्कि उसकी आत्मा ही, जो पाप की तलवार से मारी गई है। क्योंकि पाप मृत्यु की माता है; हमारे पूर्वज आदम का पाप, जो अनुग्रह से अमर था, ने उसे नश्वर बना दिया; पाप ने प्रलय के माध्यम से संसार पर सर्वव्यापी विनाश लाया; पाप ने सदोम और गमोरा और उनके आसपास के नगरों को भस्म कर दिया; और पाप अभी भी हर उस व्यक्ति को जो इसे करता है, अनंत मृत्यु की सजा देता है। इसलिए हम उससे आग से भागने की तरह भागें : क्योंकि विनाशकारी वासनाओं के हाथों में पड़ने से तो तलवार की चोटों में, आग में या जंगली जानवरों के जबड़ों में पड़ना बेहतर है। 'तो फिर, हमारा वह बेचारा भाई, जिसका नाम लिया गया है, क्यों गिर पड़ा?' 'इससे अलग किसी कारण से नहीं कि उसने खुद को सभी से अलग कर लिया था।' 'क्योंकि सत्य का वचन झूठा नहीं है जब यह ऐसे व्यक्ति के लिए *"हाय"* घोषित करता है, क्योंकि *"जब* वह *गिरता है"*, तो *"उसे फिर उठाने वाला कोई नहीं होगा"* (सभोपदेशक 4:10); इसी भय से, मैंने अपनी नम्रता में, उसे, और दूसरों को, यह दोहराना कभी बंद नहीं किया है, और मैं इसे अब भी दोहराता हूँ: कोई भी अपने आप अकेला न रहे; कोई भी अकेले चलने में आनंद न ले; कोई भी व्यर्थ में इधर-उधर न भटके; कोई भी महिलाओं के साथ अकेला न रहे, क्योंकि इससे आग की तरह, दुष्ट प्रेम भड़क उठता है। आज्ञाकारी पुत्र इस बात पर ध्यान देता है, आज्ञा मानता है, और प्रभु द्वारा उद्धार पाता है; परन्तु अवज्ञाकारी पुत्र शैतान के द्वारा जीवित ही फँसा लिया जाता है और मृत्यु के हवाले कर दिया जाता है। मैं इस दीन मनुष्य के लहू का दोषी मानता हूँ, यद्यपि मैं निर्दोष हूँ, क्योंकि मैं चुप नहीं रहा, परन्तु उस पर गिरने वाली तलवार की भविष्यवाणी की थी; तौभी मैं इस प्रकार रोता और विलाप करता हूँ जैसे अपने ही अंग के लिए रोता और विलाप करता हूँ।

27. परन्तु हे प्रिय, मुझे तुम्हारे दोषारोपण के लिए भी कुछ है। यह क्या है? – प्रेरितों के काम में लिखा है: *'यह हुआ कि,* अनानियस के मरने और दफनाए जाने के लगभग *तीन घंटे* बाद, *उसकी पत्नी,'* सप्फिरा, *'यह न जानती थी कि क्या हुआ था'* (– 5:7)। उसे इसका एहसास नहीं हुआ – भले ही यह घटना सबके सामने हुई थी, और वहाँ बहुत से लोग मौजूद थे; क्योंकि वहाँ, हर चीज़ में व्यवस्था और परमेश्वर का भय राज करता था, और हर कोई समझदारी से सावधानी बरतता था। लेकिन यहाँ, कुछ दिन पहले, मैंने गुप्त रूप से कुछ कहा था; और तुरंत ही यह बात यहाँ से कॉन्स्टेंटिनोपल तक, और वहाँ से ब्रुसेल्स तक फैल गई। और मैं विवश महसूस करता हूँ, चाहे मैं बोलूँ या चुप रहूँ: जब मैं बोलता हूँ, तो ऐसी बातें प्रकट हो जाती हैं जिन्हें प्रकाश में नहीं लाया जाना चाहिए; और जब मैं चुप रहता हूँ, तो मुझे नहीं पता कि दूसरों की सलाह लिए बिना सबसे अच्छा काम कैसे किया जाए। और हम अपनी बातों में इतने बेबाक क्यों हैं? हम समय से पहले अपने ऊपर परेशानी क्यों लाते हैं? यह सच्चे शिष्यों का लक्षण नहीं, बल्कि शत्रुतापूर्ण लोगों का लक्षण है। और मैं आपसे विनती करता हूँ, ऐसी लज्जा सहन करना बंद करें; बल्कि अब से हम वाणी पर संयम, मर्यादा, ईश्वर का भय और सभी चीजों में व्यवस्था का अभ्यास करें, ताकि ईश्वर की इच्छा के अनुसार जीकर और हर तरह से उसे प्रसन्न करके, हम अनंत आशीर्वादों के वारिस बन सकें।

320. वे अपने सांसारिक मामलों में व्यस्त रहते हैं; लेकिन हम अपने मामलों में लगे रहते हैं, जो सभी से ऊपर है।

320. 1) वे अपने सांसारिक कार्यों में व्यस्त हैं; परन्तु हम अपने कार्य में, जो सभी से ऊपर है। – 2) अतःहम अपनी बुलाहट के प्रति सच्चे रहें, और जो कुछ भी इसके विपरीत है, उसके विरुद्ध लड़ें। – 3) इस उद्देश्य के लिए, प्रत्येक व्यक्ति अपना काम करे, और अपने समय पर। [4, 118]

1. कुछ लोग विभिन्न कहानियों में आनंद लेते हैं और उनका बखान करते हैं: सैनिक सैन्य कारनामों के, नाविक समुद्री साहसिक कारनामों के, किसान कृषि कार्यों के, और जो अन्य शिल्पों और कलाओं में लगे हैं, वे अपने-अपने क्षेत्रों से संबंधित मामलों के; और, सामान्य रूप से कहें तो, ऐसा कोई नहीं है जो अपने पेशे के कार्यों में आनंद न ले। परन्तु हम उन कथाओं में आनन्दित होते हैं जो ऐसे मामलों से संबंधित नहीं हैं: क्योंकि हमारा सम्पूर्ण अस्तित्व देहिक

नहीं है, बल्कि आत्मा के उद्धार, परमेश्वर को प्रसन्न करने, इस संसार से हमारे प्रस्थान, और वहाँ हमारी बसाहट से संबंधित है; और, जैसा कि प्रेरित कहते हैं, *'जो कुछ भी सत्य है, जो कुछ भी आदरणीय है, जो कुछ भी न्यायसंगत है, जो कुछ भी पवित्र है, जो कुछ भी मनोहर है, जो कुछ भी प्रशंसनीय है, यदि कोई उत्कृष्टता है, और यदि कोई प्रशंसा के योग्य है'* (फिलि. 4:8), ये हमारे संवादों के साथ-साथ हमारी चिंताओं और फिक्रों के भी विषय हैं। और क्या इससे अधिक आनंददायक या अधिक परम आनंदमय कुछ हो सकता है? – हर कोई इन दोनों चीजों के अंत की प्रकृति से यह देख सकता है; उन चीज़ों की न तो कोई शुरुआत है और न ही कोई अंत जो इस युग की सीमाओं से परे है; जबकि हमारी शुरुआत किसी अन्य, उच्चतर दुनिया में है, और उनका अंत उसकी सीमाओं से परे, अनंत और शाश्वत है। क्योंकि उनका सार ही पुण्य है, जो इसे अभ्यास करने वालों को देवता बना देता है: क्योंकि वास्तव में कहा गया है: *'मैंने कहा: "तुम देवता हो, और तुम सब परमप्रभु के पुत्र हो"'* (भजन संहिता 81:6)। हे, हमें कितनी महान दया प्रदान की गई है! – *'हम प्रभु में आनन्द मनाएँ; हम अपने उद्धारकर्ता परमेश्वर के लिए जयजयकार करें; हम धन्यवाद के साथ उसकी उपस्थिति में आएँ, और भजनों के साथ हम उसके लिए जयजयकार करें'* (भजन संहिता 94:1-2); *"क्योंकि उसने हमें आरम्भ से ही उद्धार के लिए चुना, जो आत्मा की पवित्रता और सत्य के विश्वास द्वारा है, जिसमें उसने हमें बुलाया"*, हमारे द्वारा स्कीमा (योजना) की स्वीकृति के माध्यम से, *"हमारे प्रभु यीशु मसीह की महिमा प्राप्त करने के लिए"* (2 थिस्स. 2:13-14)।

२. अतःहम विश्वास में दृढ़ रहें, सच्ची आज्ञाकारिता को अपनाएँ, और अपनी पवित्रता को अखंड बनाए रखें। प्रेम का हमारा एक ही लक्ष्य है – वधू-वर मसीह, *जो 'मनुष्यों के बेटों से भलाई में अधिक सुन्दर'* हैं – और एक ही विरासत – स्वर्ग का राज्य, स्वर्गीय यरूशलेम के आशीर्वाद। हो कि शरीर और रक्त, धन-संपत्ति और महिमा, और सारी व्यर्थता हमसे दूर हो जाएँ। – फिर भी जब तक हम देह में हैं, संघर्ष हमारा भाग है: क्योंकि यदि यह संघर्ष न होता तो कोई सद्गुण न होता। यदि हम कभी विदेशी विचारों द्वारा बंदी बना लिए जाएँ, तो आइए हम तुरंत स्वयं को संयम में लाएँ, और सबसे बढ़कर पाप से डरें, जो एक घातक विष है, और एक ऐसा कदम है जो हमें परमेश्वर से दूर ले जाता है। हम विचारों का मुकाबला विचारों से करें, और इच्छाओं का मुकाबला इच्छाओं से करें। और यह सब हम आलस्य या आत्मसंतोष के बिना करें; हमारे विरुद्ध युद्ध करने वाले दानव का उद्देश्य संघर्ष की निरंतरता के माध्यम से हमें निराशा और सुस्ती में डुबोना है, ताकि हम उससे अपना प्रतिरोध त्याग दें। लेकिन यदि हम शैतान के विरुद्ध अपने संघर्ष में दृढ़ बने रहें, और उसका विरोध करें ताकि हमें उसके कारण कष्ट न सहना पड़े, तो हम निस्संदेह उस पर विजय प्राप्त करेंगे और स्वर्ग में हमारे लिए तैयार की गई विजय का मुकुट प्राप्त करेंगे। क्योंकि परमेश्वर का भाई कहता है: *'धन्य है वह मनुष्य जो परीक्षा में स्थिर रहता है; क्योंकि जब वह परखा जा चुका होगा, तो उसे जीवन का मुकुट प्राप्त होगा, जो परमेश्वर ने अपने प्रेम करने वालों से वादा किया है'* (याकूब 1:12)।

3. इसलिये प्रभु में आनन्दित रहो। – हे तुम जो विभिन्न कर्तव्यों में लगे हो, जानो कि उनमें तुम्हारे लिये बड़ा इनाम है। हे तुम जो अध्ययन में लगे हो, सावधान रहो कि इससे परमेश्वर को क्रोधित न करो। क्या काम करने का समय है? तो चलो काम करें। क्या अध्ययन करने का समय है? तो चलो अपनी पढ़ाई करें। लेकिन यदि आपका भाई अपने काम में लगा रहता है और आप अपना पाठ पढ़ने में लग जाते हैं, तो आप प्रेम में नहीं चल रहे हैं, बल्कि आप स्वयं को भाईचारे से अलग कर रहे हैं। या क्या आप यह नहीं सुनते कि प्रेरित क्या कहते हैं: *'यदि मेरे भाई के ठोकर खाने का कारण मैं बनूँ, तो मैं फिर कभी मांस नहीं खाऊँगा, कहीं ऐसा न हो कि मैं अपने भाई को ठोकर खिला दूँ?'* (1 कुरिन्थियों 8:13)। और आप न केवल अपने भाई को ठोकर खाने का कारण बनते हैं; बल्कि जब आपको बुलाया जाता है, तो आप उपस्थित नहीं होते, अपने लिए बहाने बनाते हैं और यह महसूस नहीं करते कि इस तरह का व्यवहार करके, *'आप क्रोध के दिन और परमेश्वर के धर्मी न्याय के प्रकट होने के दिन के लिए अपने लिए क्रोध इकट्ठा कर रहे हैं'* (रोमियों 2:5)। लेकिन ऐसा न हो, इसलिए हमें प्रेरित की बात माननी चाहिए, जो कहते हैं: *'सब कुछ सभ्य और व्यवस्थित ढंग से किया जाए'* (1 कुरिन्थियों 14:40): पहले, कर्म; फिर, शिक्षा। आओ हम एक-दूसरे की सहायता करें, जैसा कि संतों के लिए उचित है, और सच्चे भाइयों की तरह एक-दूसरे के लिए अपना जीवन दे दें, ताकि परमेश्वर हम में महिमा पाएं, और हम, उनकी महिमा के लिए कार्य करते हुए, अनंत जीवन के वारिस बनें।

321. अंतिम घंटा नज़दीक आ रहा है: हम लापरवाह न रहें

321. 1) अंतिम घंटा निकट आ रहा है: हम लापरवाह न रहें। – 2) हम उसके आज्ञाओं का पालन करके ईश्वर की खोज करें: क्योंकि तब सदाचार के सिवा कोई अन्य रक्षा नहीं होगी। – 3) अतःहम मृत्यु के समय को स्मरण करें, और उस समय पृथ्वी पर स्थित अंगों को मार डालें: शरीर और जो कुछ भी देह संबंधी है, वह नाशवान है; केवल सद्गुण

ही अनन्तकाल तक रहता है। – 4) सच्चे चिह्नों को दिखावटी चमत्कारों से अलग करने के लिए एक चिह्न दिया गया है। [4, 119]

४. जब मृत्यु—जो सभी के लिए सामान्य प्रायश्चित है—निस्संदेह हमारे सामने है, जब एक ओर स्वर्ग के राज्य को प्राप्त करने की आशा है, और दूसरी ओर आग की गेहेना का खतरा मंडरा रहा है; तो क्या मेरे लिए बोलने में आलसी होना, और आपके लिए सुनने में आलसी होना उचित है? कतई नहीं। इसके विपरीत, इसी कारण से हमें हमेशा दोनों करना चाहिए; और भी अधिक क्योंकि हम उस दिन को करीब आते हुए देखते हैं। क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति का अंतिम दिन निरंतर, हर घंटे और हर मिनट करीब आता रहता है, और *'न्याय की एक भयानक अपेक्षा और उन लोगों को भस्म करने के लिए आग की प्रचंडता जो विरोध करना चाहते हैं'* (इब्रानियों 10:27), जैसा कि पवित्र प्रेरित कहते हैं। तो फिर, हम सुस्त न रहें, और न ही एक भी दिन को आलस्य और मूर्खता में बर्बाद होने दें; बल्कि हम हमेशा संयमी और चौकस रहें।

5. *'आओ हम परमेश्वर को खोजें'*, जैसा कि भजन कहता है, *'और हमारी आत्माएं जीवित रहेंगी'* (भजन संहिता 68:33)। तो फिर, हम ईश्वर की खोज कैसे करें? – सुसमाचार की धन्यवचन में बताई गई उनकी आज्ञाओं का पालन करके, अर्थात् विनम्रता, शोक, कोमलता, हृदय की पवित्रता, *'शांति और पवित्रता'* (इब्रानियों 12: 14), और जब कोई ईश्वर की खोज करता है और इन्हें प्राप्त कर लेता है, तो वह उन्हें पा लेता है – और उन्हें पाकर, वह प्रस्थान के समय निडर रहता है, राक्षसों से नहीं डरता, स्वर्गदूतों की उपस्थिति से विचलित नहीं होता, उनके पास अपने ही लोगों की तरह जाता है, और एक अच्छी अंतरात्मा को अपना वफादार साथी बनाकर आनंदपूर्वक अपने प्रभु के पास चला जाता है। लेकिन जो इस प्रकार तैयार नहीं है, वह अनिवार्य चरम परिस्थितियों में पड़ जाएगा, जिसके पास अपनी आँखें घुमाने के लिए कोई नहीं होगा और न ही मदद माँगने के लिए कोई होगा। यहाँ, उदाहरण के लिए, जब कोई दुष्ट लोगों के हाथों में पड़ जाता है, या समुद्र की लहरों में, या भूकंप से हुई तबाही में, या किसी अन्य चरम स्थिति में, तो वह उससे छुटकारा पाने की आशा नहीं खोता; लेकिन वहाँ, उद्धार की सारी आशा छीन ली जाती है, और न तो कोई बचाने वाला होता है और न ही मदद करने वाला – न कोई देवदूत, न कोई मनुष्य, न कोई पिता, न कोई माता, न कोई भाई, न कोई मित्र, बिल्कुल कोई नहीं; और वह बेचारा प्राणी, भयानक आतंक में और सांत्वना से परे टूट चुके दिल के साथ, यहाँ से प्रस्थान करता है, और वहाँ उस चीज़ का सामना करता है जिसकी सच्ची वास्तविकता को कोई भी शब्द, रूपक रूप में भी, व्यक्त नहीं कर सकता। क्योंकि जैसे परमेश्वर से प्रेम करने वालों के लिए परमेश्वर द्वारा तैयार की गई आशीषें ऐसी हैं, वैसे ही विद्रोह के बेटों के लिए भी तैयार की गई चीजें हैं—ऐसी कि न तो किसी ने उन्हें देखा है, न किसी ने उनके बारे में सुना है, और न ही किसी ने उनके बारे में सोचा है।

6. इसीलिए मैं तुम्हें आग्रह करता हूँ कि मृत्यु को सदा स्मरण रखो, और इस *प्रकार 'पृथ्वी पर जो अंग हैं उन्हें मार डालो'* (कुलुस्सियों 3:5), और आत्मा से कामुकता को जड़ से उखाड़ फेंको। हमें इस देह के प्रेम से क्या लाभ होता है, जिससे हमें कोई लाभ नहीं होता, बल्कि केवल पीड़ादायक यातना ही होती है? – आइए, यदि आप चाहें तो, ताबूतों में झाँकें और वहाँ पड़ी गंध का अनुभव करें। सारी देह ऐसी ही है: इसका आरंभ क्षय से होता है और अंत भी क्षय में ही होता है। और सारी मानवीय महिमा मैदान के फूल के समान है। केवल सदाचार ही अविनाशी और अछूता है। इसे प्रेम करने से, संतों को परमेश्वर की कृपा प्राप्त हुई, जिसके कारण उनकी आत्माएँ स्वर्ग में महिमा में हैं, जबकि उनके शरीर संकेतों, अद्भुत कार्यों और सामर्थी कामों के द्वारा पृथ्वी पर हमारे लिए एक शरणस्थान के रूप में सेवा करते हैं।

7. चूँकि मैंने संकेतों का उल्लेख किया है, मैं यह बताना चाहूँगा कि आज भी संकेत होते हैं, जैसा कि हम सुनते हैं। और इसमें कोई आश्चर्य नहीं है: क्योंकि पवित्र आत्मा की कृपा, जैसे तब काम करती थी, वैसे ही अब भी बिना रुके काम करती है। हालाँकि, जो कुछ भी अफवाहों के ज़रिए फैलाया जाता है, उस पर बिना सोचे-समझे विश्वास नहीं करना चाहिए; क्योंकि लिखा है: *'हर आत्मा पर विश्वास न करो, पर आत्माओं की परीक्षा करो कि वे परमेश्वर की हैं या नहीं; क्योंकि बहुत से झूठे भविष्यद्वक्ता संसार में निकल खड़े हुए हैं'* (1 यूहन्ना 4:1)। – और कई विधर्मी और परमेश्वर की आज्ञाओं के उल्लंघन करने वालों को, अतीत में और अब, परमेश्वर की व्यवस्था के कार्यों के रूप में प्रकट होने वाली घटनाओं के माध्यम से, चिह्नों जैसे आश्चर्य करने की अनुमति दी गई है और अब भी है। इसलिए, किसी को ऐसी बातों से बहकना नहीं चाहिए, बल्कि प्रभु द्वारा हमें दिए गए चिह्नों से यह परखना चाहिए कि वे प्रभु के सच्चे शिष्य हैं या नहीं। तो, ये चिह्न क्या हैं? – देखो: *'इस से,'* वह कहते हैं, *'सब जान लेंगे कि तुम मेरे शिष्य हो, यदि तुम्हारा एक दूसरे से प्रेम रहेगा'* (यूहन्ना 13:35)। इन वचनों से शिक्षित होकर, प्रेरित ने फिर लिखा: *'यदि मैं मनुष्यों और स्वर्गदूतों की भाषाओं में बोलूँ, परन्तु प्रेम न रखूँ, तो मैं एक बजते हुए ढोल या खनकती हुई झाँझ के समान हूँ। और यदि मुझ में भविष्यद्वाणी का वरदान हो और मैं सब रहस्यों और सब ज्ञान को जानता हूँ, और यदि मुझ में इतना*

विश्वास है कि पहाड़ों को हटा सकूँ, परन्तु प्रेम न रखूँ, तो मैं कुछ भी नहीं हूँ। और यदि मैं अपना सब कुछ दान कर दूँ और अपना शरीर मृत्यु के घाट उतारने के लिए दे दूँ, परन्तु मेरे पास प्रेम न हो, तो मैं कुछ भी नहीं पाता" (1 कुरिन्थियों 13:1–3)। क्या आप देखते हैं कि प्रेम कितना उत्कृष्ट है? यह आत्मा की सभी वरदानों से ऊपर खड़ी एक रानी के समान है, और कभी असफल नहीं हो सकती; जबकि चिह्न करने वाले कभी-कभी भटक जाते हैं: क्योंकि प्रभु सुसमाचार में कहते हैं: *'उस दिन बहुत से लोग मुझ से कहेंगे: "हे प्रभु! हे प्रभु! क्या हमने आपके नाम पर भविष्यवाणी नहीं की, और आपके नाम पर दुष्टात्माओं को नहीं निकाला, और आपके नाम पर बहुत से चमत्कार नहीं किए?' और तब मैं उनसे कहूँगा, 'मैंने तुम्हें कभी नहीं जाना; मुझसे दूर हो जाओ, हे अधर्म करने वाले!'"* (मत्ती 7:22-23)। ऐसा उत्तर कितना भयानक है! और ऐसा न्याय कितना विनाशकारी है! – अतःहम चमत्कारों के वरदान के बजाय प्रेम और उसके साथियों – विश्वास और आशा – को प्राप्त करने का प्रयत्न करें; ताकि उनके आत्मा में भली रीति से जीकर, हम प्रभु के सच्चे शिष्य के रूप में पहचाने जाएँ और स्वर्ग के राज्य के वारिस बनें।

322. समय बीत रहा है, मृत्यु नज़दीक आ रही है: हम व्यर्थ में क्यों परेशान होते हैं?

322. समय बीत रहा है, मृत्यु नजदीक आ रही है: हम व्यर्थ में क्यों भटक रहे हैं? – इसके बाद संन्यासियों के बीच लालच की निंदा की गई है। [4, 120] हमारे दिन घंटों की तरह, सप्ताह दिनों की तरह, महीने सप्ताहों की तरह, वर्ष महीनों की तरह बीतते हैं। इस प्रकार समय उड़ जाता है, और सभी को हमारे प्रभु यीशु मसीह के प्रकट होने के अंतिम दिन की ओर ले जाता है, जिस दिन *'हर एक वस्तु उसके सामने नंगी और प्रकट* हो *जाएगी'* (इब्रानियों 4:13), जैसा कि परमेश्वर का वचन कहता है। तो फिर मनुष्य व्यर्थ में क्यों चिंतित रहता है? एक राजा अपनी आशा सोने और अपनी सेना में क्यों रखता है? एक शासक अपनी संपत्ति और चरागाहों का घमंड क्यों करता है? एक धनी व्यक्ति अपनी क्षणिक संपत्ति में अपनी आशा क्यों रखता है? एक कामुक व्यक्ति पाप की कीचड़ में क्यों लोटता है? – हमें प्रतिदिन रोना और शोक मनाना चाहिए, और, अपनी पूरी शक्ति से, मृत्यु के न्याय के आने से पहले स्वयं को शुद्ध करना चाहिए, ताकि हम अवज्ञा के पुत्रों पर आने वाले क्रोध से बच सकें। पवित्रशास्त्र की भाषा में कहें तो, *'ये लोग उस बात की निंदा करते हैं जिसे वे नहीं देख सकते, परन्तु जिसे वे देख सकते हैं, उसमें वे मूर्ख पशुओं की तरह लिप्त हो जाते हैं। हाय उनके लिए, क्योंकि वे काइन के मार्ग पर चल पड़े हैं, बिलाम के इनाम के धोखे में सिर-पैर से कूद पड़े हैं, और कोरह के विद्रोह में नाश हो गए हैं।'* (यहूदा 10:1)। मुझे डर है कि ये शब्द, उन्हें निन्दा करते हुए, आप पर भी लागू हो सकते हैं *जो 'अपने आपको कुछ समझते हैं'* (गलातियों 2:6)। क्योंकि जहाँ एक व्यक्ति, अपने पिता की विरासत के लिए चिंतित होकर, लंबी यात्राएँ करता है, वहीं दूसरा, *अपनी 'आय'* बढ़ाने की इच्छा से, जीविकोपार्जन की चिंता करता है, बड़ी-बड़ी कोशिशें करता है और बहुत प्रयास करता है; जबकि कोई अन्य, यह या वह प्राप्त करने के लिए, लालच से काम करता है, न कि संन्यासी की तरह—क्या वे भी उन्हीं के समान न्याय के योग्य नहीं हैं? और वे तो अपने व्यवहार के लिए कुछ, यद्यपि कमजोर, औचित्य दे सकते हैं, क्योंकि वे अपनी पत्नियों और बच्चों की जिम्मेदारी उठाते हैं। लेकिन तुम्हारे लिए क्या बहाना बचता है, जिन्होंने स्वयं को संसार के लिए सूली पर चढ़ा दिया है और जिनका सारा खजाना केवल क्रूस में ही है? क्या तुम इस तरह से काम करने के लिए सबसे कठोर यातनाओं के पात्र नहीं हो? क्योंकि लिखा है: *'मजबूत को और अधिक कष्ट दिया जाएगा'* (Wis. 6:6); और: *'प्राधिकरण में रहने वालों के लिए न्याय सबसे कठोर होता है'* (Wis. 6:5); और फिर: *'जिसे बहुत कुछ दिया गया है, उससे बहुत कुछ माँगा जाएगा'* (Luke 12:48)। *'हे मनुष्यों के पुत्रो, तुम कब तक कठोर-हृदय रहोगे? "तुम व्यर्थता से प्रेम क्यों करते हो और झूठ की खोज क्यों करते हो?"* (भजन संहिता 4:3), अपने जुनून का बचाव करने के लिए बहाने गढ़ते हो? *"प्राचीन काल की पीढ़ियों को देखो, और देखो: किसने कभी प्रभु पर भरोसा किया और लज्जित हुआ? या किसने कभी उसकी भक्ति में बना रहा और उसे त्याग दिया गया? या किसने कभी उसे पुकारा, और उसने उसे तुच्छ जाना?"* (सिरिक 2:10)। क्या कुलपति अब्राहम परमेश्वर की आज्ञा से एक परदेस में अजनबी नहीं थे? और फिर भी वह कई राष्ट्रों के पिता बने। क्या कुलपति याकूब केवल एक लाठी लेकर मेसोपोटामिया नहीं गए थे? – और फिर भी वह वहाँ से एक धनी व्यक्ति होकर लौटे। क्या यूसुफ को बेचने के लिए मिस्र नहीं ले जाया गया था? और फिर भी वह वहाँ राजा के बराबर हो गया। क्या यिज़ेबेल द्वारा सताए गए भविष्यवक्ता एलिया, बिना किसी झोले के नहीं भागे थे? फिर भी उन्हें कौवों द्वारा भोजन मिला। क्या धन्य प्रेरित कुछ भी और हथियारों के बिना प्रचार करने नहीं निकले थे? फिर भी उन्होंने सारी दुनिया को वश में कर लिया? क्या हमने स्वयं पिछले वर्षों में उत्पीड़न और लूट-पाट नहीं झेली है? फिर भी, हमारे मामले में भी, आपको यह स्वीकार करना होगा कि परमेश्वर के वादे सच हैं। तो फिर यह बुराई कहाँ से आती है? और यह किस प्रकार की व्यर्थता है? ऐसा लगता है कि हमने भी प्राचीन इस्राएल की तरह परमेश्वर के आशीर्वादों को भूल गए हैं, और परमेश्वर को आजमा रहे हैं, जैसा कि उनमें से कुछ ने किया था। परन्तु उनके विषय में क्या कहा गया है? – *'चालीस वर्ष तक मैं उस*

पीढ़ी से क्रोधित रहा; मैंने कहा: "वे अपने मन में सदा भटकते रहते हैं; उन्होंने मेरे मार्गों को नहीं जाना।" इसलिये मैंने अपने क्रोध में शपथ खाई, "वे मेरी विश्राम-भूमि में प्रवेश नहीं करेंगे" (भजन संहिता 94:10–11)। सोचिए कि क्या यही बात हम पर भी लागू नहीं होती, क्योंकि हम अपने उपकारी के प्रति कृतघ्न हैं, और जो हमारे पास है उससे संतुष्ट नहीं हैं। इसी कारण, हमारे पैरों को यहाँ कोई विश्राम नहीं मिलता, और हम इधर-उधर भटकते हैं; इसी कारण, हममें भी एक-दूसरे के साथ विवाद और झगड़े होते हैं, ठीक वैसे ही जैसे आम लोग करते हैं; इसी कारण, हम एक भाई के साथ रहने के बजाय अकेले रहने को प्राथमिकता देते हैं; और भले ही हम किसी भाई के साथ रहते भी हैं, तो वह केवल दिखावे के लिए है: क्योंकि धन के प्रेम को अपना साथी बनाकर कोई भाई के साथ सच्ची सद्भाव से कैसे रह सकता है? बिल्कुल भी नहीं। ऐसे मूर्ख लोगों पर हाय! मैं आप लोगों, मेरे भाइयों, या उन लोगों के बारे में नहीं बोल रहा हूँ जो यहाँ-वहाँ ईश्वर भक्ति से जीवन यापन करते हैं; बल्कि उन लोगों के बारे में बोल रहा हूँ जो दुष्टता से जीवन यापन करते हैं और उन पर दिए गए आज्ञा-नियम के अनुसार नहीं चलते, जिनसे मैं विनती करता हूँ कि वे अंततः सही मार्ग पर चलना शुरू करें और बेहतर बनें, ताकि हम में से कोई भी नाश न हो, बल्कि हम सब एक साथ उद्धार पाएँ।

323. एक आदर्श जीवन वाले वरिष्ठ का निधन हो गया है। उनके तपस्या और मूर्ति-भंजकों द्वारा दी गई यातनाओं को सहने के लिए उनकी प्रशंसा करते हुए... – वे भाइयों को एक शिक्षा देते हैं – मृत्यु को याद करके सभी सांसारिक चीजों से मुंह मोड़ना, और सभी सद्गुणों को प्राप्त करने के लिए उत्साह जगाना

323. 1) एक पुण्यात्मा का देहांत हो गया है। उन्होंने उनकी तपस्या और मूर्तिभंजकों द्वारा दी गई यातनाओं को सहने की क्षमता की प्रशंसा की, – 2) वे भाइयों को उपदेश देते हैं – कि मृत्यु का स्मरण करके वे सभी सांसारिक चीजों से मुंह मोड़ लें और सभी सद्गुणों को प्राप्त करने के लिए उत्साह जगाएं। – 3) वे ऐसा करने के लिए उन्हें इस प्रकार के आचरण के अच्छे फलों और इसके विपरीत के बुरे परिणामों की ओर इशारा करके प्रोत्साहित करते हैं। – 4) वे उल्लेख करते हैं कि यिरूशलेम से लौटा हुआ भाई वहाँ वापस भेज दिया गया है, और वह हमारे लिए प्रार्थना कर रहा है। [4, 121]

8. यद्यपि कई ऐसे प्रेरक वृत्तांत हैं जो आत्मा को कोमलता और पश्चाताप की ओर ले जाते हैं, परन्तु उनमें से कोई भी मृत्यु की खबर जितना आत्मिक पोषण नहीं देता। क्योंकि मृत्यु हमारे लिए एक भयानक रहस्य है, जब हम इसके बारे में सुनते हैं और जब हम इस पर मनन करते हैं। चूँकि अब एक सम्मानित वरिष्ठ का निधन हो गया है, इसलिए सभी के उत्थान के लिए, संक्षेप में ही सही, कुछ कहना आवश्यक है। – यह तथ्य कि, अपनी युवावस्था से लेकर अपनी वृद्धावस्था तक, उन्होंने मठवासी जीवन में प्रभु की सेवा की, वरिष्ठ की प्रशंसा के लिए पर्याप्त है; इसके अलावा, यह तथ्य कि वह बहादुर धर्म-स्वीकारकों में से एक थे, जिन्हें दुष्ट लियो ने पकड़ लिया था और बुरी तरह यातना दी थी: उनकी पीठ और छाती को तीस कोड़ों से चीर दिया गया, उनके चेहरे पर मुक्कों और थप्पड़ों से पिटाई की गई, और उनके दो दांत तोड़ दिए गए; इसके बाद, कई वर्षों बाद, उन्हें जेल से रिहा कर दिया गया और मुक्त कर दिया गया। वह, तथापि, अपने पूर्व जीवन-यापन, अर्थात् एक स्तंभ-संन्यासी के जीवन, पर लौट आए और अपनी कोठरी में खुद को बंद कर लिया, जहाँ उन्होंने अपने जीवन के अंत तक बड़ी कठिनाई और एकांतवास में जीवन व्यतीत किया, और शांतिपूर्वक अपना प्राण प्रभु को सौंप दिया। दुष्ट उत्पीड़क ने व्यर्थ में अवैध रूप से काम किया; परन्तु पराक्रमी योद्धा शहीदी पुष्पमाला से सुसज्जित होकर स्वर्ग पर आरोहण किया।

९. और हम, भाइयों, क्या करें, और क्या सोचें? हम और कितनी देर तक जीवित रहेंगे? – क्या यह बहुत है, या थोड़ा? – और कौन जानता है कि आने वाला दिन क्या लाएगा? – लेकिन अभी के लिए, आइए हम वृद्ध की मृत्यु से सिखाए गए पाठ पर ध्यान दें। क्योंकि जो हमने उसमें देखा है, वह जल्द ही हम पर भी आएगा। क्योंकि ऐसा कोई नहीं है जिसने कभी अपने लिए निर्धारित मृत्यु की सीमा को पार किया हो। इसलिए आइए हम मृत्यु को कभी न भूलें, कहीं ऐसा न हो कि शाश्वत मृत्यु हमें आश्चर्यचकित कर दे। हम इस वर्तमान युग से प्रेम न करें, कहीं ऐसा न हो कि हम परमेश्वर से बैर करने लगें। क्योंकि लिखा है: *'जो कोई संसार का मित्र बनना चाहता है, वह परमेश्वर का बैरी बन जाता है'* (याकूब 4:4)। या क्या आप नहीं जानते कि इस संसार से प्रेम आत्मा को शरीर से अलग होने की लालसा करने से रोकता है? क्योंकि जैसे इस्राएल मिस्र की दासता से मुक्त होने और प्रतिज्ञात देश में प्रवेश करने के लिए लालायित था, वैसे ही हमें भी इस शरीर में भ्रष्टता के कष्ट से मुक्त होने और *'भीतरी परदे के पीछे'* प्रवेश करने के लिए, *जहाँ यीशु, हमारे अग्रदूत, हमारे लिए प्रवेश कर चुके हैं* (इब्रानियों 6, 19–20), अर्थात् स्वर्गीय यरूशलेम के आशीर्वादों के भंडार में। – अतः हमें संसार के व्यर्थता से घृणा करनी चाहिए, प्रचुर मात्रा में सद्गुण अर्जित करने चाहिए, और दिव्य खजानों से स्वयं को समृद्ध करना चाहिए – प्रार्थनाएँ, आँसू, शुद्धिकरण, ज्ञानोदय और वैराग्य, जो शाश्वत जीवन के मार्गदर्शक हैं। जहाँ तक भोजन-पान, वस्त्र और शरीर की अन्य सभी आवश्यकताओं का प्रश्न है, हमें

इनका उपयोग केवल उसी सीमा तक करना चाहिए जो परमेश्वर की आज्ञाओं के अनुसार जीने और काम करने के लिए आवश्यक हो।

१०. यदि हम अपना समय इसी प्रकार व्यतीत करें, तो हर दिन हमारे लिए एक उत्सव, हर दिन एक जश्न होगा। और भले ही अनगिनित दुख हम पर आ पड़ें, कुछ भी हमारे निर्मल विवेक पर दाग नहीं लगा पाएगा। लेकिन यदि, इसके विपरीत, हम द्वेष और ईर्ष्या में, क्रूरता और हर प्रकार की धोखाधड़ी में जीते हैं, तो, हाय! – हम हर दिन मृत्यु का सामना करेंगे, और न्याय आने से पहले ही न्याय और निंदा हो जाएगी। तब मृत्यु गर्जने वाले सिंह की तरह आएगी; और बेचारा आत्मा अपनी अनंत दुख को कैसे सहन करेगा? – क्योंकि लिखा है: *'परमेश्वर के घर से न्याय का आरंभ होना समय आ गया है; और यदि वह हम से आरंभ होता है, तो परमेश्वर के सुसमाचार के विरोधियों का क्या परिणाम होगा? और यदि धर्मी मुश्किल से बच निकलता है, तो दुष्ट और पापी कहाँ ठहरेंगे?'* (1 पतरस 4:17-18)। इसलिए हमें हमेशा चौकस और सतर्क, हमेशा साहसी और दृढ़ रहना चाहिए, *'हर समय प्रभु के काम में परिश्रमी रहो, यह जानते हुए कि प्रभु के सामने हमारा परिश्रम व्यर्थ नहीं है'* (1 कुरिन्थियों 15:58)।

11. जहाँ तक हमारे भाई सॉक्रेटिस का प्रश्न है, आप जानते हैं कि वह पूर्व से आया था, उसने अपना कर्तव्य पूरा किया और देरी के लिए क्षमा याचना की। हम उसे यहाँ एक सक्षम भाई के रूप में रखना चाहते थे। परन्तु चूंकि लिखा है: *'धन्य है वह जिसके वंशज सिय्योन में और उसके कुटुम्ब वाले यरूशलेम में हैं'*, इसलिए हमने उसे एक बार फिर वहाँ वापस भेजने का निर्णय लिया है, इस आशा में कि हम उसके द्वारा दया प्राप्त करें। और हमें इस बात की प्रसन्नता माननी चाहिए कि हमारे भाई-बंधुओं में से एक, पवित्र सिय्योन, जो सभी कलीसियाओं की माता है, में वहाँ के परम पवित्र पैट्रिआर्क द्वारा याजक नियुक्त किया गया है। ईश्वर कृपा करके उसे और हम सबको सुरक्षित रखे, और *'भलाई के हर उद्देश्य और विश्वास के हर काम को सामर्थ्य के साथ पूरा करे; ताकि हमारे प्रभु यीशु मसीह का नाम महिमा प्राप्त करे'* (2 थिस्स. 1:11-12)।

324. जब अदृश्य शत्रुओं द्वारा हमला किया जाए, तो हम उस में शरण लें जो हमें बचाने के लिए शक्तिशाली है; और वह हमारी रक्षा करेगा

324. 1) जब अदृश्य शत्रुओं द्वारा हमला किया जाता है, तो आइए हम उसी की ओर मुड़ें जो हमें बचाने के लिए शक्तिशाली है; और वह हमारी रक्षा करेगा। आइए हम केवल उसकी सेवा में दृढ़ रहें। – 2) यह आश्चर्य न करें कि बुरे विचार और वासनाएँ उत्पन्न होती हैं। यह आदम के पतन से उत्पन्न हुआ है। यद्यपि हम मसीह यीशु में नए बनाए गए हैं, यदि हम लापरवाह हैं, तो पुरानी प्रकृति फिर से सिर उठा लेती है। – 3) तथापि, परमेश्वर के संत, परमेश्वर की कृपा से, हर प्रकार के पापी विद्रोहों पर विजय प्राप्त कर चुके हैं। आइए हम उनके उदाहरण का अनुसरण करें। [4, 122]

12. *'प्रभु में और उसकी सामर्थ्य की शक्ति में मज़बूत हो जाओ; परमेश्वर का सम्पूर्ण हथियारबंद पहन लो, ताकि तुम शैतान की युक्तियों के विरुद्ध टिक सको'* (इफिसियों 6:10-11); क्योंकि वह सोता नहीं, बल्कि हमेशा हमारे विरुद्ध पहरा देता रहता है, और जब वह देखता है कि आत्माएँ बहादुरी से उसके विरुद्ध संघर्ष कर रही हैं तो और भी अधिक लगातार रहता है। इसलिए, जब वह हम पर आक्रमण करता है – क्योंकि वह दिन-रात आक्रमण करता है – तो हमें सतर्कता के साथ उसके विरुद्ध खड़ा होना चाहिए, उस एक की ओर मुड़ना चाहिए जो हमें पाप की मृत्यु से बचाने के लिए सामर्थी है, गंभीर प्रार्थना और गर्म आँसुओं के साथ, और शत्रु जल्द ही भाग जाएगा। क्योंकि भजन संहिता में लिखा है: *'अपनी संकट के दिन मुझे पुकार, और मैं तुझे उबाराऊँगा, और तू मेरी महिमा करना'* (भजन संहिता 49:15)। क्या शत्रु ने हमें घायल किया है? परन्तु प्रभु हमें चंगा करेंगे। क्या उसने हमें क्लेश दिया है? परन्तु जिसने समुद्र से कहा, *'शांत हो, स्तब्ध हो जा... और एक बड़ी शान्ति हो गई'* (लूका 4:39), वही हमारे भीतर के उथल-पुथल भरे विचारों को भी शान्त करेगा। – और परमेश्वर की कृपा कितनी महान है! हम उसे पुकारते ही हैं और वह—महाप्राज्ञ—पहले से ही दया और उदारता के साथ निकट होता है; वह प्रार्थना करने वाले की प्रार्थना स्वीकार करता है, दुख के बादल को दूर करता है, और अच्छे विचारों के माध्यम से हृदय को प्रकाश से भर देता है। – और क्या ऐसा कुछ है जो वह हमारे लिए नहीं करता?! वास्तव में, ऐसा हो ही नहीं सकता। क्योंकि यदि उन्होंने हमारे लिए स्वयं को मृत्यु तक—सलीब पर मृत्यु—समर्पित कर दिया, तो वह हमारे लिए सब कुछ क्यों नहीं कर सकते? अत; हम उनके प्रति पूर्ण समर्पित सेवा में दृढ़ रहें; हम कभी-कभार होने वाली गिरावटों से शीघ्र उठें; और हम तपस्या के क्षेत्र में पूरी लगन से प्रयास करें, यह जानते हुए कि हमारे परिश्रम के अंत में हमारे लिए मुकुट प्रतीक्षा कर रहे हैं। आओ हम पाप-स्वीकृति का भरपूर उपयोग करें, क्योंकि पाप-स्वीकृति पाप में गिरने के विरुद्ध एक लगाम है; आओ हम नम्रता बनाए

रखें, क्योंकि इसके द्वारा दुष्ट की सभी अग्नि-बाणें टूट जाती हैं; आओ हम विश्वास की रक्षा करें, क्योंकि '*विश्वास के बिना परमेश्वर को प्रसन्न करना असंभव है*' (इब्रानियों 11:6)।

13. शायद कुछ लोग आश्चर्यचकित हों कि हमारी उत्सुकतापूर्ण कोशिशों के बावजूद, हम अभी भी अनुचित विचारों से घिर जाते हैं? – लेकिन हम यह आदम के उल्लंघन के कारण सहते हैं। हम उसी में गिरे, और हमारी प्रकृति सुख के प्रेम से गंभीर रूप से पीड़ित हो गई है। परन्तु फिर, मसीह के अवतार में आने के द्वारा, पवित्र आत्मा के द्वारा पुनर्जन्म और नवीनीकरण के स्नान में शक्ति प्राप्त करके, यह अपनी मूल अवस्था में लौट आती है। फिर भी, एक बार बीमार पड़ने और पीड़ित होना सीख लेने के बाद, यदि हम सतर्क न रहें तो यह आसानी से पापपूर्ण भोग-विलास में वापस फिसल जाती है।

14. इसके अलावा, पवित्र पुरुषों ने स्वयं को परमेश्वर के भय और प्रेम से इतनी अच्छी तरह से मज़बूत किया कि वे न केवल अपनी दृढ़ता में स्थिर रहकर संतुष्ट थे, बल्कि उन्होंने दूसरों की भी मदद की – दुष्टात्माओं को भगाया और कई अन्य चमत्कार किए। – यद्यपि हम उनके जीवन-मार्ग से बहुत दूर हैं, फिर भी हम अपनी पूरी क्षमता से उनका अनुकरण करने का प्रयास करेंगे; और हे हमारे कृपालु ईश्वर, हमारी इस छोटी सी भेंट को उसी प्रकार स्वीकार करें, जैसे आप उनके महान पुण्यों को स्वीकार करते हैं, और उनके साथ हमें भी अपना राज्य प्रदान करने की कृपा करें।

325. जैसे साधारण यात्री, वैसे ही हम, पृथ्वी पर तीर्थयात्री जो अपने स्वर्गीय स्वदेश के लिए प्रयास कर रहे हैं, हमें यहाँ किसी भी चीज़ से आसक्त नहीं होना चाहिए, हमें खुद पर किसी भी चीज़ का बोझ नहीं डालना चाहिए, और को सीधे अपने लक्ष्य की ओर प्रयास करना चाहिए, उन अकथनीय आशीर्वादों से प्रेरित होकर जो वहाँ हमारा इंतज़ार कर रहे हैं, और उन भयावहताओं से प्रेरित होकर जो हमारा इंतज़ार कर रही हैं यदि हम वहाँ नहीं पहुँचते।

३२५. जैसे साधारण यात्री करते हैं, वैसे ही हमें भी, पृथ्वी पर तीर्थयात्रियों के रूप में जो अपने स्वर्गीय स्वदेश के लिए प्रयासरत हैं, किसी भी चीज़ से आसक्त नहीं होना चाहिए, स्वयं को किसी भी बोझ से नहीं दबाना चाहिए, और सीधे अपने लक्ष्य की ओर प्रयासरत रहना चाहिए, उन अकथनीय आशीर्वादों से प्रेरित होकर जो वहाँ हमारी प्रतीक्षा कर रहे हैं, और उन भयावह परिस्थितियों से भी जो हमें वहाँ न पहुँचने पर झेलनी पड़ेंगी। [4, 123] साधारण यात्रियों को एक-दूसरे को आगे बढ़ने के लिए प्रेरित करना चाहिए और यात्रा जारी रखने के लिए एक-दूसरे को प्रोत्साहित करना चाहिए, न तो दाहिनी ओर और न ही बाईं ओर मुड़कर, बल्कि राजमार्ग पर आगे बढ़ते रहना चाहिए; और सिर्फ इतना ही नहीं, बल्कि उन्हें संयम से खाना, पीना और सोना चाहिए, ताकि अपने आहार को संतुलित रखकर वे अपने लिए यात्रा की कठिनाइयों को यथासंभव हल्का कर सकें। – आप स्वयं ही देख सकते हैं कि यह उदाहरण क्या दर्शाता है – अर्थात्, कि हम भी इस जीवन में यात्री हैं, जो इसके मार्ग से गुज़र रहे हैं, जो अनगिनत कठिनाइयों से भरा है – और यह कि हमें भी अपने प्रयासों में एक-दूसरे को सांत्वना और प्रेरणा देनी चाहिए, बिना भटके चलना चाहिए, और भोजन में संयम बरतना चाहिए, पीने और सोने में संयम बरतें, ताकि इनके बोझ तले दबकर हम अपनी यात्रा जारी रखने के लिए बहुत सुस्त न हो जाएँ, और न ही इस सांसारिक जीवन के सुखों में लौट आएँ; क्योंकि साधारण यात्री भी पीछे नहीं मुड़ते और न ही एक तरफ या दूसरी तरफ मुड़ते हैं, बल्कि एक ही मार्ग पर चलते हैं, अपने विश्राम के लिए निर्धारित स्थान तक पहुँचने का प्रयास करते हैं। हे, हमारे विश्राम का स्थान कितना सुंदर है! और वहाँ हमारा प्रवास कितना आनंदमय है! यह अस्थायी नहीं, बल्कि शाश्वत है, और नश्वर आशीर्वादों से नहीं, बल्कि अक्षय आशीर्वादों से परिपूर्ण है – जहाँ आनंद, शांति और अनवरत उत्सव है। सुसमाचार में प्रभु इस बारे में क्या कहते हैं: '*मेरे पिता के घर में बहुत से रहने के स्थान हैं; यदि ऐसा न होता, तो क्या मैं तुम से न कहता? मैं तुम्हारे लिए जगह तैयार करने जाता हूँ। और यदि मैं जाकर तुम्हारे लिए जगह तैयार कर लूँ, तो मैं फिर आकर तुम्हें अपने यहाँ ले जाऊँगा, ताकि जहाँ मैं हूँ वहाँ तुम भी होओ।' और मैं जहाँ जा रहा हूँ, वह तुम जानते हो, और मार्ग भी तुम जानते हो*' (यूहन्ना 14:2-4)। देखो, यह कितना अनुपम और अकल्पनीय वादा है! तो फिर कौन नहीं उठेगा, कौन जल्दी नहीं करेगा, कौन उन शाश्वत निवासों तक पहुँचने के लिए लालायित नहीं होगा? – धन्य दाऊद ने भी इनके लिए तरसकर गाया: '*सेनाओं के हे यहोवा, तेरे निवास कितने सुन्दर हैं! हे यहोवा, मेरा प्राण तेरे आँगनों के लिए तरसता और मुरझा जाता है*' (भजन संहिता 83:2-3)। ये ही तो सचमुच वे लालायित रहने की जगहें हैं। परन्तु यहाँ हम जैसे निर्वासन में हैं; और हमारा यहाँ का प्रवास लंबा नहीं है। और वास्तव में, आने वाले युग की तुलना में यह पूरा वर्तमान युग केवल एक दिन के समान है। तो फिर हम संसार से मित्रता क्यों करें? वर्तमान पर आश्चर्य क्यों करें? अपनी दृष्टि क्यों मोड़ें—केवल इस या उस वस्तु की ओर नहीं, बल्कि स्वर्ग, पृथ्वी और समुद्र की ओर, सूर्य, चंद्रमा और तारों की ओर, और जो कुछ भी दिखाई देता है, उस सब

की ओर? क्योंकि हम व्यर्थ में किसि चीज़ से चिपके रहेंगे, जब हम थोड़ी ही देर में इसे सब पीछे छोड़कर चले जाएँगे? – *'एक बात मैंने* प्रभु से *माँगी है,'* संत दाऊद कहते हैं, 'और मैं उसी की खोज करूँगा: *"कि मैं अपने जीवन के सभी दिनों प्रभु के घर में वास करूँ ताकि मैं प्रभु की शोभा देखूँ और उसके पवित्र मंदिर का दर्शन करूँ"* (भजन संहिता 26:4); जो कोई इसमें प्रवेश करने के योग्य समझा जाता है, वह उस दुखद दिन से बचाया जाता है, जिसके बारे में एक भविष्यवक्ता कहता है: *'तुम्हारे लिए यहोवा का यह दिन क्यों होगा? क्योंकि यह प्रकाश नहीं, बल्कि अंधकार होगा'* (आमोस 5:18)। परन्तु धन्य प्रेरित ने इसे क्रोध का दिन भी कहा, यह कहते हुए: *'तुम क्रोध के दिन और परमेश्वर के न्याय के प्रकट होने के दिन के लिए अपने लिए क्रोध जमा कर रहे हो: वह हर एक को उसके कर्मों के अनुसार बदले देगा'* (रोमियों 2:5–6)। हमारे अपने अनुभव से एक उदाहरण देकर उस दिन की यातना का कम से कम कुछ अंदाज़ा देने के लिए, आइए हम उस व्यक्ति को याद करें, जो कुछ समय पहले यहाँ आया था, जो एक दानव के वश में हो जाने के कारण अपनी आत्मा में ही यातना भोग रहा था, उसका पूरा शरीर जल रहा था; कैसे वह दिन-रात पुकारता रहा, और उसे किसी भी चीज़ में कोई सांत्वना या राहत नहीं मिली। क्या आप सोचते हैं कि इस आदमी के लिए इतना कष्ट सहना आसान था? – निश्चित रूप से नहीं। फिर भी, जो कुछ आने वाला है, उसकी तुलना में यह तो केवल एक सपना है। तो फिर हम बाद वालों को - न बुझने वाली आग, कभी न सोने वाले कीड़ा, और अन्य अनगिनत शाश्वत यातनाओं के समूह को कैसे सहन करेंगे? परन्तु हे प्रभु, तेरी दया से, तेरे संतों और हमारे धन्य पिता की प्रार्थनाओं के द्वारा, यह अनुग्रह कर कि हम इन सब से छुड़ाए जाएँ, और विश्वासियों को प्रतिज्ञा की गई आशीषें प्राप्त करें।

326. शत्रु के जालों से शरण कहाँ है? सभी पापपूर्ण चीजों से, दुष्ट विचारों और इच्छाओं से दूर रहने में

326. शत्रु के फंदों से बचाव कहाँ है? सभी पापपूर्ण चीजों, दुष्ट विचारों और इच्छाओं से दूर रहने में। – और हम ऐसा ही करेंगे, आंतरिक शांति के आनंद और भावुक उथल-पुथल की विनाशकारी प्रकृति से प्रेरित होकर। [4, 124] इस भय से कि हम अगारियों के हाथों में पड़ जाएँ, हम अपनी पूर्व निवास-स्थली से भाग आए और अब यहाँ रहते हैं। पर अदृश्य शत्रुओं के हाथों में पड़ने का भय हमें कितना अधिक होना चाहिए? और हमें उनसे कितनी अधिक दूर, और किसि अधिक सुरक्षित स्थान पर भागना चाहिए? तो फिर, यह पलायन किसमें निहित है? – पाप से खुद को दूर करने में, जिससे शैतान एक तलवार की तरह, हर संभव तरीके से आत्मा को मारने की कोशिश करता है। – इसलिए हमें इससे बहुत लगन से बचना चाहिए, और वास्तव में अपने विचारों तक में भी: क्योंकि पाप विचारों से शुरू होता है, फिर विचारों से शब्दों में, और शब्दों से कर्मों में बदल जाता है। अस्वस्थ विचारों में फँसना मुश्किल है: और जब ऐसा होता है तो आपको पता भी नहीं चलता। – लेकिन जैसे ही हमें पता चले कि हम उन विचारों से बहक रहे हैं, तो हमें प्रार्थना, आँसुओं, हार्दिक , और ईश्वर के भय के माध्यम से, यथाशीघ्र उनसे छुटकारा पाने के लिए तत्पर होना चाहिए; क्योंकि यदि हम उन्हें अपने भीतर बने रहने दें, तो वे आत्मा की मृत्यु का कारण बन सकते हैं - और यह हर क्षण हो सकता है। क्योंकि हमारे भीतर एक युद्ध निरंतर चलता रहता है - एक मौन युद्ध; और हम ऊपर से मिली सहायता के साथ, मन के पाप के प्रति अथक और निरंतर प्रतिरोध के अलावा हार से बच नहीं सकते। क्या हम यह नहीं देखते कि इन पिछले तीन दिनों में समुद्र में लहरें कैसे उफनी हैं? भावनाओं का उथल-पुथल भी ऐसा ही है; केवल यह कहीं अधिक विनाशकारी है, क्योंकि आत्मा का जहाज-दुर्घटना और भी अधिक विनाशकारी है। लेकिन समुद्र के उथल-पुथल का कारण ईश्वर है, जो उचित समय पर हमारे लाभ के लिए समुद्र पर हवाएं भेजता है; जबकि आत्मा के उथल-पुथल का कारण हम स्वयं हैं। और हमारे लिए यह बेहतर है, कि किसी बंदरगाह में होने पर, हम शांति से रहें और अपनी वासनाओं के द्वार न खोलें; क्योंकि जैसे ही हम उन्हें खोलते हैं, दुर्भावना की आत्माएँ तूफानी हवाओं की तरह भीतर आ जाएँगी, और हमारे भीतर एक बड़ा उथल-पुथल मच जाएगा; और जब तक हम इस उथल-पुथल को दबाने के लिए शीघ्रता नहीं करते, तब तक हमारा उद्धार नहीं होगा। हमारे लिए ऐसी उथल-पुथल में पड़ने, ऐसी बेचैनी झेलने, और इस डर में जीने की क्या ज़रूरत है, मानो हमारा जहाज टूट जाएगा? – क्या यह बेहतर नहीं है कि हम शांति और सुकून का आनंद लें, बजाय इसके कि हम जानबूझकर अपने ऊपर एक ऐसी दुर्भाग्य लाएं जिसे आसानी से टाला जा सकता है? – क्या हम उन लोगों को मूर्ख नहीं कहते, जो समुद्र में तूफान के दौरान बंदरगाह छोड़कर लहरों में डूबने के खतरे में खुद को डाल देते हैं? फिर भी, जब हम अपने आपको वासनाओं के कोलाहल में झोंक देते हैं, तो हमें खुद को अतुलनीय रूप से अधिक मूर्ख समझना चाहिए। क्या बुरी वासना, जो हमारे हृदयों में साँस लेती है, हमारे भीतर एक भयानक कोलाहल नहीं मचा देती? क्या यह हमें इधर-उधर नहीं झकझोरती, मानो हमें पूरी तरह से डुबाकर गहराई में ले जा रही हो? क्या ईर्ष्या भी उसी तरह हमें होश खोने पर मजबूर नहीं कर देती, जो हृदय और शरीर दोनों को घायल करती है? क्या अविश्वास भी इसी प्रकार आत्मा को अँधकारमय नहीं कर देता, उसे सुस्त और दुर्बल नहीं बना देता? और क्या हर कोई अन्य जुनून भी इसी तरह एक व्यक्ति को उसकी स्वाभाविक अवस्था से नहीं हटा देता, और उसे पूरी तरह से मूर्ख नहीं बना देता? इसलिए,

आइए हम इन विनाशकारी भावों से बचें, कहीं ऐसा न हो कि हमारे बारे में भी वही कहा जाए जो परमेश्वर ने जलप्रलय से पहले के लोगों के बारे में कहा था: *'मेरा आत्मा मनुष्य के साथ सदा विवाद नहीं करेगा, क्योंकि वह भी देह है'* (उत्पत्ति 6:3)। ईश्वर ने उन्हें 'मांस' कहा, यह इसलिए नहीं कि उनके पास भौतिक शरीर था, क्योंकि इस अर्थ में स्वयं ईश्वर भी *'वचन देहधारी हुआ'* (यूहन्ना 1:14); परन्तु उनके सांसारिक तर्क के कारण, जो अश्लील कामनाओं में डूबे हुए थे और ईश्वर तक आरोहण करने की शक्ति और प्रवृत्ति दोनों से वंचित थे। – जहाँ तक हमारा प्रश्न है, वचनों के अनुसार: *'हमारी नागरिकता स्वर्ग में है'* (फिलि. 3:20), अपने आप को परमेश्वर को अर्पित कर चुके होने के नाते, आइए हम और भी सुनें: *'वे संसार के नहीं हैं, जैसे कि मैं संसार का नहीं हूँ'* (यूहन्ना 17:14)। क्या कोई ऐसी चीज़ और भी धन्य हो सकती है, न केवल आने वाले युग के संबंध में बल्कि वर्तमान युग में भी, जो नीच इच्छाओं से मुक्त होने से, और शरीर द्वारा शासित न होकर आत्मा द्वारा निर्देशित होने से बढ़कर हो? यही आनंद है, यही मधुरता है, यही कल्याण है, यही एक दैवीय जीवन शैली है। जो कोई भी ऐसा है, वह बाहरी रूप से दुनिया के अन्य लोगों की तरह ही रहता है; फिर भी आत्मा में वे मुकुट धारण करने वालों से अधिक योग्य हैं; वे दिव्य विशिष्टताओं से सुसज्जित, यात्रा के लिए हमेशा तैयार और मृत्यु से न डराने वाले, संसार के स्वामी हैं। आइए हम स्वयं भी अपनी पूरी क्षमता से ऐसे बनने का प्रयास करें: क्योंकि यह संभव है यदि हम इसे पूरे हृदय से चाहें। और ऐसे बन जाने पर, हम यहाँ अपने पूरे जीवन में एक आनंदमय मानसिक स्थिति का आनंद लेंगे, चाहे हमें कोई भी बाहरी दुख क्यों न झेलना पड़े; और आने वाले युग में हम सभी संतों के साथ स्वर्ग के राज्य के वारिस बनेंगे।

327. वह निश्चित आज्ञाकारिता का आग्रह करते हैं: उदाहरणों के माध्यम से यह प्रदर्शित करते हुए कि आज्ञाकारिता कितनी लाभकारी है, और अवज्ञा कितनी हानिकारक है

327. वे निश्चित आज्ञाकारिता के लिए प्रेरित करते हैं: 1) उदाहरणों के माध्यम से यह प्रदर्शित करके कि आज्ञाकारिता कितनी लाभकारी है, और अवज्ञा कितनी विनाशकारी है; – 2) भाईचारे को एक शरीर के रूप में प्रस्तुत करके, जिसमें प्रत्येक अंग अपना-अपना कार्य करता है – और इस कारण शरीर जीवित रहता है; और इससे यह निष्कर्ष निकालते हैं: ऐसा ही करो, और सब कुछ ठीक हो जाएगा। [4, 125]

15. उस व्यक्ति के न्याय के भय से जिसने अपनी प्रतिभा को जमीन में गाड़ दिया था, जिससे प्रभु ने कहा: *'हे दुष्ट और आलसी सेवक... तुम्हें मेरी चांदी को साहूकारों के पास सौंप देना चाहिए था, और जब मैं लौटता तो मुझे अपनी चांदी ब्याज सहित मिल जाती'*, मैं इन संक्षिप्त निर्देशों को देने के लिए विवश हूँ; और यह आप पर है, अच्छे प्रबंधकों के रूप में, इन शब्दों को व्यवहार में लाना, जो आप परमेश्वर की कृपा से, अपनी अच्छी आज्ञाकारिता के द्वारा करते हैं। – हालाँकि, आप में से कुछ ऐसे हैं जो न केवल उनके सुपुर्द किए गए धन को बढ़ाने में विफल रहते हैं, बल्कि जो उनका अपना है उसे भी बर्बाद करने की कगार पर हैं। – तो, ये लोग कौन हैं? – ये वे हैं जो आज्ञा मानने से इनकार करते हैं, और इसके लिए केवल एक ही बहाना देते हैं: *'मुझे माफ कर दो'*। – तुम क्या कह रहे हो, भाई? तुमने मृत्यु तक आज्ञाकारिता का वादा किया था, और अब तुम उस काम से पलायन कर रहे हो जिसके तुम परमेश्वर की कृपा से सक्षम हो। लेकिन जब आप कहते हैं, 'मुझे समुद्र पार करने में डर लगा', तो यह अविश्वास से उत्पन्न होता है; वहाँ, *'आपने उस जगह डर महसूस किया जहाँ कोई डर नहीं है'* (भजन संहिता 13:5)। क्योंकि यदि आप आज्ञाकारिता में विश्वासयोग्य रहे होते, तो आप न केवल जहाज पर समुद्र पार कर चुके होते, बल्कि, अपने कपड़े उतारकर, आप नंगे पानी के पार तैर गए होते, उस अविस्मरणीय भिक्षु की नकल करते हुए जो अपने पिता की आज्ञा पर भरोसा करके, एक उफनती नदी को पार करने से नहीं डरता था, और उसे पार करने के बाद, बिना किसी चोट के निकल आया था, जो इसे देखने वालों के लिए आश्चर्य का कारण बना। आज्ञाकारिता जंगली जानवरों को भी वश में कर लेती है। इसका प्रमाण है , जिसने अपने बड़े भाई की आज्ञा से गेहेना को बाँध दिया। आज्ञाकारिता मृतकों में भी चमत्कार करती है: जैसा कि अक्काकियस द्वारा पुष्ट किया गया, जिसने अपनी कब्र से पुकार लगाई। लेकिन इन दोनों में से किसी के बारे में बात क्यों करें? स्वयं परमेश्वर के एकलौते पुत्र ने, *'मृत्यु तक, यहाँ तक कि क्रूस पर मृत्यु तक आज्ञाकारी होकर'*, संसार के उद्धार का कार्य पूरा किया। आज्ञाकारिता के ऐसे ही अद्भुत कार्य और फल हैं। क्या आप अब अवज्ञा के विनाशकारी परिणामों के बारे में जानना चाहते हैं? – आदम को याद करें, जिसने परमेश्वर की अवज्ञा करके और निषिद्ध फल का स्वाद चखकर, संसार में मृत्यु को लाया; शाऊल को याद करें, जिसने पवित्र शमूएल की अवज्ञा करके, न केवल अपना राज्य बल्कि गिल्बोई की पहाड़ियों में अपना जीवन भी खो दिया; और उस ईश्वर के मनुष्य को याद करें जो एक झूठे नबी के धोखे में आकर आज्ञा का उल्लंघन कर बैठा, और इसलिए उसे सिंहों के सामने खाने के लिए फेंक दिया गया। और धन्य प्रेरित पतरस, ने श्रद्धा के कारण प्रभु को अपने पाँव धोने की अनुमति देने से इनकार कर दिया था, क्या उसने यह नहीं सुना: *'यदि मैं तुझे धोऊँ नहीं, तो मुझसे तेरा कोई भाग नहीं'* (यूहन्ना 13:8)। इसी

प्रकार, संत यूथमीयस के जीवन में, क्या वह गड़रिया जो—अपने द्वारा पवित्र माने जाने वाले कारणों से—आज्ञा मानने से इनकार कर दिया, तुरंत ही उस राक्षस, उसकी सास के *'झाग' का* शिकार नहीं हो गया? उन पर यही न्याय है जो आज्ञाकारिता से इनकार करते हैं, विद्रोहियों पर: *'क्योंकि हर एक विद्रोही* चेला *भी फूटता है'*; *'प्रभु उसके विरुद्ध एक निर्दयी दूत भेजेगा'* (नीतिवचन 17:11)।

16. सामान्यतःकहें *तो,* हम *मसीह में एक शरीर के कई अंग हैं, और एक दूसरे के सदस्य हैं* (रोमियों 12:5): एक आँख की जगह लेता है, दूसरा कान की; एक नाक की, और दूसरा जीभ की; एक हाथ की, और फिर एक पैर की। यदि सभी अंग अपना-अपना काम न करें, बल्कि झगड़ने लगें, आँख सुनने की, कान सूंघने की, नाक बोलने की, जीभ महसूस करने की और हाथ चलने की माँग करने लगें, तो क्या पूरा शरीर अस्त-व्यस्त नहीं हो जाएगा और बिखर नहीं जाएगा? यदि ऐसा है, तो प्रत्येक व्यक्ति अपना-अपना कर्तव्य पूरा करे, और जो वरदान उन्हें परमेश्वर से मिला है, उसे सामान्य भलाई के लिए उपयोग करे, यह ध्यान में रखते हुए कि हमारी तकदीर परमेश्वर के हाथ में है। यह इसलिए नहीं है कि कोई समुद्र में नौकायन करता है कि उसका अंत वहीं होगा, न ही इसलिए कि कोई सूखी भूमि पर रहता है कि मृत्यु उसका इंतजार कर रही है; बल्कि जैसे हमारे दयालु ईश्वर ने, संसार की नींव से, प्रत्येक व्यक्ति के लिए उनके मृत्यु का समय, स्थान और तरीका निर्धारित किया है, वैसे ही प्रत्येक व्यक्ति का अंत आएगा। मैंने यह बात उन लोगों के लिए नहीं कही है जिनके बारे में मैं बोल रहा हूँ—क्योंकि मैंने तो उनकी विनम्रता के लिए उन्हें पहले ही स्वीकार कर लिया है—बल्कि उन सभी के लिए है जो सुन रहे हैं, ताकि हम सावधानी से अपने आप का ध्यान रखें, और जो भी व्रत हमने ईश्वर और उनके चुने हुए स्वर्गदूतों के सामने लिए हैं, उन्हें हम बिना हिचकिचाए, लगन से पूरा करें, भले ही आज्ञा में कोई घातक खतरा ही क्यों न हो। इस प्रकार धर्मपितागण आज्ञा देते हैं, और सबसे ऊपर महान बेसिल। इस प्रकार जीवन जीने से, हम पाप की मृत्यु के शिकार नहीं होंगे, बल्कि धार्मिकता में जीवित रहेंगे और स्वर्ग के राज्य के योग्य माने जाएँगे।

328. अवतार की व्यवस्था के अनुसार, मृत्यु ईसाइयों के लिए एक आनंद है यदि उन्होंने उसका सामना करने के लिए खुद को तैयार कर लिया है

328. 1) ईश्वर की अवतार संबंधी योजना के अनुसार, मृत्यु ईसाइयों के लिए एक खुशी है यदि उन्होंने उसका सामना करने के लिए खुद को तैयार कर लिया है। – 2) इसलिए आइए हम खुद को वैसे ही तैयार करें जैसे हमें करना चाहिए। [4, 126]

17. मैं हाल ही में कुछ अस्वस्थ महसूस कर रहा हूँ: मेरा हृदय परेशान रहा है, और मुझे लगा कि मैं आपसे अलग हो जाऊँगा। – तो फिर, मुझे, एक दीन मनुष्य को, और कितना समय जीना होगा? आप देखते हैं कि मेरी वृद्धावस्था पहले ही आ चुकी है, और मेरे समकालीन गुजर चुके हैं; और उचित समय पर, मेरा अंत मेरी प्रतीक्षा कर रहा है। – तो फिर? क्या हमें इस पर शोक करना चाहिए? हम ऐसा न करें। जो लोग देह के अनुसार जीते हैं, वे शोक करें, यदि वे चाहें, जब वे अपनी पत्नियों, बच्चों, दासों, संपत्ति और इस जीवन के सभी सुखों से अलग होते हैं, जिनसे वे मोहित हैं। परन्तु हमारे लिए, जिनके लिए संसार को सूली पर चढ़ा दिया गया है और जो केवल क्रूस से घिरे हुए हैं, संसार का परित्याग करने और आज्ञाकारिता के प्रति अपनी प्रतिबद्धता के कारण, मृत्यु का रहस्य दुख का कारण नहीं, बल्कि आनंद का स्रोत होना चाहिए। और मैं क्या कह रहा हूँ—'हमारे लिए'? सभी ईसाइयों को अपनी मृत्यु को आनंद के साथ देखना चाहिए। हमारे प्रभु यीशु मसीह के देह में आने से पहले, मृत्यु—जो आदम के अपराध के द्वारा हमारी जाति पर राज्य कर रही थी—पवित्र लोगों के लिए भी भयानक और घृणित थी। लेकिन मसीह के बाद, जो सभी का जीवन है, *'सब के लिए मृत्यु का स्वाद चखकर'* (इब्रानियों 2:9), उन्होंने हमारे लिए *'परदे के पार, अर्थात् अपने ही शरीर के द्वारा, एक नया और जीवित मार्ग* खोला और *'नवीनीकृत' किया'* (इब्रानियों 10:20), जैसा कि लिखा है: *'मृत्यु विजय में निगल ली गई है'* (1 कुरिन्थियों 15:54), – जब हम मरते हैं, तो हमें अब नरक के राज्य में नहीं डाला जाता, बल्कि स्वर्ग के राज्य में उठाया जाता है, और हमें *'अंधकार और मृत्यु की छाया में* नहीं *डाला जाता'* (भजन संहिता 87:7), बल्कि हम अगम्य प्रकाश में और उस अनंत जीवन में आरोहण करते हैं जिसका परमेश्वर ने अपने प्रेम करने वालों से वादा किया है। इस प्रकार, मृत्यु स्वयं में अब डरने वाली कोई बात नहीं है, बल्कि इसे आनंद के साथ स्वागत करने योग्य है—बशर्ते, बेशक, कि हम अपने हृदयों की तैयारी के माध्यम से इसके लिए तैयार हों। – क्योंकि इसके बिना, यह अभी भी एक भयानक संभावना है यदि, हमारे प्रस्थान के समय, हम खुद को बीते हुए वर्षों को पीछे बुलाते और अच्छे कर्म करने के लिए जीवन के और दिनों की तलाश करते हुए पाते हैं। यह भयानक और विनाशकारी है, क्योंकि ऐसी स्थिति में फँसा हुआ व्यक्ति हृदय से व्यथित होगा और पूर्ण विनाश में गिर जाएगा, और वह अच्छे कर्मों के पुरस्कार की ओर नहीं, बल्कि पापों के दंड की ओर जाएगा। ओह, उसे क्या भयानक दृश्य देखने को मिलेगा!

18. कहीं ऐसा न हो कि हम भी उसी भाग्य को भुगतें, मैं आपको याद दिलाता हूँ और विनती करता हूँ: आइए हम स्वयं को एक धन्य प्रस्थान के लिए हमेशा तैयार रखें, हर दिन को अपने जीवन का अंतिम दिन मानते हुए, जैसा कि संत एंथनी हमें सिखाते हैं? क्योंकि यदि हम इस प्रकार कार्य करने का संकल्प लेते हैं, तो हम कभी भी अनियंत्रित, लापरवाह, आलसी, सुस्त, वाद-विवाद करने वाले, विद्रोही, असंयमी या हास्यास्पद नहीं होंगे; परन्तु इसके विपरीत, हम आज्ञाकारी, संयमी, पश्चातापी, शुभ-संकल्पी, नम्र, शांतिप्रिय, ईमानदार, निर्दोष और हर अच्छे काम के लिए तैयार रहेंगे; संतों के उदाहरण का अनुसरण करते हुए, जिन्होंने इस प्रकार जीवन जिया, और जिन्हें प्रतिज्ञा किए गए स्वर्गीय आशीर्वादों को प्राप्त करने के लिए योग्य समझा गया। – मैंने यह सब इस लिए लिखा है, ताकि न केवल आपको बल्कि स्वयं को भी भलाई में दृढ़ करूँ, जिससे हम अपने प्रस्थान की ऐसी तैयारी में अपना जीवन जीकर, प्रस्थान के समय भय और कम्पन से व्याकुल न हों, बल्कि दाऊद के साथ आनन्द से पुकार उठें: *'हे मेरी आत्मा, अपने विश्राम में लौट आ, क्योंकि यहोवा ने तेरे पर अनुग्रह किया है'*; और: *'मैं जीवितों के देश में यहोवा के साम्हने ग्रहणयोग्य होऊँगा'* (भजन संहिता 114:6, 8)। परमेश्वर हम सभी को यह अनुग्रह प्रदान करें।

329. अपनी इच्छा को वश में करना ही सबसे बड़ा कार्य है, जो मसीह-सदृश और प्रेरितों जैसा है, यद्यपि अब हर कोई इसकी महानता को नहीं पहचानता।

329. अपनी इच्छा को वश में करना सबसे बड़ा पराक्रम है, जो मसीह और प्रेरितों का अनुकरण कराता है, यद्यपि आज हर कोई इसकी महानता को नहीं पहचानता। [4, 128] शोक करने की प्रेरणा सद्गुणहीन लोगों को बाध्य करती है, और साथ ही उन्हें अपनी कमजोरियों का उपचार करना सिखाती है। क्योंकि सद्गुण की कमी पर यह शोक ही आत्मा को अनायास ही आत्म-सुधार की ओर उन्मुख कर देता है। *'क्योंकि* जैसा प्रेरित कहते हैं, *'परमेश्वर के भय से होने वाला शोक उद्धार के लिए पश्चाताप उत्पन्न करता है'* (2 कुरिन्थियों 7:10)। लेकिन आइए विचार करें: वह क्या है जो हमें दुख पहुँचाता है? क्या यह कि हमारे भीतर अस्वास्थ्यकर विचार उठते हैं और एक शत्रु सेना की तरह, हमारी आत्मा पर घेरा डालते हैं? – फिर भी लिखा है: *'यद्य सेना मेरी ओर डेरा डाले, तौभी मेरा हृदय न डरेगा; यद्युद्ध मेरी ओर उठे, तौभी मैं उसी पर भरोसा रखूँगा'* (भजन संहिता 26:3)। या क्या यह *है* कि आज्ञाकारिता का जुआ भारी है? – फिर भी यह भी लिखा है: *'मनुष के लिये जवानी में जुआ उठाना भला है'* (विलाप 3:27); और फिर: *'मेरा जुआ कोमल है, और मेरा बोझ हल्का है'* (मत्ती 11:30)। या क्या यह है कि आज्ञाकारिता के जुए के अधीन यह जीवन किसी को अपना कुछ भी रखने की अनुमति नहीं देता? लेकिन यहाँ प्रेरित का वचन है: *'हमने सब कुछ छोड़कर आपका अनुसरण किया है: तो फिर हमारे लिए क्या होगा?'* (मत्ती 19:27)। – और उन्हें एक ऐसा वादा दिया गया, जो जितना भव्य है उतना ही विस्मयकारी भी है। – और क्या हमने भी, उनके समान, सब कुछ पीछे नहीं छोड़ दिया और प्रभु के पदचिन्हों पर नहीं चले? क्या एक ने अपने माता-पिता को नहीं छोड़ा? और दूसरे ने अपने भाइयों और बहनों को? एक ने अपनी पत्नी और बच्चों को, दूसरे ने अपने घरों और खेतों को? और उन सभी ने – जो सबसे कीमती है – अपनी इच्छा और अपनी इच्छाओं को – जिसे मनुष्यों के लिए पूरा करना सबसे कठिन है। क्योंकि आप मुझे कोई भी कठोर उपवास या जागरण, या खुले में सोना, या स्नानागार से परहेज़ करना, या किसी स्थान का सुनसान होना, या हमारी किसी अन्य भक्तिपूर्ण प्रथा का नाम बताइए—ये सभी चीजें अपनी इच्छा से की जाती हैं। जो कुछ अपनी इच्छा से किया जाता है, भले ही वह अपने आप में कठिन हो, जब कोई ऐसा चाहता है तो वह आसानी से पूरा हो जाता है; लेकिन जो कार्य अपनी इच्छा को त्यागकर किया जाता है, वह यद्यपि स्वभाव से आसान है, परन्तु उसे बड़ी कठिनाई से पूरा किया जाता है। इस प्रकार के कार्य को पवित्र पिता 'रक्त-स्राव' कहा करते थे; और यह केवल उसी का लक्षण है जो वास्तव में एक शिष्य है, और जो प्रेरित के साथ यह कह सकता है: *'अब मैं नहीं जीता, बल्कि मसीह मुझ में रहता है'* (गलातियों 2:20)। क्योंकि जिस हद तक वह अपनी इच्छा से नहीं जीता, उसी हद तक, मठाधीश की इच्छा के द्वारा, वह परमेश्वर के लिए जीता है, और उस की अनुकरण करता है जिसने कहा: *'मैं स्वर्ग से इसलिये नहीं उतरा कि अपनी इच्छा करूँ परन्तु उस पिता की इच्छा करूँ जिसने मुझे भेजा'* (यूहन्ना 11:38)। क्या आप हमारे जीवन के मार्ग की महानता देखते हैं? क्या यह मसीह के समान नहीं है? – क्या यह प्रेरितों के समान नहीं है? या क्या मैं यह कहकर केवल आपको खुश कर रहा हूँ? – नहीं; सत्य स्वयं मेरे शब्दों की ईमानदारी की गवाही देता है। यदि लोग इस प्रकार जीने वालों की प्रशंसा नहीं करते हैं, तो उनकी महिमा किसी भी तरह से कम नहीं होती; क्योंकि परमेश्वर वैसा नहीं देखता जैसा मनुष्य देखता है। लेकिन परमेश्वर का न्याय है, और मनुष्य का; और इस संसार में जो तुच्छ समझे जाते हैं, फिर भी महान प्रतीत होते हैं, वे हिसाब के दिन सभी से अधिक महिमामय सिद्ध होंगे, जैसा लिखा है: *'जो पहले हैं, वे पीछे होंगे, और जो पीछे हैं, वे पहले होंगे'* (मत्ती 19:30)। – इसलिए, आनंदित हो और काँपो: पहले, परमेश्वर के वरदान के कारण, और दूसरे, मन की चंचलता के कारण, क्योंकि हम हमेशा एक जैसे नहीं रहते। क्यों *'आओ हम एक दूसरे को प्रेम और भले कामों*

में प्रोत्साहित करें (इब्रानियों 10:24), अपनी इच्छा के दमन के बोझ तले दबे बिना—जो इस मामले का मुख्य बिंदु है—और अपने कर्तव्यों के पालन में सुस्त हुए बिना, बल्कि उत्साह से प्रेरित होकर, एक दूसरे का समर्थन करते हुए, एक दूसरे के बोझ उठाते हुए, भाइयों के रूप में, एक मन वाले लोगों के रूप में, सहकर्मियों के रूप में। इस प्रकार दिन-प्रतिदिन प्रयास करके और अपना मार्ग पूरा करके, आप निस्संदेह, जैसा कि मैं अच्छी तरह जानता हूँ, महिमा का न कभी मुरझाने वाला मुकुट प्राप्त करेंगे।

330. अदृश्य आध्यात्मिक लड़ाई में, आशा के साथ लड़ी जाने वाली दुश्मन के खिलाफ एक निडर और उत्साही लड़ाई, हमेशा हावी रहती है: दुश्मन ऐसे लोगों से भाग जाते हैं

330. 1) अदृश्य आध्यात्मिक लड़ाई में, आशा से प्रेरित दुश्मन के खिलाफ एक निडर और उत्साही संघर्ष, हमेशा हावी रहता है: दुश्मन ऐसे लोगों से भाग जाते हैं। – 2) विधर्म के खिलाफ लड़ाई में, विधर्मी लोगों के साथ मेलजोल नहीं करना चाहिए या उनका नाम लेकर उल्लेख नहीं करना चाहिए: जिसे मैंने मना किया है। [4, 129]

1. यद्यपि मैं वाणी में दुर्बल हूँ, जैसे मैं कर्म में हूँ, फिर भी यह मेरा कर्तव्य है कि मैं आपको सांत्वना दूँ और आध्यात्मिक रूप से प्रेरित करूँ, जहाँ तक मेरी शक्ति की अनुमति है। क्योंकि यदि दृश्यमान शत्रुओं से लड़ने वालों को अपने साथियों से प्रोत्साहन की आवश्यकता होती है, तो आप, जो अदृश्य शत्रुओं से युद्ध कर रहे हैं, को तो और भी अधिक आवश्यकता है कि आपको उत्साहवर्धक शब्दों से अभिषिक्त किया जाए और आत्मा में ऊँचा उठाया जाए; क्योंकि आपका संघर्ष एक दिन के लिए नहीं, बल्कि आपके पूरे जीवन के लिए है; और इसके अलावा, यदि आप विजयी होते हैं, तो आपको अमरत्व का एक अनुपम मुकुट प्राप्त होगा, लेकिन यदि आप पराजित होते हैं, तो अपार लज्जा का शाश्वत बोझ? – लेकिन ऐसा न हो कि हम इसे सहन करें, न ही हमारी आशा में लज्जित हों! इसके विपरीत, हमें इस बात पर संदेह न करें कि परमेश्वर की सहायता से, निरंतर सतर्कता और शत्रु के प्रति अथक प्रतिरोध के द्वारा, हम शैतान पर विजय प्राप्त करेंगे। आप जानते हैं कि साधारण सैनिक भी, जब वे युद्ध में उतरते हैं, तो वे अत्यधिक उत्साह की अवस्था में होते हैं; उनका चेहरा बदल जाता है और वे पहले से बिल्कुल अलग दिखते हैं; और उस क्षण वे अपनी पत्नी, बच्चों, माता-पिता या भाइयों—वास्तव में, किसी के बारे में भी—नहीं सोचते, बल्कि उनका मन और हृदय, उनके पूरे शरीर की तरह, पूरी तरह से संघर्ष के लिए समर्पित हो जाते हैं। इसी तरह, हमें भी अपने अंतर में ऐसा ही होना चाहिए, अपने विरोधियों से बिल्कुल भी न डरते हुए, बल्कि मसीह के अच्छे सिपाहियों की तरह, आत्मा के उत्साह और जोश के साथ उन पर टूट पड़ना चाहिए। जब हमारे शत्रु हमें इस अवस्था में देखते हैं, तो वे पीछे हट जाते हैं, हमला करने का साहस नहीं करते; परन्तु जब वे देखते हैं कि हमारा साहस क्षीण हो रहा है, और हमारी शक्ति और एकाग्रता ढीली पड़ रही है, तब वे अपने धनुष तानते हैं और हमारे प्राणों को बाणों से—अर्थात्, अस्वास्थ्यकर विचारों से—घायल कर देते हैं। – परन्तु ऐसे समय में भी हमें निराश नहीं होना चाहिए; बल्कि, अपनी चूक को पहचानकर, हमें पश्चाताप करना चाहिए, और, एक बार फिर अपनी शक्ति इकट्ठी करके, अनवरत संघर्ष में उतरना चाहिए। – हमेशा ऐसा ही होता है।

2. परन्तु अब एक भिन्न प्रकार का विधर्मी विवाद संपूर्ण ब्रह्मांड में व्याप्त है। और यदि आप चाहें, तो अपने मन की आँखें उठाइए और आप देखेंगे कि यह संपूर्ण संसार इस विवाद में घायल लोगों से भरा हुआ है। क्योंकि सर्प केवल अविश्वासी विधर्मियों को ही, न ही केवल व्यभिचारियों, परस्त्रीग्राहकों और अन्य ऐसे दुराचार करने वालों को ही अपनी शक्ति में लेता है; बल्कि वे भी जो ऐसे सभी लोगों के प्रति उदासीन हैं और उनसे मेलजोल रखते हैं: क्योंकि यह वचन सत्य है कि *'जो पिच को छूएगा वह अपवित्र हो जाएगा, और जो घमण्डी से मेल रखता है वह काट डाला जाएगा'* (सिरैकस 13:1)। इसी कारण, यद्यपि मुझे इसके लिए डाँटा जाता है, मैंने एक ऑर्थोडॉक्स ईसाई को पवित्र स्मरणोत्सवों और दैवीय धर्मविधि में एक ऐसे व्यक्ति का स्मरण करने से मना किया है, जो ऑर्थोडॉक्स होने का दिखावा तो करता था, परन्तु उसने संप्रदायवादियों और संप्रदायवाद के साथ संगति करना कभी बंद नहीं किया। क्योंकि यदि उसने, अपनी मृत्यु के समय भी, अपने पाप को स्वीकार किया होता और पवित्र रहस्यों में भाग लिया होता; तो एक ऑर्थोडॉक्स ईसाई के लिए उसके लिए प्रार्थना करना उचित होता। लेकिन चूँकि वह संप्रदायवाद के साथ संचार में रहते हुए चला गया, तो ऐसे व्यक्ति को ऑर्थोडॉक्स संचार में कैसे स्वीकार किया जा सकता है? – पवित्र प्रेरित कहते हैं: *'क्या वह आशीर्वाद का प्याला जिसे हम धन्य कहते हैं, मसीह के लहू के साथ संचार नहीं है? वह रोटी जिसे हम तोड़ते हैं, क्या वह मसीह के शरीर के साथ संचार नहीं है? क्योंकि यद्यपि एक ही रोटी है, हम, यद्यपि बहुत हैं, एक ही शरीर हैं; क्योंकि हम सब उस एक ही रोटी में सहभागी हैं'* (1 कुरिन्थियों 10:16-17)। इसी से यह स्पष्ट होता है कि विधर्मी रोटी और प्याले में भाग लेने वाला व्यक्ति ऑर्थोडॉक्स के विरोधी गुट का सदस्य बन जाता है, और ऐसे सभी भाग लेने वाले मसीह से अलग, एक शरीर का निर्माण करते हैं। – *"क्योंकि धार्मिकता का अधर्म से क्या मेल है?*

और प्रकाश का अन्धकार के साथ क्या सहभागिता है? और एक विश्वासी का दूसरे विश्वासी से क्या भाग है? या परमेश्वर की मंडली का मूरतों से क्या मेल है?' (2 कुरिन्थियों 6:14–16), जैसा कि वही प्रेरित कहीं और पुकार कर कहते हैं। – परन्तु ऐसे लोगों के लिए हमें रोना चाहिए; जो उनमें से अभी भी जीवित हैं, उनके लिए हमें प्रार्थना करनी चाहिए कि वे शैतान के फन्दों से छुड़ाए जाएँ; और अपने लिए, हमें धन्यवाद देना चाहिए, क्योंकि *'परमेश्वर ने हमें पवित्र आत्मा द्वारा पवित्र होने और सत्य पर विश्वास करने के द्वारा उद्धार के लिए चुना है'* (2 थिस्सलुनीकियों 2:13), ताकि हम इस धर्मपरायण विश्वास में इसी स्वीकारोक्ति तक उसकी सेवा कर सकें; जिसके लिए, यदि हम इसे निर्दोषता और दोषरहितता से पूरा करें, तो वह कृपा करके हमें अपना स्वर्गीय राज्य प्रदान करे।

331. अन्य मामलों का अपना समय होता है; लेकिन उद्धार के कार्य पर हमेशा ध्यान देना चाहिए।

331. 1) अन्य मामलों के लिए उनका अपना समय होता है; लेकिन उद्धार के कार्य पर हमेशा ध्यान देना चाहिए। – 2) अतःहम विलंब न करें, यह देखते हुए कि मृत्यु सभी को काटती है, और इस संबंध में बुद्धिमान और मूर्ख कुंवारियों पर मनन करें। – 3) तो, हम उठें और वर के आगमन के लिए सब कुछ तैयार करने में उत्सुक हों। [4, 130]

3. अन्य मामलों के लिए, विशिष्ट समय निर्धारित हैं: बोने का समय और काटने का समय; शांति का समय और युद्ध का समय; व्यापार का समय और व्यापार से विरत रहने का समय। लेकिन आध्यात्मिक उद्धार के कार्य के लिए, हर समय उपयुक्त है, और हर दिन अनुकूल है, यदि हम चाहें। – अतःहम सदा भलाई करने के लिए उत्सुक, शुभ स्वभाव वाले और परमेश्वर के वचनों को व्यवहार में लाने के लिए युवा उत्साह से परिपूर्ण रहें: *' क्योंकि परमेश्वर की दृष्टि में धर्मी वे नहीं हैं जो केवल व्यवस्था सुनते हैं, बल्कि वे हैं जो व्यवस्था पर चलते हैं'* (रोमियों 2:13)। – अत; चाहे कोई अदृश्य लड़ाई हमारे सामने हो, हमें एक प्रसन्न आत्मा से लड़ना चाहिए और, ईश्वर की सहायता से, हमारे विरुद्ध उठने वाले दैवीय विचारों को दूर भगाना चाहिए, कहीं ऐसा न हो कि हमारे भीतर ठहरकर वे हमें आध्यात्मिक मृत्यु दे दें; या क्या आध्यात्मिक फसल पक चुकी है? तो हमें परिश्रम से काटना चाहिए, ताकि हम अपने आध्यात्मिक भंडारों में अनंत जीवन के लिए पर्याप्त भोजन इकट्ठा कर सकें, कहीं ऐसा न हो कि हम वहाँ भूख से अनंतकाल तक मर जाएँ। प्रार्थना का समय, आँसुओं का समय, अपनी कमियों से शुद्ध होने का समय, और स्वर्ग के राज्य के आनंद-उत्सव का समय हमेशा होता है।

4. तो फिर हम हिचकिचाते क्यों हैं? हम देरी क्यों करते हैं? हम दिन-प्रतिदिन अपना जीवन सुधारने के काम को टालते क्यों रहते हैं? *क्या 'वर्तमान युग समाप्त* नहीं *हो रहा है?'* (1 कुरिन्थियों 7:31)। क्या हर एक दिन अनगिनत आत्माएँ हमसे दूर नहीं हो रही हैं? क्या वे ताबूत जो निरंतर खोले जाते हैं, हमारी दयनीय प्रकृति पर एक विजय का जश्न नहीं मनाते? – क्या पृथ्वी भी ऐसा ही नहीं करती, जो हमारे शरीरों को ग्रहण करती है, जो उसी तत्त्व के हैं जिससे वह बनी है? – और क्या हम, सचमुच, अंत तक यहाँ ही रहेंगे? – क्या हम यह नहीं देखते कि हमारे कितने ही भाई पहले ही जा चुके हैं? हमारे धन्य पिता कहाँ हैं? हमारे भाई, आध्यात्मिक और सांसारिक दोनों, कहाँ हैं? परिश्रम में, हाथ के काम में और भजन-पाठ में हमारे मित्र और साथी कहाँ हैं? और हम कितने भुलक्कड़ हैं! – जब किसी भाई या पिता की मृत्यु होती है, तो हम तुरंत पश्चाताप से भर जाते हैं, हम शोक करते हैं और आगे से धर्म के मार्ग पर चलने का संकल्प लेते हैं; लेकिन जब उससे कुछ समय बीत जाता है, तो हम अपना शोक और अपने अच्छे इरादे दोनों भूल जाते हैं। – परन्तु परमेश्वर के संत इस प्रकार नहीं करते थे: वे अपने पूरे जीवन में मृत्यु पर मनन करते थे, प्रतिदिन मरते थे, प्रतिदिन संसार के लिए स्वयं को सूली पर चढ़ाते थे, और प्रतिदिन अपनी स्वेच्छा से परमेश्वर की ओर मुड़ते थे; और अब वे वहाँ एक धन्य और अनंत जीवन जीते हैं। – क्या दस कुँवारियों का दृष्टान्त तुम्हें भय के लिए कोई कारण नहीं देता? – *'देखो, वधूवर आ रहा है; उससे मिलने के लिए बाहर जाओ।'* बुद्धिमानों ने उससे भेंट की, *'और उसके साथ विवाह-भोजन में प्रवेश किया।'* परन्तु मूर्खों ने, अच्छे कर्मों की कमी के कारण, देर कर दी, और जब उन्होंने पुकारा: *'हे प्रभु, हे प्रभु, हमारे लिए खोल दो,'* उन्हें उत्तर में सुनाई दिया: *'मैं तुम से सच कहता हूँ, मैं तुम्हें नहीं जानता।'* और इस प्रकार वे बाहर रह गए। इस पर प्रभु ने यह जोड़कर कहा: *'तब तुम चौकस रहो, क्योंकि तुम न तो* उसके आने का *दिन जानते हो और न घड़ी'* (मत्ती 25:6, 10–13)।

5. इसलिए, हमें चौकस रहना चाहिए; हमें अपनी आत्मा को नींद से जगाना चाहिए, और संयमी, पश्चात्तापी रहना चाहिए, खुद को निर्दोष और शुद्ध रखना चाहिए, और प्रकाश में चलना चाहिए, कहीं ऐसा न हो कि मृत्यु अचानक हम पर आ पड़े और हमारे सामने दया के द्वार बंद कर दे: और उन्हें खोलने या हमारी मदद करने वाला कोई न होगा। इसलिए, हमें अपने प्रस्थान के लिए परमेश्वर को भाने वाले कार्यों को तैयार करने में शीघ्रता करनी चाहिए: हे आलसी, उठो और काम में लग जाओ; तुम जो आज्ञा न मानने वाले हो, आज्ञा मानना शुरू करो; तुम जो घमंडी हो, स्वयं को नम्र बनाओ; तुम जो कठोर हृदय वाले हो, अपने हृदय को कोमल करो; तुम जो पश्चाताप नहीं करते हो, पश्चाताप

करो; तुम जो स्वीकार नहीं करते हो, स्वीकार करना शुरू करो; तुम जो आलसी हो, परिश्रम करना शुरू करो; तुम सब, सब कुछ ठीक करो – और अच्छे कर्मों के लिए प्रयत्न करो। मैं एक और बात जोड़ूँगा: हे स्त्रियों के शौकीनों, समझदार बनो; स्त्रियों के साथ बार-बार मेलजोल न करो, न ही उनके साथ बहुत अधिक समय बिताओ; क्योंकि इससे पाप की आग भड़क उठती है, जैसा कि हम धर्मग्रंथ में सुनते हैं, जो कहता है: *'यदि कोई अपनी छाती में आग बाँधता है, तो क्या उसके कपड़े नहीं जल जाएँगे? या कोई अपनी भुजाओं में आग बाँधकर अपने कपड़ों को जलाए बिना रह सकता है? दूसरे की पत्नी के पास जाने वाले के साथ भी ऐसा ही होता है* (नीतिवचन 6:27-29)। परन्तु एक कुँवारी भी विवाहित स्त्री ही होती है यदि वह मठ-जीवन में प्रवेश कर चुकी है, ठीक वैसे ही जैसे जिसने मठ-संन्यास का व्रत लिया हो;—जिसका वधू-वर महिमा का प्रभु है। – मैं यह उन लोगों से कहता हूँ जो इधर-उधर भटक गए हैं और अपनी मनमानी करते हुए जीते हैं, अपने पापों के लिए बहाने बनाते हैं, और यह भूल जाते हैं कि प्रभु ने हमें उस आँख को भी निकाल फेंकने की आज्ञा दी है जो परीक्षा का कारण बनती है (मत्ती 5:29), किसी और चीज़ को तो छोड़ ही दीजिए। – और जो कुछ मैं तुम से कहना चाहता हूँ, वह यह है: *'हम जो बलवन्त हैं, उन्हें चाहिए कि हम निर्बलताओं को सहें'* (रोमियों 15:1), और जो अभी स्थिर नहीं हुए हैं, उनके लिए सदाचार का एक उदाहरण स्थापित करें। आप मसीह की कृपा से पहले से ही ऐसे हैं; परन्तु बार-बार ऐसा ही बने रहो – और आप हमारे प्रभु यीशु मसीह में उद्धार पाएँगे।

332. यह इंगित करते हुए कि मठवासी जीवन के उद्देश्य और प्रयास सभी अन्य अवस्थाओं और पदों से श्रेष्ठ हैं, और – यह कि यह अपनी कठिनाइयों के बावजूद सभी को अपनी ओर आकर्षित करता है – वह उन लोगों को, जिन्हें इसके योग्य समझा गया है, आनन्दित होने और प्रभु का धन्यवाद करने, और सच्चे भिक्षु बनने का प्रयास करने के लिए आमंत्रित करते हैं

332. 1) यह इंगित करते हुए कि संन्यासी जीवन के उद्देश्य और प्रयास सभी अन्य अवस्थाओं और पदों से श्रेष्ठ हैं, और – 2) यह कि यह अपनी कठिनाइयों के बावजूद सभी को अपनी ओर आकर्षित करता है – 3) वह हमें उन लोगों के लिए प्रभु में आनन्दित होने और धन्यवाद देने के लिए आमंत्रित करते हैं जिन्हें इसके योग्य समझा गया है, और सच्चे संन्यासी बनने का प्रयास करने के लिए। [4, 131]

6. हम परमेश्वर की महिमा करें कि हमें *'बेहतर हिस्सा चुनने' के लिए* योग्य समझा गया है, और, मानो, *'यीशु के पाँवों में बैठकर उनका वचन सुनने' के लिए* (लूका 10:39)। अन्य लोग अनेक बातों में व्यस्त रहते हैं और उन बातों की चर्चा करते हैं, अर्थात् पत्नियों और बच्चों, संपत्ति और धन की; परन्तु हमारी एक ही चिंता है: प्रभु को कैसे प्रसन्न किया जाए। अन्य लोग तुच्छ और क्षणिक लाभों की तलाश में सांसारिक सीज़र के लिए युद्ध लड़ते हैं; लेकिन हमारा युद्ध हमारी स्वेच्छा से है, जिसमें हम राजाओं के राजा, मसीह की आज्ञाओं को पूर्ण स्वतंत्रता के साथ, स्वर्ग के अनंत राज्य को प्राप्त करने की आशा में पूरा करते हैं। दूसरे तुच्छ और क्षणिक लाभ के लिए लंबी और कठिन यात्राएँ करते हैं; लेकिन हमारा कार्य, दिन हो या रात, केवल परमेश्वर के मंदिर की ओर तेज़ी से बढ़ना है, ताकि वहाँ हम परमेश्वर की महिमा की स्तुति कर सकें, और इस प्रकार नश्वर सोना नहीं, बल्कि आध्यात्मिक खजाने प्राप्त कर सकें जिन्हें चुराया नहीं जा सकता और जो शाश्वत हैं।

7. यद्यपि हम कभी-कभी कुछ दुखद और कष्टप्रद का सामना करते हैं, चाहे वह हमारी बाहरी परिस्थितियों में हो या हमारी आंतरिक अवस्था में, फिर भी चूँकि यह परमेश्वर के वचन और हमारी आशा के लिए होता है, इसे हम सहजता से सहन कर लेते हैं, जो अपनी दुखों में भी आनन्दित हो सकते हैं और अपनी कष्टों में बाध्य महसूस नहीं करते। हमारा जीवन ऐसा है कि यह अपनी ही दुखों के माध्यम से समझदार लोगों को अपनी ओर आकर्षित करता है। – कौन है जो अपने माता-पिता से प्रेम नहीं करता और उनके प्रति स्नेह नहीं रखता? फिर भी, ईश्वर के प्रति प्रेम के कारण, उन्हें पीछे छोड़कर, मनुष्यों के पुत्र यहाँ आते हैं। विवाह के बंधन से अधिक निकट का बंधन और क्या है, जब प्रभु के वचन के अनुसार, दो एक शरीर बन जाते हैं? फिर भी, ऐसे लोग भी सुसमाचार की तलवार से विभाजित होकर यहाँ भेजे जाते हैं। यहाँ शासक अपना साम्राज्य त्याग देता है; धनी व्यक्ति अपनी संपत्ति का त्याग करता है; गरीब अपनी गरीबी भूल जाता है; अनाथ अनाथ होना बंद कर देता है; और मैं यह जोड़ना चाहूँगा: राजा अपना बैंगनी वस्त्र त्याग देता है और दूसरों के साथ समान दर्जे पर गिना जाता है। क्योंकि हमारा भ्रातृत्व मसीह की देह है, जिसमें सभी बराबर हैं; और हमारा निवास उद्धार का सामान्य बंदरगाह है, जो सभी के लिए समान रूप से उद्धारकारी है। – हमारे साथ, सब कुछ अलग है, संसार के समान नहीं। इस प्रकार, जब मृत्यु होती है, तो यहाँ कोई विलाप या शोक नहीं होता, जैसा कि जीवन से प्रेम करने वालों के बीच होता है, बल्कि दिवंगत की अंत्येष्टि मौन में होती है: क्योंकि यहाँ न तो पत्नी विलाप करती है, न बच्चे रोते हैं, और न ही रिश्तेदार इस या उस बात को याद करते हुए शोकगीत गाते हैं; बल्कि प्रस्थान खुशी के साथ होता है, और अंतिम संस्कार अच्छी आशा के साथ होता है; हालाँकि आँसू होते हैं, जो दिवंगत के प्रति

आध्यात्मकि प्रेम से उत्पन्न होते हैं: जसिमें कुछ भी अनुचति नहीं है; क्योंकि प्रभु स्वयं लाजरुस की कब्र पर रोए थे, हमारे अस्तत्वि की प्रकृति के अनुसार (यूहन्ना 11:35)। क्या आदकिाल से कभी कोई जीवन इससे अधकि धन्य रहा है? – क्या कभी कोई अन्य जीवन शैली रही है जसिने लोगों को परमेश्वर के करीब लाया हो? तो फरि, दाऊद के शब्दों में यह घोषणा करना हमारे लिए क्यों उपयुक्त है: *'यहाँ प्रभु ने आशीष, वरन् अनंतकाल का जीवन आज्ञा दयिा है'* (भजन संहति 132:3)।

८. अतःहम आनन्द करें और एक दूसरे के आनन्द में सहभागी हों; हम धन्यवाद दें और अवरिाम धन्यवाद दें; हम अपने सर्व-सद्गुणी परमेश्वर से प्रेम करें और उससे असीम प्रेम करें, क्योंकि उसिने हमें अंधकार से प्रकाश में, अपमान से महमिा में, और अज्ञातत्व से वशिष्टिता में बुलाया है। तुम में से प्रत्येक जानता है कि तुम कसिसे इस संसार में आए हो, और कहाँ से यहाँ आए हो, तुम बाद में कसिके साथ संगति में आए, जन्हिें तुम भाई कहते हो, और जनिके साथ तुम एक साथ रहते हो। और ये आशीषें तो भवष्यि के वादों का केवल प्रस्तावना मात्र हैं: ताकि, यदि हम अपने सामने रखे गए कार्य को अच्छी तरह से करें, हर तरह से कठनिाइयों को सहने और आज्ञाकारिता के फल देने का प्रयास करें, हमारे भीतर कार्यरत व्यवस्था और नयिम के अनुसार, तो अंत में हमें वह प्राप्त होगा जसि न कसिी ने आँखों से देखा है, न कसिी ने कानों से सुना है, और जो मानव हृदय में प्रवेश नहीं कयिा है—वह जो परमेश्वर ने अपने प्रेम करने वालों के लिए तैयार कयिा है (1 कुरन्थियों 2:9)। काश हम सभी इसे प्राप्त कर सकें।

333. जो लोग बार-बार मरने का अभ्यास करते हैं, वे मृत्यु की स्मृति को मजबूत करते हैं; मृत्यु की स्मृति और उसके नहितिार्थ ईश्वर का भय उत्पन्न करते हैं; ईश्वर का भय हृदय को वासनाओं से शुद्ध करता है।

333. 1) जो लोग बार-बार मृत्यु पर मनन करते हैं, वे मृत्यु की स्मृति को मजबूत करते हैं; मृत्यु की स्मृति और उसके नहितिार्थ ईश्वर का भय उत्पन्न करते हैं; ईश्वर का भय हृदय को वासनाओं से शुद्ध करता है। – 2) आइए हम आनंदमय नरि्लप्तिता की इस राह पर चलें। [4, 132]

९. मृत्यु की खबरें अधकि बार आने लगी हैं—दूर-दराज और नजदीक दोनों जगहों से—और वशिेष रूप से हमारे आध्यात्मकि भाइयों और पतिाओं की मृत्यु की खबरें। अन्य लोगों के अलावा, भाई ग्रेगरी हमें छोड़ गए हैं; उनका जीवन प्रशंसनीय था और उनका नधिन धन्य था, क्योंकि वे मसीह के लिए नर्वािसन में मरे। – तो फरि? – नश्चिय ही हमें भी यहाँ से जाना है, चाहे हम जवान हों या बूढ़े, बड़े हों या जवान। क्योंकि मृत्यु ही एक ऐसा प्रायश्चति है जो सभी के लिए समान है, और कुछ लोग दूसरों से पहले इस जीवन से चले जाते हैं, जबकि अन्य बाद में जाते हैं। तो फरि, हम मृत्यु और उस चीज़ के बारे में सोचना कैसे भूल सकते हैं जसिका हमें सामना करना है जब आत्मा शरीर छोड़ती है? यदि हमने प्रकाश के कवच से स्वयं को नहीं सज्जति कयिा है, तो हम स्वर्गदूतों की उपस्थति का सामना कैसे करेंगे? – यदि हम अपने साथ अनंत जीवन का भोजन नहीं ले जाते हैं, तो हम उस मार्ग पर कैसे चलेंगे? हम इस संसार के राजकुमार के पास से कैसे गुज़रेंगे, जसिके बारे में प्रभु ने कहा: *'इस संसार का राजकुमार आ रहा है, और उसका मुझ पर कोई अधकिार नहीं है'* (यूहन्ना 14:30), जब तक हम उन वासनाओं से मुक्त नहीं हो जाते जो हमें दास बनाती हैं? प्रभु कहते हैं, *'वह दास धन्य है,' जसि उसका स्वामी आकर ऐसा करते हुए पाता है। अमीन, मैं तुम से कहता हूँ, वह उसे अपनी सारी संपत्ति पर नयुिक्त करेगा।*" देखो, ऊपर से एक आवाज! *"परन्तु यदि वह दुष्ट दास अपने मन में कहे, 'मेरे स्वामी का आना टल रहा है,' और अपने साथी दासों को मारना-पीटना आरम्भ करे, और दारू-पीने वालों के साथ खाने-पीने लगे: उस दास का स्वामी उस दनि आएगा जब वह उसकी आशा नहीं करेगा, और उस घड़ी पर जसिका उसे कोई ज्ञान नहीं होगा, और उसे दो टुकड़े कर देगा, और उसे अवश्विासियों के साथ डाल देगा: वहाँ रोना और दाँत पीसना होगा'* (मत्ती 24:46-51)। क्या यह दृष्टान्त हमें भयभीत नहीं करता? क्या यह धमकी हमारे शरीरों को क्षीण नहीं कर देती? क्योंकि यह कोई कल्पना या व्यर्थ के शब्द नहीं हैं; इसके वपिरीत, आने वाली घटनाओं का सटीक वर्णन करने के लिए शब्द भी कम पड़ जाते हैं: क्योंकि वहाँ का रोना इस रोने जैसा नहीं है, और वहाँ दाँत पीसना भी यहाँ दाँत पीसने जैसा नहीं है; परन्तु उनमें का अन्तर स्वप्न और जाग्रत वास्तवकिता के अन्तर के समान है; इसके अलावा, वहाँ की आग कभी बुझेगी नहीं, जबकि यहाँ की आग बुझ जाती है, और वह कीड़ा नहीं मरता, जबकि यहाँ का कीड़ा मर जाता है। परन्तु इस पर कौन वचिार करता है और मनन करता है? इसे कौन देखता है और सुनता है? क्योंकि आत्मा के कठोर हो जाने और हृदय की वासनाओं के कारण, देखना भी संभव है और फरि भी न देखना, और सुनना भी संभव है और फरि भी न सुनना। – कसिके पास वह वलिाप है जो प्रभु को प्रसन्न करता है, और जो प्रतदिनि वहाँ और यहाँ से आने वाले अपवत्रिताओं से स्वयं को शुद्ध करता है, और इस शुद्धकिरण को कल तक के लिए टालता नहीं है? *क्योंकि,* कहा गया है, *'हर दनि की अपनी-अपनी तकलीफ काफी है'* (मत्ती 6:34)। कौन, परमेश्वर पर अपनी इच्छा रखकर, हर सांसारकि वासना को अस्वीकार करता है, इस हद तक कि वे दाऊद के साथ पुकार सकें: *'मेरी आत्मा आप में चपिकी रहती है; आपका*

दाहिना हाथ मुझे थामे रहता है (भजन संहिता 62:9)। हे धन्य निर्लिप्तता! भाइयों, हमें ऐसे ही होना चाहिए! वचन इसी प्रकार स्वयं को तैयार करने की आज्ञा देता है! आओ, हम आत्मा में उत्साही हों, विश्वास के कवच से सुसज्जित हों, आशा से प्रेरित हों, और यात्रा के लिए पूरी तरह से तैयार रहें।

10. मैं यह क्यों पूछता और विनती करता हूँ कि, जैसे कि हम हर दिन मर रहे हों, हमें अपनी पूरी क्षमता से, जो कुछ भी उचित है, उसमें स्वयं को अनुशासित करना चाहिए, यह जानते हुए कि अनुशासन स्वभाव से एक सद्गुण है, फिर भी यह दुख लाता है, जबकि आत्म-संतुष्ट पाप हमें गर्त में डाल देता है? आओ हम एक पश्चात्तापी हृदय और विनम्र चिंतन से उत्पन्न होने वाले शुद्धिकरण के आँसू बहाएँ। आओ हम आत्म-त्याग के जीवन द्वारा पवित्र स्वर्गदूतों को अपना मित्र बनाएँ, ताकि वे भी हमारे प्राण-त्याग के समय, कृपापूर्वक हमें प्रभु के पास उठा लें। – मैं यह इस लिए नहीं कहता कि मैंने अच्छा किया है, बल्कि इस लिए कहता हूँ कि मैं आपके साथ मिलकर ऐसा करना चाहता हूँ; एक ऐसे व्यक्ति के रूप में जिसे चुप रहने के बजाय बोलना चाहिए; और एक ऐसे व्यक्ति के रूप में जो आपसे परमेश्वर के प्रेम से प्रेम करता है, ताकि हम सभी, अच्छा करके, अनंत जीवन के वारिस बनें।

334. वह उन्हें अपने विचारों को प्रकट करना बंद करने के लिए फटकारता है

334. 1) वह उन्हें अपने विचारों को प्रकट करना बंद करने के लिए फटकारता है। – 2) फिर वह पाप-स्वीकृति के लिए प्रोत्साहन के रूप में, अविश्वासियों पर ईश्वर द्वारा दी गई भयानक सज़ाओं के उदाहरण देता है। [4, 133]

11. मैं इन दिनों तुम्हारे लिए दुखी हूँ, और असहनीय दुख के साथ। क्योंकि तुम अपने प्रथागत पाप-स्वीकार से रुक गए हो, जो हमारे जीवन का सबसे बड़ा और सबसे उद्धारकारी कार्य है। – और यदि मैं यह देखता कि आप बेहतर और अधिक परिपूर्ण हो गए हैं, तो मैं एक बोझ से मुक्त होने वाले व्यक्ति की तरह प्रसन्न होता: क्योंकि दूसरों की दुर्बलताओं को ठीक करने में बहुत मेहनत लगती है। लेकिन जब मैं आप में इसके विपरीत देखता हूँ, तो मैं इसका कारण अनुमान लगा सकता हूँ। क्योंकि मुझसे कहो, तुम्हारी यह धृष्टता और इससे उत्पन्न होने वाला अव्यवस्था कहाँ से आती है? क्या यह इसलिए नहीं है कि तुम पाप स्वीकार नहीं करते, बल्कि अपने हानिकारक विचारों को छिपाते हो? क्योंकि हमारे पापों की जड़ और मूल एक अनुचित विचार है, जो प्रकट होने पर ईश्वर की दया से दूर भगा दिया जाता है, लेकिन छिप जाने पर, धीरे-धीरे अंधकार के कार्यों में बदल जाता है। इसी से आध्यात्मिक मृत्यु होती है, इसी से एक-दूसरे के बीच विभाजन होता है, इसी से अज्ञानता और भ्रम से उत्पन्न आत्म-न्यायकारी शब्द उत्पन्न होते हैं।

12. परन्तु, हे मनुष्य! पशु, जिनमें विवेक नहीं होता, जैसा कि हम देखते हैं, अपने आप जानते हैं कि कौन से भोजन उनके लिए हानिकारक हैं और उनसे बचते हैं; क्या हमें एक मनुष्य से और भी अधिक इसकी अपेक्षा नहीं करनी चाहिए, जो अपने बपतिस्मा के क्षण से ही, इस बात की समस्त बुद्धि से धन्य हो गया है कि क्या अच्छा है?! – क्या तुमने यह नहीं सुना कि धर्मग्रंथ क्या कहता है, कि परमेश्वर ने '*प्राचीन संसार को नहीं बख्शा, परन्तु धार्मिकता के प्रचारक नूह को बचाया, और अधर्मी संसार पर जलप्रलय लाया*' (2 पतरस 2:5)? क्या आपने यह नहीं पढ़ा कि प्रभु ने '*सोदोम और गमोरा के नगरों को आग में जलाकर विनाश की सज़ा दी, और उन्हें उन लोगों के लिए एक उदाहरण बना दिया जो अधर्म में जीएंगे?*' (2 पतरस 2:6)। क्या आपने प्रेरित को अक्सर यह पुकारते हुए नहीं सुना: '*ठगा मत जाओ: न तो व्यभिचारी, न मूर्तिपूजक, न परस्त्रीगामी, न समलैंगिक, न पुरुष-संग-शयन करने वाले, न चोर, न लोभी, न मद्यपान करने वाले, न अपशब्द बोलने वाले, न ठग परमेश्वर का राज्य पाएँगे*' (1 कुरिन्थियों 6:9-10)। तो फिर, यह सुनने के बाद आप यह कैसे कह सकते हैं कि आप नहीं जानते कि बुराई क्या है? – यह ढोंग और टालमटोल है। – क्या आप धमकी से नहीं डरते? क्या आप उस के सामने नहीं कांपते जिसके सामने सारी सृष्टि कांपती है? – तो फिर, कोई भी इकरार करने से न हिचकिचाए!

335. यह कहने के बाद कि वह अपने भाइयों से प्रेम करता है, और इस बात का आश्वासन पाकर कि वे भी उससे प्रेम करते हैं, वह उन्हें इस बंधन के लिए परमेश्वर का धन्यवाद करने और जब उसे उन्हें कठोरता से फटकारना पड़े तो उसके प्रति धैर्य रखने के लिए आमंत्रित करता है

335. 1) यह कहकर कि वह अपने भाइयों से प्रेम करता है, और यह निश्चित जानते हुए कि वे भी बदले में उससे प्रेम करते हैं, वह उन्हें इस प्रकार के मिलन के लिए ईश्वर का धन्यवाद करने के लिए आमंत्रित करता है, और जब उसे उन्हें कठोरता से फटकारना पड़े तो उसके प्रति धैर्य रखने के लिए। – 2) फिर वह उन्हें अपनी मुक्ति के कार्य में शामिल परिश्रम और दुखों को स्वेच्छा से सहने के लिए प्रोत्साहित करता है: क्योंकि कोई दूसरा रास्ता नहीं है; इसके अलावा, इससे जुड़े महान वादों के कारण, यह संतों के लिए उचित आनंद को बहुत कम नहीं करेगा। – 3) इसलिए,

आइए हम परमेश्वर के मार्ग पर विश्वासपूर्वक चलें; और यदि हम ठोकर खा भी जाएँ, तो आइए हम फिर से उठने में शीघ्रता करें। [4, 134]

13. दिव्य शास्त्र का वचन है: *'मैं उनसे प्रेम करता हूँ जो मुझसे प्रेम करते हैं, और जो मुझे खोजते हैं वे अनुग्रह पाएँगे'* (नीतिवचन 8:17)। अन्यत्र यह प्रेम की निशानी भी बताता है, यह कहते हुए: *'जो प्रेम करता ह , वह उसे परिश्रम से अनुशासित करता है'* (नीतिवचन 13:25)। चूंकि मुझे अपनी नम्रता में आप लोगों का अध्यक्ष नियुक्त किया गया है, और इसलिए मुझे अपनी पिछली उपदेश में आपको डाँटने और फटकारने के लिए विवश होना पड़ा—ताकि आप बुरा न मानें—मैं प्रेरित के शब्दों में आपसे यह कहने का साहस करता हूँ, *'कि आप उस प्रेम को जान जाएँ जो मेरे पास आपके लिए भरपूर है'* (2 कुरिन्थियों 2:4), तुम्हारे दुख में तुम्हारे साथ दुखित और तुम्हारी खुशी में तुम्हारे साथ प्रसन्न होता हूँ। मैं और किसकी ओर देखूँ? या तुम्हारे सिवा और किसके लिए दुखित और प्रसन्न होऊँ? तुम मेरे हो—मेरे भाइयो, मेरे बच्चों, मेरे पितरों, मेरे मित्रों, मेरे संबंधियों, मेरे प्रियजनों, जिनकी मुझे लालसा है, मेरी आनन्द, मेरा मुकुट, और वह सब कुछ जो मेरे तुम्हारे साथ सहभागिता की सच्चाई को व्यक्त कर सकता है। इसलिए मैं इस बात की गवाही देता हूँ कि मुझे पूरा विश्वास है कि आप भी मेरे प्रति ऐसा ही महसूस करते हैं, और आप अपने माता-पिता, भाइयों, रिश्तेदारों, स्वदेश या किसी भी अन्य दिखाई देने वाली चीज़ से नहीं, बल्कि केवल परमेश्वर से और परमेश्वर के द्वारा मेरी इस दीनता से जुड़े हुए हैं। और धन्यवाद हो पवित्र आत्मा में परमेश्वर का, जिसने हमें इस प्रकार एक किया है, ताकि हम प्रेम करें और बदले में प्रेम पाएँ, *और 'एक शरीर और एक आत्मा'* बने रहें, क्योंकि *'हम अपनी बुलावा की एक ही आशा के लिए बुलाए गए हैं'* (इफसियों 4:4)। इसलिए हम आनन्द मनाएँ और एक दूसरे के आनन्द में सहभागी हों; और भले ही मुझे कभी-कभी आपको डाँट-फटकार के साथ कुछ कहना पड़े, हम एक दूसरे से मुँह न मोड़ें, बल्कि, जैसा कि उचित है, प्रेम और सामान्य भलाई के लिए, हम अनुशासनात्मक दण्ड को धैर्यपूर्वक सहन करें। क्योंकि लिखा है: *'हे मेरे पुत्र, यहोवा की अनुशांसन को तुच्छ न समझ, और जब वह तुझ पर डांटता है तब हियाव न छोड़; क्योंकि यहोवा जिसे प्रेम करता है, उसे अनुशासित करता है, और जिस पुत्र को वह अपना मानता है, उसे दण्ड देता है'* (नीतिवचन 3:11-12)। जिस पर प्रेरित जोड़ते हैं: *'यदि तुम अनुशासनात्मक दण्ड सहते हो, तो परमेश्वर तुम्हारे साथ पुत्रों की तरह व्यवहार कर रहे हैं; क्योंकि ऐसा कौन सा पुत्र है जिसे उसका पिता अनुशासित नहीं करता? परन्तु यदि तुम अनुशासनात्मक दण्ड से रहित हो—जिसमें सभी ने भाग लिया है—तो तुम व्यभिचारी हो, न कि पुत्र'* (इब्रानियों 12:7–8)।

14. इसके अलावा, धन, शक्ति और अन्य चीजें जिनकी लोग इच्छा करते हैं, वे बिना मेहनत के नहीं मिलतीं, बल्कि उन्हें प्राप्त करने के लिए कड़ी मेहनत और पसीना बहाना पड़ता है: क्या कोई यह मान सकता है कि ईश्वर और दिव्य पुरस्कारों को प्राप्त करना एक आसान और आरामदायक मामला होगा, बजाय इसके कि यह अपार मेहनत और पसीने से भरा हो? और क्या ऐसा अनुमान अत्यधिक भोलेपन और दूरदर्शिता की कमी का प्रमाण नहीं होगा? – हम ऐसा क्यों सुनते हैं कि *'हमें परमेश्वर के राज्य में अनेक क्लेशों से होकर प्रवेश करना चाहिए'* (प्रेरितों के काम 14:22), और यह कि *'जो द्वार संकरा है और मार्ग कठिन है जो जीवन की ओर जाता है'* (मत्ती 7:14)? और ऐसा किस कारण से है? – क्योंकि हम स्वयं स्वर्ग में आरंभ में हमें प्रदान किए गए बेफिक्र जीवन और असीम आनंद में बने रहना नहीं चाहते थे; परन्तु, अपनी ही मूर्खता के कारण, हमने इसके बजाय इस वर्तमान जीवन में गिरना चुना, जो जुनून और दुखों से भरा है; और हम वहाँ फिर से तब तक नहीं लौट सकते जब तक कि हम हमारे प्रभु यीशु मसीह के उदाहरण का अनुसरण करते हुए, कष्टों के विद्यालय से न गुजरें। *'जो उसके सामने रखी गई आनन्द के लिए, शर्मिंदिगी की परवाह न करते हुए, क्रूस को सहन कर गए'* (इब्रानियों 12:2)। इसके अलावा, चूंकि परमेश्वर के लिए कष्ट हमें शाश्वत आशीर्वादों की आशा द्वारा सहनीय बनाए जाते हैं, वे आमतौर पर बहुत कष्टदायक नहीं होते हैं; यही कारण है कि, संतों के लिए, वर्तमान समय को एक उत्सव कहा जाता है। संत दाऊद इस बात की गवाही देते हैं, कहते हुए: *'हे धर्मी लोगो, यहोवा में आनन्द करो'* (भजन संहिता 32:1), जो अनंत आनंद की ओर संकेत करता है। इसी प्रकार, धन्य प्रेरित पुष्टि करते हैं: *'प्रभु में सदा आनन्द करो; और मैं फिर कहता हूँ, आनन्द करो'* (फिलिप्पियों 4:4)। और यह उन लोगों से कहा गया था जो शोक मनाते और रोते थे, जिन्होंने संघर्ष किया और संघर्ष में बने रहे, और जो कई प्रकार से कष्ट सहते थे; क्योंकि परमेश्वर के लिए शोक धर्मात्माओं के लिए आनंद का कारण है।

१५. अतःहम, मानो हर दिन एक उत्सव मना रहे हों, परमेश्वर के लिए अपनी दुखों को प्रसन्नचित्त होकर सहें, और शैतान के छल और हमलों से कमजोर न हों। और यदि कभी हमारा ध्यान भटक जाए और हम किसी अयोग्य वस्तु से भटक जाएँ, चाहे वह विचार में हो, शब्द या कर्म से, आइए हम फिर से उठने के लिए जल्दी करें, अपने पूर्व के अच्छे स्वभाव में लौटें, और एक बार फिर प्रभु के लिए गर्मजोशी से लगन के साथ परिश्रम करना शुरू करें, यह जानते हुए कि राजाओं से भी, जो योद्धा लड़ता और विरोध करता है, उसे सम्मान मिलता है, न कि उसको जो युद्ध के

मैदान से भागता है। इसी तरह, अपनी अंतमि साँस तक इस अदृश्य लड़ाई में बने रहने से, हम परमेश्वर की कृपा से, अनंत पुरस्कारों के योग्य माने जाएँगे, और हमारे प्रभु मसीह यीशु में स्वर्ग का राज्य प्राप्त करेंगे।